THE MAHABHARAT

OF

MAHARSHI VEDA-VYASA

Translated

into

English prose

PUBLISHED BY

SARAT CHANDRA SOM

[illegible] Street, Calcutta.

(SECOND EDITION)

1907.

Price Rs. 12

विषय | पृष्ठ

[illegible] और [illegible] करना [illegible] प्रयोग करना [illegible]

[illegible] [illegible] निहत होना [illegible]

[illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] प्राप्त करना [illegible]

[illegible] [illegible] २८१

[illegible] २८२

[illegible] पराजय करनेवाले [illegible] करनेमें प्रवृत्त होना [illegible]

पराशर [illegible] और [illegible] यज्ञ समाप्त करना २८३

राजा कल्मापपादकी [illegible] २८४

पाण्डवोंका धौम्यमुनिको पुरोहित बनाना २८५

पाण्डवोंका पाञ्चालनगरमें जाके कुम्हारके गृहमें निवास, लक्ष्यबेधका पण, द्रौपदीका स्वयम्बर सूचना और स्वयम्बर समाजमें राजाओंका समागम २८६

राजाओंके इकट्ठे होनेपर रङ्गभूमिमें द्रौपदीका प्रवेश २८७

धृष्टद्युम्नको उक्ति और राजाओंके नाम वर्णन २८८

राजाओंका लक्ष्य भेदनेका यत्न और दुरवस्था २८९

विषय | पृष्ठ

[illegible] २९?

[illegible] [illegible] २९?

[illegible] और [illegible] २९?

[illegible] २९?

[illegible] [illegible] २९?

[illegible] ,,

[illegible] करना २९५

[illegible] करना २९५

द्रुपदके समीप धृष्टद्युम्नके द्वारा पाण्डवोंका वृत्तान्त वर्णन ... २९६

द्रुपदके पुरोहितका युधिष्ठिरके निकट आगमन और उन दोनोंमें वार्त्तालाप २९७

पाण्डवोंका पाञ्चालराजके भवनमें जाना २९८

द्रुपदके निकट पाण्डवोंका परिचय २९९

द्रौपदीके विवाह विषयमें वादानुवाद ,,

वेदव्यास मुनिके समीप द्रुपदादिकी वार्त्ता ३००

व्यासदेवके द्वारा पांच इन्द्रोंका उपाख्यान वर्णन ३०२

दिव्यदृष्टिसे द्रुपदका पाण्डवों और द्रौपदीका पूर्व शरीर देखना व्यासके द्वारा महादेवसे ऋषिकन्याको वरदान पानेका विषय वर्णन ३०३

द्रुपदका पांचो पाण्डवोंको कन्यादान स्वीकार करना, पांचो पाण्डवोंके सङ्ग द्रौपदीका विवाह ३०४

विषय पृष्ठ

द्रौपदीको [illegible] [illegible]

श्रीकृष्णका [illegible] [illegible] राजाहरूको [illegible] [illegible] होना [illegible]

[illegible] [illegible] और [illegible], विदुरले [illegible] [illegible] [illegible] होना [illegible]

[illegible] [illegible] को [illegible] [illegible]

कर्णको [illegible] [illegible]

भीष्मको सम्वाद [illegible]

द्रोणाचार्य और कर्णका वादानुवाद [illegible]

विदुरको सम्वाद [illegible]

पाण्डवहरूको [illegible] [illegible] आज्ञाले विदुरका [illegible] जाना [illegible]

पाण्डवहरूका [illegible] [illegible] आधा राज्य पाई खाण्डवप्रस्थमा वास [illegible]

युधिष्ठिरको [illegible] नारदमुनिको आगमन [illegible]

सुन्द उपसुन्दको कथा „

सुन्द उपसुन्दको तपस्या और वरप्राप्ति २१७

सुन्द उपसुन्दको दिग्विजय ... २१८

तिलोत्तमाको उत्पत्ति ... २१९

तिलोत्तमाके निमित्त सुन्द उपसुन्दको मृत्यु २२०

द्रौपदीके विषयमें नियम करना २२१

अर्जुनके द्वारा ब्राह्मणको गोरक्षा २२२

अर्जुनका ब्रह्मचर्य और वनवास २२३

अर्जुनका गङ्गाद्वारमें निवास, उलूपीको आकर्षण करके उलूपीका पातालमें प्रवेश और दोनोंका सङ्गम ... ... „

अर्जुनका अनेक प्रकारके तीर्थ देखना २२४

अर्जुन और चित्राङ्गदाका विवाह २२५

अर्जुनके द्वारा पञ्च ग्राहमोचन ... „

नारी तीर्थका विवरण ... २२६

श्रीकृष्णके सङ्ग अर्जुनका द्वारकामें आना २२७

अर्जुनका सुभद्राका [illegible] और सुभद्राको [illegible] विषयमें श्रीकृष्णको [illegible] [illegible]

सुभद्रा हरण और [illegible] युद्धके [illegible] [illegible] [illegible]

श्रीकृष्णके [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

अभिमन्युको जन्म [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

[illegible] राज्य शासन [illegible]

कृष्ण अर्जुनका [illegible] [illegible] विहार [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible] कृष्ण अर्जुनसँग [illegible] [illegible] „

राजा श्वेतकिका यज्ञानुष्ठान [illegible] और दुर्वासाका द्वारा [illegible] [illegible] [illegible]

अग्निको दुर्बलता और ब्रह्माको आज्ञाले खाण्डव वन जलानेका उद्योग , २३६

अग्निके विषयमें ब्रह्माका वचन और अग्निले अर्जुनका [illegible] [illegible] माग्ना २३७

अग्नि और वरुणके द्वारा कृष्ण अर्जुनका युद्धके योग्य उपकरण प्राप्त होना ... २३८

अग्निके द्वारा खाण्डव वनका जलना २३९

खाण्डववन जलानेपर भागनेवाले प्राणियोंका विनाश ... ... „

इन्द्रको आज्ञाले बादलहरूके द्वारा जलको वर्षा और इन्द्रके द्वारा अश्वसेन सर्पको रक्षा २४०

इन्द्रके सङ्ग अर्जुनका युद्ध .. २४१

इन्द्रादि देवताहरूको पराजय, अग्निको रोग शान्ति २४२

विषय पृष्ठा

अर्जुनके द्वारा मय दानवकी रक्षा और मन्दपाल ऋषिकी कथा ... [illegible]

अग्निके निकट इन्द्रका (?) वरदान करना अङ्गीकार ... २५०

आदिपर्वकी समाप्ति ... २५१

सभापर्वका सूचीपत्र ।

युधिष्ठिरको सभा बनानेके लिये श्रीकृष्णकी आज्ञा पाके मय दानवके द्वारा सभाका आरम्भ माप तथा शुभदिन ठहराना ... २५३

श्रीकृष्णका द्वारकाको जाना ... २५४

बिन्दु सरोवरसे मणिमय भाण्ड, गदा और शंख आदिक लेकर मय दानवके द्वारा सभा तैयार करना ... २५६

युधिष्ठिरका सभामें जाना और सभासदोंके नाम वर्णन ... २५७

युधिष्ठिरकी सभामें नारद मुनिका आना और उनके द्वारा राज्यपालन विधि सम्बन्धी विविध प्रश्न ... २५८

नारद मुनिके समीप इन्द्र, यम, वरुण, कुबेर और ब्रह्माकी सभाओंका विवरण सुननेके लिये युधिष्ठिरकी अभिलाष देखके नारद मुनिके द्वारा उक्त सभाओंका वर्णन ... २६३

राजा हरिश्चन्द्रके राजसूय यज्ञका विषय वर्णन और युधिष्ठिरको राजसूय यज्ञ करनेका उपदेश करके नारद मुनिका द्वारकापुरीमें जाना ... २७०

राजसूय यज्ञ करनेके निमित्त सुहृदोंके सङ्ग युधिष्ठिरकी सलाह और उनकी सुनीति देखकर प्रजा समूहकी उनसे अनुरक्ति ... २७१

युधिष्ठिरका भाइयों तथा मन्त्रियोंसे यज्ञ विषयमें परामर्श ... २७२

युधिष्ठिरका श्रीकृष्णके पास दूत भेजना ... २७२

इन्द्रप्रस्थमें श्रीकृष्णका पुनरागमन राजसूय यज्ञ विषयमें कृष्णसे आप युधिष्ठिरका प्रश्न ... २७३

श्रीकृष्णके द्वारा जरासन्धका प्रभाव और अत्याचार वर्णन ... २७४

जरासन्धके वध विषयमें युधिष्ठिरका अनुत्साह, अर्जुनका उत्साह और श्रीकृष्णका परामर्श ... २७७

जरासन्ध वध अनन्तर सभाके राजसूय यज्ञ विषयमें युधिष्ठिरका उत्साह भङ्ग और कर्तव्य प्रस्ताव ... २७८

श्रीकृष्णका परामर्श ... ,,

जरासन्धके विषयमें युधिष्ठिरका प्रश्न और कृष्णके द्वारा जरासन्धके पिता राजा बृहद्रथका वृत्तान्त वर्णन ... २८०

जरा राक्षसीका आत्म-परिचय ... २८१

जरासन्धका नामकरण और चण्डकौशिक मुनिके द्वारा जरासन्धके भविष्य कार्योंका वर्णन ... २८१

जरासन्धका राज्याभिषेक और श्रीकृष्णके सहित मन्त्रणा ... २८२

जरासन्धवध विषयमें कृष्णकी परामर्श सुनके युधिष्ठिरकी उक्ति ... २८३

कृष्णके साथ भीमार्जुनका मगधपुरमें जाना ,,

जरासन्धके सङ्ग श्रीकृष्ण और भीमार्जुनकी मुलाकात तथा वार्त्तालाप ... २८५

जरासन्ध और कृष्णकी उक्ति प्रत्युक्ति २८६

श्रीकृष्णका युद्ध करनेके लिये जरासन्धको ललकारना और लड़नेके विषयमें जरासन्धकी सम्मति २८७

भीमसेनके सङ्ग युद्ध करनेके लिये जरासन्धकी इच्छा और उन दोनोंका युद्ध २८८

जरासन्धका वध ... २८६

कैदी राजाओंको जरासन्धके कारागारसे छुटकारा मिलना ... २६०

जरासन्धपुत्र सहदेवका पर कृष्णके द्वारा अभिषिक्त होना

विषय	पृष्ठा
द्रौपदीको कुन्तीका आसीर्व्वाद …	३०५
श्रीकृष्णका पाण्डवोंके निकट यौतुक भेजना राजाओंको पाण्डवोंका वृत्तान्त मालूम होना … …	३०५
दुर्य्योधनादिका आक्षेप और हस्तिनापुरकी ओर लौटना, विदुरके द्वारा धृतराष्ट्रको द्रौपदीके स्वयम्बरका सम्वाद मालूम होना … …	३०६
धृतराष्ट्रके निकट दुर्य्योधनकी सलाह	३०७
कर्णकी सम्मति … …	३०८
भीष्मकी सलाह … …	३०९
द्रोणाचार्य्य और कर्णका बादानुबाद	३१०
विदुरकी सलाह …	३११
पाण्डवोंको लानेके लिये धृतराष्ट्रकी आज्ञासे विदुरका पाञ्चालनगरमें जाना	३१२
पाण्डवोंका हस्तिनापुरमें आगमन और आधा राज्य पाके खाण्डवप्रस्थमें बास	३१४
युधिष्ठिरके समीप नारदमुनिका आगमन … …	३१६
सुन्द उपसुन्दकी कथा …	,,
सुन्द उपसुन्दकी तपस्या और वरप्राप्ति	३१७
सुन्द उपसुन्दकी दिग्विजय …	३१८
तिलोत्तमाकी उत्पत्ति …	३१९
तिलोत्तमाके निमित्त सुन्द उपसुन्दकी मृत्यु	३२०
द्रौपदीके विषयमें नियम करना	३२१
अर्जुनके द्वारा ब्राह्मणकी गोरक्षा	३२२
अर्जुनका ब्रह्मचर्य्य और बनबास	३२३
अर्जुनका गङ्गाद्वारमें निवास, अर्जुनको आकर्षण करके उलूपीका पतालमें प्रवेश और दोनोंका सङ्गम … …	,,
अर्जुनका अनेक प्रकारके तीर्थ देखना	३२४
अर्जुन और चित्राङ्गदाका विवाह	३२५
अर्जुनके द्वारा पञ्च ग्राहमोचन …	,,
नारी तीर्थका विवरण …	३२६
श्रीकृष्णके सङ्ग अर्जुनका द्वारकामें जाना	३२७

विषय	पृष्ठा
अर्जुनका सुभद्राको देखना और सुभद्राको हरनेके विषयमें श्रीकृष्णकी सलाह	३२८
सुभद्रा हरण और यदुवंशियोंका युद्धके निमित्त सज्जित होना …	३२९
श्रीकृष्णके अनुरोधसे यादवोंके द्वारा सान्त्वना पूर्व्वक अर्जुनको बुलाना, सुभद्राके सङ्ग उनका विवाह और इन्द्र प्रस्थमें लौटके जाना	३३०
कृष्ण बलराम और यादवोंका इन्द्रप्रस्थमें जाकर पाण्डवोंको यौतुक देना …	३३१
अभिमन्युका जन्म …	३३२
अभिमन्युकी अस्त्र शिक्षा, पांचो पाण्डवोंसे द्रौपदीके गर्भमें पांच पुत्रोंकी उत्पत्ति और उनकी अस्त्र शिक्षा … …	,,
युधिष्ठिरका राज्य शासन …	३३३
कृष्ण अर्जुनका यमुनाके तटपर बिहार	३३४
भूखे ब्राह्मणके विषमें अग्निका आना और खाण्डव बन जलानेके लिये कृष्ण अर्जुनसे सहायता मांगना …	,,
राजा श्वेतकिका यज्ञानुष्ठान तपस्या और दुर्व्वासाके द्वारा यज्ञकी समाप्ति …	३३५
अग्निकी दुर्व्वलता और ब्रह्माकी आज्ञासे खाण्डव बन जलानेका उद्योग …	३३७
अग्निके विषयमें ब्रह्माका बचन और अग्निके समीप अर्जुनका युद्धके उपयोगी अस्त्र मांगना … …	३३७
अग्नि और वरुणके द्वारा कृष्ण अर्जुनको युद्धके योग्य उपकरण प्राप्त होना …	३३८
अग्निके द्वारा खाण्डव बनका जलना	३३९
खाण्डवबन जलानेपर भागनेवाले प्राणियोंका बिनाश … …	,,
इन्द्रकी आज्ञासे बादलोंके द्वारा जलकी वर्षा और इन्द्रके द्वारा अश्वसेन सर्पको रक्षा	३४०
इन्द्रके सङ्ग अर्जुनका युद्ध …	३४१
इन्द्रादि देवताओंकी पराजय, अग्निकी रोग शान्ति … …	३४२

विषय	पृष्ठा
अर्ज्जुनके द्वारा मय दानवकी रक्षा और मन्दपाल ऋषिकी कथा ...	३४४
अर्ज्जुनके निकट इन्द्रका दिव्यास्त्र प्रदान करना अङ्गीकार	३५०
आदिपर्व्वकी समाप्ति ...	३५१

सभापर्व्वका सूचीपत्र।

विषय	पृष्ठा
युधिष्ठिरकी सभा बनानेके लिये श्रीकृष्णकी आज्ञा पाके मय दानवके द्वारा सभाका परिमाण तथा उसका चित्र बनाना ...	३५३
श्रीकृष्णका द्वारकामें जाना ...	३५४
बिन्दु सरोवरसे मणिमय भाण्ड, गदा और शंख लानेके अनन्तर मयदानवके द्वारा सभा तैयार होनी	३५६
युधिष्ठिरका सभामें जाना और सभासदोंके नाम वर्णन	३५७
युधिष्ठिरकी सभामें नारद मुनिका आना और उनके द्वारा राज्यपालन विधि सम्बन्धमें विविध प्रश्न ...	३५८
नारद मुनिके समीप इन्द्र, यम, वरुण, कुवेर और ब्रह्माकी सभाका विवरण सुननेके लिये युधिष्ठिरकी अभिलाष देखके नारद मुनिके द्वारा उक्त सभाओंका वर्णन	३६३
राजा हरिश्चन्द्रके राजसूय यज्ञका विषय वर्णन और युधिष्ठिरको राजसूय यज्ञ करनेका उपदेश करके नारद मुनिका द्वारकापुरीमें जाना ...	३७०
राजसूय यज्ञ करनेके निमित्त सुहृदोंके सङ्ग युधिष्ठिरकी सलाह और उनकी सुनीति देखकर प्रजा समूहकी उनमें अनुरक्ति	३७१
युधिष्ठिरका भाइयों तथा मन्त्रियोंसे यज्ञ विषयमें परामर्श ...	३७२
युधिष्ठिरका श्रीकृष्णके पास दूत भेजना	३७२
इन्द्रप्रस्थमें श्रीकृष्णका पुनरागमन राजसूय यज्ञके विषयमें कृष्णके पास युधिष्ठिरका प्रश्न	३७३
श्रीकृष्णके द्वारा जरासन्धका प्रभाव और अत्याचार वर्णन ...	३७४
जरासन्धके बध विषयमें युधिष्ठिरका अनुत्साह, भीमका उत्साह और श्रीकृष्णकी परामर्श	३७७
जरासन्ध बध असम्भव समझके राजसूय यज्ञके विषयमें युधिष्ठिरका उत्साह भङ्ग और अर्ज्जुनका उत्साह ...	३७८
श्रीकृष्णकी परामर्श	,,
जरासन्धके विषयमें युधिष्ठिरका प्रश्न और कृष्णके द्वारा जरासन्धके पिता राजा बृहद्रथका बृत्तान्त वर्णन ...	३८०
जरा राक्षसीका आत्म-परिचय ...	३८१
जरासन्धका नामकरण और चण्डकौशिक मुनिके द्वारा जरासन्धके भविष्य कार्य्योंका वर्णन	३८१
जरासन्धका राज्याभिषेक और श्रीकृष्णके सहित शत्रुता ...	३८२
जरासन्धबध विषयमें कृष्णकी परामर्श सुनके युधिष्ठिरकी उक्ति ...	३८३
कृष्णके साथ भीमार्ज्जुनका मगधपुरमें जाना।	,,
जरासन्धके सङ्ग श्रीकृष्ण और भीमार्ज्जुनकी मुलाकात तथा वार्त्तालाप ...	३८५
जरासन्ध और कृष्णकी उक्ति प्रत्युक्ति	३८६
श्रीकृष्णका युद्ध करनेके लिये जरासन्धको ललकारना और लड़नेके विषयमें जरासन्धकी सम्मति	३८७
भीमसेनके सङ्ग युद्ध करनेके लिये जरासन्धकी इच्छा और उन दोनोंका युद्ध	३८८
जरासन्धका बध ...	३८९
कैदी राजाओंको जरासन्धके कारागारसे छुटकारा मिलना ...	३९०
जरासन्धपुत्र सहदेवका मगधदेशके राज्यपर कृष्णके द्वारा अभिषिक्त होना	३९०

विषय	पृष्ठा
भीम, अर्ज्जुन, नकुल और सहदेवकी दिग्विजयका संक्षेप बिवरण ...	३९१
अर्ज्जुनकी उत्तर दिशामें दिग्विजय	३९२
भीमसेनकी पूर्व्व दिशामें दिग्विजय	३९४
पश्चिम दिशामें नकुलकी दिग्विजय	३९८
युधिष्ठिरका राजसूय यज्ञके लिये अनुष्ठान	३९९
इन्द्रप्रस्थमें श्रीकृष्णका पुनर्वार आगमन	,,
राजा युधिष्ठिरकी सभामें निमन्त्रित राजाओंका आना और भीष्म द्रोण प्रभृतिका आगमन तथा उनका सत्कार ...	४०१
ऋषियोंका तर्कवितर्क ...	४०३
भीष्मकी आज्ञासे श्रीकृष्णको पहले अर्घदान और श्रीकृष्णके अर्घदान विषयमें शिशुपालका तर्क	४०४
शिशुपालका सभासे बाहिर होना, शिशुपालसे राजा युधिष्ठिरका विनययुक्त बचन और भीष्मके द्वारा श्रीकृष्णकी महिमा बर्णन	४०५
यज्ञविनाशके निमित्त राजाओंकी परामर्श	४०६
भीष्मके द्वारा राजाओंकी निन्दा और युधिष्ठिरको धीरज प्रदान ...	४०७
शिशुपालके द्वारा भीष्म और कृष्णकी निन्दा तथा बूढ़े हंसकी कथा ...	४०८
कृष्णकी निन्दा सुनके भीमसेनका क्रोध करना ...	४०९
भीष्मके द्वारा शिशुपालका जन्म वृत्तान्त बर्णन	४१०
भीष्मके विषयमें शिशुपालके कठोर बचन	४११
भीष्मके विषयमें राजाओंका दुर्वाक्य	४१२
शिशुपालका कृष्णको युद्धके लिये ललकारना और उसके विषयमें कृष्णकी उक्ति	४१३
श्रीकृष्णके द्वारा शिशुपालका बध	,,
युधिष्ठिरकी सभामें घूमते हुए दुर्य्योधनका भ्रमयुक्त होना ...	४१५
राजा दुर्य्योधनकी जलमें गिरते देखकर भीम, अर्ज्जुन तथा नकुल सहदेवका हसना और पाण्डवोंका ऐश्वर्य्य देखके दुर्य्योधनका सन्तापित होना ...	४१५
शकुनिके सङ्ग दुर्य्योधनकी परामर्श	४१६
दुर्य्योधनके समीप शकुनिके द्वारा जूआ खेलनेकी परामर्श ...	४१७
धृतराष्ट्रके निकट दुर्य्योधनका दुःख बर्णन	४१८
द्यूतसभा बनानेके लिये धृतराष्ट्रकी आज्ञा	४१९
धृतराष्ट्र और बिदुरकी वार्त्तालाप ...	४२०
धृतराष्ट्रके द्वारा दुर्य्योधनके समीप जूएके दोष बर्णन और निज दुःख सुनानेके छलसे दुर्य्योधनके द्वारा पाण्डवोंका ऐश्वर्य्य बर्णन	४२०
दुर्य्योधनके बिषयमें धृतराष्ट्रका उपदेश	४२५
पाण्डवोंका धन हरनेके लिये दुर्य्योधनकी अत्यन्त अभिलाष	४२६
जूआ खेलनेके बिषयमें शकुनिका उत्साह	४२७
बादानुवादके अनन्तर धृतराष्ट्रका उस बिषयको अनुमोदन करना ...	,,
युधिष्ठिरको लिवा लानेके लिये बिदुरका इन्द्र प्रस्थमें जाना ...	४२८
चौसड़ खेलनेके लिये युधिष्ठिरका हस्तिनापुरमें आना	४२९
चौसड़ खेलनेके बिषयमें शकुनि और युधिष्ठिरकी बात्ता	४३०
जूएको खेलमें बाजी लगनी और द्यूतक्रीड़ा आरम्भ	४३१
युधिष्ठिरकी जूएमें पराजय, धृतराष्ट्रके बिषयमें बिदुरका उपदेश ...	४३३
दुर्य्योधनके द्वारा बिदुरकी निन्दा	४३४
युधिष्ठिरका चारों भाइयोंको जूएको बाजीमें हारना	४३५
निज शरीर और द्रौपदीको बाजीमें लगाकर युधिष्ठिरकी पराजय ...	४३७
द्रौपदीको लानेके लिये बिदुरके द्वारा दुर्य्योधनकी आज्ञा अस्वीकार ...	४३८

विषय पृष्ठा

द्रौपदीको सभामें लानेके विषयमें आज्ञा-वाहोकी अपारगता देखकर दुःशासनका द्रौपदीको केश पकड़के सभामें लेआना ४४०

द्रौपदीका सभामें विलाप और प्रश्न ४४१

भीमसेनका युधिष्ठिरके विषयमें क्रुद्ध होना और विकर्णकी वक्तृता ... ४४१

द्रौपदीके विषयमें कर्णकी वक्तृता ४४२

दुःशासनके द्वारा द्रौपदीका वस्त्र खींचा जाना, द्रौपदीका कृष्णको स्मरण करना तथा कृष्णके प्रभावसे द्रौपदीका वस्त्र अक्षय होना और दुःशासनके हृदयका लोहू पीनेके लिये भीमसेनकी प्रतिज्ञा ४४२

सभासदोंके द्वारा पुत्रसहित धृतराष्ट्रकी निन्दा, विदुरकी वक्तृता तथा उनके द्वारा प्रह्लाद और सुधन्वाका सम्वाद वर्णन ४४३

द्रौपदीका विलाप तथा प्रश्न सुननेके अनन्तर भीष्मकी वक्तृता ४४४

दुर्य्योधनकी वक्तृता और सभासदोंके द्वारा उसकी प्रशंसा, भीमका बचन और कर्णकी वक्तृता ४४५

भीमसेनका क्रुद्ध होना, द्रौपदीको दुर्य्योधनका बाईं जङ्घा दिखाना और उसकी जङ्घा तोड़नेके लिये भीमसेनकी प्रतिज्ञा तथा विदुरका बचन ४४६

धृतराष्ट्रके द्वारा द्रौपदीको वर मिलना ४४७

द्रौपदीके द्वारा पाण्डवोंका दासभाव छुटना, कर्णका बचन सुनके भीमसेनका क्रोध करना और अर्जुन तथा युधिष्ठिरके द्वारा शान्त होना ४४८

धृतराष्ट्रकी आज्ञासे अपना धन और राज्य पाके पाण्डवोंका इन्द्रप्रस्थमें जाना ४४९

धृतराष्ट्रके समीप दुर्य्योधनको फिर जूआ खेलनेके निमित्त प्रार्थना, पुनर्व्वार जूए खेलनेके लिये धृतराष्ट्रकी आज्ञा, दुर्य्योधनको त्यागनेके निमित्त धृतराष्ट्रके समीप गान्धारीकी सम्मति ..

प्रतिकामी सूतके द्वारा फिर जूआ खेलनेके लिये युधिष्ठिरको बुलाना, ... ४५०

बारहवर्ष वनवास तथा एक वर्ष छिपके निवास करनेकी बाजी लगाकर युधिष्ठिरका जूएमें हारना ४५१

दुःशासन प्रभृतिके बचनसे पीड़ित होके कौरवोंके विनाशके लिये पाण्डवोंकी प्रतिज्ञा ४५२

कौरवोंके समीपसे युधिष्ठिरका विदा होना ४५३

कुन्तीका शोकित होना ... ४५४

धृतराष्ट्रके निकट विदुरका जाना और पाण्डवोंके वनमें जानेका वृत्तान्त कहना ४५५

पाण्डवोंके वनमें जानेसे पुरवासियोंका आक्षेप, कौरवोंकी सभामें नारदमुनिका आना और उनके द्वारा कौरवोंके भावीफलका वर्णन तथा धृतराष्ट्रका चिन्तायुक्त होना ४५७

सभापर्व्वकी समाप्ति ... ४५८

वनपर्व्वका सूचीपत्र ।

पाण्डवोंका वनगमन वृत्तान्त ... ४५९

युधिष्ठिरका बचन सुनके प्रजाका नगरकी ओर लौटना ४६१

कितनेही ब्राह्मणोंका पाण्डवोंके सङ्ग वनमें जाना ४६१

युधिष्ठिर और ब्राह्मणोंकी वार्त्ता तथा ब्राह्मणोंके भरण पोषणके विषयमें शौनक और युधिष्ठिरकी उक्ति प्रत्युक्ति ... ४६२

सूर्य्यकी उपासना करनेके लिये युधिष्ठिरके विषयमें धौम्यका उपदेश ... ४६५

युधिष्ठिरके द्वारा सूर्य्यकी उपासना ४६७

युधिष्ठिरको सूर्य्यके द्वारा बटलोई मिलनी सूर्य्यके वरसे उस तामेकी बटुईकी सहायतासे ब्राह्मणोंको भोजन कराके युधिष्ठिरका काम्यक वनमें जाना धृतराष्ट्रके सङ्ग विदुरकी वार्त्तालाप ..

विषय	पृष्ठ
धृतराष्ट्रका विदुरको त्यागना और विदुरका युधिष्ठिरके निकट जाना ...	४७०
धृतराष्ट्रकी आज्ञासे विदुरको बुलानेके लिये सञ्जयका काम्यक वनमें जाना और विदुरका फिर हस्तिनापुरमें आना	४७१
पाण्डवोंके विनाशके लिये दुर्य्योधनादिका उद्योग, कौरव सभामें वेदव्यास मुनिका आगमन और धृतराष्ट्रके सङ्ग वार्त्तालाप	४७२
सुरभीका उपाख्यान	४७३
व्यासका प्रस्थान और मैत्रेय ऋषिका आगमन	४७४
धृतराष्ट्र और मैत्रेय ऋषिका उपदेश	४७५
दुर्य्योधनको मैत्रेय ऋषिका शाप और किर्म्मीर राक्षसकी कथा ...	४७६
भीमके हाथसे किर्म्मीर राक्षसका बध	४७७
वनवासी पाण्डवोंके निकट भोजवंशियोंका आगमन और पाण्डवोंसे कृष्णकी वार्त्तालाप	४७८
अर्ज्जुनके द्वारा कृष्णकी स्तुति ...	४७९
कृष्णके विषयमें द्रौपदीकी उक्ति ...	४८०
कृष्णका द्रौपदीको धीरज देना ...	४८३
द्रोणाचार्य्यके बिनास विषयमें धृष्टद्युम्नके बचन	४८३
शाल्ववध उपाख्यान और द्वारकापुरीकी रक्षा	४८४
शाल्वके सङ्ग वृष्णिवंशियोंका युद्ध ...	४८६
शाल्वके सङ्ग प्रद्युम्नका युद्ध ...	४८७
शाल्वकी पराजय	४९०
शाल्वको मारनेके लिये कृष्णका प्रस्थान शाल्व और कृष्णका युद्ध ...	४९०
सौभका नष्ट होना और शाल्वका मारा जाना	४९४
श्रीकृष्ण प्रभृतिका पाण्डवोंके समीपसे विदा होना	४९४
पुरवासियोंका युधिष्ठिरके समीपसे विदा होकर निज निज स्थानपर जाना ...	४९५
पाण्डवोंका द्वैतवनमें जाना ...	४९५
युधिष्ठिर और मार्कण्डेयमुनिकी वार्त्तालाप	४९६
वकदाल्भ्य मुनिकेद्वारा युधिष्ठिरकी प्रशंसा	४९८
युधिष्ठिरके सङ्ग द्रौपदीकी वार्त्तालाप	„
युधिष्ठिरकी वक्तृता	५०१
द्रौपदीकी वक्तृता	५०३
द्रौपदीके समीप युधिष्ठिरके बचन	५०५
युधिष्ठिरके निकट द्रौपदीके बचन	५०८
भीमसेनकी वक्तृता	५०९
भीमसेनके समीप युधिष्ठिरके बचन	५१२
भीमसेनकी उक्ति	५१३
युधिष्ठिरके निश्चित बचन ...	५१५
युधिष्ठिरके निकट वेदव्यास मुनिका आगमन	५१६
युधिष्ठिरको प्रतिस्मृति विद्या देकर व्यासदेवका अन्तर्द्धान होना और युधिष्ठिरका काम्यक वनमें जाना ...	„
युधिष्ठिरके निकट अर्ज्जुनका प्रतिस्मृति विद्या सीखना और मन्त्र साधनके लिये प्रस्थान करना	५१७
अर्ज्जुनको साक्षात इन्द्रका दर्शन प्राप्त होना	५१९
महादेवका साक्षात दर्शन करनेके लिये अर्ज्जुनका महातपस्यामें रत होना	„
किरात वेषधारी महादेवका अर्ज्जुनके समीप आना	५२०
मूकराक्षसके ऊपर एक सङ्ग ही किरात वेषधारी महादेव और अर्ज्जुनकी बाणवर्षा तथा वादानुवाद	५२०
किरातवेषी महादेव और अर्ज्जुनका युद्ध	५२१
अर्ज्जुनका मूर्च्छित होके पृथ्वीमें गिरना और सावधान होकर महादेवकी पूजा करनी	५२२
अर्ज्जुनके द्वारा महादेवकी स्तुति	५२३
अर्ज्जुनको महादेवके द्वारा पाशुपत अस्त्र प्राप्त होना	५२३

विषय	पृष्ठा
अर्ज्जुनका यम, वरुण, कुवेर तथा इन्द्रादि देवताओंके समीप दिव्य अस्त्र पाना	५२५
इन्द्रके रथको लेकर अर्ज्जुनके निकट मातलिका आना	५२६
अर्ज्जुनका इन्द्र लोकमें जाना ...	५२७
अर्ज्जुनका महास्त्रोंको सीखना ...	५२८
अर्ज्जुनको नाचने गानेकी शिक्षा प्राप्त होनी और अर्ज्जुनके समीप उर्व्वशीका जाना	५२९
अर्ज्जुनको उर्व्वशीका शाप ...	५३१
इन्द्रके निकट लोमश मुनिका जाना और अर्ज्जुनके विषयमें वार्त्तालाप ...	५३२
इन्द्रलोकसे युधिष्ठिरके निकट लोमश मुनिका आगमन, धृतराष्ट्र और सञ्जयकी वार्त्तालाप	५३३
युधिष्ठिर और भीमसेनकी वार्त्तालाप	५३७
युधिष्ठिरके निकट वृहदश्व मुनिका आगमन	५३८
राजा नलकी कथा	५३९
नलका हंस पकड़ना, दमयन्तीके सङ्ग हंसकी वार्त्तालाप	५४०
नारद मुनिके सङ्ग इन्द्रकी वार्त्तालाप	५४१
विदर्भ देशमें राजा नलसे इन्द्रादिकी भेंट होनी और उनका दूत होकर दमयन्तीके निकट नलका जाना	५४१
दमयन्ती और नलकी वार्त्तालाप	५४२
देवताओंके विषयमें दमयन्तीकी अनिच्छा	,,
देवताओंके निकट नलके द्वारा दमयन्तीका अभिप्राय वर्णन	५४३
दमयन्तीका राजा नलको पति बनाना	५४४
इन्द्रादि लोकपालोंसे नलको आठ वर मिलना, दमयन्तीके सङ्ग नलका विवाह राज्य शासन और पुत्र कन्याका जन्म वर्णन, कलि युगके सङ्ग देवताओंकी वार्त्तालाप ...	५४५
कलियुगकी सहायतासे नलके सङ्ग पुष्करका जूआ खेलना ...	५४६
सब हारनेके अनन्तर दमयन्तीके सहित नलका वनमें जाना, पक्षीरूपी कलियुगके द्वारा नलका वस्त्र हरण, नल और दमयन्तीकी वार्त्तालाप	५४७
नलका दमयन्तीको सोती हुई छोड़के चले जाना	५४९
जागनेपर दमयन्तीका शोकयुक्त आक्षेप	,,
दमयन्तीको अजगरका ग्रसना और व्याधके द्वारा दमयन्तीका सांपके मुखसे छूटना	५५०
दमयन्तीके शापसे व्याधेका बिनाश, अनेक स्थानोंमें नलको खोजती हुई दमयन्तीका घूमना	५५१
दमयन्तीको ऋषियोंका दर्शन प्राप्त होना	५५३
दमयन्तीको धीरज देके ऋषियोंका अन्तर्द्धान होना	५५४
मार्गमें बनियोंका झुण्ड देखके दमयन्तीका उनके सङ्ग चलना	,,
बनियोंके समूहमें जङ्गल हाथियोंका घुसना और उनके द्वारा बटोहियोंका बिनाश, तथा बचे हुए लोगोंका शोकयुक्त आक्षेप	५५५
दमयन्तीका चेदीराजके गृहमें निवास	५५७
कार्कोटक नागके काटनेसे नलका कुरूप होना	५५८
राजा ऋतुपर्णके सारथी बनके उनके समीप नलका निवास ..	५५९
नल दमयन्तीको खोजनेके लिये राजा भीमकी आज्ञासे अनेक ब्राह्मणोंका प्रस्थान	५६०
सुदेव ब्राह्मणके द्वारा दमयन्तीको पहचान	५६१
दमयन्तीका विदर्भ नगरमें पिताके समीप आना और राजा भीमका दमयन्तीके उपदेशानुसार नलको खोजनेके लिये दूत भेजना	५६२
दमयन्तीको पर्णाद ब्राह्मणके द्वारा नलका समाचार मिलना	५६३
राजा ऋतुपर्णके समीप दमयन्तीका पुनर्व्वार स्वयम्बर सन्वाद भेजना ...	५६३
राजा ऋतुपर्णका विदर्भ नगरको जा	

विषय पृष्ठा

राजा ऋतुपर्णसे नलको जूएकी विद्या मिलनी और नलके शरीरसे कलियुगका निकलना ५६६

विदर्भनगरमें राजा ऋतुपर्णका आना और नलके विषयमें दमयन्तीका तर्क वितर्क ५६७

दमयन्तीकी आज्ञासे केशिनीका बाहुकरूपी नलके समीप जाना, नल और केशिनीकी वार्त्तालाप ५६८

बाहुकके अद्भुत कर्म्मोंको देखके दमयन्तीको नलके विषयमें निश्चय होना ५७०

राजा नल और दमयन्तीका मिलाप ५७१

राजा ऋतुपर्णको नलका परिचय मिलना और उनसे अश्वविद्या सीखके नगरमें जाना ५७२

राजा नलका निज राज्यमें जाना ५७३

राजा नलको फिर अपना राज्य मिलना ... ५७४

युधिष्ठिरको जूएकी विद्या सिखाके वृहदश्व मुनिका प्रस्थान ... ५७५

अर्ज्जुनके विषयमें द्रौपदीके सङ्ग पाण्डवोंकी वार्त्तालाप ... „

युधिष्ठिरके निकट नारद मुनिका आना ५७६

पुलस्त्यके कहे हुए तीर्थोंका फल वर्णन ५७७

तीर्थयात्राकी आज्ञा देकर नारद मुनिका अन्तर्द्धान होना और धौम्य मुनिके सङ्ग युधिष्ठिरकी वार्त्तालाप ... ५९८

धौम्य मुनिके द्वारा तीर्थों तथा उनके फलोंका वर्णन ... ५९९

युधिष्ठिरके निकट लोमश-मुनिका आगमन ६०३

लोमश-मुनिके द्वारा इन्द्र और अर्ज्जुनका सम्वाद वर्णन ... ६०४

लोमशमुनि प्रभृतिके सङ्ग पाण्डवोंकी तीर्थयात्रा ... ६०६

युधिष्ठिरादिका नैमिषारण्यमें जाना ६०७

समठमुनिके द्वारा राजर्षि गयका यज्ञवर्णन ६०८

इल्वल राक्षसके द्वारा ब्राह्मणोंका माराजाना और अगस्त्यमुनिसे पितरोंकी वार्त्तालाप ६०९

विषय पृष्ठा

लोपामुद्राका जन्म वृत्तान्त ६१०

विदर्भराजकी कन्या लोपामुद्राके सङ्ग अगस्त्य मुनिका विवाह, लोपामुद्राकी अगस्त्यके निकट धनके लिये इच्छा ... „

धन मांगनेके लिये अगस्त्य मुनिका इल्वल राक्षसके पास जाना और वातापीको भक्षण करना ... ६११

इल्वल राक्षसके समीप धन पाके अगस्त्य मुनिका निज आश्रममें आना और दृढ़स्युका जन्म ६१२

रामके बाणसे परशुरामका तेज नष्ट होना ६१३

परशुरामका भृगुतीर्थके स्पर्शसे फिर तेजस्वी बनना, वृत्रासुरके बधकी कथा ६१४

कालेय दैत्योंके दुष्कर्म्मोंका वर्णन ६१६

देवताओंके द्वारा नारायणकी स्तुति ६१७

विष्णुकी आज्ञासे देवताओंका अगस्त्य मुनिके पास जाके समुद्र सोखनेके लिये उनसे प्रार्थना करनी ... „

विन्ध्या पर्वतका बढ़ना अगस्त्य मुनिके द्वारा विन्ध्याचल पर्वतका निवृत्त होना ६१८

अगस्त्य मुनिके समुद्रका जल पीनेपर देवताओंके द्वारा कालेय दैत्योंका बध ६१९

राजा सगरकी कथा . ६२०

असमञ्जसका उपाख्यान ... ६२२

अंशुमानके द्वारा यज्ञीय घोड़ेको मंगाना, राजा सगरकी यज्ञ समाप्ति और गङ्गाको लानेका उद्योग ... „

राजा भगीरथके द्वारा गङ्गाका मर्त्यलोकमें आना और सगरवंशका उद्धार, नन्दा तथा अपरनन्दा तीर्थका विवरण ... ६२४

ऋष्यशृङ्ग मुनिकी कथा ... ६२६

युधिष्ठिरका गङ्गासागरादि तीर्थ दर्शन ६३०

अकृतव्रणके सङ्ग युधिष्ठिरकी वार्त्तालाप ६३१

राजा कार्त्तवीर्य्यका और परशुरामका जन्म विवरण ... ६३२

विषय	पृष्ठा
परशुरामका पिताकी आज्ञा पालना	६३३
परशुरामके हाथसे कार्त्तवीर्य्यार्ज्जुन तथा अन्यान्य क्षत्रियोंका मारा जाना	६३४
युधिष्ठिरादिको परशुरामका दर्शन प्राप्त होना ...	६३५
अनेक तीर्थोंका दर्शन करते हुए पाण्डवोंका प्रभास तीर्थमें जाना और बलराम प्रभृतिके सङ्ग पाण्डवोंकी भेंट होनी	६३६
पाण्डवोंके विषयमें यदुवंशियों तथा बलदेव प्रभृतिको वार्त्तालाप ...	,,
पयोष्णि तीर्थ और नृग राजाका यज्ञ वर्णन	६३८
च्यवन मुनिकी कथा ...	६३९
राजामान्धाताकी कथा ..	६४३
राजा सोमकका वृत्तान्त यमुना तीर्थमें नहानेके अनन्तर पाण्डवोंका सब लोकों तथा अर्ज्जुनको देखना और कुरुक्षेत्रादि तीर्थोंके दर्शन	६४६
बाज, कबूतर और राजा उशीनरकी कथा	६४७
श्वेतकेतु, कहोड़ तथा अष्टावक्रकी कथा	६४९
समङ्गादि तीर्थोंके फल वर्णन ...	६५६
यवक्रीत मुनिकी कथा ...	,,
उशीरबीज, मैनाक श्वेतगिरि और काल पर्व्वतके पार होनेके अनन्तर पाण्डवोंको कैलास पर्व्वत तथा बदरिकाश्रम देखना	६६१
इन्द्रसेन प्रभृतिको राजा सुबाहुके समीप छोड़के पाण्डवोंका गन्धमादन पर्व्वतकी ओर जाना	६६२
शुद्धाचारी पाण्डवोंका अलकनन्दा नदीका देखना और नरकासुरके बधकी कथा	६६४
बाराहरूपी विष्णुके द्वारा पृथ्वीका उद्धार	६६५
प्रचण्ड आंधी तथा वर्षासे पाण्डवोंका मोहित होना ...	६६६
द्रौपदीका थककर पृथ्वीपर गिरना	६६७
युधिष्ठिरका विलाप और घटोत्कचका आगमन	६६७
घटोत्कच आदि राक्षसोंके कन्धेपर चढ़के ब्राह्मणों तथा पाण्डवोंका बदरिकाश्रममें जाना	६६८
सुगन्धयुक्त कमलके फूलको लानेके लिये भीमसेनका प्रस्थान ...	६७०
भीमसेनका हनुमानको देखना	६७२
हनुमान और भीमसेनको वार्त्तालाप	६७३
हनुमानकी पूंछ न उठा सकनेसे भीमका लज्जित होके हनुमानकी विनय करनी, हनुमानके द्वारा राजा रामचन्द्रका वृत्तान्त वर्णन	६७४
हनुमानके पहले रूपको देखनेके लिये भीमसेनकी इच्छा और हनुमानके द्वारा चारों युगोंके वृत्तान्त तथा धर्म्म वर्णन	६७५
भीमसेनका हनुमानके समुद्र लांघनेके रूपको देखना ...	६७७
भीमको हनुमानका उपदेश	,,
भीमसेनको मार्ग बताकर हनुमानका अन्तर्द्धान होना	६७९
भीमसेनका सुगन्धियुक्त कमल देखना	६८०
राक्षसोंके सङ्ग भीमका युद्ध, राक्षसोंकी पराजय, कुबेरका भीमके कार्य्यको अनुमोदन करना ...	६८१
कुबेरके कमलवनमें भीमसेनके सङ्ग युधिष्ठिरादिकी भेंट होनी ...	६८२
आकाश वाणी सुनके कुबेरके स्थानसे लौटकर पाण्डवोंका नर-नारायणके आश्रममें आना युधिष्ठिर, नकुल और सहदेवको जटासुरका हरणादि वृत्तान्त ...	६८३
भीमके सङ्ग जटासुरका युद्ध	६८५
भीमके हाथसे जटासुरका मारा जाना	६८६
पाण्डवोंका हिमाचलमें वृषपर्व्वाका आश्रम देखना	६८७
पाण्डवोंका आर्ष्टिषेणमुनिके आश्रममें आना	६९०
द्रौपदीके कहनेसे भीमसेनका फूल लानेके लिये कुबेरपुरमें जाना ...	६९२

विषय	पृष्ठा
भीमके हाथसे कुवेरपुरमें बहुतसे यक्ष, राक्षस तथा मणिमानका मारा जाना	६६३
कुवेरपुरमें भीमसेनके पास युधिष्ठिरादिका जाना	६६४
पाण्डवोंको कुवेरका दर्शन होना ...	,,
कुवेरके द्वारा यक्ष राक्षसोंके शापका वृत्तान्त वर्णन ...	६६५
धौम्य प्रभृति ब्राह्मणोंके सङ्ग पाण्डवोंका मिलन	६६७
अर्ज्जुनके सङ्ग युधिष्ठिरादिकी भेंट होनी और पाण्डवोंके समीप इन्द्रका आगमन तथा वार्त्तालाप ...	६६८
अर्ज्जुनके सङ्ग पाण्डवोंकी वार्त्तालाप	७००
अर्ज्जुनके दिव्य अस्त्रोंकी शिक्षाका वृत्तान्त	७०३
अर्ज्जुनका निवातकवचोंसे लड़नेको जाना	७०५
निवात कवचवध विवरण ...	७०६
हिरण्यपुरवासी पुलोम और कालकञ्ज दानवोंका वृत्तान्त	७०८
पुलोम और कालकञ्ज दानवोंके साथ अर्ज्जुनका युद्ध	७१०
अर्ज्जुनका राजा युधिष्ठिरको दिव्यास्त्रोंका दिखाना	७१२
लोमश मुनिका देवलोकमें जाना और पाण्डवोंका वृषपर्व्वाके स्थानमें लौट आना	७१४
पाण्डवोंका सुबाहुके राज्यमें पहुंचाना और घटोत्कचादिको बिदा करना	७१५
भीमसेनका अजगरके द्वारा पकड़े जाना	७१६
शापग्रस्त अजगर रूपी राजा नहुषका वृत्तान्त	७१७
युधिष्ठिरके सङ्ग अजगर रूपी नहुषकी वार्त्तालाप	७१८
पांडवोंका काम्यकवनमें लौटना और वर्षा पर कृष्णादिका आगमन ...	७२३
कृष्णादिके सङ्ग बैठे हुए पाण्डवोंके समीप मारकण्डेय और नारदमुनिका आगमन	७२४
मारकण्डेयके द्वारा जीवके दुःखादि भोग कारण वर्णन	७२५
अरिष्टनेमी मुनिकी कथा ...	७२७
राजा वैण्य, अत्रिमुनि और गौतमकी कथा	७२८
सरस्वती और कश्यपका सम्वाद ...	७२८
वैवस्वतमनु और मत्स्यावतारकी कथा	७३१
युग और युगक्षयका वृत्तान्त ...	७३३
वटवृक्षवासी बालकके उदरमें मार्कण्डेय मुनिको सब लोकोंका दर्शन प्राप्त होना	७३६
कलियुगका विवरण	७३८
प्रजारक्षण धर्म्म-वर्णन	७४३
मण्डूक कन्या सुशोभनाकी कथा ...	,,
शल प्रभृति राजाओं तथा वामदेव मुनिकी कथा	७४५
राजर्षि बक और इन्द्रका सम्वाद ...	७४७
राजा सुहोत्र और शिविकी कथा तथा राजा ययातिके दानका विवरण ...	७४८
राजा वृषदर्भ और सेंदुककी कथा तथा उशीनरपुत्र शिविराजके द्वारा कबूतरकी रक्षा	७४८
अष्टक, प्रतर्द्दन, वसुमना और नारदमुनिसे बढ़के राजा शिविको महाभाग्य वर्णन	७५१
राजा इन्द्रद्युम्नकी कथा ...	७५२
दानके फलाफलका वर्णन ...	७५३
यमलोकके मार्गका वृत्तान्त ...	७५५
पुण्यकर्म्म, शौचाचरण और दानकी विधिका वर्णन	,,
उतङ्क महर्षिकी तपस्या और विष्णुसे वर पाना	७५८
राजा इक्ष्वाकुकी वंशावली और कुवलाश्वको राज्य देकर बृहदश्वका तपोबनको और प्रस्थान करना, उतङ्क मुनिका बृहदश्वके समीप जाना तथा बृहदश्वके द्वारा कुवलाश्वको धुन्धुके मारनेकी आज्ञा मिलनी ...	७५८
मधुकैटभ बधकी कथा ...	७६०

विषय पृष्ठा

धुन्धुका वृत्तान्त, पुत्रोंके सहित कुवलाश्वके सङ्ग युद्ध तथा धुन्धुका बध ... ७६१

कुवलाश्वको धुन्धुमार नाम और वर प्राप्त होना ७६२

उत्तम दुर्ज्ञेय धर्म्म-निरूपण ... „

कौशिक ब्राह्मणकी कोपदृष्टिसे बगुलीका मरना, कौशिकका ब्राह्मणकी सती स्त्रीके निकट भिक्षा मांगना और उसकी पतिसेवा वर्णन ७६३

कौशिककी भीख देनेके लिये सती स्त्रीका आना, कौशिकका क्रुद्ध होना और सती स्त्रीका उससे ब्राह्मणके लक्षण तथा धर्म्म कहके उसके क्रोधको शान्त करना ७६४

कौशिक ब्राह्मणका धर्म्मव्याधके निकट जाना व्याधका निज कर्म्म वर्णन ... ७६५

शिष्टाचारका वर्णन ७६७

निज धर्म्मके अनुसार हिंसादिके दोष-गुण ७६८

जीवकी नित्यताका वर्णन ... ७७१

जन्म और जातिलका कारण वर्णन „

पञ्चमहाभूत और उनके सत, रज, तथा तमोगुणका बिवरण ७७३

पार्थिव धातुओंका देहाभिमानित्वमें कारण ७७४

प्राणादि वायुसे शरीरका चेष्टायुक्त होना „

तत्त्वज्ञानकी उपाय वर्णन ... ७७५

ब्राह्मणको धर्म्म व्याधका माता पिताकी सेवारूपी धर्म्म प्रदर्शित करना ... ७७६

कौशिक ब्राह्मणके विषयमें माता पिताकी सेवा करनेके लिये धर्म्मव्याधकी आज्ञा ७७७

धर्म्मव्याधके पूर्व्व जन्मके शापका वृत्तान्त ७७८

कौशिकके द्वारा धर्म्म व्याधकी प्रशंसा और शोकरहित होके सन्तोष लाभके गुण वर्णन „

कौशिक ब्राह्मणका धर्म्मव्याधके निकटसे बिदा होकर माता-पिताकी सेवा करनी और अङ्गिराका उपाख्यान ... ७७९

अग्नि और अग्नि कन्याओं तथा मरुतोंकी अभिशाप ७८१

देवसेनाको इन्द्रका अभयदान और इन्द्रके सङ्ग युद्धमें केशीका भागना ... ७८५

देवसेनाके सङ्ग इन्द्रको वार्त्तालाप ... „

देवसेनाके पतिके लिये इन्द्रके विचार विषयमें ब्रह्माका अनुमोदन और सप्तर्षियोंकी स्त्रियोंसे अग्निकी आसक्ति ... ७८६

अरुन्धतीके अतिरिक्त सप्तर्षियोंकी स्त्रियोंका रूप धरके स्वाहाका अग्निसे सङ्गम और श्वेत पर्व्वतपर अग्निके वीर्य्यको छोड़ना ... ७८७

स्कन्दकी उत्पत्ति तथा विक्रम प्रकाशित करना ... ... „

स्कन्दकी माताओंका विवरण ... ७८८

विश्वामित्रके द्वारा स्वामकार्त्तिकका संस्कार होना और सप्तर्षि गणोंका छः स्त्रियोंको त्यागना ७८९

स्वामकार्त्तिकको मारनेके लिये देवताओंका यत्न ... ... „

इन्द्रादि देवतोंकी पराजय और विसाखकी उत्पत्ति, देवताओंका कार्त्तिकेयके शरणमें जाना तथा कार्त्तिकेयके पारिषदोंका वृत्तान्त ७९०

कार्त्तिकेयका देवताओंके सेनापति पदपर अभिषिक्त और रुद्रपुत्र होनेका विवरण ७९२

देवसेनाके सङ्ग कार्त्तिकेयका बिवाह ७९३

सप्तर्षियोंकी छः स्त्रियां, कृत्तिका तथा कार्त्तिकेयकी अन्य माताओं और स्कन्दाग्रजाका विवरण ... ... „

कार्त्तिकेयके द्वारा स्वाहा और अग्निका संयोग ७९४

अग्निके देहमें महादेव और स्वाहाके शरीरमें उमा देवीका प्रवेश, मिञ्जिक और मिञ्जिकाका विवरण ७९६

शिव पार्व्वतीका भद्रवट्को जाना ... „

सातवें वायु स्कन्धकी रक्षा करनेके लिये कार्त्तिकेयकी महादेवकी आज्ञा।

विषय	पृष्ठा
देव दानवोंका युद्ध ...	७९८
कार्त्तिकेयके हाथसे महिषासुर प्रभृति दानवोंका मारा जाना	७९९
इन्द्रके द्वारा कार्त्तिकेयकी प्रशंसा और देवताओंका निज निज स्थानमें जाना	„
कार्त्तिकेयकी स्तुति तथा मार्कण्डेय समस्या प्रश्न समाप्त	८००
द्रौपदी-सत्यभामा सम्वाद तथा सत्यभामाके समीप द्रौपदीका स्वामीके चित्तको आकर्षित करनेकी उपाय कहना ...	„
द्रौपदीके विषयमें सत्यभामाके बचन और कृष्णका पाण्डवोंके निकटसे बिदा होकर निज नगरीमें जाना	८०३
बनवासी पाण्डवोंका दुःख सुनके धृतराष्ट्रका शोकित होना ...	८०४
बनवासी पाण्डवोंको ऐश्वर्य्य दिखानेके लिये दुर्य्योधनकी शकुनि और कर्णको परामर्श	८०६
घोषयात्राकी सलाह ...	८०७
सस्त्रीक दुर्य्योधन प्रभृतिका द्वैतबनमें जाके गोशालाके समीप सेना स्थापित करके डेरा करना	८०८
दुर्य्योधनादिका शिकार खेलना और युधिष्ठिरका राजर्षि यज्ञारम्भ, गन्धर्व्व सेनासे दुर्य्योधनकी सेनाका विवाद ...	८०९
दुर्य्योधनकी सेनासे गन्धर्व्व सेनाका युद्ध	८१०
चित्रसेन गन्धर्व्वके माया युद्धमें कर्णका भागना	८११
गन्धर्व्वोंका दुर्य्योधन प्रभृति तथा राजा रानियोंको हरना, दुर्य्योधनको सेनाके लोगोंका पाण्डवोंकी शरणमें जाना और भीमसेनके कठोर बचन	„
दुर्य्योधनादिको छुड़ानेके लिये युधिष्ठिरकी आज्ञा, कौरवोंको छुड़ानेके लिये अर्ज्जुनकी प्रतिज्ञा	८१२
गन्धर्व्वों और पाण्डवोंका मृदु युद्ध तथा उत्तर प्रत्युत्तर	८१३
पाण्डवोंके सङ्ग तुमुल युद्धमें गन्धर्व्वोंकी पराजय	„
अर्ज्जुन और चित्रसेनकी उक्ति प्रत्युक्ति	८१३
दुर्य्योधनादिका पाण्डवोंके द्वारा गन्धर्व्वोंके हाथसे छूटना गन्धर्व्वोंपर युधिष्ठिरकी प्रसन्नता और अमृत वर्षासे मृत गन्धर्व्वोंका जीवित होना	८१५
दुर्य्योधनका नगरकी ओर जाना, कर्ण और दुर्य्योधनकी बार्त्तालाप ...	„
दुर्य्योधनका व्रत करके प्राण छोड़नेकी इच्छा करनी, दुर्य्योधनसे दुःशासन और कर्णादिकी उक्ति प्रत्युक्ति ...	८१७
दैत्य-दानवोंका कृत्याके सहारे दुर्य्योधनको पातालमें मंगाना और साहस देनेके अनन्तर व्रतके स्थानमें पहुंचाना ...	८२०
दुर्य्योधनका व्रतसे उठके सेनाके सहित नगरमें जाना, दुर्य्योधनको भीष्मके बचन उपहास	८२१
कर्णका दिग्विजयके लिये चलना, कर्णका दिग्विजय करके दुर्य्योधनको धन सौंपके धृतराष्ट्र और गान्धारीका दर्शन करना	८२३
दुर्य्योधनका वैष्णव यज्ञारम्भ और निमन्त्रण करनेवाले दूतसे युधिष्ठिर और भीमसेनकी बार्त्तालाप	८२५
अर्ज्जुनको मारनेके लिये कर्णकी प्रतिज्ञा सुनकर युधिष्ठिरका चिन्तायुक्त होना और दुर्य्योधनका राज्यशासन बर्णन ...	८२६
युधिष्ठिरका सपनेमें हरिनोंका देखकर उनके बचनके अनुसार द्वैत बनको छोड़कर काम्यक बनमें जाना पाण्डवोंके समीप वेदव्यास मुनिके द्वारा दानका माहात्म्य बर्णन	८२७
मुग्दल ऋषिके एक द्रोणो धान प्राप्ति तथा अतिथि सत्कारकी कथा ...	८२९

विषय	पृष्ठा
दुर्य्योधनका दुर्व्वासा मुनिकी अतिथि सत्कार करके प्रसन्न करना और दुर्व्वासा मुनिसे दुर्य्योधनको वर मिलना, दुर्व्वासाका पाण्डवोंके समीप शिष्योंके सहित आतिथ्यके निमित्त जाना	८३३
द्रौपदीकी स्तुतिसे कृष्णका प्रसन्न होके शाक भक्षण करके तृप्त होना, ...	८३४
शिष्योंके सहित दुर्व्वासा मुनिका भागना	„
जयद्रथका द्रौपदीको देखना और उसके समीप कोटिकाख्यको भेजना ...	८३५
कोटिकाख्य और द्रौपदीका प्रश्नोत्तर	८३६
जयद्रथ और द्रौपदीका वाद विवाद	८३७
जयद्रथके द्वारा द्रौपदी हरण ...	८३८
पाण्डवोंका एकत्रित होना और धात्रीके मुखसे द्रौपदीका वृत्तान्त सुनके दौड़के जयद्रथका ललकारना	८४०
जयद्रथका द्रौपदीके मुखसे पाण्डवोंका परिचय सुनना	„
पाण्डवोंका जयद्रथके सहायकोंके सङ्ग युद्ध करके उन्हें मारना	८४१
द्रौपदीको रथसे उतारके जयद्रथका भागना	८४२
द्रौपदीके सहित युधिष्ठिर और नकुल सहदेवका आश्रममें जाना और अर्ज्जुनका एक कोसकी दूरीसे जयद्रथके घोड़ोंको मारना	८४३
भीमसेनका जयद्रथको पकड़के देमारना और उसके सिरपर पांच चोटी रखना	८४३
युधिष्ठिरकी आज्ञासे जयद्रथको छुटकारा मिलना, जयद्रथका महादेवके उद्देश्यसे तपकरना और महादेवके द्वारा नर नारायणका वृत्तान्त वर्णन	८४४
राम, लक्ष्मण, सीता और नैऋवण, विश्रवा प्रभृतिका जन्म वृत्तान्त	८४७
रावणादिका जन्म वृत्तान्त, और तपस्या	८४८
रावणादिका ब्रह्मासे वर पाके कुवेरको जीतके लङ्का छीनना और राक्षसोंका राजा होना	८४८
वानरादिके जन्म-विवरण ...	८४६
रामचन्द्रको युवराज करनेके लिये दशरथकी आज्ञा और दशरथके समीप कैकेयीका वर मांगना	८५०
सीता और लक्ष्मणके सहित रामका वनमें जाना दशरथका प्राण छोड़ना और रामकी पादुका रखके भरतका नन्दिग्राममें राज्य करना	„
रामके हाथसे खरदूषणादिका मारा जाना सूर्पणखाके मुखसे रामका पराक्रम सुनके रावणका मारीचके निकट जाना और रावण तथा मारीचकी वार्त्तालाप	८५१
मृग रूप धरके मारीचका सीताको लुभाना तथा मारीचका मारा जाना ..	८५२
लक्ष्मणसे सीताका कठोर वचन, लक्ष्मणका रामके समीप जाना और रावणके द्वारा सीताहरण	„
जटायुका पङ्ख काटके रावणका सीताको लङ्कामें लेजाना, रामका लक्ष्मणको आया हुआ देखके सोच करना, जटायुके मुखसे सीताहरण सुनना और जटायुकी मृत्यु, राम लक्ष्मणके द्वारा कवन्ध नाम राक्षसका मरना और विश्वावसुके रूपसे सुग्रीवके सङ्ग मित्रता करनेका उपदेश करके स्वर्गको जाना ...	८५३
पम्पाके तटपर रामका विलाप, लक्ष्मणके वचनसे सावधान होना और पितरोंका तर्पण करके ऋष्यमूक पर्व्वतपर जाना	८५५
ऋष्यमूकवासी सुग्रीवके साथ रामकी मित्रता होनी वालि और सुग्रीवकी लड़ाई	„
रामके वाणसे वालिकी मृत्यु, सुग्रीवका किष्किन्धाका राज्य तथा तारा प्राप्त होनी और माल्यवान पर्व्वतपर रामका निवास, रावणका सीताको अशोक वनमें रखना	८५६
राक्षसियोंका सीताको डराना,	

विषय   पृष्ठ

स्थिर प्रतिज्ञा, त्रिजटा और अविन्ध्यका सपना देखके सीताको प्रसन्न करके धीरज देना ८५७

रावण और सीताकी वार्त्तालाप ... ८५८

रामकी आज्ञासे लक्ष्मणका किष्किन्धामें जाना और सुग्रीवको सङ्ग लेकर रामके समीप लौट आना ८५९

हनुमान प्रभृतिका मधुबनके फलोंको भक्षण करना और हनुमानसे रामकी वार्त्तालाप ८६०

हनुमानके द्वारा सीताकी खोज और दर्शनादि वृत्तान्त वर्णन ... ८६१

रामके समीप बन्दरोंका आना ... „

बन्दरोंके सहित रामका समुद्रके पार जानेका विचार ... ... „

रामकी आज्ञासे नलका समुद्रमें पुल बांधना, रामके समीप विभीषणका आना और रामके मन्त्रित तथा लङ्काके राज्यपर अभिषिक्त होना, सेनाके सहित रामका समुद्रके पार जाना, रामके समीप वेष बदलके रावणके मन्त्री शुकसारणका आना और रामकी आज्ञासे उन्हें बन्दरोंकी सेना दिखाके छोड़ देना ८६२

रावणके द्वारा लङ्कापुरीकी रक्षा और रावणके समीप अङ्गदका जाना ... ८६३

लङ्काकी क्षारदिवाली आदि तोड़नेके समय युद्धमें बन्दरों तथा बहुतेरे राक्षसोंका मारा जाना ८६४

राम-रावण तथा राक्षसोंके सङ्ग बन्दरोंका घोर युद्ध ... ... „

रावणका कुम्भकर्णको जगाना ... ८६५

कुम्भकर्णका युद्ध और उसकी मृत्यु ८६६

लक्ष्मण और मेघनादका भयङ्कर युद्ध ८६७

मेघनादका अस्त्रोंके प्रभावसे राम-लक्ष्मणको बांधना, प्रज्ञास्त्र तथा विशाल्या औषधीसे राम लक्ष्मणका सावधान होना और कुबेरके भेजे हुए जलसे नेत्रोंको धोना ... „

लक्ष्मणके हाथसे मेघनादका मारा जाना, रावणका सीताको मारनेके लिये उद्यत होना और अविन्ध्यके बचनसे रावणका क्रोध शान्त होना ८६८

रामके सङ्ग रावणका मायायुद्ध और इन्द्रके भेजे हुए रथपर रामका चढ़ना तथा राम-रावणका भयङ्कर युद्ध ... ८६९

रामके हाथसे रावणका मारा जाना और विभीषणको लङ्काका राज्य मिलना „

रामका सीताको परित्याग करना और सीताके विषयमें रामसे वायु तथा ब्रह्माकी वार्त्तालाप ८७०

देवतों तथा पिताके बचनसे रामका सीताको ग्रहण करना, वर पाना, हनुमानको सीतासे वर मिलना और रामका लङ्कासे प्रस्थान करना ... ... „

रामादिका किष्किन्धामें आना, अङ्गदको युवराजके पदपर अभिषिक्त करना और रामका राज्याभिषेक ... ८७१

मार्कण्डेय मुनिका बचन सुनके युधिष्ठिरका शोक रहित होना और राजा अश्वपति तथा सावित्रीकी कथा ८७२

राजा अश्वपतिको गायत्रीसे वर मिलना, सावित्रीका जन्म और पिताकी आज्ञासे स्वयं वर खोजना ८७५

सत्यवानके सङ्ग सावित्रीका बिवाह और सावित्रीका त्रिरात्र व्रत करना ... ८७५

सत्यवानके सङ्ग सावित्रीका बनमें जाना, सत्यवानके सिरमें पीड़ा होनी और उनके समीप यमराजका आगमन ... ८७७

सत्यवानको मृत्यु, यमराजसे सावित्रीको वर मिलना ... ८७८

सत्यवानका फिर जीवित होना, सत्यवान और सावित्रीकी वार्त्तालाप .. ८८०

सत्यवान और सावित्रीका आश्रमकी ओर

विषय पृष्ठा

चलना राजा द्युमत्सेनका सत्यवान और सावित्रीको ढूढ़ना और ब्राह्मणोंके सङ्ग वार्त्तालाप ८८२

सत्यवान और सावित्रीसे ऋषियोंकी वार्त्तालाप ८८३

राजा द्युमत्सेनको राज्य मिलना, सावित्रीके एक सौ पुत्र तथा एक सौ भाइयोंकी उत्पत्ति ८८४

सूर्य्य और कर्णकी वार्त्तालाप .. ८८५

कुन्तीके द्वारा ब्राह्मणकी सेवा ... ८८६

ब्राह्मणसे कुन्तीको मन्त्रप्राप्ति ... ८९०

कुन्तीका सूर्य्यको आह्वान करना ... „

सूर्य्यके प्रभावसे कुन्तीका गर्भवती होना ८९१

कुन्तीके गर्भसे कर्णकी उत्पत्ति, कुन्तीका कर्णको अश्वनदीमें बहा देना ... ८९२

अधिरथ सूतके द्वारा कर्णका प्रतिपालन और अस्त्रशिक्षाका वृत्तान्त ... ८९३

कर्णके समीप ब्राह्मण वेषधारी इन्द्रका आना, इन्द्र और कर्णकी वार्त्तालाप ८९४

कर्णका कवच और दोनों कुण्डल इन्द्रको दान करके उनसे अमोघ शक्ति ग्रहण करना ८९५

हरिणके द्वारा अरणीहरण और पाण्डवोंका उस हरिनको बनमें खोजना तथा भूख प्याससे कातर पाण्डवोंके शोकयुक्त बचन ८९६

यक्षके तालाबमें जल पीनेसे नकुल, सहदेव, अर्ज्जुन और भीमसेनकी मृत्यु, .. ८९७

युधिष्ठिरका तालाबपर गिरे हुए भाइयोंका देखना, युधिष्ठिरका विलाप और विशेष चिन्ता करना ८९८

यक्ष और युधिष्ठिरकी वार्त्तालाप .. ८९९

यक्षका प्रश्न करना और युधिष्ठिरका उत्तर देना ९००

युधिष्ठिरका यक्षसे नकुलके जीवित होनेका वर मांगना और भीमादिका जीवित होना तथा यक्षरूपी धर्म्मका युधिष्ठिरको परिचय देना ९०४

वर देके धर्म्मका अन्तर्द्धान होना, ब्राह्मणोंसे अनुमति लेके पाण्डवोंका छिपके निवास करनेके लिये बिचार करना ... ९०५

बनपर्व्वका माहात्म्य तथा बनपर्व्वकी समाप्ति ९०६

विराटपर्व्वका सूचीपत्र।

युधिष्ठिरकी अर्ज्जुनके सङ्ग अज्ञातवासकी सलाह ९०९

विराट नगरमें वेष बदलके निवास करनेके विषयमें युधिष्ठिर और भीमसेनका विचार ९१०

विराट नगरमें छिपकर रहनेकेलिये अर्ज्जुन, तथा नकुल और सहदेवका बिचार ... ९११

विराट नगरमें अज्ञातवासके लिये द्रौपदीका विचार और धौम्य आदिको पाञ्चालदेश तथा इन्द्रसेन प्रभृतिको द्वारका पुरीमें जानेके निमित्त युधिष्ठिरकी आज्ञा ... ९१२

पाण्डवोंकी राजभवनमें बसनेके विषयमें धौम्य मुनिका उपदेश ९१३

धौम्य मुनिके उपदेशमें युधिष्ठिरकी सम्मति ९१४

युधिष्ठिरका विराट नगरको जाना और धौम्य मुनिका पाञ्चालदेश तथा इन्द्रसेन प्रभृतिका द्वारका पुरीमें जाना... .. „

शमीवृक्षपर धनुर्वों तथा अस्त्रादिको रखके पाण्डवोंका विराट नगरमें जाना, युधिष्ठिरके द्वारा दुर्गा देवीकी स्तुति ... ९१६

दुर्गा देवीसे युधिष्ठिरको वर मिलना और युधिष्ठिरका राजा विराटकी सभामें जाना ९१७

विराटकी सभामें भीमसेनका प्रवेश ... ९१८

विराटकी रनिवासमें द्रौपदीका प्रवेश... ९१९

विराटकी गोशाला तथा सभामें सहदेवका प्रवेश ... ..

विषय	पृष्ठा
बिराटकी सभामें अर्ज्जुनका प्रवेश ...	६२२
बिराटकी घुड़साल तथा सभामें नकुलका जाना	६२३
बिराट नगरमें पाण्डवोंका परस्पर अर्थ सहायता करते हुए निवास तथा द्रौपदीकी रक्षा	„
भीमसेनके हाथसे जीमूत नाम मल्लका मारा जाना	६२४
पाण्डवों तथा द्रौपदीके द्वारा बिराट और अन्तःपुरवासियोंकी प्रसन्नता सुदेष्णा रानीके समीप कीचकका द्रौपदीको मांगना ...	६२५
कीचकका द्रौपदीसे सङ्गम करनेकी प्रार्थना	६२६
हितापदेशके छलसे परनारी गमन दोष कहके द्रौपदीका कीचकको निवारण करना	„
सैरिन्ध्रीको पानेके लिये सुदेष्णा रानीके निकट कीचककी परामर्श ...	६२७
सुदेष्णाका कीचकके घरमें पानी लानेके लिये द्रौपदीको भेजना, सूर्य्यका द्रौपदीकी रक्षाके लिये एक राक्षस नियुक्त करना, कीचक और सैरिन्ध्रीका बादानुबाद ...	„
कीचकका द्रौपदीको पकड़ना तथा द्रौपदीके झटकेसे कीचकका पृथ्वीमें गिरना, द्रौपदीका भागके बिराटकी सभामें जाना, कीचकका द्रौपदीको लात मारना, सूर्य्यके भेजे हुए राक्षसके द्वारा कीचकका दूर फेंका जाना और युधिष्ठिर तथा भीमसेनका क्रुद्ध होना युधिष्ठिरके इशारेसे भीमका क्रोध शान्त होना, द्रौपदीका बिराटकी सभामें बिलाप ...	६२८
द्रौपदीके विषयमें बिराटका बचन ...	६२९
राजा युधिष्ठिरके बचनसे द्रौपदीका सुदेष्णा रानीके पास जाना, सुदेष्णा और द्रौपदीकी वार्त्तालाप	६३०
भीमसेनके शयनगृहमें द्रौपदीका जाना भीमसेनका जागना	६३१
भीमसेनके निकट द्रौपदीके दुःखयुक्त बचन	६३१
भीमसेनका द्रौपदीको धीरज देना ...	६३६
कीचकको मारनेके बिषयमें द्रौपदी और भीमसेनकी परामर्श	६३७
राजभवनमें द्रौपदी और कीचककी वार्त्तालाप	६३८
द्रौपदीका भीमसेनको कीचकका सम्वाद देना, कीचकको मारनेके लिये भीमसेनका शपथ करना	„
नृत्यशालामें कीचक और भीमसेनकी वार्त्तालाप तथा कीचक और भीमसेनका युद्ध	६३९
भीमसेनके हाथसे कीचकका मारा जाना	६४०
नृत्यशालामें पहरेवालोंका मरे हुए कीचकको देखना	६४१
कीचकके भाइयोंका मरे हुए कीचकके सङ्ग द्रौपदीको अरथीमें बांधके श्मशानमें जाना	„
भीमके हाथसे उपकीचकोंका मारा जाना	६४२
द्रौपदीको देखके मत्स्यदेशवासियोंका व्याकुल होना, द्रौपदीके सङ्ग भीमसेनकी वार्त्तालाप और नाचघरमें सैरिन्ध्रीके सङ्ग बृहन्नला तथा कन्याओंको वार्त्तालाप सैरिन्ध्रीका राजा बिराटको रनिवासमें जाना और उसके सङ्ग सुदेष्णारानीकी वार्त्तालाप ...	६४३
देश देशमें कीचकके मारनेका समाचार फैलना, पाण्डवोंकी खोजनेवाले दूतोंका लौटके हस्तिनापुरमें पाण्डवोंके न मिलने और कीचकके मरनेका समाचार कहना ..	६४४
पाण्डवोंकी खोजनेके विषयमें दुर्य्योधन, कर्ण और दुःशासनके बचन ...	„
पाण्डवोंके ढूढ़नेके विषयमें द्रोणाचार्य्यके बचन	६४५
पाण्डवोंके ढूढ़नेके विषयमें भीष्मकी वक्तृता	„
पाण्डवोंके विषयमें कृपाचार्य्यके नीतियुक्त बचन	६४६

विषय पृष्ठा

सुशर्म्माको विराट नगरमें जानेकी सम्मति ... ६४७

कर्णका सुशर्म्माके बचनको अनुमोदन करना और सेनाका दो भाग करके सुशर्म्मा और दुर्य्योधनादिका दिशाविभाग क्रमसे गऊ हरनेके लिये विराट नगरमें जाना ... ६४८

सुशर्म्माका विराटके अहीरोंसे गौओंको छीन लेना, अहीरोंके मुखसे गऊ हरनेका वृत्तान्त सुनके राजा विराटका युद्धके निमित्त तैयार होना .. ... „

राजा विराटकी आज्ञासे चारों पाण्डवोंका युद्ध करनेके लिये जाना और त्रिगर्त्त तथा विराटकी सेनाका युद्ध... ... ६४९

शतानीक प्रभृति तथा राजा विराट और सुशर्म्माका युद्ध ६५०

रातके युद्धमें सुशर्म्माका राजा विराटको पकड़ना और विराटको छुड़ानेके लिये भीमसेनको युधिष्ठिरकी आज्ञा ... ६५१

चारों पाण्डवोंका त्रिगर्त्त सेनाके सङ्ग युद्ध करना... ... „

भीमसेनके द्वारा सुशर्म्माको पराजय, भीमसेनका सुशर्म्माको पकड़के युधिष्ठिरको दिखाना और युधिष्ठिरकी आज्ञासे सुशर्म्माको छोड़ देना ६५२

सुशर्म्माका विराट नगरसे प्रस्थान करना कङ्क प्रभृतके विषयमें विराटको प्रसन्नता और मत्स्य नगरमें विराटके विजयकी सूचना ६५३

दुर्य्योधन प्रभृतिका विराटको गौवोंको हरना, अहीरोंके मुखसे उत्तरको गऊ हरनेका समाचार मिलना... ... „

स्त्रियोंके बीच सारथीके निमित्त उत्तरको वार्त्तालाप, सैरिन्ध्रीके द्वारा वृहन्नलाका सारथ्य कर्म्म वर्णन... ... .. ६५४

उत्तराका वृहन्नलाको बुलानेके लिये आना,—वृहन्नलासे उत्तरको वार्त्तालाप ६५५

विषय पृष्ठा

वृहन्नलाको सारथी बनाकर उत्तरका युद्ध करनेके लिये चलना और कौरवोंकी सेना देखके भयभीत होना... ... ६५६

उत्तर और वृहन्नलाका वादानुवाद, उत्तरका भागना और उत्तरको पकड़नेके लिये अर्ज्जुनका उसके पीछे दौड़ना ... ६५७

वृहन्नलाको उत्तरके पीछे दौड़ते देखकर कौरवोंके बीच तर्क वितर्क होना, वृहन्नलाका उत्तरको पकड़ना, उत्तरकी विनय, अर्ज्जुनका रथी बनके युद्ध करना स्वीकार करके उत्तरको रथ हांकनेकी आज्ञा देकर धीरज देना ६५७

नपुंसक वेषधारीको अर्ज्जुन जान और अशकुनोंको देखकर द्रोणाचार्य्यकी वक्तृता तथा कौरवोंकी सावधान करना कर्ण और दुर्य्योधनादिकी वार्त्तालाप ... ६५८

अर्ज्जुनका उत्तरको शमीवृक्षपर चढ़के युधिष्ठिरके धनुष बाण लानेके लिये आज्ञा, उत्तरका शमीवृक्ष परसे पाण्डवोंके धनुषोंका उतारना ६५९

पाण्डवोंके धनुष बाणादिका परिचय ६६०

छिपे हुए वेषमें रहनेवाले पाण्डवों तथा द्रौपदीका परिचय, अर्ज्जुनके दश नाम और उसका कारण वर्णन ... ६६१

उत्तरकी अर्ज्जुनके विषयमें प्रीति और भय रहित होना, उत्तर तथा अर्ज्जुनका प्रश्नोत्तर ६६२

अर्ज्जुनका युद्ध करनेके लिये कौरवोंकी ओर चलना ६६३

दुर्य्योधनसे द्रोणाचार्य्यकी वार्त्तालाप तथा उन्हें सावधान करना ६६४

भीष्म प्रभृतिके समीप दुर्य्योधनकी वक्तृता „

द्रोणाचार्य्यकी स्पर्द्धा करके कर्णकी वक्तृता ६६५

कर्णकी सम्मतिको खण्डन करते हुए कृपाचार्य्यकी वक्तृता ... ...

विषय पृष्ठा

कर्ण और दुर्य्योधनका निरादर करके अश्वत्थामाकी वक्तृता ९६७

द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य और अश्वत्थामाको युद्ध करनेके लिये प्रसन्न करते हुए भीष्मकी वक्तृता ९६८

दुर्य्योधनके वचनसे द्रोणाचार्य्यका क्रोध शान्त होना, भीष्मकी गिनतीसे कालचक्रके अनुसार पाण्डवोंका तेरह वर्षसे अधिक बीतना वर्णन ... ... „

भीष्मका कौरवोंकी सेनाका चार भाग करना और व्यूह बनाकर युद्धके निमित्त स्थित होना ९७०

द्रोणाचार्य्यके द्वारा अर्ज्जुनका आगमन सम्वाद वर्णन, दुर्य्योधनको खोजके उनकी ओर जाना तथा अर्ज्जुनका बिराटकी गौवोंको नगरकी ओर लौटा लेना ... ९७१

चित्रसेन आदिके सङ्ग अर्ज्जुनका युद्ध ... ९७२

अर्ज्जुन और कर्णका युद्ध तथा कर्णकी पराजय ९७३

अर्ज्जुनके सङ्ग लड़के कौरवी सेनाका पीड़ित होना ९७४

अर्ज्जुनका उत्तरको कृपाचार्य्य प्रभृतिका परिचय देना ९७५

कौरवोंके सङ्ग अर्ज्जुनका युद्ध देखनेके लिये इन्द्रादि देवताओंका आकाशमें स्थित होना „

अर्ज्जुनसे लड़कर कृपाचार्य्यका भागना ९७७

अर्ज्जुनके सङ्ग युद्धमें द्रोणाचार्य्यका युद्ध तथा द्रोणाचार्य्यकी पराजय ९७८

अश्वत्थामाके सङ्ग अर्ज्जुनका युद्ध ... ९८०

अक्षय तूणीरके प्रभावसे अर्ज्जुनका अश्वत्थामासे श्रेष्ठ रहना ... ... „

कर्णार्ज्जुनका वादानुवाद और फिर युद्ध करना तथा कर्णका पराजय ... ९८१

रथ हांकनेसे उत्तरको असमर्थ देखके अर्ज्जुनका उसे धीरज देना ... ९८२

विषय पृष्ठा

भीष्म प्रभृतिके सङ्ग अर्ज्जुनका युद्ध और कौरवोंकी सेनाकी अवस्था वर्णन, अर्ज्जुनके सङ्ग भीष्मका युद्ध ९८५

अर्ज्जुनके सङ्ग युद्धमें भीष्मका मूर्च्छित होना ९८६

अर्ज्जुनके सङ्ग युद्धमें दुर्य्योधनकी पराजय और अर्ज्जुनके द्वारा उसकी निन्दा, दुर्य्योधनका फिर युद्ध करनेके लिये लौटना और उन्हें लौटता देखकर समस्त सेनाका अर्ज्जुनके सङ्ग फिरके युद्ध करना ९८७

अर्ज्जुनका सम्मोहनास्त्र चलाना कौरवोंका मूर्च्छित होना, भीष्मको छोड़के कौरवोंके वस्त्र हरण और भीष्मके सारथीके शरीरमें बाण मारके उत्तरार्ज्जुनका एकान्तमें स्थित होना, भीष्म और दुर्य्योधनकी वार्त्तालाप „

कौरवोंका अपने नगरकी ओर जाना, अर्ज्जुनके बाणसे दुर्य्योधनका मुकुट कटना, देवताओंका निज निज स्थानपर जाना, अर्ज्जुनका भागी हुई सेनाको धीरज देना ९८८

उत्तरका विजय सम्वाद भेजना और राजा बिराटका निज राजधानीमें लौटना ९८९

उत्तरकी रक्षाके लिये चतुरङ्गिनी सेना भेजनेके लिये बिराटकी आज्ञा, युधिष्ठिरके द्वारा बृहन्नलाकी प्रशंसा और राजा बिराटको उत्तरके विजयका सम्वाद मिलना तथा वैजयिक वस्तुओंका नगरमें स्थापित करना ... ९९०

बिराटका सैरिन्ध्रीको पासा लाने और कङ्कको जूआ खेलनेकी आज्ञा करना, बिराट और युधिष्ठिरका जूआ तथा वादानुवाद „

बिराटका युधिष्ठिरके मुखमें पासा मारना, युधिष्ठिरका निज नाकसे गिरते हुए रुधिरको अञ्जलीमें रख लेना, उत्तरका बिराट नगर तथा सभामें प्रविष्ट होना और युधिष्ठिरके नाकसे गिरता हुआ रुधिर देखके शोकित होना ९९१

उत्तरके सङ्ग अर्ज्जुनकी सलाह तथा वह

विषय पृष्ठा

नला रूपसे सारथी बनके नगरमें आना, विराट नगरमें विराटके क्षमा मागनसे युधिष्ठिरका प्रसन्न होना, वृहन्नलाका विराटकी सभामें आना, विराट और उत्तरका कौरवोंके सङ्ग युद्ध विषयक वार्त्तालाप ९९१

विराटकी आज्ञासे कौरवोंका वस्त्र उत्तराका प्रदान करना ९९३

विराटकी सभामें चारो भाइयोंके सहित महाराज युधिष्ठिरका राजसिंहासनपर वैठना और उन्हें अपने सिंहासनपर बैठे हुए देखकर राजा विराटका क्रुद्ध होना, विराटका अर्जुनके मुखसे पाण्डवोंका परिचय मिलना „

उत्तरका राजा विराटको पाण्डवों तथा द्रौपदीका परिचय देना और पांडवोंका राज्य सौंपकर अर्जुनके संग उत्तराका विवाह करनेके निमित्त राजा विराटकी सम्मति ... ९९४

अर्जुनकी निज पुत्र अभिमन्युके संग उत्तराके विवाहकी परामर्श पाण्डवोंका उपप्लव नगरमें निवास करना ९९५

उत्तराके संग अभिमन्युका विवाह ... ९९६

विराटपर्व्व तथा विराटपर्व्वका माहात्म्य समाप्त „

उद्योगपर्व्वका सूचीपत्र।

विराटकी सभामें राजाओंके समीप युधिष्ठिरके राज्य प्राप्ति विषयमें श्रीकृष्णका प्रस्ताव ९९७

बलदेवजीकी वक्तृता ९९८

सात्यकीकी वक्तृता ९९९

राजा द्रुपदकी वक्तृता और सब देशोंके राजाओं तथा कौरवोंके समीप दूत भेजनेका प्रस्ताव १०००

राजा द्रुपदके वचनमें सम्मान होकर कृष्णका स्वजनोंके सहित द्वारकामें जाना ... १००१

विराटनगर और हस्तिनापुरमें सेनाके सहित देश देशके राजाओंका आना „

विषय पृष्ठा

राजा द्रुपदका निज पुरोहितको पांडवोंका दूत बनाकर हस्तिनापुरमें भेजना ... १००२

श्रीकृष्णके भवनमें अर्जुन और दुर्य्योधनका एकही समय जाना .. ... „

कृष्णका दुर्य्योधनको नारायणीसेना देनी और स्वयं अर्जुनका सारथी होना स्वीकार करना १००३

कृष्णके सहित अर्जुनका युधिष्ठिरके निकट आना, मद्रराज शल्यका पांडवोंकी सहायताके लिये सेनाके सहित प्रस्थान करना तथा दुर्य्योधनके सत्कारसे प्रसन्न होना ... १००४

दुर्य्योधनकी ओरसे युद्ध करना स्वीकार करके शल्यका उपप्लव्य नगरमें युधिष्ठिरको देखनेके लिये जाना ... ... „

शल्यका युधिष्ठिरके समीप कथा प्रसङ्गसे शक्रविजय नाम इतिहास कहना .. १००५

द्रुपदके भेजे हुए पुरोहितकी कौरवोंकी सभामें साम्य विषयक वक्तृता ... १०१९

द्रुपदके पुरोहितके वचनसे भीष्मकी सम्मति १०२०

द्रुपदके पुरोहितका वचन तथा भीष्मकी सम्मति सुनके कर्णकी अभिमानयुक्त वक्तृता और धृतराष्ट्रके द्वारा भीष्मकी प्रसन्नता तथा कर्णका तिरस्कार ... .. „

धृतराष्ट्रका शान्ति स्थापन करनेकी इच्छासे सञ्जयका पाण्डवोंके समीप भेजनेका प्रस्ताव १०२१

धृतराष्ट्रकी आज्ञासे सञ्जयका उपप्लव्य नगरमें जाना .. · १०२२

पाण्डवोंके समीप सञ्जयका धृतराष्ट्रके कहे हुए वचन कहना १०२५

सञ्जयका वचन सुनके महाराज युधिष्ठिरका उत्तर देना १०२६

युधिष्ठिरका वचन सुनके सञ्जयका प्रत्युत्तर ... ...

विषय	पृष्ठा
सञ्जयका वचन सुनके युधिष्ठिरका निज धर्म्माधर्म्म व्यवहारके विषयमें श्रीकृष्णके ऊपर भार अर्पण करना ...	... १०२८
युधिष्ठिर और दुर्य्योधनके विषयमें श्रीकृष्णकी वक्तृता ...	... १०३०
युधिष्ठिरके सङ्ग वार्त्तालाप करके सञ्जयकी बिदा होनेके लिये प्रार्थना, युधिष्ठिरका कौरवोंके समीप सन्देशा भेजना	... १०३३
सञ्जयका कुरुसभामें आना, सञ्जयके मुखसे युधिष्ठिरकी प्रशंसा और धृतराष्ट्रकी निन्दा	... १०३६
धृतराष्ट्रका प्रजागरावस्थामें विदुरके मुखसे अनेक प्रकारकी नीति तथा धर्म्ममूलक कथा सुनना	... १०३८
धृतराष्ट्रका सन्देह निवारण करनेके लिये सनत्सुजात ऋषिके द्वारा बिस्तारपूर्व्वक तत्त्वज्ञानकी कथा वर्णन ...	... १०६५
पाण्डवोंके समीपसे लौटकर सञ्जयका कुरुसभामें जाना और धृतराष्ट्रके पूछनेपर अर्ज्जुनका सन्देशा कहना	... १०७६
दुर्य्योधनको उपदेश करनेकी इच्छासे भीष्मके द्वारा कृष्णार्ज्जुनका पूर्व्व बृत्तान्त वर्णन	... १०८६
कर्ण और भीष्मका बादबिवाद	... १०८७
धृतराष्ट्रका सञ्जयसे पाण्डवोंके सहायकोंका सन्देशा पूछना और सञ्जयका पाण्डवोंके सहाय करनेवाले राजाओंका पृथक् पृथक् नाम कहना	... १०८८
पाण्डवोंके बल तथा पराक्रमको कहते हुए धृतराष्ट्रका बिलाप	... १०९०
धृतराष्ट्रका पाण्डवोंके सङ्ग सन्धि करनेका प्रस्ताव और सञ्जयके द्वारा धृतराष्ट्रकी निन्दा तथा अर्ज्जुनकी प्रशंसा वा पाण्डवोंके विजयकी सम्भावना वर्णन ...	... १०९४
अपनी तथा भीष्म द्रोणादि योद्धाओंका पराक्रम वर्णन करके निज पक्षको विजय सम्भावना दिखाते हुए दुर्य्योधनका धृतराष्ट्रको धीरज देना	... १०९५
दुर्य्योधनके पूछनेसे सञ्जयके द्वारा युधिष्ठिरका युद्धविषयक अभिप्राय वर्णन ...	१०९८
सञ्जयके मुखसे अर्ज्जुनके रथके घोड़े तथा ध्वजाका वर्णन ...	... १०९९
धृतराष्ट्रके पूछनेपर सञ्जयका युधिष्ठिरकी सेनाके राजाओंका नाम तथा भागनिरूपण वर्णन	,,
धृतराष्ट्रका वचन सुनके दुर्य्योधनकी वक्तृता	... ११०१
धृतराष्ट्रके पूछनेपर सञ्जयका युधिष्ठिरके विषयमें धृष्टद्युम्नका उत्साहयुक्त वचन और युधिष्ठिरके द्वारा धृष्टद्युम्नकी प्रशंसा वर्णन	,,
धृतराष्ट्रका दुर्य्योधनको युद्ध न करनेका उपदेश	... ११०२
धृतराष्ट्रका वचन सुनके दुर्य्योधनका उत्तर देना और निज पक्षके राजाओंके विषयमें धृतराष्ट्रका शोकयुक्त वचन ...	,,
धृतराष्ट्रके पूछनेपर सञ्जयके द्वारा कृष्णार्ज्जुनका माहात्म्य वर्णन तथा कृष्णार्ज्जुनका सन्देशा सुनके दूसरे पक्षके बलाबलको निश्चय करके धृतराष्ट्रका दुर्य्योधनको सन्धि बिषयक उपदेश करना ...	... ११०४
दुर्य्योधनका क्रोधपूर्व्वक निज माहात्म सुनाकर धृतराष्ट्रको धीरज देना	... ११०५
दुर्य्योधनको हर्षित करनेके लिये कर्णकी निज श्लाघायुक्त वक्तृता और पाण्डवोंके मारनेकी प्रतिज्ञा करना	... ११०७
भीष्मके द्वारा निज वचनका प्रतिवाद सुनके कर्णका उनके जीवित रहते पर्य्यन्त शस्त्रोंको परित्याग करके युद्धसे निवृत्त रहनेका सङ्कल्प और भीष्मसे दुर्य्योधनको वार्त्तालाप	... ११०७

विषय	पृष्ठा
युधिष्ठिरकी प्रशंसाके लिये धृतराष्ट्रके समीप विदुरका दम गुण और दान्त पुरुषके लक्षण वर्णन ...	११०८
विदुरका दुर्य्योधनकी मूढ़ता दिखाते हुए दो पक्षी व्याध तथा मूर्खकिरातोंका इतिहास कहके स्वजनोंके सङ्ग विरोध न करनेका उपदेश	११०९
धृतराष्ट्रका दुर्य्योधनको पाण्डवोंके सङ्ग सन्धि करनेका उपदेश	१११०
धृतराष्ट्रके समीप सञ्जयके द्वारा कृष्णका माहात्म वर्णन ...	१११२
धृतराष्ट्रके पूछनेपर सञ्जयके मुखसे ईश्वर-ज्ञानकोउपाय वर्णन,—धृतराष्ट्रका आक्षेप सुनके दुर्य्योधनके विषयमें गान्धारीका तिरस्कार	१११३
धृतराष्ट्रके पूछनेपर सञ्जयके द्वारा कृष्णके नाम और कर्म्मोंका वर्णन	१११४
युधिष्ठिरका कृष्णके समीप विविध युक्ति प्रदर्शित करके कौरवोंके सङ्ग सन्धि करनेके लिये प्रस्ताव करना ...	१११६
कृष्ण और युधिष्ठिरका उत्तर प्रत्युत्तर	११२०
भीमसेनको कृष्णके समीप कुरुसभामें सन्धि करनेके लिये अनुमति	११२३
सन्धिको इच्छा दूर करने और युद्धका उत्साह बढ़ानेके लिये भीमके विषयमें कौशलके अनुसार कृष्णकी वक्तृता	११२४
कृष्णका वचन सुनके भीमसेनका क्रोध तथा उत्साहपूर्व्वक निज पराक्रम वर्णन	११२५
अर्जुनका विविध युक्तिसे सहित कृष्णसे कौरवोंके सङ्ग सन्धि करनेका उपदेश	११२७
कृष्णका अर्ज्जुनके वचनको अनुमोदन करना और हेतुवादके सहित युद्ध घटनाको सम्भावना वर्णन ...	११२८
कृष्णके समीप नकुलका कार्य्यगतिके अनुसार सन्धि वा विग्रहका प्रस्ताव करनेके लिये उपदेश	११३०
कृष्णसे सहदेवका युद्ध घटनाके उपयोगी प्रस्ताव करनेका अनुरोध करना और सहदेवके वचनमें सात्यकिको सम्मति तथा कृष्णके समीप द्रौपदीके विविध शोकपूरित वचन ...	११३१
कृष्णका द्रौपदीको धीरज देना ...	११३३
कृष्णका हस्तिनापुरकी ओर चलना और युधिष्ठिर तथा अर्ज्जुन प्रभृतिका कुन्तीके समीप कृष्णके द्वारा सन्देशा भेजना ...	११३४
मार्गमें चलते हुए देवर्षियोंके सङ्ग कृष्णको वार्त्तालाप... ...	११३६
शालिभवन और वृकस्थलमें पुरवासियोंके द्वारा श्रीकृष्णका अतिथि सत्कार ...	११३८
धृतराष्ट्रके प्रस्तावसे वृकस्थल प्रभृति मार्गके स्थानमें दुर्य्योधनकी आज्ञासे सभा स्थान बनना तथा कृष्णके अतिथि सत्कारके योग्य सब वस्तुओंको संग्रह करना, परन्तु उन सबका अनादर करके कृष्णका हस्तिनापुरमें जाना ...	११३८
धृतराष्ट्रको विदुरका हितोपदेश और कृष्णके समीप मणिरत्नादि उपहार देनेके लिये निषेध करना	११४०
कृष्णके सत्कार विषयमें दुर्य्योधनका प्रतिवाद और धृतराष्ट्रको भीष्मका सन्धि करनेके लिये उपदेश	११४१
कृष्णको कैद करनेके विषयमें भीष्मके समीप दुर्य्योधनका प्रस्ताव और धृतराष्ट्रका दुर्य्योधनको उस विषयमें निषेध करना तथा दुर्य्योधनको निन्दा करके भीष्मका सभासे बाहिर होना	११४२
कृष्णका हस्तिनापुरमें आना कौरवोंके द्वारा कृष्णका सम्मान	,,
विदुरके गृहमें कृष्णका अतिथि सत्कार होना तथा कृष्णको देखके कुन्तीके शोकयुक्त वचन	११४३
कृष्णका कुन्तीको धीरज देना ...	११४८
कृष्णका दुर्य्योधनके राजभवनमें जाना	११४६

विषय पृष्ठा

दुर्य्योधनका कृष्णाको भोजनके निमित्त निमन्त्रण करना परन्तु कृष्णाका अस्वीकृत होना ११४६

कृष्णाके सन्धि प्रस्ताव निरर्थक तथा कौरवोंकी सभामें उनका प्रवेश करना अनुचित होनेके विषयमें कृष्णाके सङ्ग विदुरकी वार्त्तालाप ११५१

कृष्णाका विदुरके समीप शान्ति स्थापित करनेको उपयोगिता प्रदर्शित करना ११५३

कृष्णाका कौरवोंको सभामें जाना और वहां देवर्षियोंका आगमन ... ११५५

धृतराष्ट्रके समीप कृष्णाका विविध युक्तिके सहित सन्धि स्थापन करनेके विषयमें प्रस्ताव करना ११५६

परशुरामके द्वारा राजा दम्भोद्भव और नर-नारायणको कथा वर्णन ... ११६०

कण्व ऋषिके द्वारा नर-नारायणका माहात्म और मातलिका उपाख्यान वर्णन तथा दुर्य्योधनको सन्धि विषयक उपदेश ... ११६८

दुर्य्योधनके समीप नारद मुनिका अत्यन्त हठ और क्रोध अभिमान प्रभृतिके दोषोंसे रहित होनेके लिये उपदेश तथा गालव मुनि और राजा ययातिका इतिहास वर्णन ... ११७२

धृतराष्ट्रके अनुरोधसे कृष्णाका सन्धि स्थापित करनेके लिये दुर्य्योधनका आह्वान करना ११६१

भोष्मका कृष्णाके वचनको अनुमोदन करके दुर्य्योधनको उपदेश करना ... ११६४

दुर्य्योधनको द्रोण, विदुर और धृतराष्ट्रका उपदेश ;—भीष्म और द्रोणाचार्य्यके द्वारा पाण्डवोंका पराक्रम वर्णन और दुर्य्योधनको सन्धि विषयक उपदेश करना ... ११६५

दुर्य्योधनका कृष्णाके समीप अपना निरपराधत्व प्रमाणित करते हुए उत्तर देना और पाण्डवोंको राजांश न देनेका अभिप्राय प्रकाशित करना ११६६

कृष्णाके क्रोधपूर्व्वक तिरस्कार करनेपर दुर्य्योधनका मन्त्रियोंके सहित सभासे बाहिर होना ११६७

दुर्य्योधनको संयत करनेके निमित्त कौरवोंको कृष्णाका उपदेश ११६६

धृतराष्ट्रकी आज्ञासे गान्धारीका सभामें आना और शान्ति स्थापन करनेकी इच्छासे दुर्य्योधनको बुलाना १२००

दुर्य्योधनको गान्धारीका उपदेश ... १२०१

गान्धारीके वचनका अनादर करके दुर्य्योधनका सभासे बाहिर होके कृष्णाके कैद करनेके लिये कर्ण और शकुनि प्रभृतिके सङ्ग परामर्श करना तथा उनके अभिप्रायको जानके सात्यकिका कृतवर्माका सेना सज्जित करनेके लिये अनुमति देना १२०३

सात्यकिका कृष्णाके निकट जाकर दुर्य्योधनका दुष्ट अभिप्राय वर्णन करना और उस विषयमें धृतराष्ट्रसे कृष्णाके वचन ... „

विदुरके द्वारा फिर सभामें बुलाकर दुर्य्योधनका धृतराष्ट्रका उपदेश ... १२०४

कृष्णाका माहात्म कहके विदुरका दुर्य्योधनकी निन्दा करना ... ... „

अट्टहासके सहित श्रीकृष्ण भगवानका कौरवोंकी सभामें विराटरूप दिखाना १२०५

ऋषियोंकी आज्ञासे श्रीकृष्णाका कौरवोंकी सभासे बाहिर होना १२०६

कृष्णाका कुन्तीके समीप जाना और कृष्णाके समीप युधिष्ठिरादिके विषयमें कुन्तीका उपदेश १२०७

कुन्तीका पाण्डवोंको उपदेश करनेके मिससे विदुला और सञ्जयका इतिहास कहना १२०६

कुन्तीका कृष्णाके सहारे पुत्रोंको सन्देशा भेजना १२१७

कृष्णाके विषयमें कुन्तीके कहे हुए वचन दुर्य्योधनको विदित कराके भीष्म और

विषय पृष्ठा

द्रोणाचार्य्यका उसे युद्धसे निवृत्त होनेके लिये अनुरोध करना, राजभवन वा सेनाकेबीच उत्पात तथा अशकुनोंको देखके कौरवोंके पराजयकी सम्भावना वर्णन १२१६

धृतराष्ट्रके पूछनेपर सञ्जयके द्वारा कृष्ण और कर्णका सम्वाद वर्णन, कर्णके विषयमें कृष्णका पाण्डवपक्ष अवलम्बन करनेके लिये अनुरोध करना १२२२

कृष्णके समीप कर्णका पाण्डवपक्ष अवलम्बन करनेका विषय अस्वीकार करना और दुर्य्योधनके पक्षमें रहके युद्धमें देह त्यागनेका अभिप्राय प्रकाशित करना ... १२२३

कर्णके समीप कृष्णका युद्धके लिये दिन निश्चय करना १२२६

कृष्णके समीप कर्णका निज पक्षकी पराजय सूचक अशकुन वर्णन करना .. ,,

विदुरके निकट कुरु-पाण्डवोंका सन्धि न होनी सुनके कुन्तीका कर्णको पाण्डवोंकी पक्ष अवलम्बन करनेकी इच्छासे उसका जन्म वृत्तान्त सुनाकर भाइयोंके सङ्ग मिलनेके लिये अनुरोध करना १२३०

कर्णका कुन्तीकी बात अस्वीकार करनी १२३१

कर्णका अर्ज्जुनके अतिरिक्त कुन्तीके चारों पुत्रोंको न मारनेका प्रण करना १२३२

युधिष्ठिरके पूछनेपर कृष्णका कौरवोंकी सभामें भीष्म द्रोण प्रभृतिने दुर्य्योधनको जिस प्रकार उपदेश किया था, उसे विस्तारपूर्व्वक वर्णन करना और दुर्य्योधनके दुष्ट अभिप्रायके अनुसार भावी युद्धका विषय कहना १२३३

कृष्णका वचन सुनके युधिष्ठिरकी भीमादिकी सेनाका विभाग करनेके लिये अनुमति और सेनापतिका निश्चय करके पाण्डवोंका सेनाके सहित कुरुक्षेत्रमें जाना ... १२३६

दुर्य्योधनकी आज्ञासे युद्धके निमित्त सज्जित हुए कौरव पक्षीय राजाओंकी शोभा वर्णन १२४५

विषय पृष्ठा

दुर्य्योधनका भीष्मको सेनापति करना और भीष्मकी युद्ध विषयमें प्रतिज्ञा ... १२४७

युधिष्ठिरका सन्देह युक्त होकर कृष्णके समीप युद्ध विषयमें सेना विभाग करनेके लिये कहना, और कृष्णकी उस विषयमें सम्मति तथा पाण्डवोंके समीप बलदेवजीका आना और युद्ध विषयमें निज सम्मति प्रकाशित करके सरस्वती तीर्थमें जाना १२४८

युद्धमें सहायता करनेके लिये सेनाके सहित रुक्मिराजका पाण्डवोंके निकट आना और वहांसे लौटके दुर्य्योधनके समीप जाना तथा वहांसे बिदा होकर निज नगरकी ओर प्रस्थान करना १२५०

धृतराष्ट्रके पूछनेपर सञ्जयके द्वारा कुरु पांडवोंकी सेनाका निवास स्थान वर्णन और दूत भेजनेके विषयमें दुर्य्योधनकी सलाह और वक्तव्य विषय कहके उलूकको पाण्डवोंके समीप भेजना १२५१

उलूकका पाण्डवोंकी सभामें जाना और दुर्य्योधनके कहे हुए वचन कहके क्रोधी पाण्डवोंका क्रोध बढ़ाना १२५७

पाण्डवोंका उलूकसे कहे हुए वचनका उत्तर देना और उलूकका पाण्डवोंकी सभामें लौटकर दुर्य्योधनके निकट जाकर सब समाचार सुनाना १२५६

पाण्डवोंका युद्धके निमित्त प्रस्थान करना और धृष्टद्युम्नके द्वारा योद्धाओंकी विषयमें प्रतिद्वन्दि निश्चय करके सैनिक पुरुषोंका विभाग करना १२६३

दुर्य्योधनके पूछनेपर भीष्मका कौरव पक्षीय रथी और अतिरथियोंकी संख्या वर्णन १२६४

कर्णको अर्द्धरथी कहनेपर भीष्मके सङ्ग कर्णका विवाद १२६८

भीष्मके द्वारा पाण्डवपक्षीय रथी अतिरथियोंकी संख्या वर्णन

विषय　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　पृष्ठा

शिखण्डीके वध विषयमें भीष्मकी सम्मति तथा, दुर्योधनके पूछनेपर अम्बोपाख्यान वर्णन १२७३

भीष्मका शिखण्डीके पहले स्त्री होनेका वृत्तान्त वर्णन करनेके विषयमें काशिराज पुत्री अम्बादिका स्वयम्वर तथा सब राजाओंको पराजित करके निज पराक्रमका वृत्तान्त कहना „

अम्बाका शाल्वराजके विषयमें पूर्व अनुराग प्रकाशित करनेपर उसे शाल्वके समीप भेजनेके लिये भीष्मकी अनुमति, अम्बाका शाल्वराजके निकट जाना और शाल्वके ग्रहण न करनेसे अम्बाका तपोवनमें जाना तथा ऋषियोंके निकट तप करनेकी इच्छा करनी ... १२७४

अम्बाके विषयमें तपस्वियोंका विचार १२७६

तपस्वियों तथा अम्बाके निकट राजर्षि होत्रवाहनका आना और निज दौहित्री अम्बाका परिचय पाके उसके दुःखको दूर करनेके विषयमें उपदेश करना १२७७

होत्रवाहनका परशुरामके सेवक अकृतव्रणके निकट निजदौहित्रीका वृत्तान्त कहना १२७८

अकृतव्रणका अम्बाको परशुरामके द्वारा वैरसमाप्त करानेके विषयमें उपदेश करना १२७६

तपस्वियोंके निकट परशुरामका आना और अम्बाके दुःखका वृत्तान्त सुनके भीष्मको शासन करनेका विषय अङ्गीकार करके कुरुक्षेत्रमें जाना १२८०

भीष्मको आह्वान करके परशुरामका उन्हें अम्बा ग्रहण करनेके विषयमें अनुरोध करना और उस विषयमें भीष्मकी असम्मति तथा तेईस दिन पर्य्यन्त भीष्मके सङ्ग परशुरामका युद्ध वर्णन १२८२

भीष्मका स्वप्नमें वसुगणोंके द्वारा प्रस्वापनास्त्र चलानेकी विधि विदित होनी १२९०

दूसरे दिन प्रस्वापनास्त्र सन्धान करने पर देव तथा ऋषियोंके द्वारा भीष्मका निवारित होना और देवताओं तथा पितरोंके वचनसे निवारित होके दोनोंका युद्धसे निवृत्त होना १२९१

परशुरामके द्वारा भीष्मके सङ्ग वैर समाप्त न होनेपर अम्बाका फिर तपोवनमें जाकर उग्र तप करना और गङ्गाके शापसे आधे शरीरसे नदीरूप धारण करना ... १२९३

अम्बाको महादेवके समीप अभिलषित वर मिलना १२९५

अम्बाका जलती हुई अग्निमें प्रवेश करके शरीर त्यागना और शिवके वरसे द्रुपदराजके गृहमें कन्यारूपमें उत्पन्न होके पुत्ररूपसे प्रसिद्ध होना १२९५

पुत्ररूपिणी द्रुपदकन्या शिखण्डीका दशार्ण देशके राजाकी कन्याके सङ्ग विवाह होना और निज कन्याके द्वारा उसका स्त्रीभाव प्रकाशित होनेपर दशार्णराजका द्रुपदके समीप दूत भेजना १२९७

महादेवके वरसे कन्याके पुरुषत्व लाभकी आशा रहनेपर द्रुपदके द्वारा देवताओंकी पूजा होनी और शिखण्डीका प्राण त्यागनेके लिये निर्ज्जन वनमें जाना तथा स्थूणाकर्ण यक्षके निकट पुरुषत्व लाभ करके निज नगरमें लौट आना और हिरण्यवर्म्माके समीप शिखण्डीका पुरुष रूपसे परिचय १२९९

स्थूणाकर्ण यक्षके स्थानमें कुवेरका आना और उसके पुरुषत्व परिवर्त्तन करनेका वृत्तान्त सुनके क्रुद्ध होकर शिखण्डीके जीवन समय पर्य्यन्त स्त्रीभावसे निवास करनेके लिये शाप देकर निज स्थानपर जाना ... १३०१

पहली प्रतिज्ञाके अनुसार शिखण्डीका पुरुषत्व प्रदान करनेके निमित्त स्थूणाकर्णके पास जाना और उसके शापका वृत्तान्त जानके वहांसे प्रसन्नतापूर्व्वक निज नगरमें लौट आना, शिखण्डीका स्त्रीपूर्व्वत्व वर्णन करनेके अनन्तर

विषय पृष्ठा

उसके बध विषयमें भीष्मका अस्वीकार करना १३०२

दुर्य्योधनके पूछनपर भीष्म और द्रोण प्रभृतिका पाण्डवी सेनाके विनाश विषयमें निज निज सामर्थ्यके अनुसार दिन निश्चय करना १३०३

युधिष्ठिरके पूछनेपर अर्ज्जुनका कौरवी सेनाके विनाश विषयमें निज सामर्थ्यके अनुसार समय निर्णय करके युधिष्ठिरको धीरज देना, कौरव पक्षीय सेनाका श्रेणीक्रमके अनुसार युद्धके निमित्त प्रस्थान करके रणक्षेत्रमें शिविर स्थापित करना १३०४

पाण्डवोंकी सेनाका कौशलके अनुसार श्रेणी विभाग पूर्व्वक युद्धके निमित्त प्रस्थान करना १३०५

उद्योगपर्व्वकी समाप्ति १३०६

भीष्मपर्व्वका सूचीपत्र।

कुरु पाण्डवोंके युद्धका वृत्तान्त शिविर स्थापित करना और व्यूह रचना ... १२०७

युद्धके लिये नियम करना ... १३०८

धृतराष्ट्रका युद्धका वृत्तान्त सुननेके लिये व्यासदेवके द्वारा वरदानका वर्णन १३०९

धृतराष्ट्रका व्यासदेवके समीप मनुष्योंके विनाश विषयमें दैवी कारण वर्णन और व्यासदेवका धृतराष्ट्रको युद्ध निवारण करनेके लिये उपदेश करना १३१२

धृतराष्ट्रका व्यासदेवको प्रसन्न करनेके लिये प्रार्थना और व्यासदेवके द्वारा जय पराजयके लक्षण वर्णन ... ... ,,

पृथ्वीके गुण, भिन्न देश तथा जीवोंकी आकृति, प्रकृति, नदी पर्व्वतादि सब पदार्थोंके नाम और परिमाणादि वर्णन ... १३१५

सुदर्शन द्वीप और वर्ष पर्व्वतादिका वृत्तान्त मेरुगिरिके उत्तर और पूर्व्वभागका विवरण १३१६

माल्यवान पर्व्वतका विवरण ... १३१८

पृथ्वीके सब द्वीपोंकी कथा ... १३२२

चन्द्र सूर्य्य और राहुका वृत्तान्त तथा भूमिपर्व्वाध्याय सुननेका फल वर्णन ... १३२५

सञ्जयका धृतराष्ट्रके समीप युद्धमें भीष्मके मारे जानेका समाचार कहना और धृतराष्ट्रका विलाप १३२६

सञ्जयका धृतराष्ट्रके निकट युद्ध वृत्तान्त कहना १३२७

दोनों पक्षकी व्यूह रचना होनेपर दुर्य्योधनके द्वारा दुःशासनको भीष्मकी रक्षा करनेके लिये आज्ञा मिलनी १३३०

प्रथम दिनकी युद्धसज्जा और सेनापतियोंका विवरण १३३१

व्यासदेवके कहे हुए दुर्निमित्तका दीखना १३३२

भीष्म और द्रोणका प्रतिदिन पाण्डवोंकी जयके लिये आशीर्व्वाद करके दुर्य्योधनकी ओरसे युद्ध करनेका वृत्तान्त तथा राजाओंके विषयमें भीष्मका उपदेश, भीष्मके पृष्ठरक्षक तथा उनके अनुगामी वीरोंका वृत्तान्त और व्यूह रचनाका विवरण तथा दोनों पक्षके योद्धाओंकी अवस्था और लक्षण वर्णन १३३३

धृतराष्ट्र पक्षीय अधिक सेना देखके युधिष्ठिरका विषादयुक्त होना और अर्ज्जुनका युधिष्ठिरके समीप विजय सम्भावना वर्णन करना १३३४

निज सेनाके विषयमें युधिष्ठिरका हर्षजनक उपदेश, पाण्डव पक्षीय योद्धाओंका विवरण १३३८

अर्ज्जुनका कृष्णका भीष्मसे रक्षित सेनाके विनाशके लिये दुर्गास्तव पाठ करनेके निमित्त उपदेश और अर्ज्जुनके द्वारा दुर्गाकी स्तुति १

विषय पृष्ठा

दुर्गादेवीसे अर्ज्जुनको वर मिलना और पाण्डवोंकी विजयका कारण वर्णन १३४०

द्रोणाचार्य्यके समीप दुर्य्योधनके द्वारा दोनों ओरकी सेनाका वृत्तान्त वर्णन १३४१

युद्ध करनेके लिये उद्यतपुरुषोंको देखनेके लिये कृष्णके समीप अर्ज्जुनकी इच्छा १३४१

अर्ज्जुनका स्वजनों तथा मातुलादिको देखकर विषादयुक्त होके युद्धसे निवृत्त होनेकी इच्छा १३४२

कृष्णार्ज्जुनकी वार्त्तालाप ... १३४३

आत्मतत्त्व-विषयक प्रस्ताव ... ,,

निष्काम कर्म्मकी प्रशंसा और सकाम कर्म्मकी निन्दा १३४५

समाधिस्थ और स्थिरप्रज्ञ पुरुषोंके लक्षण १३४७

ज्ञान और कर्म्म विषयके प्रस्ताव ... १३४८

पुरुष जिसके द्वारा पापाचरण करता है, उसका विवरण और कर्म्मयोगादिका पुरातनत्व वर्णन १३५०

ज्ञान, कर्म्म और सन्न्यासयोग ... १३५४

आत्म संयमन योग १३५६

चित्तसंयमन विषयक प्रस्ताव ... १३५७

योगभ्रष्ट पुरुषोंकी गति तथा विज्ञान योगका वर्णन १३५९

ब्रह्म, अध्यात्म कर्म्म, अधिभूत और अधिदेव रूप विज्ञान योग तथा तारक ब्रह्मयोगका वर्णन १३६१

मनुष्य, दैव और ब्रह्मवर्षका परिमाण, ब्रह्मोपासक तथा कर्म्म करनेवालोंके परलोकमें जानेका मार्ग वर्णन तथा संसारमें पुनरागमन १३६३

परम गोपनीय ब्रह्मविद्याका विषय वर्णन १३६४

परमात्मस्वरूप कृष्णकी सर्व्वकारणता, जन्महीनता और उन्हींकी कृपासे जीवोंका मोह विनाशादि वर्णन १३६६

कृष्णका परमेश्वर रूपसे विभूति वर्णन १३६७

विषय पृष्ठा

कृष्णका अर्ज्जुनको अपना अलौकिक रूप दिखाना और अद्भुत तथा भीषण मूर्त्ति देखके अर्ज्जुनका विस्मित होना ... १३६८

लोक संहार करनेमें प्रवृत्त हुए कृष्णका अर्ज्जुनके विषयमें उपदेश और अर्ज्जुनके द्वारा कृष्णकी स्तुति तथा शान्त रूप देखनेके लिये प्रार्थना १३७०

अर्ज्जुनको धीरज देके कृष्णका पहला रूप दिखाना और दोनोंकी वार्त्तालाप १३७१

ईश्वरमें कर्म्म समर्पण करनेवाले उपासकों तथा ब्रह्मोपासकोंकी श्रेष्ठता अश्रेष्ठतादिका वर्णन १३७२

प्रकृति-पुरुषका योग वर्णन ... १३७३

सत, रज और तमोगुणके स्वरूप तथा कार्य्योंका वर्णन १३७५

तीनों गुणोंको अतिक्रम करनेको उपाय तथा पुरुषोत्तम योग १३७६

देव और असुर प्रकृतिका वर्णन ... १३७८

सात्विक, राजसी और तामसी श्रद्धा तथा उनके कार्य्योंका वर्णन ... १३७९

सन्न्यास और त्यागका विवरण ... १३८०

कर्म्म और उसमें प्रवृतिके कारण १३८१

बुद्धि, धृति प्रभृतिके सात्विकादि और त्रिविध सुखादिका विवरण ... १३८२

ब्राह्मणादि चारों वर्णोंके सात्विकादि गुण कार्य्य और उनके फल तथा ब्रह्म प्राप्तिकी उपाय वर्णन १३८३

परमेश्वरके शरणापन्न होनेके लिये उपदेशादि १३८४

गीताके अर्थका तत्व पात्र विशेषको कहनेका उपदेश और सुननेका फल, अर्ज्जुनका मोह छूटना तथा गीता सुननेके अनन्तर सञ्जयके द्वारा कृष्णार्ज्जुन पक्षीय लोगोंके विजयकी सम्भावना वर्णन १३८४

अर्ज्जुनको युद्ध करनेके लिये उद्यत होते

विषय पृष्ठा

देखके योद्धाओंका युद्धके बाजे बजाना, युद्ध देखनेके लिये विमानपर चढ़के देवताओंका आकाशमें आना और युधिष्ठिरका भीष्मके निकट जाना १३८५

युधिष्ठिरके विषयमें भीम अर्ज्जुन, नकुल सहदेव, कृष्ण तथा कौरवी सेनाके पुरुषोंके वचन ... ... ,,

भीष्म और युधिष्ठिरकी वार्त्तालाप १३८६

युधिष्ठिरका द्रोणाचार्य्यके समीप जाना और उन दोनोंकी वार्त्तालाप ... १३८७

युधिष्ठिरका कृपाचार्य्यके निकट जाना तथा उन दोनोंकी वार्त्तालाप ... १३८८

युधिष्ठिरका शल्यके निकट जाना और उन दोनोंकी वार्त्तालाप ... ... ,,

युधिष्ठिरका दुर्य्योधनकी सेनासे बाहिर होना, कर्णको पाण्डवोंकी ओरसे युद्ध करनेके लिये कृष्णका अनुरोध और उस विषयमें कर्णकी असम्मति, दुर्य्योधनकी ओरका यदि कोई पुरुष युधिष्ठिरके पक्षमें युद्ध करनेके लिये प्रवृत्त हो उसके निमित्त ऊंचे स्वरसे घोषणा और उसे सुनके युयुत्सुका युधिष्ठिरके पक्षमें आना १३८९

प्रथम दिनका युद्धारम्भ १३९०

द्वैरथ युद्ध १३९२

संकुल युद्ध १३९५

अभिमन्युके सङ्ग भीष्म तथा उनके रक्षकगणोंका युद्ध १३९६

शल्यके हाथसे युद्धमें विराट पुत्र उत्तरका मारा जाना और विराटपुत्र शङ्खके सङ्ग शल्यका युद्ध और भीष्मके द्वारा पाण्डवोंकी सेनाका विनाश तथा प्रथम दिनका युद्ध समाप्त १३९८

युधिष्ठिरका शोकित होके कृष्णके समीप विजयके लिये परामर्श करना ... १३९९

युधिष्ठिरके शोक छुड़ानेके विषयमें कृष्णका उपदेश और युधिष्ठिर तथा धृष्टद्युम्नकी वार्त्तालाप १४००

दूसरे दिनकी युद्धमें पाण्डवोंकी ओर क्रौञ्च व्यूह बनाना और उसका अवयव वर्णन १४०१

विपक्ष व्यूहको देखके दुर्य्योधनका द्रोणाचार्य्यके निकट निज अभिप्राय प्रकाशित करना १४०२

भीष्म द्रोणके द्वारा व्यूह रचना और उसके अवयवोंका वर्णन ... ,,

दोनों सेनाका युद्धके लिये उद्यत होना, भीष्मका पराक्रम देखके कृष्णके समीप अर्ज्जुनके वचन... ... ... १४०३

अर्ज्जुनके सङ्ग भीष्म द्रोण प्रभृति महारथोंका युद्ध... ... ... १४०४

भीष्म और अर्ज्जुनका युद्ध, देवताओंकी वार्त्तालाप... ... ... १४०५

द्रोणाचार्य्यके सङ्ग धृष्टद्युम्नका युद्ध ... ,,

कलिङ्गराजके सङ्ग भीमसेनका युद्ध ... १४०७

भीमसेनके हाथसे कलिङ्गराजके पुत्र शक्रदेव तथा भानुमानका मारा जाना और कलिङ्ग सेनाका विनाश १४०८

भीमसेनके विषयमें सात्यकि और धृष्टद्युम्नकी सहायता १४११

धृष्टद्युम्नके सङ्ग अश्वत्थामा शल्य और कृपाचार्य्यका युद्ध १४१२

अभिमन्युके सङ्ग दुर्य्योधनपुत्र लक्ष्मणका युद्ध, अर्ज्जुनका पराक्रम प्रकाशित करना ... ,,

दूसरे दिनका युद्ध समाप्त ... १४१३

तीसरे दिनका युद्धारम्भ, भीष्मके द्वारा गारुड़व्यूह और पाण्डवोंकी ओर अर्द्धचन्द्रव्यूह बनना ... ... ,,

कुरु-पाण्डवोंकी सेनाके वीरोंका संग्राम १४१४

अर्ज्जुन, सात्यकि, अभिमन्यु और भीमसेनके द्वारा भीष्मादि कुरुसेनाका तितर बितर होना १४१५

दुर्य्योधन और भीष्मकी वार्त्तालाप ... १४१६

भीष्मका कुरु वीरोंके निज पराक्रम प्रकाशित करना १४१७

विषय	पृष्ठा
कृष्णके अनुरोधसे अर्ज्जुनका भीष्मके सङ्ग युद्ध करना	१४१९
अर्ज्जुनका मृदुयुद्ध देखके कृष्णका स्वयं भीष्म विनासके निमित्त चिन्तित होना, भीष्मका पराक्रम वर्णन	„
युधिष्ठिरकी सेनाको भागती हुई देखके सात्यकिके समीप कृष्णके बचन ...	१४२०
भीष्मको मारनेके लिये हाथमें चक्र लेकर कृष्णका रथसे उतरना, कृष्णके विषयमें भीष्मके वचन और अर्ज्जुनके द्वारा कृष्णका निवारित होना	१४२१
कृष्णका फिर रथपर चढ़ना, अर्ज्जुनका पराक्रम वर्णन...	१४२२
पाण्डवोंकी जीत तथा तीसरे दिनका युद्ध समाप्त	१४२३
चौथे दिनके युद्धमें दोनों ओर व्यालव्यूह बनना	„
भीष्मके सङ्ग अर्ज्जुनका युद्ध ...	१४२४
कौरवोंकी सेनाके सङ्ग अभिमन्यु और धृष्टद्युम्नका युद्ध	१४२५
धृष्टद्युम्नके हाथसे संयमनिपुत्रका मारा जाना संयमनिके सङ्ग धृष्टद्युम्नका युद्ध और धृतराष्ट्रके शोक युक्त बचन ...	१४२६
शल्यके सङ्ग धृष्टद्युम्न और अभिमन्युका युद्ध तथा दुर्य्योधनके सङ्ग भीमसेनका संग्राम	„
भीमसेनके हाथसे मगध देशीय गजसेनाका विनाश	१४२७
अभिमन्युके हाथसे मगधराजका मारा जाना और भीमके हाथसे कौरवोंकी सेनाका विनाश	१४२८
भूरिश्रवाके सङ्ग सात्यकिका युद्ध ...	१४२९
दुर्य्योधनके सङ्ग भीमसेनका युद्ध ...	१४३०
भीमसेनके हाथसे धृतराष्ट्रके कई एक पुत्रोंका मारा जाना और भीमसेन तथा घटोत्कचके सङ्ग भगदत्तका संग्राम ...	१४३१
पाण्डवोंकी युद्धमें जीत तथा चौथे दिनका युद्ध समाप्त...	१४३२
पाण्डवोंकी अवध्यता तथा धृतराष्ट्रपुत्रोंके विनाशका कारण वर्णन ...	„
भीष्मके द्वारा कृष्णका माहात्म्य उत्पत्ति, स्थिति तथा स्तोत्र	१४३४
पांचवें दिनके युद्धमें मकर व्यूह और श्येनव्यूह बनना, भीष्मके सङ्ग भीमसेनका युद्ध, अर्ज्जुनका युद्ध करनेके लिये भीष्मके समीप जाना तथा पाण्डवोंके सङ्ग कुरुपक्षीय राजाओंका युद्ध	१४३९
भीष्मका पराक्रम प्रकाशित करके भीम-सेनादिके सङ्ग युद्ध करना ...	१४४३
अर्ज्जुनके सङ्ग अश्वत्थामाका युद्ध	१४४४
दुर्य्योधनके सङ्ग भीमसेन और लक्ष्मणादिके सङ्ग अभिमन्युका युद्ध ...	„
सात्यकिके सङ्ग भूरिश्रवाका युद्ध	१४४५
भूरिश्रवाके हाथसे सात्यकिके दस पुत्रोंका बध	१४४६
पांचवें दिनका युद्ध समाप्त ...	१४४७
छठे दिनका युद्धारम्भ पाण्डव पक्षमें मकर-व्यूह और दुर्य्योधनकी ओर क्रौञ्चव्यूह बनना	„
धृतराष्ट्रके शोकयुक्त बचन और सञ्जयका उत्तर	१४४८
भीमका दुःशासनादिकी सेनामें प्रविष्ट होना	१४४९
धृष्टद्युम्नका भीमसेनके समीप जाना और दुर्य्योधनकी आज्ञासे उसे मारनेके लिये धृतराष्ट्रपुत्रोंकी चेष्टा	१४५१
धृष्टद्युम्नके द्वारा धृतराष्ट्रके पुत्रोंका मोहित होना और द्रोणाचार्य्यके अस्त्र प्रभावसे फिर सावधान होना	„
युधिष्ठिरकी आज्ञासे अभिमन्यु आदि बारह बीरोंका भीमसेन तथा धृष्टद्युम्नकी रक्षाके लिये जाना	१४५२

विषय पृष्ठा

द्रोणाचार्य्यके द्वारा धृष्टद्युम्नकी पराजय और पाण्डवोंकी सेनाका तितर बितर होना १४५२

दुर्य्योधन तथा उनके कई एक भाइयोंके सङ्ग भीमसेनका युद्ध और अभिमन्यु प्रभृति बारह वीरोंके सङ्ग दुर्य्योधनादिका संग्राम १४५३

भीष्मके द्वारा पाण्डव सेनाका तितर बितर होना, दुर्य्योधनके विषयमें भीमसेनके वचन और दोनोंका संग्राम और जयद्रथादिके सङ्ग अभिमन्यु प्रभृतिका युद्ध ... १४५४

दुर्म्मुख आदि पांच भाइयोंके सङ्ग केकयराज पांचों भाइयोंका संग्राम तथा छठे दिनका युद्ध समाप्त १४५६

दुर्य्योधन और भीष्मकी वार्त्तालाप तथा कुरुसेनाका युद्ध भूमिमें जाना ... ,,

भीष्मका दुर्य्योधनको धीरज देके शस्त्रोंकी पीड़ा दूर करनेवाली औषधी देना १४५७

सातवें दिनका युद्धारम्भ, कौरवोंकी ओर मण्डलव्यूह तथा पाण्डवोंकी ओर वज्रव्यूह बनना १४५८

युद्धमें भीष्मार्ज्जुनका समागम ... ,,

द्रोणाचार्य्यके सङ्ग विराटका युद्ध १४५९

द्रोणाचार्य्यके हाथसे विराटपुत्र शंखका मारा जाना, अश्वत्थामाके सङ्ग शिखण्डीका युद्ध और शिखण्डीकी पराजय ... १४६०

सात्यकिके सङ्ग अलम्बुषका युद्ध और अलम्बुषका भागना, धृष्टद्युम्नके सङ्ग दुर्य्योधनका युद्ध १४६०

दुर्य्योधनकी पराजय, भीमसेनसे कृतवर्म्माका संग्राम और कृतवर्म्माकी पराजय १४६१

धृतराष्ट्र और सञ्जयकी वार्त्तालाप, अवन्तिराज द्वारा भाइयोंके सङ्ग इरावानका युद्ध ... ... ,,

भगदत्तसे घटोत्कचका संग्राम और घटोत्कचकी पराजय ... १४६२

विषय पृष्ठा

नकुल-सहदेवके सङ्ग मद्रराजका युद्ध तथा मद्रराजकी पराजय १४६३

युधिष्ठिरसे युद्धकरके श्रुतायुका पराजित होना ,,

कृपाचार्य्यके सङ्ग चेकितानका युद्ध और धृष्टकेतुसे भूरिश्रवाकी लड़ाई ... १४६४

अभिमन्युके साथ धृतराष्ट्रके तीन पुत्रोंकी लड़ाई और अर्ज्जुन भीष्म तथा दुर्य्योधन प्रभृतिका समागम ... ... ,,

शिखण्डीके विषयमें युधिष्ठिरके वचन १४६६

भीष्म, युधिष्ठिर, भीमसेन और चित्रसेनका समागम १४६७

संकुल संग्राम और सातवें दिनका युद्ध समाप्त १४६८

आठवें दिनका युद्धारम्भ कुरुपक्षमें सागर व्यूह और पाण्डवोंकी ओर शृङ्गाटक व्यूह बनना १४६९

भीष्म और भीमसेनका पराक्रम प्रकाशित करना तथा भीमसेनके हाथसे धृतराष्ट्रके सुनाभादि कई एक पुत्रोंका मारा जाना १४७१

भीष्मके समीप दुर्य्योधनके वचन और धृतराष्ट्रके सङ्ग सञ्जयकी वार्त्तालाप १४७२

संकुल संग्राम और शकुनिसे इरावानका युद्ध तथा इरावानका परिचय ... १४७४

इरावानसे शकुनिके भाइयोंकी लड़ाई और शकुनिके पांच भाइयोंकी मृत्यु, अलम्बुष राक्षसके साथ इरावानका संग्राम १४७६

अलम्बुष राक्षसके हाथसे इरावानका मारा जाना १४७७

संकुल युद्ध अर्ज्जुन भीष्म तथा द्रोणाचार्य्यका पराक्रम, घटोत्कचसे दुर्य्योधनकी लड़ाई तथा दुर्य्योधनकी पराजय १४७७

घटोत्कचके सङ्ग द्रोणादिका संग्राम और द्रोणादिकी पराजय १४७८

संकुल संग्राम और धृतराष्ट्रकी सेना विनाश ... ..

विषय पृष्ठा

भीमसेनके साथ दुर्य्योधनका संग्राम १४८१

घटोत्कचकी मायायुद्धसे पाण्डवोंकी विजय १४८३

भीष्म और दुर्य्योधनकी वार्त्तालाप ,,

भगदत्त प्रभृतिके साथ भीमसेन और घटोत्कच प्रभृतिका युद्ध १४८४

इरावानकी मृत्यु सुनके कृष्णके समीप अर्ज्जुनके शोकयुक्त वचन ... १४८६

अर्ज्जुनका भीष्म प्रभृतिके सङ्ग युद्ध १४८७

भीमसेनके सङ्ग युद्धमें धृतराष्ट्रके कई एक पुत्रोंका मारा जाना ... ... ,,

दोनों ओरके प्रधान योद्धा तथा सैनिक पुरुषोंका युद्धमें मारा जाना और आठवें दिनका युद्ध समाप्त १४८८

पाण्डवोंके विनाश विषयमें दुर्य्योधनादिकी परामर्श १४८९

कर्णकी सलाहसे दुर्य्योधनका भीष्मके निकट जाना और दोनोंकी वार्त्तालाप ,,

भीष्मके वचनके अनुसार युद्धके निमित्त दुर्य्योधनकी राजाओं तथा दुःशासनको आज्ञा देना १४९२

सेनाका युद्धभूमिमें जाना और नवें दिनका युद्धारम्भ ... ... ,,

दोनों ओरकी सेनाका व्यूह वर्णन १४९३

अभिमन्युके द्वारा कुरुसेनाका विनाश १४९४

अभिमन्युके सङ्ग युद्धमें अलम्बुषकी पराजय १४९५

भीष्म द्रोणादिके सङ्ग अभिमन्यु और अर्ज्जुन प्रभृतिका संग्राम ... १४९७

अर्ज्जुनके द्वारा त्रिगर्त्तराजको पराजय, भीमसेनके हाथसे गजसेनाका विनाश और सङ्कुलयुद्ध १४९८

युधिष्ठिर, नकुल और सहदेवके हाथसे दुर्य्योधनकी बहुतसी सेनाका विनाश १५०३

मद्रराज शल्यके सङ्ग युधिष्ठिरका संग्राम १५०४

पाण्डवोंसे भीष्मका संग्राम ... ,,

भीष्मको पराक्रम प्रकाशित करते देखके कृष्णका क्रुद्ध होके अर्ज्जुनके द्वारा शान्त होना १५०६

नवें दिनका युद्ध समाप्त ... १५०७

युधिष्ठिर और कृष्णकी वार्त्तालाप १५०८

पाण्डवोंका भीष्मके समीप जाना और विजयकी उपाय पूछना, युधिष्ठिरके सङ्ग भीष्मकी वार्त्तालाप १५१०

कृष्ण और अर्ज्जुनकी वार्त्तालाप ... १५११

दशवें दिनका युद्धारम्भ और भीष्मके हाथसे पाण्डवोंकी सेनाका विनाश १५१३

भीष्मके सङ्ग शिखण्डी और अर्ज्जुनका युद्ध तथा परस्पर वार्त्तालाप ... १५१४

धृतराष्ट्र और सञ्जयकी वार्त्तालाप तथा भीष्मका पराक्रम वर्णन ... १५१५

दुर्य्योधन और भीष्मकी वार्त्तालाप १५१६

भीष्मको पाण्डवोंका आक्रमण और कौरवोंके पक्षके वीरोंका उन्हें निवारण करनेकी चेष्टा १५१७

अश्वत्थामासे द्रोणाचार्य्यके वचन ... १५२१

भगदत्त प्रभृति दश महारथोंके सङ्ग भीमसेनका युद्ध ... १५२२

भीमार्ज्जुनके द्वारा भगदत्त प्रभृतिको पराजय होनेपर कुरुसेनाका विनाश ... १५२५

धृतराष्ट्र और सञ्जयकी वार्त्तालाप, भीष्मका पाण्डवोंकी सेनासे युद्ध और शरीर त्यागनेको इच्छा, युधिष्ठिरके समीप भीष्मके वचन १५२६

भीष्मको मारनेके लिये धृष्टद्युम्न आदिका यत्न और कुरुपक्षीय वीरोंका उन्हें निवारण करनेके लिये उद्योग करना ... १५२७

दुर्य्योधनके सङ्ग अभिमन्युका युद्ध १५२८

अश्वत्थामासे सात्यकी धृष्टकेतुसे पौरव और भीमसेनके सङ्ग सुशर्म्माका युद्ध ,,

अभिमन्युके साथ वृहद्बलका संग्राम भीमके हाथसे गजसेनाका विनाश, शल्य युधि-

विषय पृष्ठा

ष्ठिर और द्रोणाचार्य्यसे धृष्टद्युम्नका युद्ध और भीष्मको रणभूमिमें गिरानेके लिये शिखण्डीके सहित अर्ज्जुनका उनके समीप जाना १५२९

अर्ज्जुनके द्वारा विदेह और कलिङ्ग प्रभृति अनेक देशकी सेनाका विनाश ... १५३२

अर्ज्जुनके सङ्ग युद्धमें दुःशासनादिकी पराजय ,,

शल्य और कृपाचार्य्य प्रभृतिके द्वारा पाण्डवों और अर्ज्जुनके हाथसे कुरुसेनाका विनाश १५३३

पाण्डवोंका भीष्मकी ओर लगातार अस्त्र चलाना १५३४

द्रोणादिके सङ्ग सात्यकि प्रभृतिका संग्राम, शिखण्डीका भीष्मके ऊपर बाण चलाना अर्ज्जुनके बाणसे भीष्मका धनुष कटना १५३६

भीष्मका मृत्युकी इच्छा करनी, देवताओंका भीष्मके वचनको अनुमोदन करना १५३७

भीष्मका अर्ज्जुनके ऊपरबाण न चलाना और अर्ज्जुन शिखण्डीका भीष्मके ऊपर प्रहार करना ... ... ,,

दुःशासनके समीप भीष्मके बचन ... १५३८

राजा युधिष्ठिरकी आज्ञासे पाण्डवपक्षके सब बीरोंका भीष्मके ऊपर प्रहार करना और दोनों ओरके बीरोंका तुमुल युद्ध अन्तमें कुरुपक्षकी पराजय, भीष्मका रथसे गिरना १५३८

आकाश बाणी सुनना और गंगाके भेजे हुए महर्षियोंके सङ्ग भीष्मकी बार्त्तालाप १५३९

भीष्मके गिरनेपर पाण्डवोंका हर्ष और कौरवोंका विषाद धृतराष्ट्रका शोकित होना १५४०

दुःशासनका द्रोणाचार्य्यके समीप जाके भीष्मके गिरनेका बृत्तान्त कहना और उस दसवें दिन कुरुपाण्डवोंका निज निज सेनाको युद्धसे निवृत्त करना, पांडवोंका और कौरवोंका भीष्मके समीप जाके उपाधान प्रदान करना १५४१

भीष्मके घाव आराम करनेके लिये उनके समीप वैद्यका आगमन, कृष्ण और युधिष्ठिरकी बार्त्तालाप १५४३

अर्ज्जुनका भीष्मको जलसे तृप्त करना १५४४

भीष्मके द्वारा अर्ज्जुनकी प्रशंसा और दुर्य्योधनको युद्धसे निवृत्त होनेका उपदेश १५४५

भीष्मके निकट कर्णका जाना, भीष्म और कर्णकी बार्त्तालाप १५४६

भीष्मपर्व्वकी समाप्ति १५४८

आदि, सभा, वन, बिराट, उद्योग, भीष्म इत्यादि पर्व्वोंकी सूचीपत्र सम्पूर्ण ।

सूचीपत्र।

द्रोणपर्व्व।

विषय पृष्ठा

वैशम्पायन मुनिके द्वारा धृतराष्ट्र तथा उनके पुत्रोंकी अवस्था वर्णन ... १५४६

भीष्मकी रक्षाका विधान करके दोनों पक्षके वीरोंका युद्धके निमित्त सज्जित होना १५५०

कर्णका रणभूमिमें आके कौरवोंको धीरज देना १५५१

कर्णका भीष्मके समीप जाना और भीष्मसे कर्णकी वार्त्तालाप १५५३

कर्णको युद्ध करनेके लिये भीष्मके द्वारा अनुमति मिलनी १५५४

द्रोणाचार्य्यका सेनापति पदपर अभिषिक्त होना धृतराष्ट्रके समीप सञ्जयका संक्षेपमें द्रोण-वध वृत्तान्त कहना १५५७

राजा धृतराष्ट्रका सञ्जयसे विस्तारपूर्व्वक द्रोणवध वृत्तान्त पूछना ... १५६०

सञ्जयके द्वारा द्रोणाचार्य्यका युद्ध वृत्तान्त वर्णन १५६८

द्रोणाचार्य्यका युधिष्ठिरको ग्रहणविषयक छलपूर्व्वक दुर्य्योधनको वर देना ... „

द्रोणाचार्य्यकी प्रतिज्ञा सुनके युधिष्ठिरका भयभीत होना और अर्ज्जुनका युधिष्ठिरको धीरज देना १५६६

दोनों ओरकी सेनाका युद्धारम्भ, द्रोणाचार्य्यका पराक्रम प्रकाशित करना १५७०

दोनों सेनाके वीरोंका द्वैरथ संग्राम १५७२

प्रथम दिनका युद्ध समाप्त ... १५७८

द्रोणाचार्य्यका वचन सुनके त्रिगर्त्तराजका दश हजार संशप्तक वीरोंके सहित युद्धसे न भागनेकी शपथ करके अर्ज्जुनको रणभूमिसे पृथक आह्वान करना और अर्ज्जुनका उनके सङ्ग युद्ध करनेके लिये जाना तथा अर्ज्जुनसे युधिष्ठिरकी वार्त्तालाप... ... १५७६

अर्ज्जुनका त्रिगर्त्तोंके सङ्ग युद्ध और सुधन्वाका वध १५८१

कुरुपाण्डवोंकी सेनाका व्यूह बनना १५८४

कुरुपाण्डव तथा दोनों ओरके वीरोंका युद्धारम्भ १५८६

द्रोणाचार्य्यके हाथसे सत्यजितका वध होनेपर युधिष्ठिरका रणभूमिसे भागना १५८७

पाण्डव पक्षीय योद्धाओंका द्रोणाचार्य्यको आक्रमण करना और द्रोणाचार्य्यके हाथसे पाण्डवोंकी सेनाका विनाश ... १५८८

भीमके विषयमें कर्णके सङ्ग दुर्य्योधनकी वार्त्तालाप १५६०

पाण्डवपक्षीय भीम प्रभृति योद्धाओंके रथ चिन्ह वर्णन १५६१

धृतराष्ट्रका आक्षेप १५६५

दोनों सेनाके योद्धाओंका द्वन्द युद्ध ... १५६६

भीमसेनके सङ्ग युद्धमें दुर्य्योधनकी पराजय और भीमके हाथसे हाथीके सहित राजा अङ्गका मारा जाना १५६६

भगदत्तके सङ्ग युद्धमें भीमादिकी पराजय और दशार्णराजका मारा जाना तथा भगदत्तके हाथीके द्वारा पाण्डवोंकी सेनाका विनाश १६००

भगदत्तके हाथीका शब्द सुनके अर्ज्जुनको संशप्तकोंके सङ्ग युद्ध त्यागके भगदत्तके समीप

विषय पृष्ठा

जानेकी चेष्टा और संसप्तकोंका उन्हें बाधा देना फिर संसप्तकोंको मारके अर्ज्जुनका भगदत्तके सङ्ग युद्ध करना १६०२

भगदत्तके चलाये हुए वैष्णवास्त्रको कृष्णका निज वक्षस्थलपर धारण करना और उस विषयमें कृष्णके सङ्ग अर्ज्जुनकी वार्त्तालाप १६०६

अर्ज्जुनके हाथसे भगदत्तका मारा जाना १६०७

अर्ज्जुनके पराक्रमसे शकुनिके दो भाइयोंका मारा जाना ... ... ,,

द्रोणाचार्य्यके विनाश और रक्षाके निमित्त दोनों सेनाके बीरोंका युद्ध ... १६०८

अश्वत्थामाके हाथसे नील राजाका मारा जाना १६१०

सङ्कुल संग्राम १६११

दूसरे दिनका युद्ध समाप्त ... १६१४

दुर्य्योधन और द्रोणाचार्य्यकी वार्त्ता ,,

संक्षेपमें अभिमन्युका बध ... १६१५

तीसरे दिनके युद्धमें कौरवोंकी ओर चक्रव्यूह बनना १६१६

चक्रव्यूह भेद करनेके विषयमें अभिमन्युकी प्रतिज्ञा और चक्रव्यूहके बीच अभिमन्युका प्रवेश १६१८

दुर्य्योधनादिके सङ्ग अभिमन्युका युद्ध १६२०

द्रोणाचार्य्यके द्वारा अभिमन्युकी प्रशंसा १६२३

अभिमन्युको मारनेके लिये दुर्य्योधनकी आज्ञासे दुःशासन प्रभृति महारथोंका उसकी ओर युद्ध करनेके लिये गमन करना १६२४

अभिमन्युके सङ्ग युद्धमें दुःशासनकी पराजय १६२५

अभिमन्युके हाथसे कर्णके छोटे भाईका मारा जाना १६२६

चक्रव्यूहके द्वारपर जयद्रथके सङ्ग युद्धमें सेनाके सहित पाण्डवोंकी पराजय १६२७

अभिमन्युके हाथसे वशातिराज तथा मुख्य मुख्य बीरोंका मारा जाना ... १६२८

विषय पृष्ठा

अभिमन्युके सङ्ग युद्धमें कर्णकी पराजय तथा अश्वकेतु प्रभृतिका मारा जाना १६३४

अभिमन्युके बध विषयमें शकुनि प्रभृतिकी सलाह १६३५

कर्णादिके द्वारा अभिमन्युको धनुर्बाण तथा रथहीन करना १६३६

दुःशासनके हाथसे अभिमन्युका मारा जाना कौरवोंकी सेनामें हर्ष और पाण्डवोंका विषादयुक्त होना १६३७

तीसरे दिनका युद्ध समाप्त और अभिमन्युके विषयमें युधिष्ठिरका विलाप ... १६३८

युधिष्ठिरके समीप कृष्ण द्वैपायन मुनिका आना तथा उन्हें उपदेश करना १६४०

नारद और राजा अकम्पनका उपाख्यान १६४२

ब्रह्मा और महादेवकी वार्त्तालाप १६४३

मृत्यु तथा ब्रह्माकी कथा ... ,,

राजा सृञ्जय, नारद और पर्व्वत मुनिकी कथा १६४७

राजा सृञ्जयका पुत्रशोक छुड़ानेके निमित्त नारद मुनिके द्वारा मरुत्त प्रभृति राजाओंका उपाख्यान वर्णन १६४८

युधिष्ठिरका शोक छुड़ाके व्यासदेवका अन्तर्द्धान होना, अभिमन्युका बध वृत्तान्त अर्ज्जुनसे कहनेके निमित्त युधिष्ठिरका चिन्तित होना १६६४

असकुन देखके अर्ज्जुनका शङ्कित होना, कृष्णका अर्ज्जुनको धीरज देना, अर्ज्जुनका डेरे पर जाना और स्वजनोंको दुःखी देखना ,,

अर्ज्जुनका अभिमन्युको न देखकर विलाप तथा कृष्णका अर्ज्जुनको धीरज देना १६६५

युधिष्ठिरके द्वारा अर्ज्जुनके समीप अभिमन्युका बध वृत्तान्त वर्णन ... १६६८

जयद्रथको मारनेके विषयमें अर्ज्जुनकी प्रतिज्ञा १६६९

अर्ज्जुनकी प्रतिज्ञा सुनके जयद्रथको भय-

विषय पृष्ठा
भीत होना और दुर्य्योधन तथा द्रोणाचार्य्यका वचन सुनके निर्भय होना ... १६७१
कृष्ण और अर्ज्जुनकी वार्त्तालाप ... १६७२
अर्ज्जुनके कहनेसे कृष्णका सुभद्राको धीरज देना १६७५
सुभद्राका विलाप १६७६
पाण्डवोंकी सेनामें अर्ज्जुनका प्रतिज्ञा पूरी होनेके विषयमें सब लोगोंका चिन्तित होना और कृष्णका अपना रथ सज्जित रखनेके लिये दारुककी आज्ञा देना... ... १६७६
अर्ज्जुनका सपना देखना, सपनेमें महादेवकी प्रसन्नता और पाशुपत अस्त्र पाना १६८०
चौथे दिन निद्रासे सावधान होकर युधिष्ठिरका स्नानादि कार्य्य करना ... १६८४
युधिष्ठिरके समीप कृष्णका आना और युधिष्ठिरको कृष्णका धीरज देना १६८५
युधिष्ठिरके निकट अर्ज्जुनका आना और उनसे सपनेका वृत्तान्त कहना, पाण्डवोंका युद्धके निमित्त सज्जित होना ... १६८७
राजा युधिष्ठिरकी रक्षाके निमित्त अर्ज्जुनका सात्यकिको आज्ञा करना, धृतराष्ट्रका सञ्जयके समीप युद्ध वृत्तान्त पूछना तथा विलाप करना १६८८
धृतराष्ट्रके विषयमें सञ्जयका आक्षेप १६९१
चौथे दिन सबेरे जयद्रथके विषयमें द्रोणाचार्य्यका उपदेश और चक्रशकट व्यूह बनाना १६९२
अर्ज्जुनका युद्ध करनेके लिये जाना और उत्तम शकुन देखना तथा कौरवोंको और अपशकुन दीखना १६९४
दुर्म्मर्षणकी सेना और दुःशासनको पराजित करके अर्ज्जुनका कौरवोंके व्यूहमें प्रवेश करना १६९५
द्रोणाचार्य्यके सङ्ग अर्ज्जुनका युद्ध और कौशलक्रमसे द्रोणाचार्य्यको अतिक्रम करके

विषय पृष्ठा
अर्ज्जुनका जयद्रथकी ओर जाना ... १६९८
अर्ज्जुनका युद्धमें कृतवर्म्माको पराजित करके काम्बोज सेनाकी ओर जाना और उनके दोनों पृष्ठरक्षकोंका कृतवर्म्माके द्वारा निवारित होना १७०१
दुर्य्योधन और द्रोणाचार्य्यकी वार्त्तालाप १७०७
द्रोणाचार्य्यका दुर्य्योधनको अभेद कवच पहनाकर युद्ध करनेके लिये अर्ज्जुनके निकट भेजना १७०८
व्यूहके द्वारपर दोनों ओरकी सेनाके वीरोंका युद्ध १७१०
धृष्टद्युम्न तथा उनकी रक्षाके लिये समागत सात्यकि प्रभृतिके सङ्ग द्रोणाचार्य्यका तुमुल युद्ध १७११
अर्ज्जुनके हाथसे युद्धमें विन्द और अनुविन्दका मारा जाना तथा उनकी बहुतसी सेनाका विनाश १७१८
अर्ज्जुनका अस्त्र प्रभावसे रणभूमिमें तालाव बनाना और उसमें कृष्णका घोड़ोंको नहलाना तथा जल पिलाना और पृथ्वीपर स्थित अर्ज्जुनके सङ्ग रथी कौरवोंका युद्ध ... १७२०
अर्ज्जुनका रथपर चढ़के जयद्रथकी ओर जाना और कौरवोंका विस्मित होना १७२१
चलते हुए कृष्णार्ज्जुनकी वार्त्तालाप और जयद्रथको दूरसे देखना... ... १७२३
द्रोणाचार्य्यके द्वारा अभेद कवच पहरकर दुर्य्योधनका अर्ज्जुनके निकट जाके युद्ध करना और दुर्य्योधनकी पराजय ... १७२४
जयद्रथकी रक्षा करनेवाले महारथ वीरोंके सङ्ग अर्ज्जुनका युद्ध १७२७
दोनों ओरके रथियोंकी रथध्वजाका विवरण १७२९
व्यूहके द्वारपर द्रोणाचार्य्यके पराक्रमसे युधिष्ठिरका भागना १७३२
व्यूहके द्वारपर दोनों सेनाका द्वैरथ युद्ध

विषय	पृष्ठा
और क्षेमधूर्त्ति प्रभृतिका मारा जाना	१७३३
द्रौपदीपुत्रोंके हाथसे सोमदत्तपुत्रका मारा जाना और भीमसेनके सङ्ग युद्धमें अलंबुषका भागना	... १७३५
घटोत्कचके सङ्ग अलम्बुषका युद्ध और अलंबुषका वध ...	... १७३६
द्रोणाचार्य्यके सङ्ग सात्यकि आदि पाण्डव पक्षीय वीरोंका युद्ध ...	... १७३८
युधिष्ठिरका सात्यकिकी प्रशंसा करके अर्ज्जुनके समीप जानेके लिये आज्ञा देना	१७३९
युधिष्ठिरकी आज्ञासे सात्यकिका अर्ज्जुनकी ओर जाना ...	... १७४४
द्रोणाचार्य्यके सङ्ग सात्यकिका युद्ध और कौशल क्रमसे द्रोणाचार्य्यको अतिक्रम करके आगे बढ़ना	१७४८
सात्यकिके सङ्ग कृतवर्म्माका युद्ध और कृतवर्म्माको पराजित करके सात्यकिका काम्बोज सेनामें प्रवेश करना ...	... १७५०
धृतराष्ट्रका आक्षेप ...	... १७५१
सञ्जयके द्वारा धृतराष्ट्रके पहले असावधानीसे किये हुए कर्म्मोंका फल वर्णन	१७५३
भीमादिके संग युद्धमें कृतवर्म्माकी विजय	„
सात्यकिके संग युद्धमें कृतवर्म्माकी पराजय	१७५५
सात्यकिके हाथसे जलसन्धका मारा जाना	१७५६
सात्यकिके संग युद्धमें सुदर्शनका मारा जाना और निज सारथीसे सात्यकिकी वार्त्तालाप	१७६१
सात्यकिका यवन तथा काम्बोजसेनामें प्रवेश करना ...	... १७६३
सात्यकिके संग युद्धमें दुःशासन प्रभृतिकी पराजय	... १७६५
दुःशासनका फिर सात्यकिके निकट आना	१७६६
व्यूहके द्वारपर द्रोणाचार्य्यके संग पाण्डवसेनाके वीरोंका युद्ध और वीरकेतु प्रभृतिका मारा जाना ...	... १७७०
सात्यकिके संग युद्धमें दुःशासनकी पराजय	१७७१
व्यूहके द्वारपर दोनों ओरकी सेनाका युद्ध	१७७४
द्रोणाचार्य्यके हाथसे बृहत्क्षत्र प्रभृतिका मारा जाना ...	... १७७६
सात्यकिकी सहायताको जानेके लिये भीमसेनके विषयमें युधिष्ठिरकी आज्ञा	१७७६
भीमसेनका द्रोणाचार्य्यको पराजित करके व्यूहके बीच प्रवेश करना	... १७८२
भीमके हाथसे दुर्य्योधनके नव भाइयोंका मारा जाना ...	... १७८३
द्रोणाचार्य्यका फिर भीमसेनको निवारण करनेके लिये बाण वर्षाना और पुनर्वार उन्हें पराजित तथा भोजसेना अतिक्रम करके भीमसेनका अर्ज्जुनको देखके सिंहनाद करना और उसे सुनके युधिष्ठिरका हर्षित होना	१७८४
भीमसेन और कर्णका संग्राम तथा कर्णकी पराजय	... १७८६
द्रोणाचार्य्यके संग दुर्य्योधनका जयद्रथवध विषयमें वार्त्तालाप ...	... १७८७
दुर्य्योधनके सङ्ग अर्ज्जुनके पृष्ठरक्षक युधामन्यु और उत्तमौजाका युद्ध तथा उन दोनोंकी पराजय	... १७८८
कर्णका भीमके संग दूसरी बार युद्ध करना और फिर कर्णकी पराजय	... १७८९
भीमके संग तीसरीबार कर्णका संग्राम और पराजय ...	... १७९१
भीमके हाथसे दुर्ज्जयका मारा जाना और भीमके संग चौथीबार युद्धमें कर्णकी पराजय	... १७९४
भीमके हाथसे दुर्म्मुखका मारा जाना तथा भीमके साथ युद्धमें कर्णकी पांचवी बार पराजय	... १७९५
धृतराष्ट्रका आक्षेप ...	... १७९६
धृतराष्ट्रके विषयमें सञ्जयके वचन	१७९७
भीमके साथ युद्ध करके दुर्म्मर्षण प्रभृति पांच भाइयोंका मारा जाना ...	„

विषय पृष्ठा

भीमके साथ युद्धमें छठौंवार कर्णकी पराजय और चित्र प्रभृति दुर्य्योधनके चार भाइयोंका मारा जाना १७९८

भीमसेनका सिंहनाद सुनके युधिष्ठिरकी प्रसन्नता और दुर्य्योधनका चिन्तायुक्त होना १८०१

कर्णका भीमसेनके संग तुमुल संग्राम और भीमसेनकी पराजय १८०२

कर्णके द्वारा भीमसेनका युद्धभूमिमें तिरस्कार १८०६

अर्ज्जुनके अस्त्र प्रभावसे कर्णका भीमके समीपसे पृथक् होना १८०७

धृतराष्ट्रका आक्षेप और सात्यकिके साथ युद्धमें राजा अलम्बुषका मारा जाना १८०८

सात्यकिका दुःशासन प्रभृति धृतराष्ट्रके पुत्रों तथा बहुतसी सेनाको पराजित करके कृष्णार्ज्जुनको देखना और सात्यकिके विषयमें कृष्णार्ज्जुनकी वार्त्तालाप १८०९

सात्यकिके संग भूरिश्रवाका युद्ध तथा सात्यकिको पृथ्वीपर गिराके लात मारना १८१०

कृष्णकी आज्ञासे अर्ज्जुनका अस्त्रसे भूरिश्रवाकी भुजा काटना १८१३

भूरिश्रवाके द्वारा अर्ज्जुन और वृष्णिवंशकी निन्दा १८१४

सात्यकिके हाथसे योगयुक्त भूरिश्रवाका सिर काटा जाना १८१५

भूरिश्रवाका सात्यकिको पटकके लातसे मारनेका कारण वर्णन . १८१६

अर्ज्जुनका जयद्रथ वधके निमित्त यत्न करना और कर्णके संग दुर्य्योधनकी वार्त्तालाप १८१८

दुर्य्योधन, कर्ण, वृषसेन, शल्य, अश्वत्थामा, कृपाचार्य्य और जयद्रथके संग अर्ज्जुनका युद्ध १८१९

जयद्रथके वध विषयमें अर्ज्जुनके समीप कृष्णकी उक्ति तथा योगमायासे सूर्य्यको छिपाना और जयद्रथकी रक्षा करनेवाले योद्धाओंके समीप अर्ज्जुनका पराक्रमप्रकाशित करना १८२५

कृष्णके उपदेशके अनुसार अर्ज्जुनका जयद्रथके सिरको काटके समन्तपञ्चकमें उनके पिताकी गोदीमें फेंकना १८२७

कृपाचार्य्य और अश्वत्थामाके सङ्ग अर्ज्जुनका युद्ध और कृपाचार्य्यको बाणोंकी चोटसे मूर्च्छित देखकर अर्ज्जुनका बिलाप १८२८

कृष्णके रथपर चढ़के सात्यकिका कर्णके संग युद्ध करना १८३०

भीमसेनकी बात सुनके अर्ज्जुनका कर्णके विषयमें तिरस्कार युक्त बचन और कृष्णार्ज्जुनकी वार्त्तालाप १८३२

कृष्णका अर्ज्जुनको रणभूमि दिखाना १८३४

कृष्णार्ज्जुनका युधिष्ठिरके समीप जाना, जयद्रथ वध वृत्तान्त सुनके युधिष्ठिरका हर्षित होना और कृष्ण प्रभृतिके संग वार्त्तालाप १८३५

दुर्य्योधनका विषाद और द्रोणाचार्य्यके संग दुर्य्योधनकी वार्त्तालाप ... १८३७

दुर्य्योधन और कर्णकी वार्त्तालाप १८४१

प्रदोषके समय दोनों ओरकी सेनाका घोर संग्राम और युधिष्ठिरसे युद्धमें दुर्य्योधनकी पराजय १८४३

द्रोणाचार्य्यसे युद्ध करके धृष्टद्युम्नके पुत्रों, केकयगणों तथा शिबिराजका मारा जाना १८४८

भीमके हाथसे कलिंगराज प्रभृतिका मारा जाना १८४९

सात्यकिसे युद्ध करके सोमदत्तका पराजित होना द्रोणाचार्य्यका पराक्रम वर्णन ... ,,

अश्वत्थामासे घटोत्कचका तुमुल संग्राम और घटोत्कचकी पराजय ... १८५२

सात्यकि तथा भीमसेनके सङ्ग सोमदत्त और बाह्लिकका युद्ध सोमदत्तका मूर्च्छित होना, बाह्लिकका मारा जाना, भीम

विषय	पृष्ठा
धृतराष्ट्रके दस पुत्रों और कर्णके भाइयोंका मारा जाना	१८५८
द्रोणाचार्य्यसे युधिष्ठिरका युद्ध	१८६०
दुर्य्योधनके समीप कर्णके अभिमानयुक्त वचन	१८६१
कर्ण और कृपाचार्य्यका विवाद ...	„
अश्वत्थामा और कर्णका विवाद तथा दुर्य्योधनके द्वारा दोनोंका शान्त होना, पाण्डवोंकी सेनाका कर्णसे युद्ध ...	१८६४
अश्वत्थामाकेसङ्ग दुर्य्योधनकी वार्त्तालाप	१८६५
धृष्टद्युम्नादिके सङ्ग युद्धमें अश्वत्थामाका पराक्रम प्रकाशित करना ...	१८६८
दोनों पक्षकी सेनाका सङ्कुल युद्ध	१८७१
सात्यकिसे युद्ध करके सोमदत्तका मारा जाना	१८७२
दोनो ओरकी सेनामे दीपक जलाके युद्धारम्भ	१८७४
दोनों सेनाके रथियोंका द्वैरथ युद्ध	१८७८
कृतबर्म्मासे युद्ध करके युधिष्ठिरका पराजित होना	१८७९
सात्यकिके हाथसे युद्धमें भूरिका मारा जाना	„
अश्वत्थामाके सङ्ग घटोत्कचका संग्राम और घटोत्कचकी पराजय ...	१८८१
भीमसे युद्ध करके दुर्य्योधनकी पराजय	१८८२
कर्णसे युद्ध करके सहदेवका पराजित होना	„
दोनों ओरकी सेनाका द्वैरथ युद्ध	१८८३
दुर्य्योधनके वचनके अनुसार द्रोणाचार्य्य और कर्णका अत्यन्त पराक्रम प्रकाशित करना	१८८४
कर्णका पराक्रम देखके युधिष्ठिर, कृष्ण और अर्जुनकी वार्त्तालाप ...	१८८६
कृष्णार्जुनका कर्णको मारनेके लिये घटोत्कचको आज्ञा देना	१८८७
घटोत्कचसे युद्ध करके अलम्बुषका मारा जाना	१८९९
कर्णके सङ्ग घटोत्कचका युद्ध	१९०१
अलायुध राक्षसका आना, और भीमके साथ युद्ध करके घटोत्कचके हाथसे मारा जाना	१९०६
कर्णके सङ्ग घटोत्कचका भयङ्कर युद्ध	१९११
कर्णका इन्द्रकी अमोघ शक्तिसे घटोत्कचको मारना	१९१४
घटोत्कचके मरनेसे पाण्डवोंका दुःखित तथा कृष्णका हर्षित होना और अर्जुनके पूछनेपर हर्षका हेतु वर्णन... ...	१९१५
धृतराष्ट्रका प्रश्न सुनके सञ्जयका इन्द्रकी दी हुई अमोघ शक्तिको कर्णका कृष्णार्जुनके ऊपर न चलानेका कारण वर्णन	१९१९
घटोत्कचके मरनेसे युधिष्ठिरका विलाप और कृष्णसे युधिष्ठिरकी वार्त्तालाप	१९२२
युधिष्ठिरका कर्ण वधके निमित्त युद्धभूमिमें स्वयं जाना और व्यासदेवका वचन सुनकर धीरज धरके निवृत्त होना	१९२४
युद्धभूमिमें दोनों ओरके योद्धाओंका निद्रित होना	१९२६
दुर्य्योधन और द्रोणाचार्य्यकी वार्त्तालाप और कुरुसेनाका दो भाग करना	१९२७
पाण्डवोंकी सेना दो भागमें विभक्त होनी दोनों ओरकी सेनाका युद्ध ...	१९२९
द्रोणाचार्य्यके हाथसे विराट और द्रुपदका मारा जाना	१९३१
नकुलके संग युद्धमें दुर्य्योधनकी पराजय	१९३४
दोनों ओरके योद्धाओंका युद्ध	१९३५
द्रोणाचार्य्यके संग अर्जुनका तुमुल संग्राम	१९३६
दोनों सेनाका संकुल युद्ध ...	१९३७
द्रोण वध विषयमें कृष्णका प्रस्ताव तथा उपाय प्रदर्शित करना	१९४१

विषय	पृष्ठा
दोनों ओरसे तुमुल युद्ध होना तथा द्रोणाचार्य्यका पराक्रम प्रकाशित करना	१६४२
द्रोणाचार्य्यके विषयमें ऋषियोंका उपदेश	१६४५
युधिष्ठिरके मुखसे अपने पुत्रके मरनेका वृत्तान्त सुनके द्रोणाचार्य्यका प्राण त्यागनेका निश्चय करना ...	... १६४६
द्रोणाचार्य्यका अस्त्र त्यागके योगावलम्बी होना और धृष्टद्युम्नके हाथसे द्रोणाचार्य्यका सिर कटना ...	... १६४८
कुरुसेनाका भागना और द्रोणाचार्य्यकी मृत्यु सुनके अश्वत्थामाका क्रुद्ध होना	१६५०
धृतराष्ट्रका सञ्जयके समीप पितृवधसे क्रुद्ध हुए अश्वत्थामाके कार्य्यका वृत्तान्त पूछना	१६५३
अश्वत्थामाकी पाञ्चाल योद्धाओंको मारनेके निमित्त प्रतिज्ञा करना	... १६५४
पाण्डवों वा पाञ्चाल प्रभृतिके विनाशके निमित्त अश्वत्थामाका नारायणास्त्र चलाना, युधिष्ठिरका कौरवोंको फिर युद्ध करनेके लिये लौटते देखकर कारण पूछना, युधिष्ठिरसे अर्ज्जुनके आक्षेप युक्त ...	... १६५६
अर्ज्जुनके विषयमें भीमसेनके आक्षेप युक्त वचन, धृष्टद्युम्न तथा सात्यकि प्रभृतिका विवाद और कृष्णके द्वारा शान्त होना	... १६५८
अश्वत्थामाका पराक्रम और नारायणास्त्रका प्रभाव वर्णन ...	... १६६४
कृष्णार्ज्जुनके द्वारा नारायणास्त्रसे भीमसेनका परित्राण ...	... १६६७
पाण्डवोंकी सब सेनाके रणभूमिमें भागनेपर नारायणास्त्रकी निवृत्ति	... १६६८
धृष्टद्युम्न और सात्यकिके सङ्ग अश्वत्थामाका युद्ध ...	... १६६८
अश्वत्थामाके निकट सात्यकिको पराजित होते देखके अर्ज्जुनका अश्वत्थामाके निकट आना	१६७०
अश्वत्थामासे युद्ध करके भीमसेनका पराजित होना ...	. १६७१
अश्वत्थामाके सङ्ग अर्ज्जुनका युद्ध	१६७३
अश्वत्थामा और वेदव्यास मुनिकी वार्त्तालाप तथा कृष्णार्ज्जुनका माहात्म्य वर्णन	१६७६
अर्ज्जुनके पूछनेसे व्यासदेवके द्वारा अर्ज्जुनके अग्रगामी महादेवका माहात्म्य वर्णन	१६७८
द्रोणपर्व्वके पाठका फल वर्णन तथा द्रोणपर्व्वकी समाप्ति ...	... १६८४

कर्णपर्व्वका सूचीपत्र।

विषय	पृष्ठा
वैशम्पायन मुनिके द्वारा संक्षेपमें कर्णवध सुनके विस्तार पूर्व्वक सुननेके लिये जनमेजयकी इच्छा ...	... १६८६
धृतराष्ट्र और सञ्जयकी वार्त्तालाप ...	,,
धृतराष्ट्रका सञ्जयसे कुरुपाण्डवोंका युद्ध वृत्तान्त पूछना और सञ्जयके द्वारा संक्षेपमें कर्णवध वृत्तान्त वर्णन ...	... १६८७
कर्णवध सुनके धृतराष्ट्र तथा गान्धारी प्रभृतिका मूर्च्छित होना ...	... १६८८
धृतराष्ट्रके पूछनेपर सञ्जयके द्वारा कुरुपाण्डवोंके बीच जीवित तथा मरे हुए योद्धाओंका वृत्तान्त वर्णन ...	,,
कर्णादिका वध वृत्तान्त सुनके धृतराष्ट्रका अत्यन्त विलाप करना और कर्णके मरनेसे सब सेनाको ही मरी हुई समझके सञ्जयसे युद्धका वृत्तान्त पूछना ..	.. १६६२
द्रोणाचार्य्यके मरनेपर दुर्य्योधनका अपनी ओरके राजाओंके सङ्ग परामर्श करना और अश्वत्थामाके अनुरोधसे कर्णको सेनापति पदपर अभिषिक्त करना	... १६६७
कर्णका सेनाको सज्जित करके मकरव्यूह बनाना ...	... [illegible]
युधिष्ठिरकी आज्ञासे अर्ज्जुनका [illegible] व्यूह बनाना ...	[illegible]
दोनों ओरकी सेनाके वीरोंका सं[illegible]	

विषय — पृष्ठा

भीमसेनके हाथसे चेमधूर्त्तिका मारा जाना २००२
सात्यकिके हाथसे अनुबिन्द और बिन्दका मारा जाना २००३
श्रुतकर्म्माके हाथसे चित्रसेनका मारा जाना, „
प्रतिबिन्ध्यके हाथसे चित्रका बध ... २००४
अश्वत्थामाके सङ्ग भीमसेनका युद्ध २००५
अर्ज्जुनके सङ्ग अश्वत्थामाका युद्ध २००६
अर्ज्जुनसे युद्ध करके अश्वत्थामाका पराजित होना २००८
अर्ज्जुनके हाथसे दण्डधार और दण्डका मारा जाना २००९
संशप्तकोंके सङ्ग अर्ज्जुनका सङ्कुल युद्ध और कृष्णके द्वारा अर्ज्जुनकी प्रशंसा २०१०
अश्वत्थामासे पाण्ड्यराजका मकरध्वज युद्ध तथा पाण्ड्यराजका मारा जाना २०१३
सङ्कुल संग्राम २०१४
सहदेव और दुःशासनका युद्ध ... २०१६
नकुलके सङ्ग कर्णका वाक् युद्ध करके घोर संग्राम करना और नकुलको पराजित ... २०१७
करके उनके गलेमें धनुष [illegible] [illegible] पकड़ना तथा उनकी निन्दा [illegible] जाना [illegible] करके छोड़ देना २०१८
कर्णका असीम पराक्रम प्रकाशित करना २०१९
अर्जुन और श्रुतसोमका युद्ध २०२०
कृपाचार्य्यके सङ्ग युद्ध करके धृष्टद्युम्नका भागना २०२१
कृतवर्म्मासे युद्ध करके शिखण्डीका पराजित होना २०२२
अर्ज्जुनका घोर संग्राम तथा विजय „
युधिष्ठिरसे संग्राम करके दुर्योधनका पराजित होना और दोनो सेनाका सङ्कुल युद्ध २०२४
युधिष्ठिर और दुर्योधनका पुनर्ब्बार युद्ध २०२५
पाण्डवोंकी विजय तथा पहली दिनका युद्ध २०२७

विषय — पृष्ठा

धृतराष्ट्रके पश्चातापयुक्त वचन सुनके सञ्जयका उत्तर २०२९
कर्णका निज गुण वर्णन करके दुर्योधनसे शल्यको अपना सारथी बनानेके लिये कहना „
दुर्योधनका बिनय पूर्व्वक शल्यको कर्णका सारथी बनानेके लिये अनुरोध करना और उसे सुनके शल्यका क्रुद्ध होना ... २०३०
बहुत प्रार्थनाके सहित दुर्योधनके समझानेपर शल्यका कर्णका सारथी बनना २०३१
दुर्योधनके द्वारा शल्यके समीप त्रिपुर बध उपाख्यान वर्णन २०३३
दुर्योधनके द्वारा कर्णकी प्रशंसाके लिये परशुराम तथा शिवका उपाख्यान वर्णन २०३८
दुर्योधनकी बिनयसे दूसरे दिन कर्णका शल्य सारथीके सहित रथपर चढ़के युद्ध करनेके लिये प्रस्थान करना और कुरुसेनाके चलनेपर युद्धभूमिमें बहुतसे उत्पात दीखना २०४१
अपनी बड़ाई करनेमें प्रवृत्त हुए कर्णका शल्यके द्वारा तिरस्कार ... २०४२
'कृष्णार्ज्जुनको देखानेवाले पुरुषको मैं बिबिध धन दान करूंगा' ऐसा कहके कर्णका गर्व्व प्रकाश करना २०४४
कर्णको कुपित करनेकी इच्छा उसके विषयमें शल्यका अत्यन्त तिरस्कार „
शल्यके विषयमें कर्णके द्वारा मद्रदेशीय बुराइयोंका वर्णन तथा शल्यकी अत्यन्त निन्दा २०४६
उपमा प्रसङ्गसे कर्णके समीप शल्यका काकोपाख्यान वर्णन करके कर्णकी निन्दा करना २०४८
शल्यके समीप कर्णका अपनी बड़ाई करना और मृत्युकालके समय ब्रह्मास्त्र भूलने तथा रथका बायां पहिया पृथ्वीमें घुसनेके विषयमें दोनो शापका वृत्तान्त कहके शल्यकी निन्दा करना २०५६

विषय पृष्ठा

शल्यके विषयमें कर्णका मद्रदेशके बहुतसे प्रचलित बुराचारोंका वर्णन करके उसकी अत्यन्त निन्दा करना २०५३

पाण्डवोंका व्यूह देखकर कर्णका व्यूह बनाके युद्ध करके पाण्डवोंकी सेनाको बार्यों ओर करना २०५६

कर्ण और शल्यका सम्वाद ... २०५८

संकुल संग्राम २०५९

कर्णके हाथसे अनेक वीरोंका मारा जाना २०६०

कर्णके समीप युधिष्ठिरकी पराजय २०६४

दोनों सेनाका सङ्कुल संग्राम २०६५

भीमसेन और कर्णका युद्ध और कर्णका पराजित होना २०६७

धृतराष्ट्रपुत्रोंको भीमके हाथसे मरते देखकर कर्णका फिर भीमसेनसे युद्ध करके उन्हें रथरहित करना २०६८

दोनों सेनाका सङ्कुल युद्ध ... २०६९

संशप्तकोंके सङ्ग अर्ज्जुनका भयानक युद्ध २०७१

कृपाचार्य्यसे युद्ध करके शिखण्डीका पराजित होना २०७३

कृपाचार्य्यके हाथसे सुकेतुका मारा जाना ,,

धृष्टद्युम्नके समीप कृतवर्म्माकी पराजय २०७४

अश्वत्थामाका महा पराक्रम प्रकाशित करना और युधिष्ठिरका भागना २०७५

दुर्य्योधनका विपुल पराक्रम प्रकाशित करनेके अनन्तर धृष्टद्युम्नके द्वारा पराजित होना, कर्ण, भीम, अर्ज्जुन अश्वत्थामाका असीम विक्रम प्रकाशित करना २०७६

अश्वत्थामा और अर्ज्जुनका महाघोर संग्राम तथा अश्वत्थामाकी पराजय २०७९

अश्वत्थामाका धृष्टद्युम्नको मारनेके लिये प्रतिज्ञा करना और अर्ज्जुनका युद्धभूमिसे युधिष्ठिरको देखनेके लिये लौटना २०८०

कृष्णका रणभूमिकी अवस्था दिखाना २०८१

अश्वत्थामासे युद्ध करके धृष्टद्युम्नकी पराजय २०८३

अर्ज्जुनके समीप अश्वत्थामाकी पराजय २०८४

अर्ज्जुनके समीप कृष्णका युधिष्ठिरकी विपद घटना तथा भीमका असीम विक्रम वर्णन करना २०८४

सङ्कुल युद्धमें कर्णसे शिखण्डी, उलूकसे सहदेव, सात्यकिसे शकुनि, भीमसे दुर्य्योधन, कृपाचार्य्यसे युधामन्यु और कृतवर्म्मासे संग्राम करके उत्तमौजाका पराजित होना २०८८

भीमसेनका अत्यन्त पराक्रम प्रकाशित करना २०८९

कर्णका असीम पराक्रम प्रकाशित करना और कर्णसे युद्ध करके युधिष्ठिरका भागना २०९०

कर्णका नकुल, सहदेव और युधिष्ठिरको बाणोंसे मारके विकल करना और शल्यके कहनेसे उन्हें छोड़के दुर्य्योधनकी रक्षाके लिये जाना २०९१

अर्ज्जुन और अश्वत्थामाका घोर युद्ध तथा अश्वत्थामाकी पराजय··· ... २०९२

कर्णके बाणसे व्याकुल होकर युधिष्ठिरकी सेनाका भागना २०९३

भीमसेन और अर्ज्जुनकी वार्त्तालाप तथा अर्ज्जुनका युधिष्ठिरको देखनेके लिये जाना, अर्ज्जुनको देखकर कर्णके मरनेका अनुमान करते हुए युधिष्ठिरका प्रसन्नचित्त होकर अर्ज्जुनसे कर्णके मरनेका वृत्तान्त पूछना २०९५

युधिष्ठिरके समीप युद्धका वृत्तान्त सुनके अर्ज्जुनका कर्णवधके निमित्त प्रतिज्ञा करना २०९७

कर्णको जीवित सुनके युधिष्ठिरका अत्यन्त क्रुद्ध होकर अर्ज्जुनकी निन्दा करके समर्थ पुरुषको गाण्डीव धनुष देनेके लिये आज्ञा करना २०९८

'दूसरेको गाण्डीव धनुष दो' ऐसा कहने-

विषय पृष्ठा

ली पुरुषके बिनाश विषयमें प्रतिज्ञा रहनेपर ज्र्जुनका युधिष्ठिरको मारनेके लिये तलवार ठाना और कृष्णका बलाक-कौशिक उपाख्यानादि विविध प्रमाण प्रदर्शित करके विस्तापूर्वक अर्ज्जुनको उपदेश करना तथा प्रतिज्ञा ालनको उपाय वर्णन करना २०६६

कृष्णके उपदेश क्रमसे अर्ज्जुनका युधिष्ठिको कठोर बचन कहना उस दोषको छुड़ाके लिये अपनी बड़ाई करना तथा युधिष्ठिके समीप बिनय करनी और युधिष्ठिरको भिमान उत्पन्न होनेपर कृष्णके द्वारा शान्त ोना तथा युधिष्ठिरके द्वारा कृष्णकी अत्यन्त शंसा २१०५

अर्ज्जुनका युधिष्ठिरको फिर प्रसन्न करना ौर प्रीतिपूर्व्वक दोनों भाइयोंका मिलना था कर्णको मारनेके लिये अर्ज्जुनका फिर ण करना २१०६

कृष्णका अर्ज्जुनके विषयमें बहुत प्रशंसा रके उन्हें कर्णबधके निमित्त उत्साहित रना २१०७

अर्ज्जुनकी बार बार प्रशंसा करके कृष्णका ादिसे अन्ततक युद्ध वृत्तान्त कहना और शत्रुधके निमित्त उत्तेजित करना २१०८

कृष्णके बचनसे उत्साहित होकर अर्ज्जुनका र्णबधके लिये दृढ़ सङ्कल्प करके अपनी ड़ाई करना २११२

सङ्कुलयुद्ध, उत्तमौजाके हाथसे सुषेणका ारा जाना २११४

भीमका बहुतसे हस्ति प्रभृति मारनेके नन्तर सारथिसे बाणोंको संख्या पूछके शत्रुोंके मारनेका दृढ़सङ्कल्प करना २११५

युधिष्ठिरका कुशल सम्वाद न पाके भीमसे ाका शोकित होना और सारथीके मुखसे र्ज्जुनके आनेकी बात सुनके धीरज धरना „

ीमार्ज्जुनका असीम बिक्रम प्रकाशित करना और भीमके समीप पराजित शकुनिको लेकर दुर्य्योधनका भागना ... २११८

कर्णको घोर बीरता प्रकाशित होनी तथा पाण्डवोंकी सेना और महारथोंका भागना २१२०

शल्यका उपदेश सुनके कर्णका कृष्णार्ज्जुनकी प्रशंसा करके अपनी बड़ाई करना और कुरुसेनाके महारथोंके साथ अर्ज्जुनका अत्यन्त पराक्रम प्रकाशित करना २१२३

अर्ज्जुन और भीमसेनका अत्यन्त पराक्रम प्रकाशित करना २१२६

कर्णके हाथसे पाञ्चाल सेनाका बिनाश २१२८

भीमसेन और दुःशासनका युद्ध तथा दुःशासनका मारा जाना २१२६

भीमके हाथसे दुर्य्योधनके निषङ्गी प्रभृति दश भाइयोंका मारा जाना २१३१

वृषसेनसे युद्ध करके नकुलका पराजित होना २१३२

शतानीकके हाथसे कुलिन्दराजके दश पुत्रोंका मारा जाना और अर्ज्जुनसे युद्ध करके वृषसेनका मारा जाना... ... २१३४

अर्ज्जुनसे युद्ध करनेके लिये आते हुए कर्णके रथ तथा महात्मादि बर्णन करके अर्ज्जुनके विषयमें कृष्णका उसे मारनेके लिये अनुरोध करना और उस विषयमें अर्ज्जुनका सम्मत होना २१३५

कर्णार्ज्जुनका युद्धभूमिमें समागम होना, देवासुरोंका बिभाग क्रमसे दोनोका पक्ष अवलम्बन करना, बिजयके विषयमें इन्द्र और सूर्य्यका बिवाद, इन्द्रके पूछनेपर ब्रह्मा और शिवके बचनसे अर्ज्जुनके बिजयका निश्चय होना २१३८

कर्णार्ज्जुनका द्वैरथ युद्धारम्भ होना २१३६

अर्ज्जुनके हाथसे बहुतसी सेना मरी हुई देखके दुर्य्योधनके विषयमें अश्वत्थामाका युद्धसे

विषय पृष्ठा

निवृत्त होनेका उपदेश और उसमें दुर्य्योधनकी असम्मति… … … २१४०

कर्णार्ज्जुनका भयङ्कर संग्राम … २१४१

शाप प्रभावसे कर्णके रथके पहियाका पृथ्वीमें घुस जाना और कर्णका ब्रह्मास्त्र भूलना और पृथ्वीमें रथका दूसरा पहिया धसनेपर कर्णका रथसे उतरके पृथ्वीसमेत रथको चार अङ्गुल तक उठा लेना और अर्ज्जुनको चण भर तक बाण न चलानेके निमित्त प्रार्थना करना … … … २१४६

कृष्णका कर्णकी निन्दा करना … २१५०

अर्ज्जुनके हाथसे कर्णका मारा जाना और कर्णके सारथी शल्यका भागना … २१५१

कौरवोंकी घोर विषाद और पाण्डवोंका हर्षित होना शल्यका दुर्य्योधनको धीरज देना २१५२

कुरुसेनाका भागना और दुर्य्योधनकी आज्ञासे उनके सारथीका अर्ज्जुनके समीप जानेका उद्योग करना, बहुतसी कुरुसेनाका, मरना तथा युद्धसे भागना … २१५४

दुर्य्योधनको भागती हुई सेनाको युद्ध करनेके लिये उपदेश करना … २१५५

शल्यके उपदेशसे दुर्य्योधन प्रभृतिका शिविरमें जाना, कर्णकी प्रशंसा तथा कर्णके मरने पर नदी प्रभृतिका बहना बन्द होना और बहुतसी सेनाका बध करके अर्ज्जुनका कृष्णके सहित शिविरमें आके आनन्दित होना २१५६

कृष्णके द्वारा अर्ज्जुनकी प्रशंसा तथा अर्ज्जुनको लेकर युधिष्ठिरके निकट जाके कर्णके मरनेका समाचार कहना, युधिष्ठिरका हर्षित होके रणभूमिमें जाके मरे हुए कर्णको देखकर कृष्णार्ज्जुनकी प्रशंसा करना पाञ्चालयोद्धाओंका युधिष्ठिरकी स्तुति करते हुए शिविरोंमें जाना, कर्णवध वृत्तान्त सुनके धृतराष्ट्र आदिका पृथ्वीपर गिरना और विदुरके द्वारा सरके देखना … … २१५८

कर्णपर्व्वके पाठादिका फल वर्णन तथा कर्णपर्व्वकी समाप्ति … … २१६०

शल्यपर्व्वका सूचीपत्र।

वैशम्पायन मुनिके द्वारा कौरवोंकी अवस्था तथा कार्य्य वर्णन … … २१६१

सञ्जयके मुखसे दुर्य्योधनादिके मरनेका वृत्तान्त सुनकर धृतराष्ट्रका मूर्च्छित होना २१६२

धृतराष्ट्रका बिलाप … … २१६३

कर्णके मरनेपर कौन सेनापति हुआ तथा दुर्य्योधनादिके मारे जानेके विषयमें धृतराष्ट्रका प्रश्न सुनके सञ्जयके द्वारा युद्ध वृत्तान्त वर्णन … … … २१६४

कृपाचार्य्यका दुर्य्योधनके विषयमें युद्धसे निवृत्त होनेका उपदेश और उस विषयमें युक्ति प्रदर्शित करके दुर्य्योधनका असम्मत होना तथा कौरवोंका स्थानान्तरमें जाना २१६७

अश्वत्थामाकी सम्मतिसे दुर्य्योधनका शल्यको सेनापतिके पदपर अभिषिक्त करना … … … २१७२

शल्यके सेनापति होनेसे कौरवोंका हर्षित होना और शल्यवधके निमित्त युधिष्ठिरका श्रीकृष्णसे सलाह करना … २१७३

दोनों सेनाकी व्यूह रचना और मरनेसे बची हुई सेनाकी संख्या वर्णन २१७५

सङ्कुल युद्ध… … … ,,

शल्यका युधिष्ठिरकी ओर जानेका उद्योग करना और नकुलसे युद्ध करके कर्णपुत्र चित्रसेन प्रभृतिका मारा जाना… … २१७७

पाण्डवोंके सङ्ग शल्यका अत्यन्त पराक्रम प्रकाशित करना … … २१८०

भीमके साथ शल्यका संग्राम तथा गदा युद्ध करके दोनोंका मूर्च्छित होना २१८१

शल्यके सङ्ग युधिष्ठिरका युद्ध २१

भीमादिके सङ्ग शल्यका तुमुल संग्राम २

विषय	पृष्ठा
अश्वत्थामा प्रभृतिके सङ्ग अर्ज्जुनका युद्ध	२१८४
दुर्य्योधनादिके सङ्ग धृष्टद्युम्न प्रभृतिका युद्ध तथा पाण्डव पक्षीय बीरोंके सङ्ग शल्यका असीम पराक्रम प्रकाशित करना ...	२१८६
शल्यके पराक्रमसे पीड़ित तथा घायल होके पाण्डवोंकी सेनाका रणभूमिसे भागना, निज पक्षके बीरोंकी सहायतासे युधिष्ठिरका पराक्रमके सहारे शल्य तथा उनके भाईको मारना	२१८८
सात्यकिसे युद्ध करके कृतवर्म्माका पराजित होना	२१९२
मद्रदेशीय महारथोंका पाण्डवोंकी सेनासे युद्ध करके मारा जाना... ...	२१९३
कुरुसेनाका भागना तथा दुर्य्योधनको पाण्डवोंकी ओर युद्ध करनेके लिये जाता हुआ देखकर कुरुसेनाका लौटना और दोनों सेनाका संकुल संग्राम	२१९५
धृष्टद्युम्न प्रभृतिके सङ्ग युद्ध करके शाल्वराजका मारा जाना ...	२१९७
सात्यकिके हाथसे क्षेमधूर्त्तिका मारा जाना और कृतवर्म्माकी पराजय	२१९८
शकुनि प्रभृतिका पाण्डवोंकी सेनाकी ओर जाना, अर्ज्जुनका कृष्णके समीप कुरुसेनाके बिनाशकी इच्छा करके युद्धमें पराक्रम प्रकाशित करना	२२०३
संकुल संग्राम और दुर्य्योधनकी पराजय	२२०५
भीमसेनके हाथसे दुर्म्मर्षण प्रभृति धृतराष्ट्रके पुत्रोंका मारा जाना ...	२२०७
दुर्य्योधनको मारके युद्ध शेष करनेके निमित्त अर्ज्जुनसे कृष्णकी वार्त्तालाप	२२०८
अर्ज्जुनके हाथसे पुत्र सहित सुशर्म्मा तथा बहुतसी सेनाका बिनाश और भीमसेनके हाथसे धृतराष्ट्रपुत्र सुदर्शनका मारा जाना	२२०९
सहदेवके हाथसे पुत्रके सहित शकुनिका मारा जाना	२२१०
बची हुई कुरुसेनाका पाण्डवोंकी ओरके बीरोंके हाथसे बिनाश... ...	२२१२
दुर्य्योधनका भागके तालाबमें प्रवेश करनेके लिये जाना, व्यासदेवकी कृपासे सञ्जयकी रक्षा, दुर्य्योधनसे सञ्जयकी मुलाकात और वार्त्तालाप, राजरानियोंके सङ्ग सञ्जय तथा युयुत्सुका हस्तिनापुरमें जाना	२२१२
अश्वत्थामा प्रभृति कुरुपक्षके तीन महारथियोंका दुर्य्योधनको देखनेके लिये द्वैपायन ह्रदकी ओर जाना, दुर्य्योधनका पता न पाके पाण्डवोंका सेनाके सहित डेरोंमें जाना, अश्वत्थामा प्रभृतिके सङ्ग दुर्य्योधनकी वार्त्तालाप	२२१५
व्याधगणोंके मुखसे दुर्य्योधनको तालाबमें निवास करते हुए सुनके पाण्डवोंका युद्धके निमित्त दुर्य्योधनके समीप जाना और अश्वत्थामा प्रभृतिका वहांसे प्रस्थान करके वटवृक्षके नीचे बैठके चिन्ता करना ...	२२१६
कृष्ण और युधिष्ठिरका दुर्य्योधनके वधविषयमें बिचार	२२१७
युधिष्ठिर और दुर्य्योधनको युद्धविषयमें वार्त्तालाप, दुर्य्योधनका तालाबसे निकलके पाण्डवोंसे गदायुद्धका प्रस्ताव करना	,,
कृष्णका आक्षेप पूर्व्वक युधिष्ठिरकी निन्दा करना	२२२१
दुर्य्योधनके सङ्ग युद्ध करनेके लिये भीमसेनका उत्साहित होना और कृष्णका उस विषयको अनुमोदन करना	२२२२
गदा युद्ध करनेके लिये उद्यत भीमसेन और दुर्य्योधनके अभिमान युक्त बचन	२२२३
गदायुद्धके स्थानमें बलदेवजीका आना और युधिष्ठिरादिके सङ्ग वार्त्तालाप ...	२२२३
जनमेजयके पूछनेपर वैशम्पायनके द्वारा बलदेवजीकी तीर्थयात्रा वर्णन तथा प्रभासतीर्थका माहात्म कहते हुए चन्द्रका बिवादादि वर्णन	२२२४

विषय	पृष्ठा
उदपान तीर्थका उपाख्यान ...	२२२७
विनशन, गन्धर्व्व, गर्गस्रोत, शङ्ख, पावन और नागधन्व तीर्थका उपाख्यान ...	२२२८
सप्त सारस्वत तीर्थ और मङ्कणक ऋषिकी कथा	२२३०
कपाल मोचन तीर्थ तथा रुषंगु मुनिकी कथा और आर्ष्टिषेण प्रभृति ऋषियोंकी सिद्धि प्राप्त होनी और बकदालभ्य मुनिकी कथा	२२३३
बसिष्ठापवाह तीर्थकी कथा ...	२२३४
कार्त्तिकेयके जन्मादिकी कथा ...	२२३८
वरुणदेवका अभिषेक, अग्नि तीर्थ तथा कुवेर तीर्थकी कथा	२२४७
बदरपाचन तीर्थका उपाख्यान ...	२२४८
बलदेवजीका इन्द्रादि तीर्थमें जाना और उन तीर्थोंके माहात्म वर्णन ...	२२५०
असित देवल और जैगीषव्यकी कथा	२२५१
सोम तीर्थकी कथा, दधीचि और सारस्वत मुनिका माहात्म वर्णन ...	२२५३
वृद्धकन्यातीर्थकी कथा	२२५५
कुरुक्षेत्रका माहात्म्य वर्णन बलदेवका कुरुक्षेत्र तीर्थ देखके उत्तम उत्तम आश्रमोंमें जाना बलदेवके पूछनेपर नारद मुनिका कौरवोंके युद्ध घटनाका वृत्तान्त कहना और सरस्वतीतीर्थका माहात्मा गानेके अनन्तर बलदेवका गदायुद्ध देखनेके लिये जाना	२२५७
भीमसेन और दुर्य्योधनका गदायुद्ध वर्णन	२२५९
गदायुद्धकी तैयारी सुनके धृतराष्ट्रका आक्षेप, अपशकुनोंका प्रकट होना, युधिष्ठिरके निकट भीमका उत्साहित होना और भीम तथा दुर्य्योधनका वाक्युद्ध	२२६०
भीम और दुर्य्योधनका गदायुद्ध ...	२२६२
अर्ज्जुनके पूछनेपर कृष्णका भीमसेन और दुर्य्योधनके युद्धविषयक निपुणाईका वर्णन करके अन्याय युद्धमें दुर्य्योधनके मरनेका सम्भावना वर्णन	२२६४
अर्ज्जुनके इशारेको जानके भीमका दुर्य्योधनकी जङ्घामें गदा मारना, दुर्य्योधनके गिरनेके समय अपशकुनोंकी उत्पत्ति ...	२२६५
पृथ्वीमें गिरे हुए दुर्य्योधनके विषयमें भीमसेनका निन्दायुक्त बचन कहके उनके सिरपर पांव रखना, उसे देखकर युधिष्ठिरका विरक्त होके दुर्य्योधनके विषयमें विनययुक्त बचन कहके आक्षेप करना	२२६६
बलरामका क्रोधपूर्व्वक भीमसेनको मारनेके लिये उद्यत होना और कृष्णके बचनसे शान्त होके वहांसे प्रस्थान करना	२२६७
शोकित युधिष्ठिरको कृष्णका धीरज देना, भीमके उत्साहयुक्त बचनको युधिष्ठिरका अनुमोदन करना	२२६८
पाण्डवों और पाञ्चालोंका हर्ष पूर्व्वक भीमसेनकी प्रशंसा करना, कृष्ण और दुर्य्योधनका वाक्युद्ध, कृष्णका पाण्डवोंको भीष्म प्रभृतिको अन्याय युद्धसे मारके चिन्ता करते हुए देखकर उन्हें धीरज देना	२२७१
शिविरमें जानेपर पहले अर्ज्जुन और पीछे कृष्णका रथसे उतरना, विना अग्निके ही अर्ज्जुनके रथका जलना, कृष्णके द्वारा उसके जलनेका कारण वर्णन, युधिष्ठिरके सङ्ग कृष्णका जय विषयक वार्त्तालाप	२२७२
कृष्णके उपदेशसे सात्यकिके सङ्ग पाण्डवोंका ओघवती नदीके तटपर निवास करना और कृष्णका हस्तिनापुर जाना ...	२२७३
वैशम्पायनके द्वारा कृष्णके हस्तिनापुरमें जानेका कारण वर्णन, धृतराष्ट्र और गान्धारीको धीरज देके कृष्णका पाण्डवोंके निकट लौट आना	,,
धृतराष्ट्रके पूछनेपर सञ्जयके द्वारा दुर्य्योधनके कहे हुए क्रोधपूरित विलाप बचन वर्णन	२२७५
अश्वत्थामा प्रभृति तीन महारथोंका	

विषय	पृष्ठा
अश्वत्थामा प्रभृतिके सङ्ग अर्ज्जुनका युद्ध	२१८४
दुर्य्योधनादिके सङ्ग धृष्टद्युम्न प्रभृतिका युद्ध तथा पाण्डव पक्षीय वीरोंके सङ्ग शल्यका असीम पराक्रम प्रकाशित करना ...	२१८६
शल्यके पराक्रमसे पीड़ित तथा घायल होके पाण्डवोंकी सेनाका रणभूमिसे भागना, निज पक्षके वीरोंकी सहायतासे युधिष्ठिरका पराक्रमके सहारे शल्य तथा उनके भाईको मारना	२१८८
सात्यकिसे युद्ध करके कृतवर्म्माका पराजित होना	२१८२
मद्रदेशीय महारथोंका पाण्डवोंकी सेनासे युद्ध करके मारा जाना... ...	२१८३
कुरुसेनाका भागना तथा दुर्य्योधनको पाण्डवोंकी ओर युद्ध करनेके लिये जाता हुआ देखकर कुरुसेनाका लौटना और दोनों सेनाका संकुल संग्राम	२१८५
धृष्टद्युम्न प्रभृतिके सङ्ग युद्ध करके शाल्वराजका मारा जाना ...	२१८७
सात्यकिके हाथसे क्षेमधूर्त्तिका मारा जाना और कृतवर्म्माकी पराजय	२१८८
शकुनि प्रभृतिका पाण्डवोंकी सेनाकी ओर जाना, अर्ज्जुनका कृष्णके समीप कुरुसेनाके विनाशकी इच्छा करके युद्धमें पराक्रम प्रकाशित करना	२२०३
संकुल संग्राम और दुर्य्योधनकी पराजय	२२०५
भीमसेनके हाथसे दुर्म्मर्षण प्रभृति धृतराष्ट्रके पुत्रोंका मारा जाना ...	२२०७
दुर्य्योधनको मारके युद्ध शेष करनेके निमित्त अर्ज्जुनसे कृष्णकी वार्त्तालाप	२२०८
अर्ज्जुनके हाथसे पुत्र सहित सुशर्म्मा तथा बहुतसी सेनाका विनाश और भीमसेनके हाथसे धृतराष्ट्रपुत्र सुदर्शनका मारा जाना	२२०६
सहदेवके हाथसे पुत्रके सहित शकुनिका मारा जाना	२२१०
बची हुई कुरुसेनाका पाण्डवोंकी ओरके वीरोंके हाथसे विनाश... ...	२२१२
दुर्य्योधनका भागके तालाबमें प्रवेश करनेके लिये जाना, व्यासदेवकी कृपासे सञ्जयकी रक्षा, दुर्य्योधनसे सञ्जयकी मुलाकात और वार्त्तालाप, राजरानियोंके सङ्ग सञ्जय तथा युयुत्सुका हस्तिनापुरमें जाना	२२१२
अश्वत्थामा प्रभृति कुरुपक्षके तीन महारथियोंका दुर्य्योधनको देखनेके लिये द्वैपायन ह्रदकी ओर जाना, दुर्य्योधनका पता न पाके पाण्डवोंका सेनाके सहित डेरोंमें जाना, अश्वत्थामा प्रभृतिके सङ्ग दुर्य्योधनकी वार्त्तालाप	२२१५
व्याधगणोंके मुखसे दुर्य्योधनको तालाबमें निवास करते हुए सुनके पाण्डवोंका युद्धके निमित्त दुर्य्योधनके समीप जाना और अश्वत्थामा प्रभृतिका वहांसे प्रस्थान करके बटवृक्षके नीचे बैठके चिन्ता करना ...	२२१६
कृष्ण और युधिष्ठिरका दुर्य्योधनके वधविषयमें विचार	२२१७
युधिष्ठिर और दुर्य्योधनको युद्धविषयमें वार्त्तालाप, दुर्य्योधनका तालाबसे निकलके पाण्डवोंसे गदायुद्धका प्रस्ताव करना	,,
कृष्णका आक्षेप पूर्व्वक युधिष्ठिरकी निन्दा करना	२२२१
दुर्य्योधनके सङ्ग युद्ध करनेके लिये भीमसेनका उत्साहित होना और कृष्णका उस विषयको अनुमोदन करना	२२२२
गदा युद्ध करनेके लिये उद्यत भीमसेन और दुर्य्योधनके अभिमान युक्त वचन	२२२३
गदायुद्धके स्थानमें बलदेवजीका आना और युधिष्ठिरादिके सङ्ग वार्त्तालाप ...	२२२३
जनमेजयके पूछनेपर वैशम्पायनके द्वारा बलदेवजीकी तीर्थयात्रा वर्णन तथा प्रभासतीर्थका माहात्म कहते हुए चन्द्रका बिवादादि वर्णन	२२२४

विषय पृष्ठा

उदपान तीर्थका उपाख्यान ... २२२७

विनशन, गन्धर्व्व, गर्गस्तोत्र, शङ्ख, पावन और नागधन्व तीर्थका उपाख्यान ... २२२८

सप्त सारस्वत तीर्थ और मङ्कणक ऋषिकी कथा २२३०

कपाल मोचन तीर्थ तथा रुषंगु मुनिकी कथा और आर्ष्टिषेण प्रभृति ऋषियोंको सिद्धि प्राप्त होनी और बकदालभ्य मुनिकी कथा २२३३

वसिष्ठापवाह तीर्थकी कथा ... २२३४

कार्त्तिकेयके जन्मादिकी कथा ... २२३८

वरुणदेवका अभिषेक, अग्नि तीर्थ तथा कुबेर तीर्थकी कथा २२४७

बदरपाचन तीर्थका उपाख्यान ... २२४८

बलदेवजीका इन्द्रादि तीर्थमें जाना और उन तीर्थोंके माहात्म वर्णन ... २२५०

असित देवल और जैगीषव्यकी कथा २२५१

सोम तीर्थकी कथा, दधीचि और सारस्वत मुनिका माहात्म वर्णन ... २२५३

वृद्धकन्यातीर्थकी कथा २२५५

कुरुक्षेत्रका माहात्म्य वर्णन बलदेवका कुरुक्षेत्र तीर्थ देखके उत्तम उत्तम आश्रमोंमें जाना बलदेवके पूछनेपर नारद मुनिका कौरवोंके युद्ध घटनाका वृत्तान्त कहना और सरस्वतीतीर्थका माहात्मा गानेके अनन्तर बलदेवका गदायुद्ध देखनेके लिये जाना २२५७

भीमसेन और दुर्य्योधनका गदायुद्ध वर्णन २२५८

गदायुद्धकी तैयारी सुनके धृतराष्ट्रका आक्षेप, अशकुनोंका प्रकट होना, युधिष्ठिरके निकट भीमका उत्साहित होना और भीम तथा दुर्य्योधनका वाक्‌युद्ध २२६०

भीम और दुर्य्योधनका गदायुद्ध ... २२६२

अर्ज्जुनके पूछनेपर कृष्णका भीमसेन और दुर्य्योधनके युद्धविषयक निपुणाईका वर्णन करके अन्याय युद्धमें दुर्य्योधनके मरनेकी सम्भावना वर्णन २२६४

अर्ज्जुनको इशारेको जानके भीमका दुर्य्योधनकी जङ्घामें गदा मारना, दुर्य्योधनके गिरनेके समय अशकुनोंकी उत्पत्ति ... २२६५

पृथ्वीमें गिरे हुए दुर्य्योधनके विषयमें भीमसेनका निन्दायुक्त वचन कहके उनके सिरपर पाँव रखना, उसे देखकर युधिष्ठिरका विरक्त होके दुर्य्योधनके विषयमें विनययुक्त वचन कहके आक्षेप करना २२६६

बलरामका क्रोधपूर्व्वक भीमसेनको मारनेके लिये उद्यत होना और कृष्णके वचनसे शान्त होके वहाँसे प्रस्थान करना २२६७

शोकित युधिष्ठिरको कृष्णका धीरज देना, भीमके उत्साहयुक्त वचनको युधिष्ठिरका अनुमोदन करना २२६८

पाण्डवों और पाञ्चालोंका हर्ष पूर्व्वक भीमसेनकी प्रशंसा करना, कृष्ण और दुर्य्योधनका वाक्‌युद्ध, कृष्णका पाण्डवोंको भीष्म प्रभृतिको अन्याय युद्धसे मारके चिन्ता करते हुए देखकर उन्हें धीरज देना २२७१

शिविरमें जानेपर पहले अर्ज्जुन और पीछे कृष्णका रथसे उतरना, विना अग्निके ही अर्ज्जुनके रथका जलना, कृष्णके द्वारा उसके जलनेका कारण वर्णन, युधिष्ठिरके सङ्ग कृष्णकी जय विषयक वार्त्तालाप २२७२

कृष्णके उपदेशसे सात्यकिके सङ्ग पाण्डवोंका ओघवती नदीके तटपर निवास करना और कृष्णका हस्तिनापुर जाना ... २२७३

वैशम्पायनके द्वारा कृष्णके हस्तिनापुरमें जानेका कारण वर्णन, धृतराष्ट्र और गान्धारीको धीरज देके कृष्णका पाण्डवोंके निकट लौट आना ... ... „

धृतराष्ट्रके पूछनेपर सञ्जयके द्वारा दुर्य्योधनके कहे हुए क्रोधपूरित विलाप वचन वर्णन २२७६

अश्वत्थामा प्रभृति तीन महारथोंका

विषय पृष्ठा

दुर्य्योधनके निकट जाना और उनकी दुर्दशा देखके मूर्च्छित होके आक्षेप करना, दुर्य्योधनका विलाप सुनके अश्वत्थामाका क्रुद्ध होके पाञ्चाल प्रभृतिको मारनेके लिये प्रतिज्ञा करना तथा दुर्य्योधनके द्वारा अश्वत्थामाका सेनापतिके पदपर अभिषिक्त होना २२७७

शल्यपर्व्वका सूचीपत्र समाप्त ... २२७८

सौप्तिकपर्व्वका सूचीपत्र।

अश्वत्थामा प्रभृतिका भयभीत होके रणभूमिसे अलग जाना, धृतराष्ट्रका आक्षेप २२७९

धृतराष्ट्रके पूछनेपर सञ्जयके द्वारा अश्वत्थामा प्रभृतिका रात्रिके समय वटवृक्षके तले निवास वर्णन २२८०

उलूके द्वारा सोते हुए कौवोंका मरना देखके अश्वत्थामाका निद्रित शत्रु पाण्डव तथा पाञ्चालोंको मारनेका विचार करना „

अश्वत्थामाके अभिप्रायमें कृपाचार्य्यकी असम्मति, कृपाचार्य्य और कृतवर्म्माके समीप अश्वत्थामाके वचन २२८१

कृपाचार्य्य और अश्वत्थामाकी निज निज मत स्थापित करनेके लिये उत्तम युक्तिपूर्ण वक्तृता और तीनो महारथियोंका रात्रिके समय पाण्डवोंके शिविरमें जाना ... „

अश्वत्थामाका शिविर द्वारपर जाके महाभूत देखकर चिन्ता करके महादेवकी उपासना करना, देवी और रुद्रगणोंका प्रकट होना तथा महादेवका प्रकट होके अश्वत्थामाको तलवार देना २२८६

अश्वत्थामाका शिविरमें प्रवेश करना और शिविरके द्वारपर कृपाचार्य्य तथा कृतवर्म्माका स्थित होना, अश्वत्थामाका धृष्टद्युम्नके डेरेमें जाना, अश्वत्थामाके हाथसे धृष्टद्युम्न प्रभृति तथा बची हुई सेनाके सब पुरुषोंका मारा जाना २२९०

विषय पृष्ठा

अश्वत्थामादि तीनों महारथोंका मुमुर्षु दुर्य्योधनके निकट जाना और उनकी दुरवस्था देखके कृपाचार्य्यका आक्षेप करना २२९५

दुर्य्योधनको पृथ्वीमें पड़े देखके अश्वत्थामाका विलाप करके शिविरके बीच धृष्टद्युम्नादि शत्रुओंके मारनेका सम्वाद कहना और अश्वत्थामाकी प्रशंसा करके दुर्य्योधनका प्राण त्यागना २२९६

ऐषिक पर्व्वारम्भ, धृष्टद्युम्नके सारथिके मुखसे द्रौपदीपुत्र प्रभृति स्वजनोंकी मृत्युका सम्वाद सुनके युधिष्ठिरका विलाप करना २२९७

नकुलके मुखसे पुत्रादिका मरना सुनके द्रौपदीका विलाप करके युधिष्ठिरसे अश्वत्थामाको मारनेके लिये अनुरोध करना तथा द्रौपदीके अनुरोधसे भीमसेनका अश्वत्थामाको मारनेके लिये जाना २२९९

कृष्णका युधिष्ठिरको अश्वत्थामाको मारनेके लिये उद्यत भीमसेनकी रक्षाके लिये अनुरोध करना और उसही प्रसङ्गमें ब्रह्मशिरनाम अस्त्रका उपाख्यान कहना ... २३००

युधिष्ठिर, कृष्ण और अर्ज्जुनका एक रथपर चढ़के भीमसेनके पास जाना, अश्वत्थामाका पाण्डवोंको मारनेके लिये ब्रह्मशिरनाम अस्त्र चलाना, अश्वत्थामाके अस्त्रको निवारण करनेके लिये अर्ज्जुनका ब्रह्मशिर अस्त्र छोड़ना, व्यासदेवके अनुरोधसे अश्वत्थामाका पाण्डवोंको अपने सिरकी मणि देनेमें सम्मत होकर ब्रह्मशिर अस्त्रको उत्तराके गर्भमें छोड़ना २३०१

अश्वत्थामाके सङ्ग कृष्णकी परीक्षितके जन्मादि विषयक वार्त्तालाप, अश्वत्थामाके विषयमें कृष्णका शाप, अश्वत्थामासे मणि लेकर कृष्णादिका द्रौपदीके समीप जाके उसे धीरज देना और उस मणिको युधिष्ठिरका सिरपर धारण करना २३०४

अश्वत्थामाके हाथसे पाञ्चालादि वीरोंके

विषय पृष्ठा
विनाश विषयमें युधिष्ठिर और कृष्णकी वार्त्ता-
लाप तथा महादेवका माहात्म्य वर्णन २३०५
देवताओंके पक्षमें महादेवका क्रुद्ध होके प्रसन्न होना २३०६
सौप्तिक पर्व्वकी समाप्ति... ... „

स्त्रीपर्व्वका सूचीपत्र।

जनमेजयके पूछनेपर वैशम्पायनके द्वारा धृतराष्ट्रका विलाप वर्णन और सञ्जयका यथा-योग्य वार्त्ता कहके उन्हें धीरज देना २३०७
धृतराष्ट्रको विदुरका धीरज देना ... २३०९
धृतराष्ट्रका विदुरके निकट तत्त्व कथा सुननेकी इच्छा तथा विदुरके द्वारा तत्त्वज्ञानकी कथा वर्णन २३१०
धृतराष्ट्रके शोकित होनेपर वेदव्यास मुनिका दैवोपाख्यान कहके उनका शोक दूर करना २३१३
विदुरका फिर धृतराष्ट्रको धीरज देके उनका शोक दूर करना २३१६
धृतराष्ट्रका गान्धारी प्रभृति रोती हुई स्त्रियोंको सङ्गलेकर मरे हुए पुत्रपौत्रादिके प्रेत-कार्य्य निभानेके लिये वाहन पर चढ़के नगरसे बाहिर होना २३१७
कृपाचार्य्य, कृतवर्म्मा और अश्वत्थामाकी धृतराष्ट्र तथा गान्धारीसे भेंट होनी और रात्रिके समय शिविरमें सोये हुए पाञ्चालादि वीरोंके मारनेका वृत्तान्त कहके उनके समीपसे प्रस्थान करना २३१८
युधिष्ठिरादिका धृतराष्ट्रके समीप जाके उनसे मिलना और धृतराष्ट्रके द्वारा लोहमय भीमका विनाशादि २३१९
कृष्णके वचनसे धृतराष्ट्रका क्रोध शान्त होना ... ... „
गान्धारीको व्यासदेवका उपदेश ... २३२१
भीमसेनसे गान्धारीकी वर्त्ता ... २३२१
गान्धारीकी क्रोध दृष्टिसे युधिष्ठिरका कुनख होना, गान्धारीका पाण्डवोंको धीरज देना, द्रौपदी, कुन्ती और गान्धारीके मिलन समयमें परस्पर विलाप करना और दिव्यदृष्टिसे गान्धा-रीका युद्धभूमि देखना २३२२
धृतराष्ट्रका राजरानियोंको सङ्गलेकर युद्ध-भूमि देखनेके लिये जाना; राजरानियोंका रोदन तथा मूर्च्छित होना और श्रीकृष्णको उनकी दुर्दशा दिखाके गान्धारीका विलाप करना तथा अभिमन्युकी मराङ्गशा देखके उत्तराका विलाप २३२३
क्रोधसे आर्त्त गान्धारीका कृष्णको शाप देना और कृष्णका उसे अनुमोदन करना २३३४
कृष्णका गान्धारीकी निन्दा करना, धृतरा-ष्ट्रके पूछनेपर युधिष्ठिरका मरी हुई सेनाकी गिनती बताना और स्वर्ग विशेषमें गये हुए वीरोंका वृत्तान्त कहना तथा युद्धमें मरे हुए पुरुषोंका दाह करना २३३५
मरे हुए पुरुषोंका तर्पण, कर्णका तर्पण करनेके निमित्त कुन्तीके द्वारा पाण्डवोंको कर्णका परिचय मिलना ... २३३६
युधिष्ठिरका विलाप पूर्व्वक कर्णका तर्पण करना, और स्त्री पर्व्वकी समाप्त ... „

शान्तिपर्व्वका सूचीपत्र।

मृत सुहृदगणोंका तर्पण करनेके अनन्तर भागीरथीके तटपर स्थित धृतराष्ट्रादिके निकट जाके नारदादि देवर्षि तथा ब्रह्मर्षियोंका शोकार्त्त युधिष्ठिरको धीरज देना २३३७
युधिष्ठिरका नारद मुनिसे कर्णका वृत्तान्त तथा उनके रथका पहिया पृथ्वीमें धंसने और शापको कारण पूछना २३३८
नारद मुनिके द्वारा कर्णका वृत्तान्त तथा

विषय पृष्ठा

परशुरामके निकट ब्रह्मास्त्र पानेका विवरण वर्णन २३३९

नारद मुनिके द्वारा दुर्य्योधनका कर्णको सङ्ग लेकर कन्या हरण करना तथा कर्णका पराक्रम वर्णन २३४२

युधिष्ठिरका शोक छुड़ानेके लिये कुन्ती देवीका युधिष्ठिरसे कर्णका वृत्तान्त कहना और उसे सुनके युधिष्ठिरका स्त्रियोंको शापदेना २३४४

कर्णको स्मरण करके अर्ज्जुनके समीप युधिष्ठिरकी शोक युक्त वक्तृता ... २३४५

युधिष्ठिरके विषयमें अर्ज्जुनकी आक्षेप युक्त वक्तृता २३४७

अर्ज्जुनकी बात सुनके युधिष्ठिरका शोक युक्त होके उत्तर देना २३४९

युधिष्ठिरके विषयमें भीमसेनकी आक्षेप युक्त वक्तृता २३५१

युधिष्ठिरके निकट अर्ज्जुनके द्वारा इन्द्र और तपस्वियोंका इतिहास वर्णन ... २३५२

युधिष्ठिरके विषयमें नकुलकी वक्तृता २३५४

युधिष्ठिरके विषयमें सहदेवकी वक्तृता २३५६

युधिष्ठिरके विषयमें द्रौपदीके वचन २३५७

युधिष्ठिरके समीप अर्ज्जुनके द्वारा दण्डविधि वर्णन २३५९

मोहमें पड़े हुए युधिष्ठिरके विषयमें भीमसेनके प्रबोध वचन ... २३६२

भीमके विषयमें युधिष्ठिरके शान्तिपूरित वचन २३६३

युधिष्ठिरके प्रबोधके लिये अर्ज्जुनके द्वारा जनक और जनकपत्नीका इतिहास वर्णन २३६५

अर्ज्जुनके निकट युधिष्ठिरके द्वारा मोक्षधर्मकी प्रशंसा २३६७

युधिष्ठिरके निकट देवस्थान ऋषिका राजधर्मको प्रशंसा करके उन्हें यज्ञानुष्ठानका उपदेश करना तथा इन्द्र वृहस्पति सम्वाद वर्णन २३६८

विषय पृष्ठा

युधिष्ठिरके निकट अर्ज्जुनके द्वारा क्षत्रिय धर्म्मकी प्रशंसा तथा उन्हें यज्ञानुष्ठानमें रत होनेके लिये प्रार्थना २३७०

युधिष्ठिरके समीप व्यासदेवका गृहस्थ तथा राजधर्म्मकी प्रशंसा करके उन्हें गृहस्थ वा राजधर्म्ममें प्रवृत्त होनेके लिये उपदेश प्रसङ्गमें राजा सुद्युम्न और शङ्ख लिखित मुनिका इतिहास कहना २३७१

युधिष्ठिरके विषयमें व्यासदेवके द्वारा कर्त्तव्य कर्म्म विषयक उपदेश तथा राजर्षि हयग्रीवका इतिहास वर्णन ... २३७३

अर्ज्जुनको कुपित देखकर तथा व्यासदेवका उपदेश सुनके दुःखित चित्तसे युधिष्ठिरका निज मनोवृत्ति प्रकाशित करना और युधिष्ठिरके समीप उपदेश प्रसङ्गमें व्यासदेवके द्वारा राजा सेनजित्‌का इतिहास वर्णन २३७५

अर्ज्जुनके निकट युधिष्ठिरके द्वारा तपस्या प्रभृति वाणप्रस्थ धर्म्मकी प्रशंसा ... २३७७

युद्धमें मरे हुए स्वजनोंके उद्देशसे युधिष्ठिरका बिलाप करके अनशन व्रतके सहारे प्राण त्यागनेका उद्योग करना और युधिष्ठिरके विषयमें व्यासदेवके प्रबोध वचन २३७८

स्वजन वियोगजनित शोकसे सन्तापित युधिष्ठिरके समीप व्यासदेवके द्वारा अश्मगीत इतिहास वर्णन २३८०

व्यासदेवके उपदेशसे मौनावलम्बी युधिष्ठिरके प्रबोधके निमित्त अर्ज्जुनको प्रार्थनासे युधिष्ठिरके निकट कृष्णके द्वारा सोलह राजाओंका उपाख्यान वर्णन ... २३८३

युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके कृष्णके द्वारा सृञ्जयराजके पुत्र सुवर्णष्ठीवीका वृत्तान्त वर्णन २३९१

युधिष्ठिरके पूछनेपर नारद मुनिके द्वारा सुवर्णष्ठीवीका वृत्तान्त वर्णन ... २३९२

शोकार्त्त युधिष्ठिरके विषयमें व्यासदेवके

विषय पृष्ठा

द्वारा राजधर्म्म-विषयक उपदेश और प्रायश्चित्तका अनुष्ठान वर्णन २३९६

व्यासदेवके निकट युधिष्ठिरका युद्धमें मरे हुए स्वजनोंके लिये सन्तापित होना और उस शोकको दूर करनेके निमित्त युधिष्ठिरके निकट व्यासदेवके उपदेश वचन २३९७

युधिष्ठिरके पूछनेपर मनुष्यको जिन कर्म्मोंके करनेसे प्रायश्चित्त करना होता है, व्यासदेवके द्वारा उनका वर्णन होना २४००

युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके व्यासदेवके द्वारा द्विजातियोंके भक्षाभक्ष्य, उत्तम दान और पात्र-अपात्रके विषयमें प्रजापति मनु और सिद्ध ऋषियोंका इतिहास वर्णन २४०५

युधिष्ठिरका व्यासदेवके समीप चारों वर्णोंके धर्म्म, राजधर्म्म, आपद्धर्म्म तथा एक पुरुषके द्वारा परस्पर विरुद्ध धर्म्म अनुष्ठित होनेके विषयमें प्रश्न करना और व्यासदेवका युधिष्ठिरको उक्त विषय जाननेके लिये भीष्मके समीप जानेकी आज्ञा देना भीष्मकी प्रशंसा, युधिष्ठिरकी भीष्मके निकट जानेमें असम्मति तथा कृष्णके वचनसे मानसिक शोकत्यागके ऋषियों, भाइयों तथा धृतराष्ट्रके सहित युधिष्ठिरका हस्तिनापुरमें जाना और प्रजासमूहका नगरको सज्जित करना २४०८

समागत पुरवासियोंके प्रशंसा बचन सुनते हुए राजमार्ग अतिक्रम करके युधिष्ठिरका राजनगरीमें जाना और सब जनपद पुरवासी प्रजा तथा ब्राह्मणोंसे आशीर्व्वाद-पाके राजभवनमें प्रविष्ट होके आशीर्व्वाद देनेवाले ब्राह्मणोंको गऊ, भूमि तथा सुवर्ण दान करना, ब्राह्मणोंका वेदमन्त्र पढ़के युधिष्ठिरको आशीर्व्वाद देना, भिक्षु ब्राह्मणके वेषमें चार्व्वाक राक्षसका आना तथा ब्राह्मणोंकी निन्दा करनेसे उनके शापानलसे भस्म होजाना २४११

युधिष्ठिरके निकट कृष्णका ब्राह्मणोंकी प्रशंसा करके चार्व्वाक राक्षसको वर तथा वधको उपाय कहके उन्हें धीरज देना २४१२

युधिष्ठिरका राज्याभिषेक और उनका प्रजा तथा ब्राह्मणोंके विषयमें कर्त्तव्यकर्म्म और भीमादिके विषयमें राजकार्य्यका भार अर्पण करना २४१४

युधिष्ठिरादिके द्वारा युद्धमें मरे हुए पुरुषोंका श्राद्ध होना २४१५

युधिष्ठिरके द्वारा कृष्णकी स्तुति तथा गुण वर्णन २४१६

युधिष्ठिरका कृष्णको ध्यानयुक्त देखके ध्यानका कारण पूछना, कृष्णके द्वारा उसका बृत्तान्त वर्णन और उपदेश ग्रहण करनेके लिये भीष्मके निकट जानेकी आज्ञा और युधिष्ठिरके अनुरोधसे कृष्णका सात्यकिसे रथ लानेके लिये कहना २४१८

जनमेजयके पूछनेपर वैशम्पायनके द्वारा भीष्मके योगयुक्त होकर देहत्यागनेका विषय वर्णन भीष्मके द्वारा कृष्णकी स्तुति कृष्णका भीष्मके शरीरमें प्रविष्ट होके उन्हें त्रिकालदर्शी ज्ञान देकर निज शरीरमें लौटना और योगबलसे भीष्मकी भक्तिका विषय जानके आनन्द पूर्व्वक रथपर चढ़के युधिष्ठिरादिके सहित कुरुक्षेत्रकी ओर जाना ... २४१९

मार्गमें कृष्णका युधिष्ठिरके समीप परशुरामका पराक्रम वर्णन और युधिष्ठिरके पूछनेपर कृष्णका परशुरामके द्वारा पृथ्वी निःक्षत्रिय करनेका कारण, क्षत्रियोंकी पुनरोत्पत्ति तथा कुरुक्षेत्रमें क्षत्रियोंके विनाशका विषय कहना २४२५

कृष्णसे वार्त्तालाप करते हुए युधिष्ठिरका सात्यकि प्रभृति वीरोंके सहित भीष्मके निकट जाना, कृष्ण प्रभृतिका रथसे उतरके व्यासादि ऋषियोंको प्रणाम करना और भीष्मके विषयमें कृष्णके वचन २४३०

विषय पृष्ठा

भीष्म और कृष्णकी वार्त्तालाप २४३२

कृष्णका भीष्मको वरदान करना व्यासादि महर्षियोंके द्वारा ऋक्, यजु तथा सामवेदके मन्त्रोंसे कृष्णकी पूजा होनी और भीष्मकी आज्ञानुसार युधिष्ठिरादिका नगरमें जाना २४३३

कृष्णके सहित युधिष्ठिरादिका भीष्मके समीप जाना २४३५

कृष्ण और भीष्मकी वार्त्तालाप २४३६

भीष्मकी बात सुनके युधिष्ठिरका भीष्मके चरणपर गिरना और भीष्मका युधिष्ठिरको धीरज देके प्रश्न करनेको कहना २४३८

युधिष्ठिरका भीष्मसे राजधर्म्म पूछना, भीष्मका राजधर्म्मके प्रसङ्गमें मनु तथा उशनाके श्लोक और प्रजाके विषयमें राजाका कर्त्तव्य कर्म्म वर्णन करना २४३९

युधिष्ठिरके निकट भीष्मका वृहस्पति मतके अनुसार मरुत्त राजके द्वारा राजाओंका कर्त्तव्य कार्य्य विषयक प्राचीन श्लोक कहना, व्यासादिके द्वारा भीष्मकी प्रशंसा और सन्ध्याके समय भीष्मकी आज्ञासे युधिष्ठिरादिका हस्तिनापुरमें जाना २४४२

दूसरे दिन युधिष्ठिरका भीष्मके समीप राजा शब्दकी उत्पत्ति तथा एक पुरुषके समीप अनेक लोगोंके नत होनेका कारण पूछना, और भीष्मके द्वारा उसका वृत्तान्त वर्णन २४४६

भीष्मके समीप युधिष्ठिरका अनुलोम तथा विलोमजात वर्णोंके साधारण धर्म्म, चारों वर्णोंके पृथक् धर्म्म, राजधर्म्म, राज्यवृद्धि तथा उन्नत अवस्थाको उपाय, कैसे कोष, दण्ड, किला, सहाय, मन्त्री, ऋत्विक और आचार्य्य परित्याज हैं, आपत्कालमें किसका किस भांति विश्वास करना चाहिये और किस विषयसे आत्माकी रक्षा होती है? यह सब वृत्तान्त पूछना और भीष्मके द्वारा इन सब विषयोंका वृत्तान्त वर्णन २४५१

युधिष्ठिरका उत्तर कालमें सुखदायक, मङ्गलमय, अहिंसा युक्त लोकसम्मत सुखके उपायका हेतु तथा युधिष्ठिरके सदृश मनुष्योंको सुख प्राप्त होने योग्य धर्म्म विषय पूछना और भीष्मके द्वारा उसका वृत्तान्त वर्णन २४५६

भीष्मके द्वारा युधिष्ठिरके समीप साध्य, देव, वसु, रुद्र, विश्व, मरुत प्रभृति गण तथा दोनों अश्विनीकुमार जिस प्रकार आदि देव नारायणसे उत्पन्न होकर क्षत्रधर्म्ममें प्रवृत्त हुए थे, उस इतिहासके प्रसङ्गमें विष्णु विषयक इन्द्र और मान्धाताका सम्वाद वर्णन २४५८

वाणप्रस्थादि आश्रमोंके धर्म्म संक्षेपमें सुनके युधिष्ठिरकी भीष्मके समीप फिर उन धर्म्मोंको विस्तारपूर्व्वक सुननेकी प्रार्थना और भीष्मके द्वारा विस्तार पूर्व्वक उक्त धर्म्मोंका वर्णन २४६१

राज्यके कर्त्तव्यकार्य्य सुननेके लिये भीष्मके समीप युधिष्ठिरका प्रार्थना और भीष्मके द्वारा राज्यके कर्त्तव्य कार्य्य वर्णन २४६२

ब्राह्मण लोग राजाको जिस लिये देवरूप कहते हैं? भीष्मके द्वारा उसका वर्णन २४६५

युधिष्ठिरका भीष्मके समीप राजाके शेष कर्त्तव्य कर्म्मोंका विचार, सेवक, स्त्री, पुत्र तथा साधारण लोगोंको किस प्रकार विश्वास करके उन्हें किन कार्य्योंपर नियुक्त करना उचित है इत्यादि प्रश्न और भीष्मके द्वारा उनका विवरण वर्णन २४६८

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा दण्डनीतिसे राजा और प्रजाके सौभाग्य वर्णन २४७१

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा इस लोक और परलोकमें कर्म्मोंके सहारे सुख प्राप्त होनेका वृत्तान्त वर्णन २४७२

जिस प्रकार प्रजापालन करनेसे राजाको आधिरूपी बन्धनमें बद्ध होना नहीं पड़ता और व्यवहार निर्णयादि कार्य्योंमें भी अन्यथा

विषय	पृष्ठा
नहीं होता उस विषयमें युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा उसका वृत्तान्त वर्णन	२४७३
भीष्मका युधिष्ठिरसे राजपुरोहित सम्बन्धीय ऐरुरवा और वायुका सम्वाद कहना	२४७४
भीष्मका युधिष्ठिरसे राजपुरोहितके विषयमें ऐल और कश्यपका सम्वाद वर्णन	२४७६
भीष्मका युधिष्ठिरसे राजपुरोहितके विषयमें कुवेर और मुचकुन्दका सम्वाद कहना	२४७८
युधिष्ठिरके पूछनेपर राजाके जिस वृत्तिके अवलम्बन करनेसे प्रजाकी उन्नति होती है, भीष्मके द्वारा उसका वृत्तान्त वर्णन	२४७९
युधिष्ठिरका राज्य पालन विषयसे विरक्त होना और भीष्मका युधिष्ठिरके विषयमें उपदेश बचन	„
युधिष्ठिरका भीष्मसे स्वर्ग प्राप्तिकी उत्तम उपाय, उससे उत्तम प्रीति, उससे श्रेष्ठ ऐश्वर्य्यका विषय पूछना और भीष्मके द्वारा उसका वर्णन तथा युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मका स्वकर्म्म और निषिद्ध कर्म्ममें रत ब्राह्मणोंमें प्रभेद कहना	२४८०
युधिष्ठिरके पूछनेपर राजा जिसके धनका अधिकारी होता है और जैसी वृत्ति अवलम्बन करनी चाहिये भीष्मके द्वारा उसका वर्णन	२४८१
युधिष्ठिरका भीष्मसे ब्राह्मणके राजधर्म्म तथा वैश्य धर्म्माचरण विषयमें प्रश्न करना और भीष्मके द्वारा उसका वृत्तान्त वर्णन	२४८२
वैश्य, शूद्र और अन्त्यज प्रभृतिके शस्त्रधारी होनेपर चीणबल चत्रिय किस प्रकार लोक रक्षक होवे इत्यादि युधिष्ठिरके विविध प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा उनका वृत्तान्त वर्णन	२४८३
युधिष्ठिरका भीष्मसे ऋत्विकोंके कर्त्तव्य कर्म्म गुण और स्वभाव पूछना, भीष्मका उस विषयको कहना, यज्ञमें दक्षिणा देनेके विषयमें युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा उसका वृत्तान्त वर्णन... ...	२४८५
युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मका राजाके मित्र, शत्रु और लोगोंके विश्वास तथा अविश्वासका विषय कहना... ...	२४८६
युधिष्ठिरका भीष्मसे सबके चित्तको वशमें करनेकी उपाय पूछना और भीष्मका उस विषयमें श्रीकृष्ण तथा नारदका सम्वाद कहना	२४८८
भीष्मका युधिष्ठिरसे मित्र शत्रुकी परीक्षा विषयमें कालकवृक्षीय कौशल्यका सम्वाद कहना	२४९०
युधिष्ठिरका भीष्मसे राजाके कैसे सभासद, सुहृद, सहाय परिच्छद तथा मन्त्री होने योग्य हैं, इत्यादि विषय पूछना और भीष्मके द्वारा उनका वृत्तान्त वर्णन	२४९३
भीष्मका युधिष्ठिरसे राजाके सभासदादिके विषयमें इन्द्र वृहस्पति सम्वाद कहना	२४९६
युधिष्ठिरका भीष्मसे स्वर्ग और कीर्त्तिलाभ प्रभृतिकी उपाय पूछना तथा भीष्मके द्वारा उसका वृत्तान्त वर्णन	२४९७
युधिष्ठिरका भीष्मसे राजाओंका वासस्थान निरूपण विषयमें प्रश्न करना और भीष्मके द्वारा उसका वृत्तान्त वर्णन	२४९८
युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा राष्ट्ररक्षाकी उपाय वर्णन	२५००
युधिष्ठिरका भीष्मसे कोष बढानेवाले राजाका व्यवहार पूछना और भीष्मके द्वारा उसका वर्णन	२५०२
भीष्मके द्वारा राज्यपालन पद्धति वर्णन	२५०३
युधिष्ठिरके पूछनेपर 'तुल्य बाहुबलशाली तथा तुल्य गुणशाली मनुष्योंके बीच कौन मनुष्य सबसे प्रबल तथा सबका भक्षक होता है,' भीष्मके द्वारा इस विषयमें उतथ्य और मान्धाताका सम्वाद वर्णन	२५०४

विषय　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　पृष्ठा

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा धर्म्म-मार्गकी इच्छा करनेवाले राजाके धार्म्मिक होनेकी उपाय वर्णन २५०९

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा विजयकी इच्छा करनेवाले क्षत्रियके धर्म्माचरण तथा उचित युद्ध करनेका वृत्तान्त वर्णन २५१२

युधिष्ठिरका क्षत्रधर्म्मकी निन्दा पूर्व्वक भीष्मके समीप राजा जिन कर्म्मोंके सहारे सब लोकोंको जय करता है, उस विषयको पूछना और भीष्मके द्वारा उसका वर्णन २५१५

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा युद्धमें मरनेवाले शूरोंको जो लोक प्राप्त होते हैं, उस विषयमें अम्बरीष इन्द्र-सम्वाद वर्णन २५१६

भीष्मका युधिष्ठिरसे प्रतर्द्दन और जनकका युद्ध वृत्तान्त कहना २५१८

युधिष्ठिरके पूछनेपर विजयकी इच्छा करनेवाला राजा जिस प्रकार भयभीत सेनाको राजभय दिखाके युद्धके निमित्त भेजना उचित है, भीष्मका उसे वर्णन करना २५१९

युधिष्ठिरके पूछनेसे भीष्मके द्वारा शूर पुरुषोंके रूप, स्वभाव, आचार, सन्नाह, शस्त्रादिका विषय, देशाचार और कुलाचारके अनुसार वर्णन २५२१

युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा जयशील सेनाके लक्षण वर्णन २५२२

युधिष्ठिरके पूछनेपर प्रबल पक्षवाले शत्रुके सङ्ग जिस प्रकार आचरण करना चाहिये, भीष्मका उस विषयमें बृहस्पति इन्द्र सम्वाद कहना २५२४

युधिष्ठिरके प्रश्नके अनुसार भीष्मके द्वारा सेवकोंसे प्रबोधित, दण्ड और कोषसे रहित धन लाभमें असमर्थ होनेपर सुखको इच्छावाले राजाके विषयमें कौशल्य-कालक वृक्षीयका उपाख्यान वर्णन २५२७

युधिष्ठिरके समीप भीष्मके द्वारा शूरवीरोंका व्यवहार वर्णन २५३२

युधिष्ठिरसे भीष्मका अनुष्ठेय धर्म्म विषय कहना २५३३

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा धर्म्म-मार्गमें रहनेकी उपाय, सत्य, मिथ्या, सनातन धर्म्म तथा सत्य मिथ्या कहनेका समय वर्णन २५३५

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मका जीवोंको दुस्तर विषयोंसे पार होनेकी उपाय कहना २५३६

युधिष्ठिरके समीप भीष्मके द्वारा प्रियदर्शन तथा अप्रियदर्शन पुरुषोंके विषयमें व्याघ्र गोमायुका सम्वाद वर्णन २५३८

युधिष्ठिरके समीप भीष्मका राजाके कर्त्तव्य कर्म्म तथा सुखी होनेकी उपायके विषयमें उष्ट्रग्रीवोपाख्यान कहना २५४२

युधिष्ठिरका भीष्मके समीप राजाको दुर्लभ राज्यपाके असहाय होकर बलवान शत्रुके समीप जिस प्रकार रहना उचित है, उसको उपाय पूछना और भीष्मका उस विषयमें सरित्सागर सम्वाद कहना २५४३

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा सभाके बीच मूर्ख तथा प्रगल्भ कोमल वा कठोर भावसे निन्दित होनेपर विद्वान् पुरुषके व्यवहार वर्णन ... ... „

युधिष्ठिरके पूछनेसे भीष्मका राजनित्यादि कहना तथा ऋषि और कुत्तेका सम्वाद वर्णन करना २५४५

युधिष्ठिरके पूछनेसे भीष्मका संक्षेपमें राजधर्म्म कहना २५४९

युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा दण्ड और उसके रूपादि वर्णन ... २५५२

दण्ड उत्पत्तिके विषयमें भीष्मके द्वारा वसुहोमका इतिहास वर्णन ... २५५५

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा धर्म्म-

विषय	पृष्ठा
दिका निश्चय करनेके प्रसङ्गमें कामन्दक अङ्गरिष्ट सम्वाद वर्णन	२५५७
युधिष्ठिरका भीष्मसे शीलता तथा उसका लक्षण पूछना और भीष्मका उस प्रसङ्गमें दुर्य्योधन धृतराष्ट्रसंवाद कहना ...	२५५९
युधिष्ठिरका भीष्मसे आशाकी उत्पत्ति पूछना और उस विषयमें भीष्मके द्वारा सुमित्रऋषभ संवाद वर्णन...	२५६२
युधिष्ठिरका भीष्मसे धर्म्मकथा पूछना उस विषयमें भीष्मका यमगौतमसम्वाद कहना	२५६६
युधिष्ठिरका भीष्मसे मित्रादिसे रहित राजाके विषयमें उपाय पूछना और भीष्मका उस विषयमें उपाय वर्णन ...	„
युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा आपत्कालमें राजाओंके कर्त्तव्याकर्त्तव्यका विषय और राजाओंके राज्य, किला, सेवक तथा कोष शत्रुओंसे आक्रान्त होनेपर उस समयके योग्य कार्य्य वर्णन	२५६८
युधिष्ठिरका भीष्मसे आपत्कालमें उपजीव्य वस्तुओंकी चोरी होनेपर भी राजाओंसे ब्राह्मणोंकी रक्षा तथा उनके जीविकाकी उपाय पूछना, भीष्मके द्वारा उसकी उपाय वर्णन और राजाओंको निज-राज्य तथा परराज्यसे धनसंग्रहप्रतिबल तथा धर्म्म करनेका उपदेश	२५७०
युधिष्ठिरके विषयमें भीष्मका उपदेशछलसे दस्युराज कायव्यका उपन्यास कहना और राजकोष सञ्चयके विषयमें ब्रह्माकी कही हुई गाथा वर्णन	२५७३
युधिष्ठिरके निकट भीष्मके द्वारा अनागत विधाता, प्रत्युत्पन्नमति और दीर्घसूत्र पुरुषोंके लक्षणके विषयमें शकुलनामी तीन मछलियोंका इतिहास वर्णन	२५७५
युधिष्ठिरका भीष्मसे राजाके शत्रुओंके बीच घिरनेपर उसका कर्त्तव्य कार्य्य पूछना और भीष्मका उस विषयमें बिड़ाल—मूषिक—सम्वादयुक्त इतिहास कहना ...	२५७६
राजाओंको शत्रुओंका विश्वास न करना चाहिये, इस विषयमें सन्देहयुक्त होके युधिष्ठिरका भीष्मसे प्रश्न करना और उस विषयमें भीष्मके द्वारा पूजनी चिड़िया तथा राजा ब्रह्मदत्तका इतिहास वर्णन	२५८६
युधिष्ठिरका भीष्मसे युगक्षय निबन्धनसे धर्म्मादि विनष्ट तथा लोगोंके क्षीण होनेपर कर्त्तव्य कार्य्य पूछना और भीष्मका उस प्रसङ्गमें राजा शत्रुञ्जय और भरद्वाजका इतिहास कहना	२५९१
आपत्कालमें धर्म्मादि विनष्ट तथा लोगोंसे उल्लङ्घित होनेपर लोगोंके कर्त्तव्यकार्य्य विषयमें युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा उस विषयमें विश्वामित्र और चाण्डालका इतिहास वर्णन	२५९५
समस्त धर्म्माचरणमें असमर्थता हेतु युधिष्ठिरका भीष्मसे प्रश्न करना और भीष्मका युधिष्ठिरके विषयमें धर्म्माचरणविषयक उपदेश	२६००
शरणागत पुरुषोंके प्रतिपालन करनेसे जो धर्म्म होता है, उस विषयमें युधिष्ठिरके समीप भीष्मके द्वारा कबूतर और व्याधाके सम्वादयुक्त इतिहास वर्णन	२६०२
बिना जाने पापाचरण करनेसे किस प्रकार मुक्ति होती है, इस विषयको जाननेके लिये युधिष्ठिरका भीष्मसे प्रश्न करना और भीष्मका उस विषयमें इन्द्रोतजनमेजय सम्वाद कहना	२६०७
कोई मनुष्य मरके फिर जीवित होता है, उसे जाननेके लिये युधिष्ठिरका भीष्मसे प्रश्न करना और भीष्मका युधिष्ठिरसे उसके उत्तर प्रसङ्गमें गिद्ध-जम्बुक सम्वाद युक्त इतिहास कहना	२६११
असार, अल्प बल तथा क्षुद्रजीवी मनुष्य शत्रुनिग्रहमें समर्थ पुरुषसे वैर करनेपर किस	

विषय पृष्ठा

प्रकार आत्म रक्षा करेगा, उसे जाननेके लिये युधिष्ठिरका भीष्मसे प्रश्न करना और भीष्मका उस विषयमें शाल्मलिपवन सम्वादयुक्त इतिहास कहना २६१६

पापका निवास स्थान और जिससे पाप प्रवर्त्तित होता है, उसे जाननेके लिये युधिष्ठिरका भीष्मसे प्रश्न करना और भीष्मके द्वारा उसका वृत्तान्त वर्णन २६१८

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा अज्ञानका विषय वर्णन २६२१

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा स्वाध्यायमें यत्नशील धर्मकी इच्छावाले मनुष्योंके लिये इस लोकमें कल्याणदायक विषय वर्णन २६२२

युधिष्ठिरके निकट भीष्मके द्वारा तपका प्रभाव वर्णन २६२३

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा, सत्यधर्म सत्यके लक्षण तथा धर्मादि वर्णन ... २६२४

युधिष्ठिरका भीष्मसे कामादि तेरह रिपुओंकी उत्पत्तिका विषय पूछना, उस प्रसङ्गमें भीष्मके द्वारा लोभोपाख्यान और निरास पुरुषोंका वर्णन २६२५

युधिष्ठिके समीप भीष्मके द्वारा वेदान्त जाननेवाले तथा यज्ञ शील ब्राह्मणोंके विषयमें दानादि विविध उपदेश और रजस्वला गमन प्रभृति अनेक प्रकारके पाप तथा पापका प्रायश्चित वर्णन २६२७

नकुलके पूछनेपर भीष्मके द्वारा तलवारकी उत्पत्ति वर्णन २६३०

युधिष्ठिरका विदुर तथा भाइयोंसे धर्म, अर्थ, कामके उत्तम, मध्यम और निकृष्ट भेद पूछना तथा विदुरादिका उस विषयमें उत्तर २६३३

युधिष्ठिरका भीष्मसे मित्रामित्रका विषय पूछना और भीष्मका उस विषयको वर्णन करना २६३६

विषय पृष्ठा

युधिष्ठिरका भीष्मसे कृतघ्नका इतिहास पूछना तथा भीष्मके द्वारा कृतघ्नोपाख्यान वर्णन २६३७

भीष्मके निकट युधिष्ठिरका गृहस्थ प्रभृति आश्रमोंका धर्म पूछना और भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना और धन पुत्र तथा कलत्र विनष्ट होनेपर शोक दूर करनेके विषयमें राजा सेनजित् और पिङ्गलाका उपाख्यान वर्णन २६४३

सब प्राणियोंके क्षय करनेवाले समयके बीतते रहनेपर किस प्रकार कल्याणका आसरा करना चाहिये, इस विषयमें युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा पिता-पुत्रोपाख्यान वर्णन २६४६

पृथक् २ धनवान तथा निर्द्धन मनुष्योंके सुख-दुख लाभ विषयमें युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा उस विषयका वृत्तान्त वर्णन २६४७

कृषि-वाणिज्यप्रभृति कार्य्योंको करके अर्थ लाभमें असमर्थ होनेपर मनुष्य किस कार्य्यसे सुख लाभ कर सक्ता है? युधिष्ठिरके इस प्रश्न विषयमें भीष्मके द्वारा मङ्किगीता इतिहास वर्णन २६४८

मनुष्य किस व्यवहारके सहारे शोकरहित होके पृथ्वीपर विचरता है और किस कार्य्यको करके उत्तम गति पाता है? युधिष्ठिरके इस प्रश्नके उत्तरमें भीष्मके द्वारा प्रह्लाद और अजगरके सम्वादयुक्त इतिहास वर्णन २६५३

वान्धव, वित्त और बुद्धि, इनके बीच मनुष्योंकी किससे प्रतिष्ठा होती है? युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा उसके उत्तरमें इन्द्र काश्यप सम्वाद वर्णन ... २६५५

दान, यज्ञ प्रभृति कल्याण लाभके कारण हैं वा नहीं? युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा इस विषयका वृत्तान्त वर्णन ... २६५७

जीव समेत जगत् किससे उत्पन्न हुआ है? युधिष्ठिरका यह प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा उसके

विषय	पृष्ठा
उत्तर प्रसङ्गमें भृगु-भरद्वाजके सम्वाद युक्त इतिहास वर्णन …	… २६५८
युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा आचारकी विधि वर्णन …	… २६७२
युधिष्ठिरका अध्यात्म विषयक प्रश्न तथा जगत् किससे उत्पन्न होके प्रलयके समय किसमें लीन होता है, इत्यादि प्रश्न पूछना और भीष्मके द्वारा अध्यात्मयोग तथा ध्यान योग वर्णन .. …	… २६७४
युधिष्ठिरका जापकोंको फल प्राप्ति विषयमें प्रश्न सुनके भीष्मका जापक उपाख्यान कहना तथा जापकोंके निरयस्थानोंका वर्णन	२६८०
जापकोंकी गति और गन्तव्य विषयमें भीष्मके द्वारा इक्ष्वाकुवंशीय राजा और किसी ब्राह्मणका इतिहास वर्णन	… २६८१
युधिष्ठिरके पूछनेसे भीष्मके द्वारा जापकोपाख्यानका उपसंहार भाग वर्णन	… २६८८
ज्ञानयुक्त योग, सब वेद, अग्निहोत्रादि नियमोंके फल, तथा जीव किस प्रकार जाना जाता है, इत्यादि युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें मनु और वृहस्पति सम्वाद कहना …	… २६८९
भूतोंकी उत्पत्ति और लयके कारण केशवके स्वरूप विषयक युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मकेद्वारा सर्व्व भूतोंकी उत्पत्ति वर्णन	२७००
पहले कौन कौनसे प्रजापति थे, कौन ऋषि किस दिशामें बास करते हैं, युधिष्ठिरका यह प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा इस विषयका वृत्तान्त वर्णन … …	… २७०२
युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा श्रीकृष्णका माहात्म वर्णन …	… २७०३
युधिष्ठिरका मोक्षविषयक प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें गुरु शिष्य सम्वादयुक्त इतिहास कहना …	… २७०४
जनकवंशीय जनदेवने किस प्रकार समस्त व्यवहार भोगत्यागके मोक्षलाभ की थी ? युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मका उसके उत्तर प्रसङ्गमें पञ्चशिखकी कथा कहना	… २७१८
मनुष्य किन कर्म्मोंके करनेसे सुख पाता, किन कर्म्मोंसे दुःखभागी होता और कैसे कर्म्म करके सिद्ध पुरुषकी भांति विचरता है ? युधिष्ठिरका यह प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना …	… २७२५
यज्ञ दीक्षित वा सन्त्र दीक्षित ब्राह्मणादि तीनों वर्णोंको देवताओंको बलिसे बचा हुआ मांस खाना उचित है, वा नहीं ? तपस्या किसे कहते हैं ? ब्राह्मण किस प्रकार उपवासी वा ब्रह्मचारी हो सकते हैं ? इत्यादि युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मका क्रमसे उत्तर देना	२७२७
शुभ वा अशुभ कर्म्मोंका पुरुष कर्त्ता होता है, वा नहीं ? युधिष्ठिरके इस प्रश्नके विषयमें भीष्म के द्वारा प्रह्लाद और इन्द्रका सम्वाद वर्णन	„
राजा जिस बुद्धिके सहारे विपदग्रस्त वा श्रीभ्रष्ट होकर पृथ्वीपर विचरता है, युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा उस विषयमें इन्द्र और बलिके सम्वाद युक्त इतिहास वर्णन	२७२९
भीष्मके द्वारा इन्द्र-नमुचि सम्वादयुक्त इतिहास वर्णन …	… २७३६
वस्तु नाश वा राज्य नाश रूपी विपदमें पड़े हुए पुरुषके पक्षमें कल्याण क्या है ? युधिष्ठिरका यह प्रश्न सुनके भीष्मका उसके उत्तर प्रसङ्गमें इन्द्र और बलिका सम्वाद कहना	२७३७
युधिष्ठिरके पूछनेसे भावी उन्नतिशाली पुरुषोंके पूर्व्व लक्षणके विषयमें भीष्मका लक्ष्मी और इन्द्रके सम्वादयुक्त इतिहास कहना …	२७४२
पुरुष कैसे चरित्र, आचार, विद्या तथा पराक्रम सम्पन्न होनेसे उत्तम ब्रह्म धाम प्राप्त करता है ? युधिष्ठिरका यह प्रश्न सुनके उस विषयमें भीष्मके द्वारा जैगीषव्य और देवलका सम्वाद वर्णन …	… २७४७

विषय पृष्ठा

भूलोकमें सबका प्रिय सब जीवोंका अभिनन्दन करनेवाला मनुष्य कौन है ? युधिष्ठिरके पूछनेसे भीष्मका उस विषयमें बासुदेव-उग्रसेन सम्वाद कहना ·· ··· २७४८

जीवोंकी उत्पत्ति और लयके विषय तथा ध्यान, कर्म्म, काल और युग युगमें किस प्रकार परमायु होती है ? समस्त लोकतल, जीवोंकी अगति, गति, सृष्टि और मृत्यु कहांसे होती है ? युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके भीष्मका उसके उत्तर प्रसङ्गमें व्यासदेव और शुकदेवके सम्वादयुक्त इतिहास कहना ··· २७४६

'मृत' यह नाम कहांसे हुआ ? स्थूल वा सूक्ष्म शरीर अथवा आत्मा, इनमें किसकी मृत्यु होती है ? किस पुरुषसे उत्पन्न होकर मृत्यु किस निमित्त समस्त प्रजाको हरण करती है ? युधिष्ठिरका यह सब प्रश्न सुनके भीष्मका उसके प्रसङ्गमें मृत्यु और प्रजापतिका सम्वाद कहना ··· ··· ··· २७८६

युधिष्ठिरके पूछनेसे भीष्मके द्वारा धर्म्मके लक्षण वर्णन ··· ··· २७६०

युधिष्ठिरके धर्म्म सम्बन्धीय अनेक प्रकारके प्रश्न सुनके भीष्मकी उस प्रसङ्गमें जाजलि और तुलाधारके सम्वादयुक्त इतिहास कहना २७६३

भीष्मके द्वारा विचख्नुगीता तथा शरीर यात्रा निभानेकी उपाय वर्णन ··· २८०२

गुरुकी आज्ञासे यदि हिंसामय दुष्कर कर्म्म अवश्य करना पड़े, तो उस विषयमे शीघ्रता वा बिलम्बकी प्रतीक्षा करनी होगी ? युधिष्ठिरका यह प्रश्न सुनके भीष्मका चिरकारिकोपाख्यान कहना ··· ··· ··· २८०३

राजा किस प्रकार प्रजाकी रक्षा करे, किस भांति दण्ड बिधानसे रहित होके प्राणि हिंसासे निवृत्त रहे ? युधिष्ठिरके इस प्रश्नके उत्तर प्रसङ्गमें भीष्मके द्वारा द्युमत्सेन और सत्यवानका उपाख्यान वर्णन ··· ··· २८०८

विषय पृष्ठा

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा गार्हस्थ्य और योगधर्म्मके विषयमें गो-कपिल सम्बन्धीय इतिहास वर्णन ··· ··· २८१०

वेदोंमें कहे हुए धर्म्म, अर्थ और काम इन तीनोंके बीच किस विषयकी प्राप्ति श्रेष्ठ है ? युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा उस विषयके उदाहरणमें कुण्डधारका उपाख्यान वर्णन ··· ··· ··· २८१६

धर्म्म अथवा स्वर्गफलके निमित्त विनियुक्त यज्ञ कैसा है ? युधिष्ठिरका यह प्रश्न सुनके भीष्मका उसके उत्तर प्रसङ्गमें उञ्छवृत्ति ब्राह्मणका इतिहास कहना ··· २८२२

मनुष्य किस भांति पापात्मा होता तथा किस भांति धर्म्माचरण करता है ? इत्यादि युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मका उन विषयोंका उत्तर देना ··· ··· २८२३

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा मोक्ष विषयमें असित देवल और नारदका सम्वाद वर्णन ··· ··· ··· २८२४

युधिष्ठिरके पूछनेसे तृष्णाकी निवृत्तिके विषयमें भीष्मके द्वारा माण्डव्य और जनकका सम्वाद वर्णन ··· ··· २८२७

सर्व्व प्राणियोंके नाशक समयके बीतते रहने पर क्या करना योग्य है ? युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके भीष्मका, उस विषयमे पिता पुत्रके सम्वादयुक्त इतिहास कहना ··· २८२८

मनुष्य कैसे सत्स्वभाव, आचरण, ज्ञान तथा किसे अवलम्बन करनेसे ब्रह्मको पाता है ? युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना ··· ··· २८३०

युधिष्ठिरका सन्न्यास धर्म्म अवलम्बन करनेके लिये भीष्मसे प्रश्न करना और भीष्मका उस विषयमें वृत्रगीता कहना वा उस प्रसङ्गमें विविध प्रश्नोंका उत्तर देना ··· २८३२

युधिष्ठिरके पूछनेसे भीष्मके द्वारा ज्वरकी

विषय पृष्ठा

उत्पत्ति वर्णन २८४४

दक्षयज्ञके विनाशका वृत्तान्त वर्णन ... २८४६

युधिष्ठिरके प्रश्नके अनुसार भीष्मके द्वारा शिवसहस्रनाम वर्णन २८४८

अध्यात्मका स्वरूप क्या है तथा कहांसे अध्यात्म शास्त्र उत्पन्न हुआ है? युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना २८५६

युधिष्ठिरका दुःख तथा मृत्युभयसे परित्राणकी उपाय पूछना और भीष्मका उस विषयमें समङ्ग नारदके सम्वादयुक्त इतिहास कहना २८५८

युधिष्ठिरके प्रश्नके अनुसार भीष्मके द्वारा संशय प्रयुक्त अनुष्ठान रहित मनुष्यके कल्याण विषयमें नारद और गालवका इतिहास वर्णन २८६०

मेरे समान राजा पृथ्वी पालनेमें नियुक्त रहके किस भांति मोक्षधर्मका अनुष्ठान कर सकेगा और कैसे गुणसम्पन्न होनेसे आसक्ति पाशसे छूटेगा? युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा सगर और अरिष्टनेमिके संवाद-युक्त इतिहास वर्णन २८६२

देवर्षि उशना देवताओंके अप्रिय कार्य्योंमें नियुक्त होकर किस निमित्त सदा असुरोंके प्रिय करनेवाले हुए थे? युधिष्ठिरका यह प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना २८६६

भृगुनन्दन उशनाने किस निमित्त महादेवके जठरके बीच बिचरण किया था तथा वहां किस प्रकार तपस्या की थी? युधिष्ठिरके ऐसा पूछनेपर भीष्मके द्वारा भव-भार्गव सम्वाद युक्त इतिहास वर्णन २८६६

मनुष्य कैसा शुभकर्म्म करके इस लोक और परलोकमें कल्याण लाभ करता है? युधिष्ठिरके इस प्रश्नके विषयमें भीष्मके द्वारा पराशर गीता वर्णन २८६७

विषय पृष्ठा

लोकके बीच विद्वान मनुष्य सत्य, दम, क्षमा और बुद्धिकी प्रशंसा किया करते हैं, इस विषयमें आपका क्या मत है? युधिष्ठिरके इस प्रश्नके उत्तर प्रसङ्गमें भीष्मके द्वारा हंसगीता वर्णन २८८३

सांख्य और योगमें क्या विशेषता है? युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना २८८६

व्रत पवित्रता तथा दया वा दान सबके फल यदि दोनों मतमें ही समान हैं, तो दोनों दर्शन क्यों पृथक् हुए? युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना २८८७

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा योगियोंके आहारादि विषयोंके जयका वृत्तान्त वर्णन २८८८

युधिष्ठिरका सांख्य मत पूछना और भीष्मका उसे वर्णन करना ... २८८९

निज शरीरसे उत्पन्न कौन कौनसे दोष अशुभ रूपसे दीखते हैं? युधिष्ठिरके पूछनेसे भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना २८९०

सांख्यगणोंको षड्गुणऐश्वर्य्य सम्पन्न परमात्मस्वरूप परम मोक्षधाम प्राप्त होनेपर उन्हें जन्म मरणादिका स्मरण तथा मोक्ष विषयमें विशेष ज्ञान रहता है, वा नहीं? इत्यादि युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा सांख्ययोग वर्णन २८९२

जिससे जीवोंकी पुनरावृत्ति रहित होती तथा जिससे जीवोंका पुनरागमन होता है, जो अक्षर तथा क्षररूपसे वर्णन हुआ है, वह कौन है? युधिष्ठिरके इस प्रश्नके विषयमें भीष्मका वसिष्ठ-करालजनक सम्वाद तथा जनकानुशासन वर्णन... ... ... २८९३

जनकपुत्र वसुमान और भृगुनन्दनके संवाद प्रसङ्गमें भीष्मके द्वारा युधिष्ठिरके समीप

विषय पृष्ठा

इस लोक तथा परलोकके कल्याणकारी कार्य्य वर्णन २६०८

"जो धर्म्माधर्म्म, सब भांतिके संशय, जन्म, मृत्यु, पुण्यपापसे विमुक्त, मङ्गल स्वरूप, सर्व्वदा भयरहित, अविनाशी, अचर, अव्यय, स्वभावसे ही निर्दोष तथा सदा आयास रहित है, उसे ही वर्णन करना उचित है," युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके भीष्मका उसके उत्तर प्रसङ्गमें याज्ञवल्क्य और जनकके संवादयुक्त इतिहास कहना ... २६०६

मनुष्य महत् ऐश्वर्य्य, विपुल वित्त अथवा दीर्घ परमायु पाके किस प्रकार मृत्युको अतिक्रम करता है? तपस्या धर्म्म, शास्त्रज्ञान वा रसायन प्रयोग करनेसे जरा-मृत्युको प्राप्त नहीं होता? युधिष्ठिरके इस प्रश्नके उत्तरमें भीष्मके द्वारा पञ्चशिख और जनकका सम्वाद वर्णन २६२२

किस पुरुषने गृहस्थ धर्म्म परित्याग न करके बुद्धिके विलयास्पद मोचल पाया है? स्थूल वा लिङ्ग शरीर किस प्रकार परित्यक्त होता तथा मोक्षका परम तत्त्व क्या है? युधिष्ठिरके इस प्रश्नके अनुसार भीष्मका सुलभा और जनकके संवादयुक्त इतिहास कहना २६२३

व्यासपुत्र शुकदेवने किस प्रकार वैराग्य लाभ किया था? और आपने नारायणके किस कार्य्यकलापका बुद्धिके सहारे निश्चय किया है? युधिष्ठिरके इस प्रश्नके उत्तरमें भीष्मके द्वारा व्यासदेव-शुकदेव संवाद वर्णन २६३२

युधिष्ठिरका दान, यज्ञ तपस्या तथा गुरु-सेवाका विषय पूछना और भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना २६३७

युधिष्ठिरका शुकदेवके जन्म तथा उनके सम्बन्धमें कई एक प्रश्न करना और भीष्मके द्वारा उन प्रश्नोंका वृत्तान्त वर्णन २६३८

गृहस्थादि चारों आश्रमवाले सिद्धिकी अभिलाष करके किस देवताकी पूजा करें? इत्यादि युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा नारद और नारायणके संवादयुक्त इतिहास तथा श्वेतद्वीप निवासी पुरुषोंके वृत्तान्त कहनेके प्रसङ्गमें राजा उपरिचर वसुका यज्ञ वा स्वर्गसे भ्रष्ट होनेका वृत्तान्त वर्णन २६५६

सर्व्व शक्तिमान भगवान् स्वयं यज्ञेश्वर होकर किस प्रकार यज्ञ करता और वेदकर्त्ता होके किस प्रकार वेदाङ्गवेत्ता कहके विख्यात हुआ है? इत्यादि शौनकके प्रश्नानुसार सौतिका उस विषयमें उत्तर देना २६७५

अर्ज्जुनके पूछनेपर श्रीकृष्णका निज नामोंका निरुक्त कहना २६८०

अग्नि और चन्द्रमा किस प्रकार पहले एक योनि हुए थे? अर्ज्जुनका यह प्रश्न सुनके कृष्णका उस विषयमें उत्तर देना २६८३

अनिरुद्ध शरीरसे स्थित नारायणका दर्शन करनेपर भी किस लिये नारद वहांसे नर-नारायणका दर्शन करनेके लिये दौड़े? शौनकका यह प्रश्न सुनके सूतका उस विषयमें उत्तर देना २६६२

वैशम्पायन मुनिके द्वारा नर-नारायणकी वार्त्तालाप वर्णन २६६३

तुम इस कल्पित दैव और पितृकार्य्यमें किसकी पूजा करते हो? नर ऋषिका ऐसा प्रश्न सुनके नारद मुनिका उस विषयमें उत्तर देना २६६५

पहले समयमें पितरोंकी किस प्रकार पिण्ड संज्ञा प्राप्त हुई? नारदका ऐसा प्रश्न सुनके नर-नारायणका उस विषयमें उत्तर देना २६६६

हरिका अद्भुत रूप हयग्रीव अवतार क्यों हुआ और हयग्रीवको देखके ब्रह्माने क्या किया था? इत्यादि जनमेजयका प्रश्न सुनके वैशम्पायन मुनिका उस विषयमें उत्तर देना २६६७

विषय	पृष्ठा
जनमेजयका यथाक्रमसे ऐकान्तिक पुरुषोंके धर्म्माचरण, अनेक विषयोंमें स्थित ब्राह्मणोंके उक्त धर्म्माचरण न करनेका कारण प्रभृति पूछना और वैशम्पायनका उस विषयमें उत्तर देना	३००१
जनमेजयका वैकारिक पुरुषोंके पुरुषोत्तम विषयक प्रश्न सुनके वैशम्पायनका उस विषयमें उत्तर देना	३००४
सांख्य योगादि सब ज्ञानकाण्ड एकनिष्ठ वा पृथक् निष्ठ हैं? वेदव्यास मुनि किस प्रकार नारायणके पुत्र हुए? जनमेजयका ऐसा प्रश्न सुनके वैशम्पायनका उस विषयमें उत्तर देना	३००५
पुरुष अनेक अथवा एक है? श्रेष्ठ पुरुष कौन है और उसकी योनि क्या है? जनमेजयका यह प्रश्न सुनके वैशम्पायनके द्वारा उस विषयका वृत्तान्त वर्णन... ...	३००८
युधिष्ठिरका भीष्मके समीप आश्रमवासियोंका श्रेष्ठ धर्म्म पूछना और भीष्मके द्वारा उस विषयमें नारद तथा इन्द्रके सम्वादयुक्त उञ्छवृत्ति उपाख्यान वर्णन ...	३०११
शान्ति पर्व्वकी समाप्ति	३०१८

द्रोण, कर्ण, शल्य, सौप्तिक, स्त्री, शान्ति पर्व्वोंकी सूचीपत्र सम्पूर्ण ।

सूचीपत्र ।

अनुशासनपर्व्व ।

विषय — पृष्ठा

युधिष्ठिरका भीष्मके समीप शोक निवारण तथा स्वजनवध जनित पाप दूर करनेको उपाय पूछना और भीष्मके द्वारा उस विषयके उत्तर प्रसङ्गमें गौतमी, व्याध, सर्प, मृत्यु और कालका सम्वाद वर्णन ३०२१

किस गृहस्थने धर्म्मके सहारे मृत्युको पराजित किया है? युधिष्ठिरका यह प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें सुदर्शन उपाख्यान युक्त इतिहास कहना ३०२५

युधिष्ठिरका विश्वामित्रके ब्राह्मणत्व प्राप्तिका कारण तथा वसिष्ठके पुत्रनाशादि वृत्तान्त पूछना और भीष्मके द्वारा वह सब वृत्तान्त वर्णित होना ३०३०

युधिष्ठिरका अनृशंस्य धर्म्म और भक्तोंका गुण पूछना और भीष्मका उस विषयमें शुक-इन्द्र सम्वादयुक्त इतिहास कहना ... ३०३२

युधिष्ठिरका भाग्य और उद्योगकी श्रेष्ठताके विषयमें प्रश्न सुनके भीष्मका उसके उत्तर प्रसङ्गमें ब्रह्मा और वसिष्ठके सम्वादयुक्त इतिहास कहना ३०३४

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा शुभ कर्म्मोंके फल वर्णन ३०३७

पूज्य कौन है? किसे नमस्कार करना चाहिये? इत्यादि युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना ... ३०३८

दान करनेका सङ्कल्प करके जो लोग ब्राह्मणोंको दान नहीं देते, भविष्यमें उनकी कैसी दशा होती है? युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा उसका वृत्तान्त वर्णन ३०३९

विषय — पृष्ठा

उपकारकी इच्छा करके जो उपकार करते तथा उपकारकी इच्छा न करके जो पुरुष उपकर्त्ता होते हैं, वैसी मित्रता-संबन्धके वशमें होकर यदि कोई नीच जातिको उपदेश करे, तो उसे दोष होता है, वा नहीं? इत्यादि युधिष्ठिरका प्रश्न सुन भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना ३०४१

कैसे पुरुष और कैसी स्त्रीमें लक्ष्मी निवास करती है? इत्यादि युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा उस विषयका वृत्तान्त वर्णन ३०४४

स्त्री पुरुषके संयोगमें वैषयिक सुख किसे अधिक होता है? युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना... ... ३०४५

ऐहिक शिष्ट व्यवहार और पारलौकिक कल्याणकी इच्छावाले मनुष्यको क्या करना चाहिये तथा कैसे स्वभावसे युक्त होकर मनुष्य लोक यात्रा निर्व्वाह करे? इत्यादि युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना ३०४८

युधिष्ठिरका महेश्वरके नाम सुननेके लिये अभिलाषी होना, उस विषयमें कृष्णका पुत्र कामनासे युक्त होकर निज तपस्या उपमन्युके कहे हुए मघवाहनोपाख्यान, तथा महादेवके समीप उपमन्युके वर प्राप्तिका वृत्तान्त कहना „

तण्डि ऋषिको महादेवकी आराधनासे वर मिलना ३०६६

कृष्णके द्वारा उपमन्युके कहे हुए महादेवके सहस्र नाम वर्णन ३०७०

व्यासादिका महेश्वर स्तवकी प्रशंसा करके युधिष्ठिरको उसे पाठ करनेके लिये कहना ३०८४

विषय पृष्ठा

स्त्रियोंकी पाणिग्रहणके समय जो सहधर्म्म होता है, वह क्या ऋषियोंके कहे हुए मन्त्रके द्वारा प्रकाशित धर्म्म है अथवा प्रजापतिके सहारे सन्तानके लिये प्रसिद्ध हुआ है? इत्यादि युधिष्ठिरके प्रश्नानुसार भीष्मका उस विषयसे अष्टावक्रादिक सम्वादयुक्त इतिहास कहना ३०८८

युधिष्ठिरके अनेक प्रकारके प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना ... ३०९४

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा दैव और पितरश्राद्धका समय वर्णन ... ३०९६

हिंसा न करनेपर भी किस प्रकार ब्रह्महत्या विहित हुई है? युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना ३१०१

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा तीर्थ दर्शनादिके माहात्म्य वर्णन ... ३१०२

भीष्मके समीप सप्तर्षियोंका आगमन ३१०४

कौन देश, जनपद, आश्रम, पर्व्वत तथा कौनसी नदियें पुण्य-प्रभावसे श्रेष्ठ तथा जानने योग्य हैं? युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा इस विषयके उत्तर प्रसङ्गमें शिलोञ्छवृत्ति और सिद्धके सम्वादयुक्त इतिहास वर्णन ३१०५

युधिष्ठिरका ब्राह्मणत्व-प्राप्ति विषयक प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा उस विषयमें मतङ्ग और गर्दभीके सम्वादयुक्त इतिहास वर्णन ३१०९

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा राजा वीतहव्यके ब्राह्मणत्व प्राप्तिका विषय वर्णन ३११२

तीनों लोकके बीच कौनसे मनुष्य पूज्य हैं? युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना ३११५

युधिष्ठिरका भीष्मसे शरणागतकी रक्षाका फल पूछना और भीष्मके द्वारा उस विषयमें बाज कबूतर तथा राजा वृषदर्भके सम्वादयुक्त इतिहास वर्णन ३११६

युधिष्ठिरका भीष्मके समीप राजाके गुरुतर कार्य्य और इस लोक तथा परलोकमें सुख प्राप्त होनेका विषय पूछना और भीष्मके द्वारा उस विषयमें प्रशंसा वर्णन ... ३११८

पूर्व्व परिचित, चिरोषित और दूरदेशका अभ्यागत इन तीनों पात्रोंके बीच कौन पात्र उत्तम है? युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा इस विषयका वृत्तान्त वर्णन ... ३१२२

युधिष्ठिरके पूछनेपर स्त्रियोंके स्वभाव वर्णन करनेके विषयमें भीष्मका पञ्चचूड़ा और नारदके सम्वादयुक्त इतिहास कहना ३१२३

युधिष्ठिरका भीष्मके समीप स्त्रीरक्षा विषयक प्रश्न करना और भीष्मका उसके उत्तर प्रसङ्गमें विपुल उपाख्यान कहना ३१२५

युधिष्ठिरका भीष्मके समीप पितृलोक, देवता, अतिथि स्वजन गृह, सब धर्म्मोंका मूल तथा कन्यादान करने योग्य पात्र पूछना और भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना ३१३१

युधिष्ठिरका भीष्मके समीप कन्याके शुल्कप्रद पतिप्रोषित होनेपर उसका व्यवहार पूछना और भीष्मके द्वारा उसका वृत्तान्त वर्णन ३१३२

युधिष्ठिरका धर्म्ममार्गसे चलनेवाले मनुष्योंके कर्त्तव्यकर्म्म तथा ब्राह्मणके चार प्रकारकी स्त्रियोंसे गर्भसे उत्पन्न हुए पुत्रोंके पैतृक अंश पानेका विषय पूछना और भीष्मके द्वारा उसका वृत्तान्त वर्णन ३१३६

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा अन्य वर्णोंके दाय विभागका नियम वर्णन ३१३८

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा वर्णसङ्कर जातिके धर्म्मादि वर्णन ... ३१३९

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मका सब वर्णोंके पृथक् पृथक् विषय वर्णन करना ३१४२

दूसरेकी पीड़ा देखके कैसा स्नेह करना चाहिये? दूसरोंके सङ्ग किस प्रकार अनृशंसताका अनुष्ठान करना योग्य है तथा गौओंका कैसा माहात्म्य है? युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके भीष्मका उसके उत्तर प्रसङ्गमें चवनी-

विषय पृष्ठा

पाख्यान कहना ३१४३

युधिष्ठिरके पूछनेपर परशुरामकी उत्पत्ति विषयमें भीष्मके द्वारा च्यवनकुशिक संवादयुक्त इतिहास वर्णन ३१४६

स्वजन और राजाओंके बधसे दुःखित युधिष्ठिरका भीष्मके समीप हिंसाजनित पाप दूर होनेको उपाय पूछना और भीष्मके द्वारा पापनाशक उपाय वर्णन .. ३१५४

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा आराम तथा तड़ागोत्सर्गका फल वर्णन ३१५६

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा दान धर्म्म वर्णन ३१५८

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा दान और यज्ञके उत्कृष्ट फल वर्णन ३१६१

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा सबसे उत्कृष्ट दानका फल वर्णन .. ३१६२

इस लोकमें राजा किन वस्तुओंके दानकी कामना करके अधिक गुणवाले ब्राह्मणोंको दान करे? इत्यादि युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना ३१६६

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा नक्षत्र योगमें दानका फल वर्णन ... ३१६८

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा दह्यमान ब्राह्मणको पादुका प्रभृति दानका फल वर्णन ३१७१

युधिष्ठिरके पूछनेसे भीष्मके द्वारा जल दानका फल वर्णन ३१७३

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा तिल और दीप दानका फल वर्णन ३१७४

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा सब दानोंकी श्रेष्ठ विधि तथा भूमिदानका फल वर्णन ३१७५

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा गोदानका फल वर्णन ३१७६

गोदानको फलप्राप्ति विषयमें भीष्मके द्वारा

विषय पृष्ठा

उद्दालकि और नाचिकेतके सम्वादयुक्त इतिहास वर्णन ३१७८

युधिष्ठिरका गोदाताके लोकप्राप्तिका विवरण पूछना और भीष्मका उसके उत्तर प्रसङ्गमें इन्द्र-ब्रह्माके सम्वादयुक्त इतिहास कहना ३१८१

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा व्रतादिके फल वर्णन ३१८४

युधिष्ठिरका भीष्मके समीप गोदानको विधि तथा फलादि विविध प्रश्न करना और भीष्मका विविध इतिहास कहके उस विषयमें उत्तर देना... ... ... ३१८६

युधिष्ठिरका भीष्मसे सुवर्णकी उत्पत्ति तथा उसका स्वरूपादि पूछना और भीष्मका उसके उत्तर प्रसङ्गमें कार्त्तिकेयकी उत्पत्ति कहना ३१९८

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा श्राद्धकी विधि वर्णन ३२०८

उपवास तपस्या है, वा अन्य भांतिके किसी नियमसे तपस्या होती है? इत्यादि युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना ३२१६

जो लोग ब्राह्मणोंको विविध वस्तु दान करते हैं, उन देनेवाले और लेनेवालोंमें क्या विशेषता है? युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा उसके उत्तर प्रसङ्गमें राजा वृषादर्भि और सप्तर्षियोंके सम्वादयुक्त इतिहास वर्णन ३२१७

युधिष्ठिरका भीष्मके निकट श्राद्धादि कार्य्यमें छत्र और पादुका दान करनेको कारण पूछना और भीष्मके द्वारा उस विषयमें सूर्य्य तथा जमदग्निके सम्वादयुक्त इतिहास वर्णन ३२२६

युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा गार्हस्थ्यधर्म्म वर्णन ३२२८

युधिष्ठिरके पूछनेसे फूल, धूप और दीप

विषय	पृष्ठा
दानके विषयमें भीष्मके द्वारा अगस्त्य, भृगु तथा नहुषके सम्वादयुक्त इतिहास वर्णन	३२२६
युधिष्ठिरके पूछनेसे भीष्मके द्वारा ब्राह्मणोंके धन हरनेवालोंकी गति वर्णन	३२३५
युधिष्ठिरका भीष्मके समीप सुकृतशाली मनुष्योंके परलोकमें निवासका विवरण पूछना और भीष्मका उसके उत्तर प्रसङ्गमें इन्द्र और गौतमके सम्वादयुक्त इतिहास कहना	३२३६
तपस्यासे श्रेष्ठ क्या है? इत्यादि धर्म्मपुत्रका प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा ब्रह्मा और भगीरथके सम्वादयुक्त इतिहास वर्णन	३२३९
किस प्रकार मनुष्य आयुष्मान तथा अल्पायु होता है? किस भांति कीर्त्ति वा लक्ष्मी प्राप्त होती है? इत्यादि युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा उसका वृत्तान्त वर्णन	... ३२४१
युधिष्ठिरका भीष्मसे जेष्ठ तथा कनिष्ठका व्यवहार पूछना और भीष्मके द्वारा उसका वृत्तान्त वर्णन ...	... ३२४७
धर्म्मराजका भीष्मसे सब वर्णोंकी उपवास-विधि तथा उपवास परायण पुरुषोंकी गति पूछना और भीष्मका उसके उत्तर प्रसङ्गमें अङ्गिराके कहे हुए बचन कहना	३२४९
धर्म्मराजके पूछनेपर भीष्मके द्वारा दरिद्रोंके निमित्त यज्ञ-विधि वर्णन	३२५१
युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा श्रेष्ठ तीर्थका विषय वर्णन ...	... ३२५६
युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा कल्याणकारी, महत् फल जनक और संशय रहित उपवासका वर्णन	... ३२५७
युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा रूप, सौभाग्य और प्रियत्वका विषय वर्णन	३२५८
विविध प्रश्नोत्तर प्रसङ्गमें युधिष्ठिर और बृहस्पतिकी उक्ति प्रत्युक्ति ...	„
मनुष्य बचन, मन और कर्म्मसे हिंसा करते हुए किस प्रकार दुःखोंसे छूटता है? इत्यादि युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना ...	... ३२६५
युधिष्ठिरका मास भक्षण विषयक प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना	३२६६
जो लोग अकाम वा सकाम होकर महायुद्धमें मरते हैं, उन्हें कौनसी गति प्राप्त होती है? युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके भीष्मका उसके उत्तर प्रसङ्गमें द्वैपायन और कीटोपाख्यान कहना ...	... ३२७१
विद्या, तपस्या और दानके बीच श्रेष्ठ क्या है? युधिष्ठिरका यह प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा उसके उत्तर प्रसङ्गमें मैत्रेय और कृष्णद्वैपायनका सम्वाद वर्णन ...	... ३२७३
युधिष्ठिरका भीष्मसे सती स्त्रियोंका समुदाचार पूछना और भीष्मके द्वारा उस विषयमें सुमना और शाण्डिलीका सम्वाद वर्णन	३२७६
साम और दानके बीच श्रेष्ठ कौन है? युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें राक्षस और ब्राह्मणके सम्वाद युक्त इतिहास कहना ...	... ३२७७
अत्यन्त दुर्लभ कर्म्म क्षेत्रमें मनुष्य जन्म पाके कल्याण चाहनवाले दरिद्रोंका जो कर्त्तव्य है, जो सब दानोंके बीच उत्कृष्ट तथा मान्य वा पूज्य लोगोंको जो वस्तु जिस प्रकार देने योग्य है;—युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा उसका वृत्तान्त वर्णन ...	... ३२७९
युधिष्ठिरका ब्राह्मणादिके भोजान्नविषयक प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना	३२८०
दान और तपस्याके बीच कौन विषय श्रेष्ठ है? युधिष्ठिरके पूछनेपर भीष्मके द्वारा उसका तथा दान धर्म्मके सहारे राजाओंके स्वर्गमें गमन करनेका वृत्तान्त वर्णन	... ३२८२
युधिष्ठिरका भीष्मसे कृष्णकी महिमा पूछना और भीष्मका उसके उत्तर प्रसङ्गमें ऋषियों तथा	

विषय	पृष्ठा
श्रीकृष्णके सम्वादयुक्त इतिहास कहना	३२६४
युधिष्ठिरके समीप भीष्मके द्वारा उमा-महेश्वर सम्वाद वर्णन …	… ३२६५
मनुष्यवृन्द किस देवता तथा परमाश्रयकी प्रजा करते हुए इस लोकमें शुभलाभ करते हैं ? युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके भीष्मका उसके उत्तर प्रसङ्गमें विष्णु सहस्र नाम कहना	३३११
कैसा जप्य मन्त्र जपनेसे महत् फल होता है ? इत्यादि युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना	… ३३२१
कौन पूज्य और कौन नमस्कार करने योग्य है ? इत्यादि युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना	… ३३२४
किस प्रकार कल्पको देखके तथा कैसे कर्म्मोदयको जानके आप ब्राह्मणोंकी पुजा करते हैं ? युधिष्ठिरके ऐसा पूछनेपर भीष्मके द्वारा उस विषयमें पवनार्ज्जुन सम्वादयुक्त इतिहास वर्णन …	… ३३३५
युधिष्ठिरका भीष्मसे ब्राह्मण पूजाका फल पूछना और भीष्मका कृष्णसे ब्राह्मण पूजाका विषय पूछनेके लिये युधिष्ठिरसे अनुरोध करना … …	… ३३४२
धर्म्मराजके पूछनेपर कृष्णके द्वारा ब्राह्मण प्रजाका फल वर्णन …	… ३३४५
दुर्व्वासाकी कृपासे उस समय तुम्हें कौनसा विज्ञान प्राप्त हुआ था ? युधिष्ठिरका यह प्रश्न सुनके कृष्णका उस विषयको कहनेके प्रसङ्गमें ईश्वरकी प्रशंसा करना	… ३३४७
निर्णय और आगम; इन दोनोंके बीच कारण क्या है ? युधिष्ठिरका ऐसा प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना	… ३३५०
युधिष्ठिर और भीष्मका विविध प्रश्नोत्तर	३३५१
भाग्यहीन मनुष्य अत्यन्त बलवान होके भी धनवान नहीं होता, इत्यादि धर्म्मराजका प्रश्न सुनके भीष्मका उस विषयमें उत्तर देना	३३५२
इस लोकमें पुरुषके लिये कल्याण क्या है, इत्यादि युधिष्ठिरका प्रश्न सुनके भीष्मके द्वारा देववंश प्रभृति वर्णन …	… ३३५४
जनमेजयके पूछनेपर वैशम्पायन मुनिके द्वारा युधिष्ठिरादिके विषयमें भीष्मके शेष वचन तथा भीष्मके प्राणत्यागनेका विषय वर्णन	३३५६
भीष्मके मरनेपर गङ्गाका बिलाप तथा कृष्णका गङ्गादेवीको धीरज देना	… ३३५८
अनुशासन पर्व्वकी समाप्ति …	,,

अश्वमेधपर्व्वका सूचीपत्र ।

विषय	पृष्ठा
धृतराष्ट्रको आगे करके शोकार्त्त युधिष्ठिरका पृथ्वीपर गिरना, युधिष्ठिरको धृतराष्ट्र और कृष्णका धीरज देना	… ३३६१
धर्म्मराजका वनमें जानेके लिये कृष्णसे अनुमति मांगना तथा युधिष्ठिरके विषयमें व्यास देवके धैर्य्य युक्त वचन …	… ३३६२
युधिष्ठिरका व्यासदेवसे अश्वमेध यज्ञके निमित्त धन प्राप्तिकी उपाय पूछना और व्यासदेवके द्वारा युधिष्ठिरको मरुत्तराजका धन लानेके लिये उपदेश …	… ३३६३
युधिष्ठिरका व्यासदेवसे मरुत्तराजाका विवरण पूछना … …	,,
व्यासदेवके द्वारा राजा मरुत्तका वृत्तान्त वर्णन … …	… ३३६४
धर्म्मराजका व्यासदेवसे मरुत्तका वीर्य्य तथा सुवर्ण सञ्चयका वृत्तान्त पूछना और व्यासदेवका उस विषयमें बृहस्पति मरुत्तके सम्वाद युक्त इतिहास कहना …	… ३३६५
युधिष्ठिरादिको श्रीकृष्णका धीरज देना	३३७४
व्यासादिके वचनसे शोक रहित होके युधिष्ठिरका वान्धवोंके प्रेतकार्य्यादि करनेके अनन्तर पृथ्वीको वशमें करके व्यासादिके सङ्ग वार्त्तालाप करना …	… ३३

विषय पृष्ठा

कृष्णार्ज्जुनका इन्द्रप्रस्थमें विहार तथा अनेक प्रकारकी वार्त्तालाप ३३७८

अर्ज्जुनका कृष्णसे पूर्व्वोक्त परमात्म-विषय पूछना और कृष्णका उसके उत्तर प्रसङ्गमें ब्राह्मण गीता कहना ३३७६

परमज्ञेय कौन है? अर्ज्जुनका ऐसा प्रश्न सुनके कृष्णका उसका उत्तर प्रसङ्गमें गुरुशिष्यके सम्वादयुक्त इतिहास कहना ... ३४०३

अर्ज्जुनके पूछनेपर कृष्णके द्वारा गुरुशिष्यका वृत्तान्त वर्णन ... ३४२४

द्वारकामें जानेके निमित्त कृष्णका अर्ज्जुनसे सम्मति करना ३४२५

द्वारकापुरीमें जानेकी वार्त्ता कहनेके लिये कृष्णका अर्ज्जुनके सहित युधिष्ठिरके समीप जाना और उनकी अनुमतिसे द्वारकाकी ओर चलना ३४२६

कृष्णसे मरुभूमिमें उतङ्क ऋषिसे भेंट होनी तथा दोनोंकी वार्तालाप ... ३४२८

जनमेजयका वैशम्पायनसे उतङ्ककी तपस्याका बिवरण पूछना और वैशम्पायनके द्वारा उतङ्क मुनिका वृत्तान्त वर्णन ३४३१

उतङ्कके गुरुदक्षिणा देनेके निमित्त उद्यत होनेपर गौतम-पत्नी अहल्याका उनसे राजा सौदासकी स्त्रीका कुण्डल मांगना और उसे लानेके लिये उतङ्कका सौदासके निकट जाना ३४३२

उतङ्क और सौदासकी वार्त्तालाप ... „

सौदासके वचन अनुसार उतङ्कका उनकी स्त्रीके समीप जाके कुण्डल मांगना और मदयन्तीसे कुण्डल पाके अर्ज्जुनके पास जानेकी इच्छासे प्रस्थान करना, मार्गमें सर्पके द्वारा कुण्डल हरण होना फिर नागलोकसे कुण्डल लाकर अहल्याको देना ... ३४३३

कृष्णका द्वारकामें जाना ... ३४३६

वसुदेवके पूछनेपर कृष्णके द्वारा कुरु-

विषय पृष्ठा

पाण्डवोंके युद्धका वृत्तान्त वर्णन ... ३४३७

जनमेजयके पूछनेपर वैशम्पायनके द्वारा पाण्डवोंकी मरुत्तराजकी रत्न प्राप्तिका वृत्तान्त वर्णन ३४४०

कृष्णका हस्तिनापुरमें आना और उत्पन्न हुए मृत परीक्षितको जिलाना ३४४३

रत्न संग्रह करके पाण्डवोंका हस्तिनापुरमें आके परीक्षितका जन्म वृत्तान्त सुनना युधिष्ठिरके निकट व्यासदेवका आगमन ... ३४४७

युधिष्ठिरको यज्ञ करनेके लिये व्यासदेवकी अनुमति मिलनी, धर्म्मराजका यज्ञमें दीक्षित होनेके निमित्त व्यासदेवके निकट प्रस्ताव करना ३४४८

वेदव्यासके द्वारा यज्ञ करनेका समय वर्णन और घोड़ेकी परीक्षा करके देश भ्रमणके निमित्त छोड़नेकी अनुमति देनी और व्यासदेवकी आज्ञानुसार युधिष्ठिरका अर्ज्जुनको घोड़ेकी रक्षा करनेके लिये नियुक्त करना ... ३४४९

अर्ज्जुनका घोड़ेके सङ्ग चलना ... „

घोड़ेके सहित अर्ज्जुनका त्रिगर्त्त देशमें जाके त्रिगर्त्तवासियोंके सङ्ग युद्ध करके वहांसे प्राग्ज्योतिष पुरमें जाके वज्रदत्तके सङ्ग संग्राम करना ३४५०

अर्ज्जुनका सिन्धुराजबंशियोंके सङ्ग युद्ध ३४५३

अर्ज्जुनका मणिपुर राज्यमें बभ्रुवाहनके सङ्ग संग्राम ३४५६

बभ्रुवाहनके बाणसे अर्ज्जुनका प्राण त्यागना और चित्राङ्गदा तथा उलूपीके द्वारा फिर जीवित होना ३४५७

चित्राङ्गदा और उलूपीके सङ्ग अर्ज्जुनकी वार्त्तालाप... ... ... ३४६०

घोड़ेके सङ्ग अर्ज्जुनका मगधदेशमें जाना और सहदेवपुत्र मेघसन्धिके सङ्ग युद्ध करना ३४६१

अर्ज्जुनका समुद्रके तटसे अङ्ग प्रभृति देशोंमें

विषय पृष्ठा

जाकर वहांके सब लोगोंको जीतते हुए दाशार्ण देशमें जाकर चित्राङ्गदके सङ्ग युद्ध करना फिर वहांसे चलके मार्गमें अनेक राजाओंसे युद्ध करते हुए गान्धार देशमें जाके शकुनिपुत्रके सङ्ग युद्ध करना ३४६३

घोड़ेके सहित अर्ज्जुनका हस्तिनापुरकी ओर लौटना, उस वृत्तान्तको सुनके धर्म्मराजका भीमादि भाइयोंको यज्ञानुष्ठानके लिये आज्ञा देना ३४६४

भीमका स्थपतिगणोंके द्वारा यज्ञस्थान तथा गृहादि निर्म्माण कराके राजाओंके समीप दूत भेजना तथा अनेक देशके राजाओंका हस्तिनापुरमें आना ३४६५

बलदेवके सहित श्रीकृष्णका हस्तिनापुरमें आना और युधिष्ठिरके सङ्ग कृष्णकी वार्त्तालाप ३४६६

युधिष्ठिरको यज्ञमें दीक्षित होनेके लिये अनुमति, युधिष्ठिरकी दीक्षा और अश्वमेध यज्ञारम्भ तथा यज्ञकी समाप्ति ३४६८

धर्म्मराजके यज्ञमें क्या अद्भुत कार्य्य हुआ था ? जनमेजयका ऐसा प्रश्न सुनके उसके उत्तर प्रसङ्गमें वैशम्पायन मुनिके द्वारा नकुलोपाख्यान वर्णन ३४७१

जनमेजयका वैशम्पायनसे नेवलके द्वारा यज्ञनिन्दाका कारण पूछना और वैशम्पायनका उस विषयमें उत्तर देना ... ३४७५

जनमेजयके पूछनपर वैशम्पायनके द्वारा सब यज्ञोंका परम निश्चय वर्णन ३४७७

अश्वमेध पर्व्वकी समाप्ति ... ३४७९

आश्रमवासिक पर्व्वका सूचीपत्र ।

राज्य प्राप्तिके अनन्तर पाण्डवोंने धृतराष्ट्रके सङ्ग जैसा व्यवहार किया था, जनमेजयके पूछने पर वैशम्पायनके द्वारा उसका वृत्तान्त वर्णन ३४८१

धृतराष्ट्र और युधिष्ठिरकी वार्त्तालाप तथा वहां पर वेदव्यास मुनिका आना ३४८४

व्यासदेव और युधिष्ठिरकी वार्त्तालाप तथा वेदव्यास मुनिकी आज्ञानुसार युधिष्ठिरका धृतराष्ट्रको वनमें जानेके विषयमें सम्मति देना ३४८६

धृतराष्ट्रका युधिष्ठिरके विषयमें राजनीति उपदेश करना ३४८७

धृतराष्ट्रका पुरवासियोंके विषयमें विनययुक्त वचन कहना ३४९२

शाम्ब नाम ब्राह्मणके द्वारा पुरवासियोंका धृतराष्ट्रके विषयमें निज निज सम्मति प्रकाश करना ३४९३

धृतराष्ट्रका विदुरको धन लानेके लिये युधिष्ठिरके निकट भेजना और उस विषयमें युधिष्ठिरकी सम्मति ३४९५

धृतराष्ट्रका भीष्म तथा पुत्रादिके उद्देश्यसे दान और श्राद्धादि करना ... ३४९७

धृतराष्ट्रादिका वनमें जाना और गङ्गाके तटपर निवास करना ३४९८

धृतराष्ट्रका वेदव्यास मुनिके आश्रममें जाना और वहांपर नारदादि ऋषियोंका समागम तथा वार्त्तालाप ३५०२

कुन्तीके शोकसे शोकार्त्त पाण्डवोंका विलाप तथा उसे देखनेके लिये वनमें जाना ३५०४

पाण्डवोंका राजा धृतराष्ट्रके निकट निवास तथा उनके सङ्ग वार्त्तालाप... ३५०७

युधिष्ठिरका विदुरके समीप जाना और विदुरका योगावलम्बन पूर्व्वक प्राणत्यागके धर्म्मराजके शरीरमें प्रविष्ट होना ३५०९

धृतराष्ट्रके विषयमें वेदव्यास मुनिके वचन २ ०

जनमेजयका वैशम्पायनसे धृतराष्ट्र मर्में आश्चर्य घटनाका विषय

विषय पृष्ठा

वैशम्पायन मुनिका उस विषयमें उत्तर देना, व्यासदेवके विषयमें गान्धारीके वचन ३५११

व्यासदेवके समीप कुन्तीके द्वारा कर्णको उत्पत्तिका वृत्तान्त वर्णन ... ३५१३

गान्धारीके विषयमें व्यासदेवके वचन ३५१४

व्यासदेवका धृतराष्ट्रादिको युद्धमें मरे हुए पुत्रादि दिखाना ३५१५

धृतराष्ट्रने पुत्र, पौत्र और आत्मीजनोंको देखके क्या किया? इत्यादि जनमेजयका प्रश्न सुनके वैशम्पायन मुनिका उस विषयमें उत्तर देना ३५१८

युधिष्ठिरके निकट नारद मुनिका आना और धृतराष्ट्रकी मृत्युका सम्वाद कहना ३५२०

युधिष्ठिरका धृतराष्ट्रको मृत्युसंवाद सुनके विलाप करना ३५२२

युधिष्ठिरके हाथसे धृतराष्ट्रादिका श्राद्धादि होना ३५२३

आश्रमवासिक पर्व्वकी समाप्ति ३५२४

मौषल पर्व्वका सूचीपत्र।

युधिष्ठिरका अशकुन देखना तथा मौषल युद्धमें वृष्णिवंशियोंके मरनेका वृत्तान्त सुनना ३५२५

जनमेजयके पूछनेपर वैशम्पायनके द्वारा अन्धक, वृष्णि तथा भोजवंशियोंके विनष्ट होनेका वृत्तान्त वर्णन ... ... „

अन्धक तथा वृष्णिवंशियोंके गृहमें काल-पुरुषका घूमना तथा अनेक भांतिको अद्भुत घटना ३५२६

वृष्णि और अन्धकवंशियोंकी तीर्थयात्रा उद्धवका प्रस्थान करना, प्रभास तीर्थमें सबका महापान आरम्भ, सात्यकी और कृतवर्म्माका विवाद तथा परस्पर युद्ध करके सबका विनाश होना ३५२८

केशव, दारुक और बभ्रुका बलरामके समीप जाना, कृष्णका दारुकको संवाद देनेके लिये अर्ज्जुनके निकट और बभ्रुको स्त्रियोंकी रक्षाके निमित्त द्वारकामें भेजना, बभ्रुका विनाश, स्त्रियोंकी रक्षाके निमित्त कृष्णका द्वारकामें जाना और पिताको स्त्रियोंकी रक्षाका भार देकर बलरामके निकट आना, बलरामका प्राण त्यागना, बलरामके वियोगमें कृष्णका विह्वल होके पृथ्वीपर बैठना और व्याधाके बाणकी चोटसे प्राणत्यागके निज धाममें जाना ३५२९

अर्ज्जुनका द्वारकामें आना और वसुदेवका विलाप ३५३१

वसुदेवके विषयमें अर्ज्जुनके वचन ३५३२

वसुदेव तथा उनकी स्त्रियोंका प्राण छोड़ना और अर्ज्जुनके द्वारा उनका दाहकर्म्म तथा अन्त्येष्टिकार्य्य होना, सब यदुवंशियोंका प्रेतकार्य्य करके अर्ज्जुनका द्वारकासे वाहिर होना और मार्गमें दस्युओंका यादवोंकी स्त्रियोंको हरण करना... ... ३५३३

अर्ज्जुनका व्यासदेवके निकट जाके यादवोंका वृत्तान्त कहना, अर्ज्जुनके विषयमें व्यासदेवके वचन ३५३५

अर्ज्जुनका हस्तिनापुरमें जाना ३५३७

मौषल पर्व्वका सूचीपत्र समाप्त ... „

महाप्रस्थानिक पर्व्वका सूचीपत्र।

अर्ज्जुनके विषयमें युधिष्ठिरके वचन और अर्ज्जुनादि चारों भाइयोंका उनके वचनमें सम्मत होना, युधिष्ठिरके द्वारा परीक्षितका राज्याभिषेक ३५३९

युधिष्ठिरादिका श्रीकृष्ण प्रभृतिके उद्देश्यसे श्रद्धा करके द्रौपदीके सहित महाप्रस्थानके निमित्त वाहिर होना ३५४०

विषय पृष्ठा

पाण्डवोंका पूरबकी ओर चलके लोहित समुद्रके तटपर जाना और हुताशनके अनुरोधसे अर्ज्जुनका गाण्डीव धनुष त्यागना ३५४०

चारों ओर घूमनेके अनन्तर हिमालय और वालुकार्णव अतिक्रम करके पाण्डवोंका सुमेरु पर्व्वत पर चढ़ना और द्रौपदी, सहदेव, नकुल, अर्ज्जुन तथा भीमका क्रमसे गिरना और भीमसेनके पूछनेपर युधिष्ठिरके द्वारा उन सबके गिरनेका कारण वर्णन ३५४१

युधिष्ठिरके समीप इन्द्रका आना, इन्द्र और युधिष्ठिरकी वार्त्तालाप ३५४२

युधिष्ठिरके विषयमें धर्म्मके वचन, धर्म्मराजका स्वर्गमें जाना, युधिष्ठिरके विषयमें नारदके वचन और इन्द्र तथा युधिष्ठिरकी वार्त्तालाप... ... ... ३५४३

महाप्रस्थानिक पर्व्वकी समाप्ति ... ३५४४

स्वर्गारोहणपर्व्वका सूचीपत्र।

मेरे परदादा पाण्डवोंने स्वर्गमें जाके कौनसा स्थान प्राप्त किया था? इत्यादि जनमेजयका प्रश्न सुनके वैशम्पायनका उस विषयमें उत्तर देना दुर्य्योधनका ऐश्वर्य्य देखके अमर्षके वशवर्ती युधिष्ठिरके वचन और युधिष्ठिरसे नारदकी वार्त्तालाप... ... ... ३५४५

मेरे मरे हुए भाई तथा दूसरे राजा लोग किस स्थानमें हैं? इत्यादि युधिष्ठिरके प्रश्न सुनके देवताओंका उस विषयमें उत्तर देना देवताओंकी आज्ञासे देवदूतका युधिष्ठिरको उनके भाइयोंका निवास स्थान दिखानेके लिये जाना और वहांपर कर्णादिके वचन सुनके युधिष्ठिरका चिन्तायुक्त होना ... ३५४६

युधिष्ठिरके समीप देवताओंका आना और युधिष्ठिरके विषयमें इन्द्र तथा धर्म्मके वचन ३५४८

आकाश गङ्गामें स्नान करनेसे युधिष्ठिरका मनुष्य रूप छोड़के श्रीकृष्णादिसे मिलना ३५४९

धृतराष्ट्र प्रभृति राजाओंने कितने समयतक स्वर्गमें वास किया था? इत्यादि जनमेजयका प्रश्न सुनके वैशम्पायनका उस विषयमें उत्तर देना ३५५०

सौतिके द्वारा महाभारतके निरुक्ति तथा माहात्म्यादि वर्णन ३५५१

किस विधिके अनुसार महाभारत सुनना चाहिये? इत्यादि जनमेजयके पूछनेपर वैशम्पायनके द्वारा महाभारत सुननेका फलवर्णन ३५५३

स्वर्गारोहण पर्व्व समाप्त .. ३५५६

अनुशासन, अश्वमेध, आश्रमवासिक, मौषल, महाप्रस्थानिक, स्वर्गारोहणपर्व्वोंकी सूचीपत्र सम्पूर्ण

सूचीपत्र समाप्त।

अन्धकं तथा बृष्णिवंशियांक ८८

की

२५२६

महाभारत।



आदिपर्व्व।

नारायण नरोत्तम नर और देवी सरस्वती जी को प्रणाम करके जय कीर्त्तन करना चाहिये।

एक समय लोमहर्षण-पुत्र, सूतकुलको-आनन्द-दायी, सूतवंशी, पौराणिक श्री उग्रश्रवा जी महाराज विनयपूर्व्वक सिर नायकर नैमिषारण्य में कुल-के-स्वामी श्री शौनकजी के द्वादश- वार्षिकी-यज्ञ में दीक्षित और परम सुखसे बैठे हुए बड़े बड़े ऋषियों के पास जा पहुंचे। श्रीउग्रश्रवा जी के नैमिषारण्य में टिके हुए ऋषियों के आश्रम में पहुंचने पर, तपस्वी लोग आश्चर्य कथा सुनने के लिये वहां आकर उनको चारों ओर घेर बैठे। सूत-पुत्रने उन सब मुनि और तपस्वियों को प्रणाम-दण्डवत करके दोनों हाथ जोड़ कर तपोवृद्धिका-समाचार पूछा। उन साधुओंने भी उनका उचित सत्कार किया। आगे उन सब तपस्वियों के बैठने के पश्चात् श्री लोमहर्षणपुत्र जी नम्र-भावसे अपनेलिये ठहराये-हुए आसन पर जा बिराजे। उनको सुख-से बैठे-हुए और स्वस्थचित्त देखकर किसी ऋषिने बातही बात में पूछा, कि हे पद्म-पलाक्ष सूतपुत्र। कहिये तो सही, इस समय आपका आना कहां से हुआ और अबतक आप कहां बिराजते थे। यह पूछे जाने पर, वाक-निपुण श्री उग्रश्रवा जी महाराज शुद्ध-आत्मा-युक्त मुनियों की उस बड़ी सभामें अच्छी और सच्ची रीति पर उनलोगों के चरित्रानुरूप वचन कहने लगे।

सूतपुत्र बोले, कि हे चिरञ्जीव महर्षियो! महानुभाव-राजर्षि जनमेजय के सर्प-यज्ञ में श्री वैशम्पायन मुनिने पृथ्वीनाथ परीक्षितपुत्र को श्रीवेदव्यास जी महाराज की कही हुई जो भांति भांति की मनोहर पुण्यकथा विधि-पूर्व्वक सुनाई थीं, मैं उन सब अपूर्व्व अर्थों से भरी हुई महाभारतीय कथाओं को सुनलेने के पश्चात् नाना तीर्थ और अनेक देशों में घूम घाम कर उस समन्तपञ्चक नामक पवित्र स्थान में होता हुआ, जिसकी सेवा ब्राह्मण लोग करते हैं और जहां पहिले कौरव, पाण्डव और दूसरे सब राजाओं में लड़ाई हुई थी, इस आश्रम में आपलोगों की भेंटके लिये आयाहूं। हे सूर्य्य और अग्निके समान तेजोमय पुण्यवन्त द्विजो! जान पड़ता है, कि आप लोग इस यज्ञमें अभिषिक्त हुए हैं और नहा-धोकर शुचि हो करके जप-हवन से निश्चिन्त होकर आसनों पर सुख से बैठे हैं; क्या मैं इसी समय पुराणों की धर्म्मार्थयुक्त पवित्र-कथा और महानुभाव नरेशों और ऋषियोंका इतिहास सुनाऊं?

ऋषियों ने कहा, कि महर्षि द्वैपायन जो पुराण कह गये हैं, जिसको सुनकर देवता और ब्रह्मर्षियों ने बड़ी प्रशंसा की है, श्री वेदव्यास जी की आज्ञा से वैशम्पायन मुनिने सर्प-यज्ञके काल में जिस उपाख्यानों में श्रेष्ठ, विचित्र-पद-औ-पर्व्वयुक्त, सूक्ष्मार्थ प्रतिपादक, युक्तिपूर्ण, वेदार्थ से सुशोभित इतिहास-पर बने हुए महाभारत की अर्थभरी, अनेक शास्त्रोंके आशयोंकी, पवित्र, संस्कृत कथा महाराज जनमेजय को विधिके अनुसार आनन्द पूर्व्वक सुनाई थी, हमलोग आश्चर्य्य-कार्य्यकारी श्री महाराज वेदव्यास जी की रची हुई उस चारों वेदार्थसिद्ध-कारी पापक्षय-हारी, पुण्यभरी संहिता को सुना चाहते हैं।

श्री उग्रश्रवा जी बोले, कि उस हरि की, जो विश्व का आदि पुरुष औ ईश्वर है; जिसका नाम लेकर बहुत लोग हवन और स्तुति करते हैं; जो अद्वितीय, सत्य, बिकार-रहित, व्यक्त, अव्यक्त, सनातन औ ब्रह्मरूपी है; जिसका रचा हुआ विश्व असत्, सदसत् और सदसत् से भिन्न है; जितने सब स्थूल और सूक्ष्म वस्तु रची हैं; जो परम पुराण, अविनाशी, मङ्गल का देनेवाला औ मङ्गलरूप है; जो विश्वभर में व्याप्त, विश्व भरका उपासना-योग्य, दोषरहित, शुद्धस्वभाव, इन्द्रियोंका अधीश और चराचरके गुरु हरिको प्रणाम करके सबलोकों की पूजनीय, महानुभाव और आश्चर्य्यकार्य्यकारी श्रीमहाराज वेदव्यास-जी का पवित्रमत प्रकाश करना प्रारम्भ करता हूं।

किसी किसी कविने भूमण्डल में पहिले भी इस इतिहास को कहा है, अब भी कोई कोई कहते है और आगे भी बहुतेरे कहेंगे। अनन्त ज्ञान का देनेवाला यह इतिहास तीनों लोक में प्रशंसित हुआ है, ब्राह्मण लोग इसको संक्षेप में और विस्तारपूर्व्वक धारण किये हुए हैं। यह महाभारतग्रन्थ अनेक भांति के छन्द अच्छे अच्छे शब्द और देवता तथा ब्राह्मणों की सधी हुई शब्दरूपी-शक्ति से सुशोभित हुआ है और पण्डितलोग इसका बड़ा आदर करते हैं।

यह जगत्, दशों ओर घोर अंधेरे से घेरा हुआ और उजाला औ ज्योति से बिलकुल खाली था। सृष्टि की आदि में जीवों की उत्पत्ति का अविनाशी बीज-रूपी एक बड़ा अण्डा उत्पन्न हुआ; पण्डित लोग उसीको महान औ दिव्य कहा करते हैं। सुना जाता है, कि वह परब्रह्म जो अद्भुत, अव्यक्त चिन्तातीत और सब ठौर तुल्यभाव है, उस अण्डे में सूक्ष्मकारण रूप से प्रवेश कर गया था। उससे सब लोकों के पितामह, अद्वितीय प्रभु, प्रजापति ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र उपजे। आगे स्वायम्भुव मनु, वसिष्ठ, परमेष्ठी, दश प्रचेता, दक्ष, दक्षके सातपुत्र—इन इक्कीस प्रजापति-ओंने जन्म लिया। वह विराट् पुरुष जिनको ऋषिलोग योगबल से देखते है, औ विश्वदेव-गण—बारह सूर्य्य, आठ वसु, दो अश्विनी-कुमार, यक्षलोग, साध्यलोग, पिशाचलोग, गुह्यकलोग और पितरलोग उत्पन्न हुए। सब गुणों से सुशोभित, विद्वान्, शान्त-चित्त, ब्रह्मर्षि और राजर्षियों ने जन्म लिया। और क्रम के अनुसार जल, पृथ्वी, वायु, आकाश, दिशा, वर्ष, ऋतु, मास, पक्ष, दिन, रात्रि और सब दूसरे लौकिक पदार्थ रचे गये।

स्थावर औ जङ्गम-आत्मक यह दृश्यमान जगत् प्रलयकाल में फिर लोप हो जायगा। जैसे वसन्त आदि हर ऋतु में ऋतुओं के चिह्न-प्रकट-करनेवाले फूल आदि फूल कर, दिन पूरे होने पर, फिर गायब होते हैं, तैसेही युगके आरम्भ में सब पदार्थ रचे जाकर प्रलय-काल में फिर लय हो जाते हैं। इसी भांति रचने और नाश करनेवाला अनादि, अनन्त संसारचक्र सदा बदलता रहता है।

तेंतीस सहस्र, तेंतीस सौ, तेंतीस देवता संक्षेप में रचे गये। वृहद्भानु, चक्षु, आत्मा, विभावसु, सविता, ऋचीक, अर्क, भानु, आशावह, रवि, विवस्वान्, मह्य—यह सब अदिति के पुत्र हुए। इनमें मह्य सबसे छोटे, उनके पुत्र देवभ्राट और देवभ्राट के पुत्र सुभ्राट हुए; सुभ्राट के बड़े पण्डित और अनेक पुत्रों के जन्म-दाता दशज्योतिः, शतज्योतिः और सहस्र-ज्योतिः नामक तीन पुत्र हुए। महानुभाव दशज्योतिः के दशसहस्र, शतज्योतिः के एक-लक्ष और सहस्रज्योति के दश-लक्ष पुत्र उत्पन्न हुए; उन्ही लोगोंसे कुरुवंश, यदुवंश, ययाति-वंश, इक्ष्वाकुवंश और दूसरे अनेक राजर्षि-वंश उपजे औ वे सब उपजे-हुए वंश इसकाल में बहुत फैल गये हैं।

दुर्ग, नगर, तीर्थ-क्षेत्र आदि सब जीव-स्थान, धर्म्म-के-रहस्य, अर्थके रहस्य, काम-के-रहस्य चारों वेद, योग-शास्त्र, विज्ञान-शास्त्र, धर्म्म-अर्थ-काम-मोक्ष औ धर्म्म, अर्थ और काम सम्बन्धी अनेक शास्त्र, आयुर्व्वेद, धनुर्व्वेद इत्यादि संसार-निर्व्वाह करने के सब शास्त्रों को श्री महाराज वेदव्यास ऋषि जानते थे। वह सब विषय, व्याख्या-सहित सब इतिहास और अनेक भांति की श्रुति, इस ग्रन्थमें कही हैं; सो वही सब विषय इस ग्रन्थ के लक्षण हैं।

कोई कोई पण्डित इसको संक्षेप में जानना चाहते हैं और कोई कोई विस्तार-पूर्व्वक जानना चाहते हैं; इसलिये श्रीमहाराज वेद-व्यास जी ने इसे संक्षेपमें और विस्तारपूर्व्वक कहा है। भिन्न भिन्न पण्डित भिन्न भिन्न स्थानसे इस संहिताका आरम्भ समझते हैं; कोई कोई तो "नारायणं नमस्कृत्य" इस मन्त्र से; कोई कोई आस्तीकपर्व्वसे और कोई कोई राजा उपरिचर की कथासे इसका आरम्भ समझकर पढ़ने लगते हैं। पण्डित लोग अनेक उपायों से इस संहिता का ज्ञान उभाड़ते हैं। उनमें कोई कोई तो इसकी सुन्दर व्याख्या करते हैं और दूसरे इसका अर्थ भली-रीति समझने की शक्ति रखते हैं।

सत्यवतीपुत्र विद्वान ब्रह्मर्षि पाराशरि, अपनी तपस्या और ब्रह्मचर्य्य के प्रभावसे सनातन वेद का विभाग कर इस पवित्र इतिहास को रच गये हैं। वह शक्ति-पूर्ण द्वैपायन सोचने लगे, कि इस श्रेष्ठतम इतिहास-ग्रन्थ की रचना के पश्चात् मैं इसे क्यों कर शिष्यों को पढ़ा सकूंगा। ऋषि द्वैपायन जीको ऐसी चिन्ता करते हुए जानकर सर्व्वलोकों के गुरु-देव भगवान ब्रह्मा जी श्रीमहाराज व्यास जी के सन्तोष के निमित्त और लोकों के हित करनेकी इच्छा से उस स्थानमें स्वयं उपस्थित हुए। उन्हे देखतेही वेदव्यासजीने समस्त मुनियों के सहित अचम्भे में होकर उनको प्रणाम-दण्डवत किया, और बैठने को श्रेष्ठ आसन दिया। हिरण्यगर्भ के, उस आसन में बैठने पर, सत्यवती-पुत्र उनके समीप दोनों हाथ जोड़ कर खड़े रहे। अनन्तर कृष्ण-द्वैपायनजी परमेष्ठी की आज्ञा पाकर प्रसन्न-नेत्र और आनन्द-भरे मुख से उनके आसन के निकट बैठ गये। कुछ काल पीछे अति तेजस्वी व्यासजी ब्रह्माजीसे कहने लगे, कि हे भगवन्! मैंने एक ऐसा परम पवित्र काव्य रचने की कल्पना की है, जिसमें वेद के गूढ़तत्त्व; वेद-वेदाङ्ग और उपनिषद की व्याख्या; पुराण और इतिहास का प्रकाश; भूत, भविष्यत और वर्त्तमान—इन तीनों का निरूपण; बुढ़ापा, मृत्यु, भय, व्याधि, भाव और अभावका निर्णय; विविध धर्म्म और आश्रम के लक्षण; ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र—इन चारों वर्ण के लिये नाना पुराणों में कथित आचार, विधि, तपस्या और ब्रह्मचर्य्य; पृथिवी, चन्द्रमा, सूर्य्य, ग्रह, नक्षत्र, तारा और चारों युग के प्रमाण; ऋग्वेद, यजुर्व्वेद, सामवेद और आत्मतत्त्व के

निरूपण; न्याय, शिक्षा, चिकित्सा, दानधर्म्म, पाशुपतधर्म्म और उनका वृत्तान्त कि जिन जिनने जिस जिस कारण से दिव्य वा मानव-योनिमें जन्म लिया है; पवित्र तीर्थ, देश, नदी, वन, पर्व्वत, समुद्र, दिव्यपुरी, व्यूह रचने के नियमादि युद्ध-कौशल, विशेष विशेष वाक्य, विशेष विशेष जाति, लोकयात्रा के विधान कथित होंगे और इनसबों के उपरान्त वह परब्रह्म, जो सम्पूर्ण संसार में व्याप्त है, सिद्ध किया जावेगा; पर इस भूमण्डल में इसे लिख सके, ऐसा कोई योग्य लेखक नहीं है।

ब्रह्माजी बोलें, तुममें रहस्यों का ज्ञान रहने के कारण तुम बड़े कठोर तप करने वाले, कुल-शील से सुशोभित और सब ऋषियों से श्रेष्ठ हो। मैं जानता हूं, कि तुम जन्मके समयसे सत्य और ब्रह्म-सम्बन्धी वाक्य ही कहा करते हो, सो जब तुमने स्वरचित ग्रन्थ को काव्य करके निर्णय किया है, तब वह काव्य ही करके प्रसिद्ध होगा; जैसे सब आश्रमोंमें गृहस्थाश्रम सर्व्व-प्रधान है, तैसेही सब काव्यों में तुम्हारा यह काव्य सर्व्व-श्रेष्ठ होगा; कोई भी कवि इससे बढ़कर सुन्दर काव्य रच नहीं सकेगा। इस समय तुम गणेश जी को स्मरण करो, वही तुम्हारे इस काव्यके लेखक होंगे।

श्री उग्रश्रवा जी बोले, कि ऐसा कह कर ब्रह्माजी के अपने स्थान को चले जाने पर सत्यवती-पुत्र श्री महाराज व्यासजी ने हेरम्ब को स्मरण किया। भक्तों की इच्छा-भरनेवाले विघ्न-नाशी गणनायक को स्मरण करते ही वह वहां आ पहुंचे। वेदव्यास जी से पूजे जाकर उनके आसन में विराजने पर, श्री महाराज व्यास जी बोले, हे अनघ गणनायक! मैं बोले जाता हूं, आप मेरे मानस-सङ्कल्पित महाभारत ग्रन्थके लेखक होवें। यह सुनकर गणपति जी बोले कि लिखना आरम्भ करने पर, यदि मेरी लेखनी क्षणमात्र भी न रुके, तो मैं लेखक हो सकता हूं। श्री व्यास जी बोले, कि आप भी किसी स्थान का अर्थ बिना समझे न लिखिये। गणनायक जी तथास्तु कहके लेखक के कार्य्यमें नियुक्त हुए। व्यास जी इसी से कौतूहलवश होकर बीच बीच में ग्रन्थग्रन्थि अर्थात् समझने में अति कठोर श्लोक रचे हैं और इसी प्रतिज्ञा के अनुसार इस महाभारत में ऐसे गूढ़ार्थयुक्त आठ सहस्र, आठसौ श्लोक हैं, जिनके सत्य अर्थ मैं जानताहूं, श्री शुकदेव जी भी जानते हैं और इसमें सन्देह है, कि सञ्जय जानता है वा नहीं। शिष्यों के निकट उन सब गूढ़ार्थ-युक्त व्यास कूटों के बड़े बड़े कूट अर्थों की व्याख्या कोई नहीं कर सकता। उन श्लोकों के लिखने के समय श्रीगणपति जी सब विषयों के जानकार होने पर भी, अर्थ समझने के लिये क्षणकाल सोचा करते थे और उस अवसर में श्री व्यासदेव दूसरे अनेक श्लोक रच डालते थे।

महाभारत-रूपी-सूर्य्य ने मानवों का अंधेरा हर लिया है; यह पुराणरूपी-पूर्णचन्द्रमा श्रुति-रूपी-ज्योत्स्ना को प्रकट कर मनुष्य-बुद्धि-रूपी-कुमुदवन को प्रकाश कर रहा है; इस इतिहास-रूपी-दीपकने मोह रूपी अंधेरेको हरकर सम्पूर्ण भुवनरूपी गृहमें उजाला भर दिया है। बादल जैसे प्रजाओं का आश्रय है, तैसेही यह महाभारत-रूपी-अविनाशी-वृक्ष सब बड़े बड़े कवियों का आश्रय होगा। भारत-वृक्ष का संग्रह-अध्याय उसके बीजरूपी, पौलोम और आस्तीकपर्व्व जड़रूपी, सम्भवपर्व्व गुद्दे रूपी, सभा और वनपर्व्व पक्षियों के घोंसले-रूपी, अरणीपर्व्व पर्व्वरूपी, विराट और उद्योगपर्व्व साररूपी, भीष्मपर्व्व बड़ी शाखारूपी, द्रोणपर्व्व पत्ररूपी, कर्णपर्व्व सुफेद फूलरूपी, शल्यपर्व्व गन्धरूपी, स्त्रीपर्व्व और ऐषिकपर्व्व छायारूपी, शान्तिपर्व्व महाफल-रूपी, अश्वमेधपर्व्व अमृत-

रस-रूपी, आश्रमवासिकपर्व्व आधार-रूपी, और मौषलपर्व्व बड़ी बड़ी शाखाओंके अन्त-भाग-रूपी हुए हैं। शान्तचित द्विजलोग उस महाभारत-रूपी वृक्ष की शरण लेते हैं और मैं भी उसी वृक्ष के स्वादिष्ट और देवदुर्लभ पवित्र रस-भरे नित्यधर्म्मरूपी-फूल और मोक्षरूपी-फल को कथा कहूंगा।

पूर्व्व कालमें बड़े वीर्य्यवन्त, धर्म्मात्मा कृष्ण-द्वैपायन जीने अपनी माता और प्रज्ञा-शील भीष्मदेव के नियोगसे विचित्रवीर्य्य के क्षेत्र में तीनों अग्नि के समान तेजस्वी तीन पुत्र उपजाये थे। वेदव्यास जी महाराज इस प्रकार से धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुर—इन तीन सन्तानों का जन्म देकर तपस्या के लिये फिर आश्रम को गये। आगे उन पुत्रों के वृद्ध होकर पर-लोक सिधारने पर, वेदव्यास जी ने मनुष्यलोक में महाभारत को प्रकट किया। अनन्तर जनमेजय के सर्प यज्ञके समय में सहस्रों ब्राह्मण और स्वयं जनमेजय के, बड़ी चाहके साथ महाभारत सुनने की इच्छा दिखाने पर, श्री वेदव्यासजीने शिष्यों-के-सहित पासहीमें बैठे-हुए श्री वैशम्पानजी को ग्रन्थ सुनाने की आज्ञा दी। नित्य यज्ञके कर्म्म पूरे होने के पीछे वैशम्पायन मुनि वार वार पूछे जाकर सभा में सभ्यों के साथ बैठ कर महाभारत सुनाने लगे। भगवान् द्वैपायन ऋषिने इस महाभारत ग्रन्थमें कुरुवंशका विस्तार, गान्धारी की धर्म्मशीलता, विदुर की प्रज्ञा, कुन्तीका धैर्य्य, श्रीकृष्णका माहात्म्य, पाण्डवों की सत्यनिष्ठा और धृतराष्ट्र पुत्रों की दुष्टता वर्णन की हैं। पहिले उन्होंने उपाख्यानभागको छोड़कर चौबीस सहस्र श्लोकों में भारत संहिता रची थी; पण्डितगण उन्हीं चौबीस सहस्र श्लोकों ही को भारत कहा करते हैं। आगे वेदव्यासजीने सम्पूर्ण पर्व्व और वृत्तान्तों का संक्षेप कर आधेसौ श्लोकों में अनुक्रमणिका-अध्यायको रचा। भगवान् द्वैपायन ने पहिले इसे अपने पुत्र शुक-देवजी को पढ़ाया और पीछे योग्य शिष्यों को भी प्रदान किया। इसके पीछे उन्होंने साठ लाख श्लोकों की दूसरी एक संहिता रची थी; उसके तीसलाख देवलोकमें, पन्द्रह लाख पितृ-लोकमें, चौदह लाख गन्धर्व्व-लोकमें, और एक लाख श्लोक मर्त्यलोकमें प्रतिष्ठित हुए हैं। नारदजीने देवताओं को, असित देवलने पितरों को और शुकदेवजीने गन्धर्व्व, यक्ष औ राक्षसोंको वह सब श्लोक सुनाये थे। श्री व्यासजी महाराज के शिष्य सर्व्व वेदों के ज्ञाता, धर्म्मात्मा श्री वैश-म्पायनजीने इस नरलोक में जनमेजय के सर्प-यज्ञके समय लाख श्लोकों की जिस भारत-संहिता को कीर्त्तन कियाथा, मैं उसको वर्णन करता हूं, आप लोग श्रवण कीजिये।

दुर्योधन मन्युमय अर्थात् अहङ्कारी महा-वृक्ष है; कर्ण उसका गुद्दा, शकुनि उस की शाखा, दुःशासन उसके बढ़े-चढ़े फल-फूल; और अज्ञान से अन्धे, प्रज्ञा-रहित धृतराष्ट्र उसकी जड़-रूपी हैं। युधिष्ठिर धर्म्ममय महा-वृक्ष हैं; अर्ज्जुन उसका गुद्दा, भीमसेन उसकी शाखा, नकुल और सहदेव उसके बढ़े-चढ़े फल-फूल और श्रीकृष्ण, वेद और ब्राह्मण उसकी जड़रूपी हैं। युधिष्ठिर का नाम लेने से धर्म्म बढ़ता है, भीमसेन का नामलेने से पाप जल-जाता है, अर्ज्जुनका नाम लेनेसे शूरता बढ़ती है और नकुल औ सहदेव के नाम लेनेसे आरो-ग्यता प्राप्त होती है।

राजा पाण्डु, अपनी बुद्धि और विक्रम से बहुत देश जय कर अन्त में अहेर खेलते हुए वनमें जाकर मुनियों के साथ वसे थे; वह भोग में आसक्त मृग को मारकर घोर विपद में पड़ेथे। उस वनमें आपद्धर्म्म के अनुसार कुन्ती और माद्री के गर्भमें धर्म्म, वायु, इन्द्र और दोनों अश्विनीकुमार—इन पांच देवताओंके औरस से पाण्डवों का जन्म हुआ और क्रमानु-

निरूपण; न्याय, शिक्षा, चिकित्सा, दानधर्म्म, पाशुपतधर्म्म और उनका वृत्तान्त कि जिन जिनने जिस जिस कारण से दिव्य वा मानव-योनिमें जन्म लिया है; पवित्र तीर्थ, देश, नदी, वन, पर्व्वत, समुद्र, दिव्यपुरी, व्यूह रचने के नियमादि युद्ध-कौशल, विशेष विशेष वाक्य, विशेष विशेष जाति, लोकयात्रा के विधान कथित होंगी और इनसबों के उपरान्त वह परब्रह्म, जो सम्पूर्ण संसार में व्याप्त है, सिद्ध किया जावेगा; पर इस भूमण्डल में इसे लिख सके, ऐसा कोई योग्य लेखक नहीं है।

ब्रह्माजी बोले, तुममें रहस्यों का ज्ञान रहने के कारण तुम बड़े कठोर तप करने वाले, कुल-शील से सुशोभित और सब ऋषियों से श्रेष्ठ हो। मैं जानता हूं, कि तुम जन्मके समयसे सत्य और ब्रह्म-सम्बन्धी वाक्य ही कहा करते हो, सो जब तुमने स्वरचित ग्रन्थ को काव्य करके निर्णय किया है, तब वह काव्य ही करके प्रसिद्ध होगा; जैसे सब आश्रमोंमें गृहस्थाश्रम सर्व्व-प्रधान है, तैसेही सब काव्यों में तुम्हारा यह काव्य सर्व्व-श्रेष्ठ होगा; कोई भी कवि इससे बढ़कर सुन्दर काव्य रच नहीं सकेगा। इस समय तुम गणेश जी को स्मरण करो, वही तुम्हारे इस काव्यके लेखक होंगे।

श्री उग्रश्रवा जी बोले, कि ऐसा कह कर ब्रह्माजी के अपने स्थान को चले जाने पर सत्य-वती-पुत्र श्री महाराज व्यासजी ने हेरम्ब को स्मरण किया। भक्तों की इच्छा-भरनेवाले विघ्न-नाशी गणनायक को स्मरण करते ही वह वहां आ पहुंचे। वेदव्यास जी से पूजे जाकर उनके आसन में विराजने पर, श्री महाराज व्यास जी बोले, हे अनघ गणनायक! मैं बोले जाता हूं; आप मेरे मानस-सङ्कल्पित महाभारत ग्रन्थके लेखक होवें। यह सुनकर गणपति जी बोले कि लिखना आरम्भ करने पर, यदि मेरी लेखनी क्षणमात्र भी न रुके, तो मैं लेखक हो सकता हूं। श्री व्यास जी बोले, कि आप भी किसी स्थान का अर्थ बिना समझे न लिखिये। गणनायक जी तथास्तु कहके लेखक के कार्य्यमें नियुक्त हुए। व्यास जी इसी से कौतूहलवश होकर बीच बीच में ग्रन्थग्रन्थि अर्थात् समझने में अति कठोर श्लोक रचे हैं और इसी प्रतिज्ञा के अनुसार इस महाभारत में ऐसे गूढ़ार्थयुक्त आठ सहस्र, आठसौ श्लोक हैं, जिनके सत्य अर्थ मैं जानताहूं, श्री शुकदेव जी भी जानते हैं और इसमें सन्देह है, कि सञ्जय जानता है वा नहीं। शिष्यों के निकट उन सब गूढ़ार्थ-युक्त व्यास कूटों के बड़े बड़े कूट अर्थों की व्याख्या कोई नहीं कर सकता। उन श्लोकों के लिखने के समय श्रीगणपति जी सब विषयों के जानकार होने पर भी, अर्थ समझने के लिये क्षणकाल सोचा करते थे और उस अवसर में श्री व्यासदेव दूसरे अनेक श्लोक रच डालते थे।

महाभारत-रूपी-सूर्य्य ने मानवों का अंधेरा हर लिया है; यह पुराणरूपी-पूर्णचन्द्रमा श्रुति-रूपी-ज्योत्स्ना को प्रकट कर मनुष्य-बुद्धि-रूपी-कुमुदवन को प्रकाश कर रहा है; इस इतिहास-रूपी-दीपकने मोह रूपी अंधेरेको हरकर सम्पूर्ण भुवनरूपी गृहमें उजाला भर दिया है। बादल जैसे प्रजाओं का आश्रय है, तैसेही यह महाभारत-रूपी-अविनाशी-वृक्ष सब बड़े बड़े कवियों का आश्रय होगा। भारत-वृक्ष का संग्रह-अध्याय उसके बीजरूपी, पौलोम और आस्तीकपर्व्व जड़रूपी, सम्भवपर्व्व गुद्दे रूपी, सभा और वनपर्व्व पक्षियों के घोंसले रूपी, अरणीपर्व्व पर्व्वरूपी, विराट और उद्योगपर्व्व साररूपी, भीष्मपर्व्व बड़ी शाखारूपी, द्रोणपर्व्व पत्ररूपी, कर्णपर्व्व सुफेद फूलरूपी, शल्यपर्व्व गन्धरूपी, स्त्रीपर्व्व और ऐषिकपर्व्व छायारूपी, शान्तिपर्व्व महाफल-रूपी, अश्वमेधपर्व्व अमृत-

रस-रूपी, आश्रमवासिकपर्व्व आधार-रूपी, और मौषलपर्व्व बड़ी बड़ी शाखाओंके अन्त-भाग-रूपी हुए हैं। शान्तचित द्विजलोग उस महाभारत-रूपी वृक्ष की शरण लेते हैं और मैं भी उसी वृक्ष के स्वादिष्ट और देवदुर्लभ पवित्र रस-भरे नित्यधर्म्मरूपी-फूल और मोक्षरूपी-फल को कथा कहूंगा।

पूर्व्व कालमें बड़े वीर्य्यवन्त, धर्म्मात्मा कृष्ण-द्वैपायन जीने अपनी माता और प्रज्ञा-शील भीष्मदेव के नियोगसे विचित्रवीर्य्य के क्षेत्र में तीनों अग्नि के समान तेजस्वी तीन पुत्र उपजाये थे। वेदव्यास जी महाराज इस प्रकार से धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुर—इन तीन सन्तानों का जन्म देकर तपस्या के लिये फिर आश्रम को गये। आगे उन पुत्रों के वृद्ध होकर पर-लोक सिधारने पर, वेदव्यास जी ने मनुष्यलोक में महाभारत को प्रकट किया। अनन्तर जनमेजय के सर्प यज्ञके समय में सहस्रों ब्राह्मण और स्वयं जनमेजय के, बड़ी चाहके साथ महाभारत सुनने की इच्छा दिखाने पर, श्री वेदव्यासजीने शिष्यों-के-सहित पासहीमें बैठे-हुए श्री वैशम्पानजी को ग्रन्थ सुनाने की आज्ञा दी। नित्य यज्ञके कर्म्म पूरे होने के पीछे वैशम्पायन मुनि वार वार पूछे जाकर सभा में सभ्यों के साथ बैठ कर महाभारत सुनाने लगे। भगवान् द्वैपायन ऋषिने इस महाभारत ग्रन्थमें कुरुवंशका विस्तार, गान्धारी की धर्म्मशीलता, विदुर की प्रज्ञा, कुन्तीका धैर्य्य, श्रीकृष्णका माहात्म्य, पाण्डवों की सत्यनिष्ठा और धृतराष्ट्र पुत्रों की दुष्टता वर्णन की हैं। पहिले उन्होंने उपाख्यानभागको छोड़कर चौबीस सहस्र श्लोकों में भारत संहिता रची थी; पण्डितगण उसको चौबीस सहस्र श्लोकों ही को भारत कहा करते हैं। आगे वेदव्यासजीने सम्पूर्ण पर्व्व और वृत्तान्तों को संक्षेप कर डेढ़सौ श्लोकों में अनुक्रमणिका-अध्यायको रचा। भगवान् द्वैपायन ने पहिले इसे अपने पुत्र शुक-देवजी को पढ़ाया और पीछे योग्य शिष्यों को भी प्रदान किया। इसके पीछे उन्होंने साठ लाख श्लोकों की दूसरी एक संहिता रची थी; उसके तीसलाख देवलोकमें, पन्द्रह लाख पितृ-लोकमें, चौदह लाख गन्धर्व्व-लोकमें और एक लाख श्लोक मर्त्त्यलोकमें प्रतिष्ठित हुऐ है। नारदजीने देवताओं को, असित देवलने पितरों को और शुकदेवजीने गन्धर्व्व, यक्ष औ राक्षसोंको वह सब श्लोक सुनाये थे। श्री व्यासजी महाराज के शिष्य सर्व्व वेदों के ज्ञाता, धर्म्मात्मा श्री वैश-म्पायनजीने इस नरलोक में जनमेजय के सर्प-यज्ञके समय लाख श्लोकों की जिस भारत-संहिता को कीर्त्तन कियाथा, मैं उसको वर्णन करता हूं, आप लोग श्रवण कीजिये।

दुर्य्योधन मन्युमय अर्थात् अहङ्कारी महा-वृक्ष है; कर्ण उसका गुद्दा, शकुनि उस की शाखा, दुःशासन उसके बढ़े-चढ़े फल-फूल; और अज्ञान से अन्धे, प्रज्ञा-रहित धृतराष्ट्र उसकी जड़-रूपी हैं। युधिष्ठिर धर्म्ममय महा-वृक्ष है; अर्ज्जुन उसका गुद्दा, भीमसेन उसकी शाखा, नकुल और सहदेव उसके बढ़े-चढ़े फल-फूल और श्रीकृष्ण, वेद और ब्राह्मण उसकी जड़रूपी हैं। युधिष्ठिर का नाम लेने से धर्म्म बढ़ता है, भीमसेन का नामलेने से पाप जल-जाता है, अर्ज्जुनका नाम लेनेसे शूरता बढ़ती है और नकुल औ सहदेव के नाम लेनेसे आरो-ग्यता प्राप्त होती है।

राजा पाण्डु, अपनी बुद्धि और विक्रम से बहुत देश जय कर अन्त में अहेर खेलते हुए वनमें जाकर मुनियों के साथ बसे थे; वह भोग में आसक्त मृग को मारकर घोर विपद में पड़े थे। इस वनमें आपद्धर्म के अनुसार कुन्ती और माद्री के गर्भमें धर्म्म, वायु, इन्द्र और दोनों अश्विनीकुमार—इन पांच देवताओंके औरस से पाण्डवों का जन्म हुआ और

सार सदाचार की विधि से उनके जात-कर्म्मादि सब निर्व्वाह किये गये। पाण्डव लोग पवित्र-वन के भीतर बड़े बड़े तपस्वियों के पुण्याश्रम में साधुओंके सहित कुन्ती और माद्री से रक्षित होने और बढ़ने लगे। कुछकाल पीछे एक समय ऋषिलोग उन राजलक्षणों से सुशोभित, जटाधारी, ब्रह्मचारी शिशुओंको स्वेच्छासे धृत-राष्ट्र-आदिके पास लेगये। आगे वे मुनिलोग यह कह कर, कि "ये पाण्डुपुत्रगण तुम्हारे पुत्र, भ्राता चेले और सुहृत् हैं" वहांसे लौट चले। इस प्रकारसे पाण्डवों को अर्पण कर मुनियोंके चले जाने पर, उन्हें देख देखकर साधु-कौरव लोग और नाना जातिके पुरवासी हर्ष-वश कोलाहल करनेलगे। कोई कोई बोले, "यह पाण्डुपुत्र नहीं हैं"; कोई कोई बोले, "हां येही पाण्डुकी सन्तान हैं।" दूसरे लोग बोले, "राजा पाण्डु को परलोक गये, तो बहुत दिन हो चुके, अब उनके पुत्र कहांसे उपजे?" उस समय सर्व्वत्र पुरवासियों का यह शब्दही सुनाई देने लगा, कि "आज हमारा आना सब प्रकार शुभ निकला; क्योंकि सौभाग्यवश पाण्डुपुत्रों का दर्शन हुआ; हे पाण्डव! तुम तो कुशलसे आये न?"—यह शब्द बन्द होनेपर दशों ओर से गूंजती हुई देवोंकी आकाशवाणी हुई। पाण्डवों के नगर में पहुंचते ही आश्चर्य्य-रूप से फूलों की वृष्टि, सुगन्ध का सञ्चार और शंख-नगाड़ों की ध्वनि होने लगी। उस आनन्द से पुरवा-सियों की कीर्त्ति बढ़ाने वाली औ आकाशतक पहुंचती हुई हर्षध्वनि उत्पन्न हुई। पाण्डव नाना शास्त्र और सम्पूर्ण वेद पढ़कर और निर्भय होकर बड़े आदर-सम्मानसे बसने लगे। प्रजा, युधिष्ठिर के शुद्धाचार, भीमसेनके धैर्य्य, अर्ज्जुन के विक्रम, नकुल और सहदेवकी नम्रता और कुन्ती की गुरुसेवा से परम प्रसन्न हुई; विशेष कर पांचों भाई की शूरता ने सबों का सन्तोष उपजाया। आगे द्रौपदीके स्वयम्वरस्थलमें अग-णित राजाओं के एकत्रित होने पर, अर्ज्जुनने कठोर लक्ष्यको भेद कर उस राजपुत्रीको जीत लिया। उस कालसे वह इस धरती परके धनुष-धारियों के पूज्य हुए और रणक्षेत्र में सूर्य्यकी भांति उनपर किसी की दृष्टि नहीं ठहरती थी। आगे उन्होंने राजाओं और बड़े बड़े शूर-वीरों को जीतकर राजसूत-यज्ञ का आयो-जन कर दिया। महाराज युधिष्ठिरने वासुदेव जी की सुन्दर नीति और भीमार्ज्जुनके भुजबल के सहारे अपरिमित अन्न और अनेक दक्षिणा दानकर सब प्रकार से श्रेष्ठ राजसूय यज्ञ किया। उस यज्ञमें बल-गर्व्वित जरासन्ध और अहङ्कारी शिशुपाल का विनाश हुआ था। कौराध्यक्ष दुर्य्योधन के पास नाना स्थानों से मणि, सुवर्ण, रत्न, गौ, हाथी, घोड़े, रङ्गविरङ्गके वस्त्र शिविर अर्थात् कपड़े के घर, यवनिका अर्थात् पर्दा, अच्छे अच्छे मृगचर्म्म, रङ्कु मृगके लोम से बने हुए चादरा—यह सब भेट आने लगीं। पाण्डवों का वह बढ़ाचढ़ा ऐश्वर्य्य देखकर दुर्य्योधनके हृदय में द्वेष-घटित क्रोध आ समाया। उस यज्ञमें मयदानव कृत विमान-सदृश अपूर्व्व सभा देख कर वह दुःखसे जलने लगा। उस सभामें दुर्य्योधन को चलते समय भ्रमवश गिरते देख-कर भीमसेनने श्रीकृष्ण चन्द्रके सम्मुख छोटे मनुष्य के समान अपमान दिखाकर उसकी बड़ी हंसी की। नाना प्रकार के रत्न और भांति भांति के भोग भोगने पर भी दुर्य्योधन चित्त-पीड़ासे मलिन, पीला और दुबला होने लगा। पुत्र-प्रेमी राजा धृतराष्ट्र के निकट यह बात कही जाने पर, उन्होंने जुआ खेलने की आज्ञा दी, यह सुनकर श्री वासुदेव जी को बड़ा क्रोध उपजा। उन्होंने बड़े असन्तोष के साथ उस झगड़ेमें अपनी सम्मति दी और विदुर, भीष्म, द्रोणाचार्य्य और शरद्वतके पुत्र कृपाचार्य्य की असम्मति से आपस की उस घोर लड़ाईमें भिड़े हुए क्षत्रियोंके नष्ट होनेके कारणरूपी भयावने जुआ

आदि नाना कुनीतियों की ओर ध्यान नहीं दिया। पाण्डवों के जय पाने के पीछे, राजा धृतराष्ट्र, उस अति अप्रिय वाणी को सुनकर और दुर्य्योधन, कर्ण और शकुनि की पूर्व्व-प्रतिज्ञा को स्मरण कर कर देरतक सोचने-समझने के पश्चात् सञ्जय से कहने लगे, "हे सञ्जय! मैं सब वृत्तान्त कहता हूं सुनो। तुम शास्त्रके ज्ञाता, मेधावान, बुद्धिमान और पण्डित-मण्डली में महामान्य हो; सो मुझ पर व्यर्थ दोष न लगाओ। देखो, युद्ध कुछ मेरा अभीष्ट नहीं था और न मैं कुल-क्षय होने से सन्तुष्ट होता हूं, मेरे पुत्र और पाण्डुके पुत्रों में कुछ विशेष भी नहीं है। मेरे द्वेषभरे पुत्रगण मुझ-को वृद्ध जानकर मानते ही नहीं, मैं अन्धा और दीन हूं, सो पुत्र-स्नेह से सब सह लेता हूं, अचेत दुर्य्योधन के मोहयुक्त होनेसे मैं भी मोह में पड़ता हूं। क्षत्रियवंशी दुर्य्योधन राज-सूय यज्ञ में बड़े प्रभावी युधिष्ठिर का अपार ऐश्वर्य्य देखकर और सभा में जाने के समय उसप्रकार हंसे जाकर सह नहीं सका; और युद्ध में स्वयं पाण्डवों को पराजय करने में असमर्थ होकर पाण्डव राजलक्ष्मी पाने का उत्साह खो दिया; पीछे राजा गान्धार से कपट जुए की युक्ति की। उस कालमें जो कुछ जान सका था, वह सुनो। हे सूत-पुत्र! मेरे वह सब बुद्धि-युक्त वचन सुनकर मुझे सच्चा बुद्धिमान जानोगे"।

जब सुना, कि अर्जुन ने विचित्र धनुष चढ़ाकर लक्ष्य को भेदकरके धरती पर गिराया है और सब राजाओं के सामने से द्रौपदी को हर लाया है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि अर्जुन ने द्वारकामें जाकर माधवकी छोटी बहिन सुभद्रा-से बलपूर्व्वक विवाह किया है और तिसपर भी श्रीबलराम जी और श्रीकृष्णचन्द्र दोनों इन्द्र-प्रस्थमें आए हैं, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि खा[illegible]-दाह के काल में देवराज के जल बरसाने पर अर्जुन ने दिव्य बाणोंसे वृष्टिको रोक कर अग्नि को प्रसन्न किया है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि पाण्डव लोग कुन्ती-सहित जतुगृह से बच गये और विदुर उनकी मङ्गल-चेष्टा कर रहा है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जयकी आशा नहीं की। जब सुना, कि रङ्ग-स्थलमें अर्जुनने लक्ष्यको भेद कर जय सहित द्रौपदी का लाभ किया है और महाबली पाञ्चाल और पाण्डव एक हो गये हैं, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जयकी आशा नहीं की, जब सुना, कि भीमसेन ने क्षत्रियों में बड़े तेजस्वी, मगधनाथ जरासन्धको भुजबलसे मार डाला है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जयकी नहीं की। जब सुना, कि पाण्डुपुत्रों ने दिग्व-जयमें सब नरेशोंको बल-पूर्व्वक अधीन कर राजसूय महा-यज्ञ सम्पूर्ण किया है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जयकी आशा नहीं की। जब सुना, कि रोती-पीटती, एक-वस्त्र-पहरी-हुई, दुःखमें-डूबी, रजस्वला, सनाथ द्रौपदी अनाथ की भांति सभामें लिवाई गई है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जयकी आशा नहीं की। जब सुना, कि कुबद्धि कपटी दुःशासन ने उस सभाके बीच में द्रौपदी के अङ्ग से वस्त्र खींच कर ढेर लगाया और तिस पर भी वस्त्रका पार नहीं पासका, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जयकी आशा नहीं की। जब सुना, कि शकुनि ने युधिष्ठिर को जुए में हराकर राज हरलिया है और तिस पर भी बड़े प्रतापी भाई लोग युधिष्ठिर के आज्ञाधीन बने हैं, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना कि धार्म्मिक पाण्डव लोग वनमें जाकर बड़े भाई को प्रसन्न रखने के लिये अनेक कष्ट उठाते हुए बड़ी बड़ी चेष्टा करते हैं, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि श्रेष्ठ महानुभाव स्नातक और भिक्षा-[illegible]

ब्राह्मणगण वनमें धर्म्मराज के अनुगत हुए हैं, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि अर्ज्जुनने किरात-रूपधारी देवादिदेव महादेव को युद्धमें प्रसन्न कर पाशुपत नामक महा-अस्त्र पाया है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जयकी आशा नहीं की। जब सुना, कि प्रशंसा-योग्य और सत्य-प्रेमी धनञ्जय देवलोक में जाकर इन्द्रजीसे विधिपूर्व्वक दिव्य अस्त्र सीख रहा है, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जयकी आशा नहीं की। जब सुना, कि उसने बरदान-गर्व्वित, देवों के अजेय, पुलोम-पुत्र काल-केय नाम दुष्ट असुरों को जय किया है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि शत्रनाशी किरीटी असुर-वध के लिये इन्द्र-लोक में जाकर कार्य्य पूरा करके लौट आया है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि भीम और दूसरे पाण्डु-पुत्रगणने मनुष्योंके न-जाने-योग्य देश में जाकर श्रीकुवेरजी से भेंट की है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि कर्ण के मतानुसारी मेरे पुत्रगण घोषयात्रा में जाकर गन्धर्व्वों से पकड़े गये और अर्ज्जुन से मुक्त हुए, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि धर्म्म ने यक्षका-स्वरूप धारण करके युधिष्ठिर के समीप आकर कुछ प्रश्न पूछे है और उसने ठीक२ उत्तर देदिये हैं, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि पाण्डवगण द्रौपदी-सहित बिराट-राज्य में गुप्त-भावसे टिके थे, पर हमारी ओरके किसीने यह हाल नहीं जाना, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि महात्मा पाण्डवों के विराट-नगर में रहने के काल में एकरथ धनञ्जय ने हमारी ओर के बड़े २ योद्धाओं को परास्त किया है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि मत्स्य-राजने अर्ज्जुनको नाना अलङ्कारों से सुहाती हुई अपनी उत्तरा नाम कन्या अर्पण करदी है और अर्ज्जुनने उस कन्याको अपने पुत्र, अभिमन्यु के निमित्त ग्रहण किया है, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि युधिष्ठिरने, जीतेजाने, निर्धन होने, देशसे निकाले जाने और अपने जनों से छोड़े जाने परभी सात अक्षौहिणी सेना एकत्रित की है, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि यह भूलोक जिनके एक पद के समान हुआथा, वही मधुवंशी वासुदेव सब प्रकार से पाण्डवों के हित साधने की चेष्टा कर रहे हैं, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब नारदजी से सुना, कि श्रीकृष्णचन्द्र और अर्ज्जुन नर नारायण के अवतार हैं और उन्होंने उनको ब्रह्मलोक में भलीभांति दर्शन किया है, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि श्रीकृष्णचन्द्र लोकों के हितार्थ दुर्य्योधन से मेल करनेको आये थे; पर सफल मनोरथ न होकर लौट गये हैं, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि कर्ण और दुर्य्योधन ने श्री कृष्णचन्द्र को कष्ट में डालने की चेष्टा की है, पर उन्होंने उनको अपना विश्वरूप दिखाया है, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जयकी आशा नहीं की। जब सुना, कि श्री वासुदेवजीके जानेके कालमें रोती-पीटती हुई कुन्ती उनके रथके सामने खड़ी हुई है और उन्होंने उसको अनेक प्रकार से समझाया है, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि श्री वासुदेवजी और शान्तनु-पुत्र भीष्म दोनों, पाण्डवों के मन्त्री बने हैं और भारद्वाजद्रोण उन्हें अशीस दे रहे है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर

जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि कार्ण भीष्मसे यह कहकर, कि "तुम युद्ध करोगे, तो मैं न लड़ूंगा" सेना को छोड़ कर चला गया है, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि श्री कृष्णचन्द्र, अर्ज्जुन और अप्रमेय गाण्डीव धनुष, यह तीन कठोरवीर्य्य पदार्थ एक साथ मिल गये हैं, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि रथारूढ़ अर्ज्जुन के मोह-युक्त और विकल होने पर श्री कृष्णचन्द्र ने उसको अपने शरीरमें चौदहों भुवन दिखाये हैं, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि शत्रुनाशी भीष्मजी रणभूमि में नित्य दशसहस्र रथियों को नष्ट करके भी शत्रुओं में से एकभी प्रसिद्ध पुरुष को मार नहीं सके, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जयकी आशा नहीं की। जब सुना, कि गङ्गा-नन्दन, धार्म्मिकवर भीष्मजीने अपनी मृत्युका उपाय स्वयंही पाण्डवों से कह दिया और उन्होंने प्रसन्नमन से उसी उपाय को आश्रय किया, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि अर्ज्जुन ने शिखण्डी को सामने रखकर युद्ध में बड़े कठोर महावीर भीष्मजी को घायल किया है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि वृद्धवीर भीष्मजी सोमक सेनाओंको प्रायः नष्ट होने की दशामें पहुंचा-कर स्वयं बाणों से छेदे भेदे गये हैं, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि भीष्मदेवने शरशय्या पर शयनकर अर्ज्जुन को जल लाने की आज्ञा दी है और उसने धरती से जल निकाल कर उनको प्रसन्न किया है, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जयकी आशा नहीं की। जब सुना, कि वायु, इन्द्र और सूर्य पाण्डवों को जय देने के निमित्त इनके सहायक बने हैं और हिंस्र, जन्तुगण

हमको भय दिखा रहे हैं, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि आश्चर्य्ययोद्धा द्रोणाचार्य्य जी रणभूमि में अस्त्र चलाने के अनेक कौशल दिखा करके भी पाण्डवपक्षके किसी श्रेष्ठ पुरुष को नहीं मारते, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि हमारी ओर की संसप्तक नामक सेना अर्ज्जुन को मारने के लिये व्यूह रचने पर भी, आपही युद्ध में अर्ज्जुन से मारी गई है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि अद्वितीय वीर अभिमन्यु, शस्त्रधारी द्रोणाचार्य्य से रक्षित और दूसरों से न-भेदे-जाने-वाले चक्रव्यूह को भेद कर उसमें प्रवेश कर गया है, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि महारथी योद्धलोग अर्ज्जुन को वध करने में अशक्त होकर बालक अभिमन्युको चारों ओर से घेर करके मारकर आनन्द कर रहे हैं, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि वीरों के, अभिमन्युको मारकर आनन्दसे मोहित हो कोलाहल मचाने पर अर्ज्जुन ने क्रोध से जल-कर जयद्रथवधकी प्रतिज्ञा की है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि अर्ज्जुन, जयद्रथ-वध की प्रतिज्ञा करके शत्रुओं के बीचमें उस सत्य-प्रतिज्ञा से उत्तीर्ण हुआ है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि अर्ज्जुन के घोड़ों के थकने पर, श्री कृष्णचन्द्र उनको बन्धन से मुक्त कर जल पिला लेने के पश्चात् फिर जोत कर रथको हांक लेगये हैं, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जयकी आशा नहीं की। जब सुना, कि घोड़ोंके अशक्त होने पर पार्थ्युत अर्ज्जुन ने अकेले रथपर रहके सम्पूर्ण वीरों को हराया है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जयकी आशा नहीं की। जब सुना

वृष्णिवंशी सात्यकि, हाथी पर चढ़ी हुई सेनाओं के द्वारा द्रोणाचार्य्यके बड़े कठोर दल को भेद कर श्रीकृष्णचन्द्र और अर्ज्जुन के पास जा पहुंचा है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि कर्णने भीम को न वध कर धनुषकी कोटिसे सता सता करके "मूर्ख", पेटू" आदि बातोंसे लाञ्छन-पूर्व्वक छोड़ दिया है, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि द्रोणाचार्य्य, कृतवर्म्मा, कृपाचार्य्य, कर्ण अश्वत्थामा और वीरवर मद्रराजने बदला लेनेमें असक्त होकर जयद्रथवधके दुःख को सह लिया है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि माधव ने घोररूपी घटोत्कच राक्षस पर इन्द्रजीकी दीहुई दिव्यशक्ति को चलवाकर उसको व्यर्थ कर दिया है, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि कर्ण ने अर्ज्जुन के मारने के लिये रखी हुई दिव्य-शक्ति को घटोत्कच से लड़ने में उस पर चलाया है, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जयकी आशा नहीं की। जब सुना, कि द्रोणाचार्य्य के अस्त्र छोड़कर अनशन-मृत्यु की इच्छा से अकेले रथ पर बैठने पर धृष्टद्युम्नसे धर्म्म-लङ्घन कर उनको मारा है, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि माद्री-पुत्र नकुल ने युद्ध-मण्डल में घूम घाम कर सब लोगोंके सामने अश्वत्थामा के साथ समान-भावसे द्वैरथ युद्ध किया है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि द्रोणाचार्य्यजीके मारे जाने पर अश्वत्थामा दिव्य नारायण-अस्त्र मारके भी पाण्डवों को मार नहीं सका, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि रणभूमि में भीमसेन ने भाई दुःशासन का रक्त पीया और कोई उसको रोक नहीं सका, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि दैव-निरूपित भ्रातृयुद्ध में अर्ज्जुनने रणमें-बड़े-कठोर महावीर कर्णको नष्ट किया है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि धर्म्मराज युधिष्ठिर ने वीरवर द्रोणपुत्र, दुःशासन और उग्रस्वभावी कृतवर्म्मा को जीत लिया है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि वही मद्रराज जो श्रीकृष्ण चन्द्रसे लड़ने का अहङ्कार रखते थे, रणवीर युधिष्ठिर से हने गये हैं, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि पाण्डुपुत्र सहदेव ने कुखेल और झगड़े की जड़, पापिष्ठ, छली शकुनि को लड़ाई में मारा है, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि अकेला, हीनबल, रथरहित, थका-मादा दुर्य्योधन ह्रद में जाकर जलस्तम्भ रचके रह गया है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि पाण्डवगण श्रीकृष्णचन्द्र के संग ह्रदके निकट खड़े होकर मेरे पुत्र असहनशील दुर्य्योधन को लाञ्छन कर रहे हैं, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि गदायुद्ध में नाना आश्चर्य्य कौशल दिखानेवाला दुर्य्योधन, मण्डलाकार में घूमते समय वासुदेव की परामर्श से अन्याय-रूप से घायल हुआ है, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जयकी आशा नहीं की। जब सुना, कि अश्वत्थामा आदिने रात्रिको सोतेहुए पाञ्चालों और द्रौपदी के पुत्रों को नष्ट कर अति घृणित और अयशका कार्य्य किया है, हे सञ्जय। तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि भीम को पुत्र-वध के कारण क्रोध से अन्धे बनकर अपने पीछे दौड़ते हुए देखकर अश्वत्थामा ने ऐषिक नामक परमास्त्र मारकर उत्तरा का गर्भ नष्ट किया है, हे सञ्जय! तभी

मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि अश्वत्थामाने अर्ज्जुनवधके निमित्त ब्रह्मशिरः नामक अव्यर्थ अस्त्रको मारा है, पर अर्ज्जुनने "स्वस्ति" कह कर अपने अस्त्र से उस अस्त्र को रोक दिया है और अश्वत्थामा ने उसको मणि-रत्न दे दिया है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जय की आशा नहीं की। जब सुना, कि अश्वत्थामा को महास्त्र से विराट-पुत्री का गर्भ नष्ट करते देखकर द्वैपायनजी और श्रीकृष्णचन्द्र दोनों ने उसको शाप दिया है, हे सञ्जय! तभी मैंने फिर जयकी आशा नहीं की। इस समय गान्धारी, पुत्र, पौत्र, स्वजन, पिता और भ्राता को खोकर बड़ी विकल हुई है, पाण्डवों ने दुष्कर कर्म्म कर फिर अपने राज्य को अक-ण्टक कर लिया है। हा! कैसा कष्ट है! सुनते हैं, कि हमारी ओरके तीन और पाण्डव-पक्ष के सात, केवल येही दश मनुष्य जीते हैं, इस भयानक युद्ध में क्षत्रियों की अठा-रह अक्षौहिणी नष्ट-भ्रष्ट होगई, हे सूत। मैं चारों ओर अंधेरा देखता हूं, मोहसे विकल हो रहा हूं, चेतना मुझे छोड़ कर भाग रही है, चित्त बड़ा उदास होरहा है"।

श्री उग्रश्रवा जी बोले, कि राजा धृतराष्ट्र अति खेदयुक्त होकर इस प्रकार बहुत विलाप करके मूर्च्छित हो गये। आगे फिर चेतना आजाने पर सञ्जय से यह बात कहने लगे, "हे सञ्जय। मेरी दशा इस प्रकार बिगड़ गई है, कि मैं इसी समय बिना विलम्ब प्राण छोड़ना चाहता हूं, मेरे इस जीवन के रखने का कुछ भी फल नहीं दीखता।

श्री उग्रश्रवा जी महाराज बोले, कि इतनी कथा कहनेके पीछे दीनभाव-युक्त राजा धृत-राष्ट्र भी उरगराज की भांति लम्बी सांस लेकर विलाप करते हुए [illegible] देखकर धीमान् सञ्जय उनसे उत्तम अर्थयुक्त यह वचन बोले, "महाराज! आपने श्रीमान्

नारद और वेदव्यासजी के मुख से यह सुना होगा, कि महारथी शैव्य, जयशील, सृञ्जय, सुहोत्र और रन्तिदेव; अति प्रभावी काक्षी-वान्, वाल्हीक और दमन; शत्रुनाशी शर्य्याति, अजीत, नल और विश्वामित्र; महाबली अम्ब-रीष, महात्मा मरु, मनु, इक्ष्वाकु, गय, भरत, परशुराम, राम, शशबिन्दु, भगीरथ, कृतवीर्य्य और जनमेजय; और शुभकर्म्मशील ययाति, स्वयं देवताओंने जिनको यज्ञ कराया था और जिनके यज्ञीय यूपसमूह में कानन सहित मही-मण्डल अङ्कित हुआ था;—ये सब सर्व्वगुण-सम्पन्नलोग, प्रधान२ राजवंश में जन्मलेने, इन्द्र-जीके सदृश तेजस्वी और दिव्य अस्त्रों में निपुण होने, धरणीमण्डल को धर्म्मयुद्ध से जय करलेने, और नाना यज्ञानुष्ठान कर इसलोक में अतुल यशोलाभ करने पर भी अन्त में काल कवल में पतित हुए हैं।

पूर्व्वकाल में राजा शैव्य के पुत्रशोक से विकल होने पर देवर्षि नारदने उनके समीप उन चौबीस राजाओं के उपाख्यानों को कीर्त्तन किया था; इनके अतिरिक्त और भी बहुतेरे अतिबलशाली महारथी, सर्व्वगुणशील महात्मा राजा कालगर्भमें लय पागये हैं। सुना जाता है, कि पुरु, कुरु, यदु, शूर, विश्वगश्व महाद्युति, अणुह, युवनाश्व, ककुत्स्थ, विक्रमी रघु, विजय, वीतिहोत्र, अङ्ग, भव, श्वेत, वृह-द्गुरु, उशीनर, कङ्क, दुलिदुह, द्रुम, दम्भोद्भव, पर, वेण, सगर, सङ्कृति, निमि, अजेय, परशु, पुण्ड्र, देवावृध अनघ, देवाह्वय, सुप्रतिम, सुप्र-तीक, बृहद्रथ, महोत्साह, विनीतात्मा, सुक्रतु, नैषध नल, सत्यव्रत, शान्तभय, सुमित्र, सुबल, प्रभु जानुजङ्घ, अनरण्य, अर्क, प्रियभृत्य, शुचिव्रत, बलबन्धु, निरामर्द, केतुशृङ्ग, बृहद्बल, धृष्टकेतु, बृहत्केतु, दीप्तकेतु, निरामय, अविक्षित, चपल, धूर्त, कृतबन्धु, दृढेषुधि, महापुराण-सम्भाव्य, प्रत्यङ्ग, परहा, श्रुति, [illegible]

सैकड़ों, सहस्रों, पद्मसंख्यातक के धीशक्तिमान्, अति बलवान्, प्रतापवान् राजगण आपके पुत्रोंके सदृश अपार ऐश्वर्य्य छोड़कर परलोकको गये हैं। पण्डित सुकविगण पुराण में जिनके अलौकिक कार्य्य, विक्रम, दान-माहात्म्य, आस्तिकता, सत्यनिष्ठा शौच, दया, सरलता आदि कीर्त्तन करते हैं, वह सब सर्व्व-गुण-सम्पन्न महाधन महात्मा भी निधन होगये हैं। आपके पुत्रगण दुरात्मा, द्वेषी, लोभी और बड़े दुराचारी थे, अतएव उनके निमित्त शोक करना नहीं चाहिये। आप शास्त्रज्ञ मेधावान्, धीमान् और पण्डित-समाज में अति सम्मानित हैं; जिनकी बुद्धि शास्त्रानुसारिणी होती है, वे कभी मोहवश नहीं होते। आप तो जानते ही होंगे, कि आपने पाण्डवों को निर्द्दया और अपने पुत्रों को दया दिखाई थी। ऐसा तो कहीं सुना नहीं जाता, कि किसी दूसरे ने अपनी सन्तान-रक्षा के निमित्त आपके सदृश यत्न किया हो; पर जो होना था सो होचुका, अब उस बारे में खेद न करें। जो कुछ भाग्य में बदा है, कौन उसे कौशल से रोक सकता है? विधाता-निर्णीत पथ को कोई भी लङ्घन नहीं कर सकता। भाव, अभाव, सुख, दुःख सबही कुछ कालवश संघटित होते हैं; काल जीवों को सृजन कर रहा है, फिर कालही उनको संहार कर रहा है; काल प्रजाओं को जलाता है, फिर कालही उनको शीतल करता है। सारे भुवनमण्डल के शुभाशुभ सम्पूर्ण पदार्थ कालही से बन रहे हैं, कालही में लय पाजाते हैं और कालही से फिर उत्पन्न होते हैं; सब जीवों के सोजाने परभी काल सजग रहता है, काल को कोई अतिक्रम नहीं कर सकता है; काल विना वाधा-विपत्ति सब भूतोंमें तुल्य-भाव से विचर रहा है। वर्त्तमान, भूत, भविष्यत्, सभी वस्तु कालसे रची हुई है, यह सब जानकर आप को मोहवश न होना चाहिये।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, सञ्जयने शोकार्त्त जन-नाथ धृतराष्ट्र को इस प्रकार से समझा बुझा कर शान्त किया। श्रीकृष्णद्वैपायनजी महाराज इस विषय में परम पवित्र उपनिषत् कह गये हैं, जिसे विद्वान् सुकविगण पुराण और लोकमण्डली में कीर्त्तन करते हैं। इस भारत-ग्रन्थ के पढ़ने का पुण्य इतना है, कि यदि कोई इसकी एक चरण कविता भी श्रद्धा-सहित पढ़े, तो वह सब पापों से मुक्त होकर पवित्र होता है। इस भारत में निष्पाप और सत्कर्म्मशील देव, देवर्षि, महोरग और यक्षों का वर्णन है। जो सत्य और ऋतस्वरूप, पवित्र और पवित्रकारी, नित्य और निर्म्मल, ज्योतिस्स्वरूप और सनातन परब्रह्म हैं; पण्डितगण जिनके लोकातीत कार्य्यों की कीर्त्तन करते हैं; जिन से वचनातीत, कार्य्य-कारण-आत्मक यह विश्व, हिरण्यगर्भादिरूप में विश्वका विस्तार, यागादि कर्म्मकी प्रवृत्ति, जन्म, मृत्यु, और फिर उत्पत्ति हो रही हैं; जो अध्यात्म रूप में पञ्चभूती देहके अधिष्ठाता और अव्यक्तादि सम्पूर्ण वस्तुओंसे भिन्न करके वेद में वर्णित हुए हैं और जिनको जीवन्मुक्त यतिश्रेष्ठ लोग ध्यान और योगबल से आदर्शमें स्थित प्रतिविम्बके सदृश अवलोकन करते हैं, वही सनातन भगवान् वासुदेव इस ग्रन्थ में कीर्त्तित हुए हैं। धर्म्मशील नर, नियम और श्रद्धा के साथ इस अध्याय को पाठ करके सम्पूर्ण पापों से मुक्त होते हैं। आस्तिक पुरुष भारतग्रन्थ के इस अनुक्रमणिका-अध्याय को प्रथम से सदा सुना करें, तो किसी क्लेश से कातर नहीं होवें। सन्ध्या और प्रातःकाल में इस अनुक्रमणिका-अध्याय को कुछ कुछ पाठ करने से दिन और रात्रिके सब पाप उसी काल में छूट जाते हैं। यह अनुक्रमणिका-अध्याय महाभारतकी सत्य और अमृतभरी देहके सदृश हुआ है। जैसे दधि में मक्खन,

द्विपद जीवों में ब्राह्मण, वेद में आरण्यक, औषधियोंमें अमृत, जलाशयोंमें समुद्र और चतुष्पदों में गौ श्रेष्ठ हैं, तैसेही इतिहासों में यह महाभारत प्रधान है। जो पुरुष श्राद्धके काल में इस अध्याय का कमसे कम एक चरण भी ब्राह्मणोंको सुनाता है, उसके दिये हुए अन्न और पान पितृलोकमें अक्षय होते हैं। इतिहास और पुराण से वेदका अर्थ प्रकाश हुआ है; क्योंकि थोड़ी-विद्या पढ़े-हुए जनसे वेदको यह भय उपजता है, कि वह मुझे मारेगा। पण्डितगण श्रीकृष्ण-द्वैपायनजी के कथित इस वेदको सुनाकर अर्थ पाते हैं और निश्चय ही भ्रूणहत्यादि पापों को भस्म कर देते हैं। जो पुरुष शुचि हो करके इस अध्यायकी पर्व्वों के क्रमसे पाठ करता है; मेरी समझ में उसको सम्पूर्ण भारत को पढ़ने का फल मिलता है। जो पुरुष श्रद्धायुक्त होकर ऋषि-सेवित इस अध्याय को नित्य सुनाता है, वह दीर्घायु हो और कीर्त्तिलाभ कर अन्तको देवलोक में चला जाता है। पूर्व्वकालमें सब देवताओंने मिलकर तराजू की एक ओर चारों वेद और दूसरी ओर इस भारत को चढ़ाकर तौल किया था, इससे रहस्य-सहित चारों वेदोंसे यही भारी निकला। उस दिनसे लोग इसको महाभारत कहा करते हैं। यह बड़ाई और गरुआई में वेदसे बढ़ कर है, सो बड़ाई और गरुआई के कारण महाभारत भी करके प्रसिद्ध हुआ है। जो पुरुष महाभारत शब्दके यथार्थसे विदित होता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो जाता है। तपस्या, पठन, मन्त्रानुष्ठानादि सम्पूर्ण वेद-विधि और राजाओंके युद्ध और नगर-आक्रमण कदापि पापजनक नहीं हो सकते; पर वे असद अभि-प्रायसे दूषित होवें, तो निःसन्देह पापजनक होते हैं।

आदिपर्व्व प्रथम अध्याय और अनुक्रमणिकापर्व्व समाप्त।

ऋषिगण बोले, हे सूतनन्दन! तुमने जिस समन्तपञ्चक देशका नाम लिया था, हम उसके सब सत्य वृत्तान्तों को सुना चाहते हैं। सूतपुत्रजी बोले, हे सत्तमगण। मैं समन्तपञ्चक तीर्थका सब वृत्तान्त वर्णन करता हूं; श्रवण कीजिये।

त्रेता और द्वापर युगोंके सन्धिकाल में अस्त्रविद्याके पारङ्गत भगवान् परशुरामजीने क्रोधकेवश में होकर पृथ्वी परके समस्त क्षत्रिय कुलको बार बार विनाश किया था। उन अग्नितुल्य तेजस्वी रामने अपने भुजवीर्य्यके बलसे क्षत्रियकुलका सत्यानाश कर उनके शोणितसे समन्तपञ्चक में पांच ह्रद बनाये थे। सुना है, कि क्रोधयुक्त होकर उन रक्त भरे ह्रदों के किनारे उन्होंने रक्त से पितरोंका तर्पण किया था; अनन्तर ऋचीक आदि पितृलोक आकर बोले, "हे महाभाग, महातेजस्वी भृगुनन्दन राम! तुम्हारी यह पितृभक्ति और विक्रम देखकर हम अति प्रसन्न हुए हैं, तुम्हारा मङ्गल होवे, अब मनमाना वर मांगो।" परशुरामजी बोले, कि यदि मेरे पितृलोक प्रसन्न होकर कृपा करते हों, तो यह वर मागता हूं, कि मैंने क्रोधपूर्व्वक क्षत्रिय कुलको नष्टकर जो पाप किया है, उससे मुक्त हो जाऊं और मुझसे बने हुए रक्त के यह पांचों झील भूमण्डल में प्रसिद्ध तीर्थ बनें। अनन्तर पितरोंने "वही होगा' ऐसा कहकर "क्षमस्व" इस वचनसे उन्हें क्षत्रियकुलके उच्छेद करनेसे निवृत्त किया, और वह भी उस कार्य्य से दूर रहे। रक्तरूपी जलयुक्त इन पांच ह्रदों के पास पास जो देश है, वह पवित्र समन्तपञ्चक नामसे प्रसिद्ध हुआ है। क्योंकि जिस देशमें जो कुछ चिन्ह होते हैं, पण्डितगण उन्हीं के अनुसार उस देशका नाम रखते हैं। द्वापर और कलियुगके सन्धिकालमें उस समन्तपञ्चक देशमें कुरु-पाण्डवों-सेनाओं में

संग्राम हुआ था। उस भूद्वीप-वर्ज्जित धर्म्म-भरे देशमें अठारह अक्षौहिणी सेना युद्ध करनेकी कामना से गई थी। हे द्विजो! वे वहीं मिलकर वहीं मारी गईं। हे व्रतशील, साधु ब्राह्मणो! मैंने आप लोगोंसे जिस पुण्य-भरे सुन्दर देशका नाम लिया था, उसके समन्तपञ्चक नाम पड़नेका वृत्तान्त सम्पूर्ण कह सुनाया है।

ऋषिगण बोले, हे सूतनन्दन। आपने जो अक्षौहिणी शब्द कहा, हम उसका सच्चा अर्थ सुना चाहते हैं। एक अक्षौहिणीमें कितने पैदल; कितने घोड़े, कितने रथ, कितने हाथी रहते हैं; वह आप जानते हैं, सो हमारे निकट ठीक ठीक वर्णन कीजिये।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, एक रथ, एक हाथी, पांच पैदल और तीन घोड़े मिलकर एक पत्ति होती है; तीन पत्तिओंसे एक सेनामुख; तीन सेनामुखोंसे एक गुल्म; तीन गुल्मों से एक गण; तीन गणोंसे एक वाहिनी; तीन वाहिनियोंके एक होनेपर पृतना कही जाती है, और तीन पृतनाओं से एक चमू होती है; तीन चमुओंसे एक अनीकिनी होती है; दश अनीकिनियों के एकत्र मिलने से पण्डित लोग एक अक्षौहिणी कहते हैं। हे द्विजश्रेष्ठगण! संख्या गिननेके तत्व जाननेवाले पुरुषों ने अक्षौहिणी सेनाकी यह संख्या लगाई है, कि (२१,८,७०) इक्कीस सहस्र ८ सौ सत्तर रथ, उतनेही गज, (१०,९,३,५०) एक लक्ष, नौ सहस्र, तीन सौ पचास पैदल और (६५,६,१०) पैंसठ सहस्र६ सौ दश घोड़ोंसे एक अक्षौहिणी बनती है। हे तपोधनो! मैंने पहिले कहा है, कि कुरु-पाण्डवों की ऐसीही अठारह अक्षौहिणी सेना उस देशमें जामिली थीं। हे द्विज श्रेष्ठगण! वे कौरवोंको उपलक्ष करके आश्चर्यकार्यकारी काल के आजाने पर उसीदेश में नष्ट हो गईं। परमास्त्रों के जाननेवाले भीष्मजीने दश दिन युद्ध किया था। द्रोणाचार्य्यने पांच दिन कौरवी-सेनाकी रक्षा की थी। शत्रु-सेनानाशी कर्णने दो दिन और शल्य ने आधादिन युद्ध किया था, अनन्तर आधादिन भीम और दुर्य्योधन में गदा युद्ध हुआ था। उसदिन रात्रि को अश्वत्थामा, कृतवर्म्मा और कृपाचार्य्य, इन तीनों ने युधिष्ठिर की विश्वासी और निद्रित सेनाओं पर आक्रमण किया था।

हे शौनक जी! मैं आपके यज्ञमें जो सुन्दर भारतोपाख्यान कीर्त्तन कर रहा हूं, यीमहाराज व्यासजीके-शिष्य, धीमान् वैशम्पायन जी ने उसे जनमेजय के सर्पयज्ञ में विस्तार-पूर्व्वक कहा था। इस में राजाओं के यश और वीर्य्य की कथा कही गई है। इसकी आदि में पौष्य, पौलोम और आस्तीक, यह तीन पर्व्व हैं। इसमें विचित्र पद, आख्यान और नाना-प्रकार के आचारादि प्रकाशित हुए हैं, मोक्षार्थी जन जैसे वैराग्य का आश्रय करते हैं, तैसेही प्राज्ञलोग इस भारतकी शरण लिये रहते हैं। जैसे जानने योग्य वस्तुओं में आत्मा और प्यारीवस्तुओं में जीवन प्रधान है, तैसे ही श्रेष्ठ विषयों से भरा हुआ यह इतिहास सम्पूर्ण आगमों में बढ़िया बना है। जैसे भोजन बिना शरीर-धारण का दूसरा उपाय नहीं है, तैसे ही इस आख्यान की शरण बिना, भूमण्डल में कोई दूसरा आख्यान विद्यमान नहीं है। जैसे उन्नति चाहनेवाले नौकर चाकर, सद्वंशी राजा का आश्रय लेते हैं, तैसे ही कविगण इस भारत को अवलम्बन करते हैं। जैसे सब लौकिक और वैदिक वाक्य, स्वर और व्यञ्जन वर्णों से परिपूर्ण रहते हैं, तैसेही इतिहासों में श्रेष्ठ यह भारत, हितसाधनेवाली बुद्धि का आधार हुआ है। इस समय आप लोग अनन्त प्रज्ञाके आधार, विचित्र पद और पर्व्व संयुक्त, सूक्ष्मार्थ न्याय विशिष्ट और वेदार्थ-विभूषित भारत इतिहास का पर्व्वसंग्रह श्रवण कीजिये।

प्रथम अनुक्रमणिका पर्व्व (१) द्वितीय पर्व्व-संग्रह पर्व्व (२) आगे पौष्य पर्व्व (३) पौलोम-पर्व्व (४) आस्तीकपर्व्व (५), और आदिवंशाव-तारण पर्व्व (६) अनन्तर जिसके श्रवण करने से हर्ष से शरीर रोमाञ्चित होता है, वही विचित्र सम्भवपर्व्व (७), आगे जतुगृह-दाह-पर्व्व (८), तिसके बाद हिडम्बपर्व्व (९), अनन्तर वकवध-पर्व्व (१०), चैत्ररथपर्व्व (११) पश्चात् देवी पाञ्चाली स्वयम्वरपर्व्व (१२), तिसके बाद चत्रिय-धर्म्म में जयलाभके पश्चात् पाण्डवों का विवाह-पर्व्व (१३), अनन्तर विदुरागमनपर्व्व (१४), पीछे राज्यलाभपर्व्व (१५) तब अर्ज्जुन का वनवासपर्व्व (१६), पश्चात् सुभद्राहरणपर्व्व (१७), सुभद्राहरणके बाद यौतुकाहरणपर्व्व (१८) अनन्तर खाण्डवदाहपर्व्व, जिसमें मय-दानव का दर्शन हुआ (१९), आगे सभाक्रिया-पर्व्व (२०), तब मन्त्रणापर्व्व (२१), अनन्तर जरासन्धवधपर्व्व (२२), तिसके अन्तर दिग्वि-जय पर्व्व (२३), दिग्विजयके बाद राजसूयिकपर्व्व (२४), पश्चात् अर्घाभिहरणपर्व्व (२५), तिसके बाद शिशुपालवधपर्व्व (२६), अनन्तर द्यूतपर्व्व (२७), पश्चात् अनुद्यूतपर्व्व (२८), अनन्तर अरण्ययात्रा-पर्व्व (२९), तब किर्म्मीरवधपर्व्व (३०), तिसके बाद अर्ज्जुनाभिगमनपर्व्व (३१), तब ईश्वरा-र्ज्जुनके युद्धसम्बन्धी किरातपर्व्व (३२), अनन्तर इन्द्रलोकाभिगमनपर्व्व, (३३), तब धर्म्म और करुणारसयुक्त नलोपाख्यानपर्व्व (३४), तिसके बाद कुरुराज युधिष्ठिर का तीर्थयात्रापर्व्व, उसी में जटासुरवध वर्णित हुआ है (३५), तब यक्षयुद्धपर्व्व (३६) तब निवातकवचयुद्धपर्व्व (३७), अनन्तर आजगरपर्व्व (३८), तब मार्कण्डेय समस्यापर्व्व (३९), तिसके बाद द्रौपदी-सत्य-भामा-सम्वादपर्व्व (४०), अनन्तर घोषयात्रापर्व्व उसी में मृगस्वप्नोद्भव और सुहृत् ऋषिका व्रीहि-द्रौणिक उपाख्यान है (४१), तब द्रौपदीहरण-पर्व्व उसी में जयद्रथमर्द्दन, पतिव्रता सावित्री का अद्भुत माहात्म्य और रामोपाख्यान कथित हुए हैं (४२), आगे कुण्डलाहरणपर्व्व (४३) तिसके बाद आरण्येयपर्व्व (४४), अनन्तर विराटपर्व्व के अन्तर्गत पाण्डवों का प्रवेश और समयपालनपर्व्व (४५), आगे कीचकवधपर्व्व (४६), अनन्तर गोग्रहणपर्व्व (४७), तब अभि-मन्यु और उत्तरा का विवाहपर्व्व (४८), अन-न्तर अति आश्चर्य्य सैन्योद्योगपर्व्व (४९), तब सञ्जययानपर्व्व (५०) तिसके पश्चात् चिन्तायुक्त धृतराष्ट्र का प्रजागरपर्व्व (५१) अनन्तर गुह्य-तमक अध्यात्मज्ञानसम्बन्धी सनतसुजातपर्व्व (५२), आगे यानसन्धिपर्व्व (५३), तिसके पश्चात् भग-वद्यानपर्व्व, जिस में मातलीका उपाख्यान, गालवचरित, श्रीमहाराज कृष्णचन्द्र का सभा-प्रवेश और विदुलापुत्रशासन वर्णित हुए हैं (५४), तब श्रीकृष्णचन्द्र और महानुभव कर्णका वादाविवादपर्व्व (५५), तिसके पश्चात् कुरु-पाण्डवों का सैन्यनिर्याणपर्व्व (५६) अनन्तर रथातिरथ संख्यापर्व्व (५७), आगे क्रोध वृद्धि करने वाला उलूकदूताभिगमनपर्व्व (५८) तिसके पश्चात् अम्बोपाख्यानपर्व्व (५९), अनन्तर आश्चर्य्य भीष्माभिषेकपर्व्व (६०), आगे जम्बु-द्वीपसन्निवेशपर्व्व (६१), अनन्तर द्वीपविस्तारके कीर्त्तन-युक्त भूमिपर्व्व (६२), तब भगवद्गीता-पर्व्व (६३) तिसके पश्चात् भीष्मवधपर्व्व (६४) अनन्तर द्रोणाभिषेकपर्व्व (६५), तब संसप्तक-वधपर्व्व, (६६), आगे अभिमन्युवधपर्व्व (६७), अनन्तर प्रतिज्ञापर्व्व (६८), तब जयद्रथवधपर्व्व (६९) तिसके पश्चात् घटोत्कचवधपर्व्व (७०), अनन्तर लोमहर्षणपर्व्व (७१) आगे नारायणा-स्त्रत्यागपर्व्व (७२), तिसके पश्चात् कर्णपर्व्व (७३), अनन्तर शल्यवधपर्व्व (७४), तब हृदप्रवेशपर्व्व (७५) तिसके पश्चात् गदायुद्धपर्व्व (७६) अनन्तर सारस्वत तीर्थवंशानुकीर्त्तनपर्व्व (७७), तिसके पश्चात् अतिबीभत्स सौप्तिकपर्व्व (७८), आगे अति कष्टदायी ऐषीकपर्व्व (७९) तिसके पश्चात्

संग्राम हुआ था। उस भूदोष-वर्ज्जित धर्म्म-भरे देशमें अठारह अक्षौहिणी सेना युद्ध करनेकी कामना से गई थी। हे द्विजो! वे वहीं मिलकर वहीं मारी गई। हे व्रतशील, साधु ब्राह्मणो! मैंने आप लोगोंसे जिस पुण्य-भरे सुन्दर देशका नाम लिया था, उसके समन्त-पञ्चक नाम पड़नेका वृत्तान्त सम्पूर्ण कह सुनाया है।

ऋषिगण बोले, हे सूतनन्दन! आपने जो अक्षौहिणी शब्द कहा, हम उसका सञ्चा अर्थ सुनो चाहते हैं। एक अक्षौहिणीमें कितने पैदल, कितने घोड़े, कितने रथ, कितने हाथी रहते हैं, वह आप जानते हैं, सो हमारे निकट ठीक ठीक वर्णन कीजिये।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, एक रथ, एक हाथी, पांच पैदल और तीन घोड़े मिलकर एक पत्ति होती है; तीन पत्तिओंसे एक सेनामुख; तीन सेनामुखोंसे एक गुल्म; तीन गुल्मों से एक गण; तीन गणोंसे एक वाहिनी; तीन वाहिनियोंके एक होनेपर पृतना कही जाती है, और तीन पृतनाओं से एक चमू होती है; तीन चमुओंसे एक अनीकिनी होती है; दश अनीकिनियों के एकत्र मिलने से पण्डित लोग एक अक्षौहिणी कहते हैं। हे द्विजश्रेष्ठगण! संख्या गिननेके तत्व जाननेवाले पुरुषों ने अक्षौहिणी सेनाकी यह संख्या लगाई है, कि (२१,८,७०) इकीस सहस्र ८ सौ सत्तर रथ, उतनेही गज, (१०,९,३,५०) एक लक्ष, नौ सहस्र, तीन सौ पचास पैदल और (६५,६,१०) पैंसठ सहस्र६ सौ दश घोड़ोंसे एक अक्षौहिणी बनती है। हे तपोधनो! मैंने पहिले कहा है, कि कुरु-पाण्डवों की ऐसीही अठारह अक्षौहिणी सेना उस देशमें जामिली थीं। हे द्विज श्रेष्ठगण! वे कौरवोंको उपलक्ष करके आश्चर्य्यकार्य्यकारी काल के आजाने पर उसीदेश में नष्ट हो गई। परमास्त्रों के जाननेवाले भीष्मजीने दश दिन युद्ध किया था। द्रोणाचार्य्यने पांच दिन कौरवी-सेनाकी रक्षा की थी। शत्रु-सेना-नाशी कर्णने दो दिन और शल्य ने आधादिन युद्ध किया था, अनन्तर आधादिन भीम और दुर्य्योधन में गदा युद्ध हुआ था। उसदिन रात्रि को अश्वत्थामा, कृतवर्म्मा और कृपाचार्य्य, इन तीनों ने युधिष्ठिर की विश्वासी और निद्रित सेनाओं पर आक्रमण किया था।

हे शौनक जी! मैं आपके यज्ञमें जो सुन्दर भारतोपाख्यान कीर्त्तन कर रहा हूं, श्रीमहाराज व्यासजीके शिष्य, धीमान् वैशम्पायन जी ने उसे जनमेजय के सर्पयज्ञ में विस्तार-पूर्व्वक कहा था। इस में राजाओं के यश और वीर्य्य की कथा कही गई है। इसकी आदि में पौष्य, पौलोम और आस्तीक, यह तीन पर्व्व हैं। इसमें विचित्र पद, आख्यान और नाना-प्रकार के आचारादि प्रकाशित हुए हैं, मोक्षार्थी जन जैसे वैराग्य को आश्रय करते हैं, तैसेही प्राज्ञलोग इस भारतकी शरण लिये रहते हैं। जैसे जानने योग्य वस्तुओं में आत्मा और प्यारीवस्तुओं में जीवन प्रधान है, तैसे ही श्रेष्ठ विषयों से भरा हुआ यह इतिहास सम्पूर्ण आगमों में बढ़ियां बना है। जैसे भोजन बिना शरीर-धारण का दूसरा उपाय नहीं है, तैसे ही इस आख्यान की शरण बिना, भूमण्डल में कोई दूसरा आख्यान विद्यमान नहीं है। जैसे उन्नति चाहनेवाले नौकर चाकर, सद्वंशी राजा का आश्रय लेते हैं, तैसे ही कविगण इस भारत को अवलम्बन करते हैं। जैसे सब लौकिक और वैदिक वाक्य, स्वर और व्यञ्जन वर्णों से परिपूर्ण रहते हैं, तैसेही इतिहासों में श्रेष्ठ यह भारत, हितसाधनेवाली बुद्धि का आधार हुआ है। इस समय आप लोग अनन्त प्रज्ञाके आधार, विचित्र पद और पर्व्व संयुक्त, सूक्ष्मार्थ न्याय विशिष्ट और वेदार्थ-विभूषित भारत इतिहास का पर्व्वसंग्रह श्रवण कीजिये।

प्रथम अनुक्रमणिका पर्व्व (१) द्वितीय पर्व्व-संग्रह पर्व्व (२) आगे पौष्य पर्व्व (३) पौलोम-पर्व्व (४) आस्तीकपर्व्व (५), और आदिवंशाव-तारण पर्व्व (६) अनन्तर जिसके श्रवण करने से हर्ष से शरीर रोमाञ्चित होता है, वही विचित्र सम्भवपर्व्व (७), आगे जतुगृह-दाह-पर्व्व (८), तिसके बाद हिड़म्बपर्व्व (९), अनन्तर बकवध-पर्व्व (१०), चैत्ररथपर्व्व (११) पश्चात् देवी पाञ्चाली स्वयम्बरपर्व्व (१२), तिसके बाद क्षत्रिय-धर्म्म में जयलाभके पश्चात् पाण्डवों का विवाह-पर्व्व (१३), अनन्तर विदुरागमनपर्व्व (१४), पीछे राज्यलाभपर्व्व (१५) तब अर्ज्जुन का वनवासपर्व्व (१६), पश्चात् सुभद्राहरणपर्व्व (१७), सुभद्राहरणके बाद यौतुकाहरणपर्व्व (१८) अनन्तर खाण्डवदाहपर्व्व, जिसमें मय-दानव का दर्शन हुआ (१९), आगे सभाक्रिया-पर्व्व (२०), तब मन्त्रणापर्व्व (२१), अनन्तर जरासन्धवधपर्व्व (२२), तिसके अन्तर दिग्वि-जय पर्व्व (२३), दिग्विजयके बाद राजसूयिकपर्व्व (२४), पश्चात् अर्घाभिहरणपर्व्व (२५), तिसके बाद शिशुपालवधपर्व्व (२६), अनन्तर द्यूतपर्व्व (२७), पश्चात् अनुद्यूतपर्व्व (२८), अनन्तर अरण्ययात्रा-पर्व्व (२९), तब किर्म्मीरवधपर्व्व (३०), तिसके बाद अर्ज्जुनाभिगमनपर्व्व (३१), तब ईश्वरा-र्ज्जुनके युद्धसम्बन्धी किरातपर्व्व (३२), अनन्तर इन्द्रलोकाभिगमनपर्व्व, (३३), तब धर्म्म और करुणारसयुक्त नलोपाख्यानपर्व्व (३४), तिसके बाद कुरुराज युधिष्ठिर का तीर्थयात्रापर्व्व, उसी में जटासुरवध वर्णित हुआ है (३५), तब यक्षयुद्धपर्व्व (३६) तब निवातकवचयुद्धपर्व्व (३७), अनन्तर आजगरपर्व्व (३८), तब मार्कण्डेय समस्यापर्व्व, (३९), तिसके बाद द्रौपदी-सत्य-भामा-सम्वादपर्व्व (४०), अनन्तर घोषयात्रापर्व्व उसी में मृगस्वप्नोद्भव और मुद्गल ऋषिका व्रीहि-द्रौणिक उपाख्यान है (४१), तब द्रौपदीहरण-पर्व्व उसी में जयद्रथमन्थन, पतिव्रता सावित्री का अद्भुत माहात्म्य और रामोपाख्यान कथित हुए हैं (४२), आगे कुण्डलाहरणपर्व्व (४३) तिसके बाद आरणेयपर्व्व (४४), अनन्तर विराटपर्व्व के अन्तर्गत पाण्डवों का प्रवेश और समयपालनपर्व्व (४५), आगे कीचकवधपर्व्व (४६), अनन्तर गोग्रहणपर्व्व (४७), तब अभि-मन्यु और उत्तरा का विवाहपर्व्व (४८), अन-न्तर अति आश्चर्य्य सैन्योद्योगपर्व्व (४९), तब सञ्जययानपर्व्व (५०) तिसके पश्चात् चिन्तायुक्त धृतराष्ट्र का प्रजागरपर्व्व (५१) अनन्तर गुह्य-त्मक अध्यात्मज्ञानसम्बन्धी सनतसुजातपर्व्व (५२), आगे यानसन्धिपर्व्व (५३), तिसके पश्चात् भग-वद्यानपर्व्व, जिस में मातलीका उपाख्यान, गालवचरित, श्रीमहाराज कृष्णचन्द्र का सभा-प्रवेश और विदुलापुत्रशासन वर्णित हुए हैं (५४), तब श्रीकृष्णचन्द्र और महानुभव कर्णका वादाविवादपर्व्व (५५), तिसके पश्चात् कुरु-पाण्डवों का सैन्यनिर्यानपर्व्व (५६) अनन्तर रथातिरथ संख्यापर्व्व (५७), आगे क्रोध बृद्धि करने वाला उलूकदूताभिगमनपर्व्व (५८) तिसके पश्चात् अम्बोपाख्यानपर्व्व (५९), अनन्तर आश्चर्य्य भीष्माभिषेकपर्व्व (६०), आगे जम्बु-द्वीपसन्निवेशपर्व्व (६१), अनन्तर द्वीपविस्तारके कीर्त्तन-युक्त भूमिपर्व्व (६२), तब भगवद्गीता-पर्व्व (६३) तिसके पश्चात् भीष्मवधपर्व्व (६४) अनन्तर द्रोणाभिषेकपर्व्व (६५), तब संसप्तक-वधपर्व्व, (६६), आगे अभिमन्युवधपर्व्व (६७), अनन्तर प्रतिज्ञापर्व्व (६८), तब जयद्रथवधपर्व्व (६९) तिसके पश्चात् घटोत्कचवधपर्व्व (७०), अनन्तर लोमहर्षणपर्व्व (७१) आगे नारायण-स्त्रत्यागपर्व्व (७२), तिसके पश्चात् कर्णपर्व्व (७३), अनन्तर शल्यवधपर्व्व (७४), तब ह्रदप्रवेशपर्व्व (७५), तिसके पश्चात् गदायुद्धपर्व्व (७६) अनन्तर सारस्वत तीर्थवंशानुकीर्त्तनपर्व्व (७७), तिसके पश्चात् अतिवीभत्स सौप्तिकपर्व्व (७८), आगे अति कष्टदायी ऐषीकपर्व्व (७९), तिसके पश्चात्

जलप्रादानिकपर्ब्ब (८०), अनन्तर स्त्रीविलापपर्ब्ब (८१) तब कौरवों का और्द्धदेहिकश्राद्धपर्ब्ब (८२) तिसके पश्चात् ब्राह्मण-वेशधारी चार्ब्बाक-राक्षस का वधपर्ब्ब (८३) अनन्तर धीमान् धर्म्मराजका अभिषेचनिकपर्ब्ब (८४), तब गृहविभागपर्ब्ब (८५), तिसके पश्चात् शान्तिपर्ब्ब (८६), तब राजधर्म्मानुशासनपर्ब्ब (८७), अनन्तर आपद्धर्म्मपर्ब्ब (८८), तब मोक्षधर्म्मपर्ब्ब, जिसमें शुक प्रश्नाभिगमन, ब्रह्मप्रश्नानुशासन, दुर्ब्बासाजी का प्रादुर्भाव और मायाके साथ कथोपकथन हैं (८९), तिसके पश्चात् आनुशासनिकपर्ब्ब, जिसमें धीमान् भीष्मजीका स्वर्गारोहण वर्णित हुआ है (९०) तब सर्ब्बपापनाशी आश्वमेधिकपर्ब्ब (९१), तिसके पश्चात् आध्यात्मसम्बन्धी अनुगीतापर्ब्ब (९२), अनन्तर आश्रम वासिकपर्ब्ब (९३) तब पुत्रदर्शनपर्ब्ब (९४) तिसके पश्चात् नारदागमनपर्ब्ब (९५) अनन्तर अतिकष्टदायी मौषलपर्ब्ब (९६), आगे महाप्रास्थानिकपर्ब्ब (९७) तिसके पश्चात् स्वर्गारोहणिक-पर्ब्ब (९८) अनन्तर खिलनामक हरिवंशपर्ब्बके अन्तर्गत विष्णुपर्ब्ब, जिसमें शिशुचर्य्या और श्रीकृष्ण से कंसवध होना वर्णित हुए हैं (९९), तब अति आश्चर्य्य भविष्यपर्ब्ब (१००)। इन सौ पर्ब्बों को महात्मा व्यासदेव कीर्त्तन कर गये हैं। सूतवंशी लोमहर्षणपुत्र नैमिषारण्यमें संक्षेप क्रमानुसार जो अठारह पर्ब्ब कह गये हैं, भारत के वही संक्षिप्त पर्ब्बसंग्रह कहे जाते हैं।

पौष्य, पौलोम, आस्तीक, आदिवंशावतरण, सम्भव, जतुगृह दाह, हिड़िम्बवध, वकवध चैत्ररथ, द्रौपदीका स्वयम्वर, वैवाहिक, विदुरागमन, राज्यलाभ, अर्ज्जुन का वनवास, सुभद्राहरण, यौतुकाहरण, खाण्डवदाह, मयदर्शन यह सब आदिपर्ब्बमें कथित हुए हैं।

पौष्यपर्ब्बमें उतङ्क का माहात्म्यकीर्त्तन है। पौलोमपर्ब्बमें भृगुवंश का विस्तार वर्णित हुआ है। आस्तीकपर्ब्बमें गरुड़ और सम्पूर्ण सर्पों की उत्पत्ति औ समुद्रमथन, उच्चैश्रवाकी उत्पत्ति और महाराज परीक्षित-पुत्रके सर्पयज्ञानुष्ठान के कालमें भरतवंशी महात्माओंसम्बन्धी महाभारतकी कथा वर्णित हुई हैं।

सम्भवपर्ब्बमें राजगण तथा दूसरे वीरगण और महर्षि द्वैपायनकी भिन्न भिन्न प्रकार की उत्पत्ति; देवताओं का अंशावतार; दैत्य दानव, यक्ष, सर्प गन्धर्व्व, पक्षी और दूसरे नाना प्राणियों की उत्पत्ति और जिन महाराज भरतके नामानुसार भारतवंश लोक में प्रसिद्ध हुआ है, जिन्होंने महातपस्वी महर्षि कण्वके आश्रय में दुष्मन्तके औरस से शकुन्तलाके गर्भमें जन्म लिया था, उनका वृत्तान्त; राजा शान्तनुके गृहमें गङ्गा के गर्भमें महानुभाव वसुओंकी उत्पत्ति, पुनः स्वर्गारोहण और तेजोभावापत्ति; भीष्मका जन्म और उनका राज्यत्याग, ब्रह्मचर्य्यावलम्बन तथा प्रतिज्ञा पालन; भीष्मके द्वारा चित्राङ्गदकी रक्षा और चित्राङ्गदके मारे जाने पर उसके कनिष्ठ सहोदर विचित्रवीर्य्यकी रक्षा और उसको राज्यमें स्थापन; अनीमाण्डव्य के शाप से धर्म्मकी नरयोनि में उत्पत्ति वरदान के बलसे कृष्णद्वैपायनजी से धृतराष्ट्र और पाण्डुका जन्म, और पाण्डवोंकी उत्पत्ति; पाण्डवों को वारणावत में भेजने के बारेमें दुर्य्योधन की मन्त्रणा और उससे पाण्डवों के समीप पुरोचन का भेजा जाना; हित करनेके लिये पथ में विदुर का म्लेच्छभाषा में धीमान् धर्म्मराज के प्रति उपदेश; विदुर के वाक्यसे सुरङ्ग खोदा जाना, पांच पुत्रों के सहित व्याधपत्नी और पुरोचन का जल मरना; घने वन में पाण्डवों की राक्षसी हिड़िम्बा से भेंट और भीम से हिड़िम्बका मारा जाना, घटोत्कच की उत्पत्ति; पाण्डवों को अति तेजस्वी महर्षि वेदव्यासजी से भेंट और उनकी आज्ञा से एकचक्रा नगरी में ब्राह्मण के घर उनका अज्ञात वास; राक्षसवकका वध और यह देखकर

नगरवासियों का विस्मय; द्रौपदी और धृष्टद्युम्न का जन्म; ब्राह्मणों से द्रौपदीके स्वयम्वर की वार्त्ता सुनकर कौतूहली हो करके श्री· व्यासजी की आज्ञासे पाण्डवों का द्रौपदी लाभ की आशासे स्वयम्वर देखनेकेलिये पाञ्चाल देशकी ओर जाना; गङ्गाकिनारे अङ्गारपर्ण गन्धर्व्व को जयकर उससे अर्ज्जुन की मित्रता और उसके मुखसे तपती, वसिष्ठ और ओर्व्वका सुन्दर उपाख्यान सुनना; पाण्डवों का पाञ्चालनगरमें जाना; वहां सम्पूर्ण राजाओं के बीच में लक्ष्यको भेदकर अर्ज्जुन का द्रौपदी· लाभ, और उस हेतु युद्ध उभड़ने पर, भीमसेन और अर्ज्जुन से शल्य, कर्ण और दूसरे क्रोधसे अन्धे नरेशों की पराजय; भीमार्ज्जुन के उस असाधारण अपरिमित वीर्य्यको देखकर इस समझ से, कि वे पाण्डव हैं, मिलने के लिये भार्गव के घरमें अति बुद्धिशाली श्रीबलरामजी और श्री कृष्णचन्द्र का जाना; द्रौपदीके पांच पति होने की बात सुन कर राजा द्रुपद का विषाद; तिसपर पांच इन्द्रोंका अति आश्चर्य्य उपाख्यान कहा जाना; द्रौपदी का दैवी अमानवी विवाह; धृतराष्ट्र द्वारा पाण्डवों के निकट विदुर का प्रेषित होना; विदुर का पहुंचना और श्रीकृष्णचन्द्र का दर्शन। पाण्डवों का खाण्डवप्रस्थ में बसना और आधा राज्य शासना, श्री नारद जीकी आज्ञासे पांचों भाईका द्रौपदी से नियम करना; सुन्द और उपसुन्दका उपाख्यान, युधिष्ठिर द्रौपदी के साथ जिस निराले गृह में बिराज रहे थे, उस गृह में ब्राह्मण के उपकारार्थ जा करके अस्त्र लाकर विप्रवर की गौ उद्धार कर नारद·कृत नियम रक्षाके लिये वीरवर अर्ज्जुनका वनको जाना; पार्थ के वनवास कालमें पथमें नागकन्या उलूपी से सङ्गम और पुण्यतीर्थ को जाना, बभ्रुवाहनका जन्म; तपस्वी ब्राह्मणके शापसे ग्राह-योनि में जन्मी हुई पांच सुन्दरी अप्सराओं का अर्ज्जुन·द्वारा शापसे मुक्त होना; प्रभासतीर्थ में श्रीकृष्णचन्द्र से अर्ज्जुन का मिलाप; द्वारकाजी में श्रीकृष्णकी सम्मति से काम-यान पर अर्ज्जुन का अभिलाषा-रखती हुई सुभद्रा को हरलेना; देवकीनन्दन श्रीकृष्णचन्द्र का दहेज·सहित खाण्डव·प्रस्थ में गमन; सुभद्रा के गर्भ में तेजोवन्त अभिमन्यु का जन्म; द्रौपदी के पुत्र होना; श्रीकृष्ण और अर्ज्जुन के जल-विहार के लिये यमुनाजीमें जाने पर वहां चक्र और चाप मिल जाना; खाण्डवदाह; मय-दानव और सर्प की अग्नि से रक्षा; शार्ङ्गी के गर्भ में मन्दपाल नामक महर्षिका पुत्र उपजाना; यह सब वृत्तान्तभरा आदिपर्व्व पहिले कहा गया है। भगवान् तेजोवान् महात्मा महर्षि वेदव्यास ने इस पर्व्व में दो सौ सत्ताइस अध्यायों की संख्या लगाई है; और इसमें आठ सहस्र, आठ सौ, चौरासी श्लोक कीर्त्तन किये गये हैं।

अनेक वृत्तान्त·वाले दूसरे पर्व्व का नाम सभापर्व्व है; पाण्डवों का सभा-निर्म्माण; किङ्कर दर्शन; देवलोक देखने-वाले श्रीनारद· जी का लोकपालों की सभा वर्णन; राजसूय यज्ञका प्रारम्भ; जरासन्धवध; गिरिदुर्ग में कैद भोगते हुए राजाओं का श्रीकृष्ण से मुक्त होना, पाण्डवों की दिग्विजय; राजसूय महायज्ञ में राजाओं का भेंट-सहित आना; अर्घ देने के बारे में वादाविवाद होने के समय शिशुपाल-वध, यज्ञका ऐश्वर्य्य देखकर दुःख और द्वेष-युक्त हुए दुर्य्योधन की भीम से सभाके बीच में हंसी होनी, उससे दुर्य्योधन का क्रोध होना और जूए का अनुष्ठान, कपटी शकुनि से चौसर में धर्म्मपुत्र युधिष्ठिर की हार, समुद्रमें डूबी हुई नावकी भांति चौसर-रूपी समुद्रमें डूबी हुई परम दुःखिनी पुत्रवधू द्रौपदी का महाप्राज्ञ धृतराष्ट्र से उद्धार। वह देखकर फिर चौसर खेलने के लिये दुर्य्योधन का

पाण्डवों को बुलाना। उसमें जय पाये हुए दुर्य्योधन से पाण्डवों का वन को भेजा जाना। महात्मा व्यासजी ने सभापर्व्व में इन विषयों को वर्णन किया है। हे श्रेष्ठ द्विजो! इस पर्व्व में अठत्तर अध्याय और दो सहस्र, पांच-सौ, ग्यारह श्लोक विद्यमान हैं।

इसके पश्चात् अरण्यक नामक बड़ा भारी तीसरा पर्व्व है। महात्मा पाण्डवों के वन को सिधारने पर धीमान् धर्म्मपुत्रके पीछे नगर-वासियोंका जाना। अनुगत ब्राह्मणोंके पोषणार्थ श्रीमहाराज धौम्यमुनि के उपदेश-अनुसार महानुभव युधिष्ठिर की अन्न और औषधि के लिये सूर्य्य-नारायण से प्रार्थना। सूर्य्यदेव की कृपासे अन्नपाना। धृतराष्ट्र से हित कहनेवाले विदुरजी का निकाला जाना। उनका पाण्डवों के समीप पहुंचना और धृतराष्ट्र की आज्ञा से फिर लौट आना। कर्णके उपहास वाक्य पर वानवासी पाण्डवोंकी हत्याके लिये दुर्म्मति दुर्य्योधन की युक्ति। उस दुष्टभाव को समझकर श्री महाराज व्यासजी का शीघ्र आगमन और दुर्य्योधन को बनकी ओर जाने से रोकना। सुरभि का उपाख्यान। मैत्रेय का हस्तिनापुर में आगमन और धृतराष्ट्र को उपदेश करना तथा दुर्य्योधन को शाप देना। युद्धमें भीमसेनसे किर्म्मीर का वध होना। यह सुनकर, कि शकुनि ने धूर्त्तता से पाण्डवों को जय कर लिया है, वृष्णि और पाञ्चालों का युधिष्ठिर के निकट जाना; अर्ज्जुन द्वारा क्रोधयुक्त श्रीकृष्ण का क्रोध शान्त होना। श्रीकृष्ण के निकट द्रौपदी का दुःख। दुःखिता द्रौपदी को श्रीकृष्ण का समझाना। सौभवध का उपाख्यान। श्रीकृष्ण से पुत्र सहित सुभद्रा का द्वारकाजीमें भेजा जाना। धृष्टद्युम्न का द्रौपदी के पुत्रों को पाञ्चाल देश में लेजाना। पाण्डवो का रमणीय द्वैतवन में प्रवेश। युधिष्ठिर, भीम और द्रौपदी का वार्त्तालाप। पाण्डुपुत्रों के समीप महर्षि वेदव्यासजीका आगमन और युधिष्ठिर को स्मृतिनामक विद्यादान। श्रीव्यासजी के चले जाने पर पाण्डवों का काम्यक-वन में प्रवेश। दिव्यास्त्र लाभ करने की चेष्टा में अपरिमित तेजस्वी अर्ज्जुन का प्रवास। व्याधरूपी महादेवके सङ्ग अर्ज्जुन का युद्ध। अर्ज्जुन का लोक-पाल-दर्शन, अस्त्रप्राप्ति और अस्त्रशिक्षाके लिये महेन्द्रलोक में गमन। उसवात को सुनकर धृतराष्ट्र की अतिचिन्ता। युधिष्ठिर का परमार्थ-ज्ञानी वृहदश्व नामक महर्षि-दर्शन। उनके समीप अति कातर होकार युधिष्ठिर का परिताप और विलाप। धर्म्म और करुणारसभरा नलोपाख्यान, जिनमें नलवृत्तान्त और विपत्कालमें भी दमयन्ती के मर्य्यादापालने की कथा कही गई है। महर्षि बृहदश्व से युधिष्ठिर का अक्षहृदय नामक विद्या पाना। पाण्डवों के समीप स्वर्ग से लोमश ऋषिका आना और वनवासी महानुभव पाण्डवों को स्वर्ग में विराजते हुए अर्ज्जुन का समाचार सुनाना। अर्ज्जुन का समाचार सुनकार पाण्डवों की तीर्थयात्रा। तीर्थ-यात्रा के फल और पुण्यकीर्त्तन। महर्षि नारदजी की पुलस्त्य तीर्थ की यात्रा और महानुभव पाण्डवों का भी उसही तीर्थमें गमन। कुण्डल देकर कर्ण का इन्द्रकी प्रार्थना पूरी करना। गयासुर का यज्ञ। अगस्त्य का उपाख्यान और वातापि-भक्षण। सन्तान के निमित्त अगस्त्य ऋषि का लोपामुद्रा नाम कन्या से विवाह। कौमार ब्रह्मचारी ऋष्यशृङ्गजीका चरित्र। जमदग्नि-पुत्र महावीर्य्य परशुरामजीका चरित्र। कार्त्तवार्य्य-वध। हैहयवध। प्रभास तीर्थमें वृष्णिओं के साथ पाण्डवों का मिलाप। सुकन्याका उपाख्यान। शर्य्याति के यज्ञ में भृगुवंशी च्यवन मुनि का दोनों अश्विनीकुमारों को यज्ञीय सोमरस देना। अश्विनीकुमारों का च्यवनमुनिको यौवनावस्था में स्थापन करना। मान्धाताका

उपाख्यान। जन्तुनामक राजपुत्र का उपाख्यान सोमकराज का अनेक पुत्र पानेके लिये पुत्र को मारकर याग करना और सौ पुत्र पाना। श्येन-कपोतका मनभावन उपाख्यान। इन्द्र, अग्नि और धर्म्म से शिविराजाकी परीक्षा। अष्टावक्र का उपाख्यान। जनकराज के यज्ञ में नैयायिकवर वरुणपुत्र वन्दी के साथ विप्रर्षि अष्टावक्र का वादाविवाद। महाप्रभावी अष्टावक्र के साथ विवाद में वन्दी की पराजन। जय लाभ करके अष्टावक्र का समुद्र में डूबे हुए कहोड़ नामक निज पिता का उद्धार करना। यवक्रीत की कथा। महानुभव रैभ्य की कथा। पाण्डवों की गन्धमादन पर यात्रा। वहां रहने के काल में सुगन्धी पदार्थ बटोरने के लिये द्रौपदी से नियुक्त होकर महावली भीमसेन को पथ में कदली वनके भीतर अति वलशाली पवननन्दन हनुमानजी से भेंट। भीम का पद्मवन बिगाड़ना और वहां राक्षस और मणिमत् आदि महावीर्य्य यक्षों के साथ घोर युद्ध। वृकोदरसे जटासुर नामक राक्षस का वध होना। वृषपर्व्व नामक राजर्षि के समीप पाण्डवोंका गमन। पाण्डवों का आर्ष्टिसेनाश्रम में गमन और वास। पाञ्चाली का महानुभव भीम को उत्साह देना। भीम का कैलाश पर चढ़ जाना और महावलशाली मणिमत् आदि यक्षों से घोर युद्ध। पाण्डवों के साथ कुवेरजी का मिलाप। भाइयों से अर्ज्जुन का मिलाप। दिव्यास्त्र पाये हुए सव्यसाची अर्ज्जुन से इन्द्रजी के कार्य्य के लिये हिरण्यपुरवासी निवातकवच नामक देवशत्रु भयानक दानवों और पुलोमपुत्र कालकेयों का घोर युद्ध और पार्थ से उनका माराजाना। महाराज युधिष्ठिर को अर्ज्जुन का अस्त्र दिखाने का उद्योग और देवर्षि नारदजी का अस्त्र दिखाने से रोकना। पाण्डवों का गन्धमादन से उतरना। उस बड़े वन में पर्व्वतके-समान-शरीर-धारी प्रवल सर्प का भीमको निगल जाना; प्रश्नके अर्थ कह कर युधिष्ठिर का भीम को उद्धार करना। महात्मा पाण्डवों का फिर काम्यकवन में आगमन। पुरुष-श्रेष्ठ पाण्डवों को फिर देखने के लिये वासुदेव का काम्यकवन में आना। मार्कण्डेय-समास्या-घटित अनेक भांति की कथा। उस महर्षिसे वेणुपुत्र पृथुराजा का उपाख्यान कहाजाना। महानुभव तार्क्ष्य ऋषि और सरस्वतीजी की कथा। मत्स्योपाख्यान। मार्कण्डेय-समस्या और पुरावृत्तोंका कीर्त्तन। इन्द्रद्युम्न का उपाख्यान। धुन्धुमारका उपाख्यान। पतिव्रता का उपाख्यान। अङ्गिराका उपाख्यान। द्रौपदी और सत्यभामा का सम्वाद। पाण्डवों का पुन: द्वैतवन में प्रवेश। घोषयात्रा और उसमें गन्धर्वों से दुर्य्योधन का बांधाजाना अर्ज्जुन के द्वारा लज्जायुक्त मन्दवुद्धि दुर्य्योधन का गन्धर्वों से मुक्तहोना। युधिष्ठिर का स्वप्न में मृग देखना और फिर काम्यकवन में आना। व्रीहिद्रौणिकका बड़ा भारी उपाख्यान। दुर्वासा जी की कथा। आश्रमसे जयद्रथ का द्रौपदी को हरलेना और भीमसेन का वायु के समान उसके पीछे जाना; महावली भीम का जयद्रथ को पांचशिखाधारी बनाना; महाराज रामचन्द्र जी की बड़ी भारी कथा, जिसमें श्रीराम चन्द्रने युद्ध में बड़े विक्रम से रावण को मारा था; सावित्री की कथा; इन्द्र जी के उद्देश में कर्णका दोनों कुण्डल त्याग देना और उससे प्रसन्न होकर इन्द्रजी का कर्ण को एक पुरुष मारने वाली शक्ति देना; आरणेय उपाख्यान; धर्म्म द्वारा निज पुत्र का अनुशासन; वरलाभ के पश्चात् पाण्डवों का पश्चिम दिशा को जाना; यह सब विषय-युक्त आरण्यक नामक तीसरा-पर्व्व वर्णित हुआ है। इसमें दो सौ उनहत्तर अध्याय और ग्यारह सहस्र, आठ सौ, चौसठ श्लोक कीर्त्तन किये गये है।

इसके पश्चात् विराटपर्व्व का व्यौरा सुनिये; विराट नगर में जाकर श्मशान के बीचमें बड़े भारी समीवृक्ष को देख करके उस पर पाण्डवों का अस्त्र रखना; पुर में प्रवेश कर उनका गुप्त भावसे रहना; दुराचारी कामी कीचककी पाञ्चालीसे सम्भोग की प्रार्थना और भीमसे उसका वध। पाण्डवों के अन्वेषण के लिये नरेश दुर्य्योधन का चारों ओर चतुर दूत भेजना और पाण्डवों को ढूंढ़ निकालने में उन दूतों की अक्षमता; पहिले त्रिगर्त्त की सेना का विराट-राज की गौ हरना और उनसे विराट-राजका लोमाञ्च करने-वाला घोर युद्ध; त्रिगर्त्त से पकड़े गये हुए विराट का भीम से मुक्त होना और पाण्डवों का गौ फेरलेना; कौरवों का गौ हरलेना; अर्ज्जुन के युद्ध में सम्पूर्ण कौरवों की पराजय; किरीटि का विक्रम-पूर्व्वक गौ फेर लेना; सुभद्रा के पुत्र, शत्रुनाशी अभिमन्यु की पत्नी और पार्थ की पुत्रवधू करने के लिये विराटका अपनी उत्तरा नाम कन्यादान; यह सब विषययुक्त विराट नामक चौथापर्व्व विस्तारपूर्व्वक कहा गया है। इस पर्व्व में सरसठ अध्याय हैं और वेदज्ञ महर्षि व्यासजीने इस में दो सहस्र पचास श्लोक कीर्त्तन किये हैं।

इसके अनन्तर विशेष रूपसे जानने योग्य उद्योगनामक पांचवेंपर्व्व को श्रवण कीजिये। पाण्डवों के जयकी इच्छासे उपप्लव्य नाम स्थान में रहने के समय दुर्य्योधन और अर्ज्जुन का वासुदेवजीके पास जाना और उनके ऐसी प्रार्थना करने पर, कि "आप उपस्थित युद्ध में हमारी सहायता कीजिये" महामति श्रीकृष्ण का इनसे यह कहना, कि "हे श्रेष्ठ पुरुष युगल! युद्ध न करके केवल युक्तिमात्र देनेवाला मैं और एक अक्षौहिणी सेना, इन दो में किसको क्या दूं?" अभागे दुमति दुर्य्योधन का सेनाका वर मांगना और अर्ज्जुन का युद्ध से दूर रहनेवाले श्रीकृष्ण को मन्त्रणा-कार्य्य में नियुक्त कर लेना। मद्रराज पाण्डवों के निकट आ रहे थे, कि ऐसे समयमें दुर्य्योधनका समाचार पाकर उनके पास पहुंचना और इनसे उपहार देकर सन्तुष्ट करने पर वह जब वर देने को उद्यत हुए, तब उपस्थित युद्ध में सहायता की प्रार्थना करना और मद्रराज शल्य का सहायता देना स्वीकार कर पाण्डवों के समीप जाना; शल्य का युधिष्ठिर को समझाना और इन्द्रकी विजय वर्णन करना; पाण्डवों का कौरवोंके समीप पुरोहित भेजना, उससे इन्द्रकी विजय सम्बन्धी कथा सुन कर शान्ति चाहनेवाले महा प्रतापी धृतराष्ट्र का विदुर की मन्त्रणा से सञ्जय नामक दूतका भेजना; वासुदेव और पाण्डवों का वृत्तान्त सुनकर चिन्ता से धृतराष्ट्र का निद्रा त्याग देना; विदुरके मुखसे बुद्धिमान धृतराष्ट्र का विचित्र और हितवाक्य सुनना; मनःपीड़ासे पीसे जाते हुए शोकाकुल धृतराष्ट्रका सनत् सुजात ऋषि से अति उत्तम अध्यात्म-सम्बन्धी शास्त्र सुनना; प्रातःकाल में सञ्जय से वासुदेव और अर्ज्जुन का ऐकात्मभाव का विषय कहा जाना; महामति और कृपावान्, श्रीकृष्ण का सन्धिस्थापन करने को आगमन; दोनो पक्ष की हितेच्छा से श्रीकृष्णचन्द्र की सन्धि-स्थापन का प्रस्ताव करने पर दुर्य्योधन का उस बातको टार देना; दम्भोद्भवका उपाख्यान; महात्मा मातली का अपनी दुहिता के लिये वर ढूंढ़ना। महर्षि गालव चरित्र; विदुला पुत्र का उपदेश; कर्ण और दुर्य्योधन आदिकी दुष्ट मन्त्रणा को समझ कर राजगण के समीप श्रीकृष्णका अपना योगीश्वर-भाव दिखाना; श्रीकृष्णका कर्ण को अपने रथ पर चढ़ाना और हित परामर्श देना; मदगर्व्वित कर्ण का कौशलपूर्व्वक श्रीकृष्ण की हितबातको अस्वीकार करना; हस्तिनापुर से उपप्लव्यनगरमें पाण्डवों के निकट

आकर श्रीकृष्णका सारा वृत्तान्त कहना; श्रीकृष्णसे सब बातोंको सुन कर, हित कार्य्य की युक्ति ठहरा करके पाण्डवो की युद्धकी तय्यारी; हस्तिनापुर से युद्ध के लिये हाथी, घोड़े, रथ और पैदल की यात्रा; सैन्यसंख्या; घोर युद्धके पूर्व्वदिन दुर्य्योधनका उलूक नामक मनुष्य को दूत नियुक्त कर पाण्डवोंकी सेवामें भेजना; रथ अतिरथीकी संख्या; अम्बो-पाख्यान; उद्योग नामक पांचवें पर्व्वमें सन्धि-विग्रहकी बातोंमें मिले हुए यह सब वृत्तान्त वर्णित हुए हैं। हे तपोधन! उदारचित्त महानुभाव महर्षि वेदव्यास ने इस पर्व्वमें छः, सहस्र छः सौ, अट्ठानव्वे श्लोक कीर्त्तन किये हैं।

अब अत्याश्चर्य्य भीष्मपर्व्व की कथा कहता हूं। जम्बू खण्ड निर्म्माण करने की कथा; युधिष्ठिर की सेना में बड़ी उदासी; दश दिनो तक ठहरी हुई कठोर लड़ाई के समय में योग सम्बन्धी नाना हेतुओंको दिखा कर महामति वासुदेव का अर्जुन की उदासी को दूर करना; युधिष्ठिर के हितेच्छुक उदारचित्त स्वयं श्रीकृष्ण का रथसे उतर कर निर्भयचित्त से हाथ में प्रतोद लेकर भीष्म-वधार्थ गमन; वाक्य रूपी दण्डसे श्रीकृष्णका अर्जुनको आघात करना; सर्व्वशास्त्रो में पारङ्गत गाण्डीवचापधारी अर्जुन का शिखण्डो को सामने रख कर तेज़ वाणो के आघात से भीष्म को रथ से भूमि पर गिराना, भीष्म का शरशय्या पर शयन; इन सब वृत्तान्तोंसे भरा हुआ भीष्मपर्व्व नामक अति विस्तृत भारतीय छठवांपर्व्व वर्णित हुआ है। वेदवेत्ता वेदव्यास ने इस पर्व्वमें एक सौ सतरह अध्याय और पांच सहस्र, आठ सौ, चौरासी श्लोक कीर्त्तन किये हैं।

अनन्तर बहुवृत्तान्त युक्त अति आश्चर्य द्रोण-पर्व्व कहता हूं;—प्रतापी द्रोणाचार्य्य का सेनापति के पदमें अभिषिक्त होना; दुर्य्योधन की प्रीति के निमित्त बड़े भारी अस्त्रज्ञ द्रोणाचार्य्यजी का यह कहकर कि "धीमान् युधिष्ठिरको पकड़ लाऊंगा" प्रतिज्ञा करना। संसप्तक युद्ध-स्थल से अर्जुनका खदेड़ा जाना, महाराज भगदत्त का सुप्रतिक नामक अपने हाथी पर रणस्थल में इन्द्रतुल्य अतुल विक्रम प्रकाश करना; अर्जुन से भग-दत्त का माराजाना; जयद्रथ आदि महारथी योद्धाओं से महाबली अप्राप्त-यौवन अकेले बालक अभिमन्यु का वध होना; अभिमन्यु के मारे जाने पर क्रोध से जले हुए अर्जुन का रणभूमि में सात अक्षौहिणी सेनाओं को मार कर मद्रराज जयद्रथ को मारडालना; महाराज युधिष्ठिर की आज्ञा से पार्थको ढूंढ़ निकालने के लिये महाभुज भीम और महा-रथी सात्यकि का देवताओंके पार होने के अयोग्य कुरुसैन्य में घुसना; शेष संसप्तको का युद्ध में नाश; अलम्बुष श्रुतायुः जलसन्ध, वीर्य्यशाली भूरिश्रवा, विराट, महारथी द्रुपद और घटोत्कच आदि अनेक वीरो का पतन; युद्ध में द्रोणाचार्य्यजी के गिरने पर क्रोध से जले हुए अश्वत्थामा का भयानक आग्नेय नारायणास्त्र मारना; उत्तम रूपसे रुद्र-माहात्म्य का कीर्त्तन; श्रीमहाराज व्यासदेव का आगमन; श्रीकृष्ण और अर्जुन का माहात्म्य वर्णन; यही सब विषय सविस्तृत सातवें पर्व्वमें कहे गये हैं। जिन सब पुरुष-श्रेष्ठ भूपालोंका निर्देश है, उनमें प्रायः सभीके मृत्यु-वृत्तान्त इस पर्व्व में वर्णित हुए हैं। तत्त्वदर्शी पाराशरि व्यासजीने विचार-पूर्व्वक इस पर्व्व में एक सौ सत्तर अध्याय और आठ सहस्र, नौ सौ, नौ श्लोक कीर्त्तन किये हैं।

इसके पश्चात् परम अद्भुत कर्णपर्व्व कहता हूं। धीमन्मद्रराज का सारथी के कार्य्य में नियुक्त होना; युद्धार्थ यात्रा करने के काल

में कर्ण और मद्रराज के बीच में परस्पर वाग्ययुद्ध; कर्णके तिरस्कारार्थ शल्यका हंस और काककी कथा कहना; महाप्रभावी अश्वत्थामा से पाण्ड्यराज का माराजाना; दण्डसेनवध और दण्डवध; सर्व्वचापधारी जनो के सम्मुख कर्णसे द्वैरथयुद्ध करने में धर्म्मराज युधिष्ठिर का प्राण जाने पर होना; युधिष्ठिर और अर्ज्जुनका आपसमें क्रोध करना; श्रीकृष्णका अर्ज्जुनसे विनय; वृकोदर का युद्धस्थलमें पूर्व्व-प्रतिज्ञा के अनुसार दुःशासन की छाती चीर कर शोणित पीना; द्वैरथ युद्धमें अर्ज्जुन से महारथी कर्णका मारा जाना; यही सब विषय महाराज व्यासजीने आठवां पर्व्व में कहे हैं। वेदव्यासजी ने इस कर्णपर्व्व में उनहत्तर अध्याय और चार सहस्र, नौ सौ, चौसठ श्लोक कीर्त्तन किये हैं।

इसके अनन्तर विचित्र अर्थयुक्त शल्यपर्व्व कहता हूं। कर्ण के मारे जाने पर मद्रेश्वर शल्य का सेनापति के पद में नियुक्त होना; नाना रथियों के पृथक्रूप से रथ-युद्धों का वर्णन; कौरव-पक्षके प्रधान योद्धों का मारा जाना; महानुभव धर्म्मराज से शल्यका वध होना; अधिक सेना मारी गई और स्वल्प बाकी रही देखकर दुर्य्योधन का ह्रद में घुसना और जलस्तम्भ रचके वहां ठहरना; व्याधों का भीम को दुर्य्योधनका समाचार देना; धीमान् धर्म्मराज युधिष्ठिर के लाञ्छन से क्रोधी दुर्य्योधन का झील से बाहर निकल आना; जहां पर भीमके साथ दुर्य्योधन का गदायुद्ध होनेवाला था; वहां सबोंके एकत्रित होने पर बलरामजी का आगमन; सरस्वती तीर्थ और दूसरे नाना तीर्थों का माहात्म्य कीर्त्तन; उस रणभूमिमें भीमके साथ दुर्य्योधन का घोर गदा-युद्ध; युद्धस्थल में अति वेगवती गदा से भीम का महाराज दुर्य्योधन के दोनो उरु भग्न करदेना; यह सब विषय आश्चर्य्य अर्थयुक्त नवें पर्व्व में वर्णित हुए हैं। कौरवों के यशःकीर्त्तन करने वाले व्यासमुनि ने इसमें नाना वृत्तान्त-युक्त उनसठ अध्याय कीर्त्तन किये हैं। और तीन सहस्र, दो सौ, बीस श्लोक रचे हैं।

इसके पश्चात् दुःखदायी सौप्तक पर्व्व कहता हूं। पाण्डवों के रणस्थल से चले जाने पर क्रोधी दुर्य्योधन जिस स्थान में पड़ा था, वहां सन्ध्याके समय कृतवर्म्मा, कृपाचार्य्य और अश्वत्थामा, इन तीन महारथियों ने उपस्थित होकर देखा, कि राजा दुर्य्योधन के उरु भग्न हुए हैं और सर्व्वशरीर में रुधिरयुक्त होकर वह रणभूमि में पड़ा है, इससे महारथी द्रोणपुत्रने क्रोधसे जलकर यह प्रतिज्ञा की, कि "धृष्टद्युम्न आदि पाञ्चाल और सहचर समेत पाण्डवों को न मार कर तनुत्राण (जिरहबक्तर) नहीं छोड़ूंगा"। अनन्तर उन तीन महारथिओंने राजा से यह प्रतिज्ञावचन कहकर वहां से पधारे और सूर्य्यास्त होने पर एक बड़े बन में प्रवेश पूर्व्वक वहां एक बड़े वड़ की जड़में बैठकरके देखा, कि एक उल्लू उसरात्रि कालमें अनेक कौवोंको मार रहा है, उसे देखकर द्रोणपुत्र अश्वत्थामा ने पितृवध की बात स्मरण करके क्रोधवश मनही मनमें यह कल्पना की, कि पाञ्चालों के सो जाने पर सबों को मार डालूंगा। अनन्तर इन्होंने पाण्डवों के शिविर द्वार पर उपस्थित होकर देखा, कि एक आकाश स्पर्श-कारी बड़ाभारी भयानक आकारधारी राक्षस द्वारके सामने खड़ा है। उस राक्षस को अस्त्र मारने में बाधा देते देखकर द्रोणपुत्र ने तत्क्षण विरूपाक्ष रूद्र की आराधना करके कृप और कृतवर्म्मा के संग शिविर में प्रवेश कर विश्वास पूर्व्वक सोते हुए धृष्टद्युम्न आदि परिवार सहित सम्पूर्ण पाञ्चाल और द्रौपदीके पुत्रों को नाश किया। श्रीकृष्ण के कौशल से इस प्रकारसे केवल महाचाप-

धारी सात्यकि और पांच पाण्डव बचे, शेष सब मारे गये। अश्वत्थामाने अपने हाथ ही से पाञ्चालों को हनन किया था। धृष्टद्युम्न के सारथिके इस भयानक विषय को पाण्डवों के निकट कहने पर, पुत्रशोक और पितृ-भ्रातृ-वध से कातर द्रौपदी ने भूखी रहकर प्राण-त्यागने की कल्पना कर पतिओं से प्रार्थना की। वीर्य्यवान भीम-पराक्रम भीमसेन द्रौपदी का वचन सुन कर उसकी प्रिय इच्छा पालने को क्रोधवश गदा लेकर अश्वत्थामा के पीछे दौड़े। द्रोणपुत्रने भीम के भय से अभिभूत और दैव प्रेरणा से क्रोध-पूर्व्वक "पृथ्वी अपाण्डवा हो" ऐसा कहकर अस्त्र मारा; इस पर श्रीकृष्णचन्द्र ने "ऐसा न करो" कहके अश्वत्थामा को रोका। पापात्मा अश्वत्थामा की विद्रोहिता देखकर अर्ज्जुन ने अस्त्र द्वारा उस अस्त्र को निवारण किया, अश्वत्थामा और द्वैपायन आदिने परस्पर शाप दिया। जयश्री पाये हुए पाण्डवों ने महारथी द्रोणपुत्र से मणि लेकर प्रसन्न चित्त होकर उसे द्रौपदी को दिया। यह सब वृत्तान्त-युक्त इस दशवें पर्व्वका नाम सौप्तिकपर्व्व कहा है। वेदवक्ता महात्मा व्यास-मुनि ने इसमें अठारह अध्याय कीर्त्तन किये और आठ सौ सत्तर श्लोक रचे हैं। तेजोवान् व्यासजी ने ऐषिक-पर्व्व को इस पर्व्व के अन्तर्गत किया है।

अनन्तर करुणरसयुक्त स्त्रीपर्व्व कहाजाता है। प्रज्ञा-शील भूपाल धृतराष्ट्र ने पुत्रशोक से कातर होकर भीम का विनाश करने की कामना से कृष्ण की दी हुई भीम की लोहेकी बनी प्रतिमूर्त्ति तोड़ डाली। धीमान् राजा धृतराष्ट्र को शोकसे बहुत ही कातर देखकर बुद्धिमान विदुरने मोक्षसम्बन्धी नाना हेतुवादों से उनकी सांसारिक माया दूरकर ढाड़स दिया और धृतराष्ट्र अन्तःपुरवासिनी सिमन्तिनियों को सङ्ग लेकर शोकाकुल चित्तसे रणस्थल को देखने गये; वीरों की स्त्रियां अति करुणास्वरसे विलाप करने लगीं। गान्धारी और धृतराष्ट्र को क्रोध और मोह उपस्थित हुआ; क्षत्रिय-नारियां युद्धमें पीठ न दिखाये हुए शूरवीर पिता, भ्राता और पतियोंको रणमें मरे और गिरे देखने लगीं। पुत्रशोक से कातर होकर गान्धारी के क्रोधयुक्त होने पर श्रीकृष्णने उनका क्रोध शान्त किया। धार्म्मिकवर महाप्राज्ञ राजा युधिष्ठिर ने शास्त्रानुसार युद्ध में मरे राजाओं के शरीर दाह किये। राजाओं को जल देनेकी तर्पण-क्रिया आरम्भ होने पर कुन्तीने गुप्तभावसे जन्मे हुए कर्ण को स्वपुत्र करके प्रकाश किया। प्रज्ञाशील परमऋषि व्यासदेवने घोर-शोक उधारी, सज्जन-नेत्र दुखारी, चित्त-विकल-कारी स्त्रीपर्व्व नामक इस ग्यारहवें पर्व्व में सतरह अध्याय कीर्त्तन कर सात सौ सत्तरश्लोक रचे हैं।

इसके पश्चात् ज्ञान-वृद्धिकारी शान्तिपर्व्व नामक बारहवां पर्व्व कहता हूं। इसमें धर्म्म-राज युधिष्ठिर को पिता, भ्राता, कुटुम्बु, मातुल आदि सबोंको मरवा डालने के कारण उदासी छा गई। भीष्मदेवने शरशय्या पर पतित होकरके युधिष्ठिर को तत्व-ज्ञान चाहनेवाले राजाओंके अवश्य जानने योग्य राजधर्म्म सुनाया है और उनके द्वारा हेतुदर्शानेवाला आपद्धर्म्म भी प्रकाशित हुआ है। मानवलोग जिसे जान कर सर्व्वज्ञ बनते हैं, वह बहुविस्तृत मोक्ष-धर्म्म भी इसमें भीष्मजी से कहा गया है। ज्ञानियों के प्रिय इस बारहवें पर्व्व का नाम शान्तिपर्व्व है, इसमें तीन सौ, उनतालीस अध्याय हैं। हे तपोधनो। धीमान् पाराशरि व्यासजी ने इस पर्व्व में चौदह सहस्र, सात सौ, सात श्लोक कीर्त्तन किये हैं।

इसके पश्चात् उत्तम अनुशासन पर्व्व जानिये। कुरुराज युधिष्ठिर भागीरथीपुत्र भीष्मजी से धर्म्मनिर्णय सुन करके अपने स्वाभा-

आ गये। इस पर्व में धर्म्म और अर्थ सम्बन्धी सम्पूर्ण व्यवहार, विविध दानों के भिन्न भिन्न फल; आचार व्यवहार का निरूपण; सत्यकी पूर्ण उन्नति; गौ-ब्राह्मण का माहात्म्य; देश और काल के भेद से धर्म्मका भेद और भीष्मकी स्वर्गप्राप्ति वर्णित हुई है। इस धर्म्म-निर्णयकारी नाना वृत्तान्त-धारी तेरहवें पर्व्वमें एकसौ छियालीस अध्याय हैं और आठ सहस्र श्लोक रचे गये हैं।

इसके पश्चात् आश्वमेधिक नामक चौदहवां पर्व्व कथित हुआ है। सम्वर्त्त और मरुत्त का सुन्दर उपाख्यान; सुवर्णकोष का पाना; पहिले अस्त्राग्नि से जले और श्रीकृष्णसे फिर प्राण पाये हुए परीक्षित का जन्म; यज्ञ के घोड़े को छोड़ने पर उसके पीछे चलनेवाले अर्ज्जुन से स्थान स्थान में क्रोधी राजाओं का युद्ध; चित्रवाहन राजाकी पुत्री चित्राङ्गदा के गर्भजात निज पुत्र वभ्रुवाहन से अर्ज्जुन का जीवन जाने पर होना; अश्वमेध-महायज्ञ के काल में नकुलोपाख्यान; यह सब विषय अति अद्भुत आश्वमेधिकपर्व्व में वर्णित हुए हैं। तत्वदर्शी महर्षि ने इस में एकसौ तीन अध्याय कीर्त्तन किये हैं और तीन सहस्र, तीन सौ, बीस श्लोक रचे हैं।

अनन्तर आश्रमवासिक नामक पन्द्रहवां पर्व्व कहा जाता है। इस पर्व्व में गान्धारी सहित राजा धृतराष्ट्र और विदुर राज्य छोड़कर आश्रमवासके लिये वनको सिधारे। वह देखकर गुरुसेविका सती कुन्ती पधारे हुए धृतराष्ट्र की अनुगामिनी हुई। वहां राजा धृतराष्ट्र ने युद्ध में मरे और परलोक को सिधारे हुए पुत्र, पौत्र और दूसरे वीर राजाओं को फिर आते देखा। उन्होंने कृष्णद्वैपायनजी की कृपा से यह उत्तम और अत्याश्चर्य व्यापार देख कर गान्धारी के साथ शोक परित्याग करके परम सिद्धि लाभ की। जितेन्द्रिय विद्वान् गवल्गणके पुत्र महात्मा सञ्जय और विदुर ने धर्म्म को आश्रय कर सुगति प्राप्त की। धर्म्मराज युधिष्ठिरने नारदजीके दर्शन कर उनके मुखसे वृष्णियों के कुलक्षय होने की वार्त्ता सुनी। यह सब वृत्तान्त अति अद्भुत आश्रमवासिकपर्व्व में कहे गये हैं। तत्वदर्शी महर्षि ने इस पर्व्वमें बयालीस अध्याय और एक सहस्र, पांच सौ, छः श्लोक रचे हैं।

अनन्तर दुःखदायी मौशलपर्व्वको श्रवण कीजिये। जोलोग रणभूमिमें सहजही में शस्त्र के आघात सहलेते थे, वह सर्व्व पुरुषोंमें श्रेष्ठ यादवगण ब्रह्मशापरूपी दण्ड से पीड़ित होकर देववश समुद्र-तट पर मदिरा पीनेकी सभा में पानोन्मत्त होकरके परस्पर एरका-तृणरूपी वज्राघात से आहत हुए। इस प्रकार राम, कृष्ण, दोनोंने सम्पूर्ण यदुवंश को नाश कर आपने भी सर्व्वसंहारी काल को लङ्घन नहीं किया। आगे नरश्रेष्ठ अर्ज्जुन द्वारकाजी में आकर और उसे यादवों से खाली पाकर बड़ी मनःपीड़ा से खेदवश हुए। उन्होंने अपने मातुल नर-श्रेष्ठ वसुदेवकी अग्निक्रिया कर सुरापानसभा में युद्धवंशी वीरों का अति विनाश देखा। आगे उन्होंने बलरामजी, श्रीकृष्णचन्द्र और प्रधान प्रधान यदुवंशियोंके शरीर दाह किये और द्वारकाजीसे बाल, वृद्ध सर्व्व जनों को ले आने के समय पथमें घोर आपद से घेरे जाकर निज गाण्डीवधनुष की पराजय और दिव्यास्त्रों की अप्रसन्नता देखी। आगे उन्होंने यादव-नारियों की चोरी और विक्रम की अनित्यता देख कर बड़े उदास होकर युधिष्ठिर के निकट लौट करके, व्यासजी के वचनानुसार सन्यास-आश्रमकी शरण लेनेकी अभिलाषा की। यह सोलहवां पर्व्व मौशल-पर्व्व करके कहा गया है। तत्वदर्शी वेदव्यासजीने इस पर्व्वमें आठ अध्याय और तीन सौ, बीस श्लोक कीर्त्तन किये हैं।

इसके पश्चात् महाप्रास्थानिक नामक सत्तरहवां पर्व्व कथित है। पुरुषश्रेष्ठ पाण्डवोंने देवी द्रौपदी के सङ्ग राज्य छोड़कर महाप्रस्थान अवलम्बन किया। आगे उन्होंने लाल समुद्रकूल में गमन करके अग्नि का दर्शन किया। उस स्थान में अग्नि की आज्ञासे अर्ज्जुन ने उस महाप्रभावी अग्निकी पूजा कर दिव्य श्रेष्ठ गाण्डीव चाप को चढ़ा दिया। आगे युधिष्ठिर सब भाइयों और द्रौपदी को गिरते देखकर उनकी माया छोड़ कि सी की ओर न देख करके अकेले चले गये। इस सत्तरहवें पर्व्वका नाम महाप्रास्थानिक पर्व्व है, इसमें तत्त्वदर्शी महर्षि ने तीन अध्याय और तीन सौ, तेइस श्लोक कीर्त्तन किये हैं।

अनन्तर अमानुषी आश्चर्य्य स्वर्गारोहणपर्व्व जानिये। स्वर्ग से देवयान उपस्थित होनेपर महाप्राज्ञ धर्म्मराज, सदय हृदय से अपने साथी कुत्ते को छोड़कर जाने में सम्मत नहीं हुए। महात्मा युधिष्ठिर की इस प्रकार की अटल धर्म्म-निष्ठा, देखकर धर्म्म ने कुत्तेका स्वरूप छोड़कर युधिष्ठिर को दर्शन दिया। युधिष्ठिरके धर्म्मसहित स्वर्गारूढ़ होने पर, देवदूत ने छलपूर्व्वक उनको नरक दिखाया; इससे उनको बड़ी कठोर यातना मिली। धर्म्मात्मा युधिष्ठिर ने उस नरक में यमराजके वशीभूत अपने भाइयों का करुणास्वर श्रवण किया। इन्द्र जी और धर्म्मराज दोनो ने युधिष्ठिरको "ऐश्वर्य्य भोगने का यही फल है" ऐसा कहकर वह सब विषय दिखाये। युधिष्ठिर आकाशस्थित गङ्गाजीके जलमें स्नानपूर्व्वक मानव शरीर छोड़कर देवलोक में अपने धर्म्मसे मिले हुए स्थानको प्राप्त कर देवराज और दूसरे देवताओं के सहित पूजे जाकर परमानन्द भोगने लगे। धीशक्तिमान् व्यासदेवने अठारहवें पर्व्वमें यह सब विषय कहे हैं, हे तपोधनो। माहात्मा परमर्षि ने इस पर्व्व में पांच अध्याय और दो सौ नौ श्लोक रचे हैं।

इस प्रकारसे सम्पूर्ण अठारह पर्व्व कहे गये हैं। इसके पश्चात् खिल हरिवंश और भविष्यपर्व्व कीर्त्तित हुए हैं। महर्षि व्यासजीने उस में बारह सहस्र श्लोकोंकी संख्या की है। महाभारत के यह सब पर्व्वसंग्रह कह चुके। अठारह अक्षौहिणी सेना युद्ध करने के निमित्त एकत्र होने पर अठारह दिनों तक अति कठोर युद्ध हुआ था।

जो ब्राह्मण चतुर्व्वेद, वेदाङ्ग और सम्पूर्ण उपनिषत् से ज्ञात हैं, पर महाभारतीय उपाख्यान को नहीं जानते, वह कभी विज्ञ नहीं कहे जा सकते हैं। अपार बुद्धिमान व्यासदेव जीने महाभारत को अर्थशास्त्र, कामशास्त्र और अति-विस्तृत धर्म्मशास्त्र करके निर्द्दिष्ट किया है। जैसे पुंस्कोयल का कूजन श्रवण करके कौवेकी कर्कश बोली सुनने की इच्छा नहीं होती, तैसेही इस उपाख्यान को सुननेसे और कुछ सुनने की अभिलाषा नहीं रहती। जैसे पञ्चभूतों से तीनों प्रकार लोकों की उत्पत्ति होती है तैसेही इस सर्व्वश्रेष्ठ इतिहास से कवित्व-बुद्धि उपजती है। जैसे जरायुज, अण्डज, स्वेदज, उद्भिज्ज यह चार प्रकार की प्रजा आकाश में ही रहती हैं, तैसेही सम्पूर्ण पुराण इस उपाख्यानमें है। जैसे आश्चर्य्य चित्तक्रिया सब इन्द्रियों का आश्रयरूपी हैं, तैसेही यह उपाख्यान दान, अध्ययन आदि क्रिया और शम, दम आदि गुणों का आश्रयरूपी हुआ है। जैसे भोजन विना शरीर धारण का कोई दूसरा उपाय नहीं है, तैसेही इस उपाख्यान के आश्रय बिना भूमण्डल में कोई भी आख्यान विद्यमान नहीं है। जैसे उन्नति चाहनेवाला भृत्य सद्वंशी भूपाल की शरण लेता है, तैसेही श्रेष्ठ कविकुल कवित्वशक्तिकी उन्नति के लिये इस महाभारत को आश्रय करते हैं। जैसे कोई

आश्रम सदाचारयुक्त गृहस्थाश्रम के समान नहीं हो सकता है, तैसेही किसी कविकृत कोई काव्य इस काव्य के समान नहीं हो सकेगा। सदा उद्योगी बने रहो और धर्म्म में तुम्हारी प्रवृत्ति हो, क्योंकि वह एक धर्म्मही परलोक का मित्र है, अर्थ और स्त्री आदि सब भोगकी वस्तु चतुर जनोंसे भली प्रकार सेवित होनेपर भी कभी अपनी ओर स्थिर नहीं होतीं। महाभाग्यवान् द्वैपायनजी के दोनो होठों से निकले हुए अप्रमेय, परम पवित्र; पापविनाशी परम कल्याण-दायी महाभारत को पाठ करने के समय जो उसे सुनते हैं, उनको पुष्करतीर्थ के जल में नहानेका क्या प्रयोजन है? ब्राह्मण दिनको इन्द्रियों से जो कुछ पाप करते हैं, सध्या को महाभारत का नाम कीर्त्तन करने से उन पापों से मुक्त होते हैं। और रात्रि को तन मन वचन से जो पाप करते हैं, प्रातः-काल में महाभारतका नाम गान कर उससे छूटते हैं। वेदविद् ब्राह्मण को सुवर्णशृङ्ग-युक्त सौ गौ दान करनेवाले बहुश्रुतजन और सदा सुपवित्र भारतीय कथा सुननेवाला इन दोनों को तुल्य फल लाभ होता है। जैसे मनुष्यगण अर्णव-यान पर परम सुखसे विस्तीर्ण समुद्र को पार कर सकते हैं, तैसेही पहिले इस पर्व्वसंग्रह को सुनने से इसके द्वारा अति श्रेष्ठ महार्थयुक्त इस महत् आख्यान-रूपी सागर को सुखसे पार कर सकते हैं।

आदिपर्व्व में दूसरा अध्याय और पर्व्व संग्रहपर्व्व समाप्त।

श्रीउग्रश्रवा जी बोले, श्रुतसेन, उग्रसेन, और भीमसेन, इन तीन भाइयों के साथ परीक्षित-पुत्र महाराज जनमेजन ने कुरुक्षेत्र में दीर्घ यज्ञ का अनुष्ठान किया। उनके उस यज्ञानुष्ठान के काल में वहां एक कुत्ता आकर उपस्थित हुआ। जनमेजयके भाइयों के उसे मारने पर वह रोता हुआ अपनी माता के पास जा पहुंचा। उसे रोते देखकर माता ने पूछा, "तुम क्यों रो रहे हो? किसने तुमको मारा है?" माता से पूछे जाकर कुत्ते ने उत्तर दिया, "जनमेजय के भाइयोंने मुझको मारा है।" उसकी माता बोली, "कदाचित तुमने वहां कोई दोष किया होगा, सो उन्होंने तुमको मारा है।" कुत्ते ने फिर कहा, "नहीं मैंने कोई दोष नहीं किया, यज्ञका घृत भी नहीं चाटा और न उस पर दृष्टि दी थी।" यह सुन कर उसकी माता को बड़ा दुःख हुआ और जहां महाराज जनमेजय भाइयोंके साथ दीर्घ यज्ञ अनुष्ठान कर रहे थे, उस यज्ञस्थल में उप-स्थित होकर क्रोध दिखाकर जनमेजय से कहा, "मेरे इस पुत्रने तुम्हारा कोई दोष नहीं किया, यज्ञ का घृत भी नहीं चाटा और न उस पर दृष्टि ही दी, फिर तुमलोगोंने क्यों उसको मारा है?" उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया, तिसपर सरमा नाम्नी देवकुत्तीने उनसे कहा, "जो तुमने मेरे निर्दोषी पुत्र को मारा है, सो तुमको अलक्षित भय आकर घेर लेगा।" देवकुत्ती सरमा के इस प्रकार से शाप देने पर, जनमे-जय को बड़ी घबराहट और उदासी आगई।

अनन्तर उस यज्ञ के समाप्त होने पर महाराज जनमेजय हस्तिनापुर में आकर ऐसे योग्य पुरोहित के अन्वेषण के लिये बड़ा यत्न करने लगे जो कुत्ती के शाप से मुक्त कर सकते हैं। एक दिन मृगया को निकल कर उन्होंने अपने राज्य ही के किसी एक प्रदेश में एक आश्रम देखा। उस आश्रममें श्रुतश्रवा नामके एक ऋषि वसते थे, उनके सोमश्रवा नामक एक परम तेजस्वी पुत्र थे। परीक्षित-पुत्र जनमेजय ने उस ऋषिपुत्र के समीप जाकर पुरोहित बनाने की प्रार्थना की और पिता को दण्डवत् कर बोले, "हे भगवन् आपके यह पुत्र मेरे पुरोहित होवें।"

के ऐसी प्रार्थना करने पर ऋषिवर बोले, "हे जनमेजय। मेरा यह पुत्र महातपस्वी, सदा वेदपठन में नियुक्त और मेरे तपोवीर्य्य युक्त है। एक सर्पीने मेरा वीर्य्य पी लिया था, उसीसे उसके गर्भ से इसने जन्म लिया है, यह तुमको सब शापों से मुक्त कर सकेगा; केवल महादेवजी के दिये हुए शापको रोक नहीं सकेगा। इसका यह एक गूढ़ नियम है, कि कोई ब्राह्मण इस से जोकुछ प्रार्थना करेंगे, यह उनको वही दान कर देगा, यदि तुम इस व्रतका साहस कर सको, तो मेरे इस पुत्र को ले जाओ।" ऋषि के ऐसा कहने पर जनमेजय "बोले, भगवन्! आप जो कहते हैं, वही होगा।" आगे वह परोहित को सङ्ग लेकर राजधानी में आकर भाइयों से बोले, "इस ऋषिकुमार को मैंने पुरोहिती में वरण किया है। यह जब जो कुछ कहेंगे, तुम तभी बिना विचारे वह पूरा करना।" जनमेजय के भ्रातृगण इसप्रकार आदिष्ट होकर ऋषिकुमार की आज्ञा पालने लगे। महाराज जनमेजय भाइयों को वह आज्ञा देकर तक्षशिला देशको जीतने गये और उस देश को अपने वश में करलिया।

जब राजा जनमेजयने तक्षशिला देश को जीता था, उस समय आयोदधौम्य नामक जो एक ऋषि थे, उसके उपमन्यु, आरुणि और वेद, यह तीन शिष्य थे। ऋषिने एक समय पाञ्चाल देशीय शिष्य आरुणि को यह आज्ञा देकर, कि "बेटा आरुणे। तुम क्षेत्र में जाकर बांध वांधो," क्षेत्र में भेज दिया। आरुणि गुरु से आदिष्ट होकरके वहां जाकर बड़े बड़े कष्ट उठाने परभी जब बांध को बांध नहीं सका, तब अन्तमें एक उपाय यह ठहराया, कि क्षेत्र की मोरी में जाकर लेट रहा। उसके लेटने पर जल की गति भी रुक गई।

अनन्तर एकदिन आयोदधौम्य ने शिष्योंसे पूछा, "पाञ्चाल देशी आरुणि कहां गया है?" शिष्योंने उत्तर दिया, भगवन्! आपहीने उसको क्षेत्रका बांध बांधनेको भेजा है। शिष्योंसे यह सुनकर आयोद-धौम्यने कहा, "चलो, जहां आरुणि गया है, हम सब वही चलें।" आगे वह बांधके पास पहुंचकर चिल्लाकरके पुकारने लगे, "बेटा पाञ्चाल्य आरुणे। कहां हो? चले आओ।" आरुणि उपाध्याय की बात सुनकर उस बांधसे एकायक उठकर उनके निकट उपस्थित हुआ और कहा, "भगवन्। मैं आया हूं; आपके क्षेत्र का जल निकल रहा था, जब किसी प्रकार उसे रोक नहीं सका, तब अन्तमें वहां लेटा, इसी से जलका निकलना बन्द हुआ। इस समय आपके पुकारने पर एकायक क्षेत्र से निकल कर आपके पास आ पहुंचा हूं और प्रणाम करता हूं, आप आज्ञा कीजिये इस समय कौनसा कार्य्य करना होगा।" आरुणि की बात पूरी होनेपर उपाध्यायने कहा, "बेटा। क्षेत्र की मोरीसे निकल आये हो, सो तुम उद्दालक नाम से प्रसिद्ध होगे।" यह कह कर उपाध्याय उस पर कृपाकटाक्ष कर बोले, "जोकि तुमने तन मन वचन से मेरी आज्ञा पालन की है, सो तुम्हारा मङ्गल होगा और सम्पूर्ण वेद और धर्म्मशास्त्र तुम्हारे मन में प्रकाशित रहेंगे।" आगे आरुणि उपाध्याय की आज्ञा से मनमाने देश को पधारा।

आयोदधौम्यके दूसरे शिष्य का नाम उपमन्यु था। उपाध्यायने उसको यह कहकर, कि "बेटा! तुम गोरक्षा करो," गोरक्षा के लिये भेज दिया। उपमन्यु उपाध्याय के वाक्यानुसार गोरक्षा करने लगा। दिन भर गोरक्षा कर सन्ध्या को गुरु के सामने आकर दण्डवत् किया करता था। एक दिन उपध्यायजी उसको पुष्ट देखकर बोले, "बेटा उपमन्यो। तुमको बहुत पुष्ट देखता हूं, तुम क्योंकर भूख मिटाते हो?" उपमन्यु बोला, "मैं भिक्षासे र्न जीविका निर्व्वाह कर लेता हूं।" ८

बोले, कि, "मेरी आज्ञा बिना भिक्षा का अन्न भोजन न करना।" उपाध्याय की ऐसी आज्ञा करने पर वह भिक्षा से जो कुछ पाता था, सब गुरु को सङ्कल्प कर छोड़ता था। उपाध्यायके उसकी सब भिक्षान्न ले लेने पर वह 'ऐसाही हो' कह कर गोरक्षा करनेको जाता था। इस प्रकार से नित्य दिनभर गो-रक्षा कर रात्रि को गुरु के घर में आकर उनको नमस्कार किया करता था। तिस पर भी उसको पुष्ट देखकर उपाध्यायजी बोले, "बेटा उपमन्यो। तुम्हारा सब भिक्षान्न तो मैं ले लेता हूं; अब तुम किस प्रकार से भोजनकार्य्य निर्व्वाह करते हो?" उपमन्यु बोला, "पहिली वारकी भिक्षा से जो कुछ मिलता है; वह आप को देकर मैं फिर दूसरी वार भिक्षा करता हूं, उसी से मेरी जीविका निर्व्वाह होती है।" उपाध्याय बोले, "ऐसा करना गुरुकुल में रहनेवाले को उचित नहीं है; इससे दूसरे भिक्षार्थियों की वृत्ति मारी जाती है; ऐसा करने के हेतु तुम्हारा बड़ा लोभ प्रकाश होता है।" उपमन्यु यह कह कर कि "फिर ऐसा न करूंगा" पूर्व्ववत् गो-रक्षा करने लगा और दिन भर गो-रक्षा करके सन्ध्या को गुरु के घर में आकर पूर्व्ववत् गुरु के सामने खड़े हो कर नमस्कार किया करता था। उपाध्याय ने तिस पर भी उस को पूर्व्ववत् पुष्ट देखकर फिर पूछा, "बेटा उपमन्यो। तुम भिक्षा कर जो कुछ पाते हो, वह सबतो मैं ले लेता हूं, फिर दूसरी वार तुम भिक्षा भी नहीं करते हो, तिसपर भी तुमको बहुत पुष्ट देखता हूं, सो इन दिनों तुम क्या खाते हो?" उपमन्यु बोला, "इन गौओं का दूध पीकर जीता हूं।" उपाध्याय बोले; मैंने तुमको गौओंका दूध पीने नहीं कहा; सो मेरी आज्ञा विना दूध पीना उचित नहीं है। उपमन्यु तथास्तु कहकर प्रतिज्ञापूर्व्वक गोरक्षा करके फिर गुरुके घरमें आनकर पूर्व्ववत् नमस्कार कर खड़ा हुआ। उपाध्याय ने उसको पूर्व्ववत् पुष्ट देखकर कहा, "बेटा उपमन्यो। भिक्षान्न भोजन नहीं करते, दूसरी वार भिक्षा भी नहीं करते, दूध भी नहीं पीते, तौभी पुष्ट बने हो, अब किस प्रकारसे भूख मिटाते हो?" उपाध्याय के ऐसा कहने पर उपमन्यु बोला, "जब बछड़े अपनी अपनी माताओं के स्तन पीते हैं, तब उनके मुंह से जो फेन निकल कर गिरता है, मैं उसी को पीकर प्राण बचाता हूं। उपाध्याय बोले, "यह सब गुणवान् बछड़े तुम पर दया करके बहुत अधिक फेन उगिल डालते हैं; तुम उसी फेनको पीकर बछड़ों की वृत्ति लोप करते हो; सो फेन पीना भी तुमको अनुचित है। उपमन्यु तथास्तु कहकर अङ्गीकार करके फिर गोरक्षा करने लगा। पर गुरुके मना करनेके कारण नतो भिक्षान्न भोजन किया, न दूसरी वार भिक्षा की, न दूध पीया और न उगिला हुआ फेन ही पीया, सो एक दिन वन में भूख से अति कातर होकर उसने मदारका पत्ता खालिया; वह खारा, तीता, कड़ुआ, रूखा, पचने में तीखा पत्र खाकर उसने अपनी आंखें बिगाड़ी। वह उसीसे अन्धा हुआ; आगे वन में घूमता हुआ एक कूयेंमें गिर पड़ा; सूर्य्यदेव अस्ताचल-चोटी पर चढ़ गये; तौभी जब उपमन्यु गृहमें न लौटा, तब उपाध्याय ने शिष्यों से पूछा, "उपमन्यु क्यों नहीं आता है?" शिष्यों ने कहा, "कदाचित गोरक्षा के लिये उपमन्यु वन में गया है।" उपाध्याय बोले, "मैंने उसको सब प्रकार के भोजन करने को मना कर दिया है, इससे वह निःसन्देह क्रोधित हुआ है; सो अबतक न आता होगा; अब उसकी खोज करनी उचित है।" यह कहकर शिष्यों के सङ्ग वन में जाकर उनको पुकारने लगे, "बेटा उपमन्यो! कहां हो? आओ। उपमन्यु गुरु की बात सुनके चिल्लाकर बोला, "मैं इस कूप में पड़ा हूं।" उपाध्यायने पूछा, "तुम कैसे कूपमें आ

गिरे?" उपमन्यु बोला, मदारका पत्ता खाकर मैं अन्धा होगया हूं, सो कूप में गिर गया हूं।" उपाध्याय बोले, "दोनों अश्विनीकुमारों का स्तव करो, वे देवताओंके चिकित्सक हैं, तुम्हारी आंखे बना देंगे।" उपाध्याय की ऐसी आज्ञा पाकर उपमन्यु ऋग्वेद-विहित वाक्योंसे दोनों अश्विनीकुमारों का स्तव करने लगा।

हे दोनों अश्विनीकुमार! तुम सृष्टि के पहिले विद्यमान थे और हिरण्यगर्भस्वरूप में पहिले उत्पन्न हुए थे; तुमही विचित्र प्रपञ्च का स्वरूप धारण कर प्रकाशमान होते हो; देश, काल और अवस्था द्वारा तुम्हारा निर्णय नहीं हो सकता, सो मैं वाक्य और तपस्या द्वारा तुमको आनन्दस्वरूपमें प्राप्त करना चाहता हूं। तुम वृत्ति और चैतन्यका रूप धारण कर द्योतमान होते हो; शरीररूपी वृक्ष पर पक्षी के स्वरूप में चढ़े हो और प्रकृतिगत विक्षेपनीशक्ति से सम्पूर्ण जगत् को रच रहे हो; तुम सत्त्व, रज, तम, इन तीन गुणों से अतीत और मनके अगोचर हुए हो। तुम ज्योतिर्म्मय सङ्गरहित परब्रह्मस्वरूप, लयपाये जगत् के अधिष्ठान और भ्रम औ क्षय-वर्ज्जित हुए हो। तुम सुन्दर नाकयुक्त अर्थात् शरीर धर्म्मयुक्त हो, तिस परभी काल को जीत चुके हो। तुम दिवाकरको रचकर दिन और रात्रिरूपी शुक्ल और कृष्ण तांतों से वर्ष रूपी वस्त्र बना रहे हो; इसी से कर्म्म-फल भोगने को लोकों का पथ बना देते हो। जीवरूपी पक्षी के परमात्मा की कालशक्ति से ग्रसित होने के कारण उसको मोक्षरूपी महत् सौभाग्य देने को अश्विनीकुमारों के स्वरूप में प्रकटित हुए हो। रागादि विषयों से जकड़े हुए बड़े मूर्ख जन जब तक इन्द्रियों के अधीन फंसे रहते हैं, तबतक तुम लोगों को शरीरधारी समझते हैं। अहोरात्ररूपी तीन सौ साठ गाय सबको उपजाने और सबको नष्ट करनेवाला वर्षरूपी जो बछड़ा उत्पन्न करती हैं और तत्त्व जानने की अभिलाषा राखनेवाले जिस बछड़े की सहायता से नानाक्रियाओं में तत्त्वज्ञानरूपी दूध दूह लेते हैं, तुम उस वर्षके उपजानेवाले हुए हो। वर्षरूपी जिस एकही धूरे में अहोरात्ररूपी सातसौ बीस आरे बारह मासरूपी नाहें के अवलम्बन से हैं, तुमने उस अनियत मायामय अक्षय कालचक्र को नियुक्त किया है, वह कालचक्र इस लोक और परलोक की सम्पूर्ण प्रजा को स्पर्श कर रहा है। मेषादि राशि-रूपी बारह आरे, ऋतुरूपी छः धूरे और वर्ष-रूपी एक अक्षवाला तथा कर्म्मफलरूपी आधार युक्त जो एक चक्र है, कालके अधिष्ठाता देवगण भी जिसमें स्थित हैं, तुम मुझे उस कालचक्र से मुक्त करो, मैं जन्मादि दुःख से बड़ा उदास हो रहा हूं। तुम विषय आदि सम्पूर्ण प्रपञ्चों से भरे हो, तुम ही कर्म्मफलरूपी हो, तुमही आकाशादि के लय के कारण हो, तुमही अनादि अविद्यादोष से भोग्य पदार्थों में इन्द्रिय संयोग करके परम सुख से विचर रहे हो और इधर तुमही परब्रह्म-रूपी हो; हे दोनों अश्विनीकुमार! तुमने पहिले दशदिशा, सूर्य्य और आकाशको रचा; उस सूर्य्यकृत दिशा और काल के अनुसार ऋषिलोग वेदविहित सम्पूर्ण कर्म्मों का अनुष्ठान करते हैं और देवता तथा मनुष्य अपने अपने अधिकार के अनुसार ऐश्वर्य्य भोगते हैं। तुमने पञ्चतन्मात्रको रचकर उनके परस्पर मिलावट से नाना प्रकारके पदार्थ उप-जाये हैं और उसीसे इन चौदह भुवनों की सृष्टि हुई है। प्राणीगण देह, इन्द्रिय और बुद्धिरूपी विकारके वश में होकर विषयको भोग रहे हैं और देवता, मनुष्य और पशुआदि सब इस पृथ्वी को आश्रय किये हुए हैं; हे प्रसिद्ध दोनों अश्विनीकुमार! मैं तुम्हारी पूजा करता हूं। और तुम्हारे उत्पन्न किये हुए अनन्त आकाशके कार्य्योंकी भी पूजा करता

कर्म्मफलके बिना देवगण भी किसी कार्य्य में सफलमनोरथ नहीं होसकते ; तुम उस कर्म्मफल के उपजानेवाले और नित्यमुक्त हो। तुम सूर्य्यके स्वरूप में किरणद्वारा जलरूपी गर्भ धारण करते हो, वह किरण जीवनहीन होने परभी गर्भ धारणकरके प्रसव करती है, वह जलरूपी गर्भ मेघ से जन्म लेते ही भूलोक में फैल जाता है। लोकों के जीवन के लिये तुमही उस जीवनरूपी गर्भ को त्याग करते हो।

उपमन्यु के इस प्रकार स्तव करने पर दोनों अश्विनीकुमार उस स्थान में आनकर बोले, कि हम तुम्हारे स्तव से प्रसन्न हुए हैं, तुमको पिष्टक देते हैं भोजन करो। अश्विनी कुमारों से ऐसी आज्ञा पाकर उपमन्यु बोला, "तुम कभी मिथ्या नहीं बोलते, पर मैं गुरुको बिना निवेदन किये यह पिष्टक नहीं खा सकता।" अश्विनीकुमारों ने कहा, "पहिले तुम्हारे उपाध्याय ने हमारा स्तव कियाथा, हमारे प्रसन्न होकर ऐसा पिष्टक देने पर उन्होंने गुरुको बिना निवेदन किये भोजन कर लिया था ; तुम्हारे उपाध्याय ने जैसा किया था, तुम भी तैसाही करो।" उपमन्यु ने उत्तर दिया, "हे दोनों अश्विनीकुमार ! आप कभी मिथ्या बचन नहीं बोलते, तोभी मैं तुम से विनय कर कहता हूं, "गुरु को बिना निवेदन किये यह पिष्टक खा नहीं सकूंगा।" दोनों कुमार बोले, "तुम्हारी ऐसी अटल गुरु-भक्ति देखकर हम बड़े प्रसन्नहुए। तुम्हारेगुरुके काले लोहेके दांत हुए ; पर तुम्हारे दांत सोने के होंगे, अर्थात् तुम्हारे गुरु, शिष्यों से जिस निर्द्दयता से व्यवहार करते हैं, तुम तैसा न करके उन पर दयाशील होगे। बेटा ! तुम्हारी सुन्दर आंखे होंगी और तुम्हें मङ्गल प्राप्त होगा।"

अश्विनीकुमारों के इस प्रकार वर देने पर उपमन्यु के सुन्दर नेत्र हुए। आगे उसने उपाध्याय के सम्मुख आकर नमस्कार किया और प्रारम्भ से अन्त तक सम्पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया। उपाध्याय वह सुन कर प्रसन्न हो-कर बोले, अश्विनीकुमारों ने जो कुछ कहा है, वही होगा, तुमको मङ्गल प्राप्त होगा, और सम्पूर्ण वेद और धर्म्मशास्त्र तुम्हारे स्मरण-मार्ग में प्रकटित रहेंगे। गुरुभक्त उपमन्यु की यह परीक्षा हुई।

उक्त आयोदधौम्य के तीसरे शिष्यका नाम वेद था। उपाध्याय ने उस को आज्ञा करी, "बेटा वेद! तुम कुछ दिन मेरे घरमें रहकर गुरु-सेवा करो, तुम्हारा मङ्गल होगा।" वेद तथास्तु कहकर बहुकाल गुरुकुल में रहकर गुरु-सेवा करने लगा। उपाध्याय उस पर बैल के समान नित्य नाना भार डाल देते थे। उसने भी शीत, ग्रीष्म, क्षुधा, प्यास आदि सब दुःख सह लेकर और किसी बात में विरोधी न होकर बहुत काल तक गुरुसेवा की। वह काल के पश्चात् उपाध्याय प्रसन्न हुए, इसी से वेद ने कल्याण और सर्व्वज्ञता लाभ की। उसने उपाध्याय की आज्ञा से गुरुकुल से लौट कर गृहस्थाश्रम अवलम्बन किया।

निज गृह में वसने के काल में उनके तीन शिष्य हुए। वह शिष्यों को "कर्म्म करो वा गुरुसेवा करो" कुछ बोलता नहीं था, क्योंकि वह गुरुकुल में वसने का दुःख विलक्षण ही जानता था, सो शिष्यों को कष्ट देना नहीं चाहता था। एक समय जनमेजय और पौष्य इन दो क्षत्रियों ने आकर वेद को उपाध्याय के पद में वरण किया। एक दिन वेद ने याजन-कार्य्य में जानेके कालमें उतङ्क नामक शिष्य को आज्ञा दी, "हे उतङ्क! मैं चाहता हूं, कि मेरी अनुपस्थिति में गृहमें जो कुछ अभाव हो, तुम उन को पूरा किया करो।" वेद उतङ्क को यह आज्ञा देकर बाहर चले गये। गुरुसेवा-शील उतङ्क गुरुनियोग का अनुष्ठान कर के

गुरुकुल में वसने लगा। उस काल में एकदिन उपाध्याय के घर की स्त्रियां एकत्र होकर उतङ्क को बुलाकर बोलीं, "उतङ्क! तुम्हारी उपाध्यायनी ऋतुमती हुई है, तुम्हारे उपाध्याय भी घर में नहीं हैं, परदेश को चले गये हैं, सो जिस से उनकी ऋतु खाली न जाय, तुम तिसका विधान करो, क्योंकि वह बड़ी उदास हुई हैं।" उतङ्क ऐसी आज्ञा सुनकर बोला, मैं स्त्रियों की बात सुनकर ऐसा कुकर्म्म नहीं कर सकूंगा, उपाध्याय ने मुझे ऐसी आज्ञा नहीं दी, कि "तुम कुकर्म्म भी करना।"

कुछ कालान्तर उपाध्याय परदेश से घरमें लौट आये और यह सब वृत्तान्त जान कर उतङ्क पर प्रसन्न होकर बोले, "बेटा उतङ्क। तुम्हारा कौनसा प्रिय कार्य्य करूं? तुमने धर्म्मानुसार मेरी सेवा की है, सो परस्पर हम में प्रीति बढ़ी है, अब आज्ञा देता हूं, कि तुम घर लौट जाओ तुम्हारी सम्पूर्ण अभिलाषा पूर्ण होगी।" उपाध्याय के ऐसा कहने पर उतङ्क बोला, "मैं आपका कौनसा पलटेमें उपकार करूं? कहा है, जो विद्या पढ़ाकर दक्षिणा नहीं लेता और जो धर्म्मपूर्व्वक विद्या पढ़ कर दक्षिणा नहीं देता, इन दोनों में एक मर जाता है और उनमें आपसका द्वेषभाव खड़ा होता है, सो आप की आज्ञा पाने से मैं गुरुदक्षिणा बटोरने का प्रयत्न करूं। उपाध्याय बोले, बेटा उतङ्क! तब तुम और कुछ दिन मेरे घर रहो, आगे कहूंगा।"

कुछ दिनों के पश्चात् उतङ्क उपाध्यायजी से बोला, "आज्ञा कीजिये, कैसी गुरुदक्षिणा देने से आप प्रसन्न होंगे, मैं उसे लाने की चेष्टा करूं।" उतङ्क के ऐसी प्रार्थना करने पर उपाध्याय बोले, "बेटा उतङ्क। तुम वार वार मुझे कह रहे हो, गुरुदक्षिणा दूंगा, सो तुम गृह के भीतर जाकर उपध्यायनी से पूछो, कि गुरुदक्षिणा के निमित्त क्या लाना होगा? वह जो कहेंगी, वही लाना। उपाध्याय के ऐसी आज्ञा करने पर उतङ्क ने उपाध्यायनी से पूछा, "भगवति उपाध्यायने मुझे घर जाने की आज्ञा दी है, पर मैं आपकी मनमानी गुरुदक्षिणा लाकर ऋणमुक्त होकर घर जाना चाहता हूं; सो आप आज्ञा कीजिये, कि गुरुदक्षिणाके निमित्त क्या लाना होगा?" उतङ्कके ऐसी प्रार्थना करने पर, उपाध्यायनी बोली, "बेटा उतङ्क। राजा पौष्य के निकट जाकर, उनकी स्त्री के धारण किये हुए दोनों कुण्डल मांग लाओ। आगामी चौथे दिनको पुण्यक नामक व्रत का उत्सव होगा, मैं उस दिन उन दोनों कुण्डलों से सजधज कर ब्राह्मणों को अन्न बांटना चाहती हूं। सो तुम यही कार्य्य करो, ऐसा करनेसे तुम्हारा मङ्गल होगा, और इसके न करने से किसी प्रकार से तुम्हारी भलाई नहीं है।" उपाध्यायनी के ऐसी आज्ञा करने पर उतङ्क उन कुण्डलों को लाने गया। जाने के कालमें पथ में देखा, कि एक वृहदाकार पुरुष एक बड़े भारी बैल पर चढ़ कर चले जा रहे हैं। उन्होंने उतङ्क को देखकर कहा, "ऐ उतङ्क! इस बैल का यह गोवर खाओ।" उतङ्कके गोवर न खाने की इच्छा दिखाने पर उस पुरुषने फिर कहा, "उतङ्क! खाजाओ, मत विचारो। पहिले तुम्हारे उपाध्यायने भी यह किया था।" यह सुनकर उतङ्क बैल का गोवर और मूत्र खा पोकरके उठकर भ्रमवश पथमें चलते ही चलते आचमन कर चला गया।

अनन्तर पौष्य नाम क्षत्रियवर के निकट उपस्थित होकर देखा, कि वह आसन पर विराज रहे हैं। उतङ्क उनको आशीस देकर बोला, "मैं कुछ भिक्षा के निमित्त आप के पास आया हूं।" पौष्य ने पांव छूकर कहा, "मैं आपका नौकर पौष्य हूं, कहिये क्या करना है।" उतङ्क बोला, "मैं गुरु-दक्षिणा लिये दो कुण्डल मांगने आया हूं,

पत्नी जो दो कुण्डल पहिनती हैं, आप उन्हींको दान दीजिये।" पौष्य बोले, "भीतर जाकर मेरी स्त्रीसे मांगिये।" यह सुनकर वह भीतर जाकर और पौष्य की स्त्री को न देख कर पौष्यके निकट लौट आकर बोला, "मुझे इस प्रकार झूठ मूठ ठगना नहीं चाहिये, भीतर आपकी धर्म्मपत्नी नहीं हैं, रहतीं तो दीखतीं।" पौष्य चणकाल शोच कर बोले, "भगवन्! स्मरण कर देखिये, कि अवश्यही उच्छिष्ट आपके मुहमें है। उच्छिष्टसे अपवित्र जन उसकी भेंट नहीं कर सकता, वह पतिव्रता हैं, सो वह अशुचि-जन को दिखाई नहीं देतीं। पौष्य के ऐसा कहने पर उतङ्कने स्मरण कर कहा, "हां मैंने आते समय एकायक उठकर चलतेही चलते आचमन किया था।" पौष्य बोले, "आपही की भूल हुई। जाते हुए वा खड़े खड़े आचमन करना ठीक नहीं है।" उतङ्क ने "ठीक कहा" यह कह कर पूर्व्व ओर मुह फेरके बैठ कर हाथ, पांव, मुह धोकर बिना शब्द तीन वार फेनरहित, शीतल, हृदय-तक पहुचने-योग्य जल पीकर दोवार दोनों होठों को मलकर और विहित इन्द्रियों को छूकरके आचमन कर अन्तःपुरमें प्रवेश किया और वहां चत्राणी को देखा। पौष्य की स्त्री उतङ्कको देखकरके उठकर नमस्कार पूर्व्वक स्वागत पूछकर बोली, "भगवन्! आज्ञा कीजिये, क्या करूं?" उतङ्क बोला, "गुरुदक्षिणा देने को मैं आपके दोनों कुण्डल मांगता हूं, मुझे दान कर दें।" उसकी यह गुरुभक्ति देखकर पौष्य-पत्नी अति प्रसन्न हुई और यह सोचकर, कि "यह सुपात्र है, इनकी प्रार्थना अस्वीकार न करनी चाहिये" ऐसा विचार कर कानों से कुण्डल खोलकर उनको दे दिये और कहा, "नागराज तक्षक इन कुण्डलों को बहुत चाहते हैं, सो बड़ी सावधानता से ले जाइये।" यह सुनकर उतङ्क बोला, "भगवति! मत सोचिये, तक्षक मुझसे कुण्डल नहीं ले सकेगा।" यह कह कर पौष्य की स्त्रीसे विदा होकर पौष्य के पास आपहुंचा और कहा, "हे पौष्य! मुझे परम सन्तोष लाभ हुआ।" पौष्यने उससे कहा, "भगवन्! सदा सत्पात्र नहीं मिलते, आपभी सर्व्वगुणशील अतिथि उपस्थित हैं, सो श्राद्ध करना चाहता हूं; आप चण भर ठहरिये।" उतङ्क बोला, "ठहरा हूं, जो अन्न उपस्थित हो, आप वही शीघ्र लाइये। पौष्यने वही स्वीकार कर जो अन्न उपस्थित था, वही लाकर उन्हें भोजन करने को दिया। उतङ्क ने केशयुक्त औ शीतल अन्न देखकर अशुचि समझकरके पौष्य से कहा, "जोंकि तुमने मुझको अशुचि अन्न दिया है, सो तुम अन्धे होगे।" पौष्य बोले, "तुम दोष देने के अयोग्य अन्नपर दोष डालते हो, सो तुम्हे सन्तान न होगी।" उतङ्क बोला, "अशुचि अन्न भोजन करने देकर पलटे में शाप देना उचित नहीं है। आप भली भांति देख लीजिये, यह अन्न अशुचि है वा नहीं।" यह सुन कर पौष्यने उस अन्नकी परीक्षा कर उसकी अपवित्रता प्रत्यक्ष की।

अनन्तर अन्नको मुक्तकेशी स्त्री का लाया हुआ, शीतल और केशयुक्त जानकर राजा पौष्य उतङ्क ऋषिको प्रसन्न करने लगे और विनयसे कहा, "भगवन्! न जानकरके ही शीतल और केशयुक्त अन्न लाया हूं, अब आप से क्षमा मांगता हूं, मुझे अन्धा होना न पड़े।" उतङ्क बोला, "मेरी बात मिथ्या नहीं होती, आप अन्धे होकर अति शीघ्र नेत्रशील होंगे। आपने मुझको जो शाप दिया है, वह न फलने पावे।" पौष्य बोले "शाप लौटाने की सामर्थ मुझमें नहीं है, अभीतक मेरा क्रोध शान्त नहीं हुआ, क्या आप नहीं जानते, कि ब्राह्मण का हृदय मक्खनके समान है, थोड़े ही में गल जाता है और बात उनकी तेज अस्तुरेके समान।

है ; पर क्षत्रियों में यह दोनों ही विपरीत हैं अर्थात् बात उनकी मक्खन-तुल्य और हृदय तेज अस्तुरे के सदृश हैं। सो जाति-सिद्ध तेज-हृदय के हेतु उस शाप को लौटा नहीं सकूगा, आप जाइये।" उतङ्क बोला, "आपने अन्न की अपवित्रता प्रत्यक्षकर मुझसे विनय किया, पहिले कहाथा, 'दोषस्पर्शरहित अन्न के अशुचि होने का दोष लगातेहो, सो तुम्हारे सन्तान नहीं होगी।' अब जब अन्न में दोष प्रत्यक्ष हो गया है, तब फिर वह शाप मुझ पर कार्य्य नहीं करेगा। अब मैं जाता हूं, यह कहकर उतङ्क दोनो कुण्डल लेकर पधारा।

पथ में देखा, कि एक नङ्गा सन्यासी कभी दीखता और कभी न दीखता हुआ आरहा है। अनन्तर उतङ्क धरती पर दोनों कुण्डल रखकर पिशाव करने लगा। इसी बीच में वह सन्यासी शीघ्रतासे आकर दोनों कुण्डल लेकर दौड़ा। पिशाब होजाने पर उतङ्क शुचि और संयत हो देवता और गुरु को नमस्कार कर बड़े वेगसे सन्यासीके पीछे दौड़ा। जब बहुत निकट पहुंचा, तब उसको पकड़ लिया। तक्षक पकड़े जाकर सन्यासी का रूप छोड़ कर अपना रूप धरके उसी स्थान में एक चौड़े बिल के भीतर जा घुसा, अनन्तर उस भारी बिल से नाग-लोक में जाकर अपने घर में पहुंचा। पौष्यपती की बात स्मरण कर उतङ्क तक्षक के पीछे चलने के लिये उस बिल को लकड़ी से खोदने लगा, पर किसी प्रकार से सफल-मनोरथ नहीं हो सका। तब इन्द्रने यह देखकर, कि ब्राह्मण बड़ा कष्ट पारहा है, वज्र को आज्ञा करके भेजा, "वज्र जाओ, उस ब्राह्मण की सहायता करो।" आगे वज्रने उस लकड़ी के अगले अंश में घुसकर बिल को फाड़ दिया। तब उस बिल के भीतर घुस करके नागलोक में जाकर उतङ्क ने भांति भांतिके मन्दिर, राज-महल, खहचोटी, द्वार और नाना प्रकार के आश्चर्य्य क्रीड़ास्थान देखे। अनन्तर वह नागों की स्तुति करने लगी।

ऐरावत जिन सर्पों के राजा हैं, जोलोग रणभूमि में सुशोभित और बिजली तथा पवन के समान वेगवान् होकर मानों अस्त्र वर्षाने लगते हैं, ऐसे सुन्दर रूपधारी और विचित्र कुण्डलधारी ऐरावतवंशी नागगण देवलोक में सूर्य्य की भांति प्रकटित हैं। गङ्गाजी के उत्तर कुल में अनेक सर्पों के वासस्थान हैं, मैं वहां के उन नागों का भी स्तव करता हूं। ऐरावत के विना कौन जन सूर्य्य-किरणरूपी सेना में घूम घाम सकता है? जब धृतराष्ट्र चलते हैं, तब उनके पीछे अट्ठाइस सहस्र आठ नाग दल बाधकर गमन करते हैं। ऐरावतके उन सब कनिष्ठ भाइयों को भी, धृतराष्ट्र के निकट के या दूरके हैं नमस्कार करता हूं। जो पहिले कुरुक्षेत्र और खाण्डवप्रस्थ में वसते थे, कुण्डलके निमित्त उन नागराज तक्षक का स्तव करता हूं। तक्षक और अश्वसेन यह दोनों नित्य के साथी होकर कुरुक्षेत्र में इक्षुमती-नदी के तट पर वसते थे। श्रुतसेन नामक तक्षक के जो कनिष्ठ भ्राता नामोंमें श्रेष्ठता पाने की प्रार्थना कर सूर्य्य की उपासनापूर्व्वक कुरुक्षेत्र में स्थित थे, मैं उन महात्मा को भी नमस्कार करता हूं। इस प्रकारसे श्रेष्ठ नागों के स्तव करने पर भी कुण्डल न पाकर विप्रऋषि उतङ्क चिन्तायुक्त हुए। जब नागों की स्तुति करने परभी कुण्डल न मिले, तब उन्होंने देखा, कि दो स्त्रियां सुन्दर वेमायुक्त तांत में वस्त्र बना रही हैं, उसके ताने सादे और काले रङ्ग के हैं और छः बालकोंसे घुमाये जाते हुए बारह आरों का एक चक्र देखा ; एक पुरुष और एक सुन्दर घोड़ेकोभी देखा। उतङ्क निम्नलिखित मन्त्र-वाक्य से उनके स्तव करने लगा।

इस चौबीस पर्व्वयुक्त सनातन चक्र में तीन सौ साठ ताने लगाये गये हैं, छः कुमार

घुमा रहे हैं। विश्वरूपिणी दोनों युवती इस ताने में सादे और काले सूत देकर सदा वस्त्र बनाती हुई सम्पूर्ण भूत और चौदहों भुवनों को घुमा रही हैं। जो महात्मा दो कालेवस्त्र पहिनते हैं, जिन्होंने वज्रधारी होकर नमुचि और वृत्रासुर को वध किया था; जो तीनों भुवनों को रक्षा करते हैं; जो लोकों में सत्य और असत्य बांट देते हैं; जिन्होंने वैश्वानर के समान तेजोवान् सामुद्रिक घोड़े को प्राप्त किया है, उन त्रिलोकनाथ विश्वेश्वर पुरन्दर को नमस्कार करता हूं।

उतङ्क के ऐसे स्तव करने पर वह पुरुष उनसे बोले, तुम्हारे इस स्तव से मै प्रसन्न हुआ हूं, तुम्हारा कौनसा प्रिय कार्य्य करूं। उतङ्क उनसे बोला, "सम्पूर्ण सर्प मेरे वश में आवें"। उस पुरुषने फिर उतङ्क से कहा, "इस घोड़े के मलद्वार में फूंको।"

उतङ्कने उस पुरुष की आज्ञा से घोड़े के मलद्वारमें फूंक दिया; इससे घोड़े के सर्व्वशरीर के छिद्रों से धूंआसहित अग्निशिखा निकलने लगीं। अनन्तर उन अग्नि-शिखाओं से नागलोक गर्म्म होने पर तक्षकने अग्निके भयसे डरकर और चिन्तित होकर उन दोनों कुण्डलों को साथ गृह से एकायक निकल कर उतङ्क से कहा, "आप इन दोनों कुण्डलों को लें।" उतङ्क ने कुण्डलों को लिया और उन्हें लेकर सोचने लगा, "आजही तो उपाध्यायनी का पुण्यक-व्रत होनेवाला है, मैं भी बड़ी दूर आ पड़ा हूं, क्योंकर उचित समय पर वहां पहुंच करके कार्य्य पूरा कर सकूंगा।" उतङ्क ऐसा सोच रहा था, कि ऐसे समय में वह पुरुषवर उनसे बोले, "उतङ्क इस घोड़े पर चढ़लो; ऐसा करने से थोड़े काल में तुम गुरु के घर में पहुंच सकोगे।" उतङ्क "तथास्तु" कहके उस घोड़े पर चढ़कर उपाध्यायकुल में लौट आया।

इधर उपाध्यायनी स्नान करके बैठ कर केश साफ करती और ऐसा सोचती हुई, कि "उतङ्क अभीतक नहीं आया" शाप देने का विचार कर रही थी, कि इतने में उतङ्क ने उपाध्याय के घर में प्रवेश करके उपाध्यायनी को प्रणामकर दोनों कुण्डल दे दिये। उपाध्यायनी उतङ्क से बोली, "बेटा उतङ्क? तुम्हारा मङ्गल होवे, तुम अच्छे अवसर में आ पहुंचे; अच्छा हुआ, कि मैंने तुमको विना दोष शाप नहीं दिया; अब तुम्हारे मङ्गल का अवसर आ पहुंचा है, तुम मनमाने विषयमें सिद्धिलाभ करो।" अनन्तर उतङ्क ने उपाध्याय को प्रणाम किया। उपाध्याय स्वागत पूछ कर बोले, "बेटा उतङ्क। तुमको आनेमें इतनो देर क्यों हुई?" उतङ्कने उत्तर दिया दिया, "नागराज तक्षक ने कुण्डल लाने में मुझे विघ्न किया था, सो मैं नागलोक में गया था। वहां देखा, कि दो स्त्रियां तांतमें वस्त्र बीन रही हैं, उस में जो सादे और काले रङ्गके सूत हैं वह क्या है? और भी देखा, कि छः कुमारा से बारह आरेवाला एक पहिया घुमाया जाता है। वह क्या है? एक पुरुष को देखा, वह कौन है? और बड़े भारी एक घोड़े को देखा, वह कौन है? पथ में एक बैल को देखा था, उस पर एक पुरुष चढ़े थे। उन्होंने विनयपूर्व्वक मुझ से कहा था, 'बेटा उतङ्क। तुम इस बैल का गोवर खा लो, पहिले तुम्हारे उपाध्याय ने भी ऐसाही किया था'; मैंने उनका वचन सुन कर उस बैल का गोवर खा लिया। जिन्होंने मुझे गोवर खाने कहा था, वह कौन है? मैं इन सब विषयों का पूरा वृत्तान्त आप से सुना चाहता हूं। उतङ्क के यह सब पूछने पर उपाध्याय बोले, "बेटा उतङ्क। तुमने जिन दो स्त्रियों को देखा, वे धाता और विधाता हैं; जिन सादी और काली तांतों को देखा, वे सब दिन और रात हैं; जिस चक्र को देखा, वह वर्ष है; जिन छः कुमारों को उस बारह

आरेवाले चक्रको घुमाते देखा, वे छः ऋतु हैं; और जिस पुरुष को देखा, वह इन्द्रजी है; जिस अश्व को देखा, वह अग्नि हैं; पथमें जानेके काल में जिस बैल को देखा, वह नागराज ऐरावत है; उनपर जो चढ़े थे वह इन्द्र हैं। और तुमने जो गोबर भोजन किया वह अमृत है। जिस अमृत को खाने के कारण तुम नागलोक में जाने पर भी नष्ठ नहो हुए। वही भगवान् इन्द्र मेरे मित्र हैं, उन्होंने तुम्हारा कष्ट देख कर दयायुक्त होकर ऐसी कृपा दिखाई है, इसीसे कुण्डल लेकर तुम लौट आ सके हो। अतएव हे सुशील। मैं तुमको आज्ञा देता हूं, तुम घर जाओ, मङ्गल प्राप्त होगी।

भगवान् उतङ्क उपाध्यायसे विदा लेकर तक्षक पर क्रोधयुक्त रहने के कारण, बदला लेने की इच्छासे हस्तिनापुर को पधारे। विप्रवर उतङ्क विना विलम्ब हस्तिनापुर में जा कर महाराज जनमेजय के निकट उपस्थित हुए। अजय जनमेजय इसके पहिले तक्षशिला-देश को जीतने गयेथे। वहां से जय लाभ करके लौट कर मन्त्रियों से वेष्टित हो सिंहासन पर आरूढ़ थे। ऐसे समय में, उतङ्क उनको देखकर अवसर समझके, विधिपूर्व्वक अशीस देकर, साधुशब्दयुक्त सुशोभित वचनों से बोले, "हे श्रेष्ठ-नरनाथ। अपना कर्त्तव्य न पालन करके तुम बालकके समान दूसरे कार्य्यों में लगे हो।" श्रीउग्रश्रवाजी कहते हैं, कि उतङ्क से इस प्रकार कहे जाकर महाराज जनमेजय विधिपूर्व्वक उनकी पुजा करके बोले, "मैं इन प्रजाओंका पालन कर अपना क्षत्रियधर्म्म रक्षा कर रहा हूं, इस क्षण आप जो विचार कर यहा आये हैं, मेरा वह कर्त्तव्य ही क्या है, आज्ञा करें।

श्रीउग्रश्रवाजी कहते हैं, कि नरनाथ की यह बात सुनकर अति पुण्यशील द्विजोत्तम उतङ्कने उन अहीन-कान्ति महाराज जनमेजय को उत्तर दिया, कि हे नरनाथ। मैं तुमसे स्वकार्य्य-साधन ही का अनुरोध करता हूं। हे श्रेष्ठ महीपाल। जिस तक्षकने तुम्हारे पिताजी को नष्ट किया है, उस दुष्टात्मा सर्पको उचित फल दो। राजन्! इस विधिदर्शित कार्य्य का काल आ पहुंचा है, सो तुम्हारे उन महानुभाव जन्मदाता का जो अनिष्ट हुआ है, उसका बदला लो। दुष्ट स्वभावी दुरात्मा तक्षकसे तुम्हारे पिताजी विना अपराध काटे जाकर वज्र-जले वृक्ष के समान मृत्यु को प्राप्त हुए हैं। जिस सर्पाधम तक्षकने बल और अहङ्कार से उछल कर तुम्हारे पिताको काटने का अनुचित कार्य्य किया है और राजर्षिवंश-वाले देव-सदृश महाराज परीक्षित को बचाने के लिये काश्यपवर धन्वन्तरिजीको आते देख-कर, उन को भी अर्थद्वारा जिस पापात्माने रोका था, हे महाराज। सर्पयज्ञका अनुष्ठान कर प्रज्वलित अग्नि में उस पापात्मा को आहुति चढ़ानी चाहिये, सो शीघ्र उसका अनुष्ठान करो। ऐसा करने से तुम्हारे पिताजी का बदला होजायगा और मेरा भी अति प्रिय कार्य्य होगा। हे निष्पाप पृथ्वीनाथ! मैं गुरु के लिये धन लाने गया था, इसमें उस दुरा-त्माने मुझे बड़ा विघ्न किया था।

श्रीउग्रश्रवा जी बोले, कि महाराज जनमे-जय यह सुनकर जिस प्रकार घृतसे अग्नि जल उठता है, वैसेही उतङ्क के वाक्यरूपी घृतसे उनका क्रोधरूपी अग्नि जल उठा। आगे अति दुःखित होकर उतङ्कके सामने ही मन्त्रियों से पिता के परलोक सिधारने का वृत्तान्त पूछा। पर वह जब उतङ्क से पिता की मृत्यु का वृत्तान्त सुन चुके, तभी एकवारगी दुःख और शोक से विवश हो पड़े।

आदिपर्व्व में तीसरा अध्याय और
पौष्यपर्व्व समाप्त।

लोमहर्षणपुत्र सौति पौराणिक श्री उग्रश्रवा जी, नैमिषारण्य में कुलपति शौनक जी के द्वादश-वार्षिकीयज्ञ में शुभागमन किये हुए ऋषियों के समीप उपस्थित होकर दोनों हाथ जोड़के बोले, "आपलोग इस समय क्या सुनना चाहते हैं? मैं क्या कहूं?" ऋषिलोग बोले, "हे लोमहर्षणपुत्र। हम लोग योग सम्बन्धी कथा सुनने के अभिलाषी होकर तुमसे जो जो पूछेंगे, तुम वह सब वर्णन करना। परन्तु भगवान् कुलपति शौनक जी इस समय अग्निगृह में विराजते हैं, जो देवासुर-सम्बन्धी सम्पूर्ण विषय जानते हैं और जो नर, उरग तथा गन्धर्व्वों के सम्पूर्ण वृत्तान्तों से ज्ञात हैं, विशेष करके जो इस यज्ञ के कुलपति और विद्वान्, कार्य्यकुशल, बुद्धिमान्, कर्म्मकाण्ड सम्बन्धी शास्त्र और उपनिषद सिखाने में अद्वितीय गुरु हैं, तथा सत्यवादी, शान्तिमें रत, तपस्वी और व्रतशील हैं; सो वह हम सबोंही के माननीय हैं, अतएव उनके लिये कुछ काल ठहरो, वह श्रेष्ठासन पर आरूढ़ होकर जो कुछ प्रश्न करेंगे, तुम वही वर्णन करना।" श्रीउग्रश्रवा जी बोले, "वही होवे; महात्मा गुरु शौनकजी के बैठकर प्रश्न करने ही पर मैं नाना विषय-सम्बन्धी कथा सुनाऊंगा।"

अनन्तर विप्रवर श्री शौनक जी वाक्यों से देवताओं को और जल से पितरों को तृप्त कर विधिपूर्व्वक सम्पूर्ण कार्य्यों को निर्व्वाह करके जिस स्थान पर उग्रश्रवा जी और सिद्धव्रतशील, ब्रह्मर्षिगण सुख से बैठे थे, उस यज्ञभूमि में उपस्थित हुए। आगे ऋत्विक और सभासदोंके बैठने पर कुलपति शौनक जी स्वयं बैठकर बोलने लगे।

आदिपर्व्व में चौथा अध्याय समाप्त।

श्रीशौनक जी बोले, "हे लोमहर्षणपुत्र। पहिले तुम्हारे पिताने सम्पूर्ण पुराण पाठ किये थे, क्या तुमने उन सबोंको पढ़लिया है? पुराणों में देवताओंके चरित्र और महानुभव पुरुषों के आदि-वंश-वृत्तान्त कथित हुए हैं; पहिले तुम्हारे पिताके निकट हमलोग वह सब सुन चुके हैं, इस समय उनमें सबसे प्रधान भृगुवंश का वृत्तान्त सुनना चाहते हैं, तुम वह कीर्त्तन करो, हमलोग एकचित्त होकर सुने जाते हैं।"

श्रीसूतपुत्रजी बोले, "हे द्विजश्रेष्ठ। आपने जिन विषयों को पुराणों में श्रवण किया है, और वैशम्पायन आदि द्विजवर और मेरे पिताने पाठ और कीर्त्तन किया है, मैंने उन सब विषयों को पिताजी से भली भांति पढ़ लिया है; हे ब्रह्मन्! आप ध्यान देकर सुनिये। हे भृगुनन्दन! इन्द्र आदि देवगण,सप्तर्षिगण और मरुद्गण, जिस श्रेष्ठतर भृगुवंशका सम्मान किया करते हैं, मैं पहिले उस वंशही का वृत्तान्त यथावत् कीर्त्तन करता हूं, आप श्रवण कीजिये। सुन चुका हूं, कि महर्षि भृगु वरुणके यज्ञानुष्ठान के समय स्वयम्भु ब्रह्माजीके द्वारा अग्निसे उत्पन्न हुए थे। भृगुजीके बड़े स्नेहपात्र पुत्रका नाम च्यवन है; च्यवन के परम धार्म्मिक पुत्रका नाम प्रमति; प्रमतिके घृताची से जन्मे हुए औरस पुत्र का नाम रुरु है; रुरु से प्रमद्वरा के गर्भ से आपके पूर्व्व पितामह वेदज्ञ, धर्म्मज्ञ तपस्वी, यशस्वी, शास्त्रज्ञ, ब्रह्मज्ञ, परमधर्म्मशील सत्यशील जितेन्द्रिय, आचार-प्रिय शुनक नामक पुत्र का जन्म हुआ।"

श्रीशौनकजी बोले, "हे सूतनन्दन। कहो, महात्मा भृगुपुत्र क्योंकर च्यवन नामसे प्रसिद्ध हुए थे, मैं वह जानना चाहता हूं।"

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, महर्षि भृगुजीकी प्रेमसुहानी, त्रिलोकजानी पुलोमानाम्नी एक स्त्री थी। वह पतिसहवास से गर्भवती हुई। हे भृगुनन्दन! धर्म्मधर यशसागर मुनिवर भृगु, समान प्रकृतिधारिणी अपनी धर्म्मपत्नी पुलोमाके गर्भवती होने पर, एक दिन नहाने गये थे, कि

ऐसे अवसरमें पुलोमा नामक राक्षस वहां आकर उनके आश्रममें जा घुसा और आश्रमके भीतर अनिन्दित-रूपखानि भृगुपत्नी को देखकर काम पीड़ा से विन-चेतनसा हो पड़ा। सुदर्शना पुलोमा ने राक्षस को आश्रम में आते देखकर वनके फलमूलों से अतिथि-सत्कार किया। हे ब्रह्मन्! वह कामातुर राक्षस उस परम रूपमयी रमणी को देखकर हरने की इच्छा से प्रसन्न होने लगा और मनही मन में ऐसा कहने लगा, 'कदाचित् मेरा अभीष्ट सिद्ध होने पर है।' क्योंकि उस राक्षस ने पहिले उस सुहासिनी कामिनी को मन में पत्नीके आसन पर बैठाया था, पर उसके पिता ने शास्त्रविधिके अनुसार भृगुजी से उसका विवाह कर दिया था। यह अनुचित कार्य्य राक्षस के चित्त में सदा जागता था; इस समय अवसर पाकर उसने पुलोमा को हरलेना निश्चय कर लिया। अनन्तर उस राक्षस ने अग्नि गृह में प्रज्वलित अग्निदेव को देखकर उनसे पूछा, 'हे अग्नि! तुम देवों के मुखवत् बने हो, मैं तुमसे पूछता हूं, ठीक बोलो, मैंने पहिले इस सुन्दरी नारी को मन ही मन में पत्नी बनाई थी, आगे इसके बापने इसे अन्याय-कारी भृगु को दान किया है। आप सच कहिये, यह एकान्तवासिनी, सुनितम्बिनी, भृगुपत्नी है कि नहीं? मैं इस आश्रम से इसे हरलेना चाहता हूं, क्योंकि पहिले मैंने इस सुमध्यमा को पत्नी करके वरण किया था, पश्चात् भृगुने इसे अन्यायरूपसे प्राप्त किया; इससे क्रोधरूपी अग्नि जल कर मेरा हृदय जलाता हुआ आजतक बना है।"

श्रीसूतपुत्रजी बोले, "इस प्रकार से वह राक्षस जलते हुए अग्नि को पुकार पुकार कर वार वार पूछने लगा, 'हे अग्नि। तुम सदा सर्व्व-भूतों के हृदय में पाप और पुण्य के साक्षी-स्वरूप होकर विराजमान हो, सो सच बोलो, मेरी पहिले की वरण की हुई जिस पत्नी को अन्याय करनेवाले भृगुने हर किया है, वह यही नारी है या नहीं? हे अग्ने। तुम यह बात मुझसे सच बोलो, मैं तुम्हारे सामने ही इस भृगुपत्नी को इस आश्रमसे हर लेजाना चाहता हूं।"

श्रीसूतपुत्रजी बोले, "उस राक्षस की ऐसी बात सुनकर अग्नि इन दोनों भयसे भीत होकर कि एक ओर मिथ्या बोलना और दूसरी ओर भृगु का शाप लेना है, अति दुःखीचित्त से बोले, कि 'हे दानव-नन्दन। तुमने पहिले इस पुलोमा को वरण तो किया था, पर वेदविधि के अनुसार मन्त्र पढ़कर विवाह नहीं किया था, इसके पिताने अति यशस्वी सुपात्रके लोभ से इस यशस्विनी पत्नी को तुम्हें न देकरके भृगु को सम्प्रदान किया है और भृगुने भी वेदविधि के अनुसार मुझको साक्षी बना करके मन्त्र पढ़कर, इस से विवाह किया है। हे दानव-प्रधान। मैं जानता हूं, कि तुमने पहिले जिसको वरण कियाथा, यह वही पुलोमा है, मैं झूठ नहीं बोल सकता, क्योंकि लोकों में कभी झूठी बात का आदर नहीं है।"

आदि पर्व्व में पांचवां अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, हे ब्रह्मन्। अनन्तर वह राक्षस, अग्नि की ऐसी बात सुनकर शूकर का रूप धरके वायु और मनके समान तेजी से उस पुलोमा को हर ले गया। हे भृगुकुल तिलक! ऐसे समय में पुलोमा के गर्भस्थित बालक क्रोधसे अन्धा होकर गर्भरूपी शय्या से च्युत हुआ, इसी हेतु उसका नाम च्यवन हुआ। माता के गर्भ से गिरे हुए उस सूर्य्यके समान तेजस्वी बालक को देखते ही राक्षस, पुलोमा को छोड़कर भस्म होके पृथ्वी पर गिरा। हे भृगुनन्दन! वह दुःखजरी, सुन्दरी पुलोमा, भृगुके च्यवन नामक उस १५

को गोद में लेकर आश्रम की ओर चलने लगी। तब सर्व्व लोकों के पितामह ब्रह्माजी अपनी पुत्रवधू उस परम-रूपवती भृगुपत्नी को रोती और नेत्रों से आंसू गिराती हुई देखकर समझाने लगे। तप करते हुए भृगुजी की धर्म्म पत्नी पुलोमा जिस पथसे चलने लगी, वहां उस की अश्रु गिरकर एक बड़ी नदी बन गई। अश्रु से निकली हुई उस नदीको वधूके साथ आश्रम की ओर बहते देखकर सर्व्वलोकों के पितामह ब्रह्माजी ने उसका नाम "वधूसरा" रखा। प्रतापी भृगुपुत्र इस प्रकार से च्यवन नाम से प्रसिद्ध हुए थे।

अनन्तर महर्षि भृगुने उस दशा में च्यवन नामक पुत्र और पत्नी को देखा और अति क्रोधवश होके पुलोमा से पूछा, "हे मीठी हंसोड़ि! राक्षस नहीं जानता था, कि तुम मेरी स्त्री हो कि नहीं; सो उसने जब तुम्हें हर लेने की इच्छा प्रकट करी थी, तब उसे किसने तुम्हारा परिचय दिया था? तुम सच सच बोलो, मुझे बड़ा क्रोध हो रहा है; मैं उसको शाप दूं किसने यह अनिष्ट किया? कौन मेरे शाप से भय नहीं खाता? पुलोमा बोली, हे भगवन्! अग्नि ने उस राक्षस को मेरा परिचय दिया था, इसीसे राक्षस कुररीके समान रोती हुई मुझको ले चला; अन्त में तुम्हारे इस पुत्र के तेज के प्रभाव से मुझ को छोड़कर वह राक्षस भस्म होगया, इसी से मैं उस दुरात्मा के हाथ से बच गई हूं। श्रीसूतपुत्रजी बोले, भृगुने पुलोमा की यह बात सुनकर अति क्रोधसे यह कहकर, कि "तुम सर्व्वभक्षक होगे" अग्निको शाप दिया।

आदिपर्व्व में छठवां अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि भृगुके शाप देने पर अग्निने क्रोधान्वित होकर कहा, "हे ब्रह्मन्! तुमने एकायक मुझे यह क्या शाप दिया? सच बात कहने को पूछे जाने पर मैंने धर्म्मानुसार बिना पक्षपात सत्यही कहा है, इसमें मेरा कौनसा दोष है? जो साक्षी सत्य विषय जानने पर भी झूठी गवाही देता है, उसके ऊपर के सात पुरखे और नीचे के सात पुरखे नरक में गिरते हैं। जो जन गूढ़तत्त्व जानकर पूछे जाने पर गवाही नहीं देता, वह भी उक्त पाप में डूबता है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। मैं भी तुमको शाप दे सकता हूं, पर ब्राह्मण को सन्मान करता हूं, इसीसे नहीं दिया। हे ब्राह्मन्! तुम सब जानते हो, तिस पर भी कहता हूं, सुनो। मैं योगबलसे आत्मा को अनेक भागोंमें बांट कर मूर्त्तिभेद से अग्निहोत्र, सत्र, यज्ञ और गर्भाधानादि सम्पूर्ण क्रियाओं में विराजता हूं। वेदोक्त विधान से मुझको जो घृत चढ़ाया जाता है, उससे देवलोक और पितृलोक तृप्त होते हैं। मुझ को चढाई हुई सोमरस, घृत, दुग्ध आदि वस्तु देवता और पितरों के शरीर के स्वरूप बन जाती हैं। देवता और पितरोंके निमित्त दर्श और पौर्णमास यज्ञ एकत्र किये जाते हैं, सो देवता और पितरों में कोई भिन्नता नहीं है। वे हर पर्व्व में कभी एकत्र और कभी पृथकरूपसे पूजित होते हैं। मुझे जो घृत चढ़ाया जाता है, उसे देवता और पितर लोग भोजन करते हैं, सो मैं ही उन देवता और पितरों के मुख के समान बना हूं। अमावस्या में पितरलोग और पौर्णमासी में देवलोग आहुति पाकर मेरे मुख से ही घृत भोजन करते हैं, सो मैं देवता और पितरों के मुख स्वरूप हो करके क्योंकर सर्व्वभक्षक हूंगा?

श्रीउग्रश्रवा जी बोले, कि अनन्तर अग्नि कुछकाल सोचकर ब्राह्मणों के अग्निहोत्र, सत्र, यज्ञ और दूसरी क्रियाओं से गायब हुए। आगे प्रजा अग्नि बिना, ओङ्कार, वषट्कार स्वधा और स्वाहादि वर्जित होकर अति दुःखी हुई।

इस पर ऋषि लोग अति चिन्तित चित्त से देवताओंके समीप उपस्थित होकर यह वचन बोले, "हे निष्पाप देवगण। अग्नि के नष्ट होने के कारण तीनों लोकों की प्रजा अग्निहोत्रादि क्रियाओंसे वञ्चित होकर क्या करना चाहिये, समझ नहीं पाती; इस समय जो करना उचित समझें, करें, विलम्ब का अवसर नहीं है।"

अनन्तर देवता और ऋषिलोग ब्रह्माजी के समीप गमन कर अग्नि के शाप और ब्राह्मणों की क्रियादि लोप होनेका समाचार जताकर बोले, "हे महाभाग किसी कारण से भृगुजीने अग्नि को यह कह कर कि 'तुम सर्व्वभक्षक होओ' शाप दिया है। यज्ञ के अग्रभाग-भोजन-करनेवाले अग्नि देवताओं के मुखस्वरूप होकर क्योंकर सर्व्व-भक्षक हो सकते हैं?"

विश्व सृष्टि-कारी ब्रह्मा जीने उनकी वह बात सुन कर क्षय और उदय-वञ्जित भूतभावन अग्नि को बुला करके मनभावन बातों में कहा, "हे अग्नि। तुम सर्व्वलोकों के कर्त्ता, संहर्त्ता, रक्षिता और अग्निहोत्रादि क्रियाओं के करानेवाले हो, अतएव हे लोकेश्वर, हुताशन। ऐसा करो, कि जिनसे अग्निहोत्रादि क्रिया लोप न हो जायं। तुम लोकपाल होने पर भी क्यों ऐसे मुग्ध हो रहे हो? तुम पवित्र और अकेले सर्व्व लोकों की गति हुए हो; सो तुम सर्व्व शरीरसे सर्व्व भक्षक नहीं होगे। हे शिखावान्। तुम्हारे अपान भाग से जो सब शिखायें हैं, वे ही सर्व्व भक्षक होंगी और तुम्हारी जो मांस-भोजी देह है, वह भी सर्व्व-भोजी होगी। जैसे सूर्य्य-किरण के स्पर्श से हरेक वस्तु शुद्ध होती हैं, तैसेही तुम्हारी शिखा से जल कर सब वस्तु पवित्र होंगी। हे अग्ने। तुम निज प्रभाव से निकल कर परम तेजस्वरूप हुए हो, सो निज तेजही से ऋषि के शाप को सत्य कर दो और तुम्हारे मुह में जिन वस्तुओं की आहुति चढ़ाई जाती है, उनसे देवों का और अपना भाग ग्रहण करो।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि अग्नि "एवमस्तु" कहकर ब्रह्माजी की बात मान करके उनकी आज्ञा पालनेके निमित्त चले गये और देवता और ऋषिलोगभी निजनिज स्थानमें पधारे। ऋषिगण पूर्व्ववत् क्रियादि करने लगे। देवलोकमें सम्पूर्ण जीव आनन्द भोगने लगे। अग्नि भी शाप से मुक्त होकर अति प्रसन्न हुए। भगवान् हुताशन को इस प्रकारसे भृगु का शाप लगा था। यह अग्निके शाप-सम्बन्धी इतिहास पुलोमा राक्षस का नाश और च्यवन की उत्पत्ति कही गई।

आदिपर्व्वमें सातवां अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि हे ब्रह्मन्! भृगुनन्दन च्यवन ने सुकन्या नाम्नी स्त्री के गर्भ में प्रमति नामक एक तेजोपूर्ण महात्मा पुत्र उत्पन्न किया। प्रमति ने भी घृताची के गर्भ में रुरु नामक पुत्रोत्पादन किया, रुरुने प्रमद्वरा के गर्भ में शुनक नाम पुत्रका जन्म दिया। हे ब्रह्मन्! मैं उस अति तेजस्वी रुरु के चरित्र का सम्पूर्ण वृत्तान्त कहता हूं, श्रवण कीजिये। हे विप्रर्षि! पहिले विद्वान्, तपस्वी और सर्व्व भूतों के हितैषी स्थूलकेश नाम से प्रसिद्ध एक महर्षि थे उन दिनों में गन्धर्व्वराज विश्वावसु के मिलन से मेनका नाम्नी अप्सरा गर्भवती हुई थी। अनन्तर निर्द्दयी, निर्ल्लज्जा मेनका यथाकाल में गन्धर्व्वराजके औरस जात उस गर्भ को स्थूलकेश ऋषिवर के आश्रम के निकट नदीतट पर गिराकर चली गई। आगे उस तेजस्वी स्थूलकेश ऋषिने निर्ज्जन नदीतट पर छोड़ी वस्तुओं से उजाड़ी उस देवकन्यासी परम सुन्दरी कन्याको देखा। ऋषिश्रेष्ठ स्थूलकेशने उस नवजात कन्या को देखकर दयावश होकरके और पालने लगे। वह सुन्दरी

पवित्र आश्रम में बढ़ने लगी। महाभाग महर्षि स्थूलकेशने क्रमानुसार विधिपूर्व्वक कन्यावत् उसकी जात-कर्म्मादि क्रिया निर्व्वाह कराई। वह कन्या रूप, स्वत्व तथा गुणादिमें सम्पूर्ण प्रमदाओं से अच्छी होने लगी, इस लिये महर्षिने उसका नाम प्रमद्वरा रख दिया।

अनन्तर एक समय धर्म्मात्मा रुरु उस आश्रम में प्रमद्वरा को देखकर काम से पीड़ित हुए। आगे रुरुने अपने प्यारे साथीसे पिता के समीप अपना अभिप्राय प्रगट करवाया। प्रमति ने भी यशस्वी स्थूलकेश जीसे वह कन्या प्रार्थना की। प्रमद्वरा के पिता स्थूलकेशने रुरु के निमित्त वह कन्या दे दी। उत्तर फाल्गुनी नक्षत्र में उनके विवाह का दिन ठहरा अनन्तर विवाहके कई दिन पहिले अलौकिक रूपवती वह कन्या सहेलियों के सङ्ग खेल रहीथी। उसके क्रीड़स्थल में टेढ़े भाव से एक लम्बा सर्प सोया था। पर प्रमद्वरा ने उसे न देख कर मृत्यु-काल आजानेपर मानों काल-प्रेरणासे उस सर्प पर पैर रखा; सर्पनेभी उस न जानती-हुई बाला की देह में विषैले दातों से काटा। प्रमद्वराके सर्पसे काटी जाते ही उसका रङ्ग बदला, शोभा बिगड़ी, केश बिखरे, गहने गिरे, चेतना जाती रही, चेहरा देखने-योग्य न रहा, प्राण छूटा, एकायक देह धरती पर लोट-पड़ी और स्वजनों के चित्त शोक से जलने-लगे। जान पड़ने लगा, कि मानों वह सर्प-विष-जली बाला धरतीरूपी सेज पर सोती है; सो मरने पर भी उस सुमध्यमाने पुनः सुन्दर शोभा धारण की। स्थूलकेश और दूसरे तपस्वियों ने पद्मिनी के समान धरती पर लेटी हुई उस अचेत कन्या को देखा।

अनन्तर ब्राह्मण लोग दयायुक्त होकर उसे देखने को उपस्थित हुए। स्वस्त्यात्रेय, महाजानु, कुशिक, शङ्खमेखल, उद्दालक, कठ, श्वेत, अति यशस्वी भरद्वाज, कौणकुत्स्य, आर्ष्टिषेण, गौतम, प्रमति, उनके पुत्र रुरु और दूसरे वनवासी लोग आकर उस कन्या को सर्पविषसे जली हुई। और प्राणहीन देख कर रोने लगे। आगे रुरु अति शोकाकुल होकर वहां से अन्यत्र चले गये।

आदि पर्व्वमें आठवां अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि महात्मा ब्राह्मणोंके उस स्थानमें बैठने पर रुरु अति दुःखी होकरके घने वनमें घुसकर रोने लगे; और अति शोक से विवश होकर करुण स्वर से अनेक विलाप करते हुए प्यारी प्रमद्वरा को स्मरण करके शोकसे कहने लगे, "मेरा शोक बढ़ानेवाली वह क्षीणाङ्गी धरती पर सोती है, मेरे और मेरे मित्रों के लिये इस से क्या अधिक दुःख होगा! यदि मैंने दान और गुरु जनों की अच्छी सेवा की हो, तो मेरी प्यारी जी उठे और यदि मैं जन्म से व्रतशील और जितेन्द्रिय रहा हूं, तो आजही यह सुन्दरी प्रमद्वरा उठ खड़ी हो।

वन में रुरु, स्त्री के निमित्त शोकाकुल होकर ऐसा विलाप कर रहे थे कि ऐसे समय में देवदूत आकर उनसे यह बात बोले, "हे धर्म्मात्मन् रुरो! तुम दुःखी होकर जो कुछ कह रहे हो, सब व्यर्थ है, क्योंकि जिसकी आयु पूरी हो गई है, वह कभी जीती नहीं। अप्सराके गर्भजात इस गन्धर्व्वकन्या की आयु पूरी हुई है, अतएव बेटा। तुम शोक से चित्त को बिकल मत करो, परन्तु महात्मा देवताओंने इसके लिये एक उपाय स्थिर किया है, यदि वह करना चाहो, तो प्रमद्वरा को पा सकोगे।" रुरु बोले, "हे देवदूत! देवताओं ने क्या उपाय ठहराया है, सच कहो; उसे सुनकर उसके अनुसार कार्य्य करूंगा, मुझे बचाओ।" देवदूत बोले, "हे भृगुनन्दन

रुरो। तुम उस कन्या को अपनी आयु का आधाभाग दो, ऐसा करने ही से तुम्हारी पत्नी प्रमद्वरा जी उठेगी।" रुरु बोले, "हे खेचरोत्तम। मैं उस विलासिनी कन्या को आयु का अर्द्धभाग देता हूं; मेरी प्यारी प्रमद्वरा शृङ्गार, रूप और आभूषणोंसे सुशोभिता होकर फिर जी जावे।"

सूतजी बोले, कि अनन्तर देवदूत और गन्धर्व्वराज दोनों धर्म्मराज के समीप जाकर बोले, "हे धर्म्मराज। यदि आप अनुमति करें, तो रुरु की मरी स्त्री प्रमद्वरा रुरुकी आधी आयु लेकरके कुशल लाभकर जी जासके।" धर्म्मराज बोले, "यदि तुम ऐसाही चाहते हो, तो रुरु की भार्य्या प्रमद्वरा रुरु की आधी आयु पाकर फिर जी जावे।" धर्म्मराजके ऐसा कहने पर, वरवर्णिनी प्रमद्वरा रुरु की आधी आयु पाकर मानों निद्रा से जगने के समान उठ बैठी। भविष्यत् में भी यह देखने में आवेगा, कि तेज-भरे रुरु जीकी दीर्घ आयु-का आधा अंश भार्य्या के निमित्त क्षय हुआ था।

अनन्तर रुरु और प्रमद्वरा के पिता प्रमति तथा स्थूलकेशने अति आनन्द से वाञ्छित दिन में उनका विवाह कर दिया। वह दम्पति परस्पर के हित-वाञ्छी होकर क्रीड़ा करने लगी। कमलकेश के समान रूपवती दुर्लभा भार्य्याको पाकर रुरुजी ने सर्पकुल को नष्ट करने का प्रण ठाना। सर्प देखतेही वह अति क्रोधवश होकर लाठी से अपनी शक्ति के अनुसार उसे नष्ट करते थे। कए दिन उन्होंने घने वन में घुस कर देखा, कि एक बूढ़ा डोंढ़-साप सोता है; उसे देखकर क्रोधित होकर यमदण्ड के समान कुबड़ी उठा करके उसको नष्ट करने को चले। यह देख कर डोंढ़ बोला, "हे तपोधन। आज मैंने तुम्हारी कोई हानि नहीं की, सो क्यों क्रोधवश होकर मुझ को मारते हो?"

आदिपर्व्व में नौवां अध्याय समाप्त।

रुरुजी बोले, "हे भुजङ्ग। एक सर्पने मेरी प्राणप्यारी भार्य्या को डंसा था, इससे मैंने यह भयानक नियम किया है, कि जब जिस सर्प को देखूंगा, तभी उसको नष्ट करूंगा, इस लिये मैंने तुम्हें मारने की इच्छा की है, आज तुम प्राण खोओगे।" डोंढ़ बोला, "हे ब्रह्मन्। जो सर्प मनुष्यों को डंसते हैं, वे दूसरी जाति के हैं, अतएव सर्प नामकी गन्ध पाते ही विन-विष डोंढ की हिंसा करनी उचित नहीं हैं। डोंढ़ जाति दूसरी जातियोंके सर्पों से भिन्न प्रकारका सुख भोगती है और इन दोनोंके लाभ के विषय भी अलग अलग हैं। पर अमङ्गल और दुःख भोगने के काल में दोनों समान हैं, अतएव धर्म्मशास्त्र में पण्डित होकर डोंढ-जाति की हिंसा करनी आपको नहीं चाहिये।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि महर्षि रुरुने सर्पकी ऐसी बात सुन कर उसको भय से जकड़ा हुआ डोंढ़ जानके वध नहीं किया। भगवान् रुरु उसको ढाड़स देकर बोले, "हे भुजङ्ग। मुझसे बोलो, कि तुम कौन हो, और किस कारण ऐसी दशाको प्राप्त हुए हो। डोंढ़ बोला, "हे रुरो। मैं पहिले सहस्रपाद नामक ऋषि था, आगे ब्रह्मशाप से सर्प बना हूं।" रुरु बोले, "हे सर्पश्रेष्ठ। ब्राह्मन ने क्रोधित होकर किस हेतु तुमको शाप दिया था? और तुम कितने दिनोंतक सर्प-शरीर को आश्रय किये रहोगे?"

आदिपर्व्व में दशवां अध्याय समाप्त।

डोंढ़ बोला, "पहिले खगम-नामक वादी, तपोबली ब्राह्मण मेरे मित्र थे। ५

वह अग्निहोत्र याग में आसक्त थे, ऐसे समय में मैने बाल-स्वभावसे खेलता हुआ एक तृण का सर्प बना कर उनको डरवाया, इससे वह एक-बारगी मुर्च्छित हो पड़े। आगे वह व्रतशील, सत्यवादी तपोधन चेतना पाकर, मानों मुझको कोपाग्नि से जलाकर बोले, 'तुमने जिसप्रकार मुझको भारी भय में डालने के निमित्त वीर्य्य-रहित तृण का सर्प बनाया है, तिस प्रकार मेरे शाप से वीर्य्य-रहित सर्प होगे।' हे तपोधन! मैं उनकी तपस्या की सामर्थ से विदित था, इस हेतु उस काल में अति चिन्तित चित्त से सम्मानपूर्व्वक प्रणामकर दोनों हाथ जोड़के सामने खड़े होकर उस वनवासी ऋषि से बोला, 'हे ब्रह्मन्। मैंने मित्र कहके, खेल के निमित्त हंसी में ऐसा किया है, सो मुझे क्षमा करके यह शाप निवृत्त करें।' अनन्तर वह तपोधन मुझे अति उदास देखकर बारबार गर्म सांस लेते व्यथित होकर बोले, 'हे तपो-निधे। मैंने जो बात कही है, वह कभी झूठी होने की नहीं है, अतएव जो कहता हूं सुनो। हे अनघ। मेरी यह बात सदा स्मरण रखना, कि प्रमति के रुरु नामक शुद्धाचारी एक पुत्रवर उत्पन्न होंगे, उनको देखकर शीघ्रही तुम मेरे शाप से मुक्त होगे। आपही वह प्रमतिपुत्र प्रसिद्ध रुरुजी हैं, अतएव मैं इस समय अपना स्वरूप पाकर आपको कुछ हितोपदेश करूंगा। सूतपुत्रजी बोले, कि यह कहकर वह यशस्वी द्विजवर सर्परूप छोड़कर अपना सुन्दर शरीर प्राप्त हुए और अति तेजस्वी रुरुजी से बोले, "हे सर्व्वजीवश्रेष्ठ! अहिंसाही परम धर्म्म है, अतएव ब्राह्मण हो करके किसी जीव की हिंसा न कीजिये। सुना है, कि ब्राह्मण को शान्तचित्त वेद-वेदाङ्गविद और सर्व्वभूतों का अभयदाता होना चाहिये। अहिंसा, सत्यवचन, क्षमा और वेदाभ्यास, यह कई ब्राह्मणके परम धर्म्म हैं। दण्डधारण, उग्रता और प्रजापालन रूपी जो क्षत्रियके धर्म्म हैं, वह आपके लिये मङ्गलदायी नहीं हैं, वह क्षत्रिय ही के कार्य्य हैं, हे द्विजोत्तम रुरो! आप श्रवण कीजिये। पूर्व्वकाल में राजा जनमेजय ने सर्पयज्ञ में सर्पों की हिंसा की थी, पर तपोवीर्य्यबल, वेदवेदाङ्ग विद, द्विजश्रेष्ठ आस्तीक मुनिसे भयार्त्त सर्पों की रक्षा हुई थी।"

आदिपर्व्व में ग्यारहवां अध्याय समाप्त।

रुरुजी बोले, "हे द्विजश्रेष्ठ। राजा जनमेजय ने किस हेतु और किस प्रकार से सर्पों को नष्ट किया था? धीमान् आस्तीक मुनिही ने फिर किस हेतु उनकी रक्षा की थी? मैं वह सब सुनना चाहता हूं।" ऋषिवर बोले, हे रुरो। तुम ब्राह्मणोंके मुखसे अति महत् आस्तीक-वृत्तान्त सुन लेना।" सूतपुत्र बोले, कि यह कह कर वह ऋषि गायब हुए। रुरु उस ऋषि को आगे न देखके उनकी खोज में उस वन में चारों ओर दौड़ने लगे, अन्तमें थक कर धरती पर गिर जाकर मोहयुक्त तथा अचेतनसे बने और बीच बीच में उस ऋषि के विषयमें सोचने लगे। अनन्तर उन्होंने चेतना पाकर पिता के समीप आ करके सम्पूर्ण वृत्तान्त और आस्तीकजी की कथा पूछा। उनके पिताने भी प्रारम्भ से अन्त तक सम्पूर्ण कह सुनाई।

आदिपर्व्व में बारहवां अध्याय और सर्पयज्ञ-प्रस्तावना नामक पौलोमपर्व्व समाप्त।

श्रीशौनकजी बोले, "हे सूतनन्दन। भूपालों में सिंहरूपी राजा जनमेजय ने किस हेतु सर्प यज्ञ का अनुष्ठान कर सर्पोंको नष्ट किया था, और द्विजश्रेष्ठ तपस्वी आस्तीकमुनि ही ने किस कारण से प्रज्वलित अग्नि से सर्पों की रक्षा की थी, उन सबों का सच्चा हाल विशेष करके वर्णन करो। जिस राजर्षि ने सर्पयज्ञ का

अनुष्ठान किया था, वह किसके पुत्र हैं? और वह द्विजवर आस्तीक ही फिर किसके पुत्र हैं? यह मुझसे बोलो।" सूतपुत्र बोले, "हे वाग्मिन्। मैं अति बृहत् आस्तीकवृत्तान्त को विशेष करके सम्पूर्ण कीर्त्तन करता हूं, श्रवण कीजिये।" श्रीशौनकजी बोले, पुरातन ऋषि ब्रह्मनिष्ठ आस्तीकजी की यह मनहरणी कथा विस्तृत रूपसे सुनना चाहता हूं।" सौति जी बोले, "हे शौनक। ब्राह्मण गण इस इतिहास को पुराण करके कीर्त्तन किया करते हैं। पहिले व्यासदेव के शिष्य बुद्धिमान सूतकुलोद्भव मेरे पिता लोमहर्षण जीने नैमिषारण्यवासी ब्राह्मणों से पूछे जाकर महाराज श्रीकृष्णद्वैपायन जी का रचा हुआ यह उपाख्यान कीर्त्तन किया था। मैं उनके मुखसे जैसा सुन चुका हूं, आपके प्रश्नानुसार उस सर्व्वपापनाशी आस्तीक-उपाख्यानको ठीक उसी प्रकारसे ज्यों का त्यों वर्णन करता हूं।"

आस्तीक जीके पिताका नाम जरत्कारु है। वह ब्रह्माके समान प्रभावी ब्रह्मचारी, नियमित भोजी, महातपस्वी, सदा कठोर तप में नियुक्त, ऊर्द्धरेता, यायावरवंशतिलक, धर्म्मज्ञ, व्रतशील और तपोबली थे। वह महात्मा मुनिवर सदा यत्र-सायं गृह हो करके (अर्थात् जहां कहीं सन्ध्या उपस्थित हो, वहीं रहके) भूमण्डल में भ्रमण करते थे। बीच बीच में तीर्थस्नान और तीर्थाटन करते रहे। प्रज्वलित अग्निके समान महातेजःप्रभावी वह ऋषि कभी गलितपत्रभोजन कर, कभी वाताहार कर, कभी आहार त्याग-कर, शरीर सुखाकर, निद्रा छोड़कर, घूमा करते थे। एक दिन उन्होंने भ्रमण करते हुए देखा, कि उनके पितामहगण एक बड़े गढ़े में लटके हैं, उनके पैर ऊपर और मुह नीचे को ओर हैं। जरत्कारु ने यह देखतेही पूछा, "तुम कौन हो? और किसहेतु इस गड्हे में सदा छिपे-रहनेवाले मूषों से प्रायः काटे हुए खसखस के गुच्छे में लटककर नीचे मुह किये रहते हो?" पितरों ने कहा, "हम यायावर नामक व्रतशील ऋषि हैं। हे ब्रह्मन्। वंश लोप होनेकी सम्भावना से हमारी अधो-गति हो रही है। पर इन बुरे भाग्यवालों की जरत्कारु नामक एक दुर्भाग्य सन्तान है। उस मूर्ख ने केवल तपही को आश्रय किया है, पुत्रोत्पादन के निमित्त विवाह करना नहीं चाहता। अतएव वंशलोप की सम्भावना होने पर हम इस गड्हे में लटके हुए हैं। हम-लोग नाथ रहने पर भी पापिष्ठ के समान अनाथ होकर नीचे गिर रहे हैं। हे निष्पाप साधु-शिरोमणि। तुम कौन हो, कि हमारे मित्र के सदृश चिन्ता करते हो? हे ब्रह्मन्। हम जानना चाहते हैं, कि तुम कौन हो और किस हेतु हमारी शोचनीय दशा देख करके यहां खड़े होकर शोक प्रकाश कर रहे हो?" जरत्कारुजी बोले, "मेराही नाम जरत्कारु है, आपलोग मेरे ही पितृपितामहादि पूर्व्वपुरुष हैं; इस समय आज्ञा कीजिये, कि मुझको क्या करना होगा।" पितृगणबोले, "बेटा। तुम हमको, अपनेको और धर्म्मको बचाने के निमित्त सचेष्ट हो करके हमारा वंश बढ़ाओ; हे तात। पुत्रवान् पुरुष जैसी सद्गति प्राप्त करते हैं दूसरे बहुदिनों के बटोरे हुए तप अथवा दूसरे पुण्यफल से भी तैसी सद्गति पा नहीं सकते। हे पुत्र। इस हेतु तुम स्त्रीग्र-हण और सन्तानोत्पादन में चित्त लगाओ। हम तुमको आज्ञा करते हैं, कि यही हमारा परम कल्याणकारी होगा। जरत्कारुजी बोले, "मैं भोगके निमित्त स्त्रीग्रहण वा धनार्ज्जन न करूंगा, पर आपके हितानुष्ठान के लिये विवाह करूंगा। कन्या यदि मेरे नाम की हो, और उसके बन्धुवर्ग स्वेच्छापूर्व्वक दान करें, तो उस कन्या को भिक्षा के समान ग्रहण कर विधि-पूर्व्वक विवाह करना स्वीकार करता हूं। इस

नियमके अनुसार यदि कन्या पाऊंगा, तो आपकी आज्ञा अन्यथा न होगी मैं विधिपूर्व्वक विवाह करूंगा। पर हे पितृगण! मैं दरिद्र हूं, कौन मुझे कन्यादान करेगा ? परन्तु यदि कोई दान करे, तो मैं अवश्य ही उसको लूंगा, इसमें सन्देह नहीं उससे जो पुत्र उत्पन्न होंगे, वह आपको उद्धार करेंगे। जिससे आपलोग भी शाश्वतस्वर्ग लाभ कर परम आनन्द से समय बितावेंगे।"

आदिपर्व्व में तेरहवां अध्याय समाप्त।

सौतिजी बोले, कि अनन्तर वह ब्रह्मचारी व्रतशील जरत्कारु, संसार-आश्रम में प्रवेशार्थ विवाह करने के निमित्त धरणीमण्डल घूम आये, पर किसी स्थान में भी योग्य-पत्नी प्राप्त नहीं हुए। एक समय उन्होंने कन्याभिक्षार्थ वन में प्रवेश कर पितृवाक्य स्मरण करके कुछ चिल्लाकर तीन वार प्रार्थना की बातें कहीं, उस समय नागराज वासुकि उनको अपनी भगिनी ग्रहण करानेको उद्यत हुए। पर उस कन्या को अपने नाम की न समझकर महात्मा जरत्कारु एकायक ग्रहण न करके सोचने लगे, कि मैंने यह प्रतिज्ञा की है, कि यदि कन्या निज नाम की हो और उसके बन्धुगण स्वेच्छा-पूर्व्वक दान करें, तभी ग्रहण करूंगा। ऐसी चिन्ता कर वह महाप्राज्ञ तपःप्रभावी जरत्कारु जी वासुकि से बोले, "हे भुजङ्ग। सच बोलो, तुम्हारी इस बहिन का क्या नाम है?" वासुकि बोले, "हे जरत्कारो। मेरी इस अनुजा का नाम जरत्कारु है, मैं इस सुमध्यमाको दान करता हूं, भार्य्यार्थ ग्रहण करो। हे द्विजोत्तम। मैंने इस भगिनी को तुम्हारे निमित्त रख छोड़ा है, प्रतिग्रह करो।" वासुकिने यह बात कह कर उनको अपनी सुन्दरी भगिनी सम्प्रदान की। जरत्कारुने भी वेद विधि के अनुसार विवाह के संस्कार-कर्म्मों के पश्चात् उस कन्या से विवाह किया।

आदिपर्व्वमें चौदहवां अध्याय समाप्त।

सौतिजी बोले, हे वेदनिपुण। पहिले सर्प माताने सर्पों को यह शाप दिया था, कि "महाराज जनमेजय के यज्ञमें अग्निदेवता तुमको जलावेंगे।" नागराज वासुकि ने उस शाप की शान्ति के निमित्त व्रतशील, तपस्वी जरत्कारु ऋषि को बहिन दान की। जरत्कारु ने भी वेदविधि के अनुसार उससे विवाह किया। कुछ कालान्तर उस कन्याके गर्भमें आस्तीक नामक एक पुत्रवर उतपन्न हुए। वह वेदावेदाङ्ग में पण्डित, तपस्वी, महानुभाव सर्व भूतों को तुल्य देखनेवाले और पितृमातृ कुलों के भयनाशी हुए थे। अनन्तर बहुदिनों के पश्चात, पाण्डवनन्दन नरेश जनमेजयने वेदके अनुसार सर्पयज्ञ नामक महायज्ञ का प्रारम्भ किया। सुना जाता है, कि सर्पकुल को नाश करने के निमित्त उस यज्ञ के आरम्भ होने पर महातपस्वी आस्तीकने भाई, मामा और दूसरे सर्पों को सर्प-माता के शाप से बचाया था। और वह सन्तानोत्पादन तथा तपस्या से पितरों को उद्धार कर और व्रत, पाठ और वंश वृद्धि कर उनके निकट उऋण भी हुए; एवं भांति भांति के दक्षिणायुक्त यागों से देवताओं के और ब्रह्मचर्य्य से ऋषियों के ऋण-से मुक्त हुए थे। हे भृगुश्रेष्ठ। व्रतशील जरत्कारु इस प्रकार से पितरोंके कठिनभार को पालन कर और आस्तीक नामक पुत्र पाकर धर्म्माज्जन करके बहुतदिन पीछे पितरों के साथ शाश्वतस्वर्ग प्राप्त हुए। मैं यह आस्तीक का आख्यान ठीक ठीक कह गया; अब आज्ञा कीजिये, कि फिर क्या कहूं।

आदिपर्व्व में पन्द्रहवां अध्याय समाप्त।

शौनकजी बोले, "हे सूतनन्दन। साधु स्वभावी आस्तीक ऋषि की कथा फिर विस्तृत-रूप से वर्णन करो; इसे सुनने की मुझे बड़ी इच्छा है। विशेष करके तुम जो कुछ कहते जाते हो, वह बड़ी मीठी और सुन्दर जान पड़ती है। तुम अपने पिता के समान जिस प्रकारसे पुराण कह रहे हो, उससे हमलोग बड़ी प्रसन्नता लाभ कर रहे हैं; तुम्हारे पिता सदा हमारी सेवा के निमित्त जिसप्रकार पुराण कीर्त्तन करते रहे, तुम भी ठीक उसी प्रकार कहे जाओ।"

श्रीसौतिजी बोले, कि हे सदाजीविन्! मैंने यह आस्तीक-कथा पिताजी से जैसे सुनी, ठीक वैसे ही कहे जाता हूं; सुनिये। पहिले सत्ययुग में कद्रु और विनता नाम्नी आश्चर्य्य रूपवती, सुन्दर लक्षणों से सुहाती दो कन्या थीं। वे दक्ष प्रजापति की पुत्री और कश्यप मुनि की स्त्री थीं। प्रजापति सदृश कश्यप ने उन दोनों धर्म्मपत्नियों पर अति प्रसन्न होकर उनको इच्छानुरूप वर देना चाहा। उनकी स्त्रियोंने भी पति से अभीष्ट वर पानेकी बात सुनकर हृदयमें अति प्रीति और प्रफुल्लता लाभ की। पहिले कद्रूने प्रार्थना की, कि मेरे गर्भ से तुल्यतेजोवान् सहस्र नाग उत्पन्न हों। विनता ने प्रार्थना की, कि बल, प्रभाव, सुन्दरता, और तेज में कद्रू के पुत्रोंसे श्रेष्ठ केवल दोही पुत्र मेरे गर्भ से जन्म लें। विनता ने कश्यप से प्रार्थनाके अनुसार पुत्र का वर पाकर उनसे "एवमस्तु" कह करके प्रार्थित वरलाभ से प्रसन्न हो कर अति वीर्य्यवान् दो पुत्रों के पाने की आशा में सफलता लाभकी। कद्रूने भी तुल्य प्रभावी एक सहस्र पुत्रों का वर पाकर अपनेको कृतार्थ समझा। अनन्तर महातपस्वी कश्यपजी इच्छानुरूप वर पाने से सन्तोष लाभ की हुई दोनों पत्नियों को यह कह कर कि "तुम अति यत्नसे गर्भ धारण किये रहना" वन को पधारे।

श्रीसौतिजी बोले, बहुतदिनों के पश्चात् कद्रु ने एक सहस्र अण्डे और विनता ने दो अण्डे प्रसव किये। तब सेविकाओं ने प्रफुल्ल हृदय से उन अण्डोंको गर्म भांड़ीमें पांच सौ वर्षों तक रखा। अनन्तर कद्रु के अण्डों से सहस्र पुत्र उत्पन्न हुए, परन्तु विनताके अण्डे उसी दशा में रहे। इससे तपस्विनी देवी विनताने लज्जा पाकर पुत्र पाने के निमित्त एक अण्डे को स्वयं तोड़कर देखा, कि पुत्र का पूर्व्वार्द्ध शरीर मात्र उत्पन्न हुआ है, शेषार्द्ध अभीतक प्रकाशित नहीं हुआ है। सुना जाता है, कि उस पुत्रने क्रोधित होकर विनता को यह शाप दिया; कि हे माता! तुमने पुत्र देखने के लोभ से जैसे मेरे अङ्ग बिगाड़ दिये, वैसेही जिससे अहङ्कार दिखा रही हो, उसी कद्रु ही की पांच सौ वर्षों तक दासी बनी रहोगी। माता! यदि तुम इस दूसरे अण्डे को भी फोड़ कर उस यशस्वी पुत्र को भी अङ्गहीन वा विकलाङ्ग न करो, तो वह होनेवाला पुत्र तुम को दासीपन से मुक्त करेगा। हे माता! यदि तुम अण्डेके भीतर के पुत्र का विशेष-बल चाहती हो, तो धैर्य्यके साथ पांच सौ वर्षों तक उस पुत्र के जन्म को समय ताकती रहो।

अरुण ने विनता को इस प्रकार शाप देकर आकाश-मार्ग में चढ़ करके सूर्य्यके सारथिका कार्य्य प्रारम्भ किया। हे ब्रह्मन्! सदा प्रातः काल में वह अरुण सूर्य्यके रथ पर दिखाई देता है। आगे उचित समय पर सर्पभोजी गरुड़ भी उत्पन्न हुए। हे भृगुशार्दूल! वह पक्षीराज जन्म लेते ही अति क्षुधित होकर विनता को छोड़करके विधाता के नियमित भोजन की खोज में आकाश-मार्ग में चढ़ गये।

आदिपर्व्व में सोलहवां अध्याय समाप्त।

सूतजी बोले, कि हे तपोधन। उस काल में एक दिन कद्रु और विनता दोनों बहिनियों

ने देखा, कि अमृत मथने के काल में जो सर्व्व-श्रेष्ठ अश्वरत्न उत्पन्न हुआ था, सम्पूर्ण देवताओं ने जिस सुन्दर-मूर्त्ति अश्व की प्रशंसा की थी, जो सर्व्व लक्षणयुक्त, अजर, अति बलशाली, देवतावाहन श्रीमान् अश्वराज धरती भर में श्रेष्ठ है, वही उच्चैःश्रवा उनके पास से चला-जाता है।

श्रीशौनक जी बोले, "हे सूत! हमसे कहो, कि देवताओं ने कहां और क्यों समुद्र मथन किया था, जिससे वह महावीर्य्यवान् और अति सुहावना अश्वराज उच्चैःश्रवा उत्पन्न हुआ? सौति जी बोले, कि जलती हुई ज्योति को भांति सुमेरु नामक एक अति सुन्दर पर्व्वत सोनेसे मढ़ी हुई चोटी से सूर्य्य की प्रभा रोक कर खड़ा है, उसके भीतर का सुन्दर सुवर्ण ही उसके आभूषण के समान हुआ है। उस पर्व्वत पर देवता और गन्धर्व्वलोग विराजमान हैं, उसे माप कर अन्त पाने की सामर्थ किसी की नहीं है। अधर्म्मी लोग उस पर पैर भी रख नहीं सकते; वह पर्व्वत घोररूप, भयानक सर्पों से घेरा हुआ और सुन्दर औषधियों से सुशोभित है; उस महागिरिने ऊंचाई में आकाशमार्ग को ढांप रखा है; कोई प्राकृत पुरुष वहां मनसे भी पहुंचने की सामर्थ नहीं रखता; वहां अगणित नद, नदी, वृक्ष सुशो-भित हैं और भांति भांति के कीड़े मकौड़े मीठे कलरव मचा रहे हैं। नागलोक के तपोनियम-युक्त महातपस्वी सम्पूर्ण देवता एकत्र होकर उस पर्व्वतकी आकाशसमान, सीमा-रहित और विविध रत्नों से सुहावनी मनहरणी चोटी पर चढ़के बैठ कर अमृत लाभ के निमित्त परामर्श करने लगे। देवतागण चिन्तायुक्त होकर चारों ओर युक्ति कर रहे थे, ऐसे समय में भगवान् विष्णुने ब्रह्माजीसे यह बात कही, कि सुर और असुरलोग मिलकर महासागर को कलसे के समान करके मथन करें, समुद्र मथने से अवश्यही अमृत निकलेगा। वे सर्व्व औषधि और सर्व्व रत्न पाने पर भी न रुक कर मथन करते जायं, तो अन्त में अमृत प्राप्त करेंगे।

आदिपर्व्व में सतरहवां अध्याय समाप्त।

श्रीसौतिजी बोले, कि अनन्तर समुद्र मथन के मथनदण्ड करने के निमित्त सब देवताओंने मिलकर बड़ी ऊंची ऊंची चोटियोंमें सुशो-भित लताजालों से वेष्टित, विविध पक्षीपूरित कराल-सर्पजन्तुओंसे आकलित, किन्नर देव, देवबालाओं से सेवित, ऊंचाई में ग्यारह योजन खड़े, ग्यारह योजन नीचे गड़े, सब पर्व्वतों से बड़े मन्दर को उखाड़ने की चेष्टा करी, पर किसी प्रकार सफलमनोरथ होनहीं सके। अन्तमें उन्होंने ब्रह्मा और विष्णु जीके समीप जाकर कहा, कि आप हमारे हित करने के निमित्त मन्दर पर्व्वतको उखाड़ने की आज्ञा दीजिये।

अनन्तर महाबली अनन्तने उठ कर वनोंसे भरे और कराल सर्पजन्तुओंसे घेरे उस पर्व्वत राज मन्दर को बल से उखाड़ा। आगे देव गण उनके साथ समुद्रतट पर उपस्थित हुए और समुद से कहा, कि हम अमृत के निमित्त तुम्हारा जल मथन करेंगे।--समुदने कहा, कि यदि मुझको अमृत का अंश देना स्वीकार करो, तो मन्दरपर्व्वत की कठिन रगड़ सह ले सकता हूं। समुद्र की इस बात पर सुरासुर लोग सम्मत हुए और वे सागरतट पर खड़े होकर कूर्म्मराज से बोले, "हे कूर्म्मराज! तुम इस मन्दर का अवलम्ब बने रहो, नहीं तो जल में वह डूब जायगा। कूर्म्मराज ने "तथास्तु" कह कर पीठ पर मन्दर को रखा। इन्द्रजी कूर्म्मके पीठ पर उस मन्दरपर्व्वत को यन्त्रसे घुमाने लगे। देवता और असुर अमृत के निमित्त मन्दर को मथनदण्ड और वासुकि को मथन-रस्सी बना कर समुद्र मथने लगे। जिस

और वासुकि का मुख था, उधर दानव और जिस ओर उसकी पूछ थी, उधर देवतालोग पकड़ कर मथने लगे, अनन्तदेव नारायण के स्वरूप हैं, इस हेतु नारायण अनन्तदेव का मुख उठाकर विष की तेजी सहने लगे। अनन्तर सुरोंसे चलाये जाते हुए वासुकिके मुखसे प्रतिक्षण धूआं और अग्निशिखायुक्त श्वासवायु निकलने लगी। वह धूंआ बिजलीयुक्त मेघ बनकर थके मांदे उदासे देवताओं पर बरसने लगा। चारों ओर सुरासुरों पर मन्दरगिरि की चोटी पर से पुष्प-वृष्टि होने लगी। देव-दानवों से मन्दर के सहारे मथे जाते हुए समुद्रसे बादल की ध्वनिके सदृश महाशब्द उठने लगा और समुद्र में रहनेवाले सैकड़ों जलजन्तु और पाताल-तलवासी वरुणलोक वाले वे जीव जिनके देह में जल-भाग प्रधान हैं, मन्दर से हिलोडे जाकर लय पाने लगे। उस घूमते हुए पर्व्वत-शिखर पर के वृक्ष आपस में घिस कर पक्षियों-समेत गिरने लगे। जैसे बिजलीके दलसे नीलजलद घेरा जाता है, वैसे वृक्षादि की रगड़ से जली, शिखावाली आग से मन्दरपर्व्वत घेरा गया। रगड़ से जली हुई वह आग पर्व्वत परके सब हाथी और सिंहों को तथा दूसरे अनेक भांति के जीवों को, जलाने और मारने लगी। अनन्तर अमरश्रेष्ठ इन्द्रजी बादल से निकले जल से चारों ओर फैले दाहने वाले अग्नि को बुझाने लगे। आगे नानाविध वृक्षों का दूध और पौधों का अपरिमित रस समुद्र-जल में चूने लगा। उस अमृत-सदृश-रसरूपी जल और जले हुए सुवर्ण के प्रभावसे देवताओं ने अमरता लाभ की। जब समुद्रजल उस सुन्दर रससे मिलकर दूध बना, तब उस दूध से घृत बनने लगा। अनन्तर देवगण सुख से बैठे हुए ब्रह्माजी से बोले, "हे ब्रह्मन्। नारायणजी के सिवाय, हम सब, क्या देवता क्या दानव बहुत थक गये हैं। बहुत दिन होगये, समुद्र-मथन शुरू हुआ है, पर अभी तक अमृत नहीं निकला।" देवताओं के इतना कहने पर ब्रह्माजी देवादिदेव नारायणजी से बोले, "हे विष्णो! तुम सुरासुरों को बल दो, इस विषय की तुमही एकमात्र गति हो।" विष्णुजी बोले, "जो लोग समुद्र-मथन कर रहे हैं, मैं उन सबों को बल दे रहा हूं तुम सब समुद्र-रूपी कलसे को हिलोड़ो और मन्दर-पर्व्वत को घुमाते रहो।

श्रीसूतजी बोले, कि नारायण जी का वचन सुन कर देवता और दानव बल पाकरके और मिल जुलके फिर उस समुद्रजल को बड़े वेग से मथने लगे, इससे समुद्र से अगणित किरण-माला पहिरे उजाला-धरे और सुहावने शीतल प्रकाश-घेरे सोम (चन्द्रमा) उत्पन्न हुए; आगे घृत से पद्मासन पर विराजमान लक्ष्मीजी और सुरा-देवी के उपजने पर उसी घृतसे सुफेद घोड़ा और नारायणजीकी छाती में स्थित कौस्तुभ नामक तेज प्रकाशधारी शोभाकारी दिव्य मणि तथा सर्व्व कामनाओं के फलदाता मन्दारवृक्ष और सुरभि उत्पन्न हुई। हे ब्रह्मन्! लक्ष्मी, सुरा, सोम, और मनोजव घोड़ा यह सब आदित्य-पथानुसारी होकर जहां देवगण थे, वहां चले गये। अनन्तर मूर्त्तिमान धन्वन्तरी जी अमृतभरा शुक्ल कमण्डलु लेकर उठ आये। दानव लोग यह आश्चर्य-लीला देख कर यह कहते हुए, कि "यह हमारा होगा, यह हमारा होगा" बड़ा कोलाहल मचाने लगे। अनन्तर श्वेत रङ्गका चार दांतवाला ऐरावत नामक बड़ा भारी हाथी निकला और देवराज उसपर अधिकार कर बैठे। इस परभी न ठहर कर देवताओं के बार बार मथन करने पर धूंआ सहित आगके समान कालकूट विष जग को घेर कर उत्पन्न हुआ। उसको सूंघते ही तीनों लोकके जीवोंकी चेतना जाती रही। तब ब्रह्माजी की प्रार्थना से मन्त्ररूपी भगवान् महे

श्वर ने विष को निगलकर गले में धारण किया और उसी दिन से वह नीलकण्ठ नाम से प्रसिद्ध हुए। दानव लोग यह आश्चर्य लीला देख कर निराश हुए, आगे अमृत और लक्ष्मीके लिये देवताओं से बड़ी शत्रुता प्रगट करने लगे। अनन्तर नारायण जी मोहिनी माया आश्रय करके अपूर्व्व स्त्री-मूर्त्तिधारण-पूर्व्वक दानवों के निकट जा पहुंचे, आगे सब दैत्यों ने उस अपूर्व्व रूपवती युवती को देख करके उस रूप में मग्न होकर और जड़वत् बनकर उनको अमृत दे दिया।

आदिपर्व्व में अठारहवां अध्याय समाप्त।

सौतिजी बोले, कि अनन्तर दानव वृन्द एकत्र होकरके तनुत्राण (जिरह बखतर) पहिन कर अस्त्रादि सहित देवताओं पर चढ़ दौड़ें। इधर वीर्य्यवान् प्रभु नारायण नरदेव से मिलकर दानवों से अमृत हर लाये। देवता लोग भी उस भारी लड़ाई के कालमें नारायण जीसे अमृत पाकर पीने लगे। अमर लोग इच्छानुरूप अमृत पोरहे थे, ऐसे समय में राहु नामक दैत्य देवता का स्वरूप लेकरके वहां आकर अमृत पीने लगा। अमृत राहुत कण्ठ तक पहुंचने पाया था, ऐसे समय में चन्द्र और सूर्य्यने देवताओंके हित करने के लिये वह बात प्रकाश कर दी। राहु का असुरपर प्रगट होने पर भगवान् चक्रधारी ने चक्र से उसी क्षण बलपूर्व्वक उस अमृत पीनेवाले राहुके सुशोभित सिर को धड़से अलग कर दिया। चक्रसे अलग किया हुआ पहाड़ की चोटी सदृश वह दैत्य-मस्तक आकाश में उठ कर बड़ा भयानक शब्द करने लगा। उस दैत्य के सिर-वर्जित शरीरके धरती पर लोटने पर पहाड़, वन और द्वीपों के सहित धरती थरथराने लगी इसी समय से राहुके मुखसे चन्द्र और सूर्य्य को स्थायी शत्रुता बन गई, इसी से राहु बीच बीच में चन्द्र और सूर्य्य को ग्रास कर लेता है इस समय में भगवान् विष्णु सुन्दरी स्त्रीका अनुपम रूप छोड़ कर भांति भांति के भयानक अस्त्रोंसे दानवों को कम्पित करने लगे। अनन्तर समुद्रतट पर देवदानवों में अति घोर युद्ध शुरू हुआ। सहस्रों तेज कटार और नोकदार तोमर आदि भांति भांति के अस्त्र बरसने लगे। आगे असुर लोग चक्र से काटे जाकर रक्त उगलने लगे, कोई कोई खड्ग, शक्ति और गदासे घायल होकर धरती पर लोटने लगे। और असुरोंके गर्म सोने के सदृश रङ्गे हुए सिर कठोर पट्टिस से शरीरोंसे अलगही होकर सदा गिरने लगे। महावीर असुरवृन्द रक्तसे लाल होकर और मारे जाकर धातुओं से रङ्गे पर्व्वत -इनके समान लेटने लगे। सूर्य्य के लाल होने पर उस रणभूमि में आपस में कटते हुए सुरासुरों में हाहाकार मच उठा; रणभूमि में दूरसे बरसते हुए परिघ अस्त्र और निकट के घूसों से एक दूसरे को मारते हुए सुरासुरों की आहट आकाश तक पहुचने लगी। "काटो, चूर करो, पछियाओ, धरती पर गिराओ, खुद आगे बढ़ो" चारों ओर से केवल यही सब आहट सुनाई देने लगी। यह अति घोर युद्ध हो रहा था, कि नर और नारायणदेव रणभूमि में आ पहुंचे। भगवान् नारायणने नरदेव का सुन्दर चाप देखकर अपने दैत्य-नाशी चक्र को स्मरण किया; स्मरण करते ही शत्रुओंके दुःखदायी, सूर्य्यसदृश प्रभावी, न टूटने हारा और रणभूमि में अति कठोर सुदर्शन स्वर्ग से आ पहुंचा। आगे हस्तीसूंड़ समान भुजवान् कठोर वेगवान् नारायणजीने जलती हुई आग के समान भयानक, प्रबल पराये-देश-नाशी अति प्रभाशील उस उपस्थित चक्र को शत्रुदल पर फेंका। तब प्रलयकाल के अग्नि के समान तेजोवान् सुदर्शन पुरुषश्रेष्ठके हाथसे चलाये जाकर, सहस्रों दैत्य-दानवों को बड़े

वेगसे काटता हुआ वार वार गिरानें लगा। कहीं कहीं तो अग्निके समान जलाने लगा, कहीं असुरों को एकायक काटा कूटा और पिशाच की भांति रणभूमि तथा आकाशमें हर घड़ी घूमता घामता रक्त चूसने लगा। बिना जलके बादल सदृश शोभायुक्त महाबली, सहस्रों साहसी असुर आकाश में चढ़कर वार वार पर्व्वतों को गिराकर देबताओं को घायल करने लगे। नाना रङ्ग के मेघ सदृश वनयुक्त भयानक पर्व्वत आपस में लड़कर चूर चूर होकर घोर आहटके साथ गिरने लगे। एक दूसरे को ललकारते हुए घोर भयानक लड़ाई में फंसे देवासुरों की रणभूमि की चारों ओर बड़े बड़े पर्व्वतों के गिरनेसे वन सहित धरती चोट खाकर कांपने लगी। अनन्तर असुरों के साथ उस घोर लड़ाई में नरदेवने सुवर्ण-मढ़े बाणों से पर्व्वतों की चोटो काट काटकर उनसे आकाशतल छालिया। आगे दैत्य लोग देवताओं से मारे काटे जाकर और आकाश में घूमते हुए प्रज्ज्वलित अग्नि के समान सुदर्शन को क्रोधित देखकर पृथ्वीके भीतर और खार समुद्र में जा घुसे। तब देवताओंने जय पाकर मन्दरपर्व्वत का यथोचित सत्कार करके उसको उसके स्थान में जड़ दिया। सम्पूर्ण बादल भो चारों ओर आकाश और स्वर्ग में शब्द मचाते हुए अपने अपने स्थानों को पधारे; पश्चात् देवता लोग अति आनन्द से अमृत रखने लगे। अनन्तर इन्द्रजीने देवताओंसे मिलकर अमृतरक्षाके लिये नरदेव के हाथ में अमृत-भाण्ड को सौंप दिया।

आदि पर्व्व में उन्नीसवां अध्याय समाप्त।

श्रीसौतिजी बोले, हे शौनक जो। जिस प्रकार अति बलशालो अश्वराज उच्चैःश्रवा को उत्पत्ति हुई थी, वह अमृत-मथन की कथा आपको कह सुनाई। उस उच्चैःश्रवा को देखकर कद्रु विनतासे बोली, "बहिनि! जल्द कहोतो सही, यह उच्चैःश्रवा किस रङ्ग का है? विनता बोली, "मै जानती हूं, कि यह उच्चैःश्रवा सुफेद रङ्ग का है। क्यों कल्याणि। तुम क्या समझती हो? तुम्हारी सुनकर मैं इस बारे में बाजी लगाऊंगी।" कद्रु बोली, "री मीठी हंसोड़ि। जान पड़ता है, कि इस घोड़े की पूंछ काले रङ्ग की है। आओ इस बारे में बाजी लगावें, कि जो हारेगी, वह सदा दूसरी की दासी बनी रहेगी।" सौतिजी बोले, कि इस प्रकार कद्रु और विनता आपस में दासीपन की बाजी लगा करके यह कहकर, कि "कल घोड़ा देख लिया जायगा" अपने अपने घरों को पधारी। आगे कद्रुने ठगने की इच्छा से अपने सहस्र पुत्रों को बुलवाकर आज्ञादी, "बेटा। तुम शीघ्र काले लोम बनकर उच्चैःश्रवाको ढांप लो, कि जिससे मुझको दासी बननी न पडे।" कद्रु के ऐसा कहने पर, जिन सर्पों ने उसकी बात न मानी, उनको उसने यह शाप दिया, कि पाण्डवपुत्र बुद्धिमान राजर्षि जनमेजय के सर्पयज्ञ के समय अग्निदेवता तुमको जलावेंगे। कद्रुने क्रोधित होकर दैवसंयोग से सर्पों को जैसा कठोर शाप दियाथा, उसे स्वयं ब्रह्माजीने सुना और सम्पूर्ण देवोंके सहित कद्रु की वह बात अनुमोदन की; क्योंकि कटीले सर्पगण उनदिनों बड़े विषैल और प्रभावी हो गये थे और उनकी संख्याभी बहुत बढ़ी थी। "दूसरों को पीड़ा देनेवाले तेज विषैले सर्पों का अपनो माता से इस प्रकार शाप पाना अनुचित नहीं हुआ, क्योंकि यह प्रजाओं के मङ्गलार्थ ही हुआ था। जो लोग सदा दूसरों की हिंसा किया करते है, वे दैवहीसे प्राणघातकी सजा पा जाते है।"—ब्रह्माजी ऐसा कहकर कद्रुकी बड़ी प्रशंसा करके कश्यप ऋषिजी को बुलवा कर बोले, "हे अनघ! हे परन्तप। जिन तेज विषैले कटीले सर्पों

तुम्हारे औरससे जन्म लिया है, दैवसंयोग से शाप पा गये हैं। बेटा। इस हेतु तुम्हें क्रोधित होना नहीं चाहिये। देखो, सर्पयज्ञ में सर्पों का नाश होगा, यह बात पुराणोंही में प्रसिद्ध है।" सृष्टिकर्त्ता भगवान् ब्रह्माजीने महानुभाव प्रजापति कश्यपको उक्त बातों से प्रसन्न कर विष हरने वाली विद्या दी।

आदिपर्व्वमें बीसवां अध्याय समाप्त।

श्रीसूतपुत्रजो बोले, कि हे तपोधन। दूसरे दिन सबेरे सूर्य्य उगतेही, दासीपन को बाजी लगाये हुई, हिंसा और क्रोध से उकुली हुई कद्रु और विनता दोनों बहिन उच्चैःश्रवा को देखने चलीं, यात्रा करके कुछ दूर चलकर उन्होंने पासही में बड़ा गहरा महासमुद्र देखा। जो समुद्र प्रलयकालिक हवा से हिलोड़े जाकर घोर शब्द मचा रहा है; जो कछुए, घरियार, तिमि, तिमिङ्गल, मकर आदि भांति भांति के सहस्रों जीवों से सदा भरा रहता है; जिसमें नाना प्रकारके भयानक देह-धारी जलचर जन्तुओं के रहनेके कारण कोई उतर नहीं सकता, जो अपार, सोच के बाहर, पवित्र जलधर अपूर्व्व समुद्र सर्व्व रत्नका आधार, वरुणजीका घर, सर्पों का सुन्दर और श्रेष्ठ आगार, वाड़वाग्नि का आधार, असुरों का मित्रवर, स्थलचर जीवोंका भयाकर, जल का अक्षय भाण्डार, देवभोगयोग्य अमृत का मंगल-मय श्रेष्ठ अलौकिक आधार, जलचरों के घोर शब्दसे भयाकर और भयानक शब्दागार, भारी भारी लहरों के कारण घुसने के अपार, सर्व्व-भूतों का भयदायी और तटपर प्रबल वेगसे बहती हुई हवा से चञ्चल हुआ है और हवासे चोट खाने के हेतु लहरों से ऊंचा होकर मानों चारों ओर लहररूपी हाथ उठाकर नाच रहा है; जो सुन्दर रत्नाकर चन्द्रकी घटी बढ़ी के कारण अति ऊंची लहरों से उछल उठता है, जो पाञ्चजन्य शंख की उत्पत्तिका स्थान है; अमित तेजोवान् भगवान् नारायणने भूमण्डलके उद्धारके निमित्त वाराहका स्वरूप लेकर जिसका जल हिलोड़ा और गदला किया था; व्रतशील ब्रह्मर्षि अत्रि सैकड़ों वर्षों में भी जिसके अथाह जलके पाताल-तलके तलतक पहुंच नहीं सके थे; अपरिमित तेजो पूर्ण पद्मनाभ विष्णु प्रलयकाल में योग की निद्रा में जहां सोते हैं, जो समुद्र वज्राघात के भयसे डरे हुए मैनाक पर्व्वत का निर्भय करनेवाला और भयभरे युद्ध में हारे असुरोंका एकमात्र आश्रय तथा वड़वामुखसे प्रज्ज्वलित अग्नि में जल रूपी घृतकी आहुति चढ़ाने वाला हुआ है; जिस लम्बे चौड़े अपरिमित अपार समुद्रवर का तल छुआ नहीं जाता, सहस्रों महानदी जिस समुद्रवरके समीप नायिका की भांति अहङ्कार पूर्व्वक सदा दौड़ रही हैं, वह बहुत जलभरा हुआ, लहरों से नाचता हुआ, अति गहरा, तिमि-मकरादि उग्र जीवों से पूरा, जलचरों के घोर शब्द से गूंजता हुआ, आकाश समान फैला हुआ, अथाह अपार जलसागर कद्रु और विनता को देख पड़ा।

आदिपर्व्व में इक्कीसवा अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवा जी बोले, इधर सर्पों ने सलाह की, कि "माता की आज्ञा पालनी ही पड़ेगी, क्योंकि उसकी अभीष्ट सिद्ध न होनेसे वह स्नेह वर्ज्जित होकर हम लोगों को नष्ट करेगी। वह प्रसन्न हों, तो हमको इस शापसे बचा सकती है, सो निश्चय ही हमलोग उस घोड़े की पूंछको काली कर देंगे।" यह सलाह करके वे उच्चैःश्रवा के निकट जाकर उसकी पूंछके लोमवत् बने रहे। हे द्विजोत्तम! इस अवसर में वे दोनों सौत बहिन, बाजी लगाकर अति सन्तोषपूर्व्वक समुद्र के दूसरे पार चली गईं। जो समुद्र प्रबल हवासे सञ्चालित, घोर

शब्द पूर्ण, तिमि तिमिङ्गिल मकरादि भांति भांतिके सहस्रों भयानक, जीवों से भरा हुआ, अति भयानक, रत्नाकर वरुणजीका घर, नाग-मन्दिर, नदी नायक, वड़वानल और असुरों की वास-भूमि, भयानक जीवों और जलका अक्षय भण्डार, देवभोग्य अमृत की मङ्गलमय दिव्य श्रेष्ठ खानि है, उस धारणातीत, चिन्ता-उपमा-रहित, पवित्र जलपूरित, सहस्रों महा-नदियों से पूजित अति तरल लहरों से भरे हुए, सोते से नाचते हुए, आकाश समान फैले हुए, वाड़वाग्नि बढ़ानेवाले महासमुद्र को देखती हुई दक्षपुत्री कद्रु और विनता आकाशमार्ग से शीघ्र चलने लगीं।

आदिपर्व्व में बाइसवां अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवा जी बोले, कि द्रुत चलने वाली कद्रु और विनता महासमुद्रके पार उतरकर शीघ्र ही उच्चैःश्रवा के समीप जा पहुंचीं; वहां पहुंचकरके उन दोनों ने उस बड़े वेगवान् और चन्द्रमाकी चांदनी समान सुफेद घोड़े की काली पूंछ देखी। इसमें विनता बड़ी उदास हुई और कद्रुने उसको अपनी दासी बनाई। बाजी में हारकर विनता दुःख से जलती हुई दासी के कार्य्य करने लगी। इस अवसर में बड़े प्रभावी गरुड़जी कालपूर्ण होने पर माता की सहायता विना स्वयं अण्डेको फोड़कर निकल आये। महासत्त्वशाली, महाबली, विजली के समान पिङ्गल नेत्रधारी, अति भय-कारी, कालाग्नि समान प्रज्ज्वलित, महाघोर, सद्दमूर्त्ति, भारी शरीरधारी, जलती हुई आग की भांति अति भयानक, कामरूपी, कामवीर्य्य-भरे, कामगतिशील वह पक्षीराज दर्शो और प्रकाशित करके उसरे वाड़वाग्निके समान एका-यक देह वढाकर घोर शब्द मचाते हुए आकाश को उड़ गये। यह देखकर देवता लोग भय खाकर सुख से बैठे हुए विश्वरूपी अग्निदेव की शरण लेकर उनके पांव छूकर बोले, "हे अग्ने! तुम अपने शरीर को और न बढ़ाओ; क्या तुमने हमको जलाने की इच्छा की है? वह देखो, तुम्हारे बढ़ेचढ़े तेज-समूह आरहे हैं।" यह सुनकर अग्निदेव बोले, "हे दैत्य-नाशी देवगण! तुमने जो सोचा है, वह ठीक नहीं है, यह मेरे सदृश प्रभावी महात्मा गरुड़ हैं; जन्म लेकर माता विनताका आनन्द बढ़ा रहे हैं; तुम लोग तेजपूरित गरुड़जी को देखकर मोहित हो गये हो; कश्यपके पुत्र, महाबली, सर्पनाशक यह गरुड़ जी देवताओं के हित करने वाले तथा दैत्य, दानव और राक्षसों के शत्रु होंगे; तुम डरो मत, आओ हम सब मिलकर उनका दर्शन करें।" अग्निके इतनी कथा कहने पर देवगण ऋषियों से मिलकर पधारे और दूर ही से गरुड़जी की स्तुति करने लगे।

देवगण बोले, हे पक्षीराज! तुम ऋषि हो, तुम महाभाग्यवान् हो, तुम देवता हो, तुम स्वामी हो, तुम ताप देनेवाले सूर्य्य हो, तुम परमेष्ठि हो, तुम प्रजापति हो, तुम चन्द्र हो, तुम हयग्रीव हो, तुम आशुग हो, तुम जगदीश्वर हो, तुम आदिभूत हो, तुम ब्रह्म हो, तुम ब्राह्मण हो, तुम अग्नि हो, तुम वायु हो, तुम, धाता हो, तुम विधाता हो, तुम देव-ताओंके शिरोमणि विष्णु हो, तुम महान् तत्व हो, तुम अहङ्कारतत्व हो, तुम नित्य हो, तुम निर्विकार हो, तुम महत् यश हो, तुम तेज हो, तुम बुद्धिवृत्ति हो, तुम हमारे सब से प्रधान मुक्तिदाता हो, तुम बलसागर हो, तुम साधु हो, तुम अनेक सत्वयुक्त हो, तुम ऐश्वर्य्यवान् हो, तुम अजीत हो, हे पूर्ण कीर्त्तिवान्! तुम्ही से आगत अनागत सबों की उत्पत्ति होती है। तुम चिन्मात्र हो, तुम्ही सूर्य्यके समान किरणों से स्थावर जङ्गमात्मक सम्पूर्ण जगतको पकाश कर रहे हो और फिर तुम्ही सूर्य्यके प्र

हरकर इस चराचर विश्व को लय कर रहे हो। हे अग्नि-समान प्रभाववान्! जिस प्रकार प्रलय कालमें सूर्य्यदेव क्रोधित होकर प्रजाओं को जलाते हैं, तुम भी उसी प्रकार उनको जला रहे हो और युग बदलने के काल में सृष्टिनाशी प्रलयाग्नि जिस प्रकार भयानक रूप से जलकर संहार करता है, तुम भी उसी प्रकार सृष्टि को नष्ट कर रहे हो। विजलो-सदृश शोभावान् अन्धकारनाशक, आकाशव्यापक, महाबली, कार्य्य कारणरूपी, वरदेने वाले, अजेयविक्रम, गगनमार्ग में विचरने वाले पक्षी-राज। हम तुम्हारी शरण लेते हैं। हे जगत् प्रभो। तुम्हारे तेज से यह सम्पूर्ण जगत् तप रहा है। अतएव तुम तपे हुए सुवर्ण-वर्ण तेजोंसे इस सम्पूर्ण जगत् तथा देवगण और महात्माओं की रक्षा करो। देखो, आकाश में चलनेवाले देवतालोग तुम्हारे तेजोंसे हार मान और भय खाकर मार्ग भूल रहे हैं। हे पक्षीवर! तुम दयावान् महानुभव कश्यप ऋषिके पुत्र हो, सो क्रोधयुक्त मत बनो, जगत् पर दया दिखाओ, तुम समर्थ हो, सब कुछ कर सकते हो, पर शान्ति आश्रय कर हमको बचाओ। हे पक्षीराज। तुम्हारे बिजली की कड़कड़ाहट के समान शब्दसे दिशा आकाश स्वर्ग और इस पृथ्वी तथा हमारे हृदय में प्रतिक्षण हलचल मच रहा है, सो तुम अपने अग्नितुल्य शरीर को सम्भालो। हे यमराजसमान-क्रोधवान्। तुम्हारी द्युति देखकर हमारे चित्त एकबारगी अस्थिर और चञ्चल हो रहे हैं, हे पक्षीश्रेष्ठ। प्रार्थना करते हैं, कि हमलोगों पर प्रसन्न होओ। हे भग-वन्! तुम हमारे सुख देनेवाले और मङ्गल-दायी होओ। गरुड़जी नें, ऋषि और देव-ताओं की ऐसी स्तुति सुनकर अपने तेजसमू-हको हर लेने की प्रतिज्ञा की।

आदिपर्व्व में तेईसवां अध्याय समाप्त।

गरुड़जी देवताओं के यह सब वचन सुन-कर और अपनी देहको देखकर उसे सम्भालने लगे और बोले, कि मेरा देहको देखकर जीवों को भय खाना नहीं पड़ेगा। तुम लोग मेरे भारी आकार को देखकर डर गये हो, सो मैं अपना तेज हर लेता हूं। श्री उग्रश्रवाजी बोले, कि पश्चात् कामचारी कामवीर्य्य पक्षी-राज स्वरूप सम्भालकर अपने बड़े भाई अरुण को पीठ पर चढ़ाकरके पितृगृह से महासमुद्र के दूसरे तट पर माता के समीप पधारे। इस समय सूर्य्यदेवने तेज किरणजाल फैलाकर तीनों लोक जलाने की कल्पना की थी, इस हेतु अति द्युतिमान् गरुडने अरुण को पूर्व्व ओर फेंक दिया।

श्रीरुरुजी बोले, कि भगवान् सूर्य्यदेवने इस समय किस कारण से तीनों लोकों को जलाना चाहा था? और देवताओंने उनको कौनसी हानि पहुंचाई थी, कि वह क्रोधित हुए थे?

प्रमति बोले, कि हे निष्पाप। जब चन्द्र और सूर्य्यने राहुके अमृत पीनेका वृत्तान्त प्रकाश कर दिया था, तब राहुने चन्द्र और सूर्य्यके विरुद्ध शत्रुता ठान ली थी। उस शत्रुता के हेतु जब राहु सूर्य्य को ग्रास करने लगा, तब वह यह सोच कर क्रोधित हुए, कि मैं तो देव-ताओं के कार्य्य के लिए राहु से शत्रुता कर बड़ी हानि और कष्ट सह रहा हूं, पर विपत के समय देवों में से कोई भी मेरी सहायता नहीं करते, वरण राहु जब मुझको ग्रास करता है, तब वे देख देख कर हंसा करते हैं, सो मैं निःसन्देह सम्पूर्ण लोकों को नाश करूंगा। सूर्य्यदेव ऐसी प्रतिज्ञा ठानकर अस्ताचल की चोटी पर चढ़ गये और वहां से लोकों में संहार का भय उपजाने लगे। यह देखकर महर्षिगण देवताओं के समीप जाकरके बोले, कि आज आधी रातके समय सर्व्वलोकभयकारी त्रिलोकनाशी महादाह शुरू होगा। अब

सुनकर देववृन्दने ऋषियों के सहित ब्रह्माजी के समीप जाकर निवेदन किया, कि हे भगवन्। आज दाह का यह कैसा महाभय आ पड़ा? अभी तो सूर्य्यदेव दीख नहीं पड़ते, पर तौभी मानों सृष्टि लोप हो रही है; जब वह उगेंगे, तब न जानें, क्या होगा? पितामह जी बोले, कि लोकोंको नाश करने के लिये सूर्य्यदेव उगने पर हैं, वह निकलते ही सर्व्वलोकों को भस्म करेंगे, पर पहिले ही इसका प्रतिविधान किया गया है; धीमान्, बृहत शरीर-धारी अरुण नामक अति प्रभावो कश्यपएत सूर्य्य के सामने विराजेंगे। वह सूर्य्य के सारथी का कार्य्य कर तेज हर लेंगे, इसीसे देवता ऋषि और सर्व्वलोकों का मङ्गल होगा। प्रमति बोले, कि अनन्तर पितामह की आज्ञानुसार अरुण ने वह सब कार्य्य किये और सूर्य्यदेव भी अरुण से आच्छादित होकर उदय हुए। सूर्य्य जिस हेतु क्रोधित हुए थे और अरुण जिस कारण उनके सारथी बने, वह कह चुके, अब पहिले जो प्रश्न किये गये थे, उनके उत्तर सुनिये।

आदिपर्व्व में चौबीसवां अध्याय समाप्त।

श्रीसौतिजी बोले, अनन्तर अति वीर्य्यशाली, महाबली, कामचारी पक्षीराज समुद्र के दूसरे पार माता के समीप जा पहुंचे। वहां उनकी माता विनता बाजी हार कर और अति दुःखी होकर दासी बन दिन काट रही थी। एक दिन कद्रु गरुड़ के सामने ही पैर छूती हुई विनता का नाम लेकर बोली, "री विनता! उस निराले समुद्र के भीतर नागोंके घरमें मुझको ले चल।" यह सुनाकर गरुड़ की माता सर्प माता को वहां ले चली। गरुड़भी माता की आज्ञानुसार सर्पों को ले चले; पर ले चलने के समय वह विनतापुत्र पक्षीराज सूर्य्यमण्डल के निकट होकर जाने लगे। इससे सर्पगण सूर्य्य के तेज से तपकर मुर्झाने लगे। कद्रु पुत्रों की वैसी दशा में देखकर देवराज की स्तुति करने लगी, कि हे सर्व्व देवों के नाथ! तुमको नमस्कार करती हूं, हे बलसूदन। तुमको नमस्कार करती हूं, हेनमुचिनाशी सहस्राक्ष सचीकान्त। तुमको प्रणाम करती हूं, जल बरसा कर तुम सूर्य्यसे जलते हुए सर्पों की रक्षा करो; हे देवोत्तम। तुम हमारे एकही रक्षक हो; हे पुरन्दर। तुम अपरिमित वृष्टि को सृष्टि कर सकते हो। तुम वायु हो, तुम बादल हो, तुम अग्नि हो, तुम आकाश की बिजली समूह हो, तुम मेघों के चलानेवाले हो, तुमही प्रलय-काल के भारी बादल हो; तुम तुलनारहित घोर वज्र हो, तुम गरजानेवाले जलधर, हो, तुम तीनों लोक के रचने हारे हो तुम नाश करनेवाले हो, तुम जीतने के अयोग्य हो, तुम सर्व्वभूतों के प्रकाशरूपी हो, तुम आदित्य हो, तुम विभावसु हो, तुम आश्चर्य्य-युक्त महान् तत्व हो, तुम राजा हो, तुम देवों में श्रेष्ठ हो, तुम विष्णु हो, तुम सहस्राक्ष हो, तुम परात्परपर-देव हो, तुम अमृत हो, तुम्ही परम पूजित सोमदेव हो, तुम महूर्त्त हो, तुम तिथि हो, तुम लव हो, तुम क्षण हो, तुम शुक्लपक्ष हो, तुम कृष्णपक्ष हो, तुम कला हो, तुम काष्ठा हो, तुम त्रुटि हो, तुम वर्ष, ऋतु मास, दिन और रात हो, तुम उत्तर पर्व्वतयुक्त धरती हो, तुम सूर्य्ययुक्त निर्म्मल आकाशमण्डल हो, तुम तिमि तिमिङ्गिल मीन मकरादि नाना जल-जन्तुओं से भरे और लहराते हुए महासमुद्र हो, तुम अति यशस्वी हो, इस हेतु प्रज्ञायुक्त महर्षिगण आनन्दचित्त से सदा तुम्हारी उपासना किया करते हैं, तुम मङ्गलार्थ यज्ञों में स्तुति प्राप्त होकर वषट् किये हुए घृत और सोमरस को पीते हो, हे अनन्तबली। विप्रवृन्द फल पानेके निमित्त सदा तुम्हारे नामसे यज्ञ किया करते हैं, और सम्पूर्ण वेदाङ्ग में तुम्हारे गुण कीर्त्तित हैं, इसीहेतु यागशील

श्रेष्ठ द्विजवृन्द सर्व्वप्रकार से प्रयत्नपूर्व्वक वेदाङ्गों की मीमांसा किया करते हैं।

आदिपर्व्व में पचीसवां अध्याय समाप्त।

श्री उग्रश्रवाजी बोले, कि कद्रू के इस प्रकार स्तुति करने पर भगवान् मेघवाहनने धीले बादलों से सम्पूर्ण आकाशमण्डल को आच्छादित कर लिया और मेघों को आज्ञा दी, कि तुम भली भांति जल बरसाओ। मेघवृन्द बिजली समूह से उज्वल होकर आपस में घोर गर्ज्जन करते हुए जल बरसाने लगे। अति अद्भुत बड़े शब्दशील बादलों के बहुत जल बरसाने पर आकाश देखकर जान पड़ने लगा, कि मानों प्रलयकाल आगया है। बिजली और हवासे डोलते हुए बादलों की सनसनाहटरूपी बाजों के साथ अगणित धाराओं की लहरों से मानों आकाश भी नाचने लगा और बादलों से सदा जल की धार बहने से आकाशतल चन्द्र और सूर्य्य से खाली जान पड़ने लगा। देवराज की वर्षा से सर्पों को बड़ा आनन्द हुआ; धरती जल से भर गई; निर्म्मल शीतल जल पाताल तल तक पहुंचने लगा। इस प्रकार अपार जलकी लहरों से पृथ्वी आच्छादित होने पर सर्पगण माता के सहित रामणीयक द्वीप को पधारे।

आदिपर्व्व में छब्बीसवां अध्याय समाप्त।

श्रीसौतिजी बोले, कि अनन्तर गरुड़ पर चढ़े हुए सर्पगण जलधारा से नहा कर प्रसन्न हृदय से थोड़े काल में रामणीयक द्वीप में जा पहुंचे। मकरों के वासस्थान और विश्वकर्म्माजी से बने हुए उस द्वीप में नागोंने पहिले पहल बड़े भयानक खार समुद्र को देखा; पीछे गरुड़जी के साथ अति सुन्दर वन में प्रवेश किया। वह महावन सदा सागर-जल से धोया हुआ और भांति भांति के पक्षियों के कलरवों से पूरित, रङ्ग बिरङ्ग के फल-फूलों से सजे सजाये वन, सुन्दर सुन्दर गृह मन्दिर, कमलकलाप से भरे हुए सुन्दर झीलों से सुशोभित है; उस वन में शुद्ध सुगन्धित हवा मन्द मन्द बह रही है; हवासे धीरे धीरे डोलते हुए ऊंचे ऊंचे सुहावने चन्दन के वृक्ष फूल वर्षा कर अपूर्व्व अतुल शोभा को बढ़ा रहे हैं; भांति भांति के गन्धों से फूलों के गिरने से ऐसा जान पड़ता है, कि मानों वहां पहुंचे हुए सर्पों पर फूल बरस रहे हैं; इस गन्धर्व और अप्सराओं के परम प्यारे, मधु-मतवाले मधुमक्खियों से गूञ्जते हुए, मनोहर, दिव्य, पवित्र और सुन्दर वन की शोभा निहारने से सर्वों के मन में आनन्द की लहर लहराने लगती है, वह नाना पक्षियों की आहट से बाजता हुआ सुन्दर वन कद्रूके पुत्र, नागों का परम प्रिय था, सो वे वहां प्रवेश कर विहार करने लगे और अति वीर्य्यशाली पक्षीराज से कहा, "हे खेचर! तुम आकाश में घूमनेके काल अनेक प्रकारके देश देखते हो, सो जहां कहीं अमल जल और सुन्दर स्थल हो, ऐसे किसी दूसरे द्वीप में हमको ले चलो।" यह सुन कर कुछ काल सोच करके गरुड़जी विनता से बोले, "माता! मैं क्यों सर्पों की आज्ञा पालूं!" गरुड़ के ऐसा कहने पर विनताने सर्व्व गुणों से भूषित, महाबली, परम वीर्य्यशाली, आकाशविहारी अपने पुत्र गरुड़ से कहा, "हे पक्षीराज! मैं सर्पों के छल से झूठी बाजी हार कर, दुर्द्दैववश अपनी सौत की दासी बनी हूं।" जब गरुड़माता ने दासी बनने का कारण कह सुनाया, तब आकाशविहारी गरुड़ जी माता के दुःख से दुःखी होकर सर्पों से बोले, "हे सर्पो! सच बोलो, मेरे कौनसी वस्तु ढूंढ़लाने वा किस बात को जान कर लौटने अथवा किस प्रकार की पौरुष प्रकाश करने से हम तुम्हारी सेवकाई से छूट

सकती है।" श्रीउग्रश्रवा जी बोले, सर्पों ने गरुड़ की बात सुनकर कहा, "हे पक्षीवर। तुम बलपूर्व्वक अमृत लाओ, तो सेवकाई से छूट सकते हो।"

आदिपर्व्व में सताइसवां अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि गरुड़ सर्पों की इतनी कथा सुनकर माता से बोले माई! मैं अमृत लाने को जाऊंगा, कुछ भोजन करना चाहता हूं, कहो क्या खाऊं।" विनता बोली, "निराले समुद्र में धीवरों के रहने के सुन्दर सुन्दर घर हैं, वहां सहस्रों धीवर बसते हैं, तुम उन्हें भोजन कर अमृत लाने को जाओ, पर कभी ब्राह्मण मारने की अभिलाषा मत करो। ब्राह्मण सर्व्व जीवों के अवध्य हैं, क्योंकि वह अग्निके समान हैं। ब्राह्मण सब भूतों के गुरु हैं, वह क्रोधित होने से अग्नि, सूर्य्य, विष और अस्त्र के समान बन जाते हैं, साधुलोग इसी-हेतु ब्राह्मण की पूजा करते हैं, बेटा। क्रोध से उछल उठने पर भी तुम कभी ब्राह्मणवध मत करना, कभी ब्राह्मणकी हानि भी न पहुंचाना, हे अनघ! व्रतशील ब्राह्मण क्रोधित होकर जिस प्रकार भस्म करते हैं, अग्नि और सूर्य्य भी उस प्रकार भस्म नहीं कर सकते। इन्ही कारणोंसे ब्राह्मण का सम्मान करना; ब्राह्मण सर्व्वभूतों के अग्रज, वर्णों में श्रेष्ठ, पिता और गुरु हैं।" गरुड़ बोले, "माइ। ब्राह्मण का रूप कैसा, स्वभाव कैसा, और पराक्रम कैसा है? क्या वह अग्नि की भांति जलते हैं अथवा शान्तमूर्त्ति हैं? माइ। जिन शुभ लक्षणों से ब्राह्मण को जान सकें, वह मुझको हेतु दर्शाकर बता दो, मैं पहिले वही जानना चाहता हूं।" विनता बोली, "हे पुत्र। जो तुम्हारे भोजन के काल में गले तक पहुंचते ही कांटेके समान गलेमें अटक जायं और जलते अङ्गार की भांति जला दें, उन्हींको तुम ब्राह्मण जान लेना, तुम क्रोधयुक्त होनेपर भी कभी ब्राह्मण की हत्या न करना।" विनता पुत्र स्नेह से फिर बोली "बेटा। जो तुम्हारे पेट में न पचें, उन्हींको अच्छे ब्राह्मण जान लेना।" सर्पों से ठगी, अतिदुःखी, साधुशीला विनता, पुत्रके अतुल बल जानने पर भी पुत्र-स्नेहसे प्रसन्नचित्त होकर उनको असीस देने लगी और बोली, "बेटा। पवन-देवता तुम्हारे दोनों पङ्खों को बचावें, चन्द्र और सूर्य्य तुम्हारी पीठ को बचावें, अग्निदेव तुम्हारे सिरको बचावें, वसुलोग तुम्हारे सम्पूर्ण शरीर को बचावें। बेटा। मैं भी यहां रहकर तुम्हारी शान्ति और स्वस्तिके लिये मङ्गलचिन्ता में सदा नियुक्त रहूंगी, तुम बिनाविघ्न कार्य्य-साधन के लिये पधारो।

श्री उग्रश्रवा जी बोले, कि अनन्तर महाबली गरुड़ माताकी बात सुनकर दोनों पङ्ख फैलाकर आकाश को उड़े; और क्षुधा से कातर होकर सर्व्वनाशी दूसरे यमराज की भांति वह धीवरों के पास जा पहुंचे। धीवर मारने को उनके नीचे उतरने के काल में आकाश चूमती हुई बेपरिमाण धूल उड़ने लगी, उस धूल के नीचे गिरने पर समुद्र-जल सूखने पर हुआ और उनके उतरने के समय निकट के पर्व्वतों के वृक्ष हिलने लगे। अनन्तर सर्पभक्षक, पक्षीराज गरुड़ भारी मुंहको फैलाकरके धीवरों के मार्ग रोककर खड़े रहे। धीवरगण भी भय से उनके मुंह में ही शीघ्र घुसने लगे। जिस प्रकार वनस्थित वृक्षों के प्रबल पवन से हिलाये जाने से सहस्रों पक्षी समूह धूल और हवा के वेगसे विकल और मुग्ध होकर आकाश में इधर-उधर घूमते रहते हैं, उसी प्रकार धीवरगण गरुड़जीके फैले हुए मुख में घुसने लगे। आगे शत्रु तरसानेवाले महाबली क्षुधासे जले पक्षीराजने अगणित धीवरों को मारकर मुंह बन्द कर लिया।

आदि पर्व्व में अठाइसवां अध्याय ॥

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि धीवरों के सङ्ग स्त्री-सहित एक ब्राह्मण गरुड़जीके कण्ठ में प्रविष्ट होकर जलते अङ्गार के समान गलेको जला रहेथे। गरुड़जी उनसे बोले, "हे द्विजोत्तम! मैं मुंह खोलता हूं, तुम शीघ्र निकल जाओ, ब्राह्मण सदा पाप में रत होने पर भी मेरे वधयोग्य नहीं हैं।" गरुड़जी का यह वचन सुनकर ब्राह्मणने उत्तर दिया, कि मेरी स्त्री यह धीवरी भी मेरे सङ्ग निकले। गरुड़ बोले, "मेरे तेज से पच जाने के पहिले अपनी धीवरी को लेकरके शीघ्र निकलो। श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि अनन्तर ब्राह्मण धीवरी के सङ्ग निकल आये और गरुड़ को आशीस देकर मनमाने देशको पधारे। स्त्री-सहित ब्राह्मणके निकलने पर कामरूपी पक्षीराज दोनों पङ्ख फैलाकर आकाश को उड़ गये, आगे पिताजी से भेंट होने पर उनसे पूछे जाकर यथावत् सब वृत्तान्त कह सुनाये। अमेयात्मा महर्षि कश्यपजी उनसे बोले, "बेटा। तुमलोग तो कुशल से हो? तुमको नित्य यथोचित भोजन तो मिलता है? इस भूलोक में तुम्हारे भोजनयोग्य सामग्री बहुत है न?" गरुड़जी बोले, "पिता। मेरी माता और भ्राता नित्य कुशल से हैं, मैं भी कुशल से तो हूं, पर मेरे यथोचित भोजन के विषय में नित्य ही अमङ्गल सूझता है, हालमें सर्पों ने मुझको दुर्लभ अमृत लानेको भेजा है, मैं भी माता की सेवकाई छुड़ाने को अमृत लाऊंगा। माताने मुझे आज्ञा दी थी, कि तुम धीवरों को खालेना, पर सहस्रो धीवरों को खाजाने पर भी मेरी क्षुधा न गई, सो भगवन्! आप आज्ञा दीजिये, कि और कुछ भोजन की सामग्री कहां मिलेगी, जिसे खाकर अमृत ला सकू; हे प्रभो! आप मेरी भूख-प्यास मिटाने की भोजन-सामग्री का पता बता दीजिये। कश्यपजी बोले, "यह जो सरोवर देखते हो, अति पवित्र है, और देवलोक में भी प्रसिद्ध है; यहां एक हाथी मुंह नीचेकर कूर्मरूपी बड़े भाई पर सदा चढ़ आता है। पूर्व्वजन्म में उनमें जिस कारणसे शत्रुता हुई थी और उनका जितना परिमाण है, वह सब गूढ़ वृत्तान्त कहता हूं, सुनो।"

विभावसु नामक एक बड़े क्रोधी महर्षि और सुप्रतीक नामक उनके एक बड़े तपस्वी छोटे भाई थे। सुप्रतीक की ऐसी इच्छा नहीं थी, कि पैत्रिक धन एकत्र रहे, सो वह कभी कभी सम्पत्ति बंटाने की बात कहा करते थे। एक समय विभावसु अपने छोटे भाई सुप्रतीक से बोले, "भाई। बहुतेरे मनुष्य मुग्ध होकर पैत्रिक धन बंटवाना चाहते तो हैं, पर बंट जाते ही वे धन की मायासे मोहित होकरके आपस के झगड़े में फंस जाते हैं। स्वार्थी और अज्ञानी भाइयों के अपना अपना अंश लेकर अलग होते ही शत्रुलोग मित्र बनकर उनमें आपस का छेद खड़ा कर देते हैं। आगे जब उनमें शत्रुता हो जाती है, तब शत्रुलोग भी दोष निकालने लगते हैं, सो बिना विलम्ब उनका सत्यानाश हो जाता है, इसी से साधुलोग गुरु और शास्त्रों की आज्ञा न माननेवाले आपस में लड़ते हुए भाइयों के अलग होने की प्रशंसा नहीं करते, हे सुप्रतीक। तुम भाई से बिगड़कर धन की अभिलाषा कर रहे हो और तुम किसी प्रकारसे रुकते नहीं हो, सो हस्तीयोनि में जन्म लोगे।" सुप्रतीक इस प्रकार शाप पाकर विभावसुसे बोले, "तुम भी जलचर कच्छप होकर जन्म लोगे।" इस प्रकार से क्रोधवश पशु-योनि में जन्म लिये हुए, विभावसु और सुप्रतीक धन के निमित्त बुद्धि खोकर एक दूसरे के शापसे हाथी और कछुआ बने हैं। इस सरोवर में वे दोनों भाई महाबली हाथी और कछुये के स्वरूप में अलौकिक परिमाण और बलसे गर्व्वित होकरके पूर्व्व-शत्रुता स्मरण कर एक दूसरे की हिंसा किया करते हैं।

देखो, सुन्दरमूर्त्ति बड़ा भारी हाथी सरोवर के तट को आ रहा है, उसकी चिल्लाहट सुनते ही बड़ा भारी कछुआ भी सम्पूर्ण जल को हिलोड़ कर बाहर निकला है। वह महाबली हाथी उसको देखते ही सूंड़ को कुण्डलवत् बनाकर दांत, सूंड़के अगले भाग, पूंछ और पांव आदिके धक्कोंसे मछलियोंसे भरे हुए तालाबको हिलोड़ कर जल में जा उतरा है, विक्रमी कछुआ भी सिर ऊपरकर लड़ने को आगे बढ़ा है। उस हाथी का परिमाण ऊंचाई में ६ योजन और लम्बाई में बारह योजन है। कछुए की ऊंचाई तीन योजन की और गोलाई दश योजन की; अब वे दोनों एक दूसरे के मारनेको घोर लड़ाई में फंस गये हैं, सो तुम शीघ्र उन दोनों को खाकर अपना मनमाना कार्य्य करो; बड़े बादल समान कूर्म्म और बृहत पर्व्वतवत् घोररूप हस्ती को भोजन करके अमृत लाने जाओ। श्रीसूतजी बोले, कि महर्षि कश्यपने यह कहकर गरुड़ को इन वचनोंसे अशीस दिया, कि हे अण्डज! देवोंके साथ युद्ध के समय तुम्हारा मङ्गल होगा; पूर्णकुम्भ, गौ, ब्राह्मण और जो दूसरी माङ्गलिक वस्तु है, वे तुम्हारे मङ्गलदायी होवें। जब तुम देवों के साथ युद्धमें प्रवृत्त होगे, तब ऋग्वेद यजुर्व्वेद, सामवेद, यज्ञका शुद्ध घृत, सम्पूर्ण रहस्य और अङ्गों के सहित सम्पूर्ण वेद तुमको बल दें। कश्यप ऋषिके इतनी कथा कहने पर गरुड़ने वहांसे चलकर निकट ही में पक्षियोंसे भरे हुए उस सुन्दर जलपूर्ण सरोवर को देखा। आगे अति वेगवान् पक्षीवर अपने पिताजीके वचनोंको स्मरण करके एक नखसे हस्ती और दूसरे से कच्छप को लेकर आकाश की बड़ी ऊंचाई पर उड़ गये और स्थान ठहरा करके सुमेरु की चोटी पर देववृक्षों के निकट जा पहुंचे। सुन्दर सुवर्ण-पर्व्वत पर के वृक्ष समूह पक्षीवर की पङ्खों को हवासे चोट खाकर टूटने के भयसे कांपने लगे। गरुड़जी अभीष्ट फलदायी वृक्षों को कांपते देखकर दूसरे अपार, बृहत-आकार, वैदूर्य्य-मणिकी शाखाओं से सुहावने, सुवर्ण और चांदी के फलों से बने ठने, समुद्र जल से प्रक्षालित और शोभा-पूरित महा वृक्षों के के पास गये। वहां बड़े ही पुराने एक बड़े बड़ने मनके समान वेगवान् पक्षीराज को उधर जाते देखकर कहा, "गरुड़ जी। तुम मेरी सौ योजन फैली हुई यह जो एक महा-शाखा देखते हो, इसी पर बैठकर हाथी और कछुए को भोजन करो। अनन्तर महीधर समान बृहत्-प्रमाण तेजोवान् पक्षीवर के उतरते ही सहस्रों पक्षि-भरा वह वृक्ष हिलने लगा और पत्तों की घनी कतार से सुहावनी वह शाखा टूट भी गई।

आदिपर्व्व में उनतीसवां अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि गरुड़जी के पांवों से छूते ही वृक्षशाखाके टूटने पर उसे उन्होंने पकड़ रखा। आगे आश्चर्य्य होकर उस टूटी हुई बड़ी शाखा की ओर आख फेरकर देखा, कि उस में वालखिल्य "ऋषिलोग नीचे मुह कर लटकते हैं। तपस्यामग्न लम्बमान् ब्रह्मर्षियों को देखकर पक्षीवर सोचने लगे, कि "ऋषिगण इस शाखा में लटक रहे है, ऐसा करना होगा, कि वे मारे न जायं; यदि शाखा गिर जाय, तो इनके प्राण जाते रहेंगे।" ऐसा विचारकर वीरवर पक्षीनाथने नखों से दृढ़ताके साथ गज और कच्छप को पकड़कर ऋषियों के नष्ट होने के भय से उस शाखा को दोनों चोंचों से सम्भाल लिया। महर्षियों ने गरुड़ का यह अद्भुत कार्य्य देखकर अचम्भे में होकर उनका "गरुड़" नाम रखा; क्योंकि वह सर्पभक्षक पक्षीवर भारी भार लेकर उड़े। अनन्तर गरुड पङ्खोंकी

हवा से पर्व्वतों को विकल करते हुए वहां से धीरे धीरे चले। आगे वालखिल्यों की रक्षा के निमित्त उस शाखाको और गजकच्छप को लेकर अनेक देश घूम डाले; पर कहीं बैठके भोजन करने को योग्य स्थान न मिला। अनन्तर उन्होंने पर्व्वतश्रेष्ठ गन्धमादन पर जाकर अपने पिता कश्यप को तप में मग्न देखा। भगवान् कश्यपभी उस तेज-वीर्य्यभरे, मन और हवा के समान वेगवान् दिव्य-देही पर्व्वत-शृङ्गवत्, उद्यत ब्रह्मदण्ड-रूपी, चिन्तातीत, अद्भुत विकटाकार, भयङ्कर-मूर्त्ति, महा-वीर्य्य-शाली, साक्षात् प्रज्वलित अग्नि-सदृश रौद्रमूर्त्ति, देव-दैत्य और दानवोंके अघृष्य तथा अजेय, पर्व्वत शृङ्गविदारक, जल समुद्र सोखने वाले, तीनों लोकों को मथने योग्य, घोर यमराज-सदृश, भयानक पक्षीराज को उपस्थित होते देखकर और उनका अभिप्राय समझकर बोले, "बेटा! सावधान। साहस मत करो, आजही कष्ट भोगना न पड़े, मरीचिप वालखिल्य लोग क्रोधित होकर तुमको भस्म न करें।"

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि अनन्तर कश्यपने पुत्र के निमित्त तपोबलसे निष्पाप महाभाग्यवान् बालखिल्य मुनियों को प्रसन्न किया और बोले, "हे तपोधनो। गरुड़ लोकोंके मङ्गल के निमित्त जिस कार्य्य में उद्यत हुआ है और जिस महान् कार्य्य के करने की अभिलाषा की है आप लोग उसी उस कार्य्य को करने की आज्ञा दें।" श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि भगवान कश्यप के ऐसा कहने पर बालखिल्य मुनिगण उस शाखाको छोड़ कर तपके निमित्त अति पवित्र हिमालय पर्व्वतको पधारे। उनके चले जाने पर विनता-पुत्रने, अपने शाखाभार से कातर-मुखसे अस्पष्ट बातों में कश्यपजी से पूछा, "भगवन्। मैं इस वृक्षशाखाको कहां रक्खूं, मुझे बताइये, कि मनुष्यों से खाली देश कहा है। "यह सुनकर कश्यपजीने, हिम से आच्छादित कन्दरावाले, मनसे भी औरोंके पहुंचनेके योग्य, मनुष्योंसे खाली एक पर्व्वत निश्चय कर दिया। महापक्षी तार्क्ष्य उस बड़े भारी पर्व्वत की ओर गज, कूर्म्म और उस शाखा को लेकर अति वेग से चले गये। विनता पुत्र जिस भारी शाखा को लेचले, वह एक सौ गौके चमड़े से बनी एकावली रस्सी से भी घेरी नहीं जा सकती थी। अनन्तर विहङ्गवर गरुड़ने सैकड़ों योजन चलकर थोड़े ही काल में पिता के बताये हुए उस पर्व्वतमें पहुंच कर बड़े शब्द से उस भारी शाखा को छोड़ा। गरुड़ के पङ्खों की हवा खाकर वह गिरिवर कम्पित हुआ और वहां के वृक्षों से उखड़ कर गिर जाने से चारों ओर फूल बरसने लगे। मणि काञ्चन से पची हुई जिन चोटियों ने गिरि को सुशोभित किया था, वे सब टूट फूट कर इधर उधर गिरने लगीं। वृक्षसमूह उस बड़ी शाखा की रगड़ खाकर गिरते हुए सुवर्ण फूलों से, बिजलीदार बादल के समान बड़ी शोभा पाने लगे। सुनीले रङ्गके वृक्ष धरती पर गिर कर और धातुओं से रंगे जाकर सबेरे उगे हुए सूर्य्य के किरणोंसे रंगे हुए जान पड़ने लगे। अनन्तर पक्षीराज गरुड़ पहाड़ की चोटी पर बैठकर उस गज और कूर्म्म दोनों को भोजन करने लगे। खाके वह हाथी और कछुए को खाकर पर्व्वत की चोटी से अतिवेग से उड़ गये। गरुड़ के आकाश को उड़ने पर देवताओं के भयदायी उपद्रव होने लगे। देवराज का प्रिय वज्र भय से जल उठा, आकाश से धुआं-सहित शिखायुक्त उल्कापिण्ड बहुत गिरने लगे, जो पहिले देवता और असुरों की लड़ाई में भी नहीं हुआ था; वसु, रुद्र, आदित्य, साध्य, मरुत और दूसरे सब देवोंके सहस्त्रों अस्त्र आपस में भिड़ने लगे; आग की चिनगारियां गिरने लगीं, और विना बादल निर्म्मल आकाश

महाशब्द से गरजने लगा; जो देवों के भी देवता हैं, वह भी रक्त वर्षाने लगे; देवताओं की माला मलिन और तेज नष्ट हुआ; घोर-उपद्रव की घनघटासे बहुत अधिक रक्तरूप वृष्टि होने लगी; अधिक धूल उड़नेसे देवों के मुकुट मलिन हुए। अनन्तर उन कठोर उपद्रवों को देखकर भीतचित्त चिन्तित देवराज इन्द्रजी देवों के साथ एकत्र होकर देवोंके गुरु वृहस्पतिजी से बोले, "भगवन्! किस कारण से एकायक यह उपद्रव मचा?" ऐसा कोई शत्रु तो देखते नहीं, कि हमको लड़ाई में हरा सके।" वृहस्पति जी बोले, "देवराज इन्द्र! तुम्हारे अपराध और प्रमाद के कारण अति प्रभावी, बालखिल्य महर्षियों के तपोबलसे विनता के गर्भ से उपजा हुआ, कश्यप-पुत्र, कामरूपी, महाबली पक्षीराज अमृत हरने को आ रहा है, वह बड़ा शक्तिशाली है; जान पड़ता है, कि अमृत हर लेजा सकेगा, उस पक्षीके लिये कुछभी-असम्भव नहीं है, अनायास हो असाध्य साधन कर सकता है।" श्रीउग्रश्रवा जो बोले, "इन्द्रजी गुरुदेवके वचन सुन कर अमृतके रखवारों से बोले, "देखो, महाबली पक्षीवर अमृत हरनेको उद्यत हुआ है, इस लिये तुम्हें सावधान किये देता हूं, कि वह बल से अमृत न हरने पावे, वृहस्पति जीने कहा है, कि वह पक्षी अतुल-बलशाली है; अमृत रखवारे देवोंने इन्द्रकी बात सुनकर के अचरज मानकर यत्नसहित अमृत को घेर रखा, प्रभावी देवराज भी वहां हाथ में वज्रको लेकर खड़े रहे। मनस्वी देवता लोग सर्व्व शरीर में विचित्र सुवर्णयुक्त महामूल्य वैदूर्य्यमणि-जटित कवच धारण कर कठिन तथा सुहावने ढाल और भांति भांति के घोररूप अगणित सान-लगाये, नोखे अस्त्र उठाकर चिन्गारी सहित धूआ और अग्निशिखायुक्त चक्र परिघ, त्रिशूल, परसु, विविध तेजयुक्त शक्ति निर्म्मल तलवार और अपनी अपनी देहकी समान गदा लेकर भांति भांति के सुन्दर आभूषण और जलते हुए सुहावने अस्त्रों से भूषित हो रहे। अनुपम बलवीर्य्यवाली, पाप की छूत से खाली, असुरपुरी-विदारी, जलती आग की समान तेजसमूह से शोभायमान सम्पूर्ण देवगण मन लगाकर अमृत-रक्षा में लगे रहे। वह सहस्रों परिघ से रङ्गा हुआ रणस्थल भी सूर्य्यकिरण से गले हुए आकाश की भांति शोभा पाने लगा।

आदिपर्व्वमें तीसवां अध्याय समाप्त।

श्रीशौनकजी बोले, कि हे सूतपुत्र! इन्द्रका कौन सा दोष और कैसी भूल हुई थी और गरुड़जी कैसे बालखिल्य मुनियों के तप के प्रभाव से उत्पन्न हुए, द्विजवर कश्यप के क्योंकर पक्षीपुत्र उत्पन्न हुए और वह पुत्र कैसे कामचारी, काम-वीर्य्य, अधृष्य और सर्व्वजीवों के अवध्य हुए, यदि यह सब विषय पुराणों में कहे गये हों, तो कीर्त्तन करो, मैं सुनना चाहता हूं। श्रीउग्रश्रवाजी बोले कि "हे द्विजवर! आप जो कुछ पूछते हैं, वह पुराण ही के विषय हैं, मैं यह सब संक्षेप में कहता हूं, सुनिये। जब प्रजापति कश्यपजी ने पुत्र की कामना से यज्ञ किया था, तब देवता, ऋषि और गन्धर्व्वों ने उनके यज्ञ की सहायता कीथी। कश्यपजी ने यज्ञकी लकड़ी लाने को इन्द्र, बालखिल्य मुनि और दूसरे देवों को नियुक्त किया था। देवराज इन्द्र अपनी शक्तिके अनुसार पर्व्वतके समान लकड़ी का बोझ लेकर विना कष्ट आने लगे और पथ में देखा, कि अंगूठेके समान नाटे नाटे ऋषिलोग एकत्र मिलकर पलाश की एक ही छोटी डाली लेकर अति कष्टसे आ रहे हैं। वे निराहारी पतले तपोधनगण तपस्यासे ऐसे दुबले हो गये थे, कि गोष्पदभर जल में भी डूब कर कष्ट पा रहे थे। व गर्व्व से फूले हुए इन्द्रजी उन ऋषियों को

कर अचरज मानके उनकी हंसी करते हुए लांघ कर वेगसे चले गये। इस से बड़े बड़े तपस्वी बालखिल्य ऋषियोंने अति दुःखी और क्रोधयुक्त होकर इन्द्र को भयदायी एक महान् कार्य्य का अनुष्ठान किया। हे शौनकजी! आप सुने जाइये। वे व्रतशील ऋषिलोग इस कामनासे, कि "हमारे व्रत और तपके फल से आज कामवीर्य्य, कामचारी, देवराज के भयदायी, इन्द्र से सैकड़ों गुणी सूरता और वीरतापूर्ण मनोहर उग्रमूर्त्ति दूसरे एक इन्द्र देवलोक में उत्पन्न होवें" बड़े बड़े मन्त्रों से अग्नि में आहुति चढ़ाने लगे। देवराज इन्द्र यह सुनकर बड़े दुःखी हुए और व्रतशील कश्यप ऋषि की शरण ली। प्रजापति कश्यप ने देवराजकी बात सुनकर बालखिल्य ऋषियोंके समीप जाकर पूछा, कि "क्या आप लोगोंका कार्य्य पूरा हो गया?" सत्यवादी बालखिल्य लोग बोले, कि "हां हुआ है।" श्रीकश्यप प्रजापति जी उनको समझाकर बोले, "हे तपोधनो! इन्होंने ब्रह्माजी की आज्ञा से तीनो भुवन के इन्द्रका पद प्राप्त किया हैं, आप लोगभी दूसरे इन्द्रके लिये चेष्टा कर रहे हैं, पर ब्रह्मा जीकी बात झूठी कर देनी आपको नहीं चाहिये, हे सत्तमो! आपके अभीष्ट सङ्कल्पकोभी मिथ्या करना नहीं चाहता हूं, आपने जिसको इन्द्र बनाना चाहा हैं, वह महाबली और वीर्य्यशाली पुरुष पक्षियोंका इन्द्र होवे; देवराज इन्द्र प्रार्थना कर रहे है, कि आप उन पर प्रसन्न होवें। तपोधनः बालखिल्यगण, मुनिश्रेष्ठ कश्यप प्रजापति से ऐसे कहे जाकर सम्मान पूर्व्वक उनसे बोले, "हे प्रजापते! हम सबोंने इन्द्रकी उत्पत्ति के निमित्त और आपकी सन्तानें उपजाने की अभिलाषासे इस यज्ञ का प्रारम्भ किया है, सो आप हमारे कर्म्मफल को लेकरके जो कुछ अच्छा जान पड़े, वही कीजिये।

श्रीसौतिजी बोले, कि इस समय शुभलक्षणा कल्याणी यशस्विनी दक्षपुत्री तपोरता विनता ऋतुस्नान-पूर्व्वक व्रत कर और शुचि होकर पुत्र की कामना से पतिके पास गई। कश्यपजी उनसे बोले, "देवि! तुम जो चाहती हो, वह पूरा होगा, मेरे सङ्कल्प और बालखिल्य मुनियोंके तपोबलसे तुम्हारे गर्भसे बड़े भाग्यवान्, तीनों भुवन में प्रधान दो पुत्र उत्पन्न होकर त्रिलोक में पूजे जायंगे। भगवान् कश्यपजी फिर विनता से बोले, "प्यारी! तुम अप्रमत्त होकरके अपने सुमहान् गर्भ को धारण किये रहना, क्योंकि यह लोकों में माननीय महावीर कामरूपी दोनों पक्षी सम्पूर्ण पक्षियों पर अधिकार फैलाये रहेंगे।" अनन्तर कश्यप प्रजापति जी प्रसन्नहृदय से देवराजसे बोले, "हे पुरन्दर! तुम्हारी सहायता करनेवाले दो भाई उपजेंगे, उन से तुम्हारी कोई हानि नहीं होगी, हे इन्द्र! तुम्हारा दुःख दूर होवे, तुम सदा इन्द्र बने रहोगे, पर तुम फिर कभी ब्रह्मज्ञानी, वज्रसमान वचन बोलनेवाले, अति क्रोधी ब्राह्मणों का अहङ्कार से अपमान न करना। कश्यप जीके इतना कहने पर स्वर्गनाथ भय को दूरकर स्वर्गधाम को पधारे; विनता भी मनोरथ पूर्ण होने के कारण प्रसन्न हुई और समय आने पर अरुण और गरुड़ यह दो सन्तान प्रसव कीं; उनमें अरुण विकलाङ्ग होकर सूर्य्य के सारथि बने, गरुड़ पक्षियोंके इन्द्र के पद पर बैठे। हे भृगुनन्दन! उस पक्षिराज गरुड़के आश्चर्य कार्य्य की कथा कहता हूं, सुनिये।

आदिपर्व्वमें इकतीसवा अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि हे द्विजश्रेष्ठ! वृहस्पति जीके वचन सुनके देवों के पूर्व्वोक्त रीति से बनठन लेने पर पक्षीराज गरुड़ बड़े वेगसे उनके पास आ पहुंचे। देवगण महाबली गरुड़ को देखते ही कांपने लगे और भयसे

यह भूलकर, कि क्या करना चाहिये, आप ही आप सर्व्व अस्त्रों से एक दूसरे को मारने लगे। उन में बिजली और आगके समान प्रकाशमान् अति वीर्य्यवान् अप्रमेयात्मा विश्वकर्म्मा जी अमृत रखते थे, वह क्षणभर पक्षीवर से लड़कर पङ्ख, चोंच और नखों की चोट से काटे कूटे जाकर मरने पर हुए। आगे पक्षीराजने पङ्खों की हवासे सम्पूर्ण लोकों को उजाले से खाली करके उस धूल से देवोंको भी आच्छादित कर लिया। देवगण धूलसे आच्छादित होकर मोहयुक्त हो गये और अमृत के रखवारे भी अन्धों के समान बनकर गरुड़जी को देख नहीं सके। पक्षीनाथने इस प्रकार से स्वर्गधाम को विकल किया और पङ्ख और चोंचों की चोटोंसे देवों को घायल करने लगे। अनन्तर सहस्रनेत्र इन्द्रने पवनदेवको आज्ञा दी, कि "हे पवन। तुम तुरन्त इस धूल-वृष्टि को रोको। यह तुम्हारा ही कर्त्तव्य है।" यह सुनकर महाबली वायु ने सम्पूर्ण धूल हटा दी, इससे आकाश की अंधेरी साफ होनेपर देवोंने उस पक्षी पर चढ़ाई की। महाबली गरुड़ देवोंसे आघात पाकर सर्व्वभूतों में भय उपजानेवाले प्रलयकालिक बादल के समान अति घोर गर्ज्जन करने लगे और वह महावीर्य्यवान् शत्रुनाशी पक्षीनाथ आकाशको उड़े। कवचधारी, इन्द्रादि सम्पूर्ण देवोंने आकाश को उड़े और अपने ऊपर विराजते हुए गरुड़जी को पट्टिश, परिघ, शूल, गदा, प्रज्वलित क्षुरप्र, सूर्य्य समान चक्रादि नाना अस्त्रों से घेर लिया। पक्षीनाथ चारों ओर से भांति भांति के अस्त्रों की मार सहकरके भी घोर युद्ध करने लगे, एक वार भी विकल नहीं हुए, वरण मानों तेज से सबों को जलाने लगे वह प्रतापी विनता-पुत्र पङ्ख और छाती की चोट से देवों को चारों ओर गिराने लगे; पक्षीराज गरुड़ से गिराये जाकर और चोंच तथा नखों की चोटों से घायल होकर लड़ाई करते हुए बड़े तेजस्वी देवगण अति कातर-चित्तसे मुह से रक्त गिराने लगे। और पूरी हार मान कर वार वार पीछे देखते हुए भागने लगे। उनमें से साध्य और गन्धर्व्वलोग पूर्व्व ओर, वसु और रुद्रगण दक्षिण ओर, आदित्यगण पश्चिम ओर और दोनों अश्विनीकुमार उत्तर ओरको पधारे। पक्षीनाथ गरुड़ अश्वक्रान्द, रेणुक, क्राथन, तपन, उलूक, श्वसन, निमिष, प्ररुज, पुलिन इन महावीरों से घोर युद्ध करने लगे। जिस प्रकार प्रलयकाल में पिनाकधारी क्रुद्ध होकर पिनाक से सबों का नाश करते हैं, उसी प्रकार शत्रु-मथनेहारे विनतापुत्रने पङ्ख, चोंच और नखों से उन वीरों को घायल किया। महाबली बड़े उत्साही वे सब देवता सर्व्व शरीर में घायल होकर रक्तवर्षानेवाले बादल की भांति शोभा पाने लगे। पक्षीश्रेष्ठ गरुड़ने उन वीरों को घायल कर अमृत लाने को जाकर देखा, कि अग्नि-देवता अमृत को चारों ओर से घेरे हैं, उस अग्नि की शिखायें सब तरफ फैली हैं, जान पड़ता है, कि मानों वह शिखा तेज हवा से उड़कर दिननाथ को भी जला रही हैं। यह देख करके वेगवान्, महात्मा, शत्रुदुःखदायी, कामरूपी गरुड़ने चलकर आठ सहस्र एक सौ मुह धारण करके उन सब मुखों से सम्पूर्ण नदियों का जल पीकर फिर अतिवेग से आकर उस जलको छिरकाकर जलती हुई आगको बुझाया और बुझा करके ही अमृत लाने के निमित्त भीतर घुसने की दूसरी एक अति छोटी देह धारण की।

आदिपर्व्व में बत्तीसवां अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि गरुड़, किरणों से सुशोभित उस सुवर्णमय शरीरको धारणकर जिस प्रकार जल का सोता समुद्र में जा

है, उसी प्रकार से बलपूर्व्वक वहां जा घुसे और देखा, कि जलते हुए सूर्य्य की भांति, अति भयानक, लोहे से बने नास्तुरेके समान तीच्णधार एक चक्र अमृत की चारों ओर सदा घूम रहा है। देवोंने अमृत चुरानेवालो को काटने के लिये उस कठोर यन्त्रको बनवा रखा था! पच्चीनाथ उस यन्त्र में प्रवेश की थोड़ी सी जगह देखकर आरों के बीच के छेद से भीतर जा घुसे और उसमें देखा, कि प्रज्वलित अग्नि के समान चमकीले, बिजली के समान चञ्चल जीभवाले अति वीर्य्यशाली, प्रज्वलित मुख और नेत्रवान् देखने में विष-समान, महा-घोर, सदा क्रोधी, अति बली, लाल नेत्रवाले, आखों की पुतली हर घड़ी स्थिर किये हुए, दो कराल सर्प अमृत रखने के निमित्त सदा नियुक्त हैं। उन दोनों में से एक जभी किसीको देखे, तभी वह भस्म हो जाय। विनता-पुत्र गरुड़ने सहसा धूल फेंककर उन दोनों सर्पों की आखें बन्द कर दीं और आकाश से अलच्चित भावसे चढ़ाईकर उनके शरीर में मारने लगे, और बिना विलम्ब उन को टुकड़े टुकड़े कर अमृत पर दौड़े। अनन्तर वह महाबली विनतापुत्र यन्त्र को पूर्णरूपसे मथनपूर्व्वक अमृत का कलसा उठाकर स्वयं न पी करके बाहर निकलने के पश्चात् बड़े वेगसे उड़े और ऐसी लड़ाई आदिसे भी न थककर सूर्य्य का तेज रोककर चलने लगे। जानेके काल में आकाश में विष्णुजीसे भेट हुई। श्रीनारायणजी उनको अमृत पीने के लोभ से रहित देखकरके प्रसन्न होकर बोले, "हे पच्चि! तुम वर मांगो।" पच्चीवर बोले, "मुझको यह वर दो, कि मैं तुम्हारे ऊपर विराजूं" और फिर यह प्रार्थना की, कि अमृत न पीने पर भी मैं अजर अमर हो सकूं। विष्णुजीने "तथास्तु" कहकर वही वर दिया। विनतानन्दन गरुड़ दोनों वर पाकर विष्णुजी से बोले, कि तुम भी कोई वर मांगो। मैं वह तुमको दूं। विष्णु महाबली, वीर्य्यशाली गरुड़से प्रार्थनाकी, कि "तुम मेरे वाहन बनो।" आगे भगवान् नारायणने ऊपर रखने के निमित्त गरुड़ को ध्वजा पर विराजने कहा। गरुड़जी देवोंके देव श्रीनारायणजीसे "तथास्तु" कहकर वायु को हरा करके अति वेगसे चलने लगे। इन्द्रजीने पच्चीनाथ गरुड़को अमृत हरकर ले जाते देख क्रोध से उन पर वज्र मारा। पच्चीनाथ गरुड़ वज्रकी मार खाकर हंसकर देवराज से बोले, "हे इन्द्र! जिस ऋषिकी हड्डीसे वज्र बना है, उनके सम्मान रखनेके निमित्त और तुम्हारे वज्रकी मर्य्यादा बनाये रखने को मैं एक पर त्याग देता हूं, तुमको इसका भी अन्त नहीं मिलेगा; देखो, तुम्हारे इस वज्र की चोट से मुझको कुछ भी पीड़ा जान नहीं पड़ी।" पच्चीश्रेष्ठने यह कहकर एक पर गिरा दिया। सब लोगोंने उस फेंके हुए सुन्दर पर की अपूर्व्व शोभा देखकर उसका "सुपर्ण" नाम रखा। सहस्रनेत्र पुरन्दर यह अत्याश्चर्य्य देखकर ऐसा सोचते हुए, कि "यह पच्ची लघु नहीं है; निश्चय कोई महाप्राणी होगा" बोले, "हे पच्चीवर! मैं जानना चाहता हूं, कि तुम्हारा बल कितना है और तुम से सदा मित्रता रखने की इच्छा होती है।

आदिपर्व्वमें तैंतीसवां अध्याय समाप्त।

गरुड़जी बोले, कि हे देवराज, पुरन्दर! तुम मेरे साथ मित्रता करना चाहते हो; अच्छा, वही होगा। मेरा बल बहुत और न सहने योग्य है, हे शतक्रतो। पण्डितलोग अपने बल की प्रशंसा वा स्वगुण कीर्त्तन नहीं करते; हे मित्र! तुम मित्र बनकर पूछते हो, इस लिये कहता हूं, नहीं तो बिना कारण अपनी प्रशंसा की बात न कहनी चाहिये। मैं एक पङ्खसे पर्व्वत, नगर, वन, फूलवारी, और समुद्र-जल

सहित धरती को उठा ले सकता हूं, यदि तुम भी उस पङ्ख पर बैठे रहो, तौभी मुझे कष्ट नहीं जान पड़ेगा। ज्यादा कहने का प्रयोजन नहीं, स्थावर-जङ्गम पूर्ण सम्पूर्ण भुवनको एकत्र कर एकही काल में लेजाने में मैं थकता नहीं, इतना बल मुझमें है। श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि हे शौनक। सर्व्व लोकोंके हित-चाहनेवाले प्रभु किरीटधारी, श्रीमान् देवराज वीरवर गरुड़ के यह वचन सुनकर बोले, "गरुड़। तुमने जो कुछ कहा, सभी तुम्हारे लिये सम्भव हैं, इस क्षण तुम मेरे से मित्रता करो और तुमको अमृत का प्रयोजन न हो, तो वह मुझे लौटा दो, तुमने जिनको अमृत देने की इच्छा की है, वे सदा हमारी हानि किया करते हैं।" गरुड़जी बोले, "किसी विशेष कारण से अमृत ले जाता हूं, पर किसी को यह अमृत पीने नहीं दूंगा। हे स्वर्गपति, सहस्र नेत्र। मैं इस अमृत के कलसे को ले जा करके जहां रक्खूङ्गा, तुम वहां से उसी क्षण हर लाना। इन्द्र जी बोले, "हे अण्डोत्पन्न द्विजराज। तुम्हारी इस बातसे मैं बड़ा प्रसन्न हुआ। तुम मुझसे जो कुछ वर लेना चाहो मांग लो।" श्रीउग्रश्रवा जी बोले, कि यह बात सुनकरके गरुड़ कद्रुके पुत्रों के व्यवहार और माताकी दासीपन के कारणरूपी कद्रुके छल को स्मरण कर बोले, "मैं हर तरह से समर्थ होने पर भी तुमसे यह वर मांगता हूं, कि हे शक्र। महाबली सर्पगण मेरे भोजन की सामग्री बनें।" दानवनाशी इन्द्रने "तथास्तु" कहकर योगीश्वर, देवों के देव महाप्रभावी हरि के समीप जा करके यह सब कह सुनाया। हरिके गरुड़ की कही हुई हरेक बात मान लेने पर भगवान् स्वर्गनाथने गरुड़ को पुकार कर फिर कहा, कि तुम्हारे अमृत रखते ही मैं उसे हर लाऊंगा। अनन्तर गरुड़ उसी-क्षण माता के निकट लौट गये और प्रसन्न हृदयसे सर्पों से बोले, कि हे नागो। मैं तुम्हारे निमित्त यह अमृत लेता आया हूं और उसे कुशापर रखता हूं, तुम स्नान और मङ्गलाचरण करके अमृत पिओ। तुम सबोंने मिलकर जैसा कहा था, मैंने वैसाही किया है, सो आजसे मेरी माता सेवकाई से छूट जायं। यह सुनकर सर्पगण ने गरुड़ जीसे "तथास्तु" कह कर विनता को सेवकाई से छुड़ाकर नहाने गये, इस अवसरमें इन्द्र भी अमृतका कलसा लेकर स्वर्गधाम को पधारे। सर्पों ने प्रफुल्लित चित्तसे स्नान, जप और मङ्गलाचरण करके अमृत पीने के निमित्त, जहां कुशासन पर अमृत का कलसा धरा था, वहां आ करके देखा, कि कलसा चोरी गया है, तब उन्होंने सोचा कि, "हमने जैसे छल से विनता को दासी बनाया था, गरुड़ ने भी वैसेही छल से उस को सेवकाई से छुड़ाया है।", आगे इस विचारसे, कि कुशासन पर अमृत रखा था, सर्पगण जन कुशोंको चाटने लगे, इससे उनकी जीभ कट कर दो भागों में बंट गई। अमृत के स्पर्श से कुश भी पवित्र हुआ। महात्मा गरुड़ इस प्रकारसे अमृत हरण तथा प्रत्याहरण करके सर्पों को दो जीभवाले बनाया। अनन्तर वह पक्षीराज प्रफुल्लित हृदय से माता के साथ उस वन में वसने लगे और सम्पूर्ण सर्पों से भले प्रकार पूजे जाकर और सर्पभक्षक बनकर दूसरों के करने के अयोग्य कीर्त्ति से माताका आनन्द बढ़ाने लगे। जो नर ब्राह्मणों की सभा में यह कथा सुनते वा पढ़ते हैं; वह अति प्रभावी पक्षीराज गरुड़ जीके चरित्र कहने का पुण्य लेकरके विना सन्देह देवलोक में पधारते हैं।

आदिपर्व्वमें चौतीसवां अध्याय समाप्त।

श्रीशौनकजी बोले, कि हे ...
माता से सर्पों का शाप और अरुण से ...

का शाप इन दोनों के कारण तुमने कह सुनाये और पति से कद्रु और विनता के वर पाने का वृत्तान्त वर्णनपूर्वक विनता के पुत्रोंके नाम कह चुके हो, पर हे सौति! सर्पों के नाम कहे नहीं हो; और कुछ नभी हो, तो प्रधान प्रधान सर्पों के नाम कह सुनाओ, हमको सुनने की अभिलाषा है। श्रीउग्रश्रवा जो बोले, कि हे तपोधन! सर्पों के बहुत होने के कारण सबोंके नाम नहीं कहूंगा, केवल प्रधान प्रधानोंके नाम कहता हूं, सुनिये।

सबों से पहिले शेषनागने जन्म लिया, अनन्तर वासुकि का जन्म हुआ, इसके पश्चात् ऐरावत, तक्षक, कर्कोटक, धनञ्जय, कालकेय, मणिनाग, पूरण, पिञ्जरक, एलापत्र, वामन, नील, अनिल, कल्माष, शवल, आर्य्यक, उग्रक, कलशपोतक, सुरासुख, दधिसुख, विमलपिण्डक, आप्त, करोटक, सङ्ख वालिशिख निष्ठानक, हेमगुह नहुष, पिङ्गल, वाह्यकर्ण, हस्तिपद, मुद्गरपिण्डक, कम्बल, अश्वतर कालीयक, वृत्त, सम्बर्त्तक, पद्म, महापद्म, शङ्खमुख, कुष्माण्डक, क्षेमक, पिण्डारक, करवीर, पुष्पदंष्ट्र, विल्वक, विल्वपाण्डर, मूषकाद, शङ्ख शङ्खशिरा पूर्णभद्र, हरिद्रक, अपराजित; ज्योतिक, श्रीवह, कौरव्य, धृतराष्ट्र, शंखपिण्ड, विरजा, सुवाहु, शालिपिण्ड, हस्तिपिण्ड, पिठरक, सुमुख, कौणपाशन, कुठर, कुञ्जर, प्रभाकर, कुमुद, कुमुदाक्ष, तित्तिरि, हलिक कर्द्दम, बहुमूलिक, कर्कर, अकर्कर, कुण्डोदर, और महोदर, यह सब प्रधान प्रधान नागों के नाम कहे गये; हे द्विजश्रेष्ठ! अधिक होने के भयसे दूसरे सब सर्पों के नाम नहीं कहे। हे तपोधन! इनके पुत्र पौत्रादि भी बहुत हैं, इस लिये उनको कथा भी नहीं सुनाई, वास्तव में अनेक सहस्र, अनेक अजुत, अनेक अर्व्वुद नाग है, उनकी संख्या भी नहीं हो सकती है।

आदिपर्व्व में पैंतीसवां अध्याय समाप्त।

श्रीशौनकजी बोले, कि बेटा। तुम महावीर्य्यशाली सर्पों की कथा कह चुके, पर यह बोलो, कि उन्होंने माताके शाप को सुनने के पश्चात् क्या किया था। श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि तब सर्पों में अति यशस्वी भगवान् शेष नाग कद्रुको छोड़कर गन्धमादन, वदरिका, गोकर्ण, पुष्कर, हिमालय आदि सम्पूर्ण तीर्थ और आश्रमों में घूमकर तपोमग्न, व्रतशील, एकान्तवासी जितेन्द्रिय और वायुभक्षी होके कठोर तप करने लगे। जटा और चीरधारी हो करके कठोर तप करने करते उनका मांस, चमड़ा और नसें सूख गईं। आगे पितामह ब्रह्माजी से उनकी भेट होने पर ब्रह्माजी ने उनको अटल धैर्य्य से तप करते देखकर कहा कि हे शेष! तुम यह क्या करते हो? प्रजाओं का जिससे मङ्गल हो, वही करो; हे अनघ! तुम कठोर तप से प्रजाको दुःख दे रहे हो, हे शेष! मुझसे कहो, कि तुम्हारे चित्त में कौनसी अभिलाषा है। शेषजी बोले, कि मेरे सब सहोदर भाई ही दुष्ट-बुद्धि हैं, उनके साथ एकत्र वसना नहीं चाहता, सो आप वैसी आज्ञा दीजिये। वे आपस में शत्रुके समान सदा द्वेष रखते हैं, इस हेतु मैं मन में यह सोच कर तपकर रहा हूं, कि फिर उनसे भेट न करना पड़े। वे सदा विनता और उसके पुत्रकी हानि किया करते हैं, हमारे सौतेले भाई विनतापुत्र गरुड़, अपने पिता महानुभाव कश्यप प्रजापति के वर से अति बलवीर्य्यशाली हुए हैं; इस हेतु मेरे सहोदरगण सदा उनकी हिंसा किया करते हैं, सो मैं तप करके यह शरीर पतन करूंगा, कि फिर दूसरे जन्म में भी उन भाइयों से किसी प्रकार संसर्ग करना न पड़े। शेषके यह कहने पर पितामह ने उत्तर दिया, कि हे शेष। मैं तुम्हारे भाइयों के सब व्यवहार जानता हूं, तुम्हारी माता के शाप से उनका जो अति भय हुआ है, वह भी

जानता हूं, पर पहिले हो उसका प्रतिकार होगया है, सो तुम भाइयों के निमित्त दुःख मत करो। हे शेष! मैं तुम पर अति प्रसन्न हुआ हूं, तुमको वर दूंगा, जो कुछ चाहते हो, मांगो। हे सर्पश्रेष्ठ! सौभाग्यवश, तुम्हारा चित्त धर्म्म पर झुका है, सो तुम्हारी बुद्धि किसी तरह धर्म्म से न हटे। शेषजी बोले, कि हे देवों के पितामह! प्रभो! आप मुझे यही वर दीजिये, कि धर्म्म, शान्ति और तप में मेरा चित्त बना रहे; यही मेरा अभिप्राय है ब्रह्माजी बोले, कि हे शेष! मैं तुम्हारे इस शान्तिगुणसे प्रसन्न हुआ, तुम मेरी आज्ञा से प्रजाओं के हितके निमित्त यह कार्य्य करो, कि पर्व्वत, नगर, वन, फुलवारी और समुद्र सहित इस धरती को ऐसी दृढ़ता से धरे रहो, कि वह अबके समान किसी प्रकारसे न डोलने पावे। शेष जी बोले, कि देव! आप वरदायी महोपति, भूतपति, प्रजापति और जगपति हैं, अतएव जब आप आज्ञा करते हैं, मैं तब पृथ्वी को ऐसे धरे रहूंगा, कि वह डोलने न पावेगी, हे प्रजापति! आप इस पृथ्वी को मेरे सिर पर रख दीजिये। ब्रह्माजी बोले, कि हे सर्पनाथ! तुम महीमण्डल के नीचे चले जाओ पृथ्वी आपही तुमको बिल दे देगी, हे शेष! तुम्हारे इस धरती-मण्डल को धारण करनेसे मेरा अति प्रिय कार्य्य होगा।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि वासुकि के बड़े भाई सर्पनाथ, प्रभु अनन्त, "तथास्तु" कहकर बिल में घुस करके पूरी धरती-देवी को सिर पर धरे रहे। यह देखकर ब्रह्माजी बोले, कि हे धार्म्मिकवर नागश्रेष्ठ शेष! तुमने अकेले अनन्त फणाओं के मण्डल से जिस प्रकार इस धरती को धारण किया है, मेरे और इन्द्रके बिना कोई दूसरा ऐसे स्थिर भाव से इसे ले नहीं सकता है। श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि प्रतापी प्रभु अनन्त ब्रह्माजी की आज्ञा से अकेले धरती को धारण किये पाताल-तल में बसने लगे। तब भगवान् देवश्रेष्ठ, पितामहने विनतानन्दन सुपर्ण को भी अनन्त की सहायता करने की आज्ञा दी।

आदिपर्व्व में छत्तीसवां अध्याय समाप्त।

श्रीसौतिजी बोले, कि नागराज वासुकि भी माता से शाप के वचन सुनकर यह सोचने लगे, कि क्योंकर वह शाप दूर होगा। अनन्तर वह ऐरावतादि सम्पूर्ण धार्म्मिक भाइयों के साथ विचार करने लगे। वासुकि जी बोले, कि हे निष्पाप भाइयो! माताने जो शाप दिया है, वह सभी जानते हैं, अब आओ, सब-कोई मिलके विचार करके उस शाप से मुक्त होने का प्रयत्न करें। देखो सब शाप हो व्यर्थ हो सकता है पर माता के शाप से मुक्त होने का कोई उपाय नहीं है, विशेष करके अव्यय, सत्य और अप्रमेय पितामहजी के सामने यह शाप दिया गया है, उसी से मेरा हृदय कांप रहा है; जान पड़ता है, कि हमारा सर्व्वनाश बिना सन्देह आ पहुंचा है, नहीं तो शाप देने के काल में अव्यय देवों के देव पितामह ने क्यों माताको मना नहीं किया? सो आओ, आज सब मिलकर ऐसी युक्ति करें, कि जिससे सर्पों का मङ्गल हो, इस समय काल गवांने का कुछ भी समय नहीं है। इस स्थान में जो सर्प उपस्थित हैं, वे सब बुद्धिमान, और ज्ञानवान् हैं, सो सबों से मिलजुलकर विचार करने से अवश्य ही शाप से मुक्त होने का कोई उपाय निकल सकता है। जिस प्रकार अगले समय में अग्नि के दूर होने पर देवो ने उनको फिर प्राप्त करने के लिये उपाय ठहराया था, उसी प्रकार ऐसा कोई उपाय निश्चय किया जावे, कि जिससे राजा जनमेजय का सर्पयज्ञ न होने पावे वा निष्फल हो जावे। श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि अनन्तर विचार-बुद्धि

में पण्डित कद्रुपुत्रोंने "तथास्तु" कहकर स्वीकार-पूर्व्वक एकट्ठे होकर अभिलाषा पूरी करने की प्रतिज्ञा की। आगे विचार के कालमें किसी किसी सर्पने कहा, कि हम उत्तम ब्राह्मण हो करके जनमेजयके निकट यह भिक्षा मांगें, कि वह सर्प-यज्ञ न करें। पण्डिताईके अभिमान रखते हुए किसी किसी सर्पने कहा, कि चलो, हममें से कोई कोई जनमेजय के निकट जाकर उनके प्यारे मन्त्री बने रहें, ऐसा करनेसे वह हमसे हर विषय का ही कर्त्तव्याकर्त्तव्य पूछेंगे, उस समय हम ऐसी युक्ति देंगे, कि जिससे सर्प-यज्ञ न होने पावे। राजा जनमेजय बड़े बुद्धिमान् हैं, हम भी उनके बड़े प्यारे मन्त्री बने रहेंगे, जब वह पूछेंगे, कि सर्प यज्ञका अनुष्ठान करना चाहिये या नहीं, हम तभी कहेंगे, कि नहीं महाराज! ऐसा कार्य्य न कीजिये, उस यज्ञ से बड़ा भारी दोष होगा, जीवों की हिंसा करनेसे परलोक होने पर नरक में जाना पड़ता है और सर्प-गण क्रोधित होकर प्रजाओं को काट खायंगे, ऐसी भांति भांति की युक्ति दे करके इस लोक और परलोक के अनेक दोष दिखाकर उनको ऐसे रोकेंगे, कि सर्प यज्ञ न होने पावेगा। अथवा सर्पयज्ञ की विधि जाननेवाले और राज कार्य्य में दक्ष जो ब्राह्मण उस सर्पयज्ञ के आचार्य्य होंगे, कोई सर्प जाकर उन्हीं को काटेगा, काटने ही से वह मर जायंगे, सो यज्ञके प्रधान उपाध्याय के मारने से यज्ञ फिर न होगा। इसके पश्चात् भी कोई दूसरे सर्प-यज्ञ की विधि जाननेवाले पुरोहित होवें, तो उनको भी उसी प्रकारसे काटेंगे; ऐसा करनेही से हमारा कार्य्य पूरा होगा। अनन्तर धार्म्मिक कृपावान् और माननीन कुछ नागों ने कहा, कि यह तुम्हारी कुबुद्धिही है, ब्रह्म-हत्या न करनी चाहिये, विपतके समय निर्द्दोष और धर्म्मयुक्त उपायही कल्याणदायी होताहै; अधर्म्म के कार्य्यसे सम्पूर्ण जगत् नाश होता है। दूसरे कुछ नाग बोले, कि बिजलीदार बादल का स्वरूप लेकर प्रतिक्षण जल बर्षाकर यज्ञ की आग बुझा देंगे और रात्रि के समय ऋत्विकोंके बेसुध होने पर कोई कोई सर्प यज्ञके सम्पूर्ण अङ्ग स्रुकभाण्डको चुरा लावेंगे, ऐसा करनेहीसे यज्ञ में विघ्न पड़ेगा। अथवा उस यज्ञ के आरम्भ होनेके समय सैकड़ों सर्प एकत्र होकर सब लोगों को काटने लगेंगे, ऐसा करनेही से सबोंको भय उपजेगा या सर्पगण मूत्र और विष्ठा छोड़ छोड़कर यज्ञ के पवित्र भोज्य बिगाड़ देंगे, ऐसा करने से सब भोज्य नष्ट हो जायंगे। दूसरे कुछ नाग बोले, कि चलो, हम जाकर राजाके पुरोहित बनें, और यह कहकर, कि "पहिले यज्ञ की दक्षिणा दो" यज्ञ-में विघ्न डालेंगे, ऐसा करने ही से वह राजा हमारे वश में आकर हम जो कहेंगे, सोही करेंगे। दूसरे कुछ सर्प बोले, कि राजा जब जलक्रीड़ा करेंगे, उसी समय हम लोग उनको पकड़ लाकर घर में बांध रखेंगे, ऐसा होने से फिर सर्पयज्ञ होनेकी सम्भावना नहीं रहेगी। आगे पण्डिताई के अभिमान रखने वाले कुछ सर्प बोले, कि उस प्रकारसे भी कुछ नहीं होगा, आओ हम जनमेजयको पकड़ लाकर काटें, ऐसा करनेही से हमारा अभीष्ट पूर्ण होगा, क्योंकि उनकी मृत्यु होने पर एक बारगी सब बुराई की जड़ कट जायगी। हे चक्षुश्रव वासुकि! हमारी बुद्धि की सीमा इतनीही है; अब आपकी समझ में जो उचित जान पड़े, वही कीजिये। सर्पगण, सर्पनाथ वासुकि को यह बात कह कर उनके मुह की ओर ताकने लगे, वासुकि भी बहुत सोचकर उन सर्पों से बोले, कि हे सर्पगण! तुमने अपनी अपनी बुद्धिके अनुसार जो निश्चय किया, वह मेरी समझ में अति अनुचित लगता है, वास्तवमें तुम लोगोंने जो कुछ कहा है, उनमें

से कोई भी बात मुझे अच्छी नहीं जंचती; क्योंकि उनमें ऐसा कोई भी कर्त्तव्य विषय नहीं है, जिसके करने से तुम्हारा मङ्गल हो सके। वास्तव में मेरी समझ में महानुभाव कश्यप को प्रसन्न करनाही हमारे लिये मङ्गलदायी है। हे सर्पगण! अपनी और स्वजनों की आत्मा पर विशेष आदर रहने के कारण, तुम्हारी कही और विचारी हुई किसी बात पर मन नहीं चलता है। पर चाहे, जिस प्रकार सेहो सके, तुम्हारी भलाई मुझे करनी ही होगी। मैं तुम से बड़ा हूं, सो मेरे ही ऊपर सब दोष गुणों का भार है; इसी से मैं बहुत ही उदास हो रहा हूं।

आदिपर्व्व में सैंतीसवां अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि आगे एलापत्र नामक एक सर्प सम्पूर्ण सर्प और वासुकि को इतनी कथा सुनकर बोला, कि हे महाराज! ऐसा नहीं होगा, कि यह सर्पयज्ञ न हो; और जिन से हमलोगों को बड़ा भय हो गया है, वह पाण्डव-कुमार राजा जनमेजय भी कुछ ऐसे वैसे नहीं है। वास्तव में जो पुरुष दैववश विपत्ति में गिरता है, वह दैवही को आश्रय कर लेता है, उसका कोई दूसरा उपाय नहीं है, हे सर्पश्रेष्ठगण! हम को दैवही से यह भय हो गया है, सो दैवही की शरण लेनी उचित है। तुम मेरी बात सुनो जब माताने हमको शाप दिया, तब मैंने भीतचित्त से उनकी गोदमें बैठकर सोच से घबराए देवों की यह बात सुनी, कि वे अति दुःखी होकर पितामहजीके समीप जाकर बोले, कि हे प्रभो देव देव पितामह! आपके सामने ही तीक्ष्ण-रूपा कद्रूने जैसा शाप दिया है, दूसरी कोई स्त्री आपने प्यारे पुत्र को वैसा कठोर शाप नहीं दे सकती, पर जो आपने "तथास्तु" कहकर कद्रूकी बात मान ली और उसे रोका नहीं, इसका क्या कारण है, हम लोग सुनना चाहते हैं। ब्रह्मा जी बोले, कि अनेक सर्प तीक्ष्ण, बड़े विषैले और घोररूप हो गये हैं, सो मैंने प्रजाके हितके निमित्त उससमय कद्रूको रोका नहीं, वास्तव में जो सब सर्प नीचाशय, काटने में बड़े तय्यार, पापात्मा और बड़े विषैले हैं, सर्पयज्ञ में वही नष्ट होंगे, पर जो धार्म्मिक हैं, उनकी हानि नहीं होगी। इस सर्पयज्ञका समय आने पर जिस उपायसे उस भारी भयसे सर्पों की मुक्ति होगी, वह कहता हूं, सुनो।

"जरत्कारु नामके अति बुद्धिमान्, जितेन्द्रिय, तपमें रत एक महर्षि यायावर वंशमें उत्पन्न होंगे। उनके आस्तीक नामक एक तपस्वी पुत्र जन्म लेंगे. उन्हींसे सर्पयज्ञ बन्द कराया जायगा। इसीसे जो सब सर्प धर्म्मशील हैं, वही बचेंगे।" देवगण बोले, "ब्रह्मन्! वह मुनियों में प्रधान, बड़े तपोवीर्य्यवान् जरत्कारु, किसकी गर्भसे उस बड़े प्रभावी पुत्रको उत्पन्न करेंगे?" ब्रह्माजी बोले, "वीर्य्यवान् द्विजश्रेष्ठ जरत्कारुजी निज नामवाली कन्या से उस वीर्य्यशाली पुत्रको उपजायेंगे।" सर्पनाथ वासुकि की जरत्कारु नाम्नी एक बहिन है। उसी जरत्कारु के गर्भ में जरत्कारुजी के वीर्य्य से वह आस्तीकमुनि जन्म लेकर नागों को माताके शापसे मुक्त करेंगे। एलापत्र बोला, कि देवों ने पितामहसे "एवमस्तु" कहा और भगवान् विरिञ्चि भी देवो की यह कथा सुनकर स्वर्गधाम को पधारे। हे वासुके! मैं यह उपाय देखता हूं, कि जब वह व्रतशील महर्षि जरत्कारु विवाहके निमित्त कन्या मांगेगे, तब तुम सर्पों की शापशान्तिके लिये जरत्कारु नाम्नी अपनी बहिन को दान कर देना; मैंने सुना है, कि माताके शाप को दूर करनेका यह एकही उपाय है।

आदिपर्व्व में अठतीसवां अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि हे द्विजश्रेष्ठ। सम्पूर्ण सर्प एलापत्र नाग की बात सुनकर अति प्रसन्न हुए और सभी उनको "साधु" कहने लगे। वासुकिने आनन्दित होकर जरत्कारु नाम्नी अपनी बहिन को कुमारी रख छोड़ा। अनन्तर कुछ कालान्तर देवता और असुरों ने मिलकर समुद्र-मथन किया; उसमें महाबली वासुकि, मथन रस्सी हुए। आगे उस कार्य्यके पूर्ण होने पर देवोंने वासुकिके साथ पितामहजीके निकट जाकर कहा, "भगवन् यह वासुकि अपनी माता के शाप से भय खाकर अति दुःखी हुए हैं; आप कृपापूर्व्वक इनकी माता के शाप से उपजी हुई उदासी को दूर कीजिये, यह स्वजनों के हितेच्छुक हुए हैं। यह नागनाथ सदा से हमारे प्रियकारी और हितकारी हैं; हे देवेश। आप कृपा प्रगटकर इनके चित्त की पीड़ा को दूर कीजिये।" ब्रह्माजी बोले, "हे असरो। एलापत्रनागने पहिलेही वासुकि से जो कुछ कही थीं, वह मेरी ही विचारी हुई बात हैं। मैंने जैसा कहा था, काल आजाने पर वासुकि वैसाही करें; जो सब सर्प सदासे पापाचारी हैं, वे ही सर्पयज्ञ में नष्ट होंगे; जो धार्म्मिक हैं, वे नष्ट नहीं होंगे। हाल में उस द्विजराज जरत्कारु ने भूलोक में जन्म लिया है और सदासे कठोर तपस्या में मग्न है, अतएव वासुकि जाकर उचित समय में उनको अपनी जरत्कारु नाम्नी बहन सौंप दें। "हे देवगण। एलापत्र नागने सर्पों के हित के निमित्त जो कुछ कहा है, वह सब ठीक वैसाही होगा, कभी उसका विपरीत न होगा।" श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि शापसे मुग्ध वासुकि पितामहजीकी यह बात सुनकर जरत्कारु ऋषिकी बहिन दान करनेका प्रण ठानकर सम्पूर्ण सर्पों को यह आज्ञा देकरके जरत्कारुके पास नियुक्त कर रक्खा, कि जब जरत्कारु, पत्नीके निमित्त कन्या मांगेंगे, तब तुम लोग आकर मुझे तुरन्त समाचार देना; ऐसा करनेही मे हमारा मङ्गल हो सकेगा।

आदिपर्व्व में उनतालीसवां अध्याय समाप्त।

श्रीशौनकजी बोले, कि हे सूतपुत्र! तुमने जिस जरत्कारु का वृत्तान्त कहा, उस महानुभाव ऋषिका किस लिये "जरत्कारु" यह नाम भूमण्डल में प्रसिद्ध हुआ, वह मैं सुनना चाहता हूं। जरत्कारु शब्द की व्युत्पत्ति कैसी है, वह ठीक ठीक कहो। श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि जरत् शब्दका अर्थ क्षय और कारु शब्दका अर्थ दारुण है; जरत्कारु का शरीर बहुत दारुण अर्थात् विशेष पुष्ट था; पर जरत्कारु ने कठोर तपस्यासे धीरे धीरे उस दारुण शरीर को सुखा लिया था; हे ब्रह्मन्। इसी लिये वह जरत्कारु नाम से प्रसिद्ध हुए थे। वासुकी की बहिन के नाम की व्यूत्पत्ति भी वैसीही है। धर्म्मात्मा शौनकजी यह सुनकर हंसने लगे और उग्रश्रवाजीसे बोले, कि हां तुमने जो कहा वही ठीक है। आगे उन्होंने फिर कहा, कि तुमने पहिले जो जो कथा कही है, वह सब हमने सुना. आस्तिक मुनिने जिस प्रकारसे जन्म लिया था, अब वही सुनना चाहता हूं। उग्रश्रवाजी यह वचन सुनकर शास्त्रके अनुसार कहने लगे।

ब्रह्माजी की आज्ञा से वासुकि जरत्कारु ऋषि को अपनी बहिन दान करना ठानकर सम्पूर्ण सर्पों को जरत्कारुके पास नियुक्त रखकर सावधान हो रहे। आगे बहुकाल व्यतीत हुआ, पर धीमान् व्रतपरायण वह ऋषि केवल तपही में दत्तचित्त रहे; विवाह करना नहीं चाहा। वह महात्मा केवल जितेन्द्रिय, भय रहित स्वाध्याय में नियुक्त, ऊर्द्धरेता और तपःपरायण होकरके सम्पूर्ण पृथ्वीमण्डल में घूमने लगे, एकवार मनसे भी विवाह करने

की कल्पना नहीं की। हे ब्रह्मन्! कुछ कालान्तर परीक्षित् नामक राजाने कौरव वंश में जन्म लिया। वह महाराज अपने प्रपितामह पाण्डुराजा के समान युद्ध में अद्वितीय धनुषधारी और आखेटक थे; इसी वह मृग, शूकर चीता भैंसे और दूसरे भांति भांति की वनैले जन्तुओंको मारकर मृगया करते हुए फिरा करते थे। एक समय परीक्षित् विचित्र वाणसे एक मृग को बींधकर पीठ पर धनुष चढाये उसके पीछे दौडते हुए घने वन में जा घुसे। जैसे पहिले भगवान् रुद्रजी देवलोक में यज्ञ की मृगको बींधकर उसके पीछे पीछे हाथ में चाप लिये ढूढ़ने के निमित्त इधर उधर घूमते फिरे थे, वह भी वैसेही बींधे हुए मृग के पीछे पीछे दौड़ते हुए वन में घूमने लगे। परीक्षित् से बींधा हुआ कोई मृग पहिले जीवित रहकर वन में भाग नहीं सका था। इस मृग का बींधे जाकर भागना और उससे उनका बड़ी दूर तक घने वन मे लिवाये जाना उनके केवल बहुत शीघ्र स्वर्गप्राप्ति का पूर्व्वलक्षण था। आगे परीक्षित ने थके, मांदे और प्यासे होकर वनमें देखा, कि एक मुनि गौचराने के स्थान में बैठे हैं और बछड़ों के दूध पीने के काल में उनके मुहसे गिरे हुए फेनको पी रहे हैं। राजा परीक्षित्ने भूख और थकावट से कातर होकर वेग से व्रत में रत उस मुनि के निकट जाकर धनुष उठाकर पूछा, "हे ब्रह्मन्। मैं अभिमन्यु का पुत्र राजा परीक्षित हूं, मुझसे बींधा हुआ एक मृग अदृश्य हो गया है, आपने उसको देखा कि नहीं? मौनव्रत किये हुए उस मुनिने कुछ उत्तर नहीं दिया, आगे राजाने क्रोधवश होकर चाप के अगले भाग से एक सर्पको उठाकर उनके गले में मालाके समान लपेट दिया। मुनिने उस पर ध्यान न देकरके भली बूरी कुछ भी नहीं कही। राजा ऋषि की इस दशामें देखकर क्रोध छोड़के कातर हृदयसे राजधानी में लौट गये ऋषि भी उसी दशा में रहे। वह क्षमाशील महामुनि जानते थे कि राजसिंह परीक्षित स्वधर्म्म में रत रहते हैं, इस हेतु अपमानित होने पर भी शाप नहीं दिया। भरतवंश के अवतंस राजशार्दूल परीक्षित् भी उस मुनि को वैसा धर्म्मशील करके नहीं जानते थे,इसी लिये ऐसी धृष्टता प्रगट की।

उस ऋषिका शृङ्गी नाम एक तरुण पुत्र था; वह अति तेजस्वी, तपस्यायुक्त और व्रतनिष्ठ था; उसको क्रोध आने से शान्त करना असाध्य था। वह बीच बीच में भले प्रकार संयत होकर आदरपूर्व्वक सुख से बैठे हुए सर्व्वभूतों के हित में रत, पितामह ब्रह्माजी के निकट गमन किया करता था। जिस दिन परीक्षित ने उसके पिता के गले में मृत सर्प डाल दिया था, उस दिन वह पितामहजी से आज्ञा पाकर घर को आ रहा था, ऐसे समय उसके साथी कृश नामक ऋषिपुत्र खेलता हुआ धर्म्म के विषय में उसको हंसी कर उसके पिता का हाल सुनाया। अति क्रोधी ऋषि-कुमार शृङ्गी उसे सुनते ही क्रोधसे परिपूर्ण होकर एकवारही विषके समान बना। कृश बोला, "हे शृङ्गि! तुम जैसे तपस्वी वैसे ही तेजस्वी भी हो, फिर कभी अहङ्कार न करना, तुम्हारे पिताने एक मरे सर्पको गले में धारण किया है। हमारे समान ब्रह्मज्ञानी सिद्ध तपस्वी ऋषि-पुत्रों के कुछ कहने पर तुम फिर कभी कुछ मत कहना, तुम्हारा पुरुषाभिमान् कहां रहा? तुम्हारे अहङ्कारके वचन कहां गये? अभी घरमें जाकर देखोगे, कि तुम्हारे पिता गले में एक मुर्देको लिये हुए हैं। हे मुनिजनों में श्रेष्ठ पुरुष! तुम्हारे पिताको कोई दोष करते नहीं देखा विना दोषही इस प्रकार से अपमानित होते देखकर मैं बड़ा दुःखी..

आदिपर्व्व में चालीसवां अध्याय

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि कृश के इतनी कथा कहने पर वह तेजस्वी शृङ्गी क्रोधयुक्त होकर पिता के मृत सर्प धारण की बात सुनकर मनकी पीड़ा से जलने लगा, आगे कृश की ओर देखकर मीठी बातों से पूछा, आज क्यों-कर मेरे पिताके गले में मृत सर्प आया ?" कृश बोला, "आज राजा परीक्षित् मृगयाको आकर तुम्हारे पिता के गले में मरा सर्प डाल गये हैं।" शृङ्गी बोला, "हे कृश। सच बोलो, मेरे पिता ने उस मन्दबुद्धि राजा का कौनसा अनिष्ट किया था और देखो, मेरा तपोबल कितना है।" कृश बोला, "अभि-मन्युके पुत्र राजा परीक्षित् मृगयाके निमित्त वन में प्रवेश कर बाण से एक शीघ्रगामी मृगको बींधकर अकेले उसको पछियाने लगे; आगे जब घोर वन में देर तक घूमने पर भी मृग को नहीं देखा, तब भूख, प्यास और थकावट से विकल होकर जड़ के समान बैठे मौन साधे तुम्हारे पिता को देखतेही उस भागे हुए मृग की बात बार बार पूछने लगे। तुम्हारे पिता मौनव्रत किये हुए थे; सो कुछ उत्तर नहीं दिया। उसीसे राजाने चाप की कोटि से एक मृत सर्पको उठाकर उनके गले पर रख दिया। हे शृङ्गिन्! तुम्हारे व्रत-शील पिता भी उसी दशा में हैं, राजा परी-क्षित् अपनी राजधानी हस्तिनापुर को पधारे हैं।"

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि यह सुनकर, कि पिताके गलेमें मृत सर्प रखा हुआ है, ऋषि-पुत्र क्रोधाग्नि से जल उठे, उनके दोनों नेत्र लाल हो गये। उस क्रोधी और तेजस्वी ऋषि-कुमारने क्रोध से बावले बनकर जल छूकर भूपाल को यह शाप दिया, कि "जिस पापिष्ठ राजाने मौनव्रतयुक्त मेरे वृद्ध पिता के गले में मृत सर्प डाल दिया है, कठोर विषधारी सर्पनाथ तक्षक मेरे वाक्यानुसार अति क्रोधित होकर उस ब्राह्मण के अपमान करनेवाले कुरुकुलके कलङ्क रूपी राजा को सात रातों के बीच में यमराज के पाहुने बनावेंगे।"

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि शृङ्गी क्रोधवश इस प्रकार शाप देकर पिताके निकट गया। उसके पिता मृतसर्प लेकर गौ चरानेके स्थान में बैठे थे, शृङ्गी उनको उस दशामें देखकर फिर क्रोधयुक्त होकर मन की पीड़ासे आंसू गिराने लगा और बोला, "पिता! यह सुन कर, कि दुरात्मा राजा परीक्षित् ने आपका यह अपमान किया है, मैंने क्रोध से उस कुरु कुल के कलङ्की को उसके कुकार्य्ययोग्य यह कठोर शाप दिया है, कि सातवें दिन सर्पेन्द्र तक्षक उसको यमघर पहुंचावेंगे।" हे ब्रह्मन्! शमीक ऋषि उस प्रकार क्रोधयुक्त शृङ्गी से बोले, "बेटा! तुमने जो किया, उससे मैं अप्र-सन्न हुआ, तपस्वियों का ऐसा धर्म्म नहीं है, हम उस राजाके अधिकार में बसते हैं और वह भी न्यायानुसार हमारी रक्षा कर रहे हैं, इसलिये उनका दोष लेनेयोग्य नहीं है। बेटा! राजा के दोष करने पर भी उनके क्षमा करना हमारा कर्त्तव्य है, हमारे धर्म्म को बिगाड़ने से धर्म्मभी हमको बिगाड़ता है। यदि राजा हमारी रक्षा न करे, तो हमारा भारी अमङ्गल हो सकता है; हम फिर सुख से धर्म्मका अनुष्ठान नहीं कर सकते; बेटा! धार्म्मिक राजों से भले प्रकार रक्षित हो हम बहुत धर्म्मार्ज्जन किया करते हैं, सो राजा धर्म्मतः हमारे धर्म्म के भी भागी होते हैं। अतएव राजाके दोष करने पर भी उनको क्षमा करना चाहिये। विशेष कर जिसप्रकार से प्रजाओं को पालना राजा का कर्त्तव्य है, परीक्षित् उसी प्रकारसे अपने प्रपितामह पाण्डुराजा के समान आदर-यत्न से हमारी रक्षा कर रहे हैं। जान पड़ता है, कि उस तपस्वी राजाने भूखे और थके रह कर मेरा

जो मौनव्रत है, उसे न जानके ही ऐसा किया है। बेटा! देश में राजा न रहने से सदा लुटेरों के भय आदि नाना दोष आ पड़ते हैं, लोगों के विद्रोही होने से राजाही दण्ड देकर उनका शासन करते हैं, जब सब लोग राजाके दण्ड के भय से भीत होते हैं, तभी शान्ति भले प्रकार संस्थापित होती है। सदा भययुक्त रहने से कोई धर्म्माचरण वा योगादि क्रिया नहीं कर सकता, सो राजाही से धर्म्म और धर्म्म ही से स्वर्ग मिलता है; भूपाल द्वारा सम्पूर्ण यागादि क्रियाओं के अनुष्ठान होने से देवगण प्रसन्न होकर वृष्टि करते हैं, वृष्टि से अन्नआदि उपजते हैं। और अन्नआदि से प्रजाके जीवन बने रहते हैं। राजा राज्य की रक्षा करते हैं, इसी लिये वह मनुष्यों के धाता होते हैं; भगवान् मनुजी कह गये हैं, कि राजा दश श्रोत्रीय ब्राह्मण के समान माननीय है! अतएव जान पड़ता है, कि तपस्वी परीक्षित्ने भूखे होकर और थककर मेरे इस मौनव्रत को न जानके ही ऐसा किया है; बेटा! तुमने बाल-स्वभाव से क्या ऐसा कुकर्म्म किया? राजाको शाप देना हमारे लिये किसी प्रकार कर्त्तव्य नहीं होता।"

आदिपर्व्व में एकतालीसवां अध्याय समाप्त।

शृङ्गी बोला, "हे पिता! यदि परीक्षित् को शाप देनेसे मेरा साहस प्रकाश वा कुकर्म्म हुआ हो, तो होवे और आपभी उसे प्रिय वा अप्रिय जो कुछ समझना हो, समझें; पर मेरी कही हुई बात व्यर्थ नहीं होगी। हे तात! मैं आपको निश्चय करके कहता हूं, कदापि मेरी वह बात झूठी न होगी, मेरा शाप का व्यर्थ होना तो दूर रहा, मैं हंसी से भी कभी झूठ नहीं बोलता।" शमीक बोले, "बेटा! मैं जानता हूं, कि तुम्हारा प्रभाव बड़ा कठोर है और तुम सत्यवादी हो. कभी झूठ नहीं बोले हो और तुम्हारा दिया हुआ यह शाप भी व्यर्थ नहीं जायगा; पुत्र के वयःप्राप्त होने पर भी सदा उसको ऐसा उपदेश करना पिताका कर्त्तव्य है, कि वह गुणवान् और यशयुक्त होवे। तुम तो बालक हो, सदा तप हो में रत हो, महात्माओं के भी प्रभाव बढ़ने के साथ साथ क्रोध भी बहुत बढ़ता है। हे धार्म्मिकवर! तुम्हारा बालस्वभाव और अनुचित साहस देखकर जान पड़ता है, कि मुझे पुत्र प्रेमवश तुमको बहुतेरे विषयोंकी शिक्षा देनी होगी। हे पुत्र! तुम क्रोध तज शमयुक्त होकर बनके फल मूल खाकर तप किया करो, इस प्रकारसे फिर धर्म्मक्षय न करना, क्योंकि जितेन्द्रिय मुनियों का बड़े दुःख से बटोरा हुआ जो धर्म्म है, वह क्रोधसे लोप हो जाता है और धर्म्मके लोप होनेही से बाञ्छित सद्गति नहीं मिलती। क्षमाशील यतियों की क्षमाही सिद्धि की जड़ है, तुम सदा क्षमाशील और जितेन्द्रिय होकर तप करते रहो, एक क्षमा को आश्रय करके ब्रह्मलोकको प्राप्त करोगे। बेटा! मैं शान्ति को आश्रय करके आज जितना सम्भव हो सके, सब करूंगा; अवश्य ही नरनाथके निकट यह बात कहला भेजूंगा, कि "राजन्! तुम जो हमारे गले पर मृत सर्प डालकर मेरा अपमान कर गये हो, वह देखकर मेरे न सहनेहारे बालक पुत्रने अज्ञानता से तुमको शाप दिया है।"

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि सुव्रतकारी महातपा शमीक का हृदय दया से गल गया। उन्होंने गौरमुख नामक सुशील और सावधान शिष्य को यह आज्ञा देकर भेज दिया, कि तुम राजाके पास जाकर कुशल-क्षेम पूछकर सम्पूर्ण समाचार कहना। गौरमुख [illegible] पधारकर द्वारपाल से पहिले निवेदन [illegible] कुरुकुलके बढ़ाने वाले राजा परी[illegible]

मन्दिर में गये। आगे थकावट दूर कर, मन्त्रियों के सामने ही राजा के पास शमीक मुनिके कहे हुए कठोर समाचारको आदि से अन्ततक कहने लगी, "हे राजेन्द्र! आपके अधिकार में परम धार्म्मिक, शान्त, दान्त महा-तपोवन्त शमीक नामक एक महर्षि हैं; हे नरसिंह। वह मौनव्रतधारी हैं, आपने चाप की कोटि से एक मृतसर्प को उठाकर उनके गले में लपेट दिया था, शमीक मुनिने आपको उस कार्य्य से क्रोधित न हो करके क्षमा की थी, पर उनके पुत्रने क्षमा न करके आज पिताके न जानने में आपको यह शाप दिया है, कि सात रातों के बीच में तक्षक सर्प महाराज को काटेगा। शमीक-ऋषि, पुत्र को वार वार बोले थे, कि ऐसा करो, कि जिससे महाराज वच जायं, पर वह बोला, कि कोई भी उस शाप को व्यर्थ न कर सकेगा। ऋषिवर किसी प्रकारसे क्रोधयुक्त पुत्रके क्रोध को शान्त न कर सके, इस हेतु आपकी हितेच्छा से मुझे भेजा है।"

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि कुरुवंशावतंस तपस्वी राजा परीक्षित् उस कठोर बात को सुनकर यह जान करके, कि मैंने पापकार्य्य किया है, अति दुःखी हुए; विशेष कर जब सुना, कि उस महामुनिने मौनव्रत के कारण उत्तर नहीं दिया था, तब और भी अधिक-शोक से कातर हुए और यह सोचते हुए कि ऐसे दया-स्वभावी शमीक मुनि का मैंने अपमान किया है, पूर्व्वके किये पाप को स्मरण कर वार वार कातर होने लगे। देव-समान राजा परीक्षित् यह समझकर कि क्षमाशील ब्राह्मण का अपमान किया है, जैसे दुःखी हुए, अपनी मृत्यु के समाचार सुनने परभी वैसे कातर नहीं हुए। अनन्तर यह प्रार्थना जताकर, कि भगवान् शमीकमुनि फिर मुझ पर प्रसन्न होवें, गौरमुख को विदा किया।

गौरमुख के चलेजाने पर राजा सोचयुक्त हो उसीक्षण मन्त्रियों से मन्त्रणा करने लगे। स्वयं मन्त्रतत्त्वज्ञ होकरके भी उन्होंने मन्त्रियों से विचार कर अच्छे प्रकारसे रक्षित एकस्तम्भ वाला एक गृह बनवाया, आगे बचने के निमित्त चिकित्सक और दवा पास रखी और मन्त्र में सिद्ध ब्राह्मणोंको शरीर की रक्षाके निमित्त नियुक्त किया। परम धार्म्मिक वह परीक्षित् मन्त्रियों से चारों ओर से सुरक्षित होकर उसी स्थान में सब राजकार्य्य करने लगे। उस सुरक्षित गृह में राजा के पास कोई भी जाने नहीं पाता था। अधिक कहना व्यर्थ है, सर्व्वत्र चलनेवाली हवा भी वहां पहुंचने नहीं पाती थी।

आगे सातवां दिन आपहुंचने पर द्विजश्रेष्ठ विद्वान् काश्यप राजा को चिकित्सा करने को पधारे। उन्होंने सुनाथा, कि सर्पनाथ तक्षक राजा परीक्षित् को यमराजके घर पहुंचावेगा इससे उन्होंने मनही मन में निश्चय किया था कि सर्पनाथ के राजा को काटनेहीसे मैं विषसे मुक्तकर आरोग्य करूंगा, ऐसा करने से मुझे धर्म्मार्थ दोनों प्राप्त होंगे। यह सोचते हुए एकचित्त होकर काश्यपजी जारहे थे, कि ऐसे समयमें नागराज तक्षक बूढ़े ब्राह्मण का वेश धरकर उन से जा मिला और बोला, "हे मुनिश्रेष्ठ। आप शीघ्रता से कहां जारहे हैं? आपने कौनसा कार्य्य साधने की इच्छा की है?" काश्यपजी बोले, "आज सर्पनाथ तक्षक कुरुकुल-नन्दन शत्रुनाशी राजा परीक्षित् को विष से जलावेगा, हे सौम्य। अग्निके समान तेजस्वी पाण्डवकुलतिलक महाबली राजा को तक्षकके काटने हीसे मैं उसीक्षण आरोग्य करूंगा, इस अभिप्राय से मैं शीघ्र जारहा हूं।" तक्षक बोला, "ब्रह्मन्! मैं ही तक्षक हूं परीक्षित् को भस्म करूंगा, मेरे काटने से तुम आरोग्य नहीं कर सकोगे, तुम लौट जाओ।"

काश्यपजी बोले, "यह मुझको निश्चयरूपसे जान पड़ता है, कि तुम्हारे राजाको काटने से मैं जाकर विद्याबल द्वारा बिष से बचा सकूंगा।

आदिपर्व्व में बयालीसवां अध्याय समाप्त।

तक्षक बोला, कि हे काश्यप। यदि तुमको ऐसी समझ हो, कि मेरे काटने से तुम आरोग्य कर सकोगे, तो मैं इस बड़को काटता हूं, तुम उसको जिलादो, और अपनी शक्तिके अनुसार मन्त्रबल दिखाने में त्रुटि मत करो; हे द्विजसत्तम। देखो, तुम्हारे सामने ही इस वृक्ष को भस्म कर देता हूं। काश्यपजी बोले, "हे नागनाथ। यदि तुमको ऐसी समझ हुई हो, कि मैं आरोग्य नहीं कर सकूंगा, तो इस वृक्ष को काटो, तुम्हारे काटनेसे मैं उसको फिर जिला दूंगा।' श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि महात्मा काश्यपके यह कहने पर नागेश तक्षकने उस बड़ को काटा, सर्प के बड़े प्रयत्न से काटते ही वह वृक्ष विषम सर्पविष से जलने लगा। तक्षक उस वृक्ष को भस्म करके काश्यपजीसे फिर बोला, "हे द्विजराज। तुम अपनी शक्ति के अनुसार यत्न करके इस वृक्ष को फिर जिलाओ।" सौतिजी बोले, कि काश्यपने तक्षक के तेज से भस्म हुए वृक्षके भस्म को लेकरके कहा, "हे सर्पनाथ। आज इस वृक्ष पर मेरी विद्या का बल देखो, तुम्हारे सामने ही मैं इस को जिलाता हूं।" अनन्तर उन द्विजश्रेष्ठ विद्वान् भगवान् काश्यपने उस भस्म हुए वृक्षको विद्या के बल से जीवन दिया। उसमें पहिले, अङ्कर, आगे दोपत्ते, उसके पश्चात् महाशाखा फिर छोटी छोटी शाखा और सम्पूर्ण पत्ते निकल पड़े। महात्मा काश्यप को वृक्षको फिर जिला देते देखकर तक्षक बोला, "हे ब्रह्मन्। यह तुम्हारे लिये बड़े आश्चर्य्य का विषय नहीं है, कि तुम मेरे सदृश किसी दूसरे सर्प के तेज विषको दूरकर सकते हो, पर हे तपोधन। बोलो, तुम कैसी प्रार्थना सहित राजाको विष से मुक्त करने को जा रहे हो; तुमने राजासे जो वस्तु पाने की अभिलाषा की है, वह दुर्लभ भी हो, तो मैं दे देता हूं। हे विप्र। विप्रशापवश उस राजा की आयु अन्त हुई है, तुम्हारे वहां जाने से अभिप्राय के सिद्ध होने में सन्देह है, अतएव यदि आरोग्य न कर सके, तो तुम्हारा तीनों लोकों में प्रसिद्ध, प्रकाशमान् यशरूपी प्रकाश प्रकाश-वर्ज्जित सूर्य्यकी भांति छिप जायगा।" श्रीकाश्यप जी बोले, "हे सर्पराज! मैं धन की आशा से वहां जाता हूं, तुम वह मुझे दो; मैं सुवर्ण पाने से लौट जाऊंगा।" तक्षक बोला, "हे द्विजोत्तम। तुमने राजासे जितना धन पाने की आशा की है, मैं उससे भी अधिक दे देताहूं, लौट जाओ।"

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, बुद्धिमान् द्विजश्रेष्ठ अति तेजस्वी काश्यपमुनि तक्षक की बात सुनकर राजा परीक्षित् के विषय में ध्यान करने लगे। आगे दिव्यज्ञान के प्रभाव से यह देखकर, कि पाण्डवपुत्र राजा परीक्षित् की आयु अन्त हुई है, तक्षक से मनमाना धन पाकर लौट गये। महात्मा काश्यपके उस नियम से लौट जाने पर तक्षक तुरन्त हस्तिनापुर को पधारा और पथ में सुना, कि राजा विषहरनेवाली दवा और मन्त्रोंसे बड़े यत्नसे रक्षित हो, रहे हैं। तब सोचने लगा, कि माया के बल से राजा को ठगना पड़ेगा, अब कौन सा उपाय करूं। अनन्तर उस तक्षक-सर्पने साथी नागोंको तपस्वी का रूप धारणकर तथा फल, दर्भ और उदक लेकर राजा के पास जाने की आज्ञा दी और कहा, कि तुम हड़बड़ी न दिखाकर किसी काम के बहाने से राजा के पास जाकर उनको फल, फूल और जल देना। सर्पों ने तक्षक

आज्ञानुसार कार्य्य किया और राजा को फल, फूल और जल दिया। वीर्य्यशाली राजा परीक्षित् ने वह सब ले लिये और उनको कार्य्य पूराकर चले जाने की आज्ञा दी। तपस्वीरूपी सर्पों के चले जाने पर राजाने सारथी और मित्रों से कहा, कि तुम मेरे साथ तपस्वियों से लाये हुए यह मीठे फल खाओ। आगे उन्होंने मन्त्रियों के सहित फल खाना चाहा और जिस फलके भीतर तक्षक था, ऋषिगणके शापानुसार दैव-प्रेरणासे उसीको स्वयं खाने लगे। हे शौनक! भोजन करने के समय में एक अणु-प्रमाण छोटा, कालेनेत्रवाला, ताम्रे के रङ्ग का कीट देखा। राजश्रेष्ठ परीक्षित ने उस कीट को लेकर मन्त्रियों से कहा, कि देखो, सूर्य्यदेव अस्ताचलशिखर पर पहुंच रहे हैं, आज अब मुझे विष का भय नहीं रहा; सो यह कीट तक्षक का प्रतिनिधि होकर मुझे काट देवे, तभी उस मुनिकी बात भी सच ठहरेगी और मेरा शाप भी न्द होगा। राजा यह कहकर मुस्कराकर और चेतना वर्ज्जित होकर उसीक्षण उस कीटको गलेमें लगाकर हंसने लगे। विधि के नियमानुसार मन्त्रियों ने भी उनके मत को समर्थन किया। राजा हंस रहे थे, कि ऐसे समय में तक्षकने तपस्वियों के दिये हुए उस फल से निकलकर अपने शरीर से अति वेगपूर्व्वक उनको घेर लिया। हे शौनक! सर्पनाथ तक्षकने शरीर से महाराज को घेर लेकर अति गर्ज्जन के साथ उनको काट लिया।

आदिपर्व्व में तैंतालीसवां अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले कि मन्त्रीगण राजा को तक्षक से भोगके द्वारा घिरे हुए देखकर अति दुःखी होकर और मुख को खेदयुक्त बनाकर रोने लगे, आगे तक्षक के गर्ज्जन का शब्द सुनकर सब भागने लगे और शोकार्त्त होकर देखा, कि अद्भुत लालवर्ण सर्पनाथ तक्षकनाग आकाश मार्ग से जा रहा है और रमणी के काले केश के समान आकाश के बीच में सेंदुरके चिह्न की सुहावनी मांगसी शोभा दे रहा है। इधर तक्षक की विषम विष से उपजी हुई आग से वह एकस्तम्भवाला गृह सर्व्वप्रकार से घेरे जाकर जल रहा है। तब वे भय-युक्त चित्तसे उस घरको छोड़कर चारों ओर पधारे। राजा भी वज्राघात से घायल हुए पुरुष के समान उसीक्षण गिर पड़े।

राजा परीक्षित् के तक्षक की तेज से जल जाने पर मन्त्री और गुह्याचारी ब्राह्मणश्रेष्ठ राज-पुरोहितों ने राजाके सम्पूर्ण और्द्धदैहिक कार्य्य सम्पन्न किये। अनन्तर नागरिकों ने मिलकर शत्रुनाशी कुरुवंश में श्रेष्ठ जनमेजय नामक परीक्षित् के बालक पुत्रको गद्दीपर बैठाया। आर्य्यमत नृपश्रेष्ठ जनमेजय बालक होने पर भी उन मन्त्रियों और पुरोहितों के साथ अपने पितामह युधिष्ठिर के समान राज्य शासने लगे। कुछ कालान्तर उनके मन्त्रियों ने उनको शत्रुनाशी देखकर काशीराज सुवर्णवर्म्मा के पास जाकर वपुष्टमा नाम्नी कन्याकी प्रार्थना की। सुवर्णवर्म्मा ने कुरुप्रवीर जनमेजय को धर्म्मानुसार परीक्षा कर वपुष्टमा नाम्नी कन्या को दान किया। जनमेजय वपुष्टमा को लाभकर अति प्रसन्न हुए, उन्होंने किसी दूसरी स्त्री पर कभी मन नहीं चलाया था। जिसप्रकार पूर्व्वकाल में पुरूरवाने उर्व्वशी को लाभकर प्रसन्नचित्त से उसके विहार किया था, उसी प्रकार राजश्रेष्ठ वीर्य्यशाली जनमेजय प्रसन्नहृदय से वपुष्टमा के साथ कभी सुन्दर ताल में, कभी वनमें विहार करने लगे। प्रसिद्ध रूपवती, अन्तःपुरकी ज्योति, सुन्दरी सती वपुष्टमा भी उस भूपाल

को पति पाकर विहार के समय अति प्रेम दिखा कर प्रसन्न करने लगी।

आदिपर्व्व में चवालीसवां अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि इस समय महातपा जरत्कारु ऋषि यत्सायंगृह होकर अर्थात् जहां सन्ध्या हो जाती थी, वहीं टिके रहकर सम्पूर्ण पृथ्वी में घूम रहे थे; वह महातेजा मुनि पवित्र तीर्थ में नहाकर दूसरों के करने के अयोग्य कठोर तप करके कभी निराहार से, कभी वाताहार से अपने शरीर को सुखाकरके घूमा करते थे। एक समय घूमते हुए देखा, कि उनके पिता और पितामहलोग एक वीरणस्तम्ब अर्थात् खस्खस् के गच्छे को आश्रय कर गड्हे के भीतर नीचे-मुह करके लटक रहे हैं; उस वीरणस्तम्ब का एकही तात शेष रहा, गड्हे में रहता हुआ मूष उसे भी धीरे धीरे काट रहा है। जरत्कारु ने उनको निराहारी, दुबले-पतले, दीन और अपनी रक्षा के अभिलाषी देखकर दुःखी हृदय से निकट जाकर पूछा, आप कौन हैं? किस हेतु इस वीरणस्तम्ब को आश्रय किये हुए लटक रहे हैं? इस गड्हेके रहनेवाले मूष ने प्रायः सब जड़को काटने से यह वीरस्तम्ब बहुत दुर्बल हो गया है; इसकी एकही जड़ जो शेष है, उसे भी यह मूष अपने तेज दातोंसे धीरे धीरे काट रहा है, यह अल्पशेष मूल भी थोड़ेही कालमें टूटेगा, तब निःसन्देह आप नीचे मुह किये हो इस गड्हे में गिर जायंगे; आप को नीचे मुह किये और विपद में पड़े हुए देखकर मुझे बड़ा दुःख हो रहा है; कहिये, मैं आपका कौनसा उपकार करूं। मेरी तपस्या के चौथे भाग वा तीसरे भाग वा आधे भाग से, अथवा मेरी सम्पूर्ण तपस्या से आपलोग इस विपद से बच जाइये, इसमें आप जैसा चाहें, वैसाही कीजिये। पितृगण बोले, कि हे ब्राह्मण-श्रेष्ठ! आप बूढ़े ब्रह्मचारी होकर हमारी रक्षा करना चाहते हैं, पर हमारी यह विपद तपस्या से दूर होनेवाली नहीं है। हे वाग्मिन्! हमलोगों का भी बहुत तपका फल बटोरा हुआ है, हे ब्रह्मन्! केवल सन्तान न रहने ही के कारण हम इस अपवित्र नरक में गिर रहे हैं, क्योंकि भगवान् पितामहने कहा है, कि सन्तान जन्माना परम धर्म्म है। हम यहां लटकते हुए अचेतनवत् हुए हैं, इस हेतु आपका यश तीनो लोकों में प्रसिद्ध रहने पर भी हम आपको पहिचान नहीं सकते हैं, आप वृद्ध और बड़े भाग्यवान् हैं, इसहेतु हमारे इस बड़े भारी दुःख और शोचनीय दशाको देखकर दया प्रगट कर रहे हैं, हे विप्र। सुनिये हम कौन हैं, हम यायावर नामक व्रतनिष्ठ ऋषि हैं, हमारा वंश लोप होने पर है; इसी सम्पूर्ण कठोर तपस्या निष्फल हुई है और पुण्यलोकसे च्युत हो रहे हैं; ऐसा न समझिये, कि हमारी सन्तान नहीं है, पर हम स्वल्प भाग्यवाले हैं। हमारी एकही दुर्भाग्य सन्तान है, उसका रहना और न रहना समान है, उसका नाम जरत्कारु है। वह सन्तान वेद-वेदाङ्गों में निपुण, व्रतशील, जितेन्द्रिय, महात्मा और बड़ा तपस्वी है; उसने केवल तपही का आश्रय किया है; उस कुसन्तानने तपके लोभ से हमको इस विपद के समुद्र में डुबाया है उसकी स्त्री, पुत्र, स्वजन, बन्धु, कोई नहीं है इस हेतु हम अनाथकी भांति इस गड्हे में लटके हैं। आप कृपा प्रगट कर जरत्कारु से भेंट करके कहना, कि "हे तपोधन। तुम्हारे पितरलोग दीनों के समान नीचे मुह कर गड्हे में लटक रहे हैं, तुम विवाहकर पुत्रोत्पादन करो; क्योंकि तुम बुद्धिमान् और कुल की एकमात्र आशा हो।" हे ब्रह्मन्! हमको जिस वीरणस्तम्ब में आश्रित दे

यह हमारा कुल बढ़ानेवाला कुलस्तम्भ है; इसकी जो सब जड़ देखते हैं, वे हमारी सन्तान हैं, सभी काल से भक्षित हुई हैं; यह जो आधी खाई हुई एकही जड़ है, जिसे पकड़-हम गड्ढे के ऊपर लटके हैं, यह वही जरत्कारु है, उसने केवल तपस्या को आश्रय किया है। यह जो मूष देखते हैं वह महाबली काल है; यह काल तपमें रत, मन्दमति, चेतनाहीन और तपस्यालोभी उस जरत्कारु को धीरे धीरे निगल रहा है; हे सत्तम। उसकी तपस्या हमको बचा नहीं सकेगी। देखिये इस जड़के टूटते ही हम लोग काल से मारे गये हुए पापियों के समान उखड़कर इस गड्ढेमें गिर जायंगे। हम बन्धुओं के साथ इसमें गिर जायंगे, तो जरत्कारु भी काल से भक्षित होकर इस स्थान में गिरकर नरक में जायगा। तपस्या, यज्ञ वा पाप इसकारने-वाले जितने महत कार्य्य हैं, वे सब पुत्रोत्पादन के समान नहीं होते; आपने जैसा देखा, वह सब तपोधन जरत्कारु से भेंट कर कह देना। हे ब्रह्मन्! आप हमारे नाथ के समान होकर इस प्रकारसे कहना, कि जिस्से जरत्कारु विवाह करके पुत्रोत्पादन करे। हे सत्तम। जान पड़ता है, कि आप जरत्कारुके मित्रों में से कोई होंगे, क्योंकि मित्र वा अपने कुलवालों के समान हमको देखकर शोक प्रगट कर रहे है; हम सुनना चाहते हैं, कि आप कौन यहां आये हैं?"

आदिपर्व्वमें पैंतालीसवां अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि जरत्कारु पितरों की यह सब बात सुनकर अति शोकयुक्त होकर मनःपीड़ा से आंखो में आंसू भरकर और गदगद होकर बोले, आप मेरे ही पितृ-पितामह हैं; आज्ञा कीजिये, कि आपके अभीष्टको पूरा करनेके निमित्त मुझको क्या करना चाहिये, मैंही आपका पुत्र पापात्मा जरत्कारु हूं; मैं अकृतआत्मा हूं मुझसे जो दोष हुआ है, उसका दण्ड दीजिये। पितरलोग बोले, "बेटा। तुम इच्छानुसार घूमते हुए हमारे सौभाग्यसे इस देशमें आ गये हो; कहो तो सही; तुमने क्यों विवाह नहीं किया?" जरत्कारु बोले, हे पितृगण। मेरे हृदय में सदा यह बात जगती है, कि मैं ऊर्द्धरेता हो कर देह को विसर्ज्जन करूंगा, कभी विवाह नहीं करूंगा, मैंने मनही मन में ऐसाही निश्चय किया था; हे पितामहगण। वर्त्तमानमें आपको यहां पक्षियों के समान इस प्रकार लटकते हुए देखकर मैं ब्रह्मचर्य्य से चित हटाता हूं, मैं आपका प्रियकार्य्य करूंगा, सन्देह नहीं है, कि विवाह करनेको प्रस्तुत हुआ हूं; पर यदि निज नामकी कन्या पाऊं और वह कन्या मुझको भिक्षा के समान स्वयं आमिले तथा मुझे उसका पालन करना न पड़े, तो उस कन्याको लेकर विवाह करूंगा। हे पितामहगण! मैं सच कहता हूं, इसके विपरीत होने से मैं विवाह नहीं कर सकूंगा। उस विवाहिता स्त्री के गर्भ से जो सन्तान उपजेगी, वही आपका उद्धार करेगी और उसी से आप नित्य अव्यय हो करके स्वर्ग में वसेंगे।"

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि हे शौनक। वह मुनि पितरों से यह बात कहकर विवाहार्थी होकर सम्पूर्ण भूमण्डल में घूमने लगे, पर वृद्ध जानकर कितीने उनको अपनी कन्या दान नहीं की। आगे पितरों की आज्ञा से जरत्कारु निर्व्वेद पाकर वनमें घुसके दुःखी हृदय से चिल्लाकर रोने लगे। अनन्तर प्रज्ञावान् उस ऋषिने पितरों की हितेच्छा से उस वन में धीरे धीरे तीन बार यह कहा, कि "मैं कन्या की भिक्षा मागता हूं, इस स्थान में स्थावर जङ्गमात्मक जितने जीव विराजमान हों और जो

भूत अप्रकाशित हों, सब मेरी बात सुनें, मैं कठोर तपस्या में रत हूं; पितरोंने दुःखी होकर सन्तानोत्पादन के निमित्त मुझको आज्ञा दी है, कि तुम विवाह करो। हे जीवगण। भूमण्डल में कन्या की भिक्षा मांग रहा हूं, मैं अति दरिद्र और दुःखी हूं, पितरोंने मुझको विवाह करने को नियोग किया है, मैं सर्व्वत्र घूम रहा हूं; पर मैंने जिनसे यह प्रस्ताव किया, यदि उनमें से किसी की कन्या हो, तो दान करो; पर वह कन्या मेरे नाम की होगी और भिक्षा के समान मुझे मिलेगी, तथा मैं उसका पोषण न करूंगा; यह हो, तो दान करो।" अनन्तर जो नाग जरत्कारु की रक्षा में नियुक्त थे. उन्होंने वासुकि को यह समाचार सुनाया।

नागनाथ वासुकि जारत्कारु की विवाह की इच्छा सुनतेही सजी सजाई बहिन को लेकर वन में उस ऋषि के निकट पधारे और उस महात्मा मुनि को भिक्षा के समान उस कन्या को दान किया। तब जरत्कारुने एकायक उसको प्रतिग्रह नहीं किया; वह सोचने लगे, कि यह कन्या मेरे नाम की नभी हो सकती है, और कदाचित इसे पालना पोषना भी होगा। मोक्ष के पथिक जरत्कारु इस प्रकारसे दो मन करने लगे। हे भृगुनन्दन। आगे उस ऋषिने वासुकि से कन्या का नाम पूछा और कहा, कि मैं उसको न पालूंगा।

आदिपर्व्व में कियालीसवा अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवा जी बोले, कि वासुकिने जरत्कारु ऋषि से कहा, "हे द्विजोत्तम! तपस्विनी यह कन्या मेरी बहिन और तुम्हारे नाम की है; तुम इसको भार्य्यार्थ ग्रहण करो. हे तपोधन। यथाशक्ति मैं इसको पालूंगा और रक्खूंगा; हे मुनिश्वर। मैंने तुम्हारे निमित्त इतने दिनों तक इस कन्या को रखा है।" ऋषि बोले, "अच्छा मेरा यह नियम रहा, कि मैं इसका पोषण न करूंगा और यह कन्या कभी मेरा अप्रिय कार्य्य नहीं करेगी, करने ही से मैं इसको त्याग दूंगा।"

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि वासुकि के यह स्वीकार करने पर, कि "मैं बहिन का पोषण करूंगा," जरत्कारु वासुकि के घरको गये। मन्त्रप्रयोग में निपुण, तपोवृद्ध, महा व्रतशील, धर्म्मात्मा जरत्कारुने विधिपूर्व्वक मन्त्र, पढ़कर जरत्कारु से प्रशंसित होकर पत्नी के साथ सर्पनाथ की इच्छानुसार सुन्दर वासगृह में वहां परम रमणीय चादरा से ढंपी हुई सुन्दर सेज पर सोकर स्त्रीसे एकत्र रहने लगे। साधुश्रेष्ठ ऋषिने उस वासगृह में पत्नी से यह नियम किया, कि तुम कभी मेरा अप्रिय कार्य्य करने वा अप्रिय कहने न पाओगी; ऐसा करने से मैं फिर तुम्हारे घर में न रहूंगा और तुमको त्याग दूंगा; मैंने जो कहा, उसे स्मरण रखना। अनन्तर वासुकि की बहन जरत्कारुने अति सोचयुक्त और दुःखी होकर "एवमस्तु" कहके वह बात मानली। आगे पतिका प्रिय चाहने वाली यशस्विनी नागेश की बहिन श्वानकाकीय उपाय से अर्थात् कुत्ता, हरिण और कौये को सावधानी, भय और इङ्गित समझने के सहज गुण आश्रय करके दुःखी पति की सेवा करने लगी।

कुछ कालान्तर वासुकि की बहिन उस जरत्कारुने ऋतुस्नानकर महामुनि पतिके पास यथाविधि गमन करके अग्नि के समान गर्भ धारण किया शुक्लपक्ष के चन्द्रमा की भांति वह गर्भ दिनोंदिन बढ़ने लगा। एक दिन अति यशस्वी श्रीजरत्कारुजी नागकी बहिन जरत्कारुकी गोद में सिर रखकर थके-मांदे के की समान सोते रहे; सूर्य्यदेव अस्ताचल की चोटी पर चढ़ गये, तौभी उनकी नींद न टूटी। तब मनस्विनी वासुकि की बहन धर्म्म लोप

होनेके भय से भीत होकर सोचने लगी, कि पति को नींद से जगाऊं वा नहीं। ऐसा करने से दुःखशील धर्म्मात्मा पति के निकट दोषी बनना पड़ेगा; नींद से न जगाने से इस धार्म्मिक पतिका धर्म्म लोप होने की सम्भावना है, नींद से जगाने से भी यह क्रोधित हो सकते हैं; इसका क्या करना चाहिये। जिससे धर्म्म लोप न होने पावे, वही करूं; इसमें सन्देह नहीं, कि नींद से जागने से क्रोधित होंगे, पर यदि सन्ध्या लङ्घन होवे, तो निःसन्देह धर्म्म लोप होगा। मीठी बोलनेवाली सर्पवहिन ने मनही मन में ऐसा निश्चय करके नींदयुक्त अग्नि-समान तेजस्वी ऋषि को विनययुक्त बातोंसे कहा "हे महाभाग, व्रतशील भगवन्! सूर्य्यदेव डूब रहे हैं, उठकर जल छू करके सन्ध्योपासन कीजिये; देखिये अग्निहोत्र का समय आया है; यह मुहूर्त्त दारुण और रमणीय है; देखिये, पश्चिम ओर की संध्या उपस्थित हो रही है।"

पत्नी के यह बात कहने पर महातपा भगवान् जरत्कारु क्रोध से होठों को फुलाकर बोले, "अरी सर्पिणि! तूने मेरा इस प्रकारसे अपमान किया? मैं तेरे साथ अब न रहूंगा; जहां मन चाहे, चला जाऊं, री वामोरु! मैं निश्चित जानता हूं, कि मेरे सोये रहने से सूर्य्यदेव कभी उचित समय में अस्त नहीं हो सकते; देख, अपमानित होकर कोई पुरुष वसना नहीं चाहता; विशेष कर यह तो असम्भव ही है, कि मैं वा मेरे सदृश कोई दूसरा अपमानित होकर वास करे।" पति से इस हृदयसुखानेवाली बात को सुनकर वासुकि के घरमें रहती हुई बहिन जरत्कारु बोली, "हे विप्र। मैंने अपमान करनेके निमित्त आपको नींदसे नहीं जगाया, इसी हेतु ऐसा किया है, कि आपका धर्म्म लोप होने न पावे। सर्प की बहिनके ऐसा कहने पर महातपा जरत्कारु क्रोधवश और पत्नी त्यागने के अभिलाषी होकर सर्पिणी से बोले, "री सर्पिणी। मेरी बात कभी झूठी नहीं होती; मैं अवश्य जाऊंगा, मैंने पहिलेही तेरे निराले में यह नियम किया था, भद्रे। मेरे चले जाने पर अपने भाई से कहना, कि मुनि चले गये हैं, फिर यहां जितने दिनोंतक बसा, परम सुखसे रहा री भीरु। मेरे जाने से न शोक से विकल मत हो।" जरत्कारु मुनि की यह बात सुनकर सर्व्वाङ्गी सुन्दरी जरत्कारु एकाएकी शोकसे विकल और चिन्तायुक्त हुई, उसका हृदय कांपने लगा, मुखपद्म सूख गया और दोनों नयनों से आंसु की धार बहने लगी। वामोरु जरत्कारु तब कुछ धीरज धरकर दोनों हाथ जोड़कर आंसू से गद्गद होकर बोलने लगी "हे द्विजोत्तम। इस निर्दोषी पत्नी को त्याग आप को नहीं चाहिये क्योंकि आप धर्म्मज्ञ है; विशेष कर मैं सदा धर्म्मपथ में रहकर आप की सेवा, हितानुष्ठान और प्रिय-भाषण कर रही हूं। जिस अभिप्राय से मेरे भाई ने आप से मेरा विवाह कर दिया, मन्द भाग्यवती मैं वह भी लाभ नहीं कर सकी; अतएव वह अब मुझसे क्या कहेंगे? हे साधुश्रेष्ठ। मेरे स्वगणोंने माताके शाप से कातर होकर प्रार्थना की है, कि आपके वीर्य्य से मेरे गर्भ में एक सन्तान उत्पन्न होवे, वह भी आजतक नहीं हुआ। आपके वीर्य्य से पुत्र उत्पन्न होने से मेरे स्वगणोंका मङ्गल होगा, हे भगवन्! मैं स्वजनों के हित की इच्छा से प्रार्थना करती हूं कि आप प्रसन्न होवें। आपसे मेरा यह सम्बन्ध निष्फल न कीजिये। हे सत्तम। आप महात्मा होकरके भी यह अप्रकाशित गर्भाधान कर क्योंकर निर्दोषी पत्नीको तजके दूर जानेको उद्यत हो रहे हैं?" पत्नीकी ऐसी बातें सुनकर तपोधन जरत्कारुने उस कालोचित वचनोंसे कहा, "हे सुभगे। अग्नि के समान

परम धार्म्मिक, वेदवेदाङ्गों में निपुण एक ऋषि तुम्हारे गर्भ में विराज रहे हैं।" धर्म्मात्मा महर्षि जरत्कारु पत्नी से यह बात कहकर फिर कठोर तप करनेका प्रण ठानकर चले गये।

आदिपर्व्व में सैतालीसवां अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवा जी बोले, कि हे तपोधन। पतिके चले जाते हो जरत्कारुने भाईके निकट जाकर सम्पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया। नागेश वासुकि दीर्णचित्त से दीना बहिन से बोले, "भद्रे। हमारा जो अभिप्राय है और जिस अभिप्राय से तुम्हारा विवाह किया था, वह तो तुम जानती हो; पहिले पितामह जीने देवों से कहा था, सर्पों के हित के निमित्त तुम्हारे गर्भ में उस ऋषिके वीर्य्य से यदि एक पुत्र का जन्म हो, तो वह वीर्य्यवान् पुत्र सर्पों को सर्प यज्ञ से बचावेगा; हे सुभगे। उन मुनिश्रेष्ठ से तुम्हें गर्भ हुआ है वा नहीं? मैं चाहता हूं, कि तुमको जिस अभिप्राय से दान किया है, वह निष्फल न होवे। यद्यपि ऐसा प्रश्न करना मेरे लिये अनुचित है, तोभी इसे अपना गुरुकार्य्य जानके ही ऐसा अनुचित प्रश्न कर रहा हूं। तुम्हारे पति बड़े भारी तपस्वी हैं, किसी प्रकारसे वह लौटाये नहीं लौटेंगे, यदि उनके पीछे जायं, तो वह शाप भी दे सकते हैं। भद्रे। तुम्हारे पतिके सम्पूर्ण कार्य्यों को विशेष रूप से प्रगट करो और बहुत दिनों से गड़े हुए मेरे हृदयके कठोर शैल को उठालो।" जरत्कारु यह बात सुनकर दुःख से कातर सर्पपति वासुकि से ढाढ़स देकर बोली, "राजन्। मैंने उस महात्मा महातपा पति से सन्तान की बात पूछी थी, उस पर वह मुझसे यह कहकर, कि "अस्ति" अर्थात् सन्तान तेरे गर्भमें है. वन को पधारे। मुझको स्मरण होता है. कि वह हंसी में भी कभी झूठ नहीं कहते. फिर इस विपदके समयमें क्यों झूठ कहेंगे? भैया। उन्होंने मुझसे कहा है कि अग्नि और सूर्य्यके समान तेजस्वी तुम्हारे एक पुत्र उत्पन्न होगा; मेरे तपोधन पति यह कह करके ही चले गये हैं; अतएव भैया! अपनी यह चित्तपीड़ा दूर करो!"

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि नागनाथ वासुकिने यह बात सुनकर आनन्द से कूदती हुई आंखोंसे "एवमस्तु" कहकर बहिन की बात मानली। अनन्तर धन देकर, समझा-बुझाकर और उचित पारितोषिक देकर उस सहोदरा बहिनका सम्मान करने लगे। हे द्विज श्रेष्ठ। आकाश में उगे हुए शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा के समान अति प्रकाशमान् बड़ा तेजोवान् वह गर्भ दिनोंदिन बढ़ने लगा; हे ब्रह्मन्। आगे समय आने पर उस सर्पबहिन ने पितृ-मातृ-कुलों के भयनाशी एक पुत्र प्रसव किया। कुमार उस नागनाथ के घरमें पाले जाकर बढ़ने लगा और बालेपनही से सत्त्वगुणी और व्रतनिष्ठ होकर असाधारण बुद्धि के प्रभाव से भगवान् च्यवन के निकट साङ्गवेद पाठ किया। वह "आस्तीक" नाम से प्रसिद्ध हुए; वह जब गर्भ में थे, तब उनके पिता "अस्ति" यह बात कहकर वन को सिधारे थे, इस लिये उनका नाम आस्तीक हुआ। असाधारण बुद्धिमान् आस्तीक बालेपन में नागों के घरमें रहकर वासुकि के अति यत्नसे भली भांति रक्षित होकर घूमते हुए प्रकाशमान् भगवान् देवोंके देव शूलधारीके समान दिनोंदिन बढ़कर सम्पूर्ण सर्पों को आनन्द देने लगे।

आदिपर्व्व में अड़तालीसवां अध्याय समाप्त।

श्रीशौनकजी बोले, कि राजा जनमेजय ने पिताके परलोक के विषय में मन्त्रियों से जो कुछ पूछा था, उसे फिर विस्तार-पूर्वक कहो। श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि ब्रह्मन्। राजाने मन्त्रियों से जैसा पूछा था और मन्त्रियों ने

परीक्षित् की स्वर्ग-प्राप्ति के विषयमें जैसा वर्णन किया था, वह सुनिये। जनमेजय ने पूछा, "हे मन्त्रियो! मेरे पिताका जैसा चरित्र था और वह महायशा नरेश काल॰वश जिस प्रकार नाश हुए, वह तुम भले प्रकार जानते हो; मैं तुमसे पिता का सम्पूर्ण चरित्र सुनकर जैसे मङ्गल हो सके, वही करंगा, कदापि विपरीत न करूङ्गा।" श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि महात्मा राजा जनमेजयके यह प्रश्न करने पर, धर्म्मज्ञ और प्राज्ञ मन्त्रियोंने कहा, "राजन्। आपने अपने पिता महात्मा जनश्रेष्ठ परीक्षित् के चरित्र के विषयमें जो कुछ पूछा और जिस प्रकार वह परलोक को सिधारे, वह सुनिये। आपके पिता जैसे धर्म्मात्मा, महात्मा तथा प्रजापालक थे, वह कहता हूं। धर्म्मशील राजा साक्षात् धर्म्मके अवतार के समान धर्म्म-पथ अवलम्बन करके चारोंवर्णों को निज निज धर्म्म में रखकर प्रजा पालते थे; अतुल विक्रमी श्रीमान् पृथ्वीनाथ, पृथ्वी को भले प्रकार रक्षा करते थे; उनका द्वेषी कोई नहीं था, वह भी किसीका द्वेष नहीं करते थे; वह प्रजापति के समान सब प्रजाको समान जानते थे, कभी पक्षपात नहीं करते थे; ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, यह राजा से सुरक्षित होकर प्रसन्नचित्त से निज निज कार्य्य में लगे रहते थे; वह विधवा, अनाथ, दीन, दुःखियों का पोषण करते थे और द्वितीय चन्द्रमा की भांति प्रजाओं के नेत्रों के आनन्द-दायी थे। उस श्रीमान् सत्यवादी दृढ़विक्रमी महीपाल से सब लोग ही तुष्ट और पुष्ट होते थे; हे जनमेजय। ऐसे-गुणवान् आपके पिता धनुर्व्वेद में शारद्वतजी के शिष्य और गोविन्द के प्रियपात्र थे; वह किसीके भी अप्रिय नहीं थे। कुरुकुलके क्षय होने पर अभिमन्युके पुत्र उस बलवान्, महायशा परीक्षित्ने उत्तरा के गर्भ से जन्म लिया था, इसहेतु उनका नाम परीक्षित् हुआ था। राजधर्म्म में निपुण सर्व्वगुणों से भूषित, जितेन्द्रिय, मेधावी बुद्धिमान, धर्म्मसेवक, कामक्रोधादि के अवशी भूत, महाबुद्धियुक्त और नीतिशास्त्र में अत्र पण्डित आपके पिता प्रजा पालकर साठ वर्ष की अवस्था में सब लोगों को दुःखके समुद्र में डुबाकर परलोक को सिधारे हैं। हे पुरुष श्रेष्ठ! उसके पश्चात् आपने कुलक्रम से क्रमा गत अनेक सहस्र वर्ष तक शासित होते हु इस राज्य को धर्म्मानुसार प्राप्त किया है और बालेपनही में अभिषिक्त होकर सम्पूर्ण प्रजाका पालन कर रहे हैं।" जनमेजय बोले, "लोक में असाधारण कीर्तिमान अगले पुरुषों के चरित्रों को जानकर मुझे-समझ पड़ता है, कि इस वंश में कभी ऐसे कोई भूप नहीं थे, जो प्रजाओं के प्रिय और हित करनेवाले नहीं हुए थे; अतएव यह सुनना चाहता हूं, कि मेरे पिता वैसे गुणवान होने पर भी किसहेतु अकाल में कालग्रस्त हुए; तुम आदि से अन्ततक यथावत् प्रकाश करो।"

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि राजाके हितैषी मन्त्रीगण राजासे इस प्रकार पूछे जाकर यथा विधि आद्योपान्त कहने लगे। मन्त्रियोंने कहा, "राजन्। आपके पिता महाबाहु पाण्डुके समान सर्व्वशास्त्रों में निपुण, अद्वितीय चापधारी और सदा मृगयाशील थे। एक समय वह हमलोगों पर राजकार्य्य का सम्पूर्ण भार सौंपकर मृगया के निमित्त वन में गये। आगे एक मृग उन बाण से बींधे जाकर इस वनमें जाघुसा। वह खड्ग तूणीर आदि युद्धकी साजों से सजधज कर अकेले उस मृगको ढूंढ़ने लगे; पर देख नहीं पाया, कि वह कहां भागा, वह साठ वर्ष की आयुमें पहुंचे थे और बूढ़े हो गये थे, इस हेतु थक गये और भूख से कातर हुए; आगे उस घोर वन में

मौनव्रत किये हुए एक मुनि को देखकर भागे हुए मृग का समाचार पूछा। मुनि मौनी थे, तो पूछे जाने पर भी कोई उत्तर नहीं दिया। राजा एकतो भूख और थकावट से कातर थे, फिर उस पर शाखावर्ज्जित वृक्ष के समान बैठे हुए उस ऋषि को बात न बोलते देखकर उसीक्षण क्रोधयुक्त हो गये; पर आपके पिता नहीं जानते थे, कि वह मुनि मौनव्रत किये हैं इससे उन्होंने क्रोधयुक्त होने के कारण उनको मानहानि की अर्थात चाप की कोटि से धरती पर से एक मृत सर्प को उठाकर उस पवित्रात्मा मुनि के गले पर रखा; उस मेधायुक्त मुनिने भलो या बुरी कुछ न कही, क्रोध भी नहीं किया था, उसी प्रकार सर्प को गलेमें लिये रहे।"

आदिपर्व्व में उनचासवां अध्याय समाप्त।

सन्हौगण बोले, हे राजेन्द्र। आपके पिता भूख से कातर होकर मुनिके गले पर मृत सर्प डालकर नगर में लौट आये। उस ऋषि के शृङ्गी नामक गौके गर्भसे जन्म लिये हुए महायशा, महातेजा, तीग्मवीर्य्य, अति क्रोधी एक पुत्र थे, वह ब्रह्माजी के निकट जाकर उनको पूजाकरके उनको आज्ञा से आश्रम को लौटे आरहे थे, पथ में अपने साथी से सुना, कि घोरतपस्वी, मुनिश्रेष्ठ, जितेन्द्रिय, विशुद्धात्मा, आश्चर्य्य कार्य्य में नियुक्त, तपस्या से प्रकाशमान यतात्मा, सदा शुभाचार में रत सत्क्रिया में स्थित लोभवर्ज्जित, सुस्थित, अक्षुद्राशय, असूयारहित, वृद्ध, सर्व्वभूतों को शरण देने योग्य और मौनव्रत में बैठे हुए उनके पिता का अपमान कर आपके पिता ने एक मृत सर्प उठाकर उनके गले पर डाला है और वह ऋषि भी जड़के समान उस मृत सर्प को गले में लिये हुए हैं, हानिकारी राजाको बदलेमें कोई हानि नहीं को। महातेजा ऋषिकुमार बालक होने परभी वृद्धके समान थे, तो वह उसे सुनकर अति क्रोधित हुए और अपने तेज से मानों जलकर जल छूकर आपके पिताका नाम लेकर यह शाप दिया, कि जिस पापात्मा ने बिना अपराध मेरे पिता के गले में मृत सर्प डाला है, उसको महातेजा विषधारी तक्षक सर्प मेरे बालिपन के प्रभाव से भेजे जाकर सात रात्रियों के बीच में क्रोधपूर्व्वक तेज से जला देगा, हे मित्र! मेरे तपोबल को देखो। शृङ्गीने यह बात कहकर जहा उसके पिता थे, वहां जाकर उनको देखकर शाप देने का वृत्तान्त कह सुनाया। उस मुनिशार्दूल समीक ने गौरमुख नामक गुणवान् सुशील शिष्य को आपके पिताके निकट भेजा। गौरमुख यहां आकर थकावट मिटाकर राजा को सब वृत्तान्त सुनाकर गुरु को यह आज्ञा जताई, कि "हे महोदय। मेरे पुत्रने तुमको शाप दिया है। सावधान होओ, हे महाराज। तक्षक तुमको तेजद्वारा जलावेगा।"

हे जनमेजय। आपके पिता यह कठोर बात सुनकर नागोत्तम तक्षक का भय खाकर सावधान हो रहे। अनन्तर उस सातवें दिनके आने पर महर्षि काश्यप राजाके समीप आ रहे थे, पथ में नागनाथ तक्षकने उनको देखा तक्षक बोला, "हे द्विज। तुम शीघ्रतापूर्व्वक कहा जा रहे हो? क्या करना चाहते हो?" काश्यपने उत्तर दिया, "हे विप्र। आज नागराज तक्षक कुरुकुलप्रदीप राजा परीक्षित् को तेज से जलावेगा, मैं आज हो आरोग्य करने के अभिप्राय से शीघ्रतापूर्व्वक जा रहा हूं; मेरे वहा जाने पर तक्षक उनका प्राण नहीं ले सकेगा।" तक्षक बोला, "हे ब्रह्मन्! मैं ही तक्षक हूं, मेरे काटने पर तुम क्यों उनको बचाना चाहते हो? कभी बचा नहीं सकोगे, वरण मेरा आश्चर्य्य वीर्य्य प्रत्यक्ष करो।" तक्षकने यह बात कहकर एक वृक्ष को काटा;

काटनेहीमें वह वृक्ष उसी क्षण भस्म हो गया। हे राजन्! तब काश्यपने उस वृक्ष को बचाया यह देखकर तक्षक काश्यप को यह कहकर लुभाने लगा, कि बोलो, तुम क्या पाने की इच्छासे राजा के पास जा रहे हो। काश्यपने उत्तर दिया. कि मैं धन पाने की आशासे जाता हूं। अनन्तर तक्षकने उस महात्मा को मीठी बातों से कहा, "हे अनघ! तुमने-राजासे जितना धन पाने को आशा की है, मैं उससे भी अधिक धन देता हूं, लौट जाओ।" तक्षक को यह बात सुनकर मानवश्रेष्ठ काश्यप प्रार्थना से अधिक धन पाकर लौट गये। अनन्तर परम धार्म्मिक नृपश्रेष्ठ आपके पिताके सुरक्षित गृह में बड़े सावधान रहने पर भी तक्षकने वेष बदलकरके आकर विषरूपी आगसे उनको भस्म किया। उसके पश्चात् आप विपक्षियों को जीतने को उनके पदपर आरूढ़ हुए हैं, हे नृपश्रेष्ठ! हमने जो सब अति भयावनी लीला देखी और सुनी है, वह सब आद्योपान्त कह सुनाई। हे नरनाथ! अपने पिता और उतङ्क ऋषि की पराजय का वृत्तान्त तो सुन चुके, अब जो उचित हो, कीजिये।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि अनन्तर शत्रुकुल-शाली राजा जनमेजय ने मन्त्रियोंसे कहा, "यह आश्चर्य लीला कि तक्षकने वनस्पति को जलाया और काश्यपने उसको जीवन दिया, तुमने किस्से सुनी है? मुझको जान पड़ता है, कि तक्षकने उस समय सोचा था, कि इस ब्राह्मण के मन्त्रद्वारा विष से मुक्त होकर वृक्ष को जीवन मिला है, सो मेरे राजाको काटनेसे यह ब्राह्मण जाकर यदि उनको जिला दे, तो लोग यह कहकर मेरी हंसी करेंगे, कि तक्षक का अब वैसा विष न रहा। सर्पाधम पापात्मा तक्षकने मनही मन में यह सोचकर काश्यपजी को प्रसन्नकर विदाकर दिया था, इस में कुछ भी सन्देह नहीं है; पर मैं चाहे जिस उपायसे हो, उस पापात्मा के इस पाप का उचित प्रतिफल दूंगा; परन्तु मैं एक बात पूछता हूं, कि निर्जन वन में काश्यप और तक्षक में बातों का होना किसने सुना है, वा किसने देखा है, अथवा क्योंकर वह तुम्हारे कानों तक पहुंचा? मैं यह सुनकर ऐसी चेष्टा करूंगा, कि सर्पकुलका नाश होवे।" मन्त्रियों ने कहा, कि हे राजन्! काश्यप और तक्षक का मिलन-वृत्तान्त जिसने हमसे जिस प्रकारसे कहा था, वह कहता हूं, सुनिये। हे पृथ्वीपते! एक मनुष्य लकड़ी के निमित्त उस वृक्ष पर चढ़ कर सूखी शाखा बटोर रहा था, उस ब्राह्मण और तक्षकने वृक्ष पर चढ़े हुए उस मनुष्य को देखा नहीं था. हे राजन्! वह मनुष्य तक्षक के विषाग्नि से वृक्ष-सहित भस्म हो गया था, आगे काश्यपजीके प्रभाव से वृक्ष के साथ जी उठा, उस पुरुषने हमारे पास आकर तक्षक और ब्राह्मण का सम्पूर्ण वृत्तान्त कहा था; हे राजन्! हमने जो कुछ देखा है और सुना है, वह सब कह चुके। हे राजसिंह! इस क्षण सुनकर जो उचित हो कीजिये।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि राजा जनमेजय मन्त्रियों की बात सुनकर दुःख से अति कातर और खेदयुक्त होकर हाथ से हाथ मलने लगे और बार बार लम्बी सांस लेकर उन कमल नेत्रों से आंसू गिराने लगे। पिताके शोकसे रोने में उनके आंसू रोकने योग्य न रहे, अनन्तर वह यथाविधि जल छूकर खेदयुक्त चित्तसे क्षणभर सोच करके मनही मन में कार्य ठहराकर मन्त्रियों से बोले, "मेरे पिताके परलोक सिधारने के विषय में तुमने जो कहा उसे सुनकर मैंने मनही मन में जैसा निश्चय किया है, वह सुनो। मैंने सोचा है, कि जिस दुरात्मा तक्षकने शृङ्गी नामक ऋषि-पुत्रको

मिस मात्र पाकर मेरे पिता को जलाकर नष्ट किया है, उस पापिष्ठ का प्रतिफल देना उचित है ; देखो, उस दुरात्मा का अत्याचार कितना है ; काश्यपजो आ रहे थे, उनको उसने धन देकर लौटा दिया , वह ब्राह्मण आये होते, तो मेरे पिता बिना सन्देह जी उठते। काश्यपजी के प्रसाद और मन्त्रियों के विनय से जी ाये होते, तो उसकी कौनसी हानि हुई होती। उस अजेय राजा को जिलाने के निमित्त द्विजोत्तम काश्यप आ रहे थे, उसने मूर्खता से क्यों उनको रोका ? यह सोचकर कि ब्राह्मण राजा को जीवन न दें, उनको धन देना उस दुराचारी तक्षकका बड़ा अत्याचार प्रकट करता है, अतएव मैं उतङ्क के, मेरे और तुम्हारे हितानुष्ठान करने के निमित्त पिता को शत्रुता का वदला लूंगा।

आदिपर्व्व में पचासवां अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवाजी वोले, कि ब्रह्मन्। भरतसिंह परीक्षितपुत्र पृथ्वीनाथ श्रीमान् जनमेजय की यह सब बात मन्त्रियों से अनुमोदित होने पर उन्होंने सर्पयज्ञ करने का प्रण ठान लिया। अनन्तर उन वाक्ययुक्त राजा ने पुरोहित और ऋत्विकों को बुलवाकर कार्य्योपयुक्त यह बात कही, कि जिस दुरात्मा तक्षकने मेरे पिता की हिंसा की है, मैंने उसका यथोचित प्रतिफल देने की इच्छा की है ; आपलोग कहे, कि ऐसी किसी विधान से विदित हैं वा नहीं, कि जिससे नागराज तक्षक को मित्रों के साथ जलती हुई आग में डाल सकूं ? पहिले तक्षकने जिस प्रकार से विषरूपी आगसे मेरे पिता को जलाया था, मैंने भी उस पापिष्ट को उस प्रकार जलती हुई आग में आहुति चढ़ाकर जलाने की इच्छा की है। ऋत्विकगण बोले, कि राजन्। पुराणों में देखते हैं, कि सर्पयज्ञ नामक एक महान् यज्ञ है ; देवताओंने आपही के निमित्त उस यज्ञको रचा है। पौराणिकलोग कहते हैं, कि आपके बिना कोई दूसरे भूप उस महायज्ञ का अनुष्ठान नहीं कर सकेंगे। हे महाराज। हम लोग भी उसके नियमों से ज्ञात है।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि हे सत्तम। राजाने ऋत्विकों की यह बात सुनकर तक्षक को अग्निके मुहमें पड़ा हुआ और जला हुआ समझा। आगे मन्त्रज्ञ ब्राह्मणों से बोले, कि मैं सर्पयज्ञ का अनुष्ठान करूंगा, आपलोग आयोजन कीजिये। हे द्विजसत्तम। बुद्धिमान, वेदज्ञ ऋत्विकलोगोंने यज्ञस्थान के निमित्त एक स्थान ठहराकर यथाविधि उसे सजाया ; आगे उन्होंने वेदविधिके अनुसार परम ऋद्धियुक्त द्विजोंसे निषेवित अपरिमित धनधान्यवाले ऋत्विकों से सेवित दृष्ट यज्ञस्थानको बनाकरके राजा को सर्पयज्ञ में दीक्षित किया ; पर तब उस सर्पयज्ञ में विघ्नडालनेवाला एक भारी निमित्त उपस्थित हुआ। जब यज्ञस्थान बन रहा था, तब वास्तुविद्यामें पण्डित बुद्धिमान् राज (स्थपति) पौराणिक सूतने कहा था, कि जिस देश में और जिस काल में यह नाप आरम्भ हुआ है, उससे जान पड़ता है, कि एक ब्राह्मण के द्वारा यह यज्ञ रोका जायगा। राजा दीक्षित होने के पहिले यह बात सुनकर द्वारवानों से बोले, कि मेरे न जानने में किसी को भी घुसने न देना।

आदिपर्व्व में एकावन अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवाजी वोले, कि अनन्तर यथाविधि सर्पयज्ञ आरम्भ हुआ। याजकलोग यथाविधि अपने अपने कार्य्यों में लगे। वे लोग काले रङ्गके दुपट्टे लेकर धूएसे धूमली आंख वनाकर विधिपूर्व्वक मन्त्र उच्चारते हुए प्रज्वलित अग्निमें आहुति चढ़ाने लगे इससे सर्पों के चित्त कांपने लगे। अनन्तर याजकलोग

को उद्देशकर अग्निके मुह में आहुति देने लगे ; तब सादे, काले नीले, बूढ़े, बाल, कोसभर, योजनभर गोकर्णभर सैकड़ों सहस्रों सर्प लम्बी सांस लेते हुए एक दूसरे को पूछ और सिर से कसके लपेटकर धीमे स्वरमे परस्पर को बुलाने के पीछे भांति भांतिके शब्दोंसे चिल्ला चिल्ला कर घूमते चक्कर खाते जलती हुई आग में गिरने लगे। इस प्रकारसे सैकड़ों सहस्रों, अयुतों, अर्व्वुदों सर्प अग्नि में गिरते हो विवश शरीर होकर नष्ट हुए। अनन्तर अश्व-समान हाथी को सुंड़के समान परिघ-समान मत्तहस्ती-समान भारी शरीरधारी और महाबली, अगणित रङ्गविरङ्गके भांति भांति के, विष में विषम, घोररूप दन्तशूक सर्प मातृ-वाक्यरूपी दण्ड से पीड़ित होकर अग्निके मुह में गिरने लगे।

आदिपर्व्व में बावन अध्याय समाप्त ।

शौनकजीने पूछा, कि बेटा। पाण्डवनन्दन धीमान् राजा जनमेजय ने सर्पोंको बड़ा भय देनेवाले, अति दुःखदायी, बड़े कठोर जिस सर्प-यज्ञ का अनुष्ठान किया था, विस्तार-पूर्व्वक कहो, कि उसमें कौन कौन महर्षि ऋत्विक और सदस्य थे, क्योंकि यह जानना चाहता हूं, कि कौन कौन मुनि सर्पयज्ञके विधानसे विदित थे। श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि जो सब पण्डितलोग सर्प यज्ञ में ऋत्विक और सदस्य थे, उनके नाम कहता हूं सुनिये। च्यवनवंशो वेदज्ञ प्रसिद्ध ब्राह्मण चण्डभार्गव उस महायज्ञ में होता, विद्वान् बूढ़े कौत्स नामक ब्राह्मण उद्गाता, जैमिनि मुनि ब्रह्मा, शार्ङ्गरव और पिङ्गल मुनि अध्वर्यु हुए थे। पुत्र और शिष्यों के साथ व्यास, उद्दालक, प्रमतक, श्वेत-केतु, पिङ्गल, असित, देवल, नारद, पर्व्वत, आत्रेय, कुण्डजठर, कालघट, वात्स्य, बृद्ध श्रुत-श्रवा, जप और स्वाध्याय में रत सुशील, कोहल, देवशर्मा, मौदगल्य, समसौरभ यह सब और दूसरे वेदज्ञ बहुत ब्राह्मण जनमेजयके इस महायज्ञमें सदस्य हुए थे। ऋत्विकोंके इस यज्ञमें आहुति चढ़ाना आरम्भ करने पर घोर भयानक सर्पगण आकर गिरने लगे, उनको वसा और मेदकी नदी बहने लगी। सदा जलते हुए सर्पोंकी कठोर दुर्गन्ध चारों ओर फैलने लगी ; आगमें गिरे, आकाशमें ठहरे और अग्निसे जलते हुए, सर्पोंके चिल्लानेके शब्द सदा सुनाई देने लगा। नागनाथ तक्षक राजा जनमेजयके सर्पयज्ञमें दीक्षित होनेकी बात सुनकर, अपनेको दोषी जान, इन्द्रपुरीमें जाय, भययुक्तचित्तसे इन्द्रके पास आद्योपान्त सब बात कहकर उनकी शरण लो। इससे इन्द्रने प्रसन्न होकर बोले, "हे नागराज तक्षक! सर्पयज्ञसे तुमको कोई भय नहीं है, मैंने पहिलेही तुम्हारे लिये पितामह जीको प्रसन्न किया है, सो तुम्हे भय नहीं है, चित्त की पीड़ाको दूर करो।"

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि अनन्तर नागोत्तम तक्षक इन्द्रसे इस प्रकार ढाड़स पाकर प्रसन्न चित्तसे इन्द्रके पास रहने लगा। इधर नागोंके हर घड़ी अग्निमें गिरने पर वासुकी अपने परिवारोंको अल्पशेष देखकर अति दुःखी चित्तसे खेदयुक्त होने लगी,तब वह अति शोकसे घेर गये और उनका मन डोलने लगा। अनन्तर उन नागनाथने अपनी बहिन से कहा, "भद्रे! मेरा शरीर जल रहा है, मैं चारों ओर अंधेरो छायी हुई देखता हूं, मोहसे विवश हो रहा हूं, मेरा चित्त घूम रहा है, देखनेमें भ्रम हो रहा है। आज विवश शरीरसे मुझको भी जलती हुई आगमें गिरना पड़ेगा, सर्पोंके नाशके निमित्त जनमेजयने यज्ञ आरम्भ किया है। मुझको भी यमराज का पाहुना बनना पड़ेगा। अरो बहिन! जिस हेतु जरत्कारु ऋषिसे तुम्हारा विवाह कर दिया था, यह वही काल

आ पहुंचा है, अब हमको मित्रोंके सहित बचाओ; री नागोत्तमे। पहिले पितामहने स्वयं मुझसे कहा था, कि सर्पयज्ञ आरम्भ होने पर आस्तीक-ऋषि उसे रोकेंगे; सो बहिन। अब मेरी और मेरे परिवारोंकी रक्षाके निमित्त वृद्ध-सम्मत वेदनिपुण अपने बालकपुत्रसे कहो।

आदिपर्व्वमें तिरपन अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि अनन्तर सर्पकी बहिन जरत्कारुने नागनाथ वासुकिके वाक्यानुसार अपने पुत्र को बुलाकर यह कहा, कि बेटा! भैयाने मुझे तुम्हारे पिताको जिस निमित्त दान दिया था, उसका काल अब आगया है, जो उचित हो, करो। आस्तीकजी बोले, कि सच कहो, किस लिये मामाने तुम्हें मेरे पिता को दान किया था, मैं सुनकर उसके अनुसार कार्य्य करूं। उसके अनन्तर बान्धवोंके हितचाहनेवाली सर्पकी बहिन जरत्कारु ढाड़स पाकर पुत्रसे बोली, कि सम्पूर्ण सर्पों की माता कद्रुने जिस कारणसे क्रोधित होकर अपने पुत्रोंको शाप दिया था, वह कहती हूं, सुनो। उसने विनतासे दासीपन का दाव लगाकर सर्पोंसे कहा था, कि तुमलोग सादे उच्चैःश्रवाको काला बनाओ, सर्पोंके न मानने पर उसने शाप दिया, कि "जनमेजय राजा के सर्पयज्ञमें अग्निदेव तुमको जलावेंगे और तुम मरकर परलोकको सिधारोगे।" कद्रुके शाप देने पर सर्व्वलोकोंके पितामह ब्रह्माने "एवमस्तु" कहके उस बातका समर्थन किया। वासुकिनेभी पितामहजीकी वह बात सुनकर अमृत मथनेके पश्चात् देवोंकी शरण ली। देवगण दुर्लभ अमृतको पाकर सफलमनोरथ होकर मेरे भाईको साथ लेकर पितामहके समीप जा पहुंचे।

आगे रव देवता नागनाथ वासुकिसे मिल-कर पद्मयोनि ब्रह्माजीको इसलिये प्रसन्न करने लगे, कि सर्पोंका शाप मुक्त होवे। देवगण बोले, कि भगवन्। यह नागनाथ वासुकि स्वजनोंके निमित्त अति दुःखी है, अतएव ऐसा कीजिये, कि माताका शाप दूर होवे। ब्रह्माजी बोले, कि जरत्कारु नामक ऋषि जरत्कारु नाम्नी जिस सर्प-बहनसे विवाह करेंगे, उसीके गर्भसे एक श्रीमान ब्राह्मण जन्म लेकर सर्पों को माताके शापसे बचावेगा। बेटा। नागनाथ वासुकिने पितामहकी यह बात सुनकर तुम्हारे पिताके साथ मेरा विवाह कर दिया, अतएव सर्पयज्ञका काल आनेके पहिलेही तुमने मेरे गर्भसे जन्म लिया है; अब वह कठोर काल आ पहुंचा है, तुम हमको भयसे बचाओ, अग्निके मुखसे मेरे भाईकी रक्षा करो। बेटा! मैं सर्पोंको रक्षाके निमित्त तुम्हारे पिताको दी गई थी, सो ऐसा करो, कि मैं जिस अभिप्रायसे सौंपी गई थी, वह व्यर्थ न हो; अथवा कहो तो सही, इस विषयमें तुम्ही क्या सोच रहे हो। आस्तीकने माताकी बात सुनकरके "तथास्तु" कहकर मान ली; आग दुःखसे जलते हुए वासुकिको जीवन दे करकेही मानों बोलने लगे, कि हे महाभाग सर्पनाथ वासुके! मैं सच कहता हूं, तुमको उस शापसे बचाऊंगा; राजन्। तुम चित्त स्थिर करो, तुम्हें कुछ भय नहीं है, मैं विशेष यत्न करूंगा, कि जिससे तुम्हारा मङ्गल होगा, मैं हंसीमें भी झूठ नहीं बोलता, फिर कामके समय कहनेका कौन सी सम्भावना है? मामा! मैं उन दीक्षित क्षितिपति जनमेजयके निकट चलकर मङ्गलयुक्त वातोंसे उसको प्रसन्न करूंगा; हे सत्तम! ऐसा करूंगा, कि वह यज्ञ रुक जाय; हे महाभाग नागनाथ! मैं जो कह रहा हूं, वह असम्भव न जानिये, और तुम्हारे चित्तमें ऐसी समझ न आवे, कि मुझमें वह झूठ ठहर सके। वासुकि बोले,

आस्तीक! मैं चक्कर खारहा हूं, मेरा हृदय फटा जाता है, ब्रह्मदण्डसे पीसे जाकर चारों ओर अंधेरी देख रहा हूं। आस्तीकजी बोले, कि हे सर्पराज! तुम किसी प्रकार दुःखी मत होओ, मैं तुम्हारा प्रज्वलित अग्निका भय दूर करूंगा, मैं प्रलय-कालिक अग्निके समान तेजस्वी अति घोर ब्रह्मदण्डको दूर करूंगा, तुम इस प्रकारसे किसी विषयमें भय मत करो।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि अनन्तर द्विजश्रेष्ठ आस्तीक मुनि वासुकिकी कठोर चित्तपीड़ाको दूरकर स्वयं सर्पकुलके उद्धारका भार लेकर शीघ्रता पूर्व्वक सर्व्व गुणशाली जनमेजयके यज्ञ स्थानको पधारे। आगे वहां पहुंचकर अग्नि और सूर्य्यके समान प्रकाशमान अगणित सदस्योंसे भरे हुए, सुन्दर यज्ञस्थान को देखा। यज्ञभूमिमें घुसनेके कालमें द्वारवानोंसे रोके जानेके कारण घुसनेकी इच्छासे उस सर्पयज्ञकी प्रशंसा करने लगे। अनन्तर हे पुण्यात्माओंमें श्रेष्ठ, द्विजोत्तम! आस्तीकमुनि यज्ञभूमिमें पहुंचकर अनन्त कीर्त्तियुक्त भूपाल ऋत्विक, सदस्य और अग्निका स्तव करने लगे।

आदिपर्व्वमें चौवनवां अध्याय समाप्त।

श्री आस्तीकजी बोले, कि हे भारतश्रेष्ठ परीक्षित! प्रयागमें सोम, वरुण और प्रजापतिका जैसा यज्ञ हुआ था, आपका यह यज्ञ वैसाही हुआ है। प्रार्थना करता हूं, कि हमारे प्रियजनों का मङ्गल होवे। हे भारतश्रेष्ठ परीक्षित! देवराजने जो सौ यज्ञ किये थे, आपका यह यज्ञ उस प्रकारके अयुत यज्ञके समान हुआ है। प्रार्थना करता हूं, कि हमारे प्रियजनोंका मङ्गल होवे। हे भारतश्रेष्ठ परीक्षित! यम, हरिमेधा और रन्तिदेवने जो यज्ञ किया था, आपका यह यज्ञ वैसाही हुआ है; प्रार्थना करता हूं, कि हमारे प्रियजनोंका मङ्गल होवे। हे भारतश्रेष्ठ परीक्षित! गय, शशविन्दु और वैश्रवण राजाने जो यज्ञ किया था, आपका यह यज्ञ वैसाही हुआ है, प्रार्थना करता हूं, कि हमारे प्रियजनों का मङ्गल होवे। हे भारतश्रेष्ठ परीक्षित! नृग, अजमीढ, और दाशरथि राजा रामचन्द्रजीने जो यज्ञ किया था, आपका यह वैसाही हुआ है, प्रार्थना करता हूं, कि हमारे प्रियजनों का मङ्गल होवे। हे भारतश्रेष्ठ परीक्षित! अजमीढ़वंशी देवपुत्र युधिष्ठिरका यज्ञ स्वर्गमें जैसा प्रशंसित हुआ था, आपका यह यज्ञ वैसाही हुआ है, प्रार्थना करता हूं, कि हमारे प्रियजनोंका मङ्गल होवे। हे भारतश्रेष्ठ परीक्षित! सत्यवती-पुत्र कृष्णद्वैपायनने स्वयं सम्पूर्ण धर्म्मानुष्ठान करके जो यज्ञ किया था, आपका यह यज्ञ वैसाही हुआ है, प्रार्थना करता हूं, कि हमारे प्रियजनोंका मङ्गल होवे। देवराज इन्द्रजीके यज्ञमें जैसे सदस्य थे, उनके ऐसे आपके इस यज्ञमें सूर्य्यके समान प्रकाशमान यह सब सदस्य बैठे हैं, इस कालमें ऐसी कोई वस्तु विद्यमान नहीं है, जो यह लोग न जानें; अतएव इनको दान देनेसे कभी नाश नहीं होता; मैंने निश्चय करलिया है, कि भगवान् द्वैपायनके समान ऋत्विक तीनों भुवनमें नहीं है, क्योंकि इनके शिष्यलोग निज कार्य्यमें दक्ष और सब कामोंमें ... होकरके भूमण्डलमें घूम रहे हैं। विभावसु चित्रभानु, महात्मा, हिरण्यरेता, हुतसुख और कृष्णवर्त्मा अग्निदेव प्रज्वलित और दक्षिण ओरकी शिखायुक्त होकरके देवोंको ... करनेके लिये आपकी यह हवनकी वस्तु मांग रहे हैं। हे राजन्! इस धरती भरमें आपके सदृश प्रजापालक महाराज और कोई नहीं है आपके धीरज कोभी देखकरके मैं सदा प्रसन्न रहता हूं; आप वरुण और धर्म्मराज यमके

मान अनुशासक हैं, साक्षात वज्रधारी देवराजकी भांति मर्त्यलोकमें प्रजाको पाल रहे हैं। हे पुरुषश्रेष्ठ। आप हमारे सम्मानके पात्र है, ऐसा यज्ञशील नरेश इस लोकमें कोई नहीं है। आप खट्टाङ्ग, नाभाग और दिलीप नरेशोंके सदृश है, आपका प्रभाव ययाति और मान्धाता को भांति है और आप भीष्मजीके सदृश व्रतशील होकरके विराजमान हैं। आपका वीर्य्य वाल्मीकिके वीर्य्यवत गुप्त है, आपका क्रोध वशिष्ठके सदृश वशमें है, आपकी प्रभुताई इन्द्रजी की सी है और आपका प्रकाश नारायणजीके प्रकाशके सदृश प्रगट होता है। आप धर्म्मराजकी नाईं धर्म्म ठहरानेवाले हैं, श्रीकृष्णजीके सदृश सर्व्व गुणयुक्त हैं, लक्ष्मीजीके बसनेके अद्वितीय आधार है, दशोद्भवके समान बली है, श्रीरामचन्द्रजी ऐसे अस्त्रज्ञ और शास्त्रज्ञ हैं, त्रित और और्व्वके समान प्रभावी और भगीरथ की भांति भेंट के लिये दुर्लभ हुए है।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि राजा, सदस्य, ऋत्विक और अग्नि सभी इस प्रकार स्तव किये जाने पर प्रसन्न हुए। राजा जनमेजय उनके हृदय के भावको समझकर कहने लगे।

आदिपर्व्वमें पचपन अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, कि यह बालक, ऋषि वृद्धकी नाईं बातें कह रहे है, बातोंसे जान पड़ता है, कि यह बालक नहीं, वृद्ध है। मुझे इच्छा हो रही है, कि इनको मनमाना वर दूं। ब्राह्मणो। आप इस विषयका उचित विचार करें। सदस्यलोग बोले, कि ब्राह्मण बालकभी होवें, तो राजाके माननीय होते हैं, वे विशेष पूजा पाते हैं, अतएव आप इनके मनमाने सब वर दे सकते है, पर ऐसा करना चाहिये, कि हमारा उद्देश्य किया हुआ तक्षक शीघ्र आवे।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि राजा वर देनेको अभिलाषी होकर आस्तीक मुनिसे यह कहनेहो पर थे, कि "वर मांगो," कि ऐसे समयमें होताने कुछ असन्तुष्ट चित्त होकर कहा, कि महाराज। कुछ विलम्ब कीजिये, अभीतक तक्षक नहीं आया है। जनमेजय बोले, कि आपलोग शक्तिके अनुसार ऐसी चेष्टा कीजिये, कि मेरा कार्य्य पूरा हो और तक्षक शीघ्र आवे, क्योंकि वह तक्षकही हमारा शत्रु है। ऋत्विक लोग बोले, कि हे राजन्! हमारे शास्त्रोंमें कहा है और अग्निदेवभी प्रकाश कर रहे हैं, कि तक्षक, भय खाकर इन्द्रके गृहमें शरण लिये हुए है। महात्मा पौराणिक सूतजी लोहिताक्षने राजासे पूछे जाकर पहिले जिस प्रकार कहा था, तबभी फिर वैसाही कहा, कि महाराज ब्राह्मणलोग जो कहते हैं, वह सत्य है। मैं पुराणके अनुसार कहता हूं, कि इन्द्रने उस तक्षकको यह वर दिया है, कि "तुम मेरे पास छिप रहो, अग्निदेव तुम को जला नहीं सकेंगे।" यज्ञमें दीक्षित राजाने यह बात सुनकर चित्तमें दुःख मानकरके होता से कहा, कि मन्त्र उच्चारणकर तक्षककी आहुति चढ़ाओ। होता अति यत्नसे मन्त्र उच्चारण करते हुए तक्षकके नामसे आहुति देने लगे।

अनन्तर सम्पूर्ण देवोंसे स्तव पानेवाले महानुभाव देवराज रथमें चढ़कर आकाशमण्डलमें स्वयं उपस्थित हुए। मेघ, विद्याधर और अप्सरा उनके साथ आईं, नागराज तक्षक भयसे उनके दुपट्टेमें लिपट रहा। इधर राजाने क्रोधित होकर फिर मन्त्रज्ञ ऋषियोंसे कहा, कि ब्राह्मणो! यदि तक्षकने इन्द्रके गृहमें शरण ली हो, तो इन्द्रके सहित उसको अग्निमें गिराइये। होताने तक्षकके निमित्त जनमेजयसे ऐसी आज्ञा पाकर इन्द्रके सहित तक्षकको नाम आहुति दी। होताके ऐसी **आहुति** देनेही पर इन्द्रजी तक्षकके साथ पीड़ि

आकाश-मण्डलमें दिखाई देने लगे। उस यज्ञको देखतेही इन्द्र अति भीत होकर तक्षकको छोड़कर हड़बड़ाते हुए अपने घरको भागे। इन्द्रके इस प्रकार भागनेपर तक्षक भयसे मोहित और विवश होकर यज्ञकी अग्निशिखा-के समीप आ पहुंचा। तब ऋत्विकलोग बोले, कि हे राजेन्द्र! अब आपका कार्य्य विधिपूर्व्वक हुआ, अब इन ब्राह्मणश्रेष्ठको वर दे सकते हैं। जनमेजय बोले, कि हे अप्रमेय बालक! तुम जैसे योग्य पात्र हो, मैं तुमको वैसा ही वर दूंगा। तुम्हारे चित्तमें जैसा हो और जो कुछ चाहते हो मांगो; यदि मेरे देनेके अयोग्यभी हो, तौभी दूंगा। इस बीच ऋत्विकोंने कहा, कि हे महाराज। वह देखिये, तक्षक आपके वशमें होकर शीघ्र आ रहा है और भयसे विकल होकर चिल्लानेके हेतु उसकी घोर आहट सुनाई देती है; निश्चय जान पड़ता है, कि वज्रधारी देवराजने उसको छोड़ दिया है, सो मन्त्रके बलसे खींचे जाकर स्वर्गसे गिर रहा है; देखिये, वह सर्पनाथ तेज श्वांस छोड़ता हुआ आकाशमें चक्कर खा खा-कर और चेतना-वर्ज्जित होकर आ रहा है।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि नागनाथ तक्षक अग्निमें गिर रहा था, कि ऐसे समयमें आस्तीक मुनिने इस वरके मांगनेका अवसर लिया, कि हे जनमेजय। यदि वर दें, तो मेरी यह प्रार्थना है, कि आपका यह सर्पयज्ञ बन्द होवे और सर्प इसमें अब न गिरें। ब्रह्मन्! आस्तीकको यह वर पानेकी प्रार्थना सुनकरके परीक्षित्-पुत्रने अनधिक प्रसन्न चित्तसे कहा, विभो! आप सोना, चांदी, गौ, वा और कुछको प्रार्थना कीजिये, सभी दे सकूंगा; पर मेरा यह यज्ञ बन्द नहीं होगा। आस्तीकने उत्तर दिया, कि राजन्! मैं सोना, चांदी, गौ आदि कुछ नहीं मांगता, आपका यह यज्ञ बन्द हो, उसीसे मेरे मातृकुलका मङ्गल होगा।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि मुनि आ[स्तीकके] ऐसा उत्तर देने पर बोलनेमें तेज राजा ज[न]मेजय बार बार कहने लगे, कि "हे द्विजव[र] आप दूसरा वर मांगिये, तो आपकी विधि म[ङ्गल] होगा; पर आस्तीकने किसी प्रकार द[ूसरे] वरको प्रार्थना नहीं की। अनन्तर वे[द] सम्पूर्ण सदस्योंने मिलकर राजासे कहा, [कि] ब्राह्मण-कुमारको मनमाना वर दीजिये।

आदिपर्व्वमें छप्पनवां अध्याय समाप्त।

श्रीशौनकजीने पूछा, कि हे सूतपुत्र। [उ]स सर्पयज्ञमें जो सब सर्प आ गिरे थे, उनके ना[म] सुनने चाहता हूं। श्रीउग्रश्रवाजी बोले, [कि] हे द्विजोत्तम। सहस्रों, अयुतों, अर्बुदों [सर्प] अग्निमें हवन हुए हैं, बहुत होनेके हेतु उनकी संख्या नहीं हो सकती, पर जितना स्मरण है कहता हूं। पहिले उनमें वासुकि-वंशी नील, लाल, सादे, बड़े, घोर विषसे भयान[क] जितने बड़े बड़े सर्प माताके वाक्यरूपी दण्[ड] पीसे जाकर विवश और पीड़ायुक्त हो[कर] अग्निमें हवन हुए थे, उनके नाम सुनि[ये।] कोटिश, मानस, पूर्ण, शल, पाल, हलीमक, पिच्छल, कौणप, चक्र कालवेग, प्रकालन हि[रण्य]बाहु, शरण, कक्षक और कालदन्तक वासु[कि] -वंशी यह सब और महाबली घोररूपी द[ूसरे] सर्प भी जलती हुई, आग में गिरे थे। तक्ष[क] कुल से उपजे हुए, सर्पों के नाम कहता [हूं] सुनिये। पुच्छाण्डक, मण्डलक, पिण्डसेक्ता, रभेणक उच्छिख, शरभ, भङ्ग, बिल्वतेजा, विरो[हण], शिली, शलकर, मूक, सुकुमार, प्रवेपन, मुद्गर, शिशुरोमा, सुरोमा और महाहनु तक्षकवंशी यह सब सर्प अग्निमें घुसे थे। पारा[वत], परिपात्र, पाण्डव, हरिण, कृश, विह[ङ्ग], शरभ, मेद, प्रमोद और संहतापन, ऐराव[त]-वंशी यह सब नाग आगमें गिरे थे। हे द्वि[जोत्]तम! एरक, कुण्डल, वेणी, वेणीस्कन्ध, कुमा[रक]

रक, वाहुक, शृङ्गवेर, धूर्त्तक, प्रातर, आतक, कौरव्यवंशी यह सब नाग आगमें घुसे थे। हे ब्रह्मन् धृतराष्ट्रवंशी विषधारी वायुवत वेगवान नागोंके नाम कहता हूं, सुनिये। शङ्कुकर्ण, पिठरक, कुठार, सुखसेचक, पूर्णाङ्गद, पूर्णमुख, प्रहास, शकुनि, दरि, अमाहठ, कामठक, सुषेण, मानस, व्यय, भैरव, मुण्डवेदाङ्ग, पिशङ्ग, सुद्र-ारक, ऋषभ, वेगवान्, नाग, पिण्डारक, महा-हनु, रक्ताङ्ग, सर्व्वसारङ्ग, समृद्ध, पठवासक, वरा-हरणक, सुचित्र, चित्रवेगिक, पराशर, तरुणक, मणिस्कन्ध और अरुणि। हे ब्रह्मन्! यह सब बड़े बड़े सर्पोंके नाम कह चुका, अधिक होने के हेतु सब सर्पों के नाम नहीं कह सका; इनके बेटे और इनके पोते जो जलती हुई आग में गिरे थे, उनकी संख्या नहीं लगती। इनके सिवाय तीन शिर्षयुक्त सात शिर्षयुक्त, दश शिर्ष युक्त प्रलय कालिक अग्नि ऐसा विष धरनेवाले भयानक, बड़े भारी भारी अति तेज पहाड़की चोटी ऐसे ऊंचे योजन भर फैले हुए, दो योजन घेरे हुए, कामरूपी कामबलसे जगते हुए, अग्निवत् विषधारी भांति भातिके सैकड़ों, सहस्रों सर्प ब्रह्मदण्डके समान माताकी बातसे रोसे जाकर उस महायज्ञमें जल गये थे।

आदिपर्व्वमें सतातनवां अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि सुनिये, परीक्षित्-पुत्र जनमेजयके उस प्रकार वर देनेके प्रस्तुत होने पर और एक आश्चर्य्य लीला हुई थी। नागनाथ तक्षक इन्द्रजीके हाथसे फिसलकर आकाशहीमें रहने लगा। तब राजा जनमेजय सोचने लगे, कि भयसे विकल होने पर भी तक्षक विधिपूर्व्वक आहुति दी हुई आगमें क्यों नहीं गिरा। शौनकजीने पूछा, कि हे सूत! क्या उस समय मनीषासम्पन्न ब्राह्मणोंका मन्त्र प्रतिभायुक्त नहीं हुआ था, कि तक्षक आगमें नहीं गिरा? श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि नाग-राज तक्षक चेतना खोकरके जब इन्द्रजीके हाथसे फिसलकर गिर रहा था, तब मुनि आस्तीकने "रहो, रहो, रहो," यह बात तीन-वार कही थी, जैसे कोई पुरुष आकाश और धरतीके बीचमें हो रहे, वैसेही तक्षक दुःखी चित्तसे आकाशहीमें रहने लगा। अनन्तर सदस्योंके अति अनुरोधसे राजाने कहा, कि अच्छा, आस्तीक जो कहते हैं, वही होवे; सर्पयज्ञ बन्द होवे, सर्प सोचसे बचें। अनन्तर चारों ओर आनन्दध्वनि उड़ने लगी; मुनि आस्तीकको वर देनेसे पाण्डवनन्दन राजा जनमे-जयका यज्ञ बन्द हुआ। आगे राजा परीक्षित-पुत्रने प्रसन्न होकर ऋत्विक, सदस्य और दूसरे लोगों को, जो उस यज्ञमें आयेथे, सैकड़ों सहस्रों मुद्रा दान दिये। जिस्ने पहिलेही कहा था, कि एक ब्राह्मणसे यज्ञ बन्द होगा, उस (राज) स्थपतिके बेटे लोहिताक्षको भी बहुत धन दिया। उस अपरिमित पराक्रमी राजाने प्रसन्न होकर उस लोहिताक्षको भोजन वस्त्रादि देकर अन्तमें विधिके अनुसार यज्ञान्त स्नान किया। आगे सन्तुष्ट होकरके उस कृत्य किये हुए और प्रसन्नचित्त पण्डित आस्तीकको यथोचित पूजाकर घरमें जानेकी आज्ञादी और कह दिया, कि आप फिर आना, मैं जब अश्व-मेध नामक महायज्ञ करूंगा, तब आपको सदस्य होना पड़ेगा।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि आस्तीक इस प्रकार अलौकिक कार्य्य साधकर अति प्रीतिचित्तसे राजाको प्रसन्न करके तथास्तु कहकर चले गये। आगे जब उन्होंने आनन्दित हृदयसे माता और मामाके पास चलकर प्रणामपूर्व्वक सब वृत्तान्त कह सुनाये, तब वहां जो सर्प उप-स्थित थे, वे भयरहित हुए और मुनि आस्तीक पर प्रसन्न होकर कहा, कि तुम मनमाना वर मांगो, हमको बचानेके हेतु हम सब तुम पर बड़े सन्तुष्ट हुए हैं, अब तुम्हारा कौनसा प्रिय

कार्य्य करें? सर्पगण बार बार कहने लगे, कि बेटा। तुम्हारा कौनसा वाञ्छित कार्य्य पूरा कर दें? आस्तीकजी बोले, कि इस भूमण्डलमें जो सब ब्राह्मण वा दूसरे मनुष्य प्रसन्न चित्त होकर प्रातःकाल वा सन्ध्याके समय मेरा यह धर्म्मआख्यान पढ़ेंगे, उनको तुमसे कोई भय नहीं रहेगा। सर्पोंने प्रसन्न मनसे कहा, कि हे भाञ्जे। तुम जो वर मांगते हो, वह हम सिर नायकर और आनन्दचित्त होकर देयेंगे। "जो दिन को वा रात्रिमें असित, आर्त्तिमान और सुनीथ को स्मरण करेंगे, उनको सर्पोंसे भय नहीं रहेगा, जिस यशयुक्त आस्तीकने जरत्कारुके वीर्य्य और जरत्कारुके गर्भसे जन्म लिया था, जिन्होंने सर्प-यज्ञोंमें तुम्हारी रक्षा की थी, हे महाभाग सर्पों। हम उनको स्मरण करते हैं, अब हमारी तुम हिंसा नहीं कर सकते हो, हे अति विषयुक्त सर्प। भागो तुम्हारा मङ्गल होवे, हे सर्प! चले जाओ, राजा जनमेजयका यज्ञ अन्त होने पर मुनि आस्तीकने जो बात कही थी, वह स्मरण करो; जो सर्प आस्तीक का वाक्य सुनकर चला नहीं जाता है, शिंशवृक्षके फलके सदृश उसका सिर सैकड़ों टुकड़ोंमें फट जाता है।

बड़े बड़े सर्पोंने मिलकर यह वर देने पर महात्मा द्विजवर आस्तीकने परलोक सिधारनेकी कल्पना की। धर्म्मात्मा द्विजोत्तम आस्तीक इस प्रकार सर्पोंको सर्पयज्ञसे रक्षा कर पुत्र पौत्रादि छोड़कर उचित समयमें परलोकको सिधारे। यह आस्तीकोपाख्यान आपके समीप यथावत् कीर्त्तन किया; इसको कीर्त्तन करनेसे सर्पका भय जाता रहता है। ब्रह्मन्! आपके पूर्व्व-पुरुष भार्गवोत्तम प्रमतिने निजपुत्र रुरुसे पूछे जाकर जिस प्रकार कहा था और मैंनेभी जैसा सुनाथा, कविवर आस्तीकके सुन्दर चरित्रको वैसाही कह सुनाया। ब्रह्मन्! डुण्डुभका वाक्य सुनकर आप जो बहुधर्म्मयुक्त और पुण्य बढ़ानेवाला यह आस्तीकोपाख्यान सुनकर इसक्षण आपका महत् कौतूहल दूर होवे।

आदिपर्व्वमें अठावनवां अध्याय और आस्तीकोपाख्यान समाप्त।

श्रीशौनकजी बोले, कि बेटा। तुमने मेरे पास भृगुवंशी आदि जो सब महत् आख्यान कीर्त्तन किये हैं, उनसे मैं बड़ा प्रसन्न हूं। हे सूतनन्दन। तुमसे फिर कहता हूं, कि व्यास जीके विषयमें जो सब कथा हैं, उनको यथावत् कीर्त्तन करो। उस बड़े भारी यज्ञमें महात्मा सदस्योंके अवसर के समय जिन जिन विषयों में जो आश्चर्य्य कथायें हुई थीं, वह सब तुम्हारे मुहसे सुनना चाहता हूं। हे सौते! तुम सब हमसे कहो, उग्रश्रवाजी बोले, कि सर्प यज्ञके अवसरके समय ब्राह्मणोंने वेदाश्रयक अनेक कथा कही थीं, उनमें व्यासजीने महाभारत नामक विचित्र आख्यानको कीर्त्तन किया था। शौनकजी बोले, कि कृष्णद्वैपायन जनमेजयसे पूछे जाकर अवसरके अनुसार पाण्डवोंका यश बढ़ानेवाले महाभारत नामक आख्यानको विधिपूर्व्वक सुनाया था, वह पवित्र कथा विधिके अनुसार सुनना चाहता हूं; साधुओंमें श्रेष्ठ सूतपुत्र। महानुभाव महर्षिके हृदयसमुद्रसे निकले हुए, उस कथारूपी अमृतका कीर्त्तन करो, अभीतक मेरी सुननेकी इच्छा निवृत्त न होनेके कारण तृप्त नहीं हूं। श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि आपके निकट कृष्णद्वैपायनके कहे हुए महाभारत नामक अति श्रेष्ठ महाख्यानको आदि से अन्त तक कहूंगा। हे द्विज। मैं नाना रूपसे इसे कहता हूं। सुनिये, इसको कहनेमें मुझे बड़ा हर्ष आ रहा।

आदिपर्व्वमें उनसठवां अध्याय समाप्त।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि पण्डित ऋषि कृष्णद्वैपायनजी जनमेजयको सर्पयज्ञमें दीक्षित होना सुनकर वहां पहुंचे। जिन पाण्डव पितामहने शक्तिपुत्र पराशरके वीर्य्य से सत्यवतोको कन्यादशाहोमें उसके गर्भमें यमुनाद्वीप पर जन्म लिया था; जिन अतियशयुक्त महर्षिने जन्म लेतेही उसीक्षण निज इच्छासे देहको बढ़ाकर वेद, वेदाङ्ग इतिहास आदि सम्पूर्ण शास्त्र पढ़े थे, तप, वेदपाठ, व्रत उपवास, सन्तानोत्पादन या यज्ञसे कोई भी जिनसे बढ़ चढ़कर नहीं हो सका है, जिन परात्पर परमेश्वरके तत्व जाननेवाले, सत्यव्रतधारी, अतीतदर्शी, शुद्धाचारी, वेदज्ञ, ब्रह्मर्षिने एक वेदको चार भागोंमें बांटा था; जिन पुण्यकीर्त्तियुक्त अति यशवान महर्षिने शान्तनुवंशकी रक्षाके निमित्त पाण्डु, धृतराष्ट्र और विदुरको जन्म दियाथा; उन्ही महात्माने वेद वेदाङ्ग में पण्डित शिष्योंके साथ राजर्षि जनमेजयकी यज्ञ-सभामें प्रवेश किया! वहां देखा, कि जिस प्रकार देवोंसे घेरे जाकर इन्द्रजी बैठते हैं,वैसाही राजा जनमेजय अगणित सदस्यों, मूर्द्धाभिषिक्त बहु देशाधिपों और ब्रह्मवत कर्मदक्ष ऋत्विकोंसे घेरे जाकर यज्ञसभामें बैठे हैं। भरतवंशके आभूषणरूपी राजर्षि जनमेजय उन ऋषिका आगत देखकर प्रसन्नचित्तसे साथियोंके साथ उठ खड़े हुए। देवराज जिसप्रकार वृहस्पतिजीको आसन देते हैं, वैसेही प्रभु जनमेजयने सदस्योंसे सहमत होकर स्वागत महर्षिको सुवर्ण आसन दिया और वह उसपर बैठे और देवर्षियोंसे पूजे जाते हुए उन पितामह कृष्णद्वैपायनकी शास्त्रोचित कर्म्मसे पूजा कर उनको योग्य पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय और गौ विधिपूर्व्वक निवेदन किया। भगवान् व्यासजीने प्रीतिचित्तसे पाण्डव जनमेजयसे वह सब पूजा लेकर विना कारण जीवकी हिंसा करना उचित नहीं है, कहके गोवध नहीं करने दिया।

जनमेजयने प्रेम दिखाकर उस प्रकार प्रपितामहको पूजकर निकट बैठकर प्रसन्नचित्तसे कुशल पूछा। भगवान् व्यासजीने भी उनसे अपना कुशल कहा; आगे सदस्यलोगोंके उनको स्वागत करने पर उन्होंने भी उनकी यथोचित् अभ्यर्थना की। अनन्तर जनमेजयने सदस्योंसे हाथ जोड़कर द्विजश्रेष्ठ प्रपितामहसे पूछा, कि हे द्विज। आपने कुरुपाण्डवोंके अनन्त चरितको प्रगट किया है; अतएव कृपाकर उसे कहिये मुझे सुननेकी इच्छा हुई है। मेरे प्रपितामह लोग सभी क्रोधद्वेषसे वर्ज्जित थे, तिस परभी क्यों वे दैववश वैसी बड़ी शत्रुतामें गिरे? फिर किस हेतु वैसी अगणित जीवनाशी लड़ाई हुई? हे द्विजोत्तम! यह सब आदिसे अन्ततक भली भांति सुनाइये।

श्रीउग्रश्रवाजी बोले, कि तब कृष्णद्वैपायनजीने उनकी यह बात सुनकर निकट बैठे हुए शिष्य वैशम्पायनसे कहा, कि पहिले जिस प्रकार कुरु पाण्डवोंमें वह झगड़ा हुआ था, वह तुमने मुझसे जैसा सुना है, इस नरेशके समीप ठीक वैसाही कह सुनाओ। विप्रर्षि वैशम्पायनजो गुरुकी आज्ञा पाकर महाराज जनमेजय, सदस्यों और सब राजाओंके सामने कुरु-पाण्डवोंके झगड़े और सर्व्वनाश आदि विषय सम्बन्धी पौराणिक कथाओंको सुनाने लगे।

आदिपर्व्वमें साठवां अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि पहिले गुरुके पदोंपर भक्तिसहित एकचित्तसे साष्टाङ्ग प्रणाम कर, विद्वान् जनों और सम्पूर्ण ब्राह्मणोंको पूजकरके सर्व्वलोकोंसे प्रशंसित धीमान् महर्षि महात्मा व्यासजीका सम्पूर्ण मत कहता हूं। महाराज। आप इस भारतीय उपाख्यान सुननेके योग्य पात्र हैं; गुरुजीकी आज्ञा चित्तको उत्साहित कर रही है।

श्रेष्ठ महाराज। जिस प्रकार कुरु पाण्डवोंका घरू झगड़ा था, राज्यके निमित्त जिस प्रकार जूएका खेल, पाण्डवोंका वनवास और सर्व्वनाशी कठोर लड़ाई हुई थी, यह सब आपसे कहता हूं, सुनिये।

युधिष्ठिर आदि वह सब वीरवर्ग पिताकी मृत्युके पश्चात् निज घरमें लौटकर थोड़े समयमें धनुष-विद्या में दक्ष और वेदज्ञ होगये। कौरवलोग उनको रूप, बल, वीर्य्य, उत्साह श्री और यशयुक्त और पुरवासियोंके प्रिय देखकर खेदयुक्त हुए। अनन्तर क्रूरचित्त दुर्योधन, कर्ण और शकुनि उनको सताना और घरसे खदेड़ना आदि भांति भांतिके बुरे व्यवहार करने लगे। एकदिन पापात्मा दुर्योधनने भीमको अन्नके साथ विष पीनेको दियाथा, वृकोदर भी उसे पी गये थे। एक दिन भीम प्रमाणकोटि अर्थात् गंगाजीके तट पर एक खेलके घरमें सोये थे, उस समय वह पापात्मा उनको बांधकर गंगाजीके सोतेमें छोड़कर अपने घरमें लौट आया। कुन्तीपुत्र महाभुज भीमसेन जब जगे, तब बलसे बन्धनको तोड़कर पीड़ा-दूर करके उठ आये। किसी दूसरे समय वह सोते थे, धृतराष्ट्र-पुत्रने कालसर्पसे उनके सर्व्व शरीरको कटाया था, शत्रुनाशी भीमसेनका तिसपरभी प्राण न गया। जब कौरवलोग झासा देकर, पाण्डवोंके प्राण लेने की चेष्टा किया करते थे, तब महामति विदुर उनके उपायको नष्ट करने और पाण्डवोंको रक्षाके निमित्त सयत्न रहते थे, जिसप्रकार देवलोकके देवराज सर्व्वलोकोंके सुखदायी होते हैं, उनके समान विदुर सदा पाण्डवोंके शुभाकांक्षी थे। जब कौरवोंने देखा, कि न गुप्त न प्रगट किसी उपायसे पाण्डवोंके प्राण नष्ट न होके इसी दैववश उनकी रक्षा होने लगी, तब दुर्योधनने कर्ण और दुःशासन आदि मन्त्रियोंसे युक्तिकर धृतराष्ट्रकी आज्ञा लेकरके जतुगृह बनवाया। पुत्रके प्रिय चाहनेवाले राजा धृतराष्ट्रने राज्य भोगनेकी इच्छामें पाण्डवोंको घरसे खदेड़ा। पाण्डवलोग सब एकत्र होकर हस्तिनानगर से पधारे; जानेके कालमें विदुरने उन महानुभावोंको अच्छी युक्ति दी थी, उसीसे वे रात्रिके समय जतुगृह से बचकर वनमें भाग सके।

शत्रुनाशी महात्मा पाण्डवलोग माताके साथ वारणावत नगरमें जाकर वसने लगे। उन्होंने पहिले अति सावधान होकर पुरोचनसे अपनी रक्षाकर धृतराष्ट्रकी आज्ञानुसार वर्षभर जतुगृहमें वास किया था, और विदुरके परामर्शसे बिल खोदवाकर जतुगृहमें आग लगाकरके पुरोचनको जलाकर भयभीत चित्तसे माताके साथ भागे। अनन्तर वनमें हिड़िम्ब नाम बड़े भारी एक राक्षसको देखकर मार डाला; आगे आत्म-प्रकाश और धृतराष्ट्रपुत्रोंके भयसे भीत होकर एकचक्रा नामक नगरीमें गये। पथमें हिड़िम्बा नाम्नी राक्षसीके साथ भीमसेनके मिलनसे घटोत्कच नामक उसके एक पुत्र उत्पन्न हुआ था। ग मैं श्रेष्ठ पाण्डवलोग उस नगरीमें पहुंचकर वे पढनेवाले व्रतशील और जितेन्द्रिय ब्रह्मचारियोंका वेष लेकर माताके साथ एक ब्रा घरमें कुछकाल वसे। महाभुज वृकोदर भीमसेनने उस नगरीमें महाबली, क्षुधित व नामक एक राक्षसको देखा; पुरुषश्रेष्ठ महावीर भीमसेनने निज भुजबलसे एकवार उसका प्राण नष्ट कर नगरवालोंके भयको अ किया।

अनन्तर पाण्डवोंने सुना, कि पाञ्चाल नगरमें पाञ्चाल-राजपुत्री स्वयम्बरकी अभिलाषिणी हुई है। यह सुनकरकेही उन्होंने वहां जाकर उसको प्राप्त किया। शत्रुनाशी पाण्डवलोग द्रौपदीको प्राप्तकर, वहां वर्षभर वसनेके पीछे जाने जाकर हास्तिनापुरको लौट गये।

आगे धृतराष्ट्र और भीष्मजी उनसे बोले, कि बेटा! इसलिये, कि तुममें भ्रातृविरोध न बढ़ा हो, हमने सोचकर यह ठहराया है, कि तुम खाण्डवप्रस्थमें जाय बसो, अतएव तुम द्वेषको छोड़कर नाना देशयुक्त अच्छी चौड़ी सड़कोंसे शोभित खाण्डवप्रस्थमें वसनेको जाओ। पाण्डवलोग उनकी इस बातके अनुसार सब आत्मजनोंके साथ सम्पूर्ण धन ऐश्वर्य लेकर खाण्डवप्रस्थ नगरको पधारे। परम धार्म्मिक, सत्यव्रतशील, अप्रमत्त, उत्साहपूर्ण, क्षमाशील, शत्रुको दुखानेवाले पाण्डवलोग बहुत दिनोंतक वहां बसकर शस्त्रके प्रभावसे सम्पूर्ण नरेशोंको वशमें लाये। अति यशयुक्त भीमसेनने पूर्व्व-दिशा, वीर अर्ज्जुनने उत्तर दिशा, नकुलने पश्चिम दिशा और शत्रुनाशी सहदेवने दक्षिण दिशाको जय किया। इस प्रकार वे सबोंको वशमें लाकर सम्पूर्ण भूमण्डलके एकही अधीश हुए। सूर्य्यके समान तेजस्वी, अटल, विक्रमी पांच पाण्डवों और आकाश मण्डलमें सुशोभित एक सूर्य्यसे मानो धरती ६ सूर्य्ययुक्त हुई। अनन्तर सत्यविक्रमी, तेजस्वी, गुणवान् स्थिर प्रणधारी प्यारे भाई, सव्यसाची अर्ज्जुनको वनवास को भेजा। अर्ज्जुन (सौर मासकी गणनाके अनुसार) ग्यारह वर्ष दश महीने वनमें वसे। उस समय एक दिन उन्होंने द्वारकामें श्रीकृष्णके निकट जाकर कृष्णकी छोटी बहिन प्रसन्ननयना मधुरभाषिणी सुभद्रा को प्राप्त किया। इन्द्राणी जिसप्रकार इन्द्रसे मिलकर प्रसन्न हुई थी, और श्रीलक्ष्मीजी जिसप्रकार विष्णुजीसे मिलकर सन्तुष्ट हुई थी, उस प्रकार सुभद्रा पाण्डुपुत्र अर्ज्जुनसे संयुक्त होकर अति आनन्दित हुई, हे नृपश्रेष्ठ। अर्ज्जुनने श्रीकृष्णके साथ खाण्डव वनको जलाकर अग्निको सन्तुष्ट किया। दृढ़ निष्ठा पर भरोसा रखनेहारे श्रीकृष्ण को जिस प्रकार शत्रुओंके मारनेमें कठिनता नहीं जान पड़ती है, उस प्रकार केशव पर भरोसा रखने हारे अर्ज्जुन को कोई कार्य्य असाध्य जान नहीं पड़ता था। अनन्तर अग्निदेवने खाण्डवदहन होनेसे सन्तुष्ट होकर अर्ज्जुनको सुन्दर गाण्डीव धनुष अक्षयबाणयुक्त तरकस और कपिध्वज-युक्त रथ दिया। अर्ज्जुनने मय नामक असुरको खाण्डवके साथ जलजानेसे बचाया था, तिसहेतु मयासुरने उनको सर्व्व यत्नों से सुहावना एक सुन्दर सभागृह बना दिया। दुष्टबुद्धि दुर्म्मति दुर्य्योधनने उस सभाको देखकर लोभ-वश होकरके शकुनिके द्वारा चौसर में युधिष्ठिर को ठगकरके बारह वर्ष वनमें और वर्षभर गुप्तभावसे वसाया। हे महाराज! तेरह वर्षके वनवासके पश्चात् चौदहवां वर्ष आ पहुंचने पर पाण्डवोंने अपनी सम्पत्ति मांगी, पर नहीं मिली, इसीसे लड़ाई खड़ी होगई। अनन्तर पाण्डवलोगोंने क्षत्रियोंको ध्वंस करनेके पश्चात् दुर्य्योधन को नाशकर उस राज्यको प्राप्त किया जिसके लिये अनेक लोग मारे गयेथे। हे जग-शील! क्रोध द्वेषादिवर्ज्जित पाण्डवोंका इस प्रकार आत्म--विच्छेद राज्यनाश और जयलाभ हुआ था और यही उनके प्राचीन इतिहासका वृत्तान्त है।

आदिपर्व्वमें इकसठवां अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, कि हे द्विजोत्तम! आपने कुरुवंशियोंके चरित्र-सम्बन्धी महाभारत नामक महान् आख्यानको संक्षेपमें कीर्त्तन किया। हे अनघ तपोधन! उस विचित्र उपाख्यानको फिर विस्तृतरूपसे सुननेकी मुझे बड़ी इच्छा होती है आप कृपा करके वर्णन करें; अगले पुरुषोंके महत् चरित्रोंको सुनकर मेरी इच्छा पूरी नहीं हुई। पाण्डवोंने तो धर्म्मज्ञ होने परभी अवध्य स्वजन, कुटम्बो आदियोंका वध किया था, पर तिसपर भी उन्हीं की प्रशंसा करते हैं। यह तो कुछ सामान्य और स्वल्प कारण का विषय नहीं है। निर्दोषी नरव्याघ्र पाण्डवोंने बदला लेनेके योग्य होने [illegible] वध

दुरात्माओंसे नाना कष्ट सहन किये थे? हे द्विजवर! दश सहस्र हस्तीका बल रखनेवाले वृकोदर इतना क्लेश सहकरके भी क्यों क्रोधित नहीं हुए? द्रुपदराजपुत्री सती द्रौपदीने दुरात्मा धृतराष्ट्र पुत्रोंसे वैसा क्लेश पाकरके शक्ति रहनेपर भी क्यों क्रोध की दृष्टिसे उनको भस्म नहीं किया दुरात्माओंने भीम, अर्ज्जुन, नकुल और सहदेवको वैसा दुःख दिया था, तथापि वे चार नरश्रेष्ठ भाई क्यों चौसर प्यारे युधिष्ठिरके अनुगामी हुए? धार्म्मिकश्रेष्ठ, धर्म्मज्ञ, धर्म्मपुत्र, युधिष्ठिरने क्लेश सहनेके अयोग्य हो करके भी क्यों वैसा असह्य कष्टभोग किया था, और पाण्डुपुत्र धनञ्जयने अकेले केवल श्रीकृष्णको सारथी बनाकर क्योंकर अस्त्र मार करके अगणित सेनाको यमराजके घरमें भेजा था? हे तपोधन।। यह सब लीला जिस कारण और जिस प्रकारसे हुई थीं, और महारथी वीरोंने जब जो कुछ किया था वह सब मेरे पास कहिये।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि महाराज! कुछ बिलम्ब कीजिये, कृष्णद्वैपायनजीका कहा हुआ यह पवित्र आख्यान अति विस्तृत है, मैं धीरे धीरे कहता हूं, सर्व्वलोक पूजित, अमिततेजा, महात्मा, महर्षि वेदव्यासके सम्पूर्ण मतको कहूंगा; परम तेजस्वी सत्यवती-सुतने पवित्र लक्ष श्लोकोंमें इस आख्यानको प्रकाश किया है, जो पण्डित पुरुष इस महाभारतको सुनाते हैं और जो लोग सुनते हैं, वे ब्रह्मलोकमें जाकर देवता सदृश होते हैं। ऋषि का रचा हुआ यह पुराण वेदके समान पवित्र सुन्दर और सब सुनने योग्य विषयोंमें श्रेष्ठ है; इस पवित्र इतिहासमें अर्थ, काम और मोक्ष सम्बन्धी सम्पूर्ण विषयोंका भी उपदेश है। विद्वज्जन, बड़े, दाता, सत्यशील आस्तिकोंके सम्मुख सम्पूर्ण वेदोंके प्रतिनिधि इस आख्यानको पाठकर अर्थ लाभ करते हैं; इसमें सन्देह नहीं है, कि इस इतिहासको सुननेसे भ्रूणहत्यादि सम्पूर्ण पाप दूर होते हैं। जिस प्रकार राहुसे चन्द्रमण्डल मुक्त होता है, वैसेही अति-दुराचारी पुरुषभी इस इतिहासको सुननेसे सब्बे पापोंसे मुक्त होता है। इस इतिहासका नाम जय है, जय चाहने वाले जनको इसे सुनना चाहिये। इसे सुननेसे राजा पृथ्वीको जय कर सकते हैं और शत्रुको हरा सकते हैं। यह श्रेष्ठ पुस्तक और महान् स्वस्त्ययनरूपी है। युवराजरानी के साथ वार वार इसे सुनें, तो उनके वीरपुत्र वा राज्याधिकारिणी कन्या होती है। असीम बुद्धियुक्त व्यासजीका रचा हुआ यह आख्यान पवित्र धर्म्मशास्त्रवत, श्रेष्ठ अर्थशास्त्रके सदृश और मोक्षशास्त्ररूपी बना है। वर्त्तमानमें कोई कोई महाभारत कीर्त्तन कर रहे हैं, भविष्यतमेंभी बहुतेरे सुनेंगे। पुत्रगण इसे सुन कर पिताकी आज्ञा मानते और उनका प्रिय करते हैं। जो इसे सुनते हैं, वह शारीरिक मानसिक और वाचनिक सम्पूर्ण पापोंसे उसी क्षण मुक्त होते हैं। जो भरतकुलके इस महा जन्मवृत्तान्तको सुनकर गुणमें दोष नहीं लगाते उनको परलोक का भय तो दूर रहा, पीड़ाका भय भी जाता रहता है। महात्मा पाण्डवों और बहुधन, सम्पत्ति और तेजयुक्त सर्व्व विद्याके पण्डितजन प्रसिद्ध क्षत्रियों की कीर्त्तिको प्रकाश करनेके निमित्त पुण्य चाहनेवाले कृष्णद्वैपायन जीने इस धन, यश, आयु तथा स्वर्ग दिलाने हारे पवित्र इतिहास को कीर्त्तन किया है। जो इस लोकमें पवित्र ब्राह्मणोंको यह महा पुण्ययुक्त महाभारत सुनाते है, उनको सनातन धर्म्म प्राप्त होता है, जो नर शुचि होकर सदा कुरुओंके प्रसिद्ध वंशको कीर्त्तन करता है, वह लोकसमाजमें पूजा जाता है और सदा उसका वंश बढ़ता है। जो ब्राह्मण वर्षाके चार महीने सदा व्रतशील होकर इस महाभारतको पाठ करते हैं, वह सर्व्वपापोंसे मुक्त होते हैं।

जिन्होंने इसे पढ़ा है, वे वेदज्ञ कहे जाते हैं, इस महाभारतमें पापकी छूतसे बचे पवित्र देवता, राजर्षि, ब्रह्मर्षि, केशव, भगवान्, भूतनाथ और भवानीकी कथा है। इसमें छः माताओंके पुत्र कार्त्तिकेय की उत्पत्तिका वृत्तान्त और गौ ब्राह्मणादिका माहात्म्य कीर्त्तित है। सर्व्व-वेदवत् इस महाभारतको धर्म्म सञ्चय करनेके अभिलाषिओंको सुनना चाहिये। जो विद्वज्जन पर्व्वानुसार इसे ब्राह्मणोंको सुनाते हैं, वह निष्पाप हो करके देवलोकको जयकर शाश्वत ब्रह्मलोकको सिधारते हैं। जो श्राद्धके कालमें कमसे कम इसका एक पादभी ब्राह्मणोंको सुनाते हैं, उनके उस श्राद्धमें पितरोंको अक्षय तृप्ति होती है। दिनको इन्द्रियोंसे वा मनसे ज्ञानपूर्व्वक जो पाप होता है,महाभारत सुननेसे वह उसीक्षण दूर होता है। भरतकुलका महत जन्मवृत्तान्त इसमें कीर्त्तित है, इस लिये इसका नाम महाभारत है। जो महाभारतके इस व्युत्पत्तियुक्त अर्थको जानते हैं, उनका सम्पूर्ण पाप नष्ट होता है, क्योंकि इसमें भरतकुलके अति आश्चर्य इतिहास कथित हैं, इस हेतु इस-की कथा कहनेसे मनुष्यों का महापातक दूर होता है। पूर्णाभिलाषी, कार्य्यकुशल, मुनि कृष्णद्वैपायनने नित्यके उद्योगसे और शुद्धाचारी होकर तीनवर्षतक तप और नियम आश्रय करके इसको रचा है, अतएव ब्राह्मणोंको नियमयुक्त होकर इसको सुनना चाहिये। जो सब ब्राह्मण श्रीकृष्णद्वैपायन की कही हुई यह उत्तम पवित्र महाभारतीय कथा कहेंगे और जो लोग इसको सुनेंगे, वे चाहे सुकर्म्म करें वा कुकर्म्म करें, पर कभी पापसे छुए नहीं जायंगे। इस इतिहासको सम्पूर्ण सुननेसे धार्म्मिक जन सिद्धि लाभ कर सकते हैं; इस अति पवित्र इतिहासको सुनकर लोग जैसा सन्तोषको प्राप्त होते हैं, स्वर्गलाभ करके भी वैसा सन्तुष्ट नहीं होते। पुण्यशील जन श्रद्धापूर्व्वक इस इति-हासको सुनकर वा सुनाकर राजसूय और अश्वमेध यज्ञोंके फलको प्राप्त करते हैं। जैसे भगवान् समुद्र और महागिरि सुमेरु सर्व्व रत्नों-की खानि कहके प्रसिद्ध हैं, वैसेही यह महा-भारतभी है। यह महाभारत वेदके समान पवित्र, सुन्दर सुननेयोग्य बातोंसे सुशोभित, सुखदायी, पापहारी और शीलतावृद्धिकारी है। हे राजन्! जो याचकको यह भारत देते हैं, मानों वह समुद्रोंसे घिरी हुई सम्पूर्ण पृथ्वीही-को दे देते हैं। हे परीक्षित पुत्र! पुण्य और जयके निमित्त मैं दिव्य आनन्ददायी यह सम्पूर्ण कथा कहता हूं, सुनिये। मुनिवर कृष्णद्वैपा-यनजीने तीन वर्षों तक सदा उद्योगी रहकर इस आश्चर्य आख्यान, महाभारतको रचा है; हे भारतश्रेष्ठ। धर्म्म, अर्थ, काम और मोक्ष-सम्बन्धी जो जो विषय इसमें हैं, वही सब अन्यत्र दीख पड़ते हैं, जो विषय इस भारत में नहीं हैं, वह और कहीं नहीं मिलेंगे।

आदिपर्व्वमें बासठवां अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि उपरिचर नामक धर्म्मशील एक पृथ्वीनाथ थे; (उनका और एक नाम वसु था) मृगया करनेका उनको बड़ा प्रेम था। उस पौरवनन्दन राजा वसुने देव-राजके उपदेशसे चेदि नामक सुहावने देशपर अधिकार किया था। एक समय अस्त्र शस्त्र छोड़कर उनके कठोर तपमें प्रवृत्त होने पर इन्द्रादि देवोंने सोचा, कि यह जैसी कठोर तपस्या कर रहे हैं, उससे इन्द्रका पद प्राप्त कर सकते हैं। ऐसी चिन्ता कर देवगण उक्त राजाके निकट जा पहुंचे और समझा बुझा-कर उनको तपस्यासे निवृत्त करने लगे। देव-गण बोले, कि हे महाराज! ऐसा करो कि इस धरतीसे धर्म्म न घटे। तुम धर्म्मकी रक्षा करोगे, तो सम्पूर्ण भूमण्डलमें धर्म्म रक्षित होगा। इन्द्रजी बोले, कि तुम सदा उद्यत्तहो

और समाहित होकर ऐसा करो, कि इस धरतीमें धर्म्म रक्षित हो ; ऐसा करनेसे तुम अच्छा धर्म्मार्ज्जन करके शाश्वत पवित्र स्वर्गलोकमें गमन करोगे। तुम मर्त्यलोकमें वास करते हो ; मैं स्वर्गमें रहता हूं, तथापि तुम मेरे प्रिय सखा हुए। हे नरनाथ! इस धरतीमें जो देश सुन्दर, पशुओंके मङ्गलकारी, पवित्र, बहुत धनधान्यपूर्ण; स्वर्गके समान रमणीय, सौम्य और अच्छी भूमिके गुणयुक्त हो, तुम वहां जाय बसो। हे चेदिप! यह चेदिदेश बड़ा ऐश्वर्य्ययुक्त और अगणित धनरत्नोंसे भरा हुआ है, यहां वसुधा वसुओंसे भरी हुई हैं; अतएव इस स्थानहीमें वसो। इस देशके निवासी धर्म्म शील, सदा सन्तुष्ट और साधु हैं; हंसीमें भी कोई झूठ नहीं बोलता ; पुत्रगण पितासे अलग नहीं होते और सदा गुरुकी सेवामें लगे रहते हैं, इस स्थानमें कोई दुबले पतले बैलको बोझा ढोने वा हर जोतनेमे नहीं लगाता है। हे माननीय! इस चेदिदेशमें सदा सब जन स्वधर्म्ममें सन्नद्ध रहते हैं। तीनों लोकोंमें जो कुछ होता है उसमें कुछभी तुम्हारे जाननेसे शेष नहीं है; मैं तुमको देवोंके भोग-योग्य, आकाशगामी सुन्दर स्फटिकका बना महान् विमान देता हूं, यह सदा तुम्हारे पास उपस्थित रहेगा। इस मर्त्त्यलोकमें तुम्ही अकेले यानपर चढ़कर साक्षात् शरीर-धारी देवतोंकी भांति ऊपर विचर सकोगे। तुमको अम्लान पङ्कजा वैजयन्ती-माला देता हूं; यह रणभूमिमें तुम्हारी रक्षा करेगी ; इसके पहिरनेसे तुम्हारे शरीरमें अस्त्र नहीं घुसेंगे। हे नरेश! यह माला इन्द्रमाला करके प्रसिद्ध होगी और यह तुम्हारे श्रेष्ठ प्रतिमारहित महान् चिह्न होगी।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर इन्द्रने प्रेमचिह्नकी बात उठाकर उनको शिष्ट पालनेवाली एक बांस की लाठी दी। आगे वर्ष भर व्यतीत होने पर पृथ्वीनाथ वसुने इन्द्रकी पूजा निमित्त उस बांस की लाठीको धरतीमें गाड़ दिया। हे राजन्! उपरिचर राजाने जो बांसकी लाठीको गाड़ा था, आजतक राजालोग वैसाही किया करते हैं और उसके दूसरे दिन सुगन्धी, माला, वस्त्र, आभूषण आदि से उस बांसकी लाठीको सुशोभितकर उठा लेते हैं तथा विधिपूर्व्वक उसको मालासे लपेट रखते है। उसकालमें हंसरूपी भगवान् महादेवजीकी पूजा होती है; क्योंकि वसुकी प्रीतिके निमित्त महात्मा महेश्वर स्वयं हंसका रूप धरकर पूजे गये थे। वैभवयुक्त देवराज महेन्द्रने राजश्रेष्ठ वसुसे हुई उस पूजाको देखकर अति प्रसन्न होकर कहा, कि जो सब नर और नरेश चेदिराजके समान प्रेमसे और उत्सवसे मेरी पूजा करेंगे, उनसे राज्यको श्री और जय होगी और उनके अधिकारके देश विस्तृत और हर्षपूर्ण होंगे। हे नरनाथ! महात्मा महेन्द्रने इस प्रकारसे प्रेमसहित महाराज वसुका सत्कार किया। जो सब जन भूमि-रत्नादि देकरके सदा महेन्द्रका उत्सव करेंगे, वे राजा वसुके समान पूजे जायंगे! वर लाभकर चेदिनाथ वसु महायज्ञ और इन्द्रोत्सव करनेके कारण इन्द्रसे सत्कृत होकर चेदिदेशमें धर्म्म पूर्व्वक धर्म्मके अनुसार इस धरतीको पालने लगे और इन्द्रजी पर प्रेम दिखाकर इन्द्रका महोत्सव करने लगे।

बड़े तेजस्वी वसुके महावीर्य्यवान् पांच पुत्र जन्मे थे। उक्त सम्राटने पुत्रोंको नाना राज्योंमें अभिषिक्त किया, उनमेंसे प्रसिद्ध प्रधान रथी बृहद्रथ नामक एक पुत्र मगध देशके राजा हुए। उनके दूसरे एक पुत्रका नाम प्रत्यग्रह, अन्य एकका कुशाम्ब वा मणिवाहन, अन्य एकका मावेल्ल एवम् और एक राजपुत्रका यदु नाम था, वे कभी हारे नहीं थे। हे महाराज! उन राजर्षिके यह पांच पुत्र

; उन्होंने अपने नामसे देश और राजधानी
ायी थीं। वसुके उन पांच महीपाल
ोंसे अति विस्तृत स्थायी अलग अलग पांच
ोंकी उत्पत्ति हुई। महात्मा राजा वसु
ा इन्द्रके दिये स्फटिकके बने यानमें बैठकर
काशको उड़ते थे, तब गन्धर्व्व और अप्सरा-
ा आकर उनकी स्तुति पढ़ते थे। इस
कार ऊपर विचरनेके कारण वह उपरिचर
मसे प्रसिद्ध हुए थे। उनकी राजधानीके
ीप शुक्तिमती नाम्नी एक नदी बहती थी।
लाहल नामक एक सजीव पर्व्वतने काम-
ा होकर उसको रोका। राजा वसुने
ा पर्व्वतको लात मारी, उनके पांवकी चोटसे
बिल बना, उसीसे शुक्तिमती नदी बह
कली। कोलाहल पर्व्वतके मिलनसे उस
ीके एक पुत्र और एक कन्या उत्पन्न हुई,
ोने उपरिचरसे मुक्त होनेके कारण सन्तुष्ट
कर राजाको वह पुत्र और कन्या दे दी।
ार्षिश्रेष्ठ अरिन्दम वसुदाता वसुने उस नदी·
को सेनापति और गिरिका नाम्नी उस
याको रानी बनाया। एक समय वसुकी
ी गिरिकाने ऋतुकाल आनेसे गर्भधारणके
य समयमें ऋतुस्नान करके पतिसे अभिलाषा
ट की। उस दिन राजश्रेष्ठ वसुके पितरोंने
न होकर उनको आज्ञा दी, कि आज तुम
याको जाओ। वह पृथ्वीनाथ पितरोंकी
्ञालङ्घन न करके मृगयाको पधारे, पर
मयुक्त चित्तसे अनुपम रूप यौवनवती
ात् लक्ष्मीके समान उस गिरिकाहीको
ण करने लगे; वसन्त तो विराजमानही
फिर तिसपर वह वन कुवेरजीकी फुल-
ैसा था; उसमें अशोक, चम्पा, आम,
वी, नागकेशर, कर्णिकार, वकुल दिव्यपाटल
ल, नारिकेल, चन्दन, अर्ज्जुनादि सुन्दर
और फलयुक्त भांति भांतिके वृक्ष चारों
सुशोभित थे, और कोयलकुलकी मीठी
आलापचारी और मतवाले भौंरोंकी भनभना·
हट चारों दिशामें गूंज रही थी। राजा काम-
वश हो करके चारों ओर देखते रहे, पर
गिरिकाको न देखकर कामाग्निसे बहुत जलने
लगे। आगे उन्होंने इच्छानुसार घूमते हुए
नये पल्लव और फूलोंके गुच्छेसे ढंपा हुआ, एक
सुन्दर अशोक वृक्ष देखा; उस वृक्षपर फूलके
समूह इतने सुशोभित थे, कि उसकी एक
भी शाखा दीख नहीं पड़ती थी; उसके
मनोहर मधु और फूलोंकी गन्ध चारों ओर
फैल रही थी। नरनाथ उस अशोकको छांहमें
सुखसे बैठकर अमल वायुसे हर्षयुक्त हुए। इस
बीचमें उस स्थानमें उनका वीर्य्य गिरा; राजा
उस गिरे हुए, वीर्य्यको वृक्षके पत्तेमें धरकर
सोचने लगे, कि क्योंकर हमारा यह गिरा
हुआ वीर्य्य और स्त्रीको ऋतु व्यर्थ न हो?
आगे देरतक सोचकर वार वार विचारनेके
पश्चात् निश्चय किया, कि मेरा यह वीर्य्य अव्यर्थ
है और रानीके पास भेजनेका भी समय हुआ
है; सो किसी प्रकारसे इसे भेजनाही चाहिये।
अनन्तर ऐसा निश्चय करके सूक्ष्म धर्म्मार्थ-
तत्वोंके जाननेवाले राजा उपरिचरने मन्त्रोंसे
उस वीर्य्यको सुधारकर पासमें ठहरे हुए, शीघ्र
चलनेवाले एक वाजपक्षीसे कहा, कि "हे
सौम्य। तुम मेरे उपकारके निमित्त मेरे इस
वीर्य्यको मेरे अन्तःपुरमें ले जाओ, आज गिरि-
काने ऋतुस्नान किया है, इसे उसको दो।"
तेजोवान् वाजपक्षी उस वीर्य्यको लेकर उसीक्षण
आकाशको उड़कर अति वेगसे चला। जानेके
कालमें उसे दूसरे एक वाजने देखा और उसकी
चोंचमें मांस जानकर उसके पीछे उड़ने लगा।
अनन्तर उस आकाशहीमें उनमें चोंचोंकी
लड़ाई मची। लड़नेमें वाजके मुखसे वीर्य्य
यमुनाजीके जलमें गिर गया। अद्रिका नामसे
प्रसिद्ध एक अप्सरा ब्रह्मशापसे मछली बनकरके
यमुनाजीके जलमें रहती थी; ज्योंही राजा

वसुका वीर्य्य बाजके मुखसे वहां गिरा, त्योंही उस मत्स्यरूपी अद्रिकाने वेगसे झपटकर उसको ले लिया।

हे भारतश्रेष्ठ! इसके पश्चात दशवें महीनेमें एक दिन मछुहोंने उस मछलीको फांसा; और उसके पेटसे एक पुत्र और एक कन्या पाकर अति आश्चर्य्ययुक्त होकरके राजासे जाकर कहा, कि महाराज! मछलीके शरीरमें यह दो मनुष्य उपजे हैं। तब राजा उपरिचरने उन दोनोंमें से बालकको ले लिया। वह मछलीसे जन्मा हुआ लड़का पीछे मत्स्य नामक सत्यशील धार्म्मिक राजा हुआ था। वह अप्सरा क्षण भरमें शापसे मुक्त हुई; क्योंकि जब अद्रिका शापसे भ्रष्टा होकर मत्स्य योनिमें आ गिरी थी, तब भगवान्ने कृपापूर्व्वक कहा था, कि तू दो मनुष्य प्रसव करके शापसे मुक्त होगी। अनन्तर अद्रिका दो मनुष्यपुत्र प्रसव करके मछुहोंसे मारी गयी और मछलीका स्वरूप छोड़के दिव्यरूप धर सिद्ध और चारणोंसे सेवित आकाशमार्गको चली गयी। राजाने मत्स्यको गन्धयुक्त मत्स्यके गर्भसे उपजी हुई कन्याको मछुहेको दे दिया और कहा, कि यह कन्या तुम्हारी बेटी होगी। रूप-यौवन-वती सर्व्वगुणवाली मृदुहासिनी उस सत्यवती नाम्नी कन्याके मछुहेके घरमें कुछदिन पाले जानेके हेतु उसका नाम मत्स्यगन्धा हुआ था।

एक समय मत्स्यगन्धा पिताकी आज्ञासे नाव चलाती थी, कि ऐसे समय तीर्थ-यात्रामें निकले हुए धीमान् ऋषि पराशरने उसको देखा और अति रूपवती, सिद्धोंकीभी प्रार्थनाके योग्य रम्भोरु, मृदुहासिनी, मनोरमा उस वसुकी बेटीको देखतेही मुनिवर एकबारही कामवश हुए और बोले, री कल्याणि! मेरा मनोरथ पूरा कर। कन्या बोली, कि भगवन्! नदीके दोनों ओर ऋषिलोग हैं, वे हमको देखते हैं, अतएव इसकालमें क्योंकर हमारा सङ्गम हो सकता है? मत्स्य-गन्धाकी ऐसी आपत्ति कर प्रभु भगवान् पराशरने कोहरा तब सम्पूर्ण देश अन्धकारसे घिर गया। न्तर महर्षिके रचे हुए कोहरेको देखकर स्विनी कन्या आश्चर्य्य और लज्जायुक्त हु आगे सत्यवती बोली, "भगवन्! मैं वशमें रहनेवाली कन्या हूं; मेरा विवाह हुआ है। हे अनघ! आपसे मिलनेसे कन्याभावमें दोष पहुंचेगा। हे द्विजो कन्याभावमें दोष पहुंचनेसे री क्योंकर लौट जाऊंगी? हे धीमान् ऋषि! ऐसा नेसे मैं घरमें नहीं रह सकूंगी। हे भगवान्! इसका विचारकर जो कुछ करना हो, कीजि कन्याके ऐसा कहने पर ऋषि प्रसन्न हो बोले, कि मेरेसे मिलनेसे तेरे कन्याभावमें नहीं पहुंचेगा। री भीरु! तेरी जो अभिलाषा हो, वर मांग। री सुन्दरी, हासिनि! मेरी प्रसन्नता कभी निष्फल हुई। पराशरजीके यह बात कहने पर म गन्धाने अपने शरीरकी अच्छी गन्ध हो प्रार्थना करी। मुनिने "तथास्तु" कहकर प्रार्थित वरको दिया। अनन्तर सत्यवती के प्रभावसे ऋतुमती और प्रार्थित वरके प्रसन्न होकर अद्भुत कार्य्यकुशल ऋषि परा सङ्गम किया। तबसे मत्स्यगन्धाका "ग यह नाम धरतीमें प्रसिद्ध हुआ। योजन भर दूरसेभी उसके शरीरकी सूंघते थे, इसलिये उसका "योजनगन्धा" नामभी प्रसिद्ध हुआ था। सत्यवतीने इस प्र रसे अच्छा वर पाकर आनन्दित चित्तसे प शरका मनोरथ पूराकरके उसी दिन गर्भ ध कर प्रसव किया। इसी वीर्य्यवान् यमुनाद्वीपमें जन्म लिया। वह जन्म लेतेही आज्ञासे तपस्या करनेकी दत्तचित्त हुए उसको यह कहकर चले गये, कि जब ही तब मुझे स्मरण करनेसे मैं आ पहुंचूं

श्रीद्वैपायनजीने इस प्रकार पराशरके वीर्य्य
र सत्यवतीके गर्भसे जन्म लिया था। उस
लकके द्वीपमें प्रसव किये जानेपर उसका
म द्वैपायन हुआ। विद्वान् द्वैपानयने देखा,
ि हर युगमें धर्म्मका एक एक पाद घट रहा
और युगानुसार मनुष्योंकी शक्ति और आयु
ाण होती जाती है। तब उन्होंने वेदकी
ाके निमित्त ब्राह्मणोंपर दया दिखाकर
का व्यास याने विभाग किया, इस हेतु उन-
ा नाम वेदव्यास हुआ। श्रेष्ठ वरदेनेहारे प्रभु
ासजीने शिष्य सुमन्तुको, जैमिनीको, पैलको
र वैशम्पायनको तथा स्वपुत्र शुकदेवको महा
रतके साथ चारों वेद पढ़ाये। उन सुमन्तु
दि शिष्योंमें से हरेकने महाभारतकी अलग
ाग एक एक संहिता प्रकाश की।

महावीर्य्य, महायशा, अपरिमित, प्रकाश-
त् शान्तनुपुत्र भीष्मजीने वसुओंके अंशसे गङ्गा-
के गर्भसे जन्म लिया था। प्रसिद्ध महायशा वेदा-
ग पराण ऋषि विप्र अणीमाण्डव्य चोरी न
ने परभी झूठमूठ चोरीके कलङ्कसे शूलीपर
ाये गये थे, इसहेतु उन्होंने धर्म्मको पुकार
कहा, कि हे धर्म्म। मैंने बालिपनमें कुशके
ा पतिङ्गेको बींधा था, स्मरण होता है, कि
म भरमें इतनाही पाप किया है; यह स्मरण
ता नहीं, कि फिर कभी कोई और पाप
या हो; पर जितना पाप हुआ है, उससे
सगुणी अधिक तपस्या की है, क्या इतने
भी वह पाप क्षय नहीं हुआ? क्योंकि सर्व्व
ोंको पीड़ा देनेकी अपेक्षा ब्राह्मणपीड़नका
अधिक होता है, अतएव तुम ब्राह्मण-
ड़नके पापसे पापी होनेके कारण शूद्रयोनिमें
ा लोगे। धर्म्मने उस शापसे शूद्रयोनिमें
ान्, धार्म्मिक और पाप-वर्ज्जित विदुरके
पमें जन्म लिया था। सुनिकल्प सूत सञ्ज-
गवल्गणसे जन्म लिया था। कवच कुण्डल
री प्रसन्न-मुख महाबली कर्णने कुन्तीकी
कन्यादशामें उसके गर्भ और सूर्य्यके वीर्य्यसे
जन्म लिया था। अनादि, अनन्त, जगत्कर्त्ता,
जगत्प्रभु, लोकोंके नमस्कारयोग्य, महायशस्वी
भगवान् विष्णुने लोकोंपर दया दिखाकर वसु-
देवके वीर्य्य और देवकीके गर्भसे जन्म लिया
था। पण्डितलोग जिनको अव्यक्त, नित्य, ब्रह्म,
प्रकृति, त्रिगुणात्मक, आत्मा, अव्यय, प्रधान,
जगत्कारण, विभु, पुरुष, विश्वकर्म्मा सत्यगुणा-
श्रय, प्रणवस्वरूप, अनन्त, अचल, देव, हंस,
नारायण-प्रभु, धाता, अजर, दिव्य, श्रेष्ठ, अवि-
नश्वर कैवल्य, निर्गुण, अपरिच्छिन्न, कारण-
विहीन और जन्म-मृत्यु-वर्ज्जित कहा करते
हैं, उन सर्व्वभूतोंके पितामह जगत्कर्त्ता विभु
पुरुषने धर्म्मवृद्धिके निमित्त अन्धक वृष्णिवंशमें
जन्म लिया था। अस्त्रज्ञ, महावीर्य्य, सर्व्वशा-
स्त्रज्ञ, अस्त्र चलानेमें सुदक्ष, नारायणकी भक्ति-
युक्त सात्यकि और कृतवर्म्माने सत्यक और
हृदिकसे जन्म लिया था। कठोर तपयुक्त
महर्षि भरद्वाजका वीर्य्य द्रोणी अर्थात् गिरि-
कन्दरामें गिरकर और वृद्धि पाकर द्रोणाचार्य्य
का जन्म हुआ। गौतमजीका वीर्य्य सरकण्डेके
बोझपर गिरकर दो भागोंमें बंट जानेके कारण
उससे अश्वत्थामाकी माता कृपी और महाबली
कृपने जन्म लिया। अनन्तर द्रोणाचार्य्यके
वीर्य्यसे महाबली अश्वत्थामाका जन्म हुआ।
साक्षात् अग्निकी भांति तेजोवीर्य्यवान् वीर धृष्ट-
द्युम्नने यज्ञके समय अग्निसे द्रोणको नष्ट कर-
नेके निमित्त चापसहित जन्म लिया और उस
यज्ञकी वेदी पर तेजस्विनी, शुभलक्षणा, प्रज्व-
लित देहधारणी अनुपम रूपवती कृष्णाका
जन्म हुआ। आगे प्रह्लादके शिष्य नग्नजित और
सुबलने जन्म लिया। देवी कोपसे सुबलका पुत्र
धर्म्म विप्लव करनेहारा हुआ। उस गान्धारराज
सुबलसे अर्थशास्त्रज्ञ शकुनि और दुर्योधनकी
माता गान्धारीका जन्म हुआ। कृष्णद्वैपायनके
वीर्य्य और विचित्रवीर्य्यकी स्त्रीके गर्भसे राजा

धृतराष्ट्र और महाबली पाण्डु उत्पन्न हुए और उन्ही द्वैपायनसे धर्म्मार्थयुक्त श्रीमान् मेधावी, पापकी छूतसे रहित विदुरने शूद्र योनिमें जन्म लिया। पाण्डुकी दो रानियोंसे देववत् पांच पाण्डवोंका जन्म हुआ। उनमेंसे युधिष्ठिर सर्व्वगुण-युक्त और बड़े थे; उन्होंने धर्म्मके वीर्य्य से जन्म लिया था। वायुसे वृकोदर, इन्द्रसे श्रीमान् सर्व्व-शास्त्रधारी श्रेष्ठ धनञ्जय और दोनों अश्विनी-कुमारोंसे रूपवान् नकुल और सहदेवने जन्म लिया श्रीमान् धृतराष्ट्रके दुर्योधन आदि सौ पुत्र और वैश्यागर्भसे जन्मा हुआ युयुत्सु नामक एक पुत्र हुआ। हे भारत। जिनमेंसे दुःशासन, दुःसह, दुर्म्मर्षण, विकर्ण, चित्रसेन, विविंशति, जय, सत्य-व्रत, पुरुमित्र, वैश्यापुत्र तथा युयुत्सु, यह ग्यारह महारथी थे। महात्मा पाण्डुके पौते, श्रीकृष्ण-के भाञ्जे अभिमन्युने अर्ज्जुनके वीर्य्य और सुभ-द्राके गर्भसे जन्म लिया। पांच पाण्डवोंके वीर्य्य और द्रौपदीके गर्भसे सर्व्वशास्त्रोंमें निपुण, रूपवान् पांच कुमार उत्पन्न हुए; उनमेंसे युधिष्ठिरके पुत्र प्रतिविन्ध्य वृकोदरके पुत्र सुत-सोम, अर्ज्जुनके पुत्र श्रुतकीर्त्ति, नकुलके पुत्र शतानीक और सहदेवके पुत्र प्रतापी श्रुतसेन हैं। इनके सिवाय वृकोदरके वनमें हिड़िम्बा-गर्भसे घटोत्कच नामक एक पुत्र हुआ था। शिखण्डीने द्रुपदसे जन्म लिया था, उसने कन्या होकरके पुत्रत्व प्राप्त किया था स्थूण नामक यक्षने प्रिय साधनकी इच्छासे उसको पुरुष बनाया था। कुरुपाण्डवोंके युद्धके कालमें युद्ध करनेके निमित्त सैकड़ों सहस्रों भूप एकत्र हुए थे। दश सहस्र वर्षोंमेंभी उन अगणित राजाओंके नाम निश्चय नहीं किये जासकते; पर जिन प्रधान प्रधान राजाओंसे यह कथा पूरी हुई है, केवल उनकेही नाम कहे गये।

आदिपर्व्वमें तिरसठवां अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, कि ब्रह्मन्! जिन राजाओंके नाम आपने कह सुनाये, और जिन्हें नहीं कहे, उन देववत् महारथी महानुभाव जिस कारण भूमण्डलमें जन्म लिया था, उसे सुनना चाहता हूं; हे महाभाग! आप उसे वर्णन कीजिये। श्रीवैशम्पायनजी बोले, हे राजन्! सुनचुका हूं, कि आप जो कि पूछते हैं, वह देवोंका रहस्य है, हम इस में स्वयम्भूके पांव छूकर आपके पास वह रहस्य प्रकाश करते हैं।

पूर्व्वकालमें जामदग्न्य इस भूमण्डल इक्कीस वार क्षत्रियोंसे खाली कर महेन्द्रपर्वत पर तप करने लगे। हे राजन्! जब पृ जामदग्न्य भार्गवके द्वारा क्षत्रियोंसे खाली हु तब क्षत्रियोंकी स्त्रियां ब्राह्मणोंकी उपास करने लगीं। हे नरव्याघ्र! व्रतशील ब्राह्म लोग ऋतुकालमें उन क्षत्राणियोंके पास ग करने लगे, ऋतुकालके सिवाय किसी दूसरे समयमें कामवश हो करके नहीं जाते थे। रा सहस्रों क्षत्रियोंकी रानियां ब्राह्मणोंसे ग धारण कर क्षत्रियोंके वंश बढानेके फिर महावीर्य्यवान् कुमार और कुमारी करने लगीं; इस प्रकार क्षत्रियोंने अच्छे तपस्वी ब्राह्मणोंके वीर्य्य और क्षत्राणियोंके से जन्म लेकर दीर्घायु प्राप्तकर धर्म्म करके वृद्धि पायी थी; इससे फिर ब्राह्म चार वर्ण पूर्ण हुए! हे भरतर्षभ! उस वे ऋतुकालहीमें स्त्रीके पास गमन करते ऋतुकालके सिवाय किसी दूसरे समय काम होकरके नहीं गमन करते थे; इसी प्रका पशुपक्षी आदि तिर्य्यक-योनिके जीवगण ऋ कालहीमें स्त्रीके पास गमन करते हैं; वे इस विरुद्धता नहीं करते हैं। हे पृथ्वीपाल! इस न्तर प्रजागण सैकड़ों सहस्रों वर्षकी आयु लाभ कर धार्म्मिक व्रतशील हुए और शरीर मनसम्बन्धी पीड़ाओंसे बचे। हे राजेन्द्र

अनन्तर क्षत्रियवंशी राजालोग समुद्रतक, पहाड़ नगर और वनयुक्त इस भूमण्डलको, जो एकवार उनके हाथसे च्युत हुआ था, फिर अपने अधिकारमें लाये। क्षत्रियोंके धर्म्मानुसार फिर इस धरतीका शासन आरम्भ करनेपर, ब्राह्मणादि चारों वर्ण अति प्रसन्न हुए। भूपाल लोग काम-क्रोधसे उपजते हुए सम्पूर्ण दोषोंको छोड़कर धर्म्मानुसार दण्ड पानेके योग्य लोगोंको दण्ड देकर राज्य पालने लगे। क्षत्रियोंके इस प्रकार धार्म्मिक होने पर सहस्रनेत्र शतक्रतु देशकाल पर ध्यान रखकर नियमानुसार वर्षा करके प्रजा पालने लगे। हे जननाथ! उन दिनों कोई बालपनमें, अकालमें कालवश नहीं मरता था और यौवन दशाको न प्राप्त करने पर कोई विवाह नहीं करता था। हे भरतकुलतिलक! ऐसी आयुयुक्त प्रजासे समुद्रतक धरती पूरित हुई। क्षत्रियलोग अनेक दक्षिणा देकर बड़े बड़े यज्ञोंका अनुष्ठान करने लगे। ब्राह्मणलोग शिक्षा कल्प व्याकरणादि अङ्ग और उपनिषत्-सहित वेदोंको पढ़ने लगे; उन दिनों वे वेदोंको नहीं बेचते थे और शूद्रोंके सामने वेदके मन्त्र नहीं उचारते थे, पतले और दुबले बैलोंको बोझा ढोनेमें नहीं लगाते थे और उनका यत्नसे पालन करते थे। उन दिनों कोई मनुष्य थोड़ी अवस्थाके बछड़ेवाली गायको दूहते नहीं थे और वणिकलोग कुटिल तौलसे ठगकर बिक्रीकी वस्तुओंको नहीं बेचते थे। हे नरव्याघ्र! उन दिनों सबजन धार्म्मिक होकर धर्म्ममार्गकी ओर दृष्टि रखकर धर्म्मके कर्म्मोंको करते थे। हे नरेश! उन दिनों चारोंवर्ण निज निज धर्म्ममें लगे रहते थे; किसी स्थानमें धर्म्मकी घटी नहीं थी। हे भरतवंशश्रेष्ठ! उस कालमें गौ और नारि उचित समयमें प्रसव करती थी, ऋतुओंके अनुसार वृक्षके फूल और फल फलते फूलते थे। हे पृथ्वीनाथ! तब इस प्रकार सत्ययुग प्रवर्त्तित होने पर सम्पूर्ण धरती अगणित जीवोंसे पूरित हुई। हे भरतवंशके प्रधान महाराज! जब मर्त्यलोक ऐसा आनन्द धाम बन गया,तब राजाओंके क्षेत्रोंमें असुरलोग जन्म लेने लगे। वे युद्धमें देवोंसे वार वार हारकर ऐश्वर्य्य और स्वर्गसे निकाले जानेपर भूतलमें जन्म लेने लगे। हे राजेन्द्र! मनस्वी असुर लोग भूलोकमें देवत्व प्राप्त करनेकी इच्छापर गौ, घोड़े, ऊंट, गदहे, भैंसे क्रव्याद, हाथी, मृगादि अनेक जीवों से से उत्पन्न होने लगे। हे महिपाल! इस प्रकार दिति और दनुके पुत्रोंमेंसे कुछने जन्म लिया, कुछ जन्म लेने लगे, इससे धरती भारयुक्त होकर आपहीको आप सम्भालनेके योग्य न रही। अनन्तर उनमेंसे अति अहङ्कारी कठोर वीर्य्यवान् कोई कोई दैत्य और दानव मानवकुलमें जन्म लेकर महीपाल बने। वह वीर्य्यभरे अहङ्कारपूरे शत्रुभयने-हारे अगणित दैत्य-दानव अनेक स्वरूप धारणकर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य शूद्र और दूसरे जीवों को सताने लगे। हे राजन्! वे बलगर्व्वित वीर्य्यके अहङ्कारसे उन्मत्त और वधके अयोग्य होकर सम्पूर्ण सत्त्व-गुणियोंको भय दिखा वा नष्टकर और आश्रमके महर्षियोंका अपमानकर सर्व्वत्र विचरने लगे।

हे राजन्! इस प्रकार बलवीर्य्यके अहङ्कारसे उन्मत्त बड़े बड़े असुरोंसे सताई जाकर धरती ब्रह्माजीके पास गयी; क्योंकि उसकालमें जब धरती दानवोंसे बल-पूर्व्वक जकड़ी गयी थी, तब शेषनाग, दिग्गज तथा कूर्म्मादयोंमेंसे कोईभी उसको धरे रहनेको समर्थ नहीं था। हे महीपाल! इसी हेतु भारयुक्त और भयसे कातर होकर पृथ्वीने सर्व्व भूतोंके पितामह ब्रह्माजीकी शरण ली। आगे उसने वहां उपस्थित होकर महाभाग देवता, द्विज और महर्षियोंसे घिरे हुए, देव-कार्य्यमें नियुक्त, हर्षभरे गन्धर्व्व तथा अप्सराओंसे स्तुति किये जाते हुए,

तीनों लोकोंके प्रभु, अव्यय, देव ब्रह्माजीका दर्शनकर उनकी उपासना की। हे भारत! अनन्तर पृथ्वीने शरण लेनेकी लालसासे सम्पूर्ण लोकपालोंके सामने उनसे सब वृत्तान्त कह सुनाया। हे राजन्! सर्वोंके प्रधान स्वयम्भू परमेष्ठी पहिलेसे पृथ्वीका अभिप्राय जानते थे, क्योंकि जो जगतके सृष्टि-कर्त्ता है, वह सुरासुरादि सम्पूर्ण लोकोंके चित्तके भावोंसे क्यों न विदित रहेंगे। हे महाराज। सर्व्व भूतोंके सृष्टिकर्त्ता, नियन्ता और मङ्गल करनेवाले प्रभु प्रजापति पृथ्वीसे बोले, वसुन्धरे! तुम जिस लिये मेरे पास आयी हो, उस कार्य्यके पूरा करनेके निमित्त मैं सम्पूर्ण देवोंको नियुक्त करूंगा। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे राजन्! सृष्टिकर्त्ता देव ब्रह्माने इसप्रकारसे धरतीको ढाढ़स देकर विदा किया। आगे सब देवोंको आज्ञा दी, कि तुम पृथ्वीके भारको दूर करनेके निमित्त अपने अपने अंशोंसे उस मर्त्यलोकहीमें उतरकर विरोध मचाओ, और गन्धर्व्व तथा अप्सराओंको बुलवाकर उनसे वैसेही अर्थ-भरे हित वचनोंसे कहा, कि तुम अपने अपने अंशोंसे मनुष्यलोकमें जन्म लो, अनन्तर इन्द्रादि देवतोंने उन देवगुरुके उस सत्यार्थयुक्त अति उपकारी वचनको सुनकर मान लिया। आगे वे अपने अपने अंशसे पृथ्वीमें जन्म लेना निश्चयकर वैकुण्ठनिवासी शत्रुमथने हारे मधुसूदनके पास गये। जो गदा-चक्रधरे पीतचीर पहिरे, नये-नीलबादलकी द्युतिसे घिरे, पद्मनाभिसे सुहारे, दैत्यसूदन कमलनयन, प्रजापति-पति, सुरनाथ, महाबली, श्रीवत्साङ्क, हृषिकेश तथा सर्व्वदेवोंके पूजित करके प्रसिद्ध हैं, उन पुरुषोत्तमसे इन्द्रजीने पृथ्वीके निमित्त कहा, कि आप अपने अंशसे भूमण्डलमें अवतीर्ण होवें, हरिनेभी "तथास्तु" कहके मान लिया।

आदिवंशावतारण और चौंसठवां अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर इन्द्रने नारायणजीके सम्मुख सब देवोंके सहित स्वर्गसे अपने अंशसे भूमण्डलमें अवतीर्ण होनेकी प्रतिज्ञा करी; आगे सब देवोंको आज्ञा देकर नारायणजीके मन्दिरसे लौट गये। सुरगण असुरोंके नाश और सब लोगोंके हितके निमित्त क्रमानुसार स्वर्गसे पृथ्वीमें अवतीर्ण होने लगे। हे राजसिंह। उन्होंने इच्छानुसार ब्रह्मर्षि और राजर्षियोंके वंशोंमें जन्म लिया और दानव, राक्षस, गन्धर्व्व, पन्नग आदि तथा दूसरे भांति भांतिके अगणित जन्तुओं को नष्ट करने लगे। हे भरतवंश श्रेष्ठ! वे ऐसे बलवन्त हुए थे, कि दानव, राक्षस, गन्धर्व्व, वा पन्नगगण उनको बालेपनमेंभी कोई हानि नहीं पहुंचा सक्ते थे। जनमेजयने कहा, कि मुझे पूर्ण रीतिसे यह सुननेकी इच्छा है, कि देव, दानव, गन्धर्व्व अप्सरा, यक्ष, राक्षस और सम्पूर्ण मनुष्य तथा दूसरे सब जीव क्योंकर उत्पन्न हुए थे; आप आद्योपान्त सम्पूर्ण कहें। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि मैं स्वयम्भुको प्रणाम करके देवता और दूसरे जीवोंकी उत्पत्ति और प्रलयको वर्णन करता हूं।

मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह और क्रतु यह छः प्रसिद्ध महर्षि ब्रह्माजीके मानसपुत्र है। कश्यपजी मरीचिके पुत्र हैं और उन काश्यपहीसे यह सब प्रजा रची गयी। प्रजापति दक्षसे अति सौभाग्यवती तेरह कन्या उत्पन्न हुई थीं। उनके नाम अदिति, दिति, दनु, काला, दनायुः, सिंहिका, क्रोधा, प्राधा, विश्वा, विनता, कपिला, मुनि और कद्रु हैं। यह काश्यपकी स्त्री थीं। हे मनुष्यव्याघ्र! इनके अनन्त वीर्य्यवान् अगणित पुत्र-पौत्र उत्पन्न हुए थे। अदितिके गर्भसे भुवनेश द्वादश पुत्रोंने जन्म लिया है। हे राजन्! उनमेंसे प्रत्येकके नाम कहता हूं; यथा धाता, मित्र, अर्यमा, शक्र, वरुण, अंश, भग, विवस्वान्, पूषा, सविता,

त्वष्टा और विष्णु। इन बारह पुत्रोंमेंसे सबसे छोटे सबोंसे गुणवान हैं। दितिका एक पुत्र, उसका नाम हिरण्यकशिपु था। महात्मा हिरण्यकशिपुके पांच पुत्र हुए थे; उनमें प्रह्लाद सबोंसे बड़ा, संह्लाद दूसरा, अनुह्लाद तीसरा, शिवि चौथा और वाष्कल पांचवां था। हे भारत। प्रह्लादके सर्व्वत्र प्रसिद्ध तीन पुत्र थे; उनके नाम विरोचन, कुम्भ और निकुम्भ थे। विरोचनसे बलि नामक एक प्रतापी पुत्रका जन्म हुआ था। बलिके वाण नामक एक प्रख्यात महावीर पुत्र उत्पन्न हुआ; वह श्रीमान् महाकाल नामसे प्रसिद्ध होकर रुद्रदेवका साथी बना है। हे भारत। दनु नाम्नी दक्षपुत्रीने तीनों लोकमें प्रसिद्ध चालीस पुत्र प्रसव किये थे; उनमेंसे विप्रचित्ति नामक अति यशस्वी बड़े पुत्र राजा हुए थे। सम्बर, नमुचि, पुलोम, असिलोमा, केशी, दुर्ज्जय अयःशिरा, अश्वशिरा, वीर्य्यवान् अश्वशङ्कु, गगनमूर्द्धा, वेगवान्, केतुमान, स्वर्भानु, अश्व, वृषपर्व्वा, अजक, अश्वग्रीव, महाबली तुहुण्ड, एकपाद, एकचन्द्र, विरूपाक्ष, महोदर निचन्द्र, निकुम्भ, कुपट, कपट, शरभ, शलभ, सूर्य्य और चन्द्र, यह सब दानव दनुवंशसे उत्पन्न हुए थे। देवोंमें गिने जाते हुए, सूर्य्य और चन्द्र उक्त दनु वंशी सूर्य्य और चन्द्रसे भिन्न हैं। दनुवंशमें वे तीन दानव प्रसिद्ध थे और उस वंशमें महाबली पराक्रमी दूसरे दश प्रख्यात दानवोंने जन्म लिया था; उनके नाम एकाक्ष, वीर, अमृतप, प्रलम्ब, नरक, वातापी, शत्रुतापन, महासुर शठ, गरिष्ठ, दायुः और दीर्गजिह्व थे। हे भारत। इनके पुत्र-पौत्र इतने थे, कि उनकी संख्या नहीं होती। सिंहिकासे चन्द्र और सूर्य्यको ग्रास करने वाले राहु, सुचन्द्र, चन्द्रहन्ता, और चन्द्रप्रमर्द्दन जन्मे थे। इसके अतिरिक्त उस कुटिलाके कुटिल स्वभावी अगणित पुत्र-पौत्रादि थे। उनमेंसे कुछ क्रोधवश होकर कुटिल कार्य्य करनेवाले, शत्रुनाशी गण थे। विक्षर, बल, वीर और महासुर वृत्त असुरोंसे श्रेष्ठ इन चार पुत्रोंने दनायुः के गर्भसे जन्म लिया था। काला नाम्नी दक्ष-पुत्रीके काल समान प्रसिद्ध असुरोंसे बड़े वीर्य्यवान् शत्रु-मथने हारे बहुत पुत्र थे; वे विनाशन, क्रोध, क्रोधन्ता क्रोधशत्रु, आदि नामोंसे प्रसिद्ध थे।

ऋषिकुमार शुक्राचार्य्य असुरोंके उपाध्याय थे; उशनाके प्रख्यात चार पुत्र असुरोंके याजक थे, उनके अतिरिक्त त्वष्टाधर और अत्रि यह दो रौद्रकर्म्मा थे। यह सब सूर्य्यके समान तेजस्वी और ब्रह्मलोक पर भक्ति रखनेवाले थे। हे महीपाल। मैंने पुराणोंमें तरस्वी असुर और असुरोंका जो वंश-वृत्तान्त सुना था, सो कह चुका। उनके पुत्र कन्या इतने अधिक हैं, कि उनकी संख्या नहीं होती। गरुड़, अरुण, तार्क्ष्य, अरिष्टनेमि, आरुणि और बारुणि यहसब बिनताकी सन्तान हैं। नागनाथ शेष, अनन्त, वासुकि, तक्षक, कूर्म्म और कुलिक यह कद्रुसे उत्पन्न हुए थे। भीमसेन, सुपर्ण, वरुण, गोपति धृतराष्ट्र, सूर्य्यवर्चा सत्यवाक, अर्कपर्ण, प्रयुत, भीम, प्रख्यात, सर्व्वज्ञ जितेन्द्रिय चित्ररथ, शालिशिरा, पर्य्यन्य, कलि और नारद इन सोलह देव और गन्धर्व्वोंने दक्ष पुत्री मुनिके गर्भसे जन्म लियाथा। हे भारत। इसके पश्चात् दूसरे अनेक वंशोंकी कथा कहता हूं। अनवद्या, मनु, वंशा, असुरा, मार्जण-प्रिया अनुपा, सुभगा, भासी, यह सब कन्या प्राधासे उत्पन्न हुई है। सिद्ध, पूर्ण, वर्हि, महायशा पुर्णायुः, ब्रह्मचारी, रतिगुण, साधु-श्रेष्ठ सुपर्ण, विश्वावसु, भानु और सुचन्द्र इन दश देवता और गन्धर्व्वोंनेभी प्राधासे जन्म लिया है; इनके अतिरिक्त उस महाभागा देवी प्राधाने महात्मा कश्यपके सहवाससे प्रख्यात गुण लक्षणयुक्त अप्सराओंके वंशको प्रसव किया है। उनके नाम अलम्बुषा, मिश्रकेशा, विद्युतपर्णा, तिलोत्तमा अरुणा, रक्षिता, रम्भा, मनोरमा,

केशिना, सुबाहु, सुरता, सुरजा और सुप्रिया हैं; एवम् अतिबाहु, प्रख्यात हाहा, हुहु और तुम्बुरु, यह चार गन्धर्व्वराजभी उसकी सन्तान हैं। पुराणोंमें कहा है, कि अमृत, ब्राह्मण गौ, गन्धर्व्व और अप्सरा यह सब कपिलासे जन्मे हैं। आपको गन्धर्व्व, अप्सरा, सर्प, सुपर्ण, रुद्र, मरुत, गौ और पुण्यकार्य्य करनेवाले श्रीमान् ब्राह्मणादि सर्व्वजीवोंकी उत्पत्तिकी कथा सुना चुका। यह आयुवृद्धिकारी, पुण्य भरी, धन्य तथा कानोंको सुखदेनेवाली हैं; इस लिये सदा द्वेष छोड़कर इसे सुनना और सुनाना। जो जन देवता और ब्राह्मणके सामने नियमके अनुसार महात्माओंकी यह वंशावली पाठ करेंगे वह अच्छे पुत्र, लक्ष्मी और यशके सहित अन्तमें सुगति प्राप्त करेंगे।

आदिपर्व्वमें पैंसठवां अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि प्रख्यात छः महर्षि ब्रह्माजीके मानसपुत्र थे। (उनके सिवाय सातवें पुत्र) स्थाणुके अति तेजस्वी ग्यारह सन्तान हुई थीं उनके नाम मृग-व्याध, सर्प, अति यशशाली निर्ऋति, अजैकपात, अहिर्बुध्न, बड़े तपस्वी पिनाकी, ईश्वर, दहन, महाद्योतवान् कपाली स्थाणु और भगवान भग यह ग्यारह रुद्र करके प्रख्यात हैं। मरीचि अङ्गिरा, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह और क्रतु, यह वीर्य्यवान् छः महर्षि ब्रह्माके पुत्र हैं। अङ्गिराके सर्व्वत्र प्रसिद्ध तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे; उनके नाम वृहस्पति, उतथ्य और व्रतशील सम्वर्त्त हैं। हे नराधिप! कहा है, कि अत्रिके अगणित पुत्र जन्मे थे, वे सब वेदपारग, सिद्ध, शान्तचित्त और महर्षि थे। हे मनुजव्याघ्र! राक्षस, बन्दर किन्नर, और यक्षलोग धीमान् पुलस्त्यके पुत्र हुए। हे राजन्! शलभ, सिंह, किम्पुरुष व्याघ्र, भल्लुक और ईहामृग, यह पुलहके पुत्र हुए। क्रतुके क्रतुवत् पाप दूर करनेहारे और सूर्य्यके साथी बालखिल्य नामक पुत्र तीनोंलोकोंमें प्रख्यात और सत्य-व्रतशील थे। हे पृथ्वीपाल! शान्तचित्त, बड़े तपस्वी भगवान् दक्ष मुनिने ब्रह्माजीके दाहिने अङ्गूठेसे जन्म लिया और उन महात्माकी स्त्री ब्रह्माके बांये अंगूठेसे उत्पन्न हुई थी। प्रजापति दक्षने उस स्त्रीसे पचास कन्याओंको उत्पन्न कराया, वे कन्या सब कमललोचना और सुन्दरी थीं। दक्षके पुत्र न रहनेके कारण उन्होंने कन्याओंको पुत्रिका बनायी थी अर्थात् इस नियमसे उनको दान किया था, कि उनके गर्भसे जो पुत्र जन्में, वेही उनके पुत्र बनेंगे। उन्होंने दिव्य विधिके अनुसार धर्म्मको दश कन्या, चन्द्रको सत्ताइस कन्या और काश्यपको तेरह कन्या दान की थी। धर्म्मकी धर्म्मपत्नियोंके नाम लेते हैं, सुनिये। कीर्त्ति, लक्ष्मी, धृति, मेधा, पुष्टि, श्रद्धा क्रिया, वुद्धि, लज्जा और मति, इन दश दक्षकी कन्याओंको भगवान् स्वयम्भूने धर्म्मकी स्त्री बना दी थीं। चन्द्रकी सत्ताइस स्त्री तीनों लोकोंमें प्रसिद्ध हैं। वे सब लोकयात्रा निर्व्वाहके निमित्त काल जांचनेके लिये अश्विनी भरणी, आदि नक्षत्रोंके नामसे प्रख्यात हुई हैं।

ब्रह्माजीके पुत्र मनु और उनके पुत्र प्रजापति हैं; उनसे आठ वसुओंका जन्म हुआ था, उनकी कथा विस्तृत रूपसे कहता हूं; धर, ध्रुव, सोम, ग्रहः, अनिल, अनल, प्रत्यूष, प्रभाष यह आठ वसु करके प्रसिद्ध हुए थे। ब्रह्मविद्यामें पण्डित ध्रुव और धर धुम्राके पुत्र; चन्द्र और वायु मनस्विनी श्वसाके पुत्र; दिवस्‌रता के पुत्र; हुतासन शाण्डिलीके पुत्र और प्रत्यूष तथा प्रभाष प्रभाताके पुत्र थे। आठ वसुओंमेंसे धरके दो पुत्र थे, उनके नाम द्रविण और हुत हव्यवह थे। लोकनाशी भगवान् काल ध्रुवके पुत्र थे; सोमके पुत्र वर्च्चा, और, वर्च्चाकी कन्या वर्च्चसी थी; मन

हरनेवाली वर्च्चसोके शिशिर, रमण और प्राण यह तीन पुत्र हुए थे। दिवससे ज्योतिः, शम शान्त और मुनि, यह चार पुत्र उत्पन्न हुए थे। अग्निसे शरवनरूपीगृहवाले श्रीमान् कुमारका जन्म हुआ; कृत्तिका आदि छः माताओंसे उनका नाम कार्त्तिकेय हुआ है। शाख, विशाख और नैगमेय, यह कार्त्तिकेयके छोटे भाई थे। अनिलके वीर्य्य और शिवा नाम्नी उनकी स्त्रीके गर्भसे मनोजव और अविज्ञातगति इन दो पुत्रोंका जन्म हुआ। देवल नामक ऋषि प्रत्यूषसे उत्पन्न हुए थे। देवलके क्षमावान् और मनीषी, यह दो पुत्र हुए थे। ब्रह्मजाननेवाली सुन्दरी स्त्री वृहस्पतिजीकी बहन संसार-आश्रममें न फंसकर योगमें चित्तको लगाकरके सम्पूर्ण भूमण्डलमें विचर चुकी थी; आगे उन्होंने वसुओंमें आठवें प्रभाषकी स्त्री होकर शिल्प-विद्यामें दक्ष विश्वकर्म्मा नामक महानुभाव पुत्र प्रसव किया;—जो विश्वकर्म्मा सहस्रों शिल्प-कार्य्योंके सृष्टिकर्त्ता, जो देवोंके वर्द्धकि अर्थात् शिल्पकारी,—जिन्होंने सम्पूर्ण अलङ्कार बनाये हैं, जो शिल्पियोंमें प्रधान पुरुष देवोंको दिव्य यान बना देते हैं,—मनुष्यलोग जिन महात्माकी शिल्पविद्या सीखकर जीविका निर्व्वाह करते हैं,—जो अव्यय, और मनुष्यों के सदा पूजनीय हैं, वह उन प्रभाषके पुत्र हैं। सर्व्वलोकोंको सुख देनेहारे भगवान् धर्म्म नरविग्रहके स्वरूपमें ब्रह्माजीके दाहिने स्तनको भेद करके निकले थे। तेजसे लोकरक्षक और सब जीवोंमें मनोहर शम, काम और हर्ष, यह पुत्र धर्म्मसे उत्पन्न हुए थे। कामकी स्त्री रति, शमकी स्त्री प्राप्ति और हर्षकी स्त्री नन्दा हुई; इन्होंने लोकोंमें बड़ी पतिष्ठा प्राप्त की थी। हे राजसिंह! मरीचिके पुत्र कश्यप हैं, कश्यप हीसे सुरासुरों सबोंने जन्म लिया है, अतएव वही आदि पुरुष कहके बखाने जाते हैं।

वड़वा-रूपधारिणी सूर्य्यपत्नी महाभागा त्वाष्ट्रीने आकाशमें दोनों अश्विनीकुमारोंको प्रसव किया है। हे नाराधिप! अदितिके गर्भसे इन्द्रादि बारह पुत्रोंने जन्म लिया था। उनमेंसे जिनमें सबलोक पतिष्ठित हैं, वही विष्णु सबोंसे छोटे हैं। तेंतीस प्रधान देवोंके पक्ष, कुल और गणके अनुसार अर्थकी कथा कहता हूं। रुद्रगण, साध्यगण, मरुद्गण, वसुगण, भार्गवगण और विश्वदेवगण, यह एक एक पक्ष हैं। विनतानन्दन गरुड़, बलवान् अरुण और भगवान् वृहस्पति आदित्यगणमें गिने जाते हैं। दोनों अश्विनीकुमार, सब औषधि और पशुलोग गुह्यकगणमें गिने जाते हैं। हे राजन् आदिसे अन्त तक यह सब देवोंकी कथा कही; भगवान् भृगु ब्रह्माके हृदयको भेदकर निकले। कविपुत्र कवि स्वयं विद्यामें पण्डित शुक्रने भृगुके वीर्य्यसे जन्म लिया। वह ब्रह्माजीकी आज्ञासे ग्रहकी स्वरूपमें तीनों लोगोंकी प्राण-यात्रा निर्व्वाहके लिये वर्षना और न वर्षना, भयका रहना और न रहना विषयोंपर दृष्टि रखनेके निमित्त नियुक्त होकर भूमण्डलमें विचर रहे हैं। व्रतशील, मेधावी, ब्रह्मचारी, अति बुद्धिमान् योगाचार्य्य शुक्र योग बलसे वृहस्पति और शुक्र यह दो स्वरूप लेकरके देव और असुरोंके गुरु हुए। विधातासे दैत्योंके योगक्षेम-कार्य्यमें नियुक्त होनेपर भृगुने च्यवन नामक एक दूसरे धर्म्मात्मा प्रज्वलित तेजधारी यशस्वी, अनिन्दित पुत्रको उत्पन्न किया। हे भारत! वह क्रोधयुक्त होकर राक्षसके हाथसे माताको छुड़ानेके निमित्त गर्भसे गिरे थे। मनीषी मुनि च्यवनने आरुषी नाम्नी मनुजीकी बेटीसे विवाह किया था। अति यशस्वी और्व्व आरुषीकी जांघको चीर-कर निकले। और्व्वके पुत्र ऋचीक हुए; वह बालेपनहीमें सब गुणोंसे भूषित, अति तेजस्वी और बड़े वीर्य्यवान् थे। ऋचीकके पुत्र जमदग्नि

थे, महात्मा जमदग्निके चार पुत्र थे, उनमें राम सबोंसे छोटे होने परभी गुणोंके लिये सबोंसे बड़े हुए थे; वह जितेन्द्रिय क्षत्रिय कुलनाशक और शास्त्रज्ञ थे। ऋचीकके जमदग्नि आदि सौ पुत्र थे। उनके सहस्र पुत्र धरतीमें फैल गये। ब्रह्माजीके जो दूसरे पुत्र हैं, वे तीनों-लोकोंमें धाता और विधाता नामसे प्रख्यात होकर ब्रह्मलोकमें मनुजीके साथ बसते हैं। शुभलक्षणा, पद्मपर विराजमाना देवी लक्ष्मी उनकी बहिन है; आकाशको उड़नेवाले घोड़े लक्ष्मीजीके मानस-पुत्र हैं। वरुणकी बड़ी स्त्री देवीने शुक्रसे जन्म लिया; उन्होंने बल नामक एक पुत्र और सुरा नाम सुरनन्दिनी एक कन्या प्रसव की। पेट भरनेके निमित्त प्रजाओंके एक दूसरेको खानेसे सर्व्वभूतनाशी अधर्म्म खड़ा हो-गया, अधर्म्मकी स्त्रीका नाम निर्ऋति था, उसके गर्भसे नैर्ऋत राक्षसोंने जन्म लिया था और उसके पापाचारी घोररूप दूसरे तीन बेटे थे; उनके नाम भय, महाभय और सर्व्वभूतोंके अन्तकारी मृत्यु हैं। मृत्युके स्त्री पुत्र कोई नहीं थे, क्योंकि वह स्वयंही अन्तक हैं। काकी; श्येनी, भाषी, धृतराष्ट्री और शुकी, लोकोंमें प्रसिद्ध इन पांच कन्याओंने देवी ताम्राके गर्भसे जन्म लिया। काकीने उलुओंको, श्येनी ने बाजोंको, भाषीने मुरगों और गिद्धोंको और भद्रा धृतराष्ट्रीने, हंस, राजहंस और चकवोंको प्रसव किया। सर्व्वलक्षण-धारिणी कल्याणी, गुणशालिनी, यशस्विनी शुकीसे शुक पक्षियोंका जन्म हुआ। मृगी, मृगनन्दा, हरी, भद्र-मना, मातङ्गी, शार्दूली, श्वेता, सुरभि और सर्व्वलक्षणवाली भामिनी सुरसा तथा क्रोधवशा यह नौ नारी क्रोधसे उत्पन्न हुई थीं। हे नरो त्तम! सब मृगोंने मृगीसे जन्म लिया है; ऋक्ष और सुमरोंने मृगनन्दासे जन्म लिया है; देव-नाग महागज ऐरावत भद्रमनाके गर्भसे उत्पन्न हुए हैं: और लंगूर बन्दरों और वेगवान् घोड़ोंने हरीसे जन्म लिया है। शार्दूलीने सिंह, व्याघ्र, और महासत्व सम्पूर्ण चीतोंको जन्म दिया है। हे नराधिप! हस्तीगण मातङ्गीके बेटे हैं; श्वेतासे श्वेताख्य, द्रुतगामी दिग्गज उत्पन्न हुआ था। हे राजन्! कल्याणी यशस्विनी गन्धर्व्वी और रोहिणी इन दो कन्याओंने सुरभिके गर्भसे जन्म लिया, इसके सिवाय सुरभिकी और दो कन्या थीं; उनके नाम विमला और अनला थे। रोहिणीसे गौ और गन्धर्व्वीसे घोड़े उत्पन्न हुए। खजूर, ताड़ हिन्ताल, ताली, खजूरिका, पिण्डफलवाले वृक्ष अनलासे उत्पन्न हुए हैं; इनके सिवाय अनला को शुकी नाम्नी एक बेटी थी। सुरसासे कङ्क उपजा। अरुणकी स्त्री श्येनीने सम्पाती और जटायु नामक महाबली वीर्य्यवान् दो पुत्रोंको प्रसव किया था और नागगण सुरसासे तथा पन्नगगण कद्रुसे उत्पन्न हुए थे; गरुड़ और अरुणने विनताके गर्भसे जन्म लिया था। हे मतिमान् मनुजाधिपते। यह सर्व्वभूतोंके उत्पत्तिकी कथा कही सुनाई; इसके सुननेसे मनुष्यलोग सर्व्वज्ञ बन जाते हैं और पापोंसे मुक्त होकर अच्छी गति प्राप्त करते हैं।

आदिपर्व्वमें छासठवां अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, कि भगवन्! देव, दानव गन्धर्व्व, उरग, राक्षस, सिंह, व्याघ्र, मृग, पन्नग पक्षी और महात्मा मानवोंके जन्म कर्म्म सम्पूर्ण आद्योपान्त सुनने चाहता हूं। वैशम्पायनजी बोले, कि हे मनुष्येन्द्र! जिन सब देवता और दानवोंने मानवोंके स्वरूपमें जन्म लिया था, पहिले उनकी कथा कहता हूं।

विप्रचित्त नामक प्रख्यात दानवराज जरासन्ध नामसे पसिद्द राजा हुआ था। हे नरनाथ! हिरण्यकशिपु नामक दितिके पुत्रने शिशुपाल होकर नरयोनिमें जन्म लिया था। प्रह्लादके

छोटा भाई प्रसिद्ध संह्लाद शल्य नामसे प्रख्यात होकरके वाह्लिक देशका राजा हुआ था। संह्लादका सबसे छोटा भाई प्रसिद्ध तेजस्वी अनुह्लाद धृष्टकेतु नामक राजा हुआ था। हे राजन्? शिवि नामक दैत्य द्रुम नामक प्रसिद्ध राजा हुआ था। हे पुरुषश्रेष्ठ! असुरश्रेष्ठ वाष्कल मानवयोनिमें जन्म लेकर भगदत्त नाम से प्रसिद्ध हुआ था। अयःशिरा अश्वशिरा, अयःशङ्कु, गगनमूर्द्धा, और वेगवान्, इन पाच वीर्य्यवान् महात्मा महासुरोंने केकय देशमें श्रेष्ठ भूपति होकर जन्म लियो था। प्रख्यात प्रतापी केतुमान् उग्रकर्म्मा नामक प्रसिद्ध नरेश हुआ था। स्वभानु नामसे प्रसिद्ध श्रीमान् महासुर, उग्रसेन नामक उग्रकर्म्मा राजा होकर अवतीर्ण हुआ था। श्रीमान् महासुर अश्वने अशोक नामक महादुर्ज्जय नरेश होकर जन्म लिया था। अश्वका छोटा भाई दैत्य अश्वपति, हार्द्दिक्य नामक महीपाल हुआ था। श्रीमान् महासुर वृषपर्व्वाने दीर्घप्रज्ञ नामसे प्रख्यात राजा होकर जन्म लिया। वृषपर्व्वाका छोटा भाई अजक शाल्व नामक पृथ्वीनाथ हुआ। बलवान् महासुर अश्वग्रीवने रोचमान् नामक नरेश होकर जन्म लिया; कीर्त्तिशाली मतिमान् सूक्ष्म नामक दैत्यने बृहद्रथ नामक प्रख्यात महीपति होकर जन्म लिया था। असुरराज तुहुण्ड सेनाबिन्दु नामक प्रशंसित भूपालके स्वरूपमें अवतीर्ण हुआ। असुरोंमें अति बलवान् इसृपधन नग्नजित् नामक प्रख्यात विक्रमी राजा होकर जन्म लिया। प्रसिद्ध महासुर एकचक्र पृथ्वीमें प्रतिविन्ध्य नामक प्रशसित पृथ्वीपति हुआ था। अद्भुत योद्धा महासुर दैत्य विरूपाक्षने चित्रमण्डलमें चित्तवर्म्मा नामक प्रख्यात क्षितिपति होकर जन्म लिया। शत्रुनाशी वीर दैत्यवर हर, श्रीमान् प्रख्यात अवनीपति होकर सुवाहु हुआ था। विपक्षपक्ष क्षयकारी महातेजा रहरने भूमण्डलमें वाह्लीक नामक प्रशंसित राजा होकर जन्म लिया। असुरोत्तम चन्द्रानन निचन्द्र महीपति श्रीमान् मुञ्जकेशके स्वरूपमें अवतीर्ण हुआ था। लड़ाईमें दुर्ज्जय महामति निकुम्भ जन्म लेकर भूपालमें श्रेष्ठ देवाधिप करके प्रशंसित हुआ। दैत्योंमें शरभ नामक महासुरने पौरव नामक नरोत्तम राजर्षि होकर जन्म लिया था। हे राजन्! महासुर महावीर्य्यवान् श्रीमान् कुपथने महीमण्डलमें सुपार्श्व नामक प्रसिद्ध महीपति होकर जन्म लिया। हे राजन्! सुवर्णके पर्व्वतवत् महासुर क्रथने प्रख्यात राजर्षि पार्व्वतेयके स्वरूपमें जन्म लिया था। असुरोंमें दूसरे शलभने प्रह्लाद नामसे वाह्लीक देशके राजा होकर जन्म लिया। दितिपुत्रोंमें श्रेष्ठ चन्द्रसमान चन्द्र प्रशंसित काम्बोजाधिप चन्द्रवर्म्मका स्वरूप लेकर उत्पन्न हुआ। दानवश्रेष्ठ सुप्रसिद्ध सूर्य्यने ऋषिक नामक नृपश्रेष्ठ राजर्षि होकर जन्म लिया। हे नृपश्रेष्ठ! मृतपा नामक प्रशंसित असुरोत्तम पश्चिममें अनूप देशके भूपति होकर जन्म लिया! प्रख्यात महासुर महातेजा गविष्ठ राजा द्रुमसेनके स्वरूपमें अवतीर्ण हुआ। माननीय महासुर श्रीमान् मयूर विश्व नामक भूनाथ हुआ। उसका छोटा भाई प्रसिद्ध सुपर्ण कालकीर्त्ति नामसे धरतीमें अवतीर्ण हुआ। प्रधानोंमें प्रशंसित असुर चन्द्रहन्ता शुनक नाम राजर्षि हुआ। महासुर चन्द्रविनाशनने जानकि नामक प्रख्यात राजा होकर जन्म लिया। हे कुरुवंशश्रेष्ठ! दानवश्रेष्ठ दीर्घजिह्व काशीराज नामक प्रसिद्ध राजा हुआ। चन्द्र-सूर्य्यके मर्द्दनकारी जो ग्रह सिंहिकासे प्रसव किया गया था, उस ग्रहने क्राथ नामक प्रसिद्ध भूप होकर जन्म लिया था दनायुके चार पुत्रोंमें बड़ा पुत्र असुर तेजस्वी विक्षर वसुमित्र नामक राजा हुआ। हे नराधिप! उसके दूसरे पुत्र महासुरने पाण्ड्य देशमें सुप्रसिद्ध राजा होकर जन्म लिया। असुरोत्तम प्रशंसित बलीन पौण्ड्रमत्स्यक नामक

भूप हुआ। हे राजन्! महासुर प्रख्यात वृत्रने मणिमाल नामक राजर्षि होकर जन्म लिया। उसका छोटा भाई असुर क्रोधहन्ता दण्ड नामक क्षितितलमें प्रसिद्ध राजा हुआ। क्रोधवर्द्धन नामक दूसरा असुर दण्डधार नामक प्रख्यात भूप हुआ। हे राजसिंह! सिंहसमान विक्रमी आठ कालेयोंमेंसे बड़ा महासुर जय-त्सेन मगध देशका अधिपति हुआ। देवराजके समान श्रीमान दूसरा असुर अपराजित नामक महातेजा तीसरे महासुरने अति बलवन्त निष-धाधिपति होकर जन्म लिया उनमेंसे चौथे असु-रने श्रेणीमान नाम प्रसिद्ध राजर्षि होकर जन्म लिया। उनमें श्रेष्ठ पांचवें महासुरने शत्रु मथनेहारा महौजा नामसे प्रख्यात होकर जन्म लिया। उनमेंसे छठवां मतिमान् नामक महासुर क्षितिमण्डलमें प्रख्यात राजर्षिसत्तम अभीरु नामसे अवतीर्ण हुआ। उनके सातवें असुरराजने समुद्रसेन नामसे समुद्रतक धरतीमें प्रख्यात धर्म्मार्थतत्त्व जाननेवाले नरेश होकर जन्म लिया। हे नराधिप! कालेओंमेंसे आठवां असुर वृहत नामक सर्व्वभूतोंके हित करनेवाला राजा हुआ। हे राजन्! दानवोंमें सुवर्णके पर्व्वतवत् महाबली प्रसिद्ध कुक्षि पार्व्वतीय नामक प्रसिद्ध क्षितीश हुआ। हे राजन्! अतिवीर्य्यवान् महासुर श्रीमान् क्राथनने पृथ्वीपर सूर्य्याक्ष नामक प्रसिद्ध क्षितिपति होकर जन्म लिया। असुरोंमें श्रीमान् महासुर सूर्य्यने सर्व्व भूतोंमें श्रेष्ठ वाह्लीकराज दरद होकर जन्म लिया। हे राजन्! क्रोधवश नामक जिन गणोंकी कथा कह चुका हूं, उन्होंने धरतीमें सूरवीर पृथ्वीनाथ होकर जन्म लिया। मद्रक, कर्णवेष्ट, सिद्धार्थ, कीटक, सुवीर, सुबाहु, महा-वीर वाह्लीक, क्राथ, विचित्र, सुरथ, भूमिपति श्रीमान् नील, चीरवासा, भूमिपाल, दन्तवक्र, दुर्ज्जन, नृपसिंह रुक्मी, आषाढ़, वायुवेग, भूरि-तेजा, एकलव्य, सुमित्र, वाटधान, गोमुख, कारुषक-गण, क्षेमधूर्त्ति, श्रुतायु:, उद्वह, वृहत्सेन, ... अग्रतीर्थ, कलिङ्गराज, कुहर, प्रशंसित मतिमा... और मनुजेश ईश्वर, यह सब महाभाग अ... कीर्त्तिमान् मति-मान महाबली वीरोंमें श्रेष्ठ राजगण क्रोधवश गणोंके अवतार हैं।

दानवोंमें प्रख्यात महाबली कालनेमी, उग्र... सेन पुत्र बलवान् प्रशंसित कंसके स्वरूपमें अव... तीर्ण हुआ। देवराजवत देवक गन्धर्वपति... नामक प्रधान नरेश होकर धरतीमें अवती... हुए। हे भारत! अति कीर्त्तिमान् देवर्षि... वृहस्पतिजीके अंशसे विनायोनिके उपजे हुए... भरद्वाज पुत्र द्रोणउत्पन्न हुए। हे भूपश्रेष्ठ! जी सम्पूर्ण अस्त्र चलानेमें दक्ष; प्रधान... चापधारी, अति कीर्त्तिमान् और महा... तेजस्वी हैं; वेदज्ञगण जिनका धनुर्व्वेद और... वेदमें पण्डित, आश्चर्य्य कार्य्यकारी और नि... कुलके बढ़ानेवाले करके कहा करते हैं, ... नरश्रेष्ठ द्रोणने वृहस्पतिजीके अंशसे ज... लिया। महादेव, अन्तक, काम और क्रोध... एक होनेसे उन चारोंके अंशसे शत्रुपक्षना... शूरवीर, शत्रुमथनेहारे पद्मपत्राक्ष, अति वीर्य... वान् अश्वत्थामा उत्पन्न हुए। वशिष्ठके शा... और इन्द्रके नियोगके कारण, अष्टवसुओं... शान्तनु के वीर्य्य और गंगाजीके गर्भसे... जन्म लिया; उनमें भीष्म सबोंसे छोटे हैं; वे... मतिमान, वेदज्ञ, सद्वक्ता, शत्रुकुलनाशी और... कौरवोंके ढाढ़स देनेवाले थे; सर्व्व अस्त्र... व्यवहारमें दक्ष महातेजा यह महात्मा जमदग्नि... के पुत्र महानुभाव, भार्गव, परशुरामसे लड़े थे। हे राजन्! अति पौरुषयुक्त ब्रह्मर्षि कृप रुद्रोंके... अंशसे पृथ्वीमें अवतीर्ण हुए। हे राजन् द्वापर... अंशसे शत्रुपीड़क महारथी शकुनिने जन्म लिया... था; वृष्णिवंशश्रेष्ठ शत्रुमथनेहारे सत्यसंध... सात्यकि मरुद्गणसे उत्पन्न हुए थे। हे नृप! अस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ राजर्षि द्रुपद उन्हीं देवोंके... भूलोकमें अवतीर्ण हुए थे। हे राजन्! अनु...

ाम कर्म्म करने वाले, क्षत्रियकुलमें श्रेष्ठ भूपाल कृतवर्म्माभी उन्हीं देवोंसे उत्पन्न हुए। विपक्ष राज्यको पीड़ा पहुंचाने वाले, शत्रुमथनेहारे नरेश विराटभी उन्हीं मरुद्गणके अंशसे अवतीर्ण हुए थे। अरिष्टाके पुत्र प्रख्यात गन्धर्व्वनाथ हंसने कृष्णद्वैपायननन्दन कुरुवंश बढ़ानेवाले धृतराष्ट्रके स्वरूपमें जन्म लिया। वह दीर्घभुज महातेजस्वी बुद्धिमान नरेश माताके दोष और ऋषिके क्रोधसे जन्मसे अन्धे हुए थे। उनके और एक भाई थे, उनका नाम पाण्डु था; वह सत्यधर्म्ममें रत, शुद्धाचारी महा सत्त्वयुक्त और महाबली थे। पुत्रवान् पुरुषोंमें प्रधान जो अत्रिके पुत्र महाभाग धर्म्म हैं, अति बुद्धिमान महामति विदुर उन धर्म्मके अवतार होकर उत्पन्न हुए थे। हे पृथ्वीपते! जो कलिपुरुष सबोंका द्वेष करनेवाला तथा भूमण्डलमें सर्व्वनाशका कारण हुआ है और जिस मन्दचित्तने भूतनाशी बड़े भारी विद्वेशके अग्निको प्रज्वलित किया था, वह कुरुकुलमें कलङ्क लगानेवाला मन्दमति दुर्य्योंधन कलिके अंशसे उत्पन्न हुआ। पौलस्त्योंने दुर्य्योधनके भाई बनकर मानवयोनिमें जन्म लिया। हे भरतकुलश्रेष्ठ! दुःशासनादि कुटिल कार्य्य मे लगे हुए सौ भाइयोंमेंसे दुर्म्मुख दुःसह आदि जिनके नाम कहे गये और जिनके नहीं कहे गये हैं तथा धृतराष्ट्रके वैश्यापुत्र युयुत्सु नामक सौसे अधिक जो और एक पुत्र था, वे सभी राक्षसोंके अंश और दुर्य्योधनके सहायक थे।

जनमेजय बोले, कि हे विभो! धृतराष्ट्रके पुत्रोंके नाम बड़े छोटेके क्रमसे आद्योपान्त कहिये। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे राजन्! दुर्य्योधन युयुत्सु, दुःशासन, दुःसह, दुःशल दुर्म्मुख, विविंशति, विकर्ण, जलसन्ध, सुलोचन, विन्द, अनुविन्द, दुर्द्धर्ष सुबाहु, दुष्प्रधर्षण, दुर्म्मर्षण, दुर्म्मुख, दुष्कर्ण, कर्ण, चित्र उपचित्र, चित्राक्ष, चारु, चित्राङ्गद, दुर्म्मद, दुष्प्रधर्ष, विवित्सु, विकट सम, ऊर्णनाभ, सुनाभ, नन्द, उपनन्दक, सेनापति, सुषेन, कुण्डोदर, महोदर, चित्रबाहु चित्रवर्म्मा, सुवर्म्मा, दुर्व्विलोचन, अयोबाहु, महाबाहु चित्रचाप, सुकुण्डल, भीमवेग, भीमबल, बलाकी बलवर्द्धन, उग्रायुध, भीमसर, कणकायुः, दृढ़ायुध दृढ़वर्म्मा, दृढ़क्षत्र, समकीर्त्ति, अनूदर, जरासन्ध, दृढ़सन्ध, सत्यसन्ध, सहस्रवाक्, उग्रश्रवा, उग्रसेन, सेनानि, दुष्पराजय, अपराजित, पण्डितक विशालाक्ष, दुराधर, दृढ़हस्त, सुहस्त, वातवेग सुवर्च्चाः, आदित्यकेतु, बह्वाशी, नागदत्त, अग्रयायी निषङ्गी, कवची, पाशी, दण्डधार, धनुर्ग्रह, उग्रभीमरथ, वीर, वीरबाहु, अलोलुप, अभय, रौद्रकर्म्मा, दृढ़रथ, अनाधृष्य, कुण्डभेदी, विरावी, दीर्घलोचन, दीर्घबाहु, महाबाहु, व्यूढ़ोरु, कनकध्वज, कुण्डाशी, और वीरज धृतराष्ट्रके यह सौ पुत्र थे; इनके सिवाय दुःशला नाम्नी एक कन्या और युयुत्सु नामक वैश्यागर्भसे जन्मा हुआ एक पुत्र था। धृतराष्ट्रके पुत्रोंके नाम बड़े छोटेके क्रमसे कहे गये; यह सभी महारथी, शूर, युद्धमें दक्ष, वेदज्ञ, राजनीतिक और युद्धविद्यामें प्रसिद्ध पण्डित थे। हे महीपते! इनमें सबोंको विवाहसे योग्य स्त्री मिली थीं। हे राजन्! कौरव धृतराष्ट्रने शकुनिके मतमें सिन्धुराज, जयद्रथको उचित समयमें दुःशला नाम्नी कन्यादान की थी। हे धरतीनाथ! धर्म्मके अंशसे युधिष्ठिर पवनके अंशसे भीम, देवराजके अंशसे अर्ज्जुन और दोनो अश्विनीकुमारोंके अंशसे अतिरूपवान् सर्व्वभूतोंमें मनोहर सर्व्वप्रकारसे सुन्दर नकुल सहदेवने जन्म लिया था। वर्च्चा नामक प्रख्यात प्रतापी सोमके पुत्र अर्ज्जुननन्दन महाकीर्त्तिमान् अभिमन्युके स्वरूपमें अवतीर्ण हुए थे। हे राजन्! उनके अवतार होनेके कालमें चन्द्रने देवोंसे कहा था, कि मैं प्राणसे

भी प्यारे पुत्रको भूमण्डलमें भेज नहीं सकता पृथ्वीमें असुरवधरूपी सुरकार्य्य हमारा अवश्यमेव कर्त्तव्य होगया है, इसके विरोधी कभी नहीं हो सकते, अतएव इस नियमसे बच्चोंको भेजता हूं, कि वह भूतलमें अवतीर्ण होकर बहुकाल नहीं रहेंगे, शीघ्रही लौट आवेंगे। नारायणके साथी नरदेव इन्द्रके वीर्य्यसे प्रसिद्ध पाण्डवनन्दन प्रतापी अर्जुनके स्वरूपमें अवतीर्ण होंगे, हे अमरवृन्द। मेरे पुत्र धरतीतलमें इन अर्जुनके वीर्य्यसे जन्म लेकर बालेपनहीमें महारथी होकरके, सोलह वर्ष रहेंगे जब इनकी सोलह वर्षकी अवस्था होगी, तब वह भारी लड़ाई मचैगी, जिनमें तुम्हारे अंशवाले अगणित वीरोंको गिरावेंगे। हे सुरो। लड़ाईके समय शत्रुलोग चक्रवत् व्यूह रचकर लड़ेंगे, मेरे वह महाभुज पुत्र बालक होने परभी नरनारायणके सिवाय औरोंके भेदनके अयोग्य उस व्यूहमें घुसकर बिना भय घूमते हुए उन सबोंको विमुखकर महारथी वीरोंको मथन करके दिनके चौथे भागकेबीचमें यमराजके घरमें भेजेंगे। अनन्तर दिन बीतने पर एकत्र मिले हुए अनेक बहु महारथी वीरोंसे घार युद्ध कर मेरे महाभुज पुत्र मेरे समीप चले आवेंगे, वह एक वंशरक्षक पुत्र उत्पन्न करेंगे। वह पुत्र नष्ट होते हुए भरतकुलका वंशरक्षक होगा। सम्पूर्ण सुरोंने चन्द्रको यह बात सुनकर "तथास्तु" कहके उनकी पूजा की। हे राजन्! आपके पितामहकी यह जन्म-कथा कह सुनाई।

महारथी धृष्टद्युम्न अग्निके अंशसे उत्पन्न हुए थे। हे राजन्। जो शिखण्डी पहिले कन्या थे, उ हीने राक्षसके अंशसे जन्म लिया था। हे भरतवंश श्रेष्ठ! विश्वदेव गणने द्रौपदीके पांच पुत्र होकर जन्म लिया था, उनके नाम प्रतिविन्ध्य, सु.स, श्रुतकीर्त्ति, शतानीक और श्रुतसेन है। यदुकुलमें श्रेष्ठ शूर वसुदेवके पिता थे, उनकी पृथा नाम एक कन्या [illegible] रूपवती थी, कि उसके समान भूमण्डलमें [illegible] दूसरी स्त्री नहीं थी। वीर्य्यवान् शूरने [illegible] आशापर अपने फुफेरे भाई कुन्तीभोजराज [illegible] पहिले अङ्गीकार किया था. कि मेरी पहि[illegible] सन्तान होने पर तुमको दे दूंगा, इस अङ्गीकार[illegible] अनुसार पहिले गर्भमें उत्पन्न हुई उस कन्या[illegible] उनको दे दिया। पृथा पितृगृहमें ब्राह्मण[illegible] सेवा और अतिथियोंके सत्कारमें लगी र[illegible] थी। एक समय उसने जितेन्द्रिय व्रत[illegible] अति रूखे स्वभावी, धर्म्मके रहस्यज्ञ ब्राह्म[illegible] ऋषि दुर्व्वासाकी सर्व्वप्रकारसे सेवा करके स[illegible] किया था। भगवान् दुर्व्वासाजीने प्रसन्न हो[illegible] उसे विधिपूर्व्वक वशीकरण मन्त्र दिया औ[illegible] कहा, कि हे सुभगे। मैं तुम पर प्रसन्न हूं[illegible] देवि! तुम इस मन्त्रसे जिन जिन देवताओं[illegible] बुलाओगी, उनकी कृपासे तुम्हे पुत्र उत्[illegible] होगा। यशस्विनी बाला पृथा दुर्व्वासाकी [illegible] बात सुन आश्चर्य्यवश होकर कन्यावस्था[illegible] सूर्य्यदेवको बुलाया। तब जगको प्रकाश क[illegible] वाले भगवान् तपनने उनका गर्भाधान कि[illegible] उस देवगर्भ सदृश श्रीमान गर्भसे सब शस्त्रधा[illegible] योंमें श्रेष्ठ, सूर्य्य सदृश द्युतिमान्, सर्व[illegible] सर्व्वाङ्ग सुशोभित, कुण्डल-कवच-धारी एक [illegible] उत्पन्न हुआ। कुन्तीने बन्धुकुलके भयसे [illegible] यशवान् प्रसव भये हुए कुमारको छु[illegible] जलमें छोड़ा। राधाके पति अधिरथ ना[illegible] एक यशशाली रथ बनानेवालेने जलमें [illegible] हुए उस कुमारको उठाकर राधाका पुत्र [illegible] दिया। आगे उस स्त्री और पुरुष दोनों[illegible] उस लड़केका वसुप्रिया नाम रखा। वह [illegible] सर्व्वत्र प्रकाशित हुआ था। वसुप्रिया ज्यों ज्[illegible] बढ़ने लगी, त्यों त्यों वलो सर्व्व विद्याओंमें पा[illegible] और श्रेष्ठ जयशील हुए तथा सम्पूर्ण वेदाङ्ग प[illegible] लिया। महात्मा सत्य पराक्रमी धीमान् [illegible] प्रिया जब पाठकी दशामें थे, तभीसे ब्राह्मणों[illegible]

नका कुछभी अदेय नहीं रहा। एक समय तभावन इन्द्रजीने अपने पुत्र अर्जुनके उपारके निमित्त ब्राह्मणका वेश लेकर वीरवर सुप्रियासे उनके शरीरसे साथ उत्पन्न हुए कवच और दोनों कुण्डलोंकी भिक्षा मांगी; वसुप्रियाने पने अङ्गको काटकर कवच और दोनों कुण्डलोंको निकाल कर दे दिया। तब देवराज न्द्रने अचरज मानकर उनको एक मनुष्यके ाश करनेवाली एक शक्ति दी और बोले, कि दुर्द्धर्ष। तुम सुर असुर, मनुष्य, गन्धर्व्व, रग और राक्षस इनमें चाहे जिस किसीपर ह शक्ति चलाओगे, वह एक पुरुष निश्चयही मराजका पाहुना बनेगा। वह राधापुत्र हिले वसुप्रिया नामसे भूमण्डलमें प्रख्यात थे; ागे अपने अङ्गको काटनेसे उनका नाम कर्ण हुआ। पृथाके प्रथम पुत्र, जिन्होंने बड़े यशोान्न वीर तथा कवच-कुण्डल-धारी होकर जन्म लिया था, वह बिना बाधा कवचको छोड़ करके कर्ण नामसे प्रख्यात हुए। हे राजन्। कर्ण तकुलमें रहकर वहीं बढ़े थे। वह शत्रुकुलको टानेवाले नरोंमें श्रेष्ठ सर्व्वशास्त्रोंमें पण्डित कर्णही दुर्य्योधनके मित्र और मन्त्री थे। न्होंहीने दिननाथके अंशसे जन्म लिया था।

जो सनातन देवोंके देव श्रीनारायण हैं, नके अंशसे मर्त्यलोकमें प्रतापी वासुदेवजी अवतीर्ण हुए। महाबली बलदेवजीने शेषागके अंशसे जन्म लिया। हे राजन। महौजा नतत्कुमार प्रद्युम्नके स्वरूपमें अवतीर्ण हुए । इस प्रकार दूसरे देवोंने वसुदेवके वंशमें ंशबढानेवाले अगणित नरोंके स्वरूपमें जन्म लिया। हे राजन। मैंने जिन सब अप्सराओंकी कथा कही हैं, वे सब देवराजकी आज्ञासे मतलपर सोलह-हजार देवीके स्वरूपमें प्रगट होकर वासुदेवकी पत्नी बनी। श्रीलक्ष्मीजी भी मदन शीघ्रकुलमें जन्म लेकर सती रुक्मिणीके स्वरूपमें भूमण्डलमें प्रकाश हुई। द्रुपद राजकुमारी द्रौपदी शचीके अंशसे वेदीमेंसे अवतीर्ण हुई थी। वह निन्दाके अयोग्य रूपवती द्रौपदी न तो बड़ी लम्बी और न बड़ी नाटी थी; वह काले घूंघराले केशोंसे सुहावनी, पद्म गन्धभरी पद्म समान प्रशस्त नेत्रवती सुश्रोणी सर्व्वलक्षणोंसे सुहासिनी वैदूर्य्यमणिसी और सदा सिंहरूपी पांच पुरुषोंकी चित्त मोहिनी थी। सिद्धि और धृति इन दो देवियोंने पांचों पाण्डवोंकी माता कुन्ती और माद्रीके स्वरूपमें जन्म लिया था। मति देवीने सुबलकन्या गान्धारीके स्वरूपमें जन्म लिया। हे राजन्। सुर, असुर, अप्सरा, गन्धर्व्व, राक्षसादियोंकी अंशसे अवतीर्ण होने की कथा कह चुका। जो सब ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य पृथ्वीमें जन्म लेकर युद्धमें जयके अयोग्य राजा बने थे और जिन सब महात्माओंने बड़े भारी यदुकुलमें जन्म लिया था, उन सबोंकी कथाभी कह चुका, इसके पढ़नेसे धन, यश, पुत्र, आयु और जय मिलता है। द्वेष छोड़कर यह अंशावतारणकी कथा सुनना। ज्ञानीलोग, देव, गन्धर्व्व, राक्षसोंके अंशावतारणकी कथा सुननेसे जन्म मृत्युके वृत्तान्तसे विदित होकर विपतके समय शोकादिके वशमें नहीं होते।

आदिपर्व्वमें सड़सठवां अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, कि हे ब्रह्मन्। आपसे देव, दानव, राक्षस, गन्धर्व्व, और अप्सरोंके अंशावतारणकी कथा सुन चुका। हे विप्र। अब इन ब्राह्मणोंके सम्मुख आप प्रथमसे कुरुवंशकी कथा कहिये, मुझे सुननेकी बड़ी इच्छा हो रही है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भरतश्रेष्ठ। दुष्मन्त नामक वीर्य्यवान् भूप कौरवोंके आदि पुरुष थे। वह चार समुद्रोंतक धरती रखते थे और इस भूमण्डलमें जितने पदार्थ उत्पन्न होते हैं उनका चौथा अंश करमें लेते थे।

वह शत्रु मथनेहारे जयशील मानवनाथ, ब्राह्मण और चत्रिओंसे भरे रत्नोंकी खानि; समुद्रोंसे घेरे म्लेच्छदेशतक सम्पूर्ण देशोंको भोग करते थे। उनके शासनके कालमें वर्णसङ्कर नहीं थे, प्रजाको खेतीकरके अनाज उपजाना नहीं पड़ता था और कोई पाप कर्ममें हाथ नहीं डालता था। हे नरव्याघ्र। दुष्मन्त जब नगरोंके स्वामी थे, तब सबलोग धर्ममें नियुक्त रहकर धर्म और अर्थ उपार्ज्जन करते थे, चोरीका भय, रोगका भय और चुधाका भय कुछभी नहीं था। उनदिनों ब्राह्मण, चत्रिय, वैश्य, शूद्र निज निज धर्म्ममें लगे रहते थे, वृष्टि आदिके निमित्त किसी को दैवीकर्म्म नहीं करना पड़ता था। उस भूपालके आश्रयमें सब लोग निर्भय होकर रहते थे। उनदिनों बादल उचित समयमें जल वृष्टि करते थे, शस्य रसयुक्त होते थे और धरती पशु और भांति भांतिके रत्नोंसे भरी थी। उस कालमें ब्राह्मण गण वेद पठनादि निज निज कार्य्यमें नियुक्त रहते थे और कभी झूठ नहीं बोलते थे। वज्रसे भी कठिन देहधारी विचित्र महावीर्य्यवान वह युवा दुष्मन्त निज भुजबलसे बनोपवन सहित मन्दरपर्व्वतको, उखाड़कर वहन कर सकते थे। वह प्रचेप, विचेप, परिचेप और अभि-चेप इन चारों प्रकारके गदायुद्धमें दच्च और हाथी की पीठ और घोड़ेकी पीठपर चढ़नेमें बड़े निपुण थे। वह बलमें विष्णुवत तेजमें सूर्य्यसदृश गाम्भीर्य्यमें समुद्र समान और सहन-गुणमें धरती की भांति थे। पुरवासी और दूसरी प्रजाओंके उनपर प्रसन्न रहनेके कारण वह साधारण जनोंके प्रेमपात्र हुए थे। वह महीपाल दुष्मन्त आनन्द पूर्व्वक धर्म्मानुसार प्रजाओंका शासन किया करते थे।

आदिपर्व्वके शकुन्तलोपाख्यानमें अड़-सटवां अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, कि हे भगवन्! भरतकी उत्पत्ति और चरित्र तथा [illegible] जन्म-कथा यथावत् सुननेकी इच्छा होती है, हे श्रेष्ठ मतिमान्! वीर दुष्मन्तने जिसप्रकार शकुन्तलाको लाभ किया था और उस सिंह रूपी पुरुषने जो जो कार्य्य किये थे, विस्तारसे उनकी कथा कहिये, मुझको आद्योपान्त सुननेकी अभिलाषा हुई है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि एक समय वह महाभुज दुष्मन्त अगणित सेना और अनेक वाहन साथ लेकर मृगयाके लिये घने वनमें गये। अति सुन्दर चतुरङ्गिणी सेना और सैकड़ों हाथी घोड़े उनको घेरे हुए चले। युद्धविद्यामें दच्च सैकड़ोंवीर खड्ग, शक्ति, गदा, मुषल प्रास और तोमरादि अस्त्र लेकर उनके संग चलने लगे। उस पृथ्वीनाथके चलते समय योधों की सिंह समान गरजना, शंख, और नगाड़ों की ध्वनि, रथोंके पहियोंकी आहट हस्तियों की चिङ्घाड़ घोड़ोंकी हिनहिनाहट और भांति भांतिके अस्त्र और वेष से सजी हुई सेनाकी ललकार—यह सब अप्रगट शब्द मिलाकर केवल किलकिलाहट होने लगी। नगरकी नारियां अच्छे अच्छे गृहोंकी अटा-रियों पर चढ़कर शूर, यशोवन्त और अर्द्ध राजसभायुक्त उक्त राजाको देखने लगीं। स्त्रियां इन्द्रके समान शत्रुनाशने हारे, खदेड़नेमें हस्तीवत उस पृथ्वीनाथ को निहार कर वज्रधारी इन्द्र समझने लगीं और कहकर उनका स्तव करने लगीं, कि यह पुरु-षोंमें श्रेष्ठजन रणभूमिमें वसुवत् पराक्रमी है इनके भुजबलसे शत्रु लय पाते हैं। रमणीगण प्रेमसे यह कहती हुई उनके शिरपर फूल वर्षाने लगीं। दुष्मन्त सब स्थानोंमें आर्य्य और ब्राह्मणोंसे प्रशंसित होकर मृगयाके लिये अति प्रसन्नचित्तसे बनको पधारे। ब्राह्मण चत्रिय, वैश्य और शूद्रलोग मत्तहस्ती समान

हाथली देवराजकी भांति उस पृथ्वीनाथके पीछे चले और चारों ओरसे असीस और जय-जयकार करते हुए उनको देखने लगी। पुरवासी और जनपदवासी इसप्रकार बड़ी दूरतक भारतीपति के पीछे चलकर उनकी आज्ञासे लौट आये। वह नरनाथ सुवर्णके रंगसे सजी हुई रथमण्डलीसे महीमण्डलको और रथके पहियोंकी घरघराहटसे मिले हुए कोलाहलसे आकाशमण्डलको भरने लगे। धीमान् धरतीनाथ दुष्मन्तने जाते समय बेल, खैर, मदार, कैथा आदि नाना वृक्षोंसे घेरा हुआ, पहाड़ोंसे गिरेहुए पत्थरोंसे रूखा, जल और नरोंसे रहित, बहुयोजन तक फैला हुआ और मृग, सिंहों तथा दूसरे भयानक वनैले जीवोंसे भरा हुआ नन्दनवनके समान एक वन देखा। नरेश नौकर और वाहनोंसे उस वनको हिलोड़कर भांति भांतिके मृगोंको वेधने लगे और अगणित व्याघ्रोंको लखकर बाणोंसे बींधके धरतीपर गिराया। वह बहुदूरके मृगोंको भालोंसे बींधने और निकटके हिरणोंको खड्गोंसे काटने लगे और उन श्रेष्ठ शक्तिवान् पुरुषने किसी किसी जन्तुको शक्तिसे नष्ट किया। गदा युद्धमें दक्ष अतुल विक्रमी भूपाल तोमर, असि और गदा चलाते हुए भांति भांतिके वनैले मृग और पक्षी मारकर घूमने लगे। आश्चर्य्य वीर्य्यशाली राजा और लड़ाई प्यारी सेनाओंसे उस भारी वन विलोडे जानेसे सब सिंह उसको छोड़कर भागने पर हुए। मृगदल पतिके हत होनेपर शोचयुक्त हृदयसे कोलाहल करते हुए इधर उधर भागने लगे। दलसे बिछुड़े ...गा छसे मारे होकर जल पीनेके लिये सूखी नदीमें जाकर आशा और चेतसे हाथ धोकर गिरने लगे। मृगदलके भूख प्यासके मारे थकके मारे होकर धरती पर गिर जाने पर भूखी सेना जानकर उनको खाने लगीं; किसी किसीने काटकर आग पैदाकरके उनके मासको पकाकर खालिया। उस वनमें कुछ महाबली मत्तहस्ती अस्त्रों से कटे कूटे जाकर और भय खाकर सूंड़के अगलेभागको सिकोड़ करके भागने लगे; कुछ वनैले हाथी भागनेके कालमें मलमूत्र छोड़ते और रक्त गिराते हुए अगणित लोगोंको कुचलकर चले। मरे मृगाधिप और मृगोंसे भरे हुए उस बनने जलरूपी बादल और वाणधारारूपी जलधारासे भरा पूरा होकर अपूर्व्व शोभा धारण की।

आदिपर्व्वके शकुन्तलोपाख्यानमें उन-
सत्तरवां अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि राजा दुष्मन्त वाहन और सेनाओंके साथ सहस्रों मृगा मारकर मृगोंकी पछियाते हुये अकेले दूसरे एक वनमें जाघुसे। वह अति बलवन्त होनेपर भी थकगये और भूख प्यासके मारे विकल हुए। आगे उस वनको पारकर एक बड़ाभारी मैदान देखा। भूपाल उस निराले मैदानको छोड़कर सुन्दर आश्रमयुक्त चित्तानन्ददायी और मनोहर दूसरे एक वनमें जा घुसे, देखा, कि वहां ठण्डी हवा बह रही है, पौधे खिले हुए फूलोंसे सजे हैं; और हरी घाससे धरती ढंपी है; मीठी बोली बोलनेवाले पक्षियोंकी ध्वनि, कोयलोंके कलापें और भींगुरोंकी झङ्कारसे वनमें शब्द भर रहा है; वहा बड़ी बड़ी शाखा और ठण्डी छांहयुक्त वृक्षोंसे चारो दिशा घिरी हुई हैं; उन पेड़ोंके नीचे मधुलोभी भंवरोंके गूंजते हुए घूमनेपर अति सुन्दर शोभा होरही है। उस वनमें फूल और फलोंसे रहित और कांटोंसे जकड़ा हुआ एकभी पेड़ न था और सबही वृक्ष भंवरोंसे भरे हुए थे बड़े चापधारी दुष्मन्त पक्षियोंके कलोलोंसे पूर्ण, फूलोंसे सजेसजाये, मनोहर, सबोंसे बढ़िया और सर्व्वप्रकार फूलोंसे सुशोभित सुन्दरछांहवाले उस वनको निहारकर उसमें जाघुसे।

तब हवासे डोलते हुए फूलोंके वृक्ष शाखारूपी भुजोंसे बार बार सुन्दर सुन्दर फूल वर्षाने लगे। पौधे फूलरूपी वस्त्रसे और पक्षियों की आकाशतक पहुंचती हुई मीठी बोली से सुशोभित होरहे थे। फूलोंके भारसे उन वृक्षोंके नीचे सिर किये नयेपल्लवों पर बैठकर मधुलोभी भौंर मीठे स्वरसे गीत गारहे थे। महातेजा दुसन्त उस स्थानमें फूलोंसे सजे नाना प्रदेश और हृदयमें सानन्द पहुंचाते हुए लता-मण्डपोंको देखकर अति प्रसन्न हुए। एक दूसरोंसे मिली हुई शाखा और फूलोंसे सुहावने तथा महेन्द्रकी ध्वजाके समान वृक्षोंसे वह वन सुशोभित होरहा था। वहां सिद्ध चारण, गन्धर्व्व, किन्नर, वन्दर, और अप्सरा बावलोंकी भांति खेल रहे थे। अनुभवमें सुखदायी, ठण्डी, फूलोंकी रेणु लेजानेवाली, अच्छी गन्धयुक्त हवा इधर उधर घूमती हुई मानो खेलनेहीके लिये पौधोंके निकट पहुंच रही थी।

राजा ऐसे बहुगुणयुक्त उड़ती हुई ध्वजाकी नाईं, नदी तटसे उत्पन्न सुन्दर वनको देखने लगे। आगे पुण्यशीला, सुखसलिला, अगणित पक्षियोंसे घिरा हुआ और तपोवनकी मन-भावनी मालिनी नदीके पास मनोहर आनन्दित पक्षियोंसे परिपूर्ण, भांति भांतिके वृक्षोंसे ढपा, आहुति चढ़ाई हुई प्रज्वलित अग्निसे सुशोभित निकटहीमें उनके नेत्रोंके सामने एक आश्रम दीख पड़ा। राजन्! श्रीमान् धरती पति दुसन्त यति, मुनि और बालखिल्योंसे परिवृत, अनेक अग्निगृहोंसे सुशोभित और फूलोंसे सुसज्जित, विस्तृत भारीतटयुक्त तपोवनको देखकर बार बार उसकी प्रशंसा करने लगे और वहांके चारपायों और मृगोंकी शान्तमूर्त्तिको देखकर प्रसन्न हुए। आगे अजेय श्रीमान् दुसन्त देवलोकके समान सर्व्वप्रकारसे सुन्दर उस आश्रमकी ओर चलकर सर्व्वजीवोंकी माताके समान विराजमाना पुण्य जलपूर्ण आश्रमोंसे सुहावनी मालिनी नदीको देखा; जो नदी किन्नरोंकी वासभूमि और तथा भालुओंसे सेवा पारही है; जिसके तट पर चकवाचकई खेलते हैं; जिसकी धारा फूलके समान फेन बहता है; जिसका तट वेदपाठकी ध्वनिसे सुशोभित है, और जहां मत्तहस्ती सिंह और बड़े बड़े सर्प विचर रहे हैं, उस नदीतटमें महात्मा कण्वका आश्रम विराजमान है। महर्षिओंसे बसा हुआ पुण्य आश्रमको पालनेवाली उस नदीको देखकर पृथ्वीनाथने उसमें प्रवेश करना चाहा। गङ्गा जीसे शोभायमान नरनारायण जीके आश्रमकी भांति रमणीय तट और द्वीपोंसे सुहावनी मालिनी नदीसे सजे हुए, उन्मत्त मोरके शब्दसे गूंजते हुए चैत्ररथ सदृश उस तपोवनमें प्रवेशकर भूपालने अतिगुणशाली अवर्णनीय तेजोपूर्ण तपोधन कश्यपनन्दन महर्षि कण्वका दर्शन करना चाहा। तब हाथी, घोड़े पैदलोंसे परिपूर्ण सेनाको वनके द्वारपर ठहरा कर बोले, सेनाओ। मैं रजोगुणके रहित तपोधन मुनिवर कण्वके दर्शन को जाता हूं मेरे लौटनेके काल तक तुम मेरे लिये ठहरी रहो।

अनन्तर मानवेन्द्र नन्दनवन समान तपोवनमें प्रवेशकर भूख-प्यासको भूल अपार आनन्दरूपी जलमें डूबे। वहां मन्त्री और पुरोहितके साथ सम्पूर्ण राजचिह्न दूर कर उन अव्यय तपस्या ऋषिको देखनेके लिये उस सुन्दर आश्रममें जाघुसे। आगे उस भौं रोंकी गुनगुनाहटसे गूंजते हुए और भांति भांतिके पक्षियोंसे बसे हुए आश्रमको ब्रह्म लोकके सदृश देखने लगे; वह उस आश्रममें अनुष्ठान किये जाते हुए नैतानिक यज्ञकर्म ऋग्वेद दक्ष ब्राह्मणोंके द्वारा पदोंके उच्चारे जाते हुए ऋग्वेदके मन्त्र सुनने लगे। कल्प सूत्रादि यज्ञविद्याङ्गमें पण्डित यजु

र सदा व्रतशील ऋषियोंसे गाये जाते हुए ठे ‍सामगीतसे और अच्छे नियम युक्त ब्राह्म- ंसे भारुण्डसामगीतसे वह आश्रम सुशोभित । सामवेदके अनुसार पवित्र यज्ञमें साम- ह गानेमें दक्ष अथर्व्ववेदमें पण्डित मुनि लोग ई और क्रमयुक्त संहिताके पाठ कर रहे थे। तरे द्विजोंके यथास्थानोच्चारित शब्दसे संस्कृत थोंसे कथा कहनेके कारण आश्रम शब्दयुक्त ाकर दूसरे ब्रह्मलोक की भांति शोभा पा हा था। यज्ञविद् क्रम-शिक्षामें पण्डित, ायके तत्त्व जाननेवाले, आत्मविज्ञानशाली रपारग, नाना वाक्योंके जोड़ने और मिला- में निपुण, ब्रह्मोपासनरूपी विशेष कार्य्यमें न, मोक्षधर्मशील, मत ठहराने शङ्का दूर रने और सिद्धान्त करनेमें ज्ञानी, छन्द शब्द ार प्राचीन शास्त्रोंका ज्ञान रखनेवाले, काल- ानयुक्त द्रव्यगुण कर्म्मज्ञ, कार्य्यकारण वेत्ता, चो तथा बन्दरोंको बोली समझनेमें समर्थ स्तीर्ण ग्रन्थ समाश्रित और नानाशास्त्रोंमें ञ द्विजोंसे उच्चारे जाते हुए और प्रधान प्रधान व्वीकोंके चारों ओरसे बजते हुए शब्द भूपा- से सुने गये। शत्रुनाशी नरेशने स्थान स्थान एसे व्रतशील नियमयुक्त जपहोम करनेहारे ाह्मणों को देखा। महीपति दुष्मन्तने यत्नसे नाये हुए विचित्र मनोहर आसनों को देख- र चित्तमें अचरज माना और ब्राह्मणोंके नाये हुए देवस्थानोंका संस्कार देख देख कर पनेको ब्रह्मलोकमें टिका हुआ जाना। ऋषि ण्वके तपसे रक्षित तपोगुण और वनकी भायुक्त उस परम मङ्गलमय आश्रमको खकर देखनेकी लालसा न भरने पर नृपश्रेष्ठ ष्मन्त सन्तुष्ट न होसके। शत्रुनाशी राजाने न्त्री और पुरोहितों के साथ महाव्रतशील पोधन मुनियोंसे सर्व्वतधिरे हुए ऋषि काश्यपके स महा मनोहर शुभस्थानमें प्रवेश किया।

शकुन्तलोपाख्यानमें सत्तरवां अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर महा- बाहु दुष्मन्त मन्त्री और पुरोहितको बिदा करके अकेले चलकर ऋषि कण्वके आश्रममें जा पहुंचे, पर वहां उन संयत व्रतयुक्त मह- र्षिको न देखकर आश्रमको सूना पाकर चिल्ला कर यह बात कही कि "यहां कौन है," इससे आश्रम प्रतिध्वनित हुआ। अनन्तर उनकी ध्वनिको सुन साक्षात् लक्ष्मीकी भांति रूपवती तपस्विनीका वेषधारण किये एक कन्या उस आश्रमसे निकल आई। उस कृष्णाक्षी नारीने राजर्षि दुष्मन्तको देखतेही उसीक्षण अभ्यर्थना करके स्वागत पूछा। हे राजन्। कन्याने राजाको आसन, पाद्य और अर्घसे पूजकर स्वास्थ्य और कुशल पूछा, अनन्तर लज्जायुक्त सुखसे कहा, कि कहिये, क्या कार्य्य करना होगा। राजा विधिपूर्व्वक पूजे जाकर उस अनिन्दिताङ्गी, मधुरभाषिणी की ओर देख- कर बोले, कि भद्रे। मैं महाभाग ऋषि कण्वकी उपासना करने आया हूं, हे शोभने। बोलो कि वे भगवान् कहां गये हैं। शकुन्तला बोली भगवान् पिता फल बटोरनेको आश्रमसे निकले हैं। आप क्षणभर ठहरिये उनको लौटे हुए पावेंगे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि राजा ऋषिको न पाकर शकुन्तलाको सुन्दरी, और रूप- यौवनवती देखकर बोले, कि री सुश्रोणि। तुम कौन? किसकी बेटी हो? री शोभने! तुम ऐसी रूपगुणवती होकर क्यों इस वनमें आई हो? और कहांसे आई? रीशुभे! तुमने दर्शन मात्रसे मेरा मन हर लिया है, री शोभने! बोलो मैं तुम्हारा परिचय लेना चाहता हूं। आश्रममें राजाके इस प्रकार कहने पर साध्वीजी शकुन्तलाने मीठे अक्षर- युक्त बातोंसे कहा, कि हे दुष्मन्त! मैं धृतिमान् धर्म्मज्ञ महात्मा कण्वकी बेटी हूं। दुष्मन्त बोले, कि लोकपूजित महाभाग भगवान् [redacted]

ऊर्द्ध्वरेता हैं, यदि धर्म्मभी निज चरित्रसे टल सके, पर तौभी संयत व्रतशील महर्षि कदापि निज वृत्तसे नहीं टलते हैं, अतएव री सुन्दरी! मुझे बड़ी शङ्का होती है, कि तुम क्योंकर उनकी कन्या हुई, तुम मेरी यह शङ्का दूर करो।

शकुन्तला बोली, कि हे राजन्! यह जिस प्रकार हुआ है, मैंने जैसा सुना है और मैं जैसे महर्षिकी बेटी हुई हूं, सब कहती हूं, सुनिये किसी समय एक ऋषिने अकार पिता कण्वसे मेरा जन्म-वृत्तान्त पूछा था, उस समय भगवान्ने उनसे जैसा कहा था, कि हे पृथ्वीनाथ। वह सुनिये। कण्वजी कहने लगे, कि पूर्व्वकालमें ऋषि विश्वामित्रने बड़ी तपस्या आरम्भ की थी; इससे देवराज बड़े चिन्तायुक्त और भयभीत होकर सोचने लगे, कि यह ऋषि तपस्याके बलसे बड़े तेजस्वी हुए हैं, सो मुझको पदसे च्युत कर सकते हैं, ऐसी चिन्ताकर मेनका नामक अप्सरासे बोले, कि मेनका! तुम दिव्य गुणोंसे अप्सरोंमें श्रेष्ठ हो। कल्याणि! तुम मेरा हित करो, मैं जो कहता हूं, सुनो। मेनके! आदित्यवत तेजस्वी महा तपस्वी विश्वामित्रकी कठोर तपस्यासे मेरा हृदय कांप रहा है, वह संयतात्मा दुर्द्धर्ष क्रमशः कठोरतर तपस्यामें प्रवृत्त हो रहे हैं। री सुमध्यमे! मैं तुमपर भार देता हूं, तुम जाकर उनको लुभाओ, कि वह मुझको पदसे निकाल न सकें, उनकी तपस्यामें विघ्न डालनेको यत्नवती हो, कि मैं बिना विघ्न पदमें बना रह सकूं। री सुन्दरी! तुम रूप यौवनकी शोभा, हाव, भावादि और लाजसे मिली हुई बातोंसे मुनिको लुभाकर तपस्यासे निवृत्त करो। मेनका बोली, कि भगवान् विश्वामित्र महातेजस्वी, महातपस्वी और बड़े क्रोधी हैं; आप भी उनको जानते हैं; जिन महात्माके तेज, तपस्या और क्रोधसे आप देवराज होकरके भी भय खा रहे हैं, उनसे क्यों नहीं भय भीत होऊंगी? जिन महात्मा वशिष्ठके प्यारे पुत्रोंको मृत्युको अनुभव करायी थी, जो पहिले क्षत्रिय- जन्म लेकर पीछे बलसे ब्राह्मण हुए हैं; जिन्होंने स्नानादिके निमित्त एक बहुजलभरी गु- सयी अपार नदी बहाई है; व्याघ्ररूपी म- नामक धर्म्मात्मा राजर्षिने दुर्भिक्षके काल उक्त नदीके तटपर जिन महात्माके परिवार पाला पोषा था; दुर्भिक्ष कालके अन्त हो- पर जिस प्रभुने फिर आश्रममें लौटकर कौशिकी नदीका "पारा" यह नाम रखा और प्रसन्न होकर स्वयं उन मतङ्ग नामक ऋ- षिका याजन कार्य्य किया था, हे नर- आपभी जिनके भयसे सोमरस पीनेको गये जिन्होंने क्रोधित होकर प्रतिज्ञा-पूर्व्वक दू- एक नक्षत्र-लोक रचा है; जिन्होंने गुरुशा- ग्रस्त त्रिशङ्कुको ढाढ़स दिया था, हे प्रभो जिनके कार्य्य यह सब हैं, मैं उससे बड़ा खाती हूं; ऐसी आज्ञा कीजिये, कि वे क्रोधित होकर मुझको भस्म न कर डालें जो तेजसे सम्पूर्ण लोकोंको जला सकते हैं, पर्व्वतको चूर्ण बना सकते हैं और अति सर्व्व दिशाओंको उलट पलट कर सकते हैं, प्रज्वलित अग्नि सदृश तपोराशि जितेन्द्रिय महर्षिको मेरीसी अबलाकी जा- क्योंकर छू सकती है? हे सुरेन्द्र! जिनका मुख प्रज्वलित अग्निका स्वरूप है, जिनके नेत्रोंके तारे चन्द्र सूर्य्यके स्वरूप हैं, जिनकी जिह्वा कालस्वरूप है, उन दुर्द्धर्ष मह- र्षिको मेरीसी अबलाकी जाति क्योंकर छू सकती है? यम, सोम, महर्षिगण साध्य और बालखिल्य मुनिगण जिनके प्रभावसे भय खाते हैं, मेरीसी अबलाकी जाति क्यों उनसे भय न खायेगी? हे सुरेन्द्र! आप जब उस ऋषिके समीप जानेकी आज्ञा कर रहे हैं, तब मैं क्योंकर बिन गये रह सकूंगी, पर हे देव

राज। मेरी रक्षाका प्रयत्न कीजिये, कि मैं आपसे भलीप्रकार रक्षिता होकर आपका कार्य्य साधन करनेके लिये चल फिर सकूं; और मेरी और भी प्रार्थना यह है, कि जब मैं आश्रममें खेलती रहूंगी, उस समय वायु मेरा महीना हुआ वस्त्र हरलेवें और आपकी आज्ञा-से उस कार्य्यमें सम्मत और मेरे सहायक होवें। और भी जब मैं आपको लुभाने लगूंगी, तब वनसे सुरभि हवा चलती रहेगी। मेनकाकी ऐसी प्रार्थना पर देवराजने "तथास्तु" कहकर वैसाही प्रबन्ध कर दिया, अनन्तर मेनका विश्वामित्रके आश्रमको पधारी।

शकुन्तलोपाख्यानमें एकहत्तरवां
अध्याय समाप्त।

कण्वजी बोले, कि देवराजके मेनका की बातसे वायुको आज्ञा देने पर पवनदेव मेनकाके साथ चले। अनन्तर उस सुन्दरी अप्सराने तपस्यासे जले, तप करते हुए विश्वामित्रको आश्रममें पाया और ऋषिको प्रणाम करके उनके सामने भयके साथ खेलने लगी। वायु-नेभी उस समय उसके चन्द्रमा सदृश वस्त्रको हर लिया, सुन्दरी मेनका, वायुके उस कार्य्यसे मानो अचरज मानकर लाज दिखाती हुई वस्त्र चुन लेनेके लिये अग्नि समान तेजस्वी महर्षि विश्वामित्रकी आंखोंके सामने गई। मुनिश्रेष्ठ विश्वामित्र उस समय उस जांचनेके अयोग्य अवस्थावाली रूपवती अनिन्दिता मेन-काको वस्त्रहीना, वस्त्र लेने की अभिलाषिणी भूली भटकीसी और विपत्में पड़ी हुई देख-कर विशेषतः उसके अतुलरूप गुण निहारकर कामवश हुए और मिलनकी अभिलाषासे उसको बुलाया। अनिन्दिता मेनकाभी उस-पर सम्मत हुई। तब मुनि और मेनका दोनो उस स्थानमें बहुत कालतक बिहार करनेलगे और मनमाने खेलके सुखमें बहुतदिनोंको भी एक दिनके समान गंवाया; इसपर मुनिके वीर्य्य और मेनकाके गर्भसे हिमालयपर्व्वतके मनोहर चट्टानपर, मालिनी नदीके किनारे शकुन्तलाका जन्म हुआ। मेनका सफल मनो-रथ होकर उस बालकी पैदा हुई, सन्तानको मालिनी नदीके तटपर छोड़करके उसीक्षण इन्द्रकी सभामें गयी। सिंह, व्याघ्रोंसे भरे हुए उस घने बनमें उस बालकी भयी हुई बालिकाको सोती हुई देखकर पक्षियोंने चारों ओरसे घेर लिया। शकुन्त लोग उस बनमें इस लिये मेनका-पुत्रीकी रखवारी करते रहे, कि मास-लोभी जन्तु उस बालिकाकी हिंसा न कर सकें; उस समय मैने स्नानार्थ जाकर उस मनोहर निर्ज्जन वनमें उसको उस दशामें देखकरके आश्रममें ले जाकर कन्याकी भांति रक्षा की। धर्म्मशास्त्रोंमें कहा है, कि जन्मदाता, प्राणदाता और अन्नदाता यह तीनोंही पिता होते हैं। यह कन्या निर्ज्जन वनमें शकुन्तोंसे बचायी गयी थी, इसलिये मैने इसका "शकुन्तला" यह नाम दिया है; हे विप्र! शकुन्तला इस प्रकार मेरी कन्या हुई है, यह अनिन्दिता शकुन्तला मुझकोही पिता करके जानती है।

शकुन्तला बोली, कि हे नराधिप। पिताने आये हुए महर्षिसे पूछे जाकर इस प्रकार मेरा जन्म वृत्तान्त उस महर्षिसे कहा था; सो मुझ-को कण्वकी बेटी करके जानना, मैं जन्मदाता पिताको नहीं जानती; कण्वहीको पिता कर-के मानती हूं; हे राजन्! मेरे जन्मके विष-यमें जैसी घटना हुई थी और उसे मैंने जैसे सुना था, वह मैं सब कह चुकी।

आदिपर्व्वके शकुन्तलोपाख्यानमें
बहत्तरवां अध्याय समाप्त।

दुष्मन्त बोले, कि री कल्याणि! तुमने जो कहा, उससे निश्चय होता है, कि तुम राजपुत्री हो। री सुश्रोणि! तुम मेरी स्त्री होओ;

कहो, उसके निमित्त क्या करना होगा ? आज तुम्हारे लिये सुवर्णहार, वस्त्र, सुवर्णके कुण्डल, नाना नागरोंसे बटोरे शोभादेनेहारे शुक्र मणि, रत्न, और मृगचर्म्म, सन्दक आदि सभी लाताहूं, आज सम्पूर्ण राज्यही तुम्हारे हाथमें होजावे ; री शोभने। तुम मेरी पत्नी होओ। री सुन्दरि ! री भीरु ! मुझको गान्धर्व्व-विवाहसे वरो ; री रम्भोरु ! सब विवाहोंमेंसे गान्धर्व्व विवाह ही श्रेष्ठ करके उक्त है। शकुन्तला बोली, कि राजन् ! मेरे पिता फल बटोरनेके लिये इस आश्रमसे गये हैं; आप क्षणभर ठहरें, वह आकर आपको मुझे सम्प्रदान करेंगे। दुष्मन्त बोले, कि री सुन्दरी ! मैं चाहता हूं कि तुम स्वयं मुझको भजो, री अनिन्दिते ! मैं तुम्हारे निमित्तही यहां हूं, मेरा हृदय तुम परही आसक्त हुआ है। देखो, आपही अपना बन्धु है, आपही अपनी गति हैं, सो धर्म्मानुसार तुम अपनेको दान करो। धर्म्मानुसार आठ प्रकारके विवाह संक्षेपमें कहे हैं ;—यथा ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर गान्धर्व्व, राक्षस और पैशाच। स्वायम्भुवमुनिने इस आठ प्रकारोंके विवाह में जो जिसके लिये धर्म्मयुक्त है, उसकी कथा आद्योपान्त कही है, कि पहिले कहे हुए चार प्रकारके विवाह ब्राह्मणके लिये प्रसस्त हैं। री अनिन्दिते ! पहिलेसे आद्योपान्त कहे हुए ६ प्रकारके विवाह क्षत्रियके लिये धर्म्मयुक्त हैं ; राजोंके लिये राक्षस-विवाहभी धर्म्म-सम्मत है और वैश्य और शूद्रके लिये आसुर-विवाह धर्म्मयुक्त करके कहा है। पहिले गिने हुए पांच प्रकारके विवाहोंमें ब्राह्म, दैव, और प्राजापत्य यह तीन प्रकारोंके विवाह सब प्रकारसे धर्म्मसंयुक्त है। आर्ष तथा आसुरविवाह धर्म्म-विहित नहीं है और पैशाच तथा आसुर-विवाहकिसी प्रकारसे कर्त्तव्य नहीं है। धर्म्म की गति ऐसी है, विधिके अनुसार विवाह करना कर्त्तव्य है ; अतएव इसकी शङ्का न करना, कि गान्धर्व्व और राक्षस-विवाह क्षत्रियोंके लिये धर्म्म संयुक्त है ; इसमें सन्देह नहीं है, कि यह दो प्रकारके विवाह,चाहे अलग रूपसे हो वा मिल कर हो, राजोंके लिये उचित हैं। री सुन्दरी! मैं तुमसे विवाह करनेको अभिलाषी हुआ हूं और इसमें तुम्हारीभी इच्छा है, सो गान्धर्व्व विवाहके अनुसार मेरी पत्नी होना तुम्हारे लिये अनुचित नहीं होगा। शकुन्तला बोली, कि हे प्रभो पौरवश्रेष्ठ ! यदि यह धर्म्म पथके अनुसार होवे और आत्मसमर्पणके विषयमें मुझको अधिकार रहे, तो सुनिये मेरा एक प्रण है। महाराज ! मैं इस निर्ज्जन स्थानमें कहती हूं, कि मुझसे प्रण कीजिये, कि मेरे गर्भसे जो पुत्र उत्पन्न होगा वह पुत्र युवराज और आपके पीछे अधिकारी होगा ; हे दुष्मन्त मैं सच कहती हूं, कि यदि ऐसा हो, तो आपको विवाह करने में मुझे आपत्ति नहीं है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि राजाने और कुछ न विचार करके शकुन्तला की बात मान ली और बोले, कि री शुद्धमुखि ! तुम जिस योग्य हो, वही करूंगा और तुमको राजधानीमें ले जाऊंगा, री सुश्रोणि ! मैं तुमसे यह प्रण कर चुका। राजर्षि दुष्मन्त सुदलन शकुन्तलाके यह कहकर यथाविधि पाणिग्रहण करके उसके साथ मिले। अनन्तर उसको समझा बुझाकर करके विश्वास कराकर निज नगरी को पधारे। आनेके काल शकुन्तलासे बारबार बोले, कि री शुद्धमुखि ! राजधानी में चलकर तुम्हारे लिये चतुरङ्गिनी सेना भेजूंगा उस और उस सेनाके साथ तुमको राजधानीमें ले जाऊंगा।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे जनमेजय ! राजा शकुन्तलासे वह प्रतिज्ञाकर यह सोचते हुए चले, कि तपस्वी कण्व आश्रममें आकर यह सब सुनकरके क्या समझेंगे, क्या करेंगे, ऐसेही सोचते हुए उन्होंने निज राजधानीमें

।श किया। अनन्तर कुछ कालके पश्चात् ऋषि कण्वके आश्रममें आ पहुंचने पर, शकुन्तला लज्जावश होकर उनके पास नहीं गयी। व्य ज्ञानयुक्त महातपा भगवान् कण्व दिव्य ग्रोंसे सम्पूर्ण वृत्तान्तको जानकर प्रसन्नचित्त ए और बोले, कि भद्रे! आज मेरी सम्मकि विना एकान्तमें पुरुषसे मिलनेसे तुम्हारे र्म्मकी हानि नहीं हुई; क्योंकि कहा है, त्रियके लिये गान्धर्व्व विवाह श्रेष्ठ होता ; निर्जन स्थानमें कामयुक्ता नारीसे कामयुक्त ना मन्त्र जो मिलन होता है, वही गान्धर्व्व वाह कहाता है। राजा दुष्मन्त धर्म्मात्मा, हात्मा और पुरुषश्रेष्ठ हैं; जो शकुन्तले! वह मको भज चुकी हैं,और तुमनेभी उनको पतित्वमें रण कर लिया है, इससे तुम्हारे गर्भसे एक हात्मा महावली पुत्र जन्म लेगा। वह पुत्र म्पूर्ण भूमण्डलका अधिपति होगा और विपत्तकी विरुद्ध रणयात्रा करनेके कालमें उस हात्मा चक्रवर्त्तीके रथके चक्र कभी नहीं रुकेंगे।

अनन्तर शकुन्तलाने फल और यज्ञकी लकड़ीके बोझको रखकर मुनिके पांव धो दिये, पीछे उनकी थकावट दूर होते और सुखसे बैठे देखकर बोली, कि पिता! पुरुषश्रेष्ठ राजा दुष्मन्तको मैंने पतित्वमें वरण कर लिया है इस लिए आप कृपाकर उस राजा और उनके मन्त्रियोंपर प्रसन्न होवें। कण्व बोले, कि री बेटी! मैं तुम्हारे लिये उनपर प्रसन्न हुआ हूं. री शुभे! तुम मुझसे मनमाना वर लो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर शकुन्तलाने दुष्मन्तकी हिताभिलाषिणी होकर पौरवोंकी धर्म्मनिष्ठा और राज्यसे च्युत न होनेका वर मांगा।

आदिपर्व्वमें शकुन्तलोपाख्यानमें
तिहत्तरवां अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि राजा दुष्मन्त प्रतिज्ञामें आवद्ध होकर राजधानीको लौट गये। सुन्दरी शकुन्तलाने तीन वर्षके पूरे होने पर दुष्मन्तके वीर्य्यसे जन्म लिये हुए प्रज्वलित अग्निके समान अपार वीर्य्यवान् उदार गुणवान् एक पुत्र प्रसव किया। श्रीमान् कुमार दिनोंदिन बढ़ने लगा; पुण्यशील ऋषिने विधिपूर्व्वक उसके जातकर्म्मादि संस्कार किये। शुक्ल और तेज दांतयुक्त सिंह समान कठोर शरीरधारी चक्रवर्त्तीके चक्रावत् चिह्नसे रंगे हुए हस्तयुक्त, महामूर्द्धा,अति बलवन्त,महासत्त्वदेवकुमार समान वह कुमार मुनिके आश्रममें शीघ्र बढ़ने लगा। वह बलवान् बालक ६ वर्षकी अवस्थामें आश्रमके सिंह, व्याघ्र, शूकर, भैंसे हाथी आदिको पकड़कर निकटके वृक्षोंमें बांध रखता था और उन सिंह व्याघ्रोंमें किसीपर खेलता हुआ घूमता फिरता था। कण्वके आश्रममें रहनेवाले मुनिलोग उन लीलाओंको देखकर समझा करते थे, कि यह बालक सर्व्व जीवोंकाही दमन करता है; सो इसका "सर्व्वदमन" नाम रहा। विक्रमसे तेजोवन्त और बलवान् तभीसे सर्व्वदमन नामसे प्रसिद्ध हुए।

महर्षि कण्वने तब कुमारका असाधारण बल और कार्य्य देखकर शकुन्तलासे कहा, कि इस बालकके युवराजके पद पर अभिषिक्त होनेका समय आ पहुंचा है। अनन्तर उन्होंने शिष्योंको बुलाकर कहा, कि तुम इस आश्रमसे पुत्र सहित शकुन्तलाको सर्व्व लक्षणयुक्त पतिके घरमें लेजाओ। स्त्रियोंको सदा पिताके घरमें रहना नहीं चाहिये; ऐसा होनेसे कीर्त्ति, चरित्र और धर्म्म विगड़ सकता है, सो इसको पतिके घर ले जानेमें और कुछ भी विलम्ब मत करो। महातेजस्वी शिष्यलोग ऋषि कण्वकी आज्ञाको मानकर पुत्रसहित शकुन्तलाको आगे करके हस्तिनापुरको पधारे। अच्छे भौंहोंवाली शकुन्तला भी अमर समान प्रकाशमान् पद्मनेत्र-

वान् निज पुत्रको लेकर दुष्मन्तके जाने हुए उस वससे आने लगी। आगे वे सब उस नये सूर्य्यसदृश तेजस्वी बालकके साथ राजाके द्वार पर पहुंचकर द्वारपालसे राजाको खबर देकर राजमन्दिरमें प्रविष्ट हुए। अनन्तर ऋषि कण्व के शिष्यलोग सम्पूर्ण हाल राजाके सम्मुख कहकर आश्रमको ओर लौटे।

शकुन्तला राजाका यथानियम सत्कार कर बोली, कि आपके इस पुत्रने मेरे गर्भसे जन्म लिया है, देवता समान यह पुत्र आपहीके वीर्य्यसे उत्पन्न हुआ है, सो इसको युवराजके पद पर बैठाइये; हे पुरुषश्रेष्ठ! आप जिस प्रकार स्वीकृत हुए थे, वैसाही कार्य्य कीजिये। हे महाभाग! पहिले आपने मुनि कण्वके आश्रममें मुझसे सङ्गमके समय जो प्रतिज्ञाकी थी, उसको स्मरण कीजिये। अनन्तर शकुन्तलाके यह वचन सुनतेही नरनाथ दुष्मन्तको अपना किया हुआ पूर्व्व कार्य्य स्मरण हुआ; तिस पर भी वह कहने लगे, कि मुझे कुछभी स्मरण नहीं है। अरी दुष्ट तपस्विनि! तू किसकी स्त्री है? तुझसे मेरा धर्म्म, अर्थ और काम किसी विषयके सम्बन्धका रहना मुझको स्मरण नहीं होता, सो तू अब जो चाहती है कर चाहे चली जा, चाहे रह।

दुष्मन्तके ऐसो निष्ठुर वाणी कहनेपर तपस्विनी सुन्दर शकुन्तला लज्जासे मलिन और अचेतन बनकर दुःखसे जड़के समान खड़ी रही। अभिमान और दुःखमें उसकी आंखें लाल हो गयीं और दोनों होठ हिलने लगे। तब वह तिर्छी दृष्टिसे राजाकी ओर देखकर कटाक्षसे मानों उनको भस्म करने लगी, उसने क्रोधयुक्त होने परभी बाहर कुछ न प्रगटकर तपसे बटोरे हुए तेजको रोक लिया। अनन्तर कुछकाल सोचकर दुःख और खेदयुक्त होके क्रोधसे पतिकी ओर देखकरके बोली, कि महाराज! आप सब जान करकेभी क्यों नीचजनके समान बिन सोचे विचारे "नहीं जानता" क्या बात कह रहे हैं? चाहे यह विषय सच वा झूंठ हो, पर आपका हृदय सभी जानता है, सो आत्माको गवाहीसे जो मङ्गलयुक्त होवे कह दीजिये, आत्माकी मानहानि न कीजिये? जो जन हृदयमें कुछ रखता है और बाहर कुछ प्रगट करता है, उस आत्मचोर चोरसे कौन पाप है, जो नहीं होता। क्या आपने यह समझ लिया है, कि मैंने अकेले यह कार्य किया है, साथ कोई नहीं था, कौन जानेगा। क्या आप नहीं जानते, कि पुराण मुनि परमेश्वर सबके हृदय-मन्दिरमें सदा सजग हैं उसके पास कोई पाप छिपा नहीं रहता; आप उसके सामनेही यह पाप कर रहे हैं? लोग पापकर समझते हैं, कि किसीने नहीं जाना, पर देवों और हृदयके परम पुरुषको वह अज्ञात नहीं रहते। आदित्य, चन्द्रमा, वायु, अग्नि, आकाश, धरती जल, हृदय, यम, दिन, रात्रि, दोनों सन्ध्या और धर्म्म यह लोग सम्पूर्ण चरित्रोंसे ज्ञात रहते हैं, सब कामोंके साक्षी हृदय मध्यके क्षेत्रज्ञ पुरुष जिनपर प्रसन्न रहते हैं, वैवस्वत काल उनकी सम्पूर्ण दुष्क्रिया नष्ट कर देते है और जिस दुरात्माकी आत्मा सन्तुष्ट नहीं होती, काल उसको पापके कीचड़में गाड़कर पीड़ा पहुंचाते हैं। जो जन अपने आत्माका अपमान कर कुछका और ही विश्वास दिलाता और आत्माकी गवाही नहीं मानता है, देवगण उसका हित नहीं करते। मैं पतिव्रता स्वयं आ पहुंची हूं कहकर मेरा अपमान न कीजिये। मैं आदरयोग्य स्त्री स्वय आयी हूं, इस समय आदरपूर्व्वक मुझे लेना आपका कर्त्तव्य है, पर आप नहीं लेते हैं। आप क्यों नीचजनकी भांति इस सभामें मुझको तुच्छ समझ रहे हैं, क्या मैं शून्यमें चिल्ला रही हूं? हे दुष्मन्त मैं बार बार प्रार्थना करती हूं, पर यदि मेरी आज

मानगी, तो आज आपका सिर सैकड़ों गोंमें बँट जायगा। प्राचीन कविलोग हा करते हैं, कि पति स्वयं गर्भके स्वरूपमें ोमें प्रविष्ट होकर फिर पुत्रके स्वरूपमें जन्म ताहै। पतिके उस जन्म लेनेके लियेही पत्नी या कही जाती है, ज्ञानी पुरुषके पुत्र होनेसे ह पुत्र सन्तानोंसे परलोकवासी पितरोंका द्धार करता है। भगवान् स्वयम्भूने स्वयं हा है, कि पुत्र पुन्नाम नामक नरकसे त्राण रता है, इस लिये वह पुत्र कहा जाता है। त्रसे स्वर्ग मिलता है और प्रपौत्रसे प्रपितामह ोग आनन्दित होते हैं। जो गृहकार्य्योंमें ता है, वह भार्य्या है, जिन्होंने पुत्र प्रसव िया है, वही भार्य्या है, जो पतिप्राणा है, ो भार्य्या है, जो प्रतिव्रता हैं, वही र्य्या हैं। मनुष्योंका स्त्री ही आधा अङ्ग है, भार्य्या ोंसे बढ़कर साथी है, भार्य्याही धर्म्मार्थ काम ी तीनों वर्गोंकी जड़ है और भार्य्याही ंसारसे पार करनेका निदान है। जिनके र्य्या है, वही क्रियादि किया करते हैं; जिनके र्य्या है, वही गृहवासी है। जिनके भार्य्या वही आमोद-प्रमोदसे काल काटते हैं; नके भार्य्या है, वही श्रीमान् हैं। प्रियम्वदा र्य्या निरालेमें अच्छे परामर्श देनेवाले मित्रके ान है, धर्म्मकर्म्ममें हितैषी पिताके समान पीड़ाकी दशामें स्नेहवती मातावत् है, और ठे मार्गमें पथिक पांतका विश्रामका स्थल । फिरभी जिसके भार्य्या रहती है, उसीका लोग विश्वास करते हैं, सो भार्य्याही नुष्योंकी परम गति है। किसीके सांसारिक ा अन्तकरने पर नरकमें पैठनेसे उसके ारको निरन्तर केवल पतिव्रता भार्य्याही साथी ती है, पतीके पाहिले परलोक सिधारनेसे ी पतिके निमित्त पथ ताकती रहती है, और तके पाहिले देह छोड़नेसे सती भार्य्या के पीछे जाती है। हे राजन्! क्योंकि भर्त्ता इस लोक और परलोक दोनों लोकोंमें भार्य्याको प्राप्त करता है, इसलिये विवाहकर्म्म विधिवद्ध हुआ है। पण्डितलोग कहा करते हैं, कि आपहीसे आप पुत्रके स्वरूपमें जन्म लेता है, सो पुत्रवती भार्य्याको अपनी माताकी नाईं जानना। पुण्यवान् स्वर्ग पानेसे जैसे आनन्दित होते हैं, आईनेमें देखे जाते हुए मुखकी नाईं भार्य्याके गर्भसे जन्म लिये हुए पुत्रको देखकर जन्मदाता तैसेही आनन्दित होते हैं। पसीनेसे न्हाया हुआ जन जिस प्रकार ठण्डे जलने सन्तुष्ट होता है, मनुष्यगण मनःपीड़ासे जलने और रोगोंसे जकड़े जानेपरभी भार्य्यासे वैसेही आनन्दित होते हैं; अति क्रोधित होनेपर भी पतिको पत्नीका अप्रिय कार्य्य न करना चाहिये, क्योंकि रति, प्रीति और धर्म्म सबही भार्य्याके हाथमें हैं। स्त्रियां आत्माकी सनातन पवित्र धर्म्मक्षेत्र हैं, ऋषियोंको भी ऐसी शक्ति नहीं है, कि स्त्रीके बिना प्रजा रचें। यदि पुत्र धरतीकी धूलमें शरीरको रङ्गकर निकट आकरके पिताके गलेसे लगे, तो उससे फिर क्या अधिक सुख मिलना है? हे राजन्! आपका यह पुत्र स्वयं आकर उत्साहयुक्त नेत्रोंसे आपको देख रहा है, तिस परभी आप किस लिये उसका अपमान कर रहे हैं? देखिये चौंटियां छोटी प्राणी होनेपरभी प्रसव किये हुए अण्डोंकी रक्षा करती हैं, बिगाड़ती नहीं; आप धर्म्मज्ञ होनेपरभी क्यों अपने पुत्रको नहीं पालेंगे? छोटी सन्तानके गलेसे लगनेसे उसका अनुभव पिताको जैसा सुखदायी जान पड़ता है, कोमल वस्त्र, जल और नारीका अनुभवभी वैसा सुखदायी नहीं होता। जिस प्रकार दो पाये जन्तुओंमें ब्राह्मण प्रधान है, चार पायोंमें गौ श्रेष्ठ है और माननीय जनोंमें गुरु, सुखानुभवोंमें पुत्रानुभवही श्रेष्ठ है। यह सुन्दरमूर्त्ति पुत्र आपको गलेमें लग कर अनुभव करे, क्योंकि पुत्रानुभवसे दूसरा

अनुभव पृथ्वीमें नहीं है। हे अरिन्दम राजेन्द्र! तीनवर्ष पूरे होनेपर मैंने आपके इस शोकनाशी पुत्रको प्रसव किया है; हे पौरव! पहिले सौरिमें आकाशवाणी हुई थी, कि यह पुत्र सौ अश्वमेध यज्ञ करेगा! मनुष्यलोग दूसरे गांवमें जाकर जब घरको लौटते हैं, तब पुत्रको गोदमें लेकर सिर चूम कर परमानन्द प्राप्त करते हैं। पुत्रके जातकर्म्ममें ब्राह्मणलोग जो यह वैदिकमन्त्र पाठ करते हैं, कि "तुम मेरे अङ्गसे निकले हो, तुम मेरे हृदयजात पुत्ररूपी आत्मा हो, तुम्हारी शत वर्षकी आयु होवे, बेटा। मेरा जीवन और वंशका अक्षय होना तुम्हारेही अधीन है, सो तुम शत वर्षकी आयु पाकर परम सुखसे काल काटो" उसमें आपभी ज्ञात हैं। हे राजन्! आपके अङ्गसे यह दूसरा पुरुष उत्पन्न हुआ है, निर्मल सरवरमें दीख पड़ती हुई, निज परछांहीसी अपनी दूसरी आत्मा इस पुत्रमें आप देख लीजिये। जिस प्रकार एक गार्हपत्य अग्निसे आहवनीय अग्निकी उत्पत्ति होतीहै, वैसेही आप एक होने परभी आपसे जन्मे हुए इस पुत्रके स्वरूपमें स्वयं दोभाग हुए हैं। महाराज। मैं जब पिताके आश्रममें कुमारी थी, तब आपने मृगयामें जाकर मृगको पछियाते हुए वहां पहुंच करके मुझसे विवाह कर लिया था। उर्व्वशी; पूर्व्वचित्ति, सहजन्या, मेनका, विश्वाची और घृताची यह छः अप्सरा औरोंसे श्रेष्ठा हे, उनमें ब्रह्माजीसे जन्मी हुई अप्सरा मेनकाने देवलोकसे भूतलमें उतरकर गर्भधारण किया था। आगे वह मन्दस्वभावा मेनका हिमाचलके चट्टान पर मुझको प्रसव कर परायी सन्तानकी नाईं छोड़के चली गयी, हा! मैंने पूर्व्वजन्ममें कैसा पाप किया होगा, कि बचपनमें पिता माताने मुझे त्याग दिया और अब आपभी मुझको छोड़ रहे हैं। आपके मुझे छोड़नेमें मैं स्वेच्छासे निज आश्रमको चली आऊंगी, पर यह बालक आपकी है, आपको इसे छोड़ना नहीं चाहिये।

दुष्मन्त बोले, कि शकुन्तले! मैं नहीं जानता, कि तुम्हारा गर्भोत्पन्न यह बालक मेरा पुत्र है वा नहीं; तुम्हारी बात पर किसको परतीत होगी? स्त्रियां प्रायः झूठी बात कहा करती हैं; विशेष तुम्हारी जननी व्यभिचारिणी दयाहीना मेनका निर्म्माल्य त्यागनेकी भांति तुमको हिमाचलकी पीठ पर छोड़ गयी थी और क्षत्रियवंशी, ब्राह्मणलोभी निर्दय स्वभावी विश्वामित्रभी कामवश होकर तुम्हारे जनक हुए थे। यदि यह कहो, कि मेनका अप्सराओंमें प्रधाना और विश्वामित्र ऋषियोंमें श्रेष्ठ हैं, तो फिर तुम उनकी सन्तान होकरके क्योंकर वेश्यासी बात कह रही हो? क्या तुमको श्रद्धाके अयोग्य बातके कहनेमें तुमको लज्जा नहीं होती? विशेष तुम मेरे सामने यह बात कह रही हो; रीदुष्ट तपस्विनी! तू यहांसे चली जा। वह सर्व्वश्रेष्ठ महर्षि कहां? और नीच वा अप्सराओंमें श्रेष्ठ मेनका कहां? और नीच तपस्विनीका वेष बनाये हुई तू कहां? तेरा यह पुत्र बालक होनेपर भी मोटा ताजा और वलिष्ठ दीख पड़ता है, थोड़े कालहीमें यह क्योंकर शालवृक्षसा बढ उठा। तेरा जन्म बड़ा नीच है, उससे तू वेश्याकी बात कहती है। मेनकाने कामके वशमें होकर जैसे चाहा है, वैसेही तुझको पैदा किया है। री तापसि! तू जोकुछ कहती है, वह सब मेरा अनजाना, अनसुना और अनसोचा है; मैं तुझको नहीं जानता, जहां तेरी इच्छा हो तहां चली जा।

अनन्तर शकुन्तला बोली, कि राजन्! पराया दोष सर्सोंके समान होनेसेभी देख लेते हैं, पर अपना दोष वेलफलके समान होनेपरभी नहीं देखते। हे दुष्मन्त! मेनका देवोंकीही प्रेमी और देवगण मेनकाहीके प्रेमी हैं, सो आपके

न्मसे मेरा जन्म श्रेष्ठ है। हे राजेन्द्र! देखिये, पहाड़ और सर्पोंके समान हम दोनोंमें प्रभेद है, आप धरतीपर चलते हैं, और मैं आकाशको उड़ती हूं। हे नृप! देखिये, हमारा प्रभाव कितना है; मैं महेन्द्र, कुवेर, यम और वरुण इनके मन्दिरोंमें जा सकती हूं। हे अनघ! एक सच कहावत यह है, मैं उदाहरणके लिये आपसे कहती हूं द्वेषसे नहीं कहती,सो आप इसे सुनकर मेरी बात क्षमा कीजियेगा; कुरूप जन जबतक दर्पणमें अपना मुख नहीं देखता, तबतक अपनेको औरोंसे सुन्दर समझता है, पर जब दर्पणमें अपना मुख बुरा देखता है, तब जान सकता है, कि औरोंसे अपना कितना प्रभेद है। अच्छे रूपवान् जन किसीका अनादर नहीं करते; बहुत कड़ी बात कहनेसे लोग निन्दक या औरोंके पीड़ा-देने-वाले गिने जाते हैं सूअर जैसे और सब वस्तुओंमेंसे केवल विष्ठाको चुन लेता है, वैसेही मूर्ख जन कहनेवालेके हित और अहित वाक्योंमेंसे केवल अहित वाक्यहीको ध्यानमें लाते हैं; फिर हंस जैसे जल और दूधकी मिलावटसे जलके भागको छोड़कर दूध ले लेता है, वैसेही ज्ञानी पुरुष कहनेवालेकी हिताहित बातोंको सुनकर केवल गुणयुक्त बातकोही ध्यानमें लाते हैं। औरोंकी निन्दा करनेसे जिस प्रकार साधु दुःख मानते हैं, वैसेही परायी निन्दा कर असाधु जन प्रसन्न होते हैं। साधुजन बड़ोंका सम्मान कर जैसे सन्तुष्ट होते हैं,वैसेही निन्दित जन सज्जनोंकी निन्दाकर आनन्दित होते हैं। मूर्खलोग नहीं जानते, कि दोष क्या है, पर पराये दोषोंके देखनेवाले बनकर सुख-चैनसे काल काटते हैं: वे जिन दोषोंके कारण पण्डितोंसे निन्दनीय होते हैं, पण्डितोंको उन्हीं दोषोंसे निन्दित कहा करते हैं। पर लोकोंमें इससे अधिक हंसीकी बात और क्या हो सकती है, कि स्वयं दुर्जन होकर सुजनको दुर्जन कहके लाञ्छन करे? जिस प्रकार क्रोधित सर्पसे भय होता है, वैसेही सच्चे धर्म्मसे गिरे हुए जनसे नास्तिकभी भय खाता है, फिर आस्तीकके भयभीत होनेमें कौनसा अचरज है? जो पुरुष स्वयं आत्मरूपी सन्तान उत्पन्न कर स्वीकार नहीं करता है, देवगण उसकी श्री बिगाड़ देते हैं और उसका स्वर्गभोग नहीं होता। पितृगण पुत्रको वंश और स्वजनोंकी प्रतिष्ठारूपी और सर्व्व धर्म्मसे श्रेष्ठ कहा करते हैं, सो ऐसे पुत्रको त्याग देना उचित नहीं है। भगवान् मनुने औरस,क्षेत्रज, कानीन, गूढ़ज और सहोढ़ इन पांच प्रकारके पुत्रोंको निज पत्नीके गर्भजात और अपविद्ध, क्रीत, विवर्द्धित आदि सात प्रकारके पुत्रोंको अन्यसे उत्पन्न, सब मिलाकर बारह प्रकारके पुत्र ठहराये हैं। हे राजसिंह धर्म्म, कीर्त्ति, और चित्तकी प्रीति बढ़ानेवाले पुत्रगण जन्म लेकरके धर्म्मरूपी नाव बनकर पितरोंको नरकसे उद्धार करते हैं; सो पुत्रको त्यागना नहीं चाहिये। हे पृथ्वीनाथ! सत्य, धर्म्म और आत्माकी रक्षा कीजिये। हे नरेन्द्र-सिंह! इस विषयमें आपको कपट करना कर्त्तव्य नहीं है; देखिये, सैकड़ों कूपोंकी प्रतिष्ठासे एक तालकी प्रतिष्ठा श्रेष्ठ है, सैकड़ों तालोंकी प्रतिष्ठासे एक यज्ञका करना श्रेष्ठ है, सैकड़ों यज्ञोंसे एक पुत्र श्रेष्ठ है और सैकड़ों पुत्रोंसे एक सत्यनिष्ठा श्रेष्ठ है। यदि एक तौलपर एक और सहस्र अश्वमेध और दूसरी ओर सत्यनिष्ठाको रखकर तौला जाय, तो सहस्र अश्वमेधोंसे एक सत्यनिष्ठा भारी होगी। हे राजन्! इसमें सन्देह है, कि सर्व्व वेदोंका पठन और सर्व्व तीर्थोंमें स्नान एक सत्य वाक्यके तुल्य होता है वा नहीं। सत्यके समान धर्म्म नहीं है, असत्यसे बढ़कर पाप और कोई भी नहीं है। हे राजन्! सत्यही परब्रह्म और सत्यही परम-नियम है। हे नृपते! आपने मुझसे जो नियम किया था,

लङ्घन न कीजिये; अपना प्रण पूरा कीजिये। पर यदि मिथ्याही पर आपको प्रेमही और उससे आप मेरी इस सत्य बातकी परतीत न करें, तो मैं स्वयं चली जाती हूं; आपसे मेरे मिलनका प्रयोजन नहीं है। हे दुष्मन्त! आपके न लेनेसेभी मेरा यह पुत्र शैलराजसे अलंकृता इस पृथ्वीका चारों समुद्रों तक शासन करेगा।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि शकुन्तला यह सब कहकर चली गयी। अनन्तर ऋत्विक, पुरोहित, आचार्य और मन्त्रियोंसे घिरे हुए राजाको आकाशवाणी हुई, कि "हे दुष्मन्त! माता चमड़ेके कोषके समान है, उसमेंसे पिता स्वयं ही पुत्रके स्वरूपमें जन्म लेते है, सो पुत्रको पालो पोषो। शकुन्तलाका अनादर मत करो हे नरदेव! निज वीर्य्यसे उत्पन्न हुई सन्तान यमराजके घरसे उद्धार करती है; ऐसा सन्देह न करना, कि यह पुत्र तुम्हारा है वा नहीं, तुम्हींने यह गर्भाधान किया है। शकुन्तलाने जो कुछ कहा है, सब सत्य है। हे दुष्मन्त! अपना अङ्ग दो भागोंमें बंटकर पुत्रके स्वरूपमें भार्य्याके गर्भसे जन्म लेता है; अतएव शकुन्तलाके गर्भजात निजपुत्रका पालन करो। हे पौरव! जीते हुए पुत्रको तजकर जीवन धरना अति दुर्भाग्यकी बात है; शकुन्तलाके गर्भजात इस महात्मा दुष्मन्त-नन्दनका पालन करो; हमारी बातके अनुसार तुमको इस पुत्रका भरण करना होगा, इस हेतु इसको नाम भरत होगा।"

पुरुकुलोत्पन्न राजा दुष्मन्तने ऐसी देववाणी सुनकर प्रसन्नचित्तसे पुरोहित और मन्त्रियोंसे कहा, कि आप इन देवदूतकी बात पर ध्यान दीजिये और मैंभी वैसाही जानता हूं, कि इस पुत्रने मुझसेही जन्म लिया है; यदि मैंने शकुन्तलाके वाक्यानुसार अपने पुत्रको ले लिया होता, तो प्रजा यह शङ्का करती, कि यह पुत्र शुद्ध न भी हो सकता है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भारत! तब ... देव; तसे पुत्रको विशुद्ध कराकर प्रसन्न प्रमुदित चित्तसे ग्रहण कर लिया। ... प्रीतियुक्त और ... मुदित होकर दसारको ... योग्य कर्म्म सम्पन्न करके शिर चूमकर ... प्रकट करते हुए, गलेसे लगाया। तब ब्राह्मण लोग अशीस देने लगे और भाट स्तुति ... लगे; राजा पुत्रालिङ्गन लाभकर परम आनन्दित हुए, आगे धर्म्मानुसार पतिव्रता पत्नीका सम्मान कर समझाते हुए कहने लगे, कि ... लोकोंमें कोई नहीं जानता, कि मैंने ... विवाह किया है, इसलिये तुम्हारी ... निमित्त मैंने ऐसा व्यवहार किया और ... ऐसा समझ सकते हैं, कि केवल सुखकी ... लालसासे इनका सङ्गम हुआ, विवाह ... हुआ, यह बिना विधिसे उत्पन्न हुआ ... राज्यका अधिकारी बना, इस लोकापवाद ... दूर करनेके लिये ऐसा चरित्र प्रकट किया ... प्यारी विशालाक्षी! तुमने क्रोधिता होकर मुझको जो अप्रिय बातें कही हैं, हे शुभे! ... मेरी प्यारी हो, इस लिये उन सबों को ... करता हूं। हे भारत! राजर्षि दुष्मन्त ... प्यारी महिषी शकुन्तलासे उस प्रकार कह ... अन्न, पान और वस्त्रादियोंसे उसका सत्कार किया। आगे शकुन्तलाके गर्भजात पुत्र ... "भरत" यह नाम देकर युवराजके पदमें अभि... षिक्त किया। तबसे उन महात्मा भरत... प्रज्वलित, जीतनेके अयोग्य, दिव्य और ... प्रख्यात महत् चक्र प्रवर्त्तित हुआ। वह महीपालोंको जीतकर वशमें लाये और साधुओंके आचरण किये जाते हुए धर्म्मका अनुष्ठान करने लगे, इनका सुन्दर यश भूमण्डलमें फैल गया ... वह महा प्रतापी और सार्व्वभौम चक्रवर्ती हुए और देवराज इन्द्रकी भांति बहुयज्ञानुष्ठान करने लगे। महर्षि कण्वने उनसे प्रचुर दक्षिणा-युक्त यज्ञ कराया था। उन ...

रतने गोवितत नामक अश्वमेध-यज्ञ करके स्में भगवान् ऋषि कण्वको सहस्र पद्म धन न दिया था।

यह भारतीय कीर्त्ति उन भरतहीसे हुई है ौर उन्हींसे यह भरत-वंश फैला है। भरतके श्में जिन सब देवव्रत महात्मा ब्रह्मकल्प, नेक राजर्षियोंने जन्म लिया था, वे भारत ामसे प्रख्यात हुए; उन सबोंके नाम अगणित । हे भारत। उनमें जो प्रधान, महा ाग्यवान् देवकल्प और सत्यशील हैं, उन्हींके ाम कहूंगा।

आदिपर्व्वके चौहत्तरवां अध्यायमें शकुन्तलोपाख्यान समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे अनघ। प्रजा- ति दक्ष, वैवस्वत मनु, भरत कुरु, पुरु, आज- ढ़, यादव और सम्पूर्ण कौरवोंकी पवित्र हत् स्वस्त्ययनयुक्त, धन और यश तथा आयु नेवाली सम्पूर्ण वंशकी कथा तुमसे कहता । प्रचेताके दश पुत्र थे, वे सब तेजसे प्रज्व- ित महर्षि-समान तेजस्वी, साधु और पुण्य- ील थे, उनके मुखसे निकली हुई आगसे हिले वृक्ष-औषधि सब जल भुन गयी थीं। न दशोंसे प्राचेतस प्रजापति दक्ष उत्पन्न हुए । दक्षसे यह सब प्रजा रची गयी है। हे पुरुषव्याघ्र। वह दक्षही लोकोंके पितामह । प्राचेतस मुनि दक्षने वीरणी नाम्नी पत्नी मिलनसे अपने सदृश शंसितव्रत सहस्र पुत्र त्पन्न किये। आप नारदने दक्षसे जन्म लिये ए उन सहस्र पुत्रोंको मोक्षसाधन और अत्यु- म सांख्यज्ञान की शिक्षा करायी। हे जन- जय। आगे उन प्रजापति दक्षने बहु प्रजा नेकी इच्छासे पचास कन्याओंको पुत्रिका नाया। उन पचास कन्याओंमेंसे दश धर्म्मको, ...रह कश्यपको, और समय-दशानेवाला नक्षत्र- ... ... दिया। कश्यपजीकी

तेरह पत्नियोंमेंसे दाक्षायणी अदिति बड़ी थी; उस अदितिने मरीचिके पुत्र कश्यपजीके मिल- नसे वीर्य्यवान् इन्द्रादि देवता और विवस्वान् सूर्य्यको प्रसव किया। विवस्वान सूर्य्यके मनु नामक एक धीमान् पुत्र उत्पन्न हुए, वह सर्व्वशास्त्रोंके विधान करनेवाले थे। उन विव- स्वानहीसे मनुके छोटे भाई प्रभु वैवस्वत यमने जन्म लिया। मनु बड़े बुद्धिमान और धर्म्मात्मा थे, उन्हींसे यह मानव-वंश प्रसिद्ध तथा प्रति- ष्ठित हुआ है। ब्राह्मण क्षत्रियादियोंने उन्ही मनुसे जन्म लिया है, इस हेतु वे मानव करके प्रसिद्ध हुए। हे महाराज। अनन्तर ब्राह्मण लोग क्षत्रियोंसे सङ्गत हुए। सम्पूर्ण गुणोंमें मनुज ब्राह्मणगणने साङ्गवेद धारण किया। मनुके वेन, धृष्णु, नारिष्यन्, नाभाग, इक्ष्वाकु, कारूष, शर्य्याति, पृषध्र, और नाभारिष्ट यह नौ क्षत्रिय धर्म्मशील पुत्र और इला नाम्नी एक कन्या हुई थी। इनके अतिरिक्त इस पृथ्वीमें उन मनुके और पचास पुत्र हुए थे, सुन चुका हूं, कि वे आपसमें लड़कर नष्ट हुए हैं। अनन्तर विद्वान पुरुरवाने इलासे जन्म लिया था; हमने सुना है, कि इलाही पुरुरवाकी माता और पिता थी। महाशोभावान् पुरुरवाने मनुष्य होने परभी आमनुष्य साथियोंसे घेरे जाकर महासागरके तेरह द्वीपोंको अधिकारमें कर लिया था। उन्होंने वीर्य्यके बलसे बाव- लेसे बनकर ब्राह्मणोंसे झगड़ा मचाया, तिसपर विप्रोंके चिल्लाचिल्लाकर रोने परभी उनका सम्पूर्ण रत्न हर लियाथा। हे राजन्! अन- न्तर ब्रह्मलोकसे सनत्कुमारने आकर उनको ...तके अनुसार उपदेश किया; उसपरभी उन्होंने ध्यान नहीं दिया, इससे महर्षियोंने एकत्र होकर उनको शाप दिया; ... ... लोभी भूप शापग्रस्त ... ... नष्ट हुए। ... ...

विधिपूर्व्वक दाक्षिणाग्नि, गार्हपत्य और आह-वनीय इन तीन प्रकारके अग्निको लाये थे। इलापुत्र पुरुरवाके वीर्य्य और उर्व्वशीके गर्भसे ६ पुत्रोंने जन्म लिया था; उनके नाम आयु, धीमान्, आमावसु, दृढ़ायु थे। आयुके वीर्य्य और स्वर्भानुपुत्रीके गर्भसे नहुष, वृद्ध-शर्म्मा, राजी, गय और अनेना यह पांच पुत्र भये, आयुके पुत्र नहुष धीमान् तथा सच्चे पराक्रमी थे। हे पृथ्वीनाथ! उन्होंने उत्तम रीतिसे धर्म्मानुसार राज्य का शासन किया। नहुषने पितृगण, देवगण, विप्रगण, और गन्धर्व्व सर्प, राक्षस, ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्योंका पालन किया था। उन्होंने निज भुजबलसे लुटेरोंको नष्ट करके ऋषियोंको करदाता बनाया, और एक समय उन ऋषियोंको पशुकी भांति वाहन बनाया था। वह तेज यश, बल और विक्रमसे देवोंको हराकर इन्द्रके पदपर आरूढ़ हुए थे। उनके याति, ययाति, संयाति, आयाति अयति और ध्रुव यह ६ प्रिय बोली बोलनेवाले पुत्र जन्मे थे। यति योगाश्रय करके ब्रह्मज्ञ मुनि बने थे।

सत्य पराक्रमी नहुषपुत्र ययाति सम्राट हुए, उन्होंने पृथ्वीका पालनकर अनेक यज्ञ किये थे और यतात्मा होकर अति भक्तिसे देवगण और पितृगणकी उपासना करते थे। अजेय ययाति सम्पूर्ण प्रजाओं पर दया प्रगट करते थे, हे महाराज! देवयानी और शर्म्मि-ष्ठाके गर्भसे उनके सर्व्वगुणयुक्त चापधारी पुत्रने जन्म लिया था। उनमें देवजानीके गर्भसे यदु और तुर्व्वसुका जन्म हुआ, द्रुह्यु, अनु और पुरु, इन्होंने शर्म्मिष्ठाके गर्भसे जन्म लिया। हे राजन्? ययाति बहु वर्षों तक धर्म्मानुसार प्रजा पालनकर अन्तमें रूपनाशी अति कठोर जरासे जकड़े गये। हे महा-राज! तब राजा जरासे जकड़े जाकर यदु पुरु, तुर्व्वसु, द्रुह्यु, और अनु इन पांच पुत्रोंको बुलाकर बोले, कि मैं युवा युवतियोंसे मनमाना भोगकर विहार चाहता हूं, हे पुत्र! तुम उस सहारा दो। अनन्तर देवजानीके बड़े पुत्रने कहा, कि कहिये, हमारे आपका कौनसा कार्य्य करना है। उनसे बोले, कि तुम मेरे बुढ़ापेको मैं तुम्हारे यौवनसे ऐश्वर्य्य भोगूं। मैं दीर्घयज्ञमें दीक्षित था, उस कालमें शुक्राचार्य्यके शापसे जराग्रस्त हुआ हूं। कारण मैं अत्यन्त सन्तापित हो रहा हूं, तुममेंसे कोई मेरे इस जराग्रस्त लेकर राज्य शासन करो, मैं फिर बनकर नये शरीरसे मनमाना भोग करूं।

यदु आदि भाइयोंमेंसे किसीने बुढ़ापेको नहीं लिया। अनन्तर सत्य-विक्रमी पुरुने उनसे कहा, कि महा आप मेरे यौवनको पाकर नये शरीरमें जिये, मैं आपकी आज्ञासे जरा लेकर शासन करता हूं। पुरुकी यह बात कहने राजर्षि ययातिने तप और वीर्य्यके बलसे महात्मा पुत्रमें बुढ़ापा प्रविष्ट कराया। अपने पुत्र पुरुका यौवन पाकर युवा बने ययाति को वृद्धावस्था लेकरके राज्य करने लगे। न हारनेहारे राजसिंह सहस्रवर्ष बीतने परसो सिंह समान बने रहे और दो पत्नियोंमें दीर्घकाल विहारकर फिर विश्वाचीके साथ फुलवाड़ीमें खेलने लगे। महायशा ऐसा करकेभी भोगसे तृप्त नहीं हुए; समझकर उन महात्माने यह कविता पढ़ी जिस प्रकार आगमें घृत छोड़नेसे आग बूझकर बढ़तीही जाती है, उस प्रकार वस्तुओंके भोगसे काम निवृत्त न होकर जायाही करता है। रत्नोंसे भरीपूरी सुवर्ण, पशु और स्त्री यह सब वस्तु एक

के भोगमें आनेसेभी उससे पूरी तृप्ति नहीं सकती, यह समझकर शान्तिका आश्रय ना ही उचित है। जब कोई जन कामना निके लिये कर्म्म मन और वाक्यसे प्राणीपर पि पापाचरण नहीं करते हैं। जब कोई किसी प्रकारसे भय नहीं खाते और से कोई भय प्राप्त नहीं करता तथा वह सी कामको वस्तु पर अभिलाष और सीका द्वेष नहीं करते, तभी वह ब्रह्मको प्त करते हैं। हे नृप। महाप्राज्ञ ययातिने इस प्रकार कामकी तुच्छताका विचारकर से मनको ठोककर पुत्रसे फिर अपना ढापा लेलिया। वह मनमाने भोगसे तृप्त हो करकेही पुत्र पुरुको यौवन देकर उसे ज्यमें बैठाकर बोले, कि तुम्हींसे मैं पुत्रवान् आ हूं; तुम्ही मेरे वंशतिलक पुत्र हो, यह वंश म्हारे नामहीसे प्रख्यात अर्थात् लोकोंमें पौरव श करके प्रसिद्ध होगा।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर नृपसिंह यातिने पुरुको राज्यमें अभिषिक्त करके भृगु- पर्व्वतपर भली प्रकार तपका अनुष्ठान रके महा तपस्वी होकर अनेक काल काटा; लमें वह पत्नीसहित अनसन व्रतसे कालधर्म्म- प्राप्तकर स्वर्गको पधारे।

सम्भवपर्व्वमें पचहत्तरवां अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, कि हे तपोधन। मैं विस्तृत पसे सुना चाहता हूं, कि प्रजापतिसे दशवीं स्थामें गिने जाते हुए हमारे पूर्व्वपुरुष यया- ति परम दुर्लभा शुक्रपुत्रीको क्योंकर प्राप्त या था; और भी आप दूसरे वंशको ानेवाले राजाओंकी कथा आद्योपान्त रीति- क वर्णन कीजिये।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे जनमेजय। कालमें देवराजके समान तेजस्वी नृपति निको शुक्र और वृषपर्व्वाने जिस प्रकार दमादके पद पर वरण किया था और नहुष-पुत्र ययातिसे जिसप्रकार देवयानिका मिलन हुआ था, वह आपसे कहता हूं, सुनिये।

इस चराचरसहित त्रिलोकके ऐश्वर्य्य पानेके विषयमें देवासुरोंमें आपसकी अहङ्कार-युक्त गहरी लड़ाई मची; देवोंने द्वेषवश याजनकार्य्यके निमित्त अङ्गिराके पुत्र मुनि वृहस्पतिको पुरोहितीमें वरित किया, असुरोंनेभी शुक्रको नियुक्त किया; वे दोनों पुरोहित ब्राह्मण नित्य आपसमें अहङ्कार किया करते थे। देवतालोग युद्धस्थलमें उपस्थित हुए जिन दानवोंको वध करते थे, शुक्र विद्याके बलसे फिर उनको जिला देते थे; पर असुरलोग युद्धमें जिन देवोंको गिराते थे, सरल बुद्धियुक्त वृहस्पतिजी उनको जिला नहीं सकते थे; क्योंकि वीर्य्यवान् शुक्रजी जो सञ्जीवनी विद्यासे ज्ञात थे, वृहस्पतिजी उसे नही जानते थे, इससे देवगण बड़े दुःखी हुए। अनन्तर देवोंने कविपुत्र उशनाको देखकर अति भयसे कातर होकर वृहस्पतिके बड़े बेटे कचके निकट आकर कहा, कि हमने तुम्हारी शरण ली बचाओ, तुम हमारी सहायता करो। अति तेजस्वी ब्राह्मण शुक्रमें जो सञ्जीवनी विद्या है, उसे शीघ्र सीख लो; हम तुमको यज्ञांशके भागी बनावेंगे; तुमही वृषपर्व्वाके निकट उन ब्राह्मणकी भेंट कर सकोगे, वह दानवोंको रक्षा करते हैं, देवोंको नहीं बचाते। तुम्हारी अवस्था कम है, सो तुम शुक्रको आराधना कर सकोगे और तुम्ही उन महात्माकी दयिता कन्या देवयानीको उपासना कर सकोगे; इस विषयमें तुम्हारे बिना कोई दूसरा समर्थ नहीं है। देवयानी तुम्हारी शीलता, दाक्षिण्य, मधुरता, आचार और दमसे सन्तुष्ट होवे, तो तुम उस सञ्जीवनी विद्याको अवश्य प्राप्त करोगे। अनन्तर वृहस्पतिके वह बात कहकर हे पूजे जानेके पश्चात वृषपर्व्वाके निकट

हे राजन्। देवोंसे भेजे हुए वह कच शीघ्र चलकर असुरराजके मन्दिरमें शुक्रको देखकरके बोले, कि मैं ऋषि अङ्गिराके पौत्र और बृहस्पतिका औरस-पुत्र हूं। मेरा नाम कच है; आप मुझको शिष्य बनावें। हे ब्रह्मन्। मैं आपको गुरु मानकर सहस्र वर्षों तक परम ब्रह्मचर्य्य अवलम्बन करूंगा, आप आज्ञा कीजिये। शुक्रजी बोले, कि हे कच। तुम्हारा कल्याण होवे, तुम्हारी बात मान ली, तुम मेरे आदरके पात्र हो, तुम्हारे समादर करनेसे बृहस्पतिभी पूजे जायंगे। वैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर कचने कविपुत्र शुक्रकी आज्ञासे ब्रह्मचर्य्य-व्रतको अवलम्बन किया। हे भारत। कच उस व्रतकालको प्राप्त कर उपाध्याय शुक्र और देवयानीकी आराधना करने लगे। युवा कच शुक्रको सन्तुष्ट कर गीत, नाच और बाजेसे तथा फूल, फल और भांति भांतिकी वस्तु देकर और टहलुएके समान आज्ञा मानते हुए युवती देवयानीको सन्तोष देने लगे। देवयानीभी उस निर्जन-पुरमें गीत और लालित्यसे नियम-व्रतशील उन ब्राह्मण कुमारकी सेवा करने लगी। इस प्रकार व्रतानुष्ठान करते हुए, कचको पांच सौ वर्ष बीत गये।

अनन्तर एकदिन वह निर्जन वनमें अकेले गौकी रखवारी कर रहे थे, कि ऐसे समयमें दैत्योंने उनको देखकर यह जान करके, कि यह बृहस्पतिके पुत्र कच है, सञ्जीवनी विद्याकी रक्षाके लिये और बृहस्पतिजी पर द्वेष कर क्रोधपूर्वक उनको मार डाला, आगे उनको टुकड़े टुकड़े कर सियार कुत्तों को दे दिया। हे भारत। इसके अनन्तर गौओंके रखवारेके बिना अपने घर, लौटनेपर देवयानीने देखा, कि गौ वनसे लौट आईं, पर कच नहीं आये, तब वह कुछकाल ठहरकर पितासे बोली, कि हे प्रभु पिता! सूर्य्यदेव अस्ताचल को पधारे, आपका अग्निहोत्र आहुत हुआ और गौ ... वारेके बिना ही आज लौट आईं, पर ... नहीं देखा। हे पिता। मुझको नि... पड़ता है, कि कच मरे या मारे गये; मैं कहती हूं, कि बिना कचके जी नहीं सकूंगी। शुक्रजी बोले, कि "हे कच। चले आओ, ... मरे हो, मैं तुमको जिलाता हूं," यह ... मृत-सञ्जीवनी विद्या पढ़कर कचको बुलाया। कच बुलाये जाने ही सियार कुत्तोंके शरीर फाड़करके निकलकर आ पहुंचे और ... वनी विद्याका प्रभाव देखकर प्रसन्न हुए। देवयानीने उनसे पूछा, कि तुमने क्यों इतनी देर की? कचने उत्तर दिया, कि हे भामिनी मैंने समिध लकड़ीके बोझ और कुशादि लेकर आनेके कालमें बहुत थककर एक ... को आश्रय किया था और गौ भी उस वृक्षकी छांहमें थीं। असुरोंने उस स्थानमें मुझे देखकर पूछा, कि तुम कौन हो? मैंने कहा कि मैं बृहस्पतिका पुत्र कच हूं; यह ... कहतेही दानवोंने मुझको नष्ट कर टुकड़े टुकड़े करके सियार कुत्तोंको देकर ... होके निज स्थानमें पधारे। हे भद्रे। ... भार्गवके सञ्जीवनी विद्या पढ़कर मुझको बुला... ने पर मैं किसी प्रकार जी करके यहां तुम्हारे सामने आया हूं, और शुक्रकन्यासे पूछे जाने... कचने यह भी कहा, कि हां। मैं मारा गया था।"

अनन्तर ब्राह्मण कच फिर देवयानीकी आज्ञासे फूल बटोरनेके लिये मनमाने वनमें चले गये। दानवोंने फिर भी उनको देखकर पीस करके समुद्रके जलमें घोल दिया। अनन्तर देवयानीने उनको देरतक न आते देखकर पिताको वह समाचार सुनाया, इसके बृहस्पति-पुत्रने फिर शुक्रकी विद्याके बलसे बुलाये जाकर आ करके वह सब हाल कह सुनाया। अनन्तर असुरोंने तीसरी बार उनको

ो देखकर जलाकर और चूर चूर मदिरासे मिलाकरके उन शुक्रहीको पिला । आगे देवयानीने फिर पितासे कहा, पता। मैंने कचको फूल बटोरनेके लिये था, अबभी आते नहीं देखती हूं, मुझको य जान पड़ता है, कि वह मरे या मारे , मैं निश्चय कहती हूं, कि उस कचके विना जीऊंगी। शुक्र बोले, बेटी! बृहस्पति-पुत्र कच मर गया है, मैं क्या करूं? ाके वलसे मैं वार वार उसको जिलाता हूं, ापरभी असुरलोग उसको मार डालते हैं, ानि। तुम शोक न करना, मत रोओ, ारे समान प्रभाववती नारि किसी नश्वर के लिये कभी शोक प्रकट नहीं करती; ो, तुम्हारे प्रभावसे ब्रह्मा, ब्राह्मण, इन्द्रादि, ा, वसुलोग अश्विनीकुमार और असुरगण र्ण जगत् तुम्हारी उपासनाकी आशासे सिर ये रहते हैं, सो तुमको शोकसे क्या प्रयो-है? उस ब्राह्मणको जीवित रखना मेरा ाध्य हो गया है, क्योंकि उनको वार वार ाने परभी असुरलोग वार वार वधकर ते हैं। देवयानी बोली, कि बूढ़ोंसे बूढ़े ङ्गिरा जिनके पितामह, और तपोनिधि बृह-ते जिनके पिता हैं, ऐसे ऋषि-पौत्र और ऋषिपुत्र उन कचके लिये क्यों नहीं शोक ंगी? अथवा क्यों नहीं रोऊंगी? अहा! ब्रह्मचारी तपोधन थे, वह कर्म्ममें सदा ाही और दक्ष थे, पिता! मैं फिर जन न करकेही उस कचकी बाट लूंगी. ोंकि उनका स्वरूप मुझे बड़ा प्रिय ाता है।

वैशम्पायनजी बोले कि कविपुत्र महर्षि ाचार्य्यने देवयानीसे इस प्रकार उत्तेजित पर क्रोधसे दैत्योंपर आक्रोश किया और े, कि असुरलोग निश्चित मेरा द्वेष किया ते हैं नहीं तो मेरे शिष्यके ऊपर वे क्यों उनको मार डालते हैं? कुटिलात्मा असुरलोग मुझकोही ब्रह्महत्याके पापसे पापी बनाते हैं और सदा मेरा विरुद्धाचरण करते हैं, ब्रह्महत्या किसको नहीं जला देती है? इन्द्रकोभी भस्मकर सकती है; क्या यह पाप कभी नष्ट होता है? अनन्तर उनके सञ्जी-वनी विद्यासे कचको बुलाने पर कचने गुरुके पेटमें रहकर गुरुहत्याके भयसे भीत होकर धीरे धीरे उत्तर दिया। उस पर शुक्र बोले, कि हे विप्र! यह कहो, कि तुम कौन पथसे मेरे पेटमें जा घुसे हो। कच बोले, कि हे गुरो! आपकी कृपासे मुझे स्मरणशक्ति लुप्त नहीं हुई, जो जिस प्रकारसे हुआ, वह सब स्मरण है, इस लिये, कि कहीं हमको गुरुके पेटको फाड़नेके लिये पापके कीचड़में डूबना न पड़े और तप घट जाय, पेटमें वसनेका अपार कष्ट सह रहा हूं। हे काव्य! असुरोंने मुझ-को मार, जलाय और चूर चूर करके मदिरामें घोलकर आपको दे दिया था, पर हे विप्र! आपके रहते आसुरिक माया क्योंकर ब्राह्म-णिक मायासे बढ़ सकेगी? तब शुक्रने देव-यानीसे कहा, कि बेटी देवयानि! इस समय क्योंकर तुम्हारा प्रियानुष्ठान करूं? मेरे नाश होनेसे कच जी सकता है, क्योंकि कच मेरे पेटके भीतर है; मेरा पेट विना फाड़े नहीं निकल सकेगा। देवयानी बोली, कि कचका नाश और आपकी मृत्यु, यह अग्निवत् दोनों शोकही मुझको जलाने लगेंगे; कुछ ऐसा नहीं, कि कचके नाश होनेसे कुशलसे रहूंगी, आपको कोई हानि पहुंचने सेभी मैं जी नहीं सकूंगी। तब शुक्रने कचसे कहा, कि हे बृहस्पतिपुत्र कच! तुम बृहस्पतिके पुत्र करके प्रख्यात और देवयानीके प्रेमी हो और देवयानीभी तुमको भज रही है इसी कारणसे यदि तुम कचके स्वरूपमें इन्द्र न हो, तो आज हो सञ्जीवनी विद्या तुमको देता हूं, तु

लो; केवल ब्राह्मणके बिना दूसरा जन मेरे पेटमें घुसके फिर जीवन पाकर नहीं निकल सकता, सो तुम यह विद्या लो, मैं तुमको जीवन देता हूं; बेटा! मेरी देहसे निकल कर और पुत्ररूपी होकर मुझको जिलाओ, गुरुसे विद्या लाभ करके विद्यावान् होकर धर्मपथ पर दृष्टि रखना, अकृतज्ञ न होना।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि ब्राह्मण कच गुरुसे सञ्जीवनी विद्या लाभकर जिस प्रकार पौर्णमासीके दिन सूर्य्यके अस्त होने पर पूर्णचन्द्रमा प्रकट होता है, वैसेही शुक्रकी कोखको फाड़कर जसीक्षण साक्षात निकल आये। अनन्तर ब्रह्मापुत्र शुक्रको मरे और गिरे हुए देखकर सञ्जीवनी विद्यासे उनको जिलाया और उठा करके उस सिद्ध सञ्जीवनी बिद्याको प्रणाम कर बोले, कि जब विद्याहीन था, तब जिन्होंने मेरे कानोंमें विद्यारूपी अमृत डाल दिया है, मैं उनको पिता और माता समझता हूं। जो जन कृतज्ञ होता है, वह कभी गुरुका विपरीताचरण नहीं करता; जोलोग विद्यालाभ कर श्रेष्ठतम सम्यके उपदेश करनेवाले और निधिकी निधि तथा पूजनीय गुरुका समादर नहीं करते हैं, वे इस लोकमें अप्रतिष्ठा लाभ कर अन्तमें नरकको सिधारते हैं। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि विद्वान शुक्रने मदिरा पीकर उन्मत्त होय और ठगे जाकर कचको उसके साथ पी लिया था, यह देखकर मदिरा पानका चेतनानाश-रूपी गहरा दोष समझ करके क्रोधित हुए। तब स्वयं मदिरापान पर क्रोधित उन महानुभाव उपनाने ब्राह्मणों की हितेच्छासे उठकरके कहा, कि आजसे जो ब्राह्मण मोहवश मदिरा पान करेगा, वह मन्दबुद्धि ब्राह्मण धर्म्मसे च्युत और ब्रह्महत्याके पापमें-लिप्त तथा इस लोक और परलोकमें निन्दनीय होगा। मैंने ब्राह्मणोंके धर्म्मके विषयमें सीमा और मर्य्यादा जगत्में स्थापित इसको साधु लोग ब्राह्मण लोग, देवलोग, गुरुसेवी लोग सबकोई सुनो, अप्रमेय, निधियों की निधि और महानुभाव शुक्र पर यह आपको वाणी कहकर दैवसे दानवोंको बुलवाकर बोले, कि दानवो सुनो, तुमसे कहता हूं कि तुमने अति समान कार्य्य किया है। यह महात्मा कच इसक्षण सञ्जीवनी विद्या पाकर सिद्ध हैं, मेरे पास रहेंगे। यह इस क्षणसे और मेरे तुल्य प्रवाची हुए। भार्गवके नाही कहकर चुप होने पर दानवलोग रज मानकर निज निज घरको [illegible] अनन्तर कचने गुरुके यहां सहस्रवर्ष पीछे गुरुकी आज्ञासे स्वर्गधाममें जाना [illegible]

सम्भव पर्व्वमें छिहत्तरवां अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि कचका [illegible] कालमें वसनेका ब्रह्मचर्य्य व्रत समाप्त [illegible] वह गुरुसे विदा लेकर स्वर्गधाममें [illegible] कि ऐसे समयमें देवयानी उनसे बोली, कि ऋषि अङ्गिराके पौत्र! यह समझकर शीलता, कौलिन्य, विद्या, दम और प्रज्वलित और महायशा महर्षि अङ्गिरा [illegible] प्रकार मेरे पिताके माननीय हैं, वैसेही स्पतिजीभी मेरे माननीय और पूजनीय जो कुछ कहती हूं, हे तपोधन! तुम [illegible] तुम जब व्रताचारी और नियमान्वित थे, मैंने तुमसे जैसा व्यवहार किया है, जानते हो, इस समय तुम ब्रह्मचर्य्यसे [illegible] हुए हो इससे अपनी अनुगत इस [illegible] भजना उचित है, अतएव विधिपूर्व्वक पढ़कर मुझसे विवाह कर लो। कच [illegible] कि हे अनिन्दिताङ्गी। तुम्हारे पिता शुक्र जिस प्रकार मेरे पूजनीय और

सेहो तुमभी मेरी पूजनीया हुई हो। तुम मेरे गुरु महात्मा भार्गवके प्राणसेभी कन्या हो, सो तुम मेरी गुरुकी पुत्री धर्म्मानुसार सदा पूज्यतमा हुई हो। वजानि। तुम्हारे पिता शुक्र मेरे गुरु है, जिस प्रकार सदा मेरे माननीय है, तुमभी ही मेरी माननीया हो, इस दशामें मुझसे कहना तुमको नहीं चाहिये। देवयानी ती, कि हे द्विजोत्तम। तुम मेरे गुरुपुत्रके हा, मेरे पिताके पुत्र नहीं हो, सो तुमभी पूजनीय और माननीय भये हो। हे कच। असुरोंने बार बार तुम्हारा प्राण नष्ट ाया था, तबसे तुमपर मेरी जितनी प्रीति और मित्रता तथा प्रेम प्रकाश होनेसे तुम- मेरी जितनी भक्ति है, वह अवश्यही नत होगे, आज एकबार सब स्मरण कर वो। हे धर्म्मज्ञ। मैं भक्तिमती और दोषी हूं मुझको त्यागना तुमको नहीं चाहिये। कच बोले, कि हे शुभव्रते! अनु- त कार्य्यमें मुझको नियुक्त कर रही हो, उचित नहीं है। हे अच्छे भौंवाली। शुभे। मुझपर प्रसन्न होओ, तुम गुरुसे गुरुतरा भयी हो : हे भद्रे। प्रशस्तनेत्रा। मुख, भाविनी, सुन्दरी। यहभी विचारो तुमने काव्य के जिस कोखमें वास या था, मैंभी उसी कोखमें बस चुका हूं, से धर्म्मानुसार तुम मेरी बहिन हुई हो, फिर ऐसा न कहना। हे भद्रे। तुम्हारे हां परम सुखसे था, कभी दुःख नहीं देखा, जाऊंगा, तुमसे विदा मांगता हूं, यह शीस दो, कि मार्गमें मेरा मङ्गल होवे। मको विरोध-रहित कथाके अवसरमें करना करना और सावधान तथा तपस्विनी होकर मेरे गुरुकी नित्य पूजा करना। देवयानी बोली, कि कच! मैं धर्म- मार्गसे बार बार तुम्हारी प्रार्थना करती हूं, यदि इसे न मानो, तो तुम्हारी यह सञ्जीवनी विद्या सिद्ध नहीं होगी। कच बोले, कि मैं तुमको गुरुपुत्री जान करकेही नही जानता, कोई अन्य दोष समझ करकेही ऐसा नहीं करता हूं, विशेष इस विषयमें गुरुने मुझे आज्ञा नहीं दी है, सो तुम जो चाहती हो, सो शाप दो। हे देवयानि। ऋषियोंका जैसा धर्म्म है, उसके अनुसार मेरे व्यवहार करनेसे धर्म्मानुसार मैं शापके योग्य नहीं हूं पर तुमने कामके वश मुझको शाप दिया, सो तुम्हारी कामना पूरी नहीं होगी—कोई ऋषिपुत्र तुमसे विवाह नहीं करेगा। और तुमने जो शाप दिया, कि मेरी वह विद्या सफल नहीं होगी, वह सत्यही होगा, पर मैं जिसको वह विद्या पढ़ाऊंगा, उसकी वह विद्या अवश्य सफल होगी।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि द्विजश्रेष्ठ कच देवयानीसे ऐसा कहकर वेगसे स्वर्गपतिके घरको गये। इन्द्रादि देवता उनको आते देखकर बृहस्पतिकी ओर प्रीतिसे देखके कचसे बोले, कि तुमने हमारा अति आश्चर्य्य हित कार्य्य किया है, इसमें तुम्हारा यश सदा स्थायी होगा और तुम यज्ञके अंश भागी होगे।

सम्भव पर्व्वमें सतहत्तरवां अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भरतर्षभ! देवगण विद्यावान कचको प्राप्तकर परम सन्तुष्ट चित्तसे उनसे वह विद्या पढ़कर कृतार्थ हुए। अनन्तर सब देवता देवराजके निकट आकर बोले, कि हे पुरन्दर! आपके विक्रम प्रगट करनेका यही समय है, इस क्षण शत्रुकुलको नष्ट कीजिये। सम्पूर्ण देवोंके मिलकर ऐसा कहनेपर इन्द्र "तथास्तु" कहके मान कर उसके प्रबन्धके निमित्त चले। आगे एक देख- कर, कि चैत्ररथके समान एक वनमें कुछ कन्या जलमें खेल रही है, उन्होंने वायुका स्वरूप

लेकर उन सबोंके वस्त्रोंको एक दूसरेसे मिला दिया। अनन्तर सब कन्याओंने एकही समय निकलकर जिसके निकट और वस्त्र मिला, वही पहिन लिया। राजा वृषपर्व्वाकी कन्या शर्म्मिष्ठाने वस्त्रोंकी मिलावट न जानकर देवयानीका वस्त्र ले लिया, हे राजेन्द्र! तब उस हेतु शर्म्मिष्ठा और देवयानीमें आपसका झगड़ा खड़ा होजानेपर देवयानी बोली, कि असुर-पुत्री! तुम शिष्या होकर क्यों मेरा वस्त्र ले रही हो? तुममें शिष्टाचार नहीं है, कभी तुमको मङ्गल नहीं होगा। शर्म्मिष्ठा बोली, कि मेरे पिता जब बैठे वा सोये रहते हैं, तुम्हारे पिता तब नीचे रहकर नम्रभावसे भाटकी भांति सदा उनकी स्तुति करते रहते हैं; तुम्हारे पिता भीखमङ्गे हैं, मेरे पिता दाता हैं; तुम्हारे पिता स्तुति पढ़नेवाले, मेरे पिता स्तव किये जानेवाले हैं; तुम्हारे पिता दान लेकर जीविका निर्व्वाह करते हैं, मेरे पिता दान नहीं लेते; री भिखमङ्गिन्! तुम अस्त्रहीना हो, मैं अस्त्रवती हूं, री भीखसे जीनेवाली। तुम चाहे क्रोध करो वा दुःख मानो, अथवा विद्रोह मचाओ, वा क्रोधिता होओ, उससे केवल तुम्हारा दरिद्रताके हेतु चोभही प्रगट होता है; तुमने समझ लिया है, कि मैं तुम्हारे समानकी विरोधी हूंगी, पर मैं तुमको गिनतीहीमें नहीं लाती हूं।

वैशम्पायनजी बोले; कि शर्म्मिष्ठाने वस्त्रके लिये देवयानीकी बड़ी आसक्ति और बढ़ी देखकर उसको कूपमें डाल दिया; पापचित्ता शर्म्मिष्ठा यह समझकर, कि देवयानी मर गयी है; न देखकरकेही क्रोधके वश चली गयी। अनन्तर नहुषपुत्र ययाति मृगयाके लिये उस वनमें आये थे; उनके वाहन और घोड़ोंके बहुत थकनेपर उन्होंने जल ढूंढ़ते हुए एक सूखा कूआ पाया और उसमें देखा, कि अग्निकी शिखा समान एक कन्या रो रही है; नृपोत्तम ययातिने उस दिव्यदेहा कन्याको मन-हरने-वाली धीमी बोलीसे समझाकर कि तांबेके रङ्ग नखवाली, मली हुई कुण्डलवाली युवती नारि! तुम कौन हो? ऐसी चिन्ता कर रही हो? क्यों कातर शोक प्रकाश कर रही हो? और क्यों इस घासपातसे ढंपे हुए कूपमें गिर हो? तुम किसकी बेटी हो, हे सुन्दरी यह सब सच बोलो।

देवयानी बोली, कि देवोंसे दैत्यों के जानेपर उन सब दैत्योंको जो विद्याके बल जिलाते हैं, मैं उन शुक्रकी कन्या हूं, वह यह दशा जान नहीं सके हैं, हे राजन्! यह तांबेके रंगवाले नख उंगली युक्त दो हाथको ऊपर उठाती हूं। इसे पकड़ मुझे निकालिये, क्योंकि आप सुवंशी हैं निश्चय जानती हूं, कि आप बड़े धीर, वीर और यशवाले हैं, इससे आपको मुझे इस निकालना चाहिये। वैशम्पायनजी बोले कि नहुषपुत्र राजा ययातिने उसको कन्या जानकर दहिना हाथ पकड़कर कूपसे निकाला। वह सुन्दरी देवयानी ऊपर निकालकर उचित सम्भाषण कर हर्षसे अपने नगरको पधारे।

नहुषपुत्रके चले जाने पर अनिन्दिता यानी शोकसे खेदवती होकर असुरपुरसे हुई घूर्णिका नाम्नी दासीसे बोली, कि घूर्णि तुम शीघ्र चलकर मेरे पितासे कहो, कि इनदिनों राजा वृषपर्व्वाके नगरमें न जाऊं वैशम्पायन बोले, कि वह घूर्णिका दुत असुर-मन्दिरमें जाकर शुक्रको देखकर नके साथ बोली, कि हे महाभाग! श्रेष्ठ वृषपर्व्वाकी कन्या शर्म्मिष्ठा वनमें देवयानी घायलकर आई है। यह सुनतेही शुक्र कन्याको ढूंढ़नेके लिये विषादित चित्तसे पूर्व्वक सिधारे। अनन्तर वनमें कन्या

नीको देखकर स्त्रे हवश दुःखित हृदयसे हाथों से उठाय गलेमें लगाकर बोले, कि सभी जन निज दोष और गुणके अनुसार दुःख और सुख भोगते हैं, मैं समझता हूं, कि तुमने कोई बुरा कार्य्य किया होगा, उसीसे निष्कृतिरूपी यह दशा भयी है। देवयानी बोली, कि मेरा बचाव होवे वा न होवे, वृषपर्व्वाकी कन्या शर्म्मिष्ठाने मुझसे जैसा कहा है, उसको ध्यान देकर सुनिये। शर्म्मिष्ठाने कहा है, कि आप दैत्योंके भाट हैं, क्या यह सच है? और क्रोधसे आखें लालकर अति कटीली और कड़वी बातोंसे मुझसे यहभी कहा, कि "तुम्हारे पिता स्तुतिपाठ करनेवाले, सदासे भिखमंगे और दान लेनेवाले हैं; और मेरे पिता स्तुति किये जाते हुए दाता और दान देनेवाले हैं।" अहङ्कारसे भरी हुई वृषपर्व्वाकी कन्याने क्रोधसे रक्तनेत्रा बनकर बार बार मुझसे ऐसा कहा; पिता! मैंने यह बात कही है, कि यदि मैं स्तुतिपाठ करनेवाले और दान लेनहारे की बेटी हूं, तो शर्म्मिष्ठाको प्रसन्न करूंगी। शुक्र बोले, कि देवयानि! तुम स्तुति पढ़नेवाले, भिखमंगे वा दान लेनेहारे की बेटी नहीं हो, स्तुति न पढ़नेवाले और स्तुति कियेजानेवाले जन की कन्या हो; वृषपर्व्वा, इन्द्र और नहुषपुत्र यह सबलोग जानते हैं, मेरा विरोध-वर्ज्जित, सोचके बाहर ऐश्वर्य्य अप्रतिम है, स्वर्ग और भूतलमें जो सब वस्तु हैं, मैं उनका नियन्ता हूं, भगवान् स्वयम्भू ने सन्ताप-पूर्व्वक ऐसा कहा है। तुमसे सच कहता हूं, कि मैंही प्रजाओंके हितके निमित्त जल बर्षाता हूं, मुझसेही सम्पूर्ण ओषधि पुष्ट होती हैं। वैशम्पायनजी बोले, कि दुःखसे और खेदयुक्तता पुत्रीको ऐसी मनोहर मीठी बातोंसे उसके पिता शुक्रने समझाया।

... पर्व्वमें अठहत्तरवा अध्याय समाप्त।

शुक्र बोले, कि जो अन्यजनसे निन्दित होकर निन्दा की बातको सहलेते हैं, देवयानि! तुम जानना, कि उससेही इस सम्पूर्ण जगत्‌का जय करना होता है। जो उछले हुए क्रोधको शासित घोड़ेकी नाईं शासित करते हैं, वही साधुओंसे सारथि करके उक्त होते हैं। वास्तवमें, ऐसा नहीं, कि वह घोड़े की रासहीको पकड़नेसे सारथि कहे जाते हैं। जो क्षमासे चढ़े हुए क्रोधको रोक लेते हैं, देवयानि! तुम जानना, कि उससे ही इस सम्पूर्ण जगत्‌का जय करना होता है। जो सर्पके केंचुल छोड़ने की भांति चढ़े हुए क्रोधको क्षमासे रोक लेते हैं, वेही पुरुष करके कथित होते हैं। जो क्रोधको रोकते हैं और किसीकी निन्दा करनेसे उसको सह लेते हैं, तथा आप दुःखित होने परभी औरों को दुःख नहीं देते हैं, वही पुरुषार्थके भागी है। जो बिना थकावट महीने महीने यागकी क्रिया करते हैं और सर्व्व प्राणियोंके अक्रोधी होते हैं, इन दोनोंमे अक्रोधी पुरुषही श्रेष्ठ है। अज्ञान बालक बालिका आपसमें जो अनिष्टाचरण किया करती हैं, प्राज्ञलोग उसका अनुकरण नहीं करते, क्योंकि वे बालक बालिका बलाबलसे ज्ञात नहीं हैं। देवयानि बोली, कि पिता! मैं बालिका होने पर भी धर्म्म का मर्म्म जानती हूं और अक्रोध और क्रोधके विषयमें बलाबलसेभी ज्ञात हूं, पर जो शिष्य होकर शिष्यके समान व्यवहार नहीं करता, मङ्गलेच्छुक जनको उसकी क्षमा न करना चाहिये, और जिनके व्यवहार ऐसे निकृष्ट हैं, उनके देशमें बसनेकी मुझे इच्छा नहीं होती। जो सब पुरुष कौलिन्य और चरित्रके विषयमें निन्दा करते हैं, उनके साथ मङ्गलार्थी जनका बसना उचित नहीं है। जो सब साधु कुल, शीलके ज्ञाता हैं, उनके मध्यमें बसना उचित है और वह बासही श्रेष्ठ करके गिना गया है। जिस प्रकार अग्निकामी ...

वनकी लकड़ीको मथन करते हैं, उसप्रकार वृषपर्व्वाकी कन्याकी अति कठोर कटीली बात मेरे हृदयको मथ रही है। मैं जानती हूं, कि तीनोंलोकोंमें इससे अधिक असाध्य कार्य्य कोई दूसरा नहीं है, जो धनहीन जन शत्रुओंकी प्रज्वलित श्री देखकर उपासना करते हैं, विद्वान् लोग ऐसा जानते हैं, कि ऐसे जनकी मृत्युही मङ्गल है।

सम्भवपर्व्वमें उनहत्तरवां अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर भृगुश्रेष्ठ काव्य क्रोधसे चलके, बैठे हुए वृषपर्व्वाके पास पहुंच करके, निर्भय चित्तसे यह कहने लगे, कि राजन्! अधर्म्माचरण करनेसे उसी दिन उसका फल दीख ता नहीं पड़ता है, पर जिस प्रकार धरती अन्न जोतने बोनेसे उचित समयमें फल देती है, उस प्रकार अधर्म्मभी धीरे धीरे आचरित होकर यथासमयमें अधर्म्मकारीकी जड़ काट देता है। जिस प्रकार अधिक भोजन करनेसे उसीक्षण हानि न होनेसेभी अन्तमें अवश्यही हानि होती है, तैसे ही पापकार्य्यका फल यदि अपनेमें न दीख पड़ता हो, तो पुत्र वा पौत्रमें वह अवश्यही दीख पड़ेगा। हे वृषपर्व्व! मेरे घरमें रहते हुए धर्म्मज्ञ, गुरु-सेवक और निष्पापी ब्राह्मण बृहस्पतिपुत्र कचको तुमने वध किया था, बधके अयोग्य उस कचके बधके कारण और मेरी पुत्रीको तुम्हारी बेटी शर्म्मिष्ठाने प्रायः मारही डाला था, इसहेतु तुम निश्चय जानना, कि तुमको और तुमारे बान्धवोंको मैं त्याग दूंगा। अहो दैत्यराज! जो कि तुम मुझको झूठमूठका प्रलाप बकने वाला समझते हो, पर यह तुम्हारा अपना दोष है, उसे तुम न सुधारकर उड़ा देते हो, सो तुम्हारे राज्य और साथमें मेरा न रहनाही उचित है। वृषपर्व्वा बोले, कि हे भार्गव! मैं आपको झूठे वा अधार्म्मिक नहीं समझता हूं, सो आप मुझपर प्रसन्न होवें। हे भार्गव! यदि आप हमको छोड़कर यहांसे चले जायं, तो मैं समुद्रमें जा डूबूंगा, क्योंकि आपके बिना हमारी कोई और गति नहीं है। शुक्र बोले, कि असुरगण! तुम चाहे समुद्रमें डूबो वा किसी ओर पधारो, पर मैं बेटीका अप्रिय आचरण सह नहीं सकूंगा, क्योंकि वह मेरी बड़ी स्नेहपात्री है। बृहस्पतिजी जैसे इन्द्रके यागके निर्व्वाह करनेहारे हैं, वैसे तुम्हारे मैं हूं पर मेराजीवन देवयानीके अधीन है अतएव देवजानीको प्रसन्न करो। वृषपर्व्वा बोले, कि हे भार्गव! इस भूमण्डलमें असुरोंके हाथी गौ, घोड़े और जितना धन सम्पद है, आप उन सबोंके और मेरेभी अधिकारी हैं। शुक्र बोले कि हे महासुर! असुर राजोंका जितना ऐश्वर्य्य है, यदि मैं उसका अधीस भी बनूं, तौभी देवयानीको प्रसन्न करो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि भार्गवकी ऐसी बात सुनकर महाविज्ञ वृषपर्व्वाने उसे मान लिया और उनके साथ भार्गवने देवयानीके पास चलकर वह सब वृत्तान्त कह सुनाया। अनन्तर देवयानी बोली, कि हे पिता! मैं भली भांति नहीं जानती हूं, कि आप दैत्यराजकी सम्पूर्ण सम्पद के अधीश हैं, सो राजा स्वयं ऐसा कहें। वृषपर्व्वा बोले, कि हे सुन्दरि देवयानि! तुम्हारी जो कामना हो, सो कहो, यदि वह दुर्लभ भी हो तो उसे पूरी करूंगा। देवयानि बोली, कि मैं कामना करती हूं, कि सहस्र कन्याओंके साथ शर्म्मिष्ठा मेरी दासी बने, मेरे पिता मुझको जहां दान करेंगे, शर्म्मिष्ठा वहां मेरे साथ जायगी। वृषपर्व्वा निकटकी दासीसे बोले, कि दासी! उठो, शीघ्र जाकर शर्म्मिष्ठाको लाओ, देवयानी जो कामना कर रही है, शर्म्मिष्ठासे उसे पूरी करनेको कहो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर दासीने

शर्म्मिष्ठाके पास जाकर कहा, कि भद्रे ! शर्म्मिष्ठे ! उठो, बन्धुओंके मङ्गल करनेकी यत्नवती होओ, ब्राह्मण शुक्र देवयानीसे आदिष्ट होकर शिष्य दैत्योंको त्याग रहे हैं। हे अनघे ! आज उन शुक्र-कन्याने यह कामना की है, कि तुमको सहस्र दासियोंके साथ उनकी दासी बनना पड़ेगा; तभी वह मानेंगी। शर्म्मिष्ठा बोली, कि यदि देवयानिके लिये शुक्र मुझको बुलावें, तो आज देवयानी जो कामना करेंगी उसको मैं पूरी करनेको सम्मत हूं, मेरे दोषसे शुक्र और देवयानी न जायं।

श्रीवैशम्पायजी बोले, कि अनन्तर शर्म्मिष्ठा पिताके प्रबन्धके अनन्तर पाल्कीपर चढ़कर सहस्र कन्याओंसे घेरी जाकरके श्रेष्ठपुरसे शीघ्र निकली, आगे देवयानिके पास आकर बोली, कि मैं सहस्र दासियोंके साथ तुम्हारी सेविका दासी बनी, तुम्हारे पिता जहां तुमको दान करेंगे, मैं वहां तुम्हारे साथ जाऊंगी। देवयानी बोली, कि मैं तुम्हारी स्तुति पढनेवाले, भिखमंगे और दान लेनेवालेकी कन्या हूं; तुम स्तुति किये जानेवालेकी पुत्री हो, फिर क्यों तुम दासी बनोगी? शर्म्मिष्ठाने उत्तर दिया, कि चाहे जिस किसी उपायसे बन्धुवर्ग सुखी होवें, वही मुझको करना होगा, सो तुम्हारे पिता जहां तुमको दान करेंगे, मैं वहां तुम्हारी साथी बनी रहूंगी।

श्रीवैशम्पायन जी बोले, कि हे नृपश्रेष्ठ ! वृषपर्व्वाकी बेटीके दासीपन स्वीकार करने पर देवयानी पिताके पास जाकर बोली कि हे पिता ! मैं सन्तुष्ट हुई, अब नगरको जाऊंगी, मैं जान गयी कि आपका विज्ञान और विद्याका बल अमोघ है। वैशम्पायन बोले, कि महायशा, द्विजवर शुक्र पुत्रीकी यह बात सुनकर सब दानवोंसे पूजे जाकर प्रसन्नचित्तसे असुरपुरको पधारे।

अष्टसप्ततितम अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे नृपोत्तम ! अनन्तर बहुकाल पश्चात् सुन्दरी देवयानी खेलनेके निमित्त पूर्व्व कथित उस वनमें गयी आगे बहु सहस्र दासी और शर्म्मिष्ठाके साथ वहां पहुंचकर मनमाना घूमने लगी। वह वहां सम्पूर्ण सहेलियोंके साथ परम आनन्द भोगने लगी, वे सब मधु-ह्रदका मधु पीकर कभी खेल रही थीं; कभी भांति भांतिके फल और भांति भांतिकी भोजनीय सामग्री खा रही थीं, कि ऐसे समयमें नहुषपुत्र ययाति फिर मृगयाके निमित्त आन कर थकावटसे जलपानार्थी होकर स्वेच्छापूर्व्वक वहां आ पहुंचे। उन्होंने वहां देवयानी, शर्म्मिष्ठा और अनुपम रूपवती दिव्य आभूषणोंसे सजी धजी मधुपानसे उन्मत्ता खेलती हुई कामिनियों को देखा, मधुर हासिनी अनुपम रूपवती, नारियोंमें प्रधाना देवयानी उन बालाओंमें बैठी थी, शर्म्मिष्ठा उसके पांवआदि दाब-दाबकर सेवा कर रही थी। यह देखकर राजा ययाति निकट जाकर बोले, कि शुभे। तुम दो कन्या दो सहस्र कन्याओंसे घिरी हो, तुम दोनोंके नाम, गोत्र जानना चाहता हूं। देवयानि बोली, कि हे नराधिप। यह कहती हूं, सुनिये। जो असुरोंके गुरु, शुक्र नामसे प्रख्यात हैं, मैं उनकी कन्या हूं, यह वृषपर्व्वा नामक दैत्यराज की दुहिता हैं, इनका नाम शर्म्मिष्ठा है, यह मेरी सहेली और दासी हैं, मैं जहां जाती हूं, यह मेरे साथ जाती है। ययाति बोले कि यह जाननेके लिये मेरा कौतूहल बढ रहा है, कि यह सुन्दर भौंहवाली, दैत्यराज दुहिता क्यों कर तुम्हारी दासी हुई। देवयानि बोली, कि हे नरश्रेष्ठ ! सब लोक दैवहीका वशीभूत है, दैवाधीन विषयमें अचरज न मानना आपका रूप और वेष राजाका भांति देखती हूं, आप वैदिक वाक्य कह रहे हैं; मुझसे कहिये, कि आप कौन किनके पुत्र और कहांसे आते हैं।

ययाति बोले, कि मैंने ब्रह्मचर्य्य लेकर सम्पूर्ण वेद पाठ किये हैं; मैं राजा और राजपुत्र हूं, मेरा नाम ययाति है। देवयानि बोली, कि कहिये, आप जलकी मछली आदि मारने, वा मृगयाकी इच्छासे अथवा अन्य किस कारणसे यहां आये हैं? ययाति बोले, कि हे भद्रे! मृगयाके लिये निकल कर जल पीनेको यहां आपहुंचा हूं, इस समय नाना प्रकारसे थका हूं आज्ञा हो, तो चला जाऊं। देवयानी बोली, कि इन दो सहस्र कन्या और दासी शर्मिष्ठाके साथ मैं आपकी अधीना बनती हूं, आपका मङ्गल होगा, आप मेरे सखा और भर्त्ता होवें। ययाति बोले, कि हे शुक्रनन्दिनी, भामिनी, देवयानि! तुम्हारा मङ्गल होवे, मैं तुम्हारे योग्य पात्र नहीं हूं, तुम्हारे पिता जैसे हैं, उससे राजालोग तुम्हारे विवाहके योग्य नहीं हो सकते। देवयानी बोली, कि ब्राह्मणके साथ क्षत्रिय और क्षत्रियके साथ ब्राह्मण मिले हुए हैं। हे नहुषपुत्र! आपभी उसके अनुसार ऋषि और ऋषिपुत्र हुए हैं, सो मुझसे विवाह कीजिये। ययाति बोले, कि हे वराङ्गने! चारों वर्ण एक ब्रह्माकी देहसे उत्पन्न तो हुए हैं, पर उनमेंसे हरेकके धर्म्म और शौचादि अलग अलग निर्दिष्ट हैं, उनमें ब्राह्मण सभोंसे श्रेष्ठ हैं। देवयानी बोली, कि हे नहुष-पुत्र! किसी और पुरुषने पहिले मेरा हाथ नहीं थामा, आपने पहिले मेरा पाणिग्रहण किया है, इससे आपकोही पतिरूपमें वरण करती हूं। आपने ऋषि और ऋषिपुत्र होकरके स्वयं मेरा पाणिग्रहण किया है और मैंभी मनस्विनी हूं, सो दूसरा पुरुष क्योंकर मेरे पाणिको स्पर्श करेगा? ययाति बोले, कि ज्ञानी पुरुष जानते हैं, कि क्रोधपूरित विषयुक्त सर्प और तेज शस्त्रसे भी ब्राह्मण कठोर होते हैं, देवयानीने पूछा, कि हे पुरुषर्षभ! क्योंकर यह कहा, कि क्रोधपूरित विषयुक्त सर्प और तेज शस्त्रसे भी ब्राह्मण कठोर होते हैं? ययाति बोले, कि सर्पके विषसे एक मनुष्य मरता है और शस्त्रसे भी मनुष्य मारा जाता है, पर ब्राह्मण क्रोधित होकर राज्य, नगर सम्पूर्ण के साथ एकही नष्ट कर डालते हैं, हे भद्रे! मैं इन कारणोंसे बड़ा कठोर समझता हूं, सो तुम्हारे पिताके बिना दान किये मैं तुमसे विवाह नहीं कर सकता हूं। देवयानी बोली, कि महाराज! मैंने आपको वरण किया है, अब पिताके दान करने पर मुझसे विवाह करलीजिये, आपने प्रार्थना नहीं की, पिताके दान करने पर ग्रहण करनेमें, आपको भयकी बात क्या है?

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर देवयानीने वेगपूर्व्वक पितासे सम्पूर्ण वृत्तान्त कहनेकी आज्ञा करी। दासीने शुक्रके पास जाकर आद्योपान्त सब कुछ सुनाया। वह सब वृत्तान्त सुनकर बनमें आये भार्गवके उस बनमें पहुंचने पर पृथ्वीनाथ ययाति ब्राह्मणको समागत देखकर सिर नाय करके प्रणाम करके दोनों हाथोंको जोड़के खड़े रहे, देवयानी बोली पिता! इन राजा नहुषपुत्रने विपत्ति कालमें मेरा पाणिग्रहण किया था, सो सिरनाय प्रार्थना करती हूं, कि आप इन पात्रको मुझे सम्प्रदान कीजिये, किसी औरको वरण करना मेरी इच्छा नहीं है। शुक्र बोले, कि हे वीर नहुषपुत्र! मेरी इस प्यारी कन्याने तुमको पतिरूपमें वरण किया है, इसलिये सम्प्रदान करता हूं, तुम इसको महिषी करलो। ययाति बोले, कि हे ब्राह्मण भार्गव! मै आपसे यह वर मांगता हूं, कि इस विवाहमें वर्णसङ्कर हेतु महान् अधर्म्म मुझको स्पर्श न करे। शुक्र बोले, कि मैं तुमको अधर्म्मसे बचाता हूं तुम मनमाना वर मांगो, इस विवाहसे तुम दुःखी मत होओ, तुम्हारा सम्पूर्ण पाप दूर किये देता हूं। तुम इस सुन्दरी देवयानीसे धर्म्मानुसार विवाह कर लो,

थ अपार प्रीति पाओगी, और इस मारी वृषपर्व्वाकी दुहिताकी सदा पूजा रना, हे राजन्। इसको बिस्तर पर न लाना।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि शुक्रकी यह बात नकर राजा ययातिने उनको प्रदक्षिणा करके शास्त्रोक्त विधिके अनुसार देवयानीसे शुभ विवाह किया। उक्त नृपश्रेष्ठ, शुक्रसे दो हस्र कन्या और शर्म्मिष्ठा सहित उत्तमाङ्गना देवयानीको और प्रचुर धन लाभ कर, महात्मा क और दैत्योंसे सत्कार किये जाकर और आज्ञा पाकर प्रसन्न चित्तसे निज राजधानीको पधारे।

सम्भवपर्व्वमें एकासी अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर ययाति महेन्द्रकी पुरीसी निज पुरीमें पहुंचकर न्तःपुरमें प्रवेश-पूर्व्वक देवयानीको योग्य वासस्थान दिया। आगे देवयानीकी आज्ञासे शोक वनके निकट घर बनाकर उसमें वृषपर्व्वाकी पुत्रीको वासस्थान बनवा दिया और सहस्र दासीके साथ उस शर्म्मिष्ठाको वस्त्र, लङ्कार, अन्न पानादिसे यथोचित विभागके नुसार आदर सत्कारपूर्व्वक रख दिया। अनन्तर वह नहुषात्मज राजा देवयानीसे परम प्रीतिपूर्व्वक विहार करते हुए, बहुवर्ष बिताने गे। यथासमयमें देवयानीका ऋतुकाल आने पर सुन्दरी देवयानीने गर्भ धारण किया, कि उसके एक सुकुमार बालका जन्म हुआ। हजार वर्ष व्यतीत होनेपर यौवन-प्राप्त शर्म्मिष्ठाका ऋतुकाल भी पहुंचा। तब वह सोचने लगी कि मेरा ऋतुकाल उपस्थित हुआ, पर मैंने अबतक पति नहीं किया, क्या होगा! क्या करूं? ... कार्य पूरा होवे। ... ने ... पुत्र प्रकट किया है, मेरी यौवनदशा ... मैं ... जिस प्रकार राजाको पतित्वमें वरण किया है, मैंभी वैसाही करूं, मुझको निश्चय जान पड़ता है, कि राजासे पुत्ररूपी फल प्राप्त करूंगी, अब उन धर्म्मात्माको निरालेमें पाऊ तब ठीक हो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर उस कालमें राजा मनमाने अशोकवनके निकट पहुंचकर शर्म्मिष्ठाको देखकर बैठ गये। मधुरहासिनी शर्म्मिष्ठा निरालेमें उनको अकेले पाकरके दोनों हाथ जोड़कर निकट आकर बोली कि हे नहुषपुत्र। चन्द्र, इन्द्र, विष्णु, यम वा वरुणके और आपके अन्तःपुरमें रहनेवाली को कोई देख नहीं सकता। हे राजन्! आप मेरे रूप, कुल और शीलकी बात सदासे जानते हैं, सो मैं आपको प्रसन्न कर प्रार्थना करती हूं, आप मेरे ऋतुकी रक्षा कीजिये। ययाति बोले, कि मैं जानता हूं, कि तुम सुशीला, अनिन्दनीया, दानवकन्या हो, तुम्हारा रूप सूईके अगले भागके समान भी निन्दायोग्य नहीं है; पर मैंने जब देवयानीसे विवाह किया था, तब भगवान उशनाने कहाथा, कि तुम इस वृषपर्व्वाकी कन्याको बिस्तर पर मत बुलाना। शर्म्मिष्ठा बोली, कि हे राजन्! हंसीमें न मिलना करके मिलने योग्य स्त्रीसे मिलनेमें और विवाहके समय और प्राण जाने की सम्भावनामें, और सब चोरी जानेसे—इन पांचस्थानमें झूठी बात कहनेसे दोष नहीं होता, हे नरेन्द्र! लोगोंका ऐसा कहना, कि पूछे जाकर झूठी कहनेसे मनुष्य पतित होना है, झूठ है, क्योंकि गौ ब्राह्मण, स्त्री, दीन, अनाथ आदिके लिये विशेष विशेष स्थानोंमें झूठी साक्षी देनेसे पुण्यभी होता है। जिस स्थलमें दोनोंका एकार्थ समाधान करना होगा, वहां झूठी बात दोषकी होती है। ययाति बोले, कि राजा प्रजाओंके प्रमाण हैं, वह झूठ बोलनेसे नष्ट होते हैं, अतएव यदि धनका कष्ट भोगना भी पड़े, तौभी मिथ्या कहनेको मुझे

साहस नहीं होता। शर्म्मिष्ठा बोली, कि हे राजन्! सहेलीका पति और अपना पति दोनों समान हैं। दो सहेलियोंमें एकका विवाह होनेसे दोनोंका विवाह सिद्ध होता है, पहिले मेरी सहेलीने आपको वरण किया है, उससेही आपको मेरा पतिरूपमें वरण करना होगया है, ययाति बोले, कि मेरा यह एक व्रत है, कि मांगनेवाला जन जो मांगेगा मैं वही दे दूगा, तुम मुझसे मांग रही हो, सो कहो, तुम्हारी कौनसी अभिलाषा पूरी करनी होगी। शर्म्मिष्ठा बोली, कि महाराज! आप मुझे अधर्म्मसे बचावें, धर्म्म रक्षा करें, आपसे पुत्रवती होकर मैं भली भांति धर्म्मानुष्ठान करूंगी। राजन्! भार्य्या, दास और पुत्र यह तीन धनपति नहीं होते, पर यह जो धन उपार्ज्जन करते हैं, वह धन उनका होता है, जिनके वे अधीन हैं। हे राजन्! मैं देवयानीकी दासी और आपकी वशीभूता हुई हूं, सो देवयानी और मैं दोनों आपके भजनेके योग्य हैं, सो आप मुझे भजें।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि राजाने शर्म्मिष्ठाकी बात सुनकर उसे ठीक जान करके शर्म्मिष्ठाका मनोरथ सफल कर धर्म्मरक्षा की। इच्छानुरूप सङ्गमसे शर्म्मिष्ठाका मनोरथ पूरा होनेपर वे दोनों उचित सम्मान से सम्भाषणाकर योग्य स्थानोंमें पधारे। हे राजन्! प्रसन्न नेत्रा, भले भौंवाली, मधुरहासिनी शर्म्मिष्ठाने उस पहिले सङ्गमहीमें उन नृपोत्तमसे गर्भवती होकर उचित समयमें देवकुमार समान प्रसन्न नेत्र एक पुत्र प्रसव किया।

सम्भवपर्व्वमें बिरासी अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भारत! शर्म्मिष्ठाके पुत्र जन्मा है, यह सुनकर सुन्दरी देवयानी दुःखीचित्त हुई, और शर्म्मिष्ठाके समीप आकर यह बोली, कि री भले भौंवाली! तुमने कामकी वशीभूता होकर यह पापकर्म्म कर डाला है? शर्म्मिष्ठा बोली, हे सुन्दरी! मेरे पास धर्म्मात्मा वे... एक ऋषि आये थे, उनके वर देनेकी इ... होनेपर मैंने धर्म्मानुसार उनसे ऋतु र... प्रार्थना की थी। हे सुन्दरी! मैं अ... पूर्व्वक काम-चारिणी नहीं हुई हू सो मैं... चाहती हूं, कि मेरे गर्भोत्पन्न इस ए... ऋषिके औरससे जन्म लिया है। देव... बोली, कि री भीरु! यदि यह सच है... अच्छा है, पर क्या तुम उन ब्राह्मणको ... हो? मैं उसका नाम गोत्र और कुल ... चाहती हूं। शर्म्मिष्ठा बोली, कि हे सुन्द... वह ब्राह्मण तप और तेजसे दिननायके ... जलते थे, उनको देखकर मेरी ऐसी शक्ति... थी, कि कोई बात पूछूं। देवयानी बोली, हे शर्म्मिष्ठे! यदि ऐसा हो और यदि ... अति श्रेष्ठ ब्राह्मणसे पुत्रलाभ किया हो, तो... क्रोधका कोई कारण नहीं है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि वे दोनों ... लोमें ऐसा कहकर हंसी उड़ाने लगीं। ... यानी यह बात ठीक जानकर निज पुरीमें ...

अनन्तर राजर्षि ययातिके वीर्य्य तथा ... यानीके गर्भसे इन्द्र और उपेन्द्रके समान ... पुत्रोंने जन्म लिया, उनके नाम यदु ... तुर्व्वसु है। फिरभी उस राजर्षिसे ... पुत्री शर्म्मिष्ठाने द्रुह्यु, अनु और पुरु यह ... कुमार प्रसव किये। हे राजन्! अ... कुछ काल बीतने पर सुन्दरी देवयानी य... साथ उस निर्ज्जन बनको गयी, वहां यह... कर, कि देवयत रूपवान् तीन कुमार खेल रहे हैं, देवयानीने अचरज मानकर से पूछा, राजन्! कहो, देवकुमार ... यह कुमार किसकी सन्तान है, मुझको पड़ता है, कि रूप और तेजमें यह ... समान है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि देवयानीने राजा-यह बात कहकर कुमारोंसे पूछा, कि लड़को। तुम्हारे नाम क्या हैं? तुमने किस वंशसे जन्म लिया है? सच सच कहो, सुनना चाहती हूं। बालकोंने उङ्गलियोंसे राजाहीको दिखाया और कहा, कि शर्म्मिष्ठा हमारी माता है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि लड़के यह बात कहकर सब मिलकर राजाके पास गये, राजाने तब देवयानीके सामने आनन्द प्रकट वा उनका आदर नहीं किया। आगे लड़के रोते हुए शर्म्मिष्ठाके पास जा पहुंचे। राजा यह देखकर दुःखित हुए। देवी देवयानी राजापर लड़कोंकी प्रीति देखकर सत्य तत्त्व जानकर शर्म्मिष्ठासे बोली, कि तुमने मेरी अधीना होकर क्यों मेरा ऐसा अप्रिय कार्य्य किया है? तुमने वही असुर-धर्म्म आश्रय किया, मुझसे नहीं डरी? शर्म्मिष्ठा बोली, कि हे मधुरहासिनी! मैंने जो अपने प्रेमी-को ऋषि करके प्रगट किया था, वह बात झूठी नहीं है। मैंने न्याय और धर्म्मके अनु-सारही व्यवहार किया है, क्यों तुमसे डरूंगी? हे शोभने! तुमने जब इन राजाको भर्त्ता करके वरण किया है, मैंने तभी इनको वरण किया है। क्योंकि सहेलीके भर्त्ता धर्म्मानुसार उनकी भर्त्ता होते हैं, तुम ब्राह्मणी और बड़ी हो, मेरी पूजनीया और माननीया होती हो, पर यह तुम जानती हो कि यह राजर्षि तुमसे भी मेरे अधिक पूजनीय हुए हैं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि देवयानी शर्म्मि-ष्ठाकी यह बात सुनकर राजासे बोली कि राजन्! अब फिर मैं यहां नहीं रहूंगी। तुमने मेरा अप्रिय कार्य्य किया है। यह देख कर [illegible] देवयानी इतना ही कहकर [illegible] एकायक उठ खड़ी [illegible] पास जा रही थी राजा भारी हृदयसे सम्मानसहित सम्भ्रान्ति हुए उसके पीछे चलने लगे, पर देवयानी क्रोधसे आंखें लाल कर चली, किसी प्रकार न लौटी। आगे राजाको कोई उत्तर न देकरही आंसूभरे नेत्रोंसे उसीक्षण शुक्रके पास जा पहुंची और पिताको देखकर प्रणाम कर सामने खड़ी रही अनन्तर ययातिने भी भार्गवकी पूजा की। देवयानी बोली, कि हे पिता! अधर्म्म से धर्म्म हार गया है, नीचकी वृद्धि हुई है, वृष-पर्व्वाकी पुत्री शर्म्मिष्ठा मुझको लांघ गयी है, हे पिता! इस ययातिके वीर्य्य और शर्म्मिष्ठा के गर्भसे तीन पुत्रोंने जन्म लिया है, मैं दुर्भागी हूं, मेरे दो पुत्रसे अधिक नहीं हुए, आपको समाचार देती हूं। हे भार्गव तात! यह राजा धर्म्मज्ञ करके प्रख्यात है, पर यहभी आपसे कह देती हूं, कि इन्होंने मर्य्यादाको अतिक्रम किया है।

शुक्रजी बोले, कि महाराज! इस कारण, कि तुमने धर्म्मज्ञ होकर अधर्म्म को प्रिय जाना, विना विलम्ब, कठोर बुढ़ापा तुमको घेर लेगा। ययाति बोले, कि भगवन्! दानवेन्द्रकी पुत्रीने ऋतुरक्षाकी प्रार्थना कीथी, इसपर मैंने धर्म्म-कार्य्य जान करकेही ऐसा किया है, कामके वशीभूत होकर नहीं किया। ब्रह्मन्! किसी कामि-नीके ऋतुरक्षाकी प्रार्थना करने पर जो पुरुष ऋतुकी रक्षा नहीं करता, ब्रह्मवादी ब्राह्मणगण उसको भ्रूणहत्याके पापी कहते हैं! मिलन-याच्या कामिनीके कामवती होकर निरालेमें मिलनकी प्रार्थना करनेपर जो पुरुष उससे नहीं मिलता पण्डितलोग धर्म्मशास्त्रोंमें उसको भ्रूणहत्याकारी कहते हैं। हे भार्गव! मैं अधर्म्मके भयसे भीत होकर इन सब विष-योंकी भली भांति आलोचना करके शर्म्मिष्ठासे मिला हूं। शुक्र बोले कि [illegible] नाहुष! [illegible] तुमको [illegible] मेरी आज्ञाकी अपेक्षा करनी थी, तुमने वह नहीं किया है,

साहस नहीं होता। शर्म्मिष्ठा बोली, कि हे राजन्! सहेलीका पति और अपना पति दोनों समान हैं। दो सहेलियोंमें एकका विवाह होनेसे दोनोंका विवाह सिद्ध होता है; पहिले मेरी सहेलीने आपको वरण किया है, उससेही आपको मेरा पतिरूपमें वरण करना होगया है. ययाति बोले, कि मेरा यह एक व्रत है, कि मांगनेवाला जन जो मांगेगा मैं वही दे दूंगा, तुम मुझसे मांग रही हो, सो कहो, तुम्हारी कौनसी अभिलाषा पूरी करनी होगी। शर्म्मिष्ठा बोली, कि महाराज! आप मुझे अधर्म्मसे बचावें, धर्म्म रक्षा करें, आपसे पुत्रवती होकर मैं भली भांति धर्म्मानुष्ठान करूंगी। राजन्! भार्य्या, दास और पुत्र यह तीन धनपति नहीं होते, पर यह जो धन उपार्ज्जन करते हैं, वह धन उनका होता है, जिनके वे अधीन हैं। हे राजन्! मैं देवयानीकी दासी और आपकी वशीभूता हुई हूं, सो देवयानी और मैं दोनों आपकी भजनेके योग्य हैं, सो आप मुझे भजें।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि राजाने शर्म्मिष्ठाकी बात सुनकर उसे ठीक जान करके शर्म्मिष्ठाका मनोरथ सफल कर धर्म्मरक्षा की। इच्छानुरूप सङ्गमसे शर्म्मिष्ठाका मनोरथ पूरा होनेपर वे दोनों उचित सम्मान से सम्भाषण कर योग्य स्थानोंमें पधारे। हे राजन्! प्रसन्न नेत्रा, भले भौंवाली, मधुरहासिनी शर्म्मिष्ठाने उस पहिले सङ्गमहीमें उन नृपोत्तमसे गर्भवती होकर उचित समयमें देवकुमार समान प्रसन्न नेत्र एक पुत्र प्रसव किया।

सम्भवपर्व्वमें बिआसी अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भारत! शर्म्मिष्ठाके पुत्र जन्मा है, यह सुनकर सुन्दरी देवयानी दुःखीचित्त हुई, और शर्म्मिष्ठाके समीप यह बोली, कि री भले भौंवाली! तुमने कामको वशीभूता होकर यह पापकर्म्म कर डाला है? शर्म्मिष्ठा बोली, हे सुन्दरी! मेरे पास धर्म्मात्मा वेदपा[रग] एक ऋषि आये थे, उनके वर देनेको उ[द्यत] होनेपर मैंने धर्म्मानुसार उनसे ऋतु [रक्षार्थ] प्रार्थना की थी। हे सुन्दरी! मैं अन्या[य] पूर्व्वक काम-चारिणी नहीं हुई हूं, सो मैं कहती हूं, कि मेरे गर्भोत्पन्न इस पुत्रने ऋषिके औरससे जन्म लिया है। देवया[नी] बोली, कि री भीरु! यदि यह सच होय, [तो] अच्छा है, पर क्या तुम उन ब्राह्मणको जा[नती] हो? मैं उसका नाम गोत्र और कुल जा[नना] चाहती हूं। शर्म्मिष्ठा बोली, कि हे सुन्दरी वह ब्राह्मण तप और तेजसे दिननायकके [समान] जलते थे, उनको देखकर मेरी ऐसी शक्ति [न] थी, कि कोई बात पूछूं। देवयानी बोली हे शर्म्मिष्ठे! यदि ऐसा हो और यदि [तुमने] अति श्रेष्ठ ब्राह्मणसे पुत्रलाभ किया हो, तो [मेरे] क्रोधका कोई कारण नहीं है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि वे दोनों [आप]समें ऐसा कहकर हंसी उड़ाने लगीं। [देव]यानी यह बात ठीक जानकर निज पुरीमें [गयी।]

अनन्तर राजर्षि ययातिके वीर्य्य तथा [देव]यानीके गर्भसे इन्द्र और उपेन्द्रके समान [दो] पुत्रोंने जन्म लिया, उनके नाम यदु [और] तुर्व्वसु है। फिरभी उस राजर्षिसे [वृष]पर्व्वाकी पुत्री शर्म्मिष्ठाने द्रुह्यु, अनु और पुरु यह [तीन] कुमार प्रसव किये। हे राजन्! अ[नन्तर] कुछ-काल बीतने पर सुन्दरी देवयानी यया[तिके] साथ उस निर्ज्जन बनको गयी, वहां यह [देख]कर, कि देवयत रूपवान् तीन कुमार [निःशङ्क] खेल रहे हैं, देवयानीने अचरज मानकर [राजा]से पूछा, राजन्! कहो, देवकुमार [सदृश] यह कुमार किसकी सन्तान है, मुझको [जान] पड़ता है, कि रूप और तेजमें यह [आपके] समान है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि देवयानीने राजाकी यह बात कहकर कुमारोंसे पूछा, कि बालको। तुम्हारे नाम क्या हैं? तुमने किस वंशसे जन्म लिया है? सच सच कहो, मैं सुनना चाहती हूं। बालकोंने उङ्गलियोंसे उन राजाहीको दिखाया और कहा, कि शर्म्मिष्ठा हमारी माता है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि लड़के यह बात कह करके सब मिलकर राजाके पास गये, राजाने तब देवयानीके सामने आनन्द प्रकट वा उनका आदर नहीं किया। आगे लड़के रोते हुए शर्म्मिष्ठाके पास जा पहुंचे। राजा यह देखकर दुःखित हुए। देवी देवयानी राजापर लड़कोंकी प्रीति देखकर सत्य तत्त्व जानकर शर्म्मिष्ठासे बोली, कि तुमने मेरी अधीना होकर क्यों मेरा ऐसा अप्रिय कार्य्य किया है। तुमने वही असुर-धर्म्म आश्रय किया, मुझसे नहीं डरी? शर्म्मिष्ठा बोली, कि हे मधुरहासिनी। मैंने जो अपने प्रेमीको ऋषि करके प्रगट किया था, वह बात झूठी नहीं है, मैंने न्याय और धर्म्मके अनुसारही व्यवहार किया है, क्यों तुमसे डरूंगी? हे शोभने! तुमने जब इन राजाको भर्त्ता करके वरण किया है, मैंने तभी इनको वरण किया है, क्योंकि सहेलीके भर्त्ता धर्म्मानुसार भर्त्ता होते हैं, तुम ब्राह्मणी और बड़ी हो, इससे मेरी पूजनीया और माननीया होती हो, पर यह तुम जानती हो कि यह राजर्षि तुमसे भी मेरे अधिक पूजनीय हुए हैं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि देवयानी शर्म्मिष्ठाकी यह बात सुनकर राजासे बोली, कि राजन्! अब फिर मैं यहां नहीं रहूंगी। तुमने मेरा अप्रिय कार्य्य किया है। यह देखकर, कि भामिनी देवयानी इतना ही कहकर आंसूभरी आंखोंसे एकायक उठ खड़ी हो उसी क्षण शुक्रके पास जा रही थी, राजा भारी हृदयसे सम्मानसहित सम्भ्रान्त हुए उसके पीछे चलने लगे, पर देवयानी क्रोधसे आंखें लाल कर चली, किसी प्रकार न लौटी। आगे राजाको कोई उत्तर न देकरके ही आंसूभर नेत्रमें उसी क्षण शुक्रके पास जा पहुंची और पिताको देखकर प्रणाम कर सामने खड़ी रही अनन्तर ययातिने भी भार्गवकी पूजा की। देवयानी बोली, कि हे पिता। अधर्म्मसे धर्म्म हार गया है, नीचकी वृद्धि हुई है, वृषपर्व्वाकी पुत्री शर्म्मिष्ठा मुझको लांघ गयी है, हे पिता। इस ययातिके वीर्य्य और शर्म्मिष्ठाके गर्भसे तीन पुत्रोंने जन्म लिया है, मैं दुर्भागी हूं, मेरे दो पुत्रसे अधिक नहीं हुए, आपको समाचार देती हूं। हे भार्गव कान्य! यह राजा धर्म्मज्ञ करके प्रख्यात है, पर यहभी आपसे कह देती हूं कि इन्होंने मर्य्यादाको अतिक्रम किया है।

शुक्रजी बोले, कि महाराज! इस कारण, कि तुमने धर्म्मज्ञ होकर अधर्म्मको प्रिय जाना, बिना विलम्ब, कठोर बुढापा तुमको घेर लेगा। ययाति बोले, कि भगवान्! दानवेन्द्रकी पुत्रीने ऋतुरक्षाकी प्रार्थना कीथी, इसपर मैंने धर्म्म कार्य्य जान करकेही ऐसा किया है, कामके वशीभूत होकर नहीं किया। ब्रह्मन्! किसी कामिनीके ऋतुरक्षाकी प्रार्थना करने पर जो पुरुष ऋतुकी रक्षा नहीं करता, ब्रह्मवादी ब्राह्मणगण उसको भ्रूणहत्याके पापी कहते हैं। मिलन-याचना कामिनीके कामवती होकर निरालेमें मिलनेकी प्रार्थना करनेपर जो पुरुष उससे नहीं मिलता पण्डितलोग धर्म्मशास्त्रोंमें उसको भ्रूणहत्याकारी कहते हैं। हे भार्गव। मै अधर्म्मके भयसे भीत होकर इन सब विषयोंकी भली भांति आलोचना करके शर्म्मिष्ठासे मिला हूं। शुक्र बोले, कि पृथ्वीनाथ नाहुष! तुम मेरे अधीन हो, सो तुमको मेरे आज्ञाकी अपेक्षा करनी थी, तुमने वह नहीं किया है,

धर्म्मविषयमें ऐसा सिखा वार करनेसे चोरीके दोषका दोषी बनना पड़ता है।

श्रीवैशम्पायजी बोले, कि शुक्रके क्रोधयुक्त होकर शाप देने पर नहुषपुत्र ययाति उसी क्षण पूर्व्व अवस्थाको छोड़के बुढ़ापेको प्राप्त हुए; तब उन्होंने कहा, कि हे भार्गव! मैं यौवन दशामें देवयानीसे तृप्त नहीं हुआ हूं. हे ब्राह्मण! आप प्रसन्न होवें, कि यह बुढ़ापा मुझमें प्रविष्ट न होसके। शुक्र बोले, कि पृथ्वीपाल! मेरी बात झूठी नहीं ठहरती है, तुम बुढ़ापेमें ग्रसित हुए हो, पर चाहो तो इस बुढ़ापेको दूसरे जनमें चला सकोगे। ययाति बोले, कि हे ब्रह्मन्! आप यह आज्ञा कीजिये, मेरा जो पुत्र मुझको अपना यौवन देगा, वही पुत्र राज्यभागी पु—भागी और कीर्त्ति-भागी होगा। शुक्र बोले कि नहुष-पुत्र! तुम एक चित्तसे मेरा ध्यान कर इच्छानुसार बुढ़ापेको चला सकोगे, उससे तुम पापके भागी नहीं होगे, जो पुत्र तुमको अपनी अवस्था देगा वह आयुमान्, कीर्त्तिमान्, राज्याधिकारी और अनेक सन्तानयुक्त होगा।

सम्भवपर्व्वमें तिरासी अ—ाय समाप्त।

———

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर, राजा ययाति बुढ़ापेसे ग्रसित होकर निज पुरमें जाकर बड़े और श्रेष्ठ पुत्र यदुसे बोले, कि बेटा! शुक्रके शापसे बुढ़ापेने मास बोला कर दिया, केश पक गये और दुर्व्वलता छा गयी है, पर मैं यौवनके भोगसे भली भांत तृप्त नहीं हुआ हूं, अतएव तुम मेरे इस बुढ़ापेके साथ पापको ले लो, तुम्हारे यौवनसे मैं कामके विषय भोगूं; आगे सहस्र वर्ष पूरे हो जाने पर मैं तुम्हारा यौवन तुमको लौटा देकर अपनी जराके साथ पाप भोगूंगा। यदु बोले, कि महाराज! बुढ़ापेमें पान भोजादि विषयमें अनेक दोष दीख पड़ते हैं, इस लिये मैं समझ ता हूं, कि बुढ़ापेको न लूंगा। जिस ... लोग शुक्ल दाढ़ीयुक्त आनन्दवर्जित, ... ग्रसित, लटकते हुए मलयुक्त सिकुड़े ... शरीरधारी, कटाकारी, दुर्व्वल दुर्ब्ब... किसी कार्य्यके करनेमें असमर्थ और ... तथा साथियोंसे अनादृत होते हैं, उस ... मैं भोगना नहीं चाहता हूं रे धर्म्मज्ञ ... मुझसे अधिक प्यारे आपके बहुत पु... उनमेंसे किसीको जरा लेनेको आज्ञा कीजि... ययाति बोले, ऐ पुत्र! तुमने मेरे हृ... जन्म ले करकेभी अपनी अवस्था नहीं दी, ... तुम्हारे वंशमें कोई राज्याधिकारी नहीं हो...

आगे तुर्व्वसुसे बोले, कि बेटा तुर्व... तुम मेरी इस जराके साथ पापको लेलो, तुम्हारे यौवनसे विषय भोगूं, आगे सहस्र ... पूरे होनेपर तुम्हारा यौवन तुमको ... अपनी जराके साथ पाप ले लूंगा। तु... उत्तर दिया, कि पिता! जिससे भ... भोगसे हाथ धोना पड़ता है, जिससे बल ... रूप बिगड़ जाता है, जिससे बुद्धि जाती ... है, और जिससे प्राण नष्ट हो सकता है ... बुढ़ापेको मैं नहीं चाहता हूं। ययाति ... कि रे तुर्व्वसो! तुमने मेरे हृदयसे जन... करकेभी अपनी अवस्था नहीं दी, सो तु... प्रजा सम्पूर्णरूपसे उखड़ जायगी और ... आचार और धर्म्म बहुत तङ्ग है, जो लोग ... संभाचारी मासखानेवाले हैं नीचसे ... हुए और गुरुकी पत्नीसे आसक्त हैं, ... आचार पक्षियोंकी भांत है और जो प... पशुधर्म्मी तथा म्लेच्छ हैं, रे मूर्ख! ... उनके राजा होगे।

श्री वैशम्पायनजी बोले, कि ययाति ... पुत्र तुर्व्वसुको इस प्रकार शाप देकर श... पुत्र द्रुह्युसे बोले, कि हे द्रुह्यो! सहस्र ... लिये मेरे रङ्ग तथा रूपनाशी इस जरा... लेकर अपना यौवन मुझे दो, जब सहस्र ...

पूर्ण होंगे तब तुम्हारा यौवन तुमको देकर फिर निज पापके साथ जराको ले लूगा। द्रुह्यु बोला, कि जराग्रस्त जन जीर्ण शरीर धारी होनेके कारण घोड़े, रथ, हाथी, स्त्री आदिको भोग नहीं सकता और उसकी बातभी बिगड़ जाती है, सो मैं बुढ़ापेको नहीं मागता। ययाति बोले, कि द्रुह्यो। तुमने मेरे हृदयसे जन्म ले करके भी अपनी अवस्था नहीं दी,सो तुम्हारी अति प्रिय इच्छाभी कभी पूरी नहीं होगी। जहां घोड़े,रथ,हाथी राजाके योग्य यान, गौ, गदहे, बकरे, पालकी आदिसे जाना आना नहीं हो सकता जहां सदा बेड़ेपर और कूदकर जाना पड़ता है, जहां राजा शब्द कहा नहीं जाता है, तुम वंशसहित उस देशमें रहोगे।

अनन्तर अनु नामक पुत्रसे बोले, कि हे अनो। तुम मेरे पापके सहित यह बुढ़ापा लो, मैं तुम्हारे यौवनसे एक सहस्र वर्ष विषय भोगूं। अनुने उत्तर दिया, कि जराग्रस्त जन टूटे फूटे अङ्ग लेकर अकालमें बच्चेके समान अशुचि शरीरसे अन्न ग्रहण करते हैं, उचित समयमें अग्निमें आहुति नहीं दे सकते, इससे जराको नहीं ले, सकूंगा। ययाति बोले, कि तुमने मेरे हृदयसे जन्म ले करकेभी अपनी अवस्था नहीं दी. इसहेतु तुमने जिस जराका दोष कहा, उसीको प्राप्त करोगे। रे अनो। तुम्हारी प्रजा यौवनमें पहुंचतेही मर जायगी और तुमभी श्रुति और स्मृतिके अनुसार अग्नि-कार्य्यसे वर्जित होगे।

अनन्तर पुरुसे बोले, कि हे पुरो। तुम मेरे प्यारे पुत्र हो, तुम्हीं सबोंसे श्रेष्ठ होगे. बेटा। बुढ़ापेने वली और पलितसे मुझ पर चढ़ाई की है, मैं शुक्रके शापसे जराग्रस्त होनेके कारण यौवनसे भलीभांति तृप्त नहीं हो सका हूं। हे पुरो। तुम मेरे पापके साथ इस जराको लो, मैं तुम्हारे यौवनसे कुछ दिनों तक विषय भोगूं, आगे सहस्र वर्ष पूरे होने पर तुम्हारा यौवन तुमको देकर निज पापके साथ जराको लूगा।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि पिताकी यह बात सुनतेही पुरुने उत्तर दिया, कि महाराज। आपने जो आज्ञा दी, मैं वही करूंगा। मैं आपके पापके साथ जराको लूगा। हे राजन्। आप मेरा यौवन लेकर मनमाना विषय भोगिये। मैं आपकी अवस्था और रूप धरकर जराग्रस्त होकर आपको यौवन देकर आपके नियोगके अनुसार कार्य्य करूंगा। ययाति बोले, कि बेटा पुरो। मैं तुम पर प्रसन्न हुआ, प्रीति-चित्तसे यह वर देता हूं, कि तुम्हारे राज्यमें प्रजा सर्व्वकामनाओं की पूर्त्तिसे प्रसन्न रहेगी। महातपा ययातिने यह कह कर शुक्रको स्मरण करके पुरु नामक महात्मा पुत्रमें जराको संक्रा-मित किया।

सम्भवपर्व्वमें चौरासी अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि नहुषपुत्र राज-श्रेष्ठ ययाति प्रीतियुक्त होकर पुरुके यौवनसे मनमाना विषय भोगने लगे। हे राजेन्द्र। उनकी जैसी कामना और जैसा उत्साह था, वह उसके अनुसार उचित समयमें यथायोग्य धर्म्मसे विना विरोध किये सुख भोगने लगे। वह यज्ञोंसे देवोंको, श्राद्धसे पितरोंको, मन-मानी कृपासे दीनोंको, प्रार्थना पूरी कर ब्राह्म-णोंको, अन्नपानसे अतिथियोंको, भली प्रकार पालनसे वैश्योंको और अनिर्दयतासे शूद्रोंको भली भांति तृप्त कर और सम्पूर्ण रूपसे सता कर लुटेरोंको तथा धर्म्मसे सम्पूर्ण प्रजाओंको अनुरक्त कर दूसरे देवराजके समान प्रजाको पालने लगे। सिंहसम विक्रमी वह राजा विषयमें आसक्त होकर धर्म्मसे विना विरोध किये भली प्रकार भोग करने लगे, वह सब्की कामनाकी सामग्री पाकर सन्तुष्ट हुए, पर यह स्मरण कर कि मेरी यौवनावस्था सहस्र वर्षमें

पूरे होजायगे अति खेदयुक्तभी हुए। वीर्य्यवान क्षत्रिय राजर्षि सहस्र वर्षतक यौवन पाकर कलाकाष्ठा आदि कालके जितने भाग हैं उसमें विश्वाचीके साथ कभी सुशोभित नन्दनवनमें, कभी अलकामें, कभी पहाड़की चोटीपर अथवा कभी उत्तर प्रदेशमें खेलने लगे। अनन्तर धर्मात्माने जब देखा, कि सहस्र वर्ष पूरे होगये हैं, तब पुत्र पुरुको बुलवाकर बोले, कि हे अरिन्दम पुत्र। मैं तुम्हारे यौवनसे अभिलाषा और उत्साहके अनुसार उचित कालमें विषय भोग चुका हूं; पर जिस प्रकार आगमें घृत छोड़नेसे न बुझकर औरभी जल उठती है, उसी प्रकार कामनाकी वस्तुओंको भोगनेमें कभी कामकी निवृत्ति नहीं होती, वरन औरभी क्रमसे बढ़ता रहता है। पृथ्वीमें धान, यव, सुवर्ण, पशु और स्त्री यह सब एक पुरुषसे भोगे जाने परभी उसकी पूरी तृप्ति नहीं होती, अतएव भोगकी प्यास त्यागना उचित है। जो प्यास दुर्मतियोंके त्यागनेके अयोग्य है, बुढ़ापा आजानेसेभी जिस प्यासकी क्षय नहीं होती, और जो प्राणविनाशी रोगसदृश है, उस प्यासके छोड़े बिना सुखी होनेका दूसरा उपाय नहीं है। मैं विषयासक्त था, उसमें सहस्र वर्ष व्यतीत हो गये हैं, तिस परभी मेरी विषयकी प्यास दिनोंदिन प्रबल होती जाती है, अतएव मैं यह प्यास छोड़कर परम ब्रह्ममें चित्तको समाधान करके बिना झगड़ा औ ममता-रहित होकर वनमें मृगोंके साथ एकत्र बसूंगा। हे पुरो। तुम्ही मेरे प्रियकार्य्य करनेहारे पुत्र हो, मैं तुम पर प्रसन्न हुआ हूं, तुम्हारा मङ्गल होगा, तुम अपना यौवन लेकर इस राज्यके अधीश बनो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर नहुषपुत्र ययातिने जराको ले लिया और पुरुभी फिर अपना यौवन प्राप्त हुए। राजाके कनिष्ठ पुत्रको राज्यमें अभिषिक्त करने की अभिलाषा प्रगट करने पर, ब्राह्मणादि चारों वर्ण, राजाके समीप आकर यह बोले, कि हे प्रभु! शुक्रके नाती देवयानीके प्रसव किये ज्येष्ठ यदुको। अतिक्रम कर पुरुको क्यों राज्य देते हैं? यदु आपके ज्येष्ठ पुत्र, तुर्व्वसु दूसरे, और शर्मिष्ठाके गर्भोत्पन्न द्रुह्यु तीसरे, अनु चौथे और पुरु सबोंसे कनिष्ठ हैं, अतएव ज्येष्ठको अतिक्रम करके कनिष्ठ क्योंकर राज्याधिकारी हो सकता है? हमने यह आवेदन किया, आप यथाधर्म्म पालन कीजिये। ययाति बोले, कि हे ब्राह्मणादि वर्णो! तुम सब मेरी बात सुनो, मैं ज्येष्ठको किसी प्रकार राज्य नहीं दूंगा, ज्येष्ठ यदुने मेरी आज्ञा नहीं पाली है। जो पुत्र पिताके प्रतिकूल आचरण करता है, साधुओंके मतमें वह पुत्र, पुत्रमें नहीं गिना जाता, जो पुत्र पिता की आज्ञासे चलनेवाला, हितकारी तथा नम्र है, और पिता माता पर पुत्रके समान स्नेह करता है, वही पुत्र पव… यदु, तुर्व्वसु, द्रुह्यु, अनु, इन्होंने मेरे प्रति अनादर प्रगट किया है, पुरुने मेरी बात विशेष रूपमें रखकर और मानकर मेरी जराको ले लिया था, इससे पुरु कनिष्ठ होनेपर मेरा उत्तराधिकारी दायाद होगा। मित्रवर पुरुने मेरी अभिलाषा पूरी की है और उशना शुक्रने स्वयं मुझको यह वर दिया है, कि जो पुत्र तुम्हारा आज्ञाकारी होगा, वही राज्याधिकारी होगा, अतएव तुमसे विनय करता हूं कि तुम पुरुको राज्यपर बैठाओ। तब चारों वर्णोंकी प्रजाओंने कहा, कि जो पुत्र गुणवान्, साधु, श्रेष्ठ और सदा पिता माताका हितकारी होता है, वह कनिष्ठ होने परभी सम्पूर्ण कल्याणका पात्र हो सकता है, अतएव आपका हितकारी पुत्र पुरु इस राज्यको प्राप्त करनेके योग्य है, इस विषयमें शुक्रनेभी वर दिया है, उसकी विरुद्धतामें उत्तर नहीं दिया जा सकता।

श्रीवैशम्पायनजी बोले कि पुरवासी और जनपदवासियोंके सन्तुष्ट होकर ऐसा कहने पर ययातिने निजपुत्र पुरुको अपने राज्यपर अभिषिक्त किया। वह पुरुको राज्य देकर वन वासके लिये सङ्कल्प ठहराकर ब्राह्मण और तपस्वियोंके साथ राजपुरसे निकले। राजा ययातिके पुत्रोंमें यदुके वंशसे यादव, तुर्व्वसुके वंशसे यवन, द्रुह्युके वंशसे भोज और अनुके वंशसे म्लेच्छ जातिने जन्म लिया है। हे पृथ्वीनाथ। जिस वंशमें आपने संयतेन्द्रिय होकर सहस्र वर्ष राज्य करनेके लिये जन्म लिया है, वह पौरव वंश पुरुहीसे उत्पन्न हुआ है।

सम्भवपर्व्वमें पचासी अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि नहुष-पुत्र राजा ययाति एक प्रकार प्यारे पुत्रको राज्यपर अभिषिक्तकर प्रसन्नचित्तसे वाणप्रस्थाश्रम आश्रयकर मुनि होगये। वह जितेन्द्रिय संयतव्रत, और फल-मूल भक्षी होकर ब्राह्मणोंके साथ कुछकाल वनमें वसकर स्वर्गको पधारे, स्वर्गमें आरूढ़ होकर उन्होंने कुछकाल परम सुखसे काटा। आगे स्वल्प कालहीमें देवराजने फिर उनको स्वर्गसे नीचे गिराया था। सुन चुका हूं, कि वह स्वर्गसे च्युत होकर भूतलको प्राप्त नहीं हुए थे, आकाशहीमें ठहरे थे, आगे उस वीर्य्यवान राजाने वसुमान अष्टक, प्रतर्द्दन और शिविके साथ एकत्र होकर फिर स्वर्गारोहण किया था।

जनमेजय बोले, कि यह आद्योपान्त सब प्रकार सुना चाहता हूं, कि महीपाल ययाति किस कार्य्यसे फिर देवलोकको प्राप्त हुए, आप इन ब्राह्मणों और ऋषियोंके सामने कहिये। वह कुरुवंशके बढ़ानेवाले, सत्य कीर्त्तियुक्त, सूर्य्य समान तेजस्वी पृथ्वीपति ययाति देवराजके सदृश थे, उनका यश सर्व्वत्र फैला हुआ है उन महात्माके इस लोक और परलोककी सम्पूर्ण कथा सुननेका अभिलाषी हो रहा हूं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे राजन्! स्वर्गमें और इस लोकमें पुण्य उपजानेवाली सर्व्व पापनाशिनी राजा ययातिकी अच्छी कथा आपसे कहता हूं, सुनिये। नहुष-पुत्र राजा ययाति कनिष्ठपुत्र पुरुको राज्यपर अभिषिक्त और यदु आदि पुत्रोंको नीच देशमें स्थापन करके सन्तुष्ट चित्तसे वानप्रस्थाश्रमको आश्रय कर फलमूलभक्षक होकरके बहुकाल तक वनमें रहे; उसकालमें उन्होंने संयतात्मा और जितक्रोध होकर देवता और पितरोंका तर्पण, वाणप्रस्थकी विधिसे अग्निमें आहुति दान और और वनके फल मूल और घृतसे अतिथियोंकी पूजा की थी, उक्त विभुने उञ्छवृत्ति अवलम्बन कर शस्यको चुन चुन कर शेष अन्नके भोजनसे पूरे सहस्र वर्ष व्यतीत किये थे; आगे उन्होंने संयतचित्त होकर जलमात्र पीकर एक वर्ष काटा; अनन्तर तन्द्रा रहित होकर वर्षभर वायु भक्षक हो रहे, अन्तमें एक वर्ष पञ्चाग्निके बीचमें तपस्याकी ६ महीने वाताहारी हो एक पांवके बल खड़े रहे; अनन्तर पुण्यकीर्त्ति नहुष-नन्दनने आकाश-मण्डलको चमका कर स्वर्गारोहण किया।

सम्भवपर्व्वमें छियासी अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि वह राजेन्द्र ययाति स्वर्गारोहण पूर्व्वक देव, साध्य, मरुत और वसुओंसे भली भांति घेरे जाकर देवालयमें वास-पूर्व्वक देवलोक और ब्रह्मलोकमें विचरने लगे। यह सुन चुका हूं, कि पुण्यकारी, जितेन्द्रिय उस पृथ्वीपतिने इस प्रकारसे बहुकाल स्वर्गवास किया। एक समय उस नृपश्रेष्ठ ययातिके देवराजके पास जानेपर उन्होंने उनसे बातें करनेके पश्चात् उनसे पूछा, कि राजन्! जब पुरु तुम्हारा स्वरूप लेकर जरा ग्रहण

अवश्यही होगा, मैं कभी भयमें मोहित नहीं हुआ और मेरा मानसिक कोई सन्तापभी विद्यमान नहीं है; देखो, सर्प, विच्छू, मछली आदि जलके और स्थलके कीट, पत्थर और लता काष्ठादि जितने स्वेदज, अण्डज और उद्भिज्ज पदार्थ हैं सभी नियतिके अन्तमें निज निज प्रकृतिमें लीन होते हैं। हे अष्टक! सुख दुःख अनित्य हैं, अतएव क्यों उनसे तापित हूंगा? यह विचार कर, कि क्या करूं क्या करनेसे सन्ताप जाता रहेगा, अप्रमत्त होकर सन्तापका विसर्ज्जन कर दिया है।

श्री वैशम्पायनजी बोले, कि वहां ठहरे हुए सर्व्वगुणयुक्त मातामह भूपाल ययातिके ऐसा कहने पर अष्टकने फिर स्वर्गवासकी कथा पूछी, कि हे पृथ्वीपते! तुम चैतन्य नारद आदिके समान धर्म्मकी कथा कह रहे हो, अतएव तुमने जितने कालमें जिस प्रकारसे जिन जिन प्रधान लोकोंको भोग किया है वह सब मुझसे कहो। ययाति बोले, कि मैं इसलोकमें सार्व्वभौम राजा था, आगे महत् लोकको जय-कर वहां सहस्र वर्ष वास किया, पश्चात परम-लोकको प्राप्त कर सहस्र द्वारयुक्त सौ योजन फैली हुई सुन्दर इन्द्रपुरीमें सहस्र वर्ष वास किया था। अनन्तर उससेभी श्रेष्ठ दुष्प्राप्य दिव्य अजर लोकपति प्रजापतिलोकको प्राप्त-कर वहांभी सहस्रवर्ष वास किया, आगे उस-सेभी परम लोकको पाकर देव-देवके आलयमें विहार कर, देवोंसे पूजे जाय तथा देवोंके तुल्य प्रभावी और तुल्य द्युतिमान होकर मन-माने लोकोंमें वास किया, अन्तमें कामरूपी होकर दस लक्ष वर्ष नन्दनवनमें वास कर सुगन्धी फूल लगे हुए मनोहर वृक्षदलको देखता हुआ अप्सराओंके साथ विहार करने लगा, इस प्रकार स्वर्गीय सुखमें आशक्त रहनेमें बहुत काल व्यतीत हुआ। अनन्तर उग्ररूपी देवदूतने मेरे पास आकर "च्युत हो" यह बात उच्च प्लुतस्वरसे तीन बार कही; हे सिंह। मैं इतनाही मात्र जानता हूं, उसीक्षण मैं अल्प पुण्यवान् होकर वनमें च्युत हुआ। हे नरेन्द्र! तब ... करनेवाले सुरोंका यह खेद वाक्य ... मार्गमें सुना, कि हाय! कैसे दुःखकी है। वह देखो, पु... कारी, पुण्य... ययाति क्षीण-पु... होकर गिर रहे हैं। ... गिरते हुएही उनसे पूछा, कि मैं क्योंकर समाजमें गिर सकता हूं? अनन्तर ... मुझको तुम्हारी यह यज्ञ-भूमि ... इस यज्ञ-भूमिमें धूएंसे सूचित ... वालेको भांति हविको गन्ध सूंघकर ... चित्त होकर इस यज्ञभूमिमें शीघ्र चला...।

सम्भवपर्व्वके ययाति उपाख्यानमें नवासी अध्याय समाप्त।

अष्टकजी बोले, कि हे सत्यशील! कामरूपी होकर दश लक्ष वर्ष नन्दनवनमें थे, अनन्तर किस हेतु उसको छोड़कर उतरे? ययाति बोले, कि जिस प्रकार लोकमें किसीके स्वल्पवित्त होने पर ज्ञाति, मित्र और स्वजनगण त्याग देते हैं, प्रकार वहां मनुष्यों के क्षीण पुण्य होने पर ऐश्वर्य्यवान देवगण उनको उसीक्षण त्याग देते हैं। अष्टकने कहा, कि उस देवलोकमें लोग क्योंकर क्षीण-पुण्य-होते हैं? इस विषयमें मुझे बड़ी शङ्का हो रही है। फिर भी मुझसे कहो, कि किस पुण्यसे कौनसे प्रजापति-धाममें जाया जाता है, मेरी समझमें तुम क्षेत्रज्ञ हो। ययाति ... कि हे नरदेव! जो लोग अपनी उन्नति मुखसे प्रगट करते हैं, वे क्षीण-पुण्य देवलोकसे इस भूतलरूपी नरकमें भोगकी अभिलाषासे थक जाते हैं, और सियार आदिके भोजनके निमित्त

ना प्रकारके शरीर प्राप्त करते हैं। हे न्द्र। इस कारणसे दोषयुक्त और लोकोंमें न्दा किये जाते हुए कर्म्म त्याग देना। हे ीनाथ। तुमसे सब कुछ कह चुका; कहो, फिर क्या कहना होगा।

अष्टकजी बोले, कि जब गिड शितिकण्ठ दि पची और पतिङ्गे मनुष्यों को खा लेते तब किस प्रकारसे जीव वर्त्तमान रहता फिर क्योंकर प्रगट होता है? और रव बैतरणी आदि जो नरक प्रसिद्ध हैं, उन-अतिरिक्त भौम नरक क्या है? यह सब ना चाहता हूं। ययाति बोले, कि सम्पूर्ण व अनुष्ठान किये हुए कर्म्मके अनुसार देह इनेके पीछे माता की कोखमें जन्म लेकर स्थानमें सम्पूर्ण अङ्ग प्रत्यङ्ग युक्त देहकी पत्ति होनेपर प्रसव किये जाकर प्रकाश से पृथ्वीमें चलते फिरते रहते हैं, वही जीव-लिये भौम नरक कहा जाता है, क्योंकि प्रकारसे वहां गिरनेसे अपनी अवस्थाको नहीं देखते, अज्ञानवश केवल विषयके गहोमें वर्षोंको व्यतीत किया करते हैं। ई जीव निजके किये हुए कर्म्मके अनुसार कुकाल स्वर्ग भोग कर स्वर्गसे गिरनेके काल-साठ सहस्र वा अस्सी सहस्र वर्षभी आका-म रहकर कष्ट भोगते हैं, गिरनेवाले उन वोंको बड़े बड़े दातवाले भयङ्कर हस्ती, मैंसे र राक्षस लोग हिंसा करते रहते हैं। अष्टक ले, कि जो लोग पापके हेतु स्वर्गसे च्युत ते हैं, काड़ काटनेवाले भयावने भौम राक्ष-के उनकी हिंसा करने पर वे क्योंकर बने ते हैं? क्योंकर इन्द्रियादि युक्त होते हैं? थवा क्योंकर गर्भमें जाकर जन्म लेते हैं? याति बोले, कि सूक्ष्म भूतसे आवृत जीव जल-के शरीर धरकर वीर्य्यका स्वरूप प्राप्त करता : पुरुषसे गिराये जाकर वह वीर्य्य स्त्रीके कालमें मिलने पर फल फलके समान हो-कर "रज" यह संज्ञा पाता है। रज स्त्रीके पेटमें गर्भके स्वरूपमें उत्पन्न होता है। जीव-गण पहिले जल, वायु, आकाश और तेज इन पांच महाभूतोंमें प्रविष्ट होते हैं, आगे वन-स्पति और औषधिमें व्याप्त होते हैं, अनन्तर शुक्र और शोणितके स्वरूपको पाकर गर्भोत्पत्ति करते हैं। क्रमसे दोपाये चौपाये आदिके शरीर प्राप्त करते हैं। अष्टक बोले, कि जब जीव नरयोनिको प्राप्त करता है, क्या तब अपने सूक्ष्म शरीरहीको लेकर माता की कोखमें घुसता है? अथवा कोई अन्य भौतिक शरीर धरकर घुसता है? यह मुझसे कहिये मैं शङ्कायुक्त होकर पूछता हूं, और जीवोंके क्योंकर शरीर भेद आदि होते हैं? अथवा क्योंकर अपने आंख, कान आदि सम्पूर्ण इन्द्रिय, रूप और शब्दादि विषयोंका ज्ञान लाभ करते हैं? हे पिता। हम तुमको क्षेत्रज्ञ समझ-कर पूछ रहे हैं, तुम यह सब सच्ची रीतिसे कहो। ययाति बोले, कि पांच प्राण, मन, बुद्धि और दश इन्द्रिययुक्त अपञ्चीकृत भूतमें बने बनाये सूक्ष्म शरीरसे वीर्य्यके स्वरूपको धारण कर स्त्रियोंको ऋतुमें पुष्परससे अनुसंवद्ध गर्भाश्रित वह जीव तन्मात्रका अधिकार युक्त किसी विशेष वायुसे उत्कृष्टता और क्रमसे वृद्धिको प्राप्त होता है; आगे जब सम्पूर्ण आकार पाकर सञ्ज्ञालाभ करके मनुष्य के आकारमें जन्म लेता है, तब कानसे शब्द जान सकता है, चक्षुसे रूप देखता है, नाकसे गन्ध सूंघता है, जिह्वासे स्वाद लेता है, त्वचासे अनु-भव कर सकता है और मनसे पदार्थोंको जान सकता है। हे अष्टक। जीवात्माका सूक्ष्म-रूपी वह लिङ्ग शरीर इन प्रकार स्थूल शरीरमें आ पहुंचता है।

अष्टक बोले, कि जो पुरुष मर जाता है, लोग उसको जलाते वा गाड़ते हैं, अथवा किसी प्रकार से उसके शरीरका नष्टकर

है, सो स्थूल शरीरके साथ लिङ्ग शरीर भी नष्ट होजाता है. अतएव वह लिङ्ग शरीर नाशको प्राप्तकर क्योंकर मांस पिण्डरूपी स्थूलदेहको चेतनायुक्त करता है? ययाति बोले, कि हे राजसिंह। जीवात्मा मृत्युके कालमें पवनके आगे चलनेवाले पञ्च प्राणादि लिङ्ग शरीरको धारण करके निद्रितकी भांति स्थूलदेहको छोड़कर सुकृत और दुष्कृतको सामने लिये एक प्रकारका विशेष शब्द करता हुआ अन्य योनिमें जन्म लेता है. उनमें पुण्यात्मा पुरुष पुण्ययोनिमें जन्म लेता है. और पापकारी पुरुष पाप योनिमें कीट पतङ्गादिके स्वरूपमें उत्पन्न होते हैं। हे महानुभाव, राजसिंह। एकपाये, चारपाये, दो पाये आदि जीवगण इस प्रकारसे गर्भमें आविर्भूत होते हैं, सुर्भ और वृक्ष कहनेको नहीं है. मैं सब कुछ कथा तुमसे कह चुका, कहो और क्या पूछोगे। अष्टक बोले, कि हे तात! तपस्या और विद्या इन दोनोंमें किससे श्रेष्ठलोकको प्राप्ति होती है, और जिस क्रमसे शुभ लोकमें जाया जाता है वह सब सत्यरूपसे कहो। ययाति बोले, कि साधुलोग सदा कहा करते हैं, कि तपस्या, दान, शम, दम, लज्जा, ऋजुता और सर्व्व जीवों पर कृपा, यह सात मनुष्योंके स्वर्गलोकमें जानेके प्रधान द्वार है; पर साधुलोग सदा यह कहा करते हैं, कि जो सब पुरुष तमयुक्त होकर अहङ्कार प्रकाश करते हैं, वे मङ्गल पानेके योग्य नहीं हो सकते हैं। जो जन पढ़ करके ऐसा अभिमानी होकर, कि मैंही पण्डित हूं, विद्यासे औरोंके यशको लोप करता है, उसको स्वर्ग प्राप्त नहीं होता, यहांतक कि उसका वह पाठ कुछभी फलदायी नहीं होता। अग्निहोत्र, मौनव्रत, अध्ययन यज्ञ चार प्रकारके कर्म्म शुभ करनेवाले तो है, पर अहङ्कारके साथ यह सब कर्म्म किये जानेपर अनुचित रूपसे आचरित होकर भय देने वाले होते हैं। मनुष्य अति सम्मानके पात्र होनेसेभी हर्षयुक्त न होवे और अपमानित सेभी खेदयुक्त न बने. क्योंकि इन लोकमें साधु लोगही साधुलोगोंकी पूजा किया करते हैं असाधुलोग कभी साधुओंके समान आ... नहीं करते। पण्डितोंने ऐसा कहा है, कि इस प्रकार अहङ्कार दिखानेसे दान दिया, यज्ञ किया, पाठ किया, व्रत किया उसकी सुगति नहीं होती, अतएव सर्व्व प्रकारसे अहङ्कारको छोड़नाही उचित है। पर जो विद्वानलोग चिन्तापथके अदृश्य श्रे... अपने समान साधुओंके मङ्गलकारी सनातन ब्रह्मको संयत चित्त होकर अपना आश्रय करके जानते हैं, वे समाधिसे उस ब्रह्मके साथ एक भाव प्राप्तकर अन्तको शान्ति अर्थात् मुक्ति प्राप्त करते हैं।

सम्भवपर्व्वके ययाति उपाख्यानमें।

९०वें अध्याय समाप्त।

अष्टकजी बोले, कि, वैदिकगण इस विधि भांति भांतिकी बातें कहा करते हैं कि गृही भिक्षु, ब्रह्मचारी और वानप्रस्थ, यह सब रहकर कैसा आचरण करनेसे धर्म्मार्जन करनेको समर्थ होते हैं। ययाति बोले कि ब्रह्मचारी गुरुके घरमें वासकर गुरुके बुलाने पाठ लें, गुरुके कार्य्यमें सदा उत्साही बने बड़े सबेरे गुरुके उठनेके पहिले उठें, गुरुके सोनेके पीछे सोवें और, धीर जितेन्द्रिय धीरजयुक्त बकवादवर्ज्जित पठनशील होवें उनको ब्रह्मचर्य्य सिद्ध होता है। प्राचीन उपनिषदों में कहा है, कि गृहीजन धर्म्मानुकूल धनार्ज्जन करके नित्य नैमित्तिकादि अतिथियोंको भोजन करावे और किसीके विना दिये करे न ले। वनवासीजन निज शक्तिसे कर किये हुए फल मूल पर जीते हुए, पापकार्य्यों निवृत्त, दानशील, नियमित भक्षक सदा ... और परायी हिंसा आदिसे रहित होकर

रूपमें अच्छी सिद्धि प्राप्त करते हैं। जो नाना गुणयुक्त, नित्य जितेन्द्रिय और थोड़े वस्त्र पहिनेवाले होते हैं और शिल्पसे जीविका नहीं करते हैं। गृहस्थके घरके विना किसी और स्थानमें सोते हैं, किसी विषय से मिलते मिसते नहीं हैं और स्वल्प चलते हैं, पर तिसपरभी नाना देशोंमें घूमते हैं वही भिक्षु करके कहे जाते हैं। जिस समय सब विषय तुच्छ हो जाते हैं और सुखदेनेवाली वस्तु मनमानो छोड़ दी जा सकती हैं, विद्वान्‌जन उस समयहीमें संयत होकर ब्रह्मनिष्ठाके निमित्त वनमें जानेकी चेष्टा करें, वानप्रस्थजन निज शरीर और सम्पूर्ण इन्द्रियोंको वनमें छोड़ें, तो ऊपरके पितृ-पिता महादि दश पुरुषोंको, नोचेकी पुत्र पौत्रादि दश पीढियोंको तथा निजको परब्रह्ममें लीन करते हैं।

अष्टकजी बोले, कि हम यह सुना चाहते हैं, कि मुनि कितने प्रकारके होते हैं और मौनव्रतभी कितने प्रकारके होते हैं। ययाति बोले, कि हे जनाधिप। वनमें वसनेसे सम्पूर्ण ग्रामकी वस्तु जिनके समीप रहती है, और ग्राममें टिकने परभी सम्पूर्ण वनके पदार्थ जिसके सामने आते हैं, उनका नाम मुनि है। अष्टक बोले, कि वनमें वसनेसे ग्रामकी वस्तु और ग्राममें वसनेसे वनकी वस्तु क्योंकर सामने आसकती है? ययाति बोले, कि मुनिके वनमें वसनेसे उन को ग्रामकी वस्तु इकट्ठी करनी नही पड़ती. उनके योगबलसे स्वयं सम्पूर्ण पदार्थ सामने आजाते हैं, वह विवेकसे सन्यासी, गृहादि वर्जित और परमहंस होते हैं और दिशाके व्यपदेशरहित होते हैं एवम् कौपीन तथा उसके ढंपनेके योग्य वस्त्रमात्रको लेते हैं; और उतनाही भोजन करते हैं, कि जिससे केवल प्राण धारण हो सके, उनके ग्राममें बसनेसेभी वनके व्यवहार सब उनके वशमें हो जाते हैं. जो मुनि सम्पूर्ण कर्म्म और कामना त्याग कर जितेन्द्रिय होकर मौनव्रत आश्रय किये रहते हैं, वह सिद्धिको प्राप्त करते हैं; जो नित्य शुद्धचित्त और आकांक्षा-वर्जित होकर हिंसायुक्त धर्मको त्याग देते हैं, विशुद्ध भोजन करते हैं और जिन्होंने हिंसा करनेवाले नखोंको काट डाला है, ऐसे मुनिको कौनसा जन न पूजेगा? जो क्षमाशील और तपस्यासे दुबले पतले और जिनका मांस, हड्डी और रक्त पतला हो गया है वह इस लोक और परलोकमें जयको प्राप्त करते हैं, जब मौनकी भली भांति आश्रय किये हुए मुनि अद्वैत भावके अवलम्बनसे द्वन्द्व वर्जित होते हैं, तब इस लोक और परलोकमें जयको प्राप्त होते हैं; जिस प्रकारसे गौ आदि पशु, हाथ पांव आदिकी चेष्टासे भोजनको न बटोर कर केवल मुखसे आहार निर्व्वाह करते हैं, उसही प्रकार जब मुनि प्रत्यागात्मामें एकाग्र होकर बिन मांगे पहुंची हुई भोजनकी सामग्रीको प्राण धरनेहीके निमित्त मुखसे उठाते हैं, हाथ पावसे कोई चेष्टा नही करते, ऐसी अवस्था होनेसे उनके सामने सम्पूर्ण लोक अमृतके स्वरूप होते हैं।

सम्भवपर्व्वके ययाति उपाख्यानमें एकानब्बे अध्याय समाप्त।

अष्टकजी बोले, कि सूर्य्य और चन्द्रकी समान दौड़नेवाले यति और वानप्रस्थ इन दोनोंमें कौन पहिले देवत्व को पहुंचते हैं? ययाति बोले, कि दोनोंमेंसे यतिजन संयत रह कर इच्छाचारी गृहस्थ जनोंसे भरे पुर ग्राममें वस करकेभी पहिले देवके स्वरूपको प्राप्त होते हैं, पर उन यति-जनसे क्रोध इत्यादि देहके धर्म्मोंके हेतु निजकी अनुष्ठानकी हुई तपस्याका विपरीत व्यवहार रूपी पाप किया जावे, तो बहुत कालमें होने योग्य तप अनुष्ठान करनेके कालप्राप्त न होनेसेभी वह उस कारण **यदि**

अनुतापित होवे, तो फिर दूसरी तपस्याका अनुष्ठान करें, ऐसा करनेमे वह उस पापसे मुक्त होकर सफल मनोरथ हो सकते हैं, और जिस ज्ञानी पुरुषने अविनाशी ब्रह्मको धारणा (दर्शन लाभ) किया है, वह सदा इच्छानुसार पापाचरण करनेसेभी अति सुखरूपी मुक्तिको लाभ करता है। हे राजन्! मोक्षकी खोज न करके अनित्य स्वर्ग भोगनेके लिये जिस धर्म्मका अनुष्ठान किया जाता है, उस धर्म्मको पण्डितोंने अजितेन्द्रिय जनके धनके सदृश कष्टदायी और असत्य करके कहा है, पर जिस निष्काम धर्म्मसे मोक्षफलकी प्राप्ति होती है, उसीको उचित पथ और समाधि करके कहा है एवम् उसी पर चलना योग्य है।

अष्टक बोले, कि हे राजन्! तुमको मालाधारी, सुतेजस्वी और परम सुन्दर युवा पुरुष देखता हूं, आज तुम कहांसे आये हो। और किस जनके दूतरूपी होकर किस ओर भेजेगये हो? अथवा पृथ्वीहीमें तुम्हारा जाने योग्य स्थान है क्या? ययाति बोले, कि मैं क्षीणपुण्य होनेसे स्वर्गसे च्युत होकर इस भौम नरकमें गिरनेके लिये पृथ्वीमण्डलमें प्रवेश कर रहा हूं; तुम्हारे साथ वाक्यालाप करके गिरूंगा, इस लिये लोक-पाललोग मुझको शीघ्र प्रस्तुत होनेको कहते हैं। हे नरेन्द्र! मेरे भूतलमें गिरनेके पहिले इन्द्रसे प्रार्थना करने पर उन्होंने मुझको वर दिया है, कि तुम गुणवन्त और संगत साधुमण्डलीके समीप गिरोगे।

अष्टक बोले, कि हे पृथ्वीनाथ। मुझको जान पड़ता है, कि तुम धर्म्मके फलरूपी सब सिद्ध स्थानोंको जानते हो, अतएव पूछता हूं, कि स्वर्गलोक अथवा नक्षत्र लोकादिमें मेरे पुण्यसे उपार्ज्जित कोई भोगनेका स्थान है वा नहीं? यदि हो, तो गिरनेपरभी न गिरोगे। [ययाति] बोले, कि हे नरेन्द्रसिंह! सुनो, इस भूमण्डलमें गौ आदि और जितने वनके पार्व्वतीय पशु हैं, देवलोकमें उतनेही पुण्यसे उपार्ज्जन किये हुए स्थान हैं। अष्टक बोले, कि हे राजेन्द्र। यदि मेरुकी पीठ पर वा नक्षत्रलोकमें अथवा स्वर्गधाममें मेरे पुण्य उपार्ज्जन किये हुए स्थान हों, तो वह सब तुमको दे देता हूं मत गिरो. मुझसे वाक्य होकर तुम्हो उनका अधिकार मे लाओ। ययाति बोले, कि हे राजश्रेष्ठ। मेरे ऐसे वेदज्ञ और वेदाचारी जन कभी प्रतिग्रह नहीं करते। हे नरेन्द्र! ब्राह्मणको सदा दान देता हूं मैंने पहिले ऐसा दान दिया है; क्षत्रिय पुरुष और दिग्विजय करनेवाले वीरको प्रार्थना यह मांगने की नाई दीनताको स्वीकार करते कभी न जोयें; अहो। मैं सुकर्म्म करनेका अभिलाषी होकर, जो कार्य्य पहिले कभी नहीं किया था क्या वही करूंगा?

अनन्तर वहां टिके हुए प्रतर्द्दन नामक एक राजाने कहा, कि हे सुहणीय-रूप-धारिन्! मै प्रतर्द्दन हूं, तुमको पूछता हूं, कि यदि नक्षत्रलोक वा देवलोकमे मेरा पुण्यसे उपार्ज्जन किया हुआ स्थान हो, तो कहो, मुझको समझ पड़ता है, कि धर्म्मानुष्ठानसे उपार्ज्जन किए हुए सम्पूर्ण सिद्ध स्थानोंसे तुम ज्ञात हो। ययाति बोले, कि हे नरेन्द्र! घृतकुल्य सुखदेनेवाले इतने अधिक स्थान तुम्हारी प्रतीक्षामें हैं, कि हर स्थानमे सात सात दिन वसनेसे भी वे चुकते नहीं। प्रतर्द्दन बोले, कि यदि नक्षत्रलोक वा स्वर्गमें मेरे पुण्यसे उपार्ज्जन किये हुए स्थान हों, तो वह सब तुमको दे देताहूं, वह सब तुम्हारे ही होवें, तुम और न गिरो, मेरे द्वारा वर्ज्जित होकर शीघ्र वहां चढ़ जाओ। ययाति बोले कि पृथ्वीनाथ! तुल्य तेजयुक्त भूपाल होकर कोई दूसरे राजासे योगक्षेम करनेवाले सुकर्मको प्रार्थना नहीं करते, ज्ञानी राजा दैवकी

आप्तासे विपदग्रस्त होनेपरभी कभी निष्ठुर व्यवहार नहीं करते, अतएव मैं क्योंकर यह स्वीकार करूंगा? राजाको धर्म्मको और दृष्टि रखकर धर्म्मयुक्त और यशदायी कार्य्य करना चाहिये। पर तुम जो कहते हो, वह नीच कर्म्म है, अतएव मेरे ऐसे धर्म्मज्ञ जन जान बूझकर यह क्यों मानेगे? दूसरे राजाओंने जो प्रतिग्रहका कार्य्य कभी नहीं किया है, मैं सुकर्म्म करने का अभिलाषी होकर वह क्योंकर करूंगा? नृपति ययाति ऐसा कह रहे थे, कि ऐसे समयमें वसुमान नामक एक नृपोत्तम उनसे बोले।

सम्भवपर्व्वके ययाति उपाख्यानमें
बानव्वे अध्याय समाप्त।

वसुमानजो बोले, कि हे नरेन्द्र। मैं औषदश्वि वसुमान, तुमसे पूछता हूं, कि यदि नक्षत्रमण्डल वा स्वर्गधाममें मेरे पुण्यसे उपार्ज्जित प्रख्यात स्थान हो, तो कहो, हे महात्मन्। मुझको जान पड़ता है, कि तुम धर्म्मसे लाभ करने योग्य सम्पूर्ण पुण्य लोकोंसे ज्ञात हो। ययाति बोले, कि सूर्य्यदेव आकाशमण्डल, पृथ्वी और दिशाओंमें जितना स्थान तापयुक्त करते हैं, देवलोकमें उतना अनन्त पुण्यलोक तुम्हारी प्रतीक्षामें है। वसुमान बोले, कि हे राजन्! वह सब पुण्यलोक तुमको दान देता हूं, वह तुम्हारेही होवें, तुम मत गिरो. हे धीमान्। यदि तुमको प्रतिग्रह जान पड़े, तो तुम वह सब लोक तिनका देकर मोल ले लो। ययाति बोले, कि ऐसा होता है. कि मैंने शिशुके सदृश भयानक कालचक्रसे भय खाकर कभी व्यर्थ मोल विक्री नहीं की है, और राजाओंने जो कभी नहीं की. वह मैं सुकर्म्म करनेका अभिलाषी होकर क्योंकर करूंगा? वसुमान बोले, कि हे राजन्! यदि तुमको मोल लेना अभीष्ट न हो तोभी मेरे दिये हुए वह सब पुण्यलोक ले लो, हे नरेन्द्र! मैं जिन लोकोंमें न जाऊंगा वह तुम्हारे होवें।

अनन्तर शिवि नामक नृपोत्तमने कहा, कि मैं उशोनरका पुत्र शिवि हूं, तुमसे पूछता हूं, कि नक्षत्रलोक वा देवलोकमें यदि मेरे पुण्यार्ज्जित स्थान होवें, तो कहो; हे तात। मुझको जान पड़ता है, कि धर्म्मार्ज्जित उन सब पुण्यलोकोंसे तुम ज्ञात हो। ययाति बोले, कि हे नरेन्द्र। तुमने कभी वाक्यसे वा मनसे साधु याचक जनका अनादर नहीं किया है, इस कारण देवलोकमें बिजलीके समान प्रख्यात अनन्त महत् स्थान तुम्हारे लिये है। शिवि बोले, कि हे राजन्। तुमको मोल लेना अभीष्ट न हो, तो वह सब पुण्यलोक दान कर देता हूं तुम ले लो, मैं उन्हे देकर फिर लौटा न लूंगा, उन स्थानोंमें जानेसे पण्डित लोग शोक नहीं पाते। ययाति बोले, कि हे नरदेव। तुम इन्द्र समान प्रभावी हो और तुम्हारे सब पुण्यलोकभी अनन्त हैं, पर हे शिवे। अन्यके दिये हुए पुण्यलोकमें मैं क्रीड़ा न करूंगा, अतएव तुम्हारा वह दान मुझे स्वीकृत नहीं है।

अष्टक बोले, कि हे राजन्। हम सबोंसे हरेकने निज निज पुण्यार्ज्जित लोक अलग अलग तुमको दान करदिये, उनका यदि लेना सम्मत तुमको न हो, तो हम सब एकत्र होकर अपने सम्पूर्ण पुण्यलोक तुमको देकर भौम-नरकमें जाते हैं। ययाति बोले, कि हे सत्यप्रिय साधुओ। मैंने जो पहिले कभी नहीं किया है, वह स्वीकार नहीं करूंगा, मैं जिस विषयके योग्य हूं. वह पूरा करने में तुम यत्नवान हुओ। अष्टक बोले, कि उस आकाशमण्डलमें सुवर्णमय पांच रथ देखता हूं, उन पर चढ़ कर मनुष्यगण स्वर्गधामको जा सक्ते हैं; यह कहो, कि वे किसके हैं। ययाति बोले. कि वह जो अग्निशिखाके सदृश प्रज्वलित उच्च. पांच रथ आकाश-

मण्डलमें प्रगट हो रहे हैं, वे तुमलोगोंको बैठाकर देवताओंके यहां ले जायंगे। अष्टक बोले, कि हे राजन्! तुम रथ पर आरूढ़ होओ और आकाशपथको पधारो, जब काल उपस्थित होगा, तब हमभी तुम्हारे पीछे चलेंगे। ययाति बोले, कि इसीक्षण हम सभी निष्पाप और स्वर्गजयकारी भये हैं, अतएव हमको एकत्र होकर चलना पड़ेगा वह देखो, देवलोकका पथ दीख पड़ता है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर वे सब नरेश धर्मके प्रभावसे आकाशमण्डल आक्रमण करके रथों पर आरूढ़ होकर पधारे। अष्टकजी बोले, कि मैंने सोचा था, कि महात्मा देवराज सर्व्वप्रकारसे मेरे मित्र हैं, अतएव मैंही पहिले अकेला जाऊंगा, पर यह उशीनरके पुत्र शिवि अकेले क्यों हम सबोंको छोड़कर चले? ययाति बोले, कि इस उशीनरके पुत्र शिविने ब्रह्मलोक पथको पानेके निमित्त सर्व्वस्व दान कर दिया था, सो यह तुमसेभी श्रेष्ठ हुए हैं। हे राजन्! दान, तपस्या, सत्य, धर्म्म, लज्जा, श्री, क्षमा, अकुटिलता और पालनेकी इच्छा यह सब गुण उपमा-रहित राजा शिविके इतने हैं, कि बुद्धिसे उनका नाम नहीं हो सकता, शिवि इतने गुणशाली और लज्जाके भारसे नम्र होनेहीसे उनका रथ हमको छोड़ चला।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर अष्टकजीने कौतूहलयुक्त होकर इन्द्र सदृश मातामहसे फिर पूछा, कि हे नृपते! मै पूछता हूं सच कहो, कि तुम कहांसे आये हो? किसकी सन्तान और स्वयं कौन हो? तुमने जो कार्य्य किया है, वह जग मण्डलमें तुम्हारे बिना ब्राह्मण वा क्षत्रिय कोई नहीं कर सकता है। ययाति बोले, कि मैं नहुषका पुत्र और पुरुका पिता हूं, मेरा नाम ययाति है, मै इस धरतीमण्डलमें सार्व्वभौम राजा था, तुम मेरे परम आत्मजन हो, तुमसे स्पष्ट कहता हूं, कि मैं तुम्हारा मातामह हूं। मैंने सम्पूर्ण भूमि को जीतकर ब्राह्मणोंको वस्त्र दान और पवित्र और सुन्दर सौ घोड़े देवोंके उत्सर्ग कर दिये थे, जो ऐसा करते हैं, उन पुण्यवान जनोंकी उपासना करते हैं। वाहन, गौ, सुवर्ण, तथा दूसरे और उत्कृष्ट से भरी पूरी यह पृथ्वी और सौ अर्बुद ब्राह्मणोंको दान कर दी थी, और मेरी कोई बात कभी निष्फल नहीं हुई, मैं सत्य आकाशमण्डल तथा धरती इसी है और सत्य लोकमें अग्नि जल रहा है, इस हेतु साधु सत्यहीकी पूजा करते हैं। हे अष्टक! तुम प्रतर्द्दनसे और औशदश्विसे जो कहता हूं सच है। यह मुझे निश्चय समझ है, कि ऋषिगण और देवगण एक सत्यनिष्ठा होनेसे पूजित होते हैं। जो जन ईर्षारहित होकर इस स्वर्ग प्राप्तिका वृत्तान्त आद्योपान्त ब्राह्मणोंको सुनावेगा, वह हमारे पुण्यार्जित स्थानको लाभ करेगा। वैशम्पायनजी बोले कि, अति महात्मा उदारकर्म्मी राजा ययाति नातियोंसे त्राण प्राप्तकर कीर्त्तिसे पृथ्वी पूर्ण करके मित्रोंके साथ स्वर्गको आरूढ़ हुए।

सम्भवपर्व्वके ययाति उपाख्यानमें

तिरानव्वे अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, कि भगवन्! पुरुवंशीय राजाओंमें जिनको जैसा विक्रम और वीर्य्य था जो जैसे थे, वह सुना चाहता हूं। इस वंशमें राजा कभी कुचरित्र, वीर्य्यवर्ज्जित अथवा पुत्र रहित नहीं हुआ। हे तपोधन! प्रख्यात चरित्र और विज्ञानयुक्त उन राजाओंके विस्तृत रूपसे सुननेकी इच्छा हो रही है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे राजा पुरुवंशका वृत्तान्त जो हमसे पूछा, उन वंशधर वीर देवराजके समान, तेजयुक्त, गिनत विक्रमशाली, विक्रमी और सर्व्व

गा योग्य राजोंके वृत्तान्त आपसे कहता हूं, निये। पुरुकी पौष्टि नाम्नी महिषीसे प्रवीर, वर और रौद्राश्व इन तीन महारथी पुत्रोंका म हुआ था, उनमें प्रवीर वंशधर हुए। प्रवी-के वीर्य्य और शूरसेनीके गर्भसे मनस्यु नामक ने जन्म लिया; प्रसन्ननेत्रयुक्त सर्व्वप्रभु मनु-ने चार समुद्रतक पृथ्वीका शासन किया था। मनस्युके वीर्य्य और शौवीरीके गर्भसे शक्त, संह-न और वाग्मी यह तीन पुत्र उत्पन्न हुए; वे गी शूर और महारथी भये थे। मनस्वी द्राश्वके वीर्य्य और मिश्रकेशी नाम्नी अप्स-के गर्भसे अन्वग भानु आदि दश पुत्रोंने जन्म या था, वे सभी सर्व्व शास्त्रोंमें निपुण, धर्म्म-ल, बड़े चापधारी, योगशील, शूर, प्रजायुक्त र सर्व्व शास्त्रज्ञ हुए। उनसे ऋचेयु, कक्षेयु, र्य्यवान कृकणेयु, स्थण्डिलेयु, वनेयु, महा र्त्तिवन्त जलेयु, बलवन्त तेजेयु, इन्द्रके समान क्रमी धर्म्मेयु और देवसदृश पराक्रमी दशवें तेयु, इन दश पुत्रोंने जन्म लिया था। देवों-देवराज जैसे विक्रमी, और विद्वान हैं; ऋचेयु, मण्डलमें अद्वितीय राजा होकर, अनाधृष्टि मसे प्रसिद्ध हुए। राजसूय और अश्वमेध करनेवाले परम धार्म्मिक प्रख्यात राजा तनारने अनाधृष्टिसे जन्म लिया, हे राजन्। तनारके औरससे तंसु, महान, अतिरथ और हा द्युतिवान द्रुह्यु यह चार पुत्र उत्पन्न हुए, सब असीम विक्रमी थे। उनमें तंसु अति र्य्यवन्त और वंशधर थे; उन्होंने भूमण्डलको त कर प्रदीप्त यश उपार्ज्जन किया था। र्य्यवन्त तंसुने ईलिन नामक पुत्रको जन्म या; जयशील उन तंसुके पुत्रनेभी सम्पूर्ण तीतलको जीत लिया था। अनन्तर रथ-रीके गर्भ और राजा ईलिनके वीर्य्यसे पञ्च-तोंके समान पांच पुत्र उत्पन्न हुए; उनके म दुष्मन्त, शूर, भीम, प्रवसु और वसु थे। हे मेजय! उनमेंसे श्रेष्ठ दुष्मन्त राजा हुए; दुष्मन्तसे शकुन्तलाके गर्भसे विद्वान भरतने जन्म लिया, उनसेही भरत-वंशका महान् यश फैल गया।

भूपाल भरतके तीन महिषियों से नौ पुत्रोंने जन्म लिया, वे राजाके योग्य पुत्र नहीं हुए थे यह कहके राजा उनपर असन्तुष्ट थे, यह देखकर पुत्रोंकी माताओंने क्रोधके वशमें होकर निज निज पुत्रोंको मार डाला; इससे नरश्रेष्ठ भरतके उन पुत्रोंकी उत्पत्ति व्यर्थ हुई। हे भारत। अनन्तर राजा भरतने महायज्ञका अनुष्ठान करके भरद्वाजसे भुमन्यु नाम पुत्र लाभ किया। हे भरतश्रेष्ठ! आगे पौरवनन्दन भरतने अपनेको पुत्रवान जानकर उस भुमन्यु नामक पुत्रको यौवराज्यपर अभिषिक्त किया। अनन्तर भुमन्युके वीर्य्य और पुष्करिणीके गर्भसे सुहोत्र, सुहोता, सुहवि, सुयजु, ऋचीक और दिविरथ इन सब पुत्रोंने जन्म लिया इनमेंसे सुहोत्र ज्येष्ठ पुत्र थे, सो उन्होंने राज्य पाया। वह राजसूय अश्वमेध आदि नाना यज्ञ करके हाथी और घोड़ासे भरी, नाना रत्नोंसे पूरी, समुद्रसे घिरी सम्पूर्ण पृथ्वी भोगने लगे। तब भूमण्डल हाथी घोड़े और रथोंसे पूरित और अगणित मनुष्योंसे विकल होकर अति भारसे पीड़ित होनेके कारण डूबने पर हुआ। राजा सुहोत्रके धर्म्मानुसार प्रजा-शासन करनेसे धरतीमण्डल सैकड़ों सहस्रों स्थानोंमें देवालय और यज्ञके यूपोंसे चित्रित हुआया। हे भारत। पृथ्वीनाथ सुहोत्रसे स्त्री ऐक्ष्वाकीने अजमीढ़, सुमीढ़ और पुरुमीढ़ यहतीन पुत्र प्रसव किये, उनमेंसे अजमीढ ज्येष्ठ पुत्र थे, उनसेही वंश प्रतिष्ठित हुआ। हे भारत! अजमीढ़ने तीन रानियोंसे ६ पुत्र उत्पन्न किये; उनमें धूमिनीके गर्भसे ऋक्ष नीली-के गर्भसे दुष्मन्त तथा परमेष्ठी और केशिनीके गर्भसे जन्हु, व्रजन और रूपिन इन तीन पुत्रोंने जन्म लिया। दुष्मन्त और परमेष्ठीके वंशमें

यह सब पाञ्चाल राजा उत्पन्न हुए। अमिततेजा जन्हुके वंशसे कुशिकोंने जन्म लिया। जनाधिप ऋक्ष, प्रजन और रूपिणसे ज्येष्ठ थे; ऋक्षसे राजवंश करनेवाले सम्वरण नामक पुत्र उत्पन्न हुए। हे राजन्। हम सुन चुके हैं, कि जब ऋक्षपुत्र सम्वरणने धरतीको शासन किया था, तब बहुत प्रजा क्षय होने लगी; क्षुधा मृत्यु, अनावृष्टि और व्याधि आदि नाना कारणोंसे प्रजा लोप होनेपर राज्य एकबारही नष्ट हो गया; शत्रु पक्षकी सेना भारत पक्षीय योद्धाओंको मारने और घायल करने लगी। पाञ्चालके भूप विक्रमसे भूमण्डलको जीतकर चतुरङ्गिणी सेनासे पृथ्वीको डोलाते हुए राजा सम्वरणके निकट आन पहुंचे; आगे युद्धस्थलमें दश अक्षौहिणी सेनासे राजा सम्वरणको पराजय किया। तब वह बहुत भय खाकर स्त्री, पुत्र मन्त्री और मित्रोंके साथ भागकर सिन्धु नामक महानदके तटसे पर्व्वतके निकट तक फैली हुई एक फुलवाड़ीमें टिक रहे। भारतगण उस जानेके अयोग्य वनमें बहुकाल वसने लगे, धीरे धीरे उनके सौ वर्ष व्यतीत हुए।

अनन्तर एक समय भगवान् ऋषि वशिष्ठ उनके यहां आ पहुंचे, भारतलोगोंने उनको आगत देखकर यत्नके साथ नमस्कार करके अर्घ दिया। आगे उन बड़े तेजस्वी ऋषिके आसन पर बैठने पर राजाने स्वयं उनका सत्कार करके सम्पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाकर उनसे प्रार्थना की, कि आप हमारे पुरोहित होवें, तो हम राज्यको फिर पानेका यत्नकर सकते हैं। वशिष्ठने भारतोंके निकट वह स्वीकार किया और सम्पूर्ण भूमण्डलकी चोटीकी नाईं श्रेष्ठ पौरव सम्वरणको क्षत्रियोंके आधिपत्यरूपी साम्राज्यपर अभिसिक्त किया। भूपाल सम्वरण भरतके पहिले वसे हुए सुन्दर नगरमें फिर अधिष्ठान करके सम्पूर्ण भूपालोंको

८. बनाने लगे। अजमीढ़के पौत्र महाबली सम्वरण फिर पृथ्वीको प्राप्तकर दक्षिणायुक्त अनेक यज्ञोंका अनुष्ठान लगे। अनन्तर सूर्य्यपुत्री तपतीने भूपति सम्वरणसे कुरु नामक पुत्र प्रसव किया। राजन्। सम्पूर्ण प्रजाओंने कुरुको देखकर वरण किया। उन महातपा तपस्यासे कुरुजाङ्गल नामक स्थान पवित्र उनके निज नामके अनुसार कुरुक्षेत्र प्रसिद्ध हुआ था। वाहिनी नाम्नी मनस्विनी रानीने तिनसे अविक्षित, अभिष्यत, चैत्ररथ, मुनि और प्रख्यात यह पांच पुत्र प्रसव किये। अवि शवलाश्व, वीर्य्यवन्त आदिराज, विराज, कल्मी, शाल्मली उच्चैश्रवा, भङ्गकार जितारी यह आठ पुत्र उत्पन्न हुए। वंशमें कर्म्मके हेतु गुणसे प्रधान जनमेजय सात और दूसरे अनेक महारथियोंने जन्म था। कक्षसेन, उग्रसेन वीर्य्यवन्त सुषेन और भीमसेन यह सब पुत्र परीक्षि उत्पन्न हुए थे; यह सब धर्म्मार्थ तत्व जनमेजयसे महाबलवन्त पृथ्वी भरमें धर्म्मार्थयुक्त और सर्व्वभूतोंके हितमें आठ पुत्रोंने जन्म लिया। उनमें ज्येष्ठ हैं, पीछे पाण्डु, वाह्लीक, महातेजा बलवन्त जाम्बुनद, कुण्डोदर और पदाति इनमें धृतराष्ट्र राजा भये थे। कुण्डिक, वितर्क, क्राथ, कुण्डिन, वह्निश्रवा, इन्द्राभ अपराजित भुमन्यु यह धृतराष्ट्रके पुत्र हैं भारत! प्रतीप, धर्म्मनेत्र और सुनेत्र, प्रसिद्ध राज कुमार धृतराष्ट्रके पौत्र इनमें प्रदीप प्रख्यात और अद्वितीय थे। भरत वंशश्रेष्ठ! देवापि, शान्तनु और वाह इन तीन महारथी पुत्रोंने प्रतीपसे जन्म था; उनमें देवापिने धर्म्म लाभके लिये अवलम्बन की और महारथी शान्तनु वाह्लीक भूमण्डलके अधीश हुए।

षिसदृश सत्ययुक्त बहुतेरे भूपालोंने भरत मेंं जन्म लिया था। ऐसे देवर्षि सदृश वावान् बहुतेरे महारथी भूपतियोंनेभी ऐल को वृद्धि करके मनुवंशमें जन्म लिया था।

सम्भवपर्व्वमें चौरानवे अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, कि हे ब्रह्मन्! आपसे गले पुरुषोंकी महत उत्पत्तिकी कथा सुनी र इस वंशके उदारचरित राजाओंके वृत्तान्तों नी ज्ञात हुआ, पर यह परमप्रिय उपाख्यान पमें कहा गया है, उससे भली प्रकार तृप्त हीं हुआ हूं आप फिर विस्तृत रूपसे हिये। प्रजापति मनुसे लेकर सम्पूर्ण राजाओं पवित्र जन्म-वृत्तान्त रूपी यह दिव्य कथा नेसे किस मनुष्यकी प्रीति नहीं होती? वे नशीलता आदिगुण, असाधारणशक्ति, शारी- क बल, मानसिक सामर्थ, अदीनता और साहयुक्त थे, उनके सुकर्म, गुण और महा- मे बढ़ा हुआ यश तीनों लोकमें व्याप्त हो- र और बढ़कर आजतक विद्यमान है, उन- अमृत सदृश मीठी कथा संक्षेपमें सुनकर ी प्रकार तृप्त नहीं हो सका हूं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे राजन्! मैंने हले द्वैपायनसे आप के शुभवंशके वृत्तान्तोंको ता सुना है, वह सब कहता हूं, सुनिये। से अदिति अदितिसे विवस्वान विवस्वानसे ु. मनुसे इला, इलासे पुरुरवा, पुरुरवासे यु. आयुसे नहुष और नहुषसे ययातिने जन्म या था। ययातिके दो स्त्रिया थी, शुक्र की ी देवयानी और वृषपर्व्वाकी कन्या शर्म्मिष्ठा। स्थानमें वंशकी कथा-सम्बन्धी श्लोक है, कि यातीने यदु और तुर्व्वसु इन दो पुत्रोंको र वृषपर्व्वाकी कन्या शर्म्मिष्ठाने द्रुह्यु, अनु र पुरु इन तीन पुत्रोंको प्रसव किया था। मे यदुसे यादव वंश और पुरुसे पौरव वंश प्र हुआ। पुरुकी भार्य्या कौशल्यासे जनमे- जयने जन्म लिया, उन्होंने तीन वार अश्वमेध और एकवार विश्वजित यज्ञ करके वनमें प्रवेश किया था उन्होंने माधवकी अनन्ता नाम्नी कन्यासे विवाह किया था, उससे प्राचिन्वान् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। सूर्य्योदयके स्थान- तक प्राची दिशा जीतने पर उनका नाम प्राचि- न्वान हुआ। प्राचिन्वानने अश्मकी नाम्नी माधव की कन्यासे विवाह किया था, उनसे संयातिकी उत्पत्ति हुई। संयातिने दृषद्वतकी कन्या वराङ्गीसे विवाह किया था, उसके गर्भसे अहंयातिने जन्म लिया। अहंयातिने कृत- वीर्य्यकी कन्या भानुमतिका पाणिग्रहण किया; भानुमतिके गर्भसे सार्व्वभौमने जन्म लिया। सार्व्वभौमने कैकेय राजको जीतकर उनकी पुत्री सुनन्दाको हर लिया; आगे उसकी विवाह करने पर उसके गर्भसे जय- त्सेनकी उत्पत्ति हुई। जयत्सेनने विदर्भ राजकुमारी सुश्रवाका पाणिग्रहण किया, उससे अवचीनका जन्म हुआ। अवाचीनने दूसरी वैदर्भी मर्य्यादा नाम्नी कन्यासे विवाह किया, इससे अरिहका जन्म हुआ। आङ्गी नाम्नी कन्यासे राजा अरिहके विवाह होने पर उनसे महाभौमने जन्म लिया। महाभौमने प्रासेन- जितकी कन्या सुयज्ञाके गर्भसे अयुतनायीका जन्म हुआ, इनके अयुत अश्वमेध यज्ञ करनेसे इनका नाम अयुतनायी हुआ। अयुतनायीने पृथुश्रवाकी कन्या कामासे विवाह किया था, इससे कामाके गर्भसे अक्रोधनने जन्म लिया। कालिङ्ग राजकन्या करम्भाके साथ अक्रोधनका विवाह हुआ, इससे करम्भाके गर्भसे देवातिथिने जन्म लिया। देवातिथिने विदेहराजपुत्री मर्य्यादासे विवाह किया था, मर्य्यादाके गर्भसे अरिहने जन्म लिया. अरिहने अङ्गराजकी सुदेवा नाम्नी कन्यासे विवाह किया था। सुदेवाने ऋक्ष नामक पुत्र प्रसव किया था। तक्षककी पुत्री ज्वालाके साथ ऋक्षका विवाह

यह सब पाञ्चाल राजा उत्पन्न हुए। अमिततेजा जन्हुके वंशसे कुशिकोंने जन्म लिया। जनाधिप ऋच, व्रजन और कपिगामि ज्येष्ठ थे; ऋचसे राजवंश करनेवाले सम्वरण नामक पुत्र उत्पन्न हुए। हे राजन्! हम सुन चुके हैं, कि जब ऋचपुत्र सम्वरणने धरतीको शासन किया था, तब बहुत प्रजा क्षय होने लगी, क्षुधा, मृत्यु, अनावृष्टि और व्याधि आदि नाना रोगोंमें प्रजा लोप होनेपर राज्य एकवारही नष्ट हो गया; शत्रु पक्षकी सेना भारत पक्षीय लोगोंको मारने और घायल करने लगी, पाञ्चालके भय विक्रम से भूमण्डलको जीतकर चतुरङ्गिणी सेनासे पृथ्वीको डोलाते हुए राजा सम्वरणके निकट आन पहुंचे, आगे युद्धस्थलमें दश अक्षौहिणी सेनासे राजा सम्वरणको पराजय किया। तब वह बहुत भय खाकर स्त्री, पुत्र मन्त्री और मित्रोंके साथ भागकर सिन्धु नामक महानदके तटसे पर्वतके निकट तक फैली हुई एक फुलवाड़ीमें टिक रहे भारतगण उस जानेके अयोग्य वनमें बहुकाल वसने लगे; धीरे धीरे उनके सौ वर्ष व्यतीत हुए।

अनन्तर एक समय भगवान् ऋषि वशिष्ठ उनके यहां आ पहुंचे, भारतलोगोंने उनको आगत देखकर यत्नके साथ नमस्कार करके अर्घ दिया। आगे उन बड़े तेजस्वी ऋषिके आसन पर बैठने पर राजाने स्वयं उनका सत्कार करके सम्पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाकर उनसे प्रार्थना की, कि आप हमारे पुरोहित होवें, तो हम राज्यको फिर पानेका यत्नकर सकते हैं। वशिष्ठने भारतोंके निकट वह स्वीकार किया और सम्पूर्ण भूमण्डल की चोटी को नाई श्रेष्ठ पौरव सम्वरणको क्षत्रियोंके आधिपत्यरूपी साम्राज्यपर अभिसिक्त किया। भूपाल सम्वरण भरतके पहिले वसे हुए सुन्दर नगरमें फिर अधिष्ठान करके सम्पूर्ण भूपालोंको करदाता बनाने लगे। अजमोढ़के पौत्र महाबली सम्वरण फिर पृथ्वीको ह दक्षिणायुक्त अनेक यज्ञोंका अनुष्ठान लगे। अनन्तर सूर्य्यपुत्री तपतीने भर्णात सम्वरणसे कुरु नामक पुत्र प्रसव किया। राजन्! सम्पूर्ण प्रजाओंने कुरुको धर्म देखकर वरण किया। उन महातपा ऋ तपस्यासे कुरुजाङ्गल नामक स्थान पवित्र उनके निज नामके अनुसार कुरुक्षेत्र प्रसिद्ध हुआ था। वाहिनी नाम्नी मनस्विनी राणीने तिनसे अविक्षित, भ अभिष्यत, चैत्ररथ मुनि और प्रख्यात जन यह पांच पुत्र प्रसव किये। और शवलाश्व, वीर्य्यवन्त आदिराज, विराज, कर्णी, शाल्मली, उच्चैश्रवा, भङ्गकार जितारी यह आठ पुत्र उत्पन्न हुए। वंशमें कर्म्मके हेतु गुणसे प्रधान जनमेजय सात और दूसरे अनेक महारथियोंने जन्म था। कक्षसेन, उग्रसेन वीर्य्यवन्त चि सुषेन और भीमसेन यह सब पुत्र परीक्षि उत्पन्न हुए थे; यह सब धर्म्मार्थ जनमेजयसे महाबलवन्त पृथ्वी भरमें धर्म्मार्थयुक्त और सर्व्वभूतोंके हितमें आठ पुत्रोंने जन्म लिया, उनमें ज्येष्ठ हैं, पीछे पाण्डु, वाह्लीक, महातेजा बलवन्त जाम्बुनद कुण्डोदर और पदाति इनमें धृतराष्ट्र राजा भये थे। कुण्डिक वितर्क, क्राथ, कुण्डिन, वहिश्रवा, इन्द्राभ अपराजित भुमन्यु यह धृतराष्ट्रके पुत्र हैं भारत! प्रतीप, धर्म्मनेत्र और सुनेत्र, प्रसिद्ध राज कुमार धृतराष्ट्रके पौत्र इनमें प्रदीप प्रख्यात और अद्वितीय भरत वंशश्रेष्ठ। देवापि, शान्तनु और वाह्लीक इन तीन महारथी पुत्रोंने प्रतीपसे जन्म था, उनमें देवापिने धर्म्म लाभके लिये अवलम्बन की और महारथी शान्तनु वाह्लीक भूमण्डलके अधीश हुए।

षिसदृश सत्ययुक्त बहुतेरे भूपालोंने भरत से जन्म लिया था। ऐसे देवर्षि सदृश वावान् बहुतेरे महारथी भूपतियोंनेभी ऐल को छलि करके मनुवंशमें जन्म लिया था।

सम्भवपर्व्वमें चौरानवे अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, कि हे ब्रह्मन्! आपसे गले पुरुषोंकी महत उत्पत्तिकी कथा सुनी र इस वंशके उदारचरित राजाओंके वृत्तान्तों नी ज्ञात हुआ, पर यह परमप्रिय उपाख्यान क्षेपमें कहा गया है, उससे भली प्रकार तृप्त हीं हुआ हूं आप फिर विस्तृत रूपसे हिये। प्रजापति मनुसे लेकर सम्पूर्ण राजाओं पवित्र जन्म-वृत्तान्त रूपी यह दिव्य कथा ुनेसे किस मनुष्यकी प्रीति नहीं होती? वे नमोलता आदिगुण, असाधारणशक्ति, शारीरिक बल, मानसिक सामर्थ, अदीनता और साहयुक्त थे, उनके सुकर्म, गुण और महा-ग्मसे बढ़ा हुआ यश तीनो लोकमें व्याप्त होर और बढ़कर आजतक विद्यमान है, उनकी अमृत सदृश मीठी कथा संक्षेपमें सुनकर ली प्रकार तृप्त नहीं हो सका हूं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे राजन्! मैंने हले द्वैपायनसे आप के शुभवंशके वृत्तान्तोंको ता सुना है, वह सब कहता हूं, सुनिये। नसे अदिति अदितिसे विवस्वान विवस्वानसे नु, मनुसे इला, इलासे पुरूरवा, पुरूरवासे ायु, आयुसे नहुष और नहुषसे ययातिने जन्म ाया था। ययातिके दो स्त्रिया थीं, शुक्र की ी देवयानी और वृषपर्व्वाकी कन्या शर्म्मिष्ठा। स्थानमें वंशकी कथा-सम्बन्धी श्लोक है, कि यानीने यदु और तुर्व्वसु इन दो पुत्रोंको र वृषपर्व्वाकी कन्या शर्म्मिष्ठाने द्रुह्यु, अनु र पुरु इन तीन पुत्रोंको प्रसव किया था। ो यदुसे यादव वंश और पुरुसे पौरव वंश पन्न हुआ। पुरुको भार्य्या कौशल्यासे जनमेजयने जन्म लिया, उन्होंने तीन वार अश्वमेध और एकवार विश्वजित यज्ञ करके वनमें प्रवेश किया था उन्होंने माधवकी अनन्ता नाम्नी कन्यासे विवाह किया था, उससे प्राचिन्वान् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। सूर्योदयके स्थान-तक प्राची दिशा जीतने पर उनका नाम प्राचिन्वान हुआ। प्राचिन्वानने अश्मकी नाम्नी माधव की कन्यासे विवाह किया था, उनसे संयातिकी उत्पत्ति हुई। संयातिने दृषद्वतको कन्या वराङ्गीसे विवाह किया था, उसके गर्भसे अहंयातिने जन्म लिया। अहंयातिने कृतवीर्य्यकी कन्या भानुमतिका पाणिग्रहण किया, भानुमतिके गर्भसे सार्व्वभौमने जन्म लिया। सार्व्वभौमने कैकेय राजको जीतकर उनको पुत्री सुनन्दाको हर लिया, आगे उसको विवाह करने पर उसके गर्भसे जयत्सेनकी उत्पत्ति हुई। जयत्सेनने विदर्भ राजकुमारी सुश्रवाका पाणिग्रहण किया, उससे अवचीनका जन्म हुआ। अवाचीनने दूसरी वैदर्भी मर्य्यादा नामी कन्यासे विवाह किया, इससे अरिहका जन्म हुआ। आङ्गी नाम्नी कन्यासे राजा अरिहके विवाह होने पर उनसे महाभौमने जन्म लिया। महाभौमने प्रासेनजितकी कन्या सुयज्ञाके गर्भसे अयुतनायीका जन्म हुआ, इनके अयुत अश्वमेध यज्ञ करनेसे इनका नाम अयुतनायी हुआ। अयुतनायीने पृथुश्रवाकी कन्या कामासे विवाह किया था, इससे कामाके गर्भसे अक्रोधनने जन्म लिया। कलिङ्ग राजकन्या करम्भाके साथ अक्रोधनका विवाह हुआ, इससे करम्भाके गर्भसे देवातिथिने जन्म लिया। देवातिथिने विदेहराजपुत्री मर्य्यादासे विवाह किया था, मर्य्यादाके गर्भसे अरिहने जन्म लिया, अरिहने अङ्गराजकी सुदेवा नामी कन्यासे विवाह किया था। सुदेवाने ऋक्ष नामक पुत्र प्रसव किया था। तक्षककी पुत्री ज्वालाके साथ ऋक्षका विवाह

हुआ, उस ज्वालाके गर्भसे मतिनार नामक राजाने जन्म लिया ; मतिनारने सरस्वती नदीके तटपर बारह वर्षमें अनुष्ठान होनेवाले, अनन्त गुणयुक्त यज्ञका अनुष्ठान किया था। उस महायज्ञके समाप्त होनेपर सरस्वतीने आकर उनको पतित्वमें वरण किया था, इसी सरस्वतीके गर्भसे तंसु नाम पुत्र उत्पन्न हुआ। इसस्थानमें वंशकथाका श्लोक है, "सरस्वतीने मतिनारसे तंसुनामक पुत्रको प्रसव किया।" तंसुने कालिङ्गीसे ईलिन नामक पुत्र उत्पन्न किया। राजा ईलिनके और रथन्तरीके गर्भसे दुष्मन्तादि पांच पुत्रोंने जन्म लिया। दुष्मन्तने विश्वामित्रकी कन्या शकुन्तलासे विवाह किया था, उससे भरतका जन्म हुआ। इस स्थलमें वंशानुकीर्त्तन के दो श्लोक हैं, कि हे दुष्मन्त! माता चमड़ेके कोशकी नाईं है, उसमें पिता आपही पुत्रके स्वरूपमें जन्म लेता है, अतएव पुत्रको पोषो पालो शकुन्तलाका अनादर मत करो। हे नरदेव! निज वीर्य्यसे उत्पन्न हुई, सन्तान यमराजके घरसे उद्धार करती है और तुम्हीने यह गर्भाधान किया है ; वह सच है, शकुन्तलाने जो कहा है। अतएव हे पौरव! शकुन्तलाके गर्भसे उत्पन्न इस महात्मा पुत्रको पालन करो, हमारी बातके अनुसार तुमको इस पुत्रका पालन करना होगा।" इस हेतु दुष्मन्तके पुत्रका नाम भरत हुआ है।

भरतने काशीराज सर्व्वसेनकी पुत्री सुनन्दासे विवाह किया था, इससे सुनन्दाके गर्भसे भुमन्युकी उत्पत्ति हुई। भुमन्युने दशार्हकी कन्या विजयासे विवाह कर सुहोत्र नाम पुत्रोत्पादन किया था सुहोत्रने इच्छाकुकी कन्या सुवर्णासे विवाह किया था, उससे सुवर्णाके गर्भसे हस्ती नामक राजपुत्रका जन्म हुआ ; महाराज हस्तीने निज नामसे हस्तिनापुर स्थापन किया था, इस लिये हस्तिनापुर प्रख्यात हुआ है। हस्तीने त्रिगर्त्त राजकन्या यशोधरासे विवाह कर उससे विकुण्ठन् नाम पुत्र उत्प[न्न] किया था। विकुण्ठनने दशार्हकी पुत्री [सुदेवासे] विवाह किया था, सुदेवाके गर्भसे अजमीढ़ने [जन्म] लिया। अजमीढ़के कैकेयी, गान्धारी, वि[शाला] [और] ऋमा इन चार पत्नियोंसे चौबीस सौ पु[त्रोंका] जन्म हुआ। वे सब भूपाल अलग अलग वं[श]धर हुए थे, उनमेंसे संवरणके पुत्रहीसे [वंश] प्रतिष्ठित था। सम्वरणने सूर्य्यकी पुत्री [तप]तीसे विवाह किया था, तपतीके गर्भसे [कुरु]का जन्म हुआ। कुरुने दशार्हकी पुत्री शुभा[ङ्गीसे] विवाह किया। शुभाङ्गीके गर्भसे विदूरथ[का] जन्म हुआ। माधवपुत्री संप्रियासे [विदूरथका] विवाह होनेपर संप्रियाके गर्भसे अनश्वाने [जन्म] लिया। अनश्वाने अमृता नामी [मगध]कुमारीसे विवाह करके उसके गर्भसे [परीक्षित] नामक पुत्रोत्पादन किया। परीक्षितने बाहुदा[की] कन्या सुयशासे विवाह किया था, सुयशा[के] गर्भसे भीमसेन नामक पुत्रने जन्म लि[या]। भीमसेनने केकय राजकुमारी, कुमारीसे वि[वाह] किया था, कुमारीके गर्भसे प्रतिश्रवा [नामक] पुत्रका जन्म हुआ। प्रतिश्रवाके पुत्र प्रती[प] शैव्यराजकुमारी सुनन्दा से विवाह कर [उसके] गर्भसे देवापि, शान्तनु और वाह्लीक यह [तीन] पुत्र उत्पन्न किये ; देवापि बालेपनहीमें [वन] गये थे, शान्तनु राजा भये। इस स्थानमें [वंशानु]कीर्त्तनका श्लोक है, कि "वह भूप भुजसे [जिन] जिन जीर्ण जनोंको स्पर्श करते थे, वे सब [पुनः] युवा (शान्ततनु) होकर सुख भोगते थे," [इस] हेतु इनका नाम शान्तनु हुआ है। श[ान्तनुने] भागीरथी गङ्गासे विवाह किया था, उस गंगाके गर्भसे देवव्रतने जन्म लिया, जिनको भीष्म कहा करते हैं। भीष्मने पिताका [प्रिय] कार्य्य करनेकी इच्छासे उनके साथ सत्यवतीका विवाह कर दिया, उस सत्यवतीका और [एक] नाम गन्धमाली करके प्रसिद्ध था। पहिले [सत्य]वतीकी कन्यादशा में पराशरसे गर्भ

पायनका जन्म हुआ था; आगे शान्तनुके वीर्य्य और उसके गर्भसे दो और पुत्रोंने जन्म लिया, उनके नाम विचित्रवीर्य्य और चित्राङ्गद थे; चित्राङ्गद यौवनको प्राप्त करनेके पहिले गन्धर्वसे मारे गये थे, विचित्रवीर्य्य राजा हुए थे। वैचित्रवीर्य्यने कौशल्याके गर्भोत्पन्न काशिराजपुत्री अम्बिका और अम्बालिका इन दो कन्याओंसे विवाह किया था; पर वह सन्तान न होतेही परलोकको सिधारे। तब इस हेतु, कि इसन्तका वंश नष्ट न हो जाय, सत्यवती सोचने लगी; आगे उसने निजपुत्र द्वैपायन ऋषिको मनसे स्मरण किया, तिस्से द्वैपायनने उसके सम्मुख उपस्थित होकर पूछा कि माई। क्या करना होगा? सत्यवती बोली, कि तुम्हारे भाई विचित्रवीर्य्य विना सन्तान परलोकको सिधारे हैं, उनका पुत्रोत्पादन करो; द्वैपायनने स्वीकार किया। अनन्तर उन्होंने यथाकालसें धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुर वह तीन पुत्र उत्पन्न किये। आगे द्वैपायनके वरदानके प्रभावसे गान्धारीके गर्भसे धृतराष्ट्रके पुत्रोंमें से दुर्य्योधन, दुःशासन, विकर्ण और चित्रसेन यह चार पुत्र प्रधान थे, कुन्ती और माद्री यह दो स्त्री-रत्न पाण्डुकी भार्य्या भयी थीं; कुन्तीका दूसरा एक नाम पृथा था, अनन्तर एक समय पाण्डु मृगयाके निमित्त वनमें गये थे, वहां देखा, कि एक ऋषि मृगोसे मैथुन कर रहे हैं, तबतक कामरसके पूर्ण न होनेके हेतु भले प्रकार तृप्त नहीं हुए थे, उन अद्भुत मृगरूपी ऋषि पर उन्होंने बाण मारा। ऋषि बाणसे विद्ध होकर पाण्डुसे बोले, कि तुमने धर्म्म और कामरसके अभिज्ञ होकर, मुझको अपूर्ण मनोरथ देखने परभी मार डाला। इन हेतु तुमभी कामरसमें अतृप्त रहकर उस दशाहीमें शीघ्र परलोकको सिधारोगे। पाण्डुका यह शाप सुनतेही मात्र उसीक्षण रङ्ग बदल गया, और शापसे बचनेके लिये स्त्रीसे मिलना त्याग दिया। आगे उन्होंने कुन्ती और माद्रीसे कहा, कि मैंने अपनी चपलतासे यह कुदशा प्राप्त की है, सुना है, कि पुत्रकी उतपत्ति न होनेसे स्वर्गको प्राप्ति नहीं होती। अनन्तर कुन्तीसे बोले, कि तुम मेरे लिये पुत्र उत्पादन करो। आगे कुन्तीने पतिके उस नियोगके अनुसार धर्म्मसे युधिष्ठिर, पवनसे भीम और इन्द्रसे अर्ज्जुन यह तीन पुत्र उत्पन्न किये। पाण्डु उनपर प्रसन्न होकर बोले, कि तुम्हारी सौत यह माद्री निःसन्तान है, तुम यत्नवती होकर इसके अच्छे पुत्र उत्पन्न कर दो। कुन्तीने वह स्वीकार कर वह विद्या माद्रीको दे दी, कि जिस विद्यासे धर्म्मादिको बुलाकर वह पुत्रोत्पादन करती थी; आगे माद्रीनेभी दोनो अश्विनीकुमारोंसे नकुल और सहदेव यह दो यमज पुत्र उत्पन्न किये। एक समय पाण्डु माद्रीको गहनोंसे सजी हुई, देखकर कामवश हो गये, इससे माद्रीके स्पर्श करतेमात्र उन्होंने शरीर छोड़ा। पाण्डुकी देह चिताकी आगमें जला दी जानेपर माद्री उनके पीछे सती हो गयी, और उस समय कुन्तीसे कह गयी, कि तुम सावधान होकर मेरी इन दो यमज सन्तानोंकी पालना। अनन्तर तपस्वीगण कुन्तीके साथ पाण्डवोंको हस्तिनापुरमें लिवालाकर भीष्म विदुरको दे दिया और, ब्राह्मण क्षत्रियादि सर्व्व वर्णोंके निकट पाण्डवोंकी सब जन्मकथा सुनाकर उनके सामनेसे चले गये, उन तपस्वियोंके वाक्योंके अन्तहोने कालमें आकाशसे फूलोंकी वृष्टि होने लगी और देवताओंके नगाड़े बजने लगे।

पाण्डवोंने भीष्मादिसे लिये जाकर पिताको मृत्यु-कथा कहकरके विधिपूर्व्वक पिताका और्द्धदेहिक कार्य्य किया; आगे वे उस स्थानमें वसने लगे। उनसे दुर्य्योधन लड़कपनहीसे झगड़ने लगा; उस पापात्माने राक्षसी

लेकर नाना उपायोंसे उनको वहांसे उखाड़नेकी चेष्टा की थी, पर जो कार्य्य होनहार है, उसके अवश्य होनेके हेतु उसका मनोरथ सफल नहीं हो सका। अनन्तर धृतराष्ट्रने छलपूर्व्वक उनको वारणावत् ग्रामको भेजा, पाण्डवलोगभी सम्मत होकर वहां गये थे। वारणावतमें उन्होंने दुर्य्योधनके चेष्टित अनुष्ठानसे जतुगृह में जल मरने पर होकर विदुरजीके परामर्शके प्रभावसे रक्षा पायो। आगे वारणावतसे एकचक्रा नगरीमें गये, वहां जानेमें प्रथमें हिडिम्बको वध किया था। उस एकचक्रा नगरीमें वक नामक राक्षसको मारकर पाञ्चाल नगरमें गये, वहां द्रौपदीको भार्य्या प्राप्त करके निज राज्यमें लौटकर बहुदिन कुसलसे रहे। उस समय द्रौपदीके गर्भसे पांच पुत्र उत्पन्न हुए, उनमें युधिष्ठिरके वीर्य्यसे प्रतिविन्ध्य भीमके वीर्य्यसे सुतसोम, अर्ज्जुनके वीर्य्यसे श्रुतिकीर्त्ति, नकुलके वीर्य्यसे शतानीक और सहदेवके वीर्य्यसे श्रुतकर्म्माका जन्म हुआ। युधिष्ठिरने गोवासन नामक शव्यराजकी कन्या देविकाको स्वयम्बरके स्थानमें प्राप्त किया, उस देविकाके गर्भसे यौधेय नाम पुत्र उत्पन्न हुआ था। भीमसेनने वीर्य्यरूपी शुल्कके द्वारा काशीराजकी पुत्री वलन्धरासे विवाह कर उसके गर्भसे सर्व्वक नामक पुत्रको उत्पन्न किया। अर्ज्जुनने द्वारकामें जाकरके वासुदेवकी बहिन भद्रभाषिणी सुभद्राको हरकर उससे विवाह किया। आगे बिनाविघ्न निज नगरमें लौटकर उस सुभद्रासे अति गुणवन्त वासुदेवके प्यारे अभिमन्यु नामक पुत्रको उत्पन्न किया। नकुलने चेदिराजकुमारी करेणुमती नाम्नी कन्यासे विवाह करके उससे निरामित्र नामक पुत्रको उत्पादन किया। सहदेवने स्वयम्बरके कालमें द्युतिमान मद्रराज की कन्या विजयासे विवाह किया था, विजयाके गर्भसे सुहोत्र नाम पुत्रका जन्म हुआ।—भीमसेनने पहिलेही हिडिम्बामें राक्षस घटो[त्कचको] उत्पादन किया था। पाण्डवोंके यह [सब] पुत्र थे, उनमें अभिमन्युहीसे वंशको रक्षा है। अभिमन्युने विराट-राजपुत्री उत्त[रासे] विवाह किया था, उनके वीर्य्य और उत्त[राके] गर्भसे छः महीने पीछे अश्वत्थामाकेद्वारा [एक] मरा पुत्र भूमिष्ठ हुआ, पुरुषोत्तम वासुदे[वने] "मैं इस सन्तानको जिलाऊंगा," कहके [उस]को नियोग किया। उनके नियोगके अनु[सार] इन्होंने उस मरे हुए बालक को गोदमें लि[या।] आगे भगवान् वासुदेवने उस अकालीन अजात बलवीर्य्य-पराक्रमयुक्त और अस्त्रा[ग्नि]से जले हुए बालकको निज तेजसे जिलाया [और] उत्तर बोले, कि कुलके परिक्षीण होने पर [इस] बालकने जन्म लिया है, इस हेतु इसका [नाम] परिक्षित् होवे। महाराज! परिक्षितने माद्र[वती] नाम्नी आपकी मातासे विवाह किया था [उसी] माद्रवतीके गर्भसे जनमेजयके नामसे आ[पने] जन्म लिया है, आपने वपुष्टमा नाम्नी [भार्य्यासे] शतानीक और शङ्कुकर्ण यह दो पुत्र उ[त्पन्न] किये हैं। शतानीकके वीर्य्य और वैदेहीके [गर्भसे] अश्वमेधदत्त नाम एक पुत्र उत्पन्न हुआ है।

हे नृपते! पुरु और पाण्डवोंकी यह [सब] कथा कह चुका। धन्य, पुण्य भरी और [सत्य]युक्त ब्राह्मण लोग निज धर्म्ममें नियुक्त [और] प्रजा पालनमें लगे हुए क्षत्रियगण, वैश्य और तीनो वर्णके सेवाकारी और श्रद्धायुक्त [शूद्र] अवश्यमेव सुनें और इसका अर्थ जानें, [जो] देवपरायण ब्राह्मण औ दूसरे मानव अहङ्काररहित और संयत होकरके इस प[वित्र] इतिहासको अशेषरूपसे सुनेंगे वा सुनावेंगे वह स्वर्गको जीत कर पुण्य लोकमें बसेंगे [और] देवता ब्राह्मण और दूसरे मनुष्योंके समान मान[नीय] और पूजनीय होंगे। यह परम पा[वन] महाभारत भगवान् वेदव्याससे रचा गया है जो सब वेद सम्पन्न ब्राह्मणादि चारवर्ण [के]

ारको तज कर श्रद्धायुक्त होकर इसे सुनेंगे, सुकृतिशाली और स्वर्ग-जयकारी होंगे और पापाचरण करने परभी शोचनीय दशाको प्राप्त नहीं होंगे। इस विषय पर यह श्लोक है, कि "वेदवत पवित्र, उत्तम, धन्य,यश बढानेवाला और आयुर्वृद्धिकारी यह महाभारत नियतात्म जनोंके सुनने योग्य हैं।

सम्भवपर्व्वमें पचानवे अध्याय समाप्त।

वैशम्पायनजी बोले, कि इक्ष्वाकु वंशोत्पन्न महाभिष नामसे प्रख्यात सत्यवादी और सत्य विक्रमी एक नरनाथ थे। उन्होंने सहस्र अश्वमेध और शत संख्यायुक्त राजसूय यज्ञमें देवाधीशको सन्तुष्ट किया था, इससे वह अन्तकालमें स्वर्गको पधारे। अनन्तर एक समय सुरलोग ब्रह्माकी उपासना कर रहे थे, उस समय राजर्षि और राजा महाभिष उस स्थानमें उपस्थित थे। अनन्तर नदियोंमें प्रधान गङ्गा उस समय पितामहके निकट उपस्थित हुई, उनका चन्द्र-प्रकाश सदृश वस्त्र पवनसे ऊपर उठा, देवताओंने देखतेही मुख नीचे कर लिये, राजर्षि महाभिष निःशङ्क चित्तसे उन पर ताकते रहे, इस हेतु भगवान् ब्रह्माने महाभिषको शाप देकर कहा, कि तुम मर्त्त्यलोकमें जन्म लोगे और कुछकाल पीछे इस पुण्यलोकमें आ सकोगे। नृपति महाभिषने राजालोग और दूसरे तपोधनोंकी कुछकाल चिन्ता करके अति तेजस्वी भूप प्रतीपके वीर्य्यसे जन्म लेनेकी अभिलाषा की, जलयुक्त गङ्गा नृपति महाभिषको उस प्रकार अधैर्य्य देखकर उनको मनही मनमें सोचती हुई चली गयी। उन्होंने जानेके काल पथमें स्वर्गधामवाले देव वसुओंको मनःपीड़ासे दुःखी और स्वर्गसे च्युत होते देखा। हे नृपते। जलयुक्त भागीरथीने उनको उस दशामें देखकर पूछा, कि तुम क्यों श्रीभ्रष्ट हुए हो? देवोंका कोई अमङ्गल तो नहीं हुआ? वसुओंने कहा, कि हे महानदी। महात्मा वशिष्ठने स्वल्प दोषसे क्रोधित होकर हम पर शाप दिया है; ऋषिश्रेष्ठ वशिष्ठ छिपकर सन्ध्योपासन कर रहे थे, हम मुग्ध चित्त होकरके उनको लांघ कर गये थे, इससे उन्होंने क्रोधयुक्त होकर हमको शाप दिया है कि तुम नरयोनिमें जन्म लो। ब्रह्मवादी महर्षिने जो कहा है, वह अतिक्रम नहीं होसकेगा, अतएव तुम भूमण्डलमें मानवी बनकर हमको पुत्र बनाओ। हे शुभे। हम मानवीके पेटमें नहीं घुसेंगे। गङ्गाने वसुओंकी बातको सुनकर जाना और कहा, कि मर्त्त्यलोकमें कौनसे श्रेष्ठ पुरुष तुम्हारे जन्मदाता होंगे? वसुलोग बोले, कि नरलोकमें प्रतीप नामक पृथ्वीनाथके पुत्र शान्तनु नामसे तीनों लोकोंमें प्रशंसित भूप होंगे; हम चाहते हैं, कि वह हमारे जन्मदाता होवें। गङ्गाजी बोलीं, कि हे निष्पापी देवगण। तुम जैसा कहते हो, मेराभी वही मत है; कल्पना की है कि, मैं उन शान्तनु राजाहीका प्रिय अनुष्ठान करूंगी, वही तुम्हारा भी अभिमत हुआ है। वसुलोग बोले, कि हे तीनों लोकोंमें जानेवाली। जब हम तुम्हारे पुत्रके स्वरूपमें जन्म लें, तब तुम हमको जलमें फेंकना, कि सदा हमको मर्त्त्यलोकमें रहना न पड़े, शीघ्र बचाव हो सके। गङ्गाजी बोलीं, कि तुम जैसा कहते हो; वही करूंगी, पर पुत्रार्थी शान्तनुका मुझसे मिलन व्यर्थ न हो, इस हेतु ऐसा विधान करो, कि मेरा एक पुत्र जीवित रहे। वसुलोग बोले, कि हम अपनेसे हरेकसे निज निज तेजका आठवां भाग देंगे, उस तेजसे तुम्हारी और उनकी अभिलाषानुरूप एक पुत्र उत्पन्न होकर जीवित रहेगा, पर मर्त्त्यलोकमें उसका वंश नहीं रहेगा, वह वीर्य्यवन्त सन्तान निःसन्तान होगी। वसुलोग गङ्गाके साथ ऐसा

नियम बांधकर उसीक्षण मनमाने स्थानको प्रसन्न चित्तसे पधारे।

सम्भवपर्व्वमें छानब्वे अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर सर्व्व भूतोंके हितमें नियुक्त भूपति प्रतीप बहुवर्ष गङ्गाद्वारमें वसकर जप करने लगे। रूपगुणयुक्त अति लुभानेवाली स्त्रीरूपिणी सुमुखी, दिव्यरूपा, मनस्विनी गङ्गाने जलसे निकलकर पाठपरायण राजर्षिके शालहक्षके समान दहिनी उरुकी भजना की। महीपाल प्रतीप उस यशस्विनीसे बोले, कि हे कल्याणि। तुम्हारे प्रार्थित कौनसा प्रिय कार्य्य करूं? नारी बोली, कि महाराज! मैं तुमको कामना करके भजती हूं। तुम मुझको भजो; साधुलोग इच्छावती कामिनीको त्याग देना दोषयुक्त कहा करते हैं: प्रतीप बोले, कि री सुन्दरी, कल्याणि! मेरा धर्म्मयुक्त व्रत यह है, कि मैं कामके वशमें होकर परायी नारि वा असवर्णा स्त्रीसे नहीं मिलता। नारी फिर बोली, कि महाराज! मैं अलक्षणा, मिलनेके अयोग्य वा निन्दित स्त्री नहीं हूं; मैं प्रार्थनीया सुन्दरी नारी तथा स्वर्गकी कन्या होकर तुमसे प्रार्थना कर रही हूं; तुम मेरी भजन करो। प्रतीप बोले, कि तुम जिस प्रिय कार्य्यके लिये मुझे प्रवृत्ति दिलाती हो, मैं उससे निवृत्त हूं यदि इसक्षण उसका विरुद्धाचरण करूं, तो यह धर्म्म विरोध मुझको नष्ट करेगा; विशेष तुमने मुझे दहिना उरुका आश्रयकर आलिङ्गन किया है; री भीरु वराङ्गने! पुरुषकी दहिनी उरु, पुत्र, कन्या और पुत्रवधूका आसन है, और बांयी उरु, प्रणयिणीके भोगनेके योग्य हैं; तुमने उस बांयी उरुको आश्रय नहीं किया है, इस लिये मैं तुमसे कामयुक्त आचरण नहीं कर सकता हूं। री कल्याणि! जोंकि तुमने आकरकेही मेरी पुत्रवधूके पक्ष की दहिनी उरुकी आश्रय किया है, सो तुम मेरी होओ, अतएव आपने पुत्रके निमित्त ... लिया। नारि बोली, कि हे धर्म्मज्ञ। आपने पुत्रके साथ मेरा विवाह करनेके लिये कुछ कह रहे हो, वही होवे; तुम पर ... करके मैं इस वंशकी सेवा करूंगी; भू... में जितने भूपाल हैं, तुम्ही उनकी गति हो। तुम्हारे इस वंशके जितने गुण हैं, वह मैं ... वर्षमेंभी कहके अन्त नहीं कर सकं और इस वंशमें जो प्रख्यात हैं, उन... जितनी साधुता और श्रेष्ठता थी, वह कह करके अन्त नहीं की जासकती। धर्म्मज्ञ विभो! मेरे साथ यह एक नियम ... रना पड़ेगा, कि मैं जो कुछ करूंगी तुम्हारे पुत्र उसका कभी विचार नहीं कर सकें। मैं ऐसाही नियममें रहकर तुम्हारे पुत्रकी प्रे... बढ़ाऊंगी, तुम्हारे पुत्र प्रणय तथा प्रियकर्म्म और पुत्रसे स्वर्गकी प्राप्ति करेंगे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे राजन! वह ऐसाने कहकर उसी स्थानमें अन्तर्हिता हुई। राजाने पुत्रके जन्मकी प्रतीक्षा करके वही ... किया। उसी समयसेही क्षत्रियोंमें ... कुरुकुलप्रदीप प्रतीप स्त्रीके सहित पुत्रके ... तप करने लगे। आगे दम्पतीके वृद्धापेमें महात्मा महाभिषने जन्म लिया; वह भूप... शान्तचित्त होने पर उस कालमें उस ... जन्म हुआ, इस हेतु उनका नाम, शान्तनु हुआ। कुरुश्रेष्ठ शान्तनु निज कर्म्मसे जो पुण्यलोक जीता जाता है, वह मनमें ठहरा कर पुण्य कर्म्मोंहीका अनुष्ठान करने लगे। अनन्तर राजा प्रतीप निजपुत्र शान्तनुको युवा देखकर बोले, कि हे शान्तनो! तुम्हारे मङ्गलके निमित्त पूर्व्वकालमें एक सुन्दरी नारी मेरे पास आई थी; हे पुत्र! वह अनुपम रूपवती युवती वरवर्णिनी काम-गामिनी दिव्य कामिनी यदि पुत्रकी कामना से तुम्हारे

निरालेमें आवे, तो तुम उसको ऐसा मत कहना, कि "हे अङ्गने ? तुम कौन, किसकी बेटी हो ? और वह कामिनी, जो कर्म्म करेगी कभी तुम उससे मत पूछना ; हे अनघ। मैं तुमको यह आज्ञा करता हूं, कि इस आज्ञाके अनुसार तुम उस भजनेवाली युवतीको भजना।

श्रीवैशम्पायनजी, बोले कि, राजा प्रतीप अपने पुत्र शान्तनुको ऐसी आज्ञा देनेके पश्चात् निज राज्यपर अभिषिक्त करके, वनको पधारे। देवराजके समान द्योतमान धीमान् रतीनाथ शान्तनु सदा वनमें जाकर मृगया करने लगे। महाराज। एक समय वह राज-श्रेष्ठ मृग और भैंसे वध करके सिद्धचारणोंसे सेवित-गङ्गाके सामने अकेले घूम रहे थे, कि उसी समयमें साक्षात लक्ष्मीके सदृश कान्तिवती अनिन्दिता, दिव्य आभूषणोंसे सजी, शोभा देनेवाले दांतोंसे सुशोभिता एक परमा नारीको देखा। नराधिप शान्तनुने, पद्मोदर सदृश सुन्दरी, पतला वस्त्र पहिने हुए उस रमणीको देखकर उसके रूपैश्वर्य्यसे आश्चर्य्य माना और उनके नेत्ररूपी दो चकवे रूप चन्द्रमाके अमृतको पीकर तृप्त नहीं हुए और विलासिनी नारीभी राजाको अति उज्ज्वल रूपलावण्यसे चमकते और घूमते देखकर स्नेह और प्रेममें फंसकर अपनी देखनेकी लालसाको भले प्रकार पूर्ण नहीं कर सकी। राजाने उसको मीठी बातोंसे समझाकर कहा; कि सुन्दरी, शोभने देवीवत् कान्तिमती। मैं तुमसे यह प्रार्थना करता हूं, कि तुम चाहे देवी वा दानवी; अथवा गन्धर्व्वी वा अप्सरा पन्नगी वा यक्षी वा मानवी क्यों न हो; मेरी भार्य्या होओ।

सम्भवपर्व्वमें सतानब्बे अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले; कि अनिन्दिता गङ्गा राजाकी मृदु और मनोहर वाणी मन्द, हंसीके साथ सुनकर वसुओंके नियमको स्मरण करके उनके सामने गयीं और बातोंसे भूपतिके चित्तको प्रसन्न करती हुई बोलीं, कि, हे महीपाल। मैं तुम्हारी रानी और वशीभूता हूंगी, पर मैं यदि शुभ वा अशुभ कार्य्य करूं, तो तुम रोकने वा अप्रिय बात कहने नहीं पाओगे ; हे पृथ्वीपाल। तुम यदि ऐसे नियमसे मेरे साथ रह सको तो मैं भी तुम्हारे साथ रहूंगी, यदि रोको वा अप्रिय वाणी कहो, तो निश्चय तुमको त्याग दूंगी। हे भरतश्रेष्ठ। राजाके वह मानने पर गङ्गाने उन भूपालश्रेष्ठको प्राप्तकर अपार आनन्द लाभ किया। भूपति शान्तनु भी उनको लाभकर उनके वशमें होकर मनमाना भोग करने लगे, पूछना उचित न समझकर उससे कुछ पूछते नहीं थे, वरन उनकी शीलता, सुव्यवहार; सुन्दरता, उदारता और निरालेकी सेवासे सन्तुष्ट होने लगे। सुन्दरी दिव्यरूपा त्रिपथगामिनी देवी गङ्गा, शोभनीय मानवी शरीर धरकर देवराजके समान द्योतमान नृपसिंह शान्तनुके सौभाग्यसे उनका मनोरथ सफल करती हुई प्यारी पत्नी हुई। वह सम्भोग, स्नेह, चतुरता, सुन्दर नाच और मनोहर हाव भावसे राजाका मन बहलाने लगीं ; राजाभी उसके प्रेमी बने ; वह अच्छी स्त्रीके गुणोंसे वशीभूत होकर क्रीड़ामें आसक्त रहनेसे यह जान नहीं सके, कि अनेक महीने, ऋतु और वर्ष बीत रहे हैं। नरश्रेष्ठने मनमाना उनसे क्रीड़ाकरते हुए क्रमशः अमर सदृश आठ पुत्र उत्पन्न किये। हे भारत ! जब जो पुत्र जन्म लेता था, तबही गङ्गा उसको जलमें डाल देती और कुमारको यह कहकर सोतेमें डुबा देती थी, कि तुमको प्रसन्न करती हूं। इस प्रकार क्रमसे सात पुत्रोंको जलमें डाल देने पर गङ्गाका ऐसा निर्द्दयी व्यवहार राजाके लिये अति असन्तोषका होने लगा, पर इस भयसे, कि कहीं छोड़कर चली न जाय, उससे कुछ कहते नहीं थे। अनन्तर आठवें

पुत्रके जन्म लेने पर जब गङ्गा हंस रही थी, कि ऐसे समयमें राजा अति दुःखी होकर निज पुत्रकी रक्षाके निमित्त उनसे बोले, कि पुत्रको मत मारो, तुम कौन, किसकी बेटी हो? क्यों पुत्रको मार डालती हो? री पुत्रघात करनेवाली! तुम यह अति अनुचित और महत् पाप कर रही हो। नारी बोली, कि हे पुत्र-कामी! तुम पलवान जनोंमें श्रेष्ठ हुए, तुम्हारे इस पुत्रको न मारूंगी; पर मैंने जो नियम बांधा था, उसके अनुसार तुम्हारे पास मेरे रहनेका काल बीत गया। मैं महर्षियोंसे सेवित जह्नुकी कन्या गङ्गा हूं, देवताके कार्य्य साधनेके लिये तुमसे सहवास किया था, तुम्हारे पुत्र महातेजस्वी महाभाग अष्टवसु वशिष्टजीके शापसे मनुष्य होकर जन्मे थे, इस मर्त्यलोक भरमें तुम्हारे बिना उनका जन्मदाता होनेवाला कोई नहीं है, और मेरे बिना कोई उनकी माता होनेवालीभी नहीं है, इस हेतु मैंने वसुओंको माता होनेके लिये मानवी शरीरको आश्रय किया था, तुमने अष्टवसुओंका जन्म देकर अक्षयलोक लाभ किया। वसुओंसे मेरा यह नियम स्वीकार किया हुआ था, कि जन्म लेतेही मै उनको मानवी जन्मसे मुक्त करूंगी। इसलिये उनको उस प्रकारसे जल में डाल दिया था, इससे वे महात्मा आपव ऋषिके शापसे मुक्त हुए, इस समय तुम इस महाव्रत पुत्रको पालो; तुम्हारा मङ्गल होवे, मैं जाती हूं। मैंने तुम्हारे लिये वसुओंके निकट एक पुत्र मांगा था, इससे हरेक वसुके आठवें भागसे इस पुत्रका जन्म हुआ है। सो मेरे प्रसव किये हुए, इस पुत्रको "गङ्गादत्त" अर्थात् गङ्गाका दिया हुआ करके जानना।

सम्भवपर्व्वमें अठानव्वे अध्याय समाप्त।

शान्तनुजी बोले, कि आपव नामके कौनसे ऋषि हैं? और वसुओं ने उनका कौनसा दोष किया था? और तुम्हारे दिये हुए पुत्रने कौनसा दोष किया था, कि उस फलसे वह मानवलोकमें वास करेगा; जाह्नवी। वसुलोग सर्व्व लोकोंके ईश्वर, सो मुझे यह कहो, कि वे क्यों मर्त्यमें उत्पन्न हुए।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि देवी गङ्गा पुरुषश्रेष्ठ पति राजा शान्तनुसे यह लगीं, कि हे भारतश्रेष्ठ। पूर्व्वकालमें वैवने जिनको पुत्र लाभ किया था, वह नामक मुनि आपव नामसे प्रसिद्ध हुए; तोंमें श्रेष्ठ सुमेरु के किनारे उनका आश्रम था, वह आश्रम मृग पक्षियोंसे हुआ और सदा सर्व्वऋतुओंके फूलों से रहता था। हे भारतश्रेष्ठ। पुरुषवानोंमें वही वरुणपुत्र मीठे फल मूल और उस आश्रमके वनमें तप किया करते हैं भरतर्षभ। एक समय सर्व्वकामदुघा नाम्नी देवी दक्षपुत्रीने जगत् पर कृपा करनेके लिये कश्यपसे एक कन्या प्रसव धर्म्मात्मा वरुणपुत्रने उस कन्याको लेकर धेनु बनायी सुरभीकी कन्या गौ उन मुनि सेवित पवित्र और रमणीय उपवनमें निर्भय चित्तसे चरने लगी। हे अनन्तर किसी समयमें पृथ्वादिदेव देवर्षिसेवित उस वनमें आकर निज निज विचरने लगे और रमणीय पर्व्वत और इधर उधर क्रीड़ा करनेको प्रवृत्त हुए। इन्द्रसमान विक्रमी। उनमेंसे एक सुन्दरी एक स्त्रीने उस वनमें घूमती हुई की कन्या नन्दिनीको देखा। हे शीलसम्पदसे भरी पूरी वसुकी स्त्रीने गौबैल समान आंखवाली, श्रेष्ठ, प्रशस्त थनवाली अच्छी दुधारी पूंछ और खुरयुक्त, शुभलक्षणा, सुशीला, सर्व्वगुणवती देखकर अचरज मानकर

ति द्यु नामक वसुको दिखाया, हे गजेन्द्र मान विक्रमी पौरव-नन्दन! द्यु नामक वसुने इस सुरभी की पुत्रीको देखकर अपनी मेका देवीसे उसके रूप और गुणका बखान र कहा, कि री सुन्दरी! जिन ऋषिका ह उत्तम तपोवन है, यह कालेनेत्रवाली देवी भी की पुत्री उन वरुणजीके हवनकी गौ। हे सुन्दरी! जो नर इस नन्दिनीका ठा दूध पीयेगा,वह अटल यौवन पाकर दश हस्र वर्ष जीवित रहेगा।

हे नृपोत्तम! सुमध्यमा सुन्दरी देवी उपत्नीने यह सुनकर अति तेजस्वी पतिसे हा, कि मर्त्त्यलोकमें रूप-यौवनवती भूदेव-ो जितवती मेरी सहेली है, वह धीमान सत्य ी राजर्षि उशीनरकी बेटी है, मानव-कमें उसका रूपसम्पद प्रसिद्ध है, हे महा-ग। उसके लिये मुझे बछड़ा-सहित इस की लेनेकी अभिलाषा हुई है। हे पुण्य-नेवाले अमरश्रेष्ठ। शीघ्र गौको लाइये, मानद। मेरी वह सहेली केवल इस गौका पीकर मर्त्त्यलोकमें जरारहित और रोग-जित होगी। हे अनिन्दित महाभाग! मेरा प्रियकार्य्य करना आपका कर्त्तव्य है, इससे धिक प्रिय मेरा और कुछ नहीं है। द्यु-मक वसुने यह बात सुनकर प्रेमिका-का प्रिय अनुष्ठान करनेके लिये पृथु दि भाइयोंके साथ उस कामधेनुकी हर या। हे भूप। वह उस कालमें अपनी मलनेत्रा स्त्रीकी बातोंमें आकर उन ऋषिकी र तपस्याकी भली भांति आलोचना नहीं सके। यह तर्क एकवार भी मनमें नहीं या, कि इस गौके हरनेसे हमारा पतन गा।

अनन्तर वरुणपुत्र ऋषि फल बटोरकर श्रममें उपस्थित हुए; पर अपने सुहावने नमें बछड़ा सहित उस गौको नहीं देखा। तब उदारधीमान् तपोधन उस वनमें इधर उधर ढूंढ़ने लगे। पर देरतक ढूढ़ करकेभी नहीं पाया। आगे दिव्य नेत्रसे जाना, कि वसुओंने गौ हर ली है, इससे उन्होंने उसी-क्षण क्रोधयुक्त होकर वसुओंको यह शाप दिया, कि जोकि वसुओंने मेरी सुलक्षणवती अच्छी पूछवाली दुधारी कामधेनुको हर लिया है,सो इसमें सन्देह नहीं,कि वे सब मर्त्त्यलोकमें जन्म लेंगे। हे भरतकुलप्रदीप! मुनियोंमें श्रेष्ठ भगवान् आपवने क्रोधकेवशमें होकर वसु-ओंको यह शाप दिया। उन महाभाग मह-र्षिने शाप देकर तप में मन लगाया। हे राजन्! क्रोधयुक्त महाप्रतापी ब्रह्मर्षि तपो-धन से देवता आठोंवसु एस प्रकारसे शाप पाकर शापके वृत्तान्तसे ज्ञातहोकर फिर उन महात्माके आश्रममें आकर उनकी उपासना करने लगे। हे पृथ्वीपालश्रेष्ठ। पुरुषव्याघ्र वसुगणने उन सर्व्वधर्म्मनिपुण ऋषिश्रेष्ठ आपव को प्रसन्न करनेके लिये बड़ी चेष्टा की, पर मनोरथ सफल नहीं हो सका। अनन्तर धर्म्मात्मा ऋषिने कहा, कि मैंने पृथु आदि तुम सबोंको जो शाप दिया है, वर्षभरमें तुम उस शापसे मुक्त हो सकोगे, पर तुम जिसके लिये शाप-ग्रस्त हुए हो,वह द्यु नामक वसुही केवल निज धर्म्मके दोषसे मनुष्यलोक में दीर्घकालतक बसेगा, मैंने क्रोधित होकर जो कहा है, उसको विफलता नहीं कर सकूगा। यह महामना द्यु नामक वसु मर्त्त्यलोकमें सन्तान उत्पादन नहीं करेगा, स्त्रीमिलन त्याग देगा और धर्म्मात्मा तथा सर्व्व शास्त्रोंमें पण्डित होकर पिताके प्रियकार्य्यमें सदा नियुक्त रहेगा। महर्षि सब वसुओंसे यह बात कहकर चले गये। तब सब वसुओंने एकत्रहोकर मेरे पास आकर प्रार्थनापूर्व्वक कहा, कि हे गंगे। हमारे जन्म लेतेही तुम स्वयं हमे जलमें डाल देना। हे राजश्रेष्ठ! शापसे ग्रसित वसुओंको शापसे

बचानेके लिये मैंने ऐसा किया है। हे नृपोत्तम भारत! उन ऋषिके शापसे यह द्यु नामक वसु अकेले दीर्घकाल मनुष्यलोकमें वसेंगे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि देवी गङ्गा यह कहकर उस स्थानहीसे अन्तर्हित हुईं और उस कुमारको लेकर मनमाने स्थानको पधारीं। वह द्यु नामक वसु शान्तनुकी सन्तान होकर देवव्रत और गाङ्गेय नामसे प्रसिद्ध हुए और शान्तनुसेभी अधिक गुणशील भये थे। इधर शान्तनुने शोकयुक्त होकर निज पुरमें प्रवेश किया। हे महाराज! इसलिये उन महात्मा भारत राजा शान्तनुके अनुपम गुण और महाभाग्यकी कथा कहूंगा, जिनका देदीप्यमान इतिहास महाभारत करके प्रसिद्ध हुआ है।

सम्भव पर्व्वमें निनानवे अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि धीमान शान्तनु सत्यवादी करके सब लोकोंमें प्रसिद्ध और देवता तथा राजर्षियोंसे सत्कार किये जाते थे। हे पुरुषश्रेष्ठ! महासत्त्व शान्तनुमें दम, दान, क्षमा, बुद्धि, लज्जा, धैर्य्य, और बड़ा प्रभाव यह सब गुण सदा विद्यमान थे। ऐसे सुगुणशाली, धर्म्मार्थपरायण वह राजा भरतवंश और सर्व्व जनोंके रक्षक थे; वह शङ्खसी ग्रीवायुक्त, वृहत् स्कन्धधारी उन्मत्त नाग ऐसे विक्रमी और और सम्पूर्ण अर्थ और राजलक्षणोंसे अलंकृत थे। मानववृन्दने उस कीर्त्तिमान पुरुषके चरित्रको देखकर यह ठहराया था, कि काम और अर्थसे धर्म्महो श्रेष्ठ है; पुरुषश्रेष्ठ महासत्त्व शान्तनुमें यह सब गुण थे। कोई पृथ्वीपाल धर्म्मके विषयमें उनके समान नहीं हो सके। भूपोंने उन राजाको धर्म्मपथमें वर्त्तमान और धार्म्मिकोंमें प्रधान देखकर राजाओंके प्रधान पद पर बैठाया; वे शोक, भय और बाधाओंसे रहित होकर सुखसे सोते और सुखसे जागते थे, सो भारतवंशाधिप ...नुको उन्होंने पति समझा था। ... समान तेजस्वी कीर्त्तिमान उन महाराज...नके अनुसार नरेशवृन्द यागशील, और ...युक्त हुए थे। तब शान्तनु आदि ... प्रजा रक्षित और सुनियम भली भांति होनेसे सर्व्व वर्णोंका धर्म्म बढ़ने लगा। ... लोग ब्राह्मणोंकी सेवामें, वैश्यलोग क्षत्रि...की सेवामें और शूद्र लोग ब्राह्मण और ...योंके प्रेमी रहकर वैश्यों की सेवामें लगे रहे ... राजा शान्तनु कुरुवंशियोंकी कुलक्रमिक ...गीय राजधानी हस्तिनापुरमें वसकर ... सहित धरतीको शासने लगे। ... सत्यवादी और सरल स्वभावी धरतीनाथ ... दान धर्म्म और तपस्याके बलसे ... समान श्रीमान् हुए थे। वह क्रोध द्वेषर... देखनेमें चन्द्रमा ऐसे प्यारे, तेजमें सूर्य ... वेगमें पवन समान, क्रोधमें यमराजकी ... और क्षमागुणमें पृथ्वीकी नाईं थे। हे राज... उनके राज्यके समय पशु, सूवर, मृग, पक्षी ... जीव नहीं मारे जाते थे। वह राज्यको ... रूपी ब्रह्मधर्म्मसे अलङ्कृत करके स्वयं ... क्रोधसे रहित, नम्र और यत्नशील होकर ... पक्षपात सर्व्व प्राणियोंका शासन करते ... उन दिनों देवयज्ञ, ऋषियज्ञ और पितृ... क्रिया होने लगी; कोई अधर्म्म करके ... जीवको मारता नहीं था। वह राजा ... दुःखी, अनाथ और पक्षी योनिमें जन्म ... हुए सर्व्व जीवोंके पिताके समान थे; ... उनके साम्राज्यके कालमें वाणीने सत्य ... आश्रय किया, और वह छत्तीस वर्ष ... स्त्री सम्भोगादि विषय भोगकर अन्तमें ... सिधारे। गङ्गाके गर्भसे जन्मे वसु उनके ... देवव्रत सुन्दरता, आचार चरित्र ... विद्या सर्व्व विषयहीमें उनके सदृश हुए थे। महाबलवीर्य्यवन्त महासत्त्ववान,

र गदादि सर्व्व अस्त्रोंके चलानेमें निपुण (कुमार) शान्तनुने एक समय एक मृगको बींधकर उसके पीछे जाते हुए निकटकी नदी भागीरथी गङ्गाको स्वल्प जलयुक्त देखा। पुरुषश्रेष्ठ शान्तनु वह देखकर सोचने लगे, कि इस जलभरी गङ्गामें आज क्यों पहिलेके समान (जल) नहीं देखता हूं? अनन्तर उसका कारण ढूंढते हुए देखा, कि बड़ा भारी देखनेमें सुन्दर रूपधारी और देवराज सदृश सुन्दर एक कुमार तेजवाणजालसे गङ्गाजीके सोतोंको रोक कर दिव्यास्त्र चला रहा है। राजाने अपने पासहीमें नदीगङ्गाको वाणोंसे ढंपी हुई देखकरके बालकका अलौकिक आश्चर्य कार्य्य निहार कर अचरज माना। धीमान शान्तनुने पहिले जन्म लेनेही पर पुत्रको देखा था, सो इस कारण निज पुत्र करके पहिचाननेके योग्य कोई लक्षण उनके स्मरणपथमें आरूढ़ नहीं हुआ, कुमार पिताको देख करकेही मायासे उनको मोहित करके उस स्थानहीसे अन्तर्हित हुए। अनन्तर राजा शान्तनु वह आश्चर्य लीला देखकर शङ्कायुक्त होकरके गङ्गासे बोले, कि इस अन्तर्हित हुए कुमारको मुझे दिखाओ। गङ्गाने उत्तम रूप धरकर दहिने हाथमें उस अलंकृत कुमारको लेकर राजाको दिखाया। निर्म्मल वस्त्रसे भली भांति आवृता और नाना आभूषणोंसे सजी हुई गङ्गाको पहिले देखने परभी इस समय उन्होंने नहीं पहिचाना! तब गङ्गा बोलीं, कि हे पुरुषव्याघ्र नृपते! पहिले तुमने मेरे गर्भसे जो आठवां पुत्र लाभ किया था, यह वही पुत्र है। यह सम्पूर्ण अस्त्र विद्याओंमें अति पण्डित हुआ है। हे विभो, महाराज! इस पुत्रको मैंने बढ़ाया है, इसे घरको ले जाओ। यह कुमार युद्धमें देवराज समान बड़े चापधारी, अस्त्र-विद्यामें दक्ष और वीर्य्यवान् हुआ है; तुम्हारे इस पुत्रने ऋषि वशिष्ठसे छओं अङ्गके सहित वेद पढ़ लिया है। हे भारत! यह सुर और असुर दोनोंके प्यारे हैं; असुरोंके गुरु, उशना जिन जिन शास्त्रोंसे ज्ञात हैं, इस पुत्रने वह सब पढ़ लिये; और अङ्गिराके पुत्र तथा सुरासुरकोंके नमस्कारयोग्य वृहस्पतिजो जो जो शास्त्र जानते हैं, इस पुत्रने वह सबभी सीख लिये हैं। प्रतापी कठोर ऋषि जामदग्न्य राम जिन सब अस्त्रविद्याओंसे ज्ञात हैं, इस महाबाहु महात्मा पुत्रमें साङ्गोपाङ्ग वह सब विद्या अधिष्ठित हुई है। हे राजन्, हे वीर! धर्म्मार्थ कोविद महाधनुर्द्धारी तुम्हारे इस वीर पुत्र को मैं इस समय दे देती हूं, इसे घर लेते जाओ।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि राजा शान्तनु गङ्गासे ऐसी आज्ञा पाकर दिवाकर सदृश देदीप्यमान पुत्रको लेकर अपने पुरमें आये और उन्होंने पुरन्दरपुर ऐसी पुरीमें प्रवेशकर अपनेको अति सम्पदयुक्त और सिद्धकाम समझा। अनन्तर पौरववंशके राज्यको भले प्रकार रखनेके निमित्त अभय-देनेवाले और गुणशील महात्मा पुत्रको यौवराज्यमें अभिषिक्त किया। हे भरतर्षभ! महायशस्वी शान्तनुपुत्रने सुचरित्रसे अपने पिता, पौरवगण और प्रजावृन्द सबोंको प्रेमी बनाया था। अपरिमित विक्रमयुक्त महीपाल शान्तनुने अपने पुत्रके साथ आमोद आनन्दमें चार वर्षकाल काटा।

किसी समयमें उन महीपति शान्तनुने यमुनातटके वनमें जाकर एक प्रकारकी अनजानी अच्छी गन्धका घ्राण पाया। यह पता लगानेके लिये, कि कहांसे वह गन्ध आ रही थी, चारो और घूमघाम कर अन्तमें देवरूपिणी एक दासीको देखा; काली आंखवाली उस कन्याको देख करकेही उन्होंने पूछा, कि री भीरु! तुम कौन, किसकी बेटी हो? इस वनमें क्यों आई हो? कन्या बोली, कि तुम्हारा मङ्गल होवे. मैं दासकन्या हूं, महात्मा दासराज

मेरे पिता है। उनकी आज्ञासे मैं धर्मके लिये नाव चलाती हूं। राजा शान्तनुने उस दास-कन्याको रूपवती सुगन्धवती मधुरतासे मोहिनी और देवरूपिणी देखकर मनहीमनमें उसकी कामना की। फिर उसके पिताके पास जाकर वह कन्या मांगी और यहभी पूछा, कि मुझसे विवाह कर देनेको सम्मत हो वा नहीं। दासराजने उनसे कहा, कि हे नरेश! इस सुन्दरीने जब जन्म लिया है, तभी निश्चय हुआ है, कि यह कन्या किसी वरको सम्प्रदान की जायगी, पर मेरी एक कामना है, उसे सुनिये; हे अनघ! आप सत्यवादी हैं, अतएव यदि इस कन्याको धर्मपत्नी बनानेकी प्रार्थना करें, तो आपको मेरे पास सत्य करके एक बात अङ्गीकार करनी होगी। हे नृप! उसके अङ्गिकार करनेहीसे मैं कन्याको दान कर दूंगा। मेरे लिये आपके समान सुपात्र फिर कभी न मिलेगा। शान्तनु बोले कि हे दास! कहो, तुम क्या वर मांगते हो। मैं सुनकर उसकी व्यवस्था करूंगा, यदि देने योग्य हो, तो दूगा, न देनेका हो, तो न दे सकूगा। दासराजने कहा, कि हे पृथ्वीनाथ! इस कन्याके गर्भसे जो पुत्र जन्म लेगा वह पुत्र आपके पीछे राजा होगा; उसीको अभिषिक्त करना होगा, दूसरे पुत्रको अभिषिक्त नहीं कर सकेंगे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भारत! राजा शान्तनु कठिन कामपीड़ासे जलने परभी दासको वह देनेको सम्मत नहीं हुए। वह उस दास-कन्याकी चिन्ता करते हुए कामसे चेत रहित होकर हस्तिनापुरको लौट गये; अनन्तर एक समय शान्तनु शोकसे विह्वल होकर सोच रहे थे, कि ऐसे समयमें पुत्र देवव्रतने आकर उनसे कहा, कि आपका सवप्रकारसे कुशल देखता हूं, सब राजालोग आपकी आज्ञावश हैं तिसपरभी आप क्यों दुःखित होकर शोक प्रगट कर रहे हैं, जान पड़ता है, मानों आप मनहीं विषयमें रहे हैं। हे राजन्! मुझसे कुछ बात नहीं पर मैं देखता हूं, कि आप पीले बदरङ्ग और हो गये हैं, अब घोड़ेपर चढकर घूमते नहीं सो जानना चाहता हूं कि आपको कौ पीड़ा हुई है, मैं उसको दूर करनेका उ करूंगा। पुत्रकी यह बात सुनकर बोले, कि ऐ बेटा! यह सन्देह नहीं है, मैं शोचयुक्त हुआ हूं; उसका कारण सु ऐ बेटा भरत-कुल प्रदीप। हमारे इस एकमात्र सन्तान तुमने जन्म लिया है, पर सदा अस्त्र चलानेमें नियुक्त और पौरुष इच्छा रखतेहो, सो मनुष्यकी अनित्यता सम कर मैं शोकयुक्त हुआ हूं। हे गाङ्गेय! यदि किसी प्रकार तुमको विपत होय, हमारा वंश नहीं रहेगा, पर इसमें सन्देह नहीं तुम एक पुत्रही मेरे शत पुत्रोंसे श्रेष्ठ हो, इस हेतु मैं फिर विवाह करनेकी इच्छाभी नहीं करता, केवल वंशकी रक्षाके लिये इतनी कामना करता हूं, कि तुम कुशलसे रहो धर्मवादीलोग कहा करते हैं, कि जिस एकमात्र पुत्र है, वह निःसन्तान है। वेदाध्ययन और शिष्य प्रशिष्योंसे वि प्रकार इन सबके अक्षयफल देनेवाले होनेपर पुत्रके सोलह भागके एकांशकेभी तुल्य नहीं होते और पुत्र जिस प्रकार मनुष्यके लिये मङ्गल साधनेहारा करके प्रसिद्ध है, उस प्रकार पशु-पक्षी आदि दूसरे जीवोंके लियेभी प्रसिद्ध हुआ है। हे महाप्राज्ञ! इसमें मुझे संशय नहीं है, कि पुत्रसे स्वर्ग प्राप्त होता है। इस पुराणोंकी जड़ और वेदोंके प्रमाणभूत जो अ है, उससे सदा इसका प्रमाण मिलता है। हे भारत! तुम शूर, अमर्षयुक्त और अस्त्र चलानेमें सदा नियुक्त रहते हो, इससे युद्ध स्थलही में तुम्हारे नष्ट होनेकी सम्भावना

रखता हूं। ऐसा होनेसे वंशकी कैसी गति गी? इसी लिये मैं संशययुक्त हुआ हूं। ग। तुमको दुःखके सम्पूर्ण कारणोंसे त किया।

श्रीवैशम्पायनजी बोले कि महाबुद्धि देवव्रत जासे वह सब कारण ज्ञात होकर बुद्धिसे कुछकाल सोच करके उसीक्षण परम हितैषी वृद्ध न्त्रीके पास जाकर पिताके उस शोकके कारण- ा वृत्तान्त पूछा। हे भरतर्षभ। कुरुराज-पुत्रके यावत् पूछने पर उस गन्धवती कन्याके लिये शराजने जो वर मांगा था, मन्त्रीने वह कह नाया। अनन्तर देवव्रत वृद्ध क्षत्रियोंसे मलकर स्वयं दासराजके साथ जाकरके पिताके लिये वह कन्या मांगी। दासराजने नको विधिपूर्व्वक पूजकर स्वागत किया। हे ारत! देवव्रतके उस दासराजकी सभामें बैठ- पर दासराजने उनसे कहा, कि हे भरतर्षभ। ाप शस्त्र धरनेवालोंमें श्रेष्ठ और शान्तनुके क मात्र पुत्र है, आप सब विषयोंके कर्त्ता हैं, आपसे एक बात कहता हूं, सुनिये। कन्याके पेताके साक्षात् इन्द्र होने परभी ऐसे मानयुक्त ौर प्रार्थनीय सम्बन्धके छोड़नेसे उसको ावश्यही सन्तापित होना पड़ता है। जो रूप-प्रधान तुम्हारे ऐसे गुणवान हैं, उन्हींके ीर्य्यसे इस सत्यवती नामी सुन्दरी कन्याने न्म लिया है; उन्होंने बहुवार मेरे पास आपके पिताका नाम लेकर कहा था, कि ह धर्म्मज्ञ भूपाल सत्यवतीसे विवाह करनेके ोग्यपात्र है, फिरभी ऋषिश्रेष्ठ देवर्षि असि- ने पहिले इस सत्यवतीके लिये वार वार ार्थना की थी, मैंने उस पर ध्यान नहीं दिया। हे नृपोत्तम। मैं कन्याका पिता हूं, इस लिये ह एक बात कहता हूं, कि इसमें केवल एक लवत सपत्न दोष है। हे शत्रुको पीड़ादेने- ाले। आप जिसके सपत्न है, यद्यपि वह गन्धर्व्व वा असुर होवे, तथापि आपके क्रोधित होनेसे वह कभी दीर्घकाल तक जी नहीं सकेगा, तौभी हे पृथ्वीनाथ। इस विषयमें इतनाही दोष है, कोई दूसरा दोष नहीं; हे परन्तप। आपका मङ्गल होवे, देने और नदेनेके विषयमें यही जानना।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भरत- वंशतिलक। गङ्गापुत्र देवव्रत दासराजकी यह बात सुनकर पिताके उपकारके लिये सब वृद्ध क्षत्रियोंके सामने बोले कि हे सत्यवादिन्। जानना, कि सत्यही मेरा व्रत है, मैं सत्य करके कहता हूं ऐसा मनुष्य जन्मा नहीं है, कि यह कहनेका उत्साही हो और यहभी जान नहीं पड़ता, कि पीछे जन्म लेगा। तुम जो अभिप्राय प्रगट करते हो,मैं वैसाही करूंगा, तुम्हारी इस कन्या के गर्भमें जो सन्तान उत्पन्न होगी, वह सन्तानही हमारे राज्यकी अधिकारी होगी। हे भरतर्षभ। उनकी यह बात सुन- कर दासराजने राज्यके लिये कठोर कर्म्म करने पर होकर फिर यह कहा, कि हे धर्म्मात्मन्। अति प्रकाशमान् आप शान्तनु पक्षके कर्त्ता होकर आये है, पर इस कन्या दानकेभी आप कर्त्ता होवें। हे शान्तशील! इसस्थलमें और एकबात कहनीहै, उसका भी विधान आप कीजिये हे अरिन्दम! जिनको कन्या पर स्नेह है, उनको यह अवश्यमेव कहना पड़ता है, अतएव मैं कन्याके प्रेमसे ही कहता हूं। हे सत्यधर्म्मशील। इन राजाके बीचमें आपने सत्यवतीके निमित्त जो प्रतिज्ञाकी, वह आप जैसे महानुभाव हैं, उसके योग्यही हुआ। हे महाबाहो। इस विषयमें मुझे कुछभी शङ्का नहीं है, कि उसका विपरीत नहीं होगा, पर आपकी जो सन्तान होगी उसके लिये मुझे बड़ा संशय होता है। वैशम्पायन बोले, कि हे राजन्। सत्य धर्म्मशील सत्यव्रतधारी, गङ्गानन्दन दासराजका अभिप्राय

जानकर पिताकी प्रीतिके लिये प्रतिज्ञा पूर्ब्बक बोले; कि हे नृप-त्तम दासराज! मैं पिताके लिये इन राजाओंके सम्मुख यह कहताहूं सुनो। हे राजवृन्द! मैंने पहिलेही राज्य छोड़ दिया है, अब मेरे पुत्रके राज्य पानेके विषय में जो शङ्का कही गयी है, उसके निमित्तभी प्रतिज्ञा करता हूं; हे दास! मैं जितने दिन जीवित रहूंगा, आजसे तबतक के लिये ब्रह्मचर्य्य अवलम्बन करेलेता हूं, इससे मेरे निःसन्तान होने परभी मेरा अक्षय स्वर्ग होगा। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि धर्म्मात्मा दासराज उनकी वह बात सुनकर परमानन्दसे गदगद होकर कन्यादानके लिये सम्मत हुए। अनन्तर आकाशसे अप्सरा-गण और ऋषिगण गङ्गानन्दन देवव्रतके ऐसे भयानक संकल्पको सुनकर यह कहके, कि "यह भीष्म है उनपर फूल वर्षाने लगे। आगे भीष्म पिताके लिये उस यशस्विनी योजनगन्धा कन्यासे बोले, कि हे माता! रथपर आरूढ़ होओ, अपने घरको चलना होगा। वैशम्पायन बोले, कि भीष्मने यह बात कह कर भाविनी गन्धवतीको रथपर चढ़ाकर हस्तिनापुरमें गमन करके शान्तनुसे सब कुछ सुनाया। राजगणभी आकर सब मिल करके और हरेक मनुष्य पृथक रूपसे उनके उस दुष्कर कार्य्य की प्रशंसा करने लगे और बोले, कि इनके भयङ्कर कार्य्य करनेसे इनका नाम भीष्म हुआ है। महाराज शान्तनुने भीष्मकृत वह दुसाध्य कार्य्य सुनकर सन्तुष्ट होकरके उन महात्माको इच्छामृत्यु का वर दिया।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे महीपाल! अनन्तर विवाह होजाने पर राजा शान्तनुने रूपवती सत्यवतीको अपने घरमें स्थापन किया। उनके वीर्य्य और सत्यवतीके गर्भमें चित्राङ्गद नामक धीमान वीर्य्यवान श्रेष्ठ एक वीरपुत्रने जन्म लिया। वीर्य्यवन्त प्रभु शान्तनुने उस सत्यवतीसे वीर्य्य नामक बड़े चापधारी एक पुत्रको दन किया था। पुरुषश्रेष्ठ विचित्रवीर्य्य प्राप्त होनेके पहिलेही धीमान शान्तनु वशमें हुए। शान्तनुके स्वर्गको सिधा भीष्मने सत्यवतीके मतमें होकर चित्राङ्गदको राज्य पर अभिषिक्त कि चित्राङ्गदने शूरतासे सम्पूर्ण राजों को प किया था! वह किसी मनुष्यको नहीं समझते थे, यह देखकर, कि व असुर मनुष्योंको पराजय कर सकते हैं। ङ्गद नामक एक बलवन्त गन्धर्व्वराज पास उपस्थित हुए। अनन्तर शान्तनु पुत्र ङ्गदके साथ गन्धर्व्वराजचित्राङ्गदका यु अत्यन्त कठोर युद्ध हुआ, गन्धर्व्वराज कुरुराज दोनों महाबली थे; सो वर्षोंतक सरस्वती नदीके तटपर दो युद्ध हुआ। हे रूपश्रेष्ठ। उसमें वृष्टियुक्त और मथनेहारा घोर युद्ध अन्तमें बड़ी बड़ी मायाधरनेवाले राजने वीर कुरुनन्दनकी रणमें गन्धर्व्वराज नरश्रेष्ठ, अरिन्दम, चित्रा मारकर एकही कालमें नष्ट करके पर जा चढ़े। अति तेजस्वी चित्रा होनेपर शान्तनुनन्दन भीष्मने उनकी अन्तक्रिया सम्पन्न की थी! उसके पश्चात महाभुज सत्यव्रतशील भीष्मने यौवन न हुए, बालक विचित्रवीर्य्यको कुरुराज्यमें षिक्त किया। महाराज! विचित्रवीर्य्य आज्ञानुसारी होकर पिताके राज्यको लगे! वह धर्म्मशास्त्रज्ञ भीष्मको जिस पूजते थे, भीष्मनेभी वैसेही धर्म्मानुसार पालन किया था।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ पहिला अध्याय समाप्त

श्रीवैशम्पायनजी बोले. कि हे कौरव!
ाता चित्राङ्गदके मारे जानेपर बालक भ्राता
चित्रवीर्य्य को उपलक्ष कर भीष्म सत्यवतीके
नमें रहकर राज्य पालने लगे। अनन्तर
मान् भीष्मने भ्राता विचित्रवीर्य्यको यौवन प्राप्त
ोते देखकर उनके विवाहका निश्चय किया।
राजन्! अनन्तर उन्होने सुना. कि काशी-
जकी अप्सरा-समान तीन कन्याओंका एकत्र
यम्बर होगा। महारथी शत्रुजित् प्रभु भीष्म
ाताकी आज्ञा लेकर प्रधान रथपर चढ़कर
राणसीपुरीमें गये। उन्होंने वहां पहुंच-
र देखा. कि सर्व्वत्रसे राजालोग आकर उप-
थत हुए हैं. और उनके बीचमें स्वयम्बरकी
भिलाषिणी वे तीन कन्याभी विद्यमान है।
राजन्! जब सब राजाओंके नाम कहे
ने लगे. तब प्रभु भीष्मने स्वय उन तीनकन्या-
ोंको हर लिया और उन कन्याओंको निज
थपर चढ़ाकर बोलने लगे। बुधोंसे कथित
आ है, कि गुणवान् वरको बुलवाकर यथा-
ते कन्याको अलंकृत करके धन दानपूर्व्वक
प्रदान करना, और दूसरे लोग दो गौ लेकर
यादान करते हैं। कोई कोई पण्डित धन
ार कन्यादान करते है, कोई कोई बलपूर्व्वक
याको लेजाते है, कोई कोई कन्याकी सम्म-
से विवाह करते है, कोई कोई प्रमत्ता
यासे मिलते है, दूसरे लोग दान करनेवाले
बुलाकर वा स्वय जाकर कन्याको प्राप्त
ते है और कोई कोई उचित विधानके अनु-
र दक्षिणाके स्वरूपमें कन्याको लाभ करते
आठ संख्याओंमें गिने जाते हुए यह शेषोक्त
ाह कवियोंका प्रार्थनीय है, पर राजगण
यम्बरहीकी प्रशंसा करते है और उसमेंही
गत होते है. परन्तु धर्म्मवादीजन कहते
कि स्वयम्बरके स्थलसे विपक्षपक्षको दबा-
बलपूर्व्वक जो कन्या ली जाती है, वह
ही श्रेष्ठा है. इस कारण से बलपूर्व्वक इस
स्थानसे कन्या हरता हूं, हे राजवृन्द! तुममें
जिसकी जितनी शक्ति हो, उसके अनुसार जय-
के लिये यत्नवान् होओ, अथवा हार मान
जाओ। हे महीपतिगण! मैं युद्धके लिये
निश्चित हो रहा हूं। वीर्य्यवान् कौरवनन्दन
काशीराज और दूसरे महीपालोंसे ऐसा कह-
कर कन्याओंको अपने रथपर ले करके राजा-
ओंको युद्धार्थ बुलाकर शीघ्र पधारे।

अनन्तर सम्पूर्ण भूप क्रोधित होकर निज
निज बड़ाई प्रगट करके दांतोंसे होंठ काटते
हुए उठ खड़े हुए; और उनमेंसे किसी किसी
ने क्रोधवश ऐसी शीघ्रताको. कि उनके पहिने
हुए आभूषण और कवचादि शरीरसे गिरने
लगे, उनके वह गिरते हुए, कवच और आभू-
षण तारोंके पतनके समान दीख पड़े। वह
सब राजालोग इधर उधर कवच और अल-
ङ्कारोंके गिर जानेसे क्रोध और अमर्षवश भौंहै
चढ़ाय और आंखें बढ़ाय अस्त्र शस्त्र लेकर
सारथियोंसे अच्छे घोड़े जोते हुए, प्रस्तुत
सुन्दर रथोंपर चढ़के अस्त्र शस्त्र उठाकर चले
जाते हुए भीष्मको पछियाते हुए चले। हे
भारत। अनन्तर अकेले भीष्मसे उन सब
राजाओंका रोंये खड़ा करनेवाला घोर युद्ध होने
लगा। राजा लोगोंने एकही कालमें भीष्मपर
दश सहस्र वाण मारे, भीष्म ने उसीक्षण अर्थात्
उन वाणोंके आ पहुंचनेके बीचपथहीमें रोंवे
तक को बींधनेवाले घोर वाणोंको बिना रोक
टोक की वृष्टिसे टुकरे टुकरे कर डाला। इस-
के पीछे सब राजालोग चारो ओरसे उनको
घेरकर जिस प्रकार बादलदल पर्व्वतपर बिना
रोक टोक जल धारा वर्षाते है, उस प्रकार
उनपर वाण वर्षाने लगे। तब भीष्मने वाण-
जालसे उन सब वाणोंका वर्षना रोककर तीन
तीन वाणोंसे हरेक महीपालको विद्ध किया।
राजाओंमें सेभी हरेकने पाच पाच वाणोंसे
भीष्मको विद्ध किया। हे राजन्! भीष्मने

फिर प्रभाव प्रगटकर दो दो बाणोंसे हय भूपको विद्ध किया। वह युद्ध इतना घोर होने लगा, कि जो सब वीर देवासुरके युद्धको समान और शरशक्तियोंसे समाक्रान्त उस घोर युद्धको देख रहे थे, उनके लिये भी वह भयानक हो गया, भीष्म युद्धस्थलमें बाण और शिर काटने लगे। तब रथ पर चढ़े हुए राजा-लोगोंने शत्रु पक्षी होने पर भी उनके अलौकिक आश्चर्य कार्य्य, शीघ्र हाथ चलानेका कौशल और आत्मरक्षाको देखकर उनको प्रशंसापूर्व्वक सम्मान प्रगट किया। अनन्तर शस्त्र धरने वालोंमें श्रेष्ठ भरतवंशतिलक भीष्मने युद्धमें राजाओंको पराजयकर कन्याओंके साथ निज नगर की ओर यात्रा की।

हे राजन्! जिस प्रकार महाबली हस्ती-दलपति किसी हस्तिनीको प्राप्त किये हुए दूसरे हाथीके दो जंघाको फाड़ कर हस्तिनी को ओर दौड़ता है, उस प्रकार धर्मात्मा महा-रथी शाल्वराज स्त्रीकामी होकर युद्धके लिये भीष्मके पीछे दौड़े और वह महाभुज अमर्ष-युक्त होकर "तिष्ठ तिष्ठ" ऐसा कहने लगे। शत्रुबल मथनेवाले पुरुषव्याघ्र भीष्म उस वाक्यसे आकुलित होकर क्रोधसे जलते हुए अग्नि समान जल उठे, क्षत्रिय-धर्म्ममें सच्चे निष्ठावान उस महारथीने विकारको छोड़कर शर और शरासनको फैलाकर शाल्वराजके निमित्त निडर और स्थिर चित्तसे रथको रोक लिया। सम्पूर्ण राजालोग उनको निवृत्त होते देखकर भीष्म और शाल्व दोनोंका समागम देखनेके लिये खड़े होगये। ऋतुमती गौके लिये बल-वन्त दो बैल जिस प्रकार तर्ज्जन गर्ज्जन करते हैं, वैसेही महाबली पराक्रमी दो भूप आप-समें विक्रम प्रगट करनेलगे। नरोंमें श्रेष्ठ शाल्वराजने शतसहस्र शीघ्रगामी शरोंसे भीष्म-को ढांप लिया। राजालोग पहिलेही शाल्व-राजसे भीष्मको मथे जाते देखकर अचरज मानकर शाल्वको बार बार साधुवाद ... लगे और शाल्वराज की लघुहस्तता ... रणमें पण्डिताईको अङ्गीकार कर ... चित्तसे बड़ी प्रशंसा करने लगे। अ... शत्रुपुर-विजयी शान्तनुपुत्रने क्षत्रियोंकी प्रशंसा की वाणी सुन करके क्रोधयुक्त हो "तिष्ठ तिष्ठ" यह बात कही और क्रोधपूर्... सारथीको आज्ञा दी, कि जहां वह शाल्व... है, वहां रथको ले चलो; जिस प्रकार ग... सर्प नष्ट करता है, उस प्रकार से आज उ... वाण नष्ट करूंगा। उसके अनन्तर कुरु... भीष्मने वारुणास्त्र छोड़कर उससे शाल्व... घोड़े नष्ट किये और अस्त्रसे शाल... सम्पूर्ण अस्त्र दूरकर उनके सारथीको ... राजका पाहुना बनाया। हे नरश्रेष्ठ! ... नन्दन भीष्मने कन्याओंके लिये ऐन्द्र... यह उनके अच्छे घोड़ोंको मारा। इस प्रका... उस उन्होंने नृपश्रेष्ठ शाल्वराजको जीतकर ... शेष रहते हो छोड़ दिया। आगे राजा... निज नगर में जाकर धर्म्मानुसार अपना रा... पालनेमें प्रवृत्त हुए। शत्रुपुर विजयी जो भूप स्वयम्वर देखनेको आये थे, वेभी ... निज राज्यको पधारे। महायोद्धा कु... भीष्म इस प्रकार तीन कन्या जीतकर हस्ति... पुरमें उस स्थानकी ओर चले जिस स्था... कौरवराज विचित्रवीर्य्य विराज रहे थे। ... पिता कुरुवंशी नृपश्रेष्ठ शान्तनु जिस ... धरती शासते थे धर्म्मात्मा विचित्रवीर्य्यभी ... प्रकार शासन कर रहे थे। हे नराधि... भीष्म स्वल्पकालके बीचमेंही वन, जल... और भांति भांतिके वृक्षयुक्त उपवन आदि... और पी... करने लगे। अनन्तर शत्रुकुल नष्टकर ... अपना स्थलसे अक्षत शरीरमें काशीराजकी कन्या... को ले आये;

उन धर्म्मशील महाभुज भीष्मने भा... प्रियसाधनके लिये विक्रमसे लाभकी ... है। वह

वैगुणयुक्त कुमारियोंको पुत्रवधू, छोटी बहिन ार बेटीकी नाई लेकर कौरवोंके पास आकर निष्ठ भ्राता विचित्रवीर्य्यको देदिया। वह भीष्म उक्त प्रकार धर्म्मानुसार अलौकिक ार्य्य पूराकर भ्राता विचित्रवीर्य्यके विवाहके ाये प्रबन्ध करने लगे। जितेन्द्रिय भीष्म यवतीसे परामर्श कर काशीराजकी कन्या- से विचित्रवीर्य्यका विवाह कर देना निश्चय र चुके थे, कि ऐसे समय उन कन्याओंमेंसे ड़ी कन्या हंसकर उनसे बोली, कि मैं पहिले भराज्यके अधीश शाल्वको मनही मनमें ति बना चुकी थी, उन्होंनेभी मनहीमनमें मको भार्य्या बनाया था, इसमें मेरे पिताकी ामी थी, उस स्वयम्वर स्थलमें मैं शाल्व- ो वरमाल देती, आप धर्म्मशील हैं, ह विचारकर धर्म्मानुसार कार्य्य कीजिये। स कन्याके विप्रोंकी सभामें यहबात कहने ं धर्म्मज्ञ वीर भीष्म यह सोचने लगे, कि र्त्तमान विषयमें क्या कर्त्तव्य है। आगे उन्होंने ेदपारग ब्राह्मणोंसे युक्ति निश्चयकर काशी ेशकी अम्बा नाम्नी उस बड़ी कन्याको पनी अभीष्टपूर्ण करनेकी आज्ञा दी। अन- र यथाविधि कर्म्मानुसार अम्बिका और ालिका नाम्नी काशीराजकी दो छोटी न्याओंसे विचित्रवीर्य्यका विवाह कर दिया। प-यौवनयुक्त धर्म्मात्मा विचित्रवीर्य्य अम्बिका, ालिकाका पाणिग्रहण कर कामानुवर्त्ती र। घूघराले नीले केशवाली, लाल और नखयुक्त, कान्ती और सुलक्षणा कल्याणी म्बिका और अम्बालिका दोनों पीननितम्बिनी ार पीनपयोधरा थीं। वे विचित्रवीर्य्य को ापना मनमाना पति पाकर सन्तोष पूर्वक ासना करने लगी। अश्विनीकुमार-समान पवान और देववतविक्रमी विचित्रवीर्य्य सबके मन दोनों नारियोंहीके मनमें हन बने । वह उन नारियोंके साथ लगातार सात वर्ष विहार कर यौवन कालहीमें भयानक क्षय रोगसे जकड़ गये। अनन्तर विश्वासी चिकित्सकोंसे आरोग्यके लिये मित्रोंके यत्न करने पर भी कुरुकुल प्रदीप विचित्रवीर्य्य कालके वशमें होकर अस्ताचलको गये सूर्य्यके समान अदृश्य हुए। धर्म्मात्मा भीष्मने चिन्ता- युक्त और शोकवश होकर ऋत्विक और सम्पूर्ण कौरवोंके साथ सत्यवतीके मतानुसारी होके राजा विचित्रवीर्य्यके सब प्रेतकार्य्य भले प्रकार पूरे किये।

सम्भवपर्व्वमें एक सौ दूसरा अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भारत! अनन्तर महाभागा भामिनी सत्यवती पुत्र शोक- से विह्वल, दीन और कुण्ठचित्त होकर पत्र- वधुओंके साथ पुत्रकी और्द्धदेहिक क्रिया पूरी कर भीष्मको और दोनों पुत्रवधुओंको समझा बुझा कर शास्त्रवश और पितृवंशकी दशा सोच- के धर्म पर दृष्टि रखकरके भीष्मसे बोली, कि धर्म्मशील यशस्वी कुरुवंशी नरेश शान्तनुका वंश, कीर्त्ति और पिण्ड एक तुम्हीं पर निर्भर है; और जिस प्रकार शुभ कर्म्मसे निश्चयही स्वर्ग होता है, और सत्यशीलता से निश्चयही आयु की वृद्धि होती है, उस प्रकार तुममें निश्चयही धर्म्म प्रतिष्ठित है। हे धर्म्मज्ञ! तुम धर्म और नानाप्रकारकी श्रुति और सम्पूर्ण वेदाङ्गोंमें संक्षेपमें और बिस्तृत रूपसे ज्ञात हो। शुक्र और अङ्गिरा की नाईं तुम्हें धर्म्मशीलता और कुलाचार तथा विपत्कालमें विचार करने की सामर्थ भी है, यह सब मैं जानतीहूं, इसलिये मैं तुमसे बड़ा भरोसा पाकर तुमको किसी कार्य्यमें नियुक्त करूंगी। हे धार्मिकवर! यह सुनकर तुमको उसे पूरा करना चाहिये। हे पुरुषश्रेष्ठ! तुम्हारा प्रिय भ्राता मेरा पुत्र वीर्य्यवान विचित्रवीर्य्य पुत्र न होतेही बालपनमें स्वर्गको सिधारा है।

हे भारत। तुम्हारे भ्राताकी रानी रूपयौवन-युक्ता, शुभलक्षणा यह काशीराजकी कन्यायें पुत्रकामा हुई हैं। हे महाभुज। हमारे वंश परम्परा की रक्षाके लिये मेरे नियोगसे इन दो पुत्रवधुओंमें पुत्रोत्पादन कर धर्मरक्षा करो। तुम राज्यमें अभिषिक्त होकर भारत राज्यका शासन करो और धर्मानुसार विवाह करलो। पितरोंको मत डुबाओ।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि माता और मित्रोंके ऐसा कहनेपर धर्मात्मा परन्तप भीष्मने धर्मसंयुक्त यह उत्तर दिया, कि हे माता। इसमें सन्देह नहीं है, कि आपने जो कहा, वह धर्मयुक्त है, पर सन्तानके लिये जो सत्य प्रण हुआ था उससेभी आप ज्ञात हैं, सो उस सत्यकी रक्षा के लिये फिर अभी प्रतिज्ञा करता हूं, कि देवलोकका राज्य त्याग दे सकता हूं, अथवा इससेभी अधिक जो कुछ हो, उसकोभी छोड़ सकता हूं, तथापि सत्यको किसी प्रकार छोड़ नहीं सकूंगा। यद्यपि पृथ्वी गन्धको छोड़ सके, जल निज रसको छोड़सके, ज्योतिरूपको छोड़ सके, पवन अनुभवगुणको छोड़ सके, सूर्य्य निज प्रकाशको छोड़ सके, पुच्छलतारा गर्म्मी छोड़सके, आकाश शब्द को छोड़सके, चन्द्रमा ठण्ढी किरणको छोड़ सके, इन्द्र विक्रमको त्याग सकें और धर्म्मराज धर्म्मको त्याग सकें तथापि मैं सत्यको किसीप्रकार त्यागने को प्रवृत्त नहीं हूंगा। वल्कलधारी भीष्मके उत्साहसे ऐसा कहनेपर माता सत्यवतीने उनसे कहा, कि हे सत्यपराक्रमी। सत्यमें जो तुम्हारी परमनिष्ठा है, वह मैं जानती हूं। तुम इच्छा करनेसे निज तेजसे अन्य त्रिलोक रच सकते हो, औरभी तुमने मेरे निमित्त जो सत्य किया था, उससेभी मैं ज्ञात हूं, पर हे नृप! तुम इस विपदकी दशापर ध्यान देकर पैतृक वंशका भार लो। ऐसा करो, कि जिससे कुलकाक्रम नमिट कर धर्मरक्षा होवे और मित्रवर्ग आनन्दित होवें। यह सुनकर, [illegible] सन्तान चाहने वाली सत्यवती कातर हो, [illegible] ऐसी धर्म्मविरुद्ध बात बार बार कह रही [illegible] भीष्मने फिर कहा, कि हे रानी। आप धर्म्मपर दृष्टि कीजिये, हम सबोंको मत नष्ट करना[illegible] यका असत्याचरण धर्म्मशास्त्रमें प्रशंसित [illegible] होता। हे रानी! आपसे ऐसा सनातन क्ष[illegible] यधर्म्म कहता हूं, कि जिससे भूमण्डलमें श[illegible] तनुका वंश अक्षय बना रहे, आप उसे सुन[illegible] लोकयात्रा पर दृष्टि रख करके पुरोहित [illegible] उनके साथ, कि जो सब प्राज्ञ धर्म्मार्थ विच[illegible] पण्डित हैं विचारिये।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ तीसरा अध्याय समाप्त।

भीष्मजी बोले, कि पूर्व्वकालमें जमद[illegible] कुमार रामने पिताके वधसे दुःखी हो[illegible] परशुसे हैहय देशके अधीश कार्त्तवीर्य्यार्जु[illegible] नष्ट किया था। जिस हैहयपतिने प्रजा[illegible] अति कठोर धर्म्मका अनुष्ठान कराया था [illegible] शुरामने उनके सहस्र भुजको काटकर, उ[illegible] न शान्त होकर फिर रथपर चढ़[illegible] जीतनेके चाप लेकर महास्त्रोंके प्रयोगसे [illegible] म्वार क्षत्रियकुलको नष्ट किया। उन [illegible] त्माने नाना अस्त्रोंसे इक्कीस बार [illegible] क्षत्रियोंसे खाली किया। उन महर्षि[illegible] प्रकार भूमण्डलके क्षत्रियोंसे वर्जित हो[illegible] सब स्थानों की सम्पूर्ण क्षत्रियोंकी स्त्रि[illegible] वेदपारग ब्राह्मणोंसे सन्तान उत्पन्न क[illegible] वेदमें यह निश्चित है, कि जो जन विवाह क[illegible] है, उसके क्षेत्रमें सन्तान होनेसे उसकीही [illegible] है, अतएव धर्म्म जानकरकेही क्षत्रिय पत्नि[illegible] ब्राह्मणोंसे संसर्ग किया था, इससेही क्षत्रि[illegible] फिर उत्पत्ति हुई है। इस विषयमें और [illegible] प्राचीन इतिहास कहता हूं, सुनिये, पूर्व्वका[illegible] उतथ्य नामक धीशील एक ऋषि थे, उन[illegible] परम प्यारी ममता नाम्नी एक भार्य्या थी।

मय उतथ्यके कनिष्ठ भ्राता देवोंके पुरोहित और म तेजस्वी वृहस्पति उस ममताके पास उपगत ए. इससे ममता उन वाचस्पति देवरसे बोली, तुम्हारे बड़े भाईसे मैं गर्भवती हुई हूं; तुम लौट जाओ हे महाभाग बृहस्पते। र गर्भमें स्थित इस उतथ्य मुनिने कोखमें प्रत होकरके ही षडङ्ग वेदको पाठ या है. तुमभी अमोघ वीर्य्यवान् हो, सो स कोखमें' दो सन्तानोंका स्थान क्योंकर भव हो सकताहै? इसलिये आज तुम लौट ओ। ममताके ऐसा कहनेपर बृहस्पति अति-दीप्त तेजस्वी होनेपरभी तब कामकेवशमें अपने इनको रोक नहीं सके. अकामा कामिनी भी अनुरागी हुए। अनन्तर वीर्य्यगिरानेमें यत बृहस्पतिसे गर्भमें स्थित बालकने कहा, हे तात। आप शान्त होवे, इस गर्भमें की स्थिति सम्भव नहीं हो सकती। हे गवान्! यह स्थान स्वल्प है, मैं पहिले हां आया हूं, आप अमोघ वीर्य्यवान् हैं, सो मको पीड़ा न पहुचावें। बृहस्पति उस र्भमें स्थित मुनिकी बातको न मान कर थुनके लिये मनोहर नेत्रवती ममताकी ओर ये। अनन्तर गर्भमें स्थित उस मुनिने बृह-पतिके वीर्य्य गिरनेके समयको समझकर र्य्यघुसनेके पथको दोनों पावोंसे रोक रखा, म वही वीर्य्य रोके जाकर स्थान न पानेसे सी क्षण भूमिपर गिर गया। यह देखकर गवान् ऋषि बृहस्पतिने क्रोधित होकर गर्भमें स्थित उतथ्य-पुत्रको लाञ्छन कर शाप दिया, क जोकि ऐसे मनोहर कालमें तुमने मुझको सी बात कही सो तुम दीर्घ अंधेरी में प्रविष्ट होगे अर्थात् अन्धे होगे। बृहत कीर्त्तियुक्त हस्पतिके इस शापके हेतु बृहस्पति-सदृश जस्वी वह ऋषि जन्म लेकर दीर्घतमा नामसे सिद्ध हुए। वेदज्ञ, प्राज्ञ, जन्मान्ध दीर्घतमाने विद्यावलसे प्रद्वेषी नाम्नी एक तरुणी और रूपवती ब्राह्मणीको पत्नी प्राप्त किया। इस महायशने कुलको बढ़ानेके लिये गौतमादि पुत्रोत्पादन किये। वे गौतमादि सब पु लोभ और मोहसे अभिभूत थे। धर्मात्मा वेदवेदाङ्गपारग महात्मा वह दीर्घतमा सुर भीकी सन्तान कामधेनुसे सम्पूर्ण गोधर्म्म शिक्षा करके उससे श्रद्धायुक्त होकर निःशङ्क चित्तसे खुलाखुली मैथुनादि करनेको प्रवृत्त हुए। आश्रमनिवासी मुनिगण दीर्घतमा की मर्य्यादा छोड़ते देखकर मोहयुक्त और क्रोधित हुए और आपसमें कहने लगे कि क्या आश्चर्य है। इसने मर्य्यादा और लज्जा त्याग दी है, सो वह पापात्मा आश्रममें रहनेके योग्य नहीं है, हम इसको आश्रमसे निकाल बाहर करें, और दीर्घतमाकी पत्नीभी पुत्र लाभके हेतु उस अन्धेपति पर सन्तुष्ट नहीं थी, एक समय दीर्घ-तमाने भार्य्याको असन्तुष्ट देखकर कहा, कि तुम क्यों मुझ पर विद्वेषका व्यवहार करती हो? प्रद्वेषी बोली, कि पति स्त्रीको भरते पोषते हैं, इस हेतु वह भर्त्ता कहे जाते हैं और पालते हैं, इससे पति कहे जाते हैं। हे महातपस्वि! मैं सदासे तुम्हारी जन्मान्धताके हेतु तुम्हारा और तुम्हारे पुत्रोंका भरण पोषण कर कर थक गयी हूं, अब और भरण कर नहीं सकूगी।

भीष्म बोले, कि ऋषिने पत्नीकी बात सुन करके क्रोधयुक्त होकर पुत्रवती पत्नी प्रद्वेषीसे कहा कि मुझ को क्षत्रियोंके कुलमें ले जाओ,तो तुम धनवती बन सकोगी। प्रद्वेषी बोली, कि हे विप्रेन्द्र! तुम्हारे दिये हुए दुःखदायी धनकी मुझे इच्छा नहीं है, तुम जो चाहो करो, मै पहिले की नाईं फिर भरण पोषण नहीं कर सकूगी। दीर्घतमा बोले, कि मैं आजसे ऐसी लोक मर्य्यादा स्थापन करता हूं, कि नारी एक पतिपर जीवनभर निर्भर करेगी। एक पति जीवित रहे, वा मर जावे कोई स्त्री

पतिको शरणमें नहीं सकेगी ; यदि कोई नारी दूसरा पति कर ले, तो वह पतित होगी, इसमें सन्देह नहीं। जिनके पति नहीं है, बात बातमें उनका पाप होगा और उनका प्रचुर धनभी रहे, तो उसका भोग व्यर्थ होगा। वे नित्य अकीर्त्ति तथा निन्दाकी पात्र होंगी ; ब्राह्मणी उनकी यह बात सुनकर अतिक्रोधयुक्त होकर बोली, कि हे पुत्रो! इसको गङ्गामें डाल आओ। आगे लोभ और मोह से अभिभूत गौतमादि पुत्रोंने अन्धे बापको दाम्रकर बेड़े पर रख करके गङ्गामें बहा दिया। अनन्तर वे कुटिल पुत्र यह सोचते हुए घरको लौटे, कि इस अन्धे और बूढ़ेको हम क्यों भरने पोषने चले। आगे अन्धेविप्र बेड़े पर गङ्गाके सोतेमें बहते हुए, मनमाने अनेक देशोंसे हो चले। धार्म्मिकवर बलि नाम एक राजाने गङ्गास्नानको जाकर सोतेसे निकट आये हुए, उन अन्धे ऋषिको देखा। बलि उनको सत्यपराक्रमी धर्म्मशील जानकर अपने घरमें लाये और अपने पुत्रके लिये उनसे प्रार्थना कर बोले, कि हे मानद, महाभाग! मेरे वंश की रक्षाके लिये मेरी स्त्रीसे सन्तान उत्पन्न कीजिये, कि धर्म्म और अर्थमें कुशल होवे। तेजस्वी ऋषिके राजाकी उस बात पर सम्मत होने पर राजाने उनके पास अपनी सुदेष्णा नाम्नी स्त्रीको भेज दिया, पर राजरानी सुदेष्णाने उनको अन्धा और बूढ़ा देखकर स्वयं उनके पास न जाकर अपनी दासीको भेजा। धर्म्मात्मा ऋषिने उस शूद्रयोनिमें काक्षीवदादि ग्यारह पुत्र उत्पन्न किये। अनन्तर राजाने काक्षीवदादि पुत्रों को पठनशील देखकर यह उस अन्धे ऋषिसे कहा, कि "यह मेरे पुत्र है।" परन्तु महर्षिने कहा, कि यह तुम्हारे पुत्र नहीं है, यह मेरे है, इन्होंने मुझसे शूद्रयोनिमें जन्म लिया है। सुदेष्णा नामी तुम्हारी रानीने मूर्खता हेतु मुझको अन्धा और बूढ़ा देखकर, अनादर करके शूद्रा दासियोंको भेज दिया था। अनन्तर बलिने फिर उन ऋषिको प्रसन्न करके, स्त्री सुदेष्णाको उनके पास भेजा। तब दीर्घतमा देवी सुदेष्णाके अङ्गोंको स्पर्श कर बोले, कि तुम्हारे आदित्य समान तेजस्वी पुत्र उत्पन्न होंगे। उन पुत्रोंके नाम अङ्ग, वङ्ग, कलिङ्ग, पुण्ड्र और सुह्म होंगे, इस पृथ्वीमें उनके निज निज नामसे एक एक देश प्रख्यात होगा। अङ्गके नामसे अङ्गदेश, वङ्गके नामसे वङ्गदेश, कलिङ्गके नामसे कलिङ्गदेश, पुण्ड्रके नामसे पुण्ड्रदेश और सुह्मके नामसे सुह्मदेश होगा। पूर्वकालमें इस प्रकार ऋषिसे जन्म लिया हुआ राजा बलिका वंश हुआ था। इनके अतिरिक्त महाबल पराक्रमी परम धर्म्मज्ञ बड़े बड़े चापधारी क्षत्रियोंने ब्राह्मणोंके वीर्य्यसे जन्म लिया है मा। आप यह सुनकर जो मन करें।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ चौथा अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, कि हे माता! भरतवंशकी सन्तान बढ़ानेके लिये योग्य उपाय कहता हूं सुनिये ; किसी गुणवन्त ब्राह्मणको धन देकर नेवता दीजिये ; वह विचित्रवीर्य्यके खेतोंमें सन्तान उत्पादन करेंगे। श्रीवैशम्पायनजी बोले, अनन्तर सत्यवती मुह नीचे कर लज्जाके मारे टूटी फूटी बातोंमें भीष्मसे बोली, कि हे महाभुज, भारत! तुम जो कहते हो, सब सत्य है। परन्तु तुम पर विश्वास रहनेके कारण अपने वंश की वृद्धिके लिये, जैसा कहूंगी, उस आपद्धर्म्मको तुम पलट नहीं सकोगे। इस वंशमें तुम्ही धर्म्म, तुम्ही सत्य और तुम्ही परम गति भये हो, सो मेरी सत्य बातको सुनकर आगे जैसा कर्त्तव्य होवे, वही करो।

मेरे पिता धार्म्मिक थे ; उनकी धर्म्म अर्थ के लिये एक नाव थी, एक समय मैं नवं

यौवनके दिनोंमें उस नावको चलाती थी, उस समय धीमान् धार्म्मिक श्रेष्ठ परमर्षि पराशर यमुना नदीके पार उतरनेके लिये आकर मेरी नावपर चढ़ बैठे। मैं उन मुनिश्रेष्ठको यमुना पार कर रही थी, कि ऐसे समयमें वह कामवश होकर मीठी बातोंमें मुझको लुभाने लगे। हे भारत। मैं पिताके भय और ऋषिके शापका भय खाकर सुल्लभ वर पाकर उनकी बात पलट नहीं सकी; हे भारत। उन ऋषिने मुझको नावपर पुत्र और बालिका पाकर तेजसे विवश कर कुहरेसे भूमण्डलको छायकर अपने वशमें कर लिया। पहिले मेरे शरीरमें मछली की बड़ी बुरी गन्ध थी, उन्होंने उसको मिटाकर यह सुन्दर गन्ध कर दी। अनन्तर बोले; कि तुम इस यमुना द्वीपही पर मेरे वीर्य्यसे पैदा हुए इस गर्भको छोड़कर फिर कन्यावस्थाहीमें रहोगी। उससे यमुनाके द्वीप पर मेरी कन्यावस्थाके उस गर्भसे पराशर-पुत्र महर्षि महायोगी जन्म लेकर द्वैपायन नामसे प्रसिद्ध हुए। वह भगवान् ऋषि तपके प्रभावसे चारोवेदोंके व्यास अर्थात् विभाग कर व्यास नामसे प्रख्यात हुए हैं और कृष्णवर्ण होनेसे उनका नाम कृष्ण हुआ है। सत्यवादी शान्तिशील और पापरहित वह महात्मा जन्म लेकरकेही उसीक्षण पिताके साथ चले गये, उन अप्रतिम द्युतिमान व्यासको मेरे नियुक्त करनेसे वह तुम्हारे भ्राताके क्षेत्रमें उत्तम पुत्र उत्पन्न कर सकते हैं। हे महाभुज। उन्होंने पहिले मुझसे कहा था, कि प्रयोजन होवे, तो मेरा स्मरण करना। हे भीष्म! यदि तुम कहो, तो अब उनको स्मरण करूं, तुम्हारी सम्मति होनेसे वह महातपा द्वैपायन अवश्य ही विचित्रवीर्य्यके क्षेत्रमें सन्तान उत्पादन करेंगे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि उन महर्षि कृष्णद्वैपायनका नाम कहतेही भीष्मने दोनों हाथ जोड़कर कहा, कि जो धर्म्म, अर्थ और काम इन विषयोंको भली प्रकार आलोचना करते हैं और इस प्रकार उन सबोंका अनुष्ठान करते हैं, कि धर्म्मके साथ भावी धर्म्मका, अर्थके साथ भावी अर्थका और कामके साथ भावी कामका, सम्बन्ध रहे अर्थात् धर्म्मसे धर्म्मकी अर्थसे अर्थ की और कामसे कामकी फिर सम्भावना बनी रहे और एक विषयसे अन्य विषयका जोड़ न रहे; वही बुद्धिमान कहे जाते हैं। आपने मेरे कुलका हितजनक धर्म्मयुक्त और मङ्गलकारी जो वचन मुझसे कहा, उससे मैं पूर्ण रूपसे सम्मत हूं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे कुरुनन्दन! अनन्तर भीष्मके उस विषयमें सम्मत होने पर कालीने मुनि कृष्णद्वैपायनका स्मरण किया। धीमान वेदव्यास वेदकी व्याख्या कर रहे थे, कि ऐसे समयमें माताकी चिन्ता जानकर क्षण कालमें माताके सम्मुख प्रगट हुए, दूसरा कोई कुछ जान नहीं सका। आगे धीवर की बेटीने पुत्रका विधिपूर्व्वक समादर कर हाथोंसे गले लगाकर स्तन दुग्धसे नहाया और बहुकालके पीछे पुत्रको देखकर अश्रुजलसे आपभी नहा गयी। पूर्व्व पैदा भये पुत्र व्यास दुःखिता माता पर जल छोड़ ठण्ढाकर प्रणामपूर्व्वक बोले, कि हे धर्म्मतत्व जाननेवाली। आपकी जैसी इच्छा है, उसको पूरी करनेके लिये मैं आया हूं, हाप आज्ञा कीजिये, अपका मनमाना अनुष्ठान करूंगा। अनन्तर पुरोहितने आकर उन परमर्षिको यथाविधि पूजा की; उन्होंने भी सन्तुष्ट वह पूजा ली और मन्त्रसे उपासना किये जाकर प्रसन्न हुए। आगे माता सत्यवतीने उनको आसन पर बैठे हुए देखकर कुशल पूछ करके कहा, कि हे कवि। पितासे जो पुत्र उत्पन्न होते हैं, वे पिता माता दोनोंसे साधारण होते हैं। पुत्र पर पिताका जैसा अधि-

कार है, इसमें सन्देह नहीं है, माताका भी वैसाही अधिकार रहता है। हे धर्म्मज्ञ! दैवविधानसे पैदा भये तुम मेरे जिस प्रकार प्रथम पुत्र हो, विचित्रवीर्य्यभी उस प्रकार मेरा कनिष्ठ पुत्र था और विचित्रवीर्य्य तथा भीष्म एक पिताके पुत्र होनेसे भीष्म जिस प्रकार विचित्रवीर्य्यके भ्राता भये हैं, उस प्रकार तुम और विचित्रवीर्य्य एक माताके गर्भसे पैदा-नेके कारण यह मुझको समझ पड़ता है, कि तुमभी विचित्रवीर्य्यके भ्राता भये हो, आगे तुमको जैसी समझ हो। यह शान्तनुपुत्र सत्यविक्रमी भीष्म सत्य पालनेके लिये राज्य शासन, पुत्रोत्पादन करनेको सम्मत नहीं होते, अतएव हे अनघ। मैं जो कहती हूं, सुनकर अपने भाई विचित्रवीर्य्य पर स्नेहवश होके कुरु-वंशकी रक्षा, प्रजाका पालन भीष्मकी बात, मेरा नियोग सर्व्वजीवों पर कृपा और अनिर्द्दे-यिताके लिये वह तुमको पूरा करना चाहिये। तुम्हारे कनिष्ठ भ्राताकी देवकन्या समान रूप यौवनवती दो भार्य्या हैं,वे धर्म्मानुसार पुत्रकामा हुई हैं। ऐ बेटा। तुम मनमाने पात्र हो, सो उन दो रानियोंसे इस कुलकी परम्पराको बनाये रखनेके योग्य पुत्रोत्पादन करो।

व्यासजी बोले, कि हे अतिबुद्धिमती सत्य-वती। आप इसलोक और परलोक दोनों प्रकारके धर्म्मसे जिस प्रकार ज्ञात हैं; उस विषयमें आपका चित्तभी उसी प्रकार प्राणि-योंके हितमें है; अतएव मैं आपके नियोगके अनुसार धर्म्मको स्मरणकर आपकी इच्छा पूरी करूंगा, क्योंकि [illegible]तनधर्म्म मेरा ज्ञात है मैं भ्राताको [illegible] देखकर [illegible] दान करूंगा; पर अब यह [illegible] मेरे पुत्र [illegible] परेता हूं, कि वधूगण न्यायानुसार [illegible] पुत्र [illegible]व्रत [illegible]ये रहें; [illegible] होंगी, व्रत [illegible] कोई नारी मेरे पास नहीं आसकेगी। सत्यवती बोली, कि ऐसा करो, कि जिससे देवी राजरानियां आजही गर्भवती होवें। राज्य राजाहीन रहनेपर प्रजा अनाथ होकर नष्ट होगी, [illegible] लोप हो जायंगी वृष्टि नहीं होगी और [illegible] चले जायंगे, सो बिना राजाके राज्य [illegible] कार रक्षा हो सकती है; अतएव तुम [illegible] गर्भाधान करो, भीष्म उस गर्भजात [illegible] बढ़ावेंगे। व्यासजी बोले, कि यदि [illegible] कर अकालहीमें पुत्र देना पड़े, तो [illegible] मेरे कुरूपको सहें, यही उनका परम [illegible] होगा। यदि कौशल्या मेरी गन्ध, रूप, वेश [illegible] शरीरको सहसके, तो वह आजही [illegible] गर्भ ले।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि [illegible] व्यासजी सत्यवतीसे यह बात कहकर फिर [illegible] कि राजमहिषी कौशल्या अच्छा [illegible] पहिन करके अच्छे आभूषणोंसे सजकर [illegible] मिलन की कामना करे; सत्यवती पुत्र[illegible] पास जाकर निरालेमें भेंटकर धर्म्म और [illegible] युक्त और हितजनक यह बात बोली, कि कौशल्ये। तुमसे धर्म्म-सम्मत जो बात कह[illegible] हूं, सुनो। मेरे दुर्भाग्यसे भरतवंश उखड़ है, उससे भीष्मने मुझको पीड़ित देखकर पिताके वंशको उखड़नेपर विचारकरके [illegible] बढ़ानेके लिये मुझको युक्ति दी है, ऐ [illegible] वह युक्ति तुम्हारे अधीन है, अतएव तुम अभीष्ट सिद्धकर उस युक्तिको सफल [illegible] विनष्ट भरतवंशका फिर उद्धार करो। सुन्दरी। देवराज समान कुमार [illegible] करो; वह कुमार हमारे इस भारी रा[illegible] भारको सम्भाल लेगा। सत्यवतीने उस [illegible] चारिणीको धर्म्मानुसार विनय करके [illegible] प्रकार सम्मत कराके देव, ऋषि, ब्राह्मण [illegible] अतिथियोंको भोजन कराया।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ पांच अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर वधू [illegible]ल्याके योग्य समय में ऋतु-स्नान करने पर [illegible]वती उसे भले प्रकार सजे हुए विस्तर पर [illegible]कर धीमे स्वरसे बोली, कि हे कौशल्ये। [illegible]रे एक देवर हैं; वह आज रात्रिको [illegible]रे पास आवेंगे, तुम एकामन होकर उनकी [illegible] ताकती रहो। अम्बिका सासकी वह बात [illegible]कर शुभ शयनमें सोकर भीष्म और दूसर [illegible]ज्येष्ठोंकी चिन्ता करने लगी। अनन्तर [illegible]वतीके सुत सत्यव्रत बोलनेवाले ऋषिने [illegible]हले अम्बिकाके लिये नियुक्त होकर दीप [illegible]ते रहते ही घरमें प्रवेश किया। अम्बि- [illegible]ने उन कृष्णवर्ण पुरुषकी पिङ्गल जटा, बड़ी [illegible]ी दाढ़ी और जलते हुए नेत्रोंको देखकर [illegible]खें मूद लीं। द्वैपायनने माताका प्रिय साध- [illegible]लिये उसके साथ सङ्गम किया; पर काशी [illegible]की कन्या भयसे उनको देख नहीं सकी। [illegible]न्तर व्यासजीके घरसे निकलने पर उनकी [illegible]ाने उनने पूछा, कि क्या बेटा। इस वधूसे [illegible]वान पुत्र जन्म लेगा? इन्द्रियोंसे अतीत [illegible]ा रखनेवाले सत्यवतीनन्दन व्यासजी माताकी [illegible]बात सुनकर बोले, कि विधिपूर्व्वक जन्म [illegible]ा हुआ यह गर्भमें स्थित बालक दश [illegible]स्र हस्ती के समान बलवान; विद्वान [illegible]षियोंमें श्रेष्ठ, महाभाग, महा वीर्य्यवन्त [illegible] अति बुद्धिमान होगा और उस [illegible]त्माके सौ सन्तान उत्पन्न होंगी; पर वह [illegible]ाके दोषसे अन्धा होगा। पुत्र की [illegible] सुनकर माता बोली, कि हे तपोधन! [illegible]ा पुरुष कुरुवंशके योग्य भूप नहीं हो [illegible]ता, अतएव जाति कुलके रक्षक पितरोंके [illegible]वर और कुरुवंशका राजा होसके, ऐसा एक [illegible] उत्पन्न करना होगा। महायशा व्यास [illegible] पर स्वीकृत होकर चले गये। आगे समय [illegible] पर कौशल्याने ऋषिकथित एक अन्धपुत्र [illegible] किया। हे अरिन्दम! देवी सत्यवतीने पूर्व्ववत पुत्रवधूको आज्ञा देकर फिर उन ऋषि- को बुलाया। महर्षि पूर्व्ववत विधिके अनुसार अम्बालिकाके पास आकर उपगत हुए। हे भारत! अम्बालिका उन ऋषिको देखकर पीली हो गयी। सत्यवतीके सुत व्यासजी उसको भीत, दुःखित और पीली देखकर बोले, कि इस कारण, कि तुम मुझको विरूप देख- कर पीली हुई हो, तुम्हारा पुत्रभी पीला होगा। हे शुभानने! वह पुत्र पीला अर्थात् पाण्डु नामहीसे प्रख्यात होगा। हे भगवान् ऋषिश्रेष्ठकी यह बात कहकर घरसे निकलने पर सत्यवतीने उनसे सन्तानकी बात पूछी। व्यासने माताको फिर पुत्रके पीला होनेका विषय कह सुनाया। सत्यवतीने वह सुनकर फिर उनसे और एक पुत्रकी प्रार्थना की; महर्षिने वहभी स्वीकार किया। अनन्तर समय आनेपर देवी अम्बालिकाने सुन्दर श्रीयुक्त पाण्डुवर्ण एक कुमार प्रसव किया, जिनके पुत्र पांच पाण्डव बड़े चापधारी भये थे। अनन्तर बड़ी वधूका ऋतु काल आनेपर सत्यवतीने उसको उन ऋषिके निकट नियुक्त किया; पर उसने ऋषिके शरीरकी वैसी गन्ध स्मरणकर देवीके वाक्यानुरूप कर्म नहीं किया। अनन्तर देवकन्या सदृशी उस काशीराज पुत्रीने अप्सरा समान एक दासीको अपने आभूषणों से अल- ङ्कृता कर कृष्णद्वैपायनजीके निकट नियोग किया। आगे ऋषिके आनेपर दासी उठकर नमस्कार पूर्व्वक ऋषिकी आज्ञानुसार उनको उपचरित और सत्कृत कर विस्तर पर जा बैठी। हे राजन्! व्रतशील महर्षि निर्ज्जनमें उससे सहवासमें कामको भोगकर उस पर अति प्रसन्न हुए और उठकर जानेके काल उससे बोले, तुम्हारा दासीपन मुक्त होगा। हे शुभे! तुम्हारे गर्भमें स्थित सन्तान धर्म्मात्मा मङ्गल- भाजन और बुद्धिमान जनोंमें सबसे श्रेष्ठ होगी। महाराज! श्रीकृष्णद्वैपायनजी के वीर्य्य अ

उसके गर्भसे धृतराष्ट्र और महात्मा पाण्डुके भाई विदुरने जन्म लिया। अर्थ तत्त्व जाननेवाले और जितेन्द्रिय श्रीकृष्णद्वैपायनजीने माताके निकट आकर महात्मा माण्डव्यके शापसे धर्मका विदुरके स्वरूपमें जन्म और अपने सामने दासीका नियोग, और उससे पुत्रके स्वरूपमें धर्मका जन्म यह सब बात सुनाये। अनन्तर वह उस गर्भकी कथा माताके निकट कहकर धर्मानुसार ऋणसे छुटकारा कुपाकर उस स्थानही में अन्तर्हित हुए। हे भूप। श्रीद्वैपायनजी के वीर्य और विचित्रवीर्य्यके क्षेत्रमे कुरुकुलके बढ़ानेवाले देवकुमार समान कुमारों ने इस प्रकार जन्म लिया था।

सम्भवपर्व्वमें एक सौ छः अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, कि धर्म्मने कौनसा कर्म्म किया था, कि उस कारण शापसे ग्रसित हुए और किन ब्रह्मर्षिके शापसे शूद्र योनिमें जन्म लिया?

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि माण्डव्य नामसे प्रसिद्ध सर्व्व धर्म्मज्ञ धृतिमान् सत्यनिष्ठ और तपमें नियुक्त एक महातपा महायोगी ब्राह्मण एक समय आश्रमके द्वारपर स्थित वृक्षकी जड़में ऊर्द्ध्वबाहु और मौनी होकर बहुत दिनोंसे तप कर रहे थे, कि ऐसे समयमें एकदिन लुटेरे लूटी हुई वस्तुओंको लेकर उनके उस आश्रममें आये। हे भरतवंशश्रेष्ठ। उनके पीछे रखवारे आरहे थे; सो वे भय खाकर रखवारोंके आते न आते उस आश्रममें लूटे हुए धनको छिपाकर आपभी वहीं रहे। अनन्तर चोरोंको पछियाते हुए पैदल रखवारे उसीक्षण उस स्थानमें आपहुंचे। हे राजन्। उन्होंने उस दशामें तपस्वी उस ऋषिको देखकर पूछा, कि हे द्विजवर! लुटेरे किस पथसे गये? हे ब्राह्मण! कह दीजिये, हम शीघ्र उस पथमें जायेंगे। हे राजन्! रखवारोंके उस प्रकार पूछनेपर तपोधन माण्डव्यने भली बुरी नहीं कही। अनन्तर राजपुरुषोंने उस [आश्र]ममें ढूंढते हुए चुराये हुए पदार्थोंके [साथ] चोरोंको पाया। आगे उन मुनिपर [चो]रोंका सन्देह होनेपर उन्होंने लुटेरोंके [साथ] मुनिको बांधकर राजाके पास दे दिया। रा[जा]ने लुटेरोंके साथ मुनिकोभी मारनेकी आ[ज्ञा] दी। रखवारोंने महातपा माण्डव्यको [न] जानकर शूलीपर चढ़ा दिया; अनन्तर दु[खित] हुई, वस्तुओंको लेकर राजाके यहां [गये]। धर्म्मात्मा विप्रर्षि बहुकाल शूलीपर चढ़े [रहे] और विना भोजन रहनेपरभी मृत्युके [मुखमें] न गिरे। वह तपके बलसे जीवित रहे, [और] ऋषियोंको अपने पास बुलवाया। हे भा[रत!] तपोबलयुक्त मुनिलोग रात्रिको पक्षियोंका [रूप] लेकर उनके पास आकरके उन म[हर्षिको] शूलीके ऊपर तपमें मग्न देखकर, अति दुःखी [हुए], और उन्होने निज निज रूप लेकर द्विजो[त्तमसे] पूछा, कि हे ब्रह्मन्! हम सुना चाहते [हैं] कि तुमने कौन सा पाप किया है, कि [जिससे] शूलीका भारी दुःख और भय [भोगना] पड़ता है।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ सात अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर [मुनि]शार्द्दूल माण्डव्यने उन तपोधनोंसे कहा, मैं किसको दोष लगाऊं, कोई और मनुष्य [इस] विषयमें दोषी नहीं है। हे नराधिप! [बहुत] दिनोंके पीछे रखवारोंने उनको उस [दशामें] देखकर राजासे सब हाल कह सुनाया। [यह] सुनकर भूपाल तब मन्त्रियोंसे युक्ति कर उस शूलीपर स्थित ऋषिको प्रसन्न करनेके लिये विनयके साथ कहने लगे, कि [मैंने] मोहवश अज्ञानतासे आपकी हानि [की] है, अब आपकी प्रसन्नताके लिये प्रार्थना [करता] हूं, आप मुझपर क्रोधित न होवें। राज[ा]

हो बात सुनकर मुनि प्रसन्न हुए। भूपाल को प्रसन्न देखकर शूलीके खम्भे से उतार-कर उसे निकालने लगे, पर उससे मनोरथ फल नहीं हो सका, आगे देहके भीतर घुसी शूलीको जड़ काट डाली। तब मुनि भीतर घुसीहुई शूलीको ले वारकेही कठोर तपस्या करने लगे; उससे औरोंके लिये दुर्लभ लोकको जीत लिया। वह अणी अर्थात् शूलीके अगले भागको लिये रहनेके कारण तब ब्राह्मण अणि माण्डव्य एक समय धर्मके पास गये। धर्मको वहां बैठे देखकर अणि-माण्डव्य उनको लाञ्छन कर बोले, मैंने अज्ञानतासे कौनसा कुकर्म्म किया कि जिससे ऐसा फल पाया? इसका गूढ़ तत्व मुझसे शीघ्र कहो और मेरी तपस्याका प्रभाव देखो। धर्म बोले, कि तुमने एक दिन पतिंगेकी पूछमें इपीका अर्थात तिनका घुसाया है, हे तपोधन! तुमने उस कर्म्मका यह फल प्राप्त किया है। अणि-माण्डव्य बोले, हे धर्म! मेरी बाल्यावस्थामें किये हुए ऐसे दोषका तुमने ऐसा कठोर दण्ड दिया इस हेतु तुम मनुष्य होकर शूद्र योनिमें जन्म लोगे। आजसे मैं कर्म्मके फल भोगनेके विषयमें लोकोंमें यह नियम स्थापन करता हूं, कि जब तक चौदह वर्षकी आयु पूरी न होवे तबतक पाप करनेसेभी पाप नहीं होगा। चौदह वर्षके पीछे पापकर्म्म करनेसे उसके फल की प्राप्ति होगी।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि इस दोषके हेतु महात्मा अणि माण्डव्यके शापसे धर्म्मने विदुर स्वरूपमें शूद्रयोनिमें जन्म लिया था; पर वे धर्म्म और अर्थके विषयमें पण्डित क्रोध और परिणामदर्शी होकर कुरुवंशके हित साधनेमें सदा उत्साही थे।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ आठ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर उन तीन कुमारोंके जन्म लेने पर कौरवगण, कुरु-जाङ्गल देश और कुरुक्षेत्र इन तीनोंकी पूरी उन्नति हुई। तब भूमिमें बहुत शस्य उपजने लगे, शस्य रसयुक्त हुए, बादलोंके उचित समयमें वृष्टि करनेसे वृक्षोंके अपरिमित फल और फूल होने लगे। उनदिनों सब वाहन प्रसन्न, मृग पक्षी प्रमुदित, माला गन्धयुक्त और फल अच्छे रसयुक्त होते थे। तब नगर, वाणिज्य, और शिल्प पर जीनेवालेसे भरा पूरा था; और शूरलोग, विद्वानलोग और साधुगण सुखी होने लगे। उस समयमें कोई लुटेरा वा अधर्म्म-शील न था, सो राज्यके सब प्रदेशोंमें मानो सत्ययुग प्रवृत्त हुआ। प्रजा धर्म्मशील, यज्ञ-शील, सत्यशील, और आपसमें प्रेमशील होकर विशेष रूपसे बढ़ने लगी। सम्पूर्ण जन क्रोध लोभ और अभिमानवर्ज्जित होकर धर्म्मानु-सारही परस्पर आनन्द मानने लगे। उस कालमें वह नगर बड़े भारी समुद्रके समान भरा सैकड़ों बड़े बड़े भवनोंसे पूरा और बादल दलके सदृश द्वार और तोरणोंसे संयुत होकर अमरावती कीसी अपूर्व्व शोभा पाने लगा। मानवगण नदी, वन, तड़ाग, सरोवर, रमणीय फुलवाड़ी और पर्व्वतोंकी समभूमि पर प्रसन्न चित्तसे विहार करने लगे। दक्षिण कुरुलोग उत्तर कुरुओंसे एक दूसरेको अहङ्कार दिखा कर सिद्ध ऋषि और चारणोंके साथ विचरने लगे। कुरुओंसे बढ़े हुए उस सुन्दर जनपदमें कोई कृपण नहीं था और कोई नारी विधवा नहीं होती थी। कूप, उपवन, तड़ाग, सभा और ब्राह्मणोंकी बस्ती सर्व्व सम्पद्युक्त हुई, और सब स्थानोंमें सदा उत्सव होने लगे। वह राज्य भीष्मसे धर्म्मानुसार इस प्रकार रक्षित हुआ, कि अनेक देशोंके यज्ञयूपोंसे चित्रित होकर अति रमणीय बन गया; भीष्मके विधानसे उस राज्यमें धर्म्मचक्र ऐसा प्रवर्तित

हुआ, कि बहुतेरे दूसरे राज्योंको छोड़कर उस राज्यमें बसने लगे। महात्मा कुरु-कुमारोंसे किये जाते हुए कार्य्योंको देखकर जनपद और पुरवासी सब भांति उत्साहयुक्त हुए। हे नराधिप! प्रधान कौरवों और पुरवासियोंके घरमें "खाओ, पीओ" यह बात सदा सुनाई देने लगी।

धृतराष्ट्र, पाण्डु और महामति विदुर जन्म होसे भीष्मसे पुत्रकी भांति प्रतिपालित, जातिके योग्य संस्कारोंसे संस्कृत, व्रत तथा पठनमें नियुक्त, और श्रम तथा व्यायाममें पण्डित होकर उचित समयमें यौवनदशाको प्राप्त हुए। वे धनुर्व्वेदमें, वेदमें, गदा-युद्धमें, खड्ग-चर्म्म चलानेमें, गजशिक्षामें और नीति शास्त्रमें दक्ष हुए। वे वेद वेदाङ्गके तत्त्वज्ञ होकर इतिहास, पुराण और दूसरे नाना विषयोंकी शिक्षा आदि सब विषयोंमें पण्डित हुए थे। विक्रमी पाण्डु धनुर्व्विद्या और महीपति धृतराष्ट्र पराक्रममें सबोंसे श्रेष्ठ भये। हे राजन्! तीनोंलोकोंमें विदुरकी समान धर्म्मशील, और धर्म्म विषयमें परम तत्त्वज्ञ कोई दूसरा नहीं था। उस कालमें राजा शान्तनुके नष्ट होते हुए वंशको फिर जगते देखकर सम्पूर्ण राज्योंमें ऐसी प्रशंसा की बात उड़ने लगी, कि वीर प्रसविनी, स्त्रियोंमें दोनों काशीराजकी बेटिया, देशोंमें कुरुजाङ्गल, सर्व्व धर्म्मज्ञ जनोंमें भीष्म और नगरोंमें हस्तिनापुर श्रेष्ठ है। धृतराष्ट्रको जन्मान्ध होने और विदुरको शूद्राणीके गर्भमें जन्म लेनेके हेतु राज्यकी प्राप्ति नहीं हुई, सो पाण्डु ही राज्याधिप हुए। अनन्तर एक समय नीति-शास्त्रमें पण्डित गङ्गानन्दन-धर्म्मतत्त्वज्ञ विदुरको यथोचित यह बात बोले।

सम्भवपर्व्वमें एक सौ नौ अध्याय समाप्त।

भीष्मजी बोले, कि हमारा यह सर्व्वगुणयुक्त और सर्व्वत्र प्रख्यात कुरुकुल पृथ्वी भरमें दूसरे सब पृथ्वीपालोंपर अधिकार फैलाता है। इस विषयमें, कि धर्म्मशील, म.. राजाओंके द्वारा पहिलेसे रक्षित इस कभी उखड़नेकी दशा न होवे, मैं, ... और महात्मा कृष्णद्वैपायनके प्रयत्नसे तुम कुलतन्तु उत्पन्न हुए हो। अब तुम ... पर कुल स्थापित हुआ है, सो तुम्हारी मेरी ऐसी चेष्टा होनी चाहिये कि, ... सागर सदृश बढ़े। सुन चुका हूं, कि ... शूरसेनकी कन्या, सुबल,राजपुत्री और ... देशाधिपकी बेटी, यह तीन कन्या हमारे योग्य हैं। हे पुत्र! क्षत्रियोंमें ... कन्यायें कुलीन, रूपवती और ... हमारे साथ सम्बन्धके योग्य हैं; हे ... विदुर! मैं समझता हूं, कि इस वंशकी ... नके निमित्त उन्हींसे विवाह करना ... अथवा तुम्हारी समझमें जो अच्छा होवे ... विदुर बोले, कि आप हमारे पिता हैं, ... हमारी माता है और आपही हमारे ... गुरु हैं, अतएव आपही स्वयं विचारकर इस वंशका मङ्गलदायी होवे, वही कीजिये।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि कुरुश्रेष्ठ भीष्मने ब्राह्मणोंके मुखसे सुना, कि ... लक्षणयुक्त सुबलपुत्री गान्धारीने ... देवताके नेत्रहारी वरदायी महादेवकी आराधना कर सौ पुत्र पानेका वरलाभ किया है भारत! अनन्तर भीष्मने गान्धारराजके निकट दूत भेजा। धृतराष्ट्र अन्धे हैं ... गान्धारराजने बहुत विचार किया। ... उन्होंने कौरवोंको कुल, प्रसिद्धि और ... की भले प्रकार आलोचना करके ... गान्धारी नाम्नी कन्या दान करना ... किया। हे भारत! अनन्तर गान्धारीने ... कि धृतराष्ट्र अन्धे हैं और उस अन्धेसे ... विवाह होगा। तब उन्होंने पतिव्रता ... हेतु वस्त्र लेकर कई फेरा लगा करके

त्रोंको बांधा, क्योंकि उन्होंने यह निश्चय किया ा, कि मैं पतिसे डाह न करूंगी। अनन्तर ान्धारराजकुमार शकुनिने रूप यौवनवती रम सुन्दरता भगिनीको लेकर कौरवोंके निकट ा करके धृतराष्ट्रको सम्प्रदान किया, तब ोष्मके मतानुसार दोनोंका विवाह कर दिया गया। वीर शकुनि धृतराष्ट्रको यथो-चित वस्त्रादि देकर वहिनको सम्प्रदान करके ोष्मसे भले प्रकार आदर सत्कार पाकर निज गर को पधारा। हे भरतवंश तिलक! ुन्दरी गान्धारी शीलता, सदाचार और यत्नसे म्पूर्ण कौरवोंका सन्तोष उपजाने लगी! सुव्रत ाली गान्धारी सुन्दर व्यवहारसे गुरुओंकी ेवा किया करती थी, वाक्यसेभी कभी अन्य ुरुषका नाम नहीं लेती थी।

सम्भव पर्व्वमें एकसौ दश अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि शूरनामक यदु-कुलमें श्रेष्ठ एक महात्मा वसुदेवके पिता थे। उनको पृथा नाम्नी एक कन्या थी। वह कन्या ऐसी रूपवती थी; कि भूमण्डलमें कोई नारि उनके रूपकी बराबरी नहीं कर सकी थी। हे भारत! सत्यवादी शूरने कृपाकांक्षी निःसन्तान पितृ-स्वस्रीय प्रिय मित्र महात्मा कुन्तीभोजराजसे पहिले स्वीकार किया था, कि अपनी पहिली सन्तान तुमको दे दूगा; उस स्वीकारके अनुसार प्रथम गर्भसे जन्मी हुई उस कन्याको दे दिया। पृथा उस पिताके घरमें ब्राह्मणोंकी सेवा और अतिथियों के सत्कारमें नियुक्त रहती थी, एक समय उसने जितेन्द्रिय व्रतशील उग्रस्वभावी और धर्म्मके गूढ़ तत्त्वोंके जाननेवाले ब्राह्मण दुर्व्वासाको सर्व्व प्रयत्नसे सेवा कर प्रसन्न किया! उस मुनिने भविष्यत्में सन्तान आपद्धर्म्मकी बात सोचकर उसको अभिचारयुक्त मन्त्र दिया और बोले, कि तुम इसमन्त्रसे जिन जिन देवताओंको बुला-ओगी उन उन देवताके प्रभावसे तुम्हारे पुत्र उत्पन्न होगा। यशस्विनी बाला पृथाने दुर्व्वासा की यह बात सुन करके अचरज मान-कर कन्यावस्थाहीमें सूर्य्यदेवको बुलाया। आगे उस अनिन्दित अङ्गवालीने लोकभावन आदित्य को आते देखकर महत् आश्चर्य्य देख-करके विस्मय माना। सूर्य्यदेव उसके पास आकरके बोले, कि री असिताङ्गि! मैं यह आया हूं, कहो, तुम्हारा क्या प्रियकार्य्य करना होगा; पृथा बोली, कि हे शत्रुनाशी विभो! किसी ब्राह्मणने मुझको विद्या और वर दिया है, उसकी परीक्षाके लिये आपको बुलाया है। मैं इस अपराधके लिये सिर नायकर आपको प्रसन्न करती हूं; नारी यद्यपि बहुत अपराध भी करे, तथापि उसकी रक्षा करना चाहिये। सूर्य्य बोले, कि मैं यह सब जानता हूं, कि मुनि दुर्व्वासाने तुमको वर दिया है, अब तुम भय त्यागकर मुझसे संगम करो। री शुभे! मेरा दर्शन अव्यर्थ है, री भीरु। तुमने जिस कारण मुझको बुलाया, यदि वह व्यर्थ हो, तो इसमें सन्देह नहीं, कि हानि होगी।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भारत! सूर्य्य इस प्रकार अनेक बातोंसे समझाने बुझाने लगे, पर सुन्दरी यशस्विनी कुन्तीने कन्यावस्थामें रहनेके कारण बन्धुओंके भय और लज्जासे अपनी सम्मति नहीं दी। हे भरतर्षभ! दिवाकरने फिर उससे कहा, कि री राज्ञी! मेरी कृपासे तुम कोई दोषयुक्त न होओगी। प्रकाशनाथ भगवान आदित्य कुन्तीराजकी कन्यासे यह कहकर उससे जा मिले। इससे सर्व्वशस्त्रधारियोंमें प्रधान, देववत् श्रीमान् जन्मके साथ कवच-कुण्डलोंसे सर्व्वलोकोंमें प्रशंसा-वान् कर्ण नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। अनन्तर परम द्युतिमान आदित्य फिर उसको कन्यावस्था देकर आकाशको गये।

यादव-कन्या जन्मे हुए कुमारको देखकर

दीनचित्तसे सोचने लगी, कि अब कौन उपाय करना चाहिये। क्या करूं, तो मङ्गल होवे। अनन्तर उसने उस बुरी लीलाको छिपानेके लिये महाबली कुमारको जलमें बहा दिया। अति यशवन्त सूतपुत्र राधापतिने जलमें डाले हुए बालकको उठाकर स्त्रीके साथ पुत्रका प्रतिनिधि बनाया। उस बालकने वसु अर्थात् कुण्डल और कवचरूपी धनके साथ जन्म लिया था, इससे राधापति और उसकी स्त्रीने उस बालकका वसुषेण यह नाम रखा। बली और प्रभावी वह बालक ज्यों ज्यों बढ़ने लगा त्यों त्यों अस्त्र विद्याओंमेंभी दक्ष होने लगा। जबतक पीठपर्य्यन्त तापयुक्त नहीं होता था, तबतक वह सूर्य्यकी उपासना करते थे; उपासना करनेके कालमें धीमान वसुषेणके पास भूमण्डलमें ऐसा कोई अर्थ नहीं था, जो वह ब्राह्मणोंको नहीं देते थे। एक समय देवराज इन्द्रने अर्जुनके हित साधनेके निमित्त ब्राह्मणका वेष लेकर भिक्षार्थी होकरके उनके निकट आकर कवच पानेकी प्रार्थना की, उसपर कर्णने करजोड़कर निज शरीरसे स्वभावहीसे मिले हुए कवचको काटकर ब्राह्मणरूपी इन्द्रको दे दिया। सुरनाथ इन्द्रने कवच लेकर कर्णके इस प्रकार कार्य्यसे प्रसन्न होकर उनको एक पुरुष नष्ट करनेवाला शक्तिअस्त्र दे दिया और कहा, कि देव, असुर, मनुष्य, गन्धर्व्व, उरग और राक्षस इनमेंसे चाहे जिस एकको तुम जय करना चाहोगे, इस शक्तिसे वह नष्ट होगा। सूर्य्य पुत्र पहिले वसुषेण नामसे धरतीमें प्रसिद्ध थे, अब कवच काटनेसे कर्ण नामसे प्रख्यात हुए।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ ग्यारह अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि कुन्तिभोजकी कन्या प्रशस्त नेत्रवाली पृथा सत्त्वगुणयुक्त व्रतशील और धर्म्मप्रेमी थी; पर ऐसी रूपयौवनवती, तेजस्विनी और अच्छे अच्छे सोगु भरी हुई कन्याको किसी राजाने प्रार्थना न की थी। हे राजश्रेष्ठ! इस हेतु पिता रा कुन्तिभोजने राजाओंको बुलवाकर कन्या स्वयम्बरमें नियुक्त किया। मनस्विनी पृ उन सब भूपालोंके मध्य रङ्गभूमिमें भरत श्रेष्ठ राजसिंह पाण्डुको देखा। राजक स्थित दूसरे देवराजके समान सिंह दर्प बैलकी भांति नेत्रवाले महामति, महाबा और आदित्यकी नाई सब राजाओंको प्र ढंपनेवाले नरश्रेष्ठ पाण्डुको देखकर अनिन्दि अङ्गवाली शुभलक्षणभरी कुन्ती बड़ी खि हुई; अनन्तर उसने एकही बार कामसे खि अङ्गयुक्त और चञ्चलचित्त होकरके लज्जा साथ राजा पाण्डुके गलेमें माला दे दी कुन्तीको पाण्डुको माला देते देखकर भूपालग हस्ती, घोड़े और रथों पर चढ़कर जिस प्रक आये थे, वैसेही निज निज स्थानोंको पधा हे राजन्! अनन्तर कन्याके पिताने यथावि उनका विवाह कर दिया। देवराज जि प्रकार शचीके साथ मिले हैं, उनके सम अतुल सौभाग्ययुक्त कुरुनन्दन कुन्तीभोज कन्यासे मिले। हे राजेन्द्र! कुरुश्रेष्ठ महीपाल कुन्तीभोजने कुन्तीका विवाहक दामादको अनेक धनोंसे पूजकर बेटीको उन पुरमें भेजदिया। अन्तर राजा कौरवनन्द पाण्डु महर्षि और ब्राह्मणोंकी अशीससे स्तु किये जाकर नाना प्रकार ध्वजासंयुक्त अन सेनाओंके सहित निज नगरमें उपस्थित हु अनन्तर प्रभु पाण्डुने स्त्री कुन्तिको अप गृहमें रखा।

सम्भवपर्व्वमें एक सौ बारह अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर शान्तनु पुत्र मतिमान भीष्मने यशवन्त भूपाल पाण्डु और एक विवाह करना निश्चय किया, वह

न्त्रियों, ब्राह्मणों, महर्षियों और चतुरङ्गी नाओंके साथ मद्रेश्वरके नगरको गये। लोकोंमें श्रेष्ठ मद्रपति भीष्मके आनेकी त सुनकर आगे बढ़कर यथाविधि उनको ाकर निजपुरमें लिवाय लाये, और पाद्य र्घ, मधुपर्क और शुभ्र आसन देकर आनेका ारण पूछा। कुरुवंशके प्रधान भीष्म उनसे ले, कि हे अरिन्दम। मैं कन्याके लिये आया । सुन चुका हूं, कि साध्वी यशस्विनी ाद्री नामी आपकी बहिन है, मैं पाण्डुके ये उसको मांगता हूं। हे राजन् विवाहके म्बन्धमें आप हमारे योग्य पात्र हैं। हे मद्रे-ार। इस विषयमें सोच विचारकर आप हम-ो यथाविधि सम्बन्धीको भांति समझिये। भीष्म ी यह बात सुन मद्रपति बोले, कि हे कौरव! समझता हूं, कि हमारे लिये आपसे अच्छे त्र कोई दूसरे नहीं हैं, पर हमारे वंशमें हिले के भूपोंने शुल्क लेनेका जो एक नियम ाया है, वह भला होवे वा बुरा, मैं उसके ल्लङ्घकार्य्य करने का साहसी नहीं हो सकता; ह नियम प्रकाशही है, सो सन्देह नहीं, कि ा आपभी उससे ज्ञात हैं, अतएव हे वीर। दान करो' यह बात कहना आपके योग्य नहीं । हे शत्रुनाशी। शुल्क लेना हमारा लधर्म्म है, और वही परम प्रमाण है, सो मैं ना सङ्कोच आपसे यह बात नहीं कह कता हूं।

जनाधिप भीष्मने तब मद्रराजसे कहा, हे राजन्। स्वयं ब्रह्माजीने भी इसको रमधर्म्म कहा है। पूर्व्वके पुरुष इस विधिके नुसार चलते थे, सो यह दोषयुक्त नहीं है। शल्य। यहभी ज्ञात हो, कि यह मर्य्यादा ाधुओंकी सम्मतियुक्त है। महातेजस्वी ङ्गानन्दनने यह बात कहकर सहस्रों बना था बिन बना अपरिमित सुवर्ण, विचित्र रत्न ाज, रथ, अश्व, वस्त्र, आभूषण अच्छी मणि, मोती और लाल शल्यको दिये। शल्यने यह सब धन लेकर प्रसन्नचित्तसे कौरवश्रेष्ठ भीष्म-को नाना अलङ्कारोंसे सजी हुई कन्या दान की। धीमान् गङ्गापुत्र भीष्म माद्रीको लेकर हस्ति-नापुरको लौट कर पुरमें प्रविष्ट हुए।

अनन्तर नराधिप पाण्डुने साधुओंकी सम्मतियुक्त शुभ दिनमें, शुभलग्नमें, विधिपूर्व्वक माद्रीसे विवाह किया। आगे विवाहके निर्व्वाह हो जाने पर कुरुनन्दनने नयी-व्याही स्त्रीके रहनेके लिये एक सुन्दर घर निर्दिष्ट कर दिया। राजश्रेष्ठपाण्डु कुन्ती और माद्रीके साथ मनमाने सुखसे बसने लगे। हे प्रभो। राजा पाण्डुने स्त्रीसे तीस रात्रि विहार करके धरतीके जय करनेके लिये यात्रा की। पृथ्वीके जयेच्छुक राजा पाण्डु भीष्मादि बड़ोंको, धृत-राष्ट्रको और कुरुओंमें दूसरे श्रेष्ठ जनोंको प्रणाम नमस्कार और निमंत्रण करके उनकी आज्ञा लेकर मङ्गलाचारयुक्त अशीस सुनते हुए हाथी, घोड़े और रथोंसे भरी हुई बड़ी भारी सेनाके साथ चले। वह प्रसन्न और पुष्ट सेनाओंके सङ्ग शत्रुमण्डलीकी खोजके लिये निकले। कौरवोंके यश बढ़ानेवाले नरोंमें सिंहरूपी पाण्डुके पहिलेही दोषी दशार्ण देशके राजाओंको लड़ाईमें परास्त किया। अनन्तर रङ्गबिरङ्ग झण्डोंके साथ अगणित हाथी, घोड़े, रथ और पैदलोंसे बनी हुई सेनाको लेकर अनेक राजाओंको हानि पहुंचाये हुए, बल तथा अहङ्कारसे गर्व्वित मगधके दीर्घनामक राजाको राजमन्दिरहीमें बध किया। वहांसे कोष और बहुत वाहन लूटकर मिथिलामें जाकरके विदेह नगरको परास्त किया। हे भरत श्रेष्ठ। अनन्तर उन्होंने काशी, सुह्म और पुण्ड्रदेशमें जाकर निज भुजवीर्य्यसे कौरव वंशका यश फैलाया। तब बाणरूपी रस्मूह शिखासे सुशोभित और शस्त्ररूपी तेजसे प्रज्वलित शत्रुनाशी पा

अग्निसे भूपाललोग जल कर मरनेलगे। सेना सहित पाण्डुने सेनासहित नरेशोंके बलको तोड़ कर और वशमें लाकर अपने काममें नियुक्त किया।

धरती परके सब भूपोंने पाण्डुसे परास्त होकर मानवोंमें उनको ऐसा वीर समझा, कि जैसे देवोंमें इन्द्र हैं, और सब कर जोड़ उनको प्रणाम कर नानाश्रस्त्र मणि, मुक्ता,प्रवाल,सुवर्ण चांदी गौ, घोड़े, हाथी, गदहे, ऊंट, भैंसे, बकरे, भेड़ कम्बल,मृगचर्म्म, और रंकुमृगके बने चंदवे इत्यादि नाना धन भेंट लेकर उनके सामने खड़े हुए। हस्तिनापुरके नाथ पाण्डुने उनसबोंकोले लिया। अनन्तर वह अति प्रसन्न सेनाओंके साथ निज राज्यकी प्रजा और पुरवासियों को आनन्द देनेके लिये हस्तिनापुरमें लौट गये। तब राजा और मन्त्रिगण पुरवासी और ग्राम वासियोंसे मिलकर प्रसन्न चित्तसे आपसमें यह कहने लगे, कि धीमान् भरत और राजओंमें सिंहरूपी शान्तनुकी कीर्त्ति बिगड़नेपर हुई थी, पर अब पाण्डुने फिर उसका उद्धार किया। जिन राजाओंका धन और राज्य हर लिया गया था, अब नागपुरनाथ पाण्डुने उनको करदेनेवाले बनाये।

आगे पाण्डुके निकट आनेपर भीष्म आदि कौरव हृदयसे उनको लौटा लानेको चले। वे हस्तिनापुरसे कुछ दूर जाकर राजाके साथियोंको बहुत धनसे भरा पूरा देखकर प्रसन्न हुए; नाना यानों पर लाये हुए बड़े बड़े हाथी घोड़े, रथ, ऊंट, भेड़ आदि नाना धन रत्न इतने अधिक आरहे थे, कि उन्होंने उनका अन्त नहीं देखा; कौशल्याके आनन्द बढ़ानेवाले पाण्डुने चचा भीष्मके पांव छूकर नगर तथा जनपदवासियोंकाभी यथोचित सम्मान किया। भीष्म शत्रुपुरजयकारी मनोरथ सफल करके लौटे हुए भतीजे पाण्डुको गलेसे लगाकर आनन्दसे आंसू बहाने लगे। पाण्डुने अनेक तूर्य्य और भोंपू आदिके शोर सम्पूर्ण पुरवासियोंको प्रसन्न कर ... प्रवेश किया।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ तेरह अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर ... पाण्डुने धृतराष्ट्रकी आज्ञा लेकर अपने ... बलसे लाभ किये हुए धनको भीष्म, सत्य... और माता कौशल्याको भेंट दी और ... विदुरके पास भेजा। उन्होंने आत्मजनोंको धनसे सन्तुष्ट किया। हे भारत! ... पाण्डुके जीते लाये हुए नाना रत्नोंसे सत्य... और यशस्विनी कौशल्याको प्रसन्न किया शची जिसप्रकार जयन्तको गलेसे ल... सुखको प्राप्त करती है, वैसेही ... अतुल तेजस्वी नरश्रेष्ठ पाण्डुको गले लगा ... के आनन्द पाया। धृतराष्ट्र, वीरवर पाण्डु... बलार्ज्जित इतने अधिक धनसे ... किया करते थे, कि उस धनसे सैकड़ों ... गुणा अधिक दक्षिणा युक्त सैकड़ों अश्व... यज्ञ हो सकते थे। हे भरतकुलप्रदीप! ... लसी पाण्डु, कुन्ती और माद्रीके साथ ... होकर वनमें जा बसे! वह सुखदायी ... और कोमल विस्तर छोड़के वनमें सदा ... हुए आखेट खेलने लगे। वह हिमालय ... ड़के मनमोहन दहिने छोरमें घूमघाम ... बड़े बड़े साल-वनोंसे सोहते हुए ... पीठ पर बसने लगे। श्रीमान पाण्डु, कुन्ती और माद्रीके संग वनमें बसते हुए दो ह... नियोंके बीचमें ऐरावतके समान शोभा ... लगे। दो स्त्रियां साथ लिये खड्ग बाण और चाप धरे हुए, परमास्त्र चलानेमें दक्ष, विचित्र कवचसे सुशोभित, विचरते हुए पाण्डुको देखकर वनवासी लोग देवता समझने लगे। धृतराष्ट्र की आज्ञासे मनुष्यगण सदा आलस्य...

...हुत होकर वनमें उनके लिये कामना और ...की सामग्री पहुंचाने लगे।

इधर गङ्गापुत्र भीष्मने सुना, कि महीपाल ...की शूद्राणीके गर्भसे जन्मी हुई रूप और ...युक्त एक कन्या है। अनन्तर उन्होंने ...देवकसे मांगकर वह कन्या ला करके ...मति विदुरका विवाह कर दिया। कुरु... विदुर ने उस क्षत्रियके वीर्य और शूद्रा...के गर्भसे जन्मी हुई कन्यासे अपने ...न गुण और नम्रतायुक्त अनेक पुत्रोंको ...दिया।

...भवपर्व्वमें एक सौ चौदह अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे जनमेजय। ...न्तर धृतराष्ट्रके वीर्य गान्धारीके गर्भसे सौ ... और वैश्या के गर्भसे एक पुत्रने जन्म लिया ...र पाण्डुके वंशकी रक्षाके लिये देवोंने कुन्ती ...र माद्रीके गर्भसे महारथी पांच पुत्र उत्पन्न ...ये।

जनमेजयने पूछा, कि हे द्विजश्रेष्ठ। गान्धा...के गर्भसे क्योंकर और कितने दिनोंमें सौ उत्पन्न हुए उनकी आयु कितनी थी? ...राष्ट्रने वैश्याके गर्भसे क्योंकर एक पुत्रको ...दिया? धृतराष्ट्र अपनी प्यारी स्त्री गान्धा... कैसा व्यवहार किया करते थे? महात्मा ...रूपी मुनिके शाप देनेपर क्योंकर पाण्डुके महारथी पुत्र उत्पन्न हुए? हे विद्वान् ...हत तपोधन। यह सब कथा विस्तृतरूपसे ...रीति कहिये, कुलका चरित्र सुनकर मैं ...नहीं हुआ हूं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि एक समय भग... द्वैपायनजी भूख और थकावटसे कातर ...र गान्धारीके पास आ पहुंचनेपर गान्धा... उनको सन्तुष्ट किया था, उससे व्यासने ...रीकी प्रार्थनाके अनुसार यह वर दिया, ...तुम्हें पतिके समान वीर्य्यवान सौ पुत्र पैदा होंगे। अनन्तर गान्धारी योग्य कालमें धृतराष्ट्रसे गर्भवती हुई। गर्भ होनेके पीछे दो वर्ष बीते पर तौभी सन्तान नहीं हुई, इससे वह बड़ी दुःखी होने लगी, आगे यह सुन कर, कि कुन्तीके बाल सूर्य्यके समान पुत्र भये हैं, अपने गर्भको स्थिर देख चिन्तायुक्त होकर अति मनःपीड़ासे धृतराष्ट्रके जाननेमें बड़े यत्नपूर्व्वक अपने पेटमें आघात किया, उससे दो वर्षका वह गर्भ कटी हुई लोहेकी गेंदके समान मांसपेशी स्वरूपमें भूमिपर गिरा। गान्धारीके उसे त्यागनेपर होतेही जापकोंमें श्रेष्ठ द्वैपायनने उस बातसे ज्ञात होकर तुरन्त वहां पहुंच करके उस मांसपेशीको देखा; अनन्तर सुबलकन्या से बोले, कि तुम यह क्या करनेको उद्यत हुई हो। गान्धारीने महर्षिसे अपनी यह सच्ची इच्छा प्रगटकर, कि कुन्तीके सूर्य्यके समान प्रकाशमान पुत्र उत्पन्न हुए सुनकर अति दुःखसे मैंने पेटमें चोट मारी है। आपने पहिले मुझको वर दिया था, कि सौ पुत्र उत्पन्न होंगे, अब सौ पुत्रोंके बदले यह मांसपेशी पैदा हुई है। व्यासजी बोले, कि हे सुबलपुत्री। जो कहा था, सोही होगा, कदापि बात नहीं पलटेगी, हँसीमेंभी मैंने कभी झूठी बात नहीं कही है; फिर क्यों वह बात उलट जायगी? अब घृतसे सौ घड़े भरकर निरालेमें यत्नसे रखो और ठण्डे जलसे इस मांसपेशीको नहलाओ।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे नरेश! अनन्तर नहलाते नहलाते वह मांसपेशी बहुत भागोंमें बट गयी। काल पूर्ण होनपर उनकी संख्या सौ हुई, और प्रत्येक भाग अंगूठेके पोरके समान हुआ। अनन्तर वह सब मांसपेशी घृतभरे घड़ोंमें रक्षित होकर भले अच्छे गुप्त स्थानमें भली भांति रखी जाने लगीं। भगवान व्यास तब सुबलकन्यासे बोले, कि इतने समयमें अर्थात् दो वर्ष पीछे यह सब घड़े खोलना। धै

भगवान द्वैपायन यह कहकर यह सब गर्भ स्थापन कर फिर तपके लिये हिमाचलको पधारे। अनन्तर योग्यकालमें उन टुकड़ोंमें से पहिले राजा दुर्य्योधनका जन्म हुआ, पर राजा युधिष्ठिर पहिले जन्म लेनेके हेतु ज्येष्ठ भये थे। यह बात धीमान विदुर और धृतराष्ट्रके कानोंमें पहुंची। जिस दिन दुर्य्योधनका जन्म हुआ, उसी दिन महाभुज वीर्य्यवान् भीमनेभी जन्म लिया था। हे महाराज! दुर्य्योधन जन्म लेतेही गदहेके समान शब्द करने और चिल्लाने लगा, उसे सुनकर गिद्ध, गदहे, सियार और कौए कोलाहल मचाने लगे, हवा वेगसे बहने लगी और दिशायें जलने लगीं। हे महाराज! राजा धृतराष्ट्र इससे भय खाकर भीष्म, विदुर, ब्राह्मण, मित्र, और कौरवोंको बुलवाकर बोले, कि हमारे वंश बढ़ानेवाले राजपुत्र युधिष्ठिर ज्येष्ठ हैं, सो वह अपनेही गुणसे राज्यको पा सकते हैं, उस विषयमें मुझे कुछ कहना नहीं है, पर मेरे इस पुत्रने युधिष्ठिरके पीछे जन्म लिया है, उससे क्या यह कुमार भी राजा हो सकेगा? इस विषयमें जो निश्चय हो, वह आप ठीक ठीक कहिये। हे भारत। इस बातके कहे जाने पर सियार और मांस खानेवाले कुटिल जन्तु अमङ्गलकारी शब्द मचाने लगे। हे महाराज चारों ओर यह सब अमङ्गल चिन्ह देख कर वे ब्राह्मणगण और महामति विदुर धृतराष्ट्रसे बोले, कि हे पुरुषश्रेष्ठ महाराज। आपके ज्येष्ठ पुत्रके जन्म लेतेही जिस प्रकार यह सब भयानक अमङ्गल चिह्न दीख पड़ते हैं, उससे यह प्रकाश हो रहा है, कि आपका यह पुत्र कुलहानि करनेवाला होगा, इसको त्याग देनेहीसे कुल की शान्ति हो सकती है, नहीं तो बड़ी हानि होगी, हे महीपाल भारत। यदि आप अपने कुलकी शान्ति रखनी चाहते हों, तो यही अच्छा होगा, कि इस एक पुत्रको त्याग दीजिये; तब आपके निनानवे पुत्र तो बचेंगे, आप एकको इस वंश और जगत्‌का हित कीजिये। राजा कहा है, कि कुलको रखनेके लिये एकको त्यागना, ग्रामकी भलाईके लिये कुलको त्यागना, देशकी भलाईके लिये ग्रामको त्यागना और आत्माके लिये पृथ्वीको त्यागना उचित है।

उन सब द्विजों और विदुरके ऐसा कहने पर राजा धृतराष्ट्रने पुत्रके स्नेह से वह बात नहीं सुनी। हे पृथ्वीनाथ। एक महीने भरमें धृतराष्ट्रके सौ पुत्र और एक कन्याने जन्म लिया। गान्धारी जब बढ़ते हुए पेटकी पीड़ासे कातर थी, उसी वर्ष उस वैश्याके गर्भसे धृतराष्ट्रके अतिशययुक्त धीमान युयुत्सु नामक एक पुत्रने जन्म लिया। वैश्याके और क्षत्रियके वीर्य्यसे जन्म लेनेके हेतु वह करण करके कथित हुआ है। इस प्रकार धीमान धृतराष्ट्रसे महारथी वीर सौ पुत्र, एक कन्या और महातेजस्वी युयुत्सुने जन्म लिया था।

सम्भव पर्व्वमें एकसौ पन्द्रह अध्याय

जनमेजय बोले, कि हे अनघ! तुम ऋषिकी कृपासे सौ पुत्रोंका जन्म लेना कह चुके, पर ऋषिकी प्रसन्नतासे कन्या उत्पन्न होनेकी कोई कथा आपने नहीं कही है। आप धृतराष्ट्रके सौ पुत्रोंसे अधिक वैश्याके गर्भसे जन्म लिये हुए पुत्र, और गान्धारीके गर्भसे जन्म ली हुई एक कन्याके जन्म लेनेकी कथा कह चुके; पर तेजयुक्त महर्षि व्यासजी बोले थे, कि गान्धारी राजपुत्रीके सौ पुत्र जन्म लेंगे, हे भगवन्! आपने क्योंकर गान्धारीके गर्भमें सौसे अधिक एक कन्याकी बात कही? यदि महर्षिने उन मांसपेशियोंको सौ भागोंमें बांटा और यदि सुबलपुत्रीका फिर गर्भ न

तो, क्योंकर दुःशलाकी उत्पत्ति हुई? प्रवर इस विषयको सुननेके लिये मुझे इच्छा हुई है, आप यथावत कह सुनावें। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे पाण्डव। ने अच्छा प्रश्न किया है। मैं आपसे व्यक्त से कहता हूं। भगवान व्यासने स्वयं ठण्डे से उन मांसपेशियों को नहलवा कर अलग अलग बांट डालनेकी कल्पना तो। हे महाराज! वह ज्यों ज्यों ने लगे, त्यों त्यों धात्री उन्हें घृतके घड़ोंमें ड़ने लगी। इस समय कठोर व्रत करने- ो सती सुन्दरी देवी गान्धारी कन्यास्नेह आलोचना कर मनही मनमें सोचने ो, कि इसमें सन्देह नहीं है, कि इन मांस एयोंसे सौ पुत्र उत्पन्न होंगे, क्योंकि मुनिकी ा कभी मिथ्या नहीं होती; पर यदि मुझे पुत्रोंसे अधिक कनिष्ठा एक कन्या हो, तो हृदयको बड़ा सन्तोष मिले और उससे पति दौहित्रसे मिलते हुए पुण्यलोकके ार न होवें, विशेष नारी मात्रको दामादसे ो प्रीति होती है, सो यदि मेरी सौ पुत्रोंसे र एक पुत्री भी होवे तो, मैं पुत्र और तियोंसे घिरी जाकर कृतार्थ होऊं। यदि सद्रीरीति पर तप दान वा (ब्राह्मणोंसे) न किया हो अथवा यदि गुरुओंको प्रसन्न या हो तो, मुझे एक कन्या भी होवे। इस सरमें ऋषियोंमें श्रेष्ठ भगवान श्रीकृष्णद्वैपायन स्वयं उन मांसपेशिओंको बांट रहे थे। वह सौ भाग गिन कर गान्धारीसे बोले, कि तुम्हारे सौ बेटे हुए, मैंने तुमसे झूठी नहीं ो थी। दैव संयोगसे ऊपर एक भाग बचा , तुम्हारी इच्छानुसार इस भागसे एक री कन्या होगी। अनन्तर महातपा तपो- ने दूसरे एक घृतके घड़ेको मंगवाकर उसमे ागके भागको छोड़ दिया। हे अनघ भरत- श्रेष्ठ! दुःशलाकी जन्म-कथा आपसे यह कह चुका। हे राजेन्द्र! कहिये, फिर क्या कहना होगा।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ सोलह अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, कि धृतराष्ट्रके बड़े छोटेके क्रमसे सब लड़कोंके, और हरेकका अलग नाम आद्योपान्त कहिये। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे महाराज! दुर्योधन, युयुत्सु, दुःशासन, दुःसह, दुःशल, जलसन्ध, सम, सह, विन्द, अनुविन्द, दुर्द्धर्ष, सुबाहु, दुष्प्रधर्षण, दुर्म्मर्षण, दुर्म्मुख, दुष्कर्ण, कर्ण, विविंशति, विकर्ण, शल, सत्त्व, सुलोचन, चित्र, उपचित्र, चित्राक्ष, चारुचित्र, शरासन, दुर्म्मद, दुर्व्विगाह, विवित्सु, विकटानन, ऊर्णनाभ, सुनाभ, नन्द, उपनन्द, चित्रवान्, चित्रवर्म्मा, सुवर्म्मा, दुर्व्विलोचन, अयोबाहु, महाबाहु, चित्राङ्ग, चित्रकुण्डल, भीमवेग, भीमबल, बलाकी, बलवर्द्धन, उग्रायुध, भीमकर्म्मा, कनकायु, दृढ़ायुध, दृढ़वर्म्मा, दृढ़क्षत्र, सोमकीर्त्ति, अनूदर, दृढ़सन्ध, जरासन्ध, सत्यसन्ध, सदः सुवाक्, उग्रश्रवा, उग्रसेन, सेनानी, दुष्पराजय, अपराजित, कुण्डशायी, विशालाक्ष, दुराधर, दृढ़हस्त, सुहस्त, बातवेग, सुवर्च्चा, आदित्यकेतु, वह्वाशी, नागदत्त, अग्रयायी, कवची, निषङ्गी, कुण्डी, कुण्डधार, धनुर्द्धर, उग्र, भीमरथ, वीरबाहु, अलोलुप, अभय, रौद्रकर्म्मा, दृढ़रथ, अनाधृष्य, कुण्डभेदी, विरावी, दीर्घलोचन, प्रमथ, प्रमाथी, वीर्य्यवान् दीर्घरोम, दीर्घबाहु, महाबाहु, व्यूढ़ोरु, कनकध्वज, कुण्डाशी, विरजा, यह सौ पुत्र और कन्या दुःशला है। महाराज! धृतराष्ट्रके सौ पुत्रोंके और सौके अतिरिक्त कन्या दुःशलाका नाम यह कह चुका, हे महाराज! इन नामोंके क्रमके अनुसार इनके जन्मका क्रमभी जानना। वे सबके सब महारथी शूर, युद्धमें दक्ष, वेदमें पण्डित और अस्त्र चलानेमें निपुण थे। हे महीपाल! धृतराष्ट्रने परीक्षाद्वारा योग्य

कन्याओंका निश्चयकर उचित समयमें यथारीति उन सबोंका विवाह कर किया। हे भरतकुल प्रदीप! अनन्तर महाराजा धृतराष्ट्रने योग्य कालमें जयद्रथ को दुःशला नाम्नी कन्या सम्प्रदान कर दी।

सम्भवपर्व्वमें एक सौ सत्तरह अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले कि, हे ब्रह्मवादिन्! आप मनुष्य धृतराष्ट्रके पुत्रोंके श्रेष्ठ अलौकिक आर्ष जन्मकी कथा और इनके अलग अलग नाम भी कह चुके हैं। हे ब्राह्मण! वह सब आपसे सुन लिया है, अब पाण्डवोंके चरित्रकी कथा कहिये; आपने वंशोंके अवतरणमें कहा है, कि पाण्डवगण सब महात्मा तथा इन्द्रके समान पराक्रमी थे और देवोंके अंशोंसे जन्म लिया था; सो मैं उन अलौकिक कर्म्म करने वाले पाण्डवोंकी जन्मसे लेकर आद्योपान्त सम्पूर्ण कथा सुना चाहता हूं, हे वैशम्पायन! आप उसे कह जाइये।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि महाराज! राजा पाण्डुने मृगव्यालोंसे भरे एक बड़े बनमें घूमते घामते मैथुन धर्म्ममें आसक्त एक यूथपति मृगको देखा। आगे उन्होंने सोनेकी पूंछसे सुशोभित सुन्दर परवाले नोकदार और तेज चलनेवाले पांच बाणोंसे उस मृग और मृगीको विद्ध किया। हे महाराज! कोई बड़े तेजस्वी तपोधन ऋषिकुमार मृगका स्वरूप लेकर स्त्रीके साथ उस प्रकारसे मिले थे। वह उस मृगीसे लिपटे रहते जो बाणाघातसे क्षण भरमें धरणीपर गिरकर मनुष्यकी बातोंमें विकल-चित्तसे पाण्डुसे बोले, कि काम क्रोधयुक्त हीन-बुद्धिजनभी ऐसा निठुर कार्य्य नहीं करता, पर मानवी बुद्धि दैवका पार नहीं पा सकती; दैवसे मानवी बुद्धि हट हट जाती है, सो दैवोपहतको बुद्धिमान जनभी समझ नहीं सकते। हे भारत! तुम सदाके धर्मयुक्त प्रधान वंशमें जन्म लेकर क्योंकर काम लोभसे अभिभूत हुए, और क्योंकर तुम्हारा चित्त ऐसा डगमगाया? पाण्डु बोले, कि हे मृग! राजालोग शत्रु नाशने में जैसा किया करते हैं, मृग बेधने में वैसाही करते है, सो तुम्हे मोहसे मुझको ऐसा लाञ्छन नहीं करना चाहिये। छिपकर और कौशलसे मृग बध करना राजाओंका धर्म्म है; तुम फिर क्यों उस विषयमें निन्दा कर रहे हो? ऋषि अगस्त्यने यज्ञकर सम्पूर्ण वनमें सर्व्वदेवोंके उद्देशमें सम्पूर्ण मृगोंको संयनकर मृगया की थी। उन्होंने अभिचार कर्म्मके लिये तुम्हारी वसासे हवन किया था; सो प्रमाणित धर्म्मके अनुसार तुम मुझसे मारे गये हो, फिर क्यों हमारी निन्दा कर रहे हो। मृग बोला, कि मनुष्य लोग शत्रुको भली भांति न देखकर बाण नहीं चलाते, विशेष जिस समय शत्रुसे दोष होता है, उसी समयमें शत्रु वधनेका सुन्दर अवसर करके कहा है। पाण्डु बोले, कि ऐ मृग! मृग प्रमत्त रहें वा अप्रमत्तही रहें, लोग नाना कठोर उपायोंसे खुलाखुली उनका बध करते हैं, अतएव तुम क्यों निन्दा करते हो? मृग बोला, कि महाराज! तुमने मृग [illegible] है, इस लिये मैं अपने लिये तुम्हारी [illegible] नहीं करता! पर तुमको इस समय निठुर व्यवहार न कर मेरे मैथुनकाल तक ठहरे रहना चाहिये था। सर्व्वभूतोंके प्रिय और सर्व्वभूतोंके हितयुक्त ऐसे समयमें क्या कोईभी विद्वान जन वनमें मैथुन करते हुए, मृगको वध कर सकता है? हे राजेन्द्र। मैं आनन्दसे इस मृगीसे सन्तान पैदा करनेके लिये लिपट गया था, तुमने वह व्यर्थ कर दिया। महाराज! तुमने शुद्ध कर्म्म करनेवाले पौरव राजोंके वंशमें जन्म लिया है सो यह कार्य्य तुम्हारे योग्य नहीं हुआ है। हे भारत! यह बड़ा निठुर कर्म्म स्वर्गनाशी, यशनाशी धर्म्मनाशी और सर्व्व लोकोंके [illegible]

अनुचित हुआ है, हे देवोपम! तुमने शास्त्र जाननेवाले धर्मार्थ तत्त्वोंके जाननेवाले, और स्त्रीसे मिलनके सुखको अनुभव करनेवाले होकरकेभी जो यह स्वर्गनाशी कार्य्य किया है, वह तुम्हारे योग्य नहीं हुआ है। हे नरेशोंमें श्रेष्ठजन। जो सब लोग निष्ठुर कार्य्य करनेवाले पापाचारी और धर्मार्थ कामसे रहित होते हैं, तुम्ही उनका दण्ड करते हो। हे महाप्राज्ञ। मैं मृगके स्वरूपमें फल-मूल पर जीता हुआ मुनि हूं, मुझको विना अपराध मार कर कौनसा बड़ा लाभ उठाया? मैं शमशील होकर नित्य वनमें रहता हूं, तिसपरभी तुमने विनादोष मुझको मारा! सो तुमको शाप देता हूं, कि तुमने जिस प्रकार स्त्री-पुरुष से कठिन व्यवहार किया है, उस प्रकार जब स्वयं कामयुक्त होकर विवश होओगे, तब तुमभी ऐसीही जीवनाशी दशा प्राप्त करोगे। मैं किमिन्दम नामक तपस्वी मुनि हूं, मनुष्योंको लज्जासे वंचनेके लिये मृगीसे मिल रहा था। तुम्हारे यह न जाने रहनेसे कि मैं मृगाकास्वरूप लेकर मृगोंसे घने वनमें चरा करता हूं, मुझको मारडालनेके कारण तुम पर ब्रह्महत्याका पाप न वर्त्तेगा। रे मूर्ख! जैसे कि तूने मृगके स्वरूपधारी मुझको इस प्रकार मारडाला, त्यों तूभी इसका फल योंही प्राप्त करेगा। तू कामवश प्रियासे मिलतेही इसी दशामें प्रेतलोकको सिधारेगा। हे मतिमन्! तुम अन्तकालमें जिस स्त्रीसे मिलोगे, वह प्यारीभी सर्व्वलोकोंके लङ्घनके अयोग्य प्रेतलोकोंमें भक्ति-पूर्व्वक तुम्हारे साथ चली जायगी। मुझको जिस प्रकार सुख समय तुमसे दुःख मिला, वैसेही तुमभी सुख पानेके काल दुःख प्राप्त करोगे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि मृगने यह बात कहकर अति दुःखी होकर प्राण छोड़ा। राजा पाण्डुभी क्षण भरमें दुःखके समुद्रमें डूबे।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ अठारह अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि राजा पाण्डु अपने मित्र समान उस ऋषिको छोड़कर स्त्रियोंके सहित शोक और दुःखसे पीड़ित और विकल होकर बहुत विलपने लगे। वह कहने लगे, कि हाय! बुरी आत्मायुक्त जन अच्छे वंशमें जन्म लेने पर भी कामके फन्देमें फंसकर अपने कर्म्मके दोषसे कुगति प्राप्त करता है। मैंने सुना है, कि मेरे पिता विचित्रवीर्य्य धर्म्मात्मा शान्तनुसे जन्म लेकरके केवल कामयुक्त आत्मा होनेहीसे बालेपनहीमें परलोकको सिधारे थे; उन कामयुक्त राजाके क्षेत्रमें साक्षात् भगवान् ऋषि संयतवादी श्रीकृष्णद्वैपायनने मुझे जन्म दिया था; ऐसे मनुष्यके पुत्र होनेपरभी मैं बुरी रीतिसे केवल वनहीमें घूम फिर रहा हूं। आज मेरी बुरी बुद्धि व्यसनके विषयमें लिप्त हुई है, तो देवोंने मुझको त्याग दिया है, क्योंकि मेरा पुत्रका मुख विना देखे स्वर्ग पानेका पथ रुक गया। अब मैं मोक्षमार्गका पथिक बनूं। पुत्र उत्पादन आदि सांसारिक बन्धन ही अति दुःखका कारण हुआ है, सो मैं ब्रह्मचारी बनकर जन्मदाता व्यासजीसे किये जाते हुए कार्य्यमें नियुक्त होऊंगा। मैं अपने चित्तको बिना सन्देह कठोर तपमें नियुक्त करूंगा, उससे भार्य्यादि त्याग कर अकेले सिर मुड़ाकर मुनि हो आश्रमोंमें स्थित इन सब वृक्षोंमेंसे एक एकसे भीख मांग मांग जीवनको बचाऊंगा। सब प्रिय और अप्रियको छोड़कर धूलसे देहको नहला कर खाली घरमें वा पेड़की जड़में बसूंगा, किसी प्रकारसे नतो हर्ष और न शोक करूंगा, अपनी निन्दा और प्रशंसाको समान समझूंगा, आशीस वा प्रणाम की इच्छा न करूंगा; और विना बखेड़ा तथा किसीसे दान न लेकर दिन काटूंगा। मैं किसीपर न तो हँसूंगा और न भौंह चढ़ाऊंगा, सदा प्रसन्नमुख होकर सर्व्व भूतोंके हितमें नियुक्त रहूंगा; अण्ड, स्वेद,

जरायु और उद्भिदसे जन्म लिये हुए इन चार प्रकारके स्थावर जंगम प्राणियों पर हिंसा प्रगट नहीं करूंगा; अपनी प्रजावत सर्व्व भूतों पर तुल्य दृष्टि रखूंगा। नित्य पांच वा दश घरोंमें एकही बार भीख मांगूंगा; उनसे भीख न मिले, तो बिना भोजनसे दिन गंवाऊंगा, स्वल्प भोजन किया करूंगा, पर तौभी एक बारमें न मिले, तो फिर कभी भीख न मांगूंगा; सात वा दश घरसे मांगनेपर यदि भीख न मिले, तो लोभसे दूसरे घरमें फिर नहीं जाऊंगा। चाहे लाभ होवे वा नहीं, मैं सबोंको समान समझूंगा और कठोर तप करूंगा। किसीके बसूलेसे मेरे एक हाथको काटने और चन्दनसे दूसरे हाथको सुगन्धयुक्त कर देनेमें दोनोंमें से किसीको नतो हित और न अहितकी इच्छा करूंगा। मैं जीवन और मृत्युसे आनन्द वा द्वेष प्रगटकर न तो कभी उछल उठूं और न कभी मुर्झाऊंगा। चेतनयुक्त जन निमिषादि कालके नियमसे जो सब स्वर्गादि फलदायी मङ्गलयुक्त कार्य्य कर सकते हैं, मैं सम्पूर्ण रूपसे चित्तके पापको धोकर उन सब क्रियादिको कर कर धर्म्मार्थ त्याग और अनित्य फल देनेवाली सब इन्द्रियोंकी क्रियाओंको त्याग दूंगा और अविद्यादि सर्व्व प्रकारके जालको फाड़कर सब पापोंसे साफ होकर वायुका गुण लिये रहूंगा, किसीके वशमें नहीं जाऊंगा। सदा ऐसी रीतिसे चलकर निर्भय पथको आश्रय करके देह छोड़ूंगा, वीर्य्य-भ्रष्टहोकर आत्मतत्त्वरूपी धर्म्मसे सदा च्युत निर्वीर्य्यविनाशी कुमार्ग पर कभी पांवको न रखूंगा। काम रहित होनेपरभी जो कामयुक्त होकर दोनोंके समान फिर काम-क्रियामें फंसता है वह सुकार्य्य करे वा दुकार्य्य करे मरकटकी दुमके पथमें चलता है अर्थात् जूठा पाखण्डवाला है।

वैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर राजा अति दुःखीचित्तसे यह सब बातें कहकर लम्बी श्वास छोड़कर कुन्ती और माद्रीकी ओर आंख फेर कर बोले, कि कौशल्या, विदुर, बन्धुसहित राजा धृतराष्ट्र आर्य्या सत्यवती, भीष्म राजपुरोहितलोग, व्रतशील सोम पीनेवाले महात्मा ब्राह्मणगण और जितने नगरके वृद्धजन मेरे आश्रयमें हैं, उन सबोंसे प्रसन्नकर कहना, कि पाण्डु प्रव्रज्या आश्रमकी शरण लेकर वनमें गया है। कुन्ती और माद्री वनवासका संकल्प ठाने हुए पतिके वचन सुनकर यथायोग्य वाक्य बोलीं। हे भरतश्रेष्ठ! दूसरे बहुत आश्रम हैं, जिनको आश्रयकर आप इन दो धर्म्म पत्नियोंके साथ कठोर तपस्या कर सकेंगे, और इसमें सन्देह नहीं है, कि देह छोड़नेके लिये महाफलको पाकर स्वर्गको प्राप्त करेंगे। हम दोनोंभी पतिलोकयुक्त होकर अब इन्द्रियोंको रोककर कामना और सुखको तजकर कड़ी तपस्या करेंगी। हे महाप्राज्ञ पृथ्वीनाथ! आप हमको छोड़ देंगे तो बिना सन्देह हम आजही प्राण छोड़ेंगी। पाण्डु बोले, कि तुम्हारा यह निश्चय यदि धर्म्मके अनुसार होवे, तो मैं अपने पिताकी अव्ययवृत्तिको आश्रयकर लूंगा। ग्रामके भोजन और ग्रामके सुखको छोड़कर वल्कल पहिन कर और फल मूल खाता हुआ भारी तपकर घने वनमें घूमूंगा; चीर, चर्म्म और जटा धारणकर नियमित भोजन कर, भूख प्यास पर ध्यान न रखकर ठण्ढी हवा और धूपको सहकर और अङ्गोंको दुबला पतला बनाकर दोनों समय नहाता और अग्निमें हवन करता हुआ कठोर तपस्यासे इस शरीरको सुखा डालूंगा। निरालेमें रहकर कच्चा और पक्का और वाणप्रस्थके योग्यशास्त्रकी चर्चा करता हुआ, वनके फल, जल और बातोंसे पितर और देवोंका तर्पन करूंगा; ग्रामवासियोंकी बात तो दूर रही, एकही घरमें टिके हुए, वाणप्रस्थोंकाभी कभी

अप्रिय कार्य्य नहीं करूंगा; जबतक यह देह न छूटेगी तबतक मैं योंही इनसब वनको शास्त्रोंकी कठोर विधियोंको पालन करता हुआ जीवित रहूंगा।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि कौरवनन्दन राजा पाण्डु दोनों स्त्रियोंसे यह बात कह कर चूड़ामणि, निष्क, अङ्गद, कुण्डल, मूल्यवान वस्त्र और स्त्रियोंके आभूषण आदि सब वस्तु ब्राह्मणों को देकर, साथियोंसे बोले, कि तुम हस्तिनापुरमें जाकर कहना, कि कुरुनन्दन पाण्डु अर्थ, काम, सुख, और परम प्रिय स्त्रीसे मिलनेके सुख सबको तज प्रव्रज्याश्रम लेकरके स्त्रियोंके संग वनको पधारा है। अनन्तर उनके साथी और नौकर उन भरतवंशके सिंह-रूपी नरेशको नाना करुणा की बातें सुनकर अति दुःखयुक्त कोलाहलसे हाहाकार करते हुए रोने लगे, आगे राजाको तज कर शोकके आंसू गिराते हुए उनकी सब बातोंके साथ विना विलम्ब हस्तिनापुरमें जा पहुंचे। नरश्रेष्ठ धृतराष्ट्र उनके मुखसे उनकी सब घटनाओंको सुन कर पाण्डुके लिये बड़ा शोक करने लगे। वह भाईके शोकसे विकल होकर उन्हीं बातोंको सोचसोच सेज, आसन, भोग किसीसे सुख नहीं पासके। हे कौरववंशी! इधर राजकुमार पाण्डु फल मूल खाते हुए दोनों स्त्रियोंके साथ नागशत पर्व्वतको पधारे। आप उस चैत्ररथ पर चढ़ कर कालकूट पर्व्वतको पीछे रखके हिमाचलसे होते हुए गन्धमादनमें जा पहुंचे। हे महाराज! वह महाभूत, सिद्ध और परम ऋषियोंसे रक्षित होकर समभूमि और रूखे स्थानोंमें वासकर चुके। अन्तमें इन्द्रद्युम्न तालको प्राप्तकरके हंसकूटको पीछे छोड़ कर शतशृङ्ग नामक पहाड़ पर कठोर तप करने लगे।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ उन्नीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भारत! वीर्य्यवन्त पाण्डु उस स्थानमें बड़ी अच्छी तपस्यामें सदा नियुक्त रहकर सिद्धचारणोंके अति प्रिय बने। वह गुरुसेवक, अहङ्कारवर्ज्जित, संयतात्मा और जितेन्द्रिय होकर निज वीर्य्यसे स्वर्गको प्राप्तकरनेके योग्य पराक्रमी बने। कोई कोई ऋषि उनको भाई, दूसरे मित्र समझने लगे और सब अन्यऋषि उनको पुत्रवत पालने लगे। हे भरतश्रेष्ठ! अनन्तर पाण्डु बहुत दिनों तक बिना कलङ्क तपोबल बटोरकर ब्रह्मर्षि समान बने। एक समय अमावस्या तिथिमें व्रतशील महर्षि लोग भगवान् स्वयम्भूके दर्शनके लिये एकत्र होकर ब्रह्मलोकमें जा रहे थे, कि ऐसे समयमें पाण्डु उन ऋषियों को जाते हुए देखकर बोले, कि हे वाक्निपुण महर्षियो! कहिये, आप कहां जायंगे। ऋषिलोग बोले, आज ब्रह्मलोकमें महात्मा देव तथा ऋषियोंकी और महात्मा पितरोंकी बड़ी बटोर होगी; हम ब्रह्मलोकमें जाते हैं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि पाण्डु महर्षियोंके साथ जानेकी इच्छासे स्वर्गको पार करनेके लिये एकायक उठकर दोनों स्त्रियोंके साथ शतशृङ्गसे उत्तरकी ओर चले। तब तपस्वियोंने उनसे कहा, कि हमने उत्तर की ओर शैलराजसे क्रमशः ऊपरको चलते हुए इस सुन्दर पर्व्वतपर अगणित अगम्य देश देखे हैं, बीच बीचमें देव गन्धर्व्व और अप्सराओंके सैकड़ों यानोंसे भरे और गीतोंसे गूंजते हुए स्थान दीख पड़ते हैं, कहीं कहीं कुवेरकी समभूमि और रूखी फुलवाड़ी, बड़ी बड़ी नदी और दुर्गम कन्दरा हैं; कोई कोई स्थान सदा हिमसे ढपे रहते हैं; वहां न तो वृक्ष मृग, अथवा पक्षी हैं न और कुछ है; कहीं कहीं ऐसी भारी वर्षा होती है, कि वह स्थान दुर्गम वा फिसलने हो जाते हैं; किसी पशुकी बात

तो दूर रहो, पखेरूभी वहां पहुंच नहीं सकते, केवल अकेला वायु और सिद्ध तथा परम ऋषि लोग वहां जा सकते हैं। इन राज-कन्याओंने कभो दुःख-सहन नहीं किया है, सो दुर्गम शैलराज पर चलनेमें क्यों नहीं मुर्झाबेंगी? अतएव हे भरत-श्रेष्ठ! तुम मत आओ। पाण्डु बोले, कि हे महाभागवृन्द! कहा है, कि जिसकी सन्तान नहीं है, उसके स्वर्गमें घुसनेके द्वार नहीं हैं; मेरी सन्तान नहीं है, सो अति दुःखसे जलकर आपसे ऐसा कहता हूं। हे तपोधनवृन्द! मैं पितरोंके ऋणसे मुक्त न होनेहीके कारण बड़ा दुःखी बना हूं, मुझको निश्चय होगया है, कि मेरे इस शरीरके नष्ट होने पर पितर लोगभी नष्ट होंगे। मनुष्यलोग पितरोंके, देवोंके, ऋषियोंके और मनुष्योंके इन चार ऋणोंको लेकर इस धरतीमें जन्म लेते हैं और धर्म्मानुसार उनको वह ऋण भरनाही चाहिये; धर्म्म जाननेवाले कहते हैं, कि जो मनुष्य इन स्वाभाविक ऋणोंके भरनेके लिये उचित समयमें मन नहीं लगाता है, उसकी सुगति नहीं होती है। मानवलोग यागसे देवोंको, पठन तथा तपसे मुनियोंको, पुत्रोत्पादन तथा पिण्ड दानसे पितरोंको और निष्ठुरतासे रहित होकर मनुष्योंको तुष्टकर उनके ऋणोंसे मुक्त होते हैं। मैं देव, ऋषि और मनुष्य, इनके ऋणसे धर्म्मानुसार मुक्त हुआ हूं, पर मेरे शरीरके नष्ट होने पर पितरोंको नष्ट होना पड़ेगा। हे तपस्वीगण! जो लोग नरोंमें श्रेष्ठ हैं, वे पितरोंके ऋणको भरनेको सन्तान पैदा करनेके निमित्त पृथ्वीमें जन्म लेते हैं, पर मैं अभीतक उक्त ऋणसे मुक्त नहीं हो सका हूं, सो पूछताहूं, कि मैंने जिस प्रकार पिता विचित्रवीर्य्यके क्षेत्रमें महर्षि व्याससे जन्म लिया है, क्या वैसेही मेरे इस क्षेत्रमें सन्तान उत्पन्न हो सकेगी। ऋषिलोग बोले, कि हे धर्म्मात्मक राजन्! हम दिव्य नेत्रोंसे देखते हैं, कि तुम्हारे पाप-रहित देववत शुभ पुत्र उत्पन्न होंगे, सो हे नर-व्याघ्र! तुम कर्म्मसे देवोंका अभिप्राय पूरा करो, क्योंकि बुद्धिमान जन न घबराकर सुन्दर फल प्राप्त करते हैं! ऐ महाराज! तुम्हारा फल दीख पड़ता है, तुम सन्तान उत्पन्न करनेका प्रयत्न करो, उससे अवश्यही आनन्द देनेवाले सर्व्व गुणोंसे सजे हुए पुत्र पा सकोगे। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि राजा पाण्डु तपस्वियोंकी वह बात सुनकर और यह स्मरणकर, कि मृगके शापसे उनकी पुत्र पैदा करनेकी शक्ति नष्ट हो गयी है, चिन्तायुक्त हुए। आगे वह यशस्विनी धर्म्मपत्नी कुन्तीसे निरालेमें बोले, कि हे कुन्ती! तुम इस विपत्कालमें पुत्र उत्पन्न करनेका प्रयत्न करो; देखो, धर्म्म कहनेवाले सदा कहते हैं, कि सन्तान इन तीनों लोकोंमें धर्म्म भरी प्रतिष्ठा सी हुई है। याग, दान, तपस्या और भले प्रकार अनुष्ठान किया हुआ नियम, यह सब उनको पवित्र नहीं करते हैं, जिनके कि सन्तान नहीं होती। हे सुन्दरी! यह जाननेहीके कारण मैं सोचके देखता हूं, कि मेरे पुत्र पैदा न होनेसे मैं शुभलोकको नहीं प्राप्त कर सकूगा। री भीरु! पहिले जैसे मैं बुरी आत्मयुक्त और निष्ठुर कार्य्य में दत्तचित्त था, वैसेही मृगके शाप से मेरी सन्तान पैदा करनेकी शक्ति जाती रही है। धर्म्मशास्त्रोंमें कहा है, कि ६ प्रकारके पुत्र वस्तुके धनके अधिकारी होते हैं, और ६ प्रकारके पुत्र उसके अधिकारी नहीं होते। री पृथे! मै उन बारह प्रकारके पुत्रोंकी बात कहता हूं, सुनो। (पहिला) औरस अर्थात् जो व्याही स्त्रीसे निजके द्वारा पैदा हो, (दूसरा) प्रणीत, अर्थात् जो अच्छे पुरुषके द्वारा निज क्षेत्रसे पैदा हो, (तीसरा) परिक्रीत, अर्थात् जो मोल लिये हुए वीर्य्यके द्वारा निज क्षेत्रसे पैदा हो, (चौथा) पौनर्भव अर्थात् जो विधवाके गर्भमें अन्यके द्वारा पैदा हो,

(५ चवां) कानीन अर्थात् जो कन्यावस्थामें पैदा हो, (छठवां) स्वैरिणीके गर्भसे पैदा हुआ, अर्थात जो गूढ़ वा कुण्ड नामसे प्रसिद्ध है, (सातवां) दत्त अर्थात् जो पूर्व्व पिता मातासे देदिया जाय, (आठवां) क्रीत, अर्थात् जो धन देकर ले लिया गया हो (नवां) उपक्रीत, अर्थात् जो कृत्रिम हो, (दशवां) स्वयं उपागत अर्थात् मैं तुम्हारा पुत्र बना, यह कहके जो स्वयं आवे, (ग्यारहवां) ज्ञातिरेता सहोढ़ अर्थात् जो भाई आदिसे गर्भवती स्त्रीसे विवाह करने पर उसके गर्भसे पैदा हो, (बारहवां) हीनयोनिधृत, अर्थात् जो हीन जाति की स्त्रीसे पैदा हो। इन बारह प्रकारके पुत्रोंमें पहिला न बन पड़े, तो उससे पिछला, फिर उससे पिछला, फिर वहभी न हो तो उससे पिछला, इस प्रकारसे माताको पुत्रकी इच्छा करनी चाहिये। लोग आपत्कालमें उत्तम छोटे सहोदर भाईसे पुत्रकी कामना किया करते हैं। स्वायम्भुव मनुने कहा है, कि मनुष्यगण अपने वीर्य्यके बिना अन्य जनसेभी धर्म्म फल देनेवाले श्रेष्ठ पुत्र प्राप्त कर सकते हैं। अतएव हे कुन्ती! मैं इस समय सन्तान पैदा करने की शक्तिसे रहित हुआ हूं, सो तुमको नियोग करता हूं; तुम सत्य वा श्रेष्ठ-जनसे यशस्वी पुत्र प्रसव करो। हे पृथे! शरदण्डायनकी कन्याकी कथा कहता हूं, सुनो। वह वीरकी स्त्री पतिसे पुत्र पैदा करनेको नियुक्त होकर ऋतु-स्नान करके रात्रिको चौराहे पर खड़ी हुई। आगे एक सिद्ध ब्राह्मणको वरण कर पुंसवन यज्ञमें अग्निको आहुति चढ़ाकर उस धर्म्मको पूरा करनेके पीछे उनसे मिली। इससे दुर्ज्जय आदि तीन महारथियोंका जन्म हुआ। हे कल्याणि! उस प्रकार तुमभी मेरे नियोगसे ऐसे किसी ब्राह्मणसे, जो मुझसे तपमें श्रेष्ठ हो, शीघ्र सन्तान पैदा करने की चेष्टा करो!

सम्भवपर्व्वमें एकसौ बीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे महाराज! कुन्ती यह बात सुन कर कुरुवंशियोंमें श्रेष्ठ भूपति पाण्डुसे बोली कि, हे धर्म्मज्ञ राजीवनेत्र! मैं आपकी धर्म्मपत्नी और आपहीके प्रेममें फंसी हूं; सो आपको मुझसे ऐसा कहना कभी उचित नहीं है। हे वीर महाभुज। धर्म्मानुसार आपही को मुझसे अपने वीर्य्यके द्वारा सन्तान पैदा करनी चाहिये। हे मानवोंमें व्याघ्ररूपी पुरुष! ऐसाही होनेसे मैं आपके साथ स्वर्गमें जा सकूंगी; अतएव हे कुरुनन्दन आपही सन्तानके लिये मुझसे मिलिये क्योंकि मैं मनसेभी दूसरे पुरुषसे मिला नही चाहती; विशेष इस भूमण्डलमें ऐसा कौन है, जो आपसे श्रेष्ठ हो सके? हे धार्म्मिक, विशालाक्ष! पहिले मैंने एक पौराणिक कथा सुनी थी, उसको आपसे कहती हूं; सुनिये। पूर्व्वकालमें कुरुवंश-बढ़ानेवाले परम धार्म्मिक व्युषिताश्व नामक एक प्रसिद्ध राजा थे। उन धर्म्मात्मा महाभुज नरेशके याग आरम्भ करदेने पर इन्द्र सहित देवता और देवर्षिलोग वहां आ पहुंचे थे। आगे उन महात्मा राजर्षि व्युषिताश्वके यज्ञमें देवराज सोमरस पीकर और ब्राह्मणलोग दक्षिणा पाकर उन्मत्तके समान हो गये थे, वे देवगण और ब्रह्मर्षिलोग स्वयं कर्म्म पूरा करने लगे। हे राजन्! जिस प्रकार हिम अन्त होनेपर भगवान् आदित्य सम्पूर्ण भूतोंको पीछे रखकर आगे बढ़कर प्रकाशमान होते हैं, वैसेही व्युषिताश्व सर्व्वलोकोंको पीछे रखकर सोहने लगे। हे श्रेष्ठ-भूप! वह प्रतापी राजेन्द्र व्युषिताश्व दश हस्तीके समान बल रखते थे, सो अश्वमेधयज्ञमें पूर्व्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण, इन चारों ओरके राजाओंको हराके पकड़ पकड़ कर अपने वशमें लाये थे। हे कुरुकुल-श्रेष्ठ! पुराण कहनेवाले लोग यह कथा कहा करते हैं, कि यशवन्त व्युषिताश्वके पृथ्वीनाथ होनेसे उन्होंने समुद्र-

तक इस धरतीको जीतकर सब्बलोकोंका इस प्रकार पालन किया था, कि जैसे पिता औरस पुत्रको पालते हैं। उन्होंने अनन्त रत्न बटोरकर सोमसंस्था अर्थात् ज्योतिष्टोमादि महायज्ञोंको चढ़ाकर अगणित सोमलता निचोड़ी और ब्राह्मणोंको प्रचुर धन दिया था। राजा काक्षीवान् की कन्या भद्रा उनको परम प्यारी स्त्री थी। हे मनुष्योंमें इन्द्ररूपी! भूमण्डलभरमें उस भद्राके समान अनुपम रूपवती नारी कोई दूसरी नहीं थी। उस दम्पतिमें नारी जिस प्रकार पतिहीकी कामना करती थी! उस प्रकार पतिभी उस नारीके प्रेमी थे। अनन्तर भद्राके बड़े प्रेमी व्युषिताश्वको यक्ष्मने घेरा, इससे वह सूर्य्यकी भांति स्वल्प कालके बीचमें अस्त हो गये। उस भूपालके परलोककी सिधारनेपर उनकी स्त्री शोकसे बड़ी विह्वल हुई। हे पुरुषोंमें व्याघ्ररूपी नरेश! भद्राने अति दुःखी होकर जैसा शोक किया था, वह कहती हूं, सुनिये।

भद्रा भर्त्ताकी लक्ष्यकर बोली, कि हे परम धर्म्मज्ञ! पतिके बिना नारी अति निष्फला होती हैं। जो नारी पतिके बिना जीवनको धारण किये रहती है, वह सदा दुःखी होकर मरीभी बनी रहती है। हे क्षत्रियश्रेष्ठ! पतिके बिना अबलाओंकी मृत्युही मङ्गलदायी होती है, अतएव मैं तुम्हारे साथ चली जाना चाहती हूं, प्रसन्न होकर मुझको साथ ले चलो। हे महाराज! तुम्हारे बिना मुझे क्षण भर भी जीनेकी इच्छा नहीं है, अतएव प्रसन्न होओ, मुझको बिना विलम्ब यहांसे ले जाओ। हे राजाओंमें व्याघ्ररूपी पुरुष! चाहे समभूमि हो, चाहे रूखा हो, हर स्थानमें मैं तुम्हारे सङ्ग पीछे पीछे जाऊंगी, फिर न लौटूंगी। हे नरव्याघ्र! मैं तुम्हारी प्रिय और हित करनेमें मग्न, परछाहींके समान पीछे चलनेवाली और सदा आज्ञा माननेवाली बनी रहूंगी! हे पुरुषरत्न! तुम्हारे बिना आजसे कष्टदायी हृदय सोखनेहारी चिन्तापीड़ा मुझको जकड़ लेगी। मुझको निश्चय जान पड़ता है, कि जो एकत्र रहते हैं, वे भाग्यवश मैंने उनको एक दूसरेसे अलग कर दिया था, उस पापहीसे मुझे यह भारी विरह आ पड़ा है। हे पृथ्वीनाथ! जो नारी पतिसे अलग होकर क्षण भरभी जीती रहती है, वह मानो नरकमें घुसकर बड़े ही कष्टसे दिन काटती है। मैंने पूर्व्वजन्ममें इकट्ठे विराजती हुई दम्पतियोंको एक दूसरेसे अलग कर दिया था, उसे पापकर्म्म से बटोरे हुए दुःखने इस समय विरहका स्वरूप लेकर मुझपर चढ़ाई की है। हे भूपाल! मैं आजसे तुमको आंखोंके सामने रखकर कुशोंके विस्तर पर लेटी रहूंगी; किसी सुखसे सुखी न होऊंगी। हे नरव्याघ्र! दर्शन दीजिये। हे नाथ! हे नरनाथ! कातर होकर बिलपती हुई असुखी इस दीना अधीनाको आज्ञा दो।

कुन्ती बोली, कि इस प्रकारसे वह व्युषिताश्वकी स्त्री उस मुर्देसे लिपटकर बार बार भांति भांतिके विलाप कर रही थी, कि ऐसे समयमें यह आकाशवाणी हुई, कि—"भद्रे! उठो, जाओ; री मधुरहासिनी! तुमको वर देता हूं, मैं तेरेसे सन्तान पैदा करूंगा। री सुन्दरी! अष्टमी चतुर्द्दशीमें तू ऋतुस्नान कर मुझसे अपने विस्तर पर लेटना।" यह आकाशवाणी होनेपर पुत्र चाहती हुई देवी पतिव्रता भद्रा उस बातके अनुसार उस प्रकार लेटी रही। हे भरतवंशमें श्रेष्ठ पुरुष! उस देवीने उस शवके वीर्य्यसे तीन शाल्व और चार मद्र, सब सात सन्तान प्रसव कीं। हे भरतश्रेष्ठ! उस प्रकार आपभी तप और योगके बलसे मानसके द्वारा मुझसे सन्तान पैदा कर सकते हैं।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ इक्कीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि धर्मज्ञ राजा पाण्डु देवीसे यह बात सुनकर फिर उनको अच्छा धर्मयुक्त यह वाक्य बोले, कि हे कुन्ति। तुमने जो कहा, वह ठीकही है। व्युषिताश्वने ऐसाही किया था, क्योंकि वह देववत थे; पर धर्मज्ञ महात्मा महर्षियोंने पुराणोंमें धर्मका जो तत्त्व दिखाया है, वह तुमसे कहता हूं, सुनो, ऐ सुन्दरि! पूर्व्वकालमें स्त्रियोंको कुछ मनाही नहीं थी; ऐ मधुरहासिनी! वे उन दिनों स्वतन्त्र अर्थात् पतिआदियोंसे न रोकी जाकर भोगके सुखकी आशामें घूमा करती थीं। ऐ सुन्दरी! वे कुमारी-दशाहीसे व्यभिचार किया करती थीं, इससे उनको अधर्म नहीं होता था, क्योंकि वही पूर्व्वकालका धर्म था। ऐ सुन्दरि! आजतक तिर्य्यग् योनिकी प्रजा-काम-द्वेषसे रहित होकर उस पुराने धर्मसे चलती हैं। महर्षिलोगभी प्रमाणसे दर्शाये हुए इस धर्मको प्रशंसा किया करते हैं, ऐ सुन्दरि! उत्तर-कुरुओंमें आजतक इस धर्मकी पूजा हो रही है, क्योंकि वह सनातन धर्म स्त्रियों पर कृपायुक्त है। पर थोड़े कालसे इस विषयमें वर्त्तमान नियम होरहा है, जिस हेतु जिनसे यह स्थापित हुआ है; विस्तारपूर्व्वक कहता हूं, सुनो।

हमने सुना है, कि उद्दालक नामक एक महर्षि थे। श्वेतकेतु नामसे प्रसिद्ध उनके एक पुत्र भये थे। उन श्वेतकेतुहीने क्रोधित होकर धर्मके अनुसार यह मर्य्यादा ठहरायी है। ऐ पद्मनेत्रवती! उसका कारण सुनो। एक समय एक ब्राह्मण श्वेतकेतुके पिताके सामने उसकी मातासे हाथ थामकर बोला, कि आओ हम चलें। अनन्तर ऋषिकुमार श्वेतकेतु अन्य पुरुषसे माताको लिवाये जाते देखकर दुःखी और क्रोधित हुए। उनके पिता उद्दालक उनको क्रोधसे कांपते हुए देखकर बोले, कि बेटा! तुम क्रोधित मत होओ, सनातन धर्म्म ऐसाही है। इस भूमण्डलमें सर्व्व वर्णोंकीही स्त्रियां विना रोक टोक सबोंसे मिलती हैं। ऐ बेटा! गौके समान सर्व्ववर्णोंकी प्रजाभी निज निज वर्णोंसे व्यवहार किया करती हैं। आगे ऋषिकुमारने वह सहनेको अक्षम होकर भूमण्डलमें स्त्रीपुरुषोंकी यह मर्य्यादा ठहरायी। ऐ महाभागे! हमने सुना है; कि उससे मनुष्य समाजमें यह नियम ठहर गया है; यह दूसरे प्राणियों पर नहीं वर्त्तता है। श्वेतकेतुने यह नियम रचा; कि आजसे जो नारी पतिको तजकर व्यभिचार करेगी, उसको घोर दुःखदायी भ्रूणहत्याका पाप लगेगा। फिरभी इस भूमण्डलमें जो पुरुष कौमारवस्थासे ब्रह्मचारिणी, पतिव्रता प्यारी स्त्रीको तजकर परायी नारीसे मिलेगा उसकोभी वैसाही पाप लगेगा। जो स्त्री पुत्र पैदा करनेके लिये पतिसे न मिलकर उनकी बात नहीं मानेगी, उसकोभी वैसाही पाप पहुंचेगा। हे भीरु! उन उद्दालकके पुत्र श्वेतकेतुने बलपूर्व्वक धर्मके अनुसार यह मर्य्यादा ठहरायी थी। ऐ सुन्दरी! हमने सुना है, कि सौदासकी स्त्री मदयन्ती पतिसे पुत्र पैदा करनेमें नियुक्त होकर महर्षि वसिष्ठके निकट गयी थी और उनसे अश्मक नामके पुत्र प्राप्त किया था। उस कामिनीने भर्त्ताका प्रियकार्य्य करने हीके लिये ऐसा किया था। ऐ पद्मनेत्रे! तुम यहभी जानती हो कि कुरुओंका वंश बढ़ानेके लिये भगवान् कृष्णद्वैपायनसे हम लोगोंका जन्म हुआ। अतएव हे सुन्दरी। इन सब विषयोंको भली भांति आलोचना करके मेरी इस धर्म्मनुसारी बातको मानना तुम्हें उचित है। हे पतिव्रते, राजपुत्रि! धर्म्म जाननेवाले पुरातन धर्मको यह व्याख्या तो करते हैं, कि भार्य्या हर ऋतुमें पतिको छोड़कर अन्यत्र न जाय, शेष अन्य समयमें वह स्वतन्त्र हो सकती हैं; पर ऐ राजपुत्री! वेद

जाननेवाले यहभी कहते हैं, कि चाहे धर्म्म वा अधर्म्म होवे, पति भार्य्यासे जो कहे, भार्य्याको वह अवश्य मानना चाहिये। ऐ सुन्दरि! विशेष मैं पैदा करनेकी शक्तिसे हाथ धो चुका हूं, पर पुत्र पानेकी इच्छाभी रखता हूं, सो हे शुभे! मैं पुत्र देखनेकी इच्छासे तुमको प्रसन्न करनेके लिये लाल उंगलियोंसे सुशोभित इस पद्मपत्र समान हथेलीको सिर पर उठाता हूं। ऐ सुकेशिनी! तुम मेरे नियोगके अनुसार अच्छी तपस्यायुक्त ब्राह्मणसे गुणवन्त पुत्र प्रसव करो। हे पृथुश्रोणि! तुमसे मैं पुत्रवान् जनोंकी गति लाभ करूंगा। पतिके प्रियकार्य्य और हित चाहनेवाली सुन्दरी कुन्ती, शत्रुपुर नाशनेहारे पति पाण्डुकी यह बात सुन कर बोली, कि बालपनमें मैं पिताके घरमें अतिथियोंकी सेवामें नियुक्त थी। उन दिनों प्रशसित व्रतयुक्त ब्राह्मणोंकी भली प्रकार सेवा किया करती थी। एक समय धर्म्मके गूढ़तत्त्व जाननेवाले दुर्व्वासा नामक प्रसिद्ध जितेन्द्रिय महर्षि वहां आये। मैंने उनको सर्व्वप्रकारके प्रयत्नसे सन्तुष्ट किया। उन भगवान्ने मुझको अभिचारयुक्त वर देकर एक मन्त्र दे दिया और कहा, कि तुम इस मन्त्रसे जिन जिन देवोंको बुलाओगी, वह चाहे काम रहे वा नहीं रहे, उसीक्षण तुम्हारे वशमें हो जायंगे। हे रानि! उन देवोंकी कृपासे तुम्हारे पुत्र होंगे। हे भारत! पिताके घरमें उन दुर्व्वासाने मुझसे ऐसा कहा था। हे नृपाल! ब्राह्मणकी बात झूठी नहीं होती। अब उसका समय आ पहुंचा है; अतएव हे राजर्षि! आपकी आज्ञा होवे, तो उस मन्त्रसे किसी देवताको बुला सकती हूं, इससे हमें हितकरने वाला पुत्र प्राप्त होगा। हे सत्यवक्तनेवाले! कहिये, कि मैं किस देवको बुलाऊं आपहीकी आज्ञासे मैं इस कार्य्यमें उपस्थित होती हूं।

पाण्डु बोले, कि हे सुन्दरि! तुम आजही इस बातका यथाविधि प्रयत्न करो। ऐ शुभे! धर्म्मको बुलाओ, क्योंकि वह देवोंमें पुण्यात्मा हैं। ऐ सुन्दरि! धर्म्म हमको किसी प्रकार से अधर्म्ममें डाल नहीं सकेंगे, और लोगभी समझेंगे, यह काम धर्म्मयुक्त ही हुआ है। इसमें सन्देह नहीं है, कि धर्म्मका दिया हुआ वह पुत्र कुरुओंमें धार्म्मिक होगा और उसका मन कभी अधर्म्मसे डसा नहीं जायगा; सो ऐ सुन्दरि! तुम संयत होकर और धर्म्मको आश्रयकर, अभिचार तथा उपचारसे धर्म्म हीको बुलाओ। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर वह श्रेष्ठ नारी कुन्ती भर्त्ताकी वह बात सुन उसको मान, पांव छूकरके उनकी आज्ञा मानली।

सम्भवपर्व्वमें एक सौ बाईस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे जनमेजय! जब गान्धारीने वर्षभर गर्भधारण किया था, तब कुन्तीने गर्भके निमित्त अक्षर धर्म्मको बुला करके शीघ्र उनकी पूजा की और पहिले दुर्व्वासाने जो मन्त्र दिया था, उसको यथाविधि जपने लगी। अनन्तर मन्त्रके प्रभावसे धर्म्मराज सूर्य्य-सदृश यानमें आरूढ़ होकर उस स्थानमें, जहां कुन्ती जपकर रही थी, आन पहुंचे और हंसते हुए बोले, कि ऐ कुन्ति! कहो, तुमको क्या देना होगा। कुन्ती हुइ हंसकर बोली, कि मुझको पुत्र दीजिये। अनन्तर सुन्दरी कुन्तीने योगीका स्वरूप लिये हुए धर्म्मसे मिलकर सर्व्वजीवोंका हित करनेवाला पुत्र प्राप्त किया। इसके पश्चात् कार्त्तिक महीनेकी अति प्रशसित पूर्णा तिथि ... शुक्ला पञ्चमीको चन्द्रयुक्त ज्येष्ठा नक्षत्रमें अभिजित् नामक आठवें मुहूर्त्तमें दिन दोपहरके समय कुन्तीने अति यशवन्त एक श्रेष्ठ पुत्र प्रसव किया। उस पुत्रके जन्म लेतेही आकाशवाणी हुई, कि पाण्डुका यह पहला पुत्र

धर्म्मशील जनोंमें श्रेष्ठ, विक्रमी नरोंमें उत्तम सत्य कहनेवाला, भूमण्डलका एकही अधिकारी, तीनों लोकोंमें प्रशंसित यशवन्त, तेजवन्त व्रतशील और युधिष्ठिर नामसे प्रसिद्ध होगा।" पाण्डु वह धार्म्मिक पुत्र पाकर फिर कुन्तीसे बोले कि पण्डितलोग क्षत्रिय को बलमें श्रेष्ठ कहते हैं, सो तुम एक बलमें प्रधान हो ऐसे पुत्रको प्रार्थना करो। अनन्तर कुन्तीने पति की यह बात सुनकर पवनदेवको बुलाया। आगे महाबली पवनदेव मृग पर चढ़के उसके पास आये और बोले, कि ऐ कुन्ति तुम्हें क्या दूं? तुम्हारे हृदयमें जो इच्छा हो, सो कहो। कुन्ती लज्जासे मुंह नीचाकर कुछ हंस कर बोली, कि हे देवोत्तम। मुझको बड़े शरीरधारी महाबली, सर्व्व अहङ्कारको हरनेहारा एक पुत्र दीजिये। अनन्तर पवनदेवसे महाभुज भीमपराक्रमी भीमका जन्म हुआ। हे भारत। उस महाबली पुत्रके जन्म लेतेही आकाशवाणी हुई, कि "यह जन्म लिया हुआ बालक सम्पूर्ण बलियोंमें श्रेष्ठ होगा।" वृकोदर के जन्म लेतेही यह एक आश्चर्य्य घटना हुई, कि उन्ने माताकी गोदसे गिरकर देहसे पत्थर तोड़ डाला—कुन्ती बाघके भयसे भय खाकर एकायक गिर पड़ी; यह समझ नहीं सकी, कि उसकी गोदमें वृकोदर सोता था, सो वह वज्र समान शरीरधारी कुमार पहाड़ पर गिर पड़ा, उसकी देहकी चोटसे पत्थर सैकड़ों भागोंमें चूर होगया। उस आश्चर्य्य लीलाको देखकर पाण्डुने अचरज माना। हे भरतश्रेष्ठ। जिस दिन भीमने जन्म लिया, उसी दिन पृथ्वीनाथ दुर्य्योधनका जन्म हुआ। वृकोदरका जन्म होनेपर पाण्डु फिर सोचने लगे, कि क्योंकर मेरे एक प्रधान लोकश्रेष्ठ पुत्र पैदा होगा। यह भूमण्डल दैव और पुरुषकारसे पूरा प्रतिष्ठित है, इनमेंसे दैव कालके अनुसार विधि-वश प्राप्त होता है।

सुनता हूं, कि इन्द्र देवोंके राजा तथा प्रधान हैं; वह अपरिमित बल और उत्साहयुक्त हैं, और उनका वीर्य्य तथा प्रकाश भी अपरिमित है। तपस्यासे उनको प्रसन्न कर सकूं, तो महाबली पुत्र पा सकूंगा, वह मुझको जो पुत्र देंगे, वह अवश्यही सबोंसे श्रेष्ठ होगा और रणस्थलमें मर्त्यलोक तथा अमर्त्यलोक वालोंको हरा सकेगा, सो मैं कर्म्म, मन और वाक्यसे कठोर तप करूंगा। अनन्तर कौरवनन्दन महाराज पाण्डुने, महर्षियोंसे परामर्श कर कुन्तीको यह आज्ञा दी, कि वर्ष भरमें पूर्ण होवे, ऐसा कोई शुभ व्रत करो और आपभी उन स्वर्गनायकको उपासनाकी इच्छासे परम समाधिसे कठोर तपस्याको आश्रयकर एक पांवसे खड़े हो सूर्य्यकी धूपमें उदयके कालसे अस्तकालतक तपने लगे। बहुतकाल बीतने पर देवराज उनके पास आपहुंचे और बोले, कि "मैं तुमको तीनों लोकोंमें प्रसिद्ध एक श्रेष्ठ पुत्र दूंगा, वह पुत्र गौ ब्राह्मण और मित्रोंका हित करनेवाला, अमित्रोंको शोक पहुंचानेहारा, सब बान्धवोंका आनन्ददायी और सम्पूर्ण शत्रुकुलका नाश करनेवाला होगा।" महात्मा इन्द्रके यह बात कहनेपर, धर्म्मात्मा कौरव देवराज की उस बातको स्मरण कर कुन्तीसे बोले, कि ऐ कल्याणि। तुम्हारा कर्म्म सुफल हुआ है। देवनाथ प्रसन्न होकर तुम्हें सङ्कल्पित पुत्रको देना चाहते हैं। ऐ सुन्दरी! अब एक और यशस्वी शत्रु दमनेहारा, नीतियुक्त, महात्मा, सूर्य्य समान तेजपूर्ण न हारनेवाला, क्रियावान, देखनेमें अद्भुत, क्षत्रियतेजसे पूरित ऐसे कीर्त्तियुक्त जैसा मनुष्योंमें दीख नहीं पड़ता, पुत्र उत्पन्न करो। ऐ सुन्दरी! मैंने देवराजको प्रसन्न कर लिया है; तुम उनको बुलाओ। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि यशस्विनी कुन्तीने यह सुनकर इन्द्रको बुलाया। अनन्तर देवराजने आकर अर्जुनका जन्म दिया। इसके

जन्म लेतेही बड़े गम्भीर शब्दसे आकाश गूंजकर आकाशवाणी हुई। उससे सम्पूर्ण आश्रममें रहनेवाले प्राणियोंके कानोंमें सुन्दरी कुन्तीको पुकार सहित यह सुन पड़ा, कि ऐ कुन्ति! कार्त्तवीर्य्य सदृश वीर्य्यवान्, शिवि समान पराक्रमी, इन्द्रवत अजीत यह कुमार सर्व्वत्र तुम्हारा यश फैलावेगा। उपेन्द्रसे जिस प्रकार अदितिकी प्रीति बढ़ी थी, वैसेही उपेन्द्रवत यह पुत्र तुम्हारी प्रीति औरभी बढ़ावेगा। यह कुमार मद्र, कुरु, सोमक, चेदि, काशी करुष आदि देशोंको वशमें लाकर कौरववंशकी राजलक्ष्मी धारण करेगा। और इस पुत्रके भुजवीर्य्यसे अग्निदेव खाण्डवप्रस्थमें सर्व्वभूतोंके मेदसे बड़ा सन्तोष प्राप्त करेंगे। यह महाबली वीर पुरुष भाइयोंके सहित सम्पूर्ण महीपालोंको जीतकर तीनवार अश्वमेध यज्ञ करेगा। हे कुन्ति! यह अतियशवन्त पुत्र जामदग्न्य और विष्णु समान पराक्रमी और वीर्य्यवान् जनोंमें श्रेष्ठ होगा। यह युद्धमें महादेव शङ्करको प्रसन्न कर उनसे पाशुपत अस्त्र प्राप्त करेगा और देवराजकी आज्ञासे देवोंके द्वेष करनेवाले निवातकवच नामक दैत्योंको वध करेगा। यह पुरुषोंमें श्रेष्ठ जन, सम्पूर्ण दिव्यास्त्र सीखकर विगड़ी हुई राजलक्ष्मीको फिर सुधारेगा" कुन्तीने पुत्रके विषयमें यह आश्चर्य्य वाणी सुनी। बड़े वेगसे उचारी हुई उस वाणीको सुनकर शतशृङ्ग पर विराजते हुए, तपस्वियोंको बड़ा आनन्द हुआ और विमानपर आरूढ़ देवगणभी बड़े प्रसन्न हुए। आकाशमें बड़े घोर कोलाहलसे नगाड़े बजने लगे, घोर शब्द होने लगा, दिना रोक टोक फूल बरसने लगे और सब देव मिलकर पार्थकी पूजा करने लगे। कद्रु और विनताके पुत्रगण गन्धर्वगण अप्सरागण और प्रजापतियोंके तथा भरद्वाज कश्यप, गौतम विश्वामित्र, जमदग्नि, वशिष्ठ और (सूर्य्यके नष्ट होने पर जो उदित हुए थे, वह भगवान् अत्रि यह सात महर्षि वहां आये। मरीचि अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, प्रजापति दक्ष गन्धर्व्व और अप्सरागण यह भी वहां आये। अप्सरायें दिव्यमाला और दिव्यवस्त्र पहिनकर सर्व्व आभूषणोंसे बन ठनकर अर्ज्जुनकी प्रशंसाके गीत गाने और नाचने लगीं। चारों ओर महर्षिलोग स्वस्त्ययनके मन्त्र जपने लगे; श्रीमान् तुम्बुरुने गन्धर्व्वोंके साथ गीत आरम्भ किया। हे नरेश! भीमसेन, उग्रसेन, ऊर्णायु, अनघ, गोपति, धृतराष्ट्र, सूर्य्यवर्चा, युगप, तृणप, कार्ष्णि, नन्दि, चित्ररथ, शालिशिरा, पर्ज्जन्य, कलि, नारद, सद्वा, बृहद्वा, बृहक, महामना, कराल, ब्रह्मचारी, बहुगुण विख्यात सुवर्ण, विश्वावसु, भुमन्यु, सुचन्द्र, शरु और ललित गीत गानेवाले प्रख्यात हाहा और हुहू यह देव और गन्धर्व्व गीत गाने लगे। प्रशस्तलोचना, महाभागा अप्सरायें सर्व्व आभूषणोंसे सज धजकर प्रसन्न चित्तसे नाचने और गाने लगीं। अनूचाना, अनवद्या गुणमुख्या गुणावरा, अद्रिका, सोमा, मिश्रकेशी, अलम्बुषा, मरीचि, शुचिका, विद्युतपर्णा, तिलोत्तमा, अम्बिका, लक्षणा, क्षेमा, देवी रम्भा, मनोरमा, असिता, सुबाहु, सुप्रिया, सुवपु, पुण्डरीका सुगन्धा, सुरसा, प्रमाथिनी, काम्या और शारदती यह सब अप्सरायें जुट बांध नाचने लगीं। और मेनका सहजन्या, कर्णिका, पुञ्जिकस्थला, ऋतुस्थला, घृताची विश्वाची पूर्व्वचित्ती, उम्लोचा और प्रम्लोचा, उर्व्वशी विशालनेत्रा यह ग्यारह स्वर्गकी वेश्या एकत्र होकर गीत गाने लगीं। धाता, अर्य्यमा, मित्र, वरुण, अंश, भग, इन्द्र, विवस्वान, पूषा त्वष्टा, सविता और विष्णु यह बारह आदित्य और पर्ज्जन्य तथा पावकगण आकाशमें विराजते हुए पाण्डुपुत्र की महिमा बढ़ाने लगे। हे शत्रुनाशी पृथ्वीनाथ। मृग-व्याघ्र, सर्प, ग्रास

यशवन्त निऋति, अजैकपात, अहिर्बुध्न, पिनाकी, दहन, ईश्वर, कपाली, स्थाणु और भगवान् भग यह ग्यारह रुद्र वहां आये। दोनों अश्विनीकुमार, आठो वसु, महाबली मरुद्गण विश्वदेवगण और साध्यगण आनकर वहां विराजने लगे। कर्कोटक, वासुकी, कच्छप कुण्ड और महोरज, तक्षक, यह सब तपयुक्त बड़े क्रोधी महाबली सर्प और दूसरे बहुत नाग वहां आपहुंचे। तार्क्ष्य, अरिष्टनेमि, गरुड़, असितध्वज, अरुण और आरुणि यह सब विनताके पुत्रभी वहां आ गये। विमानों पर चढ़े और पर्व्वत की चोटीपर टिके देवों को तपमें सिद्ध महर्षि लोग देखने लगे, किसी दूसरे ने नहीं देखा। मुनियोंने वह सब अति आश्चर्य्य लीला देखकर अचरज माना और भी श्रद्धा करने लगे, अति यशवन्त पाण्डुने पुत्रके लोभसे फिर धर्म्मपत्नी कुन्तीको नियोग करना चाहा। उसपर कुन्ती उनसे बोली, कि धर्म्म जाननेवाले लोग आपत्कालमेंभी चौथे प्रसवकी प्रशंसा नहीं करते, क्योंकि चौथे पुरुषसे नारि स्वैरिणी होती है और पांचवें पुरुषसे मिलने से वेश्या होती है। हे विद्वन्! आप यह धर्म्म जानने पर भी क्यों बावलेके समान उसको नांघ कर फिर सन्तान के लिये मुझसे कहते हैं?

सम्भवपर्व्वमें एकसौ तेईस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले; कि अनन्तर कुन्ती और गान्धारीके पुत्रोंके पैदा होने पर माद्री निरालेमें पाण्डुसे बोली, कि हे शत्रुनाशिन्! आपके मुझपर कृपायुक्त न रहनेके कारण भी कोई विशेष दुःख नहीं है, हे अनघ! कुन्तीसे श्रेष्ठ होकर सदा अश्रेष्ठ सुझी बनी रहने परभी दुःख नहीं है, हे नरनाथ कुरुनन्दन। गान्धारीके सौ पुत्र भये सुनकरके भी मुझे कोई बड़ा क्लेश नहीं हुआ है, पर इतना मुझे बड़ा दुःख है, कि हम दोनो सौत समान हैं, पर तौभी मेरे सन्तान नहीं हुई, भाग्यवश कुन्तीसे आपके सन्तान हुई है, इस समय यदि कुन्तीराजपुत्री मेरे सन्तान होनेके उपाय कर दें, तो मुझपर बड़ी दया होवे और उससे आपकोभी हित हो सकता है कुन्तीपुत्री मेरी सौत है, सो उससे स्वयं कहनेको अभिमान होता है, यदि आप मुझ पर प्रसन्न होवें, तो आपही उनको आज्ञा दीजिये।

पाण्डु बोले, कि ऐ माद्रि! इस विषयमें मैं सदा मनही मनमें आलोचना किया करता हूं, पर यह तुम्हारा इष्ट है, वा नहीं यही जानने की अपेक्षामें तुमसे कहनेका साहस नहीं हुआ था; अब तुम्हारा मत जान लिया, सो उस विषयमें प्रयत्नभी करूंगा, जान पड़ता है, कि मेरे कहनेसे कुन्ती मान लेगी।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर पाण्डु फिर निरालेमें कुन्तीसे बोले, कि ऐ कल्याणि! मेरी प्रीति के लिये लोकोंके प्रिय कल्याणयुक्त ऐसा काम करो, कि जिससे मेरा वंश न उखड़े और मेरे पितरोंके और तुम्हारेभी पिण्डलोप होने की सम्भावना न रहे। ऐ भामिनि! तुम यशके लिये इस कठिन कार्य्यमें हाथ डालो। देखो, देवोंके अधिकारी होने परभी केवल यशके लिये देवराजने यज्ञ किया था। मन्त्रजाननेवाले ब्राह्मणलोग यज्ञोंके लिये कठोर तप कर कर गुरुकी उपासना किया करते हैं और राजर्षि तथा तपोधन ब्राह्मणलोगोंने केवल यशहीके लिये नाना कठिन कर्म्म किये हैं, अतएव ऐ निन्दा वर्ज्जित प्यारी। तुम सन्तानरूपबेड़ेसे माद्रीका उद्धार करो। उसको पुत्रवती कर परम कीर्त्ति लो। कुन्ती यहसुनकर माद्रीसे बोली, कि तुम एकबार किसी देव का स्मरण करो, इसमें सन्देह नहीं, कि उनसे तुम्हारे उनके सदृश, पुत्र होगा। माद्रीने मनही मनमें विचार कर दोनों अश्विनी कुमारोंको स्मरण किया।

कुमारोंने वहां आकर नकुल और सहदेव नामक अनुपम रूपवान् दो यमज पुत्रोंका जन्म दिया। तब आकाशवाणी हुई, कि "सत्यरूपी गुणयुक्त यह दो कुमार रूपसम्पदमें दोनों अश्विनी कुमारोंसेभी अधिक प्रकाशित हुए हैं।,, हे पृथ्वीनाथ। अनन्तर शतशृङ्ग पर रहनेवाले ब्राह्मणोंने कुमारोंके पुत्रोंमें आश्चर्य कर्म्म और भक्ति देखकर प्रसन्न चित्तसे अशीस देके नाम रख दिये। उन्होंने कुन्तीके पुत्रोंमें बड़ेका नाम युधिष्ठिर, मझलेका नाम भीमसेन, तीसरेका नाम अर्ज्जुन और माद्रीके दो पुत्रोंमेंसे पहिले जन्म लिये हुए पुत्रका नाम नकुल और दूसरेका नाम सहदेव रखा। कुरु-वंशमें श्रेष्ठ पाण्डुपुत्रगण बालेपनमें महाबली, पराक्रमी, महासत्वयुक्त और बड़े वीर्य्यवन्त हुए। उनकी आयु जब वर्ष-भरकी हुई, तब वे पांच वर्षकी अवस्थावाले जान पड़ने लगे। नरनाथ पाण्डु उन पुत्रोंकों देव समान और बड़े तेजस्वी देखकर बड़े आनन्दित हुए। पाण्डवगण शतशृङ्ग पर रहनेवाले मुनियोंके और उनकी स्त्रियोंकेभी प्यारे बने। अनन्तर पाण्डुने फिर निरालेमें माद्रीके लिये कुन्तीसे विनय की, तब कुन्तीने उत्तर दिया, कि मेरे एकवार कहने से माद्रीने दो पुत्र लाभ किया है, इससे मै ठगी गयी हूं, सो अब उससे हारनेका भय खाती हूं क्योंकि बुरी नारियोंका स्वभाव ऐसाही होता है। मैं मूर्ख हूं पहिले नहीं जानती थी, कि एकही बार दो देवोंके बुलानेसे दो पुत्र पैदा होते हैं, सो आपसे यह वर मांगती हूं, कि आप इस विषयमें मुझे आज्ञा न कीजिये। महाराज। इस प्रकारसे पाण्डुके देवोंके दिये हुए महाबली कीर्त्तिमान्, कुरुवंश बढानेवाले पांच पुत्र उत्पन्न हुए थे। वे मानवोंमें श्रेष्ठ पाण्डवलोग शुभलक्षणयुक्त, चन्द्रमाके समान देखनेमें प्रिय और आभाधारी, सिंह समान चलनेवाले, सिंह सत्वयुक्त, सिंहकीनाईं आंखधारी, सिंहकी भांति सदृश विक्रमी, सिंहकी भांति गर्दनयुक्त, सिंहके विक्रमसे पूरित स्थानमें जानेवाले और देवोंके समान विक्रमयुक्त होकर दिन पर दिन बढ़ने लगे। पवित्र हिमालयपर एकत्रित महर्षि लोगोंने उनको उस प्रकार बढ़ने देखकर अच-रज माना था। जिस प्रकार जलमें थोड़े कालमें पद्मवन खिल उठता है, वैसे ही वे एक सौ पांच कौरव स्वल्प कालमेंही बढ़ उठे।

सम्भव पर्व्वमें एकसौ चौबीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर पाण्डु देखनेके योग्य उन पांच पुत्रोंको देखकर केवल अपने भुजबलकी आश्रयसे उस पहाड़पर भारी वनमें सुखसे काल काटने लगे। एक समय प्राणियोंके मोहनेवाले वसन्तके आने पर नाना फूलोंसे सजे सजाये वनमें राजा पाण्डु स्त्रीके साथ घूमने लगे। देखा, कि चारों ओर गूंजनेवाले भंवरोंसे ढपे हुए पलाश, तिलक, आम, चम्पा, पारिभद्रक, कर्णिकार, केशर, अतिमुक्त, अशोक, कुरुवक, खिले मान्दारवन और दूसरे पौधे नाना फल फलोंसे सजे हैं; कोयल कूक रही कुलहलाय रही हैं; मधुमक्खी भन भनाती हुई, गीत गारही हैं; और नाना स्थानोंके ताल खिले पद्मवनोंसे सुशोभित हुए हैं। चितकोमत्त करनेवाले उन वनोंको देखते हुए राजा पाण्डुके हृदयपर कामदेवका अधिकार प्रगट हुआ। अच्छा वस्त्र पहिरे हुई माद्री अकेली प्रफुल्लितचित्त और देवता समान घूमते हुए उन राजाके पीछे पीछे चलने लगी। तब पतला वस्त्र पहिरे हुई युवती माद्रीको देखकर राजाके हृदयमें इस प्रकार मदनकी आग सुलग उठी, कि जैसे वनमें आग बल उठती है। वह निरालेमें उस पद्मनेत्रा वालाको देखतेही एकवारही कामके वशमें होगये, किसी प्रकार कामको रोक नहीं सके।

सो असहाया धर्म्मपत्नीको बलसे पकड़ लिया। तब देवी माद्री अपने पूरे बल और शक्तिसे रोकने लगी पर राजा तब कामसे एकबार ही बावले बने थे, सो प्राणनाशी पूर्व्व कथित शापके भयको उनके चित्तमन्दिरमें स्थान नहीं मिला। हे कौरव! उस कालमें मदनकी आज्ञा से चलते हुए, पाण्डु विधिवश शापके भयको भूलकर मानो जीवन छोड़नेहीके लिये बलसे माद्रीको पकड़कर मैथुनधर्म्मके पथिक बने। उस कामयुक्त पुरुषकी बुद्धि साक्षात-कालसे मोहित होकर इन्द्रियोंको मंथनकर चेतना सहित जाती रही थी, सो वह परम धार्म्मिक कुरुनन्दन पाण्डु स्त्रीसे मिलकर कालके धर्म्ममें नियुक्त हुए।

अनन्तर माद्री चेतना रहित भूपालसे लिपटी रह करकेही बार बार दुःखसे चिल्लाकर गला फाड़ने लगी। आगे पुत्रोंके साथ कुन्ती और माद्रीके दोनों पुत्र उस शोकयुक्त शब्दको सुनकर एकत्र हो करके वहां जाने लगी, जहा राजाकी वह दशा हुई थी। हे महाराज! तब माद्री कातर स्वरसे कुन्तीसे बोली, कि तुम अकेलीही यहा आओ, लड़के वहीं रहें। कुन्ती यह सुनकर लड़कोंको वहीं छोड़कर यह कहके रोती हुई कि "मैं मारी गयी" उसी-क्षण वहा आ पहुंची। वह माद्रीके साथ पाण्डुको धरतीपर लेटे हुए देखकर शोकसे विह्वल हुई और अति दुःखसे बिलपती हुई बोली, कि इस जितेन्द्रिय वीरको मै सदा बचाती फिरतीथी, इन्होंने ऋषिके शापसे ज्ञात रह करकेभी क्योंकर तुझपर आक्रमण किया? री माद्रि! इस भूपालको तुझे बचाना उचित था, वह न करके तूने क्यों इनको निरालेमें लुभाया? यह शापसे ग्रसित होनेके कालसे सदा दुःखी चित्तसे उस शापके सोचमें रहते थे, फिर निरालेमें तुझे पाकर क्योंकर इनके चित्तमें हर्ष आन खड़ा हुआ? री वाह्लीकि! तू मुझसे धन्य और भाग्यवती है, क्योंकि तूने कामयुक्त भूपालका प्रफुल्ल मुख देखा है। माद्री बोली, कि ऐ देवि! मैं बिलपती हुई, बार बार रोकने लगी, पर राजा शापहीसे दुर्भाग्यता सफल करनेहीके लिये अपनेको नहीं रोक सके। अनन्तर कुन्ती बोली, कि मैं बड़ी धर्म्मपत्नी हूं, प्रधान धर्म्मफल मुझकोही मिलता है, सो री माद्री। अवश्यमेव होनेवाले विषयसे मुझे मत रोक; मैं परलोकको सिधारे हुए, पतिके साथ ही जाऊं, तू इनको छोड़कर इन लड़कोंको पालना। माद्री बोली, कि मैंने पतिको पकड़ रखा है, भागने नहीं दिया है, मैंही इनके साथ जाऊंगी, क्योंकि मैं कामरससे भली प्रकार तृप्त नहीं हुई हूं, तुम बड़ी, हो सो मुझे आज्ञा दो। यह भरत कुलके प्रदीप मुझसे मिलकरकेही कामसे च्युत हुए हैं, सो मैं यमराजके घरमें क्योंकर इनके उस कामको उखाड़ डालूगी? ऐ आर्य्ये! ऐसा जान नहीं पड़ता है, कि मैं जीती रहकर तुम्हारे पुत्रोंको अपने पुत्रोंकी भांति पाल सकूगी, सो उस हेतु मुझको पापकी आंच लग सकती है, अतएव ऐ कुन्ति! तुम मेरे इन दोनो पुत्रोंसे अपने पुत्रकी भांति बर्त्ताव करना, यह राजा मेरीही कामना करके परलोकको सिधारे हैं, सो इनके शरीरसे मेरे इस शरीरको ढांपकर फूकना। ऐ आर्य्ये! मेरे इस प्रिय कार्य्यके करनेमें असम्मत मत होना। फिरभी तुम मेरे हित चाहनेवाली होकर लड़कों पर ध्यान रखना, इसके अतिरिक्त मैं नहीं समझती हू कि मुझे और कुछ कहनेको है। वैशम्पायनजी बोले, धर्म्मपत्नी यशयुक्ता मद्रराज-कन्या यह कहकर बिना विलम्ब चिताकी आगमें स्थित पाण्डुके सङ्ग मे गयी।

सम्भव पर्व्वमें एकसौ पचीस अध्याय समाप्त।

कुमारोंने वहां आकर नकुल और सहदेव नामक अनुपम रूपवान् दो यमज पुत्रोंका जन्म दिया। तब आकाशवाणी हुई, कि "सत्यरूपी गुणयुक्त यह दो कुमार रूपसम्पदमें दोनों अश्विनी कुमारोंसेभी अधिक प्रकाशित हुए हैं।" हे पृथ्वीनाथ! अनन्तर शतशृङ्ग पर रहनेवाले ब्राह्मणोंने कुमारोंके पुत्रोंमें आश्चर्य कर्म्म और भक्ति देखकर प्रसन्न चित्तसे अशीस देके नाम रख दिये। उन्होंने कुन्तीके पुत्रोंमें बड़ेका नाम युधिष्ठिर, मझलेका नाम भीमसेन, तीसरेका नाम अर्ज्जुन और माद्रीके दो पुत्रोंमेंसे पहिले जन्म लिये हुए पुत्रका नाम नकुल और दूसरेका नाम सहदेव रखा। कुरु-वंशमें श्रेष्ठ पाण्डुपुत्रगण बालपनमें महाबली, पराक्रमी, महासत्त्वयुक्त और बड़े वीर्य्यवन्त हुए। उनकी आयु जब वर्ष-भरकी हुई, तब वे पांच वर्षकी अवस्थावाले जान पड़ने लगे। नरनाथ पाण्डु उन पुत्रोंको देव समान और बड़े तेजस्वी देखकर बड़े आनन्दित हुए। पाण्डवगण शतशृङ्ग पर रहनेवाले मुनियोंके और उनकी स्त्रियोंकेभी प्यारे बने। अनन्तर पाण्डुने फिर निरालेमें माद्रीके लिये कुन्तीसे विनय की, तब कुन्तीने उत्तर दिया, कि मेरे एकवार कहने से माद्रीने दो पुत्र लाभ किया है, इससे मैं ठगी गयी हूं, सो अब उससे हारनेका भय खाती हूं क्योंकि बुरी नारियोंका स्वभाव ऐसाही होता है। मैं मूर्ख हूं पहिले नहीं जानती थी, कि एकही बार दो देवोंको बुलानेसे दो पुत्र पैदा होते हैं, सो आपसे यह वर मांगती हूं, कि आप इस विषयमें मुझे आज्ञा न कीजिये। महाराज! इस प्रकारसे पाण्डुके देवोंके दिये हुए महाबली कीर्त्तिशाली, कुरुवंश बढ़ानेवाले पांच पुत्र उत्पन्न हुए थे। वे मानवोंमें श्रेष्ठ पाण्डवलोग शुभलक्षणयुक्त, चन्द्रमाके समान देखनेमें प्रिय धनुर्धारी, सिंह समान छातीवाले, सिंह सत्वयुक्त, सिंहकीनाई आंखधारी, सिंहकी भांति सदृश विक्रमी, सिंहकी भांति गर्दनयुक्त, सिंहके विक्रमसे पूरित स्थानमें जानेवाले और देवोंके समान विक्रमयुक्त होकर दिन पर दिन बढ़ने लगे। पवित्र हिमालयपर एकत्रित महर्षि लोगोंने उनको उस प्रकार बढ़ने देखकर अचरज माना था। जिस प्रकार जलमें थोड़े कालमें पद्मवन खिल उठता है, वैसे ही वे एक सौ पांच कौरव स्वल्प कालमेंही बढ़ उठे।

सम्भव पर्व्वमें एकसौ चौबीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर पाण्डु देखनेके योग्य उन पांच पुत्रोंको देखकर केवल अपने भुजबलके आश्रयसे उस पहाड़पर भारी वनमें सुखसे काल काटने लगे। एक समय प्राणियोंके मोहनेवाले वसन्तके आने पर नाना फूलोंसे सजे सजाये वनमें राजा पाण्डु स्त्रीके साथ घूमने लगे। देखा, कि प्यारे और गूंजनेवाले भंवरोंसे छपे हुए पलाश, तिलक, आम, चम्पा, पारिभद्रक, कर्णिकार, केशर, अतिमुक्त, अशोक, कुरुवक, खिले मान्दारवन और दूसरे पौधे नाना फल फलोंसे सजे हैं; कोयल हर घड़ी कुलहलाय रही हैं; मधुमक्खी भन-भनाती हुई, गीत गा रही हैं; और नाना स्थानोंके ताल खिले पद्मवनोंसे सुशोभित हुए हैं। चित्तको मत्त करनेवाले उन बनोंको देखते हुए राजा पाण्डुके हृदयपर कामदेवका अधिकार प्रगट हुआ। अच्छा वस्त्र पहिरी हुई माद्री अकेली प्रफुल्लितचित्त और देवता समान घूमते हुए उन राजाके पीछे पीछे चलने लगी। तब पतला वस्त्र पहिरे हुई युवती माद्रीको देखकर राजाके हृदयमें इस प्रकार मदनकी आग सुलग उठी, कि जैसे वनमें आग बल उठती है। वह निरालेमें उस पद्मनेत्रा बालाको देखतेही एकवारही कामके वशमें होगये, किसी प्रकार कामको रोक नहीं सके।

सो पसहाया धर्म्मपत्नीको बलसे पकड़ लिया। तब देवी माद्री अपने पूरे बल और शक्तिसे रोकने लगी पर राजा तब कामसे एकबार ही बावले बने थे, सो प्राणनाशी पूर्व्व कथित शापके भयको उनके चित्तमन्दिरमें स्थान नहीं मिला। हे कौरव! उस कालमें मदनकी आज्ञा से चलते हुए, पाण्डु विधिवश शापके भयको भूलकर मानो जीवन छोड़नेहीके लिये बलसे माद्रीको पकड़कर मैथुनधर्म्मके पथिक बने। उस कामयुक्त पुरुषकी बुद्धि साक्षात-कालसे मोहित होकर इन्द्रियोंको मंथनकर चेतना सहित जाती रही थी, सो वह परम धार्म्मिक कुरुनन्दन पाण्डु स्त्रीसे मिलकर काल-के धर्म्ममें नियुक्त हुए।

अनन्तर माद्री चेतना रहित भूपालसे लिपटी रह करकेही बार बार दुःखसे चिल्लाकर गला फाड़ने लगी। आगे पुत्रोंके साथ कुन्ती और माद्रीके दोनों पुत्र उस शोकयुक्त शब्दको सुनकर एकत्र हो करके वहां जाने लगे, जहां राजाकी वह दशा हुई थी। हे महाराज! तब माद्री कातर स्वरसे कुन्तीसे बोली, कि तुम अकेलीही यहां आओ, लड़के वहीं रहें। कुन्ती यह सुनकर लड़कों को वहीं छोड़कर यह कहके रोती हुई कि "मैं मारी गयी" उसी-क्षण वहां आ पहुंची। वह माद्रीके साथ पाण्डुको धरतीपर लेटे हुए देखकर शोकसे विह्वल हुई और अति दुःखसे विलपती हुई बोली, कि इस जितेन्द्रिय वीरको मैं सदा बचाती फिरतीथी, इन्होंने ऋषिके शापसे त्रास रह करकेभी क्योंकर तुझपर आक्रमण किया? री माद्रि! इस भूपालको तुझे बचाना उचित था, वह न करके तूने क्यों इनको निरालेमें लुभाया? यह शापसे ग्रसित होनेके कालसे सदा दुःखी चित्तसे उस शापके सोचमें रहते थे, फिर निरालेमें तुझे पाकर क्योंकर इनके चित्तमें हर्ष आन खड़ा हुआ? री बाह्लीकि! तू मुझसे धन्य और भाग्यवती है, क्योंकि तूने कामयुक्त भूपालका प्रफुल्ल मुख देखा है। माद्री बोली, कि ऐ देवि! मैं विलपती हुई, बार बार रोकने लगी, पर राजा शाप-हेतु दुर्भाग्यता सफल करनेहीके लिये अपनेको नहीं रोक सके। अनन्तर कुन्ती बोली, कि मैं बड़ी धर्म्मपत्नी हूं, प्रधान धर्म्मफल मुझकोही मिलता है, सो री माद्री! अवश्यमेव होनेवाले विषयसे मुझे मत रोक; मैं परलोकको सिधारे हुए पतिके साथ ही जाऊं, तू इनको छोड़कर इन लड़कोंको पालना। माद्री बोली, कि मैंने पतिको पकड़ रखा है, भागने नहीं दिया है, मैंही इनके साथ जाऊंगी, क्योंकि मैं कामरससे भली प्रकार तृप्त नहीं हुई हूं; तुम बड़ी, हो सो मुझे आज्ञा दो। यह भरत कुलके प्रदीप मुझसे मिलकरकेही कामसे च्युत हुए हैं, सो मै यमराजके घरमें क्योंकर इनके उस कामको उखाड़ डालूंगी? ऐ आर्य्ये! ऐसा जान नहीं पड़ता है, कि मैं जीती रहकर तुम्हारे पुत्रोंको अपने पुत्रोंकी भांति पाल सकूंगी, सो उस हेतु मुझको पापकी आंच लग सकती है, अतएव ऐ कुन्ति! तुम मेरे इन दोनों पुत्रोंसे अपने पुत्रकी भांति बर्त्ताव करना, यह राजा मेरीही कामना करके परलोक को सिधारे हैं, सो इनके शरीरसे मेरे इस शरीरको ढांपकर फूकना। ऐ आर्य्ये! मेरे इस प्रिय कार्य्यके करनेमें असम्मत मत होना। फिरभी तुम मेरे हित चाहनेवाली होकर लड़कों पर ध्यान रखना, इसके अतिरिक्त मैं नहीं समझती हूं, कि मुझे और कुछ कहनेको है। वैशम्पायनजी बोले, धर्म्मपत्नी यशयुक्ता मद्रराज-कन्या यह कहकर बिना विलम्ब चिताकी आगमें स्थित पाण्डुकी सङ्ग मे गयी।

सम्भव पर्व्वमें एकसौ पचीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि देवोंकी भांति युक्तिदाता महर्षि तपस्वीगण पाण्डुकी मृत्युको देखकर आपसमें कहने लगे, कि अति यशस्वी महात्मा पाण्डुने राज्यको छोड़के इस स्थानमें तप करते हुए तपस्वियोंकी शरण ली थी। वह स्त्री और बालकपुत्रोंको इस स्थानमें तुम्हारे पास व्यासकी भांति रखकर यहांसे स्वर्गको पधारे, सो चलो, हम उन महात्माकी स्त्री पुत्र और देहको लेकर उनके राज्यमें जायं, तभी हमारे धर्मको रक्षा होगी।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि उदारचित्त, सिद्ध और देवसदृश महर्षियोंने आपसमें ऐसी युक्तिकर भीष्म और धृतराष्ट्रके निकट सौंप देनेके लिये पाण्डवोंको आगे करके हस्तिना-पुरको जाना चाहा। वे उसीक्षण पाण्डुकी स्त्री, पुत्र और दोनों मुर्दोंको लेकर पधारे। पुत्र-प्रेमयुक्त कुन्तीने पहिले सदा सुखी रहने पर भी अब निज देशमें जानेके कौतूहलसे उस दूर पथसे चलनेपर उसको स्वल्प जाना। उस यशस्विनीने स्वल्पकालके बीचहीमें कुरु-जाङ्गलमें पहुंचकर नगरके प्रधान द्वारको प्राप्त किया। तब तपस्वीलोग द्वारवानोंसे बोले, कि राजासे हमारे आनेकी बात कहो। द्वारवानने उसीक्षण राजसभामें जाकर वह समाचार सुनाया। हस्तिनापुरमें सहस्रों गुह्यक और मुनियोंके आनेका समाचार सुन पुरवासी प्रजाओंने अचरज माना। अनन्तर सूर्य्य उगनेके क्षणभर पीछे पुरवासीलोग तपस्वियोंके दर्शनके निमित्त स्त्री पुत्रादिके साथ पहुंचने लगे। यानोंपर चढे स्त्री-सहित क्षत्रियगण और ब्राह्मणोंके साथ ब्राह्मणियां चलीं, वैश्य तथा शूद्रोंकीभी बड़ी भीड़ लगी। उस समय किसीने किसी पर द्वेष प्रगट नहीं किया, सबोंकी बुद्धि धर्ममार्ग में लगी रही। शान्तनुपुत्र भीष्म, वाह्लीक, सोमदत्त, प्रज्ञाचक्षु राजर्षि धृतराष्ट्र विदुर, देवी सत्यवती, यशस्विनी काशीराजकन्या और राजरानियोंके साथ गान्धारीभी निकली। दुर्य्योधन आदि धृतराष्ट्रके सौ पुत्र भी नाना सुन्दर गहनोंसे सजकर आये। पुरोहितके साथ कौरवलोग उन सब महर्षियोंको देखकर सिर नायकर प्रणाम करके सामने आ बैठे। उस प्रकार नागरिक और ग्रामवासी सभी भूमिपर स्वागतकर सिर नाय करके प्रणाम पूर्व्वक उनके सामने जा बैठे। हे प्रभो! अनन्तर भीष्म चारों ओर सब लोगोंको चुप चाप देखकर पाद्य और अर्घ्यसे न्यायके अनुसार उन महर्षियोंकी पूजाकर राज्य और राजाका हाल कह सुनाया। इसके पश्चात उनमें सबोंसे बूढ़े, जटा अजिन धरे हुए, एक महर्षि उठे और साथी ऋषियोंकी सम्मति लेकर यह बात बोले, कि कौरव-राज्यके अधीश पाण्डु नामक जो भूपाल कामके भोगको तजकर यहांसे शतशृङ्ग पर गये थे, उनके ब्रह्म-चर्य्य व्रतके लेनेपर किसी दिव्य कारणसे उस शतशृङ्ग पर साक्षात् धर्म्मसे इस पुत्रका जन्म हुआ है, इनका नाम युधिष्ठिर है। फिरभी उस महात्मा राजाने पवनसे बलवानोंमें श्रेष्ठ, भीम नामक यह पुत्र प्राप्त किया है। सत्य परा-क्रमी इस बालकने देवराजसे कुन्तीके गर्भसे जन्म लिया है, इसकी कीर्त्ति सम्पूर्ण चाप धारि-धारियोंको पराजय करेगी। अन्य, दोनों अश्विनी कुमारोंसे माद्रीने जो दो महा चाप-धारी पुरुष-श्रेष्ठोंको प्रसव किया है, उन पुरुष व्याघ्रोंकोभी यह देखो। यशस्वी पाण्डुने धार्म्मिक और वनचारी होकरके प्रायः नष्ट होनेवाले पितामह-वंशका फिर उद्धार किया है। तुम पाण्डुके पुत्रोंका जन्म, वृद्धि और वेद पठनकी भली प्रकार आलोचना करके सदा परम प्रीति प्राप्त करोगे। पाण्डु साधु-ओंकी पदवीमें चढ़कर और पुत्र प्राप्त कर आज सातदिन हुए पितृलोकको सिधारे हैं।

पतिव्रता माद्री उनको चितापर स्थित और अग्निके मुखमें आहुति चढ़ते देखकर उस अग्निमें प्रवेश करके अपना जीवन त्यागकर पतिके साथ पतिलोकमें गयी है। अब उनके परलोककी जो कुछ क्रिया करनी हो, करो! उनके यह दो शरीर और माताके साथ यह श्रेष्ठ पुत्रगण क्रियासे शुद्ध होवे। प्रेतक्रिया हो जानेपर अति यशस्वी सर्व्व-धर्म्म जाननेवाले कुरुवंशियोंमें श्रेष्ठपुरुष पाण्डु पितृ यज्ञको प्राप्त करें। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि तपस्वी-लोग यह कहकर उनके सामने ही गुह्यकोंके साथ क्षण भरमें अन्तर्हित हुए। उन ऋषि और सिद्धोंको गन्धर्व्वके नगरकी भांति अर्थात् भ्रमसे आकाशमें भुण्डादियुक्त जो नगर दीख पड़ता है, उसके समान उपस्थित होते और फिर अन्तर्हित होते देखकर सबोंने अचरज माना।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ छब्बीस अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, कि हे विदुर। राजविधिके अनुसार राजाओंमें सिंहरूपी पाण्डु और माद्री की सम्पूर्ण प्रेतक्रिया भले प्रकार निर्व्वाह करो। पाण्डु और माद्रीके नामसे पशु, वस्त्र, रत्न और नाना, धन,जिनको जितनी इच्छा हो, वह उनको दान कर दो। ऐसा करो, कि कुन्ती माद्रीका सत्कार करे और माद्रीको भले प्रकार ऐसे तोप ताप रखो, कि वह पवन और सूर्य्यसेभी न दीख पड़े। निष्पाप पाण्डुको दशा बुरी नहीं है,क्योंकि देवकुमार समान शूरतापूरित पांच पुत्र उत्पन्न हुए हैं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भारत। विदुर उनको "जो आज्ञा हो।"कह कर भीष्मके साथ परम पवित्र स्थानमें पाण्डुके सत्कारमें प्रवृत्त हुए। राजपुरोहितलोग शीघ्रतापूर्व्वक राजपुरोंसे राजा- पाण्डुके आज्यकी गन्धसे सुगन्धी प्रज्वलित नानाग्निको उनको दाहनेके लिये ले आये। अनन्तर मन्त्री, ज्ञाति और मित्रवर्ग वस्त्रसे पाण्डुके शरीरको तोपकर और भांति भांतिके फूल, अच्छी गन्धयुक्त पदार्थ मूल्यवान वस्त्र और माला आदिसे पाल्कीमें सुशोभित कर उनके निकट जा पहुंचे। उसके पीछे उस सजे सजाये यानमें नरोंको जोत कर उसपर माद्रीसे लिपटे हुए भलीभांति ढंपे नरश्रेष्ठ पाण्डुको ले जाने लगे और शुक्ल छत्र धर कर चंवर हिला कर और अनेक बाजे बजा कर उनको बड़ी शोभा कर दी। पाण्डुकी और्द्धदैहिक क्रियाके लिये सैकड़ों मनुष्य बहुत रत्न लेकर मांगनेवालोंको बांटने लगे और पाण्डुके लिये शुक्ल छत्र बड़ा चंवर और मनोहर वस्त्र बटोरे। पुरोहित लोग शुक्लवस्त्र पहिन कर जलते हुए अलंकृत अग्निमें आहुति चलाते हुए उनके आगे चलने लगे और सहस्रों ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र शोकयुक्त हो-कर रो रो कर यह कहते हुए राजाके पीछे चलने लगे, कि हे नराधिप। आप हमको कठोर दुःखमें त्याग अनाथकर कहां चले?

अनन्तर पाण्डवगण, भीष्म और विदुरने रोते हुए चलकर मङ्गलमयी गङ्गातटके सुन्दर वनयुक्त खण्डमें समभूमि पर सत्यवादी सुकर्म्मी स्त्रीसहित नरसिंह पाण्डुकी पाल्की धरी। उसके पीछे उन्होंने कृष्णअगुरुसे लिप्त, चन्दनसे चर्चित और सर्व्व सुगन्धसे सुगन्धित पाण्डुकी देहको सुवर्णके घड़ेमें लाये हुए जलसे नह-लाकर चारो ओर श्वेत-चन्दन लगा दिया, आगे कृष्णअगुरुसे मिले हुए तुङ्गरस नामक सुगन्धी पदार्थसे लिप्त कर उनको देशीय शुक्ल-वस्त्रसे तोप दिया। मूल्यवान विस्तरपर महाराज पांडु वस्त्रसे तोपे जाकर जीवितके समान शोभा पाने लगे। अनन्तर ऋत्विजोंकी आज्ञानुसार प्रेतक्रिया होजाने पर उन्होंने घृतमें नहाये और अलंकृत माद्री-सहित राजाको तुङ्ग औ पद्मनामक सुगन्धि पदार्थोंसे मिले हुए

चन्दनकी लकड़ी, तथा दूसरे भांति भांतिके अच्छे गन्धयुक्त पदार्थोंसे विधिपूर्व्वक दाहने लगे। तब काशीराजकी पुत्री कौशल्या मोहसे "हा पुत्र! हा पुत्र।" यह बात कहती हुई एकायक धरती पर लोट गयी। नगरवाले तथा जनपदवासी उनको शोकयुक्त और गिरजाते देखकर राजभक्तिसे दया पूरित और दुःखी होकर रोने लगे। वहांकी तिर्य्यग्योनिसे उत्पन्न हुए सम्पूर्ण प्राणीभी उस रुलाईसे मानों कातर होकर मनुष्यके साथ रोने लगे; अनन्तर दाहकी क्रिया अन्त होने पर पाण्डवोंके साथ भीष्म, विदुर, धृतराष्ट्र और सम्पूर्ण कौरवी स्त्रियोंने पाण्डुकी जल-क्रिया की। हे महाराज! सम्पूर्ण मन्त्रीगण उन जल क्रिया किये हुए, शोकसे व्याकुल पाण्डवों को लेकर शोक करते हुए घरको लौट आये। हे महाराज! पाण्डवोंने जिस प्रकार बन्धुओंके साथ मिट्टी पर सो सो कर बारह रात काटी, वैसेही ब्राह्मण आदि नगर-वालेभी धरती पर सोये और नगरके लड़कों तक सम्पूर्ण प्रजाओंसेभी पाण्डवोंके साथ साथ विना हर्ष, विना आनन्द, विना स्वास्थ्य बारह रात गंवायी।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ सताइस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर कुन्ती, धृतराष्ट्र और भीष्मने बन्धुओंके साथ सम्पूर्ण कौरव और सहस्रों अच्छे अच्छे विप्रोंको भोजन कराके और अच्छे अच्छे विप्रोंको रत्न और सुन्दर सुन्दर ग्राम दे दे कर पाण्डुकी स्वधा और अमृतमय श्राद्ध दान किया। आगे भरतवंशियोंमें श्रेष्ठ शौच किये हुए पाण्डवोंको लेकर हस्तिनापुरमें प्रविष्ट हुए। नगर और जनपदवासी अपने मृत मित्रकी भांति उन पुरुष-श्रेष्ठ पाण्डुके लिये सदा शोक करने लगे। अनन्तर महर्षि व्यास आनकर श्राद्ध क्रियाके अन्तमें सब जनोंको दुःखी देखकर मोहयुक्त और दुःख शोकसे विह्वल माता सत्यवतीसे बोले, कि मा! सुखका दिन जाता रहा है; अब कठोर काल आ पड़ा। दिन धीरे धीरे पापपूर्ण हो रहे हैं, पृथ्वीकी यौवन दशा जाती रही; अब पूर्व्ववत शस्यकी उपज नहीं होगी; उसके पीछे बड़ी भारी मायासे पूरित, धर्मक्रिया और आचारनाशी, नाना विधयुक्त कठोर काल आपड़ेगा; कुरुओंकी बुरी नीतिसे धरती उजड़ जाने पर होगी, सो आप तपोवनमें जाकर चित्तकी वृत्तियोंको रोककर योगमें बैठिये। अपने वंशका घोर सर्व्वनाश न देखिये। सत्यवती "तथास्तु" कहके वह मानकर अन्तःपुरमें जाकर पुत्रवधूसे बोली, कि ऐ अम्बिके! मैंने सुना है, कि तुम्हारे पौत्रकी बुरी रीतिसे आत्मजनोंके साथ भरतवंशी और नगरवाले नष्ट हो जायंगे, सो यदि तुम चाहो, तो तुम्हारा मङ्गल होवे, चलो हम इस पुत्र शोकसे विह्वल अम्बालिकाको लेकर वनमें जांय। यह कह कर सुव्रतयुक्त सत्यवती अम्बिकाके साथ भीष्मको उस प्रकारसे सम्बोधन कर दोनों पुत्र वधुओंके साथ वनको पधारी। हे भरतश्रेष्ठ महाराज! उन देवियोंने वहां कठोर तप कर देह छोड़कर मनमानी सुगति प्राप्त की।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर पाण्डव वेदानुसार संस्कारोंको पाकर नाना भोगके पदार्थ भोग करते हुए पिताके घरमें बढ़ने लगे। वे प्रसन्नचित्त होकर धृतराष्ट्रके पुत्रों के साथ परम सुखसे खेलते कूदते थे और सब लड़कपनके खेलोंमें अपने तेजसे बढ़ चढ़ निकलते थे। वेगके विषयमें, निशानेकी वस्तु लानेमें, सबोंसे पहिले भोजनकी सामग्री लेनेमें और धूल फेंकने इत्यादि लड़कपनेके खेलोंमें भीमसेन सम्पूर्ण धृतराष्ट्र-कुमारोंको हरा कर सताया करते थे। हे महाराज! अब

धृतराष्ट्रके लड़के आनन्दमें खेलते थे, तब उक्त पाण्डव उनको पकड़कर एकसे दूसरेको अलग कर देते थे और उनके सिरोंको थाम थामकर एक दूसरेसे लड़ा देते थे। उन बड़े तेजवन्त एकसौ एक कुमारोंको वृकोदर अकेले सहज-हीमें दिक किया करते थे। महावली भीम बलसे उनके केश पकड़ मारते पीटते थे मिट्टी पर ठेलते, सिर और गर्द्दन आदि रगड़ कर घसीट लेजाते थे। व कष्टके मारे चिल्लाकर रोते थे। वह जलमें खेलते हुए, दोनों भुजोंसे दश लड़कोंको पकड़कर जलमें डुबाये रहते थे, आगे उनके मरने पर होनेसे छोड़ देते थे। जब धृतराष्ट्रके पुत्र पेड़ों पर चढ़कर फल तोड़ते थे, तब भीम उन पेड़ोंमें लात मार मार हिलाते थे, उन लातोंके बलसे हिलने और डगमगाने पर लड़के उसी-क्षण पेड़ोंसे छूटकर फलके साथ गिर जाते थे। वास्तवमें वे लड़के, चाहे बाहुयुद्धकी कहिये, चाहे वेगकी कहिये, चाहे शिक्षाकी कहिये किसी बातमें अहंकारपूर्व्वक वृकोदरसे बढ नहीं सकते थे। ऐसा नहीं, कि वृकोदर धृतराष्ट्रके पुत्रों की ईकी हानि करनी चाहते थे, केवल लड़कपनहीसे वह उस प्रकारसे अहंकार प्रगटकर उनके बड़े अप्रिय कामोंमें हाथ डालते थे। अनन्तर प्रतापी धृतराष्ट्र-कुमार दुर्य्योधन भीमसेनका वैसा अति प्रख्यात बल देखकर बुरा भाव दिखाने लगा। धर्म्म-हीन, पापकर्म्मके देखनेवाले दुर्य्योधनका चित्त अज्ञानता और ऐश्वर्य्यसे लोभसे पाप पर दौड़ा। उनको यह समझ आगयी, कि पाण्डवोंमें मझला यह कुन्तीपुत्र वृकोदर बलि-योंमें श्रेष्ठ है, सो उसको कौशलसे मार डालना चाहिये। अत्यन्त बल विक्रमयुक्त महावीर वृकोदर अकेला ही हम सवोंसे अहङ्कार करता है, जब वह नगरकी फुलवाड़ीमें सो रहेगा तब उसे गङ्गामें डाल दूगा, आगे उसके छोटे भाइयोंको और बड़े युधिष्ठिरको बलसे बांधकर पृथ्वीमें एकही राजा हूंगा, पापात्मा दुर्य्योधन यह निश्चय कर महात्मा भीमसेनको सदा ढूंढने लगा। हे भारत! अनन्तर उस पापात्माने जलक्रीड़ाके गङ्गाजीके तटपर प्रमाणा-कोटि नामक स्थानमें जल और स्थलपर वस्त्र और कम्बलोंका एक सुन्दर बड़ा भवन बनवाकर उसमें सम्पूर्ण कामके पदार्थोंसे भरे, फहराती हुई ध्वजासे सुशोभित नाना घर रचवाये। हे भारत-नन्दन! उस भवनका नाम उदक-क्रीड़न भया; रसोईबनानेमें दक्ष रसोई वालोंने उसमें चवाने, चूसने, चाटने, पीनेकी नाना भोजनकी वस्तु बनवाकर रखीं, आगे सब ठीक होनेपर टहलुओंने दुर्य्योधनको वह समाचार सुनाया। आगे दुर्म्मति दुर्य्योधन ने पाण्डवोंसे कहा, कि चलो हम सब भाई मिलकर वन बगीचोंसे सुशोभित गङ्गाजीके किनारे जाकर जलमें खेलें। युधिष्ठिरके सम्मत होनेपर शूर कौरव लोग पाण्डवोंके साथ नग-रके समान बड़े रथ और बड़े बड़े शरीरयुक्त हाथियोंपर नगरसे निकले। आगे वे वीर भाईवर्ग बगीचेमें पहुंचकर साथियोंको विदा-करके उपवनकी शोभा देखते हुए सिंहके पर्व्वतकी कन्दरामें घुसनेकी नाईं उसके भीतर जा घुसे। देखा, कि राजलोगोंसे साफ किये हुए, चित्र करनेवालोंसे चित्रित, सुफेद बैठके और गृहकी चोटियां सुहा रही हैं। वहां जंगले, फौहारे अर्थात् जिनसे सैकड़ों धारोंसे जल निकलकर ओसकी भांति घरके भीतर भागको भर देता है, ऐसी ऐसी कलोंकी अपूर्व्व शोभा दीख पड़ती है, खिले पद्मके वनसे ढपे जलभरे पोखरे और तालोंको बड़ी शोभा हो रही है और ऋतुसे उपजे हुए फलों-से वहांकी भूमिभी घिरी है। अनन्त और कौरव वहां जा बैठे और ... सजाये हुए कामके पदार्थोंका

लगे। वे सुन्दर फुलवाड़ीमें खेलते हुए एक दूसरेके मुहमें खानेकी वस्तु देने लगे। इस अवसरमें पापात्मा दुर्य्योधनने भीमसेनको मारडालनेकी इच्छासे भोजनकी वस्तुमें विष मिलाया, तब उस पापात्माने, जिसके हृदयमें अस्तुरा और बातमें अमृत सा था, स्वयं उठकर भाई और मित्रवत् भीमसेनके मुखमें उस विषैली वस्तुका एक बड़ा भाग डाल दिया। भीमसेननेभी कोई दोष न जानकर उसे भोजनके पदार्थके समान खा लिया। तब पुरुषोंमें बड़ा अधम दुर्य्योधन अपनी इच्छा पूरी हुई जानकर मानों मनहीमनमें हंसने लगा। आगे धृतराष्ट्रके लड़के और पाण्डवलोग सब प्रसन्न चित्तसे एकत्र होकर जलमें खेलने लगे। जलमें खेलनेके पीछे कुरुवंशियोंमें श्रेष्ठ वीरगण पवित्र वस्त्र पहिनकर अलंकृत हुए और खेलसे थककर दिन बीतने पर होनेसे उस विहारके घरहीमें रहना चाहा। महाबली भीम जलमें खेलते हुए कुमारोंको बहुत लड़ा करके थककर आराम करनेको इच्छासे उस प्रमाण-कोटिके स्थलभागमें आकरकेही सो गये। पाण्डु-पुत्र भीम एक तो थके और विषके नशेसे अचेतन हो थे, फिर तिसपर ठंढी हवा पाकर और सर्व्व शरीरमें विषके वर्त्ताव होनेके कारण एकवारही अज्ञान हो गये। तब दुर्य्योधनने मरेके तुल्य हुए भीमको लताजालसे स्वयं बांधकर स्थलसे जलमें गिराया।

चेतना-रहित पाण्डव जलमें डूबकर नागोंके घरमें सर्पोंके वक्षोपर जा गिरे। अनन्तर अगणित, काटनेमें तेज विषैले सर्प मिलकर भीमको काटने लगे। तिनसे काटे जाकर भीमसेनके शरीरका स्थायी विष चलते हुए सर्प-विषसे दूर हो गया। उन सर्पोंके दांतोंसे भीमसेनके मर्म्मस्थानमें चोट लगनेपरभी उनका बड़ा भारी छातीकी कठिनाईके कारण चमड़ातकभी भेदा नहीं गया। अनन्तर कुन्तीपुत्र चेतना पाकर बन्धनोंको काटकर उन सर्पोंको गाड़ने लगे; उनमेंसे कुछ सर्प भय खाकर वेगसे भाग गये। उन मारसे बचे हुए सर्पोंने देवराजके समान सर्पराज वासुकिके पास जाकर कहा, कि हे वीर नागेन्द्र! एक मनुष्य किसीसे बांधे जाकर जलमें गिराया गया था, हमको जान पड़ता है, कि उसने विष पिया था; क्योंकि जब हमारे आगे गिरा तब वह अचेत था, आगे जब हमने उसे काटना आरम्भ कर दिया तब वह चेतना पाकरके, जगकर, अपने शरीरके बन्धन काटकर हमको मारने लगा; आपको जानना चाहिये, कि वह महाभुज कौन है। अनन्तर वासुकिने साथी नागोंके साथ वहां आकर भारी पराक्रमी महाभुज भीमको देखा। तब कुन्तीके पिताके मातामह आर्य्यक नामक नागराजने नातीके नाती भीमको देखकर उनको गलेसे लगाया; इससे अति यशस्वी नागेन्द्र वासुकि उन पर प्रसन्न होकर नागराज आर्य्यकसे बोले, कि इनका क्या प्रियकार्य्य करना चाहिये? इनको धनादि अनेक रत्न दो। वासुकिकी यह बात सुनकर आर्य्यक बोले, कि हे नागेन्द्र! यदि आप प्रसन्न हुए हों, तो इसको धनरत्नकी आवश्यकताही क्या पड़ी है? आप जब प्रसन्न हुए हैं तब यह कुमार रस पीकर बली होवे, उस कुण्डमें सहस्र हाथियोंका बल धरा है, सो यह बालक उक्त कुण्डका जितना रस पी सके उतना इसको पीने दीजिये। नागराज वासुकिके सम्मत होने पर भीमसेन पवित्र होकर और नागोंसे मङ्गल आचरण किये जाने पर पूर्व्व ओर मुख करके बैठकर रस पीने लगे। महाबली भीमने एकही दममें कुण्डा भर रस पी लिया और इस प्रकारसे आठ कुण्डोंको खाली कर दिया। अनन्तर शत्रुनाशी महाभुज भीमसेन

नागोंकी दी हुई दिव्य सेज पर परम सुखसे सोरहे।

सम्भव पर्व्वमें एकसौ अठाइस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर सम्पूर्ण कौरव और भीमके बिना पाण्डव गण खेल और विहार कर रथ, हाथी, घोड़े और दूसरे यानों पर हस्तिनापुरको लौटे; जानेके कालमें कहने लगे, कि भीम हमारे पहिले गया होगा। पापात्मा दुर्य्योधनने उनमें भीमको न देख कर प्रसन्नचित्तसे नगरमें प्रवेश किया। धर्म्मात्मा युधिष्ठिर अपनेमें कोई पापबुद्धि नहीं रखते थे, अपने दृष्टान्तसे शत्रुकोभी साधु समझते थे। वह भ्रातृप्रेमी कुन्तीनन्दन माता कुन्तीके पास जाकर प्रणाम करके बोले, कि कि क्यों मा! भीम यहां आया है? ऐ शुभ चाहनेवाली! वह अभी तक क्यों नहीं दीख पड़ता? तब वह कहां गया होगा? हम वनमें फुलवाड़ियोंमें चारों ओर उसको खोज कर चुके, पर कहीं उस वीर वृकोदरको नहीं देखा; अन्तमें सबोंने यह समझ लिया, कि भीम हमारे पहिले ही आया होगा। ऐ महाभागे यशस्विनी! हम व्याकुल हृदयसे आ रहे हैं, सो कहिये, कि महाभुज भीम यहां आकर कहां गया है? आपने उसको कहीं भेजा तो नहीं? ऐ शोभने! उस वीरके विषयमें मेरा चित्त हड़बड़ा रहा है, क्योंकि स्मरण होता है, कि भीम सोता था, उसके पीछे फिर नहीं आया, सो मारा गया होगा। धीमान् धर्म्मपुत्रकी यह बात सुनकर कुन्ती हाहाकार करती हुई दुःखसे उनसे बोली कि, बेटा! मैंने भीमको नहीं देखा है, भीम मेरे पास नहीं आया, सो छोटे भाइयोंको लेकर तुरन्त उसकी खोजका प्रयत्न करो, कुन्ती सन्तापित चित्तसे ज्येष्ठ पुत्र युधिष्ठिरसे यह कहकर विदुरको बुलवाकर उनसे बोली, कि भगवान् क्षत्त! भीमसेन कहां गया है, वह दीख नहीं पड़ता है। दूसरे भाईलोग भाइयोंके साथ फुलवाड़ीसे लौट आये हैं; केवल अकेला महाभुज भीम मेरे पास नहीं आया है; उसको देखकर दुर्य्योधनकी आंखेभी प्रसन्न नहीं होती, वह सुयोधन बड़ा पेंचीला, दुर्म्मति, नीच राज्यलोभी और आंखों की लज्जासे वर्ज्जित है, सो कहीं ऐसा न हो, कि उसने क्रोधवश उस वीरको मारडाला हो, इस भयसे मेरा चित्त विकल और हृदय जल रहा है। विदुर बोले, कि ऐ कल्याणि! आप यह बात न प्रगट कीजिये, शेष पुत्रोंको रक्षा कीजिये, क्योंकि वह दुरात्मा दुर्य्योधन लाञ्छित होनेसे आपके शेष पुत्रोंकोभी मार सकता है। महामुनिने कहा है, कि आपके पुत्रगण दीर्घजीवन पावेंगे, सो आपका पुत्र लौट आकर अवश्यही आपको प्रीति बढ़ावेगा।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि विद्वान् विदुर यह कहकर अपने घरको गये। कुन्ती सोचती हुई, पुत्रोंके साथ घरमें रहने लगी। अनन्तर आठवें दिन महाबली पाण्डुपुत्र भीमसेन जगे और उस समय उस रसके पच जानेसे अप्रमेय और बलवन्त बन गये। सर्पगण उस पाण्डवको जगते देखकर शीघ्रतापूर्व्वक समझाने लगे और यह बात बोले, कि हे महाभुज! तुमने जो वीर्य्य देनेहारा रस पी लिया है, उससे तुम दश सहस्र नागके समान बली और रणस्थलमें अजीत योग्य होगे। हे कुरुश्रेष्ठ! आज तुम इस दिव्य और शुभ जलसे स्नानकर अपने घरको लौट जाओ, तुमको न देखकर तुम्हारे भाईलोग दुःखी हुए हैं।

अनन्तर महाभुज महाबली भीमने स्नानकर और शुचि होकर शुक्लवस्त्र और श्वेतमाला पहिनकर नागोंका दिया हुआ परमान्न भोजन किया। आगे शत्रुनाशी

लगे। वे सुन्दर फुलवाड़ीमें खेलते हुए एक दूसरेके मुहमें खानेकी वस्तु देने लगे। इस अवसरमें पापात्मा दुर्य्योधनने भीमसेनको मारडालनेकी इच्छासे भोजनकी वस्तुमें विष मिलाया, तब उस पापात्माने, जिसके हृदयमें अस्तुरा और बातमें अमृत सा था, स्वयं उठकर भाई और मित्रवत् भीमसेनके मुखमें उस विषैली वस्तुका एक बड़ा भाग डाल दिया। भीमसेननेभी कोई दोष न जानकर उसी भोजनके पदार्थके समान खा लिया। तब पुरुषोंमें बड़ा अधम दुर्य्योधन अपनी इच्छा पूरी हुई जानकर मानों मनहीमनमें हंसने लगा। आगे धृतराष्ट्रके लड़के और पाण्डवलोग सब प्रसन्न चित्तसे एकत्र होकर जलमें खेलने लगे। जलमें खेलनेके पीछे कुरुवंशियोंमें श्रेष्ठ वीरगण पवित्र वस्त्र पहिनकर अलंकृत हुए और खेलसे थककर दिन बीतने पर होनेसे उस विहारके घरहीमें रहना चाहा। महाबली भीम जलमें खेलते हुए कुमारोंको बहुत लड़ा करके थककर आराम करनेको इच्छासे उस प्रमाण-कोटिके स्थलभागमें आकरकेही सो गये। पाण्डु-पुत्र भीम एक तो थके और विषके नशेसे अचेतन ही थे, फिर तिसपर ठंढी हवा पाकर और सर्व्व शरीरमें विषके वर्त्ताव होनेके कारण एकवारही अज्ञान हो गये। तब दुर्य्योधनने मरेके तुल्य हुए भीमको लताजालसे स्वयं बाधकर स्थलसे जलमें गिराया।

चेतना-रहित पाण्डव जलमें डूबकर नागोंके घरमें सर्पोंके बच्चोंपर जा गिरे! अनन्तर अगणित, काटनेमें तेज विषैले सर्प मिलकर भीमको काटने लगे। तिनसे काटे जाकर भीमसेनके शरीरका स्थायी विष चलते हुए सर्प-विषसे दूर हो गया। उन सर्पोंके दांतोंसे भीमसेनके मर्म्मस्थानमें चोट लगनेपरभी उनकी बड़ी भारी छातीकी कठिनाईके कारण चमड़ातकभी भेदा नहीं गया। अनन्तर कुन्तीपुत्र चेतना पाकर बन्धनोंको काटकर उन सर्पोंको गाड़ने लगे; उनमेंसे कुछ सर्प भय खाकर वेगसे भाग गये। उन मारसे बचे हुए सर्पोंने देवराजके समान सर्पराज वासुकिके पास जाकर कहा, कि हे वीर नागेन्द्र! एक मनुष्य किसीसे बांधे जाकर जलमें गिराया गया था, हमको जान पड़ता है, कि उसने विष पिया था, क्योंकि जब हमारे आगे गिरा तब वह अचेत था, आगे जब हमने उसे काटना आरम्भ कर दिया तब वह चेतना पाकरके, जगकर, अपने शरीरके बन्धन काटकर हमको मारने लगा; आपको जानना चाहिये, कि वह महाभुज कौन है। अनन्तर वासुकिने साथी नागोंके साथ वहां आकर भारी पराक्रमी महाभुज भीमको देखा। तब कुन्तीके पिताके मातामह आर्य्यक नामक नागराजने नातीके नाती भीमको देखकर उनको गलेसे लगाया; इससे अति यशस्वी नागेन्द्र वासुकि उन पर प्रसन्न होकर नागराज आर्य्यकसे बोले, कि इनका क्या प्रियकार्य्य करना चाहिये? इनको धनादि अनेक रत्न दो। वासुकिकी यह बात सुनकर आर्य्यक बोले, कि हे नागेन्द्र! यदि आप प्रसन्न हुए हों, तो इसको धनरत्नकी आवश्यकताही क्या पड़ी है? आप जब प्रसन्न हुए हैं तब यह कुमार रस पीकर बली होवें, उस कुण्डमें सहस्र हाथियोंका बल भरा है, सो यह बालक उक्त कुण्डका जितना रस पी सके उतना इसको पीने दीजिये। नागराज वासुकिके सम्मत होने पर भीमसेन पवित्र होकर और नागोंसे मङ्गल आचरण किये जाने पर पूर्व ओर मुख करके बैठकर रस पीने लगे। महाबली भीमने एकही दममें कुण्ड भर रस पी लिया और इस प्रकारसे आठ कुण्डोंको खाली कर दिया। अनन्तर शत्रुनाशी महाभुज भीमसेन

नागोंकी दी हुई दिव्य सेज पर परम सुखसे सोरहे।

सम्भव पर्व्वमें एकसौ अठाइस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर सम्पूर्ण कौरव और भीमके विना पाण्डव गण खेल और विहार कर रथ, हाथी, घोडे और दूसरे यानों पर हस्तिनापुरको लौटे; जानेके कालमें कहने लगे, कि भीम हमारे पहिले गया होगा। पापात्मा दुर्य्योधनने उनमें भीमको न देख कर प्रसन्नचित्तसे नगरमें प्रवेश किया। धर्म्मात्मा युधिष्ठिर अपनेमें कोई पापबुद्धि नहीं रखते थे, अपने दृष्टान्तसे शत्रुकोभी साधु समझते थे। वह भ्रातृप्रेमी कुन्तीपुत्र माता कुन्तीके पास जाकर पांव छूकर बोले, कि कि क्यों मा! भीम यहां आया है? ऐ शुभ चाहनेवाली! वह अभी तक क्यों नहीं दीख पड़ता? तब वह कहां गया होगा? हम वनों फुलवाड़ियोंमें चारों ओर उसकी खोज कर चुके, पर कहीं उस वीर वृकोदरको नहीं देखा; अन्तमें सबोंने यह समझ लिया, कि भीम हमारे पहिले ही आया होगा। ऐ महाभागे यशस्विनी! हम व्याकुल हृदयसे आ रहे हैं, सो कहिये, कि महाभुज भीम यहां आकर कहां गया है? आपने उसको कहीं भेजा तो नहीं? ऐ शोभने! उस वीरके विषयमें मेरा चित्त हड़बड़ा रहा है, क्योंकि स्मरण होता है, कि भीम सोता था, उसके पीछे फिर नहीं आया, सो मारा गया होगा। धीमान् धर्मपुत्रकी यह बात सुनकर कुन्ती हाहाकार करती हुई दुःखसे उनसे बोली कि बेटा! मैंने भीमको नहीं देखा भीम मेरे पास नहीं आया, सो छोटे भाइयोंके संग तुरन्त उसकी खोजका प्रयत्न करो। कुन्ती मनःपीड़ित चित्तसे स्नेहयुक्त युधिष्ठिरसे यह कहकर विदुरको बुलवाकर उनसे बोली, कि भगवान् क्षत्त! भीमसेन कहां गया है, वह दीख नहीं पड़ता है। दूसरे भाईलोग भाइयोंके साथ फुलवाड़ीसे लौट आये हैं, केवल अकेला महाभुज भीम मेरे पास नहीं आया है; उसको देखकर दुर्य्योधनकी आंखेंभी प्रसन्न नहीं होती. वह सुयोधन बड़ा पेंचीला, दुर्म्मति, नीच राज्यलोभी और आंखोंकी लज्जासे वर्ज्जित है, सो कहीं ऐसा न हो, कि उसने क्रोधवश उस वीरको मारडाला हो, इस भयसे मेरा चित्त विकल और हृदय जल रहा है। विदुर बोले, कि ऐ कल्याणि! आप यह बात न प्रगट कीजिये, शेष पुत्रोंको रक्षा कीजिये, क्योंकि वह दुरात्मा दुर्य्योधन लाञ्छित होनेसे आपके शेष पुत्रोंकोभी मार सकता है। महामुनिने कहा है, कि आपके पुत्रगण दीर्घजीवन पावेंगे, सो आपका पुत्र लौट आकर अवश्यही आपको प्रीति बढ़ावेगा।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि विद्वान् विदुर यह कहकर अपने घरको गये। कुन्ती सचिन्ती हुई, पुत्रोंके साथ घरमें रहने लगी। अनन्तर आठवें दिन महाबली पाण्डुपुत्र भीमसेन जगे और उस समय उस रसके पच जानेसे अप्रमेय और बलवन्त बन गये। सर्पगण उस पाण्डवको जगते देखकर शीघ्रतापूर्व्वक समझाने लगे और यह बात बोले, कि हे महाभुज! तुमने जो वीर्य्य देनेहारा रस पी लिया है, उससे तुम दश सहस्र नागके समान बली और रणस्थलमें अजीत योग्य होगे। हे कुरुश्रेष्ठ! आज तुम इस दिव्य और शुभ जलमें स्नानकर अपने घरको लौट जाओ, तुमको न देखकर तुम्हारे भाईलोग दुःखी हुए हैं।

अनन्तर महाभुज महाबली भीमसेन स्नान कर और शुचि होकर शुक्लवस्त्र और श्वेत माला पहिनकर नागोंका दिया हुआ परमान्न भोजन किया। [illegible]

पाण्डव सर्पोंसे आदर और असीस पाकर दिव्य आभूषण पहिनकर नागोंको सम्भाषण करके प्रसन्नचित्तसे नागलोकसे निकले। नागोंने उस कमलनेत्रवाले कुरुनन्दनको जलसे उठाकर उसी वन-खण्डमें छोड़ दिया, आगे उनके सम्मुखसे अन्तर्हित हुए। इसके अनन्तर महाभुज, महाबली कुन्तीपुत्र भीमसेन वहांसे उठकरके वेग पूर्व्वक चलकर माताके पास आगये। शत्रुनाशी वृकोदर माता और ज्येष्ठ भाइके पांव छूकर छोटे भाइयोंके सिर चूम करके माता और भाइयोंके गले लगे और वे आपसमें मित्रता दिखा दिखाकर बार बार यह कहने लगे, कि "कैसा आनन्द है, कैसा आनन्द है।" आगे महाबल-पराक्रमी भीमसेनने भाइयोंसे दुर्य्योधनके कार्य्योंको कह सुनाया और नागलोकमें भला वा बुरा जो कुछ हुआ था, वह सबभी भली भांति प्रकाश किया। अनन्तर राजा युधिष्ठिर उनसे यह अर्थयुक्त वाक्य बोले, कि तुम चुप हो जाओ, यह सब हाल कभी प्रकाश मत करना। हे कुन्तीपुत्रो। तुम अबसे यत्न पूर्व्वक आपसमें अपनी रक्षा करना। महाबाहु धर्म्मराज युधिष्ठिर यह कहकर भाइयोंके साथ सावधान बने रहे। धर्म्मात्मा विदुर उनको ऐसा परामर्श देते थे; कि जिससे उन पृथापुत्रोंको चूक न हो। उसके अनन्तर दुर्य्योधनने भीमसेनके भोजनके पदार्थमें फिर नया तेज विष मिलाया। वैश्यापुत्र युयुत्सुने पाण्डवोंके हितके लिये वह प्रकाशकर दिया, पर तोभी बिना विकार वृकोदरने उसे खाकर पचा लिया। वह विष तेज और भीमके नाशनेयोग्य होने परभी भीममें विकार उपजा नहीं सका, सो भीमने उसको पचा डाला। इस प्रकार दुर्योधन, कर्ण और सुबलपुत्र शकुनिने नाना उपायोंसे पाण्डवोंको नष्ट करनेकी चेष्टा की थी। हे शत्रुनाशिन्! पाण्डवलोग वह जानते परभी विदुरके मतमें रह कर उस बातपर क्रोध प्रगट नहीं करते थे।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ उनतीस अध्याय समाप्त।

जनमेजयजी बोले, कि हे ब्रह्मन्! कृपके जन्मकी भी कथा कहिये। उन्होंने क्योंकर शरकण्डेकी लकड़ी से जन्म लिया था, और क्योंकर अस्त्रोंको लाभ किया था? श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि महाराज! महर्षि गौतमके शरद्वान नामक एक पुत्र थे; उन गौतमने शरकण्डेसे जन्म लिया था। हे शत्रुनाशिन्! धनुर्व्वेदमें उनकी जैसी बुद्धि थी, वेद पठनमें वैसी बुद्धि नहीं हुई थी; जिस प्रकार ब्रह्मचारीलोग तपसे वेदको ज्ञात होते हैं, वैसेही उन्होंने तपहीसे सर्व्वास्त्रोंको प्राप्त किया था। उन गौतमने धनुर्व्वेदमें अपरिमित ज्ञान और अनन्त तपस्यासे देवराजकोभी बहुत डरपाया था। हे कौरव! अनन्तर देवेन्द्रने जानपदी नाम्नी देवबालाको यह आज्ञा देकर उनके सामने भेजा, कि तुम गौतम-की तपस्यामें विघ्न डालो। बाला जानपदी गौतमजीके सुन्दर आश्रममें जाकर धनुषबाण धारी उन शरद्वानको लुभाने लगी। उस बनमें अनुपम सुन्दरी एक वस्त्र पहिरे अप्सरा-को देखकर गौतमके नेत्रोंमें प्रफुल्लता छा गयी, उनके हाथोंसे धनुषबाण धरती पर गिर पड़े, और देह कांपने लगी। पर उन महाप्राज्ञ ऋषि-कुमारके उत्तम ज्ञान और तपस्यामें दृढ़ प्रतिज्ञा रहनेसे वह परम धीरज धरे रहे। महाराज! उनमें एकायक जो विकार आन पहुंचा था, उसीसे उनका वीर्य्य गिर गया था, पर वह उस बातको नहीं जान सके थे। अनन्तर वह धनुर्बाण, कृष्ण-सार मृगका चर्म्म और उस आश्रम और अप्सराको तजकर अन्य स्थानमें चले चले गये। उनका वीर्य्य शरकण्डे की लकड़ी पर गिरा था, इसलिये वह दो भाग

होगया, उससे एक कन्या और एक पुत्रका जन्म हुआ। अनन्तर मृगयाके लिये मनमाने घूमने वाले, नरनाथ शान्तनुके एक सैनिकने वनमें उस पुत्र और कन्याको देखा और वहां धनुर्बाण और मृगका चर्म्म देखकर समझा, कि यह दोनो धनुर्व्वेदमें दक्ष किसी ब्राह्मणकी सन्तान होंगी। तब उस सैनिकने धनुर्बाण और दोनों बच्चोंको लेजाकर नरनाथको दिखाया। नरनाथने कृपापूर्व्वक उन बच्चोंको लेलिया और यह कह कर, कि "यह मेरी सन्तान हुई" अपने स्थानको पधारे। अनन्तर प्रतीपके पुत्र नरश्रेष्ठ शान्तनुने गौतमके उस पुत्र और कन्याको सम्पूर्ण संस्कारसे सुधार और पाल पोषकर बढाया और गौतमभी उस आश्रमसे आनकर धनुर्व्वेदमें दत्तचित्त रहे। महीपाल शान्तनुने यह समझ कर, कि "मैंने कृपापूर्व्वक इन इन बच्चोंको जिलाया है" उनके कृप और कृपी यह नामही रख दिये। गौतमजी तपके द्वारा यह जान सके थे, कि उस स्थानमें दोनों सन्तान-रखी हुई हैं, सो तब वहां आनकर अपने गोत्रादि सब कह गये। उन्होने कृपको चार प्रकारके धनुर्व्वेद, नाना शास्त्र-विद्या और दूसरे गुप्त विषयोंकी शिक्षा दी। कृप स्वल्प कालके ही बीचमें परम आचार्य्य बने। महारथी धृतराष्ट्र पुत्रगण, महाबली पाण्डवगण और नानादेशोंसे आये हुए दूसरे भूपाल उनसे धनुर्व्वेद सीखने लगे।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ तीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर भीष्म पौत्रोंको विशेष रूपसे विद्या पढ़ाने और विनय सिखानेके लिये बाण चलानेमें दक्ष, अस्त्रविद्यामें [illegible] वीर्य्यवन्त आचार्य्य ढूंढने लगे। यह समझकर, कि जो अत्यन्त बुद्धिमान महाभाग [illegible] के चलानेमें पण्डित और देव-[illegible] न होवे, उससे कौरवोंको अस्त्र विद्या न सीखना चाहिये। भरत-वंशियोंमें श्रेष्ठपुरुष भीष्मने पाण्डव और कौरवोंको भरद्वाजके पुत्र वेदमें पण्डित धीमान् द्रोणके शिष्य बना दिया। अस्त्र चलानेवालोंमें श्रेष्ठ महाभाग और अति यशवन्त द्रोणाचार्य्यने महात्मा भीष्मसे शास्त्रानुसार भले प्रकार पूजे जाकर सन्तोषपूर्व्वक उन सबोंको शिष्य बनाया। आगे उन्होंने उनको विशेष प्रकारसे धनुर्व्वेद सिखाया। हे महाराज। वे अनन्त तेजयुक्त पाण्डव और कौरवलोग स्वल्पकालहीमें सर्व्व शास्त्रोंमें पण्डित होगये।

जनमेजयने पूछा, कि हे ब्राह्मण। वह वीर्य्यवन्त द्रोण किसके पुत्र थे? किस प्रकार उनका जन्म हुआ था? क्योंकर उन्होंने शास्त्रोंको प्राप्त किया था? और क्योंकर कौरवोंसे मिले? फिर भी अश्वत्थामा नामक सर्व्वशास्त्रोंमें दक्ष प्रधान उनके पुत्रने क्योंकर जन्म लिया था? यह सब भले प्रकार सुना चाहता हूं आप कहिये।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि गङ्गाद्वारके निकट भरद्वाज नामसे प्रख्यात सदा प्रशंसित व्रतयुक्त भगवान् महर्षि बसते थे। एक समय वह अग्निहोत्र करनेके अभिप्रायसे पहिले ही महर्षियोंके साथ गङ्गाजीके किनारे नहाने गये थे; वहां देखा, कि रूप-यौवनवती, मदगर्व्विता और मदसे झूमती हुई घृताची नाम्नी अप्सरा नहाकर उठी; फिर उस समय उसका वस्त्रभी गिर गया। धीमान महर्षि उस विवस्त्रा अप्सरा को देखकर कामके वशमें होगये, उनका चित्त घृताची पर झुकनेसे वीर्य्य गिर गया। ऋषिने तब द्रोणनामक यज्ञके बर्त्तनमें उस वीर्य्यको रखा। धीमान् भरद्वाजके द्रोणमें रखे हुए उस वीर्य्यसे द्रोणका जन्म हुआ। उन्होंने वेद और वेदाङ्ग सब पढ़ लिये थे। अस्त्र विद्या जाननेवालोंमें प्रधान प्रतापी भरद्वाजने [illegible] अग्निवेश नामक महाभाग महर्षिको [illegible] दिया था। [illegible]

हुए उन ऋषि अग्निवेशने अपने गुरुपुत्र द्रोणको वह अग्न्यास्त्र दे दिया। पृषत नामक एक राजा ऋषि भरद्वाजके मित्र थे। भरद्वाजके पुत्र होनेके कालमें उनकेभी द्रुपद नामक एक पुत्र हुआ था। वह पृषत्पुत्र नित्य भरद्वाजके आश्रममें जाकर द्रोणके साथ खेलते और पढ़ते थे। हे नरनाथ! अनन्तर राजा पृषतके परलोक सिधार जानेपर महाभुज द्रुपद उत्तर पाञ्चाल देशके राजा हुए। उस समय भगवान् ऋषि भरद्वाजका स्वर्ग गमन हुआ और अतितपयुक्त द्रोणभी उसीस्थानमें रहकर तप करने लगे। अनन्तर वेद वेदाङ्गोंमें पण्डित और तपस्याके बलसे निष्पापी उन अतियशवन्त द्रोणने पिताके पहिलेके नियोगानुसार पुत्रके लोभसे शरद्वतकी कन्या कृपीसे विवाह किया! उसके अनन्तर अग्निहोत्रमें वाक आदि बाहरी इन्द्रियोंके रोकनेसे और धर्ममें प्रेमी उस गौतमपुत्री कृपीने अश्वत्थामा नामक पुत्रप्राप्त किया। पुत्रने जन्म लेतेही उच्चैःश्रवा अश्वकी भांति शब्द किया, वह सुनकर उसकालमें आकाशमें स्थित किसी बिन देखे प्राणीने कहा था, कि घोडेकी नाईं शब्द करनेवाले इस बालकका स्थाम (शब्द) नाना दिशाओंमें पहुंचा है, इस कारण इसका नाम अश्वत्थामा होगा। उससे भरद्वाज-पुत्र धीमान् द्रोणने उस पुत्रसे बड़ी प्रीति प्राप्त की, और स्थानहीमें रहकर धनुर्व्वेदमें सन्नद्ध रहे। हे महाराज! उन्होंने उस समय सुना, कि सर्व्वशस्त्र धरनेवालोंमें श्रेष्ठ, सर्व्वज्ञानयुक्त, शत्रुनाशी ब्राह्मण महात्मा जामदग्न्य रामने ब्राह्मणोंको सब धन बांट देनेकी इच्छा की है। रामके धनुर्व्वेद और दिव्यास्त्रों का समाचार पाकर उन्होंने वह सब और नीति शास्त्रोंको उनसे सीखना चाहा। उसके अनुसार वह अति तपोयुक्त महाभुज भरद्वाज तपस्वी और व्रतयुक्त शिष्योंसे घिरे रहकर महेन्द्रपर्व्वत पर गये। आगे वहां पहुंचकर शत्रुकुलनाशी क्षान्त और दान्त भृगुनन्दनको देखा। अनन्तर उनने शिष्योंके साथ उनके पास जाकर अपना नाम और अङ्गिराके कुलमें जन्म होनेकी बात आदि कही और भूमिपर सिर रगड़कर उनके दोनों पांवोंमें प्रणाम किया। उसके पीछे द्रोण सब छोड़ छाड़ वनमें जानेकी इच्छा किये हुए महात्मा जामदग्न्यसे यह बोले, कि हे महामते! मैं बिन योनिसे जन्मा हुआ हूं भरद्वाजसे द्रोणीमें उत्पन्न हुआ हूं, हालमें धनकी लालसासे यहां आया हूं। क्षत्रियकुलनाशी महात्मा परशुरामने उनसे कहा, कि हे द्विजश्रेष्ठ! तुम भले आये हो, जो चाहते हो, कहो! रामके यह बात कहनेपर भरद्वाजपुत्र उन नाना धनदानके इच्छुक योधोंसे प्रधान जामदग्न्यसे बोले, हे महाभाग व्रतशील! मैं अपरिमित धन मांगता हूं। राम बोले, कि हे तपोधन! मेरा सुवर्ण और दूसरा धन जो कुछ था, सब ब्राह्मणोंको दे चुका हूं, ग्राम और नगरोंकी मालासे सजी हुई, सागर तक चली गयी हुई, यह पृथ्वी भी कश्यपको दे दी है, अब मेरे केवल बड़े मूल्यवान् अस्त्र शस्त्र और मेरा यह शरीरही शेष है, हे द्रोण! अब अस्त्र अथवा शरीर देनेको उद्यत हूं। शीघ्र कहो, कि इन दोनोंमेंसे क्या चाहते हो, वह तुमको दे देता हूं। द्रोण बोले, कि हे भार्गव! प्रयोग, उपसंहार और रहस्योंके साथ सम्पूर्ण अस्त्रोंको भले प्रकार मुझको दीजिये। भार्गवने तथास्तु कहकर उनको सम्पूर्ण अस्त्र और रहस्य और नियमोंके साथ धनुर्व्वेदको विशेषरूपसे दे दिया। द्विजोंमें श्रेष्ठ द्रोण सब अस्त्र शस्त्रोंको लेकर कृतार्थ होकरके प्रसन्नचित्तसे प्रिय मित्र द्रुपदके पास गये।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ इकतीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर प्रतापी भरद्वाजके पुत्र भूपाल द्रुपदके यहां जाकर बोले, कि हे महाराज। मुझको मित्र करके जानो! मित्र भारद्वाजके प्रेमसे समान कहनेपर नरनाथ पाञ्चालराज वह बात सह नहीं सके। वह ऐश्वर्य्यके अहङ्कार से उन्मत्त थे, सो क्रोध अमर्पसे जीभ और भौंहको बिगाड़ करके आखे लालकर द्रोणसे यह बोले, कि, हे विप्र। तुम्हारी बुद्धि नहीं सुधरी और पक्की नहीं हुई है, क्योंकि तुमने एकायक मुझसे कहा, कि मै तुम्हारा मित्र हूं। हे स्वल्पबुद्धे! अनन्त ऐश्वर्य्ययुक्त भूपालोंकी कभी ऐसे श्रीवर्ज्जित और निर्धनजनोंसे मित्रता नहीं होती; काल सब वस्तुओंको तोड़ फोड़ देता है, उससे मित्रता भी टूट जाती है, पहिले समान होनेके कारण तुमसे मेरी मित्रता हुई तो थी; पर भूमण्डलमे मित्रता कभी किसीके हृदयमें बनी नहीं रहती है, क्योंकि कालसे वह दूर हो-जाती है, अथवा क्रोधसे वह जड़सहित उखड़ जाती है, सो तुम उस पुरानी मित्रताकी पूजा मत करो, ऐसा न समझो, कि वहभी बनी है। हे द्विजोंमें श्रेष्ठजन। अवश्यही किसी प्रयोजनसे तुमसे मेरी मित्रता हुई थी, देखो, दरिद्र कभी धनीका मित्र नहीं होता; मूर्ख कभी पण्डितसे मित्रता नहीं कर सकता है, वीर्य्यवर्जित जन कभी वीरका मित्र नहीं हो सकता, फिर तुम क्यों पहिलेकी मित्रता चाहते हो? जिनका धन समान है, जिनका बल समान है, उनहीमें आपसकी मित्रता हो सकती है, पुष्ट और अपुष्ट जनोंसे कभी मित्रता वा शत्रुता नहीं हो सकती है; जो श्रोत्रिय नहीं है, वह कभी श्रोत्रियका मित्र नहीं हो सकता है, रथवालेसे रथ रहितजन कभी मित्रता नहीं कर सकता है, राजा न होनेसे राजाके साथ मित्रता नहीं कर सकता है सो तुम क्यों पहिलेकी मित्रता चाहते हो? वैशम्पायनजी बोले कि, प्रतापी भारद्वाजने द्रुपदकी यह सब बात सुनकर क्रोधसे जलकर क्षणभर सोचा; वह बुद्धिमान मनही मनमें पाञ्चाल-राज की पराजयका उपाय निश्चयकर हस्तिनापुर नामक कौरवोंके नगरको गये।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ बत्तीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि द्विजश्रेष्ठ भारद्वाज हस्तिनापुरमें जाकर कृपाचार्य्यके घरमें छिप कर रहनेलगे। वह उनके पुत्र प्रभावी अश्वत्थामा कृपाचार्य्यके शिक्षा दे लेनेके पीछे, कुन्तीके पुत्रोंको अस्त्रकी शिक्षा देते थे, पर उनको कोई जान नहीं सका था। इस प्रकार भारद्वाज द्रोण कृपाचार्य्यके घरमें कुछ काल छिपकर बसे। अनन्तर एक समय युधिष्ठिर आदि वीर लड़के मिलकर हस्तिनापुरसे निकलकर (बीटा) अर्थात् गेंदका खेल खेलते हुए प्रसन्नचित्तसे घूमने लगे। खेलनेके काल उनकी वह गेंद कूपमें गिर गयी। अनन्तर लड़कोंने ध्यान लगाकर उस गेंदके उठानेके लिये बड़ा प्रयत्न किया, पर किसी प्रकार मनोरथ सफल नहीं हो सका। इससे वे लज्जासे मुंह नीचा कर एक दूसरेके मुखको ओर ताकने लगे और उसके उठानेका उपाय न देखकर बड़े सोचमें पड़े। ऐसे समयमें उन्होंने देखा, कि श्याम बूढ़े, दुबले अग्निहोत्र से पुरस्कृत, आह्निक किये हुए, एक ब्राह्मण पासही खडे हैं। तब उपस्थित कार्य्यमें विफल मनोरथ, उनसे उत्साह खोये हुए वे लड़के उन महात्मा ब्राह्मणको देखकरके उनके पास जाकर चारों ओर घेर कर खड़े हो गये। [illegible]

है! क्योंकि तुम भरतकुलमें जन्म लेकरके भी इस गेंदको उठा नहीं सके; अब यदि तुम मुझे खानेको दो, तो मैं गेंद और मुदरी दोनों तिनकेसे उठा सकता हूं। शत्रुनाशी द्रोणने कुमारोंसे यह कहकर उस जलसे खाली कूपमें अपनी मुदरी डाल दी। तब कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर उनसे बोले, कि ब्रह्मन्! कृपाचार्य्यकी आज्ञासे आप हमारे पास सदा रहनेकी भिक्षा लीजिये। ऐसा कहे जाकर द्रोण हंसकर भरत-कुमारोंसे बोले, कि यह मुट्ठी भर इषीका अर्थात् सरकण्डेपर मैं अस्त्रका मन्त्र फूक देता हूं, दूसरे अस्त्रमें जो वीर्य्य नहीं है, इसमें वही देखोगे। इस इषीकासे वह गेंद भेद कर दूसरी इषीकासे इस इषीकाको भेद करूंगा फिर और इषीकासे उस दूसरेको भी विद्ध करूंगा, इस प्रकार क्रमसे इषीकाके योग से उस गेंदको थाम लूंगा। अनन्तर द्रोणने जैसा कहा, ठीक वैसाही कर दिखाया। लड़कोंने अचरजके मारे आंखे चढ़ाकर वह लीला देखी और यह मानकर, कि यह बहुत आश्चर्य्य है, कहा कि हे विप्रर्षे। यह मुन्दरी भी तुरन्त निकालिये। अनन्तर अति यशस्वी प्रभु द्रोणने शरासन लेकर वाणसे उस मुन्द्रीको विद्धकर ऊपर उठा लिया। आगे वाण सहित उस मुन्द्रीको लेकर विस्मयरहित चित्तसे विस्मययुक्त कुमारोंको दे दिया। कुमारोंने वाणसे उस मुदरीको उठा देखकर कहा, कि ब्रह्मन्! यह विद्या दूसरोंमें दीख नहीं पड़ती, सो आपको प्रणाम करते हैं, जानना चाहते हैं, कि आप कौन, किसके पुत्र हैं, और यह भी कहिये कि हम आपका क्या उपकार करें। कुमारोंको वह वात सुनकर द्रोणने उत्तर दिया, कि तुम भीष्मके पास जाकर मेरा आकार और गुणकी वात ठीक ठीक कहो। इससे वह बड़े तेजस्वी भीष्म मुझको पहिचान लेंगे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, अनन्तर लड़कोंने वह मानकर भीष्मके पास जाकर उन ब्राह्मणका ठीक ठीक हाल और उनके आश्चर्य कार्य्यकी बात कह सुनायी। भीष्म कुमारोंके मुखसे सब सुनकर उन ब्राह्मणको द्रोण करके जाना। और सोचा, कि यही आचार्य्य-कार्य्यके योग्य हैं। अनन्तर शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ भीष्मने स्वयं उसी क्षण वहां जाकर उनको आदरपूर्व्वक लिवा लाकर आनेका कारण योग्य रूपसे पूछा; द्रोण आद्योपान्त सब सुनाकर बोले कि, हे आयुष्मन्! मैं पहिले धनुर्व्वेद और अस्त्र शिक्षाके लिये महर्षि अग्निवेशके यहां गया था,-वहां ब्रह्मचारी, नम्र जटाधारी और गुरुकी सेवामें उत्साहित होकर अनेक वर्ष गंवाये, उन दिनों पाञ्चालराज कुमार महाबली प्रभावी यज्ञसेन उन गुरुके निकट अस्त्र विद्या और धनुर्व्विद्या सीखनेके लिये रहते थे। हे प्रभो। वहा वह मेरे उपकारी, मित्र और प्यारे थे, उनके साथ एकत्र रहकर मैं बहुत दिन सुखसे था, हे कौरव! बालपनसे उनके साथ एकत्र मैंने पढ़ा था, इस लिये वह सदा मेरे प्रिय करनेवाले और प्रिय कहनेवाले मित्र थे। हे भीष्म। वह मेरी प्रीति के लिये सदा मुझसे यह कहा करते थे, कि "हे द्रोण! मैं महानुभव पिताका बड़ा प्यारा पुत्र हूं, सो मैं तुमसे यह सत्य प्रतिज्ञा करता हूं, कि जब पाञ्चालराज मुझको राज्यपर बैठावेंगे, तब वह राज्य तुम भोग करोगे, ऐ मित्र! मेरा भोग, ऐश्वर्य्य और सुख सब तुम्हारे हाथ रहेगा।" आगे जब उनकी अस्त्र-शिक्षा अन्त हुई, तब वह मुझसे सम्मान पाकर वहां से चले गये। मैंने तभीसे सदा उनकी वह वात मनमें रख ली। अनन्तर मैंने पिताके नियोगसे पुत्र पानेके लोभसे छोटे केशो अति बुद्धिमती व्रतशीला और अग्निहोत्र तथा याग करने और इन्द्रियोंके रोकनेमें सदा

नियुक्त कृपोमें विवाह किया। कृपोने मेरे वीर्य्यसे अश्वत्थामा नामक भीमविक्रमी सूर्य्य-समान तेजस्वी एक पुत्र प्राप्त किया। भरद्वाज मुझको पाकर जिस प्रकार प्रसन्न हुए थे, मैं भी उस सन्तानको प्राप्तकर उसीप्रकार कृतार्थ हुआ। अश्वत्थामा बालेपनमें एकदिन धनीके पुत्रोंको दूध पीते देखकर ऐसा रोने लगा, कि उससे मेरी सुध बुध जाती रही। यह सोचकर, अपने यागादि कर्म्म करनेवाले स्नातक जन अप्रसन्न न होवें, अर्थात् यदि याग-शील जनके थोड़ी गाय रहें, तो उनसे गायका प्रतिग्रह करनेसे उनका धर्म्म लोप हो सकता है, मैंने धर्म्मयुक्त विशुद्ध प्रतिग्रह करनेके लिये बहुत वार उस देशमें भ्रमण किया। हे गङ्गानन्दन! देशके एक छोरसे दूसरे छोरतक घूमने परभी दूध देनेवाली एकभी गाय नहीं मिली। आगे दूसरे लड़कोंने पिष्टोदक (चावलको बुकनीके साथ मिले हुए जल) से उस लड़केको लुभाया। हे कुरुनन्दन! बालक अश्वत्थामा उस पिष्टोदकको पीकर बालेपनके कारण मुग्ध होकर यह कह करके, कि मैंने दूध पी लिया है, उठकर आनन्दसे नाचने लगा। उस पुत्रको लड़कोंसे घेरे जाकर और उनकी हंसीका विषय ज्ञात होकर, नाचते देखकर मेरे हृदयमें अति दुःख छा गया, विशेष चिढ़ानेवालोंसे यह बात सुनकर, कि "दरिद्र द्रोणपर धिक्कार है! जो धनके बिना पीनेका दूधका ठिकाना नहीं कर सकता, जिसका पुत्र दूधकी प्याससे पिष्टोदक पीकर प्रसन्न हृदयसे मैंने दूध पीया, कहके नाचता था" मेरी बुद्धि बिगड़ गयी। आगे आपकी अपनी निन्दाकर सोचने लगा, कि मैं [illegible] और निन्दा पाने [illegible] [illegible] हे [illegible] विचार करके पहले मैं

प्यारे पुत्र और स्त्रीको लेकर, पहिलेके स्नेहके हेतु राजा द्रुपदके यहां गया; यह सुनकर, कि मेरे वह प्रिय मित्र राज्यपर बैठे हैं, अपनेको कृतार्थ जानकर प्रसन्नचित्तसे उनके पास गया। हे प्रभो! उनसे एकत्र वास और उनकी प्रतिज्ञाको स्मरण करते हुए, मैंने उनके पास जाकर मित्रतासे कहा, कि हे पुरुष व्याघ्र! मैं तुम्हारा मित्र हूं, यह कहकर मित्रवत् निकट जाकर उनसे मिला। इससे नीच मनुष्यकी भांति मुझपर हंसकर उन्होंने कहा, कि हे ब्राह्मन्! तुम्हारी यह बात बुद्धिमानोंकीसी और सुधरी हुई नहीं है। हे द्विज! क्योंकि तुमने एकायक मुझसे कहा, कि "मैं तुम्हारा मित्र हूं" कालसे सभी टूट फूट जाता है, सो मित्रताभी टूट फूट जाती है; तुमसे पहिले जो मेरी मित्रता हुई थी, वह उन दिनोंके सम्बन्धहीसे हुई थी; वास्तवमें अश्रोत्रिय जन श्रोत्रियसे, रथहीन जन रथयुक्तसे और राजा न होनेसे राजासे मित्रता नहीं कर सकता है, अतएव तुम क्यों पहिली मित्रताकी इच्छा करते हो? दोनोंके समान होनेसे मित्रता होती है, पर आपसमें छोटे बड़े होनेसे क्यों कर मित्रता हो सकती है? इस भूमण्डलमें किसीकी मित्रता कभी सदा बनी नहीं रहती है, क्योंकि कालसे वह दूरी हो सकती है, अथवा क्रोधसे उखड़ जाती है; अतएव तुम उस पुरानी मित्रताकी इच्छा करनी छोड़ दो, अब उसे नवीनताकी मत जानो। हे द्विजश्रेष्ठ जन! किसी प्रयोजनसे तुमसे मेरी मित्रता हुई थी; देखो दरिद्र जन धनीका, मूर्ख पण्डितका, और [illegible] का मित्र नहीं हो सकता है, सो तुम क्यों पहिली मित्रताकी इच्छा कर रहे हो? [illegible]

की थी, वह मुझको स्मरण नहीं होती; पर तुम एक रात जो कुछ खाना चाहो, वह मैं देनेको सम्मत हूं। उनकी वह बात सुनकर, ऐसी प्रतिज्ञा करके जोकि मैं बिनाविलम्ब पूर्ण कर सकूंगा स्त्रीके साथ लौट आया। हे भीष्म। मैं राजा द्रुपदसे इस प्रकार लज्जित होकर गुणवन्त शिष्योंकी खोजमें कुरुराज्यमें उपस्थित हुआ था, आगे आपकी इच्छानुरूप कार्य्य करनेके लिये इस सुन्दर नागपुरमें आया, कहिये इस समय क्या करना होगा?

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि द्रोणको यह बात सुनकर भीष्मने उनसे कहा, कि शरासनके गुणको ढीलाकर लीजिये; इन कुमारोंको भले प्रकार अस्त्रविद्या दान कीजिये। कुरुवोंके घरमें पूजे जाकर भोगके पदार्थ भोगिये; कुरुराजके इस राष्ट्रके साथ राज्य और जो कुछ ऐश्वर्य्य है, आप सबके राजाके समान बने रहिये; सम्पूर्ण कौरव आपहीके हुए। हे ब्राह्मन्। जान लीजिये, कि आपकी जो कुछ प्रार्थना थी, वह सब पूरी हो हो गयी है। विप्रर्षे। हमारे भाग्यसे आप महत् जन कृपासे यहां आ गये हैं।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ तैंतीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर अति तेजस्वी मनुष्योंमें श्रेष्ठजन द्रोण, भीष्मसे पूजे जाकर कुरुवोंके घरमें आदरपूर्व्वक रहने लगे। आगे आचार्य्यकी थकाई दूर होनेपर भीष्मने पौत्रोंको ले जाकर उनके शिष्य बना दिये और प्रसन्न होकर नाना धन देकर उनके रहनेके लिये धन-धान्यसे भरा पूरा साफ एक गृह ठहरा दिया था। बड़े धनुषधारी द्रोणने प्रसन्न चित्तसे उन कुरुपाण्डव और धृतराष्ट्रके पुत्रोंको शिष्य बना लिया। अनन्तर द्रोण अकेले उन सब निकटके कौरवोंसे निरालेमें विश्वासपूर्व्वक बोले, कि हे अनघगण! कोई एक वाञ्छित विषय मेरे मनमें जग रहा है। सो वह सत्य कर बोलो कि, जब तुम लोग अस्त्र विद्यामें दक्ष बनोगे, तब मेरी वह इच्छा पूरी करना। हे पृथ्वीनाथ। कौरवलोग यह सुनकर चुप हो रहे। अनन्तर शत्रु दंसनेहारे अर्जुनने उनकी सब कामनाओंको पूरी करनेका प्रण ठाना। तब द्रोणने वार वार अर्जुनका सिर चूमकर प्रसन्नतासे उनको गलेसे लगाया और हर्षके मारे उनकी आंखोंसे आंसू गिरने लगे। अनन्तर वह वीर्य्यवन्त द्रोण पाण्डुनन्दनको दिव्य और मानवी नाना प्रकारके अस्त्रोंको शिक्षा देने लगे। हे भरतश्रेष्ठ। तब दूसरे अनेक राजकुमारभी आकर के अस्त्रशिक्षाके लिये द्विजोंमें श्रेष्ठ द्रोणाचार्य्यके पास एकत्रित होने लगे। वृष्णिवंशी, अन्धकवंशी और अनेक देशोंके भूपालपुत्र तथा राधाकुमार सूतपुत्र कर्ण द्रोणाचार्य्यके निकट आकरके शिष्य बने। सूतपुत्र अति द्वेषयुक्त होकर अर्जुनसे अहङ्कार दिखाकर दुर्य्योधनकी ओर झुककर पाण्डवोंका अनादर करने लगे। अर्जुन धनुर्व्वेद सीखनेके लिये सदा द्रोणाचार्य्यके निकट रहते थे। वह शिक्षा भुजबल, उद्योग और अस्त्र-विद्यामें यत्नरखनेके कारण सबोंसे विशेष बन गये। अस्त्र चलानेमें समान होनेपरभी उस विषयमें शीघ्र और कौशलके विषयमें अर्जुनही सम्पूर्ण शिष्योंसे बढ़ कर निकले। तब द्रोणने समझा, कि कोईभी शिक्षाके विषयमें इस इन्द्रपुत्र अर्जुनके समान नहीं हो सकेगा। आचार्य्य द्रोण इस प्रकार बाण और अस्त्र विद्याकी शिक्षा देने लगे। इसलिये, कि जल लानेमें विलम्ब हो, वह सब शिष्योंको एक एक कमण्डल अर्थात् छोटा मुहवाला जलका वर्त्तन देते थे, और शीघ्र कार्य्य पूरा करनेके लिये अपने पुत्र अश्वत्थामाको एक कलसा देते थे; इसका अभिप्राय यह है, कि अश्वत्थामाके शीघ्र जल लानेपर द्रोणाचार्य्य उसको किसी किसी अंश

प्रकरणका उपदेश किया करते थे। पाण्डुपुत्र फाल्गुनने तर्कसे उनके उस कामको जान लिया था, सो वह वरुणास्त्रसे कमण्डल भरकर आचार्य्यके पुत्र अश्वत्थामाके साथ एकही समयमें गुरुके पास आ जाते थे, इससे अस्त्र पण्डित मेधायुक्त पार्थ किसी विशेष गुणके विषयमेंभी आचार्य्यके पुत्रसे अलग और कम कम नहीं हुए। वह गुरुकी सेवामें बड़ा यत्न और अस्त्रोंके सीखनेमें बड़ा ध्यान देने लगे, सो द्रोणाचार्य्यके बड़े प्रिय बने। आचार्य्य द्रोण फाल्गुनको अस्त्रोंकी शिक्षामें सदा सन्नद्ध देखकर रसोईदारको निराले में बुलाकर बोले, कि तुम कभी अंधेरेमें अर्ज्जुनको खानेके लिये अन्न मत देना और अर्ज्जुनसे यह भी नहीं कहना, कि मैंने तुमसे ऐसा कहा है। अनन्तर एक समय अर्ज्जुन खा रहे थे, कि ऐसे समयमें हवा चलने लगी, इससे जलते हुए प्रदीपके बुझजाने पर भी तेजस्वी अर्ज्जुन तब अन्धेरेमें भोजन करने लगे, अभ्यासके कारण उनका हाथ मुखके किसी और स्थान में नहीं गया, इससे महाभुज पाण्डुनन्दन अर्ज्जुनने यह समझ कर, कि अभ्याससेही ऐसा होता है, रातके समय न देखने योग्य निशानेमें बाण चलानेका अभ्यास आरम्भ कर दिया। हे भारत! आचार्य्य द्रोण रात्रिके समय उनके बाणोंके छूटनेका शब्द सुनकर उठकरके वहां गये और गले लगाकर अर्ज्जुनसे बोले, कि तुमसे कहता हूं, कि ऐसा प्रयत्न करूंगा, कि मर्त्यलोक भरमें कोई दूसरा धन्वा धरने वाला तुम्हारे समान न होवे।

वैशम्पायनजी बोले कि अनन्तर वीर्य्यवान द्रोणाचार्य्यने अर्ज्जुन को घोड़े पर, रथ पर हाथी पर और भूमिपर युद्ध करनेकी विधि सिखादी और गदायुद्ध, खड्ग चलानेमें तोमर, प्राश, शक्ति आदि विविध विविध शस्त्रोंके [illegible] और [illegible] में [illegible]

अनेक बाण चलाने अथवा एकवारही अनेक जनोंके संग युद्ध करनेमें सुशिक्षित किया। सहस्रों राजा और राजकुमार उनके उस कौशलकी बातको सुनकर धनुर्व्वेद सीखनेके लिये इकट्ठे होने लगे। हे महाराज! हिरण्यधनु नामक निषाद राजकुमार एकलव्य द्रोणके पास आया। धर्म्मज्ञ द्रोण यह समझकर, कि यह व्याधका पुत्र है, राजकुमारोंके चिढ़नेके भयसे उसको नहीं लिया। हे शत्रुनाशि! एकलव्यने द्रोणाचार्य्यके पावों पर सिर रखकर, वनमें जाकर मिट्टीसे द्रोणकी एक प्रतिमा गढ़ी और उस प्रतिमूर्त्तिमें अच्छे आचार्य्यकी बुद्धि देकर नियमसे एकचित्त होकर धनुर्व्वेद सीखने लगा। उसकी बड़ी श्रद्धा और एकचित्तताके कारण अस्त्रोंका विमोचन, आदान और सन्धान बड़ा सहज हो पड़ा। अनन्तर किसी समय शत्रुदमनेहारे कुरुपाण्डव लोग द्रोणाचार्य्यकी आज्ञासे रथ पर आरूढ़ होकर मृगयाके लिये गये। हे राजन्! तब एक मनुष्य मृगयाके योग्य जालादि लेकर, एक कुत्तेको साथ लेकर, अपनी इच्छानुसार पाण्डवोंके सङ्ग चलने लगा। आगे उस वनमें जब सब लोग अपना अपना काम पूरा करनेके लिये घूम घाम रहे थे, तब उनका साथी वह कुत्ता किसीके न देखे जाकर व्याधकी ओर गया और उसको काला, विछासे शरीर रङ्गा हुआ, काला चमड़ा पहिने हुए और जटाधारी देखकर उसके सामने खड़ा होकर भोंकने लगा। व्याधपुत्रने अस्त्र चलानेमें शीघ्रता दिखा कर उस चिल्लाते हुए कुत्तेके मुखमें एक वारही सात बाण लगाया। बाणोंसे मुख भरे होने पर कुत्ता पाण्डवोंके पास आया। वीर पाण्डवोंने उसको उस दशामें देखकर बड़ा अचरज माना और [illegible]

हुए और सब प्रकारसे उसकी प्रशंसा करने लगे। हे राजन्। तब पाण्डवोंने उस वनमें रहनेवाले अस्त्र चलानेहारेको वनमें ढूंढ़ते हुए देखा, कि वह हरघड़ी बाण चला रहा है, पर उन्होंने उस स्वरूप बिगाड़े हुए व्याधको नहीं पहिचाना, अन्तम पूछा, कि आप कौन है? किसके पुत्र हैं? एकलव्य बोला कि, हे वीर गण! मैं निषादराज हिरण्यधनुका पुत्र हूं, द्रोणाचार्य्यका शिष्य होकरके सदा धनुर्व्वेद सीखनेके लिये परिश्रम कर रहा हूं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर पाण्डवोंने उसको ठीक पहिचानकर लौट कर वह सब आश्चर्य वृत्तान्त सच सच द्रोणाचार्य्यको कह सुनाया। हे राजन्! कुन्तीपुत्र अर्ज्जुन एकलव्यको स्मरण करते हुए द्रोणके पास पहुंच कर प्रेमसे निरालेमें बोले, कि हे आचार्य्य। पहिले आपने अकेले मुझको गलेसे लगाकर प्रेमसे यह कहा था कि, मेरा कोई शिष्य तुमसे श्रेष्ठ न होगा" फिर क्यों वीर्य्यवन्त निषाद-राजका पुत्र आपका शिष्य होकर मुझसे, वरन सम्पूर्ण लोगोंसे श्रेष्ठ हुआ? अनन्तर द्रोण उस बातको क्षणभर निश्चयरूपसे सोचकर सव्यसाची अर्ज्जुनको साथ लेकर उस निषाद-राजपुत्रके यहां गये और देखा, कि विष्ठासे देह रङ्गा हुआ जटाधारी, चीर पहिने एकलव्य हाथोंसे चापको थामकर सदा बाण चला रहा है। एकलव्यने निकट आये हुए द्रोणाचार्य्यको देखकर निकट आके पाँव छूकर प्रणाम किया, विधिपूर्व्वक पूजकर तथा यह कहकर, कि मैं आपका शिष्य हूं, दोनों हाथ जोड़ सामने खड़ा रहा। हे राजन्! अनन्तर द्रोणने एकलव्यसे कहा, कि हे वीर! यदि तुम मेरे शिष्य हो, तो मुझको दक्षिणा दो। एकलव्यने सुनकर प्रसन्न चित्तसे कहा, कि हे भगवान्! आज्ञा कीजिये, कि क्या दूं? हे ब्रह्मज्ञोंमें उत्तम! आप मेरे गुरु हैं, गुरुको मुझे कुछभी अदेय नहीं है। द्रोणाचार्य्य बोले, कि यदि तुम अवश्य देनेपर हो, तो मुझको दाहिने हाथका अंगूठा देदो। एकलव्य सदा सत्य पर खड़ा था, सो आचार्य्य द्रोणकी वह कठोरवाणी सुनने पर भी चित्तमें दुःख न मान कर और मुखको प्रसन्न कर अपनी प्रतिज्ञा पूरी करके विना बिचार अपने दाहिने अंगूठेको काट कर द्रोणाचार्य्यको दे दिया। हे नरेश! अनन्तर निषादराज-कुमार शेष उङ्गलियोंसे बाण चलाने लगा, पर पहिले की समान शीघ्रतासे काम न कर सका। तब अर्ज्जुन प्रसन्न चित्त हुए, उनकी मनःपीड़ा जाती रही और आचार्य्य द्रोणने पहिले जैसे कहा था, कि कोई भी अर्ज्जुनको परास्त नहीं कर सकेगा, अब वह बात सच्ची ठहरी। दुर्योधन और भीम द्रोणके यह दो शिष्य गदायुद्धमें दक्ष बने, उनमेंसे एक दूसरेपर सदा क्रोधित बना रहता था। अस्त्र चलानेके सब रहस्योंके जाननेसे अश्वत्थामा सबोंसे अच्छे निकले। नकुल और सहदेव खड्गका बेंट फकड़नेमें सबोंको नांघ गये। युधिष्ठिर रथियोंमें प्रधान हुए। धनञ्जय हर बातमेंही श्रेष्ठ निकले थे। वह बुद्धि, उपाय, बल और उत्साहसे सम्पूर्ण अस्त्र चलानेमें दक्ष रथी दलके स्वामियोंके दलपति होकर समुद्रसे लेकर सम्पूर्ण धरतीमें प्रसिद्ध हुए। विविध अस्त्रोंके चलाने और गुरुकी भक्ति करनेके विषयमें उनके समान कोई दूसरा नहीं था। सबों पर बराबर अस्त्रोपदेश होने परभी वीर्य्यवन्त अर्ज्जुन सौष्टव अर्थात् स्थिति मुष्टि आदिकी शुद्धिसे सब कुमारोंमें अद्वितीय अतिरथ करके गिने गये! हे शत्रुनाशि! दुरात्मा धृतराष्ट्र पुत्रगण बड़े बली भीमसेन और विद्या सीखे हुए अर्ज्जुनको देखकर द्वेषसे जलने लगे। हे पुरुषश्रेष्ठ! एक समय द्रोणने अस्त्र सम्बन्धी सम्पूर्ण विद्याओंमें शिक्षित उन सब शिष्योंको

एकवकर यह जानना चाहा, कि किसने कैसी शिक्षा ली है। इससे पहिले उन्होंने कुमारोंके न जाननेमें शिल्पकारसे बनवाकर एक कृत्रिम गिद्ध पक्षीको निशानेके लिये एक वृक्ष पर रख छोड़ा था। आगे शिष्योंसे बोले, कि कुमारो! तुम शीघ्र धनुष लेकर उसमें वाण जोड़ करके उस देखे जाते हुए गिद्ध पर निशाना किये रहो मेरी वातके सुनतेही उस पक्षीके सिरको काटना पड़ेगा। ऐ बेटे! मैं एक एक कर तुम सबोंमें जब जिसे जैसे नियोग करूंगा, वह उसीक्षण वैसाही करे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर अङ्गिरावंशियोंमें श्रेष्ठ द्रोण पहिले युधिष्ठिरसे बोले, कि हे दुर्द्धर्ष! वाणसे निशाना करलो, मेरी वात पूरी होतेही उसको चलाना। आगे शत्रुतपनेहारे युधिष्ठिर गुरुकी आज्ञासे पहिले धन्वा लेकर पक्षी पर निशाना किये खड़े रहे। हे भरतश्रेष्ठ! द्रोणने धन्वा पर गुण चढ़ाये हुए कुरुनन्दन युधिष्ठिरसे क्षण भर पीछे कहा, कि राजकुमार! उस वृक्षपरके गिद्धको देखते हो? युधिष्ठिर बोले, कि हां देखता हूं। द्रोणने उसकाल पीछे फिर कहा, कि तुम इस वृक्षको मुझको अथवा अपने भाइयोंको देखते हो? युधिष्ठिर बोले, कि हां, मैं इस वृक्षको, भाइयो और उस पक्षीको देखता हूं। आचार्य्यसे वार वार यों पूछे जाने परभी उन्होंने वार वार यही कहा। इससे द्रोण उन पर अप्रसन्नचित्त होकर लाञ्छन कर बोले, कि तुम चले जाओ, यह लक्ष्य विद्ध करना तुम्हारा काम नहीं है। अनन्तर अति यशवन्त द्रोणने सब शिष्योंको शक्ति पूछनेके लिये दुर्योधन आदि धृतराष्ट्रके पुत्रोंसे और भीम, नकुल, सहदेव तथा अन्य देशोंके राजकुमारोंसेभी उस [illegible] निशाने सहित खड़े रख रखकर [illegible] पर सब यह उत्तर दे देकर, कि [illegible] देखता हूं आचार्य्यसे निन्दित हुए। अन-

न्तर द्रोण कुछ हंसकर धनञ्जयसे बोले, कि बेटा! अब तुमको यह लक्ष्य विद्ध करना पड़ेगा, सो वह लक्ष्यको देखो, मेरी वातके साथही साथ वाण जोड़कर क्षणभर ठहरे रहो। सव्यसाची अर्जुन गुरुकी आज्ञासे शरासनमें वाण जोड़कर पक्षी पर निशाना जमाकर खड़े रहे। क्षणभर पीछे द्रोणने पहिलेकी नाईं कहा, कि अर्जुन तुम उस वृक्षपरके पक्षीको और मुझको देखते हो? हे भारत! पार्थने कहा, केवल पक्षीहीको देखता हूं, वृक्षको वा आपको नहीं देखता हूं। अनन्तर दुर्द्धर्ष द्रोण प्रसन्नचित्त होकर क्षणभर पीछे पाण्डवोंमें महारथी उन अर्जुनसे बोले कि यदि तुम पक्षीहीको देखते हो तो कहो, उसको कैसा देखते हो। अर्जुनने उत्तर दिया, कि मैं उस पक्षीका सिर मात्र देखता हूं, शरीर नहीं देखता। अर्जुनकी यह वात सुनकर हर्षके मारे उनको देहके रोये खड़े हो गये और उनसे बोले, कि अब वाण छोड़ो। तब पाण्डुपुत्र अर्जुनने कोई विचार न करके वाणको मारा, उससे उसीक्षण उस तेज अस्तुरेकी नाईं वाणने वृक्षपरके पक्षीका सिर काटकर नीचे गिरा। द्रोणाचार्य्यने वह काम पूरा होते देखकर प्रसन्नचित्तसे फाल्गुनको गलेसे लगाया और मनहीमनमें यह निश्चय किया, कि राजा द्रुपद सहायकोंके साथ युद्धमें हार जायगा। हे भरतकुलमें श्रेष्ठ पुरुष! उसके कुछदिन पीछे द्रोणने शिष्योंके सङ्ग गङ्गा नहाने जाकर ज्योंही जलमें देह डुबायो, त्योंही एक बलवन्त घड़ियालने मानो कालकी प्रेरणासे उनकी उनकी जांघके भीतर तक काटा। [illegible] स्वयं उसके छुड़ानेमें समर्थ होने परभी सब शिष्योंसे मानो उनका [illegible] [illegible] लिये बोले, कि तुम तुरन्त इस [illegible] मेरी रक्षा करो। [illegible]

हुए और सब प्रकारसे उसकी प्रशंसा करने लगे। हे राजन्! तब पाण्डवोंने उस वनमें रहनेवाले अस्त्र चलानेहारेको वनमें ढूढ़ते हुए देखा, कि वह हरघड़ी बाण चला रहा है, पर उन्होंने उस स्वरूप विगाड़े हुए व्याधको नहीं पहिचाना; अन्तमे पूछा, कि आप कौन है? किसके पुत्र हैं? एकलव्य बोला कि, हे वीर गण! मैं निषादराज हिरण्यधनुका पुत्र हूं, द्रोणाचार्य्यका शिष्य होकरके सदा धनुर्व्वेद सीखनेके लिये परिश्रम कर रहा हूं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर पाण्डवोंने उसको ठीक पहिचानकर लौट कर वह सब आश्चर्य्य वृत्तान्त सच सच द्रोणाचार्य्यको कह सुनाया। हे राजन्! कुन्तीपुत्र अर्ज्जुन एकलव्यको स्मरण करते हुए द्रोणके पास पहुंच कर प्रेमसे निरालेमें बोले, कि हे आचार्य्य। पहिले आपने अकेले मुझको गलेसे लगाकर प्रेमसे यह कहा था कि, मेरा कोई शिष्य तुमसे श्रेष्ठ न होगा" फिर क्यों वीर्य्यवन्त निषाद-राजका पुत्र आपका शिष्य होकर मुझसे, वरन सम्पूर्ण लोगोंसे श्रेष्ठ हुआ? अनन्तर द्रोण उस बातको क्षणभर निश्चयरूपसे सोचकर सव्यसाची अर्ज्जुनको साथ लेकर उस निषाद-राजपुत्रके यहां गये और देखा, कि विष्ठासे देह रङ्गा हुआ जटाधारी, चीर पहिने एकलव्य हाथोंसे चापको थामकर सदा बाण चला रहा है। एकलव्यने निकट आये हुए द्रोणाचार्य्यको देखकर निकट जाके पांव छूकर प्रणाम किया, विधिपूर्व्वक पूजकर तथा यह कहकर, कि मैं आपका शिष्य हूं, दोनों हाथ जोड़ सामने खड़ा रहा। हे राजन्। अनन्तर द्रोणने एकलव्यसे कहा, कि हे वीर! यदि तुम मेरे शिष्य हो,तो मुझको दक्षिणा दो। एकलव्य यह सुनकर प्रसन्न चित्तसे कहा, कि हे भगवान्! आज्ञा कीजिये, कि क्या दूं? हे ब्रह्मज्ञोंमें उत्तम। आप मेरे गुरु हैं, गुरुको मुझे कुछभी अदेय नहीं है। द्रोणाचार्य्य बोले कि यदि तुम अवश्य देनेपर हो, तो मुझको दाहिने हाथका अंगूठा देदो। एकलव्य सदा सत्य पर खड़ा था, सो आचार्य्य द्रोणकी वह कठोरवाणी सुनने पर भी चित्तमें दुःख न मान कर और मुखको प्रसन्न कर अपनी प्रतिज्ञा पूरी करके विना विचार अपने दाहिने अंगूठेको काट कर द्रोणाचार्य्यको दे दिया। हे नरेश! अनन्तर निषादराज-कुमार शेष उङ्गलियोंसे बाण चलाने लगा, पर पहिले की समान शीघ्रतासे काम न कर सका। तब अर्ज्जुन प्रसन्न चित्त हुए, उनकी मनःपीड़ा जाती रही और आचार्य्य द्रोणने पहिले जैसे कहा था, कि कोई भी अर्ज्जुनको परास्त नहीं कर सकेगा, अब वह बात सच्ची ठहरी। दुर्य्योधन और भीम द्रोणके यह दो शिष्य गदायुद्धमें दक्ष बने, उनमेंसे एक दूसरेपर सदा क्रोधित बना रहता था। अस्त्र चलानेके सब रहस्योंके जाननेमें अश्वत्थामा सबोंसे अच्छे निकले। नकुल और सहदेव खड्गका बेंट फाकड़नेमें सबोंको नांघ गये। युधिष्ठिर रथियोंमें प्रधान हुए। धनञ्जय हर बातमेंही श्रेष्ठ निकले थे। वह बुद्धि, उपाय, बल और उत्साहसे सम्पूर्ण अस्त्र चलानेमें दक्ष रथी दलके स्वामियोंके दलपति होकर समुद्रसे लेकर सम्पूर्ण धरतीमें प्रसिद्ध हुए। विविध अस्त्रोंके चलाने और गुरुकी भक्ति करनेके विषयमें उनके समान कोई दूसरा नहीं था। सबों पर बराबर अस्त्रोपदेश होने परभी वीर्य्यवन्त अर्ज्जुन सौष्टव अर्थात् स्थिति मुष्टि आदिकी शुद्धिसे सब कुमारोंमें अद्वितीय अतिरथ करके गिने गये! हे शत्रुनाश! दुरात्मा धृतराष्ट्र पुत्रगण बड़े बली भीमसेन और विद्या सीखे हुए अर्ज्जुनको देखकर द्वेषसे जलने लगे। हे पुरुषश्रेष्ठ! एक समय द्रोणने अस्त्र सम्बन्धी सम्पूर्ण विद्याओंमें शिक्षित उन सब शिष्योंको

एकत्रकर यह जानना चाहा, कि किसने कैसी शिक्षा ली है। इससे पहिले उन्होंने कुमारोंके न जाननेमें शिल्पकारसे बनवाकर एक कृत्रिम गृद्ध पक्षीको निशानेके लिये एक वृक्ष पर रख छोड़ा था। आगे शिष्योंसे बोले, कि कुमारो! तुम शीघ्र धनुष लेकर उसमें बाण जोड़ करके उस देखे जाते हुए गिद्ध पर निशाना किये रहो मेरी बातके सुनतेही उस पक्षीके सिरका काटना पड़ेगा। ऐ बेटे! मैं एक एक कर तुम सबोंमें जब जिसे जैसे नियोग करूंगा, वह उसीक्षण वैसाही करे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर अङ्गिरा-वंशियोंमें श्रेष्ठ द्रोण पहिले युधिष्ठिरसे बोले, कि हे दुर्द्धर्ष! बाणसे निशाना करलो, मेरी बात पूरी होतेही उसको चलाना। आगे शत्रुतपनेहारे युधिष्ठिर गुरुकी आज्ञासे पहिले धन्वा लेकर पक्षी पर निशाना किये खड़े रहे। हे भरत-श्रेष्ठ! द्रोणने धन्वा पर गुण चढ़ाये हुए कुरुनन्दन युधिष्ठिरसे क्षण भर पीछे कहा, कि राजकुमार! उस वृक्षपरके गिद्धको देखते हो? युधिष्ठिर बोले, कि हां देखता हूं। द्रोणने कुछकाल पीछे फिर कहा, कि तुम इस वृक्षको मुझको अथवा अपने भाइयोंको देखते हो? युधिष्ठिर बोले, कि हां, मैं इस वृक्षको, भाइयों-का और उस पक्षीको देखता हूं। आचार्यसे बार बार यों पूछे जाने परभी उन्होंने बार बार वैसाही कहा। इससे द्रोण उन पर अप्रसन्नचित्त होकर लाञ्छन कर बोले, कि तुम चले जाओ, यह लक्ष्य विद्ध करना तुम्हारा काम नहीं है। अनन्तर अति यशवन्त द्रोणने सब शिष्योंको शक्ति पूछनेके लिये दुर्यो-धन आदि धृतराष्ट्रके पुत्रोंसे और भीम, नकुल, सहदेव तथा अन्य देशोंके राजकुमारोंसेभी उस प्रकार बाणके निशाने सहित खड़े रख रखकर पूछा, पर सब यह उत्तर दे देकर, कि वृक्षादि सब देखता हूं, [illegible]

न्तर द्रोण कुछ हंसकर धनञ्जयसे बोले, कि बेटा! अब तुमको यह लक्ष्य विद्ध करना पड़ेगा, सो वह लक्ष्यको देखो, मेरी बातके साथही साथ बाण जोड़कर क्षणभर ठहरे रहो। सव्यसाची अर्जुन गुरुकी आज्ञासे शरासनमें बाण जोड़कर पक्षी पर निशाना जमाकर खड़े रहे। क्षणभर पीछे द्रोणने पहिलेकी नाईं कहा, कि अर्जुन तुम उस वृक्ष-परके पक्षीको और मुझको देखते हो? हे भारत! पार्थने कहा, केवल पक्षीहीको देखता हूं, वृक्षको वा आपको नहीं देखता हूं। अनन्तर दुर्द्धर्ष द्रोण प्रसन्नचित्त होकर क्षणभर पीछे पाण्डवोंमें महारथी उन अर्जुनसे बोले कि यदि तुम पक्षीहीको देखते हो तो कहो, उसको कैसा देखते हो। अर्जुनने उत्तर दिया, कि मैं उस पक्षीका सिर मात्र देखता हूं, शरीर नहीं देखता। अर्जुनकी यह बात सुनकर हर्षके मारे उनकी देहके रोयें खड़े हो गये और उनसे बोले, कि अब बाण छोड़ो। तब पाण्डुपुत्र अर्जुनने कोई विचार न करके बाणको मारा, उससे उसीक्षण उस तेज अस्तुरेकी नाईं बाणसे वृक्ष-परके पक्षीका सिर काटकर नीचे गिरा। द्रोणाचार्यने वह काम पूरा होते देखकर प्रसन्नचित्तसे फाल्गुनको गलेसे लगाया और मनहीमनमें यह निश्चय किया, कि राजा द्रुपद सहायकोंके साथ युद्धमें हार जावेगा। हे भरतकुलमें श्रेष्ठ पुरुष! उसके कुछदिन पीछे द्रोणने शिष्योंके सङ्ग गङ्गा नहाने जाकर ज्योंही जलमें देह डुबायो, त्योंही एक बलवन्त घरियारने मानो कालकी प्रेरणासे उनको उनकी जाङ्घके भीतर तक काटा। द्रोण स्वयं उससे बचनेमें समर्थ होने परभी सब शिष्योंसे मानो उनको शीघ्रता देखनेके लिये बोले, कि तुम तुरन्त इस जलचरको नष्ट करके मेरी रक्षा करो। गुरु द्रोणके यह बात

कहतेही वीभत्सुने पांच न रोकने योग्य बाणोंसे जलमें डूबे हुए जलचरको विद्ध किया। दूसरे शिष्य जो जहां थे, वह वहीं मूढ़वत खड़े रहे। तब आचार्य्य द्रोणने अर्जुनको काममें उद्योगी देखकर सब शिष्योंसे उनको श्रेष्ठ समझा और उनपर बड़े प्रसन्न हुए। घरियार महात्मा द्रोणको जांघको तजकर पार्थके बाणोंसे टुकडे टुकड़े होकर परलोकको सिधारा! अनन्तर महामति भरद्वाजपुत्र अर्जुनसे बोले, कि हे महाभुज। ब्रह्मशिर नामक यह अति दुर्द्धर्ष श्रेष्ठ अस्त्र तुमको प्रयोग और उपसंहार सहित देता हूं, लो; मनुष्य पर कभी इसे न मारना, क्योंकि यह स्वल्पतेजस्वी मानव पर चलाये जानेसे जगन्मण्डलकोभी जला सकेगा। बेटा! तीनों लोकोंमें यह अस्त्र असाधारण करके प्रख्यात है; सो तुम इसे यत्नसे रखना और मैं जो कहता हूं, सुनो। हे वीर। यदि कभी मनुष्यके विना कोई और शत्रु तुम्हारी विरुद्धता करे, तो युद्धस्थलमें उसको वध करनेके लिये यह अस्त्र चलाना। वीभत्सुने दोनों हाथ जोड़के, उस बातको मानकर उस परमास्त्रको ले लिया। तब गुरुने फिर उनसे कहा, कि इस भूमण्डल भरमें कोई जन तुम्हारे समान चापधारी नहीं होगा, तुम शत्रुओंसे जीते जानेके अयोग्य और यशवन्त होकर रहोगे।

सम्भव पर्व्वमें एकसौ चौंतीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे राजा! द्रोणाचार्य्य धृतराष्ट्रके पुत्रों और पाण्डवोंको अस्त्रशिक्षामें दक्ष देख कर कृप, सोमदत्त, वाह्लीक व्यास, विदुर और धीमान भीष्मके सामने राजा धृतराष्ट्रसे बोले, कि हे कुरुसत्तमके श्रेष्ठ महाराज। आपके कुमारोंने विद्या पढ़ ली है, अब आज्ञा हो, तो वे अपनी विद्या का परिचय दें। अनन्तर महाराज। उनसे प्रसन्नचित्तसे बोले, कि हे ब्राह्मण कुलमें श्रेष्ठ भारद्वाज आपसे अति महत कार्य्य हुआ है, हालमें आप अस्त्र-परीक्षाके लिये जो स्थान ठहरावें और जहां जिस प्रकार उसका निर्व्वाह होना निश्चय करें, उसके प्रबन्धकी आज्ञा मुझसे कीजिये। जो अस्त्र चलानेमें पराक्रमी लोग मेरे इन पुत्रोंको देखेंगे, आज मुझमें आखोंके विना, देखने की अक्षमता हेतु उन लोगोंकी चाह उमड़ रही है। विदुर। पूजनीय आचार्य्य जैसा कहें, वह सब करो। हे धर्म्मप्रेमी। मैं समझता हूं, कि इससे मेरे लिये कोई कार्य्य प्रिय नहीं होगा। अनन्तर राजासे सम्भाषण करके विदुरके निकलने पर महाप्राज्ञ भारद्वाजने वृक्ष गुल्मादियोंसे रहित, जलके सोते-सहित समभूमि देखकर उसको मापा। अनन्तर समाजके सब लोगोंको सूचनाके द्वारा बुलाये जाने पर बोलनेमें तेज आचार्य्य अच्छे नक्षत्र युक्त शुभ तिथिमें देवताके नामसे विधिपूर्वक उस स्थानका उपहार दिया। हे नराधिप। उनके नियुक्त किये हुए शिल्प करनेवालोंने उस अखाड़ेमें राजाके और नारियोंके लिये शास्त्रानुसार अच्छे सब प्रकारके अस्त्रोंसे सजे सजाये और लम्बे चौड़े देखनेके घर बनाये और नगरबासी धनियोंनेभी वहां ऊंची और बड़ी बड़ी वेदी तथा मचान बनवा रखी। हे जय शील लोगोंमें श्रेष्ठ! अनन्तर कुमारों के विक्रम दिखानेके निश्चय किये हुए दिनके आजने पर राजा धृतराष्ट्र मन्त्रियोंके साथ और भीष्म तथा आचार्य्यश्रेष्ठ कृपको आगे करके चले और स्थान-स्थानमें मोतियोंकी लड़ी लटकाये और वैदूर्य्य मणियोंसे सजे सजाये सुवर्णके, सुन्दर दर्शन-भवनमें गये और बड़ी भाग्यवती गान्धारी और कुन्तीभी दर्शन गृहमें गयी। दूसरी राज-रानियां दासियोंके साथ अपूर्व्व वस्त्र पहिरे आनन्दकी उमंगमें वेदियों पर जा बैठीं

समय जान पड़ने लगा कि मानों देवोंकी स्त्रियां सुमेरुकी चोटीपर चढ़ी हैं। ब्राह्मण क्षत्रिय आदि चारों वर्णके लोग कुमारोंकी अस्त्र-विद्याकी योग्यता देखनेके लिये नगरसे निकलकर बड़े वेगसे वहां देखनेकी बड़ी चाहसे क्षण भरमें एकत्र हुए। तब सम्पूर्ण रूपसे बजते हुए बाजोंके शब्द और लोगोंके आश्चर्य-पूरित कलरवसे समाज महासमुद्रके समान लहराने लगा। अनन्तर शुक्ल दाढ़ी, शुक्ल माला और शुक्ल चन्दनसे शोभायमान, तेजवान् आचार्य द्रोण अपने पुत्रके साथ अखाड़ेमें आये। उस समय जान पड़ा, कि मानो मङ्गल ग्रहके साथ प्रकाशमान देव बादलरहित आकाशको जा रहे हैं। महाबली आचार्य्यने उस स्थानमें उचित समयमें देव पूजन किया और मन्त्र जाननेवाले ब्राह्मणोंसे मङ्गलाचरण करवाया। अनन्तर पवित्र-पुण्य दिनकी कथा कही जाने पर नियुक्त किये हुए लोग नाना अस्त्रों और उनके उपकरण ले लेकर अखाड़ेमें जा घुसे। तब युधिष्ठिर आदि भरतवंशियोंमें श्रेष्ठ महारथी और वीर्य्यवन्त कुमारगण कमर कसके उंगली रक्षक, तूणीर और धनुषवाण धारणकर वहां प्रविष्ट हुए, वे बड़े छोटेके क्रमसे अति आश्चर्य अस्त्रविद्या प्रगट करने लगे। तब देखनेवालोंमें कोई कोई तो वाणोंके गिरनेके भयसे सिर नीचे किये रहे और कोई कोई विना भय आश्चर्य चित्तसे देखने लगे। कुमारगण शीघ्र लेजाने वाले घोड़ोंपर नामाङ्कसे शोभायमान नाना वाणोंको शीघ्रतापूर्वक चलाके लक्ष्य बेधने लगे! तब देखनेवालोंने धनुषवाण लिये हुए कुमारोंका गन्धर्व्व-नगरके समान वह आश्चर्य लीला देखकर अचरज माना। हे भारत! वहांके सैकड़ो सहस्रो मनुष्य विस्मयसे प्रसन्ननेत्र होकर एकायक चिल्लाकर 'साधु, साधु" ऐसी ध्वनि कर उठे। महाबली कुमारगण शरासन और रथ चलानेमें, हाथीपर, घोड़ेपर चढ़ने और हाथाबांहीमें नाना कौशल बार बार दिखाकर अन्तमें खड्ग चर्म्म लेकर फिर मारपीटमें लगकर निशानेके अनुसार नाना प्रकारसे अस्त्रोंका चलाना दिखा करके, अखाड़ेमें घूमने लगे। देखनेवाले उन वीर कुमारोंके असिचर्म्म प्रयोगमें तेज हाथ, कौशल धीरज, मूठोंकी दृढ़ता और अपूर्व्व शोभा देखने लगे। अनन्तर, सदाके अहङ्कारी दुर्य्योधन और वृकोदर गदा हाथमें लेकर एकही चोटीवाले पहाड़ोंके समान अखाड़ेमें उतरे! एक हथनीके लोभसे दो उन्मत्त हाथी जिस प्रकार चिल्लाते रहते हैं। उसके समान बड़ाई चाहने वाले वे दो महाभुज वीर कमर कसकर गर्ज्जने लगे। सदा गदा लिये हुए मदमत्त हस्तियोंके समान महाबली सुयोधन और भीम दहिनी पलट और बांयी पलटके अनुसार गोलाकार हो कर अखाड़ेमें घूमने लगे। तब विदुरने धृतराष्ट्रसे, और कुन्तीने गान्धारीके निकट कुमारोंसे किये जाते हुए, सब वृत्तान्तको कह सुनाया।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ पैतीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि कुरुराज दुर्य्योधन और महाबली भीमके अखाड़ेमें उतरने पर देखनेवाले पक्षपातसे स्नेह कर दो दलोंमें बंट गये। कोई कोई तो कहने लगे, कि कुरुराज कैसे अच्छे वीर हैं। और दूसरे कहने लगे कि भीम कैसे अच्छे वीर है! चारों ओरसे इसी बातका घोर कोलाहल मच उठा; उसके अनन्तर बुद्धिमान भारद्वाज हिलोड़ते हुए समुद्रकी भांति उस अखाड़ेको देखकर प्रिय पुत्र अश्वत्थामासे बोले, कि यह भीम और दुर्य्योधन दोनों बड़े वीर्य्यवन्त और युद्धविद्यामें तेज हैं, सो इनसे कह दो कि, अखाड़ेमें इनसे क्रोध न उपजे। अनन्तर प्रलयकालकी हवासे

लहराते हुए, अचेतटवाले समुद्रकी समान उन्मत्त, गदा उठाये हुए भीम और सुयोधन गुरुकुमार-से रोके गये। तब आचार्य्य द्रोण आखाड़ेमें जाकर घने बादलकी गड़गड़ाहटके समान बाजों की ध्वनिको रोककर बोले, कि उपेन्द्रके सदृश सर्व्व शास्त्रोंमें प्रधान और मेरे पुत्रसेभी प्यारे वह इन्द्रपुत्र अब दिखाई देंगे। तब आचार्य्यकी आज्ञासे तरुणअवस्थावाले फाल्गुन मङ्गलाचरण करनेके पश्चात् गुणकी चोट रोक-नेवाली चमड़ेकी पट्टी और उंगलीरक्षक कसके वाणसे पूरित तूण, धनुष और सोनेके कवच पहरकर मानों सूर्य्यप्रकाशके समान जलते हुए और इन्द्रधनु तथा बिजलीकी चमककी भांति सुहाते हुए, सन्ध्याकालके वादलके सदृश दीख पड़े। उससे अखाड़ेको चारों ओरसे आनन्दकी ध्वनि उठने लगी और शंख तथा अनेक बाजे बजने लगे। यह श्रीमान् पुरुष कुन्तीके पुत्र हैं, यह मझले पाण्डव हैं, यही कुरुओंकी रक्षा करनेवाले हैं, यही अस्त्र धरनेवालोंमें श्रेष्ठ हैं, यही धार्म्मिकोंमें प्रधान हैं, यही सुशीलोंकी शीलता और ज्ञानके परम आदर्शरूपी हुए हैं;—दर्शकोंकी ऐसी, अनेक बातें सुनकर कुन्तीकी स्तनदुग्ध तथा आंसूसे छाती भींग गयी। उन सब बड़े भारी शब्दोंसे नरोंमें श्रेष्ठ धृतराष्ट्रके कान भर जानेसे उन्होंने प्रसन्नचित्त होकर विदुरसे पूछा, कि हे क्षत्त! अखाड़ेमें हिलोड़े हुए समुद्रको ध्वनिकी भांति यह महाशब्द मानों आकाश फाड़केही क्यों एकायक उठा! विदुर बोले, कि महाराज! यह पाण्डुनन्दन पार्थ अर्ज्जुन कवच पहरकर अखाड़ेमें उतरे हैं, उससे ऐसा घोर कोलाहल मच रहा है। धृतराष्ट्र बोले, कि हे महामते! कुन्तीरूपी वनसे उपजे हुए पाण्डवरूपी तीन अग्नियोंसे मैं धन्य, कृपायुक्त और रक्षित हुआ।

वैशम्पायनजी बोले, कि अखाड़ेके उन हर्षयुक्त लोगोंके उत्साहित होकर कुछ शान्त होजानेपर अर्ज्जुन आचार्य्यको अस्त्र चलानेकी दक्षता दिखाने लगे। उन्होंने अग्न्यास्त्रसे अग्नि वारुणास्त्रसे जल, वायव्यास्त्रसे वायु और पार्ज्जन्यास्त्रसे पर्व्वत बनया और अन्तर्द्धान अस्त्रसे अन्तर्हित होगये। वह क्षणभरमें दीर्घ, क्षण भरमें ह्रस्व, क्षण भरमें रथ धूर्व्वीके निकट स्थित, फिर, क्षणभरमें रथके भीतर और क्षणभरमें धरती पर उतरने लगे। गुरुप्रेमी अर्ज्जुन वाणोंसे फूल आदि कोमल वस्तु, गुञ्जा और वाणाग्र आदि सूक्ष्म वस्तु और धातु पत्थर आदि भारी वस्तु कौशलसे फेंकनेकी इच्छासे विद्ध करने लगे। उन्होंने चरते हुए, लोहेके बने सुवरके मुखमें मानों एक वाणकी भांति पांच वाणोंको जोड़कर एकही कालमें उनको चलाया। उन महावीरने रस्सी पर लटके हिलते हुए गौके सींगके कोपको इक्कीस वाण छोड़कर विद्ध किया। हे अनघ! शास्त्रमें पण्डित कुन्तीपुत्र इस प्रकारसे धनुर्व्विद्यामें असि चलानेमें और गदा फेरनेमें नाना योग्यता दिखाने लगे। हे भारत! वह कृत्रिम युद्ध अन्त होने पर था और लोगोंका कोलाहल और बाजोंकी ध्वनि घट गयी थी, कि ऐसे समयमें द्वारदेशसे उठती हुई शूरता और वीरतासूचक वज्रके गर्ज्जन समान ललकार सुनी गयी। हे नरनाथ! सब अखाड़ेके लोग समझने लगे, कि हैं, यह क्या है! कदाचित् पहाड़ोंकी पांति टूट रही है। वा धरती फटी जाती है! अथवा घने जलभरे बादल समूह आकाशमें छा रहे हैं! दर्शक सब ऐसेही सन्देहसे उसक्षण द्वारकी ओर मुंह फेरके देखने लगे। तब पञ्च तारोंके समान हस्त नक्षत्रयुक्त चंद्रमाकी भांति आचार्य्य द्रोण युधिष्ठिर आदि पांच भाइयोंके बीच सुहाने लगे। शत्रुनाशी दुर्य्योधनके उठ खड़े होनेपर उनके उत्साही सौ भाई अश्वत्थामाके साथ

उनको घेर कर खड़े हुए। पूर्व्वकालमें दानवोंको नष्ट करनेके लिये जिस प्रकार देवराज देवोंसे घेरे गये थे, वैसेही उस कालमें केवल गदाधारी दुर्य्योधन अस्त्र-शस्त्रोंसे सुशोभित भाईयोंसे घेरे जाकर शोभा पाने लगे।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ छत्तीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर देखनेवालेके विस्मय और प्रसन्न नेत्रोंसे प्रवेशका स्थान देनेपर शत्रुओंके-नगरको जय करनेवाले कर्ण बड़े भारी अखाड़ेमें प्रविष्ट हुए। जो सङ्गमें जन्मे हुए कवचको पहिरे थे, जिनका मुख स्वाभाविक कुण्डलोंसे सुशोभित था, जिन्होंने बड़े प्रकाशयुक्त भास्करके अंशसे पृथाके कन्याकालिक गर्भसे जन्म लिया था, जिनका वीर्य्य और पराक्रम सिंह और गजेन्द्र समान है; जिनकी प्रभा सूर्य्यके समान चन्द्रमाको भांति और तेज अग्नि सदृश है; जो सुवर्णके ताड़के समान लम्बे हैं, उस सूर्य्यकुमार अति गुणवन्त सिंह सदृश शरीरधारी; विशालनेत्र, शत्रुकुलनाशी युवा श्रीमान् महाभुज कर्णने खड्ग बांधकर धनुषबाण लेकर चलते हुए पर्व्वतकी भांति अखाड़ेमें घुस करके चारों ओर आंखे दौड़ा कर आचार्य्य द्रोण और कृपको मानो अनादरसे प्रणाम किया। तब अखाड़े भरके सब लोग यह जाननेके लिये, कि यहकौन है, चुपहो और टकटकी लगाकर अप्रसन्न और आश्चर्य्ययुक्त हुए। सूर्य्यपुत्र सुन्दर बोलनेवाले कर्णने इन्द्रपुत्र अर्ज्जुनको सगा भाई करके न जानकर बादल सदृश गम्भीर शब्दसे उनसे कहा, कि हे पार्थ! तुमने जो कार्य्य किया है, मै देखनेवालोंके सामने उससे भी विशेष कार्य्य करूंगा, सो तुम अपने कामको आश्चर्य्य करके मत जानना। हे बोलनेवालोंमें श्रेष्ठ जन! सूर्य्यपुत्रकी इस बातके पूरी होते न होतेही सब मानो यन्त्रसे उठाये जानेकी भांति उसी समय निज निज स्थानमें जा बैठे। हे मानव श्रेष्ठ! तब दुर्य्योधनके हृदयमें प्रीति प्राप्त हुई और अर्ज्जुनका चित्त क्रोध और लज्जासे अधीर हुआ। उसके अनन्तर पार्थने उस अखाड़ेमें जो जो कर्म्म किया था; सदा युद्ध चाहनेवाले महाबली कर्णने द्रोणकी आज्ञासे वह सब कर दिखाया। हे भारत! अनन्तर दुर्य्योधन भाईयोंके साथ कर्णको गले लगाकर बोले, कि हे महाभुज! आप भले आये हैं, हे मान देनेवाले! मेरे सौभाग्यसे आप आये हैं; अब मैं आपका अधीन हूं, आप इस कुरु-राज्यको मनमाने भोगिये। कर्ण बोले, कि मुझे और किसी बातकी आवश्यकता नहीं है, केवल मित्रताका प्रार्थी हूं, और पार्थसे एकवार द्वन्द्व युद्ध किया चाहता हूं। दुर्य्योधन बोले, कि हे शत्रुनाशि! आप मेरे साथ नाना भोगकी वस्तु भोगते रहिये और बन्धुओंके मङ्गलेच्छुक होकर सम्पूर्ण शत्रुओंको दबाइये।

श्रीवैशम्पायनजी बोले; कि अनन्तर पार्थ अपनेको अपमानितसा जानकर भाइयोंमें पर्व्वत समान खड़े होकर कर्णसे बोले, कि कर्ण! जो बिना बुलाये निकट आते है और न बुलाये जाकर अहितकी इच्छा करते हैं, उनकी जो गति होती है, मुझसे प्राणखोकर तुम उसको प्राप्त करोगे। कर्ण बोले, कि अर्ज्जुन! यह अखाड़ा सबके लिये समान है, सो मेरे आनेसे तुम्हारी क्या हानि हुई? क्षत्रियलोग बलहीसे प्रधान होते है, सो क्षत्रियोंका धर्म्म बलहीकी शरण लेता है, हे भारत दुर्ब्बलकी चेष्टाकी नाई लाञ्छनकी क्या आवश्यकता है? जब तक इन गुरुके सम्मुख चोखे बाणसे तुम्हारा सिर नही काटता हूं,तबतक जो कुछ कहना हो, वाणहीसे प्रगट करो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, अनन्तर शत्रुनगरको जीतनेवाले धनञ्जय द्रोणाचार्य्यकी आज्ञा पाकर

और भाइयोंके गलेसे लगकर युद्धके लिये कर्णके सामने गये। इधर कर्ण दुर्य्योधन और उनके भाइयोंसे मिलकर बाणसहित शरासन लेकरके युद्धके लिये खड़े रहे। इससें इन्द्र धनुसे सोहते हुए, बिजली तथा गर्ज्जनसे भरे और बगुलोंसे मानो हंसते हुए बादलदलसे आकाशमण्डल ढंप गया। अनन्तर इन्द्रको निजपुत्र अर्ज्जुनपर स्नेहवश अखाड़ेकी ओर ताकते देख कर सूर्य्यने अपने पुत्र कर्णके निकटके जलधरनेवाले बादलोंको नष्ट किया। तब अर्ज्जुन मेघकी छांहसे ढंपे और कर्ण सूर्य्यके किरणसे घिरे दीख पड़ने लगे। जिधर कर्ण थे, उधर धृतराष्ट्रके पुत्र और जिधर अर्ज्जुन थे, उधर द्रोण, कृप और भीष्म खड़े रहे। अखाड़ा दो भागोंमें बंट गया और स्त्रियांभी दोदल हो गयीं। कुन्ती-भोजकन्या अपने पुत्र कर्ण और अर्ज्जुनका युद्धमें प्रवृत्त होना जानकर मोहसे विवश हुई। सर्व्व धर्म्मज्ञ विदुरने दासियोंको सहायतासे चन्दनके जलसे उस मूर्च्छित हुई, कुन्तीको चेतनयुक्त किया। कुन्ती चेत पाकर युद्धके लिये सजे हुए दोनों पुत्रोंको देखकर भयभीत बनी रही, कुछ कर नहीं सकी। अनन्तर सर्व्व धर्म्म जाननेवाले, विशेष द्वन्द्वयुद्धकी रीतिको भले प्रकार जानते हुए शारद्वत उन दोनों वीरोंको बड़े बड़े शरासन उठाते देखकर कर्णसे बोले, कि यह अर्ज्जुन कुरुवंशी राजा पाण्डुके पुत्र हैं, कुन्तीके तीसरे गर्भसे जन्म लिया है, यह तुमसे द्वन्द्वयुद्ध करेंगे हे महाभुज! तुमभी जिस राज-वंशके अलङ्कार बने हो, उस कुलका वृतान्त और पिता माताके नाम कहो, उसके जान लेनेसे पार्थ यह निश्चय करेंगे, कि तुमसे लड़ेंगे वा नहीं, क्योंकि राजकुमारगण छोटे कुलसे जन्म लिये हुए, सदाचार वर्ज्जित जनोंसे द्वन्द्वयुद्ध नहीं करते।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि आचार्य्य कृपके इस प्रकार कहनेपर कर्णका मुंह लज्जासे नीचा होकर वर्षाजलसे धोये हुए पद्मकी नाईं मलिन हो गया। तब दुर्य्योधन बोले, कि हे आचार्य्य! शास्त्रमें यह निश्चय है, कि राजकुलमें जन्म लिये हुए, शूर और सेनापति यह तीन भूपाल हो सकते हैं, सो यदि अर्ज्जुन भूपालके विना किसो अन्यसे न लड़ना चाहें, तो मैं अभी इन कर्णको अङ्गराज्यमें अभिषिक्त करे देता हूं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर महाबलवन्त महारथी श्रीमान् कर्ण उसीक्षण सुवर्ण पीढ़ेपर स्थित होकर मन्त्रज्ञ ब्राह्मणोंके द्वारा लाज, फूल और सुवर्ण-घटसे अङ्ग-राज्यमें अभिषिक्त हुए। महाराज! अनन्तर कर्ण जयके शब्दके साथ अच्छे छत्र और चवरयुक्त होकर कुरु-नन्दन दुर्य्योधनसे बोले, कि हे राजाओंमें व्याघ्र समान महाराज! आपने जो मुझको राज्य दिया, कहिये, मैं आपको इसके योग्य क्या दूं! आप जैसा कहेंगे, मै वैसाही करनेको सम्मत हूं। सुयोधन बोले, कि मैं आपसे अच्छी मित्रताको प्रार्थना करता हूं, ऐसा कहे जाकर कर्णने प्रतिज्ञाके साथ उसको मान लिया और दोनो हर्षसे एक दूसरेको गले लगाकर बड़े प्रसन्न हुए।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ सैंतीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर कांपता, पसीनेसे न्हाया, बूढ़ा अधिरथ लाठो थामकर लटकते हुए चादरसे कर्णको बुलाता हुआ अखाड़ेमें आन पहुंचा, कर्णने उसको देखतेही पितृगौरव वश धनुषबाणको छोड़कर अभिषेकके जलसे भिंगे हुए सिरसे प्रणाम किया। रथके सारथि अधिरथने सम्मानके साथ वस्त्रके अन्त भागसे अपने पावोंको ढांपकर राज्य पानेसे सफल मनोरथ कर्णको पुत्र कहके सम्भाषण किया और स्नेहसे चित्त गलजानेसे गले लगा करके अङ्गराज्यमें अभिषिक्त कर्णके

भीगे सिरको आनन्दके आंसूसे फिर भिंगोया। भीमसेन उसको देख करके कर्णको सूतका पुत्र जानकर मानो हंसीसे बोले; कि हे सूतपुत्र! तुम रणभूमिमें अर्जुनसे मारे जानेके योग्य नहीं हो; तुम शीघ्र घोड़ा चलानेके निमित्त अपने कुलके योग्य पैनेको थामो। रे नराधम! कुत्ता जैसे यज्ञीय अग्निके सामने स्थित घृत पीनेके योग्य नहीं है। ऐसेही तूभी अङ्गराज्य-को भोगनेके योग्य नहीं है। भीमकी इस वातसे कर्णके होठ कांपने लगे। उन्होंने ऊंची सांस लेकर आकाशमें स्थित दिननाथ पर आंख फेरी। अनन्तर महावली दुर्य्योधन क्रोधित होकर मदसे उन्मत्त हस्तीके समान भ्रातृवर्ग-रूपी पद्मवनसे उसीक्षण कूद उठे और निकट ठहरे हुए, भीमकर्म्म करनेवाले, भीमसेनसे वोले, कि, वृकोदर! तुमको ऐसा कहना न चाहिये था; क्षत्रियोंका बलही श्रेष्ठ है, क्षत्रियके निन्दित होनेपरभी उससे लड़ना चाहिये। ऐसा कहा है, कि नदी और बीरोंकी उत्पत्तिका वृत्तान्त जानने योग्य नहीं है। देखो अग्निने जलसे उठकर इस चराचर भुवनको छेंक लिया है और जिस वज्रसे दानव-वंश नष्ट हुआ है, वह वज्र मुनिवर दधीचिकी हड्डीसे बना है; जो भगवान् देवकार्त्तिक है, उनकी उत्पत्तिभी जानने योग्य नहीं है, क्योंकि वह अग्निकेपुत्र, कृत्तिकाके पुत्र, रुद्रके पुत्र और गङ्गाके पुत्र कहकेभी प्रसिद्ध होते है। फिर यह भी तुमने सुना होगा, कि जिन्होंने क्षत्रियोंसे-जन्म लिया लिया था; वेभी ब्राह्मण हुए है। देखो, विश्वामित्र आदिने क्षत्रिय-कुलमें जन्म लेकर अनश्वर अव्यय ब्राह्मणका पद प्राप्त किया था। अस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ आचार्य्य द्रोण यज्ञके कलसेसे उत्पन्न हुए थे और आचार्य्य कृपने गौतमके वंशमे शरका-ण्डेकी लकड़ीसे जन्म लिया था, औरोंकी कथा कहनेका क्या प्रयोजन है, तुम्हाराही जन्म जिस प्रकारसे हुआ था, वहभी मैं जानता हूं; यह सम्भवही नहीं होता, कि कुण्डल कवच सहित जन्म लिये हुए सर्व्व-लक्षणयुक्त सूर्य्यवत् इस पुरुषव्याघ्रने मृगीसे जन्म लियाहो; विशेष इन कर्णके भुजवल और आज्ञानुसारी मेरे विद्यमान रहते इन नरेश्वरको केवल अगराज्य होका भोगना क्या है, वल्कि यह भूमण्डल भरके एकही अधिकारी होने योग्य है। पर यदि मेरा यह कार्य्य किसीको अस-ह्न जान पड़ा हो, तो वह रथपर आरूढ़ होकर दोनों पावोंके सहारे शरासन नवावे। अनन्तर अखाड़े भरमें साधुवादयुक्त बड़ा कोलाहल उठने लगा, ऐसे समयमें दिननाथ अस्ताचलको सिधारे। अनन्तर भूपाल दुर्य्यो-धन कर्णके हाथ पकड़ दीपकके उजालेमें उस अखाड़ेसे निकले। पृथ्वीनाथ! पाण्डवगण और आचार्य्य द्रोण, कृप और भीष्मके साथ सब उस समय अपने अपने घरको चले गये। तब देखने वालोंमें कोई अर्जुनको, कोई दुर्य्योधन-की बात कहता हुआ चला गया। कुन्ती दिव्य लक्षणयुक्त पुत्रको पहिचानकर और उसको अङ्गराज्यमें अभिषिक्त देखकर स्नेहके कारण गुप्त भावसे प्रसन्न हुई। हे पृथ्वीपते! तव कर्णको पाकर दुर्य्योधनके हृदयसे अर्जुनका भय जाता रहा। शस्त्र-विद्यामें परिश्रमी वीर कर्ण मीठी मीठी वातोंसे सुयोधनको प्रसन्न करने लगे और युधिष्ठिरकोभी समझ पड़ा, कि भूमण्डल भरमें कर्णके समान धनुषधारी कोई नहीं है।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ अढ़तीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर आचार्य्य द्रोणने पाण्डवके तथा धृतराष्ट्रके पुत्रोंको अस्त्र-विद्यामें शिक्षित देखकर गुरु-दक्षिणाके काल आनेपर दक्षिणाके योग्य विषयका निश्चय किया। अनन्तर शिष्योंको लिवा लाकर

दक्षिणाके वह योग्य वस्तुकी आज्ञाकर बोले, कि तुम लड़ करके पाञ्चालराज द्रुपदको पराजय पूर्व्वक पकड़ कर मेरे पास ले आओ। तुम्हारा मङ्गल होवे, ऐसा करनेहीसे तुम अच्छी दक्षिणा होगी। शिष्यगण सब वह मानकर गुरु दक्षिणाके लिये अस्त्र शस्त्र लेकर रथ पर चढके गुरु द्रोणके साथ वेगसे पधारे। वे नरश्रेष्ठगण सब पाञ्चाल देशमें मारते पीटते हुए चले, आगे बड़े तेजस्वी द्रुपदके नगरको बिगाड़ने लगे। दुर्य्योधन, कर्ण महाबली युयुत्सु, दुःशासन, विकर्ण जलसन्ध और दूसरे बड़े विक्रमी क्षत्रियोंमें श्रेष्ठ कुमारगण यह कहते हुए कि "मैं पहिले मैं पहिले" अच्छे रथ पर चढ करके घुड़चढ़ोंसे घेरे जाकर नगरमें घुसकर राजमार्गसे चलने लगे। हे राजन्! उस समय पाञ्चाल देशके, राजा यज्ञसेन वह सब बात सुनकर आयी हुई बड़ी भारी सेना देख करके युद्धके लिये सजकर भाइयोंके साथ भवनसे शीघ्र निकले। कौरवगण खूब बड़ा शब्द करते हुये बाण बर्षने लगे। तब दुर्ज्जय यज्ञसेन श्वेत रथ पर चढ़कर रणमें पाण्डवोंके निकट आकर बहुत अधिक बाण बर्षाने लगे। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अर्ज्जुन कुमारोंको अहंकारसे कूदते देखकर पहिलेही परामर्श कर द्विजश्रेष्ठ आचार्य्य द्रोणसे बोले, कि इनके बल दिखा लेनेके पीछे हम साहस करेंगे, क्योंकि रणस्थलमें यह कदापि भूपाल पाञ्चाल-को पकड़ नहीं पावेंगे। अनघ कुन्तीपुत्र यह कहकर भाइयोंके साथ नगरसे आधेकोस की दूरी पर जा रहे, इधर द्रुपद कौरवोंको देखकर अगणित बाणोंसे कौरवी सेनाको मोहित करके चारो ओर दौड़ने लगे। कौरव-लोग युद्धस्थलमें रथ पर चढ़े हुए लड़नेमें उद्यत अकेले द्रुपदकी शीघ्रताको देखकर भयके मारे मानो उस एकहीको अनेक समझने लगे। राजा द्रुपदके कठोर बाण चारो ओर फिरने लगे। महाराज! अनन्तर पाञ्चालों-के घरमें सहस्रों शङ्ख, मृदङ्ग तथा नगाड़े बजने लगे और उनके सिंह समान गर्ज्जन तथा धन्वा-में गुण चढ़ानेके घोर शब्द आकाशमें गूंजने लगे। उससे दुर्य्योधन विकर्ण, सुबाहु, दीर्घ-लोचन और दुःशासन यह क्रोधित होकर बाण बर्षने लगे। हे भारत! लड़ाईमें दुर्ज्जय बड़े चापधारी पृषतपुत्र द्रुपद बाणोंसे बहुत विद्ध होकर उसीक्षण विपक्षी सेनाको बड़ी कठोर पीड़ा पहुंचाने लगे। वह अकेले रथके पहियेके समान घूमघूमकर दुर्य्योधन, विकर्ण, महाबली कर्ण और नाना देशके वीर राजकुमारोंको तथा अनेक सेनाओंको बाणोंसे डाटने लगे, किसीको उसका स्वाद बिना दिये नहीं छोड़ा। अनन्तर नगरवालोंने बर्षनेवाले बादलोंके समान मूषल और लाठियोंसे कौरवोंको घेर लिया। हे भारत! तब पुरवासियोंमें बच्चोंसे लेकर बुड्ढोंतक वीर युद्धकी बात सुनकर कौरवों पर दौड़; इससे कौरवगण भागकर चिल्ला चिल्लाके रोते हुए पाण्डवोंकी ओर चले। तब पाण्डवगण रोंये खड़े करनेवाली रुलाईके कोलाहलको सुन-कर आचार्य्य द्रोणके पांव छूकर रथपर चढ़े। अर्ज्जुनने शीघ्रतासे युधिष्ठिरसे यह कह कर मनाकरके कि "आप न लड़िये" नकुल और सहदेवको चक्रकी रखवारीमें नियुक्त किया और सदा सेनाके आगे चलनेवाले भीमसेन हाथमें गदा लेकर चले। कुन्तीपुत्र अनघ अर्ज्जुन शत्रुओंका शब्द सुनकर रथोंकी आहटसे दशो दिशा भरते हुए, भाइयोंके साथ बड़े वेगसे रणभूमिमें आगये। जिस प्रकार मगर समुद्रमें प्रवेश करता है, वैसेही हाथमें दण्ड लिये यमराजके समान भीमसेन दहा-लते हुए समुद्रकी भांति शब्द करते हुए पाञ्चाल सेनामें प्रविष्ट हुए। अतुल भुजवीर्य्य-युक्त, रणमें पण्डित पृथापुत्र भीम स्वयं गजपर

चढ़ी हुई-सेनाको ओर दौड़ कर और काल-रूपी होकर गदाघातसे उसको नष्ट करने लगे। उन सब महीधर समान हस्तियोंके सिर भीमसेनकी गदाकी चोटसे टूट जानेपर वे रक्तकी धार बहाते हुए, वज्रकी चोट लगे हुए, पर्व्वतकी भांति धरतीपर गिरने लगे। अर्ज्जुनके बड़े भाई वृकोदरने अगणित गज, घोड़े और रथ धरतीपर गिराये और असंख्य रथी और पैदलोंको यमराजके घर भेजने लगे। वनमें गौओंके रखवारे जिस प्रकार लकड़ीसे पशुदलको खदेड़ते हैं, वैसेही भीमसेन गज और रथियोंको गदासे भगाने लगे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि तब पाण्डुपुत्र फाल्गुनने आचार्य्य द्रोणके प्रिय कार्य्य करनेमें उद्यत होकर वाणोंके द्वारा हस्तीपरसे पाञ्चालराजको गिराया। हे राजन्! वह प्रलयकालके अग्निके समान जलकर चारों ओर घोड़े, रथ और गजोंको रणशय्यापर सुलाने लगे। अनन्तर मरते जाते हुए, सृञ्जय और पाञ्चाललोग मुखसे सिंहसमान गर्ज्जनकर नाना वाणोंसे पार्थको घेरकर कठोर युद्ध करने लगे। तब देखनेमें वह घोर युद्ध बड़ाही विकराल हुआ। इन्द्रनन्दन किरीटीसे वह सिंह-गर्ज्जन सहा नहीं गया, वह उसी-क्षण घोर वाणोंसे रणभूमिको चारो ओर घेरकर पाञ्चालोंको मोहित करके उनपर दौड़े। यशस्वी कुन्तीपुत्र इतने शीघ्र वाण जोड़ने और चलाने लगे, कि उनका कुछभी अवसर दीख नहीं पड़ा। चारों ओर साधुवादसहित सिंह-गर्ज्जन होने लगा। सम्बर-असुर जिस प्रकार महेन्द्रपर दौड़ा था, वैसेही पाञ्चालराज तब सत्यजितके साथ शीघ्रताकरके अर्ज्जुन पर दौड़े। अर्ज्जुनने बड़े बड़े वाणोंकी वर्षा कर पाञ्चालराजको ढंप लिया। इससे उस समय पाञ्चालोंमें ऐसी हलहलावट उठने लगी, कि जैसी बड़े सिंहके गजदलपति को पकड़नेको चाहनेसे उठती है। तब सत्य-विक्रमी सत्यजित अर्ज्जुनको आते देखकर पाञ्चालराजको रक्षाके लिये अर्ज्जुनपर दौड़े। इन्द्र और विरोचनके पुत्रके समान पदार्थ एकत्र भये। अर्ज्जुन और सत्यजित दोनों एक दूसरेकी सेनामें हलचल मचाने लगे। आगे अर्ज्जुनने मर्म्म भेद करने वाले-बलपूर्व्वक कठिन रूपसे सत्यजितको विद्ध किया। वह लीला मानो आश्चर्य्यसी जान पड़ी। अनन्तर सत्य-जितने उसीक्षण धनञ्जयको पीड़ा पहुंचाई। बड़े वेगवान् महारथी धनञ्जयने वाण वृष्टिसे ढंपे जाकर धनुके गुणको मल कर फिर तेजको बढ़ा लिया। आगे वाणोंसे सत्यजित का शरासन काटकर द्रुपदकी ओर चले। अनन्तर सत्यजितने शीघ्रतासे अधिक वेगवान् दूसरे एक शरासनको लेकर घोड़े, रथ और सारथिके साथ पार्थको विद्ध किया। पार्थने रण-स्थलमें उससे पीड़ा पाकर उसकी क्षमा नहीं की। वरन उसको नष्ट करनेके लिये वेगसे घोड़े, भण्डे धनु, मुट्ठी तथा पीठके रखवारे और सारथि पर कुछ वाण चलाये। अर्ज्जुनसे इस प्रकार बार बार उनके धन्वा कटे और घोड़े जोतसे निकाले जाने पर उन्होंने लड़ाईमें पीठ दिखाई। पाञ्चालराज सत्य-जितको लड़ाईमें हार खाते देखकर अर्ज्जुनपर बड़े वेगसे वाण बर्षाने लगे। जययुक्त अर्ज्जु-नभी तब घोर युद्धमें प्रवृत्त हुए। उन्होंने उनके भण्डे और धनुषको काटकर धरती पर गिराया और पांच वाणोंसे उनके सारथी और घोड़ोंको विद्ध किया। अनन्तर कुन्ती-नन्दन धनुषबाण छोड़कर खड्ग लेकर सिंह समान गर्ज्जन करने लगे और एकायक कूदकर पाञ्चाल-राजके रथको भण्डीपर जा गिरे। धनञ्जयने ऐसे निर्भय होकर द्रुपदको रथपर चढ़कर पकड़ लिया, कि जैसे लोग समुद्रमें हल-चल मचाकर हस्तीको पकड़ लेते हैं।

देखकर सब पाञ्चाल दशों ओर भागने ल
तब धनञ्जय सम्पूर्ण सेनाओं में अपना भुज
प्रगट करके सिंहगर्जनकर वहांसे लौट च
कुमारलोग अर्जुनको लौटते देखकर सब एक
होकर उस समय महात्मा द्रुपदका नग
बिगाड़ने लगे। आगे अर्जुन बोले, कि
भीम! राजश्रेष्ठ द्रुपद कुरुवीरोंके सम्बन्धी
हैं, सो उनकी सेनाको मत मारो, केवल गुरु-
दक्षिणाही दीजावे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे राजन्! महाबली भीमसेन तब अर्जुनसे रोके जाकर युद्धमें भले प्रकार तृप्त न होने परभी निवृत्त हुए। हे भरतश्रेष्ठ! कुमारलोगोंने रण-भूमिसे यज्ञसेन द्रुपदको मन्त्रीके साथ पकड़ लेजाकर आचार्य द्रोणको भेंट किया। द्रोण उस प्रकार वशमें आये अहङ्कार छोड़े और धन खोये द्रुपदको देखकर पहिलेकी शत्रु-ताको स्मरणकर बोले, कि मैंने बलसे तुम्हारे राज्यको बिगाड़कर पुरीको मथ डाला है, क्या अपने जीवनको पाकर, जो अब इस विप्रके वशमें आ गया है, पहिलेकी मित्रताको चाहते हो? यह कहकर के हंसकर फिर वह मनही मनमें निश्चय कर उनसे बोले, कि हे वीर! तुम प्राणका भय ों, हम ब्राह्मण हैं, सो हमा है क्षत्रियोंमें श्रेष्ठतर! बालेपन ल
कूदनेहीके हेतु तुम पर
प्रेम बढ़ा था, सो है जनाधि
मित्रता चाहता हूं।
वर देता हूं, कि तुम इस
पावोगे। हे यज्ञसेन
कोई राजाका मित्र न
लिये मैं तुमको
प्रयत्न कर रहा हू
रथीके दक्षिण
उत्तर किनारे

पृ
अ
रा
पु
सौ
स

बने रहे। फाल्गुन स्तुरा, नाराच, भाला विपाट आदि सोधे तथा टेढे बड़े बड़े अस्त्रोंको चलानेमें और बड़ी दृढ़ता तथा शीघ्रतासे लक्ष्यको विद्ध करनेमें अच्छे समर्थ हुए। द्रोणाचार्य्यने निश्चय किया था, कि शीघ्रता तथा सुनियमके विषयमें विभत्सुके समान जगतमें कोई दूसरा नहीं है। यह समझकर द्रोण कौरवोंकी सभामें गुड़ाकेश अर्ज्जुनसे कहने लगे, कि हे भारत! पूर्व्वकालमें अग्निवेश नामसे प्रसिद्ध मुनि अगस्त्यके शिष्य धनुर्व्वेदमें मेरे गुरु थे; मैने उन अग्निवेशके शिष्य होकर शिक्षा पायी थी। मैंने तपोबलसे उन गुरुसे जो वज्रसमान ब्रह्मशिर नामक अमोघ अस्त्र पाया था, जो कि सम्पूर्ण पृथ्वीको जला सकता है, उस अस्त्रको किसी दूसरेके हाथमें सौंपकर उसके विरह न होनेके विषयमें प्रयत्न किया है। गुरुने जब मुझको वह अस्त्र दिया था, तब कहा था, कि "हे भारद्वाज! तुम स्वल्प वीर्य्यवाले जन पर यह अस्त्र मत मारना।" हे वीर! पीछे तुमने मुझसे वह दिव्य अस्त्र पाया है, कोई दूसरा इसके पानेको योग्य नहीं है, पर हे पृथ्वीनाथ! मुनिने जो नियम बना दिया था उनको मत लांघना, हालमें अपने स्वजनोंके सामने मुझको गुरुदक्षिणा दो। उसके अनन्तर उनके वाञ्छित दानको देनेमें अर्ज्जुनके सम्मत होने पर गुरुजी बोले, कि हे अनघ! रणस्थलमें मेरे तुमसे लड़नेको प्रवृत्त होनेसे तुम मेरे विरुद्ध लड़ना। कुरुश्रेष्ठ अर्ज्जुन "तथास्तु" कहके वह बात मानकर उनके पावों पर प्रणाम कर योग्य उपदेशको प्राप्त हुए। समुद्रतक सम्पूर्ण धरतीमें आपही आप वह बात उड़ी, कि इस लोकमें अर्ज्जुनके समान चापधारी कोई वीर नहीं है, चाहे गदायुद्ध वा असियुद्ध कहिये, चाहे रथयुद्ध वा धनुर्य्युद्ध कहिये, हर बातमें धनञ्जय दक्ष बने हैं। सहदेव देवाधिपति इन्द्ररूपी आचार्य्य द्रोणसे सम्पूर्ण नीति शिक्षापाकर नीतिशील होकर भाइयोंके वशमें रहे। नकुल आचार्य्य द्रोणसे अच्छी शिक्षा पाकर चित्रयोधी और अतिशय करके प्रख्यात और भाईयोंके प्यारे बने रहे। अर्ज्जुन आदि पाण्डव इतने पराक्रमी हुए, कि उन्होंने उन सौवीरको जिन्होंने गन्धर्व्वोंसे विद्रोह मचाना तुच्छ जानकर तीन वर्ष यज्ञ किया था, कभी भयभीत नहीं हुए थे, रणशय्या पर सुलाया। वीर्य्यवन्त पाण्डु जिस यवनराजको वशमें नहीं लासके थे, अर्ज्जुनने उसकोभी परास्त किया तथा आज्ञाधीन बनाया। उस सौवीर राज विपुलको जो अति बली होकर कुरुओंसे सदा अहंकार करते थे, धीमान् अर्ज्जुनने गिराया। दत्तामित्र नामक प्रसिद्ध सुमित्र रुद्धायुक्त सौवीर देशी वीरके लड़नेमें कटिबद्ध होने पर अर्ज्जुनने वाणोंसे उसको रोका। अर्ज्जुनने आप एक रथी होने परभी भीमके सहारेसे दश सहस्र रथोंके साथ पूर्व्व देशीय सब राजाओं को परास्त किया और वैसेही रथ पर चढ़कर दक्षिण ओरको परास्त कर कुरुराज्यमें अनेक धन भेजा। मानवोंमें श्रेष्ठ महात्मा पाण्डवोंने पहिले इस प्रकार पराये राज्योंको परास्त कर कर निज राज्यको बढ़ाया था। अनन्तर यह जानकर कि बड़े भारी योद्धे पाण्डवोंका बलवीर्य्य बहुत प्रसिद्ध होगया, उनपर एकायक धृतराष्ट्रका भाव बिगड़ गया, वह बड़े सोचके समुद्रमें डूबे, इससे उन्हें रात्रिको नींद नहीं आतीथी।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ चालीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि यह सुनकर कि वीर्य्यवन्त पाण्डवलोग बलसे बढ़ और बड़े तेजस्वी हुए हैं, महाराज धृतराष्ट्र दुःखी चित्तसे सोचने लगे। वह राजशास्त्रार्थमें पण्डित मन्त्रज्ञ मुनियोंमे [illegible] कणिकको बुलवाकर बोले, कि हे [illegible]

[illegible] ग्रोंको दिनों दिन

देखकर सब पाञ्चाल दशों ओर भागने लगे। तब धनञ्जय सम्पूर्ण सेनाओं में अपना भुजबल प्रगट करके सिंहगर्जनकर वहांसे लौट चले। कुमारलोग अर्जुनको लौटते देखकर सब एकत्र होकर उस समय महात्मा द्रुपदका नगर बिगाड़ने लगे। आगे अर्जुन बोले, कि हे भीम! राजश्रेष्ठ द्रुपद कुरुवीरोंके सम्बन्धी हैं, सो उनकी सेनाको मत मारो, केवल गुरु-दक्षिणाही दीजावे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे राजन्! महाबली भीमसेन तब अर्जुनसे रोके जाकर युद्धमें भली प्रकार तृप्त न होने परभी निवृत्त हुए। हे भरतश्रेष्ठ! तुमारलोगोंने रण-भूमिसे यज्ञसेन द्रुपदको मन्त्रीके साथ पकड़ लेजाकर आचार्य्य द्रोणको भेंट किया। द्रोण उस प्रकार वशमें आये अहङ्कार छोड़े और धन खोये द्रुपदको देखकर पहिलेकी शत्रु-ताको स्मरणकर बोले, कि मैंने बलसे तुम्हारे राज्यको बिगाड़कर पुरीको मथ डाला है, क्या अपने जीवनको पाकर, जो अब इस विप्रके वशमें आ गया है, पहिलेकी मित्रताको चाहते हो? यह कहकरके हंसकर फिर वह मनही मनमें निश्चय कर उनसे बोले, कि हे वीर! तुम प्राणका भय मत करो, हम ब्राह्मण हैं, सो क्षमायुक्त हैं। हे क्षत्रियोंमें श्रेष्ठ! बालपनमें मुझसे खेलने कूदनेहीके हेतु तुम पर मेरा स्नेह और प्रेम बढ़ा था, सो हे जनाधिप! मैं फिर तुमसे मित्रता चाहता हूं। हे राजन्! तुमको वर देता हूं, कि तुम इस राजका आधा भाग पाओगे। हे यज्ञसेन! राजा न होनेसे कोई राजाका मित्र नहीं हो सकता है, इसी लिये मैं तुमको राज्य देनेके कारण ऐसा प्रयत्न कर रहा हूं। हे पाञ्चाल! तुम भागी-रथीके दक्षिण किनारेके राजा होगे और मैं उत्तर किनारेका राजा हूंगा. अब तुम चाहो तो मुझको मित्रकरके मानो। द्रुपद बोले, कि हे ब्रह्मन्! विक्रमी महात्मा पुरुषोंके लिये यह आश्चर्य्य नहीं है। मैं आपसे प्यार किया जाता हूं, और यह चाहता हूं, कि आपभी मुझसे सदा-स्थायी प्रीति लाभ कर सकें।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भारत! द्रुपदके ऐसा कहनेपर द्रोणने उनको बन्धनसे मुक्तकर प्रसन्नचित्तसे सत्कार करके राज्यका आधा भाग दिया। द्रुपद गङ्गातटके जन-पदोंके सहित माकन्दीदेश और चर्म्मण्वती नदीतक दक्षिण पाञ्चालपर अधिकार पाकर सुन्दर काम्पिल्य नगरमें मलिन चित्तसे वसने लगे। अनन्तर द्रोणकी शत्रुता उनसे सही नहीं गयी, उन्होंने क्षत्रियबलसे द्रोणका पराभव करना असम्भव जाना, सो ब्राह्मणके बलसे अपनेको हीन जानकर पुत्र उत्पत्तिकी इच्छासे पृथ्वीके चारो ओर घूमने लगे। इधर द्रोणको अहिच्छत्र नामक राज्य मिल गया। हे राजन्! धनञ्जयने जनपद समेत अहिच्छत्र-पुरीको लड़ाईमें जीतकर आचार्य्य द्रोणको सौंप दिया था।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ उनचालीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे पृथ्वीनाथ! अनन्तर वर्षभर व्यतीत होनेपर धृतराष्ट्रने धीरता, स्थिरता, सहनशीलता, अनिर्दयता, नौकरों पर दया, और स्थिर मित्रता गुणसे सुहावने पाण्डुनन्दन युधिष्ठिरको युवराजके पदपर बैठाया। कुन्ती कुमारने शीलता, व्रत और प्रजा समाधानसे पिताकी सुन्दर कीर्ति-सेही अपना नाम बढ़ाया। पाण्डुनन्दन वृको-दरको बलदेवजीसे सदा असि, गदा, रथके युद्धके विषयमें अच्छी शिक्षा मिलती थी। द्युमतसेनके समान बली, भीमसेन भली भांति शिक्षित होकर पराक्रमी भाइयोंके परम मित्र

बने रहे। फाल्गुन क्षुरा, नाराच, भाला विपाट आदि सीधे तथा टेढ़े बड़े बड़े अस्त्रोंके चलानेमें और बड़ी दृढ़ता तथा शीघ्रतासे लक्ष्यको विद्ध करनेमें अच्छे समर्थ हुए। द्रोणाचार्य्यने निश्चय किया था, कि शीघ्रता तथा सुनियमके विषयमें विभत्सुके समान जगतमें कोई दूसरा नहीं है। यह समझकर द्रोण कौरवोंकी सभामें गुड़ाकेश अर्ज्जुनसे कहने लगे, कि हे भारत! पूर्व्वकालमें अग्निवेश नामसे प्रसिद्ध मुनि अगस्त्यके शिष्य धनुर्व्वेदमें मेरे गुरु थे, मैंने उन अग्निवेशके शिष्य होकर शिक्षा पायी थी। मैंने तपोबलसे उन गुरुसे जो वज्रसमान ब्रह्मशिर नामक अमोघ अस्त्र पाया था, जो कि सम्पूर्ण पृथ्वीको जला सकता है, उस अस्त्रको किसी दूसरेके हाथमें सौंपकर उसके विरह न होनेके विषयमें प्रयत्न किया है। गुरुने जब मुझको वह अस्त्र दिया था, तब कहा था, कि "हे भारद्वाज! तुम स्वल्प वीर्य्यवाले जन पर यह अस्त्र मत मारना।" हे वीर! पीछे तुमने मुझसे वह दिव्य अस्त्र पाया है, कोई दूसरा इसके पानेको योग्य नहीं है, पर हे पृथ्वीनाथ! मुनिने जो नियम बना दिया था उनको मत लांघना, हालमें अपने स्वजनोंके सामने मुझको गुरुदक्षिणा दो। उसके अनन्तर उनके वाञ्छित दानको देनेमें अर्ज्जुनके सम्मत होने पर गुरुजी बोले, कि हे अनघ! रणस्थलमें मेरे तुमसे लड़नेको प्रवृत्त होनेसे तुम मेरे विरुद्ध लड़ना! कुरुश्रेष्ठ अर्ज्जुन "तथास्तु" कहके वह बात मानकर उनके पावों पर प्रणाम कर योग्य उपदेशको प्राप्त हुए। समुद्र तक सम्पूर्ण धरतीमें आपही आप वह बात उड़ी, कि इस लोकमें अर्ज्जुनके समान चापधारी कोई वीर नहीं है, चाहे गदायुद्ध वा असियुद्ध कहिये, चाहे रथयुद्ध वा धनुर्य्युद्ध कहिये, हर बातमें धनञ्जय दक्ष बने हैं। सहदेव देवाधिपति इन्द्ररूपी आचार्य्य द्रोणसे सम्पूर्ण नीति शिक्षा पाकर नीतिशील होकर भाइयोंके वशमें रहे। नकुल आचार्य्य द्रोणसे अच्छी शिक्षा पाकर चित्रयोधी और अतिशय करके प्रख्यात और भाइयोंके प्यारे बने रहे। अर्ज्जुन आदि पाण्डव इतने पराक्रमी हुए कि उन्होंने उन सौवीरको जिन्होंने गन्धर्व्वोंसे विद्रोह मचाना तुच्छ जानकर तीन वर्ष यज्ञ किया था, कभी भयभीत नहीं हुए थे, रणशय्या पर सुलाया। वीर्य्यवन्त पाण्डु जिस यवनराजको वशमें नहीं लासके थे, अर्ज्जुनने उसकोभी परास्त किया तथा आज्ञाधीन बनाया। उस सौवीर राज विपुलको जो अति बली होकर कुरुओंसे सदा अहंकार करते थे, धीमान् अर्ज्जुनने गिराया। दत्तामित्र नामक प्रसिद्ध सुमित्र संज्ञायुक्त सौवीर देशी वीरके लड़नेमें कटिबद्ध होने पर अर्ज्जुनने बाणोंसे उसको रोका। अर्ज्जुनने आप एक रथी होने परभी भीमके सहारेसे दश सहस्र रथोंके साथ पूर्व्व देशीय सब राजाओं को परास्त किया और वैसेही रथ पर चढ़कर दक्षिण ओरको परास्त कर कुरुराज्यमें अनेक धन भेजा। मानवोंमें श्रेष्ठ महात्मा पाण्डवोंने पहिले इस प्रकार पराये राज्योंको परास्त कर कर निज राज्यको बढाया था। अनन्तर यह जानकर कि बड़े भारी योद्धे पाण्डवोंका बलवीर्य्य बहुत प्रसिद्ध होगया, उनपर एकायक धृतराष्ट्रका भाव बिगड़ गया, वह बड़े सोचके समुद्रमें डूबे, इससे उन्हे रात्रिको नींद नहीं आतीथी।

सम्भवपर्व्वमें एकसौ चालीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि यह सुनकर कि वीर्य्यवन्त पाण्डवलोग बलसे बढ़ और बड़े तेजस्वी हुए हैं, महाराज धृतराष्ट्र दुखी चित्तसे सोचने लगे। वह राजशास्त्रार्थमें पण्डित मन्त्रज्ञ मुनियोंमे श्रेष्ठ कणिकको बुलवाकर बोले, कि हे द्विजराज! पाण्डवोंको दिना दिन

बढ़ती देखकर उन पर मुझे द्वेष हो रहा है, सो हे कणिक। उनसे सन्धि वा युद्धके बिना जो कुछ और उचित हो, सो निश्चय करके कहो, मैं उसके अनुसार काम करूंगा। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि द्विजोत्तम कणिक धृतराष्ट्रसे इस प्रकार पूछे जाकर प्रसन्न चित्तसे राजशास्त्रके प्रमाण सहित तेजभरी बातोंमें कहने लगे, कि महाराज! मैं जो कहता हूं, सुनिये। हे अनघ कुरुश्रेष्ठ! यह सुनकर मुझपर क्रोध न करना। राजेको सदा दण्ड देनेमें उद्यत होकर अपनी बड़ाई फैलाना और स्वयं दोषवर्ज्जित होकर पराये दोषोंको ढूढ़कर उसके पीछे रहना चाहिये। राजाके सदा दण्डदेनेमें उद्यत रहनेसे लोग उससे बहुत डरते हैं, सो सब काम दण्डहीसे पूराकर लेना। राजा शत्रुकी चूक देखकर उसके पीछे चले, पर शत्रुगण उनकी चूक न देखने पावें। काकुआ जिस प्रकार अपना अङ्ग छुपा लेता है, वैसेही राजा सहायता, साधना और और उपाय आदिसे अपने अङ्गोंको छिपा रखें और ऐसा यत्न करना चाहिये जिस्से शत्रुलोग उनकी चूकके पीछे चलने न पावें। कोई काम आरम्भकर उसकी कुछ अंश छोड़ कर पूरा कर लेना कभी उचित नहीं है। देखिये, पूरा न काट डालनेसे काटेसेभी सदा चोट लग सकती है; हानि करनेहारे शत्रुओंको वध करनाही बहुत प्रशंसायोग्य है; यदि वह शत्रु बड़ा विक्रमी और योद्धा हो, तो उसकी बिपतके समय आनेसे उस पर चढ़कर नष्ट कर डालना, वा ऐसा करना, कि भागजावे, इस विषयमें भला बुरा न विचारना। ऐ बेटा! शत्रुके दुर्व्वल होनेसेभी उसको कभी कम न समझना चाहिये; देखिये, थोड़ीभी आग धीरे धीरे आसरा पाकर पूरे वनको जला सकती है।

कभी राजाको अन्धे और बहिरेके बनना चाहिये, शत्रुओंके दोषको देख करके न देखना और सुनकरकेभी न सुनना चाहिये। तब अपने शरासनको तिनकेसे बना हुआ समझना; पर वनमें सोते हुए, मृग समूहके समान सदा सावधान रहना। आये शत्रुको अपनी हथेलीके भीतर समझकर साम, दान आदि उपायोंसे मेरवा डालना। शरण लो है, समझके उस पर दया दिखानी नहीं चाहिये। स्वाभाविक शत्रुको दान दे करके वशमें लाकरभी मारना, शत्रुके नष्ट होनेसेही चिन्ता जाती रहती है, क्योंकि मरे हुए जनसे किसी प्रकार भयकी सम्भावना नहीं रहती। यदि कोई पहिले हानिकारी रहकर पीछे मित्रता दिखावे, तो उसकोभी मारना। शत्रुओंके दुर्ग आदिपर चढ़कर ऐश्वर्य्यको, भेदिया लगाके मन्त्रको और बलसे उत्साहको इन तीनोंको नष्ट करना और सहाय, साधन उपाय, देश और कालका विभाग तथा विपत्तिका प्रतिकार इन पांच अङ्गयुक्त नये अथवा नियमोंका और भेद, दण्ड, साम, दान, मृगया, ऐन्द्रजालिक कार्य्य और विपत्तियोंसे किये हुए उन विषयोंको तुच्छ समझना, इस सात प्रकारके राज्याङ्गको सब प्रकारसे नष्टकर डालना। पहिले काल और अकालका विचार न करके शत्रुकी जड़हीको काट देना, आगे उसके सहाय और पक्षियोंको नष्ट करना। अवलम्बस्वरूपी जड़के सम्पूर्ण उखड़ जानेसे, इसमें सन्देह नहीं है, कि उसके भरोसेभी रहते हुए, सब मरेंगे, क्योंकि पेड़को जड़ काटनेसे उसकी शाखा कभी बनी नहीं रह सकतीं। राजन्! शत्रुसे निश्चिन्त न रहकर छिप छिपके सदा उसके दोष ढूंढ़नेमें चित्तको नियुक्तकर राज्य करना चाहिये। अग्निसे तपके, यज्ञकरके, हरिणकी छाल पहिनकर और जटा अजिन धरकेभी पहिले शत्रुओंमें विश्वास उपजाकर पीछे समय होने पर व्याघ्रके चढ़ जाना, क्योंकि कहा है, कि धन बटो

कुटिल होना बहुतही शुद्ध उपाय है। जिस प्रकार फलयुक्त शाखाको हिलाकर पक्के फल चुन लिये जाते हैं, वैसेही चुन चुन कर शत्रुओंको नष्ट करना; शत्रुओंके नाशके लिये पण्डितलोग ऐसाही किया करते हैं। जबतक समय न आवे तबतक शत्रुको कन्धे पर चढाये रहना, आगे समय आने पर पत्थर पर कलसेको फोड़नेकी भांति नष्ट करना। हानि करने वाले शत्रुके अति कातर वाणी कहने परभी उसको मत छोड़ना, एकबारगी मार डालना, उसपर दया दिखानी कभी उचित नहीं है। शान्ति बनाये रखनेके लिये साम वा दान अथवा भेद वा दण्ड, चाहे जिस किसी उपायसे हो शत्रुको नष्ट करना।

धृतराष्ट्रने कहा, कि मुझको समझाके कहो, कि साम, दान, भेद अथवा दण्डसे क्योंकर शत्रु नष्ट किये जा सकते हैं। कणिक बोले, कि हे महाराज! पहिले वनमें नीति शास्त्र जानने वाला एक सियार रहता था, उसकी कथा कहता हूं, सुनिये।

स्वार्थमें तेज बुद्धिवाला एक सियार बाघ, मूसा, चीता, और नेउल इन चार मित्रोंके साथ बसता था। उन सबोंने वनमें एक बड़ी मृग-दलपतिको देखा और उपर चढ़नेमें असमर्थ होकर नाना परामर्श करने लगे। पहिले सियार बोला कि, ऐ बाघ! आपने इस मृगको मारनेको कई बार यत्न किया है, पर यह मृग-नाथ बड़ा वेगवान और बुद्धिमान है, सो आप सफल मनोरथ नहीं हो सके है, अतएव मैं समझता हूं कि, वह मृग जब सोता रहेगा, तब मूष जाकर उसके पांवोंको खालेगा, उसके पाव खाये जानेपर, उस चलनेमें अशक्त मृगको बाघजी पकड़ लेंगे, अनन्तर हम सब आनन्दसे उसको खायेंगे। सियारकी यह बात सुनकर वे सब उनके अनुसार सावधान होकर काम करने लगे। पहिले मूषने मृगके पांव खालिये, उसके पीछे बाघने उस मृगको वध किया। तब सियारने उस मृगकी देहको धरती पर लोटते देखकर सबोंसे कहा कि तुमलोगोंका मङ्गल होवे, तुम नहा आओ, मैं मृगदेह की रक्षा करता हूं। बाघादि सब सियारकी बातके अनुसार नहानेको नदीमें गये, सियार बड़े सोचसे वहां बैठा रहा। अनन्तर सबसे पहिले महाबली बाघ नहा कर वहां आया और देखा कि सियार बड़े सोचके साथ वहां बैठा है। बाघने तब उससे पूछा, कि ऐ बड़े बुद्धिमान! तुम हमसे सबोंसे अधिक बुद्धि रखतेहो, फिर क्यों सोचमें हो, आओ हम अब अब मांस खाकर आनन्द लूटें। सियार बोला, कि ऐ महाभुज! आज मूषने जो बात कही है, वह सुनिये। "मूषने कहा है, कि आज मैंनेही इस मृगको मारा है, सो बाघके बल पर धिक्कार है, कि वह मेरे भुजबलसे आज तृप्त होंगे। मूषके ललकारके ऐसा कहने पर इसे खानेको मेरा मन नहीं चलता है।" बाघ बोला, कि मूषके ऐसी बात कहने पर अब मुझको चेतना आगयो, आजसे अपने हाथके बलसे वनैले जानवारोंको मारूंगा, और वही मांस खाऊंगा, यह कहकर वनमें चला गया। ऐसे समयमें मूष वहां आ पहुंचा। सियार मूषको आया हुआ देखकर बोला, कि ऐ मूष! तुम्हारा भलाहो सुनो। आज नेउरने यह कहा है, कि यह मृग बाघसे मारे जानेके कारण इसका मास विषके समान पचानेको अयोग्य होगा, सो मैं इसे न खाऊंगा, मेरी इस पर चाह दौड़ती ही नहीं है; सो आज्ञा करिये, कि मैं मूषको खाजाऊं। यह सुनकर मूष वेगपूर्वक वहांसे गड़हेमें जा घुसा। हे नृप! अनन्तर चीता नहा कर वहां आपहुंचा। तब सियार उसको आया हुआ देखकर बोला, कि आज बाघ तुम पर अप्रसन्न हुआ है, उससे यह समझ नहीं

पड़ती, कि तुम्हें भलाई होगी; वह स्त्रीके साथ यह आरहा है। मांस भक्षक चीता सियारकी यह बात सुन करकेही अपनी जातिके स्वभावके अनुसार देहको सिकोड़कर भागा। हे महाराज। उसके पीछे नेउरके वहां आने पर सियार उससे बोला, कि मैंने अपने हाथोंके बलसे बाघ, वृक आदिको परास्त किया है, वे और जगहको भाग गये हैं, अब तुम मुझसे लड़कर मनमाना मांस खाओ। नेउल बोला, कि जब बाघ वृक, और बुद्धिमान मूष यह सब बीर तुमसे हार कर भाग गये, तब तुम बड़े वीर हो, सो तुमसे लड़नेका मुझमें साहस नहीं है। यह कहकर नेउल भागा। इस प्रकार वाघादि सबोंके वहांसे चले जाने पर सियारने अपनी युक्ति पूरी होनेपर प्रसन्नचित्त होके अकेले मांस खाया। भूपाल लोग सदा ऐसा व्यवहार करनेसे सुखीहो सकते हैं। इस प्रकार भीत जनको डराकर वीरसे हाथ जोड़कर लोभीको धन देकर, बराबर और हीनको तेजी दिखाकर वशमें लाना। महाराज! यह सब आपसे कह चुके औरभी कुछ कहता हूं, सुनिये।

पुत्र, मित्र, भाई, पिता, वा गुरु यदि शत्रुता करे, तो हित चाहनेवालेको उन्हेंभी नष्ट करना उचित है। शपथ करके वा धन दानसे अथवा विष देकर मायाका जाल फैला कर शत्रुके नष्ट करनेमें कभी मत चूकना। दो विपक्षी आपसमें सहाय साधनोपाय आदिके हेतु शङ्का-युक्त होनेसे, जो जन श्रद्धा सहित मुझसे कही हुई नीतिके अनुसार काम करेगा उसीका सौभाग्य बढ़ेगा। यदि बड़ा और मान्य-पुरुषभी कर्त्तव्य और अकर्त्तव्यको न जानता हो, कुमार्गगामी और अहङ्कारी हो तो उसेभी दण्ड देना उचित है। क्रोध होनेसभी क्रोध न ... का ऐसा चेहरा दिखा करके हंसकर बात ...र क्रोधित होने परभी कभी लाञ्छन मत करना। मारनेके पहिले और मारनेके कालमेंभी मीठी बातें कहना, मारकर अन्तमें कृपा दिखाके शोक प्रगट करना और रोभी देना। शत्रुको बहुकाल, सान्त्वना वाक्य, दान और सरलतासे ढाड़स देवे, इस परभी यदि वह न्यायके मार्गसे विरुद्ध चले तो उसको मारना। किसीके बड़ा अपराध करने परभी वह धर्म्मका आश्रय ले, तो काले बादलसे ढंपे हुए पर्व्वतके सदृश उसका वह दोष छिप जाता है। जो राजाके दण्डसे मारा जावे, उसका घर जला देना और जो मनुष्य बुरी रीतिसे धन छीन करते हैं, उनको और नास्तिक तथा चोरोंको राज्यमें न बसने देना। शत्रुको प्रत्युत्थान, आसन आदि युद्धके अङ्ग अथवा विषादि दान चाहे जिस किसी उपायसे हो बड़े निठुर और डुबोनेवाला बनकर मरवा डालना अर्थात् ऐसी मार मारना, कि वह फिर न उठ सके और उस-बधके विषयमें सन्देह न रहे। शङ्का देने योग्य हो वा न हो सब जनसे डरते रहना, क्योंकि किसीसे निर्भय बने रहनेसे पीछे उससे भय आजावे तो जड़से उखड़नेकी बड़ी सम्भावना होती है। अवि-श्वासी जनका विश्वास मत करना, और विश्वासी हुएवे तोभी उसपर पूरा विश्वास करना उचित नहीं, क्योंकि विश्वासीजनसे भय आजानेसे जड़से नष्ट होना पड़ता है। दूतलोगोंको भली भांति परीक्षा करके मित्र राज्य और पराये राज्य मे नियुक्त रखना। पराये राज्यमें पाषण्डी तपस्वी आदिहीको भरती करना। फुलवाड़ी, घूमनेका स्थान देवमन्दिर, पानघर, पथ, मार्ग स्थान, कूप, पर्व्वत, वन, नदी और सब प्रकारके मनुष्य बटोरनेका स्थान, इन स्थानोंमें, और मन्त्री, पुरोहित, युवराज, भूपाल, द्वारपाल, शिक्षक, कारागार रखवारे, चीज वस्तु बटोरने वाले, भले बुरे कामोंके ठहरानेवाले, नगरके स्वामी,

काम बनानेहारे, धर्म्मस्वामी, सभापति, दण्ड-पाल, दुर्गपाल, अश्वपाल, राज्यके छोरदक्षक, और सेनापति, इन अठारहको पास गुप्त दूत नियुक्त कर भले बुरे कामको देखना। सदा बातोंमें नम्र और हृदयमें छुरा रखना और अति कठोर काम करनेमें प्रवृत्त होकरकेभी हंसते हुए सम्भाषण करना। जो ऐश्वर्य्य चाहेंगे उनको हाथ जोड़ना, शपथ करना, खुसामद, पैरों पड़ना, आशा देना इन कामोंका करना उचित है। नीतियुक्तजनरूपी पौधेका आशा दानादिरूपी सुन्दर फूलयुक्त पर बिलकुल फलसे खाली होना चाहिये। फलयुक्त जान पड़नेसेभी चढनेके अयोग्य होना चाहिये, पक्के समान होनेपरभी बिन पक्केकी नाईं जान पड़ना चाहिये, ऐसा होनेसे कभी वह टूटेगा नहीं। धर्म्म, अर्थ और काम यह तीन वर्ग तीन प्रकारकी पीड़ा और तीन प्रकारके फल है, तिनमें फलोंको शुभ जानना और पीड़ाओंको त्याग देना। देखिये धर्म्म करनेमें बड़े अभिलाषीजन अर्थ और कामको पीड़ासे बहुत सताये जाते है, अर्थमें बड़े आसक्तजन धर्म्म और कामको पीड़ासे पीसे जाते है और काममें बहुत लगे जनकोभी धर्म्म और अर्थको पीड़ा सताती रहती है, सो ऐसे धर्म्मार्थ काम करना, कि पीडादायो न होवें। अहङ्कारसे खाली, नियमयुक्त, शान्तिपूर्ण, इर्षवर्ज्जित, कार्य्य देनेहारे और शुद्धात्मा होकर ब्राह्मणोंके साथ परामर्श करना। जब आप बुरी दशामें आजावे सहज वा कठिन चाहे जिस किसी उपायसे हो अपनेको बचाना, आगे समर्थ होनेपर धर्म्माचरण करना। मनुष्य विना शसदमें पड़े मङ्गल लाभ नहीं कर सकता है, पर शङ्कायुक्त होकर जीता रहे तो बड़ा सौभाग्यवान हो सकता है. जिसकी बुद्धि शोकादिसे घेरी जाती है, उसको नलोपाख्यान आदि पुरानी कहानी सुनाकर और बुरे दिनवाले जनको समान आशा देकर, कि कुछ काल बीतनेपर तुम्हारा मङ्गल होगा और पण्डितको सन्तोष देनेवाले वर्त्तमान कामसे समझाना। जो जन शत्रुसे सन्धि करके सफल मनोरथके समान निश्चिन्त हो सो रहता है, वह ऐसे जनकी नाईं विपतमें पड़कर चेतता है, कि जो वृक्षपर सोता हुआ नीचे गिर जाकर जग उठता है। राजाको असूयासे रहित होकर सदा परामर्श छुपानेका प्रयत्न करना और स्वयं चौकस होकर विपक्षियोंके भेजे हुऐ छिपे दूतोंको आशङ्कासे सदा भय और क्रोध आदिको रोके रहना चाहिये। मछुहा जिसप्रकार हिंसा न करके धन नहीं पा सकता है, वैसेही राजा कठोर कर्म्म और शत्रुका मर्म्म बिना नाश किये सौभाग्यवान् नहीं हो सकते। शत्रुको सहकार व्याधि औ क्लेश देकर अन्नपान कुड़ाकरे उसके बलको ऐसा नाश करे, जिसमें तनिकभी सन्देह न रह जाय। अर्थ चाहनेवालेके मित्रताकी सम्भावना नहीं है, इस लिये अर्थवान लोग अर्थ चाहने वालेसे नहीं मिलते। सो शत्रुके वशमें लानेके लिये यथोचित सम्पूर्ण कार्य्य पूरा करना, कुछ बाकी मत रखना। ऐश्वर्य्य चाहनेवाले सहोपालको असूया छोड़कर सहाय साधनोपाय आदि कठोर करके बिगाड़का प्रयत्न और यत्नके साथ जसमें उत्साह करना चाहिये। नीतियुक्त जन ऐसे करें, कि उनको कोईभी चाहे मित्र वा शत्रुहो पहिले समझने न पावें, पर जब काम हाथ लगे वा पूरा होजावे देखलें। जब तक भय न आन पड़े, तब तक भीतजनके समान भयसे बचनेका उपाय सोचता रहे, पर भय आजाने पर निर्भयसा बनकर मारना उचित है। दण्डसे वशमें आये शत्रु पर जो कृपा करता है, वह खचरीके गर्भ धारणकी नाईं अपनी मृत्युको आपही बुलाता है। अनागत कार्य्यको उपस्थित जानकर उचित विषयोंको करना,

नहीं तो एकायक उपस्थित कामके समय बुद्धि नष्ट होनेसे कोई प्रयोजनीय कार्य्य बिगड़ सकता है। ऐश्वर्य्य चाहनेवाले भूपालको देशकालका विभाग कर यत्नके सहित उत्साह करना चाहिये और दैवी कर्म्म, धर्म्म, अर्थ काम यह सबभी देश कालके विभाग करके करने पड़ेगे; क्योंकि ऐसा सिद्धान्त है, कि देश और काल यह दो बड़े हितके देने वाले है, शत्रुके तुच्छ होने पर उसको तुच्छ समझनेसे वह ताड़की नाईं धीरे धीरे जड़ फैलाता है और बनमें गिरी हुई आगकी नाईं स्वल्प कालहीके बीचमें बहुत फैल जाता है इस प्रकार थोड़ी आगको बढ़ानेसे वह आग बड़ी बड़ी वस्तुओंको जला सकती है, तैसेही जो अपनेको सहायादिसे बढ़ाता है, वह बढ़कर अपने बिपक्षियोंके बहुत बड़े होने परभी स्वल्प कालमें उन्हें उखाड़ देता है। शत्रुको ऐसी आशा देनी; कि वह बहुत दिनमें पूरी हो सके, आगे उस कालके आने पर कोई रुकावटका बहानाकर उसको चुपकर देना। उस रुकावटकाभी कोई हेतु दर्शाना और उस हेतुकाभी दूसरा एक हेतु दिखाकर उसको दबाये रहे। नीति जाननेवाले भूपको चमकीले म्यानसे ढके हुए और लोमहारी उचित समय पर काम निबटारनेवाले अस्तुरेकी भांति होकर अर्थात् निर्द्दय गुप्ताशय, विसज्जन संहारी और कालापेक्षी होकर शत्रुओंका प्राणान्त करना चाहिये। अतएव हे कुरुकुल भूषण। पाण्डव वा दूसरों-पर न्यायके अनुसार व्यवहार कर ऐसा काम करिये, कि पश्चात्तापमें डूबना न हो। हे नराधिप! मुझे यह निश्चय समझा है, कि आप धन पुत्रादि सर्व्व मङ्गलयुक्त और विशेष जानकार हैं. इसलिये पाण्डवोंसे अपनी रक्षा करिये। हे शत्रुनाशि नरनाथ! क्योंकि पाण्डवलोग भाइयोंमें बड़े बलवन्त होगये हैं। सो जैसा . . . स्पष्टरूपसे कह दिया, आप पुत्रके साथ वह सुनकर उचित विषयमें ऐसा प्रयत्न करिये, कि पाण्डवोंसे भय न रहे और पश्चात्ताप न हो. ऐसेही नीतिके पथपर चलिये। कणिक ऐसा कहकर अपने घर पधारे, और कुरु नन्दन धृतराष्ट्र उसे सुनकर शोकयुक्त हुए।

एकसौ एकतालीस अध्यायका सम्भवपर्व्व समाप्त

श्रीवैशम्पायनजी बोले कि, अनन्तर सुबलपुत्र शकुनि, राजा दुर्य्योधन, दुःशासन और कर्णने एकत्र होकर एक बुरा परामर्श किया। उन्होंने कौरवी राजा धृतराष्ट्रकी आज्ञा लेकर पुत्र सहित कुन्तीको जला देना निश्चय किया। उन दुष्टात्माओंका इशारा और अभिप्राय समझनेवाले तत्त्वदर्शी विदुर आंखोंकी सैन आदि चिह्नोंसे उस परामर्शको समझ गये। पाण्डवोंके हितैषी सम्पूर्ण जानने योग्य विषयोंके विशेष जाननेवाले पापकी छूतसे खाली विदुरने यह समझा, कि पुत्रोंके सहित कुन्तीको भागना ही चाहिये। आगे हवाकी तेजी सहने योग्य, लहरोंमें न डूबनेवाली, यन्त्र लगी हुई, मजबूत और झण्डा फहराती हुई एक नाव बनाकर कुन्तीसे बोले, कि हे शुभे। धृतराष्ट्र इस कुल की कीर्त्ति और सन्तानको नाशने वाले बने हैं। वह उलटी बुद्धिसे शाश्वत धर्म्मको बिसार रहे हैं। चाहे जो कुछ हो, मैंने लहर और हवाके वेगको सहनेवाली यह नाव बनाकर जलमें छोड़ दी है; इससे तुम पुत्रोंके साथ मौतके जालसे बच सकोगी।

हे भरतश्रेष्ठ यशस्विनी कुन्ती वह बात सुनकर पीड़ित चित्तसे पुत्रोंके साथ नाव पर चढ़ कर गङ्गाजीमें गई थी। पाण्डव लोग विदुरकी बातसे नाव छोड़ कर दुर्य्योधनादिका दिया हुआ धन लेकरके बिना विघ्न बनको गये थे। इधर एक बहेलिन किसी कारणसे पांच बेटोंके सङ्ग उसही जतुगृहमें आके सोरही थी, जो पाण्डवोंके जलानेको बनाया गया था।

वह दिखारी निर्दोष होने परभी पुत्रोंके सहित भस्म होगई और वह म्लेच्छसे भी अधम पापात्मा पुरोचन भी जो जलानेके लिये नियुक्त हुआ था, जल भुन कर भस्म होगया, सो धृतराष्ट्र पुत्रोंका अभीष्ट पूरा न होनेसे वे साथियोंके द्वारा ठगे गये। वहां वाले सब लोग यह न जान कर, कि महात्मा पाण्डव लोग माताके साथ विदुरके परामर्श से बचाये थे; वारणावतनगरके लोग जतुगृहको जलते देख-करके दुःखितचित्तसे शोक प्रगट करने लगे और उस वृत्तान्तसे जो, कि जाना गया था धृतराष्ट्रको ज्ञात करनेके लिये यह कह भेजा, कि हे कौरव। आपकी बड़ी इच्छा पूरी भई। आपने पाण्डवोंको जला मारा है, अब अपनी आशा मिटावें—पुत्रके साथ राज्य भोगें। यह सुनकर धृतराष्ट्र, कुरुश्रेष्ठ भीष्म, बिदुर और धृतराष्ट्रके बैठोने वान्धवोंके साथ शोक करते हुए पाण्डवोंको प्रेत क्रिया कर डाली।

जनमेजय बोले; कि हे द्विज श्रेष्ठ। जतु-गृहके जलने और पाण्डवोंके बचनेके वृत्तान्तको विस्तारसे फिर सुना चाहता हूं। कुटिल जनके उपदेशसे उन्होने जिस प्रकारसे उस कठोर निठुर कार्य्यको किया था, वह कहै; सुननेकी मेरी बड़ी इच्छा होरही है। श्रीवैश-म्पायनजी बोले, कि हे शत्रुनाशी भूपाल। जतुगृहके जलने और पाण्डवोंके बचनेकी कथा मैं विस्तारसे कहता हूं, सुनिये। दुम्मति दुर्य्योधन भीमको अति बलवन्त और धन-ञ्जयको कृतविद्य देखकर अपार सन्तापसे जलने लगा। आगे सूर्य्यपुत्र और सुबलकुमार शकुनि नाना उपायोंसे पाण्डवोंके प्राण लेनेकी चेष्टा करने लगे। जब जो विपत आपड़ती थी, पाण्डवलोगभी उससे बचनेका उपाय कर-लेते थे, पर विदुरके मतसे उसको फिर प्रकट नहीं करते थे। हे भारत! पुरवासी लोग पाण्डवोंको नाना गुणो से अलंकृत देखकर सब समाजोंमें उनके गुण गाने लगे। और सब मनुष्य सभामें और चबूतरों पर मिलकर पाण्डुके ज्येष्ठपुत्र युधिष्ठिरको राज्य पानेकी योग्यताके विषयमें कोलाहल मचाने लगे, और कहने लगे, कि प्रज्ञाचक्षु जननाथ धृतराष्ट्रने अन्धे होनेसे पहिले राज्य प्राप्त नहीं किया था, अब वह क्योंकर राजा होगये? और सत्यशील महाव्रत शान्तनुकुमार भीष्मने पहिले राज्य त्याग दिया था, वह फिर उसको नहीं लेंगे, अतएव आज हम लोग तरुण बयवाले रणप्यारे और भेदके जानकार पाण्डुपुत्र युधि-ष्ठिरको भली प्रकार राज्यमें बैठावें। वह धर्म्मात्मा युधिष्ठिर शान्तनुनन्दन भीष्म और पुत्रोंके सहित धृतराष्ट्रकी अवश्य पूजा कर भोगनेकी नाना वस्तु देवेंगे। अनन्तर युधि-ष्ठिरके बारे में प्रजाओंकी यह सब बात सुनकर दुर्य्योधन कुमतिसे बड़ा सन्तापित हुआ। वह दुष्टात्मा सन्तापयुक्त उनकी बात सह नहीं सका, सो द्वेषके मारे जलकर धृतराष्ट्रके पास गया। अनन्तर पिताको निरालेमें पाकर उचित नियमसे प्रणामकर दुःखी चित्तसे युधि-ष्ठिर पर पुरवासियोंके प्रेमके हेतु अनुचित चित्तसे कहने लगा कि, पिता। मैंने आन्दो-लन करनेवाले पुरवासियोंसे अशुभ बातें सुनी हैं! पुरवालोंने आपका और भीष्मका अना-दरकर पाण्डवको अधीश बनानेकी कल्पना की है; इसमें भीष्मका भी मत होगा, क्योंकि वह स्वयं राज्य भोगकी इच्छा नहीं रखते; पर पुरवासी लोग केवल हम सबोंहीको मर्म्म पीड़ा देनेमें उद्यत हुए हैं, पहिले राजा पाण्डुने अपने गुणहीसे राज्य प्राप्त किया था, यद्यपि आप ज्येष्ठतासे राज्याधिकारी होनेके सुयोग्य थे, पर अन्धताके हेतु राज्य पा नहीं सके; अब यदि उन पाण्डुका पुत्र उत्तराधिकारी होकर राज्य पावे, तो भविष्यतमें उसका पुत्र अवश्यही अधिकारी होगा और उसी प्रकार

सिलसिलेवार उनके वंशवाले राजा हुआ करेंगे। हे जगपते! ऐसा होनेसे हम सबोंको पीढ़ीके क्रमसे राजवंशियोंमें न गिने जाकर सबोंके अनादरके साथ जीना पड़ेगा। अतएव हे महाराज! ऐसी कोई अच्छी नीति ठहरावें, कि हम सबोंको पराई कृपापर पेट पालना न पड़े। हे नरनाथ! पहिले यदि आप राज्यको प्राप्ति करते, तो प्रजाओंके वशमें न रहनेसेभी हमारो राज्यप्राप्तिमें कोई सन्देह नहीं रहता।

जतुगृहपर्व्वमें एकसौ ब्यालीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि प्रज्ञानेत्र, महीपाल धृतराष्ट्र पुत्रकी ऐसी बातें सुन और कणिकसे जो कथा सुनी थी, पूरी पूरी उसे यादकर चित्तमें दुबिधा करने लगे और शोकयुक्त हुए। आगे दुर्य्योधनने कर्ण, शकुनि, और दुःशासन, इन तीनोंसे सहमत होकर युक्तिपूर्व्वक राजा धृतराष्ट्रसे कहा, कि आप किसी चतुर उपायसे पाण्डवोंको वारणावतमें खदेड़ दीजिये, ऐसा करनेसे उनसे हमको फिर कोई भय नहीं रहेगा। पुत्रकी बात सुनकर उन्होंने क्षणभर चिन्ता की, पीछे बोले कि धर्म्मशील, पांडु सम्पूर्ण ज्ञातियोंसे विशेष मुझसे सदा धर्म्म अनुसार व्यवहार किया करते थे; उनको भोजन वस्त्र किसी विषयमें चाह नहीं थी। वह सदा व्रतधारी होकर मेरे हाथ सब राज्य सौंप दिये रहते थे। अब उनके पुत्र भी उनके समान धर्म्मशील गुणवन्त भूमण्डलमें प्रसिद्ध और पुरवासियोंके प्यारे हुए हैं, सो उस पाण्डुनन्दनको हम क्योंकर पैत्रिक राज्यसे खदेड़ सकते हैं? विशेष वह सहाय वर्ज्जित नहीं हैं, महाराजा पाण्डु मन्त्रियोंको सेनाको और उनके बेटे पोतोंको सदा पालते पोसते थे, ऐ बेटा! तब नगरके सब लोग पाण्डुसे सत्कृत हुए हैं, [illegible] उनके सब युधिष्ठिरके लिये वे क्यों हमको और हमारे बान्धवोंको न बिगाड़ेंगे? दुर्य्योधन बोले, कि हे पिता! आपकी बात ठीक तो है, पर मेरे आपके वर्त्तमान अहितको सोचकर सब प्रजाओंको धनमानसे पूजित करनेसे, वे हमारे बड़ेपनके लिये अवश्यही सहाय होंगी, क्योंकि हालमें धनकोष और मन्त्रीवर्ग हमारेही हाथमें हैं। अतएव हे पृथ्वीनाथ! आप किसी कोमल उपायहीसे शीघ्र पाण्डवोंको वारणावतमें भेजिये। हे राजन् जब कुछकाल पीछे राज्य मेरे हाथ लगेगा, तब पाण्डवगण कुन्तीके साथ फिर यहां लौटेंगे। धृतराष्ट्र बोले, कि हे दुर्य्योधन! तुमने जो बात कही मैभी चित्तमें उसका तर्क उठाये रहता हूं, पर इसे पाप अभिप्राय जानकर प्रकाश नहीं करता। भीष्म, द्रोण, कृप, विदुर इनमें कोईभी कदापि सम्मत नहीं होंगे, कि पाण्डवगण खदेड़े जायं। बेटा! कुरुवंशियोंमें हम और पाण्डव दोनों समान हैं, इसमें सन्देह नहीं है; सो वे महानुभाव लोग कभी दोनों पक्षोंमें किसीको घट बढ़ करना नहीं चाहेंगे! सुतरां पाण्डवोंको भगाकर हम कौरवोंसे, उन महात्माओंसे यहां तक कि निःसन्देह पृथ्वीभरके लोगोंसे वध किये जानेके योग्य होंगे।

दुर्य्योधन बोले, कि भीष्म हम दोनों पक्षोंको समान स्नेह करते हैं। द्रोणके पुत्र अश्वत्थामा मेरेही पक्षमें है, सो इसमें सन्देह नहीं है, कि आचार्य्य द्रोणको इसीपक्षमें रहना पड़ेगा, जिस पक्षमें उनके पुत्र हैं; और जिस पक्षमें वह पिता पुत्र दोनों रहेंगे, शारद्वत कृपभी अवश्य उसी पक्षमें रहेंगे, क्योंकि वह कभी भाञ्जा और द्रोणको नहीं छोड़ सकेंगे। विदुर हमारे अर्थसे आबद्ध हैं, और छिपकर पाण्डवोंसे मिलभी जावें, तो वह अकेले पाण्डवोंके पक्षमें होकर हमारी कोई हानि नहीं कर सकेंगे; अतएव आप निशङ्क चित्तमें

पाण्डवोंको उनकी माताके सहित यहांसे दूर करिये। ऐसा प्रयत्न कीजिये, कि वे आजही वारणावतमें जाय; निद्रानाशी शोकाग्नि मानों कठोर शूलोंकी भांति मेरे हृदयमें गड़ गया है, आप यह कामकर उसको निकाल लीजिये।

जतुगृहपर्व्वमें एकसौ तैंतालिस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर राजा दुर्य्योधन अपने छोटे भाइयोंसे मिलकर सम्मान और धन देकर क्रमशः प्रजावर्गको वशमें लाये। कई एक कार्य्यदक्ष मन्त्री धृतराष्ट्रकी आज्ञासे वारणावत नगरको सुन्दर कह कह यह प्रशंसा करने लगे, कि हालमें वारणावतमें बहुत सुन्दर पशुपतिका महोत्सव आ गया है, उस उत्सवका समाज नाना रत्नोंसे भर जायगा, उस नगरको देखनेही उसपर हर मनुष्यका चित्त झुक जाता है। हे नरनाथ! वारणावत नगरकी सुन्दरता इस प्रकार कही जानेपर वहां जानेके लिये पाण्डवलोगोंका मन दौड़ा। अम्बिकापुत्र राजा धृतराष्ट्रने जब समझा, कि वारणावत नगरको देखनेको पाण्डवोंका मन चला है; तब उनसे बोले, कि पुत्रो। यह सब लोग मुझसे बार बार कहा करते हैं, कि भूमण्डलमें वारणावत नगर बड़ा सुन्दर है, तुम वहां उत्सव देखना चाहो, तो परिवार और साथियों समेत वहां जाकर देवोंकी भांति आनन्द लूटो और गवैयों और ब्राह्मणोंको मनमाना धन रत्नादि देते रहो। इस प्रकारसे परम तेजस्वी सुरोंके समान कुछकाल विहारकर अच्छी प्रीति लाभ करो और अन्तको कुशलसे इस हस्तिनापुरमें लौट आना। युधिष्ठिरने धृतराष्ट्रका अभिप्राय समझकर और अपनेको असहाय जानकर उनको यह उत्तर दिया, कि आप जैसी आज्ञा करते हैं, वही होगा। अनन्तर उन्होंने शान्तनुपुत्र भीष्म, महामति विदुर, द्रोण, वाह्लीक, कौरव सोमदत्त, कृप, आचार्य्यके पुत्र अश्वत्थामा, भूरिश्रवा और दूसरे माननीय जनों और मन्त्रियों, ब्राह्मणों, तपोधनों, पुरोहितों, पुरवासियों और यशस्विनी गान्धारीसे दीनतापूर्व्वक कोमल भावसे कहा, कि हम राजा धृतराष्ट्रकी आज्ञासे साथियों समेत जनोंसे भरे अति सुन्दर वारणावत नगरमें जायंगे, आप प्रसन्नचित्तसे पुण्य वचन कहिये, कि आपके अशीससे हम बुद्धिको प्राप्तकर पापयुक्त न होवें। सम्पूर्ण कौरव युधिष्ठिरकी यह बात सुनकर पाण्डवोंकी इच्छानुरूप यह बोले, कि पथमें सर्व्वभूतोंसे सदा तुमलोगोंका मङ्गल होवे। हे पाण्डवो। तुमपर कोई अहित न होने पावे। अनन्तर पाण्डव स्वस्त्ययन करके राज्य लाभके लिये सम्पूर्ण कर्तव्य कार्म्मोंको पूराकर वारणावत नगरकी यात्राके लिये प्रस्तुत होने लगे।

जतुगृहपर्व्वमें एकसौ चौवालिस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भारत! राजा धृतराष्ट्रके पाण्डवोंको ऐसी आज्ञा देनेपर दुरात्मा दुर्य्योधनको हर्ष हुआ। आगे पुरोचन नामक मन्त्रीको निरालेमें बुलाकर उसका दहिना हाथ थाम करके बोला, कि पुरोचन! यह धन भरी धरती मेरे वशमें है, इसपर मेरा जितना अधिकार है, तुम्हारा भी उतनाही है, सो तुमको उसकी रक्षा करनी चाहिये; देखो, तुमसे अधिक विश्वासी सहायक मेरा कोई दूसरा नहीं है, कि जिससे मिलकर ऐसा परामर्श करूं, जैसा तुमसे कर सकता हूं; सो तुम इस परामर्शको भले प्रकार छुपाकर मेरे शत्रुको नष्ट कर डालो। मैं जो कुछ कहता हूं, वह कौशलयुक्त अच्छे उपायोंसे पूरा करो। राजा धृतराष्ट्रने पाण्डवोंको वारणावत नगरमें जानेकी आज्ञा दी है, वे धृतराष्ट्रकी आज्ञासे पाशुपत उत्सवमें वहां विराजेंगे, अतएव तुम

करो, कि आजही खच्चरयुक्त शीघ्रगामी रथ पर वारणावतमें जासको। वहां जाकर नगर की छोरमें अनेक अर्थ खर्च कर भले प्रकार घेरा हुआ एक चौपाल घर बनवाओ; सन, धूपआदि जितनी आग वालनेवाली वस्तु है, उनसेही वह घर बनवाना, आगे घृत, तेल, चर्बी और अधिक लाहकी साथ कुछ मिट्टी मिलाकर उसकी भीतोंको पोतवा रखना; और सन, तेल, घृत, लाह और लकड़ी यह सब वस्तु उस घरमें हर स्थानमें गिरा रखना। पर ऐसा करना, कि पाण्डवलोग वा कोई दूसरे विशेष परीक्षासे यह समझ न पावें, कि वह गृह आगसे जलनेवाला है। इस प्रकार गृह बनवा करके पाण्डवों और मित्रोंके साथ कुन्तीको आदरपूर्व्वक वहां पाण्डवोंके लिये सुन्दर शय्या, आसन और यान इस प्रकार बनवा रखना, कि पिता सन्तुष्ट होवें। और यह करना, कि वारणावत नगरका कोई भी मनुष्य इस विषयमें कुछ जानने न पावे। आगे ठीक समय आनेपर अर्थात पाण्डवोंको उस गृहमें अच्छे विश्वास पूर्व्वक सोते और निःशङ्क होते देखने पर उस गृहके द्वारमें आग लगाना; इसमें सन्देह नहीं, कि उससे पाण्डव जल मरेंगे। अनन्तर प्रजा समझेंगी, कि पाण्डव उनके घरमें आग लगनेहीसे जल मरे; सो पाण्डवोंके लिये वह कभी हमारी निन्दा नहीं कर सकेगी। पुरोचन दुर्य्योधनसे उस वातकी प्रतिज्ञा कर उच्चे अच्छे खच्चरयुक्त शीघ्रगामी रथ पर चला। हे राजन्! पुरोचन दुर्य्योधनकी आज्ञासे शीघ्रतापूर्व्वक वारणावतमें पहुंचकर राजकुमार दुर्य्योधनके कहे हुए सब काम पूरा करने लगा।

जतुगृह पर्व्वमें एकसौ पैंतालिस अध्याय समाप्त।

वैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर व्रतशील लोग हुए रथोंमें पवन समान वेगवान् अच्छे अच्छे घोड़े जोतवाकर चढनेके काल कातर होकर भीष्म, राजा धृतराष्ट्र, महात्मा द्रोण, विदुर, कृप दूसरे वृद्धोंके पांव छूने लगे; इस प्रकार अपनेसे बड़े सब कौरवोंको प्रणाम किया और अपने जोड़ियोंको गलेसे लगाया। आगे बालकोंका प्रणाम लेकर सब माताओंकी आज्ञासे और उनको सम्भाषण पूर्व्वक वारणावत नगरको चले। महाप्राज्ञ विदुर तथा दूसरे कौरवोंमें प्रधान लोग और पुरवासीवृन्द शोकाकुल होकर पुरुषोंमें व्याघ्ररूपी पाण्डवोंके पीछे पीछे चले। उनमेंसे कुछ पुरवासी और जनपदवासी पाण्डवोंके चित्तको मलिन देखकर अति दुःखसे कहने लगे, कि कुरुवंशी राजा धृतराष्ट्र दुष्टबुद्धिवश सब प्रकारसे पक्षपात कर रहे हैं, वह एकवार भी धर्म्मकी ओर दृष्टि नहीं देते हैं। पापरहित पाण्डुपुत्र कुन्तीनन्दन युधिष्ठिर, महावली भीम और धनञ्जय, यह कभी विद्रोह रूपी पाप कर्म्मको इच्छा नहीं करते, सो महात्मा माद्रीकुमार भी चुप रहेंगे। हाय! कैसा गहरा दुःख है। पाण्डवोंका पितृराज्यका पाना भी धृतराष्ट्रसे सहा नहीं जाता! इस अति अधर्मयुक्त कर्म्ममें फिर भीष्महीने क्योंकर अनुमति दी? ऐसे अन्याय पूर्व्वक पाण्डवोंको दूर करनेमें क्योंकर उनकी सम्मति हुई? पहिले शान्तनुनन्दन राजर्षि विचित्रवीर्य्य और कुरुपुत्र पाण्डुने हमको पिताकी समान पाला था। उन पुरुषव्याघ्र पाण्डुके स्वर्गको सिधारने पर अब धृतराष्ट्र इन बालक राजकुमारों पर द्वेषयुक्त हो गये। क्या ऐसे अत्याचार पर हमारी सम्मति हो सकती है? चाहे जो कुछ हो, युधिष्ठिर जहां जायंगे, हम सब गृहको तजकर इस नगरसे वहीं जायगे। पुरवासीलोग दुःखित होकर ऐसा आन्दोलन कर रहे थे, कि धर्म्मराज युधिष्ठिर मनहीमनमें कुछकाल सोचकर दुःखयुक्त चित्तसे उनसे बोले, कि पृथ्वीनाथ

धृतराष्ट्र हमारे पिता, माननीय, तथा गुरु हैं, और वही प्रधान हैं; हमारा व्रत यह है, कि उन्होंने जो कुछ कहा है, उसे हम बिना शङ्का पूरा करेंगे। आप हमारे हितकारी हैं, हमपर कृपा करके अशीस दे देखकर निज निज घरको लौट जावें। जब आप लोगोंसे हम लोगोंका कोई आवश्यकीय काम आ पड़ेगा, तब आप हमारे उस कामको प्रिय और हितयुक्त जानकर करना। पुरवासीलोग युधिष्ठिरकी यह बात सुनकर प्रदक्षिण पूर्व्वक आशीस दे दे कातरभावसे नगरको पधारे। उनके सम्पूर्ण रूपसे लौटनेपर सर्व्व नीतियोंके जानकार विदुर पाण्डवोंमें प्रधान युधिष्ठिरको सावधान करनेके लिये कहने लगे। इसलिये कि, दूसरे समझ न सकें, म्लेच्छ भाषाको जाननेवाले विदुर म्लेच्छ भाषाको समझते हुए युधिष्ठिरसे म्लेच्छ भाषामें इशारेसे बोले, कि जो शत्रुके चेष्टित विषयको नीति शास्त्रके अनुसार ज्ञात हो सकें, उनको समझकर ऐसा काम करना चाहिये, कि विपदसे बच सकें। जो लोग ऐसे अस्त्रोंको, कि जो बिना लोहेसे बना हो पर शरीरको नष्ट कर देता हो और उससे बचनेके उपायको जाननेमें समर्थ हैं, उनको शत्रु बिगाड़ नहीं सकते। कक्षघ्न अर्थात् तृणनाशी और हिमनाशी वस्तु महाकक्षमें अर्थात् बड़े वनके भीतर बिलमें रहनेवाले जीवोंको जला नहीं सकती है, इस नियमको आश्रयकर जो अपनी रक्षा करते हैं, वही जीते रहते हैं। जो आखोंसे नहीं देखते हैं, वह न तो पथ जान सकते हैं, और न दिशा निश्चयकर सकते हैं, जिनको धीरज नहीं है, वह ऐश्वर्य्य नहीं प्राप्तकर सकते हैं। तुम मेरे इस उपदेशको भली भांति स्मरण रखना। जो पुरुष शत्रुओंके बिनालोहेके बने शस्त्रके वशमें नहीं हैं, वह साहसीके घरकी भांति दोनों ओरसे निकलनेके पथयुक्त बिलोंके द्वारा आगसे बच सकते हैं और घूमने घामनेहीसे पथ जाने जा सकते हैं, नक्षत्रसेभी दिशाओंका निश्चय हो सकता है, और जो मनुष्य अपनी पांच वस्तुओंको बुद्धिपूर्व्वक बचा सकते हैं, वह शत्रुओंसे पीसे नहीं जाते। पाण्डुपुत्र धर्म्मराज युधिष्ठिर विद्वद्वर विदुरकी यह बात सुनकर बोले, कि मैं समझ गया।

विदुर पाण्डवोंको उक्त उपदेश देकर कुछ दूर पीछे चल प्रदक्षिण पूर्व्वक सम्भाषण कर गृहको लौटे। भीष्म, विदुर और पुरवासी सबोंके लौट जाने पर कुन्ती अजातशत्रु युधिष्ठिरके निकट जाकर बोली, कि विदुरने सबोंके सामने अप्रकाशित अर्थयुक्त जो बात कही, और तुमनेभी उनसे जैसी बात कही मैं उसे समझ नहीं सकी; यदि वह हमारे जानने योग्य हो और यदि उसे जाननेसे हानि न होनेवाली हो, तो तुम दोनोंमें जो बात हुई, उसका अभिप्राय मैं जानना चाहती हूं। युधिष्ठिर बोले, कि विदुरने कहा है, कि गृहसे आग जल उठेगी, तुम यह जानकर पहिलेसे सावधान होओ; कोई पथ तुम्हारा अनजाना नहीं है। जो जितेन्द्रिय होंगे, वही भूमण्डल भरका अधिकार पावेंगे। धर्म्मशील विदुरको मुझसे इतना कहने पर मैने उनसे कहा है, कि मैं सब समझ गया। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि उसके अनन्तर पाण्डवोंने फागुनके महीनेके आठवें दिनको रोहिणी नक्षत्रमें वारणावतको यात्रा की। आगे वहां पहुंचे हुए पाण्डवोंसे नगर-वाले जनोंकी भेट हुई।

जतुगृह पर्व्वमें एकसौ छियालिस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर वारणावत नगरीकी सब प्रजा पाण्डवोंके शुभ आगमनको सुनकर सवारीको छोड़ शास्त्रके अनुसार माङ्गल्य पदार्थ लेकर नाना प्रकारके अगणित यानों पर चढ़ उनके निकट जा पहुंची। वे

निकट जाकर जय जयकारके साथ अशोस देते हुए चारों ओर खड़े हुए। देव सदृश पुरुषव्याघ्र धर्म्मराज युधिष्ठिर तब नगरके जनोंसे घेरे जाकर सुरनायकके समान शोभा पाने लगे। निष्पाप पाण्डवलोग पुरबासियोंसे सत्कार पाकर उनकी यथायोग्य अभ्यर्थना और नाना अलङ्कारोंसे सत्कार पाकर उनको यथायोग्य अभ्यर्थना कर नाना अलङ्कारोंसे अलङ्कृत जनोंसे भरे वारणावत नगरमें जा पहुंचे। वीर पाण्डव-नन्दन पुरमें प्रवेश कर पहिले वेद पठन आदि स्वकर्म्ममें नियुक्त ब्राह्मणोंके घरोंमें गये। आगे क्रमसे नगरपाल, रथी वैश्य और शूद्रोंके घरोंमें भी गये। हे भरतश्रेष्ठ। पाण्डुपुत्रगण पुरवासियोंसे पूजे जाकर पीछे अगुवा पुरोचनके साथ घरमें गये। पुरोचन उनको अच्छी अच्छी भोजन और पीनेकी वस्तु, शय्या, उत्तम आसनादि देने लगा। बहुत मूल्ययुक्त पहिरावा पहिरे हुए पाण्डवगण पुरोचनकी सेवा और पुरवासियोंकी उपासना पाकर वहां वसने लगे। इस प्रकार दश दिनोंके व्यतीत होने-पर पुरोचनने उनको शिव नामक उस अशिव गृहकी बात सुनायी। गुह्यक-लोग जिस प्रकार कैलाशकी चोटी पर चढ़ते हैं, वैसेही पाण्डव-लोग पहिरावेसे सुशोभित होकर पुरो-चनके वचन सुनकर उस गृहमें प्रविष्ट हुए। परम धार्म्मिक युधिष्ठिर उस गृहको भले प्रकार देखकर भीमसेनसे बोले, कि यही गृह आग लगनेवाली वस्तुओंसे बना होगा। हे शत्रुनाशि। घृत और लाहसे मिली हुई चर्ब्बीकी गन्धकी सूंघनेसे स्पष्ट प्रकाश होता है, कि यह गृह आग लगनेवाली वस्तुओंसे बना है। घर बनानेमें दक्ष और विपश्चियोंके विश्वासी शिल्पियोंने सन, धूप, सरकण्डा, तृण और बांस आदिकी बटोर करके घृतमें डुबा कर उनसे यह घर बनाया है। सुयोधनका दुर्मति पुरोचन यह समझे हुआ है, कि मुझमें विश्वास आते देखकर हमको जलावेगा। हे पार्थ! महामति बिदुर जान सके थे, कि यह विपत आपड़ेगी, इस लिये उन्होंने पहिले मुझको सावधान कर दिया था। उन छोटे चचाजीने स्नेहसे हमारे हितेच्छुक होकर जताया था, कि दुर्य्योधनके वशीभूत नीच स्वभावके लोगोंने इस अहित गृहको भले प्रकार बनाया है। भीमसेन बोले, कि जब कि आपने जान लिया है, कि यह गृह आग बालनेवाली वस्तुओंसे बना है, तब हम पहिले जहां बसे थे, वहीं जायं तो हमारा मङ्गल हो सकता है। युधिष्ठिर बोले, कि हम यत्नसे सावधान हो यहीं रहकर बाहिरी दिखनेमें कोई चेष्टा न करके बाहर निकलनेका पथ ढूंढेंगे। पुरोचन हमारे आकार वा किसी भावसे जान जायगा, तो उसी क्षण शीघ्रतापूर्व्वक एकायक हमको जला मारेगा; क्योंकि पुरोचन लोकनिन्दा वा अधर्म्मसे भय खानेवाला नहीं है, वह बुरी बुद्धियुक्त दुर्योधन की आज्ञासे ऐसा अनिष्ट करनेका प्रवृत्त हुआ है। फिरभी हमारे यहां जल जानेसे पिता मह भीष्म क्यों क्रोधमें होने चले, वह क्रोधित होकर क्यों कौरवोंको क्रोधयुक्त करेंगे, हां, ऐसा हो सकता है, कि जितने दूसरे कौरववंशी हैं; वे धर्म्मके नामसे क्रोध प्रकाश कर सकते हैं, और हम जलनेके भयसे भय खाकर भाग जावें, तो राज्यलोभी सुयोधन दूतोंके द्वारा हम सबोंको मरवा सकता है, क्योंकि वह दुरात्मा राजपदपर बना, सहाययुक्त और बड़े ऐश्वर्य्यका अधिकारी है, और हम पदके बाहर, सहाय-रहित और ऐश्वर्य्य वर्जित हैं; सो इसमें सन्देह नहीं है, कि वह हमको नाना उपायोंसे नष्ट कर सकेगा। अतएव हम पापात्मा पुरो-चन और सुयोधनको ठगकर अनेक स्थानोंमें इसप्रकार छिपकर वास करेंगे, कि भागनेके काल हमारा पथ अज्ञात नहीं रहेगा, बड़ेही

गुप्त भावसे आज ही धरतीके नीचे एक बिल खोदेंगे। गुप्त-रूपसे ऐसा करनेसे हमको आशङ्का नहीं रहेगी, अतएव हम सजग होकर ऐसा करेंगे, कि पुरोचन वा कोई दूसरे पुरवासी हमारा अभिप्राय न जान सकें।
जतुगृह पर्व्वमें एकसौ सैंतालीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे महीपाल। एक मनुष्य जो विदुरका मित्र और मिट्टी खोदनेमें दक्ष था, आनके निरालेमें पाण्डवोंसे बोला, कि मैं खनिक हूं, भूमि भली भांतिसे खोद सकता हूं; विदुरजीने मुझको यह कह भेजा है, कि तुम जाकर पाण्डवोंका प्रिय कार्य्य करो; सो पूछता हूं, कि आपका कौनसा काम करना पडेगा? उन्होंने मेरा विश्वास कर कहा है, कि तुम पाण्डवोंका हित करो, अब आज्ञा कीजिये कि क्या करना है। हे पाण्डव। पुरोचन आपके इस गृहके द्वारपर कृष्णपक्षकी चतुर्द्दशीको रात्रिको आग लगा देगा। कुमति दुर्य्योधनने निश्चय किया है, कि पुरुषश्रेष्ठ पाण्डवोंको माताके साथ जला मारेंगे। विदुरने म्लेच्छ भाषामें आपसे कुछ कहा था, उससे आपनेभी उनको वैसाही उत्तर दिया था; यह बातही मुझपर आपके विश्वास होनेका कारण है। सत्यशील कुन्तीनन्दन युधिष्ठिर बोले, कि हे सौम्य। मैं जान गया, कि तुम विदुरके प्रिय मित्र, शुद्ध स्वभावी और विश्वासी हो, और उनपर सदा तुम्हारी बड़ी भक्ति है; वह सब जानते हैं, कोई काम उनका अनजाना नहीं है; तुम विदुरके जैसे प्यारे हो, हमारेभी वैसेही प्रिय हो, इसमें कुछ विशेष नहीं है। अतएव तुम उनको जैसा समझते हो, हमकोभी वैसाही समझकर हमारी रक्षा इस प्रकारसे करो, कि जैसे वह करते थे। मुझकोभी समझ आ गयी, कि दुर्य्योधनके मनसे पुरोचनने हमारे लिये ही यह अग्निघर बनवाया है; यह पापात्मा कुमति दुर्य्योधन धनयुक्त और सहाय सहित है, सो सदा हमको नष्ट करनेकी चेष्टा करता है। अब तुम यत्नपूर्व्वक हमको इस अग्नि-घरसे बचाओ। और भी इसमें सन्देह नहीं है, कि हम यहां जल मरें, तो सुयोधनकी आशा पूरी होगी। देखो, यह उस दुरात्माकी बड़ी भारी अस्त्रशाला है। इसे आश्रयकर यह बड़ा गृह ऐसा बना है, कि भीतकी जड़से अन्ततक बाहर निकलनेका कोई पथ नहीं है। विदुरने दुर्य्योधनके जिस सङ्कल्पित अनुचित कर्म्मको पहिले निश्चय रूपसे जानकर हमको सावधान किया था, अब वही विपद आ पड़ी है, अतएव ऐसा करो, कि हम पुरोचनसे गुप्तभावसे भाग सकें। खनकने वह प्रतिज्ञा-कर यत्नसे एक बड़ा बिल खोदना आरम्भ कर दिया। हे भारत। उस गृहके भीतर औरोंका अनजाना एक बड़ा बिल खोदकर उसमें ऐसा द्वार लगाया, कि भूमिसे समान हो गया और पुरोचनके भयसे उस बिलका मुंह तोप दिया। हे भूपाल। अहित बुद्धियुक्त पुरोचन उस गृहके द्वारपर सदा रहा करता था। पाण्डव गणभी रात्रिको अस्त्र शस्त्र लेकर उस गृहके भीतर रहते और दिनको वनमें घूम घाम मृगया करते फिरते थे। हे राजन्! वे पुरोचनको ठगनेके लिये टुकभी विश्वास न रख करके भी विश्वासीके समान, सदा असन्तुष्ट हो करकेभी सन्तुष्टकी भांति और अति विस्मित होकर वहां बसने लगे। पर विदुरके मन्त्री उस खनिकके बिना किसी नगरवासीने उनका अभिप्राय नहीं जाना।

जतुगृहपर्व्वमें एकसौ अठतालीस
अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर उनके उसप्रकार वर्षभर वहां बस जानेपर पुरो

उनको विश्वास रखनेवालोंकी नाईं निःशङ्क जानकर मनहीमनमें आनन्द करने लगा। कुन्तीपुत्र धर्म्मवीर युधिष्ठिर उसको प्रसन्न देखकर भीम, अर्ज्जुन, नकुल और सहदेवसे बोले, कि इस पापात्मा पुरोचनने समझ लिया है, कि हममें पूरा विश्वास आगया है, सो इस कुटिलको हमने ठग लिया है, अब हमारे भागनेका काल आगया है। हम अस्त्रशालामें आग लगा करके पुरोचनको जलाके यहां छः मनुष्योंको छोड़कर लोगोंसे छुपकर भागेंगे!

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि महाराज! अनन्तर कुन्तीने एक दिन दान देनेके मिससे रात्रिको ब्राह्मणोंको भोजन कराया, इस कामके लिये वहां की बहुत स्त्रियां वहां आई थीं। हे भारत! स्त्रियां रात्रिको वहां पूरे सुखसे खा पीकर आनन्द पूर्व्वक कुन्तीकी आज्ञासे निज निज घरको पधारीं, दैववश कालकी प्रेरणासे एक बहेलिन पंच पुत्रोंके साथ मनमाने उस भोजमें खाने की इच्छासे आई थी। हे पृथ्वीनाथ! वह बहेलिन अपने बेटोंके साथ मदिरा पीकर उन्मत्त और नशेसे विह्वल होकर उस घरहीमें सो गयी। वह एकबारही अचेत होकर मरीसी वहां पड़ी थी। अनन्तर रात्रिको बड़ी हवा बह रही थी, और नगरके लोग सोगये थे, कि ऐसे समयमें भीमसेनने उस गृहमें जहां पुरोचन सोता था आग लगायी, आगे क्षण भरमें जतुगृहके द्वारको जलाकर अन्तमें उस गृहके चारों ओर आग लगायी। शत्रुनाशी पाण्डव चारो ओरसे गृहको जलते हुए देखकर माताके साथ बिलमें जा घुसे। अनन्तर जलती हुई आगका कठोर तेज और घोर शब्द फैलने लगा। उससे पुरवाले जन उस गृहको जलते देखकर मलिनमुखसे कहने लगे, कि दुर्य्योधनके वशमें हुए इसने पापात्मा पुरोचनने ... को नष्ट करनेके लिये ही यह गृह बनवाया था, अब उसमें आग लगायी। हाय! धृतराष्ट्र की बुद्धि कैसी कच्ची है! उनकी उस बुद्धिपर धिक्कार है, जिस बुद्धिसे उन्होंने निष्पापी पाण्डुपुत्रोंको शत्रुके सदृश जला दिया! पर जिस पापिष्ठ पुरोचनने विश्वासयुक्त और निर्दोषी नरोत्तम पाण्डवोंको जलाया, अब वह दुरात्मा अपने कर्म्मफलसेही जल मरा है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि वारणावतवाले इस प्रकार विलपते हुए उस रात्रिको गृहको चारों ओरसे घेरकर खड़े रहे। इधर शत्रुनाशी पाण्डवलोग माताके साथ अति दुःखी चित्त होकर लोगोंसे छिपकर उस बिलसे निकलकर दृढ़ताके साथ शीघ्र चलने लगे; पर वे सब निद्राके झोकों और भयके कारण माताके साथ एकायक शीघ्र नहीं चल सके। हे राजेन्द्र! तब भीमगामी तथा भीम-पराक्रमी भीमसेन माता और सम्पूर्ण भाइयोंको लेकर चलने लगे। अति बल वीर्य्यवन्त और हवाकी नाईं वेगवान् तेजस्वी वृकोदर जानेके कालमें माताको कन्धेपर, नकुल और सहदेवको गोदमें और युधिष्ठिर तथा अर्ज्जुनके हाथ पकड़कर छातीसे पेड़ोंको तोड़ते और पावोंसे धरतीको फोड़ते हुए चले।

जतुगृहपर्व्वमें एकसौ उनचास अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर इस समय सर्व्वज्ञ विदुरने एक पवित्र मनुष्यको इसप्रकारसे, कि पाण्डवोंके मनमें उसपर विश्वास हो, उस वनको भेजा। हे कुरुनन्दन! वनमें जहां पाण्डवलोग माताके साथ नदीके जलकी नाप रहे थे, विदुरके भेजे हुए पुरुषने वहां जाकर उनको देखा। अति बुद्धिमान महात्मा विदुर गुप्त दूतके सहारे पापिष्ठ दुर्य्योधनके चेष्टित उन सब कामोंसे ज्ञात हुए थे, इसीहेतु उन्होंने उस विद्वज्जनको वहां भेजा था। उस पुरुषने तब मङ्गलामय भागीरथीके

तट पर विश्वासी जनोंसे बनी, पवनके सहन-कारी यन्त्रवाली, झण्डोंसे सुहावनी और मन या हवाको नाईं शीघ्रगामिनी पूर्व्व कथित नावको उन्हें दिखाया और विश्वासके लिये कहा, कि हे युधिष्ठिर। विदुरने इशारेसे जो कुछ कहा था, वह सुनिये। काष्ठनाशी और हिमनाशी वस्तु महाकक्षके बिल भीतर स्थित जनको नष्ट नहीं कर सकती है,इसप्रकार जो जन अपनी रक्षा कर सकता है, वह जीता रहता है। हे पाण्डव। मैं विदुरका विश्वासी और कामोंका जानकार हूं। उन्होंने मुझको इशारेको उस बातको कहकर यहां भेज दिया है। उस बहुत देखिभाले महाशयने यहभी कह दिया है, कि हे कुन्तीपुत्र! तुम रण-स्थलमें कर्ण, भाइयोंसमेत दुर्य्योधन तथा शकुनिको अवश्यही परास्त करोगे। अब इस में सन्देह नहीं है, कि जलमें रखी हुई, सुखसे जानेवाली इस नावपर आप इस स्थानसे बच जायंगे। आगे उस पुरुषने नरोत्तम पाण्डवोंको माताके साथ दुःखीचित्त देखकर नावपर चढ़ा करके गङ्गाजीसे उनके साथ चलने लगा और फिर बोला, कि विदुरने आपके नाम लेकर सिर चूमकर गले लगाकर बार बार कहा है, कि तुम पथमें न घबडाकर बिना विघ्न मङ्गलपूर्व्वक जाओ। हे राजेन्द्र! विदुरके भेजे हुए उस पुरुषने नरश्रेष्ठ वीर पाण्डवोंसे वह बात कहते हुए नावपर गङ्गाजीको पार किया; आगे उनके अन्यपारमें पहुंचनेपर वह जय जयकारके साथ उनको अशीस देकर अपने स्थानको गया। महात्मा पाण्डवलोग गङ्गाजीको पारकर उस पुरुषहोसे विदुरके यहां पलटा समाचार देकर किसीसे न देखे जाकर वेगपूर्व्वक जाने लगे।

जतुगृहपर्व्वमें एकसौ पचास अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर रात्रि बीतनेपर सम्पूर्ण नगरवाले पाण्डवोंकी भेंटके लिये शीघ्रता से वहां आये। उन्होंने आग बुझाकर मन्त्री पुरोचनको जतुगृहके साथ जला हुआ पाया। आगे रोते हुए चिल्लाकर कहने लगे, कि निश्चय जान पड़ता है, कि पापात्मा दुर्य्योधनने केवल पाण्डवोंको नष्ट करनेके लियेही ऐसा किया है। इसमें सन्देह नहीं है, कि दुर्य्योधनके पाण्डवोंको जलानेके विषयमें धृतराष्ट्रकी सम्मति थी, उनकी सम्मति नहीं रहती, तो वह मना करते। और शान्तनुनन्दन भीष्म, द्रोण, विदुर, कृप और दूसरे कौरवोंनेभी इस विषयमें धर्म्मपर दृष्टि नहीं दी है। अब हम दुरात्मा धृतराष्ट्रसे कहि भेजते हैं, कि तुम्हारी बड़ी आशा पूरी हुई, तुमने पाण्डवोंको जला मारा। अनन्तर उन्होंने पाण्डवोंको ढूढनेके लिये अग्निको उठा कर बुझाते हुए, पांचों पुत्रके सहित जलीभुनी बहेलिनको देखा। उस समय विदुरके भेजे हुए, उस पूर्व्वोक्त खनिकने उस गढ़को साफ करनेके मिससे दूसरे के न देखनेमें उस बिलका द्वार तोप दिया। इसके अनन्तर नगरवालोंने धृतराष्ट्रके निकट जाकर यह कह सुनाया, कि पाण्डवगण मन्त्री पुरोचनके साथ जल मरे हैं। राजा धृतराष्ट्र पाण्डवोंके विनाश-रूपी अति अप्रियसमाचारको सुनकर दुःखीचित्तसे विलपते हुए कहने लगे, कि हाय! आज उन सब वीरोंके माता समेत जल जानेसे मेरे भाई बड़े यशस्वी पाण्डु सत्यही मरे। कौरवलोग वार-णावतमें जाकर उनवीरों और कुन्तीराज-पुत्रीका अग्नि संस्कार करें; मेरे कुलकी प्रथाके अनुसार जितने शुभ तथा बड़े बड़े कर्म्म हैं, उनकोभी भली प्रकार करें और जिन जिन लोगोंने वहां पर देह छोड़ी है, उनके बान्धवभी वहां जावें। इस दशामें पाण्डव और कुन्तीके लिये जितने हितकार्य्य हो सकें, सब धनके

सहारे कर डालें। अम्बिका पुत्रने ऐसा कह-कर ज्ञातियोंके साथ पाण्डवोंकी जलक्रिया की। सब कौरव एकत्र मिलकर अति शोकसे हाय हाय कर रोने लगे। किसीने हा कुरु-कुलभूषण युधिष्ठिर। किसीने हा भीम! किसीने हा फाल्गुन। किसी किसीने हा नकुल। हा सहदेव। अथवा किसीने हा कुन्ति। इस प्रकार कातर स्वरसे शोक करते हुए, उदकक्रिया पूरी की और दूसरे पुरवासी पाण्डवोंके शोकसे बहुत कातर हुए। विदुर अल्प शोक दिखाने लगे, क्योंकि वह सच्चे समाचार जानते थे।

इधर महाबली पाण्डवगण माताके साथ वारणावत नगरसे निकल करके गङ्गाजीके किनारे जाकर मल्लाहोंके भुजबल, सोतेके वेग और सहाय वायुके सहारे बड़े शीघ्र अन्य पारको जा पहुंचे। वे नौकाको छोड़ कर रात्रिको तारोंके सहारे पथ जानकर दक्षिण ओर चलने लगे। हे राजन्। उनको बड़ी बड़ी चेष्टासे अन्तको एक तपोवन मिला। तब नींदसे अन्धे थके और प्यासे पाण्डवोंने भीमसेनसे कहा, कि देखो इससे अधिक और क्या कष्ट हो सकता है, कि हम इस सघन वनमें आपड़े हैं, अब नतो दिशा निश्चय होती है और न चल सकते हैं। नहीं जानते वह पापात्मा पुरोचन जला वा नहीं; वह जलभी गया हो, तो हम औरोंके विना देखे क्योंकर इस गहरी विपतसे पार होंगे? हे भारत। अकेले तुम्ही हम सबोंसे बली और पवनसम वेगवान हो, सो फिर हम सबोंको पूर्ववत ले चलो। धर्मराजके ऐसा कहनेपर महाबली भीमसेन कुन्ती और भाताओंको लेकर शीघ्र चलने लगे।

जतुगृहपर्व्वमें एकसौ एकावन अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि महाबली भीमसेनके जानेके कालमें शाखापल्लवोंसे भरा हुआ, वह वन उनकी उरुकी चोटसे डोलता हुआ, मानो घूमने लगा। जिस प्रकार जेठ और आषाढ़ महीनोंमें प्रबल हवा बहती रहती है, वैसेही उन महाबलीकी जांघकी चोटसे पवन सनसनाने लगी; इससे निकटकी लता और वृक्ष टूट फूटकर अच्छा पथ बनने लगा। वह उस पथके निकटके फूल फलवाले वनस्पति और लतायोंको खूंदते हुए, चलने लगे। गहन आदि तीन प्रकारके अङ्गोंसे गलित मदं कृत षाठवर्ष अवस्थायुक्त, क्रोधित गजराज जिस प्रकार वनके बड़े बड़े पेड़ोंको तोड़ता हुआ चला जाता है, वैसेही वह बड़े बड़े पेड़ोंको तोड़ते हुए, चलने लगे। गरुड़ और पवन समान वेगवान भीमसेनकी गतिके वेगसे युधिष्ठिर आदि अचेतनकी भांति होगये थे। वह दोनों भुजरूपी पल्लवोंसे पथमें गङ्गाजीकी बहती धारको वार वार पार कर दुर्य्योधनके भयसे छिपकर गये थे। नदीतटके ऊंचे नीचे स्थानमें यशस्विनी कोमलाङ्गी माताको पीठ पर लेकर वह अति कष्टसे चले। हे भरत श्रेष्ठ। अनन्तर ऐसे एक भयानक निर्जन वनमें जहां फल फूल जल मिलने योग्य नहीं है और हिंसक पशु पक्षी बसते हैं, सन्ध्याके समय आनपहुंचे। वहां गाढी अंधेरीसे भरी सन्ध्या आयी। भयावने पशु पक्षियोंके शब्द सुनाई देने लगे और दिशायें देखी नहीं गयीं, और बड़ी प्रचण्ड अकालिक पवन बह रही थी, उससे वहांके गले सड़े पत्ते और सूखे फलवाले छोटे बड़े पेड़ तथा लता कुछ टूटने और कुछ नीचे गिरने लगीं, तब कौरवलोग नींदसे जकड़े थके और प्यासे वनमें आगे चल नहीं सके पानभोजन-रहित होकर उस बड़े भारी वनहीमें बैठ गये। आगे कुन्ती प्याससे मारे विकल होकर पुत्रोंसे बोली, कि मैं पांच पाण्डवोंकी माता

होकर पाचों पाण्डवोंके बीचमें रहकरको भी जल की प्यासमे कातर हो गयी। कुन्ती वार वार यह कहने लगी। भीमसेनका हृदय उसमुनकर मातृस्नेह तथा करुण भावसे पूरित हुआ। वह फिर चलने लगे। उसके अनन्तर निर्ज्जन घोर महाबनमें प्रवेशकर दूरतक छाह देनेवाले एक सुन्दर बड़को देखा। हे प्रभो। भरतश्रेष्ठ भीमसेन उन सबों को वहां उतारकर बोले, कि आप यहां विराजें मैं जल ढूंढ़ लाऊं। यहां जलमें चरनेवाले सारस पक्षियों का कलाला सुन पड़ता है, मुझको जान पड़ता है, कि यहां बड़ा जलाशय होगा। आगे वह बड़े भाईकी आज्ञासे उधरको चले, जिधर जलमें चलनेवाले पक्षियोंकी ध्वनि सुनी जाती थी।

हे भरतश्रेष्ठ। उन्होंने वहां जाकर नहा करके जल पीया। आगे भ्रातृप्रिय भीम भाइयोंके लिये दुपट्टे में जल लेकर लौट चले। अनन्तर वेगसे उन दो कोसोंकी दूरीसे लौट आकर माताको और देखकर शोक और दुःखके मारे विह्वल होकर उरग की भांति लम्बी श्वांस छोड़ी। वृकोदर माता और भाइयोंको धरती पर पड़े और सोये देखकर अतिशोकसे विलपने लगे, कि इससे और अधिक कष्ट क्या होना है, कि मुझ दुर्भाग्यको भाइयोंको धरती पर सोते हुए देखना पड़ता है। पहिले वारणावत नगरमें बड़े बड़े मूल्यके विस्तरोंपर जिनको नींद नहीं आती थी, आज वे मिट्टी पर पड़कर सोते हैं। देखो, जो शत्रु दलके नाशनेवाले वसुदेवकी वहिन राजा कुन्तीराजकी बेटी, विचित्रवीर्य्यकी पुत्रवधू महात्मा राजा पाण्डुकी स्त्री और हमारी माता हैं, जो सर्व्व अच्छे लक्षणोंसे सुशोभित पद्म-गर्भ सदृश रूपवती, बड़ी कोमलाङ्गी और बड़े मूल्यवान विस्तरों पर सोने योग्य है, क्या उस कुन्तीको आज मिट्टी पर सोना सजता है? जिन्होंने धर्म्म, इन्द्र और पवन इन सब देवोंसे यह सब सन्तान प्राप्त की है और सदासे बड़े बड़े भवनोंमें सोती आई हैं, वह आज थकावटके मारे धरती पर लोटती है। फिर इससे मेरे लिये और कौन दुःख देखा जायगा, कि मैं आज इन पुरुषोत्तमोंको मिट्टी के विछौने पर पड़े हुए देखता हूं। धार्म्मिकवर राजा युधिष्ठिर जो तीनों लोकोंके अकेले अधिकारी होनेके योग्य हैं, हाय। वह आज क्यों कर सामान्य जनकी भांति थकावटके मारे मिट्टीपर सोते हैं। इससे और क्या अधिक दुःख होना है कि, नीले बादल समान श्रीमान अर्ज्जुन, जिनकी बराबरी करनेवाला इस मर्त्यलोकमें कोई नहीं है, आज छोटेसे मनुष्यकी नाईं मिट्टी पर पड़े हैं। और यह दो जिलहे भाई जो रूप रूस्पदमें देवोंमें अश्विनीकुमारोंके सदृश द्युतिमान हैं, वे साधारण लोगों की भांति धरती पर लोट रहे हैं। जिसके कुलनाशी भयानक ज्ञाति अर्थात् पटैत नहीं है, वह ग्रामके वृक्ष ऐसा अकेला सुखसे दिन काट सकता है। देखो, ग्राम भरमे ज्ञातियोंसे खाली फल पत्तोंसे सुशोभित एकही वृक्ष रहे तो, वह वृक्ष चैत्य करके भले प्रकार पूजा जाता है, अथवा इस भूलोकमें जिनके धार्म्मिक वीर-वर बहुत ज्ञाति रहते हैं, वे भी विना क्लेश सुखसे काल काटते हैं और बहुतेरेभी बली ऐश्वर्य्ययुक्त और मित्र वान्धवोंको आनन्द देते हुए वनमें उपजे हुए वृक्षोंकी भांति एक दूसरेके सहारे परम सुखसे काल व्यतीत करते हैं, पर कुबुद्धि धृतराष्ट्र और दुर्योधनने हमको खदेड़ा है, किन्तु दैववश हम किसी तरह जलनेसे बचे। उस आगसे बचकर कठोर क्लेश भोगते हुए इस वृक्षके आसरेमें आये हैं, अब फिर किधर जावें? रे कुबुद्धे! अल्प-दर्शिन्! धृतराष्ट्रपुत्र! तू अब अपनी आशा पूरीकर। सन्देह नहीं है, कि तुम्पर

देवगण प्रसन्न हैं। रे कुमते! युधिष्ठिर तुझे मार डालनेकी आज्ञा नहीं देते, इस लिये तू जीता है। क्या आजही मैं कोपाविष्ट होकर तुझको बेटा, मन्त्री, कर्ण, छोटे भाईलोग और शकुनिके साथ यमराजके घर नहीं भेज सकता? पर क्या करूं, धर्मात्मा पाण्डवोंमें श्रेष्ठ राजा युधिष्ठिर तुझ पर क्रोधित नहीं होते हैं। महाभुज वृकोदरने इस प्रकार क्रोधके मारे चित्तको मलिन करके हाथसे हाथ रगड़ दुःखके मारे लम्बो श्वांस छोड़ी; आगे बुझी हुई आगकी नाईं फिर दीन चित्तसे भाइयोंकी ओर देखकर सोचने लगे, कि यह लोग विश्वाससे साधारण जनोंकी भाति सो रहे हैं। मुझको जान पड़ता है, कि इस वनके पासही नगर है, जो जगाना चाहिये; पर यें सोगये हैं, सो मैं जग रहूं। इनकी थकावट दूर होनेसे जब यह जागेंगे, तब जल पीयेंगे! भीमसेन तब ऐसा निश्चय कर स्वयं जागने लगे।

एकसौ बावन अध्यायमें जतुगृह पर्व्व समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि वे जहां सोते थे, वहांसे थोड़ी दूर पर एक सालके वृक्षपर नरमास पर जीता हुआ बड़ा वीर्य्यवन्त अति पराक्रमी वर्षाके बादलकी भांति काला देखनेमें भयानक और भूखा हिड़िम्ब नामक एक कुटिल राक्षस था। उस मांसभोजीका जङ्घामूल और पेट बहुत बड़ा, दोनों नेत्र पियले, दाढ़ी और केश लाल, मुख बड़े बड़े दांतोंसे बड़ा विकराल, गला और गर्द्दन बड़े वृक्षके कन्धेकी नाईं और दोनों कान शङ्कुकी भांति थे। देखनेमें बड़ा भयानक उस वेढब पियली आंखयुक्त मांसखोर, भूखा करालरूप राक्षसकी दृष्टि एकायक सोते हुए पाण्डवों पर जापड़ी। बड़ा, भारी, अति बली, घने बादलके समान, दांत वाला और जलता हुआ मुखयुक्त वह मांसखोर मनुष्योंकी गन्ध संघकर उंगली उठाकर सिर खुजलाता रूखे केश डुलाता लम्बा चौड़ा मुह खोल बार बार उनको देखता हुआ नरमांस खानेकी आशासे बहिनसे बोला, कि बहुत दिन पर आज मेरा बड़ा प्यारा खाना आ पहुंचा है, मांसखानेका सुख आने पर मेरी जीभसे रस गिर रहा है। मेरे आठ दांतोंका अगला भाग बड़ा तेज है, यह बड़े दांत जिस पर जा लगते हैं, इनकी चोट उससे सही नहीं जाती, उन दांतोंको आज बहुत दिनपर कोमल मांसवाली देहमें घुसाऊंगा। आज मैं मनुष्यका गला पकड़ नसें निकाल बहुत गर्म घना रक्त पीऊंगा। तुम वहां जाओ और जानो, कि वे कौन, क्यों इस वनमें सोते हैं? मुझको निश्चय जान पड़ता है, कि वे मनुष्य होंगे, क्योंकि मनुष्यकी तेज गन्ध मेरी नाककी सुख पहुंचा रही है, सो तुम उन मनुष्योंको मार कर मेरे पास लेती आओ। वे मेरे अधिकारमें सो रहे हैं, उनसे तुम कुछ भय मत खाना। हम दोनों एकत्र होकर उन मनुष्योंको देहसे मांस चुन चुन कर मनमाना खावेंगे, तुम तुरन्त मेरी बात मानकर काम करो। आज हम मनमाना मांस खाकर दोनों एकत्र होकर भांति भांतिके ताल देते हुए नाचेंगे। तब राक्षसी हिड़िम्बा हिड़िम्बकी यह बात सुनकर जहां पाण्डवलोग विश्राम करते थे, वहां झट चली गयी और पहुंचकर देखा, कि पाण्डवलोग और पृथा सोती हैं और जयके अयोग्य भीमसेन जागते हैं। राक्षसी नये सालवृक्षके समान उदित और धरती भरमें अनुपम रूप सौन्दर्य्ययुक्त सुन्दर पुरुष भीमसेनको देखतेही कामदेवके वशमें हो गयी और समझा, कि यह गौरवर्ण महाभुज सिंहसी गर्द्दन अति द्युतिमान शङ्खग्रीव पद्मनेत्र पुरुष मेरे पति होनेके योग्य है। मैं कभी निठुर भाईको बात न मानगी, क्योंकि पति पर जो

जितना बल करता है, उतना भाईपर कभी नहीं करता, और इनको मारनेसेभी भइया और मुझको क्षणभर सुख मिलेगा, पर न मारनेसे सदा इनसे आनन्दको उमङ्गमें बड़ा सुख पा सकूंगी। ऐसा समझकर कामरूपा राक्षसी सुन्दर मानवीरूप धरकर महाभुज भीमसेनके पास धीरे धीरे जा पहुंची। आगे सुन्दर आभूषणोंसे सजी हुई वह राक्षसी नम्र-भावसे लज्जिता सी कुछ मुसकिराती हुई भीमसेनसे बोली, कि हे पुरुषश्रेष्ठ। आप कौन है, कहांसे आये हैं। और जो यह देव-रूपी पुरुषगण सोये है, वे कौन है? हे अनघ। यह जो तप्त सुवर्णके रङ्गको कोम-लाङ्गी रमणी घरमें रहनेकी भांति विश्वास-पूर्व्वक इस वनमें लेटकर सो रही है, यह आपकी कौन लगती है। क्या वह नहीं जानतीं, कि इस वनमें राक्षस रहते है, यहां हिडिम्व नामक पापात्मा राक्षस वसता है. वह राक्षस मेरा भाई है। हे देववत मनुष्यगण। उस मास भोजीने आपके मांस भोजन करनेके लिये बुरे अभिप्रायसे मुझे भेज दिया है, पर मैं आपसे सच कहती हूं, कि देववत आपको देखकर आपके बिना किसी दूसरेको पति बनाया नहीं चाहती। हे धर्म्मशील। इसपर ध्यान देकर मुझपर यथोचित व्यवहार करिये। मेरा मन और अङ्ग सब कामके वाणसे घायल हुए है। मै आपको भज रही हूं, आप मुझ-पर कृपा करें। हे महाभुज। मै आपको इस पुरुष-भोजी राक्षससे बचाऊंगी। हे अनघ! आप मेरे पति होवे। हम दोनों पहाड़ पर दुर्गमें रहेंगे। मैं आकाशमें उड़नेवाली हूं, इच्छानुसार आकाशादि सब स्थानोंमें चलती फिरती हूं आप मेरे सङ्ग उन सब स्थानोंमें घूमकर अपार आनन्द लूटेंगे। भीमसेन बोले, कि राक्षसि इन्द्रिय निग्रहवाले मुनिके समान कौन माता और बड़े तथा छोटे भाइयोंका त्याग कर सकता है? और मेरे सदृश कौन मनुष्य कामसे पीड़ितकी भांति सुखसे छोटे भाई और माताको राक्षसके भोजनके लिये छोड़कर चला जा सकता है? राक्षसी बोली, कि आप जैसा चाहेंगे मै वही करूंगी आप, इनको जगावें, मै सहजहीमें सबोंको मनुष्य-खोर राक्षसके हाथसे मुक्त कर दूंगी। भीम-सेन बोले, कि हे राक्षसी। तुम्हारे दुरात्मा भाईके भयसे इस वनमें सुखसे सोये हुए भाइयों और माताको नही जगा सकूंगा हे भीरु सुनेत्रे। मनुष्य, गन्धर्व्व, यक्ष वा राक्षसमें कोईभी मेरा पराक्रम रुह नहीं सकता है। हे भद्रे! तुम चाहे जाओ वा रहो, अथवा तुम जो चाहती हो करो, किम्वा हे सुन्दरि। तुम अपने उस पुरुषभोजी भाईको भेजो, मै न तो कोई विधि करूंगा और न मना करूंगा।

हिड़िम्ववधपर्व्वमें एकसौ तिरपन अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर लाल-नेत्र, महाभुज, केश ऊपर उठाया हुआ, लम्बे चौड़े मुहवाला घने बादलसमान काला और तेज दांतवाला वह विकराल आकारयुक्त राक्षसनाथ हिड़िम्ब हिड़िम्बाको बड़ी देरी देख उस वृक्षसे नीचे उतर पाण्डवोंके पास शीघ्र आने लगा। हिड़िम्बा वैसे निकट राक्षसको गिरते देखकरकेही भयसे घबराकर भीमसेनसे बोली, कि वह देखो, दुष्टात्मा पुरुष नाशी क्रोधित होकर उतर रहा है, अब मैं जैसा कहती हूं, आप भाइयोंके साथ वह करें। हे वीर! मैं अपनी जातिके बलवीर्य्य रखनेके हेतु मनमाने सर्व्वत्र जा सकती हूं। आप मेरी कमरपर चढ़ें, आपको आकाशमें लेती जाऊं। हे शत्रुनाशि! आप इन सोती हुई माता और भाइयोंको जगावें, मैं सबोंको

लेकर आकाश मार्गमें जाऊगी, भीमसेन बोले, कि ऐ सुन्दरी। तुम भय मत खाओ, मुझको निश्चय जान पड़ता है, कि मेरे लिये वह राक्षस बड़ा तुच्छ है; कोई मेरी हिंसा नहीं कर सकेगा। ऐ सुन्दरी। तुम देखलो, तुम्हारे सामने ही मैं उसको नष्ट करता हूं। री भीरु! उस नीच राक्षसकी क्या कहती हो, जितने भर राक्षस हैं, सब भी आवें, तो मेरे साथ लड़नेमें समान होकर नाश-लीलासे नहीं बचेगे। हस्तीकी सूंड़से यह दो भुज, लोहेके मुद्गर समान दो जांघ और बडे तथा कड़े दांतोंको देखो। ऐ सुन्दरि। तुम आज महेन्द्रकी भांति मेरे विक्रमको देखोगी। ऐ चौड़ी कमरवाली। तुम मुझको मनुष्य मानकर कम न समझना। हिड़िम्बा बोली, कि हे नरव्याघ्र। आप देवरूपी हैं, मैं आपका अनादर नहीं करती, पर मनुष्यपर राक्षसका जितना प्रभाव है, वह मैं देख चुकी हूं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भारत! भीमसेन हिड़िम्बासे यह बातें कर रहे थे, कि ऐसे समय मनुष्यखोर हिड़िम्बने क्रोधपूर्व्वक आनकर वह बातें सुनलीं और देखा, कि हिड़िम्बाने सुन्दर मनुष्यका स्वरूप लिया है। उसके केशोंमें फूलहार लगे हैं, मुह पूर्ण चन्द्रमासा शोभायमान है भौंहे, नाक, नेत्र और केश सब सुशोभित हैं, नख और त्वचा कोमल हुए हैं और सुन्दर पतला वस्त्र तथा सम्पूर्ण आभूषणोंसे सर्व्व शरीर बने ठने हैं। उसकी ऐसा सुन्दर मानवी स्वरूप लिये देखकर पुरुष चाहनेवाली जान करके वह बड़ा कोपाविष्ट हुआ। हे कुरुश्रेष्ठ! तब वह क्रोधके मारे अपनी बड़ी आखोंको निकाल कर बहिनसे बोला, कि मैं भोजन चाहता हूं, किसकी ऐसी दुर्मति हुई, कि मेरी उस इच्छामें विघ्न डाला चाहता है, हिड़िम्बे! तू मोहित हो ... मेरे क्रोधसे भय नहीं खाती? री असति! तू पुरुषकी चाहसे मेरे अप्रिय काममें हाथ डालती है? तुझ पर धिक्कार है! तुझसे पहिलेके श्रेष्ठ राक्षसोंके यशरूपी चन्द्रमा पर कलङ्कके धब्बे लगे। तू जिसके सहारेसे मेरा बड़ा अप्रिय-करने पर उद्यत हुई है, आज मैं अभी तेरे सहित उसका काम पूरा करे देता हूं।- राक्षसश्रेष्ठ हिड़िम्ब आंखें लाल कर हिड़िम्बासे उस प्रकार कह करके दांतसे दांत पीसता हुआ पाण्डवोंके बधके लिये दौड़ा। मारनेमें दक्ष तेजस्वी भीमसेन उसको आते देखकर लाञ्छनके साथ "तिष्ठ तिष्ठ" ऐसा बोले।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि भीमसेन उस राक्षसको बहिन पर क्रोधित होते देखकर हंसते हुए बोलने लगे, कि रे कुमति नरखोर! तुझे हिड़िम्बासे क्या प्रयोजन है और इन सब सुखसे सोये भाइयोंके जगाने हीकी भी क्या आवश्यकता है? तू तुरन्त मेरे पास आ और मुझको मार। स्त्रीको मारना तुझे नहीं सोहता। विशेष एकके दोषसे दूसरेको मारना ठीक नहीं है, इस बालाने आज अपने वशमें रहकर मुझे कामना नहीं की है। कामदेवने इसके शरीरमें घुसकर केही इस ओर झुकाया है। रे राक्षसकुलके यशनाशी दुराचारी अधम राक्षस। तेरी बहिनने तेरेही नियोगसे यहां आनकर मेरा रूप देखके मुझे कामना की है, सो यह भीरु अबला तेरे पास दोषी नहीं बन सकती, कामदेवनेही यह दोष किया है, अतएव तुझे इस सुन्दरीको लाञ्छन करना नहीं चाहिये। रे दुष्टात्मा! मेरे रहते तू इस नारीको मार नहीं सकेगा। रे नरभोजी! तू अकेला है, अकेले मेरेही साथ तू लड़, मै अकेलाही आज तुझको यमराजके पाहुना बनाऊगा। आज तेरा सिर मेरे भुज बलसे ऐसे पीसे जाकर चूर हो जायगा, कि मानो बलवन्त हाथीके पावोंसे कुचल गया हो।

आज रणभूमिमें तेरे मारे जानेसे काङ्क, श्येन, और गोमायु आनन्दसे नीचे उतरकर तेरे शरीरको खींचने लगेंगे। पहिले तूने सदा मनुष्य खाकर जिस वनको दूषित किया था, आज मैं क्षणभरमें राक्षससे उस वनको खाली बना दूंगा। रे राक्षस। सिंह जिस प्रकार बड़े गजपर चढ़ जाता है, वैसेही आज पर्व्वतवत तुझको तेरी बहिनके देखनेमें मैं वार वार खेचूंगा। रे राक्षस-कुलमें अधम। तेरे मारे जाने से इस वनमें रहनेवाले लोग विना बाधा इस वनमें रहेंगे। हिडिम्ब बोला, कि रे मनुष्य। तेरे इस व्यर्थ गर्जन और व्यर्थ बातोंके कहनेसे क्या होना है? जैसा कह रहा है, उसी कर दिखाके अपनी बड़ाईको प्रगट कर, देर मत कर। तू अपनेको बली और पराक्रमी समझता है; पर तू कितना बल और वीर्य्य-वाला है, वह आज मुझसे मिलनेहीसे समझ सकेगा। मैं इस समय उनको नहीं मारूंगा, वे सुखसे सोये रहें। रे कुबुद्धे। हालमें तेरे समान कड़ी बात कहनेवालेहीको नष्ट करूं। पहिले तेरी देहसे रक्त पीऊंगा; फिर आगे उनको मारूंगा; अन्तमें इस अप्रिय करनेवाली-कोभी मार डालूंगा। वैशम्पायन बोले, कि नरमांस खानेवाला राक्षस यह बात कहके हाथ बढाकर क्रोधसे शत्रुनाशी भीमसेनपर दौड़ा। भीम-पराक्रमी भीमने हंसते हुए, उसीक्षण दौड़े आते हुए उस राक्षसके वेगसे चलाये हुए हाथोंको पकड़ लिया। वह बलपूर्व्वक उन फैलाये हुए हाथोंको थामके तथा उसको इस प्रकार खेंचके कि जैसा सिंह छोटे मृगको पकड़ता है, वहां से आठ धनु अर्थात् बत्तीस हाथकी दूरीपर ले गये। अनन्तर राक्षस बलपूर्व्वक पाण्डव भीमसेनसे पीड़ित होकर उनको कसके लपेटकर बड़े शब्दसे चिल्लाने लगा। कहीं उस शब्दको सुनके सुखसे सोये हुए भाइयोंकी नींद न टूटे, इस लिये महाबली भीमसेनने फिर बलपूर्व्वक उसे पकड़ा। तब हिडिम्ब और भीमसेन दोनों दोनों पर विक्रम प्रकाश करते हुए बलसे एक दूसरेको पकड़ने लगे। वे दोनो षाठ बर्षके क्रोधित गजोंके समान वृक्षोंको तोड़ने तथा लताओंको उखाड़ने लगे। उनके उस बड़े कोलाहलसे नरश्रेष्ठ पाण्डवोंने माताके साथ जगकर सामने खड़ी हिडिम्बाको देखा।

हिडिम्बवधपर्व्वमें एकसौ चौवन अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि कुन्ती और पुरुष-श्रेष्ठ पाण्डवोंने जगकर हिडिम्बाका अलौकिक रूप देखकर अचरज माना। आगे कुन्ती उसकी ओर भली भांति ताकके रूपकी शोभा देखकर अचरज मान शान्त और मीठी बातोंमें धीरे धीरे बोली, कि ऐ देवकन्या समान सुन्दरी! तुम कौन हो? ऐ वरवर्णिनि! तुम किसकी स्त्री हो? तुम किस कामके लिये और कहंसे यहां आयी हो? यदि तुम इस वनकी देवी वा अप्सरा हो, तो मुझसे कहो कि क्यों यहां खड़ी हो?

हिडिम्बा बोली, कि नीले बादलकी भांति जो यह हिडिम्ब नामक राक्षसके और मेरे बसनेका स्थान है, ऐ भामिनि! मैं उस राक्षस-नाथ हिड़िम्बकी बहिन हूं। मेरे भाईने आपकी और आपके पुत्रोंकी हिंसा करनेको मुझको भेजा था। ऐ आर्य्ये! मैंने उस कुटिलबुद्धि भाईकी बातसे यहां आके कञ्चे सुवर्ण समान अङ्गयुक्त आपके महाबली पुत्रको देखा। ऐ शुभे! जो सर्व्वजीवोंके मन-मन्दिरमें घूमा फिरा करते हैं, मैं आपके पुत्रको देखतेही उसी मन्मथके बशमें होगयी हूं। मैंने मदनबाणको मनसे निकालना चाहा, पर किसी प्रकार समर्थ नहीं हुई;

अतएव आपके महाबली पुत्रको मैंने मनही मनमें भर्त्ता करके बरण किया है। अनन्तर उस राक्षसपतिने मुझको जिस काममें भेजा था, उसको देरी देखकर आपके इन पुत्रोंको नष्ट करनेको स्वयंही आ गया है। आगे मेरे प्रिय भीम! महात्मा आपके वह पुत्र बलपूर्वक उसको घसीटकर यहांसे कुछ दूर लेगये है। युद्धमें विक्रम दिखाकर ललकारते हुए एक दूसरेको दृढ़ वेगसे पकड़ रहे हैं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि उसकी यह बात सुन करकेही वोधिवन्त युधिष्ठिर, अर्ज्जुन, नकुल और सहदेव ये एकायक उठकर उस युद्धस्थानके निकट गये। उन्होंने देखा, कि राक्षस और भीम दोनों जयकी आशासे एक दूसरेको पकड़कर अति बली सिंह समान खेंच रहे हैं, और वे एक दूसरेसे लपटकर बार बार खेंचके दावाग्निके धूएकी नाईं धूंआ उठा रहे है, तथा पर्व्वतवत धुएंसे ढंपे जाकर हिमसे ढंपे पर्व्वतकी भांति प्रगट होते है। अनन्तर अर्ज्जुन भीमसेनको राक्षससे पीड़ित होते देख कर हंसते हुए धीरेसे बोले, कि हे महाभुज भीम। आप भय मत खाना। हम थके मादे थे, सो नहीं जान सके, कि आप ऐसे घोररूप राक्षससे भिड़ गये हैं। पार्थ! मैं आपको सहारा देनेको खड़ा होगया हूं, मैंहो इस राक्षसको नष्ट करूंगा, नकुल और सहदेव माताकी रक्षा करेंगे। भीम बोले, कि तुम्हारे इससे मिलनेका प्रयोजन नहीं होगा। देखो मत हड़बड़ाओ। जब यह राक्षस मेरे दोनों हाथोंके तले आ गया है, तब कभी जीता नहीं रहेगा। अर्ज्जुन बोले, कि हे भीम! इस पापात्मा राक्षसको देरतक जीवित रखनेका क्या प्रयोजन है? यदि मुझको जाना पड़े, तो यहां अब अधिक काल रहा नहीं जाना है। आगे पूर्व्वदिशा लाल होकर प्रात संध्याका काल आ जायगा। रौद्र मुहूर्त्तमें अर्थात् ब्राह्ममुहूर्त्तके पूर्व दण्डकाल राक्षस प्रबल होते हैं; अतएव हे भीम! आप शीघ्र काम पूर्ण करिये, इसे लेकर खेलते न रहिये; इस भीषण मांसभोजो राक्षसको त्याग दीजिये। इसके पीछे वह माया फैला सकता है, सो भुजबल प्रगट करिये।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि भीमने अर्ज्जुनकी उस बातसे क्रोधके मारे जलकर प्रलयकालिक हवाका बल सञ्चय किया और उसीक्षण कोप प्रगटकर बादलके रङ्गको उस राक्षसकी देहको सौ बारसेभी अधिक ऊपर उठाकर घुमाया तथा उसका नाम लेकर बोले, कि तू वृथा मांससे वृथाही पुष्ट और बढ़ा हुआ है; तेरा बढ़नाभी व्यर्थही है; इस लिये तू व्यर्थ मृत्युके अर्थात् जिस बाहु-युद्धमें मरनेसे स्वर्ग नहीं मिलता है, उसकेही योग्य है, इससे तू व्यर्थ मृत्युको प्राप्त करेगा! रे राक्षस! आज मैं इस वनको शान्तियुक्त और कण्टक रहित करूंगा। तू फिर मनुष्य मारकर खा नहीं सकेगा। अर्ज्जुन बोले, कि आपने यदि युद्धमें इस राक्षसको भार समझा हो, तो मैं आपको सहायता करूं, आप इसका तुरन्त अन्त कीजिये। हे वृकोदर। अथवा कहिये तो मैंही अकेला इसका काम पूरा करूं, आप कार्य्य कर थक गये है, अब निश्चिन्त होना ठीक है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि भीमसेनने उनकी उस बातको सुनके बड़े क्रोधित हो बलसे राक्षसको मिट्टी पर पीसकर पशु मारनेकी भांति नष्ट किया। राक्षसने मरनेके समय जलसे भीगे हुए नगाड़े की नाईं घोर शब्दसे चिल्ला कर उस वनको पूरित किया। बलवन्त महाभुज पाण्डुनन्दनने राक्षसको हाथोंसे पकड़ कर उसके मझले भागको तोड़कर पाण्डवोंको आनन्दित किया। बलशाली पाण्डवोंने

हिड़िम्बको नष्ट होते देखकर प्रसन्न चित्तसे नरश्रेष्ठ शत्रुनाशी भीमसेनकी बड़ी प्रशंसा की। अनन्तर अर्ज्जुन महात्मा भीमपराक्रमी वृकोदरका आदर कर बोले, कि हे विभो! मुझको जान पड़ता है कि, इस वनसे नगर बड़ी दूर नहीं है। चलिये, हम उस स्थानमें शीघ्र जायं, सुयोधन हमारा समाचार नहीं पावेगा। अनन्तर कुन्ती और महारथी पुरुषोत्तम पाण्डवगण उसपर सम्मत हो वहांसे चलने लगे और हिड़िम्बा भी उनके साथ चली। हिड़िम्बवधपर्व्वमें एकसौ पचपन अध्याय समाप्त।

भीमसेन हिड़िम्बाको साथ आते देखकर बोले, कि हिड़िम्बे! राक्षसगण मोहिनी माया धारणकर पहिली शत्रुताको स्मरण किये रहते है; सो तुम्हारा भाई जिस पथमें गया है, तुम उसी पथमें जाओ। युधिष्ठिर यह सुनकर बोले, कि हे पुरुषव्याघ्र भीम! तुम क्रोधित हुए हो, तो भी स्त्री को मत वधो। हे पाण्डव! शरीर से धर्म्म बड़ा है, सो धर्म्मको पालन करो। जब तुमने उस महाबली राक्षसको, जो हमको मारने आया था, मार डाला है, तब उसकी बहिन क्रोधकर हमारा क्या कर लेगी?

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर हिड़िम्बा कुन्ती युधिष्ठिरको प्रणामकर कुन्तीसे बोली, कि ऐ आर्य्ये! आप जानती हैं, कि स्त्रियोंको अनङ्गसे कितना दुःख होता है। ऐ शुभे! भीमसेनसे इस अनङ्गपीड़ाके द्वारा मैं सतायी जाती हूं। मैंने कालकी ओर ताककर इस गहिरे दुःखको सह लिया था, पर सुखका समय आपहुंचा है। ऐ शुभे! मैंने स्वधर्म्म, मित्र और स्वजनोंको तजकर आपके पुरुषश्रेष्ठ पुत्रको पतिके पद पर बैठाया है। ऐ सुन्दरी यशस्विनी! मैं सच कहती हूं, कि यदि यह वीर वा आप मेरी बातको न सुनेगी, तो मैं न जीऊंगी; अतएव आप चाहे मूढ़ा समझकर वा भक्ता अथवा कृपापात्र जानकर मुझपर कृपा दिखावें। ऐ महाभागे! आपके पुत्र, मेरे पति इन भीमसेनसे मुझको मिलावें, मैं इन देवरूपी पतिको लेकर जहां मन चाहे, जाऊं। आगे फिर इनको लाऊंगी ऐ शुभे! आप मेरा विश्वास करें। आपके मुझे स्मरण करने पर मैं उसी क्षण आकर आप लोगोंको मनमाने स्थानमें ले जाऊंगी। फिरभी आप कहीं शीघ्र जाना चाहें, तो आप लोगोंको उसीक्षण पीठपर चढ़ाकर लेती जाऊंगी। आप प्रसन्न होवें, कि भीमसेन मेरी भजना करें। विपतसे बचनेके लिये चाहे जिस किसी उपायसे क्यों न हो अपनी रक्षा करनी चाहिये, और उस एक, धर्म्मकी शरण ले करके सब कुछ दशा मान लेनी उचित है; धर्म्मशील जनोंके लिये विपतही धर्म्मकी रोकनेवाली है; सो जो जन विपत्कालमें भी धर्म्मको रक्षा करते है, वही धार्म्मिकोंमें उत्तम है। प्राण धरनेके लिये पुण्य है, पुण्यहीको पण्डितोंने प्राण देनेवाला कहा है; अतएव हर किसी मना किये हुए कर्म्मको भी करके प्राण बचाना चाहिये, उससे निन्दा नहीं होती। युधिष्ठिर बोले, कि ऐ सुन्दरी हिड़िम्बे! इसमें सन्देह नहीं, कि तुमने जो कहा, वह ठीक है, पर तुमने जैसा कहा, तुमको उसी सत्यमें आवद्ध रहना पड़ेगा। भद्रे! भीमसेनके नहाने आह्निक करलेने और कौतुकमङ्गल कर चुकनेपर सूर्य्यास्तके पूर्व्वतक तुम उनको भजना कर सकोगी। ऐ मनोवेगके अनुसार चलनेवाली! दिनको इस भीमसेनसे जहां मन चले विहार-कर नित्य रात्रिको उन्हें लाय देना।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि भीमसेन उस पर सम्मत होकर हिड़िम्बासे बोले, कि ऐ निशाचरि! सुनो, मैं सत्य करके तुमसे एक नियम करता हूं। ऐ शुभे सुन्दरि! जबतक

तुमको पुत्र नहीं होगा, तबतक तुम्हारे साथ मिलूंगा। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर राक्षसी हिडिम्बा वह मानकर भीमसेनको ले करके उसीक्षण आकाश मार्गको चली गयी। आगे मनके समान तेज चलनेवाली वह राक्षसी परम मनोहर रूप धारणकर सर्व्व आभूषणोंसे बनठनकर और मीठी बोली बोलती हुई समय समय पर नाना स्थानोंमें भीमसेनके साथ आनन्द लूटने लगी। कभी सुन्दर पहाड़की चोटी पर, कभी मृग पक्षियोंके शब्दसे गूंजते हुए मनोहर देवमन्दिरमें, कभी वन-दुर्गमें, कभी फूले वृक्षोंसे सुहावनी सानुमें कभी नीले तथा लाल पद्मसे सुशोभित सुन्दर सरोवरमें, कभी वैदुर्य्यमणि और नदीके वालू-पूरित द्वीपमें कभी सुन्दर वन और अमृत समान जलसे सुशोभित अच्छेतीर्थ पहाड़ी नदीमें, कभी फलवाले पौधे और लतासे सुहावने वनमें, कभी हिमाचलके कुञ्जमें कभी खिले कमलोंके समान सोहते हुए अमल जल भरे तालमें, कभी मणिसुवर्ण पूर्ण सागर खण्डमें, कभी मनोहर नगर और उपवनमें, कभी पहाड़ोंकी कन्दरामें, कभी गुह्यकोंकी वास-भूमिमें, कभी तपस्वियोंके स्थानमें, अथवा कभी सदासे फलफूलयुक्त मनमोहन मानस सरोवरमें क्रीड़ाकर पाण्डव भीमसेनको आनन्द देने लगी। आगे उस राक्षसीने भीमसेनसे भीमाकार बड़ा भारी अति वलवीर्य्यवन्त, बड़ा चापधारी, महान् सत्ववान्, बड़े बड़े हाथयुक्त अति वेगवान, बड़ी माया रचनेवाला, शत्रु-नाशी अमनुष्य पर मनुष्य वीर्य्यसे उत्पन्न एक पुत्र प्रसव किया। उस पुत्रकी आंखे बड़ी विकट, मुह बड़ा भारी, कान शङ्कुके समान, स्वर अति भयानक, होठोंका रंग तामेकी भांति, दान्त कटीले नाक लम्बी, छाती चौड़ी और पिण्डिका अर्थात पांवके डिम् ढटे और ऊंचे [illegible] वह समार सम्पूर्ण पिशाच और राक्षसोंमें बड़ा विक्रमी हुआ। हे राजन्! उस बलवन्त वीरपुत्रने बालक होने परभी यौवनको प्राप्त किया और उसकी मनुष्य लोकमें प्रचलित सम्पूर्ण अस्त्रोंमें अति उन्नति हुई। राक्षसी जिस दिन गर्भ धरती है उसी दिन प्रसव करती है और प्रसव किया हुआ बालकभी जन्म लेतेही, बहुरूपी होकर मनमाना रूप धर सकता है। कमर, गर्दन मुख, कान, और केश इन सब अङ्गोंके वेढब होने परभी अनेक प्रभायुक्त और बड़ा चापधारी हिडिम्बाकुमार जन्म लेतेही प्रणाम करनेको पिता माताके पांवों पर गिरा, उन्होंनेभी उसका नाम रख दिया। उस बालकको घटके ऐसे उत्कच अर्थात् खड़े केश थे, सो हिडिम्बाने उसको देखकर ऐसा कहा कि "इसके उत्कच घटकी भांति हैं।" इस लिये भीमसेनने उसका नाम "घटोत्कच" रखा। घटोत्कच स्वाधीन होने परभी पाण्डवोंका बड़ा प्रेमी था पाण्डवलोगभी उसका बड़ा आदर करते थे। आगे हिडिम्बाने नियम के अनुसार कामकर यह कहके कि "के पतिके रहनेका काल बीता" पाण्डवोंको सम्भाषण पूर्व्वक अपना रूप ले लिया। राक्षसोंमें श्रेष्ठ घटोत्कचभी पितरोंसे यह कह कर कि "काम आनेसे आपहुंचगा" सम्भाषण पूर्वक उत्तर और पधारा। महात्मा महेन्द्रने विरुद्ध शक्ति वर्ज्जित कर्णको एक पुरुष मारनेवाली शक्तिके लिये इस महारथी घटोत्कचको विरोधी योद्धा बनाया था।

हिडिम्बवध पर्व्वमें एकसौ छप्पन
अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर वे महारथी महात्मा वीर पाण्डवगण जटाधारी होकर मृगचर्म्म तथा वल्कल पहिन कर माता कुन्तीके साथ तपस्वीका वेष लेकर शीघ्रतासे इधर

करते हुए एक वनसे अन्यवनको, फिर उस वनसे वनान्तरमें गमन करने लगे। जानेके समय पथमें मत्स्य, त्रिगर्त, पाञ्चाल, और कीचक देशोंके भीतरके सुन्दर सुन्दर वनखण्ड और नाना प्रकारके ताजतालाव देखने लगे। वे कहीं कहीं शीघ्रताके लिये कुन्तीको उठा लेते थे; और कहीं कहीं सहज चालमें सुखसे चलकर पीछे शीघ्र चलते थे। एक समय वे सम्पूर्ण वेद वेदाङ्ग और नीतिशास्त्र पढ़ रहे थे. ऐसे समयमें पितामह व्यासजीको देखा। महात्मा कृष्णद्वैपायनको देखतेही शत्रुनाशी पाण्डवगण माताके साथ उनको प्रणाम कर दोनों हाथ जोड़के सामने खड़े हुए। व्यासजी बोले, कि हे राजगण! मैंने पहिलेही जाना है, कि धृतराष्ट्रके पुत्रोंने अधर्मसे तुमको निकाल बाहर किया है। इसी लिये तुम्हारे परम मङ्गलके निमित्त यहां आया हूं। तुम इस विषयमें दुःखी मत होओ, यह सब तुम्हारे सुखके लियेही होरहे हैं। इसमें सन्देह नहीं कि, धृतराष्ट्रके बेटे और तुम, दोनों पक्ष मेरे समान स्नेहके पात्र हो. पर जो पक्ष दीन और बालक होता है, मानवलोग उस परही अधिक स्नेह प्रगट करते हैं। इस हेतु तुम पर इस समय मेरा अधिक स्नेह हो गया है। सुनो, इसीसे मैं तुम्हारा हित कार्य्य करना चाहता हूं। वह सामने सुन्दर विनारोगका नगर दीख पड़ता है, वहां हमारे लौटनेकी बाट ताकते हुए छिपकर वसे रहना। वैशम्पायन बोले कि सत्यवतीसुत धर्म्मात्मा प्रभु व्यासजी पाण्डवोंको भली भांति ढाढ़स देकर संग लेकर उस दिखी जाती हुई एकचक्रानगरीको जाने लगे और फिर कुन्तीसेभी फिर समझाकर बोले कि ऐ बेटि! जीती रहो, तेरे पुत्र धर्म्मशील महात्मा पुरुषोत्तम धर्म्मराज युधिष्ठिर धर्म्मानुसार समीभरलको जय कर पृथ्वी भरके सब भूपोंका शासन करेंगे। इसमें सन्देह नहीं है, कि वह भीमसेन और अर्जुनके भुजबलसे सागरतक भूमण्डलको जीतकर भोग करेंगे। तुम्हारे महारथी पुत्र और माद्रीके कुमारगण सदा अपने राज्यमें प्रसन्न मन होकर सुखसे आनन्द करेंगे। यह राजसिंहगण धरतीमण्डलको जयकर राजसूय और अश्वमेधादि अनेक प्रचुर दक्षिणायुक्त यज्ञ करेंगे और भोग, ऐश्वर्य्य तथा सुखसे मित्रवर्गको कृपा दिखाकर परम आनन्दपूर्व्वक पितामहका राज्य भोगेंगे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि महर्षि द्वैपायन यह कहकर उनको एक ब्राह्मणके घरमें बसाकर युधिष्ठिरसे बोले, कि तुम यहां मेरी अपेक्षामें रहो, मैं फिर आऊंगा। तुम देश कालको समझकर काम करते रहोगे, तो परम हर्ष प्राप्त करोगे। हे नराधिप! उन सबोंने हाथ जोड़ जोड़ उनकी बात मान ली। अनन्तर भगवान् महर्षि व्यास जहांसे आये थे, वहांको पधारे।

एकसौ सतावन अध्यायमें हिड़िम्ब बधपर्व्व समाप्त।

जनमेजय बोले, कि हे द्विजश्रेष्ठ! उसके पीछे महारथी कुन्तीपुत्र पाण्डवोंने एकचक्रा नगरीमें रहकर क्या किया? वैशम्पायनजी बोले, कि महारथी कुन्तीपुत्र गण एकचक्रा नगरीमें ब्राह्मणके घर कुछ काल वसे। हे पृथ्वीनाथ! उनदिनों वे नित्य नाना सुन्दर प्रदेश, सरोवर और नदी देखते हुए भिक्षापूर्व्वक वहांके सब स्थानोंमें घूमते थे। क्रमश वे अपने गुणसे नगरवालोंके प्रिय हुए। वे दिनको जो भिक्षा पाते थे। कुन्ती उनको इस भिक्षासे मिली हुई वस्तुको अलग अलग बांट देतीथी तब वे भोजन करते थे। भिक्षाके जो कुछ मिल जाता था, उसका आधा

युधिष्ठिर, अर्जुन, नकुल, सहदेव, कुन्ती भोजन करते थे और, आधाभाग भीमसेन खा लेते थे। हे भरतश्रेष्ठ! महात्मा पाण्डवोंके इस प्रकार उस राज्यमें वसते हुए कुछ काल बीत गया। अनन्तर एकदिन युधिष्ठिर आदि सब भिक्षाको गये; दैववशसे भीमसेन भिक्षाको न जाकर कुन्तीके साथ घरमें रहे। अनन्तर कुन्तीने उस ब्राह्मणके घरसे अति कटीली रुलाई उठते सुना। हे राजन्! कुन्ती उनको अत्यन्त रोते और विलपते सुनकर अच्छे स्वभावके कारण चुपचाप बैठे नहीं रह सकी, उसका हृदय दुःखसे पूरित हुआ। तब कल्याणी कुन्ती भीमसेनसे करुणाभरी बातोंमें बोली, कि बेटा! हम लोग धृतराष्ट्रके पुत्रोंसे छिपकर इस ब्राह्मणसे सत्कार पाय और शोक-रहित होकर सुखसे वस रहे हैं; इससे मैं सदा इस सोचमें रहा करती हूं, कि जिस प्रकार दुर्व्वासा आदि महात्मालोग जिसके घरमें वसते हैं, उसका कोई हित-काम कर देते हैं, वैसेही मैं क्योंकर इस ब्राह्मणका पलटेमें उपकार करूं। बेटा। उपकार करनेसे जो उसके पलटेमें उपकार करता है, वही पुरुष है; और जो जितना उपकार करता है, पलटेमें उसका उतना अधिक उपकार करना चाहिये। मुझको निश्चय जान पड़ता है, कि इस ब्राह्मणके घरमें कोई दुःख आपड़ा होगा, उस दुःखके दूर करनेके लिये यदि इनकी कुछ सहायता कर सकें, तौभी पलटेसे उपकार करना होगा। भीमसेन बोले, कि इस ब्राह्मण पर जिस कारण दुःख आ खड़ा हुआ है, उससे आप ज्ञात होवें, आगे मैं जानलेने पर कठिन भी हो, तो उसके दूर करनेका प्रयत्न करूंगा।

वैशम्पायनजी बोले, कि हे पृथ्वीनाथ! वे इस प्रकार बात चीत कर रहे थे, कि ऐसे समयमें फिर उन ब्राह्मण और ब्राह्मणीकी आतर रुलाईकी ध्वनि सुन पड़ी। अनन्तर कुन्तीने इस प्रकार वेगसे कि कामधेनु बछड़े बछड़ेके बंधे रहनेसे जिस प्रकार उसके पास जाती है, उस महात्मा ब्राह्मणके अन्तःपुरमें जाकर देखा कि ब्राह्मण महाराज मलिन मुख किये बैठे हैं और स्त्री, पुत्र तथा कन्याके सहित कहते हैं, कि यह संसार केवल दुःखकी जड़, अन्याधीन और अति हानिकारी है; अतएव ऐसे व्यर्थ जीवन पर धिक्कार है। देखो जीने होसे परम दुःख और परम पीड़ा भोगनी पड़ती है, क्योंकि जीते हुए मनुष्यको निश्चयही दुःख घेर लेता है, एकही आत्मा धर्म, अर्थ और काम इन तीनोंको एक दूसरेसे बिना विरोध किये सेवा नहीं कर सकता है, सो इनके बुरा प्रयोग होने हीसे अनन्त दुःख आ गिरता है। कोई कोई पण्डित कहते हैं कि मोक्ष ही श्रेष्ठ है; पर हम संसारके प्रेमी हैं, हमसे वह किसी प्रकार होनेकी सम्भावना नहीं है; फिर अर्थ पानेके विषयमें भी सब प्रकारसे दुःख भोगना पड़ता है, देखो उपार्जनकी चाह बड़ी दुःखदायी होती है और उपार्जन हुआ भी तो औरभी दुःख भोगना पड़ता है, क्योंकि प्राप्त किये हुए धन पर स्नेह बढ़ जाता है, सो यदि किसी प्रकार वह अर्थ नष्ट हुआ, तो पूर्व्वोक्त दुःखसेभी अधिक दुःख घेर लेता है। ऐसा कोई उपायभी नहीं दीखता, कि इस विपतसे बचें; अथवा स्त्री पुत्र लेकर कहीं भाग जावें। ब्राह्मणि! स्मरण करके देखो, कि जहां जहां मङ्गल होना था, मैं वहां जानेका प्रयत्न किया करता था, उस समय तुम मेरी बात पर ध्यान नहीं धरती थी। वह कुबुद्धि तुम्हारी ही है, कि जब कि मैं वार वार अन्य स्थानमें जानेको चाहते परमें ... तुमने कहा था, कि "यह मेरी पवित्र ... है, यहां मैं जन्म लेकर बुढ़िया हो... इसको त्याग नहीं सकती" प्यारी! ... पिता, माता और पहिलेके बान्धवोंको ...

पाने पर बहुत दिन बीत गये थे, तिस परभी क्या तुमने यहां बसना चाहा था? तुमने जिस प्रकार बन्धुकी कामनासे मेरी बात पर ध्यान नहीं दिया था, वैसेही अब तुम्हारे बन्धु-नाशका समय आ पहुंचा है; इससे मुझको बड़ा दुःख हो रहा है, यहां तक कि इस समय मेराही नाश उपस्थित हुआ है; क्योंकि मैं स्वयं जीता रहकर किसी प्रकार बन्धुको त्याग नहीं सकूंगा। तुम मेरी सहधर्म्मचारिणी, नित्य माता समान स्नेहकरनेवाली गुणवती और परमागति हुई हो। देवोंने तुम्हें मेरी मित्र सदृश निश्चय कर दिया है। पिता माताने तुमको गार्हस्थ्य धर्म्मभागिनी बनाया है, और तुम कुलीना, शीलवती, सन्तान की जननी साध्वी, श्रमकारिणी और सदा व्रत-शीला भार्य्या हो, पहिले वरणपूर्व्वक यथा-विधि तुम्हारा पाणिग्रहण कर इस समय अपने जीवनकी रक्षाके हेतु क्योंकर त्याग दूंगा? फिर जिस बालकको आज तक दाढ़ी मूछ नहीं निकली है, ऐसे अल्प अवस्थाके पुत्रहीको वा क्योंकर मैं स्वयं त्याग दे सकता हूं? महात्मा विधाताने सुयोग्यभर्त्ताके हाथमें सौंपनेके लिये जिस कन्याको न्यायपूर्व्वक मेरे पास रख दिया है, जिस कन्यासे मैं पितरोंके साथ दौहित्रज-लोकके पानेकी आशा रखता हूं, उस बालिकाको जन्मा कर क्योंकर स्वयं त्याग देनेको उद्यत होऊं। कोई कहा करते हैं, कि पिताका पुत्रही पर अधिक स्नेह होता है; और कोई कोई कहते हैं कि कन्याही पर अधिक स्नेह होता है; पर मेरे लिये दोनो समान हैं। जिससे सुगति मिलती है, जिससे वंशकी रक्षा होती है, और जिससे नित्य सुख मिलता है, उस पापकी कूतसे रहित बालिकाको क्योंकर त्याग देनेका साहस करूं? मैं यदि अपने जीवनकी बलि चढ़ाके परलोकको सिधारूं, तौभी दुःखी होऊंगा; क्योंकि मेरे इनको छोड़ जानेसे यह कभी नहीं जी सकेंगे। इसमेंसे किसी एककोभी त्याग देना बड़ा अनुचित और निठुर काम होगा; और अपना जीवन त्यागनेसेभी यह मेरे बिना जीवन देंगे, अतएव मैं गहरी विपतमें पड़ा हूं। हाय! इस विपतसे बचनेका उपाय नहीं दीखता। अहो! मुझ-पर धिक्कार है। आज परिवार-सहित मेरी कोई गति नहीं है, सो परिवार-सहित जीवन छोड़नाही मेरे लिये मङ्गलदायी है; मेरा जीवित रहना कभी उचित नहीं है।

बकबधपर्व्वमें एकसौ अट्ठावन
अध्याय समाप्त।

ब्राह्मणी बोली, कि हे ब्राह्मण! साधा-रण मनुष्यकी भांति शोक करना कदापि आपको नहीं सोहता है, क्योंकि आप विद्वान हैं। अब दुःख करनेका समय नहीं है। भूमण्डल परके सब लोगोंको अवश्यही मरना पड़ेगा, अतएव अवश्य होनेवाले विषयका दुःख करना उचित नहीं है। लोग अपने सुखके लियेही स्त्री, पुत्र, कन्या, इन सबोंकी प्रार्थना करते हैं, अतएव अपनी सुबुद्धिसे मनः-पीड़ा त्याग देवें, मैं स्वयं वहां जाऊंगी। संसारमें नारीके लिये सनातन धर्म्म यही है, कि वह प्राण दे करकेभी पतिका हित करेगी, अतएव उस कर्म्मके किये जाने पर वह इस लोकमें यशदेनेवाला और परलोकमें अक्षय तथा आपकाभी सुखदायी होगा। हे द्विज-श्रेष्ठ! मैं जो कहती हूं, वह श्रेष्ठ धर्म्म है, ऐसा करनेसे आपके लियेभी प्रचुर धर्म्म और अर्थका कार्य्य होगा। देखिये जिस अभिप्रायसे स्त्रीकी प्रार्थना की जाती है, वह मुझसे आपको सिद्ध होगया है, मैं आपसे पुत्र और कन्या प्रसव कर उऋण हो चुकी हूं। आप इस पुत्र और कन्याके पालने पोसने और देखने

भालनेको समर्थ हैं, मुझसे वह भली प्रकार सिद्ध होना कदापि सम्भव नहीं है। आप मेरे प्राण और धन सबके ईश्वर हैं, आपके बिना मैं क्योंकर जीऊंगी? और आपके न रहनेसे क्योंकर दो शिशु सन्तान जी सकेंगी? आपके विना मैं विधवा और अनाथ होकर जीती रहनेसे भी क्योंकर सुपथमें रहकर इन दो बच्चोंको जिला सकूंगी? आपके साथ वैवाहिक सम्बन्धके अयोग्य कलङ्कित और गर्व्वित जन यदि आपकी इस कन्याको प्रार्थना करें, तो मैं क्योंकर उसकी रक्षा कर सकूंगी? जिस प्रकार पक्षी मिट्टीपर पड़ी हुई मछलीको चाहते हैं, वैसेही मनुष्यगण पतिहीना रमणीकी कामना करते है। हे द्विजश्रेष्ठ! मेरे पतिहीना होनेसे दुरात्मा लोग मेरी कामना कर मेरे चित्तको टाल सकते हैं, ऐसा होनेसे मैं क्योंकर साधुओंके अभीष्ट पथमें रह सकंगी? और क्योंकर आपके वंशकी एकही कन्या इस निर्दोषी बालाको पितृ पितामहोंके पथमें नियोग कर सकूंगी और क्योंकर फिर उस पूरे अभावके कालमें इस पितृहीन अनाथ बालकको आप जैसे धर्म्मज्ञ हैं, उसके योग्य वाञ्छित विद्या पढ़ा सकूंगी? अयोग्य जन, मुझको हरा कर, शूद्रोंके वेद सुनानेकी प्रार्थनाके सदृश इस अनाथ बालाको मांगेंगे. तिस पर आपके गुणोंसे सुहावनी इस कन्याको यदि मैं अयोग्य वरको न देना चाहूं, तो कौआ जैसे यज्ञकी वस्तु लूट खाता है, वैसेही वे लूट कर इसको बलपूर्व्वक हर ले जायेंगे। हे ब्रह्मन्! तब मैं लोकोंमें अनादर की पात्री होऊंगी. और नहीं कह सकती कि मेरी कैसी दुर्गति होगी; ऐसी दशामें आपके पुत्रको आपके असदृश होते और आपकी कन्याको अयोग्य जनके वशमें जाते देखकर इसमें सन्देह नहीं है कि मैं प्राण छोड़ूंगी।

कुछभी सन्देह नहीं कि आपके और मेरे बिना यह दो बच्चे बिना जलकी मछलीकी भांति प्राण छोड़ेंगे। अतएव समझ लिया कि आपके न रहनेसे मैं और दो बच्चे इन तीनों होके जीवन निश्चय नष्ट होंगे, सो मेरी समझमें मुझको त्याग देनाही आपको उचित है। हे ब्रह्मन्! धर्म्म जाननेवाले लोग कहा करते हैं, कि पुत्रवाली स्त्रियां यदि पतिके पहिले परलोक को सिधारें तो वह उनके लिये बड़ा भारी सौभाग्य है। मैं आपके हितके लिये पुत्र, कन्या, बान्धव और जीवन सब त्यागनेको उद्यत हुई हूं। स्त्रियोंके लिये नाना यज्ञ, तप, नियम और दान इन सब कामोंसे सदा पतिका प्रिय और हित करनाही अधिक फल दायी है; सो मैंने जिसका करना ठान लिया है, वही इष्ट परमधर्म्म और आपके तथा आपके वंशका मङ्गल करनेवाला है, पण्डितोंका मत यह है, कि स्त्री, पुत्र, प्यारे मित्र और अर्थ चाहे जितनी इष्ट वस्तु क्यों न हों, वह सब विपतसे बचनेके लिये रखी जाती है, और विपतसे बचनेके लिये धनकी रखना चाहिये; धनके द्वारा स्त्रीको बचाना और आत्माको चाहे धनके द्वारा, हो वा स्त्रीके द्वारा हो, सदा रक्षा करनी चाहिये। पण्डितोंने निश्चय किया है, कि दृष्ट और अदृष्ट दोनों फलोंहीके लिये स्त्री, पुत्र, धन और गृह यह सब करना चाहिये एक ओर सम्पूर्ण कुलको और दूसरी ओर आत्माको रखकर तौल करनेसे, सम्पूर्ण कुलभी आत्माके समान नहीं होते, अतएव हे आर्य्य! आप मुझसे काम पूरा कर लीजिये। बुद्धिके अनुसार अपनी रक्षा कीजिये—मुझको जानेकी आज्ञा दीजिये, आप इन दो सन्तानों का पालन करना। धर्म्म जाननेवालोंने कहा है, कि स्त्रियोंका वध नहीं करना चाहिये और राक्षस लोग धर्म्मके जानकार होते हैं, सो वह राक्षस मुझको न मारकर त्यागभी दे सकता है।

हे धर्मज्ञ! अब कि जहां पुरुषका वध निश्चय है और स्त्रीके वधके विषयमें सन्देह है, तब मुझको ही भेजना योग्य है। मैंने बहुत सुख कर लिया है, मेरे बहुत कुछ प्रियकार्य्य हो गये हैं, मैंने बहुत धर्मार्ज्जन किया है और आपसे प्यारी सन्तानभी पा चुकी हूं, अब जीवन छोड़नेमें मुझे दुःख नहीं है। मेरी सन्तान हो गई हैं, मैं बुढ़ाय गयी हूं, और आपके प्रिय कार्य्य करनेमें सदासे मेरी चेष्टा है, इन सबोंकी आलोचना करकेही ऐसा निश्चय कर लिया है। आप मुझको त्याग देकर दूसरी स्त्री पा सकेंगे; ऐसा करनेसे आपका धर्म्मभी फिर प्रतिष्ठित होगा; हे मङ्गलमय! पुरुषको अधिक स्त्री कर लेनेसेभी अधर्म्म नहीं होता। पर स्त्रीके पूर्व्वपतिको छोड़कर अन्य पुरुषके वशमें जानेसे बड़ा अधर्म्म होता है। आप इन सबोंको भलीप्रकार आलोचना करके अपना नाश करना अनुचित मानकर अपने कुल, इन दो बच्चे और आत्माकी रक्षा करें। वैशम्पायनजी बोले, कि हे भारत! वह ब्राह्मण ब्राह्मणीकी यह बातें सुनकर उसको गले लगाकरके उसके साथ आर्त्त दुःखी चित्तसे आंसू बहाने लगा।

वकवधपर्व्वमें एकसौ उनसठ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर कन्या उन दुःखी पितामाताकी बात आर्त्तपान्ति सुनकर खेदयुक्त चित्तसे बोली, कि आप क्यों अति दुःखी होकर अनाथके समान रो रहे हो? सम्प्रति मेरी बात सुनकर जो उचित हो, करें? इसमें सन्देह नहीं है, कि आप धर्म्मके अनुसार मुझको कभी न कभी अवश्य त्याग देंगे सो मेरे समान अवश्य छोड़ी जानेवालीको त्याग देकर सबकी रक्षा करें। "सन्तानसे तरेंगे" ऐसा समझ करके ही लोग सन्तान की कामना करते हैं; अतएव आप इस कन्या रूपी नावसे वर्त्तमान विपतके समुद्रको पार करें। आत्मजसे लोग इस लोक और परलोक सर्व्वत्र विपतसे उद्धार होजाते हैं, इसलिये पण्डित लोग उसको पुत्र कहा करते हैं, पितृलोकोंके उद्धारके निमित्त ही मुझसे नाती की आशा करते हैं, पर मैं नाती की अपेक्षा न करके स्वयं पिताका जीवन बचा कर उनका उद्धार करूंगी। हे पिता! यदि आप परलोकको सिधारें, तो इसमें सन्देह नहीं है, कि मेरा शिशु भाई स्वल्प कालहीके बीचमें कालके वशमें होजायगा, आपके और भाईके न रहनेसे एक बारही पितरोंका पिण्डा लोप होकर बड़ा अनिष्ट होगा; और मैं तब पिता और भ्राताके बिना बड़ी दुःखी हूंगी। मैं तब दुःख पाकर अनुचित मृत्युके वशमें हो जाऊंगी। आपके स्वस्थ होकर इस विपतसे एकवारही मुक्त होनेसे माता, शिशु भ्राता, वंश और सब रक्षित होंगे। विचारिये, कि पुत्र अपना स्वरूप, स्त्री मित्रका स्वरूप और कन्या कष्टका स्वरूप है। सो कष्टके स्वरूप कन्याके द्वारा अपनी रक्षा करें, मुझको धर्म्ममें नियुक्त कर देवें। हे पिता! मैं बालिका हूं, सो आपके बिना अनाथ और दीन होकर सदा जहां तहां जाना पड़ेगा, अतएव मैं इस कठिन कामको कर कुलकी रक्षा पूर्व्वक फल प्राप्त करूंगी। हे द्विजश्रेष्ठ! यदि आप मुझे छोड़कर उस राक्षसके आगे जायं, तो मैं बड़ी कातर हूंगी, अतएव मुझ पर कृपादृष्टि करें। हे श्रेष्ठ! मुझको, धर्म्म और वंशको बचानेके लिये अपनी रक्षा करें। एक समय मुझको तो त्यागनाही पड़ेगा, फिर अबही त्याग देनेमें क्या हानि है? अवश्य किये जानेवाले कामके लिये काल गंवाना उचित नहीं है। इससे अधिक दुःखकी बात क्या होगी,

आपके स्वर्गको सिधारने पर हमको सदा अन्न मांग मांग कर कुत्तोंकी नाईं फिरना पड़ेगा, और आपके बान्धवोंके समेत इस दुःखसे मुक्त और स्वस्थ होनेसे अमर लोकमें सुखसे वस सकूंगी। यह भी हमारा सुना हुआ है, कि ऐसे अनुचित काममें कन्या देनेसे परभी पितरोंको जल देनेसे वे हित करनेवाले बने रहते हैं; अतएव आप इस काममें मुझको सौंप देकर स्वय जीवित रहके यदि पितरोंको जल दें, तो वे हित करनेवाले होंगे।

उस कन्याकी इस प्रकार नाना दुःखभरी बातें सुनकर पिता, माता और कन्या तीनों रोने लगे। अनन्तर बालक पुत्र उन सबोंको रोते देखकर प्रसन्न नेत्र और हंसते हुए सुखसे मीठी और अस्पष्ट बातोंमें कहने लगा, कि बाबा! मत रोओ। माता! मत रो। बहिन! मत रो। - यह कहता हुआ हरेकके पास एक एक बार जाने लगा। आगे एक तृण उठाकर आनन्दसे फिर बोला, कि इससे मैं उस राक्षस को मारूंगा। उसके पिता, माता और बहिन यद्यपि बड़े दुःखमें कातर थीं, तौभी उस समय उस बालककी अस्पष्ट बात सुनकर उनको बड़ा हर्ष हुआ। अनन्तर कुन्ती यह समझकर, कि "यह अभिप्राय प्रकाश करनेका समय है" उनके निकट जापहुंची। अनन्तर मरे हुओंको अमृतसे जिलाने की नाईं उनसे बोलने लगी।

बक बधपर्व्वमें एकसौ साठ अध्याय समाप्त।

कुन्ती बोली, मैं जाना चाहती हूं कि ऐसे दुःखका कारण क्या है? क्योंकि यदि उससे पार पानेका उपाय बन पड़े, तो करूंगी। ब्राह्मण बोले, कि ऐ तपोधने! तुम जो कहती हो, वह साधुओंके योग्यही है; पर यह दुःख करना मनुष्यकी शक्तिके बाहर है। इस नगरके निकट बक नामक एक महाबली राक्षस रहता है; वह पुरुषादक इस नगर और प्रदेश का अधीश है, मनुष्य मांससे पुष्ट, बली और दुष्टबुद्धि वह असुरराज सदा इस देशकी रक्षा करता है। इस देशके राक्षसी बलसे रक्षित होनेके कारण अन्य देश वा किसी प्राणीसे हमारे भयकी सम्भावना नहीं है। एक गाड़ी अन्न और दो भैंसे और वह मनुष्य जो उन्हें ले जाता है, यह सब उस राक्षसके भोजनके लिये वेतनके स्वरूपमें निर्दिष्ट हैं, इस देश का हरेक गृहस्थ अपनी अपनी पारीमें एक एक दिनके हिसाबसे नित्य वह भोजन पहुंचाता है। बहुत वर्षोंके पीछे एक एक गृहस्थके लिये यह कठोर पारी आजाती है। यदि कभी कोई इससे बचनेकी चेष्टा करता है, तो वह राक्षस स्त्री पुत्रोंके साथ उसको मार कर खाजाता है। इस स्थलमें वेत्रकीय गृह नामक स्थानमें एक राजा है; वह बुद्धिहीन भूप नीतिका आश्रय नहीं करता; यद्यपि राक्षसके बधके लिये वह स्वयं असमर्थ है, पर यत्नसे ऐसा कोई उपाय नहीं ढूंढ़ता, कि इन सब लोगोंके लिये सदा कुशल हो जाय। हमलोग जब उस दुर्ब्बल बुरे राजाके भरोसे सदा भयभीत होकरकेभी उसके अधिकारमें रहते हैं, तब अवश्य ही इस दुःखके भोगनेके योग्य हैं। देखो, ब्राह्मणको कोई अपनी भूमिमें बसा नहीं सकता, क्योंकि वे किसीकी इच्छासे नहीं चलते। वे अपने गुणसे कामचारी पक्षीके सदृश मनमाना वास करते हैं, पर मैंने उसका विपरीत काम किया है और कहाभी है, कि "पहिले भूप, तब स्त्री और पीछे धनार्ज्जन करना, इन तीन विषयोंके सञ्चित होने पर ज्ञाति और पुत्रोंका उद्धार होता है।" इन तीन विषयोंके उपार्ज्जनके विषयमें भी मैंने बड़ा विपरीत काम किया है, सो अब इस विपत्तके समुद्रमें

गिरकर बड़ा दुःखी हो रहा हूं। आज हमारी कुलनाशी वह पारी आयी है—राक्षसके भोजनके लिये वेतनके स्वरूपमें एक मनुष्य मुझको देना पड़ेगा। पर मेरे पास इतना धन नहीं है, कि किसी स्थानसे एक मनुष्यको मोल लेकर दूं, और किसी स्वजनकोभी नहीं दे सकूंगा, सो ऐसा कोई उपाय नहीं दीखता, कि जिससे उस राक्षसके हाथसे बच सकूं; इस लिये अति अपार दुःखके समुद्रमें डूबा हूं। अतएव समझता हूं, कि मैं सब बान्धवोंके साथ उस राक्षसके पास जाऊंगा, कि जिससे वह नीचाशय राक्षस एक साथ हम सबोंको खा ले।

बकवधपर्व्वमें एकसौ एकसठ अध्याय समाप्त।

कुन्ती बोली, कि हे ब्राह्मण! तुम इस भयसे दुःख मत मानो, मैंने उस राक्षससे बचनेका उपाय निश्चय किया है। तुम्हारा एक शिशु पुत्र और एकही व्रतशीला कन्या है, उनमेंसे किसीका, तुम्हारी स्त्रीका अथवा स्वयं तुम्हारा जाना मेरी समझमें उचित नहीं है। मेरे पांच पुत्र हैं, उनमेंसे एक तुम्हारे उपकारके लिये उस पापी राक्षसके यहां जायगा।

ब्राह्मण बोले, कि मैं अपना जीवन बचानेके लिये कभी ऐसा काम नहीं कर सकूंगा, मैं अपने लिये ब्राह्मण और अतिथिके प्राण लेनेका साहस नहीं कर सकता, जो नीच बंशसे उत्पन्न और अधार्म्मिक हैं, वेभी ऐसे काममें हाथ नहीं डालते हैं। ब्राह्मणके उपकारके लिये जो यह विधि बनी है, कि आत्मजको त्याग देना, मुझको वही मङ्गलदायी समझना चाहिये, और मैं वैसाही करना चाहता हूं। ब्राह्मणवध और आत्महत्या इन दोनोंमें आत्महत्याही मङ्गल-युक्त है। क्योंकि, ब्रह्म-वध बड़ा पाप है, उसके करनेसे फिर बचनेका उपाय नहीं रह जाता। मैं समझता हूं, कि अनिच्छासे ब्रह्मवध करनेसे अनिच्छासे आत्महत्या करना मेरे लिये अच्छा है और मैं स्वयं कुछ आत्महत्यामें हाथ नहीं डाल रहा हूं, अन्यजन मुझको मारेगा, इसका पाप नहीं लग सकता है, जान नहीं पड़ता, कि बुद्धिसे अथवा छलपूर्व्वक ब्रह्मवध करके सहजमें पार पा सकूंगा। पण्डितोंने कहा है, कि अतिथि वा शरण लिये हुएको त्याग देना और मांगनेवाले को मारडालना अति निठुर अनुचित कार्य्य है। और आपद्धर्म्मके जानकार पहिलेके महात्माओंने कहा है, कि निन्दित और निठुर कर्म्म कभी मत करना, अतएव आज मैं स्त्रीके साथ प्राण छोड़ूंगा, मेरे लिये यही अच्छा है; मैं किसी प्रकारसे ब्राह्मण-हत्या की सम्मति नहीं दे सकता। कुन्ती बोली, कि हे ब्राह्मण! मेरा भी यह निश्चय किया हुआ है, कि ब्राह्मणोंकी अवश्य रक्षा करनी पड़ेगी। सौ पुत्र भी होवें, तौभी पुत्र कभी मेरे अनादरकी सामग्री नहीं हुते। मेरे पुत्र वीर्य्यवन्त, तेजस्वी और मन्त्रमें सिद्ध हैं, सो वह राक्षस उनको नष्ट करनेमें समर्थ नहीं होगा। मुझको निश्चय जान पड़ता है, कि मेरा पुत्र राक्षसको वह सब खानेकी वस्तु पहुंचाभी देगा और अपनी रक्षाभी करेगा। मैंने पहिले देखा है, कि बड़े बड़े बली बहुत राक्षस आकर मेरे पुत्रोंसे यमराजके घर भेजे गये। हे ब्राह्मण! यह बात तुम किसीसे किसी प्रकार प्रकाश मत करना, प्रकाश होनेसे विद्यार्थी लोग बड़ी इच्छासे इस विद्याके सीखनेके लिये मेरे पुत्रोंको सदा दिक करेंगे मेरे पुत्र गुरुकी आज्ञा बिना अन्य किसीको जो विद्या देंगे, उस विद्यासे फिर काम नहीं कर सकेंगे। ब्राह्मणने कुन्तीकी यह बात सुनकर स्त्रीके साथ अति प्रसन्न होकर अमृत सदृश उस बातको आदर पूर्व्वक मान लिया। आगे कुन्ती और ब्राह्मणने एकत्र होकर

पवननन्दन भीमको वह कठोर कार्य्य करनेको कहा। भीमसेननेभी उसमें सम्मति देकर प्रत्युत्तर किया था।

बकबधपर्व्वमें एकसौ बासठ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भारत! भीमसेनके उस कामके करने की प्रतिज्ञा करने पर सम्पूर्ण पाण्डव भिक्षाकी वस्तु लेकर गृहको लौट आये। अनन्तर युधिष्ठिरने आकार द्वारा वह सब व्यौरा जानकर निरालेमें बैठकर मातासे पूछा, कि माता! भीम-पराक्रमी भीम किस कामको जा रहा है? क्या आपने इसमें आज्ञा दी है? अथवा भीमने स्वयंही इसके करनेकी इच्छा की है? कुन्ती बोली, कि यह शत्रुनाशी वृकोदर मेरीही बातसे ब्राह्मणके उपकार और इस नगरकी मुक्ति करनेके लिये यह भारी काम पूरा करेगा।

युधिष्ठिर बोले, कि आपने यह कैसा कठिन भयानक साहस किया है? साधुगण कभी पुत्र त्यागनेकी प्रसंसा नहीं करते। और दूसरेके पुत्र बचानेके लिये अपना पुत्र त्यागना क्योंकर उचित हो सकता है? आज आपने पुत्र तजकर लोकाचारके विपरीत और वेदके विरुद्ध कर्म किया है। जिनके भुजबलके आसरे में हम सुखसे सो रहे हैं; जिनके भुजबलके भरोसे हम नीचाशय दुर्य्योधनादिसे लूट लिये हुए राज्यको लौटा पानेकी आशामें हैं, जिसके अपरिमित वीर्य्यको स्मरणकर दुर्य्योधन और शकुनिको दुखके मारे रात्रिको निद्रा नहीं आती; जिस वीरके भुजवीर्य्यसे हम जतुगृहसे और दूसरी विपदोंसे पार पागये हैं और जिससे पुरोचन यमराजके घर भेजा गया; यहां तक कि जिसके भुजवीर्य्यकी आशासे हमको ऐसा विश्वास है, कि मानो हम धृतराष्ट्रके पुत्रोंको मारकर इस भरी हुई धरतीको पा चुके हैं; आपने कैसी बुद्धिसे उस भीमसेनको त्याग देना निश्चय किया है? क्या आपने अपना ज्ञान खो दिया है? क्या दुःखसे आपकी बुद्धि जाती रही है? कुन्ती बोली कि हे युधिष्ठिर! तुम वृकोदरके लिये दुःख मत करो; मैंने बुद्धिकी अल्पतासे इस काममें हाथ नहीं डाला है। बेटा! उस काममें पलटेमें उपकार करनेके लिये, कि ब्राह्मणके घरमें धृतराष्ट्रके पुत्रोंके न जाननेमें सत्कारके साथ हम बिना कष्ट बस रहे हैं, मैंने इस कामका करना निश्चय कर लिया है, क्योंकि उपकार करनेसे जो लोग पलटेमें उपकार करते हैं, वास्तवमें वही पुरुष हैं, विशेष जो जितना उपकार करता है, पलटेमें उसका उससे अधिक उपकार करना ही उचित है। जतुगृहमें भीमसेनका जितना विक्रम देखा है, और उसने जैसे हिडिम्बको मारडाला है, उससे मुझको विश्वास हो गया है, कि उसके दोनों हाथोंका बल दश सहस्र हाथीके समान है। जिस वृकोदरने हाथीकी भांति तुमको वारणावत नगरसे निकाला था, उस भीमके समान बली इस धरती भरमें दीख नहीं पड़ता। जान पड़ता है, कि मेरा भीम योद्धाओंमें श्रेष्ठ बज्रधरनेवाले इन्द्रकोभी युद्धमें परास्त कर सकता है। हे पाण्डवश्रेष्ठ! भीमसेन जन्म लेतेही मेरी गोदसे पहाड़ पर गिर गया था, उससे उसके शरीरकी रगड़से पत्थरके टुकड़े पिसकर चूर चूर होगये थे। इस कारणसेभी मैं भीमका बल जानती हूं। इस लिये ब्राह्मणके शत्रुको नष्ट करनेका संकल्प किया है। मैंने लोभ, अज्ञानता या मोहसे इस काममें हाथ नहीं डाला है। बुद्धिसेही इस धर्म्मकार्य्यमें प्रवृत्त हुई हूं। हे युधिष्ठिर! इस कार्य्यसे दो प्रयोजन सिद्ध होंगे, एक यह है, कि यहां बसनेमें पलटेमें उपकार और दूसरा महाधर्म्म। मैं निश्चय

जानता हूं, कि जो क्षत्रिय क्षत्रियका प्राण बचाते हैं, वह इस लोक और परलोकमें अत्यन्त यश प्राप्त करते हैं; इसमें सन्देह नहीं है, कि क्षत्रिय होकर वैश्यकी सहायता करे, तो भूम ण्डलमें सर्व्वत्र प्रजा उसकी प्रेमी होती है। क्षत्रिय शूद्र वा शरण लिये हुए जनको विपतसे बचावे, तो वह ऐश्वर्य्ययुक्त राजोंसे पूजे जानेवाले वंशमें जन्म लेता है। हे पौरवनन्दन! पूर्व्वकालमें अति तेज बुद्धिमान भगवान् व्यासदेवने मुझको यह सब उपदेश किये थे, इसी लिये मैंने इस कामको करनेकी इच्छा की है।

बकवधपर्व्वमें एकसौ तिरसठ अध्याय समाप्त।

माताकी यह बातें सुनकर युधिष्ठिर बोले, कि ऐ माता! आपने इस विपतमें पड़े हुए ब्राह्मण पर कृपा दिखाकर बुद्धिसे जो यह कार्य्य किया है, वह बहुतही अच्छा हुआ है। इसीमें, कि आप ब्राह्मण पर दयावती हुई हैं इसमें सन्देह नहीं है, कि भीमसेन मनुष्य-भोजी राक्षसका नाश कर लौट आवेगा। आप यत्न पूर्व्वक ब्राह्मणसे कहकर यह स्वीकार करा लेना, कि नगरवाले यह बात न जान सकें। वैशम्पायनजी बोले, कि रात्रि बीतने पर भीमसेनने भोजनको सामग्री लेकर वहांकी यात्रा की, जहां वह राक्षस था। अनन्तर उस राक्षसके वसनेके घरमें घुसकर वह सब भोजनकी सामग्री आपही खाते हुए उसको नाम लेकर पुकारने लगे, इससे बड़ा भारी और अति तेजस्वी वह राक्षस भीमकी बातसे क्रोधित होकर भूमि विदारण करता हुआ वहां आगया, जहां भीम बैठे थे। उस राक्षसकी आंखें, दाढी और केश लाल, मुंह कान तक फैला हुआ और कान शङ्कुके समान थे। ऐसा विकट भयानक वह राक्षस भीमसेनको अन्न खाते देखकर दांतोंसे ओठोंको काटता हुआ तीन रेखाओंके साथ भौंहको ऊपर चढ़ाय दोनों आंखें फैलाके क्रोधसे बोला, कि किस पर यह कुबुद्धि चढ़ी है, कि यमराजके घरको जानेको मेरे भोजनके लिये मंगाया हुआ अन्न मेरे सामनेही खा रहा है? हे भारत! भीमसेन यह बात सुनने परभी हंसतेही हंसते राक्षसका अनादर कर मुंहको फेर कर भोजन करने लगे, उसकी ओर आंख तक नहीं फेरी, तब वह मासभोजी भयानक शब्दसे दोनों हाथ उठाकर भीमसेनको मार डालनेके लिये दौड़ा। शत्रुनाशी वृकोदर तब राक्षसको अनादरसे एक बार देखकर भोजन करने लगे। राक्षसने तब क्रोधसे जलकर भीमसेनके पीछे खड़ा होके दोनों मुट्ठियोंसे पीठ पर मारा। भीमसेनने उस बली राक्षसके दोनो भुजोंकी चोटसे बहुत घायल होने परभी उस पर आंखें नहीं फेरी, एकमनसे भोजनमें प्रवृत्त रहे। आगे महाबली राक्षस अति क्रोधसे अन्धेके समान होकर मारनेके लिये वृक्ष उखाड़कर फिर उनपर दौड़ा। उसके अनन्तर महाबली पुरुषेन्द्र भीमसेन धीरे धीरे वह अन्न खा लेकर मुंह धो करके प्रसन्न चित्तसे युद्धके लिये खड़े होगये। क्रोधके वशमें होकर राक्षसके भीमसेन पर उस वृक्षको फेंकनेसे वीर्य्यवन्त भीमसेनने हंस करके उसी क्षण बांये हाथसे उसको थाम लिया। यह देखकर बलवन्त राक्षस भांति भांतिके वृक्ष उखाड़ कर भीम पर फेंकने लगा और भीम भी वैसेही वृक्ष उठा कर उस पर फेंकने लगे। महाराज! तब मनुष्यके साथ उस राक्षसराजका ऐसा भयानक वृक्षयुद्ध होने लगा, कि उससे वहांके वृक्ष नष्ट होने लगे। आगे मांसभोजी बकने अपना नाम कह कह कर कूदता हुआ महाबली भीमसेनको दोनों हाथोंसे पकड़ लिया। तब महाभुज बलवन्त भीमसेन उस महावेगवान फुर्त्तीवाले राक्षसको पूरा बल प्रगट करते देखकर बलसे उसे खैंचने

लगे। राक्षस भीमसे खींचे जाने परभी उनको बलसे खींचने लगा, इससे मनुष्यभोजीही बहुत थकने लगा। उन दोनोंके वेगसे धरती डोली और निकटके बड़े बड़े वृक्ष टूटे। अनन्तर वृकोदर राक्षसको बल खोते देखकर घुटनोंसे धरती पर पीस पीस कर मारने लगे। आगे उसकी पीठ पर घुटनोंको लगा कर पीस करके दहिने हाथसे गलेको और बांये हाथसे कमरको पकड़ा तथा उसको द्विगुणित अर्थात् दो भागोंमें तोड़ डाला, तब राक्षस घोर शब्द करने लगा। हे पृथ्वीनाथ! जब भीमसेनसे विकट राक्षस तोड़ा गया, तब उसके मुखसे रक्तवमन होने लगा।

बकवधपर्व्वमें एकसौ चौंसठ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि महाराज! बड़े भारी पहाड़ समान राक्षस बकने देह टूटने पर बड़ा कोलाहल मचाता हुआ प्राण छोड़ा। उसके परिवारवर्ग उस शब्दसे भय खाकर नौकर चाकरोंके साथ घरसे निकलकर भीमके पास आगये। मारनेमें तेजमहाबली भीमसेनने उनको भयभीत और ज्ञानरहित देखकर समझाया और यह कहकर, उनसे प्रतिज्ञा करा ली, कि तुम फिर कभी मनुष्य न मारना, यदि मारोगे, तो तुमकोभी तुरन्त इसी प्रकार नष्ट होना पड़ेगा। राक्षसोंने वृकोदरको यह बात सुनकर उस पर रुस्मात प्रकाश करके उस नियमको मान लिया। हे भारत! तबसे नगरवाले उस नगरमें राक्षसोंको शान्तस्वभावी देखते थे। अनन्तर भीमसेन उस मरे हुए राक्षसको लेकर नगरके द्वारपर डाल करके लोगोंके न देखनमें चले गये। राक्षस बकके ज्ञातिवर्ग भीमसे बलपूर्वक उसको मारे जाते देखकर भयसे चित्तको मलिन कर इधर उधर भागे। भीमसेनने उस राक्षसराजको मारकर ब्राह्मणके घरमें जाकर आद्योपान्त सम्पूर्ण कथा कह सुनायी। अनन्तर उस प्रातःकालहोमें नगरवाले नगरसे निकलतेही पर्व्वतकी चोटीके समान बड़े भारी राक्षस बकको रक्तसे न्हाये मारे गये और गिरे हुए देखकर लोमाञ्चित हुए; और एकचक्रानगरीके पुरमें जाकर वह समाचार दिया। हे राजन्! तब सहस्रों नगरवाले राक्षस बकको देखनेके लिये एकत्रित हुए। हे पृथ्वीनाथ? उन सबोंने अलौकिक कार्य्य देखकर अचरज माना और सब लोग देवतो की उपासना करने लगे। आगे यह बूझने लगे, कि "आज राक्षसको भोजन देनेकी किसकी पारी थी।" अन्तमें सब ठीक जान कर सबोंने उस ब्राह्मणके पास जाकर विशेष समाचार पूछा। सम्पूर्ण नगरवालोंके ब्राह्मणसे वार वार पूछने पर विप्रेन्द्र पाण्डवोंको गोपन करनेके लिये बोले, कि मैं राक्षसको भोजन देनेकी आज्ञा पाकर बन्धुओंके साथ रो रहा था, कि ऐसे समयमें एक मन्त्रज्ञ सिद्ध महात्मा ब्राह्मण मुझको उस दशामें देखकर प्रश्न करके इस नगरके घोर क्लेशके वृत्तान्तसे ज्ञात होकर ढाढ़स देकर हंसते हुए बोले, कि मैं उस दुरात्माके निकट यह अन्न ले जाऊंगा, मेरे लिये कुछ भय मत करना। यह कहकर वह अन्न लेकर राक्षस बकके वनमें गये थे। इसमें सन्देह नहीं है, कि उन्होंनेही लोकोंके हितके निमित्त यह काम किया होगा। अनन्तर यह वृत्तान्त सुनकर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सब अचरज मानके और प्रसन्न होकर ब्राह्ममहोत्सव करने लगे। नगरवाले उस आश्चर्य्य वृहत लीलाकी बात ज्ञात होकर नगरको लौट गये। पाण्डवगण वहीं बसे रहे।

एकसौ पैंसठ अध्यायमें
बकवधपर्व्व समाप्त।

जनमेजय बोले, कि हे ब्रह्मन्! सुना चाहता हूं, कि पुरुषसिंह पाण्डवोंने राक्षस बकको मारनेके पीछे क्या किया था।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे राजन्! पाण्डवगण राक्षस बकको वध कर उस ब्राह्मणके घरमें रहकर वेद पढ़ा करते थे। अनन्तर कुछ दिनोंके पीछे एक व्रतशील ब्राह्मण बसनेके लिये उस ब्राह्मणके घरको आये! नित्य अतिथियोंकी सेवा करने वाले उस ब्राह्मणने उस अतिथि ब्राह्मणको भलीभांति पूजा कर बसनेको घर दिया। वह अभ्यागत द्विज वहां टिके रह कर बातही बातमें भांति भांति की शुभ कथायें कहने लगे। नरश्रेष्ठ पाण्डवगण और कुन्तीने वह सब कथा सुननेके अभिलाषी होकर उनका आदर किया। वह भांति भांतिके आश्चर्य देश, नगर, तीर्थ, सरोवर, अनेक आश्चर्य आश्चर्य राजोंके वृत्तान्त और नाना नगरोंकी कथा सुनाने लगे। हे जनमेजय! उस ब्राह्मणने कथा पूरी होनेके कालमें पाञ्चाल देशमें यज्ञसेनीके अलौकिक स्वयंवर, धृष्टद्युम्न तथा शिखण्डिका जन्म और राजा द्रुपदके महायज्ञसे कृष्णा की उत्पत्ति इन सब बातोंका समाचार दिया। पुरुष-श्रेष्ठ पाण्डवगण ब्राह्मणसे उन महात्माकी अलौकिक लीलाओंको सुनकर कथा अन्त होने पर उसको प्रसङ्गरूपसे सुनना चाहा और कहा कि हे विप्र! आपसे क्योंकर द्रुपद कुमार धृष्टद्युम्नकी उत्पत्ति हुई? क्योंकर वेदीमेंसे कृष्णाका अद्भुत जन्म हुआ? फिर क्योंकर धृष्टद्युम्नने बड़े चापधारी आचार्य द्रोणसे सर्व्वास्त्रोंकी शिक्षा पायी? और क्योंकर राजा द्रुपदसे द्रोणकी जो मित्रता थी, वह टूटी? श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे राजन्! पुरुषोंमें प्रधान पाण्डवोंसे यह बात सुन कर वह ब्राह्मण द्रौपदीकी जन्म-कथा कहने लगे।

चत्ररथ पर्व्वसे एकसौ छासठ अध्याय समाप्त।

ब्राह्मण महाराज बोले, कि गङ्गाद्वारके निकट भरद्वाज नामक सदा-व्रतशील महाप्राज्ञ, महातपस्वी एक महर्षि रहते थे। एक समय उन्होंने गङ्गा नहानेको जाकर देखा, कि उनके आनेके पहिले घृताची नाम्नी अप्सरा आकर नदीतट पर खड़ी है। उस समय पवनसे उसका वस्त्र उड़ने पर ऋषि उसको नङ्गी देखकर उसी क्षण कामके वशमें होगये। कौमार दशासे ब्रह्मचारी उस महर्षि का चित्त घृताची पर चलते ही उनका सदाका बटोरा हुआ वीर्य्य गिर गया। उन्होंने उसीक्षण उसको द्रोण नामक पात्रमें रख लिया। इस प्रकार उस धीमान् ऋषिसे द्रोण नामक कुमारने जन्म लिया। वह कुमार सम्पूर्ण वेद और वेदाङ्गको पढ़ने लगा। उस समय पृषत् नामक एक राजा भरद्वाजके मित्र थे। उनके द्रुपद नामक एक पुत्र हुआ। वह क्षत्रिय पृषत्पुत्र द्रुपद नित्य भरद्वाजके आश्रममें जाकर द्रोणके साथ खेलता और पढ़ता था। आगे राजा पृषत्के स्वर्गको सिधारने पर राजा द्रुपद राज्यपर बैठे। द्रोणने सुना, कि परशुरामजी अपना सब धन दान कर रहे हैं, आगे जब राम सब कुछ देकर वनमें जानेको उद्यत हुए थे, तब भरद्वाज-पुत्र वहां जाकर बोले, कि हे द्विजोत्तम! मेरा नाम द्रोण है, मैं धनकी प्रार्थनासे आपके पास आया हूं। राम बोले, कि हे ब्रह्मन्! मैं सब कुछ दान कर चुका हूं, अब मेरा शरीर और अस्त्रही शेष है, अतएव चाहे मेरे सम्पूर्ण अस्त्र वा शरीर इन दोनोंमेंसे एककी प्रार्थना करो। द्रोण बोले, कि आप प्रयोग और उपसंहारके साथ सम्पूर्ण अस्त्र मुझको दे देवें, ब्राह्मण बोले, कि अनन्तर भृगुनन्दनने "तथास्तु" कहकर उनको सम्पूर्ण अस्त्र दे दिये द्रोणने उनको लेकर अपनेको कृतार्थ समझा। वह रामसे परम सम्मत ब्रह्मास्त्र पाकर और सब अस्त्रोंके पानेसे अधिक प्रसन्न

हुए। अनन्तर प्रतापी एरुपेन्द्र भरद्वाजनन्दनने द्रुपदके निकट आकर कहा, कि मैं तुम्हारा मित्र हूं, द्रुपदने उत्तर दिया कि जो श्रोत्रिय नहीं है, वह कभी श्रोत्रियका मित्र नहीं हो सकता, जो रथी नहीं है, वही कभी रथीका मित्र नहीं हो सकता; और जो स्वयं राजा नहीं है, वह कभी राजाका मित्र नहीं हो सकता; अतएव तुम क्यों मित्र कहकर पुकार रहे हो?

ब्राह्मण बोले, कि द्रोणजी पाञ्चाल द्रुपदकी वह बात सुनकर मनही मनमें बदला लेनेका निश्चय कर कौरवोंके हस्तिनापुर नामक नगरको गये। अनन्तर भीष्मने उन आये हुए द्रोणके निकट पौत्रोंको शिष्य बनानेको दे दिया और नाना धन देकर उनका आदर किया। अनन्तर द्रोण द्रुपदकी हानिके निमित्त शिष्य पाण्डवोंको बुलवाकर सबसे बोले, कि हे निष्पाप राजकुमारो। सत्य करो बोलो, कि तुम्हारे अस्त्रविद्यासे पण्डित होने पर तुम वह गुरु-दक्षिणा दोगे, कि जिसके लिये मैंने मनमें निश्चय कर रखा है। उसको अर्जुन आदि शिष्योंने तथास्तु कहके मान लिया। जब प्रण टाने हुए पाण्डवोंने अस्त्रविद्याको भली भांति सीख लिया, तब आचार्य्य द्रोणने उनसे गुरु-दक्षिणाके लिये यह कहा, कि द्रुपद नामक राजा पृषत्के पुत्र अहिच्छत्र देशके अधीश हैं; तुम शीघ्र उनसे उस राज्यको छीन कर मुझको दे दो। अनन्तर पाण्डवोंने द्रुपदको युद्धमें परास्त करके मन्त्रियोंके साथ बांधकर द्रोणको भेंट करी। तब द्रोण द्रुपदसे बोले, कि हे नरनाथ। मैं फिर तुमसे मित्रता चाहता हूं, पर इस समय मैं राजा हूं तुम राजा नहीं हो, राजा न होनेसे राजासे मित्रता नहीं हो सकती, इसलिये तुम्हारे साथ एकत्र राज्य करनेके लिये मैंने यह निश्चय किया है, कि तुम भी भागीरथीके दक्षिण किनारेके राजा होओ और मैं उत्तर किनारेका होऊं। ब्राह्मण बोले, कि तब पाञ्चालराज, अस्त्रविद्यामें पण्डित, द्विजवर धीमान् द्रोणकी वह बात सुनकर बोले, कि हे महामति भारद्वाज। तुम्हारा मङ्गल होवे, तुमने जैसा समझ लिया है, वही हो, कि मेरे साथ तुम्हारी मित्रता सदा बनी रहे। शत्रु-नाशी द्रोण और राजा पाञ्चाल एक दूसरेसे ऐसा कहकर अनुत्तम मित्रता निश्चय कर निज निज स्थानको चले गये। पर राजा द्रुपदके हृदयसे वह बड़ा अपमान क्षणभरके लिये भी दूर नहीं हुआ। वह उसकी सोचमें अति दुःखी और दुबले होने लगे।

चैत्ररथपर्व्वमें एकसौ सासठ अध्याय समाप्त।

ब्राह्मण बोले, कि राजा द्रुपद दुःख और शोकसे विकल होकर योग्य पुत्र पानेकी अभि-लाषासे, कर्म्ममें सिद्ध अच्छे ब्राह्मणोंको ढूंढते हुए एक आश्रमसे दूसरेमें जाने लगे। यह चिन्ता, कि मेरी अच्छी सन्तान नहीं है उनके हृदयमें सदा जगती थी। वह अपने अना-दरके कारण अपने पुत्र और मित्रोंको धिक्कारते हुए द्रोणका बदला लेनेके लिये सदा लम्बी श्वास छोड़ा करते थे। वह बदला लेनेकी चाहने पर भी सोचकर निश्चय नहीं कर सके, कि क्षत्रिय-बलसे क्योंकर द्रोणके प्रभाव, नम्रता, शिक्षा और चरित्रसे बढ़ सकते हैं। अनन्तर घूमते घामते गङ्गाके किनारे कल्माषपाद नामक राजाकी पुरीके निकट ब्राह्मणोंके पवित्र स्थानमें जापहुंचे। वहां जो सब ब्राह्मण थे, वे सबके सब स्नातक, व्रत शील और महाभाग थे। उनमें याज और उपयाज नामक व्रतशील शमगुणी ब्रह्मप्रेमी, संहिता पाठमें नियुक्त, काश्यप गोत्रवाले, ऋषियोंमें श्रेष्ठ दो ब्रह्मर्षियोंको देखकर उनको इच्छानुरूप कार्य्य पूरा करानेमें दक्ष समझा। आगे वह आलस्यको त्यागकर सम्पूर्ण कामनाओंसे उनकी उपासना करने

लगी। अनन्तर उन दोनोंमें कनिष्ठको शक्तिमान जानकर एकान्तमें उनकी शरण ली। वह सम्पूर्ण कामकी वस्तुओंका लोभ दिखा, पांव दाब, मीठी बात कह, अभिलाषा पूरी कर इत्यादि उपायोंसे उन व्रतशील उपयाजको प्रसन्न करने लगे; एक समय द्रुपद विधिपूर्व्वक उपयाजको पूजा कर बोले, कि हे ब्रह्मन् उपयाज! यदि आप वह कर्म्म करें, कि जिसके करनेसे मेरे द्रोणनाशी पुत्रका जन्म हो, तो मैं आपको एक अर्बुद गौ दूंगा। हे द्विजश्रेष्ठ! यदि आपको और किसी वस्तुकी अभिलाषा हो, तो इसमें सन्देह नहीं है, कि उसेभी पूराकर दूंगा। ऋषि बोले, कि मैं यह काम नहीं कर सकूंगा। द्रुपद तिस परभी उन ऋषिकी उपासनाके लिये फिर सेवा करने लगे। अनन्तर १ वर्ष बीतने पर एकदिन द्विजोत्तम उपयाजने राजा द्रुपदको मीठी बातोंसे कहा, कि एक समय मेरे ज्येष्ठ भाईने घने वनमें चलते समय ऐसे स्थानसे गिरा हुआ फल उठा लिया, कि वह नहीं जानते थे, कि वह स्थान पवित्र है वा नहीं। मैं उनके पीछे चलता था, सो उन्हें उस अयोग्य कामको करते देखा था। हे राजन्! उन्होंने उस दोषयुक्त वस्तुके लेनेमें कोई विचार नहीं किया। उस फलको देखतेही इसके पापयुक्त दोषको समझ उनकी बुद्धिमें एकवारभी नहीं आयो, अतएव जिन्होंने एक स्थानमें शौचका विचार नहीं किया, वह अन्य स्थानमें क्योंकर दोष-दर्शी होंगे, अर्थात् वह तुम्हारे अभीष्ट विषयमें दोष नहीं देख पावेंगे। औरभी जब वह गुरुकुलमें रहकर संहिता पढते थे, तब वह्वुवा औरोंकी जूठी की हुई वस्तुभी खालेते थे, इसमें उनकी घृणा नहीं थी; वह सदा अन्नहीका गुण गाया करते थे। उनके उस प्रकार कामोंको देखनेके कारण मैं तर्करूपी आखोंसे उनको फलार्थी समझ रहा हूं। हे महाराज! तुम उनके पास जाओ; वह तुम्हारे याजनकार्य्य करनेमें सम्मत होंगे।

राजा द्रुपद याजके चरित्रको सुन निन्दा करनेकी इच्छा होने परभी मनही मनमें अपने कार्य्यके सोचमें उपयाजकी बातसे उनके आश्रमको गये। वहां पहुंचकर पूजनीय याजको सब प्रकारसे पूज कर बोले कि हे विभो! मैं आपको अस्सी सहस्र गौ दान करूंगा, आप मेरा याजन कार्य्य करें। मैं द्रोणकी शत्रुतारूपी आगसे जल रहा हूं, आप कृपारूपी जल सींचकर मुझको शीतल करें। द्रोण ब्रह्मविद्या और ब्रह्मास्त्र दोनोंमें दक्ष है, इस लिये मित्रताकी लड़ाईमें मुझको परास्त किया है। वह बुद्धिमान और कौरवोंके प्रधान आचार्य्य हैं; इस भूमण्डलमें कोई क्षत्रिय उनसे श्रेष्ठ नहीं है। उसका धनुष छः अरत्निके समान बड़ा है; उनका बाण-जाल सर्व्व जीवोंकेही शरीरका नाश कर सकता है। इसमें सन्देह नहीं है, कि वह महानुभव भारद्वाज ब्राह्मणके वेशमें वड़े चापधारी होकर क्षत्रिय-तेजका सत्यानाश कर रहे हैं। वह क्षत्रिय नाशनेके लिये मानो दूसरे परशुराम बने हैं। इस पृथ्वी भरमें कोईभी उनके कठोर अस्त्र-बलको घटा नहीं सकता है। वह आहुतियुक्त प्रज्वलित अग्निकी भांति ब्राह्मतेजके साथ साथ क्षत्रियतेजको मिलाकर शत्रुको जला मारते हैं। उनका ब्राह्मतेज क्षत्रियतेजसे मिलकर श्रेष्ठ होनेपरभी आपका ब्राह्मतेज उनसे श्रेष्ठ है, और केवल क्षत्रियबलधारी मैं उनसे हीन बना हूं, अतएव मैं आपको जो द्रोणसे श्रेष्ठ और वेदके अच्छे जानकार है, प्राप्त होकर आपके ब्राह्मतेजको शरण लेता हूं। हे याज! यह काम करें, कि जिससे मैं लड़ाईमें जयके अयोग्य और द्रोणनाशी पुत्र लाभ

सकूं; आपको दश कोटि गोदान करनेको प्रस्तुत हूं।

याज तथास्तु कहकर यागके प्रयोगके विषयमें मनही मनमें ध्यान करने लगे; और उस कार्य्यको कठिन जानके निष्काम उपयाजसे सहायता करनेको कहा। महर्षि याजने जब द्रोणनाशके लिये प्रतिज्ञा करी तब महातपा उपयाजने नरेन्द्र द्रुपदके निकट उनके पुत्र फलके लिये श्रौताग्नि-साध्य कर्मकी कथा कह सुनायी और कहा, कि हे द्रुपद। आप जैसे यशस्वी और बल-वीर्य्यवन्त पुत्रकी कामना करेंगे, आपको वैसाही पुत्र मिलेगा। अनन्तर भूपाल द्रुपदने जब द्रोण-विनाशी पुत्र पानेकी युक्ति निश्चयकर कार्य्य साधनेके लिये उस यज्ञके योग्य सम्पूर्ण सामग्री इकट्ठी कर दी, तब उन्होंने यज्ञ आरम्भ कर दिया। आगे याजने हवनके होजाने पर रानीको यह आज्ञा करी, कि ऐ रानी। पृषतराज वधू। तुम हवि लेनेके लिये शीघ्र मेरे पास आओ, तुम्हारे पुत्र, कन्या उपस्थित हैं। रानी बोली, कि हे ब्रह्मन्। मेरा मुंह कुङ्कुमादि गन्धके पदार्थोंसे पूरित है, अङ्गरागोंसे भूषितभी हूं, अतएव मेरे अभीष्ट पुत्रके लिये आप कुछकाल विलम्ब करें, मैं शुचि हो आती हूं। याज बोले, कि हवनके पदार्थ उपयाजसे मन्त्रयुक्त होकर याजके द्वारा पकाये गये हैं, तुम चाहे आओ वा न आओ अवश्यही उससे कामना पूरी होगी। ब्राह्मण बोले, कि याजने यह कहके अग्निसे संस्कार किये हुए हव्यकी आहुति ज्योंही दी त्योंही उस अग्निसे ज्वालावर्ण भीमाकृति कीरोटसे सुशोभित सुन्दर कवचयुक्त धनुर्बाणधारी और देवसदृश एक कुमार उत्पन्न हुआ। वह कुमार जन्म लेतेही बार बार सिंह-गर्जन करता हुआ प्रधान रथ पर चढ़ गया और उस रथ पर इधर उधर जाने लगा। यह देखकर पाञ्चाललोग आनन्दित होके इतना चिल्लाकर "साधु साधु" कहके ऐसा भारी शब्द करने लगे, कि मानों धरती उस हर्षयुक्त पाञ्चालोंका भार सम्भालनेको असमर्थ होगयी। तब आकाशवाणी हुई, कि इस राज-कुमारने द्रोणवधके लिये जन्म लिया है। यह पुत्र पाञ्चालोंका यश बढ़ानेवाला, भयनाशी और राजाका शोक दूर करनेवाला होगा।" आगे वेदीके मध्यसे पाञ्चालराजकुमारी सौभाग्यवती श्यामाङ्गी एक कुमारी उठी। उस कन्याके अङ्गोंकी शोभा बहुत सुन्दर, दोनों आंखें नीली, चोड़ी और पद्मपत्रोंके समान, केश काले और घुघराले, नख ऊंचे और तांबेके रङ्गके, दोनों भौंहें बड़ी शोभा देनेवाली, और स्तन बड़े तथा शोभायुक्त थे, उसकी शोभा देखकर समझ पड़ती थी, कि मानों साक्षात् देवकन्या मानवीके स्वरूपमें प्रगट हुई थी। उसको नीलपद्म समान देहकी गन्ध कोस भरकी दूरीतक पहुंचने लगी। वह देवरूपिणी कन्या ऐसी अनुपम रूपवती हुई कि देव, दानव, यक्ष आदिभी उसकी प्रार्थना करें। उस सुन्दरी कन्याके जन्म लेने परभी आकाश वाणी हुई, कि "यह कन्या सम्पूर्ण नारियोंमें श्रेष्ठ और बहुत क्षत्रिय कुलोंका नाश चाहनेवाली होगी। इस सुन्दरीसे उचित समय पर देवता का कार्य्य पूरा होगा। इसके लियेही कौरवोंमें बड़ा भय उपस्थित होगा।" सम्पूर्ण पाञ्चाल उसे सुनकर हर्षके मारे सिंहोंकी नाईं ऐसी ध्वनि करने लगे, कि मानों धरती उन हर्षित पाञ्चालोंका भार सम्भालनेको असमर्थ हुई।

पुत्रचाहनेवाले राजा द्रुपदकी रानी उस पुत्र कन्याको देखकर याजके निकट जा पहुंची और बोली, आप ऐसा करें, कि यह पुत्र कन्या मेरे अतिरिक्त किसी दूसरीको माता करके जान न सकें। याज राजाके प्रिय कार्य्यको करनेके लिये "तथास्तु" बोले, आगे ब्राह्मणगण

सफल मनोरथ होके बोले, कि राजा द्रुपदका यह कुमार धृष्ट अर्थात् प्रगल्भ, अति धृष्ट अर्थात् विपक्षियोंकी उन्नति न रहनेवाला और द्युम्नादि अर्थात् कवच कुण्डल आदिके साथ उत्पन्न हुआ है, सो इसका नाम धृष्टद्युम्न हुआ, और यह कुमारी काली हुई है, सो इसका नाम कृष्णा रहा। राजा द्रुपदके महायज्ञसे ऐसे पुत्र और कन्याकी उत्पत्ति हुई थी। अनन्तर प्रतापी भारद्वाज, द्रोणने पाञ्चालराजके पुत्र धृष्टद्युम्नको अपने घरमें लाकर अस्त्रोंकी शिक्षा देकर पहिले लिये हुए आधे राज्यको लेनेके पलटेमें उपकार किया। महामति द्रोणने यह समझ कर, कि दैवीभाव लङ्घनयोग्य नहीं है, अपनी कीर्त्तिकी रक्षाके लिये ऐसा कार्य्य किया।

चैत्ररथपर्व्वमें १६८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर महाबली पाण्डवगण वह वृत्तान्त सुनकर शूलोंसे विंधे जानेकी भांति दुःखी भये। सत्य कहनेवाली कुन्ती पुत्रोंको अनमन देख कर युधिष्ठिरसे बोली, कि हमको इस ब्राह्मणके घर रहे बहुत दिन बीते। इस सुन्दरनगरमें महात्माओंसे भिक्षा ले ले कर खेल कूदकर काल गंवाया है, यहां जितने सुन्दर सुन्दर बन और उपवन हैं, वह सभी वार वार देख चुके हैं। हे वीर कुरुनन्दन। उन स्थानोंको फिर देखनेकी अब वैसी प्रीति नहीं होती, और एक स्थानमें रहनेसे वैसी भिक्षा मिलनेको भी सम्भावना बनी नहीं रहती; अतएव यदि तुम्हारा मत होवे, तो हम सुखसे पाञ्चाल देशको जायं, वह स्थान पहिले नहीं देखा है, उसके देखनेसे सुख प्राप्त होगा। हे शत्रुनाशि। सुना है, कि पाञ्चालदेश अन्नसे भरा पूरा है और वहांके राजा यज्ञसेनभी ब्रह्मपरायण हैं। फिरभी एक स्थानमें सदा रहना मेरा अभीष्ट नहीं है, यह उचितभी नहीं है। यदि तुम्हारा मत होवे, तो हम उस स्थान को सुख पूर्व्वक पधारें। युधिष्ठिर बोले, कि आपकी जैसी इच्छा होगी, वही हम करेंगे, और वही हमारी मङ्गलदायी होगी; पर नहीं जानते भाईलोग क्या चाहते हैं। वैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर कुन्तीने जब भीम, अर्ज्जुन, नकुल और सहदेवसे वहां जानेकी इच्छा पूछी, तब वेभी उस पर स्वीकृत हुए। महाराज! अनन्तर कुन्ती और उनके बेटे ब्राह्मणसे मिल कर महात्मा भूपाल द्रुपदके सुन्दर नगरको गये।

चैत्ररथपर्व्वमें एकसौ उनहत्तर अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले; कि जब महात्मा पाण्डव लोग ब्राह्मणके घरमें छिप कर बस रहे थे, तब एक दिन सत्यवतीके पुत्र व्यासजी उनकी भेटके लिये आये। शत्रुनाशी पाण्डव गण उनको आते देखकर उठकरके प्रणाम दण्डवत पूर्व्वक दोनों हाथ जोड़ करके खड़े रहे। आगे उनकी आज्ञासे वे सब बैठ गये। वह उनसे पूजे जाकर प्रीतिपूर्व्वक यह बोले, कि हे शत्रुनाशियो। तुम धर्म्ममार्गमें रहकर शास्त्रके अनुसार अपनी जीविका कर लेते हो न? पूजनीय ब्राह्मण लोग तुमसे पूजे तो जाते हैं? अनन्तर भगवान् कृष्णद्वैपायन धर्म्मार्थयुक्त भांति भांतिकी विचित्र कथा कहकर फिर यह कहने लगे, कि एक तपोवनमें किसी महात्मा ऋषिको एक कन्या थी; उसकी कमर पतली और भौंह अच्छी थीं और वह बड़ी सुन्दरी और सर्व्व गुणोंसे सुहावनी थी! ऋषिकन्या अपने कर्म्मवश अभागी भई थी, सती और रूपवती होने पर भी पति नहीं मिला, अनन्तर वह चित्तमें दुःख मानकर पति पानेके लिये तप करने लगी। आगे

कड़ी तपस्यासे भगवान् शङ्करको सन्तुष्ट करने पर शङ्कर प्रसन्न होकर बोले; कि हे भद्रे! मैं, शङ्कर तुमको वर देनेको उद्यत हुआ हूं, वर मांगो, तुम्हारा मङ्गल होगा। ऋषिकन्या अपने हितके निमित्त ईश्वरसे वार वार बोली, कि मैं सर्व्वगुणोंसे भूषित पति मांगती हूं। वाक्पति ईशान उससे बोले, कि ऐ भद्रे! तुमको पांच भरतवंशी पति मिलेंगे। कन्या वरदाता महादेवजीको यह बात सुनकर बोली, कि हे देव! हे विभो! मैं आपकी कृपासे एकही पति मांगती हूं। तब देवदेव फिर यह सुन्दर वाणी, बोले, कि तुमने यह बात कि "पति दो" पांच वार मुझसे कही है, सो अन्य जन्ममें तुम्हारे पांच पति होंगे।

हे भरतकुल-भूषणो!—उस कन्याने इन दिनों द्रुपदकुलमें जन्म लिया है। देवता-समान अनिन्दनीया कृष्णा नाम्नी वह द्रौपदी तुम्हारी पत्नी बननेको बाट देख रही है; सो अब तुम पाञ्चाल नगरमें जाकर वहां टिके रहो। महाबली पाण्डवो! तुम निःसन्देह उस कृष्णाको पाकर सुख पाओगे। पाण्डवोंके दादा महातपस्वी, महाभाग व्यासदेव पृथा और पार्थोंसे यह कह कर सम्भाषण पूर्व्वक चले गये।

चैत्ररथपर्व्वमें एकसौ सत्तर अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि भगवान् व्यासके चले जाने पर पुरुषश्रेष्ठ शत्रुनाशी पाण्डवगण ब्राह्मणको नमस्कार-पूर्व्वक सत्कार करके प्रसन्न चित्तसे माताको आगे करके पाञ्चाल नगरकी ओर चले। वे अपने उद्देशके अनुसार सीधे उत्तर ओरको चलकर, उस सोमाश्रयन नामक तीर्थमें जा पहुंचे, कि जहां भगवान् चन्द्रशेखर विराजते हैं। वहां दिन बीतने पर महारथी धनञ्जय पथ दिखाने और रक्षाके लिये एक जलती हुई लकड़ी उठाकर आगे आगे चले, आगे पुरुषश्रेष्ठ पाण्डवलोग गङ्गा तट पर जा पहुंचे। वहां ईर्षासे भरा हुआ एक गन्धर्व्वराज जलक्रीड़ाके लिये आकर सुन्दर भागीरथी-जलमें स्त्रियोंके संग निराले खेल रहा था।

पाण्डवगण उस नदीमें उतर रहे थे, कि उस महाबली गन्धर्व्वराजको उनका शब्द मिला और वह क्रोधसे जल उठा। अनन्तर शत्रुनाशी पाण्डवोंको माताके साथ आते देख कर कठोर शरासनको फैलाकर बोले कि रात्रि आनेके पहिले जो घोर लाल सन्ध्याकाल होता है, उसके अस्सी लवके अतिरिक्त शेष सब मुहूर्त्तही कामचारी यक्ष, गन्धर्व्व और राक्षसोंके विचरनेका काल निर्दिष्ट है; इसके सिवाय शेष सम्पूर्ण काल मनुष्योंके कर्म्माचरणके निमित्त निश्चित है। यदि मनुष्यगण लोभवश घूमते घामते हुए हमारे उस निर्द्दिष्ट कालमें निकट आते हैं, तो हम उन मूर्खोंको नष्ट कर डालते हैं। इस लिये जो लोग रात्रिको जलाशयमें जाते हैं, वे चाहे भूपालभी होवें, तो वेदज्ञ ब्राह्मण उनकी निन्दा करते हैं, अतएव तुम दूर रहो, मेरे पास मत आओ। क्या तुम नहीं जानते हो, कि मैं भागीरथीके जलमें देह डुबा रहा हूं; मैं मानी और कुवेरका मित्र अङ्गारपर्ण नामक गन्धर्व्व हूं, मैं अपने भुजबलहीसे काम पूरा कर लेता हूं, किसीको क्षमा नहीं करता हूं, मेरे अधिकारका यह वन अङ्गारपर्ण नामसे प्रसिद्ध है। मैं इस वनके भीतर गङ्गा और राकी नदीमें भांति भांतिकी क्रीड़ा करता हुआ विचरता हूं। मैं कुवेरकी पगड़ीकी भांति अर्थात् बड़ा प्रिय हूं; लक्षणसे जान पड़ता है, कि तुम राक्षस, शृङ्गी, गन्धर्व्व अथवा यक्ष नहीं हो, फिर क्योंकर मेरे पास आनेका साहस किया? अर्ज्जुन बोले, कि रे दुर्म्मते! समुद्र, हिमाचलका पार्श्व और गङ्गाजी यह सब स्थान

चाहे दिन रात वा सन्ध्या समय हो, किसके लिये रुके रह सकते हैं? ऐ व्योमचर। चाहे पेट भरा वा पेट जला हो, किसीके लिये दिन वा रात्रि किसी समय जलभरी गङ्गाजी पर आनेका नियम नहीं है। विशेष कुसमयमें तुमको चिढ़ानेसे हमको क्या हो सकता है? क्योंकि हमें शक्ति है। रे कुटिल! जो लोग लड़नेमें असमर्थ हैं, वेही तुम्हारी पूजा करते हैं। पूर्व्वकालमें यह गङ्गा हिमाचलकी सुवर्ण चोटीसे निकल कर सात भागोंमें बंटके समुद्र-जलसे मिल गयी हैं। जो लोग गङ्गा, यमुना प्लक्षजाता सरस्वती, रथस्था, शरयू, गोमती और गण्डकी इन सात नदियोंका जल पीते हैं, उनके सब पाप कट जाते हैं। ऐ गन्धर्व्व! आकाशमें बहनेवाली पवित्र यह गङ्गा आकाशमें जाकर देवलोकमें अलकनन्दा नामसे और पितृलोकमें पापात्माओंको तारने वाली वैतरणी नामसे प्रसिद्ध हुई हैं। कृष्णद्वैपायनने कहा है, कि स्वर्ग तथा शुभदेनेवाले इस सुर-सोतेमें जानेकी किसीको मनाही नहीं है, तुम उस विनबाधाकी गङ्गाजीको क्या रोकना चाहते हो? यह सनातन धर्म्म नहीं है, अतएव हम क्या तुम्हारी बात सुनकर उस बाधारहित बिन मनाहीके पवित्र गङ्गा जलको नहीं छूयेंगे?

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अङ्गारपर्ण यह बात सुनकर क्रोधके मारे शरासन चढ़ाकर अति विषयुक्त सर्पके समान तेज बाणोंको बर्षाने लगा। पाण्डुपुत्र धनञ्जयने उस जलती हुई लकड़ी और उत्तम चर्म्मको घुमाकर उनके सब बाणोंको व्यर्थ किया और बोले, कि रे गन्धर्व्व! जो लोग अस्त्रोंके जानकार हैं, उनको विभीषिका दर्शाना उचित नहीं है, क्योंकि उनके निकट वह फेनकी भांति क्षण-भरमें लोप होजाती है। हे गन्धर्व्व! मैं समझता हूं, कि गन्धर्व्व मनुष्यको जातिसे पराक्रमी हैं, सो मैं तुमसे दिव्य अस्त्रोंके सहारे लड़ूंगा, कपटयुद्ध नहीं करूंगा। पूर्व्वकालमें देवराजके गुरु सबोंके माननीय बृहस्पति जीने आग्नेयास्त्र भरद्वाजको दिया था। आगे भरद्वाजसे अग्निवेश्यको मिला, अग्निवेश्यसे मेरे गुरु ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ द्रोणको मिला उन्होंने यह सुन्दर अस्त्र मुझको दिया है। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि पाण्डुनन्दन अर्ज्जुनने यह कहकर क्रोधसे गन्धर्व्व पर उस प्रज्वलित आग्नेयास्त्रको छोड़कर उनके प्रसिद्ध रथको भस्म किया। वह महाबली गन्धर्व्व आग्नेयास्त्रके प्रभावसे रथसे च्युत होकर नीचे मुंहकर धरती पर गिर रहे थे, कि अर्ज्जुनने उनके मालाओंसे सजे सजाये केश पकड़ लिये, और अस्त्रकी चोटसे अचेत उस गन्धर्व्वको खींच कर भाइयोंके पास ले आये। अनन्तर उस गन्धर्व्वकी कुम्भीनसी नाम्नी स्त्री पतिकी रक्षाके लिये युधिष्ठिरकी शरण लेकर बोली, कि हे महाभाग! मेरी रक्षा करें—मेरे पतिको छोड़ दें। हे प्रभो! मेरा नाम कुम्भीनसी है, मैं गन्धर्व्वी हूं; आपकी शरण लेती हूं। तब युधिष्ठिर अर्ज्जुनसे बोले; कि हे शत्रुमंथनेहारे! जो शत्रु युद्धमें हारकर पराक्रम और यशसे रहित होकर स्त्रीसे बचाया जाता है, उसको कौन मार सकता है? भैया! तुम इसको छोड़ दो। अनन्तर अर्ज्जुन गन्धर्व्वसे बोले, कि गन्धर्व्व! तुमको जीवन मिल गया, चले जाओ, शोक मत करना। आज कुरुराज युधिष्ठिरने तुमको बचानेकी आज्ञा दी है। गन्धर्व्व बोले, कि मेरा पर्ण अर्थात् वाहन प्रज्वलित अङ्गारकी भांति दूसरोंके छूनेके अयोग्य था, इसलिये मैं अङ्गारपर्ण नामसे प्रख्यात था; अब तुमसे हार कर यह अङ्गारपर्ण नाम छोड़ देता हूं, क्योंकि जब जनसमाजमें बल और वीर्य्यका सम्मान ही नहीं रहा, तब केवल नामके मान-नीय बने रहनेसे प्रयोजन ही क्या है? आज

मुझे यह एक परम लाभ हुआ, कि मुझको दिव्यास्त्र धरनेवाला मित्र मिल गया, आज मुझे मित्र अर्जुनकी गन्धर्व्वी माताकी विद्या देनेकी इच्छा हो रही है। मेरा उत्तम विचित्र रथ था, सो मैं चित्ररथ करके प्रसिद्ध था, अब वह रथ अस्त्राग्निसे जल गया, अतएव चित्ररथ होने पर भी, अब मुझको दग्धरथ नाम मिला। हे मित्र! मैंने पहिले तपस्यासे जो गान्धर्व्वी विद्या लाभ की थी, आज वह विद्या तुमको देता हूं, क्योंकि तुम मेरे प्राणदाता और महात्मा हो। जो बलसे शत्रुको हराते मोहित करते और उस हारे हुए मोहित शत्रुके शरण लेने पर उसका प्राण दे देते हैं, वह अवश्यही कल्याण पानेके योग्य है। उस विद्याका नाम चाक्षुषी है; भगवान मनुने वह विद्या सोमको दी थी, सोमने विश्वावसुको दी और मुझको विश्वावसुसे मिली। पर वह गुरुकी दी हुई विद्या इस कायरके हाथसे नष्ट हो गयी। इस चाक्षुषी विद्याके गुरुओंका सिलसिलेवार आगम-वृत्तान्त कहा, अब उसके वीर्य्यकी बात कहता हूं, सुनो। त्रिलोकभरमें चाहे जिस किसी पदार्थको आखोंसे देखना चाहोगे, वही दीख पड़ेगा और उस पदार्थका स्वभाव और दशा जैसी है, वह भी देखना चाहो तो देख लोगे। छःमास एक पांवके बल खड़े रह कर तप करनेसे वह विद्या मिलती है, पर तुम्हारे उस व्रतको न किये रहने परभी मैं उसे तुमको दूंगा। हे महाराज! हमलोग उस विद्याहीके बलसे मनुष्यवर्गों हो कर मनुष्योंसे विशिष्ट और देवोंके सदृश हुए हैं। हे पुरुषश्रेष्ठ! फिर मैं तुम और तुम्हारे भाइयोंमें हरेकको सौ सौ गन्धर्व्व घोड़े देता हूं; सुन्दर वरण और मन समान वेगवान वे घोड़े देवता और गन्धर्व्वोंके वाहन हैं; उनको युवावस्था वा बुढ़ापा नहीं है, वे कभी वेग रहित नहीं होते। पूर्व्वकालमें वृत्रासुरके मारनेके लिये देवराज महेन्द्रका वज्र बना था। वह वज्र वृत्रासुरके सिर पर गिर कर सहस्र भागोंमें बंट गया। देवगण वज्रके उन अनेक भागोंकी उपासना किया करते हैं। इन तीनों लोकोंमें यशरूपी धन उस वज्रका एक भाग है; ब्राह्मण गण जिस हाथसे अग्निमें आहुति चढ़ाते हैं उनका वह हाथ उस वज्रका एक भाग है, क्षत्रियगण जिस रथ पर चढकर लड़ाईमें देवता और ब्राह्मणोंके शत्रु नष्ट करते हैं उनका रथ उस वज्रका एक भाग है; वैश्यगण देवता और ब्राह्मणोंको जो दान देकर सुखी होते हैं, उनका वह दानभी उस वज्रका एक भाग है; और शूद्रगण ब्राह्मणोंकी जो सेवा कर निज धर्म्मकी रक्षा करते हैं, उनकी वह सेवाभी उस वज्रका एक भाग है, अतएव घोड़े क्षत्रियोंके वज्ररूपी रथके अङ्ग होनेके हेतु मारनेके अयोग्य करके कहे गये हैं। पर रथके अङ्ग घोड़े, घोड़ियोंसे उपजते हैं, उनमें जो घोड़े गन्धर्व्व लोकमें जन्म लेते हैं, वे सब शूर हैं और उन का वर्ण इच्छाधीन है तथा वे मनमाने वेगवान और वशीभूत होते हैं; इस लिये मेरे उन घोड़ोंसे तुम्हारा मनोरथ पूर्ण होगा।

अर्ज्जुन बोले, कि हे गन्धर्व्व! तुम जीवन नष्ट होनेके भयसे बच जाने पर प्रसन्न होकर मुझको विद्या वा घोड़े देनेको उद्यत हुए हो, सो मैं उन्हें नहीं लिया चाहता। गन्धर्व्व बोले, महानुभाव जनोंसे मिलनाही प्रीतियुक्त होता है, विशेष मैं जीवन पानेसे प्रसन्नभी हुआ हूं, इस लिये तुमको वह विद्या देता हूं। हे भरतश्रेष्ठ विभत्सो! मैं जिस प्रकार तुमको वह विद्या दूंगा, वैसेही पलटेमें तुमसे सनातन उत्तम अग्न्यास्त्र लूगा। अर्ज्जुन बोले, कि हे गन्धर्व्व! मैं अस्त्र देकर तुमसे घोड़े मांगता हूं, हमारी मित्रता बनी रहे। हे मित्र गन्धर्व्व! बोलो, कि गन्धर्व्वकी आशि

मनुष्य की जातिको क्यों भय आ पहुंचता है; और यहभी कहो, कि हम सब शत्रुनाशी साधु और वेदज्ञ होने परभी रात्रिको चलते हुए क्यों तुमसे लाञ्छित हुए। गन्धर्व बोले, कि हे पाण्डवो। तुम गुरुकुलसे लौट आये पर तौभी विवाह नहीं किया है, सो विन आश्रम हो; और तुम्हारे सङ्ग ब्राह्मणभी नहीं है, इसी लिये, मैंने तुम पर चढ़ाई की थी। यक्ष, राक्षस, गन्धर्व, पिशाच, उरग और दानव यह सब धीमान हैं, और कुरुवंशकी कथा कहते हैं। हे वीर। मैंनेभी नारदादि देवर्षियोंसे तुम्हारे ज्ञानशील अगले पुरुषोंके गुणकी कहानी सुनी हैं, और स्वयं इस सागर-गड़ी कृत्स्ना धरतीमें घूमता हुआ तुम्हारे सुवंशका प्रभाव प्रत्यक्ष देखा है। हे अर्ज्जुन। वेद और धनुर्व्विद्यामें त्रिलोक भरमें प्रशंसित यशोवन्त तुम्हारे आचार्य्य-पुत्रको भली प्रकार जानता हूं। हे कुरुश्रेष्ठ। तुम्हारे ज्ञान-शील पितृ-पुरुष कुरुवंश बढ़ानेहारे देवोंमें श्रेष्ठ धर्म्म, पवन, इन्द्र और दोनों अश्विनी-कुमार और मानवोंमें श्रेष्ठ पाण्डु इन छओंसे विशेषरूपसे ज्ञात हूं। तुम पांचों भाई सम्पूर्ण शस्त्र विद्याओंमें दक्ष, अच्छे स्वभावी, महात्मा सुचरित्रवान व्रतशील और शूर हो, तुम्हारे मन और बुद्धि बड़ी अच्छी और स्वभाव अति शुद्ध हैं। हे पार्थ! मैं यह सब जानने परभी तुमको लाञ्छन किया था; क्योंकि भुजबल युक्त कोई पुरुष स्त्रीके सामने अपने अपमानको सहन नहीं कर सकता है; विशेष रात्रिकालमें हमारा बल बहुत बढ़ जाता है, इस लिये मैं स्त्रीके सहित क्रोधके वशमें होगया था। हे तापत्य वंश वर्द्धन! मैं जिस विधिके अनुसार तुमसे युद्धमें परास्त होगया हूं, वह कहता हूं, सुनो, हे पार्थ! ब्रह्मचर्य्य परम धर्म्म है; तुम उस धर्म्मको अवलम्बन किये हुए हो, इस लिये तुमसे हार गया। हे शत्रुनाशि! कोई विवाह किया हुआ-क्षत्रिय यदि रात्रिकालमें हम लोगोंसे लड़े, तो वह किसी प्रकार जीवित नहीं रह सकता है। हे पार्थ। विवाह कर लेने परभी जो क्षत्रिय वेदसे अलंकृत होकर पुरोहित पर सब कार्य्योंका भार सौंप देता है, वह युद्धमें निशाचरोंको परास्त कर सकता है; हे तापत्य। इस लिये मनुष्योंको मनमाना हरेक शुभ कर्म्ममें दशगुणयुक्त पुरोहित नियुक्त करना चाहिये। हे मित्र! जो वेद और शिक्षादि षड़ङ्गोंमें पण्डित पवित्र-वशी-सत्यवादी, धर्म्मात्मा और जितेन्द्रिय है, वही राजपुरोहित होनेके योग्य है। जिस राजाके धर्म्मज्ञ वाक्‌निपुण सुशील सुवंशी पुरोहित रहते हैं, उनको इस लोकमें सदा जय और परलोकमें स्वर्ग-प्राप्ति होती है। राजाको अनमिले पदार्थके मिलने और मिले हुए पदार्थकी रक्षाके लिये गुणवान पुरोहित नियुक्त करना चाहिये। जो राजा अपने लिये ऐश्वर्य्यकी इच्छा करते हैं, उनको सागर-सहित सम्पूर्ण धरतीको प्राप्त करनेके निमित्त सब प्रकारसे पुरोहितके मतानुसार रहना चाहिये। हे तापत्य! कोई राजा ब्राह्मण वर्ज्जित होकर केवल शूरता वा अभिजात्यसे धरतीको जीत नहीं सकता? अतएव निश्चय जानना, कि जिस राज्यकी कार्य्य-चिन्तामें ब्राह्मणकी प्रधानता रहती है, उस राज्यकी सदा रक्षा होती है।

चैत्ररथ पर्व्वमें एकसौ एकहत्तर अध्याय समाप्त।

अर्ज्जुन बोले, कि हे मित्र। तुमने मुझको तापत्य करके पुकारा, मै जाना चाहता हूं, कि तापत्य शब्दका अर्थ क्या है। हे साधो। हम कुन्तीको सन्तान हैं, इस हेतु कौन्तेय करके प्रख्यात हैं, पर तापत्य किसका नाम है, कि तापत्य कहके पुकारे जा सकें। इसका सच्चा तत्व जाननेकी इच्छा हो रही है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि गन्धर्व्वराज कुन्तीपुत्र धनञ्जयकी वह बात सुनकर उनके निकट लोकोंमें प्रसिद्ध कथाको कहने लगे। गन्धर्व्व बोले, कि हे सुवीवर। मैं यह मनोहर कथा तुमसे आद्योपान्त सब कहता हूं, जिस कारण तुमको तापत्य कहके पुकारा, उसकी कथा विस्तृत रूपसे कहता हूं ध्यान लगाकर सुनो। इन देवताकी, जिन्होंने अपने तेजसे आकाशमण्डलको भर लिया है, उनको तीनों लोकोंमें प्रशंसित तपस्विनी तपती नाम्नी एक कन्या थी, वह सावित्री की छोटी बहिन थी। तपनदेव जिसप्रकार रूपवान है; वह तपती वैसी ही रूपवती थी। कोई उसके रूपको शोभासे जान नहीं सकता था, कि वह देवकन्या असुर-कन्या, यक्ष-कन्या, गन्धर्व्व-कन्या राक्षस-कन्या, अथवा अप्सरा थी; उस बालाको दोनों आंखें अच्छी काली और बड़ी थीं और सब अङ्ग यथायोग्य बंटे बंटाये और निन्दाके अयोग्य थे। हे भारत। उसके पिता सविताने उस भाविनी अति रूपवती, और सुचारिणी देखकर जाना, कि उसके सदृश रूप-गुणशील और विद्यायुक्त योग्य-वर तीनों लोकमें नहीं है, अनन्तर यथा कालमें कन्याको यौवन पर चढ़ते देखकर सम्प्रदान करनेके लिये योग्य वरको चिन्ता करने लगे, किसी प्रकार स्थिर नहीं रह सके। हे कौन्तेय! उन दिनों ऋषिपुत्र कुरुश्रेष्ठ बलवान राजा सम्वरण सूर्य्यकी उपासना किया करते थे। विना अहङ्कार पौरव-नन्दन सम्वरण सेवाशील, नियमयुक्त और शुचि होकर शुद्ध चित्तसे भक्ति-पूर्व्वक नाना तपस्या, उपवास और नियम, तथा अर्घ्य माला, गन्ध, और दूसरे उपहार देकर दीप्यमान सूर्य्यकी नित्य उपासना करते थे। सूर्य्यदेवने उनको कृतज्ञ, धर्म्मज्ञ और अप्रतिम रूपवान जानकर तपतीके योग्य पति समझा। हे कौरव्य! उसके अनन्तर उन्होंने उस प्रख्यात कुलीन नृपोत्तम सम्वरणहीको कन्या सम्प्रदान करनेकी इच्छा की हे पार्थ! जिस प्रकार प्रकाशित किरणयुक्त दिवाकर अपने प्रकाशसे आकाश-मण्डलको प्रकाशित करते हैं, वैसेही भूपाल सम्वरणने अपने तेजसे महीमण्डलको उज्ज्वल किया था। और जिस प्रकार सूर्य्यके उगने पर ब्राह्मणगण उनकी उपासना करते हैं, वैसेही ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि प्रजा भूपाल सम्वरणकी उपासना करती थी। वह श्रीमान भूप मित्र पर कोमल होकर सोमसे और शत्रु पर तेजवन्त होकर आदित्यसे बढ़ चढ़ निकले थे, हे कौरव। ऐसे गुणशील और चरित्रवान उस भूपालको सूर्य्यदेवने तपती नाम्नी कन्याको दान करना चाहा था।

हे पार्थ। एक समय अति विक्रमी श्रीमान भूपाल सम्वरण मृगयाके लिये पर्व्वतके निकटके वनमें टहल रहे थे, कि ऐसे समय उनके अनुपम अश्वने भूख प्यासके मारे कातर होकर प्राण छोड़। तब वह वाहनके विना पैदलही पर्व्वत पर चलने लगे। आगे प्रशस्तनेत्रा अनुपम रूपवती एक कन्या उनकी आखोंके सामने दीख पड़ी। शत्रुबल मथनेहारे भूपश्रेष्ठ उस कन्याको देखकर उस पर एकटक लगाये खड़े रहे और उसकी सुन्दरता देखकर समझा, कि वह हरिकी प्यारी लक्ष्मी होगी अथवा प्रभाकरकी प्रभा प्रभाकरसे पृथ्वी पर गिरकर उस कन्याके स्वरूपमें प्रकाश हुई होगी। उस बालाकी तेजस्वी देह मानो अग्निकी शिखा और प्रसन्नता तथा कान्तिसे मानो अमल चन्द्रकी रेखा प्रकाश कर रही थी। वास्तवमें वह सुलोचना जिस पर्व्वत पर खड़ी रहकर प्रकाशमयी सुवर्णप्रतिमासी शोभा देरही थी, तरु लता और गुल्मादि सहित वह पर्व्वत उस कन्याकी अनुपम शोभा और वेशकी बनावटसे सुवर्णका प्रतीत होने लगा। राजा उसको देखकर मनहीमनमें

तीनों लोकोंकी स्त्रियोंका अनादर करने लगे, और दर्शनेन्द्रियको कृतार्थ समझा। विचार कर देखा कि जन्मसे पश्चात् जो सब सुन्दर पदार्थ देखे थे, उनमेंसे एकभी इस कन्याके समान रूपयुक्त नहीं है। उस सुन्दरीको देखतेही उसके गुण जालमें महीपालका चित्त और नेत्र फंस गये सो उनको वहां से टलनेकी सामर्थ नहीं रही--और वह कुछभी समझ नहीं सके। फिर यह समझा, कि विधाताने सुर, असुर और मनुष्य, सबोंको मंथन करके इस विशालाक्षी का रूप आविष्कार किया है; क्योंकि त्रिलोक भरमें इसके रूपकी शोभा की उपमा नहीं है। उस कन्याराणीको देखतेही सुकुलीन राजा, काटनेवाले मदन वाणसे घायल होकर सोचने लगे। वह कठोर कामाग्निसे जल कर दग्धभावयुक्त उस मनोहर कन्यासे समझानेकी वातोंमें बोले, कि ऐ रम्भोरु! तुम कौन? किसकी बेटी हो? यहां क्यों खड़ी हो? ऐ सुन्दरि! तुम इस निर्ज्जन वनमें क्योंकर अकेली रहा करती हो? तुमको सर्व्वाङ्ग सुन्दरी और सर्व्व आभूषणोंसे बनीठनी देखता हूं। ऐ सुन्दरि! तुम्ही इन सब आभूषणोंकी प्रार्थनायें ग्य आभूषणकी भांति हुई हो। तुम देवकन्या, यक्षकन्या, राक्षसकन्या, नागकन्या, गन्धर्व्वकन्या, वा मानवकन्या, जान नहीं पड़ती हो। ऐ मदगर्व्विते! मैंने जितनी स्त्रियां देखीं वा जिनकी कथा सुनी है, उनमें कोईभी तुम्हारे सदृश जान नहीं पड़ती। ऐ सुमुखी! पद्मपलाश समान दो आंखोंसे सुशोभित और चन्द्रमासे भी कोमल तुम्हारे मुखको लखकर मैं मदनसे मथा जाता हूं। महीपाल कामपीड़ित होकर निर्ज्जन वनमें उस बालासे इस प्रकार बोले, पर उस कन्याने कुछभी उत्तर नहीं दिया। पृथ्वीनाथके बार बार उस प्रकार कहने पर वह प्रशस्तनयना इस प्रकार अन्तर्हित हुई, कि जिस प्रकार बिजली मेघके भीतर छिप जाती है। भूपाल उस पद्मपलाशलोचना बालाको ढूंढ़नेके लिये वावलेकी भांति उस वनके चारों ओर घूमने लगे। इसके अनन्तर वह उसको न देखकर अनेक प्रकारसे बिलपनेके पीछे क्षण भर चुप ही रहे।

चैत्ररथपर्व्वमें एकसौ बहत्तर अध्याय समाप्त।

गन्धर्व्व बोले, कि अनन्तर उस नारीके अदृश्य होने पर शत्रुकुलनाशी भूपाल काममोहित होकर धरती पर गिर पड़े। तब सुन्दरहासिनी प्रशस्त पृथुल-नितम्बिनी तपती नाम्नी वह कन्या फिर उनको दिखाई दी और कामवश, कुरुवंशी-श्रेष्ठ भूपालसे मुसकिराती हुई मीठी, बातोंमें बोली, कि हे शत्रुनाशि! उठो, उठो, तुम्हारा मङ्गल होवे, तुम भूमण्डल भरमें प्रसिद्ध प्रधान भूप हो, तुमको मोहवश होना नहीं चाहिये। तब राजाने यह मीठी बात सुनकर उस नितम्बिनीको ही सामने देखा। अनन्तर मदनकी जलनसे जलाचित्त यह भूपाल श्यामल अपाङ्गयुक्त उस कामिनीसे तुतली बोलीमें बोले, कि ऐ नीलनेत्रे! मैं कामवश होकर तुम्हारी भजना कर रहा हूं, तुम मुझ पर सद्भावसे प्रसन्न होओ, मेरा प्राण निकल रहा है। हे कमल गर्भभूते विशालाक्षि! मदन मुझको तुम्हारे लिये ही तेज पञ्च वाणोंसे बिद्ध कर रहा है, किसी प्रकार शान्त नहीं होता है। हे भद्रे प्रफुल्लचित्ते अनङ्गरूपी घोर भुजङ्ग मुझको काट रहा है। हे वरानने पीनायतश्रोणि! तुम उस कठोर सर्प विषसे मेरी रक्षा करो। हे किन्नर गीतानुरूप भाषिणी! मनोहर सर्व्वाङ्ग सुन्दरी पद्मजानने चन्द्रवदने! अब मेरा जीवन तुम्हारे हाथमें है। ऐ भीरु! तुम्हारे विना मैं जी नहीं सकूगा। ऐ पद्मपलाक्षि! रतिपति मुझको बहुत विद्धकर

रहा है। ऐ विशालाक्षि! मुझ पर कृपा प्रगट करो। हे असित अपाङ्गि। मैं तुम्हारा भक्त हूं, हे अङ्गने! मुझको त्याग देना तुमको नहीं चाहिये, हे भाविनि प्रीति-योगसे मेरी रक्षा करना तुमको अत्यन्त उचित है, क्योंकि तुम्हें देखकर स्नेह आजानेसे मेरा चित्त डोल रहा है। ऐ कल्याणि! तुम्हारी सुन्दरता देखकरके दूसरी स्त्री देखनेकी मेरी अभिलाषा नहीं होती। हे भाविनि। मैं तुम्हारे वशमें हो जाता हूं, तुम प्रसन्न हो़ओ; इस अधीन भक्त जनकी भजना करो। ऐ वरारोहे विशालाक्षि अङ्गने। मदनने कठोरवाणोंने मेरा मर्म्मभेद किया है। ऐ कमललोचने! मेरा शरीर कामाग्निसे जल रहा है, तुम प्रेमसंयोगके जलसे उसको ठण्ढाकर दो। ऐ भाविनि! तुम्हारे दर्शनसे उपजा हुआ कठिन कामदेव कठोर पञ्चवाणोंसे मुझको विद्ध कर रहा है, तुम आत्मदान कर उसको आरोग्य करो। ऐ वराङ्गने। गन्धर्व्व विधिके अनुसार मुझसे विवाह कर लो। ऐ रम्भोरु। कहा है, कि सब विवाहोंसे गान्धर्व विवाह ही श्रेष्ठ है। तपती बोली, कि हे महाराज। आत्मदानमें मेरी प्रभुताई नहीं है। क्योंकि मेरे पिता विद्यमान हैं। यदि मुझपर तुम्हारे चित्तकी प्रीति हो, तो पितासे प्रार्थना करो। हे नरनाथ। मैंने जिस प्रकार तुम्हारा चित्त चुरा लिया है, तुमनेभी देखतेही वैसेही मेरे हृदय पर कोमल बर्त्ताव किया है। हे नृपश्रेष्ठ! स्त्री मात्रही स्वाधीन नहीं है, सो अपनी देह पर अधिकार न रहनेसे मैं तुम्हारे पास नहीं गयी; नहीं तो जिनकी कुलीनता सर्व्वलोकोंमें प्रगमित है उन भक्तप्यारे लोकनाथ भूपालकी कौन कन्या पति प्राप्त करना न चाहती होगी? अतएव तुम योग्य समय आने पर मेरे पिता आदित्यको प्रणाम और नियम पूर्व्वक उपासना कर उनसे मुझे मांगना। हे शत्रुनाशी महाराज! यदि पिता मुझको तुम्हें दान करनेको सम्मत होवें तो मैं सदा तुम्हारी वशीभूत बनी रहूंगी। हे क्षत्रियवर। मेरा नाम तपती है। मैं इन लोक प्रकाशक, आदित्यकी कन्या और सावित्रीकी छोटी बहिन हूं।

चैत्ररथ पर्व्वमें एकसौ तिहत्तर अध्याय समाप्त।

गन्धर्व्व बोले, कि अनिन्दित रूपवती तपती यह कहकर उसी क्षण ऊंचेको चढ गयी। राजा फिर उस भूमि पर गिर पड़े। इधर मन्त्री उनके सहगामी और सम्पूर्ण सेना योधोंके साथ राजाको ढूढ़ते हुए उस बड़े वनके भीतर उनको ऐरावतकी भांति धरती पर पड़े पाया। उस बड़े चापधारी भूपालको बिना आश्रय भूतलपर लोटते देखकर मानो आगसे भुन गये। आगे सम्मान पूर्व्वक वेगसे निकट जाकर काम-मोहित भूपाल-श्रेष्ठको इस प्रकार भूमि परसे उठा लिया, कि जैसे पिता पुत्रको उठावें। प्रज्ञा अवस्था, कीर्त्ति और नीतिमें वृद्ध उन मन्त्रीने उनको उठाकर अपनी पीड़ा दूरकी। अनन्तर वह उठे हुए पृथ्वीनाथसे कल्याणयुक्त मीठी बातोंमें बोले, कि हे तात मनुजशार्दूल। आपका मङ्गल होवे, आप भय न मानें। आगे उन भूपालको जो रण भूमिमें शत्रुओंको गिराते हैं थके मांदे और भूखे प्यासे समझा, वह पद्मगन्धयुक्त ठंढे जलसे उनकी धूलसे रंगी हुई और मुकुटहीन खाली देहको धोने लगे। अनन्तर बलिष्ठ भूपने एक उन मन्त्रीके बिना सब दूसरोंको बिदा कर दिया। सब सेनाओंके राजाकी आज्ञासे चले जाने पर राजा फिर उस पर्व्वत पर बैठे। अनन्तर वह शत्रुदमन महाराज पर्व्वतवर शुद्ध आचारके साथ सूर्य्यकी उपासना करनेके लिये दोनों हाथ जोड़के सिर ऊंचा कर खड़े रहे और मनही मनमें ऋषियोंमें

सिष्ठको स्मरण करने लगे। हे नराधिप! अनन्तर दिनों रात इस प्रकार खड़े रहने पर बारहें दिनको वसिष्ठजो वहां आये विशुद्धात्मा धर्म्मशील महर्षि योगवलसे उन संयतचित्त भूपालका चित्त तपतीसे हरा गया जान कर उनका कार्य्य पूरा करनेके लिये सम्भाषण-पूर्व्वक समझाया।

अनन्तर सूर्य्यप्रकाशधारो भगवान ऋषि सूर्य्यसे मिलनेके लिये भूपालके सामनेही ऊपरको चढ़ गये, दोनों हाथ जोड़के सहस्रांशुके निकट पहुंच कर यह कहके अपना परिचय दिया, कि मैं वसिष्ठ हूं। अति तेजस्वी विवस्वान, मुनिवरसे बोले, कि हे महर्षे! तुम्हारा आना शुभ होवे, कहो, क्या चाहते हो। हे महाभाग वाग्मीवर। तुम मुझसे जो कुछ प्रार्थना करोगे, वह बड़ी दुर्लभ भी होवे, तो मैं तुम्हारे उस वाञ्छित वस्तु को दे दूंगा। महातपस्वी ऋषि वसिष्ठ सहस्रांशु विवस्वान की वह बात सुनकर उनको प्रणाम करके बोले, कि हे विभावसो! सावित्रीसे छोटी आपकी जो तपती नाम्नी कन्या है; मैं उसको राजा सम्बरणके निमित्त प्रार्थना करता हूं। हे आकाशपते। वह राजा अति कीर्त्तिशाली धर्म्मार्थ तत्त्वोंके जाननेवाले और उदारबुद्धि हैं, सो वह आपको पुत्रीके पति होनेके योग्य वर हैं। दिवाकर ऋषिकी यह बात सुनकर सम्प्रदान करना ठान कर आदरपूर्व्वक उस विप्रसे बोले, कि हे मुने। राजा सम्बरण भूपोंमें श्रेष्ठ हैं, तुम मुनियोंमें श्रेष्ठ हो, और तपती भी नारियोंमें श्रेष्ठा है; अतएव सम्प्रदानके विना, और क्या विचार हो सकता है? अनन्तर सूर्य्यदेवने स्वयं ही सम्बरणके निमित्त महात्मा वसिष्ठके निकट सर्व्वाङ्गसुन्दरी तपतीको दे दिया।

महर्षि वसिष्ठ तपतीको लेकरके सूर्य्यसे विदा होकर उस स्थानको लौट गये, जहां प्रख्यात कीर्त्तिशाली कुरुश्रेष्ठ सम्बरण थे। वह कामसे जले भुने और तपतीके कारण हृदय जलाये राजा देवबालाके समान सुन्दरहासिनी तपतीको वसिष्ठके संग आते देखकर अति प्रसन्न होकर शोभा पाने लगे। वादलसे गिरी हुई बिजली जिस प्रकार दशों दिशाको उजालेसे भर देती है, वैसेही सुन्दरी तपतीने आकाशसे उतरकर अपनी शोभासे दिशाओंको सुशोभित किया। राजाका बारह रात्रियोंका कठोर नियम अन्त होने पर विशुद्धात्मा भगवान ऋषि वसिष्ठ वहां आये। भूपाल सम्बरणने इस प्रकार तपस्यासे वरदाता ईश्वर सूर्य्यदेवकी उपासना कर महर्षि वसिष्ठके तेजबलसे तपनपुत्री तपतीको स्त्री प्राप्त किया, अनन्तर उन नरसिंहने वसिष्ठकी आज्ञासे देव गन्धर्व्वोंसे सेवा किये जाते हुए उस श्रेष्ठ पर्व्वतही पर तपतीसे विधिपूर्व्वक विवाह किया। आगे उस पहाड़ही पर विहार करनेके अभिलाषी होकर मन्त्री पर नगर राज्य वाहन और सेना आदिके रक्षाकी आज्ञा की। अनन्तर वसिष्ठ उनको जता करके निज स्थानको पधारे। नरदेव सम्बरण देवोंकी भांति उस पर्व्वत पर विहार करने लगे। उन्होंने बारह वर्षतक उस पर्व्वतके वन और उपवनोंमें विहार किया था। हे भारतश्रेष्ठ। सहस्रनेत्र इन्द्रने उनकी राजधानी और राज्यमें बारहवर्षतक वर्षा नहीं की। हे शत्रुनाशि। तब वृष्टि न होनेसे स्थावर जङ्गम और सब प्रजा क्षय पाने लगी। विना वृष्टि ऐसा कठोर काल आन पड़ा; कि उनदिनों पृथ्वी पर हिम तक नहीं गिरा, सो भला अनाज उपजनेकी कौनसी सम्भावना रहेगी? प्रजा भूखसे विकल और भूली भटकीसी बनकर इधर उधर घूमने फिरने लगी। राज्य और राजधानीके लोग सदा भूखे रहनेके कारण आपसकी मर्य्यादा खोकर स्त्री पुत्र आदि

परिवारोंको छोड़ने लगे। वह देश भूखे तथा मुर्झाए हुए जनोंसे पूरित होकर प्रेत-राजके नगरके समान प्रेत-पूरित प्रतीत होने लगा। हे राजन्!—मुनिश्रेष्ठ भगवान् वसिष्ठ उनके राज्यको उस दशामें देखकर उसे रक्षा करनेकी चेष्टा करने लगे। वह वर्षोंतक तपतीके साथ अन्यत्र रहते हुए उस पृथ्वीनाथको लिवाय लाये अनन्तर नृपशार्दूलके पुरमें प्रविष्ट होने पर असुरनाशी प्रभु इन्द्रने उस राज्यपर कृपादृष्टि करी—यथानियम जल वृष्टि कर अनाज उप-जाने लगे। जितेन्द्रिय भूपश्रेष्ठके राज्यकी मङ्गल-चिन्तामें नियुक्त रहने पर सम्पूर्ण प्रजा अति प्रसन्न हुई। अनन्तर नरपति सम्बरणने स्त्री तपतीके साथ बारह वर्ष तक ऐसा यज्ञ किया कि जैसा शचीपतिने शचीके साथ किया था। हे पार्थ! उस तपती नाम्नी तपन-कन्याके वंशमें तुमने जन्म लिया है, इसी लिये, तुमको तापत्य कहके पुकारा है। हे शत्रु-सन्तापन। राजा सम्बरणने उस तपतीसे कुरु नामक पुत्रका जन्म दिया था। उस कुरु-वंशमें तुम्हारे जन्म लेनेके कारण तुम तापत्य कहे जा सकते हो।

चैत्ररथपर्व्वमें एकसौ चौहत्तर
अध्याय समाप्त।

वैशम्पायनजी बोले, कि हे भरतवंशश्रेष्ठ! अर्ज्जुन गन्धर्व्वसे वह कथा सुनकर परम भक्ति-पूर्व्वक पूर्ण चन्द्रमाकी भांति शोभा पाने लगे। महा चापधारी कुरुश्रेष्ठ, अर्ज्जुन वसिष्ठके तपोबलसे अचरज मानकर गन्धर्व्वसे बोले, कि मित्र! तुमने जिन ऋषिका नाम वसिष्ठ कहके कहा है, मैं उनका वृत्तान्त सुना चाहता हूं, तुम आद्योपान्त कहके सुनाओ। हे गन्धर्व्वनाथ! सखसे बोलो, कि वह भगवान् ऋषि, जो हमारे अगले पुरुषोंके पुरोहित थे कौन थे। गन्धर्व्व बोले, कि ऋषि वसिष्ठ ब्रह्माके मानस-पुत्र हैं; उनकी पत्नीका नाम अरुन्धती है, जिस काम और क्रोध पर देवोंने भी जय नहीं पायी है, वे दोनों (इनकी) तपस्यासे परास्त हो सदा पांव दाबकर फिरते थे। अति क्रोधित होने परभी उन उदार चित्त महर्षिने कुशिक-वंशको उखाड़ (नहीं) डाला था। वह महात्मा विश्वामित्रसे पुत्र नाश-रूपी खेद पाकर शक्ति रहनेके कारण कठोर कार्य्यमें प्रवृत्त नहीं हुए थे; उन्होंने यमालयसे मृतपुत्रोंको न लौटा लाकर यमराजकी मर्य्यादाको इस प्रकार रक्षा की थी, कि जैसे समुद्र अपने तटको नष्ट नहीं करता है। इक्ष्वाकुवंशके भूपालोंने उन जितेन्द्रिय महात्माको प्राप्त कर इस धरती भरका पूरा अधिकार लाभ किया था। हे कुरुनन्दन! उन सब राजाओंने ऋषिश्रेष्ठ वसिष्ठको पुरोहित पाकरकेही नाना यज्ञ किये थे। हे पाण्डव श्रेष्ठ! उन्होंने उन महाराजोंकी यज्ञक्रिया इस प्रकार निर्व्वाह करायी थी, कि जिस प्रकार बृहस्पति देवोंका यज्ञ कराते हैं। अतएव तुमभी धार्म्मिकवर वैदिक धर्म्मके जानकार कोई पुरोहित ढूंढो! हे पार्थ! पृथ्वी जय करनेकी इच्छा रखने वाले क्षत्रियोंको राज्य वृद्धिके लिये पहिले पुरोहित नियुक्त करना चाहिये, क्योंकि पृथ्वीजयेच्छुक राजाका ब्राह्मणको सामने रखना उचित है। अतएव धर्म्म, काम और अर्थके तत्वज्ञ जितेन्द्रिय विद्वान् और गुणवान कोई ब्राह्मण तुम्हारे पुरोहित होवें।

चैत्ररथपर्व्वमें एकसौ पचहत्तर
अध्याय समाप्त।

अर्ज्जुन बोले, कि निज निज दिव्याश्रमोंमें रहनेवाले विश्वामित्र और वसिष्ठमें क्योंकर आपसमें शत्रुता उभड़ी; वह हमसे कहो। गन्धर्व्व बोले, कि हे पार्थ! यह वसिष्ठ

कथा सर्व्वलोकोंमें पुराण करके कही जाती है, मैं यथार्थ रीतिसे कहता जाता हूं, सुनो। हे भरतश्रेष्ठ! कान्यकुब्ज देशमें कुशिक-पुत्र गाधिके नामसे प्रख्यात एक राजा थे; उन धर्म्मात्माके विश्वामित्र नामके एक पुत्र थे; उन विश्वामित्रकी अनगनि सेना तथा वाहन थे और वह शत्रुओंके मथनेहारे थे। वह एक समय मन्त्रीके साथ घने वनमें और सुन्दर निराली तथा वृक्षोंसे खाली भूमि पर मृग और वाराह विहार करते हुए मृगया करते फिरने लगे। हे नृपश्रेष्ठ! वह मृग पानेकी चेष्टामें थककर और प्याससे बनकर वसिष्ठके आश्रममें जा पहुंचे। ऋषिश्रेष्ठ वसिष्ठने नरश्रेष्ठ विश्वामित्रको आते देखकर, अतिथिकी सेवाके लिये स्वागत किया। हे भारत! उन ऋषिने कुशलक्षेम पूछ करके पाद्य, अर्घ, आचमनीय, वनके फल फूल और पुरोडाश आदि भोजनकी सामग्री देकर उनका आतिथ्य सत्कार किया। हे अर्ज्जुन! महात्मा वसिष्ठकी कामदुघा एक गौ थी; ऋषि जब उस गौको कुछ कामनाकी वस्तु देनेको कहकर दूहते थे, उसी क्षण उसे पाते थे। उस दिन वसिष्ठकी कामनाके अनुसार कामधेनुकी दोहनेपर ग्राम तथा वनकी औषधि, दुग्ध, अमृत समान छओं रस, उन रसयुक्त विशेष विशेष वस्तुओंमेंसे अमृत समान सुमिष्ट बहुविध भोजनकी, पीनेकी, चबानेकी, चाटनेकी, चूसनेकी सामग्री और बड़े बड़े मूल्यवान् वस्त्र और रत्नादि प्राप्त हुए। मन्त्री और सेनाके साथ भूपालने उन सब सम्पूर्ण काम्य वस्तुओंसे सत्कृत होकर अति सन्तोष प्राप्त किया। और उस मनोरमा कामधेनुको देखकर बड़ा अचरज माना। कामधेनुके शरीरकी बनावट बहुत सुन्दर थी, उसका मेरुदण्ड, पूछ और चारों स्तन ऊंचे, पार्श्व और उरुदेश सुन्दर, कान और लिलार स्थूल, आखें स्थूल और मेढककी नाईं ऊंची, थन चौड़ा, पूंछ मनोहर, दोनों कान कीलोंकी समान, सींग देखनेमें बहुतही सुन्दर और सिर तथा गला मोटा और चौड़ा था। हे राजन्! ऐसी सुघर नन्दिनी नाम्नी उस कामधेनुको देखकर भूपाल गाधिकुमार अति सन्तुष्ट चित्तसे उसकी प्रशंसा कर ऋषिसे बोले, कि हे ब्रह्मन्! तुम मुझसे दश क्रोड़ गौ लेकर मुझको यह नन्दिनी दो; अथवा हे महामुने! तुम नन्दिनीको देकरके मेरे राज्यको लेकर भोगो। वशिष्ठ बोले, कि हे अनघ! यह दुधारी नन्दिनी देवता, अतिथि, पितर और यज्ञके लिये रखी गयी है, सो तुम्हारे राज्यको ले करके भी मैं इसको नहीं दे सकता। विश्वामित्र बोले, कि मैं क्षत्रिय तुम तपस्वी और वेद पढ़नेवाले ब्राह्मण हो, प्रशान्तचित्त संयत ब्राह्मणकी सामर्थ कहां? अतएव यदि तुम दश क्रोड़ गौ लेकर मुझे इच्छा की हुई गौ नहीं दोगे, तो मैं अपना धर्म्म नहीं छोड़ूंगा,—बलसे छीन ले जाऊंगा। वसिष्ठ बोले, कि तुम बलिष्ठ क्षत्रिय राजा और भुजवीर्य्य युक्त हो, अतएव तुम जैसा चाहो वैसाही करो, अधिक विचारका प्रयोजन नहीं है। गन्धर्व्वराज बोले, कि हे पार्थ! विश्वामित्र उनकी उस बातको सुनकर सूर्य्य चन्द्रमा सी प्रकाशमती उस नन्दिनीको कोड़ाकी मारसे कातर कर और इधर उधर बांध बांध कर बलसे हर ले जानेको उद्यत हुए। हे पार्थ! कल्याणी नन्दिनी हम्बा शब्द करती हुई भगवान् ऋषि वसिष्ठके सामने आकर ऊंचे मुंह करके खड़ी रही और बहुत खदेड़ी जाकरके भी उस आश्रमसे नहीं गयी! तब वसिष्ठ बोले, कि ऐ भद्रे नन्दिनी! तुम बार बार जो चिल्लाती हो, वह मैं सुनता हूं, पर ऐ भद्रे! जब राजा विश्वामित्र तुमको बलसे हर रहे हैं, तब मैं क्या करूंगा! क्योंकि मैं क्षमाशील ब्राह्मण हूं।

गन्धर्व्वराज बोले, कि हे भरतश्रेष्ठ। नन्दिनी विश्वामित्र और उनकी सेनाओंके भयसे घबराकर वसिष्ठके बहुत निकट आगयी और बोली, कि हे भगवन्। मैं विश्वामित्र-की भयानक सेनाओंके कोड़ोंकी मारसे घायल होकर अनाथकी समान रो रही हूं, आप मेरी क्यों उपेक्षा कर रहे हैं? गन्धर्व्वराज बोले, कि नन्दिनी कातर होकर इस प्रकार रोने लगी, पर नियमशील महामुनि तिस परभी क्षुब्ध वा अधीर नहीं हुए। वह नन्दिनीसे बोले, कि क्षत्रियका बल तेज और ब्राह्मणका बल क्षमा है; सो मैं क्षमा गुणसे आक्रष्ट हो रहा हूं, सो यदि तुम चाहो, तो जाओ। नन्दिनी बोली, कि हे भगवन्! क्या आपने मुझको त्याग दिया, कि ऐसा कहते हैं। हे ब्रह्मन्। आपके न त्यागनेसे मुझको कोई बलपूर्व्वक नहीं लेजा सकेगा, वसिष्ठ बोले, कि हे कल्याणि। मैं तुमको नहीं त्यागता हूं, यदि तुम रह सको तो रह जाओ, वह तुम्हारे बछड़ेको कठिन रस्सीसे बांध कर ले जा रहा है।

गन्धर्व्वराज बोले, कि दुधारी नन्दिनी तब वसिष्ठकी "रह जाओ" यह बात सुनतेही सिर और गला ऊपर उठा कर भयानक मूर्त्ति धरकर क्रोधके मारे नेत्र लालकर बार बार हम्बा रव करती हुई विश्वामित्रकी सेना-ओंको चारो ओर खदेड़ने लगी। तब फिर सेनाओंके कोडोंकी मारसे घायल होकर और चारो ओरसे बधी जाकर अति क्रोधित होकर जलती हुई देहको दुपहरके सूर्य्यकी भांति देखनेके अयोग्य बनाया और पूंछसे बार बार बड़े बड़े अङ्गारोंकी वृष्टि करने लगी; आगे पूंछसे पह्नवगण, थनसे द्राविड़ और शकगण, गोबरसे काञ्चीगण, पार्श्वभागसे शबर-गण और फेनसे पौण्ड्र किरात, यवन, सिंहल, बर्बर, खस, चिवुक, पुलिन्द, चीन, हुन, केरल आदि नाना म्लेच्छोंको बनाया। नाना वेश पहिनने वाले, नाना अस्त्र धरे हुए, वह सब उपजे हुए म्लेच्छोंकी सेना उसक्षण उत्साहित होकर विश्वामित्रके सामनेही इधर उधर फैल गयी, और उनमेंसे पांच पांच वा सात सातने विश्वामित्रके एक एक योद्धेको घेर लिया। आगे विश्वामित्रके देखतेही देखते उनकी सेना उन लोगोंको गहरी अस्त्र-वृष्टिसे घायल होकर और भय खाकर इधर उधर भागने लगी। हे भरतश्रेष्ठ। वसिष्ठकी सेनाने युद्धमें पूर्ण क्रोधित होने परभी विश्वामित्रकी सेनामें किसीके प्राण नष्ट नहीं किये, नन्दिनी ने केवल उनको दूरको खदेड़ा। वे तीन योजन दूर भगायी जाकर घबराहटके मारे रोने लगीं और ऐसा किसीकोभी नहीं देखा, कि उनकी रक्षा करे। तब विश्वामित्रने ब्रह्मतेजकी उस बड़ी आश्चर्यलीलाको देखकर क्षत्रियधर्म्मसे विरक्त होकर यह कहा, कि क्षत्रिय-बलपर धिक्कार है, ब्रह्मतेजका बलही बल है, बलाबल निश्चय करना है। तो तपस्याही उत्कृष्ट कही जायगी। अनन्तर उन्होंने बड़े भारी राज्य और प्रज्वलित राजलक्ष्मीको छोड़ करके भोगसे विरत होकर तपमें मन लगाया। आगे तपमें सिद्ध और प्रदीप्त तेजस्वी होकर अपने तेजसे तीनों लोकोंको छायकर सम्पूर्ण लोकोंको तापित करके ब्राह्मण बने। आगे उन कुशिकनन्दनने इन्द्रके साथ सोमरस पान भी किया था।

चैत्ररथ पर्व्वमें एकसौ छिहत्तर अध्याय समाप्त।

गन्धर्व्वराज बोले, कि हे पार्थ! कल्माष-पाद नामक अनुपम तेजपूर्ण इक्ष्वाकुवंशी एक राजा थे। एक समय वह मृगयाके निमित्त नगरसे वनको गये। शत्रु मर्दनेहारे भूपाल घोर वनमें मृग और वराहोंको काटकूट कर

घूमने लगे। वह देरतक ऐसा करके थककर मृगयासे निवृत्त हुए। इसके पहिले प्रतापी विश्वामित्रने उनको यजमान बनाना चाहा था। युद्धमें अजेय राजा कल्माष-पाद भूख प्यासके मारे विकल होकर एकही मनुष्यके चलने योग्य सङ्कीर्ण पथसे चल रहे थे, कि सामने आते हुए ऋषिश्रेष्ठ वसिष्ठपुत्र महात्मा मुनि शक्तिको देखा। वसिष्ठकुलके बढ़ानेवाले महाभाग शक्ति महात्मा वसिष्ठके सौ पुत्रोंमेंसे बड़े थे। राजा उनसे बोले, कि तुम मेरे पथसे हट जाओ। ऋषि मीठी बातोंमें उनको समझा कर बोले, कि महाराज। यह मेरा पथ है। सम्पूर्ण धर्म्मशास्त्रोंमें यह सनातन धर्म्म करके कहा है, कि ब्राह्मणोंको पथ देना राजाका कर्तव्य है। वे पथके लिये आपसमें इस प्रकार बकवाद करने लगे और एक दूसरे को "हटो" यह कहने लगे। ऋषि धर्म्मके पथिक होकर पथसे नहीं हटे, राजाने भी मान और क्रोधके वश मुनिको पथ नहीं दिया। अनन्तर ऋषिके पथ न छोड़ने पर राजाने मोहसे राक्षसकी भांति मुनिके कोड़े मारे। तब मुनिश्रेष्ठ वसिष्ठपुत्रने कोड़ोंकी चोटसे घायल और क्रोधसे अचेत होकर यह कहके उन भूपालको शाप दिया, कि रे नराधम! जोकि मुझ तपस्वीको तूने राक्षस समान मारा, तू आजसे राक्षस होगा, तू नरमांस पर आसक्त होकर पृथ्वी पर टहला करेगा, रे क्षत्रियाधम। अब जा। तपोबलयुक्त शक्तिने यह कह कर पथ छोड़ दिया। इससे पहिले उस कल्माषपाद राजाको याजन-क्रियाके विषयमें विश्वामित्र और वसिष्ठमें आपसकी शत्रुता हो गयी थी, इसलिये विश्वामित्र वसिष्ठको लक्ष्य कर राजाके निकट गये। हे पार्थ। राजा और शक्ति उस प्रकार झगड़ रहे थे कि ऐसे समय कठोर तपस्वी प्रतापी विश्वामित्र उनके समीप जा पहुंचे। अनन्तर नृपश्रेष्ठ कल्माषपादने वसिष्ठके समान तेजस्वी ऋषि शक्तिको वसिष्ठ पुत्र करके जाना। हे भारत। आगे विश्वामित्र अपनी प्रिय इच्छाको सिद्ध करनेके लिये अपनेको अन्तर्हित करके उन दोनोंको नाघ गये। नृपोत्तम कल्माषपादने शक्तिसे शापग्रसित होकर उनको प्रसन्न करनेके लिये उनकी उपासना कर शरण ली। हे कुरुश्रेष्ठ। विश्वामित्रने उन राजाके भावको समझकर राक्षसको उनके शरीरमें घुसनेकी आज्ञा दी? किङ्कर नामक राक्षस उन विप्रर्षिके शाप और विश्वामित्रकी आज्ञासे राजाके शरीरमें जा घुसा। हे शत्रुदमन! मुनिश्रेष्ठ विश्वामित्र राजाको राक्षस जानकर वहांसे चले गये। हे पार्थ। राजा शरीर स्थित राक्षससे अत्यन्त पीड़ित होकरके कुछ समझ नहीं सके। अनन्तर वह वनको लौट जा रहे थे, कि ऐसे समयमें भूखे एक ब्राह्मणने उनको देखकर उनसे मासयुक्त भोजनकी सामग्री मांगी। मित्र पालनेवाले राजा उससे बोले, कि हे ब्रह्मन्। मुहूर्त भर यहां ठहर कर मेरे लौटनेकी बाट देखते रहें, मैं लौट कर आपको इच्छानुरूप भोजन दे दूंगा। राजा यह कर चले गये। ब्राह्मण वहां राजाकी प्रतीक्षामें ठहरे रहे। हे पार्थ। महानुभव महाराजने सुखसे मनमाना घूम-घाम कर लौट करके अन्तःपुरमें प्रवेश किया। आगे वह आधी रातको उठकर ब्राह्मणसे स्वीकार किये हुए विषयको स्मरण कर उसी क्षण रसोइयेको बुलवाकर बोले, कि उस वनमें एक ब्राह्मण भोजनकी इच्छासे मेरी बाट ताकते हैं, तुम अब वहां जाकर उनको मास-सहित अन्न दे आओ।

गन्धर्व्व बोले, कि रसोइयेने राजाकी आज्ञाको सुनकर कहीं मास न पाकरके पीड़ितचित्त होके उनसे वह बात कह सुनायी। राजा राक्षसयुक्त थे, सो विनासोच समझके

वार वार कहा, कि तुम नरमांस लाकर उस ब्राह्मणको खिलाओ। रसोइया "तथास्तु" कहकर वेगसे बिना भय वध्यघातियोंके घरमें जाकर नरमांस लाया। आगे अन्नके साथ उस नरमांसको विधिपूर्वक पका कर बिना विलम्ब उन भूखे तपस्वी ब्राह्मणके निकट जाकर उनको दे दिया। ब्राह्मणने सिद्ध नेत्रोंसे उस अन्नको देखकर क्रोधियुक्त नेत्रोंसे कहा, कि यह अन्न भोजन योग्य नहीं है; जिस नृपाधमने मुझको भोजनके अयोग्य अन्न दिया है, उस मूर्खको नरमांस पर लालसा होगी, पहिले ऋषि शक्तिने जैसा कहा था; वैसाही होगा—यह राजा नरमांस पर आसक्त होकर जीवोंमें घबराहट लाकर इस पृथ्वीपर घूमा करेगा। इस प्रकार राजा पर दूसरी-वार शाप लगनेसे वह अति बलयुक्त हुआ; उससे राजाने शरीरमें घुसे हुए राक्षसके बलसे चेत खो दिया। हे भारत। अनन्तर राक्षससे इन्द्रियोंके चुराये जाने पर नृपश्रेष्ठ कुछ-काल पीछे शक्तिको देखकर बोले, कि तुमने मुझको अनुचित शाप दिया है, सो मैं पहिले तुम्हींसे आरम्भकर मनुष्य खानेको प्रवृत्त होता हूं। राजा यह कह कर उसी-क्षण उनके प्राण नष्ट कर उनको इस प्रकार खा गये, कि जैसे व्याघ्र मनमाने पशुको खा लेता है। विश्वामित्र वसिष्ठ-पुत्र शक्तिको मरते देख कर वार वार राक्षसको वसिष्ठ-जीके पुत्रोंको खानेकी आज्ञा देने लगे। वह राक्षसयुक्त राजा क्रोधित होकर महात्मा वसिष्ठके दूसरे पुत्रोंको क्रमसे इस प्रकार खा गये, कि जैसे सिंह छोटे मृगको खाले। वसिष्ठने विश्वामित्रके द्वारा उन पुत्रोंके नष्ट होनेकी बात सुनकर पुत्र-विछोहके कठोर शोकको इस प्रकारसे सहन किया, कि जैसे महाद्रिका भार धरती सम्हाले। उन महा-मति मुनिश्रेष्ठने आत्मघात करना निश्चय किया, पर तौभी कौशिक वंशके उखाड़नेकी चेष्टा नहीं की। उन्होंने सुमेरुकी चोटी परसे अपनेको गिराया पर उससे उनको कोई क्लेश नहीं पहुंचा, उनका पर्वतपरके पत्थर की ढेर पर गिरना मानों रूईके फाहे पर गिरनेके सदृश हुआ। हे पाण्डव। वह भगवान् महर्षि पहाड़की चोटी परसे गिरकर न मरनेके हेतु महावनमें आग बाल कर उसमें जा घुसे। परन्तु तब जलती हुई आगने तेजसे जलने परभी उनको नहीं जलाया। हे शत्रुनाशि। उनको वह आग ठण्ढी जान पड़ी। अनन्तर पुत्र शोकसे विकल महामुनि समुद्र देखकर अपने गलेमें भारी पत्थर बांध करके उसके जलमें जा गिरे, उसपरभी न डूब कर समुद्रकी लहरके बलसे तट पर उठाये गये। तब किसी प्रकार उनकी मृत्यु न होने पर वह दुःखी चित्तसे आश्रमको लौट गये।

चैत्ररथ पर्व्वमें एकसौ सतहत्तर
अध्याय समाप्त।

गन्धर्व्व बोले, कि अनन्तर भगवान् मुनि अपने आश्रमको पुत्रोंसे खाली देखकर अति दुःखी चित्तसे फिर आश्रमसे निकले। हे कौरवनन्दन पार्थ! वह शोकयुक्त ऋषि वर्षामें नये जलसे भरी हुई एक बहती हुई नदीको तट परके नाना वृक्षोंको हरते देखकर फिर सोचने लगे कि मैं इस जल में डूबकर प्राण छोड़ूं। आगे उन्होंने रस्सीसे अपनेको दृढ़रूपसे बांधकर उस बड़ी नदीके जलमें डुबाया। हे शत्रुबल-मर्द्दनेहारे। तब उस नदीने उनकी रस्सीको काटकर बन्धनको तोड़के स्थल पर छोड़ दिया, इससे उन्होंने बन्धनसे मुक्तहो और उठकर उस नदीका "विपाशा" नाम रखा। अनन्तर वह शोकसे विकल एक स्थान पर रह नहीं सके; पर्व्वत, नदी और तालोंमें घूमने फिरने लगे। एक समय

हैमवती नाम्नी नदीको अति क्रोधी हिंसक जलजन्तुओंसे भरी हुई और भीषणाकार देखकर उसके सोतेमें जा गिरे। वह बड़ी नदी विप्रवरको अग्निवत् अनुभव कर सैकड़ों भागोंमें द्रुतवेगसे वह चली इस लिये तभीसे उस नदीका नाम "शतद्रू" प्रसिद्ध हुआ है। महर्षि उस भयानक नदीमें गिरकेभी अपनेको स्थल पर उठाये जाते देखकर यह समझ करके कि "इच्छानुसार प्राणत्याग नहीं कर सका," फिर आश्रम की ओर चले। वह भांति-भांतिके पर्व्वत और देशोंसे होकर अन्तमें आश्रमको आ रहे थे, कि ऐसे समयमें अदृश्यन्ती नाम्नी उनकी पुत्रवधू उनके पीछे जा रही थी। तब उन ऋषिने निकट होनेके कारण पीछेसे षड़ङ्गसे अलंकृत पूर्णार्थयुक्त वेदपठनकी ध्वनि सुनकर, पूछा, कि कौन मेरे पीछे आ रहा है। पुत्रवधू बोली, कि हे, महाभाग। मैं शक्तिकी तपोयुक्ता तपस्विनी स्त्री अदृश्यन्ती, आपकी पुत्रवधू हूं। वसिष्ठ बोले, कि पुत्रि। मैंने पहिले शक्तिके मुखसे जिस प्रकार साङ्गवेदकी ध्वनि सुनी थी। अब किसके मुखसे वेद पठनकी वैसी ध्वनि सुन पड़ी? अदृश्यन्ती बोली, कि हे मुने! तुम्हारे पुत्र शक्तिके वीर्य्यसे मेरे गर्भमें एक सन्तान है, वह पुत्र बारह वर्षसे ऐसा वेदाभ्यास कर रहा है, आपने उसीसे वेदकी ध्वनि सुनी है। गन्धर्व्व बोले, कि हे पार्थ! श्रेष्ठ भाग्यमान ऋषिश्रेष्ठ वसिष्ठ अदृश्यन्तीकी उस बातको सुनकर प्रसन्न होकर यह समझ कर, कि "मेरा वंश है," मृत्युकी इच्छासे निवृत्त हुए। हे अनघ! वह लौटकर पुत्रवधुके संग जा रहे थे, कि ऐसे समय निरालेमें बैठे हुए कल्माषपादको देखा। हे भारत! उस कठोर राक्षसयुक्त राजा कल्माषपादने मुनिको देखकर उसीक्षण क्रोधसे उठ करके खा जाना चाहा। अदृश्यन्ती सामने उस कुटिल कर्म्मवालेको देखकर भयसे घबराकर वसिष्ठसे बोली, कि हे भगवन्! वह कठोर राक्षस कठोर दण्डधारी साक्षात यमराजके समान लकड़ी उठाकर इधर आ रहा है। हे सर्व्ववेद-निपुण महाभाग। धरती भरमें आपके बिना कोई भी इसके रोकनेको समर्थ नहीं है। हे भगवन्! इस कठोर भयावने आकारके पापीसे मेरी रक्षा करें। मुझको निश्चय जान पड़ता है, कि वह राक्षस हम दोनोंको खाजानेको उद्यत हुआ है। वसिष्ठ बोले, कि बेटि! भय मत खाओ, राक्षससे कोई भय नहीं है। तुम जिससे वर्त्तमान भय देखती हो, वह राक्षस नहीं हैं, जो कल्माषपाद नामक भूमण्डलमें प्रसिद्ध राजा है, वही इस वनमें अति भयङ्कर आकार धारणकर राक्षसके स्वरूपमें वास कर रहे हैं;

गन्धर्व्व बोले, कि हे भारत। तेजस्वी भगवान ऋषि वसिष्ठने उनको आ गिरते देखकर घोरनादसे रोका। आगे मन्त्रसे पवित्र किये हुए जलसे उनको नहला कर उस घोर शापसे मुक्त किया। वह राजा बारह वर्षतक वसिष्ठपुत्र शक्तिके तेजसे इस प्रकार ग्रसित थे, कि जिस प्रकार सूर्य्य राहुसे ग्रासित होता है, अब शापसे मुक्त होकर ऐसे तेजसे उस बड़े वनको सुशोभित किया कि जैसे सूर्य्यदेव सन्ध्याकालके बादलको रंग देते है। तब राजा ज्ञान प्राप्तकर प्रणाम-पूर्व्वक दोनों हाथ जोड़कर ऋषिश्रेष्ठ वसिष्ठसे बोले, कि हे महाभाग! मैं सुदासराजाका पुत्र आपका यजमान हूं। हे मुनिश्रेष्ठ! कहिं अब आपकी क्या इच्छा है, मैं उसको पूरी कर देता हूं। वसिष्ठ बोले, कि हे मानवेन्द्र! मेरी जो इच्छा थी, वह कालके क्रमसे पूरी हो गयी है; अब तुम राजधानीमें जाकर राज्य शासन करो, फिर कभी ब्राह्मणका अनादर मत करना! राजा बोले, कि हे महाभाग! मैं कभी ब्राह्मणका अनादर

नहीं करूंगा, आपके आज्ञाधीन रहकर ब्राह्मणोंकी भली भांति पूजा करूंगा। हे सर्व्ववेद निपुण द्विजोत्तम! मैं आपसे वह वस्तु पानेकी इच्छा करता हूं, जिससे इक्ष्वाकुवंशके ऋणसे छुटकारा पाजाऊं। हे श्रेष्ठ। आप इक्ष्वाकु-वंशके बढ़ानेवाला रूपगुणशील अच्छा पुत्र मुझको देवें। गन्धर्व्वराज बोले, कि सत्यशील द्विजोत्तम वसिष्ठने यह कहकर कि "पुत्र दूंगा" उन बड़े धापधारी राजासे अङ्गीकार किया। हे मनुजेन्द्र! अनन्तर वसिष्ठ कालानुसार उन राजाके साथ अयोध्या नाम्नी प्रसिद्ध नगरीको गये। प्रजाओंने पापमुक्त महात्मा राजाको आते देखकर इस प्रकार प्रसन्न चित्तसे स्वागत किया कि, जैसे देवगण देवराजको आते देखकर प्रमुदित होते हैं। नरेन्द्रने बहुत दिनोंके पीछे महात्मा वसिष्ठके साथ पुण्य लक्षणोंसे भरी हुई नगरीमें प्रवेश किया। तब अयोध्यावासी जन पुरोहितके साथ उन महीपालको उगे हुए सूर्य्यको भांति देखने लगे। उन भूपतिने अपनी शोभासे अयोध्या नगरीको इस प्रकार छा दिया कि जैसे शरत्कालमें उगा हुआ चन्द्रमा आकाशमण्डलको सुशोभित करता है, उस कालमें राजमार्ग जलसे भिङ्गोया गया और भली प्रकार साफ किया गया था और नगरके स्थान स्थानमें फहराती हुई ध्वजा और पताका शोभ रही थी, सो नगर देखकर राजाका चित्त आनन्दके समुद्रमें डूब गया। हे कुरुनन्दन! तब तुष्ट और पुष्ट जनोंसे छायी हुई वह नगरी भूपाल कल्माषपादसे इस प्रकार शोभा पाने लगी, कि जिस प्रकार अमरावती अमरनाथसे सुशोभित होती है। अनन्तर राजर्षिके अपूर्व पुरीमें प्रवेश करने पर उनकी आज्ञासे देवी राजरानी वसिष्ठको उपासना करने लगी। अनन्तर मुनिश्रेष्ठ वसिष्ठ दिव्यविधिके अनुसार नियम करके उसमें स्थित हुए। अनन्तर राजरानीके गर्भ धारण होनेपर महर्षि राजाके प्रणामसे पूजे जाकर आश्रममें लौट आये। आगे बहुत दिन बीत गये, तिसपर भी रानीको सन्तान नहीं हुई, तब यशस्विनी राजरानीने अश्म अर्थात् पत्थरकी चोटसे कोखको फाड़ डाला। इस लिये बारह वर्षतक गर्भमें स्थित उन पुरुषश्रेष्ठने अश्मक नामक राजर्षि होकर जन्म लिया, कि जिन्होंने पौदन्य नामक नगरको बसाया था।

चैत्ररथ पर्व्वमें एकसौ अठहत्तर

अध्याय समाप्त।

गन्धर्व्वराज बोले, कि हे राजन्! अनन्तर आश्रममें स्थित अदृश्यन्ती दूसरे शक्तिके समान शक्तिका वंशबढ़ानेवाला पुत्र प्रसव किया। हे भरतश्रेष्ठ! मुनिश्रेष्ठ भगवान वसिष्ठने स्वयं उस पोतेकी जातकर्म्मादि क्रिया की। वह पुत्र जब गर्भमें था, तब वसिष्ठने परासु होना अर्थात् जीवन त्याग देना निश्चय किया था, सो वह पराशर नामसे भूमण्डलमें प्रसिद्ध हुए। धर्म्मात्मा पराशर जन्मसे मुनि वसिष्ठको पिता जानकर उनपर पिताके सदृश व्यवहार किया करते थे। हे शत्रु-मंथन कुन्तीनन्दन! एकदिन उन्होंने माता अदृश्यन्तीके सामने विप्रर्षि वसिष्ठको पिता कहके पुकारा, अदृश्यन्ती उनकी मीठी बोलीसे स्पष्टरूपसे पिता कहते सुन करके आंखोंमें आंसू भरकर बोली, कि बेटा। तुम अपने दादाको पिता कहके मत पुकारना। हे पुत्र! एक राक्षसने वनमें तुम्हारे पिताको खा लिया है। हे अनघ। तुम जिनको पिता समझ रहे हो, वह तुम्हारे पिता नहीं हैं, पिताके पिता हैं। सत्यवादी ऋषिश्रेष्ठ पराशरने यह बात सुन करके दुःखी होकर सर्व्व लोकोंको नष्ट करना निश्चय किया। महा तपस्वी, वेदमें पण्डितोंसे श्रेष्ठ, परिणामदर्शी मैत्रावरुणि ऋषि वसिष्ठने उनको सर्व्वलोक नष्ट करनेका प्रण ठानते देख कर रोका, उन्होंने जिस रीतिसे रोका वह कहता हूं, सुनो।

वसिष्ठ बोले, कि पहिले कृतवीर्य्य नामक प्रख्यात भूपालश्रेष्ठ पृथ्वीनाथ वेदज्ञ भृगुवंशके यजमान थे। हे पृथ्वीनाथ। उन्होंने सम-यज्ञके अन्त होने पर अग्रभुक्त ब्राह्मणोंको बहुत धन-धान्यसे सन्तुष्ट किया था। अनन्तर उस नृप शार्दूलके स्वर्गको सिधारने पर उनके वंशके राजाओंको धनका प्रयोजन हुआ। तब वे राजा भार्गवोंके बहुत धन है, जानकर याचकको भांति उनके पास जा पहुंचे। भार्गवोंमेंसे किसी किसीने यह सोचकर कि हमारा धन क्षय न होने पावे धनको धरतीमें गाड़ रखा, किसी किसीने क्षत्रियोंसे भय खाकर अपना अपना धन ब्राह्मणोंको दान दे दिया, किसी किसीने और कुछ समझ कर उन क्षत्रियोंको मनमाना धन दे दिया। ऐ बेटा। अनन्तर किसी क्षत्रियने भार्गवोंके घर खोद कर बहुत धन पाया। तब बड़े चापधारी क्षत्रियलोग सब मिलकर उस अतुल धनको देखकरके शरण लिये हुए भार्गवोंको अनादरपूर्व्वक तेज वाणोंसे मारने लगे, यहां तक कि वे भार्गवोंके गर्भमें स्थित बालकोंको भी नष्टकर पृथ्वी भरमें घूमने लगे। इस प्रकार भृगुवंशके उखड़ जाने पर भार्गवोंकी स्त्रियां भय खाकर जानेके अयोग्य हिमाचल पर भाग गयी। उनमेंसे किसी एक सुन्दरी नारीने पतिकुलकी रक्षाके लिये क्षत्रियके भयसे एक जांघमें अति वीर्य्यवन्त एक गर्भको धारण किया। अनन्तर एक ब्राह्मणीने उस गर्भका हाल जान कर भयके मारे क्षत्रियोंके यहां चल कर कह दिया। क्षत्रिय लोग यह सुनतेही उस गर्भको नष्ट करनेको उद्यत होकर चले और गर्भवती ब्राह्मणीको उसके तेजसे जलती हुई देखा। उस समय गर्भमें स्थित बालक ब्राह्मणीकी जांघको भेद-कर दुपहरके तेज सूर्य्यकी भांति क्षत्रियोंकी आंखे झुलस कर निकला। राजा लोग नेत्रकी विना दृष्टि चली जानेसे मोहके वशमें होकर चलनेको अयोग्य पहाड़को चारों ओर घूमने लगे, आगे दृष्टि प्राप्त करनेकी आशासे उस ब्राह्मणीकी शरण ली। उन्होंने बुझी हुई शिखायुक्त अग्निकी भांति ज्योतिसे हाथ धो और अचेत होकर दुःखी चित्तसे महा भाग्यवती ब्राह्मणीसे कहा, कि हम आपकी कृपासे नेत्र, पावें, तो इस पापकर्म्मसे निवृत्त होकर सब घरको जाय। ऐ शोभने! आप पुत्र-सहित हम लोगों पर प्रसन्न होवें,—आंख देकर इन राजाओंको रक्षा करें।

चैत्ररथपर्व्वमें एकसौ उनासी अध्याय समाप्त।

ब्राह्मणी बोली कि हे पुत्रो! मैं क्रोधित नहीं हुई हूं और न मैंने तुम्हारी दृष्टि हरली है, पर सन्देह नहीं है, कि मेरी जांघसे पैदा हुआ यह भृगुवंशी कुमार तुम पर क्रोधित हुआ है। हे पुत्रो! इस महात्मा बालक-होने बन्धुओंका नाश स्मरण कर क्रोधयुक्त चित्तसे तुम्हारी आंखे हरली है! हे पुत्रो! जब तुमलोग भार्गवोंके गर्भस्थित बालकोंकोभी नष्ट करने लगे, तबसे मैंने सौवर्षतक यह गर्भ धारण किया है। भृगुवंशके फिर हितानुष्ठान के निमित्त छओ अङ्गोंके साथ सम्पूर्ण वेद इस बालकके हृदय-मन्दिरमें प्रविष्ट हुए है। इस बालकने पितरोंके बधके कारण निश्चयही तुम लोगोंको नष्ट करनेकी इच्छा की है; इसीके दिव्य तेजके बलसे तुम्हारी आंखें नष्ट हुई हैं। हे पुत्रो! तुम लोग इस मेरी जांघसे पैदा हुए बालकसे प्रार्थना करो, वह तुम्हारे प्रणामसे प्रसन्न होकर आंखें दे सकता हैं। वसिष्ठ बोले, कि अनन्तर सब राजालोग यह बात सुनकर उस जांघसे पैदा हुए बालकसे कहने लगे, कि "प्रसन्न होवें, प्रसन्न होवें", तब और्व्वने प्रसन्न होकर उनको आंखें दीं। इन साधुश्रेष्ठ विप्रर्षिने उरुको भेदकर जन्म लिया था, इसलिये वह और्व्व नामसे लोकोंमें

प्रख्यात हुए। राजोंके आंखे पाकर अपने स्थानको चले जाने पर भार्गव और्व्वने सर्व्व-लोकोंका परास्त करना निश्चय किया। हे बेटा! भृगुवंशके शत्रुओंको नष्ट करनेको चाहनेवाले महानुभाव भृगुनन्दन और्व्वने सर्व्व-लोक नष्ट करनेके लिये कठोर तपस्यासे नियुक्त होकर अपने मनको सम्पूर्ण रूपसे निविष्ट किया। यह सोचकर कि पितामहोंको आनन्द पहुंचावेंगे कठोर तपसे सुर, असुर और नर इन सब लोगोंको तापित करने लगे। हे बेटा! अनन्तर उनके सब पितर लोग यह जानकर पितृलोकोंसे आन करके कुलके आनन्द देनेवाले, और्व्वसे बोले, कि हे पुत्र और्व्व! तुम तपोबलसे कठोर हुए हो, तुम्हारा प्रभाव हमने प्रत्यक्ष किया है, अब तुम सम्पूर्ण लोकों पर प्रसन्न होओ—अपने क्रोधको त्याग दो। पहिले जब क्षत्रियोंने भार्गवोंको हिंसा की थी, तब जितेन्द्रिय भार्गवोंने अपने बधको तुच्छ समझा था, वे उसके प्रति-विधान करनेमें असमर्थ नहीं थे। आयु बहुत बढ जानेसे जब हमको क्लेश होने लगा, तब हमने स्वयंही क्षत्रियोंसे मारे जानेकी अभिलाषा की थी। इस लिये भार्गवोंने घरमें धन गाड़कर उनको क्रोधित किया था। हे द्विजोत्तम! हम स्वर्ग चाहनेवाले हैं, हमको धनसे क्या प्रयोजन है, कुबेरने हमारे लिये बहुत धन बटोर रखा है। जब हमने देखा, कि मृत्यु किसी प्रकार हमको ले नहीं सकी, तब हमने इस उपायको अच्छा समझा; हे बेटा! आत्मघाती पुरुष शुभलोक नहीं पाता है, इसको आलोचना कर हमने आत्मघात नहीं किया था। हे बेटा! तुमने जो कर्म्म करनेकी इच्छा की है, वह हमारा प्रिय नहीं है। अतएव तुम सर्व्वलोकोंके परास्त करनेकी इच्छा रूपी पाप कर्म्मसे मनको निवृत्त करो। हे पुत्र! तुम हमारे निमित्त अधिक इस जन्ममें क्रोधको त्याग दो, सातों लोक तो दूरकी बात है, क्षत्रियोंकोभी नष्ट मत करना।

चैत्ररथ पर्व्वमें एकसौ अस्सी अध्याय समाप्त।

और्व्व बोले, कि हे पितरो! मैंने क्रोधित होकर सर्व्व लोकोंके विनाशके लिये जो प्रतिज्ञाकी है, वह कभी व्यर्थ नहीं होगी, मैं व्यर्थ क्रोध और व्यर्थ प्रतिज्ञा करना नहीं चाहता। यदि मै इस प्रतिज्ञाको पूरो न करूं, तो क्रोधकी आग मुझको इस प्रकार जलावेगी, कि जैसे अग्नि वनको जलाता है। क्रोध किसी कारणसे आजाय, तो जो उसको रोक लेता है वह कभी पूरी रीतिसे धर्म्म अर्थ काम इन तीन बर्गोंके पालन नहीं कर सकता है और सर्व्वजय चाहनेवाले भूपभी विशेष विशेष स्थानमें क्रोध दिखावें, तो उस क्रोधसे दुष्टका शासन और सुजनका पालन होता है। पहिले क्षत्रियोंने जब भार्गवोंको नष्ट किया था, तब मैंने उरुके भीतर गर्भशय्या पर लेटे रहकर भार्गवोंकी चिल्लाहट सुनी थी। जब क्षत्रिय-कुलपांशु लोग गर्भमें स्थित बालक तक सब भार्गवोंको नष्ट करने लगे, तभीसे मैं क्रोधित हो गया। मेरे पितृगण और पूर्ण गर्भवती माता जब शोकसे विकल और भयसे कातर हुई थीं तब तीनोंलोकमें किसीने उनकी रक्षा नहीं की थी। जब किसीने भृगुपत्नियोंको रक्षा नहीं की, तब मेरी शुभलक्षणयुक्ता इस माताने एक उरुसे मुझको धारणकर रखा था। देखो, इस भूमण्डलमें एक मनुष्य पाप-कर्म्मका नष्ट करने वाला रहे, तो कोई भी पाप कर नहीं सकता, जो लोकोंमें कोई पापकर्म्मका दण्ड करनेवाला नहीं रहे, तो वह तेरे पापकर्म्ममें प्रवृत्त होते हैं। जो जन शक्तिमान और पाप रोकने योग्य होने परभी जान बूझकर पापकर्म्म नहीं रोकता है, वह उस पापमें लिप्त होता है। पर राजाओं

और समर्थजनगण उस पापकर्म्मके रोकनेको सामर्थ रखने परभो इस लोकमें अपने जीवनको अभीष्ट जानकर मेरे पितरोंको रक्षा नहीं कर सके; मैंने इसी हेतु क्रोधित होकर उन सब लोगोंके उस पापकर्म्मका प्रतिविधान करनेका उद्योग किया है, सो आपकी आज्ञा मान नहीं सकता। मैं प्रतिविधानके योग्य होकरभी यदि प्रतिविधानका प्रयत्न न करूं, तो लोकोंपर फिर अत्याचारके कारण बड़ा भय आ पड़ेगा। मैंने जिस क्रोधाग्निसे लोकोंको जलानेकी इच्छा की है, यदि उसे अपने तेजसे रोक लूं, तो वह अग्नि मुझकोही जला मारेगा। हे प्रभुगण। मैं जानता हूं कि आप सर्व्व-लोकोंके हित चाहनेवाले हैं, सो ऐसी आज्ञा करें, कि मेरा और सर्व्वलोकोंका मङ्गल होवे। पितृगण बोले, कि सबही लोक जलपर प्रतिष्ठित हैं, अतएव तुम्हारा जो क्रोधाग्नि सर्व्वलोकोंको खालेना चाहता है तुम उसको जलमें डाल दो, तबही तुम्हारा मङ्गल होगा। हे द्विजश्रेष्ठ। सब रस जलपूर्ण हैं, और सम्पूर्ण जगभी जलपूर्ण है, सो तुम इस क्रोधा-ग्निको जलमें छोड़ दो, तुम्हारा क्रोधाग्नि महासमुद्रमें रहकर जलको जलाने लगेगा। हे विप्र। जब सम्पूर्ण लोक जलपूर्ण हैं, तब तुमने जैसा संकल्प किया है, वह पूरा नहीं होगा। हे अनघ! ऐसा होनेसे तुम्हारी प्रतिज्ञा भी सच्ची ठहरेगी और देव तथा मानवोंको परास्त भी नहीं होना पड़ेगा। वसिष्ठ बोले, कि अनन्तर आर्व्वने अपने क्रोधसे उपजे हुए अग्निको समुद्रमें छोड़ दिया। वह अग्नि समुद्रमें रहकर जल पीया करता है। वेदके जानकार ब्राह्मण लोग जिस महत् वड़वा मुखसे ज्ञात हैं, वह अग्नि वह वड़वा-मुख बनकर उस मुखसे लोकोंमें प्रसिद्ध वाड़-वाग्नि वमन करता हुआ जल पीने लगा। हे ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ पराशर! तुम भी सब परलोकोंसे ज्ञात हो, तुम्हारा मङ्गल होवे, सर्व्व लोकोंका विनाश करना तुमको नहीं सोहता है।

चैत्ररथपर्व्वमें एकसौ एकासी अध्याय समाप्त।

गन्धर्व बोले, कि विप्रर्षि पराशरने महात्मा वसिष्ठको यह सब बातें सुनकर अपना सर्व्व लोकोंको परास्त करनेका क्रोध त्याग दिया। पर वह सर्व्व वेदोंके जानकारोंमें श्रेष्ठ बड़े तेजस्वी शक्तिपुत्र महर्षि पराशर राक्षस-यज्ञ करनेको प्रवृत्त हुए। अनन्तर उस महा-यज्ञके फैल पड़ने पर वह शक्तिका नष्ट होना स्मरण कर उस यज्ञमें बालकसे लेकर बूढ़े तक सम्पूर्ण राक्षसोंको जलाने लगे। वसिष्ठने यह समझ कर कि उनकी दूसरी प्रतिज्ञा भङ्ग करना उचित नहीं है, उनको राक्षस वध करनेसे नहीं रोका। महामुनि पराशर राक्षस-यज्ञमें प्रदीप्त तीनों पावकोंके सामने मानो चौथे पावकके समान सोहने लगे। शक्तिनन्दनने हवनयुक्त शुक्र यज्ञसे इस प्रकार आकाश-मण्डलको प्रदीप्त किया, कि जिस प्रकार दिवाकर बादल दूर होनेसे आकाश मण्डलको प्रकाशयुक्त करते हैं। तब वसिष्ठ आदि सम्पूर्ण महर्षिलोग अपने तेजसे जलते हुए पराशरको दूसरे प्रभाकर समझने लगे। अनन्तर उदार बुद्धियुक्त अत्रि औरोंको करनेके अयोग्य उस यज्ञको पूरा करनेकी इच्छासे उनके निकट आये। हे शत्रुनाश। इसके पश्चात् पुलस्त्य, पुलह और महाक्रतु यह सब राक्षसोंके प्राण बचानेके लिये वहां आये। हे भरतश्रेष्ठ। बहुत राक्षसोंके मारे जाने पर पुलस्त्य शत्रुमथन पराशरसे बोले, कि हे बेटा! तुम्हारे अग्निहोत्र कार्य्यमें विघ्न तो नहीं है? हे पुत्र। क्या तुम उन निर्दोष राक्षसोंको जो तुम्हारे पिताके वधके विषयमें कुछ नहीं जानते, मारकर आनन्द प्राप्त कर

रहे हो? ऐ बेटा! मेरी प्रजाओंको इस प्रकार उखाड़ना तुमको नहीं चाहिये। तपस्वी ब्राह्मणोंका धर्म ऐसा नहीं है। हे पराशर! शान्तिही उनका परम धर्म है, तुम वह धर्म करो। तुमने निष्पाप होकरके अधर्म युक्त कर्ममें हाथ डाला है। यह कर्म करके अपने पिता शक्तिको लङ्घन करना तुमको नहीं सोहता। हे वासिष्ठ! बिना कारण मेरी प्रजाओंको सम्पूर्ण उखाड़ना तुमको नहीं चाहिये, क्योंकि उस कालमें तुम्हारे पिताकाजो अनिष्ट हुआ था, वह केवल उनके अपनेही शापसे हुआ था, वह अपनेही दोषसे इसलोकसे स्वर्गको सिधारे हैं। हे मुने! तुम्हारे पिताको खालेना किसी राक्षसकी सामर्थमें नहीं थी, पर उन्होंने आपही अपनी मृत्यु रची थी, विश्वामित्र इस विषयमें केवल निमित्तही बने थे। हे पराशर! अब शक्ति और राजा कल्माषपाद स्वर्गको सिधार कर सुख लूट रहे हैं और महामुनि वसिष्ठके शक्तिसे छोटे जो सब पुत्र थे, वे भी देवोंके साथ परम आनन्द भोग रहे हैं, हे महामुने! वसिष्ठ सब जानते हैं। हे वासिष्ठ-नन्दन! इस यज्ञमें निर्दोष राक्षसोंका जो नाश होरहा है, तुम केवल उसके निमित्तही बन रहे हो, अतएव तुम यह यज्ञ त्याग दो, तुम्हारा मङ्गल होवे, अब यह यज्ञ पूरा करो। गन्धर्व बोले, कि बुद्धिमान पुलस्त्य और वसिष्ठके महामुनि शक्ति-नन्दनको ऐसा कहनेपर उन्होंने तब उस यज्ञको पूरा किया और सम्पूर्ण राक्षसोंने यज्ञके लिये जो अग्नि प्रज्वलित हुआ था उसको हिमाचल-के उत्तर और बड़े वनमें छोड़ दिया। वहां अभीतक वह दीख पड़ता है, कि वह अग्नि हर त्योहारमें राक्षस, वृक्ष और पत्थरोंको खालेता है।

चैत्ररथ पर्वमें एकसौ बयासी अध्याय समाप्त।

अर्जुन बोले, कि हे मित्र! राजा कल्माषपादने क्यों वेदज्ञश्रेष्ठ गुरु वसिष्ठको प्रति स्त्रीमें नियोग किया था? महात्मा महर्षि वसिष्ठजी क्यों धर्मके जानकार होकर मिलनेके अयोग्य स्त्रीसे जा मिले? क्या वह अधर्मयुक्त प्रवृत्त हुए थे? इस विषयमें मुझे शङ्का हो रही है, तुम उसे दूर करो; गन्धर्व बोले, कि हे दुर्द्धर्ष धनञ्जय! तुमने उस प्रजापालक राजा और वसिष्ठके विषयमें जो कुछ पूछा, वह कहता हूं सुनो। हे भारतश्रेष्ठ! वसिष्ठपुत्र महात्मा शक्तिने जिसप्रकार शाप दिया था, वह मैंने सब सुनाया है। वह शत्रुसूदन भूपाल शापग्रस्त होकर क्रोधयुक्त नेत्रसे स्त्रीके साथ नगरसे निकले, आगे निर्जन वनमें जाकर स्त्रीके साथ घूमने लगे शापग्रस्त भूपाल अनेक प्रकारके मृगोंसे भरे भांति भांतिके वनके जीवोंसे पूर्ण नाना वृक्ष और गुल्म लताओंसे ढपे और घोर शब्दसे गूंजते हुए उस बड़े वनमें घूमते हुए बहुत क्षुधित हुए, वह भोजनकी सामग्री ढूंढ़ते हुए थक गये थे, कि ऐसे समयमें देखा कि उस वनके एक निराले स्थानमें एक ब्राह्मण और ब्राह्मणी मैथुनकर्ममें प्रवृत्त हैं। राजाको देखकरके ही काम पूरा न होने परभी अति भयभीत चित्तसे वह उठ भागे। राजाने उनके पीछे दौड़ कर उस दम्पतिमेंसे ब्राह्मणको पकड़ा। अनन्तर ब्राह्मणी पतिको पकड़ जाते देखकर बोली, कि हे सुव्रत महाराज! मैं जो कहती हूं सुनो। यह सब लोकोंमें प्रसिद्ध है, कि तुमने सूर्यवंशमें जन्म लिया है और प्रमत्त न होकर गुरुकी सेवा भी किया करते हो। हे दुर्द्धर्ष! अब तुम शापग्रस्त हुए हो, इसीसे तुमको ऐसा पाप करना नहीं चाहिये, इस समय मेरा ऋतुकाल आजाने पर मैं पतिसे मिल रही थी, पर मेरा मनोरथ सफल नहीं हुआ है, अतएव हे भूपश्रेष्ठ! प्रसन्न होओ, मेरे पतिको छोड़

हो। ब्राह्मणी यह सब कहती हुई रोने लगी, पर राजाने निर्द्दयी-पनसे उसके पतिको इस प्रकार खा लिया, कि जैसे व्याघ्र मृगको खाता है। तब ब्राह्मणीने क्रोधके मारे भूमि पर जो आंसू गिराये उनसे जलती हुई आग बनकर उस स्थानमें उजाला होगया. आगे पतिके विछोहसे कातर, शोकसे विकल उस ब्राह्मणीने क्रोधके मारे राजर्षि कल्मापपादको यह कह शाप दिया कि, रे नीच। मिलनेके सुखमें मेरा मनोरथ सफल होते न होतेही तुमने कुबुद्धिसे निठुरके समान मेरे सामने हो मेरे प्यारे अति यशोवन्त पतिको मार डाला, सो मेरे शापसे तुम बावले होकर ऋतुकालमें स्त्रीसे मिल करतेही-उसीक्षण प्राण छोड़ोगे। तुमने जिन महर्षिके पुत्रोंको नष्ट किया है, तुम्हारी स्त्री उन्हीसे मिल कर पुत्र प्रसव करेगी। रे नृपाधम। उसी पुत्रसे तेरे वंशकी रक्षा होगी। आङ्गिरा कुलसे उत्पन्न शुभ लक्षणयुक्त वह ब्राह्मणी राजाको यह शाप देकर उनके सामनेही जलती हुई आगमें जा घुसी। हे शत्रुमथन। महाभाग वसिष्ठ तपोबलके कारण ज्ञानचक्षुसे वह सब जान गये।

अनन्तर बहुत दिन पीछे राजर्षि शापसे मुक्त हुए। आगे एक समय मदयन्ती नाम्नी उनकी राणीका ऋतुकाल आन पहुंचा। राजाके उनको ऋतु रक्षाके लिये उद्यत होने पर मदयन्तीने उनको रोका। राजा कामसे मोहित होने परभी शापकी बातको सुनकर बहुत घबराये, और उस शापकी स्मरण करतेही बहुत दुःखी हुए। हे नरवर! शापग्रस्त राजाने इसी हेतु अपनी राणीकी ऋतुरक्षाके लिये वसिष्ठको नियुक्त किया था।

चत्ररथपर्व्वमें एकसो तिरासी
अध्याय समाप्त।

अर्ज्जुन बोले, कि हे गन्धर्व्व। तुम सब जानते हो. सो कहो, कि वेद जाननेवाले कौन ब्राह्मण हमारे पुरोहित होनेके योग्य है। गन्धर्व्व बोले, कि वनके भीतर उत्कोचक नाम तीर्थमें देवलके छोटे भाई धौम्य नामक ऋषि तप कर रहे हैं, तुम चाहो तो उनको पुरोहित बनाओ। वैशम्पायन बोले, कि अनन्तर अर्ज्जुन प्रसन्न होकर उन गन्धर्व्वको विधिपूर्व्वक अग्न्यस्त्र देकर बोले, कि तुम्हारा मङ्गल होवे, तुम्हारे दिये हुए घोड़े अभी तुम्हारेही पास रहें, जब काम पड़ेगा, तब लूंगा। अनन्तर पाण्डवगण और गन्धर्व्व एक दूसरको अभ्यर्थना करके रमणीय भागीरथी तटसे अपने अपने मनमाने स्थानोंको पधारे।

हे भारत। अनन्तर पाण्डवोंने उत्कोचक तीर्थमें धौम्यके आश्रममें जाकर उनको पुरोहित बनाया। वेदज्ञोंमें श्रेष्ठ धौम्यने वनके फलमूलसे उनको पूजित कर पुरोहित होना स्वीकार किया। माताके साथ पाण्डवोंने उन ब्राह्मणको गुरुकी भांति पुरस्कृत कर ऐसा समझ लिया, कि राजलक्ष्मी और स्वयम्बर स्थानमें पाञ्चाली मिल गयी। वे उन गुरुरूपी पुरोहितसे मिल कर अपनको नाथयुक्त समझने लगे, क्योंकि वेदार्थतत्त्वज्ञ जाननेवाले उदार बुद्धियुक्त वह ऋषि उनके गुरु हुए। धर्म्म जाननेवाले, सर्व्व विषयोंके जानकार उन द्विजने भी उनके गुरु स्वरूप नियुक्त होकर उनको यजमान बनाया। उन्होंने बुद्धि, वीर्य्य, बल और उत्साहयुक्त देवोंके सदृश उन वीरोंको अपने धर्म्मके अनुसार राज्य पाये हुए समझा। उन ब्राह्मणके स्वस्त्ययन करने पर मानव श्रेष्ठ पाण्डवोंने एकत्र पाञ्चाल देशको स्वयम्बर स्थानमें जाना निश्चय किया।

एकसौ चौरासी अध्यायमें चैत्ररथ
पर्व्व समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर पुरुष-श्रेष्ठ पांचों पाण्डव महोत्सव युक्त पाञ्चाल देश और पाञ्चालीको देखनेको चले। शत्रुमथन, नरव्याघ्र भाइयोंने माताके साथ जाते समय पथमें एक साथ मिलकर अनेक ब्राह्मणोंको चलते देखा। हे राजन्! उन ब्रह्मचारी ब्राह्मणोंने पाण्डवोंसे कहा, कि आप कहां जायगे? कहांसे आते है? युधिष्ठिरने उत्तर दिया हम पाचों भाई माताके साथ मिलकर घूमा करते हैं, अब एकचक्रा नगरीसे आरहे है। ब्राह्मणोंने कहा, कि आपलोग आजही पाञ्चाल नगरमें राजा द्रुपदके घरको जायं, वहां बहुत धन खर्च कर भारी भीड़ भड़ाकेसे स्वयम्बर होगा। हमभी वहां जा रहे हैं, चलें एकही साथ जायं, वह आश्चर्य महोत्सव होगा, पाञ्चालनाथ महात्मा यज्ञसेन राजा द्रुपदकी सुकुमारी मनस्विनी देखनेके योग्य उस पुत्रीने जिस वेदोमेंसे जन्म लिया है, जिसकी आंखे पद्मकी भांति हैं, जिसका कोई अङ्ग निन्दनीय नहीं है और जिसके नील पद्मसी गन्ध कोस भरको दूरीसे भी अनुभव होती है, स्वयम्बरा होना निश्चय किया है। वह सुन्दरी अनिन्दिताङ्गी उस महाभुज अग्नि समान प्रतापी धृष्टद्युम्नकी वहिन है जिसने द्रोणको मारनेके लिये जलती हुई आगसे खड्ग, कवच, शर, शरासन आदिके साथ जन्म लिया है। हम उस द्रौपदी और महोत्सवको देखनेको जाते हैं। उस महोत्सवमे बहुत दक्षिणा देनेवाले, यज्ञशील, स्वाध्यायमें नियुक्त, पवित्र, स्वधर्म्मनिष्ठ, महात्मा तरुण अवस्थायुक्त सुन्दर अस्त्र विद्यामें पण्डित महारथी भूमिपालक राजालोग और राजकुमारगण अनेक देशोंसे आवेंगे। वे उस स्वयम्बरके स्थान पर विजयकी आशासे गौ, धन, भक्ष्य, भोज्य आदि दान करने योग्य अनेक सामग्री सर्व्वप्रकारसे दान देंगे। हम वह सब लेकर और स्वयम्बर तथा महोत्सव देखनेके पीछे अपनी इच्छासे घरको लौटेंगे। स्वयम्बर स्थानमें नाना देशोंसे नट—भांति भांतिके वेश धरनेवाले, वैतालिक—मङ्गल गानवाले, सूत—वंशावलीको गाकर कहनेवाले, मागध—वंशकी सूचना देनेवाले, मल्ल—ली पहलवान और नाचनेवाले आवेंगे। हे महात्माओ! आपभी दान लेकर, उस आनन्दको भोगकर फिर हमलोगोंके संग लौटना। आप सबोंको देवोंकी भांति सुन्दर देखते हैं, स्वयम्बर स्थानमें आपके रहनेसे द्रौपदी आपको देख करके दैवयोग आपलोगोंमेंसे श्रेष्ठ किसीको वरणभी कर सकती है। आपके इस भाईको महाभुज श्रीमान और दर्शनयोग्य कार्य्य कुशल देखते हैं। इनके वर किये जानेसे दैववश बहुत धनभी पासकते है, युधिष्ठिर बोले, कि हम सब आप लोगोके साथ द्रौपदीके उस परम महोत्सव युक्त स्वयम्बरको देखने जायगे।

स्वयम्बर पर्व्वमें एकसौ पचासी अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे जनमेजय! पाण्डव लोग ब्राह्मणोंसे वह सब बातें सुनकर द्रुपदसे शासन किये जाते हुए दक्षिण पाञ्चालमें जाने लगे। पथमें पापके स्पर्शसे खाली विशुद्ध स्वभावी महात्मा मुनि द्वैपायनको देखकर विधिपूर्व्वक उनकी पूजा की और वे भी उनसे सत्कार किये जाकर नाना वार्त्तालापके पीछे उनकी आज्ञासे द्रुपदके भवनकी ओर चले। स्वाध्यायमें नियुक्त, अच्छे, पवित्र, सुन्दर-दर्शन, मीठी वाणी बोलनेवाले, महारथी पाण्डवगण पथमें सुन्दर सुन्दर वन और ताल देखकर उन स्थानोंमें ठहर ठहर कर धीरे धीरे चलते पाञ्चाल देशमें पहुंच गये। वे पाञ्चाल नगर और वहांके सेनानयको देखकर एक कुम्भार के घरमें टिके रहे। वहां ब्राह्मणकी चाल लेकर भीख मांग मांग

पेट पालते हुए बसे रहे; तिससे यज्ञमें आये हुए उन वीरोंको किसीने नहीं जाना।

राजा यज्ञसेनकी सदा यह कामना थी, कि पाण्डुपुत्र किरीटी अर्जुनकोही कन्या दान करें; पर उन्होंने यह बात किसीसे प्रगट नहीं की। हे जनमेजय! उन्होंने कुन्ती पुत्र अर्जुनको स्मरण कर ऐसा एक दृढ चाप बनवाया, कि जिसे अर्जुनके विना, कोई दूसरा नवा न सके, और आकाशमें स्थित एक कृत्रिम यन्त्र बनाकर उस यन्त्रमें एक लक्ष्य जोड़वाया। आगे बोले, कि जो राजा इस शरासनमें गुण चढ़ाकर उस रूजे हुए सायकसे उस यन्त्रको पार कर लक्ष्यको विद्ध कर सकेंगे, वही मेरी कन्याको लाभ करेंगे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भारत! राजा द्रुपदके ऐसे स्वयम्बर को सूचना देने पर राजालोग उसे सुनकर वहां आने लगे, और नाना देशोंसे महात्मा महर्षिलोग, महाभाग ब्राह्मणगण और कर्ण तथा दुर्य्योधनादि कौरव स्वयम्बरके देखनेके लिये आ पहुंचे। महात्मा राजा द्रुपदने उन सब भूपालोंका सत्कार किया। अनन्तर पुरवासीलोग महासमुद्रसे उठती हुई लहरकी भांति बड़ा कोलाहल मचाते हुए द्रौपदीके स्वयम्बरको देखनेकी इच्छासे निकटकी एक एक वेदी पर बैठने लगे। राजालोग शिशुमारशिर' नामके स्थानसे होकर स्वयम्बर सभामें प्रविष्ठ होने लगे। नगरके ईशान कोनमें अच्छी समभूमि पर चारों ओर की बेड़ेसे घिरी हुई स्वयम्बरकी सभा शोभा पारही थी। वह सभा खन्दक और प्राचीरोंसे घेरी, द्वारतोरणसे जड़ी, सर्व्वत्र चंदवेसे सजी, सैकड़ों तूर्य्योंसे बजती, अच्छे अगुरुकी गन्धसे सुगन्धित, चन्दनके जलसे अभिषिक्त और फूलके हारोंसे भली प्रकार सुशोभित थी। उसके चारों ओर सोनेके जालसे सजेधजे, मणिमय कुट्टिमोंसे सुहावने, अच्छे अच्छे आसन और साजोंसे बनेठने चढनेमें सुखदायी सीढ़ी युक्त, कैलासकी चोटीकी नाईं आकाशको चूमनेवाले ऊंचे बड़े बड़े शुभ्र भवन शोभा पा रहे थे। हंसकी गर्द्दनके रंगकी भांति धौले गायोंमें न रहने-वाले जनोंसे भरे, शय्या और आसनोंसे सुशोभित हिमाचलकी चोटीकी नाईं धातुओंसे रंगे और अच्छे अगुरुकी गन्धसे सुगन्धित उन सब भवनोंकी सुगन्ध योजन भरकी दूरीसे भी अनुभव होती रही; उन सब भवनोंके सैकड़ों द्वार इतने लम्बे चौड़े थे, कि एक बारही बहुत लोगोंके जानेसेभी एक दूस-रेकी बाधा नहीं होती थी। सब भूप अच्छे प्रकार अलङ्कृत और एक दूसरे पर अहङ्कार-युक्त होकर उन सब भांति भांतिके साततले भवनोंमें जा बैठे। महासत्त्ववान अति परा-क्रमी, महाभाग, महाप्रसाद तथा गुणयुक्त, निज राज्योंके पालन करनेवाले, शुभकर्म्मोंसे सब लोगोंके प्यारे और कृष्णागुरुसे सजे उन सब राजसिंहोंके उन स्थानोमें बैठ जाने पर, द्रौपदीके देखनेके अभिप्रायसे चारोंओर अच्छी वेदियों पर बैठे हुए नगर और जनपदवासी उन लोगोंको देखने लगे। पाण्डवलोग ब्राह्मणसमाजके साथ एकत्र बैठकर राजा पाञ्चालका महत् ऐश्वर्य्य लेखने लगे। नट और नाचनेवालोंके नाच आदि और दाता-ओंके अनेक धन रत्नोंके दानसे सुशोभित वह सभा बहुत दिनों तक इस प्रकारसे बढ़ने लगी। हे भरतश्रेष्ठ! सोलहें दिन द्रौपदी नहा धोकर और सर्व्व आभूषणोंसे बन ठनके विचित्र वस्त्र पहिने दधि, अक्षत और अर्घसे भरा हुआ सुशोभित सुवर्ण पात्र लेकर उस सुन्दर समाज की रंगभूमि पर जा पहुंची! सोमवंशके पुरोहित मन्त्रज्ञ ब्राह्मणने शुचि होकर फूल फैलाकर यथाविधि अग्निको आहुति दे दे करके हविसे हविभक्षोंको प्रसन्न

कर और ब्राह्मणोंसे स्वस्ति कहलवाकर चारों ओरके बाजोंकी ध्वनिको रोका। हे पृथ्वीनाथ। अनन्तर सभाके चुप होने पर बादल और नगाड़ेकी भांति स्वरयुक्त धृष्टद्युम्नने यथाविधि द्रौपदीको लेकर रंगमें खड़े होकरके मेघके समान गम्भीर बड़े शब्दसे यह अर्थयुक्त मनोहर अच्छी बात कही, कि हे उपस्थित भूपालो! सुनो, यह शरासन, यह तेज पांच बाण और आकाशमें स्थित लक्ष्य दीख पड़ता है, इन पांच बाणोंसे उस यन्त्रके छिद्रको विद्ध करना होगा, मैं सत्य करके कहता हूं, कि रूपवान बली, कुलीन जो राजा इस महत कार्य्यको पूरा कर सकेंगे, मेरी बहिन यह कृष्णा आज उनकी भार्य्या होगी। द्रुपदकुमार आये हुए भूपालोंसे यह कहकर आगे उनके नाम, गोत्र और कर्म्मकी बात सुना कर बहिनसे कहने लगे।

स्वयम्बरपर्व्वमें एकसौ छियासी अध्याय समाप्त।

धृष्टद्युम्न बोले, कि दुर्य्योधन, दुर्व्विसह, दुर्म्मुख, दुष्प्रधर्षण विविंशति, बिकर्ण, सह, दुःशासन, युयुत्सु, वायुवेग, भीमवेगरव, उग्रायुध, बलाकी कनकायु, विरोचन, सुकुण्डल, चित्रसेन, सुवर्च्चा, कनकध्वज, नन्दक, बाहुशाली, तुहुण्ड, विकट, वीर यह सब और दूसरे महाबली धृतराष्ट्रकुमार बहुतेरे कर्णके साथ तुम्हारे लिये आये हैं और अगणित क्षत्रियश्रेष्ठ महात्मा राजालोग उपस्थित हुए हैं। शकुनि, सौबल, वृषक, वृहद्बल, यह सब गान्धार राजकुमार आये हैं। सर्व्वास्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ महात्मा अश्वत्थामा और भोज अलंकृत होकर तुम्हारे लिये आये हैं। वृहन्त, मणिमान, दण्डधर, सहदेव जयत्सेन, मगधराज मेघसन्धि, शङ्ख और उत्तर नामक दो पुत्रोंके साथ विराट, वार्द्धक्षेम सुशर्म्मा, सेनाबिन्दु, सुवर्च्च, और सुनामा नामक दो पुत्रोंके साथ सुकेतु, सुचित्र, सुकुमार, वृक, सत्यधृति, सूर्य्यध्वज, रोचमान, नील, चित्रायुध, अंशुमान, चेकितान, महाबली श्रेणीमान, समुद्रसेनके पुत्र प्रतापी चन्द्रसेन, जलसन्ध, विदण्ड और दण्ड यह दो पिता पुत्र, पौण्ड्रक वासुदेव, वीर्य्यवान भगदत्त, कलिङ्ग, ताम्रलिप्त, पत्तनाधिपति, पुत्रके साथ महारथी मद्रराज शल्य, वीर रुक्माङ्गद, रुक्मरथ, कौरव्य सोमदत्त, सोमदत्तके पुत्र महारथी भूरि, भूरिश्रवा, और शल एकत्र यह तीन वीर, सुदक्षिण, काम्बोज, पौरव दृढधन्वा, वृहद्बल, सुषेण, औशीनर शिवि, पटच्चर निहन्ता, कारूषाधिप, बलदेव, कृष्ण, वीर्य्यवन्त रौक्मिणेय, शाम्ब, चारुदेष्ण, प्राद्युम्नि, गद, अक्रूर, सात्यकि, महामति उद्धव, हार्द्दिक्य, कृतवर्म्मा, पृथु, विपृथु, विदूरथ, कङ्क, शङ्कु, गवेषण, आशावह, अनिरुद्ध, समीक, सारिमेजय, वीर वातपति झिल्लि, पिण्डारक, विक्रमी उशीनर, यह सब वृष्णिगण, भगीरथ, वृहत्क्षत्र, सैन्धव, जयद्रथ, वृहद्रथ वाह्लीक, महारथी श्रुतायु, उलूक, कैतव, चित्राङ्गद, शुभाङ्गद, मतिमान वत्सराज, कोशलाधिप, शिशुपाल और विक्रमी जरासन्ध। हे भद्रे! भूमण्डलमें प्रसिद्ध विक्रमी यह सब राजा और क्षत्रियवंशी नाना जनपदनाथ तुम्हारे लिये इस अच्छे लक्ष्यको भेद करनेकी इच्छासे आये हैं, हे शुभे। जो इस लक्ष्यको विद्ध करेंगे, उनको तुम वरण करना।

स्वयम्बर पर्व्वमें एकसौ सतासी अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर कुण्डलादि अलङ्कारोंसे सजे हुए युवा नरेन्द्रगण सभी कोई अपनको अस्त्रविद्यामें पण्डित और बली समझकर एक दूसरे पर अहङ्कारयुक्त होकरके अस्त्र लेकर उठके खड़े हुए। वे धन, यौवन, कुल, शील, रूप, और वीर्य्यमें

हिमाचलमें जैसे मदमत्त हस्तीको भांति अति दर्पयुक्त होकर एक दूसरेको निहारने लगे और कामके वशमें होकर यह कहते हुए; कि "द्रौपदी मेरोही होगी" एकायक राजासनसे उतरे। रङ्गभूमिमें उतरे हुए क्षत्रिय लोगोंने द्रुपदकन्याको जय करनेकी इच्छासे उसके चारों ओर खड़े होकर ऐसी अपूर्व्व शोभा धारण की, कि जैसी देवोंने गिरिराज पुत्री उमाको घेरकर धरी थी। वे कामदेवके वाण से जल कर द्रौपदीलाभकी आशासे हृदयमें उसीका भरकर प्यारे मित्रोंसेभी द्वेष करने लगे। अनन्तर रुद्रगण, आदित्यगण, दोनों अश्विनीकुमार, साध्यगण, मरुद्गण, यमराज, कुवेर और सम्पूर्ण देवगण, रथो पर चढके वहां आगये। दैत्यगण, सुपर्णगण, देवर्षिगण, गुह्यकगण, चारणगण, विश्वावसु, नारद, ऋषि पर्व्वत और अप्सराओंके साथ प्रधान प्रधान गन्धर्व्व वहां आ पहुंचे। हलायुध, कृष्ण और कृष्णके मतको माननेवाले प्रधान प्रधान वृष्णिगण, अन्धकगण और यादवगण, इधर उधर देखने लगे। यदुवीरोंमें प्रधान कृष्ण पद्मको ओर दौड़ते हुए गजराजकी भांति द्रौपदीकी ओर सुख किये और भस्मसे ढंपे हुए अग्निसदृश उन उन्मत्त हस्तीके समान पाच पाण्डवोंको देख कर सोचने लगे और बलदेवजीसे बोले, कि मुझको जान पड़ता है, कि यह युधिष्ठिर, यह भीम, यह अर्जुन, यह नकुल और यह सहदेव है। बलदेव जोनेभी धीरे धीरे उनको निहार कर प्रसन्न हृदयसे जनार्द्दनकी ओर देखा। दूसरे वीर राजपौत्र और राजपुत्र लोग नेत्रोंको लाल कर होठोंको काटते हुए द्रौपदीकी ओर स्वभाव मन और नेत्र अर्पण कर द्रौपदीकोही देखने लगे, पाण्डवोंकी ओर उनकी दृष्टि भी नहीं पड़ी। पृथुवाहु-पृथापुत्र युधिष्ठिर भीम और अर्जुन तथा महानुभव वीर नकुल और सहदेव यह सब भी उस समय द्रौपदीको देखकर मदनवाणसे घायल हुए थे। तब दिव्य गन्धकी उमङ्गसे भरे दिव्य फूलोंसे पूरे वेणु वीणा पणव आदिको ध्वनिसंयुक्त और बड़े बड़े नगाड़ोंके शब्दसे गूजते हुए उस स्थानका आकाश सर्व्वत्र देव, ऋषि, गन्धर्व्व, सुपर्ण, नाग, असुर और सिद्धोंसे भर जानेके कारण रथोंमें आपसकी रुकावट होने लगी। कर्ण, दुर्य्योधन, शाल्व, शल्य, द्रौणायनि, क्राथ, सुनीथ,वक्र,कलिङ्गाधिप, वङ्गाधिप,पाण्डव, पौण्ड्र, राजा विदेह, यवनराज, यह सब राजा और दूसरे राजाधिप पद्मपलाशनेत्र राजपुत्र तथा राजपौत्र लोग द्रौपदीके लिये क्रमशः विक्रम प्रगट करने लगे। किरीट, हार, केयूर,चक्रवाल आदि नाना आभूषणोंसे सजे विक्रमी, स्वत्ववान् और बलवीर्य्यसे तरसाते और गरजते हुए वे सब सुवाहु भूपाल बड़े भारी उस चापमें गुण चढ़ानेकी कल्पना मनमें भी नहीं ला सके। उन्होंने होठोंको फुला कर अपने बल, शिक्षा, गुण, और क्रमके अनुसार ज्यों धन्वा नवाने और उस पर गुण चढ़ानेको विक्रम प्रगट किया त्योंही उसी क्षण धन्वाकी कोटिसे भगाये और फेंके जाकर धरती पर लोट गये और चेष्टासे मनको हटाया; इससे उनके पहिने हुए किरीट आदि आभूषण अङ्गसे च्युत हो गये और वे बल खोकर वार वार हांफते हुए चुप हो बैठे। तब कठिन शरासनसे भयभीत और अलङ्कारोंसे च्युत वे भूपगण द्रौपदीकी आशा छोड़ कर हाय हाय करने लगे। इसके पीछे सम्मानित सज्जनोंसे उस समाजमें राजाओंके निन्दा योग्य होनेपर वीरोंमें प्रधान कुन्ती पुत्र जिष्णुने उस धन्वा पर गुण चढाने और वाण लगानेकी इच्छा की।

स्वयम्बरपर्व्वमें एकसौ अठासी अध्याय समाप्त।

वैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर राजाओंके उस शरासन पर रोदा चढानेसे मुख फेर लेने पर उदारचित्त जिष्णु ब्राह्मण-समाजसे उठ खड़े हुए। प्रधान प्रधान ब्राह्मण लोग बादल समान प्रकाशयुक्त अर्जुनको जाते देखकर मृग-चर्म्म कंपाते हुए कोलाहल मचाने लगे, कोई कोई दुःखी और दूसरे हर्षयुक्त हुए। कोई कोई बुद्धिमान निपुणतायुक्त विप्र आपसमें इस प्रकार कहने लगे, कि हे द्विजगण। धनुर्वेदमें पण्डित, बली, कर्ण और शल्य आदि लोकोंमें प्रशंसित क्षत्रिय लोग जिस धनुको नवा नहीं सके अस्त्रविद्याके न जाननेवाले शक्तिमें दुर्बल एक बटु क्योंकर उस पर रोदा चढा सकेगा? इस वटुने, चपलतासे जिस अनजाने काममें हाथ डाला है, वह पूरा न हो, तो हम सब राजाओंसे हंसी जायंगे। हे ब्राह्मणो। यह ब्राह्मण-कुमार अहंकार वा कौतूहल अथवा चपलतासे शरासन नवानेको जा रहा है, इसकोरोको, कि ऐसे काममें न जाय। किसी किसी ब्राह्मणने कहा, कि इससे हमारी लघुता नहीं होगी, हम राजाओंके द्वेषके पात्र वा हंसे जानेके योग्य नहीं होंगे। कोई कोई बोले, कि इस नये विप्रको श्रीमान गजराजके सूंड़की भांति विशाल गर्दन, उरु और भुजधारी, हिमाचल सदृश धीरज युक्त, सिंहके खेलकी नाईं चालवाले और उन्मत्त गजसा विक्रमी देखता हूं, और इनका उत्साह जैसा है, तिससे जान पड़ता है, कि यह कार्य्य इन्हींसे पूरा हो सकता है, यह ब्राह्मण बड़े उत्साही और शक्तिवान हैं; इनको शक्ति न रहती, तो यह कभी नहीं जाते। फिरभी तीनो लोकोंमें ऐसा कोईभी कार्य्य नहीं है, कि जो इन मरनेवाले मनुष्योंमें ब्राह्मणका असाध्य हो। कठोर व्रतयुक्त ब्राह्मणगण फलाहार, वायुभक्षण अथवा निराहारके हेतु देखनेमें दुर्बल हैं, वे भी तो अपने तेजसे बली रहते हैं। ब्राह्मण सकर्म्म किया करें वा बुरा कर्म्म कियाकरें तौभी सुख वा दुःखदायी और महत् वा क्षुद्र किसी उपस्थित कार्य्यमें उनका अनादर करना नहीं चाहिये। देखो, जमदग्निपुत्र रामने क्षत्रियोंको युद्धमें परास्त किया था; ऋषि अगस्त्यने ब्रह्मतेजसे गहरे समुद्रको पी लिया था, अतएव तुम सब आज्ञादो कि यह महात्मा शीघ्र शरासन पर गुण चढ़ावें। आगे द्विजवरोंने "तथास्तु" कहा। ब्राह्मणलोग इस प्रकारकी नाना बातें कहने सुनने लगे, तब अर्जुन शरासनके निकट जाकर पर्व्वतकी भांति खड़े हुए। आगे उसके चारों घूमकर वरदाता देव प्रभु ईशानको सिर नाय कर प्रणाम किया और मनही मनमें श्रीकृष्णको चिन्ता कर शरासनको उठा लिया। रुक्म, सुनीथ, वक्र, राधापुत्र, दुर्य्योधन, शल्य और शाल्व, यह सब धनुर्व्वेदमें पण्डित नरसिंह भूपाल अति यत्नसेभी जिस धनुपर रोदा नहीं चढा सके थे, वीर्य्यवन्तोंमें दर्पयुक्त, इन्द्रानुज सदृश प्रभावी अर्जुनने देखतेही देखते उस पर गुण चढाया और पांच शर लेकर लक्ष्यको भेद दिया। लक्ष्य बहुत विद्ध होकर उसी क्षण यन्त्रको छेदके धरती पर गिर गया। तब आकाश मण्डल और समाजमें अति कोलाहलकी ध्वनि उठने लगी देवताओंने शत्रुकुलनाशी अर्जुनके सिर पर दिव्य फूल वर्षाये। सहस्रों ब्राह्मण उनकी विजयध्वजाकी भांति अपने अपने दुपट्टोंके छोर उड़ाते हुए उठ खड़े हुए। जो लोग लक्ष्य नहीं भेद कर सके थे, वे लज्जित होकर चारों और हाय हाय करने लगे। समाजमें आकाश मण्डलसे चारों ओर फूल वर्षने लगे। बाजे वाले तूर्य्य-यन्त्रको सौओं अङ्ग मिलाकर बजाने लगे, और सूत मागध लोग मीठे स्वरसे स्तुति गाने लगे। शत्रुमथन राजा द्रुपद अर्जुनको देखकर प्रसन्न हुए, और सेनाओंके साथ उनकी सहायता करनेकी इच्छा की। जब वह भारी कोलाहल आरम्भ होगया त

धार्म्मिकवर युधिष्ठिर वेगसे पुरुष-श्रेष्ठ दोनो यमज भाइयोंको लेकर डेरे पर चले गये। द्रौपदी पार्थसे लक्ष्यका विद्ध होना देखकर और उनको इन्द्र सदृश निहार कर प्रसन्न चित्तसे शुभ्र वस्त्र और माला लेकर उनके पास जा पहुंची। चिन्तातीत कर्म्म करनेवाले अर्ज्जुन रंगभूमिमें द्रौपदिको जय कर द्विजातियोंसे सत्कृत होकर उस रंगभूमिसे निकले, द्रौपदी भी उनके पीछे पीछे जाने लगी।

स्वयम्बर पर्व्वमें एकसौ नवासी अध्याय समाप्त।

वैशम्पायन बोले; कि अनन्तर राजाके लक्ष्य भेद करनेवाले उस ब्राह्मणको कन्या दान करनेकी इच्छा प्रगट करने पर निकटस्थित भूपाललोग एक दूसरेको देखकर क्रोधित हो गये और कहने लगे, कि इस राजाने इन सब उपस्थित नरेशोंको तिनके के समान समझकर इनको लङ्घनकर ब्राह्मणको योषिद्वरा कन्या देनेकी इच्छा की है, यह दुरात्मा वृत्त रोपण करके फलनेके कालमें काट रहा है. हम लोगोंको अपमानित कर रहा है. इसको मार डालेंगे। यह दुराचारी वृद्ध क्रमके अनुसार गुणयुक्त और सम्मानके योग्य नहीं है, सो राजाओंके द्वेष-करनेवाले इस दुरात्माको पुत्रके साथ मारनाही उचित है, यह दुरात्मा सम्पूर्ण भूपालोंको बुलवाकर सम्मानके साथ अपूर्व भोजन आदिसे पूजकर अब अपमान कर रहा है। इन महीपालोंका समागम वैसाही हुआ है, कि जैसा देवोंका समवाय होता है, क्या इनमेंसे एकभी इसको योग्य न समझ पड़ा? यह प्रसिद्ध कहावत है, कि स्वयम्बर क्षत्रियोंहीके लिये विविहत हुआ है, इसमें ब्राह्मणका अधिकार नहीं है, फिरभी यदि यह कन्या किसी राजाको पति न बनाया चाहे, तो इसको जलती हुई आगमें छोड़कर हम अपने अपने राज्योंमें चले जायंगे। इस ब्राह्मणने यद्यपि चपलतासे राजाओंका अप्रिय कार्य्य किया है, तौभी इसको मार डालना किसी प्रकार उचित नहीं है, क्योंकि हमारा राज्य, अर्थ, जीवन, पुत्र, पौत्र और दूसरे जो कुछ धन है, वह सबही ब्राह्मणोंके लिये है। हम यहां शासन करेंगे, तो दूसरे स्वयम्बरके स्थानोंमें फिर कभी ऐसा नहीं होगा, सबलोग अपमानके भयसे अपने अपने धर्म्मको रक्षा करेंगे। परिघ समान भुजवाले, सब राजसिंह ऐसी बात कहकर प्रसन्न चित्तसे अस्त्र लेकरके राजा द्रुपदको मारनेके लिये दौड़े। द्रुपदने राजाओंको क्रोधित होकर शरासन लिये आते देखकर इस भयसे कि ब्राह्मणोंके क्रोधसे कहीं क्षत्रियकुल नष्ट न होजाय ब्राह्मणोंकी शरण ली। बड़े चापधारी शत्रुदमन पाण्डुनन्दन भीम और अर्ज्जुन भूपालोंको मदोन्मत्त गजोंकी भांति वेगसे दौड़ कर आते देखकर उनकी ओर चले। अंगलीरक्षक पहिने हुए वह सब राजा क्रोधके मारे अस्त्रशस्त्र उठाकर कुरुराजपुत्र अर्ज्जुन और भीमसेनको मारडालनेके लिये जा गिरे। अनन्तर वज्र समान कठोर, महाबली, आश्चर्य डरावने कार्य्य करने वाले, अद्वितीय वीर भीमसेनने उन्मत्त गजराजकी भांति हाथोंसे एक वृक्ष उखाड़ कर पत्तोंसे खाली किया फिर शत्रुसंथन पृथुभुज पृथानन्दनने उसके पत्तोंसे खाली पेड़को लेकर पुरुषश्रेष्ठ अर्ज्जुनके सम्मुख इस प्रकार खड़े होगये, कि जैसे यमराज कठोर दण्ड लेकर खड़े होते हैं। चिन्तातीत कर्म्म करने वाले असामान्य बुद्धिमान महेन्द्र सदृश जिष्णुने भाईका अलौकिक कार्य्य देखकर अचरज माना। अनन्तर निर्भय चित्तसे चाप लेकर खड़े हुए। चिन्तातीत कर्म्म करने वाले असाधारण बुद्धिशाली दामोदर भीमार्ज्जुनका

यह आश्चर्य कार्य्य देखकर महावीर्य्यवन्त बड़े भाई हलायुधसे बोले, कि हे सङ्कर्षण! सिंह-बरकी भांति डोलते हुए चलने वाले जो पुरुष पांच हाथसे कुछ कम मापके चापको खींच रहे हैं उनका अर्ज्जुन होना इतना निश्चय है, कि जितना मेरा कृष्ण होना निश्चय है। जो वेगसे वृक्ष उखाड़ कर एकायक भूपालोंको हतकरनेको प्रवृत्त हुए हैं, वह वृकोदर होंगे। वृकोदरके विना इस भूमण्डल भरमें कोई मनुष्य आज ऐसा कार्य्य करनेको समर्थ नहीं होता। हे अच्युत! मुझको जान पड़ता है, कि इसके पहिले पद्मकी भांति प्रशस्त नेत्रयुक्त भारी सिंह समान चलनेवाले नम्र, गोरे, दीर्घ और उज्ज्वल सुन्दर नाकवाले, चार हाथ इतने लम्बे और उसके योग्य स्थूलदेह युक्त, जो पुरुष पधारे हैं, वही धर्म्म-पुत्र हैं, उनके साथ कार्त्तिकेयकी सदृश जो दो कुमार गये हैं, वे अश्विनी-कुमारोंके पुत्र होंगे। मैंने सुना है, कि पाण्डव लोग पृथाके साथ जतुगृहसे जलनेसे बचे थे। विना जलके बादलके रङ्गयुक्त हलायुध आनन्दित होकर कनिष्ठ कृष्णसे बोले, कि यह सुनकर कृतार्थ हुआ, कि बड़े भाग्यसे पुत्रोंके साथ फूफीजी बच गयी है।

स्वयम्बर पर्व्वमें एकसौ नब्बे अध्याय समाप्त।

वैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर ब्राह्मण-लोग मृगचर्म्म और कमण्डलु कपाते हुए बोले, कि मत डरो, हम शत्रुओंसे लड़ेंगे, अर्ज्जुन ब्राह्मणोंकी यह बात सुन कर हंसके बोले कि आप एक ओर दर्शक बन कर खड़े रहें। मैं सैकड़ों तेज बाणोंसे इन सब क्रोधित राजाओंको इधर उधर इस प्रकार तीन तेरह करके रोक दूंगा कि जिस प्रकार मन्त्रको जानकार मन्त्रसे अति विषैले सर्पको तेजसे रहित कर देते हैं। महाबली अर्ज्जुन यह कहकर रणमें जीत लिये हुए धनुषको लाकरके भाई भीमसेनके साथ पर्व्वतकी भांति अचल बने रहे। आगे भीम और अर्ज्जुन दोनोंने इस प्रकार, कि जैसे हस्ती विपक्ष हस्तीपर चढ़ जाता है, रणोन्मत्त कर्णादि राजाओंको देखकर बिना भय उनकी ओर दौड़े। लड़ाई चाहने वाले राजालोग अहङ्कारसे बोले, कि युद्धस्थलमें लड़ने वाले ब्राह्मणभी वध किये जा सकते हैं। भूपाललोग यह कहकर उसीक्षण ब्राह्मणों पर दौड़े। अनन्तर बड़े तेजस्वी कर्ण लड़नेके लिये अर्ज्जुनसे इस प्रकार जा भिड़े, कि जैसे हस्ती हथनीके लिये दूसरे हस्ती पर चढ़ जाता है। महाबली मद्राधिप शल्य भीमसेनकी ओर दौड़े। दुर्य्योधन आदि सबोंने ब्राह्मणों पर चढ़ाई की। वे द्विजोंके साथ बिना यत्न धीमी लड़ाई लड़ने लगे। अनन्तर श्रीमान अर्ज्जुन आदित्य एवं कर्णको विरुद्धमें आते देखकर बड़े भारी चापको खींचके तेज बाणोंको मारकर विद्ध करने लगे। राधाकुमारने अर्ज्जुनके तेज बाणोंके वेगसे मुर्झाकर अति यत्नसे उन पर आक्रमण किया। जय करने वालोंमें श्रेष्ठ अर्ज्जुन और कर्ण एक दूसरे पर क्रोधित होकर जयकी आशासे ऐसी फुर्त्तीसे लड़ने लगे, कि किसीने समझ न पाया, कि उनमें कौन कब आदान संधानादि करते थे। वे एक दूसरे पर शूरता प्रगट कर यह कहके वार्त्तालाप करने लगे, कि तुमने जो किया, देखो उसको रोक लेता हूं, मेरा भुजबल देख लो। अनन्तर सूर्य्यकुमार कर्ण अर्ज्जुनका ऐसा भुजवीर्य्य देखकर, कि जिसकी उपमा संसारभरमें नहीं मिलती एकचित्तसे लड़ने लगे। वह अर्ज्जुनके चलाये हुए बाणोंको रोककर सिंहकी भांति गरजने लगे; सेना उनके उस कार्य्यकी प्रशंसा करने लगी। आगे कर्णने अर्ज्जुनसे कहा, कि हे द्विजातिश्रेष्ठ! इस युद्धस्थलमें तुम्हारा न चूकने वाला भुजवीर्य्य और विजयी

शस्त्र देखकर मैं प्रसन्न हुआ। हे ब्राह्मण श्रेष्ठ। मुझको जान पड़ता है, कि तुम साक्षात धनुर्व्वेद वा राम अथवा देवराज इन्द्र वा अच्युत विष्णु होगे। तुम अपनेको गोपन रखनेको लिये ब्राह्मणका स्वरूप लेकर भुज-वीर्य्यको आश्रय करके लड़ रहे हो, मेरे रणभूमिमें क्रोधित होनेसे साक्षात इन्द्र अथवा पाण्डुनन्दन किरीटीके बिना कोई भी मुझसे लड़ नहीं सकता है। अर्ज्जुन कर्णकी यह बात सुन कर बोले, कि हे कर्ण। मैं धनुर्व्वेद वा राम नहीं हूं, मैं सर्व्व शस्त्रधारी और योधोंमें श्रेष्ठ ब्राह्मण हूं। मैं गुरुकी कृपासे ब्राह्म और इन्द्र अस्त्रोंमें दक्ष भया हूं। हे विप्र। तुम रह जाओ, मैं आज लड़ाईमें तुम पर जय पानेके लिये ठहरा हूं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि तब राधाकुमार महारथी कर्ण यह बात सुनकर ब्रह्म तेजको जीतनेके अयोग्य समझ कर युद्धसे निवृत्त हुए, दूसरी ओर विद्या और बलसे युद्धमें पण्डित उन्मत्त गजके समान बली वीर वृकोदर और राजा शल्य युद्ध करने लगे। वे दोनों एक दूसरे को पुकारके मुट्ठी और घुटनोंसे मारते हुए कभी दूर फेंकने, कभी आगे खींचने, कभी सामने ललकारने, कभी झपटके एक दूसरेको पकड़ने और कभी घूंसा मारने लगे। इसके पश्चात् उन दोनोंको मारके चट चट शब्द कानोंमें घुसने लगे। वे एक दूसरे को पत्थर पर गिरानेको भांति मार मारने लगे। परस्पर दोनों को पकड़ने लगे। क्षण भर पीछे कुरुवंश श्रेष्ठ भीमने शल्य का भुजोंसे ऊपर उठाकार रणभूमि पर पटक दिया। वह देखकर ब्राह्मणलोग सब हंस उठे, पर पुरुष श्रेष्ठ भीमसेनने बलशाली शल्यको ऐसे आश्चर्यरूपसे भूमि पर पटक दिया कि, शल्यके कुछ भी चोट नहीं लगी। अनन्तर राजा लोग शल्यको भीमसेनसे गिराये जाते हुए और कर्णको शङ्कायुक्त देखकर भयभीत चित्तसे शल्यको घेर कर खड़े होगये और सब इकट्ठे होकर साधु साधु कहके यह कहने लगे, कि यह दो ब्राह्मण सबोंसे श्रेष्ठ है। विशेषरूपसे जान लेना चाहिये, कि वह कहां रहते हैं, और उन्होंने कहां जन्म लिया है। इस धरती भरमें राम, द्रोण, पाण्डुनन्दन अर्ज्जुन, देवकी-जीको पुत्र कृष्ण अथवा शारद्वत् कृपके बिना कौन राधाकुमार कर्णसे लड़ सकता है? और कौन दुर्य्योधनसे युद्ध करनेको समर्थ होता है?

वीर बलदेवजी, पाण्डुपुत्र वृकोदर वा दुर्य्यो-धनके बिना कौन महाबली मद्रनाथ शल्यको रणभूमि पर गिरा सकता है? अब सब कोई ब्राह्मणसे यह लड़ाई बन्द कर दो, ब्राह्मण अपराध भी करें तौ भी सदा उनकी रक्षा करनी चाहिये। पहिले इनका परिचय लेकर पीछे प्रसन्न चित्तसे हम इनके साथ लड़नेको प्रवृत्त होंगे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि श्रीकृष्णने भीम-सेनका वह अलौकिक कार्य्य देख कर उन को कुन्ती पुत्र करके जाना। आगे सम्पूर्ण राजाओंको विनय कर यह कहके युद्धसे निवृत्त किया, कि इन ब्राह्मण धर्म्मके अनुसारही द्रौपदी लाभ की है, सो इन पर द्वेष करना उचित नहीं है। अनन्तर वे सब युद्धमें पण्डित राजा लोग युद्ध बन्द कर आश्चर्य चित्तसे अपने अपने भवनोंको सिधारे। जो सब लोग दर्शनके लिये एकचित्त हुए थे, वे यह कहते हुए चले गये, कि आज रङ्गस्थलमें ब्राह्मण लोगही प्रधान बने, पाञ्चाली ब्राह्मणोंसे वृता हुई। अनन्तर भीम और अर्ज्जुन मृगचर्म्म पहिने ब्राह्मणोंसे घेरे जाकर अति क्लेशसे पथ पाकर चलने लगे। शत्रुओंसे कटे कूटे नरवीर भीम और अर्ज्जुन पीछे चलती हुई द्रौपदीके साथ जनोंकी भीड़से मुक्त होकर इस प्रकार सोहने

लगे, कि जैसे पूर्णिमातिथिमें उगे हुए चन्द्र सूर्य्य शोभा प्राप्त करते हैं। इधर उनकी माता कुन्ती उनके भिक्षाकर लौटनेके काल बीतने पर उनको न आते देखकर भांति भांतिके अनिष्टकी आशंकासे यह चिन्ता करने लगी, कि कदाचित् धृतराष्ट्रके पुत्रोंने मेरे बच्चोंको पहिचान कर मार डाला है अथवा शत्रु मायाधारी अति भयानक राक्षसोंने नष्ट किया होगा। महात्मा व्यासजीकोभी कैसी उलटी बुद्धि हुई थी, उन्होंने क्यों हमको इस देशमें आनेको कहा?

कुन्ती पुत्रस्नेहसे इस प्रकार सोच रही थी, कि ऐसे समयमें अर्जुन ब्राह्मणोंसे घेरे जाकर लोगोंके प्रायः चुप होनेके कालमें बड़े अपराह्नमें बादलसे घिरे कुदिनके मेघसेढंपे सूर्य्यकी भांति उस कुम्भारके घरमें जा घुसे।

स्वयम्बर पर्व्वमें एकसौ एकानब्बे अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि महानुभव नरश्रेष्ठ भीम और अर्जुन परम प्रसन्न चित्तसे याज्ञसेनीको साथ लेकर कुम्भारके घरमें जाकर कुन्तीसे बोले, कि मा! आज यह भिक्षा मिली है! कुन्ती तब कुटी के भीतर थी, कुछ न देख करके ही बोली, कि तुम सब मिलकर भोगो। पीछे कृष्णाको देखकर बोली, कि हाय! मैंने कैसी अनुचित बात कही है। अनन्तर वह अधर्मका भय खाकर सोचती हुई अनिन्दिता उस याज्ञसेनीका हाथ पकड़ कर युधिष्ठिरके पास जाकर उनसे बोली, कि बेटा! तुम्हारे दो भाइयोंने जब राजा द्रुपदसे इस पुत्रीको लाकर मेरे पास भिक्षा कहके दिया, तब मैंने असावधानतासे उस कालके योग्य यह बात कह डाली है, कि तुम सब मिल करके भोगो, हे कुरुवंशश्रेष्ठ। अब यह कहो, कि क्योंकर मेरी वह बात झूठी न ठहरे, क्योंकर अधर्म इस राजा पाञ्चालकी पुत्रीको छू न सके और क्योंकर यह अप्रसन्न न होवे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि नरवीर मतिमान कुरुप्रवीर राजा युधिष्ठिर माताकी यह बात सुनकर क्षणभर सोचके उनको समझा कर धनञ्जयसे बोले, फाल्गुन! तुमने इस राजपुत्री याज्ञसेनीको जय कर लिया है, तुम्हीसे इसका विवाह हो, तो ठीक होवे, हे शत्रुविनाशकरनेवाले तुम आग बालकर विधिपूर्वक इससे व्याह कर लो। अर्जुन बोले, कि हे नरेन्द्र! आप मुझको अधर्ममें न डालें, जैसी आज्ञा करते हैं वह धर्मयुक्त नहीं है, वह अनबूझा पथ है। पहिले आपका, आगे चिन्तातीत कर्म करनेवाले महाभुज भीमसेनका, उनके पीछे मेरा, तब मेरे पीछे जन्मे हुआ नकुलका और अन्तमें कनिष्ठ सहदेवका विवाह होनाही विधिपूर्वक है। भीमसेन, नकुल, सहदेव, यह कन्या और मैं आपकी आज्ञाके अनुसारी होते हैं, इससे जो कुछ धर्म और जिससे राजा पाञ्चालका मङ्गल होवे, उस पर ध्यान करके आज्ञा करें, हम लोगोंमेंसे कोईभी आपकी आज्ञा माननेसे मुंह नहीं मोड़ेगा, श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अर्जुनकी भक्तिपूर्ण स्नेहरसभरी बातें सुनकर पाण्डवोंने राजा पाञ्चालकी पुत्रीकी ओर देखा और पाञ्चाली भी उनकी ओर देखने लगी। पाण्डुपुत्र लोग उस यशस्विनी बालाको देख करके एक दूसरेके मुखकी ओर ताकके बैठ गये और सबोंका चित्त उसकी ओर झुका! विधाताने उस पाञ्चालीका सुन्दररूप दूसरी नारियोंसे श्रेष्ठ और प्राणियोंका ऐसा मनोहर बनाया, कि बड़े तेजस्वी पाण्डुपुत्रोंके देखतेही मदन उनके इन्द्रियोंको मथन करके प्रगट हुआ। मनुष्यश्रेष्ठ कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर छोटे भाइयोंके आकारोंको देख करके उनके हृदयके भावको समझ

गये और उस समय वेदव्यासजीकी सम्पूर्ण बातें उनके स्मरणापथमें आ पहुंची। वह भाइयोंमें आपसके बिगाड़का भय कर बोले, कि शुभ लक्षणोंसे सटी हुई यह द्रौपदी हम सबोंकी भार्य्या होगी।

श्रीवैशम्पायनजी बोले कि पाण्डु-पुत्रगण बड़े भाईकी यह बात सुनकर बिना कुछ मनही मनमें उस बातकी चर्च्चा करने लगे।

अनन्तर वृष्णिवंशके प्रधान वीर श्रीकृष्णजी उनको कुरुवीर समझ कर भार्गवकी जिस शालामें वे वीर पुरुष लोग टिके थे वहां वलदेवजीके संङ्ग आपहुंचे। आगे रोहिणी-पुत्र और उन्होंने वहां बैठे हुए दीर्घ-भुज अजात-शत्रु युधिष्ठिरको और उनकी चारों ओर पासही बैठे अग्नि समान जलते हुए छोटे भाइयोंको देखा। इसके अनन्तर वासुदेव श्रीकृष्ण अजमीढवंशी धार्म्मिकवर कुन्ती-कुमार युधिष्ठिरके सामने जाकर उनके पांव छू कर बोले मैं कृष्ण हूं आगे वलदेवजीने भी वैसाही किया। पाण्डवगण राम और कृष्णको देख कर प्रसन्न चित्तसे आनन्द प्रकाश करने लगे। हे भारतश्रेष्ठ। अनन्तर यदुवीर राम और कृष्ण फूफी पृथाके पांव लगे। अजातशत्रु कुरु-वीर युधिष्ठिर कृष्णको देख करके कुशल क्षेम पूछ कर बोले, कि हे वासुदेव। तुमने क्यों कर यह जाना, कि हम छिप कर यहां बसे हैं? कृष्णने हंसकर कहा, कि हे महाराज। अग्नि छिप रहनेसे भी कभी अज्ञात नहीं रहता और इस भूमण्डलके मानवोंमें पाण्डवोंके बिना कौन ऐसा विक्रम दिखा सकता है? आप लोग बड़े भाग्यसे शत्रुका वेग सह कर कठोर जलनसे बचे हैं और भाग्यहीके कारण पापात्मा धृतराष्ट्रपुत्र और उसके मन्त्रियोंका मनोरथ सफल नहीं हुआ। अब आपका मङ्गल होवे, वह मङ्गल इन दिनों औरोंके बिन देखे स्थानमें छिपा हुआ है, आप इहने वाले अग्निकी भांति बढ़ते रहें। अब आज्ञा करें, कि हम अपनी रनिवासमें चले जाय, कि जिससे कोई राजा आपको न जानने पावे, अनन्तर श्रीयुत श्रीकृष्णजी यह कहकर युधिष्ठिरकी आज्ञा लेके बलदेवजीके साथ शीघ्र वहांसे पधारे।

स्वयम्बर पर्व्वमें एकसौ बानवे अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि कुरुनन्दन भीम और अर्ज्जुन जब भार्गवके घरको जा रहे थे; उस समय पाञ्चालकुमार धृष्टद्युम्न उनके पीछे पीछे छिप कर गये थे। वह साथियोंको सावधान कर पाण्डवों और दूसरोंके न जानते उसके निकट किसी एक स्थानमें छिपे थे। सन्ध्याकालमें शत्रुमथनेवारे असामान्य सत्त्वयुक्त महाबली भीम, अर्ज्जुन, नकुल और सहदेवने भिक्षासे लौट कर भिक्षाकी सामग्री युधिष्ठिरको देदी। तब दानशीला कुन्तीने कहा कि भद्रे! तुम इस भिक्षाकी सामग्रीसे अगला भाग लेकर देवोंको उपहार और ब्राह्मणोंको भिक्षा देदो और जो सब लोग अतिथि बने हैं और जो भोजन करना चाहेंगे, उनको भी दो। आगे जो बची रहेगी, वह दो भागोंमें बांटकर एक भाग भीमको दो, क्योंकि यह पर्व्वतकी भांति बड़े भारी गोरे तरुण वीर वृकोदर नित्य बहुत भोजन करता है; दूसरे भागको छः भागोंमें बांटो, उनको युधिष्ठिर आदि चार भाई, तुम और हम खायंगे। राजपुत्री सती द्रौपदीने उनकी उस श्रेष्ठ बातका कोई विचार न करकेही आनन्दित चित्तसे उसको जो कहा गया था, वह पूरा किया। इसके पीछे सबोंने भोजन किया। अनन्तर तरस्वी माद्रीपुत्र सहदेवने भूमिपर कुश बिछा-कर सेज बनायी। आगे उस पर सब यथोपयुक्त अपना अपना मृगचर्म्म बिछाकर ..।

कुरुश्रेष्ठोंने दक्षिण ओर सिर करके शयन किया था। उनके सिरकी ओर कुन्ती और पावकी ओर द्रौपदी सो रही। द्रौपदीने भूमि पर लेटके और सबके पांवके नीचे तकियेकी भांति बनने पर न तो मनमें दुःख माना और न उनकी ओर अनादर प्रगट किया। शूरतायुक्त पाण्डवगण लेट कर रथ, नाग, खड्ग, गदा, परश्वध, दिव्यास्त्र और सेना सम्बन्धी नाना विचित्र कथाओंको कहने लगे। पाञ्चालराजपुत्र धृष्टद्युम्न पाण्डवोंको उन सब कथाओंको सुनने लगे और वहांके लोगोंनेभी राजकन्या कृष्णाको उस दशामें देखा।

अनन्तर रात्रिको पाण्डवोंने जैसी कही थी, और वहां जो कुछ हुआ था सब राजा द्रुपदके पास आद्योपान्त कहनेके लिये राजकुमार धृष्टद्युम्न तुरन्त चले गये। महात्मा राजा पाञ्चाल पाण्डवोंको न प्राप्त करके दुःखी होकर पड़े थे। धृष्टद्युम्नके वहां जा पहुंचने पर उससे उन्होंने पूछा, कि बेटा! कृष्णाको कौन ले गया है? कृष्णा कहां गयी है? किसी नीच जाति वा शूद्र अथवा कर देने वाले वैश्यने मेरी कन्याको ले जाकर मेरे सिर पर लात तो नहीं मारी है? सुन्दर माला तो श्मशानमें नहीं गिरी है? किसी क्षत्रियश्रेष्ठ अथवा ब्राह्मणने मेरी कन्याको तो नहीं जीत लिया है? किसी नीच जनने कृष्णाको जीत कर मेरे सिर पर बाया पाव तो नहीं डाला है, यदि मेरी कन्या कृष्णा नरसिंह जनके साथ मिल कर चली गयी हो, तो मुझको दुःख नहीं है। हे महानुभव! किसने मेरी पुत्रीको जीत लिया है। क्या कुरुवीर विचित्रवीर्य्यके पुत्र राजा पाण्डुके लड़के जीते हैं? क्या अर्जुनने धनुष लेकर लक्ष्यभेद किया है?

एकसौ तिरानब्बे अध्यायमें
स्वयम्बर अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि सोमवंश श्रेष्ठ राजपुत्र धृष्टद्युम्न पिताकी यह सब बातें सुनकर प्रसन्न चित्तसे जिसने द्रौपदीको जय कर लिया था और उस विषयमें जो कुछ हुआ था, सब आद्योपान्त पितासे कहने लगे, विशेषरूपसे चौड़ी और लाल आंखोंसे सुहावने काला मृगचर्म्म पहिने देव सदृश रूपवान जिस युवापुरुषने बड़े भारी चापमें गुण चटाकर लक्ष्यभेद करके भूतलमें गिराया था वह तपस्वी किसीसे नहीं मिले। वह ब्राह्मणोंसे घेरे और पूजे जाकर राजोंमें इस प्रकार पराक्रम प्रगट करने लगे, कि जैसे सम्पूर्ण महर्षि और देवोंसे घिरे हुए देवराज दैत्योंमें जा घुसते हैं। कृष्णा उस पुरुषके काले मृगचर्म्मको पकड़े प्रसन्न मनसे इस प्रकार पीछे पीछे चली, कि जैसे सर्पकी स्त्री सर्पराजके पीछे जाती है। तब सब राजाओंके असह्य और क्रोधयुक्त होकर युद्धके लिये दौड़ने पर दूसरे एक वीर उस पार्थिव सेनामें घुस कर इस प्रकार, कि जैसे क्रोधित यमराज दण्ड लेकर प्राणियोंको नष्ट करते हैं, एक बड़े भारी प्राचीन वृक्षको उखाड़ कर उससे भूपालोंको भगाने लगे। हे नरनाथ! तब राजालोग उन नरसिंह दो वीरोंकी ओर ताकने लगे। वे दोनो वीर चन्द्रमा और सूर्य्यकी भांति सोहते हुए कृष्णाको लेकरके नगरके बाहर एक कुम्भारके घरमें जा घुसे। वहां अग्निकी चिनगारीकी भांति एक बुढ़िया नारी अग्नि सदृश तीन वीरोंके साथ बैठी थी; मुझको जान पड़ा, कि वह उनकी माता होगी। अनन्तर वह दोनों उनके निकट जाकर और उनके पाव छूकर कृष्णाको उन्हें प्रणाम करनेको बोले। आगे कृष्णाको भिक्षा कहके जताकर उनके पास सौंपके वे सब भिक्षाके लिये निकले। आगे उनके भीख लेकर लौट आनेपर कृष्णाने उनके भोजन की सामग्री लेकर उसका कुछ अंश देवोंको अर्पण किया और कुछ ब्राह्मणोंको दिया। अनन्तर शेष भाग बुढ़िया और पांचो

वीरोंको परोस कर अन्तमें उसने भोजन किया। हे नरनाथ! इसके पश्चात् धरती पर मृगचर्म्म बिछाये जानेके पश्चात् वे उस पर सोये। कृष्णा उनके पावके नीचे तकियेकी भांति सो रही। तब वे वीर काले बादलकी समान गम्भीर स्वरसे आपसमें भांति भांतिकी विचित्र कथा कहने लगे। वे जो सब कथा कह रहे थे, वे कभी ब्राह्मण, वैश्य वा शूद्र जातिकी नहीं हो सकतीं; हे महाराज! वे जैसी युद्ध-सम्बन्धी कथा कहने लगे, उससे वे निःसन्देह क्षत्रियश्रेष्ठ होंगे! हे पिता! इसमें सन्देह नहीं है, कि हमारी आशा पूरी हुई है, क्योंकि सुन चुका हूं, कि पाण्डव अग्निसे जलनेसे बचे हैं, और उस महावीरने जिस प्रकारसे शरासनमें बिनाविलम्ब गुण चढ़ाया, जिस प्रकार सहजहीमें लक्ष्य भेद किया और उनमें आपसकी जैसी कथा सुनी, उससे निश्चय जान पड़ता है, कि येही पञ्च पाण्डव होंगे, इसमें सन्देह नहीं कि, वे माताके साथ छिपकर घूम रहे हैं।

श्रीवैशम्पायन बोले, कि अनन्तर राजा द्रुपदने आनन्द पूर्व्वक पुरोहितसे यह कहके पाण्डवोंके पास भेजा, कि आप उनके निकट जाके यह कहना, कि तुम महात्मा पाण्डुकी सन्तान हो, कि नहीं, मैं तुम्हारो सुध लिया चाहता हूं। राजपुरोहित राजाज्ञाको सुनकर पाण्डवोंके पास जा क्रमसे उनमेंसे हरेकका यश गाकर राजाको कही सब बात कहने लगे, हे श्रेष्ठ! वरदाता भूनाथ राजा पाञ्चाल आपका परिचय जानना चाहते हैं, वह इस वीरको लक्ष्य भेद करते देखकर अपार आनन्द पारावारमें गोता मार रहे हैं। आप अपनी, ज्ञातिकी और कुलकी कथा आद्योपान्त सुनाकर राजापाञ्चालके उनके साथियोंके और मेरे हृदयमें आनन्द दें; शत्रुओंके सिर पर पांव रखें। महाराज पाण्डु राजा द्रुपदके आत्मवत प्यारे सखा थे, सो भूपाल द्रुपदको यह चाह थी, कि उनकी कन्या कृष्णा सखा पाण्डुकी पुत्रवधू बने; हे आनन्दित रूपवान वीरो! राजा द्रुपदके हृदयमन्दिरमें सदा यह कामना जगती थी, कि महाभुज अर्ज्जुन धर्म्मानुसार उनकी कन्याको व्याहें, यदि वही हुआ हो, तो उनके लिये बड़ा हित, पुण्य पूरित, यशयुक्त और सुकृत हुआ है।

पुरोहितके नम्रभावसे यह सब कहके चुप होनेपर पाण्डवराजने उनकी ओर देख निकट स्थित भीमसेनको आज्ञा दी, कि इनको पाद्य अर्घ दो। यह राजा द्रुपदके पुरोहित, बड़े माननीय हैं, भले प्रकार इनकी पूजना चाहिये। हे नरनाथ! भीमसेनने भाईकी आज्ञानुसार भली भांति उनकी पूजा की, पुरोहित ब्राह्मण पूजा लेकर प्रसन्न चित्तसे सुखपूर्व्वक बैठने पर युधिष्ठिर उनसे बोले, कि हे ब्राह्मण! राजा पाञ्चालने मनमाना कन्यादान नहीं किया है। उन्होंने निज धर्म्मके अनुसार लक्ष्यभेदका प्रण करके कन्यादान करना निश्चय किया था, तिससेही इस वीरने उनकी कन्या लाभ की है; अब जाति कुल शील गोत्रके विषयमें पूछनेका उनको कुछभी अधिकार नहीं है। धनुषमें रोदा चढ़ाकर लक्ष्य भेदनेही पर वह सब पूछनेके अधिकार खो चुके हैं। उन्हींके संकल्पसे यह महात्मा सब राजाओंमेंसे द्रौपदीको जय कर लाया है, ऐसी दशामें सोमवंशी राजा द्रुपदका इस समय दुःख मानना केवल सुखसे हाथ धोनाही है। पर उनकी जो चाह है, वह पूरी होगी, क्योंकि इस अतिरूपवती राजकुमारीके लक्षण भले दीख पड़ते हैं। जिसको सामर्थ थोड़ी है, वह कभी उस शरासनमें रोदा नहीं चढ़ा सकता है, और जो नीच जाति अथवा व्यवहारसे ज्ञात नहीं है, वह भी कभी लक्ष्यको भेद कर धरती पर गिरा नहीं सकता है, फिरभी इस भूमण्डल भरमें किसीकी ऐसी सामर्थ नहीं है, कि

लक्ष्यका गिरना व्यर्थ कहे, सो अब कन्याके लिये उनका दुःख मानना ठीक नहीं। युधिष्ठिर ऐसा कह रहे थे, कि राजा पाञ्चालसे एक दूत यह कहनेको वहां आया, कि अन्न बना है।

बैवाहिक पर्व्वमें एकसौ चौरानब्वे अध्याय समाप्त।

दूत बोला, कि महाराज द्रुपदने व्याहनेकी इच्छासे बराती लोगोंके लिये अच्छा अन्न बनवाया है। आप नित्यकृत्य पूरा कर शीघ्र वहां आवें; वहीं कृष्णाका विवाह होगा, विलम्ब न करें। सुवर्ण पद्मसे सुहावने, अच्छे घोड़ेवाले यह सब रथ खड़े हैं, आप सब कोई इन पर चढ़के पाञ्चालराजभवनमें शुभागमन करें।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर कुरुश्रेष्ठ पाण्डव पुरोहितको विदा कर उन बड़े बड़े यानोंमेंसे एक पर कुन्ती और कृष्णाको चढ़ाय आप एक और पर चले। इधर राजा पाञ्चालने पुरोहितसे धर्म्मराज युधिष्ठिरका वचन सुन उनकी जातिका पहिचान और उपहारके लिये चारो वर्णयोग्य फल, सुन्दर सुन्दर माला, चर्म्म, वर्म्म, आसन, गौ, रस्सी, बीज, कृषीके दूसरे सब पदार्थ, शिल्पयोग्य काटने कूटनेके यन्त्र और क्रीड़ाकी वस्तु आदि भांति भातिके पदार्थ बटोरे। आगे चमकीला चर्म्म, वर्म्म, और ऋष्टि, सुन्दर खड्ग, घोड़े, रथ, अच्छे चाप, भांति भांतिके बाण सुवर्णसे सजी शक्ति प्रास, भूसुण्डी और कुठार, युद्धयोग्य भांति भांतिकी दूसरी वस्तु और अच्छी सेज, घटाटोप बहुविध चीर आदि अनेक प्रकारकी सामग्री अलग अलग रख दी। अनन्तर कौरवराजपत्नी कुन्ती सती द्रौपदीको लेकर राजा द्रुपदके अन्तःपुरमें गयी। राजमहरियोंने प्रसन्न चित्तसे उनका स्वागत कर सम्मानित किया। हे राजन्! अनन्तर राजा पाञ्चाल, तथा उनके मन्त्री, पुत्र, मित्र, टहलुवे और राजपरिवारके दूसरे लोग, मृगचर्म्मका दुपट्टा लिये आगये हुए पाण्डवोंकी सिंह समान विक्रमी चाल, बड़े बैलसदृश आंख सर्पराजकी देहकी भांति लटके भुज और बड़े स्कन्ध देख आनन्दके समुद्रमें डूबे। वे नरश्रेष्ठ वीरगण बिना आश्चर्य्य और निडर चित्तसे अलग अलग पादपीठयुक्त अति सुन्दर मूल्यवान आसनों पर बड़े छोटेके क्रमसे बैठ गये। अनन्तर अच्छे लिबास गहनोंसे बने ठने टहलुये, महरिन और खिलाने पिलानेवालोंने यथायोग्य सुवर्ण और चांदीके बर्त्तनोंमें परम स्वादिष्ट राजाके भोजनयोग्य अन्नपानादि भांति भांतिकी सामग्री लाकर दे दी। हे महाराज! पुरुषोंमें वीर पाण्डव मनमाने भोजन कर तृप्त हुए और उपहारकी वस्तुओंमेंसे दूसरी सब तजकर केवल लड़ाई योग्य पदार्थोंको देखने लगे। तब राजा द्रुपद और उनके पुत्र और प्रधान प्रधान मन्त्री यह देख कुन्तीकुमारोंको राजकुमार निश्चय कर आनन्द मानने लगे।

बैवाहिक पर्व्वमें एकसौ पंचानब्वे अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर अति द्युतिमान पाञ्चाल्य द्रुपद, बड़े तेजस्वी राजपुत्र युधिष्ठिरकी सम्भाषण करके बिना दुःख ब्राह्मणयोग्य आदरके साथ बोले, कि तुमको ब्राह्मण, क्षत्रिय, गुणवान वैश्य वा शूद्र इनमेंसे कौनसी जाति समझूं। अथवा तुम देवता तो नहीं हो, कि देखनेके लिये माया लेकर ब्राह्मणोंके स्वरूपमें टहलते हुए कृष्णाके निमित्त यहां शुभागमन किया है? तुम सच कहो इस विषयमें हमको शंका हुई है। हे शत्रुमंथन! क्या इस शङ्काके दूर होनेसे

हमारे हृदयमें आनन्द जल वर्षेगा? क्या हमारा सौभाग्य उगा है? हे अमर डरावन! अपनी इच्छासे सत्य वचन बोलो, राजाके सामने सच कहना, जितनी शोभा है, इष्टा-पूर्त्त अर्थात् यज्ञादि क्रिया और वापी प्रतिष्ठा आदि पुण्यदायी कर्म्मभी उतनी शोभा नहीं देते, सो असत्य न कहना। हे शत्रुमथन! मैं तुम्हारा वचन सुनके यथारीति तुम्हारी जाति-योग्य विवाह करनेका उद्योग करूंगा।

युधिष्ठिर बोले, कि हे पाञ्चालनाथ! आप दुःख न मानें, सन्तोष लें; सन्देह नहीं, कि आपका मनोरथ सफल हुआ है। हे महाराज! हम क्षत्रियवंशी महात्मा राजा पाण्डुके पुत्र हैं। मैं कुन्तीका ज्येष्ठ पुत्र हूं, यह दो भीमार्ज्जुन हैं, इन्होंनेही राजसभामें आपकी कन्या जय करली है; और जहां कृष्णा है, वहीं यमज भ्राता नकुल सहदेव और माता विराज रही हैं, सो आप हमको क्षत्रिय निश्चय करलें, हे नरसिंह! आप मनका दुःख दूर करें, पद्मिनी-समान आपकी यह कन्या एक झीलसे दूसरे झीलमें लायी गयी है। हे महाराज! आप हमारे गुरु और परम गति हैं? सो आपसे यह सब व्योरा सच कह दिया।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे महाराज! अनन्तर शत्रु डरावने धर्म्मधर राजा द्रुपद पाण्डवोंका परिचय पाकर परम हर्षसे घबरा-कर युधिष्ठिरको योग्य उत्तर न दे सके। वह उस हर्षको यत्नसे दबाकर धर्म्मराजको काल-योग्य वचन बोले। पूछा, कि वे क्योंकर वारणावत नगरसे भागे थे। पाण्डुपुत्रने आद्यो-पान्त वह सब कथा कह सुनायी। वचनशील राजा द्रुपद उनकी बात सुनकर नरनाथ धृत-राष्ट्रको निन्दा करने लगे और कुन्तीपुत्र युधि-ष्ठिरको ढाढ़स दे उनको राज्यमें बैठानेकी प्रतिज्ञा की। अनन्तर कुन्ती द्रौपदी भीम, अर्ज्जुन नकुल और सहदेव राजाकी आज्ञासे एक बड़े भवनमें गये। हे महाराज! वे राजा यज्ञसेनसे सन्मान पाकर उस भवनमें बसने लगे। अनन्तर राजा पुत्रोंके साथ सोच तज युधिष्ठिरसे बोले, कि आज शुभ दिन है, आज कुरुनन्दन अर्ज्जुन विवाहके कौलिक कर्म्म को करके कृष्णासे विवाह करें।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे महाराज! धर्म्मात्मा युधिष्ठिर उनसे बोले, कि हे नर-नाथ! मुझकोभी विवाह करना है। द्रुपदने कहा, कि हे वीर! तुमही विधि पूर्व्वक मेरी बेटीका पाणिग्रहण करो, अथवा तुम जिससे कृष्णाको व्याहा चाहो उसीसे व्याहो। युधि-ष्ठिर बोले, हे महात्मा! द्रौपदी हम सबोंकी रानी बनेगी, क्योंकि पहिले मेरी माताने ऐसी आज्ञा की है, विशेष मेरा और भीमसेनका विवाह नहीं हुआ है, यद्यपि अर्ज्जुनने तुम्हारी रत्नसदृश कन्याको बाजीमें जीत लिया है, पर हे राजेन्द्र! हम भाइयोंमें एक नियम है, कि रत्न पानेसे हम सब एकत्र होकर भोग करेंगे। हम उस नियमके विरुद्ध चलनेका साहस नहीं रखते, सो द्रौपदी हम सबोंकी धर्म्मपत्नी होगी, वह अग्निके सामने बड़े छोटेके क्रमसे हम सबोंसे विवाह करे। द्रुपद बोले, हे कुरुनन्दन! शास्त्रकी विधिसे एक पुरुषकी बहुत स्त्री होती हैं, पर एक नारिका बहुतपति होना कभी नहीं सुना। हे कुन्ती-पुत्र! तुम पवित्र और धर्म्मके जानकार होकरभी क्योंकर लोक औ वेदके विरोधी कर्म्ममें हाथ डाला चाहते हो! क्यों तुम्हारी ऐसी बुद्धि हुई? युधिष्ठिर बोले, महाराज! धर्म्ममार्ग सूक्ष्म है, उसकी गति हम जान नहीं सकते। पर प्रचेता आदि पहिलेके महात्मा जिस पथसे चले हैं, हम उसी पथसे चलेंगे। हे राजन्! मेरी माताने वह आज्ञा दी है और वह मेरा भी मनमाना हुआ है;

सो वह अवश्यही सनातन धर्म्म है. क्योंकि मेरे वागेन्द्रियसे कभी झूठी बात नहीं निकलती, मेरा मन भी अधर्म्मको ओर नहीं चलता। आप इस मतसे काम करें, अधिक विचारनेका प्रयोजन नहीं है, हे पृथ्वीनाथ। इस विषयमें आप कोई शङ्का न करें। द्रुपद बोले, कि हे कुन्तीपुत्र। तुम, कुन्ती और मेरा पुत्र धृष्टद्युम्न यह तीन मिलके विचार कर क्या करना है. निश्चय करो. मै कल जो करना हो, करूंगा। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भारत। अनन्तर कुन्ती, युधिष्ठिर और धृष्टद्युम्न यह तीन एकत्र होकर उस विषयमें विचारने लगे। ऐसे समयमें भगवान द्वैपायन आपही वहां आ पहुंचे।

वैवाहिक पर्व्वमें एकसौ छानब्बे
अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर सब पाण्डव बड़े यशोवन्त राजा पाञ्चाल और वहांके दूसरे लोगोंने उठ कर महात्मा कृष्ण द्वैपायनका स्वागत किया। महानुभव महर्षि उनका प्रणाम आदर पूर्व्वक लेके कुशलक्षेम पूछकर सुन्दर सुवर्णके आसन पर बैठे। पाण्डव आदि सबने अति तेजस्वी कृष्णद्वैपायनकी आज्ञासे महामूल्य आसन लिये। हे पृथ्वीनाथ! पृषतराजपुत्र राजा पाञ्चालने क्षण भर पीछे मधुर वचन कहके महात्मा ऋषिसे द्रौपदीके व्याहनेके विषयमें प्रश्न किया। हे भगवन! सच कहे. कि एक स्त्रीके बहुत पुरुषोंकी धर्म्मपत्नी होनेसे सङ्करताका दोष पहुंचता है. कि नहीं?

व्यासजी बोले. कि वेद और लोकाचारमें प्रसिद्ध न रहनेसे यह धर्म्म लोप होगया है, पर इस विषयमें तुमलोगोंमेंसे किसका क्या मत है, सुना चाहता हूं।

द्रुपद बोले. कि हे द्विजश्रेष्ठ! कहीं अनेक पुरुषोंकी एक स्त्री नहीं है; सो यह कर्म्म लोकाचार और वेदके विरोधी होनेके कारण अधर्म्मयुक्त जान पड़ता है, पहिलेके महात्माओंने भी ऐसा कार्य्य नहीं किया। विद्वान जनको किसी प्रकार अधर्म्म मार्गमें पांव डालना नहीं चाहिये, इस लिये मैं इस काममें हाथ डालनेका साहस नहीं कर सकता हूं, यह धर्म्म मुझको सदा सन्देहसे भरा हुआ प्रगट हो रहा है।

धृष्टद्युम्न बोले, कि हे ब्रह्मन्। आप द्विजोंमें श्रेष्ठ और तपबलसे बली हैं; कहें तो सही, कि बड़े भाई, सुमार्गी होकर क्योंकर छोटे भाईकी स्त्रीसे मिल सकता है। धर्म्म बहुत सूक्ष्म है, सो कौनसा विषय धर्म्मयुक्त और कौन अधर्म्म युक्त है, इसका विचार नहीं कर सकते. इसीसे साहस-पूर्व्वक यह नहीं कहा, कि द्रौपदी पांच पुरुषोंकी स्त्री बने।

युधिष्ठिर बोले, कि मेरा वचन कभी उलट पुलट बात नहीं बोलता, मन भी कभी अधर्म्म पर नहीं झुकता, इस विषयमें मेरे मनकी भी प्रवृत्ति हो रही है, सो यह किसी प्रकार धर्म्मके विरुद्ध जान नहीं पड़ता। पुराणोंमें भी सुना है, कि जटिला नाम्नी गोतम गोत्रकी धर्म्म पालनेवाली तापसी एक कन्या थी; सात ऋषियोंने उससे विवाह किया था। और पूर्व्वकालमें तपस्वी जितेन्द्रिय "प्रचेता" इस एक नामके दश भाई थे, उनसे उपजी हुई एक मुनिकन्या उन दशोंसे व्याही थी। हे धर्म्मके जानकारोंमें श्रेष्ठ! कहा है, कि गुरु जैसी आज्ञा करते हैं, वही धर्म्मयुक्त है, और सब गुरुओंमें माता ही परम गुरु है, उन परमगुरु माताने हमको आज्ञा दी है, कि भीखकी सामग्रीको सब मिलकर भोगो। हे द्विजोत्तम! मैंने इस लिये इस कर्म्मको परम धर्म्म विचारा है।

कुन्ती बोली, धर्म्म आचरनेवाले युधिष्ठिरने जैसा कहा, वह ठीकही है, मेरी वह बा

झूठा न ठहर जाये, इसलिये मैं बहुत भय खा गयी हूं, हे ब्रह्मन। क्योंकर मेरी उस बातकी सचाई बनी रहेगी?

श्रीव्यासजी बोले, कि भद्रे! तुम्हारी बातकी सचाई बनी रहेगी; तुमने जो कहा है, वह सनातन धर्म्म है। हे पाञ्चाल! युधिष्ठिरने जो कहा है वही धर्म्मयुक्त है, इसमें कोई शङ्का नहीं है। यह जिस प्रकार जिनसे सनातनधर्म्म करके निश्चय किया गया, वह सबोंसे नहीं कहूंगा, केवल तुमही सुनो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर प्रभु द्वैपायन भगवान व्यासजी उठकर राजाका हाथ थामकर राजमन्दिरमें गये। कुन्ती, पाण्डव और धृष्टद्युम्न उन दोनोंकी बाट ताकते हुए वहीं बैठे रहे, अनन्तर महर्षि द्वैपायन महात्मा द्रुपदसे यह कथा कहने लगे, कि अनेक पुरुषोंकी एक स्त्री होना धर्म्मके विरुद्ध नहीं है।

वैवाहिक पर्व्वमें एकसौ सतानव्वे
अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि महाराज! पहिले नैमिषारण्यमें देवोंने महायज्ञ आरम्भ किया था। उस महायज्ञमें वैवस्वत यम पशु मारनेको नियुक्त हुए थे। वह उस काममें प्रवृत्त रहके किसी प्रजाको नहीं मारते थे, इससे मनुष्योंके मृत्युसे वचने पर उनका भय दिनोंदिन बढने लगा। अनन्तर चन्द्र, इन्द्र, वरुण, कुवेर, दोनों अश्विनीकुमार साध्यगण, रुद्रगण, वसुगण और दूसरे देवगण भुवन रचनेहारे प्रजापतिके निकट जा पहुंचे, और सब मिलकर मनुष्योंकी संख्या वृद्धि होनेके कारण भीतचित्तसे इन लोकोंके गुरु ब्रह्माजीसे बोले मनुष्योंकी संख्या बढ़नेसे हम बड़े भयसे उदास हैं, और सुखकी आशासे आपकी शरण लेते हैं। पितामह बोले, कि मनुष्योंसे तुम्हें क्या भय है? तुम सब अमर हो, सो मर्त्योंसे तुमको भय खाना नहीं चाहिये। देवगण बोले, कि अब मर्त्तगण अमर्त्त हुए हैं, सो हम लोगोंसे कोई विशेषता नहीं रही, इस लिये हम उदास हो मर्त्तोंसे अपना प्रभेद बनाये रखनेकी चाहसे यहां आये हैं। भगवान बोले, कि तपनपुत्र इस कालमें यज्ञमें बझे हैं, सो नरोंकी मृत्यु नहीं हो रही है, पर उनके यज्ञके सम्पूर्ण कार्य्य हो जाने पर मानवोंका अन्तकाल आ पहुंचेगा। तब यमराजका शरीर तुम्हारेही वीर्य्यसे सजकर और बढ़कर जीवनाशी बन जायगा। मनुष्योंको कुछ वीर्य्य नहीं रहेगा।

श्रीव्यासजी बोले, कि अनन्तर महाबली देवगण पितामहका वचन सुनकर नैमिषारण्यमें यज्ञ भूमिपर गये। वे उस ठौर ठहरे थे, कि ऐसे समयमें देखा, कि भागीरथीके जलसे एक सुवर्ण पद्म वहा जाता है, उसको देखतेही वे अचम्भेमें हो रहे, अनन्तर यह ढूंढ़नेके लिये, कि वह सोनेका कमल कहांसे उपजा है, उनमेंसे शूरतायुक्त इन्द्र वहांसे चल निकले। जहांसे गङ्गाजी निकलती हैं, वहां पहुंचकर उन्होंने अग्निकी शोभाके समान एक उजाली कन्या देखी। वह नारी रोती हुई जलकी चाहसे गङ्गाजीमें देह डुबा रही थी। उसके आंसूके बूंदें गङ्गा जलमें गिरके सुवर्ण कमल बनते जाते थे। देवराज वैसी अचम्भो लीला देखके उसके पास जाकर बोले, कि भद्रे! तुम कौन? क्या रो रही हो? मैं इसका व्यौरा जाना चाहता हूं। बाला बोली, कि देवराज! मैं बड़ी अभागी हूं, तुम मेरे सङ्ग चलो, तो जान सकोगे कि मैं कौन और क्यों रो रही हूं। हे महाराज! तुम मेरे साथ आओ, मैं तुम्हारे आगे चलती हूं, रुलाईका कारण तुम देख लोगे।

श्रीव्यासजी बोले, कि देवराज तब नारीकी यह बात सुनके उसके पीछे पीछे चलने लगे। आगे कुछ दूर जाकर पास ही हिमाचलको

चोटी पर देखा, कि एक परम सुन्दर युवा पुरुष युवतीके साथ सिंहासन पर बैठ चौसड़ खेल रहे हैं। सुरनाथ उनको चौसड़में बड़े मगन देखके बोले, कि हे पण्डितवर। जानना, कि यह तीनों भुवन मेरेही वशमें हैं। इसपर पुरुषके कोई उत्तर न देने पर इन्द्रने क्रोधके मारे फिर कहा, कि मैं भूमण्डल भरका अधीश हूं। तब उन खेलते हुए पुरुषने देवराजको क्रोधित देख एकबार उनकी ओर आखें फेरीं। देवराज उनकी आखोंके सामने पड़तेही जड़वत बन गये। अनन्तर वह पुरुष चौसड़ खेल लेनेके पीछे उस रोती हुई बालासे बोले कि तुम इस इन्द्रको लाओ, उसको शासन कर दूगा, कि वह मेरे सामने फिर अहङ्कार न प्रकट करे। अनन्तर उस नारीके देवराजको लानेके लिये छूतेही देवराजके अग अवश हुए और वह धरती पर गिर पड़े। तब उन पुरुषरूपी कठोर तेजस्वी भगवान महादेवजीने उनसे कहा, कि इन्द्र! फिर कभी ऐसा काम न करना। तुम्हारा बलवीर्य्य बहुत अधिक है, सो तुम इस गड्ढेके द्वार रोके हुए बड़े पर्व्वतको खोलकर बिलके भीतर जाघुसो, तुम वहां देखोगे कि तुम्हारे समान सूर्य्यवत प्रकाशमान बहुत इन्द्र हैं। तब देवराजने पर्व्वतराजके उस बिलके द्वारको खोलके उसमें अपने ऐसे दूसरे चार इन्द्रोंको देखा। वह उनको देखते ही यह कहके दुःख करने लगे, कि "मुझकोभी ऐसी दशामें रहना न पड़े।" तब देवदेव महेश्वर क्रोधसे नेत्र फैला कर इन्द्रसे बोले कि इन्द्र! तू इस बिलमें जा गिर, क्योंकि पहिले तूने चपलतासे मेरा अनादर किया है। इन्द्र विभुके क्रोधित वचनसे अति कातर होकर इस प्रकार वेगसे कांपने लगे, कि जैसे पहाड़ परके पीपलके पत्ते हवासे हिलकर थरथरावें। वह बैल पर चढ़े महादेवजीसे एकायेक ऐसी कटीली बात सुनके थरथराते हुए दोनों हाथ जोड़कर अनेक रूप लेनेवाले उन कठोर देवसे बोले, कि हे आदिनाथ! हे भव! तुम चराचर सहित सम्पूर्ण विश्वके देखनेवाले हो, तुम सब कुछ जान लेते हो। तब कठोर तेजस्वी महादेवजी हस कर बोले, कि मैं उनपर कभी प्रसन्न नहीं होता, जो लोग ऐसा अहङ्कारी स्वभाव रखते हैं। देखो, पहिले यह सब इन्द्र ऐसाही कर्म्म कर इस बिलमें जा गिरे हैं, सो तुमभी उसमें जाकर लेट रहो। सन्देह नहीं है, कि तुम सबोंका यही हाल होगा कि, तुम पांचोंको मनुष्यजन्म लेकर मर्त्यलोकमें अनेक भांतिके कठोर कर्म्म करने पड़ेंगे, अनेक जीवोंको मारकर पहिलेके जीते लिये हुए अति मूल्यवान इन्द्रत्वलाभमें शुभागमन करोगे, तुम्हारे लिये मैंने ऐसाही निश्चय किया है। पहिले इन्द्रलोग बोले, कि हम पांच देवलोकसे मर्त्यलोकको उस ठौरको जायेंगे कि जहां मोक्षका मिलना कठिन है, पर हमारी प्रार्थना यह है, कि उस स्त्रीके कि जो हमारी माता होगी, धर्म्म, वायु, मघवान और दोनों अश्विनीकुमार यह पांच देव हमारे लिये गर्भाधान करें। पर हम मर्त्य धाममें अनेक मनुष्योंसे लड़ेंगे, आगे इन्द्रलोकमें आवेंगे।

श्रीव्यासजी बोले, कि इन्द्रजी देवपतिदेवसे बोले, कि मैं स्वयं न जाकर कार्य्य पूरा करनेके लिये निज वीर्य्यसे एक पुरुष उपजा दूं। अनन्तर भगवान् पिनाकधारीने दया-स्वभावसे विश्वभुक, भूतधामा, शिवि, शान्ति और तेजस्वी इन प्रतापी पांच इन्द्रोंकी प्रार्थना मान ली। और लोकोंके मन हरनेवाली स्वर्गकी श्री, उस बालाको मर्त्यलोकमें उनकी पत्नी बननेका विधान कर दिया। आगे वह देव उनको साथ लेकर अप्रमेय नारायणके पास गये। भगवान श्रीनारायणजीने वह सब जानके उस विषयमें

अपनी सम्मति दी। अनन्तर वे भूमण्डलमें जन्म लेने लगे। भगवान हरिने अपनी शक्तिरूपी कृष्ण और शुक्ल इन दो रङ्गके दो केश उखाड़ दिये। वे केश यदुवंशमें रोहिणी और देवकीके गर्भमें जाके प्रविष्ठ हुए। श्रीनारायणजीके उस शुक्ल केशने वलदेवजीके स्वरूपमें जन्म लिया है, और कालेवरणका वह दूसरा केश स्वरूपके अनुसार कृष्ण बनके उपजा है। इन्द्ररूपी जो चार पुरुष उस पर्व्वतको कन्दरामें बंधये थे उन्होंने इस मर्त्यलोकमें पाण्डवके स्वरूपमें जन्म लिया है। पाण्डवसव्यसाची इन्द्रके अंशसे उपजे हैं। हे महाराज! जो पहिले इन्द्र थे, वे इस प्रकारसे पाण्डवोंके रूपमें अवतीर्ण हुए हैं। और जिस दिव्यरूपिणी स्वर्ग-लक्ष्मीकी बात कही गयी है, वही यह द्रौपदी है। यह पहिलेही निश्चय हुआ है, कि यह इन सबोंकी पत्नी बनेगी। देखो, जिसका रूप चन्द्रमा और सूर्य्यके उजालेकी भांति है और जिसकी सुगन्ध कोस भरतक पहुंचती है, वह क्या स्त्री देवसंयोगके बिना धरती से उठ सकती है? हे नरनाथ! मैं प्रीतिपूर्व्वक तुमको अति आश्चर्य्य दिव्य नेत्रोंका वर देता हूं, उससे तुम कुन्तीपुत्रोंको दिव्य और पवित्र पहिलेकी देहमें देख लोगे। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर परम उदार कर्म्म-करनेवाले पवित्र विप्रवर श्रीव्यासजीके तपोबलसे उस राजाको दिव्यनेत्र देने पर राजाने सब पाण्डवोंको यथावत पूर्व्वदेहमें देखा। उनको सुवर्ण किरीटधारी, माला पहिने, अग्नि और सूर्य्यके समान उज्वलवर्ण, उपयुक्त अलंकारोंसे मनोहर, तरुण, विशाल छातीवाले, पांचहाथसे कुछ कम ऊंचे और इन्द्ररूपी देखा। सर्व्व गुणयुक्त, निर्म्मल दिव्यवसन पहिने और अच्छी सुगन्धी मालासे सजे पहिलेके इन्द्रोंकी भांति उन पाण्डवोंको साक्षात् त्रिलोचन वा वसुगण, रुद्रगण, अथवा आदित्यगणके समान देखकर और इन्द्ररूप अर्ज्जुनको साक्षात इन्द्ररूपी निहारकर प्रसन्न हुए। आगे उस अप्रमेय दिव्य मायाको देखके अचरज मानकर चन्द्र और अग्निसमान प्रकाशवती लक्ष्मीजी सदृश परम रूपवती, श्रेष्ठतमा उस स्वर्ग-कन्याको उसके रूप, तेज और यशके द्वारा उनकी भार्य्या बनने योग्य समझा। राजा द्रुपद उस अति आश्चर्य्यलीलाको देखकर सत्यवतीपुत्रके पांव छूकर बोले, कि हे परमर्षि! मुझको दिव्य नेत्र देकर इन सब आश्चर्य्य रूपोंका दिखाना आपके लिये कोई बड़ी बात नहीं है। अनन्तर द्वैपायन प्रसन्नचित्तसे फिर बोले, कि एक तपोवनमें किसी महात्मा ऋषिकी एक कन्या थी, वह कन्या रूपवती युवती और सती होने परभी पति पा नहीं सकी थीं, सो कठोर तप कर शङ्करको प्रसन्न किया। स्वयं वरदाता देवोंके ईश्वर प्रसन्न होकर बोले, कि अपना मनमाना वर मांगो। कन्या यह सुनके हड़बड़ीसे वरदाता ईश्वरसे बार बार बोली, कि मैं सर्व्वगुणशील पति मांगती हूं। देवनाथ शङ्करने प्रसन्नमनसे यह कहके वर दिया, कि भद्रे! तुम्हारे पांच पति होंगे? शिवकी कृपा लाभ की हुई वह बाला वरदाता देवसे फिर बोली, कि हे शङ्कर! मैं आपसे गुणशील एक पतिकी प्रार्थना करती हूं। प्रसन्नात्मा देव-देवने उससे फिर यह शुभ वचन कहा कि भद्रे! तुमने यह कहा, कि पति दो, मुझसे पांचवार प्रार्थना की है, सो तुम्हारे पांच पति होंगे, तुम्हारा मङ्गल होवे, मेरी बात न पलटेगी, दूसरे जन्ममें तुम्हारे पांच पति होंगे। हे द्रुपद! देवीरूपिणी अनिन्दिता वह तुम्हारी कन्या पांच मनुष्योंकी पत्नी होनेके लिये निश्चय की गयी है। स्वर्गकी श्री यह बाला कठोर तप करके पाण्डवोंके लिये महामखसे उपज कर तुम्हारी कन्या हुई है, देवोंसे सेवी जाती हुई सुन्दरी यह देवी स्वकृत कर्म्मसे अकेली पांच मनुष्योंकी स्त्री होगी!

इस अभिप्रायसे विधाताने स्वयं इसको रचा है। हे महाराज द्रुपद! तुमने सब कथा सुन लो, अब जो चाहो सो करो।

वैवाहिक पर्व्वमें एकसौ अठानव्वे अध्याय समाप्त।

द्रुपद बोले, कि महर्षे! मैंने पहिले आपसे यह न सुने रहनेसे वैसा विधान करनेका प्रयत्न किया था, अब विशेष ज्ञात हुआ, देवताके ठहराये हुए विषयको कभी उपेक्षा नहीं को जा सकती है, अतएव पहिलेके ठहराये हुए विधानके अनुसारही कर्त्तव्य निश्चय करता हूं। भाग्यको गांठ पलटी नहीं जा सकती; निजकर्म्मसे कुछ होता नहीं, एक वरके लिये लक्ष्य रचा था, वही अब पांचके लिये निश्चय होगया। कृष्णा पहिले जन्ममें जिस प्रकार पांच वार बोली थी, कि मुझको पतिका वर दें, उसही प्रकार भगवान्‌नेभी कहा था, कि तुमको पांच पतिकाही वर मिलता है; सो इस बातकी भलाई बुराई वही जानते हैं। जब भगवान शङ्करने ऐसा विधान किया है, और इन्हीके लिये कृष्णा बनायी गयी है, तब यह चाहे धर्म्म वा अधर्म्म होवे, मुझको कोई दोष नहीं लग सकता। यह लोग विधिके विधानसे सुखपूर्व्वक द्रौपदीसे विवाह करें।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर भगवान् महर्षि धर्म्मराजसे बोले, कि हे युधिष्ठिर! आज शुभदिन है, चन्द्रमा पौष्टिक योग प्राप्त करेगा सो पहिले तुम आज द्रौपदीसे विवाह करो। भगवान द्वैपायनके ऐसा कहने पर पुत्रसहित राजा यज्ञसेन कन्याको व्याहनेका प्रयत्न करने लगे। वह दानके लिये यथायोग्य अनेक अच्छी अच्छी सामग्री बटोरकर और द्रौपदीको भांति भांतिके रत्न अलङ्कारोंसे सजाकर लिवा लाये। राजाके मित्र और या ब्राह्मण और नगर परवासी सब विवाहको देखनेके लिये, प्रसन्नचित्तसे अपनी अपनी प्रधानताके अनुसार मिलकर आने लगे। राज-भवनका आंगन पद्म आदि जलसे उपजे हुए अनेक फूलोंकी बड़ी बड़ी मालासे सजा था; सम्मानित जनोंके शुभागमनसे उसकी अपूर्व्व शोभा हुई। वह राजभवन यथा योग्य ठौरमें सजी सजाई सेना और भांति भांतिके विचित्र रत्नोंसे खचित होकर ऐसी सुन्दर शोभा पाने लगा, कि जैसे आकाशमण्डल अमल नक्षत्रोंकी मण्डलीसे ढपे जाकर परमरूपसे सुशोभित हो। हे प्रभो! अनन्तर जलती हुई बालुकाकी भांति तेजस्वी पुरोहित धौम्यके पाण्डवोंके अभिषेक और माङ्गलिकक्रिया कर लेने पर तरुण अवस्थावाले पाण्डव गण नाना वस्त्र आभूषणोंसे सजके सुगन्धी चन्दन लगाकर और कुण्डल पहिरे गोशालामें घुसते हुए बड़े बड़े बैलोंकी भांति बडे आनन्दकी उमंगसे उस सभामें जा पहुंचे। अनन्तर मन्त्रवित् जानकार वेदज्ञ धौम्य अग्नि स्थापन कर जलती हुई आगमें यथाविधि मन्त्र पढ़कर आहुति चढ़ाने लगे, आगे युधिष्ठिरको लाय कर द्रौपदीसे गांठ जोड़ देने पर वर कन्या दोनोंने अग्निकी परिक्रमा कर पाणिग्रहण किया। देवदत्त पुरोहित उनकी विवाह-क्रिया पूरी कर युद्धमें पण्डित युधिष्ठिरकी आज्ञा लेकर राज-भवनसे पधारे। इस प्रकार महारथी कौरववंशके बढ़ानेवाले राज-पुत्रगणने सबसे अच्छे अच्छे लिवास गहनोंसे सजके क्रमसे एक एक दिन उस सुन्दरीका पाणि ग्रहण किया, हे महाराज! महर्षि श्रीव्यासजीने इस विषयमें मुझको एक आश्चर्यलीलाकी कथा कही थी, उस महानुभव सुन्दरी द्रौपदीकी एक दिन विवाह हो जाने पर फिर दूसरे दिन कन्यावस्था हो जाती थी। इस प्रकार विवाह हो जाने पर महानुभव सौमिक राजा द्रुपदने अग्निको साक्षीकर महारथी

पाण्डवोंको पोछे कहे हुए नाना धन यौतुकमें दिया। उन्होंने सुवर्ण रासयुक्त चार घोड़ोंके साथ सुवर्णसे मढ़े हुए सौ रथ, सुवर्णकी चोटीवाले पहाड़के समान और बिन्दुजालसे सुशोभित सौ गज, नवयौवनसे मदमाती, मुल्यवान चीर, गहने और माल्यादिकोंसे बनी-ठनी सौ दासी, अनेक भांति मूल्यवान चीर और गहने तथा उनमेंसे हरेकको अलग अलग एक एक लाख सुवर्ण मुद्रा दे दिया। अनन्तर विवाह हो जाने पर महाबली पाण्डव बहुत रत्नके साथ उस रत्नरूपी स्त्रीको लाभ कर राजा पाञ्चालकी पुरीमें इन्द्रके समान विहार करने लगे।

नैवाहिक पर्व्वमें एकसौ निनानव्वे अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि पाण्डवोंसे राजा द्रुपदकी मित्रता हो जाने पर वह एकवारही निडर बने; देवोंसेभी उनको कोई भय न रहा। महात्मा द्रुपदकी पर्देवाली स्त्रियोंने कुन्तीके पास आके अपना अपना नाम कहकर उनके पांवपर सिर नायके प्रणाम किया। मांगलिक सूतादि लिये हुई क्षौम पहिनी द्रौपदी सासके पांव पर लोटके दोनों हाथ जोड़कर सिर नाय खड़ी हुई। कुन्तीने रूप-लक्षणोंसे सजी सुशीला शुभ-आचारवती पुत्र-वधू द्रौपदीको प्यारसे यह अशीस दिया, कि ऐ कल्याणि। जिस प्रकार इन्द्रपत्नी महेन्द्रकी, स्वाहा विभावसुकी, रोहिणी चन्द्रमाको, दम-यन्ती नलकी, भद्रा कुवेरकी, अरुन्धती वसिष्ठकी और लक्ष्मी नारायनकी प्यारी है, वैसेही तुम पतियोंकी प्यारी बनो; हे भद्रे। तुम दोर्घजीवनवाले वीरपुत्र प्रसव करो, बहुत सुख लेके सौभाग्य पायके यश भोग करो, पतिव्रता हो, यज्ञमें दीक्षित पतियोंकी सदा साथी बनी रहो। अतिथि, पाहुने, बाल, वृद्ध और गुरुओंकी सदा विधि पूर्व्वक सेवा करते तुम्हारा काल बीते। तुम कुरुजाङ्गलका राज्य और नगरमें धर्म्मराजके साथ गद्दी पर बैठो। सम्पूर्ण धरती तुम्हारे महाबली पतियोंके परा-क्रमसे जय होकर अश्वमेध महायज्ञ द्वारा तुमसे ब्राह्मणोंको सौंप दी जावे। हे गुणवति! पृथ्वी भरमें जो सब गुणयुक्त रत्न हैं, उनपर तुम्हारा हाथ लगे। तुम परम सुखसे शत वर्ष गंवाओ। ऐ गुणवती वधू! आज तुमको क्षौम पहिनी देखकर जैसा आनन्द प्रगट करती हूं, तुम्हारा पुत्र उपजनेसे फिर ऐसा आनन्द लूटूंगी।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर श्रीकृष्ण-चन्द्रने व्याहे हुए पाण्डवोंके लिये नीचे कहे यौतुक धन भेजा। उन्होंने मोती मण्डित वैदुर्य्य-मणिचित्रित सुवर्ण अलङ्कार, नाना देशोंके दुर्लभ वस्त्र, सुन्दर कोमल अच्छे अच्छे कम्बल तथा मृगछाल, भांति भांतिकी अच्छीसे अच्छी सेज, शय्या, आसन और यान, वैदुर्य्यसे झलकते हीरेसे खचित सैकड़ों वर्त्तन, भले सिखाये पढ़ाये सुन्दर लक्षणवाले हाथी, गहनोंसे भले सजे अच्छे अच्छे घोड़े, सुन्दर बरण ऊंचे ऊचे अच्छे दांत वाले घोड़ोंसे जुते हुए रथ और खानसे उपजा शुद्ध सुवर्ण, ये सब वस्तु बहुत अधिक और करोड़ो सुवर्णके टुकड़े भेज दिये। अमेयात्मा मधुसूदनने पाण्डवोंकी सेवाके लिये रूप, यौवन और दयासे सुहावनी गह-नोंसे बनीठनी अनेक देशोंकी सहस्रों दासी दीं। धर्म्मराज युधिष्ठिरने गोविन्दकी प्रीतिके लिये परम प्रसन्न चित्तसे वह सब सामग्री ले ली।

दोसौ अध्यायमें वैवाहिक पर्व्व समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर भूपा-लोंको अपने अपने दूतोंसे सुध मिल गयी, कि अच्छे लक्षणवाली द्रौपदी पाण्डवोंको पति

पा गयी है; और जिन महात्माने धनुषको नवाकर लक्ष्यको विद्ध किया था, वही महा धनुषबाणधारी जयशील अर्जुन है और जिन बली पुरुषने मद्रनाथ शल्यको धरती पर पटका दिया था, जिन्होंने क्रोधके मारे युद्ध स्थलमें खड़े होकर वृक्षसे सबोंको डराया था, उस कालमें जिन महात्माके मनमें कुछभी भय हसको दीख नहीं पड़ता था, जिनका स्पर्शभी शत्रुओंको भयानक जान पड़ा था, वही शत्रु-नाशी भीमसेन हैं। हे महाराज! नरेशोंने पहिले सुना था, कि पाण्डवगण मातासहित जतुगृहमें जल मरे, अब पाण्डवोंको प्रशान्त और ब्राह्मणोंका वेश किये हुए सुनकर वे अच-म्भेमें हो गये। उन्होंने समझा कि पाण्डव फिर जन्म लेकर आये हैं। आगे वे पुरोचनका किया बड़ा निठुर कर्म स्मरण कर कौरव धृतराष्ट्र और भीष्मको धिक्कार देने लगे। अनन्तर सम्पूर्ण स्वयम्वरका कार्य्य पूरा होने पर द्रौपदी पाण्डवोंसे व्याही गयी सुनके वे सब भूपाल निज निज राजधानीको पधारे।

राजा दुर्य्योधन यह जानके कि द्रौपदीने अर्ज्जुनसे विवाह किया है। अश्वत्थामा, शकुनि, कर्ण, कृप और भाइयोंके साथ उदास होकर लौटे। आगे दुःशासन लज्जित मुखसे मन्द मन्द वचनोंसे उनसे बोले कि महाराज! धनञ्जय ब्राह्मणके वेशमें न होता तो, कभी द्रौपदीको लाभ नहीं कर सकता, लोग उसको धनञ्जय कहके ठीक समझ नहीं सके थे, इसी लिये उसकी क्षमा कर दी थी। भैया! पाण्ड-वोंके नष्ट करनेकी हमारे बड़ा प्रयत्न करने परभी वे जीते जागते हैं अतएव हमारी पुरु-षतामें धिक्कार है. सो दैवहीको परम साधन कहना चाहिये, पुरुषका किया यत्न कोई कार्य्य नहीं हो सकता। दुःशासन आदि सब ऐसी बातें करते और पुरोचनको निन्दते हुए दीन और दुःखी चित्तसे हस्तिनापुरमें आन पहुंचे; और पाण्डवोंको अति बलवन्त अग्निसे बचे और द्रुपदसे मिले देखके धृष्टद्युम्न, शिखण्डी तथा सर्व्व प्रकारसे युद्धमें दक्ष द्रुपदके दूसरे पुत्रोंको स्मरण कर भयभीत हुए और उनका उत्साह जाता रहा।

हे मनुष्यनाथ! यह सुनके कि पाण्डवोंने द्रौपदीको लाभ किया और धृतराष्ट्रके पुत्रगण लज्जित और टूटे-फूटे अहङ्कारके साथ लौटे है, विदुर प्रसन्नमनसे धृतराष्ट्रसे बोले, कि हमारे सौभाग्यसे कौरवगण बढ़ रहे हैं। राजा विचित्रवीर्य्यके पुत्र विदुरका यह वचन सुन करके अचम्भेमें होके और बड़े प्रसन्न होकर कहने लगे कि हमारा कैसा सौभाग्य है! कैसा सौभाग्य है! हे भारत! प्रज्ञा-नेत्र भूपाल विदुरसे संक्षेपमें कहे हुए कौरव शब्दको सुन कर समझ नहीं सके, कि पाण्डव जीवित रहकर बढ़ रहे हैं। उन्होंने समझा कि द्रुपदपुत्रीने उनके ज्येष्ठपुत्र दुर्योधनसे विवाह कर लिया, अतएव उन्होंने ... लक्षण पुत्रवधू द्रौपदीको भांति भांतिके गहने और उसे लिवा लानेके लिये पुत्र दुर्योधनको आज्ञा की। अनन्तर विदुरने उनसे विशेषरूपसे कहा, कि सब पाण्डव कुशल है, द्रौपदीने उन्हीं वीरोंसे विवाह किया है, द्रुपदने उनका बड़ा सम्मान किया है, और उस स्वयम्बर-स्थलहीमें उनके सम्बन्धी, ... आदि दूसरे बहुतेरे बलवन्त उनसे जा मिले हैं। धृतराष्ट्र बोले कि हे क्षत! वे ... प्रकार पाण्डुके स्नेहपात्र है, उससेभी ... अधिक स्नेहके पात्र हैं। इससे उन पर ... औरभी प्रसन्नता हो रही है, कि वे वीर ... कुशलसे रह गये, मित्रोंसे मिले और ... सम्बन्धी दूसरे महाबली बहुतेरे उनसे आ मिले ... विशेष कर ऐसे कौन राजा होंगे, जिनकी ... श्री न रहे अथवा श्री बनी रहे ...

राजा द्रुपदको मित्र पाकर कुशलयुक्त होनेकी इच्छा न रखते होंगे।

श्रीवैशम्पायन जी बोले, कि भूपालकी यह बात सुनकर विदुरने उत्तर दिया, कि महाराज। आपकी सैकड़ों वर्षों तक सदा ऐसीही बुद्धि बनी रहे। हे नरनाथ। अनन्तर दुर्य्योधन और राधापुत्र धृतराष्ट्रके निकट आकर बोले, कि हम आपसे विदुरके सामने कोई दोष दर्शा नहीं सके थे। अब एकान्त पाकर कहते है, सुनिये। आपकी यह कैसी इच्छा हुई? पिता। क्या आप शत्रुओंकी बढतीसे अपनी बढ़ती समझ रहे हैं? हे नरवर। क्या आप विदुरसे विपक्षियोंकी प्रशंसा कर रहे थे? हे अनघ। जहा जैसा काम करना चाहिये, आप उसका उलटा करते हैं! हे पिता! अब सदा यह चेष्टा करनी चाहिये कि उनका बल घटे, हालमें जैसा काल आ पड़ा है, अब ऐसी युक्ति करनी चाहिये कि, वे लोग हमको और हमारे पुत्र, बन्धु तथा सेनाओंको नष्ट न कर सकें।

विदुरागमन पर्व्वमें दोसौ एक अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, कि तुम्हारी जैसी इच्छा है, मैं भी वही किया चाहता हूं; पर विदुरसे कोई अभिप्राय प्रगट नहीं करना चाहता, इस लिये कि विदुर इशारेसे भी मेरा अभिप्राय समझ न पावे,—मैं पाण्डवोंका गुण गा रहा था। हे सुयोधन। अब तुम्हारी समझमें जो करना उचित निश्चय हुआ है, और हे राधानन्दन। तुमने भी जैसा समझा है, वह सब कहनेका यही समय है, सो इसकालमें कह दो।

दुर्य्योधन बोले, कि अब हमारे विश्वासी और ब्राह्मणगण बहुत छिप करके जाय, कुन्तीपुत्र और माद्रीपुत्रोंमें आपसका बिगाड़ कर देवें, अथवा राजा द्रुपद और उनके पुत्र तथा सम्पूर्ण मन्त्रियोंको बहुत धन देकर लुभावें कि, वे कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरको त्याग देवें। अथवा हमारे भेजे हुए लोगोंमें हरेक अलग अलग पाण्डवोंको इस स्थानमें बसने का दोष दर्शा कर उन्हें खसुरके यहा बसनेको लुभावे, ऐसा करनेसेही पाण्डवोंको वहां रहनेकी इच्छा होगी। अथवा कुछ उपायोंके जानकार दस जन ऐसा करें कि पाण्डवोंमें बिगाड़ हो और उनमें आपसका प्रेम न बना रहे। अथवा कृष्णाको ऐसा उभाड़ें कि, उसका पतियोंसे मन टल जाय। उसके बहुत पति हैं, सो यह करना कठिन नहीं होगा। अथवा ऐसा करें कि, पाण्डवों पर द्रौपदीका प्रेम न रहै, ऐसा होनेसे द्रौपदी उन पर चिढ़ जायगी। अथवा अच्छे उपाय निकालनेवाले वहा जाके छिप कर ऐसा कोई उपाय करें, कि भीमको मृत्यु हो, क्योंकि उनमें भीमही बड़ा बली है, उसकेही भरोसे युधिष्ठिर हमको नहीं मानता था। भीमसेन बड़ा बली और पाण्डवोंका प्रधान अवलम्ब है। हे महाराज। उनका एकही आसरारूपी उस भीमके मारे जानेपर वे तेज और उत्साहसे हाथ धोके फिर राज्य पानेका प्रयत्न नहीं करेंगे। युद्धस्थलमें वृकोदर पृष्ठरक्षक रहे, तो अर्जुन पर कोई भी जय नही पा सकता, पर युद्धस्थलमें वृकोदरके न रहनेसे अर्ज्जुन कर्णका चौथा अंश भी नही हो सकता। भीमसेनके बिना दुर्ब्बल पाण्डव अपनेको बल-वर्ज्जित और हमको अधिक बलवन्त जानके राज्य पानेका प्रयत्न नहीं करेंगे। पर यदि वे यहा आकर हमारे अधीन और आज्ञानुसारी होवें, तो हम उन पर नीतिशास्त्रके अनुसार दण्ड देनेको प्रवृत्त होंगे। अथवा परम रूपवती प्यारी युवतीसे उनको लुभाना चाहिये, ऐसा करनेसे द्रौपदीका प्रेम उनसे टल जायगा। हे राधानन्दन। अथवा उनको लिवा लानेके

लिये दूत भेजा जाये, उनके एकत्र मिलकर आनेसे पहिले किसी उपायसे वे नष्ट किये जा सकेंगे। हे पिता! इन सब उपायोंमेंसे आपको समझमें जो दोषरहित जान पड़े, वही करें; काल बीत रहा है, अधिक विलम्ब करना उचित नहीं है। जब तक पृथ्वीनाथ द्रुपद पर उनका विश्वास न जमे, उसके पहिले योग्य उपाय करनेसे उनसे बढ़ चढ़ सकेंगे, राजा द्रुपद पर उनका विश्वास होजानेसे फिर कोई उपाय न चलेगा। हे पिता! उनको सतानेके लिये मैंने यह उपाय निश्चय किये। यह भले हैं वा बुरे, आप समझ लें। कर्ण! तुम क्या समझते हो?

विदुरागमन पर्व्वमें दो सौ दूसरा अध्याय समाप्त।

कर्ण बोले, कि हे दुर्य्योधन! तुमने जो सोचा है, वह सुयुक्ति समझ नहीं पड़ती। हे कुरुनन्दन! इसमेंसे कोई उपाय पाण्डवोंके विरुद्ध न चलेगा। हे वीर! तुमने पहिले सूक्ष्म उपायोंसे उनको नष्ट करनेका प्रयत्न किया था, पर उससे मनोरथ सफल नहीं होसका था। उस समय वे अल्प अवस्थावाले, निःसहाय और तुम्हारे निकट थे, तिस परभी उनकी कोई हानि नहीं कर सके थे। हे पुरुषार्थशील! अब वे दूसरे देशमें स्थित, सहायसहित और सब प्रकारसे बढ़ गये हैं, सो यह मुझको निश्चय जान पड़ता है, कि इस समय इन उपायोंसे उनकी कोई हानि नहीं की जा सकेगी। और लुभानेसे भी वे न भूलेंगे क्योंकि उनमें दैवीशक्ति भरी है, और वे बाप दादोंके पदके चाहनेवाले हैं, इन भाइयोंमें आपसका बिगाड़ कर देनाभी शक्तिके बाहर है, क्योंकि जो लोग पांच भाई एक स्त्रीसे मिलते हैं, उनमें कभी आपसका विरुद्ध भाव होना सम्भव नहीं है, किसी उपाय से कृष्णाके चित्तको पाण्डवोंसे टालना भी कठिन है, क्योंकि कृष्णाने पाण्डवोंसे उनकी कड़ी दीन दशाके दिनोंमें विवाह किया था, अब तो वे भले अच्छे रहने लगे हैं, विशेष स्त्रियोंके लिये बहुत पतियोंका मिलना प्रार्थनाकी बात है, कृष्णाको वह मिले हैं, इस पतियोंसे उसका मन टालना असम्भव है, राजा पाञ्चाल सुपथसे चलते हैं, वह धनके लोभी नहीं हैं, सो इसमें सन्देह नहीं, कि उनको सब राज्य देदो, तो वह पाण्डवोंको नहीं छोड़ेंगे। इन राजाके पुत्रगण गुणवन्त हैं, विशेष पाण्डवोंके वे प्रेमी बने हैं, सो लुभा करके वे वशमें नहीं लाये जा सकेंगे, सो मुझको जान पड़ता है, कि उक्त प्रकारके किसी उपायसे पाण्डवोंका कुछ नहीं होने वाला है। हे पुरुषश्रेष्ठ महाराज! इस समय हमारा यही कर्त्तव्य है, कि जबतक पाण्डव जड़से न उखड़ जायं, तबतक उनको मारते रहें। हे पिता! इस विषयमें आप सम्मत होवें। जबतक हमारा पक्ष महान और पाण्डवका पक्ष लघु है, तबतक युद्धप्रारम्भ कर उनका मारना आरम्भ करें। इसका अन्य विचार करनेका प्रयोजन नहीं है। हे महाराज गान्धारीनन्दन! जबतक उनके मित्र और बन्धु तथा बहुत वाहन न एकत्रित हों, उसके पहिले ही उन पर विक्रम प्रगट करके चढ़ जाओ। जबतक राजा पाञ्चाल अति वीर्य्यवन्त पुत्रोंके साथ लड़ाईका उद्योग न कर सकें, इस कालसे पहिलेही विक्रम दिखाओ। और जबतक श्रीकृष्ण पाण्डवोंके राज्यके लिये यादवी सेना लेकर राजा पाञ्चालके भवनमें न आवें, उससे पहिलेही विक्रम प्रगट करो। कृष्ण पाण्डवोंके उपकारके लिये भांति भांतिके भोग धन और राज्यको छोड़ सकते हैं। हे नरनाथ! महात्मा भरत विक्रमहीसे पृथ्वीके अधीश बने थे और इन्द्र

पूर्वने विक्रमहीके द्वारा तीनो लोक जीत लिये थे। हे राजेन्द्र। क्षत्रियोंको विक्रम दिखनाही प्रशंसायोग्य है। विक्रमही शूरोंका धर्म्म है; अतएव हम बड़ी भारी चतुरङ्गिणी सेनासे बिना विलम्ब राजा द्रुपदको मथन करके पाण्डवोंको यहां लेते आवें। साम, दान वा भेद द्वारा पाण्डव नष्ट नहीं किये जा सकेंगे, सो विक्रमहीसे उनका भले प्रकार नाश करो, विक्रम दिखाके उनको हराकर इस सम्पूर्ण धरती पर राज्य करते रह। हे जनाधिप। मैं इसके बिना कार्य्य पूरा करनेका कोई दूसरा उपाय नहीं देखता।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि प्रतापी धृतराष्ट्र राधानन्दनकी बात सुनके उनकी प्रशंसा कर बोले, कि हे सूतपुत्र! तुम बड़े बुद्धिमान और अस्त्रविद्यामें पण्डित हो, सो ऐसा विक्रमयुक्त वचन बोलना तुम्हारे योग्यही हुआ है! पर भीष्म, द्रोण, विदुर और तुम दोनो फिर युक्ति करके यह निश्चय करो, कि जिससे हमारा मङ्गल होवे। महाराज। आत यशोवन्त धृतराष्ट्र सोत्साह सम्पूर्ण मन्त्रियोंको बुलवाकर युक्ति करने लगे।

विदुरागमन पर्व्वमें दोसौ तीसरा अध्याय समाप्त।

भीष्मजी बोले, कि हे धृतराष्ट्र। पाण्डवोंके साथ युद्ध करना किसी प्रकार मेरा अभीष्ट नहीं है, क्योंकि मेरे लिये जैसे तुम पाण्डुभी तैसेही थे, और गान्धारीके पुत्र जिस प्रकार स्नेहके पात्र हैं, कुन्तीके पुत्रभी तैसेही हैं। मुझको जिसप्रकार उनकी रक्षा करनी है, तुम्हारीभी वैसेही करनी है। हे पृथ्वीपाल! वे मेरे जैसे आत्मजन हैं, राजा दुर्य्योधन आदि सब कौरव भी तैसेही आत्मजन हैं, इसमें कोई शङ्का नहीं है। ऐसी दशामें मैं किस प्रकार उनसे लड़नेकी मेरी सम्मति हो सकती है? हे महाराज। उन वीरोंसे सन्धि करके उनको आधा राज्य दे दो, क्योंकि यह उन कुरुसत्तमोंकाभी राज्य है। बेटा दुर्य्योधन! तुम जिस प्रकार इसे अपना पैत्रिक राज्य समझ रहे हो, तैसेही पाण्डव भी अपना पैत्रिक राज्य जानते हैं। यदि वे यशोवन्त पाण्डव राज्यके अधिकारी न हों, तो तुम अथवा कोई दूसरा भरतवंशी क्योंकर राज्यका अधिकारी हो सकता है? हे भरतश्रेष्ठ! यदि तुमने ऐसा समझा है, कि "मैं धर्म्मानुसार राज्यका अधिकारी बना हूं" तो पहिले धर्म्मानुसार उन्हीका अधिकार हुआ है, सो मेरा मत यह है, कि प्रसन्नतासे उनको आधाराज्य दो। हे पुरुषव्याघ्र! ऐसा करनेसे सबोंका मङ्गल होगा! यदि इसकी विरुद्धता करो, तो हममेंसे किसीका मङ्गल नहीं होगा; और इसमें सन्देह नहीं, कि तुम्हारी बड़ी निन्दा फैलेगी। हे गान्धारी-नन्दन। तुम कीर्त्तिकी रक्षा करनेका प्रयत्न करो। इस भूमण्डलमें कीर्त्तिही परम बल है, और कीर्त्ति न रहने वालेका जीवनही व्यर्थ है। हे कौरव। जबतक किसीकी कीर्त्ति नहीं बिगड़ती, उसके परलोकमें सिधारने परभी तबतक वह जीवित रहता है, और कीर्त्ति नष्ट होने पर जीवन रहनेसे भी वह मरा कहा जाता है। हे महाभुज। तुम कुरुकुलके योग्य धर्म्ममें चित्त लगाओ, और अपने पूर्व्व पुरुषोंकी भांति कार्य्य करो। हमारे सौभाग्यहीसे पाण्डव और कुन्ती जीवित हैं। यह हमाराही सौभाग्य है, कि पापात्मा पुरोचनका मनोरथ सफल नहीं हुआ और वह यमराजके घरको जा पहुंचा है। हे गान्धारीकुमार। मैंने जब सुना, कि कुन्तीभोजकी पुत्रीके पुत्र जल मरे हैं, तबसे मैं इस धरती पर किसीसे भले प्रकार भेट नहीं कर सकता हूं। हे पुरुषव्याघ्र! लोग कुन्तीको उस दशामें गिरी

सुनके जिस प्रकार तुमको दोषी जानते हैं, पुरोचनको वैसा दोषी नहीं समझते। हे महाराज! पाण्डवोंका जीना और उनको फिर देखना तुमको केवल अपना कलङ्क नष्ट होनेका हेतु करके जानना चाहिये। हे कुरुनन्दन! उन सब वीरोंके जीवित रहनेसे स्वयं महेन्द्रभी उनके पैतृक राज्यको लेनेकी सामर्थ्य नहीं रखते, विशेष पाण्डव सब एकमत और धर्म्म पथसे चलने-वाले होने परभी तुम्हारे अधिकारके राज्यसे अधर्म्म पूर्व्वक हटाये जाते हैं, अतएव यदि तुमको धर्म्मरक्षा करनी उचित हो, यदि तुमको मेरा प्रिय-कार्य्य करना हो और यदि तुम अपनी भलाई चाहो, तो पाण्डवोंको आधा राज्य दो।

विदुरागमन पर्व्वमें दो सौ चौथा अध्याय समाप्त।

द्रोण बोले, कि हे महाराज धृतराष्ट्र! हमने सुना है, सान्त्वयोंके युक्तिके लिये आ पहुंचने पर धर्म्म, अर्थ और यश देनेवाला वचन कहनाही उनका कर्त्तव्य है। ऐ बेटा! महात्मा भीष्मसे मैं सहमत हूं। पाण्डवोंको अंश देना उचित है, ऐसा कहनेहीसे सनातन धर्म्मकी रक्षा होगी। हे भारत! अब प्यारी बोली-बोलनेवाले किसी पुरुषको आज्ञा करें, कि पाण्डवोंके लिये बहुत धन लेकर द्रुपदके यहां जाय। वह भेजा हुआ पुरुष वर और वधूके योग्य रत्न और अलङ्कारभी लेकर द्रुपदके सम्मुख जाकर कहे, कि हे महाराज! आपके साथ राजा धृतराष्ट्र और दुर्य्योधनको पहुनाई होनेसे वे बहुत कृतार्थ हुए और अपनेको श्रीमन्त समझते हैं। हे भारत! वह दूत राजा द्रुपद और धृष्टद्युम्नसे वार वार ऐसा कहे, कि आपके साथ विवाहसे जो पहुनाई सो वह बहुत योग्य और कौरवोंके सौभाग्य हुई है। हे महाराज अनन्तर वह दूत पाण्डवोंको वार वार समझाने की बातें कहके द्रौपदीको शुद्ध-सुवर्णके अनेक अलङ्कार देके राजा पाञ्चालके सब पुत्रों, पाण्डवों और कुन्तीके योग्य चीर गहने देवे। हे भरतश्रेष्ठ! इस प्रकार द्रुपद और पाण्डवोंको समझाकर अन्तमें उनको लानेकी बात कहे। पाण्डवोंके द्रुपदसे आनेकी आज्ञा पाने पर दुःशासन और विकर्ण अच्छी सेनाके साथ उनको लिवा लानेको जावें। आगे पुरुषश्रेष्ठ पाण्डवोंके राजधानीमें आ जाने पर आप उनको सादर पूर्व्वक स्वागत करना। अनन्तर वे प्रजाओंकी सम्मतिसे पैतृक पद पर आरूढ़ हुवें। महाराज! मेरा और भीष्मका मत यह है, कि आपको पुत्ररूपी उन पाण्डवोंसे ऐसा व्यवहारही आपको करना चाहिये।

कर्ण बोले, कि भीष्म और द्रोण यह दोनों सब कार्योंको बिगाड़नेवाले हैं, और आपहीके दिये धन और मानसे बढ़े हैं, इससे और क्या आश्चर्य होगा, कि यह आपको आपके मङ्गलका परामर्श नहीं देते, महाराज! जो लोग मिलकर द्रोह रखके शत्रुके हितकी बुद्धिसे युक्ति कहते हैं, वे क्योंकर मङ्गलका निश्चय कर सकते हैं? पर ऐसा नहीं है, कि विपद आ पड़नेसे साधु वा असाधु मित्रही मङ्गल वा अमङ्गलके कारण बनते हैं, क्योंकि सुख और दुःखकी जड़ भाग्यही है, देखें, विज्ञ, अविज्ञ बाल वृद्ध, सहाय वा बिना सहाय, सब प्रकारके लोग सब ठौरमें सब वस्तु पाजाते हैं, सुना है, कि पहिले राजगृह नामक राजधानीमें मगधदेशी राजाओंके अधीन अम्बुवीच नामक एक पृथ्वीनाथ थे। राजकार्य्यमें उनकी कुछभी दृष्टि नहीं थी, वह इतनाही काम करते थे, कि श्वास खींचते और छोड़ते थे, इससे उनका सम्पूर्ण राजकार्य्य मन्त्रियोंके हाथमें गया। महाकर्णिक नामक उनका

मन्त्री पूरा अधिकार पाकर वा अपनेको बल-युक्त जानकर राजाका अनादर करने लगा। उस मूर्ख मन्त्रीने राजाके भोगनेकी स्त्री, रत्न और धन सब ऐश्वर्य्य आप ले लिया। आगे यह सब लेकर उस लोभीका लोभ बढ़ा, वह राजाका सब कुछ लेकरके भी चुप नहीं हुआ, राज्य तक हरना चाहा, पर हमने सुना है, कि वह मन्त्री अपनी पूरी सामर्थसे चेष्टा करने परभी उस कार्य्यरहित श्वास मात्र लेते हुए राजाका राज्य नहीं हर सका। भागके बिना कौन सा पुरुषार्थ था, कि तिससे राज्य-को रक्षा हुई? हे महाराज। यदि विधिने यह राज्य आपके लिये निश्चय कर दिया हो, तो आपके सब लोगोंके परास्त होने पर भी यह आपहीके हाथमें बना रहेगा। यदि भागमें न रहे, तो आप चेष्टा भी करें, तो बचा नहीं सकेंगे। हे महाराज। आप पण्डित हैं, मन्त्रियोंमें कौन साधु है और कौन असाधु है आपही विचार लेवें। और दुष्ट अदुष्ट जनोंके वचनका कार्य्य समझें। द्रोण बोले, कि कर्ण! मैं समझ गया कि तुम्हारा हृदय दोषसे भरे रहनेहीके कारण तुम ऐसा कहते हो, पाण्डवों पर तुम्हारा द्वेष रहनेहीके हेतु तुमने हम पर दोष लगाया। पर मैंने जो कहा वह कुलबढ़ानेवाला और परम हितदेनेहारा है; यदि वह तुम्हारी समझमें बुरा जान पड़े, तो जिससे परम हित होना है वही कहो। वास्तवमें मुझको निश्चय जान पड़ता है, कि यदि मेरे कहे परम हित वचनकी विरुद्धता की जावे, तो बिनाविलम्ब कौरव गण लय पा जायंगे।

विदुरागमन पर्व्वमें दो सौ पांच अध्याय समाप्त।

विदुर बोले, कि हे महाराज। आपके बन्धु लोग निःसन्देह आपको हितवचन कह रहे हैं, पर आपके ध्यानके बिना उसकी रक्षा नहीं होती है हे महाराज! कुरुश्रेष्ठ शान्तनु पुत्र भीष्म जो प्रिय और हित वचन बोले, आप उस पर ध्यान नहीं देते हैं। आचार्य्य द्रोणने अनेक हित बात कही, राधापुत्र कर्णको समझमें वे आपके हितकारी नहीं है। हे महाराज! मैं सोचकर नहीं समझ सकता, कि भीष्म और द्रोणसे अधिक ज्ञानी और आपका परम मित्र कौन विद्यमान है, वे दोनों बुद्धि विद्या और अवस्थामें वृद्ध है। हे महाराज। आपपर उनका जैसा भाव है, पाण्डवों परभी वैसाही है। हे भारतराज! इसमें सन्देह नहीं, कि यह लोग धर्म्म और सत्यके विषयमें दशरथके पुत्र रामचन्द्र और गयासुरसे भी श्रेष्ठ हैं। यह दीखही नहीं पड़ता, कि इन्होंने पहिलेभी कभी आपका कोई अहितवाक्य कहा वा कोई हानि की हो। हे पृथ्वीनाथ। आपने तो इन दोनों पुरुष-वरोंका कोई अनिष्ट नहीं किया, कि जिससे यह आपके लिये कल्याणदायी परामर्श न दें। विशेष यह दोनों पुरुषसिंह सत्यशील और ज्ञानी है, सो हे नरनाथ। यह आपके विषयमें कभी कुछ कुटिल वचन नहीं बोलेंगे। हे कुरुनन्दन। मेरी समझमें यह निश्चय किया हुआ है, कि यह दो धर्म्मज्ञ पुरुष धनके लोभसे कभी पक्षपातकी बात नहीं कहेंगे, सो इन्होंने जो कहा है, मेरी समझमें वह आपके लिये मंगलदायी है। हे महाराज। आपके लिये दुर्य्योधनादि पुत्र जैसे स्नेहपात्र हैं, सन्देह नहीं, कि पाण्डव भी वैसेही स्नेहपात्र हैं। जो सब मन्त्री उस विषयको न जान कर उन पाण्डवोंके अहितका परामर्श देते हैं, वे आपकी भलाई पर विशेष दृष्टि नहीं देते। हे भूप। यद्यपि आपके हृदयसे अपने पुत्रों पर विशेषता भी रहे, तौभी जो लोग उस हृदयस्थित भावके अनुसार

इसमें सन्देह नहीं; कि वे आपका अनिष्ट करेंगे। इसलिये यह द। महातेजस्वी महात्माओंने उस प्रकार अनुचित परामर्श नहीं कहा है, पर आपके चित्तका भाव पक्षपातरहित न होनेहीके हेतु उसे आप समझ नहीं सकते हैं। हे पुरुषव्याघ्र! इन दोनोंने आपसे कहा है, कि पाण्डव जीते नहीं जा सकेंगे, वह झूठ नहीं है, सो हमारी यही प्रार्थना है, कि पाण्डवोंसे आपकी भलाई होवे। हे नरनाथ! क्या देवराजभी युद्धस्थलमें श्रीमान् सव्यसाची पाण्डव धनञ्जयको जय कर सकते हैं? रण-भूमिमें दश सहस्र गजोंके समान बली महान् महाभुज भीमसेनको क्या देवगण भी जय कर सकते हैं? रणस्थलमें क्या कोई भी जय चाहने वाले युद्धदक्ष यमसुत यमज नकुल सहदेवका पराक्रम सह सकता है? जिस पुरुषमें धीरज, दया, क्षमा, सत्य और पराक्रम यह सब गुण सदा विराजमान है, क्या वह पाण्डवोंके ज्येष्ठ युधिष्ठिर जीते जानेके योग्य है? विशेष राजा द्रुपद जिनके ससुर, द्रुपदके पुत्र वीर धृष्टद्युम्नादि वीर भाई जिनके साले, बलराम और सात्यकि जिनके मन्त्री है, रणस्थलमें क्या कुछभी उनसे जीतेजानेके अयोग्य है? अतएव हे भारत! रणस्थलमें उनकी अजेयता और धर्म्मानुसार राज्याधिकारिताकी बातोंको ध्यानमें लाकर पहिले ही उनसे योग्य व्यवहार करें। हे पृथ्वीपाल! पुरोचनका किया जो बड़े कुयशका धब्बा आप पर लग गया है, आप आज पाण्डवों पर कृपा दर्शाकर उसका धोडाले. आगे उन पर इस कृपाके दर्शानेसे हमारे वंशमें सबके जीवनकी रक्षा, परम मङ्गल और क्षत्रियकुलकी वृद्धि होगी। हे भूनाथ! पाञ्चाल देशीय द्रुपद बहुत बड़े राजा हैं, पहिले उनसे हमारी शत्रुता उभड़ी थी पर उनके मिलानेसे हमारा पक्ष बहुत रहेगा। हे नरनाथ! यह भी समझनेयोग्य है, कि दशार्ह देशीयगण बली और बहुत हैं, कृष्ण जिस ओर रहेंगे, वे भी उसी ओर रहेंगे, सो जिस पक्षमें कृष्ण, उसी पक्षकी जय होगी। जो कार्य्य सामके द्वारा भले प्रकार सिद्ध हो सकता है, बिना दैवी विड़म्बना कौन उसको युद्धद्वारा सिद्ध करना चाहता होगा? हे महाराज! नगर और जनपदवासी सब जन पाण्डवोंको जीवित सुनके उनको भेंटके लिये प्रसन्न हुए हैं, सो अवश्यही उनका प्रिय करना चाहिये। दुर्य्योधन, कर्ण और सुवलपुत्र शकुनि यह अधार्म्मिक कुसमझ और बालक हैं, इनकी बात किसी प्रकार सुननेके योग्य नहीं है हे गुणोंसे सजे भूप! मैंने पहिले भी आपसे कहा था, कि दुर्य्योधनके दोषसे यह सब प्रजा नष्ट होगी।

विदुरागमन पर्व्वमें दो सौ छठवां अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, कि पण्डित शान्तनुनन्दन और भगवान ऋषि द्रोणने जो कहा तथा तुम जो कहते हो, वह परमहित और सब सत्य है। वे सब महारथी वीर कुन्तीनन्दन जिस प्रकार पाण्डके पुत्र हैं, वैसेही धर्म्मानुसार मेरे भी पुत्र हैं, और मेरेभी पुत्र जिस प्रकार इस राज्यके अधिकारी हैं, इसमें सन्देह नहीं, कि पाण्डुपुत्र भी वैसेही अधिकारी हैं। हे क्षत्त! जाओ, मातासहित पाण्डव और देवीरूपिणी कृष्णाको सत्कार करके लिवा लाओ। मेरे सौभाग्यहीसे पाण्डव जीवित हैं, मेरे सौभाग्य हीसे कुन्तीका कोई बड़ा अहित नहीं हुआ, महारथी पाण्डवोंका द्रौपदी लाभ करना भी मेरे सौभाग्यहीका फल है। हे महाप्रकाश! बड़े भाग्यहीसे हम सब बढ़ रहे हैं, सौभाग्य-हीसे पुरोचन नष्ट हुआ, भाग्यहीके वश हमारा परम दुःख दूर हुआ।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भारत। अनन्तर विदुर धृतराष्ट्रकी आज्ञासे राजा यज्ञसेन, द्रौपदी और पाण्डवोंके लिये अनेक धन रत्न लेकर उनके निकट गये। आगे उन सब शास्त्रोंमें पण्डित धर्म्मके जानकार यज्ञसेनके पास पहुंचकर यथायोग्य नमस्कार आलिङ्गन आदि किया। राजा यज्ञसेनने धर्म्मानुसार उठकर विदुरको सम्मानित किया। अनन्तर वे दोनों विधिपूर्व्वक आपसमें कुशल-क्षेम पूछने पाछने लगे। हे भारत! अति बुद्धिमान विदुरने उस स्थानमें पाण्डव और वासुदेवको देखकर स्नेहसे हृदय गलाके गलेसे लगाकर स्वास्थ्यकी बात पूछी। अनन्तर वह उनसे क्रमके अनुसार सत्कृत होकर धृतराष्ट्रकी आज्ञासे स्नेहपूर्व्वक बार बार कुशल पूछने लगे। हे नरनाथ! आगे उन्होंने पाण्डव, कुन्ती, द्रौपदी और द्रुपदके पुत्रोंको यथोचित धृतराष्ट्रका भेजा अनेक धन और रत्न दिया; और वह अमितचित्त विनयसे नम्र होके पाण्डव और केशवके सन्मुख द्रुपदको प्रेमभरी बातोंमें कहने लगे, कि हे महाराज। आप मन्त्री और पुत्रोंके साथ मेरा वचन सुनें। राजा धृतराष्ट्रने मन्त्री पुत्र और मित्रोंके साथ प्रसन्न होकर बार बार आपका कुशल पूछा है। हे नरनाथ। आपसे यह सम्बन्ध होनेसे वह आप पर बहुत प्रसन्न हुए हैं। बड़े ज्ञानी शान्तनुनन्दन भीष्मने सम्पूर्ण कौरवोंके सहित सब प्रकारसे आपका स्वास्थ्य पूछा है, और आपके प्रिय सखा बड़े ज्ञानी भारद्वाज द्रोणजीने आपसे संयोग पाकर उद्देशमें आलिङ्गन करके कुशल प्रश्न किया है। हे महाराज पाञ्चाल। धृतराष्ट्र और सब कौरव आपसे सम्बन्ध लाभकर अपनेको कृतार्थ मान रहे हैं। हे यज्ञसेन! अधिक क्या कहें, आपसे वैवाहिक सम्बन्ध प्राप्त करनेसे इनको जितनी प्रीति हुई, राज्य मिलनेसे इतनी नहीं होती; आप यह समझकर पाण्डवोंको वहां भेज देवें। कौरव लोग पाण्डवोंको देखनेके लिये बहुत्ही व्यग्र हुए हैं। यह नरश्रेष्ठ पाण्डव और पृथा बहुत काल तक निरुद्देश थे, सो नगर देखनेको बहुत घबराये होंगे, कौरवों की स्त्रियां और हमारे नगर तथा जनपदवासी सब लोग पाञ्चाली कृष्णाको देखनेके लिये बाट देख रहे हैं; अतएव मेरा मत यह है, कि आप पाण्डवोंको पत्नीके साथ वहां जानेकी आज्ञा दें, विलम्ब न करें। हे महाराज। महात्मा पाण्डवोंको आपसे वहां जानेकी आज्ञा मिलेगी, तो मैं शीघ्र जानेवाले दूत द्वारा धृतराष्ट्रको यह समाचार दूंगा। अनन्तर पाण्डव और कुन्ती कृष्णाको साथ लेके वहां जायंगे।

दो सौ सात अध्यायमें विदुरागमन पर्व्व समाप्त।

राजा द्रुपद बोले, कि हे महाप्राज्ञ विदुर! इसकालमें आपने जो कहा, वही ठीक है। हे प्रभो! इस वैवाहिक सम्बन्धसे मैं भी बड़ा प्रसन्न हूं। अब इन महात्माओंको घर जानाही सब प्रकारसे योग्य है, पर स्वयं वह कहना मेरे लिये उचित नहीं है, यदि कुन्ती-पुत्र युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन और पुरुषश्रेष्ठ नकुल तथा सहदेव, यहांसे जाना चाहें और धर्म्मज्ञ राम तथा कृष्ण आज्ञा दें, तो ले जाइये; क्योंकि यह पुरुषव्याघ्र राम और कृष्ण सदा इनका प्रिय करने और हित साधनेमें नियुक्त हैं। युधिष्ठिर बोले, कि महाराज! अब मैं भाइयोंके साथ आपके अधीन हूं, आप प्रसन्न होके हमको जो कहेंगे, वही करेंगे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर वासुदेवजीने कहा, कि मेरी समझमें जाना उचित है, पर सर्व्वधर्म्मोंके जानकार राजा द्रुपदका

जो विचार हो, वही उचित है। द्रुपद बोले कि इस कालके अनुसार महाभुज पुरुषोत्तम वीर दशार्हने जैसा विचारा, मेरी समझमें वही ठीक है। अब महाभाग पाण्डव जैसे मेरे स्नेहके पात्र हैं; वैसेही इसमें सन्देह नहीं है, कि पुरुषश्रेष्ठ वासुदेवके भी स्नेहके पात्र हैं। वह जैसे इनकी मङ्गल-चिन्ता करते हैं, कुन्तीनन्दन युधिष्ठिरसे भी वैसी बन नहीं पड़ती।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे पृथ्वीनाथ! अनन्तर पाण्डव, कृष्ण और विदुर महात्मा द्रुपदकी आज्ञा पाके परम सुखसे विहार करते हुए यशस्विनी कुन्ती और द्रौपदीके साथ हस्तिनापुरमें जाने लगे। हे भारत! जननाथ धृतराष्ट्रने वीर पाण्डवोंके शुभागमनका समाचार सुनके, उनको लिवा लानेके लिये बड़े चापधारी विकर्ण, चित्रसेन धनुषधरनेवालोंमें श्रेष्ठ द्रोण और गौतम कृप, इन सब कौरव पक्षके लोगोंको भेजा। महाबली वीर पाण्डव उनसे घेरे जाके सोहते हुए धीरे धीरे हस्तिनापुरमें गये। तब वह नगर नगरवालोंके देखनेकी बड़ी चाहकी हड़बड़ीसे मानो फटने लगा। पुरुषव्याघ्र पाण्डवोंको देखके पुरवासियोंके शोक दुःख दूर होगये। प्रिय चाहनेवाले पुरवासियोंके हृदयप्यारे पाण्डव उनसे कहे जाते हुए इस प्रकारके भांति भांतिके वचन सुनने लगे, कि यह वही धर्म्मज्ञ पुरुषव्याघ्र फिर आ रहे हैं, कि जो अपने परिवारोंकी भांति हमारी रक्षा करते थे। आज मानो सब जनोंके प्यारे महाराज पाण्डुही हमारे प्रिय चाहनेवाले वनके, वनसे लौट आरहे हैं। इससे बढ़कर हमारा कौनसा प्रिय कार्य्य होगा, कि आज वीर कुन्तिपुत्रगण हमारे नगरमें फिर आरहे हैं। यदि हमने दान वा हवन किया हो अथवा यदि हमारा तप इकट्ठा हुआ हो, तो उसके बलसे पाण्डव लोग इस नगरमें सैकड़ों वर्ष बसें। अनन्तर पाण्डवोंने धृतराष्ट्र, महात्मा भीष्म और उससे गुरुजनोंके पांव छुए। आगे नगरवालोंका कुशल पूछके वार्त्तालाप कर धृतराष्ट्रकी आज्ञासे राज-मन्दिरमें बसने लगे। महात्मा महाबली पाण्डवोंके कुछकाल विश्राम करनेके पीछे राजा धृतराष्ट्र और शान्तनुपुत्र भीष्मने उनको बुलवाया। अनन्तर उनके जाने पर धृतराष्ट्रने युधिष्ठिरसे कहा, कि हे कुन्तीपुत्र! मैं जो कहूं, भाइयोंके साथ सुनो, तुम खाण्डवप्रस्थमें जाय बसो, कि तुमसे हमारा फिर बिगाड़ न हो। तुम अर्जुनसे इस प्रकार रक्षित होकर, कि जैसे इन्द्रजीसे देवता रखे जाते हैं, वहां वास करो, तो तुमसे कोई छेड़ छाड़ नहीं कर सकेगा; सो तुम राज्यका आधा भाग लेकर खाण्डवप्रस्थमें रहो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि मनुष्यश्रेष्ठ पाण्डवोंने राजा धृतराष्ट्रकी बात मानकर राज्यका आधा भाग पाके उनके पांव छूकर घोर वनमें जाय खाण्डवप्रस्थमें प्रवेश किया। उन अच्युत पुरुषोंने कृष्णके साथ वहां पहुंच कर उस ठौरको देवलोककी भांति बनाया। महारथी पाण्डवोंने कृष्णद्वैपायनके साथ शुभ पुण्यस्थानमें शान्ति-कार्य्य करवाकर भले प्रकारसे नगर बसाया। वह नगर सागर समान बड़ी खाईं और चन्द्रमा तथा धुन्धले बादल समान आकाश चूमनेवाले भवनोंकी कतारसे ऐसी शोभा पाने लगा, कि जैसी भोगवती नगरी सर्पोंसे सुशोभित होती है। उसके घरोंकी किवाड़युक्त प्रशस्त द्वारोंसे उड़नेकी चाहनेवाले पंख फैलाये गरुड़की शोभा हुई। वह श्रेष्ठ पुरी बादल दल और मन्दरपर्व्वत सदृश भलेप्रकार संवृत, अस्त्रयुक्त, भेदनेके अयोग्य और भांति भांतिके गोपुरोंसे अच्छे प्रकार रक्षित हुई। ठौर ठौरमें दो जीभवाले सर्पवत शक्ति नामक अस्त्रोंसे घिरी, अस्त्र शिक्षाके लिये बड़े बड़े

भवनोंसे सुशोभित योधोंसे रक्षित, तेज अङ्कुश तथा एकवारही सैकड़ों मनुष्योंके प्राणनाशी शतघ्नीनामक अस्त्रयुक्त यन्त्रजाल और लोहेके बड़े बड़े चक्रोंसे सुशोभित हुई, उसके पथ चौड़े और बड़े हिसाबसे बनाये गये। उस नगरोंमें कभी दैवी छेड़ छाड़की सम्भावना नहीं रही। वह नगर धूपसे रङ्गके भांति भांतिके अच्छे अच्छे भवनोंको कतारोंसे अमरोंकी पुरीके समान शोभायमान होनेके कारण इन्द्रप्रस्थ कहलाया। ऐसे नगरके सुन्दर सुभ स्थानमें पाण्डवोंकी धनभरी धननाथ सदृश भवन मण्डली, आकाश मण्डलमें चमकती हुई बिजलीसे जटित बादलसमान सोहने लगी।

हे महाराज! अनन्तर संस्कृत प्राकृत आदि देश देशकी भाषा जानने वाले और सब वेदोंके जानकार ब्राह्मण आकर उस ठौरमें वसना निश्चय किया। बाणक लोग धनार्ज्जनके अभिलाषी बनके अनेक दिशाओंसे वहां आने लगे। अनेक प्रकार शिल्प विज्ञान जानने वाले वहां आवसे। नगरके चारों ओर सुन्दर सुन्दर फुलवाड़ी आम, आम्रातक कदम्ब, अशोक, चम्पा, पुन्नाग, नागकेशर, लकुच, पनस, शाल, ताल, तमाल, वकुल, मनोहर फूलसहित केतक, फलके भारसे नम्र-पानीय आमलक, लोध्र, सुन्दर फूलयुक्त अङ्कोल, जम्बु, पाटल, माधवी-लता कुञ्ज, करवीर और पारिजात यह सब और दूसरे नित्य फूल फलवाले भांति भांतके वृक्षोंसे सुहायी। वे फुलवाड़ी अनेक प्रकारके पक्षी, उन्मत्त मयूरदल और दमङ्गसे कुहकुहाती हुई कोयलकुलसे भरकर पहिलेकी अनदेखी सुन्दरता फैलाने लगी। और अनेक प्रकारके आदर्शसदृश निर्म्मल गृह, भांत भांतिके लतागृह, सुहावने चित्रगृह, क्रीड़ार्थ मिट्टीके कृत्रिम पहाड़, श्वेत लाल आदि नाना प्रकारके पद्मवी गन्धसे भरे मनोहर सरोवर, हंस कारण्डव और चकवोंसे सुहावने वनसे घिरे, भांति भांतिके ताल और बड़े बड़े सुन्दर तड़ागोंसे सुहायी। महाराज! उस पुण्यशील जनोंसे पूरित महान् प्रदेशमें जाके पाण्डवोंका आनन्द दिन दिन बढ़ने लगा। राजा धृतराष्ट्र और भीष्मके पाण्डवोंके लिये उस प्रकार धर्म्मकी व्यवस्था कर देने पर पाण्डव खाण्डवप्रस्थमें वास कर आनन्दित हुए। भोगवती नगरी जिस प्रकार नागोंसे सोहती है वैसेही वह नगर पञ्च पाण्डवोंसे अच्छी शोभा पाने लगा। हे महाराज! बलदेवजीके साथ वीर श्रीकृष्ण इस प्रकारसे पाण्डवोंको राज्यमें बैठाकर उनकी सम्मतिसे द्वारकाको गये।

राज्यलाभ पर्व्वमें दो सौ आठ अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, कि हे तपोधन! महासत्त्व महात्मा मेरे पहिलेके दादे पाण्डवोंने इन्द्रप्रस्थमें इसके पीछे क्या किया था? उनकी भार्य्या द्रौपदी क्योंकर उन सभोंके सङ्ग मिलती थी और ये महाभाग भूपति पाञ्चों एक द्रौपदीसे रत होते थे, फिर तिस परभी उन पांचोंमें आपसका झगड़ा नहीं उभड़ा था, इसका क्या कारण है? हे तपोधन! कृष्णासे मिलते हुए उन महात्माओंने आपसमें कैसा व्यवहार किया था? यह सब विस्तारपूर्व्वक सुना चाहता हूं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि शत्रु संयनेहारे पाण्डव धृतराष्ट्रकी आज्ञासे राज्यलाभ कर खाण्डवप्रस्थमें कृष्णाके साथ गृहस्थी करने लगे। बड़े तेजस्वी सत्यशील युधिष्ठिर राज्य पाकर भाइयोंके साथ धर्म्मके अनुसार प्रजा पालने लगे। शत्रु विनाशी, महाप्राज्ञ, सत्य-धर्म्मशील पुरुष-श्रेष्ठ दूसरे पाण्डवगण बड़े आनन्दसे उस स्थानमें वसे रहे। वे बड़े कोमती

राजासनों पर बैठके सम्पूर्ण पौर-कर्म्मोंको निवटारा करते थे।

अनन्तर एकदिन वे सब महात्मा बैठे थे, कि ऐसे समयमें देवर्षि नारद मनमाने वहां आ पहुंचे। बुद्धिमान युधिष्ठिरने ऋषिको आते देखकर अपना सुन्दर आसन छोड़ दिया। अनन्तर देवर्षिके बैठने पर उन्होंने उनको विधिपूर्व्वक अर्घ देकर सम्पूर्ण राजकार्य्यको बात कह सुनायी। ऋषिने पूजा लेकर प्रसन्न चित्तसे उनको अशीस देकर बैठने कहा। राजा युधिष्ठिर मुनिकी आज्ञासे बैठ गये और कृष्णाके पास देवर्षिके आनेका समाचार भेजवाया। द्रौपदी वह बात सुनतेही शुचि और समाहित होकर उस ठौरमें आगयो जहां देवर्षि पाण्डवोंके साथ बैठे थे। धर्म्मचारिणी कृष्णा देवर्षिके पांवोंको प्रणामकर हाथ जोड़ अवगुण्ठितभावसे खड़ी हुई। धर्म्मात्मा सत्यवादी ऋषिश्रेष्ठ नारदने अनिन्दिता राजकन्याको अनेक अशीस देकर जानेकी आज्ञा दी। अनन्तर द्रौपदीके चले जाने पर भगवान् देवर्षि युधिष्ठिर आदि पाण्डवोंसे निरालेमें बोले, कि यशस्विनी द्रौपदी अकेली तुम सबोंकी धर्म्मपत्नी बनी है, ऐसी दशामें तुम भाइयोंमें बिगाड़ होसकता है, सो ऐसा कोई नियम करो, कि वह न होने पावे। पूर्व्वकालमें सुन्द और उपसुन्द नामक दो भाई एकत्र वसते थे। वे दूसरोंसे वधे जानेके अयोग्य और उनका एक राज्य, एक गृह, एक सेज एक भोजन-स्थान था। उनमें सदा ऐसी मित्रता बनी रहने परभी तिलोत्तमाके लिये उन्होंने एक दूसरेको मारडाला। सो हे युधिष्ठिर! तुम आपसकी प्रीति बढ़ानेवाले भ्रातृप्रेम बनाये रखो। यह प्रयत्न करो, कि तुममें भ्रातृभेद न होने पावे।

युधिष्ठिर बोले, कि हे महामुने! सुन्द और उपसुन्द किसके पुत्र थे? क्योंकर उनमें परस्पर भेद होगया? और क्योंकर उन्होंने एक दूसरेको मारडाला था? और जिस नारीके लिये उन्होंने एक दूसरेको मारडाला था, वह तिलोत्तमा किसकी कन्या थी? वह क्या अप्सरा वा देवकन्या थी? हे ब्रह्मन्! यह सब विस्तारपूर्व्वक आद्योपान्त सुना चाहता हूं। हे तपोधन! यह सुननेकी मुझमें बड़ी इच्छा उभड़ी है।

राज्यलाभपर्व्वमें दो सौ नौ अध्याय समाप्त।

श्रीनारदजी बोले, कि हे पृथापुत्र युधिष्ठिर! भाइयोंके साथ तुम यह पुरानी कथा सुनो। पूर्व्वकालमें महावीर हिरण्यकशिपुके वंशमें निकुम्भ नामक बली तेजस्वी एक दैत्यवरने जन्म लिया था। उसके बड़े पराक्रमी, बड़े वीर्य्यवन्त कुटिलचित्त दो कठोर पुत्र उपजे। उन दो दैत्यराज-पुत्रोंमें एकका नाम सुन्द और दूसरेका उपसुन्द था वे दोनों सदा एकही विषयमें सम्मत, एकही विषयमें दत्तचित्त और एकही कार्य्यके करनेवाले होके समान सुख दुःखसे काल गवाते थे। दोनों एक दूसरेको प्यारी बोली बोलते और एक दूसरेका प्रिय कार्य्य करते थे, एक भाईके विना दूसरा भाई भोजन वा गमन नहीं करता था। उन दो भाइयोंके स्वभाव और व्यवहारमें भेद न रहनेके हेतु जान पड़ता था, कि मानो एक मनुष्य दो भागोंमें बट गया है। हर काममें एक बुद्धि रखनेवाले वे दो बड़े वीर्य्यवन्त भाई क्रमसे बढ़ गये। वे तीनों लोक जीतना निश्चय कर विन्ध्य पर्व्वत पर जाकर दीक्षित और समाहित होके कठोर तप करने लगे। पहिले वल्कल पहनके और भूखप्यास छोड़के तपमें चित लगाया और सर्व्वशरीरमें भस्म लगाकर, वायु पीकर पांवके अंगूठेके बल खड़े होकर, हाथ ऊंचे उठाकर, निमेष तजकर और व्रत धारणकर बहुत काल तक अपने मार्गमें

आहुति चढ़ायी। उसकालमें यह एक आश्चर्य लीला हुई, कि विन्ध्य पर्व्वतने उनकी तपस्याके प्रभावसे तप्त कर धुआं वमन किया था। अनन्तर देवगण उनकी कठोर तपस्या देखकर भय खाके तप नष्ट करनेके लिये विघ्न डालने लगे। उन्होंने लुभानेवाले रत्न और नारीसे उन दोनोंको वार वार लुभाया, पर उन दोनों बड़े अच्छे व्रत करनेवाले भाइयोंने किसी प्रकार व्रत नहीं छोड़ा। आगे उन्होंने फिर उन दो महात्माओंके सामने माया फैलाकर यह एक बड़ी भारी लीला दिखायी, कि उन दोनों असुरोंकी माता, बहिन स्त्री और दूसरे स्वजन अलङ्कारसे च्युत होके, केशसे रहित होके और वस्त्र खोके, हाथोंमें शूल लिये हुए एक राक्षससे गिराये जाके अति भय खाकर उनदोनो असुरोंसे पुकार पुकारकर त्राहि त्राहि चिल्लाने लगी। यह देखनेपर भी अति बड़े व्रतधारी सुन्द और उपसुन्दने व्रत नहीं छोड़ा, अनन्तर जब दोनोमेंसे कोई भी उससे असन्तुष्ट वा कातर नहीं हुआ, तब वे स्त्रियां और राक्षस अन्तर्हित हुए; तिसके पश्चात् सर्व्वलोकोंके मङ्गलकारी प्रभु पितामहने उन दोनों महावीरोंके सामने आकर उनको वर मांगनेको कहा। दृढ़विक्रमी सुन्द और उपसुन्द दोनों भाई प्रभु पितामहदेवको देखकर दोनो हाथ जोड़के खड़े हुए और दोनो एकत्र होकर बोले, कि प्रभो पितामह! हमारी तपस्यामें यदि आप प्रीत और प्रसन्न हुए हो, तो हमको यह वर दो, कि हम दोनों मायाके जानकार अस्त्रके जानकार, बली, कामरूपी और अमर होसके। श्रीब्रह्माजी बोले, कि तुमने जो जो प्रार्थना की उनमेंसे अमर होनेके अतिरिक्त तुम्हारी सब अभिलाषा पूरी होगी। अमरताके विना और कुछ प्रार्थना ऐसी करो, कि अमर होनेके तुल्य हो। तीनो लोकोंके प्रभु बननेहीकी इच्छासे तुमने यह बड़ी तपस्या प्रारम्भ की थी, इस लिये तुमको अमरता लाभ होना ठीक नहीं है। हे दोनो दैत्यवर! तीनों लोक जय करनाही तुम्हारी तपस्याका अभिप्राय है, इस कारण मैंने तुम्हारे अमर होनेकी अभिलाषा पूरी नहीं की। सुन्द और उपसुन्दने कहा कि, हे पिता मह! हम दोनोंको एक दूसरेके विना इस त्रिलोकभरमें स्थावर जङ्गम आदि किसीसे मृत्युका भय न रहे।

पितामह बोले, कि तुमने जो प्रार्थना की और जो कहा; वही होगा। मैंने तुम्हारी इस प्रार्थनाके अनुसार तुम्हारी मृत्युका नियम निश्चय किया। श्रीनारदजी बोले, कि अनन्तर पितामह सुन्द और उपसुन्दको यह वर देके तपसे निवृत्त कर ब्रह्मलोकमें गये। दोनों भाई दैत्यवर वर पाकर सब लोकोंके बधके अयोग्य होके अपने घरको पधारे। उनके स्वजन उन दोनों मनस्वियोंको वर पाते और उनका मनोरथ सफल होते देखकर बड़े प्रसन्न हुए। उन दो भाइयोंने तब जटा छोड़के किरीट आदि अतिमूल्यवान आभूषण और साफ वस्त्र पहिने। अनन्तर सर्व्वकाल वा अकाल-कौमुदीका महोत्सव करना प्रारम्भ किया। उनके स्वजन सदा आमोद प्रमोदसे काल काटने लगे। उनके घर घर भक्षण करो भोजन करो, दान करो, खेलो, गीत गाओ, पीओ, ऐसे शब्द सदा उच्चारे जाने लगे। ठौर ठौरमें दैत्योंके सिंह समान गर्ज्जनके साथ करतालीकी कठोर आहटसे सम्पूर्ण नगरमें आनन्दकी उमङ्ग फैल पड़ी। कामरूपी दैत्योंके बड़े आनन्दसे उस प्रकारोंके भांति भांतिके विहारमें लगे रहनेसे उनको एक एक वर्ष एक एक दिन जान पड़ने लगा।

राज्यलाभ पर्व्वमें दोसौ दश
अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर कौमुदीके महोत्सवके अन्त होने पर तीनोंलोकोंके अधिकार लाभ करनेके अभिलाषी होके दोनो भाइयोंने युक्तिकर सेनाओंको सजने को आज्ञा दी। उन्होंने स्वजन, और वृद्ध, दैत्य मन्त्रियोंकी आज्ञासे यात्रा करनेकी क्रिया पूरी कर रात्रिको मघा नक्षत्रमें यात्रा की। तुल्यधर्मवाली बड़ी दैत्यसेना गदा, पट्टिश, शूल, मुद्गर आदि शस्त्र लेकर उनके साथ चली। दोनों दैत्यराज चारणोंको विजयसूचक माङ्गलिक स्तुति पाठसे प्रशंसित होके परम हर्षपूर्व्वक जाने लगे। युद्धमें कठोर कामगामी वे दोनों दैत्यवर आकाश पर चढ़के देवलोकको गये। देवगण उनके आनेकी सुध पाय पितामहका वर देना स्मरण कर अपनी अपनी ठौर छोड़के ब्रह्मलोकमें गये। तेजस्वी विक्रमी दोनों दैत्योंने इसलोक, यक्षगण, राक्षसगण और दूसरे खेचरी प्राणियोंको जीतकर वहांसे चले चले पातालमें बसे हुए सर्पोंको परास्त कर, समुद्र द्वीपमें म्लेच्छोंको हराया। अनन्तर कठोर शासनेवाले दोनों महाबली, भाइयोंने भूमण्डलको परास्त करनेको उद्यत होके सेनाओंको पुकार पुकार यह कठोर बात कही, कि राजर्षि वृन्द सहयज्ञोंसे और ब्राह्मण गण हव्यकव्यसे देवोंको तेज बल और श्रीवृद्धि पहुंचाते हैं, वह सब लोग इन कार्य्योंसे हमारी शत्रुता करते हैं; सो हम सब एकत्र होकर सर्व्वप्रकारसे उनको नष्ट करेंगे। वे महासमुद्रके पूर्व्व तट पर ऐसी निष्ठुर कल्पना कर सब सेनाओंको आज्ञा देके चारो ओर दौड़े। उन दोनो बली भाइयोंने जिन जिन ब्राह्मणोंको यजन वा याजन करनेको देखा, उसी जगह उनका मारके आगे बढ़ने लगे। उनकी सेना निःशङ्कचित्तसे मुनियोंके आश्रममें जाके उनके अग्निहोत्र ले लेके जलमें छोड़ने लगी। महात्मा तपोधनवृन्द क्रोधित हो शाप देने लगे, पर वह ब्रह्माजीके वरसे व्यर्थ होने लगा, उन पर वर्त्ताव नहीं कर सका। जब द्विजोंका शाप शिला पर छोड़े शिलीमुखकी भांति व्यर्थ होने लगा, तब वे नियम छोड़कर भागने लगे। भूमण्डलमें जितने समशील, तपःसिद्ध दान्त ऋषि थे, वे इस प्रकार भागे, कि जैसे गरुड़के भयसे सर्प भागे। इस प्रकार आश्रम मथने और कलसे, स्रुव आदि इधर उधर छिरकाये तथा टूट फूट जाने पर सम्पूर्ण जग प्रलय-कालमें नष्ट होनेकी भांति खाली होगया। हे महाराज! अनन्तर मुनियोंके इधर उधर छिपकर दृष्टिके बाहर हो जाने पर दोनों महावीर उनका वध निश्चय कर नाना रूप धरने लगे। वे कभी मदोन्मत्त गजका स्वरूप लेकर दुर्गमें गये, हुए तपस्वियोंको भी नष्ट करने लगे। वे दोनों कुटिल कभी सिंहका स्वरूप कभी व्याघ्रका रूप धारण करते थे और कभी दृष्टिके बाहर होजाते थे। इस प्रकार उन्होंने नाना उपायोंसे ऋषियोंको नष्ट किया। तब धरती पर यज्ञ और स्वाध्याय रुक जाकर और ब्राह्मण तथा राजा नष्ट होके एकवारही यज्ञोत्सवका नाश होगया। सब लोक भयभीत होकर हाय हाय करने लगे। मोल विक्री, हाटका कार्य्य, दैवी कार्य्य, पुण्यकार्य्य, विवाहकार्य्य ऋषिकार्य्य और गोरक्षा आदि सम्पूर्ण कार्य्यही रुक गये। नगर और आश्रमोंका सत्यानाश होके केवल हड्डी कङ्कालोंसे पृथ्वी बहुत भयावनी दीख पड़ने लगी। सम्पूर्ण देशोंमें पितृकार्य्य और वषट्कार आदि माङ्गलिक क्रियाके लोप हो जाने पर जग बड़ा भयानक हो देखनेके अयोग्य हुआ। चन्द्र, सूर्य्य, ग्रह, तारे और आकाशमें रहनेवाले अश्विनी आदि नक्षत्र सुन्द उपसुन्दका यह कार्य्य देखकर उदास हुए। वे इस प्रकार कुटिल कार्य्यसे सब ओर पराजय कर अन्तको

ऋतुवर्ज्जित होकर कुरुक्षेत्र में निवास करने लगे।

राज्यलाभ पर्व्वमें दो सौ ग्यारह
अध्याय समाप्त।

श्रीनारदजी बोले, कि अनन्तर शमदमशील देवर्षि, परमर्षि और सिद्धगण उस भारी प्राणीहत्याको देखकर बड़े दुःखी हुए। वे तब जगत् पर कृपायुक्त हो पितामहके भवनमें गये। अनन्तर वहां पितामहको सिद्ध और ब्रह्मर्षियोंसे चारो ओरसे घिरे और देवोंके साथ बैठे पाया। वहां देवोंके देव महादेव, अग्नि, वायु, चन्द्र, आदित्य, इन्द्र, ब्रह्मनिष्ठ ऋषिगण, वैखानस, वालखिल्य, वानप्रस्थ, मरीचि, अज, अविमुग्ध और तेजोगर्व आदि भिन्न भिन्न तपस्वी ऋषिगण सभी उपस्थित हुए। सम्पूर्ण महर्षिगण दुःखीचित्तसे सुन्द और उपसुन्दके कार्य्योंका वृत्तान्त कह सुनाया उन दोनों दैत्योंने जैसे धूमके साथ जो काम किया और जैसे मारा वह सब क्रमसे आद्योपान्त कह सुनाया। सम्पूर्ण देवगण और परमर्षियोंने उस विषयके लिये पितामहका अनुरोध किया। अनन्तर पितामह उन सबोंका वचन सुनके क्षणभर सोचकर क्या करना ठीक है, उसका निश्चय कर दुराचारी दोनों दैत्योंके वधके लिये विश्वकर्म्माको बुलाया। विश्वकर्म्माके आने पर महानुभव पितामहने उसको ओर देख आज्ञा दी, कि सबोंकी प्रार्थनीया मनभावनी एक प्रमदा बनाओ। विश्वकर्म्मा उनको प्रणाम कर आदरपूर्व्वक उनकी आज्ञा मानके यत्नसे वार वार सोच विचारकर एकसुन्दरी बाला बनाने लगा। त्रिलोकभरमें दर्शनयोग्य परम सुन्दर जितने स्थावर जङ्गम पदार्थ हैं, विश्वकर्म्मा उन सबोंसे चुन चुन कर देवरूपी एक कामिनी बनाके उसके अङ्गादि सम्पूर्ण शरीरको सजा कर उसको रत्नकी प्रतिमा बनाया। विश्वकर्म्माके बड़े प्रयत्नसे बनायी हुई वह कन्या ऐसी रूपवती बनी, कि तीनों भुवनमें कोई भी नारी उसकी उपमाके योग्य न रही; उसके शरीर भरमें ऐसा कोई सूक्ष्म स्थानभी न था, कि जिस पर देखनेवालेकी आंख पड़नेसे उसके अपूर्व्व रूपकी शोभामें फंस नहीं जाती थी। साक्षात लक्ष्मीकी भांति वह कामिनी हरेक प्राणीके नयन मन चुराने लगी। विश्वकर्म्माने सम्पूर्ण रत्न बटोरके तिल तिल चुनकर उस कन्याको बनाया था, इसलिये पितामहने उसका नाम तिलोत्तमा रखा। अनन्तर तिलोत्तमा दोनों हाथ जोड़के ब्रह्माजीसे बोली, कि हे भूतनाथ! मुझको क्या करना होगा? कहो, कि मैं क्यों साम्प्रत बनायी गयी। पितामह बोले, कि तुम सुन्द और उपसुन्द, दोनों असुरोंके यहां चली जाओ, वहां जाय सुन्दर रूप दिखाय उनको लुभानेकी चेष्टा करो। ऐसी चेष्टा करो, कि वे तुम्हारे रूपकी सम्पद देखके आपसमें झगड़ा छेड़ें।

श्रीनारदजी बोले, कि अनन्तर तिलोत्तमा उनका कहना मानके प्रतिज्ञा ठानकर पितामहके पांव पर सिर नाय देवोंकी चारों ओर परिक्रमा देने लगी। उस समय भगवान पितामह पूर्व्व ओर, महेश्वर दक्षिण ओर, दूसरे देवगण उत्तर ओर और ऋषिवृन्द नाना ओरको मुंह फेरे थे। तिलोत्तमा जब परिक्रमा देती रही, तब इन्द्र और भगवान महेश्वर अति धीरज धर अपने अपने स्थानोंसे बैठे थे। महेश्वरमें बड़े वेगसे देखनेकी चाह उभड़ने पर तिलोत्तमा जब उनको दक्षिण ओरको गयी तब खिले पद्मपलाश समान नेत्रोंसे सुशोभित एक दक्षिण मुख निकल आया, तिलोत्तमा जब उनके पीछे गयी, तब उनका एक पश्चिम मुख निकला; और वह

बाला जब उत्तर ओर गयी, तब उनकी मांई ओरसे एक मुख निकला। महेन्द्रकेभी, देखनेकी चाह रहनेके कारण जब तिलोत्तमा उनकी परिक्रमा देती रही; तब उनके सामने पार्श्वमें और पीठ पर सम्पूर्ण शरीरहीमें बड़ी बड़ी सहस्र लाल आखें निकलीं। हे पार्थ! पूर्व्वकालमें इस प्रकार महादेवजी चतुर्म्मुख और बलसूदन सहस्रनेत्रयुक्त हुए, और परिक्रमाके काल तिलोत्तमा जिस जिस ओरको गयी थी, देव और महर्षियोंके मुख उस उस ओरको घूम गये थे। उस कालमें उस ब्रह्मसभामें जो जो उपस्थित थे उनमें केवल पितामहके बिना सब महात्माओंको दृष्टि उस नारीकी देह पर पड़ी थी। जब तिलोत्तमा जाने लगी, तब सम्पूर्ण देव और परमर्षियोंने उसके रूपका उजाला देख, अभीष्टकामनाको सिद्ध जाना। तिलोत्तमाके देवकार्य्य साधनको चले जाने पर लोकभावन हिरण्यगर्भने सम्पूर्ण देव और ऋषियोंको विदा किया।

राज्यलाभ पर्व्वमें दो सौ बारह अध्याय समाप्त।

श्रीनारदजी बोले, कि, इधर दैत्य, सुन्द, और उपसुन्द दो भाई भूमण्डलको परास्त कर तीनों भुवनोंको तुल्यरूपसे हथेली तले लाय दुःख खोय विना एकभी विरोधी अपनोंका मनोरथ सफल जाना और देव, गन्धर्व्व, यक्ष, राक्षस, सर्प, भूपाल आदिके सम्पूर्ण रत्न लेके परम सन्तुष्ट होय काल गवाने लगे। जब देखा, कि इस त्रिलोक भरमें कोईभी उनका रोकनेवाला नहीं है, तब उद्योग छोड़के देवोंकी भांति परम सुखसे विहार करने लगे। माला, चन्दन, स्त्री, सुन्दर खान, पवान और चूसनेकी सामग्री इन सब भांति भांतिकी वस्तुओंसे अनन्त आनन्द भोगने लगे। देवोंकी भांति कभी अन्त पुरमें, कभी वनमें कभी फूल बाड़ीमें कभी पर्व्वत पर, जब जहां मनचले विहार करने लगे। एक दिन फूलयुक्त वृक्षोंसे सुशोभित अनसूखी शिलातलवाली विन्ध्याचल चोटी पर विहार करनेको गये। वहां मन माने सम्पूर्ण दिव्य काम्य वस्तुओंको ले जाने पर स्त्रियोंके साथ प्रमुदित मनसे सुन्दर आसनों पर जा बैठे। नारियां उनके सन्तोषके लिये सुन्दर नाच, गीत और स्तुतिभरे रागोंसे उनकी उपासना करने लगीं। ऐसे समय तिलोत्तमा एकही लाल वस्त्र पहिन मनमाने बनी ठनी उस वनमें आय फूल तोड़ने लगी; और नदी तीरमें उपजे हुए कर्णिकार फूल तोड़ती हुई उस ठौरमें दोनों दैत्यके सामने धीरे धीरे गयी। वे दोनों बहुत मद पीकर आखें लालकर नशेसे चूर थे, सो उस सुन्दरीको देखतेही कामदेवके बाणसे बहुत घायल हुए। वे दोनों कामवश होकरके आसन छोड़के उठ कर उस नारिके पास गये और दोनोंने उस पर मन चलाया। सुन्दने अपने हाथसे उस सुन्दरीका दहिना हाथ थाम लिया और उपसुन्दने उसका बायां हाथ पकड़ा। वे एक तो वर पानेके प्रहङ्कार, अपने भुजवीर्य्यके अहङ्कार, और धनरत्नोंके अहङ्कारसे उन्मत्त थेही, फिर तिस पर दोनों मद्य और कामके नशेसे बावलोंके समान बने थे; सो एक दूसरेकी ओर भौंह चढायके भगड़ने लगे। सुन्द बोला, कि यह बाला मेरी स्त्री है, तुम्हारी गुरुयानी है, तुम छोड़ दो। उपसुन्द बोला, कि यह नारी मेरी महरी है, तुम्हारे छोटे भाईकी बधू है, तुम त्याग दो। अनन्तर आपसमें ऐसा कहते हुए, कि "यह मेरी स्त्री है, तुम्हारी नहीं" दोनोंहीका क्रोध उभड़ा, दोनोंने उसके रूपकी शोभासे मोहित हो और उसके लिये क्रोधके मारे स्नेह खोय स्नेहको भूलके भारी भारी गदा उठायी। उस एक नारीके लिये कामसोहित दोनों

भाइयोंने बड़ी बड़ी गदा उठाके यह कहते हुए, कि "मैंने पहिले कर थामा है, मैंने पहिले कर थामा है" एक दूसरेको बड़ी मार मारी। उस गदाकी चोटसे वे भयानक दोनों दैत्य मारे जाय और शरीरोंका रक्तसे नहाय आकाशसे गिरे दो सूर्य्योंकी भांति धरती पर लोट गये। तब उनके मित्र, दैत्य और दैत्योंकी स्त्रियां भाग कर पातालमें जाय घुसी। अनन्तर विश्वात्मा भगवान् पितामह तिलोत्तमाके सत्कारके लिये देव और महर्षियोंके साथ वहां आ पहुंचे। भगवान् पितामहने वहां पहुंच कर तिलोत्तमाको वर देना चाहा। वह वर देना स्वीकार कर उससे बोले, कि भाविनि। तुम सूर्य्यलोकमें विचर सकोगी। तुम्हारा इतना तेज होगा, कि कोई पुरुष तुमको देर तक नहीं देख सकेगा। सर्व्वलोकोंके पितामह प्रभु हिरण्यगर्भ ऐसा वर देके और इन्द्रके हाथ तीनों लोकोंका अधिकार सौंप कर ब्रह्मलोकको सिधारे।

श्रीनारदजी बोले, कि हे भरतवंश श्रेष्ठ। सुन्द और उपसुन्द दोनों भाई सतभावयुक्त और हरबातमें एकमत होने परभी तिलोत्तमाके लिये क्रोधित होकर आपही एक दूसरेको मारकर नष्ट हुए। सो स्नेहके हेतु मैं तुमको कहता हूं, कि तुम मेरा प्रिय कर्म्म करना चाहो, तो ऐसा कोई नियम ठहरा लो, कि द्रौपदीके लिये तुम भाइयोंमें बिगाड़ न हो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे महाराज। महात्मा पाण्डवोंने अमित तेजस्वी महर्षि नारदकी यह बात सुन कर एक दूसरेके मतके अनुसार उस देवर्षिके सामनेही यह नियम ठहराया कि हममेंसे एक भाई जब द्रौपदीसे मिलेगा, तब जो दूसरा भाई उसको देख लेगा, वो बारह वर्ष ब्रह्मचारी बनके वनमें बसना होगा। धर्म्मचारी पाण्डवोंके ऐसा नियम निश्चय करने पर महामुनि नारद प्रसन्न होय मनमानी ठौरको चले गये। हे भारत! पहिले पाण्डवोंके नारदकी बातसे ऐसा नियम करलेने पर उन भाइयोंमें आपसका बिगाड़ नहीं हुआ था।

राज्यलाभ पर्व्वमें दो सौ तेरह
अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि इसके पीछे पाण्डवोंने द्रौपदीके विषयमें उस प्रकारका नियम ठहराके उस स्थानमें वास कर अस्त्रोंके प्रभावसे दूसरे भूपालोंको वशीभूत किया। कृष्णा उन बड़े तेजस्वी मनुष्यसिंह पांच पाण्डवोंहीके वशमें बनी रही। करीवरयुक्त बन और हस्तीगण जिस प्रकार एक दूसरेका सौभाग्य बढ़ाते हैं, वैसेही द्रौपदी और उसके पांच पति एक दूसरेकी प्रीति बढ़ाने लगे। महात्मा पाण्डवोंके धर्म्मपथ पर चलनेसे कौरव मात्रही दोषकी आंचसे बचके सुखपूर्व्वक वृद्धि पाने लगे।

हे नरनाथ। कितनेएक दिन बीतने पर एक ब्राह्मणके घरसे कुछ चोर आकर गौ चुराने लगे। हे नृपश्रेष्ठ। लुटेरोंसे ब्राह्मणकी गौ चुरायी जाने पर ब्राह्मण क्रोधसे चेत खोय खाण्डवप्रस्थमें आय दुःख प्रगट करते हुए चिल्ला चिल्लाकर पाण्डवोंको पुकार पुकारके बोले, कि हे पाण्डवो। तुम्हारे राज्यमें आज दुष्ट नीच निठुर लुटेरे एकायक मेरी गौ चुरा रहे हैं, तुम तुरन्त दौड़ो। हा। कितने दुःखकी बात है। काक आकर ब्राह्मणके शान्त यज्ञका हुत हर रहा है, नीच सियार सिंहकी गुफा खाली देखकर मथ रहा है, जो राजा प्रजाकी रक्षा नहीं करते, और छठा भाग करभी लेते हैं, पण्डित लोग उन्हींको सर्व्व लोकोंमें पापी कहते हैं, हे पाण्डवो! चोर ब्राह्मणका धन हर रहे हैं, धर्म्म कर्म्म लोप हो रहे हैं, मैं शोकरूपी कीचड़में डूबकर

वार वार रो रहा हूं, सो मेरा हाथ थामकर मुझको बचाओ।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि, कुन्तीपुत्र धनञ्जयने निकट आके रोते पीटते हुए उन ब्राह्मण को रुलाई सुनी। उन महाभुजने वह सुनतेही ब्राह्मणको माभै, कहके समझा कर ढाढ़स दिया, पर जिस घरमें महात्मा पाण्डवोंके अस्त्र धरे थे, उस घरमें धर्म्मराज युधिष्ठिर द्रौपदीके साथ विराज रहे थे, सो वह भय खाये ब्राह्मणकी बातसे वार वार जल उठनेपरभी ठहराये हुए नियमके अनुसार अस्त्रशालामें प्रवेश करने वा चोरी रोकनेको नहीं जा सके। ब्राह्मणकी वैसी रुलाई सुनके दुःखी चित्तसे सोचने लगे, कि इन तपस्वी ब्राह्मणकी गौ चुरायी जाती है, उन्हें बचाकर इनको आंसू मुझको अवश्य मिटाने चाहिये, यह ब्राह्मण द्वारपर आकर रो रहे हैं, इनको न बचावें, तो मेरे रक्षा न करनेके हेतु राजाको बड़ा अधर्म्म होगा और बचानेहीसे इन सबोंकी इसलोकमें आस्तिकता बन जायगी और अधर्म्मभी नहीं होगा। पर अब अजातशत्रुराजाके यहां जानेसे उनका अनादर होगा और मेरा झूठा व्यवहार होगा, इसमें सन्देह नहीं। और उनके सामने जानेसे मुझको वनमें जाना भी पड़ेगा। वास्तवमें राजाका चाहे अनादर हो, मेरा अनुचित व्यवहारके लिये अधर्म्म हो, और वनमें चाहे मृत्युही हो, इन सबोंको तो सिर पर उठासो ले सकता हूं, पर धर्म्मको छोड़ नहीं सकता, क्योंकि देह छूटने परभी धर्म्म बना रहेगा। हे नरनाथ। वह ऐसा निश्चय कर अस्त्रशालामें घुस राजा युधिष्ठिरसे मिले, और धनुष लेकर प्रसन्न मनसे निकल ब्राह्मणसे बोले कि हे द्विज! शीघ्र चलो, परायै धनके लोभी नीच लुटेरोंके बड़ी दूर जाने न जाने तब एकत्र चलकर उनके हाथसे तुम्हारे गायें छुड़ा धनको छीन लें। महाभुज पृथापुत्र सव्यसाची धनञ्जय यह कहके देह रक्षक कसके धनुष ले वार ध्वजा फहराते हुए रथ पर चढ़े और वेगसे लुटेरोंको पछियाके जाकर वाणोंसे काटकूट कर परास्त किया। आगे उन ब्राह्मणको उनकी गौ देके प्रसन्न कर यश लिया। अनन्तर वह अपने पुरमें लौटकर सब गुरुओंके पांव लगके उनसे स्वागत किये गये। कुछकाल बीतने पर उन्होंने धर्म्मराजसे कहा, कि प्रभो! मैंने द्रौपदीके संग आपको देखकर तुम्हारे ठहराये हुए नियमको तोड़ दिया है, तो मुझको व्रत पालनेकी आज्ञा दें, मैं वनवासको जाऊं। धर्म्मराज युधिष्ठिर एकायक भाई अर्जुनकी यह बात सुन करकेही, शोकसे विकल हुए, और कुछ टूटी फूटी बातेंमें कहा, कि "क्यों, आगे वह मलिनचित्तसे भाई धनञ्जयसे बोले कि हे अनघ! यदि मैं तुम्हारे लिये प्रमाणस्वरूप हूं" तो मेरी बात सुनो मैं जब द्रौपदीसे विराज रहा था, तब मेरे यहां जाके मेरा जो अप्रिय किया है, उससे मेरे चित्तमें असन्तोष नहीं पहुंचा। उन विषयमें मैं तुमको आज्ञा देता हूं, सुनो। जब बड़े भाई स्त्रीके साथ विराजते हैं, तब छोटेके उस घरमें जानेसे हानि नहीं होती, पर ज्येष्ठ भाईहीका कनिष्ठके घरमें जाना नियमके विरुद्ध है। अतएव इससे तुम्हारा धर्म्मलोप नहीं हुआ और मेरा मान भी नहीं टूटा। हे महाभुज। रह जाओ, मेरी बात मानो। अर्जुन बोले, कि मैंने आपसे सुना है, कि छलपूर्व्वक धर्म्म करना उचित नहीं है, सो मैं सत्यसे टल नहीं सकूंगा। सत्यको लेकरकेही अस्त्र धर रहा हूं। श्रीवैशम्पायन जी बोले, कि अनन्तर अर्जुन राजा युधिष्ठिर की आज्ञा लेकर वनचर्य्यामें दीक्षित हो बारह वर्ष वनवासके लिये गये।

अर्जुन वनवास पर्व्वमें दो सौ चौदह अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर कुरु-कुल कीर्त्तिरूपी महाभुज अर्ज्जुन पधारे। महात्मा वेदज्ञ ब्राह्मण आदि बहुतेरे उनके साथ चले। हे महाराज। वेदपारग और वेदवेदाङ्ग में पण्डित, अध्यात्मकी चिन्ता करनेवाले ब्राह्मण, गानके पण्डित, पुराणकी कथा कहनेवाले सूत, भगवद्भक्त कथक, उर्द्धरेता वनवासी और जो मधुरभावसे सुन्दर उपाख्यान पाठ करते हैं, यह सब जन और दूसरे साथियोंके सग, मरुद्गणोंके साथ चलते हुए देवराजकी भांति अर्ज्जुन चलने लगे। भरतवंश चूड़ामणि अर्ज्जुनने जानेके कालमें अनेक प्रकार सुन्दर सुन्दर वन, सरोवर, नदी, समुद्र, भांति भांतिके देश और पुण्यतीर्थोंको देखा। गङ्गाद्वारमें पहुंचकर वहां वसने लगे। हे जनमेजय। पाण्डववर विशुद्धात्मा अर्ज्जुनने उस स्थानमें जो अद्भुत कर्म्म किया था; वह कहता हूं सुनो। कुन्तीपुत्रके साथ ब्राह्मणोंके वहां विराजनेके काल वे सब ब्राह्मण नाना प्रकारके अग्निहोत्र प्रगट करने लगे। हे महाराज! गंगातीरमें अभिषेक किये हुए पण्डित, नियमयुक्त सुमार्गी महात्मा ब्राह्मणोंसे उन सब अग्निहोत्रोंके प्रवाधित, और फूलोंसे सुशोभित होने तथा बलि और आहुति दिये जाने पर गङ्गाद्वारकी बड़ी शोभा हुई। किसी एक समय पाण्डववर अर्ज्जुन नहानेके लिये द्विजोंसे भरे हुए आश्रमके निकट भागीरथीके जलमें जा उतरे। महाराज! वह नहाय धोय पितरोंका तर्पण कर अग्निकार्य्यके लिये जलसे उठना चाहते थे, कि ऐसे समयमें पातालके नीचे रहनेवाली उलूपी नाम्नी नागराज-पुत्री मदनकी आज्ञा मानके उनको जलमें घसोट ले गयी। तब उन्होंने कौरव्य नामक सर्पराजके भवनमें जाके अग्नि देखा। आगे भले प्रकार समाहित होकर उसमें अग्निकार्य्य कर लिया। उनके पार्थाहुत चित्तसे आहुति देनेसे अग्निदेव बड़ा सन्तोष हुआ। कुन्तीपुत्र धनञ्जय अग्निकार्य्य होजाने पर मुसकिराते हुए नागराजकन्यासे बोले, कि भाविनि। तुमने यह क्या साहस किया? हे भीरु सुभगे। यह कौन देश है? और तुम कौन? किसकी कन्या हो? उलूपी बोली, कि हे महाराज। ऐरावतवंशमें उपजे कौरव्य नामक एक नागराज हैं, मैं उनकी कन्या उलूपी नाम्नी पन्नगी हूं। हे पुरुषव्याघ्र। तुम नहानेके लिये जब गङ्गाजीमें उतरे, तब मैं तुमको देख करके मदनवाणसे घायल हुई। हे कुरुनन्दन। मेरा विवाह नहीं हुआ, मैं किसीसे पहिले मिली नहीं, अब तुम्हारे लिये कामसे मोहित हुई हूं। हे अनघ! अब तुम आत्मदान कर मुझे आनन्द दो। अर्ज्जुन बोले कि हे भद्रे, जलमें विराजनेवाली। मैंने धर्म्मराजकी आज्ञासे बारह-वर्षके लिये ब्रह्मचर्य्यव्रत लिया है, सो अपने अधीन नहीं हूं, तुम्हारा प्रियभी किया चाहता हूं, पर मैने पहिले कभी झूठी बात नहीं कही, सो हे भुजङ्गमे। तुम ऐसा विधान करो, कि अब मेरी बातकी सचाई बनी रहे और तुम्हारा प्रियभी कर सकूं और मुझको अधर्म्ममें पड़ना न हो। उलूपी बोली, कि हे पाण्डव। तुम जिस निमित्त पृथ्वीका भ्रमण कर रहे हो और गुरुने जिस प्रकार तुमको ब्रह्मचर्य्य व्रत करनेको आज्ञा दी है, वह सब कुछ मैं जानती हूं। तुमने नियम किया था, कि तुम पांच भाइयोंमेंसे कोई जब द्रौपदीसे मिलता रहे, तब जो मोहसे वहां जा पहुंचेगा, उसको बारह वर्षतक ब्रह्मचर्य्य ले वनमें जाना पड़ेगा। तुममें आपसका वनमें जानेका यह नियम केवल द्रौपदीहीसे बना है, सो तुम केवल उस धर्म्मकी रक्षाहीके लिये भेजे गये हो; ऐसी दशामें तुम्हारा धर्म्म बिगड़नेकी कौनसी सम्भावना है? हे सुन्दरनेत्र वाले पुरुष। विह्वल जनको तुम्हें बचाना उचित है, सो मुझको

विह्वल जान बचानेसे तुम्हारा धर्म्म नहीं बिगड़ेगा। हे अर्जुन! यद्यपि इससे धर्म्मको कुछ हानि होती है, सो मुझको प्राण देनेसे तुम्हारा वह पूराहो बना रहेगा। साधुलोग मिलन चाहती हुई नारीकी कामना पूरी करनेका उपदेश करते हैं, सो मुझको भक्ता जान भजो। हे प्रभो! यदि तुम इसमें सम्मत न हो तो मुझको मरी जान लो। हे पुरुषोत्तम महाभुज! आज मैंने तुम्हारी शरण ली है, मुझको प्राण देकर परम धर्म्म उपार्ज्जन करो। हे कुन्तीपुत्र! मैं अनाथ और दीन होके बार बार रोती हुई तुम्हारी शरण लेती हूं और कामवश होके तुम्हारे मिलनकी प्रार्थना कर रही हूं और तुमभी दीनों और अनाथोंकी सदा रक्षा करते हो, सो तुमको मेरा प्रिय करना चाहिये। अतएव तुम अपनेको सौंप कर मेरी अभिलाषा पूरी करो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि नागराज पुत्रीके प्रतापी अर्जुनसे ऐसी बात कहने पर, अर्जुनने धर्म्मके उपदेशसे उसका मनमाना सम्पूर्ण कार्य्य पूरा किया। उसका उस कौरव्य नामक सर्पराजके भवनमें वह रात गंवा कर सूर्य्योदयके समय उठे और उस नागराजपुत्रीके संग फिर गङ्गाद्वारको लौट आये। आगे सती उलूपी उनको यह वर देकर लौटी, कि तुम जलमें सर्व्वत्र अजेय बनोगे। सन्देह नहीं है, कि सबही जलचर तुमसे जीते जानेके योग्य होंगे।

अर्जुन वनवास पर्व्वमें दो सौ पन्द्रह
अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि, अनन्तर इन्द्रपुत्र ब्राह्मणोंसे पहिले दिन का सब व्योरा कहके हिमालयके पास गये। आगे अगस्त्य वटको देखकर वशिष्ठ पर्व्वतमें जा पहुंचे और तुङ्गनाथ नामक पर्व्वत पर अपनी शौचक्रिया करके शुचि होकी ब्राह्मणोंको अनेक सहस्रो और गृहदान किये। अनन्तर पुरुषोत्तम पाण्डवश्रेष्ठ हिरण्यविन्दु नामक तीर्थमें नहाय धोय वह कितने पुण्यस्थानोंको देखने लगे। अनन्तर ब्राह्मणोंके साथ उस स्थानसे उतर कर पूर्व्वदिशाको देखनेकी इच्छासे चले। हे भारत! वह क्रमसे तीर्थोंको देखने लगे, नैमिषारण्यसे बहती हुई सुन्दर उत्पलिनी नदी, गया और यशस्विनी महानदी गङ्गा, कौशिकी, नन्दा और दूसरी नन्दा और अन्यान्य तीर्थ तथा आश्रमोंको दर्शन करते हुए आत्माको पवित्र कर ब्राह्मणोंको अनेक गौ दान दी। अङ्ग वङ्ग और कलिङ्ग देशोंमें जितने तीर्थ और पवित्र स्थान हैं, उन्होंने उन स्थानोंमें जाय उनका दर्शन कर उन स्थानोंमें ब्राह्मणोंको धन दान दिया। हे भरतनन्दन! जो सब ब्राह्मण कुन्तीनन्दनके साथ जा रहे थे, वे कलिङ्ग राज्यके द्वार गवाक्ष वहांकी पर्व्वत-सन्धितक जाके उनकी आज्ञासे लौट गये। कुन्तीपुत्र वीर धनञ्जय उनकी आज्ञासे थोड़े मनुष्योंको संग लेकर समुद्रकी ओर चले। वह प्रभु कलिङ्ग देशको पीछे छोड़के नाना देश, आश्रम और बड़े बड़े भवनोंको देखते हुए चले। क्रमसे तपस्वियोंसे सुशोभित महेन्द्र पर्व्वतको देखकर समुद्रतीरसे मणिपुरमें जा पहुंचे। हे महाराज! वह महाभुज उस देशमें पुण्यतीर्थ और पवित्र स्थानोंको देखकर अन्तमें मणिपुरनाथ चित्रवाहन नामक धर्म्मज्ञ महीपालके निकट गये। उस भूपकी चित्राङ्गदा नाम्नी एक सुन्दरी कन्या थी। एक दिन वह सुन्दरी मनमाना उस नगरमें टहलती थी, कि ऐसे समय धनञ्जय उसको देखकर कामके वशमें होगये और अपनी अभिलाषा पूरी करनेके लिये राजाके पास पहुंचकर बोले, कि हे महाराज! मैं

महात्मा क्षत्रियका पुत्र हूं मुझको कन्या दान दें राजा वह बात सुनकर बोले कि तुम किसके पुत्र हो? तुम्हारा नाम क्या है? अर्ज्जुन बोले, कि मैं पाण्डव कुन्तीपुत्र हूं, मेरा नाम धनञ्जय है। अनन्तर राजा मीठी बातोंमें उनसे बोले, कि हे पुरुषश्रेष्ठ। इस देशमें प्रभञ्जन नामक एक भूपने जन्म लिया था। उनको सन्तान न होनेसे वह सन्तानको कामनासे भले प्रकार तप करने लगे। पिनाक-धारी ईश्वर उमापति भगवान देवदेव महादेवने उनको कठोर तपस्यासे प्रसन्न होकर उनको वर दिया, कि पुरुषोंकी परम्परासे उनके इस वंशमें एक एक सन्तान जन्म ले। इस लिये हमारे कुलमें सदा एकही सन्तान उपजती है। मेरे सब पुरखाओंके पुत्र उपजे थे। हे पुरुषेन्द्र! मेरे वंश बढ़ानेवाली यह एकही कन्या हुई है। मैं इसको पुत्र करके समझता हूं। हे भारतवर। मैंने इस कन्याको विधि-पूर्व्वक पुत्रिका बनायी है, इस लिये इस कन्याके गर्भ और तुम्हारे वीर्य्यसे जो एकपुत्र उत्पन्न होगा वह मेरी पुत्रिकाका पुत्र होगा। वह पुत्रही इस कन्याके शुल्कवत होकर मेरे वंशको रक्षा करेगा, इस नियमसे तुम मेरी यह कन्या लो। कुन्ती-पुत्र अर्ज्जुनने "तथास्तु" कहके मान लिया। और उस कन्यासे विवाह कर उस नगरमें तीन वर्ष गंवाया। सुन्दरी चित्राङ्गदाके गर्भसे पुत्र उपजने पर वह उसको गले लगाके और प्रेमसे सम्भाषण करके राजासे विदा होकर देश भ्रमणको निकले।

अर्ज्जुन वनवास पर्व्वमें दो सौ सोलह अध्याय समाप्त।

———

वैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर भरत-वंश-श्रेष्ठ अर्ज्जुन दक्षिण समुद्रके तपस्वियोंसे शोभायमान सब पुण्य तीर्थोंमें गये। उस स्थानमें अश्वमेधके फलदायी पापनाशी प्रसन्न सुपवित्र अगस्त्य, सौभद्र, पौलोम, कारन्धम, और भारद्वाज यह पांच महातीर्थ थे। इन पांच तीर्थोंके सामने बहुतेरे तपस्वी बसते थे, पर इनके भीतर किसी तपस्वीका वास नहीं था। पुरुषश्रेष्ठ अर्ज्जुनने उन पञ्चतीर्थोंको देखा। उन्होंने उन पञ्चतीर्थोंको पूर्व्वोक्त और धर्म्मज्ञ मुनियोंसे त्यागे हुए देखके उसके सामने बसे हुए तपस्वियोंसे पूछा, कि ब्रह्मवादी ब्राह्मण लोग क्यों यह पञ्चतीर्थ छोड़ देते हैं? तपस्वीगण बोले, कि हे कुरुनन्दन। इन पञ्चतीर्थोंके जलमें पांच ग्राह हैं, वे तपस्वियोंको मार डालते हैं; सो मुनिलोग इन तीर्थोंमें नहीं बसते।

वैशम्पायनजी बोले, कि पुरुषोत्तम महाभुज अर्ज्जुन तपोधनोंका वह वचन सुनके उनसे रोके जाने परभी उन सब तीर्थोंको देखने गये। वह पहिले महर्षि सम्बन्धी सौभद्र नामक श्रेष्ठ तीर्थमें पहुंचकर उसमें एकायक देहको डुबाकर नहाने लगे। ऐसे समयमें जलके भीतर चलनेवाले एक बड़े ग्राहने उन शत्रु-दमन वीरपुरुषोंमें व्याघ्ररूपी कुन्तीपुत्र धनञ्जयका पांव पकड़ा। महाबली महाभुज पाण्डुपुत्र उस कांपते हुए जलचर जन्तुको लेकर बलपूर्व्वक तट पर उठ आये। हे महाराज। जलचर ग्राह यशोवन्त अर्ज्जुनसे ऊपर उठाये जातेही एक नारीके स्वरूपमें दिखाई दिया। वह बाला दिव्यरूप सुन्दरतासे चमकती हुई, कल्याणी, मनोरमा और सर्व्व आभूषणोंसे सजी थी। कुन्तीपुत्र धनञ्जय उस बड़ी आश्चर्य्य लीलाको देखके अति प्रसन्नचित्तसे उस नारीसे बोले, कि ऐ कल्याणि जलचारि! तुम कौन? क्यों ऐसी बनी हो? और क्यों पहिले ऐसा महापाप किया था? वर्गा नामी वह नारी बोली, कि हे महाबली महाभाग! मैं देववनमें विराजनेवाली अप्सरा हूं मेरा नाम वर्गा है, मैं सदासे कुवेरकी प्य

मेरी कामगामी शुभ-लक्षणा और चारमखी है। किसी समयमें उन चार सखियोंकी साथ लोकपालके यहां जा रही थी, उस समय देखा, कि प्रशंसित व्रतधारी एकान्तमें रहनेवाले परम रूपवान एक ब्राह्मण वेद पढ़ रहे हैं। हे महाराज! उनके तपके तेजसे वह वन ढंप गया है; उन्होंने आदित्यकी भांति उस सब स्थानमें उजाला कर दिया है। हम उनकी वैसी अति तपस्या और आश्चर्य रूप देखकर तपमें विघ्न डालनेकी इच्छासे वहां उतरगयीं। हे भारत! सौरभयी, समीचि, बुद्बुदा, लता और मैं यह पांच एकत्र हो कर उस ब्राह्मणके यहां एकवारही जा पहुंची। हे वीर! हम उनके लुभानेके लिये हंसने और गीत गाने लगीं, पर उस विप्रने किसी प्रकारसे हमारी ओर ध्यान नहीं दिया। उनका मन निर्म्मल तपस्यामें निश्चल बना रहा, किसी प्रकार नहीं टला। हे क्षत्रिय-नर! अनन्तर उन्होंने क्रोधित होके हमको यह शाप दिया, कि तुम ग्राह बनके जलमें सौ वर्ष चरा करोगी।

अर्जुन वनवास पर्व्वमें दोसौ सतरह अध्याय समाप्त।

वर्गा बोली, कि हे भरतवंशश्रेष्ठ! अनन्तर हमने कातर होकर उन अच्युत तपोधनकी शरण लेकर कहा, कि हे तपोधन! हमने रूप, यौवन और कामके अहङ्कारसे यह अनुचित कार्य्य किया है। हे द्विज! हमारी क्षमा करनी योग्य है। यही हमारे लिये मृत्युवत हुआ है, कि हम ऐसे जितेन्द्रिय मुनिको लुभानेकी इच्छासे यहां आई हैं, धर्म्मचारी लोग विचारते हैं, कि नारी वधके अयोग्य बनायी गयी हैं, सो आप हमारी हिंसा न करें। हे धर्म्मज्ञ! पण्डित लोग कहते हैं, कि ब्राह्मण सर्व्वप्राणियोंके मित्र हैं, हे कल्याणस्वरूप! पण्डितोंके इस वचनको सत्य होने दें। महात्मा शरण लिये हुए लोगोंकी रक्षा करते हैं; हमने आपकी शरण ली है, सो आपको हमारी क्षमा करनी चाहिये।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे वीर! अनन्त सूर्य्य चन्द्रमाको उजला रखनेवाले शुभकर्म्म किये धर्म्मात्मा वह ब्राह्मण अप्सराओंकी यह बात सुनके प्रसन्न हुए और बोले, कि शत और शत सहस्रका अर्थ अनन्तकालभी होता है, पर मैंने "शत वर्ष" यह शब्द कहा है, उसका अर्थ सौही होगा, अनन्तकाल नहीं होगा। तुम जलचर ग्राह बनके पुरुषोंको पकड़ा करोगी, पर शत-वर्ष पूर्ण होने पर एक पुरुषश्रेष्ठ तुमको पकड़ कर स्थल पर उठा लेंगे, तब तुम फिर अपना रूप प्राप्त करोगी, मेरी बात कभी झूठी नहीं ठहरेगी। मैंने पहिले कभी हंसीमेंभी झूठी बात नहीं कही है। तुम्हारे छुटकारा पाने पर वे सब तीर्थ, नारीतीर्थ नामसे प्रख्यात होकर साधुओंके तारनेवाले और पुण्यदायी बनेंगे। वर्गा बोली, कि अनन्तर हम उन ब्राह्मणको प्रणाम कर परिक्रमा दे दुःखी चित्तसे वहांसे भागकर सोचने लगी, कि जो महापुरुष हमको स्वरूप दिलावेंगे उनसे कहां थोड़े कालके बीच हमारी भेंट हो सकती है? हे भारत! हम सब ऐसी चिन्ता करती हुई, पल भरमें महाभाग देवर्षिको देखकर प्रसन्न चित्तसे उनके पांव पर सिरनायके लज्जासे मुह नीचे कर खड़ी रहीं। उनके हमारे दुःखका कारण पूछने पर हमने आद्योपान्त सब ब्योरा कह सुनाया। वह हमारी बात सुनके बोले, कि दक्षिण-समुद्रमें प्रायः जलभरी ठौरमें पांच तीर्थ हैं, तुम वहां जाओ, देर मत करो। उस स्थानमें शुद्धात्मा पुरुषश्रेष्ठ पाण्डुपुत्र धनञ्जय तुमको इस दुःखसे निःसन्देह बचावेंगे। हे वीर! हम सब उन महर्षिका वचन सुनके यहां आयी थीं। हे अनघ! अब सचमुच तुमसे मुक्त होगई। मेरी वे चार सखी इसी प्रकार दूसरे जलमें हैं, हे वीर!

तुम इस प्रकार उन चारोंको भी छुडाकर शुभ कर्म्मका फल लो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भूपाल। अनन्तर वीर्य्यवन्त पाण्डवश्रेष्ठ अर्ज्जुनने प्रसन्न मनसे उन सबोंहीको उस शापसे बचाया। हे महाराज। अप्सरायें उस जलसे उठके अपने पहिलेके रूपमें दीखपड़ीं। इस प्रकार अर्ज्जुन उन पञ्चतीर्थोंको सुधारकर उनको बिदाकर देके चित्राङ्गदाको देखनेके लिये फिर मणिपुरको पधारे। हे राजन। तब उनके वीर्य्य और चित्राङ्गदाके गर्भसे उपजे बभ्रुवाहन नामक पुत्र वहां राजा हुए थे। पार्थ चित्राङ्गदाको देखकर वहांसे गोकर्णकी ओर चले।

अर्ज्जुन वनवासपर्व्वमें दोसौ अठारह अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर अति विक्रमी अर्ज्जुन पश्चिम प्रदेशमें जितने तीर्थ और पुण्य स्थान हैं, एक एक कर उन सबोंमें गये और पश्चिम समुद्रमें जितने तीर्थ और स्थान हैं, वहां घूम घाम अन्तमें प्रभास तीर्थमें जा पहुंचे। मधुसुदन माधवने सुना, कि अति पुण्ययुक्त सुन्दर प्रभास तीर्थमें अजेय सखा वीभत्सु जा पहुंचे हैं। अनन्तर वह उनको भेटके लिये वहां गये। उस प्रभासमें कृष्ण और पाण्डवसे परस्परकी भेट होने पर दोनों प्यारे सखा ऋषि नर और नारायनरूपी कृष्ण तथा पाण्डव एक दूसरेको गले लगाके कुशलक्षेम पूछकर उस ठौरमें बैठे वासुदेव अर्ज्जुनका भ्रमण वृत्तान्त सुननेको इच्छासे बोले, कि हे पाण्डव! तुम क्यों इन तीर्थोंमें फिरा करते हो? अर्ज्जुनने आद्योपान्त सब कह सुनाया। प्रभु वार्ष्णेयने सुनकर कहा, कि यह उचितही हुआ है। अनन्तर वे दोनों प्रभाससे मनमाने विहारकर रहनेके लिये रैवतक पर्व्वत पर गये। इसके पहिलेही कृष्णकी आज्ञासे नौकरोंने पर्व्वत पर भांति भांतिकी भोजनकी सामग्री बनवा रखी थी, इतनी कि जिनसे पहाड़ छिप गया था। अर्ज्जुन वासुदेवके साथ वहां भोजनादि कर और नट नाचनेवालोंके नाच आदि देखने लगे। आगे महामति पाण्डव उनको यथोचित पारितोषिक देके विदा कर भलेप्रकार सजी सेज पर जाकर सोये। अनन्तर महाभुज अर्ज्जुन उस शुभ बिछौने पर लेटकर कृष्णसे भांति भांतिको नदी सोते पर्व्वत, वन आदिकी कथा कहने लगे। हे जनमेजय! वह इस प्रकारकी नाना कथा कहते हुए सो गये। आगे रात बीतने पर मीठे गीत स्तुतिपाठ और वीणा की ध्वनिसे जग उठे, और नित्यकृत्योंका अन्त कर यादवोंसे नमस्कार किये जाय सुवर्णके रथ पर द्वारकाको गये। हे जनमेजय! कुन्तीनन्दनके गौरवके लिये द्वारकापुरीके राजपथ, फुलवाड़ी और भवन आदि सब ठौर सजाये गये थे। सैकड़ों सहस्रों द्वारकावासी अर्ज्जुनको देखनेके लिये राजपथ पर वेगसे पहुंचने लगे, पाण्डवदर्शनके लिये सैकड़ों सहस्रों भोज वृष्णि और अन्धकवंशी नर नारियोंकी बड़ी भीड़ लगी, अर्ज्जुन भोज वृष्णि और अन्धकवंशियोंसे यथायोग्य सत्कृत हुए, नमस्कार योग्य जनोंको नमस्कार किया, और उनसे प्रणाम किये जाय और सब कुमारोंको पावलगी ले सम अवस्थावालोंको वारवार गले लगाया। आगे कृष्णके साथ भांति भांतिके रत्न तथा भक्ष्यकी सामग्रीयोंसे भरे पूरे सुन्दर भवनमें बहुत दिन काटे।

दोसौ उन्नीस अध्यायमें अर्ज्जुन वनवास पर्व्व समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर कुछ दिनो तक उस रैवतक पर्व्वत पर वृष्णि और अन्धकवंशियोंका उत्सव होने लगा। भोजवृ ... र

अन्धकवंशी वीर उस गिरि सम्बन्धी उत्सवमें सहस्रों ब्राह्मणोंको भांति भांतिकी सामग्री दान देने लगे। हे महाराज! रैवतक पर्व्वतकी चारों ओरकी उपत्यका और अधित्यकायें रत्नोंसे सजे कल्पवृक्ष समान कामनाओंकी वस्तुओंसे भरे गृहोंसे सुहाने लगी। बाजावाले नाचनेवाले और गानेवाले नाना भांतिके बाजे नाच और गान आरम्भ कर दिये। अति वीर्य्यवन्त वृष्णिवंशी कुमारगण सज धज कर सुनीले रथों पर उधर घूमते हुए सुहाने लगे। सैकड़ों, सहस्रों पुरवासी पत्नी और साथियों समेत अनेक प्रकारके यान पर टहलने लगे। कोई कोई पैदलही घूमने लगा। हे भारत! रेवतीके साथ प्रभु हलधर मधुसे मतवाले सहचर गन्धर्व्वोंसे घिरे जाय घूमने लगे। वैसेही सहस्र नारियोंके साथ वृष्णियोंके राजा प्रतापी उग्रसेन सहचर गन्धर्व्वोंसे घेरे जाय घूमने घामनेमें प्रवृत्त हुए। युद्धमें कठोर शाम्ब और रुक्मिनीकुमार मधुसे मतवाले हो सुन्दर माला और वस्त्र पहिने देवोंकी भांति विहार करने लगे। अक्रूर, सारण, गद, बभ्रु, विदूरथ, निशठ, चारुदेष्ण, पृथु, विपृथु, सत्यक, सात्यकि, भङ्गकार महारव, हार्दिक्य, उद्धव, और दूसरे बहुतेरोंने अलग अलग स्त्री और गन्धर्वोंके साथ वहां टहलते हुए उस महोत्सवकी शोभा बढ़ायी। इस प्रकार उस मनोहर अति आश्चर्य कौतूहलके वर्त्तमान होने पर वासुदेव और पार्थ एकत्र हो टहलने लगे। उन्होंने इधर उधर घूमते समय सखियोंसे घिरी नाना आभूषणोंसे बनीठनी, शुभलक्षणोंसे जड़ी वसुदेवकन्या सुभद्राको देखा। अर्जुन उस कोमलाङ्गी बालाको देखकरके ही मदनबाणसे मोहित हुए। हे भारत! पुण्डरीकाक्ष कृष्ण उनके मनको सुभद्रा पर बहुत लगने देखके हंसकर बोले, कि यह क्या है? वनवासीके मनमेंभी काम डामाडोल मचाता है? हे पार्थ! यह कन्या सारणकी सगी बहिन, मेरीभी बहिन है, इसका नाम सुभद्रा है। यह बालाही मेरे पिताकी प्यारी कन्या है। तुम्हारा चित्त इस पर झुका हो, तो कहो, मैं स्वयं ही पितासे यह कहूं, तिससे तुम्हारा मङ्गल हो सकता है। अर्जुन बोले, कि वसुदेवकी कन्या, वासुदेवकी बहिन अनुपम रूपवती यह कन्या किसके मनको मोहित न करेगी? तुम्हारी बहिन यह सुभद्रा यदि मेरी रानी बने, तो इसमें सन्देह नहीं, कि तुमसे मेरा सर्व्व प्रकार कल्याण होगा। हे जनार्द्दन? कहो, अब किस उपायसे सुभद्रा मिल सकती है। यदि मनुष्यकी सामर्थ में हो तो सर्व्व प्रकारसे वह करूं। वासुदेव बोले, कि हे पुरुषश्रेष्ठ पार्थ! क्षत्रियोंका स्वयम्वर विवाहका नियम तो है, पर उसकी शङ्का होरही है, क्योंकि नारियोंका स्वभाव और हृदय शूरता पाण्डित्य आदि पर नहीं चलता। वे पहिले देखनेमें सुन्दर जन पर मोहित होती हैं। अतएव शूर, क्षत्रियोंके लिये बलसे कन्या हरकर विवाह करनेके जिस नियमकी धर्म्मज्ञगण प्रशंसा करते हैं, हे अर्जुन! तुम उस विधानके अनुसार बलपूर्व्वक इस शुभलक्षणा मेरी बहिनको हरो, स्वयम्वरका प्रयोजन नहीं है, क्योंकि कौन जानता है, कि सुभद्राका कैसा अभिप्राय है? अनन्तर अर्जुन और कृष्णने क्या करना उचित है, उसको निश्चय कर इन्द्रप्रस्थमें धर्म्मराजके यहां शीघ्र जानेवाला दूत भेज दिया। महाबाहु पाण्डवनन्दन युधिष्ठिरने वह सब वृत्तान्त सुनतेही उसको आज्ञा भेजवायी।

सुभद्राहरण पर्व्वमें दोसौ बीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले कि हे जनमेजय! अनन्तर युधिष्ठिरकी आज्ञा पाने पर पुरुषश्रेष्ठ धनञ्जय

वासुदेवकी उपदेशसे क्या करना है, ठीक कर उनको आज्ञा लेकर यात्रा को। वह खड्ग,कवच, गोधा, उङ्गली रक्षक आदि पहिने बद्ध सन्नाह हो शैब्य और सुग्रीव नामक घोड़े जोते, जाल-मालासे सजे, विधिपूर्व्वक कल्पित, सर्व्वशास्त्रोंके अनुसार बने, प्रज्वलित अग्नि समान चमकीले सुनीले, बादल सदृश गम्भीर शब्द करनेवाले और विपक्षीके हर्षनाशी रथ पर चढ़ आखेटके मिससे चलने लगे। सुभद्रा शैलराज रैवतकको पूजकर परिक्रमा दे, देवोंको पूजा कर और ब्राह्मणोंसे स्वस्ति कहलवा कर द्वारकाकी ओर जारही थी, कि ऐसे समय कामवाणसे घायल कुन्तीनन्दन धनञ्जयने उसको ओर दौड़के एकायक उस सर्व्वाङ्ग-सुन्दरी सुभद्राको रथ पर चढ़ाया। पुरुषव्याघ्र अर्ज्जुन इस प्रकारसे सुन्दरी सुभद्राको लेके सुवर्णरथ पर अपने नगरको ओर जाने लगे। सैनिकलोग सुभद्राको अर्ज्जुनसे पकड़े जाते देखकर चिल्लाते हुए द्वारका नगरकी ओर दौड़े। उन सबोंने सर्व्व प्रकारसे देवसभा समान उस राजसभामें उपस्थित हो सभापालसे अर्ज्जुनका विक्रम-वृत्तान्त कह सुनाया। सभापाल उनसे सब वृत्तान्त सुनके सुवर्णसे सुहावनी बड़ी आहट मचानवाली युद्धके लिये स्वजनको सूचना देनेवाली भेरी बजाने लगा। भोज वृष्णि और अन्धक लोग उस भेरीके शब्दसे उदास हो, अन्नपान तज करके चारो ओरसे बटुरने लगे। तेज अग्नि जिसप्रकार अपना आधार इन्धन पकड़ लेता है, ऐसेही महारथी पुरुषव्याघ्र वृष्णि और अन्धक लोग परम सुन्दर चादरोंसे आच्छादित मणियोंसे खचित अग्निकी उजाले समान चमकीले सैकड़ों सुनहले सिंहासनों पर जा बैठे। देवोंके समानमहा सभाके उनके बटुरने पर सभापालने उनसे अर्ज्जुनका क्रिया आदि कह सुनाया। इसप्रकारसे मदमत्त कि गर्व्वित वे लोग उस वृत्तान्तको सुनतेही रिसाकर सिंहासनोंसे उठ खड़े हुए। उनमेंसे किसी किसीने कहा, कि तुरन्त रथोंकी तय्यारी करो, किसी किसीने कहा, कि प्रास लाओ, किसी किसीने कहा मूल्यवान शरासन और बड़े बड़े कवच लाओ, किसी किसीने चिल्लाकर सारथीको पुकारके कहा, कि तुरन्त रथ जोतो, कोई कोई शीघ्रताके लिये सुवर्ण जड़े घोड़े लेकर रथ जोतने लगे। तब रथ कवच ध्वजा आदि लानेके लिये वीरोंका कोलाहल उठने लगा। अनन्तर गलेमें वनमाला डाले कैलासपर्व्वत समान नीलाम्बर पहिरे मदसे उभाले मदोन्मत्त बलदेवजी बोले, कि जनार्द्दनके कुछ न कहतेही तुम यह क्या कर रहे हो? इनका अभिप्राय न जान करकेही तुम क्रोधके मारे गर्ज्जन कर रहे हो। यह महामति कृष्ण पहिले अपना मत प्रकट करें, आगे वह जानके तुम वेगसे वही पूरा करना। अनन्तर सब जन धीमान हलधरकी सुनने योग्य वह बात सुनके उनको साधु साधु करकर चुप हो, फिर सभामें बैठ गये, तब शत्रुमर्द्दन रामने वासुदेवसे कहा कि, जनार्द्दन तुम क्यों कुछ नहीं कहते? क्यों उदासीन समान बैठे ताक रहे हो? अच्युत! हम सबने पृथापुत्रका भले प्रकार सत्कार किया था। वह कुबुद्धि कुलाङ्गार तैसे सत्कारके योग्य नहीं है, जो सुवंशी करके अपना परिचय देता है, वह कभी अन्न-खाकर अन्नके बासनको तोड़ नहीं सकता है। यद्यपि ऐसा वैवाहिक सम्बन्ध बनानेका मन चाहता है, तौभी कोई ऐश्वर्य्य चाहनेवाला पहिलेका उपकार स्मरण कर ऐसे साहसके काममें हाथ नहीं डालता है! उस पाण्डवने हमारा अनादर कर और तुमको तुच्छ समझके अपनी मृत्यु-स्वरूप सुभद्राको हर लिया है। गोविन्द! उसने मेरे सिर पर लात मारी है; मैं सर्प जिस प्रकार दूसरेके पांवको छू नहीं सकता, तद्रूप मैं भी कभी यह न सह सकूंगा! मैं, हरि

और अन्धक सबोंने बादल और नगाड़ेकी भांति उन गरजते हुए बलदेवकी बातको मान लिया।

दोसौ इक्कीसवें अध्यायमें सुभद्राहरण पर्व्व समाप्त।

वैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर वृष्णि-योंके निज निज वीर्य्यके अनुसार बार बार इस प्रकार कहने पर, वासुदेव धर्म्मार्थयुक्त यह वचन कहने लगे, कि अर्ज्जुनने जो कार्य्य किया है, उससे हमारे कुलका अपमान नहीं हुआ, वास्तवमें इसका सन्देह नहीं कि उन्होंने हमारा सम्मान बहुत बढ़ाया है। वह जानते हैं, कि हम धनके लोभी नहीं हैं, इस लिये उन्होंने धन देकर विवाहकी चेष्टा नहीं की है। और स्वयंवरमें शङ्का है, सो उन्होंने उसकाभी प्रयत्न नहीं किया। पशुकी भांति कन्यादान किसी क्षत्रियका प्यारा नहीं है, और कन्या बेचनाभी किसी मनुष्यकी सम्मति-युक्त नहीं। मुझको जान पड़ता है, कि इन सब दोषोंकी भली भांति आलोचना करकेही अर्ज्जुनने एकायक कन्या हरली है। सुभद्रा जैसी यशस्विनी है, पार्थभी वैसेही गुणवन्त हैं, सो यह सम्बन्ध अयोग्य नहीं है; इसकाभी विचार कर उन्होंने कन्या बलसे हरली है। फिरभी भरतवंशी यशोवन्त शान्तनुनन्दन कुन्ती-भोजके दौहित्र उस अर्ज्जुनको ऐसा कौन है, जो मित्र बनाना न चाहता होगा? विशेष इस त्रिलोकी भरमें भगनेत्र हर विरूपाक्ष महा-देवके बिना कोईभी ऐसा नहीं दीखता, जो बलपूर्व्वक अर्ज्जुनको परास्त कर सके। हे ... ! उनका वह रथ, मेरे वे सब घोड़े, वह स्वयं ... योद्धा और ... भी, ... शस्त्र फेंकना। (यह सब बने रहते) इन्द्रलोक आदि त्रिभुवन भर लोक हैं, उनमें ऐसा कौन होगा जो ... सामना कर सके? ... मेरा विचार

यह है; कि तुम तुरन्त दौड़कर ...
धनञ्जयको ढाड़स देके लौटा लाओ। यदि ...
बलपूर्व्वक तुम सबोंको परास्त कर ...
राजधानीमें जाय, तो आजही तुम्हारा ...
लोप हो जायगा, ढाड़स देनेसे तुम्हारी ...
जय नहीं होगी। हे जनाधिप! यादवों...
वासुदेवकी वह बात सुन कर उसके अनु...
कार्य्य किया। प्रभावी अर्ज्जुनने वृष्णिय...
आदर पाय द्वारकापुरीमें लौटकर सुभद्रा...
विवाह कर नाना प्रकार मनमाने विहार क...
वर्ष भर काल गंवाया। अनन्तर पुष्करतीर्थ...
जाय शेष काल काटने लगे। बारह ...
हो जाने पर खाण्डवप्रस्थमें लौट राजा युधि...
रके निकट जा पहुंचे। आगे वह विनयपूर्व...
राजा युधिष्ठिर और ब्राह्मणोंकी पूजा...
द्रौपदीके निकट गये। द्रौपदी प्रेमकी रिस...
साथ उनसे बोली, कि हे कुन्तीपुत्र! फिर यह...
क्यों? जहां सात्वतपुत्री है, वहीं जाओ; रस्सी...
बंधी वस्तुके ढेर पर एक और भी कठिन बन्ध...
डालनेसे पहिलेका बन्धन अवश्यही ढील...
हो जाता है, अब तुम नये प्रेमके जालमें ...
फंसे हो, सो पहिलेका बंधा मेरे प्रेमजाल...
बन्धन ढीला होगया है। धनञ्जय द्रौपदी...
इस प्रकार नाना रीतिसे बिलपते देखकर ...
बार बार समझाने लगे और बार बार ...
मांगी। अनन्तर उन्होंने लाल पाटम्बर पहि...
हुई सुभद्राके यहां जाय वेगसे उसका गोपी...
वेष बनाके उसको अन्तःपुरमें भेजवाया।
वीरपत्नी यशस्विनी ताम्र रङ्गकी बड़ी बड़ी...
आंखवाली उस बालाने उस वेषमें और...
सुहाकर परम सुन्दर भवनमें पहुंचके ...
कल्याणी कुन्तीके निकट जाय उनके पांव...
प्रणाम किया। कुन्तीने अति प्रसन्न हो सर्व्वा...
सुन्दरी नयी बधू सुभद्राका सिर सूंघ ...
अनेक अशीस दी। अनन्तर पूर्ण चन्द्रमा...
समान मुखवाली सुभद्राने वेगसे द्रौपदी...

निकट जाय उसको प्रणाम किया और कहा, कि मैं आपकी दासी आयी हूं। कृष्णा उसो क्षण उठकर माधवकी बहिनको गले लगा प्रीतिपूर्व्वक बोली, कि तुम्हारे पतिका कोई सपत्न न रहे। सुभद्राने तब प्रमुदित चित्तसे "तथास्तु" यह बात कही।

हे जनमेजय! अनन्तर महारथी पाण्डवगण और कुन्ती परम प्रीति पूर्व्वक रहने लगी। शत्रुओंके दुःखदायी विशुद्धात्मा पुण्डरीकाक्ष श्रीकृष्णचन्द्रने जब, सुना कि पाण्डवश्रेष्ठ अर्ज्जुन इन्द्रप्रस्थमें जाकर राजधानी को पहुंचे हैं, तब वह युद्धविद्यामें पण्डित महारथी वीर सेनाओंकी अच्छी रखवारीमें भ्राता और पुत्रोंसे घेरे जाय और श्रेष्ठ वृष्णि तथा अन्धकोंसे मिलकर बलभद्रके साथ खाण्डवप्रस्थमें आ पहुंचे। और श्रीमान अति कीर्त्तिवन्त दाता अक्रूर, वृष्णि सेनापति अतिते जस्वी शत्रुनाशी अनाधृष्टि, बड़े यशोवन्त उद्धव, साक्षात वृहस्पतिके चेले अति बुद्धिमान महानुभव सत्यक, सात्यकि, सालत, कृतवर्म्मा, प्रद्युम्न, शाम्ब, निशठ, शङ्कु, चारुदेष्ण, विक्रमी भिल्ली, विपृथु, सारण और महाभुज पण्डित गद, यह सब और बहुतेरे दूसरे वृष्णि, भोज और अन्धक अनेक यौतुक लेकर उस स्थानमें आये। राजा युधिष्ठिरने यह सुनकर कि माधवका शुभागमन हुआ, उनको आदर पूर्व्वक लिवालानेके लिये नकुल और सहदेवको भेजा। वड़े भारी वृष्णिदलने उन दो पुरुषोंसे आदर पूर्व्वक लिवाये जाय खाण्डवप्रस्थ पुरीमें प्रवेश किया। तब हृष्ट पुष्ट जनोंसे भरे वणिकोंसे सुहावने उस नगरकी ठौर ठौरमें फूलोंकी माला लटकती, जलती हुई सुगन्धी अगुरुकी गन्ध उड़ती, तथा पवित्र गन्धवाले चन्दनका रस छिरका था और वहांके सब राजपथ साफ आर्द्र और ध्वजा पताकाओंसे सुहाते हैं। वृष्णि, अन्धक और भोजोंसे घेरे पुरुषोत्तम महाभुज केशव रामके साथ उस नगरमें आकर सहस्रों ब्राह्मण और पुरवासियोंसे आदर पूर्व्वक ग्रहण किये गये, अनन्तर इन्द्रपुरके समान राजभवनमें प्रवेश किया। राजा युधिष्ठिरने बिधि पूर्व्वक बलदेवजीको स्वागत कर श्रीकृष्णको सिर सूघके हाथोंसे गले लगाया। कृष्णने प्रसन्न मनसे विनयपूर्व्वक उनकी पूजा कर पुरुषश्रेष्ठ भीमको विधिपूर्व्वक नमस्कार किया। युधिष्ठिरने उन सब वृष्णि और अन्धकोंको यथा नियम आदरसे ग्रहण किया। उन्होंने किसी किसीको गुरुकी भांति प्रणाम किया, किसी किसीसे समअवस्थावालेके सदृश व्यवहार किया और किसी कोसीको प्रेमालापसे सम्मानित किया; और किसीने उनको प्रणाम किया। अति यशोवन्त श्रीमान कमलनेत्र कृष्णने विवाहकी रीतिके अनुसार वर और वरकी ओरके लोगोको अच्छे धन दिये और सुभद्राको ज्ञातियोंके देने योग्य यौतुकके स्वरूपमें धन दिया। उन्होंने पाण्डवोंको सुशिक्षित सारथि समेत चार घोड़ेके किङ्किणीजाल मालासे सुहावने सहस्र सुनैले रथ, मथुरा खण्डकी तेजस्वी बहुत दूध देने वाली दश सहस्र गौ, चन्द्रमा समान रङ्गवाली विशुद्ध सुवर्णसे सजी सहस्र घोड़ी, काले केशरवाली सुफेद पवन समान तेजस्वनी अच्छी सिखी सिखायी सहस्र घोड़ी, स्नानपानालेपप्रयोग दक्ष सेवामें तेज युवती गौर रङ्गकी सुवेश पहिनी, रोगोंसे छूटी, सुन्दरी भली प्रकार दमोंकनी गलेमें सोनेको सौ मुहर पहिनी हुई सहस्र दासी वाह्लिक देशीय सैकड़ों उत्तम घोड़े, भांति भांतिके मूल्यवान वस्त्र और कम्बल आदि अनेक सामग्री प्रसन्न मनसे दे दी, और सुभद्राको मनुष्यके लेजाने योग्य दश भार विशुद्ध और बिन मिलावटी दो प्रकार आगके रंगका सुवर्ण यौतुकसे दे दिया। हलधर रामने प्रसन्न हो विवाहके नियममें

सम्बन्धको बड़ाई बढानेके लिये नाना मद प्राट करनेवाले पहाड़की समान बड़े साहस प्यारे, युद्धसे सुह न मोड़ने वाले सुवर्णहारसे सजे, सोनकाती हुई घण्टालिया लटकाये बैठनेके होदे लगाये अनेक पकारके सुन्दर सुन्दर सहस्र हस्ती महावत समेत धनञ्जय को दिये। वस्त्र कम्बलादि रूपी फेनभरे बड़े बड़े गज रूपी बड़े ग्राहोंसे पूर्ण और भण्डेरूपी शैवालोंसे पूरे उस अनन्त धन-रत्न रूपी जलकी लहरोंसे प्रशस्त पाण्डवरूपी सागरके भर जानेपर वह शत्रुओंको शोकमें डुवाने लगा। धर्म्मराज युधिष्ठिरने वह सब लेकर वृष्णि और अन्धकोंके महारथिओंका भली प्रकार सत्कार किया। अनन्तर पुण्यवन्त जन जिस प्रकार देवलोकमें विहार करते हैं, तैसेही महात्मा कुरु, वृष्णि और अन्धक वंशी लोग वहां एकत्र होकर आनन्द लूटने लगे। वे अपनी अपनी प्रीतिके अनुसार बहां ठौर ठौरमें बड़े बड़े यानों पर घूम और ताल बाजे बजाके नाचन गानेका बड़ा कोलाहल मचाते हुए यथा योग्य विहार करने लगे। अति वीर्य्यवन्त महारथी अन्धक और वृष्णि-लोग उस नगरमें बहुत दिनोंतक आनन्द उड़ा अन्तमें कौरवोंसे पूजे जाय उनके दिये अमल रत्नोंको ले रामको आगे करके द्वारका पुरीमें गये। हे भारत! बड़े यशस्वन्त महानु-भव वासुदेव अर्ज्जुनके साथ उस सुन्दर इन्द्रप्रस्थ नगरहीमें रहे और उनके साथ यमुना तटपर मृग भूकर विद्ध करते हुए आखेटका आनन्द लेने लगे।

अनन्तर शचीने जिस प्रकार प्रख्यात जयन्त-को प्रसव किया था, तैसेही कृष्णकी प्यारी बहिन कल्याणी सुभद्राने दीर्घबाहु चौड़ी छातीवाले वृष समान बलवान नरोंमें श्रेष्ठ शत्रुमर्द्दन वीर अभिमन्युको प्रसव किया। वह शत्रुनाशी दमनशील अर्ज्जुन-कुमार अभी अर्थात् निर्भयचित्त मन्युयुक्त हुए थे, सो सब लोग उनको अभिमन्यु कहते थे। यज्ञ... में मथनद्वारा जिस प्रकार शमीगर्भसे अग्नि उपजता है, वैसेही सात्वतीके गर्भसे धनञ्जय उस महारथी अभिमन्युने जन्म लिया था। हे भारत। उस कुमारके जन्म होतेही वे तेजस्वी कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरने ब्राह्मणोंको दश सहस्र गौ और दश सहस्र निष्क दान दिया। चन्द्रमा जिस प्रकार सब प्रजाओंका प्यारा है वैसेही अभिमन्यु बालेपनसे पिता,चचे और वासु-देवके प्यारे बने। कृष्णने उनके सब शुभ जात कर्म किये थे। वह अरिविदारण बालक शुभ तिथिके चन्द्रमाकी समान दिन पर दिन बढने लगा। वेदका जानकार शत्रुनाशी अभिमन्युने अर्ज्जुनसे आदान, सन्धान, मोक्षण विनिवर्त्तन, स्थान, मुष्टि प्रयोग, प्रतिवार, मण्डल और भेद इन दशाङ्ग-युक्त तथा मन्त्रमुक्त, पाणिमुक्त, मुक्त-मुक्त और अमुक्त यह चार पाद-युक्त सम्पूर्ण दिव्य और मानुषी वेदको शिक्षा की। महाबली अर्ज्जुनने उनको अस्त्र विज्ञान और सौष्ठव और उत्सर्पण प्रसर्पण आदि सब क्रियाओंके विषयमें अच्छी शिक्षा दी, उन्होंने शास्त्रमें और प्रयोगके विषयमें उसको अपने सदृश बनाया और उसे गुणयुक्त परपराभव सम्पन्न लक्षणोंसे भरे, कठोर, वैलके समान कन्धेवाले बड़े मुखवाले सर्प समान, सिंह सदृश दर्पयुक्त, बड़े चापधारी उन्मत्त गजकी भांति विक्रमी, बादल और नगाड़ेकी समान गरजने वाले पूर्णचन्द्रानन और शूरता वीर्य्य तथा डोलडोलमें कृष्णकी भांति देखकर सन्तोष माना। देवराज जिसप्रकार अर्ज्जुनको देखते थे अर्जुन उस पुत्रको वैसेही देखते रहे।

शुभलक्षणा पाञ्चालीने पांच पतियोंसे पांच पर्व्वत समान बड़े वीर पांच पुत्र प्राप्त किये। अदितिने जिसप्रकार देवोंको प्रसव किया था, वैसेही पाञ्चालीने युधिष्ठिरसे

प्रतिविंध्य, वृकोदरसे सुतसोम, अर्जुनसे श्रुतकर्म्मा, नकुलसे शतानीक, सहदेवसे श्रुतसेन ये पांच महारथी वीरपुत्र प्रसव किये। ब्राह्मणोंने शास्त्रोंके अनुसार यह जानकर, कि युधिष्ठिरका पुत्र प्रतिविन्ध्य पर्व्वतकी भांति शत्रुको मारने योग्य होगा, उसका नाम प्रतिविन्ध्य रखा। सहस्र सोमयज्ञ करनेके पीछे भीमसेनसे सोमके उजाले समान तेजस्वी बड़े चापधारी सुतके उपजनेसे उसका नाम सुतसोम हुआ। किरीटीके अनेक श्रुतकर्म्म कर लौटने पर उनका वह पुत्र उपजा था, सो उसका नाम श्रुतकर्म्मा हुआ। कुरुवंशकी कीर्त्ति बढ़ानेवाले शतानीक नाम एक राजर्षि थे, नकुलने उस राजाके नामके अनुसार अपने पुत्रका नाम शतानीक रखा था और सहदेवसे द्रौपदीके जिस पुत्रने जन्म लिया था, वह कृत्तिका नक्षत्रमें हुआ था, सेनापति कार्त्तिकेय कृत्तिकाकी सन्तान थे, सो सहदेवके पुत्रका नाम श्रुतसेन हुआ। हे महाराज! द्रौपदीके कुमारोंमें हरेकने एक दूसरेके वर्ष वर्ष भर पीछे जन्म लिया था, वे सब एक दूसरेके हित चाहनेवाले और यशीवन्त हुए थे। हे भरतवंश श्रेष्ठ। पुरोहित धौम्यने विधिपूर्व्वक उनका जातकर्म्म चूड़ा उपनयन संस्कार कर्म्म एकके बाद दूसरा, उसी रीतिसे सब कराया। अनन्तर सुचरित्र बालकोंने वेद पढ़के अर्ज्जुनसे सब दिव्य और मानुषी अस्त्रोंकी शिक्षा ली। हे राजशार्द्दूल। पाण्डवलोग देवकुमारोंके समान उन सब चौड़ी छातीवाले कुमारोंका लाभ कर प्रसन्न हुए।

दो सौ बाइसवें अध्यायमें यौतुक-आहरण पर्व्व समाप्त।

वैशम्पायनजी बोले, कि हे भारतश्रेष्ठ! पाण्डवगण राजा धृतराष्ट्र और शान्तनुनन्दन भीष्मकी आज्ञासे इन्द्रप्रस्थमें वस कर दूसरे राजाओंको वशमें लाने लगे। आत्मा जिस प्रकार पुण्यलक्षणयुक्त शरीरको अवलम्ब कर सुखसे विराजती है, वैसे ही सब प्रजा धर्म्मराज युधिष्ठिरको आश्रय कर सुखसे रहने लगी। नीतिमान युधिष्ठिर धर्म्म, अर्थ, काम इन तीनों वर्गों की, अपने बन्धुओंकी भांति इस प्रकार सेवा करने लगे, कि उनमें एक दूसरेका विगाड़ न उभड़ने पावे। धर्म्म, अर्थ, काम, मानो यह देह धरके धरती पर उतर आये थे, राजा युधिष्ठिर मानो उनमें एक चौथे बन कर शोभा पाने लगे। प्रजाओंने उन राजाको अच्छे वेद-पाठी बड़े यज्ञकारी और सम्पूर्ण पुण्यवन्त प्राप्त किया था। उनके साम्राज्यके दिनोंमें राजाओंकी लक्ष्मी न टलती, चित्त परब्रह्मकी ओर झुका और धर्म्म बहुतही बाढ़ पर था। जिस प्रकार प्रयुज्यमान चतुर्व्वेदसे फैला हुआ बड़ा यज्ञ सुशोभित होता है, वैसेही धर्म्मराज युधिष्ठिर चार भाइयोंसे और भी अधिक सुहान लगे। जिस प्रकार देवगण प्रजापतिजीको घेरकर उपासना किया करते है, वैसेही धौम्य आदि बृहस्पति सदृश प्रधान प्रधान ब्राह्मणगण उनको चारों ओर घेरकर उपासना करते थे। पूर्णचन्द्रमा समान निर्म्मल धर्म्मराज युधिष्ठिरकी ओर प्रजाओंके नयन और मन दोनों एकहीरूप झुक पड़े थे। यही नहीं, कि प्रजा उनको राजाही जान कर प्रेमी बनी थी, वरण वह ऐसेही कार्य्योंमें दत्त-चित्त होते थे, कि जिनसे प्रजाको सन्तोष मिले। वह बुद्धिमान बड़े पाण्डव मीठी बोली बोलते थे, उनका वचन कभी झूठा, युक्तिके विरुद्ध असह्य वा अप्रिय नहीं होता था। हे भरतश्रेष्ठ! वह बड़े तेजस्वी पुरुष अपने और दूसरे सब जनोंके हित साधनमें सदा तुष्ट भावसे रहकर परम सुखसे काल बिताने लगे। उनके भाईलोग भी अपने अपने तेज

बलसे भूपालोंको तर्पा कर बिना कण्टक प्रमुदित चित्तसे बसने लगे।

कुछ दिन बीते, अर्जुन श्रीकृष्णसे बोले, कि कृष्ण! अब ग्रीष्मकाल आया, यदि तुम चाहो तो चलो हम यमुनाजीके किनारे जाय, हे जनार्द्दन! हम मित्रोंसे जूट बांधके बहां विहार कर सन्ध्याको फिर लौटेंगे। श्रीकृष्णजी महाराज बोले, कि कुन्तीपुत्र! मेरी भी इच्छा हो रही है, कि हम मित्रोंके संग सुख-चैनसे यमुना किनारे विहार करें।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भारत! अनन्तर अर्जुन और कृष्ण आपसमें ऐसी बातें कर धर्म्मराजकी आज्ञा ले मित्रोंके साथ निकले। वे अनेक पेड़ोंसे घिरी, इन्द्रपुरीकी भांति नाना घरोंसे सजी, स्वादिष्ट भक्ष्य, भोज्य, और पानकी सामग्रीसे भरी, महामूल्य भांति-भांतिकी सुगन्धी मालाओंसे सुहावनी, अच्छी-विहारकी ठौरसे जा पहुंचे और नाना प्रकारके रत्नोंसे सुशोभित पुरीमें बिना बिलम्ब जा घुसे। साथी लोग सुखसे खेलने कूदने लगे। स्थूल-कुचवाली सुन्दर नितम्बिनी, मतवाली चाल चलती युवती श्रीकृष्ण और अर्जुनकी आज्ञासे खेलने प्रवृत्त हुईं, कोई वनमें, कोई जलमें कोई घरमें प्रीतिके साथ विहार करने लगी। महाराज! तब द्रौपदी और सुभद्रा मदसे मतवाली बन उन सब स्त्रियोंको वस्त्र और गहने देने लगी। कोई कोई नारी आनन्दित-चित्तसे नाचने लगी। कोई कोई गाने लगीं, कोई कोई रमणी हंसी ठट्टेमें मग्न हुईं, कोई कोई अच्छी मदिरा पीने लगी, कोई कोई एक दूसरेको मारने, पीटने तथा रोने लगी; और कोई कोई रहस्य युक्ति करने लगीं, वास्तवमें जिनकी जैसी इच्छा थी, वह उसीको करनेमें प्रवृत्त हुई। तब वह वन वंशी वीणा मृदङ्ग आदिके मनभावन बाजेसे भर कर बहुत सुहावना बन गया। हे महाराज! इस प्रकारसे बड़ा भारी उत्सव उपस्थित हो जाने पर महात्मा शत्रुपुरकी जयकारी धनञ्जय और श्रीकृष्ण निकटकी एक सुन्दर ठौरमें जाय बड़े दामी आसनों पर बैठे। वे उस स्थानमें अतीत विक्रमकी सम्बन्धमें और दूसरी भांति भांतिकी कथा कहते सुनते हुए खेलने लगे। जिस प्रकार देवलोकमें दोनों अश्विनी कुमार एकत्र विराजते हैं; तैसेही वासुदेव और धनञ्जन प्रमुदित मनसे उस स्थानमें बैठे थे, कि ऐसे समयमें बड़े सालके वृक्ष समान लम्बे, तपे सुवर्ण सदृश उजाला-वाले, हरी और पिङ्गल रङ्गकी चमकीली दाढ़ीसे शोभित, लम्बाई और चौड़ाईमें उपयुक्त प्रमाण सम्पन्न बालसूर्य्यकी भांति, पद्मपत्र-मुखयुक्त, तेजसे प्रदीप्त पिङ्गल वरण, जटाधारी, चीर पहिने हुए एक ब्राह्मण उनके पास आया। वे लोकोंमें न मिलने योग्य, तेजसे प्रकाशमान द्विजसत्तमको निकट देखतेही आसन छोड़के खड़े हुए।

खाण्डवदाहपर्व्वमें दोसौ तेईस
अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर ब्राह्मणने श्रीकृष्णचन्द्रजी महाराज और अर्जुनसे कहा, कि तुम दोनों सब लोकोंमें बड़े वीर हो, इस खाण्डवप्रस्थके निकट विराजते हो, मैं बहुत खानेवाला ब्राह्मण हूं सदा अपरिमित भोजन खा जाता हूं। अब तुमसे भिक्षा करता हूं, कि तुम भोजन देकर मुझको प्रसन्न करो। वीर अर्जुन और कृष्ण यह बात सुनके उनसे बोले, कि कहिये, कैसा अन्न भोजन करनेसे आपकी तृप्ति होगी, हम उसका यत्न करेंगे। वे कैसा अन्न खानेवाले हैं, इस विषयमें आपसमें बात चीत कर रहे थे कि ऐसे अवसरमें उस ब्राह्मणरूपी भगवानने उत्तर दिया, कि मैं वैसा अन्न खाया नहीं

चाहता हूं। मैं अग्नि हूं, जो अन्न मेरे योग्य हो वही मुझको दो। देवराज इन्द्र सदा खाण्डव नामक बड़े वनकी रखवारी करते हैं, सो मैं उसको जला नहीं सकता हूं। इन्द्रका सखा तक्षक नाम सर्प साथियों समेत सदा इस वनमें बसता है, इसी लिये वह वज्रधारी सर्व्व प्रयत्नोंसे इसकी रक्षा करते हैं, साथ साथ अनेक जीव इस वनमें रहते हैं, उनको जलाने चाहने परसो मैं देवराजके तेजसे मनोरथको सफल कर नहीं सकता हूं। वह मुझको जलते देखनेसे जलधरकी जलधारासे बुझा देते हैं, सो मनमें खाण्डवको जलानेकी बड़ी चाह रखने पर जला नहीं सकता हूं। तुम दोनों अस्त्र-विद्यामें पण्डित हो, तुम मेरी सहायता करो, तो मैं इस खाण्डववनको जला सकता हूं, तभी मेरा अच्छा भोजन होगा, तुमसे मैं यही अन्न मांगता हूं। खाण्डवदाहके कालमें जो सब जीव इधर उधर भागने पर होंगे, उनको और जलधरकी जलधाराओंको तुम अस्त्रविद्याके बलसे सब प्रकार रोकना।

श्रीजनमेजयजी बोले कि हे ब्रह्मन्! भगवान अग्निने क्यों देवराजसे रक्षित अनेक जीवोंसे पूरित खाण्डव वनको जलाना चाहा था? मुझको जान पड़ता है, कि उनके रिसाकर खाण्डवके जलानेको चाहनेका कोई विशेष कारण होगा। हे ब्रह्मन्! मैं इसका सत्य तत्त्व जाना चाहता हूं, सो यह कहें, कि क्यों वह खाण्डवदाह हुआ था।

वैशम्पायनजी बोले, कि हे नरनाथ! खाण्डवदाहके विषयमें ऋषिकी स्वीकृत पौराणिक कथा आपसे कहता हूं, सुनिये। महाराज! पुराणोंमें सुना है कि पूर्व्वकालमें बल विक्रमयुत महेन्द्र समान श्वेतकि नामक प्रख्यात एक भूप थे। उनके सदृश धीमान, दाता और बलशाली कोई दूसरा नहीं था। उन्होंने बहुत दक्षिणा दे दे कर ज्योतिष्टोम आदि क्रतु और देवयज्ञ आदि पांच महायज्ञ किये थे। हे महाराज! उनकी बुद्धि सदा केवल क्रियारम्भ, यज्ञ और नाना दान बिना किसी अन्य कार्य्यमें कभी नहीं रहती थी। बुद्धिमान पृथ्वीपतिके ऋत्विजोंके साथ बहुत दिनों तक यज्ञ करने पर ऋत्विजोंने धुएंसे घबराकर और उदास होके उन नरेशको छोड़ दिया। भूपालने बार बार समझाय बुझाय उनको बुलाया, पर उनकी आंखें धुंधली हो जानेसे उन्होंने फिर उस यज्ञमें आना नहीं चाहा। अनन्तर भूपालने उन सब पुरोहितोंकी आज्ञासे दूसरे पुरोहित लाकर उस आरम्भ किये हुए यज्ञको पूरा किया। कुछकाल बीते महीपालने एक समय सौ वर्षोंमें पूरा होनेवाला यज्ञ करना चाहा, पर उनके पुरोहितोंने उसको पूरा करना स्वीकार नहीं किया। बड़े यशोवन्त भूप आलस्य तज मित्रोंके साथ अतियत्नसे शिरनाय गिड़गिड़ाय समझाय बुझाय दान दे पुरोहितोंको हाथ जोड़ने लगे। पर अति तेजस्वी पुरोहितोंने किसी प्रकार उनका मनोरथ सिद्ध नहीं किया। तब राजर्षि रिसा कर उन आश्रमोंमें टिके विप्रोंसे कहने लगे, कि ब्राह्मणो! यदि मैं पतित हूं और सदा आपकी सेवामें दत्त चित्त न हूं, तो मैं ब्राह्मणोंसे निन्दित हूंगा और आप उसी क्षण मुझको त्याग दे सकते हैं; पर जब मैं न तो पतित और आप पर अप्रसन्न चित्त हूं, तब अनुचित रीतिसे मुझको त्यागना वा जिस क्रतुयज्ञको करनेमें मैं उद्यत हूं उनमें बाधा देना आपके योग्य नहीं है। मैं आपकी शरण लेता हूं, सो आप प्रसन्न होवें। हे द्विजवरगण! यदि विद्वेषवश मुझको त्याग देवें, तो मुझको याज्य कार्य्यके लिये अन्य पुरोहितोंके निकट जाना पड़ेगा और अपना कार्य्य पूरा करनेके लिये समझाय बुझाय दान दे उनको प्रसन्नकर अपना काम

उनको सच सच जताके अभिलाषा सिद्ध कर लूगा। राजा यह वचन कह कर चुप हो रहे। अनन्तर पुरोहित लोग यह तो जानतेही थे, कि स्वयं उन नृपवरका याजन कार्य्य नहीं कर सकेंगे, सो क्रोध कर बोले, कि हे महाराज! सदा आपके दैवीकर्म्म होते हैं, हम सदा उन कार्य्यों को कर कर थक गये हैं, तुमभी बुद्धिकी गड़बड़ीसे शीघ्रता चाहते हो, सो इन यज्ञ सादे पुरोहितोंको त्याग कर तुमको अन्य पुरोहितोंका आसरा ढूढ़ना चाहिये, तुम रुद्रके यहां जाओ, वही तुम्हारे याजन कार्य्य करनेके समर्थ होंगे। भूप श्वेतकि उनका यह लाञ्छन वचन सुनकर क्रोधके वशमें होगये, अनन्तर कैलाशपर्व्वत पर जाके कठोर तपस्या करने लगे। हे महाराज! उन्होंने वहां नियमयुक्त, व्रतशील और और उपासनामें नियुक्त होके बहुत दिनोंतक महादेवजीकी आराधना की और, कुछकाल कभी बारहें मुहूर्त्त, कभी सोलहवे मुहूर्त्त पर फलमात्र खाते थे। उन्होंने छःमास भले प्रकार समाहित, जड़वाक् और निमेष वर्ज्जित होके अचल जड़वत् काटे। हे भारत! भगवान शङ्कर उस प्रकार कठोर तपस्या करते हुए उन नृपशार्दूलकी तपस्यासे बड़े प्रसन्न हो उनको दर्शन देकर बोले, कि हे नरवर! मैं तुम्हारी तपस्या देखकर बड़ा प्रसन्न हूं, तुम्हारा मङ्गल होगा, तुम मनमाना वर मांगो। राजर्षि श्वेतकि अति तेजस्वी महात्मा महादेवजीको यह बात सुन गिरनाथ बोले, कि हे सुरेश्वर। हे देवनाथ! सर्व्व लोकोंके प्रणाम योग्य भगवान। आप यदि मुझपर प्रसन्न हुए हो, तो आप स्वयं मेरा याजन कार्य्य करें। भगवान रुद्र राजाका यह वचन सुन प्रसन्न हो, लाजभरे मुखसे बोले, कि महाराज! इस याजन कार्य्य करनेका हम लोगोंको अधिकार नहीं है, पर तुमने याजन-रूपी वर मांगनेके लिये कठोर तपस्या की है, सो हे शत्रुनाशी नृप! मैं इस नियमसे तुम्हारा याजन कार्य्य कर सकता हूं, कि यदि तुम बारह वर्ष ब्रह्मचारी और भले प्रकार समाहित सदा विना रोक टोक आज्यकी धारसे अग्निको तृप्त सको, तो जो प्रार्थना करते हो वह मुझसे प्राप्त करोगे। पृथ्वीनाथ श्वेतकि शूलधर रुद्रकी ऐसी आज्ञा सुनकर उनका कहा सब काम करने लगे। जब बारह वर्ष बीते, तब वह फिर लोकभावन भगवान भूतनाथके निकट जा पहुंचे। शङ्कर उनको देख करकेही बड़े प्रसन्न हो बोले, कि नरनाथ! मैं तुम्हारे कार्य्यसे बहुत सन्तुष्ट हुआ हूं, पर हे शत्रुदमन! याजन कार्य्य करना ब्राह्मणोंहीके लिये विधिवद्ध है, सो मैं स्वयं इस क्षण तुम्हारा याजन करनेमें प्रवृत्त नहीं हूगा। धरती पर दुर्व्वासा नामसे प्रख्यात महाभाग एक द्विजोत्तम है, वह मेराही अंश है। वह तेजस्वी महर्षि मेरे नियोगसे तुम्हारा याज्य कार्य्य करेंगे। तुम यज्ञकी सामग्री बटोरो। राजा श्वेतकिने रुद्रकी आज्ञासे राजधानीमें लौटकर यज्ञकी सामग्री फिर इकट्ठी की और पुनः रुद्रके यहां पहुंच कर बोले, कि हे प्रभो महादेव! मैंने सब वस्तु तथा उपकरण संग्रह किये हैं। मेरी प्रार्थना यह है, कि आपकी कृपासे कल मेरी दीक्षा होवे। भगवान् रुद्र उन महात्मा महीपालकी यह बात सुनके दुर्व्वासाको बुलाकर बोले, कि विप्रवर! इन महीपालका नाम श्वेतकि है, तुम मेरे नियोगसे इनका याज्य कार्य्य करो। ऋषिने स्वीकार किया। अनन्तर महात्मा महीपतिकी अभिलाषानुसार जैसे कहा गया था, वैसेही आरदा(?) यज्ञ प्रारम्भ हुआ। हे महाराज! अनन्तर महायज्ञ हो जाने पर जो सब बड़े तेजस्वी याजक और सदस्य लोग उसमें दीक्षित हुए थे, वे दुर्व्वासाकी आज्ञासे अपने अपने घरको चले गये।

अनन्तर महाभाग दुर्व्वासाभी अपने आश्रमको पधारे।

महाराज। उस भारी यज्ञमें अपरिमित हव्य पीकर भगवान हुताशनको विकार हो गया। वह दिन पर दिन तेजसे हाथ धोने लगे। उनके अङ्गमें ग्लानि जान पड़ने लगी। वह अपनेको कम तेजस्वी होते देखकर सर्व्व-लोकोंसे पूजे जाते हुए पवित्र ब्रह्मलोकमें गये। आगे वहां बैठे हुए श्रीब्रह्माजीसे बोले, कि हे जगपते। अब मैं तेजरहित और दुर्व्वल हुआ हूं, आपकी कृपासे अपनी पूर्व्व प्रकृतिको पाना चाहता हूं। सर्व्वलोकोंके धाता भगवान अग्निका यह वचन सुनकर हंसके बोले, कि हे महाभाग। तुमने बारह वर्ष बिना रोक टोक वसुधारासे आहुति दिये हुए हव्यको पान किया है, सो तुमको ऐसी ग्लानि हुई है। हव्य-वाहन। तुम कमतेज हुए हो, इससे एकायक दुःखी मत होना, तुम स्वास्थ्यको प्राप्त करोगे। हे विभावसो। पूर्व्वकालमें तुमने देवोंके नियोगसे देवोंके शत्रुओंकी वासभूमि जिस कठोर खाण्डव वनको भस्म किया था, अब उस स्थानमें अनेक प्रकारके प्राणी वसते हैं, तुम उनकी चर्व्वीसे तृप्त हो और अपनी प्रकृतिको प्राप्त कर सकोगे; सो उस खाण्ड-वको जलानेके लिये शीघ्र जाओ। उसको जलानेसे तुम्हारी यह ग्लानि दूर होजायगी।

अग्नि पितामहके मुखसे यह वचन सुन उसी क्षण बड़े वेगसे दौड़े और घोर खाण्डव वनमें शी। पहुंच क्रोधसे एकायक पवनके सहारे जल उठे। खाण्डव वनवासी सब प्राणी उस वनको जलते देखकर आग बुझानेके लिये निज निज शक्तिके अनुसार प्रयत्न करने लगे। सैकड़ो सहस्रो हस्ती क्रोधकर शीघ्रताके साथ सूड़से तुरन्त जल उठाके सींचने लगे और अनेक सिरवाले सर्प क्रोधसे मुर्छा कर वेगपूर्व्वक बहुत फणोंसे अग्नि पर जल छोड़ने लगे। हे भरतकुल प्रदीप। तैसेही दूसरे प्राणियोंने भी धूल छिरकना शाखा पीटना आदि अनेक उपायोंसे शीघ्र आग बुझायी। हव्यवाहन खाण्डववनमें वारम्वार, यहां तक कि सातवार जल उठे थे, पर इस प्रकार रोके जानेके कारण उनका मनोरथ सुफल नहीं होसका।

खाण्डवदाह पर्व्वमें दोसौ चौवीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर ग्लानि-युक्त हव्यवाहन खाण्डव दाहकी आशा छोड़कर क्रोधित-चित्तसे पितामह श्रीब्रह्माजीके निकट गये और व्योरेवार उनसे सब अहवाल कह सुनाया। उन भगवानने पल भर सोच कर कहा, कि हे अनघ! मैंने इसका एक अच्छा उपाय निश्चय किया है, तिससे आजही तुम देवराजके सामने खाण्डववन जला सकोगे। हे विभावसो! नर-नारयण नामक उन सनातन दो देवताओंने देवकार्य्यके लिये मर्त्यलोकमें अवतार लिया है। लोग उनको अर्ज्जुन और वासुदेव करके जानते हैं। अब वे दोनों खाण्डवके निकट विराजते हैं। तुम खाण्डव-दाहके लिये उनसे सहारा मांगो, तब वन सब देवोंसे रक्षित होने परभी जला सकोगे। वासुदेव और अर्जुन वहां के प्राणियोंको बिना सन्देह रोक सकेंगे। हव्यवाहन यह सुन करवोंही तुरन्त कृष्णार्जुनके पास गये।

हे नृपोत्तम। अग्निने उनके सामने पहुंच कर जो कहा था, वह मैंने पहिलेही आपसे कहा है। हे नृपशार्द्दूल! तिसके पीछे अर्ज्जुन इन्द्रके बिनासम्मतिसे खाण्डववनके जलानेकी इच्छा करनेवाले अग्निसे बोले, कि हे भगवन। मेरे अनेक दिव्य अस्त्र हैं, उनसे मैं वज्रधारी सैकड़ो इन्द्रसे युद्ध कर सकता हूं, पर युद्धकालमें मेरा वेग सर्व्वप्रकारसे सह ले, ऐसा मेरे भुज

वीर्य्यके योग्य चाप नहीं है; विशेष मुझको शीघ्रतासे वाण छोड़ने पड़ेंगे, सो अनेक अक्षय वाणोंका प्रयोजन है। और मेरा जो रथ है, वह प्रयोजनके अनुसार उन वाणोंको ले नहीं सकेगा, सो पीत वरण वायु समान वेगवान दिव्य घोड़े और बादल सदृश गरजनेवाले सूर्य्यकी भांति तेजयुक्त रथका प्रयोजन होगा। और इन माधवके भुजवीर्य्यके योग्य कोई अस्त्र नहीं है, कि जिससे यह रणभूमिमें पिशाच और सर्पोंको गिरावें। अतएव हे भगवन्! ऐसा कोई उपाय कहें, कि जिससे देवराज इस बड़े वनमें वर्षाकरनेसे हम उनको रोक सकें और यह बड़ा कार्य्य भलीभांति पूरा हो। हे पावक! पौरुषसे जिसकी साधना होगी, वह हम करने को प्रस्तुत हैं, पर युद्ध करनेके लिये जिन उपकरणोंकी आवश्यकता हो, वह आप हमको देवें।

खाण्डवदाह पर्व्वमें दोसौ पच्चीस अध्याय समाप्त।

———

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर भगवान धूमकेतु हुताशनने अर्जुनका यह वचन सुन जलके घर जलनाथ आदितिनन्दन लोकपाल वरुणजीको भेंटके लिये उनको स्मरण किया। जलनाथ वरुण उनका स्मरण करना जानके सम्मुख आ पहुंचे। हुताशन चौथे लोकपाल उन सनातन देवदेव जलाधिपका आदरपूर्व्वक स्वागत कर बोले, कि राजा सोमने तुमको जो तूणीर और शरासन तथा कपिध्वज रथ दिया था, वह सब तुरन्त दे दो। पार्थ उस गाण्डीव शरासनसे और वासुदेव चक्रसे बड़ा भारी कार्य्य पूरा करेंगे। सो वह आजही मुझको दो। वरुणजीने देता हूं कहके मान लिया। अनन्तर जो धनुष बड़ा वीर्य्यवन्त, सर्व्वशस्त्र मथनयोग्य, यश और कीर्ति बढ़ानेहारा, शस्त्रोंसे काटे जानेके अयोग्य, सम्पूर्ण अस्त्रोंसे बड़ा, शत्रुसेनाको नष्ट करनेवाला, राज्यबढ़ानेवाला सैकड़ों सहस्रों चापका सामना करने परभी न टूटने फूटनेवाला, रंग विरंगके सुन्दर सुन्दर वरणोंसे रंगा, मनोहर और जिसकी पूजा देवदानव गन्धर्व्व सदा किया करते हैं, वरुणजीने ऐसा अद्भुत धनुष और दो ऐसे तूणीर, कि जिनके वाण रखनेसे खर्च किये नहीं चुकते, दे दिये। जो रथ मन और पवनकी भांति वेगवान पाण्डुरवर्ण बादल सदृश चन्दोकी नाईं उजाला वाले सुवर्णसे सुशोभित, गन्धर्व्वोंके नाना घोड़ोंसे खींचा जाता है, जो दिव्यास्त्र और सब उपकरणोंसे भरा और देव दानवोंसे अजेय, जिनकी घरघराहट बड़ी दूरसे सुनाई देती है, जिसको भुवनके प्रभु प्रजापति विश्वकर्म्माने बड़ी तपस्यासे बनाया था, जिसका रूप सूर्य्यसदृश दृष्टिसे देखनेके अयोग्य, जिस पर चढ़ प्रभु सोमने दानवोंको परास्त किया था, जिसका उजाला बहुत जलता है, जिसकी किरण दूर से अनुभव होती हैं, जो आकाशतलमें नये बादलसमान दीख पड़ता है, जिसके ऊपर इन्द्र धनुषसदृश शोभायमान मनोहर परमसुन्दर सुनैले भण्डेकी लकड़ीके ऊपर सिंहशार्दूल समान पराक्रमी सुन्दर दिव्य बन्दर मानो सबलोको जलानेकी इच्छासे विराज रहा है, और ध्वजापताकामें प्रकटित भांति भांतिके भूतोंके गम्भीर कोलाहलको सुनकर शत्रुसेनाकी चेतना जाती रहती है, वरुणजीने ऐसा कपिवर सहित रथ धनुष युक्त दिया। अर्जुन खड्ग कवच गोधा और अङ्गरक्षक पहिनके स्नान कर चन्दन उस पताकाओंसे सुशोभित अनुपम सुन्दर रथकी पारक्रमा देकर देवोंको प्रणाम कर पुण्यात्मा जनके विमान पर चढ़नेकी भांति उस पर चढ़ और ब्रह्माके बनाये उस गाण्डीव श्रेष्ठ शरासनको आनन्दसे ले लिया। अनन्तर वीर्य्यवन्त अर्जुनने हुताशनके आगे सिर नवा

बल प्रकट कर उस गाण्डीवमें गुण चढ़ाया। बली पाण्डुनन्दनके गुण चढ़ानेके कालमें उसका शब्द जिस जिसके कानोंमें पैठा उस उसका हृदय थरथराने लगा, अर्ज्जुन इस प्रकारसे रथ, धनुष और दो महान अक्षय तूणीर पाकर आनन्दित चित्तसे हुताशनको सहारा देनेको समर्थ हुए, अनन्तर हुताशनने श्रीकृष्णचन्द्रको चक्र और दयित अग्न्यास्त्र दे दिया, इससे वह भी तब अग्निकी सहायता करनेके योग्य बने। आगे अग्निने उनसे कहा, कि हे मधुसूदन! तुम युद्धस्थलमें इस अस्त्रसे विना सन्देह मानवके अतिरिक्त अन्य प्राणियोंकोभी परास्त कर सकोगे। तुम रणस्थलमें इस अस्त्रसे देव, दानव, राक्षस पिशाच, नाग और मनुष्य इनसे निःसन्देह अधिक शक्तिमान होगे। हे माधव! यह अस्त्र यदि शत्रुदल पर वार वार फेंका जाय, तौभी विना रुकावट शत्रुनाश करता हुआ फिर तुम्हारे हाथमें आ जायगा। अनन्तर वरुणजीने उनको दैत्यकुलनाशी घोररूपी वज्रसमान गरजनेवाली कौमोदकी गदा दी, तब अस्त्रमें पण्डित अर्ज्जुन और श्रीकृष्ण ध्वजा, रथ और शस्त्रादि प्राप्त कर प्रसन्नचित्तसे बोले, कि हे भगवन। अब हम लोग सम्पूर्ण सुरासुरसे लड़नेको समर्थ हुए, सर्परक्षाके लिये युद्ध चाहनेवाले अकेले वज्रधारी इन्द्रसे लड़ना हमारे लिये कोई बड़ी बात न रही। अर्ज्जुन बोले, कि हे पावक! तीनों लोकोंमें ऐसा पदार्थही नहीं है, कि जिसे वीर्य्यवन्त चक्रपाणि जनार्द्दन रणस्थलमें टहलते हुए इस चक्रसे मार नहीं सकेंगे। मैं भी यह अक्षय तूण और गाण्डीव धनुष लेकर सम्पूर्ण लोक परास्त करनेका उत्साह कर सकता हू सो आप आजही इच्छानुसार इस बड़े वनको सम्पूर्ण रूपसे घेर कर जलावे; हम आपको सहारा देनेको समर्थ हुए हैं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि भगवान हुताशन अर्ज्जुन और श्रीकृष्णचन्द्रके यह वचन सुनके पावक तैजसका रूपधारण कर उस वनको जलाने लगे। तब वह सातशिखा फैला कर सब ओर फैलकर खाण्डववन जलाने लगे। उस कालमें जान पड़ने लगा, कि मानो युगके अन्त होनेवाला काल प्रकटित हो रहा है। हे भरतवंशश्रेष्ठ! प्रज्वलित अग्निदेव उस बड़े भारी वनको पकड़ कर उसमें घुसके बादल की गड़गड़ाहटकी भांति भयानक शब्दसे सब प्राणियोंको थरथराने लगे। हे भारत! तब जलते हुए उस वनने सूर्य्यकिरणोंसे रंगे हुए सुमेरु पर्व्वतका स्वरूप धारण किया।

खाण्डवदाह पर्व्वमें दोसौ छब्बीस
अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर रथियोंमें श्रेष्ठ श्रीकृष्ण और अर्ज्जुन रथ पर चढ़कर उस वनको दोनो ओर रहके चारों ओरके प्राणियोंको नष्ट करने लगे। खाण्डववासी प्राणी जहां जहां भागते दीख पड़े, वे दोनो वीर तहां तहां दौड़ने लगे। वे दोनो महारथी रथ पर वनके चारों ओर इतना शीघ्र फिरने लगे, कि दोनो रथ आपसमें जुड़े हुए जान पड़ने लगे; तिनमें विछोह दीख नहीं पड़ा। खाण्डव वनके जलनेसे सैकड़ों सहस्रों प्राणी बड़ा कोलाहल मचाते हुए चारो ओर गिरने लगे। किसी किसीका एक एक अङ्ग जल गया; कोई कोई अति तापसे जल भुनके गिरगया; किसी किसी जन्तुकी आखें फूट गयी; कोई कोई दुबकाय गये, कोई कोई भयसे दौड़ने लगे; किसी किसी प्राणीने बच्चेसे, किसी किसीने पितासे किसी किसीने भाईसे लिपट कर वानस्थान हीमें प्राण छोड़े पर स्नेहवश उनको छोड़ नहीं सके। कोई कोई देहधारी दांतसे दांत

पीसता अनेकवार गिरता पीटता और बहुत चक्कर खाता फिर आगमें गिरने लगा। कोई पंख जलने, कोई नेत्र जलने अथवा कोई पांव जलने पर मृत दीख पड़ने लगा। वहांकी जलाशय अग्निसे तपने और उबल उठनेसे मछली कछुए आदि प्राणी इधर उधर मरे दिखाई देने लगे। उस वनमें देहियोंकी जो सब देह जली, वह सब जली देह मानों भांति भांतिको अग्निदेहके समान प्रतीत होती रहीं। उस वनसे जो सब पक्षी उछल रहे थे, अर्ज्जुन उनको वाणोंसे टुकड़े टुकड़े कर कर जलते हुए अग्निमें गिराने लगे। वे प्राणी सब देह काटे जानेसे बड़ा कोलाहल मचाते हुए वेगसे कुछ ऊपर चढ़कर फिर उस खाण्डव वनही में गिरने लगे, समुद्रमथनके कालमें जैसा घोर शब्द उठा था वैसेही वाणोंसे घायल वनैले जानवरोंका बड़ा कोलाहल सुन पड़ने लगा और जलते हुए अग्निकी बड़ी बड़ी शिखा देवोंको घबराहटमें डालनेवाली बनके आकाश मण्डलमें छागई। अनन्तर महात्मा देवगण उस अग्निकी शिखाओंसे बहुत तपकर पुरमें बसे ऋषियोंके साथ असुरनाशी सहस्र नेत्र शतक्रतु सुरनाथके पास गये और बोले, कि हे अमर नाथ! क्या अग्नि इन अमरवन्दको जला रहा है? क्या अब हम सब लोगोंका प्रलय काल आ गया है? श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हाथी पर चढ़े हुए वृत्रनाशी उनसे वह सुनके और स्वयं देखके खाण्डव वनको रक्षाके लिये चल निकले। उन्होंने अनेक महारथोंसे आकाशमण्डलको छाकर जल वर्षाना आरम्भ कर दिया। सैकड़ों बादल देवराजकी आज्ञासे खाण्डव वन पर रथके पहियेकी लकड़ीके समान मोटी धारसे जल वर्षाने लगे। सब मोटी धार अग्निके तेजसे आकाशहीमें सूख गयी, एकभी धार अग्नि पर गिर नहीं सकी। आगे नमुचिसूदन इन्द्र बहुत क्रोध कर फिर बड़े बादलोंसे अग्निके ऊपर बहुत जल वर्षाने लगे। तब वह बड़ा भारी वन अग्निशिखा और जल धारासे गीला धूआं और बिजलीसे मिला और ऊपरके बादलोंसे घिरा प्रकट होकर बड़ा भयानक दीख पड़ने लगा।

खाण्डवदाह पर्व्वमें दो सौ सताइस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर पाण्डुनन्दन अर्ज्जुनने देवराजको उस प्रकार जल वर्षाते देखकर अपना उत्तम अस्त्र प्रकट करके वाण वर्षा कर उसको रोका। चन्द्रमा जिस प्रकार ओससे जगको छाय देता है वैसेही अमेयात्मा पाण्डुनन्दनने सैकड़ों वाणोंसे सम्पूर्ण खाण्डव वनको छुपाया। वहाका आकाशमण्डल सव्यसाची धनञ्जयके फेंके वाणोंसे ऐसा ढपा, कि कोई प्राणी वहांसे निकल नहीं सका। पर महाबली सर्पराज तक्षक उस समय वहां नहीं था, जब खाण्डवदाह आरम्भ हुआ था, तब कुरुक्षेत्रमें गया था। उसका पुत्र बली अश्वसेन वहां था। तक्षकके उस पुत्रने आगसे निकलनेकी बड़ी चेष्टा की, पर अर्ज्जुनके वाणोंसे बन्धुआ बन कर निकल नहीं सका। आगे उसकी माता सर्पकन्याने उसको निगल कर बचाया। नागकन्या उसे बचानेकी चाहसे उसका सिर निगल कर उसकी पूंछको निगलती हुई आकाशमार्गसे निकल रही थी, ऐसे समयमें अर्ज्जुनने उनको देख चौड़ी नोखवाले तेजवाणसे उस सांपिनका सिर काट डाला। शचीनाथने यह देखकर अश्वसेनको बचानेके लिये उसीक्षण पवन चला कर अर्ज्जुनको मोहमें डाला। उस अवसरमें अश्वसेन बचकर भागा। अर्ज्जुनने तब उस सर्पसे ठगे जाकर और वह माया देखकर आकाश

तक पहुंचे हुए भयानक प्राणियोंको दो तीन भागोंमें काट कूट डाला। विभत्सु, वासुदेव और पावकने बहुत क्रोध कर उस कुटिल गामी सर्पको शाप दिया, कि तुम्हारी प्रतिष्ठा जाती रहेगी। अनन्तर पाण्डुपुत्रने उस वञ्चनाको स्मरण कर क्रोधसे तुरन्त दौड़नेवाले बाणों से आकाश मण्डलको छाय सहस्रनेत्रसे लड़ाई मचायो। देवराजनेभी उनको युद्धमें काटवद्ध देखकर अपना तीक्ष्ण अस्त्र छोड़कर आकाश मण्डलको छा लिया। अनन्तर पवनने बड़े शब्दके साथ फैलकर सम्पूर्ण समुद्रमें हलचल मचाके अति घोर बादल वृन्द उपजाये। उन सब बादलोंसे उस ठौरमें बिजली, बज्राघात और गड़गड़ाहटके साथ जलधारा वर्षने लगी। प्रतिविधानकी शक्ति रखनेवाले अर्जुनने उन सबको दूर करनेके लिये सुन्दर वायव्यास्त्रको मन्त्र पढ़ कर छोड़ा, तिससे इन्द्रके उस बज्र और बादलोंका वीर्य्य तथा तेज नष्ट हुआ, और जलधारा सूखी तथा बिजली नष्ट हुई, पल भरमें अकाश मण्डल गई और अन्धेरेसे साफ होगया। सुखदायी ठण्डी हवा चलने लगी और सूर्य्यमण्डलने पहिलेकी प्रकृति प्राप्त की, तब अग्नि बिना रोक टोक देहियोंकी देहसे निकली हुई चर्बीसे औरभी प्रबल होकर आनन्दकी उमङ्गमें नाना आकार धरके और बड़े शब्दसे जग भरमें शिखायें फैलाकर जल उठा। हे महाराज। सुपर्ण आदि पतङ्गगण श्रीकृष्ण और अर्जुनसे उस खाण्डवदावानल को रक्षित होते देखकर अहङ्कारसे आकाशको उड़े और वज्रसमान पंख चोंच और नखोंसे वासुदेव और धनञ्जयको मारनेकी इच्छासे आकाशसे नीचे उतर आये तथा जलते हुए मुखवाले विषैले सर्पगण कठोर विष गिराते हुए पाण्डवके सामने आ गिरे। तब पाण्डुनन्दनने क्रोधकी आगसे सुलगे हुए बाणोंसे उन सबको काट कूट डाला, सो वे देहको नष्ट करनेके लिये भली प्रकार जलते हुए अग्निमें जा गिरे। अनन्तर असुर, गन्धर्व्व, यक्ष राक्षस, और पन्नगगण लड़नेके लिये बड़ा कोलाहल मचाते हुए दौड़े। क्रोधके मारे तब उनका तेज बढ़ने लगा। वे अय-काण्ड अर्थात् लोहेकी गेंद गिरानेके यन्त्र और चक्राश्म अर्थात पत्थरके टुकड़ोंके बड़ी दूर फेंकनेका लकड़ीका बना यन्त्र, भुसुण्डी अर्थात पत्थर फेंकनेका चमड़ाकी रस्सीसे बना हुआ तन्त्र, यह सब अस्त्र लेके हाथ उठाकर श्रीकृष्ण और अर्जुनको नष्ट करनेके लिये उद्यत हुए। विभत्सु उनको अयोग्य वचन कह कहके बाण वर्षाते देखकर चोखे बाणोंसे उनके सिर मथने लगे। शत्रुकुलनाशी बड़े तेजस्वी श्रीकृष्ण चक्रसे उन सब दैत्य दानवोंको नष्ट करनेलगे। कोई कोई अति बली दैत्य दानव शरोंसे विद्ध और चक्रसे घायल हो उत्साह छोड़ ऐसे चुप हुए, कि जैसे जलके सोतेमें लहरकी चोटसे घूमते हुए तिनके तीर पाके स्थिर होते हैं। अनन्तर देवोंके अधीश असुरसूदन इन्द्र अति क्रोधकर पाण्डुरवर्ण गज पर चढ़के धनञ्जय और श्रीकृष्ण पर चढ़ आये और वेगसे अमोघ अस्त्र वज्र लेकर उन पर छोड़नेको उद्यत होके देवोंसे बोले, कि इस वार यह दोनो मरगे। देवोंने देवराजको महावज्र उठाते देखकर सबने अपना अपना अस्त्र ले लिया। हे महाराज। यमराज कालदण्ड लेकर खड़े हुए, धननायक गदा ली, वरुणने पाश और विचित्र अशनि लिया; स्कन्द शक्ति लेकर अचल गिरि मेरुकी भांति खड़े हुए, दोनो अश्विनी कुमार हाथोंमें दीप्यमान औषधि लेकर खड़े हुए. धाताने धनुष लिये. जयने मूषल लिया, महाबली त्वष्टाने रिसाकर पर्व्वत उठाया, सूर्य्यका अंश हाथोंमें देवशक्ति लेके लड़नेको उद्यत हुआ। मृत्युदेवने परशुधर लिया:

अर्य्यमा घोर परिघ लेके घूमने लगे और मित्र अस्तुरेके समान नोखदार चक्र लेकर खड़े रहे। भग, पूषा और सविता भयानक धनुष और निस्त्रिंश लेके क्रोधसे अर्ज्जुन और श्रीकृष्णको ओर दौड़े। अपने तेजसे दीप्यमान महाबली रुद्रगण, वसुगण, मरुद्गण, विश्वेदेवगण, और साध्यगण, यह और दूसरे अनेक देवगण भांतिभांतिके अस्त्र लेकर पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण और अर्ज्जुनको नष्ट करनेके लिये चढ़ दौड़े। तब युग अन्त होनेके कालकी भांति भूतोंको मोहनेवाले आश्चर्य्य नक्षत्र पतन आदि बुरे बुरे चिन्ह प्रगट होने लगे। युद्धमें अति कठोर अर्ज्जुन और श्रीकृष्ण देवोंके साथ देवराजको युद्धमें सब प्रकारसे सन्नद्ध देखकर सज्य शरासन लेकर निर्भय और अटल चित्तसे खड़े हुए। युद्धमें दक्ष वे दोनों वोर सब आये हुए देवोंको बज्र समान बाणोंसे क्रोधपूर्व्वक सब प्रकारसे पछाड़ने लगे; अनन्तर देवोंने कृष्णार्ज्जुनसे बारम्वार सब प्रकार सङ्कल्प खोकर भय खायके युद्धस्थलको छोड़कर देवराजकी शरण ली। आकाशमें खड़े मुनियोंने देवोंको कृष्णार्ज्जुनके आगे पीठ दिखाते देखकर अचरज माना। अर्ज्जुन और श्रीकृष्णका रणस्थलमें वार वार भुजवीर्य्यका प्रमाण पाय देवराज बहुत प्रसन्न हुए; और फिर लड़ने लगे। वह तब सव्यसाची धनञ्जयकी सामर्थ जाननेकी चाहसे बहुत पत्थर बर्षाने लगे। अर्ज्जुनने बहुत क्रोधकर महावेगवान बाणोंसे उस पत्थरवृष्टिको रोका। इन्द्र पत्थर वृष्टिको विफल देखकर फिर और भी अधिक पत्थर गिराने लगे। इन्द्रनन्दन बड़े तेज बाणोंसे उस भयानक पत्थर वृष्टिको रोककर पिताका आनन्द बढ़ाने लगे। अनन्तर महेन्द्रने पाण्डुपुत्रको मारनेकी इच्छासे दोनो हाथोंसे मन्दर पर्व्वतकी वृक्षसहित एक बड़ी भारी चोटीको उखाड़ कर फेंका। अर्ज्जुनने अजिह्मग, जलती हुई नोख वाले बड़े तेज बाणोंसे उस पहाड़की चोटीको सहस्र खण्डोंमें तोड़ डाला। आकाश मण्डलसे चन्द्र सूर्य्यादि ग्रह टुकड़े टुकड़े हो गिरनेके कालमें जैसे पड़ते हैं, वह टूटी फूटी पहाड़की चोटी गिरनेके कालमें तैसीही दोख पड़ी। उस बड़ी भारी चोटीके खाण्डववन पर गिर जानेके हेतु उस काल उसकी चोटसे बहुतेरे प्राणियोंने प्राण छोड़े।

खाण्डव दाहपर्व्वमें दोसौ अट्ठाईस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर खाण्डव वनके रहनेवाले दानव राक्षस सर्प ऋक्ष भेड़िये उन्मत्त हस्ती केशरवाले सिंह, बाघ और दूसरे बनैले भूत उस पहाड़के गिरनेसे भय खाय अकुलाय भागने लगे, और श्रीकृष्ण तथा अर्ज्जुनको अस्त्र उठाये और उस वनको सब ओरको बड़े शब्दसे जलता हुआ देखा। तब वे वनको चारो ओरसे जलते और श्रीकृष्णको अस्त्र मारते देखकर बड़ा भयानक शब्द करने लगे। उन सब बनैले जीवोंके भयानक शब्द और अग्निकी चटचटाहटसे आकाश मण्डल ऐसे गूजने लगा, कि जैसे मेघ गर्ज्जनसे गूंजे। अनन्तर महाभुज श्रीकृष्णने उनको मारनेके लिये अपने तेजसे जलता हुआ अति उग्र नोखवाला बड़ा भारी चक्र उठाया। उस चक्रसे दानव निशाचर आदि वे सब जानवर भय खाय टुकड़े टुकड़े होय उसी क्षण अनलके मुखमें जाय गिरे। दैत्यगण श्रीकृष्णचन्द्रके चक्रसे टुकड़े टुकड़े हो और चर्व्वी तथा रक्तधारसे नहाकर सन्ध्याकालके घने बादलकी भांति दीखने लगे। हे भारत! वृष्णिनन्दन श्रीकृष्ण यमराजको भांति सहस्रों पिशाच, पक्षी, सर्प और पशु मारते हुए फिरने लगे। सर्व्व भूतोंके आत्मा श्रीकृष्णके इस प्रकार पिशाच उरग

राक्षस आदिको नष्ट करने पर उस कालमें उनका आकार बड़ा रूखा जान पड़ने लगा; आये हुए देवोंमेंसे एकभी कृष्णार्ज्जुनके युद्धमें जय नहीं पा सका। देवोंने जब देखा, कि कृष्णार्ज्जुनके बाहुबलसे उस बनको बचानेके लिये दावानल बुझाना उनसे बन नहीं पड़ा, तब वे पीठ दिखाकर चले गये। हे महाराज! अमरनाथ अमरोंको मुंह मोड़ते देख प्रसन्न होकर केशव और अर्ज्जुनकी प्रशंसा करने लगे। अनन्तर सब स्वर्ग पतियोंके निवृत्त होने पर महेन्द्रको इस प्रकार आकाशबाणी हुई, कि तुम्हारा सखा सर्पराज तक्षक मारा नहीं गया, खाण्डवदाहके कालमें वह कुरुक्षेत्रमें गया था। हे इन्द्र! तुम मेरे वचनसे निश्चय जानना, कि कोई भी किसी प्रकारसे वासुदेव अर्ज्जुनका युद्धमें सामना नहीं कर सकेगा। यह लोग देवलोकमें प्रशंसित पुरातन देव नर नारायन हैं; इनका जैसा वीर्य्य और जितना पराक्रम है, वह तुमभी जानते हो। यह युद्धमें अजेय और दुर्द्धर्ष हैं, इनको पराजय करना सर्व्व लोकोंमें किसीकी सामर्थ नहीं है। यह दो पुराण ऋषिसत्तम, अमर, असुर, यक्ष, राक्षस, गन्धर्व्व, नर किन्नर, पन्नग आदि सबोंके बड़े पूजनीय हैं, सो हे इन्द्र। तुम देवोंके साथ यहांसे लौट जाओ। यह खाण्डवदाह विधिपूर्व्वकही हुआ। तब अमरनाथ इन्द्र वह वचन सच जानकर क्रोध तज देवलोकको गये। हे महाराज। देवोंने अमर नाथ इन्द्रको चले जाते देखकर सेनाओंके साथ उनकी राह ली। वीर अर्ज्जुन और वासुदेवने सेनागण और इन्द्रको मुख मोड़ते देखकर सिंहनाद किया। हे महाराज! इन्द्रके चले जाने पर वे निर्भय होकर खाण्डववनको जलाने लगे। पवन जिस प्रकार बादलोंको भगाता है, तैसे ही अर्ज्जुन देवोंको परास्त कर खाण्डवमें रहनेवाले प्राणियोंको मारमारकर फूंकने लगे। उनके बाणोंसे काटे जानेसे कोई भी प्राणी वहांसे निकल नहीं सका। बड़े बड़े महाबली प्राणियोंका अर्ज्जुनसे लड़ना तो दूर रहा, वे उनकी ओर ताकभी नहीं सके। अर्ज्जुन कभी कभी एक बाणसे सौ प्राणी मारने लगे। वे सब प्राणी मानों साक्षात कालसे मारे जाय और प्राण छोड़ अग्निके मुखमें गिरने लगे, वे नतो नदी, नतो तट, न रूखी ठौर और न श्मशान कहीं भी मङ्गल प्राप्ति नहीं कर सके, सभी ठौर कड़े तापसे तपने लगे। अगणित प्राणी दीन मनसे बड़ी चिल्लाहटके साथ रोने पीटने लगे, हस्ती हरिन और भेड़िये चिल्लाकर रोने लगे, उस शब्दसे अति दूरकी गङ्गाचर और समुद्रचर मछलियां और विद्याधर तथा उन स्थानोंके निकट जितने बनवासी थे, सब बहुत भय खागये। हे महाभुज! किसीका कृष्णार्जुनसे लड़ना तो दूर रहा, अर्ज्जुन और जनार्दन पर दृष्टि चलानाभी बन नहीं पड़ा, जिन सब राक्षस, दानव और नागोंने एकत्र मिल कर दौड़के भागना चाहा श्रीकृष्णने उनको चक्रसे नष्ट किया, वे चक्रके वेगसे सिरकटे, धड़कटे बनके प्राण छोड़ जलती हुई आगमें जा गिरे और दूसरे बड़े भारी भारी जीवभी आगके मुंहमें गिरने लगे। तब अग्नि मांस रक्त और चर्बीसे भले प्रकार तृप्त होय धुआं तज आकाशको चढ़ गये और पिङ्गल आंखें जीभ, मुख और ऊंचे ऊंचे बालोंको प्रज्वलित कर जीवोंकी चर्बी पीने लगे। उन कृष्णार्जुनसे अमृत पीकर प्रसुदित और तृप्त होय परम सन्तोष प्राप्त किया। अनन्तर मधुसूदनने एकायक देखा, कि मय नामक असुर तक्षकके वासस्थानसे भागा जाता है। और पवनके सारथि अग्नि शरीर लेके और जटा धरके बादलके समान शब्द करते हुए उसको पकड़नेकी इच्छा कर रहे हैं, तब वासुदेवजी उसको मारनेके लिये चक्र उठाके

खड़े हुए। मयदानवने उनको चक्र उठाते और अग्निको निगलनेकी इच्छा पर आते देखकर कहा, कि हे अर्जुन दौड़ो, मुझे बचाओ। अर्जुन उसका वह करुणस्वर सुनकर मानों जीवन दे करही बोले, कि मत डरो। वह दयाशील थे, सो मयको ढाढ़स दिया। अनन्तर अर्जुनके नमुचिके भाई उस दैत्यको ढाढस देने पर दाशार्ह श्रीकृष्णने फिर उसे मारना नहीं चाहा, और अग्निभी जलानेको प्रवृत्त नहीं हुए।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि धीमान हुताशनने अर्जुन और श्रीकृष्ण द्वारा इन्द्रसे रक्षित होकर पन्द्रह दिनमें उस वनको जलाया। उस वनके जलानेके कालमें अग्निने केवल अश्वसेन, मय और शार्ङ्गक नामक चार पक्षी इन छओंको नहीं जलाया।

खाण्डवदाह पर्व्वमें दोसौ उनतीस अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, कि हे ब्रह्मन्! यह प्रगट करो, कि उस वनके जलानेके समय उस दशामें अग्निने क्यों शार्ङ्गक पक्षियोंको नहीं जलाया। अश्वसेन और मयदानव जिन उपायोंसे नहीं जले वह आपने कह सुनाया है; पर चार शार्ङ्गके न जलनेका कारण नहीं कहा; हे ब्रह्मन्! शार्ङ्गकोंका बचना मुझको अचरजसा जान पड़ता है; कहो, कि वे उस अग्निदाहसे क्यों नहीं मरे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे शत्रुदमन! उस दशामें हुताशनने जिस कारण शार्ङ्गकोंको नहीं जलाया, वह आपसे कहता हूं, सुनो। हे महाराज! मन्दपाल नाम प्रख्यात तपस्वी विद्वान् व्रतशील धर्म्मके जानकार अति श्रेष्ठ एक महर्षि थे। वह स्वाध्यायमें नियुक्त और जितेन्द्रिय होके सदा तपस्या और धर्म्म करते थे। वह ऊर्द्धरेता ऋषियोंको वाटसे चलकर तपस्याके दूसरे पारको उतर गये थे। हे भारत! जब वह देह छोड़के पितृलोकको गये, तब बटोरी हुई तपस्याका कोई फल प्राप्त नहीं हुआ। उन महर्षिने अपनी कठोर तपस्यासे उपार्जित किये हुए लोकोंको न जाने पाकर धर्म्मराजके निकट देवोंसे पूछा, कि मेरी तपस्यासे उपार्ज्जन किया हुआ पुण्यलोक क्यों रुका है? जिन कर्म्मोंके करनेसे इन सब पुण्यलोकोंमें जाया जाता है क्या मैंने उन कर्म्मोंको नहीं किया है? हे देवगण! आप कहें, कि क्यों मेरी तपस्याका फल रुका हुआ है, मैं उसको करनेको प्रस्तुत हूं। देवोंने कहा, कि हे ब्रह्मन्! सुनो इसमें सन्देह नहीं कि मानवगण क्रिया, ब्रह्मचर्य्य और सन्तान उपजाना इन सब विषयोंका ऋणियां बनके जन्म लेते हैं। यज्ञ, तपस्या और पुत्रोत्पादन इन तीन कर्म्मोंसे यह ऋण चुकता है। तुमने बहुत तपस्या और यज्ञ किया है, पर तुम्हारे सन्तान नहीं है, सो यह सब पुण्यलोक तुम्हारे लिये रुके हैं। तुम पुत्र उपजाओ, तो इन श्रेष्ठ लोकोंको भोगने पाओगे। हे ब्रह्मश्रेष्ठ। श्रुति है, कि पुत्र पिताको पुत नामक नरकसे बचाता है, सो तुम पुत्र उपजानेको प्रयत्न करो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर मन्दपाल देवोंका वह बचन सुनकर सोचने लगे, कि किस योनिमें जन्म लेनेसे शीघ्र अधिक सन्तान उपज सकती है। अनन्तर उन्होंने यह सोचकर कि पक्षीकी जातिको स्वल्पकालमें बहुत सन्तान होती हैं, शार्ङ्गिक पक्षी बनके जरिता नाम शार्ङ्गिकासे मिलकर उसके गर्भसे चार ब्रह्मवादी पुत्र उपजाये। अनन्तर वह अण्डेसे उपजे हुए बच्चोंको उनकी माताके साथ उस वनहीमें छोड़के लपिताके पास गये। हे भारत। उन महाभागके लपिताके पास

चले जाने पर जरिता पुत्रस्नेहसे कातर हो अनेक प्रकारकी चिन्ता करने लगी। ऋषिके उस खाण्डव वनमें उन अण्डोंमें स्थित बच्चोंको छोड़ने परभी जरिता पुत्र शोकसे कातर हो कर त्यागनेके अयोग्य उन बच्चोंको छोड़ नहीं सकी, उनको स्नेहके मारे अपनी वृत्ति अवलम्बन कर पालने लगी। अनन्तर ऋषि मन्दपालने लपिताके साथ उस वनमें चरते हुए देखा, कि अग्नि खाण्डव वन जलानेको आ रहा है, ब्रह्मके जानकार विप्रर्षि वह महातेजस्वी मन्दपाल जातवेदाका वह अभिप्राय समझकर अपनी सन्तानोंको बालक जानके उनके लिये उनसे विनय करनेकी इच्छासे भयखाय स्तव करने लगे कि, हे अग्ने। तुम सर्व्वलोकोंके मुखस्वरूप हुए हो, तुम हवनके पदार्थ ग्रहण किया करते हो। हे पावक! तुम सर्व्व लोकोंके हृदयमें छिप कर चरा करते हो। कविगण तुमको अद्वितीय कहा करते हैं, और तीन प्रकारका भी कहते है तथा तुमको अष्टधा कल्पना करके यज्ञ किया करते हैं। हे हुताशन! परमर्षिगण कहते हैं, कि तुम्हीने संसारको रचा है, और तुम्हारे न रहनेसे आजही जगन्मण्डल नष्ट होता। ब्राह्मणगण तुम्हीको प्रणाम कर स्त्रीपुत्रोंके साथ शाश्वत-लोकको जय करके उसमें जाते हैं। हे अग्ने। पण्डितलोग तुमको विद्युतके साथ आकाशमें स्थित मेघ कहते हैं। हे पावक। तुमसे शिखा निकलकर सर्व्व भूतोंको जलाती हैं। हे महाद्युते! कर्म्मोंका विधान करनेवाला वेद तुम्हाराही वचन है; और यह सब स्थावर जङ्गमात्मक जीव तुम्हीसे बने हैं। हे अग्ने! पहिले तुम्हीमें जलका विधान है, यह सम्पूर्ण जगत तुममे स्थित है; और सम्पूर्ण हव्यकव्य तुम्हीको आश्रय कर विद्यमान हैं। हे देव। तुम्ही दहन, तुम्ही विधाता, तुम्ही वृहस्पति, तुम्ही दोनों अश्विनीकुमार तुम्ही अर्क, तुम्ही सोम और तुम्ही पवनस्वरूप हो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे महाराज। अति तेजस्वी मन्दपालमुनिके इस प्रकार अग्निको स्तुति करने पर अग्नि उन पर प्रसन्न हुए और प्रीतिपूर्व्वक उनसे कहा, कि बोलो तुम्हारा अभीष्ट क्या है, मैं पूरा कर देता हूं। मन्दपाल दोनों हाथ जोड़के बोले, कि हे हव्यवाहन। तुम जब खाण्डववनको जलाओगे, तब मेरे बच्चोंको मत जलाना। भगवान् हव्यवाहनने तथास्तु कहके मान लिया, और उस कालमें खाण्डवदाव जलानेके वास्ते जल उठे।

खाण्डवदाह पर्व्वमें दोसौ तीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले; कि अनन्तर अग्निके जलने पर वे शार्ङ्गकपक्षीके बच्चे बहुत भय खाय घबरा उठे; उनको ढूंढने परभी बचनेका कोई उपाय नहीं मिला। उनकी माता तपस्विनी जरिता बच्चोंको बहुत छोटे देखकर, दुःख शोकसे विलपती हुई कहने लगी, कि मेरा दुःख बढ़ानेवाला यह भयानक अग्नि वनको जलाता हुआ सब ठौरमें उजाला करके डरावने स्वरूपमें आय रहा है। पर मेरे छोटे छोटे इन बच्चोंके पंख नहीं जमे है, तथा वे उड़ भी नहीं सकते और अज्ञान हैं, और यह गुरुओंकी एकही गति हैं, यह मेरे हृदय दुःखा रहे हैं। यह अग्नि हर घड़ी वृक्षोंको चाटता और भय उभाड़ता हुआ इधर आ रहा है। पर मेरे इन बिना पंखके बच्चोंको भागनेकी शक्ति नहीं है, और मुझ अकेलीकोभी इतनी सामर्थ नहीं है, कि इन सबोंको लेकर इस विपत समुद्रसे भाग सकूं; इनको छोड़कर भागभी सकती हूं। हा! मेरा हृदय ...

रहा है। मैं किस बच्चेको लेकर जाऊं; किसको छोड़, क्या करूं जो मनोरथ सिद्ध हो? ऐ बेटो! तुम क्या विचारते हो? मैं तो सोच समझ कर तुम्हारे बचनेका कोई उपाय नहीं देखती; मैं अपनी देहसे तुमको छिपाके अन्तमें तुम सबोंके साथ जल मरूंगी। तुम्हारा निर्दयी पिता पहिले चले जानेके कालमें बोला था, कि "मेरे चार बेटोंमें ज्येष्ठ जरितारी नामक पुत्रसे वंश प्रतिष्ठित होगा; सारिसृक्क नामक पुत्र सन्तान उपजायके कुल बढ़ावेगा; स्तम्बमित्र नामक पुत्र तपस्या करेगा और द्रोण नामक प्रशंसित पुत्र वेदमें पण्डित होगा।" पर अब यह दुःखदायी विपद आ पड़ी, मैं किसे ले जा सकूंगी? क्या करनेसे कार्य्यको निबटा सकूंगी। जरिता ऐसे बहुविधि सोच कर घबरा उठी; उसको अपनी बुद्धिसे अपने पुत्रोंको बचानेका कोई उपाय नहीं सूझ पड़ा।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि शार्ङ्गकोंने माताको इस प्रकार बिलपते सुनकर कहा, कि माता! तू स्नेह छोड़कर वहां जा, कि जहां आग नहीं हो। हे माता। हम मर जायंगे तो तेरी और सन्तान उपज सकेंगी; पर तेरे मरनेसे वंशरक्षाका उपाय न रहेगा। हे माता। अब तेरे लिये वह काल आ पहुंचा है, जब कि हमारे साथ प्राण छोड़ना अथवा हमें छोड़के अपनेको बचाना, इन दो विषयोंकी भले प्रकार आलोचना वही करना चाहिये, जिसके करनेसे हमारे कुलका मंगल हो, तू फिर सर्व्वनाशी पुत्रस्नेह मत कर, ऐसा करनेसे स्वर्गलोकदायी पुत्र चाहनेवाले पिताका सब कर्म्म व्यर्थ हो जायगा। जरिता बोली, कि हे पुत्रो। इस वृक्षके निकट धरतीके भीतर मूषका बिल दीख पड़ता है, तुम तुरन्त इसमें जा घुसो; वहां अग्निका भय जाता रहेगा। तुम्हारे इसमें पैठनेसे मैं धूरसे इस बिलका मुंह तोप दूंगी; अब प्रज्वलित अग्निसे बचनेका यही एक उपाय देखती हूं। जब आग बुझेगी, तब मैं आकर बिलके मुखसे राखका ढेर हटा दूंगी। तुम अग्निसे बचनेके लिये मेरा यह वचन मानो। शार्ङ्गोंने कहा, कि हमारे पंख नहीं जमे हैं, हम मांसपिण्डही हैं, सो मांस-खानेवाले मूष अवश्य हमको नष्ट करेंगे; इस भयकी बातको जान बूझ कर हम इसके भीतर घुस नहीं सकते। अब क्योंकर अग्नि हमें न जलावे, क्योंकर मूष हमें न खावे, क्योंकर पिताका पुत्र उपजाना व्यर्थ न होवे, क्योंकर हमारी माताका प्राण बचे, इनमेंसे किसीका एकभी उपाय नहीं देखते; सो निश्चयही हमारी मृत्यु आ पहुंची है। पर बिलमें घुसें तो मूषसे और बाहर रहें तो अग्निसे मरेंगे; इन दो मृत्युओंके विषयमें समझ बूझके देखनेसे यही युक्ति होती है, कि अग्निसे जल मरना अच्छा है, मूषसे खाये जाना उचित नहीं है, क्योंकि शिष्ट हुताशनके मुखमें देह छोड़नेसे सुगति होगी बिलमें मूषसे खाये जानेसे अनुचित मृत्यु होगी।

खाण्डवदाह पर्व्वमें दोसौ एकतीस अध्याय समाप्त।

जरिता बोली, कि इस गड्ढेसे एक ही मूष निकला था; एक बाज आके पावोंसे उसे पकड़ ले गया है, इस बिलमें तुमको भय नहीं है। शार्ङ्गोंने कहा, कि हम बाजका मूष ले जानेका ब्योरा नहीं जानते, और रह गया हो, तो उस बिलमें ढेर और मूष रह सकते हैं; उनसे हमको बिना सन्देह भय होरहा है; और यहां अग्नि आवे, कि न आवे, इसमें सन्देह है, क्योंकि उलटे वायुसे अग्निका बुझनाभी देखा गया है; बिलमें रहनेसे निश्चयही हमारी मृत्यु

होगी और बाहर रहनेसे मृत्यु होनेमें सन्देह है। हे माता! जिस स्थानमें मृत्युका होना निश्चय है, उससे वह किसी प्रकार अच्छा है, कि जहां मृत्युमें सन्देह है, सो न्यायके अनुसार तुमको आकाशहीको उड़ जाना उचित है, तुम्हारा जीवन बचे तो तुम दूसरे अच्छे पुत्र पासकोगी। जरिता बोली कि हे बेटो। जब पक्षीवर बाज बिलसे मूषको लेकर वेगसे भागा था, तब मैंने उसके पीछे-दौड़कर अशीस दिया था, कि "हे बाज-राज। तुम हमारे शत्रुको लेके भागते हो, तो तुम बिना शत्रु देवलोकमें सुनौली देह धारकर वसो।" अनन्तर उस बाजके मूषको लेजाने पर मैं उसे जता कर घरको लौट आयी। हे बेटो। अब तुम चित्तमें कोई शङ्का न उठाकर बिलमें जाओ, वहां तुमको कोई शङ्का न होगी; महात्मा बाजने मेरे सामनेहो मूषको खाडाला है। शार्ङ्गोंने कहा, कि हे मायो! हमने नहीं देखा, कि बाज मूषको हरले गया है, सो हम विशेष जानके बिलमें घुस नहीं सकते। जरिता बोली, बेटो! तुम मेरी बात मानो, इसमें कोई भय नहीं है, क्योंकि मैं जानती हूं, कि बाज मूषको हर लेगया है।

शार्ङ्गोंने कहा, कि हम नहीं समझते, कि तुम किस उपचारसे हमारा भय भगाती हो, क्योंकि जो भयद्वारा बिगड़नेसे जो कर्म्म किया जाता वह ज्ञानसे नहीं होता है। हमने कभी तुम्हारा कोई उपकार नहीं किया, और यहभी नहीं जानती, कि हम कौन हैं, क्यों कष्ट उठाकर हमको बचानेकी चेष्टा करती हो? देखो न तो तुम हमारी कोई और न हम तुम्हारे कोई लगते है। हे मा! तुम युवती और रूपवती हो और पति पानेकी सामर्थभी रखती हो, सो तुम पतिके पीछे जाओ, जिनसे अच्छा पुत्र पा सकोगी। हम अग्निमें घुसकर अच्छे लोकमें जायंगे। यदि अग्नि हमको न जलावें, तो फिर तुम हमारे पास आना।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि शार्ङ्गी पुत्रोंसे यह बात सुनकर, उन्हें उस खाण्डवबनमें छोड़के तुरन्त ऐसी बिन पीड़ाकी ठौरमें चली गयी, कि जहां अग्निका भय नहीं था, अनन्तर अग्नि वेगसे और तेज शिखायें लिये मन्दपालके पुत्र शार्ङ्गोंके खोतेके पास आये। तब उन पक्षियोंने प्रज्वलित अग्निको देखा, और उनका ज्येष्ठ उस अग्निको सुनाय सुनाय कहने लगा।

खाण्डवदाह पर्व्वमें दोसौ बत्तीस अध्याय समाप्त।

जरितारि बोला, कि ज्ञानी जन मृत्यु कालके पहिलेसे जागते रहते है, उनको कभी मृत्युकी पीड़ा सहनी नहीं पड़ती। बिन चेतन जन मृत्यु काल आजाने पर सोते हुएके समान रहता है, उसको मृत्युकी पीडा भोगनी पड़ती है; और वह मोक्षको नहीं पा सकता।

सारिसृक्क बोला, हमारा यह प्राणका क्लेश आ गया है, तुम धीर और बुद्धिमान हो, तुम्हीं हमारी रक्षा करो, क्योंकि बहुतेरोंमेंसे एकही पुरुष बुद्धिमान और शूर होता है।

स्तम्बमित्र बोला, ज्येष्ठ भ्राता कनिष्ठोंके त्राता होते है, सो ज्येष्ठ भ्राताही विपतसे बचाते हैं। जो ज्येष्ठ भाई न बचावें, तो कनिष्ठ क्या कर सकता है?

द्रोण बोला, कि वह कुटिल कर्म्मवाला सुवर्णरेता सात जीभ सात मुह सहित वेगसे जलाता लहलहाता हमारे खोते पर आ रहा है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले कि हे पृथ्वीनाथ! मन्दपालके पुत्रोंने ऐसा कह सुनकर जिस प्रकार अग्निका स्तव किया था, वह कहता

हूं सुनो। जरितारि बोला, कि हे जलानेवाले! तुम वायुकी आत्मा हो, तुम लताओंकी देह हो। हे शुक्र! तुम्हारे उपजनेका स्थान जल है और तुम जलके उपजानेका स्थान हो। हे महावीर्य्य! तुम्हारी शिखा सूर्य्यके उजालेके समान ऊंचे नीचे पीछे, किनारे और सब जगह फैली रहती है।

सारिसृक्क बोला, कि हे धूमकेतो! हमारी मा दृष्टिके बाहर उड़ गयी है, पिताको भी हम नहीं पहिचानते और अभीतक हमारे पंख नहीं जमे, हम बहुत बच्चे हैं। हे अग्ने! अब तुम्हारे बिना हमारा बचानेहारा नहीं है; सो तुम हमको बचाओ। हे अग्ने! तुम्हारा जो कल्याणकारी रूप और सात शिखा है, उन्हींसे हम भय खाये और शरण लिये हुओंको बचाओ। हे जातवेद! तुम अकेलेही ताप फैलाते हो। हे देव! किसो किरणको तुम्हारे बिना ताप पहुंचानेवाला कोई नहीं है। हे हव्यवाहन! हम ऋषिपुत्र और बच्चे हैं, हमारी रक्षा करो, हमारे यहांसे अन्य स्थानको जाओ।

स्तम्बमित्र बोला, कि हे अग्ने! तुम अकेले सम्पूर्ण ब्राह्मणरूपी हो, तुम्ही पर यह सम्पूर्ण जगत विराजमान है; तुम जीवोंको पालते हो; तुम तेज: पदार्थ हो, तुम हव्यको वहन करते हो, और तुम अच्छे हव्यरूपी हो। पण्डितलोग तुमको कारण-रूपमें एकरूपी और कार्य्य-रूपमें बहुरूपी जानते हैं। हे हव्यवाहन अग्ने! तुम पहिले सृष्टिको रचते हो; आगे काल आने पर तुम्ही बढ़कर फिर उसका नाश करते हो, सो तुम्ही सम्पूर्ण भुवनकी उत्पत्ति-स्थान हो और प्रलय स्थानभी तुम्ही हो।

द्रोण बोला, कि हे जगपते! तुम जीवोंके भीतर रहके बढ़कर उनका खाया हुआ अन्न नित्य पचाते हो; सो सब भूत तुम्हारी ही शरणमें रहते हैं। हे शुक्र। हे सात वेद! तुम सूर्य्य स्वरूप बनके किरणसे भूमिमें उपजा हुआ सब रस और धरतीमें स्थित जल ले समय समय पर फिर उसे वृष्टि द्वारा छोड़कर सब अनाज उपजाते हो। हे शुक्र! तुम्हीसे यह सब पत्तेवाली लता, सरोवर और मङ्गलनिधान समुद्र उपज रहे हैं। हे कठ किरणधारिन्। हमारी यह देह रसनेन्द्रियके नाथ जलपति वरुण पर निर्भर है, अतएव तुम जब उस जलके विधाता हो, सो हमारे कल्याणकारी हो, ऐसी दशामें हमको बचाओ तुमको उचित है, तुम आज हमको नष्ट मत करो। हे पिङ्गलनेत्र! हे लालग्रीव हे कृष्णवर्त्मन्! हे हुताशन! तुम हमसे दूर रहो, सागरके पास बने घरके समान हमें छोड़ो। श्रीवैशम्पायनजी बोले, आगे जातवेदा अग्नि द्रोणकी यह बात सुन प्रसन्न हुए, और मन्दपालसे जो कुछ सुना था, वह स्मरण कर बोले, हे द्रोण! तुम ऋषि हो, तुमने जो कहा, वह वेदस्वरूप है, तुम्हारी अभिलाष पूरी करूंगा, तुम भय मत खाओ। पहिले मन्दपालने तुम्हारे लिये मुझसे कहा था, कि "जब तुम खाण्डव वनको जलाओगे, तब मेरे पुत्रोंको न जलाना।" हे द्रोण! मन्दपालकी वह बात और तुम्हारी यह बात हमारे लिये बहुत अधिक हुई है; सो कहो, तुम्हारे लिये मुझको क्या करना होगा? हे ब्रह्मर्षे! तुम्हारी इस स्तुति पर मैं बड़ा कृतार्थ हुआ हूं, तुम्हारा मङ्गल होगा। द्रोण बोला, हे हुताशन शुक्र! यह सब बिल्ली नित्य हमको सताती हैं, सो तुम इन्हे वंशसहित जलाओ। अनन्तर अग्निने शार्ङ्गोंको जताय जनायके उनकी प्रार्थना पूरी की, और बढ चटकर खाण्डव वनको जलाने लगे।

खाण्डवदाह पर्व्वमें दोसौ तैंतीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे कौरव्य। इधर वह मन्दपाल तेज प्रकाशमान अग्निसे ऐसा वचन कहने परभी पुत्रोंके लिये सोचमें रहे, किसी प्रकार मनको स्थिर नहीं कर सके। वह पुत्रके लिये मनको उदास कर लपितासे बोले, लपिते! नहीं जानता मेरे बेटे जो चलने नहीं जानते हैं, कैसे हैं! जब वायु चलनेके साथ अग्नि तेज होगा, तब मेरे बेटे अग्निसे बच नहीं सकेंगे, उनकी माता क्योंकर उन बच्चोंको बचा सकेगी? वह तपस्विनी पुत्रोंको बचानेका उपाय न देखकर शोकसे विकल होगी। क्योंकर ऊपर उड़ने में असमर्थ मेरे बच्चोंको लेके हृदयमें दुःख पाय बहुत रोती पीटती दौड़ेगी। हा! बेटा जरितारि क्योंकर जीयेगा? सारिसृक्क क्योंकर प्राण बचावेगा? स्तम्बमित्र क्योंकर बचेगा? द्रोण क्योंकर रक्षा पावेगा? मेरी वह तपस्विनी स्त्री क्योंकर जी सकेगी? हे भारत। महर्षि मन्दपाल वनमें इस प्रकार विलप रहे थे, वह देखकर लपिता ईर्षवश उनसे कहने लगी, कि तुमने जिन पुत्रोंकी बात कही, उनके लिये मत सोचो वे तेजस्वी और वीर्य्यवन्त हैं, अग्निसे उनको भय नहीं है, और तुमने स्वय उन पुत्रोंकी रक्षाके लिये अग्निसे कहा था। महात्मा हुताशननेभी तथास्तु कहके उस बातका मान लिया था। वह लोकपाल होकर कभी कहो बातको विरुद्धता नहीं करेंगे, इस लिये इस विषयमें तुम्हारा चित्त स्वस्थ है, वास्तवसे तुम्हारा मन दस्युके कार्य्यका विरोधी हैं, तुम मेरी शत्रु जरिताहीको स्मरण कर व्याकुल होरहे हो। पहिले जरिता पर तुम्हारा जैसा स्नेह था, अब मुझ पर वैसा नहीं है. जिनके दो पच हैं, वह स्त्री पुत्रादि स्वजनोंका कष्टमें पड़नेसे फेर कोय उनकी उपेक्षा कर सकता है. इसको कभी आत्मपक्षकी उपेक्षा न करना चाहिये, सो अब तुम जिसके लिये शोक करते हो, उस जरिताहीके निकट चले जाओ, मैंने न समझ बूझके जैसे पुरुषकी शरण ली थी, उसीके फलसे अकेली चरा करूंगी।

मन्दपाल बोले, तुम मुझको जैसा समझ रही हो, मैं तिस भावसे नहीं चलता हूं। पर केवल सन्तान उपजानेहीके लिये ऐसे फिर रहा हूं। अब मेरी उपजायी सन्तान कष्टमें पड़ी हैं। जो गये विषयको छोड़ भावीकी आशा करता है, वह मूढ़जन लोगोंका अनादर प्राप्त करता है, सो तुम जो चाहती हो सो करो, मेरा हृदय उन सन्तानोंके लिये बड़ा उदास है, यह प्रज्वलित अग्नि वृक्षको चाटते हुए मेरे उस विकल हृदयमें अमङ्गलका भय और दुःखही को ला रहा है। श्रीवैशम्पायनजी बोले, अनन्तर अग्निके शान्तीके खोताको छोड़ कर आग बढ़नेसे जरिता रोती पीटती हुई तथा पुत्रोंको ढूंढ़ती फिरती वहां आ पहुंची और देखा, कि सब पुत्र वनमें अग्निसे बचे चंगे और कुशलसे हैं। अनन्तर वे माताको देखकर रोने लगे। जरिता उनको निहारकर वार वार आंसू गिराने लगी और उनको हर घड़ी चिल्लाते देखकर धीरे धीरे सबको निकट जाके गले लगाया। हे भारत! इस अवसरमें महर्षि मन्दपाल एकायक जा पहुंचे, उनके पुत्रोंने उनको देखकर आनन्द प्रकाश नहीं किया। वह ऋषि हर पुत्र और जरिताके वार वार सम्भाषण करने लगे, पर उन्होंने भला बुरा कुछभी उत्तर नहीं दिया। आगे मन्दपाल जरिताका नाम लेकर बोले, कौन तुम्हारा बड़ा बेटा, कौन मझला, कौन तीसरा और कौन छोटा है। मैं दुःखवश वार वार तुमसे यह पूछता हूं, तुम क्यों प्रतिउत्तर वा सम्भाषण नहीं करती हो। मैं तुम्हें छोड़के यहांसे चले जा करके शान्ति पा नहीं सका। जरिता बोली, तुमको बड़े बेटे, मझले, तीसरे

बेटे वा छोटे बेटेसे क्या प्रयोजन है ? पहिले तुमने मुझको हर बातमें निकृष्ट देखा था; जिसके पास गये थे, अब उस मधुरहासिनी युवती लपिताहीके पास जाओ। मन्दपाल बोले, नारियोंके लिये सौत वा दूसरे पुरुषके बिना इस लोक में अधिक शोचनीय वैरकी आग जलानेवाला और परलोकमें पुरुषार्थ-नष्टकारी और कुछ दोख नहीं पड़ता। सप्तर्षिके बीचमें स्थित ऋषिश्रेष्ठ महानुभव वसिष्ठ अति पवित्र स्वभावी और सदा पत्नीके प्रेमी और हितकारी कार्य्यमें लगे रहते थे। तिसपरभी सर्व्व लोकोंमें प्रशंसिता सुव्रता अरुन्धतीने उन ऋषिवर वसिष्ठको व्यभिचारका कलङ्क लगाके अनादर किया था। वह कल्याणी अरुन्धतीके वैसी अनुचित चिन्ता करने पर वह धूआं और सूर्य्यसमान प्रकाशवती, विन देखे रूपधरी कभी दीखती कभी न दीखती कुलक्षणोंके समान लोगोंकी आंखोंमें पड़ती है। वसिष्ठ जैसे अरुन्धतीके अनिष्ट नहीं थे; मैं भी तैसेही तुम्हारा अनिष्ट नहीं हूं; मैं केवल सन्तानहीके लिये मिला हूं; ऐसी दशामें तुम मुझ पर अरुन्धतीके समान व्यवहार करती हो,। स्त्रियोंकी भार्य्या कहके कदापि न विश्वास करना चाहिये, उनके पुत्र होनेसे वे पतिको सेवादि कार्य्य अवश्य कर्तव्य करके नहीं समझती। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि, अनन्तर उनके पुत्र उनकी उपासनामें प्रवृत्त हुए, वह भी उन पुत्रोंको ढाढ़स देने लगी।

खाण्डवदाहपर्व्वमें दोसी चालीस अध्याय समाप्त।

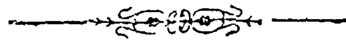
मन्दपाल बोले, मैंने तुमको अग्निसे जल जानेसे बचानेके लिये महानुभव अग्निको जताया था; उस पर उन्होंनभी तथास्तु करके मान लिया था।

मैं उन अग्निकी बात, तुम्हारे माताके धर्म्मनिष्ठा और तुम्हारे वीर्य्यको स्मरण क[र] पहिले यहां नहीं आया था। हे बेटे तुम वेदमें प्रसिद्ध ऋषि हो, अग्निभी तुम[को] जानते हैं। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्त[र] ऋषि मन्दपाल पुत्रोंको समझाय पु[त्र] पत्नीको साथ लेके वहांसे दूसरो ठौर ग[ये]। भगवान अग्निने इस प्रकार श्रीकृष्ण औ[र] अर्ज्जुनको सहायतासे जगत्के हितके निमि[त्त] खाण्डव वनको जलाया। उस स्थानमें [...] और वसाकी नदी सोख कर परम परि[तृप्त] होके अर्ज्जुनके सामने प्रगट हुए। अनन्[तर] भगवान इन्द्र देवोंसे घेरे जाय आकाशमण्डल[से] उतरकर अर्ज्जुन और केशवसे बोले, कि [...] कर्म्म देवतालोग भी सहजमें निमटा न सकते, तुमने उसे पूरा किया है, अब मैं [...] पर प्रसन्न हूं, तुम वर मांगो, यद्यपि पुरु[षके] लिये वह दुर्लभ हो, तौभी तुमको दूंग[ा]। अनन्तर पार्थने इन्द्रजोसे सब अस्त्र मां[गे]। अति द्युतिमान देवराज उन्हें देनेका क[ाल] निश्चय कर बोले, कि हे पाण्डव! [...] भगवान महादेव तुम पर प्रसन्न होंगे, तब मैं तुमको सब अस्त्र दूंगा। हे कुरुनन्दन! जब उन अस्त्रोंके देनेका काल आ पहुंचेगा तब मैं जान लूंगा; मैं तुम्हारो महातपस्यासे तुमको सब अग्न्यस्त्र सब वायव्य अस्त्र और अपने दूसरे अस्त्रोंको भी दे दूंगा; तुम लेना। अनन्तर वासुदेवने प्रार्थना की, कि अर्ज्जुनसे उनका सदा प्रेम बना रहे। देवराजने सुबुद्धिमान श्रीकृष्णको वह वर दिया, प्रभु देवराज इस प्रकार श्रीकृष्ण और अर्ज्जुनको वर देकर हुताशनको सम्भाषण करके देवलोकमें गये। भगवान पावक मृग और पक्षियोंके सहित खाण्डववनको जलाके आत तृप्त होकर पन्द्रह दिनके पीछे बुझ गये। वह रक्त, मेद और मांस खाय परम प्रसन्न

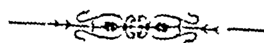
होय श्रीकृष्ण और अर्ज्जुनसे बोले, कि तुम दोनों वीर और पुरुषोंमें श्रेष्ठ हो, मैं तुम-होसे बड़ा सुखपाके तृप्त हुआ, अब आज्ञा करता हूं, कि तुम्हारी गति न रुकेगी, जहां चाहोगे, वहीं जा सकोगे। हे भरतश्रेष्ठ! महात्मा पावक उनको ऐसी आज्ञा देने पर अर्ज्जुन वासुदेव और मयदानव यह तीन एकत्र होकर कुछ काल घूम फिरकर सुन्दर नदी तटमें जा बैठे।

दोसौ पैंतीसवं अध्यायमें खाण्डवदाह पर्व्व समाप्त।

आदि पर्व्व समाप्त।



महाभारत।



सभापर्व्व।

नारायण, नरोत्तम नर, देवी सरस्वती और व्यासजीको प्रणाम कर जय कीर्त्तन करे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि श्रीकृष्णचन्द्र अर्ज्जुन और मयदानव तीनोंके एकत्र होकर उस सुन्दर नदीके तटपर बैठने पर मयदानवने माधवके सामने अर्ज्जुनकी वारम्बार उपासना कर दोनों हाथ जोड़के मीठी बातोंमें कहा, कि हे कुन्तीनन्दन अर्ज्जुन! इन क्रोधयुक्त दैत्य नाशी श्रीकृष्ण और जलाने चाहनेवाले प्रज्वलित अग्निसे आपने मेरी रक्षा की है, सो कहें, मैं पलटेमें आपका क्या उपकार करूं? अर्ज्जुन बोले, कि हे महावीर! तुम्हारे वचनहीसे सब कुछ मिल गया, अब जहां जी चाहे जाओ, इतनाही चाहिये, कि तुम सदा हम पर कृपा रखना और तुम परभी हमारा प्रेम बना रहे। मय बोला, कि हे पुरुषश्रेष्ठ प्रभो! आप जो वचन बोलते हैं, वह तो आपहीके योग्य है, पर तौभी मैं प्रीतिसे आपका कुछ उपकार करना चाहता हूं। हे पाण्डव! मैं शिल्पकार्य्यमें दैत्य और दानवोंका विश्वकर्म्मा हूं, इसी हेतु आपके लिये कुछ किया चाहता हूं। अर्ज्जुन बोले, कि हे अनघ! तुम मृत्युके मुखसे [illegible] राहत जानकर पलटेमें उपकार करना चाहते हो, सो इस दशामें तुमसे कोई कार्य्य करा लेना ठीक नहीं है, पर यहभी नही चाहता, कि तुम्हारी कल्पना व्यर्थ हो, सो तुम श्रीकृष्णचन्द्रका कोई कार्य्य कर दो, उसीसे मेरा प्रत्युपकार हो जायगा। अर्ज्जुनकी आज्ञासे जब मयदानवने वासुदेवसे प्रार्थना करी। तब उन्होंने सोचा, कि इसको किस काममें लगाऊं? पलभर ऐसी चिन्ताकर प्रजापति लोकनाथ श्रीकृष्णचन्द्रने आज्ञा की, कि हे शिल्पदक्ष दानव! तुम मेरा प्रिय कार्य्य करना चाहो, तो युधिष्ठिरके लिये अपनी इच्छानुरूप एक सभा बना दो। वह सभा ऐसी बने, कि जिसे देखकर धरतीभरका कोईभी मनुष्य वैसी दूसरी सभा न बना सके और जिसमे दिव्य, आसुर वा मानवीय, सर्व्व प्रकारके अभिप्राय अर्थात् बनावटकी सब चतुरता दीख पड़ें।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि मयदानवने प्रसन्नचित्तसे वह बात मानके पाण्डवोंके लिये विमानके समान एक सभा-मण्डपको रचि बनायो। अनन्तर कृष्ण और [illegible] [illegible] धर्म्मराज युधिष्ठिरसे [illegible] [illegible]

उसकी यथायोग्य पूजा करी और उसनेभी बड़े सम्मानसे पूजा ग्रहण की। महाराज। सर्व्वकर्म्मके जानकार मयदानव उसकाल पाण्डवोंसे दानव वृषपर्व्वाके विन्दु सरोवरमें किये हुए यज्ञादिकी पुरानी बधा कहने लगा। आगे कुछ काल तक थकावट दूरकर बड़ी चिन्तासे महात्मा पाण्डवोंकी सभा बनानेकी नेव डाली। महानुभव श्रीकृष्ण और युधिष्ठिर आदिके मतसे बड़ा तेजोवन्त मयदानवने शुभ दिनको विधिपूर्व्वक पुण्यकर्म्म कर सहस्रों ब्राह्मणोंको अनेक प्रकारके धन देके पायसादिसे भले प्रकार तृप्त किया, आगे सर्व्व ऋतुओंमें सर्व्व सुख देनेवाली सुन्दर, मनभावनी पांच सहस्र हाथतक फैली सभा भूमि बनायी।

प्रथम अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि पूजनीय जनार्द्दनने खाण्डवप्रस्थमें परम प्रीततिपूर्व्वक, पाण्डवोंसे सब भांति पूजे जाकर कुछ दिन परम सुखसे गंवाया, आगे एक दिन पिताके दर्शनको जाना चाहा। जगपूज्य पद्मनेत्र श्रीकृष्णचन्द्र धर्म्मराज और पृथाको सम्मानित कर अपनी फूफी कुन्तीके दोनों पावोंमें लगे। पृथाने उनको सिर सूघके गलेसे लगाया। आगे अति यशोवन्त भगवान हृषीकेश अपनी सुभाषिणी बहिन सुभद्राको देख आनन्दके आंसुओंसे नेत्रोंको भर उसके पास गये और बड़े प्रेमसे सन्क्षेपमें उसको अर्थ पूरित, हित, उत्तरको अयोग्य सत्य वचन बोले। सुभद्राने भी वार वार उनके पांव लगकर स्वजनोंसे जो कुछ कहना था, कह दिया। वृष्णिवंशी श्रीकृष्णने बहिनको उचित आदर कर द्रौपदी और धौम्यको भेंट की और धौम्यकी यथोचित पूजा कर द्रौपदीको सम्मानित किया और सब प्रकारसे समझाया। आगे एरुपवर विद्वान जनार्द्दन अर्जुनके संग युधिष्ठिरादि भाइयोंके निकट गये। इन्द्र जिस प्रकार अमरवृन्दसे घेरे जाते हैं, वैसेही यदुकुलश्रेष्ठ महाबली श्रीकृष्णचन्द्र पांच भाइयोंसे घेरे गये, अनन्तर नहा धोके शुचि होकर अलङ्कारादि परि यात्राकालके कर्म्मोंको पूरा करनेको इच्छा देव द्विजोंको माला मन्त्र, नमस्कार और नाना प्रकारके सुगन्धित पदार्थोंसे पूजने लगे। यदु कुलश्रेष्ठ सनातन भगवान पुण्डरीकाक्षने स कार्य्य कर लेनेके पीछे बाहरकी कक्षामें निकलके पूजनीय ब्राह्मणोंसे दधि भरे पात्र, फल और अक्षतसे स्वस्ति कहलाकर धन देके परिक्रमा की। आगे गदा, खड्ग, शार्ङ्ग आदि अनेक अस्त्रोंसे सजे सजाये, शैव्य तथा सुग्रीवादि चार घोड़ेवाले, कामगामी, गरुड़ध्वज सुवर्ण रथ पर चढ़के शुभ दिनको, शुभ संयोग शुभमुहूर्त्त पर पधारे। कुरुनाथ युधिष्ठिर उनके प्रेमसे पीछे रथ पर चढ़ और सारथिवर दारुकको अलग बैठाके आपही रथकी रास थाम ली। दीर्घभुज अर्ज्जुन भी रथ पर चढ़के श्रीकृष्णको परिक्रमा दे सुवर्ण दण्डयुक्त श्वेत चंवर डोलाने लगे। प्यारे शिष्योंके पीछे पीछे जानेसे गुरु जिस प्रकार सुशोभित होते हैं, शत्रुनाशी नारायण भाइयोंके पीछे चलनेसे वैसी शोभा पाने लगे। अनन्तर गोविन्दने अर्ज्जुनको बड़े प्रेमसे गले लगाकर युधिष्ठिर तथा भीमसेनकी पूजा की और नकुल सहदेवकोभी गले लगाके लाड़ दुलार किया। युधिष्ठिर आदि नेभी कृष्णको गले लगाया, केवल दोनों माद्रीकुमारोंने उसको प्रणाम किया। इस प्रकारसे आधा योजन पथ जानेके पीछे शत्रुपुर जीतनेवाले धर्म्मके जानकार श्रीकृष्णने युधिष्ठिर को पुकार कर यह कहके, कि "आप लौट जाय" उनके दोनों पांव पकड़ लिये। धर्म्मराज युधिष्ठिरने शिर सूघके यादवश्रेष्ठ कमललोचन केशवको उठा कर जानेको आज्ञा दी। इसके अनन्तर मधुसूदन "फिर आऊंगा"

त्यादि यथायोग्य सम्भाषण पूर्वक अति कष्टसे उनको निवृत्त कर ऐसे प्रसन्नमनसे अपनी पुरीको गये, कि जैसे इन्द्र अमरावतीकी ओर जाय। जितनी दूर आंख चली पाण्डवोंकी दृष्टि श्रीकृष्ण परही जमी रही और अति प्रेमके कारण उनका मन श्रीकृष्णके पीछे पीछे चला, पर किसी प्रकार उनकी आंख और मन नहीं अघाया। प्रियदर्शन श्रीकृष्ण शीघ्रही उनकी दृष्टिके बाहर होगये। श्रीकृष्ण पर मन लगाये हुए पुरुषोंमें श्रेष्ठ पाण्डवगण इच्छा न रहने परभी अपने नगरको शीघ्र लौटे। तब देवकीनन्दन श्रीकृष्णभी गरुड़ समान दारुकके साथ रथ पर चढ़के द्वारकामें जा पहुंचे। सात्त्वत वीर सात्यकि उनके पीछे पीछे गये।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अक्षय शीलयुक्त धर्मराज युधिष्ठिर भाइयोंके साथ लौट करके बन्धुओंसे घिरे जाय पुरीमें गये। आगे बन्धुओं, भाइयों और पुत्रोंको विदा कर पुरुषवर धर्मराज द्रौपदीके साथ एकान्तमें आनन्द भोगने लगे। इधर कमलनेत्र केशवभी प्रसन्न मनसे अपने सुन्दरपुरमें प्रवेशपूर्व्वक यदुश्रेष्ठ उग्रसेनादिसे पूज जाय और वृद्धपिता वसुदेवजी यशस्विनी माता और ज्येष्ठ भ्राता बलदेवजीको प्रणाम कर विराजने लगे। अनन्तर प्रद्युम्न, शाम्ब, निशठ, चारुदेष्ण, गद, अनिरुद्ध, भानु आदि पुत्रोंको गले लगाय वृद्धोंकी आज्ञासे रुक्मिणीजीके भवनमें जा विराजे।

दूसरा अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर मय दानव विजयियोंमें श्रेष्ठ अर्जुनसे बोला, कि आपकी आज्ञा हो, तो अब विदा लेकर चला जाऊं पीछे आऊंगा। पहिले मैंने कैलासके उत्तर मैनाक पर्व्वतके निकट दानवोंके यज्ञकालमें विन्दुसरोवरके पास एक विचित्र सुन्दर मणि-जड़ित भाण्ड बनाया था, उस समय उसे सत्य प्रतिज्ञा करनेवाले वृषपर्व्वाकी सभामें रखा था। हे भारत! यदि वह आज तक विद्यमान हो, तो मैं मैनाकसे लौटते समय उसे लेआऊंगा और आपकी यश-बढ़ावनी मनभावनी सर्व्वरत्नसे सुहावनी विचित्र सभा बनाऊंगा। हे कुरुनन्दन! जान पड़ता है, कि उस विन्दुसरोवरमें एक बड़ी कठोर गदाभी पड़ी है। राजा वृषपर्व्वाने उस गदाओंके समान, बड़ा भार सहने योग्य, सुवर्ण-विन्दु जटित, शत्रुनाशी उस कठोर गदासे शत्रुओंको हननकर उसे वहां गाड़ रखा है। गाण्डीव जैसे आपके योग्य है, वह गदाभी वैसेही भीमसेनके योग्य है। फिरभी वरुणजीका देवदत्त नामक बहुत बजनेवाला बड़ा भारी शङ्खभी उस सरोवरमें है; इसका सन्देह न कीजिये, कि मैं वह सब लाके आपको दूंगा। वह असुर पार्थसे ऐसा कहके पूर्व्वोत्तर ओरको पधारा। कैलासके उत्तर मैनाकपर्व्वतके निकट हिरण्यशृङ्ग नामक अनेक मणियोंसे भरा, बड़ा भारी गिरि है, वहीं सुन्दर विन्दुसरोवर विद्यमान है। उस सरोवरके तटपर भगीरथीने श्रीगङ्गाजीके दर्शनके लिये बहुत वर्ष गंवाये थे। हे भरतश्रेष्ठ! उस स्थानमें सर्व्वभूतोंके अधीश इन्द्रजीने सौ महायज्ञ करके शोभाके लिये पहिले कभी न बने मणिके यूप और सोनेके चैत्य बना रखे है। वही यज्ञ कर उन शचीनाथने रिद्धि-सिद्धि लाभ की थी। अति तेजोवन्त सनातन भूतनाथ महादेव सर्व्व लोकोंको रचके उस स्थानमें विराजमान होकर सहस्रों भूतोंसे पूजे जाते हैं। उस स्थानमें नर नारायण, ब्रह्मा, यम और रुद्र सहस्र युगोंके अन्त होने पर यज्ञ किया करते हैं। वासुदेव केशवने धर्म्म संस्थापन करनेके लिये उस स्थानमें बहुत वर्ष तक सदा श्रद्धा सहित यज्ञ

किया था, और उस स्थानमें उन्होंने सुवर्ण-मालायुक्त यूप चमकीले चैत्य और दूसरी सहस्रों बनी बनायी वस्तु दान दी थीं। हे भरतनन्दन! मयदानवने वहां जाके वृषपर्व्वाकी अधिकार की हुई गदा, शङ्ख और सभा बनानेके योग्य जितनी स्फटिककी सामग्री थी, सब ले ली। यक्ष और राक्षस लोग जो अनेक धनकी रखवारी करते थे, उस मयासुरने वहां जाके वह भी ले लिया। वह सब ले कर असुरने तीनों लोकोंमें प्रशंसित, मणिकी उस अप्रतिम सुन्दर सभाकी रचा और भीमको वह अच्छी गदा तथा अर्जुनको देवदत्त नामक वह बड़ा भारी शङ्ख दिया। महाराज! सुनीले वृक्षोंसे सुहावती वह सभा चारों ओर पांच सहस्र हाथ फैली बनी। उस सभाने सूर्य चन्द्रमाकी सोभाके समान चमकता अति सुन्दर स्वरूप प्राप्त किया। अपनी प्रभाके प्रभाव से सूर्यकी तेज-प्रभाको भी लजाया। लोकोंमें न मिलने-वाले तेजसे मानो प्रज्वलितकी भांति आकाश-मण्डलको ढंप लिया। वास्तवमें दक्ष सुमति मयने जैसी लम्बी चौड़ी, अति निर्म्मल, थकावट मिटावनी, मनोहररूपिणी, अनेक चित्रोंसे सुहावनी, रत्नप्राचीर वेष्टित बहुमूल्य सभा बनायी। वैसी न तो श्रीकृष्ण चन्द्रकी न ब्रह्मा-जीकी और न किसी दूसरे सुरकी थी। आकाश में उड़नेवाले, महावली, भारी देहधारी लालनेत्र शुक्तिकर्णवाले, अस्त्र लिये हुए आठ सहस्र किङ्कर नामक भयावने राक्षस मयकी आज्ञासे सभाकी रखवारी करने और वहने ढोनेमें लगे थे। उक्त सभामें मयने एक बड़ा सरोवर खुदवाया। उस सरोवरमें मणिके मृणाल और सुनीले कह्लार कदम्ब सुहाते थे और भांति भांतिके पक्षी इधर उधर खेल कूद रहे थे खिले कमल और सुनहली मछली तथा कछुओंसे सुहावने चित्रित स्फटिककी सीढ़ी-वाले मन्दपवनसे आन्दोलित, मोती विन्दुओंसे खचित, महामणि शिलापट्टकी वेदीसे चारो ओर सुमण्डित, मणि रत्नोंसे सुशोभित उस अमल जालको देखकर कोई कोई राजकर्म्म-चारी भ्रमसे उसमें गिर गये। उस सभाके चारो ओर फूलवाले, नील, घनी छायावाले अनेक भांतिके मनहरनेहारे वृक्ष और सुगन्धी वन तथा हंस, कारण्डव तथा चकवोंसे भरे तालाब इधर उधर सुहाते थे। गन्धवहनेवाली पवन सर्व्वत्र जलमें उपजे कमलोंकी सुगन्ध ले ले पाण्डवोंकी सेवा किया करती थी। महाराज! मयने चौदह महीनेमें ऐसी अच्छी सभा पूरी बनाकर धर्म्मराजको समाचार दिया।

तीसरा अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर नरनाथ युधिष्ठिरने मधुयुक्त, घृतमिश्रित पायसान्न, बहुविध फल मूल और हरिण शूकर आदिके माससे दशसहस्र ब्राह्मणोंको यथायोग्य भोजन कराके सभामें प्रवेश किया। महाराज! उन्होंने नाना दिशाओंसे आये विप्रवरोंको तिलौदन, जीवन्तीशाक, हविष्यान्न मासके अनेक पकवान इत्यादि बहुविध चावने, चूसने चाटने, पीनेकी अपरिमित सामग्री और कोरे चीर, गहनोंसे प्रसन्न किया और उनमेंसे हरेकको सहस्र गौ दान दी। हे भरतनन्दन! उस कालमें पुण्याह ध्वनि अर्थात् "आज कैसा शुभदिन है" लोगोंका यह आनन्द कोलाहल आकाशमें गूजने लगा। कुरुश्रेष्ठ युधिष्ठिरके बाजे और फूल धूपादिकी मनहरनी गन्धसे देवोंकी पूजाकर सभामें घुसने पर वहां मल्ल, भट, नट, सूत और स्तुतिगाने वाले अपना अपना गुण प्रगट कर उनकी उपासना करने लगे।

पञ्च पाण्डव ऐसी भीड़भड़ाके से उक्त सभाकी प्रतिष्ठा कर अमरावतीमें बैठे देवराजकी भांति परम सुखसे वहां विराजने लगे। वहां

अनेक देशोंसे आये नरेश और ऋषि पाण्डवोंके साथ बैठते थे। असित,देवल, सत्य, सर्पमाली, महाशिरा, अर्व्वावसु, सुमित्र, मैत्रेय, शुनक, बलि, वक, दाल्भ्य, मूलशिरा, कृष्णद्वैपायन, शुक, सुमन्त, जैमिनि, पैल, मेरे सहित व्यास जीके सब शिष्य, तित्तिरि, याज्ञवल्क्य लोमहर्षण और उनके पुत्र, अप्सुहोम्य, धौम्य, अणी-माण्डव्य कौशिक, दामोष्णीश, स्वैवलि, पर्णाद, वरजानुक, मौञ्जायन वायुभक्षी पारा-शर्य्य,सारिक,वलीवाक,शिलीवाक,सत्यपाल, कृत-श्रम,जातुकर्ण्य, शिखावान, आलम्ब, पारिजातक, महाभाग पर्व्वत, महामुनि मार्कण्डेय, पवित्र-पाणि, सावर्णि, भालुकि, गालव, जङ्घाबन्धु, रैभ्य, कोपवेग, भृगु, हरिबभ्रु, कौण्डिन्य बभ्रुमाली, सनातन काक्षीवान, औशिज, नाचिकेत, गौतम पैङ्ग, वराह, शुनक, महातपा शाण्डिल्य कण्डिन, वेणुजङ्घ, कालाप और कठ, धर्म्मके जानकार संयतात्मा और जितेन्द्रिय यह सब और वेद वेदान्तमें पण्डित, धर्म्मज्ञ और पवित्र दूसरे अनेक ऋषिसत्तम बहुविध विशुद्ध पुण्य-कथा कहकर धर्म्मराजकी उपासना करते थे। और श्रीमान महात्मा धर्म्मात्मा मुञ्जकेतु, विवर्द्धन, संग्रामजित, दुर्म्मुख, वीर्य्यवान उग्रसेन पृथ्वीनाथ कक्षसेन, अपराजित क्षेमक, काम्बोजराज कमठ, बड़े पराक्रमी कम्पन (जिन्होंने कालकेयआदि असुरकुलनाशी वज्रधारी देवराजकी भांति, अकेले बलसे उठ मदसे पटे शस्त्रोंमें छटे तेजसे विकटे यवनोंको कंपाया था) मद्रनाथ जटासुर, क्रान्त, किरात-राज पुलिन्द,अङ्ग, वङ्ग पुण्ड्रक पाण्ड्य,उड्रराज, अन्ध्रक सोमल, शत्रुनाशी शैव्य, किरातराज सुमना, यवननाथ चाणुर, देवराज, भोज, भीमरथ, कलिङ्गराज श्रुतायुध, मगधनाथ जयत्सेन, सुकर्म्मा, चेकितान, शत्रुनाशी पुरु-केतुमान, वसुदान, वैदेह कृतक्षण, सुधर्म्मा, अनिरुद्ध, अति बलवन्त श्रुतायु, दुर्द्धर्ष जनूप-राज, सुदर्शन क्रमजीत, पुत्रसहित शिशुपाल, करूषाधिप, वृष्णिवंशके कठोर देवरूपी कुमारगण, आहुक, विपृथु, गद, सारण, अक्रूर, कृतवर्म्मा, शिनिपुत्र सत्यक, भीष्मक, अकृति वीर्य्यवन्त द्युमत्सेन, बड़े चापधारी कैकेयगण और सोमकपुत्र यज्ञसेन यह सब और विज्ञोंके जाने दूसरे बहुतेरे क्षत्रियभी धर्म्मराज युधिष्ठि-रकी उपासनामें लगी रहते थे। महाराज। प्रद्युम्न, शाम्ब, युयुधान, सात्यकि, सुधर्म्मा, अनिरुद्ध, नरश्रेष्ठ शैव्य आदि वृष्णिनन्दनगण और अति पराक्रमी जितने राजकुमार मृगछाल पहिरे अर्ज्जुनसे अस्त्र सीखते थे, वे भी उस सभामें उपस्थित रहते थे। इनके उपरान्त धनञ्जयके सखा तुम्बुरु, अमात्य सहित चित्र-सेन, और तालल्यमें रटे, गानेबानेमें छटे गन्धर्व्व, किन्नर, और अप्सरा निकट रहती थीं। लयस्थान तथा प्रमाणके सुजान सहामन किन्नर और गन्धर्व्व तुम्बुरुकी आज्ञा पाय दिव्यतानसे नियमपूर्व्वक गाय बजाय पाण्डव और ऋषियोंको उस सभामें प्रसन्न करते थे। स्वर्गमें देवगण जैसे ब्रह्माकी उपासना करते हैं, वैसे सत्य प्रणाठाने, व्रतमाने पुरुषगण उस सभामें बैठे युधिष्ठिरकी उपासना करते थे।

चौथा अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे महाराज! महात्मा पाण्डवगण और प्रधान प्रधान गन्धर्व्व उस सभामें बैठे थे, कि ऐसे समयमें सकल वेदोपनिषदोंके जानकार, सुरोंके पूजनीय, इति-हास तथा पुराणोंके जाननेवाले, अतीत कल्पके विशेषज्ञ, और धर्म्मके तत्त्वज्ञ, शिक्षा कल्प-व्याकरणादि षड़ङ्ग शास्त्रोंमें असाधारण ज्ञानी परस्पर विरुद्ध विधिवाक्योंको एक करनेवाले, वाक्योंको अलग अलग कर देने और एक कर्म्ममें अनेक धर्म्म सन्निवेश करनेमें [illegible] अधिकारके अनुसार सम्बन्ध [illegible]

विषयमें बड़े पण्डित, वाग्मी अति प्रगल्भ स्वभावी, मेधावी, स्मृतिमान, नीति शील, कवि, भले बुरेको अलग करनेमें ध्यान रखने वाले, प्रत्यक्ष, अनुमानादि प्रमाणोंसे वस्तुओंके विचारक, प्रतिज्ञा हेतु आदि पाच प्रकारके अङ्गयुक्त वाक्योंके गुण दोष जाननेवाले, बृहस्पतिजीके भी बात उठाने पर उनकी बातोंके क्रमसे उत्तर देनेमें समर्थ, धर्म्मार्थ काम मोक्ष चारों बर्गोंके सारके जानकार, योग-बलसे क्या ऊर्द्ध क्या अध, क्या तिर्य्यक सम्पूर्ण भूमण्डलके प्रत्यक्षदर्शी, वेदान्त-विचार और-योगविभागके जाननेवाले, झगड़ा उठा कर देव और असुरोंको निर्व्वेदयुक्त करनेके सम्पूर्ण उद्यत सन्धिविग्रहादिके तत्त्वज्ञ, अनुमानसे कार्य्याकार्य्य विभागमें अभिज्ञ, सन्धिविग्रहादि बड़े गुणी, विधिके उपदेश करनेवाले, सर्व्व-शास्त्रोंमें पण्डित, युद्ध और नृत्यगीतादिकी चाहनेवाले, किसी कार्य्यसे चित्तको न हटाने-वाले, और दूसरे सब गुण रखनेवाले, आत्म तत्त्व ढूढ़नेवाले, बड़े तेजस्वी महर्षि नारदजीने पारिजात, धीमान रैवत, सुमुख और सौम्य, इनके साथ लोकमण्डलमें घूमते घामते हुए पाण्डवोंके दर्शनके लिये प्रसन्न होके मनके मानस तेज चालसे उनकी उस सभामें आकर जय आशीससे धर्म्मराजकी जयजयकार तथा पूजा की। ऋषिका आते देखकर सर्व्व धर्म्मके जानकार अति नम्रव्यवहार धर्म्मकुमारने एकायक अनुजोंके समेत खड़े हाय प्रीति दशाय शिर झुकाय प्रणाम कर पाद्य, अर्घ, योग्य आसन गो, मधुपर्क, बहुविधि रत्नादि सर्व्व-कामनाओंसे उनकी पूजा की। वह भी युधिष्ठिरसे योग्य पूजा पाय प्रसन्न हुए। वेदपारग महर्षि श्रीनारदजी पाण्डवोंसे पूजे जाय युधिष्ठिरसे धर्म्मार्थ-कामयुक्त यह नीचे लिखे प्रश्न किये।

श्रीनारदजी बोले, महाराज! तुम्हारा धन सञ्चित और उचित कार्य्यमें व्ययित तो हो रहा है? तुम्हारा मन धर्म्म पर बना तो है। और इससे चित्त ऊबता तो नहीं। हे नरनाथ। तुम्हारे पुरपे अच्छी, मझली और बुरी प्रजासे जैसे धर्म्म अर्थकी रीतिसे अच्छा बर्त्ताव करते थे, तुमभी वैसेही करते तो हो, अर्थके लिये धर्म्मको और धर्म्मके लिये अर्थको हानि तो नहीं पहुंचाते? अथवा हालग सुखदायी कामके वशमें हो जाय धर्म्मार्थ दोनोंको हनते तो नहीं? हे परोपकारी जय-निहारी कालविहारी युधिष्ठिर! तुम योग्य कालमें भागकर तुल्य रीतिसे धर्म्म अर्थ कामकी सेवा तो करते हो? हे अनघ! वक्तृता प्रगल्भता आदि छः राज-गुण, साम दानादि सात उपाय और बलाबल द्वारा राजाओंके चौदह भांतिके दोषोंको भले प्रकार जानते हो कि नहीं? हे जयशील! अपनी और परायी दशाको समझ बूझकर कार्य्य तो करते हो? और शत्रुओंसे हेल मेलकर कृषि वाणिज्यादि आठ प्रकारके कर्म्म कर लेते तो हो? हे भरतकुल प्रदीप! तुम्हारी दुर्गनाथादि सप्तविध प्रकृति शत्रुओंसे मोहित होकर अथवा आढ्य धनके व्यसनी तो नहीं बनी? वे सब भली भांति तुम्हारी प्रेमी तो बनी है? छली निडर दूतोंसे, तुमसे अथवा तुम्हारे मन्त्रियोंसे तुम्हारी परामर्श प्रकाश तो नहीं होती? शत्रु, मित्र और विरागी जो कुछ करना चाहते हैं, वह जान तो लेते हो? उचित कालमें सन्धि-विग्रह तो करते हो? उदासीन और मध्यस्थों पर मध्यस्थताको अवलम्बन तो करते हो? हे वीर-वर! निर्द्दोष, काज अकाजके समझदार, प्यारे, तथा अपने समान सुवंशी वृद्धोंको मन्त्रीके पदों पर बैठाया तो है? क्योंकि, हे भारत! मन्त्रही राजोंकी जयकी जड़ है। सब शास्त्रोंमें पण्डित मन्त्रीगण मन्त्र छिपाकर भली रीति तुम्हारे राज्यकी रक्षा तो करते हैं? तुम

निद्राके अधीन तो नहीं होते? उचित समय पर जागते तो हो? हे अर्थज्ञ! शेष निशिमें उचित अनुचितकी चिन्ता तो कर लेते हो? अकेले अथवा अनेकोंके साथ युक्ति तो नहीं करते? तुम्हारी गुप्तयुक्ति तो राज्यमें नहीं पड़ती? थोड़ी चेष्टासे मिलनेवाले, पर बड़े फलदायी, ऐसे कार्य्योंको शीघ्र आरम्भ तो करते हो? किसी हेतुसे इसमें बाधा तो नहीं डालते? सब कार्य्योंका अन्तभाग तुम्हारी दृष्टिमें पड़ता और निःशङ्क होता है कि नहीं? आरम्भ कर उन सब कार्य्योंको त्यागना तो नहीं पड़ता? अथवा उन सबोंका प्रबन्ध बिगड़ता तो नहीं? विश्वासी, अलोभी, प्राचीन, क्रमके जाननेवाले कर्म्मचारियोंसे वह सब किये तो जाते हैं? महाराज! लोग तुम्हारे किये गये वा किये जाते हुए कार्य्योंको जान तो लेते हैं? हे वीरवर! जो सब कार्य्य नहीं हुए हैं, उन्हें तो किसीने नहीं जाना? सर्व्व शास्त्रोंमें पण्डित आचार्य्यगण कुमार और युद्धके मुखियोंको धर्म्मकी शिक्षा तो देते हैं। सहस्रों मूर्खोंके बदले एक पण्डितको मोल लेते हो। कि नहीं? क्योंकि पण्डित लोग बड़ी विपतसेभी उद्धार करके मङ्गल करते हैं। तुम्हारे दुर्ग, धन, धान्य, रत्न, अस्त्र, शस्त्र, जल, यन्त्र, दक्ष, शिल्पीगण और चापधारियोंसे भरे पूरे तो हैं? मेधावी, शूर, जितेन्द्रिय और चतुर एकही राजमन्त्रीसे भी राजा वा राज-कुमार बड़े श्रीमान हो सकते हैं, सो ऐसा कोई मन्त्री आपके यहा है तो? हे शत्रुमथन परस्परके अनजानी तीन तीन प्रणिधियोंसे विपक्षियोंके पुरोहितादि अठारह तीर्थ और निज पक्षके पन्द्रह तीर्थ जान तो लेते हो? शत्रुओंके न जाननेसे सदा सावधान और यत्नवान होकर उनका सब हाल जान तो लेते हो? विनयी, सुवंशी बहु नामी ... गर्व रहित और महानुभाव, पुरोहितो-

का तुम सदा आदर तो करते हो? कोई सरल-चित्त विधिदर्शी जन तुम्हारे अग्निहोत्र कार्य्यमें नियुक्त होकर यह तो जताते हैं, कि कब हवन हुआ और कब करना चाहिये? जो तुम्हारे ज्योतिष-शास्त्रके प्रतिपादक हैं, वह सामुद्रिक-शास्त्रके अनुसार अङ्ग परीक्षामें पण्डित, दैवी अभिप्रायोंके जानकार और दैवादि विपत्तिके रोकनेमें दक्ष तो हैं? उत्तम, मध्यम और निकृष्ट नौकर तो रखे गये? कुलकी परम्परासे चले आते हुए, अकपट अमल-चित्त श्रेष्ठ मन्त्रियोंको श्रेष्ठ कार्य्योंमें नियुक्त तो कर दिया है? तुम्हारे कड़े दण्डसे प्रजा चिढ़ती तो नहीं? मन्त्री लोग तुम्हारी आज्ञासे राज्य-शासन तो करते हैं? याजक जैसे पतित जनका और नारियां कड़े स्वभावी स्वेच्छाविहारी पतिका अनादर करती हैं, तैसे मन्त्री लोग तुम्हारा अनादर तो नहीं करते? तुम्हारा सेनापति प्रगल्भ, शूर, मतिमान, धीरजवान, शुचि, सुवंशी, प्यारा और काममें दक्ष तो है। अपने सैनिकोंमें सर्व्व युद्धमें दक्ष, प्रगल्भ, शुद्ध चित्त, पराक्रमी बड़े बड़े जनोंका आदर-पूर्व्वक सम्मान तो करते हो? सदा सेनाओंका पावना अन्न और वेतन ठीक समयमें तो देते हो? काल बिताकर उनको पीड़ा तो नहीं पहुंचाते? क्योंकि उचित समय पर उनको अन्न वेतन न देनेसे वे कुगतिमें प्रभुको हानि पहुंचा सकते हैं, उस अनर्थको पण्डितलोग बड़ा अनर्थ कहते हैं। सुवंशी और प्यारे बड़े बड़े जन तुम्हारे हितके निमित्त युद्धमें प्रसन्न मनसे प्राण छोड़नेको प्रस्तुत तो हैं? शासनाधीन कोई कामात्मा जन अकेला बहुविध युद्धलीला स्वेच्छासे करने तो नहीं पाता? कोई कोई पुरुषार्थ प्रकटकर अपना कर्म उत्तम बनाके तुमसे बहुतसम्मान अथवा दूना अन्न और वेतन तो पाते हैं? विद्या विनयसे युक्त, ज्ञानके

पक्के लोगोंको तुम गुणके अनुसार उचित पारितोषिक तो देते हो? हे भरतश्रेष्ठ! तुम्हारे लिये प्राण छोड़े अथवा विपदमें पड़े परिवारोंको पालते पोषते तो हो! भय पाये वा शक्ति खोये अथवा युद्धमें हारे, शरण लिये हुए शत्रुओंको पुत्रके समान पालते तो हो। हे पृथ्वीनाथ! धरती भरके सब लोग तुमको पक्षपातसे रहित और पिता माताकी भांति अनवरावने जानते तो है? शत्रु व्यसनी बना है, सुनके तुम मन्त्र, कोष और उत्साह इन तीन प्रकारके बलकी भली भांति आलोचना कर उस पर शीघ्र चढ़ जाते हो कि नहीं? हे अरिन्दम। पार्ष्णि, ग्राह आदि बारह प्रकारके मण्डल क्षय निश्चय और पराजय विशेष रूपसे जानके और सैनिकोंका अग्रिम वेतन चुकाकर दैवादि व्यसन सब भली प्रकार आलोचना करके योग्य समयमें युद्धयात्रा तो करते हो? हे शत्रुतापन। शत्रुराज्यमें आपसका बिगाड़ उभाड़नेके हेतु बड़े बड़े सैनिकोंको योग्यताके अनुसार शत्रुकी बिन देखी बनी बनायी अच्छी वस्तुका पारितोषिक तो देते हो? हे पृथापुत्र। पहिले अपनेको जयकर जितेन्द्रिय होय पीछे अजितेन्द्रिय प्रमत्त शत्रुको परास्त करना तो चाहते हो? शत्रुओं पर चढ़ जानेके पहिले भली प्रकार अनुष्ठान किये हुए साम, दान, भेद और दण्ड यह चार उपाय विधिपूर्वक प्रयोग तो किये जाते हैं? अपने राज्यकी भली रीतिसे रक्षा करके पीछे शत्रुओंको जय करनेके लिये बल विक्रम प्रगट तो करते हो? जय करके उनकी रक्षा तो करते हो? हे शत्रुनाशि! अष्टाङ्ग युक्त चार प्रकारके बल रखती हुई सेना बड़े बड़े योधोंसे सिखायी जाकर तुम्हारे शत्रुको मारने तो जाती हैं? हे महाराज! पराये राज्यमें अनाज काटने और दुर्भिक्षके कालको न त्याग करके युद्धमें शत्रुओंकी हिंसा तो करते हो? अपने और पराये राज्यमें बहुविध नौकर चाकर बहुविध काममें नियुक्त रहकर उन कामोंको करते और एक दूसरेको बचाते तो हैं? हे महाराज। तुम्हारे विश्वासी जन भोजनकी सामग्री और वस्त्र चन्दनादि तो एकत्र रखते हैं? कोष शस्यगृह, वाहन द्वार अस्त्र और अन्तःपुर यह सब तुम्हारे मङ्गल चाहने-वाले भक्त नौकरोंसे रखे तो जाते हैं? हे प्रजानाथ! रसोइया आदि भीतरी और सेनापति आदि बाहरी जनोंसे पहिले अपनी रक्षा कर पीछे पुत्रादि आत्म जनोंसे उनकी और उनमें परस्परसे परस्परकी रक्षा तो करते हो? दिनके पहिले भागमें तुम्हारा पान, सुन्दरी, चौसड़ आदिके अर्थ व्ययका हाल कोई जान तो नहीं सकता। तुम्हारी आयके आधे, तीसरे वा चौथे भागसे तुम्हारा व्यय पूजता तो है? सदा धन धान्य देकर गुरु, वृद्ध, वणिक, शिल्पी, शरणागत और कुदशामें पड़े जनों पर कृपा दिखाते तो हो? आय व्ययमें लगी लेखक और गणक नित्य तुम्हारी आय व्ययका हिसाब लगाते तो है? विषयमें चित्त न लगाये हितैषी प्यारे कर्म्मचारी बिनादोष कर्म्मसे निकाले तो नहीं जाते? हे भरतनन्दन! भले, बुरे और मध्य जन भली प्रकार जाचे जाय योग्य कर्म्ममें नियुक्त तो होते है? हे प्रजापते। चोर लोभी, शत्रु अथवा बालक तो तुम्हारे कार्य्यमें नहीं नियुक्त होते? चोर, लोभी, कुमार वा नारी अथवा तुमसे राज्यमें कोई बखेड़ा तो नही उठता तुम्हारे राज्यके किसान तो सदा प्रसन्न रहते हैं? बड़े बड़े ताल जलसे लबालब होकर विभागके अनुसार ठौरठौरमें बने तो हैं? कृषि-कार्य्यमें वृष्टिका कोई बड़ा प्रयोजन तो नहीं है? हर सैकड़ेमें चौथा भाग बढ़ती लेकर कृपाचित्तसे उनको ऋण तो देते हो? तुम्हारी कृषि, वाणिज्य, पशुपालन और ऋणदान यह चार प्रकारकी वार्त्ता तो सुचरित जनोंसे भली

प्रकार की जाती है? हे बेटा। वार्त्ताके प्रबन्ध रखनेहीसे लोग सुखी हो सकते हैं, शूर और ज्ञानी पांच मनुष्य पुरवासी पालन, दुर्ग-पालन, वणिक् पालन, कृषिका देखना भालना और दुष्टोंका शासन इन पांच कार्य्योंमें नियुक्त रहकर एकमतिसे तुम्हारे जनपदोंके मङ्गलका प्रबन्ध करते तो हैं? राज्यरक्षाके लिये ग्राम नगरके समान और प्रान्त भाग ग्रामके समान बने हैं कि नहीं? नित्य समाचार आदि भेजनेसे उन सब विषयोंका भार तुम पर पड़ता है कि नहीं। चोर तुम्हारे पुरको छनकर सम और ऊंची नीची सब ठौरमें लूट मचावें तो सैनिक लोग उनको पकड़ियाते तो हैं? तुम स्त्रियोंको सान्त्वना दे उनकी रक्षा तो करते हो? उनकी बातोंका विश्वास अथवा उनसे कोई गुप्त बात तो नहीं कह देते? हे महाराज! किसी विपतको आती हुई सुन और उसकी चिन्ता कर अन्तःपुरमें सब चन्दनादि प्यारी वस्तु लगाके सो तो नहीं रहते? रात्रिके दूसरे और तीसरे भागमें सुखसे सोकर शेष अंशमें उठकर धर्म्मार्थकी चिन्ता तो करते हो। हे पाण्डुपुत्र? उचित समयमें उठके वस्त्र पहनकर समयके जानकार मन्त्रियोंके साथ दर्शन चाहनेवाले जनोंको नित्य भेंट तो करते हो? हे शत्रुमथन! लालाम्बर पहिरे गहनोंसे सजे जन अस्त्र लिये रक्षाकारीके निमित्त तुम्हारी दहिनी ओर खड़े तो रहते हैं? [illegible] दण्डयोग्य क्या पूज्य जन, क्या प्रिय, क्या अप्रिय सबोंका आदर कर यमराजकी भांति ठीक व्यवहार तो करते हो? हे पृथ्वीनाथ! नियम और पथ्यसे शारीरिक पीड़ा और वृद्धोंकी सेवासे मानसिक पीड़ासे बचने [illegible] निदान पूर्व रूपादि अष्टाङ्ग चिकित्सामें [illegible] और [illegible] तथा प्रेमयुक्त [illegible] सदा [illegible] रक्षामें [illegible] रहते हैं? हे [illegible]

वादी, प्रतिवादियोंके आने पर अभिमान वा लोभ मोहसे उनके कार्य्यमें उचित ध्यान नहीं देते? विश्वास वा प्रेमसे जो तुम्हारी शरण लेते हैं तुम लोभके मारे उनकी वृत्ति तो नहीं उड़ाते? तुम्हारे पुरवासी वा राज्यवासी जन विपक्षियोंसे क्रीत होकर दुर्बलशत्रु एकमतिसे तुमसे कोई विरुद्ध व्यवहार तो नहीं करते? हे युधिष्ठिर! तुम्हारे बलसे तथा प्रबल तन्त्र वा मन्त्र और बल दानोंसे पिसे तो रहते हैं? बड़े बड़े भूपाल तुम्हारे प्रेमी तो बने हैं? तुम्हारा आदर पाय वे तुम्हारे मङ्गलके लिये प्राण तक देनेको कमर कसते हैं कि नहीं? तुम सब विद्याओंमें गुणके अनुसार ब्राह्मण और साधुओंको पूजते तो हो? क्योंकि वैसी पूजा तुम्हारा मङ्गल करनेवाली है। पुरुषाओंके किये वेदमूलक धर्म्म कर्म्ममें तुम्हारी भक्ति तो बनी है? वे जैसा करते थे, तुमभी वैसा करनेका प्रयत्न कर उस काममें हाथ तो डालते हो? गुणशाली ब्राह्मण तुम्हारे सामने नित्य स्वादिष्ट और गुणकारी सामग्री भोजन करते और दक्षिणा पाते तो हैं? तुम जितेन्द्रिय होकर एक मनसे वाजपेय और पुण्डरीक आदि यज्ञोंको पूरा करनेका प्रयत्न तो करते हो? वृद्ध, ज्ञाति गुरु, देवता और तपस्वियोंको तथा कल्याणदायी चैत्यवृक्ष और ब्राह्मणोंको नमस्कार तो करते हो? हे अनघ! तुम किसीको शोक वा क्रोध तो नहीं उपजाते हो? पुरोहित आदि मङ्गल करनेवाले मनुष्य तुम्हारे पास रहकर सेवन तो करते हैं? हे आयुष्मन्! मैंने आयु और यश बढ़ानेवाली और धर्म्मार्थ काम दिखाती हुई जैसी बुद्धि और [illegible] की बात कही, तुम्हारी बुद्धि और क्रिया तो वैसी है? [illegible] करते हैं, उनका राज्य [illegible] नहीं [illegible] और [illegible] राजा सम्पूर्ण [illegible] जयकर [illegible]

हुए अनजान मन्त्री लोग लोभके वशमें होय किसी शुद्धचित्त दोषसे रहित, श्रेष्ठ जन पर झूठ मूठ चोरीका कलङ्क लगाय सब लूट पूटके उनको हनते तो नहीं? और समझ बूझ कर किसी सचमुच चोरी किये दुष्ट चोरको चुराये माल सहित पकड़ करके उसे मालके लोभसे छोड़ तो नहीं देते? हे भारत। तुम्हारे मन्त्रीवर्ग घूसके लोभमें पड़के धनी दरिद्रोंमें उभड़े झगड़ेका अनुचित विचार तो नहीं करते? नास्तिकता, असत्य, क्रोध, अनवधानता, दीर्घ-सूत्रता ज्ञानियोंसे न मिलना, आलस्य, चित्तकी चञ्चलता, एकके साथ विषयकी चिन्ता, अर्थ न जाननेवाले लोगोंसे युक्ति करना, समझे बूझे कार्य्यका प्रारम्भ न करना, मन्त्रणा न रखना, मङ्गल कार्य्यमें हाथ न डालना और बिन समझे बूझे हर कार्य्यमें उठ खड़े होना, राजाओंके यह चौदह दोष त्याग तो देते हो? जड़ दृढ़ होने परभी राजगण इन दोषोंसे बहुधा बिगड़ जाते हैं। हे महाराज। तुम्हारा वेदपठन, धन, स्त्री लाभ और शास्त्र ज्ञान, यह सब सफल तो हुए हैं?

युधिष्ठिरने पूछा कि वेद, धन, स्त्री और शास्त्र-ज्ञान क्योंकर सफल होते हैं? श्रीनारदजी बोले, कि अग्निहोत्रादि कर्म्म करनेहीसे वेद सफल होते हैं; दान और भोग करनेहीसे धन सफल होता है, कामवृत्तिके भरने, और पुत्र उपजानेहीसे स्त्री लाभ सफल होता है और शीलता तथा सदाचार प्राप्त करनेहीसे शास्त्रज्ञान सफल होता है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि महातपस्वी नारद मुनिने फिर धार्म्मिकवर युधिष्ठिरसे कहा, कि महाराज। लाभकी आशासे दूर देशसे आये हुए वणिकोंसे कर-लेनेवाले राज-कर्म्मचारी लोग उचित कर तो लेते हैं? यह सब वणिक तुम्हारे नगर और राज्यमें स[म्मा]नित होय और ठगे न जाय विक्रीकी सा[मग्री] ला तो सकते हैं? तुम धर्म्मार्थ दिखाने[वाले] अर्थके जानकार बूढ़ोंके धर्म्मार्थ युक्त वचन सुनते तो हो? नवान्न उपजनेके का[ल] नवोदकके हेतु, पुत्रके संस्कारके लिये शुद्ध धर्म्मके निमित्त तथा पितरोंके ना[म] द्विजोंको घृत मधु तो दी जाती है? [महा]राज। तुम सब समयमें सब प्रकारके शि[ल्पि]योंको चार महीनेके अनधिक कालके प्रकार ठहराए हुए वेतन और बना[ने की] सामग्री तो देते हो? शिल्पियोंका [किया] कार्य्य तो जान लेते हो? उनका सत्कार करते हो? हे प्रभो। भरतश्रेष्ठ। तुम [सम]यमें सिद्धान्तयुक्त सब प्रकारके वा[द] [कर]के हाथी, घोड़े और रथादिको परी[क्षा] सब उपाय ग्रहण तो करते हो? हे भ[रत]नन्दन! धनुर्वेद सूत्र और नगर हित[कारी] यन्त्रोंकी शिक्षाके सब ग्रन्थ तुम्हारे भवनमें तो जाते हैं? हे अनघ। मन्त्रसहित [सब] प्रकार शास्त्र, ब्रह्मदण्ड अर्थात् आभिचारिक विद्या और विष देनेके सब उपाय, तुम यह सब शत्रुनाशी विषय तो जानते हो? तुम अग्नि सर्पादिके हिंसक जन्तु और रोग राक्षसोंसे उपजे भयसे अपनी प्रजाको बचाते तो हो? हे धर्म्मज्ञ! अन्धे, गूंगे लूले, देह फूटे, बिन बन्धु और संन्यासियोंको उनके पिताकी भांति बनके पालते तो हो? निद्रा, आलस्य, भय, क्रोध, ढिलाई और दीर्घसूत्रता, करनेवाले इन छः दोषोंको दूर तो किया है?

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि कुरुश्रेष्ठ महात्मा युधिष्ठिर देवरूपी ब्राह्मणसत्तम नारदजीकी यह सब बात सुनकर प्रसन्न मनसे उनको प्रणामकर और दोनों पांवों लगकर बोले, कि आपके प्रश्नोंके मिसमें जो सब उपदेश दिये, मैं सब कार्य्य उनके अनुसार किया करूंगा, क्योंकि

आपकी कृपासे मेरी बुद्धि बहुत बढ़ी। राजा युधिष्ठिरने यह कहनेके पीछे इसके अनुसारही कार्य्य किया था और समुद्रके छोरतक सारी धरतीको जीत सके थे। श्रीनारदजी बोले, कि जो राजा इस रीतिसे ब्राह्मणादि चारों वर्णोंकी रक्षामें सन्नद्ध रहते है, वह परम सुख लूटकर अन्तमें इन्द्रलोकको जाते है।

पांच अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि ब्रह्मर्षि नारदके कह चुकने पर धार्म्मिकवर युधिष्ठिर उनकी भली भांति पूजके, उनकी आज्ञा पाय आद्योपान्त उनके सब प्रश्नोंके उत्तर दे, बोले कि भगवन! आपने जिस योग्य रूपसे निरूपित धर्म्म-सिद्धान्तकी बात कहीं, वह न्यायके अनुसारही हुआ है, मैं शक्तिके अनुसार और उचित रूपसे उस विधिको काममें लाता हूं। इसमें सन्देह नहीं, कि पूर्व्वकालमें राजोंने जो सब कार्य्य किये थे, वह न्यायकी रीतिसे संगृहीतार्थ हेतुमत और अर्थयुक्त है। हे प्रभो! हम उनके उस सुपथसे चलना तो चाहते हैं, पर वे जितेन्द्रिय पुरुष जैसे चले थे हमसे वैसा बन नहीं पड़ता। श्रीवैशम्पायनजी बोले कि अति तेजस्वी धार्म्मिकवर पाण्डुनन्दन युधिष्ठिरने नारदकी पूछी हुई बातोंका आदरपूर्व्वक वह उत्तर देके कुछकाल पीछे उन बड़े तेजोवन्त सर्व्वलोकोंमें जानेवाले दमशील देवर्षि नारदको थकावट मिटते और प्रसन्न मनसे बैठे देखकर और आपभी उनके निकट बैठके ठीक अवसर जान सभामें विराजमान राजोंके सामने पूछा, कि हे ब्रह्मन! पहिले ब्रह्माजीने अनेक असंख्यात लोक रचे हैं, आप मनकी भांति वेगसे उनको निहारकर सदा सब ठौरमें फिरा करते हैं, सो कहे, कि आपने कहीं ऐसी सभा देखी, कि नहीं। जो मेरी इस सभाके समान अथवा इससे भी श्रेष्ठ हो? श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि धर्म्मराजका यह वचन सुनकर नारद मुनि हंसकर मीठी बातोंसे बोले कि हे बेटा भारत! तुम्हारी इस मणिकी बनी सभाके समान दूसरी सभा मनुष्यलोकमें न तो कभी देखी और न सुनी, पर जब तुम सुना चाहते हो, तब तुमसे यमराजकी, धीमान वरुण की, और कुवेर तथा ब्रह्माजीकी निर्दोष दिव्य सभाओंकी कथा कहूंगा। उन सभाओंने दिव्य और अदिव्य अभिप्रायों अर्थात् सब लोकोंकी बनावटोंसे बनायी जाकर अनेक रूप धरे है। देवगण, पितृगण, गणदेवतागण संयतआत्मा याज्ञिकगण और देवरूपी, यज्ञ करनेवाले दक्षिणायुक्त, शान्तस्वभावी मुनिगण उन सबोंकी सेवा करते है। श्रीनारदजीके ऐसा कहने पर महामति युधिष्ठिर भाइयों और द्विजवरोंके साथ कर जोड़कर बोले, कि हे ब्राह्मण! हम सुना चाहते है; आप उन सभाओंकी कथा कहें। कौन कौन सभामें कौन कौनसी सामग्री है, लम्बाई चौड़ाईमें कौन सभा कितनी बड़ी है, ब्रह्माजीकी सभामें कौन कौन उनकी उपासना करते हैं, देवराज इन्द्र सूर्य्यकुमार यमराज, वरुण और कुवेर, इनकी सभामें कौन कौन उनकी उपासना करते हैं, यह सब सुननेको हमें बड़ा कौतूहल उमड़ा है, सो हे ब्रह्मर्षि! आप यह सब हमसे ठीक ठीक कहिये। पाण्डुपुत्रके यह पूछने पर श्रीनारदजी बोले, कि महाराज! मैं सब सभाओंकी कथा कहता हूं, क्रमसे सुनो।

छटां अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे कुरुवंशि! इन्द्रजीकी सभा बहुत उजाला-भरी है। इन्होंने अपने कर्म्मफलसे इसको लाभ किया है और उस सूर्य्यसमान उजाली दिव्य सभा इन्होंने स्वयं बनायी है। वह आकाशमें स्थि...

कामगामी सभा लम्बाईमें डेढ़ सौ योजन, चौड़ाईमें सौ योजन और ऊंचाईमें पांच योजन फैली है, बुढ़ापा-शर्को थकावट-मिटावनी शङ्कासगावनी, शान्तिदायिनी, मङ्गल-उपजानी सुगृह-आसन-धारिणी दिव्य वृक्षोंसे सुहावनी सो बड़ी मनहारिणी है, उस सभामें देवनाथ इन्द्र केयूर लिये, किरीट धरे, निर्म्मल अम्बर तथा सुन्दर माला पहिरे, अनजाने स्वरूप धर, अपनी पत्नी शची, शोभा, सम्पत्ति, श्री, द्युति तथा कीर्त्तिके सहित परमोत्कृष्ट आसन पर विराजते हैं, महाराज। गृहमेधी सब मरुद्गण उस सभामें महात्मा इन्द्रकी सदा उपासना करते हैं। सिद्धगण, देवर्षिगण, देवगण, और सुवर्ण-माला पहिरे, आकाश धरे एकत्रित मरुद्गण दिव्यरूप बने साथियोंके साथ शत्रुदमन महानुभव देवराजको उपासना करते हैं। हे पार्थ! अमल निष्पाप अग्नि-समान उजाले, तेजके आले सोम याजे बुढ़ापा शोक तजे देवर्षिगण और पराशर पर्व्वत, सावर्णि, गालव, शङ्ख, लिखित, गौरशिरा, दुर्व्वासा, क्रोधन, श्येन, दीर्घतमा, पवित्रपाणि, सावर्णि, याज्ञवल्क्य, भालुकि, उद्दालक, श्वेत-केतु, ताण्ड्य भाण्डायनि, हविष्मान, गरिष्ठ, राजा हरिश्चन्द्र, हृद्य, उदरशाण्डिल्य, पारा-शर्य्य कृषीवल, वातस्कन्ध, विशाख, विधाता, काल करालदन्त, त्वष्टा, विश्वकर्म्मा, तुम्बुरु, सहदेव, सुनीथ, महातपा वाल्मीकि, सत्य-वादी शमीक, सत्यसङ्कर प्रचेता, मेधातिथि, वामदेव, पुलह, पुलस्त्य, क्रतु, मरुत, मरीचि, महातपा स्थाणु, काक्षीवान, गौतम, तार्क्ष्य, वैश्वानर कालक, हवीय, आप्याव्य, हिरण्मय, सम्वर्त्त, देवहव्य, वीर्य्यवन्त विश्वक्सेन, कण्व, कात्यायन, गार्ग्य और कौशिक, यह सब मुनि ऋषि और गन्धर्व्व और पितृयोनिसे उपजे, योनिसे उपजे, वायुभक्षी, हुतभक्षी आदि सब प्रकारके जीवको इस सभामें सर्व्वलोकनाथ वज्रधारी इन्द्रकी उपासना करते हैं। हे पाण्डुनन्दन। स्वर्गके जल तथा सब ओषधि और श्रद्धा, मेधा, सरस्वती, धर्म्म अर्थ काम, विद्युत, जलधर बादलदल, वायुकुल स्तनयित्नु गण, प्राची दिशा, यज्ञनिवटारनेवाले सत्ताइस अग्नि, अग्नीषोम, इन्द्राग्नी, मित्र, सविता, अर्यमा, भग, विश्वदेवगण, सब साध्यगण, बृहस्पति, शुक्राचार्य्य, विश्वावसु, चित्रसेन, सुमन तरुण, सकल यज्ञ, सब दक्षिणा, ग्रहगण स्तोभसमन्त्र और यज्ञवाहीमन्त्र सब उस सभामें विराजते हैं। हे महाराज! वहां मनहरणी अप्सरा और गन्धर्व्व भांति भांतिके नाच, गीत, बाजा, हंसी, स्तुतिपाठ मङ्गल कर्म्म और विक्रम प्रगट कर बलवृत्रनाशी सर्व्वगुणराशी देवनाथ इन्द्रका मन बहलाते हैं। अग्नि समान प्रकाशमान माला पहिने गहने धारण किये ब्रह्मर्षि तथा देवर्षि और बहुतेरे दूसरे पुरुष बहुविध बिमानों पर उस सभामें जाया आया करते हैं। बृहस्पति और शुक्र वहां नित्य विराजते हैं। हे महाराज! येह और दूसरे अगणित यतव्रत महात्मा और ब्रह्मव्रत भृगु तथा सप्तर्षिगण चन्द्रमा सदृश बिमानों पर साक्षात सोमकी भांति प्रियदर्शन बनके उस सभामें जाते आते हैं। हे महाभुज! इन्द्रकी उस पुष्करमालिनी नामक सभा ऐसी देखी है, अब यमराजकी सभाको कथा सुनो।

सात अध्याय समाप्त।

श्रीनारदजी बोले, कि हे युधिष्ठिर! यमराजके लिये विश्वकर्म्माने जो सभा रची है उसकी कथा कहना प्रारम्भ करता हूं, सुनो। हे पाण्डुनन्दन! वह उजाली कान्तिरूपी सभा लम्बाई चौड़ाईमें सौ योजनसे अधिक फैली है। वह सूर्य्य समान प्रकाश प्रगट होती है और नतो बहुत ठण्ढी और

बहुत गर्म होनेके कारण मनको बड़ा आनन्द बढ़ जाता है। उस सभामें बुढ़ापा, शोक, भूख, प्यास, अप्रिय, दीनता, थकावट, विरोध कुछभी नहीं है। क्या देवता, क्या मनुष्य सबको चाह भरनेको भांति भांतिकी सामग्री वहां बनी बनायी धरी है। चबाने, चूसने, चाटने, पीने सब प्रकारके स्वादिष्ट भोजनकी सामग्रीका वहां ढेर लगा है, हे शत्रुमथन। वहांकी फूलहारकी मनचुरावनी गन्धसे चारों दिशा प्रमुदित हो रही है, वृक्ष मनमाने फल देते हैं; और मीठे ठण्डे और गर्म जल रखे हैं। उस सभामें पवित्र राजर्षि और अविशुद्ध ब्रह्मर्षिगण प्रसन्नमनसे सूर्य्यनन्दन यमराजकी उपासना करते हैं। हे महाराज। ययाति, नहुष, पुरु, मान्धाता, सोमक, नृग, राजर्षि त्रसदस्यु, कृतवीर्य्य, श्रुतश्रवा, अरिष्टनेमी, सिद्ध, कृतवेग, कृति, निमि, प्रतर्द्दन, शिवि, मत्स्य पृथुलाक्ष, बृहद्रथ, वार्त्त, मरुत्त, कुशिक, साङ्काश्य, साङ्कृति, ध्रुव, चतुरश्व, सदश्वोर्मि, कार्त्तवीर्य्य, भरत, सुरथ, सुनीथ, निशठ, नल, दिवोदास, सुमना, अम्बरीष, भगीरथ, व्यश्व, सदश्व, वध्यश्व, पृथुवेग, पृथुश्रवा, पृषदश्व, वसुमना, बलवान क्षुप, वृषभ, वृषसेन, पुरुकुत्स ध्वजी, रथी आर्ष्टिषेण, दिलीप, महात्मा उशीनर औशीनर, पुण्डरीक, शर्य्याति, शरभ, शुचि, अङ्ग, अरिष्ट, वेण दुष्मन्त सृञ्जय, जय, भाङ्गासुरि, सुनीथ, निषध, वहीनर, करन्धम, वाह्लीक सुद्युम्न, बलवन्त, मधु, ऐल, मरुत्त कपोतरोमा, तृणक, सहदेव, अर्जुन, व्यश्व, साश्व, कृशाश्व, शशविन्दु, दशरथपुत्र राम और लक्ष्मण, प्रतर्दन, अलर्क, कक्षसेन, गय, गौराश्व, जामदग्न्य राम, नाभाग, भूरिद्युम्न, महाश्व, पृथाश्व, जनक, वैन्य, वारिषेण, पुरुजित जनमेजय, ब्रह्मदत्त, त्रिगर्त्त, उपरि-चर, इन्द्रद्युम्न, भीम-जानु, गौरपृष्ठ, नय अनय, पद्म, मुचुकुन्द, भूरिद्युम्न, प्रसेनजित, अरिष्टनेमी, सुद्युम्न,

पृथुलाश्व, अष्टक, मत्स्यवंशी सौ नरेश, नीप वंशी सौ राजा, हयवंशी सौ भूपाल, एक सौ धृतराष्ट्र, अस्सी जनमेजय, सौ ब्रह्मदत्त, ईरियोंके एक सौ, दो सौसे अधिक भीष्म, सौ भीम, प्रतिविन्ध्य, सौ नाग, सौ हय, सौ पलाश, सौ काश कुशादि, महाराज शान्तनु, तुम्हारे पिता पाण्डु, उशङ्गव, शतरथ, देवराज, जयद्रथ, मन्त्रियोंके सहित बुद्धिमान राजर्षि वृषदर्भ और वे सहस्रों शशविन्दु जिन्होंने बहुत दक्षिणा दे देकर अगणित बड़े बड़े अश्वमेध यज्ञ किये थे, यह सब कीर्त्ति-शाली बड़े शास्त्र ज्ञानयुक्त पवित्र राजर्षि उस सभामें वैवस्वतकी उपासनामें लगे हैं। और भी अगस्त्य, मतङ्ग, काल मृत्यु, यागशीलगण, अग्निष्वात्त, फेनप, ऊष्मप, स्वधायुक्त बर्हिषद, और दूसरे मूर्त्तिमान पितृगण, कालचक्र, साक्षात भगवान अग्नि, शास्त्रोक्त कर्मयुक्त दक्षिणायनमें मरे मनुष्य, समय ठहरानेवाले यमराजके नौकर चाकर और शिंशप पलाश काशकुशादि स्वरूप लेकर उस सभामें यम-राजकी उपासना कर रहे हैं। हे नरनाथ। पितरनाथके इन सब और दूसरे अगणित सभा-सदोंके नाम वा कर्म्मोंका वर्णन करना शक्तिसे बाहर है। वह काम-गामिनी सुन्दर सभा किसी प्रकार संकीर्ण नहीं है। उस सभामें किसीके जानेकी मनाही नहीं है; विश्वकर्म्माने बहुत दिनों तक तप करके उसे बनाया है। हे भरतनन्दन! वह सभा अपने तेजसे जलती और दमकती है। कठोर तप किये हुए शान्तस्वभावी, सत्यवादी व्रतधारी, सुन्दर देह-वाले पुण्यकर्म्मसे पवित्र बने तपस्वी [illegible] और पहिरे सुन्दर केयूर धरे [illegible] माला लटकाये, उज्ज्वल कुण्डल लगाये, उस सभामें जाते हैं। [illegible] और सुन्दर [illegible] [illegible]

सभाकी सब ठौरकी भर रही है, सर्व्वत्र पवित्र गन्ध और पुण्यध्वनि उड़ रही है, और मन-हरणी माला इधर उधर बिखरी पड़ी है। उस सभामें सहस्रों धार्म्मिक दिव्यरूपी मनस्वी प्रजानाथ महात्मा यम महाराजकी उपासना करते हैं। महाराज! यमकी वह सभा ऐसी गुणवती है। अब वरुणकी पुष्करतीर्थ-मालिनी सभाकी कथा कहता हूं।

आठ अध्याय समाप्त।

श्रीनारदजी बोले, कि हे युधिष्ठिर! वरुणकी अति तेजवाली दिव्य सभा मापमें यमकी सभाके समान है। उसकी प्राचीर और तोरण शुभ्रवरण है। विश्वकर्म्माजीने जलके भीतर वह सभा रची है। उसकी चारों ओर फल-फूल धरे रत्नोंके दिव्य और मञ्जरी-जाल जड़े गुल्म, नीले पीले काले स्यामले धौले लाल वरणोंके सुन्दर चदवा समान बनके सुहाते हैं। सैकड़ों सहस्रों परम सुन्दर कलेवर लिये मीठी धुन उड़ाती अनदेखी वरणकी चिड़िया इधर उधर उड़ती फिरती हैं। उस सभाका स्पर्श बड़ा सुखदायी है, वहां न तो बहुत शीत न बहुत शीघ्र ग्रीष्म होता है। उस वरुणपाली, वरणमें धौली, मनहरणी सभाकी सब ठौरमें दिव्य आसन और दिव्य भवन बने हैं। वरुणजी दिव्य चीर और दिव्य रत्न आभूषणोंसे बन ठन वरुणानीके सङ्ग उस सभामें एकत्र विराजते हैं, माला लटकाये दिव्य-चन्दन मले दिव्य-गन्ध लगाये आदित्यगण वहां जलनाथ वरुणकी उपासना करते हैं। हे पृथ्वीनाथ! उस सभामें वासुकि तक्षक ऐरावण, कृष्ण, लोहित, पद्म, चित्र, कम्बल, अश्वतर, धृतराष्ट्र, वलाहक, मणिमान, कुण्डधार कर्कोटक धनञ्जय, परीणाम, कण्डुक, बलवान प्रह्लाद, मूषिकाद और जनमेजय यह सब पताकी, मण्डली तथा फणधारी नाग और दूसरे अगणित सर्प चित्त एके चित्त से वरुणजीकी उपासनामें लगे हैं। हे धरती-नाथ! विरोचननन्दन बलि पृथ्वीविजयी नरक-नाथ प्रह्लाद विप्रचित्ति, कालकञ्जादि दानव, सुहनु, दुर्म्मुख, शङ्ख, सुनामा, समनिछन, घटोदर, महापार्श्व, क्रथन, पिठर, विश्वरूप, स्वरूप, विरूप, महाशिरा, दशग्रीव, वाली, मेघवासा, दशावर, टिट्टिभ, विटभूत, सह्लाद, इन्द्रतापनादि दैत्य दानव दिव्य लिबाससे सुहाय, माला लटकाय किरीट चमकाय सुन्दर कुण्डलादि दिव्य गहनोंसे जगमगाय उस सभामें धर्म्मपाश-धारी श्रीवरुणजीकी उपासना करते हैं। उन सब सूर दानवोंने मृत्युके भयसे हाथ धो डाला और तपसे सिद्ध हाथ वर प्राप्त किया हैं। हे महाराज! चार समुद्र, गङ्गानदी, कालिन्दी, विदिशा वेणा, वेगवती, नर्म्मदा, विपाशा, शतद्रु, चन्द्रभागा, सरस्वती, इरावती, वितस्ता, सिन्धु, देवनदी, गोदावरी, कृष्णवेणा, कावेरी, किम्पुना, विशल्या, वैतरणी, तृतीया, ज्येष्ठिला, महानद शोन, चर्म्मण्वती, महानदी, पर्णाशा, सरयू, वारवत्या, लाङ्गली करतोया, अत्रेयी, लौहित्य महानद, लघन्ती, गोमती सन्ध्या और त्रिस्रो-तसी लोकोंमें प्रख्यात यह सब और दूसरे अच्छे अच्छे तीर्थ सरित सरोवर कूप तड़ाग और ताल अपना अपना स्वरूप लेके महात्मा वरुणकी उपासना कर रहे हैं, फिरभी पृथ्वी, सब दिशा, पर्व्वत और सब जलचर जीव जलनायककी उपा-सनामें लग रहते हैं, गाजे बाजेसे गन्धर्व्व और अप्सरा वरुणजीकी स्तव करती हुई उस सभामें विराजती हैं, जितने पर्व्वत रत्नकी खान और सुन्दर करके प्रसिद्ध हैं वे भी मीठी मीठी बातें करते हुए वहां टिके हैं। वरुणके मन्त्री सुनाभ बेटे पोतोंसे घेरे जाय गोनामक पुष्करतीर्थके साथ जलनायकी सेवा करते हैं, इस प्रकार सब जने शरीरके साथ वरुणकी उपासना करते हैं, हे भरतवंशी! मैंने भूमते

हुए वरुणजीकी वह सुन्दर सभा देखी थी, अब कुवेरको सभाकी कथा कहता हूं सुनो ।

नवां अध्याय समाप्त ।

श्रीनारदजी बोले, महाराज ! कुवेरजीकी सभा लम्बाईमें सौ योजन और चौड़ाईमें सत्तर योजन फैली है। कुवेरजीने तपके प्रभावसे स्वयं वह सभा बनायी है। कैलाशशिखरके समान वह सभा ऐसी शुभ्र चमक रखती है, कि उसके सामने चन्द्रमाकी प्रभाभी भागती है। गुह्यकोंसे वह लिवायी जानेसे जान पड़ता है, कि मानो आकाशसे चिपटी हुई शोभायमान है। वह दिव्य गन्धभरी मनोहरी विचित्र सभा बहुविध अच्छे अच्छे रत्नोंसे रची जाय और सुनीले दिव्य वरणोंसे मानों विजली दलसे रगाय धवल बादलके पहाड़का स्वरूप पाय तैरती हुई प्रतीत होती है। उज्वल कुण्डलधारी श्रीमान राजा वैश्रवण विचित्र वसन आभूषण पहिरे सहस्रों नारियोंसे घिरे उस सभामें दिव्य पाट पीठ लगे दिव्य चादरामें ढपे सूर्य्य समान उजाले परम आसन पर वैठते हैं। हृदय प्रमोदन शीतल पवन, उदार मन्दार वन हिलाकर और नन्दन कानन कशार वन और अलका नामक सरोवरको मधु वहन कर यक्षनाथ कुवेरकी सेवा करता है। महाराज उस सभाके सभासद देव और गन्धर्व अपराओंसे घेरे जाय दिव्य तानके साथ गान करते हैं। मिश्रकेशी, रम्भा चित्रसेना, शुचिस्मिता चारुनेत्रा, घृताची, मेनका, पुञ्जिकास्थला, विश्वाची सहजन्या, प्रम्लोचा, उर्वशी, इरा, वर्गा, सौरभेयी समीची, बुद्बुदा और लता यह सब नाचने गानेमें तेज सहस्रों गन्धर्व और अप्सरावृन्द उस सभामें धननाथकी उपासना करते हैं। [illegible] और पदवाद्यके सुन्दर नृत्य गीत और बाजोंसे सभा सदा गूंजती हुई बड़ी सुहावनी वनी है। किन्नर और नरनाम दूसरे कुछ गन्धर्व और मणिभद्र, धनद, श्वेतभद्र, गुह्यक, कशेरक, गण्डकण्डु, महावली प्रद्योत कुस्तुम्बुरु, पिशाच, गजकर्ण, विशालक, वराहकर्ण, ताम्रौष्ठ, फलकक्ष, फलोदक, हंसचूड़, शिखावर्त्त, हेमनेत्र, विभीषण, पुष्पानन, पिङ्गल शोणितोद, प्रवालक, वृक्ष वष्पनिकेत और चोरवासा, यह सब और दूसरे सहस्रों यक्ष वहां उपस्थित रहते हैं। हे भरतनन्दन भगवती लक्ष्मीजी सदा उस सभामें विराज रही हैं। कुवेरनन्दन नल, कूवर, मैं और मेरे समान बहुत दूसरे और ब्रह्मर्षि, देवर्षि सब उस सभामें रहते हैं। मांसखोर राक्षसादि और अति पराक्रमी दूसरे गन्धर्व उस सभामें धनदाता महात्मा यक्षनाथकी उपासना करते हैं। हे राजशार्द्दूल। महावली शूलप्रहारी उग्रचाप-धारी पशु हिंसकारी उमा विहारी, दुष्ट संहारी भगवान महादेव त्र्यम्बक विकट, कुबड़ लालनेत्र बढे, ध्वनि घोर मेद मांसखोर बहुअस्त्र लिये पवनके आगे चलनेवाले सहस्रों भयावने सहचर भूतनिकर सग लिये अथकित देवी भगवती सहित उस सभामें अपने सखा धनेशके निकट सदा विराजते हैं। विश्वावसु, हाहा, हूहू तुम्बरु, पर्व्वत शैलूष, [illegible], प्रधान चित्रसेन, चित्ररथादि सैकड़ों गन्धर्व्वनाथ और दूसरे सहस्रों गन्धर्व्व अपना लिवास पहिन प्रसन्न मन होय धननाथको उपासना करते हैं। [illegible] संग विद्याधरनाथ चक्रधर्म्मा और सैकड़ों किन्नर धनेश कुवेरजीकी सेवा करते हैं। [illegible] पति दुम और राक्षसाधिप महेन्द्र और गन्धमादन, यक्ष, गन्धर्व्व और राक्षसोंके साथ धनदकी उपासनामें लगे रहते हैं। राक्षसनाथ धार्म्मिकवर विभीषण भी भ्राताके [illegible] सेवा करते हैं। हिमालय, पारियात्र, विन्ध्य, कैलाश, मन्दर, मलय, दर्दुर, महेन्द्र, गन्धमादन,

इन्द्रनील, सुनाभ, उदयाचल और अस्ताचल,यह सब और दूसरे अगणित पर्व्वत अपना अपना स्वरूप धर सिरको सामने रख महात्मा कुवेरकी उपासना करते हैं। भगवान नन्दीश्वर, महाकाल शङ्कुसे कर्ण और मुखवाले सब दिव्य सहचरी काष्ठ कुटीमुख, दन्ती, अति तपोवती विजया और बहुत नर्द्दनयुक्त महाबली श्वेतवृष वहां उपस्थित रहते हैं। इनके सिवाये दूसरे राक्षस और पिशाचभी कुवेरजीको उपासना करते हैं, हे भारत। कुवेर जी सहचर सहित त्रिलोकभावन भगवान देव देव उमाकान्त महादेवजीके निकट सदा जाकर साष्टाङ्ग प्रणाम कर उनकी आज्ञासे उनके समीप बैठते थे। एक समय महादेवजीने उनसे मित्रता की और उस कालसे उनकी सभामें नित्य विराजते हैं।

हे महाराज। सब रत्नके सार शङ्ख और पद्म सब प्रकारकी निधि बटोर बटोर धनेश कुवेरकी उपासना करते हैं। धननाथ कुवेरकी उस आकाश चरती सभाको मैंने इसमानही मन- हरणी देखा है, अब पितामह ब्रह्माजीको सभाकी कथा कहता हूं, सुनो।

दश अध्याय समाप्त।

श्रीनारदजी बोले, कि हे भरतनन्दन। ब्रह्मा जीको उस सभाकी कथा प्रारम्भ करता हूं कि जिसका रूप ऐसा है कि कहे नहीं कहा जाता, अब सुनो। महाराज! पूर्व्वकाल, सत्य- युगमें भगवान आदित्यजो स्वयम्भू ब्रह्माकी सभा निहार मानव लोकके देखनेको इच्छा करके स्वर्गसे उतर मानवी रूप लेकर स्वेच्छासे भूलोकमें फिर रहे थे। उसकाल मुझको देख, ब्रह्माजीके मानससे बनी अकथनीय अन न्त रूप टनी, अपने प्रभावसे सर्व्वभूत मन- हरणी दिव्य सभाकी कथा यथावत कही थी, हे [illegible] मैंने उस सभाकी अनन्त गुणोकी खान सुन, देखनेकी इच्छासे आदित्यजीसे यह कहा कि "हे किरणनाथ। मैं दादाजीकी शुभ सभा देखा चाहता हूं, अतएव हे नाथ। जैसी तपस्या,जैसा कर्म्म अथवा जिस किसी योग औषधसे चाहे जिस प्रकार हो, वह पापविनाशी शुभराणी सभा मैं देख सकूं, सो कहें। सहस्र किरणनाथ दिननाथ मेरी यह बात सुन कहे कि तुम एक चित्त हो, सहस्र, वर्ष में [illegible] होता हुआ ब्रह्मव्रत करो। इसके पश्चात मैंने हिमाचल पर वह महाव्रत प्रारम्भ किया। अन्तमें वह अर्थात पाप रहित वीर्य सहित आदित्य मुझको ब्रह्माजीकी सभामें लिवाय हे भगवान नरनाथ! उस सभाका स्वरूप शक्तिके बाहर है, क्योंकि पल पल पर वह अकथ अलग स्वरूप लेती है। हे भरत नन्दन! उस सभाका माप वा जोड़ किसी जाना नहीं गया। वास्तवमें ऐसी शोभा पहिले कभी मेरे देखनेमें नहीं आयी थी। [illegible] सभामें बैठनेसे क्षुधा प्यास थकावट कुछ नहीं रहती और शीत ग्रीष्म किसीसे पी[illegible] नहीं पहुंचती वरन सदा अपूर्व्व सुख मिलता है। जान पड़ता है, कि वह सभा, नानारूप धारी जलती मणियोंकी बनी है। खम्भों पर खड़ी नहीं है, कभी उसका नाश नहीं, वह सदा बनी रहेगी, वह आपही अपनेको प्रकाशती हुई स्वर्गकी सभा अनजाचन प्रभासे सुहायी, नानाविध जलते दिव्य भावोंसे, सूर्य्य, चन्द्रमा और अग्निसे ऊपर होगयी है, और मानो दिननाथको लजाती हुई प्रकाशित [illegible] रही है। हे महाराज! वह सर्व्व लोकके पितामह भगवान ब्रह्माजी स्वयं देवो मायाके अकेले सब लोक रच करके उस सभामें सदा विराजमान है। दक्ष, प्रचेता, पुलह मरीचि कश्यप, भृगु, अत्रि, वशिष्ठ, गौतम, अङ्गिरा पुलस्त्य, क्रतु, प्रह्लाद, कर्द्दम आदि प्रजापति और अथर्व्ववेदी आङ्गीरस मरीचिपायी, वा

खिल्यगण, महातेजा अगस्त, वीर्य्यवन्त मार्कण्डेय, जमदग्नि, भरद्वाज, सम्वर्त्त, च्यवन, महाभाग दुर्वासा, धार्म्मिकवर ऋष्यशृङ्ग, महातपा योगाचार्य्य, भगवान सनत्कुमार, असित, देवल, तत्ववेत्ता, जैगीषव्य, ऋषभ, अजितशत्रु, और महावीर्य्यमणि, यह सब उस सभामें ब्रह्माजीकी उपासना करते हैं, और अष्टाङ्ग सहित आयुर्वेद नक्षत्रों सहित चन्द्रमा, गभस्तिमान सूर्य्य, वायुवृन्द, सब यज्ञ, सङ्कल्प, प्राण, मन, आकाश, वायु, तेज, जल, धरती, रूप, रस, गन्ध शब्द, स्पर्श, प्रकृति, विकार और रचनेवाले दूसरे पदार्थ सब अपना अपना स्वरूप लेकर ब्रह्माजीकी उपासनामें सदा दत्तचित्त हैं, वे सब बड़े व्रतशील और महात्मा हैं। इनके सिवाय धर्म्म, अर्थ, काम, हर्ष, द्वेष, तप, दम, इत्यादि दूसरे बहुविध पदार्थ भी उस सभामें उपस्थित रहते हैं। गन्धर्व्व और अप्सराओंके विंशतिगण और हंस, हाहा, हूहू आदि दूसरे सात प्रधान गन्धर्व्व, सब लोकपाल, शुक्र, बृहस्पति, बुध, मङ्गल, शनैश्चर, राहु आदि ग्रह, मन्त्र, रथन्तर, साम, हरिमान और वसुमान नाना कर्म्म विशेष, अग्नीषोम इन्द्राग्नी आदि दो नामसे उदाहृत इन्द्र सहित देवगण, मरुद्गण, विश्वकर्म्मा, अष्टावसु, पितृगण, सब हवि, ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद अथर्व्ववेद, सब शास्त्र, इतिहास, सब उपवेद, वेदाङ्ग, ग्रह, यज्ञ, सोम, सम्पूर्ण देवता, दुर्गतारणी, गायत्री, सात प्रकारकी वाणी, मेधा, धृति, श्रुति, प्रज्ञा, बुद्धि, यश, क्षमा, स्तुति [illegible] सामगान, [illegible] गाथा, युक्ति [illegible] बहुविध नाटक, काव्य, [illegible] और कारिका यह सब और [illegible] [illegible] मूर्त्तिमान होकर [illegible] हैं। हे [illegible] [illegible] सुवर्ण [illegible] [illegible] [illegible] प्रकारके [illegible] [illegible] और [illegible]

दिव्य कालचक्र वहां सदा विराजते हैं। हे युधिष्ठिर! अदिति, दिति, दनु, सुरसा, विनता, इरा, कालिका, सुरभि, सरमा, गौतमी, प्राधा, कद्रु रुद्राणी श्री, लक्ष्मी, भद्रा, षष्ठी आदि देवमाता और पृथ्वी, गङ्गा, ह्री, स्वाहा, कीर्त्ति, सुरादेवी, शची, पुष्टि, अरुन्धती सम्वर्त्ति, आशा, नियति, सृष्टि और रति यह सब और दूसरी देवी प्रजानाथ ब्रह्माजीकी उपासना करती हैं। हे भरतनन्दन। आदित्यगण, वसुगण, रुद्रगण, मरुद्गण, विश्वदेवगण, दोनों अश्विनीकुमार और मनके समान वेगवान पितृगण यहभी प्रजापतिकी उपासना करते हैं। हे पुरुष प्रवर! पितरोंके सात गण हैं, तिनमें चारके स्वरूप हैं और तीन बिना शरीरके हैं। हे महाराज! महाभाग वैराजादि अग्निष्वात्ता और गार्हपत्यादि लोकोंमें प्रसिद्ध यह सब पितृगण स्वर्गमें फिरते हैं, और सम्यादि, एकशृङ्गादि, चतुर्वेदादि, और काल आदि यह सब पितृगण ब्राह्मणादि चारवर्णोंमें पूजे जाते हैं, यह लोग पहिले तृप्त होय पीछे सोमको तृप्त करते हैं। हे महाराज। वे सब पितृगण उस सभामें ब्रह्माजीकी उपासना करते हैं। हे नरनाथ। राक्षसगण, पिशाचगण, दानवगण, गुह्यकगण, नागगण, सुपर्णगण, सब पशुगण और स्थावर जङ्गम दूसरे महाभूतवृन्दभी प्रसन्न मनसे आत तेजस्वी पितामहकी उपासना करते हैं। देवराज इन्द्र, वरुण कुवेर, यमराज और उमासहित उमाकान्त, सब सदा वहां जाते हैं। हे महाराज कार्त्तिकेय, नारायणजी सब देवर्षि, बालखिल्य ऋषि और [illegible] उपजे और [illegible] उपजे सब जीव उस सभामें उपासना करते हैं। हे नरनाथ! इस त्रिभुवनमें स्थावर [illegible] [illegible] पदार्थ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] सभामें [illegible]

पचास सहस्र सन्तानवान ऋषि मेरे देखनेमें आये। सब स्वर्गवासी लोग स्वेच्छासे ब्रह्माजीका वहां दर्शन, साष्टाङ्ग प्रणामादि करते हुए निज निज स्थानोंमें लौटते हैं, हे नरनाथ। सर्व्व भूतोंपर दयावान, अपार धीमान अति तेजोवान, विश्वात्मा सर्व्वलोक-पिता स्वयम्भु ब्रह्मा उस सभामें आये देवता, द्विज, दैत्य, नाग, यक्ष, कालेय, गन्धर्व्व और अप्सरादि महाभाग पाहुनोंको यथोचित आदरकर मीठे सम्भाषण, सम्मान, अर्थ और भोगकी सामग्री दे दे प्रसन्न करते हैं। वह सुहावनी सभा आने और जानेवाले लोगोंसे सदा भरी रहती है। ब्रह्मर्षियोंसे पूजी जाती सर्व्व तेजोवती, थकावटको भगाती वह दिव्य सभा ब्रह्माजीके निज तेजसे जलती परम शोभासे भरी है। हे राजशार्दूल! तुम्हारी यह सभा जिस प्रकार मनुष्य-लोकमें दुर्लभ है, सर्व्व-लोक दुर्लभ उस ब्रह्म-सभाको मैंने वैसीही देखा है। हे भारत! देवलोकमें पहिले यह सब सभा मुझसे देखी गयी, अब मनुष्यलोक भरमें तुम्हारी यह सभा सबसे बढ़िया जान पड़ती हैं।

ग्यारह अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे कथा-कहने-वालोंमें श्रेष्ठ देवर्षि! आपने मुझसे जैसा कहा, उससे वैवस्वत यमकी सभामें प्रायः सब राजोंके नाम सुन पड़े। वरुणकी सभामें अगणित नाग, दैत्यवर, नदी, और सागरोंके नाम लिये गये। धनेश कुवेरकी सभामें गुह्यक, गन्धर्व्व और अप्सरा तथा भगवान वृषभवाहन महादेवके नाम कहे गये। पितामह ब्रह्माकी सभामें महर्षि, समस्त देव और शास्त्रादिका रहना कहा गया और महात्मा इन्द्रकी सभामें देवगण, बहुविध महर्षि और एक एकके नाम सहित सब गन्धर्व्व कहे गये। पर हे महामुने। उस सभामें आपने राजोंमें केवल राजर्षि हरिश्चन्द्रकी बात कही। सो हे संयत आत्मन्! महायशा राजा हरिश्चन्द्रने ऐसी कौनसी भारी तपस्या वा ऐसा क्या बड़ा कर्म किया था, कि अकेले वही इन्द्रके सदृश बने हैं हे विप्रवर! पितृलोकमें स्थित बड़े भाग्यवान मेरे पिता पाण्डुके साथ आपकी किस प्रकार भेंट हुई। और उन्होंने आपसे क्या कहा हे भगवन्। आपसे यह सब कथा सुननेके मुझमें बड़ा कौतूहल उमड़ रहा है, सो आप कृपा प्रगटकर वह सब मुझको कह सुनावें।

श्रीनारदजी बोले, कि हे महाराज! तुमने धीमान हरिश्चन्द्रके माहात्म्यके विषय जो कुछ पूछा, मैं तुमसे वह सम्पूर्ण कहता हूं। वह बलवन्त भूप सब पृथ्वीनाथोंके सम्राट थे। उनके शासनसे सबही भूपालोंने सिर नवाया था। हे लोकनाथ! उन्होंने रथपर चढ़ शस्त्रके प्रतापसे सातद्वीप जय किये थे। महाराज! उन्होंने पहाड़, वन और कानन सहित सम्पूर्ण धरतीमण्डलको जीत कर राजसूय नामक महायज्ञ किया था। सब भूप उनकी आज्ञासे धनादि बटोरकर उस यज्ञमें ब्राह्मणोंको बांटनेके कार्य्यमें नियुक्त हुए। उस यज्ञकालमें याचकोंने जो कुछ मांगा था, नरनाथ हरिश्चन्द्रने प्रीतिपूर्व्वक उनको उससे पांच गुणा अधिक धन दान दिया था। और पूर्ण आहुतिका काल आने पर उन्होंने नाना देश तथा देशोंसे आये ब्राह्मणोंको उनके मनमाने भांति भांतिके भक्ष्य, भोज्य और बहुविध धनसे प्रसन्न किया। ब्राह्मण लोगभी जनोंसे तर्पित और सन्तुष्ट होके सर्व्वत्र यह कहते फिर थे, कि राजा हरिश्चन्द्र सब भूपोंसे तेजवन्त और यशस्वी हुए है। हे महाराज! इसलिये हरिश्चन्द्र उन सहस्रों राजाओंसे भले प्रकार विराजते हैं। उन प्रतापी भरतने उस महायज्ञको पूरा कर साम्राज्यमें अभि

पिता होके बड़ी शोभा प्राप्त की थी। हे भरत-नन्दन। दूसरे जो प महायज्ञ राजसूय करते हैं, वे भी इन्द्रके साथ आनन्द लूटते हैं। जो लोग युद्धमें पीठ न दिखाके नष्ट होते हैं, वेभी इन्द्रजीके सभासद बनके उनसे आनन्द पा सकते हैं। और जो लोग कठोर तप कर देह छोड़ते हैं, वेभी इन्द्रधाममें जाय अनन्त सम्पत पाय नित्यकालतक विराजते हैं। हे कुन्तीपुत्र। तुम्हारे पिता कौरवनन्दन पाण्डुनेभी राजा हरिश्चन्द्रका सौभाग्य देख कर अचरज मान तुमसे कुछ कह भेजा है। हे नरनाथ। वह मुझको मर्त्यलोकमें आते देखकर प्रणाम करके बोले, 'आप युधिष्ठिरको मेरी ओरसे कहना, कि तुम्हारे सब भाई तुम्हारे वशमें हैं, सो तुम सम्पूर्ण धरती जय करनेको समर्थ हो, इस लिये महायज्ञ राजसूय करो। तुम मेरे पुत्र हो, सो तुम्हारे उस महायज्ञके पूरा करनेसे मैं भी राजा हरिश्चन्द्रकी सदृश महेन्द्रका सभासद बनकर उनके साथ बहुवर्ष आनन्द लूटूंगा।'

हे भारत। मैंने तुम्हारे पिताकी प्रार्थना इस प्रकारसे मान ली, कि यदि मैं पृथ्वीमें जाऊं, तो राजा युधिष्ठिरसे अवश्यही तुम्हारी इच्छा कहूंगा। सो हे पुरुषवर। अपने पिता पाण्डुकी चाह मिटानेका प्रयत्न करो। उस महायज्ञके करनेसे तुमभी पुरुषार्थके साथ इन्द्रके सभासद बनोगे। हे महाराज! ऐसा कहा है, कि उस महायज्ञके प्रारम्भ करनेसे बड़ी बाधायें आ पड़ती हैं, यज्ञनाशी ब्रह्मराक्षस सदा उसका दोष ढूंढते हैं। उस यज्ञके कालमें क्षत्रिय-विनाशी भयानक युद्ध उमड़ते हैं, यहां तक, कि [illegible] सम्पूर्णके नाश होजानेकी सम्भावना [illegible] उसमें कुछभी दोष [illegible] का पहुंचता है। अतएव हे [illegible] यह सब विषय सोच विचारके जो [illegible]

जान पड़े, वही करो। ब्राह्मणादि चारो वर्णोंकी रक्षाके विषयमें सदा ध्यान लगाये कमर कसे रहो। सबको सम्मति लो, अनन्त-काल आनन्द लूटो, और ब्राह्मणोंको धन देकर प्रसन्न करते रहो। हे नरनाथ। तुमने जो कुछ पूछा, वह विस्तार पूर्व्वक कह सुनाया। अब तुम्हारी आज्ञासे मैं द्वारकामें जाऊंगा।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे जनमेजय। श्रीनारदजी पृथाकुमारोंको यह कहके अपने साथी ऋषियोंके साथ चले गये। श्रीनारदके जाने पर धरतीनाथ युधिष्ठिर भाइयोंके साथ राजसूय यज्ञकी परामर्श करने लगे।

सभाक्रिया प्रकरण और बारह अध्याय समाप्त।

मन्त्रणा-प्रकरण।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भरतनन्दन! श्रीनारदजीकी वह बात सुनके राजा युधिष्ठिरने लम्बी सांस ली। राजसूय यज्ञकी चिन्ता करते हुए उनको और किसी बातका सुख न रहा। महात्मा राजर्षियोंकी महिमा, तथा पुण्य कर्म्मोंके अनुष्ठानसे अच्छे लोकोंकी प्राप्ति, यज्ञ किये हुए राजा हरिश्चन्द्रकी प्रज्वलित प्रतिमा इत्यादि सुनके तथा विचारके उन्होंने महायज्ञ राजसूयका प्रबन्ध करना चाहा। अनन्तर राजा युधिष्ठिर सभासदोंको पूजके और पलटमें उनसे पूजे जाकर यज्ञहोके लिये परामर्श करने लगे। यज्ञ करनेकी बात बार बार सोचने पर उनका मन उसीमें आरूढ हुआ। अद्भुत तेजवीर्य्यविशिष्ट सकल धार्म्मिकोंमें श्रेष्ठ युधिष्ठिर धर्म्मका ध्यान कर सोचने लगे, कि किस प्रकार प्रजाओंका मङ्गल होगा। वह प्रजाओंपर दया दिखाय बिना विशेष सबका मङ्गल करने लगे। और [illegible] क्रोधको छोड़के [illegible] प्रचार करो, [illegible] देना [illegible] दिया, [illegible]

इससे सर्व्वत्रसे केवल यह शब्द सुनाई देने लगा, कि साधु धर्म्म, साधु धर्म्म।' सदा ऐसे पुण्य कर्म्मोंके करनेसे प्रजा उन्हें अपने पिताकी भांति जान विश्वास करने लगी। कोईभी उनका द्वेष करनेवाला नहीं रहा, इससे उनका नाम अजातशत्रु हुआ। राजाके सबको परिवार-समान जानने, भीमके पालने धनञ्जय-के शत्रुका नाश करने धीमान सहदेवके धर्म्मा-नुसार शासन करने और नकुलके सर्व्व प्रकारसे स्वाभाविक विनय जतानेसे जनपदसे झगड़ा छूटा और भयका क्षय हुआ, सब अपने अपने धर्म्ममें सदा अच्छे बने रहे, मनमानी वृष्टिकी सृष्टि होने लगी, सो सब जनपद सम्पदसे एक-वारही बढ़ने लगे। धार्म्मिकवर युधिष्ठिरके राज्यकालमें सदा उनके सुकर्म्मके प्रभावसे वृत्ति-जीवियोंकी जीविका यज्ञयोग्य सामग्री पशु पालन, खेती और वाणिज्य इन सबोंकी बड़ी उन्नति हुई। छलसे प्रजाका धन गड़पना बलसे लूटना, व्याधिसे कष्ट पाना, अग्निसे जलना और अकालमें मरना, इनमेंसे एक काभी रचना सुनाही नहीं गया। लुटेरे और ठगोंने राजासे वा एक दूसरेसे कभी बुरा-व्यवहार किया अथवा राजाके प्यारेजनोंने कोई अनुचित कर्म्म किया, ऐसा भी नहीं सुना गया, करदाता राजा लोग सन्धिविग्रहादिके कालमें सम्राटके प्रियकार्य्य तथा उपासना करने और नाना जातिके वणिक अपने कामके लिये राजस्व देनेको सदा आते थे, इससे देशकी बड़ी श्रीवृद्धि हुई। केवल राजा और वणि-कोंहीसे नहीं, वरन स्वेच्छापूर्व्वक भोगनेवाले लोभादिरहित स्वगुणी जनोंसेभी देशकी वृद्धि हुई थी। वास्तवमें युधिष्ठिर सब स्थानोंमें जाते, सब गुणोंसे सुहाते, सब सहते और सर्व ठौर प्रकाशमान होते थे। महाराज! उस साम्राज्य भोगनेवाले प्रकाशमान यशोवन्तने जो [illegible] ठौर अंधकार की थी, वहांवाले ब्राह्मणोंसे लेकर शूद्रतक सब प्रजा उनको पितामातासे भी अधिक चाहती थी।

धार्म्मिकश्रेष्ठ युधिष्ठिरने भाइयों और मन्त्रियोंको बुलाकर उनसे वारम्बार राजसूय यज्ञकी बात पूछी। तब वे एकत्रित मन्त्रीवर उनके वचनका अर्थ समझ बूझकर अति बुद्धिमान, यज्ञकामी युधिष्ठिरसे यह अर्थभरे वचन बोले, कि हे कुरुकुमार! जिस यज्ञमें अभिषिक्त होनेसे नरेशोंको वरुणजीके गुण अर्थात सर्व्वाधिकारता, शीतलता, तृप्ति, साधनादिकी प्राप्ति होती है, स्वभावहीसे प्रजारञ्जक होने परभी वे लोग सम्राटके योग्य उन सब प्रसिद्ध गुणोंकी प्रार्थना करते हैं। आपभी उन गुणोंको प्राप्त करनेके योग्य पात्र हैं, सो आपके मित्रवर्ग इस कालको राजसूयके लिये प्रशस्त समझ रहे हैं। शंसितव्रतवाले ऋषिगण जिसमें अग्नि धरनेके लिये सामवेदके मन्त्रोंको पढ़कर छः स्थण्डिल रचते हैं, क्षत्रियसम्पद अर्थात् भुज-बलादिसे उन यज्ञके करनेका काल आपके अधीन हुआ है। राजसूययज्ञ हो जाने पर अभिषिक्त होकर राजा अग्नि-होत्रादि सब यज्ञका फल पाते हैं, सो वह सर्व्वजित कहे जाते हैं। हे महाभुज, महाराज! आपको सामर्थ्य है, हम सब आपके वशमें हैं सो तुरन्तही आप महायज्ञ राजसूय पूरा कर सकेंगे, सो इस विषयमें अधिक विचारका प्रयोजन नहीं, विना विचार उस महायज्ञके करनेमें ध्यान दें। मित्रोंने अलग अलग और एकत्रित होके इस प्रकार कहा।

हे महाराज! शत्रुमथन पाण्डुनन्दन राजा युधिष्ठिरने उनका वह धर्म्मयुक्त प्रगल्भ अभीष्ट और वरिष्ट वचन सुनके मनहीमनमें उसको मान लिया। मित्रोंकी वह बात सुन और अपनी सामर्थ्यको जान राजसूय यज्ञके विषयमें उन्होंने वार वार आन्दोलन किया। धीमान और मन्त्रके जानकार धर्म्मप्राण राजा युधि-

ष्ठिर मनही मनमें विलक्षण आन्दोलन कर भावगया, महात्मा ऋत्विकगण धौम्य पुरोहित और व्यासादि ऋषिगणसे फिर परामर्श कर बोले, सम्राटयोग्य महायज्ञ राजसूयके लिये मेरी जो यह चाह उमड़ी है, केवल श्रद्धा और बातहीसे क्योंकर वह सफल हो सकती है?

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे प्रसन्ननयन। वे धर्म्मनाथ युधिष्ठिरसे इस प्रकार पूछे जाय उनसे यह बोले, कि महाराज! आप राजसूय यज्ञके योग्य पात्र हैं, सो सहजहीमें उसे कर लेंगे। ऋत्विक और ऋषियोंके नरनाथसे यह कहने पर, उनके मन्त्री और भाइयोंने उस बातका बड़ा आदर किया। बड़े बुद्धिमान जितात्मा पृथानन्दन युधिष्ठिर अपनी सामर्थ्य तथा देश, काल और आयव्ययकी आलोचना कर लोगोंकी हितेच्छासे वारम्वार मनही मनमें उस विषयकी चिन्ता करने लगे। वास्तवमें भली प्रकार बुद्धिसे विचार कर कार्य्य करनेहीके कारण बुद्धिमान जन नहीं टूटते हैं। यह विचारकर, कि केवल अपनेही निश्चयसे यज्ञ आरम्भ करना उचित नहीं है धर्म्मनाथ युधिष्ठिरने यत्नसे कार्य्यका भार अपने ऊपरसे उठाय उसका उपाय निश्चय करनेके लिये जनार्द्दन श्रीकृष्णहीको सर्व्व लोकोंसे श्रेष्ठ जानके उन अनजाचन महिमावान जन्मरहित होकरके नरयोनिमें स्वेच्छासे जन्म लिये महाभुज हरिको मनही मनमें स्मरण किया। उनके देवता समान कार्य्यकी पूरी आलोचना कर युधिष्ठिरने यह तर्क किया, कि कोईभी वस्तु उनको अनजानी नहीं है, उनके कर्म्मसे न किये होनेवाला कोई कार्य्यही नहीं है और उनके असह्य कोई विषयभी नहीं है। ऐसा विचारकर उन्होंने श्रीकृष्णको स्मरण किया। धर्म्मपुत्र युधिष्ठिरने इस प्रकार निश्चय [illegible] कर गुरुजनोंके [illegible] [illegible] गुरु [illegible] के पास [illegible]

भेजा। वह दूत द्रुत चलनेवाले रथ पर चढ़के यादवकुलमें पहुंचकर द्वारकावासी श्रीकृष्णके पास गया। आगे श्रीमहाराज कृष्णचन्द्र दर्शन चाहनेवाले युधिष्ठिरकी भेंटके लिये उस दूतके साथ इन्द्रप्रस्थको पधारे। शीघ्र कार्य्य करनेवाले जनार्द्दन द्रुतगामी रथ पर चढ़के बहुविध देश पीछे छोड़कर इन्द्रप्रस्थमें स्थित युधिष्ठिरके निकट आ पहुंचे। इनके उपस्थित होने पर उन्होंने फूफीपुत्र धर्म्मराज और भीमसे पिताके समान समादर पाय पीछे प्रसन्न मनसे फूफीसे भेंट किया, आगे नकुल और सहदेवसे गुरुकी भांति पूजे जाय प्रसन्नतासे प्रमुदित मित्र अर्ज्जुनसे प्रसन्नमन होके आनन्द करने लगे। अनन्तर धर्म्मनाथ युधिष्ठिर भली ठौरमें थकावट मिटाये, निरोग देखके अवसर पाये अच्युतके पास जाय अपना प्रयोजन जताय बोले, कि हे कृष्ण! मैंने राजसूय यज्ञ करनेकी इच्छा की है, पर केवल इच्छाही रहनेसे वह विषय पूरा नहीं होता, जिस उपायसे वह पूरा हो सकता है, वह भली भांति तुम जानते हो। जिनसे सब सम्भव हो सकता है, जो सर्व्वत्र पूजे जाते हैं, जो सब भूमण्डलके ईश्वर हैं, वही राजसूय यज्ञ लाभ कर सकते हैं। मेरे मित्रवर्गने एकत्र होके मुझसे यह महायज्ञ करनेको कहा है, पर हे कृष्ण! उसकी कर्त्तव्यताके विषयमें तुम्हारी बातही प्रमाण है। क्योंकि कोई कोई जन मित्रतावश किसी कार्य्यका दोष कह नहीं सकते, कोई कोई स्वार्थवश केवल प्रसन्नकारी प्रिय विषयही कहा करते हैं, और कोई कोई वही प्रिय करके ठहराय लेते हैं जो अपने लिये प्रिय जानते हैं, कार्य्य पूरा करनेके विषयमें लोगोंकी ऐसीही [illegible] पहुंचती [illegible] हे कृष्ण, तुम काम क्रोधके [illegible] [illegible] हो [illegible]

अतएव लोकमें जो अच्छा हितकारी है वही सत्य कहो।

तेरह अध्याय समाप्त।

श्रीकृष्णचन्द्र बोले, कि हे महाराज! आप सब गुणोंमेंही श्रेष्ठ हैं, सो सब प्रकारही आपको राजसूय यज्ञ करनेका अधिकार है। यद्यपि आप सब कुछ जानते हैं, तौभी मैं आपसे कुछ कहा चाहता हूं। जामदग्न्य परशुरामने जिस क्षत्रिकुलका नाश किया था, उनसे यह लोग जो अब क्षत्रियकी नामसे पुकारे जाते हैं, निकृष्ट हैं। हे धरतीनाथ! निर्द्देशके पात्र उन क्षत्रियोंने जैसा कौलिक नियम किया है, वह आपका जाना नहीं है। प्रसिद्ध राजोंकी परम्परा और पृथ्वी परसे दूसरे अस्वतन्त्र क्षत्रियगण अपनको एल और इक्ष्वाकु वंशको सन्तान करके परिचय देते हैं। हे भरतनन्दन! ऐल और इक्ष्वाकुके सौ कुल हैं ययाति और भोजके वंश अति गुणवन्त और बहुत फैले हैं, अब उनसे पृथ्वी चारों ओर छा गयी है। सब क्षत्रिय उन राजोंकी सौभाग्यलक्ष्मीको पूजा करते हैं, पर हे महाराज! हालमें जरासन्धने उन नरनाथवंशियोंका सौभाग्य पाय पृथ्वीनाथ बन तेजसे सब पर चढ़ सबों पर बड़ाई लाभ की है और धरतीके बीच भाग, मथुरा आदिमें प्रवेश करना अपने लिये सहज जानके हमलोग आपसका भेद लानकी कल्पना की है। महाराज! जो राजा सबोंके प्रभु हैं, जो सम्पूर्ण धरतीके एक अधिकारी बने हैं, वही युक्तिके अनुसार साम्राज्य लाभके अधिकारी हैं। हे पृथ्वीनाथ! प्रतापी शिशुपालने सब प्रकारसे जरासन्धको अवलम्ब कर उसके सेनापतिका पद लिया है। अति पराक्रमी मायावियोंका करूपराज वक्र, जरासन्धके निकट शिष्यकी भांति, उपस्थित रहता है। दूसरे, [illegible] अनन्त हंस और डिम्भक दोनोंने उस अतिबली जरासन्धको शरण ली है। दन्तवक्र करूप और मेघवाहन, यह भी उसके वशमें होगये हैं। महाराज! लोकोंमें जो अद्भुत मणि प्रसिद्ध है, उस दिव्य मणिको सिर पर लेनेवाला जो नरनाथ मुरु और नरकका शासन करते और पश्चिम देशमें वरुण समान अधिकार फैलाये रहते हैं, आपके पिताके सखा वह अतिबली यवननाथ बड़े राजा भगदत्त वचन और कर्म्मद्वारा जरासन्धके आगे सिर नवाते हैं, पर मनही मनसे आपको और भी पिताके समान भक्ति रखके स्नेहयुक्त हैं। हे पुरुषवर! जो पश्चिम और दक्षिण प्रान्तोंके राजा हैं, वह कुन्तीवंशके बढ़ानेवाले शूर शत्रुनाशी आपके मामा अकेलेही स्नेहवश आपकी ओर झूले हैं। हे पुरुषवर! जो दुर्मति चेदिदेशमें प्रख्यात हैं, इस लोकमें जो अपनेको पुरुषोत्तम करके मानता है, मोहसे शंख चक्रादि मेरे चिह्नोंको सदा लिये रहता है, और लोकोंमें जो वासुदेव नामसे बड़ा प्रसिद्ध हुआ है, वङ्ग पुण्ड्र और किरातराज्योंके नाथ उस बली पौण्ड्रक राजाने भी जरासन्धकी शरण ली है। पहिले मैं उसको मारा नहीं, दूसरे ही वह राजा मगधके वशमें होगया है, महाराज! जो पृथ्वीके चौथे भागभोगी और इन्द्रके सखा हैं, जिन्होंने विद्याबलसे पाण्ड्य और क्रथ कौशिकोंका जय किया है, जिनके भाई अकृति परशुरामके समान वीर थे, वह शत्रुनाशी बली राजा भीष्मक, सो भीष्मक और जरासन्धके वशमें आगये हैं। हम उनके कुटुम्ब हैं, सो प्रिय तथा आज्ञाधीन रहके सदा उनका प्रिय कार्य्य करते हैं, तिस परभी वह हमारे प्रेमी न बने रहकर अप्रिय कार्य्यमें दत्तचित्त रहते हैं। हे महाराज! वह अपना बल और कुलकी मर्य्यादा न जानके जरासन्धके प्रज्वलित यशको देखकर उसके वशमें होगये हैं। हे प्रभो! उत्तर दिशाके भोजोंके अठारह

कुल और शूरसेन, भद्रकार, बोधशाल्व, पटच्चर, सुस्थल, सुकुट्ट, कुन्ती, कालिन्द और सहचर तथा सहोदरोंके साथ शाल्वायन राजगण उस जरासन्धहीके भयसे पश्चिम दिशाको भाग गये हैं, दक्षिण पाञ्चाल और पूर्व्व कोशलके राजाने कुन्तीदेशकी शरण ली है। मत्स्य और संन्यस्तपाद देशी राजगण भय खाय उत्तर दिशाको तज दक्षिण दिशाको गये हैं और सब पाञ्चाल जरासन्धके भयसे भीत होके निज राज्यको छोड़ कर सब ओर भागे हैं।

कुछकाल बीते भया मूर्ख कंसने यादवोंको सताय बृहद्रथपुत्र जरासन्धकी कन्याओंसे विवाह किया था। वे कन्या सहदेवकी कनिष्ठा बहन हैं, उनका नाम अस्ति और प्राप्ति है। जरासन्धसे सम्बन्ध हो जाने पर [illegible] उस बलसे ज्ञातियोंको हराकर बड़ाई लाभ की थी। हे महाराज। ऐसे व्यवहारसे उसकी बड़ी कुनीति प्रकाश हुई थी। उस दुरात्माके भोजवंशी वृद्ध राजाओंको बहुत सताने पर उन्होंने ज्ञाति त्यागनेकी इच्छासे हमपर आशा प्रगट की थी। उस समय मैंने अक्रूरसे आहुककन्या सुतनुका दान कर बलदेवजीसे मिलके प्रसिद्ध कंसको मारा था, सो हमसे एक प्रकार ज्ञातिका कार्य्य उद्धार हुआ। हे महाराज। इस पाये हुए भयके दूर होने पर जब जरासन्ध युद्धके लिये उपस्थित हुआ, तब हमने अठारह कनिष्ठ राज-वंशोंसे यह परामर्श निश्चय की, कि हम शत्रुनाशी बड़े बड़े अस्त्रोंसे तीन सौ वर्ष दिन रात लड़के भी ता उसका बलक्षय नहीं कर सकेंगे, क्योंकि वह अमर समान तेज रखनेवाला महाबली है। हंस और डिम्भक नामक जो दो पुरुष उसके सहाय [illegible] शस्त्रोंसे मार जानेके योग्य नहीं हैं। वे [illegible] जरासन्ध इन तीनोंसे [illegible] [illegible]

सामने खड़ा नहीं हो सकता। हे सुधीवर। यह मत केवल हमाराही नहीं वरन सब धरतीनाथोंका ऐसाही निश्चय हुआ था।

हंस नामक प्रख्यात एक बड़ा नरनाथ था। जरासन्धके साथ हमारी उन सतरह लड़ाइयोंमें बलरामजीने उस हंसको मारा था। हे भरतनन्दन। डिम्भकने किसीसे हंसके नाश होनेका समाचार पाय यह निश्चय कर, कि हंसके विना जीवन व्यर्थ है, यमुनाजीके जलमें डूबके प्राण छोड़ा। हे शत्रुकुल जय करनेवाले। हंसभी लोगोंके मुखसे डिम्भकका वह हाल सुनके यमुनाजीमें डूबा। हे भरतश्रेष्ठ। राजा जरासन्ध डिम्भककी मृत्युका समाचार सुनकर उदास मनसे घरकी ओर चला। जरासन्धके लौटने पर हम आनन्दित मनसे फिर मथुरामें बसने लगे। आगे जब पद्मपलाशनयना कंसपत्नी पतिकी मृत्युका दुःख मान अपने पिता जरासन्धको यह कहके बारबार उभाडने लगी, कि मेरे पतिनाशीका नाश कीजिये, तब हमने उस पहिली परामर्शको स्मरण कर उदास होकर भागना चाहा। महाराज! उस जरासन्धके भयसे हम यह परामर्श कर, कि [illegible] ऐश्वर्य्यको आपसमें बांटके प्रत्येक मनुष्य [illegible] लेके पुत्र, पौत्र, ज्ञाति और बान्धवोंके साथ भागें, आगे सबमिलके पश्चिम दिशाको भाग गये। हे महाराज। उस पश्चिम खण्डमें रैवत पहाड़की चोटियोंसे सुहावनी कुशस्थली नाम्नी एक परम मनहरनी पुरीमें जा बसे और वहांके दुर्गको भली प्रकार संस्कार किया। वह दुर्ग ऐसा बना है, कि देवोंसे भी जानेके योग्य नहीं है, [illegible]

गये हैं, बड़ा हर्ष हुआ है। इस प्रकार जरासन्धके अनिष्ट करनेसे सब प्रकार दिक होके हमने सामर्थ रहने परभी प्रयोजनसे गोमन्त पर्वत को अवलम्ब किया है। वह पर्वत तीन योजन विस्तृत है, एक योजन के बीचमें उस पर एक एक सैन्यव्यूह बना है, और हर योजनके अन्तर पर सौ सौ द्वार बने हैं, वीरोंका विक्रमही उसमें तोरणकी भांति भरा है, और युद्धमें कठोर अठारह क्षत्रिय-वंशी उसकी रखवारी करते हैं। हे महाराज! हमारे कुलमें अठारह सहस्र भाई वर्त्तमान हैं। आहुकके सौ पुत्र हैं, उनमेंसे हरेक देवताके समान है। भाइयोंके साथ चारुदेष्ण चक्रदेव, सात्यकि, मैं, बलदेवजी और मेरे समान योद्धे शाम्ब हम यह सात अति-रथी हैं। इनके अतिरिक्त जितने महारथी हैं, उनको बात भी कहता हूं, सुनिये। कृतवर्म्मा, अनाधृष्टि, कङ्क, समितिञ्जय, कङ्क, शङ्कु, और कुन्ती यह सात महारथी हैं। और भी अन्धक भोजके दो पुत्र तथा स्वयं वह वृद्ध भूप, यह महावीर्य्यवन्त वज्रसमान देहधारी दश महारथी मध्यदेशको स्मरण करते हुए वृष्णियोंमें बसते हैं। हे भरतसत्तम! आप नित्यकाल तक साम्राज्य भोगनेके योग्य हैं, सो क्षत्रियोंमें आपनेको सम्राट करके प्रसिद्ध करें। पर मुझे जान पड़ता है, कि अति पराक्रमी जरासन्धके जीते रहते आप कदापि महायज्ञ राजसूय पूरा नहीं कर सकेंगे, क्योंकि सिंह जिस प्रकार महाहस्तियोंको पकड़कर गिरिराजकी कन्दरामें बन्धुआ बनाता है, वैसेही उस जरासन्धने राजोंको पराजय कर गिरिदुर्गमें पकड़ रखा है। हे शत्रुमथन! राजोंके द्वारा यज्ञ करनेकी इच्छासे उस जरासन्धने अति कठोर तप करके उमाकान्त महादेवजीकी उपासना कर सबही भूपालोंको हराया है, और उनकी द्वारा उक्त प्रणसेभी मुक्त हो गया है, उसने भूपालोंको सेनाओंके साथ बार बार पराजय करके अपने पुरमें लिवाकर बड़ा नाम लाभ किया है। महाराज! उस कालमें हमभी उसके भयसे मथुरा तज द्वारावती पुरीमें भागे थे। अतएव हे कुरुनन्दन! यदि आप यज्ञ किया चाहें, तो उन राजोंको छुड़ाने और जरासन्धको वधनेकी चेष्टा करें। ऐसा न करने से बड़ी भीड़ भड़ाकेसे उस यज्ञको प्रारम्भ कर पूरा नहीं कर सकेंगे। हे मतिमान्! राजसूय महायज्ञ पूरा करना चाहें तो मेरी समझमें ऐसा करनाही उचित जान पड़ता है, अब आपको समझमें जैसा हो करें। वर्तमान दशामें स्वयं कार्य्य कारणको विचारकर जो उचित जान पड़े, वही करें।

चौदह अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, कि हे कृष्ण! तुम अति बुद्धिमान हो; तुम जैसा कहोगे, वैसा कहना किसीसे बन नहीं पड़ेगा; पृथ्वी भरमें तुम्हीं एक शङ्का मिटानेवाले हो। देखो, हर राज्य होमें अपने-अपने प्रियकार्य्य करनेवाले राजा लोग विद्यमान हैं, पर कोई साम्राज्य लाभ नहीं कर सका। वास्तवमें सम्राट शब्द बड़ा दुर्लभ है। जो पराये बलवीर्य्यको बड़ा जानता है, वह कभी अपनी प्रशंसा नहीं करता है; शत्रुसे युद्धमें सत्कार जो प्राप्त होते हैं, वही पूजनीय है, हे यदुकुलतिलक! बहुत रत्नोंसे भरे बड़े भारी भूमण्डलकी भांति मनुष्यकी चित्तवृत्ति बहुत विस्तृत, भांति भांतिकी, और अनेक अच्छे अच्छे विषयोंसे भरी है। पृथ्वीके प्रदेशोंमें घूम फिर मनुष्य जैसे जानकारी लाभ करता है, वैसेही बुद्धिकी परम उन्नति पाय अपना मङ्गल भली भांति जान ले सकता है, हे जनार्द्दन! मैं शान्तिको श्रेय करनेवाली जानता हूं। शान्ति अवलम्ब करनेसे मेरा मङ्गल हो सकेगा। राजसूययज्ञ

प्रारम्भ करके अन्त फलका पाना कठिन जान पड़ता है। हमारे कुलमें जन्म लिये सब मनस्वी पुरुष यह समझते हैं, कि किसी न किसी समय उनमेंसे कोई बड़ाई लाभ कर सकता है, पर हे महाभाग। दुरात्मा जरासन्धके कड़ेपनसे हमभी बहुत भय खागये थे, विशेष जिसके भयसे तुमभी भीत हुए हो, हम तुम्हारेही भुजबलके आसरेमें रह कर अपने को क्योंकर उससे बली समझ सकते है? हे महाभुज। यह सोच करकेही, कि तुम, राम, भीम और अर्जुन इन चारोंमेंसे कोई उसे वधनेको समर्थ होगा वा नहीं, मैं वार वार उदास हो रहा हूं। अथवा मैं अधिक क्या कहूं, सब कर्मोंमें तुम्ही मेरा प्रमाण हो, तुम जो कहोगे, मैं कभी उसको विरुद्धता नहीं कर सकूंगा। अनन्तर वक्तावर भीमसेन यह सब बात सुनकर बोले, कि जो राजा एक वारही उद्योगसे मुंह मोड़ते हैं, और जो दुर्ब्बल और विना उपाय होय बलीसे भिड़नेको दौड़ते हैं, वे दोनो वल्मीककी भांति चित्तको खा डालते हैं। दुर्ब्बल गण यदि आलस्य छोड़कर उचित नियमसे बलियोंसे लड़ें, तो वह जय पाके अपना अभीष्ट सिद्धकर सकते हैं। हे महाराज। कृष्ण नीतिमें अच्छे हैं, मेरा विलक्षण बलहै और धनञ्जयभी उनको जय कर सकते हैं, सो जैसे तीन प्रकार अग्निसे यज्ञ पूरा होता है, वैसेही हम भी जरासन्धका वध करेंगे। श्रीकृष्णजी बोले, कि अबुध जन परिणामको बातको न समझ केही कार्य्यमें हाथ डालता है, विज्ञ जन अनजान बालकशत्रुको भी कभी क्षमा नहीं करते। महाराज। हमने सुना है, कि पहिले समयके दिलीप यौवनाश्व भगीरथ-कीर्त्ति, भरत और मरुत्त यह पांच ... सब शोभित प्रजाको विचार कर ... कर नहीं ...

तपोवीर्य्य, बल और सम्पद इन पांच गुणोंमें एकके सहारे सम्राट बने हैं, पर आप सर्व्व गुणवन्त होके साम्राज्य लाभकी इच्छा करते हैं; सो धर्म्म, अर्थ और न्याययुक्त मन्त्रणाके अनुसार आपको उचित है, कि बृहद्रथके-पुत्र जरासन्धको नष्ट करें। हे भरतश्रेष्ठ। आप यह भली भांति समझके देखें, कि सौ राजवंशियोंमें एकभी जरासन्ध को रोक नहीं सकता। सो वह बलहीसे साम्राज्यको भोग रहा है. रत्नवान राजगण रत्न देकर उसकी उपासना करते हैं, इस परभी वह प्रसन्न न होकर मूर्खतासे कुनीति लेके वशीभूत राजों पर चढ जाता है। ऐसा एकभी मनुष्य दीख नहीं पड़ता, जिससे वह प्रधान पुरुष राजस्वका अंश नहीं लेता। इस प्रकार जरासन्धने प्रायः सौ राजाओंको अधीन बनाया है। हे भरतनन्दन। आपसे दुर्ब्बल भूप क्योंकर उससे शत्रुता करेगा? पशुनाथके गृहमें रहनेवाले पशुओंकी भांति बंधे और बलि चढ़ानेके लिये निश्चय किये राजाके जीवनमें कौनसी प्रीति रह सकती है, अस्त्रसे मारे जाने पर जब क्षत्रियलोग सत्कारके पात्र बनते हैं, तब अवश्यही हम युद्धमें एक होकर जरासन्धको रोकेंगे। हे महाराज। सौमें छियासी भूप जरासन्धसे जिताये जाय बलि चढ़ाये जानेको निश्चय किये गये हैं, केवल चौदहही शेष बचे हैं, उनके साथ लड़ाई ही वह बड़ा कठिन कार्य्य पूरा हो जायगा। सो उन लोगोंमें जो विघ्न डाल सकेंगे, वही प्रदीप्त यश पा सकेंगे और जो उसको जीत सकेगा वह निश्चयही साम्राज्य भागी।

पन्दरहवां अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, कि हे कृष्ण! मैं साम्राज्य पानेकी इच्छासे ... पर ...

लिये भेजूंगा? हे जनार्द्दन। मैं भीमार्जुनको अपनी दो आंखें और तुमको मन करके जानता हूं, सो नयन मनसे हाथ धोय क्योंकर जीऊंगा? यमराजभी जरासन्धको भीम पराक्रमी अपार सेनाओंको पारकर परास्त नहीं कर सकते, सो उस दशामें तुम्हारा विक्रम प्रकाश करना कैसा होगा? वरन इस विषयमें हाथ डालनेसे बड़ा अनर्थ आ पड़नेकी सम्भावना है, सो मेरी समझमें प्रस्तावित यज्ञका प्रारम्भ करना उचित नहीं है। जनार्द्दन। इस विषयमें मैं अकेला जो विचारता हूं, सुनो। राजसूय यज्ञ करनेकी इच्छा से मुह मोड़नेहीको मैं श्रेय समझता हूं, मेरा चित्त हालमें बड़ा व्याकुल हो रहा है, मुझको निश्चय जान पड़ता है, कि राजसूय यज्ञ पूरा करना सामर्थके बाहर है।

श्रीवैशम्पायनजो बोले, अर्जुन अपनी सामर्थसे धनुषश्रेष्ठ गाण्डीव, दोनों अक्षय तूण रथ, ध्वजऔर मनहरणी सभा यह सब वस्तु पानेके कारण साहस कर युधिष्ठिरसे बोले, कि महाराज। चाप, अस्त्र, वाण, वीर्थ्य, सहाय, भूमि, यश और सेना यह मनलुभावने दुर्लभ पदार्थ मैंने लाभ किये हैं। देखें, साधु समाज तथा भले प्रतिष्ठित विद्वान जन कुलमर्थ्यादाकी प्रशंसा करते हैं, पर मेरी समझमें वह भी बलके सदृश नहीं है; वीर्थ्यही पर मेरी चाह दौडती है। वीर्थ्यवन्तवंशमें जन्म लेकर जिसका वीर्थ्य नहीं रहता, वह बड़ा तुच्छ है। वीर्थ्यहीन कुलमें जन्मलिये वीर्थ्यवन्त नर उससे श्रेष्ठ होते हैं। हे महाराज। जो शत्रुकोजयकर बढते हैं, वह सब प्रकारसे क्षत्रिय कहे जाते हैं। क्योंकि मनुष्य कुल-मर्थ्यादादि सब गुणोंसे रहित होकरके केवल वीर्थ्यवन्त होवे, तो शत्रुको जयकर सकता है, और सब गुण रहने परभी वीर्थ्य विना कोई कार्थ्य नहीं कर सकता। पराक्रमके सामने सब गुण, गुणीभूत है,अर्थात अप्रधान भावमें रहते हैं। बहुत विचार करना पुरुषकार और दैव यह तीन जयके विरोधी हैं; सो बहुत बलवन्त होने परभी बहुत विचार करनेसे कोई जय पानेके योग्य नहीं हो सकता, वरन बलवन्त होने परभी उस कारण शत्रुके हाथमें मरता है। दुर्ब्बलको जैसी हीनता घेरती है, वैसे सबलको मोह पकड़ता है, सो जय चाहनेवालोंको वह बड़ा अनर्थकारी मोह और दीनता त्यागना उचित है। यज्ञके लिये जरासन्धको वधकर राजाओंको छुड़ा सकें, तो हमारे लिये इससे बढकर अच्छा कार्थ्य क्या हो सकेगा? विशेष इस विषयमें मुह मोड़के बैठे रहनेसे लोग हमको निश्चय गुणरहित जानेंगे। अतएव हे महाराज। हमारे शंकाके अयोग्य गुणोंके रहतेभी आप क्यों निर्गुण समझे रहे हैं? पहिलेही शान्तिकी इच्छाकर मुनि बननेसे पीछे काषाय चीर जैसे सुलभ होता है, वैसेही पहिले प्रबल शत्रुको जय करनेसे हमको विना क्लेश साम्राज्य मिल जायगा, सो हम अवश्यही लड़ाईके लिये कमर कसेंगे।

सोलह अध्याय समाप्त।

वासुदेवजी बोले, कि भरतवंशमें जन्म लि[illegible] विशेष कुन्तीके गर्भमें उपजे जनका जैसा [illegible] होना चाहिये अर्जुनने वह प्रकटित किय[illegible] देखिये, हम नहीं जानते, कि कब रात्रि[illegible] वा दिनको मृत्यु होगी और भी कभी [illegible] नहीं सुना, कि न लड़नेसे मृत्यु नहीं होते[illegible] सो विधिदर्शित नियमानुसार शत्रु पर च[illegible] होसे हृदयको आनन्द पहुंचता है और [illegible] यके लिये वही उचित है। उपाय [illegible] अर्थात् उस अच्छे नियम के संयोगसे कि [illegible] देवतादिभी विरुद्ध नहीं हैं, कार्थ्य आरम्भ कि[illegible] जावे, तो अवश्यही पूरा होता है और [illegible] दानादि उपाय वर्ज्जित कुनियमोंके संयो[illegible] निश्चय विनाश होता है, उक्त प्रकारके मनि[illegible]

से युद्धमें भिड़ जानेमे भी एक पक्षकी उन्नति होनी सम्भव है, क्योंकि दोनों ओरकी तुल्यता प्रायः नहीं होती। यद्यपि तुल्यताभी हो, तौभी जयके विषयमें सन्देह रहता है, क्योंकि जय वा पराजय दोनों पक्षोंहीकी नहीं हो सकती है। सो हम नियम अवलम्बकर शत्रुके सामने खड़े होजायं, तो वृक्ष उखाड़नेवाली नदीके वेगकी भांति अवश्यही उसको नष्ट कर सकेंगे। अपनी चूक छिपानेका प्रयत्न कर पराये चूक देखके चढ़ जानेसे क्यों हमारा मनोरथ सफल नहीं होगा? पण्डितोंकी यही नीति है, कि व्यूढसेना कदापि अति बली शत्रुसे न लड़े, इसमें मैं भी असम्मत नहीं हूं, पर गुप्तभावसे शत्रुके घरमें घुस कर उसकी देहको पकड़ कर अभीष्ट सिद्ध करले सकें, तो हम कभी निन्दित नहीं होंगे। पुरुषवर जरासन्ध भूतोंकी अन्तरात्माके समान अकेला नित्य सौभाग्य भोग रहा है, सो हमारा यही अभिप्राय है, कि वह नष्ट होवे। हम ज्ञातियोंकी रक्षाके लिये यह चाहते हैं, कि चाहे उसको हनें अथवा उससे मारे जाकर स्वर्गको जायं।

युधिष्ठिर बोले, कि हे कृष्ण! जरासन्ध कौन है? उसका बल वीर्य्य कितना है. शलभके समान जरासन्ध अग्नि समान तुमको छू कर क्यों नहीं जलमरा? श्रीकृष्णजी बोले, महाराज! जरासन्धका जितना वीर्य्य और पराक्रम है और उसके अनेक बार हमारा अनिष्ट करने परभी हमने जिस कारण उसका बदला नहीं लिया, वह सब कहता हूं सुनिये। मगधदेशमें तीन अक्षौहिणी सेनासे उन्मत्त, [illegible] अहंकारसे फूले, रूपवाले, श्रीमान, वीर्य्यवान अतिविक्रम भरे, यज्ञके चिन्ह सदा देहमें [illegible] इन्द्रसदृश बृहद्रथ नामक एक बली [illegible]। उनका तेज सूर्यसमान, और [illegible] पृथ्वीसदृश और वीरता इन्द्र की भांति थी। हे भरतनन्दन! सूर्य्यके किरण जैसे सब ठौरको छा लेती हैं, वैसे उनके कुल परम्पराके गुणसे धरती भरी थी। उन अति वीर्य्यवन्त भूपने परम रूप सम्पदवती काशीराजकी यमजकन्याओंसे विवाह किया था। उन पुरुषवरने पत्नियोंसे निरालेमें यह नियम किया था, कि तुम दोनोंका मैं तुल्य प्रेमी बना रहूंगा, कभी अल्प वा अधिक प्रेम नहीं प्रकट करूंगा। हे महाराज! गजराज जैसे दो हथिनियोंसे मिल कर सुखसे काल काटता है, वह राजा उन अपने सदृश प्रेमवती पत्नियोंसे वैसेही काल गवाते थे और दोनोंके बीच रहके गङ्गा और यमुनाके बीचमें मूर्त्तिमान सागर समान सुहाते थे। उस प्रकार विषयका रस चीखते हुए क्रमसे उन राजाकी यौवनदशा कट गयी, पर एकभी वंशधर पुत्र नहीं उपजा। भूप पुत्रकी कामनासे बहुविध हवन यज्ञ और मङ्गलकर्म्म कर कर थकने परभी कुल बढ़ावना पुत्र नहीं पासके। अनन्तर एक समय यह सुनके कि गौतम-वंशी महात्मा काक्षीवानके पुत्र महानुभव चण्डकौशिक तपस्या पूरी करके मनमाने आते हुए एक वृक्षकी जड़ पर बैठे हैं, राजा बृहद्रथने पत्नियोंके साथ उनके सम्मुख जाय मुनियोंको देने योग्य बहुत अच्छे अच्छे पदार्थ देकर उनको प्रसन्न किया। सत्य-प्रेमी, और सत्य कहनेहारे ऋषिवर चण्डकौशिक उनसे बोले, कि हे सुव्रतधारी महाराज! मैं तुम पर प्रसन्न हुआ, अब मनमाना वर मांगो। बृहद्रथ तब दोनों पत्नियोंके सहित उनको प्रणाम कर पुत्रमुख न देखनेके दुःखसे नयनोंसे [illegible] भरे गद्गद होकर यह वचन बोले, कि मैं बड़ा अभागा हूं! [illegible]

राजाकी यह बात सुनके मुनि इन्द्रियोंको संयत कर उस आमके वृक्षकी छाहमें बैठके ध्यान करने लगे। वह उस प्रकार बैठे थे, कि उनकी गोदमें शुकादिसे न काटा कूटा एक आम गिरा। महाप्राज्ञ मुनिवर चण्डकौशिक उस अद्भुत फलको लेकर सोचते हुए उसी पुत्रलाभके लिये कारण स्वरूप राजाको दे दिया और बोले, कि हे नरनाथ। तुम्हारा मनोरथ सिद्ध हुआ, अब लौटकर अपने स्थानको जाओ।

हे भरतश्रेष्ठ। नृपवर बड़े बुद्धिमान बृहद्रथ मुनिकी यह बात सुनके उनके दोनों पावोंमें सिर लोटाय अपने गृहको पधारे और पूर्वकी प्रतिज्ञाको स्मरण कर दोनों पत्नियोंको वह एक फल दिया। उन्होंने भी आपसमें बांटकर उस एक फलको खाया। होने वाले अर्थके फलनकी निश्चयता और मुनिकी सत्यबादिताके हेतु उन दो रानियोंको फल भोजनके कारण गर्भ हुआ। नृप बृहद्रथ उनको गर्भवती देखकर बड़े आनन्दित हुए। हे महाप्राज्ञ भूप। अनन्तर दश महीने पूरे होने पर उन दो राजरानियोंने दो खण्ड शरीर प्रसव किये और उनमेंसे हरेकके एक आंख, एक हाथ, एक पांव, आधा मुख, आधा पेट और आधा लिङ्ग देखकर वे दोनों भयसे थरथराने लगीं। दोनों अबला बहिनने उस समय अति उदास होके आपसमें परामर्श कर उन दोनों जीती देहके खण्डोंको अति दुःखसे फेंक दिया। उनकी दो धात्रियोंने उन दो सुन्दर गर्भोंको भले प्रकार तोपतापकर अन्तःपुरसे निकलके किसी एक चौराहे पर लेजाकर फेंक दिया। हे नरवर! मांसरक्त खानेवाली जरा नाम्नी एक राक्षसीने उन फेंके हुए देह-खण्डोंको ले लिया। उस राक्षसीने तब विधिबल आज्ञाके कारण उनने नहजेहमें लेजानेकी इच्छासे उन दोनों देह-खण्डोंको एक किया। हे पुरुषवर। उन दो आधी देहोंके एक दूसरेसे मिलते ही, एकही स्वरूप धरके एक वीर कुमार बना। हे महाराज। अनन्तर राक्षसी आश्चर्ययुक्त आंखोंसे वज्रसार बच्चेको उठानेकी चेष्टा करने परभी उठा नहीं सकी। वह बालक हाथोंसे घूंसा बांधके, मुंह पर रखकर मुंहको फुलाय जलधरे घने बादलके समान गहरे शब्दसे रोने लगा। हे शत्रुमथन नरव्याघ्र। उस शब्दसे पुरवासी भय खाय राजाके साथ एकायक निकले और वह आशा छोड़ी हुई, मलिन मुख वाली, दूधभरे-स्तन धरी राजरानियांभी पुत्र पानेकी आशासे एकायक दौड़ चलीं। तब राक्षसी उन दो रानियोंको उस दशामें, राजाको सन्तान चाहते और उस बच्चेको बड़ा बलिष्ठ देखके सोचने लगी, कि मैं इन राजाके अधिकारमें बसती हूं। यह परम धार्म्मिक और महात्मा हैं, विशेष पुत्र लाभके लिये बड़ी इच्छा रखते हैं, सो इनके इस बालक पुत्रको नष्ट करना मुझको किसी प्रकार नहीं चाहिये। यह सोचके वह निशाचरी मानवी शरीर धरके मेघमाला जैसे सूर्य्यको छाय लेती है, वैसे उस कुमारको लेकर राजासे बोली, कि हे बृहद्रथ! यह पुत्र तुम्हारा है। मुनिवरके प्रभावसे तुम्हारी पत्नियोंसे उपजा है, अब मैं दिये देती हूं, धात्रियोंने इसे त्याग दिया था, मैंने यत्नसे बचाया है।

श्रीकृष्णजी बोले, हे भरतवंशी-श्रेष्ठ! अनन्तर काशीराजकी उन सुहावनी दोनों कन्याओंने उस बालकको पाय स्तनसे निकले दूधसे उसीक्षण उसे नहलाया। इसके पश्चात् राजाने सब हाल जानके, प्रसन्नमनसे उस सुवर्णवरणी मानवी रूपधारिणी राक्षसीसे पूछा, कि हे कमलगर्भ समान शोभावति! मुझे पुत्र देनेवाली तुम कौन हो? हे कल्याणी! तुम इच्छासे विचरनेवाली कोई देवी

जान पड़ती हो, सो अपना ठीक ठीक हाल कहो ।

सतरह अध्याय समाप्त ।

राक्षसी बोली; कि हे महाराज ! मेरा नाम जरा है, मैंने राक्षसी-कुलमें जन्म लिया है । स्वेच्छासे रूप ले सकती हूं । मैं नित्य हर मनुष्यके घरमें घूमा करती हूं । स्वयम्भू ब्रह्माजीने मुझको पहिले गृहदेवी नामसे दिव्य रूपिणी बनाय दानवोंके विनाशके लिये रख दिया है । जो मनुष्य पुत्रवती और नये यौवनसे मदमाती मेरी प्रतिमा अपने घरकी दीवार पर लिख रखता है, उसका निःसन्देह मङ्गल होता है, जो नहीं रखता वह नष्ट होता है । हे प्रभो ! पुत्रोंसे घिरी मेरी छवि तुम्हारे घरकी दीवारमें लिखी है और तुम्हारे गृहमें बसकर मैं गन्ध पुष्प धूप, भोजनादिकी नाना सामग्रियोंसे सदा भले प्रकार पूजी जाती हूं, सो सदा तुम्हारे उपकारके बदलेमें कोई उपकार किया चाहती थी । हे धार्म्मिकवर ! आज तुम्हारे पुत्रकी दो भागोंमें बटी देहको देखकर दैव संयोगसे ज्योंही उसे मैंने एकत्रित किया त्योंही वह एक कुमार बना । महाराज ! तुम्हारे भाग्यहीसे यह लीला हुई है, मैं इसमें

राक्षसीने इसको सन्धित किया अर्थात् मिलाया है, सो इसका नाम जरासन्ध हो । ऐसा निश्चय करके उस बालकका नामकरण किया । मगधनाथका वह बड़ा तेजोवन्त पुत्र प्रशस्त आकार धारणकर और बलवान होकर आहुति प्राप्त अग्निके समान बढ़ने लगा, सो शुक्ल पक्षके लिये चन्द्रमाके समान पिता माताको आनन्द देने लगा ।

अठारह अध्याय समाप्त ।

श्रीकृष्णचन्द्र बोले, कि कुछकाल बीतने पर महात्मा चण्डकौशिक फिर मगध देशमें आगये । राजा बृहद्रथ उनके आनेपर बड़ा प्रसन्न होकर मन्त्री, पुरोहित और दो रानियों तथा पुत्रके सहित निकलके पाद्य, अर्घ आचमनीय आदिसे उनकी पूजा की ! हे भरत नन्दन ! उस भूपालने राज्य-सहित उस पुत्रको उन्हें सौंप दिया । भगवान चण्डकौशिक राजा मगधकी वह पूजा लेकर प्रसन्न मनसे उनसे बोले, कि हे महाराज ! मैं दिव्यनेत्रोंसे सब बात जान चुका हूं । तुम्हारा यह पुत्र भविष्यतमें जो अवस्था प्राप्त करेगा, इसका जैसा रूप सत्त्व, बल और पराक्रम होगा, वह सुनो । तुम्हारा यह पुत्र ऐश्वर्य्यमें बढ़के और विक्रममें सबके

करके मृत्युसे भेंटते हैं, वैसे बहुत बल वाहन-वाले राजगण इसको हरानेमें आप नष्ट होंगे। वर्षाकालमें नदनदियोंके नाथ समुद्र जैसे उछलती जलभरी नदियोंको पकड़ लेता है वैसे यह राजोंकी उन्नत श्रीको स्वयं ले लेगा। सब प्रकार शस्य-भरी बहती पृथ्वी जैसे शुभ तथा अशुभ सबको धरती है, वैसे महाबली जरासन्ध चारों वर्णोंका धरनेवाला होगा। शरीरधारी जैसे सर्व्व भूतोंको आत्मभूत वायुके वशमें रहते हैं, वैसे सब नरनाथ इसकी आज्ञाके अधीन बनेंगे। अधिक क्या कहूं, सब लोकोंमें अति बलवान यह मागध-प्रधान जरासन्ध त्रिपुर-हनन, संसार-हरण महादेव रुद्रका दर्शन करेगा।

हे शत्रु नाशि! मुनिने ऐसा कहते ही कहते मानो अपना कोई कार्य्य स्मरण कर नरनाथ बृहद्रथको विदा कर दिया। मगध-नाथ भी नगरमें जाय ज्ञाति कुटुम्बोंको साथ लेय जरासन्धको मगधराज्यमें बैठाय बड़े प्रसन्न हुए। जरासन्धके राज्य पर बैठने पर राजा बृहद्रथ दो रानियोंके साथ वनको पधारे। हे प्रजानाथ! पिता तथा दोनों माताओंके वनमें जाने पर जरासन्ध अपने वीर्य्यके प्रभावसे सब नरनाथोंको वशमें लाया।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि नरनाथ बृहद्रथ तपोवनमें बहुत दिन तपकर दोनों पत्नियोंके संग स्वर्गको सिधारे। नवीन राजा जरासन्ध कौशिकके वचनानुसार सब वर पाकर राज्य पालने लगा। हे भरतनन्दन! उस कालमें जरासन्धके स्वजन भूनाथ कंसके वसुदेवपुत्र श्रीकृष्णसे मारे जाने पर उनके साथ जरासन्धकी शत्रुता उमड़ी। बलवन्त मगधनाथने उस शत्रुतासे गिरिव्रजसे एक बड़ी भारी गदा निन्नानवे बार घुमाके मथुरामें टिके आश्चर्य्य कर्म्मवाले श्रीकृष्णचन्द्रके नामसे फेंकी। वह सुहावनी गदा निन्नानवे योजनकी दूरी पर मथुराके निकट गिरी। पुरवासियोंने भली प्रकार देखके गदा गिरनेका वृत्तान्त श्रीकृष्णचन्द्रसे कह सुनाया। मथुराके निकट जिस ठौरमें वह गदा गिरी थी, वह गदावसान नामसे प्रख्यात हुई। महाराज! हंस और डिम्भक नाम दो पुरुष जरासन्धके सहाय थे वे शस्त्रसे मारे जानेके अयोग्य, मन्त्रणामें बड़े बुद्धिमान और नीति-शास्त्रमें पण्डित थे। उन अति बलवन्त दोनों वीरोंकी कथा मैंने पहिले आपसे कही है, कि हंस डिम्भक और स्वयं जरासन्ध इन तीनोंके मिलनेसे ऐसा जान पड़ता है, कि त्रिलोक भी उनके समान नहीं होसकता था। कुकुर, अन्धक और वृष्णिवंशियोंने पराक्रमी होने परभी केवल इस कारणसे नीतिके लिये जरासन्धको तुच्छ समझा था।

उन्नीस अध्याय और राजमन्त्र
प्रकरण समाप्त।

जरासन्ध वध प्रकरण।

श्रीवासुदेवजी बोले, कि हे युधिष्ठिर! हंस और डिम्भकने जलमें डूबके प्राण छोड़े हैं और कंस भी सहाय-सहित मारा गया, सो जरासन्ध-वधका यही ठीक अवसर है। सब सुरासुरभी उसको खुलाखुली लड़ाईमें परास्त नहीं कर सकते, अतएव उसको भुजयुद्धसेही जय करना उचित है। मुझमें नीति है, भीममें बल है और अर्जुन हमारी रखवारी करेंगे। अतएव तीन अग्नि जैसे यज्ञको पूरा करते हैं, वैसे हम जरासन्धकी मृत्यु पूरी करेंगे। हम तीनों निर्जनमें उससे जा मिलें तो वह हममेंसे एक न एकसे अवश्यही द्वन्द्व युद्धमें लगेगा, अपमान, लाभ-प्रकाश और भुजवीर्य्य देखके दर्पयुक्त होकर वह निश्चय भीमसे लड़नेके लिये कमर कसेगा।

लोकोंके खभावहोसे उभले रहनेसे मृत्यु जैसे उनको नष्ट कर देती है, वैसे अति बलवन्त महाभुज भीमसेनभी उस उभाले खभावी जरासन्धको नष्ट करनेको समर्थ होंगे। महाराज। आप यदि मेरा हृदय जानते हो और मुझ पर आपका विश्वास रहे, तो और विलम्ब न करके भीमार्ज्जुनको मेरे पास न्यासको भांति सौंप दीजिये।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि नारायणसे यह कहे जाय और भीमार्ज्जुनको प्रसन्नमुखसे बैठे देखकर युधिष्ठिरने सम्भ्रम सहित उत्तर दिया, कि हे शत्रुनाशी अच्युत। तुम मुझसे ऐसा मत कहो, तुम पाण्डवोंके नाथ हो, हम तुम्हारी शरणमें हैं। हे गोविन्द। तुम जो कहते हो, सब युक्तियुक्त है, क्योंकि श्रीलक्ष्मीजी जिनसे मुह मोड़ती हैं, तुम कभी उनके आगे नहीं जाते हो। हे जगन्नाथ। तुम्हारी इशारेकी बातोंसे मुझको यह जान पड़ता है, कि मानो मैंने जरासन्धको मार लिया, भूपालोंको बचाया और राजसूय यज्ञभी आरम्भ किया है। हे पुरुषश्रेष्ठ। अब अप्रमत्त मनसे यही करो, कि जिससे वर्त्तमान कार्य्य पूरा हो। क्योंकि तुम तीनोंके विना मैं धर्म्मार्थ-कामसे वर्ज्जित रोगोंसे पीड़ित जनकी भांति जीनेका साहस नहीं कर सकता। मेरा स्थिर निश्चय यह है, कि जैसे गोविन्द बिना पार्थ नहीं रह सकते और पार्थ बिना गोविन्दभी रह नहीं सकते, वैसे सेना चलानी चाहिये। जहां भूमि नीची होती है, बुद्धिमान जन उसी ओरको जल ले जाते हैं, मछुवेभी जहां गड्ढा रहता है, वहीं जल ले जाते हैं। ऐसेही बुद्धिमान सैनिकगण शत्रुको निचाई और चूक समझकर सेना चलाते हैं, सो नियमको विधि जाननेवाले, पुरुषकार रखनेवाले तिलोकमें प्रख्यात गोविन्दको अवलम्ब कर अवश्य कार्य्य पूरा करनेका प्रयत्न करेंगे। जो कार्य्य पूरा करनेकी प्रार्थना करते हैं, उनको ऐसी बुद्धि, नीति, बल, क्रिया और उपाय रखनेवाले श्रीकृष्णचन्द्रहीको आगे बढ़ाना चाहिये। पृथापुत्र अर्ज्जुनभी कार्य्य पूरा करनेके लिये ऐसे गुणनाथ यदुनाथ श्रीकृष्णहीके साथ जावे और भीमभी अर्ज्जुनकी बाट लें, ऐसा होनेहीसे नीति, बल और विक्रमके विषयमें सिद्धि सिद्धि प्राप्त होगी।

श्रीवैशम्पायनजी बोले कि युधिष्ठिरसे यह कहे जाय, अति तेजोवन्त श्रीकृष्णचन्द्र, और अर्ज्जुन तीनों भाई मित्रोंके मनभावन वचनसे सम्भाषित होके वर्च्चस्वी स्नातक ब्राह्मणोंके वस्त्र पहिरकर मगधनाथके धामको ओर चले। उनकी देह सूर्य्य, चन्द्रमा और अग्निके समान स्वभावहीसे अति तेजोपूर्ण थी फिर निज पर जातियोंके कार्य्यके लिये तत्काल उनके क्रोधसे जल उठने पर वह और भी प्रदीप्त हो गये। युद्धमें हार न खानेवाले भीमके सहित श्रीकृष्ण और अर्ज्जुनको कार्य्यमें उद्यमित देखकर

और एक पहाड़ीकी नदियोंको पार करते हुए चले। अनन्तर वे मनहरणी सरयूको पार उतरकर पूर्व्व कौशल देशको निहार मिथिला तथा माला और चर्म्मण्वती नदीको पारकर आगेको चले, गंगा और शोनके पार उतरकर वे अक्षय उत्साहसे पूरित तीनों वीर उस समय पूर्व्व दिशाको पधारके कुशाम्ब देशको छातीके समान मगधराज्यके क्रोरमें आ पहुंचे। अनन्तर उन्होंने जलभरे गौ-पूरे सुन्दर वृक्ष-भरे गोरथ नामक पर्व्वतसे उतरकर मगधनाथको पुरी देखी।

बीस अध्याय समाप्त।

———

श्रीवासुदेवजी बोले, कि हे पार्थ! वह देखो, मगधराज्यकी राजधानी कैसी सुन्दर शोभा पारही है। वह अनेक पशुभरी, सदा जलपूरी, उपद्रवोंसे रहित और अच्छे अच्छे भवनों से शोभित है। ऊंच ऊंची चोटी लिये हरेभरे वृक्षवाले, एक दूसरेसे मिले वैहार, वराह, वृषभ, ऋषिगिरि और चैतक यह पांच बड़े बड़े पर्व्वत मानो एक संग वनके गिरि-व्रजनगरीको रखवारी कर रहे हैं, शाखाओंके अगले भागमें फूल लगे, सुगन्ध फैलाये मनहरण कामी जन प्रेमयुत लोध्र वनोंने मानो उन पहाड़ोंको ताप रखा है। वहां प्रशंसित व्रतधारी महात्मा गौतममुनिने शूद्राणी औशीनरीसे काक्षीवानादि पुत्रोंको उपजाया था। गौतमके वीर्य्य और शूद्राणीके गर्भसे जन्म लेकरके भी उस वंशके उस भवनमें राजवंश होनेका कारण यही कहना चाहिये, कि राजों पर गौतमकी कृपा थी। हे अर्ज्जुन! पूर्व्वकालमें अति पराक्रमी अङ्ग वङ्गादिके राजगणभी इन गौतमकी कुटीमें आनकर प्रमुदित होते थे। वह देखो, गौतमजीके आश्रमके निकट लोध्र और पीपलके वन कैसी सुन्दर शोभा दे रहे हैं। यहां अर्ब्बुद और शक्रवापी नामके दो शत्रुतापी नागोंके और स्वस्तिक तथा मुनि नागके भवन बने हैं, भगवान मनुने मागधियोंको ऐसे रचा है, कि कभी उनसे बादलोंकी कृपा नहीं जाती, कदापि उनको जलका कष्ट नहीं होता और कौशिक तथा मणिमानने भी इन पर बड़ी दया दिखायी है उस प्रकार सब भांतिसे कठोर सुन्दर श्रेष्ठपुरको पाकर जरासन्ध अनुपम अर्थ पानेमें कोई शङ्का नहीं करता है, पर आज हम चढ़ कर उसका अहङ्कार चूर चूरकर देंगे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि ऐसा कह सुनकर अति बलवन्त वृष्णीवंशी श्रीकृष्णचन्द्र और भीमार्ज्जुन तीनों भाई मिलके मगधपुरको ओर चले। आगे वे हृष्ट जनोंसे भरे, सदा उत्सव करते हुए, औरोंकी ज्यके अयोग्य चारों वर्णपूर्ण गिरिव्रजनगरमें जा पहुंचे और पुरके द्वारके निकट न जाकर राजा बृहद्रथके परिवार तथा नगरवासी प्रजाओंसे पूजी जाती हुई, मागधोंकी प्यारी, ऊंची चैतक चोटीको भेद किया। उस स्थानमें राजा बृहद्रथने मांसाद ऋषभ दैत्यपर चढ़ाई की थी और उसको हननकर उसके चर्म्मसे तीन भेरीको छंप करके अपने पुरमें लटकाया था। वे तीन भेरी इतनी बड़ी थीं, कि एकबार पीटनेसे मासभर उनकी धुन सुन पड़ती थी। वे भेरी दिव्य फूलोंसे सजायी जाय जहां बजती थीं, जरासन्धके बध चाहनेवाले कृष्णादिने मानो उसके सिर पर चोट लगाय मागधोंको प्यारी उस चैतक-चोटीको तोड़ डाला भली भांति जमी, अति कठोर, बड़ी भारी और सुहावनी जो पुरानी चोटी गन्ध मालादिसे सदा पूजी जाती थी, उन तीनों वीरोंने अपरिमित भुजबलसे उसको धक्का मारके गिरा दिया और इसके पीछे प्रसन्न मनसे मगधपुरमें जा घुसे।

उसी समयमें वेदपारग पुरोहित ब्राह्मणोंने कुछ बुरे चिन्ह देख कर नरनाथ जरासन्धको दिखाये और गजपर चढ़ाय नाराज

अर्थात् जलती हुई लकड़ीसे आरतीकी। प्रतापी राजा जरासन्धभी उस अशुभकी शान्तिके लिये दीक्षित और नियमयुक्त हो रहे। इधर स्नातक व्रतधारी, विना अस्त्र भुजमात्र अस्त्र-सहित कृष्णार्ज्जुन और भीम नगरमें आय घुसे। हे भरतनन्दन! वे राज-मार्गसे चलते समय अपने भोजनकी सामग्री और मालाओंकी सर्वगुणयुक्त और सर्वकाम-पूर्ण अति सुहावनी शोभा देखने लगे। राज-मार्गमें वैसी समृद्धि निहारके उन महाबली नरवरोंने मालाकारसे बलपूर्वक माला छीन ली और इसी प्रकारसे रागयुक्त सुन्दर चीर, माला और भले भले कुण्डल धर हिमाचलकी सिंह जैसे गोशाला देखते हुए जाते हैं, वैसे जरासन्धके भवनमें गये। महाराज! उन युद्धदक्ष तीनों वीरोंके अगुरु चन्दनसे सुशोभित भुज शाल-वृक्षके समान सोहने लगे। मगधपुरके निवासी उनको बहुत मत्त हस्तीके समान शाल-स्कन्ध-सदृश ऊंचे और किवाड़की भांति चौड़ी छातीवाले देखकर अचरजमें होगये। नरश्रेष्ठ कृष्णादि जनभरी तीन कक्षाओंको पीछे छोड़ कर निश्चित हृदयसे अहङ्कारकी [illegible] जरासन्धके निकट जा पहुंचे। प्रतापी राजा जरासन्ध उसी क्षण उठकर यह सम्भाषण कर, कि 'आपका शुभागमन होवे' पाद्य, मधुपर्क और गोदानके योग्य पूजनीय कृष्णादिका विधिपूर्वक सत्कार किया। हे जनमेजय! उस काल पार्थ और भीम मौन [illegible] उनमें बड़े बुद्धिमान श्रीकृष्णचन्द्र जरासन्धसे यह बोले, कि हे नरनाथ! यह [illegible] नियमस्थ [illegible] सो इस समय [illegible] नहीं [illegible], आधी रात बीतने पर तुमसे वार्त्तालाप [illegible] राजा [illegible] यज्ञशालामें [illegible] आधी रात [illegible]

यह दृढ़ व्रत था, कि स्नातक ब्राह्मण आधी रातको भी आवें तौभी उस समय सुनतेही वह आकर उनसे भेट करता था। नृपवर जरासन्ध कृष्णादिके निकट पहुंचकर उनका अद्भुत वेश देखके अचम्भेमें होगया। हे भरत-श्रेष्ठ! यज्ञशालामें टिके उन शत्रुनाशी नरश्रेष्ठोंने राजा जरासन्धको देखतेही एक दूसरेके मुख देख कर उससे यह कहा, कि हे महाराज! विना विघ्न तुमको मोक्ष-पद मिल जावे। जरासन्धने कृत्रिम ब्राह्मण वेशधारी यादव और पाण्डवोंको बैठनेको कहा। वे सब भी बैठकर महा यज्ञकी तीन अग्नियोंके समान शोभासे जलने लगे।

हे कुरुनन्दन! अनन्तर नरनाथ सत्यप्रण ठाननवाला जरासन्ध गुप्तवेशधारी श्रीकृष्णादिकी निन्दाकर बोला, कि इस नरलोकमें सब प्रकारसे मुझे विदित है कि स्नातक व्रतधारी ब्राह्मण गृहस्थी धर्ममें-प्रवेश कालके विना मालादि नहीं धारण करते, पर देखता हूं, कि तुम फूल लगाये हो, और भी तुम्हारी हथेलियोंमें धनुषमें गुण चढ़ानेके चिन्ह बने हैं, सो तुम कौन हो? तुममें क्षत्रिय तेज है पर ऐसे विचित्र रागयुक्त चीर पहिरे और अनुचित माला लटकाये गन्ध लगाये अपनेको ब्राह्मण कहाते हो, सो सच कहो तुम कौन हो? क्योंकि राजाके निकट सच्चाईकी बड़ी शोभा है। तुम राजाके अनिष्ट करनेका भय न खाकर चैत्यक पर्वतकी चोटीको भेदकर [illegible] द्वारमें घुसे [illegible] अपना वीर्य [illegible] प्रकट [illegible] कार्य [illegible] तुम्हारा यह [illegible] उचित नहीं हुआ है। [illegible] तुम्हारा क्या अभिप्राय [illegible] तुम इस [illegible] मेरे पास [illegible] किया हुआ [illegible]

सत्कार नहीं लेते हो और मेरे पास आनेका प्रयोजन ही क्या है?

जरासन्धके ऐसे कहने पर महात्मना बक्तृवर श्रीकृष्णचन्द्रने कोमल गम्भीर स्वरमें उत्तर दिया, कि महाराज! तुम हमको स्नातक ब्राह्मण करके ही जानो। हे नरनाथ! ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य, तीनों वर्ण ही स्नातक नियमसे रह सकते हैं और उनमें विशेष और अविशेष दोनों प्रकारके सब नियम रहते हैं। उनमें विशेष नियमवाले क्षत्रिय सदा सौभाग्य प्राप्त करते हैं, और भी फूल लगाये जन निश्चय श्रीमन्त होते हैं, सो हमने फूल हार लटकाये हैं। हे वृहद्रथात्मज! क्षत्रिय लोग भुजसे जितना वीर्य्य प्रकाश करते हैं, बातसे उतना नहीं करते, अतएव उनके उच्चारे वचन कभी प्रगल्भ नहीं होते। हे महाराज! विधाताने क्षत्रियोंके दोनों भुजोंमें ही अपना वीर्य्य भर दिया है, यदि वह देखना चाहो तो बिना सन्देह निश्चयही देखोगे। बुद्धिमान जन शत्रुके घरमें कुद्वारसे और बन्धुके अच्छे द्वारसे जा घुसते हैं, यही धर्म्म-शास्त्रको विधि है, और यह भी जान लो, कि कार्य्य सिद्धकी चाहसे शत्रुके घरमें घुसकर हम उसकी दीहुई पूजा नहीं लेते, यह हमारा सदासे प्रसिद्ध नियम है।

इक्कीस अध्याय समाप्त।

जरासन्ध बोले, कि हे विप्रवर्ग! स्मरण नहीं होता, कि मैंने तुमसे कब शत्रुता की है, और यह सोचकर जान नहीं सकता हूं, कि तुमसे कभी बुराई की है। यदि हानि नहीं की हो, तो सच कहो कि बिना दोष तुम क्यों मुझको शत्रु समझते हो। क्योंकि सत्य वचनाही साधुओंका नियम है। देखो धर्म्म-अर्थमें चोट देनेसे मनों दुःख हो जाता है, जो भारी क्षत्रिय और धर्म्मके जानकार होके जो निर्दोषी जन पर उस धर्म्मार्थमें चोट पहुंचानेका कलङ्क लगाता है, वह बिना सन्देह पापियोंकी गतिको प्राप्त करता है और कल्याणसे भी अपनेको हटा लेता है। त्रिलोक भरमें क्षत्रिय-धर्म्म साधु व्यवहारियोंको शुभ पहुंचाता है, धर्म्मके जानकार लोग क्षत्रियोंके धर्म्मकी बड़ी प्रशंसा करते हैं; मैंभी हालमें अपने आत्माको संयत कर उस क्षत्रिय धर्म्ममें लगा हूं, और प्रजाओंके सामनेभी निर्दोषी हूं, इस परभी तुम मुझ पर धर्म्मार्थमें चोट पहुंचानेका कलङ्क लगाते हो, इससे निश्चय जान पड़ता है, कि तुम भ्रमवश ऐसी कल्पना करते हो। श्रीकृष्णचन्द्र बोले, कि हे महाभुज! कुलप्रवर कोई एक पुरुष कुल कार्य्यको वहन करते हैं, उन्हीकी आज्ञासे हम तुम पर चढ़ आये हैं। हे महाराज! तुम जन-समाजके सब क्षत्रियोंको बल पूर्व्वक पकड़ लाये हो, ऐसा अति कुटिल दोष करके क्योंकर अपनेको निर्दोषी समझ रहे हो? हे नृपवर! राजा होके क्यों कर साधु राजोंकी हिंसा कर सकता है? पर तुम उन राजोंको सताके रुद्रदेवके नामसे बलि चढ़ाना चाहते हो। हे जरासन्ध! तुम्हारा किया वह पाप हमको भी स्पर्श कर सकता है, क्योंकि हम धर्म्म आचरने वाले हैं, और धर्म्मकी रक्षामेंभी समर्थ हैं। बलि चढ़ानेके लिये नरहत्या तो कभी देखी नहीं गयी, फिर तुम क्यों कर नरबलिके द्वारा शङ्करके नामसे यज्ञ किया चाहते हो? जरासन्ध! तुम ऐसे मूर्ख हो, इसी लिये स्ववर्ण होके सवर्णोंको पशु नाम दिया चाहते हो। तुम्हारे बिना दूसरा कौन ऐसा कर सकता है? जो जैसा दर्शा करता है, वह उस कार्य्यका फल पाता है, अतएव हम भयभीत जनोंका पक्ष लेके ज्ञातियोंकी वृद्धिके लिये, ज्ञातिनाशी तुमको नष्ट करनेके लिये यहां आये हैं। हे मह

राज ! तुम्हारी यह समझ कि क्षत्रियोंमें तुम्हारे बिना दूसरा वीर नहीं है, यह केवल तुम्हारी बुद्धिकी हीनता है, क्योंकि अपनी वंश-मर्यादाको समझ बूझकर कौन आत्मा-वान क्षत्रिय रणमें प्राण छोड़के अनन्त अक्षय स्वर्ग पाना नही चाहता होगा ? हे नरवर। तुम यह निश्चय जानते हो, कि स्वर्गके उद्देशसे क्षत्रियगण रणयज्ञमें दीक्षित होके लोकोंको परास्त करते हैं। महान् वेद पढ़ना, महान् यश, तपस्या और युद्धमें मृत्यु, यह सबही स्वर्ग पानेके कारण हैं, उनमें वेद पठनादिसे स्वर्गलाभ नभी होसकता है, पर युद्धमें मरनेसे वैसा होनेकी असम्भावना नही है, यह स्वर्ग-प्राप्तिका निःसन्देह कारण है। युद्धमे मृत्यु साक्षात इन्द्र सम्बन्धी कृपाके समान है, यह सदा गुणोंसे भरी है ; ऐसी मृत्यु लाभ करकेही इन्द्र दैत्योंको परास्त करके जगको पालते हैं। हे महाराज। तुम्हारा विग्रह जैसा स्वर्गकी बाटके योग्य है, वैसा फिर किसका हो सकता है ? क्योंकि वह अगणित मागधी सेनाओंकी सहायता और बहुत बड़े बलदर्पसे भरा है। वास्तव में हे नरनाथ। तुम दूसरे लोगोंका अनादर मत करो, क्योंकि मनुष्य मात्रहीमें वीर्य है। ऐसे कितने ही मनुष्य विद्यमान हैं, जो तुम्हारे समान वा तुमसे अधिक वीर्य्यवान हैं! यह बात जबतक अविदित है, तब तक तुम्हारा तेज गिना जा सकता है, पर हे महाराज। यह तेज हमारे लिये बहुत असह्य है, इसी लिये मैं ऐसा कहता हूं। हे मागध। तुम अपने समान [illegible] अभिमान और दर्प करना छोड़ दो। [illegible], सबको और सेनाओंके साथ झटपट यम-राजके घर मत जाओ। देखो, [illegible] [illegible] कार्त्तवीर्य, उत्तर, बृहद्रथ आदि [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] गये हैं। इस [illegible] [illegible]

नहीं है, केवल छलसे तुम्हें छलनेको ब्राह्मणवेश लिया है। मैं हृषिकेश कृष्ण हूं और यह दो वीर पाण्डुके पुत्र हैं। हे मगध-नाथ! हम तुमको ललकारते हैं, स्थिर होकर लड़ो, अथवा सब भूपोंको छोड़ दो और नहीं तो यमघरको जाओ। जरासन्ध बोला, कि कहो कृष्ण। मैं बिना जय किये किसी भूपको नही पकड़ता, बिना हारे क्या कोईभी यहां बंधा रहता है ? और ऐसा क्षत्रियही यहां कौन है, जो मुझसे पराजित नही हुआ ? यही क्षत्रियोंका उपजीव्य धर्म्म करके कहा गया है, कि विक्रमसे शत्रुओंको वशमें लाय जैसा चाहे व्यवहार करे। अतएव कृष्ण। मै देवताके नामसे क्षत्रियोंको पकड़ लाके क्षत्रिय धर्म्म समझकर हालमें भय खाय अब क्यों-कर उन्हें छोड़ दे सकता हूं ? पर जो तुम युद्धकी बात कहते हो, मै व्यूहयुक्त सेनाओंसे अथवा अकेले एकसे दोसे वा तीनसे एकबारही वा अलग अलग चाहे जैसे हो लड़नेको सम्मत हूं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि राजा जरा-सन्धने यह कह भयावने कर्म्म करने वाले कृष्णादिके साथ युद्ध करने पर होके अपने पुत्र सहदेवको राज्यमें बैठनेकी आज्ञा दी। हे भरतसिंह। इस उपस्थित युद्धमें उसने कौशिक और चित्रसेन नामक सेनापतियोंको स्मरण किया। हे महाराज! पहिले इस नरलोकमें लोग उनको ही 'हंस और डिम्भक' यह लोक-प्रख्यात नाम कहा करते थे। हे [illegible] ! [illegible] [illegible], [illegible], [illegible] [illegible]-प्रवर, [illegible] [illegible] [illegible] इन [illegible] [illegible] समान पराक्रमी [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible]

[illegible] [illegible] [illegible]

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर वचन-प्रधान यदुनन्दन श्रीकृष्णचन्द्रने युद्धमें प्रण ठाने हुए राजा जरासन्धसे यह पूछा, कि महाराज! हम तीनोंमें किससे तुम लड़ा चाहते हो? कौन तुमसे लड़नेको सज धज ले। श्रीकृष्णकी यह बात सुनके उस तेजस्वी मगधनाथने भीमसे लड़ना चाहा। तब पुरोहित गोरोचना, माला और दूसरे माङ्गलिक पदार्थोंके साथ-पीड़ा-भगावनी चेत-जगावनी औषध लेके युद्धेच्छुक राजा जरासन्धके पास आये। भीम-पराक्रमी मतिमान जरासन्ध यशोवन्त ब्राह्मणोंसे स्वस्त्ययन किये जाय क्षत्रिय धर्म स्मरणकर युद्धके लिये प्रस्तुत हुआ! वह किरीट उतारके केश बांधके हिलोड़ते हुए समुद्रके समान वेगसे उठ खड़ा हुआ और भीमसे बोला, भीम! तुमसे लड़ूगा, देखो श्रेष्ठ जनसे हारनाभी अच्छा है। शत्रुमथन, अति तेजोवन्त जरासन्ध यह कहके बल नामक दैत्य जैसे इन्द्र पर दौड़ा था, वैसे उनकी ओर दौड़ा। अनन्तर बली भीमसेन श्रीकृष्णसे परामर्श कर और उनसे स्वस्त्ययन किये जाय लड़नेके लिये जरासन्धके पास जा पहुंचे। पीछे एक दूसरेकी पराजय चाहनेवाले भुजमात्र शस्त्र लिये हुए वे दोनों नरशार्दूल वीर अति प्रमुदित चित्तसे एक दूसरेसे भिड़ गये। पहिले वे एक दूसरेके कर थामके पावोंसे सम्भाषण कर ताल ठोक कर राजभवनके भरोखे कंपाय ललकारने लगे, आगे दोनों करोंको गलेमें वारम्बार रगड़के देहसे देह रगड़ाय फिर ललकारते रहे और चित्रहस्तादि अर्थात् हाथ सिकोड़ना, घूसा बनाना आदि करके और ताल ठोकके गलेमें गला गालसे गाल रगड़के आगकी चिनगारी निकालकर मानो वज्र रच डाला। हे विभो! वे भुजमात्र अस्त्र लिये दोनों वीर बादल समान गर्जन करनेवाले एक दूसरेके मूड़ पर चोट मारके गर्जन करते हुए हस्तीकी भांति बाहुपाशादि अनेक प्रकारके बन्धन कर उरोहस्त अर्थात छाती पर थप्पड़ मारना, पूर्णकुम्भ अर्थात् एकत्रित उङ्गलियोंसे सिर पर मारना इत्यादि युद्धके कौशल दिखाके एक दूसरेके सिर पर लात मारने लगे और थप्पड़ोंसे घायल होय क्रोधसे उभले दो सिंहके समान एक दूसरेको देख देखके और बार बार पकड़ पकड़के लड़ने लगे। परस्पर अङ्गसे अङ्ग भुजोंसे भुज घायल किये और पेटपर पेट रखके परस्परको गिराया। सुशिक्षित दोनों वीर कमर, स्कन्ध, और पार्श्वभाग सिकोड़ सिकोड़के दोनों करोंसे पेटको घेर अपने कण्ठ और छातीके निकट लाय इस प्रकारसे एक दूसरेको सताने लगे और सर्व मर्य्यादानाशी पीठ तोड़, पूरी मूर्च्छा, दोनों भुजाओंसे पूर्णकुम्भ तृणपीड़, घूसोंके साथ मनमाना पूर्णवेग आदि नाना भांतिसे लड़ने लगे।

हे नरशार्दूल! उनकी लड़ाई देखनेके लिये उस समय पुरवासी सहस्र ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र यहांतक, कि स्त्री और वृद्धभी वहां एकत्रित थे। भीड़ इतनी लगी, कि वहां ठुकभी स्थान न रहा। तब लड़ते हुए वीरोंके मुक्के और उलट पलटसे पहाड़ पर वज्र गिरनेके समान भयावना शब्द होने लगा। वे दोनों महाबली थे और युद्धमें अति प्रसन्न होते थे, सो एक दूसरेकी चूक ढूंढ़ रहे थे। महाराज! इन्द्र और वृत्रासुरके युद्धमें जैसा हुआ था, वैसेही भीड़भरे अखाड़ेसे लोगोंको हटाय भीम और जरासन्धकी वह भयावनी लड़ाई होने लगी। प्रकर्षण, आकर्षण, अनुकर्षण, विकर्षण आदि बहुविध पेचोंसे एक दूसरेको खींचने और जड़से चोट पहुंचाने लगे। अनन्तर वे दृढ़ छाती तथा दीर्घ भुजवाले क्षत्रियोंमें तेज दोनों वीर अति घोर शब्दसे एक दूसरेकी निन्दा कर लोहेके परिघ समान भुजोंसे समार्थ्य

और संश्लिष्ट पाषाण-सदृश अति कठिन आघातसे मारने लगे। महात्मा भीम और जरासन्धकी ऐसी लड़ाई कार्त्तिक मासकी प्रथमा तिथिमें आरम्भ होय त्रयोदशी तक निशिदिन बिना रोकटोक बिना भोजन चली थी आगे चतुर्द्दशीकी रातको जरासन्धने थक-कर कुश्ती त्याग दी। जनार्द्दन राजाको युद्धमें थका देखकर भयावने कर्म्मचारी भीमको मानो उत्साहित करनेके लिये बोले, कि कुन्तीनन्दन! युद्धमें थके शत्रुको पीड़ा नहीं पहुंचायी जा सकती, क्योंकि पूर्ण रूपसे पीड़ित होनेसे वह अपना जीवन छोड़ सकता है, सो इस दशामें राजाको भी पीड़ा नहीं देनी चाहिये, तुम तुल्यभावसे इनके साथ लड़ो। श्रीकृष्णके इशारेसे ऐसा कहने पर शत्रुनाशी वृकोदरने जरासन्धकी वैसी दशा समझके उसको हनना चाहा। अनन्तर औरोंकी जयके अयोग्य उस जरासन्धको वधनेके लिये बलियोंमें श्रेष्ठ कुरुनन्दनने बड़ा उत्साह किया।

तेईस अध्याय समाप्त।

वैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर भीमसेन जरासन्धको नष्ट करनेकी इच्छासे अति उत्साह लिये यदुनन्दन श्रीकृष्णसे बोले, हे यदुशार्दूल कृष्ण! वह पापात्मा अभीतक ताल जमाता और तेज दिखाता है। सो इसे छोड़ना उचित नहीं है। पुरुषश्रेष्ठ श्रीकृष्णने वृकोदरकी यह बात सुनके जरासन्धके वधके लिये मानो उनको शीघ्रता दिखानेको कहके यह उत्तर दिया, कि हे भीम! तुम्हारा जो परम दैवी बल है और पवनसे तुमने जो बल पाया है वह आज जरासन्ध पर शीघ्र दिखाओ। मधुसूदनके ऐसा कहने पर महाबली भीमसेन [illegible] जरासन्धको [illegible] घुमाने लगे। [illegible] सौ बार [illegible] हुए [illegible]

उसकी पीठ दबाय तोड़ डाली, इस प्रकार उसको पीसके गंभीर गर्जन करने लगे। पिसा जरासन्ध और गरजते हुए भीमका सब प्राणियोंका भयदायी ऐसा कठोर शब्द हुआ, कि मगधवासी सब लोग भय पाये; यहां तक कि गर्भवती स्त्रियोंका गर्भ भी गिर गया। भीमसेनकी गरजनी सुनके मागधियोंने यह समझा कि क्या हिमाचल टूट गया अथवा धरती फट रही है। अनन्तर शत्रुनाशी तीनों भाई रातके समय प्राणरहित जरासन्धको सोतेकी भांति राजद्वारमें छोड़के बाहर निकले। श्रीकृष्णचन्द्रने जरासन्धके ध्वजा-सहित रथको जोत कर उस पर चढ़के और भीमार्जुनको चढ़ाय बान्धवोंको कारागारसे छुड़ाया। रत्नवान भूपवर्गने बड़े भयसे छुड़ाये जाय श्रीकृष्णके सामने जाय उनको नाना रत्नोंका उपहार देय प्रसन्न किया। शस्त्रधारी शत्रु जयकारी शत्रुओंको बार बार मारनेकी शक्ति रखनेके हेतु शत्रुओंकी उन्नति नष्टकारी दोनों भाइयोंसे तुल्य युद्धकारी, शत्रु-संहारकारी दर्शनीय अर्जुन श्रीकृष्णको सारथि बनाय उस सुन्दर रथपर चढ़ सब राजाओंके आगे गिरिव्रजसे अक्षत शरीरसे निकले। वासुदेव भीमार्जुनके चढ़ने और श्रीकृष्णके सारथी होने पर सब धनुषधारियोंसे अजय वह रथ बहुत सुहाने लगा। इन्द्र और विष्णुका पहिले तारका [illegible] जिसमें आसक्त [illegible] उस युद्धके कालमें इन्द्र और उपेन्द्र [illegible] पर चढ़े थे, अब श्रीकृष्ण उस [illegible] गम सामना करने [illegible] पूर्व, बादलके समान [illegible] [illegible]

भरतनन्दन। दिव्य चार घोड़े जुते वायुसमान वेग रखते हुए उस दिव्य रथने श्रीकृष्णके विराजने पर कैसी अपूर्व शोभा धरी थी। उस रथमें देवतोंसे बनी, श्रीठनी इन्द्र धनुषकी प्रभाकी भांति सुहासिनी एक अच्छी ध्वजा इतनी ऊंचाई पर लगी थी; कि रथसे वह मिलती नहीं थी, और वह योजन भरकी दूरीसे दीख पड़ती थी,।

अनन्तर श्रीकृष्णने गरुड़का स्मरण किया और गरुड़भी उसी क्षण उनके निकट आ पहुंचे। सर्पनाशन गरुत्मानन गहरी ध्वजधारण ध्वजलोहन भूतोंके साथ उस रथ पर चढ़ बैठे, उनके बैठनेसे वह रथकी ध्वजा मानो फल कर चैत्य वृक्षके समान सोहने लगी, और सहस्रों किरण छिटकाये मध्याह्नकालिक सूर्यकी भांति अधिक तेज पाय प्राणियोंके अयोग्य बनी। हे महाराज। वह ध्वजा न तो वृक्षोंसे लगती और न शस्त्रोंसे विद्ध होती, थी मनुष्यलोग उसको केवल देखतेही थे। नरनाथ वसुने जिसे इन्द्रसे प्राप्त किया था; वसुसे वृहद्रथने जिसे लाभ किया था, और वृहद्रथके पीछे जो जरासन्धको मिला था, पुरुषोत्तम श्रीकृष्णचन्द्र भीमार्ज्जुनके साथ उस बादल समान धुनसे पूरित दिव्यरथ पर चढ़के पुरीसे निकले। उन महाभुज महायशवन्त पुण्डरीकाक्षने गिरिव्रजसे निकलके बाहरी खण्डमें किसी एक समतल ठौरमें कुछकाल तक विश्राम किया। हे महाराज! उस नगरवासी ब्राह्मणादि लोगोंने विधिके अनुसार कर्म्मसे उनका सत्कार किया। और बन्धनसे छूटे भूपोंनेभी उनकी पूजा की। इसके पीछे राजोंने स्तुति करके उनसे यह कहा, कि हे महाभुज देवकीनन्दन। भीमार्ज्जुनसे मिलके जरासन्धरूपी बड़े झीलके दुःखरूपी कीचड़में डूबे राजोंको उद्धार कर धर्म्मपालना आपके लिये कोई बड़ी बात नहीं है। हे ... भरमें फंसे यदुनन्दन! हम कठोर गिरिदुर्गमें बहुत उदास होके पड़े थे, बड़े भाग्यसे आपने हमको छुड़ा कर प्रदीप्त यश लाभ किया। हे पुरुषव्याघ्र। हम सब प्रकारसे सिर नवाये हैं अब आज्ञा दीजिये कि क्या करें। आप जो कार्य करनेको कहेंगे, वह करनेके अयोग्य होने परभी यह समझ लीजिये कि भूपोंने करही दिया है।

महानचित्त हृषीकेश उनको ढाढ़स देकर बोले, कि हे भूपो। युधिष्ठिरने राजसूय यज्ञ करना चाहा है सो आप यह सब ज्ञात होय उस धर्म्ममें प्रवृत्त नरवरकी सहायता करें। हे नृपश्रेष्ठ। अनन्तर वे पृथ्वीनाथ राजा लोग प्रसन्न मनसे उनकी वह बात मानके यह बोले कि 'सब वही करेंगे' और उनको बहुत रत्नभी दिया। यदुनन्दन गोविन्दने उनपर दया दिखाय उसका कुछभाग ले लिया। जरासन्धपुत्र महानचित्त सहदेवने भी पुरोहितोंको आगे कर मन्त्री और सज्जनोंके साथ निकलके आ नम्रतासे प्रणाम कर बहुत रत्न देके नरदेव वासुदेवजीकी उपासना की। तब पुरुषोत्तम श्रीकृष्णचन्द्रने उस भयभीत राजकुमारको अभय देकर उसके दिये हुए महामूल्य रत्नोंको ले लिया। और हर्ष सहित उसी स्थान पर उसको अभिषिक्त कर दिया। यह महाभुज प्रकाशमान जरासन्ध-नन्दन श्रीकृष्ण और भीमार्जुनसे सत्कार सहित मित्रता लाभ कर और महात्माओंसे राजपद पर बैठाये जाय मागधपुरमें गया। इधर पुरुषश्रेष्ठ श्रीकृष्णभी भीमार्जुनके संग परम सुशोभित होय बहुत अधिक रत्नके साथ पधारे। अनन्तर अच्युत भीमार्ज्जुनके साथ इन्द्रप्रस्थमें पहुंच कर धर्म्मनाथके सामने जाय प्रसन्न चित्तसे बोले, कि हे नरनाथ। भाग्यवश भीमसेनने जरासन्धको नष्ट किया है और राजगणभी बन्धनसे छूटे हैं। हे भारत। बड़े भाग्यसे भीमार्ज्जुन कुशल सहित अक्षत देहसे नगरको लौट आये।

इसके पीछे युधिष्ठिरने परम प्रसन्न चित्तसे श्रीकृष्णका यथायोग्य सत्कारकर उनको और भीमार्ज्जुनको गले लगाया। जरासन्धके मारे जाने पर अजातशत्रु युधिष्ठिर दोनों भाइयोंके द्वारा जय पाय हर्षित हुए। आगे भाइयोंसे घेरे जाय उन्होंने आये हुए नरनाथोंको अवस्थाके अनुसार आलिङ्गन वस्त्रादि कर सत्कार और पूजापूर्व्वक विदा कर दिया। नरनाथ लोग सब युधिष्ठिरकी आज्ञा लेके प्रसन्नमनसे अनेक यान वाहनों पर निज निज देशोंको तुरन्त पधारे। हे भारत! महाबुद्धि पुरुषशार्दूल जनार्द्दनने उस काल पाण्डवोंसे अपने शत्रु जरासन्धको इस प्रकारसे मारके गिराया था। वह शत्रुदमन श्रीकृष्णचन्द्र अपनी बुद्धिसे जरासन्धको मरवा करके धर्म्मनाथादि पांच पाण्डव धौम्य पृथा, कृष्णा और सुभद्राको बुलवाकर उनकी आज्ञा लेकर, धर्म्मनाथके दिये हुए मन समान वेगवान उसी रथ पर चारों ओर धन मचाय अपने नगरको पधारे। हे भरतश्रेष्ठ! तब युधिष्ठिर आदि पाण्डवोंने कर्म्म करके न थकनेवाले श्रीकृष्णकी परिक्रमा दी, अनन्तर देवकीनन्दन भगवान श्रीकृष्णचन्द्रके उस काल महान् जय पाय और राजोंको दान दे चले जाने पर उस कर्म्मसे पाण्डवोंके यशकी सुगन्ध और भी बढ़ी, उससे उन्होंने द्रौपदीकी प्रीति बहुत बढ़ायी। हे भारत! उस समय, प्रजापालन और कीर्त्तियोग्य धर्म्मार्थ कामयुक्त जो जो कर्म्म होने चाहिये थे, राजा युधिष्ठिरने वह सब करके दिखाये थे।

चौबीस अध्याय और जरासन्धवध प्रकरण समाप्त।

वैशम्पायनजी बोले कि धर्म्मराज [illegible] [illegible] ... सेना, रथ, धन, और [illegible] [illegible] युधिष्ठिरसे [illegible] [illegible] [illegible]

दुर्ग, यश और सेना, यह सब मनमाने दुर्लभ वस्तु मेरे हाथ लगी है। इस दशामें भण्डार बढ़नाही मुझको उचित जान पड़ता है; सो हे नृपवर! मैं सब राजोंको करदाता बनाऊंगा, शुभ तिथि, शुभ नक्षत्र, शुभ मुहूर्त्तमें उत्तर दिशा जय करनेको यात्रा करूंगा। धनञ्जयका वचन सुनकर धर्म्मनाथ युधिष्ठिरने कोमल गम्भीर स्वरसे उनको उत्तर दिया, कि हे भरतवर पार्थ! तुम योग्य विप्रोंसे स्वस्ति कहलाय, शत्रुओंको शोक देने और मित्रोंका आनन्द बढ़ानेको यात्रा करो। अवश्य अभीष्ट लाभ करोगे, सन्देह नहीं, कि तुम निश्चय विजय पावोगे। युधिष्ठिरकी इस बात पर अर्ज्जुनने बड़ी सेनासे घेरे जाय अग्निदेवके दिये हुए आश्चर्य कार्य्य करनेहारे दिव्य रथ पर चढ़कर विजय करनेकी यात्रा की। पुरुषर्षभ भीमसेन नकुल और सहदेव यह भी सब धर्म्मनाथके सत्कार सहित सेनाके साथ निकले। हे महाराज! इन्द्रनन्दन अर्ज्जुनने उत्तर दिशा, भीमने पूर्व्व दिशा सहदेवने दक्षिण दिशा और अस्त्रके जानकार नकुलने पश्चिम दिशाको जय किया। इधर प्रभावी धर्म्मनाथ युधिष्ठिर खाण्डवप्रस्थमें मित्रोंसे घेरे जाके परम सौभाग्य भोगने लगे।

पचीस अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, कि हे भगवन्! मेरे पुरुखोंकी दिग्विजयका वृत्तान्त विस्तार पूर्वक कहिये, क्योंकि इनका महान चरित्र सुन सुनके मेरी तृप्ति होती नहीं है। वैशम्पायनजी बोले, कि पाण्डवोंने [illegible] पृथ्वी जीत लिया था, सो पहिले धनञ्जयकी दिग्विजय वृत्तान्त पहिले कहता हूं।

[illegible]

भूनाथ भूमण्डलको सेना सहित पराजित किया। हे महाराज। शत्रुतापन सव्यसाची उस भूमण्डलसे मिलके शाकलद्वीप और पृथ्वीनाथ प्रतिविन्ध्यको जीत लिया। सातद्वीपोंमेंसे शाकल द्वीपमें जितने नरनाथ राज्य करते हैं, सेना सहित उनसे अर्जुनकी बड़ी भारी लड़ाई हुई थी। हे भरतश्रेष्ठ। अर्जुनने उन बड़े चापधारियोंको भी परास्त किया और उन सबोंसे मिलके प्रागज्योतिषदेश पर चढ़नेको दौड़े। हे पृथ्वीनाथ। उस देशमें भगदत्त नामक प्रचण्ड राजा था। उसके सग अर्जुनका अति घोर युद्ध हुआ। प्रागज्योतिषनाथ भगदत्त किरात, चीन और सागर तीरके दूसरे अनूप-देशवासी अगणित योधोंसे मिले थे। वह नरनाथ आठ दिन लड़नेके पीछे युद्धमें न थकनेवाले धनञ्जयसे हंसते हुए यह बोले, कि हे महाभुज, कौरवनन्दन। तुम पाकशासनके पुत्र हो, युद्धकी शोभा बढ़ाने वाले हो, अतएव ऐसा वीर्य्य प्रकाश करना तुम्हारेही योग्य है। हे तात। मैं महेन्द्रका सखा हूं और युद्धमें भी उनसे कम नहीं हूं, तिस परभी युद्धमें तुम्हारे सामने स्थिर बना नहीं रह सका। हे महाभुज पाण्डुनन्दन। अब तुम क्या चाहते हो, कहो, मैं तुम्हारा क्या करूं। हे बेटा। तुम जो कहोगे, मैं अवश्य ही वह पूरा करूंगा।

अर्जुन बोले, कि कुरुओंमें सबसे प्रधान धर्मपुत्र राजा युधिष्ठिर, धर्मज्ञ, सत्यप्रतिज्ञ और बहुत दक्षिणायुक्त यज्ञकारी हैं, मैं यही चाहता हूं, कि उनको साम्राज्य मिले, सो आप उनको कर देवें। आप मेरे पिताके सखा और मुझ पर प्रसन्न हो रहे हैं, सो आपको मैं आज्ञा कर नहीं सकता, आप प्रीति पूर्वक देवें। भगदत्त बोले, कि हे कुन्तीनन्दन। तुम मेरे जैसे प्रीतिके पात्र हो, राजा युधिष्ठिरभी वैसे हैं, सो मैं अवश्यही यह सब करूंगा, इसके उपरान्त, कहो, तुम्हारा और क्या करना होगा।

छब्बीसवां अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, भगदत्तकी वह बात सुनके धनञ्जयने उत्तर दिया, कि आपके लिये इतनाही मानना बहुत है। एसपश्चात् महाभुज धनञ्जय इस प्रकार प्रागज्योतिषको जीत कर उसके औरसभी उत्तरको पधारे और अन्तर्गिरि बहिर्गिरि, उपगिरि, सब जय कर ली। हे महाराज! उन्होंने सब पर्वत और वहांके भूपोंको हराय वशमें लाय और प्रेमी बनाय सबके निकटसे धन संग्रह कर गंभीर मृदङ्ग समान ध्वनि करनेवाले रथके पहियोंकी आहट और गजोंके गर्जनसे धरतीको कम्पाय उनसब नरनाथोंके साथ उलूकवासी बृहन्तके पास जाके दर्शन दिया। तब बृहन्त चतुरंगिणी सेना सहित उस नगरसे निकलकर अर्जुनसे लड़ने लगा। धनञ्जय और बृहन्तमें बड़ी बड़ी लड़ाई हुई। पर अन्तमें बृहन्तसे पाण्डवका विक्रम सहा नहीं गया। वह कठोर पर्वतनाथ कुन्तीपुत्रको बहुत असह्य जानके सब प्रकारके धन सहित उनके निकट आये। महाराज! राजा उलूकको राज्यमें बैठाय अर्जुन उसके साथ पधारे और सेनाबिन्दुको राज्यसे च्युत किया। उसके पीछे वह मोदापुर, वामदेव, सुदामा, सकुल और उत्तर उलूक देशों और वहांके राजोंको अपने वशमें लाये। हे महाराज। धर्मनन्दनके शासनसे प्रभावी अति तेजस्वी किरीटिने उस ठौरमें वास करकेही सेनाओंसे उन पांच राजोंको परास्त किया। उन्होंने सेनाबिन्दुकी राजधानी देवप्रस्थमें पहुंचकर चतुरङ्गी बल सहित वहां डेरा बनाया था। अब उन पराजित राजोंसे घेरे जाय पुरवंशी नरनाथ

एरुपवर विश्वगश्व पर युद्धयात्रा की और पर्व्वत परके महारथी शूरवीरोंको रणमें हराय सेना द्वारा उक्त कौरवकी रखी राजधानीको जीत लिया। विश्वगश्वको और पर्व्वत परके लुटेरोंको युद्धमें पूरा परास्त कर क्षत्रियश्रेष्ठ पाण्डुनन्दनने उत्सव-सङ्केत नामक सात म्लेच्छ जातियोंको जय किया, आगे काश्मीर देशके क्षत्रिय वीरोंको और दश छोटे छोटे राजोंके सहित नरनाथ लोहितको परास्त किया। हे महाराज। अनन्तर त्रिगर्त्त, दारुक, कोकनद आदि नाना देशी अनेक क्षत्रियवर्ग सब प्रकार वान्तीपतके वशमें आगये, तिसके पीछे कुरु-नन्दनने सुन्दर अभिसारी नगरी जय कर ली और उरगावासी रोचमानकोभी युद्धमें परास्त किया। तिसके अनन्तर इन्द्रकुमार किरीटिने युद्धमें विचित्र मनोहर वस्त्रोंसे रक्षित सिंहपुरको बलसे छिलौड़ डाला, उसके पश्चात् सब सेनाके साथ सुह्म और सुमालोंको मथन कर डाला। आगे बड़ा विक्रम दर्शाय बहु बड़ी लड़ाई लड़ते हुए कुटिल बाह्लीकोंको वशमें लाय और प्रधान प्रधान सेनाको साथ लेके दरद और काम्बोजोंको भी जय किया। महाराज। सब लुटेरे पर्व्वतके उत्तर भाग आश्रय किये हुए थे और जो वनमें बसते थे, प्रभावी फाल्गुनने उन सबोंको परास्त किया। लोह, परम काम्बोज और उत्तर ऋषिक यह सब एकत्र मिले थे, इन्द्रनन्दनने उन्हेंभी जीत लिया। ऋषिकोंके साथ भी उनकी बड़ी भारी लड़ाई हुई। कुरुसत्तमकी [illegible] तारका जिस युद्धमें नाशका हेतु हुआ था जिसमें सहत पार्थ और ऋषिकोंमें वैसी लड़ाई हुई थी। हे महाराज! युद्धमें [illegible] [illegible] शुकोदरके समान [illegible] आठ घोड़े करमें [illegible] और [illegible] देशमें [illegible] मयूरके समान वरणयुक्त वेगवान और तेज दूसरे घोड़ोंकाभी कर लिया। अनन्तर उन्होंने युद्धमें निष्कुट गिरि और हिमाचलको परास्त-कार श्वेतपर्व्वतमें पहुंचके डेरा किया।

सत्ताईस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि पाण्डवश्रेष्ठ महावीर अर्ज्जुनने श्वेतगिरिका पीछे छोड़के क्षत्रिय क्षयकारी बड़ी लड़ाई लड़ते हुए किन्नरोंकी वासभूमि द्रुमपुत्रसे रक्षित किम्पुरुषवर्षको परास्तकर अपने अधीन किया। उस देशको जयकर इन्द्रकुमार गुह्यकोंसे रक्षित हाटक नामक देशमें विना घबराये जा पहुंचे। सान्त्व द्वारा गुह्यकोंको जीतके उन्होंने अच्छे मानस-सरोवर और ऋषिकुल्याओंको देखा। अनन्तर प्रभावी वासवनन्दन किरिटिने मानस सरोवरके निकट आय हाटकोंकी चारो ओर गन्धर्व्वोंकी रखवारोंके देशोंकोभी परास्त किया। वहां उन्होंने गन्धर्व्व नगरसे तित्तिर, कल्माष और मण्डूक नामक अगणित अच्छे अच्छे घोड़ोंका कर लाभ किया। वासवनन्दन सव्यसाचीने अन्तमें उत्तर हरिवर्षके निकट पहुंचकर उस देशको जय करना चाहा। उस स्थानमें अति वीर्य्यवन्त वृहत देहधारी, महाबली द्वारपाल उनके निकट आय प्रसन्नचित्तसे यह बोला, कि हे पृथापुत्र! तुम कदापि इस पुरको जय नहीं कर सकोगे, सो हे अच्युत! मङ्गल चाहो तो यहांसे लौट जाओ, यहां तककी तुम्हारे लिये बहुत है। मनुष्य होकर जो पुरुष इस नगरमें घुसता है वह निश्चयही मारा जाता है। हे वीर अर्ज्जुन! मैं तुमसे प्रसन्न हूं, तुमको बड़ा विजय लाभ हुआ है, इसमें यहां [illegible] [illegible] दीख नहीं पड़ेगा, क्योंकि यह देश उत्तर कुरु है, यहां युद्धकी बात नहीं होता है। हे कुरुनन्दन यहां घुसनेसे तुम कुछ देख नहीं [illegible]

पाओगे, क्योंकि मनुष्यकी देह रहते यहांके किसी पदार्थको देखनेकी सामर्थ नहीं है। हे पुरुषश्रेष्ठ, भारत। पर यदि यहां और कार्य्य किया चाहो, तो कहो, तुम्हारी बातसे हम अवश्यही पूरा कर देंगे। हे महाराज! तब अर्जुन कुछ हंसकर उनसे बोले कि मैं धीमान धर्म्मनाथका साम्राज्य चाहता हूं, तुम्हारा यह देश यदि ऐसा हो कि मानव लोग नहीं जासक्ते हैं तो मैं इसके भीतर जाना नहीं चाहता तुम युधिष्ठिरको कुछ वस्तु करमें दो। अनन्तर उन्होंने दिव्य चीर, दिव्य आभरण, दिव्य क्षौम और दिव्य मृगछाल सब करकी भांति उनको दिये। महाराज! उन पुरुषव्याघ्र वीरवीर अर्जुनने इस प्रकार क्षत्रियोंसे अगणित संग्राम कर उत्तर दिशाको जीता था। वह उन सब राजोंको परास्त और अधीन करके सबोंसे बहुविध धन रत्न और तित्तिरि, कल्माष, शुकपक्षवत और मयूर सदृश, नाना पवनके समान चलनेवाले घोड़े लेके चतुरङ्गिणी सेनासे घेरे जाय फिर पुरुषश्रेष्ठ इन्द्रप्रस्थमें लौट आये और वह धन वाहन सब धर्म्मनाथके आगे धर उनकी आज्ञा लेकर अपने मन्दिरमें गये।

अठाइस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि जिस समय अर्जुनने विजयके लिये यात्रा की थी, उस समय शत्रुशोक-बढानेवाले वीर्यवन्त प्रतापी, भरतशार्दूल भीमसेनभी धर्म्मनाथकी आज्ञा लेकर परराज्यमथने-हारे दलबल हाथी, घोड़े रथादिसहित पूर्व्व दिशाको पधारे थे। उन प्रभावी नरश्रेष्ठ पाण्डवने पहिले पञ्चालोंके नगरमें जाय बहुविध उपायोंसे उन्हे समझाय बुझाय अल्पकालमें गण्डक और विदेहोंको परास्त किया। उस कालमें राजा दशार्ण सभाओंने भीमसेनके साथ रोयें खड़े करनेवाली बड़ी लड़ाई की थी। बड़े पराक्रमी भीमसेनने अति बलवन्त सुधर्म्माकी वह लीला देखकर उनको प्रधान सेनापतिके पद पर बैठाया। अनन्तर वह बड़ी सेना सहित मानो धरतीको कंपाते हुए पूर्व्व दिशाकी ओर भी आगे चले। हे महाराज! वीरश्रेष्ठ वीरवर वृकोदरने अश्वमेधनाथ रोचमानको साथियों समेत युद्धमें परास्त किया। उसको जयकर महावीर कुरुनन्दनने स्वल्प चेष्टाहीसे पूर्व्वदेशको जय किया। अनन्तर दक्षिण देशमें बड़े फैले पलिन्दी और सुमित्रको वशीभूत किया। हे जनमेजय! इसके पश्चात् भीम धर्म्मनाथके शासनके अनुसार अति वीर्य्यवन्त शिशुपालके लिये चले। शत्रुदमन चेदिपतिने भी पाण्डुपुत्रका वह अभिप्राय जान नगरसे निकल उनको सत्कार सहित ग्रहण किया। महाराज! तब वह कुरुश्रेष्ठ और चेदिश्रेष्ठ दोनों मिलजुलकर दोनों कुलोंके कुशलक्षेम पूछने लगे। हे नरवर! अनन्तर चेदिनाथ अपने राज्यका वृतान्त कहके हंसते हुए भीमसे बोले कि हे अनघ! तुम क्यों उत्साह दिखा रहे हो? तब भीमने उनसे धर्म्मनाथका अभिप्राय प्रगट किया। नरनाथ शिशुपालनेभी उनका आदर सत्कार कर वैसाही अनुष्ठान किया। हे महाराज! अनन्तर भीम वहां तेरह रात बसकर शिशुपालसे सत्कृत होके बलवाहन सहित पधारे।

उनतीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर शत्रुदमन वृकोदरने कुमारराज्यमें श्रेणीमानको और कोशलनाथ वृहद्बलको जय किया। अयोध्यामें महाबली धर्म्मज्ञ दीर्घयज्ञको स्वल्प युद्धमें परास्त किया, इसके पश्चात् उन प्रभावी पाण्डवश्रेष्ठने गोपाल-कक्ष, उत्तर कोशल और मल्लोंके अधीश पार्थिवकोभी परास्त किया।

इसके अनन्तर हिमालयके किनारे पहुंचके अल्पकालमें उन्होंने सम्पूर्ण जलोद्भव देशको अपना अधीन किया। भरतश्रेष्ठ बृकोदर इस प्रकार अनेक देश जय करने लगे। बलीवर महावीर्य्यवन्त भीम पराक्रमी महाभुज पाण्डुनन्दन भीमसेनने बलसे भल्लाट देश और उसके निकटके शुक्तिमत पर्व्वतको परास्त किया। पीछे युद्धमें मुह मोड़े काशीपति सुबाहुको वशीभूत किया। इसके पश्चात् युद्धमें भिड़े सुपार्श्वदेशके राजपति क्रथको बलसे परास्त किया। इसके पोछे मत्स्यदेशवासी और उपद्रववर्ज्जित निडर महाबली मलदोंको पराजय कर सब पशुभूमि जीत ली और वहां से पलटकर पृथ्वीनाथ मदधार और सोमधेयोंको जयकर उत्तर दिशाको चले। बलवान कुन्तीपुत्रने वहां बल प्रगटकर वतस्य भूमि पर अधिकार जमाया और भर्गोंके अधिपति, निषादनाथ और मणिमत आदि अगणित भूपोंको परास्त करने लगे। तब उन्होंने अति अल्प चेष्टासे भगवान पर्व्वत और दक्षिण मल्लोंको शीघ्रही जीत लिया। शर्म्मक और वर्म्मकोंको ढाढस देकर जय किया। विदेहदेशनाथ जगत्पति राजा जनकको अति अल्पयुद्धमें परास्त किया और शक और बर्बरोंको छलसे अधीन बनाया। वीर्य्यवन्त-पाण्डुनन्दनने विदेह देशमें रहतेही रहते इन्द्र पर्व्वतके निकटके सात भूपोंको परास्त किया। आगे [illegible] पर इस प्रसङ्गमाको युद्धमें [illegible] मागधोंकी ओर चले। वहां दण्ड, दण्डधार और दूसरे पृथ्वीनाथोंको जयकर गिरिव्रजमें जा पहुंचे और जरासन्धनन्दन सहदेवको समझाय बुझाय और कर देना स्वीकार कराय सबोंको साथ [illegible] कर्ण पर [illegible]। [illegible] भारत! पाण्डुनन्दन [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

और उनको लड़ाईमें जीतकर और वशमें लाय पर्व्वतवासी राजोंको परास्त किया। महाराज! अनन्तर उन्होंने मोदागिरिके अति बलो राजाको भुजदीर्य्यसे गहरी लड़ाईमें नष्ट किया। आगे पुण्ड्रनाथ महाबली वासुदेव और कौशिकी कच्छवासी राजा महौजा तेज-पराक्रमी और बली इन दो वीरोंको युद्धमें जीत कर राजा वङ्ग पर दौड़े और पृथ्वीनाथ समुद्रसेन, चन्द्र-सेन ताम्रलिप्त कर्व्वटाधिप और सुह्माधिप तथा पहाड़ी राजोंको जय कर सब म्लेच्छोंको भी परास्त किया।

महाबली पवननन्दन इस प्रकार सब देश जयकर और सर्व्वतसे धन संग्रह कर लौहित्य देशमें जा पहुंचे और सागरतीर आदि जल प्रधान देशवासी सब म्लेच्छ नरेशोंको भांति भांतिके रत्न, चन्दन, अगुरु, चीर कम्बल मणि, सोना, चांदी, विद्रुम आदि बहुमूल्य वस्तुओंका कर देनेको वाध्य किया। म्लेच्छ नाथोंने उसकाल कोटि कोटि बहुत धन बरसाय महात्मा पाण्डुनन्दनको टप लिया था। भीम पराक्रमी भीमसेनने तब इन्द्रप्रस्थमें आय वह सब धन धर्म्मनाथको दे दिया।

तीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि महाराज! सह-देव भी धर्म्मनाथका आदर पाय भीमार्जुनके निवासनके [illegible] बड़ी भारी सेना साथ ले दक्षिण दिशाको पधारे। उन प्रभावशाली [illegible] पहिले शूरसेनोंको सम्पूर्ण रूपसे परास्त कर [illegible] मत्स्यनाथको वशीभूत किया। आगे अधिराजपति महाराज दन्त-वक्रको जीतकर और करदान कराय उनको [illegible] राज्यमें स्थापित किया। आगे [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

पृथ्वीनाथ श्रेणिमानको बलपूर्व्वक जय किया और नवराज्य जीतकर कुन्ती भोज पर चढ़ दौड़े। कुन्ती भोजने प्रीतिसे उनका शासन ले लिया। हे भारत! अनन्तर सहदेव चर्म्मण्वती नदीके तटपर जम्भक राजकुमारसे जा भेटे। पहिलेकी शत्रुताके कारण वासुदेवने उस नृप-नन्दनको परास्त किया था। वह राजपुत्र सहदेवसे युद्धमें भिड़ गया, अति बली सहदेव उसको जय कर दक्षिण दिशाको चले। वहां सेक और अपरसेकोंको परास्त कर और उनसे बहुविध रत्नोंका कर लेकर उन्होंने उन्हींके संग नर्म्मदाके निकटके देशोंकी यात्रा की। प्रतापी माद्रीपुत्र वहां अनेक सेनाओंसे घेरे अवन्ती देशके विन्द और अनुविन्द नामक दो वीरोंको युद्धमें हराय उनसे रत्न संग्रह कर भोजकटपुरको पधारे। हे महाराज! वहां कठोर राजा भीष्मकसे दो दिन लड़ाई हुई, अन्तमें सहदेवने उन्हें जयकर कोशलनाथ वेणातटेश कान्तारक वर्ग और पूर्व्व कोशलके नरेशोंको युद्धमें परास्त किया। आगे नाटकेय और हेरम्बोंको युद्धमें हराय बलसे मुञ्जग्राम अधिकार किया तिसके पश्चात् नाचीन और अर्व्वुद नरेशोंको तथा उस खण्डवाले सब वनेले भूपोंको परास्त कर नरनाथ वाताधिपको वशमें लाये। अनन्तर पुलिन्दोंको लड़ाईमें जीतके दक्षिण दिशाको ओर आगे बढ़े। नकुलके अनुज महाभुज सहदेव पाण्ड्वनाथके साथ एक दिन लड़ कर उसे हराय दक्षिण मार्गमें पधारे। वहां लोकप्रसिद्ध किष्किन्धा नाम कन्दराके निकट जाय वह बन्दरनाथ मैन्द और द्विविदके साथ सप्ताह भर लड़े, पर तिसपरभी उन्हें जय नहीं कर सके, अनन्तर उन दो बड़े बन्दरोंने सहदेव पर प्रसन्न होके प्रसन्न हृदयसे प्रीतिपूर्व्वक उनसे यह कहा, कि हे पाण्डवशार्दूल! तुम सब भांतिके ले जाओ। धीमान धर्म्मनायकका कार्य्य विना विघ्न पूरा होवे। अनन्तर शत्रुवीरनाशी प्रतापी पाण्डुनन्दन नरश्रेष्ठ सहदेव रत्नोंको लेकर माहिष्मती नगरीमें जाय वहां राजा नीलसे लड़ने लगे। उनका वह युद्ध बड़ा भयानक हुआ, तिसमें अनेक सेना नष्ट हुई और अपने प्राणकी शङ्का हुई, क्योंकि भगवान हुताशन राजा नीलकी सहायता कर रहे थे। इस लिये सहदेवकी सेनामें उस काल घोड़े, रथ हाथी, पुरुष और कवच चमकते हुए दीख पड़ने लगे। हे जनमेजय! कुरुनन्दन सहदेव तिससे बहुत घबराये, उस विषयमें क्या उपाय करना चाहिये, कुछ समझके निश्चय नहीं कर सके।

जनमेजय बोले, कि हे विप्रवर! सहदेव यज्ञके लिये लड़ रहे थे; पर भगवान अग्नि क्यों तिस पर शत्रुता की? श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि ऐसी कहावत है, कि पहिले माहिष्मतीवासी भगवान हुताशन पराई स्त्रीके अभिलाषी करके समझे जाते थे। राजा नीलकी एक अति सुन्दरी कुमारी थी, वह अग्निहोत्रके निकट सदा बैठी रहती थी। उसके दो सुन्दर होठोंसे निकली पवन अग्निको जबतक नहीं पहुंचती थी तब तक पंखी डोलानेसे भी जल नहीं उठते थे, तिससे राजा नील और दूसरोंने निश्चय कर लिया, कि उस पर अग्निका मन चला है। अनन्तर ब्राह्मणके स्वरूपमें मनमाने रमण की इच्छाकर उन्होंने उस सुन्दरी पद्मनेत्रा कन्या पर मन चलाया। परन्तु धार्म्मिक राजा नीलने उनको शास्त्रके अनुसार शासन किया। भगवान् हव्यवाहन तिससे क्रोधके मारे जल उठे। उनको देखकर राजाने अचम्भेमें होके धरतीको और सिर झुकाय प्रणाम किया, आगे उचित कालमें उसी प्रकार सिर झुकाय उन विप्र रूपी अग्निको कन्यादान किया। अभीष्ट सिद्ध करनेमें सबके अगुये भगवान अग्नि राजा नीलको

वह कन्या लेके उक्त नरनाथपर प्रसन्न हुए और उन्हे वर मागनेको कहा। पृथ्वीनाथ राजा नीलनेभी यह वर मांग लिया, कि मेरी सेनाको कभी भय न हो। महाराज। तभीसे वह वृत्तान्त न जानके जो कोई भूप बलपूर्व्वक उस नगरीको जय किया चाहते थे, वे अग्निसे जल मरते थे; हे कुरुवंशि! उस माहिष्मती पुरीमें उसकाल अबलाओंको भी कोई स्वेच्छासे ले नहीं सकता था, क्योंकि स्त्रियोंके छीने जानेके विषयमे अग्निने वर दिया था, तिससे वे स्वैरिणी वनके मनमाना वहां विचरा करती थी। हे भरतराज। तभी से राज-गणभी अग्निके भयसे उस पुरीको त्याग देते थे, पर धर्म्मात्मा सहदेव अपनी सेनाको अग्निसे घेरा और भय खाया देखने परभी अचलकी भांति स्थिर बने रहे। वह शुचि होय आचमन-पूर्व्वक उसकाल इस प्रकार स्तुति पूरित सम्भाषण करने लगे।

सहदेव बोले, कि हे कृष्णवर्त्मन! तुमको नमस्कार, मेरा यह प्रारम्भ केवल तुम्हारेही लिये है। हे पावक! तुम यज्ञरूपी हो, सो तुम्ही देवोंके मुख हो। तुम पवित्र करते हो, इस लिये पावक और हव्यको वहन कराते हो! तुम्हारे लियही वेदोंकी उत्पत्ति हुई है, इस लिये तुम जातवेदा हुए हो। हे विभावसो। तुम्हीं चित्रभानु, सुरेश, अनल, स्वर्गद्वार छूनेवाले हुताशन, ज्वलन, शिखी, वैश्वानर, पिङ्गेश, प्लवङ्ग, भूरितेजा, कुमारसू, भगवान, रुद्र गर्भ और हिरण्यकृत हो। हे अग्ने! तुम मुझको तेज दो, पवन प्राण देवे, पृथ्वी बल दे और जल मङ्गल करें। हे जलोत्पादक महाभाग सुरेश्वर [illegible] अग्ने! तुम देवोंके मुख स्वरूप हो, सो मुझको सत्य [illegible] पवित्र करो। [illegible] और [illegible] सदा [illegible] करते हैं, [illegible] करो। तुम धूम

केतु शिखी पापनाशी, वायुसे उत्पन्न और सब प्राणियोंमें सर्व्वकाल ठहरे रहते हो, अब मुझको सत्यज्योतिसे पवित्र करो। हे भगवान अग्ने। मैंने शुचि होकर प्रसन्न चित्तसे तुम्हारी यह स्तुति की, अब मुझको तुष्टि, पुष्टि, स्तुति और प्रीति दो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, जो ऐसा आग्नेय मन्त्र पढ़के प्रभु अग्निका हवन करते हैं, वह ऐश्वर्य्य युक्त और सदा दान्त होकर सर्व्व पापोंसे मुक्त होजाते हैं। हे भारत! पुरुषव्याघ्र माद्री कुमार सहदेव यह कहके, कि हे हव्यवाहन। यज्ञके विषयमें ऐसा विघ्न उत्पन्न करना तुमको नहीं चाहिये, धरातल पर कुशा बिछाय उन घबरायी भय खायी सेनाओंके सामने अग्निके लिये बैठ गये। अग्नि जिस प्रकार महासमुद्रके तटको पार नहीं करते, वैसेही उनको लांघ नहीं सके। वह उन कुरुनन्दन नरदेव सहदेवके निकट जाय समझाय बुझाय धीरे धीरे यह बोले, कि हे कुरुकुलशोभन! उठो, मैं तुम्हारे और धर्म्म-नाथके सब अभिप्रायोंको जानता हूं, केवल परीक्षाके लिये ऐसा किया है। हे भरतश्रेष्ठ पाण्डुनन्दन! इन राजा नीलके कुलमें जबतक वंशधर सन्तान बनी रहेगी तबतक मुझको इस पुरीकी रक्षा करनी पड़ेगी, पर तुम जो चाहते हो वह भी मैं पूरा कर दूंगा। हे भरतर्षभ! तब सहदेवने प्रसन्नमनसे उठ कर शिरनाय हाथ जोड़ पावककी पूजा की। अनन्तर पावकके चले जाने पर पृथ्वीनाथ राजा नीलने उन्हींके शासनसे पाण्डुनन्दन नरव्याघ्र सहदेवको निकट आकर सत्कार सहित उनकी पूजा की। फिर्ब्बी माद्रीपुत्र वह पूजा लिये हुए, कर [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

पृथ्वीनाथ श्रेणिमानको बलपूर्व्वक जय किया और नवराज्य जीतकर कुन्ती भोज पर चढ़ दौड़े। कुन्ती भोजने प्रीतिसे उनका शासन ले लिया। हे भारत। अनन्तर सहदेव चर्म्मण्वती नदीके तटपर जम्भक राजकुमारसे जा भेटे। पहिलेकी शत्रुताके कारण वासुदेवने उस नृपनन्दनको परास्त किया था। वह राजपुत्र सहदेवसे युद्धमें भिड़ गया, अति बली सहदेव उसको जय कर दक्षिण दिशाको चले। वहां सेक और अपरसेकोंको परास्त कर और उनसे बहुविध रत्नोंका कर लेकर उन्होंने उन्हीके संग नर्म्मदाके निकटके देशोंकी यात्रा की। प्रतापी माद्रीपुत्र वहां अनेक सेनाओंसे घेरे अवन्ती देशके विन्द और अनुविन्द नामक दो वीरोंको युद्धमें हराय उनसे रत्न संग्रह कर भोजकटपुरको पधारे। हे महाराज! वहां कठोर राजा भीष्मकसे दो दिन लड़ाई हुई, अन्तमें सहदेवने उन्हे जयकर कोशलनाथ वेणातटेश कान्तारक वर्ग और पूर्व्व कोशलके नरेशोंको युद्धमें परास्त किया। आगे नाटकेय और हेरम्बोंको युद्धमें हराय बलसे मुञ्जग्राम अधिकार किया तिसके पश्चात् नाचीन और अर्व्वुद नरेशोंको तथा उस खण्डवाले सब वनैले भूपोंको परास्त कर नरनाथ वाताधिपको वशमें लाये। अनन्तर पुलिन्दोंको लड़ाईमें जीतके दक्षिण दिशाकी ओर आगे बढ़े। नकुलके अनुज महाभुज सहदेव पाण्डवनाथके साथ एक दिन लड़ कर उसे हराय दक्षिण मार्गमें पधारे। वहां लोकप्रसिद्ध किष्किन्धा नाम कन्दराके निकट जाय वह बन्दरनाथ मैन्द और द्विविदके साथ सप्ताह भर लड़े, पर तिसपरभी उन्हे जय नही कर सके, अनन्तर उन दो बड़े बन्दरोंने सहदेव पर प्रसन्न होके प्रसन्न हृदयसे प्रीतिपूर्व्वक उनसे यह कहा, कि हे पाण्डवशार्दूल! तुम सब भांतिके रत्न ले जाओ, धीमान धर्म्मनायकका कार्य्य विना विघ्न पूरा होवे। अनन्तर शत्रुवीरनाशी प्रतापी पाण्डुनन्दन नरश्रेष्ठ सहदेव रत्नोंको लेकर माहिष्मती नगरीमें जाय वहां राजा नीलसे लड़ने लगे। उनका वह युद्ध बड़ा भयानक हुआ, तिसमें अनेक सेना नष्ट हुई और अपने प्राणकी शङ्का हुई, क्योंकि भगवान हुताशन राजा नीलकी सहायता कर रहे थे। इस लिये सहदेवकी सेनामें उस काल घोड़े, रथ, हाथी, पुरुष और कवच चमकते हुए दीख पड़ने लगे। हे जनमेजय! कुरुनन्दन सहदेव तिससे बहुत घबराये, उस विषयमें क्या उपाय करना चाहिये, कुछ समझके निश्चय नही कर सके।

जनमेजय बोले, कि हे विप्रवर! सहदेव यज्ञके लिये लड़ रहे थे, पर भगवान अग्नि क्यों तिस पर शत्रुता की? श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि ऐसी कहावत है, कि पहिले माहिष्मतीवासी भगवान हुताशन परायी स्त्रीके अभिलाषी करके समझे जाते थे। राजा नीलकी एक अति सुन्दरी कुमारी थी, वह अग्निहोत्रके निकट सदा बैठी रहती थी। उसके दो सुन्दर होठोंसे निकली पवन अग्निको जबतक नही पहुंचती थी तब तक पंखी डोलानेसे भी जल नही उठते थे। तिससे राजा नील और दूसरोंने निश्चय कर लिया, कि उस पर अग्निका मन चला है। अनन्तर ब्राह्मणके स्वरूपमें मनमाने रमण की इच्छाकर उन्होंने उस सुन्दरी पद्मनेत्रा कन्या पर मन चलाया। परन्तु धार्म्मिक राजा नीलने उनको शास्त्रके अनुसार शासन किया। भगवान् हव्यवाहन तिससे क्रोधके मारे जल उठे। उनको देखकर राजाने अचम्भेमें होके धरतीको और सिर झुकाय प्रणाम किया, आगे उचित कालमें उसी प्रकार सिर झुकाय उन विप्ररूपी अग्निको कन्यादान किया। अभीष्ट सिद्ध करनेमें सबके अगुवे भगवान अग्नि राजा नीलकी

वह कन्या लेके उक्त नरनाथ पर प्रसन्न हुए और उन्हें वर मांगनेको कहा। पृथ्वीनाथ राजा नीलनेभी यह वर मांग लिया, कि मेरी सेनाको कभी भय न हो। महाराज! तभीसे वह वृत्तान्त न जानके जो कोई भूप बलपूर्व्वक उस नगरीको जय किया चाहते थे, वे अग्निसे जल मरते थे, हे कुरुवंशि! उस माहिष्मती पुरीमें उसकाल अबलाओंको भी कोई स्वेच्छासे ले नहीं सकता था, क्योंकि स्त्रियोंके छीने जानेके विषयमें अग्निने वर दिया था, तिससे वे स्वैरिणी बनके मनमाना वहां विचरा करती थीं। हे भरतराज! तभीसे राज-गणभी अग्निके भयसे उस पुरीको त्याग देते थे, पर धर्म्मात्मा सहदेव अपनी सेनाको अग्निसे घेरा और भय खाया देखने परभी अचलकी भांति स्थिर बने रहे। वह शुचि होय आचमन-पूर्व्वक उसकाल इस प्रकार स्तुति पूरित सम्भाषण करने लगे।

सहदेव बोले, कि हे कृष्णवर्त्मन! तुमको नमस्कार, मेरा यह प्रारम्भ केवल तुम्हारेही लिये है। हे पावक! तुम यज्ञरूपी हो, सो तुम्हीं देवोंके मुख हो। तुम पवित्र करते हो, इस लिये पावक और हव्यको वहन कराते हो। तुम्हारे लियेही वेदोंकी उत्पत्ति हुई है, इस लिये तुम जातवेदा हुए हो। हे विभावसो! तुम्हीं चित्रभानु, सुरेश, अनल, स्वर्गद्वार छूनेवाले हुताशन, ज्वलन, शिखी, वैश्वानर, पिङ्गेश प्लवङ्ग, भूरितेजा, कुमारसू, भगवान, रुद्र गर्भ और हिरण्यकृत हो। हे अग्ने! तुम मुझको तेज दो। पवन प्राण देवे, पृथ्वी बल दे और जल सकल मङ्गल करें। हे जलोत्पादक महाभाग सुरेश्वर जातवेद अग्ने! तुम देवोंके मुख स्वरूप हो, सो मुझको सत्य ज्योतिसे पवित्र करो। देवता ऋषि ब्राह्मण और असुर सदा सुन्दर रूपसे जिन सब यज्ञोंमें हवन करते हैं, वहांकी सत्यज्योतिसे मुझको पवित्र करो। तुम धूमकेतु शिखी पापनाशी, वायुसे बने और सब प्राणियोंमें सर्व्वकाल ठहरे रहते हो, अब मुझको सत्यज्योतिसे पवित्र करो। हे भगवान अग्ने! मैंने शुचि होकर प्रसन्न चित्तसे तुम्हारी यह स्तुति की, अब मुझको तुष्टि, पुष्टि, स्तुति और प्रीति दो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, जो ऐसा आग्नेय मन्त्र पढ़के प्रभु अग्निका हवन करते हैं, वह ऐश्वर्य्य युक्त और सदा दान्त होकर सर्व्व पापोंसे मुक्त होजाते हैं। हे भारत! पुरुषव्याघ्र माद्री कुमार सहदेव यह कहके, कि हे हव्यवाहन! यज्ञके विषयमें ऐसा विघ्न उत्पन्न करना तुमको नहीं चाहिये, धरातल पर कुश बिछाय उन घबरायी भय खायी सेनाओंके सामने अग्निके लिये बैठ गये। अग्नि जिस प्रकार महासमुद्रके तटको पार नहीं करते, वैसेही उनको लांघ नहीं सके। वह उन कुरुनन्दन नरदेव सहदेवके निकट जाय समझाय बुझाय धीरे धीरे यह बोले, कि हे कुरुकुलशोभन! उठो, मैं तुम्हारे और धर्म्मनाथके सब अभिप्रायोंको जानता हूं, केवल परीक्षाके लिये ऐसा किया है। हे भरतश्रेष्ठ पाण्डुनन्दन! इन राजा नीलके कुलमें जबतक वंशधर सन्तान बनी रहेगी तबतक मुझको इस पुरीकी रक्षा करनी पड़ेगी, पर तुम जो चाहते हो, वह भी मैं पूरा कर दूंगा। हे भरतश्रेष्ठ! तब सहदेवने प्रसन्नमनसे उठ कर शिरनाय हाथ जोड़ पावककी पूजा की। अनन्तर पावकके चले जाने पर पृथ्वीनाथ राजा नीलने उनकी आज्ञासे योधनाथ नरव्याघ्र सहदेवके निकट आकर सत्कार सहित उनकी पूजा की। विजयी माद्रपुत्र वह पूजा लेके उनको करदाता बनवाय दक्षिणकी ओर पधारे। उन धर्म्मात्मा महाभुज अपरिमित तेजवन्तने त्रैपुर राजाको वशमें लाय पौरवनाथको बलसे सताया। आगे कौशिकाचार्य्य सुराष्ट्राधिप आकृ

अति यत्नसे अपने वशमें ले आये और सुराष्ट्र राज्यही में रह करके भोजकटके महामात्र धीमान साक्षात् इन्द्रके सखा भीष्मक नाथ रुक्मीके निकट दूत भेजा, उसने भी वासुदेवजीको स्मरण कर तब पुत्र सहित प्रीति पूर्व्वक उनका शासन मान लिया; महातेजा महाबली योधपति सहदेव उनसे रत्न लेके फिर आगे चले। अनन्तर शुर्पारक तालाकट और दण्डकोंको हथेली तले लाय चुके। आगे सागरद्वीपवासी म्लेच्छ योनिसे उपजे नगरनाथगण विपाइर्ग, पुरुषादलोग, कर्ण प्रावरगण नर-राक्षस योनि कालमुख वर्ग सब कोल गिरि, सुरभिपट्टन, ताम्रद्वीप, रामक पर्व्वत और तिमिङ्गल नरेशको वशमें लाय दूतोंसे वनवासी केरक नामक, एक पाद मनुष्य, सञ्जयन्ती नगरी और पाषण्ड और करहाटक देशको वशीभूत और करदाता बनाया। और भी उन्होंने पाण्ड्य, द्राविड़, उड्रकेरल, अन्ध्र, तालवन, कलिङ्ग, और उष्ट्रकेरलोंको और मनहरणी आटवी पुरी और यवनोंका नगर इन सबोंको दूतोंके द्वारा वशीभूत और करदायी बनाया। हे नरनाथ! अनन्तर शत्रुदमन, धीमान, धार्म्मिकवर माद्रवती-पुत्रने सागर-कुलमें पहुंचकर पुलस्त्यनन्दन महात्मा विभीषणके निकट प्रीति पूर्व्वक दूतों को भेजा। उन्होंनेभी प्रीति-पूर्व्वक उनका शासन मान लिया। प्रभावी धीमान विभीषणने सहदेवके उस शासनको कालयोग्यही समझा, इस हेतु उनके निकट विविध रत्न, चन्दन और अगुरुको लकड़ी दिव्य आभूषण, महामूल्य चीर और महाधन मणि-मैन्द भेजाया। इसके पीछे प्रतापी, धीमान तिसपरभी उन्नस्थको लौटे।—

उन दो बड़े बन्दरोंसे ठ शत्रुदमन सहदेव इस प्रसन्न हृदयसे प्रीतिपूसमझाके और विजयके कि हे पाण्डवशार्दूलो तथा करदाता बनाके ले आओ, धीमान धर्म्मराज आये और अपने उपार्ज्जित सब धन धर्म्मनाथके आगे धर कर परम सुखसे वसने लगे।

एकतीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले. कि हे जनमेजय! अब नकुलकी विजय और कर्म्मोंकी कथा सुनाता हूं। उन प्रभावी वीरवरने जैसे वासुदेवकी जीती हुई पश्चिम दिशाको जीता था वह सुनो। मतिमान नकुल बड़ी भारी सेना लेकर खाण्डवप्रस्थसे निकलकर पश्चिम दिशाको प्रचण्ड सिंहनाद योधोंके गर्ज्जन और और रथोंके पहियोंकी घरघराहटसे धरातलको कंपाते चले। अनन्तर उन्होंने कार्तिकेयके प्रेमपात्र धनधान्य पूरे, गोधनभरे, अति ऐश्वर्य्ययुक्त रमणीय रोहितक पर्व्वत पर चढ़ाई की। वहां शूरतायुक्त उन्मत्त मयूरकोंके साथ बड़ी लड़ाई हुई। इसके पीछे अति द्युतिमान पाण्डुनन्दनने सब मरुभूमि, बहुत धनधान्ययुक्त शैरीषक और राजर्षि आक्रोशको वशीभूत तथा महेत्थ देशको जय किया। आक्रोशके साथ उनकी बड़ी लड़ाई हुई थी। अनन्तर वह दशार्ण, शिवि त्रिगर्त्त, अम्बष्ठ, मालव, पञ्च कर्पट और माध्यमिक तथा वाटधान द्विजोंको जय कर आगेको पधारे। इसके पीछे फिर लौटकर पुष्करारण्यवासी उत्सवसंकेत नामक म्लेच्छोंको जय किया। सिन्धुकुलमें वसे महाबली ग्रामणीयगण, सरस्वती तटके शूद्र और आभीर, मछुहे और पहाड़ी, पांचा नद, अमर पर्व्वत, उत्तरज्योतिष और दिव्य कट तथा द्वारपाल नगर यह सब उन्होंने बलसे वशीभूत किये। और रामठहारहूण तथा पश्चिम देशके सब दूसरे नरनाथोंको शुद्ध प्राण [illegible] से वशमें कर चुके। हे भारत! [illegible] विजयी [illegible] भूपति नकुलने वसुधारे उन धर्म्मात्मा [illegible] दूत भेजा। [illegible] उन्होंने [illegible] शासन माना। [illegible] वत्सने वेपुर राजाको [illegible] मात्री मान [illegible] यकी बलसे सताया।

कुमारने मद्रोंकी राजधानी शाकलमें जाय अपने मामा शल्यको प्रीतिपूर्व्वक वशीभूत किया। हे महाराज! उन नरनाथने जब सत्कारयोग्य योधपति नकुलका उचित सत्कार किया, तब वह बहुत रत्न लेकर आगे चले। पीछे सागरगर्भके अति कठोर म्लेच्छों और पह्लव, वर्ब्बर, किरात यवन और शकोंको वशीभूत किया। विचित्र उपायोंके जानकर कुरुवर नकुल नरेशोंको वशीभूत कर और बहुरत्न बटोरके अन्तको लौट आये। महाराज! दश सहस्र ऊंट अति कष्टसे उन महात्माकी धनको लेकर चल सके थे। अनन्तर श्रीमान माद्रीपुत्र नकुलने इस प्रकारसे वासुदेवजीकी जय किये और वरुणसे पाले जाते हुए पश्चिम खण्डको विजयकर इन्द्रप्रस्थमें स्थित वीरवर युधिष्ठिरके समीप आकर उनके सामने सब धन धर दिया।

बत्तीस अध्याय और दिग्विजय प्रकरण समाप्त।

राजसूय प्रकरण।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि धर्म्मनाथ युधिष्ठिरको प्रजारक्षा, सत्य पालन और शत्रुनाशके लिये प्रजा अपने अपने धर्म्मसे लगी रही। यथा योग्य कर लेना और धर्म्मके अनुसार प्रजाशासन करनेसे बादल प्रचुर जल वर्षाने लगा, सो जनपदभी बढ़ उठे। राजाके पुण्यकर्म्मोंके प्रभावसे राज्यके सर्व्वप्रकार कार्य्य भले प्रकार निर्व्वाह होने लगे; विशेष पशुपालन, खेती और वाणिज्य, इनकी पूरी उन्नति हुई। महाराज! सदा धर्म्मज्ञानी राजा युधिष्ठिरके राज्यकालमें लुटेरे और ठगभी एक दूसरेसे झूठी बात नहीं बोलते थे और राजाके प्यारे जनोंके मुखसे भी झूठी बोली नहीं निकलती थी। उस कालमें वृष्टिकी कमी, बहुत वृष्टि, रोगभय, अकालमृत्यु यह सब नहीं थी। सब भूपवर्ग प्रियकार्य्य करना और उपासना अथवा स्वाभाविक उपहार देनेहीके लिये राजाके समीप आते थे, दूसरे कार्य्य अर्थात् जयादिके अभिप्रायसे नहीं। धर्म्मानुसार धनार्ज्जन द्वारा उनके विशाल भण्डारकी ऐसी वृद्धि हुई थी, कि सैकड़ों वर्षोंमें भी उसके चुक जानेकी सम्भावना नहीं थी।

कुन्तीनन्दन पृथ्वीनाथयुधिष्ठिरने अपने धन और धान्यादिका परिमाण विशेष जानके यज्ञ करनेका प्रण ठाना। उनके मित्रवर्गभी सब अलग अलग और एकत्र होकर बोले, कि “विभो! आपके यज्ञ करनेका योग्य काल आ पहुंचा है, सो अब उसका प्रबन्ध करें।” वे सब ऐसी कहा-सुनी करते थे, कि ऐसे समय श्रीकृष्णचन्द्र आ पहुंचे। वह धर्म्मज्ञ, नित्य, वेदात्मा, दर्शनके अविषयीभूत करके विज्ञोंके निश्चय किये स्थितिशीलोंके अगुवे, जगकी उत्पत्ति और प्रलयके कारण भूत भविष्यत तथा वर्त्तमानके नियन्ता, सब वृष्णियोंके प्राकार अर्थात् रखवारे, विपत्कालके अभय-दाता, शत्रुनाशी केशिसूदन, पुरुषवर केशव, धर्म्मनाथके लिये बहुविध धन रत्न लेकर वसुदेवको सेनापतिके पद पर बैठाय बहुबलसे घेरे जाय रथकी आहटसे नरोत्तम खाण्डवप्रस्थको बजाय वहां आजमे और पाण्डवोंके उस भरे पूरे अक्षय रत्न समुद्रके अपूर्ण भागको पूर्णकर शत्रुओंकी शोक देने लगे। सूर्य्य रहित खण्डमें सूर्य्य उगनेसे अथवा वायु रहित स्थानमें वायु बहनेसे वहांके लोग जैसे आनन्दित होते हैं, वैसेही श्रीकृष्णके शुभागमनसे भारत-पुरी अति आनन्दित हुई। पुरुषवर युधिष्ठिर अति आनन्दसे उनको गले लगाय और विधि-पूर्व्वक सत्कार कर अन्तमें सुखसे बैठे। कुशलक्षेम पूछके धौम्य द्वैपायन आदि ऋषिवर्ग और भीमार्ज्जुन तथा नकुल सहदेवमें

मिलकर उनको यह सम्भाषण किया। युधिष्ठिर बोले, कि हे देवकीनन्दन कृष्ण! केवल तुमसेही पूरी धरती मेरे वशमें बनी है और तुम्हारी कृपासे मैंने यह अपरिमित भूरता लाभ की है, सो हे यदुकुलतिलक, महाभुज, माधव! मैं तुम्हारे और अनुजोंके साथ मिलकर उस उपार्जन किये हुए सब धनको हुताशन और ब्राह्मणोंके पीछे खर्चनेके लिये यज्ञ किया चाहता हूं। तुम खुले मनसे उसमें सम्मति दो, हे गोविन्द। उस विषयमें तुम अपनेको दीक्षित करो, क्योंकि तुम्हारे यज्ञ करनेसे मैं निष्पाप बनूंगा। अथवा हे विभो! इन भाइयोंके सहित मुझको दीक्षित होनेकी आज्ञा दो। तुमसे आज्ञा पानेहीसे मैं अनुत्तम यज्ञका फलभागी हो सकूंगा।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि श्रीकृष्ण चन्द्रने युधिष्ठिरके गुणोंका वर्णन कर उनको यह उत्तर दिया, कि हे राजशार्दूल! आपही सम्राट होनेके योग्य पात्र हैं, सो आपही महायज्ञ राजसूय पूरा करें, आपके फल पानेसे हम कृतार्थ होंगे। मैं आपका मङ्गल साधनेमें सन्नद्ध हूं। आप मनमाने यज्ञका प्रबन्ध करें और मुझकोभी किसी कार्य्यमें नियुक्त करें। मैं आपकी सब आज्ञा पालूंगा। युधिष्ठिर बोले, कि हे हृषीकेश श्रीकृष्ण! मेरी इच्छा होतेही जब तुम आगये हो, तब मेरा सङ्कल्प भी सिद्ध होगया और सिद्धिलाभकाभी निश्चय हुआ है। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि श्रीकृष्णकी आज्ञा पाय युधिष्ठिरने भाइयोंके सहित राजसूय यज्ञके साधनोंको बटोरनेका प्रबन्ध किया। अनन्तर शत्रुदमन धर्म्मनाथने सहदेवको और मन्त्रियोंको आज्ञा दी, कि इस यज्ञमें ब्राह्मणोंने जिन जिन पाटयोंको यज्ञके अङ्ग करके निश्चय किया है, तिनके अनुरूप उपकरण, माङ्गलिक वस्तु और धौम्यकी आज्ञा की हुई सभी यथाक्रमसे और यथायोग्य रीति पर तुरन्त लेते आओ; अर्जुनके सारथि इन्द्रसेन विशोक और पुरु यह हमारी प्रिय कामनासे अन्नादि बटोरनेमें लगे रहें और रसगन्धयुक्त ऐसी काम्य वस्तु बनवावें, कि वे ब्राह्मणोंकी मनहरणी और प्रीतिदायिनी होवें। योधश्रेष्ठ सहदेवने धर्म्मनाथ युधिष्ठिरके इस आज्ञा-वचनको सुनतेही सब पूरा कर उनको समाचार दिया। हे महाराज! अनन्तर सत्यवतीनन्दन कृष्णद्वैपायनने साक्षात देवसदृश मूर्त्तिमान ब्राह्मणोंको ऋत्विकके कार्य्यमें नियुक्त किया और स्वयं उस यज्ञके ब्रह्म-कार्य्यमें दीक्षित हुए। धनञ्जय गोत्रके श्रेष्ठ सुसामा नामक ऋषि उद्गाता, ब्रह्मनिष्ठ याज्ञवल्क्य अध्वर्य्यु, वसुपुत्र पल और धौम्य होता और उनके वेदवेदान्तदक्ष शिष्य और पुत्रवर्ग होत्र-गाता बने। उन्होंने स्वस्तिवाचन करके उक्त यज्ञके लिये उद्देश निर्द्देश अर्थात् सङ्कल्प करके उस विस्तृत यज्ञभूमिकी शास्त्रानुसार पूजा की। आगे शिल्पियोंने आज्ञा पाय वहां देवोंके मन्दिर समान सुगन्धित और लम्बे चौड़े गृह बना दिये। अनन्तर पुरुषवर राजश्रेष्ठ राजा युधिष्ठिरने मन्त्री सहदेवको उसी क्षण आज्ञा की, कि तुम निमन्त्रणके लिये शीघ्र-चलनेवाले दूतोंको शीघ्र भेज दो। सहदेव तब राजाकी आज्ञा सुनके ऐसी आज्ञा दे करके, कि राज्यके सब ब्राह्मण, भूप और वैश्योंको निमन्त्रण करो, तथा शूद्रादिकोंको लाओ, दूतोंको भेज दिया।

श्रीवैशम्पायन जी बोले, कि अनन्तर शीघ्रगामी दूतोंने आज्ञा पाय सहदेवके वाक्यानुसार सबको नेवता दिया और उनके अतिरिक्त क्या स्वजन क्या अन्यजन, ऐसे अनेक लोगोंको भी साथ लिवाय लाये। हे भारत! तिसके अनन्तर उन ब्रह्मणोंने कुन्तीनन्दन युधिष्ठिरको राजसूयके लिये योग्य कालमें दीक्षित किया। नरवर धर्म्मात्मा धर्म्मनाथ

दीक्षित होके और सहस्रों विप्रोंसे घेरे जाय भाइयों, ज्ञातियों, मित्रों अनेक दिशा देशोंसे आये मनुष्यश्रेष्ठ क्षत्रियों तथा मन्त्रियोंके सहित मूर्त्तिमान धर्म्मकी भांति यज्ञस्थानमें गये। सर्व्व विद्याओंमें पण्डित वेदवेदाङ्गपारग ब्राह्मणगण नाना देशोंसे वहां आके एकत्रित होने लगे। सहस्रों शिल्पियोंने धर्म्मनाथकी आज्ञासे साथी समेत उन सब विप्रोंके अलग अलग वासगृह बना दिये। उन गृहोंमें बहुविध भोजनकी सामग्री और वस्त्रादि धरे थे और वसन्तादि सब ऋतुओंके कार्य्य विद्यामान थे। हे महाराज! ब्राह्मणगण भूपालसे सत्कृत होय वहां वस कर बहुभांतिकी कथा कह सुनके और नटोंके नाचादिको देख कर काल बिताने लगे। भोजन और सम्भाषण करनेवाले उन सब प्रसन्नचित्त महात्मा विप्रोंका बड़ा कोलाहल वहां सदा सुन पड़ने लगा। वास्तव में वहां "दीयताम भुज्यताम" इस प्रकारका वार्तालापही सदा कानोंमें पैठता था। हे भारत! धर्म्मराजने उनको सैकड़ों सहस्रों गौ, शय्या, काञ्चन और नारी अलग अलग दीं। स्वर्गके शतक्रतुके समान पृथ्वीके अद्वितीय वीर महात्मा युधिष्ठिरका यज्ञ इसी प्रकार से प्रारम्भ हुआ। अनन्तर नरवर राजा युधिष्ठिरने भीष्म, द्रोण धृतराष्ट्र, विदुर, कृप और उन भाइयोंको जो उनके प्रेमी थे लिवाय लानेके लिये नकुलको हस्तिनापुरमें भेजा।

तेंतीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि समरविजयी पाण्डुनन्दन नकुलने हस्तिनानगरमें जाय भीष्म, धृतराष्ट्र और द्रोणाचार्य्य आदिको उचित सत्कार सहित निमन्त्रण किया। अनन्तर वे ब्राह्मणोंको आगे कर प्रीतिपूर्व्वक यज्ञ देखनेको चले। हे भरतश्रेष्ठ! यज्ञके जानकर दूसरे सैकड़ों क्षत्रियभी धर्म्मनाथके यज्ञकी बात सुनके उस यज्ञसभा और धर्म्मनाथको देखने की इच्छासे प्रसन्न मनसे बहुविध बहुमूल्य रत्न बटोरके नाना दिग्देशोंसे वहां आ पहुंचे। धृतराष्ट्र भीष्म महामति विदुर दुर्य्योधनादि सब भाई गान्धारनाथ सुबल, महाबल शकुनि, अचल, वृषक, महारथी कर्ण, बली शल्व, महाबली बाह्लीक, सोमदत्त, कुरुबंशी भूरि, भूरिश्रवा शल, अश्वत्थामा, कृप द्रोण, सिन्धुराज जयद्रथ, पुत्रसहित द्रुपद, पृथ्वीनाथ शल्य, सागरतटके जलप्रधान देशोंके सब म्लेच्छोंसमेत प्राग्ज्योतिषनाथ महारथी नरनाथ भगदत्त, पहाड़ी राजागण, राजा बृहद्बल, पौण्ड्रक वासुदेव, वङ्गाधिप, कलिङ्गनाथ, आकर्ष, कुन्तल, मालव देशीय भूपवर्ग, अन्धकगण, द्राविड़वर्ग, सिंहलगण, काश्मीर देशीय भूतनाथ, तेजस्वी कुन्तीभोज, पृथ्विनाथ, गौरवाहन, वाह्लीक देशीय दूसरे शूरवीर भूप, दो पुत्रों सहित विराट, महाबली मावेल्ल, युद्धमें कठोर पुत्रसहित शिशुपाल और अनेक जनपदनाथ राजा और राजकुमार सब युधिष्ठिरके यज्ञमें आये। बलराम, अनिरुद्ध, कङ्क, सारण गद, प्रद्युम्न, शाम्ब, चारुदेष्ण, उल्मुक, निशठ, अङ्गावह और वृष्णिवंशी दूसरे वीर्य्यवान महारथीगण, सब आगये; यह सब और दूसरे मध्यदेशी अगणित राजगण युधिष्ठिरके राजसूय महायज्ञमें आये। हे महाराज! धर्म्मनाथकी आज्ञासे उनको बहुत खानेपीनेकी सामग्री सहित ताल और वृक्षोंसे सुहावने वासगृह दिये गये। धर्म्मनन्दनने स्वयं उन महात्मा नरेशोंकी पूजा की। आगे सत्कार पाय निर्द्दिष्ट किये हुए डेरोंको जाटिके। वह डेरोंकी ठौर कैलाशकी चोटीसी सुहावनी, भांति भांतिकी सामग्रीसे मनहरणी, भलोबनी शुभ्रवरणी अति ऊंची अटारिसे सब दिशा बनी सुवर्ण जाल पहिनी मणिकुट्टिमसे मोहिनी, सुखसे चढ़ने, योग्य सीढ़ियोंसे सुखदायिनी, मूल्यवान आसनोंसे सुहासिनी, मालायोंसे

सुन्दर अगुरुगन्धसे मन भावनी, हंस चन्द्रमासी श्वेतवरणी होने परभी योजन भर दूरीसे दर्शनीय लम्बे चौड़े, समान द्वारोंसे, सुखदायिनी नाना भांतिकी सामग्री-धारिणी और अङ्गों पर बहुविध धातु जड़नेसे हिमाचलकी चोटीसी मनमोहिनी बनीयी आये हुए भूपोंने वहां विश्राम कर, अन्तमें बहुत दक्षिणादाता अगणित मन्त्रियोंके कर्त्ता धर्म्मनाथ युधिष्ठिरको देखा। महाराज! सम्पूर्ण पृथ्वीनाथ तथा महर्षि ब्राह्मणोंसे भरी पूरी वह सभा उस कालमें अमर वृन्दसे सुहाती स्वर्गपीठकी भांति अति दीप्ति पाने लगी।

चौंतीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे महाराज! अनन्तर युधिष्ठिर आगे बढ़कर दादा भीष्मजी और गुरु द्रोणाचार्य्यको प्रणामकर उनको और अश्वत्थामा, कृपाचार्य्य दुर्य्योधन तथा विविंशतिसे यह बोले, कि इस यज्ञमें आप सब प्रकार मुझ पर कृपा दर्शावें। यहां जो मेरा बहुत धनसम्पद विद्यमान है, सब अपनाही जानें और सब परमार्श इच्छाके अनुसार मुझको दें। दीक्षित पाण्डवज्येष्ठने यह कहके अन्तको सबको यथायोग्य अधिकारमें नियुक्त किया। भक्ष्य भोज्यके अधिकारमें उन्होंने दुःशासनको नियुक्त किया, राजोंकी पूजाका भार सञ्जय पर दिया, कर्त्तव्य पाला गया वा नहीं, इसकी पूछ पाछमें महामति भीष्म और द्रोणाचार्य्य नियुक्त हुए, हिरण्य, सुवर्ण और रत्नोंकी रक्षा तथा दक्षिणा देनेका भार युधिष्ठिरने कृपाचार्य्य पर दिया और दूसरे पुरुषवरोंकोभी उन उन कार्य्योंमें नियुक्त किया। बाह्लिक, धृतराष्ट्र, सोमदत्त और जयद्रथ यह आदरपूर्व्वक लिवाये जाय स्वामीकी भांति विराजने लगे। सर्व्वधर्म्मोंके जानकर क्षत्ता विदुर व्ययकारी बने और ... सब प्रकारके उपहार लेने पर रहे।

श्रीकृष्णचन्द्र सब लोगोंके जीवनाधार होके परभी श्रेष्ठ फल पानेकी इच्छासे ब्राह्मणोंके पांव धोनेमें स्वयं नियुक्त हुए।

सभा और धर्म्मनाथको देखनेके अभिलाषी बनके वहां किसीने सहस्रसे अल्प उपहार नहीं दिया, सबोंने बहु धन रत्न देकर धर्म्मनाथको बढ़ाया था। राजगण इस अहंकारसे धन देने लगे, कि "कुरुनाथ युधिष्ठिर मेरेही धनसे यज्ञ निबटार लेवें।" महाराज! दर्शनार्थी देवोंके विमानोंका अगला भाग लगे, बहुबलयुक्त उत्तरकाल स्थायी सम्पूर्ण भवन इन्द्रादि लोकपालोंके विमान, ब्राह्मणोंके वासस्थान, भूपोंके लिये निर्म्मित नानारत्न जटित अति सम्पत्तसे सुशोभित विमान-सदृश विचित्र दिव्य वासगृह और परम श्रीसम्पद सहित आये राजोंसे महात्मा कुन्तीकुमारकी वह सभा बहुत सुहावनी बनी। अनन्तर युधिष्ठिरने ऐश्वर्य्यमें वरुणजीके समान बनके बहुदक्षिणा सहित षड्ग्निसाध्य राजसूय यज्ञका अनुष्ठान किया और सब लोकोंको सम्पदयुक्त सर्व्व प्रकार काम्य वस्तु देकर परितृप्त किया। उस उत्सवमें जितना अन्न पका और जितनी खानेकी वस्तु बनी थी और जितने अगणित भोजन किये हुए जनोंमें वार्त्तालाप हुआ था और जितना रत्नोंका उपहार दिया गया था उसका हिसाब लग नहीं सकता! मन्त्र और प्रक्रियामें पण्डित महर्षियोंसे उस यज्ञलीलाके होने पर देवोंकी तृप्ति हुई। देवोंकी भांति ब्राह्मणभी उस यज्ञमें दक्षिणा अन्न और बहुत धन पाय प्रसन्न हुए और दूसरे वर्णोंके लोगभी तृप्त और परम हर्षित हुए।

पैंतीस अध्याय और राजसूय
प्रकरण समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि यज्ञान्तके अभिषेकके दिन सत्कारपात्र महर्षि ब्राह्मण

भूपालोंके साथ अन्तर्व्वेदीमें गये। ब्रह्माके सामने देवर्षियोंके साथ एकत्रित अमरोंके सदृश नारद आदि महात्मा राजर्षियोंके साथ उस अन्तर्व्वेदीमें विराजकर अति शोभा पाने लगे। वे अति तेजस्वी ऋषिगण उसकालमें कर्म्मसे अवकाश पाय नाना भांतिका विचार करने लगे। बहुतेरे वहां आपसमें यह बकवाद करने लगे, कि "यह ऐसा होगा, नहीं नहीं ऐसा नहीं हो सकता, यह अवश्यही ऐसा है, व्यर्थ होही नहीं सकता।" उसमेंसे कोई कोई शास्त्रनिश्चित, तर्कसहित लघुसे गौरवका अर्थ और गुरुसे लघुका अर्थ सिद्ध करने लगे। बाजगण जैसे आकाशमें उड़ते समय आमिष बकोटते हैं, वैसेही कोई कोई मेधावी जन दूसरोंको उदाहरण सहित अर्थको व्यर्थ करने लगे। सब भाषोंके जानकारोंके वरिष्ठ कोई कोई महाव्रत ब्राह्मण विचारसे धर्म्मार्थ संयुक्त वचनोंको अलापते हुए रमणे लगे। हे महाराज! वेदयुक्त देव द्विज महर्षियोंसे वह बड़ी फैली वेदी अमल आकाश मण्डल समान सुहाने लगी। युधिष्ठिरके भवनकी उस अन्तर्व्वेदीके निकट उस काल कोई शूद्र वा व्रतवर्ज्जित जन विद्यमान नहीं था।

हे मनुष्यनाथ! देवर्षि नारद लक्ष्मीयुक्त धीमान धर्म्मनाथके यज्ञसे उपजी वह लक्ष्मी निहारके प्रसन्न हुए। अनन्तर क्षत्रिय कुलकी वह भीड़ देखकर सोचवश हुए और ब्रह्माके भवनमें अंशावतरणके विषयमें जिसकी चर्चा हुई थी पुरावृत्त कथाकी स्मरण करने लगे। हे पुरुषश्रेष्ठ कुरुनन्दन! उस क्षत्रिय समाजको देवोंका समाज जान नारदने मनहीं-मनमें पद्मनेत्र हरिका स्मरण किया। सोचा, कि पहिले जिन्होंने देवोंका स्वयं यह आज्ञा दी थी कि "तुम मर्त्तलोकमें जन्म लेकर एक दूसरेको काटकर फिर अपने अपने लोकोको सिधारोगे, उन समजाने भूतेश शत्रुपुरजयी, वीर, शत्रुनाशी साक्षात प्रभु नारायणने अपनी प्रतिज्ञा पालनेको क्षत्रियकुलमें जन्म लिया है। जगत्प्रभु भगवान शम्भुनारायणने सब देवोंको वह आज्ञा देके स्वयं यदुगृहमें जन्म लिया है। नक्षत्रोंमें तारानाथके समान वंशधर वरिष्ठ पुरुषोत्तम धरातल पर अन्धक और वृष्णियोंके वंशमें परम लक्ष्मी सहित विराजमान हुए हैं; इन्द्रादि सब देवगण जिनके बाहुबलको उपासना करते हैं, अरिसंहारी वह हरि वर्त्तमानमें मनुष्यके समान प्रगट होते हैं। कैसे आश्चर्य्यकी बात है, कि यह इतने बलयुक्त क्षत्रिय कुलको फिर मार लेंगे। धर्म्मके जानकारोंमें श्रेष्ठ अति बुद्धिमान नारद यज्ञयाजी नारायण हारिको ईश्वर जानके ऐसी चिन्ता करते हुए धीमान धर्म्मनाथके उस यज्ञमें अति मानसे विराजे।

महाराज! अनन्तर भीष्मजीने धर्म्मनाथ युधिष्ठिरसे कहा, कि हे कुलतिलक युधिष्ठिर! राजोंको यथायोग्य पूजा करो, देखो आचार्य्य ऋत्विक स्नातक, सम्बन्धी, मित्र और नरेश यह छः पुरुष अर्घ पानेके योग्य पात्र हैं। पण्डित लोग कहते हैं, कि आकर वर्षभर एकत्र बसनेहीसे वे अर्घ पाते है। यह भूपवर्ग बहुदिन हमारे यहां आये हैं, सो इनमेंसे हरेकके लिये एक एक अर्घ एकत्रित करो। पर इनमें जो सबोंसे श्रेष्ठ है, उन्हीको पहिले दो। युधिष्ठिर बोले, कि हे कुरुनन्दन पितामह! मुझसे कहे, कि आप कौनसे असाधारण जनको पहिले अर्घ पानेके योग्य विचारते हैं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर शान्तनुकुमार वीर्य्यवन्त भीष्मजी बुद्धिसे निश्चय कर वृष्णिकुलसे उपजे श्रीकृष्णचन्द्रको भूमण्डल भरमें पहिले पूजा पानेके योग्य विचारके बोले, कि जैसे सब ज्योतिमालाओंमें आदित्य सु तेजवन्त हैं, वैसेही इन राजोंमें श्रीकृष्णचन्द्र

बल और पराक्रमसे अति प्रकाशित दीख पड़ते हैं। सूर्य्यरहित देशमें सूर्य्य उगनेसे और वायुसे वर्ज्जित स्थानमें वायु-चलनेसे जैसा जान पड़ता है, श्रीकृष्णके आनेसे हमारा यह सभा-मन्दिर वैसेही प्रकाशित और प्रमुदित हुआ है। अनन्तर प्रतापी सहदेवने भीष्मजीकी आज्ञा पाय विधि पूर्व्वक उन वृष्णिकुमारको प्रधान अर्घ दिया, श्रीकृष्णने शास्त्र-दर्शित कर्म्मसे उसे ले लिया, परन्तु वासुदेवकी वह पूजा महाभुज चेदिनाथ शिशुपालसे सही नहीं गयो; वह सभामें भीष्म और धर्म्म-नाथको लाञ्छित कर श्रीकृष्णचन्द्रकी निन्दा करने लगा।

छत्तीस अध्याय समाप्त।

शिशुपाल बोले, कि हे कौरव! महात्मा महानचित्तोके यहां विद्यमान रहते वृष्णि-कुमार राजपूजा पा नहीं सकता। अजी युधिष्ठिर! तुमने तो स्वेच्छासे श्रीकृष्णकी पूजा की, पर यह व्यवहार पाण्डवयोग्य नहीं हुआ। अजी पाण्डवो! तुम बालक हो, कुछ जानते नहीं हो, धर्म्म बड़ा सूक्ष्म पदार्थ है, यह स्वल्पदर्शी नदीकुमारभी चेत खोचुके हैं। हे भीष्म! तुम्हारे समान धार्म्मिक जन अपनी ही प्रिय इच्छापर कार्य्य करें तो लोक-समाजमें साधुओंसे निन्दनीय बनते हैं। तुमने सब नरेशोंमें राजा नामके-अयोग्य दशार्हकी जैसी पूजा की, वह क्योंकर वैसी पूजा पा सकता है? हे पुरुषवर! कृष्णको वृद्ध जानके यदि उसकी पूजा की हो, तो वृद्ध वसुदेवके विद्यमान रहते उसका बेटा क्योंकर पूजनीय हुआ! अथवा यदि प्रिय चाहनेवाला वा सहचर कहके वसुदेवके बेटेकी पूजा की हो, तो, द्रुपदके उपस्थित रहते माधव क्योंकर पूजा गया? अथवा, हे कुरुनन्दन! ... यदि पूजा हो तो द्रोणके विद्यमान रहते वृष्णिकुमारको क्यों पूजा? अथवा ऋत्विक मानके कृष्णकी पूजा की हो, तो कृष्णद्वैपायनजीके उपस्थित रहते तुमने क्या जानकर कृष्णकी पूजा? हे महाराज! स्वेच्छासे मरनेवाले पुरुषश्रेष्ठ भीष्मके विद्यमान रहते तुमने कृष्णकी क्योंकर पूजा? हे कुरुनन्दन! सर्व्वशास्त्रोंमें पण्डित वीरवर अश्वत्थामाके उपस्थित रहते तुमने कृष्णकी क्योंकर पूजा? पुरुषश्रेष्ठ नरनाथ दुर्य्योधन और भरताचार्य्य कृपके उपस्थित रहते तुमने कृष्णकी क्योंकर पूजा की? किम्पुरुषाचार्य्य द्रुमको छोड़के तुमने क्या समझके कृष्णकी पूजा! कठोर भीष्मकनाथ सुलक्षण नरेश पाण्ड्य नृपवर रुक्मी; एकलव्य और मद्रनाथ शल्यके उपस्थित रहते तुमने क्योंकर कृष्णकी पूजा करी? और भी इन महाबली कर्णकी जो सब भूपालोंमें बलके लिये गौरववान और ब्राह्मण जामदग्न्यके प्यारे शिष्य हैं, हे भारत! जिन्होंने आत्मबलके आसरेसे सब राजोंकी जय किया है, उनको छोड़के तुमने क्योंकर कृष्णकी पूजा! हे कुरुशार्दूल! यह वासुदेव न तो ऋत्विक, न आचार्य्य, न राजा, कुछभी तो नहीं है, फिर तुम्हारा इसे पूजना केवल प्रिय कामनाके अतिरिक्त और क्या दूसरा कारण हो सकता है? हे भारत! इस मधुसूदनको प्रधान करके पूजनाही यदि तुम्हारा अभिप्राय था, तो अपमान करनेके लिये इन राजोंको यहां लानेका क्या प्रयोजन था? ऐसा नहीं, कि हमने भय, लोभ वा ढाढ़सके लिये इन महात्मा कुन्तीकुमारको कर दिया है, यह धर्म्मसे प्रवृत्त होकर साम्राज्यकी कामना कर रहे हैं, इसी लिये सबोंने इनको कर दिया है, पर इन्होंने हमारा अनादर किया। हे महाराज! राजसमाजमें तुम्हारा राजलक्षण रहित इस कृष्णका पूजना अपमानके अतिरिक्त और क्या होसकता है? वास्तवमें धर्म्मात्मा करके

धर्म्मपुत्रका यश फैला है; इसमें सन्देह नहीं, कि वह विना कारण हुआ है। क्योंकि वृष्णिकुलमें उपजे हुए जिस दुरात्माने पहिले महात्मा राजा जरासन्धको अनुचित रूपसे मारा है, इस धर्म्मत्यागीको कौन धर्म्मात्माके समान अनुचित पूजा दे सकता है? कृष्णको अर्घ देनेसे युधिष्ठिरकी धार्म्मिकता भी जाती रही और कृपणता जानी गयी। अजी माधव! तपस्वी कुन्तीपुत्र यद्यपि भीत और कृपण बने; तौभी तुम जैसी पूजाके योग्य हो वह तुमको भी समझना चाहिये था। अथवा घृतकी धार पाय, कुत्ता जैसे निरालेमें पीकर आनन्द लूटता है, वैसे तुम भी अपनी अयोग्य पूजाको बहुत मानते होगे; ऐसा न होता, तो तुमने योग्य बनके क्योंकर कृपणोंकी दी हुई यह पूजा मान ली? अजी जनार्द्दन? मैंने जिस अपमानकी बात कही, वह तो कुरु-राजापर बर्त्ताव नहीं करती है; निश्चय जान पड़ता है, कि कौरवलोग तुम्हाराही अपमान कर रहे हैं। अजी मधुसूदन! नपुंसकका विवाह और अन्धेका रूप देखना जैसा अयोग्य है, राजा न होकरके तुम्हारे लिये राजाके समान पूजित होनाभी वैसी हंसीकी बात है। चाहे जो कुछ हो, राजा युधिष्ठिरभी पहिचान गये, भीष्म जैसे हैं, वहभी समझा गया, जिसका जैसा गुण अवगुण था; वह भी प्रगट हो गया।

तब शिशुपाल उनसे यह कहके परमासनसे उठकर राजोंके साथ सभासे निकला।

सैंतीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि, अनन्तर राजा युधिष्ठिर शिशुपालकी ओर तुरन्त दौड़े और समझाय बुझाय उससे यह मीठी वाणी बोले, कि हे नरेश! आपने जैसी बात कही, वह आपके योग्य नहीं हुई! इसमें परम अधर्म्म और परम तथा कड़ापन प्रकाश होता है। हे महाराज! यह कभी सम्भव नहीं होसकता, कि शान्तनुनन्दन भीष्म परम धर्म्मको समझ नहीं सकते, सो और का और समझकर आप इनका अनादर न कीजिये, आपसे बड़े बड़े यह सब अगणित भूप कृष्णकी पूजा सहते हैं, वैसे आपभी सहन कीजिये। हे चेदिनाथ! कुरुनन्दन भीष्म यथार्थ रीति पर श्रीकृष्णचन्द्रके स्वरूपसे ज्ञात हैं। यह श्रीकृष्णको जैसे जानते हैं, आप उनको वैसे नहीं समझते।

भीष्मजी बोले, कि सब लोकोंमें बड़े वृद्ध श्रीकृष्णचन्द्रकी पूजा जिसे प्यारी नहीं लगती, ऐसे जनको विनय करना वा समझाना अनुचित है। लड़ाकोंमें श्रेष्ठ जो क्षत्रिय वीर किसी क्षत्रियको युद्धमें पराजय कर वशमें लाय त्याग देते हैं, वह उसके गुरु बनते हैं। यदुनन्दनके तेजसे हार नहीं खाये एकभी भूपाल इस राजसमाजमें दीख नहीं पड़ते। यह महाभुज अच्युत केवल हमारेही पूजनीय नहीं हैं, यह त्रिलोक भरके भी प्रधान पूजनीय हैं, क्योंकि बहुतेरे क्षत्रियश्रेष्ठ युद्धमें श्रीकृष्णसे परास्त हुए हैं और सम्पूर्ण विश्व इनमें सब प्रकारसे बिराजमान है, अतएव वृद्धोंके विद्यमान रहते मैंने श्रीकृष्णचन्द्रकी पूजा की, दूसरोंकी नहीं। हे महाराज! इस विषयमें तुमको वैसा न कहना चाहिये था। ऐसी बुद्धि फिर कभी तुमको न घेरे। मैंने बहुतेरे ज्ञानमें वृद्धोंकी उपासना की है, इन सब एकत्रित सज्जनोंकी कथाहोंमें गुणराशी श्रीकृष्णके साधुसम्मत अनन्त गुण-वृत्तान्त सुन चुका हूं। और भी इन धीमान महापुरुषने जन्मसे जो जो कर्म्म किये हैं उन सबोंकी कथा भी बहुधा मेरे कानोंमें पैठी है। अजी चेदिनाथ! ऐसा कदापि मत जानना, कि हम भूमण्डल भरमें साधुओंसे पूजे जानेवाले सर्व्व भूतोंको सुख देनेहार जनार्दनको केवल स्वेच्छासे अथवा सम्बन्ध वा उपकारके पूजते हैं; इनका यश, शूरता और

वृत्तान्त विशेष जान करकेही हम इनकी पूजा करते हैं। इस सभामें बालकसे बालककीभी परीक्षा करनेमें हम नही चूके है, पर गुणमें वृद्ध जनोंकी भी अतिक्रम कर हरिही हमारे मनसे पूजनीय बने हैं। ब्राह्मणोंमें ज्ञानके वृद्ध, क्षत्रियोंमें सबसे बली, वैश्योंमें बहुत धन-धान्यवान और शूद्रोंमें अवस्थाके वृद्धही पूजे जाते है। पर गोबिन्दकी पूज्यताके विषयमें वेद वेदाङ्ग विज्ञान और अधिक बल यह दो मिल गये है, क्योंकि मनुष्यलोकमें केशवसे गुणी दूसरा कौन विद्यमान होगा? दान दाक्षिण्य शास्त्रज्ञान, शूरता लज्जा, कीर्त्ति, अच्छी बुद्धि, बिनती, श्री, धृति, तुष्टि यह सब गुण कृष्णहीमें सदा प्रतिष्ठित हैं, सो हे भूपो! ऐसे ज्ञानी आचार्य्य, पिता, गुरु, अर्घपात्र, अर्च्चनीय अच्युतका पूजा जाना आप सब मान लीजिये। हृषीकेश ऋत्विक गुरु, कन्यादान योग्य, स्नातक, भूप और प्यारे यह सबही कुछ बने है, इसि लिये हमने इनकी पूजा की। श्रीकृष्णही सब लोकोंके उपजने और लय पानेके कारण है। श्रीकृष्ण-हीके लिये यह चराचर विश्व रचा गया है। यही अव्यक्त प्रकृति, कर्त्ता सनातन और सर्व्व-भूतोंसे अतीत हैं, इसी लिये अच्युत सबोंसे अधिक पूजनीय बने है। बुद्धि, मन, महान तत्व, वायु, तेज जल पृथ्वी, और जरायुजादि चार भूत, सबही कृष्णमें बिराजते है। सूर्य्य, चन्द्र, नक्षत्रदल, ग्रहगण, दिग्मण्डल, बिदिक सबही श्रीकृष्णमें प्रतिष्ठित है। जैसे चारों वेदोंमें अग्निहोत्र, छन्दोमें चन्द्रमा, ज्योति योंमें आदित्य, पर्व्वतपुञ्जमें सुमेरु और पक्षि-योंमें गरुड़ मुखिया हैं, वैसे क्या ऊर्द्ध, क्या तिर्य्यक्, क्या अध. जगको जितनी गति ठहरायी है. उन देवादि लोकोमे केशवही मुखिया बने है। पर यह अल्प पुरुष शिशुपाल वचनसे श्रीकृष्णको समझ नहीं सकता है, इसी लिये सदा ऐसा सम्भाषण किया करता हैं।

जो कोई महानचित्त अच्छा धर्म्म सञ्चय करनेमें प्रवृत्त होते हैं, वह जैसे धर्म्मको देखते हैं, यह चेदिनाथ वैसे देख नही सकता। इन बाल वृद्ध पूर्ण महान आत्मापूरित भूपोंमें कौन श्रीकृष्णचन्द्रको पूजाके अयोग्य मानते और कौन इनको पूजा नहीं करते होंगे? अथवा यदि शिशुपालको निश्चय हो, कि पूजा अनुचित हुई है, तो अनुचित पूजाके हेतु जो उचित हो, वह बिना शंका वही कर ले।

अठतीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजो बोले, कि महाबली भीमके ऐसो बक्तृता देकर चुप होने पर सहदेव उसके उत्तरमें यह अर्थयुक्त बचन बोले। हे भूपो! अपरिमित पराक्रमी केशवका मेरा पूजना तुममें जिन नरेशोंसे सहा न जाय "उसी सब बलियोंके सिर में यह लात मारता हूं, मेरे इस बचनका वे उचित उत्तर देवें। और जितने भूप महानचित्त करके गिने जाते है, वे इन आचार्य्य, पिता, गुरु, पूजनोय और अर्घ देनेके योग्यपात्र श्रीकृष्णकी पूजा मान लेवें।

बुद्धिमान साधु राजोंके उस प्रकार पाद दिखानेसे उनसे किसोने चूंतक नहीं किया। आगे सहदेवके सिर पर फूलवृष्टि हुई और "साधु साधु" ऐसी आकाशवाणी उच्चारी जाने लगी। सर्व्वशंकानाशक, सर्व्वलोकवेत्ता श्रीनारद जी सब भूपोंमेंसे यह स्पष्ट बाणी बोले, कि जो लोग पद्मपलाश लोचन श्रीकृष्णकी पूजा नहीं करेंगे, वे जोवतेमेंभी मृत है, सम्भाषण योग्य नहीं है।

श्रीवैशम्पायनजो बोले कि ब्राह्मण और क्षत्रियोंके विशेष जानकर नरदेव सहदेवने पूजनोय जनोंकी पूजा करके वह कर्म्म पूरा किया। इससे श्रीकृष्ण चन्द्रके प्रधान रूप से पूजे जाने पर शत्रुनाशी शिशुपाल आंखे लाल-कर क्रोधके मारे भूपोंसे बोला, सेनापतियो!

में विद्यमान हूं, फिर आप किस सोचमें पड़े हैं? आइये, सब सजकर मिले हुए वृष्णि और पाण्डवोंसे रणमें भिड़ जायं। चेदिनाथ शिशुपाल इस प्रकार उन राजोंको भरपूर उत्साहित कर अन्तमें उनसे यज्ञ बिगाड़नेकी परामर्श करने लगा। वहां नेवतेमें आये शिशुपालादि राजगण सब प्रकारसे क्रोधित और मुखका रंग बदले दीख पड़ने लगे, क्रोधसे चेत खोय वे सब निश्चय सिद्धान्तकर यह कहने लगे, कि हमको ऐसाही करना चाहिये, कि जिससे युधिष्ठिरका अभिषेक और श्रीकृष्णकी पूजा पूरी न होने पावे। अपनेमें समभौबूझौ मनःपीड़ाहीसे राजगण ऐसी कहासुनी करने लगे। सिंहके मुखसे आमिष कूट जानेसे वे गरजते हुए जैसी भयावनी मूर्त्ति प्रगट करते हैं उक्त राजोंके मित्रोंके उसकाल रोकनेसे उनकी मूर्त्तिभी वैसीही प्रगट होने लगीं। श्रीकृष्णने तब यह स्पष्ट जान लिया, कि वह सेनारूपी लहर मारनेवाला अपार अक्षय राजसमुद्र लड़नेकी प्रण-ठान रहा हैं।

उनतालीस अध्याय और अर्घाहरण प्रकरण-समाप्त।

शिशुपालवध प्रकरण।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर इन्द्र जैसे परामर्श पूछते हैं, वैसे अति तेजस्वी शत्रु-नाशी युधिष्ठिरने उस भूपसमाजको क्रोधसे उबले सागरके समान निहार-कर मतिमानोंके अगुआ कुरुपितामह वृद्ध भीष्मजीसे पूछा, कि हे पितामह! यह विशाल राजसमुद्र क्रोधके मारे लहरा उठा है, इस विषयमें जैसा उपाय करना उचित हो मुझसे यज्ञमें विघ्न न हो और प्रजाओंका सर्व्वत्र मङ्गल हो, वर्त्तमानमें वह सब उपाय बतावें।

धर्म्मज्ञ धर्म्मनाथ युधिष्ठिरके ऐसा कहने पर कुरु-पितामह भीष्म यह वचन बोले, कि हे कुरुशार्दूल! तुम भय मत खाओ। क्या कुत्ता कभी सिंहको मार सकता है? इस विषयमें मैंने पहिलेही अच्छा शुभ उपाय ठहराया है। सिंह सोये रहनेसे कुत्ते उसके सामने आय सब मिलके जैसे चिल्लाने लगते हैं, यह राजगण वैसे गरजते हैं, सिंहके सामने कुत्तोंके सदृश सोये वृष्णिसिंहके सामने रहकर अति क्रोधसे चिल्लाते हैं। नीदमें पड़े सिंह समान अच्युत जबलों जागते नहीं हैं, तबलों नरसिंह चेदिनाथ इनलोगोंको सिंह बना रहा है। हे बेटा! अल्पबुद्धि शिशुपाल सब भूपोंको सब प्रकारसे यमराजके घरले जाना चाहता है। हे भारत! शिशुपालका यह जो तेज बना है, जान पड़ता है, कि श्रीकृष्णचन्द्र निश्चयही उसे हर लेना चाहते होंगे। हे बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ कुन्तीनन्दन! इस कुबुद्धि चेदिनाथकी और सब भूपोंहीकी बुद्धि बिगड़ी है। वास्तवमें यह नरव्याघ्र माधव जब जिसको लेना चाहते हैं, चेदिनाथसे उनकी बुद्धि ऐसेही बिगड़ती है। हे युधिष्ठिर! नारायण त्रिभुवन भरमें जरा-युजादि चारप्रकारके सब भूतोंहीकी उत्पत्ति और लयके कारण है। श्रीवैशम्पायनजी बोले, हे भारत! भीष्मकी यह बात सुन नरेश चेदिनाथ तब उनको तीक्ष्ण अक्षरोंके वचन सुनाने लगा।

चालीस अध्याय समाप्त।

शिशुपाल बोला, अजी भीष्म! क्या तुम वृद्ध होय कुलमें कलङ्क लगाते हो? बहुविध विभीषिकासे सब भूपोंको भय दिखलानेमें लजाते नहीं? अथवा जन्मसे नपुंसकके स्वभावमें बने रहकर ऐसा धर्म्मवर्ज्जित अर्थका कहना तुम्हारे योग्य ही तो है, क्योंकि तुम सब कुरुओंके बड़े हो? जिनके तुम मुखिया बने हो, वे कौरव ठीक उसही दशामें हैं, कि जैसे एक नाव दूसरीसे मिलती अथवा जैसे एक अन्धा दूसरे अन्धेकी बाट लेता है। कृष्णका

पूतना-वध आदि कर्म्म विशेष रूपसे कह कर तुमने हमारे हृदयमें बड़ी व्यथा पहुंचाई। तुम बड़े अहङ्कारी और मूर्ख हो, तिसीसे केशवकी स्तुति गाने परभी तुम्हारी जीभ सैकड़ों भागोंमें क्यों नहीं बटती है? अति अज्ञानी मनुष्य भी जिससे ग्लानि कर सकते हैं तुम ज्ञानमें बूढ़े हो करके उस गोपालकी स्तुतिमें क्योंकर उत्साह दिखा रहे हो? अजी भीष्म! कृष्णने बचपनमें यदि एक गिद्ध मारा अथवा उन युद्धको न जाननेवाले अश्व और बैलको मारा हो, तो उनमें आश्चर्य्यही क्या है? और भी यदि इनने अचेत लकड़ीकी गाड़ी पांवसे गिराई हो, तो भला कौनसा बड़ा आश्चर्य्य कर दिखाया! अजी भीष्म! दीमकके टीलेके समान गोवर्द्धन गिरिको यदि इसने सप्ताह भर थामाभी हो, तो वह मेरी समझमें कोई बड़ी बात नहीं है; तुम्हरी इस बात पर, कि पहाड़की चोटी पर खेलते कूदते इसने बहुत अन्न खाया था" सबोंने बड़ा अचरज माना है। अजी धर्म्मज्ञ! जिस बलवानका अन्न इसने खाया था, उस कंस हीको तो मार डाला है, क्या यह बड़े आश्चर्य्यकी बात नहीं है? रे कुरुकुलमें नीच भीष्म! तू नहीं जानता, धर्म्म क्या है! अब हालमें तुझको जो इस बातका उपदेश करता हूं, जान पड़ता है, कि तूने साधुओंकी कथामें यह नहीं सुना होगा। धर्म्मनिष्ठ साधुलोग सज्जनोंसे सदा यह उपदेश करते हैं, कि स्त्री, गौ और ब्राह्मणों पर और उस पर जिसका अन्न खाया हो और जिसके आसरेमें बसे कभी शस्त्र मत चलाना, पर अजी भीष्म! लोकोंमें तुममें वह सब व्यर्थ दीख पड़ते हैं! रे कौरवोंमें नीच! यह समझ कर, कि मानो मैं कुछ नहीं जानता हूं तू मेरे सामने केशवकी स्तुति कर कर उसको ज्ञानमें वृद्ध, वृद्ध महान् इत्यादि नानाविध बातोंमें प्रशंसा कर रहा है। अजी भीष्म! गो घातक और स्त्री हत्यारे होने परभी यदि तुम्हारी बातसे पूजनीय हो, तो यह उपदेश वचन कहां रहेगा। अजी भीष्म! जो ऐसा है वह क्योंकर स्तुति योग्य हो सकता है? तुम्हारी ऐसी प्रशंसाकी बातोंसे कि "यह प्राज्ञके मुखिया जगत्के प्रभु हैं" जनार्द्दनभी यह सब मान अपनेको उन सबोंके योग्य समझ रहा है, पर बास्तवमें वह सब झूठ है। गवैयेके बहुबार गानेसेभी सङ्गीत उसका शासन नहीं कर सकता; भूलिङ्ग पक्षीके समान सब प्राणी अपनी अपनी आकृति प्राप्त करते हैं। इसमें कुछभी सन्देह नहीं है, कि तुम्हारी यह प्रकृतिभी बहुत बुरी है। औरभी कृष्ण जिनका प्रधान पूजनीय और तुम जिनके बाट दिखानेवाले हो यह कहनेसे कथा बढ़ जाती है, कि उन पाण्डवोंकी प्रकृति तुमसे भी नीच है। बास्तवमें तुम धर्म्मवान होकरकेभी साधुओंके पथसे हट जानेसे अधार्म्मिक बने हो, क्योंकि धर्म्मसे तुमने जो कर्म्म किया है क्या कोई ज्ञानकी बड़ाई रखने वाला वैसा कर सकता है? अजी भीष्म! अम्बा नाम धर्म्मवती काशीराजकी पुत्रीने और की कामना की थी, तुमने प्राज्ञ होनेकी बड़ाई रखकर क्योंकर उसे हर लिया था? तुम्हारे भाई नरनाथ विचित्रवीर्य्यने साधुओंकी बाट लेय तुम्हारी हरी उस कन्याको अन्यपूर्व्वा कहके नहीं लिया। तुम प्राज्ञ कहनेकी ऐसी बड़ाई रखते हो, कि तुम्हारे सामनेही विचित्रवीर्य्यकी दो स्त्रियोंमें अन्यजन द्वारा सज्जनसे आचरण किये पथके अनुसार सन्तान उपजायी गई थी; अजी भीष्म, भला तुम्हारा धर्म्म क्या है। तुम्हारा यह ब्रह्मचर्य्य व्यर्थ है, याती भ्रम नहीं तो नपुंसक होनेके कारण तुमने इसे लिया है। अजी धर्म्मज्ञ! मैं कहीं भी तुम्हारी उन्नति नहीं देखता हूं। तुम धर्म्मकी जैसी व्याख्या

करते हो, तिससे निश्चय जान पड़ता है, कि तुमने कभी पण्डितकी उपासना नहीं की है। देखो, देव-सेवा दान, पठन वर्द्धित दक्षिणायुक्त यज्ञ, यह सब पुत्र फलकी सोलहवा भागके योग्य भी नहीं हो सकते। अजी भीष्म। बहुविध व्रत उपवाससे जो कुछ पुण्य होता है, विन पुत्र जनका वह सब निःसन्देह व्यर्थ हो जाता है। तुमभी विन पुत्र वृद्ध हुए हो और झूठे धर्म्म पर चलते हो, सो हंसकी भांति अपने ज्ञानियोंसे वधे जाओ। अजी भीष्म। ज्ञानमें पण्डित दूसरे मानवभी पहिले यह कह गये है, मै भली प्रकार तुमसे वह कह सुनाता हूं, सुनो। पहिले समुद्रके निकट एक बूढ़ा हंस रहता था। वह बड़ा अधर्म्म किया करता था, पर धर्म्मकी कथा सुनाय सुनाय पक्षियोंको उपदेश करता फिरता था। सच कहनेवाले पक्षीगण उसकी यह बात, कि तुम धर्म्म करो, अधर्म्म मत कीजे," सदा सुनते थे। अजी भीष्म सुना जाता है, कि समुद्रके जलमें चरनेवाले दूसरे पक्षीभी धर्म्मार्थमें उसको भोजन जुटा देते थे और सब उसके निकट अपने अपने अण्डे धर चरते चरते सागर जलमें घूमते थे। वह पापिष्ठ हंस अपने कर्म्ममें सदा सावधान रह अवसर पाके उन पक्षियोंके अण्डे खा जाता था। इसप्रकार धीरे धीरे उन सब अण्डोंके घटने जाने पर दूसरा एक बड़ी बुद्धि वाला पक्षी मनही मनमें शङ्कित हो गया और किसी एक दिन उसने भी वह लीला देख ली। आगे हंसका अन्याय देख दुःखी होय उस पक्षीने सब पक्षियोंसे कह दी। अजी कुरुश्रेष्ठ। इसके पीछे उन पक्षियोंने प्रत्यक्षमें देख देखकर निकट आय उस झूठे धर्म्मवादी पक्षीको मार डाला। अजी भीष्म, तुमभी उस हंसके धर्म्मसे चलते हो, पक्षियोंने उसे जैसे मारा था, उसी प्रकार यह सब राजलोग भी तुमको हनन कर सकते हैं। अजी भीष्म। पुराण जाननेवाले [illegible] लोग इस विषयमें एक कथा कहते है। उसेभी पूरी पूरी तुमसे कह सुनाता हूं। "रे हंस! कामादिसे तेरी अन्तरात्मा घायल होने परभी तू धर्म्मका बकवाद कर रहा है, पर अण्डा खानेके समान यह अपवित्र कर्म्म तेरी बातके ऊपर चढ जाता है।"

एकतालीस अध्याय समाप्त।

शिशुपाल बोला, कि इस कृष्णको दास जानके जिन्होंने इससे लड़ना नहीं चाहा था, वह महाबली बड़े पराक्रमी राजा जरासन्ध मेरे बड़े माननीय थे। जरासन्धके मारे जानेके कालमें केशव और भीमार्जुनने जो कर्म्म किया था, उसे कौन सुकर्म्म जान सकता है? इस कृष्णने कुद्वारसे घुसकर छलसे अपनेको ब्राह्मण कहके नरनाथ जरासन्धका प्रभाव भली प्रकार समझ लिया था। इस दुरात्माको उनकी पहिले पाद्य देनेको उद्यत होने पर इसने तब धर्म्मात्मा बनके अपनो ब्राह्मणाई दिखाके उसे नहीं लिया था। अजी कुरुकुमार। जरासन्धने जब कृष्ण, भीम और धनञ्जयको भोजन करनेको कहा था तब कृष्णने बाधा देके बात नहीं मानी थी। रे मूर्ख! तेरे मतसे यदि यह जगका कर्त्ताही होगा तो अपनेको ब्राह्मण करके भली भांति क्यों नहीं जान लेता? मुझको सबसे बड़ा आश्चर्य यह जान पड़ता है, कि यद्यपि तुम पाण्डवोंको साधुओंके पथसे हटाते हो, तिसपर भी वे तुम्हारे अभिप्रायको भला समझते है, अथवा स्त्री स्वभावी बनके और अवस्था गवाके जब तुम इनके सब अर्थोंके दमानेवाले बने हो, तब इसमें आश्चर्य ही क्या है?

श्रीवैशम्पायनजी बोले," कि उसको कठोर अक्षरोंको बहुतेरी कटीली बातोंको सुनके बलियोंमें श्रेष्ठ प्रतापी भीमसेन क्रोधयुक्त हुए। कमलदल सदृश स्वभावहीसे फैले और खींचे लाल भये उनके नेत्र और भी फैले और लाल [illegible]

लाल बन गये। सब भूप त्रिकूट-चोटीके निकट बहती, तीन धारोंमें चलती गङ्गाजीके समान उनके लिलार पर त्रिशिखाकी भृकुटि निहारने लगी। क्रोधके मारे दांतसे दांत पीसते हुए उनका मुखमण्डल मानो युगान्तके सब लोकोंको निगलनेवाला कराल कालके समान दीख पड़ने लगा। वह महानचित्त वेगसे उठ रहे थे, कि ऐसे समयमें शशिशेखर जैसे षड़ानन को पकड़ते हैं तैसे महाभुज भीष्मजीने उनको रोक लिया। हे भारत। पितामह भीष्मजीने भीमको रोक कर बहुविध वचनसे उनका क्रोधवेग शान्त कर दिया, क्योंकि लहराता हुआ महासमुद्र जैसे वर्षा बीतने पर तटकी भूमिके ऊपर नहीं चढ़ता, वैसे शत्रुदमन बृकोदर भीष्मजीकी बात पलट नहीं सके। पर भीमसेनके क्रोधसे भरने परभी वीरवर शिशुपाल अपनी बड़ाई पर निर्भर कर कुछभी टला नहीं। हे शत्रुदमन! सिंह जैसे छोटे मृगको टुकभी नहीं मानता, वैसे वृकोदरके वेगसे बारबार चढ़जानेकी इच्छा दिखाने परभी उनसे उसको कोई भय नहीं हुआ। भीमपराक्रमी भीमसेनको सब प्रकारसे क्रोधित देखकर प्रतापी चेदिनाथ हंसता हुआ यह बोला, कि अजी भीष्म। उसे छोड़ दो। यह भूपवर्ग उसे आगसे पतङ्गकी भांति मेरे प्रभावाग्निसे जलजाते देख लेवें। अनन्तर चेदिनाथकी वह बात सुनकर प्राज्ञोंके मुखिये कुरुश्रेष्ठ भीष्मजी भीमसे पीछे कहे यह वचन बोले।

बयालिस अध्याय समाप्त।

भीष्मजी बोले, कि यह शिशुपाल त्रिनेत्र और चतुर्भुज बनके चेदिकुलमें उपजा था और जन्मलेतेही गदहेके समान चिल्लाया था, इस पर इसके पिता माताने बान्धवों सहित भय खाय वैसे विकृत लक्षण देखकर इसे त्यागना चाहा। अनन्तर स्त्री मन्त्री और पुरोहित सहित घबराये उन नरनाथ पर यह आकाशवाणी उचारी गयी, कि "हे नरनाथ। यह जो तुम्हारा पुत्र उपजा है, यह बड़ा बली और श्रीमत होगा, सो इससे तुमको भय नहीं है, तुम बिना घबराये इस बच्चेको पालो। हे नरनाथ। तुम्हारे प्रयत्नसे इसकी मृत्यु नहीं होगी, अभी इसके मरनेका काल नहीं आया। शस्त्रसे जो इसे मारेंगे वह जन्मे हैं" यह दैववाणी सुनके माता पुत्रस्नेहसे बहुत दुःख मान तब उस अदृश्यभूतके उद्देशमें यह बोली, कि "मेरे पुत्रपर, जिन्होंने यह बाणी कही, वह भगवान चाहे देवता वा दूसरे कोई प्राणी हों, मैं कर जोड़ उनको प्रणाम करती हूं। वह सत्य करके और एक बात कहें, मैं सुना चाहती हूं, कि कौन इस पुत्रका मारनेवाला होगा।" अनन्तर फिर यह दैववाणी हुई, कि जिनके गोदमें रखनेसे इस बच्चेके दो अधिक भुज, पांच सिरवाले दो सर्पोंके सदृश धरती पर गिर जायगे और जिनको देखकर इसके लिलार परका यह तीसरानेत्र लोप हो जायगा वही इसको मारेगे।"

त्रिनेत्रवान चतुर्भुज बालक और उसपर कहे दैववाणीका वृत्तान्त सुनकर पृथ्वी भरके सब नरेश उसे देखनेको आये। चेदिनाथने उनकी यथा योग्य पूजा कर हर नरेशकी गोदमें पुत्रको रख दिया। इस प्रकारसे क्रमशः सहस्र भूपोंकी गोदमें चढ़ने परभी बच्चे पर दैववाणीका वर्त्ताव नहीं हुआ। द्वारकामें यह वृत्तान्त सुन यदुनन्दन महाबली बलराम और जनार्दन यदुकन्या फूफीसे भेट करनेको उस समय चेदिनगरमें आये और ज्येष्ठताके अनुसार राजा रानीके पावमें लगके कुशल क्षेम पूछकर आसनोपर बैठे। अनन्तर उन दो वीरोंके पूजे जाने पर राजमहिषीने बहुत अधिक प्रीतिमें स्वयं दामोदरकी गोदमें पुत्रको दे दिया। ज्योंहि

गोदमें जातेही उसके दो अधिक भुज गिर गये और लिलार पर उपजा हुआ वह नेत्रभी अदृश्य हुआ। यह देखकर राणी व्यथा पाय भय खाय कृष्णसे वर मांग बोली, कि हे महाभुज कृष्ण! मैं भयसे घबराय गयी हूं, मुझको एक वर दो, क्योंकि तुम दुखियोंकी आश्रय और भय खायोंको निर्भय करनेवाले हो। कुन्तीकी ऐसी कातर वाणी सुनके यदुओंके आनन्दकन्द श्रीकृष्णचन्द्र उसको ढाढ़स देकर बोले, कि देवि! भय मत खाओ, मुझसे आपको भय नहीं है। हे धर्म्मवति! मैं क्या वर दूं, कहो मुझको क्या करना होगा, चाहे साध्य हो, वा असाध्य हो, मैं अवश्यही आपकी बात मानूंगा। श्रीकृष्णकी वह बात सुनके उस समय राजमहिषीने उनसे कहा, कि हे महाबली यदुशार्दूल! मेरे लिये तुमको शिशुपालका सब दोष चमा करना पड़ेगा। हे प्रभो! यही मेरी प्रार्थना है। श्रीकृष्ण बोले कि हे फूफी! आपका पुत्र बधयोग्य भी हो तो मैं इसके सौ दोषोंको चमा करूंगा, अतएव आप शोकयुक्त न होवें।

भीष्मजी बोले, कि हे भीम! इस प्रकार गोविन्दके वरसे अहङ्कारी बन करकेही यह मत कुबुद्धि पापात्मा भूपाल शिशुपाल तुमको युद्धके लिये ललकार रहा है।

तैतालीस अध्याय समाप्त।

भीष्मजी बोले, हे वृकोदर! तुम्हारे अक्षय ... होने पर भी चेदिपतिका युद्धमें ललकारनेकी बुद्धि, उसकी अपनी नहीं जान पड़ती, इसमें सन्देह नहीं, कि वह ... श्रीकृष्णचन्द्रकी ही उपाय है। कालग्रस्त ... इस कुलाङ्गारने आज मुझको ... पृथ्वीमें कौन नरेश वैसा ... साहस रखता होगा। यह महाभुज ... हरिके तेजोंका अंश है, नारायण निश्चयही उस तेजको हर लेना चाहते होंगे। हे कुरुशार्दूल! यह कुबुद्धि चेदिनाथ हम सबोंका अनादर पूर्व्वक शार्दूल सदृश बहुत हांकता, भिड़कता है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि अनन्तर चेदिनाथसे उस समय भीष्मका वह वचन सहा नहीं गया। वास्तवमें बहुत क्रोधित होके फिर उनका प्रत्युत्तर करने लगा।

शिशुपाल बोला, अजी भीष्म! तुम भाट समान उठके सदा जिसकी स्तुति गारहे हो, उस केशवका जो प्रभाव है, हमारे शत्रुओंका उतनाही हो। अजी भीष्म! परायी स्तुति पर यदि तुम्हारा मन चला हो, तो राजोंको छोड़के क्यों इस जनार्द्दनका स्तव करते हो? जिन्होंने जन्म लेकर पृथ्वी फाड़ डाली, उन नरेशश्रेष्ठ वाह्लीकनाथ दरदकी स्तुति गाओ। अथवा जिन महाभुजके देहोंसे बने यह दो स्वाभाविक कुण्डल और तपे आदित्य समान प्रभावी दिव्य कवच सुहाते हैं, जिन्होंने इन्द्र समान पराक्रमी कठोर जरासन्धको बाहुयुद्धसे जय किया और देह अलग करदी थी, अङ्गराजके अधीश बाहुबलन साक्षात सहस्रनेत्र सदृश सब चापधारियोंमें श्रेष्ठ उन कर्णकी स्तुति गाओ। अजी भीष्म! स्तुतिके योग्य द्विजोत्तम द्रोण और अश्वत्थामा इन दो पिता-पुत्रकी सदा खुसामद करो। मुझको जान पड़ता है, कि इन दोनोंमें एक क्रोधित होनेसे चराचरयुक्त सब धरतीको नष्ट कर सकते हैं। अजी भीष्म! ऐसा एकभी राजा नहीं दीखता, जो युद्धमें द्रोण वा अश्वत्थामाके योग्य होसके, पर कैसे आश्चर्य्यकी बात है, कि इनकी स्तुति करनेको तुम्हारा जी नहीं चाहता। सागरसहित धरतीभरमें जो तुलनारहित गिने जा सकते हैं, उन महाभुज राजश्रेष्ठ दुर्य्योधनकी, अस्त्रमें पण्डित अति विक्रमी राजा जयद्रथकी, लोकमें प्रसिद्ध पराक्रमी

किंपुरुषाचार्य्य द्रुमको, और भरताचार्य्य शारद्वत वृद्ध कृपको छोड़के तुम केशवकी प्रशंसा क्यों करते हो? अति वीर्य्यवन्त भीष्मक, भूनाथ दन्तवक्र, यूपध्वज, भगदत्त मगधनाथ जयत्सेन, विराट, द्रुपद, शकुनि, बृहद्बल, अवन्तीनाथ, विन्द और अनुविन्द, पाण्ड्य, श्वेत, उत्तम महा भाग शङ्ख, अति माननीय वृषसेन, विक्रमी एकलव्य और महारथी अति वीर्य्यवन्त कलिङ्ग-नाथ, इन्हे छोड़के तुम केशवकी प्रशंसा क्यों करते हो? अजी भीष्म सदा स्तुति गानेही पर यदि तुम्हारा मन चले, तो शल्यादि भूपालोंका स्तव क्यों नहीं करते? अजी नृप!! पहिले धर्म्ममाननेवाले वृद्धोंकीकथा सुननेमें जब तुमने कोईभी बात नहीं सुनी है, तब मै गाल बजाकर क्या कर सकता हूं? अजी भीष्म! तुमने कभी यह बात नहीं सुनी है कि अपनी निन्दा वा प्रशंसा और परायी निन्दा वा स्तुतिगान आर्य्योंकी रीति नहीं है। स्तवके अयोग्य इस केशवकी तुम्हारा सदा मोहवश भक्ति सहित स्तव करना किसीको प्रिय नहीं है। अजी भीष्म! केवल अपनी इच्छासे तुम कंसके पशुपालनेहार दास दुरात्मा जनमें क्योंकर जगभरको पैठा रहे हो? अथवा यह बुद्धि भूलिङ्ग पक्षीसी तुम्हारी प्रकृतिसिद्ध नहीं है, मैंने तो यह बात पहिले कहदी थी। अजी भीष्म! भूलिङ्गनाम्नी एक पक्षिणी हिमाचलके पथके किनारे रहती है। उसके अर्थावरकी उलट पुलट वचन सदा सुन पड़ते हैं! वह सदा यह कहता है, कि "कोई साहसी कर्म्म मत करना," पर उसको यह समझ नहीं होती, कि आपही बड़ा साहसी कर्म्म कर रही है। वह स्वल्पबुद्धि पक्षिणी भोजन करते हुए सिंहके मुखसे दन्तोंके बीचमें दबाये मांसके खण्डको चोचद्वारा खींच लेती है। अजी भीष्म! इसमें टुकभी सन्देह नहीं है, कि वह सिंहकी इच्छा पर जीती है। रे अधार्म्मिक! तू भी वैसी कपटवाणी कहा करता है। इसमें सन्देह नहीं, कि तू भूपालोंकी इच्छा पर जीता है। क्योंकि लोकहिंसक कार्य्य करनेमें कोई तेरे समान विद्यमान नहीं है। श्रीवैशम्पायनजी बोले, हे महाराज! अनन्तर चेदिनाथकी कड़ी कटीली बातें सुनकर भीष्म उसे सुनाय यह वचन बोले, कि हां! मैं इन भूपोंहीकी इच्छा पर जीता तो हूं, पर इन भूपोंको मै तिनके समानभी नहीं समझता। भीष्मके यह वचन कहते ही भूपवर्ग चिल्ला उठे। उनमेंसे किसी किसी बड़े चापधारीके रोवें खड़े होगये, कोई कोई भीष्मकी निन्दा करने लगे और कोई कोई उनकी वह बात सुनकर बोले, कि "यह पापात्मा भीष्म वृद्ध हो करकेभी गर्व्व प्रगट करता है, सो इसे क्षमा करना उचित नहीं। हे भूपवर्ग! इस क्रोधित भीष्मको पशु समान मार डालनाही उचित है, अथवा सब मिल इसे सूखे तिनकोंकी आगमें भून डालो।" अनन्तर कुलपितामह महानचित्त भीष्म राजोंके यह वचन सुनके उनसे बोले, अजी भूपो! देखता हूं, बातें चुकने की नहीं है, ज्यों कहते जाओगे, त्यों त्यों बढ़ती जायंगी। पर अब मैं जो कहता हूं, सब कान लगाय सुनो। मैं पशु समान माराही जाऊं वा तिनकोंकी आगसे भूना जाऊं, पर तुम्हारे सिर पर यह भरपूर लातें जमाता हूं। अक्षय सत्ववान गोविन्दको हमने पूजा है, और वहभी यहां विद्यमान है। सो मरनेको जिसकी बुद्धि दौड़ती हो, वह गदा चक्रधारी माधव श्रीकृष्णको आज युद्धमें ललकारे और उसी क्षण मारा जाय इन देवकी देहमें ही लय हो जावे।

चौवालिस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, अनन्तर भीष्मका वचन सुन करकेही अति विक्रमी चेदिनाथ वासुदेवसे लड़नेकी इच्छा कर उनसे बोला,

अजी जनार्द्दन ! तुमको ललकारता हूं, आओ मुझसे लड़ जाओ, आज पाण्डव सहित निश्चयही तुमको मारूंगा। अजो कृष्ण ! तुम्हारे राजा नहीं होने परभी जिन्होंने भूपोंको छोड़के तुम्हारी पूजा की है, उन पाण्डवोंको मै तुम्हारे साथही सब प्रकारसे निःसन्देह नष्ट करूंगा। रे मन्दबुद्धे ! तू राजा नहीं, दास है, सो किसी प्रकार पूजायोग्य नहीं हो सकता, तिसं परभी जिन्होंने लड़कोंकी बुद्धिसे तुझे योग्य सा बनाय तेरी पूजा की है, मेरे मतसे वे निश्चयही वधयोग्य हैं। राजशार्दूल शिशुपाल क्रोधके मारे यह वचन बोलके गरजने लगा। उसके ऐसा कहनेके पीछे श्रीकृष्णचन्द्र पाण्डवोंके सामने राजोंसे धोमी धुनसे यह बात बोले; कि हे नरन्द्र ! यह निष्ठुरात्मा यादवीपुत्र मेरे आदि यादवोंका बड़ा शत्रु है, हम इसकी हानिकी चेष्टा नहीं करते तिस परभी यह बुराईमें कटिवद्ध होता है। हमको प्रागज्योतिष पुरमें गये जानके इस निष्ठुरने मेरे पिताका भाञ्जा होने परभी द्वारका नगरीको फूक दिया था। हे नरेशो ! पहिले राजा भोज रैवतक पर्व्वत पर विहार कर रहे थे। यह दुराचारी उनके सहचरोंको मारके और बधकर अपने पुरको पधारा था। मेरे पिताके अश्वमेध यज्ञमें विघ्न डालनेके लिये इस पापात्माने दिग्विजयके निमित्त अच्छे रखवारोंसे घिरे यज्ञके अश्वको चुराया था। तपस्वी अक्रूरकी स्त्री यहांसे सौवीर राज्यको जा रही थी, इस दुराचारीने उसकी इच्छा न रहने परभी उस अक्रूरकी स्त्रीको हरण किया था। और भी मामाकी बुराई करनेवाले शिशुपालने कपट-वेशसे राजा करूषके वेशसे देह छुपाय उत्त ... के लिये निर्दिष्ट विशालापतिकी पुत्री भद्राको हर लिया था। केवल फूफोजीके लिये ... यह भारी दुःखोंको सह लेता हूं, पर ... सब राजोंके सामने यह प्रगट होना सौभाग्य ही है। क्योंकि मुझ पर इसकी अति विरुद्धता आज आपने प्रत्यक्ष कर ली और इसने परोक्षमें मेरी जितनी हानि की है वह भी सबसुन चुके, वह चाहे जो कुछ हो, आज सब राजोंके सामने वध योग्य इस नराधमकी गर्व्ववश जो विरुद्धता दोख पड़ी उसको क्षमा मै नहीं कर सकूगा। इस मूर्खने मूढ़तासे मृत्युका अभिलाषी बनकर रुक्मिणीकी प्रार्थना की थी, पर शूद्रके वेद सुननेकी भांति उसका लाभ नहीं कर सका था।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, अनन्तर वे मिलित नरेशवर्ग वासुदेवकी यह बात सुनके सब चेदि-नाथकी निन्दा करने लगे। प्रतापी शिशुपाल उनका वह वचन सुनके जोरसे हसकर यह बोला, अजी कृष्ण ! पहिले मेरे लिये निर्दिष्ट रुक्मिणीकी बात इस सभामें विशेष राजोंके सामने कहते तुमको लाज नहीं आती क्या ? अजो मधुसूदन ! तुम बिना दूसरा कौन अपनेको पुरुष करके अपनी स्त्रीको साधु-समाजमें अन्य-पूर्व्वा कह सकता है ? अजी कृष्ण ! मन चहे तो मुझको क्षमा करो, नहीं तो न करो। तुम चाहो रिसाओ वा प्रसन्न हो, तुमसे मुझे क्या भय है।

शिशुपाल ऐसा कहताही था, कि इसी समयमें भगवान मधु-सूदनने मनही मनमें दैत्य-गर्व्वनाशी सुदर्शन चक्रका स्मरण किया। पल भरमें चक्र हाथमें आजाने पर भगवान निनादकर वाक्योंमें यह बोले, कि हे भूपालो ! जिस हेतु इसके दोषोंको क्षमा कीथी, वह सुनिये। इसकी माताने मुझसे यह वर मांगा था, कि "इसके सौ दोष क्षमा करने होंगे" और मैंनेभी उनका मांगा वर दिया था। हे भूपो ! अब वह पूर्ण हुए. सो आपके सामनेही मैं इसको मारूंगा। अरिनाशी, यदुश्रेष्ठने यह कहके रिसाकर चक्रसे तत्क्षण शिशुपालका सिर काट डाला। महासुर शिशुपाल मानो वज्रसे आहत पहाड़के

समान गिर गया। महाराज। तब नरेशोंने देखा, कि आकाशतलसे आदित्यसदृश तेजोराशि शिशुपालकी देहसे उड़ गयी। हे नरनाथ! अनन्तर वह तेजोराशि लोकोंके नमस्कार योग्य उन कमल लोचन कृष्णके पावमें लगके उनकी देहमें मिल गयी। महाभुज पुरुषोत्तममें उस तेजको प्रविष्ट होते देखकर सब राजोंने अचरज माना। श्रीकृष्णचन्द्रके चेदिनाथको मारने पर बिना बादल जलवृष्टि, प्रज्वलित वज्रपात और भूकम्प होने लगा। वचनोंसे प्रकाशके अयोग्य उस कालमें किसी किसी भूपालने उनको निहारके उस विषयमें चूं तक नहीं किया, कोई कोई रिसके मारे हाथसे हाथ मलते रह गये, कोई कोई क्रोधसे चेत खोय दांतोंसे होठ काटने लगे, कोई कोई छिपकर वृष्णिनन्दनकी प्रशंसा करने लगे। इस प्रकार कुछ नरेश अति रिसाये और दूसरे बीचमें रहे। महर्षिवृन्द केशवकी स्तुति गाते हुए प्रसन्न चित्तसे उठकर चल दिये। महात्मा ब्राह्मण लोगभी और महाबली महानचित्त भूपवर्ग कृष्णका विक्रम निहार प्रसन्न होय सब उनकी प्रशंसा करने लगे। आगे युधिष्ठिरने भाइयोंको आज्ञा दी, कि तुम दमघोषनन्दन वीरवर भूपालका सत्कार सहित तुरन्त संस्कार कार्य्य कर डालो। उन्होंने तब बड़े भाईकी आज्ञा पाली। पृथापुत्र युधिष्ठिरने भाइयों और उन सब राजोंसे मिलकर उस काल महीपाल शिशुपालके पुत्रको चेदिराजके अधिकारमें अभिषिक्त कर दिया। अनन्तर अति तेजस्वी कुरुनायकका वह सुखारम्भ किया हुआ सर्व्वसम्पतयुक्त प्रचुर धनधान्य और अन्न भरा बहुभोजनका पूरा महा यज्ञ राजसूय केशवकी भली रखवारीमें विघ्नसे साफ और युवाओंका आनन्ददायी बनके सुहाया और युधिष्ठिरनेभी उसे पूरा किया। महाभुज भगवान जनार्द्दनने शौरी-शार्ङ्ग-चक्र-गदाधारी होके अन्ततक उस यज्ञकी रक्षा की। इसके पीछे क्षत्रिय कुलसे उपजे सब पृथ्वीनाथ यज्ञके अन्तमें अभिषिक्त धर्म्मात्मा युधिष्ठिरके सामने आकर बोले, कि हे धर्म्मज्ञ अजमीढ। आप सौभाग्य से बढ़े चढ़े हैं, साम्राज्य आपको हथेलीतले आगया। हे महाराज! इस कर्म्मसे आपने अजमीढोंका यश बढ़ाया और बड़ा धर्म्मार्ज्जन किया। हे नरव्याघ्र। हम सर्व्व कामनाओंसे सब प्रकारसे पूजे गये हैं। अब यह कहना चाहते हैं, कि सब अपने अपने राज्यको जायंगे, सो आप वह आज्ञा दें।

धर्म्मनाथ युधिष्ठिर नरेशोंको यह बात सुन उनकी यथायोग्य पूजा कर भाइयोंसे बोले, कि यह सब शत्रुदमन राजगण प्रीतिसे हमारे निकट आये थे, अब निमन्त्रणाकर अपने अपने राज्यमें जाते हैं, सो हमारे अधिकारके छोर-तक इन भूपश्रेष्ठोंके साथ जाओ। धर्म्मचारी पाण्डवगण भाईकी आज्ञा मान सब नरेशोंके पीछे यथारीति एक एककर जाने लगे। हे महाराज। प्रतापी धृष्टद्युम्न राजा विराटके, धनञ्जय महारथी महात्मा याज्ञसेनके, महाबली भीमसेन भीष्म और धृतराष्ट्रके, योधपति द्रोणाचार्य्यके, नकुल पुत्रसहित राजा सुबलके द्रौपदीके पुत्र और सुभद्रानन्दन पहाड़ी महारथियोंके और दूसरे बड़े बड़े क्षत्रियोंके साथ चले। सहस्रों ब्राह्मणभी इस प्रकार भले पूजे जाय लौट चले। सब राजों और ब्राह्मणोंके चलेजाने पर प्रतापी वासुदेव युधिष्ठिरसे यह बोले, कि हे कुरुनन्दन। सौभाग्यसे आपने यज्ञश्रेष्ठ राजसूय कर लिया, अब आज्ञा करें, मैं द्वारकाको जाऊं। जनार्द्दनकी यह बात सुनकर धर्म्मनाथ उनसे बोले, कि हे गोविन्द! केवल तुम्हारी कृपासे मैंने यह बड़ा यज्ञ लाभ किया, तुम्हारीही कृपासे सब क्षत्रिय मेरे वशीभूत हुए, और अच्छे अच्छे उपहार बटोर कर मेरी उपासना की। हे अनघ! तुम्हारे बिना मैं कदापि प्रीति पा नहीं

सकता। सो तुम्हारे जानेके विषयमें क्योंकर कुछ कहूं। पर क्या करूं, तुमको अवश्य द्वारकानगरमें जाना है। धर्म्मात्मा अति यशोवन्त श्रीकृष्ण चन्द्र ऐसा कहे जाय युधिष्ठिरके साथ पृथाके पास जाय प्रीतिसे बोले, कि हे फूफी आपके पुत्र अब सम्राज्य प्राप्तकर कृतार्थ और सम्पद्युक्त हुए हैं। अतएव आप प्रसन्न होवे और आपकी आज्ञा पानेसे मैंभी द्वारका जाऊं। अनन्तर केशवने सुभद्रा और द्रौपदीसे भी विदा-कालके योग्य सम्भाषण किया। आगे युधिष्ठिरके सहित अन्तःपुरसे निकलकर स्नान आन्हिक करके ब्राह्मणोंसे स्वस्ति कहायो। अनन्तर महाभुज दारुक बादलकी देहके समान सजा सजाया रथ जोतकर आ पहुंचा। तब महानचित्त पुण्डरीकाक्षने गरुड़ध्वज रथको आ पहुंचते देखकर परिक्रमा देके उस पर चढ़कर द्वारकाकी यात्रा की। श्रीमान धर्म्मनाथ युधिष्ठिर भाइयों सहित महाबली वासुदेवके सङ्ग पैदल चले। तब श्रीवर पद्मनेत्र हरि क्षणभर रथ ठहराय, धर्म्मनायका बोले, महाराज। सदा अप्रमत्त और उत्साही बनके प्रजा पालिये। बादल जैसे प्राणियोंके जिलानका कारण है, बड़ा वृक्ष जैसे पक्षियों का जिलानेका हेतु है और पुरन्दर जैसे अमरोंको जिलानेके उपाय हैं. वैसेही आप बान्धवोंके उपजीव्य बने हैं। श्रीकृष्ण और युधिष्ठिर परस्परसे ऐसा सम्भाषण कर एक दूसरेको विदा लेके अपने अपने भवनोंको गये। हे महाराज। यदुवर श्रीकृष्णके द्वारका जाने पर केवल राजा दुर्य्योधन और शकुनि … कुछ काल उस दिव्य सभामें रहे।

… शिशुपाल … वध प्रकरण समाप्त।

द्यूत प्रकरण।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भरतश्रेष्ठ। कुरुनन्दन दुर्य्योधनने शकुनि सहित उस सभामें टिके रहकर धीरे धीरे उसके सब भागोंको देखा। वहां उन्होंने जो सब सुन्दर बनावटकी रीति देखी, पहिले हस्तिनानगरमें कभी वैसी दीख नहीं पड़ी थी। उस महान-चित्त राजा धृतराष्ट्र-पुत्रने किसी एकदिन स्फटिकके बने स्थलभागके निकट जाय बुद्धिके मोहसे जल जान अपना चीर उतारा और उससे विमुख होनेके कारण उदास होय सभामें फिरने लगा। आगे स्फटिकके समान अमल जलभरे स्फटिकके बने फूले कमलवाले एक तालको स्थल जानके वस्त्र सहित जलमें जा गिरा। उसको जलमें गिरते देखकर नौकर चाकर बहुत हंसे और राजाकी आज्ञासे अच्छा चीर दिया। उसकी वह दशा निहारके उस समय महाबली भीमसेन अर्ज्जुन नकुल सहदेव सब हंसने लगे। रिसभरे सुयोधनसे उनकी वह हंसी सही नहीं गयी। पर बाहरी आकारको छुपायके उस काल मुह उठाय उनकी और नहीं ताका मानो यह समझके कि जलको पार करेंगे. वह फिर चीर उतारस्थल पर आया। तिस परभी सबकोई फिर हंस उठे। एक बन्द स्फटिक द्वारको निहारके खुला जानकर दुर्य्योधन ज्यों प्रवेश करनेको था, त्योंही सिरमें चोट खाय चेहरेसे झाय धो बैठा। वैसेही स्फटिकके दो बड़े बड़े किवाड़ सहित दूसरे एक खुले द्वारको बन्द जानकर दोनो हाथसे खोलते निकलकर गिर पड़ा। फिर वैसेही दूसरे एक खुले द्वारके निकट जाय पहिलेके समान बन्द जानके अन्तर में द्वारके स्थानसे लौट आया। हे महाराज। नरेश दुर्य्योधन राजसूय महायज्ञमें उसे अप्रिय सम्पद देखके और सभामें उस रूपसे बहुविध … पाय मनमें युधिष्ठिरकी आज्ञासे … हस्तिनानगरमें लौट आये।

पाण्डवोंकी लक्ष्मीको देखकर दुःखी होय चिन्तायुक्त चित्तसे जाते हुए राजा दुर्य्योधनकी बुद्धि पापसे पूरित हुई। कुरुश्रेष्ठ! महात्मा पाण्डवोंको प्रसन्न, सब भूपोंको उनके वशीभूत और बालकसे बृद्ध तक सब लोगोंको उनका हित चाहने वाले देखकर तथा उनकी परम महिमाको निहारके धृतराष्ट्रपुत्र खेदसे विवर्ण बना। मलिन मनसे जाते हुए वह धीमान धर्म्मनाथकी उस अनुपम सभा और सम्पदकी बातही सोचने लगा; यहांतक, कि वह इतना भूलासा बना, कि सुबलनन्दनके बार बार पुकारने परभी उसका कुछ उत्तर नहीं दिया। शकुनिने उसको चञ्चलचित्त देखकर पूछा, कि तुम लम्बी सांस लेते हुए क्यों जाते हो? दुर्य्योधन बोले, कि हे मामा! महात्मा अर्ज्जुनके अस्त्रके प्रतापसे जीती इस सब धरतीको युधिष्ठिरके हाथ लगते और देवलोकमें इन्द्रसे उन प्रभावी पृथापुत्रका वह यज्ञ पूरा होते देखके दुःखसे भरकर निश दिन जलनेसे मैं ग्रीष्मके अल्प जलयुक्त सरोवरके समान सूख रहा हूं। देखिये शिशुपाल जब कृष्णसे मारे गये, तब ऐसा कोईभी वहां विद्यमान नहीं था, कि उनको रक्षाके लिये सहायता करे। पाण्डवोंसे बाले अग्निसे जल जाकर राजाने वासुदेवके उस दोषको क्षमा करी थी, नहीं तो उसने जैसा अति अनुचित कार्य्य किया था क्या कोई भी उसको क्षमा कर सकता था! केवल महात्मा पाण्डुपुत्रोंके प्रभावसे वह सिद्ध हुआ था। उसका यह एक प्रमाण देख लीजिये, कि नरेशोंने बहुविध रत्न बटोर कर वैश्योंके समान करदाता बनके पृथ्वीनाथी कुन्तीपुत्रकी उपासना करी थी। मैं द्वेष करनेके योग्य तो नहीं हूं, पर तौभी युधिष्ठिरकी वैसी प्रकाशमती राजश्री देखकर द्वेषवश जल रहा हूं।

नरनाथ दुर्य्योधन उस अग्निसे जलकर यह निश्चय कर, फिर गान्धारनाथसे बोला, कि हे मामा! मुझसे जीना बन नहीं पड़ेगा, मैं अग्निमें वा जलमें पैठूगा और नहीं तो विष खाकर मर जाऊंगा। क्योंकि किस लोकमें कौन सत्त्ववान जन शत्रुकी उन्नति पर और अपनेको नीचे गिरा हुआ देखकर सह सकता है? अब पाण्डवोंको वैसे सौभाग्यमें देखकर मेरा सह लेना यह प्रगट करता है, कि मैं न तो नारी, न अनारी, न तो पुरुष न नपुंसक कुछभी नहीं हूं। क्योंकि यदि नारी होता, तो ऐसा व्यर्थ पुरुष बनके क्यों दुःख सहता, यदि नारी न होता, तो क्षत्रियकुलमें जन्म लेकर पुरुषके कार्य्यसे क्यों चूकता? यदि पुरुष होता, तो सौतकी सम्पद सहनेवाली नारीके समान सपत्नका दिया दुःख क्यों सहता? यदि नपुंसक होता तो व्यर्थ बड़ाईके अभिमानसे क्यों फूलता? सो पुरुषका अभिमान रहते भी जब उसे नहीं दिखा सकता हूं, तो कुछभी नहीं हूं, इसके बिना और क्या कहूंगा? पूरी धरतीका अधिकार, वैसा धन सम्पद और वैसा यज्ञ देखके मेरे समान कौन दुःखी न होगा? मैं अकेला वैसी राजलक्ष्मी हरनेको असमर्थ हूं, और सहायभी दीख नहीं पड़ते, सो मृत्युके सामने हूं। कुन्तीपुत्रकी महाजनसदृश वह अमल राजश्री निहार मुझे निश्चय जान पड़ता है, कि दैवही प्रधान है, पुरुषार्थ व्यर्थ है, देखिये, उसके नाशके लिये मैंने पहिले बड़ा प्रयत्न किया था, पर वह जलमें कमल समान सब पार कर बढ़ उठा है। सो मैं दैवकोही श्रेष्ठ और पुरुषार्थको व्यर्थ समझ रहा हूं। क्योंकि पुरुषार्थ पर चलनेवाले धृतराष्ट्र पुत्रगण दिन पर दिन घटते हैं और दैवका आसरा ढूढ़नेवाले पृथानन्दनगण बढ़ते जाते हैं, हे मामा! वह श्री और वैसी सभा देखकर और रखवारोंकी वह हंसी सुनके अति दुःखी

तबतो मानों अग्निसे मैं तपा जाता हूं, सो आप मुझको मरनेकी आज्ञा देवें। और मुझ पर इस विमर्षके छा जानेका हाल धृतराष्ट्रको जतावें।

छयालीस अध्याय समाप्त।

शकुनि बोले, कि दुर्य्योधन! युधिष्ठिरका द्वेष करना तुमको नहीं चाहिये, पाण्डव सदा अपना भागकी भोगते हैं। देखो, पहिले तुमने वैसे बड़े बड़े उपायोंसे बारम्बार उनको नष्ट करनेकी चेष्टा करी थी, पर वे नरव्याघ्र भागकी सहायतासेही उससे बचे हैं। हे महाराज! उन्होंने द्रौपदीकी पत्नी लाभ किया है, पुत्रोंसहित द्रुपद और वीर्य्यवन्त वासुदेवकी पृथ्वी लाभके सहाय प्राप्त किया है और पैतृक राज्यके अंशमें निराश न होकर उसे पाय अपने प्रतापसे बढ़े चढ़े हैं, भला इस पर तुम्हारे द्वेषकी क्या सम्भावना हो सकती है? अर्जुनने अग्निको प्रसन्न कर गाण्डीव शरासन, दो अक्षय तूण और दिव्य अस्त्रोंको लाभ किया है, और अपने भुजवीर्य्यके सहारे सब भूपोंको [illegible] किया है, भला उसमें तुम्हारा द्वेष क्यों [illegible] फिरभी शत्रुका दुःख देनेहारे [illegible] जलनेसे मयदानवको बचाय [illegible] उस सभाको बनवा लिया है, उस मयकी [illegible] नामक भयावने राक्षस उस [illegible] लगाया करते हैं, भला इसमे तुमको [illegible] हे भारत! तुमने जो अस- [illegible] यही वह ठीक नहीं है, क्योंकि [illegible] तुम्हारे वशमें हैं, बड़े चापधारी [illegible] इनके पुत्र, सूतपुत्र कर्ण, [illegible] पृथ्वीनाथ सोमदत्त, मैं [illegible] सब तुम्हारे सहाय हैं, इन [illegible] तुमभी सब धरतीका जय करो, [illegible] हे महाराज! आपकी [illegible]

मिलकर मैं पाण्डवोंकी जय करूंगा। इनको जय करनेसे सब पृथ्वीनाथ और बहुत धनभरी वह सभा मेरी हो जायगी। शकुनि बोला, कि धनञ्जय, वासुदेव, भीमसेन, युधिष्ठिर, नकुल, सहदेव द्रुपद, और उनके पुत्र, इनको देवताभी युद्धमें जय नहीं कर सकते. वह सब महारथी हैं, बड़े चापधारी, अस्त्रमें पण्डित और युद्धमें कठोर हैं, पर मैं जानता हूं, कि किस उपायसे युधिष्ठिर परास्त किया जा सकता है! हे महाराज! तुम उसे सुन लो और उसको मानो। दुर्य्योधन बोला, कि हे मामा! स्वजन और दूसरे महात्माओंको प्रमादसे विनाश करनेके विना यदि जय करनेका कोई उपाय हो, तो कहें। शकुनि बोला, कि कुन्तीपुत्र महाराज युधिष्ठिर खेल नहीं जानता है, पर चौपड़का बड़ा प्रेम रखता है, खेलनेके लिये बुलानेसे वह कभी मुंह नहीं मोड़ेगा। हे कुरुकुलतिलक! चौसड़में मुझे बड़ी दक्षता है, तीनों भुवन में मुझसे खेलनेमें तेज दूसरा नहीं है, सो चौसड खेलनेके लिये तुम उसको बुलवाओ। हे एसपवर महाराज दुर्य्योधन! चौसड़में मेरी जैसी चातुरी है, तिससे मैं विना सन्देह उसका राज्य और प्रज्वलित लक्ष्मीको जीत लूंगा। पर तुम राजाको यह बात जताओ, तुम्हारे पिता कहें, तो मैं अवश्यही उनको जय करूंगा। दुर्य्योधन बोला, कि हे सुबलकुमार! आप कुरुओंमें श्रेष्ठ धृतराष्ट्रसे न्यायके अनुसार कह सुनावें, मुझसे कहना नहीं बन पड़ेगा।

सैंतालीस अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि सुबलकुमार शकुनि गान्धारीपुत्रके साथ नरनाथ युधिष्ठिरके उस महायज्ञ राजसूयमें और उसके विभवमें दुर्य्योधनकी वह बातें सुनके उनका अभिप्राय जानकर प्रिय करनेकी इच्छासे [illegible]

विराजमान प्रज्ञानेत्र बड़े ज्ञानी महाराज धृतराष्ट्रके निकट जाय उसकाल यह बोला, कि हे महाराज ! दुर्य्योधन मलिन, दीन, मनहीन, पीला, दुबला बना है, सो आप उसकी ओर ध्यान करें । ज्येष्ठपुत्रका शत्रुसे उपजा असह्य चित्त-दहन शोक-कारण इनमें लाके क्यों नहीं जान लेते ? शकुनिसे इतना सुन धृतराष्ट्र दुर्य्योधनसे बोले, बेटा दुर्य्योधन ! तुम्हारा इतना कातर होनेका क्या कारण हुआ ? हे कुरुवर ! यदि वह मेरे सुनने योग्य हो, तो प्रगट करो, यह शकुनि कहते है, कि तुम ऐसे पीले दुबले बने, पर सोच समझकर मुझको तुम्हारे शोकका हेतु सूझ नहीं पड़ता, क्योंकि यह अपरिमित सम्पद सब तुम्हारेही हाथमें है, तुम्हारे भाई, मित्र कभी तुम्हारा चित्त नहीं दुखाते, तुम सुन्दरसे सुन्दर चीर पहिनते हो, अच्छेसे अच्छे पलान्न खाते हो, सुन्दर घोड़ों पर चढतेहो, फिर तुम क्यों पीले दुबले बनते हो ? हे शत्रुजित ! मूल्यवान सेज, मनहरणी रमणी नानाविध साजसे सजे गृह, मनमाने विहारस्थान यह सब देवोंकी भांति तुम्हारी बातके आगे प्रस्तुत है, तुम्हारी आज्ञा होतेही पल भरमें बने बनाये मिलते हैं, सो बेटा । ऐसी सम्पद रहतेभी तुम किस सोचमें पड़े हो ? दुर्य्योधन बोला, कि मुझको खाने पहिरनेका दुःख तो नहीं है, पर बुरे पुरुषके समान काल-परम्पराकी बाट ताक कर मैं गहरा सा गहरा दुःखभी सह रहा हूं । जो कोई शत्रुकी वृद्धिको रहनेमें अशक्त होवे शत्रुके दिये दुःखसे प्रजाको बचाय तथा उसे विपदमें डालकर विराजता है, वही पुरुष कहाता है, जो इस समझमें, कि मेरी सम्पद बहुत हुई, सन्तुष्ट रहता है वह सन्तोषही इसकी श्रीसे रार मचाता है । अभिमान, दया और भयसे आक्रान्त होकर वह कभी ऊंचे पद पर चढ़ नहीं सकता है । मैं जो कुछ भोगता हूं, युधिष्ठिरकी श्री देखकर उनसे मन हटता है, कुन्तीपुत्रकी अति चमकीली राजश्रीही हमारी श्रीका काल बनी है । इस समय मैं उसकी श्री तो नहीं देखता, पर तिस परभी वह मेरे मनमें मानो उज्ज्वल रही है । शत्रुकी वृद्धि और अपनी हीनता देखहीके मैं मलिन, दीन, पीला, दुबला बना जाता हूं । युधिष्ठिर अठासी सहस्र गृहमेधी स्नातकोंको हरेकके पीछे तीस तीस दासी लगाके पालता पोषता है ; इनके सिवाय दस दश सहस्र ब्राह्मण उसके घरमें नित्य सुवर्ण वर्त्तनमें अच्छा अन्न भोजन करते हैं । राजा काम्बोजने उसके यहां कदली ग्रामक स्मृगके काले श्यामले, उजाले खाल और मूल्यवान कम्बल भेजे थे । राजभवनमें सैकड़ों, गहनों खच्चर, घोड़े हाथी और तीस सहस्र ऊंट चरा करते है, राजा लोग उन सब उपहारोंके सहित आके एकत्रित हुए थे । पृथ्वीनाथ ! महायज्ञ राजसूयमें भूपोंने कुन्ती पुत्रके लिये भांति भांतिका बहुत धन बटोरा; वास्तवमें धीमान पाण्डुनन्दनके यज्ञमें जितने धन रत्नका ढेर लगा था, मैंने कहीं पहिले न तो उतना देखा और न सुना था । हे पृथ्वीनाथ । शत्रुका वह अनन्त धन देखके सदा चिन्तासे आक्रान्त होके मुझको सुख-चैन नहीं है । होत्रादि वृत्ति भोगनेहारे गौ युक्त, सैकड़ों ब्राह्मण तीन खर्व्वके समान उपहार लेकर रखवारोंसे रुके जाय द्वार पर खड़े थे । घृत भरे सुवर्णके कमण्डलु बलिके लिये लाके वे भीतर जा नहीं सके । देवबाला इन्द्रके लिये भी जो मधु नहीं ले जातीं, समुद्रजल सम्बन्धी वह मधु कांसेके पात्रमें भर कर युधिष्ठिरके पास ले आयी थीं । सहस्र सुवर्णसे बने बहुत रत्नोंसे सुहावने समुद्र-जलसे पूर्ण शंख और अच्छे अच्छे शंख लाके वासुदेवने उनका अभिषेक किया था । वह सब देखकर मानो मेरी देहमें ज्वर आगया था । हे पिता भरतर्षभ ! शंखा लेकर लोग पूर्व्वदक्षिण समुद्रमें जाते हैं

और पश्चिम समुद्रमें भी पधारते हैं पर खेचरी जातिके विना कोईभी उत्तरी समुद्रमें जा नही सकता. अर्जुनने वहां भी जाय अपरिमित धन बटोरा था। विशेष उस यज्ञमें औरभी आश्चर्य्य लीला देखनेमें आई। वह कहता हूं, सुनिये ऐसा संकेत निश्चय किया गया था, कि भोजनमें लगे ब्राह्मणोंकी संख्या लाख पूरीहो जाने पर एक एक वार शंख वजाया जावे। हे भारत। वारम्बार वजते हुए उस शंखकी ध्वनकों मैं सुना करता था, तिससे मेरे शरीरके रोवें खड़े हो जाते थे। महाराज! देखनेको आये वहुतेरे भूपोंके भर जानेसे वह सभा नक्षत्रमालाके समान सुहावने अमल आकाशमण्डलसी सुहासिनी वनी थी। हे जननाथ। उन धीमान पाण्डवनन्दनके यज्ञमें पृथ्वीपाल नरेशवर्ग वैश्योंकी भांति सर्व्व प्रकारके रत्नोंके साथ द्विजोंके पुरोसनेवाले वने थे। वास्तवमें जो श्री युधिष्ठिरमें विराज रही है, वह न यमराज, न इन्द्र, न ब्रह्मा, न कुवेर किसी को नहीं है! हे महाराज। पाण्डुपुत्रकी वैसी अनुपम श्री निहारके मेरा हृदय जल रहा है, मुझको किसी प्रकार चैन नहीं मिलता है। दुर्य्योधनकी इस वात पर शकुनि वोला. कि हे सत्ये पराक्रमी भारत। युधिष्ठिरकी तुमने जो वह अनुपम लक्ष्मी निहारी है, उसके पानेका उपाय मुझसे सुनलो। धरती में मेरे समान चौसड़ जाननेवाले वहुत कम हैं। मैं चौसड़में हार जीत का भेद जानता और उसके अनुसार दवो हुई वस्तुओंका ज्ञान [illegible] और देश कालादिकी विशेषता समझता हूं. युधिष्ठिरको चौसड़में प्रीति तो है पर वह खेलना नहीं जानता, चौसड़ वा [illegible] के लिये वुलाये जाने पर वह अवश्यही [illegible] मैं भी कपटछलसे उसको निश्चयही [illegible] करूंगा और उसकी वड़ी सम्पदकी [illegible] तुम उसका भोगोगे।

[illegible] शकुनिके ऐसा कहने ही राजा दुर्य्योधनने उसीघड़ी धृतराष्ट्रसे यह कहा, कि महाराज! यह चौसड़में दक्ष मामा चौसड़ खेलकर पाण्डुपुत्रोंकी सम्पत हरा चाहते है, सो आप इसमें आज्ञा देवें। धृतराष्ट्र वोले. कि वड़े वुद्धिमान विदुर मेरे मन्त्री है, उन्हीकी परामर्शसे मैं सदा वना हूं। सो उनसे मिलकर यह कार्य्य उचित है वा नहीं, इसका विचार करूंगा, क्योंकि वह वहुदर्शी पुरुष धर्म्मको सामने धर ऐसी अच्छी युक्ति कहेगा, कि जिससे दोनो ओर का मङ्गल होवे। दुर्य्योधन वोला, हे महाराज। यदि विदुर आपसे मिलके परामर्श करेंगे, तो वह मेरी इच्छासे आपका चित टाल देंगे, आप जी हटावेंगे, आप टुक भी सन्देह न कीजिये, कि मैं भी प्राण छोड़ूंगा। मेरे मरनेसे आप विदुरको सहित सुखी होंगे और पूरी धरतीको भोगेंगे, मुझसे आपको का लाभ मिलना है?

श्रीवैशम्पायनजी वोले, कि दुर्य्योधनकी वह प्रेमभरी कातर वाणीको सुनके उसकी हां में हां मिलाय धृतराष्ट्रने नौकरोंसे आज्ञा करी, कि मेरी आज्ञासे शिल्पी लोग मेरे लिये एक वड़ी विस्तृत सहस्रखम्भेवाली और सौद्वार युक्त एक मनहरणी सभा रचें और वन जाने पर तुम सव देशोंसे मणिवालोंको वुलवाय उस सभाको रत्नसे खचित करके सुखसे प्रवेश करने योग्य वनवाय मुझसे कहो। महाराज! भूपाल धृतराष्ट्रने दुर्य्योधनके चित्तमें शान्त पहुंचानेको ऐसा निश्चय कर विदुरके पास दूत भेजा: विदुरसे विना पूछे वह स्वयं किसी कार्य्यकी कर्त्तव्यता नहीं निश्चय करते थे, और यह भी जानते थे कि चौसड़में वहुत दोष है, पर पुत्रस्नेहसे आतुर थे, धीमान विदुर वह व्योरा सुन, और यह समझके कि, झगड़े का द्वार खुल गया तथा कल्याणमयकी जड़ जमगयी. धृतराष्ट्रके पास आये। वह महात्मा बड़े भ्राताके पास आय उनके चरणोंमें सिर

लुटाय यह बोले, कि महाराज! मैं आपके इस निश्चयसे सहमत नहीं हो सकता हूं। हे प्रभो! ऐसा करें, कि पुत्रोंके बीचमें बिगाड़ न होवे। धृतराष्ट्र बोले, कि हे तात! यदि देवोंकी प्रसन्नता हम पर बनी रहे, तो कभी पुत्रोंमें झगड़ा नहीं उमड़ेगा। अतएव चाहे शुभ हो वा अशुभ हो, हित हो वा अहित हो मित्रतासे चौसड़का खेल होने दो। इसमें सन्देह नहीं, कि यह दैवी कार्य्य है। हे भारत! मेरे तुम्हारे द्रोणके और भीष्मके निकट रहनेसे कभी दैवका कहा अनियम नहीं होने पावेगा; सो तुम पवन-समान तेज घोड़ेवाले रथ पर चढ़के आजही खाण्डवप्रस्थको जाके युधिष्ठिरको लेते आओ। हे विदुर! ऐसा मत कहना, कि मुझसे यह बात कही गई हैं; जिस दैवसे यह कार्य्य हो रहा है, मैं उसीको प्रधान करके मानता हूं। धृतराष्ट्रको इस बात पर विदुर यह सोचते हुए, कि अब इस कुलका अन्त हो चुका बड़े दुःखी होय विज्ञवर भीष्मके निकट गये।

अड़तालीस अध्याय समाप्त।

जनमेजय बोले, कि हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! हमारे दादे जिससे विपदमें पड़े, भाइयोंमें बड़ा अनर्थ मचाने वाला वह चौसड़ किस रीति पर हुआ था? चौसड़सभामें कौन कौन राजा उपस्थित थे? किन किनने उनको खेलनेमें बहकाया और किन किनने रोका। हे द्विजवर! मैं चाहता हूं, कि आप विस्तृत रूपसे वह कथा कहें, क्योंकि वह पृथ्वीनाशकी जड़ था। श्रीसौतिजी बोले, कि राजा जनमेजयके ऐसे पूछने पर सब वेदोंके जानकार महान चित्त श्रीव्यासजी के शिष्यने उस काल पूर्व्व कालका सब हाल कह सुनाया।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भरतश्रेष्ठ महाराज! आप सुना चाहें तो फिर विस्तार पूर्व्वक यह कथा सुनें। अम्बिका-पुत्र धृतराष्ट्र विदुरका मत जानके दुर्य्योधनसे निरालेमें फिर यह बोले, कि बेटा! चौसड़ खेलनेका प्रयोजन नहीं है, क्योंकि विदुरने इसकी प्रशंसा नहीं करी, यह बुद्धिमान पुरुष कभी हमारी अहित की बात नहीं कहता। विदुर जो कुछ कहते हैं, मैं उसे परम हित समझता हूं, सो बेटा! तुम उन्हीका कहना मानो क्योंकि वही तुम्हारे हितकारी हैं। अमरोंके गुरु देवर्षि उदार बुद्धिमान भगवान बृहस्पतिजीने धीमान देवनाथको जो जो शास्त्र सुनाये थे महाकवि विदुर भेदसहित वह सब जानते हैं। हे बेटा! मैभी उन्हीको परामर्शसे सदा कार्य्य किया करता हूं। हे नरनाथ! अति बुद्धिमान उद्धवजी जैसे वृष्णियोंमें प्रशंसित हैं, तैसेही मेधायुक्त विदुर कुरुओंमें प्रधान गिने जाते हैं, सो बेटा! जब वह असम्मत हैं, तो फिर चौसड़ मत खेलो। चौसड़से मित्रोंमें बिगाड़ होना दीख पड़ता और मित्रोंमें बिगाड़ होनेसे राज्य जात रहता है, सो तुम यह इच्छा त्याग दो। पु[illegible] पर पिता माताका जो कर्त्तव्य सुना गया है उसीके अनुसार पितरोंके राज्यमें तुम बैठे हो लिखे पढ़े हो, शास्त्रमें दक्ष भये हो, और गृहमें सदा पाले पोषे जाते हो। हे महाराज तुम भाइयोंमें ज्येष्ठ होकर राज्यमें बैठे कौनसा सुन्दर पदार्थ नहीं प्राप्त करते हो। जो भोज[illegible] और साधारणके लिये दुर्लभ है तुम वह पा[illegible] हो, बड़ाभारी पैतृक राज्य तुमसे और [illegible] है और सदा आज्ञा प्रचार कर स्वर्गमें विराजमान देवनाथके समान शोभा पाते हो, इस पर भी क्यों शोक करते हो? बेटा! तु[म] अज्ञान नहीं हो, जानने योग्य सब कुछ जान[ते] हो, फिर भला कहो तो सही, इस दुःखदाय[ी] शोकने क्यों तुमको घेर लिया?

दुर्य्योधन बोला, कि हे महाराज! मैं बड़ा पापी हूं, इसीसे शत्रुकी उन्नति देखने परभ[ी]

खान पान कर रहा हूं। शत्रुकी उन्नति देखनेसे जिसको क्रोध नहीं उमड़ता, पण्डित लोग उसे नीच पुरुष कहते हैं। हे प्रभो! यह साधारण लक्ष्मी मुझे प्रीति नहीं देती, कुन्ती-पुत्रके राजलक्ष्मी विराजती है और पूरी धरतीको उसके पाव पर लोटती देखकर मैं गहरे दुखसे घेरा गया हूं, अधिक क्या कहूं, मेरा हृदय बड़ा कठोर है, इसीसे इतने दुःख परभी जीता हूं। नीच, चितक, कौकुर कारूषर और लौह जघगण युधिष्ठिरभवनमें दासों की भांति सिर नवाये रहते हैं धरतीके मध्यभागस्थित हिमालय, समुद्र, जलप्राय देश आदि सब रत्नाकर युधिष्ठिरसे परास्त हुए हैं। हे पृथ्वीनाथ! युधिष्ठिरने मुझको ज्येष्ठ और श्रेष्ठ जानके सत्कारसहित रत्न बटोरनेमें नियुक्त किया था। वहां जितने रत्नसे बने बनाये अच्छेसे अच्छे पदार्थ आये थे उनका परिमाण नहीं मिलता था। हे भारत! उस धनके लेते मेरे हाथ थक गये थे, मेरे थकने पर उपहार बटोरनेवाले उपहार बटोरनेको मेरी प्रतीक्षामें खड़े रहते थे। मयदानवने विन्दु सरोवरके आस पाससे रत्न लाके वहां जा एक स्फाटिक पद्मवाला कुण्डस [illegible] रचा था, उसको मैंने जलभरा सच्चे सरोवरके समान देखा था, उस भ्रमसे ज्योंही मैंने वस्त्र उतारा त्योंही वृकोदर मुझको शत्रुकी [illegible] माहत और रत्नवर्ज्जित मानस हंस [illegible]। हे नरनाथ! यदि बन पड़ता तो मैं [illegible] उसका बदला लेनेके लिये इसे [illegible] मारूंगा, पर यदि उसे मारनेका [illegible] दिखाऊं तो निःसन्देह हमारी भी शिशु-[illegible] समान गति होगी। हे भारत! सपत्नकी [illegible] मुझको जला रही है। और [illegible] सरोवर के समान [illegible] एक सच्चे [illegible] समान जानके जलमें गिर गया [illegible] पर [illegible] सामने [illegible] [illegible] और द्रौपदी भी स्त्रियोंके सहित मेरा हृदय काटती हुई हंसी थी। मेरा चीर भीगने पर नौकरोंने राजा की आज्ञासे दूसरा चीर लादिया था, वह भी मेरे लिये गहरा दुःख हुआ। हे नाथ! और भी एक ठगनेकी बात कहता हूं, सुनिये! ऐसा एक स्थान बना है, कि ठीक द्वारके समान दीख पड़ता है, पर वास्तवमें द्वार नहीं है, उससे ज्यों निकलने पर था, त्योंही सिरमें बड़ी चोट आयी। तब नकुल सहदेव दोनोंने दूरसे मुझको घायल देख कर दुःख दिखाय भुजोंसे मुझे थाम लिया, पर उस दशामें सहदेवने मानो मुसकिराते हुए कहा था, कि महाराज! यह द्वार नहीं है, इधरसे जाइये। महाराज! भीमसेनने उस दशामें बड़े जोरसे हंस कर मुझे ऐसे पुकार कहा था, कि "अजी धृतराष्ट्र-पुत्र!" द्वार इधर है। इनके अतिरिक्त मेरे और भी दुःखका हेतु यह है, कि पहिले जिन सब रत्नोंका नाम तक नहीं सुना था, वे उस सभामें दीख पड़े।

उनचास अध्याय समाप्त।

दुर्य्योधन बोला, हे भारत! भूपालोंने नाना ठौरसे जो सब धन एकत्रित किया था और मैंने अपनी आंखोंसे देखा था उसकी बात सुनिये। महाराज! शत्रुका वह धन देखकर मेरा बुद्धि जाता रहा और मैं अपने को भूल गया, अब वह सुनिये कि किस देशसे कितना धन आया था। राजा काम्बोजने भेड़ मूष [illegible] सुवर्ण जालसे मढ़े अगणित अच्छे अच्छे दुपट्टे और छाल, तीतर पक्षीके समान चितकबरे तथा शुकवर्ण नाक वाले तीनसौ घोड़े और [illegible] तथा [illegible] गुट [illegible] साड़नी दी थी। हे महाराज! [illegible] और शूद्र [illegible] उपहार [illegible] [illegible]

चेत्रादि वृत्ति भोगनेहारे गौयुक्त सैकड़ो ब्राह्मण घृत-भरे सुवर्ण कमण्डलका उपहार लाके भीतर घुस नहीं सकें। समुद्रतटके शूद्रगण कार्पासिककी रहनेवाली श्यामली दुबली लम्बे बालवाली सुवर्ण अलङ्कारोंसे सजी सैकड़ो दासी, ब्राह्मणोंके योग्य अच्छे राङ्कव और मृगछाल तथा गान्धार-देशी घोड़े यह सब उपहार बटोरके बटर आये थे। सिन्धुपार और समुद्र तटके रह और पलवाड़ियोंमें उपजे जो मनुष्य देवमातृक और नदीमातृक धान्यसे जीविका कर लेते हैं, वे वैराम, पारद, आभीर और कितवगण बहुविध रत्न,सुवर्ण, बकरे, भेड़, गौ, ऊंट आदि पशु, फलसे उपजे मधु और भांति भांतिके कम्बलका उपहार लेकर सभामें जानेसे रोके जाय द्वार पर खड़े थे। प्राग्ज्यो-तिषनाथ म्लेच्छोंके स्वामी शूर बली महारथी राजा भगदत्त यवनों सहित वायुसे वेगवान तेज-चलनेवाले सुजात घोड़े और दूसरे उपहार लेकर सभामें न जाने पाय द्वार पर खड़ा था। तब वह प्राग्ज्योतिषनाथ भगदत्त बड़े मूल्यवान मणिका बना आभूषण और अमल गजदन्तकी मूठवाले खड्ग देकर चलने पर हुआ। इनके अतिरिक्त मैंने वहां अनेक देशोंसे आये दोनेत्र ललार-नेत्र औष्णिक, अन्तवासी रोम देशी नर भक्षी और एक पाव वालोंको द्वार पर रोके जाते देखा था। करदेनेको आये भूप वह्न तीरसे उपजे, अनेक जातिके, बड़े बड़े शरीर धारी काले गलेवाले, दूर जाने वाले, भले सिखाये पढ़ाये सब दिशाओंमे प्रख्यात, यथा प्रमाण और मनहरण वरण धारण किये दश सहस्र रासभ और अनेक सोना चांदीका उपहार ले आये थे, और वह सब देके युधिष्ठिरके यहां जा सके थे। एक पाव वाले इन्द्रगोप कीटके समान लाल शुक्ल,सन्ध्याके समय उगे बादल वरण इन्द्र-धनुषके समान शवल वरण, ऐसे नाना वर्णवाले मनकी भांति तेज चलने घोड़े और बहुमूल्य सुवर्ण लाकर युधिष्ठिरको दिया था। चीन शक ओड्र, वर्वर, वनवासी वृष्णिवंशी, हारहूण कृष्णहिमाचल-वासी, नीप, अनूप आदि बहुविध लोग उनको भांति भांतिकी अपरिमित वस्तु उपहारके लिये देनेको आके द्वार पर रोके गये। वङ्गतटवासी काले गलेवाले बड़े देह वाले सौकोस दौड़नेवाले यथा प्रमाण वर्णवाले और छूनेमें कोमल दशो दिसामें प्रसिद्ध, भले सिखाये पढ़ाये खच्चर उनके सदृश बने राङ्कव कीटज पट्टज आदि विनक-पासका बना चमकीला लच्छेदार पट्टसे सहसों चीर भेड़ोंकी कोमल छाल, बड़े बड़े तेज खड्ग, ऋष्टिक और परश्वध पश्चिम देशमें उपजे नोंख-दार परशु, भांति भांतिकी गन्धरस और सहस्रो रत्नादि सहित सब उपहार लेके द्वार पर खड़े थे। शक, तुखार कङ्क, रोमश और शृङ्गीलोग दूर चलनेहारे अगणित बड़े, बड़े गज, दश करोड़ पद्म सुवर्णादिका उपहार लाके द्वार पर रोके गये। पूर्वदेशी नरेश बड़े मूल्यवान आसन बिछौना यान मणि काञ्चनसे बने सुन्दर कवच, भांति भांतिके शस्त्र, सुवर्ण बाघ छालसे ढंपे भले सिखाये घोड़े सहित अनेक आकारके रथ, सुन्दर सुन्दर गज, कम्बल, अनेक भांतिके रत्न, नाराच अर्द्ध नाराच आदि बहुविध शस्त्र यह सब बड़ी बड़ी वस्तु देने परभी महात्मा युधिष्ठिरके यज्ञभवनमें जा नहीं सके।

पचास अध्याय-समाप्त।

दुर्योधन बोला, कि हे अनघ! भूपालोंने यज्ञके लिये युधिष्ठिरको जो अपरिमित धन दिया था,उन अनेक प्रकारके उपहारोंको देनेकी कथा कहता हूं, सुनिये। जो सुमेरु और मन्दर गिरिवरोंके बीचमें स्थित शैलोदा नाम्नी नदीकी दोनों ओर कीचक नामक छिद्रवाले बांसकी सुन्दपर छाहमें बैठे सुख भोगते हैं, वह खस, एकासन, अर्ह प्रदर, दीर्घवेणु, पारद, कुलिन्द, तङ्गन, और परतङ्गन भूपवर्ग चिउंटियोंसे हटाये

पिपीलिक नामका द्रोण-समान सुवर्णका ढेर लाये थे। महाबली पहाड़ीगण मनहरण कालेवरण और चन्द्रमा समान शुक्लवरण चँवर, हिमाचलके फूलोंसे उपजे बहुत स्वादिष्ट मधु, उत्तर कुरुसे जल सहित माला, उत्तर कैलाससे औषधि और दूसरे सब उपहार बटोरके सिर-नाय कर खड़े होके नरेश युधिष्ठिरके द्वार पर रोके गये थे। हे प्रभो! हिमाचलके आधे भागमें सूर्य्योदय शिखर पर, करुष देशीय समुद्र के छोरमें और लौहित्य पर्व्वतकी दोनो ओर रहनेवाले सूपवर्ग और फलमूलाहारी चमड़ा परिधायी कुटिल शस्त्रधारी, कुटिल कार्य्यकारी किरातोंकोभी मैंने वहां देखा था। महाराज! [illegible] पर चन्दन, अगुरु, ढेरके ढेर चर्म्म-रत्न सुवर्ण और गन्धके पदार्थ, किरात जातिकी [illegible] दासी और दूरदेशी सुन्दर सुन्दर मृग तथा पक्षी बटोर बटोरके और पहाड़ [illegible] से एकत्रित किये बहुत तेजयुक्त [illegible] और दूसरे उपहार लेके द्वार पर रोके गये थे। हे पृथ्वीनाथ! कैरात, दरद, [illegible], शूर वैयामिक, औदुम्बर, दुर्व्विभाग, [illegible] कास्मीर कुमार, घोरक, हंस-[illegible], शिबि त्रिगर्त्त, यौधेय, मद्र, कैकय, [illegible], तार्क्ष्य, [illegible], पह्लव, वशष्टि, [illegible] मालव, पौण्ड्रिक, कुक्कुर शक, [illegible] शाणावत्य, और गय यह सुजाति [illegible] और शस्त्रधारी क्षत्रियगण [illegible] लिये सैकड़ों मुद्रा लाये थे। हे [illegible], कलिङ्ग, मगध, ताम्रलिप्त, पुण्ड्रक, [illegible] पक्षीर्ण, शैशव और बहुतेरे [illegible] सभी राजशासन अनुसार [illegible] किये गये, कि आप कालकी [illegible] और सुन्दर उपहार [illegible] भीतर जा सकेंगे। [illegible] सरोवरकी दोनो ओर [illegible] दानदार सुन्दर

[illegible]-वाले कुथसे आच्छादित होनेके कारण मानो पद्म समान वर्ण वाले पहाड़ सदृश सदा उन्मत्त कवच लगाये, धीरज धरे अच्छे अच्छे कुलोंके दशसौ हस्ती देकर द्वारमें घुस सके थे। नाना दिशा तथा देशोंसे आये यह सब और दूसरे अगणित मनुष्य तथा महात्मा रत्नसे बनी वस्तु लाये थे। हे कुरुनन्दन! महाराज! इन्द्रके साथी चित्ररथ नामक गन्धर्व्वनाथने पवनके आगे चलनेवाले चारसौ घोड़े दिये थे। गन्धर्व्व तुम्बरुने प्रसन्न चित्तसे आमके पत्तेके-रंगके सुवर्ण सदृश चमकीले सौ घोड़े दिये। शूकर नामक म्लेच्छोंके सुयोग्य भूपने सैकड़ों गज दिये। मत्स्यनाथ विराटने उपहारके लिये दो सहस सुवर्ण-वरण हस्ती बटोरे थे। हे नरनाथ! राजा वसुदानने पांशु राज्यसे छब्बीस हाथी वेग और सत्ववान युवा दो सहस्र सुवर्ण समान चमकीले घोड़े तथा दूसरे उपहार लाके पाण्डवोंको दिया था। हे महाराज! राजा यज्ञसेनने चौदह सहस्र दासी स्त्री सहित दश सहस्र दास सैकड़ों गज, गज सहित छब्बीस रथ, यहां तक, कि अपना सब राज्य पाण्डवोंकी सेवामें धर दिया था। वृष्णि-नन्दन वासुदेव भी अर्ज्जुनका मान बढ़ानेको चौदह सहस्र अच्छे हस्ती दिये, क्योंकि कृष्ण धनञ्जयकी और धनञ्जय कृष्णकी आत्मा है। अर्ज्जुन कृष्णको जो कुछ [illegible] न कहें वह सब विना शङ्का पूरा कर सकते हैं, यहां तक, कि वह धनञ्जयके लिये स्वर्गलोककोभी छोड़ सकते हैं और अर्ज्जुनभी कृष्णके लिये प्राण तक सौंप सकते हैं। [illegible]नाथ और पाण्ड्य-नाथ मलयागिरिसे सुवर्णके घड़े भर भरके [illegible] चन्दन-रस, दर्दुर पर्व्वतसे [illegible] पर चन्दन अगुरुका ढेर, चमकीले [illegible] और सुवर्ण समान सुहावने [illegible] और [illegible] [illegible] द्वार नहीं पा सके। [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible]

लक्ष्ये तथा सैकड़ों गज और कम्बलको भेट दीथी। लाल अपाङ्ग तथा श्याम अङ्गवाले, मनुष्य मणिके टुकड़ोंसे सजे चादरा लाके द्वारपर खड़े थे। युधिष्ठिरकी प्रीतिके लिये ब्राह्मण, अजेय क्षत्रिय, वैश्यवर्ग और शूद्रोंनेभी भेंट दी थी। प्रीति और बड़े मानसे म्लेच्छभी युधिष्ठिरके भवनमें गये थे। इस प्रकार उत्तम मध्यम और अधम सब भांतिके कुलोंसे उपजे सब वर्णही वहां आजमे थे। नाना देशोंसे नाना जातिके लोगोंके बटुरनेके कारण जान पड़ता था कि मानो युधिष्ठिरके भवनमें भूमण्डल भरके लोग एकत्र आ मिले हैं। भूपवर्गको भांति भांतिका अपरिमित धन देते देखकर दुःखके मारे मुझसें मृत्यु की इच्छा हुई थी। हे महाराज। पाण्डवोंके जितने नौकर चाकर हैं और जिनके युधिष्ठिर कच्ची पक्की खिलाते हैं उनकी बात कहता हूं, सुनिये तीन पद्म अयुत फीलवान और घुड़-सवार सेना एक अर्व्बुद रथारूढ़ और अगणित पैदल हैं। कहीं कच्ची भोजन-सामग्री तौली जाती हैं और पुण्य धुन सुन पड़ती है। वास्तवमें मैंने युधिष्ठिरके भवनमें सर्व्व वर्णोंमेंसे किसीको विन खाया विन पीया, विन सत्कृत नहीं पाया। ठासी सहस्र गृहमेधी स्नातक विप्रोंकी हरेकके पीछे तीस तीस दासी नियत कर युधिष्ठिर पाल पोष रहे हैं। और वे भी सुप्रसन्न और सुतृप्त होय उनके शत्रु-नाशकी कामना कर रहे हैं इनके अतिरिक्त युधिष्ठिर भवनमें दश सहस्र ऊर्द्धरेता यतिलोग सुवर्ण पात्रमें भोजन करते हैं। हे पृथ्वीनाथ। कुवड़े बावने तकको भोजन मिला वा नहीं इसको खोजके लिये द्रौपदी स्वयं भूखी रह वार पूछ पाछ करती फिरती है, हे भारत! विवाहसम्बन्धसे पाञ्चाल लोग और मित्रता से अन्धक तथा वृष्णिगण केवल यह दो कुन्ति पुत्रको कर नहीं देते नहीं तो और सब उनके कर-दाता बने हैं।

एकावन अध्याय समाप्त।

दुर्य्योधन बोला, कि जो सब महानचित्त महाराज सत्यप्रेमी अतिव्रतक्षेमी, महाविद्यावान अच्छे वाक्यवान, वेदान्त और यज्ञोंमें दक्ष, धृति-रक्ष, लज्जाशील धार्म्मिक तथा यशोवन्त हैं, वे मूर्द्धाभिषिक्त राजालोग भी सब प्रकारसे युधिष्ठिरकी उपासना करते हैं। दक्षिणाके लिये राजोंसे लाये कांसके बने एक एक दोहनेके पात्र सहित बहुतेरो गाय ठौर ठौर देखी। हे भारत! अभिषेकके लिये नरेशवर्ग वहां घबराके मनसे नाना भांतिके माण्ड सत्कार सहित स्वयं उठाय उठाय ले आये। राजा बाह्लीक काञ्चन जटित रथ लाये। राजा सुदक्षिणने उसमें काम्बोजसे उपजे सादे चार घोड़े जोत दिये। महाबली सुनीथ प्रसन्न होय अनुकर्षण अर्थात नीचे कि लकड़ी और चेदिनाथ स्वयं उठाय ध्वजा लाये। राजा दाक्षिणात्य कवच, राजा मगध माला और पगड़ी, बड़े चापधारी वसुदान साठ् वर्ष अवस्थाके गजेन्द्र, मत्स्यनाथ सुवर्णसे आच्छादित अश्व, एकलव्य दोनों जूते, अवन्तीनाथ अभिषेकके लिये बहुविध जल, चेकितान तून, काशीनाथ धनुष और शाल्य सिद्ध-मुत काञ्चन-भूषित मुष्टियुक्त असि उठा लाये, अनन्तर बड़े तपधारी धौम्य और व्यासजी नारद, देवल और असित मुनियोंको आगे रख अभिषेकका कार्य्य करने लगे। महर्षि लोग प्रसन्न मनसे अभिषेकके निकट बैठे। जामदग्न्य सहित दूसरे वेदपारग महात्माभी ऐसे मन्त्र उचारते हुए बहुत दक्षिणादाता युधिष्ठिरके निकट गये, कि जैसे देवलोकमें सप्तर्षिगण देवराज इन्द्रके पास जाते हैं। उस कालमें सच्चे पराक्रमी सात्यकिने उनके सिर पर छत्र

समाया। धनञ्जय और भीमसेन पंखे डोलाने लगे और नकुल सहदेव श्वेत चंवर झालने लगे। जिस शङ्खको पूर्व्व कल्पमें प्रजापति जीने इन्द्रको दिया था, उस विश्वकर्म्मासे सहस्र निष्कोंसे भले बने वरुण सम्बन्धी शंखको शिक्यके ऊपर धरके समुद्र युधिष्ठिरके लिये लाया था। उस शंखसे कृष्णको उन्हें अभिषिक्त करते देखकर मैं मोहसे आक्रान्त हुआ। हे पिता! लोग पूर्व्वसे पश्चिम समुद्रको जाते और दक्षिण समुद्रको भी पधारते हैं पर उत्तरो समुद्रमें खेचरी जातिके बिना कोई भी जा नहीं सकता। पाण्डवोंने इस स्थानमें भी शासन फैलाया है। उसके सैकड़ों शङ्ख मङ्गलके लिये बजने लगे। उन सबोंके एकही कालमें बजनेसे बड़ा शब्द हुआ, जिससे मेरी सब देहके रोंवे खड़े हो गये। वे भूप जिनको अपना कुछ भी तेज नहीं है, उस शब्दसे धरती पर लोट गये। तब बल-युक्त वीर्य्यवान एक दूसरेको प्यारे देखने-वाले धृष्टद्युम्न, पाचो पाण्डव सात्यकि और कृष्ण वह आठ उन भूपोंको चेत खोते और मुझको आंखें हाथ धोते देखकर बहुत हंसने लगे।

हे भारत! अनन्तर अर्जुनने प्रसन्न मनसे ब्राह्मणोंको सुवर्ण सिंग वाले पाच सौ बैल दिये। वास्तवमें प्रभावी कुरुनन्दन राजा युधिष्ठिर हरिश्चन्द्रकी भांति इस प्रकार राज-सूय याग कर जैसे परम श्रीमान बने, न रन्तिदेव न नाभाग न यौवनाश्व, न मनु, न वेणपुत्र राजा पृथु, न भगीरथ, न ययाति, न नहुष कोई भी वैसे नहीं होसके। हे विभो राजन्! हरिश्चन्द्रके समान पृथा कुमारकी लक्ष्मी देखकर मेरा जीना क्योंकर मङ्गलदायी बन रहा है? हे नरनाथ! अन्धेके हर जुये किसी बैल जोतनेके बल जैसे जिधर जाते हैं उसी प्रकार हमलोगोंके विधाताने अन्धे जनके समान इधर ओछे और कनिष्ठका उलटा बना रक्खा है, देखो कनिष्ठकी दिन पर दिन

वृद्धि हो रही है और ज्येष्ठ निकृष्ट बने जाते हैं। हे कुरुवर! यह देखकर सब प्रकारसे आलोचना करने पर मुझको सुख नहीं मिलता है, इसीसे ऐसा दुबला, मैला और शोकसे बावला बना जाता हूं।

बावन अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, कि ऐ बेटा! तुम मेरे सब बेटोंसे बड़े हो और बड़ी राणीके गर्भसे हो, सो पाण्डवोंका द्वेष मत करो, क्योंकि द्वेषीको इतना कष्ट होता है, कि मृत्युके कष्टसे कुछ भी विशेषता नहीं रहता। हे भरतश्रेष्ठ! युधिष्ठिर कपट करना नहीं जानता, तुम्हारे समान धन रखता और तुल्य मित्रोंसे घेरा जाता है; विशेष किसीका द्वेष नहीं करता, सो तुम्हारे समान जनको कब उसका द्वेष करना उचित है? ऐ बेटा! युधिष्ठिरके जितने अनुचर और वीर्य्य है, तुम्हारे भी इतने हैं, फिर तुम क्यों भाईकी लक्ष्मी हरनेको मन दौड़ा रहे हो? इतने लोभी मत बनो, मान जाओ, शोक न करो। पर यदि वैसी सम्पद चाहते हो, तो पुरोहित लोग सप्ततन्तु, नामक महायज्ञ करें। भूपवर्ग बड़े मानसे तुम्हारे लिये भी प्रीति सहित बहुत धन और रत्न आभूषण ले आवेंगे। ऐ बेटा! पराये धनको ओर हाथ बढ़ाना बड़े नीचका कार्य्य है, जो अपने धर्म्ममें बने रहके अपनेही धनसे प्रसन्न रहते हैं वेही सुख पाते हैं। पराये धन पानेकी चेष्टा न करना अपने कर्म्मका सदा उद्यम करना, और प्राप्त धनको बचाना यही कल्याणके लक्षण हैं। विपदके कालमें न घबराकर, काममें लगा रहना, सदा उद्यमी बनना, अप्रमत्त और नम्रचित्त होनाही सदा लोगोंका कल्याण-मूल है। देखो, पाण्डुपुत्र तुम्हारे भुजस्वरूप हैं, सो उनको मत काटो, और भाइयोंके इस धनके लिये मित्र-बिगाड़न

मत फंसो। हे महाराज! पाण्डुके बेटोंका कभी द्वेष मत करो, तुम्हारे भाइयोंका जितना धन है तुम्हाराभी उतनाही है। बेटा! मित्र बिगाड़से बड़ा अमङ्गल होता है; देखो जो तुम्हारे दादे हैं वही उनके भी दादे हैं। हे भरतवर! तुम्हारा चित्त बहुत बिगड़ा हो, तो यज्ञमें धन दान, प्रेमभरी कामनाओंका अनुभव और शङ्का छोड़के कामिनियोंके साथ विहार कर शान्ति होओ।

तिरपन अध्याय समाप्त।

दुर्योधन बोला, कलछुल जैसे दाल रस चख नहीं सकती, वैसेही जिसने बहुतसे विषयों-को सुनाहै, पर कुछभी धी-शक्ति नहीं रखता, वह कभी शास्त्रार्थ समझ नहीं सकता, पर आप समझ बूझकेभी एक जोंकसे जुड़े दूसरे जोंकके समान मुझको भ्रममें डाल रहे हैं; अथवा स्वार्थ पर आपकी दृष्टि नहीं है, या मेरा द्वेष कर रहे हैं? वास्तवमें आपके शासनसे चलनेसे तो इन धृतराष्ट्रपुत्रोंका हो चुका, क्योंकि आप चौसडसे शत्रुका धन लेनेके समान उपस्थित कार्य्यको भावी अर्थात् यज्ञकालिक निश्चय करते हैं। जिसका बाट दिखाने वाला परायी शिक्षासे चलता है उसका बाट खोना बहुत सहज है, वैसे नायकसे चलाये जानेवाले क्योंकर सच्ची वाटसे चल सकते हैं? महाराज! आपकी बुद्धि पक्की होगयी, आपने बड़ोंकी सेवा की और इन्द्रियोंको जीत चुके हैं, फिर हमको स्वकार्य्य साधन करनेसे क्यों वारम्वार हटाते हैं? देखिये, वृहस्पतिजीने कहा है, कि लौकिक व्यवहारसे राज्य-व्यवहार अलग है; सो राजाको अप्रमत्त वन सदा स्वार्थकी चिन्तामें मगन रहना चाहिये। महाराज! क्षत्रियका व्योपार जयही पर बना है; सो चाहे वह धर्म्म वा अधर्म्म हो, अवश्य ही करना चाहिये। जिससे अपनी वृद्धि निश्चित है, उसका फिर क्या विचार करना है? हे भरतश्रेष्ठ! सारथि जैसे लकड़ीसे घोड़ोंको वशमें लाताहै, वैसे शत्रुकी प्रज्वलित श्री हरनेकी इच्छा रखनेवाले क्षत्रियोंको वशमें करना चाहिये। चाहे गुप्त हो वा प्रकटित हो जिस किसी उपायसे शत्रु वशमें आजाय उसीको शास्त्रोंके जानकारोंको शस्त्र कहते सुना है, जिससे काटा जाता है वह शस्त्र नहीं है। हे नरनाथ! इसकी कोई लिखापढ़ी वा प्रमाण नहीं है, कि कौन शत्रु वा मित्र है। जो जिसको दुःख पहुंचाता है, वही उसका शत्रु कहा जाता है। हे महाराज! असन्तोषही सम्पदकी जड़ है, सो मैं उसकी प्रशंसा कर रहा हूं। पूरी उन्नतिका प्रयत्न करता है वही अ[illegible] नियमका जानकार है। सम्पद वा धनका म[illegible] करना उचित नहीं है; क्योंकि पहिले बटोरा धन किसीसे हराभी जा सकता है [illegible] कि बलसे हर लेनाही राजाका धर्म्म क[illegible] गया है। देवराज इन्द्रने द्रोह न करनेका [illegible] ठानने परभी नमुचिका सिर काटा था। श[illegible] ऐसा सनातन व्यवहार करनेमें उनकी सम[illegible] थी, इसीसे उन्होंने ऐसा किया था। सर्प [illegible] गड्ढेमें पड़े मेढक आदि जन्तुओंको निग[illegible] जाता है, वैसे विरोध न करनेवाले राजा औ[illegible] गृह न छोड़नेवाले सन्न्यासीको धरती निग[illegible] जाती है। हे पृथ्वीनाथ! एरूपका स्वभाव[illegible] बना एकभी शत्रु नहीं है; जिसके साथ तु[illegible] व्योपार रहता है, वही शत्रु है, दूसरा न[illegible] बढ़ते हुए शत्रुका जो मोह वा उपेक्षा कर[illegible] है, क्रमसे बढ़ती हुई व्याधिके समान वह श[illegible] ही उसकी जड़को काट देता है। वृक्ष[illegible] जड़से उपजी दीवक जैसे विना विलम्ब उस[illegible] मार डालती है, वैसे छोटा शत्रुभी पराक्रम[illegible] बढ़ता जाय; तो इसरे पक्षको शीघ्रही नष्ट [illegible] देता है। हे अजमीढ! शत्रुकी लक्ष्मी आप[illegible] प्रीति न दे; देखिये, सत्यवान मनुष्यकी निय[illegible] रूप भार सिर पर चढ़ाना चाहिये।

...आदि श्रीवद्धिकी, स्वाभाविक वृद्धिके समान अर्थकी उन्नति चाहता है, वह विना सन्देह ... हानियोंमें पड़ा करता है। वास्तवमें विक्रमही शीघ्र बढ़नेका हेतु है। वास्तवमें सम्पद विना हाथ लगे मैं फिर सुखसे सो नहीं सकूंगा। मैं चाहे उस श्रीको लाभ करूंगा, और नहीं तो युद्धमें ... जाऊंगा। हे महाराज! हमारी उन्नतिका निश्चय नहीं, पर पाण्डव सदा बढ़े जाते हैं, सो ऐसी दशामें मेरे जीनेका क्या प्रयोजन है?

चौवन अध्याय समाप्त।

शकुनि बोला, कि हे जयी-शिरोमणि दुर्योधन! पाण्डुपुत्र युधिष्ठिरकी जिस लक्ष्मीको देखकर तुम दुःख करते हो, मैं चौसड़से उसे हर लूंगा। हे महाराज! उनको बुलवाओ। देखो, जाननेवाले चौसड़ द्वारा चढ़के न जानने-वालोंको परास्त करते हैं। हे भारत! बाजी मेरा चाप है, अक्ष बाण हैं, अक्षोंका भीतरी भाग गुण है और कपट चाल मेरा रथ है। दुर्योधन बोला, कि महाराज! यह चौसड़की ... मामा चौसड़ खेलके, पाण्डवोंकी राज-... हरनेका उत्साह करते हैं, सो आप उसकी आज्ञा दीजिये। धृतराष्ट्र बोले, कि मैं महात्मा भ्राता विदुरके शासनसे वना हूं, सो उससे ... यह कार्य्य उचित है वा नहीं उसका ... करूंगा। दुर्योधन बोला, कि हे ...! विदुर पाण्डवोंका हित जितना ढूंढते ... हमारा वैसा नहीं करते, सो वह विना ... हम कार्य्यसे आपकी बुद्धि टाल देंगे। ... पराये बुद्धिबल लेके पुरुषको ... नहीं करना चाहिये, क्योंकि कार्य्य-... दोका मत एक नहीं होता। ... मनुष्य ... भयानक कार्य्योंकी ... कर ... युक्त कीटके ... रहा रहके ... जाता है।

मनुष्यके मङ्गलके लिये व्याधिभी बाट नहीं निहारती और यमराजभी आसरा नहीं जोहते हैं। जब तक व्याधि नहीं है, तबतक मङ्गल पानेकी चेष्टा करनी चाहिये। धृतराष्ट्र बोले, कि ऐ बेटा! बलियोंसे झगड़ेमें हाथ डालनेकी इच्छा कदापि मुझे प्रिय नहीं है। देखो, शत्रुता विकार लाती है, और वही विना लोहेका बना शस्त्र बन जाता है। हे राजकुमार! झगड़ा उपजानेवाले भयावने चौसड़ रूपी अनर्थको तुम अर्थ समझ रहे हो, किसी प्रकार एक वार उसमें फसनेसेही तेज असि और सायक रचे जाते हैं। दुर्य्योधन बोला, कि पूर्व्वकालवाले चौसड़की रीति बना गये हैं, उसमें नतो सत्या-नाश और न युद्ध-लीला होती है, सो अब शकुनिकी बात पर जी जमाय आप शीघ्र सभा रचनेकी आज्ञा करें। देखिये, चौसड़में फंसनेसे हमारे शत्रु हरानेरूपी स्वर्गके द्वार खुल जायेंगे। वास्तवमें, उसके करनेवालोंके लिये उस प्रकार सहजमें हाथ लगनेवाला स्वर्गही योग्य है। ऐसा होनेसे आपसे पाण्डवों-कोभी तुल्यता होगी, सो आप उनसे चौसड़का प्रबन्ध कीजिये। धृतराष्ट्र बोले, कि तुमने जो कहा, उस पर मेरा मन नहीं चलता है। हे नरनाथ! जो तुम चाहो, सोही करो, पर उस रीति पर कार्य्य करके पीछे पछताओगे। क्योंकि ऐसी अधर्म्मयुक्त बात कभी हित नहीं कर सकती। बुद्धि-विद्यासे चलनेवाले ... विदुरने यह सब जाना था, अब ...-नाशी वह बड़ा भय दैववश आ खड़ा हुआ।

वैशम्पायनजी बोले, कि ... खाये महाराज राजा धृतराष्ट्रने दैवको ... और उससे पार पानेमें ... समझके ... वातें करके पुत्रकी बात पर ... नादर ... आज्ञा दी, कि तुम ... लगाय ... सुवर्ण ...

आदिसे सुहावनी सौ द्वारवाली, लम्बाई मे सौ सौ कोस फैली, तोरण-स्फटिक नामक शीघ्र एक बढ़िया सभा रचो। तब सहस्रों प्रज्ञावान शिल्पियोंने उनकी आज्ञा सुनके त्वरा लगाय शङ्का भगाय, ध्यान जमाय वे विलम्ब वैसी सभा बनाय, उसमें सब वस्तु लाय धरी। आगे प्रसन्न मनसे उस स्वल्प कालमें बनी, नाना रत्नोंसे बनी ठनी सुवर्णसे खची, नाना वरणोंके आसन बिछी मनहरणी तथा सुहावनी सभाकी वात राजासे कह सुनायी। आगे विद्यमान नरनाथ धृतराष्ट्र मन्त्रियोंमें प्रधान विदुरसे यह बोले, कि तुम मेरी आज्ञासे राजकुमार युधिष्ठिरके निकट जाय उनको शीघ्र यहां लेते आओ। वह भाइयोंसे मिलके मेरी यह बहुरत्नजटित मूल्यवान सेजआसनोंसे आच्छादित सुन्दरतासे सुशोभित सभाको निहारें और इसमे मित्र चौसड़ खेलें। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि महाराज! नरनाथ धृतराष्ट्रने पुत्रका मत जान और दैवको अपार मान ऐसा किया। उस समय विप्रवर विदुर अनुचित रीति पर ऐसे कहे जाय भाईकी हांसी हा न मिलाय यह बोले, कि महाराज! आपकी यह आज्ञा मुझे अच्छी नहीं लगती; आप कदापि यह न कीजिये। मैं कुलका मूल उखड़नेका भय खाता हूं। हे नरनाथ! मुझको यह शङ्का होती है, कि चौसड़से आपके पुत्रोंमें भेद होके निःसन्देह बिगाड़ मचेगा।

धृतराष्ट्र बोले, कि विदुर। यदि दैव विरोधी न बने, तो बिगाड़सेभी मुझको दुःख नहीं पहुंचेगा। देखो, यह विश्व स्वाधीन नहीं है, दैववश स्थापित करनेहारे विधाताहीके नियमसे चेष्टित हो रहा है, सो मेरे शासनसे आज तुम कुन्तीकुमार अजेय राजा युधिष्ठिरके निकट जाय उनको तुरन्त ले आओ।

पचपन अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि राजा धृतराष्ट्रसे बलपूर्व्वक नियुक्त होकर विदुर सुशिक्षित बड़े वेगमण्डित, श्रेष्ठ, बलिष्ठ घोड़ोंके द्वारा इन्द्रप्रस्थको महानचित्त पाण्डवोंके निकट गये। वह बड़े बुद्धिमान धर्म्मात्मा नरनाथ युधिष्ठिरकी राजधानीकी बाट लेके उनके सम्मुख आय स्तुति गवइये द्विजोंसे पूजे जाय उसमें गये; आगे कुवेरभवनके सदृश राजभवनको पाय धर्म्मपुत्र युधिष्ठिरके पास जा पहुंचे। अब मीढ़नन्दन सत्य-सदन माहात्म्यवान राजा युधिष्ठिरने उनकी यथावत पूजाकर अन्तमें धृतराष्ट्र और उनके पुत्रोंकी कुशल-क्षेम पूछी युधिष्ठिर बोले, कि हे क्षत्त। आपका चित्त उदास दीखता है, आप कुशलसे तो आये धृतराष्ट्रके बेटे उनके विरोधी तो नहीं बने प्रजा भी तो उनके वशमें है? विदुरजी बोले, कि हे महाराज। ज्ञातियोंसे घेरे इन्द्र समान भाग धरे महात्मके पूरे राजा धृतराष्ट्र पुत्रों सहित कुशलसे हैं; वह सिर नाये पुत्रोंसे मन मिलाये शोकसे हाथ धोये मन दृढ़ किये अपनी उन्नति पर सन्तुष्ट हैं। पर कुरुनाथने तुम्हारी कुशल क्षेम और धनादिके व्यर्थ नाशका प्रश्न पूछके यह कहा है, कि ऐ बेटा। तुम्हारे भाइयोंकी यह सभा तुम्हारी सभाकीसी बनी है, सो तुम आय इसे निहारो। हे पार्थ। भाइयोंसे मिलकर इस सभामे मित्र-चौसड़ खेलो और आनन्द लूटो, तुम्हारे आनेसे हमभी प्रसन्न होंगे और सब एकत्रित कौरव भी सुख पावेंगे। हे महाराज! महात्मा राजा धृतराष्ट्रने वहां जिन चौसड़बाजोंको नियुक्त किया है, उन कपटियोंको तुम वहां बैठे पाओगे, इसीको कहनेके लिये यहां आया हूं। सो इस राजाज्ञाको पालन करो। युधिष्ठिर बोले, कि हे क्षत्त! चौसड़ खेलनेमे हममें बिगाड़ होना यदि निश्चय हो, तो कौन समझ बूझकर उस बिगाड़ पर मन चलावेगा? आपही क्या समझते हैं,

कर दीजिये, हम तो आपहीकी बात पर बने हैं। विदुरजी बोले, कि मैं भलेही जानता हूं चौसड़ अनर्थ की जड़ है, और इसे रोकनेके विषयमें बड़ा प्रयत्न भी किया था, तिस पर भी राजाने मुझको तुम्हारे यहां भेज दिया है; सो हे विद्वान! यह सुनके जो कुछ उचित हो करो। युधिष्ठिर बोले, कि राजा धृतराष्ट्रके अतिरिक्त पुत्रोंके वहां कौन कौन दूसरे कपटी खेलनेको बैठे हैं? जिन चौसड़बाजोंसे मिलके हमको अपरिमित धनसे खेलना होगा, उनकी बात पूछता हूं, कहिये। विदुरजी बोले, कि हे पृथ्वीनाथ। चौसड़के बड़े जानकार मर्य्यादा छोड़के खेलनेहारे फेंकनेमें तेज हाथ गान्धारनाथ शकुनि, राजा विविंशति, चित्रसेन, सत्यव्रत, पुरुमित्र, और जय यह सब चौसड़बाज वहां उपस्थित हैं। युधिष्ठिर बोले, तब तो वहां बड़े बड़े कपटी धूर्त्त चौसड़बाज आ मिले हैं; पर मैं क्या कर सकता हूं, विधाताकी आज्ञासे दैववश यह सम्पूर्ण जगत् विद्यमान है. यह कदापि स्वाधीन नहीं है। हे कवे! पिता सदा पुत्रको इच्छासे चलते हैं; सो मैं पुत्रका पक्षपात करनेवाले राजा धृतराष्ट्रकी आज्ञासे झगड़ीले चौसड़में फंसना नहीं चाहता. पर आप मुझको जैसा कहेंगे, अवश्य वही करूंगा: फिर यदि शकुनि गाल बजाय मुझे सभामें न बुलावे तो मैं विना इच्छा उससे न खेलूंगा, मेरा सदासे यह निश्चय है, कि [illegible] मैं कदापि मुह नहीं मोड़ता।

[illegible]म्पायनजी बोले, कि धर्म्मनाथ विदुरसे ऐसा कहके [illegible] योग्य सजने धजनेकी आज्ञा [illegible] दिन स्वजन, द्रौपदी आदि नारी [illegible] सहित पधारे; कोई तेजयुक्त [illegible] नेत्रोंकी ज्योति हर लेता [illegible] दुःख सुझा देता है; [illegible] विधाताके वशमें हो [illegible] शत्रुदमन युधिष्ठिर

उस बुलावेका कुछ विचार न कर विदुरके साथ चले। कालके नियमानुसार धृतराष्ट्रसे बुलाये जाकर शत्रुनाशी राजापाण्डुकुमार वाह्लीकदत्त रथ पर चढ़के वेश पहिरके और राजलक्ष्मीसे प्रकाशित होके ब्राह्मणोंको आगे कर भाइयोंसहित हस्तिनापुरको गये। वहां पहुंचकर वह धर्म्मात्मा वीर्य्यवन्त महाभुज प्रभु, धृतराष्ट्रके भवनमें जाय उनसे मिले। पहिले उन्होंने भीष्म, द्रोण, कर्ण, कृप और अश्वत्थामासे मिलके यथारीति वन्दन आलिङ्गनादि किये, पीछे सोमदत्त, दुर्य्योधन, शल्य, शकुनि, दुःशासन आदि भाइयों, जयद्रथ, सब कुरुओं, तथा जितने भूप वहां पहिलेसे आये हुए थे, उन सबोंसे भेंट की। तिसके पीछे वह महाभुज सब भाइयोंसे मिलके धीमान महाराज धृतराष्ट्रके वासगृहमें गये। वहां वह तारोंसे सदा घिरी रोहिणीकी भांति पुत्रवधुओंसे घिरी पतिव्रता सती गान्धारीसे भेंट कर उनके पांव लगे। और गान्धारीनेभी उनको अशीस दिया। अन्तमें युधिष्ठिरने वृद्ध पिता प्रभु धृतराष्ट्रको भेंट की। हे महाराज! राजा धृतराष्ट्रने उनके और भीमसेन आदि दूसरे चार पाण्डवोंके सिरका घ्राण लिया। कौरवलोग सुन्दर दर्शनीय पुरुषव्याघ्र पाण्डवोंको निहार कर सब प्रसन्न हुए। अनन्तर पाण्डवगण सबोंकी आज्ञासे रत्न-मण्डित गृहमें गये, वहां पहुंचने पर दुःशला आदि नारियोंने उनकी भेंट। द्रौपदीकी परम प्रकाशमनी उन्नति देखकर धृतराष्ट्रकी पुत्रवधुओंको [illegible] पीरायी। पुरुषव्याघ्र पाण्डवोंने स्त्रियोंसे वार्त्तालापकर व्यायामपूर्व्वक नित्य कृत्य कर [illegible] किया। [illegible] दिव्य चन्दन [illegible] [illegible]

हुए सोगये! शत्रुपुरजयी कुरुश्रेष्ठ वह शुभ्र रात रतिविहारसे कठी,वे सुखसे सोय,थकावट मिटाय, वन्दियोंसे स्तुति किये जाय, सबेरे उचित समय पर नींदसे जग उठे और आन्हिक कृत्य कर जुआड़ियोंके प्रणाम नमस्कार लेते हुए सुहावने सभा-मण्डपमें गये।

छप्पन अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि युधिष्ठिरादि पाण्डव सभामें जाय, भूपोंसे मिल, पूजनीय जनोंको पूज और अवस्थाके अनुसार सभोंको गले लगाय और सम्भाषणादि कर बड़े मूल्यवान चादरोंसे ढंपे आसनों पर विराजे। उनके और सब दूसरे नरेशोंके आसनो पर बैठने पर सुबलकुमार शकुनि युधिष्ठिरको पुकारके यह बोला, कि महाराज! चौसड़ खेलने और तुमको देखनेको आये भूपोंसे सभा छागयी है; सब तुम्हारी बाट ताकते हैं; सो अब चौसड़ गिराय खेलका नियम बना लेना चाहिये।

युधिष्ठिर बोले, कि हे राजन्! कपटचौसड़ बड़ा पाप है, इसमें न तो क्षत्रियधर्म दीख पड़ता और न कोई निश्चित नीति है; फिर आप जूएकी प्रशंसा क्यों कर रहे हैं? देखिये, ठगनेमें जुआड़ी जैसे बड़ाई मानते हैं, बुद्धिमान लोग उसकी टुकभी प्रशंसा नहीं करते हैं? सो हे शकुने! निठुरके समान हमको अनुचित रीतसे मत हराना? शकुनि बोला, जो बड़े बड़े जूआड़ी हार जीतको समझ रखते हैं, विपक्षीको चतुरता पकड़ लेते हैं और जूएकी बहुविध चेष्टासे नहीं थकते हैं, वही जूएका स्वाद जानते हैं और उसकी सब चाल सह लेते हैं। हे पार्थ! जूएमें हार जीतकी बाजी हमको भय दिखा सकती है और वही इसमें दोषयुक्त गिना जाता है, इस लिये हे महाराज! तुम मत डरो, आओ हम खेले; अधिक विलम्बका प्रयोजन नहीं है, अब ठहरा लो कौन बाजी बदोगे। युधिष्ठिर बोले, कि जो स्वर्गादि लोक दिखानेहारे इन सब कर्म ज्ञानादिके विषयमें सदा घूमा करते हैं, उन असित मुनिपुत्र मुनिश्रेष्ठ देवलने यह कहा है, कि जूआड़ियोंके साथ कपट करके चौसड़ खेलना बड़ा पाप है; धर्मसहित युद्ध जीतनाही अच्छा खेल है, जूआ अच्छा नहीं है। आर्य्यपुरुष म्लेच्छ भाषा नहीं कहते और और छल नहीं करते, कुटिलता और जूआ चोरी बिना लड़नाही अच्छे पुरुषका व्रत है। हे शकुने! हम जिस धनसे शक्त्यनुसार ब्राह्मणोंका उपकार पहुंचानको सीखनेका बड़ा प्रयत्न करते हैं, आप मर्य्यादा तजके खेल कर उसे मत हरलीजिये, शत्रुओंको व्यर्थ पराजय मत कीजिये। ठगकर सुख वा धन पाना मैं नहीं चाहता, ठगनको इच्छा न रहने परभी जूआड़ियोंकी यह रीत सराही नहीं जाती।

शकुनि बोला, कि हे युधिष्ठिर! देखो जयकी इच्छारूपी शठताके साथ श्रोत्रिय श्रोत्रियके पास जाते हैं, तत्वज्ञानी पुरुष शठताहीके साथ तलके अज्ञानीके पास पहुंचते हैं, और विद्वान पुरुषभी शठताके साथ अल्पज्ञानी जनोंके निकट जाते हैं; वैसी शठताको लोग शठताही नहीं कहते। इसीप्रकार चौसड़में सुशिक्षित जन चौसड़ लेकर शठताके साथ उन जनोंके समीप जाते हैं, सो वहभी शठता गिनी नहीं जा सकी। हे युधिष्ठिर! शठताहीके साथ अस्त्रज्ञ पुरुष अस्त्र न जाननेवालोंके पास और बलशाली, दुर्बलके पास उपस्थित होते हैं, इसी प्रकार सब कार्य्योंहीमें शठतापूर्वक व्यवहार होता है, सो तुमभी इस प्रकारसे मेरे पास आकर यदि शठताही समझते हो—यदि जूएमें तुमको भय होता हो, तो मत खेलो। युधिष्ठिर बोले, कि मेरा यह व्रत निरूपित है, कि बुलाये जाने पर नहीं लौटता हूं, हे राजन्! विधाताही बलवान

हूं, मैंभी दैवके वशमें आगया हूं; साम्प्रत यह कहो कि इस जनसमाजमें किससे मेरा खेल होगा और मुझसे हरवार बाजी रख सके ऐसा कौन विद्यमान है, आगे खेलो। दुर्य्योधन बोला, कि हे पृथ्वीनाथ। मैं धनरत्न सब देता हूं, और यह मामा शकुनि मेरे लिये खेलेंगे। युधिष्ठिर बोले, कि एकके लिये दूसरेका खेलना मुझको अनुचित जचता है, हे विद्वन्! तुमभी यह बात मानते होगे पर यदि विशेष इच्छा हुई हो, तो खेल आरम्भ करो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि जूआ आरम्भ करनेकी बात ठहर जाने पर, वे सब उपस्थित राजा धृतराष्ट्रको सामने बैठाकर सभा-मण्डलमें बैठे। हे भरतनन्दन? भीष्म, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, और महामति विदुर अति अप्रसन्न चित्तसे उनके पीछे बैठे। महाभाग देवोंके एकत्र मिलित होनेसे स्वर्गकी जैसी शोभा होती है, उन सब सिंह-समान गर्द्दनवाले, अति तेजस्वी नरेशोंके एकत्रित होकर अनेकानेक शोभित आसनों पर पृथक पृथक और एक एकमें दो दोके बैठनेपर उस सभाकी वैसीही शोभा हुई। वास्तवमें वे सब कोई सूर्य्य-सम, भारतोंके सुशोभित और वेदज्ञ थे। दर्शकोंके बैठने पर, मित्रद्यूत आरम्भ हुआ। युधिष्ठिर बोले, कि राजन् दुर्य्योधन। मैं सागर

युधिष्ठिर बोले, कि शकुने। केवल कपट-चौसड़हीसे बाजी जीतली, क्या इसीलिये अहङ्कार कर रहे हो? बहुत अच्छा आओ, हम सहस्रों बाजी रखकर खेलेंगे; मेरे सहस्रों सुवर्ण मुद्रा-भरे अनेक सन्दूक, कोष, अक्षय धन और अनेक सुवर्ण चांदीकी धातु हैं, हे राजन्। मैं इस धनकी बाजी रखता हूं, मैं इससे तुम्हारे साथ खेलता हूं। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि युधिष्ठिरका यह वचन सुनकर शकुनिने कुरुकुलमें श्रेष्ठ अक्षय धनवान पृथ्वीनाथ ज्येष्ठ पाण्डवसे कहा, यह मैं जीता। महाराज युधिष्ठिर बोले, कि बादल और समुद्रके समान प्रतिष्ठाप्रचारी, सुन्दर चक्र और उपकरणधारी, घुंघुरू-जालसे बहारी और हृदयानन्द-कारी जो राजरथ हमको यहां लाया है और जिसे अपने पद-विक्रमसे किसी भूचर जीवको न बचाने-हारे, श्वेत पद्मकेसमान कान्ति-धरे, राज्यभरके प्यारे आठ श्रेष्ठ घोड़े खींचते हैं, मैं इस बार उसी जयशील पवित्र रथराजको बाजी रखता हूं। राजन्! उसीसे मैं तुम्हारे साथ खेल रहा हूं। यह सुनकर शकुनि छलपूर्व्वक पाशा फेंककर युधिष्ठिरसे बोला, कि यह मैं जीता। युधिष्ठिर बोले, कि सहिका, शंखके कड़े तथा जुगनू आदि भांति भांतिके मणि-काञ्चनयुक्त अलङ्कारोंसे सजी-बनी, महामूल्य माल्यभरणधारिणी, सुन्दर

दास हैं; वे निशदिन हाथोंमें पात्र लेके अतिथियोंको भोजन कराते है, हे राजन्! इसवार मेरी उसी दासरूपी धनको बाजी रही, उसीको लेके मैं तुमसे खेलता हूं। यह सुनके छलपूर्व्वक पाशा फेककर शकुनि युधिष्ठिरसे बोला, कि यह मैं जीता। युधिष्ठिर बोले कि हे सुबलकुमार। मेरे सुवर्णके हौदावाले, अलंकृत पद्मरागसे रङ्गे हुए, हेममाली, अच्छे दांतवाले राजोंको बहनेयोग्य, युद्धमें सर्व्व प्रकारके शब्द सहनेवाले, हरकी लकड़ीके समान दन्तयुक्त, बड़ेभारी शरीरधारी, घने मेघके समान एक सहस्र मत्तहस्ती है। वे सब पुरोंको भेदनेमें समर्थ हैं, और प्रत्येककी आठ आठ हस्तिनी हैं। हे राजन्! अबको मैं उसी धनको बाजी रखता हूं। उसीसे मै तुमसे खेलता हूं।

युधिष्ठिरके ऐसा कहने पर सुबलकुमार शकुनि मानों उनकी हंसी करके बोला, कि यह मैं जीता। युधिष्ठिर बोले, कि मेरे जितने हाथी हैं, रथभी उतनेही है, वे सब सुवर्ण दण्डीवाले, भाण्डोंसे सुहावने, सुशिक्षित घोड़ोंसे बने ठने और अयुत युद्ध करनेवाले, रथियोंसे सुशोभित है। उन सब रथियोंमेंसे हरएकको चाहे युद्ध करना पड़े वा नहीं सहस्र मुद्रातककी मासिक वेतन मिलती है, हे राजन्। इसवार मेरी उस रथरूपी धनकी बाजी रही, उससे मैं तुम्हारे साथ खेलता हूं। युधिष्ठिरके इतनी बात कहने पर, खिलाड़ियोंमें मन्दबुद्धि शकुनिने उनसे कहा, कि यह मैं जीता। युधिष्ठिर बोले, कि शत्रुनाशो चित्ररथने युद्धमें हारके धनञ्जयको प्रसन्न होकर, जो गन्धर्व्वसम्बन्धी सुवर्णसे सुशोभित तित्तिरि, कल्माश घोड़े दिये थे, अबकी मेरो उन्होंकी बाजी रहो, हे राजन्! उसी धनसे मैं तुम्हारे साथ खेलता हूं। यह सुनकर शकुनि छलपूर्व्वक पाशा फेककर युधिष्ठिरसे बोला, यह मैं जीता। युधिष्ठिर बोले, कि मेरे दश सहस्र अच्छे रथ और गाड़ी हैं; उनमें सदा अनेक प्रकारके वाहन जुते रहते हैं; और प्रत्येक वर्णसे सहस्र सहस्र वीर पुरुष चुनके साठ सहस्र योद्धे नियुक्त किये गये है। वे सब महाबली, और-पराक्रमी, चीर पीनेवाले और शाली चावल भोजन करनेवाले हैं, हे राजन्। इसवार मेरी उसी धनकी बाजी रही; मैं उससे तुम्हारे साथ खेलता हूं।

यह सुनकर शकुनि छल-पूर्व्वक पाशा गिराके युधिष्ठिरसे बोला, कि यह मैं जीता युधिष्ठिर बोले, कि तामेके पात्रोंसे आच्छादित मेरे चारसो निधि है; उनमेंसे प्रत्येक अमूल्य श्रेष्ठ, विशुद्ध, जातरूप और सुवर्णके पाच द्रोणके समान हैं। हे राजन्। इसवार मेरी उसी धनकी बाजो रही मैं उससे तुम्हारे साथ खेलता हूं। यह सुनकर शकुनि छल-पूर्व्वक पाशा फेककर युधिष्ठिरसे बोला, कि यह मैं जीता।

अठावन अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि इस प्रकार सर्व्वनाशी भयावना चौसड़ आरम्भ होने पर सर्व्व शङ्काओंके हरनेवाले विदुर पुकार कर धृतराष्ट्रसे यह बोले, कि महाराज। मृत्युके द्वार पर पहुंचे-हुए मनुष्यको जैसे औषध पीनेकी रुचि नहीं होती, वैसेही आपको मेरी बात सुननेकी इच्छा नहीं होसकती है, तिस परभी मैं जो कुछ कहता हूं, उसपर विशेष ध्यान दीजिये! भरतकुलका नाश करनेवाले दुर्य्योधनने जब जन्म लेतेही गोमायुके समान विकट स्वरसे शब्द किया। था, तब इसमें सन्देह नहीं है, कि वह अपने सबलोगोंको ध्वंश करेगा। दुर्य्योधनरूपी गोमायु गृहमें वास कर रहा है, आप मोहवश वह नहीं समझते हैं, साम्प्रत शुक्राचार्य्यके नीति पूरित वचन मुझसे सुनिये। मधुका व्यौपारी मधु पाके टोलेका समझ नहीं सक्ता है, मधुके लोभसे पर्व्वतके उस ऊंचले भागमें चढके वह मधुमेंही मग्न रहता है; सो पतन कोभी प्राप्त

करता है। यह दुर्य्योधनभी मधुके समान लोभमें उन्मत्त होकर भलेबुरेकी आलोचना नहीं करता है, यह समझ नहीं सकता है, कि महारथियोंसे शत्रुता-साधनके लिये शीघ्रही नष्ट हो जायगा। महाराज! आप जानते होंगे, पहिले भोजोंसे विरोध रखते हुए कंशको अन्धक यादव और भोजोंने एकामेल होके त्याग दिया था, उनकी आज्ञासे जब शत्रु-विनाशी श्रीकृष्णचन्द्रने उसका नाश किया था, तब सब ज्ञातियोंने आनन्दित होके सैकड़ों वर्षकी श्रीको प्राप्त किया था। उसी प्रकार आपकी आज्ञासे अर्जुन सुयोधनका नाश करें, इस पापात्माका नाश होनेसे कौरवगण सुखसे आनन्द अनुभव करते रहेंगे। हे महाराज! एक कौएके बदले इन पाण्डवरूपी मयूरोंको प्राप्त कीजिये। सियारके बदले शार्दूलोंको मोल लीजिये, विना कारण शोक-समुद्रमें मत डूबिये। देखिये, सब जीवोंके अभिप्रायोंके जानने-वाले, सर्वज्ञ, सब शत्रुओंको भय दिखानेवाले शुक्राचार्य्य जम्भासुरको त्यागनेके लिये महा-सुरोंसे यह वचन बोले थे, कि "वंशकी रक्षाके लिये एक पुरुषको त्याग देना चाहिये, ग्रामकी रक्षाके लिये वंशको त्याग देना चाहिये, जन-पदके लिये ग्राम और अपने लिये पृथ्वी तकको त्याग देना चाहिये।" हे शत्रुनाशी! किसी राजाने [illegible] उगलनेवाले कई एक पक्षियोंको [illegible] आकर मारा था। भोग और [illegible] इसकर उसने सुवर्णकी आशा-[illegible] और भविष्यत् दोनों कालोंके [illegible] एकही समयमें नष्ट किया था। अत-[illegible] आप लोभवश और धनकी [illegible] के साथ द्रोह न कीजिये; [illegible] पक्षीनाशी पुरुषके समान [illegible] हे भारत! माली जैसे [illegible] दिखाकर बार बार [illegible] आप [illegible] वृक्षोंसे क्रमशः जमते हुए फूलोंको लीजिये; अङ्गार बनानेवालेकी भांति उन्हें जड़से न जलाइये! हे राजन्! एकत्रित पृथा-पुत्रोंके साथ ऐसा कौन है, जो लड़ सकता है? दूसरोंकी बात छोड़ दीजिये, इन सुरोंके साथ स्वयं इन्द्रभी नहीं लड़ सकते हैं।

उनसठ अध्याय समाप्त।

विदुर बोले, जूआ झगड़ेकी जड़ है, उससे आपसमें बिगाड़ होता है, इस लिये वह केवल भय लानेके लियेही खेला जाता है, धृतराष्ट्र-का यह पुत्र दुर्य्योधन उसकी शरण लेकर भयावनी शत्रुता रच रहा है। बड़ी भारी सेना रखनेवाले प्रतीप वंशी शान्तनुके पुत्रगण तथा वाह्लिक आदि राजसमूह सब दुर्य्योधनके दोषसे क्लेशकी दशा प्राप्त करेंगे। जैसे मद-माता हुआ बैल आप अपना सिंग तोड़ डालता है, वैसेही इस दुर्य्योधनके पागलपनके कारण राज्यसे मङ्गल दूर होता जाता है। हे महाराज! जैसे बालकसे चलाये जानेवाली नाव पर चढ़के मनुष्य बीच समुद्रमें भारी विपदकी दशामें होता है, उसी प्रकार जो पुरुष स्वयं वीर और कवि होके अपनी बुद्धिका अपमान करके पराये इच्छानुसार कार्य्य करता है, उसकीभी वैसोही दशा हो जाती है। दुर्य्योधन युधि-ष्ठिर से बाजी रखके खेलकर जयको प्राप्त करता है, इससे आप बड़े प्रसन्न होते हैं; पर ऐसोही जयसे लड़ाई और उसीसे पुरुषोंका नाश होता है। आपने यह जो द्यूत-रूपी बुरे कार्य्यका प्रारम्भ किया है, इसका फल केवल नोचेको और गिरना है, यह युक्ति करके सम्पूर्ण मन-पीड़ायोंसे आपके चित्तको अधिकार करनेका कारण हुआ है। यद्यपि आपने यह नहीं सोचा होगा, कि आपके मित्र युधिष्ठिरसे झगड़ा करेगा, तौभी यह आपके [illegible] अनुचित हुआ [illegible]। हे प्रतीप-वंशी शान्तनु-

कुमारो! तुम कौरवोंकी सभामें पण्डितोंके योग्य इन वचनोंको श्रवण करो; दुष्ट दुर्य्योधनकी हां में हां मिलाके भयानक रूपसे प्रज्वलित अग्निमें मत गिरो। आजातशत्रु युधिष्ठिर यदि चौसड़के नशेमें डूबके क्रोधको न रोकें, तो जब वृकोदर, अर्जुन और नकुल तथा सहदेव क्रोधित होंगे, तब उस घोर लड़ाईमें तुममेंसे कौन द्वीप अर्थात् आश्रयका स्थान बनेगा? हे महाराज! आप धनकी खानि हैं; चौसड़ न खेलके भी आपको चाहे जितने धनकी इच्छा हो उतनाही पासक्ते हैं, पाण्डवोंसे यदि बहुत धन जीत लें, तो उससे आपका क्या होगा? आप तुच्छ धनके अभिलाषी न होकर पाण्डवोंकोही अनमोल धनके समान प्राप्त कीजिये। सुबल-पुत्रके खेलका वृत्तान्त हम जानते हैं, यह पर्व्वतका रहनेवाला चौसड़से अच्छी रीति ठगना जानता है, हे भारत! शकुनि जहांसे आया है, वहीं चला जावे, आप पाण्डवोंको लड़ाईमें सन्नद्ध न कीजिये!

दुर्य्योधन बोला, कि हे चत्त! तुम धृतराष्ट्रके पुत्रोंकी निन्दा करके सदा शत्रुओंके यशके घमण्डमें रहते हो। हे विदुर! हम जानते हैं किसको तुम प्रिय समझते हो, तुम सदा हमको मूर्खोंके समान घृणा करते हो। प्रिय जय और अप्रिय पराजयमें जिसकी इच्छा है, वह उसकी निन्दा और प्रशंसा करनेकी रीतिसेही विशेष रूपसे जानी जाती है, तुम्हारी जिह्वा और चित्तहीसे तुम्हारे हृदयका आशय प्रगट होता है; तुम मनही मनमें हमारे प्रतिकूल तो होही, पर भीतरी प्रतिकूलतासे तुम्हारी बाहरी प्रतिकूलता बहुत अधिक है। हे चत्त! तुमको मानों सर्पके समान हमने गोदमें स्थान दिया है, तुम बिल्लीकी तरह पालनेवालेकी हिंसा करते हो। देखो. पण्डितलोग कहते हैं, कि पालनेवालेके विरुद्ध खड़े होनेके समान अधिक पाप नहीं है, उस घोर पापसे तुम्हें क्यों नहीं भय होता है? हे चत्त! हम शत्रुओंको जीतकर बड़ा भारी फल पाचुके हैं, इससे तुम हमको कठोर वचन मत कहो, शत्रुओंसे मित्रता करनेको तुम बहुत उद्यत हो, उस मोहके लियेही बारम्बार हमारी हिंसा करते हो, मनुष्य अनुचित वचन कहके लोगोंका शत्रु बन जाता है, और शत्रुको प्रशंसाके स्थानमें गुप्त विषयको गुप्त रखता है। अतएव हे निर्लज्ज! तुम हमारे आश्रयमें रहके क्यों हमारे कार्य्यमें बाधा देते हो? तुम्हारा जो मन चाहता है, तुम यह वही कह देते हो। अजी विदुर! तुम हमें तुच्छ मत समझो, तुम्हारा मन हम जान चुके हैं, तुम बूढ़ोंसे ज्ञान सीखो, लोकोंमें जो यश प्राप्त कर चुके हो उसकी रक्षा कर दूसरोंके कार्य्यमें मत बझो। अजी विदुर यह समझके, कि मैं कर्त्ता हूं, तुम आगे हमारा अपमान मत करना और अहङ्कारकी बातें भी न प्रगट करना; मैं यह तो नहीं पूछता हूं, कि क्योंकर हमारा हित होगा, सो हे चत्त! तुम सहनशील पुरुषोंको अब मत क्रोधी बनाओ। एकही पुरुष सबका शासन करता है, दूसरा शासनेहारा नहीं है; वह शासनेहारा गर्भरूपी विस्तर पर लेटे हुए पुरुषकाभी शासन करता है, मैं उसका शासन मानता हूं। जल जैसे नीचेकी ओर जाता है, वैसेही वह मुझे जैसे नियुक्त करता है, मैं वैसेही कार्य्य करता हूं। जो पुरुष सिरसे पहाड़ फोड़ता है, और सर्पको भोजन देता है, उसकी बुद्धिही उन कार्य्योंका शासन करती है, उसी प्रकार जूआ हानिकारी होने परभी मेरी बुद्धिहीने मुझे उसमें प्रवृत्त कराया है। पर जो पुरुष बलसे औरोंका शासन करता है, वह वैसे अनुचित शासनसे शत्रुओंको प्राप्त करता है. मित्रता दिखाने परभी पण्डितलोग उसको तुच्छ समझते हैं, जो मनुष्य तेज जलनेवाले पदार्थ कपूरको

अग्निके बढ़ने वेगसे उसे बुझानेको दौड़ता है, वह कहीं उसका भस्मभी शेष नहीं देख सक्ता है, इसी प्रकार हमलोग पाण्डवोंसे वैरकी अग्नि जलाके यदि शीघ्र उसे बुझानेकी चेष्टा न करें, तो वे जड़-सहित नष्ट होंगी। अजी चञ्चल-स्वभाववाले, डाह करनेवाले और विशेष अहित चाहनेवाले मनुष्यको कदापि गृहमें स्थान न देना चाहिये; इसलिये हे विदुर! जहां मन चले, तुम वहीं चले जाओ; असती नारीको भली रीतिसे समझाने बुझाने परभी वह पतिको छोड़ देती है।

विदुर बोले, कि महाराज! ऐसे कारण मैं यथात् अहङ्कारके वचनोंसे नीतिशिक्षा देकर जो लोग आश्रय लिये हुए पुरुषको त्याग देते हैं तुम विना पक्षपात यह प्रगट करो, कि उनका चरित्र कैसा है। वास्तवमें राजोंका चित्त बहुत चञ्चल है, वह पहिले समझाके पीछे मूसल मारते हैं, अरे मन्दबुद्धि राजपुत्र! तुम अपनेको पण्डित और मुझको मूर्ख समझते हो. पर विचारके देखा, कि जो पुरुष शरण लिये हुए मनुष्यको पहिले मित्रके समान पूछकर पीछे दोष लगाता है, उसीको लोग मूर्ख कहते हैं। वास्तवमें श्रोत्रियके गृहमें रहती हुई बुरे चालचलनवाली स्त्रीके समान दुष्टबुद्धि [illegible] कभी हित पथमें नहीं ले जाया जाता है। [illegible] साठ वर्षके पति पर जैसे [illegible] मन नहीं चलता है, वैसेही हितउप-[illegible] पर तुम्हारी रुचि नहीं होती [illegible] हे राजन्! इससे यदि तुम हित तथा [illegible] कार्य्योंमें प्यारी बातें सुना चाहते [illegible] लकड़े और वैसेही [illegible] पूछना। इस संसारमें पाप चिन्तायुक्त [illegible] मनुष्य बहुतसे मिलते हैं. [illegible] परन्तु हितकारी वाणीके [illegible] देनेवाले बहुत कम [illegible] प्रिय तथा अप्रिय पर ध्यान देकर धर्म्मानुसार कार्य्य करता है और अप्रिय होने परभी हितकारी वाणी कहता है. उसीसे राजाकी सहायता होती है। महाराज! जो मन्यु दवाके समान व्याधि हरनेवाली, कड़वी वस्तुओंसे बनी, दुःखदायी, सन्ताप लानेवाली कीर्त्तिनाशकारी, रूखी और दुर्गन्धी है तथा जिसे साधुलोगही पीते हैं असाधु नहीं पी सक्ते, उसीको पीकर शान्त हो जाओ। मैं सदा पुत्रसहित धृतराष्ट्रके यश धनकी कामना करता हूं, अब तुमको जो होना है, वही होवे; तुमको मैं यह दण्डवत करता हूं; ब्राह्मणलोग मेरी स्वस्ति निर्णय करें। हे कुरुनन्दन! पण्डित पुरुष देखनेमें विषसमान सर्पको कदापि क्रोधित नहीं करते, मैं यत्नपूर्व्वक तुमसे केवल इसी उपदेश-वचनको कहता था।

साठ अध्याय समाप्त।

शकुनि बोला, कि हे कुन्तिपुत्र युधिष्ठिर! तुम पाण्डवोंका बहुत धन हार चुके हो, अब यदि कोई धन हारनेमें बाकी हो, तो प्रगट करो। युधिष्ठिर बोले, कि हे सुबलकुमार शकुनि! मैं जानता हूं, मेरा अपरिमित धन है, तुम क्यों धनकी बात पूछते हो? तुम दश सहस्र, लक्ष, करोड़, अर्बुद, खर्ब निखर्ब, शंख, पद्म, महापद्म, मध्य, परार्द्ध, वा उससे भी अधिकको बाजी रखो। हे महाराज! मैं इस धनकी बाजी रखता हूं, उससे मैं तुम्हारे साथ खेलता हूं। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि यह सुनकर शकुनि छलपूर्व्वक पाशा फेंककर युधिष्ठिरसे बोला, कि यह मैं जीता। युधिष्ठिर बोले, कि हे सुबलकुमार! पर्णाशासे लेकर सिन्धुनदीके पूर्व्वतक मेरे अनेक गौ, घोड़े, भैंस और असंख्य बकरे, भेड़ आदि जो कुछ धन रखे हैं, इस समय उन सबकी बाजी रखता हूं, इसीसे मैं तुम्हारे साथ खेलता हूं। श्रीवैशम्पायनजी बोले कि यह सुनकर शकुनि छलपूर्व्वक पाशा फेंककर

युधिष्ठिरसे बोला, कि यह मैं जीता। युधिष्ठिर बोले, कि हे महाराज। पुर, जनपद, भूमि, ब्राह्मणोंके बिना औरोंका धन और ब्राह्मणोंके बिना अन्य सब पुरुष मेरे शेष धन बचे हैं, इसवार मेरी इसी धनको बाजी रही, उसीसे मैं तुम्हारे साथ खेलता हूं। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि यह सुनकर शकुनि छलपूर्व्वक पाशा फेंककर युधिष्ठिरसे बोला कि, यह मैं जीता। युधिष्ठिर बोले, कि हे महाराज। यह सब राजकुमार जिनसे अलंकृत होकर शोभा पाते हैं, इसपारी मेरी उन्हीं कुण्डल, निष्क आदि सब राजअलङ्कारोंकी बाजी रही, इस धनसे मैं तुम्हारे साथ खेलता हूं। श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि यह सुनकर शकुनि छलपूर्व्वक पाशा फेंककर युधिष्ठिरसे बोला, कि यह मैं जीता। युधिष्ठिर बोले, कि श्याम देहयुक्त, लाल नेत्र, सिंहसमान गर्द्दनवाले महाभुज युवापुरुष एकले नकुलको मैं इसबार बाजीमें रखता हूं इन्हींको मेरा धन समझो। शकुनि बोला, कि महाराज युधिष्ठिर! तुम्हारे प्यारे राजकुमार नकुल हमारे वशमें होगये, अब तुम किस वस्तुकी बाजी रखकर खेलोगे? श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि यह कहके शकुनिने पाशाओंको लेलिया और युधिष्ठिरसे बोला, कि यह मैं जीता। युधिष्ठिर बोले, कि यह सहदेव धर्म्मपूर्व्वक शासन करते हैं, और इस लोकमें पण्डित नामसे प्रसिद्धभी हैं, मेरे बड़े प्रियपात्र होने परभी अप्रियके समान बाजी रखनेके अयोग्य, उसी राजपुत्रकी बाजी रखकर मैं खेलता हूं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि यह सुनकर शकुनि छल पूर्व्वक पाशा फेंकके युधिष्ठिरसे बोला, कि यह मैं जीता। महाराज! तुम्हारे प्यारे इस माद्रीकुमारको मैंने जीत लिया; जान पड़ता है, कि भीमसेन और अर्ज्जुन इनसे भी अधिक प्रिय हैं। युधिष्ठिर बोले, कि रे मूर्ख! नीतिकी ओर दृष्टि न देकर, प्रेमसे बंधे हुए हम भाइयोंमें बिगाड़की चेष्टा करना तेरे लिये बड़ेही अधर्म्मका आर्य्य है; शकुनि बोला, कि हे महाराज। उन्मत्त होनेसे मनुष्य गड्ढेमें गिर जाता है, वहां स्थाणुके समान जड़ताको प्राप्त करता है। हे भरत-श्रेष्ठ। तुम मुझसे बड़े और गुणवान हो, सो मैं तुम्हे नमस्कार करता हूं। तुम मेरी अनुचित वाणीको क्षमा करो। युधिष्ठिर। जुआड़ी लोग खेलते समय उन्मत्तके समान जो सब पागलपनकी बातोंको कह देते हैं, उन्हे जागनेकी बात न समझिये; सोनेकी दशामें भी कभी उनकी चिन्ता नहीं करते। युधिष्ठिर बोले, कि हे शकुने। शत्रुओंके जयकारी बलशाली जो राजपुत्र नौकाके समान बनकर हमको युद्ध-सागरके पार पहुंचाते हैं, बाजीके अयोग्य होने परभी लोकोंमें उन महावीर अर्ज्जुनकी बाजी रखकर मैं खेलता हूं।

श्रीवैशम्पानजी बोले, कि शकुनि छलपूर्व्वक पाशा फेंककर युधिष्ठिरसे बोला, कि यह मैं जीता। महाराज युधिष्ठिर! पाण्डवोंमें प्रधान चापधारी इस सव्यसाची धनञ्जयको तो मैं जीत चुका। अब तुम्हारी बाजीके योग्य जो शेष बचा है, तुम्हारे प्यारे उस भीमसेनकी बाजी रखकर खेलो। युधिष्ठिर बोले, कि हे महाराज दानवोंके शत्रु इन्द्रके समान जो एकले हमारे पथ दिखानेवाले तथा युद्धमें सबसे पूर्व्व चलनेवाले हैं, जो वक्र-दर्शी, धन्वाकी भांति भौंवाले महात्मा, सिंहसमान गर्द्दनवाले और सदा अमर्षसे पूरित हैं, बाहुबलमें जिनके समान कोई दूसरे पुरुष विद्यमान नहीं हैं, जो शत्रुनाशी इसभूमण्डलके गदा-धारियोंमेंसे सबके अगुए हैं, बाजीके अयोग्य होने पर भी उस राजकुमार भीमसेनको बाजी रखकर मैं खेलता हूं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि शकुनि छलपूर्व्वक पाशा फेंककर युधिष्ठिरसे बोला, कि यह मैं जीता। हे कुन्तीपुत्र तुम बहुत धन, भाई,

गर्यो यह तक कि भाइयो तकको भी हार चुके; अब यदि तुम्हारा कोई धन जीतनेमें शेष हो, तो कहो। युधिष्ठिर बोले, कि मैं सब भाइयोमें बड़ा और उनका प्रेम-पात्र हूं, भाइयोंमें स्वयं पराजित होने पर जो कार्य्य करना होता है, मै स्वयं जीते जाकर उसी कार्य्यके करनेको प्रस्तुत हूं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि यह सुनकर छलपूर्व्वक शकुनि पाशा फेककर युधिष्ठिरसे बोला, कि यह मैं जीता। महाराज! तुम्हारा अपनेको पराजित करना बड़ा पाप हुआ, इसमें सन्देह नहीं है, कि शेष धन रहते अपनेको पराजित करना पापका कारण है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि बड़ा भारी जुआड़ी शकुनि बाजीके विषयमें युधिष्ठिरसे इतनी बातें कहके वहा बैठे हुए, प्रसिद्ध वीरोंके साथ पाण्डवोंमेंसे प्रत्येककी हारका वृतान्त कहकर फिर युधिष्ठिरसे बोला, कि महाराज! अबभी तुम्हारी प्यारी स्त्री हारजानेमें शेष बची है, सो तुम पाञ्चालकी कन्या कृष्णाकी बाजी रक्खो, उस बाजीसे खेलकर अपनेको फिर जीतलो। युधिष्ठिर बोले, कि जो न नाटी न लम्बी, न दुबली न मोटी है, उस नीले घुंघरीले बालवाली शरदकालके पद्म-समान नेत्रवती, शारदीय पद्मसदृश गन्धवती, शारदीय पद्मपर [illegible] लक्ष्मीके समान रूपवती और लावण्य [illegible] आदिमें लक्ष्मीरूपिणी है, उसी पाञ्चालकुमारीकी बाजी रखकर तुमसे खेलता हूं; [illegible] लक्ष्मीके समान गुण- [illegible] स्त्रीकी पुरुष कामना करता है, [illegible] चाहे रूप सम्पद, चाहे शील-सम्पद [illegible] शास्त्रकी कहिये, इस विषयमें जो [illegible] है, सरलता तथा प्रिय-कहने- [illegible] धर्म अर्थ तथा कामके लिए करने- [illegible] जो मनुष्य इच्छा करता है, [illegible] है, और सबके

पीछे सोती और सबसे पहिले जागती है और गौ तथा भेड़ चराने-वाले तक सबलोगोंका समाचार लेती है; पसीनेके बूंदोंसे जिसका मुखमण्डल कमल और बेलाके समान शोभा धारण करता है, जो वेदीसदृश सुमध्यमा दीर्घ-केशा ताम्रवदना तथा न बहुत लोमयुक्त है, इसी प्रकारकी सर्व्वाङ्ग-सुन्दरी पाञ्चाल कुमारी द्रौपदीकी बाजी रखकर खेलता हूं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि धीमान धर्म्म-राजके इतनी बात कहने पर सभामें बैठे बूढोंके मुखसे "धिक्कार है" ऐसे शब्द निकलने लगे। हे महाराज! सम्पूर्ण सभा एकही बार हिलोड़ उठी, राजोंको शोकोंने घेर लिया, भीष्म, द्रोण, कृप, आदिको पसीना निकलने लगा, विदुर सिर थामकर मानो चेत खोके नीचे मुह किये सर्पकी भांति स्वासा छोड़ते हुए चिन्तामें मग्न हुए। परन्तु धृतराष्ट्र बहुत प्रसन्न होके बार बार यह पूछने लगे, कि क्या जीता, क्या जीता, बाहरके भावसे चित्तके भावकी छुपा नहीं रुके। कर्ण दुःशासन आदिके साथ बहुत हर्षयुक्त हुए; पर दूसरे सभ्योंके नेत्रोंसे वारिधारा निकलने लगी। जीतनेके अहङ्कारसे उछलता हुआ सुबलकुमार यह कहके, कि यह जीता उन पाशोंको फिर ले लिया।

एकसठ अध्याय समाप्त।

दुर्योधन बोला, कि हे [illegible] पाण्डवोंकी मनमोहनेवाली प्यारी नारी द्रौपदीको लेते आओ, वह [illegible] शीघ्र आके घर झाड़े और वहा दासियोंके साथ रहे। विदुर बोले कि हे मन्दबुद्धे! तुम बड़े मूर्ख हो, इसीसे ऐसी कठोर बात कही। तुम [illegible] [illegible] हो तुम्हें इसका [illegible] तुम [illegible] [illegible] [illegible]

कर रहे हो। रे दुरात्मा। सम्पूर्ण क्रोध-पूरित महाविषयुक्त सर्पसमूह तुम्हारे सिर पर बैठे हैं, उनको अब अधिक क्रोधित करके तुम यमराजका पाहुना मत बनो। मेरी समझमें कृष्णा किसी प्रकारसे दासीपन प्राप्त नहीं कर सक्ती है, क्योंकि युधिष्ठिरने अपनी प्रभुताई खोकर उसे बाजीमें रखा था। बांस जैसे अपने नाशके लिये फल धारण करता है, वैसेही यह धृतराष्ट्रका पुत्र दुर्य्योधन चौसड़ खेलता है, इस बिनाश-कालमें वह नहीं समझ सक्ता है, कि चौसड़ बड़े भयावने बैरका कारण होता है। अन्य जनके मर्म्मस्थानमें आघात और पुरुषार्थ पर अहङ्कार न करना चाहिये, चौसड़ आदि नीच कार्य्योंसे शत्रुको वशमें नहीं लाना चाहिये, और मनुष्योंके जिन वाक्योंसे दूसरोंके चित्तमें हलचल मच सक्ती है, ऐसी जलानेवाली, नरकलानेवाली वाणी कदापि न कहनी चाहिये। एक मनुष्यके मुखसे लम्बी चौड़ी बातें उचारी जाती हैं, पर उससे घायल होकर दूसरा मनुष्य निशदिन शोकमें डूबा रहता है, वह सब वाक्यरूपी शेल अन्य मनुष्योंके मर्म्मस्थानमें ही जा गिरते हैं, इसलिये पण्डित पुरुषको औरोंसे कदापि वैसी बात न कहनी चाहिये, यह प्रसिद्ध है कि एक बकरा किसी मछुहेको बार लगी हुई मछली पकड़नेको बंसीको निगल गया था, इसपर मछुहेने ज्योंही उस बकरेके सिरको धरती पर रखके उक्त अस्त्रको खींचा, त्योंही बकरेका गला कट गया, अतएव तुम पाण्डवोंसे वैसी भयावनी शत्रुता मत करो, तुम जैसी कड़ी बातें कहते हो, पृथा-पुत्र वैसी एकभी बात नहीं कहते। नीच मनुष्य कुत्तोंकी तरह क्या वानप्रस्थ क्या गृहमेधी क्या पूर्ण विद्यावान तपस्वी, सबको ऐसा कठोर वचन कहा करता है। धृतराष्ट्रका पुत्र अब यह नहीं समझ सक्ता है, कि ठगपन नरकको भयावने द्वारोंके समान है; चौसड़के प्रबन्धमें कुरुओंके बहुतेरे दुःशासन के साथ उसके साथी बने हैं। यदि लौकी सदा जलमें डूबे, पत्थर जल पर बहता रहे और नाव जलमें डूब जावे तथापि धृतराष्ट्रका मूर्ख पुत्र दुर्य्योधन मेरे पथ्यरूपी वचनोंपर ध्यान नहीं देता है; इससे निश्चय जान पड़ता है, कि यह कुरुओंका नाशकारी होगा, जब मित्रोंके युक्तिपूर्ण हितकारी पथ्य-समान वचन सुने नहीं जाते हैं, केवल लोभकी ही वृद्धि होती है, तब अवश्यही कठोर सर्व्वनाशी विनाश उपस्थित होगा।

बासठ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि धृतराष्ट्रकुमार दुर्य्योधनने अहङ्कारसे उन्मत्त होकर "क्षत्तापर धिक्कार है" यह कटुवचन कहके सभामें स्थित आज्ञावाहीकी ओर निरीक्षण किया और प्रधान आर्य्योंके समाजमें उससे यह वचन बोला, कि आज्ञावाही! तुम जाके द्रौपदीको ले आओ, पाण्डवोंसे तुम्हें कोई भय नहीं है यह क्षत्ता केवल भयवशही विपरीत बात कहा करते हैं, विशेष यह सदा हमारी अवनतिकी कामना करते हैं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि कुत्ता जैसे सिंहके भवनमें प्रवेश करता है, वह सूतपुत्र आज्ञावाही राजाकी आज्ञा पाय वैसेही पाण्डवोंके वासगृहमें शीघ्र जाके उनकी रानी द्रौपदीके निकट जाकर उससे यह वचन बोला, कि द्रौपदि! युधिष्ठिरके चौसड़से उन्मत्त होने पर दुर्य्योधनने तुम्हें जीत लिया है, सो तुम धृतराष्ट्रके भवनमें चलो। हे याज्ञसेनि! दासीका कार्य्य करानेके निमित्त मैं तुम्हें ले जाऊंगा। द्रौपदी बोली, कि आज्ञावाही! तुम ऐसी बातें क्योंकर कहते हो? कौन राज-कुमार स्त्रीको दाव रखकर खेलता है? चौसड़-के नशेमें उन्मत्त होने पर राजा युधिष्ठिर

निःसन्देह मूढ़ बने थे, नहीं तो क्या उनको कोई दूसरी दावकी वस्तु नहीं थी, आज्ञावाही बोला, कि जब उनको कोई दूसरी वस्तु शेष नहीं थी, तभी अजातशत्रु युधिष्ठिरने तुम्हे दाव लगाकर खेला था। हे राजपुत्री! उस राजाने पहिले भाइयोंको, पीछे अपनेको, आगे तुमको दावमें रखा था। द्रौपदी बोली, कि हे सूत-पुत्र! तुम एकवार जाओ, सभामें उस जुआरीसे पूछो, कि उन्होंने पहिले अपनेको हारा, वा मुझे? हे सूतपुत्र! तुम पहिले यह बूझ आओ, पीछे ले जाना, मैं राजाका अभिप्राय जानकर अन्तको दुःखी होकर जाऊंगी।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि उस समय आज्ञावाहीने सभामें लौटकर द्रौपदीका वह वचन सबको सुनाया; नरेन्द्रोंमें बैठे हुए युधिष्ठिरसे यह पूछा, कि द्रौपदीने आपसे पूछा है, कि किसके प्रभु बनके तुमने हमें चौसड़में हारा है? क्या पहिले अपनेको हारा है, वा मुझे? आज्ञावाहीने यह बात कही, पर युधिष्ठिर मानो चेतन तथा जीवनशक्तिके समान बैठे रहे; उसकी बातोंका न भला न बुरा कोई उत्तर नहीं दिया। तब दुर्योधन बोला, कि पाञ्चाली यहीं आके इस प्रश्नको पूछे, उसके और इनके बीच जो कुछ बातें हों, उन्हें सब लोग सुनें।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि सूत आज्ञावाही दुर्योधनकी आज्ञाके वशमें चलकर मानो [illegible] द्रौपदीसे बोला, कि राजपुत्री! वहां सभामें सब तुम्हें बुलाते हैं; समझ पड़ता है, कि कौरवोंकी नाशकी दशा आ पहुंची है। हे [illegible] अल्पबुद्धि दुर्योधन जब तुमको सभामें ले जानेका प्रयत्न करते हैं, तब वह फिर [illegible] नहीं बच सकेंगे। द्रौपदी [illegible] रही है। [illegible] पूछ आ [illegible]

है; पर लोग धर्म्महीको एक मात्र परम पदार्थ कहते हैं। वह रक्षित होके, तो अवश्यही हमारे लिये शान्तिका विधान करेगा। वह धर्म्म कौरवोंको न त्याग देवे। तुम कौरवोंके निकट जाकर हमारा यह धर्म्मानुसारी-वचन पूछो, वे सब नीतिमान श्रेष्ठ धर्म्मात्मा लोग निश्चय करके जो कहेंगे, मैं अवश्य वही करूंगी आज्ञावाहीने द्रौपदीका वह वचन सुनकर सभामें जाके प्रकाश किया; पर सभ्यगण दुर्योधनका बड़ा आग्रह देखकर नीचे मुंह किये बैठे रहे, कुछ नहीं बोले।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भरतश्रेष्ठ! इस बीचमें युधिष्ठिरने दुर्योधनके उस अभिप्रायको सुनकर द्रौपदीके पास एक विश्वासी दूतको यह कहके भेज दिया, कि पाञ्चाली यद्यपि रजस्वला होनेके कारण अधोनीवी तथा एक वस्त्र पहिने हुई है, तथापि रोते रोते ससुरके सामने आवे। हे महाराज! उस बुद्धिमान दूतने कृष्णाके भवनमें शीघ्र जाकर धर्म्मराजके निश्चय किये हुए मतको प्रकाश किया। इधर आज्ञावाहीका वचन सुनकर दुःखसे आच्छादित, दीनभावयुक्त पाण्डवगण प्रतिज्ञाद्वारा बंधे रहनेके कारण कुछ निश्चय नहीं कर सके, कि क्या करना चाहिये। अनन्तर राजा दुर्योधनने उन्हे दुःखी देखकर प्रसन्न होके सूतको आज्ञा की, कि आज्ञावाही! उसे यहीं ले आओ, कौरवगण प्रत्यक्षमें उनके प्रश्नोंका उत्तर देंगे।

दुर्योधनके यह वचन कहने पर उसके वशीभूत आज्ञावाही सूतपुत्र द्रुपदकुमारीके क्रोधसे भीत होकर फिर सभ्योंसे बोला कि मैं कृष्णासे क्या कहूंगा? तब दुर्योधनने कहा, दुःशासन! मेरा यह दुर्बुद्धि सूतपुत्र भीमसे डर कर रहा है सो तुम स्वयं द्रौपदीको पकड़ कर ले आओ, स्वाधीनताहीसे हाथ पैर हुए शत्रु, तुम्हारा क्या कर सकेंगे? अनन्तर उस राज [illegible]

आज्ञा सुनकर, नेत्रोंको लाल किये उठा, और महारथी पाण्डवोंके वासगृहमें प्रवेश करके राजपुत्री द्रौपदीसे यह बोला, कि पाञ्चाली! आओ, आओ तुम हारी गयी हो, हे कृष्णा! अब लज्जा तज दुर्य्योधनको निहारो, हे विशाल कमल-नयना! अब कुरुओं की सेवा करो, हमने धर्म्मानुसार तुम्हें प्राप्त किया है; आओ सभामें चलो। दुःशासनके इस प्रकार कहने पर द्रौपदी अति कातर होकर उठी अश्रुद्वारा मैले हुए मुखमण्डलको हाथोंसे पोंछ कर जिधर कुरुश्रेष्ठ वृद्ध राजा धृतराष्ट्रकी नारी-गण थीं, उसी ओर कातर भावसे चली। तब दुःशासन क्रोधसे भरकर वेगपूर्व्वक राजेन्द्रपत्नी द्रौपदीके पीछे कहता हुआ दौड़ा और उसके काले लम्बे घुघराले बालको पकड़ लिया। जो केश राजसूय महायज्ञमें मन्त्रोंसे पवित्र किये हुए जलद्वारा सिक्त हुए थे, उन्हें धृतराष्ट्रके पुत्रने पाण्डवोंके बलका निरादर करके पकड़ लिया। दुःशासन अति लम्बे बालवाली; दुःखिनी नाथवाली द्रौपदीको अनाथवतीके समान सभाके पास लाकर जैसे वायु केलेको खींचता है, वैसेही खीचने लगा। वह खींची जाती हुई मुड़े शरीरवाली द्रौपदी धीरेसे बोली, कि मैं रजस्वला हूं और भर्त्ताके दुःखहारी जयशील कृष्णाको बचाने अर्थ पुकारने लगी।

दुःशासन बोला, कि हे याज्ञसेनि! चाहे तुम रजस्वला-हो, वा एकवस्त्रा हो अथवा वस्त्र रहितहो क्यों न हो, जुएमें जीती गयी हो, अतएव दासी बनी हो, दासियोंको स्वामीकी इच्छानुसार वस्त्रादि दिया जाता है।

वैशम्पायन बोले, विखरेकेशवाली आध-गिरे वस्त्र-वाली दुःशासनसे खींचीजाती हुई लज्जा-क्रोधसे जलती हुई द्रौपदी धीरेसे यह बोली:—

सभामें ये सब शास्त्रज्ञ क्रियावान् इन्द्रके समान मेरे बड़े लोग बैठे हैं, इनके आगे मैं ऐसे नहीं खड़ी रह सकती हूं। रे दुष्टकर्म्मकारिन्! अनार्य्य कर्म्म मत कर, मुझे सभामें वस्त्रहीन मत कर, रे दुष्ट! यदि इन्द्रादि देवभी तेरी सहायता करेंगे, तौभी पाण्डव तुझे क्षमा न करेंगे। महात्मा धर्म्मपुत्र धर्म्ममें स्थित हैं, और धर्म्म सूक्ष्म है, उसे महात्माही जान सकते हैं, मैं गुणोंके अतिरिक्त अपने पतिके दोषोंको वचनसे भी सुनना नहीं चाहती। कुरुवीरोंके मध्यमें जो तू मुझ रजस्वलाको खींचता है, सो कर्त्तव्य नहीं है, तुझे कोई भी कुत्सित नहीं कहता है, निश्चय ये सब तेरे मतमें है। धिक्कार है, भरत वंशी क्षत्रियोंको, निश्चय इनसे धर्म्म नष्ट होगया और क्षत्रियोंका चरित्रभी नष्ट होगया जो आज सभामें बैठे स कुरुवंशी कुरु-समुद्रवेलाको नष्ट देख रहे हैं द्रोण, भीष्म महात्मा विदुर और राजा धृतरा इन सबको कुछ भी वीर्य्यबल नहीं है, जे मुख्यलोग मेरे परम धर्म्मको कुछभी नहीं सुनते।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, इस प्रकारसे रोती हुई वह सुमध्यमा कुपितपतियोंको कटाक्षोंसे देखने लगी, और अपने कटाक्षसे पाण्डवोंका क्रोध प्रदीप्त कर दिया। पाण्डवोंको राज्य, धन, रत्न और मुख्य वस्तुओंके नाश होनेसे ऐसा दुःख नहीं हुआ था, जैसे लज्जा और क्रोधभरे द्रौपदीके कटाक्षोंसे हुआ। दुःशासनने जब देखा, द्रौपदी अपने पति पाण्डवोंको देखती है, तब संज्ञाशून्य द्रौपदीको बलसे खींचकर शब्द सहित हंसकर बोला, तू तो दासी है। कर्ण यह वचन सुनकर शब्दसहित हंसता हुआ प्रसन्न होकर दुःशासनकी प्रशंसा करने लगा और गान्धारदेशके सुबलराजाका पुत्र शकुनि भी दुःशासनकी प्रशंसा करने लगा। कर्ण शकुनि और धृतराष्ट्रके पुत्रोंको छोड़कर वहां और जितने सभासद थे सबको सभामें द्रौपदीको खिंचती देखकर महादुःख हुआ।

भीष्म बोले, हे सुभगे! धर्म्म अत्यन्त सूक्ष्म है, अतएव तुम्हारे प्रश्नका ठीक विवेक हम नहीं कर सकते; जो पुरुष स्वामी नहीं है, सो पराये धनको पण नहीं कर सकता; पत्नी स्वामीके आधीन है; युधिष्ठिर ऋद्धिभरी सब पृथिवीको छोड़ सकते हैं, परन्तु धर्म्मको नहीं छोड़ेंगे; इन्होंने पहिले कहा था, मैं जीता गया इसलिये हम तुम्हारे प्रश्नका उत्तर ठीक नहीं दे सकते हैं; पर जुएमें अद्वितीय (असामान्य) शकुनिने तुम्हें पण करनेको कहा अर्थात् राजाने अपनी इच्छासे तुम्हें पण नहीं किया और युधिष्ठिर इस कपटको छल नहीं मानते, अतएव हम ठीक नहीं कह सकते।

द्रौपदी बोली, राजाने जुएमें अभ्यासरहित होकरभी, जुएमें निपुण अनार्य्य द्यूतप्रिय दुष्टात्मा व्यक्तियोंसे अपने आपको हार करभी मुझे सभामें क्यों बुलाया और शत्रुओंके मनोरथ सफल किये; कौरव और पाण्डवोंमें अग्रगण्य [illegible] भावयुक्त, छलमें प्रवृत्त, ज्ञान [illegible] और निरादर सहित होकर पहिले [illegible] को हारा, पीछे यह जुआ खेला। [illegible] सभामें जितने कुरुवंशी बैठे हैं, यह पुत्र [illegible] के नाथ हैं, सो सब लोग मेरे प्रश्नका [illegible] दें।

[illegible] बोले, इस प्रकारसे रोती और [illegible] पतियोंको देखती हुई [illegible] करुण, कातर वा, कृष्णारावचन [illegible] विलपती हुई, रजस्वला, पतित- [illegible] द्रौपदीको देखकर [illegible] पर महाक्रोध हुआ।

[illegible] अध्याय समाप्त।

[illegible] बोले, हे युधिष्ठिर! जुआरीलोगोंके [illegible] हैं, सो वे उनको जुएमें [illegible] करते हैं। [illegible]

था इसी प्रकारसे और राजोंने जो जो धन भेट किया था, वाहन, धन, कवच, शस्त्र, राज्य, अपना शरीर और हम सबको जुएमें आप हारगये, तब इतना क्रोध हमको नहीं भया; क्योंकि हमारे सर्व्वस्वके आप स्वामी हैं; हम इसको अधर्म्म मानते हैं, जो आपने द्रौपदीको पण किया; यह बाला इस कर्म्ममें अयोग्य थी, यह पाण्डवोंको पति प्राप्त करकेभी आपके कारण क्षुद्र दुरात्मा पापी कौरवोंसे क्लेश पा रही है, हे राजन्! इसके कारण मै अपना क्रोध तुम्हारे पर डालता हूं, हे सहदेव! अग्नि ले आओ हम तुम्हारे सामने बलसे इनका हाथ जलावेंगे।

अर्ज्जुन बोले, हे भीमसेन! तुमने पहिले ऐसी वाणी कभी नहीं कही थी; निश्चय ज्ञात होता है, कि तुम्हारा धर्म्म लज्जारहित शत्रुओंने नाश कर दिया, शत्रुओंका मनोरथ सफल करने योग्य नहीं हैं; तुम उत्तम धर्म्महीका आचरण करो; धर्म्मात्माओंको ज्येष्ठभाईका अनादर करना नहीं चाहिये, राजा क्षत्रियोंके धर्म्मको स्मरण करके शत्रुओंकी (उन्हीकी) इच्छानुसार जुआ खेलते हैं, सो कर्म्म हमारी कीर्त्तिको बढ़ानेवाला है।

भीमसेन बोले, हे अर्ज्जुन! यदि हम ऐसा न समझते, तो जलती हुई अग्निमें बलसे इनके हाथोंको जला देते।

श्रीवैशम्पायनजी बोले इस प्रकार से पाण्डवोंको दुखित और द्रौपदीको [illegible] देखकर धृतराष्ट्रका पुत्र विकर्ण [illegible] राजालोगो! द्रौपदीने जो प्रश्न किया है उसका उत्तर दो, क्योंकि [illegible] शीघ्र ही नरक [illegible] हे भीष्म और धृत- राष्ट्र [illegible] महा- बुद्धिमान विदुर, [illegible] हैं, [illegible] और [illegible] [illegible]

क्यों नहीं देते? और और, जो अन्यदेशोंके राजालोग हैं, सो काम और क्रोधको छोड़कर मतिके अनुसार उत्तर दें, द्रौपदीने सभामें यह वाक्य कहे। इस प्रकारसे विकर्णने बहुतवार सभासदोंसे कहा परन्तु किसीने अच्छा वा बुरा कुछभी उत्तर न दिया। विकर्णने सब राजोंसे पुनः कहकर हाथसे हाथको लगाकर सांस लेकर ऐसा कहा, हे पृथिवीपालगण! आपलोग इस प्रश्नको कहो वा मत कहो, मैं यहां जो न्याय समझता हूं सो कहता हूं। राजोंके निमित्त चार दुष्कर्म कहे हैं, मृगया (शिकार), मद्यपान, जुआ, और स्त्रियोंपर अधिक आसक्ति, जब पुरुष इनकामोंमें आसक्त होता है, तो धर्मको छोड़कर गमन करता है और इन सबके किये काम जगत्में प्रण नहीं माने जाते। सो यह द्रौपदी-पण युधिष्ठिरने मत्त होकर और जुआरियोंसे प्रेरित होकर किया है, ये अनिन्दिता द्रौपदी साधारण रूपसे सब पाण्डवोंकी स्त्री हैं और राजा अपने शरीरको हार चुके; तब इसको पण किया, और शकुनिने कहा, तब युधिष्ठिरने इसे पण किया, ये सब हेतु विचारकर मैं जानता हूं कि द्रौपदी जीती नहीं गयी। विकर्णके ये वचन सुनकर सब सभासद विकर्णकी प्रशंसा और शकुनिकी निन्दा करने लगे। ये शब्द बहुत समय तक रहा, जब समाप्त भया तो राधापुत्र कर्ण महाक्रोध करके हाथ पकड़कर बोला :—

विकर्णके अनेक प्रकारके विपरीत लक्षण दीखते हैं, जो उसीके विनाशके मूल हैं, जैसे वनमेंसे उत्पन्न अग्नि वन ही को नाश करती है। ये सब राजालोग द्रौपदीसे पूछनेपरभी कुछ न बोले, क्योंकि वे जानते हैं, कि द्रौपदी धर्मसे जीती गयी है, हे धृतराष्ट्रके पुत्र! तुम केवल मूर्खतासे बकते हो, क्योंकि तुम बालक होकर सभाके बीचमें बूढ़ोंकीसी बात करते हो। हे दुर्योधनानुज! तुम धर्मको ठीक नहीं जानते, इसीसे जिती हुई द्रौपदीको बिन-जिती बताते हो, हे धृतराष्ट्रपुत्र! जब पाण्डवाग्रज युधिष्ठिरने जुवेमें अपना सर्व्वस्व लगादिया तब द्रौपदीको बिना जिती कैसे कहते हो? हे भरतर्षभ। द्रौपदीको युधिष्ठिरके सर्व्वस्वमें थी तब तुम द्रौपदीको अजिता किस हेतु मानते हो, द्रौपदी पाण्डवोंके वचनसे जीत हुई और अनुज्ञात हुई तब कैसे अजिता हो सकती है; यदि तुम कहो कि इसको एक वस्त्र धारण किये सभामें लाना अधर्म हुआ सोभी मैं कहता हूं तुम सुनो। हे कुरुन देवतोंने स्त्रियोंके निमित्त एकही पति व है और यह अनेक की स्त्री है अत निश्चय वेश्या है, इसको सभामें ल एकवस्त्रा वा नङ्गीही होना हमारी बु कोई भी आश्चर्य्य नहीं है। जो पाण्डवे धन था, उसमें यह भी थी; इस कार शकुनीने इसे धर्मसेही जीता है, हे दुःशास यह विकर्ण बालक है और पण्डितोंके बाद करता है। अतएव तुम पाण्डव द्रौपदीके वस्त्र उतार लो।

हे जन्मेजय। पाण्डवलोग यह वचन सु कर अपना वस्त्र उतार कर सभामें बैठ ग हे राजन् तब दुःशासन सभाके बीचमें बल द्रौपदीका वस्त्र खींचने लगा।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, जब द्रौपदीका व खींचा गया, तब उसने कृष्णको स्मरण किय हे गोविन्द! हे द्वारिकावासिन्! हे गोपीज प्रिय! हे केशव! क्या तुम नहीं जानते कि कौरवोंने मेरा अपमान किया है! हे नाथ हे रमानाथ! हे व्रजनाथ! हे दुःखनाशन! जनार्दन! कौरवसमुद्रमें डूबती हुई मेरी र करो! हे कृष्ण! हे कृष्ण! हे महायोगिन् हे विश्वात्मन्! हे विश्वभावन! हे गोविन्द

कौरवोंके बीचमें मुझ दासीकी रक्षा कीजिये। हे राजन्! इस प्रकारसे जगदीश्वर कृष्णाकी करुण कर अपना मुख आच्छादित करके द्रौपदी सभामें रोयी। उसी समय द्रौपदीका वचन सुनकर कृष्ण करुणासे आर्द्र हो गये; अपनी शय्याको छोड़ पैरोंही दौड़े। जब द्रौपदी छूटनेके लिये कृष्ण! विष्णु! नरनारायण! इस प्रकारसे रक्षाके निमित्त पुकारने लगी, तब महात्मा धर्मरूपी कृष्णने आकर उसके वस्त्रमें वास किया। हे राजन! जब द्रौपदीका वस्त्र खींचा गया, तो वस्त्रके भीतरसे अन्यवस्त्र और उसमेंसे अन्य, इस प्रकारसे रंग बिरंगके अनेक वस्त्र निकलने लगे। यह फल धर्म पालनका था, तब सभामें महा हाहाकार-का शब्द उठा; इस महा अद्भुत कार्य्यको देखकर सब राजालोग द्रौपदीकी प्रशंसा और धृतराष्ट्रपुत्रकी निन्दा करने लगे, तब राजोंके मध्यमें क्रोधमें ओठ फरकाते हुए, हाथसे हाथको मलकर, और शब्दसे भीमने यह प्रतिज्ञाकी।

भीमसेन बोले, हे लोकके वासी क्षत्रियो! तुम सब मेरे यह वचन सुनो जो पहले किसीने नहीं कहे और न कोई कहेगा, यदि मैं इस पापी दुर्बुद्धी भरतकुलकलङ्क, दुःशासनका हृदय फाड़कर चीरकर युद्धमें रुधिर न पीयूं तो हे राजालोगो! मैं अपने पुरुषालोगोंकी गति को प्राप्त न होऊं।

वैशम्पायनजी बोले भीमके ऐसा कठिन [illegible] वचन सुनकर सब लोग उनकी प्रशंसा और धृतराष्ट्रपुत्रकी निन्दा करने लगी, [illegible] सभाके बीचमें द्रौपदीके वस्त्रोंका ढेर [illegible] दुःशासन थक कर और लज्जित होकर बैठ रहा, इसप्रकारसे पाण्डवोंको [illegible] सभासदोंके मुखसे धृतराष्ट्रपुत्रको [illegible] ऐसा महाशब्द निकला. धृत- [illegible] कौरवलोग क्यों नहीं कहते हैं? तब हाथ उठाकर सब सभासदोंको निवारण करके सब धर्मज्ञोंमें श्रेष्ठ विदुर यह बोले, हे सभासदो! द्रौपदी प्रश्न करके अनाथके समान रोती है, तुम लोग उत्तर नहीं देते, इससे धर्म नष्ट होता है। राज-सभामें दुःखी, जलते अग्निके समान प्रवेश करता है, परन्तु सभासद सत्य और धर्मसे उसको शांत करते हैं, अतएव आर्य्य पुरुष सत्यधर्मसे सत्य प्रश्नको काम क्रोध त्याग कर वर्णन करें। हे राजालोगो! जिस प्रकारसे विकर्णने प्रश्नका उत्तर दिया था, वैसेही आपलोगभी बुद्धिके अनुसार उत्तर कहिये, जो सभासद धर्मको जानकर सभामें प्रश्नका उत्तर न दे, सो उस पापके आधे फलका भागी होता है, और जो धर्मदर्शी सभासद प्रश्नके उत्तर को झूठा वा उलटा कहे, सो झूठके पूरे फलको प्राप्त करता है। पण्डित लोग इसही स्थानमें इस प्रह्लाद और आंगिरस मुनिके इतिहासका उदाहरण देते हैं। प्रह्लाद नामक दैत्यराज थे और उनके पुत्रका नाम विरोचन था, सो एक कन्याके निमित्त आङ्गिराके पुत्र सुधन्वासे उसका विवाद हुआ; हमने सुना है, कि उन दोनोंसे ऐसा विवाद हुआ कि, एक कहता था हम कुलीन हैं और दूसरा कहता था हम कुलीन हैं। इसबादमें दोनोंने प्राण पर्य्यन्त पण किया, तब उन दोनोंने जाकर प्रह्लादसे पूछा, कि तुम सत्य कहो हम दोनोंमें कुलीन कौन है? प्रह्लाद सुधन्वाको देखकर असत्य बोलनेसे डरे, तब सुधन्वा क्रोधसे ब्रह्म-दण्डके समान जलता हुआ बोला, हे प्रह्लाद! यदि तुम झूठ कहोगे वा झूठ न कहोगे, तो इन्द्र तुम्हारे शिरको वज्रसे [illegible] कर देगा। प्रह्लाद सुधन्वाका यह वचन सुनकर पीपलके पत्तेके समान कांपने लगे, तब प्रह्लाद महातेजस्वी कश्यप मुनिके पास जा पूछने लगे। प्रह्लाद बोले, हे महाभाग! तुम देव, असुर और ब्राह्मणोंके

सब धर्म्मोंको जाननेवाले हो, यह धर्म्मकष्ट उपस्थित है, इससे कहिये कि जो प्रश्नके उत्तरको न दे अथवा उल्टा उसको कौन लोक मिलते हैं।

कश्यप बोले, हे प्रह्लाद! जो प्रश्नके उत्तरको जानता हो और काम क्रोध वा भयसे न कहे उसके गलेमें वरुणकी फांसी सहस्रवार पड़ती है और जो साक्षी दोनों पक्षोंकी बात कहे सोभी अपने निमित्त हजार वरुणपाश ग्रहण करता है; उसको एक वर्ष पूर्ण होनेसे एकपाश छूटता है, अतएव जाननेवाले पुरुषको सत्यही कहना चाहिये। जिस सभामें अधर्म्मसे धर्म्म बद्ध हो और सभासद उस असत्यको न निकाल, वहां सभासद अधर्म्मसे विद्ध होते हैं। उस पापका आधाभाग सभापतिको प्राप्त होता है, एक चरण कर्त्ताको और एक चरण उन सभासदोंको प्राप्त होता है, जो निन्दितकी निन्दा नहीं करते। जहां निन्दायोग्यकी निन्दा करी जाती है, वहां सभापति और सभासद पापसे मुक्त हो जाते हैं, और वह पाप केवल कर्त्ताहीको प्राप्त होता है। हे प्रह्लाद। जो पूछनेवालेसे मिथ्या कहते हैं, सो सात पहले और सात आगेके यज्ञादिको नष्ट करते हैं, जो दुःख छीनेहुए धनवालेको होता है, जो पुत्र मारनेवालेको, ऋणीको, अपने धनसे नष्टको, पतिसे हीन स्त्रीको, राजासे पकड़े हुए को, अपुत्र स्त्रीको, व्याघ्रसे आहतको, सौतियोंसे नष्टको, और जो दुःख सौतवाली स्त्री को होता है; वह सब दुःख देवतोंमें समान कहे हैं, जो झूठ कहता है, उसको यह सब दुःख प्राप्त होते हैं। सुननेसे, धारण करनेसे, और प्रत्यक्ष देखनेसे साक्षी कहता है, अतएव साक्षी सत्य कहनेसे धर्म्म और अर्थसे नष्ट नहीं होता है।

कश्यपका ऐसा वचन सुनकर प्रह्लादने अपने पुत्रसे कहा, तुझसे सुधन्वा श्रेष्ठ हैं, मुझसे अङ्गिरा श्रेष्ठ हैं, और सुधन्वाकी माता तेरी मातासे श्रेष्ठ है, हे विरोचन! यह सुधन्वा अब तेरे प्राणोंका स्वामी है।

सुधन्वा बोले, तुमने पुत्र स्नेह छोड़कर धर्म्मको ग्रहण किया; अतएव मैं तुम्हारे पुत्रको तुम्हें देता हूं, अब ये सौ वर्ष पर्य्यन्त जीवें।

विदुर बोले, हे सभासदो! आप इस प्रकारसे धर्म्मको जानकर द्रौपदी के प्रश्नका उत्तर दीजिये।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि विदुरके वचनको सुनकर राजालोग कुछ न बोले, कर्णने दुःशासनसे कहा, तुम इस दासीको घरमें पहुंचा दो। तब कांपती हुई, लज्जावती, पाण्डवोंको देखती हुई तपस्विनी द्रौपदीको, सभाके बीचमें दुःशासन खींचने लगा।

६४ अध्याय समाप्त।

द्रौपदी बोली, पहिले मेरे प्रश्नका उत्तर देना उचित था, सो किसीने न दिया। मु[illegible] यह बलवान् बलसे खींचता है, अतएव [illegible] अत्यन्त व्याकुल हुई हूं, इस कुरुसभामें स[illegible] कौरवोंको प्रणाम करती हूं। यह अपरा[illegible] मेरा नहीं है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि जब दुःशासन उसे खींचा तो वह तपस्विनी द्रौपदी सभामें गि[illegible] गयी और यों कहकर रोने लगी।

द्रौपदी बोली, जिस मुझे स्वयंवरके रङ्ग स्थानमें आये राजोंके अतिरिक्त किसीने भ[illegible] कहीं नहीं देखा था, सो मैं आज सभामें प्रा[illegible] हुई हूं, जिसको घरमें कभी सूर्य्य और वायुने भ[illegible] नहीं देखा था; इस मुझे आज सभामें सब दे[illegible] रहे हैं, जो पाण्डव कभी मुझे छूते हुए वा[illegible] परकी क्षमा नहीं करते थे, सो इस दुष्टपर क्षम[illegible] कर रहे हैं; जान पड़ता है, कि कुछ समयह[illegible] विपरीत हो गया, जो सब कौरव लोग इ[illegible] दुःखके अयोग्य बहूका ऐसा क्लेश देख रहे हैं इससे अधिक नीचकर्म्म क्या होगा? और [illegible]

...ओंकी सभाके मध्यमें आयी, अब राजोंका धर्म्म कहां गया ? मैंने पहले सुना था कि स्त्री धर्म्मसभामें नहीं बुलायी जाती; सो सनातन धर्म्म कुरुवंशमें नष्ट होगया; पाण्डवोंकी स्त्री, धृष्टद्युम्नकी बहिन, श्रीकृष्णकी सखी ! होकर सभामें कैसे रहूं। हे कौरव लोगो ! धर्म्मराजकी महाशवर्णामें उत्पन्न धर्म्मपत्नी हूं, सो तुम सब मुझे दासी वा अदासी जो कहो सोई मैं करूं, यह कौरवोंका यश नाशक क्षुद्र दुःशासन मुझे बलसे क्लेश देरहा है, जिसे मैं बहुत काल पर्य्यन्त नहीं सह सकती। हे राजा लोगो! हे कुरुवंशियो! मुझे तुम जिती वा बिनाजिती जो मानते हो, सो मैं सुनना चाहती हूं, सुनकर वैसाही करूंगी।

भीष्म बोले, कि हे कल्याणि! हम पहलेही धर्म्मकी गति कह चुके हैं, कि उसे महात्मा लोगभी नहीं जान सकते, लोकमें बलवान् पुरुष जिसे धर्म्म कहे, सोई धर्म्म है; और वह मर्य्यादाके बाहरभी हो तोभी उत्तम कहा जाता है, धर्म्मकार्य्य भारी कठिन और सूक्ष्म है; इससे हम तुम्हारे प्रश्नका निश्चय नहीं कर सकते। हम निश्चय करके कह सकते हैं, कि बहुत शीघ्र इस कुलका नाश होनेवाला है, क्योंकि इस समय ये सब कौरवलोग लोभ मोहसे [illegible] होगये, जिन हम लोगोंको तुम बहू [illegible], सो हम इस बड़े कुलमें उत्पन्न हुए हैं, हम [illegible] धर्म्ममार्गसे पतित हो गये। हे पाञ्चालि! [illegible] इस समय ऐसा कठिन उपस्थित है, [illegible] धर्म्मको देखती हो; देखो ये [illegible] धर्म्मके जाननेवाले हैं, पर वेभी [illegible] मरेके समान बैठे हैं, मेरी [illegible] युधिष्ठिर ही प्रमाण हैं, ये हो [illegible] कह सकते हैं।

[illegible] अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि इस प्रकारसे कुररीके समान बहुत रोती हुई देवी द्रौपदीको देखकर कोईभी राजा दुर्य्योधनके भयसे न बोला, जब दुर्य्योधनने सब राजपुत्र और राजपौत्रोंको चुप देखा, तो हंसता हुआ द्रौपदीसे ऐसा बोला।

दुर्य्योधन बोला, कि हे याज्ञसेनि! यह तेरा प्रश्न उदारवीर्य्य भीमसेन, अर्जुन, सहदेव और तेरे पति नकुलके अधीन रहे, ये लोग इसका उत्तर कहें, हे पाञ्चालि! ये सब लोग आचार्य्योंके मध्यमें कहें, कि युधिष्ठिर द्रौपदीके स्वामी नहीं हैं, तेरे निमित्त ये सब युधिष्ठिरको झूठा कह दें, तो तू दासीभावसे छूट जायगी, अथवा धर्म्ममें स्थित इन्द्रके समान महात्मा धर्म्मराजही कहें, कि ये तुम्हारे स्वामी हैं वा नहीं ? इनके कहनेके पश्चात् तुम शीघ्रही एकको पति बनालो, इस सभामें ये सब कुरुवंशी लोग तुम्हारे ही दुःखसे दुःखित हो रहे हैं तुम्हारे मन्दभाग्य पतियोंको देखकर ये आर्य्य-सत्व कुछ भी नहीं बोलते।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कुरुराज दुर्य्योधनके ये वचन सुनकर सब सभासद उनकी प्रशंसा करने लगे, परस्पर वस्त्र चालनभी करने लगे, और तब उस सभामें महा हाहाकार [illegible] उठा, उस बातको सुनकर कौरवोंको सभामें महा आनन्द हुआ, सब राजालोग प्रसन्न होकर धार्म्मिक कुरुराजकी प्रशंसा करने लगे, [illegible] सब राजालोगोंने युधिष्ठिरकी ओर देखकर ये क्या कहेंगे, इस अपेक्षासे मुखकी ओर देखा, अथवा संग्राममें अपराजित अर्जुन, भीम नकुल वा सहदेव क्या कहेंगे, [illegible] कौतूहल हुआ। [illegible] [illegible]

[illegible]

तो हम कदापि क्षमा न करते; हमारे पुण्य, तप और प्राणोंके भी ये ईश्वर है, यदि ये अपनेको अजित मानें, तो हम सबही विनाजित हैं, भूमिमें चलनेवाला कोई भी मनुष्य द्रौपदीके केशको स्पर्श करके मुझसे जीता नहीं छूट सकता, तुम लोग इन मोटे और लम्बे मेरे हाथोंको देखो, इनके बीचमें आकर इन्द्रभी छूट नहीं सकता, मैं धर्मपाशमें बंधा हुआ हूं, धर्मराजके गौरव और अर्ज्जुनके निरोधसे ये सङ्कट भोगता हूं, यदि धर्मराज मुझको आज्ञा दें तो जैसे सिंह क्षुद्र हरिणोंको नाश करता है, वैसेही इन पापी धृतराष्ट्रपुत्रों को चरणसे पीस डालू।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, तब भीमसे भीष्म द्रोणाचार्य्य और विदुर कहने लगे कि जो तुम कहते हो, सो सब यथार्थ हैं, तुम सब कुछ कर सकते हो; पर इस समय क्षमा करो।

६६ अध्याय समाप्त।

कर्ण बोला, कि हे भद्रे! ये तीन पुरुष निर्द्धन होते हैं; दास, पुत्र, और पराधीन स्त्री; नियम है, दासकी स्त्री, हीन पतिवाली और दासका धन ये स्वामीहोके होते है, हे राजपुत्रि! राजा दुर्य्योधनके घरमें जाकर जो काम मिले सो करो, अब तुम्हारे पति धृतराष्ट्रके सब पुत्र है, पाण्डव नहीं। हे भामिनि! तू दूसरा पति कर ले जिससे दासीका दुःख प्राप्त न हो; दास-भावमें स्त्रियोंकी पतियोंमे कामवृत्ति अवाध्य है, यह तुम्हें मालूम है; कि नकुल, भीमसेन, अर्ज्जुन, सहदेव और युधिष्ठिर ये सब हार गये। हे याज्ञसेनि, तुम दासी होगयी और ये पराजित पाण्डव तुम्हारे पति नहीं रहे। क्या कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर जन्ममें प्रयोजन, पराक्रम और कुरुपार्थको नहीं मानते, जो पाञ्चालराज द्रुपदको पुत्रीको जुएमें लगा दिया।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि परम क्रोधी भीमसेन कर्णके ये वचन सुनकर, दुःखी होकर राजाके वशवर्त्ती और धर्मपाशसे बद्ध होनेके कारण लालनेत्र करके कर्णको जलाने हुएके समान सांस लेकर ऐसा कहने लगे।

भीमसेन बोले, कि हे राजन्! हम कर्णके ऊपर कुछभी क्रोध नहीं करते, क्योंकि इसने ठीक वैसाही कहा, जैसा दासको कहना चाहिये। हे नरेन्द्र! यदि आप द्रौपदीको पण न करते, तो क्या शत्रु लोग मेरे आगे ऐसा बोलते।

श्री वैशम्पायनजी बोले, कि भीमसेनके ऐसे वचन सुनके राजा दुर्य्योधनने चुप बैठे अचेतन युधिष्ठिरसे ऐसा कहा। हे महाराज! भीमसेन, अर्ज्जुन, नकुल और सहदेव आपकी आज्ञामें स्थित हैं, सो आप यदि द्रौपदीको अजित मानते है, तो इसके प्रश्नका उत्तर दो। कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरसे ऐसा कहकर, ऐश्वर्य्यके मदसे मोहित दुर्य्योधन अपने वस्त्रको उठाकर हंसते हुए द्रौपदीकी ओर देखकर कर्णका उत्साह बढ़ानेके निमित्त और भीमको धर्षित करनेके वास्ते केलेके खंभके समान, सब लक्षणयुक्त हाथीके सूंड़के समान सुन्दर बज्रके समान कठिन द्रौपदीके सामने बांईजङ्घा दिखलाने लगा। भीमसेन उसको देखकर लाल लाल नेत्रोंको फैलाकर सब सभाको सुनाते हुए राजोंके मध्यमें दुर्य्योधनसे ऐसा बोला, यदि मैं महायुद्धमें इसकी जांघको गदासे न तोड़ूं, तो जिन लोकोंमें मेरे पितामह लोग गये हैं उसमें न जाऊं। जैसे जलते हुए वृक्षकी जलती हुई खोखरोंमेंसे अग्नि निकलती है, तैसेही क्रोधभरे भीमसेनके सब रोम-छिद्रोंसे अग्नि निकलने लगी। विदुर बोले, हे प्रतिपीय-वंशोत्पन्न राजा लोगो! अब जो भीमसेनसे महाभय उत्पन्न हुआ, उसे देखो और जानो कि प्रारब्धवशसे कुरुवंशमें यह भयानक नीति उत्पन्न हुई है; धृतराष्ट्रके पुत्रोंने महा अन्याय

किया, जो सभामें स्त्रीसे ऐसा प्रलाप करते हैं, कुरुवंशके योग और कुशल सब नष्ट हो गये, क्योंकि यह लोग पापयुक्त मन्त्रोंका विचार करते हैं, हे कौरवो! तुम यह धर्म्म जानो, कि जहां धर्म्म नष्ट होता है, सो सभा दूषित होती है, यदि राजा अपने हारनेके पहिले द्रौपदीको हारते तो इसके ईश होते जिस धनको अनीश जूएमें लगावे, सो स्वप्नमें ऐसा धन है अर्थात् जीतनेवालेको मिल नहीं सकता, शकुनीके इस वचन को सुनकर कौरव नष्टमति होगये। दुर्य्योधन बोला, कि हे याज्ञसेनि! मैं भीमसेन अर्जुन, नकुल और सहदेवके यथाधर्म स्थित हूं, ये लोग यदि युधिष्ठिरको अनीश कह दें, तो तू दासभावसे छूट जायगी।

अर्जुन बोले, हे कौरवो! ये महात्मा कुन्तीपुत्र धर्म्मराज जूएसे पहिले हमारे स्वामी थे, परन्तु जब अपने को हार गये तब किसके ईश हो सकते हैं। आपही लोग जान लीजिये।

वैशम्पायनजी बोले, उसी समय महाराज धृतराष्ट्रके घरमें और यज्ञशालामें एक सियार (गीदड़) आकर उच्चस्वरसे बोलने लगा; गदहे [illegible] और भयानक पक्षी भी घोर शब्द करने लगे [illegible] शब्दको तत्त्वज्ञ विदुर और गान्धारीने सुना, भीष्म द्रोणाचार्य्य और विद्वान् [illegible] स्वस्ति स्वस्ति ऐसा कहने लगे। [illegible] विदुर और गान्धारीने इसे [illegible] दुःखी होकर राजा धृतराष्ट्र [illegible]।

[illegible] हे मन्दबुद्धि दुर्विनीत दुर्य्यो- [illegible] तू [illegible] सभाके [illegible] है, विशेष कर [illegible] ऐसा [illegible] कर इसके जान- [illegible] महात्मा तत्त्वबुद्धि धृत- [illegible] द्रौपदीसे ऐसा [illegible] हे [illegible]

उत्तम हो, तुम धर्म्मपरायण और प्रतिव्रता हो, जो तुम्हारी इच्छा हो, हमसे वर मांगो।

द्रौपदी बोली, हे भरतर्षभ! यदि आप मुझको वर देना चाहते हो, तो मैं मांगती हूं, दीजिये। सर्व्वधर्म्मकर्त्ता श्रीमान् युधिष्ठिर दासभावसे छूटें और मनस्वी मेरेपुत्र प्रतिविन्ध्यको कोई राजकुमार यह न कहे, कि ये दासपुत्र हैं; पहले राजपुत्र होकर राजोंसे लालित होकर इसको दासपुत्र होना अयोग्य है।

धृतराष्ट्र बोले, हे कल्याणि! हे भद्रे! जो तुमने मांगा, सो हमने दिया, परन्तु हमारे मनमें यह होता है कि तुम एक वरदानके योग्य नहीं हो, अतएव दूसरा वर मांगो हम देंगे।

द्रौपदी बोली, हे राजन्! भीमसेन, अर्जुन नकुल और सहदेव इन चारोंको धनुष और रथके समेत मांगती हूं, ये दास भावसे मुक्त हों।

धृतराष्ट्र बोले, हे महाभागे! हे नन्दिनि! जो तू चाहती सो, ऐसाही हो, अब तीसरा वर मांगो, तुम मेरी सब बहुओंमें उत्तम और धर्म्माचारिणी हो।

द्रौपदी बोली, हे भगवान्! लोभ पापका मूल है, मैं उसे करना नहीं चाहती, हे राजसत्तम! मैं तृतीय वर मांगनेमें अयोग्य हूं, वैश्यको एकवर चाहो और स्त्रीको दो राजाको तीन और ब्राह्मणको सौ वर मांगनेका अधिकार है, हे राजन्! मेरे पति पाप दासकर्म्मसे उत्तीर्ण हुए; अब अपने पुण्य कर्म्मोंसे अनेक कल्याणोंको प्राप्त कर लेंगे।

६७ अध्याय समाप्त।

कर्ण बोले, कि हमने मनुष्योंमें जितने [illegible] हमीं थी, इनमेंसे ऐसा कर्म्म किसीका भी नहीं सुना था, [illegible] पाण्डव और कौरवोंका द्रौपदी [illegible]

तो हम कदापि क्षमा न करते, हमारे पुण्य, तप और प्राणोंके भी ये ईश्वर है, यदि ये अपनेको अजित मानें, तो हम सबही विनाजित हैं, भूमिमें चलनेवाला कोई भी मनुष्य द्रौपदीके केशको स्पर्श करके मुझसे जीता नहीं छूट सकता, तुम लोग इन मोटे और लम्बे मेरे हाथोंको देखो, इनके बीचमें आकर इन्द्रभी छूट नहीं सकता, मैं धर्मपाशमें बंधा हुआ हूं, धर्मराजके गौरव और अर्ज्जुनके निरोधसे ये सङ्कट भोगता हूं, यदि धर्मराज मुझको आज्ञा दें तो जैसे सिंह क्षुद्र हरिणोंको नाश करता है, वैसेही इन पापी धृतराष्ट्रपुत्रोंको चरणसे पीस डालूं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, तब भीमसे भीष्म द्रोणाचार्य्य और विदुर कहने लगे कि जो तुम कहते हो, सो सब यथार्थ हैं, तुम सब कुछ कर सकते हो; पर इस समय क्षमा करो।

६६ अध्याय समाप्त।

कर्ण बोला, कि हे भद्रे! ये तीन पुरुष निर्द्धन होते हैं; दास, पुत्र, और पराधीन स्त्री; नियम है, दासकी स्त्री, हीन पतिवाली और दासका धन ये स्वामीहीके होते है, हे राजपुत्रि! राजा दुर्य्योधनके घरमें जाकर जो काम मिले सो करो, अब तुम्हारे पति धृतराष्ट्रके सब पुत्र हैं, पाण्डव नहीं। हे भामिनि! तू दूसरा पति कर ले, जिससे दासीका दुःख प्राप्त न हो; दास-भावमें स्त्रियोंकी पतियोंमें कामवृत्ति अवाध्य है, यह तुम्हें मालूम है; कि नकुल, भीमसेन, अर्ज्जुन, सहदेव और युधिष्ठिर ये सब हार गये। हे याज्ञसेनि, तुम दासी होगयी और ये पराजित पाण्डव, तुम्हारे पति नहीं रहे। क्या कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर [illegible]में प्रयोजन, पराक्रम और कुरु[illegible] नहीं मानते, जो पाञ्चालराज द्रुपद[illegible]की जुएमें लगा दिया।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि परम क्रोधी भीमसेन कर्णके ये वचन सुनकर, दुःखी होकर राजाके वशवर्त्ती और धर्म्मपाशसे बद्ध होनेके कारण लालनेत्र करके कर्णको जलाते हुएके समान सांस लेकर ऐसा कहने लगे।

भीमसेन बोले, कि हे राजन्। हम कर्णके ऊपर कुछभी क्रोध नहीं करते, क्योंकि इसने ठीक वैसाही कहा, जैसा दासको कहना चाहिये। हे नरेन्द्र! यदि आप द्रौपदीको पण न करते, तो क्या शत्रु लोग मेरे आगे ऐसा बोलते।

श्री वैशम्पायनजी बोले, कि भीमसेनके ऐसे वचन सुनके राजा दुर्य्योधनने चुप बैठे अचेत युधिष्ठिरसे ऐसा कहा। हे महाराज! भीमसेन, अर्ज्जुन, नकुल और सहदेव आपकी आज्ञामें स्थित हैं, सो आप यदि द्रौपदीको अजित मानते है, तो इसके प्रश्नका उत्तर दो कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरसे ऐसा कहकर, ऐश्वर्य्यके मदसे मोहित दुर्य्योधन अपने वस्त्रको उठाकर हंसते हुए द्रौपदीकी ओर देखकर कर्णके उत्साह बढ़ानेके निमित्त और भीमको धर्षित करनेके वास्ते केलेके खंभके समान, सब लक्षणयुक्त हाथीके सूंड़के समान सुन्दर बज्रके समान कठिन द्रौपदीके सामने बाईंजङ्घा दिखलाने लगा। भीमसेन उसको देखकर लाल लाल नेत्रोंको फैलाकर सब सभाको सुनाते हुए राजाओंके मध्यमें दुर्य्योधनसे ऐसा बोला, यदि मैं महायुद्धमें इसकी जांघको गदासे न तोड़ूं, तो जिन लोकोंमें मेरे पितामह लोग गये हैं उसमें न जाऊं। जैसे जलते हुए वृक्षकी जलती हुई खोखरोंमेंसे अग्नि निकलती है, तैसेही क्रोधभरे भीमसेनके सब रोम-छिद्रोंसे अग्नि निकलने लगी। विदुर बोले, हे प्रतिपेय-वंशोत्पन्न राजा लोगो! अब जो भीमसेनसे महाभय उत्पन्न हुआ, उसे देखो और जानो कि प्रारब्धवशसे कुरुवंशमें यह भयानक नीति उत्पन्न हुई है; धृतराष्ट्रके पुत्रोंने महा अन्याय

किया, जो सभामें स्त्रीसे ऐसा प्रलाप करते हैं, कुरुवंशके योगु और कुशल सब नष्ट हो गये, क्योंकि यह लोग पापयुक्त मन्त्रोंका विचार करते हैं, हे कौरवो! तुम यह धर्म्म जानो, कि जहां धर्म्म नष्ट होता है, सो सभा दूषित होती है, यदि राजा अपने हारनेके पहिले द्रौपदीको हारते तो इसके ईश होते, जिस धनको अनीश जुएमें लगावे, सो स्वप्नके ऐसा धन है अर्थात् जीतनेवालेको मिल नहीं सकता; शकुनीके इस वचन को सुनकर कौरव नष्टमति होगये। दुर्य्योधन बोला, कि हे याज्ञसेनि! मैं भीमसेन अर्ज्जुन, नकुल और सहदेवके वाक्यमें स्थित हूं, ये लोग यदि युधिष्ठिरको अनीश कह दें, तो तू दासभावसे छूट जायगी।

अर्ज्जुन बोले, हे कौरवो! ये महात्मा कुन्तीपुत्र धर्म्मराज जुएसे पहिले हमारे स्वामी थे, परन्तु जब अपने को हार गये तब किसके ईश हो सकते हैं। आपही लोग जान लीजिये।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, उसी समय महाराज धृतराष्ट्रके घरमें और यज्ञशालामें एक सियार (गीदड़) आकर उच्चस्वरसे बोलने लगा; तब हो गधे और भयानक पच्ची भी घोर शब्द करने लगे, उस शब्दको तलज्ञ विदुर और गान्धारीने सुना, भीष्म द्रोणाचार्य्य और विद्वान कृपाचार्य्य उच्चस्वरसे स्वस्ति स्वस्ति ऐसा कहने लगे। तब विद्वान् विदुर और गान्धारीने इसे घोर उत्पात जान दुःखी होकर राजा धृतराष्ट्र से कहा, वह ऐसा बोले।

धृतराष्ट्र बोले, हे मन्दबुद्धे दुर्व्विनीत दुर्य्योधन! तू नष्ट हुआ, तू कुरुश्रेष्ठोंकी सभाके बीचमें स्त्रीसे ऐसे वचन कहता है, विशेष कर धर्मपत्नी द्रौपदीसे। ऐसा कहकर दुःखसे बान्धवोंके हित-चाहनेवाले महात्मा तत्वबुद्धि धृतराष्ट्र सान्त्वनापूर्व्वक पाञ्चाली द्रौपदीसे ऐसा बोले, कि हे पाञ्चालि! तुम मेरी सब बहुओंमें उत्तम हो, तुम धर्म्मपरायण और पतिव्रता हो, जो तुम्हारी इच्छा हो, हमसे वर मांगो।

द्रौपदी बोली, हे, भरतर्षभ! यदि आप मुझको वर देना चाहते हो, तो मैं मांगती हूं, दीजिये। सर्व्वधर्म्मकर्त्ता श्रीमान् युधिष्ठिर दासभावसे छूटें और मनस्वी मेरेपुत्र प्रतिविंध्यको कोई राजकुमार यह न कहे, कि ये दासपुत्र है; पहले राजपुत्र होकर राजोंसे लालित होकर इसको दासपुत्र होना अयोग्य है।

धृतराष्ट्र बोले, हे कल्याणि! हे भद्रे! जो तुमने मांगा, सो हमने दिया, परन्तु हमारे मनमें यह होता है कि तुम एक वरदानके योग्य नहीं हो, अतएव दूसरा वर मांगो हम देंगे।

द्रौपदी बोली, हे राजन्! भीमसेन, अर्ज्जुन नकुल और सहदेव इन चारोंको धनुष और रथके समेत मांगती हूं, ये दास भावसे मुक्त हों।

धृतराष्ट बोले, हे महाभागे! हे नन्दिनि! जो तू चाहती सो, ऐसाही हो, अब तीसरा वर मांगो, तुम मेरी सब बहुओंमें उत्तम और धर्म्मचारिणी हो।

द्रौपदी बोली, हे भगवान्! लोभ पापका मूल है, मैं उसे करना नहीं चाहती, हे राजसत्तम! मैं तृतीय वर मागनेमें अयोग्य हूं, वैश्यको एकवर, चत्री और स्त्रीको दो राजाको तीन और ब्राह्मणको सौ वर मागनेका अधिकार है, हे राजन्! मेरे पति पाप दासकर्म्मसे उत्तीर्ण हुए; अब अपने पुण्य कर्म्मोंसे अनेक कल्याणोंको प्राप्त कर लेंगे।

६७ अध्याय समाप्त।

कर्ण बोले, कि हमने मनुष्योंमें जितनी रूपवती स्त्री सुनी थी, उनमेंसे ऐसा कर्म्म किसीका भी नहीं सुना था, अत्यन्त क्रोधप्राप्त पाण्डव और कौरवोंको द्रौपदी ही शांतिरूप

हुई; बिनानावके जलमें डूबते हुए पाण्डवोंको यह पाञ्चाली पार लेजानेकी नौका होगयी।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, परम क्रोधी भीमसेनने जब सब कौरवोंके मध्यमें ऐसे वचन सुने, पाण्डवोंकी उनको स्त्री गति भई तो दुर्म्मन होकर ऐसा कहने लगे।

भीमसेन बोले, कि देवल मुनिने पुरुषमें तीनज्योति लोक प्रकाशक कही है; पुत्र, कर्म्म और विद्या, इन तीनों ज्योतियोंसे प्रजा सृष्ट हुई है, अशरण अपनी अशून्य प्राणहीन और जातिच्युत होता है तब ये ही तीनों पुरुषको गति है। हे धनञ्जय सो सभामें हमारी स्त्रीके स्पर्श करनेसे हमनें इनकी ज्योति जान ली तब ऐसे पुत्र नीच कैसे न हों?

अर्ज्जुन बोले, कि हे भारत! उत्तम पुरुष नीचसे उक्त वा अनुक्त कठिन बातोंका उत्तर नहीं देते, महात्मा केवल सुतहीका स्मरण करते हैं, और को स्मरणभी नहीं करते पूजनेयोग्य महात्मा स्वयंही प्रत्युपकारको जान लेते हैं।

भीमसेन बोले, कि हे राजेन्द्र! हे भारत युधिष्ठिर! मैं यहांसे निकलता हूं इन सब आये हुए शत्रुओंको समूल नाश करता हूं। हे भारत! इनसे वादविवाद करनेसे क्या लाभ, अभी हम मारे देते हैं, आप सब पृथिवीका राज्य कीजिये। भीमसेन ऐसा कह कर छोटे तीनों भाइयोंके सङ्ग जैसे सिंहलोग क्षुद्र हरिणोंको देखते हैं, वैसेही सत्रको बार बार देखने लगे, उस समय अक्लिष्टकर्म्मा अर्ज्जुनने उनको ओर देखकर शान्त किया, परन्तु अन्तःकरणमें जलते लगे सब कान आदि कुछ मार्गोसे भीमसेनके पतङ्गे निकलने लगी; उस समय उनका मुख टेढ़ी भौंहयुत तथा ऐसा कठिन होगया जैसा युगके अन्तमें दण्डधारी यमराजका हो, तब युधिष्ठिरने उस बाहुशालीको हाथसे निवारण किया और कहा, कि ऐसा मत करो शान्त होकरवैठो।

क्रोधसे लालनेत्रवाले महाबाहु भीमसेनको निवारण करके हाथ जोड़कर धृतराष्ट्र पिताके पास गये।

६८ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, कि हे महाराज! हे भारत! हमको आज्ञा दीजिये, हम आपका कौन प्रियकार्य करें, आप हमारे स्वामी हैं, हम सदा आपकी आज्ञामें रहना चाहते हैं।

धृतराष्ट्र बोले, कि हे अजातशत्रो! तुम्हारा कल्याण हो, तुम निर्व्विघ्न कल्याणपूर्व्वक हमसे आज्ञा लेकर धनके समेत अपने राज्यका शासन करो, और मुझ बड़े इस पथ्य रूप कल्याणमय शासनको स्मरण रखो, हे प्यारे युधिष्ठिर! तुम धर्म्मकी गतिको जानते हो तुम विनीत और बड़ोंके उपासक हो। हे भारत! जहां बुद्धि है, तहां शान्ति है, तुम शान्त हो जाओ क्योंकि शस्त्र काठहीमें लगता है, पत्थरमें नहीं; जो उत्तम पुरुष है, सो वैरको नहीं जानते; गुणहीको देखते हैं, दोषोंको नहीं; विरोधभी नहीं करते; पराये कल्याण करनेवाले साधु सुकृतहीको स्मरण करते हैं, वैरको कदापि नहीं, द्वेषक्रियाको भी महात्मा नहीं देखते, हे युधिष्ठिर! विवादमें जो कठोर बात कहे, सो पुरुष अधम है,—जो उसके उत्तरमें कठोर बोले सो मध्यम है, जो उसे सुनकर भी कुछ न कहे सो उत्तम पुरुष है, कही वा बिना कही कठोर बातोंके धीर पुरुष उत्तर नहीं देते, महात्मा लोग जाननेवाले आत्मज्ञान पाकर सुकृतहीको स्मरण करते हैं, और किये हुए वैरकोभी भूल जाते हैं। साधुलोग धर्म्मकी मर्य्यादाको छोड़नेवाले नहीं होते और प्रियदर्शन होते हैं, ऐसाही तुमने इस समागममें आचरण किया, हे तात! मेरी और गान्धारीकी ओर ध्यान देकर दुर्योधनकी कठोर बातोंको हृदयमें मत रहने देना। हे भारत! मुझ अभ पर ध्यान देना, यह अपूर्व्वद्यूत मेरी अनिच्छाहीसे

हुआ है, हे राजन्। मित्रोंके देखनेकी और पुत्रोंके बल अबलको हम जानते हैं, दूससे कौरवोंको कुछभी सोच नहीं हैं जिनके तुम शासन करनेवाले हो। जहां सब शास्त्र जाननेवाले बुद्धिमान् विदुर मन्त्री हैं, तुममें धर्म्म अर्जुनमें धैर्य, भीमसेनमें पराक्रम पुरुषाग्रगण्य नकुल और सहदेवमें विनय है, वहां क्या शोच है। हे अजातशत्रो! आपका कल्याण हो। खाण्डवप्रस्थको जाओ, तुम्हारे भाइयोंमें स्नेह हो, तुम्हारा मन धर्म्मको धारण करे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भरतश्रेष्ठ। (जन्मेजय) उस प्रकार से धृतराष्ट्रकी बात सुनकर और "जो आपने कहा सो सब वैसाही होगा" यही प्रतिज्ञा करके भाइयोंके सङ्ग चले, वे लोग द्रौपदीके सङ्ग मेघके समान रथोंमें बैठकर नगरश्रेष्ठ इन्द्रप्रस्थको प्रसन्न मनसे चले।

६६ अध्याय समाप्त। द्यूतपर्व्व समाप्त।

अथ अनुद्यूतपर्व्वारम्भः।

जन्मेजय बोले, कि रत्नधनसञ्चय और बान्धवोंके समेत सब पाण्डवोंके धृतराष्ट्रकी आज्ञा सुनकर धृतराष्ट्रके पुत्रोंका मत कैसा हुआ।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे राजन्। जब बुद्धिमान् धृतराष्ट्रने पाण्डवोंको जानेकी आज्ञा दी, तब सुनतेही दुःशासन शीघ्रतासे अपने भाई दुर्य्योधनके पास गया, हे भरतर्षभ! वहां जाकर सचिवोंके समेत बैठे हुए राजा दुर्य्योधनसे दुःखित होकर यह वचन बोला।

दुःशासन बोला, कि हे महारथलोगों! जो इमने यह सब धन उपार्ज्जन किया था, सो सब इस बुड्ढेने नष्ट कर दिया। यह सब धन शत्रुओंके वशमें होगया; तब दुर्य्योधन कर्ण्ण और सुबलपुत्र शकुनी यह सब पाण्डवोंके प्रतिमानी होकर परस्पर मन्त्रणा करके विचित्रवक्ता धृतराष्ट्रके पास शीघ्र जाकर मीठी-वाणीसे ऐसा कहने लगी। दुर्य्योधन बोले, हे राजन्! आपने क्या बृहस्पतिकी कही यह नीति नहीं सुनी है जो देवतोंके विद्वान् पुरोहितने इन्द्रसे कही थी, हे शत्रुसूदन! शत्रुलोग सब प्रकारसे नाश करने योग्य हैं; क्योंकि ये तुम्हारे युद्धादिसे अहित करेंगे सो हम लोग पाण्डवोंकेही धनसे राजालोगोंकी पूजा करते अर्थात् पाण्डवोंका धन और राजोंको देकर यदि पाण्डवोंसे लड़ेंगे, तो क्या वे, राजा हमारी ओर न होंगे? कठिन विषभरे क्रोधयुक्त नाशकी उपस्थित सर्पोंको कंठ और पीठमें धारण करके कौन त्याग सकता है? हे तात! शस्त्र और रथ प्राप्त करके, सर्पके समान क्रुद्ध पाण्डव हमारा नाश कर देंगे, अर्ज्जुन महातुणीर धारण करके गाण्डीव धनुषको लेता हुआ, क्रोधसे देखता हुआ भीम भारी गदाको उद्यत करके शीघ्रता सहित अपने रथमें बैठकर, नकुल खड्ग और अर्द्धचन्द्र तुल्य ढाल लेकर, सहदेव और राजाभी इङ्गिताकार करते गये हैं, ऐसा हमने सुना है, वे लोग अपने रथोंके वेगसे रथ समूहोंको पीछे करते हुए बहु-शस्त्र सहित सेना इकट्ठी करनेको यहांसे गये हैं, वे हमसे बहुतही अपमानित हुए हैं, क्षमा न करेंगे, भला द्रौपदीका क्लेश उनमेंसे कौन सह सकता है? हे पुरुषर्षभ! हम बनवासके अर्थ पाण्डवोंसे जुआ खेलें, यही उनको वशमें करनेका एक उपाय है; जुएमें हारनेसे वे या हम बारहवर्ष पर्य्यन्त मृगछाल धारण करके बनमें बसें और तेरहवें वर्ष पुरुषमय स्थानमें रहें पर कोई जान न सके, यदि जान ले तो पुनः बारहवर्ष बनमें रहें, ऐसा जुआ पुनः होय फांसे छोड़कर पाण्डव लोग पुनः जुआ खेलें, हे राजन्! हे भरतर्षभ! हमको यह परम कर्तव्य है क्योंकि शकुनि अक्षविद्याको अच्छी प्रकारसे जानता है, हे राजन्! हे परन्तप! यदि वे लोग १२ वर्षतक बनवास रूप व्रतको धारण

करेंगे, तो इतने राज्यमें हमारी जड़ जम जायगी, तब अपने मित्रोंको लेकर बलवान् महासेना टीक करके उनको जीत लेंगे, यह मन्त्र आपको प्रिय लगना उचित है।

धृतराष्ट्र बोले, कि यदि वे दूरभी निकल गये हों तौभी उन्हें शीघ्र लौटाके ले आओ, पाण्डव आकर पुनः जुआ खेलें।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, उस समय द्रोण, भीष्म, कृप, सोमदत्त, बाह्लीक, विदुर, अश्वत्थामा बलवान् युयुत्सु, भूरिश्रवा, और महारथ विकर्ण, ये सब एकबार कहने लगे, अब जुआ न होना चाहिये और अब शान्ति हो परन्तु पुत्रप्रिय धृतराष्ट्रने पाण्डवोंके बुलानेमें अर्थदर्शी कामरहित बान्धवोंकी कोईभी बात न सुनी।

७० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे महाराज! अनन्तर शोकसे पीड़ित पुत्रस्नेहयुक्ता धर्म्मवती गान्धारी राजा धृतराष्ट्रसे ऐसा कहने लगी, जब यह दुर्य्योधन उत्पन्न हुआ था, तबही विदुरने कहा था कि इस कुलकलङ्कको मार डालो। हे भारत! जो उत्पन्न होतेही शियारके समान शब्द करने लगा था कौरवोंमें निश्चय करके इस कुलका नाशक है, हे भारत! हे प्रभो! आप अपने दोषसे मत डूबिये, बालकोंके समान बुद्धि धारण मत कीजिये।

अब आप घोर कुलक्षयमें कारण मत हूजिये, कौन वैध वेपुलको तोड़ता कौन बुझी आगको धौकता है, हे भरतर्षभ! शान्त पाण्डवोंको कौन कुपित कर सकता है, आप अजामीढ़वंशमें उत्पन्नको स्मरण करते कुन्तीपुत्रको कौन कुपित कर सकता है और मैंभी स्मरण कराऊंगी। हे राजन्! दुर्बुद्धिको कल्याण वा हानि शास्त्रभी नहीं जता सकता है और बूढ़ा बालकोंके ऐसी बुद्धिवाला नहीं होता। पुत्रोंको तुम्हारी आज्ञामें रहना चाहिये, तुमसे भिन्न होकर वे नष्ट होंगे। हे सञ्जय! इसही लिये इस कुलकलङ्कको मेरे वचनसे तुम त्यागदो, परन्तु हे नराधिप! तुमने पुत्रस्नेहसे विदुरका कहना नहीं माना, उसका कुलनाशरूप यह फल अब प्राप्त भया मनसे धर्म्मसे और नीतिसे युक्त जो तुम्हारी बुद्धि है, सो वैसीही रहनी चाहिये, उन्मत्त मत हो। जो लक्ष्मी दुष्टकर्मसे प्राप्त होती है,सो नाश कारिणी है, और जो उत्तमतासे प्राप्त होती है, वह प्रौढ़ है,पुत्र और पौत्र पर्य्यन्त स्थिर रहती है।

हे महाराज! यह सुनकर महाराज धृतराष्ट्र धर्म्मदर्शिनी गान्धारीसे बोले,कि भलेही इस कुलका नाश हाजाय, मैं निवारण नहीं कर सकता हूं,उनकी जैसी इच्छा है वैसाही हो, पाण्डव पुनः आवें औ इनके सङ्ग जुआ खेलें।

७१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि तब बहुत दूर गये कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरसे बुद्धिमान् राजा धृतराष्ट्रकी आज्ञासे प्रातिकामी सूत ऐसा कहने लगा, हे राजन् युधिष्ठिर! आपके पिताने ऐसा कहा है कि सभा उपस्थित है, यहां आओ और अक्ष फेंककर जुआ खेलो।

युधिष्ठिर बोले, कि प्रारब्धके बल पुरुष शुभ अशुभ सबको प्राप्त करता है, यदि पुन हमको जुआ खेलनाही तो यह निश्चय है कि पुरुष शुभ और अशुभ कर्म्मसे निवृत्त नहीं हो सकता है, बूढ़े की आज्ञासे पुनः जुवेमें जाना है, यद्यपि मैं जानता हूं कि, जुआ नाशकर है तथापि निवृत्त होनेसे असमर्थ हूं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि यद्यपि सुवर्णका जन्तु होना असम्भव है, तथापि राम हिरनके प्रति लोभी हुए, इससे निश्चय होता है कि, जिन पुरुषोंका निरादर होनेका होता है, उनकी बुद्धि प्रायः विपरीत हो जाती है। इस प्रकारसे कहते हुए और शकुनीकी मायाको

जानते हुए भी युधिष्ठिर भाइयोंके सहित पुनः जुएके स्थानमें पहुंचे। वे पांचो महारथ भरत-कुल-सिंह अपने मित्रोंके हृदयोंको कंपाते हुए पुनः उस सभामें प्राप्त हुए,दैवसे पीड़ित सर्व्वलोक विनाशार्थ पुनः जुएके निमित्त सुखसे बैठे।

शकुनि बोले, कि हे भरतर्षभ युधिष्ठिर जो धन बूढ़ेने आपको दे दिया, सो तुमनेभी मान लिया, अब सो महाधन एकही दावपर इस प्रकार से लगाइये,यदि आपलोग जीतें तो हमलोग हरिणका चर्म्म ओढ़कर बारहवर्ष बनमें रहें और तेरहवें वर्ष मनुष्यमय स्थानमें छिपकर रहें यदि कोई जानले तो पुनः बारहवर्ष वनमें रहें। अथवा यदि हम जीतें तो आप भाइयोंके सहित मृगचर्म्म धारण करके बारह वर्ष बनमें रहें और तेरहवें वर्षमें पुरुषमय स्थानमें छिपकर एक वर्ष बास करें, यदि प्रगट हो जाय तो पुनः बनमें बारह वर्ष रहें, जब ऐसे तेरह वर्ष बीत जायं तो पुनः अपना राज्य पावें। हम या आप, हे युधिष्ठिर ! हे भारत ! इसी नियमसे पुनः पाशा फेंक कर जुआ खेलिये। तब सब सभासद घबड़ा कर हाथ उठा कर वेगसे कहन लगे।

सभासद बोले, कि अः धिक्कार है बान्धवोंको, जो युधिष्ठिरको उपस्थित भय बता नहीं देते हैं, यह अपनी बुद्धिसे समझें वा न समझें।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि इस प्रकारसे महाराज युधिष्ठिर अनेक प्रकारके पुरुषोंके दुर्वचन सुनते हुए भी लज्जा और धर्म्मके वशमें आकर पुनः द्यूत खेलने लगे। युधिष्ठिर जानते भी थे तोभी यह निश्चय करके कि कुरुवंशका नाशकाल समीप है, पुनः जुआ खेलने लगे।

युधिष्ठिर बोले, हे शकुने ! मेरे समान लोकको पालनेवाला राजा बुलाये जाकर निवृत्त नहीं होसकता है, अतएव मैं तुमसे जुआ खेलता हूं।

शकुनी बोले, कि हे पाण्डवो ! गाय घोड़ा बैल अनन्त बकरी भैंसे हाथी कोष सुवर्ण सब दासी दास यह सब हम एकही दावपर बनवासार्थ लगाते हैं, तुम या हम जो हारें सो बनमें रहें और तेरहवें वर्ष मनुष्यमय स्थानमें छिपकर रहें। हे पुरुषर्षभ ! हम इसी प्रतिज्ञासे जुआ खेलते हैं, हे भारत ! एकही बारके पाशा फेंकनेसे ऐसा हो जाय। युधिष्ठिरने यह सब स्वीकार किया। और शकुनीने पाशा उठाया, बस शकुनीने कह दिया, कि युधिष्ठिर हार गये।

७२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, तब हारे हुए कुन्तीपुत्रोंने वनवास के वास्ते दीक्षित होकर क्रमसे चर्म्म और वस्त्रोंको धारण किया। शत्रुओंको दमन करनेवाले पाण्डवोंको राज्यसे भ्रष्ट और चर्म्मधारी बनको जाते हुए देखके दुःशासन बोला, कि महात्मा दुर्य्योधनका राज्य अखण्ड हुआ पाण्डवलोग हारकर महाविपतको प्राप्त हुए हैं। आज सब देवता हमारे ऊपर प्रसन्न हुए हैं, क्योंकि हमलोग शत्रुओंसे गुणमें बड़े, अवस्थामें बड़े और प्रशंसाके योग्य हैं। कुन्तीपुत्र अनन्त नरकमें बहुत कालके वास्ते गिराये गये, राज्य और सुखसे सदाके लिये रहित होगये। जो धनके अभिमानसे धृतराष्ट्रके पुत्रोंको हंसते थे वही पाण्डव धनरहित होके बनको जायंगे। विचित्र कवच और प्रकाशयुक्त दिव्य वस्त्र इनके उतारे जाय, यह सब मृगचर्म्म पहिरें जैसा शकुनिके जुएसे इनको प्राप्त हुआ है। जो सदा यही बुद्धि रखतेथे कि हमारे समान जगतमें कोई नहीं है वहे पाण्डव अब अपने आपको नपुंसक और वीर्य्यहीन समझें। जैसे मृगचर्म्म यज्ञोंमें महात्मा लोग धारण करते है वैसेही अबलवान् पाण्डवोंके मृगचर्म्मको देखिये।

महा बुद्धिमान् राजा द्रुपदने पाण्डवोंको

कन्यादान देके कुछ भला कार्य्य नहीं किया। आश्चर्य्य है कि याज्ञसेनीके नपुंसक पृथानन्दन पति हों। हे द्रौपदि। बनमें मलिन वस्त्र मृगचर्म्मधारी निर्द्धन तथा प्रतिष्ठारहित पाण्डवोंको देखकर तू क्या प्रसन्न होगी? यहां पर और जिसे तेरी इच्छा हो उसे पति कर ले। यह सब कुरुबंशी जो यहां इकट्ठे है, इनमेंसे एकको पति बनाले, जिससे तेरा समय वृथा न जाय। जैसे नपूंसक मनुष्य निष्फल, जैसे धानकी भूसी निष्फल होती है, वैसेही पाण्डव निष्फल हैं। नपुंसककी सेवा करनेसे केवल कष्टही होता है, पाण्डवोंकी सेवा करनेसे तुझे क्या मिलेगा? ऐसे निर्लज्ज वाक्य पाण्डवोंको धृतराष्ट्रके पुत्रने सुनाये। महाक्रोधी भीमसेन उन बचनोंको सुनके ऊंचे स्वाससे उसकी निन्दा करके ऐसे बोले जैसे हिमाचलका सिंह सियारको दबाता है।

भीमसेन बोले, कि दुष्ट और पापियोंके समान तू निष्फल बकता है, शकुनकी विद्यासे राजोंके बीचमें गाल बजाता है। जैसे तू बचनके बाणसे हमको बीधता है, वैसेही मैं युद्धमें तुझे इनका स्मरण कराऊंगा। जो लोग क्रोध वा लोभके बशमें होके तेरी रक्षा करने आवेंगे उनको साथियोंके सहित यमराजके घर भेजूंगा।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि मृगछाल पहिने भीमसेनके ऐसे कहने पर शकुनि कुरुवंशियोंके बीचमें निर्लज्ज होके नाचकर गौगौ कहने लगा। भीमसेन बाले, कि हे निर्लज्ज। तू करोड़ वाक्य कह सक्ता है, क्योंकि तेरे बिना कौन ऐसा है जो छलसे धनलेकर बकवाद करे। यदि तेरी छातीको चीरकर भीमसेन खून न पिये तो उत्तम लोकको प्राप्त न हो। धृतराष्ट्रके पुत्रोंको सब धनुर्द्धारियोंके सम्मुख मारकर शीघ्र ही शान्तिको पाऊंगा, यह मैं सत्य तुमसे कहता हूं। जब पाण्डव लोग सभासे चले तब राजा दुर्य्योधन सिंहके समान गतिवाले भीमसेनकी चालके समान चालसे चलने लगा। भीमसेनने तिरछा होके कहा, हे मूढ़। इससे क्या होता है, शीघ्रही तुझे साथियोंके सहित मारकर स्मरण कराऊंगा। ऐसे अपना अपमान देखके वा बलवान् अपने क्रोधको रोककर राजा युधिष्ठिरके पीछे चलते हुए सभाके बीचमें भीमसेनने यह वाक्य कहा।

भीमसेन बोले, कि मैं दुर्य्योधनको मारूंगा अर्ज्जुन कर्णको मारेंगे, पाशोंके छली शकुनिको सहदेव मारेंगे। फिर मैं सभाके बीचमें यह बड़ी बात कहता हूं, जब हमारा युद्ध होगा तब देवता उसे सत्य करेंगे। युद्धमें इस पापी दुर्य्योधन को गदासे मारूंगा, इसके सिरको अपने पैरसे पृथ्वीपर कुचलूगा, इस बचनवीर कटुबादी दुःशासनके खूनको सिंहके समान पीऊंगा।

अर्ज्जुन बाले, सज्जनोंके बीचमें भीमसेन जो कहते है, वह केवल बचनसेही नहीं कहते बरण अबसे तेरहवें वर्षमें जो होगा उसे आप लोग देखेंगे। भीमसेन बाले, दुर्य्योन, कर्ण, शकुनि और चौथे दुःशासनका रुधिर पृथिवी पीवेगी। अर्ज्जुन बाले, हे भीमसेन। निन्दा करनेवाले, दुर्व्वाक्यका मार्ग दिखानेवाले, कुबुद्धि और बकवादी कर्णको युद्धमें मैं मारूंगा। भीमकी प्रसन्नताके वास्ते अर्ज्जुन प्रतिज्ञा करने लगे, कि कर्णके सिपाइयोंको मैं बाणोंसे मारूंगा। जो और राजा लोग बुद्धिके भ्रमसे मेरे साथ युद्ध करेंगे, उन सबको बाणोंके द्वारा मैं यमघरको भेजूंगा। यदि हिमाचल अपने स्थानसे चलायमान हो जाय, सूर्य्य प्रकाश रहित हो जाय, चन्द्रमाकी शीतलता नष्ट हो जाय। आजसे १३ वें वर्षमें यदि दुर्य्योधन आदर पूर्वक हमको राज्य न देगा तो यह सब सत्य होगा।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, अर्ज्जुनके ऐसे कहने पर श्रीमान् माद्रीनन्दन सहदेव भारी भुजाओंको

हिलाकर क्रोधसे लालनेत्र करके सर्पके समान श्वास लेते हुए शकुनिको मारनेके इच्छुक होके ऐसा बचन बोले। हे मूढ़! हे गान्धार-देशीय जनोंके यशनाशक! तू जो पाशोंको बहुत मानता है, यह युद्धमें तीक्ष्ण बाणोंसे तेरी रक्षा न करेंगे। जैसे भीमसेनने बन्धु-बान्धवोंके सहित तेरे वास्ते वचन कहा, मैं उस कर्म्मको करूंगा; हे शकुनि! यदि तू चत्रियोंके धर्म्मानुसार युद्धमें खड़ा होगा, तो भाइयों सहित युद्धसें शीघ्रही तुझे मारूंगा। हे राजन्! सहदेवका वचन सुनके, परम सुन्दर नकुल यह वचन बोले, राजा द्रुपदकी कन्या द्रौपदी इस जुएमें धृतराष्ट्रके जिन पुत्रोंने दुर्य्योधनकी प्रसन्नताके वास्ते रूखे वचन सुनाये हैं, उन कुकर्मी कालप्रेरितोंको मैं यमके घरको भेजूगा। महाराज युधिष्ठिरकी आज्ञासे द्रौपदी की दशाको याद करके, बहुत शीघ्र पृथ्वीको धृतराष्ट्रके पुत्रोंसे सूनी करूंगा। वैशम्पायन बोले इसप्रकारसे वह सब विशाल भुजधारी नरसिंह बहुत प्रतिज्ञा करके धृतराष्ट्रके पास पहुंचे।

७२ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले मे भरतवंशियोंतथा वृद्ध पितामहको, राजा सोमदत्तको तथा राजा बाह्लीकको प्रणाम करता हूं; द्रोणाचार्य्य, अश्वत्थामा तथा और राजोंको प्रणाम करता हूं, धृतराष्ट्रके पुत्रोंको, जुहार करता हूं। युयुत्सु, सञ्जय और अन्य सभासदोंसे भेंट करके जाता हूं, फिर आकर आपलोगोंसे मिलूंगा। वैशम्पायनजी बोले, सबलोग लज्जित हुए, किसीने युधिष्ठिरसे कुछ न कहा, किन्तु बुद्धिमान् युधिष्ठिरका सबने मनसे ही कल्याण चाहा। विदुर बोले, आर्य्या, राजपुत्री कुन्ती सुकुमारी और वृद्धा है, नित्यही उन्हें सुख करना उचित है, इस कारणसे वह बनको जानेके योग्य नहीं हैं। वह आदरके साथ यहीं मेरे घर रहेंगी, हे कुन्तीपुत्रो! आपलोग इसे समझावें आपका सदा कल्याण हो। पाण्डव बोले, जैसा आप कहते हैं, आपको वैसाही उचित है, आप हमारे चचा हैं, पिताके समान हैं। हे विद्वन्! जैसी आप आज्ञा करते हैं, वैसाही हम करेंगे, आप हमारे गुरु हैं, हम आपके सेवक हैं और जो हमारे करनेयोग्यहो वहभी आप बतलावें। विदुर बोले, हे भरतश्रेष्ठ युधिष्ठिर! यही मेरा उपदेश समझो; कि कोईभी, अधर्म्मसे हारा हुआ अपनी हारमें दुःखी नहीं होता तुम धर्म्मको जानते हो; युद्धमें जीतनेवाले अर्ज्जुन हैं भीमसेन शत्रुओंको मारनेवाले; नकुल धन इकट्ठा करनेवाले; नियममें चलानेवाले सहदेव, ब्रम्हको जाननेवालोंमें उत्तम धौम्य हैं। धर्म्म और अर्थमें चतुर धर्म्म करनेवाली द्रौपदी है। आप लोग आपसमें सबसे सब प्यारे हैं, सब सुन्दर हैं, शत्रु आप लोगोंमें फूट नहीं डाल सक्ता; आपको यहां कौन नहीं चाहेगा? यही आपका सब कल्याण है; जो आप मनको स्थिर रखते हैं, शत्रु चाहे इन्द्रके तुल्यभी क्यों न हो, इसे नहीं जीत सक्ता है। पहिले समयमें हिमाचल पर्व्वतपर सावर्णि मनुने आपको शिक्षा दीथी, हस्तिनापुरमें कृष्णद्वैपायन व्यासने आपको शिक्षा दीथी, भृगुतुङ्ग चेत्रमें परशुरामने, दृषद्वती नदीके तट पर महादेवने, महर्षि असितका उपदेश आपने सुना है। कल्माषी नदीके तटपर आप भृगु मुनिके आश्रय हुए थे, नारद आपको सदा देखते हैं। आपको यह पुरोहित धौम्य ऋषि हैं। वह ऋषियोंसे पूजी वुद्धि परलोकमें भी तुम्हें त्याग न करें, हे पाण्डुपुत्र! अपने वुद्धिसे इलाके पुत्र पुरूरवाको जीत लिया है। और बलसे आपने राजोंको जीता है, धर्म्मके आचरणसे ऋषियोंको जीता है; मनको धारणासे इन्द्रको जय, क्रोधको जीतनेसे यमराजको जय, दानसे कुवेरको जय, और इन्द्रियोंको वश करनेमें वरुणको

आपको प्राप्त हो। परोपकारके वास्ते अपने शरीरकोभी देदेना,चन्द्रसे सौम्यभाव,जलसे जीना; भूमिसे क्षमा, सम्पूर्ण तेज सूर्य्यमण्डलसे, वायुसे बल और सम्पूर्ण प्राणियोंसे तुम्हें सम्पत्ति प्राप्त हो। तुम निरोग रहो, तुम्हारा कल्यान हो, फिर तुम्हें लौटकर आरोग्यओंको मैं देखूंगा! हे युधिष्ठिर! धर्ममें तथा सब कामोंमें उचित कार्य्य करना। हे भरतवंशी जगतमें तुम्हारा कल्याण हो। कृतार्थ और कल्याणयुक्त तुमको फिर आया हुआ हम लोग देखें, तुम्हारे पिछले दुखोंको कोई नहीं जानता है। श्रीवैशम्पायनजी बोले, विदुरके ऐसे कहे जाने पर सत्यप्रण युधिष्ठिरने तथास्तु कहके भीष्म और द्रोणाचार्य्यको प्रणाम करके प्रस्थान किया।

७४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, युधिष्ठिरके चलने पर द्रौपदी, यशोवती कुन्तीकी बन्दना तथा और स्त्रियोंसे मिलकर चलने लगी; उस समय पाण्डवोंके रनिवासमें हाहाकारका शब्द भर गया। कुन्तीभी द्रौपदीको जाती हुई देखकर बहुत सन्तापयुक्त शोकसे विह्वल वाणीसे कष्टके साथ यह बोली। हे पुत्रि! दुःखको पाकर तुमको शोक करना न चाहिये, क्योंकि तुम स्त्रियोंके धर्मको जाननेवाली, शील और आचारसे युक्त हो। हे शुचिस्मिते! तुम्हें मैं क्या उपदेश करूं, तुम आपही साध्वी और गुणयुक्त हो; तुमने दोनो कुलोंको आभूषित किया। हे पापवर्जिते! यह कुरुलोग भाग्यवान् हैं जो तुमने इन्हें जलाया नहीं। तुम सुखसे जाओ मेरे ध्यानसे तुम्हारी वृद्धि हो। होनेवाले कार्य्योंमें स्त्रियोंको विकार नहीं होता है, बड़े जनोंके धर्मसे तुम रक्षित हो, शीघ्रही तुम्हें कल्याण प्राप्त होगा, मेरे पुत्र सहदेवकी वनमें सदा रखवाली करना, जिससे यह दुःख पाके शोक न करे। देवी द्रौपदी तथास्तु कहके नेत्रोंसे आंसू बहाती हुई, रजसे भरे एक वस्त्रको पहिने हुए, सिर खोले चली। उसरीती चिल्लाती हुईके पीछे पीछे कुन्तीभी चली। पश्चात् अलङ्कार और वस्त्र रहित, मृगचर्म ओढ़े हुए, लज्जासे कुछ नीचा मुख किये हुए, अपने पुत्रोंको, प्रसन्नमुखवाले शत्रुओंसे और शोकयुक्त मित्रोंसे युक्त देखा। उस दशामें पुत्रोंको देखकर मातृ-प्रेमसे पुत्रोंको गलेसे लगाकर बहुत विलाप करने लगी। कुन्ती बोली, सत्यधर्मको करनेवाले शुद्ध-वृत्ति और स्थितिवालोंको दृढ़भक्त तथा देवतोंकी पूजा करने वालोंको दुःख कैसे प्राप्त हुआ, यह कैसी उलटी गात हुई। यह किसके क्रोधका पाप तुम्हारी बुद्धिमें मैं देखती हूं। यह मेरे ही भाग्यका दोष है,जो मैंने उत्तम गुणोंसे युक्त होकर भी दुःख भोगनेके वास्ते तुम्हें उत्पन्न किया था। तुम लोग सम्पत्तिके बिना,वनमें कैसे बसोगे; वीर्य्य सत्व, बल, उत्साह और तेजसे भरे कैसे दीन बनोगे। यदि मैं जानती कि वनमें रहनाही तुम्हारा निश्चय है, तो पाण्डुके मरनेके पश्चात् शतशृङ्ग पर्व्वतसे हस्तिनापुरमें न आती। मैं तुम्हारे तप और बुद्धियुक्त पिताको धन्य मानती हूं जो पुत्रशोकसे प्रथमही स्वर्गको चले गये। धर्मज्ञ कल्याणी माद्रीको भी मैं धन्य मानती हूं जो इन्द्रियोंसे जाननेके अयोग्य परम गतिको प्राप्त होगई। रति मति और गतिमें जो सदा-सङ्ग रहनेवाली जिसे केवल जीनाही प्यारा है, मुझ दुःखिनीको धिक्कार है। हे पुत्र! तुम्हें नहीं छोड़ूंगी वनको मैंभी चलूंगी, हाय! द्रौपदि! मुझे क्यों छोड़ती है? प्राणोंका धर्म नाशवान है,तो ब्रह्माने किस प्रमादसे मेरा अन्त नहीं बनाया, जो अवस्था मुझे नहीं छोड़ती है! हा! द्वारकावासी! बलरामके अनुज! मुझे और इन नरोत्तमोंको दुःखसे क्यों नहीं बचाते हो? जो मनुष्य तुम्हें अनादि और

अनन्त समझके तुम्हारा ध्यान करते हैं, उनकी तुम रक्षा करते हो, यह कहावत अब झूठी कैसे होगई यहलोग सद्धर्म, माहात्म, यश और बलसे पूर्ण हैं दुख भोगनेके योग्य नहीं हैं, इन पर दया कीजिये। नीतिके तत्वार्थोंको जाननेवाले कुल-नाथ भीष्म, द्रोण और कृपाचार्य्य आदिके बैठे हुए यह विपद कैसे आगई। हाय महाराज पाण्डव। तुम कहां हो? शत्रुओंसे हारे हुए साधपुत्रोंको क्यों त्यागते हो। ? हे सहदेव! तुम लौट आओ। तुम मुझे प्राणसेभी प्यारे हो. हे माद्रीनन्दन! कुपुत्रके समान मुझे मत त्यागो। यदि सत्यको पालनेवाले तेरे भाई बनको जाते हैं तो जाते हैं, तू मेरी रक्षाका धर्म्म यहीं प्राप्तकर। वैशम्पायन बोले. कि इस प्रकारसे विलाप करती हुई कुन्तीको प्रणाम करके, दुःखसे पूरित हो पाण्डवलोग बनको चले गये। विदुर उस दुखिनी कुन्तीको समझाकर और आपभी दुःखी बनके घरमें ले गये। धृतराष्ट्रके पुत्रोंकी स्त्रिया जुएमें द्रौपदीके वस्त्र खींचने और बनको जानेकी कथा सुनके बहुत रोने और कुरु लोगोंकी निन्दा करने लगीं। अनेक स्त्रियां मुखपर हाथ रखके बहुत देर तक सोचती रह गई। उस समय राजा धृतराष्ट्र अपने पुत्रोंके अन्यायका ध्यान करके शान्तिको प्राप्त न हो सके।

राजा धृतराष्ट्रने शोकसे व्याकुल और चञ्चलचित्त होके विदुरको बुलाया। तब विदुर राजा धृतराष्ट्रके घर पर गये। नराधिप धृतराष्ट्रने विदुरसे पूछा।

७५ अध्याय समाप्त।

वैशम्पायनजो बोले, कि तब आए हुए दोषदर्शी विदुरसे अम्बिकापुत्र राजा धृतराष्ट्र शङ्का सहित ऐसा कहने लगे।

धृतराष्ट्र बोले, हे क्षत्त। कुन्तीपुत्र धर्म्मराज युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्ज्जुन, नकुल और सहदेव ये पाचोपाण्डुपुत्र किस प्रकारसे बनको जाते हैं। धौम्य और यशस्विनी द्रौपदी कैसे बनको जाती है, सो सब सुननेकी हम इच्छा रखते हैं. तुम उनकी चेष्टा हमसे कहो।

विदुर बोले कुन्तीके पुत्र युधिष्ठिर वस्त्रसे अपने मुखको छिपाकर जाते हैं. भीम अपनी विशाल बाहुवोंको देखते. अर्ज्जुन बालू उड़ाते उड़ाते राजाके पीछे गमन करते हैं. माद्रीके पुत्र सहदेव अपने मुखको लिप्त करके और अत्यन्त सुन्दर नकुल भी विह्वलचित्त होकर अपने सब शरीरको मिट्टीसे पोतकर राजाके पीछे जाते हैं.। विशालनेत्रा सुन्दरी द्रौपदी बालोंसे मुखको छिपा कर राजाके पीछे रोती हुई जाती है। हे राजन्! हाथमें कुशलिये भयानक यम है देवता जिनका ऐसे सामवेदके मन्त्रोंको गाते हुए धौम्यभी जाते हैं।

धृतराष्ट्र बोले. हे विदुर! पाण्डव लोग अनेक प्रकारके रूप बनाकर बनको जो जाते है, इसमें क्या कारण है, सो तुम मुझसे कहो।

विदुर बोले. यद्यपि तुम्हारे पुत्रोंसे छला गया है, राज्य और धन छीना गया है, तथापि बुद्धिमान् धर्म्मराजकी बुद्धि धर्म्मसे विचलित नहीं हुई; हे राजन्! महाराज युधिष्ठिर आपके पुत्रोंसे सदा घिन करते हैं, अतएव क्रोधसे आंख नहीं खोलते और पाण्डुपुत्र राजाने यह भी विचारा कि मेरे कठिन नेत्रोंसे प्रजा जल न जाय, अतएव वह अपना मुख आच्छादित करके जाते हैं, जिस निमित्त भीमसेन हाथोंको देखते हैं, हमसे सुनिये, बाहु-धन अभिमानी भीम अपनी विशाल बाहु दिखाते इसलिये जाते है, कि हमारे समान बाहुबली कोई नहीं है। अपने बल और द्रव्यके अनुसार कर्म्म बताते हुए और बाण वर्षाको बताते हुए कुन्तीपुत्र अर्ज्जुन उड़ाते राजाके पीछे जाते हैं, जैसे असंलग्न रूपसे उड़ता है, वैसेही

पर असंख्य बाण वर्षाते हैं, यह वृतान्तके निमित्त अर्जुन बाण बर्षाते जाते हैं। अब मेरे सुखको कोई न जान सके इस निमित्त नकुल मुख लेपकर जाते हैं। मार्गमें स्त्रियोंका मन मेरे ऊपर न आवे इसलिये सहदेव सब अङ्गमें मिट्टी पोतकर जाते हैं, एकवस्त्रा रोती हुई खुले केशवाली रजस्वला रुधिरसे भरे वस्त्रवाली द्रौपदी यह कहती जाती है, कि जिनके करनेसे मेरी यह दशा हुई है, अब से चौदहवे वर्ष उनको स्त्रियाभी पति पुत्र भाई और प्यारे पुरुषोंके मर जानेसे बहुत रुधिरसे युक्तशरीरवाली, खुले केशवाली, रजस्वला इस प्रकारसे उनको जलदान करके हस्तिनापुरमें प्रवेश करेंगी। हे भारत। नैऋत कुश बनाकर यमदेव देवतावाले साम वेदीय मन्त्रगाते धौम्य यों कहते हुए आगे जाते हैं, कि जब महा युद्धमें सब कौरव मारे जायंगे तब उनके गुरुभी इन्हीं मन्त्रोंका गान करेंगे। हे महाराज। नगरवासी प्रजागण यों कह कह रोते हैं, हाय हाय देखो यह हमारे स्वामी लोग बनको जाते हैं, धिक्कार है बूढ़े कुरुवंशियोंको जिनका मूर्ख लोगोंके समान कर्म है, धिक्कार है उनको जो लोभसे पाण्डुपुत्रोंको राज्यसे निकालते हैं, हाय हम सब पाण्डुनन्दनके बिना आज अनाथ होगए, दुष्ट लोभी कौरवोंसे हमें कुछभी प्रीति नहीं है, इसप्रकारसे सब दुःखित होकर बार बार रो रहे हैं, इस प्रकारसे मनस्वी कुन्तीके पुत्र आकार और दाङ्गितोंसे कहते हुए बनको जाते है, इस प्रकार से जब वे पुरुषव्याघ्र हस्तिनापुरसे चले, तो बिना बादर बिजुली चमकी कम्प हुआ। हे राजन्। बिना समय सूर्य्य ग्रहण हुआ, नगरकी बाईं ओर उल्कापात हुआ, हे राजन्। मासखानेवाले गिड सियार और कव्वे देवतोंके स्थान स्मशान कोठे और अटारियों पर बोलते हैं, यह महाकठिन उत्पात सब भरतवंशके हेतु आपकी मन्त्रनासे प्रत्यक्ष होते हैं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि इस प्रकारसे वे दोनों राजा धृतराष्ट्र और बुद्धिमान विदुर जहां वार्त्ता कर रहेथे वहां कौरवोंकी सभामें नारद मुनि आये। महर्षि लोगोंके संयुक्त आतेही वह भयानक वार्त्ता कहने लगे; अबसे चौदहवें वर्ष दुर्य्योधनके अपराध और भीमसेन तथा अर्जुनके बलसे समस्त कुरुकुल नष्ट हो जायगा। इस प्रकारसे कहकर बहुत ब्राह्मलक्ष्मीको धारण किये हुए, ब्रह्मऋषियोंमें उत्तम भगवान् नारद आकाशमें जाकर अन्तर्धान हो गए, तब दुर्य्योधन कर्ण और सुबलपुत्र शकुनी इन सबने द्रोणाचार्य्यको आश्रय जानकर सब राज्य उनको अर्पण कर दिया। अनन्तर द्रोणाचार्य्यने क्रोधी दुर्य्योधन, कर्ण, दुःशासन और सब कौरवोंसे कहा, ब्राह्मणोंने देवपुत्र पाण्डवोंको अवध्य कहा है, परन्तु मैं अपने बलके अनुसार भक्ति पूर्व्वक सब प्रकारसे शरणागत राज-सहित धृतराष्ट्रपुत्रका अनुगामी हूं, परन्तु प्रारब्धबलको छोड़ नहीं सकता हूं, आज पाण्डवलोग जुएमें हारकर धर्म्मपूर्व्वक बनको जारहे है, वे बारह वर्ष बनमें रहेंगे, वे इस ब्रह्मचर्य्यव्रतका आचरण करके क्रोधके वशमें हो बैर निकालेंगे, सो बैर महादुःखका कारण होगा, हे राजन्। मैंने सखाभावके युद्धमें द्रुपदको भ्रष्ट किया है, अतएव उसने एक यज्ञ किया जिसमें मेरे मारनेवाला पुत्र हो। यज्ञ और उपयज्ञ करके बहुतपसे उसने अग्निवेदीके मध्यसे धृष्टद्युम्न पुत्र और सुमध्यमा द्रौपदीपुत्री प्राप्त की। सो धृष्टद्युम्न सम्बन्धसे पाण्डवोंका साला हुआ है, अतएव पाण्डवोंके प्रियकाममें निरत है, मुझे उससे बहुतही भय है, अग्निवर्ण देवदत्तक चक्रधनुष और बाणयुक्त धृष्टद्युम्नसे मुझे मूर्त्तिमान् मृत्युके ऐसा भय भान होता है, सो शत्रुनाशक धृष्टद्युम्न पाण्डवोंके पक्षमे है, जो युवा अर्जुन रथी और महारथी वीरोंकी सख्यामें अगाड़ी गिना जाता है, यदि उससे मेरा युद्ध हो तो, हे कौरवो!

अन्तमें इससे अधिक और क्या दुःख होगा? धृष्टद्युम्न द्रोणाचार्य्यकी मृत्यु है, यहबात जगत्में प्रसिद्ध है. और धृष्टद्युम्नभी मेरे मारनेको प्रसिद्ध और बलसे भी जगत्में बहुतही प्रसिद्ध है। सो निश्चय करके तुम्हारे कारण अब वह उत्तमकाल आगया. सो अब शीघ्र कल्याणका यत्न करो. पाण्डवोंके बनमें जानेसे अच्छा नहीं हुआ. यह तुम्हारा सब सुख वैसाही क्षणभंगी है, जैसी हेमन्तऋतुमें ताड़की छाया। महायज्ञोंको करो, भोगो, दान दो, आजसे चौदहवें वर्ष महा नाशमें पड़ोगे। द्रोणाचार्य्यके ऐसे बचन सुनकर धृतराष्ट्र ऐसा कहने लगे।

हे विदुर! गुरुजीने सत्य कहा, तुम पाण्डवोंको लौटा लाओ और यदि वे न फिरें तो अच्छी रीतिसे जाय, शस्त्र, रथ पदाति और सब भोगकी वस्तु उनकेसङ्ग रहें।

७६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले,हे महाराज जब पाण्डव हारकरव नको चलेगए, तब धृतराष्ट्रको चिन्ता हुई। चिन्ता सहित श्वांस लेते हुए उद्विग्न बैठे उस राजा धृतराष्ट्रसे सञ्जय ऐसा कहने लगे। सञ्जय बोले हे पृथिवीनाथ! धनसे पूर्ण पृथिवीको प्राप्त करके और हे राजन्! पाण्डवोंको राज्यसे निकालकर अब कौन बात सोचते हो।

धृतराष्ट्र बोले, कि जिसको युद्ध बिशारद, महारथ बलवान् पाण्डवोंसे बैर होनेवाला है, वह बिना सोच कैसे रह सकता है?

सञ्जय बोले. हे राजन् यहमहाबैर जिससे लोकोंका नाश जड़समेत होगा, सो आपहीके करनेसे हुआ है. भीष्म द्रोण विदुरके निवारण करने परभी तुम्हारे निर्लज्ज मूर्ख पुत्र दुर्य्योधनने प्रातिकामी से कहा कि धर्म्मचारिणी पाण्डवोंकी प्यारी स्त्रीको सभामें लेही आओ। देवता जिसको पराभव चाहते हैं, उसकी बुद्धि नष्ट कर देते हैं, सो उसे विपरीतही दीख पड़ता है, जब बुद्धि विपरीत होती है और नाश उपस्थित होता है, तब अन्याय हृदयमें न्यायको स्थान ही नहीं देता है, उस पुरुषको अनर्थ अर्थरूप और अर्थ अनर्थरूप दीखने लगते हैं, और वेही उसे प्रिय लगते हैं: काल लाठी लेकर किसीका शिर नहीं फोड़ता है, बिपरीत दिखलाना यही कालका बल है, तपस्विनी अयोनिसे उत्पन्न रूपवती अग्निसे उत्पन्न पाञ्चाली द्रौपदीको सभाके बीचमें पारकर्षणकरके यह महालोमहर्षण भयानक वैर उत्पन्न किया गया है, जुआरियोंके बिना कौन उस सब धर्म्मको जाननेवाली यशस्विनीको सभामें लासकता है, ऋतुमती उत्तसुमुखी रुधिरसे भरेहुए एकवस्त्रव ली द्रौपदीने नष्ट छीने धनवाले राज्यसे भ्रष्ठ हतवस्त्र नष्टश्री सब कामोंसे हीन दासत्वको प्राप्त धर्म्मकी फांसीमें बंधे हुए पराक्रमके असमर्थ पाण्डवोंको देखा; क्रोधयुक्त अयोगरा दुःखी कृष्णाको कौरवोंकी सभामें दुर्य्योधन,कर्णने अनेक कडुवी बातें कही, हे राजन्! यह सब मुझ कठिन भान होता है।

धृतराष्ट्र बोले, कि हे सञ्जय! द्रौपदीके दुःखार्त्तहोनेहीसे पृथिवी भस्म होजा सकती है, मेरे पुत्रोंका अब नाश होगा, धर्म्मिष्टा धर्म्मराजकी स्त्री, रूप और यौवनसे संयुता द्रौपदीको सभामें आते देखकर कुरुकुलकी सब स्त्री गान्धारीके समेत रोती थीं, अब भी वे नित्य प्रजाकी स्त्रियोंके सङ्ग बैठकर सोचती हैं। संध्या समय सब और अग्निहोत्र नहीं होते। सभामें द्रौपदीके कर्षण करनेसे ब्राह्मण क्रुद्ध होगए, वायु घोर चलने लगा, आकाशमें वज्रका शब्द होने लगा, आकाशसे विजली गिरने लगी प्रजाको भय उत्पन्न करते हुए, राहुने बिना समय सूर्य्यको ग्रहण किया,रथ शालाओंमें आग लग गई, भरतवंशियोंके अकल्याणके निमित्त ध्वजा टूट गई, दुर्य्योधनकी अग्निशालामें सियारो घोर शब्द करने लगो, सब ओर से उनके शब्द सुनकर गधे बोलने लगे।

द्रोण भीष्म, कृपाचार्य्य, बाह्लीक और महात्मा सोमदत्त मेरे पास आए; तब मैंने विदुरसे प्रेरित होकर कहा कि मैं द्रौपदीको इच्छानुसार वर देता हूं, तब द्रौपदीने पाण्डवोंकी अदासत्व मांगी रथ धनुषके समेत मैंनेभी उन्हें देनेकी आज्ञा दी, उसी समय महापण्डित सब धर्मोंके जाननेवाले विदुरने कहा कि बस जब द्रौपदी सभामें आई कुरुकुल तब वहींतक था, यह जो पाञ्चालराजकी पुत्री द्रौपदी है, सो लक्ष्मी है, प्रारब्धसे पाण्डवोंके पीछे फिरती है, उसका दुःख पाण्डव, महाबलवान्, सत्यसन्ध वासुदेवसे रक्षित महाबल वृष्णिवंशी, और पाञ्चाल नहीं सह सकेंगे, जब पञ्चालियोंसे वेष्टित अर्ज्जुन और उनके बीचमें महाबाहु भीमसेन कालदण्डके समान गदा को घूमाता हुआ पहुंचेगा, तब अर्ज्जुनके गाण्डीव धनुषका शब्द सुनकर भीमकी गदाके वेगको सहनेमें कोई भी राजा समर्थ न होगा। कौरवोंसे मैं पाण्डवोंको सदाबलवान् मानता हूं, अतएव उनसे सन्धि चाहता हूं युद्ध नहीं। देखो, तेजस्वी महाबलवान् राजा जरासन्धको भीमने युद्धमें हाथोंहीसे मार दिया। हे सञ्जय! उस भीमसे हमारी संधि हो ऐसा यत्न शङ्का छोड़कर दोनो पक्षमें कीजिये। हे महाराज! ऐसा करनेसे तो परम कल्याणकी आशा होगी, इस प्रकारसे विदुरने कहा।

७७-अध्याय समाप्त।

सभापर्व्व सम्पूर्ण।

महाभारत।

वनपर्व्व।

नारायणको, नरश्रेष्ठ नरको, सरस्वती देवीको और व्यासको प्रणाम करके जय कीर्त्तन करें।

जनमेजय बोले, कि हे द्विजोत्तम! धृतराष्ट्रके पुत्र और उनके मन्त्रीवर्गसे जुएमें छल द्वारा हारकर और उन दुरात्माओंके, अत्यन्त शत्रुताको उत्पन्न करनेवाले दुर्व्वाक्य सुनकर क्रोधसे भरे कुरुकुलको बढ़ानेवाले पाण्डुपुत्र मेरे प्रपितामहोंने क्या किया था? इन्द्रके समान तेजोवान् वह कुन्तीपुत्र अचानक ऐश्वर्य्यसे भ्रष्ट और सहनेके अयोग्य दुःखको पाकर वनमें कैसे विहार करते थे? उस विपदके समयमें कौन कौनसे मनुष्य उनके सङ्ग गये थे? अथवा किस रीतिसे उनको भोजन आदि प्राप्त होता था? यहा वह महात्मा लोग कैसे आचरणसे कहां निवास करते थे? हे ब्राह्मणश्रेष्ठ। उन शत्रुघाती वीर महात्माओंके बारहवर्ष कैसे कटे थे? अथवा नारियोंमें मुख्य, पतिव्रता, राजपुत्री, महाभाग्यवती, सदा सत्य बोलनेवाली द्रौपदी, दुःख-भोगनेमें अयोग्य होकरभी वनवासके कठोर दुःखभोगमें समयको कैसे बिताती थी? हे तपोधन ब्राह्मण! यह सब कथा आप मुझसे विस्तारपूर्व्वक कहिये। उन महाधनी और महावीर्य्यवान पाण्डवोंके सम्पूर्ण चरित्र आपसे सुननेके लिये मेरा चित्त बहुत चञ्चल हो रहा है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे महाराज। धृतराष्ट्रके मन्त्रीवर्ग और दुरात्मा पुत्रोंसे हारकर और कुपित होकर पाण्डवलोग हस्तिनापुरसे चले। वे सब शस्त्रधारण करके द्रौपदीके सहित ऋद्धि सिद्धिसे भरे नगरके द्वारसे निकलकर उत्तर दिशाको चलने लगे। इन्द्रसेन आदि १५ राजमन्त्री स्त्रियोंको सङ्ग लेकर रथमें चढ़के शीघ्रताके साथ उनके पीछे चले; पुरवासी प्रजागण पाण्डवोंके वनगमनको सुनके, शोकसे व्याकुल होकर, सब लोग परस्पर मिलके और भयको त्यागकर, भीष्म, द्रोण कृप और विदुरकी निन्दा करके कहने लगे, कि जहांपर सुबलराजाका पुत्र शकुनि, कर्ण और दुःशासनके मतमें रहके पापात्मा दुर्य्योधन राज्य करनेकी इच्छा करता है, वहांपर हम समस्त प्रजागण, हमारा कुल, हमारे घर और धन आदि सबही नष्ट भये। जहांपर पापियोंकी सहायतासे पापात्मा दुर्य्योधन राज्य करनेकी इच्छा करता है वहापर हमारा कुल, आचार, धर्म्म और धन कुछभी नहीं बचेगा; बस सुखकी सम्भावना कहां! यह दुर्य्योधन गुरुद्रोही आचारभ्रष्ट, स्वजनत्यागी, धनका लोभी, अभिमानी, नीचस्वभाव तथा दयारहित है; यह जहापर राजा होगा, वहांपर सम्पूर्ण पृथ्वीका नाश होजायगा, इस कारणसे जितेन्द्रिय, शत्रुओंको जीतनेवाले, लज्जाशील, कीर्त्तिमान्,

धर्म्मके आचरण करनेवाले, दयाके सागर, महात्मा पाण्डवगण जिस देशको जाते हैं, हमलोगोंकोभी उसी देशमें जाना अच्छा जान पड़ता है, चलो हमलोग उसी देशको चलें।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि प्रजागण इस प्रकारसे कहके कुन्तीपुत्र और माद्रीनन्दनोंके पीछे चले। पश्चात् उन्होंने पाण्डवोंके समीप जाकर, हाथ जोड़के कहा, कि आप का कल्याण हो, आप इस दुःखी प्रजागणको त्यागकर कहा जायगे? आपने जिस स्थानमें जानेको मनमें विचारा है, हमभी वहीं चलेंगे। दयारहित वैरियोंने अधर्म्मसे आपके राज्यको जुएमें जीत लिया है, इसको सुनके हम सब लोगोंका चित्त बहुत व्याकुल हो गया है; हम लोग आपके भक्त अनुरक्त, मित्र, आपका प्रिय और हित करनेवाले हैं, इस लिये हमलोगोंको त्याग देना आपके योग्य नहीं है; हमलोग कुराजाके राज्यमें वसकर विनाशको प्राप्त होना नहीं चाहते हैं। हे मनुष्यश्रेष्ठगण! अच्छे और बुरेके सङ्ग जो गुण और दोष मनुष्यमें उत्पन्न होते हैं उनका व्योरा हमलोग आपसे कहते हैं, आप लोग सुनिये। जिन प्रकारसे वस्त्र, जल और तिल यह सब वस्तु जिन फूलोंके सङ्गमें रहती हैं उन्हीकी सुगन्धसे युक्त हो जाती हैं, ऐसेही मनुष्योंमेंभी अच्छे और बुरेके सङ्गसे शुभ और अशुभगुण उत्पन्न होजाते हैं। क्योंकि मूढ़ मनुष्यके प्रतिदिन सङ्ग करनेसे मोह राशिको वृद्धि होती है, ऐसेही सज्जनका सङ्ग धर्म्मका उत्पन्न करनेका कारण होता, इसी हेतुसे शान्तिपरायण मनुष्यको वुद्धिमान्, उत्तम चरित्रवाले, वृद्ध और तपस्वियोंका सङ्ग करना चाहिये। जिन लोगोंकी विद्या, कुल और धर्म्म यह तीनों निर्म्मल हैं, उनका सङ्ग करना शास्त्रके पढ़नेसे भी उत्तम है. कारण उनकी ही सेवा करनी [illegible]। हम लोग शास्त्रमें लिखे किसी कर्म्मका अनुष्ठान विना कियेही साधुलोगोंके सङ्गमें रहके पुण्यको प्राप्त कर सकेंगे। पापियोंकी सेवा करनेसे हम लोगोंको केवल पापही मिलेगा। मनुष्यलोग धर्म्मात्मा होकर भी यदि असाधु मनुष्यका दर्शन, स्पर्श अथवा बात चीत, यद्वा एक स्थानमें निवास करें, तो वह भी नीच हो जाते हैं और चित्तकी शुद्धिरूप सिद्धिको नहीं पा सक्ते हैं। पुरुषकी बुद्धि नीचके सङ्गसे नीच होती है, मध्यमके सङ्गसे मध्यम और उत्तमके सङ्गसे उत्तम बुद्धि होती है, जो सब उत्तम गुण वेदमें कहे हैं, लोकाचारमें चलित हैं, जो सज्जनोंके द्वारा माने जातेहैं, जो धर्म्म, काम और अर्थका देनेवाले हैं, और लोकमें प्रसिद्ध हैं वह सबही संक्षेप और विस्तार रूपसे आपलोगोंमें वर्त्तमान हैं, इस कारणसे हम लोग अपने अपने कल्याणकी इच्छा करके ऐसेशुभ गुणयुक्त लोगोंके पास रहनेके अभिलाषी हुए हैं।

युधिष्ठिर बोले, हे ब्राह्मणादि प्रजागण! जिस कारणसे आपलोग हमारी प्रीति और स्नेह और दयायुक्त होकर हमलोगोंमें कोई गुण न होने परभी हमें गुणवान् कह कर वर्णन करते हैं, इसी कारणसे हमलोग धन्य हुए हैं। हम अपने भाइयोंके सहित जो कुछ आपसे कहते हैं; उसे आपलोग हमारे स्नेह और दयाके वश होके मिथ्या नहीं करेंगे। हस्तिनापुरमें हमलोगोंके पितामह भीष्म, राजा धृतराष्ट्र, विदुर, हमारी माता, और मित्र हमलोगोंके वास्ते शोकसे व्याकुल हो रहे हैं, आपलोग हमारे हित करनेकी इच्छासे उन सबको बड़े यत्नसे पालन करना। आपलोग हमारे वनको जानेके कारण बहुत सन्तापयुक्त होकर बहुत दूर चले आये हैं, इसलिये हमारे वाक्यसे आपलोग फिरके घर जाके हम लोगोंके आत्मीयजनोंको ऐसा समझा कर कि हम उन्हे आपलोगोंको सौंपे जाते हैं, उन लोगों पर प्रीति रखियेगा; इसहीसे हमको

गोके मनका परम कार्य्य और सत्कार तथा सन्तोष होगा ।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि वह प्रजा धर्म्मराजके द्वारा ऊपर लिखी रीतिसे समझायी जाकर, हा महाराज । हा महाराज । कहके भयानक आर्त्तस्वरसे विलाप करने लगी, क्या करें, विना आज्ञाके कोई सङ्ग नहीं जा सक्ता है, कुन्तीपुत्रोंके गुणोंको स्मरण करते हुए, महादुःखी होकर पाण्डवोंका सङ्ग छोड़नेकी इच्छा न रहने परभी प्रजागण विवश होके लौटे। पुरवासियोंके लौट जाने पर पाण्डवलोग जुदे जुदे रथोंपर चढके गङ्गातट पर जहां प्रमाण नामक बड़ा भारी बटवृक्ष था, वहां पहुंचे। वहलोग जिस समय गङ्गाके तटपर खड़े उक्त महावटके पास आये, उसी समय सन्ध्या होगयी, उन वीरोंने गङ्गाके शुद्ध जलको स्पर्श करके उस रात्रिको वहीं निवास किया; उन्होंने रात्रिको गङ्गाजलके सिवाय और कुछ भोजन न किया। इसी प्रकारके दुःखसे उन्होंने वह रात्रि व्यतीत करी,पाण्डवोंके स्नेहसे कितने ही अग्निहोत्र करनेवाले और कितनेही विना अग्निहोत्रवाले ब्राह्मण अपने शिष्य और वन्धु बान्धवों सहित उनके सङ्ग चले आये थे। महाराज युधिष्ठिर उन ब्रह्मवादी ब्राह्मणोंके मध्यमें अत्यन्त शोभायमान हुए, वह भयानक सन्ध्याकाल ब्राह्मणोंको प्रकाशित होमकी अग्नि, वेद पाठ और आपसकी बोलचालसे मनोहर हो गया, उन ब्रह्मणश्रेष्ठोने हंसोंके समान मीठे स्वरसे कुरुकुल-प्रधान युधिष्ठिरको धैर्य्य देकर उनका चित्त बहलाते वह सब रात बिता दी।

वनपर्व्वमें पहिली अध्याय समाप्त ।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि रातके बीतनेपर सवेरा होतेही भिक्षाके अन्नको खानेवाले ब्राह्मणलोग, वनमें जानेको उद्यत हुए पाण्डवोंके पास आकर खड़े हुए। कुन्तीपुत्र राजा युधिष्ठिरने उन्हें सम्मुख खड़े देखकर कहा, कि इस समय हमारा सर्व्वस्व हरा गया, हमारा राज्य छिन गया, हम श्रीरहित हैं, और हम, फल मूल तथा मांस भोजन करके वनको जायंगे, इसलिये निश्चय जान पड़ता है कि, यदि आपलोग हमारे सङ्गमें अनेक दोषोंसे भरे व्याघ्र और हिंसा करनेवाले जन्तुओंसे सेवित वनमें चलेंगे, तो आपलोगोंको अनेक दुःख होंगे। जिसके आश्रयमें रहके ब्राह्मणलोग दुःख पाते है,चाहे वह देवतभी हो, तौभी उसका नाश हो जाता है, हमतो मनुष्यही हैं, हमारे आश्रयमें यदि आप लोग क्लेश पावेंगे तो हमलोग अवश्य नष्टहो जायंगे,इस वास्ते आपलोग यहांसे लौटकर जहां इच्छा हो, वहां चले जाइये। ब्राह्मण लोग बोले, कि हे महाराज! आपलोगोंकी जो गति होगी हमलोगभी उसी गतिको प्राप्त होनेकी इच्छा करते है, हमलोग सद्धर्म्मको जाननेवाले और आपके प्रेमी है, हमें छोड़ना आपको योग्य नहीं है, देखिये देवतालोगभी अपने भक्तोंपर दया करते हैं, विशेषतः हमलोग सदाचारयुक्त ब्राह्मण हैं, हमपर आपका दया करना अवश्य चाहिये। युधिष्ठिर बोले, कि हे ब्राह्मणवृन्द ! हमारीभी ब्राह्मणोंपर सदा परम भक्ति रहती है, किन्तु क्या करें इस समय सहायहीन होनेसे हमको शिथिल होना पड़ा है; यह हमारे भाई लोग आपकी सेवाके वास्ते ज। फल मूल और मृगोंका मास लावेंगे वही शोकसे उत्पन्न दुःखसे मोहित होरहे है, औरसे अपने राज्यका छिना जाना तथा द्रौपदीके अपमानसे वह लोग बहुत घबड़ा रहे है, इस कारणसे इस कालमें उन लोगोंको फलमूल आदिको लानेके वास्ते नियुक्त करनेमें मेरा उत्साह नहीं होता है। ब्राह्मण बोले, महाराज! आपको हमारे पालनकेवास्ते चिन्ता करनी नही होगी, हम लोग अपने भोजनको आपही लाकर समय वितावेंगे। ईश्वरके ध्यान

और जपसे आपके कल्याण करनेमें तत्पर रहेंगे तथा मनोहर कथा कहके आपके साथ सन्तोष पावेंगे। युधिष्ठिर बोले, ऐसा होनेसे हम ब्राह्मणोंके साथ सदा आनन्दसे रह सक्ते हैं, इसमें कुछ सन्देह नहीं, हम अपनी हीनतासे आपकी हीनताभी देखते हैं, कारण कि आप दुःख भागनेके योग्य नहीं, तौभी हमारे प्रेमके वश होके, दुःख सहकर आपही भोजनके पदार्थ लाकर आहार करेंगे, यह हम कैसे देख सकेंगे; धृतराष्ट्रके पापी पुत्रोंका धिक्कार है, जिनके कुकर्म्मसे इस प्रकारकी दुर्घटना हुई।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि इसप्रकारसे कहकर महाराज युधिष्ठिर शोकसे व्याकुल हो धरती पर बैठ गये, पश्चात् अध्यात्म तत्त्वके जानने-वाले तथा सांख्ययोगमें निपुण शौनक नामक एक विद्वान् राजासे कहने लगे, हे महाराज! सहस्रों शोकके स्थान और सैकड़ों भयके स्थान मूर्ख-होंको आश्रय करते हैं, पण्डितको आश्रय नहीं कर सक्ते हैं। जो कर्म्म ज्ञानके विरोधी, मुक्तिमें विघ्न करनेवाले और बहुत दोषयुक्त हैं, ऐसे कर्म्मोंमें आपके समान बुद्धिमान् नहीं लगते हैं। हे महाराज! पण्डितलोग जिस बुद्धिको सब दुःखोंकी नाश करनेवाली कहके वर्णन करते हैं वही श्रुति और स्मृतिसे भरी, आठ अङ्गवाली बुद्धि आपमें विराजमान है, इससे आपसे पुरुषोंको धनके कष्टसे वा दुःखसे चलने योग्य मार्ग, वा अपने सम्बन्धियोंके आपत कालमें, अथवा मन सम्बन्धी वा शरीरसम्बन्धी दुःखसे दुःखी होना उचित नहीं है। पहिले समयमें महात्मा लोगोंने चित्तको स्थिर करनेवाले सिद्धान्त कहे हैं, उन्हें मैं कहता हूं सुनिये। यह जगत् मन और देह इन दोनोंके निमित्तही दुःखसे पीड़ित होता रहता है। इसी मानसिक और देह सम्बन्धी दुःखोंकी शान्तिका उपाय संक्षेप और विस्तारसे कहता हूं, सुननेको तयार हूजिये। व्याधि, अनिष्ट प्राप्ति, श्रम और प्यारी वस्तुकी अप्राप्ति, इन चार कारणोंसे शरीरमें दुःख उत्पन्न होता है, औषधादिके सेवनसे व्याधि और सदाचिन्तासे दूर रहने रूप योगसे आधा "मनका दुःख" दूर होता है। बुद्धिमान वैद्यलोग पहिलेही प्यारी बात, सुखभोग और प्रसङ्गसे रोगी मनुष्यके मनोगत दुःखकी शान्त करते हैं, जैसे तपेहुए लोहेके टुकड़ेसे घड़ेमें भरा जल तप जाता है, ऐसेही मनके दुःखसे शरीरभी तप जाता है, इस कारणसे ज्ञान रूपी जलसे मनके दुःखकी अग्निको बुझा देनाही कर्त्तव्य है। मनका सन्ताप दूर होनेसे शरीरकी ताप बुझ जाती है। मनुष्योंका स्नेह ही दुःख भय, शोक, हर्ष और रोग इन सबका कारण है, प्रीति होनेसे ही विषयोंकी चिन्ता और विषयोंमें प्रीति यह दो बिकार मनमें उत्पन्न होते हैं, यह दोनों बिकार कल्याणको नाश करनेमें यद्यपि एक से हैं, तौभी पहिली विषय-चिन्ता बहुत बड़ी है। जैसे वृक्षकी खाखर के भीतर रहनेवाली आग वृक्षको जड़के सहित नाश करदेती है, ऐसे ही थोड़ीभी विषय-प्रीति मनुष्यके धर्म्म और अर्थका नाश करदेती है। जो मनुष्य विषयका त्यागी हो उसे, विषयसे विरक्त नहीं कहते हैं, किन्तु जो मनुष्य विषय प्राप्तिमें दोषोंका समझता है, वही विषय-त्यागी कहाता है, वह त्यागीही वैराग्यका पात्र है, वही शत्रुता रहित स्वतन्त्र होता है। इस हेतुसे धन इकट्ठा करके मित्रोंसे प्रेम करनेकीभी इच्छा मत करना; तथा अपने शरीरसे उत्पन्न हुए स्नेहकी ज्ञानसे निवारण करना। जैसे कमलके पत्ते पर जल नहीं लगता है, वैसेही उन नित्य वस्तुओंके पानेमें उद्योग करनेवाले, शास्त्रज्ञ शुद्धचित्त और प्रसिद्ध विवेकी मनुष्योंके अन्तःकरणमें स्नेह नहीं लग सक्ता है। जो मनुष्य विषय प्रीतिमें फसता है, उसी मनुष्यके अन्तःकरणमें विषयकी अभिलाषा उत्पन्न होकर उसे दुःख होता है, अनन्तर उसके चित्तमें विषय भोगकी इच्छा उत्पन्न होती है, उसके पीछे

विषय प्रतिदिन मनुष्यको पीड़ा देती है और ... मेंलगाती है, इस विषयतृष्णाको दुर्बुद्धि लोग नहीं छोड़ सकते हैं; मनुष्यका शरीर वृद्ध होजाता है, परन्तु तृष्णा वृद्ध नहीं होती है, इस लिये तृष्णाको प्राणनाशक रोग कहसकते हैं; जो मनुष्य विषयतृष्णाको त्याग करसक्ता है वही सुखी होता है। इसे विषयतृष्णाका आदि और अन्त नहीं है, यह प्राणियोंके अन्तःकरणमें बैठकर अग्निके समान उनका नाश करती है। जिस प्रकारसे काठ अपने अङ्गसे उत्पन्न हुए अग्निसे विनाश होता है, वैसेही अपनी आत्माको ... रहनेवाले मनुष्य अपने अङ्गसे उत्पन्न हुए लोभसे नष्ट होता है। जैसे मृत्युसे सब प्राणियोंको भय होता है, वैसाहि चोरसे, राजासे, आगसे, जलसे और अपने कुटुम्बियोंसे धनवान् मनुष्यको डर होता है। जिस प्रकारसे मांस यदि आकाशमें रहे, तो पक्षीगण, पृथ्वीमें रहे तो मांस खानेवाले जन्तु, और जलमें रहे, तो मछली उसे खाती हैं, वैसेही धनाढ्य लोग जहां रहते हैं, वहीं उनको विपत्ति घेरती है; धनही अनेक मनुष्योंकेवास्ते अनर्थकी जड़ होता है; इस कारणसे जो मनुष्य धनका ... समझके उसमें लिप्त होता है, वह ... सुखको नहीं पासकता है। बुद्धिमान् मनुष्य जानता है, कि धनकी प्राप्ति, लोभ ... का कारण तथा कृपणता अभिमान डर; ... इनसब दुःखोंकी जड़ केवल ... देखिये धनको कमानेमें जैसा ... दुःख धनकी ... और देखभाल तथा धनके नाशमें ... है। धनसे दुःख दूर करनेवास्ते ... हैं, वह लोभभी धनकेवास्ते ... इसलिये धनके चिन्ता करनाहि उचित नहीं है। जो ... होते हैं वह असन्तोषसे समयको बिताते हैं, और पण्डित लोग सदा सन्तोषके अमृतमें अन्तःकरणको भिगाये रहते हैं; कोई भी मनुष्य कभी विषयतृष्णाके पार नहीं जा सक्ता है, इस सन्तोषहीको परम सुख वर्णन किया गया है। पण्डितलोग, जीवन यौवन, रूप, रत्नोंका इकट्ठा करना, प्रभुता और प्यारे मनुष्यके पास रहना, इन सब वस्तुओंको अनित्य जानकर उनमें इच्छा नहीं रखते हैं। इस कारणसे दुःख सहकरभी धनके कमानेको त्यागना योग्य है। जिस कारणसे धनके कमाने वाले मनुष्य कभी उपद्रवरहित नहीं देखे जाते हैं, इसी निमित्त धर्म्मात्मा लोग उसीकी प्रशंसा करते हैं, जिसकी धनमें प्रीति नहीं रहती है। जो पुरुष धर्म्मकेवास्ते धन कमानेका उद्योग करते हैं, उस उद्योगकी अपेक्षा क्रिया रहित होना उत्तम है; क्योंकि अंगमें लगी हुई कीचको कीचसे धोनेकी अपेक्षा कीचको न छूनाही उत्तम है। हे युधिष्ठिर! जो आपको धर्म्ममें प्रीति हो तो धनमें इच्छारहित बनो।

युधिष्ठिर बोले; हे ब्राह्मण! मैं ब्राह्मणोंके पालनेकेवास्ते ही धनकी इच्छा करता हूं, लोभसे वा अपने भोगविलासकेवास्ते मुझे धनकी कामना नहीं है। हमारे ऐसे पुरुष गृहस्थाश्रममें रहके अपने आश्रममें रहनेवालोंको बिना पालन किये कैसे निश्चिन्त रहसकते हैं? जैसे सब प्राणियोंको अपने कुटुम्बोंको भोजन बांट देना उचित है, वैसेही गृहस्थको सन्यासी और ब्रह्मचारी पाक क्रियारहित मनुष्योंको भोजन देना आवश्यक है। यदि भले मनुष्यके घरमें अतिथि और अभ्यागत लोगोंकेवास्ते और कोई देने योग्य वस्तु न हो, तो आसनकेवास्ते तृण, रहनेको स्थान, पैर धोनेको जल और सन्तोष देनेको मीठेवचन इन सबका कभी अभाव नहीं होता है। गृहस्थ मनुष्य रोगीको शय्या, थकेमांदेको आसन, प्यासेको जल, और भूखेको भोजन

देता है। जो घरपर कोई अतिथि आवे तो उस पर स्नेहदृष्टि रखना, बड़ी श्रद्धासे मनहो मनमें प्रसन्न होना, मीठे बचनसे उसे सन्तुष्ट करना, खड़े होकर आसन देना, हाथ उठाकर उनके सम्मुख जाना और यथायोग्य उसकी पूजा करना यह सब गृहस्थके नित्यधर्म हैं। जो मनुष्य अग्निहोत्र, गौकी सेवा, तथा पुत्र, स्त्री सेवक, जाति और अयिथिका पालन पोषण न करें वेही मनुष्य अधर्मके कर्मसे उत्पन्न हुए पापद्वारा भस्म होते हैं, इसी कारणसे गृहस्थ मनुष्य अपने भोजनकेवास्ते पाक और पितर देवता, और अतिथोंकी पूजाके उद्देश्यको छोड़के पशुको न मारे, तथा पितर, देवता और अतिथि को विनादिये मारे हुए पशुका मांस न खाय; वरन सायंकाले और प्रातःकाल कुत्ते, चाण्डाल और पक्षियोंके वास्ते पृथ्वीमें अन्न रखके वैश्व-देव नामक वलि प्रदान करे, जो मनुष्य प्रतिदिन पितर देवता और अतिथिको भोजन करानेके पश्चात यज्ञसे बचा भोजन करता है वही मनुष्य अमृत भोजन करता है, इस अतिथिसेवनरूपी यज्ञमें अतिथिको स्नेह भरी दृष्टिसे देखना, मनको प्रसन्न और मिठिवाणीसे प्रसन्न करना, अतिथिके पीछे जाना, अन्न आदिसे अतिथिसेवा करना यह पांच प्रकारकी दक्षिणा देनी चाहिये। जो गृहस्थ राहसे थके हुए मनुष्यको कृपणताको छोड़के भोजन कराता है वही महा पुण्यको पाता है, पाण्डतलोग कहते हैं, कि जो लोग गृहस्थाश्रममें रहके इस प्रकारसे आचारको पालन करते हैं, उनको परम धर्म होता है; हे द्विजवर! इससे आपका प्रयोजन क्या है उसे प्रकाश कीजिये।

शौनक बोले, हा कष्ट! हा शोक! इस संसारका स्वभावही उलटा है, देखिये, भले मनुष्य जिस कार्य्यसे लज्जित होते हैं, दुष्ट मनुष्य उसीसे प्रसन्न होते हैं, वुद्धिहीन मनुष्य मोह, और प्रीतिके वशमें तथा इन्द्रियोंके प्यारे काममें फंसके लिङ्ग और पेटकेवास्ते अनेक लोगोंको अन्न और जल दिया करते हैं। जैसे दुष्ट और विगड़े हुए घोड़ोंके द्वारा सारथी राहमें गिरता है, वैसेही हरनेवाली इन्द्रियोंके द्वारा खिंचकर परमार्थ ज्ञानसे विहीन होकर वही वुद्धिहीन मनुष्य नष्ट होता है। छहो इन्द्रियोंमेंसे कोई इन्द्रिय अपने विषयकी ओर जाती है, उस समय मनुष्यका अन्तःकरण उसी विषय भोगकी कामना करता है, इस प्रकारसे जिस मनुष्य का अन्तःकरण विषय-भोगकी ओर दौड़ता है, उसी मनुष्यकी उस विषयको भोगनेमें इच्छा और प्रवृत्ति उत्पन्न होती है, उस समय, जैसे पतङ्ग अग्निकी लौयके रूपसे मोहित होकर उसमें गिरता है, उसी प्रकारसे विषय-भोगके सङ्कल्प-रूप कामनाके वाणसे विंधकर लोभकी अग्निमें गिरता है, पश्चात् वह मूर्ख मनुष्य इच्छाके अनुसार आहार विहारसे महामोहसे भरे सुखमें डूबकर आत्मतत्वको नहीं जानता है; वस, कर्म, अविद्या और विषय तृष्णासे चक्रके समान भ्रमित होकर इस संसारमें ब्रह्मासे तिनकेतक भूमिमें फिरने वाले आकाश-में चरनेवाले, और जलचर आदि योनियोंमें वारम्वार जन्म लेते हैं; महाराज! अज्ञानी जीवोंको ऐसीही गति होती है। जो मनुष्य कल्याणकारी धर्मके आचरणसे मुक्ति पानेके पात्र हैं, उनको गति सुनिये। कर्म करने योग्य हैं और कर्मत्यागने योग्य हैं, यह दोनो प्रकारके वेदवाक्य हैं, इस कारणसे यह सब धर्म अभि मान रहित होके करे:—यज्ञ, वेद-पढना, दान तपस्या, सत्यका आचरण, क्षमा इन्द्रियोंको जीतना, और अलोभ यह आठ प्रकारका धर्म मार्ग कहा गया है, इनमेंसे पहिले कहे चार पितृलोकके मार्गको लेजाते हैं, इस विषयमें जो कर्म करने योग्य कहके वर्णन किये गये हैं, उनको अभिमान रहित होके करे तथा अन्तमें लिखे देवयानके नामसे प्रसिद्ध हैं, इनको महात्मा लोग सदाही करते हैं। परन्तु

शुद्धचित होके ऊपर लिखे अष्टाङ्ग धर्म्मको करना चाहिये। इस कारणसे जो मनुष्य संसारको जीतने अर्थात् मोक्ष पानेकी इच्छा रखते हों, वह अच्छी भावना भली भांति इन्द्रियोंको जीतना, भलीभांति विशेष व्रत, भलीभांति गुरुसेवा; भलीं भांति वेदोंका पढ़ना, भलींभाति भक्षका त्याग और भली भांति चित्तको रोककर कर्म्मोंको करते हैं। देवता लोगोंने राग द्वेष रहित होकरही ऐश्वर्य्यको पाया है। रुद्रगण, साध्यगण, आदित्यगण, वसुगण और दोनो अश्विनीकुमार इसी भांतके ऐश्वर्य्यसेही इस प्रजागणका पालन करते है। हे कुन्तिनन्दन। आप भी पूरीरीतिसे शममें तत्पर होके तपकी सिद्धि और योगकी सिद्धिको प्राप्तकरने आदिसे पितृऋणसे मुक्त होकर पिता मातारूपी सिद्धिको पाया है और यज्ञआदि कर्म्मोंको करके कर्म्ममयी सिद्धिको पाया है, इस समय ब्राह्मणोंका पालन करनेके वास्ते तपस्यासे सिद्धि प्राप्त करनेको इच्छा कीजिये,, तपसे सिद्ध हुआ मनुष्य जो इच्छा करता है तपके प्रभावसे वही कर सकता है। इस कारणसे तपस्याको आश्रय करके अपने मनोरथको पूरा कोजिये।

द्वितीय अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर शौनकके इन सब वचनोंको सुनके, पुरोहितको बुलाके भाइयोंके मध्यमें बैठके कहने लगे। हे भगवान्! मैं वनको जानेके वास्ते उद्यत हूं, ऐसेभी यह पाठमें निपुण ब्राह्मण मेरे साथी बने हैं, अब इनको पालन करने और दान करनेमें समर्थ नहीं हूं, इस कारणसे मैं बहुत ही दुःखी हूं, पर इनको छोड़भी नहीं सकता हूं, इसलिये मुझे कैसा कर्म्म करना चाहिये, वह आप मुझे उपदेश दीजिये। श्रीवैशम्पायनजी बोले, धर्म्मात्माओंमे श्रेष्ठ पुरोहित धौम्य युधिष्ठिरके इस प्रस्तावको सुननेके पश्चात् एक मुहूर्त्तभर समाधिसे उस विषयको विचार कर कहने लगे, कि पहिले समयमें सविता सूर्य्य सब प्राणियोंको भूखसे अत्यन्त दुःखी देखकर उन प्राणियों पर पिताके समान दयालु हुए, इसी हेतुसे वह उत्तरायणमें जाके अपनी किरणोंसे जलको उठाते है, और दक्षिणायनमें उष्णता (गर्म्मी) को धारण करके पृथ्वीपर विराजमान रहते है, जब वह खेतोंमें गर्म्मी पहुंचाते है, उसके पश्चात्, औषधियोंके स्वामी चन्द्रमा उसी उठाये हुए जलसे अन्तरीक्षमें मेघ-उत्पन्न करके जल बरसाते और औषधियोंको उत्पन्न करते है। बस ऐसे अन्न सूर्य्यही चन्द्रमाके तेजसे सेचन और खेतीके अङ्कुर रूपमे निकलकर ६ रसयुक्त पवित्र औषधियोंके रूपमें उत्पन्न होते है, यह औषधिही संसारमें प्राणियोंका अन्न होती है, जिस कारणसे सम्पूर्ण प्राणियोंके जीवनका आधार अन्नही सूर्य्यकी कृपासे होता है, और सूर्य्यही सब प्राणियोंके पिता रूप हुए हैं, इसी कारणसे आप सूर्य्यके ही शरणागत हूजिये। उत्तम कुलमें उत्पन्न हुए राजालोग पूरीरोतिसे तपस्याको आश्रय करके ही प्रजाको दुःखसे उद्धार किया करते है, देखिये भीम्य, कार्त्तवीर्य्य, पृथु और नहुष इन राजोंने तपस्या और समाधिको अवलम्बन करके ही प्रजाको विपतसे उबाराथा। हे धर्म्मात्मन्! आपभी शुद्ध कर्म्मवाले है, आपभी उन्होंके समान तपस्या करके ब्राह्मणोंका पालन कीजिये।

जनमेजय बोले, कुरुकुलके मुकुट राजा युधिष्ठिरने ब्राह्मणोंके वास्ते विचित्ररूपी सूर्य्यकी किस प्रकारसे तपस्या की थी। श्रीवैशम्पायन बोले. हे राजेन्द्र! आप भलीभांति सुनिये, मैं पूर्णरीतिसे उसका वर्णन करता हूं, आप शुद्ध और शान्त चित्तसे सुनिये। हे महाबुद्धिमान्! धौम्य ऋषिने महात्मा युधिष्ठिरसे जो सूर्य्यके

श्रीवैशम्पायनजी बोले,- राजा युधिष्ठिरने धौम्यसे इन समयानुसार वाक्यों को सुनके ब्राह्मण प्रतिपालन रूपी धर्म्म चिन्ता करके दृढ़ नियम और शुद्धचित्त होकर मनको संयममें लगाके घोर तपस्याका आरम्भ किया। वह पुष्प तथा नैवेद्य आदिसे सूर्य्यकी पूजा करके जलमें घसकर सूर्य्यके सम्मुख खड़े हुए। उन धर्म्मात्माने इन्द्रियोंको जीतके योगको आश्रय और वायु भक्षण करके तथा गङ्गा जलको छूकर प्राणायामके अनुष्ठानमें कुछ समयको बिताया, पश्चात् शुद्ध और मौनी होके स्तुति करना आरम्भ किया। हे सूर्य्य! तुम जगत्के नेत्र, तुम सब प्राणियोंके आत्मा, तुम चराचरके आत्मा, तुम चराचरके उत्पत्ति स्थान और तुमही सम्पूर्ण क्रियावानोंके आधार हो। तुमही समस्त ज्ञानियोंकी गति, तुमही योगीजनोंका परम आश्रय, तुमही मुक्ति चाहनेवालोंका खुला मुक्तिद्वार और तुमही सब लोकोंके आधार हो। तुमहीसे सब लोक प्रकाश पाते हैं, तुमहीसे इस जगतको शुद्धता प्राप्त होती है, तुमही छलरहित भावसे इस जगत्को पालन करते हो, ऋषिलोग तुम्हारी पूजा करते हैं, एवम् वेदपाठी ब्राह्मणोग अपनी अपनी शाखाओंमें लिखे मन्त्रोंसे समय पर तुम्हारी उपासना करते हैं।

सिद्ध, चारण, गन्धर्व्व, यक्ष, गुह्यक, और सर्प बरमागनेवास्ते तुम्हारे शीघ्रगामी दिव्यरथके पीछे पीछे फिरा करते हैं। इन्द्र और उपेन्द्रके सहित तेंतीस देवता और विमानविहारी गणोंने तुम्हारी उपासना करके ही सिद्धि पाई है, उत्तम विद्याधरोंने दिव्यमन्दारकी फूलमालासे तुम्हारी पूजा करकेही शीघ्रमनोर्थ प्राप्त किया है; गुह्यक गण तथा दिव्य और मानुष सात पितरोंने तुम्हारी कृपासेही प्रधानता पायी है; वसुगण, रुद्रगण, साध्यगण, मरीचिगण, सिद्धगण, और वालखिल्य आदि सबोंने

एकसौ आठ नामके स्तोत्रको वर्णन किया था, उसे सुनिये। सूर्य्य, अर्य्यमा, भग, त्वष्टा, धाता, प्रभाकर, पृथिवी, जल तेज, आकाश, वायु, परायण, सोम, वृहस्पति, शुक्र, बुध, मङ्गारक, इन्द्र, विवस्वान्, दीप्तांशु, शुचि, शौरि, शनैश्चर, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, स्कन्द, वैश्रवण, यम, विद्युत् जठर और भौतिक अग्नि, तेजः पति, धर्म्मध्वज, वेदकर्त्ता, वेदाङ्ग, वेदवाहन, सत्य, त्रेता, द्वापर, सबमलोंका आश्रय कलियुग, कला, काष्ठा, मुहूर्त, रात्रि, प्रहर, सम्बत्सर करनेवाले, अश्वत्थ कालचक्र, सनातन, कालपति प्रजापति, विश्वकर्म्मा, तमोनाशक, वरुण, सागर अंशु जीमूत, जीवन, शत्रुनाशी, भूताश्रय; सब प्राणियोंसे नमस्कार करनेयोग्य, भूतपति, स्रष्टा, सम्वर्त्तक, वह्नि, सवादि, अलोलुप अनन्त, कपिल, कामप्रद भानु, सर्वतोमुख, जय, विशाल, वरद सब धातुओंको सीचनेवाले, मन, सुवर्ण, भूतादि, शीघ्रगामी प्राणोंका आधार, धन्वन्तरि, धूमकेतु, अदिति पुत्र, आदिदेव, द्वादशात्मा, अरविन्दाक्ष, पिता, माता, पितामह स्वर्गद्वार, मुक्तिद्वार, त्रिपिष्टप, देहकर्त्ता, प्रशान्तात्मा, विश्वतोमुख चराचरात्मा, सूक्ष्मात्मा, विश्वतोमुख, दयावान् मैत्रेय; स्मरण करने योग्य, महातेजवान् सूर्य्यके यह १०८ नाम स्वयम्भूने वर्णन किये थे। देवता, पितर, और यक्षलोग जिसकी सेवा करते हैं, असुर, निशाचर और सिद्धगण जिसकी वन्दना करते हैं, जो उत्तम सुवर्ण और अग्निके समान, प्रकाशयुक्त हैं ऐसे भास्करको कल्याणके निमित्त नमस्कार करता हूं। जो मनुष्य सूर्य्य निकलनेके समय एकाग्रचित्त होके इस स्तोत्रको पढ़ते हैं, वह पुत्र, स्त्री, धन, रत्न, स्मरणशक्ति, तथा धारणाशक्ति और बुद्धिको पाते हैं। यदि मनुष्य परमदेव सूर्य्यके इस स्तोत्रको शुद्ध और स्थिरचित्तसे पाठ करे, तो शोकरूपी अपार दावानलसे छूट जाय और मनवाञ्छित सिद्धिको पासकता है।

आपकी प्रणाम करके उत्तमता पाई है। ब्रह्मलोकसे आदिलेके सातो लोकोंमें कोई पदार्थ ऐसा नहीं है, जिसे आपसे भिन्न कहा जाय, संसारमें वलयुक्त और भी अनेक महत् पदार्थ है, पर उनमेंसे कोई भी आपके समान प्रभाव युक्त और दीप्तिमान नहीं है, सम्पूर्ण ज्योति तापमें ही निवास करती है, समस्त ज्योतिके स्वामी तुमही हो; सत्य सत्व और सम्पूर्ण सात्विक भाव तुममें ही विराजमान है, भगवान् विष्णु जिससे दैत्योंके अभिमानकी नाश करते है, उस सुनाभ चक्रको तुम्हारेही तेजसे विश्वकर्म्माने बनाया था; तुम्ही ग्रीष्म ऋतुमें अपनी किरणोंसे, शरीरधारी औषधी और रसोंके तेजको खींचकर फिर वर्षा कालमें बरसा देते हो, तुम्हारी किरणही तपाती है, जलाती है, और वर्षा ऋतुमें मेघ बनके गरजती चमकाती तथा बरसाती हैं शीतबातसे जो मनुष्य पीड़ित हो उसकेवास्ते जैसी सुखकारी आपकी किरण होती है वैसी अग्नि वा कम्बल कदापि सुखकारी नहीं होते हैं, तुम्ही १३ द्वीपयुक्त पृथिवीको अपनी किरणोंसे प्रकाशित करते हो, तुम एकलेही तीनोलोकोंका कल्याण करनेमें प्रवृत्त होते हो, यदि जगत्में तुम्हारा उदय न हो, तो यह सम्पूर्ण जगत् अन्धा हो जाय, तथा बुद्धिमान् लोगभी धर्म्म, अर्थ और काममें प्रवृत्त न हो सकें; ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य तुम्हारीही कृपासे, अग्न्याधान, पशुवन्ध, इष्टिमन्त्र, यज्ञ और तपस्या आदि क्रियाओंको करते हैं, सहस्र युगका समय जो ब्रम्हाका एकदिन प्रसिद्ध है, कालको जाननेवाले पण्डित लोग उसका आदि और अन्त तुमकोही मानते हैं; तुमही मनु, मनुष्य, और मन्वन्तरोंके सहित सम्पूर्ण जगत्के तथा ईश्वरके ईश्वर हो, महाप्रलयके समयमें तुम्हारे क्रोधसे निकली सम्वर्त्त नामक अग्नि इस त्रिलोकीको भस्म कर देती है. तुम्हारी किरणोंसे उत्पन्न हुआ अनेक वर्णोंसे शोभायमान् महामेघगण ऐरावत और वज्रके सहित उदित होके सम्पूर्ण जगत्को जलसे डुबा देते हैं, पुनर्वार तुमही १२ मूर्त्ति धारण करके अपनी किरणोंसे एकार्णव समुद्रको सुखा देते हो, आचार्य्य लोग तुमको इन्द्र कहके कीर्त्तन करते हैं, तुमही विष्णु, रुद्र, प्रजापति, अग्नि, सूक्ष्ममन, प्रभु, और सनातन ब्रह्म निरूपित होते हो, पण्डितलोग तुमको हंस, सविता, भानु, अंशुमाली, वृषाकपि, विवस्वान्, मिहिर, पूषा, मित्र, धर्म्म, सहस्र-किरण, आदित्य, तपन, गोपति, मार्तण्ड, अर्क, रवि, सूर्य्य, शरराय, दिनकर, दिवाकर, सप्तसप्ति, धामकेशी, विरोचन, शीघ्र चलनेवाले, अन्धकार नाशक, हरिताश्व, कहके कीर्तन करते हैं, जो मनुष्य शान्तचित्त और अहङ्कार रहित होके सप्तमी वा छठको तुम्हारी पूजा करता है लक्ष्मी उसकी सेवा करती हैं; जो एकाग्र चित्तहोके तुम्हारी पूजा और वन्दना करते हैं उनको मानसिक शारीरिक तथा और और कोई बिपद नहीं सताती है, जो लोग तुम्हारे भक्त है, वह सब रोग और पापोंसे छुटे सुखी और अधिक कालतक जीते रहते हैं; हे अन्नके स्वामी! मैं श्रद्धापूर्व्वक सबके अतिथि सत्कार करनेकेवास्ते अन्नकी इच्छा करताहू, तुम मुझे पूर्ण रीतिसे अन्न दो, विजली, वज्र आदिकी प्रवर्त्तन करनेवाले, अरुण, और दण्ड आदि जिन सेवक लोगोंने आपका आश्रय लिया है मै उनकी वन्दना करता हूं तथा मुक्ति और वन्धन करनेवाली, क्षुधा, तंद्री, और गौरी भूतमाताओंके शरणागत होके उनको नमस्कार करता हूं; वह हमारी रक्षा करें।

श्रीवैशम्पायनजी बोले. कि हे महाराज। युधिष्ठिरके इस प्रकारसे जगत्को पवित्र करनेवाले सूर्य्यकी स्तुति करनेपर सूर्य्यदेव उनपर प्रसन्न होकर जलती हुई अग्निके समान प्रकाशमान शरीरसे उनके समीप प्रकट हुए, और

बोले, हे मनुष्योंके स्वामी! तुम्हारे मनकी इच्छा-पूरी होगी, हम १२ वर्षतक तुमको अन्न दान करेंगे, तुम हमसे तामेकी बनी हुई बटलोही ग्रहण करो। हे व्रतधारी! अन्न, फल, मूल, साग वा मांस जो कुछ इसमें बनेगा, उसे जब तक द्रौपदी इस पात्रसे परोसेंगी तबतक चावने और चूसनेके योग्य सब प्रकारके अन्न इसमें भरे रहेंगे, तुमको १४ वर्षमें राज्य प्राप्त होगा।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि भगवान् सूर्य्यदेव ऐसे कहके उसी स्थानपर अन्तर्ध्यान होगये जो मनुष्य जिस वरकी इच्छा करके युधिष्ठिरके बनाये इस सूर्य्यके स्तोत्रका एकाग्रचित्तसे पाठ करेगा सूर्य्यदेव उसे वही वर देते हैं, चाहे कोई स्त्री वा पुरुष प्रतिदिन इसका पाठ करे वा सुने उसे यदि पुत्रकी इच्छा हो तो पुत्र, धनकी इच्छा होतो धन, विद्याकी हो तो विद्या, प्राप्त होती है; स्त्री वा पुरुष जो कोई हरदिन दोनों सन्ध्योंमें इसका पाठ करे वा वह किसी विपदमें फंसा होतो उससे छुटजाता है, यदि किसी वधमें हो तो उससे छूट जाय, युद्धमें जयपावे, बहुत धन पावे और सब पापोंसे छुट-जाता है और मरनेके पश्चात् सूर्य्यलोकमें जाता है। पहिले समयमें इस स्तोत्रको ब्रह्माने इन्द्रको इन्द्रने नारदको और नारदने धौम्यको दिया था, युधिष्ठिरने धौम्यसे इसे पाके अपने वाञ्छित फलोंको पाया था।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि धर्म्मको जानने-वाले युधिष्ठिर सूर्य्यसे वर पाकर जलसे निकले और धौम्यके दोनों चरणोंकी बन्दना की, एवम् भाइयोंको गलेसे लगाया। हे महाराज! पश्चात् वह द्रौपदीके सहित रसोईघरमें जाकर उससे आदर पाके रसोई बनानेकी क्रियाको आरम्भ किया। जिस अन्नसे भोजन बनता था, वह यदि थोड़ाभी हो हो तौभी, चावने योग्य, चूसने योग्य चाटने योग्य और पीनेयोग्य सब प्रकारके भोजन अक्षय हो जाते थे। महा-राज युधिष्ठिर उसी अन्नसे ब्राह्मणोंको भोजन कराते थे, ब्राह्मणोंको भोजन करानेके पश्चात् भाइयोंको भोजन करातेथे फिर आप भोजन करतेथे उसके पीछे द्रौपदीके भोजन करनेके पश्चात सूर्य्यका पात्र खाली हो जाताथा फिर उसमें कुछ नहीं रहता था, सूर्य्यके समान तेजवान् महाराज सूर्य्यसे ऐसा वाञ्छित वर पाके ब्राह्मणोंकी इच्छाके अनुसार अन्नदान करने लगे। इसके पश्चात् वह लोग धौम्यसे स्वस्ति-वाचन कराके ब्राह्मणोंके सहित काम्यक बनको चले गये।

इति तीसरा अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि पाण्डवोंके बनको जानेपर सुखसे बैठे हुए अम्बिकानन्दन, प्रज्ञा चक्षु राजा धृतराष्ट्रने व्याकुल चित्त होकर महा बुद्धिमान् धर्म्मात्मा विदुरसे कहा, हे विदुर! तुम शुक्रके समान शुद्ध बुद्धिवाले हो, धर्म्मके अति सूक्ष्म तात्पर्य्यके जाननेवाले हो, कुरुकुलमें किसीके साथ तुम्हारी शत्रुता नहीं है, अतएव इस समय वही सम्मति हमें दो, जिससे कौरवोंका और हमारा कल्याण हो। इस समय कौरवोंकी जैसी दशा है उसके अनुसार शीघ्रताके साथ हमें क्या करना चाहिये, पाण्डवोंके बनको जानेके कारणसे घबड़ाये हुए नगरनिवासी हमलोगोंपर कैसी भक्ति रखते हैं? पाण्डवलोग हमको किस रीतिसे जड़सहित नहीं उखाड़ सकेंगे? तुम इसका कोई अच्छा उपाय बत-लाओ, क्योंकि कोई अच्छा कर्म्म ऐसा नहीं है जिसे तुम न जानते हो। विदुर बोले, हे महाराज! मनुष्यके अर्थ काम और मोक्ष यह त्रिवर्ग धर्म्मसे होते है, पण्डित लोग राज्य-कोभी धर्म्मसे ही करते हैं, इस लिये आप धर्म्मके अनुगामी होके अपनी शक्तिके अनुसार अपनेपुत्र और पाण्डुके पुत्रोंका पालन कीजिये। हे कुरुनन्दन! आपके पुत्र दुर्य्योधन और शकुनि

आदि पापी जनोंने सत्यवक्ता युधिष्ठिरको सभामें बुलाकर जुएमें हराया है, इसीसे बहु-लोग धर्म्मसे रहित हो गये हैं। आपके पाप दूर करनेके वास्ते केवल यही उपाय दीख पड़ता है, इसके करनेसे आपके पुत्र निष्पाप होके जगत्में अच्छीतरहसे प्रतिष्ठा पा सकेंगे, आपने जो पाण्डवोंको पहिले राज्य दिया था, फिर उन्हें वही मिल जाय, तो आपके धर्म्मकी रक्षा हो; क्योंकि अपने धनसे सन्तुष्ट रहना और पराये धनमें इच्छा न करना राजा लोगोंके-वास्ते परम धर्म्म लिखा है, आप पाण्डवोंके राज्यको उन्हें दे दीजिये जिससे आपका अयश और आपसकी फूट दूर होजायगी तथा धर्म्मभी दृढ़ रहेगा,इस समय जिसमें पाण्डवोंको सन्तोष हो और शकुनिका अपमान हो ऐसाही काम आपको सब कामोंसे मुख्य समझके करना होगा, कारण यह है कि ऐसा करनेसे आपके पुत्रोंका नाश होनेसे बचा हुआ सौभाग्य उदय होगा, इसलिये शीघ्रतासे इस कार्य्यको कीजिये, यदि मेरे बताये कर्म्मको आप न करेंगे तो अवश्यही कुरुकुलका नाश होगा, क्योंकि भीमसेन वा अर्ज्जुन यदि क्रुद्ध होंगे तो शत्रुकुलको शेष न छोड़ेंगे, हे राजन्! जिनके अस्त्रविद्यामें निपुण योद्धा अर्ज्जुन बायें और दहिने दोनो हाथोंसे एकसे बाण चलानेमें समर्थ, जिनका धनुष संसारका सार गाण्डीव, तथा जिनके योद्धा महाभुज भीम, उनको तीनोलोकमें क्या कोई कार्य्य असाध्य है? महाराज। मैंने पहिलेही आपके पुत्र होनेके समय कुलके कल्याणकेवास्ते इस पुत्रके त्याग देनेको कहा था, तब आपने इस हितकारी कार्य्यको न किया, इस समय भी आपकी हित कामनासे पाण्डवोंके पाने योग्य राज्यको उनको देदेनेकेवास्ते कहता हूं, यदि इसे आप न करेंगे तो पीछे आपको दुःख-भोगना होगा। यदि आपका पुत्र पाण्डवोंके सङ्ग मिलकर और प्रेमयुक्त होकर राज्य करनेमें सम्मत हो तो आपको प्रसन्नहोनेके वास्ते दुःखपानेकी कोई सम्भावना नहीं है, नहीं तो आप भविष्यत् सुखके वास्ते कुलके अहितकारी अपने पुत्र दुर्य्योधनको कैद करके पाण्डुपुत्र युधिष्ठिरको राज्यका अधिकार दीजिये। अजातशत्रु युधिष्ठिर राग द्वेषको छोड़कर यदि राज्य करने लगेंगे तो सम्पूर्ण राजालोग तत्क्षणही बनियोंके समान हमलोगोंकी सेवा करने लगेंगे। हे राजन्! दुर्य्योधन, कर्ण और शकुनि प्रसन्नतासे पाण्डवोंकी सेवामें नियुक्त हों, दुःशासन सभाके बीचमें भीमसेन और द्रौपदीसे क्षमा मांगे, आप युधिष्ठिरका आदरके सहित राज्याभिषेक करें। महाराज। आपने जो मुझसे पूछाथा उसमें इसके सिवाय और क्या कहूं, मैंने जो कहा उसको करनेहीसे आप कृतकार्य्य होंगे।

धृतराष्ट्र बोले, हे विदुर। तुमने पाण्डवोंके और हमारे लिये उनके हितकारी और शुभकारी सम्पूर्ण वाक्य कहे, वह मेरे मनमें नहीं समाये; तुमने इस समय किस कारणसे ऐसा निश्चय किया? तुमने जो पाण्डवोंके कल्याणके निमित्त ऐसे वचन कहे उससे जान पड़ता है, कि तुम हमारे हितकारी नहीं हो। मैं उनके वास्ते पुत्रको कैसे त्याग करूंगा? पाण्डव हमारे ही पुत्र हैं, इसमें सन्देह नहीं, पर दुर्य्योधन मेरी कायासे उत्पन्न हुआ है, बस वह मेरा शरीर है; ऐसे स्थल पर पाण्डुपुत्र और मेरे पुत्र दोनोको एकसा समझ कर क्या कोई कह सक्ता है, कि दूसरेके वास्ते अपने शरीरको त्याग कर दो? हे विदुर। मैं तुम्हारा बड़ा मान्य करता हूं, पर तुम मुझसे सदाही कठोर वचन कहते हो, इसलिये जैसे खोटी स्त्री अनेक प्यारे वचनोंसे समझाई जाने परभी पतिको त्याग करती है, ऐसेही तुम मुझे परित्याग

करो, अथवा यहीं रहो, या जहा तुम्हारी इच्छा हो वहां जाओ। श्रीवैशम्पायनजी बोले, हे महाराज। राजा धृतराष्ट्र ऐसा कहके हठात् रणवासमें उठके चले गये, पश्चात् विदुरभी यह कहके कि इनका कुल अब नहीं बचेगा, जिस स्थानमें पाण्डव थे, वहींको चले गये।

चतुर्थ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कुरुकुल सिंह पाण्डवलोग अपने सेवकोंके समेत वनवासकी इच्छा करके गङ्गा तीरसे कुरुक्षेत्रको चले, सरस्वती दृषद्वती और यमुनाके तट पर एक बनसे दूसरे वनको ऐसे बराबर पश्चिम दिशाको चले, अनन्तर सरस्वतीके तट पर मारवाड़ जागल देशकी समभूमिमें मुनिप्रिय काम्यक नाम वनको देखा। हे राजन्। जिधर तिधर, अनेक मृग और पक्षियोंसे सेवित काम्यक वनमें मुनियोंसे सत्कृत और शान्त होकर ठहरे सदा पाण्डवोंके दर्शनाभिलाषी विदुर रथपर आरूढ़ होकर एकलेही ऋद्धिभरे काम्यक बनमें आये। तब विदुरने शीघ्रगामी अश्वयुक्त रथके द्वारा काम्यक वनमें जाकर देखा, कि महात्मा धर्मराज एकान्तमें द्रौपदी, ब्राह्मण और भाइयोंके समेत बैठे है, उस समय विदुरको दूरसे आते देखकर सत्यसन्ध राजा युधिष्ठिरने अपने भाई भीमसेनसे कहा, कि नजाने यह विदुर हमसे क्या कहनेको आते हैं, क्या यह शकुनीके वचनसे हमे जुएके निमित्त बुलानेको आते हैं? क्या अब दुरात्मा शकुनी जुएमें हमारे शस्त्रोंको जीतेगा? हे भीमसेन! यदि वे हमको बुलावेंगे, तो हम निवृत्त होनेमे असमर्थ होंगे और जब गाण्डीवको हम जुएमें हार जायंगे, तो फिर हमे राज्य कैसे मिलेगा? श्रीवैशम्पायनजी बोले, हे महाराज। तब सब पाण्डवोंने खड़े होकर विदुरको सत्कार र्व्वक लिया। अजमीढ़-वंशोद्भव विदुरने भी आदर पाके पाण्डवोंको यथोचित आशीर्वाद दिया, जब विदुर स्वस्थ हुए तो नरसिंह पाण्डवोंने उनके आनेका कारण पूछा, विदुरने विस्तार पूर्व्वक सब समाचार जैसे अम्बिकापुत्र धृतराष्ट्रने इनके सङ्ग कह दिया था, सुनाया।

विदुर बोले, हे अजातशत्रो। हितोपदेश द्वारा रक्षा करनेवाले मुझसे पूजा और प्रीति कर समता प्राप्त करके धृतराष्ट्रने यों पूछा, कि पाण्डवोंके इस प्रकारसे जाने पर उनको और हमको जो पथ्य हो सो तुम कहो, मैंनेभी कौरव और धृतराष्ट्रको जो उचित और करने योग्य था सो कहा, परन्तु उनको यह मेरा कहना प्रीतिकारक न हुआ और मैंने नैर उत्तम न समझा, हे पाण्डवो। जो परम कल्याणकी बात थी, सो मैंने उनसे कही परन्तु अम्बिका पुत्र धृतराष्ट्रने उसे न सुना, जैसे रोगीको पथ्य अच्छा नहीं लगता है, वैसेही उन्हें मेरा कहना अच्छा न लगा, हे अजातशत्रो! जैसे वेदविद्के घरमें दुष्टा स्त्री कल्याणको नहीं प्राप्त करने देती, तैसेही धृतराष्ट्रभी कल्याणको प्राप्त नहीं होंगे, जैसे अल्पवयस्का स्त्रीको साठवर्षका पति सुखदायक नहीं होता, तैसेही इनको बुद्धिभी लाभदायक नहीं है, जैसे कमलसे पत्तेमें रखाहुआ पानी नहीं ठहरता तैसेही धृतराष्ट्रके मनमे पथ्यबातभी नहीं ठहरती। हे राजन्। इससे निश्चय हुआ हैं, कि कुरुवंशका नाश निश्चयही होनेवाला है। धृतराष्ट्र परम कल्याणको प्राप्त नहीं होंगे, हे भारत। तब धृतराष्ट्रने मुझसे क्रोध करके कहा, कि जहा तुम्हारी इच्छा हो, तुम वहो चले जाओ, मैं अबसे नगर और पृथिवीको पालनामे तुम्हारी सहायता नहीं चाहता हूं, हे नरेन्द्र। इस प्रकार धृतराष्ट्रसे त्यक्त होकर तुम्हे सिखानेको आया हूं; सो मैंने जो कुछ सभामे कहा था और जो पुन. कहता हूं, सो धारण करो। जो वैरियोंसे

कठिन क्लेश पाके क्षमा करता हुआ समयको बिताता है, वह जैसे थोड़ी अग्नि बढ़कर सबको जलाती है, तैसे ही शत्रुओंको जलाकर एकला सब पृथिवीका भोग करता है, हे राजन्। जिसने अपना धन सहायोंमें बाटा है, उसके दुःखके वही सहायही भागी होते हैं, यही उपाय सहाय मिलनेका है, और सहाय लेना पृथिवी मिलनेका कारण है, हे पाण्डव। सहायोंसे मिथ्या वचन न कहने चाहिये, जो आप खाय, सो उन्हें भी सङ्गही खिलाना उचित है, उनके आगे अपनेको वड़ा न समझे, ऐसे राजा वर्द्धित होते हैं।

५ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, कि आप जो कहते हैं, सो मैं परमबुद्धि धारण कर स्वस्थ होकर सब ऐसेही करूंगा, औरभी देश और कालके अनुसार मुझे करने योग्य जो हो सो कहिये मैं सबही करूंगा।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भारत। जब विदुर पाण्डवोंके आश्रमको चले गये, तब महाबुद्धिमान् धृतराष्ट्रको महा चिन्ता हुई। उन्होंने सोचा कि विदुरको सन्धि विग्रहादि विद्या पाण्डवोंको वृद्धिकारिणी होगी, यह विचारकर सभाके द्वारपर आये और विदुरको स्मरण करके राजोंके सामने चेतन शून्य होकर पृथिवीमें गिरपड़े, पुन. सज्ञा प्राप्तकर और पृथिवीसे उठकर समीप खड़े सञ्जयसे राजाने ऐसा कहा, मेरा भाई और मित्र साक्षात् मानों धर्म्मही था, उसे स्मरण करनसे मेरा हृदय फटा जाता है, तुम मेरे उस धर्म्मज्ञ भाईको शीघ्र ले आओ। ऐसा कहते हुए राजा रोने लगे, पश्चात्तापसे जलते हुए, मोहसे विदुरको स्मरण करते हुए और भाईको प्रीतिसे दुःखी होकर राजाने सञ्जयसे पुनः यह वाक्य कहा, हे सञ्जय। तुम शीघ्र जाकर जानो, कि मेरा भाई विदुर जीता है, वा नहीं, मुझ पापीने उसे क्रोधसे त्याग कर दिया, उस पण्डित, अपार बुद्धिमान् मेरे भाईने कभी मेरा किञ्चित भी द्वेषयुक्त काम नहीं किया, किन्तु वह परम बुद्धिमान् मुझसे परम प्रिय कार्य्यको प्राप्त हुआ है। हे प्राज्ञ। उसे तुम ले आवो, नहीं तो मैं अपने प्राण को त्याग दूंगा। महाराजके ऐसे बचन सुनके प्रमाणकर (बहुतअच्छा) ऐसा कह कर सञ्जय काम्यक-बनको चले, सञ्जय शीघ्रही काम्यक वनमें जाकर जहां पाण्डव थे वहां पहुंचे और हरिणचर्म्म धारणकिये विदुर और शस्त्रोंको धारण किये तथा ब्राह्मणोंके सहित बैठे भाइयोंसे रक्षित, देवतोंसे परिवृत इन्द्रके समान महाराज युधिष्ठिरको देखा। सञ्जयने युधिष्ठिरको देखकर पूजा की और भीम, अर्ज्जुन, नकुल तथा सहदेवने यथायोग्य उनका आदर किया, जब वे सुखसे बैठे, तो अपने आनेका कारण कह कर विदुरसे ऐसा कहने लगे।

सञ्जय बोले, हे क्षत्तः। अम्बिकापुत्र राजा धृतराष्ट्र तुम्हारा स्मरण करते हैं, सो तुम शीघ्र चलकर उन्हें देखो और जिलाओ। हे नरश्रेष्ठ। तुम कुरुनन्दन पाण्डवोंकी सम्मति और राजोंमें सिंह धृतराष्ट्रकी आज्ञासे चलो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि सञ्जयके ऐसे वचन सुनकर बुद्धिमान् स्वजनके प्यारे विदुर युधिष्ठिरकी सम्मतिसे पुनः हस्तिनापुरको चले आये, उनको देखकर अम्बिकापुत्र तेजस्वी धृतराष्ट्र ऐसा कहने लगे, हे पापरहित! हे धर्म्मज्ञ। तुम प्रारब्ध हीसे आये हो, प्रारब्धहीसे तुम मुझे स्मरण करते हो, हे नरर्षभ! आज कल मुझे तुम्हारे दुःखसे जब निद्रा हाती है, तो अपने शरीरको लक्ष्मीहीन देखता हूं, राजा धृतराष्ट्र विदुरको गोदमें बिठलाकर और माथा सूघकर कहने लगे, कि हे अपाप! मैंने जो तुम्हें कहा, सो क्षमा करो।

विदुर बोले, कि हे महाराज! आप हमारे बड़े हैं, मैंने सब क्षमाही किया है, आपके दर्शनका अभिलाषी होकर मैं प्राप्त हुआ हूं। हे नरसिंह! धर्मज्ञ लोग दीनोंके पक्षपाती होते ही हैं, मुझे जैसे पाण्डुके पुत्र हैं, तैसेही आपके पुत्रभी हैं, परन्तु वे दीन हैं, यह विचार कर उनपर मैं कृपा करता हूं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि इस प्रकारसे महातेजस्वी दोनों भाई परस्पर वार्त्तालाप करके विदुर और धृतराष्ट्र बहुत प्रसन्न हुए।

६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि जब दुर्म्मति धृतराष्ट्रके पुत्र दुर्य्योधनने सुना, कि विदुर पुनः आये और राजाने उन्हें शान्त किया है, तो महादुःखसे जलने लगा। तब शकुनी कर्ण और दुःशासनको बुलाकर अबुद्धिरूपी अन्धकारमें प्रवेश करके ऐसे कहने लगा, महा बुद्धिमान् राजा धृतराष्ट्रका मन्त्री पाण्डवोंका मित्र उनका हिताभिलाषी विदुर लौट आया। जबतक पाण्डवोंके लौटानेकेलिये विदुर इन राजाकी बुद्धिको न फेरे तब तक मेरे हितकेलिये कुछ मन्त्रणा करनी चाहिये, यदि मैं किसी प्रकारसे पाण्डवोंको यहां आया हुआ देखूंगा, तो बिना प्रतिबन्धकेभी निराहार होकर सूख जाऊंगा, विष खाकर, शस्त्रसे, अथवा अग्निमें प्रवेश करके मरजाऊंगा; परन्तु ऋद्धियुक्त पाण्डवोंको नहीं देख सकूंगा।

शकुनी बोले, कि हे प्रजानाथ! हे महाराज! आप क्यों मूर्खोंके समान बुद्धिमें पड़े हैं? पाण्डवलोग प्रण करके गये हैं, वे ऐसा नहीं करेंगे। हे भरतकुल सिंह! हे प्यारे दुर्य्योधन! वे लोग सत्यवाक्यमें स्थित हैं, तुम्हारे पिताके वचनको कदापि ग्रहण करके पुनः नगरमें आही जांयगे, तो हम सब प्रतिज्ञा करके कार्य्य व्यवहारका निश्चय करलेंगे और हम सब राजाके कार्य्योंमें मध्यस्थ रहते हैं, सावधान होकर पाण्डवोंके छिद्र (दोष) देखते रहेंगे।

दुःशासन बोले, हे मामा! हे महाप्राज्ञ! जो तुमने कहा सो सब ठीक है, तुम्हारे कहनेमें सदा मेरी बुद्धि प्रसन्न होती है।

कर्ण बोले, कि हे दुर्य्योधन! हम सब यथायोग्य तुम्हारे हितको देखते रहते हैं; हे राजन् हम सबका एक मत है; वे वीर पाण्डव लोग बिना समय बिताये नहीं आवेंगे और यदि लोभसे आही जायं, तो पुनः जुएमें जीत लो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि जब कर्णने राजा दुर्य्योधनसे ऐसा कहा, तो वह अति प्रसन्न हुए और मुह फेरलिया। कर्ण यह देख कर शुभनेत्र फैलाकर शरीरको उद्यत करके क्रोधमें भरके दुःशासन, शकुनी और राजासे ऐसा बोले, हे राजालोगो! मेरा जो मत है, सो सुनो; हम सब राजाके दास हैं; हाथके समान इनका प्रिय कार्य्य करेंगे, हम सब आलस्यरहित होकर केवल राजाके प्रियके हित बैठेही नहीं रहेंगे, अर्थात् कार्य्यभी करेंगे, चलिये हम सब सन्नद्ध होकर रथोंमें बैठकर शस्त्रोंको धारण करके सेना लेकर वनवासी पाण्डवोंके मारनेको चलें, सब जब शान्त होकर अविदित जीतको प्राप्त होंगे अर्थात् मरजायंगे, तो धृतराष्ट्र पुत्र और हम सबभी विवाद रहित हो जायंगे, जब तक पाण्डव दुःखी हैं, जबतक शोकमें भरे हैं, जबतक मित्रोंसे हीन हैं, मेरे सिद्धान्तमें तबही तक वह जीतने योग्य है। सूतपुत्रके यह वचन सुनकर उन सबोंनेही प्रशंसा करी और बहुत अच्छा कहने लगे। निश्चय करके सब इकट्ठे होकर अपने अपने रथोंपर चढकर पाण्डवोंको मारनेको चले, उन सबोंको चलते हुए जानके, ज्ञाननेत्रसे देखकर भगवान् शुद्धात्मा कृष्णद्वैपायन व्यास मुनि आये, लोकपूजित भगवान व्यासमुनि

उनको जानेसे निषेध करके शीघ्र धृतराष्ट्रके पास जाकर ऐसा बोले।

७ अध्याय समाप्त।

श्रीव्यासजी बोले, कि हे महाप्राज्ञ धृतराष्ट्र! सब कौरवोंका हित वचन जो हम तुमसे कहते हैं, सो सुनो। हे महाबाहो! दुर्य्योधनादिके छलसे हारकर पाण्डवोंका वनको जाना हमारा प्रियकाम नहीं हुआ। हे भारत! यह लोग तेरहवर्ष पूरे होनेपर अपने क्लेशोंको स्मरण कर क्रोधित होके कुरुकुलमें विष बरसावेंगे, सो यह पापात्मा भेद-बुद्धि तुम्हारा पुत्र सदा क्रोधी दुर्योधन राज्यके निमित्त पाण्डवोंसे द्वेष करता है; इस मूर्खबुद्धिको निवारण करना ही अच्छा है. यह शान्त हो; अन्यथा वनवासी पाण्डवोंको मारनेकी इच्छासे अपने प्राण खो देगा। जैसे महाबुद्धिमान् विदुर, भीष्म, हम, द्रोणाचार्य्य और कृपाचार्य्य हैं, तैसेही आपभी साधु हैं, हे महाप्राज्ञ! अपने पुरुषोंसे लड़ना उत्तम नहीं वरन अधर्म्मको बढ़ानेवाला और यशनाशक है, अतएव आप उसे मत कीजिये, हे भारत! दुर्य्योधनकी जैसी समीक्षा (विचार पूर्वका भेदबुद्धि) है, हे राजन्! उसीसे महा विग्रह हो जायगी। हे राजन्! अथवा यह तेरापुत्र सहायहीन एकला वनको चला जाकर पाण्डवोंके सङ्ग रहै, तब तेरे पुत्रको पाण्डवोंके सङ्ग रहनेसे प्रेम उत्पन्न हो तो हे नरनाथ! हम कृतकृत्य हो जावेंगे, परन्तु यह भी दुर्लभ है, क्योंकि हे महाराज! यह सुना है, कि उत्पन्न होनेमें जिसका जो स्वभाव होता है, सो मरणसे भी नहीं छूटता है. यह तो कहिये कि भीष्म, द्रोण, विदुर और आप इस कार्य्यमें क्या उचित मानते हैं; क्योंकि पहिलेही तुम्हें यह करना था। विना कर्त्तव्यके विचारे अर्थनाश होता है।

८ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, कि हे भगवन्! हे मुने! यह जुआ मुझेभी प्रिय नहीं था, पर जान पड़ता है कि प्रारब्धके वशमें होकर मैंने यह काम किया। न भीष्म, न द्रोण, न विदुर और न यह गान्धारीको जुआ अच्छा लगा, परन्तु भूलसे हो गया। हे भगवन्! हे प्रियव्रत! मैं दुर्य्योधनको मूर्ख जानकरभी पुत्र स्नेहसे छोड़ नहीं सकता हूं।

व्यास बोले, कि हे विचित्रवीर्य्यके पुत्र नरनाथ! आपने सत्य कहा, पुत्रसे अधिक प्रिय और काईभी नहीं है, इन्द्रको भी जब सुरभीने अश्रुपातसे बोधित किया था, तो यही मानाथा कि अन्य वस्तुओंके बढ़ने परभी पुत्रके समान कोई वस्तु नहीं है। हे प्रजापते! यहां हम इन्द्र और सुरभीका संवादरूप बहुत उत्तम इतिहास कहते हैं, हे राजन्! एक समय गायोंकी माता सुरभी रोती हुई स्वर्गमें गई तब इन्द्रने उसके ऊपर कृपा करी।

इन्द्र बोले, कि हे शुभे! तुम क्यों रोती हो कहो देवता मनुष्य और नागोंमें कुशल तो है, क्योंकि तुम्हारा रोना काम नहीं है।

सुरभी बोली, हे इन्द्र! हे सुराधिप! तुम्हारी कोई क्षति नहीं दीखती है. मैं अपने पुत्रको देखकर सोचती हूं, इसी लिये रोती हूं। देखो यह मेरा पुत्र दुर्व्वल होने परभी भार खींचता है, तौभी यह इसे कोड़ेसे मारते हैं, हलमें जोतकर पीड़ा देते हैं, हे सुराधिप उत्कण्ठा सहित बैठे हुए, पिटते हुए देखकर मुझे दया होती है, और मेरा मन दुःखी होता है। उनमें जो बलवान् है, सो भारी धुरमें जुड़ा है, दूसरा जो दुर्व्वल और मांस रहित है, हे वासव! सो कठिनतासे भारको लेचलता है मैं इसीका शोच करती हूं। हे इन्द्र! देखो कोड़ेसे पिटनेपरभी और भारसे बार बार दुःखित होनेपरभी उसभारको नहीं लेचल सकता है. मैं उनहीके दुःखसे पीड़ित होकर अत्यन्त

हूं, और मेरे नेत्रोंसे आसू करुणा सहित बहतो हैं।

इन्द्र बोले, कि हे सुशोभने! तुम्हारे सहस्रों पुत्र पीड़ित हो रहे हैं, परन्तु तुम एकहीको पीड़ित देखकर क्यों रोती हो।

सुरभी बोली, कि हे शक्र! यद्यपि मुझे सहस्र पुत्र समानही हैं, तथापि दीन पुत्रपर अधिक दया है।

व्यास बोले, कि हे कौरव्य! सुरभीका यह वचन सुनकर इन्द्र अत्यन्त विस्मित हुए, हे राजन्! उन्होंने जाना कि पुत्र शरीरसेभी अधिक प्यारा होता है, उसी समय वहां पृथिवी पर बहुतही जलवर्षा और भगवान इन्द्रने बैल जोतनेवालोंको विघ्न कर दिया। सो जैसे सुरभीने कहा था, तैसेहो तुम्हारे पुत्रभी इकट्ठे होगए हैं। हे राजन्! हीन पुत्रपरभी अधिक कृपा होतीहो है। हे पुत्र! जैसा पाण्डु मेरा पुत्र था, तैसेही तुमभी हो और वैसेही महाबुद्धिमान विदुरभी हैं, इसीस्नेहसे यह सब कहने आयाहूं, यह बात है, कि तुम्हारे एक सौ एक पुत्र हैं, और पाण्डुके पांचही दीखते हैं, वेभी होन और दुःखित हैं, यह लोग कैसे जीयेंगे कैसे बढ़ेंगे अतएव पाण्डवोंपर मेरा चित्त दुःखी होता है। हे राजन्! यदि तुम कौरवोंको जिलाना चाहते हो, तो अपने पुत्र दुर्य्योधनको शान्त करो।

९ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, कि हे महाप्राज्ञ मुने! जो आपने कहा सो सत्य है, आप हमारे पिता हैं, इस बातको हम और यह सब राजालोग जानते हैं। हे मुने! आप जिस प्रकारसे कुरुकुलका उदय चाहते हैं, वैसेही मुझसे भीष्म विदुर और द्रोणनेभी कहा था, यदि आप मुझे कृपापात्र समझते हैं, और कुरुकुलपर आपको दया है, तो मेरे दुरात्मा दुर्य्योधन पुत्रको उपदेश कीजिये।

व्यास बोले, हे राजन्! यह देखो पांचो भाई पाण्डवोंको उपदेश किये भगवान् मैत्रेय ऋषि हमें देखनेको यहीं चले आते हैं। हे राजन् ये महाऋषि न्यायानुसार इस तुम्हारे शान्तिके अर्थ तुम्हारे पुत्र दुर्य्योधनको उपदेश करेंगे, हे कौरव्य! यह मुनि जो कहें, वो शङ्कारहित होकर करने योग्य है, इनका वा कार्य्य न करनेसे यह क्रोधयुक्त होकर तुम्हारे पुत्र को शाप देंगे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि व्यास ऐसा कहकर चले गए और मैत्रेयमुनि आये, पुत्रोंके समेत राजा धृतराष्ट्रने उनके लिये अर्घादि क्रिया करी। मुनियोंमें श्रेष्ठ मैत्रेय जब शान्त भये, तब अम्बिकापुत्र धृतराष्ट्र विनय पूर्व्वक ऐसे बोले से भगवन्! कहिये आप कुरुजाङ्गल देशमें सुखसे तो आये, कहिये वीर पांचों पाण्डव कुशलसे तो हैं, वे भरतकुलसिंह शान्ति करना चाहते हैं, या नहीं, कहिये कुरुवंशी भाईचारा तो न टूटेगा?

मैत्रेय बोले, मैं तीर्थयात्रासे घूमता हुआ कुरुजाङ्गलदेशको प्राप्त हुआ हूं। हे प्रभो! काम्यक वनमें प्रारब्धसे धर्म्मराजको देखा उन महात्माको जटा और मृग चर्म्मधारी वनवासी देखनेके निमित्त अनेक मुनियोंके समूह आये हैं। हे महाराज! वहां आपके पुत्रोंका जुआ-रूपी अन्याय और भूल सुनो, सो अब महाउपस्थित है। हे प्रभो! आपसे सदासे बहुत प्रीति और स्नेह है, अतएव मैं कौरवोंके कल्याणार्थ आपके पास आया हूं। हे राजन् आप और भीष्मके जीते यह उचित नहीं कि आपके पुत्र परस्पर विरोध करें। हे राजन् अभीतो तुम आपही युद्ध और अशुभके निवारण करनेको पशुकी रस्सीके समान उपस्थित हो आप इस उठे घोर अन्यायको क्यों देखते अर्थात् क्यों नहीं शान्त करते? हे कुरुनन्दन तुमने सभाके मध्यमें जो चोरके ऐसा काम किया

से तुम मुनियोंके सङ्गमें बैठकर शोभा नहीं ते हो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, तब भगवान् मैत्रेय षिराज दुर्य्योधनकी ओर मुख करके मीठी- ाणीसे बोले।

मैत्रेय बोले, हे दुर्य्योधन। हे महाबाहो। कहनेवालोंमें श्रेष्ठ। हे महाभाग। हम जो म्हारे हितके बचन कहते हैं, सो सुनो, हे ाजन्! नरसिंह पाण्डवोंसे द्वेष मत करो पना, पाण्डव, कौरव और सब लोकका प्रयकाम करो, वे सब पुरुषोंमें सिंह शूर तेजस्वी हायुद्धकारी दशसहस्र रथियोंके बलवाले और जके समान दृढ़ शरीरवाले हैं; वे सब सत्य- व्रतधारी सब वीर्य्याभिमानी हिड़म्ब वक आदि ाक्षसोंमें मुख्य, कामरूपी देवशत्रु राक्षसोंके ारनेवाले हैं, अभीमार्गमें जाते हुए रात्रिकी पर्व्वतके समान अचल भयानक शरीरवाला किर्म्मीर उन महात्माओंके मार्गको रोक कर खड़ा था, तब युद्धप्रिय बलवानोंमें श्रेष्ठ भीमने अपने बलसे उसे पशुके समान जैसे सिंह छोटे हरिणको मारता है, मारडाला, हे राजन्! देखो दिग्विजयमें भीमसेनने दश सहस्र गजके समान बलवाले महापराक्रमी जरासन्धको कैसे मारडाला था, श्रीकृष्ण उनके सम्बन्धी हैं, धृष्ट- द्युम्नादि द्रुपदपुत्र उनके साले हैं, जरा और मृत्युयुक्त पुरुष उनसे कौन युद्धमें लड़ सकता है, हे भरतर्षभ! उन पाण्डवोंके सङ्ग तुम्हारी सन्धिही होनी उचित है, हे राजन्! हमारी बात मानो; क्रोधके वशमें मत हो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, हे राजन्! इस प्रकार कहते हुए भगवान् मैत्रेयके सामने उसकी सूड़के समान अपनी जंघापर दुर्य्योधन अपना हाथ मारा और हंसकर पैरसे पृथिवीको खोदने लगा, दुर्बुद्धि दुर्य्योधन नीचा शिर नीचाकरके बैठ रहा। जब मैत्रेयने देखा, कि यह दुर्य्योधन हमारे वचनकी सुश्रुषा नहीं करता और पृथीवीको खोदता है, हे राजन्! तब मैत्रेय मुनिको क्रोध आया। मुनियोंमें श्रेष्ठ मैत्रेय क्रोधके वशमें होकर और ब्रह्मासे प्रेरित होकर दुर्य्योधनको शाप देनेका विचार करने लगे। तब क्रोधसे लालनेत्र करके उन्होंने जलस्पर्श किया और दुष्टोंके अगुआ धृतराष्ट्रके पुत्रको मैत्रेयने शाप दिया; जिस लिये तैंने मेरा अनादर करके मेरा वचन न माना, अतएव उस अभिमानका फल शीघ्रही प्राप्तकर। तेरे किये द्रोहसे महायुद्ध उपस्थित होगा, उसमें बलवान् भीम गदासे तेरी जंघाको तोड़ेगा। ऐसा सुनकर धृतराष्ट्र मुनिको यह कहते हुए कि यह बात ऐसे न हो, प्रसन्न करने लगे। मैत्रेय बोले, हे राजन्! यह तेरा पुत्र यदि शमको प्राप्त होगा, तो हे तात! मेरा शाप न होगा, नहीं तो अवश्यही होगा।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि तब दुर्य्योधनके पिता राजा धृतराष्ट्र भीमके बलको लक्ष्य करते हुए मैत्रेयसे कहने लगे, कि भीमने किर्म्मीरको कैसे मारा, सो कहिये।

मैत्रेय बोले, अब हम तुमसे कुछ न बोलेंगे, क्योंकि तुम्हारे पुत्रको श्रद्धा नहीं है, मेरे जाने- पर यह विदुर तुमसे सब कहेंगे। ऐसा कह कर मैत्रेय मुनि जहांसे आये थे वहींको चले गये। किर्म्मीर-वध न सुननेकी इच्छासे दुर्य्योधनभी बाहर चला गया।

१० अध्याय समाप्त।

आरण्य पर्व्व सम्पूर्ण हुआ

अथ किर्म्मीर वधपर्व्व।

धृतराष्ट्र बोले, कि हे विदुर! हम किर्म्मीरका मारा जाना सुननेकी इच्छा रखते हैं; तुम कहो कि उस राक्षस और भीमसेनका सामना कैसे हुआ?

विदुर बोले, कि मनुष्योंमें अधिक कर्म्म करनेवाले भीमका यह कर्म्म जो मैंने पहले सुना, है, सो सुनो। हे राजेन्द्र! पाण्डव लोग यहांसे जुएमें हारकर जो चले, तो तीन दिनरातमें काम्यक नामक वनमें पहुंचे। हे नरनाथ! जब रात्रिका आधा भाग बीत गया और मनुष्यभक्षी राक्षसोंके विचरनेका समय हुआ, तब उस वनको मनुष्यभक्षी राक्षसोंके भयसे तपस्वी गोपाल और वनमें रहनेवालोंने दूरहीसे त्याग दिया था। हे राजन्। हे भारत! पाण्डवोंने उस वनमें प्रवेश किया, तो उनके मार्गका अवरोध करके प्रज्वलित नेत्र अति भयानक उक्त राक्षस मिला। वह अपने हाथोंको बिस्तारित करके और मुखको भयानक बनाकर जिस मार्गसे पाण्डव आते थे, उसे रोककर खड़ा होगया, आठदातोंको प्रत्यक्ष करके, लाल प्रकाशमान ऊंचे केशयुक्त सूर्य्यकिरण बिजली और बक-पंतियुक्त मेघके समान, भयानक राक्षसी मायाको विस्तार करता हुआ, महाशब्दकरता हुआ, गरजते हुए मेघके समान राक्षस आके खड़ा होगया। उसके शब्दसे डर कर और स्थलचर पक्षी सब ओरसे बोलना बन्द करके एकत्र बैठ गये। उस समय उसके नादसे वनमें मृग, गैंड़ा, भैंसा, रीछ इधर उधर भागने लगे। ऐसा भान होने लगा मानो वनही चलता है, वनकी लता उसकी जंघा की हवासे घायल होकर मानो भयपूर्व्वक तामेके रङ्गवाले पल्लवरूपी हाथोंसे दूरके वृक्षको भी आलिङ्गन करने लगी। उस समयमें बड़ा कठिन वायु बहने लगा, धूलसे पूरित होनेके कारण आकाश ताराहीन भान होने लगा, जैसे पाच इन्द्रियोंके अर्थोंका अतुल शोक रिपु होता है, तैसेही पाच पाण्डवोंका अज्ञात शत्रु राक्षस मार्गमें आया। काले हरिणके चर्म्म ओढे पाण्डवोंको दूरसे देखकर मैनाक पर्व्वतके समान मार्गका अवरोध करके खड़ा हो गया, उनको देखकर कमललोचनी द्रौपदी डरी। उसने ऐसा भयानक रूप पहले कभी नहीं देखा था, अपनी आंखको बन्दकर लिया। दुःशासनके हाथसे खींचे हुए बिखरेकेशवाली द्रौपदी पाच पर्व्वतोंके बीचवाली नदीके समान व्याकुल हो गयी। मूर्च्छित होती द्रौपदीको पाचों पाण्डवोंने ऐसे संभाल लिया जैसे विषयोंमें लीन पाच इन्द्री रतिको ग्रहण करती है। अनन्तर पाण्डवोंके आगेही उस राक्षसी घोर मायाको बीर्य्यवान् धौम्यने राक्षसोंके नाश करनेवाले विविध मन्त्रोंका भलीभांति प्रयोग करके नाशकर दिया। वह महाबल माया नष्ट होतेही क्रोधसे नेत्र खोलकर इच्छाके मूर्त्ति धरनेवाला क्रूर कालके समान दीखने लगा। तब महा बुद्धिमान् राजा युधिष्ठिरने उससे कहा तुम कौन और किसका पुत्र है; कह हम तुम्हारा क्या काम करे? तब धर्म्मराज युधिष्ठिरसे उस राक्षसने यह कहा, मैं बकका भाई हूं किर्म्मीर नामसे प्रसिद्ध हूं, इस शून्य काम्यक वनमें सुखसे रहता हूं, मैं सदाही मनुष्योंको युद्धमें जीतकर खाता हूं। तुमलोग कौन हो, मेरा भोजनरूप होकर मेरे घरमें आये हो, अब मैं तुम सबको युद्धमें जीतकर खाजाऊंगा।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि हे भारत युधिष्ठिरने उस दुरात्माका यह वचन सुनकर अपना नाम और जाति आदि सब कह सुनाये।

युधिष्ठिर बोले, हम पाण्डुपुत्र धर्म्मराज कदाचित् तुमनेभी सुना हो, सो हम भीमसेन और अर्ज्जुनादि सब भाइयोंके सग राज्य हीनेसे वनमें रहनेकी इच्छासे इस घोर वन तेरे घरमें आये है।

विदुर बोले, कि यह सुनकर किर्म्मीर युधिष्ठिरसे बोला, कि बहुत समयसे मेरे मनमें स्थित यह बलि आज देवतोने भेज दिया। भीमसेनके मारनेके अर्थही शस्त्रोंको उठा

करके सब पृथिवीमें घूमता हूं, परन्तु इसे नही पाता था, सो आज इस अपनेभाईके मारनेवालेको प्रारब्धहीसे पाया हूं, हे राजन्! इसीने पहले कपटसे ब्राह्मण वेष धारण करके वैत्रकीय वनमें मेरे भाईको विद्या-बलको आश्रय करके मारडाला था, इसको अपना बल कुछभी नहीं है, और मेरे प्यारे मित्र वनवासी हिड़म्बको भी इसी दुरात्माने मारा है, और उसकी बहनकोभी छीन लिया। सो यह मूर्ख हमारे घूमनेके समय आधी रातको मेरे इस महावनमें आगया: अब मैं वह पुराना वैर इससे निकालूगा और इसके बहुत रुधिरसे वकका तर्पण करूगा। आज मैं अपने भाई और मित्रके ऋणसे उद्धार होकर इस राक्षसोंको वैरीको मार कर परम शान्तिको प्राप्त होऊंगा। हे युधिष्ठिर। इसे पहले वकने छोड़ दिया था, परन्तु आज तुम्हारे देखते ही मैं इसे खा जाता हूं: जैसे अगस्तने वातापीको खाकर पचालिया था, तैसेही आज मै इस महापराक्रमी भीमसेनको मारकर और खाकर पचा जाऊंगा। इस प्रकारसे सुनकर धर्म्मात्मा युधिष्ठिरने क्रोधकरके कहा, कि ऐसा नही हो सकता। तब महाबाहु भीमसेन दश व्याम (दोनो हाथोको फैलाकर जो मान हो उसे व्याम कहते है) के वृक्षको उखाड़कर उसे पत्ररहित कर दिया। उसी समय क्षणमात्रमे अर्जुनने वज्रके समान गाण्डीव धनुषको सज्जित किया। हे भारत। भीमने अर्जुनको निवारण करके दौड़कर घोर शब्दवाले राक्षससे कहा, कि रे! खड़ा रह। ऐसा कहकर अपने कच्छको बांधकर बलवान् भीम क्रोधसे होठ चबाते हुए, हाथसे हाथको मलकर दृढ़ हाथमे लेकर वेगसे राक्षसकी ओर चले। तब उस यमदण्डके समान वृक्षको उसके सिरपर मारा जैसे इन्द्र वज्र मारता है। उसके करनेसे उस राक्षसको कुछ भी दुख न हुआ, तब उसने वज्रके समान जलती हुई लूक भीमसेनको मारी। योधोमें श्रेष्ठ भीमसेनने उस लूकको भी, तासे बांये चरणसे पकड़कर पुन: राक्षसकी ओर फेंका; तब किर्म्मीरभी शीघ्र वृक्ष उखाड़कर दण्डधारी यमके समान क्रुद्ध होकर भीमकी ओर दौड़ा, उस समय दोनोंका वृक्षयुद्ध होने लगा, जिससे वृक्ष नाश होने लगे। उस समय इन दोनों का ऐसा युद्ध हुआ, जैसे पहले स्त्रीकी इच्छावासे बालि और सुग्रीव दोनों भाइयोंका हुआ था। उनके सिरमें लगनेसे वृक्ष अनेक टुकडे हो होकर गिरने लगे, जैसे दो मतवाले हाथियोंके शरीरमे लगनेसे कमलकी डंटी चूर्ण हो जाती है, तैसेही इन दोनोंके शरीरमें लग लगकर अनेक वृक्ष मूजके समान चूर्ण हो गये। उस वनमें बकले रजके समान फैल गये। हे भरतर्षभ। इस प्रकारसे राक्षसोंमें मुख्य किर्म्मीर और पुरुषोंमें श्रेष्ठ भीमसेनका वृक्षयुद्ध मुहूर्त्तमात्र होता रहा। तब राक्षसने क्रोधसे भरकर एक शिला युद्धमें स्थिर भीमको मारी; परन्तु भीमसेन किञ्चित्भी चलायमान न हुए, तब राक्षस शिलाकी चोटसे स्थिर भीमसेनकी ओर हाथ फैलाकर ऐसा दौड़ा, जैसे युद्धमें किरण विस्तारकरके राहु सूर्य्यकी ओर जाता है। तब वे दोनो परस्पर युद्ध करते हुए एक दूसरेसे लिपटकर खीचने लगे। दोनों ऐसे शोभित हुए, जैसे बड़े वृष (बैल) लड़ते है। उस समय उन दोनोका ऐसा घोर दारुण भयानक बाहुयुद्ध भया, जैसे नाखून और दातशस्त्रवाले उन्मत्त दो व्याघ्रोका युद्ध होता है। वहा दुर्य्योधनके विगाड़से और बाहुबलसे उन्मत्त, द्रौपदीके सभामें लानेसे क्रुद्ध भीमसेनका बल बढ़ने लगा। जैसे एक मतवाला हाथी दूसरे मतवाले हाथीको पकड़ता है, तैसेही भीमने उस राक्षसको क्रोधकर हाथोसे पकड़ा. तब बलवान् राक्षसनेभी इन्हें वैसेही पकड़ा; तब बलवानोंमें उत्तम भीमने उसे बलसे गिरादिया; तब युद्धमें

दोनों बलवानोंके हाथोंके रगड़े जानेसे ऐसा शब्द हुआ, जैसे बांसोंके फटनेसे होता है। तब भीमने बलसे उसे पटककर और युद्धमें पकड़कर जैसे प्रबल वायु वृक्षको घुमाता है, तैसे ही घुमाया, तब दुर्बल राक्षस बलवान् भीमके बलसे युद्धमें क्लेशित होकर प्राण निकालता हुआ भीमको खींचने लगा; तब भीमसेनने जाना कि यह राक्षस अब थक गया, तब जैसे पशुको रस्सीसे बांधते हैं, तैसे ही हाथोंसे उसे कसा। भूरीभेरके समान शब्द करनेवाले राक्षसको बली भीमने चेतना रहित करके बहुत देरतक घुमाया, उस राक्षसको तड़पता हुआ जानकर पाण्डुनन्दनने हाथोंसे पकड़कर शीघ्रतासे पशुके समान मार डाला। उसकी कटि (कमर) जघासे दवाकर हाथोंसे कण्ठको दबाया; अनन्तर टूटे-गात्र-निकले राक्षसको पृथिवीमें मल कर यों बोले, रे पापी! तू यमके स्थानमें जाकर भी हिड़म्ब और बकको आसू न पोंछ सकेगा। क्रोधी पुरुषोंमें श्रेष्ठ वीर भीमने नष्टवस्त्र नष्टभूषण तड़फते हुए बिना प्राणवाले उस राक्षसको छोड़ दिया। उस मेघके समान रूपवाले राक्षसके मरने पर द्रौपदी को आगे कर अनेक गुणोंसे भीमसेनकी प्रशंसा करते हुए पाण्डव-लोग प्रसन्न होकर द्वैतवनको चले।

विदुर बोले, हे नरनाथ! हे कौरव! धर्म-राजके बचनसे इस प्रकार भीमसेनने किर्म्मी-रको युद्धमें मारा। इस प्रकारसे अपराजित युधिष्ठिरने उस वनको निष्कण्टक किया, तब द्रौपदीके सङ्ग धर्म्मज्ञ पाण्डवलोग वहां ठहरे। वे सब भरतकुलसिंह द्रौपदीको आश्वासन करके प्रसन्न मनसे प्रेमपूर्व्वक भीमसेनकी प्रशंसा करने लगे, भीमसेनके बाहुबलसे जब वह राक्षस नष्ट होगया, तब वीर पाण्डवोंने शुद्ध निष्कण्टक उस वनमें प्रवेश किया, स[illegible] [illegible] जाते हुए उस फैले पड़े भयानक दुष्टात्मा राक्षसको महावनमें भीमके बलसे मरा हुआ देखा। हे भारत! वहां जो ब्राह्मण आये थे, उनमें मैंने यह वार्त्ता सुनी।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, राक्षसोंमें श्रेष्ठ किर्म्मी-रका वध इस प्रकार भीमने किया। यह सुनके राजाने दुःखीके समान भारी सास लिया।

११ अध्याय और किर्म्मीर
वधपर्व्व समाप्त।

अथार्ज्जुनाभिगम पर्व्वारम्भ।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि जब भोजवंशी तथा अन्धकवंशियोंने सुना, कि पाण्डव लोग दुःखित होकर बनको गये हैं, तो सबलोग वन-हीमें आये। धृष्टद्युम्न, चेदिके राजा, धृष्टकेतु, लोकमें विदित महावीर और काश्मीरी सब भाई यह सब धृतराष्ट्रके पुत्रोंकी निन्दा करते हुए हम क्या करें, ऐसा कहते हुए क्रोधसे भरे पाण्डवोंको देखनेको वनमें आये। वे सब क्षत्रियोंमें सिंह लोग श्रीकृष्णको आगे करके धर्म्मराज युधिष्ठिरके चारों ओर बैठे। कुरुश्रेष्ठ युधिष्ठिरसे प्रणाम करके दुःखी होकर श्रीकृष्ण कहने लगे।

श्रीकृष्ण बोले, दुर्य्योधन कर्ण शकुनी और चौथे दुरात्मा दुःशासनका रुधिर भूमि पीवेगी। इन सब दुष्टोंको इनके संगियोंको और जो राजा उनकी सहायता करेंगे, उन सबको युद्धमें मार कर हम सबलोग धर्म्मराज युधिष्ठिर को पुनः राज्य देंगे, क्योंकि छली मारने योग्य है, यह सनातन धर्म्म है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, पाण्डवोंके निरादरसे मानो प्रजाको भस्म कर देंगे ऐसे कुपित श्रीकृष्णको अर्ज्जुनने शान्त किया। अर्ज्जुनने श्रीकृष्णको क्रोधयुक्त देखकर महात्मा सत्य-कीर्त्ति कृष्णके पूर्व्व देहकृत कर्म्म कहे। अर्ज्जुन पुरुष (साङ्ख्य शास्त्रोक्त,) प्रमाणरहित सत्य अपारतेज प्रजापतियोंके पति विष्णुलोकनाथ बुद्धिमान् श्रीकृष्णके गुण इस प्रकार कहने लगे।

अर्ज्जुन बोले, हे कृष्ण! पहले समयमें तुमने दश सहस्र वर्ष तक गन्धमादन पर्व्वतपर सायगृह मुनि (सायंगृह उसे कहते हैं, जो जहां सांझ हो जाय वहीं घर मान ले) हो तप किया था, और हे कृष्ण! तुम ग्यारह सहस्र वर्ष पर्य्यन्त पुष्कर क्षेत्रमें केवल जलही पोकर रहे थे, तथा सौ वर्षतक वायु भक्षण करके और ऊर्द्धबाहु होकर विशाल बदरिकाश्रममें एक चरणसे खड़े रहेथे, तैसेही उत्तरीय वस्त्र छोड़कर मांसरहित केवल नाड़ीयुक्त शरीरसे सरस्वतीनदीके तटपर बारह वर्षके यज्ञमें रहे थे। हे कृष्ण! तैसेही पुण्यात्मा पुरुषोंके योग्य प्रभासक्षेत्रमें जाकरभी तुम दिव्य सहस्र वर्ष तक लोकस्थितिके निमित्त खड़े रहे थे, मुझसे व्यासने ऐसा कहा था, हे कृष्ण! तुम क्षेत्रज्ञ हो, सब जगतके आदि हो, हे केशव! आप सबके अन्त हो, तुम तपनिधान हो, भूमिसे उत्पन्न नरक दैत्यको मारकर तुम कुण्डल लाये थे, हे कृष्ण! तुमने प्रथम उत्पन्न घोड़ेको यज्ञके अर्थ प्राप्त किया, उससे यज्ञ करके लोक सिंह और सब लोकोंके जीतनेवाले तुमने युद्धमें सब दैत्य और दानवोंको मारा तब इन्द्रका सर्व्वेश्वर पद देकर हे केशव! तुमने मनुष्यलोकमें जन्म लिया। हे महाबाहो! हे परन्तप! सो तुम नारायण होकर हरि हुये; ब्रह्मा, चन्द्र, सूर्य्य, धर्म्म, धाता, (धारणकरनेवाले) यम अग्नि, वायु, कुवेर, रुद्र, काल, आकाश, पृथिवी और दिशा तुम्हीं हो। तुम उत्पन्न नहीं होते चर और अचरके गुरु हो हे पुरुषोत्तम! तुम बनानेवाले हो। हे मधुराक्षसके नाशक! हे कृष्ण! अति तेजस्वी तुमने चैत्ररथ वनमें सबसे उत्तम देवश्रेष्ठ प्राप्तिके अर्थ अनेक यज्ञ किये थे, हे जनार्द्दन! उनमें एक एक यज्ञमें सौ सौ सुवर्णके भाग दिये थे, हे यदुनन्दन! तुम दितिके पुत्र होकर जन्ममें इन्द्रके छोटे भाई और विष्णुके नामसे प्रसिद्ध हुए थे, हे शत्रुनाशक! तुमने बालक होकर आकाश, पाताल और पृथिवीको अपने तेजसे तीनही चरणसे लङ्घन किया। तुम तेजरूप होकर आकाश और स्वर्गमें प्राप्त होकर सूर्य्यके रथपर चढकर सूर्य्यको प्रकाशित करते हो, हे कृष्ण! हे नाथ! तुमने अनेक (सहस्रों) अवतार लेकर सैकड़ों अधर्मी असुरोंको नाश किया है, तुमने तांतकी फांयोंको काट दिया और निसुन्द नरकासुरका नाश करके प्राग्‌ज्योतिषपुरका मार्ग शुद्धकर दिया। नगरमें पुरुषोंके सहित शिशुपाल, जरासन्ध शैव्य और शतधन्वाको तुमने जीता, तैसेही तुमने सूर्य्यके समान तेजयुक्त मेघके समान शब्दवाले रथपर चढ़कर भोज वंशोत्पन्ना रुक्मिणीको युद्धमें जीतकर प्राप्त किया, तुमने क्रोधसे इन्द्रद्युम्न और कसेरुमान् यवनको मारा है, आकाशमें घूमनेवाले नगरके स्वामी शाल्वको मारकर उसके नगरको पृथिवीमें गिराया, इस प्रकार तुमने इतनोंको युद्धमें मारा, इसके पश्चात् औरभी सुनिये। कार्त्तवीर्य्यके समान भोजको तुमने इरावतीके युद्धमें मारा, हे जनार्द्दन। और मुनियाको प्यारी भोगवती द्वारिकाको अपने वशमें करके समुद्रको प्राप्त करते हो, हे मधुसूदन! हे दाशार्ह! क्रोध धूर्त्तता, असत्य, निर्लज्जता, टेढ़ापन यह आपमें कुछभी नहीं है, स्थानमें बैठे हुए अपने तेजसे प्रदीप्त आपके पास आकर महामुनिलोग अभय मांगते हैं, हे मधुसूदन! हे परन्तप! युगके अन्तमें सब प्राणियोंको नाश करके सबको आत्मामें मिलाकर आप जगत्‌रूप हो जाते हैं, हे वृष्णिवंशोद्भव युगके आदिसे तुम्हारे नाभिकमलसे चराचरके गुरु ब्रह्मा जगत् बनानेवाले उत्पन्न भये, उनके मारनेके निमित्त घोर राक्षस मधु और कैटभ उद्यत हुए; उनका यह कुकर्म्म देखकर आपका क्रोध हुआ, तब आपके मस्तकसे तीननेत्रवाले शूलधारी शिव उत्पन्न

भये; इस प्रकार ब्रह्मा और शिव दोनोंही आपके शरीरसे उत्पन्न भये हैं, मुझसे नारदने कहा है, कि यह दोनों तुम्हारी आज्ञासे पालनेवाले हैं। हे नारायण! हे कृष्ण! तैसेही तुमने पहले समयमें चित्ररथ वनमें महा यज्ञ किया था। अन्य पुरुषोंने ऐसे यज्ञ बहुत दक्षिणायुक्त न किये न करते हैं, और न करेंगे। हे देव! जो कर्म्म बालक-पनमें महाबलवाले तुमने बलदेवकी सहायतासे किये, सो और से न होंगे, कैलासमें ब्राह्मणोंके संग तुम रहे थे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले; कि कृष्णरूप पाण्डु-पुत्र अर्जुन महात्मा कृष्णसे यह सब कहकर चुप हो गये, तब कृष्णने ऐसा कहा, हम तुम हैं, और तुम हमारेरूप हो, जो हमारे भाव हैं, सो सब तुम्हारे हैं; जो तुम्हारे द्वेषी हैं, सो हमारा द्वेष करते हैं, जो तुम्हारे अनुगामी हैं, सो हमारे मित्र हैं, तुम दुःखसे घर्षण करने योग्य नर हो और हम भक्तदुःखनाशक नारायण हैं, हम दोनों नरनारायण ऋषि जगतमें समय पाकर प्राप्त हुए हैं। हे कुन्तीनन्दन! तुम मुझसे अभिन्न मैं तुमसे अभिन्न हूं, हे भरतर्षभ! हमारा और तुम्हारा भेद जाननेके योग्य नहीं है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि उस वीर-समाजमें जहां राजालोग उद्यत बैठे थे, जब महात्मा श्रीकृष्णने ऐसे वचन कहे, तो महावीर धृतष्टद्युम्न-आदि भाइयोंसे वेष्टिता शरणकी इच्छा करने-वाली द्रौपदी शरणपरायन भाइयोंसेयुक्त बैठे हुए श्रीकृष्णसे बोली।

द्रौपदी बोली, मुझसे असित देवलमुनिने आपके विषयमें कहा है, कि पूर्व्वकालमें आपही अकेलेथे और जगत्में आप प्रजापति हैं, आप सब लोकोंके बनानेवाले हैं, हे दुर्द्धर्ष! (दुःखसे करने योग्य) आप विष्णु हैं। हे मधु-(मधु नामक दैत्यके नाशक) आप यज्ञ स्वरूप है। जमदग्नि मुनिने कहा है, कि आप पूजक और आपही पूजाके योग्य हैं। ऋषियोंने तुम्हे क्षमा रूप कहा है, हे पुरुषोंमें श्रेष्ठ! तुम सत्यरूप हो, कश्यपने तुम्हे सत्यसे उत्पन्न कहा है; नारदने तुम्हे साध्य देवता और शिव आदिका ईश्वर तथा प्राणियोंके नाथ कहा है, हे पुरुषोंमें व्याघ्र श्रीकृष्ण! जैसे बालक खेल बनाकर उससे खेलते हैं, तैसेही आप ब्रह्मा, शिव और इन्द्रादिकी बार बार बनाकर खेला करते हैं; हे नाथ! आकाश आपके सिरसे, पृथिवी चरणोंसे व्याप्त और यह लोक तुम्हारे पेटसे व्याप्त हैं, आप सनातन पुरुष हैं, विद्या तपसे तपकर आप तप द्वारा आत्मा भावना करनेवाले और आत्माके दर्शनसे तृप्त मुनियोंमें उत्तम हो, युद्धमें से न फिरनेवाले, पुण्यात्मा, सब धर्म्म युक्त राज-ऋषियोंकी आपही गति हैं। हे पुरुषसिंह! तुम विभू, तुमही प्राणियोंके स्वामी हो, तुमही सुकर्मोंके कर्त्ता हो, लोक, लोकपाल, नक्षत्र, दशो दिशा, आकाश, चन्द्रमा और सूर्य्य यह सब आपहीमें प्रतिष्ठित हैं। मर्त्यलोक-वासियोंमें मानव धर्म्म और देवतोंमें अमरता यह सब आपहीके अधीन हैं, हे महाबाहो! सब लोकोंके काम आपहीमें प्रतिष्ठित हैं, हे मधु-सूदन! सो आपसे मैं विनयपूर्व्वक अपने दुःखोंको कहती हूं, आप सब जगत्के जो दिव्य और मनुष्य हैं उसके स्वामी हैं, हे कृष्ण! हे विभो! मैं पाण्डवोंकी स्त्री, तुम्हारी सखी और धृष्टद्युम्नकी बहिन हूं, तो मेरी ऐसी स्त्री किस प्रकार सभामें खींची गयी, कांपती हुई रजस्वला रुधिरसे भीजी एकवस्त्र धारिणी मैं कौरवोंकी सभामें, खींची गयी, सभामें राजोंके मध्यमें मुझे रुधिरसे भींगी देखकर पापी धृतराष्ट्रके पुत्र हंसने लगे। हे मधुसूदन! वे लोग दासी बनाकर पाण्डव पाञ्चाल और यादवोंके जीते मुझे भोग करना चाहते थे, हे

कृष्णा! जो मैं भीष्म और धृतराष्ट्रकी पुत्रबधूथी उस मुझे उन्होंने बलसे दासी बनाया। युद्धमें श्रेष्ठ महाबलवान् इन पाण्डवोंकी मैं निन्दा करती हूं; जो अपनी यशस्विनी धर्मपत्नीके क्लेशको देखते हैं, हे जनार्द्दन! भीमके बलको और अर्जुनके गाण्डीव धनुषको धिक्कार है, जो मुझे क्षुद्रोंसे खिंचती देखकर क्षमा कर रहे हैं, महात्माओंने यह धर्ममार्ग नित्य कहा है, कि थोड़े बलवाले पतिभी अपनी स्त्रियोंकी रक्षा करते हैं, जब स्त्रीकी रक्षा होती हैगी सन्तान रक्षित होती है, अतएव उसे जाया कहते हैं, स्त्री भी पतिकी रक्षा करती है कि भर्त्ता मेरे उदरसे कैसे उत्पन्न होगा। यह पाण्डवलोग शरणागतको कदापि नहीं त्यागते हैं, परन्तु शरणमें आई मुझको उन्होंनेभी रक्षित न किया, देखो मेरे पांच पतियोंसे महातेजस्वी पांचपुत्र हुए हैं, हे जनार्द्दन! इनको भी देखकरके रक्षा किये जाने योग्य हूं, युधिष्ठिरसे प्रतिविन्ध्य, भीमसे सुतसोम, अर्जुनसे श्रुतकीर्त्ति, नकुलसे शतानीक और सहदेवसे श्रुतकर्म्मा पुत्र हुए हैं, यह सब सत्य पराक्रमी हैं। हे कृष्ण! जैसे प्रद्युम्न हैं, वैसेही यह भी सब महारथ हैं, यह सब धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ, युद्धमें शत्रुओंसे अजेय हैं, न जाने यह सब दुर्बल धृतराष्ट्रके पुत्रोंको क्यों क्षमा कर रहे हैं, उन्होंने इनका राज्य अधर्मसे छीन लिया। इन सबको दास बनाय एक वस्त्र धारिणी रजस्वला मुझको सभामें खींचवाये। हे मधुसूदन! गाण्डीव धनुष अर्जुन, भीम तथा तुम्हारे बिना जगत्‌में किसीसेभी [illegible] (रोद सहित) नहीं हो सकती है। [illegible] हे कृष्ण! भीमके बल और अर्जुनके पुरुषार्थको धिक्कार है, जो दुर्य्योधन इनके [illegible] मुहूर्त्त भरभी जीवित है। उसने इन [illegible] भाइयोंको माताके समेत राज्यसे निकाल [illegible] उस पापीने इनको ब्रह्मचर्य्यावस्थामें बालकपनमें पढ़ते समय भीमसेनके भोजनमें विष मिलाय दिया था। हे महाबाहो! नवीन तीक्ष्ण अधिक कालकूटको (विषविशेष) अन्नके सहित बिना विकारही भीमने आयुशेष रहनेके कारण उसे पचालिया था। प्रमाण नामक वट-वृक्षके नीचे विश्वास सहित तटपर सोते हुए भीमसेनको बांधकर गङ्गामें डालके वह आप नगरको चलागया था। हे कृष्ण! जब महाबली महाबाहु कुन्तीपुत्र भीमसेन जागे तब सब बन्धन तोड़कर खड़े हो गये। हे कृष्ण! भीमके सब अङ्गोंमें उसने कठिन विषैले सर्पोंसे कटवाया तथापि शत्रुनाशन भीम न मरे; जब भीम जगे तो सब सर्पोंको मारडाला। और उसके सारथी कोभी हाथसे मारा। फिर वारणावतमें यह बालक अपनी माताके सङ्ग जब सोते थे तब उसने आग लगा दी। भला ऐसा कौनकर सकता है? जहां महादुःखमें पड़ी, आगसे घिरी रोती हुई हमारी सासने पाण्डवोंसे यों कहा, हाय मैं मरी अब कैसे शान्ति होगी, मैं अनाथ बालक पुत्रोंके सग यहीं नष्ट हो जाऊंगी। वहां महाबाहु वायुके समान वेग और बलवाले भीमने कुन्ती और भाइयोंको आश्वास दिया और कहा, कि जैसे उड़नेवाले पक्षियोंमें श्रेष्ठ गरुड़ उड़ता है, वैसेही मैं भी उड़ जाऊंगा, आपलोगोंको कुछभी भय नहीं है; तब कुन्तिको बाईं गोदमें राजाको दहनीमें नकुल और सहदेवको कन्धोपर तथा अर्जुनको पीठपर चढ़ाकर सबके समेत एकबार उड़कर बलवान भीमने भाई और माताको आगसे बचाया। तब यशस्वी पाण्डवलोग अपनी माताके संग वहांसे रातको चले, तो महा घोर वनमें पहुंचे जो हिड़म्ब राक्षसका घर था वहां वे थकी हुई दुःखिनी माताके समेत सो रहे थे। सोते हुओंके पास हिड़म्बा नाम्नी राक्षसी आयी; उसने माताके संग पृथिवीमें सोते हुए पाण्डवोंको देखकर कामसे

में सुनतेही अत्यन्त उद्विग्नचित्त होकर आपको देखनेकी इच्छासे बहुत शीघ्र यहां चलाआया। हे भरतर्षभ! हे महाराज! हम महादुःखमें पड़े हैं, क्योंकि हम भाइयोंके समेत आपको इस दुःखमें देख रहे हैं।

८१३ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, कि हे वृष्णिनन्दन कृष्ण! तुम द्वारिकामें क्यों नहीं थे, तुम किस परदेशको गये थे और उस परदेशमें तुमने क्या कार्य्य किया।

श्रीकृष्ण बोले, कि हे भरतर्षभ! हे कौरवश्रेष्ठ! शाल्वको मारनेके अर्थ मैं उसके सौभपुरमें गया था। इसका कारण यह हुआ, कि पूजाके निमित्त आपके राजसूय यज्ञमें मैने महातेजस्वी महाबाहु महायशस्वी दमघोषके पुत्र वीर राजा शिशुपालको मारा था; सो शाल्वराजा उस क्रोधको शान्त नहीं कर सका, वह दुरात्मा क्रोधके वशमें होकर क्षमा न कर सका। हे भारत! जब मैं आपके पास आया था, तब उसने शिशुपालका मरना सुनकर क्रोधके वशमें होकर शून्य द्वारिकाको घेर लिया, जब निर्लज्जके समान अपने सौभपुरको (यह नगर उत्तम प्रकाशमान धातुओंसे बना था और अकाशमें घूम सकता था) लेकर द्वारिकामें आया तो वृष्णीवंशी राजकुमारोंने उससे युद्ध किया। तब उस दुर्म्मतिने उन बालक वृष्णिवंशियोंको मारकर नगरके उपवनोंको सब ओर नाशकर दिया। हे महाबाहो! तब उसने कहा, कि वह दुष्टबुद्धि वसुदेवका पुत्र, वृष्णिकुलका अधम कृष्ण कहां है? मैं उस युद्धकी इच्छावालेका अभिमान युद्धमें नाश करूंगा। हे आनर्त्तलोगो! तुम सत्य कहो, वह जहां होगा, मैं वहीं जाऊंगा, उस कंस और केशीके मारनेवालेको मारकर लौटूंगा। मैं शस्त्र धारण करता हूं, कि उसे विना मारे कदापि न फिरूंगा। 'वह कहां है, वह कहां है?' ऐसे कहता हुआ सौभका राजा मुझसे युद्धकरनेकी इच्छासे इधर उधर दौड़ने लगा और कहने लगा, कि आज उस पापी विश्वासघाती, क्षुद्र, शिशुपालके मारनेके क्रोधसे भरा हुआ कृष्णको मैं यमके घरको भेजूंगा। जिस पाप स्वभाववालेने मेरे भाई राजा शिशुपालको मारा है, आज मैं उसको मारूंगा। जिस कृष्णने मेरे भाई बालक वीर प्रमत्त राजा शिशुपाल को विना युद्धके मारा, मैंभी उसे मारूंगा। हे राजन्! यह इस प्रकारसे कहता हुआ, इच्छानुसार चलनेवाले नगरके सहित मुझे गाली देता हुआ, आकाशको चला गया। हे कौरव्य! जब मैं आपके पाससे गया, तो उस दुर्बुद्धि "मार्त्तिकावत" देशी दुष्टात्मा राजा शाल्वने जो मेरे लिये किया था, सो सब सुना। हे कौरव्य! तब मैं भी क्रोधसे व्याकुल होकर निश्चय करके उसके मारनेका विचार करने लगा। मैं आनर्त्त देशका विनाश, अपना निरादर उस दुष्कर्मीका बढ़ा हुआ अभिमान, यह सब विचार कर हे पृथिवीनाथ! सौभके नाश करनेको चला। हे नरनाथ! मैने जाकर उसे समुद्रके द्वीपमें देखा। तब मैने पाञ्चजन्य शङ्खको बजाया और शाल्वको युद्धमें बुला कर मैं स्थित हुआ। तब उन दानवों और मुझसे मुहूर्त्त भर युद्ध हुआ। तब मैने सबको वशमें कर लिया और पृथिवीमें गिरा दिया। हे महाबाहो इसही कारणसे मैं अन्यायमय द्यूतके समयमें हस्तिनापुरमें नहीं आ सका और न आप लोगोंको दुःखी सुनकर शीघ्रतासे पहुंच सका।

१४ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे वसुदेवनन्दन! हे महाबाहो! हे महामते! इस बातको आपसे

सुननेसे मेरी तृप्ति नहीं होती है, अतएव सौभवधको विस्तार पूर्वक कहिये।

श्रीकृष्ण बोले हे भरतश्रेष्ठ! हे महाबाहो! हे नरनाथ! मैंने शिशुपाल को मारा ऐसा सुनकर शाल्व द्वारिकाको आया। हे पाण्डुनन्दन! उस दुष्टात्माने पुरीको घेर लिया और आकाशकोभी व्यूह रचना करके घेर लिया। और आकाशमें स्थिर होकर जहां युद्ध हो,वहीं जाकर उस नगरमें युद्ध करने लगा। ध्वजा, तोरण (बनाये द्वार) युक्तानगरीको सब ओरसे घेर लिया। योद्धाओंके रहनेके स्थान, विष्ठा और मूत्र त्याग करनेके घर ङ्डास, (बुर्ज) यन्त्र (कल) सुरङ्ग खोदनेको शस्त्र, लोहेके कटहरे लगी सड़कें, अटारी, नगरके द्वार, चक्रग्रहणी, (जहांसे लड़नेकी रहती है, मोर्चा वा कैंप) अग्निसमेत लूका, अब पोथिका, (शत्रुओंके मारनेको पत्थर और काष्ठ जहां रखे जाते हैं) कुप्पियोंके स्थान, भेर, पणशानक (वाजा) तोमर, अंकुश, शतघ्नी, (तोप) लांगल, भुशुंडी (शस्त्रविशेष) पत्थर और गुड़के स्थान (जहा गुड़ रहता है, और पशुओंके आनेपर उसे तापकर उनके ऊपर ढालते हैं) शस्त्र परश्वध, लोहा, चमड़ा, ढाल, आग्नेय औषध सहित गुडके गोलोंसे पूर्णशृङ्ग। साम्ब,गद,और उद्धव करके युद्धशास्त्र विधिके अनुसार अनेक रथ सहित रथशाला है इत्यादि। अति विख्यात वंश, शत्रुओंको निवारण करनेमें समर्थ,युद्धमें प्रकाश बल पुरुष, इन वस्तुओंके सहित द्वारिकाको शाल्वने घेर लिया। मध्य गुल्म (जहां बैठकर चारो ओरके शत्रुओंको देख और उनसे लड़ सकें) के रक्षा करनेवालोंसे रक्षित शत्रुओंके गुल्मको भगानेके बाणों सहित पुरीको घेर लिया।

उसी समय प्रमादसे रक्षा करनेवाले, उग्रसेन, और उद्धवादिने पताकासहित घोड़ोंसे नगरोंको बटाकर यह घोषणा दिलादी, कि राजा शाल्व मतवारोंको मार डालेगा। अतएव कोईभी पुरुष सुरा (मद्य) न पीये। यह सब करके वृष्णी और अन्धकवंशी अप्रमत्त होकर स्थिर हुए। तब धनको रक्षा करनेवालोंने आनर्त्त देशवासी पुरुष नट, (नाटक करनेवाले) नाचनेवाले, गानेवाले, पुरुषोंको शीघ्रही नगरसे बाहर बसनेकी आज्ञा देदी। सब पुल तोड़ दिये, नावोंको रोक दिया, नहरके फाटकोंको कीलोंसे दृढ़कर दिया। हे कुरुश्रेष्ठ! एक कोश पर्व्वत कुए और बावड़ीभी कीलोंसे दृढ़कर दीं और भूमि नीची ऊंची करदी। एक तो द्वारिका स्वभाव हीसे कठिन और सुरक्षित शस्त्रसहित थी, परन्तु हे अनघ! उस समय सभी सुरक्षित, गुप्त, और शस्त्रोंके सहित ऐसी शोभित हुई, जैसा इन्द्रका स्थान, विना मुद्राके (चिह्न वा टिकट) न कोई नगरमें जाने और न कोई बाहर निकल सकता था, हे राजन्! उस सौभपतिकी चढ़ाई मे द्वारिकाकी छोटी गलियोंमें चौतरोंपर हाथी घोड़ेसे सेना पूरित हो गई। वेतन, भोजन, शस्त्र, वस्त्र प्राप्त करके सब सेना यथोचित सन्नद्ध हो गई, हे महाभुज! उस सेनामें कोई छोटे वेतनवाला, कोई अति कम वेतनी, (पेन्शिनपानेवाला) न कोई अनुग्रहसे युद्ध करनेवाला था,न कोई ऐसा था, कि जिसका बल देखा न गया हो। हे राजन्! हे कमलनेत्र! उस समय द्वारिका अनेक कुशल पुरुषोंसे रक्षित हुई।

१५ अध्याय समाप्त।

श्रीकृष्ण बोले, हे राजेन्द्र! उस नगरीमें सौभपति शाल्वराजाने हाथी घोड़ेयुक्त महासेना लेकर प्रवेश किया। उस समय हमारे महासमुद्रमें शाल्व राजाकी हाथी, घोड़े, रथ, और पदाति संयुक्त सेनाने प्रवेश किया। श्मशान, देवतोंके स्थान, वनई, (बिल आदि) और चितासम्बन्धी वृक्ष, इनको छोड़कर और मद

स्थानोंमें सेना पूरी हो गई, सेनाके छोटे छोटे टुकड़ोंसे नगरकी खिड़कियां बन्द हो गईं; हे नरनाथ! शाल्वके शिविर (सेना निवास वा कैंप) में गुप्तरीतिसे प्रवेश करनेकी किसीकी सामर्थ्य न हुई। हे कौरव! हे भरतर्षभ! सब शस्त्रोंसे संयुक्त सब शस्त्रनिपुण, रथ, घोड़े, हाथी, पैदलोंसे पूर्ण पताकायुक्त, सन्तुष्ट, बली, पुरुष-सहित लक्षणयुक्त विचित्र खड्ग और कवचयुक्त विचित्र रथ, विचित्र धनुषयुक्त सेनाको शाल्वने जैसे वेगसे गरुड़ दौड़ता है तैसेही नगरकी ओर चलाया। जब उस शाल्वकी सेनाको नगरकी ओर आता देखा, तो वृष्णिवंशके कुमार निकलकर युद्ध करने लगे, हे कौरव! शाल्व राजाके उस वेगको न सहकर चारुदेष्ण, साम्ब और महारथ प्रद्युम्न यह लोग सन्नद्ध हो, रथोंपर चढ़कर विचित्र आभूषण और ध्वजा धारण करके शाल्वके अनेक योधोंसे युद्ध करने लगे; साम्ब धनुषको धारण करके शाल्वके सेनापति मन्त्रीसे प्रसन्न होकर युद्ध करने लगे। हे भरतश्रेष्ठ! जाम्बवतीके पुत्रने उसपर ऐसी वाण वर्षा करी, जैसे इन्द्र जलवर्षाता है। हे महाराज! उन महा वाणोंकी वर्षाको क्षेमवृद्धि सेनापति ऐसे निपुणतासे सहने लगा जैसे महावर्षाको हिमाचल सहता है। हे राजेन्द्र! तब क्षेमवृद्धि सेनापतिने साम्बके प्रति सायाके समेत महाशर छोड़ा। अनन्तर शाम्बने उसके मायामय शरजालको मायाहीसे छा लिया। जब क्षेमवृद्धि सेनापति उनके वाणोंसे विद्ध हुआ, तो तेज घोड़ोंके रथसे युद्धको छोड़कर भाग गया। जब शाल्वका क्रूर सेनापति भाग गया, तो बलवान् वेगवान् नामक दैत्य मेरे पुत्र साम्बके आगे उपस्थित हुआ। हे राजेन्द्र! जब वृष्णिवंशी साम्बको वेगवानने युद्धमें लक्ष किया, तो वीर साम्ब उसके वाणोंके वेगको धारण कर स्थिर रहा, हे कुन्तिपुत्र युधिष्ठिर! तब सत्य-पराक्रम, वीर साम्बने शीघ्रतासे वेगवती गदाको घुमाकर वेगवान् को मारा, तब उसके लगनेसे वेगवान मरकर पृथिवीपर ऐसा गिरा जैसे वायुके लगनेसे जड़ उखड़कर वृक्ष गिरता है। उस महाअसुर वीरको भयानक गदासे मार कर मेरे पुत्रने उस महासेनामें घुसकर महा युद्ध किया। हे राजन्! चारुदेष्णके संग शाल्व की आज्ञासे महारथ महाधनुधारी, विविंध्य नामक राक्षस युद्ध करने लगा। उस समय चारुदेष्ण और विविंध्य का ऐसा घोर युद्ध हुआ, जैसा पहले समयमें वृत्रासुर और इन्द्रका हुआ था। वे दोनो परस्पर एक दूसरेको क्रुद्ध होकर वाणोंसे काटने लगे, महा बलवान् सिंहोंके समान दोनो गर्जने लगे; तब रुक्मिणीनन्दन चारुदेष्णने अग्नि और सूर्य्यके समान तेजवाले शत्रुनाशक वाणको महास्त्र मन्त्रसे अभिमन्त्रित करके धनुषपर चढ़ाया। हे राजन्! महावीर चारुदेष्णने उस वाणको चढ़ाकर क्रोधमें भर विविंध्यको ललकारके उसको मारा। विविंध्य उसके लगनेसे प्राणरहित होकर पृथिवीमें गिर पड़ा। विविंध्यको मरा और सेनाको घबराई हुई देखकर शाल्व मनोगामी सौभपर चढ़कर स्वयंही आया। हे नरनाथ! सौभपर आरूढ़ शाल्वको देखकर द्वारिकाकी जितनी सेना थी, सबही व्याकुल होगयी, हे कौरव्य! हे महाराज! तब प्रद्युम्नने निकलकर और यादवोंको उस सेनाका स्थिर करके ऐसा कहा। आप सब लोग खड़े रहिये, देखिये मैं राजाके समेत सौभका युद्धमें निवारण करता हूं। हे यादवो! मैं शाल्वकी सेनाका सभी धनुषका कुटिलतासे छूटे लोहेके सर्पोंके समान वाणोंसे नाशकर देता हूं। आपलोग स्वस्थ हूजिये, डर मतकीजिये, शाल्व अभी मर जाता है, मुझसे लड़कर यह दुष्टात्मा सौभके सहित नष्ट हो जायगा। हे वीर पाण्डुनन्दन! जब प्रद्युम्नने प्रसन्न होकर ऐसा कहा, तो

सब सेना स्थिर हुई और सुखपूर्व्वक युद्ध करने लगी।

१६ अध्याय समाप्त।

वैशम्पायन बोले, कि हे भरतकुलसिंह! रुक्मिणीपुत्र प्रद्युम्न यादवोंसे ऐसा कहकर सजल घोड़ोंसेयुक्त सुवर्णमय रथपर चढ़कर मुंह फुलाये यमराजके समान मत्स्यसहित ध्वजा युक्त, मानो आकाशको जाते हैं, ऐसे घोड़ों सहित रथपर चढ़कर शत्रुकी सेनाके आगे आये। वीर प्रद्युम्न अपनी धनुषको शत्रुओंको दिखाते हुए बलसे टङ्कारध्वनि करते हुए कवच खड्ग हाथ और अङ्गुलियोंमें लोहेके रक्षाजाल धारण किये बिजली समान धनुष दहनी ओर बाईं ओर घुमाते हुए समस्त सौभवासी देवगणको मोहित करने लगे। उस समय शत्रुओंको मारते हुए प्रद्युम्न कब धनुष-पर बाण चढ़ाते हैं, कब खींचते हैं, और कब छोड़ते हैं, इन सब बातोंको कोईभी नहीं जान सकता था, न इनके मुखका कुछ रंग बदला और न शरीर चलायमान हुआ, केवल सिंहके समान इनका पराक्रमभरा शब्द सब लोग सुनते थे। रथके ऊपर सब मछरियोंमें मुख्य मत्स मुख फैलाए हुए ध्वजामें लगा हुआ शत्रुके दलमें वेधा शाल्वकी सेनाको डराता हुआ शोभा देने लगा; तब युद्धकी इच्छायुक्त प्रद्युम्न वेगसे शाल्वहीके आगे युद्धकरनको उपस्थित हुए। हे कुरुकुलको बढ़ानेवाले नरनाथ। उस महायुद्धमें वीर प्रद्युम्नके सङ्ग [illegible]सभरा शाल्व युद्धका उपस्थित हुआ। [illegible] मदसे शत्रुजित उन्मत्त शाल्व सौभरथसे [illegible]कर प्रद्युम्नको वेधित करता हुआ युद्ध [illegible] लगा, इन दोनोंका युद्ध बलि और इन्द्रके [illegible] सब लोग देखने लगे। हे वीर। हे [illegible] कौरव्य श्रीमान् बलवान शाल्वराज [illegible] पताका, ध्वजा, और [illegible] युक्त रथपर चढ़कर तूण धारणकर प्रद्युम्न पर बाण बरसाने लगा। तब शाल्वको मोहित करते हुए प्रद्युम्नने शीघ्रता सहित बाहुबलसे युद्धमें बाणोंकी वर्षा करी, उन सब बाणोंसे शाल्व बड़ा क्रोध करके मेरे पुत्रपर जलती हुई अग्निके समान बाणोंको छोड़ने लगा, महाबलवान मेरे पुत्रने उसके सब बाणोंको काटकर अपने तीक्ष्णबाणोंको छोड़ा। हे राजेन्द्र। रुक्मिणीनन्दनने शाल्वका बाणोंसे बिद्धकर मर्म्मभेदी एक बाण शीघ्रता सहित युद्धमें छोड़ा। मेरे पुत्रका वह पंखयुक्त बाण उसके मर्म्मस्थानको भेदकर हृदयमें प्रवेशकर गया, उससे वह मूर्च्छित होकर गिर पड़ा। शाल्व राज वीरके चेतनारहित होनेपर दैत्यलोग पृथिवीको धारण करते हुए भागने लगे, हे पृथिवीनाथ। शाल्वकी सेनामें हाहाकार होने लगा। हे कौरव्य। तब चैतन्य होके शाल्व उठा और महाबल शाल्व वेगसे प्रद्युम्नपर बाण छोड़ने लगा, महाबाहु महावीर प्रद्युम्न समरमें उन बाणोंसे सन्धिस्थानमें पीड़ित होकर रथपर मूर्च्छित हो गए, उस रुक्मिणी-नन्दनको मूर्च्छित करके शाल्व पृथिवीको शब्दसे पूर्ण करता हुआ महाशब्द करने लगा। हे भारत! जब मेरा पुत्र युद्धमें मूर्च्छित हुआ, तो वह बड़े बड़े और कठिन बाणोंको छोड़ने लगा, हे कौरवश्रेष्ठ! तब युद्धमें उसके अनेक बाणोंसे पीड़ित होकर प्रद्युम्न चेष्टारहित हो गये।

१७ अध्याय समाप्त।

श्रीकृष्णजी बोले, जब बलवानोंमें श्रेष्ठ प्रद्युम्न शाल्वके बाणोंसे पीड़ित हुए, तब सब वृष्णि-वंशीलोग नष्ट संकल्प होकर सेनामें व्यथित हो गये; उस समय समस्त वृष्णि और अन्धकोंमें हाहाकार होने लगा। परन्तु प्रद्युम्नको मूर्च्छित देखकर शत्रु अति प्रसन्न हुए। उनको

मूर्च्छित देखकर दारुकका पुत्र शिक्षित सारथी वेगवान् घोड़ोंयुक्त रथके समेत युद्धसे शीघ्र बाहर लेगया, जब रथ थोड़ीही दूर गया, तो महारथोंको जीतनेवाले प्रद्युम्न चैतन्य होकर सारथीसे ऐसा कहने लगे, हे सूत। तुमने क्या किया जो युद्धसे मुखफेरे लौटे जाते हो; यह युद्धमें वृष्णिवंशियोंका धर्म्म नहीं है, हे सूतपुत्र! क्या तुमको युद्धमें शाल्वको देख कर कुछ भ्रमहो गया? युद्धको देखकर कुछ दुख हुआ मुझसे सत्य सत्य कहो।

सूत बोला, हे कृष्णपुत्र! मुझे न मोह हुआ, न मुझे भय हुआ, परन्तु मैंने यह समझा कि शाल्व आपसे भारी वीर है, यह पापी बड़ा बलवान् है, इसी लिये मैं धीरे धीरे युद्धमें हटा जाता हूं क्योंकि; यह नियम है कि युद्धमें सारथी रथी (रथमें बैठे योधा) की रक्षा करे। हे आयुष्मन्! मेरा धर्म्म है आपकी रक्षाकरना और आपका धर्म्म मेरी रक्षाकरना है, सारथी रथीकी रक्षा करे यह विचारकर मैं युद्धसे चला हूं। हे रुक्मिणीनन्दन! मैंने विचारा है, कि तुम अकेले और यह दानव अनेक है, युद्ध समान नहीं है, अतएव मैं युद्धसे चला जाता हूं।

हे युधिष्ठिर! सूतके ऐसे वचन सुनकर प्रद्युम्नने सूतसे कहा कि हे सूत! तुम रथको पुन लौटाओ, हे दारुकपुत्र! तुम ऐसा काम फिर कभी मत करना, जीते हुए मुझे युद्धसे पुन कभी मत हटाकर लेजाना; जो युद्धको त्याग दे उसको, गिरेको, "हम तुम्हारे है" ऐसा कहते हुए को स्त्रीको, बालकको, रथहीन, घबरायेको, जिसके शस्त्र टूटे हों, ऐसे पुरुषोंको जो मारे सो वृष्णिकुलमें उत्पन्न नही हुआ। हे दारुकपुत्र! तुम सूतवंशमें उत्पन्न हुए हो, सूतकर्म्ममें कुशल हो, और युद्धमें यदुवंशियोंके धर्म्मको जानते हो। हे सूत! तुम सेनाके अग्रभागमें उपस्थित यदुवंशियोंका पूरा धर्म्म जानकर, पुन: कभी इस प्रकारसे युद्ध मत छोड़के भागना। मुझे युद्धसे भगा पीठपर घाव खाये, भ्रान्त युद्धसे लौटा हुआ देखकर दुराधर्ष गदाग्रज, कृष्ण क्या कहेंगे! महाबाहु, मदसे भरे नीलवस्त्रधारी कृष्णके बड़े भाई बलदेव आकर मुझे क्या कहेंगे? शिनीके पौत्र पुरुष सिंह महा धनुधारी सात्यकी मुझे क्या कहेंगे? मुझे युद्धसे भगा देख महावीर साम्ब, दुर्धर्ष चारुदेष्ण, गद, सारण, और महाबल अक्रूर मुझे क्या कहेंगे? हे सूत! शूर, मानयुक्त, शान्त, नित्यही पराक्रमके अभिमानी, यदुवंशियोंकी स्त्रियां इकट्ठी होकर मुझे क्या कहेंगी? यह सब यही कहेंगी कि, यह प्रद्युम्न भयसे महायुद्धको त्याग करके भागा आता है, इसे धिक्कार है, मुझे अच्छा कदापि न कहेंगी। हे सूत! मुझे और मेरे समान पुरुषोंको धिक्कार शब्द सुनना मृत्युसेभी अधिक दुःखदाई है; तुम ऐसे युद्धसे कभी मत भागना। श्रीकृष्ण द्वारिकाका भार मेरे ऊपर देकर भरतकुलसिंह युधिष्ठिरको यज्ञमें गए हैं, सो इस समय शत्रुको छोड़ना उचित नहीं है। हे सूत! महावीर कृतबर्म्मा युद्ध करनेको आते थे, सो मैंने उन्हें "आप यहीं रहिये मै शाल्वको निवारण करूंगा" यह कहकर आनेसे रोक दिया। हृदिकपुत्र कृतबर्म्माभी मुझे समर्थ जानकर लौट गए। सो मैं युद्धसे भागकर उस महारथसे मिलकर क्या कहूंगा? जब दुराधर्ष शङ्खचक्रधारी महाबाहु श्रीकृष्ण आवेंगे, तो मैं उनसे क्या कहूंगा? सात्यकी, बलदेव, तथा और यदुवंशियोंसे जो नित्यही मेरे समान होनेको इच्छा किया करते है, उनसे भला मैं क्या कहूंगा! हे सूत! इस युद्धसे भागकर और पीठपर बाणोंसे आहत होकर विवश होकर तुम मुझे ले आये, अन्यथा मैं कदापि न आता। हे सूतपुत्र! तुम शीघ्र मेरे रथको घुमाओ, और फिर

पुनः आपत्तिमें भी मत करना, हे सूत ! मैं युद्धसे पीठ पर वाणोंसे आहत भीरु बन जीना उत्तम नहीं समझता । हे सूतपुत्र ! तुमने कभी मुझे नपुंसकके समरसे व्याकुल रणसे भगा हुआ देखा है ? हे दारुकात्मज मेरी युद्धकी इच्छा रहने परभी, तुमने युद्ध छोड़ दिया, यह बहुत अनुचित किया सो पुनः युद्धको चलो ।

१८ अध्याय समाप्त ।

श्रीकृष्ण बोले, कि हे कौन्तेय ! जब सूतने प्रद्युम्नके ऐसे वचन सुना, तो बलियोंमें श्रेष्ठ प्रद्युम्नसे मीठी कोमल बातोंसे ऐसा बोला ! हे रुक्मिणीनन्दन ! युद्धमें घोड़ोंको हांकनमें मुझे कुछभी भय नहीं है, और इसमें भी कुछ मिथ्या नही है, कि मैं वृष्णिवंशियोंके युद्ध को जानन-वाला हूं, परन्तु हे आयुष्मन् ! सारथियोंके लिये, यह उपदेश प्रसिद्ध है, कि सारथिको रथीकी रक्षा करनी चाहिये, और आप अधिक व्यथित होगए थे, हे वीर ! आप शाल्वके वाणके भारी आघातसे मूर्च्छित हुए थे, तबही मैं युद्धसे ले आया था । हे यादवमुख्य केशव-नन्दन ! अब आप अपनी इच्छानुसार मूर्च्छासे जागे हैं, सो अब युद्धमें मेरी घोड़े हांकनको विधिका देखिये, मैं दारुकका पुत्र हूं, और उन्हीसे मैंने यथायोग्य शिक्षाभी पाई है, अब मैं निर्भय होकर इस विस्तृत शाल्व सेनामें प्रवेश करता हूं ।

श्रीकृष्ण बोले, कि हे वीर ! सूतने ऐसा कहकर घोड़ोंकी रश्मि (लगाम) ठोककर बड़े भारी वेगसे चलाया । उस समय सूतने घोड़ोंकी ऐसी विद्या प्रगट करी कि विचित्र मण्डलाकार गति, यमक, (सदृश सदृश अनेक मण्डल) अयमक (असदृश मण्डल) विचित्र [illegible] और सिव दक्षिण गतसे घोड़ोंका [illegible] हे राजन् ! घोड़ा लगने और लगाम उद्यत होनेसे वह उत्तम घोड़े ऐसे चले, मानो आकाशको उड़ जायंगे, हे नरनाथ ! उस समय घोड़े सूतका हस्त लाघव जानकर ऐसे वेगसे चले मानो पृथिवी इनके चरणोंसे स्पर्श नहीं होती है । हे भरतकुल सिंह ! उस समय सूतने थोड़ेही यत्नसे शाल्वकी महा-सेनाको बाई ओर कर दिया, यह देखकर सब लोगोंको बड़ा आश्चर्य हुआ । जब प्रद्युम्नका रथ दक्षिणी ओर आया तो शाल्वको महाक्रोध भया, और तीन वाण सूतको मारा । हे महाबाहो ! दारुकके पुत्रने उसके वाणवेगको कुछभी ध्यानमें न लाकर पुनः अपने रथको उसके दहनी ओर पहुंचाया । हे वीर ! तब शाल्वने अनेक प्रकारके वाण मेरे पुत्र रुक्मिणी-नन्दनके ऊपर छोड़े, उन वाणोंको दूरहीसे शत्रुनाशक रुक्मिणिपुत्रने हंसते हंसते अपने हस्त लाघवको दिखातेहुए तीक्ष्णवाणोंसे काट दिया, शाल्व अपने वाणोंको प्रद्युम्नके वाणोंसे कटा हुआ देखकर दारुण राक्षसी मायाका आश्रय करके वाण छोड़ने लगा, प्रद्युम्न राक्षसी मायाका प्रयोग जानकर उस दैत्य अस्त्रको ब्रह्मास्त्रसे काटकर और अनेक प्रकारके वाण छोड़ने लगे । वह रुधिर पीनेवाले वाण शाल्वके अस्त्रको काटकर उसके शिर, मुख, और हृदयमें प्रवेश कर गए, तब शाल्वको मूर्च्छा होगई और वह गिर पड़ा । जब क्षुद्र शाल्व वाणोंसे पीड़ित होकर गिरा तो रुक्मिणीनन्दनने दूसरा शत्रुनाशन वाण निकाला, वह समस्त यदुवंशियोंसे पूजित सर्पके समान तेज, जलती आगके समान प्रकाशित, वाणको धनुषपर चढ़ाते देखकर आकाशमें महा हाहाकार होने लगा, इन्द्र, और कुवेरके समेत सब देवतोंने शीघ्रही वायु और नारदको प्रद्युम्नके समीप भेजा, दोनोंने आकर रुक्मिणीपुत्रसे देवतोंके वचन कहे, हे वीर ! यह शाल्वराज तुमसे वध्य नहीं है और इस वाणसे कोईभी

अवध्य नहीं है, अतएव तुम इस वाणको मत छोड़ो, ब्रह्माने इसकी मृत्यु देवकीनन्दनको बनाया है, सो ब्रह्माकी यह प्रतिज्ञा मिथ्या न हो; अतएव तुम इस वाणको मत चलाओ। यह सुनकर प्रद्युम्न अत्यन्त प्रसन्न हुए और उस वाणको धनुषसे उतारकर तूणमें रख लिया।

हे राजेन्द्र! इतनेमें शाल्वनेभी संज्ञा प्राप्तकर परम विमन हो प्रद्युम्नके वाणोंसे पीड़ित होकर शीघ्र सेना समेत भागना आरम्भ किया, वह क्रूर यादवोंके वाणोंसे पीड़ित हो द्वारिकाको छोड़ सौभपर बैठकर आकाशको चला।

१६ अध्याय समाप्त।

श्रीकृष्ण बोले; हे नरनाथ! जब आपका राजसूय यज्ञ समाप्त हुआ तो मैंने जाकर देखा, कि द्वारिका उससे मुक्त हुई है। हे महाराज! मैंने जाकर देखा तो द्वारिकाका तेज नष्ट हो गया था, पठन पाठन रहित, कहीं यज्ञ नहीं, स्त्री बिना भूषण, और नगरके चारों ओरके वाग कुरूप हो गये थे, मुझे यह सब देखकर शङ्का उत्पन्न भई तो मैंने हृदिकपुत्र (कृतवर्मासे) पंछा कि हे नरशार्दूल इस नगरके वृष्णिवंशी स्त्री पुरुष घवड़ाये क्यों हैं, इसका कारण मुझसे कहो। हे राजसत्तम ऐसा पूंछनेसे कृतवर्माने मुझसे विस्तार सहित यह सब कथा जिस प्रकारसे शाल्वने नगरको घेरा था और जैसे छोड़ा था कहो। हे कुरुश्रेष्ठ! मैंने यह सब सुनकर शाल्वके नाश करनेका मनमें विचार किया। हे भरतवंशियोंमें श्रेष्ठ! तब मैंने नगर निवासी, राजा उग्रसेन, और वसुदेवको धीरज देकर सब यदुवंशियोंको प्रसन्न करते हुए यह वचन कहा। हे यादवलोगो! आपलोगोंको उचित है, कि सदा नगरमें सावधान रहें और मुझे शाल्वके मारनेको जाने दें, मैं अब विना उसके मारे द्वारिकापुरीको लौट कर न आऊंगा, मैं सौभ नगरके सहित शाल्वको नष्ट करके आपलोगोंको पुनः देखूंगा, अब शत्रुओंको भय देनेवाली दुंदुभी तीनो स्वरों (नीचे और मध्यम) के सहित बजाई जाय; हे भरतर्षभ! जब मैंने सबको धीरज दिया तो वे सब प्रसन्न होकर कहने लगे कि "आप जाइये और शत्रुवोंको जीतिये"। उन प्रसन्न चित्तवाले वीरोंसे आशीर्वाद लेकर ब्राह्मणश्रेष्ठोंसे स्वस्तिवाचन सुनकर और शिवको शिरसे प्रणाम करके सैव्य, सुग्रीव, घोड़ेसे युक्त रथ पर चढ़कर हे महाराज! सब दिशाओंको प्रसन्न करता पाञ्चजन्य शङ्खको बजाकर हे पुरुषव्याघ्र! जयशील सन्नद्ध चतुरङ्गिणी महा सेनाको लेकर मैं चला। अनेक देश, पर्व्वत, वन, सर, और नदियोंको पार होकर मार्त्तिकावत देशमें पहुंचा। हे पुरुषव्याघ्र वहां जाकर सुना कि शाल्व सौभ सहित समुद्रके तटको गया है, तब मैं भी उसके पीछे हो वहांको चला गया, हे शत्रुनाशक! तब मैंने महा तरङ्ग वाले समुद्र पर प्राप्त करके देखा कि शाल्व सौभके सहित समुद्रके मध्यमें स्थित है। हे युधिष्ठिर! वह दुरात्मा मुझे दूरहीसे देख विस्मयके सहित, युद्धके अर्थ मुझे पुकारने लगा। तब मैंने मर्म्मभेदी अनेक वाण चलाये, परन्तु मेरे तीक्ष्णवाण शार्ङ्गसे छूटकर उसके नगरमें प्राप्त नहीं होते थे, अतएव मुझे महाक्रोध उत्पन्न भया, हे नरनाथ! वहभी पापी, दैत्योंमें नीच दुर्धर्ष, शाल सहस्रों वाण मुझपर वर्षण करने लगा, मेरे सैनिक, सूत, घोड़े और रथ को वाणोंसे भर दिया। हे भारत! परन्तु हमलोग उसके वाणोंका विचार न करके युद्ध करतेही रहे, तब हमारे ऊपर शाल्वके सेना पुरुषोंने सहस्रों तीक्ष्ण वाण छोड़े, तब उनके उन तीक्ष्ण वाणोंसे मेरे घोड़े रथ दारुक सारथीको राक्षसोंने छालिया। हे वीर! मैं मेरा सारथी, घोड़े रथ, और मेरी सेना, यह वाणोंसे छिपनेके कारण कुछ भी न दीखने लगे, हे कुन्तीपुत्र! तब मैंनेभी सहस्रोंवाण दिव्य-

मन्त्रोंसे मन्त्रित करके धनुषपर चढ़ा कर चलाए। हे भारत! उस समय सौभके आकाशमें लीन रहनेके कारण मैं और मेरे सैनिक कोई भी उसे न देख सकते थे, मानों एक कोश पर है। तब शत्रुवोंके देखनेवाले सब लोगोंने मुझे ताली और सिंहके समान शब्दोंसे प्रसन्न किया। वे लोग ऐसे भान होते थे मानो यह सब रङ्गवाटीमें स्थित हैं। मेरे और राक्षसोंके विचित्रपंखवाले वाण शत्रुओंके शरीरमें ऐसे प्रवेश करने लगे जैसे अग्निमें पतङ्ग। तब मेरे तीक्ष्ण वाणोंसे मरते हुए और समुद्रमें गिरते हुए राक्षसोंसे सौभमें महाघोर शब्द हुआ। लोग विना हाथ, विना कन्ध, कवन्धके समान दीखनेवाले, घोर शब्द करते हुए समुद्रमें गिरने लगे, जो दानव समुद्रमें गिरता था उसको समुद्रके जन्तु खाजातेथे। तब मैंने, गायके दूध कुन्दपुष्प, और चन्द्रमा, कमलकी डण्डी, तथा चांदीके समान श्वेत, पाञ्चजन्य शङ्खको शक्तिसे बजाया। सौभपति शाल्वने उन राक्षसोंको समुद्रमें गिरता हुआ देखकर, महामायाके युक्त होकर मुझसे युद्ध किया; तब गदा, हल, प्रास, परशुध, खड्ग, शक्ति, वेत्र पास दण्ड, कम्पन, वाण, पट्टिश, और भुशुण्डी मेरे ऊपर निरन्तर वरसने लगे, मैंने उसमायाको मायाहीसे ग्रहण करके नाश कर दिया, जब वह माया नष्ट होगयी तो पर्वतके श्रृङ्गोंसे वह युद्ध करने लगा, तब अन्धकार हो गया, पुनः प्रकाश भया, पश्चात् सुदिन (मेघरहित दिन) फिर दुर्दिन (मेघोंसे सूर्य छिप गया) क्षणमें शीत, और क्षणमात्रमें उष्ण होने लगा। हे भारत! ऐसे प्रकार कभी शस्त्र वरसने लगते थे, इस प्रकारसे माया करके वह शत्रु मुझसे युद्ध करने लगा, सो सब जानकर मैंने मायाहीसे उसको नाश कर दिया, तब समय पाकर सब ओर वाणोंसे उसको पूर्ण कर दिया, हे महाराज! उसी समय मैंने आकाशमें सौ सूर्य्यके समान प्रकाश देखा, थोड़ेकालमें देखा कि सौ चन्द्रमा और लाखों तारे निकल रहे हैं। हे कुन्तीपुत्र! उस समयमें दिन है कि रात है, और कौन दिशा किधर है, यह कुछभी नहीं जानपड़ा, हे कुन्तीनन्दन। उस समय मुझे भ्रम हो गया, तब मैंने, प्रज्ञा अस्त्र धनुषपर धारण किया अनन्तर वह अस्त्र वायुसे ऐसे धुना गया जैसे रूई धुनी जाती है, यह युद्ध महाघोर भया, जब मुझे चांदना दीखने लगा, तो मैं पुनः शाल्वसे युद्ध करने लगा।

२० अध्याय समाप्त।

श्रीकृष्ण बोले, कि हे महाराज! वह पुरुषोंमें सिंह महाशत्रु शाल्वराज इस प्रकार मुझसे युद्ध करके पुनः आकाश हीको चला गया, तब शतघ्नी महागदा, प्रकाशमान त्रिशूलो मूसल, और खड्ग मेरे ऊपर जयकी इच्छा रखनेवाला वही शाल्व वरषाने लगा, तव मैंने भी शीघ्रता सहित उन सब शस्त्रोंको दूरही आकाशमें निवारण करके दोदो, और तीन तीन, टुकड़े करदिये, तब आकाशमे महा शब्द हुआ। तब उसने तीक्ष्ण धारवाले सहस्रवाणोंसे मेरे घोड़े सारथी और रथको भर दिया, हे वीर! तब विद्ध होके दारुकने मुझसे कहा कि मेरे अङ्ग शाल्वके वाणोंसे कटे जाते हैं, मैं शाल्वके वाणोंसे अत्यन्त पीड़ित हुआ हूं, परन्तु युद्धमें स्थिर रहनाही मेरा धर्म्म है, वह जानके स्थिर हूं वास्तवमें स्थिर रहनेकी शक्ति मुझे नहो है। मैंने उसके यह करुणामय वचन सुनकर उसको देखा तो जानपड़ाकि शाल्वके वाणोंसे इसे वहुतही पीड़ा हुई है। उसके न सिरमे न हृदयमें न शरीरमें और न दोनो हाथोंमे हे पाण्डवश्रेष्ठ' मैंने वाणसे वेविंधा शरीर न पाया। उस समय सारथीके शरीरमें वाण लगनेसे ऐसी रुधिरकी धारा वहती थी जैसे वर्षा होनेसे पर्व्वतमें गेरुके

झरने झरते है। मैंने अपने सारथीको युद्धमें लगाम पकड़े शाल्वके बाणोंसे पीड़ित दुःख-सहित देखकर उसको आश्वासन किया; हे महाबाहो! हे युधिष्ठिर! इस समय एक महाराज उग्रसेनका सेवक द्वारिकावासी रहनेवाला, शीघ्रतासहित रथ लेकर मेरे पास आया, और आकर दुःखसे भरे मित्रके समान उग्रसेनकी बात मुझसे कहने लगा, कि द्वारिकापति बीर उग्रसेनने आपसे ऐसा कहा है कि हे केशव! तुम्हारे पिताका मित्र उग्रसेन तुमसे जो कहता है, सो मानो; तुम द्वारिकाको लौट आओ हे वृष्णिनन्दन! जब तुम यहांसे चले गए तो हे दुर्धर्ष! यहां शाल्वने आकर वसुदेवको बलसे मारडाला, हे जनार्दन! अतएव युद्ध करना व्यर्थ है, तुम लौट आओ, तुम द्वारिकाही की रक्षा करो, यही तुम्हारा परम कर्त्तव्य है, मैं उसका यह परम अप्रिय वचन सुनकर यह निश्चय न कर सका कि मुझे क्या कर्त्तव्य और क्या अकर्त्तव्य है, मैं मनसे सात्यको, बलदेव, और महारथ प्रद्युम्न की निन्दा करने लगा, हे कुरुनन्दन! मैंने यह विचार किया कि पूर्वोक्त वीरोंको द्वारिका और पिताकी रक्षा करनेको छोड़कर सौभसे युद्ध करनेको आया हूं। महाबाहु शत्रुनाशक बलदेव जीवित हैं, सात्यकी, प्रद्युम्न और वीर्य्यवान् चारुदेष्ण तथा साम्ब प्रभृति बीर जीवित हैं या नहीं? यह सोच कर मेरा मन महादुःखको प्राप्त हुआ, हे नरव्याघ्र मैंने सोचा कि इन सबके जीते साक्षात वज्रधारी इन्द्रकी भी शक्ति नहीं है, कि वसुदेवको मारसके; और वसुदेव मारे गए इससे निश्चय यह सब बलदेव आदि मारे गए, यह मुझे निश्चय होगया। हे महाराज! इस प्रकारसे मैं अपने सब नाशको विचारता हुआ विकल होकर शाल्वसे युद्ध करने लगा। हे महाराज! तब मैंने देखा कि मेरे पिता सौभसे गिरे, उस समय मुझे महामोह उपस्थित हुआ, हे नरनाथ! मेरे पिताके गिरते समय ऐसा रूप प्रकाशित हुआ जैसे पुण्य नाश होने पर ययाति का हुआ था, मैली खुली पगड़ी, फैलेवस्त्र और केशवाले मेरे पिताके गिरते हुए, ऐसा प्रकाश हुआ जैसे पुण्य नाश होनेसे तारा टूट कर गिरता है। तब उत्तम शार्ङ्गधनुष मेरे हाथसे गिर पड़ा, हे कौंतेय! मैं मोहसे व्याकुल होकर रथको शय्यामें बैठ गया; हे भारत! जब मेरी सेनाने मुझे रथमें प्राण रहितके समान मूर्च्छित पड़ा देखा, तो सब लोग हाहाकार करके रोने लगी, दोनो हाथ, और दोनो पैर फैला कर गिरते हुए मेरे पिताका रूप गिरते हुए शकुनीके समान शोभित हुआ, हे महाबाहो! गिरते हुए मेरे पिताको शूल और पट्टिशधारी अनेक योधा मेरे हृदयको कंपाते हुए काटने लगी, हे बीर! तब क्षण भरमें मैंने मोहको त्याग करके उस महायुद्धमें देखा, कि न वहा सौभ, न शत्रु शाल्व, और न बृद्ध पिता है, तब मेरे मनमें यह निश्चय हो गया, कि यह मायाही है, तब मै पुनः बोधित हुआ, और सैकड़ों बाण छोड़ने लगा।

२१ अध्याय समाप्त।

हे भरतश्रेष्ठ! तब मैं उत्तम धनुष ग्रहण करके बाणोंसे राक्षसोंके शिर पृथिवीमें गिराने लगा, मैं सापके समान, महा तेजस्वी, ऊर्द्धगामी, उत्तम पखवाले, बाण शार्ङ्गधनुषसे शाल्वको लक्ष करके छोड़ने लगा, हे कुरुकुलोत्पन्न! तब सौभ मायासे ऐसा छिप गया, कि मुझे दिखाई न देने लगा, तब मुझे विस्मय हुआ, हे महाराज! तब कटे शिरकेशवाले राक्षस मुझे गाली देने लगे, तब मैंने स्वस्थतासे स्थिर होकर शब्दवेधी बाण शीघ्रतासहित उनके मारनेको चलाए, तब शब्द बन्द हो गया, तब मैंने प्रकाशमान सूर्य्यके समान तेजवाले,

शब्दवेधी वाणों से उन सब राक्षसोंको मार-डाला, जिन्होंने वह शब्द किया था; हे महा-राज। जब वह शब्द बंद हो गया तो पुन: दूसरो ओर शब्द हुआ, मैंने वहांभी वाणोंसे वैसेही राक्षसोंको मारा; हे भारत। इस प्रकारसे दशोंदिशाओंमें नीचे और ऊपर ऐसाही शब्द हुआ, मैं सब ओर राक्षसोंको ऐसे ही मारता रहा, हे वीर। तब मैंने प्राग्-ज्योतिष पुरमें जाकर पुन: सौभको अपने नेत्रोंको मोहित करते देखा, तब लोकका नाश करने-वाला, दारुण शरीरवाला, दानव महा शिला वर्षण करके मुझसे लड़ने लगा, हे महाराज। मैं वारवार शिला वर्षासे पीड़ित होकर ऐसा दीखने लगा, जैसा पहाड़में विल, हे महाराज। मैं घोडे और सारथीके समेत पर्व्वतोंके मारे, अदृश्य हो गया, तब वृष्णिवंशी मेरे सैन्यवाले भयसे व्याकुल होकर चारों ओरको भाग गए, हे महाराज। जब मैं किसीको न दीखने लगा तो स्वर्ग, आकाश, और भूमि सबमे हाहाकार मच गया, हे राजन्। तब मेरे मित्रलोग दु:ख शोकसे भरकर मलीन-मन होकर रोने पीटने लगे, हे अच्युत! हे वीर। शत्रुओंमें प्रसन्नता और मेरे मित्रोंमें दु:खने प्रवेश किया, जब मुझे संज्ञाप्राप्त हुई तो यही शब्द सुना कि शाल्वने कृष्णको जीत लिया। तब मैंने इन्द्रके प्यारे शस्त्र पर्व्वतनाशक वज्रका प्रयोग करके उन सब पर्व्वतोंको नाश कर दिया, हे महाराज अनन्तर पर्व्वतको अधिक मारसे दु:खी होकर मेरे घोड़े कांपने लगे, मन्दवल मन्द गतियुक्त हो गए, जैसे मेघ समूहको फाड़कर सूर्य उदय होता है वैसेही मुझे पर्व्वत जालसे निकला देखकर मेरेसब वान्धव प्रसन्नहुए, तब पर्व्वतोंके बोझसे व्याकुल अल्पवल मन्द चलते घोड़ोंको देखकर सूतने उसके अनुकूल वचन कहा, कि यह आप भलीप्रकारसे देखिये यह शाल्वराज खड़ा है, हे कृष्ण! अब इसको छोड़ना उचित नहीं है, उत्तम यत्न कीजिये, हे महावाहो। हे केशव। अब आप शाल्वसे कोमलता और मित्रताको छोड़ दीजिये, अब इसे जीता मत छोड़िये शीघ्रहो जीत लीजिये. हे वीर। बलवानकोभी उचित है, कि अपने दुर्व्वल शत्रुको न छोड़ें, सब यत्नोंसे शत्रु मारनेहीके योग्य है; हे पुरुष शार्दूल। हे प्रभो। यदि शत्रु अपने घरमें बैठा हो तो उसे बिना युद्धभी मारडालना चाहिये न कि युद्धमें स्थित को। हे वृष्णिकुलश्रेष्ठ। यह मृदु युद्धसे वशमें नहीं आवेगा न यह आपका मित्र है, अतएव आप इस शाल्वकोनाश कीजिये समय नष्टमत कीजिये; इसने आपसे युद्ध किया, द्वारिकामें उपद्रव किया, हे कुन्तीपुत्र। मैंने सारथीके यह बचन सुनकर जाना कि यह ठीक कहता है, तब मैंने युद्धमें अपने चित्तको लगाया, शाल्वके मारने और सौभके गिरानेकी वुद्धि करी, और सारथीसे कहा कि तुम क्षणमात्र स्थिर रहो, तब मैंने नचूकने योग्य, दिव्य, न भेदने योग्य, महाबलवान, सब सहनेवाला, महा प्रकाशमान, दानवोंका अन्त करनेवाला, अग्नि अस्त्र धनुषपर धारण किया, युद्धमें यक्ष, राक्षस, दानव, और दुष्कर्मी राजोंका भस्म करनेवाला, जैसी छुरीकी धार होती है, वैसा निर्म्मल, काल और यमके समान; शत्रुओंके नाशक चक्रको मैंने अभिमन्त्रित करके उससे कहा कि तुम अपने वलसे मेरे जो यहां शत्रु है, उनको और सौभको नष्ट कर दो। ऐसा कह-कर मैंने क्रोधसे और हाथके वलसे उसको शाल्वकी ओर छोड़ा, उस समय सुदर्शन चक्रके आकाशसे गिरते ऐसा रूप प्रकाशित हुआ, जैसे प्रलयकालमें दूसरे सूर्य्यका. उसके छूटतेही सौभ तेजहीन हो गया, उसने सौभको बीचमें ऐसा काट दिया, जैसे आरा वृक्षको काटता है, जैसे शिवके वाणसे नष्ट होकर त्रिपुरासुरका नगर पृथिवीपर गिरा था वैसेही मेरे चक्रसे कटकर सौभ पृथिवीमें गिर गया। जब वह

नगर गिर गया, तो चक्र वेगसे पुनः मेरे हाथहीमें आगया, मैंने उसे लेकर पुनः शाल्वकी ओर चलाया, तब शाल्वने एक भारी गदा चक्रमें मारी परन्तु चक्रने उसे शाल्वके समेत दो टुकड़े-कर दिया, और तेजसे प्रकाशित होनेलगा, जब वीर शाल्व मर गया, तो दानवलोग मेरे वाणोंसे पीड़ित होकर भयसे हाहाकार करते हुए सब दिशाओंको भागने लगे, तब मैं अपने रथको सौभके समीप लेजाकर आनन्दसे शंख बजाकर अपने मित्रोंको आनन्दित किया, और सौभ मेरुके शिखरके समान जलने लगा, उसके स्थान और अटारियोंको जलते देखकर स्त्रियां-भाग गयीं।

हे राजन्! मैंने इस प्रकारसे सौभको तोड़ शाल्वको मार पुनः द्वारिकामें आकर अपने मित्रोंको प्रसन्न किया, हे शत्रुनाशन! यही कारण हुआ जो मैं जुएके समय हस्तिनापुरमें नहीं आया, अन्यथा यातो दुर्य्योधन जीताही न रहता, या ऐसा जुवा ही न होता, अब मैं क्या करूं? मेरी वही दशा है, जैसे बांध टूटने-पर पुल बाधनवालेकी होती है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, महाबाहु श्रीमान् मधुदैत्य नाशक श्रीकृष्ण युधिष्ठिरसे ऐसा कह-कर पाण्डवोंकी आज्ञा ले चलने लगे, महाबाहु कृष्णने धर्म्मराज युधिष्ठिर और भीमसेनको प्रणाम करी उन दोनोंने उनके माथेको सूंघा अर्ज्जुन-से मिले, तथा नकुल और सहदेवने उन्हें दण्डवत करी, धौम्यने आशीर्वाद दिया, द्रौपदीने आंसुवोंसे पूजाकरी, तब कृष्ण सुभद्रा और अभिमन्युको सोनेके रथपर चढ़ाकर सग ले चले, तब पाण्डवोंसे पूजित हो और युधिष्ठिरको समुझाय सूर्य्यके समान तेजयुक्त,सैव्यसुग्रीव,घोड़ों सहित रथपर चढ़कर द्वारिकाको चले गए। जब श्रीकृष्ण चले गए तो धृष्टद्युम्नभी द्रौपदीके पाचोपुत्रोंको अपने सङ्ग लेकर निज नगरको गए, धृष्टकेतुभी (शिशुपालके पुत्र और नकुलके साले) अपनी बहन (करेणुमती) को सङ्ग लेकर पाण्डवोंसे मिलकर रम्य शुक्तिमती नगरीको गये, पश्चात कैकेय लोगभी (सहदेवके साले) महा तेजस्वी युधिष्ठिरकी आज्ञालेकर और पाण्डवोंसे विदा होकर अपने स्थानको चले गये, ब्राह्मण, बनिये तथा अन्य सङ्ग रहने-वाले लोग पाण्डवोंके बहुत कहने परभी पाण्डवोंको छोड़नेकी इच्छा न करने लगे, हे महाराज! हे भरतर्षभ जनमेजय! यह उस काम्यक बनमें महात्माओंका विचित्र समागम हुआ, तब महाराज युधिष्ठिरने ब्राह्मणोंका सन्मान करके अच्छे कालमें अपने पुरुषोंको आज्ञा दी कि हमारे रथ योजित करो।

२२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि जब दशार्हदेशके स्वामी (श्रीकृष्ण) चलेगए, तो युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्ज्जुन, नकुल सहदेव, द्रौपदी और धौम्य पुरोहित, यह सब उत्तम बड़े बड़े घोड़ोंसेयुक्त रथोंपर चढ़कर वेद वेदांग जाननेवाले ब्राह्मणोंको सुवर्ण, निष्क (१०२ सुवर्णकी मुद्रा अथवा कण्ठ-भूषण विशेष) भोजन, देकर शिवके समान बनको चले उनके बीस कर्म्मचारीभी शस्त्रनिपुण, धनुष, शस्त्र, प्रकाशमान वाणज्या (रोदा) यन्त्र (कल) शाहक, लेकर सब लोग आगे पीछे चले, पश्चात् सुभद्राके वस्त्र, धाय, दासी, और आभू-षण, लेकर इन्द्रसेन द्वारिकाको गया, तब कुरुकुलश्रेष्ठ धर्म्मराजके समीप जाकर सब उदार पुरवासियोंने उनकी प्रदक्षिणा करी, कुरु जाङ्गल देशके रहनेवालोंमें मुख्यलोग और ब्राह्मणोंने प्रसन्न होकर उनसे कुछ वार्त्तालाप किया, और महाराजनेभी भाइयोंके समेत उन सबसे प्रसन्न चित्तसे बात करी, कुरुदेशवासी प्रधान लोगोंकी भक्ति देखकर महात्मा महाराज युधिष्ठिर वहां ठहर गए, कुरुकुलसिंह महात्मा युधिष्ठिरने उन प्रजाके पुरुषोंसे वैसाही भद्रा

किया जैसा पिता पुत्रोंसे करताहै और उन लोगोंभी उन कुरुश्रेष्ठ महाराजसे वैसाही भाव किया जैसा लोग पितासे करते हैं। तब सब कुरुकुलवीरोंको प्राप्त करके सब पुरुषोंने आंसुवोंसे मुखको भरके लज्जित होकर हा नाथ हा धर्म्मराज। ऐसा कहा, फिर वे सब उनको चारों ओर बैठ गए; वह लोग कहने लगे, कि कुरुवंशियोंमें श्रेष्ठ प्रजाके स्वामी धर्म्मराज, हमारे पिताके समान हैं, हम उनके पुत्र समान हैं, वे पुत्रके समान नगर और देश निबासियोंको छोड़ कर कहीं जाते हैं? निर्लज्ज धृतराष्ट्र-पुत्रको धिक्कार है, शकुनी और पापी कर्णको धिक्कार है। हे नरनाथ! जो लोग महात्मा आपके निमित्त अनर्थ करते हैं, उनको धिक्कार है। जो महात्मा देवके समान उपमा रहित इन्द्रप्रस्थ नगर बसाकर रहे थे, वह अप्रमाण कर्म्मकर्त्ता धर्म्मराज उसेछोड़ कहां जाते हैं? जिस देवसभाके समान सभाको महात्मा मयने उपमा रहित बनाया था, उसे देवरचित देव मायाके समान छोड़कर धर्म्मराज कहां जाते हैं? इस प्रकारसे कहते हुए प्रजाके मुख्यलोगोंसे अर्थ और धर्म्मके जाननेवाले, तेजस्वी अर्जुनने उच्च स्वरसे यों कहा, महाराज वनमें वास करके शत्रुवोंके यशको नाश करके पुनः उन वस्तुओंको ग्रहण करेंगे, आपलोग, द्विजातियोंमें मुख्य, मिले हो वा अलग हो उनको प्रसन्न करके आपलोग धर्म्म और अर्थकी वार्त्ता करते रहियेगा इसीसे हमारी परम सिद्धि होगी' ऐसा कहा। अर्जुनका यह वचन सुनकर ब्राह्मणादि सब वर्ण उनकी प्रशंसा कर महाराजको प्रदक्षिणाकर महाराज, भीमसेन, नकुल, सहदेव द्रौपदी, और धौम्य पुरोहित से आज्ञा मांगकर निरानन्द होकर युधिष्ठिरके आज्ञा यथोचित पालन कर अपने अपने घरों चले गए।

२६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी, बोले, जब वे प्रजागण सब पुरुष चले गए तो सत्यपालक धर्म्मात्मा, कुन्ती-पुत्र युधिष्ठिर सब भाइयोंसे ऐसा बोले, बारह बर्ष पर्य्यन्त हम लोगोंको यहीं बसना है, सो तुम लोग इसमहाबनमें ऐसा स्थान ढूंढो जहां बहुत हरिण, पक्षी और फल हों। जो स्थान रम्य, सत्पुरुषोंसे कल्याण मय हो, जहां इन सब वर्षोंको हम सुखसे बिता सकें। लोक-गुरु मनस्वी धर्म्मराजके ऐसे बचन सुनकर अर्जुन उनका गुरुके समान सन्मान करके कहने लगे।

अर्जुन बोले, कि हे भरतर्षभ! आप वृद्ध ऋषियोंके उपासक है, अतएव मनुष्यलोकमें ऐसी कोई वस्तु नहीं है, जिसे आप नहीं जानते है, आपने जगतमें व्यास आदि ब्राह्मणोंकी सेवा करी है, जो देवलोकसे ब्रह्मलोक वहांसे गन्धर्व्व लोक और अप्सरालोक आदि सब स्थानोंको जाते है, जो सदाही सब लोकोंके द्वारमें घूमा करते हैं, आपने उन नारदकी सेवा करी है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि आप ब्राह्मणोंके अभावोंको जानते हैं। हे राजन्! कल्याणके कारणको आपही जानते हैं, हे महाराज! जहां आपकी इच्छा हो हम सब वहीं निवास करेंगे, यह द्वैतवन नामक तड़ाग है, इसमें पवित्र जल भरा है, यह वन रम्य है, इसमें पुष्प, फल, और पक्षी, बहुत हैं, मुझे यही अच्छा भान होता है, कि हमलोग द्वादशवर्ष पर्य्यन्त यहीं विहार करें, हे महाराज! यदि आपकी रुचि हो तो यहीं निवास कीजिये।

युधिष्ठिर बोले, हे अर्जुन! तुमने जो कहा सोही मेरीभी इच्छा है, अतएव हम सब पवित्र पुण्य द्वैतवन नामक तड़ागको चलते हैं।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, तब वेसब धार्म्मिक-लोग वहांसे अनेक ब्राह्मणों संग ले पुण्यमय द्वैतवन सरको चले गये, वहां युधिष्ठिरके

मिलनेको अग्निहोत्री, निरग्नी, (जो अग्निहोत्र न करें) वेद पढ़ानेवाले, और वनके रहनेवाले भिक्षुक लोग आये। सैकड़ों ब्राह्मण, तपसी सिद्ध व्रतीलोग आये, वे लोग अनेक ब्राह्मणोंके सहित पाण्डवोंसे मिलकर रम्य द्वैतवनसरके समीपको चले गये, पाण्डव लोगोंने उनके सहित पुण्यद्वैतवन तड़ागको वसे, वहां महाबली राजेश्वर युधिष्ठिरने वसन्तमें फूले हुए साल, ताड़ महुवा, नीप (कदम्ब आदि) राल, अर्जुन (वृक्ष विशेष) और कचनारको देखा कि वृक्षोंपर बैठकर मोर चकवा, चकोर, मोरनी, कोकिला मीठे मीठे स्वरोंसे शब्दकर रहे हैं, हस्तिनियोंके यूथके समेत अनेक मतवाले पहाड़के समान शरीरवाले यूथपति हाथियोंकी अनेक मण्डली पड़ी है। अनन्तर सुन्दर राजाने सरस्वतीपर जाकर, जटावल्कलधारी, पवित्र, तपस्वी, धर्मात्माओंके; निवास वनमें अनेक सिद्ध और ऋषिओंके गणको देखा, तब अपने भाई और पुरुषोंके सहित रथोंसे उतरकर जैसे इन्द्र स्वर्गमें प्रवेश करते है तैसे ही राजाने वनमें प्रवेश किया। अनन्तर उन धर्मज्ञोंमें श्रेष्ठ धर्मज्ञकी इच्छा रखनेवाले सिद्ध और चारण, इकट्ठे होकर आए, तथा औरभी वनवासी तपस्वीलोगोंने आकर महाराजको चारो ओरसे घेर लिया, तब महाराजने सब सिद्धोंको प्रणाम किया, उन्होंनेभी इनकी देवता और राजाके समान पूजा। तब धर्म जाननेवालोंमें उत्तम युधिष्ठिरने हाथ जोड़कर सब ब्राह्मणोंके सहित वनमें प्रवेश किया, अनन्तर वह धर्मज्ञ पुण्यात्मा राजा महा तपस्विओंसे पुत्रके समान सत्कार पाकर पूजा ग्रहण करके एक फल भरे भारी वृक्षकी छायामें बैठ गये, उनके बैठनेके पश्चात् भीमसेन, द्रौपदी, अर्जुन, नकुल, सहदेव, तथा और सब लोग अपने रथोंसे उतर कर उसी वृक्षके नीचे बैठ गये, लताओंसे भरनेके कारण झुकी हुई शाखावाला वह वृक्ष, धनुर्धारी पांच पाण्डवोंसे ऐसा शोभित हुआ, जैसे बड़ापर्व्वत पांच यूथपाल हाथियोंके बैठनेसे शोभित होता है।

२४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, इन्द्रके समान महाराज पाण्डुके योग्य पुत्र होनेपरभी दुःखसे उस वनमें निवास करते हुए; उत्तम सरस्वती नदीके तट पर उस वनमें महानुभाव, कुरुकुलसिंह राजा युधिष्ठिर उत्तम मूल और फलोंसे यति, मुनि और समस्त ब्राह्मणोंको तृप्त करते थे। उसी वनमें राजपुरोहित महा तेजस्वी धौम्य पाण्डवोंकी यज्ञ और पैतृक क्रिया पिताके समान कराते थे। राज्यसे नष्ट हुए बनवासी श्रीमान् पाण्डवोंके आश्रममें, महा तेजस्वी, मार्कण्डेय मुनि अतिथि होकर आए, कुरुकुलसिंह सत्यपराक्रम, अनुपम महामनस्वी युधिष्ठिरने जलती अग्निके समान तेजस्वी, ऋषि, देवता, और मनुष्योंसे पूजित ऋषिको आते देखकर पूजा करी। उन सर्व्वज्ञ मुनिने द्रौपदी, युधिष्ठिर भीमसेन, और अर्ज्जुनको देखकर मनसे रामका स्मरण किया और महात्मा महातेजस्वी मार्कण्डेय तपस्वी लोगोंके मध्यमें हसने लगे। तब धर्म्मराजने कुछ बिमन होकर उनसे कहा कि यह सब मुनीश्वर लोग लज्जित, बैठे हैं, आप सब तपस्वियोंके सामने प्रसन्नचित्तसे मुझे देखकर हंसते है, इसका कारण क्या?

मार्कण्डेय बोले, हे तात! हे पार्थ! मैं न प्रसन्नतासे हूं, न आश्चर्य करता हूं न मुझे कुछ आनन्दका अभिमान भया है, मैं तुम्हारी इस आपत्तिको देखके सत्यव्रत, दशरथपुत्र, रामका स्मरण करता हूं। वह राजाभी लक्ष्मणके समेत पिताकी आज्ञासे वनमें वसे थे, मैंने उन्हें ऋष्यमूक पर्व्वतके समीप धनुष धारण किये घूमते देखा था, यमके शासक नमुचीके नाशक सहस्र-

नेव इन्द्रके समान महात्मा, पापरहित, धर्म्म-पालक, दशरथके पुत्र रामने वनमें वास किया था; वह इन्द्रके समान प्रभाव युक्त महानुभाव, युद्धमें अजेय, रामभी सब भोगोंको छोड़ कर वनमें बसे थे, इससे क्या बल रहते अधर्म्म करना उचित है? अर्थात् अनुचित है, हे तात। नाभाग और भगीरथादि राजोंने इस पृथिवी-को समुद्र पर्य्यन्त जीतकर सत्यसे परलोकको जीता। अतएव शक्ति होने परभी अधर्म्म न करना चाहिये, हे पुरुषश्रेष्ठ। अलर्क सत्यव्रत काशिराज, करूपदेशके राजा; यह सब लोग राज्य और धनको छोड़कर वनमें रहे थे अतएव शक्ति रहनेपरभी धर्म्महो कर्त्तव्य है, हे कुरुश्रेष्ठ देखो यह सप्त ऋषि ब्रह्माके नियमको पालन करते हुए आज पर्य्यन्त आकाशमें प्रकाशित हैं, बल रहतेभी क्या अधर्म्म करना योग्य है? हे नरेन्द्र। महाबलयुक्त पर्व्वतके समान शरीर-वाले दन्तारे हाथियोंको देखिये कि यह ब्रह्माकी आज्ञाहीसे चलते हैं, बल रहनेपर भी धर्म्महो कर्त्तव्य ह। हे नरेन्द्र। सब प्राणियोंको देख यह वैसेही स्थिर हैं, जैसे ब्रह्माने योजित किया है। अपनी योग्यताके अनुसार सदाही कर्म्म करते हैं, बल रहनेपरभी अधर्म्म न करना चाहिये। हे कुन्तीपुत्र! सत्य, धर्म्म, उचित वृत्ति और लज्जासे सब प्राणियोंको उल्लङ्घन करके तुम्हारा यश, तेजयुक्त सूर्य्यके समान प्रकाशित है, हे महानुभाव! तुम प्रतिज्ञाके अनुसार कठिन वनवासको काटकर अपने तेजसे प्रकाशित लक्ष्मीको कौरवोंसे ग्रहण करोगे।

वैशम्पायनजी बोले सुहृद लोगोंके सहित, तपस्वियोंके मध्यमें बैठे हुए युधिष्ठिरसे, मार्क-ण्डेय महर्षि ऐसा कहकर धौम्य सहित पाण्डवों से पूछ कर उत्तर दिशाको चले गए।

२५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, महात्मा पाण्डवोंके बसनेसे, वह महावन ब्राह्मणोंसे पूर्ण हो गया, उस समय वेदशब्दसे पूर्ण द्वैतवन सब ओर से ब्रह्मलोकके समान भान होता था, वहां चारों ओर ऋग्वेद, यजुर्व्वेद और ब्राह्मण ग्रन्थहीकी ध्वनि सुन पड़ती थी, वहां पाण्डवोंके धनुषोंका शब्द, और ब्राह्मणोंके वेदपाठका शब्द होनेसे ऐसा भान होता था कि मानो ब्रह्माने ब्राह्मण और क्षत्रियोंको बनाकर पुनः मिलाया है, अनन्तर बकदाल्भ्य मुनि ब्राह्मणोंसे परिवृत संध्यामें बैठे हुए, कुन्तीनन्दन युधिष्ठिरसे कहने लगे, हे पृथापुत्र। देखो इस द्वैतवनमें तपस्वी ब्राह्मणलोगोंका संध्योपासनका समय है, देखो अग्नि जल रही है, हे महाराज! देखो यह आपसे रक्षित होकर इस पुण्यक्षेत्र वनमें भृगु-वंशी, अङ्गिरावंशी, वशिष्ठवंशोद्भव, काश्यप, महाभाग अगस्त, और उत्तम व्रतधारी अत्रि-वंशोत्पन्न, व्रतधारी जगतके श्रेष्ठ ब्राह्मण लोग आपके सङ्ग होकर संध्योपासन करते-हैं। हे कौरव! हे कौन्तेय! मैं जो वचन कहता हूं, सो तुम भाइयोंके समेत श्रवण करो, ब्राह्मण, क्षत्रियोंसे और क्षत्रिय ब्राह्मणोंसे मिले हैं, यह दोनो प्रकाशित होकर शत्रुओंको वैसेही नाश कर सकते हैं, जैसे अग्नि और वायु मिलकर वनको नाश कर देते हैं। हे तात! क्षत्रियोंको उचित है, कि विना ब्राह्मणके ऐश्वर्य्य और इस लोकके जीतनेकी इच्छा न करे। और क्षत्रीय धर्म्म जाननेवाले, द्रोह रहित, ब्राह्मणको प्राप्तकर राजा अपने शत्रुओंको जीतता है! प्रजापालन और उत्तम धर्म्म करता हुआ राजा ब्राह्मणको छोड़कर दूसरे तीर्थको न जाय, देखो राक्षस बलिको कामके अनुसार क्षयहीन लक्ष्मी प्राप्त हुई थी, ब्राह्मणकी आराधना करनेसे उसने पृथिवीको प्राप्त किया था अन्तको जब ब्राह्मणोंसे दुष्टता करी तब नष्ट हो गया। जो ब्राह्मणकी सेवा नहीं करता उसे लक्ष्मी अधिक समयतक

प्राप्त नहीं होती है। जिस विनयवान् अन्य वर्णोंके पुरुषको ब्राह्मण शासन करता है, उससे समुद्र पर्य्यन्त जगत् नम्र होता है। जैसे हाथियोंके युद्धमें महावत (हाथीवान्) के बिना योद्धाका बल घट जाता है, तैसेही ब्राह्मणसे रहित क्षत्रियका बल हीन हो जाता है, ब्राह्मणकी उपमारहित विद्या और क्षत्रियका असामान्य बल, यह दोनों यदि मिलकर कार्य्य करें, तो लोकमें आनन्द होता है। जैसे वायुकी सङ्ग लेकर अग्नि बड़े भारी काष्ठ आदिके समूहकोभी भस्म करदेता है, तैसेही ब्राह्मणकी सहायतासे क्षत्रिय बड़े शत्रुकोभी नाशकर देता है, बुद्धिमान् क्षत्रिय, बिना प्राप्त हुई वस्तुकी प्राप्ति और प्राप्त हुईकी बृद्धिके अर्थ अपनी बुद्धिको ब्राह्मणोंहीमें लगावे, हे युधिष्ठिर! तुम अप्राप्त वस्तुकी प्राप्ति और प्राप्तिकी बृद्धि तथा तीर्थोंके यथार्थ स्थापनके निमित्त. यशस्वी, वेद जाननेवाले, पण्डित, बहुश्रुत, ब्राह्मणोंहीको अपने यहां वसाओ, तुम्हारी बृत्ति ब्राह्मणोंमें सदा बहुत ही उत्तम है, अतएव तुम्हारा यश सब लोकोंमें प्रसिद्ध है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि जब बकदाल्भ्य मुनिने युधिष्ठिरकी ऐसी प्रशंसा करी, तो सब मुनिलोग पुन प्रसन्न होकर बकदाल्भ्यकी प्रशंसा करने लगे। द्वैपायन (व्यास) नारद, जामदग्नि पृथुश्रवा, इन्द्रद्युम्न, भालुक, कृतचेता, सहस्रपात, कर्णश्रवा, मुञ्ज, लवणाश्व, काश्यप, हारीत, स्थूणकर्ण, अग्निवेश, शौनक, कृतवाक्, असुवाक्, बृहदश्व, विभावसु, ऊर्द्धरेता, वृषामित्र, सुहोत्र, और होत्रवाहन, इत्यादिको लेकर दूसरे अनेक व्रतधारी ब्राह्मणलोग महाराज युधिष्ठिरकी वैसेही पूजा करने लगे,जैसे इन्द्रकी ऋषिलोग करते हैं।

२९ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले वनवासी शोक और दुःखसे भरे हुए पाण्डव संध्यासमय द्रौपदी समेत बैठकर वार्त्तालाप करने लगे। अनन्तर सुन्दरी, पण्डिता पतिव्रता, पाण्डवोंकी प्यारी, द्रौपदी धर्म्मराजसे ऐसा कहने लगी। द्रौपदि बोली, उस पापी, निर्लज्ज, दुरात्मा, धृतराष्ट्रके पुत्रको, हमारे दुःख पानेसे निश्चय कुछभी दुःख नहीं है। हे राजन्! जिस दुष्टने मेरे समेत आपको वनवास देकर हरिण चर्म्म उढ़ाकर कुछभी दुःख नहीं पाया, जिसने धर्म्म परायण आपको रूखीबात सुनायी; जो पापी, दुरात्मा सुखके योग्य, दुःखके अयोग्य, आपको इस दुर्दशामें डालकर आप बन्धुओंके सहित सुख भोगता है; निश्चय उस दुर्म्मति, दुष्कर्म्मीका हृदय लोहेका है। हे भारत! जब आप हरिण चर्म्म धारण करके वनको चले थे, उस समय दुर्योधन, कर्ण दुरात्मा शकुनी और उस उग्र दुष्ट, दुःशासन, इन्हीं पापियोंके नेत्रसे आंसू नहीं गिरी थीं। हे कुरुसत्तम! और जितने कौरव थे, वे सब दुःखसे भरकर रोने लगे थे। हे महाराज! आपके पहिले पलङ्गको स्मरणकर और इस शयनस्थानको देखकर मैं सुखके योग्य और दुःखके अयोग्य आपकोही सोचती हूं। वह हाथीदांतका बना हुआ, सभाके मध्यमें शोभित, रत्नोंसे जड़ा हुआ, आपका सिंहासन स्मरण करके और यह कुशाके आसनको देखकर मुझे शोक घेरे लेता है, हे महाराज! है जिस आपको सभाके मध्यमें सहस्रों राजे वेष्टित देखा था, आज उनहीं आपको एक और दुःखी देखकर कहिये तो मेरे हृदय कैसे शान्ति हो सकती है। हे भारत! जि मैंने आपको चन्दनसे लिप्त-शरीर तथा सू समान तेजयुक्त देखा है, सो मैं आज धूल, औ मैलेभरे शरीरवाले आपको देखकर मूर्च्छि हुई जाती हूं। हे राजेन्द्र! जिस मैंने आपक उत्तम निर्म्मल रेशमके वस्त्रधारण किये दे

था, सो मैं आज आपको चर्म्म ओढ़े देखती हूं, हे महाराज! जो सोनेके वर्त्तनमें रखकर सहस्रों ब्राह्मणोंको सब कामनायुक्त (यथेच्छा) उत्तम संस्कार किया हुआ, अन्न आपके घरसे मिलता था, जो ब्रह्मचारी और घरमें रहनेवाले यतियोंको उत्तम गुणयुक्त भोजन दिया था, जो सब कामको प्राप्त करके सहस्रों ब्राह्मण पहिले घरमें पूजे जाते थे, हे राजन्! हे नाथ! वह सब अन्न न देखनेसे मेरे हृदयको क्या शान्ति होगी! हे महाराज! जिन आपके भाइयोंको कुण्डलधारी युवा सूप लोग परम उत्तम संस्कार किये सुस्वादु अन्न भोजन कराते थे, उनहीं सबको अब वनमें फल, मूल, और मास खाकर जीते देखती हूं। हे नरनाथ! इन दुःखोंके अयोग्य तुम्हारे भाइयोंकी यह दशा देखकर मेरा मन शान्त नहीं होता है। हे महाराज! इन भीमसेनको दुःखित और वनवासी देखकर इनके दुःखका ध्यान करके क्या आपको यह काल प्राप्त होनेपरभी क्रोध नहीं बढ़ता? यह भीमसेन एकलाही युद्धमें धृतराष्ट्रके सब पुत्रोंको नाश करनेको शक्ति रखते हैं, यह केवल आपकी प्रतिज्ञाको पालनेके निमित्त सब सह रहे हैं। जो दो बाहुवाले अर्ज्जुन सहस्र बाहुवाले अर्ज्जुन कृतवीर्य्य हैहयके तुल्य हैं, जो बाणोंको शीघ्र चलाने और शत्रुके मारनेमें यमराजके समान हैं, जिनके शस्त्रके प्रतापसे सब राजालोग लघु बनकर आपके घरमें ब्राह्मणोंके समीप आये थे, देव और दानवोंसे पूजित नरसिंह अर्ज्जुनको चिन्तायुक्त देखकर, हे महाराज! आपको क्रोध क्यो नही बढ़ता? दुःख सहनेके अयोग्य, और सुखभोगनेके योग्य कुन्तीनन्दनोंको वनमें आये हुए देखके आपको क्रोध नहीं आता, इसीसे मुझे मोह होता है। जिसने एकही रथसे देवता और सर्पोंको जीता, उसको वनवासी देखके आपका क्रोध क्यों नहीं बढ़ता है? जिन्होंने अद्भुत रूपवाली सवारी, हाथी और घोड़ोंसे आच्छादित होकर वज्रपूर्व्वक राजोंसे धन लिया था, जो एकहीवार पांचसौ बाण छोड़ते है उन अर्ज्जुनको वनवासी देखके आपका क्रोध क्यों नहीं बढ़ता है? श्यामवर्णवाले, उद्यमी, युवा और युद्धमें तलवार ढाल चलानेवालोंमें श्रेष्ठ नकुलको वनमें देखके आपका क्रोध क्यों नहीं बढ़ता है? हे युधिष्ठिर! मनोहर रूपवाले शूर वीर माद्रीपुत्र सहदेवको वनवासी देखके आप क्यों क्षमा करते है? नकुल सहदेव जो दुःख भोगनेके योग्य नही हैं, उन दोनोंको दुःखी देखकर आपका क्रोध क्यों नहीं बढ़ता है? हे राजन्! राजा द्रुपदके कुलमें उत्पन्न हुई, महात्मा पाण्डुकी पुत्रवधू, धृष्टद्युम्नकी बहिन, और अनुकूल रहनेवाली मुझ वीरपत्नीको वनमें फिरती देखके आप क्यों क्षमा करते है? हे श्रेष्ठ! निश्चय होता है, कि यथार्थमें तुमको क्रोधही नहीं है। इसीसे तुम्हारा मन अपने भाइयोंको और मुझे देखके पीड़ित नहीं होता है। क्षत्रिय शब्दका यही अर्थ है, कि जिसमें क्रोध हो वही क्षत्रिय है और जिसमें क्रोध न हो वह क्षत्रिय नहीं है, अब मैं तुममें उसका विपरीत भाव देखती हूं। हे कुन्तीनन्दन! जो क्षत्रिय समय पाकर क्रोध नहीं करता है, सबप्राणी उसकी सदा निन्दा करते है। इस कारणसे तुमको शत्रुओं पर कदापि क्षमा न करनी चाहिये, इसमें सन्देह नहीं है, कि शत्रु लोग क्रोधसेही मारे जायेंगे। ऐसेही जो क्षत्रिय क्षमा योग्य समयमें शान्त नहीं रहता है, वह सब प्राणियोंका अप्रिय होजाता है और उसके यह लोक और परलोक दोनो नाश हो जाते हैं।

२७ अध्याय समाप्त।

द्रौपदी बोली, इस विषयमें इस पुराने इतिहासका लोग उदाहरण दिया करते हैं, जिसमें प्रह्लाद और विरोचनके पुत्र बलिका सम्वाद वर्णित है। महाबुद्धिमान् धर्म्म-तत्वों को जाननेवाले सुरोंके स्वामी प्रह्लादसे उनके पोते बलिने पूछा, कि हे तात! मुझे इनमें बड़ा सन्देह है, कि क्षमा उत्तम है, वा क्रोध उत्तम है? मैं आपसे पूछता हूं, आप यथार्थ कहिये। हे धर्म्मज्ञ! जो इनमें उत्तम हो, उसे आप संशय-रहित होके कहिये, जैसी आज्ञा होगी वैसाही मैं करूंगा। ऐसा प्रश्न करनेवाले, बलिसे निश्चय-पूर्व्वक जाननेवाले पितामह प्रह्लाद यों वर्णन करने लगे। प्रह्लाद बोले, न सदा क्रोधही उत्तम है, और न सदा क्षमाही श्रेष्ठ है। हे प्यारे! इनको तुम सन्देह-रहित होके समझ लो; हे तात! जो सदा क्षमा करता है, उसे बहुत दुःख भोगने पड़ते हैं, उसके सेवक उसका अनादर करते हैं, शत्रुलोग उससे उदासीन रहते हैं। हे पुत्र! क्षमावाले मनुष्यको कोई प्राणी प्रणाम नहीं करता है, इस कारणसे सदा क्षमा करना-पण्डितोंके वास्तेभी मना है। क्षमाशील मनुष्यके सेवक निन्दा करके बहुतसे दोषोंको धारण करते हैं, मन्दबुद्धि सेवकलोग क्षमाशीलका धन छीनना चाहते हैं। सवारी, वस्त्र आभूषण, शय्या, आसन, खानेपीनेकी सम्पूर्ण सामग्री अधिकारी लोग सब ले लेते हैं। क्षमाशीलके अधिकारी लोग इच्छाचारी, वेष बना रहते हैं, और स्वामीकी आज्ञानुसार कोई-वस्तु नहीं देते हैं। सेवकलोग क्षमाशीलको मालिकके समान आदर नहीं करते हैं; अनादर करनाभी बुरा है। क्षमा करनेवालेको सेवक दूत, पुत्र, तथा और लोगभी गाली देते हैं। क्षमावालेकी स्त्री उसकी निन्दा करती है और स्वेच्छाचारिणी हो जाती है, और नित्यही स्वामीकी सेवाको छोड़कर उत्सवोंमें लगी रहती है। यदि स्त्रियोंको स्वामी कुछभी दण्ड न दे, तो स्त्री दुष्ट होकर कुकर्म्म करने लगती है, हे विरोचननन्दन! इन दोषोंके सिवाय और भी बहुतसे दोष क्षमाशील लोगोंको भोगने पड़ते हैं। आगे क्रोधी लोगोंके दोषोंको समझो। उचित स्थानमें नित्यही रजोगुणसे आवृत और क्रोधसे पूरित होकर नित्यही अपने आधीन पुरुषोंको जो दण्ड देता है, सो क्रोधके वशमें होनेसे अपने मित्रोंका विरोधी बनता है, और जगत्से मित्रोंसे द्वेषको प्राप्त होता है, अर्थात्, मित्रलोग उससे द्वेष रखने लगते हैं; मित्रोंके द्वेषसे धनका नाश होता है, तब उस पुरुषको सब लोग धिक्कार देने लगते हैं, तब अनादर दुःख द्वेष और मोहको प्राप्त होते हैं। अनन्तर उसके शत्रुभी उत्पन्न होते हैं, जो क्रोधके वशमें होकर अन्यायसे मनुष्योंको दण्ड देता है, सो शीघ्रही ऐश्वर्य्य, मित्र और प्राणोंकोभी नष्ट करता है। जो अपने उपकारी और चोरोंको बलसे दण्ड देता है, उससे लोकके पुरुष ऐसा डरते हैं, जैसा बिलमें बैठे हुए सांपसे, और जिससे जगत्के लोग घबड़ाते हैं, उसका कल्याण कैसे हो सकता है? यह निश्चय है, कि वहीलोग समय देखकर उसकी हानि अवश्य करते हैं; अतएव सदा क्रोधहीमें नहीं रहना चाहिये और न नित्य साधु होकर रहना उचित है। जैसा समय हो वैसाही तेज वा शान्त स्वभाव रखना चाहिये। जो समय पाकर शान्त और समय पाकर तेज होता है, वह इस लोक और परलोकमें सुखको प्राप्त करता है। पण्डित लोगोंने जो क्षमाके समय कहे हैं; जिनको पुरुषोंको कदापि न छोड़ना चाहिये, उनको हम विस्तार-सहित कहते हैं तुम सुनो। जिसने पहिले कोई उपकार किया हो और पश्चात् भारी अपराधभी किया हो, उसका वह अपराध पूर्व्व उपकारके बदले क्षमाकर देना चाहिये। जो मूर्ख निर्बुद्धि

होनेके कारण कोई अपराध करे, तो वहभी क्षमा करने योग्य है, क्योंकि सबलोगोंका पण्डित होना सुलभ नहीं है। जो दुष्टात्मा जानकर थोड़ा अपराधभी करे और कहै कि मैंने विना जाने किया है, उस पापीको अवश्य मारडालना चाहिये। यदि एकही अपराधको बहुतसे पुरुष मिलकर करें, तो उन सबहीको क्षमाकर देना चाहिये। यदि उनमेंसे किसी एकपर थोड़ाभी दूसरा अपराध पाया जाय, तो उसे दण्ड देना उचित है। यदि विना जाने, कोई पुरुष किसी अपराधको करे, तो उसकी परीक्षा उत्तमरूपसे करके क्षमा करना चाहिये, क्योंकि क्षमाही से साधु और असाधु दोनो मारे जाते हैं; क्षमासे कुछ सिद्धि नहीं होती, अतएव अत्यन्त तेज होनाही मृदु-भाव है। देशकाल, अपना बल और दुर्ब्बलता देखकर सबकार्य्य करना उचित है, क्योंकि अदेश और असमयमें कोई कार्य्य नहीं होता; अतएव देश और कालको देखो और ऐसा भी कहा है, कि लोकके भयसेभी अपराधको क्षमा करना चाहिये। इस प्रकारसे क्षमाके समय कहे हैं। इन सबोंसे भिन्न एक तेजका काल कहा है; सो हे महाराज। लोभी, निरन्तर अपराध करनेवाले धृतराष्ट्रके पुत्रोंसे आपका तेज काल प्राप्त हुआ है, मेरी बुद्धिमें अब कौर-वोंके ऊपर क्षमा करनेका समय नहीं है; इस तेजकालमें आप उन पर तेजपात कीजिये। अत्यन्त कोमल राजाका अनादर होता है, और अत्यन्त तेज राजासे पुरुष घबड़ाते हैं; जो समयके अनुसार कोमल और तेज होजाता है, वहा राजा होनेके योग्य है।

२८ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे सुन्दरि! क्रोधही पुरुष-का नाश कर देता है, और फिर क्रोधहीसे वृद्धि होता है। हे महाप्राज्ञे! तुम निश्चय जानो कि क्रोधही हानि और लाभका मूल है। जो पुरुष क्रोधको नाश करता है, उसका कल्याण होता है। हे शुभे! जो पुरुष सदाही क्रोधके वशमें रहता है उसके नाशका कारण वही परम क्रोध हो जाता है। क्रोधही प्रजाके नाशका मूल है, सो ऐसे लोक नाशक क्रोधको मेरे समान पुरुष कैसे कर सक्ता है? क्रोधी पुरुष कठिन बात बोलता है, और माननीय पुरुषोंका भी निरादर कर देता है; क्रोधी नहीं जान सक्ता, कि यह बात कहनेके योग्य है या नही। कोई ऐसा काम नहीं है, जिसे क्रोधी न कर सके। कोई ऐसी बात नही है, जिसे क्रोधी न कह सके; क्रोधी अवध्य कोभी मार सक्ता है, और बध्य की पूजा करसक्ता है; क्रोधी अपने जीवनको भी नष्ट कर सक्ता है। यही सब दोष देख कर इस लोक और परलोकमें उत्तम कल्याणकी इच्छा करनेवाले महात्माओंने क्रोधको जीता है। हे द्रौपदि! पाण्डवोंसे त्यागने योग्य उस क्रोधको हमारे समान पुरुष कैसे कर सकता है? यही विचार कर हम क्रोध नही बढ़ाता। जो क्रोधीके ऊपर क्रोध नहीं करता, वह अपनेको और दूसरेको महाभयसे बचाता है, अतएव वह दोनोंका वैद्य है। यदि दुर्ब्बल मूर्ख बलवान क्रोधीके ऊपर क्रोध करे, तो अपने शरीरका नाश करता है। हे द्रौपदि! जो अनात्मजित् अपनी आत्माका नाश करता है, उसका स्वर्गवास नाश होता है, अतएव दुर्ब्बलको उचित है, कि अपने क्रोधको वशमें रखे। जो विद्वान बलवान होने परभी क्लेश सहता है, और क्लेश देनेवालेको क्लेश नही देता, वह स्वर्गमें आनन्द करता है; अतएव जाननेवाले दुर्ब्बल वा बलवान पुरुषको क्षमाही करनी उचित है। हे कृष्णे! क्रोधसे विजय करना, दोनो लोकोंमें प्रिय है; झूठसे सत्य अच्छा है और निर्लज्जतासे लज्जा अच्छी है। इस बहुत दोषोंसे भरे हुए साधुनिन्दित क्रोधको दुर्योधनके

मारनेके निमित्त मेरे समान पुरुष कैसे कर सकता है? जिसको दीर्घदर्शी पण्डित लोग तेजस्वी कहते हैं, निश्चय करके क्रोध उसके हृदयमें नहीं रहता। जो उत्पन्न क्रोधको अपनी बुद्धिसे नाश करता है तत्वदर्शी विद्वान-लोग उसीको तेजस्वी कहते हैं; हे सुश्रोणि! क्रोधी पुरुष कार्य्यको ठीक नहीं जान सकता; क्रोधीपुरुष अकर्त्तव्य और मर्य्यादाकोभी नहीं जान सक्ता है। क्रोधी पुरुष अवध्यको भी मार डालता है; मान्य पुरुषोंको भी दुःख देता है; अतएव उत्तम पुरुषको उचित है, कि क्रोधको दूरही रखे। कार्य्यमें कुशलता, शत्रुओंका हानि-चिन्तन, शत्रुओंके जीतनेकी शक्ति, यह जो तेजके गुण हैं; सो क्रोधी नहीं प्राप्त हो सकते। हे महाप्राज्ञे! जो पुरुष क्रोधको छोड़ता है, उसका तेज भली भांति बढ़ता है। तेजस्वी पुरुषका क्रोध समय-पर सहने योग्य नहीं होता। मूर्खलोग क्रोध-हीका तेज कहते हैं और मनुष्यमें रजोगुण लोकके नाशार्थही दिया गया है, अतएव उत्तमा-चरण करनेवाले पुरुषको क्रोध छोड़ देना चाहिये। क्रोधी पुरुष अपने उत्तम धर्म्मसे नष्ट हो जाता है। हे आनन्दिते! यदि मूर्खलोग उत्तम कामोंको नाश जाय, तो क्या हमारे समान पुरुषभी वैसेही करें? यदि मनुष्योंमें पृथिवीके समान क्षमा करनेवाले पुरुष न हों, तो सन्धिही न हो; क्योंकि क्रोध विग्रहका मूल है। दुःखी पुरुष गुरुकोभी दुःख दे और गुरुके मारनेपरभी गुरुको मारे इस प्रकार अधर्म्म फैलनेसे लोकका नाश होसक्ता है। गाली देनेपर दूसरेको गाली दे, पीटनेसे पीटे, मारनेसे मारे, पिताको पुत्र, पुत्रको पिता, पतिको स्त्री और स्त्रीको पति क्रोधके वशमें होकर मारडाले। हे कृष्णे! इस प्रकार लोकमें क्रोध फैलनेसे संसारमें जन्म होना बन्द हो सक्ता है। हे शुभानने! जन्मका मूल मेलही है। हे द्रौपदि! इस प्रकारका क्रोध होनेसे प्रजा शीघ्रही नष्ट हो सक्ती है, अतएव क्रोध प्रजाके नाशका मूल है, और दुःखका कारण है, पृथिवीके समान क्षमावान पुरुष लोकमें दीखते हैं, अतएव प्रजाका जन्म और कल्याण होता है, हे सुशोभने! पुरुषको उचित है कि जगतमें क्षमा करता रहे, क्योंकि क्षमाहीसे जगतमें जन्म और कल्याण होता है। जो पुरुष गाली सुनकर मार खाकर क्रोधी होनेपरभी बलवान् पुरुषको क्षमा करता है, जो पण्डित उत्तम पुरुष प्रभाववान होकर भी क्रोधको अपने वशमें रखता है, उसको अक्षय स्वर्ग मिलता है। जो मन्द-बुद्धि क्रोधके वशमें रहता है, सो इस लोक और परलोकमेंभी नष्ट होता है। हे कृष्णे! क्षमा-वान् महात्मा काश्यपने क्षमावान पुरुषोंकी जो कथा कही है, उसका उदाहरण पण्डितलोग इसी स्थान पर देते हैं। क्षमाही धर्म्म है, क्षमाही यज्ञ है, क्षमाही वेद है और क्षमाही सुननेका फल है। जो पुरुष इसको अच्छी प्रकार जानता है वही सब क्षमा करनेमें समर्थ है। क्षमाही ब्रह्म है, क्षमा सत्य है, क्षमाही थी और क्षमाही होगी; क्षमा जय है, क्षमाही पवित्रता है, और क्षमाहीसे जगत् स्थिर है। जो लोक वेद जाननेवाले ब्रह्मवेत्ता और तपस्वियोंको मिलते हैं, क्षमावान पुरुषभी उनही लोकोंको प्राप्त करता है। अग्निहोत्र कर्म्म करनेवाले पुरुषोंके दूसरे लोक हैं, परन्तु क्षमावान पुरुषोंको परम पूजायुक्त ब्रह्मलोक प्राप्त होता है। तेजस्वी पुरुषोंका तेज क्षमाही है। तपस्वियोंको ब्रह्म क्षमाही है। सत्यवान् पुरुषोंको क्षमाही योग्य है। क्षमाही इन्द्रि-ओंको वश करनेका फल है।

हे कृष्णे! ऐसी क्षमाको हमारे समान पुरुष किस प्रकार छोड़ सकता है? जिस क्षमामें ब्रह्म, सत्य, यज्ञ और लोक प्रतिष्ठित हैं। अतएव जाननेवाले पुरुषको सदा क्षमाही करना उचित है। जब पुरुष क्षमा करता है, तब उनको ब्रह्म प्राप्त होता है। क्षमावानके

निमित्त यह लोक और परलोक सुखदायक है। इस लोकमें क्षमावान पुरुषको सन्मान और परलोकमें उत्तम गति प्राप्त होती है। जिस पुरुषकी क्षमाको क्रोध नाश कर देता है, उसको उत्तम लोक नहीं प्राप्त होते, इस हेतु क्षमा उत्तम वस्तु है। हे द्रौपदि! क्षमावान पुरुषोंकी यह कथा काश्यप मुनिने कही है, तुम यह सुनकर शान्त हो और क्रोध मत करो। क्षमा करनेसे शान्तनुपुत्र हमारे दादा भीष्म और देवकीपुत्र श्रीकृष्ण प्रशंसा करेंगे, गुरु द्रोणाचार्य्य, विदुर, कृपाचार्य्य, सञ्जय क्षमा ही की प्रशंसा करेंगे। सोमदत्त युयुत्सु, द्रोणपुत्र अश्वत्थामा और हमारे पितामह व्यासदेव क्षमाही को वर्णन करते हैं! इन सबके कहनेसे युद्धको उद्यत राजा धृतराष्ट्र शान्त होकर हमको राज्य देंगे, ऐसा हमारी बुद्धिमें निश्चय होता है। यदि न देंगे तो लोभसे नष्ट होजायेंगे। हे सुन्दरि! मैं जैसा पहले निश्चय किया करता था, सोई भरतकुल नाशका यह दारुण समय प्राप्त हुआ है। दुर्य्योधन क्षमा-करनेमें असमर्थ है; अतएव राज्यके योग्य नहीं है। मैं राज्यके योग्य हूं, अतएव क्षमा करना भी मुझको उचित है,—यही धर्म्मज्ञोंका चरित्र है और यही सनातन धर्म्म है। मैं तत्त्वविचार करके क्षमा और लज्जाको धारण करता हूं।

२९ अध्याय समाप्त।

द्रौपदी बोली, हे महाराज! मैं उस परमेश्वर और प्रारब्धको नमस्कार करती हूं, जिन्होंने आप दादासे प्राप्त राज्यकी प्राप्तिमें आपकी बुद्धिको उलट दिया है। कर्म्मसे उत्तम मध्यम और नीचयोनि अलग होती है, अतएव कर्म्मही निश्चल है। मोक्षकी इच्छा होती है। जगतमें धर्म्म ... क्षमा, साधुता या दुष्ट कर्म्मसे ... प्राप्त नहीं कर सकता; अतएव कर्म्मही नित्य है। हे भरतवंशावतंश! देखिये आप और आपके महातेजस्वी भाई-लोग जिस दुःखके योग्य नहीं थे, उस कठिन दुःखको प्राप्त हुए हैं। हे भारत! मैं जानती हूं कि राज्यके समयमें और इस समय भी धर्म्मसे प्रिय आपको और कुछ नहीं है, आप जीवनसे भी धर्म्मको अधिक मानते हैं; इसको देवता, ब्राह्मण और गुरुलोग भी जानते हैं, कि आपका राज्य और जीवन धर्म्महीके निमित्त हैं। मुझे यह निश्चय है कि आप भीमसेन, अर्ज्जुन, नकुल, सहदेव, और मुझको भी त्याग सकते हैं; परन्तु धर्म्मको नहीं छोड़ेंगे। मैंने आर्य्य पुरुषोंके मुखसे यह सुना था कि धर्म्मरक्षक राजाकी धर्म्मही रक्षा करता है, परन्तु जान पड़ता है; कि वह धर्म्म आपकी रक्षा नहीं करता। हे पुरुषसिंह! आपकी बुद्धि सर्व्वदा धर्म्ममें इस प्रकार रहती है, जैसे छाया पुरुषके पीछे फिरा करती है। हे महाराज! सब पृथ्वीका राज्य प्राप्त होने पर भी आपने कभी अपने समान पुरुषोंका अपमान नहीं किया, न कभी आपको नीच पुरुषोंकी तरह अभिमान कदापि उत्पन्न हुआ। हे महाराज! आपने निरन्तरही स्वाधा और पूजासे ब्राह्मण, देवता और पितरोंकी तृप्ति की है। हे भारत! आप मोक्षकी इच्छा रखनेवाले सन्यासी और गृहस्थ ब्राह्मणोंकी सदा इच्छानुसार तृप्त करते रहे हैं। हे महाराज! जो मैं दासियों सहित सोनेके पात्रमें ब्राह्मणोंको भोजन कराती थी, सो आज वनवासियोंसे लोहेके पात्र प्राप्त करती हूं, आपके पास कोई ऐसी वस्तु नहीं है, जो ब्राह्मण लोगोंको दीजाय। हे राजन्! यह जो आपके घरमें शान्तिके निमित्त बलि-वैश्वदेव कर्म्म होता है, इसमें ब्राह्मण और अतिथियोंको देकर जो बचता है, उसीको खाकर आप जीते हैं। काम्य और नैमित्तिक पशु-सहित यज्ञ और पौरमी कर्म्म राज्य नष्ट

होनेपर, चारोभाइयोंके सहित इस महावनमें वास करके भी आप करते है, इससे जान पड़ता है, कि धर्मको आपने अभीतक नहीं छोड़ा। हे महाराज! मुझको एकसन्देह है, कि आपने अश्वमेध, राजसूय, और गोसव पुण्डरीक आदि महायज्ञ करके ब्राह्मणोंको बहुत दक्षिणा दो है, और जुएमें विपरीत बुद्धि धारण करके राज्य, धन, भाई और मुझेभी हारा है। हे कोमल सीधे कहनेवालोंमें श्रेष्ठ! सत्यवादो! आपकी बुद्धि किस प्रकार जुएमें लगी थी? हे महाराज! मुझको अत्यन्त शोक होता है, और मनको ग्लानि आती है, जब आपको और अपनेको इस दुःखमें पड़े हुए देखती हूं। ईश्वरके वशमें लोक स्थित है, अपने वशमें नहीं। ऐसे स्थान-पर इस पुराने इतिहासका उदाहरण देते हैं। पहले कर्मके बीजका आश्रय लेकर ईश्वरही सुख, दुःख, प्रिय और अप्रिय फलका विधान करते हैं। हे नरवीर! हे राजन्! जिस प्रकार कठपुतली नचानेवाले पुरुषके वशमें रहती है, वैसेही यह जगत्भी ईश्वरके वशमें रहता है। हे भारत्! ईश्वर आकाशके समान सबमें व्याप्त होकर कल्याण और पापके फलको यथायोग्य देते हैं। जैसे पक्षी डोरमें बंधकर अवश हो जाता है, वैसेही जगत्भी अपना और दूसरेका स्वामी नहीं है। जैसे नाकमें रस्सी डालनेसे बैल बेवश होजाता है, जैसे पानीकी धारामें आकर वृक्ष अपने समूह-से टूटकर बहने लगता है, और उसका बह-नाभी उसके वशमें नहीं है, यह सब परमेश्वरकी आज्ञासे होता है; मनुष्य अपने अधीन होकर कदापि किसी समयमें कोई कार्य्य नहीं करता है। यह मूर्ख जीव अपने सुखका स्वामी नहीं है, ईश्वरहीकी प्रेरणासे स्वर्ग और नरकको प्राप्त करता है। हे भारत! जिस प्रकारसे तिनकेका अग्रभाग बलवान वायुके वशमें होकर हिलता है तैसेही समस्त प्राणी लोगभी ईश्वरके वशमें रहते हैं। ईश्वर उत्तम और नीच कर्म करते हुए जगत्में व्यापक होकर घूमते हैं, परन्तु किसीको दिखाई नहीं देते। यह शरीर परमेश्वरका स्थान होनेपरभी हेतुमात्र है, इसीके द्वारा ईश्वर शुभ और अशुभ कर्म कराते हैं, देखो, परमेश्वरकी कैसी माया है! कि एक प्राणी दूसरे प्राणीको मायासे मोहित होकर नष्ट करता है। जैसे सूर्य्यकी किरण सब ओर फैलती है, वैसेही प्राणीलोगभी सर्वत्र फैले हैं, परन्तु तत्वदर्शी मुनियोंने जैसा उपदेश किया है, यह लोग उससे उलटाही आचरण करते है। मनुष्यलोग जिन जिन कामोंको दूसरे प्रकार मानते हैं, ईश्वर उनही कामोंको दूसरे प्रकारसे करते हैं, और कभी नहीं भी करते। जिस प्रकारसे चेतना-रहित, चेष्टाशून्य काठको काठसे, पत्थरको पत्थरसे और लोहेको लोहेसे काट देते हैं, हे युधिष्ठिर! उस प्रकारसे वह सबका प्रपितामह आपही उत्पन्न होनेवाले भगवान् ब्रह्मा प्राणियोंको प्राणियोंसे नष्ट करते हैं। जिसप्रकारसे बालक खिलौनोंको बनाकर खेलता है, वैसेही परमेश्वर भी समस्त प्राणियोंका अपनी इच्छानुसार संयोग और वियोग करा खेलते हैं। हे राजन्! जिस प्रकारसे सामा[illegible] पुरुष क्रोधके वशमें होके आचरण करते हैं, अथ[illegible] जैसे माता और पिता आचरण करते हैं, वै[illegible] सब प्राणियोंमें ब्रह्मा आचरण नहीं करता क्योंकि देखते हैं कि उत्तम आचरणयुक्त लज्ज[illegible] वान पुरुष खानेसे भी दुःखी और चिन्ता[illegible] पीड़ित रहते हैं, और दुष्टलोग आनन्द कर[illegible] हैं,—देखिये आपको यह आपत्ति और दुर्यो[illegible] धनको सुख हो रहा है। हे कुन्तीनन्दन! यह देखकर मैं विषम-दर्शी ब्रह्माको निन्दा करत[illegible] हूं। आर्य्य शास्त्रको छोड़नेवाले, क्रूर, अधर्म्म और लोभी धृतराष्ट्रपुत्रको लक्ष्मी देकर ब्रह्म[illegible] क्या फल पावेंगे? यदि किया हुआ कर्म्म कर्त्ताको छोड़ और किसीको प्राप्त नहीं होता, तो पा[illegible]

कर्म्मका फल ईश्वरहीको होता होगा, क्योंकि वही सबका प्रेरक है। यदि किये हुए कर्म्मका पाप कर्त्ताको नहीं प्राप्त होता, तो इसमें बलही कारण होगा, अतएव मुझे दुर्बलोंका बड़ा सोच है।

३० अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे याज्ञसेनि! तुमने जो उत्तम विचित्र और कोमल बचन कहा, सो हमने सुना परन्तु यह सब वेदके विरुद्ध होनेसे नास्तिकोंका वाक्य है। हे राजपुत्री! मै कर्म्मके फलकी इच्छासे नहीं दौड़ता हूं, मेरा यही प्रण है,—देता हूं, यह वस्तु देने योग्य है, यज्ञ करता हूं और यह करने योग्य है। हे कृष्णे! मै घरमें रहूं वा कहीं, शक्ति अनुसार यही कर्म्म करता हूं और यही पुरुषको करने योग्य है, चाहे फल हो वा न हो। हे सुश्रोणि! मैं जाननेवाले कर्म्मोंको उलङ्घन करके उत्तम पुरुषोंका कर्म्म देखकर धर्म्म करता हूं, परन्तु उसके फलकी इच्छा नहीं रखता। हे कृष्णे! मैंने अपने स्वभाव और मनसे धर्म्मको धारण किया है, जो पुरुष धर्म्मका व्यापार करता है अर्थात् धर्म्म करके इसके फलकी इच्छा करता है, वह हीनपुरुष धर्म्मज्ञानियोंमें नीच माना जाता है। जो धर्म्मको दोहता चाहता है अर्थात् इसके फलकी इच्छा करता है, और जो पापी नास्तिकतासे धर्म्म करके उसमें शङ्का करता है, वह धर्म्मके फलको नहीं प्राप्त होता। मैं ठीक [illegible] करता हूं कि तुम धर्म्ममें शङ्का [illegible] करो क्योंकि धर्म्ममें शङ्का करनेवाले [illegible] नीच गति होती है। जिस दुरात्मा [illegible] धर्म्ममें अथवा आप्त प्रणीत पुस्तकोंमें [illegible] वह वेदसे शूद्रके समान सब लोकोंसे [illegible] नष्ट होता है। हे मनस्विनि! [illegible] धर्म्मपर उत्तम कुलमें उत्पन्न [illegible] बालक भी [illegible] हो परन्तु धर्म्म करनेवाले वृद्धोंमें गिना जाना चाहिये। जो पापी, मन्दबुद्धि शास्त्रको छोड़कर धर्म्ममें शङ्का करता है, वह शूद्र और चोरोंसे भी नीच गिना जाता है। देखो तुमने अपनी दृष्टिसे देखा कि, महातपस्वी महात्मा धर्म्महीसे बहुत कालतक जीते है। देखो व्यास, वशिष्ठ, मैत्रेय, नारद, लोमश और शुक्र आदिको लेकर औरभी अनेक महर्षि लोग धर्म्महीसे ज्ञानको प्राप्त हुए हैं। तुम इन सबको प्रत्यक्ष देखती हो, कि यह लोग दिव्य योग सहित शाप और अनुग्रहमें समर्थ देवतोंसेभी उत्तम हैं। हे पापरहिते! यहीलोग प्रत्यक्ष और आगम (प्रमाणविशेष) की बुद्धिसे जगतके आदिमें करने योग्य धर्म्मको वर्णन करते हैं। हे कल्याणि! हे राणि! यही सब विचारकर तुमको उचित है, कि मूर्ख मनसे ब्रह्मा और धर्म्ममें आक्षेप और शङ्का न करो, बालक सब पण्डितोंको पागल जानता और मानता है। धर्म्ममें शङ्का करनेवाले पुरुषकी उपमा भी मूर्ख बालकके अतिरिक्त और किसीसे नहीं हो सकती। मूर्ख-लोग अपनेहीको प्रमाण मानके धर्म्मका अपमान करते हैं और समझते हैं, कि यह जगत् इन्द्रियोंके सुखहीके निमित्त है, और धर्म्मको कुछ नहीं मानते है। जो पापी, कृपण सदा धनहीकी चिन्ता किया करते हैं, और धर्म्म करनेमें शङ्का करते हैं, उनका प्रायश्चित्त भी नहीं है। जो पापी काम और लोभके वशमें होकर प्रमाणको छोड़के वेद और शास्त्रकी निन्दा करता है, सो नरकमें पड़ता है। हे कल्याणि! जो उत्तम बुद्धिवाला पुरुष शङ्का-रहित होकर सदा धर्म्महो करता रहता है, सो उत्तम अन्तरहित सुखको भोगता है। जो मूर्ख वेदके प्रमाणको नाश कर धर्म्मको नहीं पालता और शास्त्रकी मर्य्यादाको नहीं मानता, वह अनेक जन्मोंमें भी सुखको नहीं प्राप्त होता। हे भामिनि! जिसको वेदका प्रमाण और

शिष्टाचार माननीय नहीं है, उसको न इसलोक और न परलोकमें सुखप्राप्त होता है। हे कृष्णे! जिस धर्मको महात्मा लोग करते हैं, उसमें तुम शङ्का मत करो। यह प्राचीन धर्म सर्व्वज्ञ सर्व्वदर्शी महात्मा ऋषियोंने कहा है, हे द्रौपदि! स्वर्ग जानेकी इच्छा करनेवाले मनुष्यकी धर्म्मही एक ऐसी नाव है जैसे समुद्रसे पार जानेवाले बनियेकी नौका। हे अनिन्दिते! यदि धर्म्म करनेवाले पुरुषोंसे किया हुआ धर्म्म फल-रहित होता, तो यह जगत् प्रतिष्ठाशून्य अन्धकारमें डूब जाता। यदि तप, ब्रह्मचर्य्य, यज्ञ, पढ़ना, दान, साधुता यह निष्फल होता तो कोईभी मोक्षको प्राप्त न होता, सब पशुजीविकासे जीते कोईभी विद्या और धनको प्राप्त न करता, कोईभी हमसे पहिला, उनसे पहिला और पहिलेसे पहिला धर्म्म न करता। यदि धर्म्ममें वञ्चना होती, और यदि क्रिया निष्फल होती, तो ऋषि, देवता, गन्धर्व्व असुर और राक्षसलोग समर्थ होकरभी आदर सहित धर्म्मको क्यों करते? हे कृष्णे! यह सबलोग ब्रह्माको फलके देनेवाले जानकर धर्म्म करते हैं, और ऐसाही सनातन नियम है। सो धर्म्म और अधर्म्म फलसे रहित नहीं है, क्योंकि जगत्में विद्या और तपका फल दीखता है, इस लिये धर्म्म वा अधर्म्मको निष्फल नहीं कहा जाता। हे कृष्णे! तुम अपने जन्मका स्मरण करो और यहभी बताओ, कि प्रतापवान् धृष्टद्युम्न कैसे उत्पन्न हुए हैं। हे सुचिस्मिते! धीरपुरुष कर्म्मके फलको पाता है, और थोड़ेहीमें सन्तुष्टभी हो जाता है, इसका उदाहरण जो हमने दिया सोही बहुत है। मूर्ख, निर्बुद्धिलोग बहुत फल पाकरभी सन्तुष्ट नहीं होते, क्या उनको मरने के पश्चात धर्म्मका कुछ कल्याण प्राप्त होगा? हे भामिनि! वेद सुननेवालोंके सत्कर्म्म और पापियोंके कुकर्म्म, फलकर उदय उन्नति या विनाश देवतोंकोभी गुप्त रहता है, अर्थात् वेभी कठिनतासे जान सकते हैं। जो पुरुष यह जानते हैं, कि यह सब प्रजा, इनही विषयोंसे मोहित रहती है, उनको सहस्र कल्पोंमेंभी कल्याण लाभ नहीं होता। यह विषय देवतों करके रक्षित है और देवतोंकी माया बहुत गूढ़ है, इसको आशा रहित, शान्त, तपसे पापको जलाये हुए ब्राह्मणलोग मनकी प्रसन्नतासे देखते हैं। फल न देखनेसे धर्म्म और देवतायोंमें शङ्का नहीं करनी चाहिये। दृढ़तासे रहित होकर यत्न करके सदा यज्ञ और दान करना चाहिये; ब्रह्माने अपने पुत्रोंसे कहा था, कि धर्म्मका फल इसी लोकमें है। यह सनातन धर्म्म है, इसका अर्थ कश्यप ऋषिने जाना था। हे कृष्णे! यह सब जानकर तुम्हारा संशय कुहरेके समान नष्ट होना चाहिये। यह सब सत्य हैं, यह निश्चयकर तुम नास्तिक भावको त्याग दो। सब जगत्के बनानेवाले ईश्वरको गाली मत दो। उनका ध्यान करो, उनको नमस्कार करो। तुम्हारी बुद्धि नष्ट न होनी चाहिये। हे कृष्णे! जिसकी कृपा और भक्ति है, सो पुरुष मोक्षको प्राप्त करता है, तुम उस उत्तम देवताका अपमान कदापि मत करो।

३१ अध्याय समाप्त।

द्रौपदी बोली, हे कुन्तीनन्दन! मैं कदापि धर्म्मका अपमान नहीं करती हूं, और जगत्के स्वामी परमेश्वरका अपमानभी नहीं करती हूं। हे भारत! परन्तु दुःखसे व्याकुल हूं, अतएव निरर्थक बकती हूं, और पुनःभी बकूंगी, आप प्रसन्नचित्त होकर सुनिये। हे शत्रुनाशन! यह निश्चय है, कि जाननेवालेको कर्म्म करनाही चाहिये, क्योंकि विना कर्म्म किये स्थावरों (नहीं चलनेवालों) को छोड़कर कोईभी जीता नहीं रह सकता। हे युधिष्ठिर! जिस दिन गायका बच्चा उत्पन्न होता है, उस

दिनसे अधीना, यह सब कर्म्मोंकी वृत्तियोंको प्राप्त होता है। हे भरतकुलसिंह जङ्गमों (चलनेवालों) में विशेषकर अपने कर्म्मके फलोंको पानेकी इच्छा इस लोक और परलोकमें करते हैं। हे भारत! सब प्राणी अपनी प्रारब्धको भोगते हैं, और कर्मके फलोंको जगत्के सामने प्रत्यक्ष भोग करते हैं। ईश्वर और धर्म्मभी कर्म्मके अनुसारही फल देता है। सब प्राणी अपने अपने प्रारब्धको भोगते हैं। देखो यह बगुला भी जलमें अपने कर्म्मका फल भोग रहा है। विना कर्म्म किये हुए किसी प्राणीको प्रवृत्ति कहीं नहीं होती, अतएव पुरुषको उचित है, कि कर्म्म करे और उसका नाश न करे। सो तुम ग्लानि मत करो, उभी कर्म्मको करो। जो कर्म्म करता है, वह फलको पाता है, उसका कार्थ्य और धनवृद्धि होती है। यदि हिमाचलमेंसे निरन्तर हिम काटा ही जाय, तो एक दिन वह भी नष्ट हो सकता है। यदि जगत्में कर्म्म न किया जाय तो सब प्रजा नष्ट हो जायं, और यदि कर्म्मका फल न हो, तो यह सब प्रजा वर्द्धित न हों। कहीं कहीं कर्म्मका फल मनुष्योंको नहीं भी दीखता है, क्योंकि लोकमें कोई भी उलटी प्रीतिको नहीं प्राप्त होता। जगत्में जो मन्त्र और आपवादोंसे कर्म्मसिद्धिका निश्चय करते हैं, और जो नास्तिक हठवादी हैं, यह दोनों कर्म्मोंसे बुद्धिको प्रधान मानते हैं। जो मूर्ख कर्म्मके भरोसे विना यत्न किये सुखसे पड़े रहते हैं, वह वैसेही नष्ट होते हैं जैसे कच्चा घड़ा पानीमें पड़नेसे। जो बुद्धि समर्थ होने परभी उपाय नहीं करते, वे दुर्बल अनाथके समान बहुत काल नहीं जीते। जिस किसीको अकस्मात् कहींसे धन मिल जाता है, उसको लोग हठ कहते हैं, क्योंकि वह किसीका यत्न नहीं करता है। हे कुन्तीनन्दन! पुरुष जिसका नाम प्रारब्ध

कहते हैं, जो देवताओंके आराधनसे होती है, निश्चय करके उसहीको दैवभी कहते हैं। जिस फलको जगत्में पुरुष अपना कर्म्म करके प्रत्यक्ष प्राप्त करता है उसे पुरुषार्थ कहते हैं। हे पुरुषोत्तम जो कर्म विना कारणके स्वभावहीसे होजाय उसे स्वाभाविक जानो। इस प्रकारसे हठ दैव, स्वभाव और कर्म्मसे पुरुषको जो जो फल प्राप्त होते हैं, सब पूर्व्वजन्मके फल हैं। सब प्राणियोंके ईश्वर ब्रह्मा भी उन हेतुओंसे पुरुषोंके कर्मोंको अलग करके प्राणियोंको भुगवाते हैं। इस जगत्में पुरुष जो कुछ शुभ और अशुभ कर्म्म करता है; वह सब पूर्व्व जन्मका फल है। इसका कारण देहही है। ब्रह्मा प्राणिको कर्म्मके अनुसार फल देते हैं, और वह उसको अवश होकर भोगता है। हे कुन्तीनन्दन! परमेश्वर सब प्राणियोंको उनही कर्मोंको भुगाते हैं और वह भी अवश होकर उसही को भोगता है, जो इसके किये हुए हैं। हे वीरपुरुष! बुद्धिपूर्व्वक पहिले मनमें निश्चय करता है, पश्चात् उसहीका कर्म्मसे करता है अतएव इसका कारण जोत होता है। हे पुरुषसिंह! मैं कर्मोंको गिनवानेमें असमर्थ हूं, परन्तु घर और नगर अच्छा वा बुरा मिलना यह कर्म्मका फल है। बुद्धिमान पुरुषको इसकी सिद्धिका उपाय अपनी बुद्धिसे ऐसेही निश्चय करना चाहिये—जैसे तिलमें तेल, गायमें दूध और काठमें अग्नि है। पश्चात् उनके कारणोंसे उसकी सिद्धिमें पुरुषकी प्रवृत्ति होती है, परन्तु सिद्धि कर्म्मके फलके अनुसारही होती है। विशेष कर्म्ममें यह ज्ञान होता है, कि यह कुशलसे किया है, अतएव कर्त्ताको साधुता-पूर्व्वक प्राप्त हुआ है, और अमुक कर्म्म अकुशलतासे किया गया है। यदि पुरुष कर्म्मसाध्य विषयमें कारण न होता, तो उसे यज्ञ और तड़ाग आदि कर्म्मका फल कोई न होता, और कोईका किसी गुरु शिष्य न होता। पुरुष कर्म्म

करनेमें प्रधान है, अतएव कर्म्मकी सिद्धि और नाशमें उसहीकी प्रशंसा और निन्दा होती है। सब कर्मोंकी कोई हठसे, कोई प्रारब्धसे और कोई कोई उपायसे कर्म्मकी सिद्धि बतलाते हैं, यह तीन प्रकारका भेद कहा है। कोई कोई कहते हैं यह सब ठीक नहीं है, क्योंकि हठ और दैव दोनोंही अदृश्य हैं, किन्तु जगत्में अर्थ प्राप्ति कुछ हठ और कुछ दृश्य अर्थसे होती है, इससे यह निश्चय हुआ, कि अर्थसिद्धिमें प्रारब्ध, हठ और स्वभाव तीनोंही कारण है। तत्वदर्शी पण्डित लोग जानते है, कि इन तीनोंको छोड़-कर चौथा कारण और कुछ नहीं है। ईश्वरभी प्राणियोंकी इसहीके अनुसार इष्ट वा अनिष्ट फल देता है। यदि ऐसा न हो, तो कोईभी पुरुष कृपण न हो। यदि प्रारब्ध न हो, तो पुरुष जिस जिस कामकी इच्छासे जो कर्म्म करता है वह सबही सिद्ध होने चाहिये। जो पुरुष ऊपर कहे तीनों उपायोंके द्वारा अपने कार्य्योंकी सिद्धि और असिद्धिको नहीं देखते है, वह लोग मरी हुई देहके समान जड़ है। भगवान् मनुका यह निश्चय है, कि सदाही कर्म्म करना चाहिये, क्योंकि कर्म न करनेसे पुरुष चेष्टाहीन हो जाता है। हे युधिष्ठिर। इस लोक में कर्म्म करनेसे फलसिद्धि अवश्यही होती है, परन्तु आलसी लोग इसको नहीं मानते। हे राजेन्द्र! यदि कर्म करनेसे सिद्धि न हो, तो उसको जाने, कि यह हमारे पूर्व्वकर्म्मफलका प्रायश्चित्त था, अब इसके करनेसे हम उऋण हो गये। जो आलसी सोता रहता है, वह अवश्य दरिद्री होता है, और जो उद्योगी कर्म करता है, वह अवश्य उसके फलको प्राप्त करके सुख भोगता है। जो संशयरहित धीरलोग है, वे लग संशय-युक्त लोगोंकोही अर्थ रहित जानते है, निःसंशय व्यक्तिको कदापि अर्थरहित उहीं समझते हैं। सो आज कल हमलोग अतिशय करके अनर्थमें पड़े है, इस अनर्थ निवारणकी उपाय यदि आप कुछ कर्म करते होते, तो यह अवस्था हम लोगोंको न होती। यदि आपके अनुष्ठित कर्म्मसे कार्य्यसिद्ध न हो, तो वही, भीम, अर्ज्जुन, नकुल, सहदेव और आपको भी राज्य अप्राप्तिका सम्पूर्ण रूपसे प्रमाण कहके बोध होगा, तो राज्यकी आशा त्यागके उद्वेग रहित हो सकते हैं। जैसे अन्यान्य लोगोंका कर्म्म सफल होता दीखता है, वैसेही हम लोगोंका भी होसकता है, परन्तु बिना कर्म्म किये पहिले वह कैसे निश्चय बोध होगा? कर्म्म करनेवालाही कर्म्म करने पर उसका उचित फल जान सकता है। जैसे हलसे भूमिको जोतकर किसान बीज बोता है, और दैवको कारण समझके चुप चाप बैठा रहता है, यदि बृष्टि न हो तो किसानका क्या दोष है? इससे ज्ञात होता है, कि दूसरे कारणसे भी फलकी सिद्धि होती है। बुद्धिमान् पुरुषको उचित है, कि यह मेरा अपराध है, और यह नहीं है, यह विचारकर आत्माको दोष न दे। हे भारत! इस कर्मके करनेमें हमको सिद्धि नहीं होगी, ऐसा समझ-कर पुरुषको पहिलेही कर्मसे निवृत्त नहीं होना चाहिये, क्योंकि इसमें दो कारण दूसरे होते है, सिद्धि, असिद्धि, प्रवृत्ति और अप्रवृत्ति इत्यादि। अनेक भाव मिलकर कर्मकी सिद्धि हुआ करती है। यदि पुरुषमे गुण ही न हो, तो कर्मका फल थोड़ा अथवा नहींभी होता है, और जब आरम्भ ही न किया जाय, तो फल और गुण दोनोंही नहीं दीखते हैं। जो बुद्धिमान् पुरुष देश, काल, उपाय, मङ्गल और स्वस्तिको कर्म सिद्धिमें शक्तिके अनुसार प्रयोग करता है, उसको सिद्धि प्राप्त होती है। इन सब कर्मोंमें पराक्रमही उपदेश करनेवाला है, अतएव पराक्रमही कर्मका कारण दीखता है। बुद्धि-मान् पुरुष जहांपर अनेक गुणोसे अपने कल्या-णको देखे, तहां शान्तिहीसे कर्मसिद्धिका

उपाय करे। हे युधिष्ठिर! यदि वह कर्म शान्तिसे न सिद्ध हो, तो शत्रुके दुःख और परदेशके समयको देखता रहे, ऐसा करनेसे समुद्र और पर्व्वतको जीत सकता है, पुरुषोंकी क्या कथा है। प्रारब्धसे युक्त पुरुष सदाही शत्रुके छिद्रको देखता है, वह अपनेको और शत्रुको दोनोंहीको ऋण रहित करता है। पुरुषको उचित है, कि अपनेको कभीभी छोटा न समझे, क्योंकि अपना निरादर करनेसे कभीभी उत्तम कर्मकी सिद्धि प्राप्त नहीं हे भारत। इस प्रकार यह कर्मसिद्धिकी होती। व्यवस्था कही, परन्तु इसकी सिद्धि कालके अनुसारही होती है। हे भरतकुलसिंह! मेरे पिताने एक पण्डित ब्राह्मण को पहले समयमें घरमें रक्खा था, उसीने यह सब कहा था। जब ब्राह्मण मेरे भाइयोंको बृहस्पतिकी कही हुई नीति पढ़ाता था, तब मैंने भी घरमें अपने भाइयोंके पास बैठकर यह सब सुना था। हे युधिष्ठिर! जब मैं पिताकी गोदमें सुननेको इच्छासे बैठी थी, तब उस ब्राह्मणने सान्त्वना सहित मुझको यह सब पढ़ाया था।

३२ अध्याय समाप्त।

वैशम्पायनमुनि बोले, द्रौपदीका यह वचन सुनकर परम क्रोधी भीमसेन क्रोधकर राजाके पास आकर ऐसा कहने लगे, सत्पुरुषोंके योग्य धर्म्मसे युक्त राज्यको प्राप्त कीजिये; धर्म्म, अर्थ और कामसे हीन होकर हम लोगोंको तपस्वियोंके समान वनमें रहना उचित नहीं। दुर्य्योधनने हमारे राज्यको धर्म, साधुता और [illegible] नहीं लिया केवल कपटसे लेलिया [illegible] इसने हमारे राज्यको इसही प्रकारसे [illegible] सिंहका भोजन सियार, बलवानका [illegible] मांसका भाग कुत्ता लेता है। [illegible] रहित राज्यके लेने कि शक्ति इन्द्रको भी नहीं थी, परन्तु आपके कर्त्तव्यसे हमलोगोंके जीतेही हमारा राज्य इस प्रकारसे छिन गया, जैसे लूलेका बेलफल और लंगड़ेकी गाय छिन जाती है। हे भारत! आपकी धर्मलाभमें निश्चय युक्त जानकर आपकी प्रीतिकी इच्छासे हमलोग इस महा दुःखको सहते हैं। हे भरतकुलसिंह! आपकी आज्ञासे अपने शरीरको वशमें करके हमलोग अपने मित्रोंको दुःखी और शत्रुओंको आनन्दित कर रहे हैं। आपकी आज्ञाके अनुसार हम लोग जो धृतराष्ट्रके पुत्रोंको नहीं मारते यह हमारे पापका फल प्रत्यक्ष हो रहा है। आप अपनी इस हरिणोंके समान दुर्दशाको देखिये। हे राजन्! यह दुर्व्वलोंकी दशा है, कदापि बलवान् इसमें नहीं पड़ते। इस दशाको कृष्ण, अर्ज्जुन, अभिमन्यु, समस्त सृञ्जय वंशी, मैं, नकुल और सहदेव कदापि अच्छी नहीं कहते। हे राजन्! आप धर्म धर्म ऐसेंही बकते हुए सदा व्रतोंसे दुःखी होकर ग्लानि पाकर नपुंसकोंकी जीविकामें पड़े हैं। दुष्ट असमर्थ मनुष्य लोग अपने प्रयोजनको नाश करनेवाली ग्लानिको प्राप्त करके लक्ष्मीप्राप्त करनेकी इच्छा करते हुए अपने प्रिय कार्य्योंको करते हैं। हे राजन्! आपतो तत्वदर्शी हैं और हम लोगोंके पुरुषार्थको देखनेवाले हैं, सो आप निर्लज्जता धारण करके अनर्थकी ओर दृष्टि नहीं करते। धृतराष्ट्रके पुत्रलोग हम लोगोंको क्षमा करने पर असमर्थ समझते हैं, इस दुःखसे युद्धमें मरना अधिक नहीं है, क्योंकि यदि युद्धमें हमलोग धर्मके सहित सब मर जायं तो अच्छा होगा, क्योंकि मरकर उत्तम लोकोंको प्राप्त करेंगे। हे भरतर्षभ! अथवा इन सबको मारकर हम लोग समस्त पृथ्वीको प्राप्त करेंगे, तौभी हमारा कल्याणही होगा, अधिक कौन्तिको रखनेवाले वैरका बदला लेनेकी इच्छायुक्त अपने धर्ममें

स्थिर हम लोगोंको सर्व्वथा युद्धही करना चाहिये, दूसरोंके राज्य छीन लेने पर, अपने निमित्त युद्ध करना भी प्रशंसाही है; निन्दा नहीं। हे राजन्! जिससे मित्र और अपनी हानि हो, वह धर्म्म नहीं है, क्योंकि उससे अधर्म्म बढ़ता है, हे तात। जिस प्रकारसे मरे हुएको सुख और दुःख छोड़ देते हैं, तैसेही धर्म्ममें दुर्व्बल नित्य अधर्म्मी पुरुषको धर्म्म और अर्थ छोड़ देते हैं। जिसका धर्म्म धर्म्महीके लिये है, वह पण्डित नहीं किन्तु क्लेशको भागी है, और वह धर्म्म इस प्रकार नहीं जानता तैसे अन्धा सूर्य्यकी किरणको। जिसका कर्त्तव्य केवल अपनेही वास्ते है, वहभी अनर्थका पण्डित है, जैसे वनमें जीवकी रक्षा करनेवाला राजाका नौकर। जो निन्दित पुरुष अत्यन्त लोभी महालोभ करता है, और मोक्ष तथा कामको नहीं देखता है, वह ब्राह्मणके मारनेवालेके समान मारडालनेके योग्य है। जो निरन्तर कामहीको देखता है, अर्थ और धर्म्मपर दृष्टि नहीं देता, उसके मित्र, अर्थ और धर्म्म सब नष्ट हो जाते हैं। अर्थ उस धर्म्मसे हीन पुरुषका नाश होजाता है, जैसे पानी नष्ट होनेसे मछली मर जाती है। इस कारण पण्डितलोग धर्म्म और अर्थको नष्ट नहीं करते हैं, जैसे अरणीसे आग उत्पन्न होती है, तैसेही इससेभी काम उत्पन्न होता है। धर्म्मसे अर्थ और अर्थसे धर्म्म होता है, इन दोनों का ऐसाही सम्बन्ध है, जैसे मेघ और समुद्रका। धनकी प्राप्तिमें जो इच्छा होती है, वही सङ्कल्प कहाता है, इसका कुछ शरीर नहीं है। हे राजन्! धनको चाहवाला पुरुष बढ़नेवाले धर्म्मको चाहता है, और कामको चाहनेवाला मनुष्य धनको चाहता है, कामके सिवाय और किसी चीजको नहीं देखता, क्योंकि कामसे दूसरा काम सिद्ध नहीं हो सकता। पण्डितोंने कहा है, कि जैसे काठसे जलकर भस्मही होती है, वैसे कामसे दूसरा काम सिद्ध नहीं होता। हे राजन्! जिस प्रकारसे वधिक पक्षियोंको पकड़कर मारता है, तैसेही अधर्म्मभी प्राणियोंका नाश करता है। जो दुर्बुद्धि काम और लोभके वशमें होकर, धर्म्मकी ओर ध्यान न दे, वह, इस लोक और परलोकमें सब प्राणियों करके मारने योग्य है। हे राजन्! आप कामके संग्रहको अच्छी प्रकार जानते हैं, और इसके उत्पत्ति एव नाशकोभी जानते हैं। हे राजन्! उसके नाश और प्राप्तिके विच्छेदसे बूढ़ा और मरनेसे जो अनर्थ होता है, सो हम लोगोंमें प्राप्त है। पांचों इन्द्रिय मन और हृदय इनको विषयोंमें चलानेसे जो आनन्द होता है, मेरी बुद्धिमें उसेही काम कहते हैं, यहभी कर्म्महीका फल है। इस प्रकारसे अर्थ, धर्म्म और कामको विचारकर पुरुषको उचित है, कि अर्थ, धर्म्म और कामोंमेंसे एकहीकी सेवा न करें, किन्तु सदैव सबको धारण करता रहे। शास्त्रको यही विधि है, कि दिनके पहले भागमें धर्म्म, मध्यमें धन और अन्तभागमें कामको चिन्ता करना चाहिये ऐसेही सब दिन व्यवहार करना उचित है। और यहभी शास्त्रको बिधि है, कि अवस्थाके पहले भागमें काम मध्यमें धन, और अन्तमें धर्म्म करना उचित है। हे बक्ताओंमें श्रेष्ठ! समय जाननेवाले पण्डितको उचित है, कि अर्थ, धर्म्म और कामको समयके अनुसार करें। हे महाराज कुरुनन्दन! सुख चाहनेवाले पुरुषोंके लिये लोभ ही सबसे उत्तम पदार्थ है, बुद्धिको स्थिर करके उसहीका उपाय करना चाहिये। हे राजन्! आप शीघ्रही मोक्षका उपाय कीजिये वा राज्य प्राप्तिमें यत्नवान हूजिये; क्योंकि रोगीके समान जो नर केवल दुःखहीका साधन है, मै आपके धर्म्म और चरित्रको जानता हूं, परन्तु आपको योग्य समझकर धर्म्मसे प्रेरित होकर आपसे मित्र लोग ऐसा

कहते हैं। हे राजन्! इसलोक और परलोकमें दान, यज्ञ, पण्डितोंकी पूजा, वेद पढना और साधुता यही उत्तम बलवान धर्म्म है। हे राजन्! हे पुरुषसिंह! इन सब धर्म्मोंको और सब गुण रहनेपरभी धनहीन पुरुष नहीं कर सकता। राज्य धर्म्मसे होता है, धर्म्मसे उत्तम और कोई वस्तु नहीं है और धर्म्म विना अधिक धनके नहीं हो सकता। हे राजन्! धन भीख मांगने अथवा नपुंसकतासे कदापि प्राप्त नहीं हो सकता, वह केवल धर्म्मवुद्धिहीसे मिलता है। हे पुरुष शार्द्दूल आपका भिक्षा मांगना अनुचित है। क्योंकि यह ब्राह्मणका कर्म्म है। इससे धन प्राप्त करनेका उपाय कीजिये. क्षत्रियको भीख मांगना वर्जित है और शूद्रकी जीविका करना अनुचित है। क्षत्रीका धर्म्म केवल अपना बलही है। हे कुन्तीनन्दन! अपने धर्म्मको ग्रहण करके धृतराष्ट्रके पुत्र तथा अन्य और इष्ट शत्रुओंको सबके सङ्ग लेकर नाश कीजिये। विद्वान, बुद्धिमान महात्माओंमें ऊंचे बनिये, क्योंकि आप भीरुताके योग्य नहीं हैं। हे राजेन्द्र! जाति और सनातन धर्म्मको जानिये. आप अत्यन्त [illegible] उत्पन्न हुए हैं, जिससे सब जगत् डरता है। हे महाराज! आपके लिये ब्रह्माने प्रजा पालनही सनातन धर्म्म बनाया है वनवास नहीं। [illegible] इस [illegible] आप हीन होकर [illegible] मनुष्यों को अपनेही [illegible] उचित है। हे कुरुनन्दन! [illegible] इस शिथिलताको छोड़कर क्षत्रिय [illegible] हृदय [illegible] नसको ग्रहण करके [illegible] धारण कीजिये। हे राजन्! [illegible] केवल धर्म्मसे पृथ्वीको नहीं [illegible] किया. [illegible] पकड़ता है [illegible] भोजनको [illegible] देकर [illegible] चाहिये। [illegible]

उत्पन्न भये और खूब बढ़े हुए भाई दैत्योंको देवतोंने छलहीसे जोता था। हे राजशार्द्दूल! बलवानहीको सब पृथ्वी मिलती है, यह जानकर आप परम छल करकेभी शत्रुओंको जीतिये। हे राजन्! अर्ज्जुनके समान धनुर्धारी और मेरे समान गदाधर कोई पुरुष न है, और न होगा। हे राजन्! हे पाण्डव! अत्यन्त बलवान पुरुष भी बलसे युद्धकर सकता है, अतएव आप प्रमाण और उत्साहसे शत्रुओंसे सन्धि करनेके विचारमें मत पड़िये, बलही धनका मूल है. और अनुत्साह इससे उलटा अर्थात अनर्थका मूल है,जैसे जाड़ेमें वृक्षको छाया सुखदाई नहीं होती। हे कुन्तीनन्दन! धनकी इच्छा करने वाले पुरुषको वीजके समान धनको छोड़नाभी होता है; इसमें आपका कुछभी सन्देह न हो, कि जहां उन्नति न हो तहां अनर्थभी अर्थके समान होता है। वहां प्रतिज्ञा नहीं करनी चाहिये, वह प्रतिज्ञा केवल गधेको खुजलानेके समान होती है। हे मनुष्येन्द्र! जो पुरुष इस प्रकारसे प्रतिज्ञारूपी थोड़े धर्म्मको छोड़ देता है, सो बहुत बड़े धर्म्मको प्राप्त होता है, और वही पण्डितभी कहा जाता है। पण्डितलोग मित्र साधन शत्रुको मित्रोंसे भेदकर देते हैं, तब मित्रोंसे प्राप्त हुए मूर्ख शत्रुको वशमें कर लेते हैं। हे राजन्! बलवान पुरुषभी बलहीसे युद्ध करता है, क्योंकि उद्यम और प्रियवाक्यसे राजाके वशमें प्रजा नहीं होती। हे राजन्! जिस प्रकारसे बहुतसी मधुमक्खी इकट्ठी होकर मधु लेनेवाले पुरुषको व्याकुल कर देती हैं, इसी प्रकारसे दुर्बल लोगभी इकट्ठे होकर बलवान शत्रुको मार सकते हैं। हे महाराज! जिस प्रकार सूर्य्य अपनी किरणसे प्रजाकी रक्षा और नाश करता है, तैसेही आपभी सूर्य्यके समान होइये। हे राजन्! विधिपूर्व्वक प्रजाका पालनही सनातन तप है, हमारे पितामहने

किया था। हे राजन्। अत्यन्त तपस्या करनेसेभी क्षत्रियको वैसी गति नहीं मिलती, जैसे युद्धमें विजय पाने अथवा मरनेसे मिलती है। आपकी इस आपत्तिको देखकर जगतमें यही निश्चय हुआ है, कि सूर्य्यसे तेज और चन्द्रमासे चांदिनीभी छूट सकती है। हे राजन्। आपकी प्रशंसा और दुर्य्योधनकी निन्दाके अर्थ अनेक स्मर इस जगतमें अलग अलग हो रहे हैं। हे राजन्। आपने जो मोह, कृपणता, लोभ, भय और कामके कारणसे असत्य नहीं कहा, इसहीकी अधिक प्रसन्न होकर ब्राह्मण और कौरव लोग एकता पूर्व्वक मिलकर कह रहे हैं; सत्यसन्धता इसहीको कहते हैं। हे राजन्! पृथिवीके प्राप्त करनेमें राजा जो कुछ पाप करता है, सो सबके पीछे अधिक दक्षिणावाले यज्ञोंको करनेसे नष्ट होजाते हैं। जिस प्रकार अन्धकारसे चन्द्रमा छूटता है, इसही प्रकारसे राजाभी ब्राह्मणोंको सहस्रों गाव देकर, पापसे छूट जाता है। हे कुरुनन्दन, युधिष्ठिर! पुर और राज्यवासी प्रायः सबही बूढ़े और बालक मिलकर आपकी प्रशंसा कर रहे हैं। जिस प्रकार चमड़ेकी कुप्पीमें दूध, जैसे दोगलेमें वेद, जैसे चोरमें सत्य और जैसे स्त्रीमें बल होता है, वैसेही दुर्य्योधन में राज्य भी है, इस समय स्त्री और बालक भी सबके आगे ऐसाही कहते हैं। हे शत्रुनाशन! हमलोगोंके सहित आप इस अवस्थाको प्राप्त हुए, अतएव हम सब मरे हुएके समान हैं; जिनके देखते आप इस उपद्रवमें पड़े हैं। हे महाराज! सो आप सब शस्त्रोंसे युक्त रथ पर चढ़ करके ब्राह्मणोंको धन देनेकी इच्छा करके वेग सहित युद्धको चलिये। सब अस्त्रोंके जाननेवाले दृढ़धनुषयुक्त भाइयोंके समेत ब्राह्मणोंसे स्वस्तिवाचन सुनके इसही समय हस्तिनापुर पर चढ़ाई कीजिये। जिसप्रकार वृत्रासुरके मारनेवाले इन्द्र अपने भाई मरुतोंके समेत अपने शत्रुओंको जीतते हैं, हे महाबल कुन्तीनन्दन। वैसेही आप भी धृतराष्ट्रके पुत्रोंको मारकर लक्ष्मीको प्राप्त कीजिये। गिद्धके पंखोंसे युक्त सांपके समान विषसे भरे हुए गाण्डीव धनुषसे छूटे हुए बाणोंके स्पर्शको जगत्में कौन सह सकता है? हे भारत। जगतमें कोई मनुष्य, हाथी, घोड़ा ऐसा नहीं है, जो वेगसे लगी हुई मेरी गदाकी चोटको सह सके। क्या हम लोग सृञ्जय केकय और वृष्णिकुलसिंहकी सहायता लेकर युद्धसे राज्यको प्राप्त नहीं कर सकते हैं? हे राजन्। हमलोग श्रीकृष्णका बल लेकर और महासेनाके सहित होकर क्या शत्रुके हाथमें गयी हुई पृथ्वीको नहीं ले सकते हैं?

३३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महानुभाव सत्यव्रत, अजातशत्रु, महाराज युधिष्ठिर भीमसेनका यह वचन सुननेके पीछे धैर्य्यके साथ ऐसा कहने लगे। युधिष्ठिर बोले, हे भारत। तुम जो वचन रूपी बाणोंसे मेरे शरीरको पीड़ा देते हुए क्षीण करते हो, सो निःसन्देह तुमको उचितही है, मैं तुम्हारी निन्दा नहीं करता, क्योंकि मेरीही दुष्टतासे तुम लोग दुःखमें पड़े हो; मैं धृतराष्ट्र पुत्रसे राज्य लेनेकी इच्छा करके जुआ खेलने लगा था, परन्तु दुष्ट कपटी शकुनिने दुर्य्योधनके सुखकी इच्छासे मुझसे छल किया, वह पापी पर्व्वत देशीय शकुनी महाछली है। उसने सभाके बीचमें मायारहित मुझको पासेसे जीत लिया। हे भीमसेन। इसही निमित्त तुम बनमें बसे हो, सभामें शकुनिके विषम और सम पासोंको इच्छाके अनुसार देखकर अपने वशमें रहनेकी शक्ति मुझमें न रही, क्योंकि क्रोध पुरुषके धैर्य्यको नाश कर देता है। हे भीमसेन। शरीर, पुरुषार्थ, अभिमान और वीर्य्यसे बंधने पर वशमें नहीं रह सकता,

हम तुम्हारे वचनकी निन्दा नहीं करते, परन्तु यह कहते हैं, कि यह वात ऐसेही होनी थी। हे भीमसेन। उस धृतराष्ट्रके पुत्र राजा दुर्य्योधनने राज्यकी इच्छा करके हमको इस दुःखमें डाला और दासभी वनाया। जहां द्रौपदीही शरण हुई थी, तुम और अर्ज्जुनभी इस वातको जानते हो कि हमको सभामें दूसरीवार वुलाकर कहा था, कि हे राजपुत्र! हे अजातशत्रो! अव एकही दावपर यह पण करो कि यदि तुम हारो तो भाइयोंके सहित अपनी इच्छानुसार वारह वर्ष वनमें वास करो, और तेरहवें वर्षमें सव भाइयोंके सहित गुप्त रूपसे रहो, हे भारत। हे तात। तुमको गुप्तरूपमें रहते हुए हमारे दूत ढूढ़ेंगे, यदि कहीं देख लेंगे, तो पुनः वारह वर्ष इसही प्रकार पुनः वनमें रहना होगा, हे कुन्तीकुमार! आप निश्चय करके इसको समझ लीजिये। हे भारत! यदि आप हमारे दूतोंको छलकर उनकी पहचानमें न आवेंगे तो हम कौरवोंकी सभामें सत्य कहते हैं, कि वे पांचों नदीयुक्त देश आपहीके होंगे। हे भारत! यदि हमलोग आपसे हारें तो ऐसेही वनमें वासकर भोग करेंगे, उस राजाने कौरवोंके आगे सभामें मुझसे ऐसा कहा था, तव नीच जुआ हुआ, इसमें हमलोग हार गये और सव वनको निकाले गये; इस प्रकार इन देशोंमें दुःखसे दरिद्रोंके समान वनमें घूमते हैं, इतने परभी दुर्य्योधनको शान्ति प्राप्त न हुई और अपने वशमें स्वइंगियोंको हमारे मारनेकी इच्छासे [illegible] वशमें होके युद्धको सन्नद्ध किया। [illegible] परिडतोंके आगे सन्धि करके कौन[illegible] तोड़ सकता है, जो धर्म्मको नाशकर [illegible] करता है, उस राज्यसे उत्तम पुरुषका [illegible] अच्छा है। हे वीर! जिस समय उसने [illegible] परिडको मारा था, उसी समय [illegible] कर्म करना उचित था, तव तुम्हें मेरा हाथ जलाते हुए अर्ज्जुनने निवारण किया था, तभी तुम्हें क्या पाप हुआ था? तुमने प्राप्तकालकी कृपा और पुरुषार्थको जानकर आपत्तिको स्वीकार करकेभी उस समय क्या नहीं कहा था? अव समयके पश्चात् हमको अतिशय कठिन वार्त्ता क्यों वोलते हो। मैं द्रौपदीको दुःखित देखकर जहरके रस पीये हुएके समान तप्त होनेपर भी शान्त हूं। हे भरतवीर! हम कौरवोंकी सभाके वीचमें प्रतिज्ञा करके उसको नष्ट करनेमें समर्थ नहीं हैं। अतएव तुमको उचित है, कि अपने सुखके समयकी प्रतिज्ञा करो; जैसे माली फलके पकनेके समयको देखता है। जव वीर अपने शत्रुको फलपुष्पके सहित दृढ़ होनेपर नाश करता है, तो उसको अपने वलसे महागुण प्राप्त होता है, और वही वीरलोकमें जीवित रहता है; उसही वीरको जगतमें समस्त लक्ष्मी प्राप्त होती है। शत्रु उसहीसे नीचे होते हैं, जैसे देवता इन्द्रकी सेवा करते हैं, तैसेही मित्रलोगभी जीविका पाकर उसकी सेवा करते हैं। मेरी इस सत्य प्रतिज्ञाको सुनो, मैं अमृत, जीवन, राज्य, पुत्र, यश, धन और सव वस्तुओंको धर्म्मकी एककलाके समानभी नहीं समझता हूं।

३४अध्याय समाप्त।

भीमसेन वोले, हे महाराज। सन्धि होनेके कालकी प्रतीक्षा करना तो ठीक है, परन्तु कालरूपी अप्रमेय पक्षीसे और सर्व्वनाशक अनन्त प्रवाहसे कौन वच सकता है? आप प्रत्यक्ष देखते हैं, कि सव मनुष्य कालके वन्धनमें वंधे हैं, और काल भी प्रत्यक्ष है, मनुष्यलोग फल और फेनके समान अनित्य हैं, हे कुन्तीनन्दन! जिस प्रकारसे सरसा सईके लगनेमभी गिर जाता है, तैसेही पुरुषकी आयु थोड़े समयमेंही नष्ट होती है। तव पक्ष पर्य्यं

कार्य्योंको किसप्रकार कर सकता है? या तो पुरुष अपने आयुके कालको ठीक जाना हो सो समयकी प्रतीक्षा कर सकता है, हे राजन्। समयकी प्रतीक्षा करते करते हम लोगोंकी अवस्थामें से तेरह वर्ष कम हो जायंगे और मरने का समय समीप आजायगा, यह आप जानते हैं कि शरीरवालोंको मरना अवश्य है; अतएव मरनेके पहलेही राज्य प्राप्तिका यत्न करना अवश्य है। जो भूमि भाररूप पुरुष इस मेरी बातको अनुचित मानता है, सो वैरका बदला न लेकर गायके समान दुःखी होता है। जो पुरुष अल्पबल वीर्य्य होनेपरभी अपने वैरका बदला नहीं लेता, उस वृथा जन्मवालेका जन्म वृथाही है। आपतो नाथ, सुवर्णके स्वामी हैं, और आपकी कीर्त्ति पृथुके समान है, अतएव युद्धमें शत्रुको मारकर अपने हाथसे जीते हुए धनको भोग कीजिये, हे राजन्। हे शत्रुनाशन। छली वैरियोंको मारकर जो शीघ्रही नरकमें जाता है, वह नरकभी स्वर्गके समान है। हे महाराज। क्रोधसे उत्पन्न हुआ दुःख अग्निके दाहसेभी कठिन है, जिससे जलकर मैं न दिनको और न रातको सोता हूं। दुःखियोंमें जो सब लोकके धनुर्द्धारियोंका अपमान करता है, जो सब धनुष खींचनेवालोंमें श्रेष्ठ है, सो अर्ज्जुन अपने स्थानमें दुःखी सिंहके समान पड़ा रहता है, निश्चय यह अपने हृदयकी अग्निको बड़े हाथीके समान हृदयहीमें रखता है। नकुल सहदेव और वीर-प्रसविनी बूढ़ी माता आपहीके प्रियकेवास्ते मूर्ख और गंगेके समान वैठी हैं, सृञ्जयोंके समेत सब बान्धवलोग आपहीका प्रिय चाहते हैं। केवल मैं और द्रौपदी ही दुःखसे पीड़ित हूं,मैं जो कुछ करता हूं, सो सब आपका प्रिय हो है। हम सब दुःखसे व्याकुल और युद्धकी इच्छा रखनेवाले हैं। हे राजन्। इससे अधिक पापयुक्त आपत्ति और क्या होगी, कि नीच थोड़े बलवाले दुष्टलोग हमारे राज्यको छीन कर भोग करते हैं? हे परन्तप। हे राजन्। आप शीलरूपी दोषसे घिनमें पड़े हुए लज्जाके वशमें होकर क्लेशोंको सहते है, इसको कोई भी प्रशंसा नहीं करता। हे राजन्। जिसप्रकार वेदपाठी पण्डित मूर्ख और मन्दके समान आचरण करता है, तैसेही आपकी बुद्धि भी द्रव्यनाशिनी हो गयी है। यह बुद्धि परमार्थदर्शी क्षत्रियोंकी नहीं होनी चाहिये। तुम घृणासे युक्त ब्राह्मणके समान बने हो, तब क्षत्रियोंमें जन्म तुमने क्यों लिया था? क्योंकि इस जातिमें प्रायः कठोर बुद्धिवाले पुरुष जन्म लेते हैं। आपने मनुके कहे हुए राजधर्म, सबही सुने हैं, हे महाराज पुरुषसिंह। जैसे आप दुष्ट, मूर्ख और मन्दके समान आचरण करते हैं तैसेही आपकी बुद्धि भी द्रव्यनाशिनी हो गई है। यह बुद्धि परमार्थदर्शी है, हे पाण्डुनन्दन। जैसे सूर्य्य आकाशमें छिप कर नहीं घूम सकता है, वैसेही जगत्में विदित आप भी अपना रूप छिपाकर जगत् में नहीं रह सकते हैं, और फूलके समेत महाशाल वृक्ष जैसे बहुत जलवाले देशमें नहीं छिप सकता तैसेही आपभी नहीं छिप सकेंगे। जिसप्रकार सफेद हाथी जगत्में नहीं छिप सकता, तैसेही अर्ज्जुन भी छिपा हुआ नहीं रह सहता, यह सिंहके समान बलवान् बालक नकुल और सहदेव किसप्रकार छिपकर रहेंगे? हे पार्थ। यह जगत् विदित वीर राजपुत्री उत्तम कीर्त्तिवाली द्रौपदी कैसे छिप कर रहेगी, हे राजन्। यह समस्त प्रजा मुझको भी बालकपनसेही जानती है; सो मैं अपना छिप कर रहना भी ऐसेही जानता हूं, जैसे मेरु पर्वतको छिपाना। हे राजन्। हमने अनेक राजा और राजपुत्रोंको उनके राज्यों से निकाल दिया है, वह अब दुर्य्योधन के सङ्गी हुए हैं। सो वह भी अब

शान्त न होंगे, वहलोग अवश्यही दुर्य्योधनकी प्रिय कामनासे हमारे विपरीत आचरण करेंगे, वहलोग अवश्य हमलोगोंकी ढूंढ़नेके निमित्त छिपे हुए दूतोंको भेजेंगे। जब वेलोग हमको जान लेंगे, तब हमको महाभय होगा, अभीतक हमको वनमें तेरह महीने बीते हैं, सो यही तेरह वर्षके समान समझने चाहिये; पण्डितलोगोंने कहा है, कि जैसे सोमकी प्रतिनिधि पूतिका होती है, वैसेही एक वर्षका प्रतिनिध एक मास होता है। अथवा साधुओंके वाहन बैलको भोजन देनेसे झूठ बोलनेका पाप नष्ट होता है, अतएव हे महाराज! आप शत्रुओंके मारनेमें यत्न कीजिये, क्योंकि सब क्षत्रियोंको युद्धसे अधिक धर्म्म कोई नहीं कहा है।

३५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, पुरुषोंमें सिंह शत्रुनाशन कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर भीमसेनके ऐसे वचन सुनकर सांस लेकर विचारने लगे, कि मैंने सब धर्म्म आपत्ति और सुखमें वर्णोंके निश्चय सुने हैं। परन्तु जो उनको देखता है, वही सबको देखता है, मैं कठिनतासे जानने योग्य धर्म्मकी गतिको भलो प्रकार जानता हूं? तब मेरुके समान दुर्य्योधनको किस प्रकार पीस सकता हूं, इस प्रकार एक मुहूर्त मात्र ध्यान करके और अपने मनमें निश्चय करके भीमसेनसे [illegible] बात कहने लगे।

युधिष्ठिर बोले, हे महाबाहो! हे भारत! [illegible] जाननेवाले भीम! तुमने जो [illegible] कहा। सो सब ऐसेही है, परन्तु मेरे इस [illegible] सुनो, हे भीमसेन! हे भारत! जो [illegible] केवल साहसहीसे किये जाते हैं, [illegible] दुःखदायी होते हैं। हे महाबाहो! [illegible] खूब विचारके उत्तम पुरुषोंसे [illegible] है, उनका प्रयोजन भलीभां-

सिद्ध होता है, परन्तु प्रारब्ध उससेभी रहती है, तुम जो केवल चञ्चलता और बलके अभिमानसे इस महाकार्य्यका आरम्भ करना चाहते हो, उससे मेरा विचार सुनो, देखो, उनकी ओर भूरिश्रवा, शल्य, बलवान जलसन्ध, भीष्म, द्रोण, कर्ण, बलवान अश्वत्थामा और दुर्य्योधन आदि धृतराष्ट्रकेपुत्र यह सबही दुखसे जीतनेयोग्य, अस्त्र शस्त्रोंको जाननेवाले, सदैव युद्ध करनेवाले हैं। और हम लोगोंसे दुःखित राजा और राजपुत्र कौरवोंसे मिले हैं, उनसे उनका प्रेम बड़ा बढ़ गया है, वह सब लोग जैसा दुर्य्योधन का हित करेंगे, वैसा हमारा नहीं। वह लोग धन और बलसे पूर्ण पुत्र और मन्त्रियोंके समेत सब भोगोंसे संयुक्त अपनी अपनी मात्राके अनुसार अलग अलग होकर युद्धमें अनेक यत्न करेंगे उनको दुर्य्योधनने अधिक माना है, अतएव मुझे निश्चय होता है, कि वह लोग युद्धमें अपना प्राणतक भी देदेंगे। यद्यपि भीष्म, द्रोण और कृपाचार्य्यकी वृत्ति उनमें और हममें समान है, तथापि मेरी बुद्धिमें वहलोग भी अवश्यही राजपिण्ड देगें, अतएव वह लोग अपने दुःखसे देने योग्य प्राणको भी युद्धमें दे देंगे। हे महाबाहो मेरी बुद्धिमें वह लोग सब शस्त्रोंके जाननेवाले हैं। इन्द्रके सहित देवता भी उनको नहीं जीत सकते। उनमें भी कर्ण सदाही क्रोध करनेवाला युद्धमें लोग सब अस्त्रोंका पण्डित अभेद्य कवचसे संयुक्त जीतने योग्य नहीं है। हे भीम। इन सब महावीरोंको युद्धमें विना जीते हुए सहायहीन तुम दुर्य्योधनको किस प्रकार मार सकते हो। हे वृकोदर! मैं इसी बातके सोचसे और कर्णका हस्त-लाघव और सब धनुर्धारियोंसे अधिकता विचारता हुआ रात और दिन नहीं सोता हूं।

वैशम्पायनजी बोले, महाराजके यह वचन सुनकर और सब ठीक समझकर [illegible] होके भीमसेन चुप हो गये। वहां पाण्डुपुत्र

युधिष्ठिर और भीमसेन इस प्रकारसे बात कर रहे थे, तहां सत्यवतीके पुत्र महायोगीश्वर व्यासदेव आये, आकर पाण्डवोंसे यथायोग्य पूजा पाकर कहनेवालोंमें श्रेष्ठ व्यासदेव युधिष्ठिरसे ऐसा कहने लगे।

व्यासदेव बोले, हे युधिष्ठिर! हे महाबाहो! मैं तुम्हारे हृदयकी बातको जानता हूं, यही विचाकर तुम्हारे पास शीघ्रतासे आया हूं। हे भरतर्षभ! भीष्म, द्रोणाचार्य्य कृपाचार्य्य, दुर्य्योधन, अश्वत्थामा और राजपुत्र दुःशासनसे जो भय तुम्हारे हृदयमें उत्पन्न हुआ है, हे शत्रुनाशन! उसको मैं विधिपूर्व्वक कर्म्मसे नाश करूंगा, तुम उसको सुनकर बुद्धिको स्थिर करके अपने कर्म्मसे ठीक करो। हे राजेन्द्र! उसको करके तुम अपने दुःखोंको नाश करो, तब पराशरके पुत्र महात्मा व्यासदेव युधिष्ठिरको एकान्तमें ले जाकर उत्तम अर्थ सहित वचनको कहने लगे। हे भरतसत्तम! तुम्हारे परम कल्याणका समय आया है, धनुर्द्धारी अर्ज्जुन युद्धमें सब शत्रुओंको जीतेंगे। मेरी दी हुई मूर्त्तिमती सिद्धिको ग्रहण करो। इस विद्याका नाम मति है, तुमको दुःखी जानकर देता हूं, जिसको प्राप्त करके महाभुज अर्ज्जुन सिद्ध करेगा। अस्त्र शस्त्र लेनेके निमित्त इन्द्र और शिवके पासभी जा सकेगा, हे पाण्डव! इसके तप और पराक्रमसे अर्ज्जुन वरुण, कुवेर और यम आदिक देवतोंकोभी देख सकेगा। यह महात्मा नर नामक ऋषि हैं; नारायण सदाही इनके सहायक हैं ये पुराने सनातन अजेय, और अच्युत देवता हैं, यह महाबाहु इन्द्र आदि लोकपाल और शिवसे शस्त्र लेकर बड़े बड़े कर्म्मको सिद्ध करेंगे। हे पृथिवीनाथ! हे कुन्तीपुत्र! अब आप इस वनको छोड़कर किसी दूसरे वनमें, जो आप लोगोंको प्रिय हो, उसमें निवास करें, क्योंकि एक स्थानमें बहुत दिन तक रहना अच्छा नहीं, और समस्त ऋषिलोगभी घवड़ा जाते हैं, हरिन, वृक्ष, और औषधियोंकाभी नाश हो जायगा, क्योंकि तुम अनेक ब्राह्मणोंको भोजन देते हो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि इस प्रकारसे सत्यवतीके पुत्र बुद्धिमान व्यासने कहकर पवित्र धर्म्मराजको विद्या दो और लोकके तत्वको जाननेवाले भगवान व्यासदेव युधिष्ठिरको आज्ञा देकर वहीं अन्तर्द्धान हो गये। महात्मा युधिष्ठिरने केवल मुखहीसे उस विद्याको स्मरण कर लिया था, अतएव बराबर स्मरणही करते रहे। तब व्यासदेवके वचनसे प्रसन्न होकर द्वैतवनसे सरस्वतीके तटपर वाले काम्यक वनको चले। हे महाराज! उनके सङ्गही जिस प्रकार इन्द्रके पीछे ऋषिलोग चलते हैं, तैसेही शिक्षा जाननेवाले सहस्रों ब्राह्मण उनके पीछे चले। हे भरतर्षभ! अनन्तर महात्मा पाण्डवलोग अपने मन्त्री और दल बलके समेत काम्यक वनमें निवास करने लगे। हे राजन्! वे लोग धनुर्वेदका अभ्यास करते हुए वेदको सुनते हुए शुद्धवाणोंसे हरिणोंका मारकर विधिके अनुसार पितर और देवतोंको तर्पण करते हुए कुछ दिन तक वहां वसे।

३६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, हे पुरुषसिंह जनमेजय! किसी दिन बैठे हुए धर्म्मराज युधिष्ठिरने महात्मा व्यासकी प्रशंसा करके कुछ हंसकर धर्म्म जाननेवाले अर्ज्जुनको हाथसे छूकर शान्ति पूर्व्वक ऐसा कहा। महात्मा धर्म्मराज वनवाससे दुःखित अर्ज्जुनको देखकर मुहूर्त मात्र ध्यान करते रहे; अनन्तर एकान्तमें ऐसा कहने लगे; युधिष्ठिर बोले, हे अर्ज्जुन! इस समय भीष्म, द्रोण, कृप कर्ण और अश्वत्थामामें चारों चरणसे धनुर्वेद उपस्थित है। वह लोग दैव, ब्राह्म और मानुष अस्त्र प्रयोगोंको यत्न और चिकित्साके समेत पूर्णरूपसे जानते

हैं। उन सबलोगोंकी दुर्य्योधनने खूब सेवा करी है; दुर्य्योधनने उन सबको विभाग करके सन्तुष्ट किया है, और गुरुके समान मानता है। दुर्य्योधनकी प्रीति सब योद्धाओंसे अधिक है, आचार्य्योंको उसने सन्तुष्ट किया है, अतएव वह लोग उसकी शान्ति चाहते हैं। वहलोग युद्धके समयमें अपनी शक्तिको उठा न रखेंगे। इस समयमें खान, वन, समुद्र, नगर और गांवके सहित सब पृथ्वी दुर्य्योधनके वशमें है। तुम हमारे अत्यन्त प्रिय हो और यह बोझाभी तुम्हारेही ऊपर है। हे शत्रुनाशन! इस समय जो करनेके लायक काम है, सो तुमसे कहते हैं, कि हे तात! कृष्णद्वैपायनने मुझे यह मन्त्र दिया है, जिसका प्रयोग करनेसे यह समस्त जगत् प्रकाशित होता है, हे तात! तुम उसी मन्त्रको लेकर उत्तम समय पाकर उग्र तप करके देवतोंके प्रसादको प्राप्त करो। हे भरतर्षभ! तुम धनुष, कवच और खड्गको धारण करके मुनिके समान होकर अपने जानेका स्थान किसीको न बताते हुए उत्तरकी दिशाको चले जाओ। हे धनञ्जय! इन्द्रके पास सब दिव्य अस्त्र हैं, क्योंकि वृत्रासुरसे डरकर देवतोंने सब शस्त्र इन्द्रको दे दिये थे, तुम उन सब शस्त्रोंको एकही स्थानमें पाओगे। तुम इन्द्रकी उपासना करो, वह तुमको सब शस्त्र देंगे। मैंने तुमको दीक्षित किया, तुम अभी चले जाओ।

वैशम्पायनजी बोले, महात्मा धर्म्मराज युधिष्ठिरने ऐसा कहकर अर्ज्जुनको वह मन्त्र बता दिया और उनको विधिपूर्व्वक दीक्षा दी. [illegible] भाई युधिष्ठिरने छोटेभाई वीर अर्ज्जुनको जानेकी आज्ञा दी. अर्ज्जुन धर्म्मराज-[illegible] पाय इन्द्रके देखनेकी इच्छासे [illegible] दी गाण्डीव ले कवच, तल- [illegible] पहन हवनसे इच्छि [illegible] पूजा कर ब्राह्मणोंसे [illegible] पुत्रोंके मारने और चलनेकी इच्छासे महाबाहु अर्ज्जुन धनुष लेकर आकाशकी ओर देखने लगे। कुन्तीपुत्र अर्ज्जुनको धनुष लेकर जाते हुए देखकर ब्राह्मण सुसिद्ध और अदृश्य देवता कहने लगे, हे कुन्तीपुत्र! तुम जो चाहते हो, उसे शीघ्र प्राप्त करो, ऐसा कहकर ब्राह्मणलोग अर्ज्जुनको जय आशीर्वाद देने लगे और बोले, कि हे कुन्तीपुत्र मन्त्र साधन करो, अवश्य तुम्हारीही विजय होगी। शालके समान कन्धावाले वीर अर्ज्जुनको जाते हुए देखकर सबके मनको ग्रहण करके द्रौपदी कहने लगी।

द्रौपदी बोली, हे कुन्तीनन्दन! तुम्हारे उत्पन्न होनेके समयमें तुम्हारे निमित्त कुन्तीने जो कुछ चाहा था, सो सिद्ध हो, और तुम जो कुछ चाहते हो सोभी सिद्ध हो। हम क्षत्रियोंके वंशमें भिक्षासे जीनेवाले कोई उत्पन्न न हो, ब्राह्मणोंको नमस्कार है। मुझको यह बड़ा दुःख है, कि जो पापी दुर्य्योधनने गौ कहके हंसी की थी, उससेभी यह अधिक दुःख है, कि उसने जो सभाके मध्य अनेक अयुक्त बात कही थी, उससेभी तुम्हारा वियोग अधिक दुःख जान पड़ता है, कि आजसे तुम्हारे भाई लोग तुम्हारेही कर्म्मोंकी कथाको कह कहके समय वितावेंगे। कुन्तीनन्दन। हम लोगोंको आगामि भोग, धन और जीविकासे सन्तोष नहीं होगा, क्योंकि हमारा सबका सुख तुम्हारेही अधीन है, और तुमही बहुत कालके लिये परदेशी होते हो। हे कुन्तीनन्दन! हमारा जीना मरना राज्य और ऐश्वर्य्य तुम्हारेही अधीन है, जाओ, और कुशलको प्राप्त करो। हे पापरहित! हे महाबल! तुम किसी बलवानके विरोध मत करना, शीघ्र विजयके निमित्त जाओ; ईश्वर तुम्हें [illegible] है, मैं परमेश्वर और [illegible] नमस्कार करती हूं। ह्री, श्री, कीर्त्ति, द्युति, पुष्टि, पार्व्वती, लक्ष्मी और सरस्वती वह [illegible]

मार्गमें तुम्हारी रक्षा करें, तुम ब्रह्मोंके पूजनेवाले और बड़े भाईके आज्ञाकारी कुशलसे आओ, इस निमित्त मैं वसु, रुद्र, सूर्य्य, विश्वेदेव और साध्योंकी शरण जाती हूं, वे तुम्हें शान्ति प्रदान करें, हे कुन्तीनन्दन! आकाश और भूमिमें फिरनेवाले तुम्हारा कुशल करें, दिव्य प्राणी आदिको लेकर और जो विघ्नकारी जन्तु हैं उन सबसे ईश्वर तुम्हारी कुशल करें।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, यश भरी द्रौपदी इस प्रकार अर्जुनको आशीर्वाद देकर चुप हो रही। अनन्तर भाई और धौम्यको प्रदक्षिणा करके महाबाहु अर्जुन उत्तम धनुषको धारण करके चल दिये। इन्द्र योगधारी तेजस्वी बलवान अर्जुनके चलनेसे मार्गके जितने प्राणी थे, सब हट गये। हे जन्मेजय! शत्रुनाशन अर्जुन तपस्वियोंसे सेवित अनेक पर्व्वतोंको देखते हुए दिव्य, पवित्र और देवतोंसे युक्त हिमाचल पर्व्वत पर पहुंचे, महात्मा अर्जुन योगसे युक्त होकर वायुके समान गति धारण करके एकही दिनमें पवित्र हिमाचल पर्व्वत पर पहुंच गये। अनन्तर हिमाचल और गन्धमादनसे पार होकर निद्रासे शून्य रातदिन चलते हुए अनेक कठिन पर्व्वतोंका पार हुए, अनन्तर जब अर्जुन इन्द्रकील नामक स्थान पर पहुंचे तो आकाशवाणी हुई कि यहीं ठहरो। उसको सुनकर पाण्डुनन्दन अर्जुन चारों ओर देखने लगे, तो वृक्षकी जड़में बैठे हुए एक तपके तेजसे प्रकाशमान पिङ्गल वर्णयुक्त जटाधारी था, उस महातपस्वीने आगे खड़े अर्जुनको देखकर कहा, हे तात! तुम धनुष, कवच, बाण, अगुलित्राण और तरकस धारण किये क्षत्रियोंके धर्म्ममें स्थित कौन हो, और यहां क्यों आये हो? यह स्थान आनन्दक्रोधसे रहित तपस्वी शान्त ब्राह्मणोंका है, यहां शस्त्रका क्या काम है? यहां धनुषसे कुछ प्रयोजन नहीं, यहां कभी युद्ध नहीं होता। हे तात! तुम इस धनुषको फेंक दो, क्योंकि तुम परम गतिको प्राप्त हुए हो। हे वीर! जिस प्रकार कोई दूसरा पुरुष नहीं बोल सकता, तैसेही तेज और बलसे भरा हुआ वह ब्राह्मण किञ्चित हंसते हुए अर्जुनसे बोला, परन्तु अर्जुनका कुछ भी धैर्य्य और निश्चय उसके कहनेसे चलित न हुआ। अनन्तर वह ब्राह्मण प्रसन्न होकर हंसता हुआ अर्जुनसे ऐसा बोला, हे शत्रुनाशन! तुम्हारा कल्याण हो, मैं इन्द्र हूं, जो तुम्हारी इच्छा हो सो बरदान मांगो; तब कुरुकुलके बढ़ानेवाले शूरवीर अर्जुन इन्द्रकी बात सुनकर ऐसा बोले, हे भगवन्! मेरी यही इच्छा है और यही वरदान मुझको दीजिये, कि मैं आपसे सब शस्त्रोंको प्राप्त करूं। तब प्रसन्न होकर हंसते हुए इन्द्र बोले, हे धनञ्जय! इस स्थान पर पहुंच कर शस्त्रोंसे तुम कौनसा कार्य्य करोगे? दूसरा वरदान मांगो, क्योंकि तुम परमगतिको प्राप्त हुए हो, अतएव जिस लोकमें जानेकी इच्छा हो, कहो। ऐसा सुनकर इन्द्रसे अर्जुन बोले, हे देवराज! लोभ और कामके वशमें होकरभी मैं देवपद अथवा सब देवतोंके राजाके सुखकी भी इच्छा नहीं करता हूं। मै अपने भाइयोंको बनमें छोड़ और वैरका बदला बिना लिये यदि किसी लोकमें जाकर सुख भोगू, तो अनेक वर्षोंतक अपकीर्त्तिको प्राप्त हूंगा। वृत्रासुरके मारनेवाले सब लोकोंसे पूजित इन्द्र पाण्डुपुत्र की यह बात सुनकर, कोमलता सहित शान्ति पूर्व्वक ऐसा बोले, हे तात! जब तुम शूलधारी, तीन नेत्रवाले, भूतोंके स्वामी, शिवका दर्शन करोगे, तब हम तुमको सब शस्त्र देंगे। हे कुन्तीनन्दन! अब तुम परमेश्वर शिवके दर्शनका यत्न करो, उनका दर्शन होनेसे सिद्ध होकर स्वर्गमें आओगे। अर्जुनसे ऐसा कहकर इन्द्र वहां अन्तर्धान हो

गये। और अर्जुनभी वहीं बैठकर योग्य करने लगे।

३७ अध्याय समाप्त।

अर्जुनाभिगमनपर्व्व समाप्त।

अब कैरातपर्व्व लिखाजाता है।

राजा जनमेजय बोले, हे भगवन्! हे वेदजाननेवालोंमें श्रेष्ठ। कठिन कर्म्म करनेवाले अर्जुनको जिस प्रकार शस्त्र प्राप्त हुए उस कथाको मैं विस्तारसे सुनना चाहता हूं। जिस प्रकारसे वह तेजस्वी, पुरुषसिंह, महाबाहु, अर्जुन मनुष्य रहित वनमें वेहरके समान गये, वहां रहकर उन्होंने भगवान शिव और इन्द्रको किस प्रकार प्रसन्न किया? हे ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ! हे सब जाननेवाले! हम वह सब कथा आपकी कृपासे सुननेकी इच्छा रखते हैं, क्योंकि आप देवता और मनुष्योंकी सब बातोंको जानते हैं। हे ब्राह्मण! हमने सुना है, कि युद्ध करनेवालोंमें श्रेष्ठ युद्धोंमें अपराजित अर्जुनने शिवके सङ्गमें महाघोर अद्वितीय, रोमहर्षण युद्ध किया था। पुरुषोंमें सिंह वीर पाण्डवोंकी दीनता आनन्द और विस्मययुक्त कथाओंको सुनकर बड़े बड़े शूरवीरोंके हृदयभी कांप गये थे. अर्जुनने जो जो कर्म्म किया थे. सो सब कहिये, क्योंकि अर्जुनके [illegible] थोड़ाभी बुरा काम नहीं दीख पड़ता, [illegible], उस शरीरके सब चरित्रोंको हमसे कहिये।

वैशम्पायनजी बोले, हे कुरुवंशियोंमें श्रेष्ठ! महात्मा अर्जुनकी इस अद्भुत कथाको [illegible] जिस प्रकार गावसे संस्पर्श [illegible] समान शिवसे समागम हुआ, उस [illegible] मैं अच्छी भांति कहता हूं। हे [illegible] तुम सुनो। महाराज युधिष्ठिरकी [illegible] इन्द्र और शिवको देखनेकी [illegible] और [illegible]

खड्गको लेकर महाबलवान, महाबाहु, अप्रमाण पराक्रमवाले अर्जुन कार्य्यसिद्ध करनेको उत्तरकी ओर हिमाचलके शिखरकी ओर चले। हे राजन! मनको स्थिर करनेवाले सब लोकोंमें विख्यात महारथ अर्जुन निश्चय करके परम योगसे युक्त होकर महा घोर कांटोंसे भरे हुए वनको एकलेही चले, उन्होंने अनेक फल फूलसे भरे हुए अनेक प्रकारसे पक्षियोंसे भांति भांतिके हरिणोंसे भरे हुए सिद्ध और चारणोंसे युक्त वनको देखा। कुन्तीपुत्र अर्जुनके चलनेसे मनुष्यरहित उस वनमें आकाशमें शंख और पटह बजने लगे। आकाशसे पृथ्वीमें फूलोंकी वर्षा होने लगी। बादलोंके समूहने आकाशको सब ओरसे घेर लिया, अर्जुन कठिन कठिन वनोंको पार होकर महापर्व्वत हिमालयके शिखरपर पहुंच कर शोभित हुए, वहां उन्होंने फूले वृक्षोंके ऊपर मीठे शब्द करनेवाले पक्षियो और हीरेके समान निर्म्मल जलवाली महावेगवती अनेक नदियोंको देखा, उनके तटपर हंस, कारण्डव, सारस, कोकिला, मयूर और क्रौञ्च आदि पक्षियोंके आनन्दमय शब्द सुने। महारथ अर्जुन उस मनोहर वनमें पवित्र ठण्डे और निर्म्मल जलवाली नदियोंको देखकर महा प्रसन्न हुए, तब उस रमणीय वनमें रमते हुए और उग्र तपको करते हुए महा तेजस्वी अर्जुनने इस प्रकार निवास किया. कि तिनकेका वस्त्र, हरिणका चमड़ा और दण्डको आभूषण किया। जो पत्ते वृक्षसे गिर जावें उसीको खाने लगे फिर एक महीनेतक तीन तीन दिनमें एक एक फल खाना आरम्भ किया, दूसरे महीनेमें उससे तिगुने समय पर्य्यन्त [illegible] दिनमें एक एक फल खाने लगे, तीसरे महीनेमें पक्ष पक्षमें एक एक फल खाकर बिताया। जब चौथा महीना प्राप्त हुआ, तो भरतश्रेष्ठ अर्जुन केवल वायु पीकर रहने लगे।

उस समय पाण्डुनन्दन महाबाहु अर्ज्जुन उर्द्ध्वबाहु होकर बिना, किसी आश्रयके केवल चरणके अंगूठेहीसे खड़े रहे। महात्मा महातेजा अर्ज्जुनकी जटा सदाही न बान्धनेके कारण बिजली सहित बादलके समान हो गई। तब सब मुनीश्वर लोग पिनाकधारी देव शिवके पास अर्ज्जुनका महातप निवेदन करनेको गये। मुनीश्वर लोग महादेवको प्रणाम करके अर्ज्जुनके तपकी प्रशंसा करके बोले, कि यह महातेजस्वी कुन्तीपुत्र हिमाचलपर बैठकर दिशाओंको आधार करते हुए अपार और उग्र तप कर रहे हैं। हे देवतोंके नाथ! हम सब उसकी इच्छाको नहीं जानते, आप साधुता पूर्व्वक उसे निवारण कीजिये, आत्मज्ञानी मुनियोंके यह वचन सुनकर पार्व्वतीपति जगत्स्वामी शिवने ऐसा कहा,—

श्रीमहादेवजी हे बोले, मुनीश्वरो! तुम अर्ज्जुनका कुछ दुःख मत करो, जैसे आये हो, तैसेही सुखसे आलस्यरहित होकर शीघ्र चले जाओ। मैं उसके मनके सङ्कल्पको जानता हूं, उसको स्वर्ग ऐश्वर्य्य और आयु बढ़नेकी इच्छा नहीं है; जो कुछ उसकी इच्छा है, मैं उसे अभी करता हूं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, शिवके ऐसे वचन सुनके सत्यबादी मुनि लोग प्रसन्न होकर अपने घरको चले गये।

३८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि जब महात्मा सब तपस्वीलोग अपने अपने घरको चलेगये, तब सब पापके नाश करनेवाले भगवान शिव सोनेके वृक्षके समान किरातका वेष धारण करके महामेरुकी शिखाके समान शरीर बनाकर उत्तम धनुष और सर्पके समान वाणोंको धारण करके देहधारी अग्निके समान वेगसे चले। अपने समान वेषधारी भूतोंके सहित श्रीमान् शिवजी किरात वेषधारिणी अनेक स्त्रियोंको सङ्गमें लेकर उस बनमें पहुंचे। हे भारत! हे महाराज! उस समय उस वनकी शोभा औरही हो गई। क्षणमात्र वह वन शब्दरहित हो गया, उस समय पक्षी और झरनोंका शब्दभी बन्द हो गया, उन्होंने कठिन कर्म्म करनेवाले अर्ज्जुनके पास आकर अद्भुत दर्शनवाले मूक नामक दनुके पुत्रको देखा। वह राक्षस सूअरका वेष बनाये हुए क्रोधसे दीप्त, मारने की इच्छासे अर्ज्जुनको देख रहा था, तब अर्ज्जुनने गाण्डीव धनुष और सर्पके समान वाण लेकर धनुष पर रोदा चढ़ाके शब्दसे वनको पूरित करते हुए उस राक्षससे कहा, तू जो मेरे मारनेकी इच्छासे यहां आया है, इस लिये पहले मैं ही तुझको यमके घरमें पहुंचाता हूं। जब किरातरूपी महादेवने दृढ धनुषधारी अर्ज्जुनको देखा, कि यह इसको मारना चाहता है, तो उनको निवारण करके कहने लगे, कि इसके मारनेकी इच्छा पहले मैंने की है, अतएव तुम इसको मत मारो, परन्तु अर्ज्जुनने उनके वचनका निरादर करके उसको वाण मारा; ठीक उसी समयमें उसीको लक्ष्य करके महा तेजस्वी किरातनेभी वज्र और अग्निकी ज्वालाके समान वाण मारा, उन दोनोंके वे दोनों वाण एकही समयमें पर्व्वतके समान कठिनमुख राक्षसके शरीरमें लगे, जिस प्रकार एकही समयमें दो वज्र लगनेसे पर्व्वतमें शब्द होता है, वैसेही उसके शरीरमें दो वाण लगनेसे शब्द हुआ; वह राक्षस अनेक प्रकाशमान वाणोंके लगनेसे मर गया, और फिर दूसरा शरीर धारण किया, तब शत्रुनाशन अर्ज्जुनने स्त्रियोंके सहित किरातवेशी सोनेके समान वर्णवाले एक पुरुषको देखा। कुन्तीपुत्रने प्रसन्नचित्तसे हंसकर उससे पूछा, कि तू कौन है जो इस घोर वनमें स्त्रियोंके झुण्डके समेत फिरता है? हे सोनेके रङ्गवाले

[illegible]। तुम क्या इस घोर वनमें घूमते हुए डरते नहीं हो? तुमने हमारे मारे हुए सूअर को क्या मारा? इस राक्षसको पहिले यहां आने पर मैंने ही मारा था, पीछे तुमने वाण मारा, कामसे वा निरादरसे मारा हो, परन्तु तुम मुझसे जीते हुए अब नहीं बच सकते; क्योंकि तुमने जो कर्म किया, यह मृगयासे विरुद्ध है, इस हेतुसे तुमको मारकर अभी पर्व्वतसे गिरा दूंगा। पाण्डुपुत्रके ऐसे वचन सुनकर किरातने हंसकर मीठी वाणीसे सव्यसाची अर्ज्जुनसे ऐसा कहा। हे वीर! हमको इस वनमें देखकर तुम मत डरो; क्योंकि हम वनवासी हैं, और यह भूमि हमारीही है, इस लिये हमारे ही योग्य है, हे तपोधन? तुमने दुःख सहकर इस वनमें क्यों वास किया है? क्योंकि अनेक जन्तुओंके सहित इस वनमें हमारा ही घर है। तुम अग्निके समान तेजस्वी, सुखके योग्य और सुकुमार हो, तब इस शून्य वनमें कैसे वास करोगे?

अर्ज्जुन बोले, हम अग्निके तुल्य वाण और गाण्डीव धनुषका आश्रय करके अग्निके समान इस वनमें वास करते हैं, यह राक्षस जो मेरे मारने की इच्छासे सूअरका वेष बनाके यहां [illegible] था इसको मैंने मारा है।

किरात बोले यह तो मेरे ही धनुषके छूटे हुए वाणोंसे मरकर यमके स्थानको गया है, [illegible] पराक्रमसे यह पृथ्वी पर सोया है, [illegible] मैंनेही इसको लक्ष्य बनाया था, [illegible] मेराही धन है, और [illegible] है। हे मूर्ख! वलके [illegible] अपने दोष दूसरों [illegible] कदापि मुझसे जीता हुआ [illegible]। [illegible] के समान वाणों- [illegible] रहो। अपनी परम [illegible] और वाणको भी छोड़ो। [illegible] अर्ज्जुनको [illegible]

क्रोध हुआ और वाणोंसे किरात को मारने लगे, किरातभी अर्ज्जुनको, "अरे मूर्ख! ऐसा वार वार कहते हुए उनके वाणोंको सहने लगे और कहने लगे कि इनसे भी अधिक सन्धिभेदक वाण चलाओ; ऐसा सुनकर अर्ज्जुनने साहससे अनेक वाण मारे। उस समय वह दोनो वार वार युद्ध करते हुए शोभित होने लगे और परस्पर एक दूसरेको सांपके समान विष-भरे वाणोंसे मारने लगे। तव अर्ज्जुनने किरात पर बादलके समान वाणोंकी वर्षा करी और शिव भी प्रसन्न चित्तसे वाणोंकी वर्षाको सहने लगे। पिनाकधारी शिव एक मुहूर्त्तमात्र उस वाणवर्षाको सह करके भी पर्व्वतके समान अचल हो खड़े रहे और शरीरमें एक घाव भी न हुआ। जब अर्ज्जुनने देखा, कि मेरी वाणों की वर्षासे यह छिप गया। तब परम आश्चर्य्यमें आकर साधु! साधु! कहने लगे और ऐसा बोले कि, यह बड़े आश्चर्य्यकी बात है, कि यह हिमाचल शिखरवासी कोमल अङ्गवाला पुरुष गाण्डीव धनुषसे छूटे हुए वाणोंको विना दुःखके सह रहा है, यह कौन है? क्या यही साक्षात शिव हैं? अथवा कोई यक्ष, राक्षस या देवता हैं? क्योंकि मेरी धनुषसे छूटे हुए सहस्रों वाणोंको देव पिनाकधारी शिवको छोड़कर और कोई भी नहीं सह सकता है। जो हो यदि यह शिवको छोड़कर देवता वा कोई यक्षही क्यों नहो, अब मैं इसको कठिन वाणोंसे यमके घरमें पहुंचाऊंगा। ऐसा कहकर अर्ज्जुनने प्रसन्नचित्तसे सन्धियोंके तोड़नेवाले वाणोंका इस प्रकार धारा लगादी जैसे सूर्य्य अपनी किरणोंको सब जगह पहुंचा देता है। किन्तु भगवान् शूलधारी, लोकनाथ, शिव उन वाणोंकोभी प्रसन्नचित्तसे इस प्रकार ग्रहण करने लगे, जैसे [illegible] [illegible] है। [illegible] क्षण भरमें अर्ज्जुनके [illegible]

समाप्त हो गये। अनन्तर अपने वाणोंको समाप्त देखकर अर्ज्जुनको महाभय होने लगा, तब अर्ज्जुनने उसी भगवान् अग्निका ध्यान किया, जिसने इनको पहिले खाण्डव वनमें अक्षय तूणीर दिये थे, और बिचारने लगे, कि अब मेरे सब वाण समाप्त हो गये, धनुषसे क्या करूं? और यह पुरुष मेरे सब वाणोंको ग्रास किये जाता है। जिस प्रकार भालेसे हाथीको मारते हैं, तैसेही अब मैं भी इसको गाण्डीव धनुषके अगाड़ीके भागसे मारकर दण्डधारी यमराजके स्थानको पहुंचाउंगा, ऐसा विचारकर महातेजा अर्ज्जुनने धनुषसे किरातका गला फांसकर उसे रोदेकी फांसीसे खींच करके वज्रके समान मुक्कोंसे बहुत मारा। कुन्तीनन्दन शत्रुनाशन अर्ज्जुन जब इस प्रकार धनुषसे युद्ध करने लगे, तब पर्व्वतके समान किरातने इनके धनुषकोभी ग्रासकर लिया, धनुष नष्ट होनेके पश्चात् युद्ध समाप्त होनेकी इच्छासे अर्ज्जुन खड्ग लेकर वेगसे दौड़ा, जो पर्व्वतकोभी काट सकता था उस तेज खड्गको कुरुनन्दन अर्ज्जुनने अपने भुजाके बलसे भर कर किरातके शिरमें मारा, परन्तु उसके शिरमें लगनेसे वह उत्तम खड्गभी टूट गया, तब अर्ज्जुन शिला और वृक्षोंसे युद्ध करने लगे, परन्तु किरातरूपी भगवान् शिव उन शिला और वृक्षोंको भी सहने लगे। अनन्तर महाबली अर्ज्जुनके मुखसे मारे क्रोधके धूआं निकलने लगा, अनन्तर अर्ज्जुन दुराधर्ष भगवान किरातरूपी शिवके शरीरमें वज्रके समान मुक्के मारने लगे। अनन्तर किरातरूपी भगवान शिवभी वज्रके समान दारुण मुक्कोंसे अर्ज्जुनको मारने लगे। उस अर्ज्जुन और किरातके युद्धमें दोनोंके मुक्कोंका शब्द होने लगा जिसके सुननेसे रोम खड़े होते थे। वह युद्ध ऐसा हुआ जैसा वृत्रासुर और इन्द्रका हुआ था। तब बलवान अर्ज्जुनने किरातको हृदयसे मारना आरम्भ किया और किरातनेभी चेष्टा रहित अर्ज्जुनको मारा। उन दोनोंके हाथ और हृदयके घिसनेसे शरीरमें अंगारे और धुएंके सहित अग्नि निकलने लगी, अनन्तर महादेवजीने पीड़ित अर्ज्जुनके शरीरको पीड़ा दी और अपने तेजसे उनके तेजको खींच कर उनके चित्तको मोहित कर दिया। हे भारत। शरीरके पीड़ित और देव देव महादेवसे अवरुद्ध होकर अर्ज्जुन पिण्डके समान हो गये। अनन्तर महादेवसे पीड़ित होकर अर्ज्जुन चेष्टाहीन होकर निर्व्वलके समान पृथ्वीमें गिर पड़े और सांसभी बन्द होगया, परन्तु क्षण मात्रके पश्चात्ही अत्यन्त दुःखित रुधिरसे भरे शरीरवाले अर्ज्जुन चैतन्य होकर उठे, तब शरण देनेवाले भगवान् पिनाकधारी शिवकी शरणमें गये, और मिट्टीकी स्थण्डिल बनाकर उसपर महादेवको माला चढ़ाई। तब कुन्तीनन्दन अर्ज्जुनने वही माला किरातके शिरपर देखी, तब आनन्दके वशमें होकर अपनी दशाको प्राप्त हुए, और किरातके चरणोंमें गिर पड़े, तब ही शरीर आश्चर्य्ययुक्त अर्ज्जुनसे प्रसन्न होकर मेघके समान गम्भीर वाणीवाले शिव कहने लगे। श्रीमहादेवजी बोले, हे फाल्गुन! हम तुम्हारे असाधारण काम शूरवीरता और धारणाशक्तिसे प्रसन्न हुए, और जाना, कि तुम्हारे समान क्षत्रिय कोई नहीं है, हे पाप रहित। तुम्हारा पराक्रम और तेज मेरे समान है; हे महाभुज! हे महारथश्रेष्ठ! मैं तुमसे प्रसन्न हूं। मुझे देखो, मैं तुम्हें दिव्य दृष्टि देता हूं, तुम पूर्व्व समयके ऋषि हो; तुम युद्धमें सब शत्रुओंको जीतनेवाले हो, तुम्हारे शत्रु चाहे देवताभी हों तौभी तुमसे पराजित होंगे। मैं प्रसन्नतासे तुम्हें यह अस्त्र देता हूं इस निवारण करनेके अयोग्य अस्त्रको तुमही धारण करनेमें समर्थ हो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि तब त्रिशूलधारी

देवोंके देव महादेवको पार्व्वतीके सहित अर्ज्जुनने देखा। घुटनोंको पृथ्वीमें लगाकर शिरसे प्रणाम करके शत्रुओंके नगरको जीतनेवाले अर्ज्जुनने महादेवको प्रसन्न किया। अर्ज्जुन बोले, कि हे जटाधारी! हे सब देवतोंके स्वामी! हे सूर्यनेत्र! हे जगतके संहार करनेवाले! हे देवोंके देव! हे नीलकण्ठ! मैं आपको सब कारणोंका कारण जानता हूं। आपही सब देवतोंकी गति हैं, आपसेही जगत् उत्पन्न होता है। आप तीनों लोकोंके देवता, असुर और मनुष्योंसे अजेय हो। दक्षके यज्ञनाश करनेवाले आपको नमस्कार है! कपाल नेत्र-वाले सर्व्वको नमस्कार है, वर्षा करनेवाले, शूल-पाणीको नमस्कार है। पिनाकधारी सूर्य्यरूपी पवित्र देहवाले ब्रह्मारूपी आपको मैं प्रसन्न करता हूं; गणेशरूपी जगत्के कल्याण करने-वाले तीनों लोकोंके कारण प्रधान पुरुषसे भी उत्तम सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म हे हर! आपको प्रणाम है। मेरी विपरीत बुद्धिको क्षमा कीजिये। हे भगवन्! मैं आपके दर्शनकी इच्छासे ही इस पर्व्वत पर आया हूं। यह पर्व्वत, तपस्वि-योंका स्थान और आपका प्यारा है, मैं आपको नमस्कार करता हूं। हे महादेव! जो मैंने यह साहस किया, वह मेरा दोष नहीं है, क्योंकि मैंने अज्ञानसे आपके साथ युद्ध किया है, हे शङ्कर! मैं आपकी शरण हूं, मेरा अपराध क्षमा कीजिये।

वैशम्पायनजी बोले, कि वृषभध्वज महादेव अर्ज्जुनका सुन्दर हाथ पकड़के बोले, कि हे फाल्गुन! तुम शान्त हो। फिर दोनों हाथोंसे अर्ज्जुनको छातीसे लगाकर शान्त होनेको कहे।

३८ अध्याय समाप्त।

महादेवजी बोले, पूर्व्व जन्ममें तुम नर नाम ऋषि थे, नारायण तुम्हारे साथी थे। वदरिकाश्रममें हजारों वर्ष तुमने तपस्या की थी। तुममें तेज है, व पुरुषोत्तम विष्णुमें तेज है, तुम्हीं दोनोंसे जगत् स्थित है, तुमने इन्द्रके राज्याभिषेकमें मेघके गर्जनकी समान टङ्कार-वाली धनुषको ग्रहण करके दानवोंको मारा था। यह गाण्डीव धनुष तुम्हारे ही हाथके योग्य है; धनुषको मैंने मायाके बलसे व्यर्थ किया था; तुम्हारे तर्कश वाणोंसे कभी खाली न होंगे। हे कुरुनन्दन! तुम्हारा शरीर निरोग रहेगा। हे पुरुषोंमें श्रेष्ठ! मैं तुमसे प्रसन्न हूं, जो तुमको इच्छा हो, वर मांगो, तुमसे मर्त्यलोकमें वा स्वर्गमें कोई पुरुष श्रेष्ठ न होगा। हे शत्रुओंको दमन करनेवाले! तुम क्षत्री-धर्म्ममें प्रधान गिने जाओगे।

अर्ज्जुन बोले, हे भगवन्! यदि आप मुझ पर प्रसन्न होकर वर देते हैं, तो मैं पाशुपतास्त्र मांगता हूं, जो ब्रह्मशिर नामक भयानक बड़ा पराक्रमी प्रलयमें जगत्को नाश करता है, उसी अस्त्रको मैं लेना चाहता हूं। हे भगवन्! कर्ण, भीष्म, कृपाचार्य्य और द्रोणाचार्य्यसे युद्ध होनेवाला है, जिससे युद्धमें तुम्हारी कृपासे मैं उनको युद्धमें जीतूं, जिसके प्रतापसे मैं युद्धमें दानव, राक्षस, भूत, पिशाच, गन्धर्व्व और सर्पोंको भस्म कर सकूं। जिसको अभिमन्त्रित करनेसे सहस्रों भाले तेज दर्शनेवाली गदा और विषैले सर्पके समान खड्ग उत्पन्न होते हैं; हम जिससे भीष्म, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, और सदा ही कठोरवादी सूतके पुत्र कर्णसे युद्ध कर सकें। हे भगवन्! हे भगनेत्र! यह मेरी प्रथम इच्छा है जो आपकी कृपासे कृतकृत्य होकर समर्थ हूंगा।

श्रीशिवजी बोले, हे विभो! हम तुमको अपना प्यारा पाशुपतास्त्र धारने और मोक्ष करनेकी क्रियाके सहित देते हैं, क्योंकि तुम इसके योग्य हो। इसको इन्द्र, यम, वरुण और वायु भी नहीं जानते मनुष्योंको तो कहां ही जानें? हे कुन्ती-

नन्दन। इस शस्त्रको कदापि कहीं भी साहससे किसी पुरुषके ऊपर मत छोड़ना, क्योंकि थोड़े तेजवालेपर छोड़नेसे यह सब जगत् को भस्म कर सकता है। चर और अचर जगतमें कोई ऐसा नहीं, जो इससे न मर सके, इसके चलानेके समय, इसको मन, वचन, नेत्र और धनुषसे चलाना चाहिये।

श्रीवैशम्पायनजी बोले; कुन्तीनन्दन अर्जुन शिवके ऐसे वचन सुनकर पवित्र हो उनके पास बैठे, और शिवजी बोले, ग्रहण करो। तब शिवजीने, मूर्त्तिधारी कालके समान उस शस्त्रको चलाने और निवृत्त करनेकी गुप्त क्रियाओंके समेत, अर्जुनको पढ़ा दिया। वह शस्त्र जिस प्रकार पार्व्वतिनाथ त्रिनेत्र शिवको आता था, तैसेही अर्जुनको भी आगया, और अर्जुननेभी प्रसन्न चित्तसे ग्रहण किया। उस समय ग्राम, नगर, समुद्र, खान, पर्व्वत, वन, वृक्ष, और देशोंके समेत पृथ्वी हिलने लगी। उस समय आकाशमें सहस्रों शंख नगाड़े भेर, बजने लगे। महातेजवाले अर्जुनके यहां शस्त्र मूर्त्ति धारण करके वहां आया, इसको सब देव और दानवोंने देखा। श्रीमहादेवजी महाराजने अर्जुनको अपने हाथसे स्पर्श किया, तब उसका जितना पाप था, सब नष्ट होगया। अर्जुनने प्रणामकर हाथ जोड़के शिवको ओर देखा, तव शिवने आज्ञा दी, कि तुम स्वर्गको जाओ। तव पुरुषोंमें श्रेष्ठ अर्जुनको देवतोंके स्वामी जितेन्द्रिय महाबुद्धिमान् पर्व्वतमें सोनेवाले पार्व्वतीनाथ जगतके उत्पन्न करनेवाले शिवने पिशाच और राक्षसोंके नाश करनेवाला महाधनुष गाण्डीव दिया। तव पुरुषोंमें श्रेष्ठ अर्जुनके सामनेही शिव ऐसी उत्तम बात कहकर सफेद कन्दरावाले पक्षी और महर्षियोंसे सेवित पर्व्वतको छोड़कर आकाशको चले गये।

४० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, जिस प्रकार सब जगत्के देखते हुए सूर्य्य अस्त हो जाता है, तैसेही भगवान् वृषभध्वज पिनाकधारी शिवभी अर्जुनके देखते देखते अन्तर्द्धान हो गये। हे हे जनमेजय! तब मैंने साक्षात शिवको देखा, ऐसा विचार कर अर्जुन वार वार आश्चर्य करने लगे। आहा! मैं धन्य हूं, मैं कृपाका पात्र हूं, जो मैंने साक्षात् तीननेत्रवाले भक्त दुःखनाशक वरदान-दाता शिवको देखा और हाथसे छुआ, अब मैं कृतार्थ हुआ, अत्यन्त आनन्दको प्राप्त हुआ, मैंने युद्धमें सब शत्रुओंको जीत लिया और मेरे सब प्रयोजन सिद्ध हो गये। इस प्रकारसे विचारते महा तेजस्वी अर्जुनके पास जलचर जन्तुओंके समेत शुद्धवाले श्रीमान् वरुण सब दिशाओंको प्रकाश करते हुए आये, इन्द्रियजित वरुणके सङ्ग नद नदी, दैत्य, साध्य, देवता और जलजन्तु भी आये। अनन्तर सोनेके समान वर्णवाले यक्षोंके समेत भगवान कुवेर तेजस्वी बिमानमें बैठकर वहां आये, उनके आनेसे आकाश प्रकाशमान हो गया। अर्जुनने श्रीमान् धनेश्वरको अद्भुत दर्शनवाला देखा। उसके पश्चात् सब लोकोंको नाश करनेवाले श्रीमान् प्रतापवान यमराजभी रूप और विना-रूपवाले लोकभावन पितरोंको सङ्ग लेकर वहां आये। यमराज दण्ड धारण किये हुए थे। भगवान् अचिन्त्यरूपवाले नवलोकके नाश करने-वाले सूर्य्यके पुत्र यमराज तीनों लोकोंको प्रकाश करते हुए गुह्यक सिद्ध, गन्धर्व्व और सर्पोंको सङ्ग लेके विमानमें बैठ प्रलयकालके सूर्य्यके, समान तेज धारण करके वहां आये। वे सब लोग हिमाचलके प्रकाशमान और विचित्र शिखरपर आकर तपस्वी अर्जुनको देखने लगे। उरी चरणमें सफेद छत्रसे शोभायमान ऐरावतके ऊपर स्थित इन्द्राणी और देवतोंके युक्त भगवान् इन्द्रभी वहां आये, उनकी शोभा ऐसी जान पड़ती थी, जैसे तारोंके वीचमें चन्द्रमा। अस-

प्रकारसे सूर्य्य प्रकाशित होता है, वैसेही भगवान् इन्द्रभी देवता और तपोधन ऋषियोंसे स्तुति सुनते हुए पर्व्वतके शिखरपर शोभित हुए। तब दक्षिण दिशामें बैठे हुए सब धर्म्मके जाननेवाले श्रीमान् यमराज मेघके समान गम्भीर वाणीसे अच्छे वचन बोले, हे अर्ज्जुन! तुम सब आये हुए लोकपालोंको देखो, हम तुमको दिव्य दृष्टि देते हैं, तुम हमारे दर्शन करनेके योग्य हो। हे तात! तुम पहले महाबल नर नामक ऋषि होकर आनन्द करते थे, अब ब्रह्माकी आज्ञासे मनुष्य हो गये हो। हे पापरहित! वसुके अवतार महाक्रमी धर्म्मात्मा भीष्म पितामह तुमसेही युद्धमें मारे जायंगे। भरद्वाजकेपुत्र द्रोणाचार्य्यसे रक्षित क्षत्रियोंकी सेना महा पराक्रमी दानव जो मनुष्य बने हैं, हे कुरुनन्दन! निवातकवच दानव और जो मर्त्यलोकके तपानेवाला सूर्य्यके तेजसे महावीर कर्ण उत्पन्न भया, उसकोभी तुमही मारोगे। हे धनञ्जय! औरभी अनेक देव और दानवोंके अंशसे अवतार भये हैं, हे शत्रुनाशन! हे कुन्तीनन्दन! वे सब लोग अपने अपने कर्म्मके अनुसार तुम्हारे हाथसे युद्धमें मरकर गति पावेंगे। हे फाल्गुन! तुमने साक्षात महादेवको युद्धमें प्रसन्न किया है, इस लिये तुम्हारी कीर्त्ति जगत्में अक्षय होकर स्थिर रहेगी। तुम कृष्णके सङ्ग होकर पृथिवीके भारको उतारोगे, अब यह हमारा [illegible] दण्ड नामक शस्त्र ग्रहण करो. इससे तुम्हारे बड़े भारी भारी कार्य्य सिद्ध होंगे।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, तब कुरुनन्दन! [illegible] और समेटनेकी विधिसहित [illegible] समेत उस शस्त्रको [illegible]। तब मेघके समान श्याम [illegible] स्वामी भगवान वरुण पश्चिम [illegible] बोले, हे कुन्तीनन्दन! हे बड़े और लाल नेत्रवाले! तुम क्षत्रियोंमें श्रेष्ठ हो और क्षत्रियोंके धर्म्ममें रहनेवाले हो. देखो हम जलके स्वामी वरुण हैं, हम यह निवारण करनेके अयोग्य पाश तुमको देते हैं, तुम इसको विधिके समेत ग्रहण करो। हे वीर! मैंने इससे तारकामय युद्धमें भारी भारी सहस्रों राक्षसोंको मारा था, हे महाबल! मेरे प्रसादसे इसको ग्रहण करो, तुम्हें क्रोध आनेपर इससे यमभी नहीं छूट सकता है। जब तुम इसको लेकर युद्धमें घूमोगे तो निःसन्देह पृथ्वी क्षत्रियोंसे सूनी हो जायगी।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि जब अर्ज्जुनको वरुण और यम दिव्यशस्त्र दे चुके तो कैलाशवासी कुवेर बोले, हे पाण्डुपुत्र! हे महाबल! हे महाबुद्धिमान! जीतनेके अयोग्य तुमको देखकर हम अत्यन्त प्रसन्न हुए, हे सव्यसाचिन्! हे महाबाहो! हे पूर्व्वदेव सनातन! पहले कल्पमें हम और तुम सङ्गही रहते थे, हे भरतर्षभ! तुम्हारा दर्शन करके हम तुम्हें यह दिव्य शस्त्र देते हैं; इसके बलसे दुःखसे जीतने योग्य देव दानवोंकोभी युद्धमें जीत सकोगे, हे शत्रुनाशन! मुझसे इस शस्त्रको तुम शीघ्र ग्रहण करो, तुम इसके प्रतापसे धृतराष्ट्रपुत्रकी सेनाको जला दोगे। यह शस्त्र मुझको अत्यन्त प्रिय है, इसका नाम प्रस्वापन है. इससे तेज बल और कान्ति बढ़ते हैं, पहले समयमें जब महात्मा शिवने त्रिपुरासुरको मारा था. तब इसको चलाया था, इसीके प्रतापसे सब राक्षस भस्म हो गये थे। हे सत्यपराक्रम! हे मेरुके समान दृढ़ [illegible] यह शस्त्र तुम्हारे लिये उपस्थित है, और तुमही इसे धारण करनेके योग्य हो। तब महाबाहु महाबली कुरुनन्दन अर्ज्जुनने कुवेरके शस्त्रको विधिपूर्व्वक ग्रहण किया। तब देवराज इन्द्र बादल और नगाड़ेके समान गम्भीर वाणीसे [illegible] हुए ऐसा बोले, हे कुन्तीपुत्र, तुम सनातन

और पुरातन देवता हो, अब देवतोंकी भक्तिसे उत्तम सिद्धिको प्राप्त हुए हो, हे महा-तेजस्वी! हे शत्रुनाशन। अब तुम स्वर्ग चलनेको सन्नद्ध हो जाओ, क्योंकि तुम्हें देवतों का भारी कार्य्य करना है। हे कौरव! तुम्हारे निमित्त मातलिके सहित रथ आने वाला है वहां चलकर तुमको हम दिव्य शस्त्र देंगे। उस पर्वतके ऊपर सब लोकपालोंको इकट्ठे देखकर बुद्धिमान् कुन्तीपुत्र अर्ज्जुन आश्चर्य्य प्रकट करने लगे अनन्तर महातेजस्वी अर्ज्जुनन आये हुए, लोकपालोंकी वचन-जल और फलोंसे विधि-पूर्व्वक पूजा करी, तब मनके समान गतिवाले देवता लोग अर्ज्जुनका सम्मान करके अपने अपने मार्गोंसे चले गये। उस समय पुरुषसिंह अर्ज्जुनने आनन्दसे शस्त्र प्राप्त करके अपनेको कृतार्थ और पूर्ण आनन्दयुक्त माना।

४१ अध्याय समाप्त।

वनपर्व्वमें कैरातपर्व्व समाप्त हुआ।

अथ इन्द्रलोकाभिगमनपर्व्व।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, लोकपालोंके जानेके पश्चात् शत्रुनाशन अर्ज्जुन इन्द्र के रथका मार्ग देखने लगे, बुद्धिमान् गुड़ाकेश अर्ज्जुनके विचारते समय मातलियुक्त तेजसे भरा हुआ आकाशको अन्धकारसे शून्य बादलोंको फाड़ता और मेघके समान दिशाओंको पूरित करता हुआ, इन्द्रका रथ आया; उसमें खड्ग, भयानक शक्ति, उग्र-दर्शनवाली गदा, दिव्य प्रभाव वाले प्रास, महातेजवाली बिजली, अशनी, गोलोंके समेत यन्त्र, वायुसे चलनेवाली बन्दूक, और जिसमें भारी शरीरवाले कठिन जलते मुख-वाले सफेद अभ्रकके समान हाथी थे, महाशब्दवाले उपलोंके सहित जिसको बड़ेवेगवाले दस सहस्र घोड़े ले चलते थे, जिसके देखनेसे दृष्टि बन्द हो जाती थी। वह रथ मायासे भरा हुआ था, उसमें नीले कमलके समान वर्णवाली, सोनेके बांसमें बंधी हुई महातेजवाली ध्वजाको अर्ज्जुनने देखा। अनन्तर तपे हुए सोनेसे भूषित रथमें बैठे हुए सूतको देखकर महाबाहु अर्ज्जुन इन्द्र देवताही जानके वितर्क करने लगे; ऐसे विचारते हुए अर्ज्जुनके पास आकर मातलि नम्र भावसे कहने लगे।

मातलि बोले, हे इन्द्रपुत्र। श्रीमान् इन्द्र आपको देखना चाहते हैं, आप शीघ्रही इस इन्द्रके रथमें चढ़िये। आपके पिता, देवतोंमें श्रेष्ठ, इन्द्रने ऐसा कहा है, कि कुन्तीपुत्र अर्ज्जुनको सब देवता लोग देखें। यह देखिये! देवता, ऋषि, गन्धर्व्व और अप्सराओंके सहित इन्द्र आपको देखनेकी इच्छासे खड़े हैं। अब आप इन्द्रकी आज्ञासे इस लोकसे देव-लोकको चलिये। शस्त्र ग्रहण करके पुनः इसी लोकमें आइये।

अर्ज्जुन बोले, हे मातले! अब तुम इस रथ पर चढ़ो, जिसको महाभाग्यवान राजालोग महादक्षिणायुक्त राजसूय और अश्वमेध यज्ञोंसे भी नहीं प्राप्तकर सकते हैं। जिस उत्तम रथ पर देवता भी नहीं चढ़ सकते हैं, इस दिव्य रथको महा-तपस्याओंसे भी कोई देख और छू नहीं सकता, चढ़नेको तो कथाही क्या है। हे साधो! जब तुम इस पर चढ़कर घोड़ोंको ठीक करोगे, तब मैं भी उत्तम मार्ग पर महात्माके समान इस रथ पर चढ़ूगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इन्द्रके सारथी मातलि ऐसे वचन सुनकर शीघ्रता सहित रथ पर चढ़े और लगाम पकड़कर घोड़ोंको ठीक किया। तब कुरुनन्दन अर्ज्जुन प्रसन्न चित्त होकर गङ्गामें स्नान कर मन्त्र जपने लगे, अनन्तर विधि और न्याय पूर्व्वक पितरोंका तर्पण करने लगे, पश्चात् पर्व्वतराजसे प्रार्थना करने लगे, हे पर्व्वत! तुम स्वर्गकी इच्छा रखनेवाले साधु, पुण्यात्मा, पुण्यकर्म्मा मुनियोंके आश्रय हो। हे शैल। तुम्हारे प्रसादसे ब्राह्मण,

क्षत्रिय, और वैश्य स्वर्गमें जाकर दुःखरहित होकर देवतोंके सङ्ग आनन्द करते हैं,। हे पर्व्वतराज। हे महाशैल। हे मुनियोंके आश्रय! हे तीर्थवाले! हम तुम पर थककर सुखसे रहे। अब तुम्हारी आज्ञा लेकर जाते हैं, हमने तुम्हारे नीचेके भागमें अनेक कुञ्ज, नदी, झरने और पुण्यतीर्थ देखे, सुगन्धियुक्त फल खाये, तुमसे निकली सुगन्धिसे भरे हुए, अमृतके समान स्वादवाले झरनोंके जल पीये। हे पर्व्वत! हम तुम्हारे यहां वैसेही सुखमें रहे, जैसे पुत्र पिताकी गोदमें। हे शैलराज! हे प्रभो! अप्सराओंसे संयुक्त और वेद शब्दसे पूरित तुम्हारे शिखरपर हमने परम सुखसे निवास किया, हे शैल! हमने तुम्हारी कन्दराओंमें सर्व्वदा सुखसे विहार किया और अब हम जाते हैं, शत्रुओंके मारनेवाले अर्ज्जुन पर्व्वतसे इस प्रकार आज्ञा लेकर दिव्य रथके ऊपर ऐसे चढ़े जैसे सूर्य्य अपने रथपर प्रकाश करते हुए चढ़ते हैं। अद्भुत कर्म्मयुक्त दिव्यरूप उस रथपर चढ़कर बुद्धिमान अर्ज्जुन प्रसन्न मनसे आकाशको चले। परन्तु धर्म्म करनेवाले महात्मा मनुष्योंका रास्ता उन्होंने न देखा, उन्होंने आकाशमें देखा, कि अद्भुतरूपवाले सहस्रों विमान घूमते हुए फिरते हैं, वहां न सूर्य्य न चन्द्रमा और न अग्नि प्रकाश करते हैं। किन्तु पुण्यात्मा लोग [illegible] अपने प्रकाशसे आपही प्रकाशित हो रहे हैं, आगे जाकर पाण्डवने देखा कि, वहां न छोटे और बड़े प्रकाशमान तारा-लोक [illegible] हैं, जो सब रूप धारण किये हुए [illegible] कर रहे हैं। आगे जाकर देखा, कि [illegible] ऋषि सिद्ध और युद्धमें मरे हुए वीर [illegible] अपने तेजसे आपही प्रकाशित हो रहे हैं। [illegible] जाकर देखा, कि सहस्रों पुरुष अपने [illegible] जाते हैं। आगे जाकर [illegible] सहस्रों गन्धर्वोंको देखा। [illegible] ऋषि और अप्सराओंके गणोंके अपने प्रभावसे प्रज्वलित लोकोंको देखकर विस्मित हुए। मातलि सारथिसे इन सब लोकोंका वृतान्त पूछा और उसनेभी प्रसन्न होकर कहा, कि हे कुन्तीपुत्र! यह सब लोक पुण्यके प्रतापसे स्थित हैं, जिसको आप पृथ्वीपर तारा-रूपसे देखते थे। इसके अनन्तर अर्ज्जुनने वहां जयशील चार दांतवाले कैलाशपर्व्वतके शिखरके समान ऊंचे ऐरावत हाथीको इन्द्रलोकके द्वार पर देखा। जहां पुण्यात्मा मान्धाता रहते हैं, उस लोककोभी अर्ज्जुनने देखा। इसी रीतिसे स्वर्गलोकको देखते हुए यशस्वी अर्ज्जुनको इन्द्रकी अमरावती पुरी दीख पड़ी।

४२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, अर्ज्जुनने सिद्ध और चारणोंसे सेवित और सब ऋतुओंमें फूलनेवाले पवित्र वृक्षोंसे युक्त रमणीय अमरावती पुरीको देखा। वहां पवित्र पुष्पोंकी पवित्र सुगन्धिसे युक्त पवित्र वायु सेवित हो बुलानेवालोंके समान दिव्य पुष्पोंसे सेवित अप्सराओंसे सेवित दिव्य नन्दनवनको देखा, जो लोग तप और अग्नि-होत्रको न करने वाले अपुण्यात्मा, पापी युद्धसे भागनेवाले, यज्ञ व्रत और वेदसे हीन हैं, जिन लोगोंने तीर्थमें स्नान नहीं किया, यज्ञ निन्दक, यज्ञ और दान विमुख, क्षुद्र, यज्ञनाशक कदापि नहीं देख सकते हैं। जिस पवित्र वनको मदिरा पीनेवाले, गुरुकी सेजपर सोनेवाले, मांस खानेवाले, और दुरात्मा लोग कदापि नहीं देख सकते हैं। अर्ज्जुनने उस दिव्य गीतोंसे युक्त दिव्य नन्दनवनको देखते हुए इन्द्रकी प्यारी पुरीमें प्रवेश किया। वहां जाकर विशालबाहु अर्ज्जुनने देखा, कि सहस्रों विमान मनको इच्छानुसार घूम रहे हैं, सहस्रों बैठे हैं, और सहस्रों आनेको उपस्थित हैं। वहां सहस्रों गन्धर्व और अप्सराओंसे स्तुति [illegible] हुए और पुष्पोंकी सुगन्धिसे भरे हुए वायुसे [illegible]

और पुरातन देवता हो, अब देवतोंकी भक्तिसे उत्तम सिद्धिको प्राप्त हुए हो, हे महा-तेजस्वी ! हे शत्रुनाशन ! अब तुम स्वर्ग चलनेको सन्नद्ध हो जाओ, क्योंकि तुम्हें देवतों का भारी कार्य्य करना है। हे कौरव! तुम्हारे निमित्त मातलिके सहित रथ आने वाला है वहां चलकर तुमको हम दिव्य शस्त्र देंगे। उस पर्व्वतके ऊपर सब लोकपालोंको इकट्टे देखकर बुद्धिमान् कुन्तीपुत्र अर्ज्जुन आश्चर्य्य प्रकट करने लगे अनन्तर महातेजस्वी अर्ज्जुनने आये हुए, लोकपालोंकी वचन-जल और फलोंसे विधि-पूर्व्वक पूजा करी, तब मनके समान गतिवाले देवता लोग अर्ज्जुनका सम्मान करके अपने अपने मार्गोंसे चले गये। उस समय पुरुषसिंह अर्ज्जुनने आनन्दसे शस्त्र प्राप्त करके अपनेको कृतार्थ और पूर्ण आनन्दयुक्त माना ।

४१ अध्याय समाप्त ।

वनपर्व्वमें कैरातपर्व्व समाप्त हुआ ।

अथ इन्द्रलोकाभिगमनपर्व्व ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, लोकपालोंके जानेके पश्चात् शत्रुनाशन अर्ज्जुन इन्द्र के रथका मार्ग देखने लगे, बुद्धिमान् गुड़ाकेश अर्ज्जुनके विचारते समय मातलियुक्त तेजसे भरा हुआ आकाशको अन्धकारसे शून्य बादलोंको फाड़ता और मेघके समान दिशाओंको पूरित करता हुआ, इन्द्रका रथ आया, उसमें खड्ग, भयानक शक्ति, उग्र-दर्शनवाली गदा, दिव्य प्रभाव वाले प्रास, महातेजवाली बिजली, अशनी, गोलोंके समेत यन्त्र, वायुसे चलनेवाली बन्दूक, और जिसमें भारी शरीरवाले कठिन जलते मुख-वाले सफेद अभ्रकके समान हाथी थे, महाशब्दवाले उपलोंके सहित जिसको बड़े वेगवाले दस सहस्र घोड़े ले चलते थे, जिसके देखनेसे दृष्टि बन्द हो जाती थी। वह रथ मायासे भरा हुआ था, उसमें नीले कमलके समान वर्णवाली, सोनेके वांसमें बंधी हुई महातेजवाली ध्वजाको अर्ज्जुनने देखा। अनन्तर तपे हुए सोनेसे भूषित रथमें बैठे हुए सूतको देखकर महाबाहु अर्ज्जुन इन्द्र देवताही जानके वितर्क करने लगे; ऐसे विचारते हुए अर्ज्जुनके पास आकर मातलि नम्र भावसे कहने लगे।

मातलि बोले, हे इन्द्रपुत्र! श्रीमान् इन्द्र आपको देखना चाहते हैं, आप शीघ्रही इन्द्रके रथमें चढ़िये। आपको पिता, देवतोंमें श्रेष्ठ, इन्द्रने ऐसा कहा है, कि कुन्तीपुत्र अर्ज्जुनको सब देवता लोग देखें। यह देखिये देवता, ऋषि, गन्धर्व्व और अप्सराओंके सहित इन्द्र आपको देखनेकी इच्छासे खड़े हैं। अब आप इन्द्रकी आज्ञासे इस लोकसे देव-लोकको चलिये। शस्त्र ग्रहण करके पुनः इसी लोकमें आइये।

अर्ज्जुन बोले, हे मातले! अब तुम इस रथ पर चढ़ो, जिसको महाभाग्यवान राजालोग महादक्षिणायुक्त राजसूय और अश्वमेध यज्ञोंसे भी नहीं प्राप्तकर सकते हैं। जिस उत्तम रथ पर देवता भी नहीं चढ़ सकते हैं, इस दिव्य रथको महा-तपस्याओंसे भी कोई देख और ... नहीं सकता, चढ़नेकी तो कथाही क्या है। हे साधो! जब तुम इस पर चढ़कर घोड़ोंको ठीक करोगे, तब मैं भी उत्तम मार्ग पर महात्माके समान इस रथ पर चढ़ूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इन्द्रके सारथी मातलि ऐसे वचन सुनकर शीघ्रता सहित रथ पर चढ़े और लगाम पकड़कर घोड़ोंको ठीक किया। तब कुरुनन्दन अर्ज्जुन प्रसन्न चित्त होकर गङ्गामें स्नान कर मन्त्र जपने लगे, अनन्तर विधि और न्याय पूर्व्वक पितरोंका तर्पण करने लगे, पश्चात् पर्व्वतराजसे प्रार्थना करने लगे, हे पर्व्वत! तुम स्वर्गकी इच्छा रखनेवाले साधु, पुण्यात्मा, पुण्यकर्म्मा मुनियोंके आश्रय हो। हे शैल! तुम्हारे प्रसादसे ब्राह्मण,

क्षत्रिय, और वैश्य स्वर्गमें जाकर दुःखरहित होकर देवतोंके सङ्ग आनन्द करते हैं,। हे पर्व्वतराज! हे महाशैल! हे मुनियोंके आश्रय! हे तीर्थवाले! हम तुम पर थककर सुखसे रहे। अब तुम्हारी आज्ञा लेकर जाते हैं, हमने तुम्हारे नीचेके भागमें अनेक कुञ्ज, नदी, झरने और पुण्यतीर्थ देखे, सुगन्धियुक्त फल खाये, तुमसे निकली सुगन्धिसे भरे हुए, अमृतके समान स्वादवाले झरनोंके जल पीये। हे पर्व्वत! हम तुम्हारे यहां वैसेही सुखमें रहे, जैसे पुत्र पिताकी गोदमें। हे शैलराज! हे प्रभो! अप्सराओंसे संयुक्त और वेद शब्दसे पूरित तुम्हारे शिखरपर हमने परम सुखसे निवास किया, हे शैल! हमने तुम्हारी कन्दराओंमें सर्व्वदा सुखसे विहार किया और अब हम जाते हैं, शत्रुओंके मारनेवाले अर्ज्जुन पर्व्वतसे इस प्रकार आज्ञा लेकर दिव्य रथके ऊपर ऐसे चढ़े जैसे सूर्य्य अपने रथपर प्रकाश करते हुए चढ़ते हैं। अद्भुत कर्म्मयुक्त दिव्यरूप उस रथपर चढ़कर बुद्धिमान अर्ज्जुन प्रसन्न मनसे आकाशको चले। परन्तु धर्म्म करनेवाले महात्मा मनुष्योंका रास्ता उन्होंने न देखा, उन्होंने आकाशमें देखा, कि अद्भुतरूपवाले सहस्रों विमान घूमते हुए फिरते हैं, वहा न सूर्य्य न चन्द्रमा और न अग्नि प्रकाश करते है। किन्तु पुण्यात्मा लोग पुण्यसे प्राप्त अपने प्रकाशसे आपही प्रकाशित हो रहे हैं, आगे जाकर पाण्डवने देखा कि, वहा जो छोटे और बड़े प्रकाशमान तारा-लोक दीखते हैं, सो सब रूप धारण किये हुए प्रकाश कर रहे है। आगे जाकर देखा, कि राजोंमें ऋषि सिद्ध और युद्धमे मरे हुए वीर लोग अपने तेजसे आपही प्रकाशित हो रहे हैं। आगे जाकर देखा, कि सहस्रों पुरुष अपने अपने स्वर्गसे चले जाते हैं। आगे जाकर सूर्य्यके समान तेजवाले सहस्रों गन्धर्वोंको देखा। देवता, ऋषि और अप्सराओंके गणोंके अपने प्रभावसे प्रज्वलित लोकोंको देखकर विस्मित हुए। मातलि सारथिसे इन सब लोकोंका वृतान्त पूछा और उसनेभी प्रसन्न होकर कहा, कि हे कुन्तीपुत्र! यह सब लोक पुण्यके प्रतापसे स्थित हैं, जिसको आप पृथ्वीपर तारा-रूपसे देखते थे। इसके अनन्तर अर्ज्जुनने वहां जयशील चार दांतवाले कैलाशपर्व्वतके शिखरके समान ऊंचे ऐरावत हाथीको इन्द्रलोकके द्वार पर देखा। जहां पुण्यात्मा मान्धाता रहते हैं, उस लोककोभी अर्ज्जुनने देखा। इसी रीतिसे स्वर्गलोकको देखते हुए यशस्वी अर्ज्जुनको इन्द्रकी अमरावती पुरी दीख पड़ी।

४२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, अर्ज्जुनने सिद्ध और चारणोंसे सेवित और सब ऋतुओंमें फूलनेवाले पवित्र वृक्षोंसे युक्त रमणीय अमरावती पुरीको देखा! वहां पवित्र पुष्पोंकी पवित्र सुगन्धिसे युक्त पवित्र वायु सेवित ही बुलानेवालोंके समान दिव्य पुष्पोंसे सेवित अप्सराओंसे सेवित दिव्य नन्दनवनको देखा, जो लोग तप और अग्नि-होत्रको न करने वाले अपुण्यात्मा, पापी युद्धसे भागनेवाले, यज्ञ व्रत और वेदसे हीन है, जिन लोगोंने तीर्थमें स्नान नहीं किया, यज्ञ निन्दक, यज्ञ और दान विमुख, क्षुद्र, यज्ञनाशक कदापि नहीं देख सकते हैं। जिस पवित्र वनको मदिरा पीनेवाले, गुरुकी सेजपर सोनेवाले, मांस खानेवाले, और दुरात्मा लोग कदापि नहीं देख सकते हैं। अर्ज्जुनने उस दिव्य गीतोंसे युक्त दिव्य नन्दनवनको देखते हुए इन्द्रकी प्यारी पुरीमें प्रवेश किया। वहां जाकर विशालबाहु अर्ज्जुनने देखा, कि सहस्रों विमान मनकी इच्छानुसार घूम रहे हैं, सहस्रो बैठे है, और सहस्रो जानेको उपस्थित हैं। वहा सहस्रो गन्धर्व और अप्सराओंसे स्तुति सुनते हुए और फूलोंकी सुगन्धिसे भरे हुए वायुसे सेवित होकर

अर्जुनने उस नगरीमें प्रवेश किया। वहां अनेक देवता, गन्धर्व, सिद्ध और महर्षियोंने प्रसन्न चित्तसे पुण्य-कर्मकारी अर्जुनकी पूजा करी, अनन्तर इन्द्रकी आज्ञासे ऋषियोंके आशीर्वाद दिव्य बाजोंके शब्द सुनते हुए अर्जुनने शंख और नगारोंसे शोभित उस मार्गमें प्रवेश किया, जो जगत्में तारा देवमार्गके नामसे विख्यात है। अर्जुनके चारों ओर स्तुति करनेवाले संगमें थे। उस मार्गमें साध्य, अश्विनीकुमार, मरुत, विश्वदेव, सूर्य, वसु, रुद्र, निर्मल ब्रह्मर्षि, दिलीप आदि अनेक राजर्षि, तुम्बुरु, नारद और हाहा हूहू गन्धर्व मिले। कुरुनन्दन अर्जुनने इन सबसे यथायोग्य भेट करी, अनन्तर शत्रुनाशन अर्जुनने इन्द्रको देखा। तब महाबाहु कुन्तीनन्दन अर्जुनने उत्तम रथसे उतरकर अपने पिता देवराज इन्द्रको सोनेके दण्डवाले सफेद छत्रसे शोभित दिव्य गन्ध भरे हुए पंखेसे सेवित विश्वावसु आदि स्तुति करनेवाले गन्धर्व और ब्राह्मणोंमें मुख्य ऋक्, यजु, साम, वेदके मन्त्रोंसे स्तुति सुनते हुए साक्षात् देखा, तब कुन्तीनन्दनने उनके पास जाकर सिरसे प्रणाम किया, तब इन्द्रने अपने लम्बे और मोटे हाथोंसे उनको पकड़ा। तब इन्द्रने अपने घरमें देवता और ऋषियोंसे सेवित पवित्र इन्द्रासन पर अर्जुनको बिठलाया और शत्रुनाशन इन्द्रने इनके माथेको संघा अपने गोदमें बिठलाया। उस समय विनयसे नम्र अर्जुन इन्द्रकी आज्ञासे पवित्र पवित्र इन्द्रासनपर दूसरे इन्द्रके समान तेजस्वी बसकर बैठे। तब इन्द्रने पवित्र सुगन्ध भरे हुए हाथसे शान्तिपूर्वक प्रेमसे अर्जुनका उत्तम मुख छूआ, अनन्तर रोदा और बाण खींचनेसे कठोर सोनेके खम्भेके समान अर्जुनके लम्बे और सुन्दर हाथोंको छूने लगे। वज्रके लेनेके चिह्नयुक्त हाथोंसे शान्तिपूर्वक धीरे धीरे अर्जुनके हाथोंको स्पर्श किया। इन्द्र प्रसन्न हुए। अर्जुनको देखकर तृप्त नहीं होते थे। वृत्रनाशके इस कर्मसे मानो अर्जुनको आश्चर्य होता था, वे दोनों सभामें एक आसनपर बैठे हुए ऐसे शोभित हुए, मानो अमावसको सूर्य चन्द्रमा एकही समय उगे हैं। उस समय गानेमें कुशल तुम्बुरु आदि श्रेष्ठ गन्धर्व घृताची, मेनका, रम्भा, पूर्वचित्ती स्वयंप्रभा, उर्वशी, मिश्रकेशी, दण्डगौरी, वरूथिनी, गोपाली, सहजन्या, कुम्भयोनी, अजगरा, चित्तसेना और मीठेस्वर वाली सहा और अनेक अप्सरा आदि लेकर अनेक कमलनयनी अप्सरा लोग सिद्धोंके चित्तको प्रसन्न करनेके निमित्त, पतली कमर और कम्पित स्तनवाली, मन, बुद्धि और चित्त हरनेवाली कटाक्षवाली नाच और मीठे स्वरसे सामवेदके मन्त्रोंको गा रही थीं।

४३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, अनन्तर इन्द्रकी इच्छा जानकर देवता और गन्धर्वोंने शीघ्रता-सहित पाद्यसे अर्जुनकी पूजा करी। अनन्तर अर्जुनको पाद्य और आचमनीय देकर इन्द्रके स्थानमें पहुंचा दिया। अर्जुन इस प्रकारसे अपने पिताके स्थानमें सुखसे रहते हुए चलाने और रोकनेकी क्रियाके समेत शस्त्रोंको सीखने लगे। इन्द्रका प्यारा दुःखसे सहने योग्य वज्र नामक शस्त्र, मेघ और मयूरके समान लक्षणवाला महा अशनी शस्त्रको ग्रहण किया। इस प्रकार सुखपूर्वक इन्द्रकी आज्ञासे पांच वर्ष अर्जुन वहां रहे, अनन्तर अस्त्रोंको सीखकर कुन्तीपुत्रने अपने भाईयोंको स्मरण किया, तब समय आनेपर शस्त्र सीखे हुए अर्जुनसे इन्द्रने कहा, कि हे कुन्तीनन्दन ! अब तुम चित्रसेन गन्धर्वसे नाचना और गाना सीखो और जो बाजे मर्त्यलोकमें नहीं हैं, उनको अच्छे प्रकार सीखो; उससे तुम्हारा कल्याण होगा। ऐसा कहकर इन्द्रने अपने मित्र चित्रसेनको सौंप दिया। अर्जुन उनके पास जाकर सुखपूर्वक रहने लगे। यद्यपि

उनसे गीत, नाच और बाज सीखे, तौभी जुएके अभिमानको स्मरण करके आनन्दको न प्राप्त हुए, उनके चित्तमें दुःशासन और सुबलके पुत्रके मारनेका क्रोध भरा ही रहता था, तौभी नाचने गानेमें कभी कभी अत्यन्त प्रेम उत्पन्न होनेके कारण नाचने गाने और बजानेकी विधिको प्राप्त किया। अर्ज्जुनने नाचने गानेके अनेक गुण और बजानेके सब भेदोंकोभी प्राप्त करनेपर सुख न पाया और निरन्तर शत्रुनाशन अर्ज्जुन अपने भाई और कुन्ती माताहीका स्मरण रहे।

४४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, इन्द्रने चित्रसेन गन्धर्व्वसे कहा, कि अर्ज्जुनके नेत्र उर्व्वशीसे लगे जान पड़ते हैं, अतएव तुम अप्सराओंमें श्रेष्ठ उर्व्वशीको लेकर अर्ज्जुनके पास जाओ, अस्त्र प्राप्त किये हुए और पूजित अर्ज्जुनको स्त्री पुरुषके संयोगसे सुख हो। इन्द्रकी ऐसी आज्ञा सुनकर ऐसाही करूंगा, यह कहकर गन्धर्व्वराज अप्सराओंमें उत्तम उर्व्वशीके घर गये। सुखसे बैठी हुई उर्व्वशीने चित्रसेनको देखकर प्रसन्न चित्तसे उनका स्वागत किया, तब चित्रसेन हंसकर यों बोले, कि हे सुश्रोणि! तुमको यह भली भांति ज्ञात हो, कि मैं देवतोंके स्वामी महाराज इन्द्रसे भेजा हुआ यहां आया हूं। जो मनुष्य और देवतोंमें अपने स्वभावहीके गुण लक्ष्मी, शील, रूप, व्रत, दान, बल, वीर्य्य और तेजमें प्रसिद्ध है, जो शरीर विद्या ऐश्वर्य्यादिसे भरा हुआ है, जो किसीकी निन्दा नहीं करता है, जिसने अङ्ग, उपाङ्ग और उपनिषदोंके सहित चारों वेद और पांचवें पुराणको पढ़ा है, जिसने पढते समय गुरुसे सुश्रुषा सहित आठ गुणवाली बुद्धिको प्राप्त किया है, जिसने ब्रह्मचर्य्य और वीरताको पाया है, जो इन्द्रके समान सबकी रक्षा करनेवाला, अभिमानी करके न कहनेवाला, लक्षको देखनेवाला प्रियबादी है, जो अन्न और पीनेकी बस्तुओंको वर्षानेवाला, सत्यबादी पूजित, रूपवान, अहङ्कार रहित, भक्तोंपर कृपा करनेवाला सुन्दर, युद्धमें स्थिर है, जो प्रशंसा करने योग्य अपने गुणोंसे इन्द्र और वरुणके समान है, उस अर्ज्जुन वीरको तुम भी जानती हो, वह तुम्हारे चरणका सेवक बना है। हे कल्याणि! इस हेतुसे वह दीन भी तुम्हारा संग करके स्वर्गके फलको पावे, अतएव इन्द्रकी आज्ञासे ऐसाही करो।

अनिन्दित उर्व्वशी चित्रसेनके यह बचन सुनके हंसकर अपना बहुत मान समझ कर प्रेम पूर्व्वक चित्रसेनसे ऐसा बोली, हे चित्रसेन तुमने जो अर्ज्जुनके यह सब गुण कहे, इन सब गुणोंको सुनकर मैं पहिलेहीसे उसके निमित्त कामसे व्याकुल हो रही हूं। अब मैं अर्ज्जुनसे प्रेम करूं इससे अधिक आनन्द और क्या होगा? मैं इन्द्र और तुम्हारी आज्ञा और अर्ज्जुनके गुणोंसे काममें व्याकुल हुई हूं, तुम जाओ मैं अर्ज्जुनके स्थानमें जाकर अवश्य इस सुखको प्राप्त करूंगी।

४५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कृतकृत्य गन्धर्व्वको उत्तम हंसनेवाली उर्व्वशीने बिदा करके अर्ज्जुनसे मिलने की इच्छासे स्नान किया और कामके बाण और अर्ज्जुनके रूपसे पीड़ित उर्व्वशीने प्रकाशमान उत्तम आभूषण और हृदयप्रिय गन्धमाला धारण करी, अनन्तर कामसे अत्यन्त व्याकुल चित्तसे दिव्य बिस्तरके पलङ्ग पर बैठकर चित्तके संकल्प और मनोरथोंसे अबध्य मनबाली उर्व्वशी अर्ज्जुनको अपने पास आया हुआ जानकर बिहार करने लगी, अनन्तर जब भारी अन्धकार सन्ध्याके समय चन्द्रमा उदय भया तो उत्तम वर्णवाली उर्व्वशी अर्ज्जुनके स्थानको चली। कोमल गुंथी हुई

लम्बी कुमुद आदि फूलोंसे शोभित उस सुन्दरीकी वेणी उस समय अत्यन्त शोभित होती थी; भौंहोंके चलने, मीठी बोली, शोभा और मुखके भोलेपनसे मानों चन्द्रमाको लजाती हुई चली, दिव्य चन्दनादि सुगन्धि और हारसे शोभित उसके दोनों कुच कम्पित होते थे, कुच अत्यन्त भारी होनेके कारण चरण चरणपर नीची होकर चलती थी, विचित्र रोमराजिसे शोभित उसका मध्य शरीर अत्यन्त शोभा दे रहा था, पहाड़के समान भारी ऊंचे और कठोर नितम्ब करधनीसे शोभित कामदेवके स्थानके ऐसे भान होते थे, जिनको देखकर दिव्य ऋषियोंका मनभी चलित हो जाय. ऐसी जङ्घा कलङ्करहित सी दिखलाई देती थी, गम्भीर गुल्फवाले चरण तांबेके समान लाल अङ्गुली कूर्मके समान ऊंचीपांवपीठ पायजेवके शब्दसे अत्यन्त शोभा दे रही थी. थोड़ा मद्यपान सन्तोष और कामदेवके विविध विलासोंसे उर्व्वशी देखनेके योग्य बनी थी। स्वर्गमेंभी देखनेके योग्य शरीरवाली वह विलासिनी सिद्ध, चारण, गन्धर्व्वोंको आश्चर्य देती हुई चली; बादलके रङ्गवाले उस पतले वस्त्रोंमें वह ऐसी शोभित हुई, जैसे पतले मेघके बीचमें आकर आकाशमें चन्द्रमाकी कला चलती है। क्षण भरमेंही उत्तम हंसनेवाली, मन और पवनके समान गतिवाली उर्व्वशी अर्ज्जुनके स्थानमें पहुंची। वहां द्वारपालोंने उसको आई हुई देखकर जाके अर्ज्जुनसे निवेदन किया, हे नरश्रेष्ठ! उत्तम नेत्रवाली उर्व्वशी आपके मनोहर और निर्म्मल स्थानमें शङ्कितचित्त होकर इस रात्रिमें आयी है, अर्ज्जुनने उर्व्वशीको देखते ही लज्जाके मारे अपने नेत्र बन्द कर लिये और प्रणामकरके गुरुके समान पूजा की।

अर्ज्जुन बोले, हे देवि! हे अप्सराओंमें श्रेष्ठ उर्व्वशी! हम तुमको शिरसे प्रणाम करते हैं, हम तुम्हारे दास उपस्थित हैं, आज्ञा करो!

अर्ज्जुनके ऐसे वचन सुनकर उर्व्वशी संज्ञासे रहित होगयी और गन्धर्व्वके सब वचन कहने लगी। उर्व्वशी बोली हे पुरुषोत्तम! मुझसे चित्रसेनने जैसा कहा और मैं जिस हेतु यहां आयी हूं सो सब कहती हूं, हे पुरुषश्रेष्ठ! मनको हरनेवाले इन्द्रके उत्सवमें जहां तुम, रुद्र, आदित्य, अश्विनीकुमार, वसु, महर्षिसमूह, राजर्षिश्रेष्ठ सिद्ध, चारण, और महासर्पोंके समूहके सामने जो तुम्हारे आनेके कारणसे उत्सव हुआ था, जहां सबलोग ऋद्धियोंसे प्रकाशमान, अग्नि, सूर्य्य और चन्द्रमाके समान शरीरवाले अपने अपने स्थान और मानके अनुसार बैठे थे हे इन्द्रनन्दन! हे विशालनेत्र! जहां गन्धर्व्व लोग बीन बजा रहे थे, औ उत्तम मनोहारी गीत गाये जाते थे, जहां उत्तम अप्सरा नाच रही थीं, हे कुन्तीनन्दन! वहां तुम विना पलक लगाये केवल मेरी ओर देख रहे थे, उस पवित्र देवतोंके समागममें तुम्हारे पिताकी आज्ञा पाकर सब देवता लोग अपने अपने स्थानको गये। हे शत्रुनाशन! तिसी प्रकारसे सब अप्सराभी बिदा होकर अपने स्थानको गयीं और सबही बिदा होकर अपने अपने स्थानको चले गये। तब इन्द्रकी आज्ञासे चित्रसेन गन्धर्व्वने मेरे घरमें जाकर ऐसा कहा कि हे उत्तम वर्णवाली! तुम्हारे लिये इन्द्रने हमको भेजा है, तुम अपना, मेरा और इन्द्रका प्रियकार्य्य करो, हे सुश्रोणी! तुम इन्द्रके तुल्य युद्धमें वीर उदार गुणसे भरे हुए अर्ज्जुनको वरण करो, उनको और तुम्हारे पिताकी आज्ञा पाकर तुम्हारी सुश्रूषा करनेको तुम्हारे स्थानमें आयी हूं। हे पापरहित शत्रुनाशन! मैं तुम्हारे गुण और कामदेवसे व्याकुल हुई हूं, और मेरीभी यही इच्छा थी।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, अर्ज्जुनने उसके ऐसे वचन सुनकर लज्जासे भरकर अपने हाथोंसे कानोंको बन्दकर लिया और ऐसा कहने लगे,

हे भामिनि। हे वरानन। जो तुम कह रही हो, सो हमारे सुननेके योग्य नहीं है, क्योंकि तुम निश्चय करके हमारी गुरुपत्नीके समान हो, जैसे शची, कुन्ती और माद्री हैं, तुमभी हमको वैसीही हो, हे कल्याणि। इसमें कोईभी विचार और सन्देहका स्थान नहीं है, मैन जो तुमको सभामें भलो भांत देखा था, उसका कारण सुनो, मै यह विचारता था, कि यही कौरववंशकी माता है। हे फूले हुए कमलके समान नेत्रवाली। हे शुभे। हे अच्छे हंसनेवाली। यही विचारकर मैं तुम्हारे प्रसन्न मुखको देख रहा था। हे कल्याणि। हे अप्सरा! तुम मुझको दूसरे प्रकार देखने योग्य नहीं हो। तुम मुझे गुरुसेभो गुरु हो, क्योंकि हमारा वंश तुमहीसे चला है।

उर्व्वशी बोली, हे कुरुनन्दन वीर। हमारा विवाह किसीसे नहीं हुआ है, इस हेतु तुम मुझको माताके समान कहने योग्य नही हो। क्योंकि पुरुके वंशके पुत्र और पोते अपने तपके बलसे जो यहां आये हैं, सो सब हमसे विहार करते हैं, वे लोग कुछ विचार नही करते। हे इच्छापूरन करनेवाले! कामदेवसे व्याकुल मत दुःखनो मुझको तुम जानकी आज्ञा मत दो। अर्ज्जुन बोले, हे उत्तम मुखवाली। हे आनन्दिते। हम जो तुमसे कहते हैं, सो सब दिशाओंके देवता तथा तुमभी सुनो। हे पापरहिते। मुझको जैसे माद्री, शची, और कुन्ती है, तैसेही तुमभी हो, क्योंकि तुमसे हमारा वंश चला है, तुम हमको मातासेभी अधिक हो। हे उत्तम वर्णवाली! हम तुमको शिरसे प्रणाम करते हैं। हम तुम्हारे दास हैं, तुम हमको माताके समान रक्षा करो।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, अर्ज्जुनके ऐसे वचन सुनकर उर्व्वशीको महाक्रोध हुआ और भौहें टेढ़ी करके कांपती हुई अर्ज्जुनको शाप देने लगी। उर्व्वशी बोली, मैं तुम्हारे पिताकी आज्ञासे कामके वशमें होकर आपही तुम्हारे घरमें आयी थी और तुमने हमारा सम्मान नहीं किया। इसवास्ते तुमको मै शाप देती हूं, कि तुम स्त्रियोंके बीचमें मानसे रहित होकर नपुंसकके समान नाचनेवाले बनोगे और सब लोग तुम्हें यह कहेंगे, कि यह पुरुष नहीं है। इसप्रकारसे अर्ज्जुनको शाप देकर फड़कते हुए ओठवाली उर्व्वशी सांसलेती हुई पुनः शीघ्रही अपने घरको लौट आई। अनन्तर प्रातःकाल होनेसे शत्रुनाशन पाण्डुपुत्र अर्ज्जुनने शीघ्रतासे चित्रसेन गन्धर्व्वको बुलाकर रातका सब समाचार जिस प्रकार उर्व्वशीने शाप दिया था, जैसेका तैसा कह दिया और चित्रसेन गन्धर्व्वने सब समाचार इन्द्रसे कहा, तब हाथीके बाहनवाले इन्द्रने अर्ज्जुनको एकान्तमें बुलाकर शान्ति पूर्व्वक हंसते हसते ऐसे बचन कहे, हे तात। हे सत्तम। तुमको पाकर कुन्ती अच्छे पुत्रकी माता कहाई। हे महाभुज। हे मानव। तुमने अपने धैर्य्यसे ऋषियोंको भो जीत लिया। हे तात! उर्व्वशीने जो तुमको शाप दिया है, उससे तुम्हारा कल्याणही होगा। हे वीर! हे पापरहित। तुम लोगोंका वनवासके तेरहवें वर्षमें पृथिवीमें छिपकर रहना होगा, इस शापका फल वहीं प्राप्त होगा वहीं नपुंसकता और नाचनेके वेषको एकवर्षतक धारण करके पुनः तुम पुरुष होगे। आगे शत्रुनाशन अर्ज्जुन इन्द्रके ऐसे वचन सुनकर परम प्रसन्न हुए और शापके सोचको भूल गये। और यशस्वी चित्रसेन गन्धर्व्वके सङ्गमें रहकर स्वर्गमें महात्मा अर्ज्जुन आनन्द करने लगे। जो पुरुष पाण्डुपुत्र अर्ज्जुनके इस चरित्रको सदा सुनते हैं, उनका चित्त कहीभी पापके कामोंमें नहीं लगता। देवराज इन्द्रकेपुत्र अर्ज्जुनका यह पवित्र चरित्र सुनकर राजा लोग पाप, क्रोध,

दम्भ आदि सब पापोंसे छूटकर स्वर्गसे आनन्द करते हैं।

४६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कि एक समय इन्द्रको देखनेकी इच्छासे घूमते हुए महर्षि लोमश इन्द्रके घर गये, वहां जाकर महामुनिने इन्द्रको नमस्कार किया और उनके आधे आसन पर बैठे हुए अर्जुनको देखा, तब इन्द्रसे दिये हुए आसन पर ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ लोमश महर्षियोंसे पूजित होकर बैठे। अनन्तर उन्होंने यह विचारा, कि यह कुन्तीका पुत्र क्षत्री किसप्रकार इन्द्रके आसन पर बैठा है। इसने कौन पुण्य किया था, जिससे लोकोंको जीत लिया, कौनसे पुण्यसे यह देवतोंसे नमस्कार करने योग्य स्थानको प्राप्त किया? वृत्रासुरके नाशक शचिके स्वामी इन्द्रने लोमशके मनकी बात जानकर हंसकरके ऐसा कहा। हे महर्षि! तुम्हारे मनमें जो सन्देह हुआ है, उसका कारण सुनो, जिसको तुम मनुष्य देखते हो, यह मनुष्य नहीं है। हे महर्षि! यह महाभुज कुन्तीमें हमारे वीर्य्यसे उत्पन्न भया है, अस्त्र सीखने और किसी कारणसे यहां आया है। हे ब्रह्मण! हमको आश्चर्य्य है, कि आप इस पुराने ऋषिको भी नहीं जानते है। हम इसका सब वृत्तान्त कहते है, आप सुनिये। जो पुराने ऋषियोंमें उत्तम थे, वेही दोनों अब कृष्ण अर्जुन हुए है, यह दोनो तीनो लोकमें प्रसिद्ध है, सोई नर और नारायण ऋषि किसी कार्य्यके वशसे पृथ्वीमें अवतार लेकर पवित्र लक्ष्मीको धारण कर रहे हैं। हे विप्र! जिस पवित्र आश्रमको देवता और महात्मा मुनि भी नहीं देख सकते है, वही पवित्र जगत-विदित वदरिकाश्रम इन नरनारायनका स्थान है, जहांसे सिद्ध चारणोंसे सेवित गङ्गा चली है। यह दोनों कार्य्यवश होकर पृथ्वीमें उत्पन्न भये है। हे ब्रह्मर्षि! यह दोनों महातेजस्वी महाबलवान भूमिके भारको उतारेंगे। जो निबातकवच नामक राक्षस वरदानसे मोहित होकर अत्यन्त उन्नत हुए हैं, और जो हमारे अप्रिय कार्य्योंमें प्रवृत्त है, जो वरदान पाकर देवतोंको मारनेका उपाय करते है, और देवतोंको कुछ नही समझते है, जो महाबलवान घोर दनुके पुत्र पातालमें रहते हैं, जिनसे युद्ध करनेमें कोई भी देवतोंका झुण्ड समर्थ नहीं है, सो महात्मा विष्णु नामक कपिलदेव थे, वही जीतनेके अयोग्य हरि पृथ्वीमें उत्पन्न हुए है, हे विभो! पहले समयमें सागरको खोदते हुए महाबलवान सगरके पुत्रोंको रसातलमें मारा था, वेही महात्मा अर्जुनको संग लेकर युद्धमें हमारा महत् कार्य्य करेंगे। हे द्विजोत्तम! इसमें कोई सन्देह नहीं, कि वे महातड़ागमें जाकर सर्पके समान निबातकवच राक्षसोंको दर्शन ही मात्रसे नष्ट कर सकते हैं, परन्तु तेजके समूह मधुनाशक कृष्णको थोड़े कार्य्यके वास्ते जगाना अच्छा नहीं, क्योंकि वे जागकर सब जगत्को भस्म कर देंगे। अतएव यही वीर अर्जुन उनके मारनेमें समर्थ है, उनको मारकर यह पृथ्वीमें जायंगे। इस हेतु तुम हमारी आज्ञासे मनुष्य लोकमें जाओ और वहां काम्यक-वनवासी वीर युधिष्ठिरसे भेंट करो और हमारे वचनसे सत्यवादी धर्म्मात्मा युधिष्ठिरसे यह कहना, कि तुम अर्जुनके निमित्त कुछ सोच मत करो, वह शीघ्रही शस्त्र सीखकर आवेगा, क्योंकि बिना अधिक बाहुबल और शस्त्रोंमें अभ्यासके किये कोईभी भीष्म और द्रोणादिकोंको युद्धमें जीतनेको समर्थ नहीं है, अब महाबाहु और महामनस्वी अर्जुन शस्त्रोंको सीखकर दिव्य नाचने गाने और बाजेकी विद्याके पार होगये हैं। हे नरनाथ! जबतक वह यहां आवें, तबतक आपभी सब भाइयोंके समेत उत्तम तीर्थोंको देखिये। हे शत्रुनाशन! हे राजेन्द्र!

पुण्य तीर्थोंको देखकर दुःख और पापसे रहित होकर सुखसे राज्यको भोग करेंगे। हे द्विजश्रेष्ठ। आप तपरूपी बलके समेत पृथ्वीमें घूमते हुए उनकी रक्षा कीजियेगा। हे ब्राह्मणश्रेष्ठ। नीचे ऊचे दुःखसे जानने योग्य पर्व्वतोंमें घोर राक्षसलोग रहते हैं, आप उनसे उनको बचाइये। जब इन्द्र ऐसा कह चुके तब अर्ज्जुनभी विनयपूर्व्वक लोमश ऋषिसे बोले, हे ऋषि। आप अवश्य पाण्डुनन्दन राजाकी रक्षा कीजिये, महाराज जैसे तीर्थोंमें घूम सकें और दान दे सकें, आप वैसाही यत्न कीजिये।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, महा तपस्वी लोमश हम ऐसाही करेंगे, यह प्रतिज्ञा करके काम्यक वनकी इच्छासे पृथ्वीको चले काम्यक वनमें जाकर शत्रुनाशन कुन्तीपुत्र धर्म्मराज युधिष्ठिरको भाई और तपस्वियोंके सङ्ग बैठे हुए देखा।

४७ अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजय बोले, हे विप्र! अपार तेजवाले अर्ज्जुनका यह अद्भुत कर्म्म सुनकर महा बुद्धिमान धृतराष्ट्रने क्या किया? श्रीवैशम्पायन बोले, हे राजन्। ऋषियोंमें श्रेष्ठ व्यासदेवसे अर्ज्जुनकी इन्द्रलोक-यात्रा सुनकर अम्बिकाके पुत्र राजा धृतराष्ट्र सञ्जयसे ऐसा कहने लगे।

धृतराष्ट्र बोले, हे सूत! हे सारथे! मैंने बुद्धिमान अर्ज्जुनका सब कर्म्म सुना। कहो तुमनेभी कहीं कुछ सत्य सत्य सुना है? मूर्ख बुद्धिवाला दुर्म्मति केवल स्त्री प्रसंगमें निश्चयवाला मेरा पापी पुत्र समस्त पृथ्वीका नाश करेगा। जिस महात्मा युधिष्ठिरकी वाणी सदाही सत्य है, जिसकी ओर लड़नेवाला अर्ज्जुन है, वही युधिष्ठिर तीनों लोकका राजा होगा। पङ्खवाले तलवारयुक्त तेज वाणोंको चलाते समय अर्ज्जुनके आगे युद्धमें मृत्युभी नहीं ठहर सकता है, मेरे दुष्टात्मा पुत्र सबही मृत्युके वशमें हुए हैं, जिनका युद्ध अजेय पाण्डवोंसे होनेवाला है। मैं जानता हूं, कि गाण्डीव धनुषधारी अर्ज्जुनके समान कोईभी लड़नेवाला योद्धा नहीं है। मै रात्रि दिन यही सोचता रहता हू, कि कौन सा वीर रथपर चढ़कर अर्ज्जुनसे लड़ेगा? यदि भीष्म और द्रोणाचार्य्य हम लोगोंसे कर्णके समेत फिर जाय तो जगतमें महासन्देह होगा और हमारी जयभी नही होगी और याद यह उनसे लड़ेंभी तोभी विजयमें सन्देहही है; क्योंकि कर्ण दयालु और अनुचितकर्त्ता है, और गुरु द्रोणाचार्य्य बूढ़े हैं। उधर अर्ज्जुन पूरा पराक्रमी, उद्योगी, बलवान और महाक्रोधी है। सब पाण्डव लोगोंसे महायुद्ध होकर हमारी हानि होगी, क्योंकि ये सब लोग सब अस्त्र जाननेवाले वीर और यशस्वो हैं। वह लोग युद्धमें जीतने योग्य नहीं हैं, इस हेतुसे सब राज्यकी इच्छा करते हैं। अब मुझे यह निश्चय होगया, कि जबतक अर्ज्जुन वा यह सब न मारे जायगे, तबतक शान्ति न होगी परन्तु अर्ज्जुनको मारने और जीतनेवाला जगतमें कोई नहीं है। किस प्रकार उसका यह क्रोध शान्त हो और हमसे सन्धि हो। उस इन्द्रके समान वीरने खाण्डव बनमें अग्निको सन्तुष्ट किया था, उसीने राजसूय यज्ञमें सब राजोंको जीता था। हे सञ्जय! हे तात! जिस प्रकार वज्र पहाड़ोंका नाश करता है, वैसेही अर्ज्जुनके छोड़ हुए वाण मेरे सब पुत्रोंको नाश करेंगे। जैसे सूर्य्यकी किरण जगतको जलाती है, वैसेही अर्ज्जुनके हाथसे छूटे हुए वाण मेरे पुत्रोंका नाश कर देंगे। मुझको अभीसे अर्ज्जुनके रथके शब्दसे डरी हुईके समान अपनी सेना दोखती है। ईश्वरने वाणोंको निकालते और चलाते समय युद्धमें स्थिर रहनेवाले अर्ज्जुनको ब्रह्माने सर्व्वनाश करनेवाला

आततायी काल बनाया है, हम जिस प्रकार उसको जीत सकें, सो उपाय तुम कहो।

४८ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, हे राजन्! हे पृथ्वीनाथ! आपने जो दुर्य्योधनके विषयमें कहा सो सब सत्य है, यह कदापि झूठ नहीं होगा। यशस्विनी धर्म्मपत्नी द्रौपदीको सभामें आयी हुई देख कर तेजस्वी पाण्डव महाक्रोधके वशमें हुए हैं, दुःशासनके उन कठोर विग्रहकारी बचनों और कर्णकी वाणियोंको स्मरण करके मेरी बुद्धि नष्ट सी हुई जाती है। हे महाराज! मैंने यह सुना है, कि ११ रूपधारी शिवको अर्ज्जुनने महायुद्धमें धनुषसे प्रसन्न किया है, जटाधारी सब देवतोंके स्वामी भगवान शिव उनकी भक्ति जाननेकी इच्छासे आपही किरातका वेष धारण करके युद्ध करनेको आये थे। अनन्तर कौरव सिंहपराक्रमी अच्युत अर्ज्जुनसे मिलनेको सब लोकपाल आये थे, उन्होंने सब अस्त्र उनको दिये हैं, हे महाराज! अर्ज्जुनको छोड़कर और कोई भी पुरुष जगत्में ईश्वरके साक्षात दर्शन नहीं कर सकता, हे राजन्! जो आठ मूर्त्तिवाले शिवसे भी युद्धमें नहीं हारे, उस अर्ज्जुनसे लड़नेको समर्थ कोई भी वीर नहीं दीखता। यह आपत्ति सभामें द्रौपदीको खींचनवाले पाण्डवोंको क्रोधित करनेवाले तुम्हारे पुत्रोंने उत्पन्न की है। यह आपत्ति घोर, कठिन और रोमको खड़ी करनेवाली है, जब दुर्य्योधनने द्रौपदीको अपनी जङ्घा दिखाई थी, तब क्रोधसे फड़कते हुए ओठवाले भीमसेनने सत्य-वाणी कही थी कि, रे पापी! मैं तेरह वर्ष बीते घोर वेगवाली गदासे तेरी जङ्घाको तोड़ूंगा। तैंने जुआरूपी पाप किया है। वे सब लोग शस्त्र चलानेमें श्रेष्ठ महातेजस्वी सब शस्त्रोंको जाननेवाले देवतोंसे भी हारने योग्य नहीं हैं। मुझको निश्चय है, कि वे लोग अपनी स्त्रीको सभामें देखकर बड़े क्रोधित हुए हैं, सो युद्धमें तुम्हारे पुत्रोंका नाश करेंगे।

धृतराष्ट्र बोले, हे सूत! कठोर बात बोलनेवाले कर्णने क्या बुरा काम किया, जो द्रौपदीको सभामें बुलाकर यह वैर उत्पन्न किया? मेरे पापी पुत्र अब भी बैठे रहे, क्योंकि उनका बड़ा भाई गुरु विनयके समेत स्थिर है, दुष्ट दुर्य्योधन मुझको आंख और चेष्टासे रहित देख करभी मेरे वचनको नहीं सुनता, और जो कर्ण, शकुनि, आदि मूर्ख और पापी मन्त्री हैं सो उसके दोषोंको निरन्तर बढ़ातेही चले जाते हैं। सामान्य रूपसेभी यदि अर्ज्जुन बाणोंको छोड़ें, तो मेरे पुत्र भस्म हो सकते हैं, और क्रोधकी तो कहाही क्या है। अर्ज्जुनके हाथ और महाधनुषसे छूटे हुए दिव्यमन्त्रसे मन्त्रित बाण देवतोंकोभी नाश कर सकते हैं, जिसके साक्षात् तीनलोकके नाथ कृष्ण मन्त्री, रक्षा करनेवाले और मित्र हैं, वह किसको नहीं जीत सकता? हे सञ्जय! यह बड़े आश्चर्य्यकी बात है, जो सुनते हैं, कि अर्ज्जुनने अपने हाथसे महादेवसे युद्ध किया, और सब लोगोंके देखते हुए कृष्णकी सहायतासे जो अग्निको सन्तुष्ट किया था, सो तुम जानतेही हो। मुझे निश्चय है, कि मेरे पुत्र शकुनि आदि अपने मन्त्रियोंके समेतभी भीम, अर्ज्जुन और कृष्णके क्रोधित होनेपर स्थिर न रह सकेंगे।

४६ अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजय बोले, हे महामुने! राजा धृतराष्ट्रने वीर पाण्डवोंको वनको निकालकर जो कुछ सोच किया, सो सब व्यर्थही था, क्योंकि महारथ पाण्डवलोग क्रोधसे पीड़ित होकर क्रोध करानेवाले अल्पबुद्धि राजपुत्र दुर्य्योधन पर कैसे क्षमा कर सकते थे। अब आप हमसे यह कहिये, कि पाण्डवलोग वनमें रहकर क्या

भोजन करते थे ? क्या वह लोग नगरको वस्तु खाते थे, अथवा वनमें उत्पन्न हुई ?

श्रीवैशम्पायनजी बोले, वनमें उत्पन्न हुए अन्न और शुद्ध वाणोंसे मारे हुए हरिण ब्राह्मणोंको भोजन कराकर पुरुषसिंह पाण्डवउन्होंको खाते थे, महावाणधारी महावीर पाण्डव लोगोंको वनमें वसते हुए जानकर, अग्निहोत्री और अनग्निहोत्री अनेक ब्राह्मण उनके सङ्ग रहते थे, महाराज युधिष्ठिर अपने पवित्र वाणोंसे अनेक खाने योग्य वनमें रहनेवाले हरिणोंको मार कर वेदपाठी महात्मा सहस्रों ब्राह्मण और दशमोक्ष जाननेवाले महात्माओंको भोजन देते थे। पहले ब्राह्मणोंको तृप्त करके तव आप भोजन करते थे उनके समाजमें कोई भी बुरे रङ्गवाला, रोगी, दुवला, वलहीन, दुखी और डराक नहीं दीखता था। महाराज धर्म्मराज युधिष्ठिर अपने जाति भाइयोंको प्यारे पुत्रके समान और सहोदर भाइयोंको जातिके सहित पालते थे। यशस्विनी द्रौपदी अपने सब पतियोंको माताके समान भोजन कराकर पीछे आप भोजन करती थी। पूर्व्वकी ओर राजा, दक्षिणको ओर भीमसेन और अर्ज्जुन पश्चिम तथा उत्तरकी ओर नकुल और सहदेव धनुषको लेकर सदाही हरिणोंका नाश करनेको जाते थे, इस प्रकार उन चारों पाण्डवोंने अर्ज्जुनके विना पढते, जीतते और यज्ञ करते पाच वर्ष विताये।

५० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! उनके मनुष्योंसे अधिक और अद्भुत चरित्र सुनकर राजा धृतराष्ट्र चिन्ता, शोक और क्रोधसे आकुल होगये। हे पुरुषसिंह! हे जन्मेजय! अम्बिकापुत्र राजा धृतराष्ट्र लम्बी और गर्म्म श्वास लेकर सञ्जयसे मन्त्रणा करते हुए ऐसे बोले, हे सूत! रात और दिनको एक एक क्षणमात्रभी मुझको शान्ति प्राप्त नहीं होती है, मैं रातदिन उस जुएकी अनीतिहीको स्मरण करता हूं। उन सब भाइयोंका न सहने योग्य तेज, धैर्य्य, धारणा शक्ति और परस्परकी प्रीति ऐसी है, जो पुरुषोंमें नहीं होती। तिनमें भी देवतोंके पुत्र देवतोंके समान तेजस्वी नकुल और सहदेव युद्धमें दृढ़ धनुषवाले, दूरतक वाण फेंकनेवाले, सदाही युद्धमें स्थिर रहनेवाले, जल्दी वाण चलानेवाले, महाक्रोधी, शीघ्रता करनेवाले, हैं। वे दोनों जव भीम और अर्ज्जुनको अगाड़ी करके युद्धमें आवेंगे, तो सिंह और अश्विनी कुमारके समान उनके वेगको कोई भी न सह सकेगा। हे सञ्जय! मैं अपनी सेनाका अभीसे नाश देख रहा हूं। मुझे यह निश्चय है, कि वह दोनों वीर महारथ और युद्धमें असामान्य हैं; वे दोनों द्रौपदीके उस दुःखको देखकर कदापि क्षमा न करेंगे। महा धनुषधारी वृष्णिवंशी और महा-तेजस्वी पाञ्चालदेशी क्षत्रिय लोग जब सत्यवादी, महात्मा कृष्णसे रक्षित होकर पाण्डवोंको सङ्गमें लेकर युद्धमें आवेंगे, तो मेरे पुत्रोंके समेत मेरी सब सेना नष्ट होजायगी। हे सूतनन्दन! राम और कृष्णसे शिक्षित वृष्णिवंशी सेनाके वेगको कोईभी नहीं सह सकता है। उनलोगोंके बीचमें जब महा पराक्रमी धनुषधारी भीम वीरोंके नाश करनेवाली पाताल पर्य्यन्त फोड़नेवाली गदाको लेकर युद्धमें घूमेगा, तैसेही गाण्डीव धनुषका विजलीके समान घोर शब्द और भीमकी गदाका वेग कोईभी राजा सहनेको समर्थ न होगा, उस समय मैं अपने मित्रोंकी वातोंको स्मरण करूंगा, जो दुर्य्योधनके वशमें होकर पहले मैंने नहीं करी थी।

सञ्जय वोले हे महाराज! आपने यह वड़ी भारी भूल करी है, जो सामर्थ रहने परभी अपने पुत्रको मोहसे जुएसे नही रोका। जव अच्युत मधुनाशक श्रीकृष्णने सुना, कि पाण्डव

लोग जुएमें हार गये, तो तुरंतही काम्यक-वनमें पाण्डवोंके पास आये, धृष्टद्युम्न आदि द्रुपदके पुत्र, विराट, धृष्टकेतु और महारथ कैकय लोग यह सब युधिष्ठिरके पास वनमें गये थे। उन्होंने पाण्डवोंको हारा हुआ देखकर जो कुछ उनसे कहा सो मैंने दूतोंसे सुना है। वही आपसे निवेदन करता हूं, उस समागममें श्रीकृष्णने युधिष्ठिरसे जो वार्त्ता करी, सो सुनिये। युधिष्ठिरने कृष्णसे कहा कि आप युद्धमें अर्ज्जुनके सारथीका काम कीजियेगा और कृष्ण भगवानने कहा, कि हमें ऐसा ही करेंगे, पाण्डवोंको उस दशामें देखकर कृष्णको महा क्रोध हुआ, और हरिणके चमड़ेको पहने हुए युधिष्ठिरसे ऐसा बोले, हे महाराज। पहले मैंने जो राजसूय यज्ञके समयमें इन्द्रप्रस्थमें पाण्डवोंको लक्ष्मी देखी थी, सो दूसरे राजोंको दुर्लभ है। जिस महायज्ञमें शस्त्र, भय और तेजसे पीड़ित अङ्ग, वङ्ग, पौण्ड्, उड़, चोल द्राविण और अन्धक आदि राजा, समुद्रवासी बहुत जलवाले-देशनिवासी और सब देशोंके राजा, सिंहलके उत्तम राजा, लङ्काके राजा तथा और म्लेच्छलोग पश्चिमके सब राजा, समुद्रके बीचमें रहनेवाले राजा, पह्लव, दरद, सब, किरात, यवन, शक, नीर, हूण, चीन, तुषार, सैन्धव, जागुड़, रामठ, मुराट, स्त्रीराज, तङ्गण, कैकय, मालव और काश्मीर आदि अनेक महाराजोंको उस अभिषिकमें आये हुए मैंने देखा था। हे महाराज। वह आपकी चलनेवाली और चञ्चल लक्ष्मी जिन्होंने ली है, मैं आपसे आज्ञा लेकर उनको छीन लाऊंगा। हे कौरव्य! मैं, बलराम, भीमसेन, अर्ज्जुन, नकुल, सहदेव, अक्रूर, गद, शाम्ब, प्रद्युम्न, उग्रसेन, महावीर धृष्टद्युम्न और शिशुपालपुत्र धृष्टकेतु यह सब मिलकर अभी युद्धमें दुर्य्योधन, कर्ण, दुशासन और शकुनि आदि सबको मार कर लक्ष्मीको प्राप्त करेंगे। हे भारत! तब आप अपने सब भाइयोंके समेत धृतराष्ट्रकी लक्ष्मीको प्राप्त करके हस्तिनापुरमें वसते हुए सब पृथ्वीका राज्य कीजिये, अनन्तर उस वीरसमाजमें जहां महावीर धृष्टद्युम्न आदि अनेक वीर बैठे थे, राजा युधिष्ठिर ऐसा कहने लगे। युधिष्ठिर बोले, हे जनार्द्दन! हम तुम्हारी सच्ची प्रतिज्ञाको स्वीकार करते हैं, हे महाबाहो। आप हमारे शत्रुओंको सेनाके समेत मारेंगे, परन्तु मैंने राजोंके बीचमें तेरह वर्ष पर्य्यन्त वनमें रहनेकी प्रतिज्ञा की है, सो आप तेरह वर्षके पश्चात् इस अपनी प्रतिज्ञाको सत्य कीजियेगा। धर्म्मराजके ऐसे वचनको सुनकर धृष्टद्युम्न आदि सभासदोंने क्रोधयुक्त कृष्णको शीघ्रही समयानुसार मीठे वचन कहकर शान्त किया और सब वीरोंने श्रीकृष्णके सामने द्रौपदीसे यह प्रतिज्ञा की, कि हे देवि। तुमको दुःख देनेके कारण दुर्य्योधन अपने प्राणको त्याग करेगा। हे देवि। तुम शोच मत करो और हमारी प्रतिज्ञाको सत्य मानो, जिन लोगोंने तुमको जुएमें हरी हुई देखकर हंसा है, उनके मांस सियार और पक्षी खायेंगे, जिन्होंने तुम्हारे बाल पकड़कर सभामें खींचा है, उनके सिरोंको गिद्ध और सियार खींचेंगे; और उनके रुधिरको पीयेंगे। हे पाञ्चालि! तुम अपनी दृष्टिसे देखोगी, कि जिन्होंने तुमको दुःख दिया है, उनके शरीरोंको पृथ्वीमें मास खानेवाले पक्षी खींचते फिरते हैं, और मास खा रहे हैं, और जिन्होंने देखा है, उन सबके मरे हुए सिरोंका रुधिर भूमि पीयेगी। हे भरतर्षभ! उन सब महातेजस्वी शूरवीर सब लक्षणोंसे भरे वीरोंने इस प्रकार धर्म्मराजके सामने ऐसी प्रतिज्ञा की है। अनन्तर धर्म्मराजने उन सबको तेरह वर्षके पश्चात युद्धके निमित्त निमन्त्रण दिया, वे सब महारथ लोग श्रीकृष्णको अगाड़ी करके युद्धमें आवेंगे। बलराम, कृष्ण, अर्ज्जुन, प्रद्युम्न, शाम्ब, सात्यकी, भीमसेन, नकुल, सहदेव,

काश्मीरके राजाके पुत्र, पांचाल-राजके पुत्र और मत्स्य देशका राजा, ये सब लोकमें प्रसिद्ध वीर और अजेय हैं। ये महात्मा लोग महासेनाके सहित धर्म्मराजकी सहायता करेंगे। कौन ऐसा वीर है, जो इन केशरी सिंहके समान क्रोधित वीरोंके आगे युद्धमें अपने जीवनकी इच्छा कर सके?

धृतराष्ट्र बोले; मुझसे जो विदुरने जुएके समय कहा था कि हे नरनाथ! यदि आप पाण्डवोंको जुएमें हराइयेगा तो निश्चय कुरुवंशका अन्तकाल होगा, और पृथ्वीमें रुधिरकी महाधारा बहेगी। हे सूत! मुझसे विदुरने पहले जो कहा था, निश्चय वैसाही होगा। इसमें कोई सन्देह नहीं, कि तेरह बर्ष बीतनेपर पाण्डवोंसे और हमसे महायुद्ध होगा।

५१ अध्याय समाप्त।

इन्द्रलोकाभिगमन पर्व्व समाप्त।

अथ नलोपाख्यान।

राजा जनमेजय बोले, महात्मा अर्ज्जुन जब शस्त्र लेनेकी इच्छासे इन्द्रलोकको गये तो युधिष्ठिर आदि पाण्डवोंने क्या किया?

श्रीवैशम्पायनजी बोले, जब महात्मा अर्ज्जुन शस्त्र लेनेकी इच्छासे इन्द्रलोकको गये, तो पाण्डवलोग द्रौपदीके सहित दुःखी होकर काम्यक वनमें बास करने लगे। एक दिन निराली घासपर एकान्तमें बैठे हुए द्रौपदीके सहित भरतकुलके श्रेष्ठ पाण्डवलोग रोते हुए शोकसे पीड़ित होकर अर्ज्जुनके बियोगसे महादुःखित भये, अर्ज्जुनके बियोग और राज्यके नाशसे महादुःखित पाण्डव युधिष्ठिरसे महावाहु भीमसेन ऐसा बोले, हे महाराज! जिसमें हमलोगोंके प्राण स्थिर हैं, सो पुरुषसिंह अर्ज्जुन आपकी आज्ञासे तप करनेको गया है, जिसके नाश होनेसे पुत्रोंके समेत पाञ्चालदेश हम सात्यकी और श्रीकृष्ण निःसन्देह सबही मर जायंगे। जो महात्मा अर्ज्जुन आपको आज्ञासे वनमें जाकर अनेक क्लेशोंको सह रहा है, इससे अधिक दुःख और क्या होगा? जिसके बाहुबलका आश्रय करके हम सब महात्मालोग अपनेको युद्धमें अजेय और पृथ्वीको प्राप्त ही समझते हैं, जिस धनुर्धारीके भरोसे मैंने सभामें शकुनिके सहित सब धृतराष्ट्र पुत्रोंको नहीं मारा, सो हम सब लोग श्रीकृष्णासे रक्षित बाहुबली होनेपरभी केवल आपकी आज्ञा पालनेके निमित्त इन सब क्लेशोंको सह रहे हैं, हम सबलोग श्रीकृष्णको सङ्ग लेकर कर्ण आदिको मारकर अपने बाहुबलसे जीती हुई पृथ्वीका राज्य करेंगे, केवल आपहीके जुएरूपी दोषसे इस आपत्तिमें पड़े हैं। हमारी वही दशा है, जैसे महा पराक्रमी, महावीर पुरुषका कोई मूर्ख सर्व्वस्व छीन ले। हे महाराज! आपको क्षत्रियोंके धर्म्मको ओर देखना चाहिये। हे महाराज! वनमें रहना क्षत्रियोंका धर्म्म नहीं है, पण्डितोंने राज्यही क्षत्रियोंका धर्म्म और परम धर्म्म कहा है, क्षत्रधर्म्मका जाननेवाला राजा मान्यका-स्थान और मार्ग होता है, हे महाराज! अर्ज्जुनको बनसे बुलाकर और श्रीकृष्णको सङ्ग लेकर इस बारह वर्षको पहलेही धृतराष्ट्रके पुत्रोंको मारना उचित है। हे महाराज! हे महामती! हे प्रजानाथ! मैं सेनाका उत्तम व्यूह बनाकर धृतराष्ट्रके पुत्रोंको बेगसे यमलोकको भेजूंगा। शकुनिके सहित धृतराष्ट्रके सब पुत्र, कर्ण, दुर्य्योधन या और जो युद्ध करनेको आवेंगे, उन सबको मैं एकलाही मारूंगा। हे महाराज! जब मैं इन सबको मार चुकूंगा, तब आप वनसे नगरको आइयेगा। ऐसा करनेसे आपको कुछ दोष नहीं होगा, हे तात! हे शत्रुनाशन! फिर हमलोग अनेक यज्ञोंसे सब पापोंको नाश करके उत्तम स्वर्गको लाभ करेंगे। हे महाराज! यदि आप बालकोंके समान हठी

और दीर्घसूत्र (आलसी) और धर्म्मपरायण न हों, तो यह सब काम ऐसेही हो सकता है। ऐसा कहा है कि छलियोंको छलहीसे मारना चाहिये, क्योंकि छलीके सङ्ग छल करनेसे पाप नहीं होता। हे महाराज! हे भारत! धर्म्मज्ञ लोगोंने धर्म्म विषयमें कहा है कि एक रात दिन एक वर्षके बराबर है। हे महाराज! हे नाथ! वेदमेंभी ऐसाही लिखा है, कि दुखमें एक दिन रात एक वर्षके समान बीतता है। यदि आप वेदको प्रमाण मानते हैं, तो जान लीजिये कि तेरह वर्षका समय बीत गया। हे राजन्! हे शत्रुनाशन! कालको बितानेसे सेनाके समेत दुर्य्योधनका मारना कठिन होगा, क्योंकि वह सब पृथ्वीके राजोंको अपनी ओर कर लेगा; हे राजेन्द्र! जूएके प्यारे आपने जूआ खेला और हम सब लोगोंको इस बिना जानी आपत्तिमें डाला। हम उस देशको नहीं देखते, कि जहां वह दुष्टात्मा दुर्य्योधन दूतोंके द्वारा हम लोगोंको न न जान सके। हमलोगोंको जानकर वह दुष्टात्मा छलसे पुनः वनबासको भेजेगा, हे महाराज! यदि किसी प्रकारसे वह पापी हमको उस समय न जान सके, तो इस आपत्तिके पार गये हुए आपको जूएमें जीत लेगा, और आप जूएमें बुलानेसे अवश्यही जायंगे, वह दुष्ट पासोंकी विद्यामें बड़ा प्रवीण है, फिरभी हमलोगोंको बनहीमें घर बनाना होगा। हे महाराज! यदि हम लोगोंको आप जीवन भर दुःखी बनाना चाहें, तो सब धर्म्मको कीजिये। हे महाराज! यह निश्चय है, कि छलीको छलहीसे मारना चाहिये, मैं आपकी आज्ञा पाकर शक्तिके अनुसार मन्दबुद्धि दुर्य्योधनको वैसेही मार डालूंगा, जैसे अग्नि एक स्थानमें भडवाकर सबको जला देती है। आप मेरे वचनोंको सत्य मानिये। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! धर्म्मराज युधिष्ठिरने भीमसेनके ऐसे वचन सुनकर उनको शान्तकर उनका माथा सूंघकर ऐसे वचन कहे, हे महाबाहो! इसमें कोई सन्देह नहीं, कि तुम अर्ज्जुनको सङ्ग लेकर तेरहवर्षके पश्चात् दुर्य्योधनको मारोगे। हे कुन्तीनन्दन! तुम जो कहते हो कि समय आगया सो झूंठ बोलनेकी मेरी शक्ति नहीं है। हे कुन्तीपुत्र! यह समय बीतनेके पश्चात् तुम पापी छली दुर्द्धर्ष दुर्य्योधनको नाश करना। जहां धर्म्मराज युधिष्ठिर भीमसेनसे ऐसा कह रहे थे; तहां महाभाग महाऋषि वृहदश्व आये। महात्मा धर्म्मराज युधिष्ठिरने उन धर्म्म करनेवाले मुनिको वहां आये हुए देखकर शास्त्रविधिके अनुसार मधुपर्क आदिसे उनकी पूजा करी; उनको सुखसे बैठा हुआ देखकर बैठे हुए महाबाहु युधिष्ठिर अनेक दीन वचन कहने लगे। हे भगवन्! छल बुद्धिवाले पाशोंके पण्डितोंने मुझे बुलाकर मेरे धर्म्म राज्यको छीन लिया, छल को न जाननेवाले धर्म्मात्मा मेरी प्राणसेभी अधिक प्यारी स्त्रीको पापमें निश्चयवालोंने छलसे सभामें बुलाया। दूसरी बार मुझको जूएमें जीतकर हरिणोंके चमड़ेके वस्त्र पहिनाकर इस घोर महा बनमें भेज दिया, मैं इस बनमें दुःखी होकर रहता हुआ अब जूएकी अनेक बातोंको स्मरण करता हूं। जूएके अधिकारमें कही हुई बातोंको सुनकर और अपने हृदयके भावोंको स्मरण करके रात्रि भर चिन्ताही करता हूं। जिस गाण्डीव धनुषधारी अर्ज्जुनमें हमारे प्राण बसते हैं, उस महात्माके बिना मैं निर्ब्बलके समान होगया हूं। शस्त्र सीख कर आये हुए प्रियवादी, गम्भीर आलसरहित, दयावान अर्ज्जुन को मैं कब देखूंगा? मेरी बुद्धिमें मेरे समान दुःखी राजा कोई नहीं है। क्या मेरे समान मन्दभाग्य कोई है? क्या आपने किसीको ऐसा देखा है? क्या सुना है?

वृहदश्व बोले, हे पाण्डव! हे राजन्!

आप जो कहते हैं, कि मेरे समान कोई भी कहीं मन्दभाग्य नहीं हुआ ; हे पाप-रहित । यदि आप सुननेकी इच्छा करें, तो उस राजाको कथा कहूं, जो पृथ्वीमें आपसे भी अधिक मन्द-भाग्य हुआ है ।

श्रीवैशम्पायन सुनि बोले, महाराज युधिष्ठिरने उनके ऐसे वचन सुनकर कहा, कि मैं अपने समान दशाको प्राप्त हुए राजाकी कथा सुननेकी बहुत इच्छा रखता हूं, आप कहिये । वृहदश्व बोले, हे पाण्डव ! हे अच्युत ! आप भाइयोंके समेत सावधान होकर, जो राजा आपसे भी ज्यादा दुःखी हुआ है, उसकी कथा सुनिये । निषध देशमें वीरसेन नामक एक विख्यात राजा हुआ था । उसके पुत्रका नाम नल था ; वह धर्म्म और धनका पण्डित था । हमने सुना है, कि उसको भी पुष्करने छलसे जुएमें जीत लिया था, वह भी स्त्रीके सहित महा दुःखी होकर वनमें वसा था । हे राजन् ! वनमें रहनेके समय दास रथ, भाई और मित्र कोई भी उसके सङ्ग न थे, आप तो देवतोंके समान भाई और ब्राह्मणोंके सहित वनमें वास करते हैं, इससे आप सोचनेके योग्य नहीं है । युधिष्ठिर बोले, हे कहनेवालोंमें श्रेष्ठ ! मैं महात्मा नलके चरित्रको विस्तारसे सुनना चाहता हूं, आप कहिये ।

५२ अध्याय समाप्त ।

श्रीवृहदश्व सुनि बोले, वीरसेनकेपुत्र सब गुणसे भरे, रूपवान, घोड़ेकी विद्याके पण्डित, और बलवान् नल नामक राजा हुए, उन्होंने इन्द्रके समान सब राजोंके शिर पर निवास किया, जैसे सूर्य्य अपने तेजसे सबके ऊपर र... हैं । वे ब्राह्मणोंके पूजक, वेदके जाननेवाले, और निषधदेशके राजा, जुएके प्यारे, सत्यवादी, महासेनाके स्वामी, पुरुष और स्त्रि... प्यारे, उदार इन्द्रियजित, रक्षा करनेवाले, धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ नल साक्षात मनुके समान थे, वैसेही विदर्भ देशमें महापराक्रमी, शूर, सब गुणोंसे युक्त राजा भीम थे । परन्तु राजा भीमको कुछ सन्तान नहीं थी, उन्होंने सन्तानके निमित्त अनेक उत्तम यत्न किये, हे भारत ! एक दिन उनके पास दमन नामक महर्षि आये, धर्मजाननेवाले राजा भीमने स्त्रीके सहित उन तेजस्वी ऋषिकी सत्कार पूर्व्वक रानीको सङ्ग लेकर सेवा की । तब दमनऋषिने स्त्री सहित राजाको यह वरदान दिया कि तुम्हारे एक कन्या रत्न और महायशस्वी उदार तीन पुत्र होंगे, अनन्तर वैसेही हुआ । राजाने पुत्र और पुत्रीके नाम रखे, कन्याका नाम दमयन्ती, पुत्रोंके नाम दम, दान्त और दमन हुए । यह सब लोग तेजस्वी, सब गुणोंसे पूर्ण महा पराक्रमी हुए । दमयन्ती रूप, तेज, यश, लक्ष्मी और सौभाग्यसे तीनों लोकोंमें विख्यात और सुन्दर कमरवाली हुई । एक समय सुन्दर शरीरवाली दमयन्ती सब भूषण पहनकर सखियोंके बीचमें वर्षाकी बिजलीके समान शोभित थी ; वह विशालनेत्रा अत्यन्त रूपवती होनेके कारण लक्ष्मीके समान शोभित हुई । उसके समान रूपवती देव, यक्ष, और मनुष्योंमें किसीने भी न देखी और न सुनी । वह सुन्दरी बाला देवताके चित्तको भी प्रसन्न करती थी ; और पुरुषोंमें सिंह नलभी पृथ्वीमें अपनेसे रूपवान किसीको नहीं देखते थे, मानो साक्षात कामदेवने रूप धारण किया है । दमयन्तीकी सखियाने दमयन्तीके ... आनन्दसे नलके रूपका और कई पुरुष नलके आगे दमयन्तीके रूपका वर्णन किया करते थे । हे कुन्तीपुत्र ! इस प्रकारसे उन दोनोंमें बिना रूप देखेभी केवल गुण सुनके अत्यन्त प्रेम बढ़ गया, और सङ्गही कामदे... ...ने लगा । तब नल अपने हृदयसे व... सहनेमें असमर्थ होकर रणवासके ... ...में एकलाही रहने लगे ।

अनन्तर उन्होंने उस वनमें सोनेके पंखवाले हंसोंको देखा और उनमें से एकको पकड़ लिया; तब उस हंसने नलसे कहा, कि हे राजन्! मैं तुम्हारा बहुत प्यारा काम करूंगा, अतएव तुम मुझको मारना मत। हे नैषध! मैं दमयन्तीके पास जाकर तुम्हारी वार्ता इस प्रकारसे कहूंगा,कि जिससे वह तुमको छोड़कर कदापि दूसरे पुरुषकी इच्छा न करेगी। राजाने हंसकी यह बात सुनकर उसे छोड़ दिया, वे सब हंस आकाशको उड़के विदर्भ पहुंचे। वहां जाकर दमयन्तीके घरमें उतरे तब सखियोंके समेत दमयन्ती उन विचित्र रूपी पक्षियोंको देखके प्रसन्न होकर शीघ्रता सहित पकड़नेको दौड़ी। तब सब हंस उन कन्याओंके झुण्डमें इधर उधरको भागने लगे। तब एक एक हंसके पीछे एक एक कन्या हो गई। जिस हंसके पीछे दमयन्ती दौड़ी वह घरमें घुस गया और वहां मनुष्योंकी बोली बनाकर दमयन्तीसे ऐसा बोला, हे दमयन्ति! निषध देशमें नल नामक राजा अश्विनीकुमारके समान रूपवान हैं, मानों साक्षात कामदेवने मूर्त्ति धारण करी है। उसके समान सुन्दर कोईभी पुरुष नहीं है, हे उत्तम रङ्गवाली! हे सुमध्यमे! यदि तू उनकी स्त्री बने तो तेरा जन्म और रूप सफल हो। हमने सब देवता, गन्धर्व्व, मनुष्य, राक्षस और सर्पोंको देखा है, परन्तु उनके ऐसा सुन्दर कोईभी नहीं मिला; तुमभी स्त्रियोंमें रत्न हो और नलभी पुरुषोंमें श्रेष्ठ है, उत्तमहीका मिलना उत्तम है। हे राजन्! हंसकी ऐसी बात सुनकर दमयन्तीने हंससे कहा, कि तुम नलसे जाकरभी ऐसाही कह दो। हे प्रजानाथ! विदर्भ राजकन्याकी बातको स्वीकार करके हंस वहांसे चले और और नलसे आकर सब कह दिया।

५३ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे भारत! हंसकी वाणी सुनतेही दमयन्ती अपनी स्वस्थ दशामें न रही, उसी दिनसे चिन्तासे व्याप्त, दीन, दुर्बल होगई, मुखका रङ्ग बदल गया; वार वार सांस लेने लगी, उन्मत्तके समान केवल ऊपरहीको देखने लगी, केवल ध्यानहीमें रहने लगी, शरीरका रङ्ग पीला होगया, कामदेवने हृदयमें स्थान बनाया, उसका तेज, भोग और आनन्दमें कहींभी चित्त न लगने लगा; निद्राने दिन और रात नेत्रको छोड़ दिया, केवल हाय हाय करके रोने लगी। दमयन्तीकी इस शोचनीय दशाको देखकर उसकी सखियोंने चिन्होंसे जान लिया और विदर्भराजसे उसकी सब दशा कह सुनाई। राजा भीमने सखियोंके मुखसे अपनी पुत्रीकी यह सब दशा सुनकर उसके महा कार्य्यका विचार किया। मेरी पुत्री आज कल अत्यन्त अस्वस्थके समान क्यों दीखती है, अनन्तर राजाने देखा, कि इसकी यौवन अवस्था प्राप्त हुई, अब इसका स्वयम्बर अवश्य करना चाहिये। अनन्तर राजाने सब राजोंको निमन्त्रन दिया और कहला भेजा, कि हे वीर लोगो! इस स्वयम्बरको आकर देखिये, सब राजालोग भीमकी आज्ञा सुन दमयन्तीका स्वयम्बर जान हाथी घोड़े और रथोंके शब्दसे पृथ्वीको पूर्ण करते हुए विचित्र माला और आभूषणोंको धारण करके देखने योग्य सेनाको सङ्ग ले विदर्भ नगरमें आये। महाबाहु राजा भीमने इन आये हुए सब महात्मा राजोंकी यथायोग्य पूजा करी, वे सब लोग पूजा पाकर वहां ठहरे।

इसी बीचमें देवर्षियोंमें मुख्य महात्मा पर्व्वत और नारद घूमते हुए इन्द्रलोकमें गये। यह दोनों महाबुद्धिमान महाव्रतधारी मुनि पूजायुक्त इन्द्रके भवनमें गये, अनन्तर भगवान इन्द्रने इन दोनोंकी पूजा करके कुशल और सर्व्वगत आनन्द पूछा। नारद बोले, हे देव! हे ईश्वर! हे मघवन्! हम लोग सदाही

कुशली रहते हैं, हे विभो। सब जगतके राजा लोग भी आनन्दसे हैं। श्रीवृहदश्व मुनि बोले, नारदके ऐसे वचन सुनकर वृत्रासुरके मारनेवाले इन्द्र ऐसा कहने लगे; हे मुने! जो चत्री लोग, पृथ्वीके स्वामी, प्राण देकर युद्ध करनेवाले हैं; जो युद्धमें बिना भागे हुए शस्त्रसे प्राण देते हैं, यह लोक जिस तरह मेरे लिये अचत है, उनको भी है; उन अपने प्यारे शूर वीर चत्रियोंको जो पाहुने होकर मेरे यहा आते थे, आजकल नहीं देखता हूं, वे सब धर्म्मज्ञ चत्री कहा हैं? इन्द्रके वचन सुनकर नारद कहने लगे।

नारद बोले, हे मघवन्! जिस कारणसे चत्री नहीं दीखते सो आप सुनिये, विदर्भराजकी पुत्री जिसका नाम दमयन्ती है, जिसके समान रूपवती स्त्री पृथ्वीमें कोई नहीं है, हे इन्द्र! उसका स्वयम्बर शीघ्रही होनेवाला है। वहीं सब राजा और राजपुत्र जाते हैं, हे वृत्रनाशक! उसीको प्राप्त करनेको इच्छासे सब राजा लोग अधिक बल लेकर गये हैं, क्योंकि वह मनुष्यलोकमें रत्न है। उसी समय इन्द्रके पास समस्त लोकपाल और देवतोंमें श्रेष्ठ अग्निदेवभी आगये उन्होनेभी नारदके सब वचनोंको सुनकर वहा जानेका निश्चय किया। हे महाराज! अनन्तर वे सब लोग अपने अपने साथियोंको लेके वाहनों पर चढ़कर उस विदर्भ नगरको आये, जहां सब राजा लोग थे। हे कुन्तीनन्दन! राजा नल भी सब राजोंको आए हुए सुनकर दमयन्तीको इच्छासे प्रसन्न चित्तसे स्वयम्बरमें आये। मार्गमें आते देवतोने पृथ्वीमें स्थित नलको ऐसा देखा, कि मानो साचात कामदेवही सम्पदाओंके सहित रूप धारण करके आया है, लोकपालोंने उन्हे सूर्य्यके समान तेजस्वी देखकर और उनके रूपसे विस्मित होकर अपनी इच्छाको छोड़ दिया। तब सब देवतोंने अपने अपने विमानोंको रोककर पृथ्वीमें आकर नलसे कहा, हे नैषध! हे राजेन्द्र! आप सत्यव्रतधारी हो, सो हमारी सहायना करो, हे पुरुषोंमें श्रेष्ठ हमारे दूत बनो।

५४ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे भारत! देवतोंके ऐसे वचन सुनकर नलने देवतोंसे प्रतिज्ञा की, कि हम आप लोगोंका दूत कार्य्य करेंगे, अनन्तर हाथ जोड़कर बोले, आप लोग कौन हैं? और जिसके पास मुझको भेजना चाहते हैं, वह कौन है? और यहभी कहिये कि हम आप लोगोंका क्या काम करेंगे? नलके ऐसे वचनको सुनकर इन्द्र बोले, कि हम लोग देवता हैं, और दमयन्तीके निमित्त यहा आये हैं। हम इन्द्र, यह अग्नि, और यह वरुण है, हे महाराज! यह सब पुरुषोंका नाश करनेवाले यमराज हैं, तुम दमयन्तीसे हमलोगोंके आनेका समाचार ऐसे कहना कि इन्द्र आदिक सब लोकपाल तुम्हारे देखनेको आये हैं। वह लोग तुमको प्राप्त करनेकी इच्छा करते हैं। इन्द्र, अग्नि, वरुण और यम इनमेंसे जिनको तुम्हारी इच्छा हो, उसी एकको पति बनालो। इन्द्रके ऐसे वचन सुनकर नल हाथ जोड़कर बोले, आपलोग एक प्रयोजनके लिये आये हुए मुझको भेजनेके योग्य नहीं है, हे लोकपालो! अपने मनमें सङ्कल्प की हुई स्त्रीको किस प्रकार छोड़ सकता हूं, और दूसरेके निमित्त ऐसे वचनोंको कैसे कह सकता हूं? देवतालोग बोले, हे नैषध! आपने पहले कहा था, कि हम इस कार्य्यको करेंगे, सो अब करनाही होगा, जाइये देर मत कीजिये।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, निषधराज देवोंके ऐसे वचन सुनकर बोले; हे देवलोगो! दमयन्तीका स्थान बहुत रक्षित है, सो मैं वहा कैसे जा सकूंगा? इन्द्रने कहा कि हम तुमको पहुंचा

देंगे। हे युधिष्ठिर! नल उनके वचनको स्वीकार करके दमयन्तीके स्थानमें गये। वहां सखियोंके समेत दमयन्तीको देखा, वह अपने शरीरकी शोभा और तेजसे प्रकाशमान हो रही थी, वह उत्तम वर्णवाली, बहुत सुकुमारी पतलीकमर और अच्छे नेत्रवाली इस प्रकार विराजमान थी, मानो अपने तेजसे चन्द्रमाका निरादर कर रही है। उस उत्तम हंसनेवालीको देखतेही नलके शरीरमें कामदेव बढ़ने लगा, परन्तु सत्य कहनेके अभिप्रायसे उसने कामको रोका। अनन्तर दमयन्तीकी सखी नलको देखकर उसके तेजसे घबड़ाकर अपने अपने आसनोंसे उठीं, और परम सन्देहको प्राप्त हुईं और प्रीति तथा आश्चर्य्यके सहित नलकी सब प्रशंसा करने लगीं, परन्तु कोई उनसे बोल न सकीं। केवल मनहीमें पूजा करने लगी। इस महात्माके रूप, तेज और धैर्य्यको धन्य है, यह कोई देवता, यक्ष, गन्धर्व्व है, अथवा न जाने कौन है। वे सब उत्तम स्त्रियां उसके तेजसे घबराकर और लज्जाके वशमें होकर नलसे कुछभी न कह सकीं। अनन्तर हंसते हुए वीर नलसे हसकर बात करनेवाली आश्चर्य्यवती दमयन्ती बोली, हे पापरहित! हे उत्तम शरीरवाले! हे मेरे कामदेवके बढ़ानेवाले! तुम कौन हो? और यहां देवतोंके समान आप क्यों आये हो? आते हुए तुमको किसीने क्यों नहीं देखा? क्योंकि मेरे स्थानकी बहुतही रक्षा है, और राजाकी आज्ञाभी कठोर है। विदर्भराजपुत्रीके ऐसे वचन सुनकर नल कहने लगे।

नल वोले, हे कल्याणि! मैं नल हूं और देवतोंका दूत बनकर यहां आया हूं। हे सुन्दरि! वह आपको प्राप्त करना चाहते हैं, तुम किसी एक देवताको पति बनालो, उन्हीकी शक्तिसे मै छिपकर यहां आया हूं, मुझको यहां आते न किसीने देखा, न किसीने रोका, हे भद्रे! हे शुभे! इसो लिये मुझको देवतोंने भेजा है। अब जैसी तुम्हारी इच्छा हो तैसा करो।

५५ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, दमयन्ती नलके वचन सुनतेही देवतोंको श्रद्धापूर्व्वक प्रणाम करने लगी, और नलसे कहने लगी कि हे राजन्! आप मुझसे विवाह कीजिये, कहिये मैं आपका कौन कार्य्य करूं। हे महाराज! मै और मेरा जो कुछ धन है, सो सब आपहीका है। हे नाथ! आप विश्वासपूर्व्वक मुझसे विवाह कीजिये। हे वीर! हे राजन्! हंसोकी बात मेरे चित्तको दुःख दे रही है, मैंने केवल आपहीके बुलानेकी इच्छासे इन सब राजोंको बुलाया है। हे मानव! यदि आप भक्तिवाली मुझको ग्रहण नहीं कीजियेगा, तो मैं विष, अग्नि, जल अथवा रस्सीके प्रयोगसे मर जाऊगी। दमयन्ती के वचन सुनकर नल बोले कि, देवतोंको छोड़कर मनुष्यकी इच्छा क्यों करती हो? मैं महात्मा ईश्वर लोकपालोंकी चरणधूलिके समान भी नहीं हूं, अतएव, तुम अपने चित्तको उन्हींमें लगाओ, क्योंकि देवतोका द्वेष करके पुरुष नष्ट हो जाता है, अतएव हे सुन्दरि! तुम हमारी रक्षा करो, किसी उत्तम देवताको पति बनाओ, तुम निर्मल वस्त्र, विचित्र माला और भारी आभूषण प्राप्त करके आनन्द करना, जो अग्नि सब देवतोका स्वामी है, जो इस सब पृथ्वीको जला सकता है, कौन स्त्री उसको पति नहीं करना चाहती? जिसके दण्डके भयसे सब प्राणी धर्म्म करनेकी इच्छा करते हैं, उसको पति बनानेकी किसको इच्छा नहीं होगी? धर्म्मात्मा, महात्मा, दैत्य और दानवोंके मारनेवाले सब देवताके स्वामी इन्द्रको पति बनानेकी इच्छा किस स्त्री को न होगी? यदि तुम्हारी इच्छा हो तो शङ्का रहित होकर लोकपालोंमें श्रेष्ठ वरुणको पति बनाओ, इस मेरे वचनको

मित्रके वचनके समान मानो। निषधराज नलके ऐसे वचन सुनकर दमयन्ती शोककी आंसुओंसे नेत्रोंको भरकर देवतोंको नमस्कार करके आपहीको अपना पति बनाती हूं, मेरे इस वचनको आप सत्य मानिये। ऐसा सुन हाथ जोड़कर निषधराज बोले, हे कल्याणी! मैं दूत बनकर आया हूं, देखो मेरा शरीर कांपता है। हे भद्रे! मैं जो तुमसे कहता हूं, सो मानलो। अनन्तर उत्तम हंसनेवाली दमयन्ती रोती हुई धीरे धीरे राजा नलसे बोली, हे नरनाथ! हे राजन्! मैंने एक पाप-रहित उपाय ठीक किया है, जिसके करनेसे आपको कुछ दोष न होगा, हे श्रेष्ठ! मेरे स्वयम्बरमें सब राजा इन्द्र आदिक देवता और आपभी बैठियेगा, हे नरव्याघ्र! हे नरईश्वर! सब लोकपालोंके आगे मैं आपहीको वर करूंगी; ऐसा करनेसे आपको कुछ दोष न होगा। विदर्भ राजपुत्री निषधराज नलसे जब ऐसा कह चुकी, तब राजा नल उसी स्थानको चले गये, जहां देवता लोग थे। महेश्वर और लोकपाल इन्हें फिरते देखके सब वृत्तान्त पूछने लगे। हे पापरहित राजन्! तुमने क्या उत्तम हंसनेवाली दमयन्तीको देखा है? कहो उसने हम लोगोंको क्या कहा है? नल बोले, मैं आप लोगोंकी आज्ञासे दमयन्तीके उस भवनमें गया, जिसकी रक्षा बहुतसे पहरेवाले करते थे, और जो चारों ओर खाईसे घिरा हुआ है, आपही लोगोंके प्रतापसे विदर्भ राजपुत्री दमयन्तीके सिवाय मुझे वहां कोई न देख सका, पश्चात् मैंने सखियोंको देखा और उन्होंनेभी मुझे पहिचाना। हे देवपतिगण! वह सब मुझे देखकर आश्चर्य करने लगीं। हे देवगण! मैंने प्रसन्नमुखी दमयन्तीके सामने आपलोगोंकी कथाको कहा। वह आपलोगोंके संकल्पको समझके मुझेही व्याहनेके वास्ते उद्यत हुई और बोली, हे निषधराज! आप और देवता सब मिलके मेरे स्वयम्बरकी सभामें आना। मैं उनके समीप आपको बरूंगी। हे महाभुज! ऐसा करनेसे आपको कोई दोष नहीं होगा। हे लोकपालगण! मैंने सब ठीक वहांकी बात कहदी, अब जो आपलोगोंकी इच्छा हो वही ठीक है।

५६ अध्याय समाप्त।

श्रीबृहदश्व मुनि बोले, पश्चात् राजा भीमने शुभकाल, पवित्र मुहूर्त और तिथिमें राजा लोगोंको स्वयम्बरकी सभामें बुलाया। राजा-लोग उसे जानकर कामबाणसे पीड़ित हो, दमयन्तीको पानेकी इच्छासे शीघ्रता के साथ स्वयम्बरकी सभामें आये। जिस रीतिसे सिंहका झुण्ड पर्व्वतमें जाता है, उसी प्रकारसे वह लोग तोरण और बन्दनवारसे सजे हुए सोनेके खम्भोंसे शोभायमान रङ्गमण्डपमें पहुंचे। उत्तम मणिजटित कुण्डलोंको धारण किये, सुगन्धसनी मालाओंको पहने राजालोग अनेक प्रकारके आसनोंपर आकर बैठे तो सभाकी शोभा बहुतही मनोहर जान पड़ने लगी। नाग-लोगोंसे भरी हुई भोगवती-पुरीके समान वा सिंहोंसे पूर्ण पहाड़की गुफाके समान वह भूपालोंसे पूरित सभा शोभाको प्राप्त होने लगी। परिघके समान मोटी और मनोहर बिशाल भुजा पांच फणधारी सर्पके समान भान होती थीं। इस प्रकार जैसे अन्तरिक्षमें तारागण शोभायमान होते हैं, वैसेही राजा लोगोंकी शोभा दीख पड़ने लगी। इसके अन-न्तर सुन्दर मुखवाली दमयन्ती अपने रूप और लावण्यसे राजा लोगोंके नेत्र और मनको खींचती हुई राजसभामें आई। उन सब महात्मा राजालोगोंकी दृष्टि दमयन्तीके जिस जिस अङ्गपर पड़ी, वहीं रह गयी, अर्थात् वहांसे और जगह नजा सकी। हे भारत! इसके पश्चात् सभामें बैठे राजालोगोंके नाम और

कुलोंका वर्णन होनेके पश्चात् दमयन्तीने एकही स्वरूपके पांच पुरुषोंको सभामें बैठे देखा और उन सबको एकही आकृति और रङ्गका देखकर सन्देहमें पड़ी और राजा नलको न पहचान सकी। वह सुन्दरी उन पांचोंमेंसे जिसको देखती थी, उसीको नल समझती थी, उसको इससे बहुतही शोक हुआ। और बुद्धिसे तर्क करने लगी। कि मैं किस प्रकारसे देवतोंको पहचानूं और कैसे राजानलको समझूं? हे भारत। विदर्भ-राज-नन्दिनी ऐसा विचार कर बहुतही व्याकुल हुई। उसने जो पहले देवतोंके लक्षण सुने थे, उनको याद करके मनमें कहने लगी, कि बूढ़ोंसे जो मैंने देवतोंके चिन्ह सुने हैं, उनमें से एक भी इन देवतोंमें नहीं दीखते; ऐसे बारम्बार चिन्ताकरके निश्चय किया, कि मुझे इस समय देवतोंकी शरणमें जानेके अतिरिक्त और कोई उपाय अपने कल्याणका नहीं सूझता। तब दमयन्तीने हाथ जोड़कर देवतोंको नमस्कार करके कहा, कि मैंने जिस समयसे हंसोंकी वाणी सुनी थी, तबही निषध-देशके राजा नलको पति बनानेका सङ्कल्प किया था। हे देवता लोगो। आप सत्यके प्यारे हैं, मेरे सत्यकी रक्षा कीजिये नलको मुझे बतला दीजिये। मैंने यदि मनसे भी व्यभिचारकी इच्छा न की हो, तो मेरे सत्यकी रक्षा करनेको देवता लोग नलको बतला दें। जिन देवतोंने नलको मेरा पति बना दिया है, वही देवतालोग सत्यकी रक्षा करनेके वास्ते नलको मुझे बता दें, और मैंने नलको पानेकेवास्ते ही यह स्वयम्बर रचा है। यदि यह सत्य हो, तो देवता लोग मुझे नलको बतादें। महेश्वर लोकपाल अपने अपने रूपको धारण कर लें, तो मैं पुण्यकीर्त्ति राजा नलको पहचान लूं। देवतालोग विदर्भ राजपुत्रीके शोक और विलापसे भरे वाक्योंको सुनकर और राजा नलमें उसको सच्ची प्रीति शुद्ध प्रेम, मनकी शुद्धि और भक्तिको जानकर अपने अपने रूपको धारण कर लिया, पश्चात् दमयन्तीने देवता लोगोंको छायारहित पसीना रहित पलकके खोलने और बन्द करनेसे रहित नेत्रवाले न मुर्झानेवाली माला पहने देखा और राजा नलको छाया-सहित मुर्झानेवाली माला पहने, पसीनायुक्त, पलक मारते नेत्रयुक्त, भूमिमें स्थित देखा। हे पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर। दमयन्ती देवता लोगोंको और राजा नलको पहचानकर लज्जायुक्त और प्रसन्न हुई। हे भारत। सुन्दरवर्णवाली दमयन्तीने जब उसे पति बना लिया, राजा लोगोंने महा हाहाकार आरम्भ किया, और देवता एवं महर्षिगण साधु साधु कहके राजा नलको प्रशंसा करने लगे। हे कुरुनन्दन! वीरसेनके पुत्र नलने दमयन्तीको धीरज देके कहा, हे कल्याणि। तुमने देवता लोगोंको छोड़के मुझे वर किया, इस कारण आजसे मुझे अपना आज्ञाकारी पति समझना। हे मन्दहासिनी! मैं तुमसे सत्य कहता हूं, कि जबतक मेरे शरीर में प्राण रहेंगे, तबतक मैं तुम्हारा रहूंगा। दमयन्तीनेभी हाथ जोड़के राजा नलसे ऐसीही विनती करी उन दोनोंने परस्पर ऐसे प्रीतिमान होकर अग्नि आदि देवोंको मनसे नमस्कार किया भीमपुत्री और नलका विवाह होनेके अनन्तर बड़े प्रतापी लोकपाल और देवतोंने रा नलको आठ वर दिये। इन्द्रने यज्ञमें प्रत्यक्ष द देने और शुभ गति पानेका वर दिया। अग्निदे यह वर दिया कि जहां इच्छा करोगे अग्नि प्रत्यक्ष होगा और अग्नि सदृश लोक होंगे। यमने वर दिया, कि अन्नके र रसको जानोगे तथा धर्ममें तुम्हारी रहेगी। वरुणने कहा, कि जहां करोगे वहीं जल तुम्हे प्राप्त होगा, एवं भरी एक माला भी दी। इस लोकपालोंने दो दो वरदान दिये। त

लोकपाल स्वर्गको चले गये। राजालोग नल और दमयन्तीके बिवाहको देखकर बिस्मित और प्रसन्न होके अपने अपने स्थानको चले जानेके अनन्तर महात्मा राजा भीमने प्रसन्नचित्त होके नल और दमयन्तीके बिवाहकी शेष रीति समाप्त की। मनुष्यश्रेष्ठ निषधराज नलने अपनी इच्छाके अनुसार कुछ दिनतक वहां निवास करके राजा भीमसे आज्ञा लेकर अपने नगरको प्रस्थान किया। हे राजन्! जैसे देवराज इन्द्र सचीके साथ बिलास करते हैं, वैसेही राजा नल दमयन्तीके साथ विलास करने लगे, सूर्य्यके समान प्रतापी राजा नल प्रजाका धर्म्मपूर्व्वक प्रतिपालन करते हुए उनके मनको प्रसन्न रखने लगे। वह बुद्धिमान राजा नहुषके पुत्र ययातिके समान अश्वमेध तथा और और दक्षिणायुक्त यज्ञोंको करने लगे; एवं स्वर्गपति इन्द्रके समान वन और उपवन आदि मनोहर स्थानोंमें दमयन्तीके सहित विहार करने लगे। उस महात्मा राजा और दमयन्तीसे एक कन्या और पुत्र उत्पन्न हुए; पुत्रका नाम इन्द्रसेन और कन्याका नाम इन्द्रसेना रखा गया। हे पृथ्वीनाथ! वह नरनाथ समय समय पर यज्ञ और विहार करते हुए धनभरी पृथ्वीका पालन करने लगे।

५७ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, भीमपुत्री दमयन्तीके राजा नलको वर करनेके पश्चात् महा तेजस्वी लोकपालगण स्वर्गको जाते थे, तब उन्होंने पथमें द्वापरके सहित कलियुगको आते देखा। बल और वृत्रासुरके मारनेवाले इन्द्रने उसे देखके कहा, कि हे कलियुग! तुम द्वापरके सहित कहांको जाते हो? पश्चात् कलियुगने इन्द्रसे कहा, कि मेरा मन दमयन्तीके ऊपर लगा है, इस लिये उसके स्वयम्वरमें जाके उसे वरूंगा। इन्द्रने हंसकर उससे कहा कि वह स्वयम्वर हो गया। भीमपुत्रीने हम लोगोंके सामने राजा नलको पति बनाया। इन्द्रके ऐसे कहतेही कलियुगने क्रोध करके सब देवतोंसे पुकारके कहा, कि लोकपाल देवतोंको छोड़के उसने मनुष्यको पति बनाया, इसी निमित्त उसको कठिन दण्ड देनाही न्याय है। कलियुगकी इस बातको सुनकर सब देवता लोगोंने उत्तर दिया, कि दमयन्तीने हमारी आज्ञाके अनुसारही नलको पति बनाया है, कहो तो कौन ऐसी स्त्री है जो सब गुणोंसे भरे नलको पति बनाना न चाहती हो। जिसने सम्पूर्ण व्रत किये हैं, चारो वेदोंको इतिहासके सहित पढा है, जिसके घरमें यज्ञोंके द्वारा देवतालोग नित्यही तृप्त होते हैं, जो कभी हिंसा नहीं करता, सत्यबादी, दृढ़प्रतिज्ञावाला लोकपालोंके समान पराक्रमी जो पुरुषसिंह राजमें, सत्यमें, धैर्य्यमें, ज्ञानमें, तपस्या दम और शममें, सर्व्वदाही स्थिर रहता है, हे कलियुग! ऐसे पुरुषको जो दण्ड देनेकी इच्छा करता है, वही मूर्ख दण्ड भोगता है, तथा अपने आपको बिनाश करता है। हे कलियुग! ऐसे गुणयुक्त पुरुषको जो दण्ड देनेकी इच्छा करे वह अगाध नरक कुण्डमें डूबता है। देवता लोग कलियुग और द्वापरसे ऐसे बचन कहके स्वर्गको चले गये। तत्पश्चात् कलियुगने द्वापरसे कहा हे द्वापर! नल पर जो मेरा क्रोध हुआ है, उसे मैं नहीं रोक सकता। मैं उसे राज्यसे भ्रष्ट और दमयन्तीसे पृथक् कर दूंगा तुम पाशेमें बैठकर मेरी सहायता करनेकी चेष्टा करो।

५८ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, पश्चात् कलियुग द्वापरसे ऐसी प्रतिज्ञा करके निषधराजके पास आया और नलके दोषोंको देखनेकेवास्ते बहुत दिनों तक नगरमें निवास करता रहा, बारह वर्षके पश्चात् कलियुगने राजा नलका एक दोष

करनेसे किसी नगर निवासीने मेरा सत्कार न किया वेही आज पक्षी होकर मेरा वस्त्र भी छीनते हैं। हे देवि! मैं परम दुःखको प्राप्त,और मूर्छित तेरा पति हूं। मेरा बचन तेरा हितकारी है। यह देखो, अनेक मार्ग चलनेवाले लोग ऋक्षवान और उज्जैनको जा रहे हैं। यह लोग इस पहाड़के पार होते हैं। यह देखो यही समुद्रमें जानेवाला उषा जलयुक्त विन्ध्याचल है। फल और मूलोंसे भरे हुए इन ऋषियोंके आश्रमोंको देखो। यह मार्ग विदर्भ देशको जाता है, और यह अयोध्याका मार्ग है। हे उत्तम! इसके आगे दक्षिण-देश है, और यह दक्षिणका मार्ग है। हे भारत! सावधान दुःखसे पीड़ित राजा नलने दमयन्तीसे एकबार ऐसे वचन कहे। तब दमयन्ती रुकते हुए कण्ठसे रोती हुई दुःखसे व्याकुल होकर निषध-राजसे दीनता भरे हुए वचन बोली, हे महाराज! आपके वचनकी चिन्ता करके मेरा हृदय घबड़ाता है, और सब शरीर बार बार गिरे जाते है। हे महाराज! राज्य वस्त्र और धनसे हीन आपको इस निर्ज्जनमें एकला छोड़कर कैसे चली जाऊं? हे महाराज! इस घोर वनमें चलते चलते जब आप थक जायंगे, भूख प्यास और चिन्तासे व्याकुल होंगे, तब मैं आपके सुखके निमित्त आपके परिश्रमको दूर करूंगी! सत्य कहतोहूं, कि वैद्योंके मतमें दुःख रोगको औषध स्त्रीके समान और नहीं है।

राजा नल बोले, हे सुमध्यमे! हे दमयन्ती! यह बात सच है, कि दुःखी पुरुषके लिये स्त्रीके समान और औषधि नहीं है, हे अनिन्दिते! मेरी इच्छा तुम्हें छोड़नेकी कदापि नहीं है, मैं अपने प्राणको छोड सकता हूं, परन्तु तुम्हें नहीं। हे भीरु! तुम शङ्का मत करो। दमयन्ती बोली, हे महाराज! यदि आप मुझे छोडनेकी इच्छा नहीं करते हैं, तो विदर्भ नगरका मार्ग क्यों बताते हैं? हे नरनाथ! मैं जानती हूं कि आप मुझको नहीं छोड़ेंगे, परन्तु आपका चित्त किसीने छीन लिया है, इससे छोड़ सकते है। हे पृथ्वीनाथ! हे नरोत्तम! आप मुझको कठिन मार्ग दिखलाते हैं। हे देवतुल्य! इसीसे मुझको शोक बढ़ता है, यदि आपकी यह इच्छा हो कि यह अपने बापके यहां चली जाय, तो मैं और आप सङ्गही चलेंगे। यदि आपको अच्छा लगे तो ऐसाही कीजिये। हे मानदेनेवाले! मेरे पिता आपकी बहुत सेवा करेंगे।

६१ अध्याय समाप्त।

राजा नल बोले, हे दमयन्ती! यह ठीक है, कि जैसा तुम्हारे पिताका राज्य तैसा मेरा राज्य, परन्तु दुःखमें वहां कदापि न जाऊंगा। मैं अत्यन्त ऋद्धिके सहित वहां जाकर तुम्हारे आनन्दको बढ़ाता था, अब राज्यादिकसे भ्रष्ट होकर वहां जाके तुम्हारे शोकको कैसे बढ़ाऊंगा?

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे युधिष्ठिर! राजा नल ऐसा कहते हुए, आधे वस्त्रवाली कल्याणी दमयन्तीको बार बार शान्त करने लगे। वह दोनों भूख और प्याससे व्याकुल होकर एकही वस्त्र आढ़े हुए इधर उधर घूमते हुए किसी स्थानमें पहुंचे और थककर वहीं ठहर गये। निषधदेशके महाराज। उस स्थानमें पहुंचकर विदर्भराजपुत्रीके सहित पृथ्वीहीमें सो गये। वह महाराज वस्त्र और बिछौनेसे हीन धूलमें भरे हुए थकाईसे व्याकुल होकर पृथ्वीही में सो गये। अनन्तर कल्याणी,यशनसे भरी हुई,कोमलाङ्गी दमयन्तीभी दुःखसे व्याकुलहोकर अत्यन्त निद्राके वशमें हो गई। हे प्रजानाथ! दमयन्ती तो सोगई, परन्तु नलको शोकसे व्याकुल होनेके कारण पहलेके समान निद्रा न आई। वह राज्यनाश, सब वस्तुओंसे छूटना और वनमें

रहना इत्यादि चिन्तासे व्याकुल होगये। नल सोचने लगे, क्या मेरा कुछ कार्य करना अथवा न करना अच्छा होगा? क्या मेरा मरना अथवा दमयन्तीको छोड़ना अच्छा होगा? क्योंकि यह मेरी प्यारी मेरेही करनेसे इतने दुःखमें पड़ी है। क्या मेरे छोड़नेसे यह अपने बापके यहां चली जायगी? निःसन्देह यह पतिव्रता मेरेही कारण दुःख पा रही है, छोड़नेमेंभी सन्देह है। कदाचित कहीं इसे सुख मिलही जाय। हे नरनाथ। नलने वार वार विचार-कर निश्चय किया कि दमयन्तीके छोड़नेहीमें कल्याण है। इस पतिव्रता मेरी भक्त, यशोंमें भरी हुई महा भाग्यवतीको मार्गमें कोईभी अपने बशसे ग्रहण नहीं कर सकता है। राजा नलको बुद्धिको दुष्ट कलियुगने इस प्रकार फेर दिया और उसने निश्चय कर लिया कि दम-यन्तीका छोड़नाही ठीक है। राजाने अपनेको वस्त्रहीन और उसको एक वस्त्र ओढ़े देख, उसका आधा वस्त्र फाड़ लिया। वस्त्र फाड़ते समय राजाने विचारा कि मैं अपने प्यारीका आधा वस्त्र कैसे फाड़? कदाचित यह जाग जाय। ऐसा विचारते हुए राजा उस स्थानमें इधर उधर घूमने लगे। हे राजन्! अनन्तर राजा नलने अपने खड्गको निकाल दमयन्तीका आधा वस्त्र काट लिया और उसको पहनकर विदर्भराजपुत्री दमयन्तीको अचेत सोतेही छोड़, चल दिया। थोड़ी दूर जाकर मोहसे व्याकुल हो फिर लौटे और दमयन्तीको देख निषध देशके महाराज खूब रोये, और विचारने लगे, जिसे दमयन्तीको सूर्य्य और वायुभी नहीं देख सकते थे, वह मेरी प्यारी आज अनाथके समान भूमिमें सोरही है। हाय यह उत्तम हंसनेवाली, सुन्दर मुखवाली जब अपने आधे वस्त्रको फटा हुआ देखेगी तब इसकी क्या दशा होगी। यह अवश्य उन्मत्त हो जायगी। विदर्भराजपुत्री, उत्तम, पतिव्रता मुझसे अलग होकर इस हरिन और सांपोंसेभरे इस घोर वनमें एकली कैसे घूमेगी? हे महाभागे। तुम धर्म्मसे भरी हो, इस लिये सूर्य्य, वसु, रुद्र, अश्विनीकुमार, वायु और वरुण तुम्हारी रक्षा करें। हे महाराज! कलियुगसे बुद्धि नाश होनेके कारण राजानल जगत्में असमान रूपवाली अपनी प्यारी स्त्री वनमें छोड़कर चल दिये। राजानल वार वार जाकर कलियुग और प्रेमके वशमें लौट आते थे। उस समय उनका हृदय फटकर दो टुकड़ा हुआ जाता था; जैसे कोई झूलेमें झूलता है, वैसेही नल आते और जाते थे। अन्तको कलियुगके वशमें होकर राजानल प्यारी स्त्रीको वनमें सोती हुई छोड़ बहुत रोते हुए चले गये। हे राजन् नष्ट बुद्धिवाले कलि-युगके वशमें होकर दुःखी राजानल अपनी स्त्रीको शून्य वनमें एकली छोड़ चले गये।

६२ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे राजन्! नलके जानेके पश्चात् परिश्रम दूर होनेसे उत्तम सुख-वाली दमयन्ती जागी और पुरुष रहित वनमें अपने पतिको न देखकर बहुत डरी। शोक और दुःखसे व्याकुल होकर, हे महाराज! हे महाराज! हे नैषधेश्वर! हे नैषधेश्वर! कह कह कर चिल्लाने लगी। हा नाथ! हा महाराज। हा स्वामी। आपने क्यों मुझको छोड़ दिया? मैं इस पुरुषरहित वनमें व्याकुल हुई हूं। हाय मैं मरी! हे महाराज! आप धर्म्मज्ञ और सत्यवादी हैं। सत्य वचन कह कर अब इस शून्य वनमें प्यासी, भक्तिवती, एकली, सोती हुई अपनी स्त्रीको छोड़कर कहां चले गये? हे महाराज! मैंने आपका कोई भी दोष नहीं किया था, हे महाराज! हे नरनाथ! आपने जो लोकपालों के आगे वचन कहे थे, उनको झूठ करना आपको उचित नहीं है। हे पुरुषसिंह! ईश्वरने विना समय

मनुष्यकी मृत्यु नहीं बनाई है, इसी कारणसे आपकी प्यारी स्त्री आपसे छूटने पर भी अबतक जीती है, हे पुरुषसिंह! हे दुर्द्धर्ष! बस हंसी समाप्त होगई। अब मैं इस बनमें बहुत डरी हूं, शीघ्र दर्शन दीजिये। हे नैषधराज! आप मुझको देखते हैं, परन्तु पूछनेसे क्यों नहीं बोलते? आप लताओंसे निकलकर मुझसे बात क्यों नहीं करते? हे महराज! आप निर्लज्जके समान मुझ एकलीको रोती हुई देखकर क्यों धैर्य्य नहीं देते? हे राजेन्द्र! मुझे अपनी अथवा और किसी वस्तुका कुछ शोच नहीं है, परन्तु आप एकले किस दशामें पड़े हैं, यही शोच है। हे महाराज! भूख, प्यास, और थकाईसे व्याकुल होकर जब आप सन्ध्यासमय किसी वृक्षकी जड़में बैठेंगे, वहां मुझको न देख कर आपकी क्या दशा होगी? अनन्तर दमयन्ती महाशोकसे व्याकुल होकर इधर उधर दौड़ने लगी। कभी गिरती, कभी भयसे व्याकुल होकर छिपती, कभी रोती और कभी वकती थी। इस प्रकार शोकसे व्याकुल होकर पतिव्रता भीमपुत्री वार वार ऊंचे सास लेकर रोतीहुई ऐसा कहने लगी। हे नैषध! जो पुरुष किसी पुरुषको दुःखसे व्याकुल हुआ देख आप दुःख सहता है; उस पुरुषको औरभी अधिक दुःख होता है। जिस पापीने महात्मा नलको इतना दुःख दिया है, वहभी मेरे पापसे जन्म भर दुःखीही रहै। वह महाराज नलकी स्त्री इस प्रकार रोती हुई उस सिहादि जन्तुओंसे भरे हुए वनमें अपने पतिको ढूढ़ने लगी। उस समय भीमपुत्री उन्मत्तके समान रोती हुई वार वार हाय महाराज! हाय महाराज! ऐसा कहती हुई उस वनमें घूमने लगी। कुररीके समान रोती हुई, शोचती हुई, घूमती हुई उस भीमपुत्रीको आकर भूख और प्याससे व्याकुल अजगरने ग्रहण किया। अजगरके ग्रास होते समय दमयन्तीने शोकसे व्याकुल अपना कुछ शोच न करके राजा नलका शोक किया, और बोली, हे नाथ! हाय इस वनमें यह अजगर मुझको अनाथके समान खाता है, आप मेरी रक्षा क्यों नहीं करते है। हे नाथ! हे नैषध! आप मेरे बिना अब कैसे हैं? आप मुझे छोड़कर कैसे चले गये? हे महाराज! जब आप इस पापसे छूटकर अपने धन, राज्य और बुद्धिको प्राप्त करेंगे, तब भूख प्याससे व्याकुल आपके परिश्रमको कौन दूर करेगा? हे राजशार्द्दूल! हे पापरहित! आप मुझे छोड़कर क्या सुख पाते हैं? इस प्रकार रोती हुई दमयन्तीके वचन सुनकर उस घोर वनमें आया हुआ व्याधा वेगसे उसकी ओर दौड़ा। उस कमलनैनीको अजगरसे ग्रस्त देखकर व्याधा औरभी वेगसे दौड़कर वहां पहुंचा और उसने अपने तीक्ष्ण शस्त्रसे सर्पका सिर काट दिया। अनन्तर वह सर्प विना प्राणका होकर पृथ्वीमें लोट गया। उस व्याधाने दमयन्तीको सापके मुखसे छुड़ाके स्नानकराकर कुछ खिलाकर और धैर्य्य देकर पूछा, हे मृगनैनी तू किसकी स्त्री है, और इस घोर वनमें क्यों आई है? हे भामिनि! तू इस घोर आपत्तिमें कैसे पड़ गई? हे भारत! दमयन्तीने उसके ऐसे वचन सुनकर अपना सब वृत्तान्त पूरा कह सुनाया। अनन्तर उस आधे वस्त्रवाली, पीनस्तनी, सुश्रोणी, नवीन कामपाङ्गी, पूर्णचन्द्रमाके समान मुखवाली, घूंघरवाले बालावाली और टेढ़ी भौंहवाली दमयन्तीको देख व्याधा कामदेवके वशमें हो गया। अनन्तर कामसे व्याकुल व्याधा दमयन्तीको सुन्दरी जान मीठी वाणीसे शान्त करता हुआ बोला, और पतिव्रता दमयन्तीभी उस दुष्टको कामसे व्याकुल देख तीव्र क्रोधसे व्याकुल होगई। वह दुष्टात्मा क्षुद्र, पापबुद्धि, जलती हुई, अग्निके समान दुर्द्धर्ष दमयन्तीसे काम चेष्टा करनेका यत्न करने लगा। अनन्तर दुःखसे भरी हुई दमयन्तीने उस दुष्टको क्रोधसे भरकर शाप दिया,

हे चुद्रव्याध। यदि मैंने निषधराजके सिवा अपने चित्तसेभी दूसरेको पति बनानेकी इच्छा न करी हो, तो तू अभी प्राणहीन हो पृथ्वीमें गिरजा। दमयन्तीके ऐसे वचन सुनतेही व्याध जले हुए वृच्चके समान विना प्राणका होकर पृथ्वीमें गिर पड़ा।

६३ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे महाराज! कमलनैनी दमयन्तीने उस व्याधको मारकर भयसे व्याकुल हो मनुष्यशून्य झिंगुरोंके शब्दसे भरे हुए, अनेक प्रकारके पच्चियोंसे संयुक्त म्लेच्छ और चोरोंसे सेवित शाल, वास धाय, पीपल, तेंदू, इंगुदी, कचनार, बहेड़ा, नीम, हिलनेवाला ढाक, जामुन, आम लोध, बेल, बेत पद्माच, आंवला, कदम्ब, पारसपीपर, गूलर, बेर, बिल्व, बगद, चिरोंजी, ताड़, खजूर हड़, बहेड़ा आदि वृच्चोंसे भरे हुए, अनेक प्रकारकी धातुओंसे चित्रित पर्व्वत अति सघन कुञ्ज, विचित्र गुफा, नदी, तडाग, अनेक प्रकारकी बावड़ी पच्ची और हरिणोंको देखती हुई वनमें घूमने लगी। और घोर रूपवाले अनेक पिशाच सर्प और राच्चसोंको देखने लगी, उसने थोड़े और बहुत जलवाले तालाब, पर्व्वतोंके समूह, अद्भुत दर्शनवाले झरने, और नदियोंको देखा। अनन्तर विदर्भराजनन्दिनीने अनेक भैंसे, सूअर, रीछ और वनसर्पोंके झुण्डके झुण्ड देखे। तेज, यश और परम लच्मीसे भरी हुई दमयन्ती इस प्रकार नलको खोजती हुई वनमें एकली घूमने लगी। पतिके शोकसे पीड़ित विदर्भ राजपुत्री इस प्रकार घोरवनमें घूमती हुई किसीसे भी न डरी। एक दिन विदर्भ राजपुत्री एक शिलाके ऊपर बैठकर अपने पतिके शोकसे व्याकुल हो इस प्रकार रोने लगी। दमयन्ती बोली, हे निषधराज! ऊंचे कन्धे वाले महाबाहो! आप मुझको निर्ज्जन वनमें छोड़कर कहां चले गये? हे नरव्याघ्र! आप भारी दच्चिणावाली अश्वमेधादि यज्ञ करके मुझसे झूठ क्यों बोले? हे वीर! हे नरश्रेष्ठ! महातेजस्विन्! हे राज शार्दूल! हे कल्याण! आपने जो मुझसे कहा था, उसका स्मरण कीजिये। हे पृथ्वीनाथ! जो कुछ हंसोंने आपसे कहा था और आपने जो कुछ कहा था, उसका स्मरण कीजिये। हे नरव्याघ्र! यह निश्चय है कि अङ्ग और उपाङ्ग तथा विस्तारके सहित चारो वेद पढ़नेका फल एक ओर और एकला सत्य एक ओर होता है। हे शत्रुनाशन! हे नरनाथ! हे वीर! इस लिये, आप, अपने पहले कहे हुए वचनोंको सत्य कीजिये हाय वीर नल! मैं आपसे छूट गई। हे पाप रहित! इस घोरवन में आकर आप हमसे क्यों नहीं बोलते हैं? यह देखिये भूखसे व्याकुल भयानक शरीर वाला घोर वनोंका राजा मुझे खाना चाहता है, आप क्यों नहीं मेरी रच्चा करते हैं? हे कल्याण महाराज! आप पहले मुझसे कहा करते थे, कि तेरे सिवा मेरी प्यारी और कोई नहीं है। अब उन पहले कहे बचनोंको झूठ न कीजिये। हे नरनाथ! मैं आपकी प्यारी स्त्री इस घोरबनमें उन्मत्तके समान रोती फिरती हूं। आप सदा ही मुझको चाहते थे, अब मैं आपको देखना चाहती हूं तो क्यों नहीं बोलते हैं? हे पृथ्वीनाथ! आज सामान्य स्त्रियोंके समान एक वस्त्रके निमित्त रोती हुई दुर्ब्बल, दीन, पीले वर्णवाली, मलिन अनाथ के समान एकली वनमें घूमती हुई मुझसे क्यों नहीं बोलते हैं? हे आर्य्य! शत्रुनाशन! हे विशालनेत्र! जैसे कोई हरिनी अपने झुण्डसे छूट एकली होकर दुःखी होती है मेरी भी वही दशा हुई है। इससे पहले मुझको रोती हुई आप कदापि नहीं देख सकते थे। महाराज! इस महावनमें मैं एकली पतिव्रता दमयन्ती आपको पुकार रही हूं, आप मुझसे

क्यों नहीं बोलते हैं? उत्तम कुलमें उत्पन्न हुए हे शील भरे! सुन्दर। पुरुषश्रेष्ठ! आज मैं इस पर्व्वतमें तुमको नहीं देखती। हे निषधराज! इस महावीर सिंह और व्याघ्रोंसे भरे हुए बनमें सोते हुए बैठे हुए वा चलते हुए कौनसे पुरुषसे आपको पूंछे? हे मेरे शोकके बढ़ानेवाले पुरुषश्रेष्ठ! मैं तुम्हे देखनेको व्याकुल हुई हूं मैं किससे पूंछू कि तुमने इस बनमें कहीं राजा नलको देखा है? मैं किससे कहूं कि तुमने इस वनमें कहीं सुन्दर रूपवाले, महात्मा शत्रुभुण्डके नाशक, कमलनेत्र उस नलको कहीं देखा है कि जिसको मैं ढूंढ़ती हूं? मुझसे ऐसी मीठीवाणी कौन कहेगा कि जिसको तुम ढूंढ़ती हो, वह नल यही है। यह चार दांतवाला बनका राजा, बड़े ओठवाला शार्दूल मेरे आगे ही चला जाता है, देखो मैं शङ्का रहित होकर इसके सामने जाती हूं। हे मृगोंके राजा! हे सिंह! तुम इस वन और हरिणोंके राजा हो; और मैं विदर्भराजकी पुत्री शत्रुओंके नाश करनेवाले महाराज नलकी स्त्री दमयन्ती हूं। हे सिंह! पतिको ढूढ़नेवाली एकली शोकसे पीड़ित मेरे समीप आकर कहो क्या तुमने कहीं नलको देखा है? यह सुनकर मुझे बहुत धैर्य होगा। हे मृगेन्द्र! इदि आप नलका समाचार मुझे न देसकें; तो मझको खाही जाइये, जिससे मैं इस महा भर से छूट जाऊं। देखो इस वनमें मुझको इस भी हुई देखकरभी यह सिंह मुझे कुछ नहीं भरे आता। यह समुद्रमें जानेवाली, मीठे जलसे समय भं नदी और यह पवित्र ऊंचे शिखावाला वार हाय रङ्गोंसे रंगे हुए मनोहर सुन्दर कहती हुई उस शृङ्गोंसे शोभित है अनेक समान रोती हुई, भए पत्थरोंसे विराजमान भीमपुत्रीको आकर भू मानो इस वनकी ध्वजा अजगरने ग्रहण किया। अनन्तर, रीछ, सहस्रों समय दमयन्तीने शोकसे व्याकुल पक्षियोंके शब्दसे पूरित कचनार, अशोक, वकुल, पुन्नाग साल, अमलतास और पीपल आदि फूल भरे हुए वृक्षोंसे शोभित पक्षियोंके सहित नदी शिखरोंसे भरे हुए इस पर्व्वतराजहीसे राजाका समाचार पूछती हूं। हे भगव हे पर्व्वतश्रेष्ठ। दिव्यदर्शन विदित। श देनेवाले। कल्याणरूप पर्व्वत। आपको न स्कार है। आप मुझको राजपुत्री, राजाकी और राजाकी स्त्री प्रख्यात दमयन्ती जानि महारथ विदर्भ देशके राजा चारोवर्णोंकी र करनेवाले भीम मेरे पिता हैं, वह दक्षि वाली अश्वमेध और राजसूय यज्ञोंके कर वाले शत्रुओंकी लक्ष्मीको छीननेवाले, सुन भारी शरीर और नेत्रवाले, ब्राह्मणोंके भक्त, उ चरित्रवाले सत्यवादी, सबका प्रिय चाहनेवा शीलवान, बलवान, महालक्ष्मीमान, धर्म पवित्र, उत्तम प्रकारसे विदर्भ देशके रक्ष जो राजा भीम हैं, मुझको उन्हींकी पु जानिये, मैं जो आपके पास आई हूं सो निष देशके महाराज अपने नामके सदृश गुणवा राजा वीरसेनकी बहू हूं, उन राजाके वे वीर, श्रीमान सत्य-पराक्रम, राजा नल जो अप बापे दादाके राज्यको पालते हैं, जो सब श ओंके नाशक, श्यामसुन्दर। ब्राह्मणोंके भ वेदके जाननेवाले पण्डित, धर्मकर्त्ता, सोमपीने वाले, अग्निहोत्री, यज्ञकर्त्ता, दाता, योद्धा पृथ्वीके उत्तम शासनकर्त्ता, और जो पवित्र कीर्त्तिके नामसे प्रसिद्ध हैं, आपके यहां आई हुई मुझको उनही की श्रेष्ठ स्त्री जानिये। पर्व्वतसत्तम! लक्ष्मी और पतिसे छूटी हुई, नाथरहित, दुःखसे व्याकुल पतिको ढूढती हुई मैं यहां आई हूं हे पर्व्वतश्रेष्ठ! तुमने अपने इन ऊंचे ऊंचे शिखरोंसे कहीं राजा नलको देखा है? मेरा प्यारापति गजेन्द्रके समान पराक्रमी, बुद्धिमान, विशालबाहु, दमयान्त निषदेशके महाराज नलको कहीं तुमने

देखा है? हे पर्व्वत श्रेष्ठ। अपनी पुत्रीके समान दुःखसे व्याकुल हुई मुझको वचन कहकर क्यों नहीं धीरज देते हो? हे वीर हे तेजस्वी! हे धर्म्मज्ञ! हे पृथ्वीनाथ! यदि आप कहीं इस वनमें छिपे हो तो मुझे दिखाई यों नहीं देते? हाय मैं मोठी, बादलके मान गम्भीर अमृतके समान दमयन्ती ऐसी ाणी महात्मा नलके मुखसे कब सुनेगी? हे थ्वीनाथ! अपने शोकके नाश करनेवाली, पने कुलकी रीतिपर चलनेवाली, भयसे याकुल मुझको क्यों नहीं धीर्य्य देते हो? हे महाराज! वह राजपुत्री दमयन्ती पर्व्वतश्रेष्ठसे ऐसे वचन कहकर पुनः उत्तरकी ओर चली। यह सुन्दरी निरन्तर तीन दिन और रात चलतीही रही, तब उसने सुन्दर वनसे शोभित अनेक ऋषियोंके आश्रमोंको देखा। उनमें पवित्र तौलकर खानेवाले, इन्द्रियजित, संयमी, वशिष्ठ, भृगु और अत्रि आदिक अनेक ऋषि रहते थे। उसने उस आश्रमको जलभक्षी, वायुभक्षी, पत्रभक्षी, जितेन्द्रिय, महाभाग, स्वर्ग-मार्ग देखनेकी इच्छावाले, वकलेके वस्त्रवाले मुनियोंसे शोभित देखा। वह आश्रम तपस्वि-योंके वास करनेसे अत्यन्त मनोहर था। उस अनेक पक्षी हरिन और वन्दरोंसे युक्त तपस्वि-योंसे भरे हुए, आश्रमको देखतेही दमयन्तीके चित्तमें स्थिरता हुई। अच्छी भृकुटी अच्छेवाल, च्छे कुच, अच्छी कमर, अच्छे दात और च्छे मुखवाली तेजस्विनी, कमलननी, वीर-के पुत्रकी प्यारी स्त्रियोंमें रत्न तपस्विनी न्ती उस आश्रममें गई। वहा जाकर ो मुनियोंको प्रणाम कर नम्रभावसे खड़ी । सब तपस्वी श्रेष्ठोंने उसका स्वागत किया, यथायोग्य पूजा करके सब मुनियोंने ाया और कहा कि हम तुम्हारा कौन करें? यह सुनकर उत्तम मुखवाली बोली कि हे तपस्वियो। हे पाप

रहिती। कहो तुम्हारे हरिन और पक्षी तो कुशलसे हैं? आपलोगोंके अग्निहोत्र कर्म्म और अपने अपने धर्म्म कार्य्य तो कुशलसे होते हैं न? उन्होंने कहा हे यशस्विनी। हम सब कुशलसे है। हे सुन्दरि! कहो तुम कौन हो? और क्या चाहती हो? हम सब तुम्हारे रूप और तेजको देखकर परम आश्चर्य्यको प्राप्त हुए हैं, धैर्य्य धरो, घबराओ मत। हे अतिन्दिते! हे कल्याणि! क्या तुम इस वनकी अथवा इस पर्व्वतकी या इस नदीकी देवी हो?

दमयन्ती बोली, हे ब्राह्मणा। मैं न इस वनकी न इस पर्व्वतकी और न इस नदीकी देवी हूं। हे तपद्रव्यवाले ऋषियो। मुझको मानुषी जानो; मैं अपने वृत्तान्तको विस्तारसे कहती हूं, आपलोग सुनिये। विदर्भ देशमें भीमनामके राजा है, हे ब्राह्मणश्रेष्ठो। मैं उन्हीकी पुत्री हूं; और निषध देशके राजा बुद्धिमान, यशस्वी वीर, युद्धजेता, प्रजानाथ, नल मेरे पति है। वह देवतोंकी पूजामें रत, ब्राह्मणोंके प्यारे, निषधवंशके रक्षक, महा तेजस्वी, महा बलवान, सत्यवादी धर्म्मज्ञ, पण्डित, सत्यसन्ध शत्रुनाशन, ब्राह्मणोंके भक्त देवतोंमें तत्पर, लक्ष्मीवान, शत्रुओंके नगरोंको जीतनेवाले, राजोंमें श्रेष्ठ, इन्द्रके समान तेजस्वी, विशालनेत्र, चन्द्रमुख, शत्रुनाशन, महा यज्ञोंके कर्त्ता, वेद और वेदाङ्गोंके पार-गामी, युद्धमें शत्रुनाशन, सूर्य्य और चन्द्रमाके समान तेजस्वी, महाराज नल मेरे पति हैं। उन धर्म्मपरायण महाराजको किसी छली, अनार्य, पापी जुएके जाननेवालेने बुलाकर उनका राज्य और सब धन जुएमें जीत लिया। उस राजोंमेंसिंह नलकी स्त्री पतिके दर्शन चाहनेवाली मुझे विख्यात दमयन्ती जानो। मैं वन, पर्व्वत, तड़ाग, नदी पलवल और सब वनोंमें अपने युद्धके जीतनेवाले, महात्मा शस्त्र जाननेवाले पति नलको ढूढ़ती दुःखसे व्याकुल फिरती हूं; कहिये आपके इस रम्य तपोवनमें

निषध देशके राजा नल आये हैं? हे ब्राह्मण! जिसके निमित्त मैं इस घोर भरी आपत्तिमें पड़कर इस घोर सिंह और शार्दूलोंसे भरे हुए वनमें घूम रही हूं, हे ब्राह्मणों! यदि मैं कुछ दिन राततक राजा नलको न देखूंगी तो अपने शरीरको छोड़कर परम पदको प्राप्त करूंगी। उस पुरुषसिंहके बिना जीनेसे मेरा क्या प्रयोजन है? मैं अपने पतिके शोकसे पीड़ित कब तक जीऊंगी? भीमपुत्री दमयन्तीको वनमें इस प्रकार रोती हुई एकली देखकर सत्यदर्शी तपस्वी लोग ऐसा कहने लगे। हे कल्याणि! हे शुभे! अब तुम्हारा कल्याण होनेवाला है, हमलोग तपसे देखते हैं, कि तुम निषध देशके राजा शत्रुनाशन नलको शीघ्रही देखोगी। हे भीमपुत्री! धर्मज्ञोंमें श्रेष्ठ, सुखी, सब पापोंसे छूटे हुए सब रत्नोंसे युक्त, शत्रुओंकोभी देनेवाले, मित्र शोकनाशन, कल्याणसे भरे हुए, अपने पति राजा नलको उसी देशमें राज्य करते हुए शीघ्रही देखोगी। वह ब्राह्मणलोग नलकी प्यारी राजपुत्री दमयन्तीसे ऐसा कहकर अपने आश्रम और अग्निशालाके सहित अन्तर्धान हो गये। सुन्दर शरीरवाली राजा वीरसेनकी वह दमयन्ती बहुत आश्चर्य्यमें आकर विचारने लगी कि क्या मैंने यह स्वप्न देखा था? यह क्या आश्चर्य्य हुआ? वह मुनि और उनका आश्रम कहां गया। वह पक्षी और पुष्पोंसे शोभित मनोहर जलवाली नदी कहां गई? और वे उत्तम फूलोंसे भरे हुए, हृदयके प्यारे पर्व्वत कहां गुप्त होगये? उत्तम हंसनेवाली भीमराजकी पुत्री कुछ समय तक ऐसा विचार करके अपने पतिके शोकसे व्याकुल और विवर्ण मुखवाली होगई; आसुवोंसे पूर्ण नेत्रवाली दमयन्ती आगे चलकर एक अशोक वृक्षको देख रोती हुई ऐसा कहने लगी, वह वृक्ष फूलोंसे भरा नवीन पत्तोंसे भरा, पक्षियोंसे शोभित था। उसको देख दमयन्ती विचारने लगी, आहा! इस वनमें यह वृक्ष शोभासे भरा हुआ, फल और पुष्पोंसे पूर्ण पर्व्वतके समान शोभित है। हे अशोक! हे प्रियदर्शन! मुझको शोक रहित करो। तुमने शोक और भयसे रहि[त] राजा नलको कहीं देखा है? वही शत्रुओं[का] नाश करनेवाला राजानल दमयन्तीका प्यार[ा] पति है, उस निषध देशके राजा मेरे प्यारे [को] तुमने कहीं देखा है? वह एक वस्त्रधा[री] कोमल दुःखसे पीड़ित, वीर इसी वनमें आ[ये] थे; हे अशोकवृक्ष! जैसे मैं शोक रहित हो जा[ऊं] वैसाही यत्न करो। तुम्हारा नाम अशोक है [सो] हमारे शोकको नाश करके यथार्थनामा बनो। वह उत्तम स्त्री दमयन्ती अशोकसे ऐसे वच[न] कहती हुई महाघोरवनमें पहुंची। उसने उ[स] वनमें जाकर अनेक पर्व्वत, अनेक वृक्ष, अने[क] नदी, अनेक मृग और अनेक पक्षियोंको देख[ा,] गुफा, पर्व्वतके नीचे स्थान और विचित्र नदि[]योंको देखा, उत्तम हंसनेवाली दमयन्ती नलको ढूंढ़ती इस प्रकार दूर चलकर एक स्थान[में] पहुंची। उसने वहां जाकर देखा कि ए[क] हाथी घोड़े और रथोंसे भरी हुई बड़ी भारी सेना शीतजलवाली सुन्दर दोनों ओर बेतवाली उत्तम, जलपूर्ण चौड़ी नदीको तरती है। वा[ह] नदी सारस, कुमरी, चकवोंके शब्दसे शोभित, थी। नलकी स्त्री यशस्विनी दमयन्ती उस सेनाको देख उसकी ओर जा, उसके बीचमें पहुंची, जिस समय वह उन्मत्तके समान शोकसे व्याकुल आधे वस्त्रको धारण किये दुर्ब्बल, विवर्ण मुखवाले, मलिन और बिखरे केशवाली उस सेनाके मध्यमें पहुंची तो उसको देख कोई पुरुष इधर उधर भयसे भागने लगे, कोई चिन्ता करने लगे, कोई हंसने लगे, कोई उसकी निन्दा करने लगे। हे भारत! कोई कृपाकर उसका समाचार पूछने लगे, कि हे कल्याणि! तुम कौन और किसकी हो? इस वनमें क्या ढूंढ़ती हो? हम तुमको देखकर भयसे व्याकुल हुए

है। क्या तुम मानुषीही हो? हे कल्याणि। हम तुम्हारी शरण है, तुम सत्य कहो, क्या तुम इस वन अथवा पर्व्वत दिशाओंकी देवी हो? हे अनिन्दिते। तुम यक्षी या राक्षसी अथवा देवी हो? तुम हमारा कल्याण करो। हे कल्याणि! जैसे यह हमारा झुण्ड सुखसे चला जाय और हमारा कल्याण हो, वही यत्न तुम करो। बस झुण्डके ऐसे बचन सुनकर पति-शोकसे पीड़ित राजपुत्री साध्वी दमयन्ती झुण्डपति, बूढ़े, बालक और जो उनमें थे उन सबसे ऐसा बोली। तुम सब मुझको राजाकी पुत्री, राजाकी बहू और राजाकी स्त्री जानो। मैं अपने पतिका दर्शन चाहती हूं। विदर्भ देशका राजा भीम मेरा पिता है और निषध देशका राजा महाभाग नल मेरा पति है, मैं उसी अपराजित नलको ढूढ़ती फिरती हू। यदि तुमने पुरुषसिंह, शत्रुनाशन, मेरे प्यारे नलको कहीं देखा हो, तो शीघ्र कहो? उस सुन्दर अङ्गवालीके ऐसे बचन सुन, शुचि-नामक झुण्डपति अपने झुण्डके सहित ऐसा बोला। हे कल्याणि। हे शुचिस्मिते! मैं झुण्डका स्वामी हू, मेरे बचन सुनो। हे यशस्विनी! इस मनुष्यरहित बनमें, हाथी, गैंड़ा, भैंसा, शार्दूल, रीछ और हारनोंको तो सर्व्वत्र देखता हूं, परन्तु मैंने नल नामक पुरुषको कहीं नहीं देखा, इस घोरवनमें मैंने तुम्हारे सिवा और किसी मनुष्यको नहीं देखा, अब यक्षोंके राजा भगवान मणिभद्र हमसे प्रसन्न हो। अनन्तर उस बनिये और झुण्डसे दमयन्ती बोली, कि यह पुरुषोंका झुण्ड कहां जाता है, यह मुझसे कहो। सार्थवाह बोला, हे राजपुत्री। यह बनियोंका झुण्ड चन्देरीके राजा सुवाहुके राज्यका वासी है, और लाभके निमित्त अन्य देशोंको जा रहा है।

६४ अध्याय समाप्त।

श्रीबृहदश्व मुनि बोले, सुन्दर अङ्गवाली दमयन्ती उसके वचन सुन अपने पतिके दर्शनकी इच्छासे उसीके सङ्ग आगेको चली। अनन्तर बहुत समय बीतनेपर महाघोर वनमें उन सब बनियोंने चौकोना पद्मोंसे भरा हुआ, मनोहर, बहुत व्यास और इन्धनसे संयुक्त फूलोंसे शोभित अनेक प्रकारके पक्षिओंसे सेवित निर्म्मल, मीठे, मनोहारी और ठण्डे जलसे भरे हुए सौगन्धिक नामक तड़ागको देखा, और वाहनोंके थकनेके कारण उन्होंने वहीं ठहरनेकी इच्छा की। अनन्तर उन्होंने अपने झुण्डपतिकी आज्ञा लेकर उसी उत्तम वनमें तड़ागके पश्चिम ओर निवास किया। अनन्तर आधी रातके समय जब शब्द शान्त हो गया और वह थके हुए बटोही सो रहे, तब मदरूपी झरनोंसे व्याकुल पर्व्वतकी नदीमें जल पीनेकी इच्छासे एक हाथिओंका झुण्ड आया, उसने उस झुण्डमें अनेक हाथियोंको देखा, वे उन पाले हुए हाथियोंको देख मारनेकी इच्छासे वेगसे मदमें भरे हुए उनकी ओर दौड़े, जैसे पर्व्वतके शिखर टूटके पृथ्वीमें गिरते हैं, वैसेही वे हाथीभी दौड़े। उन हाथियोंका वेग महादुःसह हुआ। उस समय हाथियोंके दौड़नेसे और वृक्षोंके गिरनेसे वनका मार्ग नष्ट हो गया। अनन्तर तड़ागका मार्ग रुकनेसे उन हाथियोंने बनियोंको मारना आरम्भ किया। पृथ्वीमें सोते हुए, शरणकी इच्छा करते हुए लोग महा हाहाकार करने लगे। नींदसे व्याकुल बटोही लोग वनके कुञ्जोंकी ओर दौड़ने लगे, कोई हाथियोंके दांतसे, कोई सूंड़ और कोई चरणोंसे मरने लगे। अनेक ऊंट घोड़े, और पुरुषोंसे भरे हुए उस झुण्डके पुरुष रात्रिमें इधर उधर दौड़नेके कारण एकसे एक मिलकर मरने गये। वे लोग घोर शब्द करते हुए पृथ्वीमें गिरने लगे। कोई वृक्षोंपर चढ़ गये, कोई गढ़ोंमें गिरके मर गये। हे राजन्।

प्रारब्धसे उस हाथियोंके झुण्डने उस भारी-पुरुष दलको इस प्रकार नष्ट कर दिया। तीनों लोकको भयभीत करनेवाला, महाघोर शब्द उस पुरुष दलसे उठा, मानो कहीं आग लग रही है, शीघ्र दौड़ो। हमको बचाओ, यह रत्नों-के ढेर नष्ट होते हैं, इनको ले जाओ, यह धन बहुत है, मैं झूठ नहीं कहता हूं। ऐसेही कहते हुए, सब लोग भयसे व्याकुल होकर इधर उधर भागने लगे और कातर होकर विचारने लगे कि इसको फिर आकर ले जायंगे। जब इस प्रकार महाघोर पुरुष नाशका समय आया, तो भय से व्याकुल दमयन्तीभी जागी, उस कमलनैनी बालाने ऐसी आपत्ति पहले कभी नहीं देखी थी। उस सब लोक भयङ्कर आपत्तिको देखकर जम्भाई और सांस लेती हुई, भयसे व्याकुल होकर उठी, उसमें जो बचे थे, वे सब रुधिरसे भीगे हुए, भयसे व्याकुल हुए, ऐसा कहने लगे यह किसके कर्म्मका फल है, निश्चय हम लोगोंने महायस्वी मणिभद्र और श्रीमान भगवान यक्ष नाथ कुवेरकोभी पूजा नहीं करी अथवा विघ्नकारयोंको पूजाभी हमने पहले नहीं की, और यह जो उन्मत्तके समान स्त्री अमानुष घोररूप बनाकर हमारे सङ्ग आई, जिसको हमने पहलेही भयानक माया बताया था सो निश्चय कोई राक्षसी, वा भयङ्कर पिशाचिनी है, इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह उसीके पापका फल है। यदि हम उस अनेक दुःखदायिनीको देखें तो अवश्यही लाठी ढेला तिनके काठ और मुक्को-से मारडालें। वही हमारे दलके नाश करने-वाली है! दमयन्ती उनके कठोर और रूखे वचन सुनकर अपने शरीरके बचानेकी इच्छासे उस दुःखको स्मरण करती हुई लज्जा और भयसे भरकर वनकी ओर भागी और विचारने लगी, हाय मेरे ऊपर ब्रह्माका कैसा घोर क्रोध हुआ है कि जिससे कल्याण प्राप्ति नहीं होती, यह कौनसे कर्म्मका फल है? मैं अपने कर्म्मको अच्छी प्रकार स्मरण करती हूं, परन्तु मैंने कभी मन वचन और कर्म्मसे थोड़ाभी पाप नहीं किया है, न जाने कौन सी कर्म्मका फल है? निश्चय मेरे पूर्व्व जन्मका यह महापाप उदय हुआ है, जिससे इस प्रकार दुर्दशामें पड़ी हूं। पतिके राज्यका नाश मित्रोंसे बियोग, पति और सन्तानोंसे छूटना, नाथसे रहित होना, बहुत सांपोंसे भरे हुए वनमें वास यह क्या आपत्ति है। अनन्तर जब दूसरे दिन हुआ तो उस दलमें जो मरनेसे बचे थे वे उस दुःखको शोचते हुए उस बनसे भाई और पिता पुत्र तथा मित्रोंका शोच करने लगे। हे नरनाथ! विदर्भराजपुत्री वहां शोक करने लगी कि, न जानूं मैंने कौनसा पाप किया है। देखो, इस निर्ज्जन बनमें एक आदमियोंका महाझुण्ड मुझको मिला था, मेरे मन्द भाग्यके कारण उसकोभी हाथिओंके झुण्डने मार डाला; अवश्य अभी मुझको औरभी दुःख भोगना शेष है। मैंने बूढ़ोंसे सुना है कि बिना समयके कोई पुरुष नहीं मरता इसीसे इन हाथयोंनेभी मुझको नहीं मारा मैंने बाल्यावस्थामें भी मनसे और कर्म्मसे कोई पाप नहीं किया, जिसका फल यह दुःख हुआ है, इससे जान पड़ता है, कि बिना प्रारब्ध पुरुषको कुछ फल प्राप्त नहीं होता। मुझे निश्चय होता है, कि स्वयम्वरमें जो लोकपाल लोग आये थे, मैंने नलके अर्थ उनका निरादर किया था, अवश्य उनही देवतोंके प्रभावसे मुझे यह वियोग हुआ है। वह दुःखसे भरी हुई पतिव्रता, सुन्दरी दमयन्ती इस प्रकार रोती हुई विलाप करने लगी। अनन्तर मरनेसे जो बचे थे, उनमेंसे थोड़े वेद जाननेवाले ब्राह्मणोंने शरत्कालकी चन्द्रमाकी कलाके समान दमयन्तीको मार्गमें देखा। अनन्तर वह वाला दमयन्ती बहुत कालतक चलती चलती

एक दिन सन्ध्या समय चेदि देशके राजा सत्यदर्शी सुवाहुके नगरमें पहुंची, और एकही वस्त्र पहने हुए उस उत्तम नगरमें गई। उस विह्वल, दुर्व्वल, दीन, खुले केशवाली, मलिन दमयन्तीको उन्मत्तके समान आते हुए सब नगरवासियोंने देखा उस नगरमें प्रवेश करती हुई दमयन्तीके पीछे खेलनेवाले नगरके लड़के चले, वह उनके सहितही राजाके स्थानके समीप पहुंची। लड़कोंसे घिरी हुई दमयन्तीको महलमें बैठी हुई राजमाताने देखके धायसे कहा, कि तू इसको हमारे घरमें बुला ला, देखो इस शरण चाहनेवाली बालाको यह लड़के दुःख दे रहे है, इसके रूपसे मेरा घर चांदना हुआ जाता है; यह विशालनैनी लक्ष्मीके समान रूपवाली कल्याणी, उन्मत्तके समान फिर रही है। वह धाय सब लड़कोंको दूरकर दमयन्तीको उत्तम महलमें लेगई, उससे आश्चर्य सहित राजमाताने पूछा कि, हे दिव्यस्वरूपे! तुम इस आपत्तमें पड़कर भी ऐसी उत्तम शोभाको धारण करती हो, जैसे बादलोंमें बिजली चमकती है, हमसे कहो कि तुम कौन और किसकी हो? भूषणोंसे रहितभी तुम्हारा स्वरूप मानुषीके ऐसा नहीं दीखता। तुम्हारा कोईभी सहाय नहीं है? क्या तुम पुरुषोंसे नही घबराती हो? राजमाताके ऐसे वचन सुनकर दमयन्ती बोली, मैं पतिव्रता, मानुषी, अन्तःपुरके रहनेवाली, अपनी इच्छासे निवास करनेवाली दासी हूं, केवल फल मूल खाकर जहां सन्ध्याही वहीं रह जाती हूं, मेरा पति असंख्य गुणोंसे भरा हुआ और मेरा प्रिय है, मैंभी उस वीरकी वैसीही भक्त हूं; और नित्यही छायाके समान उनके पीछे चलती हूं। प्रारब्धसे उनको जुएकी अत्यन्त इच्छा हुई, वह जुएमें सब कुछ हार गये, और अकेले वनको चल दिये, मैंभी उन व्याकुल और उन्मत्तके समान अपने वीर पतिके सङ्गही उनको धैर्य्य बंधाती हुई सङ्गही वनको चली। एक दिन वह वीर वनमें भूखसे अत्यन्त व्याकुल हुए और उस एक वस्त्रकोभी इसी कारणसे खो बैठे। अनन्तर मैं उस विमना, नङ्गे, और चेतना रहित पतिके सङ्गही एक वस्त्र धारण किये हुए बनमें घूमने लगी और कई राततक नहीं सोई, अनन्तर एक दिन मुझको सोती हुई छोड़ मेरा आधा कपड़ा फाड़ वह कहींको चले गये। अब मैं वियोगसे जलती हुई, अपने पतिको ढूंढ़ती हुई, उस अपने प्यारेको कमलकी गुठलीके समान अपने हृदयमें देखती हुई फिर रही हूं। उन देवतोंके समान रूपवाले प्राणनाथको कहींभी नहीं पाती हूं। उस रोती हुई आंसुवोंसे पूर्ण आंखवाली दमयन्तीके ऐसे वचन सुन राजमाता बोलीं। हे कल्याणि! हे भद्रे! तुम यहीं निवास करो, मेरा तुमसे परम प्रेम है, तुम्हारे पतिको मेरे पुरुष ढूंढ़ेंगे अथवा इधर उधर घूमता हुआ वह आपही यहां आजायगा। हे भद्रे! तुम यहा रहकर अपने पतिको प्राप्त करोगी। राजमाताके वचन सुन दमयन्ती बोली, हे वीरजननी! यदि आप मुझसे यह सब प्रण करें तो मैं रह सकती हूं। मैं जूठा नहीं खाऊंगी, पैर नहीं धोऊंगी और यदि कोई मेरी इच्छा करे तो वह आपसे प्राणदण्ड पावे। यह मेरा प्रण है। और अपने पतिके ढूंढनेवाले ब्राह्मणोंको मैं रोज देखा करूं। यदि आप यह सब स्वीकार करें तो मैं निःसन्देह यहा रह सकती हूं। इसके अन्यथा मेरा निवास हृदयमेंभी सम्भव नहीं है। यह सुन राजमाता प्रसन्न हो बोली, जो तुम्हारा प्रण है, सो सब मैं ऐसेही करूंगी! हे राजन्! राजमाता दमयन्तीसे ऐसा कहकर अपनी पुत्री सुनन्दासे बोलीं, हे सुनन्दे! यह सैरिन्ध्री साक्षात् देवरूपिणी है, और तुम्हारी समान अवस्थावालीभी है, इस हेतु तुम इसको अपनी सखी बनालो। इसके सङ्ग रहकर तुम प्रसन्न-

चित्तसे सदाही आनन्द करो। सुनन्दा माताके वचन सुन परम प्रसन्न हुई, और अपनी सब सखियोंके सहित दमयन्तीको सङ्ग ले अपने स्थानको गई। दमयन्ती वहां सब भोगोंको प्राप्त करके राजपुत्रीसे पूजित हो, आनन्दसे रहने लगी।

६५ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे प्रजानाथ युधिष्ठिर! राजानल दमयन्तीको छोड़कर महावनमें घूमने लगे, अनन्तर एकस्थानमें जलती हुई आगको देखा और उसके बीचमेंसे उसने यह शब्द सुना। हे नल! पुण्यश्लोक! शीघ्र आओ, दौड़ो, कुछ भय मत करो। यह सुनतेही नल उस आगके बीचमें घुस गया और वहां जाकर देखा कि एक सर्पोंका राजा कुण्डलाकार बैठा था। नलको देखतेही वह नाग हाथ जोड़ कर कांपता हुआ ऐसा बोला, कि हे नरनाथ! मेरा नाम कर्कोटक नाग है। मैंने महातपस्वी महर्षि नारदका दर्शन किया था, उन्होंने क्रोधमें भरके मुझको शाप दिया कि जबतक राजानल यहां न आवें, तबतक तू स्थावरके समान यहीं पड़ा रह, जब तू उनको देखेगा तबही मेरे शापसे छूटेगा। हे महाराज मैं उनके शापसे एक चरणभी नहीं चल सकता हूं। आप मेरी रक्षा कीजये, मैं आपको कल्याणका उपदेश करूंगा। मेरे समान कोईभी नाग नहीं है; मैं आपका मित्र हूंगा, अब मैं हलका बन जाता हूं, तुम मुझको उठाकर शीघ्र ले चलो। ऐसा कहकर वह नागराज अंगूठेके समान शरीरवाला हो गया। नल उसको उठाकर अग्निरहित देशमें लेगये, वह साप अग्निसे छूटा। जब नलने उसको छोड़नेकी इच्छा की, तो वह सर्प आकाशमें जाकर कहने लगा कि, हे नल! तुम अपने चरणोंको गिनगिनकर कुछ दूर चलो, हे महाबाहो! हम तुम्हारे वास्ते कुछ कल्याणका उपदेश करेंगे। तब नल अपने पैरोंको गिनने लगा, तब उस नागने दशवें चरणपर नलको काट लिया, उसके काटतेही नलका वह सुन्दर स्वरूप नष्ट हो गया। नलने अपने शरीरको कुरूप देख महा आश्चर्य किया अनन्तर रूपधारी सर्पको देखा। तब कर्कोटक नाग नलको शान्त करता हुआ ऐसा कहने लगा, जिसमें पुरुषलोग तुमको न जान सकें इसीलिये तुम्हारे रूपको मैंने नष्ट कर दिया है, हे नल! तुम जिसके कारणसे छलमें पड़कर इस दुःखको भोग रहे हो, मेरे विषसे वह कलि दुःख पावैगा। हे महाराज! मेरे दुःखभरे शरीरवाला कलियुग जबतक तुमको नहीं छोड़ेगा, तबतक महा दुःख सहैगा। हे महाराज! जिसने तुमको विना अपराधके दुःख दिया है, वह स्वयम्ही दुःख पावेगा, तुमने हमारी रक्षा की है, तुमने अपने क्रोधसे उसकी हानि नहीं चाही, अब तुमको सिंहादि तीक्ष्ण दाढ़वाले और शत्रुओंसेभी कुछ भय नहीं होगा। हे नरनाथ! मेरे प्रसादसे तुमको वेद जाननेवालोंसेभी भय नहीं होगा। हे राजन्! मेरे विषकी पीड़ाभी तुमको नहीं होगी। तुम युद्धमें निरन्तर जीततेही रहोगे। हे राजन्! अब तुम इस दिशाको, चले जाओ और अपना नाम बाहुक सूत बताना, राजा ऋतुपर्णके पास जाना, क्योंकि वह जुएकी विद्यामें बहुत निपुण है। हे निषधराज! वह रम्य नगरी अयोध्याका राजा है। तुमसे घोड़ेकी विद्या सीखकर तुमको जुएकी विद्या सिखला देगा। इक्ष्वाकुवंशमें उत्पन्न हुए श्रीमान् राजा ऋतुपर्ण तुम्हारे मित्रभी हो जायंगे। तब तुम पाशोंकी विद्याको जान जाओगे, तो परम कल्याणको प्राप्त होगे। तब तुम अपने पुत्र और राज्यको प्राप्त करोगे, मैं तुमसे सत्य कहता हूं, मनमें कुछ शोक मत

करो। हे राजन्! जब तुम अपने रूपको चाहो तो इस वस्त्रको ओढकर मेरा स्मरण करना, इस वस्त्रके ओढ़तेही तुम अपने रूपको प्राप्त हो जाओगे, ऐसा कहकर उसने नलको दो दिव्य वस्त्र दिये। हे कौरव। हे राजन्! नागराज नलसे ठीक ऐसा कहकर और वस्त्र देकर वहीं अन्तर्द्धान हो गये।

६६ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले. नागके अन्तर्द्धान होनेके पश्चात् राजा नल वहांसे चले और दसवें दिन राजा ऋतुपर्णके नगरमें पहुंचे और राजाके पास जाकर ऐसा बोले, मेरा नाम वाहुक है, घोड़ोंके हाकनेकी विद्यामें मेरे समान पृथ्वीमें कोई नहीं है, बड़े कठिन धन-चयके समयमें मैं मन्त्र दे सकता हूं और भोजन बनानाभी सबसे अच्छा जानता हूं, जगत्में जितनी शिल्पविद्या है, उन सबको अच्छी प्रकार जानता हूं, औरभी जो कठिन कर्म्म है, सबको कर सकता हूं। हे ऋतुपर्ण! आप हमको नौकर रख लीजिये। ऋतुपर्ण बोले हे वाहुक! तुम्हारा कल्याण हो, तुम हमारे यहां रहो, रथके शीघ्र चलानेमें सदाही बुद्धि रहती है। हे सूत। तुम ऐसा उपाय करो जिससे मेरे रथके घोड़े शीघ्र चल सकें, तुम आजसे मेरी घुड़शालके स्वामी हुए, आजसे तुमको दश सहस्र सोनेकी मुद्रा प्रति मास मिला करेगी, वार्ष्णेय और जीवल तुम्हारी आज्ञामें रहा करेंगे। हे वाहुक। इन दोनोंके सङ्ग आनन्द करते हुए तुम मेरे यहां रहो।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, कि राजाके ऐसे वचन सुन, सत्कार पाकर राजा नल वार्ष्णेय और जीवलके सङ्ग अयोध्यामें निवास करने लगे। राजा नल वहां निवास करने हुए सदा दमयन्तीहीकी चिन्ता करते रहते थे, सन्ध्याके समय नित्य यह बात कहा करते थे, "वह तपस्विनी भूख प्यास, और थकाईसे व्याकुल होकर कहां सोती होगी? और अपने मन्दभाग्यका स्मरण करती हुई कौनसे स्थानमें सोती होगी?" नलको यह बात प्रति दिन कहते सुनकर, एकदिन जीवलने पूछा, कि हे वाहुक। तुम रातको किसका नित्य स्मरण करते हो? सो मैं सुननेकी इच्छा रखता हूं, हे आयुसन्! तुम किसकी स्त्रीका स्मरण करते हो। प्रश्नको सुनकर नल बोले, कि किसी मन्दबुद्धिवाले पुरुषकी एक बहुत प्यारी स्त्री थी, यह क्षुद्र वचन उसीका है। कभी वह मूर्ख पुरुष किसी प्रयोजनसे उस स्त्रीसे बिछुड़ गया; बिछुड़नेके पश्चात् वह मूर्ख दुःखसे पीड़ित होकर शोकसे जलता हुआ रात दिन निद्रारहित घूमता है, और रात्रिमें उसका स्मरण करके इस श्लोकको गाया करता है, वह समस्त पृथ्वीको घूमकर कुछ जीविका प्राप्त करके उसीका स्मरण करता हुआ दुःखमें अयोग्य होने परभी पुनः पुनः उसीका स्मरण करता है; क्योंकि वह स्त्री महादुःखके समयभी उसके सङ्ग महावनको चली गई थी। उस पापीने उसको बनमें अकेली छोड़ दिया। यदि प्रारब्धवश दुःखसे जीतीभी होगी, तो वह अकेली मार्गोंको न जाननेवाली उस दुःख सहनेके अयोग्य वाला भूख और प्याससे व्याकुल होकर सिंहोंसे भरे हुए घोर वनमें घूमती होगी। हे आर्य्य। इस प्रकारसे उस मन्दभाग्य मन्दबुद्धिने अपनी स्त्रीको छोड़ दिया। इस प्रकार राजा नल दमयन्तीका स्मरण करते हुए उस राजाके घरमें छिपकर रहने लगे।

६७ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, जब राजा नल अपनी स्त्रीके सहित वनको चले गये, तो राजा भीमने नलके दर्शनकी इच्छासे अनेक ब्राह्मणोंको भेजा। बहुत धन देकर कह दिया कि तुम लोग नल

और मेरी पुत्री दमयन्तीको हेरो; इस कर्म्मके सिद्ध हो जाने पर अर्थात् नलका पता लग जाने पर तब जो कोई दोनोंको यहां ले आवेगा वह एक सहस्र गौ पावेगा, और उसको ब्रह्मोत्तरमें नगरके समान गांव मिलेगा। यदि नल वा दमयन्तीको यहां न ला सके और केवल पताही लगा दे, तौभी एक सहस्र गौका मूल्य पावेगा। ऐसे वचन सुन ब्राह्मण लोग प्रसन्न हो सब ओर को चल दिये। वे लोग नगर और राज्योंमें स्त्रीके सहित नलको ढूढ़ने लगे परन्तु कहींभी नल वा दमयन्तीका पता न पाया। अनन्तर सुदेव नामक ब्राह्मण उनको ढंढ़ता चेदिपुरीमें जा निकला। उसने वहां राजाके स्थानमें दमयन्तीको देखा कि राजाके पुण्याह वाचनके समय सुनन्दाके सहित बैठी थी, परन्तु वह असाधारण रूप मन्द होनेसे दमयन्ती ऐसे जान नहीं पड़ती थी जैसे धूएंसे छिपे हुए सूर्य्यकी किरण। उस विशाल नैनीको अधिक दुर्ब्बल और मलिन देख सुदेव ब्राह्मणने अनेक कारणोंसे निश्चय किया कि यही दमयन्ती है। सुदेव बोला, कि जैसा इस स्त्रीको मैंने पहले देखा था वैसीही अबभी है। आज इस लोक-सुन्दरीको लक्ष्मीके समान देखकर मैं कृतार्थ हो गया। यह पूर्णचन्द्रमाके समान रूपवाली, थोड़ी अवस्थावाली, सुन्दर पयोधरवाली, सब दिशाओंको अपने तेजसे अन्धकाररहित कर रही है; यही उत्तम कमलसमान बड़े नेत्रवाली साक्षात् लक्ष्मीके समान है, यही चन्द्रमाकी किरणके समान सबलोगोंकी प्यारी है; यही विदर्भरूप तड़ागसे दैवके दोषसे मनरूपी कीचड़से भरी हुई साक्षात मृनालिनी (कमलकी डण्डीके) समान है; इसका रूप पतिके शोकसे दीन होनेसे ऐसा जान पड़ता है, जैसे राहुसे ग्रसित चन्द्रमा सहित पूर्णमासीकी रात्रिहो; अथवा सूखी हुई नदीका तट। अहा! इसका रूप कैसा होगया है? जैसे टूटे पत्रवाले कमलोंसे भरी हुई, डरे हुए पक्षियोंके हाथीकी सूंड़से टूटी हुई कमलनीका रूप हो। रत्नगठित स्थानोंमें रहनेके योग्य, यह सुकुमारी, कोमलाङ्गी, इस समय ऐसी आपत्तिमें पड़ी जैसे सूर्य्यकी किरणसे जली हुई कमलमृनाली (डण्डी)। रूप और उदारतासे भरी हुई, भूषणोंके योग्य दमयन्ती इस समय विभूषणोंके, आकाशमें नीले बादलोंसे छाई हुई चन्द्रमाकी किरणके समान शोभित हो रही है, यह काम, भोग, और प्यारे वस्तुओंसे रहित होकरभी केवल पतिके दर्शनकी इच्छासे अपने दुःखी जीवनको धारणकर रही है, बिना आभूषणोंकेभी स्त्रीको पतिही आभूषण है, यह सुन्दरी होनेपरभी बिना पतिके शोभित नहीं होती। यदि इसको त्यागकर नल जीता है और इसके शोकसे व्याकुल नहो तो बड़े कठोर कर्म्मको कर रहा है। इस नीलकेशी कमलनैनी सुखके योग्य, दमयन्तीको दुःखिनी देखकर मेरा मनभी दुःखसे व्याकुल हुआ जाता है, यह सुन्दरी साध्वी अपने पतिसे मिलकर इस दुःखके पार कब जायगी? जैसे रोहिणी चन्द्रमासे मिलकर सुखी होती है, तैसे यह कब होगी। निश्चय राजा नल इससे मिलकर अपने छुटे हुए राज्य और पृथ्वीको पाकर प्रसन्न होंगे। अवस्था, शील और कुलसे राजा नलही इस कमलनैनीके योग्य है। मुझे उचित है कि उस अप्रमेय बलवान राजा नलकी स्त्रीको धीरज दूं; क्योंकि यह अपने पतिके दर्शनकी अत्यन्त इच्छा रखती है, मैं इस पूर्णचन्द्रमुखी, दुःख न देखनेवाली, दुःखसे व्याकुल, शोकवती, दमयन्तीको आश्वासित करूंगा।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, सुदेव ब्राह्मण अनेक कारणोंसे अपने मनमें निश्चय कर और इसको लक्षणोंसे पहचान दमयन्तीके पास जाकर ऐसा बोला। हे विदर्भराजनन्दिनि! मैं तुम्हारे भाईका प्यारा मित्र सुदेव नामक ब्राह्मण हूं,

राजा भीमके वचनसे तुम्हे यहां ढूढ़नेको आया हूं। हे रानी! तुम्हारे माता पिता और वहां रहनेवाले चिरंजीव तुम्हारे दोनों बालक कुशलसे हैं, परन्तु केवल तुम्हारेही निमित्त तुम्हारे भाईलोग निर्ब्बलके समान होगये है, और तुम्हें ढूढनेवाले सैकड़ों ब्राह्मण पृथ्वीमें घूम रहे हैं।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे युधिष्ठिर! दमयन्तीने सुदेवको पहचानकर क्रमसे अपने सब बन्धुओंका समाचार पूछा, अनन्तर अपने भाईके मित्र, ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ, सुदेवको देखकर शोकसे व्याकुल दमयन्ती बहुत रोई। अनन्तर उसको रोती हुई, और सुदेवसे एकान्तमें कुछ बात करती हुई देखकर सुनन्दा शोकसे व्याकुल होगई, और अपनी मासे कहने गयी कि आज एक ब्राह्मणके सङ्ग बात करती हुई सैरिन्ध्री बहुत रोरही है। यदि तू जान सके तो जान। अनन्तर चेदिराजकी माता रनवाससे निकलकर उस स्थानपर पहुंची जहां दमयन्ती ब्राह्मणसे बात कर रही थी, हे राजन्! अनन्तर राजमाताने सुदेव को एकान्तमें बुलाकर पूछा, कि यह सुन्दरी किसकी पुत्री और किसकी स्त्री है, अपने बन्धु और पतिसे कैसे अलग होगई? हे ब्राह्मण! तुम इस पतिव्रताके सब चरित्रको जानते हो, सो सब मैंभी सुननेकी इच्छा रखती हूं, इस देवरूपिणीका सब वृत्तान्त हमसे कहो हे राजन्! ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ सुदेवने राजमाताके ऐसे वचन सुनकर सुखसे बैठकर दमयन्तीका सब वृत्तान्त इस प्रकार कहना आरम्भ किया।

६८ अध्याय समाप्त।

सुदेव बोले, कि महा तेजस्वी धर्म्मात्मा भीम नामक विदर्भके राजा हैं। यह कल्याणी उन्हींकी पुत्री है। निषध देशके राजा वीरसेनके पुत्र विख्यात पवित्रकीर्त्ति राजा नलकी स्त्री है, उस महाराजको भाईने जुएमें हराके राज्यसे निकाल दिया, वह दमयन्तीके सङ्गही वनको चले गये, अब न जाने कहां हैं। सो हम लोग दमयन्तीके निमित्त पृथ्वीमें घूमते हैं, आज हमने इसको तुम्हारे स्थानमें पाया, मानुषियोंमें इसके समान रूप वाली कोई नहीं है। इसके भौहोंके बीचमें जो मसा दीखता है, सो जन्म होसे है, मैंने इस सुन्दरीके पद्मतुल्य मुखपर यह छिपा हुआ मसा देखा, यह मैलसे ऐसा छिप गया है, जैसे मेघसे चन्द्रमा; ब्रह्माने ऐश्वर्य्यके निमित्त यह इसका चिह्न बना दिया है। प्रदिपदाकी मन्दकान्ति चन्द्रमाकी कला शोभित नहीं होती है। इसका रूप शरीरमें मैलके भरनेसेभी अभी नष्ट नहीं हुआ है, देखो स्नानादि न करने परभी यह सोनेके समान प्रकाशित हो रही है। यह देवी इस शरीरसे केवल इस मसेसेही पहचानी जाती है। जैसे किसी वस्तुसे ढकी हुई आग उष्णतासे पहचानी जाती है। हे राजन्! सुदेवके ऐसे वचन सुनकर राजमाताने दमयन्तीके मुखका मैल दूर करके उसके मसेको देखा। मैलके दूर होनेसे उसका मुख ऐसा शोभित होने लगा जैसे मेघरहित आकाशमें चन्द्रमा। हे भारत! राजमाता और सुनन्दा उस मसेको देखकर दमयन्तीसे लपटकर कुछ समयतक रोती रहीं। अनन्तर आंसुवोंको पोंछकर राजमाता धीरेसे ऐसा बोली, इस चिह्नसे मैंने पहचान लिया तू मेरी बहनकी पुत्री है, हे सुन्दरी! मैं और तुम्हारी माता दशार्ण देशके राजा महात्मा सुदामाकी पुत्री हैं, उसने तुम्हारी माताको राजा भीमसे और मुझको राजा सुबाहुसे व्याहा था। तुम जब मेरे पिताके घरमें उत्पन्न हुई थी तबही मैंने तुम्हें देखा था। हे भामिनी! जैसा तुम्हारे पिताका घर और ऐश्वर्य्य है, वैसा मेरे घरकोभी जानो। दमयन्ती

उसके वचनको सुन अत्यन्त प्रसन्न हुई । हे राजन्! अनन्तर दमयन्ती अपनी मौसीको प्रणाम करके ऐसा बोली । मैं छिपकरभी तुम्हारे घरमें सुखसे रही, तुमने मेरे सब मनोरथोंको पूर्ण किया, तुम मेरी सदा रक्षा करो । हे माता ! मुझको यह निश्चय है कि अब मुझको इस सुखसे अधिक सुखका स्थान नहीं मिलेगा, अब मैं बहुत दिनसे परदेशमें घूमती हूं । अब मुझे आज्ञा दो, मेरे दोनों बालक पिता और मातासे रहित दुःखसे व्याकुल वहां न जाने कैसे रहते हैं । यदि तुम मेरा कुछ प्रिय काम करना चाहती हो, तो मैं विदर्भ देशको जानेकी इच्छा करती हूं, अतएव शीघ्र बाहनको आज्ञा दो । हे राजन् ! दमयन्तीकी मौसीने प्रसन्न होकर कहा कि बहुत अच्छा । अनन्तर अपने पुत्रकी आज्ञासे भारी सेनासे रक्षित करके पालकीमें विठलाकर श्रीमती दमयन्तीको विदर्भदेशको भेज दिया । हे भरतश्रेष्ठ ! उसके सङ्ग खानेपीने और पहननेकी वस्तु भेजी । अनन्तर दमयन्ती वहांसे चलकर थोड़ेही दिनके पश्चात् विदर्भनगरमें पहुंच गई । सब बन्धुलोग उसको देखकर बहुत प्रसन्न हुए, और उसका सन्मान करने लगे । यशस्विनी देवी दमयन्तीने बान्धव, दोनों बालक माता पिता, और सब सखीवर्गको सुखी देखकर परम विधिसे देवता और सब ब्राह्मणोंकी पूजा करी । राजा भीमने सदेव ब्राह्मणको एक सहस्र गौ, गांव और बहुत द्रव्य देकर प्रसन्न किया, यह दान सञ्जाते अपनी पुत्रीको देखतेही दिया । हे राजन् ! थकी हुई दमयन्तीने उस रात्रिको अपने पिताहीके घरमें विताया । अनन्तर सत्वर दमयन्ती अपनी मातासे कहने लगी । दमयन्ती बोली, हे माता मैं तुमसे सत्य कहती हूं कि यदि तुम मेरा जीना चाहती हो, तो पुरुषोंमें वीर नलको ढूंढनेका यत्न करो । दमयन्तीके ऐसे वचन

सुनकर उसकी माता अत्यन्त दुःखित हुई, लगी; कुछभी उत्तर न दे सकी; रानीकी ऐसी दशा देखकर सब रनवासमें हाहाकार होने लगा और सब अत्यन्त रोने लगे ।
राजा भीमसे रानीने कहा
दमयन्ती अपने पतिका शोक करती है, राजन् ! उसने लज्जाको त्यागकर
ऐसा कहा है, कि तुम्हारे दूत लोग
ढूंढनेका यत्न करें । यह सुनकर राजा
अपने वशमें रहनेवाले ब्राह्मणोंको
कि तुम लोग राजा नलके ढूंढनेका यत्न
राजाने उनको सब ओर भेज दिया ।
दमयन्तीने उनसे ऐसा कहा कि तुमलोग
राज्योंमें जाकर वार वार इसी
कहना कि "हे प्यारे ! तुम कहांसे गए
वस्त्रको फाड़कर निर्जन वनमें प्यारी
पीछे चलनेवाली मुझे वनमें सोती हुईको
कहां चले गये तुमने जैसे
वह बाला वैसेही आधा वस्त्र पहरे
दुःखसे जलती हुई अब तकभी वैसीही है
वीर ! हे राजन् ! उस रोती हुई आप
शोकसे व्याकुल स्त्रीको प्रसन्न करो, और
वचनका उत्तर दो ।"
इसीके समान औरभी तुम अनेक
कहना कि जिससे वे हमारे ऊपर कृपा
जैसे वायुके सङ्ग होकर अग्नि
है; वैसेही मेरा शरीरभी विरहसे
और यहभी कहना कि स्त्री सदाही
रक्षा और पोषण करने योग्य
जाननेवाले आप इन
नष्ट करते हैं ? । आप तो पण्डित, कुलीन और
दयावान, सदासे प्रसिद्ध हैं; मुझे शङ्का होती
कि मेरेही भाग्यसे
किया । हे नरव्याघ्र ! हे पुरुषर्षभ !
मेरे ऊपर कृपा कीजिये,
आपहीसे सुना है कि

धर्म्म है।" ऐसा कहनेपर यदि तुमलोगोंसे कोई कुछ कहे तो उसका पता लगाना कि यह कौन है, और यहां क्या करता है? हे ब्राह्मणश्रेष्ठो! यदि तुम्हारे वचन सुनकर कोई कुछ उत्तर दे तो उसका वही वचन स्मरण करके मुझसे आकर कहना, तुमलोग आलस्य रहित होकर ऐसा उपाय करना कि जिसमें वह पुरुष ऐसा न जाने कि यह लोग दमयन्तीकी आज्ञासे इन वचनोंको कहते फिरते हैं, और तुम शीघ्र हमारे पास आना। चाहे वह धनवान वा निर्धन अथवा असमर्थ हो क्यों न हो, उसका सब समाचार जान लेना। वे ब्राह्मण दमयन्तीके वचनोंको सुनकर दुःखी नलके ढूढ़नेको सब ओर चले गये। हे राजन्! वे ब्राह्मणलोग नगर, राज्य, गांव और आश्रमोंमें वेही वचन कहते हुए नलको ढूंढ़ने लगे, परन्तु कहींभी न पाया। हे प्रजानाथ! दमयन्तीने जैसे उन वचनोंको कहा था, वे ब्राह्मणलोगभी वैसेही सबको सुनाने लगे।

६६ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, बहुतकाल बीतनेपर पर्णाद नामक ब्राह्मण लौटकर विदर्भ नगरमें जाय दमयन्तीसे ऐसा वचन बोला। हे भीमपुत्री! मैंने ढूढ़ते ढूढ़ते भङ्गासुरीके पुत्र राजा ऋतुपर्णके यहां राजा नलको देखा। हे महाभागे! महाजनोंके बीचमें मैंने तुम्हारे वचन सुनाये, सुनकर राजा ऋतुपर्ण कुछभी न बोले और कोईभी उनका सभासद कुछभी न बोला, परन्तु राजाकी आज्ञा लेकर एक वाहुक नामक राजाका नौकर एकान्तमें जाकर मुझसे कहने लगा। वह उस राजाका सूत है, और छोटे हाथवाला कुरूप था, परन्तु भोजनोंके उत्तम बनाने और रथके शीघ्र हांकनेमें बहुतही चतुर है; रोकर वार वार स्वास लेता हुआ मुझ से पूछकर ऐसा बोला, जो कुलीन स्त्री दुःखोंमें पड़केभी अपनेहीसे अपनी रक्षा करती हैं, निःसन्देह उन्ही पतिव्रताओंने स्वर्गको जीत लिया है, उत्तम स्त्रीलोग पतिसे छूटनेपर भी क्रोध नहीं करती हैं, और उसके चरित्रोंको कहकर प्राणोंको धारण करती हैं; उस मूर्खने सुखोंसे भ्रष्ट होकर तो उसको छोड़ दिया; इससे उसको क्रोध करना उचित नहीं। भोजन चाहनेवाले जब उसके वस्त्रको पक्षीलोग लेकर उड़ गये और वह दुःखोंसे जलने लगा तो उस निर्दोषी पर क्रोध करना उचित नहीं, चाहे वह सत्कारको पाती हो या न पाती हो, तौभी राजसे भ्रष्ट, लक्ष्मीसे हीन और दुःखोंसे पीड़ित पतिपर क्रोध करना अनुचित है। उसके यह वचन सुनकर मैं शीघ्रही यहां चला आया। अब तुम्हारी जो इच्छा हो सो करो; और राजासेभी निवेदन कर दीजिये। हे प्रजानाथ। पर्णादके ऐसे वचन सुनकर रोती हुई दमयन्ती अपनी माताको एकान्तमें बुलाकर ऐसा बोली। हे माता! यह वात तुम राजासे मत कहियो; मैं तुम्हारे सामने ब्राह्मणश्रेष्ठ सुदेवको बुलाती हूं, यदि तुम मेरा प्यारा काम करना चाहती हो; तो ऐसा उपाय करो कि जिसमें इस वातको मेरे पिता न जानें; जैसे सुदेवने मुझको वान्धवोंसे मिला दिया, तैसेही यह पुनःभी जाय, देर न करें। हे माता। अयोध्या नगरीमें राजा नल ठहरे हैं, उनको लेनेको सुदेवही जाय। अनन्तर पर्णादका श्रम दूर होनेके पश्चात् सुन्दरी दमयन्तीने उनको बहुत धन देकर प्रसन्न किया और कहा कि नलके आनेपर तुमको औरभी धन दूंगी। हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! मैं तुम्हारे इस कार्य्यसे शीघ्रही अपने पतिसे मिलूंगी, तुमने यह हमारा बड़ा कार्य्य किया जो दूसरेसे नहीं हो सकता था, ब्राह्मणने उसके वचन सुन दमयन्तीको बहुत धीरज दिया; और अच्छे आशीर्वादोंसे प्रसन्न करके धन और मानसे कृतार्थ होकर अपने घरको गया। हे

युधिष्ठिर। अनन्तर दुःख और शोकसे भरी हुई दमयन्तीने, अपनी माताके आगे सुदेवको बुलाकर ऐसा कहा। हे सुदेव! तुम अयोध्यामें मनके समान शीघ्र जाकर वहांके राजा ऋतुपर्णसे ऐसा कहना कि भीमकी पुत्री दमयन्ती पुनः अपना स्वयम्बर करना चाहती है; वहां सब राजा और राजपुत्र जा रहे हैं, हे शत्रुनाशन! मैंने दिन गिन लिये हैं, वह स्वयम्बर कलहीको होगा, यदि तुम्हारी इच्छा हो तो शीघ्र जाओ; क्योंकि दूसरे दिनका सूर्य निकलतेही वह पतिको वरण कर लेगी। वीर नल अभीतक जीते हैं, वा मर गये इसका कुछ पता नहीं है। हे महाराज! दमयन्तीके वचनको स्वीकार कर सुदेव अयोध्यामें पहुंचा और राजा ऋतुपर्णसे सब बात कह सुनाई।

७० अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे युधिष्ठिर! सुदेवके ऐसे बचन सुनकर राजा ऋतुपर्ण वाहुकसे मीठे वचनोंसे शान्तिपूर्व्वक ऐसा बोले, हे घोड़ोंके तत्व जाननेवाले वाहुक! दमयन्तीका स्वयम्बर है, सो हम एकही दिनमें विदर्भ नगर पहुचना चाहते हैं, कहो यह हो सकता है? हे कौन्तेय! राजाके ऐसे बचन सुन राजा नलका हृदय फटने लगा, परन्तु महामना नल धीरज धारण करके स्थिर रह गये, और ऐसा विचारने लगे, कि क्या दमयन्ती ऐसा कह सकती है? क्या सचही वह स्वयम्बर करती है? या उस दुःखसे मोहित स्त्रीने हमारे ही लिये यह बड़ा उपाय रचा है? हाय बड़े दुःखकी बात है कि तपस्विनी कृपण दमयन्तीभी मुझ क्षुद्र पापवुद्धिसे छूटकर दूसरा पति करना चाहती है। स्त्रियोंका स्वभाव बड़ा चञ्चल होता है, और मेरा दोषभी घोर था। अथवा हो सकता है, कि इतने दिन अलग रहनेसे दमयन्तीको मेरा प्रेम न रहा हो। वह पतलीकमरवाली मेरे शोकसे घबड़ा रही होगी, परन्तु मुझसे निराश होने परभी वह ऐसा कर्म्म नहीं कर सकती, विशेषतः सन्तान रहते। इसमें जो सत्य वा झूठ होगा वहां जाकर सब निश्चय जान लूंगा, ऋतुपर्णकी इच्छासे मैं अपना कार्य्य सिद्ध करूंगा। ऐसा विचारकर, दीन मनवाले वाहुकने हाथ जोड़कर राजा ऋतुपर्णसे ऐसा कहा, हे महाराज! मैंने आपके बचनको माना; अब मैं आपके सहित एकही दिनमें विदर्भ नगर पहुंचूगा। हे युधिष्ठिर! अनन्तर राजा ऋतुपर्णकी आज्ञासे वाहुकने घुड़सालमें जाकर घोड़ोंकी परीक्षा करी। राजा ऋतुपर्णने कहा कि, शीघ्रता करो। उनकी ऐसी आज्ञा सुन, नलने वार वार विचारकर घोड़ोंकी अच्छी प्रकार परीक्षा करी। अनन्तर मार्ग चलनेमें समर्थ दुबले दुबले घोड़ोंको बाहर निकाल लाये। वे घोड़े तेज बल और शीलसे भरे हुए, अच्छे खेतके उत्पन्न, बुरे लक्षणोंसे रहित, मोटी नाक, भारी ओठवाले, दश भौरियोंसे रहित, सिन्धु देशके उत्पन्न हुए, और वायुके समान शीघ्र जानेवाले थे। उनको देखकर राजा कुछ क्रोधकरके बोले कि, तू यह क्या करना चाहता है? हम तुमसे धोखा खाने योग्य नहीं है। ये थोड़े बलवाले घोड़े हम लोगोंको कैसे लेजा सकते हैं? और इनसे हम इतनी दूर कैसे पहुचेंगे? वाहुक बोले, जिस घोड़ेके माथेमें एक, सिरमें दो काखमें और हृदयमें दो दो भौरी हो, वही घोड़ा बलवान और चलनेमें असाधारण होता है; निश्चय ये घोड़े एकही दिनमें विदर्भ नगर पहुचेंगे, अथवा जिन घोड़ोंको आप आज्ञा दें उन्हींको मैं जोतू। ऋतुपर्ण बोले, हे वाहुक! तुम घोड़ोंके तत्व जाननेमें निपुण हो, जिनको तुम समर्थ जानो उनहीको शीघ्र जोत लाओ। अनन्तर रथविद्यामें निपुण नलने कुछ और

शीलसे भरे हुए उत्तम चार घोड़ोंको रथमें जोता। अनन्तर राजा ऋतुपर्ण शीघ्रता सहित उस रथपर चढ़े। उनके चढ़तेही चारों घोड़े पृथ्वीपर बैठ गये। तब श्रीमान् पुरुषोंमें श्रेष्ठ राजा नलने उन घोड़ोंको ठोंका चुचकारा, और लगाम पकड़कर ठीक किया, तब वे घोड़े तेज और बलसे भर गये। अनन्तर नलने घोड़ोंको हांका। जब वे अत्यन्त वेगसे चलने लगे, तो वार्ष्णेय सूतको हांकनेके स्थानपर बैठा दिया। अनन्तर वाहुकके हांकनेसे वे घोड़े ऋतुपर्णको मोहित करते हुए रथको लेकर आकाशमें पहुंच गये। उन घोड़ोंको वायुके समान चलते हुए देखकर श्रीमान् अयोध्याके राजा परम आश्चर्य करने लगे। नलके सारथी वार्ष्णेयने वाहुकके उस रथके शब्दको सुनकर, लगाम पकड़नेकी रीति देखकर तथा वाहुककी अश्वविद्या देखकर विचारा, क्या यह इन्द्रका सारथी मातली है? क्योंकि और वाहुकमें भी वैसेही सब लक्षण दीखते हैं। अथवा घोड़ोंके कुलके तत्वको जाननेवाले साक्षात् शालिहोत्र है। उन्होंनेही यह उत्तम पुरुषका शरीर धारण किया है, अथवा शत्रुओंके जीतनेवाले यह साक्षात् नलही है? जान पड़ता है, कि महाराजहीने यह रूप धारण किया है, क्योंकि जिस विद्याको महाराज नल जानते थे, उसीको वाहुकभी जानता है, और राजा नल और वाहुकको बुद्धिभी समानही दीखती है, तथा नल और वाहुककी अवस्थाभी एकही जानपड़ती है। यदि यह महापराक्रमी नल नहीं है, तो उनहीके सिखाये हुए कोई है। अनेक महात्मालोग इस पृथ्वीपर अपने रूपको छिपाकर दैवविधानको ग्रहण करके शास्त्रकी विधिके अनुसार घूमते हैं; अतएव, इनके शरीरको कुरूप देखकर मेरी बुद्धिका भेद नहीं होना चाहिये, परन्तु प्रमाणहीन मेरी बुद्धिभी नष्ट हो सकती है। देखो इसकी अवस्था नलहीके समान है। अन्तको मैं निश्चय कह सकता हूं कि सब गुणोंसे भरे हुए नलहीने अपना नाम वाहुक रख लिया है। हे महाराज! राजा नलके सारथी वार्ष्णेयने ऐसा विचारकर अपने हृदयमें निश्चय कर लिया कि राजा नल येही हैं। अनन्तर राजा ऋतुपर्ण वाहुककी अश्वविद्याको देखकर वार्ष्णेय सारथीके सहित वहुतही प्रसन्न हुये। उस एकाग्रता उत्साह घोड़ोंका पकड़ना और परम यत्नको देखकर राजा अत्यन्तही प्रसन्न हुए।

७१ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! अनन्तर वह रथ पक्षीके समान आकाशमें चलता हुआ, शीघ्रही नदी, पर्व्वत, वन और तड़ागोंके पार हो गया। इस प्रकार चलते हुए रथपर बैठे हुए शत्रुनाशन राजा-ऋतुपर्णने अपने दुपट्टेको पृथ्वीसे गिरा हुआ देखा। अनन्तर राजाने बहुत शीघ्र प्रसन्न होकर नलसे कहा कि मैं अपना दुपट्टा लेना चाहता हूं, हे महाबुद्धे! तुम इन बहुत शीघ्र चलनेवाले घोड़ोंका इतने समयतक रोको कि जबतक वार्ष्णेय मेरे दुपट्टे को उठा लावे। नलने ऋतुपर्णसे कहा कि आपका दुपट्टा बहुत दूर गिरा है; उसको कोई लानेमें समर्थ नहीं है; क्योंकि वह चारकोश पीछे रह गया। ऐसे कहते हुए राजा ऋतुपर्णने उस वनमें एक फले और फूले हुए बहेड़ेके वृक्षको देखा। उसको देखकर राजाने शीघ्रता सहित कहा कि हे सूत! तुम मेरी अङ्क विद्याकी कुशलताको देखो, सब कोई सब विद्याको नहीं जानता, एक पुरुषमें सब ज्ञान नहीं रहते हैं। हे वाहुक! इस वृक्षमें जितने फल और पत्ते हैं, उनको छोड़कर जितने गिर गये हैं, उन सबसे एकसौ एक पत्ते हैं। हे वाहुक, दोनो शाखाओंमें पांचकरोड़ पत्ते हैं, इन दोनो

शाखाओंसे जो छोटी शाखा चली हैं, उन सवमें दो हजार एक सौ उनचास फल हैं। तब वाहु-कने रथको रोककर राजासे कहा, हे राजन्! आप परोक्षको बातको कहते हैं, मैं इस बहेड़के वृक्षको काटकर आपकी बातका निश्चय करूंगा, क्योंकि इस गणित विद्यामें परोक्षवाद नहीं हैं। हे महाराज! मैं आपके आगेही इस वृक्षको काटता हूं, क्योंकि मैं नहीं जानता कि यह सत्य है, वा झूठ? हे नरनाथ! मैं आपके सामने वृक्षको काटता हूं, कुछ देर-तक वार्ष्णेय घोड़ोंकी लगाम पकड़े रहे। तब राजाने नलसे कहा कि हे सूत। यह समय देर करनेका नहीं है। परम यत्नवान् वाहुकने कहा कि कुछ थोड़ी देर आप ठहरिये, अथवा आपके मार्गमें ईश्वर कल्याण करे, वार्ष्णेयको सारथी बनाकर चले जाइये। हे कुरुनन्दन! वाहुकके ऐसे वचन सुनकर राजाने उससे शान्त्वनापूर्वक कहा कि हे वाहुक! जगतमें तुमही एक सारथी हो, दूसरा नहीं। हे हयकोविद! तुम्हारेही कर्त्तव्यसे मैं विदर्भ नगरको जा रहा हूं। मैं तुम्हारी शरण हूं, तुम विघ्न मत करो, यदि तुम सूर्य्यके रहते रहते विदर्भ नगरमें मुझे पहुंचाओगे, तो जो तुम कहोगे सोई तुम्हारा काम करूंगा। वाहुकने कहा कि मैं इस वृक्षके पत्ताका निश्चय करके अगाड़ी चलूंगा। आप मेरे इस वचनको स्वीकार कीजिये। अनन्तर राजाने इच्छा न रहतेभी कहा कि अच्छा गिनो। हे पापरहित! मैं वृक्षकी एक शाखाके काटनेकी आज्ञा देता हूं। हे अश्वतत्वज्ञ! तुम एक शाखाके पत्ते गिनकर प्रसन्न हो। अनन्तर नलने रथसे उतरकर शीघ्रही उस वृक्षको काटडाला और उसके फलोंको गिना, राजाने जितने बतलाये थे, ठीक उतनेही पाया, तब आश्चर्य करके राजासे कहने लगे, हे राजन्! मैंने यह आपका वल अद्भुत देखा। हे नरनाथ! मैं इस विद्याको यथावत सीखना चाहता हूं। शीघ्र चलनेकी इच्छावाले राजाने कहा कि तुम मुझको जुवा और गिननेकी विद्यामें निपुण जानो। वाहुक बोले, हे पुरुषर्षभ! यह विद्या मुझे सिखला दीजिये और मुझसे घोड़ेकी विद्या सीख लीजिये। राजा ऋतुपर्णने भारी काम और घोड़ेकी विद्याके लोभसे उसके वचनको स्वीकार कर लिया। अनन्तर राजाने कहा कि हे वाहुक! यह जुवेकी हृदय विद्या तुम हमसे यथावत ग्रहण करो; और घोड़ेकी विद्या तुम्हारेही हृदयमें रहे। ऐसा कह ऋतुपर्णने नलको जुएकी सब विद्या सिखला दी। जुएका तत्व सीखतेही नलके शरीरसे कलियुग निकल गया। तब निषधराज नलने क्रोध करके कलियुगको शाप देना चाहा। अनन्तर कलियुगने हाथ जोड़कर डरते हुए ऐसा कहा, हे महाराज! आप क्रोधको शान्त कीजिये, मैं आपको बहुत बढ़ाऊंगा। आपसे छुटते समय इन्द्रसेनकी माताने मुझको शाप दिया था, उससे मैं बहुत पीड़ित हुआ हूं। हे अपराजित! मैंने आपके शरीरसे कर्क्कोटक नागके विषसे रात दिन जलते हुए महा दुःखसे वास किया है, मैं आपको शरण हूं, आप मेरे वचन सुनिये, जगतमें जो कोई आलस्य रहित होकर आपका चरित्र वर्णन करेगा, उसको मुझसे उत्पन्न हुआ दुःख कदापि न होगा। यदि शरण आये भयसे पीड़ित मुझको आप शाप न देंगे, तो मेरा कहा हुआ वचन सत्य होगा। राजा नलने ऐसा सुनकर अपने क्रोधको शान्त किया। तब कलियुग भयसे पीड़ित होकर उसी बहेड़के वृक्षमें घुस गया, परन्तु कलियुग और राजा नलकी इन बातों को किसीने भी न सुना और न कलियुगको किसीने देखा। अनन्तर शत्रुनाशन निषधराज तेजस्वी नल सब दुःखोंसे रहित हो फलोंको

गिन कलियुगको दूरकर परमतेज और आनन्दसे पूर्ण हो रथपर चढ़ शीघ्रता सहित घोड़ोंको हांकने लगे। उस दिनसे कलियुगके प्रविष्ट होनेसे वहेड़ेका वृक्ष नीच होगया। अनन्तर वे घोड़े फिरभी पक्षियोंके समान उड़ने लगे। महायशस्वी राजा नलने अपने अन्तःकरणसे घोड़ोंको विदर्भ देशकी ओर चलाया, राजा नलके जानेके पश्चात् कलियुगभी वृक्षसे निकल अपने घरको चला गया। हे राजन्! राजा नलभी कलियुगके निकलनेसे सुखी होगये, परन्तु केवल कुरूपहीसे दुःखी रहे।

७२ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, अनन्तर सत्यपराक्रम राजा ऋतुपर्ण सन्ध्या समय विदर्भ नगरके द्वारपर पहुंचे, और द्वारपालोंने यह समाचार राजा भीमको दिया। राजा ऋतुपर्ण राजा भीमकी आज्ञा पाकर कुण्डलपुरमें गये, उस समय नलने रथमेंसे ऐसा शब्द निकाला जिससे दशों दिशा पूर्ण होगई। उस रथके शब्दको सुनकर नलके घोड़े ऐसे प्रसन्न हुए, जैसे पहले नलको देखकर होते थे। दमयन्तीने नलके उस रथ शब्दको ऐसा सुना जैसे वर्षा कालमें मेघ गर्जता है। दमयन्तीको रथका महाशब्द सुनकर परम आश्चर्य हुआ। जैसे नलके हांकनेसे शब्द होता था, तैसेही घोड़ोंका शब्द अबभी था। उस महाराजके रथके शब्दको महलोंपर बैठे हुए मोर और अपने थानोंमें बंधे हुए हाथी और घोड़ोंने सुना, सुनतेही मोर और हाथी घोड़े उधरहीको मुह करके ऐसा शब्द करने लगे, जैसे मेघके गर्जने करते हैं। दमयन्ती बोली, यह रथका शब्द पृथ्वीको पूर्ण करता हुआ मेरे हृदयको [illegible] कर रहा है, निश्चय यही राजा नल हैं। [illegible] राजा नलके चन्द्रमाके समान मुखको [illegible]गी. यदि उस असंख्य गुणवाले वीरको न प्राप्त करूंगी, तो निःसन्देहही मर जाऊंगी। यदि आज उस वीरके कोमल हाथोंके वीचमें प्रवेश न करूंगी, तो निःसन्देह पृथ्वीमें न रहूंगी। यदि आज मेघके समान गम्भीर बाणीवाले निषधराजको न पाऊंगी, तो सोनेके समान अग्निमें जल मरूंगी। यदि आज सिंहके समान तेजस्वी, मतवाले हाथीके समान बली राजा नल मुझको न प्राप्त होंगे, तो अवश्यही प्राण देदूंगी। मैं उनके झूठे वचन, अपकार, और पुरानी बातोंको एकान्तमें भी उनकी इच्छासेभी स्मरण नहीं कराऊंगी। हमारा निषधराज समर्थ, क्षमावान, वीर, दाता, और सब राजोंसे बड़ा है; और वह नीच कर्म्मको नहीं करता, तथा दूसरी स्त्रियोंके सङ्ग नपुंसकके समान है। मैं रात दिन उसके गुणोंको स्मरण करती हुई समय विताती हूं। उस प्यारेके बिना मेरा हृदय शोकसे फटा जाता है। हे राजन्! दमयन्ती इस प्रकार रोती हुई चेतना रहितसी हो गई। अनन्तर नलके देखनेकी इच्छासे ऊंची अटारीपर चढ़ गई। तब नगरके बीचकी सड़कमें वार्ष्णेय सारथीके सहित रथमें बैठे हुए राजा ऋतुपर्ण और बाहुकको देखा। बाहुक और वार्ष्णेय रथसे उतरे, घोड़ोंको रथसे अलग करके रथको स्थापन किया। महाराज ऋतुपर्णभी रथसे उतरकर महा पराक्रमी भीमसे मिलनेको चले। राजा भीमने उनका बहुत आदर और सत्कार किया, राजा ऋतुपर्ण उनसे आदर पाकर मनोहर कुण्डिनपुरमें रहे और वार वार स्वयम्बरकी सामग्रीको देखनेका यत्न करने लगे, परन्तु कुछ न जान पड़ा। अनन्तर राजा भीमने उनको बुलाया और स्त्रियोंकी करतूतको न जाननेवाले राजा भीमने ऋतुपर्णसे कहा कि आपका स्वागत हो, महाराज! किस निमित्त यहां आये हैं सो कहे। राजा भीम यह नहीं जानते थे, कि यह हमारी पुत्रीके निमित्त आये हैं। बुद्धिमान सत्यपरा-

क्रम कोशलराज राजा ऋतुपर्णने भी किसी राजा और राजपुत्रको वहां न देख स्वयम्बरका कोई समाचार न जान, राजा भीमसे ऐसा कहा कि मैं केवल आपको प्रणामही करनेको आया हूं। राजा भीम भी आश्चर्य युक्त होकर मनमें चिन्ता करने लगे, कि चार सौ कोससे भी अधिक दूर पर इनका स्थान है, इतने दूरसे अनेक गांवोंको नाघकर थोड़े कार्य्यके निमित्त यह क्यों आये? अवश्य यह कारण नहीं है, जो हो प्रातःकाल सबही जान जायंगी। विचारकर ऋतुपर्णसे बोले, आप बहुत थके हुए हैं, अब विश्राम कीजिये। ऐसा कह कर उनको विसर्जन किया। राजा ऋतुपर्ण भी भीमसे सत्कार पाकर प्रसन्न हुए। अनन्तर राजसेवकोंके सहित उस स्थानको गये जो उनके ठहरनेको ठीक किया गया था। राजा ऋतुपर्णके जानेके पश्चात् वाहुक भी वार्ष्णेयके सहित रथ लेकर रथशालामें गये। वहां जाकर रथसे घोड़ोंको खोल कर शास्त्रके अनुसार घोड़ोंकी सेवा करके घोड़ोंको प्रसन्न करके आप रथके जुए पर बैठ रहे। दमयन्तीने भी रथमें ऋतुपर्ण और वार्ष्णेयको देखकर शोकसे व्याकुल होकर सोचा कि यह कौनसे सारथीके रथका शब्द हुआ? यह शब्दतो नलहीके रथका है परन्तु निषधराजको नहीं देखती। जान पड़ता है कि वार्ष्णेयने भी इस विद्याको सीख लिया है, इसीसे इस रथका महाशब्द नलके रथके समानही हुआ है; अथवा राजा ऋतुपर्ण भी उनही गुणोंसे भरे हैं, जो राजा नलमें थे; क्योंकि इस रथका शब्द नलके रथके समान हुआ है। हे राजन्! सुन्दरी दमयन्तीने इस प्रकार अनेक तर्क वितर्क करके राजा नलके ढूढ़नेको एक दूती भेजी।

७३ अध्याय समाप्त।

दमयन्ती बोली, हे केशिनि! तुम जाकर देखो कि यह विरूप छोटे हाथोंवाला सूत कौन है, जो रथके जुवे पर बैठा है? हे भद्रे! हे अनिन्दिते! तुम इस पुरुषके पास जाकर यथायोग्य सावधान होकर मीठे वचनसे कुशल पूछना; मुझे बहुत शङ्का होती है कि महाराज नल यही हैं। तुम इस प्रकार बात बनाकर कहना कि इसका मन और हृदय सन्तुष्ट हो, और बातोंके अन्तमें वही पर्णादकी बात कहना। हे सुश्रोणि! हे अनिन्दिते! वह जो कुछ उत्तर दे, उसको तुम ध्यान देकर सुनना। दूती उसके वचनको सुनकर वाहुकसे जाकर बोली और कल्याणि दमयन्ती भी अटारीपर चढ़कर देखने लगी। केशिनी बोली, हे मनुष्येन्द्र! कहिये आप कुशलसे तो हैं? हे पुरुषसिंह! आगे दमयन्तीने आपसे जो अच्छे वचन कहे हैं सो सुनिये। आप लोग अपने घरसे कब चले थे? और यहां क्यों आये हैं? यह सब कहिये। यह सब सत्य सत्य कहिये, विदर्भराज पुत्री सुनना चाहती है। वाहुक बोले, कि महात्मा कोशलराज राजा ऋतुपर्णने आज प्रातःकाल किसी ब्राह्मणसे यह सुना था, कि दमयन्ती कलही दूसरा स्वयम्बर करना चाहती है। इसी निमित्त चारसौ कोस चलनेवाले वायुके समान शीघ्रगामी घोड़ोंको रथमें जोतकर महाराज यहां आये हैं और मैं इनका सारथी हूं। केशिनी बोली, यह जो तुम्हारे संग तीसरा पुरुष है, यह किसका सारथी और कौन है? तुम कौन और किसके सूत हो? यह कर्म तुमने कहां सीखा था? वाहुक बोले, यह पुण्यश्लोक राजा नलका सारथी है, हे भद्रे! इसका नाम वार्ष्णेय है, राजा नलके भाग जानेसे अब ऋतुपर्णके यहां नौकर है। मैंभी घोड़ोंकी विद्यामें निपुण हूं, राजा ऋतुपर्णने मुझको सारथी और भोजन बनानेके काममें प्रतिष्ठित किया है। केशिनी बोली,

हे बाहुक। क्या वार्ष्णेय जानता है, कि राजा नल कहां हैं और तुमसे यह सब बात उसने कैसे कही? बाहुक बोले, यह तो उत्तम राजा नलके बालकोंको यहां पहुंचाकर इच्छानुसार चला गया था, इसे निषधराजका समाचार क्या मालूम हैं? हे यशस्विनी! महाराज नलको इस लोकमें कोई पुरुष नहीं जानता है, क्योंकि वह अपने रूपको छिपाकर घूमते हैं, नल अपनेको आपही जानता है, क्योंकि उसके पहले चिह्न उसको कदापि नहीं वतला सकते। केशिनी बोली, जो ब्राह्मण अयोध्यामें पहले गया था, उसने जाकर स्त्रीके यह वचन वहां वार वार सुनाये थे; कि हे वीर! आप छलसे मेरे आधेवस्त्रको फाड़कर प्रीतिवाली अपनी प्यारी मुझको वनमें सोते हुए छोड़कर कहां चले गये? आपने उसको जैसी आज्ञा करी थी, वैसेही वह आपका मार्ग देख रही है, वह विरहसे जलती हुई उसी आधे वस्त्रको ओढ़े हुए है। हे राजन्! उस दुःखसे सदा रोती हुईके ऊपर कृपा कीजिए। हे वीर! उसके वचनका उत्तर दो"। हे महामते! उसी वचनको तुम अपने मुखसे कहो, अनिन्दिता दमयन्ती सुनना चाहती है, और तुमने जो उसका उत्तर दिया था, राजपुत्री वहभी सुनना चाहती है।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे कुरुनन्दन! केशिनीके ऐसे वचन सुनकर राजा नलका हृदय फटने लगा, और आंखें आंसुवोंसे भर गईं, राजा नल अपने दुःखको सम्हालकर रुकते हुए कण्ठसे रोते हुए ऐसा कहने लगे। बाहुक बोले, जो पतिव्रता कुलीन स्त्री दुःखोंमें पड़कैभी अपनी रक्षा अपनेहीसे करती हैं, निस्सन्देह वह स्वर्गको जीत लेती हैं। कुलीन स्त्री पतिसे दूर रहकरभी क्रोध नहीं करती हैं, उत्तम स्त्रियां अपने पतिके चरित्रोंको कहनेवालोंको धारण करती हैं। यदि दुःखमें पड़े हुए मूर्ख राज्य और सुखसे छूटे हुए भोजन चाहनेवाले पक्षियोंसे छीने वस्त्रवाले दुःखसे जलते हुए पतिने उसको छोड़भी दिया, तो उसपर क्रोध करना उचित नहीं! ऐसी अवस्थामें कोईभी सुन्दरी पतिपर क्रोध नहीं कर सकती। राज्य और लक्ष्मीसेही नहीं बल्कि सुखोंसेभी भ्रष्ट, भूख और प्याससे व्याकुल पतिपर कोईभी स्त्री क्रोध नहीं कर सकती है, चाहे वह पतिसे सत्कार पाये हो वा न पाये हो।" इस प्रकार केशिनीसे वचन कहते हुए नल परम दुःखी हुए। अपने आंसूको रोक न सके और अधिक रोने लगे। हे भारत। तब केशिनीने दमयन्तीके पास जाकर सब बात कह सुनाई और उसकी चेष्टाभी सुना दी।

७४ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे राजन! नलके वचन सुनकर दमयन्तीको अत्यन्त शोक हुआ, और नलके प्रति शङ्का करके केशिनीसे बोली, हे केशिनी। तू फिर जा और बाहुककी परीक्षा कर। उसके पास जाकर उसके सब चरित्र देख और उससे बातचीत करती रह। हे भामिनि। वह जो कुछ काम करे उसके कारणको खूब विचार करना, वह जो काम करे उसकी भली भांति देखना। हे केशिनी! वह तुझसे यदि वहत हठसेभी आग और पानी मांगे तौभी मत देना। यह सब उनको वातें देख और जानकर उनका सब कारण चाहे दैव वा मानुष हो मुझसे सब कहना औरभी उसमें जो असंख्य गुण तुझे जान पड़े वह सब मुझसे आकर कहना। दमयन्तीके वचन स्वीकार करके केशिनी पुनः बाहुकके पास गई और उसके सब लक्षण देख और सुनके दमयन्तीके पास आई और जो कुछ देखा था, सो सब कारणोंके सहित कह सुनाया।

केशिनी बोली, हे दमयन्ती! मैंने ऐसा पुरुष पहले कभी नदेखा और न सुना था। यह सब जल और स्थलमें परम शुद्धिसे रहता है; छोटे द्वारमेंभी नीचा होकर नहीं जाता, परन्तु उसमेंभी सुखहीसे प्रवेश करता है। बहुत छोटा रहने परभी जिसके वास्ते बड़ा मार्ग हो जाता है। राजाने ऋतुपर्णके निमित्त अनेक प्रकारके भोजनकी सामग्री और अनेक पशुओंके मास भेजे थे, और उनको धोयड़े भी भेजे थे सो बाहुकके देखतेही वे घड़े सब जलसे भर गये। तब बाहुकने उसी जलसे सब वस्तुओंको धोया। अनन्तर उसने एक मुठ्ठी तिनके लेकर सूर्य्यको दिखाया, तब उनमें अग्नि जल उठी। यह सब आश्चर्य भरे उसके काम देखकर यहां आई हूं। हे शुभे! और भी मैंने उनमें एक आश्चर्य देखा कि अग्नि छूनेसे उनका शरीर नहीं जलता और जल उसकी इच्छासे शीघ्र बहता है। इससेभी अधिक एक आश्चर्य उसमें देखा, कि फूल उठाकर वह अपने हाथसे धीरे धीरे मलने लगा, परन्तु पुष्प मलने परभी वैसेही रहे, वरन ज्यों ज्यों मलता था, त्यों सुगन्धि बढ़ती जाती थी, यह सब अद्भुत बात देखकर मैं तुम्हारे पास दौड़ी हुई आई हूं। श्रीवृहदश्व मुनि बोले, दमयन्तीने उसके बचन सुनकर कर्म्म और चेष्टासे जान लिया कि नल आगये। उसने अपने पतिके लक्षण बाहुकमें पाकर शङ्कासे भरकर रोते हुए मीठी वाणीसे केशिनीसे कहा; हे भामिनि! तू पुनः जा और उन्मत्त बाहुकने जो मास बनाया है, उसमेंसे जो कुछ चौकेके बाहर गिरा हो उसको यहा लेआ। वह दमयन्तीकी प्यारी केशिनी वहां गई और गिरा हुआ मास जो अत्यन्त उष्ण था उसे शीघ्रही ले आई। हे कुरुनन्दन! उसने मांस दमयन्तीको दे दिया, दमयन्तीने पहले अनेक वार नलका पकाया हुआ मास खाया था, अतएव उस स्वादको जानती थी, अनन्तर उसको खाकर दमयन्तीने निश्चय जान लिया कि यह सारथी नहीं नलही हैं। तब बहुत रोने लगी, अनन्तर पानीसे मुखको धोकर बहुत दुःख करके अपनी लड़की और लड़के को केशिनीके सङ्ग नलके पास भेजा। हे भारत! नलने इन्द्रसेन और इन्द्रसेना को देख कूदकर दोनोंको लपटा लिया। अनन्तर उन्हें अपनी गोदीमें बैठा लिया। देवतोंके समान दोनों बालकोंको अपनी गोदमें बिठलाकर दुःखसे भरे हुए बाहुक ऊंचे स्वरसे रोने लगे। अनन्तर अपने इस विकारको दिखलाकर राजा-नल लड़कोंको अलग करके केशिनीसे बोले, हे भद्रे! यह दोनों बालक मेरे बालकोंके समान हैं, इसी लिये इन दोनों को देखकर मैं रोने लगा। हे भद्रे! तुमको यहीं वार वार आते देख लोग हममें किसी दोषकी शङ्का न करें, क्योंकि हम परदेशी अतिथि है, इस लिये तुम्हारी जहांकी इच्छा हो तहां चली जाओ।

७५ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे राजन! केशिनीने बुद्धिमान पुण्यश्लोक नलका सब समाचार दमयन्तीसे कह दिया, दमयन्तीने वह सब समाचार सुनकर दुःखसे भरे नलके दर्शनकी इच्छासे केशिनीको अपनी माताके पास भेजा, कि मैंने नलकी शङ्कासे बाहुककी सब परीक्षा करी, अब केवल रूपही में सन्देह रह गया है, सो मैं आप जाकर परीक्षा करना चाहती हूं। हे मातः! या तो उसको यहां बुला दीजिये, चाहे पिता जानें वा न जाने, इस कार्य्यको कीजिये। पुत्रीके ऐसे वचन सुनकर रानीने राजाको सब कह सुनाया, तब राजाने अपनी पुत्रीके उस अभिप्रायको जाना और राजकी आज्ञा पाकर नलको वहां बुलाया, जहां दमयन्ती

रहती थी। राजा नल दमयन्तीको देखतेही शोक और दुःखसे भर गये और आंसूसे भीज गये। सुन्दरी दमयन्तीने नलको उस अवस्थामें देखकर महा शोक किया। हे महाराज! अनन्तर कषाय-वस्त्र पहने जटाधारिणी मैलसे भरी हुई दमयन्ती वाहुकसे ऐसा बोली, हे वाहुक! तुमने पहले कभी कोई ऐसा धर्म्मज्ञ पुरुष सुना है, जो अपनी स्त्रीको वनमें सोती हुई छोड़ कर चला जाय? पवित्रकीर्त्ति राजा नलके सिवा ऐसा कौन होगा जो निरपराधिनी थकाईसे पीड़ित अपनी प्यारी स्त्रीको शून्य वनमें छोड़कर चला जाय? मैंने उस राजाका मूर्खता वश न जानें कौन अपराध किया था, जिससे वह मुझको वनमें सोती हुई छोड़ गया? मैंने साक्षात् देवतोंको छोड़कर उसको स्वयम्वर में पहले वरण किया था, न जानूं पुत्रवाली, भक्तिवती मुझको उसने कैसे छोड़ दिया? देवतोंके सामने अग्निको साक्षी देकर उसने कहा था कि मैं तेरा हूं। परन्तु न जानें वह प्रतिज्ञा कहांको चली गई? हे शत्रुनाशन युधिष्ठिर! राजा नल दमयन्तीके ऐसे वचन सुन शोकसे भरी आसुओंसे अपने मुखको वार वार भिगोने लगी; अत्यन्त काली आंखोंसे अधिक आंसू वहाती हुई शोक पीड़ित दमयन्तीसे नल ऐसा बोले, हे भीरु! जिस कर्म्मसे मेरा राज्य नष्ट हुआ है, वह मैंने नहीं किया था, और जिससे तुमको छोड़ा था, वह कर्म्मभी कलियुगनेही किया था जिसको रात दिन मुझको शोचते हुए वनवासके समय दुःखिनी तुमने शापसे नष्ट किया था, वही कलियुग तुम्हारे शापसे जलता हुआ मेरे शरीरमें वास करता था, वह तुम्हारी शापकी अग्निसे जलकरभी मेरे शरीरमें अग्निके समान शत्रु होकर वास करता था। हे शुभे! मैं पापसे और तपस्या न करनेसे हमारे इस दुःखका अन्त ऐसेही होनेको था। हे विपुल-श्रोणि! जब वह पापी मेरे शरीरसे निकल गया तो मैं तुम्हारेही निमित्त यहां आया हूं, और मेरा कुछभी प्रयोजन नहीं था। स्त्री अनुरक्त और व्रतधारी पतिको छोड़कर दूसरा पति कैसे कर सकती है? हे भीरु! यह काम तुम्ही ऐसीसे हो सकता है, क्योंकि राजाकी आज्ञासे सब पृथ्वीमें दूत लोग यह कहते फिरते हैं, कि भीमपुत्री अपनी इच्छासे कामके अनुकूल अपने योग्य दूसरा पति वरण करेगी। इसहो वातको सुनकर राजा ऋतुपर्ण यहां आये हैं। दमयन्ती रोते हुए नलकी यह वात सुन हाथ जोड़कर डरसे कांपती हुई यों कहने लगी, दमयन्ती बोली, हे कल्याण! हे नरनाथ! आप मुझमें दोषकी शङ्का करनेके योग्य नहीं है, क्योंकि मैंने देवतोंको परित्याग कर आपको पति बनाया है। आपहीके निमित्त ब्राह्मणलोग सब ओर गये हैं, उन्होंने मेरे वचनको जिस रूपसे दशोदिशाओंमें गाया है। हे राजन्! उनहीमेंसे एक विद्वान् पर्णाद नामक ब्राह्मणने राजा ऋतुपर्णके घर अयोध्यापुरीमें आपको देखा उसने आपसे जोकहा और आपने जो उसको उत्तर दिया वही आपके वुलानेमें मुझको उपाय जान पड़ा। हे पृथ्वीनाथ! आपके सिवा पृथ्वीमें कोई पुरुष ऐसा नहीं है, जो एक दिनमें घोड़ोंके द्वारा चारसौ कोस चल सके। हे नरनाथ! मैं अपने सत्यसे आपके चरण छूकर कसम खाती हूं, कि मैंने घूमते हुए मनसेभी कुछ पाप नहीं किया, यदि मैंने कभी कुछ पाप किया हो तो यह लोकमें घूमनेवाले वायु मेरे प्राणको नाश करें, यदि मैंने पाप किया हो तो यह सव जगतमें घूमनेवाले सूर्य्य मेरे प्राणको नाश कर दे। यदि मैंने कुछ पाप किया हो तो यह चन्द्रमा जो सवके मनमें साक्षीके समान घूमते हैं, ये तीनो देवता सवलोकोको धारण करते हैं, यह सत्य कहे,यदि मैंने झूठ कहा हो तो यह मुझको छोड़

दें। जब दमयन्तीने ऐसा कहा तो आकाशमें घूमनेवाले वायु बोले कि हे नल। हम तुमसे सत्य कहते हैं, कि इसने कुछभी पाप नहीं किया, हे राजन्! दमयन्तीका सुन्दरशील समुद्र रक्षित ही है। हे नल। इसने कुछभी पाप नहीं किया, इसके तीनवर्षके हमलोग साक्षी है, हे राजन्! इसने यह भारी उपाय आपहीके निमित्त किया है, क्योंकि तुम्हारे सिवाय कोईभी चार सौ कोस एक दिनमें नहीं चल सकता है, हे पृथ्वीनाथ? आप दमयन्तीसे दमयन्ती आपसे मिली अब आपको कुछभी और सन्देह नहीं करना चाहिये,अब स्त्रीको सग लेकर जाइये, पवनके ऐसे कहतेही आकाशसे फूल बरसने लगे,देवतोंने नगाड़े बजाये, और उत्तम पवन चलने लगा, हे भारत। राजा नलने यह अद्भुत बात देखकर दमयन्तीसे शङ्काओंको छोड़ दिया और उसको ग्रहण किया, अनन्तर राजा नलने नागराज कर्कोटक-का स्मरण करके उस देव वस्त्रको ओढ़ा, उसके धारण करतेही नलने अपने पहले रूपको पाया। आनन्दिता दमयन्तीने अपने पतिका अपने रूपमें देखकर उससे लपटकर उच्च स्वरसे रोना आरम्भ किया। राजा नलभी अपनी स्त्रीसे लपट गये, अनन्तर पहले रूपसे शोभित होकर अपने पुत्रोंको लपटा कर आनन्दित किया, अनन्तर सुन्दररूपवाली विशाल नैनी दुःखसे भरी हुई दमयन्तीने नलके सिरको अपनी छातीसे लगाकर बहुत देरतक स्वांस लिया, तैसेही शोकसे भरे हुए पुरुषसिंह नलनेभी सुन्दर हसनेवाली मैलसे भरी हुई दम-यन्तीको लपटाकर बहुत देर निवास किया। अनन्तर दमयन्तीकी माताने प्रसन्न होकर नल और दमयन्तीका सब वृत्तान्त राजा भीमसे कह सुनाया। हे राजन्! तब राजा भीमने कहा कि मैं भोरको शौचसे पवित्र होकर दमयन्तीके सहित सुखसे बैठे हुए नलको देखूंगा। हे राजन्! अनन्तर नल और दमयन्तीने बहुत आनन्दसे उस रातको वनको पुरानी कथा कहते कहते बिता दिया, वे दोनों परस्पर आनन्दको इच्छासे प्रसन्न होकर राजा भीमके स्थानमें रहते लगे। राजा नल इस चौथे वर्षमें अपनी स्त्रीको पाकर और सब कामोंको सिद्ध करके परम आनन्दको प्राप्त हुए, दमयन्तीभी अपने पतिको प्राप्त करके इस प्रकार आनन्दमें मग्न हुई, जैसे आधा अन्न उत्पन्न होनेके समय पानीको प्राप्त करके पृथ्वी आनन्दित होती है, भीमपुत्री दमयन्ती अपने पतिको प्राप्त होनेसे सब दुःखोंको शान्त करके निद्राको छोड़ आनन्दसे भर भर अपने मनको बढ़ाकर ऐसी शोभित हुई, जैसे चन्द्रमा निकलनेसे रात्रि।

७६ अध्याय समाप्त।

श्रीबृहदश्व मुनि बोले, उस रात्रिको बिताकर प्रातःकाल होतेही राजा नल उत्तम वस्त्र और आभूषण पहन कर दमयन्तीके सङ्ग बैठे थे, उसी समय राजा भीमको आते देखा, नलने देखतेही विनयपूर्वक अपने श्वसुरको प्रणाम किया, तब सुन्दरी दमयन्तीनभी अपने पिताको दण्डवत करी। राजा भीमने अत्यन्त प्रसन्न होकर राजा नलको लपटा लिया और पुत्रके समान यथायोग्य पूजा करके उनको बहुतही धीरज दिया, राजा नलको पतिव्रता दमयन्तीके सहित देखकर राजा भीमने उनकी बहुत पूजा करी। राजा नलनेभी उस पूजाको विधिपूर्वक ग्रहण किया और आपनेभी राजाको यथोचित सेवा को। उस दिन उस नगरमें चारो और महा आनन्दके शब्द होने लगे। इस प्रकारसे नलके आनेके दिन सब पुरुषोंने बहुत आनन्दउत्सव नगर पताका और ध्वजाओंसे सजाया गया, राजमार्ग (बड़ी बड़ी सड़कें) जलसे छिड़की गई, दोनों और फूलोंसे शोभित किये गये, सब नगरवासियोंने अपने अपने द्वारपर वन्दन-वार

और फूलोंकी माला लगा दीं, देवतोंके सब स्थानोंमें उत्सव होने लगे। राजा ऋतुपर्णने भी यह सुना कि वाहुक नलही था, उसकी दमयन्तीसे मिला सुनकर ऋतुपर्णको बहुत आनन्द हुआ। अनन्तर राजा ऋतुपर्णने नलने मिल कर अपना अपराध क्षमा कराया, बुद्धिमान राजा नलनेभी अनेक हेतु दिखलाकर राजा ऋतुपर्णका अपराध क्षमा किया। कहनेवालोंमें श्रेष्ठ तत्वके जाननेवाले राज ऋतुपर्ण राजा नलसे आदर पाकर आश्चर्य्यसे ऐसा कहने लगे, हे निषधराज। हे पृथ्वीनाथ। आप प्रारब्धहीसे अपने कुटुम्बसे मिले हैं, कहिये जब आप छिपकर मेरे घरमें रहते थे, तब मैंने आपका कोई अपराध तो नहीं किया? अथवा यदि मैंने कभी कुछ जानकर वा विना जाने आपका कुछ अपराध किया हो, तो आप उसे क्षमा कीजिये। राजा नल बोले, हे राजन्! आपने मेरा कुछ अपराध नहीं किया, और यदि कियाभी हो, तो मैं क्षमा करता हूं क्योंकि आप हमारे पहलेसे सम्बन्धी और मित्र हैं। हे नरनाथ! आपको उचित है, कि अब हमसे औरभी प्रीति बढ़ावे, मैंने सब कामोंको प्राप्त करके आपके घरमें ऐसे निवास किया है, जैसे पहले अपने घरमेंभी नहीं किया था; यह घोड़ोंकी विद्या जो मुझमें है,सो आपहीकी है,हे राजन्! यदि आप चाहें, तो इसको सीख लीजिये, राजा नलने ऐसा कहकर घोड़ेकी विद्या ऋतुपर्णको सिखा दी। ऋतुपर्णनेभी उस विद्याको विधिपूर्व्वक ग्रहण किया, भङ्गासुरीकेपुत्र राजा ऋतुपर्णने अश्वविद्याके तत्वको ग्रहण करके राजा नलको जुवेका तत्व सिखा दिया और दूसरा सारथी लेकर अपने घरको चले गये। हे राजन्। ऋतुपर्णके जानेके पश्चात् राजा नल कुण्डल पुरमें कुछ दिन रहे।

७७ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे राजन्। निषधराज नल एक महीना वहां रहकर राजा भीमकी आज्ञासे थोड़े मनुष्योंके सहित निषध देशको चले। एक सुन्दर रथ, सत्तर हाथी, पचास घोड़े और छःसौ पैदल उनके संग थे, राजा नल अपने वेगसे पृथ्वीको कंपाते हुए शीघ्रही अपने देशमें पहुंचे। वीरसेनके पुत्र महा मनस्वी राजा नल पुष्करके पास जाकर ऐसा बोले, कि मैंने बहुत धन कमाया है, पुनः जुआ खेलो, दमयन्तीके सहित और मेरा जो कुछ धन है सो सब एकही दावपर लगा देता हूं, हे पुष्कर तुमभी अपने सब राज्यको एकही बार लगा दो। मैंने यह निश्चय कर लिया है, कि एकही दांवमें प्राणतक लगा देने चाहिये। अतएव पुनः जुआ खेलो, यह सदाका धर्म्म है, कि जुएमें दूसरेका धन वा राज्य जीतकर दूसरे दाव पर उसीको पुनः लगा देना चाहिये यदि तुम्हारी जुआ खेलनेकी इच्छा न हो तो युद्ध रूप जुआ खेलो, हे राजन्। एक रथपर तुम चढ़ो और एक पर मैं, या तुम मुझे मार डालो, या मैं तुम्हें, क्योंकि यह हमारे पुरखोंकी आज्ञा है, कि वंशके राज्यको जैसे हो तैसे प्राप्त करना चाहिये। हे पुष्कर। अब इन दोनो वातोंमेंसे एकको निश्चय कर लो। चाहे जुआ खेलो, चाहे युद्धमें धनुषको खींचो। राजा नलके ऐसे वचनको सुनकर पुष्कर हंसने लगा, और निश्च यही अपनी जीत समझके बोला हे नैषध। तुमने प्रारब्धहीसे जुएके निमित्त इस धनको उत्पन्न किया है, प्रारब्धहीसे तुम आजतक अपने कुटुम्बसे मिले हुए हो। हे राजन्। हे महाभुज। इस जीते हुए धनके सहित दमयन्ती भूषणोंके समेत अब मुझको ऐसे मिलेंगी जैसे स्वर्गमें इन्द्रको अप्सरा। हे राजन्। मैं आजही तुम्हारा स्मरण करता था और मार्गभी देखता था, क्योंकि मुझे विना मित्रोंके जुएमें सुख नहीं मिलता, अब मैं सुन्दर मुखवाली

अनिन्दिता दमयन्तीको जुएमें जीत कर कृतकृत्य हूंगा क्योंकि वह सदासे मेरे हृदयमें बास करती है, पुष्करके ऐसे सम्बन्ध रहित और निरर्थक बचन सुनकर राजा नलको महाक्रोध हुआ और खड्ग निकाल कर उसका सिर काटनेको उपस्थित हुए। महाक्रोधसे लालनेत्र करके राजा नल बोले, बिना ही जुआ खेले इतना क्यों बकता है? जुआ जीत कर बकना। तब नल और पुष्करका जुआ होने लगा। अनन्तर राजानलने एकही दांवमें पुष्करका राज, धन प्राण, और रत्न सब कुछ जीत लिया। अनन्तर पुष्करको जुएमें जीत, राजा-नल हंसकर पुष्करसे बोले, हे राजोंमें नीच! अब यह सब राज्य मेरा होगया, अब इसमें कुछ बाधा नहीं रही, तेरी शक्ति नहीं है जो दमयन्तीको देख सके। हे मूर्ख! अब तू अपने कुटुम्बके सहित उसी दमयन्तीका दास बन गया। रे मूढ़! तैने जो पहले मुझको जीता था, वह तेरा कर्म नहीं था वह कलि-युगका काम था, दूसरेका दोष तुझे नहीं देना चाहता, अतएव मैं तेरे प्राणको छोड़ देता हूं, तू सुखसे जोता रह, जो कुछ तेरा अंश और कार्य्य था सो सब तुझेही दे देता हूं। हे वीर! मैं तुमसे वैसाही प्रोति रखूंगा, तुम्हारा प्रेम मेरो ओरसे कम न होगा। हे पुष्कर! तुम मेरे भाई हो, सौवर्षतक जीते रहो। सत्यपरा-क्रम राजा राजा नलने अपने भाईको ऐसे प्रसन्न करके वार वार गलेसे लगाकर उसको अपने धर जानेकी आज्ञा दी। पुष्करने राजा नलसे इस प्रकार प्रसन्न होकर हाथजोड़ प्रणामकर ऐसा कहा, हे राजन्! आसको कीर्त्ति अक्षय हो, आप सुखसे सहस्र वर्षतक जीते रहें क्योंकि आप मेरे प्राण और पृथ्वीको छोड़ते हैं। ऐसा कहकर राजासे सत्कार पाकर पुष्कर प्रसन्न होकर अपने पुरुषोंके सहित अपने नगरको चला, राजा नलने सेना और उत्तम नौकरोंके सहित सूर्य्यके समान तेजस्वी पुष्करको सुख और धनके सहित विदा करके लक्ष्मी और शोभासे भरे हुए अपने नगरमें प्रवेश किया, वहां जाकर निषधराजने अपने नगरवासियोंको प्रसन्न किया, नगरवासियोंकाभो रोवां रोवां प्रसन्न हो गया और मन्त्री आदि सब पुरवासी हाथ जोड़कर ऐसा बोले, हे राजान्! आज हम सब इस नगरमें ऐसे प्रसन्न हुए जैसे इन्द्रको पाकर देवता॰।

७८ अध्याय समाप्त।

श्रीवृहदश्व मुनि बोले, हे राजन। जब सब नगर शान्त हो गया, और वह उत्सव समाप्त हुआ तो राजाने बहुत सेना भेजकर दमयन्तीको वहीं बुला लिया, दमयन्तीको शत्रुनाशन पिताने अत्यन्त सत्कार करके बिदाकर दिया। दम यन्तीके पिता पराक्रमो और महात्मा थे, तब पुत्रके सहित दमयन्ती अपने नगरमें आई तो राजा नल ऐसे आनन्द करने लगे जैसे नन्दन-वनमें इन्द्र। महा यशस्वी राजा नल जम्बूद्वीपके राजोंमें प्रकाश करने लगे और फिर अपने राज्यका शासन पहलेके समान करने लगे। दक्षिणाओंके सहित अनेक यज्ञ करीं, हे राजेन्द्र! वैसेही आपभी थोड़ेही दिनमें अपने मित्रोंसे मिलियेगा। हे नरश्रेष्ठ। हे पुरुष र्षभ। जुआ खेलकर शत्रुनाशन राजा नलने स्त्रोके सहित इस प्रकार महा दुःख पाया था, हे पृथ्वीनाथ। राजा नलने तो वनमें एकले रहकर ऐसा दुःख पाया और फिर आनन्दभी किया। हे पाण्डव! तुम तो अपने भाई और द्रौपदीके सहित इस वनमें आनन्द करते हुए धर्म्मकी चिन्ता करते हो। आपके सङ्ग तो वेद और वेदाङ्गोंके जाननेवाले अनेक ब्राह्मण हैं, इसमें तुमको कौन दुःख है। कर्कोटक नाग, दमयन्ती, नल, और राजर्षि ऋतुपर्णकी कथा कलियुगको नाश करती है। हे प्रजा-

नाथ! यह कथा कलियुगकी नाशक है, आपके समान पुरुषोंको उचित है, कि इसको सुनकर धीरज धारण करें। पुरुषार्थ स्थिर नहीं है, यह विचारकर आप उदय और हानिकी कुछ चिन्ता न कीजिये, हे नरनाथ! इस इतिहासको सुनकर धैर्य्यधारिये शोच मत कीजिये। आप दुःखमें पड़कर शोच करनेके योग्य नहीं हैं। बुद्धिमान पुरुष प्रारब्ध लौटने और पुरुषार्थ नष्ट होनेपर रोते नहीं है, जो कोई इस नलके इतिहासको कहेंगे या सुनेंगे, वे कभी दरिद्री न होंगे, उनको अनेक प्रकारके धन मिलेंगे। और उन लोगोंको सब कोई धन्य कहेंगे। इस उत्तम पुराणके सुननेसे पुरुषको पुत्र, पौत्र, उत्तम प्रतिष्ठा, पशु, आरोग्यता प्राप्त होते हैं, और प्रेम बढ़ता है। जो तुम डरसे डरते हो कि दुर्य्योधन मुझे पुनः जुएमें बुलावेगा और जीत लेगा, सो यह डर तुम्हारा मैं दूरकर देता हूं। हे कुन्तीनन्दन! हे राजन! मैं जुएके तत्वको जानता हूं, सो प्रसन्न होकर तुम्हें देता हूं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तब राजा युधिष्ठिरने प्रसन्नचित्त होकर कहा कि हे भगवन्! मैं यथार्थ रूपसे जुएके तत्वको जानना चाहता हूं। अनन्तर वृहदश्व मुनिने महात्मा पाण्डवको जुएका तत्व सिखा दिया, और स्नान करनेको हयतीर्थ तीर्थमें चले गये। उनके जानेके पश्चात् युधिष्ठिरने आए हुए तपस्वी ब्राह्मणों और तीर्थ और वनोंसे आये हुए महात्माओंसे सुना कि बुद्धिमान अर्ज्जुन वायु भक्षण करके उग्र तपस्याकर रहे हैं, दृढ व्रतवाले अर्ज्जुन जैसा तप करते हैं, वैसा किसीनेभी तप नहीं किया निश्चय व्रतवाले कुन्तीनन्दन अर्ज्जुन ऐसे तपस्वी हुए हैं, मानो साक्षात् श्रीमान् धर्म्महो शरीर धारण करके तपस्याकर रहे हैं। पाण्डुनन्दन कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर अपने प्यारे भाई अर्ज्जुनको इस प्रकार महा वनमें तपस्या करते हुए सुनकर जलते हुए हृदयसे शरणको इच्छा करके अनेक विधि ज्ञान जाननेवाले ब्राह्मणोंसे पूछने लगे।

७९ अध्याय समाप्त।

नलोपाख्यान पर्व्व समाप्त।

अथ तीर्थयात्रा पर्व्व प्रारम्भ।

राजा जनमेजय बोले, हे भगवन्! जब मेरे परदादे अर्ज्जुन काम्यक वनसे चले गये तब उनके विना पाण्डवोंने क्या किया? क्योंकि मुझे जान पड़ता है, कि जैसे देवतोंकी गति विष्णु है, वैसेही पाण्डवोंकी गति सेनाओंके जीतनेवाले महा धनुर्धारी अर्ज्जुन थे, मेरे प्रपितामह लोग उस इन्द्रके समान पराक्रमी, युद्धसे न हारनेवाले, वीर अर्ज्जुनके विना वनमें कैसे रहे?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे तात! जब काम्यक वनसे सत्यपराक्रम अर्ज्जुन चले गये, तो पाण्डव लोग शोक और दुःखसे व्याकुल हो गये। जैसे पक्षीके पंख काटके डोरमें बांध देते है और उसका मन प्रसन्न नहीं रहता तैसेही पाण्डवभी व्याकुल हो गये। उस कठिन कर्म्मकारी अर्ज्जुनके बिना वह वन ऐसा हो गया जैसे कुवेरके विना चैत्ररथ (कुवेरका वाग)। हे जनमेजय! अर्ज्जुनके विना पुरुषसिंह पाण्डव दुःखसे उस वनमें वास करने लगे। हे भरतश्रेष्ठ! वे महा रथ पाण्डव पराक्रमसे दिन दिन ब्राह्मणोंके निमित्त खानेके योग्य अनेक हरिणोंको मारते थे। शत्रुनाशन पाण्डवलोग नित्यही यज्ञके निमित्त हरिणोंको मारकर ब्राह्मणोंको खिलाते थे। हे राजन्! अर्ज्जुनके जानेके पीछे पुरुषसिंह पाण्डवलोग अप्रसन्न होकर उस वनमें वसने लगे। एकदिन अपने मध्यम पति अर्ज्जुनको स्मरण करती हुई द्रौपदी घबराये हुए युधिष्ठिरके पास आकर ऐसा वोली। जो दो हाथवाला अर्ज्जुन सहस्र हाथवाले अर्ज्जुनके

समान है, उसके विना यह वन मुझको नहीं सोहाता ; एक अर्जुनके विना मुझे यह पृथ्वी शून्य दीखती है ; औ यहभी बहुत आश्चर्य है, कि यह फूले फले वृक्ष अर्जुनके विना वैसे सुन्दर नहीं दीखते, उस नीले मेघके समान सुन्दर, मतवाले हाथीके समान चलनेवाले, कमल नेत्र अर्जुनके विना यह काम्यक वन मुझे नहीं सोहता। जिसके धनुषका शब्द वज्रके समान सुनाई पड़ता था,उस अर्जुनके विना मुझे सुख नहीं मिलता। हे महाराज ! द्रौपदीका ऐसा वचन सुनकर शत्रुनाशन भीमसेन बोले, हे सुमध्यमे। हे भद्रे ! तुम जो कहती हो, सो बात हमारे ही मनकी है, उसके सुननेसे हमारा मन ऐसा प्रसन्न होता है, जैसे अमृतके पीनेसे। जिसके हाथ लम्बे, मोटे, मुद्गरके समान कठोर, रोदेकी ठेटसे युक्त, धनुष और खड्गके धारण करनेवाले, सोनेके बाजू बन्दोंसे शोभित पांच फनवाले सांपके समान हैं, उस पुरुषसिंहके विना यह वन ऐसा दीखता है, जैसे बिना सूर्य्यके आकाश। जिसके हाथोंके बलके आश्रयसे कुरुवंशी और पाञ्चाललोग इकट्ठे हुए देवतोंकी सेनासेभी नहीं डरते हैं, जिस महात्माके हाथोंके आश्रयसे हमलोग शत्रुओंको जीते हुए और पृथ्वीको प्राप्तही समुझते हैं, उस वीर अर्जुनके विना इस काम्यक वनमें हम रहनेको समर्थ नहीं हैं। हमको सब दिशा अन्धेरेसे भरी हुई दीखती हैं। तब पाण्डुपुत्र नकुल रोते हुए ऐसा कहने लगे। नकुल बोले, जिस अर्जुनके युद्धमें दिव्य कामोंको देखकर देवताभी प्रशंसा करते हैं, उसके विना वनमें कैसे चित्त लगेगा ? जिस महा तेजस्वीने उत्तर दिशामें जाकर महा बल गन्धर्व्वराजको जीत कर उत्तम घोड़े प्राप्त किये थे, जिसने ब्रनहो तीरके समान रङ्गवाले तेजस्वी, वायुके समान चलनेवाले घोड़ोंको राजसूय महायज्ञमें अपने प्यारे भाईको प्रेमसे दिये थे, उस भीमके छोटे भाई, दृढ़ धनुवाले अर्जुनके विना इस देव निवासके योग्य काम्यक वनमें रहनेकी हमारी इच्छा नहीं है। सहदेव बोले, जिस महारथने, पहले राजसूय यज्ञमें युद्धसे जीते हुए अनेक धन और कन्याओंको राजाको समर्पण किया था, और जिस महा तेजस्वीने कृष्णकी सम्मतिसे युद्धमें सब यादवोंको जीतकर सुभद्राको ग्रहण किया था, उस अर्जुनके आसनको शून्य देखकर मेरा हृदय कभी भी शान्त नहीं होता। हे महाराज ! हे शत्रुनाशन ! उस वीरके विना यह वन हमको अच्छा नहीं लगता, इस लिये हमारी इच्छा इस वनको छोड़ देनेकी है।

८० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इस प्रकार द्रौपदीके सहित अपने भाइयोंको अर्जुनके दर्शनको इच्छावाला जान और उनकी बातें सुनते हुए धर्म्मराज युधिष्ठिर बैठे थे, इतनेहीमें तेजकी लक्ष्मीसे प्रकाशमान, जलती हुई अग्निके समान तेजस्वी देवर्षि नारदजीको देखा। उनके देखतेही धर्म्मराज युधिष्ठिर भाइयोंके समेत खड़े हो गये, और महात्मा नारदजीकी यथा योग्य पूजा करी। कुरुकुल श्रेष्ठ, श्रीमान्, प्रकाशमान्, राजा युधिष्ठिर अपने भाइयोंके सहित ऐसे शोभित हुए, जैसे देवतोंके सहित इन्द्र। जैसे सावित्री वेदोंको और पर्व्वतको सूर्य्यको किरण नहीं छोड़ती हैं, तैसेही द्रौपदीभी धर्म्म सहित अपने पतियोंके सङ्गही रहती थी। हे पापरहित ! भगवान नारदजीने उस पूजाको ग्रहण किया, और समयानुसार धर्म्मराजको समुझाने लगे। धर्म्मराज महात्मा युधिष्ठिरसे नारदजी बोले कि हे धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ ! आपकी क्या इच्छा है ? कहिये हम आपको क्या दें ? ऐसा सुन धर्म्मराज युधिष्ठिर भाइयोंके सहित देव समान नारदजीको प्रणाम-कर हाथ जोड़ ऐसा बोले। हे सुव्रत ! ?

[मह]ाभाग। जब सब लोकोंसे पूजित आप [ह]मसे प्रसन्न हुए, तो आपकी कृपासे मैं अपने [स]ब कार्य्योंकी सिद्धही समझता हूं। हे पाप-[र]हित। यदि आप भाइयोंके सहित मेरे ऊपर [अ]नुग्रह करना चाहते हैं, तो मेरे सन्देहको [य]थायोग्य नाश कीजिये। जो पुरुष तीर्थ यात्राके निमित्त समूची पृथ्वीकी प्रदक्षिणा करता है, उसको क्या फल होता है? यह आप पूर्ण रीतिसे कहिये। नारद बोले, हे राजन्! आप सावधान होकर सुनिये, जिस प्रकार बुद्धिमान भीष्मने पुलस्त्य मुनिसे सुना था, सो मैं कहता हूं। पहले धर्म्मचारियोंमें श्रेष्ठ भीष्म पितरोंके व्रतको धारण करके मुनियोंके सहित गङ्गातीरपर बसते थे। हे राजन्! देव और ऋषियोंसे सेवित पवित्र और पुण्य देश गङ्गाके द्वारमें महा तेजस्वी भीष्म देवता, पितर और ऋषियोंको शास्त्र विधिके अनुसार तर्पण करते हुए निवास करते थे। एक दिन महा यशस्वी भीष्मने जप करनेके समय अद्भुत स्वरूपवाले पुलस्त्यमुनिको देखा। उन्होंने महातपस्वी पुलस्त्यको तेजसे प्रकाशित देखकर परम आनन्द प्राप्त किया और महा आश्चर्य्यमाना। हे भारत! वहां आये हुए पुलस्त्यमुनिको देख धर्म्मधारियोंमें श्रेष्ठ भीष्मने विधिपूर्व्वक उनकी पूजा करी, पवित्र होकर अपने मनको स्थिरकर उनको अर्घ दे, शिरसे प्रणाम कर, [ब्रह्म]र्षियोंमें श्रेष्ठ पुलस्त्यको इस प्रकार अपना नाम सुनाया। हे सुव्रत। आपका कल्याण हो, मैं आपका दास भीष्म हूं, आज आपका दर्शन [कर]नेसे मेरे सब पाप छूट गये। हे महाराज! युधिष्ठिर। धर्म्मधारियोंमें श्रेष्ठ भीष्म ऐसा [कह ह]ाथ जोड़ चुप हो बैठ गये। कुरुकुलश्रेष्ठ [भीष्म]को वेदपाठ और नियमसे दुर्ब्बल देख [पुलस्त्य]मुनि अत्यन्त प्रसन्न हुए।

८१ अध्याय समाप्त।

श्रीपुलस्त्य मुनि बोले, हे धर्म्मज्ञ। तुम्हारे इस परिश्रम इन्द्रिय निग्रह और सत्यसे हम परम सन्तुष्ट हुए हैं। हे महाभाग! हे पापरहित! तुम्हारा यह धर्म्म और पिताकी भक्ति देखकर हम बहुत प्रसन्न हुए हैं। हे पुत्र! हे भीष्म! हे कुरुकुलश्रेष्ठ! हे पापरहित! हम तीनों कालको देखते हैं, तुम जो कहोगे सोई तुमको देंगे, कहो हम तुम्हारा कौन काम करें। भीष्म बोले, हे महाभाग! सबलोगोंसे पूजित! जब आप हमसे प्रसन्न हुए, तो हम अपने सब कार्य्योंको सिद्धही समझते हैं, आपके देखनेसे सब कार्य्य सिद्ध हुए। हे धर्म्मधारियोंमें श्रेष्ठ! यदि आप हमारे ऊपर कृपा करते हैं, तो हमारे सन्देहको नाश कीजिये। हमारे हृदयमें तीर्थोंके विषयमें कुछ धर्म्म विषयक सन्देह हैं, उनको हम सुनना चाहते हैं, आप कहिये, हे देवतुल्य! हे ब्राह्मण ऋषि! जो पृथ्वीकी प्रदक्षिणा करता है, उसको क्या फल होता है? सो आप निश्चय करके कहिये। पुलस्त्य मुनि बोले, हे पुत्र! हम तुमसे तीर्थके फलको कहते हैं, सावधान मनसे सुनो, यह ऋषियोंके सुनने योग्य है। जिसके हाथ, पांव, मन विद्या और कीर्त्ति वशमें होती हैं, वही तीर्थोंके फलको भोगता है, जो सब घरोंसे लौटकर एक किसी स्थानपर सन्तुष्ट होकर रहता है, जिसको अहङ्कार नहीं होता, वही तीर्थके फलको भोगता है; जो कुल और कार्य्योंके आरम्भसे दीन, थोड़ा खानेवाला, इन्द्रियजित और सब पापोंसे रहित होता है, वही तीर्थोंके फलको भोगता है। हे राजेन्द्र! जो क्रोधसे रहित, सत्य और शीलसे भरा हुआ, पक्का व्रतधारी, अपने समान सब प्राणियोंको देखनेवाला हो, वही तीर्थोंके फलको भोगता है। जो यज्ञ ऋषियोंने देवतोंके निमित्त कहा है, जिनका फल इस लोक और परलोकमें होता है, उन यज्ञोंको दरिद्री पुरुष

नहीं कर सकता; क्योंकि यज्ञमें अनेक सामग्री और बहुत वस्तुओंका विस्तार चाहिये। उन यज्ञोंको राजाही लोग कर सकते हैं, और कहीं कहीं धनवान पुरुषभी करनेमें समर्थ होते हैं, परन्तु थोड़े धनवाले, सहाय रहित, एकले, साधनहीन, पुरुष नहीं करसकते। हे नरनाथ! हे योद्धोंमेंश्रेष्ठ! जो विधि दरिद्रोंके लिये यज्ञ फलके समान कही हैं, उसको सुनिये। हे भरतसत्तम! यह ऋषियोंका परम गुप्त मत है, कि पवित्र तीर्थोंमें जाना यज्ञोंसेभी अधिक फलदायक है, यीथोंमें सोना और गजदान न करकेभी तीन रात तीर्थोंमें रहनेसे दरिद्र पवित्र होता है, भारी भारी दक्षिणावाली अग्निष्टोमादि यज्ञ करनेसे जो फल होते हैं,सो इन तीर्थोंमें जानेसेभी होते है। देवतोंका तीर्थ पुष्कर नामक मर्त्यलोकमें है, वह तीनलोकमें विख्यात है, महाभागी पुरुषको वहां जाना उचित है, हे महामते! पुष्कर तीर्थमें तीनों सन्ध्याओंके समय दश करोड़ तीर्थ इकट्ठे होते हैं, वहां सूर्य, वसु, रुद्र, साध्य, मरुत, गन्धर्व और अप्सरा सदाही निवास करते हैं। हे महाराज! जहां देवता, दैत्य और ब्रह्मर्षिलोग महा पुण्यके सहित तप करके दिव्य योगको प्राप्त होते हैं, उस पुष्करका जो मनस्वी पुरुष मनसेभी ध्यान करता है, वह सब पापोंसे पवित्र होकर स्वर्गमें जाकर पूजित होता है। हे महाराज! उस तीर्थमें सब लोकोंके पितामह परम प्रीतिके सहित सदाही निवास करते हैं। हे महाभाग! पुष्करमें पहले देवता और ऋषिलोग, पवित्र पुण्यके सहित तप करके परम सिद्धिको प्राप्त हुए हैं! पितर और देवतोंकी पूजा करनेवाला पुरुष यदि उसमें स्नान करे, तो अश्वमेध यज्ञसे बारह गुने फलको पाता है। यदि पुष्करमें रहनेवाले एक ब्राह्मणकोभी भोजन करावे तो उस कर्म्मके प्रतापसे इसलोक और परलोक में आनन्द करता है, साग,मूल, फल याजो कुछ आप खाय, वही ब्राह्मणको श्रद्धा सहित खिलावे, उसी कर्म्मके फलसे बुद्धिमान पुरुष अश्वमेधके फलको प्राप्त करता है। हे राज सत्तम! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, कोई हो उस तीर्थमें स्नान करके फिर गर्भमें नहीं आता, विशेष करके जो कार्त्तिककी पूर्णिमासीको पुष्करमें स्नान करता है, उसको अक्षय ब्रह्म लोक प्राप्त होता है। हे भारत! जो सन्ध्या और प्रातःकाल हाथ जोड़कर पुष्करका स्मरण करता है। उसे तीर्थ स्पर्श करनेका फल होता है। चाहे पुरुष वा स्त्री हो उसने जन्म भरमें जो पाप किया हो, वह सब पुष्करमें स्नान करतेही नष्ट होजाते हैं। जैसे सब देवतोंमें पहले बिष्णु हैं, वैसेही सब तीर्थोंमें आदि पुष्कर है। राजन्! जो पवित्र और इन्द्रियजित होकर बारह वर्ष पुष्करमें रहे, वह सायुज्य मोक्ष पाता है, और ब्रह्मलोकमें बसता है। जो सौ बर्षतक अग्निहोत्र करै और जो एक कार्त्तिकी पूर्णमासीमें पुष्कर स्नान करे, उन दोनोंको समान ही फल होता है। तीन सिखर और तीन पुष्करादि भरने सिद्ध है, किन्तु इसका कारण हम नहीं जानते पुष्कर में जाना, तप करना, दान करना बहुत कठिन है, जो थोड़ा भोजन करने वाला इन्द्रियोंको वशमें करके प्रदक्षिणाके पश्चात् बारह रोजतक पुष्करमें रहता है, वह जम्बुमार्गमें जाता है, देवता ऋषि और पितरोंसे सेवित मार्गमें जाकर सब काम पाकर अश्वमेधके फलको प्राप्त करता है। हे राजन्! जो पितर और देवतोंकी पूजा करनेवाला अगस्त्य सरमें जाकर तीन रात रहता है, उसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है। जो शाक और फलोंको खाता है, उसे कुमार भाव प्राप्त होता है। हे भरतर्षभ! वहांसे लक्ष्मीसे भरे हुए लोक पूजित कण्वमुनिके आश्रममें जाय। उसका

नाम धर्म्मारण्य है, वह पवित्र स्थान और आदिस्थान है, जहां जाते ही पुरुष सब पापोंसे छूट जाता है; वहां इन्द्रियजित और ब्रह्मचारी होकर यदि पितर और देवतोंकी पूजा करे तो सब काम पूर्ण होते हैं, और यज्ञका फल मिलता है। उसकी प्रदक्षिणा करके ययातियन नामक तीर्थमें जाय, वहां जातेही अश्वमेध यज्ञका फल मिलता है। वहांसे ब्रह्मचारी और जितेन्द्रिय होकर महाकाल तीर्थमें जाय, वहां करोड़ तीर्थोंका स्पर्श होनेसे अश्वमेधका फल मिलता है। आगे धर्म्म जाननेवाला पुरुष भद्रवट नामक तीर्थमें जाय। यह स्थान पार्व्वतीनाथ शिवका है और तीनों लोकोंमें विख्यात है। वहां शिवके दर्शन करनेसे सहस्र गोदानका फल होता है, और शिवके प्रसादसे गणेशका फल मिलता है। लक्ष्मीके सहित, शत्रुओंसे रहित, ऋद्धिसे भरा हुआ, पुरुषोंमें श्रेष्ठ यात्री वहांसे चलकर तीनों लोकोंमें विख्यात नर्मदा नदी पर जाय। वहां देवता और पितरोंकी तर्पन करनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है। आगे ब्रह्मचारी और जितेन्द्रिय होकर दक्षिण समुद्रके तट पर जाय, वहां जानेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल मिलता है और चढ़नेको विमान प्राप्त होता है। आगे जितेन्द्रिय और जिताहार होकर चर्म्मणवती (चम्बल) नदीके तट पर जाय; वहां जानेसे रान्तिदेवकी करी हुई अग्निष्टोम यज्ञका फल प्राप्त होता है। हे धर्म्मज्ञ! हे युधिष्ठिर! वहांसे हिमाचलके पुत्र अर्बुदमें जाय, जहां पहले पृथ्वीमें छेद था, वहीं तीनो लोकोंमें विख्यात वशिष्ठमुनिका आश्रम है, वहां एक रात रहनेसे हजार गोदानका फल मिलता है। हे नरश्रेष्ठ! यदि जितेन्द्रिय होकर वहां पिङ्ग तीर्थका स्पर्श करे तो सौ कपिलाका फल पावे। हे राजन्! वहांसे प्रभास तीर्थमें जाय, जहां भगवान अग्नि आपही निवास करते हैं। हे वीर! अग्निका सारथी ज्वलन जो देवतोंका मुख है, जो मनुष्य पवित्र हो मनको स्थिरकर वहां स्नान करे, और तीन रोज वास करे, तो अग्निष्टोम यज्ञका फल पाता है। वहांसे सरस्वती और समुद्रके सङ्गमको जाय, तो उसे सहस्र गोदानका फल होता है, और स्वर्ग मिलता है। हे भरतर्षभ! वह तीर्थ अग्निके समान तेजसे भरा हुआ है, वहां मनको स्थिर करके समुद्रमें स्नान करे, तीन दिन वहीं निवास करके पितर और देवतोंका तर्पण करे तो अश्वमेध यज्ञका फल पाता है और चन्द्रमाके समान तेजस्वी होता है। हे भरतसत्तम! वहांसे वरदान तीर्थको जाय। हे युधिष्ठिर! विष्णुने उसीस्थानमें दुर्व्वासाको वर दिया था। आगे पुरुष जिताहार होकर द्वारिका पुरीको जाय, वहां पिण्डारक तीर्थमें स्नान करे तो बहुत सुवर्ण प्राप्त होता है, हे महाभाग! हे शत्रुनाशन! उस तीर्थमें अब भी पद्मके समान एक मुद्रा दिखाई देती है। हे कुरुनन्दन! यह परम आश्चर्य है कि वहां त्रिशूल और पद्मके चिह्न दीखते हैं। हे पुरुषर्षभ! वहां महादेव निवास करते हैं। हे भारत! वहां सिन्धु और समुद्रके सङ्गमसे जाय, वहां मनको स्थिर करके समुद्रमें स्नान करे और पितर देवता तथा ऋषियों का तर्पण करे। यहां स्नान करनेसे अपने तेजसे प्रकाशित वरुणलोक मिलता है। हे युधिष्ठिर! वहां शङ्कुकर्णेश्वर महादेवको पूजा करनेसे महात्मा लोग कहते हैं कि अश्वमेधसे दशगुण फल होता है। हे भरतर्षभ! हे कुरुवरश्रेष्ठ! आगे प्रदक्षिणा करके तीन लोकमें विख्यात दमी नामक तीर्थमें जाय; वह सब पापोंका नाश करनेवाला है, वहीं ब्रह्मादिक देवता शिवको पूजा करते हैं। वहां स्नानकर जल पी देवतोंसे वेष्टित शिवकी पूजाकर पुरुष जन्म

नरके पापोंसे छूटता है। हे पुरुषव्याघ्र। हे नरश्रेष्ठ! इसी स्थानपर सब देवतोंने दमीकी स्तुति की थी। वहां स्नान करनेसे अश्वमेधका फल प्राप्त होता है। हे राजन। पहले लोक कर्त्ताविष्णुने दैत्य और दानवोंको मारकर इसी स्थानपर पवित्रता पाई थी। हे धर्म्मज्ञ! वहासे वसुधारा नामक तीर्थको जाय, उसकी सब देवता लोग स्तुति करते हैं, वहा जानेहोसे अश्वमेधका फल मिलता है। हे कुरुश्रेष्ठ। सावधान और जितेन्द्रिय होकर स्नान करना चाहिये, वहां देवता और पितरोंकी तपस्या करनेसे विष्णुलोक मिलता है। हे भरतर्षभ। इस तीर्थमें वसुओंका तड़ाग है, वहा स्नान करनेसे पुरुष वसुओका प्यारा हो जाता है। हे नरश्रेष्ठ। आगे सिन्धुत्तम नामक तीर्थमें जाय, वहां स्नान करनेसे सब पापोका नाश और बहुत सुवर्ण मिलता है। हे महाराज। आगे पवित्र और शीलवान पुरुष भद्रतुङ्ग नामक तीर्थ पर जाय। वहा जानेसे ब्रह्मलोक प्राप्त होता है, और मोक्ष होती है। आगे कुमारिका तीर्थ जो इन्द्रतीर्थके नामसे प्रसिद्ध है, जिसकी सिद्ध लोग सेवा करते हैं, वहा स्नान करनेसे पुरुषको स्वर्ग मिलता है। वहीं सिद्ध सेवित रेणुका तीर्थ है, उसमें स्नान करनेसे ब्राह्मण चन्द्रमाके समान निर्म्मल होजाता है। आगे जितेन्द्रिय और जिताहार होकर पञ्चनद तीर्थ पर जाय, वहा जानेसे पाच यज्ञका फल प्राप्त होता है, इसके नाम पहले कह चुके हैं। हे राजेन्द्र! वहांसे उत्तम भीमा स्थानपर जाय, वहा स्नान करनेसे पुरुष देवीका पुत्र होता है, उसका रङ्ग तपे हुए सोनेके समान हो जाता है, वहा जानेसे लाख गोदानका फल होता है। वहांसे तीनलोकमें विख्यात श्रीकुण्ड तीर्थपर जाय, वहा ब्रह्माको नमस्कार करनेसे सहस्र गोदानका फल होता है। हे धर्म्मज्ञ। वहासे उत्तम विमला तीर्थको जाय, जहा अबतकभी सोने और चादीके रङ्गवाली मछली दीखती है, वहां स्नान करनेसे पुरुषको इन्द्रलोक मिलता है, वह पुरुष सब पापोंसे छूटकर मोक्षको पाता है। आगे वितस्ता नदीमें जाकर स्नान करे और वहां पितर तथा देवतोंका तर्पण करे। हे भारत! इस तीर्थमें स्नान करनेसे वाजपेय यज्ञका फल होता है। हे महाराज। वहांसे काश्मीर देशको जाय, वहा तक्षक नागका वन जो सब पापोंका नाश करनेवाला है, उसमें जाकर वितस्ता नदीमें स्नान करे, ऐसा करनेसे वाजपेय यज्ञका फल मिलता है, औरसब पापोंसे छूटकर मुक्ति हो जाती है। वहांसे तीन लोकोंमें प्रसिद्ध वड़वा तीर्थमें जाय, यहां विधिपूर्वक सायंकालकी सन्ध्यामें स्नान करे, वहांपर शक्तिके अनुसार सूर्य्यको नैवेद्य दे। पण्डित लोग कहते हैं, कि पितरोंके निमित्त वहा जो दान किया जाय सो अक्षय होता है। हे नरनाथ। गन्धर्व ऋषि, पितर, देवता, अप्सरा, गुह्यक, किन्नर, यक्ष, सिद्ध, विद्याधर, पुरुष, राक्षस, दैत्य, रुद्र और ब्रह्मा उसी स्थानमें विष्णुका भोग लगाकर विष्णुको प्रसन्न करते हैं। उसी स्थानपर इन लोगोंने ऋग्वेदकी सात सात ऋचा पढ़कर विष्णुकी स्तुति की थी, और विष्णुजीने उनके ऊपर प्रसन्न होके उनको वहीं आठ सिद्धि दी थी। औरभी उनकी इच्छानुसार अनेक सिद्धि देकर भगवान विष्णु वहीं अन्तर्द्धान हो गये थे, जैसे मेघोंमें बिजली। हे भारत। इसी लिये उस तीर्थका नाम सप्तचरु है। वहां पर सूर्य्यको नैवेद्य देनेसे लाख गो दान, हजार राजसूय यज्ञ, और हजार अश्वमेध यज्ञोंका फल होता है। हे राजेन्द्र। वहांसे चलकर रुद्र तीर्थको जाय, वहा महादेवकी पूजा करनेसे अश्वमेधका फल मिलता है। आगे ब्रह्मचारी और सावधान होकर मणिवन तीर्थको जाय वहा एक रात रहनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है। हे राजेन्द्र! वहांसे लोक

विख्यात् देविका तीर्थमें जाय। हे भरतर्षभ। वहीं पर सब ब्राह्मण उत्पन्न हुए थे। आगे तीनों लोकमें विख्यात शूलपाणि रुद्रके स्थानमें जाय, वहां पर देवता लोग वास करते हैं। हे भारत। वहा स्नान करके पुरुषको शीघ्रही सिद्धि मिलती है, वहा यज्ञ करे और करावे. वहांकी बालू, फूल, और जलको कूनेसे पुरुष मरनेके पश्चात शोचसे रहित होता है, अर्थात् मोक्ष पाता है देव और ऋषियोसे सेवित पवित्र देवोका वह स्थान दो कोस चौड़ा और दशकोश लम्बा है। हे धर्म्मज्ञ। वहासे क्रमके अनुसार दीर्घसत्र तीर्थ पर जाय, जहा ब्रह्मादिक देवता, सिद्ध और महा ऋषिलोग दीक्षित हो कर बड़े बड़े यज्ञको करते हैं। हे राजेन्द्र। हे शत्रुनाशन! हे भारत। तीर्थसत्र दीर्थमें जानेहोसे राजसूय और अश्वमेधका फल है, आगे जिताहार नियमधारी पुरुष विनसन तीर्थमें जाय जहां मेरुके शिखर पर सरस्वती अन्तर्द्धान हुई है। आगे चमस शिवोद्भेद और नागोद्भेद तीर्थ दीखते हैं, तहां चमसोद्भेद तीर्थमें स्नान करनेसे अग्निष्ठोम यज्ञका फल मिलता है। शिवोद्भेदमें स्नान करनेसे सहस्र गोदानका फल होता है, और नागोद्भेदमें स्नान करनेसे पुरुषको नागलोक मिलता है। हे राजेन्द्र! आगे हर्माभशयान तीर्थमें जाय, हे भारत! जहां कार्त्तिकीमें ईश्वर रूपधारी पुष्कर दीखते हैं। हे भरतश्रेष्ठ! हे महाराज! वे लोग प्रतिवर्ष सरस्वतीमें आते हैं। हे भरतर्षभ। हे पुरुषसिंह! वहां स्नान करनेसे पुरुष सदा दिनमें चन्द्रमाके समान प्रकाशित हो जाता है। हे कुरुनन्दन! वहासे देवता और पितरोंकी पूजा करनेवाला नियमधारी पुरुष कुमार कोठी तीर्थमें जाकर स्नान करे, वहा स्नान करनेसे सहस्र गोदानका फल होता है और उसके कुलकाभी उद्धार हो जाता है। हे धर्म्मज्ञ। वहासे सावधान होकर रुद्रकोटि तीर्थमें जाना चाहिये, जहा पहले मुनियोंका समूह शिवके दर्शनकी इच्छासे आया था, और उन्होंने बहा अत्यन्त प्रसन्न होकर हम पहले शिवजीका दर्शन करेंगे, हम पहले शिवजीका दर्शन करेंगे, ऐसा विबाद किया था, हे राजन्। हे भारत। उनलोगोंने ऐसाही विवाद किया था, हे राजन्। हे भारत। वे लोग ऐसाही विवाद करते हुए आगेको चले, हे महाराज। तब योगीश्वर शिवजीनेभी महात्मा ऋषियोंके क्रोधको अप्रकाश करनेके निमित्त सब ऋषियोंके आगे अपने अनेक स्वरूप बनाया और उनको सब ऋषि अलग अलग देखकर कहने लगे कि शिवको हमने पहले देखा। अनन्तर उन महात्मा मुनियोंकी परम भक्तिसे शिव प्रसन्न हुए और ऐसा वरदान दिया कि आजसे तुमलोगोंका धर्म्म बढ़ेगा। हे पुरुषव्याघ्र। उस रुद्रकोटि तीर्थमें स्नान करनेसे पुरुष पवित्र होता है, और अश्वमेधका फल मिलता है, तथा कुलकाभी उद्धार होजाता है। हे राजेन्द्र। वहासे लोकविख्यात सरस्वतीके सङ्गमको जाय, जहा चैत्र शुक्ल चतुर्दशीके दिन विष्णुकी उपासना करने के लिये ब्रह्मादिक देवता और तपस्वी ऋषिलोग आते हैं। हे महाराज। वहां स्नान करके बहुत सुवर्णको पाता है, और ब्रह्मलोकको जाता है और सब पापोंसे शुद्ध होजाता है। हे नरनाथ। वहा ऋषियोंके यज्ञ समाप्त हुए थे, वहा रहनेसे हजार गौ दानका फल होता है।

८२ अध्याय समाप्त।

श्रीपुलस्त्यमुनिवोले, हे राजेन्द्र। वहांसे प्रशंसित कुरुक्षेत्रको जाय, जहाके दर्शनहीसे सब प्राणी पापोंसे छूट जाते हैं. जो कोई सदा यही कहता रहे कि मैं कुरुक्षेत्रको जाऊंगा, वहां वसूंगा वह सब पापोंसे छूट जाता है,

वायुसे उड़ती हुई वहाकी धूलभी यदि पापीके शरीरसे लग जाय तो सब पापोंसे छुड़ाकर परम गतिको पहुंचाती है। सरस्वतीसे दक्षिण और दृषद्वतीसे उत्तर कुरुक्षेत्रमें जो पुरुष बसते हैं, वह सब स्वर्गवासी हैं। हे युधिष्ठिर। वहा धीर पुरुष एक महीना रहे, जहा ब्रह्मादिक देवता, ऋषि, सिद्ध, चारण, गन्धर्व्व, अप्सरा, यक्ष, और सर्पलोग निवास करते हैं। हे भारत। वहींसे वे लोग महा पवित्र ब्रह्मक्षेत्रको जाते हैं। हे युधिष्ठिर। जो मनसेभी कुरुक्षेत्रकी इच्छा करते हैं, वे सब पापोंसे छूटकर ब्रह्मलोकको जाते हैं। हे कुरुनन्दन। श्रद्धायुक्त कुरुक्षेत्रमें जानेसे पुरुषको अश्वमेध और राजसूयका फल होता है, वहां मचकुक नामक यक्ष द्वारपालको नमस्कार करनेसे हजार गोदानका फल होता है, हे धर्म्मज्ञ। वहासे अति उत्तम सतत नामक विष्णुके स्थानको जाय, हे राजेन्द्र। वहा सदाही नारायण वास करते हैं, वहा तीनलोकके कर्त्ता विष्णुको प्रणाम करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल मिलता है, और विष्णुलोकभी प्राप्त होता है। हे भारत। वहासे चलकर तीनलोक विख्यात परिप्लव नामक तीर्थमें जाय, वहां जानेसे अग्निष्टोम और अतिरात्र यज्ञका फल प्राप्त होता है। हे नरनाथ! वहासे पृथिवीतीर्थमे जाकर हजार गोदानका फल लाभ करे। आगे तीर्थसेवी पुरुष सालूकिनी तीर्थमें जाय। वहा दशाश्वमेधमे स्नान करनेसे दश अश्वमेधका फल प्राप्त होता है। आगे सर्पोंके उत्तम तीर्थ नागदेवीमें जाय वहा जानेसे अग्निष्टोमका फल और नागलोक मिलता है। हे धर्म्मज्ञ! वहांसे तरन्तु नामक द्वारपाल तीर्थको जाय वहा एक रात्रि रहनेसे हजार गोदानका फल होता है। वहांसे पञ्चनद (पञ्जाब) देशमें जाकर कोटि तीर्थमें स्नान करे वहां अश्वमेधका फल होता है। अश्विनी कुमार तीर्थमें जानेसे पुरुष रूपवान होजाता है। वहांसे उत्तम वाराह तीर्थमें जाय, जहा वाराह रूपधारी विष्णुने वास किया था। हे नरश्रेष्ठ। वहा स्नान करनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है। हे राजेन्द्र। वहांसे जयन्तीमें जाकर सोमतीर्थका स्नान करे, वहां पुरुषको राजसूय यज्ञका फल मिलता है, यहा हंस तीर्थमें स्नान करनेसे हजार गोदानका फल होता है। हे नराधिप। आगे तीर्थसेवी पुरुष कृतशौच तीर्थमें जाय वहां जानेसे कमलको प्राप्त होता है, और पवित्र होजाता है, वहासे महात्मा शिव मुञ्जवट नामक स्थानको जाय, वहा एकरात रहनेसे गणेशका पद मिलता है; वहीं विख्यात पक्षिनी तीर्थ है; उसमे स्नान करनेसे पुरुष सब कामोंको प्राप्त होता है। हे भरतर्षभ। वही कुरुक्षेत्रका द्वार है आगे प्रदक्षिण करके वहां स्नान करे आगे पुष्कर सम्मितो तीर्थमें स्नान करे, वहा पितर और देवतोंका तर्पण करे, वहीं यमदग्निके पुत्र महात्मा परशुरामने भारी काम किया था, हे राजन्। वहा जानेसे पुरुष कृतकृत्य हो जाता है, और अश्वमेधका फल मिलता है। आगे तीर्थसेवी पुरुष सावधान होकर रामसरमें स्नान करे, हे राजेन्द्र। तेजस्वी परशुरामने वहीं शीघ्रता सहित क्षत्रियोंको मारकर पाच तड़ाग बनाये हैं, हे पुरुषव्याघ्र! यह बात विदित है, कि उन्हीं तड़ागोंको परशुरामने रुधिरसे भरकर अपने पितर और पूर्व्व पितरोंका तर्पण किया था, तब उनके पितर उनसे प्रसन्न होकर बोले, हे राम। हे महाभाग! हे भार्गव! हे विभो। हे महातेजस्वी। हम तुम्हारे इस पितृभक्ति और पराक्रमसे बहुत प्रसन्न हुए। हे महाभाग! तुम्हारा कल्याण हो, जो तुम्हारी इच्छा हो वरदान मांगो, हे राजेन्द्र! शस्त्र चलानेवालोंमें श्रेष्ठ परशुरामने आकाशमें खड़े

हुए पितरोंके ऐसे वचन सुनकर हाथजोड़कर कहा; यदि आपलोग मुझसे प्रसन्न हुए है. और मेरे ऊपर कृपा करना चाहते है, तो मैं आपकी प्रसन्नता चाहता हूं और पुनः आपलोगोंके तर्पण करनेकी इच्छा रखता हूं और यहभी वरदान मांगता हूं कि, मैंने जो क्रोधमें भरकर क्षत्रियोंका नाश किया है,आप लोगोकी कृपासे उस पापसे छूट जाऊं और मेरे यह तालाब जगत विख्यात तीर्थ होजायं,परशुरामके ऐसे उत्तम वचन सुनकर पितरलोग परम प्रसन्न होकर आनन्दके सहित बोले, हमारे आशीर्व्वादसे तुम्हारा तप बढ़े और तुमने क्रोधमें भरकर जो क्षत्रियोंका नाश किया है. तुम उस पापसे छूट गये क्योंकि वे लोग अपने कर्म्मसे मरे हैं, और तुम्हारे यह तालाब निःसन्देह तीर्थ होजायंगे। जो कोई तुम्हारे इन तीर्थोंमें स्नान करके अपने पितरोंका तर्पण करेगा उसको पितर लोग प्रसन्न होकर जगत्में दुर्लभ कामनाको देंगे और सनातन स्वर्गमें पहुंचावेंगे। पितर लोग इस प्रकार परशुरामको वरदान देकर रामसे वार्तालापकर वहां अन्तर्धान होगये। हे राजेन्द्र। महात्मा भृगुवंशी परशुरामके तीर्थोंमें इस प्रकार स्नान करके ब्रह्मचारी और व्रतधारी हो परशुरामकी पूजाकर बहुत सुवर्णको प्राप्त करता है। हे कुरुद्वह। वहांसे वंशमूलक तीर्थमें जाय, वहा स्नान करनेसे वंशका उद्धार होता है, वहांसे यशोधन तीर्थमें जाय, हे भरतसत्तम उसमें स्नान करनेसे निःसन्देहही शरीर शुद्ध हो जाता है। शरीर शुद्ध होनेसे उत्तम और शुभ लोकोंको प्राप्त होती है। हे धर्म्मज्ञ। वहांसे तीनलोक विख्यात लोकोद्धार तीर्थमें जाय, जहा पहले [illegible] विष्णुने लोकोंको धारण किया था। हे राजन्। उस उत्तम तीर्थमें स्नान [illegible] पुरुष अपने लोगोंका उद्धार करता है. [illegible] मन स्थिर करके श्रीतीर्थमें स्नान करे,

वहां देवता और पितरोंकी पूजा करनेसे उत्तम लक्ष्मी मिलती है; आगे ब्रह्मचारी हो मनको स्थिर कर कपिला तीर्थमें जाय वहां स्नान करके पितर और देवतोंकी पूजा करे तो सहस्र कपिला गौके दानोंका फल मिलताहै, फिर मन स्थिर करके पितर और देवतोंकी पूजा करे इससे अग्निष्टोम यज्ञका फल और सूर्य्य लोक मिलता है। आगे गोभवन तीर्थमें जाकर तीर्थसेवी पुरुष क्रमसे स्नान करे, तो हजार गोदानका फल पाता है। हे कुरुनन्दन। वहांसे तीर्थसेवी पुरुष शाकम्भरी तीर्थको जाय; वहां देवीके स्थानमें स्नान करनेसे उत्तम रूप मिलता है। हे राजेन्द्र। वहांसे द्वारपाल मरन्तुक स्थानको जाय, यह तीर्थ सरस्वतीमें महात्मा यक्षराजका स्थान है। हे राजन्। उसमें स्नान करनेसे पुरुषको अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है, हे राजेन्द्र। वहांसे उत्तम पुरुष (ब्रह्मावर्त्त) विठुर तीर्थको जाय, वहां स्नान करनेसे पुरुषको ब्रह्मलोक मिलता है, हे राजेन्द्र। वहांसे उत्तम सुतीर्थकको जाय, वहांपर सदाही पितर और देवता निवास करते हैं। पितर और देवतोंका पूजक पुरुष वहां स्नान करे, तो अश्वमेधका फल और पितरलोक मिलता है। हे राजेन्द्र। अम्बुमतिके बीचमें स्नान करके काशीश्वर तीर्थमें स्नान करे, तो सब दुःखोंसे छूटकर ब्रह्मलोकको जाता है, हे राजन्! वहीं मातृतीर्थमें स्नान करना चाहिये। उसमे स्नान करनेसे सन्तान और भारी धन बढ़ता है! आगे नियमधारी जिताहारी पुरुष शीत वनमें जाय, हे महाराज! उसमें महा तीर्थ है. जो अन्य पुरुषोंको दुर्लभ है, हे नरनाथ! वह जाते हुएही देखने मात्रसे पुरुषको पवित्र कर देता है। हे भारत। उसमें बार धोनेसे पुरुष पवित्र होता है। हे महाराज। वहां जो तीर्थ है, उसका नाम स्वाविल्लोमाप

है उसमें विद्वान् तीर्थपरायण मुनिलोग स्नान करके परम प्रसन्न होते हैं। हे राजेन्द्र! पवित्र आत्मावाले मुनीश्वर उस तीर्थमें प्राणायामोंके द्वारा अपने रजोंको दूर करके पवित्र हो मोक्ष पाते हैं, हे पुरुषसिंह उसही स्थानमें दशाश्वमेध नामक तीर्थ है, उसमें स्नान करनेसे पुरुष मोक्ष पाते हैं। हे राजेन्द्र! वहांसे चलकर विख्यात मानस तीर्थमें जाय, जहां व्याधका सर लगनेसे तैरते हुए हरिन मनुष्य होगये थे. उस तीर्थमें ब्रह्मचारी और सावधान चित्त होकर स्नान करनेसे पुरुष सब पापोंसे छूटकर स्वर्गमें जाता है, हे पृथ्वी-नाथ! मानस तीर्थसे एककोस पूर्व्वकी ओर सिद्ध सेवित आपगा नाम नदी है, वहां जाकर जो पुरुष देवता और पितरोंका श्राद्ध करके सबई खाता है, उसे बहुत फल होता है, वहां एक ब्राह्मणको भोजन करानेसे करोड़ ब्राह्म-णोंका फल होता है, वहां स्नान देवता और पितरोंकी पूजा करनेसे और एक रात रहनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है। हे भारत! वहांसे चलकर ब्रह्मोदुम्बर नामक ब्रह्माके उत्तम स्थानपर जाय, हे राजेन्द्र! हे नरनाथ! वहां सप्तऋषियोंके और महात्मा कपिलके कुण्डमें स्नान करके पवित्र हो मनको स्थिरकर ब्रह्माके दर्शन करने चाहिये, उनका दर्शन करनेसे सब पाप छूटकर ब्रह्मलोक मिलता है। हे राजेन्द्र! वहांसे जाकर दुर्लभ कपि-स्थल कुण्डमें स्नान करे, तो सब पाप जलकर अन्तर्धान होजाते हैं। हे राजेन्द्र! वहांसे चलकर लोक विख्यात शरक तीर्थपर जाय, वहां कृष्णपक्षकी चतुर्दशीमें शिवका दर्शन करनेसे सब कामोंको प्राप्त करके स्वर्गको जाता है। हे कुरुनन्दन! स्वर्गतीर्थसे तीन करोड़ तीर्थ दूरकई है, वहां रुद्रकोटि कुए और तालावोंमें स्नान करना चाहिये। हे भरत-सत्तम! वहीं इलासद नामक तीर्थ है, वहां स्नान, पितर और देवतोंकी पूजा करनेसे पुरुषकी दुर्गति नहीं होती और वाजपेय यज्ञका फल मिलता है। हे पृथ्वीनाथ! किम्दान और किञ्जप्य नामक तीर्थोंमें स्नान करनेसे अनन्त जय और दानका फल मिलता है। हे भारत! जितेन्द्रिय श्रद्धावान पुरुष को स्पर्श करके कलशी तीर्थमें स्नान करे तो अग्निष्टोम यज्ञका फल पाता है। हे भरतश्रेष्ठ! शरक तीर्थके पूर्व्वकी ओर महात्मा नारदका तीर्थ है, जिसका प्रसिद्ध नाम अम्बाजन्म है, उस तीर्थमें स्नान करके प्राण छोड़नेसे नारद-की आज्ञासे पुरुष उत्तम लोकोंको जाता है, शुक्लपक्ष की दशमीको पुण्डरीक तीर्थमें जाकर स्नान करनेसे पुण्डरीक यज्ञका फल मिलता है। हे महाराज! यहांसे त्रिविष्टप नामक लोक विख्यात तीर्थको जाय, वहां पाप नाशिनी तारिणी नामक प्रसिद्ध नदी बहती है, उसमें स्नान करके शूलधारी शिवकी पूजा करनेसे सब पापोंसे छूट पुरुष मोक्षको प्राप्त होता है। हे राजेन्द्र! वहांसे उत्तम फलकी वनमें जाय, वहां सदाही देवता लोग रहते हैं, वे लोक सहस्रों वर्षतक महा तप करते है, वहां दृष-द्वती नदीमें स्नान करके देवता और पितरोंकी पूजा करनेसे अग्निष्टोम और अतिरात यज्ञका फल मिलता है, हे भरतसत्तम! यह सब देवतोंका तीर्थ है। आगे पाणिखात तीर्थमें स्नान करके पितर और देवतोंकी पूजा करनेसे पुरुषको हजार गो दानका फल मिलता है। हे भारत! वहां स्नान करनेसे अग्निष्टोम, अतिरात राजसूय यज्ञोंका फल और ऋषि लोक मिलता है। हे राजेन्द्र! वहांसे उत्तम मिश्रक तीर्थमें जाय। हे राजशार्दूल! हमने सुना है, कि महात्मा व्यासने ब्राह्मणोंके निमित्त उस तीर्थमें सब तीर्थोंको मिला दिया है, जिस पुरुषने मिश्रकमें स्नान किया, मानो उसने सब तीर्थमें स्नान कर लिया, वहांसे चलकर

नियमधारी जिताहारी पुरुष व्यासके वनमें जाय, वहां मनोजव तीर्थमें स्नान करनेसे हजार गोदानका फल होता है। आगे पवित्र पुरुष मधुवटी तीर्थमें जाकर देवी तीर्थमें स्नान करे, वहां देवता और पितरोंकी पूजा करनेसे देवीकी आज्ञासे हजार गोदानके फलको पाता है। हे भारत। जो दृषद्वती और कौशिकी के सङ्गममें आहारको जीतकर स्नान करता है, वह सब पापोंसे छूट जाता है आगे व्यास स्थली नामक तीर्थमें जाय जहां बुद्धिमान व्यासने पुत्रशोकसे व्याकुल होकर शरीर छोड़नेकी इच्छा करी थी, और देवतोंने पुनः उठाया था, हे राजेन्द्र। उस स्थानमें जानेसे हजार गोदानका फल होता है। आगे त्रिलोचन नामक कुएंपर जाकर तिल दान करनेसे सब ऋणोंसे छूट कर मोक्षको प्राप्त करता है। हे महाराज। वेदी तीर्थमें स्नान करनेसे पुरुषको हजार गोदानका फल मिलता है। हे पुरुषसिंह! आगे हय और सुदिन नाम दो तीर्थ लोक विख्यात हैं, उनमें स्नान करनेसे सूर्य्यलोक मिलता है, आगे मृगधूम नामक लोकविख्यात तीर्थमें जाय। हे राजन्! वहां गङ्गामें स्नान करनेसे और शिवकी पूजा करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है। देवीके तीर्थमें स्नान करनेसे पुरुषको हजार गोदानका फल मिलता है, वहांसे तीनों [illegible] विख्यात वामनक तीर्थमें जाय, [illegible] विष्णुपदमें स्नान करके जो पुरुष [illegible]मनकी पूजा करता है; वह सब पापोंसे [illegible] विष्णु लोकको जाता है, कुलम्पन [illegible]में स्नान करनेसे कुल पवित्र होता है। [illegible] मरुतोंके पवन तड़ागमें स्नान करनेसे [illegible]लोक मिलता है। देवतोंके तीर्थमें स्नान [illegible] इन्द्रकी पूजा करनेसे देवतोंके प्रतापसे [illegible] मिलता है। हे नरवरश्रेष्ठ! हे [illegible] शालिहोत्र और शालि सूर्य्य नामक तीर्थोंमें विधिपूर्व्वक स्नान करनेसे गोदानका फल होता है। हे नरश्रेष्ठ! हे भरतसत्तम सरस्वतीके श्रीकुञ्ज नामक तीर्थमें स्नान करनेसे पुरुषको अग्निहोत्र यज्ञका फल होता हैं। हे कौरव! वहां से नैमिषारण्यको जाय हे राजेन्द्र। वहां नैमिषारण्यवासी तपस्वी लोग तीर्थयात्राके अभिप्रायसे पहले कुरुक्षेत्रको जाते थे, हे भरत सत्तम! जिस श्रीकुञ्जमें ऋषियोंको बड़ा सन्तोष प्राप्त होता है, उस कुञ्जमें स्नान करनेसे मनुष्यको अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है, वहांसे कन्या तीर्थ पर जाना चाहिये, कन्या तीर्थमें स्नान करनेसे दो हजार गोदानका फल मिलता है। वहांसे ब्रह्माके तीर्थपर जाय, वरदाणावरमें स्नान करके मनुष्य ब्राह्मण हो जाता है, शुद्धात्मा ब्राह्मण परम गतिको पाता है, हे नरश्रेष्ठ। वहांसे सोम तीर्थमें जाय, सोम तीर्थमें स्नान करनेसे मनुष्य चन्द्रलोकमें जाता है। हे नरपाल। वहांसे सप्तसारस्वत तीर्थमें जाय, जहां जगत् प्रसिद्ध महर्षि मङ्कण नामक ऋषि रहते हैं,। पहले समयमें मङ्कणक ऋषिके हाथमें कुशका कांटा लगनेसे शाकका रस निकला था, वह ऋषि शाकरसको देखकर बड़ा प्रसन्न हुआ और नाचने लगा, उसे नाचता देखकर चर और अचर जो कुछ वहांपर थे सब नाचने लगे, तब ब्रह्मादिक देवताने महादेवसे विनती करी कि महाराज आप ऐसा उपाय कीजिये जिससे वह ऋषि न नाचे, महादेव उस नाचते हुए ऋषिके पास आये और देवतोंकी हितकामनासे ऋषिसे बोले, हे धर्म्मज्ञ महर्षे! तुम किसवास्ते नाचते हो? कौन सा तुमको आनन्द मिला है? ऋषि बोले, धर्म्ममार्गमें स्थित हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! तुम क्या नहीं देखते हो कि मेरे हाथसे शाकका रस निकला जिसको देखकर मैं बड़े आनन्दके साथ नाच रहा हूं, हंसकर महादेव उस ऋषिसे बोले, हे ब्राह्मण! मैं तो इसे देखकर

कुछ आश्चर्य नहीं मानता, हे नरश्रेष्ठ। ऐसा कहके बुद्धिमान महादेवने अपनी अंगुलीसे अपने अंगूठेको काटा अङ्गूठेमेंसे वर्फकी समान सुफेद भस्म निकली, उसको देखकर वह ब्राह्मण बहुत लज्जित हुआ और पैरोंमें गिरा, कहने लगा मैं भस्मसे उत्तम किसीको नहीं जानता, देव और दानवोंकी तुम्ही गति हो, हे शूलधारी! तुम्ही इस चराचर जगत्को प्रलयमें नाश करते हो, तुमको देवता लोगभी नहीं जान सकते हैं मेरी क्या कथा है। हे पाप रहित। सब ब्रह्मादिक देवता तुमहींको देखते है, हे लोकेश। तुमहीं सब लोकोंके कर्त्ता करानेवाले और सर्व्वरूप हो। तुम्हारेही आश्रयमें सब देवता लोग भय रहित होकर आनन्द करते हैं, ऐसे स्तुति करके ऋषि महादेवसे बोले, हे महादेव। तुम्हारी कृपासे मेरा तप नष्ट न हो। ब्रह्मर्षिके वचन सुन महादेव प्रसन्न होकर बोले, हे ब्राह्मण। हमारे प्रमादसे तुम्हारा तप सहस्र गुणा बढे, हे महामुनि। हम आज तुम्हारे सहित इस आश्रममें वास करेंगे जो पुरुष सप्त सारस्वत तीर्थमें स्नान करके मेरी पूजा करेंगे, उनको इसलोक और परलोकमें कोई वस्तु दुर्लभ न होगी, वे लोग निःसन्देह सरस्वतीके लोकमें जायंगे। ऐसा कहकर महादेव वहीं अन्तर्धान हो गये। हे भारत! वहांसे तीनलोक विख्यात औशनश तीर्थमें जाय। जहां शुक्रके हितकी इच्छासे ब्रह्मादिक देवता तपस्वी ऋषि और भगवान कार्त्तिकेय नित्य नित्य संध्यामें निवास करते हैं। हे पुरुषव्याघ्र। वहांसे सब पाप नाशन कपालमोचन तीर्थमें जाय वहा स्नान करनेसे सब पाप छूट जाते हैं, हे पुरुषसिंह। वहांसे अग्नि तीर्थमें जाय, वहां स्नान करनेसे अग्निलोक मिलता है, और कुलका उद्धार होता है। हे भरतसत्तम! ... र्शामित्रका तीर्थ है, उसमें स्नान

करनेसे पुरुष ब्राह्मण हो जाता है, ब्राह्मण वहां जन्म लेकर पवित्र हो मनको स्थिर क[र] उसमें स्नान करनेसे ब्रह्मलोकमें जाता है, औ[र] निःसन्देह सात पुरुषोंको पवित्र करता है, [हे] राजेन्द्र! हे नरपाल! वहांसे तीनलो[क] विख्यात कार्त्तिकेयके पृथूदक तीर्थमें जाय[कर] नहाकर पितर और देवतोंकी पूजा क[रे] पुरुष या स्त्रीने जाने या बिना जाने मनुष्य बुद्धि[से] जो कुछ पाप किया हो वह सब वहां स्ना[न] करनेहीसे नष्ट हो जाता है हे भारत! उस[में] स्नान करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल और स्वर्ग लोक मिलता है। ऋषियोंने कुरुक्षेत्रको पवि[त्र] कहा है, कुरुक्षेत्रसे सरस्वती सरस्वतीसे ती[र्थ] और तीर्थोंसे भी पृथूदक तीर्थ पवित्र है जो जप करता हुआ उत्तम पृथूदकतीर्थ[में] प्राण छोड़ता है वह मरनेके दुःख फिर नहीं भोगता। हे राजन्! सनत कुमार ऋषि और महात्मा व्यासने ऐसा सब पापोंसे छूट पुरु नियमधारी पुरुष पृथूद[क] हे राजेन्द्र। वहांसे कुरुकुल श्रेष्ठ। पृथूदक वहा सदाही देवता हो है, वह बुद्धिको बढाता सहस्रों वर्षतक महा हे नरश्रेष्ठ। महात्मा हती नदीमें स्नान कर पृथूदक तीर्थमें स्नान करनेसे पापी पुरुष भी स्वर्गको चले जाते हैं, हे राजन्। हे भरत सत्तम? वहीं मधुस्रव नामक तीर्थ है, उसमें स्नान करनेसे हजार गौका फल होता है। हे राजेन्द्र। वहांसे ... पवित्र लोग विख्यात सरस्वती ...समें लाय, वहां तीन दिन ... ब्रह्महत्यासे छूट जाता है, ... अतिरात यज्ञका फल मिलता ...त्तम। वहां स्नान करनेसे ... पुरुष पवित्र होते हैं। हे कुरुकुलश्रेष्ठ। वहीं अवकील नामक तीर्थ है, उस तीर्थको ब्राह्मणोंके हितकी इच्छासे दर्भीने बनाया था, वहां व्रत और उपनयन

अथवा उपवास करनेसे कृपा और मन्त्रोंसे युक्त होनेसे पुरुष ब्राह्मण हो जाता है, और जो मन्त्र और कृपासे हीन पुरुषभीहो वैसो स्नान करनेसे चीर्णव्रती और विद्वान् हो जाते हैं, यह बूढे आदमियोंका देखा हुआ है, हे नरश्रेष्ठ। उस तीर्थमें दर्भोने चारो समुद्र मिला दिये हैं, वहा स्नान करनेसे पुरुषको दुर्गति नहीं होती और उस पुरुषको चार हजार गोदानका फल होता है। हे धर्म्मज्ञ। वहांसे सतसहस्र नामक तीर्थको जाय वहीं लोक विख्यात सत और सहस्रक नामक दो तीर्थ हैं, दोनोहीमें स्नान करनेसे हजार गोदानका फल होता है, वहा जो कुछ दान वा व्रत करते हैं, वह हजार गुणी होजाते हैं। हे राजेन्द्र। वहांसे उत्तम रेसाका तीर्थमें जाय, वहा पितर और देवतांकी पूजा करनेवाला पुरुष स्नान करे तो सब पापोंसे शुद्ध होकर अग्निष्टोम यज्ञका फल प्राप्त होता है। आगे क्रोध और और इन्द्रियोंको जीतकर विमोचन तीर्थका स्पर्श करे वहा स्नान करनेसे दान लेनेके सब पाप छुट जाते है। आगे ब्रह्म चारी और जितेन्द्रिय होकर पञ्चवटी तीर्थमें जाय, वहा जानेसे बहुत पुण्य होता है, और स्वर्गलोक मिलता है, जहा साक्षात् योगेश्वर बृषवाहन शिव निवास करते हैं। उनकी पूजा करनेसे और वहां जानेहोसे पुरुष सिद्ध हो जाता है। आगे अपने तेजसे प्रकाशित तेजसे और वारुणातीर्थमें जाय, जहां ब्रह्मादिक देवता और तपोधन मुनियोंने मिलकर देवतोंके सेनापति स्वामकार्त्तिकका अभिषेक किया था, हे कुरुकुलश्रेष्ठ तेजस तीर्थसे पूर्व्वको और कुरु तीर्थ है, उसमें ब्रह्मचारी और जितेन्द्रिय होकर स्नान करनेसे सब पापोंसे शुद्ध हो पुरुष ब्रह्मलोक को जाता है। आगे नियमधारी और ब्रह्मचारी होकर स्वर्गद्वार तीर्थमें जाय, वहां [illegible] स्वर्गलोक और ब्रह्मलोकमें जाता है, हे नरनाथ। वहांसे तीर्थसेवी पुरुष अनरक तीर्थ को जाय, हे राजन्। वहा स्नान करनेसे पुरुष दुर्गतिमें नहीं पड़ता। हे राजन्! वहा साक्षात् ब्रह्मा नारायणादि सब देवतोंके सहित निवास करते हैं। हे राजेन्द्र! हे कुरुकुलश्रेष्ठ। वहीं पार्व्वतीका स्थान है, उनके दर्शन करनेसे पुरुष दुर्गतिमें नहीं पड़ता है। हे राजन्। वहीं साक्षात पार्व्वतीनाथ शिवके दर्शन करनेसे पुरुष सब पापोंसे छूट जाता है। हे शत्रुनाशन! वहांसे जाकर पद्मनाभ नारायणके दर्शन करे, उनके दर्शन करनेसे पुरुष प्रकाशमान होकर विष्णुलोकको जाता है। आगे सब देवतोंके तीर्थमें स्नान करे, हे पुरुषसिंह। ऐसा करनेसे पुरुष सब पापोंसे छूट चन्द्रमाके समान प्रकाशित होता है। हे नरनाथ। तीर्थसेवी पुरुष स्वस्तिपुरको जाय, वहा प्रदक्षिणा करनेसे हजार गोदान का फल होता है। हे राजन। आगे पावन तीर्थमें जाय, वहा जाकर पितर और देवतोंकी पूजा करनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है। हे भरतर्षभ, वहीं गङ्गाह्रद नामक कुवा है, हे पृथ्वीनाथ। उसमें तीन करोड़ तीर्थ पड़े हैं। हे राजन्। उसमें स्नान करनेसे पुरुषको स्वर्गलोक प्राप्त होता है। हे राजन्। आगे नदियोंमें स्नान और शिवकी पूजा करनेसे गणेशका पद मिलता है, और कुलका उद्धार होता है, आगे तीन लोकमें विख्यात स्थाणुवटको जाय, वहा स्नान करनेसे और एक रात्री रहनेसे शिवलोक मिलता है। आगे बदरीपालन तीर्थमें जाय, वहा वशिष्टमुनिका आश्रम है, वहा तीन दिन व्रत करके बेर खाना चाहिये, और जो पुरुष बारह वर्ष निरन्तर बेरही खाता रहे उसको उतनाही फल होता है, जितना उस तीर्थमें तीन दिन व्रत करनेसे, वहा रहकर जो सत्य बोले और नियमधारी होय तो ब्रह्मलोक मिलता है। हे राजेन्द्र, वहांसे

तीनलोक विख्यात तेजराशि महात्मा सूर्यके स्थान पराजयको जाय वहा स्नान करके सूर्य्यकी पूजा करनेसे पुरुष सूर्य्यलोकको जाता है, और अपने कुलका उद्धार करता है, हे नरनाथ! तीर्थसेवी पुरुष आगे जाकर सोम तीर्थमें स्नान करे, उसमें स्नान करनेसे पुरुषको निःसन्देह चन्द्रलोक मिलता है। हे धर्मज्ञ! वहासे दधीच मुनिके आश्रमपर जाय हे राजन्। यह तीर्थ तीनलोकोंमें विख्यात और परम पवित्र है, इसी तीर्थमे स्नान करनेसे तपस्याके समुद्र अङ्गिरामुनि विद्वान होगये थे, उस तीर्थमें स्नान करनेसे पुरुषको अश्वमेध यज्ञका फल होता है, और निःसन्देह सारस्वत गति प्राप्त होती है। वहांसे नियमधारी ब्रह्मचारी जिताहारी पुरुष कन्या तीर्थमें जाकर तीन दिन व्रत करे, ऐसा करनेसे दिव्य सो कन्या और स्वर्गलोक मिलता है। हे धर्मज्ञ! वहासे सन्निहिती तीर्थको जाय, जहा बहुत पुण्यवान ब्रह्मादिक देवता और तपोधन मुनि महीने महीने आते है, चन्द्रग्रहणमें कुरुक्षेत्रमें स्नान करनेसे सौ अश्वमेध का फल होता है, और सब इच्छा पूर्ण होती है। हे नरनाथ! जितने पृथ्वी और आकाशमे तीर्थ है, वे सब नदी, कुण्ड, तड़ाग, झरने, तलैया और वावड़ी तथा अन्य तीर्थभी निसन्देह अमावसके दिन प्रति मास कुरुक्षेत्रमें आते है, इसी निमित्त कुरुक्षेत्रका दूसरा नाम सन्निहिती है, पुरुष उसमें स्नानकर और जल पी ब्रह्मलोकमें जाता है! सूर्य्यग्रहणकी अमावसमें जो को कोई वहा श्राद्ध करता है, उसका फल सुनो; उत्तम रीतिसे करी हुई हजार अश्वमेध यज्ञोका फल उस पुरुषको केवल स्नान करनेसे मिलता है। पुरुष वा स्त्रीने जो कुछ पाप किया हो सो निःसन्देह स्नान करनेसे नष्ट होजाता है। और पद्मके रङ्गवाले विमान पर बैठकर ब्रह्म- जाता है। आगे द्वारपाल मचकुन्द नामक यक्ष को प्रणाम करके कोटि तीर्थमें स्नान करनेसे बहुत सुवर्ण मिलता है। हे भरत सत्तम! वहीं गङ्गाह्रद नामक तीर्थ है, उसमें धर्म्म जाननेवाला ब्रह्मचारी पुरुष सावधान होकर स्नान करनेसे पुरुषको राजसूय और अश्वमेध यज्ञका फल मिलता है। पृथ्वीमें नैमिषारण्य आकाशमें पुष्कर और कुरुक्षेत्र तीनों लोकमें श्रेष्ठ है। कुरुक्षेत्रकी धूल जो वायुसे उड़ती हैं, उससेभी महापापी पुरुष मोक्ष पा सकता है सरस्वतीके दक्षिण और दृषद्वतीके उत्तर कुरुक्षेत्रमें जो पुरुष निवास करते है, वे स्वर्गवासी है, जो पुरुष एकवारभी कहे कि मैं कुरुक्षेत्रको जाऊंगा और वहा निवास करूंगा वह सब पापोंसे छूट जाता है। कुरुक्षेत्र पवित्र ऋषियोसे सेवित और ब्रह्मवेदी है, उसमें जो पुरुष रहते है वे सोचने योग्य नहीं है। तरन्तुक, परशुरामके तड़ाग और मचकुक तीर्थका जो बीच है, उसी पवित्र भूमिका नाम कुरुक्षेत्र है, इसीको समन्तपञ्चकभी कहते हैं। यह ब्रह्माकी उत्तर वेदी है।

८६ अध्याय समाप्त।

श्रीपुलस्त्य मुनि बोले, हे महाराज। वहासे उत्तम तीर्थपर जाय, जहा महाभाग धर्मने उग्र तपको किया था और उन्होंने इस पवित्र तीर्थको अपने नामसे विख्यात किया है, वहा स्नान करनेसे धर्म्मवान और सावधान पुरुष अपने सात कुलको पवित्र करता है। हे राजेन्द्र! वहासे ज्ञानपावन तीर्थमें जाय, वहां जानेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल और मुनिलोक मिलता है, हे राजन्! वहासे सौगन्धिक वनको जाय वहा ब्रह्मादिक देवता, तपोधन ऋषि, सिद्ध, चारण, गन्धर्व्व, किन्नर, और सर्प लोग निवास करते हैं, पुरुष वहां प्रवेश करनेसे सब पापोंसे छूट जाता है, हे राजन्! वहांसे नदियोंमें श्रेष्ठ पलक्षा देवी नाम पवित्र सरस्वतीमें स्नान करे, वह अश

एक बिलमें निकलता है, वहां पितर और देवतोंकी पूजा करनेसे अश्वमेधका फल मिलता है, वहीं अत्यन्त दुर्लभ ईशानाध्युषित नामक तीर्थ वल्मीकसे छः सम्या (यज्ञमें एक नापनेके लिये दण्ड बनाया जाता है उसको सम्या कहते हैं) की दूरीपर है, जानेसे पुरुष को हजार कपिला दान और अश्वमेधका फल मिलता है। हे पुरुषव्याघ्र! हमने यह भविष्य पुराणादिक पुस्तकोंमें सुना है, कि इस तीर्थमें जाकर सुगन्धा, शतकुम्भा और पञ्च यज्ञा आदि तीर्थोंमें जानेसे स्वर्ग लोक मिलता है, हे राजन्! वहीं त्रिशूलखात नामक तीर्थ है, उसमें स्नान करके देवता और पितरोंकी पूजा करनेसे मरनेके पश्चात् निःसन्देह गणेशका पद मिलता है। हे राजेन्द्र! वहासे उत्तम तीनलोकोंमें विख्यात उत्तम शाकम्भरी देवीके स्थानपर जाय, जहां दिव्य हजार वर्षतक व्रतधारिणी भगवतीने एक एक महीनेमें शाक खाके तप किया था। हे भारत! देवीकी भक्तिसे पूरित तपोधन मुनीश्वर वहां आये, भगवतीने उसी शाकसे उनकाभी सत्कार किया, उसी दिनसे उस देवीका नाम शाकम्भरी हुआ। शाकम्भरी देवीमें जाकर पुरुष पवित्र सावधान और ब्रह्मचारी होके तीन दिन शाक खाय, जो पुरुष बारह वर्षतक शाक खाकर रहै उसका जो फल होता है, वही फल वहां तीन रोज शाक खानेसे होता है। हे भारत! आगे तीनलोकमें विख्यात स्वर्ण तीर्थमे जाय, वहां पहले विष्णु ने शिवको प्रसन्न करनेके निमित्त तप किया था और देवदुर्लभ वरदानो को पाया था। हे भारत! शिवने प्रसन्न होकर विष्णुसे कहा था कि तुम सबलोकोंके प्यारे होकर कृष्णावतार धारण करोगे। इसमें कुछ सन्देह नहीं कि सब जगत् तुमहीको प्रधान मानेगा। हे राजेन्द्र! वहां जाकर शिवकी पूजा करनेसे अश्वमेधका फल और गणेशका पद मिलता है, हे राजेन्द्र! आगे धूमावतीमें जाकर तीन दिन व्रत करे, ऐसा करनेसे निःसन्देह मनोवाञ्छा सिद्ध होती है। हे धर्म्मज्ञ! देवीके दहनी ओर रथावर्त्त (चक्र) तीर्थ है, वहां जितेन्द्री और श्रद्धावान होकर उस चक्रके ऊपर चढ़े तो परम गतिको प्राप्त होता है। हे भरतकुलसिंह! उसकी प्रदक्षिणा करके सब पाप नाश करनेवाले धारा तीर्थमें जाय, वहां बुद्धिमान पुरुष स्नान करे। हे पुरुषसिंह! हे नरनाथ! ऐसा करनेसे वह पुरुष सोचसे रहित होजाता है। हे राजेन्द्र! वहांसे महापर्व्वतको प्रणाम करके जो स्वर्गद्वारके समान गङ्गाद्वार नामक तीर्थ है, वहा जाय, वहां सावधान होकर कोटि तीर्थमे स्नान करनेसे पुण्डरीक यज्ञका फल मिलता है, और कुलका उद्धार होता है, वहा एक रात रहनेसे हजार गोदानका फल होता है। आगे सप्तगङ्गा त्रिगङ्गा और शक्रावर्त्त तीर्थमें जाय, उन पवित्र तीर्थोंमें विधिवत पितर और देवतोंकी पूजा करनेसे उत्तम लोक मिलते है। वहासे चलकर कनखलमे स्नान करे वहा तीन दिन रहनेसे पुरुषको अश्वमेधका फल और स्वर्गलोक मिलता है। हे नरनाथ! वहासे तीर्थसेवी पुरुष कपिला वटको जाय, वहा एकरात रहनेसे हजार गोदानका फल होता है। हे राजेन्द्र! आगे महात्मा नागराज कपिलके तीर्थमें जाय, यह तीर्थ तीनो लोकमें विख्यात है, हे नरनाथ! हे कुरुश्रेष्ठ! उस नाग तीर्थमें स्नान करनसे हजार कपिला गोदानका फल होता है। आगे शान्तनुके उत्तम तीर्थ ललिन तीर्थमें जाय, हे राजन्! वहा स्नान करनेसे पुरुषको दुर्गति नहीं होती। जो पुरुष गङ्गा और यमुनाके सङ्गममें स्नान करता है उसको दश अश्वमेधका फल होता है और कुलका उद्धार हो जाता है। हे राजेन्द्र! वहांसे लोकविख्यात सुगन्ध तीर्थमें जाय, वहां जानेसे पुरुष सब पापोसे छूट ब्रह्मलोकको जाता

है। हे नरनाथ। वहांसे तीर्थसेवी पुरुष रुद्रावर्त्त तीर्थको जाय वहां स्नान करनेसे स्वर्ग लोक मिलता है। हे नरश्रेष्ठ। आगे सरस्वती और गङ्गाके सङ्गममें जाय, वहांसे आगे चल कर विधि पूर्व्वक भद्रकर्णेश्वर महादेवको पूजा करे, ऐसा करनेसे पुरुषको दुर्गति नहीं होती और स्वर्गलोक मिलता है। हे राजेन्द्र। आगे तीर्थसेवी पुरुष कुब्जाम्र देशमें जाय, वहां जानेसे हजार गोदानका फल और स्वर्गलोक मिलता है। हे नरनाथ। आगे तीर्थसेवी पुरुष अरुन्धतीवट तीर्थमें जाय, वहां ब्रह्मचारी होकर समुद्रके जलका स्पर्श करे वहां तीन रात रहनेसे अश्वमेध यज्ञका फल और सहस्र गोदानका फल मिलता है, और कुलका उद्धार होजाता है। आगे ब्रह्मचारी और सावधान होकर ब्रह्मावर्त्त तीर्थको जाय, वहां जानेसे अश्वमेधका फल और चन्द्रलोक मिलता है, वहांसे उस स्थान पर जाय जहांसे यमुना निकली है, और यमुनाके जलसे स्पर्श करनेसे अश्वमेधका फल और स्वर्गलोक मिलता है। आगे तीनलोक पूजित दवी संक्रमण तीर्थमें जानेसे अश्वमेधका फल और स्वर्गलोक मिलता है, वहांसे उस स्थानमें जाय, जहांसे सिन्धु नदी निकली है, वहां पर सिद्ध और गन्धर्व्व रहते हैं, वहां पांच रात रहनेसे बहुत सुवर्ण मिलता है। आगे पुरुष परम दुर्लभ वेदी तीर्थमें जाय, वहां जानेसे अश्वमेधका फल और स्वर्गलोक मिलता है। वहांसे ऋषिकुण्डमें जाय, वहां वशिष्ठमुनिका दर्शन करे उस वशिष्ठके आश्रमसे चले कर ब्राह्मणलोग ऋषिकुण्डमें जाय वहां स्नान करनेसे पुरुषके सब पाप छुट जाते हैं। वहां पितर और देवतोंको पूजा करनेसे ऋषिलोक मिलता है, हे नरनाथ! यदि शाक खाकर वहां एक महीना रहे तो ऋषिलोक [illegible] है, वहांसे भृगुतुङ्ग तीर्थमें जानेसे अश्वमेधका फल मिलता है। आगे वीर प्रमोक्ष तीर्थमें जानेसे सब पाप छुट जाते हैं। हे भारत! यदि उस तीर्थमें मघा और कृत्तिका नक्षत्रमें जाय तो अग्निष्टोम और अतिरात्र यज्ञका फल मिलता है, वहीं विद्या तीर्थमें सन्ध्या करनेसे और वहां स्नान करके सब पाप नाश होते हैं उसी महा आश्रममें रातको रहे यदि निराहार होकर एक रात वहां रहे तो उत्तम लोक मिलते हैं। दिनके छठे भागमें भोजन करके एक महीना उस स्थानमें रहनेसे सब पापोंसे शुद्ध होता है, और बहुत सुख मिलता है और दश पहले और दश अगाड़ीके वंशोंका उद्धार होता है। आगे ब्रह्माके स्थान वेतशिकामें जाय, तो अश्वमेधका फल होता है और शुक्राचार्य्यकी जाति मिलती है। आगे सिद्धोंसे सेवित सुन्दरिका तीर्थमें जाय, वहां जानेसे पुरुषका रूप सुन्दर हो जाता है यह पुरुषोंने निश्चय किया है। आगे ब्रह्मचारी और जितेन्द्रिय होकर ब्राह्मणी तीर्थमें जाय वहां जानेसे पद्मवर्ण विमान पर बैठकर पुरुष ब्रह्मलोकको जाता है, वहांसे पवित्र ऋषि सेवित नैमिषक्षेत्रमें जाय, वहां देवताके साथ ब्रह्मा सदा वास करते हैं। नैमिषारण्यको ढूंढ़नेसे आधा पाप और जानेसे सब नष्ट हो जाता है, वहांपर तीर्थसेवी धीरपुरुष एक महीना रहे क्योंकि पृथ्वीमें जितने तीर्थ हैं वे सब नैमिषारण्यमें रहते हैं। हे भारत! यदि जिताहार और नियमधारी होकर वहां स्नान करे तो गोमेध यज्ञका फल होता है, हे भरत सत्तम! जो पुरुष निराहार होकर नैमिषारण्यमें मरता है, उसके सात कुलका उद्धार होजाता है, और महात्मालोग ऐसाभी कहते हैं कि वह सब लोकोंमें जाकर आनन्द करता है। हे भरतसत्तम। नैमिषक्षेत्र नित्य और पवित्र है। आगे वहांसे गङ्गाभेद तीर्थमें जाय, वहां जानेसे पुरुषको

अश्वमेध यज्ञका फल होता है, और ब्राह्मण होजाता है। आगे सरस्वती नदीमें जाकर पितर और देवतोंकी पूजा करनेसे निःसन्देह सरस्वती लोक मिलता है, वहांसे चलकर ब्रह्मचारी और सावधान होकर बाहुदा नदीमें स्नान करे, वहा एक रात रहनेसे स्वर्गलोक मिलता है। हे कौरव ! वहां रहनेसे देवसत्र नामक यज्ञका फल होता है, वहांसे पुण्यात्मा मुनियोंसे भरी हुई पवित्र सोखती नदीको जाय वहा पितर और देवतोंकी पूजा करनेसे अश्वमेधका फल होता है, वहासे ब्रह्मचारो और सावधान होकर विमला वटको जाय, वहा एक रात रहनेसे स्वर्गलोक मिलता है, वहांसे सरयूके उत्तम तीर्थ गोप्रतार (गुप्तारघाट) को जाय, हे महाराज ! जहांसे राम अपने नौकर सेना और वाहनोंके सहित स्वर्गको गये थे, हे महाराज ! उस तीर्थके तेज और रामकी कृपासे तथा निश्चयसे उस गुप्तार घाटमें स्नान करनेसे सब पापोंसे शुद्ध होकर स्वर्गलोक मिलता है। हे कुरुनन्दन ! आगे गोमतीके राम तीर्थमें स्नान करनेसे पुरुषको अश्वमेध यज्ञका फल होता है और कुलका उद्धार हो जाता है। हे भरतकुलसिंह ! वहीं सतसाहस्रक तीर्थ है, यदि जिताहारो और नियमधारी होकर उसका स्पर्श करे तो पुरुषको हजार गोदानका फल होता है। हे राजेन्द्र ! वहासे चलकर उत्तम भर्तृ स्थानको जायतो पुरुषको अश्वमेध यज्ञका फल होता है। हे नरनाथ ! यदि कोटि तीर्थमें स्नान करके स्वामि कार्त्तिकको पूजा करे तो हजार गोदानका फल होता है, और वह [illegible] तेजस्वीभी होजाता है, वहासे काशीपुरीको जाय, और वहा शिवकी पूजा करे और [illegible] स्नान करनेसे राजसूय यज्ञका [illegible] होता है। हे कुरुनन्दन ! वहासे अवि[illegible] तीर्थमें जाय, उन देवका दर्शन [illegible] ब्रह्महत्यासे छूट जाता है, वही प्राण छोड़नेसे मोक्ष होती है, हे राजेन्द्र ! आगे दुर्लभ मारकण्डेय तीर्थको जाय, आगे लोक विख्यात गङ्गा और गोमतीके सङ्गममें जाय, वहा जानेसे अग्निष्ठोम यज्ञका फल होता है और कुलका उद्धार हो जाता है, वहांसे ब्रह्मचारी और सावधान होकर गयाको जाय, वहां जानेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है, वहीं तीनलोक विख्यात अक्षयवट तीर्थ है, वहां पितरोंके निमित्त जो कुछ दान किया जाता है, सो अक्षय हो जाता है वहां महानदीमें स्पर्श करके पितर और देवतोंकी पूजा करनेसे अक्षय लोक होजाता है, आगे धर्म्मवनमें जाकर ब्रह्मसरमें स्नान करे वहां एक रात रहनेसे ब्रह्मलोक मिलता है, उस तालावमें ब्रह्माने उत्तम यज्ञकुण्ड बनाया था उसकी प्रदक्षिणा करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है, हे राजेन्द्र ! तहांसे लोक विख्यात धेनुक तीर्थमें जाय, वहा एक रात रहकर तिलकी गाय बनाकर दान करना चाहिये ऐसा करनेसे पुरुष सब पापोंसे छूट चन्द्रलोकको जाता है। हे राजन् ! उस स्थानमें अबतक भी विचित्र गऊका चिह्न बछड़ेके सहित बना है, और वह चिह्न पर्व्वत पर चरती हुई गऊका है। हे भारत ! वहीं बछडे सहित गऊका पादुका अभीतक दीखती है। हे नृपसत्तम ! हे राजेन्द्र ! वहां उनका स्पर्श करनेसे जो कुछ पाप किया है, सब नष्ट हो जाता है। हे राजेन्द्र ! वहांसे गृध्रवटको जाय, वह बुद्धिमान देवका स्थान है, वहां भस्मसे स्नान करके शिवकी पूजा करनी चाहिये. वहां ब्राह्मण बारह वर्ष तक बकलेके वस्त्र पहन कर व्रत करें तो सब पाप नष्ट हो जाते हैं। वहांसे गीत शब्द युक्त उद्यन्त नामक पर्व्वतको जाय हे भरतकुलसिंह ! वह सावित्रीकी पादुका दीखती हैं। वहां व्रतधारी ब्राह्मण सन्ध्योपासना करे, वह एकदिन सन्ध्या करनेसे बारहवर्षकी सन्ध्याका फल होता है, वहा

जानेसे पुरुष जन्मके दुःखसे छूट जाता है, जो पुरुष एकमास तक गयामें रहता है, निस्सन्देह उसके कुलका उद्धार होता है, हे राजेन्द्र। यदि एक पुत्रभी गयाको चला जाय और अश्वमेध करे अथवा काले बैलको छोड़ देतो बहुत पुत्रोंकी इच्छा क्यों करे, हे राजन्। वहांसे तीर्थसेवी पुरुष फल्गुको जाय, वहां जानेसे अश्वमेध यज्ञका फल और महासिद्धि मिलती है, हे युधिष्ठिर! हे राजेन्द्र। हे महाराज। वहांसे सावधान पुरुष धर्म्मप्रस्थको जाय वहां सदाही धर्म्मवास करते हैं, वहां कुएंके पानीसे स्नान करनेसे पुरुष पवित्र होता है पितर और देवतोंका तर्पण करनेसे पुरुष सब पापोंसे छूट स्वर्गको जाता है, वहीं पर आत्मदर्शी महामुनि मतङ्गका आश्रम है, उस सुन्दर श्रम और शोकके नाश करनेवाले आश्रममें जानेसे पुरुषको गोमेध यज्ञका फल मिलता है, वहां धर्म्मका स्पर्श करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है। हे राजेन्द्र! हे पुरुषसिंह! वहांसे ब्रह्माके उत्तम स्थानको जाय वहां ब्रह्माकी पूजा करनेसे अश्वमेध और राजसूय यज्ञोंके फल होते हैं। आगे तीर्थसेवी पुरुष राजगृह तीर्थको जाय वहां तीर्थोंका स्पर्श करनेसे पुरुषको कचीवानके समान आनन्द होता है; वहां पवित्र पुरुष यक्षिणीको नैवेद्य लगाके भोजन करे, तो यक्षिणीके प्रसादसे पुरुषकी ब्रह्महत्या छूट जाती है, मणिनाग तीर्थमें जानेसे हजार गोदानका फल होता है। हे राजेन्द्र! मणिनाग तीर्थकी उत्पन्न हुई वस्तुओंको जो पुरुष खाता है, उसको सर्प काटनेका विष नहीं चढ़ता, वहां एक रात रहनेसे हजार गोदानका फल होता है, वहांसे ब्रह्मर्षि गौतमके प्यारे वनमें जाय, वहां अहल्या कुण्डमें स्नान करनेसे मोक्ष मिलती है, गौतमके आश्रममें जानेसे पुरुष अपनी शोभाको प्राप्त करता है। हे धर्म्मज्ञ! वहां तीनलोकोंमें [illegible] एक तड़ाग है, उसमें स्नान करनेसे अश्वमेधका फल होता है, वहांसे आगे राजर्षि जनकका कुवा है, उसकी देवता लोगभी पूजा करते हैं, उसमें स्नान करनेसे विष्णुलोक मिलता है, वहांसे सब पाप नाश करनेवाले विनसन तीर्थको जाय, वहां जानेसे वाजपेय यज्ञका फल और चन्द्रलोक मिलता है, हे धर्म्मज्ञ। वहांसे चलकर सब तीर्थोंके जलसे उत्पन्न गण्डकी नदीको जाय, वहांके जानेसे वाजपेय यज्ञका फल और सूर्य्यलोक मिलता है, वहांसे तीनलोक विख्यात विसल्या नदीको जाय तो अग्निष्टोम यज्ञका फल और स्वर्गलोक मिलता है। हे धर्म्मज्ञ! वहांसे अधिवङ्ग वनको जाय, वहां जानेसे निःसन्देह गुह्यकोंके सहित आनन्द करता है, वहांसे सिद्ध सेवित कम्पना नदीको जानेसे पुण्डरीक यज्ञका फल और स्वर्गलोक मिलता है। हे पृथ्वीनाथ! माहेश्वरी धारमें जानेसे अश्वमेधका फल मिलता है और कुलका उद्धार होता है। हे नरनाथ! देवपोखरमें जानेसे पुरुषकी दुर्गति नहीं होती और अश्वमेधका फल होता है। अनन्तर ब्रह्मचारी और सावधान पुरुष सोमपद तीर्थको जाय, वहां महेश्वर पदमें स्नान करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है, हे राजेन्द्र। हमने सुना है, कि वहां करोड़ तीर्थ इकट्ठे हैं, पहले उन तीर्थोंको दुरात्मा राक्षस लेगया था तब जगत्कर्त्ता विष्णुने कच्छप रूप धारण करके उससे छीनकर वहीं स्थापन कर दिये हैं। हे युधिष्ठिर! उस तीर्थ कोटिमें स्नान करनेसे पुण्डरीक यज्ञका फल और विष्णुलोक मिलता है। हे राजेन्द्र! वहांसे नारायणके स्थानको जाय, हे भारत! वहां सदा विष्णु वास करते हैं, जहां ब्रह्मादिक देवता तपोधन ऋषि, आदित्य, वसु और रुद्र, विष्णुकी उपासना करते हैं, वहांपर अद्भुत कर्म्मवाले सालिग्राम नामक विष्णु निवास करते हैं, उस अव्यय, वरदान देनेवाले, लोकनाथ विष्णुके दर्शन करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल और

विष्णुलोक मिलता है, हे राजेन्द्र! वहां दान करनेसे सब पाप नष्ट होते हैं, उस कुएमें चारों समुद्र वास करते हैं, वहां जलका स्पर्श करनेसे पुरुषकी दुर्गति नहीं होती, वहीं वरदान देनेवाले अव्यय महादेवका स्थान है, उनका दर्शन करनेसे पुरुष ऐसा शोभित होता है, जैसे मेघसे छूटकर चन्द्रमा आगे जातिस्मर तीर्थको स्पर्श करनेसे और स्थिर चित्त तथा पवित्र होकर स्नान करनेसे पुरुष कामदेवके समान हो जाता है, वहांसे माहेश्वरपुरमें जाकर शिवकी पूजा करनी चाहिये, वहां व्रत करनेसे मनकी इच्छा पूरी होती हैं, वहांसे सब पापोंके नाश करनेवाले वामन तीर्थको जाना चाहिये वहां विष्णुके दर्शन करनेसे पुरुषकी दुर्गति नहीं होती। वहांसे कुशिकके आश्रमको जाय, यह स्थान सब पापोंका नाश करनेवाला है, वहां सब पापोंका नाश करनेवाली कौषिकी नदीमें स्नान करने। पुरुषको राजसूय यज्ञका फल मिलता है। हे राजेन्द्र! वहांसे चम्पकारण्यको जाय, वहां एक राति रहनेसे हजार गोदानका फल होता है, वहांसे अत्यन्त दुर्लभ ज्योष्टिलतीर्थमें जाकर एकरात रहनेसे हजार गोदान का फल होता है, वहां पार्व्वतीके सहित महातेजस्वी शिवके दर्शन करनेसे पुरुषको मित्रावरुणका लोक मिलता है, वहां तीन रात रहनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है, वहां कन्या सम्वेद्य तीर्थमें जाय वहां ब्रह्मचारी और स्थिर मन होकर रहनेसे मनु प्रजापतिका लोक मिलता है हे भरतर्षभ! उत्तम व्रतधारी ऋषियोंने कहा है कि कन्या सम्वेद्यमें जो थोड़ा भी देता है, वह अक्षय होता है, वहांसे तीन लोक विख्यात सिवीरि तीर्थमें जाय, वहां अश्वमेध यज्ञका फल और विष्णुलोक मिलता है। हे नरशार्दूल! जो पुरुष सिवीरा [illegible] दान देता है, वह दुःख रहित इन्द्र- [illegible] जाता है, वहां तीन लोकमें विख्यात वशिष्ठ मुनिका आश्रम है, उसमें स्नान करनेसे वाजपेय यज्ञका फल होता है, वहांसे देव और ऋषिसेवित देवकूट तीर्थमें जानेसे अश्वमेध यज्ञका फल और कुलका उद्धार होता है। हे राजेन्द्र! वहांसे कौशिक मुनिके तड़ागको जाय जहां कुशिकपुत्र विश्वामित्र मुनिको महासिद्धि प्राप्त हुई थी। हे भरतर्षभ! हे वीर! वहां कौशिकीके कुण्डपर एक महीना रहनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है, सब तीर्थोंसे उत्तम उस महा तड़ाग पर रहनेसे पुरुषकी दुर्गति नहीं होती, वहांसे तीन लोक विख्यात अग्निधारा तीर्थ पर जाय उसमें स्नान करनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है, वहांसे पर्व्वतके समीप ब्रह्म सरमें जाकर अनादि देव वर देनेवाले विष्णुके दर्शन चाहिये, ब्रह्मसरमें स्नान करनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है, उसही ब्रह्मसरसे निकल कर जगत्के पवित्र करनेवाली एक धारा है, उसमें स्नान करनेसे पुरुष समझ लेता है कि मैं कृतार्थ हुआ, वहां छटे कालका व्रत करनेसे पुरुष ब्रह्महत्यासे छूट जाता है। हे धर्मज्ञ! वहांसे तीर्थ सेवी पुरुष तीन लोक विख्यात महादेवी गौरीके शिखर पर जाय, वहां शिखर पर चढ़के स्तनकुण्डमें स्नान करनेसे वाजपेय यज्ञका फल होता है, वहां स्नान करनेसे पितर और देवताकी पूजा करनेवाले पुरुषको अश्वमेध यज्ञका फल और इन्द्रलोक मिलता है। आगे ब्रह्मचारी और सावधान होकर ताम्रारुण तीर्थको जानेसे अश्वमेध यज्ञका फल और ब्रह्मलोक मिलता है। हे नरनाथ! नन्दिनीमें देवकुएमें स्नान करनेसे नरमेध यज्ञका फल मिलता है, आगे कालका कौशिकी और अरुणाके सङ्गममें स्नान करके तीन दिन व्रत करनेसे पुरुष सब पापोंसे छूट जाता है, वहांसे पण्डित उर्व्वसी तीर्थ सोमाश्रम और कुम्भकर्णाश्रमको जानेसे पुरुष जगत्में पूजाके योग्य हो जाता है, आगे व्रतधारी होकर कोकामुख तीर्थमें जाय, वहां

जानेसे पुरुष कामदेवके तुल्य होजाता है, यह पुराने पुरुषोंने देखा है. ब्राह्मण प्राचीन नदीमें स्नान करनेसे पवित्रात्मा होजाता है. और सब पापोंसे छूटकर इन्द्रलोकमें जाता है, वहांसे पवित्र ऋषभद्वीपमें जाकर क्रौञ्चासुरके मारने वाले स्वाम कार्तिकका दर्शन करके सरस्वतीको दर्शन करके सरस्वतीका स्पर्श करनेसे पुरुष बिमानमें चढ़कर शोभित होता है। हे महाराज! वहांसे मुनि सेवित औद्दालक तीर्थमें जाय, वहांसे ब्रह्मर्षि सेवित धर्म्मतीर्थमें जानेसे, वाजपेय यज्ञका फल मिलता है और विमानमें बैठकर पुरुषकी पूजा मिलती हैं, वहांसे चम्पामें जाकर गङ्गामें स्नान करे और उत्कार्त तीर्थमें जानेसे हजार गोदानका फल होता है।

८४ अध्याय समाप्त।

पुलस्त्य मुनि बोले, हे राजेन्द्र! वहां उत्तम सम्बद्या तीर्थमें सन्ध्योपासन करे और वहांका जल स्थापन करनेसे पुरुषको निःसन्देह बिद्या मिलती है। हे राजन्! जिस तीर्थको पहले रामने अपने प्रभावसे लालकर दिया था, उसमें जानेसे पुरुषको बहुत सुवर्ण मिलता है आगे करतोया नदीमें जाकर तीन दिन ब्रत करनेसे पुरुषको अश्वमेध यज्ञका फल होता है. यह नियम प्रजापतिका किया हुआ है। हे राजन्! पण्डित लोग कहते हैं, कि गङ्गा और समुद्रके सङ्गममें स्नान करनेसे दस अश्वमेधका फल होता है. हे राजन्! पुरुष गङ्गाके दूसरे पारमें जाकर स्नान करता है और वहां तीन रोज ब्रत करता है. तो वह पुरुष सब पापोंसे छूट जाता है, वहांसे सब पापोंके नाश करनेवाली वैतरणी नदी पर जाय. वहां विरजा तीर्थमें स्नान करनेसे चन्द्रमाके समान निर्म्मल होजाता है. सब उसका पाप नष्ट हो जाता है. हजार गोदानका फल मिलता है. और कुलका उद्धार होता है. वहांसे सोणा और ज्योतिरथी नदीके सङ्गममें जाय, वहां पवित्र होकर पितर और देवतोंका तर्पण करनेसे अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है। हे राजन्! आगे उस स्थानमें जाय, जहां सोणा और नर्म्मदा अलग हुई हैं, वहां वंसोंके भुण्डका स्पर्श करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है। हे नरनाथ! आगे कोशल देशमें न जाकर ऋषभ तीर्थमें स्नान करे, वहां तीन दिन ब्रत करनेसे वाजपेय यज्ञका फल होता है. वहां जानेसे हजार गोदानका फल होता है. और कुलका उद्धार हो जाता है. वहांसे कोशला देशमें जाकर काल तीर्थका स्पर्श करे तो निःसन्देह ग्यारह सांड़ छोड़नेका होता है। हे राजन्! पुष्पवतीका स्पर्श करके तीन दिन ब्रत करनेसे सहस्र गोदानका फल और कुलका उद्धार होता है, वहांसे बदरिका फल तीर्थमें स्नान करे, हे भरत सत्तम! वदरिका तीर्थमें स्नान करनेसे पुरुषकी दीर्घ आयु होती है, वहांसे चलकर चम्पामें जाय, वहां गङ्गामें स्नान करके दण्ड तीर्थका दर्शन करनेसे हजार गोदानका फल होता है, वहांसे पवित्र पुण्योंसे भरी हुई चपेटिकामें जाय, वहां जानेसे वाजपेय यज्ञका फल होता है, और सब देवता लोग उसकी पूजा करते है, वहांसे परशुरामके आश्रम महेश्वर पर्व्वत पर जाय, वहां राम तीर्थमें स्नान करनेसे पुरुषको अश्वमेध यज्ञका फल होता है। हे कुरुनन्दन! हे कुरुश्रेष्ठ! वहींपर मतङ्गकुदार नामक तीर्थ है, उसमें स्नान करनेसे पुरुषको हजार गोदानका फल होता है, वहांसे श्रीपर्व्वतमें स्नान करे वहां शिवकी पूजा करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है, महातेजस्वी शिव पार्व्वतीके सहित वहीं निवास करते थे और देवतोंके सहित ब्रह्मा वहीं निवास करते थे, वहां पुरुष पवित्र और स्थिर मन होकर देवह्रद स्नान करे तो अश्वमेध यज्ञका फल और परम सिद्धि मिलती है, वह भी

पाण्ड्य देशमें जाकर देव पूजित ऋषभ पर्व्वत-पर जाय तो वाजपेय यज्ञका फल और स्वर्गमें आनन्द मिलता है, वहांसे अप्सरागणोंसे सेवित कावेरी नदीको जाय, हे राजन् ! उसमें स्नान करनेसे पुरुषको हजार गोदानका फल होता है, वहांसे चलकर समुद्रके तीरपर जाकर कन्या तीर्थका स्पर्श करे हे राजेन्द्र ! उस जलके स्पर्श करनेहीसे सब पाप छूट जाते हैं। आगे तीन लोक विख्यात समुद्रके बीचमें स्थित सबलोक पूजित कर्ण तीर्थको जाय, जहां ब्रह्मादिक देवता, तपोधन ऋषि, भूत, यक्ष, पिशाच, किन्नर, बड़े बड़े सर्प सिद्ध चारण, गन्धर्व्व, मनुष्य, सर्प, नदी, समुद्र और पर्व्वत आकर शिवकी उपासना करते हैं, वहां शिव की पूजा करके तीन दिन व्रत करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल और गणेशका पद मिलता है, यदि वहा दश दिन रहे तो पुरुष परम पवित्र हो जाता है, वहांसे तीनलोक पूजित गायत्रीके स्थानमें जाय वहां तीन दिन रहनेसे हजार गोदानका फल होता है, हे नरनाथ ! हे राजन् ! यह गायत्रीका प्रत्यक्ष उदाहरण दीखता है कि यदि कोई सङ्करजाति (जिसकी माता दूसरी हो और पिता दूसरी जाति हो) का उत्पन्न हुआ पुरुष अच्छी रीतिसेभी गायत्री पढ़े तौभी वह गायत्री स्वरसे हीन, छन्द रहित गावकी गीतके समान उच्चारण होती है। औरभी उदाहरण है, कि यदि ब्राह्मणके सिवा कोई दूसरा वर्ण वहा जाकर गायत्री पढ़े तो उसको स्फुरण नहीं होती, वहांसे चलकर दुर्लभ ऋषिके मुनिकी बावड़ी में स्नान करे, वहा स्नान करनेसे पुरुष सुन्दर और ललित होजाता है, वहांसे वेण तीर्थमें जाकर यदि तीन रात व्रत करे तो पुरुषको मोर और हंस सहित विमान मिलता है, वहांसे सदाही सिद्धोंसे सेवित गोदावरी नदीको जाय, वहां स्नान करनेसे गोमेध यज्ञका फल और वासुकीका उत्तम लोक प्राप्त होता है वहां वेणा नदीके सङ्गममें स्नान करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है, आगे ब्रह्मचारी और सावधान होकर कुशप्लव नामक तीर्थमे जाय, वहां तीन दिन रहकर स्नान करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है, आगे वरदा-सङ्गममें स्नान करनेसे हजार गोदानका फल होता है, आगे ब्रह्मस्थानमें जाकर व्रत करनेसे हजार गोदानका फल और स्वर्गलोक मिलता है, वहांसे वनमें जाकर कृष्णावेणीके जलसे उत्पन्न हुए देवह्रद तीर्थमें स्नान करे, वहा जातिस्मर तीर्थमें स्नान करनेसे पुरुषको अपने पूर्व जन्मका स्मरण होजाता है, वहीं पर इन्द्र सौ यज्ञकरके स्वर्गको गये हैं। हे भारत ! वहा जातेही अग्निष्टोम यज्ञका फल होता है, तब सर्व्वह्रद तीर्थमें स्नान करनेसे हजार गोदानका फल होता है, वहांसे चलकर पवित्र बावड़ी और नदियोंमें श्रेष्ठ पयोष्णी पर जाकर पितर और देवतोंकी पूजा करनेसे हजार गोदानका फल मिलता है, हे भारत ! हे राजन् ! वहांसे चलकर दण्डकारण्यमें जाय पवित्र तीर्थका स्पर्श और स्नान करनेसे हजार गोदानका फल मिलता है, वहांसे शरभङ्ग और महात्मा शुक्रके आश्रम पर जानेसे पुरुषकी दुर्गति नहीं होती और कुल पवित्र होजाता है, वहांसे परशुराम सेवित शूर्पारक तीर्थमें जाय, वहा राम तीर्थमें स्नान करनेसे बहुत सुवर्ण मिलता है, आगे जिताहारी और ब्रह्मचारी होकर सप्त गोदावर तीर्थमें स्नान करे, वहा स्नान करनेसे पुरुषको महापुण्य और स्वर्गलोक मिलता है, आगे ब्रह्मचारी और नियमसे भोजन करनेवाला होकर देवतोंके मार्गमे जानेसे पुरुषको देव सत्र यज्ञका फल होता है। आगे ब्रह्मचारी और जितेन्द्रिय होकर तुङ्गकारण्यको जाय, वहीं पर पहले सारस्वत मुनि वेद पढ़ाते थे, जब वेद नष्ट हो गये तब अङ्गिरा मुनिके पुत्र सुखपूर्व्वक ऋषियोंके वस्त्रोंमें

बैठ गये, तहां विधिपूर्व्वक यथोचित उन्होंने ओंकारको उच्चारण किया ऐसा करते ही सब मुनियोंको यह पाठ याद हो गया वहीं देवता, ऋषि, वरुण, अग्नि, प्रजापति, विष्णु शिव और सब देवोंके सहित महा तेजस्वी भगवान ब्रह्माने महा तेजस्वी भृगु ऋषिको यज्ञ करनेको बिठलाया था तब भगवान भृगु मुनिने विधिपूर्व्वक ऋषियोंके कार्य्योंको यथोचित ठहरा दिया वहां भृगुने विधिपूर्व्वक शिवसे अग्निको सन्तुष्ट किया, तब सब देवता और ऋषि अपने अपने घरको चले गये। हे राजन्! उस तुङ्गक नामक बनमें जातेही पुरुष या स्त्रियोंके सब पाप नष्ट हो जाते हैं, उस स्थानमें नियमधारी धीर पुरुष थोड़ा भोजन करके यदि एक महीना रहे तो ब्रह्मलोकको जाता है, वहांसे मेधाविक तीर्थको जाय वहां पितर और देवतोंका तर्पण करे तो अग्निष्टोम यज्ञका फल मिलता है, और स्मरण शक्ति तथा धारणा शक्ति बढ़ती है. यहीं पर कालिञ्जर नामक पर्व्वत है, यहां देवह्रद तीर्थमें स्नान करनेसे हजार गोदानका फल होता है। जो कोई कालिञ्जर गिरि पर्व्वतसे जाकर आप स्नान करे अथवा दूसरेको स्नान करावे तो निस्सन्देह स्वर्गलोकको जाता है। वहांसे पर्व्वतोंमें श्रेष्ठ चित्रकूटको जाय. वहां सब पापोंको नाश करनेवाली मन्दाकिनीमें स्नान करके पितर और देवतोंकी पूजा करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल और मोक्ष मिलती है। हे धर्म्मज्ञ! वहांसे अत्यन्त उत्तम भर्त्तके स्थानको जाय, वहां देवतोंके सेनापति स्वामि कार्त्तिक सदाही निवास करते हैं। हे नृपश्रेष्ठ! वहां जानेहीसे सिद्धिलाभ होती है आगे कोटि तीर्थमें स्नान करनेसे पुरुषको हजार गोदानका फल होता है, उसकी प्रदक्षिणा करके जेष्ठ तीर्थको जाय, वहां महादेवकी पूजा करनेसे पुरुष चन्द्रमाके समान प्रकाशित हो जाता है. हे भरतर्षभ! हे महाराज! हे युधिष्ठिर! हमने सुना है कि उस कुएंमें चारो समुद्र बसते हैं। हे राजेन्द्र! पितर और देवतोंकी पूजा करनेवाला नियमधारी पुरुष वहां स्नान करनेसे पवित्र होकर मोक्षको प्राप्त होता है, हे राजेन्द्र! वहांसे शृङ्गवेरपुरको जाय वहीं दशरथ कुमार रामचन्द्र गङ्गापार हुए थे। हे महाबाहो! उस स्थानमें ब्रह्मचारी और सावधान होकर गङ्गास्नान करनेसे पुरुष सब पापोंसे छूट जाता है और मोक्षको प्राप्त होता है। हे महाराज! वहांसे मंजुवटको जाय, वह बुद्धिमान शिवका स्थान है, वहां शिवकी पूजा और प्रदक्षिणा करनेसे गणेशका स्थान मिलता है और वहां गङ्गास्नान करनेसे सब पाप छूट जाते हैं। हे राजेन्द्र! वहांसे ऋषि पूजित प्रयागको जाय, जहां ब्रह्मादिक देवता, दिशा, दिगपाल, लोकपाल, साध्य, लोकपूजित पितर, सनत्कुमार आदिक महार्षि, अङ्गिरादिक निर्मल ब्रह्मर्षि, नाग, सुपर्ण, सिद्ध, चक्रचर (सूर्यादिक आकाशचारी) नदी, समुद्र, गन्धर्व अप्सरा और प्रजापतिके सहित भगवान विष्णु निवास करते हैं, प्रयागमें तीन कुण्ड हैं, उनके बीचमें सब तीर्थोंके सहित अत्यन्त वेगवती गङ्गा और तीनलोक विख्यात भगवती यमुना बहती है, वहीं जगत्को पवित्र करनेवाली यमुना गङ्गासे आकर मिली है, जहां गङ्गा और यमुना मिली है, वह स्थान पृथ्वीको जङ्घा है. प्रयागको ऋषियोंने पृथ्वीकी योनि कहा है, प्रयाग प्रतिष्ठानपुर (झूसी) कम्बलाश्वतर तीर्थ और भोगवती यह ब्रह्माकी वेदी है. हे युधिष्ठिर! उसमें यज्ञ और वेद मूर्त्ति धारण करके रहते हैं, हे राजन्! वहां ऋषि ब्रह्माकी उपासना करते हैं, चक्रवर्त्ती और देवता लोग यज्ञ करते हैं। हे भारत! हे राजन्! इसी लिये प्रयाग परम पवित्र है, मुनिलोग तीन लोकके तीर्थोंसे प्रयागको अधिक कहते हैं, उस तीर्थमें जानेसे और उसका नाम स्मरण

करनेसे पुरुष मृत्युके भय और पापोंसे छूट जाता है. उस लोक विख्यात गङ्गा और यमुना-सङ्गममें जो स्नान करता है,उसको राजसूय और अश्वमेधका फल होता है, हे भारत! यह संस्कार करी हुई देवतोंके यज्ञ करनेकी भूमि है, वहां थोड़ा दान देनेसे भी बहुत हो जाता है। हे तात। न वेदके वचनसे और न लोकके वचनसे प्रयागमें मरनेकी बुद्धिको त्यागना चाहिये. हे कुरुनन्दन। जो एक करोड़ दस हजार सात तीर्थ कहे हैं वे सब प्रयागहीमें निवास करते हैं, तीनो वेद आत्मविद्या और सत्य बोलनेका जो कुछ पुण्य होता है, सो पुण्य गङ्गा-यमुनाके सङ्गममें स्नान करनेसे पुरुषको मिलता है, वहा राजा वासुकीका स्थान है, उसका नाम भोगवती है, उस उत्तम तीर्थमें स्नान करनेसे अश्वमेध यज्ञका फल होता है वहीं तीनलोक बिख्यात हंसप्रबत नामक तीर्थ, है। हे कुरुनन्दन' प्रयागहीमें गङ्गाके तटपर दशाश्वमेध नामक तीर्थ है, कुरुक्षेत्रके समान गङ्गाका जहा स्नान करे वहा ही फल होता है, परन्तु कनखलमें विशेष फल है और प्रयागमें बहुत अधिक फल है, यदि हजारो पाप करके भी पुरुष गङ्गाजलमें स्नान करता है, तो वह गङ्गाजल उसके पापको ऐसेही नष्ट करता है, जैसे अग्नि इन्धनको, सतयुगमें सब तीर्थोंमें स्नान करनेसे पुण्य होता था, त्रेतामें पुष्कर तीर्थ है, कलियुगमें तो गङ्गाही प्रसिद्ध हैं। पुष्करमे तप करे. महालयमें दान दे और मलयमें अग्निमें प्रवेश करे और भृगुतुङ्ग तीर्थमें भोजन करे, पुष्कर, कुरुक्षेत्र गङ्गा और मगध देशीय तीर्थोंमें स्नान करनेसे पुरुषके सात पुरखा पवित्र हो जाते हैं,गङ्गा देखनहीसे शापोका नाश करती है कीर्त्ति और कल्याणको बढ़ाती है, स्नान करने और जल पीनेसे सात कुलको पवित्र करती है। हे राजन् पुरुषकी हड्डी जब गङ्गाजलमे रहती हैं, तबतक वह पुरुष स्वर्गमें रहता है, जो पवित्र तीर्थ और पवित्र देवतोंके स्थानमें जानेसे पुण्य होता है, और उससे स्वर्ग मिलता है वह सब उतना चिर-स्थाई नहीं होता है, जितना गङ्गास्नान करनेसे होता है, गङ्गाके समान कोई तीर्थ, विष्णुके समान कोई देवता और ब्राह्मणोंके समान कोई पूज्य नहीं है, ऐसा ब्रह्माने कहा है, हे महा-राज! जहा गङ्गा है, वह देश तपोधन है जो देश गंगाके तटपर है. वह सिद्ध क्षेत्र है, यह सत्य बात ब्राह्मण, साधु, पुत्र, मित्र, शिष्य और नौकरके कानमें कह देनी चाहिये, यह गङ्गातट धन्य, पवित्र, स्वर्गदायक, उत्तम, पुण्यदायक, रम्य, पवित्र करनेवाला, धर्म्म बढ़ानेवाला, महा ऋषियोंके पाप नाश करनेवाला, गुप्त स्थान है. ब्राह्मणोंके बीचमें इस मन्त्रको पढ़नेसे पुरुष निर्म्मल हो जाता है, और स्वर्ग मिलता है, यह तीर्थोंकी वंशावली लक्ष्मी, स्वर्ग, पुण्य और बुद्धिकी देने-वाली है, उसका कीर्त्तन करनेसे शत्रुओंका नाश होता है, अपुत्रको पुत्र और निर्धनको धन मिलता है, इसके पढ़नेसे क्षत्री विजय करता है, बनियेको धन मिलता है, शूद्रकी इच्छा पूरी होती है, ब्राह्मण पण्डित होजाता है। जो पुरुष पवित्र होकर इस तीर्थ माहा-त्म्यको सुनता है, वह अपने अनेक जन्मोंको स्मरण करके स्वर्गसे आनन्द करता है. जो तीर्थ जाने योग्य हैं, उनमें जाय और जो नहीं जाने योग्य हैं. उनमें सब तीर्थके दर्शनकी इच्छा करनेवाले पुरुष मनहीसे चलो जाय। इन तीर्थोंमें वसु, साध्य, सूर्य्य, मरुत, अश्विनीकुमार देवतोंके समान ऋषि और पुण्यात्मा लोग स्नान करते हैं। हे कौरव! हे उत्तम व्रतवाले युधिष्ठिर। ऐसेही आपभी इन तीर्थोंमें जाइये! आप नियमोंको धारण करके पुण्योंसे पुण्योंको बढ़ाते हुए तीर्थोंको जाइये; आप निश्चित कार-णोंको देखकर, आस्तिकता देखकर और

वेदोंके प्रमाणको मानकर तीर्थयात्रा कीजिये। हे राजन्! जिन तीर्थोंको शास्त्रदर्शी महात्मा लोग जा सकते है, उन्हींको आप जाइये, क्योंकि उन तीर्थोंको अव्रती दुष्ट, अपवित्र और चोर नहीं जा सकते हैं। हे कौरव्य! उन तीर्थोंमें दुष्ट बुद्धिवाले पुरुष स्नान नहीं कर सकते; आप ही सदा धर्म्म और अर्थके जानने-वाले उन तीर्थोंमें जा सकते हैं। हे राजन्! आपने धर्म्मसे पिता पितामह, प्रपितामह, और उनसेभी पहले पुरखा तथा ऋषि लोगोंको सन्तुष्ट किया है। हे इन्द्रसमान! आपको वसुओंके लोक मिलेंगे। हे भीष्म! आपकी महाकीर्त्ति इस जगत्‌में बहुत दिनतक रहेगी।

नारद मुनि बोले, हे युधिष्ठिर! इस प्रकार भीष्मसे कहकर प्रसन्नता पूर्व्वक प्रसन्न चित्तसे भगवान पुलस्त्य मुनि भीष्मकी सम्मतिसे वहीं अन्तर्धान होगये। हे कुरुशार्दूल! भीष्मभी शास्त्रोंको देखके पुलस्त्यके वचनसे पृथ्वीमें घूमने लगे। हे राजन्! इस प्रकारसे यह सब पापोंके नाश-करनेवाली पुण्योंसे-भरी हुई महा भाग्यवती तीर्थयात्रा प्रतिष्ठानपुर (झांसी) में समाप्त हुई। जो पुरुष इस प्रकारसे पृथ्वीके तीर्थोंमें घूमता है; उसको मरनेके पश्चात् सैकड़ों अश्वमेधोंका फल होता है। हे कुन्ती-नन्दन! आपको उससे आठ गुण फल होगा, जैसे कुरुवंश सिंह भीष्मको हुआ था; क्योंकि तुम ऋषियोंके अगुआ हो, इसीसे तुमको आठगुण फल होगा, और आज कलके तीर्थ राक्षसोंसे भर गये है, हे कुरुनन्दन! हे राजेन्द्र! आपके सिवाय उन तीर्थोंमें और कोई नहीं जा सकता है। जो पुरुष इस देवर्षि कथित तीर्थ-माहात्म्यको कथा-रूपसे पढ़ेंगे, उनके सब पाप छूट जायंगे। हे महाराज! उन तीर्थोंमें ऋषियोंमें प्रधान वाल्मीकि कश्यप, आत्रेय, कुण्डजठर, विश्वामित्र, गौतम, असित, देवल, मार्कण्डेय, गालव, भरद्वाज, वशिष्ठ, उद्दालक मुनि सौनक व्यास तपस्वियोंमें श्रेष्ठ शुकदेव, मुनि-श्रेष्ठ दुर्व्वासा, और महातपस्वी जाबाली इत्यादि अनेक तपोधन महर्षि लोग आपका मार्ग देख रहे है। हे महाराज! तीर्थोंमें जानेसे इन मुनियोंके दर्शन होंगे। हे महा-राज! यह देखो ये महा तेजस्वी लोमश ऋषि आपके पास चले आते है, आप इनके सङ्गही तीर्थोंको चले जाइये। हे राजन्! क्रमके अनुसार इस तीर्थोंमें आप सुखसेभी मिलेंगे, जैसी राजा महाभिषको कीर्त्ति हुई थी, वैसीही आपकीभी होगी। हे राजशार्दूल! जैसे राजा ययाति और राजा पुरोरवा धर्म्मात्मा थे, तैसेही आपभी अपने धर्म्मसे शोभित है। हे राजन्! जैसे राजा भगीरथ, और राजा राम विख्यात थे, वैसेही सूर्य्यके समान तेजस्वी आपभी विराजमान है। जैसे मनु इक्ष्वाकु महा यशस्वी पुरु और पृथु थे, तैसेही आपभी विख्यात हैं। हे महाराज! जैसे वृत्तासुरके मारने-वाले देवराज इन्द्रने सब शत्रुओंको मारकर जगत्‌का राज्य किया था; हे कमलनेत्र! तैसेही आपभी अपने धर्म्मसे पृथ्वीको जीत और शत्रुओंको मारकर प्रजाको पालियेगा, जैसे कृतवीर्य्यके पुत्र अर्ज्जुन प्रसिद्ध हुए थे, तैसेही आपभी धर्म्मसे प्रसिद्ध हूजियेगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भगवान् नारद इस प्रकार युधिष्ठिरसे कहके युधिष्ठिरकी सम्मति ले वहीं अन्तर्धान होगये। धर्म्मात्मा महाराज युधिष्ठिरभी उसको सुनकर उसका अर्थ विचारकर ऋषियोंसे उस पुण्यको कहने लगे।

८५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा युधिष्ठिरने बुद्धिमान नारदकी और अपने भाइयोंकी सम्मति जानकर अपने पितामहके समान धौम्य मुनिको बुलाकर ऐसा कहा, कि मैंने सत्यपराक्रम पुरुष-

सिंह महावाहु आचारवान् पराक्रमी अर्ज्जुनको अस्त्रोंके लिये भेजा है; वह तपोधन हमारा अत्यन्त भक्त है. और शस्त्रोंके जाननेमें महात्मा कृष्णके समान है। हे ब्रह्मण। मैं शत्रुनाशन महातेजस्वी अर्ज्जुन और कृष्णको वैसाही जानता हूं, जैसा कि प्रतापवान व्यास जानते हैं. यह कमलनेत्र और नारायणके अवतार हैं. भगवान नारदभी इनको ऐसाही जानते हैं, और मुझसे सदा कहा करते हैं, और मैंभी जानता हूं, कि ये नरनारायण ऋषिके अवतार हैं। हमने अर्ज्जुनको समर्थ जानकरही भेजा है; हमने यह जान लिया था कि यह इन्द्र-पुत्र अर्ज्जुन इन्द्रसे कम नहीं हैं, अतएव इन्द्रको दर्शन करने और उनसे शस्त्र लेनेको भेजा है। देखिये भीस और द्रोण महारथ हैं, कृपाचार्य्य और अश्वत्थामा सहजहीमें जीतने योग्य नहीं हैं, यह सब महारथलोग दुर्य्योधनके सङ्ग युद्धमें आवेंगे, यह सब लोग वेदोंके जाननेवाले और शस्त्रोंके पण्डित हैं. औरभी जितने महा बलवान पुरुष हैं, वे सब अर्ज्जुनहीसे युद्ध करनेको इच्छा करते हैं। देखिये यह दिव्य अस्त्रोंके जाननेवाला सूतपुत्र कर्णभी महारथ है. वह सब शस्त्रोंके जाननेवाला वायुके समान बली. शस्त्र है ज्वाला जिसकी और तालियोंका शब्द है. अग्नि शब्द जिसका वह प्रलय कालकी महा अग्निके समान कर्ण दुर्य्योधनरूपी वायुसे प्रेरित होकर मेरी सेना समूहको निःसन्देह भस्म कर देगा। उस [illegible]रूपी महा अग्निको कृष्ण वायुसे प्रेरित [illegible] अस्त्र अग्निवाला सफेद घोड़ेरूपी वकमाला [illegible]त गाण्डीव इन्द्र धनुषवाला अर्ज्जुन मेघ, [illegible] वाणधारा रूपी पानीसे युद्धमें बुझा देगा. [illegible] इन्द्रसे सब शत्रुओंके नाश करनेके निमित्त [illegible] अस्त्रोंको प्राप्त करेगा. वह सब शत्रुओंके [illegible] समर्थ है। मुझे यह निश्चय है. [illegible] हम शत्रुओंको नहीं जीत सकते। हमलोग उस पाण्डुपुत्र शत्रुनाशन अर्ज्जुनको शस्त्र लानेके समय तक देखते हैं. क्योंकि वह इस भारको लेकर कुछभी दुःखी नहीं हुए। हे ब्राह्मण! हम लोग उस वीर अर्ज्जुनके विना इस काम्यक वनमें द्रौपदीके सहित सुख नहीं पाते हैं। अतएव आप कोई ऐसा वन बतलाइये जो उत्तम पवित्र फल और अन्नसे भरा हो, और जो परम रमणीय हो. जिसमें ऋषिलोग रहते हों. जिस वनमें रहकर हम लोग सत्य-पराक्रम वीर अर्ज्जुनका मार्ग देखें। हमलोग उसको ऐसाही चाहते हैं, जैसा किसान मेघको. अथवा अनेक प्रकारके ऋषियोंसे सुने हों। तलाव और पर्व्वतोंका हमसे वर्णन कीजिये। हे ब्राह्मण! मुझको विना अर्ज्जुनके इस वनमें रहना अच्छा नहीं लगता अतएव मैं दूसरी दिशाको जाना चाहता हूं।

८६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कि उन सब पाण्डवोंको उदास और उत्सुक देखकर बृहस्पतिके समान धौम्य मुनि धैर्य्य देकर ऐसा बोले. हे पापरहित! हे भरतर्षभ! ब्राह्मणोंसे कहे हुए आश्रम, दिशा, तीर्थ और पवित्र पर्व्वतोंको मैं कहता हूं, तुम सुनो। हे नरेश्वर! जिनके सुननेसे आप अपने भाई और द्रौपदीके सहित स्वस्थ हुजियेगा, हे पाण्डव। हे नरोत्तम! जिनको सुननेसे आपको बहुत पुण्य होगा और वहां जानेसे सौगुण पुण्य होगा। हे युधिष्ठिर! अब मैं आपसे स्मृतिके अनुसार राजर्षिसेवित पूर्व्व दिशाका वर्णन करता हूं. हे भारत! उस राजर्षिसेवित पूर्व्व दिशामें नैमिषारण्य नामक तीर्थ है. जहां सब देवतोंके अलग पवित्र तीर्थ हैं. जहां रमणीय. पवित्र देव और ऋषियोंसे सेवित गोमती नदी बहती है. वही देवतोंकी यज्ञका स्थान और वहीं यज्ञके निमित्त यमराजने पशुओंको मारा था।

उसी पूर्व्व दिशा में पवित्र राजर्षि जयका सत्कार किया हुआ एक पर्व्वत है, वहीं पर देवता और ऋषियोंसे सेवित ब्रह्मसर तीर्थ है, हे पुरुषसिंह। उस स्थानमें जाने के निमित्त पुराने लोग कहते हैं, कि बहुतसे पुत्रोंकी इच्छा करनी चाहिये. कोई भी तो गयाको जायगा। हे राजन्। चाहे अश्वमेध करे चाहे काले रङ्गका सांड़ छोड़े. चाहे गयाको जाय इन तीनों कर्म्मोंका महा फल है. कि दश अगली पीढ़िओंका उद्धार होजाता है। हे नरनाथ! वहीं महानदी और गयसिर नामक तीर्थ है. वहीं पर ब्राह्मण लोग अक्षयवट बतलाते हैं. जहां पितरोंको पिण्ड देनेसे अक्षय होता है, हे नरनाथ! वहीं पर पवित्र जलवाली फल्गु नामक महानदी है। हे भरतर्षभ। उसी दिशामें बहुत फल और मूलवाली कौशिकी नामक नदी है. तपोधन विश्वामित्र वहीं ब्राह्मण बने थे. उसी पूर्व्व दिशामें जलवाली गङ्गा बहती है. जहां राजा भगीरथने भारी दक्षिणावाली अनेक यज्ञ करी थीं। हे कौरव्य! पाञ्चाल देशमें उत्पलवन नामकतीर्थ है. जहां कुशिक-पुत्र विश्वामित्रजो मनुषोंसे अधिक बुद्धि देखकर गये थे. कान्यकुब्ज देशमें विश्वामित्रने सोमपान किया था और ब्राह्मण बने थे हे वीर। उसही पूर्व्व दिशामें पवित्र ऋषिसेवित लोक-विख्यात गङ्गा और यमुनाका उत्तम सङ्गम है, जहां पहिले भगवान ब्रह्माने यज्ञ करी थी, इसोसे उसका नाम प्रयाग हुआ है। हे राजेन्द्र! हे नरनाथ! वहीं पर अगस्त्य मुनिका आश्रम है वहो तपस्वियोंसे सेवित तापस वन तीर्थ है। आगे कलिञ्जर गिरि पर हिरण्य विन्दु नामक तीर्थ है. वहीं पवित्र पर्व्वतोंमें श्रेष्ठ कल्याणदायक अगस्त्य मुनिका पर्व्वत है. हे कौरव्य। वहीं महात्मा भार्गवका आश्रम महेन्द्र पर्व्वत है। हे कुन्तीनन्दन! पहले वहीं यज्ञ करी थी. हे प्रजानाथ युधिष्ठिर! पहले वहां पवित्र गङ्गा एक तालावमें भरी थीं उस पवित्र कुण्डका नाम ब्रह्मसर है, वहां पर अनेक पापरहित महात्मा लोग रहते है, उसका दर्शन परम पवित्र है, उसके नामको महात्मा लोग मङ्गलदायक और पवित्र बतलाते हैं. वहीं मतङ्ग ऋषिका कुण्ड है; और वहीं उनका उत्तम आश्रम भी है. वहीं कुण्डका जल तथा बहुत फल फूल और जलसे रम्य पर्व्वत भी है. जहां पर राजा नल प्यासे होकर गये थे और उसके जलको पीकर आनन्दित हुए थे. यहीं तपस्वियोंसे सेवित देववन तीर्थ है, वहां पर्व्वतके शिखर पर वाहुदा नदी और गंगा बहती है. उस स्थानमें तीर्थ, नदी, पर्व्वत और पवित्र आश्रम है। हे महाराज। यह मैंने पूर्व्व दिशाके तीर्थ आपसे कहे। अब शेष तीन दिशाओंके तीर्थोंको सुनिये, उनमें भी अनेक नदी पर्व्वत और पवित्र आश्रम है।

८७ अध्याय समाप्त।

श्रीधौम्य मुनि बोले हे भारत! अब मैं दक्षिणके तीर्थोंकी बुद्धिके अनुसार विस्तार सहित कथा कहता हूं. आप सुनिये, उस दक्षिण दिशामें बहुत आश्रम जल और तपस्वियोंके सहित कल्याण देनेवाली गोदावरी नदी बहती है, उसी दक्षिण दिशामें पापके भयको नाश करनेवाली हरिणा और पक्षियोंसे शोभित मुनियोंके आश्रमोंसे भरी हुई वेणा और भीमरथी नामक दो नदी बहती हैं। हे राजन्! उसही दिशामें राजर्षि नृगकी नदी है इसका नाम पयस्विनी है. वह अनेक पक्षियोंसे सेवित रमणीय और बहुत जलसे भरी है, उसी स्थानमें महायोगी और महा यशस्वी मार्कण्डेय मुनिने यजमान राजा नृगकी वंशावली वर्णन करी है. हमने सुना है. कि उस स्थानमें प्रत्यक्षही सोम पीकर इन्द्र और दक्षिणा पाकर

ब्राह्मण लोग आनन्दित हुए थे, वहीं पयोष्णीमें और उत्तम वाराह तीर्थमें उठे हुए या पृथ्वीमें पड़े हुए अथवा वायुसे चलित पुरुषका, जन्म भरका पाप नाश होता है, जहां स्वर्गसे भी ऊंचा निर्म्मल शिवका त्रिशूल है, उसको देखने से पुरुष शिवपुरको जाता है। मेरा यह सिद्धान्त है, कि जलसे भरी हुई नदी और सब तीर्थ एक ओर और पयोष्णि एक ओर होय तौभी पयोष्णिही अच्छी है, वरुण स्रोत नामक पर्व्वतबहुत फूल और फलोंसे भरा हुआ पवित्र मठरका वन है, वहीं यूप भी बने हैं, हमने सुना है, कि प्रवेणीसे उत्तरकी ओर चलनेसे कण्व मुनिका पवित्र आश्रम मिलता है। और उधर मुनियोंके अनेक वन हैं। हे तात। उधरही महात्मा यमदग्निका वेदी सूर्पारक नामक तीर्थ है, वहीं परम रमणीय पत्थरोंसे भरी पुनश्चन्द्रा नाम्नी नदी है। हे कौन्तेय। वहीं अशोक तीर्थ है, उस तीर्थमें मुनियोंके बहुत आश्रम हैं, हे युधिष्ठिर। आगे पाण्ड्यदेशमें अगस्त्य और वरुण तीर्थ हैं। हे भरतर्षभ! उसही पाण्ड्यदेशमें बहुत पवित्र स्त्री ऐसी हैं जो विवाहही नहीं करती हैं, वहीं ताम्रपर्णी नामक नदी है। हम उसका वर्णन करते हैं आप सुनिये। हे भारत! जिस स्थानमें देवता लोगोंने बहुत कल्याणकी इच्छासे आश्रम बना कर तप किया था उसही देशमें तीन लोक विख्यात गोकर्ण महादेव हैं। हे तात। उधर कल्याण-दायक सुन्दर बहुत ठण्डे जलसे भरा हुआ तड़ाग है, उसको पापी पुरुष नहीं पाते हैं। वहीं घास मूल और फलोंसे भरा हुआ देवताओंके पर्व्वतके समान अगस्त्य मुनिके शिष्यका आश्रम है। उधरही मणिमय शोभा-युक्त कल्याण दायक वैदूर्य्य पर्व्वत है, उसी स्थान बहुत फल मूल और जलसे शोभित अगस्त्य का आश्रम है। हे नराधिप। अब हम देशके पवित्र स्थान, आश्रम, नदी और तड़ागोंका वर्णन करते हैं। हे युधिष्ठिर! वहां चमसोद्भेद नामक तीर्थ है, ब्राह्मणलोग उसका बहुत महात्मा करते हैं, आगे समुद्रमें देवतोंका प्रभास नामक तीर्थ है, वहां पिण्डारक नामक तीर्थ है, उसमें अनेक ऋषि लोग रहते हैं उधरही शीघ्र सिद्धि देनेवाला उज्जयन्त नामक तीर्थ है। हे युधिष्ठिर। उसी स्थानके लिये ब्रह्मर्षियोंमें श्रेष्ठ नारदने यह पुराना श्लोक कहा है, उसको आप सुनिये, "जो पुरुष पक्षी और मृगोंसे भरे, हुए सुराष्ट्रदेशमें पवित्र उज्जयन्त पर्व्वत पर तप करता है, उसको स्वर्ग मिलता है। उसी देशमें पवित्र द्वारिकापुरी है, वहां साक्षात् सनातन धर्म्मरूपी कृष्ण निवास करते हैं। जो ब्राह्मण वेद और ज्ञानको जानते हैं, वे कृष्णको महात्मा और सनातन धर्म्म बतलाते हैं, कृष्ण पवित्रोंसे परम पवित्र पुण्योंमें परम पुण्य मङ्गलोंके मङ्गल, कमलनेत्र, देवतोंके देवता और सनातन हैं, कृष्ण अव्यय (अविनाशी) व्ययात्मा, क्षेत्रज्ञ (जीव) और परमेश्वर हैं, वेही मधुराक्षसके नाश करनेवाले अचिन्त्यात्मा भगवान कृष्ण द्वारकामें वास करते हैं।

८८ अध्याय समाप्त।

श्रीधौम्य मुनि बोले, हे राजन्! अब हम पश्चिम दिशाके आनर्त्त देशमें जो पवित्र और पुण्यसे भरे हुए स्थान हैं, उनको आपसे कहते हैं। हे भारत! उस देशमें प्रियङ्गु और नीपके वनोंसे वेष्टित पश्चिमको बहने वाली नर्म्मदा नामक नदी है, हे भारत! हे कुरुश्रेष्ठ! तीनलोकके सब तीर्थ पवित्र आश्रम, नदी, पर्व्वतोंके राजा, ब्रह्माके सहित सब देवता सिद्ध, ऋषि और चारण यह पुण्यसे भरे हुए नर्म्मदाके जलमें स्नान करनेको आते हैं, वहीं विश्रवा मुनिका आश्रम है। वहीं पर पुरुषवाहन कुबेरका जन्म हुआ था

उधरही पवित्र कल्याण-दायक, पर्व्वतोंमें श्रेष्ठ वैदूर्य्य शिखर नामक पर्व्वत है, जहां हरे पत्तों-वाले सदा फूले फले अनेक वृक्ष हैं, हे महा-राज! हे पृथ्वीनाथ! उसही पर्व्वतकी चोटी पर देवता और गन्धर्व्वोंसे सेवित पवित्र फुल्ल-पद्म नामक तलाव है। हे राजन्! उस देव और ऋषियोंसे सेवित परममय स्वर्गके समान पर्व्वतमें अनेक आश्चर्य दीखते हैं। उस पर्व्वत-में राज ऋषियोंके अनेक कुण्ड हैं, हे राजन्। हे शत्रुनाशन वहीं विश्वामित्रकी पवित्र नदी है उसी नदीके तट पर नहुषके पुत्र राजा ययाति स्वर्गसे गिरे थे, और पुनः सनातन धर्म्म लोकको गये थे। वहीं पवित्र तलाव और मैनाक पर्व्वत है, उधरही बहुत फल और मूलोंसे भरा हुआ नीलगिरि पर्व्वत है। हे युधिष्ठिर! वहीं कहसेन मुनिका पवित्र आश्रम है। हे पाण्डव। उधरही विख्यात च्यवन मुनिका आश्रम है, वहां पुरुष लोग थोड़ीही तपस्यासे सिद्ध हो जाते हैं। हे महा-राज। उधरही आत्मदर्शी मुनियोंका जम्बु-मार्ग है। हे शान्तोंमें श्रेष्ठ। उधरही बहुत पक्षी और हरिणोंसे भरा हुआ आश्रम है। हे महाराज! उधरही सदा मुनियोंसे सेवित केतमाला और से[illegible] नामक नदी है। हे पृथ्वी-नाथ! उधरही गङ्गाद्वार है; उसही और पवित्र ब्राह्मणोंसे भरा हुआ प्रसिद्ध सैन्धववन है, उधरही ब्रह्माका पुष्कर नामक तड़ाग है, वहीं वैखानस, सिद्ध और ऋषियोंके प्रिय आश्रम हैं, वहां निवास करनेके निमित्त ब्रह्मा गये थे, हे कुरु-श्रेष्ठ। हे धर्म्मात्माओंमें श्रेष्ठ। हमने यह कथा सुनी है, कि जो मनस्वी पुरुष पुष्कर जानेकी मनसे भी इच्छा करता है, उसके सब पाप नाश होजाते हैं, और स्वर्गका आनन्द मिलता है।

८९ अध्याय समाप्त।

श्रीधौम्य मुनि बोले, हे राजशार्दूल! उत्तर दिशामें जो पवित्र स्थान हैं, उनका वर्णन हम आपसे करते हैं, सुनिये, हे वीर। पृथ्वीनाथ! अब जो हम कथा आपसे कहते हैं उसको सावधान होकर सुनिये और उस कथामें श्रद्धा कीजिये। हे पाण्डव। उत्तर दिशामें महा-पवित्र सरस्वती और मालिनी नदी है, उसी और महावेगवती समुद्रगामिनी यमुना नदी है जहां अत्यन्त पवित्र सुन्दर पलक्षावतरण तीर्थ है, जहां सारस्वत यज्ञ करनेसे ब्राह्मण लोग उत्तम लोकोंको प्राप्त करते हैं, हे पाप रहित! जहां पवित्र कल्याणोंका देनेवाला अग्निसिर नामक तीर्थ है, हे भारत। जहां सहदेवने सम्पा (दण्डविशेष) लगाकर यज्ञ किया था। हे युधिष्ठिर! इसही स्थानमें इन्द्रने यह कथा कही थी जिसको लोकमें अभीतक ब्राह्मणलोग गाते हैं। हे पुरुषशार्दूल। यमुनाके तट पर सहदेवने अग्नि सेवा करी थी, वहां उन्होंने सैकड़ों सहस्रों दक्षिणा सहित यज्ञ करे थे, हे राजन्! उसी स्थानमें महायशस्वी चक्रवर्त्ती, राजा भरतने एकसौ अड़तालीस अश्वमेध करे थे। हे तात! वहांसे आगे ब्राह्मणोंका कार्य्य सिद्ध करनेवाला अत्यन्त पवित्र शरभङ्ग मुनिका विख्यात आश्रम है, हे कुन्तीनन्दन! सरस्वती नदीकी पण्डित लोग सदाही सेवा करते हैं। हे महाराज। जहां पहले वालखिल्य मुनियोंने यज्ञ करी थीं। हे युधिष्ठिर। उसी देशमें महापुण्यवती दृषद्वतीनदी है, हे पुरुषश्रेष्ठ! आगे पाञ्चाल देशमें प्राच्चात्य वट है। हे कुन्तीनन्दन! उसी पृथ्वीमें अनन्त यशवाले उत्तम व्रतधारी महा तेजस्वी महात्मा दालभ्य मुनिका दालभ्य घोष आश्रम है यह आश्रम परम पवित्र और तीनों लोकमें विख्यात है। हे महाराज। उसी देशमें नर और नारायण ऋषि निवास करते हैं। हे भरतसत्तम! यह दोनों वेदके जाननेवाले वेदके पण्डित और वेद-

विद्याके जाननेवाले हैं, यह दोनों सदाही पवित्र बड़ी यज्ञोंकी क्रिया करते हैं, आगे विसाखयूप नामक तीर्थ है, जहां पहले इन्द्र वरुण आदि अनेक देवतोंने मिल कर तपस्या करी थी, इसीसे यह आश्रम बहुत पवित्र है, उसी देशमें महाभाग महायशस्वी, महामुनि यमदग्निने रमणीय पलास वनमें यज्ञ किये थे, यहां सब नदियोंमें श्रेष्ठ नदियां अपना अपना जल लेकर यमदग्नि ऋषिके पास आई थीं, हे महाराज ! इस स्थानमें स्वयं विश्वावसुने महात्मा यमदग्निके यज्ञको देखकर यहश्लोक गाया था । "यह कहते हुए महात्मा यमदग्निके यज्ञमें देवता नदी और ब्राह्मण स्वयंही आये और सहदसे तप्त हुए, उसी देशमें गन्धर्व्व, यक्ष राक्षस और अप्सराओंसे सेवित किरात और किन्नरोंका देश उत्तम पर्व्वत है। हे युधिष्ठिर ! उसी देशमें वेगसे पहाड़को तोड़ कर गङ्गा निकली है उस स्थानका नाम गङ्गाद्वार है, हे राजन् ! उसी देशमे ब्रह्मऋषियोंसे सेवित सनत्कुमारका स्थान पवित्र कनखल तीर्थ है उधरही पुरुरवा नामक पर्व्वत है वहीं राजा पुरुरवा गये थे, हे राजन् ! उधरही महर्षि सेवित भृगुतुङ्ग नामक पर्व्वत है, वहीं महात्मा भृगुने तप किया था। हे भरतकुलसिंह ! जो भूत, भविष्यत् और वर्त्तमान कालमें स्थिर रहनेवाले सनातन नारायण विष्णु पुरुषोत्तम हैं, उनही महायशस्वो विष्णुकी पवित्र शिला भी उधरही है। हे राजन् ! उसी देशमें तीनोलोक विख्यात एवम् पवित्र आश्रम है, जहां गङ्गाका उष्णजल बहता है, यह जल पहले ठण्ढा था। हे राजन् वदरिकाश्रमके पास सुवर्ण सिकता नामक तीर्थ है,जहाजाकर महाभाग महातेजस्वी ऋषि और देवता लोग परमेश्वर नारायणको प्रणाम करते हैं, जहां परमात्मा सनातन देवनारायण वास करते हैं, वहां सब जगतके पवित्र तीर्थ रहते हैं उस स्थान पवित्र ब्रह्मतीर्थ और तपका वन है, वह स्थान सब पुरुषोंका परमेश्वर और परमपवित्र है, वहां ही पर साक्षात परमेश्वर निवास करते हैं, जिनको जानकर शास्त्रको देखनेवाले महात्मा लोग सोचसे छूटजाते हैं, वेही सब जगतके उत्पन्न करने वाले सबसे उत्तम और सनातन देव हैं, जहां आदि योगी नारायण विराजमान हैं वहां सब देवता ऋषि, सिद्ध और तपोधन मुनि निवास करते हैं, हे महाराज ! यह स्थान पवित्रोंसे भो अधिक पवित्र है, इस विषयमें आपको कुछ भी शङ्का न होनी चाहिये, हे पृथ्वीनाथ ! इस पृथ्वीमें इतनेही पवित्र तीर्थ हैं। हे महाराज ! हमने जो यह पवित्रतीर्थ आपसे वर्णन किये इन सबमें वसु, साध्य, सूर्य्य वायु, अश्विनो कुमार और महात्मा देवतोंके समान ऋषि लोग निवास करते हैं। हे कुन्तीनन्दन ! इन तीर्थोंमे आप ब्राह्मण और महाभाग भाइयोंके सहित आनन्दसे घूमिये ।

९० अध्याय समाप्त ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे कौरवनन्दन जहां धौम्य मुनि युधिष्ठिरसे ऐसा कह रहे थ, उस स्थानमें महातेजस्वी लोमश मुनि आये उनको देखतेही राजा युधिष्ठिर अपने पुरुष और ब्राह्मणोंके सहित इस प्रकार खड़े हुए जैसे महाभाग इन्द्रको आते देख स्वर्गमे देवता लोग खड़े हो जाते हैं। धर्मराज महाराज युधिष्ठिरने उनकी यथा योग्य पूजा करके उनके घूमने और वहां आनेका प्रयोजन पूछा महामनस्वो लोमश मुनिने पाण्डुपुत्रका प्रश्न सुनके पाण्डवोंको प्रसन्न करते हुए मीठी वाणीसे यों कहा, हे कुन्तिनन्दन ! मैं अपनी इच्छासे सब लोकोंमें घूमता हूं, अभी इन्द्रके स्थानमें गया था, वहां इन्द्रको देखा, वहीं तुम्हारे भाई वीर अर्जुनको इन्द्रके आधे आसन पर बैठे हुए देखा, हे पुरुषशार्दूल अर्जुनको

ऐसा देखकर मुझे महा आश्चर्य हुआ, तब इन्द्रने मुझसे कहा कि तुम पाण्डवोंके पास जाओ, सो अब मैं महात्मा इन्द्र और अर्ज्जुनकी आज्ञासे भाइयोंके सहित आपके देखनेको आया हूं, हे पाण्डुनन्दन! हे तात! हे राजन्! जो कुछ मुझे कहना है सो आप द्रौपदी और ऋषियोंके सहित सुनिये, हे नाथ। हे भरतकुलसिंह! आपने अर्ज्जुनको जिस अस्त्रके निमित्त भेजा था, वह असाधारण अस्त्र उन्होंने शिवसे ले लिया, उन्होंने अपने तपसे शिवको वहीं बुलाया था, जो अस्त्र महा कठोर और अमृतसे उत्पन्न हुआ है वही ब्रह्मसिर अस्त्र अर्ज्जुनको शिवसे मिला है, हे युधिष्ठिर! अर्ज्जुनने उस शस्त्रको मन्त्र, संहार और प्रायश्चित्तके सहित सीखा है। हे कुरुनन्दन! अर्ज्जुनको इन्द्र, वरुण, यम, और कुवेरसे वज्र और दण्ड आदिक सब शस्त्र मिल गये हैं, महापराक्रमी अर्ज्जुनने औरभी दिव्य अस्त्र शीख लिये हैं और विश्वावसुपुत्रसे नाचने गाने और बजानेकी विद्याको अच्छी प्रकार सीख लिया है, इस प्रकार तुम्हारे छोटे भाईसे छोटा भाई कुन्तीपुत्र अर्ज्जुन अस्त्रविद्या और गन्धर्व्व विद्याको सीखकर सुखसे स्वर्गमें रहते हैं और हे युधिष्ठिर! मुझको देवराज इन्द्रने जिस निमित्त आपके पास भेजा है, सो सुनिये मुझसे उन्होंने यों कहा है कि हे द्विजोत्तम! आप मनुष्य लोकमें जाकर मेरे वचनानुसार युधिष्ठिरसे ऐसा कहियेगा कि, आपके भाई अर्ज्जुन शीघ्रही शस्त्रोंको सीख और जो कार्य्य देवतासे नहीं हो सकता है, उस भारी देवकार्य्यको करके आपके पास आवेंगे, इतनेमें आपभी भाइयोंके सहित तप कीजिये, क्योंकि जगत्‌में तपके बराबर कोई वस्तु नहीं है, तपहीसे परम पद मिलता है; हे भरतकुलसिंह! हम सत्यधारी महा वीर्य्यवान, महायुद्धमें असमान ... महायुद्धोंके जाननेवाले महाधनुषधारी वीर महा अस्त्रवाले सुन्दर स्वामकार्त्तिक समान सूर्य्यके पुत्र कर्णको अच्छी प्रकार जानते हैं, तैसेही ऊंचे कन्धोंवाले जन्महीसे महापराक्रमी अर्ज्जुनकोभी हम भली भांति जानते हैं। हे वीर! यह निश्चय है कि कर्ण अर्ज्जुनसे सोलह भागके समानभी योद्धा नहीं है, जब अर्ज्जुन आवें तब वह भय जो कर्णकी ओरसे आपके हृदयमें है, सबही निकल जायगा। हे शत्रुनाशन आपके मनमें जो तीर्थ यात्राकी इच्छा है सो निःसन्देह लोमश ऋषि आपसे सब वर्णन करेंगे। हे भारत! तपकरनेसे और तीर्थोंमें जानेसे क्या क्या फल होते हैं, सो सब महर्षि लोमश आपसे कहेंगे, परन्तु आप उनके वचनोंको झूठा न समझियेगा।

९१ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे युधिष्ठिर! अब अर्ज्जुनने जो कुछ आपसे कहा है सो आप सुनिये, उन्होंने कहा है, कि हे लोमश! आप मेरे भाई युधिष्ठिरको धर्म्मकी शोभाका उपदेश कीजिये, हे तपोधन! आप परम धर्म्म तप और श्रीमान् राजा लोगोंके सनातन धर्म्मको अच्छी प्रकार जानते हैं, आप परम पवित्र धर्म्मको उत्तम रीतिसे जानते हैं, इसही लिये पुण्य तीर्थोंमें पाण्डवोंके सङ्ग जानेका कार्य्य आपको समर्पण करते हैं, जिस प्रकार महाराज तीर्थोंमें जाय और गौ दान करें, आप सब प्रकारसे वैसाही यत्न कीजियेगा, और यहभी कहा है कि, घोर वन और दुःखसे जाने योग्य स्थानोंमें आप राक्षसोंसे महाराजकी रक्षा कीजियेगा, आपसे रक्षित होकर महाराज सब तीर्थोंमें जा सकेंगे. जिस प्रकार दधीच मुनि इन्द्रके सङ्ग और सूर्य्यके सङ्ग अङ्गिरा मुनि रहते हैं, हे द्विजोत्तम! तैसेही आपभी पाण्डवोंके सङ्ग रहकर उनकी रक्षा कीजिये, क्योंकि पर्व्वतोंके समान शरीरवाले अनेक राक्षस लोग अर्मोमें

निवास करते हैं, राजाको आपसे रक्षित देख-कर वे लोग उन्हें अपने घरोंमें न ले जा सकेंगे। सो अब मैं आपके सङ्ग सब तीर्थोंको जाऊंगा, और वहां सब भयोंसे आपकी रक्षा करूंगा। हे कुरुनन्दन! मैंने सब तीर्थोंको दो दो बार देखा है, अब तीसरी वार आपके सङ्ग चलकर देखूंगा, हे महाराज! हे युधिष्ठिर! यह तीर्थ-यात्रा पुण्य करनेवाले मनुआदिक राजऋषि-योंसे सेवित और भयको नाशकरनेवाली है, हे कौरव्य! इन तीर्थोंमें टेढा, पापी, मूर्ख, पातकी और दुष्टबुद्धि पुरुष स्नान नहीं कर सकता है, आप सत्य बोलनेवाले, धर्म्मज्ञ, और सदासे धर्म्मवृद्धि हैं, इन तीर्थोंको करनेसे आप फिरभी सबके सङ्गसे अलग हो जायंगे! हे पाण्डव! हे कुन्तीनन्दन! राजा भगीरथ, राजा ययाति और गय आदिक राजा लोग जैसे थे वैसेही तुमभी हो।

युधिष्ठिर बोले, मैं इतना प्रसन्न हुआ हूं आपकी इस बातका कुछ उत्तर नहीं दे ता, क्योंकि जिसका स्मरण इन्द्र करें, उससे क प्रारब्धी कौन होगा? जिसको आपका न हो, जिसका भाई अर्जुन हो और जिनका स्मरण करें उससे अधिक प्रारब्धी और न होगा, जो भगवान इन्द्रने मुझको तीर्थ नेकी आज्ञा दी है, सो तो धौम्य मुनिके नमें मैंने पहलेही विचारा है। हे ब्रह्मण! यह निश्चय कर लिया है कि जिस दिन प चलनेकी इच्छा करेंगे मैंभी उसी दिन र्थ यात्राको चलूंगा। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले धिष्ठिरके चलनेकी इच्छा देख लोमश मुनि [illegible] कि हे महाराज! आप थोड़े पुरु-[illegible] सङ्ग लीजिये, क्योंकि थोड़े पुरुष [illegible] सुखसे चलना होगा। युधिष्ठिर बोले, जो [illegible] और [illegible] भीख मांगकर खाते हैं, और [illegible] मार्गका परिश्रम और शीतके [illegible] नहीं सह सकते, जो ब्राह्मण मीठा भोजन करते हैं, जो पकेहुए अन्नमें चटनीमें पानीको वस्तुओंमें और मांसमें अच्छे बुरेका विचार करते हैं, वे सब लौट जायं और वे लोग भी हमारे संगसे लौट जायं जो रसोई बनानेवालोंके सहायक हैं, जो लोग हमसे यथोचित वृत्तिपाते हैं, वे भी हमारे संगसे लौट जायं, जो राज्यके लोग राजभक्तिके कारण हमारे सङ्ग हैं, वे सब महाराज धृतराष्ट्रके पास चले जाय, वे उन सबको समयके अनुसार जो जिसका वेतन है देंगे, यदि वे महाराज उन पुरुषोंको उचित-वेतन न देंगे तो हमारे प्यारे काम करनेवाले धृष्टद्युम्न सबका पालन करेंगे। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उसी समय अनेक राज्यवासी लोग राजाकी आज्ञाके बोझसे पीड़ित होकर अनेक ब्राह्मण यती और प्रधान लोग हास्तिनापुरको चले गये, उन सबको राजा युधिष्ठिरके प्रेमसे अम्बिकापुत्र महाराज धृतराष्ट्रने अपने यहां रख लिया और धनदेकर सन्तुष्ट किया, अनन्तर कुन्तीपुत्र महाराज युधिष्ठिर थोड़े ब्राह्मणोंके सहित प्रेमपूर्व्वक लोमश मुनिके सङ्ग तीन दिन काम्यकवनमें और रहे।

९२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कुन्तीपुत्र महाराज युधिष्ठिरको चलते हुए देख वनवासी तपस्वी उनके पास आकर ऐसा बोले, हे राजन्! आप भाइयोंके सहित लोमश मुनिको सग लेकर पवित्र तीर्थोंको जानेवाले हैं, हे पाण्डव! हे महाराज! आपको उचित है कि हम लोगों-को भी सङ्ग ले चलिये, क्योंकि हम लोगोंके विना आप सिंहादि जन्तुओंसे भरे हुए दुःखसे जाने योग्य घोर अगम्य तीर्थोंमें नहीं जा सकेंगे, हे नरनाथ! हे कौरव! आपके भाई लोग बड़े सूरवीर धनुधारियोंमें श्रेष्ठ हैं, आप लोगों-से रक्षा पाकर हम लोग भी तीर्थ कर [illegible], हम लोग आपहीकी कृपासे तीर्थ इन

और स्थानोंका पवित्र फल पावेंगे। हे नरनाथ! आपकी कृपासे हम लोग रक्षित होकर तीर्थोंमें स्नान करके पापोंसे छूट पवित्र होंगे, हे नरनाथ। आपभी महाराज कृतवीर्य्यके पुत्र, राजर्षि अष्टक, लोमपाद और चक्रवर्ती वीर राजा भरतकी गतिको प्राप्त हूजियेगा, वह लोक परम कठिनतासे प्राप्त होते हैं। हे पृथ्वीनाथ! हम लोग आपके सङ्ग जाकर प्रभास तीर्थ, महेन्द्र आदिक पर्व्वत, गङ्गा आदिक नदी और प्लक्ष आदिक वृक्षोंके देखनेकी इच्छा करते हैं, यदि आपको ब्राह्मणोंमें कुछभी प्रेम हो तो महाराज! हमारे इन बचनोंको स्वीकार कीजिये इससे आपका कृत कल्याण होगा, हे महाबाहो! वे सब तीर्थ तप नाश करनेवाले राक्षसोंसे भरे हैं। उन सबमें आप हमारी रक्षा करनेके योग्य हैं, जो तीर्थ धौम्यने और बुद्धिमान नारदने जो तीर्थ कहे थे, वेही महा तपस्वी देवर्षि लोमशनेभी कहे, हे नरनाथ! आप विधिपूर्व्वक उन तीर्थोंका दर्शन कीजिये और हम लोगोंको भी सङ्ग ले लीजिये, लोमश मुनि सबकी रक्षा करेंगे। राजा उन मुनियोंके वचन सुनकर आसुओंसे नहा गये, अनन्तर वीर भीमसेन आदिक भाइयोंकी सम्मती लेकर पाण्डव सिंह युधिष्ठिरने कहा कि बहुत अच्छा, अनन्तर लोमश और पुरोहित धौम्यकी आज्ञा लेकर अपने भाई और सुन्दराङ्गी द्रौपदीके सहित महाराजने उस वनसे चलनेका विचार किया, उसी समय महाभाग व्यास, पर्व्वत और नारद, काम्यक वनमें युधिष्ठिरको देखनेकी इच्छासे आये, महाराज युधिष्ठिरने उन सबकी पूजा उचित विधिसे करी। अनन्तर महाभाग मुनीश्वर लोग युधिष्ठिरसे पूजित होकर ऐसा कहने लगे, ऋषि लोग बोले, हे युधिष्ठिर! हे भीम! हे नकुल! हे सहदेव! आपलोग अपने मनको शान्त कीजिये, मनको पवित्र करके शुद्ध होकर तीर्थोंको जाइये, मुनियोंने कहा है। कि शरीर शुद्ध होनेहीसे व्रत हो सकता है, ब्राह्मणोंने कहा है कि मन पवित्र होनेसे जो बुद्धि शुद्ध होती है, उसीको मुनीश्वर लोग देवव्रत कहते हैं, हे नरनाथ! शुद्ध मनही पवित्रताका कारण है, आप लोग अपनी बुद्धिको पवित्र और सबकी मित्र बनाकर तीर्थोंको जाइये, जब आपलोग शरीरके नियम और व्रतोंसे शुद्ध होंगे और पूर्वोक्त देवव्रत धारण करेंगे, तब तीर्थोंका यथायोग्य फल पावेंगे। अनन्तर द्रौपदीके सहित पाण्डवोंने प्रतिज्ञा करी कि हम ऐसाही करेंगे, तब देव ऋषि और ब्राह्मणलोग स्वस्ति पाठ करने लगे, हे राजेन्द्र! अनन्तर वीर पाण्डवोंने लोमश व्यास, नारद और पर्व्वतके चरणोंमें प्रणाम किया, अनन्तर अगहन मास समाप्त होतेही धौम्य ऋषि और उन वनवासी ऋषियोंके सहित चले, जटा और मृगचर्म्मधारी पाण्डवलोगने न टूटने योग्य कवच पहन और लाठी हाथमें लेकर चले, उनके सङ्ग पन्द्रह रथ थे, और इन्द्रसेन आदिक सारथी, रसोइया, सेवक और प्रधान प्रधान कर्म्मचारीभी सङ्ग थे, हे जनमेजय! वे सब लोग शस्त्र लिये, कवच बान्धे वाण भरे तूणीर लगाये पूर्व्वकी ओर मुह करके चले।

९३ अध्याय समाप्त।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे मुनिसत्तम! यद्यपि हम ऐसे दुःखमें पड़े हैं, कि दूसरे राजाको कभी ऐसा दुःख न हुआ होगा तौभी हम अपनेको उत्तम गुणोंसे हीन नहीं समझते, हे लोमश! हम जानते हैं, कि हमारे शत्रुलोग अधर्म्मी और गुणहीन हैं, तौभी न जाने उनकी वृद्धि क्यों होती जाती है। श्रीलोमश मुनि बोले, हे राजन्! हे कुन्तीपुत्र! अधर्म्मी पुरुष अधर्म्महीसे बढ़ते हैं, इसमें आपको कदापि दुःख न करना चाहिये, क्योंकि यह नियम है कि पुरुष पहले अधर्म्मसे बढ़ता है, फिर उस

सुख मिलता है, पश्चात् वह शत्रुओंकी जीतता है, तब उसके पीछे जड़के सहित नष्ट हो जाता है, हे पृथ्वीनाथ। मैंने अनेक राक्षस और दैत्योंको देखा है, कि पहले वह अधर्म्मसे बढ़ और नष्ट होगये। हे नाथ। मैंने पहले सत-युगमें देखा था कि देवतोंने धर्म्मको धारण किया और राक्षसोंने धर्म्मको छोड़ा, हे भारत। देवता लोग तीर्थमें गये और राक्षस लोग न गये, उनको अधर्म्मका अभिमान पहलेही हो गया था अहङ्कारसे अभिमान, अभिमानसे क्रोध, क्रोधसे निर्लज्जता, निर्लज्जतासे दुष्कर्म्मोंमें प्रवृत्ति और दुष्कर्म्म करनेसे उनका सर्व्वनाश होगया, उन अधर्म्म, निर्लज्ज और मिथ्या व्रत-धारियोंको लक्ष्मी और धर्म्मने शीघ्रही छोड़ दिया अनन्तर लक्ष्मी देवतोंके यहा और दरिद्र राक्षसोंके यहां वास करने लगा, अनन्तर अभि-मानसे नष्ट चित्तवाले लक्ष्मीहीन दैत्य और दानवोंके यहां कलियुगने वास किया, उन लक्ष्मी रहित, कलिसहित अभिमानसे नष्ट, पाप और बुद्धिहीन राक्षसोंका शीघ्रही नाश होगया, राक्षस लोगोंका यश हीन होनेसे सर्व्व-नाश होगया, तब देवता लोग समुद्र, नदी, और तालाब आदि पवित्र स्थानोंमें तीर्थ करनेको गये क्योंकि देवता लोग धर्म्मवान थे, हे पाण्डव। देवता लोगोंने तप, यज्ञ, दान और आशिर्व्वा-दसे अपने सब पापोंको दूर किया और अनेक आनन्दोंको प्राप्त किया इसी प्रकारसे देवता लोग आनन्दके सहित विहार करने लगे लोग तीर्थोंमें घूमने लगे इसीसे उनको परम लक्ष्मी मिली हे राजेन्द्र। इसी प्रकार भाइयोंके सहित तीर्थोंमें स्नान करके उत्तम लक्ष्मीको प्राप्त कीजियेगा। हे राजन् जैसे नृग, शिवि औशीनर भगीरथ, वसु नन्द और पुरूरवा आदि राजोंने पवित्र होकर तपस्या करी थी और तीर्थ स्नानादिकोंके दानसे पवित्रहुए थे तैसेही आपभी पवित्र हूजियेगा, हे प्रजा-नाथ। जिस प्रकारसे उनको लक्ष्मी यश और पुण्य मिले थे वैसेही आपको बहुत लक्ष्मी मिलेजी, जैसे इक्ष्वाकुने पत्र और बान्धवोंके सहित आनन्द किया था, जैसे मुचकुन्द, मान्धा-ता और राजा मरुतने पवित्र कीर्त्तिको लाभ किया था और जैसे तपस्याके बलसे देवता और देवऋषि लोग आनन्द करते हैं, तैसेही आप भी आनन्द कीजियेगा, जैसे राक्षस लोग नष्ट होगये, तैसेही धृतराष्ट्रके पुत्रभी अधर्म्म और मोहके वशमें होनेसे निसन्देह शीघ्रही नष्ट होंगे।

९४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, वीर पाण्डव लोग सब पुरुषोंके सहित इस प्रकार क्रमसे जहां तहां बसते हुए नैमिषारण्य तीर्थमें पहुंचे। हे भारत। हे राजन्। हे जनमेजय। पाण्डव लोगोंने उस तीर्थमें जाकर गोमतीमें स्नान किया और अनेक गौ तथा बहुत धन दान किया। अनन्तर कन्या तीर्थ, अश्वतीर्थ, गो तीर्थ, कालकोटि और विषप्रस्थ पर्व्वतमें जाकर पितर और देवतोंकी पूजा करी तथा ब्राह्म-णोंको बहुत दान देकर तृप्त किया, हे पृथ्वी-नाथ। वहांसे चलकर उन लोगोंने बाहुदा-नदीमें स्नान किया। हे पृथ्वीनाथ। वहांसे देवतोंके यज्ञ स्थान प्रयागमें पहुंचे, वहां जाकर स्नान करके व्रत और उत्तम तप किया, सत्य वादी पाण्डवोंने गङ्गा और यमुनाके सङ्गममें स्नान करके ब्राह्मणोंको बहुत धन दान किया वहांसे महात्मा पाण्डव लोग मुनि सहित प्रजापतिकी वेदी पर गये, हे राजन्। हे भारत। उस स्थानमें ब्राह्मणोंके सहित पाण्ड-वोंने जाकर निवास और उत्तम तप किया, हे राजन्। इस प्रकार ब्राह्मणोंको बनचारी पुरुषोंके साथ और उत्तम धर्म्म सन्तुष्ट करने

हुए पाण्डव लोग गयामें पहुंचे, जहां धर्म्मज्ञ महात्मा राजागयने पर्व्वतका संस्कार किया है, हे महातेजस्विन्। वहीं राजर्षि पुण्यात्मा राजागयने अपने नामसे गयसिर नामक तीर्थ स्थापन किया है, वहीं वेत्र वृक्षोंसे शोभित उत्तम घाटवाली रमणीय फल्गु नामक महा नदी है, जहां पवित्र शिखावाला उत्तम दिव्य पर्व्वत है, वहीं पर मुनि सेवित उत्तम ब्रह्मसर नामक तीर्थ है, जहांसे भगवान अगस्त्य मुनि सूर्य्यके पास गये थे, हे पृथ्वीनाथ। वहीं पर सनातन धर्म्मराज युधिष्ठिरने बास किया उसके पासही सब नदियोंका एक सोता है, जहां पर साक्षात पिनाकधारी महादेव सदा वास करते हैं, वहा वोर पाण्डवोंने वर्ष भर वास किया, उस स्थान पर रहकर महात्मा युधिष्ठिरने ऋषि यज्ञ किये, जहां महा अक्षयबट है, जिसका फल अक्षय है, जहा यज्ञ करनेसे अक्षय पुण्य होता है उसी स्थानमें युधिष्ठिरने वहां यज्ञ किया था और सब लोगोंने स्थिर मन होकर व्रतभी करे थे, उस समय उस देशके तपोधन सहस्रों ब्राह्मण युधिष्ठिरके पास आये थे, उस समय महाराजे युधिष्ठिरने वेदोक्त विधिके अनुसार उस यज्ञकी समाप्त करके तेज और तपसे भरे हुए सब वेदोंके जाननेवाले ब्राह्मणोंसे महात्माओंकी सभामें बैठकर पवित्र वार्त्तालापभी किया था, उस सभामें विद्या और व्रतसे पूर्ण ब्रह्मचारी समठ मुनिने अमूर्त्तरयसके पुत्र राजा गयकी कथा इस प्रकार कही, समठ बोले, हे भारत। राजा अमूर्त्तरयस के पुत्र राजर्षिश्रेष्ठ राजा गयने जो जो पुण्यकर्म्म किये थे, सो मैं आपसे कहता हूं आप सुनिये, हे राजन्। राजा गयने यहा पर बहुत अन्न और दक्षिणाके सहित यज्ञ की थी, हेमूँ पहाड़के समान सैकड़ो अन्नके ढेर आपलोगहा घोव और दहीकी सैकड़ों नहर पवित्र क जहा बहु मूल्यवाले पके हुए अन्नोंके प्रवाह बह रहे थे, हे राजन्। वह राजा रोज रोज ऐसाही दान प्रति दिन देता था हे भारत। जब वह दक्षिणा देते थे तो वेदका शब्द आकाश [illegible] पूरित हो जाता था, उस समय वेदके शब्द सिवाय और कुछ नहीं सुनाई देता था, [illegible] राजन्! उस पवित्र शब्दसे आकाश और दश दिशा पूरित होजाती थीं, यह अद्भुतकर्म्म नित्यही करते थे। हे भरतकुल सिंह। जिस अन्न और पानसे तृप्त होकर सब देशके पुरुष लोग उनहीको वार्त्ता करते थे, [illegible] गयके यज्ञमें कौनसे पुरुषकी खानेकी इच्छा रह गई? बचे हुए भोजनके इक्कीस पहाड़ समान ढेर पड़े हैं, वहा तेजस्वी राजर्षि गय जैसी यज्ञ करो, वैसी न किसीने की और करेगा। राजा गयकी यज्ञमें देवता लोग ऐसे तृ[illegible] हुए कि दूसरी यज्ञमें भोजन करनेकी इच्छा उनको न रही, जैसे बालूके, कनके, जैसे आकाशके तारे और जैसे बरसते हुए मेघकी धाराके कोई नहीं गिन सकता, तैसेही राजा गयके दक्षिणाओंको भी कोई नहीं गिन सकता है। [illegible] कुरुनन्दन। इसीप्रकारसे राजा गयने इस ताला[illegible] वके तटपर अनेक यज्ञ करी है।

९५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर बहुत दक्षिणा देनेवाले कुन्तीपुत्र महाराज युधिष्ठिर वहांसे चले और अगस्त्याश्रममें पहुंचकर दुर्ज्ज-यास्थान (जहां अगस्त्यने वातापीको माराथा) में ठहरे, वहीं कहनेवालोंमें श्रेष्ठ। धर्म्मराजने लोमशसे प्रश्न किया कि अगस्त्य मुनिने इस स्थान पर वातापीको क्यों मारा था? कहिये उस मनुष्योंके नाश करनेवाले राक्षसमें क्या शक्ति थी? और महात्मा अगस्त्य मुनिको किस निमित्त क्रोध हुआ था? श्रीलोमश मुनि बोले, हे कौरवनन्दन। इस मणिमति पुरीमें पहले

समयमें इल्वल नामक राक्षस हुआ था, वातापी उसका पुत्र था, उसने एक तपस्वी ब्राह्मणसे कहा कि हे भगवन्! आप इसे आशिर्व्वाद दीजिये कि जिससे मेरे इन्द्रके समान बेटा हो, परन्तु उस ब्राह्मणने उसको इन्द्रके तुल्य बेटा न दिया, इससे राक्षसने ब्राह्मणके ऊपर महा क्रोध किया। हे राजेन्द्र! उसी दिनसे ब्राह्मणभक्षी इल्वल राक्षसने यह उपाय किया कि अपने भाईको मायासे बकरा बनाया, वह वातापी नामक राक्षस उसी समय बकरा बन गया, तब इल्वलने उसको काटकर भोजन बनाकर ब्राह्मणोंको खिला दिया, उसके खानेसे सब ब्राह्मण मर गये, उसको यह आशीर्व्वाद था कि जिस मरे हुए पुरुषका नाम लेकर वह पुकारे सो फिर शरीरधारण करके जीता हुआ बोलने लगता था, अनन्तर एक दिन उसने अपने भाईको बकरा बनाकर उसी भोजनमें सिद्धकर उसी ब्राह्मणको खिला दिया, भोजनके पश्चात इल्वलने अपने भाई वातापीका नाम लेकर ऊंचे स्वरसे पुकारा, तब वह ब्राह्मण घातक, बलवान, मायावी वातापी अपने भाईका ऊंचा स्वर सुनकर उस ब्राह्मणका पेट फाड़कर उसी समय बाहर निकल आया, हे राजन्। हे प्रजानाथ! वह महा असुर वातापी ब्राह्मणके पेटसे बाहर निकलकर हंसने लगा, हे राजन्! इस प्रकार वह दुष्ट इल्वल प्रति दिन ब्राह्मणोंको भोजन कराकर उनका नाश करने लगा। एक दिन भगवान् अगस्त्य मुनिने देखा कि सब पितर लोग नीचा शिर किये गढ़ोंमें पड़े हैं, तब उन्होंने पूछा कि आप लोगोंकी यह क्या दशा है? वेदपाठी [illegible] कांपते हुए कहा कि हमारी सन्तान [illegible] गई इसी लिये हम इस आपत्तिमें पड़े हैं। हे अगस्त्य! हम तुम्हारे पितर हैं, [illegible] कोई पुत्र नहीं है, इसीसे हम इस [illegible] हैं यदि तुम पुत्र नहीं उत्पन्न करोगे तो हम नर्कसे न छूटेंगे, इस लिये तुम पुत्र उत्पन्न करो। सत्यवादी तेजस्वी अगस्त्य मुनिने कहा कि हे पितर लोगो! हम आप लोगोंकी आज्ञा पालेंगे, आप लोग अपने मानसिक दुःखको दूर कीजिये, अनन्तर भगवान् अगस्त्य ने विचारा कि मैं कौनसी स्त्रीसे विवाह करूं? उन्होंने पुत्र उत्पन्न करनेके निमित्त कोई स्त्री अपने समान न पाई, उन्होंने सतोगुणके सब भागोंको लेकर, उन्हीं उन्हीं शरीरोंसे एक स्त्री रची, उसको रचकर महा तपस्वी अगस्त्य मुनिने उस स्त्रीको तप करते हुए विदर्भराजको अपने निमित्त दे दिया, हे राजन्! वह कन्या बिजुलीके समान सुन्दर शरीर वाली और उत्तम मुखारविन्दवाली राजाके घरमें उत्पन्न हुई, राजा विदर्भने उसको उत्पन्न हुई देख प्रसन्नतापूर्व्वक सब ब्राह्मणोंसे कह सुनाया। हे पृथ्वीनाथ। यह सुन सब ब्राह्मण बहुत प्रसन्न हुए और उस कन्याका नाम लोपामुद्रा रक्खा। हे राजन्। यह सुन्दर रूपवाली कन्या अपने पिताके घरमें ऐसे बढ़ने लगी, जैसे जलमें कमलिनी और अग्निमें ज्वाला। जब वह यौवन अवस्था प्राप्त हुई तो अलङ्कार सहित सौ कन्या और सौ उत्तम दासी उसके सग रहने लगीं। वह तेजस्विनी लोपामुद्रा उन सौ कन्या और सौ दासियोंके बीचमें ऐसी शोभित हुई जैसे आकाशमें रोहिणी, हे महाराज। उस शील पवित्र और आचारसे भरी हुई कन्याको यौवन अवस्था आने परभी महात्मा अगस्त्यके भयसे किसीने अपनी स्त्री न बनाया, उस सत्यवती लोपामुद्राने अपने रूपसे अप्सराओंको और शीलसे अपने पिता और वंशके पुरुषोंको प्रसन्न किया, अपनी पुत्रीको यौवन अवस्थामें देख विदर्भ राजने विचार किया कि इसे किसको दूं।

९६ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमशमुनि बोले, जब अगस्त्य मुनिने देखा कि लोपामुद्रा गृहस्थीके योग्य हुई तो विदर्भ राजके पास जाकर ऐसा बोले। हे राजन्! पुत्र उत्पन्न होनेकी इच्छासे मैं विवाह करना चाहता हूं, इसी निमित्त आपके यहां आया हूं, आप लोपामुद्राको मुझे दे दीजिये, मुनिके ऐसे वचन सुनकर राजा चेतना रहित होगये और कुछ उत्तर न दे सके, राजाने मुनिको लोपामुद्रा देना स्वीकार न किया, अनन्तर राजाने अपनी स्त्रीसे सब समाचार कह सुनाया और यहभी कहा कि यदि मुनीश्वर क्रोध करेंगे तो सबको भस्म कर देंगे। माता पिताको इस प्रकार दुखी देख। लोपामुद्रा बोली कि हे पित.! आप मेरे निमित्त कुछ दुःख मत कीजिये मुझे अगस्त्यको देकर अपना उद्धार कीजिये। हे प्रजा-नाथ! पुत्रीके वचन सुन विदर्भराजने विधिपूर्वक लोपामुद्राका विवाह अगस्त्यके सङ्ग कर दिया। अगस्त्य मुनिने लोपामुद्रा को प्राप्त करके उससे ऐसे वचन कहे कि तुम बहुत मूल्यवाले वस्त्र और भूषणोंको उतार दो, उसने अपने पतिके वचन सुनकर सुन्दर और बहुत मूल्यवाले वस्त्र एवं भूषण उतार दिये, अनन्तर उस कमल-नैनोंको लिये लम्बे केश शोभायमान जङ्घावाली लोपामुद्राने वकलेके बने हुए वस्त्र और हरि-नकी खालका ओढा, वह विशालनैनी ठीक अपने पतिके समान रूपवाली बन गई। अन-न्तर महात्मा अगस्त्य मुनि अपनी अनुकूल स्त्रीके सहित गङ्गाद्वारमें जाकर महा घोर तप करने लगे, लोपामुद्राभी अपने पतिसे परम मान पाकर उनकी सेवा करने लगी तैसेही भगवान अगस्त्यभी अपनी स्त्रीसे परम प्रेम करने लगे। इस प्रकार बहुत समय बीतने पर भगवान अगस्त्य मुनिने तपसे भरी हुई लोपामुद्राका एक समय ऋतुके पश्चात् स्नान कि[illegible] ए देखा, भगवान अगस्त्य मुनि उसकी सेवा, पवित्रता, इन्द्रियनिग्रह, शोभा औ[र] रूपसे प्रसन्न होकर उससे मैथुन करनेक[ी] इच्छा करने लगे, तब लोपामुद्राने हाथ जो[ड़] कर लज्जा से भरकर नम्र भावसे भगवा[न] अगस्त्यसे ऐसे वचन कहे कि निःसन्देह प[ति] सन्तानहोके निमित्त स्त्रीका विवाह करता [है] और जो आपकी इच्छा है, सो काम आप मे[रे] सङ्ग कर सकते हैं, परन्तु हे विप्र! मैं अप[ने] पिताके घरमें बहुत अच्छे स्थानमें रहती [थी] आप तैसेही स्थान और शय्या पर मेरे स[ाथ] मैथुन करनेको योग्य हैं, मेरी इच्छा है, [कि] उत्तम भूषणोंसे भूषित, उत्तम मालाधा[री] आपके सङ्ग मैंभी दिव्य आभूषण पहनक[र] इच्छानुसार विहार करूं, अन्यथा यह गेर[ुए] रङ्गे कपड़े पहनकर मैं आपके संग विहार नह[ीं] करूंगी, हे विप्र ऋषे! यह वस्त्र और आभूष[ण] समयके योग्य नहीं हैं। श्रीअगस्त्य मुनि बो[ले] कि हे लोपामुद्रे! हे कल्याणि! हे सुमध्य[मे] मेरे और तेरे घरमें इतना धन नहीं है, [कि] जितना तेरे बापके घरमें था। लोपामुद्रा बोल[ी] हे तपोधन! आप अपने तपके बलसे जगतक[ा] जितना धन है, उस सबको एक क्षण भरमें [ला] सकते हैं। श्रीअगस्त्य मुनि बोले, य[ह] तुम्हारा कहना सत्य है, परन्तु ऐसा करनेसे मेरा तप क्षीण हो जायगा, इस लिये ऐस[ा] उपाय बतलाओ जिसमें मेरा तप नष्ट न हो लोपामुद्रा बोली हे तपोधन! मेरी ऋतुक[ा] बहुत थोड़ा समय बाकी रहा है, और इस प्रकारसे मैं तुम्हारे पास आनेकी कदापि इच्छ[ा] नहीं करती हूं और तुम्हारे धर्मकोभी न[ष्ट] करना नहीं चाहती हूं, इस लिये मैंने जो कह[ा] सो पूर्ण कीजिये श्रीअगस्त्य मुनि बोले, हे सुभगे हे कल्याणि! यदि तुमने अपने मनमें ऐसाह[ी] निश्चय किया है, तो मैं धन लेनेको जाता [हूं] तुम यहां रहो।

९७ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे कौरव्य ! अनन्तर अगस्त्य मुनि राजा श्रुतपर्वाको सब राजोंसे अधिक जान उन्हींके यहां धन मांगनेको गये, राजा श्रुतपर्वाने जब सुना कि अगस्त्य मुनि आये हैं, तो अपने मन्त्रियोंके सहित कार्य्यके अन्तमें सत्कारपूर्व्वक उनको लेनेको गये, राजाने विधिपूर्व्वक उनकी पूजा करके हाथ जोड़ बूझा कि कहिये आपने कैसे कृपा करी ? श्रीअगस्त्य मुनि बोले, हे राजन् ! हम आपके यहां धन मांगनेकी इच्छासे आये हैं, जिससे दूसरेको दुःख न हो इतना धन आप अपनी शक्तिके अनुसार हमको दीजिये । श्रीलोमश मुनि बोले, तब उस राजाने अपनी प्राप्ति और व्यय अगस्त्य मुनिसे कह सुनाई और कहा कि हे विद्वन् ! यदि इसमेंसे आप उचित समझें, तो धन ले जाइये । अनन्तर अगस्त्य मुनिने उसका आय और व्यय समान जानकर किसीको दुःख देना उचित न जाना अनन्तर राजा श्रुतपर्वाको अपने संग ले राजा, ब्रध्नश्वके यहां गये । राजा ब्रध्नश्वने इन दोनोंको विधिपूर्व्वक अपनी सीमापर आकर ग्रहण किया, पूजा करनेके पश्चात् राजा ब्रध्नश्वने दोनोंसे कहा कि कहिये क्या आज्ञा है, और कैसे आप लोगोंने कृपा करी है ? श्रीअगस्त्य मुनि बोले, हे पृथ्वीनाथ ! हम दोनो आपके यहां धनकी इच्छासे आये हैं, सो शक्तिके अनुसार जिसमें दूसरेको हानि न हो उतना धन आप हम दोनोंको दीजिये । श्रीलोमश मुनि बोले, अनन्तर राजा ब्रध्नश्वने अपनी प्राप्ति और व्ययको पूर्ण दिखलाकर कहा कि यदि आप लोगोंको इच्छा हो तो इसीमेंसे ले जाइये । [illegible] सम बुद्धिवाले अगस्त्य मुनिने विचारा कि [illegible] प्राणीको दुःख देना उचित नहीं, अनन्तर [illegible] तीनों पुरुष धन लेनेकी इच्छासे पुरुकुत्सके पुत्र [illegible] स्यु राजाके यहां गये, राजा त्रसदस्युने अगस्त्य [illegible] राजा श्रुतपर्वा और राजा ब्रध्नश्वको आया [illegible] सुन सीमा पर उनके पास आकर पूजा करी, अनन्तर महा मनस्वी इक्ष्वाकु वंशीय राजा त्रसदस्युने तीनोंके आनेका कारण पूछा । श्रीअगस्त्य मुनि बोले, हे पृथ्वीनाथ ! हम सब लोग धनकी इच्छासे आपके यहां आये हैं, सो अपनी शक्तिके अनुसार जिसमें दूसरेको हानि न हो इतना धन आप हमको दीजिये । श्रीलोमश मुनि बोले तब राजाने अपना लाभ और व्यय पूरा सुना दिया और कहा कि यदि आप लोग उचित समझें तो इसी धनमेंसे ले जाइये, तब अगस्त्य मुनिने उनका लाभ और व्यय समान देखकर अपने मनमें विचारा कि इस धनमेंसे कुछ लेनेसे सब प्राणियोंको दुःख होगा । अनन्तर सब राजोंने परस्पर विचार कर महामुनि अगस्त्यसे कहा कि हे ब्राह्मण ! इस जगत्में इल्वल नामक राक्षस हो धनवान है अतएव चलिये हम सब लोग उसीके पास धन लेनको चलें, श्रीलोमश मुनि बोले, अनन्तर उन सबने यही निश्चय किया कि विना इल्वलके पास चले धन नहीं मिल सकता, तब वे सब लोग इकट्ठे होकर इल्वल राक्षसके पास गये ।

९८ अध्याय समाप्त ।

श्रीलोमश ऋषि बोले, जब इल्वल राक्षसने सुना कि महामुनि अगस्त्यके सहित तीन राजा लोग आते हैं, तो अपने मन्त्रियोंके सहित अपनी सीमापर आकर उनकी पूजा करी अनन्तर राक्षसोंमें श्रेष्ठ इल्वलने उन चारोंका सत्कार किया, अनन्तर अपने भाईको काटकर खूब अच्छा भोजन बनाया, अनन्तर वे तीनों राजर्षिलोग उस राक्षसको बकराक्रूप बनकर कटते हुए देख बहुत घबराये और चेतना रहित होगये । अनन्तर ऋषियोंमें श्रेष्ठ अगस्त्य मुनिने तीनों राजोंसे कहा कि आप लोग कुछ सन्देह न कीजिये मैं इस राक्षसको खाजाऊंगा । अनन्तर महामुनि अगस्त्य [illegible] आसनमें बैठे और इल्वल राक्षस भी

हंसता हुआ उनको भोजन परोसने लगा, एकले अगस्त्य मुनिही वातापीके सब मांसको खा गये। खानेके पश्चात् इल्वलने वातापीका नाम लेकर पुकारा, अनन्तर महात्मा अगस्त्य मुनिकी एक अधोवायु (पाद) हुआ। हे तात! इसका ऐसा शब्द हुआ जैसे मेघ गर्ज्जता हो। हे राजन्! इल्वलने फिर पुकारा कि हे वातापी! तुम इस ब्राह्मणके पेटसे निकल आओ, तब अगस्त्य मुनिने हंस कर कहा कि अब वह राक्षस कहा निकल सकता है, वह तो मेरे पेटमें पच गया। इल्वल अपने भाईको पचा हुआ देख बहुत घबराया और मन्त्रियोंके सहित हाथ जोड़ कर बोला, कहिये आप सब लोग यहां किस प्रयोजनके लिये आये हैं? हम आपलोगोंका कौनसा कार्य्य करें? तब हंसते हुए अगस्त्य मुनि इल्वल से बोले, हे असुर। हम तुमको बहुत धनवान समुझते हैं और हम धनकी इच्छा रखनेवाले हैं, यह तोनों राजा अधिक धनी नहीं हैं, और मुझको बहुत धनकी इच्छा है, सो तुम अपनी शक्तिके अनुसार जिसमें दूसरोंको दुःख न हो उतना धन हमको दो। तब इल्वल राक्षसने अगस्त्य मुनिसे कहा कि यदि आप यह कह सकें कि मैं आपको कितना धन देना चाहता हूं, तो मैं आपको धन दूं। श्रीअगस्त्य मुनि बोले, हे असुर! तेरे मनमें एक एक राजाको दस दस हजार गौ और उतनाही सुवर्ण देनेकी इच्छा है। हे महासुर। तैने मुझे इन सबसे दुगुना धन, एक सोनेका रथ और दो घोड़े देने-का विचार किया है। कहो मैंने जान लिया कि नहीं? अब तुम जल्दी सोनेका रथ लाओ तब राक्षस बहुत घबराया और उससे भी अधिक धन अगस्त्य मुनिको दिया उस रथमें सुराव और विराव नामक दो घोड़े लगे थे, वे सब धन और अगस्त्यके सहित तीनोंराजा अगस्त्यके आ- [illegible] ो चले; अनन्तर वे तीनों राजा और अगस्त्य मुनि आश्रम पर पहुंचे, वहांसे अगस्त्यको आज्ञानुसार राजालोग अपने अपने घरोंको चले गये, अगस्त्य मुनिने उस धनसे लोपामुद्रा की सब इच्छा पूरी करी, लोपामुद्रा बोली, हे भगवन्। आपने मेरी सब इच्छा पूर्ण करी, इस लिये अब मुझमें एक वीर्य्यवान पुत्रको उत्पन्न कीजिये। श्रीअगस्त्य मुनि बोले हे कल्याणि। हे सुन्दरि! हम तुम्हारे चरित्रसे बहुत सन्तुष्ट हुए हैं पुत्र उत्पन्न करनेमें जो मेरा विचार है सो तुमसे कहता हूं सुनो, कहो तुम्हारे हजार पुत्र हों, या हजारके समान सौ हों, या कि सौके समान इक्कीस हों, वा हजारके समान एकही हो? लोपामुद्रा बोली, हे तपोधन हमको हजार पुत्रके समान एकही पुत्र हो, क्योंकि हजार दुष्टपुत्रोंसे एक महात्मा विद्वान् पुत्र अच्छा होता है। अगस्त्य मुनिने उस वचनको स्वीकार करके श्रद्धावती लोपामुद्राका सङ्ग किया। अनन्तर लोपामुद्राने गर्भको धारण किया और अगस्त्य मुनि वनको चले गये, उनके जानेके पश्चात् लोपामुद्राने सात वर्ष तक गर्भको धारण किया, सातवे वर्ष उसके गर्भसे अग्निके समान तेजस्वी महाकवी दृढ़स्यु नामक पुत्र उत्पन्न हुए, वे उत्पन्न होतेही अंग और उपांगोंके सहित चारों वेदोंको पढ़ने लगे। अगस्त्यके पुत्र महा तेजस्वी और महा-तपस्वी हुए, महातेजस्वी दृढ़स्यु बालक अवस्था-हीमें पिताके घरमें ईन्धनका बोझ उठाने लगे थे इसीसे उनका नाम इध्मवाह हुआ। हे राजन्! ऐसे उत्तम पुत्रको देख कर मुनि बहुत प्रसन्न हुए। हे भारत! इस प्रकार उन्होंने उत्तम पुत्रको उत्पन्न किया, तब उनके पितर इच्छानुसार लोकोंमें गये, उसी दिनसे इस स्थानका नाम अगस्त्याश्रम है। इस प्रकार प्रह्लाद गोत्रोत्पन्न वातापी दैत्यको अगस्त्य मुनिने नाश किया, यह गुणोंसे भरा हुआ और रमणीय स्थान उसी अगस्त्य मुनिका

। हे युधिष्ठिर यह पवित्र गङ्गा पृथ्वीमें सी विराजमान है, जैसे वायुसे उड़ती हुई वजा आकाशमें शोभित होती है। हे राजन्! से नागराजकी स्त्री शिखर, ऊंचे स्थान और शलाओं पर विराजनेसे शोभित होती है,तैसेही गाभी विराजमान है,यह दक्षिण दिशाको माताके समान रक्षा करती हैं, यही पहले शवकी जटासे निकली थी, यह समुद्रकी यारी स्त्री है, इस पवित्र नदीमें आप इच्छानुसार स्नान कीजिये। हे युधिष्ठिर! हे महाराज! यही देव और ऋषिसेवित तीन लोक विख्यात भृगु मुनिका आश्रम है, जिसका स्पर्श करनेसे रामका गया हुआ तेज प्राप्त हुआ था। हे पाण्डव! तुम यहां स्नान करो, यहां स्नान करनेसे जो तेज तुम्हारा दुर्य्योधनने ले लिया है, सो सब प्राप्त होगा, ऐसेही रामकाभी पुनः तेज मिल गया था।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे जनमेजय! वहां पर महाराज युधिष्ठिरने द्रौपदी और अपने भाइयोंके सहित स्नान करके पितर और देवताका तर्पण किया, उसमें स्नान करतेही युधिष्ठिरका तेज बहुत बढ़ गया और शत्रुओंसे जीतने योग्य न रहे, तब कुरुनन्दन युधिष्ठिरने लोमश मुनिसे प्रश्न किया कि हे भगवान्! पहले समयमें परशुरामका तेज क्यों नष्ट होगया था, और फिर उनको तेज क्यों प्राप्त हुआ था? लोमश मुनि बोले, हे राजेन्द्र! आप परशुराम और रामकी कथाको सुनिये, महात्मा दशरथके पुत्रका नाम राम था, वे रावणके नाश करनेके वास्ते साक्षात् विष्णुका अवतार थे, हमने उनको अयोध्यामें दशरथके घरमें उत्पन्न होते देखा था, और परशुराम भगवान् ऋचीकके वीर्य्यसे रेणुकाके गर्भमें उत्पन्न हुए थे। वे निष्कर्म्मकारी दशरथपुत्र रामके कर्म्म सुनकर आश्चर्य्ययुक्त होकर [illegible] गये, और उस धनुषको अपने संग लिये गये, जिससे उन्होंने क्षत्रियोंका नाश किया था, उन्होंने अपने मनमें विचार लिया था कि आज वह रामचन्द्रके बलकी परीक्षा करेंगे। जब राजा दशरथने सुना कि परशुराम हमारी सीमा पर आये हैं; तब उन्होंने अपने बड़े पुत्र रामको उनको लेनेके लिये भेजा, परशुरामने देखा कि राम अस्त्र शस्त्रोंको धारण किये हुए खड़े हैं। हे कौन्तेय! तब परशुरामने हंसकर रामचन्द्रसे ऐसा कहा, हे राजेन्द्र! मैंने बहुत रोजतक इस धनुषको धारण किया है, यदि आपको कुछ सामर्थ्य हो तो इसको बहुत यत्नसे चढ़ाओ, उनके वचन सुनकर रामने कहा कि हे भगवन्! हम आपके ऊपर आक्षेप नहीं कर सकते और हमभी क्षत्रियोंके धर्म्ममें कुछ नीच नहीं हैं, विशेषतः इक्ष्वाकुवंशीय क्षत्रिय तो बाहुबलसेही प्रसिद्ध हैं। उनके ऐसे वचन सुन, परशुराम बोले, कि हे राघव! बकनेसे कुछ नहीं होगा, यदि शक्ति हो तो धनुषको चढ़ा लो, अनन्तर क्षत्रियोंके नाश करनेवाले परशुरामके हाथसे रामने क्रोधमें भरकर धनुष ले लिया, हे भारत! बलवान् रामने खेलके समान धनुष पर रोदा चढ़ा कर सबको आश्चर्य देते हुए टङ्कार करा, उस वज्रके समान धनुषके शब्दको सुनकर सब प्राणी डरगये, अनन्तर दशरथकुमार रामने परशुरामसे कहा कि हे ब्राह्मण! हमने यह धनुष चढ़ा लिया, अब कहिये आपका हम कौनसा काम करें? तब यमदग्निके पुत्र महातेजस्वी परशुरामने रामको एक बाण दिया और कहा कि इसको कानतक खेंचो,लोमश मुनि बोले, परशुरामके ऐसे वचन सुन क्रोधमें भरकर राम कहने लगे कि, हे भार्गव! हमने सुना है, कि आप अभिमानमें भरे हुए हैं, और क्षमाशील हैं, ब्रह्माके प्रसादसे तुम्हें क्षत्रियोंका विशेष तेज प्राप्त हुआ है, निश्चय इसी कारण तुम हमसे विवाद करते हो, देखो हम

तुमको दिव्य दृष्टि देते हैं, तुम हमारे रूपको देखो। तब परशुरामने रामके शरीरमें सूर्य्य, वसु, रुद्र, साध्य, वायु, पितर, अग्नि, तारे ग्रह, गन्धर्व्व, राक्षस, यक्ष, नदी, तीर्थ ऋषी, वालखिल्य, सनातन ब्रह्मभूत, सब देवर्षि, समुद्र, पर्व्वत, उपनिषदोंके सहित यज्ञ, शरीरधारी सामवेद, धनुर्वेद, मेघोंके समूह, बिजुली, और वर्षा देखे। तब भगवान रामस्वरूपी विष्णुने उस बाणको चढ़ाकर छोड़ दिया, उसके छोड़तेही सब जगत् सूखे वज्र, बिजुली, धूला, और मेघोंके वर्षासे पूरित होगया, उसी समय पृथ्वी कांपने लगी, घोर शब्द होने लगे, उसी समय रामने परशुरामका तेज छीन कर उनको बिकल कर दिया, बाण रामके हाथसे छूटतेही प्रकाशित होने लगा, उसी समय परशुरामको मूर्च्छा होगई, थोड़े समयके पश्चात् परशुराम चैतन्य हुए, परन्तु उन्होंने अपनेमें विष्णुका तेज न पाया अनन्तर रामको आज्ञा से वे महेन्द्र पर्व्वतको चले गये, अनन्तर महातपस्वी परशुराम लज्जित और भीत होकर वहीं वास करने लगे, अनन्तर एक वर्ष बीतनेके पश्चात् तेज रहित, दुःख सहित, परशुरामसे पितर लोग कहने लगे, पितर बोले, हे पुत्र। तुमने विष्णुके पास जाकर यह काम अच्छा नहीं किया, क्योंकि वे सदासे पूजनीय और माननीय है। हे पुत्र! अब तुम पवित्र बधूसर नामक नदीमें स्नान करो, वहां स्नान करनेसे तुम्हे फिर वही तेज मिल जायगा, वहां तप्तोदक नामक कुण्ड है, वहीं तुम्हारे पड़दादा भृगुने महा तप किया था। हे कुन्तीनन्दन! हे पाण्डुपुत्र! परशुरामने अपने पितरोंके वचन सुनके वैसाही किया, तब इस तीर्थमें स्नान करनेसे उन्हें फिर वही तेज प्राप्त होगया। हे महाराज! इस प्रकार शुद्ध कर्म्मवाले परशुरामने स्नान करके रामसे छीने हुए तेजको प्राप्त किया था।

९८ अध्याय समाप्त।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे द्विजोत्तम! मैं महाऋषि अगस्त्य मुनिके कर्म्मोको विस्तार पूर्व्वक सुनना चाहता हूं। श्रीलोमश मुनि बोले, हे राजा! यह अद्भुत अमानुषी दिव्य कथा आप सुनिये, हे महाराज। अनन्तर तेजस्वी अगस्त्यके चरित्रको हम कहते है। सतयुगमें महा योद्धा, घोर, परम दारुण, कालकेय नामक राक्षस उत्पन्न हुए थे उन सबोंने वृत्रासुरको अपना राजा बनाया, फिर अनेक शस्त्र और अस्त्र लेकर इन्द्र आदिक देवतोंके ऊपर चढ़ाई करी, तब देवतोंनेभी इन्द्रको अगाड़ी करके वृत्रासुरके मारनेका यत्न किया, अनन्तर सब देवता लोग ब्रह्माके पास गये; उनको हाथ जोड़े और स्तुति करते हुए देख ब्रह्मा बोले, कि हे देवतो। आप लोगोंने जो कुछ काम करनेकी इच्छा करो है, सो हम सबही समझ गये है, हम वह उपाय बतलाते हैं; जिससे तुम वृत्रासुरको मारोगे। एक उदार बुद्धिवाला दधीच नामक ऋषि है, तुम सब लोग इकट्ठे होकर उसके पास जाकर वर मांगो; वह मुनि परम धर्म्मात्मा है, इस लिये प्रसन्न होकर तुम्हें वर देंगे, तब तुम सब लोग इकट्ठे होकर विजयकी इच्छा करके दधीच मुनिसे कहना कि आप तीनो लोकके हितके निमित्त अपनी हड्डी हमको दीजिये, वे अपने शरीरको छोड़कर हड्डी तुमको देंगे, तब तुम लोग उन्ही हड्डियोसे दृढ़ और महा घोर वज्र बनाना, वह वज्र महाशत्रुओंका नाश करनवाला होगा उसमें छःकोन होंगे, उसका शब्द बड़ा भयानक होगा, उसही वज्रसे इन्द्र वृत्रासुरको मारेंगे, हमने सब उपाय तुमसे कह सुनाया तुम लोग इसको शीघ्रही करो। देवता लोग ब्रह्माके वचन सुन उनकी आज्ञा ले नारायणको अगाड़ीकर दधीचके आश्रम पर गये, वह आश्रम सरस्वती पार अनेक वृक्ष और लताओंसे शोभित था, उसमें भौंरे गुंजते फिरते, जहां

कोकिल आदिक अनेक पक्षी और जन्तु बोल रहे थे, भैंसे सूअर, हरिन चमरी और शार्दूल आदि सब जन्तु बिना भय जहां एकही संग चरते थे जहां मतवारे हाथी हथिनियोंके समेत तलावों में क्रीड़ा और शब्दकर रहे थे, जहां सिंह और व्याघ्रादिकोंके शब्दसे एक गुञ्जार उठती थी, जहां गुफा और कन्दरायोंमें रहनेवाले जन्तुओंके शब्दोंसे वन गुञ्जार रहा था, जो वन किसी किसी स्थानमें स्वर्गके समान सुन्दर था उस दधीचके आश्रम पर देवता लोग आये, उन्होंने तेज और लक्ष्मीसे भरे हुए दधीचको ब्रह्मा और सूर्य्यके समान प्रकाशमान देखा। हे राजन्। देवतोंने उनके चरणमें प्रणाम करके अपना अपना नाम सुनाया और ब्रह्माके कहे हुए वरदानको मांगा। अनन्तर दधीचने बहुत प्रसन्न होकर ऐसा कहा, हे देवतो। जो वरदान तुम लोगोंने मांगा, हम बहुत प्रसन्न होकर वही तुमको देते हैं. हम अपनी इच्छासे अपने शरीरको छोड़ते हैं। ऋषियोंमें श्रेष्ठ जितेन्द्रिय महात्मा दधीचने प्राणको उसी समय छोड़ दिया, तब देवतोंने ब्रह्माके उपदेशके अनुसार उनकी हड्डियोंको ग्रहण किया, देवतोंने प्रसन्न होकर अपने विजय का निश्चय कर लिया, अनन्तर उन्होंने विश्वकर्म्माको जाकर हड्डी दी और शस्त्र बनानेको कहा. विश्वकर्म्माने उन हड्डियोंसे यत्नपूर्व्वक शस्त्र बनाया, उस शस्त्रका नाम वज्र रक्खा, अनन्तर उस उग्ररूप वज्रको विश्वकर्म्मा लेकर इन्द्रके पास गये और प्रसन्न होकर ऐसा कहने लगे हे देव। इस वज्र शस्त्रसे आप उस शत्रु राक्षसको भस्म कीजिये, राक्षसोंके मरनेके पश्चात आप आनन्दपूर्व्वक सब बन्धुवोंके सहित स्वर्गका राज्य कीजिये। विश्वकर्म्माके वचन सुन इन्द्रने प्रसन्न होकर वज्रको ग्रहण किया।

१०० अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, अनन्तर इन्द्रने वज्रको धारणकर और बलवान देवतोंसे रक्षित हो, नगर द्वार पर पड़े हुए वृत्रासुरसे युद्ध करनेको चले, वृत्रासुरके संग शस्त्रधारी महाशरीरवाले राक्षस ऐसे ऐसे खड़े थे, जैसे शिखरधारी पर्व्वत होते हैं। हे भरतश्रेष्ठ। उस समय देवता और दानवोंका एक क्षणभर महा घोर लोकभयङ्कर युद्ध हुआ, उस समय वीरलोगोंके हाथसे चलते हुए और शत्रुओंके शरीर पर गिरते हुए खड्गोंका और दूसरे खड्गके लगकर टूटनेका महा घोर शब्द हुआ हे राजन्। उस समय जो सिर कट कटकर आकाशसे पृथ्वी पर गिरते थे, उनकी शोभा ऐसी भान होती थी, जैसे ताड़के फल गिरनेसे शोभा होती है, कालकेय राक्षस लोग सोनेके कवच पहनकर परिघ आदि अस्त्रोंको लेकर देवतोंकी ओर ऐसे दौड़े जैसे जलती आगवाले पर्व्वत, देवता लोग इनको अभिमानके साथ और वेगसे दौड़ते हुए देख उनके वेगको न सह सके और भयसे इधर उधर भागने लगे, उनको भयसे इधर उधर भागते हुए और राक्षसोंको बढ़ते हुए देखकर सहस्रनेत्र इन्द्रको महा दुःख हुआ और स्वयम् इन्द्रभी वृत्रासुरके भयसे घबराकर नारायणकी शरण गये, सनातन परमेश्वरने इन्द्रको डरा हुआ देख उनमें अपना तेज दिया, उस तेजसे इन्द्रका बहुत बल बढ़ गया। इन्द्रको विष्णुके तेजसे युक्त देखकर सब देवता और निर्म्मल महर्षियोंनेभी अपना अपना तेज इन्द्रको दे दिया। इन्द्र विष्णु, देवता और महाभाग ऋषियोंके तेजको प्राप्त करके बहुतही बलवान हुए, जब वृत्रासुरने देखा कि इन्द्र बलसे भरकर हमारे सामने युद्धमें आया है, तो महाशब्दसे गर्जने लगा, उसके घोर शब्दसे पृथ्वी, दिशा, आकाश और सब पर्व्वत हिलने लगे। उस घोर शब्दको सुनकर और भयसे व्याकुल होकर इन्द्र

उसे मारनेको वज्र छोड़ा, हे राजन्! वह सोनेकी मालाधारी राक्षस वज्र लगनेसे मरकर महा पर्वतके समान पृथ्वीमें ऐसा गिरा जैसे विष्णुके छूटकर मन्दराचल गिरा था। उस महा राक्षसके मरनेके पश्चात् इन्द्र डरसे तालावमें घुसनेको भागे, उन्होंने न अपने हाथसे वज्रको छूटते और न वृत्रासुरको मरते जाना। अनन्तर सब देवता और महर्षि-योंने इन्द्रकी प्रसन्न होकर स्तुतिकी और वृत्रा-सुरके मरनेसे दुःखी राक्षसोंको मार डाला। अनन्तर राक्षस लोग देवतोंके भयसे समुद्रमें घुस गये, जल और जलजन्तुओंसे भरे हुए समुद्रमें जाकर राक्षस लोग तीनों लोक विनाश करनेकी सम्मति करने लगे, उनमें जो जो बुद्धिमान दैत्य थे, वे अच्छे उपायोंका विचार करने लगे, वहां पर समय और प्रारब्धके वशसे उन दैत्योंकी सम्मतिमें यही घोर वात निश्चय ठहरी कि पहले विद्या और तपसे भरे हुए मुनियोंका नाश करना चाहिये, क्योंकि सब लोक तपस्याहीसे स्थिर हैं, अतएव पहले तपनाश करनेका शीघ्र उपाय करना चाहिये। जो कोई जगत्में तपस्वी, धर्मज्ञ और धर्मके जाननेवाले हैं, पहले उन्हींका नाश करना चाहिये, क्योंकि उनके मरनेहीसे सब जगत्का नाश हो जायगा; उन निर्बुद्धि लोगोंने इस प्रकार जगत्के नाशका निश्चय किया और बहुत प्रसन्न हुए। अनन्तर समुद्रके बीचमें किला बना-कर उसही वरुणके स्थान रत्नाकरमें रहने लगे।

१०१ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे महाराज! कालेय दैत्य लोग जलके स्थान समुद्रमें रहकर जगत्का विनाश करने लगे। वे राक्षस लोग क्रोधसे भरकर मुनियोंके पवित्र आश्रम और तीर्थोंमें जाकर क्रोधसे भरकर प्रति रात्रि सात मुनि-योंका नाश करने लगे, उन दुष्टात्माओंने वशिष्ठ मुनिके आश्रममें जाके एक सौ अठ्ठासी ऋषि-योंको खा लिया और नव तपस्वियोंको और नाशकर दिया, ब्राह्मण सेवित च्यवन मुनिके पवित्र आश्रममें जाकर राक्षस लोग फल मूल भक्षी सौ मुनियोंको खा गये। इसी प्रकार भरद्वाज-मुनिके आश्रम पर जाकर नियमधारी, ब्रह्मचारी, वायु भक्षी बीस ऋषियोंको खा गये, इस प्रकार वे लोग रात्रिको मुनियोंको खाकर दिनमें समुद्रमें घुस जाते थे। इस प्रकार भुज बलसे उन्मत्त राक्षस लोग रात्रिमें सब आश्रमोंमें जाकर बाधा करने लगे। वे कालेय लोग कालके वशमें होकर अनेक ब्राह्मणोंका नाश करने लगे। हे पुरुषश्रेष्ठ! उन मुनियोंके मारनेवाले दैत्यको कोई पुरुष नहीं जानता था, परन्तु मुनिलोग प्रातःकाल होनेसे देखते थे कि अनेक तपस्वी पृथ्वीमें मरे हुए पड़े हैं। मरे हुए मुनि मास, रुधिर, मज्जा और आंतोंसे रहित पृथ्वीमें पड़े रहते थे, उस समय उन मुनियोंकी हड्डीयोंसे पृथ्वी ऐसी शोभित हुई, जैसी शङ्खोंके ढेरसे, उस समय टूटे हुए कलश स्रुवे अग्नि भ्रष्ट अग्निहोत्रोंसे पृथ्वी भर गई। कालेय राक्षसोंके भयसे पीड़ित जगत् वेद पाठ, वषटकार, यज्ञ, क्रिया और उत्सोवोंसे रहित हो गया। हे नरनाथ! इस प्रकार ऐसा कर्म होनेसे पुरुष लोग कम होने लगे, तब भयमें पूरित होकर अपने बचावके निमित्त मनुष्य इधर-उधर भागने लगे, कोई गुफामें, और कोई झरनोंमें घुस गये तथा कोई मरनेके भयसे अपने प्राणोंको छोड़ने लगे, कोई महावीर धनुषधारी परम प्रसन्न होकर राक्षसोंके ढूंढनेमें यत्न करने लगे, परन्तु उनको वे समुद्रवासी राक्षस न मिले, अनन्तर थककर बैठ रहे, बहुतसे नष्टभी होगये। हे नरनाथ! इस प्रकार जगत्में आपत्ति आनेसे सब यज्ञ

और उत्सव नष्ट होगये, तब देवोंतोंकी बहुत दुःख हुआ, तब भयसे व्याकुल होकर इन्द्रादिक देवतोंने सम्मति करी, अनन्तर यह सब शरण देनेवाले देवतोंके, देव जगत् पति नारायणकी शरण गये, तब सब देवतोंने अपराजित मधु नाशक नारायणसे ऐसे वचन कहे। हे प्रभो! हमारे और सब जगत्के उत्पन्न करनेवाले पालन करनेवाले और नाश करनेवाले है, यह सब चर और अचर जगत आपहीका बनाया हुआ है, हे कमलनेत्र! पहले जब पृथ्वी समुद्रमें डूब गई थी, तब आपने सूकरका रूप बनाकर उसका उद्धार किया था। हे पुरुषोत्तम! आपने पहले नरसिंह रूप बनाकर आदि दैत्य महा बलवान हिरण्य कशिपुको मारा था, जिस बली नामक महा असुरको कोई प्राणी नहीं मार सकता था, उसको आपने वावन रूप धारण करके तीन लोकसे भ्रष्ट कर दिया था, जो महाशस्त्रधारी यज्ञोंका नाश करनेवाला जम्भ नामक राक्षस था, उसकोभी आपहीने मारा था, हे मधुसूदन! आपने इसको आदि लेकर औरभी अनेक कर्म्म ऐसे किये हैं, आप डरे हुए देवतोंकी गति हैं हे देवदेवेश! अब जो कार्य्य उपस्थित हैं, सो हम लोग आपसे निवेदन करते हैं, आप देवता इन्द्र और सब लोगोंको महा भयसे रक्षा कीजिये।

१०२ अध्याय समाप्त।

देवतालोग बोले, हे प्रभो। आपकी कृपासे चार प्रकारकी प्रजा बढ़ती हैं, वे बढ़कर हव्य और कव्योंसे देवताकी पूजा करते हैं, इस प्रकार एक दूसरेके आश्रयसे लोक बढ़ते हैं. आपकी कृपा और रक्षा करनेसे सब जन्तु सुखी रहते हैं। अब सब लोगोंको महा भय उत्पन्न हुआ है. हम नहीं जानते कि रात्रिमें कौन ब्राह्मणोंको मार जाता है ब्राह्मणोंके नाश होनेसे पृथ्वीका नाश और पृथ्वीके नाश होनेसे स्वर्गका नाश हो जायगा। हे महाबाहो। हे जगत्पते! केवल आपकी कृपासे सब लोग बच सकते हैं। जब आप रक्षा करेंगे, तब कोईभी नष्ट नहीं होगा। विष्णु बोले, हे देवतो! प्रजाके नाशका कारण हमने जान लिया, तुम लोगोंसे कहते हैं, तुम लोग सुखी होकर सुनो, जो परम कठोर कालेयक नामक राक्षसोंका एक दल प्रसिद्ध है, जिसने वृत्रासुरका आश्रय लेकर सब जगतको दुःख दिया था, वेही लोग इन्द्रसे वृत्रासुरको मरा हुआ देखकर अपने जीवनकी रक्षाके निमित्त समुद्रमें घुस गये हैं, वेही लोग घोर वक्र और ग्राहोंसे भरे हुए समुद्रमें रहते हैं, वेही रात्रिको निकलकर ऋषियोंका नाश करते हैं, उन लोगोंका नाश नहीं हो सकता क्योंकि वे लोग समुद्रके बीचमें रहते हैं, इस लिये तुम लोगोंको समुद्रके नाश करनेका उपाय करना चाहिये, और अगस्त्यके सिवाय समुद्रको कोई नहीं सोख सकता है और बिना समुद्र सूखे राक्षसोंका नाश होना असम्भव है। देवता लोग विष्णुके ऐसे वचन सुन ब्रह्माकी आज्ञा ले अगस्त्यके आश्रम पर गये वहां जाकर उन्होंने वरुणके पुत्र महातेजस्वी अगस्त्यको ऋषियोंके सहित बैठा हुआ देखा, देवता लोग मित्रावरुणके पुत्र महात्मा तपके समूह अपने कर्मोंसे प्रशंसनीय अगस्त्यको देख बहुत प्रसन्न हुए और स्तुति करते हुए कहने लगे। देवता बोले, जब नहुषके पुत्रसे जगत् अत्यन्त दुःखित हुआ था तब आपहीने शरण दी थी. और उस लोक कण्टकको आपहीने स्वर्गसे गिराया था, पर्व्वतोंमें श्रेष्ठ विन्ध्याचल सूर्य्यके क्रोधसे अत्यन्त बढ़ने लगा था, परन्तु अब आपके वचनको ग्रहण करके नहीं बढ़ता है। जब प्रजा अन्धकार और मृत्युसे नष्ट होने लगती है, तब आपहीको स्वामी पाकर

इसकी रचा करते हैं। डरे हुए देवतोंकी सदासे आपही गति हैं। हम लोग आपसे वरदान मांगनेको आये हैं, क्योंकि आप वरदान देनेमें समर्थ हैं।

१०३ अध्याय समाप्त।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे महामुने। आप इस कथाको विस्तारपूर्वक कहिये कि, विन्ध्याचल एकदम क्रोध करके इतना क्यों बढ गया था ? इस कथाको सुननेकी मेरी बहुत इच्छा है। श्रीलोमश मुनि बोले हे महाराज। जब विन्ध्याचल पर्व्वतने देखा कि सूर्य्य उदय और अस्तके समय सुवर्णमय पर्व्वतराज मेरुकी प्रदक्षिणा करते हैं, तब सूर्य्यसे कहा कि हे सूर्य्य, जैसे तुम प्रतिदिन मेरुकी प्रदक्षिणा करते हो, तैसे हमारीभी प्रदक्षिणा किया करो। पर्व्वतराजके ऐसे वचनको सुन सूर्य्य बोले, कि हम कुछ अपनी इच्छासे मेरुकी प्रदक्षिणा नहीं करते हैं, वरन जिस परमेश्वरने इस जगतको बनाया है, उसीने हमारे निमित्त यह मार्गभी बना दिया है। सूर्य्यके ऐसे वचन सुन विन्ध्याचलको महाक्रोध हुआ और चन्द्रमाके मार्ग रोकनेकी इच्छा करी, अनन्तर सब देवता लोग मिलकर पर्व्वतोंके महाराज विन्ध्याचलके पास आये, उन्होंने अनेक उपाय करे कि जिससे विन्ध्याचल न बढे, परन्तु विन्ध्याचलने उनका कोई भी वचन न माना। अनन्तर वे सब देवता लोग तपस्वी और धर्म्म धारियोंमें श्रेष्ठ अद्भुत बलवाले आश्रममें बैठे हुए अगस्त्य मुनिके पास जाकर अपना प्रयोजन सुनाने लगे। देवता बोले, हे द्विजोत्तम ! यह पर्व्वतराज विन्ध्याचल अत्यन्त क्रोधके वशमें होकर सूर्य्य, चन्द्रमा और नक्षत्रोंके मार्गोंको रोकना चाहते हैं। हे महाभाग ! आपके सिवाय इनको और कोई भी नहीं निवारण कर सकता है इस लिये आपही इनको रोकिये।

अगस्त्य मुनि देवतोंके वचन सुनकर अपनी स्त्रीके सहित विन्ध्याचलके पास गये, विन्ध्याचल भी उनके दर्शनको आये, तब अगस्त्य मुनिने विन्ध्याचलसे कहा कि हे पर्व्वतोंमें श्रेष्ठ। हम किसी विशेषकार्य्यसे दक्षिण दिशाको जाना चाहते हैं, इस लिये तुम हमको मार्ग दो जबतक मैं उधरसे लौटकर आऊं तबतक तुम ऐसेही रहकर हमारा मार्ग देखना। हे पर्व्वतराज। जब मैं इधरसे लौट कर आऊंगा तब तुम अपनी इच्छानुसार बढ़ना। हे शत्रुनाशन। अगस्त मुनि इस प्रकार विन्ध्याचलसे प्रतिज्ञा कराकर अबतक भी दक्षिण देशसे लौट कर नहीं आये, हमने जिस प्रकार विन्ध्याचल नहीं बढ़ता है, सो सब कथा आपसे कही। जो तुमने हमसे अगस्त मुनिका प्रभाव पूछा था, सो हमने कहा। अब जिस प्रकार अगस्त्य मुनिके वरदानसे देवतोंने कालेय राक्षसोंका नाश किया सो कथा सुनिये, हे महाराज। देवतोंके पूर्वोक्त वचन सुन मित्रावरुणके पुत्र अगस्त मुनिने कहा कि तुम लोग हमारे पास क्यों आये हो ? कहो हमसे कौन वरदान मांगना चाहते हो ? मुनिके ऐसे वचन सुनकर देवता लोग बोले। हे महात्मन् ! हम लोग चाहते हैं कि आप समुद्रको पीकर हमारा कार्य्य कीजिये, आपके ऐसा करनेसे हम लोग देवतोंके शत्रु कालेय दैत्योंको परिवारके सहित नाश कर देंगे। देवतोंके वचन सुनकर अगस्त्य मुनिने कहा कि हम ऐसाही करेंगे। अगस्त्य मुनि बोले कि जिसमें लोकोंका उपकार हो सो आप लोगोंका काम हम सुखपूर्व्वक करेंगे ऐसा कहकर अगस्त्य मुनि सिद्ध, ऋषि और देवतों के सहित नदियोंके पति समुद्रके पास गये। हे उत्तम व्रतधारी। उनके पीछे मनुष्य, सर्प, गन्धर्व्व, यक्ष, और किन्नर चले। महात्मा अगस्त्यके सङ्ग उनका अद्भुत कर्म्म देखनेकी इच्छासे सब लोग इकट्ठे होकर घोर शब्दवाले

समुद्रके तटपर पहुंचे, उन्होंने समुद्रको ऐसा देखा मानो तरङ्गोंसे नाच रहा है, वायुसे घूम रहा है, और फेनोंके समूहोंसे हंस रहा है, जिसकी तरङ्ग कन्दराओंमें भर रही है, अगस्त्यके सहित देवता, गन्धर्व्व महासर्प, और महाभाग ऋषिलोग ग्राह, मगर और अनेक पक्षियोंसे भरे हुए समुद्रके तट पर पहुंचे।

१०४ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, कि वरुणके पुत्र भगवान अगस्त्य मुनि जब समुद्रतट पर पहुंचे, तब सब देवता और ऋषियोंसे कहने लगे, देखो हम सब लोकके हितके निमित्त समुद्रको पीते हैं। आपलोगोंको जो कुछ काम करना हो, सो शीघ्र कीजिये, मित्रावरुणके पुत्र अमर अगस्त्य मुनिने ऐसा कहकर सब जगत्‌के आगे क्रोधमें भरकर समुद्रको पीलिया, जब इन्द्र आदिक देवतोंने देखा कि अगस्त्य मुनि सब समुद्रको पीगये तो परम आश्चर्य करके स्तुति और पूजा करने लगे। देवता कहने लगे, हे लोकभावन। तुम हमारे रक्षा करनेवाले और [illegible]रण करनेवाले हो, तुम लोकोंके स्वामी हो तुम्हारीही कृपासे जगत नष्ट नहीं होता है, [illegible]स प्रकार महात्मा अगस्त्यकी देवता लोग [illegible]जा करने लगे और गन्धर्व्व लोग सब ओर [illegible]पने बाजे बजाने लगे, दिव्य फूलोंकी वर्षा होने [illegible]ो, तब अगस्त्य मुनिने समुद्रको जलसे रहित [illegible]र दिया, समुद्रको जलसे रहित देखकर [illegible]ा बलवान देवतोंने परम प्रसन्न होकर दिव्य [illegible] धारण करके राक्षसोंको मारना आरम्भ [illegible]या। वेगवान महात्मा स्वर्गवासी बलवान [illegible] पीड़ित होकर दानव लोग उनके [illegible] पहले तो वे लोग तपस्वी [illegible]योंके [illegible] नष्ट हुए थे, फिर जो कुछ बच [illegible] उनको देवतोंने नाश कर [illegible] और दानू बन्द धारी दानव लोग मरते समय ऐसे शोभित हुए जैसे फूले हुए टेसू। हे पुरुषश्रेष्ठ। जो कुछ दानव मरनेसे बचे, वे सब पृथ्वीको फाड़कर पातालमें चले गये। जब दानव लोग नष्ट हो गये, तब अगस्त्य मुनिको स्तुति कर देवता लोग बोले, हे महाबाहो। आपकी कृपासे हम लोगोंने जगतमें बहुत सुख प्राप्त किया, आपहीके तेजसे घोर पराक्रमी कालेय दानवोंका नाश हुआ। हे लोकभावन! आपने जो समुद्रका जल पिया है, उसको फिर छोड़ दीजिये जिसमें समुद्र भर जाय उनके वचन सुन मुनियोंमें श्रेष्ठ भगवान अगस्त्य मुनि बोले, हे देवतो। वह सब जल हमको पच गया, अब तुम लोग कोई दूसरा उपाय सोचो, आपलोग कोई ऐसा उपाय कीजिये जिसमें समुद्र भर जाय। महात्मा अगस्त्य मुनिके ऐसे वचन सुन सब देवता लोगोंको बहुत आश्चर्य और दुःख हुआ, आपसमें सम्मति करके मुनीश्वरको प्रणामकर सब लोग अपने अपने घरको चले गये। हे महाराज। विष्णुके सहित सब देवता लोग समुद्रको पूरा करनेका विचार करते हुए ब्रह्माके यहां गये, जाकर हाथ जोड़ समुद्रकी सब कथा सुना दी।

१०५ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमशमुनि बोले, सब देवतोंसे लोकके पितामह ब्रह्मा ऐसा बोले, हे देवता लोगो। तुम सब लोग अपने अपने लोकोंको चले जाओ। समुद्र थोड़े दिनमें आपही भर जायगा, उसके भरनेका कारण अपने जातिके निमित्त महाराज भगीरथ होंगे। ब्रह्माके वचन सुनकर सब देवता लोग अपने अपने घरको चले गये और समुद्र पूर्ण होनेके समयकी प्रतीक्षा करने लगे। युधिष्ठिर बोले हे मुने. हे ब्राह्मन्! [illegible] और [illegible] भगीरथके [illegible] समुद्र कैसे भर गया [illegible]

तपोधन। हम इस राजाके उत्तम चरित्रको आपसे विस्तारपूर्व्वक सुनना चाहते हैं। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महात्मा धर्म्मराजके ऐसे वचन सुन ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ लोमश मुनि महात्मा समुद्रका महात्म्य इस प्रकार कहने लगे। श्रीलोमश मुनि बोले, इच्वाकुलवंशमें प्रताप रूप, तेज और बलसे भरे हुए सगर नामक राजा हुए। उनके कोई पुत्र न थे। उन्होंने हे हय-वंशी और और तालजङ्घवंशी चत्रियोंको जीतकर सब राजोंको अपने वशमें किया और अपने राज्यका पालन करने लगे। हे भरतकुल सिंह! उनकी जो स्त्रियाथीं, वे दोनों रूप और यौवनके अभिमानसे भरी रहती थीं। एकका नाम वैदर्भी और दूसरीका नाम शैव्या था, राजा अपनी स्त्रियोंके सहित पुत्रकी इच्छासे कैलाश पर्व्वत पर जाकर महा तप करने लगे, हे राजेन्द्र! महात्मा राजा सगर महातप और महायोग करने लगे, तब तीन नेत्रधारी त्रिपुरासुरके मारने-वाले शङ्कर, जगतके स्वामी, पिनाक और शूल-धारी, तीन नेत्रवाले उग्र, सबके स्वामी अनेक-रूपधारी पार्व्वतीनाथ शिव उसके पास आये। महाराजने वरदान देनेवाले शिवको देखतेही अपनी स्त्रियोंके सहित प्रणाम किया और हमको पुत्र हो, यह बरदान मांगा। अनन्तर राजोंमें श्रेष्ठ सगरसे प्रेम सहित शिव महाराजने कहा, हे नरनाथ! तुमने हमसे इस समय पुत्र होनेका वरदान मागा, इस लिये हम प्रसन्न होके तुम्हें यह वरदान देते हैं कि तुम्हारी केवल एक स्त्रीसे अभिमानसे भरे हुए महा शूरवीर साठ हजार पुत्र होंगे, वे सब लोग एकही दिन एकही स्थानपर नष्ट हो-जायंगे। और एक स्त्रीके वंशकी रचा करने-वाला महा शूरवीर एक पुत्र होगा। सगरसे ऐसा कहकर भगवान शिवजी वहीं अन्तर्द्धान होगये और राजा सगरभी अपने नगर को चले गये, अपनी दोनों स्त्रियोंके सहित प्रसं[illegible] आनन्द करने लगे। हे पुरुषश्रेष्ठ! [illegible] सगरकी कमलनैनी वैदर्भी और शैव्या [illegible] स्त्रियोंके गर्भ रह गया, अनन्तर समय [illegible] होने पर वैदर्भी स्त्रीने एक तूम्बी उत्पन्न [illegible] और शैव्यास्त्रीके देवतों के समान रूप[illegible] एक पुत्र उत्पन्न हुआ, तब राजा सगरने तूम्बीको फेंक देनेका विचार किया उसी [illegible] आकाशसे गम्भीर स्वरवाली एक वाणी हुई, हे राजन! आप ऐसा साहस मत की[illegible] इस तूम्बीके भीतर पुत्र है और इस तू[illegible] भीतरसे जो बीज निकले, उनकी यत्नसे [illegible] कीजिये; आप इस तूम्बीके बीजोंको घीसे [illegible] हुए किसी पात्रमें रखिये, तब आपको [illegible] हजार पुत्र मिलेंगे, हे महाराज! शिव[illegible] जो तुमको साठ हजार पुत्र होनेका आशी[illegible] दिया था, वे सब इसी तूम्बीमें हैं।

१०६ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे राजन! [illegible] राजा सगरने यह आकाशवाणी सुनी, तो [illegible] पूर्व्वक वैसाही काम किया, अर्थात् रा[illegible] एक एक बीजको अलग अलग करके उन[illegible] भागोंको घीके बर्त्तनोंमें पृथक पृथक रख [illegible] और पुत्रोंकी रचाके निमित्त एक एक [illegible] सब बर्त्तनोंके समीप रख दी। फिर ब[illegible] काल बीतनेके पश्चात् महा तेजस्वी मह[illegible] साठ हजार पुत्र हो गये। हे राजन [illegible] सगरके सब पुत्र शिवजीकी कृपासे हुए। वे बड़े कठोर, क्रूरकर्म्म करनेवाले, और आक[illegible] घूमने वाले हुए। युद्ध करनेवाले, मह[illegible] सगरपुत्र देवता गन्धर्व्व और राचसोंको [illegible] देने लगे। उनसे पीड़ित होकर सब ज[illegible] प्राणी देवताके सहित ब्रह्माकी शरणमें गरे [illegible] लोकोंके पितामह ब्रह्माने उन सबसे कहा हे देवता लोगो! तुम सब प्राणियोंके म[illegible]

अपने अपने स्थान को चले जाओ, थोड़ेही समयमें सगरके सब पुत्रोंका अपने किये हुए कर्म्मोंके अनुसार सर्व्वनाश हो जायगा। हे पृथ्वीनाथ। ब्रह्माके ऐसे वचन सुनके ब्रह्माकी आज्ञा ले सब देवता लोग अपने अपने घरको चले गये। हे भरतकुल सिंह! बहुत समय बीतनेके पश्चात् बलवान राजा सगरने अश्वमेध यज्ञ करना आरम्भ किया और घोड़ा छोड़ा, वेही साठ हजार पुत्र उस घोड़ेकी रक्षा करने लगे। वह घोड़ा सब भूमिमें घूमने लगा, जब घोर दर्शन वाले जल-रहित समुद्रके तट पर आया तो अत्यन्त यत्नसे रक्षा करने पर भी वहीं अन्तर्धान होगया, हे तात! जब सगरके पुत्रोंने उस घोड़ेको न देखा, तो अपने पिताके पास आकर उसके गुप्त होने और छिप जानेके सब वृत्तान्त कह सुनाये। राजा सगरने आज्ञा दी कि तुम सब दिशाओंमें घोड़ेकी खोज करो। हे महाराज! वे लोग पिताकी आज्ञा सुन सब दिशाओंमें और सब पृथ्वीमें घोड़ेको ढूढ़ने लगे; परन्तु उन सबने अत्यन्त ढूंढ़ने पर भी घोड़े और घोड़ेके चोरको न पाया। तब अपने पिताके पास आ हाथ जोड़ कहने लगे कि हे नरनाथ। हम लोगोंने समुद्र, वन, द्वीप नदी, नद, कन्दरा, पर्व्वत और वनोंके सहित सब पृथ्वीको आपकी आज्ञानुसार ढूंढ़ा परन्तु न कहीं घोड़ा और न कहीं घोड़ेका चोर मिला। यह वचन सुनतेही राजाको क्रोध हुआ। हे राजन्! प्रारब्ध वशसे राजा ने अपने पुत्रोंसे कहा कि तुम लोग घोड़े-ढूंढ़नेको फिर अगम्य देशोंमें जाओ, हे पुत्रो! बिना उस घोड़ेके लिये तुम लोग यहां मत आना। अपने पिताके वचनको स्वीकार करके फिर घोड़ा ढूढ़नेके निमित्त सगरके पुत्र पृथ्वीमें घूमने लगे। अनन्तर उन्होंने [illegible] पर पृथ्वीको फटी हुई देखा तब वे [illegible] और [illegible] उसको खोदने लगे। वह बिल समुद्र था। अनन्तर सगरके पुत्रोंने कुदार और गधालोंसे उसको यत्नपूर्व्वक खोदना आरम्भ किया। उस समय खुदनेसे वरुणके स्थान समुद्रको बड़ा दुःख हुआ, चारो ओरसे समुद्र खुदनेसे उसमें रहनेवाले असुर, सर्प राक्षस और अनेक प्रकारके जन्तु सगर पुत्रोंसे पीड़ा पाकर घोर शब्द करने लगे। उस समय सैकड़ों सहस्रों जन्तु शिर, देह, चर्म्म और सन्धियोंसे नष्ट भ्रष्ट दीखने लगे। इस प्रकार समुद्र खोदते खोदते सगरके पुत्रोंको बहुत समय बीत गया, परन्तु घोड़ा कहीं न मिला। अनन्तर सगरके पुत्रोंने महाक्रोध किया, तब उत्तर और पातालके कोनमें खोदना आरम्भ किया, और पाताल तक खोदते चले गये, वहां देखा कि, घोड़ा पृथ्वीमें घूम रहा है और उसके पासही ज्वालाके सहित जलती हुई अग्निके समान तेजस्वी महात्मा कपिलजी भी बैठे हैं।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे राजन्! वे उस घोड़ेको देखकर बहुत प्रसन्न हुए और उनके रोम खड़े होगये। अनन्तर महात्मा कपिलजीका निरादर करके कालके वशमें होकर महाक्रोधके सहित घोड़ा पकड़नेको दौड़े। हे महाराज! उनका यह व्यवहार देख महात्मा कपिल मुनिको महा क्रोध हुआ। जिन कपिल मुनिको जगत्के पुरुष कृपा करते हैं, उन्होंने अपने नेत्र खोल सगरके पुत्रोंपर अपना तेज छोड़ा। उनके लगतेही सगरके मन्दबुद्धि पुत्र भस्म होगये, उनके भस्म होतेही महा तपस्वी नारद मुनि सगर राजाके घर गये और उसको वह सब वृत्तान्त कह सुनाया। राजा सगरने मुनिके मुखसे वह सब वृत्तान्त सुनकर दो मुहूर्त्त तक शोक करके शिवके वचनको स्मरण किया। अनन्तर सगरने असमञ्जके पुत्र अपने पोते अंशुमानको बुलाकर कहा कि हे तात! हमारे

जो परम तेजस्वी साठ हजार पुत्र थे, सो सब हमारी आज्ञानुसार काम करनेके कारण कपिल मुनिके तेजसे नष्ट होगये। और तुम्हारे पिताको हमने पहलेही निकाल दिया है। हे पापरहित! उसके निकाल देनेसे मैंने धर्म्मकी रक्षा और नगर निवासियोंका हित साधन किया था।

युधिष्ठिर बोले, हे तपोधन! राजसिंह सगरने दुःखसे छोड़ने योग्य वीरपुत्रको किस लिये घरसे निकाल दिया था? श्रीलोमश मुनि बोले, कि राजा सगरकी शैव्या नामक स्त्रीसे असमञ्जस नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था, वह नगरवासियोंके दुर्ब्बल लड़कोंका गला और शरीर पकड़कर नदीमें फेंकने लगा। तब नगरके लोग शोक और भयसे पीड़ित होकर राजा सगरके पास आ हाथ जोड़ कहने लगे, कि हे महाराज! आप दूसरे राजोंसे तथा और डरोंसे हम लोगोंकी रक्षा करनेवाले हैं; अतएव असमञ्जसके घोर भयसे हम लोगोंको रक्षा कीजिये। नगरनिवासियोंके घोर वचन सुन राजामें श्रेष्ठ सगर क्षणमात्र दुःखं करके अपने मन्त्रियोंसे बोले, कि तुम लोग हमारे पुत्र असमञ्जसको इसी समय नगरसे निकाल दो। हे मन्त्रियो! यदि आप लोग हमारा कुछ प्रिय कार्य्य करना चाहते हैं, तो इस कामको शीघ्रही करो। हे पृथ्वीनाथ! राजा सगरके वचन सुन मन्त्रियोंने असमञ्जसको उसही समय नगरसे निकाल दिया। हे नरनाथ! महात्मा राजा सगरने प्रजाके हितकी इच्छासे जिस प्रकार अपने पुत्र असमञ्जसको नगरसे निकाल दिया था, सो सब कथा हमने तुमसे कही; अब राजा सगरने महा धनुषधारी अंशुमानसे जो कुछ कहा, सो सब कथा हम आपसे कहते हैं, आप सुनिये। सगर बोले, हे पुत्र! तेरे पिताके निकालने, साठ पुत्रोंके मरने और घोड़ेके न मिलनेसे मेरा शरीर भस्म हुआ जाता है। हे पौत्र! दुःखसे सन्तप्त और यज्ञमें विघ्न होनेसे दुःखित मेरा घोड़ा लाकर नरकसे उद्धार करो। अंशुमान महात्मा सगरके वचन सुन एवमस्तु कह परम दुःखके सहित उस स्थानको गये, जहां सगरके पुत्रोंने पृथ्वी खोदी थी; वे उसी मार्गसे पातालको चले गये। जाकर महात्मा कपिल और घोड़ेको देखा, उन्होंने तेजके समूह ऋषियोंमें श्रेष्ठ बूढ़े कपिल मुनि को देख शिरसे प्रणाम किया और अपना प्रयोजन कह सुनाया। हे महाराज! हे भारत! धर्म्मात्मा कपिल मुनि अंशुमानसे बहुत प्रसन्न हुए और बोले कि तुम्हारी जो इच्छा हो वही वरदान हमसे मांगो। तब उन्होंने यज्ञ पूर्ण होनेकी इच्छासे पहले घोड़ा मांगा, और दूसरा यह वरदान मांगा कि हमारे पितर लोग पवित्र होजायें। तब मुनियोंमें श्रेष्ठ महा तेजस्वी कपिल मुनिने अंशुमान से कहा कि, हे पापरहित! तुम्हारा कल्याण हो, तुमने जो कुछ मांगा सो हमने दिया। तुममें सत्य, क्षमा और धर्म्म स्थिर है, तुमसे सगर पवित्र और पिता पुत्रवान हुए, तुम्हारेही इस प्रभावसे सगरके पुत्र स्वर्गको जायंगे और तुम्हाराही पोता स्वर्गसे गङ्गाको लावेगा। हे पुरुषश्रेष्ठ! तुम्हारा पोता सगरके पुत्रोंको पवित्र करनेके निमित्त शिवजीको प्रसन्न करके गङ्गा लावेगा, तुम्हारा कल्याण हो, इस यज्ञके घोड़ेको यहांसे ले जाओ, हे तात! महात्मा सगरके यज्ञको समाप्त करो। अंशुमान, महात्मा कपिलके ऐसे वचन सुनकर घोड़ेको ले महात्मा सगरकी यज्ञशालामें आये, और महात्मा सगरके चरणोंमें प्रणाम कर उनके पुत्रोंके मरनेका वृत्तान्त जैसा देखा और सुना था, कह सुनाया। सगरनेभी अंशुमानका माथा सूंघा। राजा सगर उस घोड़ेको लेकर यज्ञशालामें आये और उन सब वृत्तान्तोंको सुनकर उन्होंने अपने पुत्रोंका शोक छोड़ दिया

और अंशुमानको सम्मानकर यज्ञको समाप्त किया. अनन्तर यज्ञ समाप्तकर राजा सगरने सब देवतोंकी सम्मतिसे वरुणके स्थान समुद्रको अपना पुत्र बनाया। हे कमलनेत्र! इस प्रकार राजा सगरने बहुत दिन राज्य करके अपने पोते अंशुमानको राज्यका भार दे स्वर्ग-यात्रा करी, धर्म्मात्मा अंशुमानभी सागरान्त पृथ्वीका तैसेही राज्य करने लगे, जैसे इनके दादा करते थे। राजा अंशुमानके पुत्र दिलीप हुए। दिलीप परम धर्म्मज्ञ थे, राजा अंशुमान दिलीपको राज्य देकर स्वर्गको चले गये। राजा दिलीप अपने पुरुषोंका इस प्रकार मरना सुनकर और उनकी गतिको विचारकर दुःखसे जलने लगे, और गङ्गाके लानेके लिये परम यत्न करने लगे। परन्तु बलके अनुसार बहुत यत्न करने परभी गङ्गाको पृथ्वीमें न ला सके। उनके भगीरथ पुत्र हुए, ये महा श्रीमान् धर्म्म करनेवाले, सत्यवादी और द्वेष रहित थे, राजा दिलीप भगीरथको राज्य दे आप वनको चले गये। हे भरतर्षभ! वनमें जाकर राजा दिलीप कुछ समयके पश्चात् सिद्धि और योगके बलसे अपने शरीरको छोड़कर स्वर्गको गये।

१०७ अध्याय समाप्त।

लोमश मुनि बोले, हे राजन्! राजा भगीरथ महा धनुषधारी महारथ और चक्रवर्त्ती राजा हुए। उनको देखकर सब जगतके मन और नेत्रोंको आनन्द होता था। महाबाहु भगीरथने यह सुना कि हमारे पितृ लोगोंको महात्मा कपिलने भस्म किया था, और उनको स्वर्ग नहीं मिला, तब दुःखितमन होकर अपना राज्य मन्त्रीको दे आप हिमाचलको चले गये। हे नरनाथ! उन्होंने अपने मनमें विचारा, कि तप करके पापोंको जलाकर गंगाकी आराधना करें। हे भरतर्षभ! उन्होंने जाकर अनेक धातुओंसे भूषित, शृङ्गोंसे भूषित, बादलसे घिरे हुए मेघोंसे चारों ओर भींगे हुए, नदी, कुञ्ज और नितम्बोंसे शोभित गुफाओंमें बैठे हुए सिंह और व्याघ्रोंसे सेवित विचित्र शरीर और अनेक प्रकारके शब्दवाले पक्षियोंसे विराजमान, भौंरे, हंस, सारस जल कुक्कुट, मोर शतपत्र, कोयल, चकोर, असिता-पांग और पुत्रप्रिय आदि पक्षियोंके शब्दोंसे शोभित, तलावोंमें पद्मोंके समूहसे विराजमान, सारसोंके मीठे वचनोंसे भूषित, पर्व्वतोंमें श्रेष्ठ हिमाचलको देखा जिसकी शिलाओंपर किन्नर और अप्सरा आनन्द कर रहे थे, जहांके वृक्ष दिग्गजोंके दांतोंसे घिर गये थे, जहां विद्याधर लोग आनन्द कर रहे थे, जो अनेक रत्न और विषसे भरे हुए दोजीभवाले सर्पोंसे प्रकाशित हो रहा था, जो हिमाचल कहीं सोनेके कहीं चांदीके और कहीं अञ्जनके समान वर्णवाला था। उस पर महाराज भगीरथ पहुंचे, वहां जाकर पुरुषोंमें श्रेष्ठ भगीरथने फल मूल और जल भक्षण करके एक सहस्र वर्षतक घोर तप किया, जब दिव्य सहस्र वर्ष बीत गया तब महानदी गंगाजी अपना स्वरूप धारण करके भगीरथके सम्मुख आईं। गंगाजी बोली, हे महाराज! तुम हमसे क्या चाहते हो? जो तुम कहो सोही हम करें और जो तुम कहो सोही हम दें। गंगाजीके ऐसे वचन सुन हिमाचलकी पुत्रीसे भगीरथ बोले, हे वरदेनेवाली महानदी! मेरे पितामह लोग घोड़ेको ढूंढते ढूंढते महात्मा कपिलके समीप गये थे, उन्होंने उनको नष्ट कर दिया, सगर महात्माके साठ हजार पुत्र भगवान् कपिलके क्रोधसे क्षणभरमें भस्म हो गये; इस प्रकार नष्ट हुए सगर पुत्रोंको स्वर्गमें वास भी न मिला; हे महानदी! जब तक आप उनके शरीरोंको अपने जलमें स्नान न करावेंगी, तब तक सगरके पुत्रोंको स्वर्ग न होगा, हे महानदी! हे महाभागे! सगरके पुत्र हमारे पुरुषोंको स्वर्गमें पहुंचाइये यही प्रार्थना

हम आपसे मांगते हैं। श्रीलोमश मुनि बोले, लोकपूजिता गंगाजीने राजाके बचन सुन प्रसन्न हो भगीरथसे कहा हे महाराज! हम निःसन्देह तुम्हारे बचनको करेंगी, परन्तु हमारा वेग बहुत घोर है उसे धारण करनेको पृथ्वीमें कोई नहीं है, हे नरनाथ! इसको नीलकण्ठ-शिवजीही धारण कर सकते हैं, हे महावाहो! तुम बर देनेवाले शिवजीको तपस्यासे प्रसन्न करो, वही महादेव स्वर्गसे गिरी हुई हमको अपने सिर पर धारण करेंगे। वह पितरोंके हितके निमित्त तुम्हारी इच्छा पूर्ण करेंगे। हे राजन्! महाराज भगीरथने गंगाजीके वचन सुन कैलाश पर्व्वतमें जा और तपस्या करके शिवजीको प्रसन्न किया। तब राजा भगीरथने अपने पितरोंके स्वर्गमें जानेके निमित्त शिवसे यही बरदान मांगा, कि आप गंगाजीको अपने सिर पर धारण कीजिये।

१०८ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे महाराज! राजा भगीरथके बचन सुन देवतोंकी प्रिय कामनासे भगवान शिवजीने उनके बचनको स्वीकार करके कहा, कि हे महाभाग! हे राजोत्तम! हम स्वर्गसे गिरती हुई कल्याणपवित्र देवनदीको तुम्हारे हितके निमित्त धारण करेंगे, हे महाबाहो! शिवजी भगीरथसे ऐसे बचन कह नानाशस्त्रधारी गणके संग हिमाचल पर पहुंचे। वहां आकर पुरुषोंमें श्रेष्ठ भगीरथसे बोले कि, हे महावाहो! अब तुम पर्व्वतराजपुत्री गंगाकी प्रार्थना करो, जब वे नदियोंमें श्रेष्ठ गंगा स्वर्गसे गिरेंगी तो हम धारण करेंगे। शिवजीके बचन सुन अपने मनको स्थिर और विनीत कर भगीरथने गंगाजीका ध्यान किया, उनके ध्यान करतेही और शिवजीको बैठे हुए देख पवित्र जलवाली रमणीय गंगा स्वर्गसे गिरीं। गंगाको गिरते हुए देख देवता, महाऋषि, गन्धर्व्व, सर्प, और यक्ष लोग देखनेकी इच्छासे आये। उसी समय हिमाचलकी पुत्री गंगा स्वर्गसे गिरीं। जिसमें बड़ी बड़ी तरंग उठती थीं, जो मकरी और ग्राहोंसे भरी हुई थी, हे राजन्! उस गंगाको शिवजीने अपने शिर पर भूषणके समान धारण किया। हे राजन्! वह तीन धारावाली गंगाजी शिवजीके शिर पर मोतीकी मालाके समान शोभित होने लगीं। जो गंगाजी समुद्रमें जानेवाली, फेनोंसे भरी हुई, जलसे पूर्ण हैं, सो ऐसी विराजमान हुई, जैसी हंसकी पंक्ति, कहीं भौंरोंसे कुटिल, कहीं कहीं जलसे भरी हुई, उस समय गंगाजीको फेनरूपी कपड़ा पहननेसे ऐसी शोभा बढ़ी जैसी सुन्दरी स्त्रीकी। कहीं जलका घोर शब्द होने लगा, इस प्रकार आकाशसे गिरती हुई गंगाकी शोभा बढ़ी। अनन्तर पृथ्वीमें आकर गंगाजीने भगीरथसे कहा, कि हे पृथ्वीनाथ! हे महाराज! मैंने तुम्हारे लिये पृथ्वीमें औतार लिया है, कहो अब मैं कौनसे मार्गसे चलूं? राजा भगीरथने लोकपूजित शिवजीके सिरमें गंगाजीको स्थापन करके अपने पुरखोंको पवित्र जलसे स्नान करानेके निमित्त उधरही चले जिधर महात्मा सगरके साठ हजार पुत्र मरे पड़े थे। अनन्तर शिवजीभी देवतोंके सहित गंगाजीको धारण करके पर्व्वतश्रेष्ठ कैलाशको चले गये। अनन्तर राजा भगीरथने गंगाको समुद्रतक पहुंचा दिया, गंगाने वरुणके स्थान समुद्रको अपने जलसे पूर्ण कर दिया, राजा भगीरथने गंगाको अपनी पुत्री बनाया और मनोरथ पूरा करके अपने पुरखोंको जलदान किया। हे महाराज! आपने जो हमसे गंगाका वृत्तान्त पूछा था, सो हमने आपसे सब कहा। इस प्रकार स्वर्ग मर्त्त और पातालमें जाने वाली गंगा समुद्रको पूर्ण करनेके निमित्त पृथ्वीमें आयी थीं और इस प्रकार महात्मा अगस्त्यने समुद्रको पीया था और इस प्रकार वातापी राक्षसका नाश

हुआ था। अब आप जो हमसे पूछें सो हम कहैं।

१०८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भरतकुल सिंह जनमेजय! तब कुन्तीनन्दन युधिष्ठिर क्रमसे ...ते पाप भयका नाश करनेवाली नन्दा और ...म नन्दा नदीके तट पर पहुंचे, वहांपर सुन्दर ...मकूट नामक पर्वत पर जाकर राजा युधि...रने अनेक अद्भुत भावोंको देखा। जहां ...में मेघ और अली वायुके वशसे स्थिर थे ...नके भयसे पुरुष ऊपर नहीं जा सकते थे, ...ोसे पुरुषोंको महा दुःख होता था जहां ...दाही वायु चलना था और सदाही जल बर...ता था, जहांके शब्द सुनाई देते थे, परन्तु ...नेवालेका रूप नहीं दीखता था, जहां ...ध्याको और भोरको भगवान अग्निके दर्शन ...ते थे, जहां तपके नाश करनेवाली मक्खी ...रुषोंको काटती थी, जहां जानेसे चित्तको ...त ग्लानि होती थी, जहां जानेसे घरके ...रुषको स्मरण करते थे, महाराज युधिष्ठिरने ...सी ऐसी अनेक विचित्र वातोंको देख ...मश ऋषिसे इसका कारण पूछा। श्रीलोमश मुनि बोले, हे शत्रुनाशन! हमने इस विषयको जैसा सुना है, वैसाही आपसे कहते ..., आप एकाग्रचित्त होकार सुनिये। इस ...मकूट नामक पर्वतमें एक ऋषभ नामक ...न हुये थे, उनकी कई सौ वर्षकी अवस्था ..., परन्तु वे परम क्रोधी थे। उन्होंने ...ोंके रचन सुनकर महाक्रोधसे पर्वतसे ... जो कोई यहां आकर कुछ कहेगा ... उसपर इसम बरसेगा. अनन्तर मुनिने ... कर दाहुम कहा कि शब्द मत करो, ... इसका सबका शब्द निवारण ... हे महाराज! इस प्रकार उन महा... आदिको शांति होकर अनेक बहुत कर्म किये और अनेक कर्म्मोंको रोक दिया। हे राजन्! हमने सुना है, कि पहले समयमें देवता लोग नन्दापर गये थे और मनुष्य लोग-भी उनके दर्शनकी इच्छासे उनके पीछे गये थे। वहां इन्द्रादिक देवतोंने पुरुषोंको दर्शन देना नहीं चाहा। तब यह विघ्नरूपी दुर्ग बनाया है। यह देश इसके बीचमें है, हे कुन्तीनन्दन! तबहींसे मनुष्य लोग इस पर्व्वतको देखभी नहीं सकते हैं और चढ़नेकी तो कथा-ही क्या है? हे कुन्तीनन्दन! विना तप किये हुए, इस महा पर्व्वतको कोईभी पुरुष नहीं देख सकता है, अतएव तुम सावधान हो जाओ। हे भारत! इसही स्थान पर देवतोंने उत्तम उत्तम यज्ञ किये हैं, जिनके चिह्न अभीतक दीखते हैं, देखो यह कुशाके समान घास, बिछौनेके समान भूमि और यूपके समान अनेक वृक्ष लगे हैं। हे पृथ्वीनाथ! हे भारत! यहांपर अवभी अनेक देवता और ऋषि बसते हैं, उनहीके अग्निहोत्रकी अग्नि प्रातःकाल और सन्ध्या समय दीखती है। हे कुन्तीनन्दन! यहां स्नान करनेसे उसही समय पाप नष्ट हो जाता है, इस लिये हे कुरुश्रेष्ठ! आप अपने भाइयोंके सहित यहां स्नान कीजिये, यहां स्नान करनेके पश्चात् तुमको कौशिकी नदी मिलेगी, जहां विश्वामित्र मुनिने घोर तप किया था। राजा युधिष्ठिरने अपने पुरुषोंके सहित नन्दामें स्नान किया, वहांसे पवित्र, रम्य, सुन्दर, शीतल जलवाली कौशिकी नदीको चले। श्रीलोमश मुनि बोले, हे भरतकुल सिंह यही पवित्र देवनदी कौशिकी है. यहां विश्वामित्र मुनिका रमणीय आश्रम है, और यह महात्मा काश्यप मुनिका पवित्र आश्रम है। यहां ...तपस्वी काश्यप मुनिके पुत्र ऋष्यशृङ्गका जन्म हुआ था, ...न्होंने ... ...प्रभावसे इन्द्र ...वर्षाया था। ...नके भयसे ...कालमें इन्द्रने ...वर्षा की, यह काश्यपके

हम आपसे मांगते हैं। श्रीलोमश मुनि बोले, लोकपूजिता गंगाजीने राजाके वचन सुन प्रसन्न हो भगीरथसे कहा हे महाराज। हम निःसन्देह तुम्हारे वचनको करेंगी, परन्तु हमारा वेग बहुत घोर है उसे धारण करनेको पृथ्वीमें कोई नहीं है, हे नरनाथ। उसको नीलकण्ठ-शिवजीही धारण कर सकते हैं, हे महाबाहो। तुम वर देनेवाले शिवजीको तपस्यासे प्रसन्न करो, वही महादेव स्वर्गसे गिरी हुई हमको अपने सिर पर धारण करेंगे। वह पितरोंके हितके निमित्त तुम्हारी इच्छा पूर्ण करेंगे। हे राजन्। महाराज भगीरथने गंगाजीके वचन सुन कैलाश पर्व्वतमें जा घोर तपस्या करके शिवजीको प्रसन्न किया। तब राजा भगीरथने अपने पितरोंके स्वर्गमें जानेके निमित्त शिवसे यही बरदान मांगा, कि आप गंगाजीको अपने सिर पर धारण कीजिये।

१०८ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले; हे महाराज। राजा भगीरथके वचन सुन देवतोंकी प्रिय कामनासे भगवान शिवजीने उनके बचनको स्वीकार करके कहा, कि हे महाभाग। हे राजोत्तम! हम स्वर्गसे गिरती हुई कल्याणपवित्र देवनदीको तुम्हारे हितके निमित्त धारण करेंगे, हे महाबाहो! शिवजी भगीरथसे ऐसे बचन कह नानाशस्त्रधारी गंगाके संग हिमाचल पर पहुंचे। वहां आकर पुरुषोंमें श्रेष्ठ भगीरथसे बोले कि, हे महाबाहो! अब तुम पर्व्वतराजपुत्री गंगाकी प्रार्थना करो, जब वे नदियोंमें श्रेष्ठ गंगा स्वर्गसे गिरेंगी तो हम धारण करेंगे। शिवजीके वचन सुन अपने मनको स्थिर और विनीत कर भगीरथने गंगाजीका ध्यान किया, उनके ध्यान करतेही और शिवजीको बैठे हुए देख पवित्र जलवाली रमणीय गंगा स्वर्गसे गिरीं। गंगाको गिरते हुए देख देवता, महाऋषि, गन्धर्व्व, सर्प, और यक्ष लोग देखनेकी इच्छासे आये। उसी समय हिमाचलकी पुत्री गंगा स्वर्गसे गिरीं। जिसमें बड़ी बड़ी तरंग उठती थीं, जो मछरी और ग्राहोंसे भरी हुई थी, हे राजन्! उस गंगाको शिवजीने अपने शिर पर भूषणके समान धारण किया। हे राजन्! वह तीन धारावाली गंगाजी शिवजीके शिर पर मोतीकी मालाके समान शोभित होने लगीं। जो गंगाजी समुद्रमें जानेवाली, फेनोंसे भरी हुई, जलसे पूर्ण हैं, सो ऐसी विराजमान हुईं, जैसी हंसकी पंक्ति, कहीं भौरोंसे कुटिल, कहीं कहीं जलसे भरी हुई, उस समय गंगाजीको फेनरूपी कपड़ा पहननेसे ऐसी शोभा बढ़ी जैसी सुन्दरी स्त्रीकी। कहीं जलका घोर शब्द होने लगा, इस प्रकार आकाश से गिरती हुई गंगाकी शोभा बढ़ी। अनन्तर पृथ्वीमें आकर गंगाजीने भगीरथसे कहा, कि हे पृथ्वीनाथ। हे महाराज! मैंने तुम्हारे लिये पृथ्वीमें औतार लिया है, कहो अब मैं कौनसे मार्गसे चलूं? राजा भगीरथने लोक पूजित शिवजीके सिरमें गंगाजीको स्थापन करके अपने पुरखोंको पवित्र जलसे स्नान करानेके निमित्त उधरही चले जिधर महात्मा सगरके साठ हजार पुत्र मरे पड़े थे। अनन्तर शिवजीभी देवतोंके सहित गंगाजीको धारण करके पर्व्वत श्रेष्ठ कैलाशको चले गये। अनन्तर राजा भगीरथने गंगाको समुद्रतक पहुंचा दिया, गंगाने वरुणके स्थान समुद्रको अपने जलसे पूर्ण कर दिया, राजा भगीरथने गंगाको अपनी पुत्री बनाया और मनोरथ पूरा करके अपने पुरखोंको जलदान किया। हे महाराज! आपने जो हमसे गंगाका वृत्तान्त पूछा था, सो हमने आपसे सब कहा। इस प्रकार स्वर्ग मर्त्य और पातालमें जाने वाली गंगा समुद्रको पूर्ण करनेके निमित्त पृथ्वीमें आयी थीं और इस प्रकार महात्मा अगस्त्यने समुद्रको पीया था और इस प्रकार वातापी राक्षसका नाश

हुआ था। अब आप जो हमसे पूछें सो हम कहैं।

१०९ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भरतकुल सिंह जनमेजय। तब कुन्तीनन्दन युधिष्ठिर क्रमसे चलते पाप भयका नाश करनेवाली नन्दा और परम नन्दा नदीके तट पर पहुंचे, वहांपर सुन्दर हेमकूट नामक पर्व्वत पर जाकर राजा युधिष्ठिरने अनेक अद्भुत भावोंको देखा। जहां सहस्रों मेघ और आंधी वायुके वशसे स्थिर थे जिनके भयसे पुरुष ऊपर नहीं जा सकते थे, इसीसे पुरुषोंको महा दुःख होता था जहां सदाही वायु चलता था और सदाही जल बरसता था, जहांके शब्द सुनाई देते थे, परन्तु पढ़नेवालेका रूप नही दीखता था, जहां सन्ध्याको और भोरको भगवान अग्निके दर्शन होते थे, जहां तपके नाश करनेवाली मक्खी पुरुषोंको काटती थीं, जहां जानेसे चित्तको बहुत ग्लानि होती थी, जहां जानेसे घरके पुरुषको स्मरण करते थे, महाराज युधिष्ठिरने ऐसी ऐसी अनेक विचित्र बातोंको देख लोमश ऋषिसे इसका कारण पूछा। श्रीलोमश मुनि बोले, हे शत्रुनाशन। हमने इस विषयको जैसा सुना है, वैसाही आपसे कहते हैं, आप एकाग्रचित्त होकर सुनिये। इस ऋषभकूट नामक पर्व्वतमें एक ऋषभ नामक मुनि हुये थे, उनकी कई सौ वर्षको अवस्था थी, परन्तु वे परम क्रोधी थे। उन्होंने किसीके वचन सुनकर महाक्रोधसे पर्व्वतसे कहा कि जो कोई यहां आकर कुछ बोलेगा उसके ऊपर पत्थर बरसैगा, अनन्तर मुनिने क्रोध करके वायुसे कहा कि शब्द मत करो, जो यहां बोलेगा उसको भयका शब्द निवारण करना। हे महाराज। इस प्रकार उस महातपोधन क्रोधके वशमें होकर अनेक अद्भुत कर्म्म किये और अनेक कर्म्मोंको रोक दिया। हे राजन्! हमने सुना है, कि पहले समयमें देवता लोग नन्दापर गये थे और मनुष्य लोगभी उनके दर्शनकी इच्छासे उनके पीछे गये थे। वहां इन्द्रादिक देवतोंने पुरुषोंको दर्शन देना नहीं चाहा। तब यह विघ्नरूपी दुर्ग बनाया है। यह देश इसके बीचमें है, हे कुन्तीनन्दन। तबहीसे मनुष्य लोग इस पर्व्वतको देखभी नहीं सकते हैं और चढ़नेकी तो कथाही क्या है? हे कुन्तीनन्दन! बिना तप किये हुए, इस महा पर्व्वतको कोईभी पुरुष नहीं देख सकता है, अतएव तुम सावधान हो जाओ। हे भारत! इसही स्थान पर देवतोंने उत्तम उत्तम यज्ञ किये हैं, जिनके चिह्न अभीतक दीखते हैं, देखो यह कुशाके समान घास, बिछौनेके समान भूमि और यूपके समान अनेक वृक्ष लगी हैं! हे पृथ्वीनाथ! हे भारत! यहांपर अबभी अनेक देवता और ऋषि बसते हैं, उनहीके अग्निहोत्रकी अग्नि प्रातःकाल और सन्ध्या समय दीखती है। हे कुन्तीनन्दन। यहां स्नान करनेसे उसही समय पाप नष्ट हो जाता है, इस लिये हे कुरुश्रेष्ठ! आप अपने भाइयोंके सहित यहां स्नान कीजिये, यहां स्नान करनेके पश्चात् तुमको कौशिकी नदी मिलेगी, जहां विश्वामित्र मुनिने घोर तप किया था। राजा युधिष्ठिरने अपने पुरुषोंके सहित नन्दामें स्नान किया, वहांसे पवित्र, रम्य, सुन्दर, शीतल जलवाली कौशिकी नदीको चले। श्रीलोमश मुनि बोले, हे भरतकुल सिंह यही पवित्र देवनदी कौशिकी है, यही विश्वामित्र मुनिका रमणीय आश्रम है, और यह महात्मा काश्यप मुनिका पवित्र आश्रम है। यहीं जितेन्द्रिय तपस्वी काश्यप मुनिके पुत्र ऋष्यशृङ्गका जन्म हुआ था, जिन्होंने अपने तपके प्रभावसे जल बरसाया था, जिनके भयसे अकालमें इन्द्रने वर्षा करी थी, वह काश्यपके

हम आपसे मांगते हैं। श्रीलोमश मुनि बोले, लोकपूजिता गंगाजीने राजाके बचन सुन प्रसन्न हो भगीरथसे कहा हे महाराज। हम निःसन्देह तुम्हारे बचनको करेंगी, परन्तु हमारा वेग बहुत घोर है उसे धारण करनेको पृथ्वीमें कोई नहीं है, हे नरनाथ। उसको नीलकण्ठशिवजीही धारण कर सकते हैं, हे महाबाहो। तुम बर देनेवाले शिवजीको तपस्यासे प्रसन्न करो, वही महादेव स्वर्गसे गिरी हुई हमको अपने सिर पर धारण करेंगे। वह पितरोंके हितके निमित्त तुम्हारी इच्छा पूर्ण करेंगे। हे राजन्। महाराज भगीरथने गंगाजीके वचन सुन कैलाश पर्व्वतमें जा घोर तपस्या करके शिवजीको प्रसन्न किया। तब राजा भगीरथने अपने पितरोंके स्वर्गमें जानेके निमित्त शिवसे यही बरदान मांगा, कि आप गंगाजीको अपने सिर पर धारण कीजिये।

१०८ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे महाराज। राजा भगीरथके वचन सुन देवतोंकी प्रिय कामनासे भगवान शिवजीने उनके बचनको स्वीकार करके कहा, कि हे महाभाग! हे राजोत्तम! हम स्वर्गसे गिरती हुई कल्याणपवित्र देवनदीको तुम्हारे हितके निमित्त धारण करेंगे, हे महाबाहो। शिवजी भगीरथसे ऐसे बचन कह नानाशस्त्रधारी गणोंके संग हिमाचल पर पहुंचे। वहां आकर पुरुषोंमें श्रेष्ठ भगीरथसे बोले कि, हे महाबाहो! अब तुम पर्व्वतराजपुत्री गंगाकी प्रार्थना करो, जब वे नदियोंमें श्रेष्ठ गंगा स्वर्गसे गिरेंगी तो हम धारण करेंगे। शिवजीके वचन सुन अपने मनको स्थिर और विनीत कर भगीरथने गंगाजीका ध्यान किया, उनके ध्यान करतेही और शिवजीको बैठे हुए देख पवित्र जलवाली रमणीय गंगा स्वर्गसे गिरीं। गंगाको गिरते हुए देख देवता, महाऋषि, गन्धर्व्व, सर्प, और यक्ष लोग देखनेकी इच्छासे आये। उसी समय हिमाचलकी पुत्री गंगा स्वर्गसे गिरीं। जिसमें बड़ी बड़ी तरंग उठती थीं, जो मछरी और ग्राहोंसे भरी हुई थी, हे राजन्। उस गंगाको शिवजीने अपने शिर पर भूषणके समान धारण किया। हे राजन्! वह तीन धारावाली गंगाजी शिवजीके शिर पर मोतीकी मालाके समान शोभित होने लगीं। जो गंगाजी समुद्रमें जानेवाली, फेनोंसे भरी हुई, जलसे पूर्ण हैं, सो ऐसी विराजमान हुई, जैसी हंसकी पंक्ति, कहीं भौंरोंसे कुटिल, कहीं कहीं जलसे भरी हुई, उस समय गंगाजीकी फेनरूपी कपड़ा पहननेसे ऐसी शोभा बढ़ी जैसी सुन्दरी स्त्रीकी। कहीं जलका घोर शब्द होने लगा, इस प्रकार आकाश से गिरती हुई गंगाकी शोभा बढ़ी। अनन्तर पृथ्वीमें आकर गंगाजीने भगीरथसे कहा, कि हे पृथ्वीनाथ। हे महाराज! मैंने तुम्हारे लिये पृथ्वीमें औतार लिया है, कहो अब मैं कौनसे मार्गसे चलूं? राजा भगीरथने लोक पूजित शिवजीके सिरमें गंगाजीको स्थापन करके अपने पुरखोंको पवित्र जलसे स्नान करानेके निमित्त उधरही चले जिधर महात्मा सगरके साठ हजार पुत्र मरे पड़े थे। अनन्तर शिवजीभी देवतोंके सहित गंगाजीको धारण करके पर्व्वत श्रेष्ठ कैलाशको चले गये। अनन्तर राजा भगीरथने गंगाको समुद्रतक पहुंचा दिया, गंगाने वरुणके स्थान समुद्रको अपने जलमें पूर्ण कर दिया, राजा भगीरथने गंगाको अपनी पुत्री बनाया और मनोरथ पूरा करके अपने पुरखोंको जलदान किया। हे महाराज! आपने जो हमसे गंगाका वृत्तान्त पूछा था, सो हमने आपसे सब कहा। इस प्रकार स्वर्ग मर्त्य और पातालमें जाने वाली गंगा समुद्रको पूर्ण करनेके निमित्त पृथ्वीमें आयी थीं और इस प्रकार महात्मा अगस्त्यने समुद्रको पीया था और इस प्रकार वातापी राक्षसका नाश

हुआ था। अब आप जो हमसे पूछें सो हम कहैं।

१०९ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भरतकुल सिंह जनमेजय! तब कुन्तीनन्दन युधिष्ठिर क्रमसे लते पाप भयका नाश करनेवाली नन्दा और रम नन्दा-नदीके तट पर पहुचे, वहांपर सुन्दर मकूट नामक पर्व्वत पर जाकर राजा युधिष्ठिरने अनक अद्भुत भावोंको देखा। जहा इसों मेघ और अाले वायुके वशसे स्थिर थे नके भयसे पुरुष ऊपर नहीं जा सकते थे, ोसे पुरुषोंको महा दुःख होता था जहा ाही वायु चलता था और सदाही जल वर ा था, जहाके शब्द सुनाई देते थे, परन्तु नेवालेका रूप नहीं दीखता था, जहा ाकी और भोरको भगवान अग्निके दर्शन ा थे, जहा तपके नाश करनेवाली सक्खी ोंको काटती थीं, जहां जानेसे चित्तको ा ग्लानि होती थी, जहां जानेसे घरकी ाको स्मरण करते थे, महाराज युधिष्ठिरने ऐसी अनेक विचित्र बातोंको देख श ऋषिसे इसका कारण पूछा। श्रीलोमश बाले, हे शत्रुनाशन। हमने इस ाको जैसा सुना है, वैसाही आपसे कहते आप एकाग्रचित्त होकर सुनिये। इस कूट नामक पर्व्वतमें एक ऋषभ नामक हुये थे, उनकी कई सौ वर्षको अवस्था परन्तु वे परम क्राधी थे। उन्होंने े वचन सुनकर महाक्राधसे पर्व्वतसे कि जो कोई यहा आकर कुछ बोलेगा ऊपर पत्थर बरसेगा, अनन्तर मुनिन करके वायुसे कहा कि शब्द मत करो, ा बोलेगा उसका मेघका शब्द निवारण । हे महाराज! इस प्रकार उस महाक्रोधके वशमें होकर अनेक अद्भुत कर्म्म किये और अनेक कर्म्मोंको रोक दिया। हे राजन्! हमने सुना है, कि पहले समयमें देवता लोग नन्दापर गये थे और मनुष्य लोगभी उनके दर्शनकी इच्छासे उनके पीछे गये थे। वहां इन्द्रादिक देवतोंने पुरुषोंको दर्शन देना नहीं चाहा। तब यह विघ्नरूपी दुर्ग बनाया है। यह देश इसके बीचमें है, हे कुन्तीनन्दन। तबहीसे मनुष्य लोग इस पर्व्वतको देखभी नहीं सकते हैं और चढ़नेकी तो कथाही क्या है? हे कुन्तीनन्दन! बिना तप किये हुए, इस महा पर्व्वतको कोईभी पुरुष नहीं देख सकता है, अतएव तुम सावधान हो जाओ। हे भारत! इसही स्थान पर देवतोंने उत्तम उत्तम यज्ञ किये हैं, जिनके चिह्न अभीतक दीखते है, देखो यह कुशाके समान घास, बिछौनेके समान भूमि और यूपके समान अनेक वृक्ष लगे हैं! हे पृथ्वीनाथ। हे भारत! यहापर अबभी अनेक देवता और ऋषि बसते हैं, उनहीके अग्निहोत्रकी अग्नि प्रातःकाल और सन्ध्या समय दीखती है। हे कुन्तीनन्दन! यहा स्नान करनेसे उसही समय पाप नष्ट हो जाता है, इस लिये हे कुरुश्रेष्ठ! आप अपने भाइयोंके सहित यहा स्नान कीजिये, यहां स्नान करनेके पश्चात् तुमको कौशिकी नदी मिलेगी, जहां विश्वामित्र मुनिने घोर तप किया था। राजा युधिष्ठिरने अपने पुरुषोंके सहित नन्दामें स्नान किया, वहासे पवित्र, रम्य, सुन्दर, शीतल जलवाली कौशिकी नदीको चले। श्रीलोमश मुनि बोले, हे भरतकुल सिंह यही पवित्र देवनदी कौशिकी है, यही विश्वामित्र मुनिका रमणीय आश्रम है, और यह महात्मा काश्यप मुनिका पवित्र आश्रम है। यहीं जितेन्द्रिय तपस्वी काश्यप मुनिके पुत्र ऋष्यशृङ्गका जन्म हुआ था, जिन्होंने अपने तपके प्रभावसे जल बरसाया था, जिनके भयसे अकालमें इन्द्रने वर्षा करी थी, वह काश्यपके-

पुत्र तेजस्वी शृंगी ऋषि हरनीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे, यह अद्भुत वार्त्ता लोमपाद राजाके राज्यमें हुई थी, जिनको जल वरसनेके पश्चात् राजा लोमपादने अपनी पुत्री शान्ता इस प्रकार दान करी थी जैसे सूर्य्यने सावित्री। राजा युधिष्ठिर बोले, हे ब्राह्मन्। काश्यप मुनिके वीर्य्य और हरिनीके गर्भसे ऋष्यशृङ्ग मुनिका जन्म किस प्रकार हुआ? क्योंकि यह योनि सम्बन्धके विरुद्ध जान पड़ता है, कैसे कैसे उन्होंने तप किया? और अकालके समयमें उस बुद्धिमान वालकके भयसे वृत्रासुरके मारनेवाले इन्द्रने क्यों जल वरसाया था? और जिसने उस हरिनरूपी महामुनिके चित्तको लुभाया था, वह व्रत धारिणी राजपुत्री शान्ता कैसी रूपवती थी, हमने सुना है, कि राज ऋषि महाराज लोमपाद परम धार्म्मिक थे, तव उनके राज्यमें इन्द्रने क्यों नहीं पानी वरसाया था? हे भगवान। इस सब कथाको आप हमसे विस्तारपूर्व्वक और ठीक ठीक कहिये हमको सुननेकी बहुत इच्छा है, श्रीलोमश मुनि बोले हे महाराज। तपसे आत्मदर्शी प्रजापतिके समान तेजवाले अमोघ वीर्य्य विभाण्डक नामक ऋषिके जिस प्रकार प्रतापवान ऋष्यशृङ्ग पुत्र हुए सो कथा हम आपसे कहते हैं, सुनिये। तेजस्वी काश्यप मुनिके पुत्र शृङ्गी ऋषि वालक होने परभी वूढ़ोंके समान थे, देवतोंके समान तेजस्वी काश्यप मुनि एक बड़े तड़ागके तट पर बैठकर तप करते थे, एक दिन उन्होंने जलमें स्नान करते उर्व्वशी अप्सराको देखा, देखतेही उनका वीर्य्य स्खलित होगया, हे राजन्! उस वीर्य्यको एक हरिणी पी गई, वह हरिणी बहुत प्यासी थी, इस लिये गर्भिणी हो गई। वह हरिणी पहले जन्ममें देवकन्या थी, ब्रह्माके शापसे हरिनी बनी थी और ब्रह्माने यहभी कह दिया था, कि जब तेरे गर्भसे मुनिका जन्म होगा तबही तू इस योनिसे छूटेगी, ब्रह्माका वचन अमोघ होनेके कारण और होनेवाले कार्य्यके अवश्य होनेके कारण उस हरिणीके गर्भसे महामुनि ऋष्यशृङ्ग का जन्म हुआ, ऋष्यशृङ्ग तप करनेके निमित्त सदा वनहीमें रहने लगे। हे राजन्! महात्मा ऋष्यशृङ्ग मुनिके सिर पर दो सींग थे, इसी लिये उनका नाम ऋष्यशृङ्ग हुआ। हे नरनाथ। उन्होंने अपने जन्ममें पिताके सिवाय दूसरे पुरुषोंको नहीं देखा था, इस लिये उनकी इच्छा ब्रह्मचारीही होनेमें रही। उसही समय महाराज दशरथने यज्ञ किया था। उस समय अङ्गदेशके राजा का नाम लोमपाद था उस लोमपाद ने बुद्धिके भ्रमसे एक ब्राह्मणको कहा कि, हम तुमको दान देंगे परन्तु फिर नहीं दिया, इस लिये महाराज लोमपादको ब्राह्मणोंने त्याग दिया, प्रारब्ध वश और पुरोहितोंके दोषसे उसके राज्यमें नौ वर्ष तक वर्षा न हुई, तब प्रजाको महा दुख हुआ, तब राजा लोमपादने जल वरसानेमें समर्थ तपस्वी और महात्मा ब्राह्मणोंसे पूछा कि जिस उपायसे जल वरसे सो कहिये। तब पण्डित लोगोंने अपनी बुद्धिके अनुसार सम्मति बताई। उस सभामें एक मुनिने राजासे कहा कि हे राजेन्द्र! आपसे ब्राह्मण लोग क्रुद्ध होगये हैं, इसका प्रायश्चित्त कीजिये। हे पृथ्वीनाथ! आप काश्यप मुनिके पुत्र ऋष्यशृङ्गको बुलाइये वह केवल ब्रह्मचारी हैं, वे स्त्रियोंके सुखको कुछभी नहीं जानते और वनवासी हैं, यदि महात्मा ऋष्यशृङ्ग आपके राज्यमें आवें तो उसही समय वर्षा होय, इस वातमें कोईभी सन्देह नहीं है। हे युधिष्ठिर! राजा लोमपादने ब्राह्मणोंके ऐसे वचन सुन पवित्र स्थानमें जाकर अपना प्रायश्चित्त किया और ब्राह्मणोंको प्रसन्न कर फिर अपने घरमें आये, जब प्रजाने सुना कि महाराज आगये तो बहुतही आनन्द माना, अनन्तर अंगराज लोमपादने मन्त्र जाननेवाले मन्त्रियोंको वुलाकर उनसे ऋष्यशृङ्ग

मुनिके बुलानेका यत्न किया, उन्होंने शास्त्र जाननेवाले सब अर्थोंके पण्डित नीति निपुण मन्त्रियोंकी सम्मतिसे ऋष्यशृंगके बुलानेका उपाय स्थिरकर मुख्य वेश्याओंको बुलाया, अनन्तर राजाने प्रवीण वेश्याओंसे कहा कि तुम किसी यत्नसे ऋषिपुत्र ऋष्यशृंगको यहां ले आओ हे सुन्दरि! उनके चित्तको लुभाकर विश्वास देकर हमारे राज्यमें ले आओ। वेश्याओंको राजाके वचन सुन इधर राजाका और उधर ऋषिका भय हुआ, अनन्तर सब वेश्याओंने मलीन वर्ण और दुःखित होकर कहा कि हे महाराज! यह काम होनेके योग्य नहीं है, तब एक बूढ़ी स्त्री राजासे बोली, कि हे महाराज! मैं उस तपोधन ऋषिके लानेका उपाय करूंगी, परन्तु आप आज्ञा दीजिये कि जो मेरी इच्छा हो वही करूं, तब मैं ऋषिपुत्र ऋष्यशृङ्गको ला सकूगी। राजाने उसके मनका सब अभिप्राय जानकर उसको बहुत धन और अनेक प्रकारके रत्न दिये, हे राजन्! वह बूढ़ी स्त्री रूपसे भरी हुई नवीन यौवनवाली स्त्रियोंको सगमें ले शीघ्रही वनको चली गई।

११० अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे महाराज! उस बूढ़ी स्त्रीने राजाको आज्ञा मान उनको कार्य्यसाधके निमित्त अपनी बुद्धि और राजाकी आज्ञासे अनेक फूले फले बनाये हुए वृक्षोंसे शोभित अनेक प्रकारके गुल्मोंके सहित मीठे फल और फलोंसे भरा हुआ, परम रमणीय पवित्र दर्शनवाला एक नावोंका स्थान बनाया, और उस नावको शृङ्गऋषिके आश्रमके समीप जा बांध दिया और आश्रमसे समीपही पुरुषोंके अनेक प्रकारके विहार करने लगी। एक दिन काश्यप मुनिको एकान्तमें बैठे देख अपनी बुद्धिमती पुत्रीको सब कार्य्य समझा उनके पास भेजा, वह बुद्धिमती वेश्या नित्य तप करनेवाले मुनिके आश्रममें जाकर काश्यप मुनिके पुत्र शृङ्गीऋषिको देखकर कहने लगी। वेश्या बोली, हे मुने! कहिये आपके आश्रममें कुशल तो है? आपके यहां फल मूल तो उत्पन्न हुए हैं? कहिये आप आनन्दसे विहार तो करते है? मैं आज आपको देखनेहीको यहां आई हूं, कहिये आपके आश्रमके तपस्वी लोग तो अच्छे हैं न? कहिये, उनका तप तो आनन्दसे होता है? परम तेजस्वी आपके पिता काश्यप मुनि आपसे प्रेम करते हैं न? हे ऋष्यशृङ्ग! आपका वेदपाठ तो होता है?

श्रीऋष्यशृङ्ग मुनि बोले, हम तुमको ज्योतिके समान प्रकाशमान देखकर प्रणाम करनेके योग्य जानते है, हम धर्म्मके अनुसार पाद्य, अर्घ, फल और मूल देते है, यह कुशका आसन पड़ा है, और इस पर यह काले हरिनका चमड़ा बिछा है, इस पर आप सुखसे बैठिये। हे ब्रह्मन्! आपका कहां आश्रम है? और आपका क्या नाम है? और कौनसा देव समान व्रत तुमने धारण किया है? वेश्या बोली, हे काश्यप पुत्र! हमारा रमणीय आश्रम इस पर्व्वतके पास यहांसे बारह कोस है, हमको प्रणाम करना आपका धर्म्म नहीं है, और हम जलकाभी स्पर्श नहीं करेंगे, हे ब्रह्मन्! हम आपको प्रणाम करने योग्य हैं, परन्तु आप हमको प्रणाम करने योग्य नहीं है। आपका परम धर्म्म हमसे लपटनाही है। श्रीऋष्यशृंग मुनि बोले, हम तुमको पके हुए भिलावे, आमले, इंगुदी, धन्वन और पीपलके फल देते हैं, आप सुखसे भोजन कीजिये। श्रीलोमश मुनि बोले, उस वेश्याने उन सबको परित्याग करके ऋष्यशृंग मुनिको उत्तम उत्तम भोजन दिये। मुनि उसके रूपको देख और भक्षणकर बहुत प्रसन्न हुए, तब उस वेश्याने उनको सुगन्धसे भरी हुई माला विचित्र प्रकाशमान वस्त्र और पीनेको उत्तम उत्तम चीज दई,

फिर प्रसन्न होकर हंसने और खेलने लगी। अनन्तर एक गेंद लेकर फली हुई लताके समान अनेक हाव भाव दिखाती हुई वहीं खेलने लगी, कभी मुनिके शरीरोंमें अपने शरीरको रगड़ती और कभी उनसे लपट जाती थी, कभी लज्जाहीन और मतवाली होकर राल, अशोक, और फूले हुए तिलोंके फूलोंसे खेलती थी, इस प्रकार उसने महर्षि काश्यपके पुत्र ऋष्यशृङ्गको लुभा लिया। अनन्तर ऋष्यशृङ्गको विकार सहित देख उनके शरीरोको वार वार मल उनकी ओर देखती हुई अग्निहोत्रका छल करके धीरे धीरे चली गई। उसके जानेके पीछे ऋष्यशृङ्ग कामदेवसे उन्मत्त होगये। एकान्तमें बैठ करके केवल उसहीका ध्यान करने लगे, और रोगीके समान सांस लेने लगे, उसही समय पिङ्गलवर्ण नेत्रवाले नखूनतक रूआंसे घिर हुए, वेदपाठी, समाधि करनवाले कश्यप मुनिके पुत्र विभाण्डक मुनि आये, उन्होंने अपने पुत्रको विपरीत एकान्तमें बैठे ध्यान करते, वार वार स्वास लेते केवल ऊपरको देखते हुए देख बूझा, हे पुत्र! तुम आज समाधि क्यों नहीं लाते हो? तुमने अपने अग्निहोत्रको आज क्यों, भुला दिया? क्या आज तुमने स्रुक और स्रुवेका स्पर्श नहीं किया? क्या तुमने आज गौके पास बछड़ेको नहीं छोड़ा? हे पुत्र! हम आज तुमको और दिनके समान न देख कर केवल चिन्तारत देखते हैं, आज तुम इतने दीन क्यों हो? हमारे पीछे आज यहां कौन आया था?

१११ अध्याय समाप्त।

श्रीऋष्यशृङ्ग मुनि बोले, यहां आज एक जटाधारी आये थे, न बहुत बहुत लम्बे और न बहुत छोटे थे, उनका रङ्ग सोनेके समान नेत्र कमलके समान थे, भूषणोंसे साक्षात् देवता जान पड़ते थे, महा रूपवान सूर्यके समान तेजस्वी, चिकने और गोरे शरीरवाले थे, उनके नेत्र काले, जटा सुगन्धसे भरी काली बहुत लम्बी और सोनेकी रस्सियोंसे गुही थीं, उनके कण्ठमें एक भूषण ऐसा प्रकाशित था जैसे आकाशमें विजुली, और हृदयमें दो पिण्ड थे, वे बहुत मनोहर और रोमरहित थे, उनका नाभिदेश बहुतही सुन्दर था, उनकी कमर अत्यन्त पतली मानो शरीरमें थोहो नहीं और उनके वस्त्रोंके भीतर एक सोनेकी कर धनी अत्यन्त शोभित थी और एक विचित्र वस्तु उनके पैरमें थी जिससे शब्द होता था, उनके हाथोंमें बजनेवाली नौगरी इस प्रकार शोभित थीं, जैसी मेरी यह कमलमाला। जब वह चलते थे तो वे सब भूषण ऐसे बजते थे, जैसे तालावमें मतवाले हंस बोलते हैं। उनके वस्त्र ऐसे सुन्दर थे, जैसे हमारे नहीं हैं, उनका मुख ऐसा सुन्दर था कि जिसको देखकर मेरा चित्त बहुत प्रसन्न हुआ, उनकी कोकिलके समान वाणी सुनकर मेरा हृदय व्यथित हो गया। उसका स्वास ऐसा सुगन्धित था जैसे वसन्त ऋतु की वायु। हे तात! वह ब्रह्मचारी उत्तम गन्ध और वायुसे सोबत होकर बहुत सुन्दर भान होता था, उनकी जटा अत्यन्त संस्कार करी हुई और माथेके सामने से दो भाग दिखाई देती थीं, उनके कान पर अत्यन्त रूपवाले समान दो आभूषण थे, वे ब्रह्मचारी एक बेगनके फलको दाहिने हाथमें लेकर वार वार उस भूमिको ओर फेंकते और अद्भुत रूपसे उछालते थे, हे तात! उसको वार वार मारकर वे इस प्रकार कांपते थे जैसे वायु लगनेसे वृक्ष कांपता है, उस देव पुत्रके समान ब्रह्मचारीको देख मेरे हृदयमें परम प्रेम और आनन्द उत्पन्न हुआ है, उसने मेरे शरीरसे अपने शरीरको मिलाकर मेरे मुख पर अपनी जटाओंको डाला, अनन्तर अपने मुखसे मेरे मुखको मिलाकर कुछ शब्द कहा, कुछ

मुझको बहुत आनन्द हुआ, मैंने पाद्य और यह फल उनको दिये, परन्तु उन्होंने ग्रहण नहीं किये, और कहा कि हम व्रत करते हैं, अनन्तर उन्होंने मुझको कुछ खानेकी वस्तु दई, मेरे लाये हुए फलमें उनके फलोंके समान स्वाद नहीं थे, जैसे उन फलोंके बकले थे, ऐसे इन फलोंके नहीं है। उस सुन्दर रूपवाले ब्रह्मचारीने मुझको बहुत स्वादवाला जल पीनेको दिया, जिसके पीतेही मुझको अत्यन्त आनन्द हुआ और मुझे जान पड़ा कि, पृथ्वी चल रही है, उन्होंने मुझको गन्धसे भरी हुई, रेशममें गुही हुई विचित्र रूपवाली माला दई है, जो तपसे प्रकाशमान ब्रह्मचारी यहां आये थे, उनके जानेसे मेरा चित्त उन्मत्तके समान हो गया है, और शरीर जले जाते है, मेरी इच्छा है कि या तो मैंही उनके आश्रमको शीघ्र चला जाऊं या वेही यहां आकर सदा रहैं। हे तात! मैं अब उनके आश्रमको जाता हूं देखू उन्होंने कौनसा ब्रह्मचर्य्य धारण किया है? मेरी इच्छा है कि उन आर्य्यधर्म्मवाले ब्रह्मचारीके सङ्ग रह कर वैसाही तप करूं जैसा वे करते हैं। हे तात! उनके सङ्ग रहने और वैसेही काम करनेकी मेरी इच्छा हृदयको दुःखित कर रही है।

११२ अध्याय समाप्त।

श्रीविभाण्डक मुनि बोले, हे पुत्र! अनेक राक्षस लोग ऐसाही अद्भुत रूप धारण करके वनोंमें घूमा करते हैं, वे लोग बहुत बलवान रूपवाले और तपस्यामें विघ्नकारी होते हैं। हे तात! वे परम सुन्दर रूपवाले राक्षस अनेक उपाय करके मुनियोंको लुभा लेते हैं, उन उत्तम रूपवालोंसे लोभित होकर कामसुख और लोकसे मुनि लोग नष्ट हो जाते हैं। स्थिर मनवाले कल्याणकी इच्छा करनेवाले मुनीश्वर लोग अत्यन्त प्रार्थना करने पर यदि उनकी सेवा करने लगते हैं, तो लोग तपमें विघ्न करके मुनिको कामको ओर झुका देते हैं, इस लिये उन्हें नहीं देखना चाहिये। हे पुत्र। यह जो माला तुमको उसने दई थी और पीनेकी वस्तु तुम्हें दी थी, ये सब पापियोंके योग्य हैं, वह जल नहीं बरन मद्य था, यह उत्तम गन्ध और परम प्रकाशवाली माला मुनियोंके योग्य नहीं है। इस प्रकार अपने पुत्रके मनमें उस स्त्रीको राक्षसरूप स्थिर करके उसको ढूंढ़ने लगे, जब तीनदिन ढूंढ़ने पर न पाया तो अपने आश्रमको चले गये, जब चौथे दिन विभाण्डक मुनि वेदोक्त विधिके अनुसार फल लेनेको गये, तब खूब सुन्दर वेष बनाकर वह वेश्या ऋष्यशृङ्ग मुनिको लुभानेके निमित्त आश्रम पर आई, उसको देखतेही ऋष्यशृङ्ग मुनि प्रसन्न होगये और उसी समय पृथ्वीमें गिर पड़े और उससे कहने लगे कि तुम जल्दी आओ जबतक हमारे पिता यहां न आवें तभीतक तुम्हें यहां रहना होगा, अनन्तर उस वेश्याने काश्यपके पुत्र ऋष्यशृङ्गको अपने सङ्ग लेकर उस नावमें बिठा दिया और उनको अनेक उपायोंसे प्रसन्न करती हुई राजा लोमपादके घरमें पहुंची। अनन्तर उस वेश्याने सुन्दर नावको ऐसे स्थान पर खड़ा किया, जहांसे आश्रम दीखता था, अनन्तर ऋष्यशृङ्गको नावसे उतार वैसेही नावके आश्रम और विचित्र बनमें बिठाया। राजा लोमपाद विभाण्डक मुनिके पुत्र ऋष्यशृङ्गको अपने रानवासमें ले गये, उन्होंने वहां जाकर देखा कि मेघ प्रवेश हुआ, और सब जगत् जलसे पूर्ण हो गया, अनन्तर राजा लोमपादने सब काम सिद्ध करके ऋष्यशृङ्ग मुनिको अपनी शान्ता नामक पुत्री दई और जिसमें उनका क्रोध शान्त हो, इस लिये अनेक गौ और वाहन दिये, अनन्तर राजाने अनेक पशु देकर वीर पशुपालोंसे कहा कि जब विभाण्डक मुनि अपने आश्रम पर

आकर तुमसे अपने पुत्रके समाचार पूछें तो, हाथ जोड़कर कहना कि, हे भगवान्! यह सब पशु और वाहन आपके पुत्रहीके हैं, हम सब आपके दास और वचनसे बंधे हैं, कहिये आपका कौनसा काम करें। अनन्तर महाक्रोधी, विभाण्डक मुनि मूल और फल ले अपने आश्रम पर आकर अपने पुत्रको ढूढ़ने लगे, जब न पाया, तो महा क्रोध किया, उन्होंने क्रोध करके विचारा कि अवश्य राजाने कुछ विधान किया है, उस समय मुनिको ऐसा क्रोध हुआ मानो पृथ्वीको फाड़ डालेंगे। अनन्तर चम्पापुरी, अङ्गराज अङ्गदेश और राजाके नगरोंको भस्म करनेकी इच्छासे चले, मार्गमें काश्यप मुनि अत्यन्त थक गये और भूखसे बहुत व्याकुल हो गये, तब ऋद्धियोंसे भरे हुए अनेक गोपालोंको देखा, उन ग्वालोंने उनकी राजाके समान पूजा करी और विभाण्डक मुनि रातभर उन्हींके सङ्ग रहे, मुनीश्वरने उनसे अत्यन्त सत्कार पाकर पूछा कि ये सब, गी और गोपाल किसके हैं? उन्होंने कहा कि यह सब धन आपहीका है, आपहीके पुत्रने उपार्ज्जन किया है। इसी प्रकार विभाण्डक मुनि स्थान स्थान पर पूजा पाते और मीठी वाणी सुनते हुए चले, इससे उनका क्रोध भी शान्त होगया। अनन्तर वे राजाके नगरमें पहुंचे, राजाने उनकी बहुत पूजा करी, जब विभाण्डक मुनिने अपने पुत्र ऋष्यशृङ्गको स्वर्गमें इन्द्रके समान राजाके भवनमें विराजमान देखा और अपने पुत्रकी स्त्री शान्ताकोभी बिजुलीके समान रूपवती देखा। हे नरनाथ! विभाण्डक मुनि पुत्रवधु शान्ता, पुत्रके धन और गावोंको देख अत्यन्त प्रसन्न हुए और उनका क्रोधभी शान्त हो गया, वे राजाकी प्रशंसाभी करने लगे। अनन्तर सूर्य्य और अग्निके समान तेजस्वी विभाण्डक मुनि अपने पुत्रको वहीं रहनेकी आज्ञा देकर बोले कि जब तुमको पुत्र उत्पन्न होजाय और इस राजाके सब काम कर चुको, तब बनहीको चले आना, अनन्तर ऋष्यशृङ्ग मुनिने वैसाही किया और जहां इनके पिता थे वहींको चले गये। हे नरेन्द्र! जिस प्रकार आकाशमें रोहिनी चन्द्रमाकी सुन्दरी, अरुन्धती वशिष्ठकी, लोपामुद्रा अगस्त्यकी, दमयन्ती नलकी, और नारायणी तथा इन्द्रसेना मुद्गलकी सेवा करती, थीं तैसेही अनुकूलाचारिणी शान्ता भी प्रीतिके सहित बनवासी ऋष्यशृङ्गकी सेवा करने लगी। हे अजमीढ़ वंशोत्पन्न युधिष्ठिर! यह पुण्य कीर्त्तिवाला तालाब उनहीका है। हे राजन्! इसमें स्नान करके कृतकृत्य और शुद्ध होकर दूसरे दूसरे तीर्थोंको चलिये।

११३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे जनमेजय! पाण्डुनन्दन युधिष्ठिर वहांसे कौशिकी पर गये, वहांसे क्रमसे सब तीर्थ और देवस्थानोंमें जाते हुए गङ्गा और समुद्रके सङ्गममें पहुंचे, उन्होंने पांच सौ नदियोंके सङ्गममें स्नान किया, अनन्तर महाराज वीर युधिष्ठिर अपने भाइयोंके सहित कालिङ्ग देशको और समुद्रके तटसे चले। श्रीलोमश मुनि बोले हे कुन्तीनन्दन! यही कालिङ्ग देश है, यही वैतरणी नदी है, यहीं धर्म्मने देवतोंकी शरण लेकर यज्ञ करी थी। यहां ऋषियोंके सहित यह यज्ञवाला पर्व्वत शोभित है, इसके उत्तर और अनेक ब्राह्मण लोग रहते हैं। यह पर्व्वत स्वर्ग जानेवाले पुरुषोंका विमानके समान है, इसी स्थानमें पहले ऋषियोंने अनेक यज्ञ किये थे। हे राजेन्द्र! यहां पर शिवजीने यज्ञके निमित्त पशुको मारा था, अनन्तर उस पशुको लेकर शिवजीने कहा कि यह हमारा भाग है; जब वह पशु गुप्त हो गया तो, देवतोंने शिवजीसे कहा कि तुम दूसरेके धनको अपना मत बतलाओ। सब धर्म्मको नष्ट मत

करी। अनन्तर सब देवतोंने शिवजीकी स्तुति करी, अनन्तर वह यज्ञ समाप्त हुआ तब देवतोंने उनका तर्पण और मान किया, तब उन्होंने उस पशुको छोड़ विमान पर चढ़ स्वर्गयात्रा करी। हे युधिष्ठिर! उसी दिनमें शिवका यज्ञमें भाग स्थिर हुआ, और देवतोंने शिवके भयसे यह सङ्कल्प किया कि, यह भाग सब भागोंसे उत्तम होगा। इस स्थानमें जो पुरुष इस कथाको कहकर जलको छूता है, उसको देवलोकका मार्ग दीखने लगता है, श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर द्रौपदीके सहित महाभाग पाण्डव लोग वैतरणीके पार उतर पितरोंका तर्पण करने लगे। युधिष्ठिर बोले हे लोमश! हम इस जलको स्पर्श करतेही तपके बलसे मनुष्य स्वभावसे छूट गये। हे सुव्रत! अब आपकी कृपासे हमको सब लोक दीखने लगे, जप करनेवाले महात्मा वैखानस मुनियोंका शब्द सुनाई देता है। श्रीलोमश मुनि बोले, हे युधिष्ठिर। हे पृथ्वीनाथ! जो शब्द आपको सुनाई देता है, सो यहांसे तीन लाख योजन पर है, अतएव आप चुप रहिये। हे पृथ्वीनाथ! हे राजेन्द्र! यह जो वन दीखता है, सो ब्रह्माका है। इसीमें प्रतापवान विश्वकर्म्माने यज्ञ किया था, उसी यज्ञमें ब्रह्माने महात्मा कश्यपको पर्व्वत और वनोंके सहित पृथ्वी दे दी थी। हे कुन्तीनन्दन! कश्यप मुनिके पास जातेही पृथ्वी रोने लगी और क्रोध करके ब्रह्मासे बोली हे भगवन्! आप मुझको किसी पुरुषको मत दीजिये, मैं आपके इस अमोघ दानसे रसातलको चली जाऊंगी। हे पृथ्वीनाथ! पृथ्वीको रोते हुए देख, भगवान कश्यप मुनि उसको प्रसन्न करने लगे। हे पाण्डव! पृथ्वी उनके तपसे प्रसन्न होकर पुनः जलसे निकली और यज्ञकी वेदीके समान शोभित होने लगी, हे राजन्! इसी लिये यह पृथ्वी वेदीके समान दीखती है आप इस पर बैठिये तो आपको बहुत बल होगा। हे राजन्! यह वेदी समुद्रमेंसे निकली है, आप इसके ऊपर बैठकर एकलेही समुद्रको पार हो जाइये और हम ऐसा स्वस्ति मन्त्र पढ़ेंगे जिससे आप इसके ऊपर बैठ सकें। हे आजमीढ़! यह वेदी पुरुषके छूनेहीसे समुद्रमें चली जाती है। हे देवेश! आप जगतके रक्षक और स्वामी है, हम आपको प्रणाम करते हैं, आप इसे खारे जलके समुद्रमें रक्षा कीजिये। अग्नि, मित्र योनि, जल, देवी, विष्णु ये सब अमृतकी नाभी हैं। हे पाण्डव! आप इस मन्त्रको पढ़कर इस वेदी पर बैठिये। हे पाण्डव! पुरुषको उचित है, कि आगे लिखे हुए मन्त्रको पढ़कर समुद्रमें जाय। मन्त्र यह है, "हे समुद्र! अग्नि तुम्हारी योनि, और यज्ञ तुम्हारा देह है, तुम विष्णुके वीर्य्यको धारण करते हो, तुम मोक्षके साधन हो"। हे पाण्डव! इस प्रकार सत्यवादी पुरुष नदियोंके पति समुद्रमें जाय। हे कुरुश्रेष्ठ! इस मन्त्रके विना पढ़े जलके स्वामी समुद्रको कुशासेभी नहीं छूना चाहिये। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर महात्मा युधिष्ठिर स्वस्ति मन्त्र सुनकर समुद्रमें गये, और लोमशकी आज्ञानुसार महेन्द्र पर्व्वत पर एक रात्रि रहे।

११४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा युधिष्ठिरने वहां एक रात वास करके भाइयोंका बहुत सत्कार किया और लोमश मुनिने युधिष्ठिरसे वहांपर भृगुवंशी, अङ्गिरावंशी वशिष्ठवंशी और कश्यपवंशी ऋषियोंका वर्णन किया। उन ऋषियोंके पास जाकर राजर्षि युधिष्ठिरने हाथ जोड़के प्रणाम किया। परशुरामके अनुचर अकृतव्रणवीरसे कुशल प्रश्न किया, आप कब भगवान परशुरामका दर्शन ऋषियोंको करावेंगे? उसी उत्सवमें मैं भी भृगुवंशी रामके दर्शन करना चाहता हूं। अकृतव्रण बोले, अन्तर्य्यामी भगवान परशुरामने

आपको आते हुए जान लिया है, आपमें परशुरामकी बड़ी प्रीति है, वह आपको शीघ्रही दर्शन देंगे। चतुर्दशी, और अष्टमीको ऋषि लोग परशुरामका दर्शन करते हैं, आजकी रात्रि बीतने पर कल चतुर्दशी होगी। युधिष्ठिर बोले आप भगवान यमदग्नि-पुत्र परशुरामके सङ्ग रहनेवाले हैं, आपने उनके प्रहले कर्म्मोंको प्रत्यक्ष देखा है, सो आप अब यह कहिये परशुरामने क्षत्रियोंको युद्धमें क्यों और कैसे जीता? अकृतव्रण बोले, हे राजशार्दूल। मैं आपसे महा उत्तम इतिहास भृगुवंशी यमदग्निके पुत्र परशुरामके चरित्रोंका वर्णन करता हूं, कि कैसे हैहयवंशी कृतवीर्य्यके पुत्र अर्ज्जुन को परशुरामने मारा था। हे पाण्डव! उस अर्ज्जुनके हजार हाथ थे। दत्तात्रेयकी कृपासे उसको सुवर्णका विमान, हजार हाथ और सब ऐश्वर्य्य प्राप्त हुआ था, उनके रथकी गति कहीं नहीं रुकती थी, वह रथ पर चढ़के सर्व्वत्र घूमता था। वरदानके अभिमानसे देवता, यक्ष और ऋषियोंको तथा सम्पूर्ण प्राणियोंको चारों ओर पीड़ा देने लगा, तब सब देवतोंने इकट्ठे होके देवतोंके देवता असुरारि सत्यपराक्रमी विष्णुसे विनय की। हे भगवन्। संसारकी रक्षाकेवास्ते अर्ज्जुनको मारिये, वह हैहयवंशका स्वामी दिव्य विमान पर बैठके सचीके स्वामी इन्द्रको दुःख देता है। ऐसा सुनके भगवान विष्णु कार्त्तवीर्य्य अर्ज्जुनके नाश करनेका इन्द्रसे विचार करने लगे। देवपति इन्द्रने संसारके कल्याणका विचार बताया; उसको सुनके संसारके पूजने योग्य विष्णु अपने पवित्र आश्रम बदरिकारण्यको चले गये। हे युधिष्ठिर! उसी समयमें एक महाबली राजा कन्नौज देशमें था। जिसका गाधी नाम जगत्में प्रसिद्ध था। वह राजा वनमें वसनेके वास्ते गया और वनहीमें उसके अप्सराके समान एक कन्या उत्पन्न हुई, भृगुवंशी ऋचिकने उस कन्याको राजासे मांगा। गाधी ऋचिकसे बोले हे सत्यव्रती ब्राह्मण। हमारे कुलके अनुसार पुरुषोंने रीत बांध दी है कि, जो तुम हजार स्यामकर्ण घोड़े मुझे देओ, तो मैं अपनी कन्याका तुमसे विवाह करूं, अन्यथा मैं तुमको कन्यादान नहीं कर सकता हूं। ऋचिक बोले कि मैं आपको एक हजार स्यामकर्ण घोडे दूंगा आपकी कन्या मेरी स्त्री हो। अकृतव्रण बोले हे युधिष्ठिर। ऐसी प्रतिज्ञा करके ऋचिक वरुणसे जाकर कहा, एक हजार पाण्डु रङ्ग स्यामकर्ण घोड़े मुझे दीजिये, मैं इन्हें देके अपना विवाह करूंगा। वरुणने ऋचिकको एक हजार स्यामकर्ण घोड़े दिये। कन्नौज देशमें गङ्गाके तटपर जहां वे घोड़े आकर खड़े हुए, उसका नाम अश्वतीर्थ हुआ। तब राजा गाधीने अपनी सत्यवती नामकी कन्या ऋचिकको देदी। हे राजन्। इस विवाहमें देवता लोग बरात आये थे। देवतोंको देख, हजार घोड़े दे, ऋचिक मुनि धर्म्मके सहित उस कन्यासे विवाह करके स्वेच्छासे विहार करने लगे। हे राजन्। भृगुवंशश्रेष्ठ भृगु मुनिने जब सुना कि ऋचिकका व्याह होगया, तो उनको देखनेको आये। अपने पुत्रको स्त्रीके सहित देखके बहुत प्रसन्न हुए। जब ऋचिक मुनिने देखा कि हमारे पिता आये, तो दोनों स्त्री पुरुष खड़े होगये और प्रीतिके सहित देव पूजित पिताकी पूजा करी, उनको बिठलाकर दोनो हाथ जोड़के खड़े रहे। तब भगवान भृगु मुनिने प्रसन्न होकर बहूसे कहा, हे सुभगे! तुम्हारी जो इच्छा हो हमसे सोई वरदान मांगो, हम देनेको उपस्थित हैं। सत्यवतीने अपने स्वसुरको प्रसन्न करके कहा कि हे भगवन्। आप हमको यह वरदान दीजिये कि हम और हमारी माता पुत्रवती हों। श्री भृगुमुनि बोले, जिस दिन तुम्हारा और तुम्हारी माताका ऋतुस्नान हो और पुसवनका दिन आवे, उस दिन तुम्हारी माता पीपलमें और

तुम गूलरके वृक्षसे लपट जाना। हे भद्रे! हम तुमको यह दो पात्र देते हैं, मैंने विराटरूप भगवानकी उपासना करके इनको पाया है, इन दोनोंमें प्रसाद है; यह तुम खाना और यह अपनी माताको देना। ऐसो कहके भृगु मुनि अन्तर्धान हो गये। अनन्तर जब उन दोनों स्त्रियोंका ऋतुकाल आया तो वृक्षके आलिङ्गन और प्रसादके पात्रोंमें उलट पुलट होगया, अनन्तर भगवान भृगुने बहुत समय व्यतीत होनेके पश्चात् दिव्य दृष्टिसे यह सब बात जानली, और फिर उसी स्थान पर आये। महा तेजस्वी भगवान भृगुने अपनी पुत्रवधू सत्यवतीसे कहा, हे भद्रे! तुमने अपनी खीर नहीं खाई और वृक्षके लपटनेमेंभी उलटा हुआ। हे सुभ्रु! तुमको तुम्हारी माताने ठग लिया, इस लिये तुम्हारा पुत्र होगा तो ब्राह्मण परन्तु उसकी वृत्ति क्षत्रियोंकी ऐसी होगी और तुम्हारी माताका पुत्र क्षत्री होकर ब्राह्मणका धर्म्म करेगा, यद्यपि वह महा बलवान होगा परन्तु कर्म्म साधुओंका करेगा। तब सत्यवतीने अपने श्वसुरको बारबार प्रसन्न किया और कहा कि हे भगवान्! चाहे हमारा पोता ऐसाही हो, परन्तु पुत्र ऐसा न हो। हे पाण्डव! भृगुने कहा कि ऐसाहो होगा। तब सत्यवती बहुत प्रसन्न हुई, समय आने पर सत्यवतीको पुत्र उत्पन्न हुआ, उनका नाम यमदग्नि हुआ। भृगुवंशवर्द्धन वह पुत्र परम तेजस्वी और वीर्य्यवान हुए, उन्होंने बड़े होकर सब वेदोंको पढ़ा। सूर्य्यके समान तेजस्वी यमदग्नि अपने कर्म्मोंके द्वारा अनेक ऋषियोंसे बढ़ गये। हे पाण्डव! हे भरत कुलसिंह! उन्होंने समस्त धनुर्वेदको पढ़ा और चारों प्रकारके शस्त्र सीखे।

११५ अध्याय समाप्त।

अकृतव्रण बोले, महा तपस्वी यमदग्निने चारों वेद पढ़कर महा तप किया। अनन्तर वे प्रसेन नामक राजाके यहां गये; वहां जाकर उन्होंने राजाकी पुत्री रेणुकासे ब्याह किया, भार्गव-पुत्र यमदग्नि रेणुका स्त्रीको प्राप्त करके अपने आश्रम पर आये और आज्ञाकारिणी स्त्रीके सहित तप करने लगे। रेणुकाके गर्भसे परशुरामके सहित पांच पुत्र हुए, उन सबमें छोटे परशुराम थे। किसी समय जब फल खानेवाले सब लड़के बनको फल लेने चले गये, तब व्रतधारिणी रेणुका स्नान करनेको गई; वहां पर मृतिकावतके पुत्र राजा चित्ररथको पद्ममाला धारण किये स्त्रियोंके सहित इच्छानुसार जलमें क्रीड़ा करते देख और उनको अत्यन्त धनवान देख रेणुकाको इच्छा उनसे व्यभिचार करनेकी हुई। उनको देखतेही रेणुका जलहीमें स्खलित होगई। अनन्तर डरसे कांपती हुई वह अपने आश्रमको आई, पर यह सब समाचार उनके पतिने जान लिया। महा तेजस्वी वीर्य्यवान यमदग्निने उसको स्खलित, ब्राह्मण तेज और वीर्य्यसे रहित देखकर बहुत धिक्कार दिया। उसी समय रेणुकाके बड़े बेटे रुमण्वण आये, उनके पीछे सुसेन, अवसु, और विश्वावसु भी आगये। भगवान यमदग्निने उन सबको क्रमसे रेणुकाके मारनेकी आज्ञा दी, परन्तु उन सबने माताके स्नेहसे कुछभी उत्तर न दिया। तब भगवान यमदग्निने क्रोध करके उन सबको शाप दिया। शाप सुनतेही वे सब हरिन और पक्षियोंके समान बुद्धिहीन और मूर्ख होगये। उसी समय शत्रुओंके नाश करनेवाले परशुराम आश्रममें पहुंचे, महा तपस्वी यमदग्निने उनसे कहा कि हे पुत्र! अपनी इस पापिनी माताको मार डालो और इसका कुछभी दुःख मत करो। परशुरामने उसी समय फरसा लेकर अपनी माताका सिर काट डाला। हे महाराज! यह देखकर महात्मा यमदग्निका क्रोध उसी समय

शान्त हो गया और प्रसन्न होकर बोले, हे तात! हे धर्म्मज्ञ! तुमने हमारे वचनसे यह घोर कर्म्म किया है, इस लिये तुम्हारे हृदयमें जितनी इच्छा हो उतना वरदान मुझसे मांगो। परशुरामने अपने पितासे यह वरदान मांगे कि हमारी माता जी जाय, उसको हमारे मारनेका स्मरण न रहे, हमारे भाई पूर्व्वके समान अपनी अवस्थामें आजांय, युद्धमें हमारे समान कोई वीर न हो, और हमारी आयु बहुत हो। हे भारत! महा तपस्वी यमदग्निने प्रसन्न होकर परशुरामको सब वरदान दिये। हे पृथ्वीनाथ! किसी दिन इनके पुत्र फिर ऐसेही वनको चले गये थे, उसी समय अनूप देशके स्वामी वीर कृतवीर्य्यके पुत्र वहां आये। उनके आश्रम पर पहुंचनेसे रेणुकाने उनकी पूजा करी, परन्तु वे युद्धके मदसे उन्मत्त थे, इस लिये उस पूजासे प्रसन्न न हुए। उन्होंने उस आश्रमके बड़े बड़े वृक्षोंको तोड़ डाला, भूमिको नष्ट भ्रष्ट कर दिया। रेणुका गाली देती थी, परन्तु कार्त्तवीर्य्यने अपने बलसे उनके गाय और बछड़ोंको छीन लिया। जब परशुराम अपने आश्रम पर आये तो यमदग्निने सब कथा कह सुनाई। परशुरामने रोती हुई गऊका शब्द सुनकर महा क्रोध किया। अनन्तर विचित्र धनुष धारण करके काल के वशवर्त्ती कार्त्तवीर्य्यके पीछे दौड़े, भगवान शत्रुनाशन परशुरामने तीक्ष्ण वाणोंसे कार्त्तवीर्य्यके परिघके समान हजार हाथोंको काट डाला। हे राजन्! परशुरामने युद्धमें पराक्रम करके कृतवीर्य्यके पुत्र अर्जुनको युद्धमें मारडाला। इसके पश्चात् अर्जुनके वंशवाले क्षत्री परशुरामसे वैर रखने लगे। एक दिन परशुरामके पीछे उन लोगोंने आश्रममें आके परशुरामके पिता तपस्वी, तेजस्वी, वीर्य्यवान और युद्ध न करनेवाले यमदग्निको मारडाला। हे युधिष्ठिर! जिस समय कार्त्तवीर्य्यके पुत्र [illegible] मारने लगे, उस समय वे बार बार परशुरामका नाम लेकर चिल्लाने लगे। जब शत्रुनाशन अर्जुनके पुत्र अपने वाणोंसे यमदग्निको मारकर चले गये, और यमदग्निभी स्वर्गको मरकर गये, तब भृगुनन्दन परशुराम कुश लेकर अपने आश्रम पर पहुंचे। अपने पिताको इस प्रकार मरा हुआ देख दुःखमें भरकर रोये और चिल्लाने लगे।

११६ अध्याय समाप्त।

श्रीपरशुराम बोले, हे तात! मेरेही अपराधसे उन क्षुद्र, मूर्ख कार्त्तवीर्य्यके पुत्रोंने आपको हरिनके समान वाणोंसे मारा है, हे तात! आप तो धर्म्मके जाननेवाले उत्तम मार्गमें चलनेवाले और सब प्राणियोंके हितू थे, आपकी मृत्यु इस प्रकार क्यों हुई? उन दुष्टोंने कौन सा पाप नहीं किया, जिन्होंने तप करते हुए, युद्ध न करनेवाले, बूढ़े, आपको, वाणोंसे मारडाला? वे निर्लज्ज लोग धर्म जाननेवाले और युद्ध न करनेवाले आपको मारकर अपने मन्त्री और बान्धवोंसे क्या कहेंगे? हे नरनाथ! इस प्रकार महा तेजस्वी परशुरामने बहुत रोकर अपने पिताका प्रिय कार्य्य करनेवाले, शत्रुनाशन परशुरामने अपने पिताको अग्निमें जलाया और सब क्षत्रियोंके नाश करनेकी प्रतिज्ञा करी। अनन्तर महा बलवान परशुरामने अत्यन्त क्रोध कर अनेक शस्त्रोंको धारण कर कालके समान रूप धारणकरके कृतवीर्य्यके वंशको नाश करने लगे। हे क्षत्रियसिंह! कृतवीर्य्यवंशी क्षत्रियोंके सङ्ग और जो क्षत्री आये थे, शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ परशुरामने उनकाभी नाश कर दिया, इस प्रकार महात्मा परशुरामने इक्कीसवार पृथ्वीको क्षत्रियोंसे रहित कर दिया और समन्तक पञ्चकतीर्थमें जाकर क्षत्रियोंके रुधिरसे पांचतलावोंको भर दिया। भृगुवंशी परशुरामने उनहीं तलावोंमें अपने पितरोंका तर्पण किया, वहीं उन्होंने साक्षात ऋचीकको

दर्शन किया। ऋचिक मुनिने परशुरामको उस कर्मसे रोका; तब प्रतापवान परशुरामने यज्ञ करके इन्द्रको प्रसन्न किया, और यज्ञ करानेवालोंको सब पृथ्वी दे दी। उसी यज्ञमें परशुरामने महात्मा कश्यपको एक सोनेकी चौकी दी थी, जो चालीस हाथ लम्बी और छत्तीस हाथ चौड़ी थी। अब अनन्त पराक्रमी परशुराम इसी महेन्द्राचल पर्व्वतपर रहते हैं। हे राजन्! अनन्तर कश्यप मुनिकी सम्मतिसे खण्डक वनके रहनेवाले ब्राह्मणोंने उस चौकी-को टुकड़े टुकड़े करके बांट लिया। इस प्रकार परशुराम और जगत्के रहनेवाले चत्रियोंसे वैर हुआ था, और इस प्रकार महा तेजस्वी परशुरामने पृथ्वीको जीता था।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, पश्चात् चतुर्दशीके दिन महा तेजस्वी परशुरामने ब्राह्मण और भाइयोंके सहित धर्म्मराज युधिष्ठिरको दर्शन दिया। महाराज युधिष्ठिरने भाइयोंके सहित परशुरामकी पूजा करी। हे राजेन्द्र! राजोंमें श्रेष्ठ धर्म्मराजने ब्राह्मणोंकी भी पूजा करी। परशुरामने युधिष्ठिरकी पूजाको ग्रहणकर फिर उनकी पूजा करी और कहा, कि आप एक रात्रि यहां निवास कीजिये, तब सब एक रात वहां रहे। फिर दक्षिणकी ओर चले।

११७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले अनन्तर महानुभाव महाराज युधिष्ठिर पवित्र तीर्थोंमें घूमते समुद्रके तटपर ब्राह्मणोंसे सेवित अनेक तीर्थोंको देखने लगे। हे भारत! वहांसे उत्तम चरित्र-वाले पाण्डुके पुत्र राजा युधिष्ठिर अत्यन्त पवित्र समुद्रगामिनी प्रशस्ता नाम नदी पर पहुंचे। हे परीक्षितनन्दन! वहांभी उन्होंने स्नान करके पितर और देवताका तर्पण किया। और ब्राह्मणोंको बहुत धन देकर समुद्रगामिनी गोदावरी की ओर चले, अनन्तर पाप रहित महाराज वीर युधिष्ठिर द्राविड़ देशमें जाकर समुद्रके तटपर अत्यन्त पुण्ययुक्त अगस्त्य तीर्थ और महा पवित्र वारी तीर्थमें पहुंचे, वहां पर उन्होंने धनुषधारियोंमें अग्रगण्य अर्ज्जुनके उन कर्म्मोंको सुना जिनको मनुष्य लोग नहीं कर सकते हैं। वहां पाण्डुपुत्र युधिष्ठिरकी महर्षियोंने बहुत पूजा करी, इससे वे बहुत प्रसन्न हुए। हे पृथ्वीनाथ! हे जन्मेजय! इस प्रकार द्रौपदी और भाइयोंके सहित पृथ्वीनाथ युधि-ष्ठिरने सब तीर्थोंमें स्नान किया और अर्ज्जुनका पराक्रम सुनके बहुत प्रसन्न हुए। समुद्रके तटवाले उन तीर्थोंमें महाराज युधिष्ठिरने एक सहस्र गोदान किया; अनन्तर अर्ज्जुनके नामसे गोदानका सङ्कल्प किया। हे राजन्! समुद्रके तटके अनेक तीर्थोंको देखते देखते अत्यन्त पवित्र सूर्पारक तीर्थमें पहुंचे। वहां जानेसे उनके काम पूर्ण होगये। वहांसे कुछ दूर समुद्रके तटपर चलकर उस जगत् प्रसिद्ध वनमें पहुंचे जहां अनेक देवता और अनेक धर्म्मपरायण राजोंने तप किया था। वहां दृढ़ लम्बे हाथ वाले महाराज युधिष्ठिरने धनुषधारियोंमें अग्र-गण्य ऋचिक पुत्रकी वेदीको देखा, उस पवित्र वेदीके चारों ओर अनेक ऋषि लोग बैठे थे और पुण्य करनेवाले महात्मा उसकी पूजा करते थे। वहांसे पृथ्वीनाथ महात्मा महा-राज युधिष्ठिर वसु, वायु, अश्विनीकुमार, यम-राज, सूर्य्य, कुवेर, इन्द्र, विष्णु, परमेश्वर, आदित्य, शिव, चन्द्रमा, सूर्य्य, वरुण, साध्यगण ब्रह्मा, पितरोंके सहित रुद्र, सरस्वती, और रुद्रगणोंके आश्रम तथा अन्यभी जो पवित्र और मनोहर आश्रम थे, उन सबको देखने लगे। उन सब तीर्थोंमें महाराजने अनेक ब्राह्मणोंसे व्रत कराकर बहुत रत्न दान दिया और आपनेभी सब तीर्थोंमें स्नान किया और फिर सूर्पारक तीर्थमें पहुंचे। वहांसे समु-द्रके तट होकर चलते और सब तीर्थोंके दर्शन

करते हुए जगत् प्रसिद्ध ब्राह्मण और मरुत-गणोंसे कहे हुए, प्रभास तीर्थमें पहुंचे । वहां जाकर अपने भाइयोंके सहित विशाल और लाल नेत्रवाले महाराज युधिष्ठिरने स्नान किया ; फिर द्रौपदी और सब ब्राह्मणोंने लोमश मुनिके सहित स्नान किया ; अनन्तर महाराजने पितर और देवतोंका तर्पण किया । वहां पर वह बारह दिन रहे और केवल वायुही भक्षण किया । वहां पर धर्मधारियों-में श्रेष्ठ युधिष्ठिरने बारह दिन चारों ओर अग्नि जला कर तापी । जब यह समाचार द्वारिका-पहुंचा, तब वृष्णिवंशियोंमें श्रेष्ठ श्रीकृष्ण और बलरामने भी सुना कि स्वयं महाराजही अग्नि तापकर तप कर रहे हैं, उसी समय अपनी सेनाको सङ्ग लेकर अजमीढ़ वंशोत्पन्न युधि-ष्ठिरके दर्शनको आये । वहां जाकर वृष्णि वंशियोंने देखा कि पाण्डव लोग मैलसे भरे हुए शरीरवाले पृथ्वीमें बैठे हैं । दुःखके अयोग्य द्रौपदीको दुःखमें पड़ी देख सब लोग ऊंचे स्वरसे रोने लगे । अनन्तर महापराक्रमी महा-राज युधिष्ठिरने बलराम, श्रीकृष्ण, कृष्णके पुत्र साम्ब, और सात्यकी आदि वृष्णिवंशिओंकी यथायोग्य धर्मके अनुसार पूजा की । अनन्तर उन सब लोगोंने भी उस पूजाको ग्रहण करके पाण्डवोंका सत्कार किया । फिर जैसे इन्द्रके चारों ओर देवता लोग बैठते हैं, तैसेही युधिष्ठिरको घेरकर यादवलोग बैठ गये । अनन्तर महाराजने वनवासका सब चरित्र और अर्जुनकी इन्द्रलोक यात्रा कह सुनाई । यह सुनकर और पाण्डवोंको अत्यन्त दुर्बल देखकर महानुभाव यादव लोग अपनी आंखोंसे आंसू बहाने लगे ।

११८ अध्याय समाप्त ।

राजा जन्मेजय बोले, हे तपोधन ! महानु-भाव पाण्डव लोग जब प्रभास तीर्थमें पहुंचे और जब यदु वंशी उनके दर्शनको आये तो उनका क्या वार्त्तालाप हुआ ? क्योंकि सब शास्त्रोंके जाननेवाले महात्मा पाण्डव और यादव लोग परस्पर बहुतही प्रेम रखते थे । श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् समुद्रके तीर प्रभास क्षेत्रकी पवित्र भूमिमें वीर यादव लोग महाराजके चारों बैठे ; उन सबके बीचमें गौके दूध, कुन्दके पुष्प, चन्द्रमा और मृणालके समान सुन्दर रूपवाले हलधारी वन-मालासे विराजमान श्रीबलरामजी श्रीकृष्णसे कहने लगे । बलदेवजी बोले हे कृष्ण ! धर्म करनेसे किसीकी उन्नति और अधर्म करनेसे अवनति नहीं होती, क्योंकि देखो महात्मा युधिष्ठिर जटा और भोजपत्रके वस्त्र धारण करके वनवासका दुःख सह रहे हैं, और दुर्य्योधन पृथ्वीका राज्य करता है, पृथ्वी क्यों नहीं फट जाती ? इसीसे मूर्ख अधर्मको धर्मसे अच्छा समझते हैं । राज्य पाकर दुर्य्योधनको बढ़ते और महाराजको दुःख पाते देख आज सब प्रजाओंमें चारों ओर यही शङ्का फैल रही है कि अब क्या करना होगा ! बड़े आश्चर्यकी बात है कि धर्मराज धर्म करनवाले, सत्यवादी और महादानी महाराज युधिष्ठिर तो राज्यसुखसे भ्रष्ट हुए, और अधर्मीकी वृद्धि हो ; हम नहीं जानते कि भरतकुलके प्रधान पाण्डवोंको घरसे निकाल भीष्म, द्रोण, वृद्ध राजा धृतराष्ट्र किस प्रकार सुख भोग रहे हैं ? पाप रहित पाण्डवोंको वनको निकाल राजाओंमें प्रधान पापी धृतराष्ट्र परलोकमें जाकर पितरोंकी सभामें बैठ कैसे कहेंगे कि हमने सब लड़कोंके सङ्ग समानही आचरण किया था ? न जाने कुन्तीके पुत्रोंको वनमें निकालके वह अन्धा राजा अपनी बुद्धिमें कुछ देखता है, या नहीं ? क्योंकि उसका जन्मभी राजोंहीके वंशमें हुआ है । हमको निश्चय होता है कि अब वह पुत्रोंके सहित

शीघ्रही पितृलोककी भूमिमें जाकर वहांके सुवर्णके समान फूले हुए वृक्षोंको शीघ्रही देखेंगे। जिसने ऊंचे कन्धेवाले विशालनेत्रवाले युधिष्ठिरको शस्त्र और भाइयोंके सहित निःशङ्क होकर वनको निकाल दिया है, अवश्य उस धृतराष्ट्रकी ऊपर कड़ी दशा होगी। जो विशालबाहु भीमसेन शस्त्रोंके विनाही शत्रुओंकी महासेनाका विनाश करते हैं, जिनका शब्द सुनतेही शत्रुओंकी सेना विष्ठा और मूत्र परित्याग करने लगती है, वेही अनेक शस्त्र और वाणोंके धारण करनेवाले वेगवान भीमसेन आज भूख, प्यास, और मार्गकी थकाईसे दीन हो रहे हैं, ये अपने पूर्व्व सुखोंको स्मरण करते हैं। हमें निश्चय है, कि ये उस वंशका सर्व्वनाश कर देंगे, क्योंकि इनके समान पृथ्वीमें कोईभी नहीं है, जो भीम शीत और वायुसे दुःखित होकर क्या युद्धमें अपने शत्रुओंका नाश न करेंगे? जिन महारथ और वेगवान भीमसेनने एक रथसे पूर्व्वदेशके सब राजोंको सेनाके सहित जीत लिया था, वेही आज मुनियोंके वस्त्र पहनकर वनमें दुःख सह रहे हैं, जिन वेगवान सहदेवने दक्षिण देशके और सिन्धु नदीके तटवासी सब राजोंको एकलेहोने जीत लिया था, वेही आज मुनियोंका वेष धारण करके वनमें दुःख सह रहे हैं, जो युद्धमें उन्मत्त महा बलवान सहदेवने पश्चिमके सब राजोंको एकही रथसे जीत लिया था, वही आज जयधारी मलिनरूपी होकर फल मूल खाय वनमें वास करते हैं, जो महारथ द्रुपदके यज्ञकुण्डसे निकली थी, सो पतिव्रता द्रौपदी दुःख सहने में अयोग्य होनेपरभी वनमें दुःख सह रही है। ये सुख करनेके योग्य दुःख सहनेके अयोग्य तीन वर्गमें मुख्य, वायु इन्द्र और अश्विनीकुमारके पुत्र पाण्डव लोग स्त्रीके सहित धर्म्मपुत्र युधिष्ठिरके सङ्ग किस प्रकार दुःख सह रहे हैं? दुर्य्योधनकी बढ़ती हुए देख पर्व्वतोंके सहित पृथ्वी क्यों नहीं फट जाती है?

११६ अध्याय समाप्त।

सात्यकी बोले, हे राम! अब यह समय दुःख करनेका नहीं है, और न समय बीतने पर कुछ उपाय हो सकता है, यद्यपि युधिष्ठिर हम लोगोंसे कुछ नहीं कहते है, तथापि यह नियम है, कि जो लोग नाथसहित होते हैं, वे अपनेसे कोई काम नहीं करते हैं, उनके कार्य्य सहायक लोग ऐसेही सिद्ध करते हैं, जैसे ययातिके कार्य्योंको शिवि आदिने करे थे, हे राम! उन लोगोंके सब कार्य्य स्वामी लोग अपनीही इच्छासे करने लगते हैं, परन्तु ये पाण्डव लोग सनाथ होने परभी अनाथके समान दुःख भोग रहे हैं, न जाने, बलराम, श्रीकृष्ण, प्रद्युम्न और साम्ब और हमारे, जीतेभी महाराज युधिष्ठिर भाइयोंके सहित वनमें बसते हैं, न जाने तीन लोकके स्वामी श्रीकृष्ण इनके नाथ क्यों कहाते हैं? बस अब इसी समय विचित्र कवच धारण करनेवाली यादवोंकी समस्त सेना हस्तिनापुर पर चढ़ाई करे, इसही समय बान्धवोंके सहित दुर्य्योधन यादवोंकी सेनासे मरकर यम लोकको जाय, आप अपने क्रोधसे पृथ्वीको वेष्टित कर सकते हैं जिस प्रकार इन्द्रने वृत्रासुरको मारा वैसेही सारङ्ग धनुषधारी कृष्णभी दुर्य्योधनका नाश करें जो हमारे भाई, मित्र और गुरु कृष्णके प्राणके समान अर्ज्जुन हैं, वे भी बैठे रहें, क्योंकि मनुष्य सुपुत्र और शिष्यका शत्रुके मारने वास्ते चाहते हैं, इसी लिये मैं दुर्य्योधनका उत्तम शस्त्र और सर्पके समान तथा अग्निके समान वाणोंसे शिर काटूंगा, उसकी सब सेनाको अपने तीक्ष्ण खड्गसे काटकर दुर्य्योधनके सब अनुचरोंको काटकर समस्त कौरवोंका क्षय करूंगा। हे रोहिणी पुत्र! सब वीरलोग भयानक युद्धमें प्रसन्नता पूर्व्वक मेरे शस्त्रोंकी चतुरता देखें, समस्त कुरुवीर प्रलयकालकी

समान घूमती हुई देखा, तपोवलसे युक्त महर्षि-ने बड़ी धीमी बोलीसे कुछ कहा, सुकन्याने ऋषिकी कोमल वाणीको कुछभी न सुना, तत्पश्चात् वामीके भीतर च्यवन मुनिकी चमकती हुई आखोंको उस कन्याने देखा, बुद्धिके मोहसे सुकन्याने च्यवन ऋषिकी आखोंमें यह क्या है; ऐसा कहते हुए कांटे चुभो दिये, नेत्रोंके फूटनेसे क्रोधी च्यवन ऋषिको बड़ा क्रोध हुआ; तभी राजा सर्यातिकी सेनाका विष्टा और मूत्र बन्द होगया। सेनाके मूत्र और विष्टा बन्द होजानेसे सब लोग घवराये, राजाने सब सेनासे पूछा कि तप करनेवाले वृद्ध विशेषतः क्रोधी महात्मा च्यवनका आज किसने अपराध किया? चाहे ज्ञानसे वा अज्ञानसे जिसने अपराध किया वह शीघ्र कह दे। सैनिकोंने कहा कि महाराज! हम नहीं जानते किसने अपराध किया है। तब राजाने बहुत क्रोधसे वन्धुवान्धवोंसे पूछा, उन्होंनेभी कहा महाराज हम नहीं जानते किसने अपराध किया है, तब सुकन्याने सेनाके सब मनुष्य तथा अपने पिताको दुःखी देखके यह वचन कहा, महाराज! मैंने वनमें घूमनेके समय एक वामीमें चमकता हुआ कोई जीव देखा था, उसे जुगनुके समान चमकता देखके पास जाके बींध दिया। सुकन्याकी बात को सुनके राजा शर्याति शीघ्रतासे वामीके पास गये, वहा जाके तपस्या और अवस्थामें बढ़े च्यवनको देखा और सेनाके दुःख निवारणके निमित्त हाथ जोड़के प्रार्थना करी, कि हे महर्षे! कन्याने जो अज्ञानसे आपका अपराध किया है, उसे क्षमा कीजिये, भृगु पुत्र च्यवनने राजासे कहा कि तुम्हारी कन्याने रूप और यौवनके अभिमानसे मेरे नेत्रोंको फोड़ा तथा मेरा अपमान किया है, इस लिये तुम्हारी कन्याको लेकरही मैं क्षमा करूंगा, हे पृथ्वीनाथ! मेरे वचनको सत्य समझो। श्रीलोमश ऋषि बोले, हे युधिष्ठिर! ऋषिके वचन सुन कर राजा शर्यातिने विना विचारे च्यवनको अपनी कन्या दे दई, उस कन्याको लेके च्यवनने अपने क्रोधको शान्त किया, राजा शर्याति अपनी सेनाके सहित नगरको चले गये। सुकन्या ऋषिको पति पाकर बड़ी प्रीतिके साथ तप औ नियममें स्थित होके पतिकी सेवा करने लगी अग्नि और अतिथियोंकी सेवाको देखके च्यवन ऋषि उससे बहुत प्रसन्न हुए।

१२२ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश ऋषि बोले, किसी समय घूमते हुए अश्विनी कुमार देवतोंने स्नान किये हुए सुकन्याको देखा, इन्द्रकी पुत्रीके समान मनोहर गात्रवाली सुकन्याको देख करके अश्विनीकुमारोंने यह वचन कहे। हे सुजघने! हम तुम्हें जानना चाहते हैं, कि तुम किसकी स्त्री हो? सुकन्याने लज्जित होके कहा, हे देवतोंमें उत्तम अश्विनीकुमारो! तुम मुझे राजा शर्यातिकी कन्या और च्यवन ऋषिकी स्त्री समझो। अश्विनीकुमारोंने हसके कहा कि पिताने बूढ़ेके सङ्ग कैसे तुम्हारा विवाह कर दिया, इस वनमें तुम विजलीके समान शोभायमान हो, तुम्हारे समान रूपवाली स्त्री देवतोंमेंभी हमने नहीं देखी, अलङ्कार और उत्तम वस्त्रोंसे रहितभी तुम इस वनको शोभाको बढ़ाती हो, सब आभूषणोंसे युक्त उत्तम वस्त्र पहरे जैसे स्त्री शोभित होती है, उनसेभी उत्तम तुम विना आभूषणोंके शोभित हो, किस कारणसे तुम ऐसे वृद्ध पतिकी सेवा करती हो जो तुम्हारे भरणपोषणमें असमर्थ है? तुम च्यवनको छोड़ कर हम दोनोंमेंसे एकको पति बनाओ, अपने यौवनको वृथा मत गँवाओ। सुकन्या ऐसे वचन सुनके बोली, हे देव-वैद्यो! मुझे तुम अपने पति च्यवनमें प्रीति वाली समझो और कदापि ऐसे कठोर वचन मत कहो। तब अश्विनीकुमार बोले कि हम तुम्हारे पतिको रूपयुक्त जवान बना दें, तुम

अपने पतिको जल्दी बुला लाओ। उनके वचनको सुनके सुकन्या च्यवन ऋषिके पास गई, और अश्विनीकुमारोंके वचनको सुनाया। च्यवनने कहा कि बहुत ठीक है। अश्विनीकुमारोंने कहा कि इस तालावमें स्नान करनेको च्यवन ऋषि जायं, तत्त्वग्राही रूपकी लालसासे च्यवन ऋषि उस तलावमें घुस गये। अश्विनीकुमार भी उनके पीछे तलावमें घुसे; एक मुहूर्त्तके पश्चात् वह तीनों दिव्यरूपवाले जवान उत्तम कुण्डल पहने रूप युक्त होकर तालावसे निकले और सुकन्यासे बोले कि हे उत्तम वर्णवाली! हे सुन्दरी! हम तीनोंमेंसे तेरी जिसे इच्छा हो एकको पति बनाले। हे सुशोभने! जिस पर तेरी प्रीति हो, उसहीको पति बना। सुकन्याने सबको समान रूप और समान अवस्थावाले देखकरभी अपने पतिको ही पति वरण किया। च्यवन ऋषि रूप, यौवन और स्त्रीको पाके बहुत प्रसन्न हुए और अश्विनीकुमारोंसे बोले, जैसे तुमने मुझे रूप और युवा अवस्थासे युक्त किया है, वैसेही मैं तुमको सोमपान कराऊंगा, देवराज इन्द्रको तुम्हारे सामने पराजित करूंगा। च्यवन ऋषिके ऐसे वचन सुनके अश्विनीकुमार प्रसन्नचित्त होके स्वर्गको चले गये और च्यवन ऋषि तथा सुकन्या आनन्दसे विहार करने लगे।

१२३ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश ऋषि बोले, राजा सर्यातिने सुना कि च्यवन ऋषिको यौवन और स्वरूप प्राप्त हुआ है, अपनी सेनाके सहित च्यवन ऋषिके आश्रम पर आये। च्यवन और सुकन्याने राजा शर्याति और उनकी स्त्रियोंका बड़ा आदर किया; ऋषिसे आदर पाकर राजा शर्याति कुछ दिन तक वहां अनेक प्रकारकी उत्तम कथा कहते कुछकाल तक रहे, च्यवन ऋषि राजा शर्यातिसे बोले, हे राजन्! तुम सामग्री इकट्ठी करो मैं तुम्हें यज्ञ कराऊंगा। च्यवन ऋषिके वचनको सुनकर बड़ी प्रसन्नतासे राजाने यज्ञ करना स्वीकार किया, उत्तम दिनमें यज्ञकी सब सामग्री इकट्ठी करके राजा शर्यातिने यज्ञ मण्डप बनवाया। हे राजन्! भृगुपुत्र च्यवनने उस मण्डपमें राजा शर्यातिसे यज्ञ आरम्भ कराया। हे राजन्! युधिष्ठिर! उस यज्ञमें जो आश्चर्य्यकी बात हुई सो मुझसे सुनो। च्यवन ऋषिने अश्विनीकुमारोंको सोम दिया। राजा इन्द्रने च्यवन ऋषिको सोम देनेसे वारण किया। इन्द्र बोले यह दोनों अश्विनीकुमार स्वर्गमें देवतोंकी दवा करते हैं इस लिये इनको सोमदान करना उचित नहीं हैं। श्रीच्यवन ऋषि बोले, हे इन्द्र! यह दोनों बड़े महात्मा, बड़े उत्साही, रूप और धनसे युक्त हैं, उन्होंने मुझे देवतोंके समान वृद्धावस्था रहित किया है, हे पुरन्दर! तुम और सब देवता यज्ञभाग पावें, पर ये क्यों न पावें? यह भी तो देवता हैं। इन्द्र बोले, हे च्यवन ऋषि! यह दोनों चिकित्सा करनेवाले, कामरूपी और मनुष्य लोकमें घूमनेवाले हैं, तब किस रीतिसे सोमको पाने योग्य है? ज्योंही इन्द्र इस वचनको दूसरीवार कहना चाहते थे, त्योंही भृगुपुत्र च्यवनने इन्द्रका अनादर करके अश्विनीकुमारोंको सोम प्रदान किया। अश्विनीकुमारोंको सोम देते देखकर बल-नाशक इन्द्रने ऐसे वचन कहे, हे च्यवन! यदि तुम इन दोनोंको सोम दोगे तो मैं तुम्हारे घोर वज्र मारूंगा। ऐसा कहने परभी इन्द्रकी तरफ देखके च्यवनने अश्विनीकुमारोंको सोम प्रदान किया। तब इन्द्रने च्यवन ऋषिके ऊपर वज्र चलाया, च्यवन ऋषिने इन्द्रके हाथको स्तम्भित कर दिया। च्यवनने मन्त्रसे अग्निको प्रज्वलित करके देवराज इन्द्रको भस्म कर देनेकी इच्छा करी। तब उस यज्ञकुण्डसे महापराक्रमी मद नामक महा असुर उत्पन्न हुआ, इस महा असुरके शरीरको देखनेमें

सब कोई सुर और असुर असमर्थ हुए, उसका मुख निकली हुई दाढ़ोंसे महा भयङ्कर जान पड़ता था उसका एक ओठ पृथ्वी पर और एक आकाशमें लगा था, चार दाढ़ उसकी सौ सौ योजनकी थीं और दांत दस दस योजनके थे, अटारीके शिखरके समान ऊंचे तथा त्रिशूलके समान तीक्ष्ण दांत थे। पर्व्वतके समान दोनों हाथ बहुत लम्बे, नेत्र सूर्य्य चन्द्रमाके समान और मुख प्रलयकी अग्निके समान था, उसकी चपल जीभसे जान पड़ता था, कि जगत्‌को अभी चाट जायगा, वह राक्षस बड़े क्रोधसे इन्द्रकी तरफको दौड़ा, इसके शब्दसे सब जगत् भर गया।

१२४ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश ऋषि बोले, उस भयानक रूपवाले राक्षसको मुंह पसारे आता हुआ देखके इन्द्र भयसे बहुत व्याकुल हुए, उनके दोनों हाथ स्तम्भित होगये। तब इन्द्र च्यवन ऋषिसे ऐसा बोले कि, हे भार्गव! आजसे यह दोनों अश्विनी कुमार सोमरस पीनेके योग्य हुए, इस मेरे वचनको सत्य समझके मेरी रक्षा करो, हे विप्रर्षे! तुम्हारा वचन कदापि मिथ्या नहीं होगा, यह अश्विनीकुमार-यज्ञमें भाग पाने योग्य हुए, यह तुम्हारा प्रताप प्रकाशित रहेगा, इस सुकन्याके पिताका यश जगत्‌में प्रसिद्ध हो, इस लिये मैंने तुम्हारे प्रतापका प्रकाश किया, हे भृगुनन्दन! तुम मेरे ऊपर कृपा करो, जैसा तुम चाहते हो वैसाही हो। इन्द्रके ऐसा कहने पर महात्मा भृगुनन्दनका क्रोध शान्त हुआ और इन्द्रको मदने छोड़ दिया। वह मद मद्यपानमें, स्त्रियोंमें जुएमें और शिकारमें जा बसा, हे राजन्! युधिष्ठिर! इस रीतिसे मदको स्थगित करके इन्द्रको अश्विनीकुमार तथा अन्य देवताओंको शान्त करके च्यवन ऋषिने अपने यशको जगतमें फैलाया और सुकन्याके सहित बनमें विहार करने लगे, उनही च्यवन ऋषिका यह तलाब है; इसमें तुम अपने भाइयोंके सहित स्नान करके पितरोंका तर्पन करो, हे भारत! इस तीर्थको देखके फिर शिकताक्ष तीर्थको चलो, सैन्धवारण्यमें चलके छोटी छोटी नदियोंके दर्शन करो पुष्कर तीर्थमें चलके वहांके जलका स्पर्श करो महादेवके मन्त्रको जपनेसे तुम्हें परम सिद्धि प्राप्त होगी। हे राजन्! यह द्वापर और कलियुगकी सन्धि है, यह सामने सब पापोंका नाश करनेवाला आर्चीक पर्व्वत दीखता है, इसमें बुद्धिमान मरुतगण निवास करते हैं। हे युधिष्ठिर! यहां देवतोंके अनेक प्रकारके स्थान हैं यही चन्द्रमा तीर्थ है, जिसकी अनेक ऋषि उपासना करते हैं, वैखानस वालखिल्य और वायुभक्षी पावकगण यहीं रहते हैं। तीन शृङ्ग और तीन झरने यहां परम पवित्र है, उनकी प्रदक्षिणा करके जल स्पर्श कीजिये, राजा शान्तनु नरपति सुनक और नरनारायण ऋषि यहीं उत्तम स्थानको प्राप्त हुए हैं। यहां देवता लोग और पितर लोग सदाही निवास करते हैं, इस आर्चीक पर्व्वतकी तुम पूजा करो। हे पृथ्वीनाथ! यहां पर अनेक ऋषियोंने यज्ञ करके सोमपान किया है, यहीं अक्षय प्रवाहवाली यमुना है, नकुल, सहदेव, द्रौपदी भीम और हम सब आपके सङ्गमें यहां चलते हैं यह इन्द्रका पवित्र झरना है, यहां धाता विधाता और वरुण ऊपरसे आते हैं। हे राजन्! यहां पर शान्त चित्तवाले परम धर्मात्मा कोमल बुद्धिवाले मैत्र लोग निवास करते हैं। हे राजन् यही महर्षि लोगोंसे सेवित यमुना है जिस पर अनेक प्रकारके पुण्य यज्ञ हुए हैं यहीं पर महा धनुर्धारी राजा मान्धाता सौमिक और साहदेवी यज्ञ करी थीं।

१२५ अध्याय समाप्त।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे ब्राह्मण! राजशार्दूल तीनों लोकोंमें विख्यात राजा मान्धाता युवनाश्वके पुत्र कैसे हुए थे? और किस प्रकारसे ऐसी उत्तम गतिको प्राप्त हुए थे, जिससे तीनों लोक उनके ऐसे वशमें हो गये थे, जैसे विष्णुके हों, हे ब्राह्मण! मै उन बुद्धिमान् इन्द्रके समान यज्ञकारी राजा मान्धाताके चरित्र सुना चाहता हूं उस अतुल पराक्रमी राजाके जन्मका वृत्तान्त आप कहनेमें कुशल हैं। श्रीलोमश ऋषि बोले, हे राजन्! आप सावधान होके उस महात्मा राजाके चरित्र सुनिये, जैसे लोकमें उनका नाम मान्धाता प्रसिद्ध हुआ। इक्ष्वाकु वंशमें युवनाश्व नामक राजा हुए थे, जिन्होंने बहुत दक्षिणावाली यज्ञ करी थी। एक हजार अश्वमेध करके औरभी बहुत सी यज्ञ करी थीं। यह राजा अपुत्र था इस लिये मन्त्रियोंको राज्य सौंपकर वनको चला गया। शास्त्रमें लिखी विधिके अनुसार योगाभ्यास करने लगा। एक समय राजा भूख और प्याससे व्याकुल हुआ, भृगु ऋषिके आश्रममें गया, उसी रात्रिमें भृगुने सौद्युम्न राजाके वास्ते पुत्रेष्टि यज्ञ करी थी, राजा युवनाश्व सौद्युम्नसे पहले आश्रम में पहुंचा, जहां मन्त्रसे पवित्र किये हुए कलशमें जल भरा रक्खा था। ऋषि लोग थककर सब सो रहे थे, राजाने जाकर उसी समय ऋषियोंसे जल मागा, परन्तु सूखे कण्ठका कोमल शब्द ऋषियोंने न सुना, तब राजाने कलशके पास जाकर जल पिया और बहुत शान्त हुआ। जब ऋषि लोग उठे तो उन्होंने कलशको जलसे खाली देखा और सब लोगोंसे पूछा कि यह किसका निन्दित कर्म्म है? राजा युवनाश्वने कहा, कि यह कर्म्म मेरा है। भृगुने कहा कि यह तुमने अच्छा कर्म्म नहीं किया, यह जल पुत्रकेवास्ते मन्त्रोंसे शुद्ध किया गया था, मैने तप करके पुत्रकेवास्ते यह जल रखा हुआ था, हे अतुल पराक्रम! तुम्हारे ऐसा प्रतापी पुत्र उत्पन्न होगा जो अपने बलसे इन्द्रकोभी परास्त करेगा, क्योंकि हम अपने तपोबलको मिथ्या नहीं कर सकते हैं, यह ठीक है, कि प्रारब्ध बहुत बलवान है, मैंने जो अपने तपके बलसे जल मन्त्रित किया था, उसके प्रतापसे तुम्हारे बड़ा पराक्रमी पुत्र उत्पन्न होगा. हम लोग तुम्हारे वास्ते अद्भुत पुत्रेष्टि यज्ञ करेंगे, जिससे तुम्हारे इन्द्रके समान पुत्र उत्पन्न होगा और गर्भधारणका दुःखभी तुमको प्राप्त न होगा। तब सौ वर्ष पूरे होनेके पश्चात् महात्मा राजा युवनाश्वकी बायीं कोख फटी और सूर्य्यके समान एक पुत्र उत्पन्न हुआ, परन्तु राजा युवनाश्व मरे नहीं, यह एक बड़ा अद्भुत कर्म्म हुआ, महाराज महा तेजस्वी इन्द्र उस पुत्रको देखनेके वास्ते आये। इन्द्रसे देवतोंने कहा, इसे कौन पालेगा, इन्द्रने अपनी कन अंगुली उस बालकके मुखमें दे दी और कहा कि मैं इसको पालूंगा। तबही इन्द्रादिक देवतोंने उस बालकका नाम मान्धाता रक्खा। इन्द्रकी कन अङ्गुलीको पीकर वह बालक बढ़ने लगा, उस बालकको ध्यान मात्रसे धनुर्व्विद्या, वेद विद्या सब प्राप्त हुई, आजगव नामक धनुष सींगके बने वाण, काटनेके अयोग्य कवच, तत्क्षण उसको प्राप्त हुये। इन्द्रने अपने हाथसे उसका अभिषेक किया, राजा मान्धाताने तीनो लोककी ऐसे वशमें किया, जैसे विष्णु तीनो लोकको वशमें रखते है, उसका राज्यचक्र कहींभी खण्डित नहीं था, अनेक प्रकारके रत्न उस राजर्षिको आपही मिल गये। उसके राज्यकी पृथ्वी सम्पूर्ण धनोंसे भरी थी, उसने अनेक प्रकारके यज्ञ किये, उचित धर्म्मो तथा यज्ञोंके करनेसे इन्द्रके आधे आसनको उसने प्राप्त किया, उस महा तेजस्वी राजाने सम्पूर्ण पृथ्वी समुद्र और नगरोंके सहित एक दिनमे जीती थी, उसके यज्ञ मण्डपोंसे सब पृथ्वी व्याप्त हुई कहींभी खाली न रही, सुनते है, कि राजा

मान्धाताने दश हजार पद्म गोदान ब्राह्मणोंको दिये थे। बारह वर्षकी अनावृष्टिमें उसने खेती के उत्पन्न करानेकेवास्ते इन्द्रकी देखतेसे वर्षा की थी, उस राजा मान्धाताने चन्द्रवंशी गान्धार देशके राजाको मेघके समान गर्जते हुए तीक्ष्ण बाणोंसे मारा था, उस बुद्धिमान राजाने चारों प्रकारकी प्रजाकी रक्षा की थी, उसने अपने तपके तेजसे तीनों लोकोंको तपाया था, उस सूर्य्यके समान तेजस्वी राजाका पवित्र कुरुक्षेत्रमें यह यज्ञस्थान है। हे राजन्! यह मैंने आपसे राजा मान्धाताके चरित्र और जन्मकी कथा कही।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, ऐसे लोमशके वचन सुनके कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरने फिर लोमशसे प्रश्न किया।

१२६ अध्याय समाप्त।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे कहनेवालोंमें श्रेष्ठ! राजा सोमक कैसा पराक्रमी और कैसा कर्म्म करनेवाला था, यह आप मुझसे ठीक ठीक कहिये, श्रीलोमश ऋषि बोले, हे युधिष्ठिर! धर्म्म परायण सोमक नामक एक राजा था, उसके समान सौ स्त्री थीं, उसने पुत्र उत्पन्न करनेके लिये बहुत यत्न किये, पर कोई पुत्र न हुआ। जब राजा बूढा हुआ तब जन्तु नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। माताओंने उसे लेके पिछवाड़ेमें फेंक दिया। हे पृथ्वीनाथ! जब उस जन्तुको चींटियोंने काटा, तब उसने भयानक शब्द किया, तब सब माताओंने बहुत दुःखी होके जन्तुको रोनेसे रोका, परन्तु राजा सोमकने अपने मन्त्रीगण और पारिषदोंके बीचमें बैठे हुए उसका शब्द सुन लिया, उसी समय द्वाराको भेजकर निश्चय किया कि यह कहांका शब्द है कहांसे जो ठीक वृत्तान्त था सो राजासे आकर कह दिया। राजा सोमक उस बातके सुनतेही मन्त्री और ऋत्विजके सहित शीघ्रता से उठके रनिवासमें गये और वहांसे पुत्रको लेके सभामें आबैठे। महाराज सोमक बोले, एक पुत्रवालेको धिक्कार है, एक पुत्रवालेसे विना पुत्रका मनुष्य अच्छा। प्राणी सदा सन्देहमें रहता है, इस लिये पुत्रकी इच्छासेही सौ स्त्रिया रखी है, पर उनमेंसे किसीकेभी पुत्र नहीं। किसी प्रकारसे यह एक पुत्र जन्तु उत्पन्न हुआ भी है, तौभी किसी योग्य नहीं, इससे अधिक मुझे क्या दुःख होगा? मेरी और मेरी स्त्रियोंकी अवस्थाभी व्यतीत होगई, इस कारण हम सबके प्राण इसी जन्तुमें लगे रहते हैं, यदि ऐसा कोई उपाय हो, जिसमें मेरे सौ पुत्र उत्पन्न हों। यदि वह कर्म्म कठिनभी होगा तौभी मैं अवश्य करूंगा। ऋत्विक बोला, कि ऐसा कर्म्म है जिससे सौ पुत्र हो सकते हैं, हे सोमक! यदि तुम उसे कर सको तो मैं कहूं? राजा सोमक बोले, कि चाहे करने योग्य हो या न करने योग्य हो जिससे मेरे सौ पुत्र हों, आप उस कर्म्मको कहिये। ऋत्विज बोले, हे राजन्! आप जन्तुसे यज्ञ कीजिये तो आपके सौ पुत्र होंगे। जब चर्वीकी होमकी जायगी, तब उसके धूवेंको सूंघके तुम्हारी सब स्त्रियोंके पुत्र उत्पन्न होंगे, उस यज्ञमें मरनेसे उसी स्त्रीके जिसका यह अब पुत्र है, उसीके फिर उत्पन्न होगा, और इसकी कोखमें सोनेका एक चिह्न रहेगा।

१२७ अध्याय समाप्त।

राजा सोमक बोले, हे ब्राह्मण! जो जो काम करने चाहिये सो सब आप आरम्भ कीजिये मैं पुत्रकी इच्छासे आपके वचन करूंगा। श्री लोमश ऋषि बोले, तब उस ऋत्विजने सोमकके यज्ञ आरम्भ करके जन्तुको मारना चाहा, पर जन्तुओंकी माता पुत्रको छीनने लगीं और हाहा करके रो कर कहने लगीं; हा हमारा

नाश हुआ, दहना हाथ पकड़के जन्तुकी माता खींचती थीं और बायां हाथ ऋत्विज खींचता था, जैसे मृगी रोती है, इस प्रकार सब माता रोती थीं, ऋत्विजने बलसे बालककी खींच कर उसकी चर्बीसे हवन किया, स्त्रियोंने उस गन्धको सूंघके महा हाहाकार मचाया, यज्ञके प्रतापसे सब स्त्रियोंके गर्भ रह गया। दशवें महीनेमें राजा सोमकके एकसौ पुत्र उत्पन्न हुए। जन्तु सबसे बड़ा हुआ, सब माताओंको जैसा जन्तु प्यारा था वैसा और पुत्रकोई नहीं था। उसकी कोखमे सुवर्णका चिह्न था, जन्तु सब भाइयोंमें अधिक गुणवान था। राजा सोमकका ऋत्विज कुछकालके पश्चात् मर गया और राजा सोमक भी मरे। राजा सोमकने नरकमें जाके देखा कि ऋत्विज नरकमें दुःख भोग रहे हैं,राजा सोमकने ऋत्विजसे पूछा हे ब्रह्मण। तुम किस कारणसे नरकमें दुःख भोगते हो? नरकको अग्निमें जलते हुए उस ब्राह्मणने कहा,हे राजन्! मैंने जो तुमको यज्ञ कराया था उसी कर्म्मका यह फल भोगता हूं। राजा सोमकने इस बचनको सुनके धर्म्मराजसे कहा कि मेरे ऋत्विजको छोड़ दीजिये मैं इस अग्निमें प्रवेश करूंगा, मेरे वास्ते यह ब्राह्मण नरककी अग्निमे जल रहा है। धर्म्मराज बोले, हे राजन्। दूसरेके कर्म्मके फलको दूसरा नहीं भोग सकता है, यह तुम्हारे कर्म्मके दूसरे लोक देखो तैयार हैं। राजा सोमक बोले कि मैं इस ब्रह्मवादीको छोड़के पुण्य लोकोंमें जानेकी इच्छा नही रखता, देवतोंके स्थानमें मैं इस ब्राह्मणके सहितहो रहनेकी इच्छा रखता हूं, हे धर्म्मराज। नरकमें वा स्वर्गमे हम दोनो साथही रहेंगे, क्योंकि हम कर्म्ममें दोनो समान हैं, पुण्य वा पापका फल हम दोनोंका समान ही होगा। धर्म्मराज बोले कि हे राजन्। जो इच्छा है तो तुमभी इसके साथ कर्म्म फलको भोगो, पश्चात् उत्तम गतिको प्राप्त होगे। लोमश मुनि बोले हे राजन्! उस कमलनेत्र राजाने अपने गुरुके सहित नरक भोग करके पाप रहित हो, नरककी त्याग किया। पश्चात् अपने कर्म्मसे मिले अति उत्तम सुखोंको प्राप्त किया, गुरुके प्यारे उस राजाने गुरुके सहित स्वर्गमें सुखभोग किया। हे राजन्! युधिष्ठिर। यह सामने उस राजाका आश्रम है, यहां पर छःरात्रि निवास करनेसे मनुष्यको उत्तम गति प्राप्त होती है, हे कुरुमुख्य। हम लोग इस आश्रम पर छःरात्रि रहके अपनी थकाई उतारेंगे।

१२८ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश ऋषि बोले हे राजन्। इसही स्थानमें स्वयं प्रजापतिने इष्टि नामक यज्ञ करी थी, उस यज्ञमें पूर्ण एक सहस्र वर्ष लगा था। इस स्थानमें अम्बरीष, और नाभाग राजाने यज्ञ करके दश हजार पद्म गौ ब्राह्मणोंको दी थीं। उन्होंने तप और यज्ञसे परम सिद्धिको प्राप्त किया था, इस लिये यहदेश पुण्यकर्म्मा यज्ञकारी नहुष पुत्रके नामसे प्रसिद्ध है। हे कुन्तीनन्दन। वह ययाति राजा चक्रवर्त्ती अनन्त तेजस्वी और इन्द्रसे स्पर्द्धा करनेवाले थे, यह देश उनहीको यज्ञ करनेका है, देखो इस स्थानमें अनेक अग्नि स्थापन करनेके स्थान शोभित हैं, मानो ये सब ययातिकी यज्ञभूमिमे स्नानकर रहे हैं, देखो यह एक पत्तेवाली शमीकी शाखा और यह पद्मपत्र कैसा उत्तम है। आगे परशुरामका तालाव और नारायणका आश्रम है, यह देखो यह महा तेजस्वी ऋचिकपुत्रने अपने तेजसे विचरते हुए इस भूमिको चांदिके समान सुन्दर बना दिया है, यहां जो ओखली और मूसलधारिणी पिशाचीने एक श्लोक पढ़ा था सो हम आपसे कहते हैं, हे कुरुनन्दन! आप उसे सुनिये। पिशाची कहती है। हे ब्राह्मणी। क्या तू युगन्धर नामक पर्व्वत देशमें दही खाकर अच्युत स्थलमें रातको निवास करके और भतलय स्थानमें

स्नान करके यहां पुत्रके सहित रहना चाहती है? एक दिन रहकर यदि दूसरे दिन यहां रहनेकी इच्छा करेगी तो दिनमें तेरी यही दशा होगी जो मेरी है और रात्रिमें इससेभी अधिक दुर्दशा होगी। हे भरतसत्तम! हे कुन्तीनन्दन! यह कुरुक्षेत्रका द्वार है, हम लोग एक रात्रि यहां निवास करेंगे। हे राजन्! यहीं नहुषपुत्र राजा ययातिने यज्ञ करके अनेक रत्न दान किये थे। इसी स्थानमें उनसे इन्द्र प्रसन्न हुए थे, यह यमुनाके तट पर लक्षावतरण नामक उत्तम तीर्थ है, पण्डित लोग इसीको स्वर्गका द्वार बताते हैं। हे तात! इसी स्थानमें परम ऋषि ब्राह्मणोंने सारस्वत यज्ञ करे थे इस स्थानमें यूप उलुखल और यज्ञके कलश मिलते हैं। हे राजन्! इसी स्थानमें राजा भरतने अश्वमेध यज्ञ करनेके निमित्त स्याम-कर्ण घोड़ा छोड़ा था। यहींसे उन्होंने धर्म्म-पूर्व्वक सब पृथ्वीको प्राप्त किया था। हे पुरुष-व्याघ्र! इसी स्थानमें राजा मरुतने उत्तम यज्ञ किया था, उसीसे ऋषियोंमें मुख्य सम्वर्त्त मुनिसे भेट हुई थी। हे राजेन्द्र! आप इस जलको स्पर्श कीजिये, तब आपको सब लोक दीखने लगेंगे। जो पुरुष इस जलको स्पर्श करता है, वह सब पापोंसे छूटकर पवित्र हो जाता है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब पाण्डवोंमें श्रेष्ठ युधिष्ठिरने भाइयोंके सहित उस जलमें स्नान किया तो महर्षि लोग उनकी स्तुति करने लगे, अनन्तर महाराजने लोमशसे कहा कि हे सत्यविक्रम! अब हम अपने तपके बलसे सब लोकोंको देखते हैं, हम यहांसे बैठे पाण्डवोंमें श्रेष्ठ सफेद घोड़ेवाले अर्जुनको देख रहे हैं। श्री लोमश ऋषि बोले, हे महा-बाहो! आप जो कहते हैं, सो सब सत्य है, इस पुण्यकर्म्मवाले पुरुषोंसे सेवित पवित्र सरस्वती नदीका महर्षि लोग देखते हैं। हे कुरुश्रेष्ठ! इसमें स्नान करनेसे आप सब पापोंसे छूट जायंगे। यहीं देव ऋषियोंने अनेक सारस्वत यज्ञ किये हैं। हे कुन्तीनन्दन! इस स्थानमें राजर्षि तथा अन्य ऋषियोंनेभी अनेक यज्ञ किये हैं। हे भरतश्रेष्ठ! यह बीस कोस लम्बी और बीस कोस चौड़ी प्रजापतिकी वेदी है, इसी स्थानमें महात्मा कुरुने यज्ञ करे थे।

१२९ अध्याय समाप्त

श्रीलोमश ऋषि बोले, हे राजन्! इस स्थान पर मरनेसे पुरुषोंको स्वर्ग प्राप्त होता था। हे राजन्! इस स्थानमें सहस्रों पुरुष मरनेको आते हैं, पहले एक यज्ञमें बहुत दक्षिणा पाकर एक ऋषिने यह आशीर्व्वाद दिया कि जो पुरुष इस स्थानमें मरेगा, वह स्वर्गको जीत लेगा। हे प्रजानाथ! यह रम्य सरस्वती नदी है और यह पवित्र दृषद्वती नदी है, यह सरस्वतीके तट पर विनसन नामक तीर्थ है, हे वीर! यह निषाद देशका द्वार है, और उनहीं निषादोंके दोषसे सरस्वती पृथ्वीमें चली गई है, निषाद लोग मुझको न पहचानें। यही चमसोद्भेद तीर्थ है, जहां सरस्वती प्रगट हुई है। यहीं सरस्वतीके पास सब समुद्रगामिनी और पवित्र नदी आती है। हे शत्रुनाशन! यह सिन्धुका महातीर्थ है, यहीं लोपामुद्राने आकर अगस्त्य मुनिसे विवाह किया था। हे सूर्य्यके समान तेजस्वी! यह प्रभास नामक तीर्थ प्रकाशित हो रहा है, यह तीर्थ इन्द्रका परम प्यारा पवित्र और पापोंका नाशक है, वह विष्णुपद नामक उत्तम तीर्थ दीखता है, यह सब पापोंके नाश करनेवाली, रम्य, व्यासा नदी है, इसी स्थानमें पुत्रशोकसे व्याकुल भगवान वशिष्ठ मुनि अपने शरीरको पाटते पृथ्वीमें गिर गये थे, फिर प्राण पाकर उठे थे, इसी लिये इस नदीका नाम विपासा है। हे शत्रुनाशन! यह परम पवित्र काश्मीर देश है, यहां पवित्र महर्षि लोग आम

करते हैं, आप उसको भाइयोंके सहित देखिये। हे भारत! इसी स्थानमें उत्तरके सब ऋषि, नहुष पुत्र ययाति काश्यप और अग्निका सम्वाद हुआ था, हे महाराज! यह मानसका द्वार है, यहां श्रीमान् रामने एक वर्ष वास किया था, इस सत्य विक्रम देशका नाम वातिक खण्ड है, इसकी सीमा विदेह देशके उत्तरतक है। हे कौन्तेय! हे पुरुषसिंह! इस देशमें एक बहुत विचित्र बात है, कि जब युगका अन्त होनेको होता है, तब पार्व्वती और पार्षदोंके सहित कामरूपी शिवके दर्शन यहीं होते हैं। इस तलावमें कल्याण चाहनेवाले, यज्ञ करनेवाले पुरुष अपने परिवारके सहित चैत्रमें शिवका यज्ञ करते हैं, आप इन्द्रियजित और श्रद्धावान होकर इस जलका स्पर्श कोजिये, तो आपके सब पाप नष्ट हो जायंगे और उत्तम लोगोंको प्राप्त हूजियेगा. इस तीर्थका नाम उज्जानक है, जहां स्वामकार्त्तिक और अरुन्धतीके सहित भगवान वशिष्ठ मुनि शान्त हुए थे, इस तड़ागका नाम कुशवान है, इसमें सौदलका कमल होता है, यहीं क्रोध जीतनेवाली रुक्मिणी शान्त हुई थीं। हे पाण्डव! तुमने जो समाधियोंका संक्षेप सुना है, अब उनको अपनी दृष्टिसे देखोगे। यह भृगुतुङ्ग नामक पर्व्वत है। हे राजेन्द्र! सब पापोंके नाश करनेवाली ऋषि सेवित निर्म्मल और शीतल जलसे भरी हुई वितस्ता नदीको देखो। आगे जला, उपजला और यमुना नदीको देखो। हे भारत! जहां यज्ञ करके उशीनर राजा इन्द्रके तुल्य होगये थे। हे पृथ्वीनाथ! उसको देव सभामें आकर अग्नि और इन्द्रने परीक्षा करी थी, जिस समय राजोंमें इन्दु उशीनर यज्ञ कर रहे थे तबही अग्नि और इन्द्र वरदान देनेकी इच्छासे उनकी परीक्षा लेने आये। इन्द्र वाज और अग्नि कबूतर बने। अनन्तर वाजके भयसे व्याकुल, रक्षा चाहनेवाले कबूतररूपी अग्नि राजा उशीनरकी जङ्घापर बैठ गये और भयसे व्याकुल होने लगे।

१३० अध्याय समाप्त।

वाज बोला, हे राजन्! सब जगत्के राजा लोग आपको धर्म्मात्मा कहते हैं, तब तुमने यह कर्म्म धर्म्मविरुद्ध क्यों किया है? हे राजन्! मैं भूखसे बहुत व्याकुल हूं और यह कबूतर मेरा भोजन है. अतएव तुम धर्म्मके लोभसे इसकी रक्षा मत करो, तुम्हारा धर्म्म नष्ट हो चुका। राजा बोले, हे महाद्विज! तुम्हारे भयसे व्याकुल होकर प्राण बचानेकी इच्छासे यह हमारे पास आया है, हम रक्षा क्यों न करें? हे बाज! इसकी प्राणरक्षा करनेमें क्या तुमको धर्म्म नहीं दीखता है? देखो यह कबूतर सम्भ्रान्त और तड़पता हुआ मेरे पास आया है. इसका परित्याग करना अच्छा नहीं है। हे बाज! जो पुरुष ब्राह्मण अथवा लोकमाता गौको मारता है, और जो शरणागतका त्याग करता है, उन तीनोंको समानही पाप होता है। बाज बोला, हे पृथ्वीनाथ! आहारसे सब जगत्के जन्तु उत्पन्न होते हैं, आहारसे बढ़ते हैं, और आहारहीसे जीते हैं। अत्यन्त दुःखसे छोड़ने योग्य वस्तुको छोड़कर पुरुष कई दिन जी सकता है. परन्तु भोजनको छोड़कर जीना असम्भव है. इस लिये भोजन न पानेसे मेरे प्राण शरीरको छोड़कर प्रस्थान करेंगे। हे धर्म्मात्मन्! मेरे मरनेसे मेरी स्त्री और पुत्र सब मर जायंगे। तुम एक कबूतरके प्राणकी रक्षा करके अनेक प्राणोंका नाश करते हो। जिस धर्म्मसे धर्म्मका नाश हो, वह धर्म्म नहीं वरन कुमार्ग है। हे सत्यविक्रम! जिसमें किसीका विरोध नहो, वही धर्म्म कहाता है। हे पृथ्वीनाथ! यदि धर्म्ममें दो स्थानोंपर विरोध हो, उन दोनोंका हलका और भारीपन विचारलें,

जिसमें कुछ बाधा न हो उसी धर्मको करें। हे राजन्! हम दोनोंके हलके और भारीपनका पहले निश्चय कीजिये, तब जिसमें कल्याण दीखे सोई काम कीजिये। राजा बोले, हे पक्षिश्रेष्ठ! तुम बहुत कल्याणसे भरी हुई बातोंको कहते हो क्या तुम धर्मके निश्चय करनेवाले साक्षात् पक्षिराज गरुड़ हो? तुम धर्मसे भरी हुई अनेक विचित्र बातोंको कहते हो, इससे हमको जान पड़ता है कि कोई बात तुमको अविदित नहीं हैं, तुम शरणागतका त्याग किस प्रकार अच्छा समझते हो? हे विहङ्गम! तुम केवल अपने भोजनके निमित्त इतना विवाद कर रहे हो, तुम अत्यन्त इससे अधिक भोजन पा सकते हो; गाय, बैल, सूअर, भैंसा वा हरिन अथवा और जो तुम्हारी इच्छा हो, सोही हम तुमको दे सकते हैं। बाज बोला, हे महाराज! मैं सूअर, बैल हरिन या और किसी जन्तुको नहीं चाहता हूं, मुझे दूसरे जन्तुसे क्या प्रयोजन है? हे क्षत्रियश्रेष्ठ! हे पृथ्वीनाथ! ईश्वरने जो भक्षण मेरे निमित्त भेजा है, आप मेरे उस कबूतरको मुझे दे दीजिये। हे राजन्! यह बाज कबूतरको खाता है, तुम सार-रहित केलेके खम्भके समान धर्मको मत करो। राजा बोले, हे खेचर! मैं इस धनसे भरे हुए शिवि-राज्यको तुम्हें देदूंगा अथवा और जो तुम्हारी इच्छा होगी, सोभी दूंगा, परन्तु इस शरण आये पक्षीको न छोड़ूंगा। हे पक्षिसत्तम! जिस कर्मसे तुम इस पक्षिके प्राणको छोड़ो सो कहो, मैं वही करूंगा, परन्तु इस कबूतर-को न छोड़ंगा। बाज बोला, हे राजन् उशी-नर! यदि तुमको इस कबूतरमें बहुतही प्रेम है, तो अपने शरीरके मांसको कबूतरकी बरा-बर तोलो। हे नृपोत्तम! जब वह इसके समान हो जायगा, तब उसको खाकर मैं बहुत प्रसन्न हूंगा। राजा बोले, हे बाज! तुमने जो हमसे मांगा सो देना स्वीकार ग्रहण किया, अब हम अपना मांस इस कबूतरके समान तौलकर तुम्हें देते हैं।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे पृथ्वीनाथ! हे कुन्तीनन्दन! परम धर्मके जाननेवाले राजा उशीनरने अपने मांसको अपने हाथसे काटा और तराजूपर रखकर तौलने लगे, तौलते समय कबूतर अधिक हुआ, तब राजा उशीनरने पुनः मांस काटकर चढाया, जैसे जैसे राजा मांस चढ़ाते गये तैसे तैसे कबूतर भारी होता जाता था। जब राजाके शरीरमें मांस न रहा तब आपही तराजूपर बैठ गये बाज बोला, हे धर्मज्ञ! हम इन्द्र और यह कबूतर अग्नि है, केवल आपके धर्मकी परीक्षा करनेके लिये यज्ञशालामें आये थे। हे प्रजा-नाथ! तुमने जितना अपने शरीरका मांस काटा है, उतनी ही तुम्हारी कीर्त्ति जगतमें बढ़ेगी। हे पार्थिव! जबतक लोकमें मनुष्य रहेंगे तबतक तुम्हारी कीर्त्ति जगत्में रहेगी और तुमभी सनातन स्वर्गमें वास करोगे। ऐसा कहकर इन्द्र और अग्नि स्वर्गको चले गये। राजा उशीनरभी अपने कर्मोंको समाप्त करके अपने तेजसे प्रकाशित होकर स्वर्गको चले गये। हे राजन्! उसही महात्मा उशीनरके स्थानको हमारे सहित देखो। हे राजन्! इस स्थानमें सनातन मुनि और देवता लोगोंको ब्राह्मण लोग देखते हैं।

१३१ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे नरेन्द्र! जो जगतमें मन्त्र जाननेवालोंमें श्रेष्ठ उद्दालक मुनिके पुत्र श्वेतकेतु प्रसिद्ध हैं। आप उनके आश्रमको देखिये, यह परम पवित्र आश्रम अनेक प्रकार के सदा फलनेवाले वृक्षोंसे शोभित है। यहां श्वेतकेतुने साक्षात सरस्वती को मनुष्य रूप धारण किये हुए देखा था, और कहा, था, कि हमने जान लिया तुम साक्षात् सरस्वती हो, उस युगमें कहोड़पुत्र अष्टावक्र और पहले उद्दालकके पुत्र

श्वेतकेतु ये दोनों मामा भानजे हैं, और वेद जाननेवालोंमें श्रेष्ठ हैं, और दोनोंही जगत् प्रसिद्ध है। अष्टावक्र और श्वेतकेतु ये दोनों राजा जनककी यज्ञशालामें गये थे और दोनों मामा भानजोंने बहुत शास्त्रार्थ किया । हे कौन्तेय । आप अपने भाइयोंके सहित इस पवित्र आश्रममें प्रवेश करके उपासना कीजिये, इन्हीं महात्माने जनकके यज्ञमें जाकर शास्त्रका विचार किया था, इन्होंने बाल्यावस्थाहीमें राजा जनककी सभामें जाकर शास्त्रार्थ किया था, अनन्तर नदीमें स्नान करने चले गये थे ।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे लोमश ! महात्मा अष्टावक्र किसके पुत्र थे, इनका क्या प्रभाव था? किस प्रकार उन्होंने बन्दीको निग्रह किया था? यह सब आप हमसे कहिये । श्रीलोमश मुनि बोले, हे राजन् ! उद्दालक मुनिके एक कहोड़ नामक शिष्य थे, वे गुरुकी बहुत सेवा करते और उनहोके घरमें रहते थे। इस प्रकार बहुत दिन पढ़ते रहे। जब उद्दालक मुनिने कहोड़को अपना भक्त जाना, तब शिष्योंके सहित उसकी परीक्षा करी। अनन्तर अपनी पुत्रीका उससे विवाह कर दिया। अनन्तर कहोड़की स्त्रीको गर्भ रहा, वह गर्भ अग्निके समान प्रकाशमान था। एक दिन उस बालकने गर्भहीमेंसे पितासे कहा कि हे पिता। तुम समस्त रात्रि पढ़तेहो रहते हो, सो यह सम्यक् पाठित नहीं होता है। मैंने आपके प्रसादसे इस गर्भमें रहके ही [illegible] सहित चारोवेद और निखिल शास्त्र [illegible]ध्ययन किया है, इसी निमित्त मैं कहता हूं, [illegible] यह आपके द्वारा समीचीन रूपसे पठित [illegible]ीं होता है। महाराज ! शिष्योंके मध्यमें [illegible]र्षि कहोड़ने अपनी निन्दा सुनकर [illegible] किया और उस गर्भके बालकको शाप [illegible]या, कि तू गर्भहीमेंसे बोलता है, इस लिये आठ [illegible] टेढ़ा होगा। अनन्तर कहोड़ मुनिका [illegible] उत्पन्न हुआ, वह आठ जगहसे टेढ़ा था, और इसी लिये उनका नाम अष्टावक्र था और महर्षि उद्दालकके पुत्र श्वेतकेतु अष्टावक्रके मामा और अवस्थामें समान थे। एक दिन अष्टावक्रके जन्मके पहले जब उनकी माता गर्भसे बहुत दुःखिनी हुई जब अपने पतिको प्रसन्न करके धनकी इच्छासे एकान्तमें ऐसा बोली, हे महर्षे ! अब दशम महीना आगया, हम क्या करें, आपके घरमें कुछभी धन नहीं है, जिससे मैं इस आपत्तिसे पार हूं। कहोड़ मुनि अपनी स्त्रीके ऐसे वचन सुन धन लेनेको राजा जनकके यहां गये, वहां बन्दीसे उनका विवाद हुआ, उसने कहोड़को विवादमें जीतकर पानीमें डुबा दिया। जब उद्दालक मुनिने यह सब समाचार सुना कि हमारे दामादको बन्दीने पानीमें डुबा दिया है, तो उन्होंने अपनी पुत्री सुजातासे कहा कि तुम यह समाचार अष्टावक्रसे मत कहना। जब अष्टावक्रका जन्म हुआ, तब भी उन्होंने इस बातको न सुना। अष्टावक्रने उद्दालकको पिता और श्वेतकेतुको भाईके समान जाना। एक दिन बारह वर्षकी अवस्थामें अष्टावक्र उद्दालक मुनिकी गोदमें बैठे थे, उसी समय श्वेतकेतु आये और उन्होंने अष्टावक्रका हाथ पकड़ कर खींच लिया, तथा रोते हुए अष्टावक्रसे कहा कि यह तुम्हारे पिताकी गोद नहीं है। अष्टावक्रने उनके दुष्ट और कठोर वचनोंको सुनकर हृदयमें महादुःख किया और घरमें जाकर अपनी मातासे पूछा कि हमारे पिता कहां हैं ; सुजाताने उनके वचन सुन शापसे डरकर सब समाचार कह सुनाया। अष्टावक्रने सब समाचार अच्छी प्रकार जान कर रातको श्वेतकेतुसे कहा कि हमने सुना है, राजा जनक अद्भुत यज्ञ कर रहे हैं, चलो हमभी वहीं चलें। वहां ब्राह्मणोंका विवाद सुनेंगे धन लावेंगे और भोजन करेंगे। वहां जानेसे वेदका शब्द सुनकर हमलोगोंको चतुरता आजायगी। अनन्तर दोनों मामा भानजे राजा जनककी ऋद्धिभरी यज्ञ-

शालाको चले। मार्गमें राजा जनक मिल गये उनके पुरुषोंने कहा कि हटो बचो। यह सुनकर अष्टावक्र मुनि बोले।

१३२ अध्याय समाप्त।

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, अन्धेको बहिरेको, स्त्रीको और भार ले चलनेवालेको मार्ग देना चाहिये। राजा और ब्राह्मणोंके मध्यमें ब्राह्मणहीको मार्ग देना चाहिये अर्थात् राजाहीको हटना उचित है राजा जनक बोले, हम आपको यह मार्ग देते हैं. जिधर इच्छा हो उधर चले जाइये, इन्द्रभी ब्राह्मणोंको प्रणाम करते हैं, क्योंकि अग्नि थोड़ीभी कम नहीं होती। श्रीअष्टावक्र मुनि बोले. हे नरेन्द्र ! हम तुम्हारे यज्ञका तमाशा देखनेकी इच्छासे आये हैं, सो हमारी इच्छा है, कि आपका द्वारपाल हमको भीतर जानेकी आज्ञा दे। हे इन्द्रद्युम्नके पुत्र ! हम यज्ञ देखने. विवाद करनेको आये हैं, सो यह दोनों द्वारपाल क्रोध रोगसे जले जाते हैं. और हम दोनोंको भीतर नहीं जाने देते। द्वारपाल बोला. तुम दोनों आज्ञाकारियोंको हम प्रणाम करते हैं आप हमारे वचन सुनिये, यहां कोई बालक ब्राह्मण यज्ञशालामें नहीं जाने पाता है. जो वेदके जाननेवाले और बूढ़े ब्राह्मण हैं, वही भीतर जाते हैं।

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, यदि यज्ञशालाके भीतर बूढ़ेही ब्राह्मण जाने पाते हैं. तो हमको भी जाने दो, क्योंकि हमभी बूढ़े व्रतधारी और वेदसे भरे हुए हैं, हम लोग सुश्रूषा सहित जितेन्द्रिय ज्ञानी. वेदपाठी और प्रतिष्ठावान हैं, तुम. हमको बालक मत समझो, क्योंकि थोड़ी अग्निभी जलानेमें समर्थ होती है।

द्वारपाल बोला. हे अज्ञ ! यदि तुम वेदको जानते हो तो एक अक्षरसे विराजमान अनेक रूपवाली वेदमयी वाणीको कहो ? क्योंकि इसलोकमें ज्ञानी बहुत दुर्लभ है.तुम अपनी मिथ्या प्रशंसा क्यों करते हो।

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, तुमको नहीं मालूम होता कि अधिक बढ़नेसे कुछ लाभ नहीं होता, देखो सेंमरका वृक्ष बहुत बढ़ जाता है. परन्तु उसके फलके भीतर कोई खानेके योग्य नहीं होती और अनेक छोटे वृक्षोंके फल उत्तम होते हैं। इस लिये वे छोटेही वृक्ष

द्वारपाल बोला, देखो छोटे बालक हीसे विद्या पढ़कर ज्ञानी होते हैं, और वेही बड़ेभी हो जाते हैं। थोड़ी अव कोई भी ज्ञान नहीं पासकता है,तब तुम व होकर बढ़ोंके समान क्यों बातें करते हो

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले जिसका सिर होजाता है. उसे बूढ़ा नहीं कहते, जो बा भी ज्ञानी हो, पण्डित लोग उसको बूढ़ा हैं। अधिक अवस्था, पके बाल, धन वस्तुओंको पाकर कोई श्रेष्ठ नहीं ह ऋषियोंने यही कहा है कि जो वेद जानने है, वही हम लोगोंमें बूढ़ा है. हे द्वारप हम राजसभामें जाकर वन्दीको देखना च हैं. तुम सुवरणमालाधारी राजासे जा हमारा वृत्तान्त कह दो। हे द्वारपाल ! थोड़ी देरमें देखोगे, कि हम सभामें जा पण्डितोंके सङ्ग विवाद करेंगे और अत्यन्त विवाद करके उस सूतको भी लेंगे। आज वियासे भरे हुए ब्राह्मण लं पुरोहित. नगरवासी और राजा यह लोग हमारी विद्याको देखेंगे। चाहे शास्त्रार्थमें जीतें. चाहे हारें, परन्तु य शालामें जायंगे अवश्य।

द्वारपाल बोला, हम बड़े बड़े ज्ञानी पण्डितोंकी सभामें दश वर्षके लड़केको ले जायं ? परन्तु किसी उपायसे तुमको ले चलते हैं. किन्तु तुम उत्तम यत्नसे वहां जाकर अष्टावक्र बोले, हे राजन् ! जनक ! तुम सम्राट और सब ऋद्धियोंसे हुए हो. तुमने यज्ञके ऐसे कर्म किया है,

पहले राजा ययातिने किया था। हमने सुना है कि तुमने बहुत वादके जाननेवाले वन्दी को अपने घरमें रखा है, जो उससे शास्त्रार्थ में हार जाता है, उसीको तुम्हारे काम वाले पुरुष लोग शङ्कारहित होकर जलमें डुवा देते हैं। हम ब्राह्मणोंसे यह बात सुनकर यहा वाद करनेको आये हैं। कहो वह वन्दी कहा है? जैसे सूर्य्य तारोंके तेजको नाश करता है, तैसेही हम उसको शान्त कर देंगे।

राजा जनक बोले, तुम हमारे सामने बनाही वन्दीकी विद्या जाने कहते हो कि हम उसको जीत लेंगे। विना वादीकी विद्या जाने ऐसा कहना अनुचित है, वड़े वड़े वेद जाननेवाले लोग उससे विवाद करते हैं। जान पड़ता है, कि तुम उसके विद्यावलको नहीं जानते हो। वड़े वड़े पण्डित ब्राह्मण लोग उसके आगे ऐसे दीखते हैं, जैसे सूर्य्यके सामने तारे। जोलोग वन्दीका जीतनेकी इच्छासे आते हैं, वन्दीको देखतेही उनकी सब प्रभा नष्ट हो जाती है। हे तात! वड़े वड़े विद्याभक्त लोग उसको देखकर रुआसे निकल जाते हैं, तब तुम उसके सामने कैसे ठहरोगे?

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, उसने हमारे समान पण्डितोंसे कभी विवाद नहीं किया है, इसीसे सिंह बन रहा है, और वेडर होकर बकता है। आज हम उसको अवश्य जीतेंगे। हमसे हारने पर उसकी वही दशा होगी, जैसे पहिया टूटनेसे गाड़ीकी।

राजा जनक बोले, जिसके एक एक अंशसे तीस अवयव हैं ऐसे द्वादश अंशविशिष्ट, चौवीस पर्व्व और तीनसौ-साठ अरोंसे अङ्कित जो वस्तु है, उसके अर्थको जो जानता है, वही परम कवि है।

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, चौवीस पर्व्व छःनाभि, बारह प्रधि और तीन सौ साठ आराके सहित जो नित्य चलनेवाला चक्र है, सो तुम्हारी रक्षा करे।

राजा जनक बोले, जो शरीररूपी रथमें दो घोड़े जुते हैं, जिनका गिरना बाज पक्षीके समान मान होता है, देवताओंके बीच उन दोनोंके गर्भको कौन धारण करता है? और वेभी किसे उत्पन्न करते हैं।

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, हे राजन! वह आपके घरमें कभी न आवे; वे शत्रुओंहीके घरमें रहें, वे वायु सारथिके गर्भसे उत्पन्न होते हैं। और इन दोनों वस्तुओंसे उत्पन्न मेघ हुआ करते हैं।

राजा जनक बोले, कौन ऐसा जन्तु है, जो सोनेके समय आंख बन्द करके नहीं सोता? वह कौन है, जो उत्पन्न होके नहीं चलता। वह कौन है जिसको हृदय नहीं है, और वह कौन है जो वेगसे नहीं बढ़ता।

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, मत्स्य सोते हुए आंखोंको नहीं बन्द करता, अण्डा उत्पन्न होकर नहीं चलता। पत्थरको हृदय नहीं है, और वेगसे नदी बढ़ती है।

राजा जनक बोले, हम तुमको पुरुष नहीं समझते, तुम साक्षात् देवता हो। हमें निश्चय है, कि तुम बालक नहीं, वरन बूढ़े हो। हमने जान लिया कि तुम्हारे समान वाद करनेवाला कोई नहीं है। इस लिये हम तुमको बता देते हैं, कि वही वन्दी खड़ा है।

१३३ अध्याय समाप्त।

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, हे उग्रसैन्यपपालक महाराज! यहा बड़े बड़े राजा लोग बैठे हैं, उनके बीचमेंसे हम वादियोंमें श्रेष्ठ वन्दीको नहीं पहचान सकते, परन्तु जैसे दूध और पानीमेंसे हंस दूधको ग्रहण करता है, तैसेही इन सबके बीचमेंसे हम वन्दीको ढूढ़ लेते हैं। आज वह हमसे वादमें नहीं बोल सकेगा, उसकी वही दशा होगी, जैसे नदी बढ़कर शान्त होजाती है। अरे वादी! तू हमारे सामने खड़ा रह, आज तेरी वही दशा होगी, जो प्रलय कालकी अग्निम जलकी होती है। तू निश्चय जान कि जैसे सोता हुआ सिंह जागता है, और

जैसे विषैला सर्प अपने ओठोंको चाटता है, उस समय उन दानोंके सिरपर लात मारे और वह अपना बचना चाहे, वैसोही दशा तेरीभी है, जैसे कोई दुर्व्वल पुरुष अपने बलके अभिमानसे पर्व्वतमें आघात करता है, पीछेसे उसीके हाथ और नाखूनोंमें घाव होजाते हैं, परन्तु पर्व्वतको कुछभी नहीं होता, तैसेही आज तेरीभी दशा होगी। जैसे मैनाक पर्व्वतके निकटमें अन्य सब पर्व्वत और बैलके समीपमें बछड़े निकृष्ट हैं, वैसेही मिथिलाधिपके निकट अन्य सब राजा ही निकृष्ट है। हे राजन् जनक! जैसे सब देवतोंमें इन्द्र श्रेष्ठ हैं, और जैसे सब नदियोंमें गङ्गा श्रेष्ठ है, तैसेही सब राजाओंमें तुमभी श्रेष्ठ हो, इस लिये शीघ्र उस वन्दीको हमारे सामने बुलाओ।

लोमश मुनि बोले, हे राजन्! इस प्रकार अष्टावक्र मुनि सभाके बीचमें गर्ज्जन लगे। अनन्तर क्रोध करके वन्दीसे बोले, कि तुम हमारे वचनका उत्तर दो और हम तुम्हारे वचनका उत्तर देंगे।

वन्दी बोले, जिस प्रकार एक अग्नि बहुधा-रूपसे प्रज्वलित होता है और एक सूर्य्य इस सारे विश्वको प्रकाश करता है, वैसेही एक वीर अर्थात् बुद्धितत्त्व, शब्द स्पर्श आदि उपहारस्वरूप विषयोंके संहार पालनकर्त्ता जो श्रोत्र, त्वक् प्रभृति इन्द्रियां हैं, उनका राजा, नियन्ता तथा प्रभु होकर "मैं" 'यह' इत्यादि प्रकारसे प्रकाशमान होते हुए अन्यान्य वादियोंके अभिमत तत्त्वस्वरूप अरातिका विनाशक हुआ है।

अष्टावक्र बोले, जिस प्रकार इन्द्र और अग्नि दो देवता, नारद और पर्व्वत दो देवर्षि, अश्विनीकुमार दो देवता, रथके दो चक्र और विधाताके सहारे विहित भार्य्या और पति दो जन परस्पर मित्रभावसे विचरण किया करते हैं; उसी प्रकार दो वस्तु अर्थात बुद्धि और चैतन्य दोनो परस्पर मित्र-भावयुक्त होकर विषयानुभव प्रभृति कार्य्य निर्व्वाह किया करते हैं, केवल बुद्धिही नहीं।

वन्दी बोले, कर्म्म-हेतुसे यह सब प्रजा विविध जन्म ग्रहण करती है, तीन वेद मिलित हो वाजपेयादि समस्त कर्म्म प्रतिपादन करते अध्वर्य्युगण तीनों कालसें यज्ञकर्म्मका अनुष्ठान किया करते हैं, स्वर्ग, मर्त्य और नरक विविध लोक कर्म्मजनित भोग करने होते हैं और वेदमें कर्म्मजनित विविध ज्योति कहे हैं; इसलिये चाहे बुद्धि वा अन्य जिस किसी पदार्थका कर्तृत्वादि क्यों न सिद्ध होवे, वह कर्म्मकेही अधीन है।

अष्टावक्र बोले, ब्राह्मणोंके चारि आश्रम हैं; चारों वर्ण ज्ञान-यज्ञ निर्व्वाह किया करते हैं; और विराट हिरण्यगर्भ, ईश्वर तथा तुरीय-साक्षात्कार ये चारि अवस्था हैं; इन चारों अवस्थाओंके वाचक अकार, उकार, मकार और अर्द्धमात्रा ये चारि वर्ण अर्थात् ओम् है; इस विषयमें चारि पदयुक्त वाक्य वेद-मन्त्रोंमें सर्व्वदा वर्णित हुए हैं; इसलिये ज्ञानसे तुरीय-साक्षात्कार होने पर कर्तृत्व-भोक्तृत्वादि अलीक प्रतिपन्न होते हैं, अतएव कर्म्म भी अलीक है।

वन्दी बोले, जिस प्रकार गार्हपत्य प्रभृति पञ्चाग्नि, अग्निहोत्र आदि पञ्चयज्ञ और पंक्ति छन्दके प्रत्येक चरणमें पांच अक्षर रहते हैं, उसी भांति श्रोत्र, त्वक, नेत्र, जिह्वा, और नासिका, ये पांचो इन्द्रियां शब्दादि पञ्च विषयोंकी ग्राहक होती हैं। ये शब्दादि पञ्च-विषय-स्रोत उपादेय कहके लोकमें प्रसिद्ध हैं और शरीरान्तर्व्वर्त्ती चैतन्य प्रमाण, विपर्य्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति इन पांचोंके सहारे नाना पञ्चविध शिखाोंमें समन्वित हुए है, यह वेदोंमें दीखता है, अतएव तुरीय-साक्षात्कार असम्भव है।

अष्टावक्र बोले, जिस प्रकार ऋषियोंकी

बही अन्न्याधानकी दक्षिणा छः गौ, सर्व्ववेद-विहित सायस्क-यज्ञ अर्थात् एकाहसाध्य यज्ञ छः हैं, कालचक्र-ऋतु छः हैं और कृत्तिका छःजन समान रूपसे प्रसिद्ध हैं, उसही भांति श्रोत्रादि पांच और मन एक, इन छः इन्द्रियोंके समान रूपसे कर्त्तृत्व-भोक्तृत्वादि कहने होंगे।

वन्दी बोले, शब्दादि विषयोंके प्रत्येक विषयमें आसक्त, उक्त श्रोत्रादि छः और बुद्धिवृत्ति एक, इन सातों इन्द्रियोंको सप्तर्षि तथा सप्त पुरुषरूप पशु भी कहा जाता है, जब इनकी भौम-विषयमें आसक्ति होती है, तब इन्हें ग्राम्यपशु कहते हैं और जब इनकी दिव्य विषयमें आसक्ति होती है, तब इन्हें वन्यपशु कहा जाता है, येही प्रत्येक सप्त ग्राम्य वा वन्यपशु एक आत्माको शब्दादि विषयों तथा तत्त्वत्-विषयजनित सुखलाभ करा देते हैं, आत्मा भी तत्त्वत् विषतजनित सुख अनुभव करता है; इस लिये जैसे एक वीणा सात तारोंसे संयुक्त होकर वाद्यध्वनि निष्पन्न करता है, वैसेही उक्त श्रोत्रादि सात तत्त्वोंके सहारे देहधारीके कर्त्तृत्वादि निष्पन्न हुआ करते हैं।

अष्टावक्र बोले, शब्दादि विषय, उक्त श्रोत्रादि सात और अहंवृत्ति एक, इन अष्टविध इन्द्रियोंमें प्रवेशाधिकारी होनेसे अष्टविध कहके वर्णित हुए हैं, जिस प्रकार शणस्तवसे बने अष्टसंख्य गोणी सैकड़ो परिमाण धारण करते हैं, वैसेही शब्दादि विषय अष्टविध होने पर भी सैकड़ों सख्यामें गिने जाते हैं। जिसके आनन्द-कणासे सब प्राणी आनन्द लाभ करते हैं, वह परमानन्द अद्वैत-आत्मा उक्त अष्टविध इन्द्रियोंमें उपलक्षित होता है, क्योंकि द्वैत-रूप अज्ञान, समस्त विषयेन्द्रिय संयोगरूप यज्ञमें पुरुषरूप पशुबन्धनके स्थान उक्त श्रोत्रेन्द्रियादि अष्टसंख्य कोणयुक्त यूपस्वरूप होकर विद्यमान है, अतएव वेदमें भी सुन हुआ है कि, शब्दादि-विषयक अष्टविध वासना तत्त्वत-इन्द्रियाधिष्ठात्री देवतामें ही विद्यमान रहती है, आत्मामें नहीं रहती; और परमानन्दस्वरूप आत्मा ज्ञात होनेसे वह द्वैत-अज्ञानका विनाशक होता है, अतएव तुरीय-साक्षात्कार असम्भव नहीं है।

वन्दी बोले, जिसप्रकार पितृयज्ञमें अग्नि जलानेके लिये नवधात्मक् विहित हुआ है, प्रत्येक चरणमें नौ अक्षर रहनेसे वैसे चारि चरणमें एक बृहती छन्द होता है; और एकसे लगाय नौविध अङ्कके मेलसे सब गिनती पूरी होती हैं, वैसेही सत्त्व, रज और तम इस त्रिगुणात्मिका अज्ञानरूपणी प्रकृतिके प्रत्येक गुण अपने और दूसरेके अंशमें मिलकर त्रिविध होनसे वे नवविध होकर तत्त्वत् अंशोके बहुत्व तारतम्य अनुसार अनेक भांतकी सृष्टि सम्पादन किया करते हैं, यह पण्डितोंने कहा है, इस लिये जब द्वैत-अज्ञानसे समुदाय सृष्टि होना कहा गया है, तब उसका विनाश होना स्वीकार नहीं किया जासकता, अतएव उसके रहते तुरीय-साक्षात्कारकी क्या सम्भावना है?

अष्टावक्र बोले पण्डितोंने दशों इन्द्रियोंको जीवके सम्बन्धमें कहा है, आत्माके सम्बन्धमें नहीं, जैसे स्त्रियां गर्भविशिष्ट होकर दश महीने तक गर्भ धारण करती हैं, वैसेही आत्मा मायाके सहारे अहंवृत्ति प्रभृतिमें समन्वित होकर ही हजारहां जीव रूपसे उपलब्ध होता है, यथार्थमें वह सङ्गरहित है। इस तत्त्वज्ञानके उपदेष्टा दश जन हैं और अधिकारी भी दश जन हैं। अतएव आत्माका स्वरूप ज्ञान होनेसे यह माया प्रकृति अलीक कहके बोध होगी, इसलिये इसको सनातो असम्भव है। इस परमार्थ ज्ञानके उपदेशक वा अधिकारी कोई कोई होते हैं, और इनके द्वेषी भी कोई कोई हुआ करते हैं।

वन्दी बोले, एकादश इन्द्रियां शब्दादि विषयोंमें अवस्थान करती है, इसलिये ये शब्दादि विषय भी एकादश संख्यामें गिने जाते हैं। जीवस्वरूप पशुके वन्धनके निमित्त ये ग्यारह विषय ग्यारह यूपस्वरूप हुए हैं; उक्त शब्दादि ग्रहणजनित हर्ष विषादादि ग्यारह प्रकारके विकार स्वर्गमें देवताओंको भी रोदन कराया करते हैं; इसलिये द्वैत-प्रकृतिका कार्य्य जो विषयेन्द्रिय संयोग है,इससे छुटकारा पाकर स्वरूप-ज्ञान अर्थात् तुरीय-साक्षात्कार होना मनुष्योंके पक्षमें सुदूर-पराहत है।

अष्टावक्र बोले, बारह महीनेका सम्वत्सर होता है और प्रत्येक चरणमें बारह अक्षर रहनेसे वैसे चारि चरणमें जगतीछन्द होता है, ऐसा वर्णित है, किन्तु ध्यानवन्त योगी लोगोंने इन्द्रियोंके अपने अपने विषयगमनके व्यावर्त्तक बारह व्रत कहे है, और प्राकृत यज्ञ द्वादशाहमें पूरा करना होता हैं, यह भी कहे है। अर्थात् जिस प्रकारसे माससङ्घातसे सम्वत्सर और अक्षरसङ्घातसे जगती छन्द अतिरिक्त नहीं है, उसी भांति मूढ़ लोगोंकी विवेचनामें इन्द्रिय सङ्घातसे अतिरिक्त एक शुद्ध-चैतन्य रहना बाधगम्य नहीं होता, किन्तु ध्यानवन्त योगी लोग धर्म्म सत्य, तप, दम, अमात्सर्य्य, ह्री, तितीक्षा, अनसूया, दान, शास्त्रबुद्धि, धृति और क्षमा इन बारह प्रकारके व्रतोंका अनुष्ठान करते हुए चित्तशुद्धि लाभ करके उसके सहारे जिस प्रकार बारह दिन प्राकृत यज्ञका विहित काल कहके निर्दिष्ट होने पर भी इन बारह दिनोंका साधारण दिनोंसे अन्तर्भूत और साधारण दिनोंके अतिरिक्त भी स्वीकार किया जाता है, वैसेही इन्द्रिय-सङ्घातके अन्तर्भूत और इन्द्रिय सङ्घातसे अतिरिक्त शुद्ध चैतन्यरूप अद्वैत-ब्रह्म उपलब्धि करते हैं।

वन्दी बोले, पण्डितोंने त्रयोदशी तिथिको श्रेष्ठ कहा है और पृथिवीको त्रयोदश द्वीप-युक्ता कहे है, अर्थात् ऐसी बात नहीं है कि यह तत्त्वज्ञान केवल धर्म्म, सत्य प्रभृति द्वादश प्रकारके उक्त महाव्रत अनुष्ठित होनेसे ही होगा। वल्कि यह देश कालकी अपेक्षा करता है, अतएव कोई कोई पण्डितोंने कहा है, तत्त्वज्ञान ब्रह्मलोकस्थ जीवोंको सर्व्वकालमें होसकता है और मर्त्य लोकमें सत्ययुगमें होनाभी सम्भव है।

श्रीलोमश मुनि बोले, महाराज! यह आधा श्लोक कहके वन्दी चुप होगये। अनन्तर अष्टावक्रने उसके अपराईश्लोकको इस प्रकार कहके पूरा किया—

शुद्ध चैतन्यरूप अद्वैत-ब्रह्म अग्नि, वायु और सूर्य्यकी भांति असङ्ग होके भी जो मन, बुद्धि, अहङ्कार और उससे अतिरिक्त दश इन्द्रिया, इन त्रयोदश तत्त्वोंके विषय भागरूप यज्ञमें प्रवृत्त होते है, वह केवल शुद्ध चैतन्यका आच्छादक इन्द्रजालिक अज्ञान कर्त्तृक बोध मात्र होता है, यथार्थमें सत्य नहीं है। क्योंकि पूर्व्वोक्त धर्म्मादि बारह प्रकारके व्रत अनुष्ठित होनेसे वे इस अज्ञानको अतिक्रम करके मन, बुद्धि प्रभृति उक्त त्रयोदश तत्त्वको संहार कर देते हैं। अतएव यह तत्त्वज्ञान अवश्यही पुरुषके यत्नसाध्य होता है, देशकालकी अपेक्षा नहीं करता।

तिसके अनन्तर उस समय सभासदोंने यज्ञदीक्षित वरुणके पुत्र उस वन्दीको चुप और नीचे मुख किये चिन्तायुक्त और अष्टावक्रको वादविचारसे वाक्यनिपुणता प्रकाश करते देख महाकोलाहल ध्वनि किया।

जब इस प्रकार महाराज जनककी यज्ञशालामें शब्द उठा और यज्ञ समाप्त हुई। तब सब वेदके जाननेवाले ब्राह्मणगण प्रीतिके सहित हाथ जोड़ कर अष्टावक्रकी पूजा करी।

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, इसी वन्दीने पहले

अनेक ब्राह्मणोंको बादमें जीत कर जलमें डुबा दिया है, इस लिये यह भी उसी दशाको प्राप्त हो, अर्थात् जलमें डुबा दिया जाय।

वन्दी बोले, मैं राजा वरुणका पुत्र हूं मेरे पिताने द्वादशवर्षकी यज्ञ करी है। हे जनक। तुम्हारेही यज्ञके समय वहांभी यज्ञ हुआ है, इसी लिये मैंने अनेक ब्राह्मणोंको वहां भेजा है, वे सब लोग वरुणकी यज्ञ देखनेको गये थे, और फिर चले आते हैं, हम पूजने योग्य अष्टावक्र मुनिकी पूजा करते हैं, जिनके प्रतापसे हम पुनः अपने पिताके पास जाते हैं।

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, जो सब ब्राह्मण समुद्रके जलमें डुबाये गये हैं, वे लोग पण्डित होकर भी वन्दीके वाक्य-कौशल अथवा वितर्क-कौशलसे ही पराजित हुए हैं, मैंने वन्दी कर्त्तृक कुतर्कार्णवमें मज्जित उनको वाक्य-मेधाके सहारे जिस प्रकार उद्धार किया है, वैसेही सदसद्विवेकशील पण्डित लोग मेरे उन वचनोंकी परीक्षा करें। जिस प्रकार सदसद्वृत्तज्ञ अग्नि स्वभावसेही दाहक होकर भी अपने तेजसे सत्याभिसन्धी लोगोंके शरीरको जलाते हैं, वैसेही सदसद्विवेकशील पण्डित लोग मन्त्रवादी बालक वा पुत्रके वाक्य को भी परीक्षा करके ग्राह्य वा अग्राह्य किया करते हैं। हे महाराज जनक! बोध होता है, आप श्लेष्मातक वृक्षके फल या पत्र व्यवहारसे तेजहीन होकर मेरा बचन सुनते हैं, अथवा स्तुति करनेवालोंकी स्तुतिसे आपका अन्तःकरण आमोदित हुआ है, इस निमित्तसे ही आप अंकुशाहत हाथी की भांति उत्तेजित होकर भी मेरा वचन नहीं ग्रहण करते हैं।

राजा जनक बोले, हे ब्राह्मण! हम तुम्हारी दैवरूपी वाणीको सुनते हैं, तुम्हारी वाणीके समान कोई पुरुष नहीं कह सकता है, तुमने भी वन्दीको विवादमें जीत लिया है इस लिये हम वन्दीको तुम्हें देते हैं, तुम्हारी जो इच्छा हो सो करो।

श्रीअष्टावक्र मुनि बोले, हे राजन्! इस वन्दीके जीते रहनेसे मुझे कोई लाभ नहीं है, इस लिये इसको मेरे पिताके समान जलमें डुबा दीजिये।

वन्दी बोला, हम राजा वरुणके पुत्र हैं, इस लिये जलमें डूबनेसे कुछ भय नहीं करते, अब अष्टावक्रभी अपने पिता कहोड़को जो बहुत कालसे नष्ट होगये हैं, देखेंगे।

श्रीलोमेश मुनि बोले, अनन्तर वे सब ब्राह्मण लोग महात्मा वरुणसे पूजित होकर जनककी सभामें खड़े होगये।

श्रीकहोड़ मुनि बोले, हे जनक! पुरुष लोग इसी लिये अनेक कर्म करके पुत्रकी इच्छा करते हैं, देखो जो कर्म हम न कर सके, सो हमारे पुत्रने किया। हे जनक! दुर्बलको बलवान, मूर्खको पण्डित और अज्ञानीके भी ज्ञानी पुत्र होसकता है। चाहें बलवानका निर्बल, पण्डितका मूर्ख और बुद्धिमानका निर्बुद्धि पुत्र क्यों न हो, तौभी न होनेसे अच्छा है।

वन्दी बोले, हे राजन्! तेज फरसा लेकर स्वयं यमराज युद्धमें आपके शत्रुओंके सिर काटें और तुम्हारा कल्याण हो। हे राजन्! तुम्हारी यज्ञमें और क्या (वेदके एक प्रकारके मन्त्र) सामवेदके मन्त्र, अच्छी प्रकारसे गाये जाते हैं, और देवता लोग प्रसन्न होकर साक्षात् रूपसे पवित्र भागोंको ग्रहण करके सोमपान करते हैं।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे राजन्! जब सब ब्राह्मण लोग अत्यन्त तेजको धारण करके प्रगट हुए तब राजा जनकने आज्ञा दी कि, इस वन्दीको समुद्रमें डुबा दो, राजा जनकको आज्ञासे वन्दीने उन सब प्रतापी विप्रोंके सामने समुद्रमें प्रवेश किया। अनन्तर सब ब्राह्मणोंने विधिपूर्व्वक अष्टावक्रकी पूजा करी। और अष्टावक्रने अपने पिताकी पूजा करी, अनन्तर

अपने मामा श्वेतकेतुके सहित अपने आश्रम को चले गये। अनन्तर अष्टावक्रके पिताने अष्टावक्रको गोदमें लिया, फिर कहा कि तुम समङ्गा नदीमें स्नान करो, उस नदीमें स्नान करते ही अष्टावक्रके सब अङ्ग समान होगये। हे युधिष्ठिर! उसी दिनसे यह समङ्गा नदी पवित्र होगई है, इसमें स्नान करनेसे पाप नष्ट होजाते हैं। आपभी अपनी स्त्री और भाइयोंके सहित इसमें स्नान कीजिये। हे कुन्तीनन्दन। इस नदीमें आप स्त्री, भाई, और ब्राह्मणोंके सहित स्नान करके हमारे सङ्ग भक्ति सहित पवित्र होकर दूसरे पवित्र तीर्थोंको चलिये।

१३४ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे राजन्! इस नदीका नाम पहले मधुविला था, वही अब समङ्गा नामसे प्रसिद्ध हुई है, यह कर्द्दमिल नामक तीर्थ है; यहीं राजा भरतका अभिषेक हुआ था, यहीं समङ्गा नदीमें स्नान करके वृत्रासुरके मारनेके पश्चात् अलक्ष्मीवान इन्द्र सब पापोंसे छूटे थे। हे भरतकुलसिंह! यह मैनाक पर्व्वतके कोनमें विनसन नामक तीर्थ है, यहीं पहले समयमें अदितिने पुत्र होनेके निमित्त ब्रह्मौदन पकाकर खाया था। हे पाण्डवो! आपलोग इस पर्व्वतराजके ऊपर चढ़िये, तब सब पापों और अलक्ष्मीसे छूटियेगा। हे राजन युधिष्ठिर! यह सब ऋषियोंका प्यारा कनखल तीर्थ है, यह महानदी गंगा वह रही है, पहले समयमें भगवान सनत्कुमार मुनि यहीं सिद्ध हुए थे. हे अजमीढ़ वंशोत्पन्न युधिष्ठिर! तुम इसमें स्नान करनेसे सब पापोंसे छूट जाओगे। यह पवित्र तलाव है. यह भृगुतुङ्ग पर्व्वत है, हे कुन्तीनन्दन! यह तुष्णी गङ्गा है, यहां तुम मन्त्रियोंके सहित स्नान करो, यह स्थूलसिरा नामक मुनिका रमणीय आश्रम है, हे कुन्तीनन्दन! यहां अभिमान और क्रोधको छोड़ दो। हे पाण्डव! यह श्रीमान रैभ्य मुनिका आश्रम है, जहां भरद्वाज मुनिके पुत्र यवक्रीत मारे गये थे, राजा युधिष्ठिर बोले, प्रतापवान भरद्वाज मुनि कैसे थे? और उनका पुत्र यवक्रीत क्यों मारा गया था? हम इस सब चरितको सुनना चाहते हैं, क्योंकि देवतुल्य ऋषियोंके कर्म्म सुननेसे आनन्द होता है।

श्रीलोमश मुनि बोले, भरद्वाज और रैभ्य दोनों मित्र थे, ये आनन्दसे इस स्थानपर रहते थे, रैभ्यके अर्व्वावसु और परावसु नामक दो पुत्र थे। हे भारत! भरद्वाजके एक यवक्रीत नामक पुत्र था, रैभ्य विद्वान और पुत्रवान थे, इन दोनोंकी बालकपनसेही बहुत कीर्ति जगत्में प्रसिद्ध थी। पापरहित यवक्रीतने जब अपने पिताको अत्यन्त तपस्वी और सत्कार रहित तथा रैभ्यको पुत्रवान और ब्राह्मणोंसे पूजित देखा तो अत्यन्त सन्ताप करने लगे। फिर क्रोधमें भरकर तेजस्वी यवक्रीतने वेद जाननेके निमित्त घोर तपस्या करी। उस महातपस्वीने जलती हुई अग्निमें अपने शरीरको तपाया, तब उनके तपसे इन्द्रको भय हुआ। हे युधिष्ठिर! अनन्तर इन्द्र यवक्रीतके पास आकर बोले कि तुम किस लिये इस घोर तपको कर रहे हो? यवक्रीत बोले, हे देवपूजित! हमको बिनाही पढ़े सब वेद आजायं इसलिये हम इस घोर तपको करते हैं। हे पाकशासन! हम केवल पढ़नेहीके निमित्त इस परिश्रमको कर रहे हैं। हे कौशिक! हम तपके बलसे सब विद्याओंको जानना चाहते हैं, क्योंकि वेदोंको गुरुमुखसे पढ़नेमें बहुत समय लगता है, इसीलिये हमने यह परम यत्न किया है।

इन्द्र बोले, हे ब्राह्मण! जिस मार्गसे तुम जाना चाहते हो, वह मार्ग नहीं है, इससे तब विद्या अच्छी नहीं होगी, जाओ तुम गुरुसे पढ़ो।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे भारत! ऐसा कहकर इन्द्र चले गये, और अनन्तपराक्रमी

यवक्रीत फिर भी घोर तप करने लगे। हमने सुना है कि, यवक्रीतने बहुतकाल तक घोर तप किया और उनके तपसे इन्द्रादिक देवता तप्त होने लगे। उनको इस प्रकार घोर तप करते देख इन्द्रने आकर फिर रोका और कहा कि, जो तुम चाहते हो सो होना असम्भव है, तुम अपने पितासे वेद पढ़ो, तब सबका अर्थ ज्ञान जाओगे।

यवक्रीत बोले, हे देवराज! यदि तुम मेरी इच्छा पूर्ण न करोगे, तो मैं फिर भी महा नियम धारण करके घोर तप करूंगा। हे देवराज। यदि तुम मेरी इच्छाको पूर्ण न करोगे तो हम अपने शरीरोंको काट कर अग्निमें होम कर देंगे।

श्रीलोमश मुनि बोले, जब इन्द्रने जाना कि ये तपसे निवृत्त नहीं होंगे, तब बुद्धिमान इन्द्रने एक यक्ष्म रोगी, कई सौ वर्षके बूढ़े तपस्वी ब्राह्मणका वेष बनाया और जिस तीर्थ-में यवक्रीत स्नानादि करते थे; उस स्थानमें गंगाके बालूसे पुल बनाने लगे, जब यवक्रीतने इन्द्रका कहना न माना तो इन्द्रने गंगाको बालूसे पूर्ण कर दिया, इन्द्र यवक्रीतको दिखा-कर रोज-गंगामें एक मुट्ठी बालू छोड़ते थे, इस प्रकार मुनिश्रेष्ठ यवक्रीतने इन्द्रका यत्न देखकर उनसे हंसकर कहा कि हे ब्राह्मण। तुम यह क्या यत्न करते हो? क्या यह तुम्हारा यत्न निरर्थक न होगा?

इन्द्र बोले, हे तात। इसमें तैरनेसे बटोही पथिकोंको बहुत दुःख होता है, इस लिये हम इस गङ्गाको बालूसे बांध देंगे। तब उत्तम [illegible] होजायगा।

श्रीयवक्रीत मुनि बोले, हे तपोधन। इस [illegible]के महा वेगको तुम नहीं बांध [illegible], तुम इस न होने योग्य कामको मत [illegible]।

[illegible] बोले, जैसे तुमने नहोने योग्य कामका आरम्भ किया है, तैसेही हमनेभी इस कामका आरम्भ किया है।

श्रीयवक्रीत मुनि बोले, हे देवराज। जैसे तुम्हारा काम निरर्थक है, तैसेही यदि मेरा कामभी निरर्थक हो, तो जितनी तुम्हारी शक्ति हो, उतना यत्न करो।

श्रीलोमश मुनि बोले, यवक्रीतने जो जो वर-दान मांगे, सोई सोई इन्द्रने दिये, इन्द्रने कहा कि हे महा तपस्वी। तुमको इच्छानुसार सब वेदोंका ज्ञान हो जायगा। हे यवक्रीत और जो कुछ तुम चाहोगे सोई सिद्ध होगा। इस प्रकार इन्द्रसे वरदान पाकर यवक्रीत अपने पिताके पास गये।

यवक्रीत बोले, हमको और हमारे पिताको सब वेदोंका अर्थ दिखाई देता है, हम इन्द्रसे वरदान पाकर सबसे अधिक होगये।

श्रीभरद्वाज मुनि बोले, हे तात। इच्छानुसार वरदान पानेसे तुमको अभिमान हुआ, इस अभिमानसे तुम्हारा शीघ्रही विनाश होगा। इस देवतोंकी कही हुई कथाका यही उदा-हरण दिया जाता है। हे पुत्र। पहले समयमें एक वीर्य्यवान बालधी नामक ऋषि हुए थे उन्होंने पुत्रके शोकसे व्याकुल होकर घोर तप किया था, अनन्तर उसने इन्द्रसे यह वरदान मांगा था, कि हमारा पुत्र मनुष्योंसे, अधिक आयुवाला हो, परन्तु देवतोंने इस वरदान को न दिया, और कहा कि मनुष्य अपने धर्म्मोंसे रहित नहीं हो सकता है, इस लिये तुम्हारा पुत्र निमित्त आयुवाला होगा।

बालधी मुनि बोले, हे देवतो। जो यह पर्व्वत स्थिर है, वही मेरे पुत्रकी निमित्त आयुवाला हो। श्रीभरद्वाज मुनि बोले, कुछ दिन पश्चात् बालधी मुनिको पुत्र हुआ, जब उस पुत्रने यह सब कथा सुनी तो बड़ा अभिमान और मुनियोंका निरादर किया, इस प्रकार वह मुनियोंका निरादर करता हुआ

पृथ्वीमें घूमने लगा, एक दिन महा तेजस्वी बुद्धिमान धनुषाक्ष मुनिसे भेंट हुई, उनकाभी इसने वैसेही निरादर किया, तब धनुषाक्षने क्रोध करके उसको शाप दिया कि तू भस्म होजा, पर वह भस्म नहीं हुआ। जब वीर्यवान धनुषाक्ष मुनिने देखा कि यह न मरा। तो उसके निमित्त परमायु पर्व्वतको भैंसोंसे नष्ट कराया निमित्त शरीर नष्ट होनेसे उसका प्राणभी नष्ट होगया, अपने पुत्रको मरा हुआ देख उसके पिता रोने लगे,तब सब मुनियोंने उनको रोते हुए देख जो कुछ कहा सो हम तुमसे कहते हैं कोई पुरुषभी प्रारब्धको नाश नहीं कर सकता है, इसीसे धनुषाक्ष मुनिने पर्व्वतको भैंसोंसे नाश कराया है. इस प्रकारसे तपस्वियोंके बालक लोग अभिमानसे भरकर शीघ्रही नाश हो जाते हैं। हे पुत्र। यह रैभ्य और उनके दोनों पुत्र महा तपस्वी हैं, तुम इनसे उचित व्यवहार नहीं करते हो, तुम उनसे अच्छा व्यवहार करो,वे महा तपस्वी और महा क्रोध करके तुम्हें नाश करनेमें समर्थ हैं।

यवक्रीत बोले, आप दुःख न कीजिये, हम ऐसाही करेंगे, जैसे आप हमको मान्य हैं, तैसेही रैभ्यभी है।

श्रीलोमश मुनि बोले पितासे ऐसे मीठे वचन कहकर यवक्रीत सुखसे और आनन्दसे घूमने लगे. परन्तु अन्य ऋषियोंको दुःख देने लगे।

१३५ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, इस प्रकार आनन्दसे घूमते हुए एक दिन यवक्रीत वैशाख महीनेमें रैभ्य मुनिके आश्रममें गये. उस फूले वृक्षोंसे शोभित परम रमणीय आश्रममें रैभ्य मुनिके बेटेकी बहूको किन्नरीके समान घूमते हुए देखा, निर्लज्ज यवक्रीतने कामके वशमें होकर उस लज्जावतीसे कहा कि तू हमारे पास आ! वह स्त्री यवक्रीतके चरित्रको जानती थी. इस लिये उसने शाप भयसे डरकर और रैभ्यके तेजका ध्यान करके, वैसाही होगा, कहके जाने लगी; तिसके अनन्तर महनी मनमें वितर्क करके उसे निर्जनमें गोपन भावसे रखा। हे शत्रुनाशन। उसी समय रैभ्य मुनि भी अपने आश्रममें आगये उन्होंने परावसुकी स्त्री और अपने पुत्रकी बहूको रोते हुए देख, उसको शान्त करके मीठे वचनसे सब समाचार पूछा। उस सुन्दरीने यवक्रीतका सब हाल उनसे कह सुनाया, और जो उसने कहा था सो भी सुना दिया। यवक्रीतका यह सब समाचार सुनकर रैभ्यका चित्त महा क्रोधसे जलने लगा। महाक्रोधी रैभ्य मुनिने अपनी एक जटा उखाड़के अग्निमें मन्त्रोंसे हवन करी, उसके हवन होतेही एक सुन्दरी स्त्रीरूपिणी कृत्या उनके पुत्रवधूके समान रूपवाली उस हवन कुण्डसे उत्पन्न हुई, तब मुनीश्वरने दूसरी जटा उखाडके फेर अग्निमें हवन करी, तब हवन कुण्डसे एक विकराल दर्शन और भयानक नेत्र वाला राक्षस उत्पन्न हुआ, उन दोनोंने रैभ्य मुनिसे कहा कि हम तुम्हारा कौनसा कार्य्य सिद्ध करें? रैभ्य मुनिने क्रोध करके कहा कि तुम यवक्रीतको मार डालो। वे दोनों यवक्रीतको मारनेको चले, जब वे यवक्रीतके पास पहुंचे, तो महात्मा रैभ्यकी बनाई हुई स्त्रीने यवक्रीतका कमण्डल ले लिया और उसको मोहित कर दिया, अनन्तर जूठे मुंह कमण्डल रहित यवक्रीतको देखकर वह राक्षस त्रिशूल लेकर उनकी ओर दौड़ा, जब यवक्रीतने उस राक्षसकी हाथमें त्रिशूल लिये और अपने मारनेकी इच्छासे आते हुए देखा तो वहांसे उठ कर तलावकी ओर भागे, वहां जाकर उन्होंने तालाबको जलसे रहित देखा, तब वहांसे दौड़ कर नदी पर गये, उसकोभी सूखी हुई पाया, इस प्रकार सब जगह घूम कर घोर शूलधारी राक्षससे पीड़ित होकर अत्यन्त भयसे अपने पिताकी यज्ञशालामें

हुये। हे राजन्! उसके द्वार पर रक्षा करने-वाला एक अन्धा शूद्र बैठा था, उसने यवक्रीतको बलसे पकड़ा, तब ये वहीं खड़े रह गये। जब राक्षसने यवक्रीतको शूद्रसे पकड़ा हुआ देखा, तो एक त्रिशूल उसकी छातीमें मारा, उसके लगनेसे यवक्रीत मर गये। यवक्रीतको मार कर राक्षस पुन: रैभ्य मुनिके पास आया, और उनकी आज्ञासे उस स्त्रीके सहित वहीं रहने लगा।

१३६ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे कुन्तीनन्दन! जब भरद्वाज मुनि सन्ध्याकर्म्म करके उठे, तब हाथमें कुशा लेकर अपने आश्रमको गये. पहले जब भरद्वाज मुनि अपने आश्रम पर आते थे, तब सब अग्नि उनको देख कर खड़ी हो जाती थीं परन्तु उस दिन पुत्रके मरनेके कारण कोई अग्नि नहीं उठीं। महातपस्वी भरद्वाजने अग्निहोत्रमें विकार देखकर उस घरकी रक्षा करनेवाले शूद्रसे पूछा कि हे शूद्र! आज यह सब अग्नि हमारा दर्शन करके क्यों नहीं प्रसन्न होती है? और तुमभी सब दिनके समान प्रसन्न नहीं दीखते, कहो आश्रममें कुशल तो है? मन्दबुद्धि मेरा पुत्र रैभ्यकी आश्रममें तो नहीं गया था। तुम सब समाचार शीघ्र कहो। हमारा मन शुद्ध नहीं होता है।

शूद्र बोला, वह मन्दबुद्धि तुम्हारा पुत्र अवश्य रैभ्य मुनिके आश्रमम गया था, और उसको बलवान शूलधारी राक्षसने मार डाला, जो पड़ा है. वह पीड़ित होकर इस अग्नि-शालामें आया था, परन्तु मैंने बलसे उसको निवारण किया. वह पवित्र और जलकी इच्छासे यहां आया था, परन्तु मेरे पकड़नेसे उसकी सब आशा नष्ट होगई. तब उस शूल-धारी राक्षसने वेगसे दौड़कर उसको मार डाला। भरद्वाज मुनि उस शूद्रके ऐसे अप्रिय वचन सुनकर अपने मरे हुए पुत्रको उठाकर बहुत दु:खसे रोने लगे।

भरद्वाज बोले, हे तात! तुमने ब्राह्मणोंके निमित्त बड़ा भारी तप किया था और यह इच्छा करी थी कि हमको बिनाही पढ़े ब्राह्मणोंके सब वेद आजायं, और तुम अत्यन्त शीलवान होने परभी महात्मा ब्राह्मणोंका अपराधही करते रहे, हे तात! हमने तुमसे कहा था कि, रैभ्यके आश्रमको मत जाना, परन्तु तुम उसी काल और यमराजके समान आश्रमको देखनेको गये, और वह दुष्टबुद्धि महा तेजस्वी रैभ्य मुझ बूढ़ेका एकही पुत्र है, यह जानता हुआभी महाक्रोधके वशमें होगया। हे पुत्र! अब मैं तुम्हारे शोक और रैभ्यके कर्म्मसे अपने प्यारे प्राणको त्यागता हूं, जैसे मैं पुत्रके शोकसे व्याकुल होकर शरीर छोड़ता हूं तैसेही रैभ्यका बड़ा पुत्र रैभ्यको शीघ्रही नाश करेगा। वे पुरुष बहुत सुखी हैं, जिनको पुत्र नहीं उत्पन्न हुआ है, जिन्होंने पुत्रशोकको नहीं देखा, वे सुखसे घूमते हैं, जिनका हृदय पुत्र शोकसे व्याकुल हो गया है, वे अपने प्यारे मित्रोंकोभी शाप देते हैं, तब उनकी बराबर पापी और कौन होगा? तुमको मरा हुआ देखकर मैंने अपने प्यारे सखाको शाप दिया है। ऐसी भारी आपत्ति मेरेसिवा और किसको पड़ेगी?

श्रीलोमश मुनि बोले, भरद्वाज मुनिने बहुत विलाप करके अपने पुत्रका दाहकर्म्म किया, अनन्तर उसी जलती हुई अग्निमें आपभी प्रवेश कर गये।

१३७ अध्याय समाप्त।

लोमश मुनि बोले, हे महाराज! उसी समय महा प्रतापवान रैभ्यके यजमान बृहद्युम्न राजाने यज्ञका आरम्भ किया, बुद्धिमान बृहद्युम्नने अर्वावसु और परावसु रैभ्यके पुत्रोंको यज्ञमें परस्पर सहायक बनाया।

हे कुन्तीनन्दन। वे दोनो अपने पिताकी आज्ञासे यज्ञ सम्पादनके लिये गये, आश्रममें रैभ्य और परावसुकी स्त्री रही। अनन्तर एक रोज रातको अकेले परावसु अपने आश्रमको आये, आश्रममें एकले अपने घरमें अपनी स्त्रीको देखने गये, तब उन्होंने देखा कि काले हरिणका चमड़ा ओढ़े उनके पिता बनमें बैठे हैं, उन्होंने उस घोर अंधियारी रात्रिमें निद्रामें होकर अपने पिताको न पहचाना, उन्होंने जाना कि यह कोई हरिण घूमता फिरता है, परावसुने अपने शरीरकी रक्षाके लिये उस हरिणको मार डाला। हे भारत। जब उन्होंने जाना कि यह हमारे पिता थे, तब उनका सब प्रेतकर्म्म करके उसी यज्ञमें गये और अपने छोटे भाईसे कहा कि, हे तात! हमने हरिनके भ्रमसे पिताको मारडाला और तुम इस यज्ञके भारको कदापि नहीं सम्भाल सकोगे। इसलिये तुम हमारे ब्रह्महत्याका प्रायश्चित्त करो क्योंकि मैं एकला भी इस यज्ञके कर्म्मको समाप्त कर सकता हूं।

अर्वावसु बोले, तुम बुद्धिमान राजा बृहद्युम्नकी यज्ञका कर्म्म करो और मैं इन्द्रियोंको वशमें करके तुम्हारे निमित्त ब्रह्महत्याका प्रायश्चित्त करता हूं।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे युधिष्ठिर। इस प्रकार उस ब्रह्महत्याके पापसे पार होकर अर्वावसु मुनि पुन उस यज्ञमें आये, जब परावसुने अपने भाईको यज्ञमें आते हुए देखा तो आनन्दसे गद्गद होकर राजासे बोले, कि हे राजन्! इसने ब्रह्महत्या करी है, इसलिये यह यज्ञमें न आने पावे, यदि यह तुमको देख लेगा, तो निःसन्देह तुमको बहुत दुःख होगा।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे प्रजानाथ! राजा बृहद्युम्नने पुरोहितके ऐसे वचन सुनकर सब पुरुषोंको आज्ञा दी कि यह यज्ञ न आने पावे, पुरुषोंसे वारित होनेके समय अर्वावसुने बार बार कहा कि मैंने कोई ब्रह्महत्या नहीं की है, परन्तु किसीनेभी न सुना और सब कहने लगे कि यह हत्यारा है। तब उसने पुनः कहा कि यह ब्रह्महत्या मेरे भाईने करी थी, परन्तु मैंने प्रायश्चित्त करके उनकोभी इस पापसे छुड़ा दिया। तबभी किसीने न सुना, तब महा तपस्वी अर्वावसु क्रोधसे व्याकुल और चुप होकर बनको चले गये, वहां जाकर घोर तपसे सूर्य्यकी आराधना करने लगे। वहां उन्होंने अत्यन्त गुप्त सूर्य्य मन्त्रका पाठ किया, अनन्तर साक्षात् अविनाशी सूर्य्यने शरीर धारण करके उनको दर्शन दिये।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे नरनाथ! अर्वावसुके उस कर्म्मसे सब देवता प्रसन्न हुए, अनन्तर देवतोंने उन्हें श्रेष्ठ और परावसुका प्रत्याख्यान किया। फिर अग्नि आदिक देवतोंने उसको वरदान दिये, तब उसने यह वरदान मांगा कि हमारे पिता जीजाय, हमारे भाई निरपराध हों, पिताको उनके मारनेका स्मरण न रहे हम और हमारे भाई पापसे छूटे भरद्वाज और यवक्रीत जीजायं, तथा हम वेदको प्रतिष्ठा करे उस ब्राह्मण श्रेष्ठको देवतोंने यही वरदान दिये हे युधिष्ठिर! तब वे सब लोग जीगये। अनन्तर अग्नि आदिक देवतोंसे यवक्रीत बोले कि, हे देवश्रेष्ठ। हमने विधिवत वेद पढ़ा और अनेक व्रतभी करे तब ऐसे तपस्वी मुझको रैभ्यमुनिने इस प्रकार क्यो मारा? सब देवता लोग बोले, हे यवक्रीत मुने! तुम ऐसी बात मत कहो, तुमने विना गुरुके सुखपूर्व्वक वेदोंको पढा है, और उन्होने बहुत क्लेशसे गुरुको प्रसन्न करके बहुत कालमें वेदोंको पढ़ा है।

श्रीलोमश मुनि बोले कि हे राजशार्दूल इस प्रकार सबको जिवाकर और यवक्रीतसे ऐसा कहकर इन्द्रादिक देवता स्वर्गको चले गये। यह उन्होंका पवित्र आश्रम है, इसके वृक्ष सदा फूले और फले रहते हैं, आप यहां एक रात्रि वसिये तो सब पापोंसे छूट जाइयेगा।

१३८ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले,हे भारत! यह उशीर-बीज, मैनाक और श्वेतपर्व्वतको देखो, हे कौन्तेय! तुम काल पर्व्वतके पार हुए हो, हे भरतर्षभ! यह गङ्गाकी सात धारा शोभित हो रही हैं, यह विरजस तीर्थ है यहां सदाही अग्नि जलती रहतीहै, इस अद्भुत तीर्थको पुरुष नहीं देख सकता, यहापर तुम स्वस्थचित्त होकर समाधि लगाओ और इन तीर्थोंको देखो, यह देवतोंके खेलनेका स्थान है, यहा चरणका चिह्न लगा है, इस कोभी देखो, हे कुन्तीनन्दन! तुम काल शैल पर्व्वतके पार हुए हो, अब हम लोग श्वेतगिरि और मन्दराचलमें प्रवेश करते हैं जहा माणवर यक्ष और कुवेर रहते हैं, यहां अट्ठासी हजार शीघ्रगामी यक्ष लोग रहते हैं, और उनसे चौगुने यक्ष और किंपुरुष रहते है, वे लोग यक्षराज मणिभद्रके सङ्ग अनेक रूप शस्त्रोंको धारण करके रहते हैं, उनकी यहा पर बहुत ऋद्धि बढ़ी है, उनकी गति वायुके समान है, वह मेरुभी स्वर्गसे गिरा सकते हैं। हे कुन्तीपुत्र! ये पर्व्वत बलवान राक्षस और यक्षोंसे रक्षित हैं। तुम यहा समाधि करो। हे कुन्तीनन्दन! जो कुवेरके मन्त्री है, तथा रौद्र भव और राक्षस हैं, हमलोग उन सबमें मिलेंगे, तुम अपने बलको ठीक करो, देखो यह चौवीस कोस ऊंचा कैलास पर्व्वत है, यह वदरिकाश्रम है जहा सब देवता लोग आते है, हे राजन्! हमारे तप और भीमसेनके बलसे रक्षित होकर आप इस कुवेरके स्थानको देखिये। जहा असख्य यक्ष, राक्षस किन्नर नाग, सुपर्ण और गन्धर्व्व रहते है। वरुण, कुवेर, यमराज, गङ्गा, यमुना, पर्व्वत, वायु अग्निकुमार, देवता, नदी और सब तालाव तुम्हारा कल्याण करे। हे देवि! हे गङ्गे! हम तुम्हारे शब्दको सोनेके पर्व्वतसे सुनते हैं, इन पर्व्वतोंमें अजमीढ़ वंशोत्पन्न महाराज युधिष्ठिरकी रक्षा करो। हे सुभगे! हे पर्व्वत-राजपुत्रि! यह महाराज इन पर्व्वतोंमें प्रवेश करना चाहते है, तुम इनको कल्याण दो। लोमश मुनिने इस प्रकार समुद्रगामिनी गङ्गाको प्रार्थना करके राजासे कहा कि अब आप सावधान हो जाइये। युधिष्ठिर बोले, आज लोमश मुनिको अपूर्व्व भ्रम हुआ है, जान पड़ता है, कि यह देश बहुत दुःखसे प्रवेश करने योग्य है, इस लिये सब लोग सावधान होकरके रहैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर महाराजने भीमसेनको आज्ञा दी, हे भीम! हे महावली! तुम बहुत यत्नसे द्रौपदीको रक्षा करो, क्योंकि अर्ज्जुनके जानेके पश्चात् द्रौपदी भयके समयमे तुम्हारीही शरण लेती है, इसके पश्चात् महाराजने नकुल और सहदेव का माथा सूंघ कर और शरीरको स्पर्श करके कहा कि तुम लोग कुछ मत डरो, सावधान होकर चलो।

१३९ अध्याय समाप्त।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे भीम! इन स्थानोंमें अनेक बलवान राक्षस लोग छिपे हुए रहते हैं, यहा अग्नि और तपके साहस चलना चाहिये। हे कुन्तीनन्दन भीम! यहा बलके आश्रयसे भूख और प्यासको परित्याग करो, तुम अपने बल और कुशलताका आश्रय करो, हे कौन्तेय! तुमने कैलासयात्राके प्रति लोमश मुनिके वचन सुने, अब बुद्धिसे विचार करो कि द्रौपदी किस प्रकार चल सकेगी? अथवा सहदेव धौम्य, सारथि, पुरनिवासी, सब नौकर, रथ घोड़े और क्लेश सहनेवाले सब ब्राह्मणोंके सहित तुम लौट जाओ। हे विशालनेत्र भीम! हम तीनो अर्थात् हम नकुल और लोमश मुनि आहारको जीतकर व्रत करते हुए चले जायगे, जबतक हम लौटकर आवे, तबतक तुम सावधान होकर द्रौपदीकी रक्षा करते हुए गङ्गाद्वारमें रहकर हमारा मार्ग देखना।

भीमसेन बोले, हे महाराज। राजपुत्री कल्याणी द्रौपदी थकाईसे दुःखित होने परभी केवल अर्ज्जुनके देखनेकी इच्छासे जाती है, और आपभी बिना अर्ज्जुनके देखे घबरा रहे हैं, वह अर्ज्जुन निद्राके स्वामी और युद्धमें अपराजित हैं. तब मुझे सहदेवको और द्रौपदीको आप क्यों छोड़ते हैं? ब्राह्मण और नौकर-लोगोंको चला जाना चाहिये, सारथी नगरके रहनेवाले या और जिसको आप चाहैं लौटा दीजिये. मैं इस राक्षसोंसे भरे हुए घोर पर्व्वतमें आपको कदापि नहीं छोड़ सकता हूं, हे पुरुष-व्याघ्र! यह पतिव्रता राजपुत्री द्रौपदी और सहदेव आपको छोड़ कर कदापि नही लौट सकते है, क्योंकि यह आपके भक्त हैं, मुझे अर्ज्जुन बहुत प्यार है, इस लिये मैं कदापि नहीं लौटकर जाऊंगा। हम सब अर्ज्जुनके देखनेको उत्कण्ठित है, इसलिये लौट नहीं सकते, यह अनेक कन्दराओंसे भरा हुआ पर्व्वत यादि रथसे बैठकर चलने योग्य न होगा तो पैरोंही चलेंगे, हे राजन्! हम द्रौपदीको अपने कन्धेपर बिठाके लेचलेंगे, आप कुछ सन्देह मत कीजिये, हमारी बुद्धिमें आता है, कि जहां द्रौपदी नहीं चल सकैगी, तहां ऐसाही करेंगे। आप कुछ सन्देह मत कीजिये, बालक नकुल और सहदेव जहां दुःखसे जाने योग्य मार्गमें नहीं जा सकेंगे, तहां इनका भी मैं ले चलूंगा। राजा युधिष्ठिर बोले, हे भीम। तुम्हारे बलकी वृद्धि हो, तुम जो यशस्विनी द्रौपदी हो सहदेवको ले चलनेको कहते हो, इस लिये हम आशीर्व्वाद देते हैं, कि तुम्हारा यह बल, कीर्त्ति और धर्म्म बढ़ै, तुम नकुल सहदेव और द्रौपदीको ले चलना चाहते हो, इससे तुम्हें कभी थकाई और निरादर नहीं होगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर सुन्दरी द्रौपदी हसकर महाराजसे कहने लगी कि हे कुन्तीनन्दन। आप मेरे लिये कुछ दुःख न कीजिये मैं आपही चलूंगी।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे कुन्तीनन्दन। उस गन्धमादन पर्व्वत पर तपस्याके बलसे जा सकते हैं, हम सब तपस्याके बलसे चलेंगे। हे कौन्तेय! हम, तुम, भीमसेन, नकुल सहदेव और द्रौपदी चलकर अर्ज्जुनको देखेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जिस समयमें सब लोग प्रसन्नतापूर्व्वक ऐसा कह रहे थे, उसही समय हिमाचल पर एक पुरुषोंका समूह दीख पड़ा, जिसमें अनेक हाथी, घोड़े, किरात, तङ्गण, पुलिन्द, देवता थे। उस भूखण्डमें अनेक आश्चर्य दीखते थे, वह देश राजा सुबाहुका था। जब सुबाहुने पाण्डवोंको देखा, तो उनकी बहुत पूजा और सन्मान किया और अपने राज्यकी सीमा तक परम प्रीतिसे पाण्डवोंके सङ्ग गया। पाण्डव लोगभी उसकी पूजासे बहुत प्रसन्न हुए और उसके राज्य भरमें सुखपूर्व्वक रहे, अनन्तर जब प्रातःकाल हुआ तो। हम वेदवश पैरों हीसे हिमाचलको चले, इन्द्रसेन आदि सारथी नगर निवासी तथा रसोइया, द्रौपदीकी दासी, तथा और सब नौकरोंको कुलिन्द देशके राजा सुबाहुकी रक्षामें छोड़ दिया। महावीर्य्य महारथ पाण्डव लोग पैरोंही चले, वे लोग धीरे धीरे प्रसन्नता पूर्व्वक द्रौपदीके सहित उस देशसे निकल गये।

१४० अध्याय समाप्त।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे भीम! हे नकुल, सहदेव और द्रौपदी! तुम सब हमारी बातोंको सुनो, जो कर्म्म पुरुषका किया हुआ है, उसका नाश नहीं होता, देखो इस वनके जन्तु लोग कैसे घूम रहे हैं? हम लोग अत्यन्त क्षीण और दुःखित होने परभी परस्पर बात चीत करते हैं, और असमर्थ होने परभी अर्ज्जुनके

देखनेकी इच्छासे चले जाते हैं, इसीसे जैसे अग्नि लगनेसे रूई जलती है, तैसेही मेरा शरीरभी जला जाता है, अब तकभी वीर अर्ज्जुन लौटकर नहीं आये। हे वीर। मैं जो दुःखसे व्याकुल हो रहा हूं, सो द्रौपदी केशाकर्षण आदि क्लेशोंको स्मरण करके जला जाता हूं, मैं नकुलसे बड़े महा पराक्रमी, अजेय, महाधनुर्द्धारी अर्ज्जुनको न देखनेसे जला जाता हूं। हे वृकोदर। मै तुम लोगोंके सहित रम्य वन तड़ाग और तीर्थोंमें अर्ज्जुनके देखनेहीको घूमता हूं। हे वृकोदर! पांच वर्ष हुआ कि सत्यसन्ध अर्ज्जुनको हमने नहीं देखा, उन स्यामसुन्दर, निद्राकेस्वामी सिंहके समान तेजस्वी महावाहु, सब शस्त्रोंको, जाननेवाले युद्धमें निपुण, असमान धनुषधारी अर्ज्जुन को न देखनेसे हमारा शरीर जला जाता है, वह अर्ज्जुन युद्धमें इस प्रकार घूमते हैं, जैसे प्रलयकालमें क्रोध करके यमराज। वह मतवारे हाथी और सिंहके समान कान्धेवाले महावीर हैं, वह महावीर धन और पराक्रममें इन्द्रके समान हैं, नकुल सहदेव से बड़े सफेद घोडेवाले और महा पराक्रमी हैं, वह महा दुःखमें पड़े हैं, वह उग्र धनुर्द्धारी अर्ज्जुन अजेय हैं, उनके न देखनेसे हमारा शरीर जला जाता है, वह सदाही क्षमा करनेवाले और बुरी बात सुनकर भी शरणागत और कोमल मार्गवाले पुरुषको सुखदेनेवाले हैं। यदि छल और मायासे उनको कोई मारना चाहे तो साक्षात् वज्रधारी इन्द्रको भी काल और विषके समान हो जाते हैं, वह महापराक्रमी, महावीर प्रतापवान, दयावान अर्ज्जुन शरण आये हुए शत्रुको भी निर्भय कर देते हैं। वह हम सब लोगोंके आगे युद्धमें शत्रुओंके मारनेवाले, सब रत्नोंके लानेवाले और सबके सुखदायक हैं, उसही महापराक्रमीके प्रतापसे हमारे घरमें पहले अनेक रत्न थे, सो सब अब दुर्य्योधनके हुए हैं। हे वीर [illegible]। जिसके बाहुबलसे हमारी रत्नमयी सभा तीनों लोकोंमें विख्यात हुई है, जो पराक्रममें कृष्णके समान और युद्धमें कार्त्तवीर्य्यके समान है, उस युद्धमें अजेय अर्ज्जुनको हम नहीं देखते हैं, जो अर्ज्जुन महापराक्रमी शत्रुनाशन, अजेय, बलराम, कृष्ण और तुम्हारे समान बलवान है, उसको हम नहीं देखते, जो बाहुबल और प्रभावमें इन्द्रके तुल्य, वेगमें वायुके तुल्य और क्रोधमें सनातन मृत्युके समान है, जिसका मुख चन्द्रमाके तुल्य है, हम सब लोग उसी पुरुषसिंह अर्ज्जुनके देखनेको गन्धमादन पर्व्वतमें प्रवेश करते हैं। हे वीर! हे महाबाहो! अब हम लोग उस उत्तम पर्व्वतको देखेंगे। जहां विशाल बदरिकाश्रम तथा नरनारायणका स्थान है, उस पर्व्वतमें सदा गन्धर्व्वलोग निवास करते हैं, हमलोग महातप करते हुए पैरोंही राक्षसोंसे सेवित परम रमणीय कुवेरकी पोखरको देखेंगे। हे वृकोदर यह देश वाहनों पर चलनेका नहीं है, इस देशमें दुष्ट लोभी और क्रोधी पुरुष नहीं आसकते हैं, हे भीम! हम सब लोग शस्त्रोंको धारण करके महाव्रतधारी ब्राह्मणोंके सहित अर्ज्जुनके ढूढ़नेको जायंगे। हे कुन्तीनन्दन। जो अपवित्र पुरुष इस देशमें आता है, उसे मक्खी, मच्छर, सिंह व्याघ्र और अनेक सांप मिलते हैं, परन्तु हम लोग अर्ज्जुनके देखनेकी इच्छासे भोजन करके और आत्माको अपने वशमें करके गन्धमादन पर्व्वत पर जायंगे।

१४१ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे पाण्डवो! तुम सब लोगोंने नदी, पर्व्वत, नगर, जङ्गल श्रीमान तीर्थ और सुन्दर जलोंको देखा है, अब यह मार्ग दिव्य गन्धमादन पर्व्वतको जाता है, इस लिये तुम लोग सावधान और पवित्र होजाओ क्योंकि अब पुण्य कर्म्म वाले दिव्य ऋषि और देवनोंके स्थानमें चलना होगा। हे राजन्! महानदी अलकनन्दा बह रही है, हे सौम्य! इसमें

सदाही देवता और ऋषिलोग स्नान करते हैं यह बदरिकाश्रममें आती है, यह सदाही महात्मा बालखिल्य और आकाशगामी महात्मा गन्धर्वोंसे पूजित और सेवित है, इसी स्थान पर उत्तम स्वरवाले मरीचि, पुलः भृगु और अङ्गिरा सामगान करते हैं, इस स्थान पर देवतोंमें श्रेष्ठ इन्द्र मरुत और अश्विनीकुमारोंके सहित सन्ध्या करते हैं, इस नदी पर दिन रातमें अपने समय पर सूर्य्य चन्द्रमा, नक्षत्र और ग्रह सब आते हैं, हे महाभाग! इसहीके जलको शिवने सिर पर धारण किया है। यही नदी गङ्गाद्वारमें गई हैं, इसहीसे लोक स्थिर है, हे तात। आप सब लोग मनको वशमें करके इस भगवती गङ्गाके तट पर जाकर प्रणाम कीजिये, महात्मा लोमशके बचन सुनकर सब पाण्डवोंने नियम पूर्व्वक आकाशगङ्गाको प्रणाम किया। धर्म्म करनेवाले पाण्डवलोग गङ्गाको प्रणाम करके प्रसन्नचित्तसे सब ऋषियोंके सहित अगाड़ी चले, आगे उन सब लोगोंने दूसरे मेरु पर्व्वतके समान सफेद और सब ओरको फैला हुआ एक हड्डियोंका ढेर देखा, पाण्डवोंने उसको देखनेकी इच्छा करी। तब वचनके जाननेवाले महात्मा लोमश कहने लगे, कि हे पाण्डवो! तुम लोग हमारी बातको सुनो, यह जो श्रीमान् कैलासके शिखरके समान ढेर देखते हो, सो महात्मा नरक दैत्यकी हड्डी हैं, यह पर्व्वतके पत्थरके ऊपर पड़ी हैं, इस लिये पहाड़के समान दीखती हैं, यहां पुरातन देव परमात्मा विष्णुने इन्द्रके हितकी इच्छासे नरकासुरको मारा था, उस महामनस्वीने दश हजार वर्षतक घोर तपस्या करके अपने बल और विद्यासे इन्द्रके पदको चाहा था, वह दैत्य तपोबल और महाबाहुबलसे दिन दिन बलवान होता जाता था और सबको दुख देता था हे पापरहित। जब इन्द्रने उसके तप और पराक्रमको देखा तो भयसे व्याकुल होकर घबड़ा गये, उन्होंने सर्व्वव्यापी परमेश्वर श्रीमान् अविनाशी विष्णुका ध्यान किया, उसी समय विष्णु वहां प्रगट होकर प्रकाशमान होने लगे तब सब देवता और ऋषियोंने उनकी स्तुति करी, जलते हुए भगवान अग्नि उनको देखकर तेजसे रहित होगये, वे उनके तेजसे डर गये वर देनेवाले सब देवतोंके स्वामी विष्णुको देखकर बज्रधारी इन्द्रने हाथ जोड़कर प्रणाम किया और अपने भयका प्रयोजन कह सुनाया विष्णु बोले, हे इन्द्र! तुमको जो नरक नामक दैत्यराजसे भय हुआ है, सो हम जानते हैं, वह अपने तपके कर्म्मसे इन्द्रके स्थानको चाहता है सो हे देवेन्द्र। आप थोड़ी देर शान्त हूजिये मैं उसको अत्यन्त तपसे सिद्ध होने परभी मार डालूंगा, अनन्तर महातेजस्वी विष्णुने उस राक्षसको हाथसे एक तमाचा मारकर उसके सब तेजको नाश कर दिया, वह मर कर पर्व्वतके समान पृथ्वीपर गिर पड़ा, यह हड्डियोंका ढेर उसी मरे हुए मायावीका है, अब हम विष्णुका दूसरा चरित्र तुमसे कहते हैं, जिस प्रकार समस्त पृथ्वी नष्ट होकर पातालमें डूब गई थी, और विष्णुने एक दांतवाले शूकरका रूप धारण करके उसका उद्धार किया था।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे भगवन्। आप इस कथाको हमसे विस्तारपूर्व्वक कहिये। किस प्रकार चार सौ कोस तक पृथ्वी, समुद्रमें डूब गई थी और किस प्रकारसे भगवान विष्णु ने उसका उद्धार किया था? समस्त अन्नोंको उत्पन्न करनेवाली महाभागिनी स्थिर जगतको धारण करनेवाली भगवती पृथ्वी किस प्रकार सौ योजन नीचे चली गई थीं, और हे द्विजसत्तम। भगवान विष्णुका अपार पराक्रम किसने प्रकाश किया था? हम इस सब कथाको विस्तार सहित सुनना चाहते हैं।

श्रीलोमश मुनि बोले, हे युधिष्ठिर। तुमने जो कथा हमसे पूछी सो सब हम कहते हैं,

स सुनो, हे तात। पहले समयमें जब भयङ्कर तयुग वर्त्तमान था, तब भगवान आदिदेव विष्णुने यज्ञका अधिकार स्थापन किया था स समय न कोई मरता और न कोई त्पन्न होता था; परन्तु बुद्धिमान विष्णुके स नियम समयमें पची, पशु, गाय और करी बहुत बढ़ गये, हे पुरुषशार्दूल! सी प्रकारसे हजारों, लक्षों, करोड़ों पुरुषभी गतमें बढ गये। जैसे वर्षामें पानी बढ़ता है, सेही प्रजाभी बढ़ने लगी। हे तात। जब ऐसा यङ्कर समय आया, तब अत्यन्त बोझसे पीड़ित थ्वी चार सौ कोस नीचेको चली गई। पृथ्वी अत्यन्त भारसे दुःखित होकर दुःखित चित्तसे वरदान देनेवाले भगवान विष्णुके शरणमें गई।

पृथ्वी बोली, हे भगवान्। मैं आपकी कृपासे बहुत दिनतक यहीं रहनेकी इच्छा करती हूं, क्योंकि बोझसे अत्यन्त व्याकुल होनेके कारण, अब उस कामको नहीं कर सकती हूं। हे भगवन्! आप हमारे इस भारको उतारनेमें समर्थ हैं। हे नाथ! मैं तुम्हारी शरण हूं तुम मेरी रक्षा करो। भगवान अविनाशी विष्णुने पृथ्वीके वचन सुनकर प्रसन्न हो इन अक्षरोंको कहा।

श्रीविष्णु भगवान बोले, हे पृथ्वी। हे रत्नोंको धारण करनेवाली। तुम जो भारसे पीड़ित हुई हो, इसलिये कुछ शोच मत करो, हम तुम्हारे भारको अभी उतारते हैं, तब तुम हलकी होजाओगी।

श्रीलोमश मुनि बोले, पर्व्वतकुण्डल धारिणी पृथ्वीको विदा करके महा तेजस्वी भगवान विष्णुने एक दांतवाले शूकरका रूप धारण किया; उनके नेत्र जलती हुई अग्निके समान भयङ्कर होगये। और उनके मुखसे धूम निकलने लगा, उन्होंने अपने प्रकाशमान दांत पर पृथ्वीको रख लिया, अनन्तर भगवान विष्णुने चार सौ कोस पृथ्वीका उद्धार किया। जब भगवान विष्णुने पृथ्वीका उद्धार किया तब सब देवता और तपोधन ऋषिलोग घबराने लगे; उस समय आकाश, पाताल और मर्त्य लोकमें हाहाकार होने लगा, उस समय देवता और मनुष्य कोई भी नहीं बैठा था, तब अनेक देवता और ऋषि लोग सुखसे बैठे हुए, तेजसे भरे ब्रह्माके पास गये, उन देवराज सर्व्व लोकसाक्षी ब्रह्माके पास जाकर सब देवता हाथ जोड़कर बोले, कि समस्त लोक और चराचर भयमें व्याकुल हुए हैं, हे देवनाथ! सब समुद्र उथल पुथल हो रहे हैं, यह पृथ्वी चारसौ कोस चली गई है, यह क्या कारण है? और किसके प्रभावसे समस्त जगत् व्याकुल होरहा है? आप इन सबका कारण हमसे कहिये।

ब्रह्मा बोले, हे देवतो! तुम लोगोंको राक्षसोंसे कभी और कहीं भी भय नहीं है, जगत्के भयका कारण हमसे सुनो। जो श्रीमान् सर्व्वव्यापी अविनाशी विष्णु हैं, उनके प्रभावसे यह समस्त जगत् इस अवस्थाको प्राप्त हुआ है। परमात्मा विष्णुने समस्त पृथ्वीका सौ योजनसे उद्धार किया है, तुम लोग सब संशयोंको छोड़ दो, इसी कारण इस जगत्में संक्षोभ हुआ है।

देवता बोले, हे भगवन्। विष्णु कौनसे स्थानमें प्रसन्न होकर पृथ्वीका उद्धार कर रहे हैं। आप उस स्थानको हमसे कहिये हम लोग वहां जायंगे। ब्रह्मा बोले तुम लोग जाओ, वे नन्दनवनमें खड़े हैं. वह देखो यहींसे भगवान श्रीमान् विष्णुका तेज दीखता है; यह लोकपूजित भगवान् विष्णु वराह-रूप धारण करके पृथ्वीका उद्धार कर रहे हैं, इनका रूप इस समय प्रलयकालकी अग्निके समान दीखता है। हे देवतो! इनके हृदयमें श्रीवत्सचिन्ह शोभित है, श्रीलोमश मुनि बोले, तब सब देवता ब्रह्माके वचन सुन और उनको प्रणामकर, उनके सहित विष्णुके पास जाकर वहां वराहमूर्त्तिका दर्शन करके ब्रह्माको आगे कर स्थापन करने

हुए यथायोग्य स्थानमें गये। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे जनमेजय! लोमश मुनिके वचनको सुनकर पाण्डव लोग प्रसन्न होकर उनकी आज्ञानुसार आगेको चले।

१४२ अध्याय समाप्त।

श्रीलोमशमुनि बोले,-शूरवीर पाण्डव लोग धनुष, तूणीर, वाण, और खड्गको धारण करके तथा अंगुलियोंमें गोह पहनके चले; वे सब धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ महातेजस्वी पाण्डव लोग सब ब्राह्मणोंको प्रणाम करके द्रौपदीके सहित गन्धमादनको चले, उन्होंने पर्व्वत पर तालाव, नदी, शिखर, झरने और बहुत छायावाले वृक्षोंको देखा, उन सब देशोंमें अनेक देव ऋषि निवास करते थे, वहां सदा फूलनेवाले वृक्ष शोभित थे, वीर पाण्डवोंने केवल मूल और फलहीका आहार करना आरम्भ किया; अनन्तर अनेक जातिके पक्षी और हरिणोंको देखते हुए नीचे और ऊंचे देशमें घूमते हुए पर्व्वत पर पहुंचे, उस पर्व्वतमें ऋषि, सिद्ध, देवता और किन्नर वास करते थे, तथा वह देश अप्सरोंको अत्यन्त प्रिय था। हे प्रजानाथ! जिस समय महात्मा वीरपाण्डव लोग गन्धमादन पर्व्वत पर पहुंचे, उस समय महावर्षा और भारी आंधी आई। उन आंधीसे पत्तोंके सहित ऐसी धूल उड़ी, कि जिससे पृथ्वी और आकाश भर गया। उस समय धूल उड़नेसे न कोई किसीको देख सकता था और न एक दूसरेसे वात कर सका। हे जनमेजय। उस समय आखोंके आगे केवल अन्धेरा दीखता था, उस वायुके संग पत्थरके किनके उड़के आखोंमें भर जाते थे, वायुके वेगसे अनेक वृक्ष टूट टूटकर पृथ्वीमें गिरते थे, तथा औरभी पत्थर आदिका घोर शब्द होने लगा। उस समय वायुसे मोहित पाण्डवोंको ऐसी शङ्का उत्पन्न हुई कि, क्या स्वर्ग पृथ्वीमें गिरेगा? क्या पृथ्वी फट जायगी? क्या इस पर्व्वतके दो टुकड़े हो जायगे? पाण्डव लोग भयसे व्याकुल होकर वृक्ष, बिल और नीची पृथ्वीको हाथोंसे टटोलने लगे। अनन्तर महाबल भीमसेन द्रौपदीके सहित अपनी धनुषको धारण करके एक वृक्षके नीचे खड़े हुए, महाराज और धौम्य मुनि उस महा बनमें छिप कर बैठ गये, सहदेव अग्नि लेकर पर्व्वतमें छिप गये, नकुल, महा तपस्वी लोमश तथा और ब्राह्मण लोग भयसे व्याकुल होकर इधर उधर पृथ्वीके नीचे छिप रहे। जिस समय वह घोर वायु कुछ मन्द हुआ और वह अन्धकार शान्त हुआ, तब बड़ी बड़ी धाराओंसे घोर बर्षा आई। उस बर्षामें मेघोंका चटचट शब्द ऐसे वेगसे हुआ, जैसे वज्र गिरता है। अनन्तर महा प्रकाशवाली बिजली मेघोंमें घूमने लगी, उसके पश्चात् वायुसे प्रेरित होकर चारों ओर पत्थरोंकी धारा बरसने लगी। उन पत्थरोंसे सब पर्व्वत पूर्ण हो गया। हे प्रजानाथ! उसके थोड़ी देर पश्चात् समुद्रतक जानेवाली अनेक नदी फेन और तरङ्गोंके सहित चारो ओरसे वहने लगीं। उन नदियोंमें भारी भारी तरङ्ग और फेन वहने लगे। उस समय नदियोंके तेजसे वृक्षोंके टूटनेका महा शब्द हुआ। थोड़ीही देरमें वायु वर्षा नदी और शब्द सब समाप्त हो गये, और सूर्य उदय होगया। हे जनमेजय! तब वे सब लोग इकट्ठे हुए और वायु धीरे चलने लगा। वीर पाण्डव लोग धीरे धीरे गन्धमादनकी ओर फिर चले।

१४३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि वाले, हे महाराज! जब महात्मा पाण्डव लोग एक कोस चले तो पैदल चलनेमें अयोग्य पाञ्चालराजपुत्री तपस्विनी द्रौपदी अत्यन्त कोमला होनेके कारण महा उस वायु और वर्षाके दुःखसे अत्यन्त थक गई। उस समय वह कमलनैनी दुःखसे कांपने लगी।

और अपने सुन्दर हाथोंसे अपने जाघोंको दबाने लगी। द्रौपदीने गजके सुण्डके समान दोनों जाघोंको मिला दिया, अनन्तर केलेके समान कांपती हुई पृथ्वीमें गिर पड़ी। उस सुन्दर मुखारविन्दवाली द्रौपदीको टूटी हुई लताके समान गिरते हुए देख बलवान नकुलने दौड़कर संभाला। नकुल बोले हे राजन्! हे भारत! यह कमलनैनी पाञ्चालराजपुत्री द्रौपदी अत्यन्त थककर पृथ्वीमें गिरना चाहती है, आप इसको देखिये, हे महाराज! यह कोमल चालवाली द्रौपदी इस दुःखके योग्य नहीं थी, अब अत्यन्त थक गई है, आप इसको धीर्य्य दीजिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, नकुलके बचन सुन महाराज, भीमसेन और सहदेव वेगसे दौड़े। महाराजने द्रौपदीके मुखका रङ्ग बदला हुआ और उसको अत्यन्त दुःखिनी देख बहुत दुःख किया और उसको अपनी गोदमें बैठाकर रोने लगे। राजा युधिष्ठिर बोले, हाय यह सुरक्षित स्थानोंमें उत्तम पलङ्ग पर सोनके और सुख करनेके योग्य सुन्दर वर्णवाली द्रौपदी किस प्रकार पृथ्वीमें गिर गई? इस सुख भोगने योग्य द्रौपदीके सुकुमार चरण और कमलके समान मुख मेरे दोषसे काला होगया है, मुझ निर्बुद्धिने जुवेमें मत्त होकर यह क्या काम किया, जो द्रौपदीको सङ्गले इस हार-फांसे भरे हुए जङ्गलको चला आया। महाराज द्रुपदने यह समझा था, कि यह कमल-नैनी, कल्याणी पाण्डवोंकी स्त्री होकर सुख करेगी, परन्तु मुझ पापीके कुकर्म्मोंसे आज यही द्रौपदी उन सब बातोंको लजाकर और [illegible] थककर पृथ्वीमें पड़ी सी रही है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब धर्म्मराज [illegible] इस प्रकार रो रहे थे, तब धौम्य [illegible] सब ब्राह्मण लोग आये, वे सब लोग महा-[illegible] आशीर्व्वाद देकर और प्रशंसा करके [illegible] समुझाने लगे और विघ्नके नाश करने-वाले, अनेक मन्त्रोंको पढ़कर उत्तम क्रिया करने लगे। जब महा ऋषियोंने शान्तिके अर्थ वेदके मन्त्र पढ़े, पाण्डवोंने बार बार शीतल ठण्डे हाथोंसे छाया और ठण्डे पानीके सहित बहुत हवा करी, तब द्रौपदीको कुछ सुख प्राप्त हुआ और धीरे धीरे चैतन्य होगई। अनन्तर पाण्डवोंने दीन तपस्विनीको उठाकर मृगछाला पर लिटा दिया, और सब लोग चारों ओर बैठ गये। नकुल और सहदेव द्रौपदीके उत्तम लक्षणयुक्त लाल कमलवाले चरणोंको धनुषकी ठेठवाले हाथोंसे धीरे धीरे मलने लगे, और महाराज युधिष्ठिर उसको समझाने लगे और भीमसेनसे ऐसा बोले, हे भीम! हे महाबाहो! अगाड़ीके बहुत पर्व्वत दुःखसे जाने योग्य और हिमसे भरे हुए हैं, उनमें द्रौपदी कैसे चल सकेगी? भीमसेन बोले, हे राजेन्द्र! आप कुछ शोच न कीजिये, मैं आपको द्रौपदीको नकुल और सहदेवको अपनी पीठपर चढ़ाकर ले चलूगा। हे पापरहित! मेरा पुत्र घटोत्कच जो हिड़म्बाके गर्भसे उत्पन्न हुआ है, वह मेरे समान बलवान महा वीर्य्यवान है, सो आपकी आज्ञासे हम सबको ले चल सकता है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महाराज! धर्म्म-राज भीमसेनको बचन सुनकर उनका सम्मादर करके बोले कि "ऐसाही होवे" तब धर्म्मराजकी आज्ञा मान भीमने अपने राक्षसपुत्र घटोत्कचका स्मरण किया, महात्मा घटोत्कच पिताके स्मरण करतेही आपहुंचा और हाथ जोड़कर सब पाण्डवोंको प्रणाम किया। महा-बाहु घटोत्कचने ब्राह्मणोंको प्रणाम करके आशीर्व्वाद पाया। अनन्तर महापराक्रमी अपने पिता भीमसेनसे बोला, मैं आपकी आज्ञा-नुसार सेवा करनेको आया हूं। हे महाबाहो! आप हमको शीघ्र आज्ञा दीजिये, हम निःसन्देह सब कामोंको करेंगे, भीमसेनने अपने राक्षस

पुत्रके वचन सुन उसको अपने शरीरमें लपटा लिया।

१४४ अध्याय समाप्त।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे भीम! यह राक्षसोंमें श्रेष्ठ बलवान्, सत्यवादी, हमारा भक्त घटोत्कच हमारा औरस पुत्र (अपने वीर्य्यसे उत्पन्न) है। अब यह हम लोगोंको शीघ्र ले चले, हे भीम! हे महापराक्रमी हम तुम्हारे बाहुबलसे रक्षित होकर सुखसे गन्धमादनको चलेंगे।

वैशम्पायन मुनि बोले, पुरुषसिंह भीमने अपने भाईकी आज्ञा सुनकर शत्रुनाशन घटोत्कचको आज्ञा दी। भीमसेन बोले, हे हिड़म्बानन्दन! हे तात! हे आकाशमें चलनेवाले! देखो यह अपराजिता तुम्हारी माता अत्यन्त थक गई है, और तुम सुखसे इच्छानुसार चल सकते हो, इस लिये तुम हम सब लोगोंको कन्धे पर बिठाकर आकाश मार्गसे चलो; तुम्हारा कल्याण हो, तुम धीरे धीरे चलना, जिसमें द्रौपदीको दुःख न हो।

घटोत्कच बोला, हम अकेलेही महाराज, धौम्य, द्रौपदी, नकुल और सहदेवको ले जा सकते हैं और जिस परभी आप हमारे सहायक हैं, तब क्या सोच है? हे पापरहित! हमारे संगके सैकड़ों शूरवीर लोग आकाशमें चलने और इच्छानुसार रूप बनानेमें समर्थ हैं, वे हमारे संग सब ब्राह्मणोंको ले चलेंगे। अनन्तर महावीर घटोत्कचने द्रौपदी और पाण्डवोंको अपने कन्धे पर बिठाया और सबने ब्राह्मणोंको अपने ऊपर चढ़ा लिया, महात्मा महातेजस्वी लोमश योगमार्गसे दूसरे सूर्य्यके समान प्रकाशित होते हुए आपही आकाशमें चलने लगे। राक्षसराज घटोत्कचकी आज्ञासे और राक्षसोंने सब ब्राह्मणोंको अपने कन्धेपर चढ़ा लिया, और सब लोग चल दिये। अनेक रमणीय वन और बागोंको देखते हुए ये सब लोग बदरी नारायणकी ओर चले। वे लोग अत्यन्त शी चलने लगे। इस लिये पाण्डवोंको दूर मार्गभी थोड़ा जान पड़ा। उन्होंने मा अनेक रत्नोंकी खान, राक्षसोंसे भरे हुए दे धातुओंसे रङ्गे हुए पर्व्वत, किन्नर, बन विद्याधर, किंपुरुष और गन्धर्वोंसे भरे देशोंको देखा; उन्होंने वीर, चमरी, बन हरिन, सूअर, नीलगाय और भैंसोंसे भरे जङ्गलोंको देखा, अनेक नदी, जल, अ प्रकारसे हरिण, बन्दरोंसे शोभित बनको दे मतवारे पक्षियोंके सहित अनेक वृक्षोंको दे हुए अनेक देशोंको नांघते हुए उत्तरके दे घूमते हुए बहुत आश्चर्य्यवाले कैलासपर्व्वत देखा, उसी पर्व्वतके नीचे नर और नाराय आश्रमको देखा। उस स्थानमें अनेक फले वृक्ष लगे थे, पाण्डव उस मनोहर सु उत्तम छायावाले परम शोभायुक्त स्थानको दे कर बहुत प्रसन्न हुए, वह स्थान चिकने, कोम सुन्दर सुन्दर बड़ी बड़ी और ऊंची शाखाओं शोभित, मोटे और तीव्र फलोंसे भरे हुए दि वृक्षोंसे शोभित महर्षिभुण्डसे सेवित म मतवारे पक्षियोंके समूहोंसे पूजित था। देशमें कोई मच्छर किसीको नहीं काटता था और अनेक फल मूल तथा जलसेही आश्रम पू था, जहां नित्यही गन्धर्व्व लोग निवास करते जहां स्वभावसे समानभूमि, सुन्दर स्थान औ हिमसे शीतल कण्टकरहित पृथ्वी थी, वहां सब पाण्डव लोग ब्राह्मणोंके सहित राक्षसों कन्धोंसे धीरे धीरे उतरे। हे राजन्! अनन्त पाण्डवोंने श्रेष्ठ ब्राह्मणोंके सहित नर नाराय रमणीय आश्रमको देखा। वह स्थान अन्धका भूख, शीत गर्मी, दोष और शोकसे रहित था वह स्थान परम पवित्र और सूर्य्यकी किरणों भरा था। हे महाराज! ब्राह्मणोंकी लक्ष्मी युक्त और ब्रह्मर्षियोंसे सेवित था, उस आश्र

कोईभी पापी नहीं जा सकता । जहा अनेक बलि होम और दिव्य चन्दनादिकी सुगन्धि भारही थी, जहा दिव्य फूल शोभायमान थे, जहा अनेक बड़ी बड़ी अग्निशाला सुवा और वर्त्तन विराजमान थे, जहा बड़े बड़े जलके कलश और अनेक यज्ञकी सामग्री रखी थीं, जो स्थान सब पुरुषोंको शरण देनेवाला, वेद शब्दसे पूरित, परम रमणीय, थकाईका नाश करनेवाला शोभासे भरा वर्णन करनेके अयोग्य, देव समान फल मूल खानेवाले हरिणचर्मधारी महात्मा ऋषि और अग्निके समान, तपसे आत्मदर्शी, ...चके जाननेवाले, यत्न परायण, ब्रह्माके समान ...भागी, वेदवादी, ब्रह्मऋषियोंसे शोभित ...। बुद्धिमान महाराज महा तेजस्वी पवित्र ...जा युधिष्ठिरने सब ब्राह्मणोंकी पूजा करी ...हाके वासी दिव्य ज्ञानवाले ब्राह्मणोंने जब ...ना कि महाराज युधिष्ठिर आये है, तब बहुत ...मके सहित सब लोग उनके पास आये, ...ग्निके समान तेजस्वी महात्मा वेदपाठी लोग ...ह्मण लोग महाराजको प्रीतिके सहित ...शीर्व्वाद देने लगे, और पवित्र फल मूल ...और जलसे उनका सत्कार करने लगे, धर्मराज ...धिष्ठिरने उनकी दी हुई पूजाको आनन्दके ...हित ग्रहण किया । हे पापरहित ! अनन्तर ...द-वेदाङ्गके जाननेवाले सहस्रो ब्राह्मण द्रौपदी ...और अपने भाइयोंके सहित महाराजने उस ...न्द्रके समान पवित्र दिव्य गन्धोंसे भरे हुए ...नोहर नारायणके आश्रममें प्रवेश किया । ...हा धर्मात्मा युधिष्ठिरने देव ऋषियोंसे पूजित, ...ङ्गाके तटपर विराजमान नर और नारायण ...मुनिके आश्रमको देखा । पुरुषसिंह पाण्डव ...ने उस आश्रमको देखकर बहुत प्रसन्न हुए, ...और दिव्य फल और ब्रह्मर्षियोंको देखा, ...। पाण्डव लोग उस स्थानको देखकर ... सहित उसी स्थानमें रहने और ...नन्दसे क्रीड़ा करने लगे । वहांसे वे लोग अनेक पक्षियोंसे युक्त सोनेके शिखरवाले मैनाक पर्व्वत और सुखदायक बिन्दुसरको देखने लगे, उस मनोहर, सब समय फूलनेवाले पुष्पोंसे शोभित, फल और फूलोंसे नीचे हुए वृक्षोंसे विराजमान सहस्रो कोकिलोंके शब्दसे शोभित, चीकने पत्तोंवाले तथा शीतल छायावाले, मनोहर वृक्षोंसे विराजमान बनमें द्रौपदीके सहित विहार करने लगे, पाण्डव लोग विचित्र सुन्दर जलसे भरे हुए, उत्तम कमलोंसे सब ओर शोभित सुन्दर तलावोंको देखते हुए विहार करने लगे । हे राजन् ! द्रौपदीके सहित पाण्डवोंको प्रसन्न करनेके निमित्त सुगन्धवाला शीतल वायु चलने लगा । महात्मा पाण्डव लोग सबको पवित्र करनेवाली, शीतल, निर्म्मल कमलोंसे युक्त, मणिरचित घाटवाली दोनो ओर वृक्षोंसे शोभित, दिव्य फूलोंसे भरी हुई, मनकी प्रीतिको बढ़ानेवाली गङ्गाको बदरिकाश्रमके नीचे देखने लगे । उस अत्यन्त दुःखसे जाने योग्य, देवऋषियोंसे शोभित देशमें भागीरथीके पवित्र जलसे पाण्डव लोग पितरोंका तर्पण करने लगे । कुरुकुलोत्पन्न कुन्तीनन्दन पाण्डव लोगोंने अत्यन्त पवित्र होकर उस स्थानमें देवता और ऋषियोंका तर्पण किया और वेदमन्त्रोंको जपा । पुरुषसिंह वीर महा तेजस्वी पाण्डवलोग द्रौपदी और ब्रह्मणोंके सहित उस स्थानमें विहार करने लगे ।

१८५ अध्याय समाप्त ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, पुरुषोंमें श्रेष्ठ वीर पाण्डव लोग उस स्थानमें अत्यन्त पवित्र होकर अर्ज्जुनके देखनेकी इच्छासे छः दिन रहे । एक दिन पूर्व्व और उत्तरका वायु बहने लगा । तब इच्छानुसार एक सहस्र दलका कमल वायुसे उड़ता हुआ वहां पहुंचा । उस सुन्दर और दिव्य गन्धयुक्त पवित्र कमलको वायुसे उड़ा हुआ और पृथ्वीमें पड़ा हुआ द्रौपदीने देखा,

सुन्दर सुगन्धयुक्त सुन्दर कमलको सुन्दरी द्रौपदीने देखकर बहुत प्रसन्नतासे भीमसेनसे कहा। हे भीम! इस उत्तम हमारे प्यारे दिव्य, गन्धयुक्त कमलको तुम देखो। हे शत्रुनाशन! मैं यह कमल धर्मराजको देना चाहती हूं। तुम हमारी प्रसन्नताके निमित्त इसको ले आओ। हम लोग आश्रममें ले जायंगे। हे कुन्तीनन्दन! यदि मैं तुम्हारी प्यारी हूं, तो तुम ऐसे बहुतसे कमल मुझको ला दो, मैं इन सबको अपने आश्रम काम्यक बनको ले जाऊंगी। सुन्दर कटाक्षवाली अनिन्दिता द्रौपदी ऐसे कह उस कमलको लेकर महाराजके पास चली गई, पुरुषसिंह भीमसेन अपनी प्यारी रानीका अभिप्राय जान जिधरसे वायु आता था, उधरहीको चले, उन्होंने यह बिचारा कि जिधरसे वायु आता है, उधरही यह कमल होगा। भीमसेन फूल लेनेकी इच्छासे शीघ्रता सहित चलने लगे, उन्होंने सोनेकी पीठवाली धनुष और सर्पके समान विषभरे बाण लिये, सिंहके समान क्रोधमें भरकर वहांसे मतवाले हाथीके समान चले। उस महा धनुषधारी और महाबाणवाले भीमको सब प्राणी देखने लगे। न उन्हें थकाई, न ग्लानि, न भय और न कुछ सन्देह होता था। कभी कभी शीतल वायुभी उनकी सेवा करने लगा। बाहुबलसे भरे हुए द्रौपदीका प्रिय चाहनेवाले, शोक और भयसे रहित बलवान भीम चलते चलते एक पर्वतके ऊपर पहुंचे। वहां न्यायशील भीमसेनने नीली शिलावाले अनेक वृक्ष लता और गुच्छोंसे शोभित पर्वतको देखा, वहां अनेक किन्नर लोग निवास करते थे। जहां अनेक धातुओंसे रङ्गे हुए उत्तम उत्तम वृक्ष लगे थे, उस पर्वतका नाम गन्धमादन था, वह सर्व्वत्र रमणीय होनेसे ऐसा सुन्दर जान पड़ता था, मानो सब भूषणोंके सहित यह पृथ्वीका हाथ ऊपरको जाता है, अनन्तपराक्रमी भीम उन सब चीजोंको देखते और अभिप्रायोंको हृदयमें विचारते कोयल और भौरोंके शब्दको सुनते सब ऋतुमें फूलनेवाले फूलोंकी सुगन्धिको सूंघते उसकी शोभामें आंख, कान और मनको लगाये मतवारे हाथीके समान झूमते हुए चलने लगे। तब अनेक पवित्र फूलोंकी गन्धोंको लेकर गन्धमादनकी शीतल वायु उनकी सेवा करने लगा, उससे उनका सब परिश्रम दूर हुआ और सब रोयें खड़े होगये। महा-पराक्रमी भीमने गन्धर्व्व, यक्ष देवता और ब्रह्मर्षियोंसे सेवित गन्धमादन पर्व्वतको देखा, वहांसे भी शत्रुनाशन भीम फल लेनेको आगे चले। वहांसे आगे चलकर भीमने अनेक धातुओंकी रेखाओंसे शोभित सोने और चांदियोंके रङ्गवाले शिखरोंको ऐसा देखा, मानो यह सब पर्व्वतको अगुली लगी है। उस पर्व्वत पर अनेक वृक्ष शोभित थे, नीचे भागमें जो बादल आते जाते थे, उससे ऐसा जान पड़ता था, मानो यह पर्व्वत पंख लगाए नाच रहा है। उसमें जो झरनोंके पानीके कणका लग गये थे, उससे उनकी शोभा ऐसी जान पड़ती थी, मानो अनेक मोतियोंके हार लटक रहे हैं, उसमें अनेक गुहा और सुन्दर झरन शोभायमान थे, अनेक नाचती हुई अप्सराओंके पायजेबका शब्द और नाचते हुए मोरोंकी ध्वनि आनन्द बढ़ा रही थी, जिसकी शिला दिग्गजोंके दांत घिसनेसे फट गई थीं, वहां जो नदियोंके जल बह रहे थे, उससे ऐसा जान पड़ता था, मानो यह इस पहाड़का दुपट्टा नीचे गिर गया है, चारों ओर सावधान उत्तम अन्न सुखसे खड़े थे, उस पहाड़के हरिन निर्भय होकर भीमसेनका तमाशा देखने लगे। उस पहाड़के अनेक कुञ्ज भीमके वेगसे चलायमान होगये। श्रीमान् भीमसेन भी प्रसन्न होकर वहां आनन्द करने लगे। युवा सिंहको मारनेमें समर्थ सुन्दरबलवाले सोनेके समान रङ्गवाले विशाल देह मतवाले

हाथीके समान बलवान, मतवारे हाथीके समान वेगवान, मतवाले हाथीके समान लाल नेत्रवाले और अपने बलमें मतवारे हाथीको रोकनेवाले भीमसेन उस पहाड़ पर वेगसे चलने लगे। उस स्थानमें भीमसेनकी पतिके सहित एकाग्र बैठी हुई अदृश्य यक्ष और गन्धर्व्वोंकी स्त्री देखने लगीं। पाण्डुनन्दनको देख वह लोग कहने लगीं, क्या यह साक्षात रूपका अवतार है? इस प्रकार दुर्य्योधनके दिये हुए अनेक दुःखोंको स्मरण करते हुए, और बनवासमें द्रौपदीके प्रियकार्य्यका निश्चय करते हुए, रमणीय गन्धमादन पर्व्वत पर भीमसेन विहार करने लगे, एक समय उन्होंने बिचारा कि अर्ज्जुन स्वर्गको गये हैं, और मैं फल लेनेको इधर आया हूं, इस समय महाराज युधिष्ठिर क्या करेंगे, निश्चय पुरुषोंमें श्रेष्ठ महाराज प्रेम और थोड़ा बल होनेके कारण नकुल और सहदेवको न छोड़ेंगे। हमको किस प्रकार यह फूल शीघ्र मिलेगा? पुरुषसिंह भीमसेन ऐसा विचारकर गरुड़के समान वेगसे चलने लगे। उनकी दृष्टि और मन पर्व्वतके फूलोंमें लगे रहे, द्रौपदीके वचन-ग्रहण करके अपने चरणोंसे पृथ्वीको कंपाते हुए अनेक हाथियोंके झुण्डोंको वायुके समान वेगसे डराते हुए, महाबलसे सिंह व्याघ्र और हरिणोंको मारते हुए, अनेक वृक्षोंको तोड़ते और चीरते हुए वेगसे लता और बल्लिरियोंको खींचते हुए मतवारे हाथीके समान एकसे दूसरे और दूसरेसे तीसरे पर्व्वतो पर जाने लगे। जैसे बिजलीके सहित मेघ गरजता हो, वैसेही भीम भी बहुत गर्ज्जते हुए चलने लगे। उस शब्दसे जाग करके बड़े बड़े सिंह और भैंसे जमुहाते हुए गुफाओंको छोड़ छोड़ भागने लगे। उस शब्दसे डरकर अनेक मतवाले हाथी हथिनियोंके सहित उस बनको छोड़ दूसरे बनोंको जाने लगे। उस शब्दको सुनकर सूअर, हरिण, भैंसे, व्याघ्र, सियार, नीलगाय तथा और भी बनमें रहने वाले जन्तुओंके झुण्ड घोर शब्द करने लगे। चकवा चकवी, मोर चकोर, हंस, जलमुरग, तोते, कोकिल और सारस चेतनारहित होकर इधर उधरको भागने लगे। बहुतेरे सिंह, व्याघ्र, हाथी और हथिनी मदसे भरकर भीमकी ओर दौड़े; उनको भीमने बाणोंसे मारा। बाणोंके लगनेसे वे सब भयसे व्याकुल होकर विष्ठा और मूत्र परित्याग करने लगे, और मुह फैलाकर घोर शब्द करने लगे। तब श्रीमान भीमसेनने क्रोध और बलसे भरकर हाथीसे हाथी और सिंहसे सिंहको लड़ाना आरम्भ किया। बलवान पाण्डुनन्दनने अनेक जन्तुओंको तमाचोंसे मार डाला। सिंह, व्याघ्र और रीछ भीमसेनसे पीड़ित और भयसे व्याकुल होकर उनको छोड़कर भागने लगे और विष्ठा मूत्र परित्याग करने लगे। उन सबको छोड़कर श्रीमान् महाबली पाण्डुनन्द[न] अपने शब्दसे दिशाओंको पूर्ण करते हुए ए[क] बनमें पहुंचे। महाबाहु भीमसेनने उस गन्[ध]मादनके बनमें एक रमणीय बहुत योजन त[क] विस्तृत केलेके बनको देखा। महाबलवा[न] भीमसेन उस बनके जन्तुओंको घबराते हु[ए] उस बनमें घुस गये। महाबलवान भीमसे[न] वृक्षोंको तोड़ते हुए इस प्रकार चले, जैसे मतवाला हाथी चलता है। उनके चलनेसे ताड़के समान अनेक केलेके वृक्ष टूट टूट कर गिरने लगे। नृसिंहके समान अभिमानी महा तेजस्वी बली भीमसेन वेगसे उन सब वृक्षोंको इधर उधर फेंकने और घोर शब्द करने लगे। अनन्तर बड़े बड़े जङ्गली जन्तु उस बनसे निकल कर भागने लगे। भैंसे, हरिन, बन्दर, और सिंह वहांसे भाग भाग कर तालावोंमें घुसने लगे। उन सबके और भीमसेनके घोर शब्दसे बनके रहनेवाले हरिन और पक्षी व्याकुल हो गये। उस हरिन और पक्षियोंके शब्द को सुनकर जलमें रहनेवाले अनेक पक्षी भीगे पंखोंसे

सुन्दर सुगन्धयुक्त सुन्दर कमलको सुन्दरी द्रौपदीने देखकर बहुत प्रसन्नतासे भीमसेनसे कहा। हे भीम! इस उत्तम हमारे प्यारे दिव्य गन्धयुक्त कमलको तुम देखो। हे शत्रुनाशन! मैं यह कमल धर्मराजको देना चाहती हूं। तुम हमारी प्रसन्नताके निमित्त इसको ले आओ। हम लोग आश्रममें ले जायंगे। हे कुन्तीनन्दन! यदि मैं तुम्हारी प्यारी हूं, तो तुम ऐसे बहुतसे कमल मुझको ला दो, मैं इन सबको अपने आश्रम काम्यक बनको ले जाऊंगी। सुन्दर कटाक्षवाली अनिन्दिता द्रौपदी ऐसे कह उस कमलको लेकर महाराजके पास चली गई, पुरुषसिंह भीमसेन अपनी प्यारी रानीका अभिप्राय जान जिधरसे वायु आता था, उधरहीको चले, उन्होंने यह बिचारा कि जिधरसे वायु आता है, उधरही यह कमल होगा। भीमसेन फूल लेनेकी इच्छासे शीघ्रता सहित चलने लगे, उन्होंने सोनेकी पीठवाली धनुष और सर्पके समान विषभरे बाण लिये, सिंहके समान क्रोधमें भरकर वहांसे मतवाले हाथीके समान चले। उस महा धनुषधारी और महाबाणवाले भीमको सब प्राणी देखने लगे। न उन्हें थकाई, न ग्लानि, न भय और न कुछ सन्देह होता था। कभी कभी शीतल वायुभी उनकी सेवा करने लगा। बाहुबलसे भरे हुए द्रौपदीका प्रिय चाहनेवाले, शोक और भयसे रहित बलवान भीम चलते चलते एक पर्व्वतके ऊपर पहुंचे। वहां न्यायशील भीमसेनने नीली शिलावाले अनेक वृक्ष लता और गुच्छोंसे शोभित पर्व्वतको देखा, वहां अनेक किन्नर लोग निवास करते थे। जहां अनेक धातुओंसे रङ्गे हुए उत्तम उत्तम वृक्ष लगे थे; उस पर्व्वतका नाम गन्धमादन था, वह सर्व्वत्र रमणीय होनेसे ऐसा सुन्दर जान प[ड़ता] था, मानो सब भूषणोंके सहित यह [पृथ्वी]का ऊपरको जाता है, अनन्तपराक्रमी भीम उन सब चीजोंको देखते और अभिलाषाओंको हृदयमें विचारते कोयल और भौरोंके शब्दको सुनते सब ऋतुमें फूलनेवाले फूलोंकी सुगन्धिको सूंघते उसकी शोभामें आंख, का[न] और मनको लगाये मतवारे हाथीके सम[ान] झूमते हुए चलने लगे। तब अनेक प[वित्र] फूलोंकी गन्धोंको लेकर गन्धमादनको शीत[ल] वायु उनकी सेवा करने लगा, उससे उनक[े] सब परिश्रम दूर हुआ और सब रोवें ख[ड़े] होगये। महा-पराक्रमी भीमने गन्धर्व्व, य[क्ष] देवता और ब्रह्मर्षियोंसे सेवित गन्धमादन पर्व्वतको देखा, वहांसे भी शत्रुनाशन भीम फ[ूल] लेनेको आगे चले। वहांसे आगे चलक[र] भीमने अनेक धातुओंकी रेखाओंसे शोभित सो[ने] और चांदियोंके रङ्गवाले शिखरोंको ऐसा देखा मानो यह सब पर्व्वतको अंगुली लगी हैं। उ[स] पर्व्वत पर अनेक वृक्ष शोभित थे, नीचे भाग[में] जो बादल आते जाते थे, उससे ऐसा जान पड़ता था, मानो यह पर्व्वत पंख लगाए नाच रहा है उसमें जो झरनोंके पानीके कणका लग गये थे उससे उनकी शोभा ऐसी जान पड़ती थी, मानो अनेक मोतियोंके हार लटक रहे हैं, उसमें अनेक गुहा और सुन्दर झरन शोभायमान थे, अनेक नाचती हुई अप्सराओंके पायजेबका शब्द और नाचते हुए मोरोंकी ध्वनि आनन्द बढ़ा रही थी, जिसकी शिला दिग्गजोंके दांत घिसनेसे फट गई थीं, वहां जो नदियोंके जल बह रहे थे, उससे ऐसा जान पड़ता था, मानो यह इस पहाड़का दुपट्टा नीचे गिर गया है, चारों ओर सावधान उत्तम अन्न सुखसे खड़े थे, उस पहाड़के हरिन निर्भय होकर भीमसेनका तमाशा देखने लगे। उस पहाड़के सब कुञ्ज भीमके वेगसे चलायमान होगये। श्रीमान भीमसेन भी प्रसन्न होकर वहां आनन्द करने लगे। युवा सिंहको मारनेमें समर्थ सुन्दरचक्षु वाले सोनेके समान रङ्गवाले विशाल देह मतवाले

हाथीके समान बलवान, मतवारे हाथीके समान वेगवान, मतवाले हाथीके समान लाल नेत्रवाले और अपने बलसे मतवारे हाथीको रोकनेवाले भीमसेन उस पहाड़ पर वेगसे चलने लगे। उस स्थानमें भीमसेनको पतिके सहित एकाग्र बैठी हुई अदृश्य यक्ष और गन्धर्व्वोंकी स्त्री देखने लगी। पाण्डुनन्दनको देख वह लोग कहने लगीं, क्या यह साक्षात रूपका अवतार है? इस प्रकार दुर्य्योधनके दिये हुए अनेक दुःखोंको स्मरण करते हुए, और वनवासमें द्रौपदीके प्रियकार्य्यका निश्चय करते हुए, रमणीय गन्ध-मादन पर्व्वत पर भीमसेन विहार करने लगे, एक समय उन्होंने विचारा कि अर्ज्जुन स्वर्गको गये हैं, और मैं फल लेनेको इधर आया हूं, इस समय महाराज युधिष्ठिर क्या करेंगे, निश्चय पुरुषोंमें श्रेष्ठ महाराज प्रेम और थोड़ा बल होनेके कारण नकुल और सहदेवको न छोड़ेंगे। हमको किस प्रकार यह फूल शीघ्र मिलैगा? पुरुषसिंह भीमसेन ऐसा विचारकर गरुड़के समान वेगसे चलने लगे। उनकी दृष्टि और मन पर्व्वतके फूलोंमें लगे रहे, द्रौपदीके वचन ग्रहण करके अपने चरणोंसे पृथ्वीको कंपाते हुए अनेक हाथियोंके झुण्डोंको वायुके समान वेगसे डराते हुए, महावलसे सिंह व्याघ्र और हरिणोंको मारते हुए, अनेक वृक्षोंको तोड़ते और चीरते हुए वेगसे लता और बल्लिरियोंको खींचते हुए मतवारे हाथीके समान एकसे दूसरे और दूसरेसे तीसरे पर्व्वतों पर जाने लगे। जैसे बिजलीके सहित मेघ गरजता हो, वैसेही भीम भी बहुत गर्ज्जते हुए चलने लगे। उस शब्दसे [illegible] करके बड़े बड़े सिंह और भैंसे जमुहाते हुए [illegible]ओंको छोड़ छोड़ भागने लगे। उस शब्दसे [illegible]कर अनेक मतवारे हाथी हथिनियोंके सहित [illegible] वनका छोड़ दूसरे वनोंको जाने लगे। उस [शब्]दको सुनकर सूअर, हरिण, भैंसे, व्याघ्र, [सि]यार, नीलगाय तथा और भी वनमें रहने वाले जन्तुओंके झुण्ड घोर शब्द करने लगे। चकवा चकवी, मोर चकोर, हंस, जलमुरग, तोते, कोकिल और सारस चेतनारहित होकर इधर उधरको भागने लगे। बहुतेरे सिंह, व्याघ्र, हाथी और हथिनी मदसे भरकर भीमकी ओर दौड़े; उनको भीमने वाणोंसे मारा। वाणोंके लगनेसे वे सब भयसे व्याकुल होकर विष्ठा और मूत्र परित्याग करने लगे, और मुंह फैलाकर घोर शब्द करने लगे। तब श्रीमान भीमसेनने क्रोध और बलसे भरकर हाथीसे हाथी और सिंहसे सिंहको लड़ाना आरम्भ किया। बलवान पाण्डुनन्दनने अनेक जन्तुओंको तमाचोंसे मार डाला। सिंह, व्याघ्र और रीछ भीमसेनसे पीड़ित और भयसे व्याकुल होकर उनको छोड़कर भागने लगे और विष्ठा मूत्र परित्याग करने लगे। उन सबको छोड़कर श्रीमान् महाबली पाण्डुनन्दन अपने शब्दसे दिशाओंको पूर्ण करते हुए एक वनमें पहुंचे। महाबाहु भीमसेनने उस गन्ध-मादनके वनमें एक रमणीय बहुत योजन तक विस्तृत केलेके वनको देखा। महाबलवान भीमसेन उस वनके जन्तुओंको घबराते हुए, उस वनमें घुस गये। महाबलवान भीमसेन वृक्षोंको तोड़ते हुए इस प्रकार चले, जैसे मतवाला हाथी चलता है। उनके चलनेसे ताड़के समान अनेक केलेके वृक्ष टूट टूट कर गिरने लगे। नृसिंहके समान अभिमानी महा-तेजस्वी बली भीमसेन वेगसे उन सब वृक्षोंको इधर उधर फेंकने और घोर शब्द करने लगे। अनन्तर बड़े बड़े जङ्गली जन्तु उस वनसे निकल कर भागने लगे। भैंसे, हरिन, बन्दर, और सिंह वहांसे भाग भाग कर तालाबोंमें घुसने लगे। उन सबके और भीमसेनके घोर शब्दसे वनके रहनेवाले हरिन और पक्षी व्याकुल हो गये। उस हरिन और पक्षियोंके शब्दको सुनकर जलमें रहनेवाले अनेक पक्षी भीगे पंखोंसे

उड़ने लगे। भरतकुलसिंह भीम उन जलके पक्षियोंको देख उनहीके पीछे चले, और थोड़ी-दूर जाकर एक सुन्दर और बहुत बड़े तालाव पर पहुंचे। उस तालावके चारों ओर सोनेके रङ्गवाले केलेके वृक्ष लगे थे; वे जब वायुसे हिलते थे, तब ऐसा जान पड़ता था; मानों ये सब इस तालाबके पंखे हैं, और इसकी सेवा करते हैं। महाबलवान भीमसेन इस अनेक कमलभरे तड़ागको शीघ्रही पार होकर जंजीररहित मतवाले हाथीके समान क्रीड़ा करने लगे। महातेजस्वी भीम कुछ देर उस तालावमें क्रीड़ा करके फिर वेगसे अनेक वृक्षों-से भरे हुए बनकी ओर चले। अगाड़ी जाकर बहुत बलसे अपने शंखको बजाया और उस शङ्ख और भीमसेनके घोर शब्द तथा तालकी ध्वनिसे पर्व्वतकी गुफा गुञ्जार हो उठी। उस वज्रके समान घोर शब्द सुनकर पर्व्वतकी गुफाओं में सोये हुए सिंह उठे और घोर शब्द करने लगे। हे जन्मेजय! सिंहोंके शब्दको सुनकर हाथी डरसे व्याकुल होगये, और शब्द करने लगे। इन शब्दोंसे पर्व्वत पूरित होगया। उस हाथियोंके शब्दको सुनकर और अपने भाई भीमसेनको आता जान, महाकपीश्वर हनुमानने विचारा, कि भीम स्वर्गको न चले जाय; इसलिये स्वर्गके मार्गको अपनी पूंछसे रोककर बैठ रहे। केलेके वृक्षोंसे पूरित मार्गको अपने भाईकी रक्षाके निमित्त रोका और आपभी वहीं बैठ कर विचार करने लगे, कि भीम इस ओर न आवें और यदि आवें भी तो शाप अथवा धर्षणा प्राप्त हों। ऐसा विचारकर महाबाहु हनुमानने जमुहाई ली, और उसी केलेके बनमें सो रहे। हनुमानकी जमुहाईका ऐसा शब्द हुआ, जैसे कहीं बिजुली गिरती है। पश्चात् उन्होंने वज्रके समान अपनी पूंछको फटकारा। उस पूंछके शब्दसे पर्व्वतकी
ओंमे वज्रके समान घोर शब्दने पर्व्वत हिलने लगे, और अनेक शिखर टूट टूट कर पृथ्वी पर गिरने लगे। उस पूंछके शब्दसे मतवाले हाथियोंका शब्द मन्द होगया। यह घोर शब्द समस्तबन और पर्व्वतोंमें फैल गया। उसको सुनतेही भीमसेन के सब रोवें खड़े होगये और उसको ढूढ़नेको प्रसन्नचित्त भीमसेन उस केलेके बनमें घूमने लगे। अनन्तर महाबाहु भीमसेनने उस बनके बीचमें एक भारी शिलापर सोते हुए वानरराज हनुमानको देखा। उनका तेज, रङ्ग, शब्द और चञ्चलता बिजलीके समान थी, वे कन्धेके ऊपर सिरधरे सोते थे, उनके सिरके वाल बहुत छोटे छोटे थे, कन्धा और शरीर अत्यन्त मोटा होनेके कारण कमर बहुत पतली थी, बड़े बड़े रोवोंसे भरी हुई पूंछ जो उनके सिर से ऊंची खड़ी थी, वह ध्वजाके समान जान पड़ती थी, उनके ओठ बहुत पतले तथा जिह्वा और मुखका रङ्ग लाल था, भौंह चलायमान दांत और दाढ़ निकले हुए और अगाड़ीसे तेज तथा मुखके भीतरके सफेद दांतोंसे उनका मुख किरण सहित चन्द्रमाके समान बिराजमान था; वालों सहित गला ऐसा दिखाई देता था मानो फूला हुआ अशोक वृक्ष है। उस सोनेके कदली बनमें महातेजस्वी हनुमान अपने तेजसे प्रकाशमान होते हुए, ज्वालाके सहित अग्निके समान विराजमान थे। वह पिङ्गल वर्णवाले नेत्रोंसे शत्रुनाशन भीमकी ओर देख रहे थे। उस महाघोर बनमें बुद्धिमान महाबाहु भीमसेनने भारी शरीरवाले वानरोंमें श्रेष्ठ हनुमानको स्वर्गका मार्ग रोके हुए हिमाचलके समान देखा। उनको देख महाबलवान भीमसेन भयरहित होकर उनके समीप पहुंचे और वज्रके समान घोर शब्दसे गर्ज्जे। उस शब्दको सुनकर हरिन और पक्षी भयसे व्याकुल हो गये। महासाहसी हनुमानने भी अपने पिङ्गल वर्णके नेत्रोंको कुछ खोलकर भीमकी ओर

देखा और निरादरके सहित कहने लगे। हनुमान बोले, मैं रोगसे पीड़ित होकर सुखसे सोरहा था, तुमने मुझे क्यों जगा दिया? तुम जाननेवाले हो, इसलिये तुम्हें जन्तुओं पर दया करना उचित है, तिर्य्यक्योनिमें उत्पन्न हुए प्राणी धर्म्मको नहीं जानते, परन्तु मनुष्य लोग बुद्धिमान होते है, इसी लिये वे लोग जन्तुओं पर दया करते हैं, तुम्हारे समान बुद्धिमान लोग मन वचन और कर्म्मसे निन्दित तथा धर्म्मनाशक कार्य्योंमें कैसे प्रवृत्त हो सकते है? जान पड़ता है, कि तुम धर्म्मको नहीं जानते हो, तुमने पण्डितों की सेवा नहीं की, तुम मूर्ख और मन्दबुद्धि हो, इसीसे वनके जन्तुओंको दुःख देते फिरते हो, कहो तुम कौन और किस लिये इस मनुष्यरहित घोर बनमें आये हो? हे पुरुषसिंह। कहो अब कहा जाना चाहते हो? यह पर्व्वत जानेके योग्य नहीं है, यह स्वर्गका मार्ग है, इसमें कोई पुरुष बिना सिद्धगतिके नहीं जासकता है, हे समर्थबीर। हम कृपा करके तुमको आगे जानेसे रोकते हैं, तुम हमारे वचनको सुनो और धैर्य्य धरो, तुम यहांसे आगे किसी प्रकार नहीं जा सकते हो। हे परुषसिंह। हम तुमको स्वागत करते हैं, यह अमृतके समान फल और मूल खाओ, पर अगाड़ीको मत जाओ, नहीं तो वृथा ही प्राण नाश होजायगे। हे नरश्रेष्ठ। हमारे इस हितकर वचनको तुम ग्रहण करो।

१४६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले बुद्धिमान वानरराज हनुमानके वचन सुनकर, शत्रुनाशन महावीर भीमसेन कहने लगे। भीम बोले तुम कौन और किस लिये बन्दरका वेष बनाये बैठे हो? हम ब्राह्मणोंसे नीचे क्षत्रिय हम चन्द्रवंशी कौरवकुलमे कुन्तीके गर्भसे [illegible] पाण्डुके वीर्य्यसे उत्पन्न हुए हैं, वायुपुत्र तथा भीमसेन नामसे प्रसिद्ध हैं। कुरुकुलवीर भीमके वचन सुन हंसकर हनुमान कहने लगे। हनुमान बोले हम बन्दर है, तुमको इच्छानुसार मार्ग नहीं देंगे, तुम यहींसे लौट जाओ नहीं तो हमारा तुम्हारा विरोध हो जायगा।

भीमसेन बोले, हे वानर। चाहे विरोध हो वा मैत्री हो सो हम तुमसे कुछ नहीं पूछते है, तुम हमको मार्ग दो नहीं तो हमसे दुःख पाओगे।

हनुमानजो बोले, हम रोगसे अत्यन्त पीड़ित हैं, इसलिये नहीं उठ सकते, यदि तुमको अवश्य जाना है, हमको लांघकर चले जाओ।

भीमसेन बोले, निर्गुण परमात्मा सब प्राणोंके जाननेवाले परमेश्वर शरीरमें वास करते हैं, हम उनका निरादर करके तुमको लांघ नहीं सकते, यदि हम प्रमाणोंसे उस भूतभावन परमेश्वरको न जानते होते, तो तुमको और इस पर्व्वतको ऐसे लांघ जाते, जैसे हनुमानने समुद्रको लांघा था।

हनुमान बोले, हे नरश्रेष्ठ। हम आपसे पूछते हैं कि जिसने समुद्रको लांघा था, वह हनुमान कौन हैं? यदि आपको समय हो तो कहो।

भीमसेन बोले, हमारे भाई रामायनमें विख्यात श्रीमान् वानरोंके राजा बुद्धि और साहससे भरे हुए प्रशंसनीय गुणोंसेयुक्त हनुमान हमारे भाई हैं, उन्होंने रामकी स्त्री सीताके निमित्त चारसौ कोसके चौड़े समुद्रको एक छलांगमें लांघा था, वे महातेजस्वी वानरराज हमारे भाई हैं; हम तेज, पराक्रम और बलमें उनहीके समान हैं, इसी लिये तुमको युद्धमें जीत सकते है, तुम हमारी आज्ञासे हट जाओ, हमको मार्ग दो या हमारा पराक्रम देखो। यदि तुम हमारी आज्ञाको न मानोगे तो हम तुमको अभी मारडालेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भीमसेनको बल और वीर्य्यसे अत्यन्त उन्मत्त देख हृदयमें हंसकर हनुमान कहने लगे, हे पापरहित। आप प्रसन्न हूजिये, हमको पूंछ उठानेकी शक्ति नहीं है, इस लिये मेरे ऊपर कृपा करके पूंछ हटाकर आप चले जाइये। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, बल अभिमानसे भरे हुए भीमसेनने हनुमानको हीनबल और हीन-पराक्रम जाना और अपने मनमें बिचारा, इस क्षुद्रबलवाले, बन्दरकी पूंछ पकड़कर अभी यमके घरमें पहुंचा दूंगा। महाकपि हनुमानकी पूंछको हंसकर अभिमानके सहित बायें हाथसे उठाने लगे, परन्तु उसे हिला भी न सके। अनन्तर महाबलवान भीमसेनने दोनों हाथोंसे इन्द्रायुधके समान पूंछको उठाना चाहा, परन्तु न उठा सके, बहुत बल करनेसे भीमसेनकी आखें और मुह फैल गये, भौंह फटने लगीं, परन्तु हनुमान की पूंछ न उठी। श्रीमान् भीमसेनने बहुत यत्न किया तौभी न उठा सके। तब लज्जासे नीचे मुख करके हनुमानके पास खड़े होगये, और हाथ जोड़ प्रणाम कर कहने लगे, कि हे कपिशार्दूल। आप प्रसन्न होइये, हमारी कुबाणियोंको क्षमा कीजिये, यदि हमसे छिपाने योग्य नहो और हम सुनने योग्य हों, तो आप कहिये आप सिद्ध हैं? या देवता हैं? अथवा गन्धर्व्व हैं? यहा गुह्यक है? आपने यह बानरका रूप क्यों धारण किया है? हे पापरहित। हम शिष्यके समान आपके शरणागत हैं।

श्रीहनुमानजी बोले, हे शत्रुनाशन। हमारे जाननेको जो आप इच्छा करते हैं, सो हम सब कहते हैं, आप सुनिये। हे वामननयन। हम केशरीबानरकी स्त्रीके गर्भसे जगत्के आयु वायुके वीर्य्यसे उत्पन्न हुए हैं, हमारा नाम हनुमान वानर है, सूर्य्यके पुत्र सुग्रीव और ‥ पुत्र वालि थे, वे दोनों सब वानरोंके राजा थे, वानरोंके यूथपाल इन दोनोंकी और मेरी सेवा करते थे, हे शत्रुनाशन। ये सब महा पराक्रमी थे, हमारा और सुग्रीवका ऐसा प्रेम था जैसा अग्नि और वायुका है, राजा बालि किसी कारणसे सुग्रीवसे अप्रसन्न होगये, तब सुग्रीवने बहुत दिनतक मेरे सहित ऋष्यमूक पर्व्वत पर निवास किया, उसी समय विष्णुके अवतार दशरथके पुत्र महावीर महापराक्रमी रामचन्द्र पृथ्वीमें घूम रहे थे। धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ राम अपने पिताका प्रिय काम करनेसी इच्छासे स्त्री, भाई और धनुषके सहित दण्डकारण्यमें रहते थे, जनस्थानसे उनको स्त्रीको छल और बलसे राक्षसराज दुरात्मा बलवान रावण चुरा कर ले गया। हे पापरहित। उस समय सुबर्ण और रत्नोंके हरिणका रूप बना कर मारीचने पुरुषसिंह रामको छल लिया था।

१४७ अध्याय समाप्त।

श्रीहनुमानजी बोले, जब रामकी स्त्री चुराई गई, तब वे उसको ढूढने हुए ऋष्यमूक पर पहुंचे, वहां एक शिखर पर बैठे हुए वानरसिंह सुग्रीवको देखा, अनन्तर महात्मा रघुवंशीराम और सुग्रीवका प्रेम होगया, उन्होंने वालिको मारकर सुग्रीवको राज्य दिया। सुग्रीवने राजा होकर सैकड़ों सहस्रों वानर सीताके ढूढनेको भेजा, हे महाबाहो। हे पुरुषसिंह। मैं भी उसी समय करोड़ों वानरोंके सहित सीताके ढूढनेको दक्षिणकी ओर गया, तब महात्मा सम्पाति नामक वृद्ध गिद्धने कहा कि सीता लङ्कामें है, तब मैं उत्तम कार्य्य करनेवाले रामचन्द्रका कार्य्य करनेको सौ योजनके चौड़े समुद्रको लांघ गया। हे भरतकुलश्रेष्ठ। तब मैंने अपने पराक्रमसे मकरोंके स्थान समुद्रको पार होकर देवतोंकी पुत्रीके समान जनकराज पुत्री सीताको लङ्कामें देखा। मैं रामकी प्यारी विदेहराज-नन्दिनी दिव्य रूपवाली सीता से

मिल कर अटारी महल और फाटकोंके सहित लङ्काको जलाकर और वहां रामका नाम सुनाकर पुनः लौट आया। कमलनेत्र रामने मेरे वचन पर विश्वास करके अत्यन्त बुद्धिसे समुद्रका पुल बांधा और करोड़ों बानरोंको सग लेकर समुद्र के पार गये, फिर अपने पराक्रमसे सब राक्षसोंका नाशकर युद्धमें लोकोंके दुःख देनेवाले राक्षसोंके राजा रावणको भाई, पुत्र और बान्धवोंके सहित मार डाला, फिर लङ्कामें राक्षसराज बिभीषणको राजा बनाया, बिभीषण धार्म्मिक भक्त और अपने दासोंके ऊपर कृपा करनेवाले थे। तब रामने नष्ट वेदकी श्रुतिके समान अपनी स्त्रीको प्राप्त किया। अनन्तर महायशस्वी राम अपनी पतिव्रता स्त्रीके सहित शीघ्रतासे अयोध्यापुरीमें पहुंचे, शत्रुओंसे जीतनेको अयोग्य अयोध्यामें रघुनन्दनने निवास किया, जिस दिन कमलनेत्र राजोंमें श्रेष्ठ महाराज रामचन्द्र राजगद्दी पर बैठे, उसी दिन मैंने उनसे यह वरदान मागा था, कि हे शत्रुनाशन राम। जब तक आपकी यह कथा पृथ्वीमें रहै तभी तक मैंभी जीता रहूं, तब उन्होंने कहा कि ऐसा ही हो। हे शत्रुनाशन भीम। तबसे मुझे सीताकी कृपासे सब सुखकी वस्तु यहीं प्राप्त हो जाती है। राम ग्यारह सहस्र वर्ष राज्य करके स्वर्गको चले गये। हे पापरहित। तबहीसे अप्सरा और गन्धर्व्व रामके चरित्रको गाकर मुझे प्रसन्न किया करते हैं, हे कुरुनन्दन। इस मार्गमें कोई मनुष्य नहीं जा सकता है, इसी लिये तुम्हारे निमित्त मैंने रोका है। हे भारत। मैंने बिचारा कि यह देवतोंका मार्ग है, इसमें कोई मनुष्य नहीं जासकता है, तुम्हें कोई दुःख न हो, तुम जिस लिये आये हो वह तालाब यही है।

१४८ अध्याय समाप्त।

———

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, प्रतापवान महाबाहु भीमसेनने हनुमानके बचन सुन कर उनको प्रीतिके सहित प्रणाम किया और प्रसन्न चित्त हो मीठे वचनसे ऐसा कहने लगे, जगतमें हमारे समान धन्य पुरुष कोई नहीं है, क्योंकि हमने आपका दर्शन किया, आपने जो हमको दर्शन दिया, सो बहुत कृपा करी, हे बीर! हम एक इच्छा और रखते है, आपने जिस समय जल जन्तुओंके स्थान समुद्रको लांघा था, उस समय जो अनुपम रूप धारण किया था, वही हम देखना चाहते है, उसके देखने से हम बहुत प्रसन्न होंगे, और आपके बचनका बिश्वासभी करेंगे।

भीमसेनके वचन सुन तेजस्वी हनुमान हँस कर कहने लगे, उस रूपको देखनेमें तुम अथवा और कोई पुरुष समर्थ नहीं है, क्योंकि वह समय और वह अवस्था दूसरी थी। वह सब अब नहीं है, सत्ययुगमें त्रेतामें और तथा द्वापरमें औरही हो जाता है। यह समय नाश होनेका है, अब हमारा रूप वैसा नहीं है। पृथ्वी, नदी, वृक्ष, पर्व्वत, सिद्ध देवता और ऋषि लोग युग युगमें समयके अनुसार बर्त्ताव करते हैं, समयके अनुसारही बल और शरीर उत्पन्न और नाश होते हैं, हे कुरुनन्दन। उस बल और शरीरको धारण करके अब हम नही रहते हैं, इस युगके अनुसार बर्त्ताव करते हैं, क्योंकि काल बड़ा कठिन है, इससे तुम उस रूपके देखनेकी इच्छा मत करो।

भीम बोले, हे बीर। तुम हमसे युगोंकी संख्या और उनके अलग अलग धर्म्म, उस समयके पुरुषोंका बीर्य्य कार्य्य उत्पत्ति, बिनाश और सुख दुःखोंका वर्णन करो।

हनुमान बोले, हे तात! सबसे पहले कृत युग (सत्ययुग) था, उसमें जो पुरुष उत्पन्न होते थे, वे सब कृतार्थही थे, इसीसे उसका नाम कृतयुग था, वह सब युगोंमें उत्तम था,

उसमें सब लोग सनातन धर्म्महीको करते थे, उस युगमें धार्म्मिक दुःखी नहीं होता था, और न किसीकी सन्तान मरती थी। देव, दानव, यक्ष गन्धर्व्व, राक्षस, और सर्प इनमें इतर विशेष भाव न था, अर्थात् ये सब ही सब लोगोंके साथ बात चीत करते थे। हे तात! उस सत्ययुगमें वेचना और लेनाभी नहीं था, न ऋग, यजु और सामवेदोंके वर्ण थे, न पुरुषोंकी कोई क्रिया थी और सङ्कल्प मात्रही फल प्राप्त होते थे। शस्य फलादिके लिये मनुष्यसाध्य कर्षणादि की अपेक्षा नहीं करनी एसी थी। सन्न्यास धर्म्म था, उस सतयुगके आदिमें न कहीं रोग न इन्द्रियोंके बलकी हानि थी, न कोई कहीं रोता था, न किसीको अभिमान वा विकार था, न कोई किसीसे लड़ता था, न किसीसे लड़ाई झगड़ा होता था, न कोई किसीसे वैर करता था, न कोई आलसी और न कोई चुगली करनेवाला था, उस समय न भय, न दुःख न ईर्षा और न डाह था, इसीसे योगीश्वर लोग परम ज्ञानको प्राप्त करके मोक्षको पाते थे। उस समयमें सब जगतकी आत्मा नारायणका सफेद रङ्ग था, उस सतयुगमें ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शूद्र निज वर्णोचित लक्षणोंसे संयुक्त थे, सब लोग अपना अपना कर्म्म करते थे, सब लोग समान आश्रय, समान आचार, समान ज्ञान, समान कर्म्म और समान समान धर्म्मवाले थे, सब लोग एकही देवकी उपासना करते थे, अलग अलग धर्म्म होने परभी सब लोग एकही वेदके आश्रयसे एकही धर्म्मको करते थे, चारो आश्रमोंके उचित कर्म्म करके और समयके अनुसार धर्म्म करके सब लोग मोक्षको प्राप्त करते थे, सतयुगमें चारो वर्णोंका सनातन धर्म्म चारो चरणोंसे पृथ्वीमें था। हे तात यह सतयुग सतरज और तमोगुण-से रहित था, हमने सतयुगके धर्म्म कहे अब ... के सुनो।—

त्रेतायुगका मुख्य धर्म्म यज्ञ करना थ इसमें एक चरण धर्म्म कम हो गया था औ विष्णुका रङ्ग लाल हो गया था, सब पुरु क्रिया और धर्म्म करते थे इसहीसे सत्य व होते थे, उस युगमें अनेक प्रकारकी क्रिय धर्म्म और यज्ञ होते थे, त्रेतामें सङ्कल्प सि होते थे, क्रिया और दानके फलभी ठीक ठी होते थे, उस त्रेतायुगमें सब लोग अपने अ धर्म्मकी क्रियाओंको करते थे, सब जप औ दानमें निपुण थे सत्यसे कभीभी न हटते थे।

द्वापर युगमें धर्म्मके दो चरण रह गये और विष्णुका रङ्ग लाल होगया था। इ द्वापर युगमें कोई द्विवेदी कोई एक वे और कोई एक दमसे वेद शून्य हो गया थ इस प्रकार अलग अलग शास्त्र होनेसे सब क्रियाभी अलग अलग हो गई थी, सब लो तप और दानमें प्रवृत्त हो गये थे, उस सम रजोगुण अधिक हो गया था, कोई एक वे कोभी नहीं पढ़ सकता था, इसीसे वेदो अनेक टुकड़े हो गये, इस युगमें सतोगुण नाश हो गया था, इसीसे कोई कोई सत्य बोल नेवाला रह गया था, सत्यनाश होनेसे अने प्रकारके रोग उत्पन्न हो गये, इसी यु प्रारब्ध वशसे अनेक काम आदि और द उपद्रव उत्पन्न हो गये, उनसे अत्यन्त पीड़ि हो कर कोई पुरुष तपस्या, कोई स और काम सिद्ध होनेके लिये अनेक प्रकार यज्ञोंको करने लगे। हे कुन्ती नन्दन! इ प्रकार द्वापर युगमें प्रजासे धर्म्म नष्ट गया। अब हम कलियुगके धर्म्म कहते हैं

कलियुगमें धर्म्मका एकही चरण शेष इस युगमें विष्णुका रङ्ग काला हो गया है, अ वेदकी क्रिया और धर्म्म सब नष्ट हो जायगे छः प्रकारकी इति (अतिवृष्टि, अनावृष्टि, मू टीड़ी, राजोंकी युद्ध आदि) होंगी। अब

देकारके रोग आलस्य क्रोधादिक दोष उपद्रव, मानसिक दुःख और भूख प्यास अधिक हो जायगी। युग बदलनेसे धर्म्म बदलता है, धर्म्म बदलनेसे लोक बदल जाता है, लोकके नाश होनेसे जगत्‌के चलानेवाले नियमोंका नाश होजाता है, यह सब होनेसे प्रार्थना भी निष्फल हो जाती है, इस कलियुगको आये थोड़ाही समय बीता है, अभी यह युगके बदलनेका समय है। हे शत्रुनाशन! तुम जो हमारे उस रूपको देखनेकी इच्छा करते हो, सो ऐसे निरर्थक कामके करनेकी कौन पुरुष इच्छा करता है? हे महाबाहो! तुमने जो हमसे युगोंका नियम पूछा था, सो हमने तुमसे सब कहा, तुम्हारा कल्याण हो, तुम यहांसे चले जाओ।

१४९ अध्याय समाप्त।

भीमसेन बोले, हम आपके पहले रूपको बिना देखे किसी प्रकारसे नहीं जायगे, यदि आप हमारे ऊपर कृपा करते हैं, तो उस रूपको हमें दिखलाइये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भीमसेनके ऐसे वचन सुनकर, वानरराज हनुमानने हंसकर उनको वह रूप जो उन्होंने समुद्र लांघते समय बनाया था दिखला दिया। अपने भाई भीमसेनकी प्रियकामनासे हनुमानने अपने शरीरका बहुत विस्तार किया, हनुमानका शरीर बहुत बढ़नेसे वह केलेका वन टूटने लगा और सब पर्व्वत कांपने लगे, उस समय अत्यन्त शरीर बढ़नेसे हनुमान दूसरे पर्व्वतके समान शोभित होने लगे, उस समय हनुमानके लालनेत्र, तेज दांत, टेढ़ी भौं और लम्बी पूंछसे दशो दिशा व्याप्त होगई, कुरुकुलनन्दन भीमसेनने अपने भाई हनुमानका ऐसा रूप देखकर बहुत आश्चर्य किया और वारवार प्रसन्न होने लगे भीमसेनने सूर्य्यके समान तेजस्वी सोनाके पहाड़के समान शरीरवाले और जलते हुए आकाशके समान हनुमानको देखके अपने नेत्रोंको बन्द कर लिया। तब भीमसेनको आश्चर्य दिलाते हुए हनुमान कहने लगे, हे पापरहित भीम! तुम हमारे इतने ही रूपको देख सकते हो, यदि तुम्हारी इच्छा हो तो हम और भी अपने शरीरको बढ़ावें? हे भीम! शत्रुओंके युद्धसे तेजके सहित शरीर बढ़ता है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, हे राजन्! जनमेजय! भीमसेन उस अद्भुत भयानक और बिन्ध्याचलके समान हनुमानके रूपको देखकर भ्रान्त होगये और शरीरके सब रोयें खड़े होगये तब भीमसेन प्रसन्नचित्तसे हाथ जोड़कर हनुमानसे कहने लगे हे महावीर! हे नाथ! हमने आपका यह बड़ा भारी शरीर देखा, अब आप इसे फिर छोटा कर लीजिये क्योंकि मैं आपके इस प्रमाणरहित शरीरको देखनेमें समर्थ नहीं हूं, इसका तेज सूर्य्यके समान और विस्तार जीतनेमें अयोग्य सूर्य्य मैनाक पर्व्वतके तुल्य है, हे वीर! मेरे हृदयमें इस बातका बहुत आश्चर्य होता है कि आपके सग रामचन्द्र रावणके पास कैसे गये थे, क्योंकि आप अकेलेही अपने बाहुबलसे समस्त लंका को वाहन और वीरोंके सहित नाश कर सकते थे! हे वायुपुत्र! जगतमें कोई वस्तु ऐसी नहीं है जो आपको न मिल सके, अकेले आपहीसे लड़नेकी रावणकी शक्ति नहीं थी।

श्रीवैशम्पायन मुनिजी बोले, बन्दरोंमें श्रेष्ठ हनुमान भीमके ऐसे वचन सुन गम्भीर और मीठी बानीसे बोले हे महाबाहो! तुम जो कहते हो सो सब ठीक है, हे भीम! हे भारत! वह नीच राक्षस रावण हमसे लड़नेमें समर्थ नहीं था, परन्तु यदि मैंही लोक कण्टक रावणको मार डालता तो रघुनन्दनकी कीर्त्तिका नाश हो जाता, इससे मैंने उसको छोड़ दिया था, और राम राक्षसोंमें नीच रावणको बान्धवोंके सहित मार कर सीताको

अपनी पुरीमें लाये और और अपनी कीर्त्तिको स्थापन किया। हे महाबुद्धिमान्! अब तुम चले जाओ, तुम अपने भाईकी सेवा करना तुम्हारा मार्गमें कल्याण होगा, वायु तुम्हारी रक्षा करे, हे पुरुषश्रेष्ठ। यह सौगन्धिक बनका मार्ग है, आगे जाकर यक्ष और राक्षसोंसे रक्षित कुबेरके बागीचोंको देखोगे। तुम वहां जाकर जल्दी अपने हाथसे फूल मत तोड़ना, क्योंकि पुरुषोंको उचित है कि देवतोंको विशेष करके माने, हे भरत कुलसिंह! देवता लोग बलि, होम, नमस्कार, मन्त्र और भक्तिसे प्रसन्न होते हैं, हे तात। साहस मत करो, अपने धर्म्मको पालो, अपने धर्म्ममें स्थित हो कर परम धर्म्मको जानते रहो और उसे प्राप्त करो, कोई पुरुष बिना धर्म्मको जाने, और बिना बूढ़ोंकी सेवा किये बृहस्पतिके तुल्य होने परभी धर्म्म और अर्थको नहीं पासकता। अधर्म्म जहां धर्म्मके नामसे प्रसिद्ध होताहै और धर्म्म जहां अधर्म्मके नामसे पुकारा जाता है उसको अच्छी तरह जान लेना चाहिये, मूर्ख लोग उसमें मोहित हो जाते हैं। आचारसे धर्म्म उत्पन्न होता है, धर्म्मसे वेद स्थित हैं, वेदसे यज्ञ और यज्ञोंसे देवता स्थित हैं, वेदोक्त विधिसे देवता लोग अपना निर्वाह करते हैं और बृहस्पति तथा शुक्रकी कही नीतिसे मनुष्य अपना निर्वाह करता है, राजसेवा व्योपार और उपदेश करनेकी आजीविकासे द्विजाति लोग अपना निर्व्वाह करते हैं, वेद दण्डनीति और व्यापार इन तीन विद्याओंके जाननेवाले संसारमें अपनी आजीविका करते हैं, यदि वेद विद्या और व्यापार विद्या नष्ट हो जाय तो संसारमें कोई प्राणी न जीवे और जननीति नाश हो जाय तो यह संसार मर्यादारहित हो जाय, वाणिज्य और धर्म्म यदि इस संसारमें न हो तो सब प्रजानाश को प्राप्त हो जाय, यही तीनों विद्या मिल कर धर्म्मको उत्पन्न करती हैं और धर्म्मसे प्रजा स्थित है। द्विजातियोंका परम धर्म्म सत्य है, यज्ञ करना, वेद पढ़ना, और दान करना यह साधारण धर्म्म है। यज्ञ करना, वेद पढाना यज्ञ कराना और दान लेना यह ब्राह्मणके विशेष धर्म्म हैं, प्रजापालन क्षत्रियका, व्यापारसे प्रजाका पालन करना वैश्यका और द्विजातिकी सेवा करना शूद्रोंका विशेष धर्म्म है, शूद्र लोगोंको मांगना, व्रत होमका करना तथा गुरु कुलमें रहके वेद पढ़ना मना है, हे कुन्तीपुत्र। तुम्हारा धर्म्म क्षत्रीय अर्थात प्रजाका पालन करना है, तुम जितेन्द्रिय होकर अपने धर्म्मको पूरा करो, वेदको जाननेवाले बुद्धिमान महात्मा वृद्धोंसे सलाह करके प्रजापालन करना राजाका धर्म्म है, और बुरे व्यसनवाला राजा नष्ट होता है, बन्धन और कृपाको जब राजा प्रजामें फैलाता है तब संसारमें मर्यादा स्थित रहती है, इस कारणसे देशमें किलोंमें शत्रु और मित्रोंकी सेनाओंमें अपने आप्त दूत भेजके जानना चाहिये कि किसकी बढ़ती और किसकी घटती है। राजोंका उपाय, बुद्धि, मन्त्र, बल, कृपा, और क्रोध चतुरता यही- कार्य्यको सिद्ध करनेवाले होते हैं। साम, दान, भेद, दण्ड और त्यागसे राजाको अपने सब कार्य्योंको सिद्ध करना चाहिये। राजाको उचित है कि कहीं अपना विस्तार दिखलावे और कहीं छोटा बन जाय, हे भरतसत्तम। मन्त्रीहीके आधीन सब नीति है दूतभी मन्त्रके आधीन है इस वास्ते विद्यामानोंके साथ मन्त्र करना चाहिये, स्त्रियोंसे, बालकोंसे, मूर्खोंसे, लोभियोंसे, मन्त्र कभी नहीं करे, जिनमें उन्मादिके लक्षण पाये जाते हैं उनसे भी मन्त्र नहीं करना चाहिये, विद्वानोंके समर्थोंसे सलाह करे उन्हींसे अपना काम करे, कोमल स्वभाववाले नीतिके जाननेवालोंसे राजकार्य्य करावे और मूर्खोंसे कोई काम न करावे, धर्म्मात्माओंको धर्म्म काममें, पण्डितोंको

धनके काममें, स्त्रियोंमें नपुनूमकोंको, खोटे कामोंमें खोटे आदमियोंको नियुक्त करे, अपने मनुष्योंसे अथवा दूसरे मनुष्योंसे कार्य्य बिगड़ने अथवा सुधरनेकी वुद्धि तथा शत्रुओंके वलाबलको जान लेना चाहिये।—जिन मनुष्योंकी वुद्धि उत्तमहो उन पर राजाको कृपा करनी चाहिये और जो मर्य्यादाको तोड़नेवाले दुष्ट हों उनको बन्धनमें डालना चाहिये। जब राजा बन्धनमें और कृपा करनेमें प्रवृत्त होता है तब संसारमें यश स्थित रहता है। हे कुन्तीनन्दन। हमने यह कठिन राजधर्म्म तुमसे कहा अब सब धर्म्मोंको विचार कर अपने धर्म्मको धारण करो। तप, धर्म्म, इन्द्रिय निग्रह, और पूजन से ब्राह्मण लोग स्वर्गको जाते हैं, वैश्य लोग दान, अतिथि पूजा, क्रिया और धर्म्मसे स्वर्गको जाते हैं, क्षत्री लोग बल और प्रजाके पालनसे स्वर्गको जाते हैं, क्षत्री लोग दण्डके उचित विधानसे काम और क्रोध, द्वेषसे रहित होकर पण्डितोंको गति को प्राप्त होते हैं।

१५० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। तब हनुमानने अपनी इच्छानुसार अपने उस बड़े भारी शरीरको घटा लिया, फिर दोनों हाथ फैलाकर भीमसे मिले। हे भारत। अपने भाई हनुमानसे मिलतेही भीमसेनकी [illegible] थकाई दूर हो गई और बलवान भीमसेनने [illegible] कि मुझे बहुत बल बढ़ गया और मेरे समान कोई उत्तम नहीं है, अनन्तर हनुमानने [illegible]में आंसू भरकर भीमसे प्रेमके सहित [illegible] कहा कि हे वीर। तुम अपने [illegible] जाओ हमको किसी बातोंसे स्मरण [illegible] करना है परन्तु हे महाबल। [illegible] घरके घरसे भी लौट कर आता [illegible] भी हमारा स्थान न बताना, देश और [illegible] अनुसार यहां देव गन्धर्व्वोंके आनेका समय हुआ है, तुमको देखने और श्रीरामचन्द्रकी स्मरण करनेसे मेरे नेत्र सुफल होते हैं जगत्के हृदयको सुख देनेवाले, सीता मुख कमलके सूर्य्य, रावण अन्धकारके दिवाकर, श्रीरामरूपी विष्णुका स्मरण करनेसे हमको आनन्द होता है, हे कुन्तीनन्दन। हमारा दर्शन करनेसे तुमको अनन्त फल होगा, हे भारत। तुम हमको अपना भाई समझ कर वरदान मांगो, हे महाबल। यदि तुम कहो तो हम हस्तिनापुर जाकर उन क्षुद्र धृतराष्ट्रके पुत्रोंको नाश कर दें, यदि तुम कहो तो हम एक शिलासे उस सब नगरको चूर कर दें?

श्रीवैशम्पायनजी बोले, हे राजन् जनमेजय। भीमसेनने महात्मा हनुमानके वचन सुन, प्रसन्न होकर कहा, हे महाबाहो। हे बानरराज। आपने हमारे निमित्त जो कुछ कहा सो सब किया हुआ समझिये, आपका कल्याण हो आप मुझ पर कृपा कीजिये। जिन पाण्डवोंके आप नाथ हैं वह सब सनाथ हो हैं, हे तेजस्विन्। आपहीके तेजसे हम शत्रुओंको जीतेंगे। भीमसेनके ऐसे कहने पर हनुमान भाईपन और मित्र भावसे भीमसेनसे बोले कि मैं तुम्हारा प्रिय कार्य्य करूंगा तुम्हारे शत्रुओंकी सब सेनामें धस कर जब तुम सिंहके समान गर्जन करोगे तब मैं अपनी गर्जनसे तुम्हारी गर्जनको बढ़ा दूंगा, अर्ज्जुनकी ध्वजा पर बैठकर भयानक रूपसे गरजूंगा, जिससे तुमलोग शत्रुओंके प्राण सुखसे नाश कर सको, मैं ऐसे यत्नहो करूंगा। इस प्रकारसे हनुमान पाण्डुपुत्र भीमसेनसे बात करके भीमसेनको राह बताके वहीं अन्तर्द्धान होगये।

१५१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् ! बानरोत्तम हनुमानके चले जाने पर बलवानोंमें श्रेष्ठ भीमसेन हनुमानके बतलाये मार्गसे गन्धमादन पर्व्वत पर इधर उधर घूमने लगे, हनुमानके उस शरीर और अनुपम शोभा और दशरथ पुत्र श्रीरामचन्द्रके प्रभाव और महात्मकी स्मरण करते हुए भीमसेन वहांसे चले। भीमसेन मनोहर बन, मार्ग, खिले फूलवाले वृक्ष, तलाव, नदी और भांति भांतिके फूलोंसे भरे छोटे बन और हाथियोंके झुण्ड वरसाऊ मेघोंके समान देखते हुए चले, चंचल अंगवाले हरिनोंसे शोभायमान वनको मार्गमें देखते हुए शीघ्रताके साथ भीमसेन चले। बनके भैंसे, बाराह, और शारदूलोंसे भरे वनको निडर भावके साथ देखते हुए चले, भांति भांतिके फलोंकी सुगन्धि और तामेंके रंगवाले कोमल पत्तोंसे पूर्ण वृक्ष हवासे कांपते हुए ऐसे जान पड़ते थे मानो भीमसेनसे क्षमा मांगते हों। पद्मोके संपुट लगे हुए जिन पर भौरे गूंजते हैं ऐसे मालूम होते थे मानो भोमसेनको कोई भेट देता है, मार्गमें पर्व्वतोंकी शोभा और भांति भांतिकी धातु तथा फूलोंकी शोभाको देखते हुए द्रौपदीके बचनको स्मरण करते हुए भीमसेन बहुत शीघ्र चले, जाते जाते कुछ दिनके पश्चात ऐसे बनमें पहुंचे जहां हरिन बहुत सुखसे विचरते थे। उस बनमें एक नदी ऐसी देखी जिसमें सोनेके रङ्गके कमल खिले थे, उस नदीके किनारे पर हंस सारस और चकवे मनोहर शब्द कर रहे थे। वह नदी ऐसी जान पड़ती थी कि मानो पर्व्वतकी माला है। उस नदीमें महाबली भीमने चित्तको प्रसन्न करनेवाले सूर्य्यके समान तेजवाले कमलोंका समूह देखा, उसको देखकर अपनी मनसाको सुफल हुई जान मनसे उस द्रौपदीका ध्यान किया जो बनबाससे बहुत दुखी हुई थी।

१५२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, कि भीमसेनने उ मनोहर कमलनी वाले तलावके पास जाक देखा, कि राक्षस उसकी चारों ओरसे रक्षा क रहे हैं। कुबेरके स्थानके पास पर्व्वतके झरनों उत्पन्न हुई, मनोहर और घनी छायावाल वृक्षोंसे घिरी हुई, हरे हरे कमलोंसे पूर सुवर्ण रंगके कमल जिसमें खिले थे, अने भांतिके पक्षी जिसमें शब्द कर रहे थे, जिस घाट बड़े सुन्दर थे, जिसमें कीचका ना न था, जिसमें स्वच्छ जल भरा था, पर्व्वतके कन्दराओंसे उत्पन्न हुई अद्भुत रूप वाल नदी पर जाकरके अमृत समान शीत जल कुन्तीपुत्र पाण्डवने देखा और पीय उस मनोहर दिव्य सुगन्धवाले ऐसे कमलों भरी जिनकी दण्डी लहसुनियेके रंग समान थी, जिसके समीप हंस औ सारस आदिक बोल रहे थे, और जिन निर्म्मल केशर झड़ती थी यह पोख महात्मा कुबेरकी क्रीड़ाका स्थान था। इ पर गन्धर्व्व और अप्सरांके सहित देवताले बिहार करते थे, दिव्य ऋषि यक्ष किम्पुरुष और राक्षस इस पोखरकी रक्षा करते थे, विश्रवाके पुत्र कुवेरसे यह पोखर रक्षित थी, महाबली कुन्तीपुत्र भीमसेन वह देख कर बहुत प्रसन्न हुए। उस पोखरकी क्रोधवश नाम राक्षस कुवेरकी आज्ञासे रक्षा करते थे, वह सहस्रों राक्षस विचित्र राक्षस विविध शस्त्र और वस्त्र पहिने हुए वहां खड़े थे, वे लोग कुन्तीपुत्र भीमसेनको मृगचर्म्म और सुवर्णके आभूषण पहिने, शस्त्र लिये, निडर देखके आपसमें कहने लगे, कि यह पुरुषसिंह शस्त्र लिये और मृगचर्म्म ओढ़े जो यहां आया है, सो क्या करना चाहता है? यह जानना चाहिये। तब वह सब राक्षस महाभुज तेजस्वी भीमके पास जाकर पूछने लगे कि तुम मुनियोंका वेश धारण किये और शस्त्र लिये औ यहां

आये हो सो तुम्हारे क्या प्रयोजन है? हमसे कहो।

१५३ अध्याय समाप्त।

भीमसेन बोले,हे राक्षसो। मैं राजा पाण्डुका पुत्र धर्म्मराज युधिष्ठिरका भाई भीमसेन हूं,मैं भाइयोंके सहित इस वदरिकाश्रम पर आया हूं इस वदरिकाश्रममें पाञ्चालराजपुत्री द्रौपदीने वायसे फेंका हुआ एक कमल देखकर वैसेही और कमलोंको चाहा, हे राक्षसो। मैं उनहीं मनोहर अंगवाली धर्म्मपत्नी द्रौपदीके चाहे हुए कमलोंको लेने आया हूं। राक्षस बोले, हे पुरुषश्रेष्ठ। यह कुवेरकी क्रीड़ाका स्थान है यहां मरण धर्म्मवाले मनुष्योंको विहार करनेकी आज्ञा नहीं है, हे वृकोदर। यहां पर देवर्षि, यक्ष और देवता लोग यक्षराज कुवेरकी आज्ञा पाकर जल पीते और विहार करते हैं, हे पाण्डव। गन्धर्व्व लोग और अप्सरा यहां पर विहार कर सकती हैं, यदि कोई अन्यायसे महाराज कुवेरका अनादर करके विहार करनेकी इच्छा करता है, तो वह नष्ट कर दिया जाता है। उस कुवेरका अनादर करके तुम कमल लेना चाहते हो, तब कैसे कहते हो कि हम धर्म्मराज युधिष्ठिरके भाई हैं, पहले कुवेरकी आज्ञा लेलो, तब इस पोखर पर विहार करना, यदि ऐसा न करोगे, तो इस पोखरको कुछ नहीं देख सकोगे। भीमसेन बोले, हे राक्षसो। मैं धनेश्वर कुवेरको [illegible] तो नहीं देखता हूं, यदि उन महाराजको [illegible] भी तो उनसे कुछ मांगनेकी इच्छा नहीं [illegible] हूं यह सनातन धर्म्म है, कि राजा [illegible] किसीसे कुछ मांगते नहीं हैं, मैं क्षत्रिय-[illegible]को छोड़ना नहीं चाहता हूं। यह पोखर [illegible] झरनोंसे बनी है यह पोखर जैसी महा-[illegible]की है, वैसीही सब प्राणियोंकी है, [illegible] को कोई किसीसे मांगता नहीं है।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, ऐसे सब राक्षसोंसे कहकर महाबली और महाक्रोधी भीमसेन उस पोखरमें घुस गये,तब चारो तरफसे राक्षसोंने बचन द्वारा ऐसा मत करो कहा, प्रतापवान् भीमसेनसे ऐसा कहते हुए राक्षसोंको क्रोध आगया,महा पराक्रमी और महा-तेजस्वी भीमसेनने उन सब राक्षसोंको क्षुद्र समझ कर उस तालावमें स्नान किया। परन्तु राक्षस लोग उनको रोकने लगे, वे लोग क्रोध करके चिल्लाने लगे, कि इसको पकड़ो, बांधो, काटो, खा जाओ और पकालो। ऐसा कह नेत्रोंको फैला कर और शस्त्रोंको लेकर भीमसेनकी ओर दौड़े भीमसेनभी सोनेसे चित्रित यमदण्डके समान भारी गदाको लेकर वेगसे उनकी ओर दौड़े और कहने लगे, खड़े रहो, खड़े रहो। तीक्ष्ण पराक्रमी राक्षस लोगभी भीमसेनको मारनेकी इच्छासे गदा तोमर और पट्टिश आदि शस्त्रोंको लेकर वेगसे भीमसेनकी ओर दौड़े, जो भीम वायुके वीर्य्यसे कुन्तीके गर्भमें उत्पन्न हुए थे, वह वेगवान शत्रुओंसे अजेय थे, वही महात्मा उन राक्षसोंके सब वाणोंको काटने लगे, भीमसेनने अपने वाणोंसे उस पोखरके पास सैकड़ों राक्षसोंको मार डाला। वीर राक्षसोंने जब उनके विद्या-बल बाहुबल और वीर्य्यको देखा, तो असमर्थ होकर भागने लगे, बहुतसे राक्षस उनको मारनेकी इच्छासे संज्ञाहीन होकर आकाशको उड़ने लगे, अनेक क्रोधसे व्याकुल होकर कैलाशके शिखरोंमें छिपने लगे। शत्रुओंके जीतनेवाले भीमसेनने इन्द्रके समान उन राक्षसोंको जीतकर उस पोखरमें जाके अपने लिये कमल तोड़ लिया, उस पोखरके अमृत समान जलको पीनेसे भीमसेनका बल और वीर्य्य उत्तम हो गया, फिर उन्होंने उत्तम सुगन्धिवाले अनेक कमलोंको तोड़ लिया। राक्षस लोगोंने भीमके बल और भयसे व्याकुल होकर कुवेरके

पास जा उनके बल और वीर्य्यका वर्णन किया। कुवेर उनके बचन सुन हंसकर कहने लगे, हम जानते हैं, कि भीमसेन द्रौपदीके लिये कमल लेनेको आया है। राक्षस लोग कुवेरकी आज्ञा लेकर फिर उसी पोखर पर आये। उन्होंने कुरुकुलश्रेष्ठ भीमसेनको उसी पोखरमें इच्छानुसार विहार करते देखो।

१५४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनजी बोले, हे जनमेजय। तब भीमने बहुत श्रेष्ठ मलसे रहित अनेक कमलोंको ले लिया, उस समय बड़ा श्रेष्ठ वायु बहुत वेगसे चलने लगा, जिससे भीम शीघ्रही नीचेको आसके; उस समय युद्धके सगुन होने लगे, बहुत भय देनेवाली बिजली शब्दके सहित आकाशसे गिरी, सूर्य्य अन्धकार छिपनेके कारण तेजसे रहित हो गये; समस्त जगत्में ऐसा अन्धकार छाया, कि किसीको कुछ न दीखने लगा। जहां भीमसेन अपने पराक्रमसे स्थिर थे, वहां एक घोर शब्द हुआ, समस्त पृथ्वी चलायमान होगई, आकाशसे धूल बर्षने लगी, सब दिशा लाल होगई, पक्षी और हरिन गधेके समान शब्द करने लगे और भी अनेक घोर उत्पात होने लगे। इन सबको देखकर कहनेवालोंमें श्रेष्ठ धर्म्मराज युधिष्ठिर कहने लगे, कि न जाने हमसे कौन युद्ध करेगा। हे महायुद्ध करनेवाले नकुल सहदेव। तुम्हारा कल्याण हो, युद्ध करनेको तय्यार हो जाओ, हम इन सब लक्षणोंको देखकर जानते हैं, कि अब युद्ध करनेका समय आगया। महाराजने ऐसा कह कर चारों ओर देखा, तो भीमको न पाया, तब शत्रुनाशन महाराजने नकुल, सहदेव और द्रौपदीसे पूछा, कि हे द्रौपदी। युद्धमें घोर कर्म्म करनेवाले महापराक्रमी हमारे भाई भीमसेन कहां हैं और क्या हैं? क्या उस उत्साही वीरने कोई युद्ध आरम्भ किया है? हमको यह युद्धके उत्पात अकस्मात् दिखलाई देने लगे हैं, इससे घोर भय होनेकी शंका है। महाराजके ऐसे बचन सुन उत्तम हंसनेवाली मनस्विनी, महाराजकी पटरानी द्रौपदी कहने लगी।

द्रौपदी बोली, हे महाराज। वह जो फूल वायुसे उड़ कर आया था, मैंने उसको देखकर भीमसेनको प्रसन्न करके कहा, कि हे वीर। यदि आप ऐसे कमल और कहीं देखें, तो उन सबको शीघ्र ले आइये तो मैं बहुत प्रसन्न होऊंगी। महाबाहु पाण्डुनन्दन भीम, मुझे प्रसन्न करनेकी इच्छासे उत्तर और पूर्व कोनेकी ओर उन्हीं फूलोंको लेने गये हैं। द्रौपदीके वचन सुन महाराजने नकुल और सहदेवसे कहा, कि जिस मार्गसे भीमसेन गये हों, हम सबकोभी उसी मार्गसे शीघ्र चलना चाहिये सब राक्षस लोग दुर्ब्बल और थके हुए ब्राह्मणोंको ले चलें। हे घटोत्कच। हे देव तुल्य। तुम द्रौपदीको ले चलो, हमको निश्चय होता है, कि भीमसेन बहुत दूर चले गये, क्योंकि वह वायुके समान शीघ्र चल सकते हैं। वह गरुड़के समान शीघ्र चलनेवाले हैं, वे चाहें तो पृथ्वीको लांघें और चाहें तो आकाशको उड़ जायं और अपनी इच्छानुसार जितना चाहें कूद सक्ते हैं। हे राक्षसो। हम तुम लोगोंके पराक्रमसे उनको ढूंढने जाया चाहते हैं। भीमसेनने कभी पहले वेदपाठी सिद्धोंका अपराध नहीं किया है। हे जनमेजय। उन मार्ग जाननेवाले राक्षसोंने प्रसन्नचित्तसे महाराजकी आज्ञाको स्वीकार कर, लोमश मुनिके सहित पाण्डव और अनेक ब्राह्मणोंको अपने ऊपर चढाके कुवेरकी पोखरकी ओर गमन किया। हे राजन्। जब सबने शीघ्रता सहित जाकर उस मनोहर वन, सुगन्धिवाले कमलोंसे भरी हुई पोखर और उसके तटपर बैठे हुए मनस्वी महात्मा भीमसेनको देखा और

उनके पास जो विशाल नेत्रवाले यक्षलोग मरे पड़े थे, उनकोभी देखा। उन मरे हुए यक्षोंके सिर हाथ और जङ्घा टूट गई थीं और महात्मा भीमसेनभी उन्हींके पास बैठे थे। भीम क्रोधसे अपने नेत्रोंको खोलते और बन्द करते, ओठोंको चबाते और दोनों हाथोंसे गदाको उठाये हुए बैठे थे। उस समय वह प्रलयकालके यमराजके समान दीखते थे। महाराज युधिष्ठिर उनको देख कर लपट गये और मीठो वाणीसे बोले, कि हे कुन्तीनन्दन। यह तुमने क्या किया? तुम्हारा कल्याण हो ऐसा अयोग्य साहस देवतोंको प्रिय नहीं है। हे वृकोदर। यदि तुम हमारी प्रीति चाहते हो, तो ऐसा फिर न करना; अब उन फूलोंको लेकर इस कामको समाप्त करो। उसी समय पोखरसे अनेक शस्त्रधारी देवतोंके समान रूपवाले उस वनकी रक्षा करनेवाले लोग प्रकट हुए। हे जन्मेजय! वे सब धर्मराज युधिष्ठिर महर्षि लोमश, नकुल, सहदेव तथा अन्य उत्तम ब्राह्मणोंको देखकर बिनय पूर्व्वक प्रणाम करने लगे, महाराजने उनको बहुत शान्त किया, तब वे सब प्रसन्नता पूर्व्वक वहां बैठे। कुरुकुलश्रेष्ठ पाण्डवलोग कुवेरकी सम्मतिसे अर्जुनका मार्ग देखते हुए थोड़े दिन इस गन्धमादन पर्व्वत पर रहे।

सौगन्धिकाहार प्रकरण और १५५ अध्याय समाप्त।

वैशम्पायन मुनि बोले, एक दिन इस स्थानसे चलते हुए महाराज युधिष्ठिरने द्रौपदी, अपने भाइयों, और ब्राह्मणोंसे ऐसा कहा कि हमलोगोंने [illegible] और सुखदायक तीर्थ तथा मनको प्रसन्न करनेवाले वनोंको देखा, इन तीर्थोंको [illegible] देवता और महात्मा मुनियोंने स्थापन किया था, इन सबको ब्राह्मणलोग नियमानुसार [illegible]। हमने पहले ऋषियोंके चरित्र और [illegible] धर्म्म तथा राजर्षियोंकी अनेक प्रकारकी सुन्दर सुन्दर कथा उनके कल्याणदायक आश्रमोंमें सुनी। हमने ब्राह्मणोंके सहित सब तीर्थोंमें स्नान कर फल और जलसे सब देवतोंकी पूजा की, देश और समयमें मिलनेवाले मूल और फलोंसे पितरोंके तर्पणभी किया। गङ्गाद्वारसे चलकर अनेक सुन्दर पर्व्वतोंको देखते हुए अनेक पक्षियोंसे शोभित हिमाचल पर्व्वत को देखा; इला, सरस्वती, सिन्धु, यमुना और नर्म्मदादि अनेक रमणीय नदियोंमें ब्राह्मणोंके सहित स्नान किया। रमणीय पर्व्वत, सब तालाब तथा पवित्र समुद्रमें महात्माओंके सहित स्नान किया। विशाल नरनारायणके आश्रमका दर्शन, सिद्ध ऋषि और देवतोंसे पूजित विधिपूर्व्वक पोखरको देखा है। ब्राह्मणो! हमको महात्मा लोमशने क्रमके अनुसार सब स्थानोंके दर्शन कराये, यह सिद्ध सेवित और पवित्र कुवेरका स्थान है। हे भीम! आगे चलने योग्य नहीं है, हे भीम! अब आगे कैसे चलोगे, इसका विचार करो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जिस समय राजोंके स्वामी महाराज युधिष्ठिर ऐसा कह रहे थे, उसी समय आकाश-वाणी हुई कि हे राजन्! इस कुवेरके स्थानसे आगे कोई नहीं जा सकता, इस लिये जिस मार्गसे आये हो उसीसे नर-नारायणके आश्रम, बदरी नामक प्रसिद्ध तीर्थको चले जाओ; हे कुन्तीनन्दन! वहांसे तुम बहुत फूल और फलोंसे रमणीय सिद्ध और चारणोंसे सेवित वृषपर्व्वाके आश्रमको देखोगे; हे कुन्तीनन्दन! वहांसे चलकर सुखपूर्व्वक आर्ष्टिषेणके आश्रममें रहना, तब कुवेरके स्थानको देखोगे। उसी समय पवित्र, दिव्य, गन्धवाले सुख स्पर्श वायुने फूलकी वर्षा की, उन सबने उस आकाशमें आई हुई दिव्य वाणीको सुनकर बहुत आश्चर्य किया। दिव्य बर राजा, ब्राह्मण और ऋषियोंको बहुत आश्चर्य हुआ। उस परम आश्चर्य-

मयो वाणीको सुन धौम्य मुनि बोले हे भारत! इसका कोई उत्तर देनेके योग्य नहीं है। महाराज उस सब वचनको स्वीकार कर भीमादि भाई, द्रौपदी और सब ब्राह्मणोंके सहित बदरिकाश्रम को लौट आये और वहां सुखसे रहने लगे।

नरनारायणाश्रम प्रत्यागमनप्रकरण और १५६ अध्याय समाप्त।

अथ जटासुर बध प्रकरण।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले हे राजन् जनमेजय। जब भीमसेनके पुत्र घटोत्कच तथा अन्य राक्षस चले गये और पाण्डव लोग ब्राह्मणोंके सहित अर्जुनका मार्ग देखते हुए विश्वास पूर्वक रहने लगे, तब एक दिन भीमसेनके बिना, इच्छानुसार घूमते हुए धर्मराज, नकुल, सहदेव और द्रौपदीको एक राक्षसने हर लिया। वह अपनेको मन्त्र और शास्त्रोंके जाननेवाला उत्तम ब्राह्मण कहकर पाण्डवोंके तूणीर और धनुषको तथा द्रौपदीको भी हरण करनेकी अभिलाषसे पाण्डवोंकी उपासना करता था। इस प्रकार उस दुष्टात्मा पापबुद्धि जटासुर नामक राक्षसने बहुत यत्न किया उसकी इच्छा थी कि समय पाकर मैं द्रौपदीको हर ले जाऊंगा, हे राजेन्द्र! महाराज युधिष्ठिरने उसको राखसे छिपे हुए अग्निके समान न पहिचाना और उसका पालन करते रहे। हे शत्रुनाशन! एक दिन जिस समय भीमसेन शिकार खेलने, घटोत्कच अपने दासोंके सहित इधर उधर घूमने और लोमशादिक तपोधन महर्षि लोग स्नान करने और फूल लेने चले गये,उसी समय वह राक्षस भयानक रूप बनाकर पाण्डवोंके पास आया। उसने शस्त्र द्रौपदी महाराज नकुल और सहदेवको लेकर वहांसे चल दिया,परन्तु पाण्डुनन्दन सहदेव बहुत यत्न करके उसके हाथसे अपनी कौशिक नाम तलवार छीनकर खड्ग घुमाते हुए निकल गये और बड़े वेगसे अपने खड्गको कोषसे निकाल कर दौड़े, अनन्तर जिधरको भीमसेन गये उधरहीको पुकारने लगे। महापराक्रमी सह जिस समय भीमसेनको पुकारते थे, उसी स महाराजने राक्षससे कहा कि रे मूर्ख! तेरा नष्ट हुआ जाता है और तू उसे नहीं देखता। कि किसी स्थलमें मनुवंशियोंके बीच जो तिर्य योनिवाले हैं वे और उनके सिवाय अन्य प्र भी तथा विशेष करके राक्षस लोग धर्ममें किया करते हैं, राक्षस लोग धर्मके मूल स है, राक्षसही लोग उत्तम धर्मको जानते हैं, सब बातोंकी परीक्षा करके तुम्हें धर्म नियम सार निवास करना चाहिये। रे राक्षस। दे ऋषि, सिद्ध, पितर,गन्धर्व, राक्षस, सर्प, पशु, योनियोंमें उत्पन्न हुए कीट और चींटी आदि मनुष्योंसेही जीते हैं तुम्हारी जीविका भी मनु होसे है इसलोकके बढ़नेसे तुम्हारा लोक बढ़ता है, इस लोकके दुःखी होनेसे देवत दुःखी होते है, विधिपूर्वक देव और पितर कर्म पूजित होकर देवताभी प्रसन्न होते हैं;जब प्रज कोई रक्षा करनेवाला न रहा तो सुख और कहांसे होगा। रे राक्षस। राजाका किञ्चि निरादर न करना चाहिये, रे मनुष्योंको ख वाला! हमलोक शक्तिके अनुसार देवता ब्राह्मणोंकी पूजा करके यज्ञसे बचा हुआ खानेवाले हैं ; हम कुछभी अधर्म नहीं व है, हम गुरु और ब्राह्मणोंको सदा प्र समान मानते हैं। पुरुषको उचित है कि अ मित्र और विश्वाससहित पुरुषको दुःख न जिसके आश्रयसे रहे और जिसका अन्न उसे दुःख देना न चाहिये। तू हमारे आश्र सुखपूर्वक रहा है और हमने तेरा सत्का किया है, सो तू हमारा अन्न खाकर हमको हरण करता है, ऐसा करनेसे तेरी बुद्धि अव और मरण सबही वृथा हो जायगी, अतएव तू ऐसा कर्म करके वृथा मत हो। यदि महादुष्ट और सब धर्मोंसे रहित हो,

हमारे शस्त्र हमको दे दे, और युद्ध करके द्रौपदीको लेजा। यदि तू अज्ञानसे इन कर्म्मोको करेगा, तो तुझे केवल अपकीर्त्ति और अधर्म्महो प्राप्त होगा। रे राक्षस! तू इस मनुष्य जातिमें उत्पन्न हुई स्त्रीको लेजाता है, यह बहुत विषम काम है। ऐसा कहकर महाराज युधिष्ठिर बहुत भारी होगये, उनके बोझसे वह राक्षस शीघ्र न चल सका, तब महाराजने द्रौपदी, नकुल और सहदेवसे कहा कि तुम लोग कुछ भय मत करो, मैंने इस मूर्ख राक्षसकी गतिको नाश कर दियाहै और महाबाहु भीमसेनभी बहुत दूर नहीं है, जब वह यहां आजायंगे तो यह राक्षस जीता न बचेगा। हे महाराज! जब सहदेवने उस मूर्ख राक्षसको देखा, तो महाराज युधिष्ठिरसे कहने लगे, कि हे महाराज! इससे अधिक कौन बात होगी कि जो क्षत्री युद्धके सामने मरे या शत्रुको जीतले। हे शत्रुनाशन! यातो हमही इसको जीत लेंगे या यही मुझे जीत लेगा। हे महाबाहु! हे नरनाथ। यही युद्धका देश और काल है; हम अभी इसको मार डालेंगे। हे सत्यपराक्रम। यही क्षत्रियोंके धर्म्मका समय है, यदि हम युद्धमें मर गये, तो अच्छी गतिको प्राप्त होंगे। हे महाराज। यदि सूर्य्यास्त होनेके पहिले यह राक्षस जीता रह जाय तो हम अपनेको क्षत्री न कहेंगे।

रे राक्षस! खड़ा रह। खड़ा रह! हम पाण्डुके पुत्र सहदेव हैं, हम तुमको अभी मारकर पृथ्वीमें सुला देंगे अथवा तूही हमको मार कर द्रौपदीको लेजाना। जब सहदेव ऐसा कह रहे थे, उसी समय इच्छानुसार घूमते हुए, इधर इन्द्रके समान गदा लिये हुए भीमसेन आ पहुंचे. उन्होंने युधिष्ठिर, नकुल और द्रौपदीको राक्षससे पकड़े हुए. तथा सहदेवको खड़े और राक्षससे बात करते देखा। ... आश्रमसे हुए राक्षसकोभी मार्गछोड़के भीमसेनने देखा। महा बलवान भीमसेन प्रारब्धके बलसे इधर आ निकले थे। जब उन्होंने देखा कि द्रौपदी और मेरे भाइयोंको राक्षस लिये जाता है तो क्रोधसे व्याकुल होकर राक्षससे कहने लगे। रे पापी! जब तू शस्त्रोंकी परीक्षा करता था तभी हमने तुझको पहिचान लिया था। परन्तु मैंने तेरे मारनेपर ध्यानही नहीं किया था। इसीसे तू आज तक बचा रहा, हमने विचारा था, कि अतिथि, ब्राह्मण, प्रियबादी और हमारे प्रिय कामोका करनेवाला है। जो ब्राह्मणरूप धारण किये हुए राक्षसको जानकर मारता है, सोभी नरकमें जाता है और तेरे मरनेका समयभी नहीं आया था। इसीसे तू बचा रहा, समयकी बड़ी बिचित्र गति है, क्योंकि तुझे द्रौपदीके हरलेजानेकी बुद्धि हुई, निश्चय अब तेरे मरनेका समय आगया। रे राक्षस! तैंने यह कालरूप सूतसे बन्धी हुई, बंसीको निगला है, अब तू मच्छलोके समान मर जायगा; तैंने अपने मनमें निश्चय करके जिस देशको जाना चाहा था, अब तू वहां नहीं जासकेगा। बरन जिस देशको बक और हिड़म्ब गये हैं, उसी मार्ग को तूभी जायगा। भीमसेनके ऐसे बचन सुन राक्षसको बहुत डर हुआ, तब वह उन सबको छोड़ युद्ध करनेको खड़ा होगया और क्रोधसे ओंठोंको फरकाता हुआ भीमसेनसे बोला, कि रे पापी! हमको कोई दिशा अगम्य नहीं है परन्तु तेरेही लिये इतनी देर कर रहे थे, जिस जिस राक्षसको तैने मारा है हमने उन सबका नाम सुना है, आज तेरे रुधिरसे उन सबको जलदान करेंगे। राक्षसके ऐसे बचन सुन भीम क्रोधसे अपने ओंठोको चाटने लगे, उनका स्वरूप उस समय ऐसा होगया जैसा प्रलय कालमें यमराजका होता है। भीमसेनने अपने हाथोंको स्पर्श करके राक्षसको ओर देखा. और जब राक्षसने देखा कि भीम युद्धके लिये

मेरी ओर दौड़े आते है तो क्रोधसे वार वार ओठोंको चाटता हुआ भीमकी ओर ऐसे दौड़ा जैसे इन्द्रके पकड़नेकी बलि दौड़ा था। उस समय जटासुर और भीमसेनका घोर बाहुयुद्ध हुआ, तब नकुल और सहदेव क्रोध करके राक्षसकी ओर दौड़े परन्तु कुन्तीनन्दन भीमने उनको रोका और कहा कि तुम लोग देखते रहो हम अकेलेही इस राक्षसको मार डालेंगे। हे राजन्! हम अपने भाई, धर्म्म, कर्म्म, और इष्टकी शपथ करते हैं कि हम अकेलेही इस राक्षसको मारेंगे। इस प्रकार परस्पर बड़ाई करते हुए भीमसेन और राक्षस बाहुयुद्ध करने लगे। उन दोनो क्रोधियोका युद्ध देवता और दानवकी समान हुआ, वे दोनो वृक्ष उखाड़ उखाड़ कर एक दूसरेको मारने लगे, दोनो महापराक्रमी वीर मेघके समान गर्ज्जने लगे, उन वीरोंके पैर लगनेसे बड़े बड़े वृक्ष टूटने लगे। एक दूसरेको मारनेकी इच्छासे महायुद्ध करने लगा, उन दोनोका वृक्षयुद्ध ऐसा हुआ जैसा पहले समयमें स्त्रीकी इच्छावाले सुग्रीव और बालिका हुआ था। वे दोनो, वृक्षोंको उखाड़ उखाड़ और घुमा घुमाकर मारने लगे, तथा वार वार गर्ज्जने लगे, उन्होंने सब वृक्षोंको उखाड़ उखाड़ कर जो मारा वे सब मंजके समान होकर पृथ्वी पर गिर गये, भीम राक्षसको और राक्षस भीमको मारनेकी इच्छा रखते थे इसी लिये एक दूसरेके ऊपर शिला बरसाने लगे। यह युद्ध थोड़ी देर तक हुआ; शिला फेंकते हुए राक्षस और भीम ऐसे शोभायमान हुए जैसे महा मेघोंके सहित दो पर्व्वत। महाबलवान जटासुर और भीमसेन वज्रके समान भारी शिलाओंको चलाते हुए युद्ध करने लगे, अभिमानसे भरे हुए महापराक्रमी भीम और जटासुर एक दूसरेको अपने हाथसे पकड़कर हाथीके समान खींचने लगे, फिर वे दोनो महात्मा मुक्कोंसे युद्ध करने लगे, तब महा कटकट शब्द होने लगा। अनन्तर भीमसेनने पांच फणोंके सर्पके समान अपने हाथका मुक्का बनाकर राक्षसके कण्ठमें मारा। उस मुक्केके लगनेसे राक्षस बहुत दुःखित होगया। जब भीमसेनने देखा कि यह राक्षस अब बहुत थक गया है, तो उसको बलसे उठा कर पृथ्वीपर पटका दिया। देव समान महाबाहु पाण्डुनन्दन भीमसेनने राक्षसको पृथ्वीपर पटककर उसके सब शरीरको चूर कर दिया, एक मुक्का मारकर उसका शिर शरीरसे अलग कर दिया, उस समय उसके दांत आंख बाहर निकल गये। जैसे ताड़का फल वृक्षसे गिरता है, तैसेही राक्षसका सिर खूनसे भींगकर पृथ्वीमें गिर गया। महाधनुर्धारी भीमसेन जटासुरको मारकर महाराज युधिष्ठिरके पास गये। तब सब ब्राह्मण लोग भीमसेनकी इस प्रकार स्तुति करने लगे, जैसे मरुत गण इन्द्रकी स्तुति करते है।

तीर्थयात्राप्ररण और उसके अन्तर्गत
जटासुर वधप्रकरण समाप्त।
१५७ अध्याय समाप्त।

अथ यक्ष-युद्धप्रकरण आरम्भ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! जब जटासुर मारा गया, तब महाराज कुन्तीनन्दन युधिष्ठिर फिर बदरिकाश्रममें आकर रहने लगे। एकदिन महाराजने अपने सब भाई और द्रौपदीको बुलाकर अर्जुनका स्मरण करके कहा, कि हमलोगोंको बनमें विहार करते हुए चार वर्ष बीत गये, अब पांचवा वर्ष आरम्भ हुआ है और इसी वर्षमें अर्जुन आनेको कह गये हैं, हमलोग अर्जुनका मार्ग देखनेको चले हुए पुष्पोंसे शोभित, मतवाले कोकिल, भौंरे मोर और चातक प्रभृति सबसे शोभायमान, व्याघ्र, सुअर भैंसे, नीलगाय हरिन कुत्तेके पैरवाले जन्तु, (भेड़िया आदि) सर्प रुरु (हरिन) आदि पशुओंसे सेवित, कुमु

हुए सौ और हजार दलके कमल और नील-कमल (लीलोफर) से भरे हुए, देवता और मुनियोंसे सेवित, पवित्र महापुण्य दायक श्वेत-गिरि पर चलकर रहे। यहां भी हमलोगोंने अर्ज्जुनके देखनेकी इच्छासे निवास किया; महातेजस्वी अर्ज्जुन यहीं आनेको कह गये थे, हमलोग पांच वर्ष तक यहीं रहेंगे क्योंकि वह कह गये हैं कि हम यहीं आवेंगे,हम शत्रु-नाशन गाण्डीव धनुषधारी अर्ज्जुनको देवलोकसे आया हुआ यहीं देखेंगे। ऐसा कह महाराजने सब ब्राह्मणोंको अपने पास बुलाया और उन तपस्वियोंसे सब कारण कह सुनाया। अनन्तर सब पाण्डवोंने महा तपस्वी और प्रसन्न ब्राह्मणोंकी प्रदक्षिणा की ब्राह्मणोंनेभी प्रसन्न होकर कुशल पूर्व्वक और आनन्दसे रहनेका आशीर्व्वाद दिया। ब्राह्मणलोग बोले, हे भरत-कुलसिंह। हे धर्म्मज्ञ। अब तुम्हारे सुखके दिन आवे, अब आप शीघ्रही राज-धर्म्मके अनुसार उस दुःखको पार होकर पृथ्वीका पालन करेंगे। महाराज उन सब तपस्वियोंके वचनको ग्रहण करके, अपने भाई और ब्राह्म-णोंके सहित वहांसे चले। शत्रुनाशन, महा तेजस्वी, उत्तम व्रतोंके धारण करनेवाले, महा-राज युधिष्ठिर, अपने भाइयोंके सहित लोमशसे रक्षित होकर राक्षसोंको सङ ले, कहीं पैरों और कहीं राक्षसोंपर चढ़कर चलने लगे। महाराज युधिष्ठिर अनेक क्लेशोंको न विचारते हुए सिंह और व्याघ्रोंसे भरी हुई, उत्तर दिशा-को चले। मार्गमें कैलाश मैनाक, गन्धमादन और हिमाचल पर्व्वतोंको देखा, पर्व्वतोंसे ऊपर अनेक मङ्गलमय नदियोंको देखते हुए सातवें दिन हिमाचल पर्व्वतके ऊपर पहुंचे। [illegible] पाण्डवोंने गन्धमादनसे हिमाचल [illegible] वृषपर्वाके आश्रमको देखा। वह स्थान [illegible] अनेक वृक्षोंसे वेष्टित और झरनोंसे [illegible] हुए वृक्षोंसे शोभायमान था।

शत्रुनाशन पाण्डवलोगोंने थकाई दूर करके, राज-ऋषि धर्म्मात्मा वृषपर्व्वाके पास जाकर उन्हें प्रणाम किया। राज-ऋषि वृषपर्व्वाने भरतकुलसिंह पाण्डवोंका पुत्रके समान आदर किया। शत्रु-नाशन पाण्डवलोग वृषपर्व्वासे सत्कार पाकर सात दिनों तक उनके आश्रममें रहे; आठवें दिन लोकविख्यात वृषपर्व्वा मुनिको बुलाकर, महाराजने जानेकी आज्ञा मांगी और एक एक ब्राह्मणका नाम सुनाकर महाराजने वृषपर्व्वाको दे दिया और समयके अनुसार वस्तु-ओंके समान सत्कार किये हुए अपने सेवकों-कोभी महात्मा वृषपर्व्वाको दे दिया। यज्ञ-पात्र, रत्न और भूषणभी पाण्डवोंने वृषपर्व्वाके आश्रममें छोड़ दिये, बीते और आनेवाले समयकी जाननेवाले विद्वान महात्मा वृषपर्व्वाने भरतकुलसिंह पाण्डवोंको पुत्रके समान शासन किया। तब महात्मा पाण्डवलोग वृषपर्व्वाकी आज्ञा लेकर उत्तरको चले। उनको चलते हुए देख महातेजस्वी महाराज वृषपर्व्वा ब्राह्म-णोंके सहित उनके पीछे चलने लगे। कुछदूर चलकर महाराज वृषपर्व उनको आशीर्व्वाद दे और मार्ग बताकर लौट आये, कुन्तीनन्दन युधिष्ठिर अनेक पक्षियोंसे भरे हुए वनको देखते हुए भाइयोंके सहित पैरोंहीसे चलने लगे। पाण्डव लोग अनेक वृक्षोंसे भरे हुए पर्व्वतके स्थानोंमें निवास करते हुए, चौथे दिन उस पर्व्वतपर पहुंचे। वह पर्व्वत अनेक बड़े बड़े मेघोंके समान सुन्दर और जलसे भरा हुआ था, उसके अनेक शिखर मणि और सोनेके समान थे। जैसे वृषपर्वा मुनिने मार्ग बताया था, वे लोग वैसेही अनेक पर्व्वतोंको देखते हुए, गमन करने लगे। पर्व्वतके ऊपर दुःखसे जाने योग्य अनेक गुफाओंको देखते हुए, तथा उनको सुखसे लांघते हुए चले। धौम्य, द्रौपदी, पाण्डव और महाऋषि लोमश, ये सब सङ्गही चले, वे लोग अनेक हरिन और पक्षियोंके गणसे शोभित

अनेक वृक्ष, लता और वन्दरोंसे सेवित पवित्र कमलोंसे भरे हुए तालावोंसे शोभित माल्यवान पर्व्वतपर पहुंचे। महाभाग पाण्डवलोग सिद्ध और चारणोंसे सेवित किम्पुरुष देशमें पहुंचे। आगे प्रसन्न पाण्डवोंने गन्धमादन पर्व्वतको देखा उसमें अनेक विद्याधर, किन्नरी, हाथी, सिंह और व्याघ्र वसते थे। जहां अनेक शरभोंके शब्द चले आते थे, अनेक हरिनलोग सुखसे विहार करते थे। आगे पाण्डवोंने नन्दन वनके समान गन्धमादन वनको देखा। वे पाण्डवलोग मन और हृदयको प्रसन्न करनेवाले उस वनमें घुसे; वे वीरलोग शरण देनेवाले वनमें घुसे, द्रौपदी और महात्मा ब्राह्मणोंके सहित वीर पाण्डवलोग कानोंको सुख देनेवाले पक्षियोंके मीठे मीठे शब्दोंको सुनते हुए, सब ऋतुमें फलनेवाले फलोंसे भरे हुए वृक्षोंका देखते हुए, फलोंके भारसे पृथ्वीको छूते हुए आम, असड़ा, वहेड़ा, नारियल, तेन्दु, मजाक, अंजीर, अनार, नीम्व, कटहल, वढ़हल, मोच, खजूर असलवेंत, परावत, चौद्र, नीप, (कदम्बादिक) मनोहर वेल, कैथ, जामुन, खम्भारी वैर, वरगद गूलर, पिलखन, पीपल, चक, [illegible]वा, आमला हैड़, गोंदनी, करौदा, आदि अनेक वृक्षोंको देखते हुए और उनके अमृतके समान फलोंको देखते हुए महात्मा पाण्डवलोग चले। पाण्डव लोगोंने केतकी, चम्पा, अशोक, [illegible]को [illegible]सरी, कमल, पारिजात, कचनार, देवदारु, [illegible]ल, ताड़ तेजपात, हींग, साल्व, सेमर अशोक, सीसो और रालके वृक्षोंको देखा। चकोर, शतपत्र, भौरे, तोते, कोयल, वरे हरेवे, जीव, प्यारे पपीहा, तथा और औरभी अनेक पक्षी सब कानको सुख देनेवाले मीठी मीठी बोली वोल रहे थे। जिस वनमें कदम्ब चकवी, चकवे, कुमरी, जलकुकुट, सारस हंस, वन्दले और टीटोरी आदि अनेक पक्षी होकर जलमें क्रीड़ा कर रहे थे जहां तड़ागोंमें कमलके मध्यसे कूटे हुए, केश रङ्गसे रङ्गे हुए भौरे मीठे मीठे स्वरसे गा थे; पुरुष सिंह पाण्डवलोगोंने गन्धमादनप पर कमलके वनोंसे भरे हुए अनेक तालावो देखा, उन्होंने लताके घरोंमें बैठे हुए; मो शब्दोंको सुनकर पञ्चम स्वरसे गाने हु मदसे भरे हुए, विचित्र शिखावाले अने मोरोंको मीठेस्वरसे गाते हुए देखा उनमे कोई मोर प्रसन्न चित्तसे वनको देखता हुआ नाच रहा था। कोई अपनी प्यारी मोरनी सङ्ग विहार कर रहा था। कोई लता औ वल्लियोंके बीचमें बैठा हुआ वनको देख रह था। कोई इन्द्रजवके वृक्षके ऊपर उदात रूपसे बैठा था, कोई आनन्दसे अपनी वाणीको बोलता हुआ वृक्षको शाखापर मुकुटके समान बैठा था। पाण्डवोंने कामदेवके शस्त्रोंके समान अनेक फूले हुए कमल और सोनेके रङ्ग वाले फूलोंको देखा। कानके आभूषणके समान फूले हुए अनेक टाकोंको देखा। नवीन वनमें फूले हुए; कुरैआके अनेक वृक्षोंको देखा; उन्होंने वनमें विराजमान सफेद और काले तृणको देखा, उन फूलोंकी शोभा कामदेवके वाणोंके समान थी, जिनको देखतेही पुरुष कामदेवके वशमें हो जाते हैं। यह सब फूल वनमें विराजमान थे, कामदेवके वाणके समान आंमकी मञ्जरियों पर भौरे गूंज रहे थे। उस वनमें कोई फल सोनेके रङ्गवाले और कोई अग्निके समान रंग वाला था, कोई फूला हुआ वृक्ष लाल, कोई मणिके समान रंङ्गवाला था। शाल, आव- नूस, पाटली, और मौलसरीके वृक्ष पर्व्वतके शिखरों पर मालाके समान विराजमान थे। उस पर्व्वत पर निर्म्मल स्फटिकके समान स्वच्छ पाण्डुर रंगके पखवाले कलहंस और सारसोंके शब्दसे शोभायमान अनेक तालावोंको देखा। उन तालावोंमें सफेद और नील

व कमल तथा सुन्दर और ठण्डा जल भरा था। और पाण्डव लोग इस प्रकार चारों ओर सुगन्ध से भरे हुए उत्तम रसवाले फल, फूल, मनोहर तलाव, अत्यन्त रमणीय वृक्ष, कमल, उत्पल, पुण्डरीक आदि अनेक फूलोंकी सुगन्धिसे प्रसन्न होते हुए और शीतल वायुसे सेवित होते हुए वनमें पहुंचे। उस वनके आश्चर्य्यको देख पाण्डवोंके नेत्र बहुत प्रसन्न हुए। तब महाराज युधिष्ठिरने बहुत प्रसन्न होकर भीमसेनसे कहा कि, भीमसेन! देखो यह गन्धमादन पर्व्वत कैसी शोभासे भरा हुआ है, देखो इस वनमें कैसे रमणीय वृक्ष अनेक प्रकारकी लता, पत्र और फलोंसे भरे हुए विराजमान हैं, ये म...के पुंस्कोकिलोंके झुण्डके सहित कैसे शोभायमान हैं, इस वनमें वृक्ष कांटावाला अथवा विना फला हुआ नहीं है, देखो इस तालावमें कमल फूल रहे हैं, इसमें हथिनियों- के सहित हाथी विहार करते फिरते हैं। देखो इसमें अनेक कमल उत्पल और नीले कमल फूल रहे हैं, इन सब फूलोंसे यह पोखर कमलमाला धारणी लक्ष्मीके समान विराज- मान है। इस उत्तम वनमें यह अनेक पुष्पोंकी ...से शोभित वृक्ष लगे हैं। हे भीम! देखो! ...न वृक्षों पर अनेक भौंरे गीत गाते फिरते ... यह सब स्थान देवतोंके खेल करनेके हैं। ...कोदर! ये स्थान मनुष्योंके आने योग्य ...हीं है, अब हमलोग यहां आके मनुष्य ...से प्राप्त तथा सिद्ध होगये देखो इन ...से भरी हुई लता और उत्तम वृक्ष ...पसमें कैसे मिले हैं और उन पर जो ...ियोंके सहित मोर बैठे हैं, उनके शब्दको ... चकोर शतपत्र, मतवारे कोकिल ... ये इन सब फूलें और फले वृक्षोंपर ...मान हैं, देखो लाल, पीले और गुलाबी ... पक्षी इन वृक्षों पर बैठे हुए एक दूसरे- ...देख रहे हैं, हरी और लाल रंगको प्राप्त पर बैठे हुए सारस सब पुरुषोंकी प्यारी मीठी बोली बोल रहे हैं। चकवा भौंरा और लोह- पृष्ठ आदि पक्षी और चार दांतवाले श्वेत हाथी हथनियोंके सहित विहार कर रहे हैं, ये ताडके समान ऊंचे और पर्व्वतके समान मोटे हाथी इस मणिके समान जलको मथ रहे हैं। देखो, यह शिखरों परसे अनेक झरनोंसे जलकी धारा बह रही है। देखो शरद ऋतुके मेघके समान और सूर्य्यके समान अनेक धातु इस पर्व्वत पर विराजमान हैं। कहीं अञ्जनके समान काली और कहीं सोनेके समान रङ्गवाली धातु विराजमान है, कहीं हरताल, कहीं सिङ्गरफ और कहीं मनःशिला धातु ऐसे विराजमान हैं, जैसे सन्ध्याके मेघ। कहीं खरहेके रुधिरके समान गेरु बह रहा है। कहीं सफेद और काले मेघके समान अनेक धातु प्रातःकालके सूर्य्यके समान विराजमान हैं। हे भीम! यह अनेक शोभासे भरे हुए धातु इस पर्व्वतको शोभित कर रहे हैं। वृषपर्व्वा मुनिके कहनेके अनुसार ये गन्धर्व्व लोग अपनी स्त्रियोंके सहित विहार कर रहे हैं। हे कुन्तीनन्दन! इन पर्व्वतोंपर किम्पुरुष सम-तालके सहित गीत गा रहे हैं और वेदका शब्द भी आता है। हे भीम! यह शब्द सब प्राणियोंको प्यारा है। हे भीम! उस पवित्र देवनदी गङ्गा को तुम देखो, अनेक कलहंस किन्नर मृग और पक्षी विहार कर रहे हैं, इसमें अनेक धातु और नदी विराजमान हैं। गन्धर्व्व, अप्सरा, मनोहर वन अनेक प्रकारके सौ सिरवाले सर्पोंसे विराज- मान हैं। हे शत्रुनाशन भीम! इन सब वस्तु- ओंसे विराजमान पर्व्वत-राजको देखो।

वैशम्पायन मुनिजी बोले, शूरवीर शत्रु- नाशन पाण्डव लोग जब उस उत्तम गतिको प्राप्त हुए तबभी प्रसन्न चित्तसे पर्व्वतराजके दर्शन करनेसे तृप्त न हुए। तब अनेक फूले फले वृक्षोंसे विराजमान राजर्षि आर्ष्टिषेण

मुनिके आश्रम पर पहुंचे। अनन्तर उन्होंने महा-तपस्वी दुर्बल, मांसरहित और सब धर्म्मोंके पार जानेवाले आर्ष्टिषेण मुनिका दर्शन किया।

१५८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनिजी बोले, हे राजन्! महाराज युधिष्ठिरने अपना नाम सुनाकर आर्ष्टिषेण मुनिको सिरसे प्रणाम किया। उन मुनिने तपसे सब पापोंको जला दिया था। अनन्तर द्रौपदी, भीमसेन, तपस्वी नकुल और सहदेवने प्रणाम किया, और राजऋषि आर्ष्टिषेणके चारों ओर बैठे। इसके पश्चात् धर्म्म जाननेवाले पाण्डवोंके पुरोहित धौम्य मुनिने उन मुनिसे रीतिके अनुसार वार्त्तालाप किया। अनन्तर महाज्ञानी आर्ष्टिषेण मुनिने अपनी ज्ञान-दृष्टिसे जाना कि, कुरुवंशी पाण्डु राजाके पुत्र आये हैं, तब उन्होंने सबका सत्कार किया। महातपस्वी आर्ष्टिषेणने कुरुकुलसिंह युधिष्ठिरको भाइयोंके सहित बैठाया और कुशल पूछी और बोले कि हे कुन्तीनन्दन! तुम्हारी बुद्धि धर्म्ममें है न? तुम माता और पिताकी सेवा तो करते हो? कहो तुम अपने गुरु, बूढे और वैद्योंकी पूजा तो करते हो? तुम्हारी बुद्धि कभी पाप कर्म्ममें तो नहीं जाती? कहो तुम्हारी बुद्धि धर्म्म करने और पाप छोड़नेमें तो है? हे पुरुषश्रेष्ठ! तुम न्यायके अनुसार धर्म्म करके कहते तो नहीं हो? तुमसे यथार्थ पूजित होकर साधुलोग प्रसन्न तो रहते हैं? कहो वनमें रहकर धर्म्म तो करते हो? हे कुन्तीनन्दन! कहो तुम्हारे आचरणोंसे धौम्यको दुःख तो नहीं होता? तुम्हारा धर्म्म, तप, शील, पवित्रता और आलस्य तो ठीक है न? हे कुन्तीनन्दन! कहो तुम अपने कुलका धर्म्म करते हो? हे कुन्तीनन्दन! जिस मार्गमें राजर्षि लोग गये हैं, तुम उसीमें चलते हो? हे पाण्डव! हे पितृनन्दन! पितृलोग अपने अपने वंशमें उत्पन्न हुए पुत्रोंको देख प्रसन्न और दुःखी होते हैं वे लोग विचारते हैं कि, हम इसके सुकर्म्मसे सुख और कुकर्म्मसे दुःख पाते हैं। पिता, माता, अग्नि गुरु और आत्मा जो पुरुष इन पांचोंकी पूजा करते हैं, उनके दोनों लोक सुधरते हैं,।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे भगवन्! आपने जो कुछ कहा ठीक है। हम अपनी शक्ति और न्यायके अनुसार सब कर्म्म करते हैं, यह सब धर्म्मके काम हैं। श्रीआर्ष्टिषेण मुनि बोले प्रतिपदा और पूर्णमासीके दिन इस पर्व्वत पर जल और वायु भक्षण करनेवाले मुनि लोग आकाशसे आकर इकट्ठे होते हैं। हे कुन्तीनन्दन! किम्पुरुष कामी लोग अपनी पतिव्रता स्त्रियोंके सहित इन पर्व्वतके शिखरों पर दिखाई देते हैं। कौषिकके बने हुए निर्मल वस्त्र और मालाधारण करके अनेक गन्धर्व्व और अप्सरा लोग यहां आते हैं। हे राजन्! सुन्दर रूपवाले विद्याधर उत्तम मालाओंको धारण करके इस पर्व्वत पर आते हैं। बड़े सर्प और गरुड़ादिक भी यहां आते हैं। प्रतिपदा और पूर्णमासीको इस पर्व्वतके ऊपर भेर शङ्ख और नगारोंका शब्द सुनाई देता है। हे पाण्डवो! तुम वहां जानेकी बुद्धि मत करना यहीं बैठ कर इन सब शब्दोंको सुनना। हे भरतकुलसत्तम! यहांसे आगे मनुष्य लोग नहीं जा सकते हैं आगे देवतोंके विहार करनेकी जगह है। हे भारत! यहां पर जो मनुष्य चपलता करता है, उसका सब जन्तु द्वेष करते हैं और राक्षस लोग उसे मार डालते हैं। हे युधिष्ठिर! इस कैलाश शिखरके पार सिद्ध और देवऋषि लोग जा सकते हैं। हे शत्रुनाशन युधिष्ठिर! जो चपलता करके यहांसे आगे जाना चाहता है, उसको राक्षस लोग भाले आदिसे मारते हैं। हे तात! इस स्थानपर प्रतिपदा और पूर्णमासीको नरवाहन महाराज

कुवेर अप्सराओंके सहित आकर यहां दर्शन देते हैं। सूर्य्यके समान तेजस्वी यक्ष और राक्षसोंके स्वामी कुवेरको शिखर पर बैठे हुए सब लोग देखते है। देवता दानव सिद्ध और कुवेरके विहार करनेका यह स्थान है। हे भरतसत्तम! हे तात! इस शिखर पर बैठ कर कुवेर तुम्बुरु गन्धर्व्वसे गीत और सामवेद सुनते हैं। हे युधिष्ठिर! इस पर्व्वतके रहनेवाले सब प्राणी इन सब आश्चर्य्यको पर्व्वोंमें बैठकर देखते हैं, तुम लोग मुनियोंके खाने योग्य सुरस फलोंको खाकर अर्जुनके आने तक यहीं रहो परन्तु कभीभी चपलता मत करना। हे तात! तुम यहां सुखसे निवास और विहार करके शीघ्रमें शस्त्रोंसे जीती हुई पृथ्वीका पालन करना।

१५८ अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजय बोले, हे तपोधन! आर्ष्टि-षेण मुनिके आश्रमपर पहुंचकर मेरे परदादा पाण्डुके पुत्र दिव्य पराक्रमी महात्मा पाण्डव लोग उस गन्धमादन पर्व्वतपर कितने दिन रहे और महा पराक्रमी महा वीर्य्यवाले लोकवीर पाण्डवोंने वहां रहकर कौनसे कर्म्म किये सो सब हमसे कहिये, महाबाहु भीमसेनने उस हिमालय पर्व्वतपर रहकर कौन कौन काम किये! हम उनके पराक्रमका विस्तार पूर्व्वक सुनना चाहते है। हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! उनसे और यक्षोंसे कैसे युद्ध हुआ? उनको कुवेरका [illegible] कैसे हुआ। भगवान आर्ष्टिषेणने कहाथा [illegible] आवेंगे, तो कहिये, कि उनको कुवेर-का दर्शन कैसे हुआ; क्योंकि पाण्डवोंका [illegible] सुननेसे हमारी तृप्ति नहीं होती है।

[illegible] मुनि बोले, हे राजन् जनमे-जय! भरतकुलसिंह पाण्डवोंने अपनी [illegible] [illegible] उनकी आज्ञा सुनकर [illegible] [illegible] हिमालयपर रहते हुए, मुनियोंके खाने योग्य रसभरे फलोंको और शुद्ध वाणोंसे मारे हुए हरिणोंके मांसको और अनेक प्रकारकी मीठी वस्तुओंको खाते हुए निवास करने लगे। इस प्रकार सब पाण्डवोंको वहां रहते हुए, पांचवां वर्ष आरम्भ हुआ, उस समय लोमश मुनि अनेक प्रकारकी कथा कहते रहे। हे पृथ्वीनाथ! घटोत्कच राक्षसोंके सहित "हम उचित समयपर आवेंगे" यह कहकर पहिलेही चला गया। महात्मा पाण्डव लोगोंको उस आश्रमपर रहते और अनेक आश्चर्य्यको देखते हुए अनेक महीने बीत गये। महात्मा पाण्ड-वोंके विहार करते समय अनेक व्रतधारी पवित्रात्मा मुनि और चारणलोग उनको देखने आये। भरतकुलश्रेष्ठ पाण्डवलोगभी उनसे दिव्य वार्तालाप करने लगे। एक दिन महाह्रदमें रहनेवाले सम्रुद्धियुक्त महासापको गरुड़ने पकड़ा, उसके पकड़नेसे पर्व्वत हिल गया और वृक्ष टूटने लगे। इस आश्चर्य्यको सब प्राणियोंके सहित पाण्डवोंने देखा। उसके पश्चात् वायुने पर्व्वतके शिखरसे सुगन्धसे भरे हुए सुन्दर फूलोंको पाण्डवोंकी ओर उड़ाता। उन पांच रङ्गके फूलोंको मित्रोंके सहित पाण्डवोंने और यशस्विनी द्रौपदीने देखा। तब उचित समयपर सुन्दर शिलापर सुखसे बैठे हुए महाबाहु भीमसेनसे द्रौपदी बोली, हे भरतकुलसिंह! गरुड़के पंखोंसे उठे हुए, वायुने महाबलसे यह पांच रङ्गके फूल फेंके हैं। जो सब प्राणियोंके आगे अश्वरथा नदीमें बह रहे हैं। तुम्हारे भाई सत्यवादी महात्मा अर्जुनने खाण्डव वनमें गन्धर्व्व, सांप, राक्षस और इन्द्रकोभी निवारण कर दिया था; और मायावी राक्षसोंको मारकर गाण्डीव धनुषको प्राप्त किया था। हे भीम! तुम्हारा तेज और बाहुबल बहुत बड़ा है। हे इन्द्रतुल्य पराक्रम! तुमको कोई नहीं सानिकना [illegible] तुम्हारे [illegible] कोई नहीं सह सकता; तुम्हारे

पराक्रमसे सब राक्षसलोग डरते हैं! हे भीमसेन! तुम्हारे पराक्रमसे दशो दिशा कांपती हैं, तुम्हारे मित्रलोग सुखदेनेवाले मालाधारी इस पर्व्वतके शिखरको सुख और निर्भयतासे देखें! हे भीम! बहुत दिनसे हमारी इच्छा थी, कि तुम्हारी बाहुरक्षित होकर इस पर्व्वतके शिखरको देखती। शत्रुनाशन महाबाहु भीमसेनने द्रौपदीके वचन सुन अपने शरीरसे प्रहारप्राप्त उत्तम बैलके समान उसकी इच्छानुसार करनेकी इच्छा की। श्रीमान्, सिंह और शार्दूलके समान गतिवाले,सोनेके समान रङ्गवाले, मनस्वी, बलवान, अभिमानी, शूर, लालनेत्र और ऊंचे कन्धेवाले, मतवाले हाथीके समान बली, सिंहके समान दांतवाले, शालके समान ऊंचे, महात्मा, सर्वाङ्गसुन्दर, संखके समान कण्ठवाले महाबाहु भीमसेनने स्वर्णपीठ धनुष, खड्ग और तूणीरको धारण किया। अनन्तर सिंह तुल्य उद्धत और मतवाले हाथीके समान भय और मोहको छोड़कर चले। मनवाले हाथीके समान गतिवाले भीमको धनुष वाण धारण किये सब प्राणियोंने सिंहके समान चलते देखा। पाण्डुनन्दन भीमने द्रौपदीका आनन्द बढ़ानेके निमित्त हाथमें गदाले शोक और भयको छोड़ पर्व्वतके शिखरकी ओर गमन किया। उनको न ग्लानि न डर न परिश्रम और न कभी दुष्टता आती थी। महाबली भीमसेन, अनेक ताड़ोंके समान ऊंचे घोर रूप और एक मार्ग वाले शिखर पर चढ़ गये उनको देख किन्नर सर्प मुनि और राक्षस प्रसन्न होने लगे। वहां चढ़कर भीमने कुवेरका घर देखा, वह स्थान सोने और स्फटिकका बना हुआ अनेक स्थानोंसे घिरा हुआ था। चारों ओर से सोनेका बना हुआ, रत्नजड़ी भीत और बागोंसे शोभित था, पर्व्वतसे भी ऊंची अनेक अटारी द्वार तोरण और ध्वजाओंसे शोभायमान था, उस स्थानके चारों ओर अनेक विलासिनी नाचती और गाती फिरती थीं। जिसमें लगी हुई पताका वायुसे हिल रही थी, भीम धनुषको आड़ करके ये लोग हमें न देख स ऐसा विचार करके दुःखसे कुवेरके नगरव देखा। सुगन्धिसे भरा हुआ सब प्राणियोंव सुख देनेवाला गन्धमादनका वायु वहां चल लगा। भीमसेनने उस शिखर पर अनेक र वाले विचित्र सौन्दर्य्यधारी परम शोभायुक्त अने वृक्षोंको देखा, भीमसेनने अनेक रत्नोंसे खि हुए विचित्र मालाधारी कुवेरके स्थानको देखा। महाबल भीमसेन अपने हाथमें धनुष और खड़्ग धारणकर प्राणका प्रेम छोड़ पर्व्वतके समान स्थिर होकर बैठ गए अनन्तर शत्रुओंको कंपानेवाले शङ्खको बजाया धनुष और तालका घोर शब्द किया। उस शब्दको सुनकर राक्षसोंके रोएं खड़े होगये, अनेक गन्धर्व्व और राक्षस लोग भीमसेनकी ओर दौड़े। यक्ष और राक्षस लोगोंने अपने हाथोंमें गदा, परिघ, खड्ग, शूल, शक्ति और परश्वध आदि अनेक शस्त्रोंको धारण किया। हे जनमेजय! तब उन राक्षस और भीमसेनका युद्ध होने लगा। भीमसेनने महावेगवाले मायाके सहित राक्षसोंके छूटे हुए शूल शक्ति और परश्वध आदि शस्त्रोंको अपने वाणोंसे काट दिया, भूमिमें और आकाशमें खड़े हुए,तथा गर्जते हुए राक्षसोंके शरीरोंको अपने वाणोंसे काट दिया, उस समय महाबली भीमसेनके ऊपर रुधिरकी वृष्टि होने लगी, गदा और परिघधारी राक्षसोंसे चारो ओर रुधिरकी धारा बहने लगी, भीमसेनके बाहुबलसे छूटे हुए वाणोंने राक्षसोंके शिर और शरीरको काटना आरम्भ किया। उस समय राक्षसोंसे छिपे हुए भीमसेनका रूप ऐसा दीखने लगा जैसा बादलसे घिरे हुए सूर्य्यका। उनके वाण ऐसे चलते थे जैसे सूर्य्यकी किरन। सत्य पराक्रमी भीमसेनने अपने वाणोंसे राक्षसोंको छालिया! राक्षस

भीमसेनको बहुत डराया और अनेक प्रकारके बुरे बुरे शब्दभी कहे, परन्तु भीमसेनको कुछभी डर न हुआ। यक्ष लोग भीमके डरसे व्याकुल और बाणोंसे पीड़ित होकर अपने अपने शस्त्रोंको डाल डालकर घोर शब्द करने लगे। राक्षस और यक्षलोग महा धनुषधारी भीमसेनके भयसे व्याकुल होकर गदा, शूल, शक्ति और परशुधोंको छोड़ छोड़ कर दक्षिणको ओर भागे। उनमें महापराक्रमी माहाबाहु मणिमान नामक राक्षस कुवेरका मित्र था। वह महाबली और महापुरुषार्थी मणिमान राक्षस सब राक्षसोंको युद्धसे भागते देख कर अपना स्वामिभाव दिखाने लगा। और बोला, कि तुम सबलोगोंको एक मनुष्यने हरा दिया। तुम कुवेरसे जाकर क्या कहोगे? मणिमान राक्षस सब राक्षसोंसे ऐसा कहकर शक्ति, शूल और गदा धारण करके भीमसेनकी ओर दौड़ा। जब भीमने उसको मतवारे हाथीके समान वेगसे आते हुए देखा, तो उसके हाथमें अत्यन्त तीक्ष्ण तीन वाण मारे। उन वाणोंके लगनेसे महबली मणिमानको महाक्रोध हुआ और एक भारी गदा भीमसेनके मारी। भीमने उस महाघोर गदाको आकाशसे गिरती हुई देख, शिलाको काटनेवाले अनेक वाणोंको मारा। परन्तु वे सब वाण उसमें लग कर टूट गये और उसके वेगको रोक न सके। तब महापराक्रमी बलवान भीमसेनने गदायुद्धकी रीतिसे मणिमानकी गदाको व्यर्थ कर दिया। उसी समयमें मणिमानने लोहेकी [illegible] दण्डवाली एक घोर सांगी भीमसेनके मारा। वह घोर शब्दवाली शक्ति [illegible] भीमसेनके दहने हाथमें लगी, वह [illegible]वाली घोर शक्ति भीमसेनके हाथमें [illegible] गई। अनन्तर पराक्रमी [illegible] महाधनुषधारी भीम उस शक्तिके [illegible] भर कर गदा लेकर राक्षसकी ओर दौड़े, भीमने सोनेके पत्रसे जड़ी हुई शत्रुओंका भय बढ़ानेवाली लोहेकी गदाको हाथमें लेकर घोर शब्द किया और वेगसे दौड़कर वह गदा मणिमानको मारा। महाबल मणिमानने भी एक तीक्ष्ण शूल भीमसेनको मारा, गदा-युद्ध-निपुण भीमसेनने उस त्रिशूलको अपनी गदासे तोड़ डाला। फिर उसके मारनेको दौड़े, जैसे सांपके मारनेको गरुड़ दौड़ता है। महापराक्रमी भीमसेनने आकाशमें कूदके गर्जकर वह गदा मणिमानको मारा, वायुके समान वेगवान भीमसेनके हाथसे छूटकर इन्द्रके वज्रके तुल्य वह गदा उस राक्षसके हृदयमें लगी, उसके लगनेसे वह राक्षस पृथ्वी पर गिर कर मर गया। महापराक्रमी भीमने उस राक्षसको ऐसा मारा, जैसे सिंह बैलको मारता है। जब राक्षसोंने उसे मरा हुआ देखा, तो सब बचे हुए राक्षस उत्तर दिशाको भाग गये।

१६० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन जनमेजय! महाराज युधिष्ठिर, नकुल, सहदेव, धौम्य और द्रौपदीने जब अनेक प्रकारके घोर शब्द और गुफाओंकी गुञ्जार सुनी, तो चारों ओर देखने लगे। तब भीमसेनको न पाकर सब लोग व्याकुल होगये। अनन्तर द्रौपदीको आर्ष्टिषेण मुनिके आश्रममें छोड़के वीर पाण्डव-लोग शस्त्रोंको लेकर पहाड़ पर चढ़ गये। जब महारथ शत्रुनाशन महाधनुर्धारी पाण्डव-लोगोंने उस शिखरपर भीमसेनको देखा और भीमसेनके हाथ मरे तड़पते हुए, बड़े शरीर-वाले बलवान महावीर्य्यवान राक्षसोंको पड़े देखा, तथा उनके बीचमें भीमको गदा, खड्ग और धनुष धारण किये इस प्रकार विराजमान देखा, जैसे दैत्योंको मारकर इन्द्र विराजमान होते हैं, तब महारथ चार वीर वहां आई

भीमसेनको गलेमें लपटा लिया और उस उत्तम गतिको प्राप्त होकर सब लोग एक स्थानपर बैठ गये। उन धनुषधारी महावीरोंके बैठनेसे वह पर्वतका शिखर ऐसा विराजमान हुआ, जैसे महाभाग लोकपालोंके बैठनेसे स्वर्ग। महाराज युधिष्ठिरने कुवेरका स्थान और उन मरे हुए राक्षसोंको देखकर भीमसेनसे कहा, हे भीम! तुमने यह काम चाहे साहससे किया हो, या भूलसे किया हो, परन्तु करने योग्य नहीं था। यह काम ऐसाही हुआ, जैसे निरर्थक मुनिकी हत्या। धर्म्मके जाननेवाले मुनियोंने कहा है, कि राजाके विरुद्ध कोई काम न करना चाहिये। हे भीमसेन! तुमने यह काम देवतोंके विरुद्ध किया। हे कुन्तीनन्दन! जो कोई अर्थ और धर्म्मका निरादर करके पापकर्म्ममें अपनी बुद्धिको लगाता है उसको निश्चय पापका फल मिलता है। यदि तुम हमारा प्रिय काम करना चाहते हो, तो फिर ऐसा काम कभी नहीं करना।

वैशम्पायन मुनिजी बोले, अर्थ और धर्म्मके जाननेवाले धर्म्मात्मा कुन्ती-पुत्र युधिष्ठिर अपने बलवान भाईसे ऐसा कहकर चुप हो गये। परन्तु महा तेजस्वी युधिष्ठिर इसी बातको अपने मनमें विचारते रहे।

भीमसेनके मारनेसे जो राक्षस बचे थे, वे सब मिलकर कुवेरके स्थान पर गये, वे लोग वेगसे चलकर कुवेरके पास पहुंचे, वहां जाकर भीमसेनके भयसे रोने लगे। अस्त्र शस्त्र छोड़कर भागे हुए, रुधिरसे भीगे, बाल खुलेवाले राक्षसलोग कुवेरसे कहने लगे। हे धनेश्वर! आपके सब वीर जो गदा, परिघ, खड्ग तोमरोंसे युद्ध करते थे, उन सबको एक मनुष्यने मार डाला। हे देव! आपके सब सेवकोंको उस पुरुषने पर्व्वतके ऊपर चढ़कर मार डाला। हे यक्ष-राक्षसोंके नाथ! उस एक ही महापराक्रमी महाक्रोधी राक्षसोंको मारडाला। हे देव! आपके मित्र मणिमानके सहित वे सब राक्षस निर्ब्बलके समान मरे हुए पड़े हैं, हमलोग भागकर आपके पास आये हैं। जो कुछ उस पुरुषने कर्म्म किया था, सो हमने आपसे कह सुनाया, अब जो इच्छा हो सो कीजिये। कुवेरने उनके वचन सुन बहुत क्रोध किया और लाल नेत्र करके कहने लगे, कि यह क्या हुआ? कुवेरने भीमसेनका दूसरा अपराध जान महाक्रोध किया और बोले, कि हमारा रथ लाओ, अनन्तर पर्व्वतके शिखरके समान ऊंचा और मेघके समान गम्भीर कुवेरके रथको गन्धर्व्व और यक्षोंने जोता। उसमें सोनेकी मालाधारी सब गुणोंसे भरे नेत्रवाले, तेज, बल और गुणोंसे युक्त रत्नोंसे विभूषित बहुत शीघ्र चलनेवाले सुन्दर घोड़े जोते गये, वे घोड़े विजयके शगुन दिखाते हुए शब्द करने लगे, भगवान कुवेर रथपर बैठकर देवता और गन्धर्वोंसे स्तुति सुनते हुए चले, महातेजस्वी महात्मा यक्षराज कुवेरको चलते हुए देख लाल नेत्र महाबलवान सोनेके समान रङ्गवाले बड़े शरीरवाले एक सहस्र राक्षसलोग शस्त्रोंको धारण करके और कवच पहनकर उनके संग चले। वे सब राक्षसलोग वेगसे आकाशमें कूदते हुए, मानो आकाशको खींचने लगे। इस प्रकार गन्धमादनकी ओर चले, उस कुवेरसे रक्षित घोड़ोंका शब्द सुन और यक्ष तथा राक्षसोंके सहित महात्मा कुवेरको आते पाण्डवोंने देखा; सुन्दर कुवेरको देखतेही पाण्डवोंके रोयें खड़े होगये। कुवेरनेभी महारथ और महा पराक्रमी पाण्डवोंको धनुष और खड्ग धारण किये हुए देखा, तब कुवेर उनसे बहुत प्रसन्न हुए कुवेर देवताके कामकी इच्छा करके पाण्डवोंसे प्रसन्न होगये। हे राजन्! उसी समय उस पर्व्वतके शिखरपर कुवेरके संग चलनेवाले महापराक्रमी पक्षीके समान उड़ते हुए कई राक्षस थे। जब उन्होंने कुवेरको प्रसन्न

पाण्डवोंको पास खड़े हुए देखा, तो वे लोगभी क्रोधरहित होकर खड़े होगये। महात्मा पाण्डवोंने हाथ जोड़के कुबेरको प्रणाम किया। धर्म्म जाननेवाले युधिष्ठिर महारथ नकुल और सहदेव अपनेको अपराधी जान हाथ जोड़े, कुबेरभी शोभासे भरे हुए, विश्वकर्म्माके बनाये विचित्र पुष्पक विमानमें बैठे; उनके बैठते ही बड़े शरीरवाले महावेगवान यक्ष और राक्षस लोगभी चारो ओर बैठ गये। सैकड़ों हजारों अप्सरा और गन्धर्व्व उनके चारों ओर बैठ गये। उस समय कुबेर देवतोंके सहित इन्द्रके समान शोभा पाने लगे, अपने शिरपर सोनेकी माला धारण किये, फासी खड्ग और धनुषको अपने हाथमें लिये भीमसेनभी कुबेरकी ओर देखने लगे। राक्षसोंके युद्धमें घाव लगनेपरभी भीमसेनको कुछ थकाई और दुःख नहीं हुआ था। कुबेरको देखते समयभी उनको कुछ भय नहीं था, जब कुबेरने तीक्ष्णवाण धारण किये युद्धकी इच्छासे खड़े भीमसेनको देखा तो युधिष्ठिरसे कहने लगे। हे कुन्तीनन्दन! तुम सब प्राणियोंके कल्याणको चाहनेवाले हो, इसलिये अपने भाइयोंके सहित बेडर होकर इस पर्व्वतके शिखरपर निवास करो। हे पाण्डव! तुम भीमसेनके ऊपर कुछ क्रोध मत करना, इन सब राक्षसोंको काल आगया था, इसीसे मर गये। तुम्हारा भाई केवल निमित्त [illegible] गया है। भीमसेनने जो यह कार्य्य किया [illegible] तुम इससे कुछ लज्जा मत करो। देवतोने [illegible] यक्ष और राक्षसोंका नाश विचारा [illegible] है भरतकुल-तिलक! मुझे भीमके ऊपर [illegible] क्रोध नहीं है, मैं इनके कर्म्मसे पहलेभी [illegible] हुआ था।

[illegible] मुनि बोले, हे राजन् जनमे- [illegible] महाराज युधिष्ठिरसे ऐसा कहकर [illegible] बोले, हे कुरुनन्दन! हे [illegible] कर्म्म किया, हमारे सामने उसका कुछ विचार नहीं है। हे भीम! तुमने जो द्रौपदीके निमित्त हमारा, और देवतोंका अनादर करके यह साहस कर्म्म किया, उससे हमारा यक्ष तथा राक्षसोंका अपमान हुआ—तुमने जो अपने बलसे यह कर्म्म किया इससे हम बहुत प्रसन्न हुए। हे वृकोदर! एक समय हमसे किसी अपराधके कारण महा-ऋषि अगस्त्य क्रुद्ध हुए थे और उन्होने हमको घोर शाप दिया था। आज हम उस घोर शापसे छूटगये; हे पाण्डव! पहलेसेही हमारा दुःख निर्दिष्ट था, उसमें तुम्हारा कुछ अपराध नहीं। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे भगवान्! महात्मा अगस्त्यने आपको शाप क्यों दिया था, इस कथाको हम विस्तार पूर्व्वक सुनना चाहते हैं, हमको यह बहुत आश्चर्य मालूम होता है, कि बुद्धिमान अगस्त्यके क्रोधसे आप अपने अनुचरोंके सहित भस्म न हो गये।

कुबेर बोले, हे नरेश्वर! कुशावती स्थानमें देवतोंकी एक सभा हुई थी, उस सभामें मैंभी तीन सौ महापद्म सेवकोंके सहित गया था, मेरे सङ्ग शस्त्रधारी अनेक घोर रूपवाले यक्ष-भी थे, मुझे मार्गमें मुनिश्रेष्ठ अगस्त्य मिले। वे यमुनाके तीर पर फले हुए वृक्ष और अनेक पक्षियोंसे शोभित वनमें तेजके समूह अग्निकी समान प्रकाशमान बैठे थे। वे सूर्य्यकी ओर मुख किये घोर तप कर रहे थे। हे पृथ्वीनाथ! मेरे मित्र राक्षसोंके राजा श्रीमान् मणिमानने मूर्खता अज्ञान अभिमान और [illegible] यह थूक दिया, वह थूक आकाशसे गिर कर महर्षि अगस्त्यके शिर पर गिरा, वे अपनी दृष्टिसे दशो दिशाओंको भस्म करते हुए मुझसे बोले, हे धनेश्वर! तेरे दुरात्मा मित्रने मेरे आगे जो मेरा निरादर किया है, उसका फल [illegible] ही मिलेगा, यह तुम्हारा दुर्बुद्धि [illegible] सेनाके सहित एक मनुष्यके

हाथसे मारा जायगा; इन सबके मरनेसे तुम्हें भी बहुत क्लेश होगा, जो तुम्हारी आज्ञाको पालन करेगा, वह अपने पुत्र, पौत्र और सेनाके सहित इस शापसे बचेगा। हे महाराज! मुनिश्रेष्ठ अगस्त्यने पहिले यह शाप मुझे दिया था, आज तुम्हारे भाई भीमने उस शापसे हमें छुड़ा दिया।

१६१ अध्याय समाप्त।

कुवेर बोले,—हे युधिष्ठिर! धृति, दक्षता, देश, समय और पराक्रम यही लोकमें कार्य्य करनेके पांच हेतु हैं। हे भारत! धृतिशील और यत्नोंमें कुशल, अपने अपने कर्म्मोंको करनेवाले, पराक्रम और विधानके जाननेवाले पुरुष सतयुगमें होते थे। बुद्धिमान देश कालके जाननेवाले धर्म्मों और सब विधानोंका पण्डित क्षत्री बहुत काल तक पृथ्वीका राज करता है। हे क्षत्रिय श्रेष्ठ! हे वीर! हे कुन्तीनन्दन! जो पुरुष इस प्रकार सब कामोंमें बर्त्ताव रखते हैं, उनको इस लोकमें यश और परलोकमें उत्तम गति मिलती है। देखो वृत्रासुरके मारनेवाले इन्द्र देशकालके अनुसार पराक्रम करके वसुओंके सहित स्वर्गमें देवतोंके राजा हो गये, जो मूर्ख केवल क्रोधके वशमें होकर कर्म्मको नहीं देखता है, वह केवल पापके फलही को भोगता है। जो समय और कर्म्मको नहीं जानता है, वह कर्म्मोंके न जाननेवाला मूर्ख दोनों लोकमें नष्ट हो जाता है। जो मूर्ख वृथा क्रोध करता है, उसका इस लोकमें और परलोकमें नाश हो जाता है। जो केवल साहसके वशमें होकर पाप करता है और जो दुष्टात्मा सब कर्म्म करनेको इच्छा करता है, उसको निश्चयही पाप होता है। हे पुरुषसिंह! यह तुम्हारा भाई भीमसेन अधर्म्मको जाननेवाला, अभिमानी, बालबुद्धि, क्रोधी और भय-रहित है, तुम इसको अपनी आज्ञामें रखो। हे महाबाहु! हे मनुजेन्द्र! तुम राजऋषि आर्ष्टिषेणके आश्रम पर जाकर ब्राह्मणोंके सहित शंकासे रहित होकर रहो। गन्धर्व्व, किन्नर और वनवासी लोग हमारी आज्ञासे तुम्हारी रक्षा करेंगे। हे धर्म्म जाननेवालोंमें श्रेष्ठ! हे राजन्! यह तुम्हारा भाई भीमसेन जो केवल साहसहीसे युद्ध करता है तुम इसको रोको। हे राजन्! आजसे वनवासी लोग तुम्हे देखेंगे; तुम्हारी रक्षा करेंगे; ये लोग तुम्हारे लिये अन्न, स्वादु जल तथा औरभी अनेक प्रकारकी वस्तु ला दिया करेंगे। हे युधिष्ठिर! जैसे इन्द्रके अर्ज्जुन, वायुके भीम, धर्म्मके तुम, अश्विनीकुमारके नकुल और सहदेव योगसे उत्पन्न हुए पुत्र हैं और वे लोग जैसे तुम्हारी सबकी रक्षा करते हैं, तैसेही हम भी तुम्हारी रक्षा करेंगे। अर्थके तत्त्वज्ञ और सब धर्म्मोंके जाननेवाले भीमसेनके छोटे भाई अर्ज्जुन स्वर्गमें कुशलसे हैं। हे तात! जो स्वर्गकी सम्पदा इस लोकमें दुर्लभ हैं वे सब जन्म भरसे अर्ज्जुनमें स्थित हैं, महातेजस्वी अर्ज्जुनमें दम (इन्द्रियोंको जीतनेकी शक्ति) दान, बल, बुद्धि, लज्जा, धृति शक्ति और उत्तम तेज है। हे पाण्डव! महा बलवान अर्ज्जुन कभी भूलसेभी बुरा काम नहीं करता है; कोई पुरुष उसे झूठा नहीं कहता है। हे भारत! महात्मा कुरुवंशकी कीर्त्ति बढ़ानेवाले अर्ज्जुनको देवता और गन्धर्व्वभी मानते हैं। अब वह इन्द्रके घरमें शस्त्रविद्या सीखते हैं। हे कुन्तीनन्दन! जिसने धर्म्मसे सब राजोंको अपने वशमें किया था वही महातेजस्वी शान्तनु तुम्हारे भाई गाण्डीव धनुषधारी अर्ज्जुनके कर्म्मोंसे प्रसन्न हो रहे हैं, महात्मा और महाबलवान अर्ज्जुन अपने कुल में श्रेष्ठ हैं। तुम्हारे प्रपितामह सब राजोंके राजा महाराज शान्तनुने पितर देवता, ऋषि और ब्राह्मणोंकी पूजा करके यमुनाके तटपर

मात अश्वमेधयज्ञ की थी। वही महाराज आज स्वर्गमें हैं और तुम्हारी कुशल पूछते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कुवेरके ऐसे वचन सुन पाण्डव लोग बहुत प्रसन्न हुए। अनन्तर कुरुकुलसिंह भीमने शक्ति, गदा खड्ग और धनुषको रोदेसे रहित करके चलनेकी इच्छा की और कुवेरको प्रणाम किया। तब शरणागतको रक्षा करनेवाले कुवेरने शरणागत भीमसे कहा कि तुम अपने शत्रुओंको मारनेवाले और मित्रोंके आनन्द बढ़ानेवाले हो। हे भरतकुलसिंह पाण्डवो। तुम लोग जब अपने रमणीय आश्रमोंमें रहोगे, तब यक्षलोग तुम्हारी रक्षा करेंगे। हे शत्रुओंके नाश करनेवालो। तुम्हारा कोई काम कभी नष्ट न होगा। अर्जुनभी शीघ्रही शस्त्रोंको सीख साक्षात इन्द्रके घरसे आवेंगे। गुह्यकोंके राजा कुवेर उत्तम कर्म्मवाले युधिष्ठिरसे ऐसा कहकर अन्तर्द्धान हो गये। उनके पीछे रत्न विभूषित अनेक पुष्पमालासे विराजमान विमानो पर चढकर अनेक यक्ष और राक्षस कुवेरके स्थानको चले, पक्षियोंके शब्दके समान घोड़ोंका शब्द ऐसा होता था, जैसा इन्द्रके नगरमें ऐरावतका शब्द होता है। वह कुवेरके घोड़े मेघको चीरते और वायुको पीते शीघ्रतासे आकाश को चले। तब कुवेरको आज्ञासे मरे हुए राक्षसोंके शरीर पर्व्वतसे उठाके फेंके गये, बुद्धिमान अगस्त्य मुनिने जो राक्षसोंको शाप दिया था, उसका अन्त इस युद्धमें हुआ महात्मा पाण्डवोंने उस स्थानमें उस रात्रिको व्यतीत किया। राक्षसोंने उनका बहुत सन्मान किया।

१६१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे शत्रुनाशन सूर्य्यके उदय होने पर धौम्य ऋषि और पाण्डव नित्य क्रिया समाप्त करके [illegible] गये। पाण्डवोंने आर्ष्टिषेण और धौम्यको प्रणाम करके हाथ जोड़के सब ब्राह्मणोंकी पूजा की। तब धौम्य मुनिने युधिष्ठिरका दहना हाथ पकड़ कर और पूर्व्व दिशाको देखकर कहा है महाराज। इस समुद्रपर्य्यन्तकी भूमिको घेरे हुए यह पर्व्वतराज मन्दराचल विराजमान है। हे पाण्डव। पर्व्वत और वनोंसे शोभायमान इस दिशाकी इन्द्र और कुवेर रक्षा करते हैं, बुद्धिमान और सब धर्म्मोंकी जाननेवाले लोग इसी दिशामें इन्द्र और कुवेरका स्थान बतलाते हैं। इसी कारणसे धर्म्मको जाननेवाले ऋषि, सिद्ध, साध और देवता लोग उदय होते सूर्य्यकी उपासना करते हैं। धर्म्मको जाननेवाले और सब प्राणियोंके स्वामी राजा यम मृतलोगोंकी गम्य इसी दक्षिण दिशामें निवास करते हैं। यह संयमन नामक परम पवित्र और अद्भुत प्रेतराजका ऋद्धिसिद्धिसे भरा स्थान है। सूर्य्य जब इस पर जाते हैं तो सत्यसे स्थिर होते हैं और पर्व्वतराज पर जाकर अस्त होते हैं, बुद्धिमान लोग उसे अस्ताचल कहते हैं, इस पर्व्वतराज और समुद्रमें निवास करते हुए महाराज वरुण प्रजाकी रक्षा करते हैं। उस उत्तर दिशामें महा वीर्य्यमान कल्याणकारी मेरु है इसीमें ब्रह्मको जाननेवाले जीव प्राप्त होते हैं इसी पर्व्वतराजमें प्रजापतिके स्थान वाले जीव प्राप्त होते हैं। इसी पर्व्वतराजमें प्रजापतिने प्रथम सृष्टि रची थी। दक्ष आदि ब्रह्माके मानसिक सात पुत्रभी इसी पर्व्वतराज मेरुपर निवास करते हैं, हे राजन्। वशिष्ठादि सप्तऋषि इसी पर्व्वतपर उदय होके इसी पर्व्वत पर अस्त होते हैं। वह देखो [illegible] मेरुका शिखर है इसीपर देवोंके [illegible] निवास करते हैं। जिसको सब प्राणियोंमें [illegible] करते हैं, वही अनादि अनन्त नारायण ब्रह्माके स्थानमें [illegible] हैं, इसके [illegible] स्थानको देवतालोग भी नहीं देख सकते हैं। जहां सूर्य्य और चन्द्रका प्रकाश नहीं [illegible]

अपने तेजसे अत्यन्त प्रकाशमान हैं, जिसको देवताभी नहीं देख सकते हैं, वही महात्मा विष्णुका स्थान है पूर्व्वदिशामें नारायणका स्थान मेरु पर्व्वत पर अत्यन्त शोभायमान है, जिसमें प्राणियोंके स्वामी अपनेसे आप उत्पन्न होनेवाले और सम्पूर्ण जगतको प्रकाश करनेवाले विराजमान हैं। हे कुरुसत्तम। इस स्थानमें ब्रह्मऋषिही नहीं पहुंचते हैं तो और ऋषि कैसे पहुंचेंगे? हे पाण्डव! यहा कोई तारा प्रकाश नहीं होते हैं; अचिन्त्य आत्मा भगवान विष्णु यहीं निवास करते हैं, इस स्थानमें यति लोग नारायणकी भक्ति करके वहां पहुंचते हैं यह स्थान अक्षय अव्यय और अविनाशी है। हे युधिष्ठिर! तुम इसे प्रणाम करो, हे युधिष्ठिर! इस मेरु पर्व्वतको सूर्य्य और चन्द्रमा प्रति दिन प्रदक्षिणा करते हैं, हे निष्पाप कुरुनन्दन! जितने तारागण हैं इस पर्व्वतराजको प्रदक्षिणा करते हैं। सन्ध्यासमय अस्ताचल पर अस्त होकर दिवाकर उत्तर दिशामें प्राप्त होता है मेरुको प्रदक्षिणा करके प्रातःकाल फिर पूर्व्वदिशासे सब प्राणियोंका हित करनेवाला सूर्य्य गतिसे मासादि कालका विभाग करता है। ऐसेही भगवान चन्द्रमा सब तारागणके सहित गमन करते हैं; मेरु पर्व्वतसे चलकर सब प्राणियोंको प्रकाश देते हुए मन्द्राचलको जाते हैं। जैसे सूर्य्य चलते हैं, ऐसेही अन्धकारको नाश करते जगतको प्रकाश करते चन्द्रमा भी गमन करते हैं। जब सूर्य्यके दक्षिणायन होनेसे शरदऋतु होती है, जब सूर्य्य सब स्थावर और जङ्गम प्राणियोंका तेज खींच लेते हैं, तभी प्राणियोंको आलस और जमुआई आदि आती है; इसीसे सब प्राणियोंको निद्रा आती है। जिस ऋतुमें भगवान सूर्य्य तेजको खींचते हैं उस ऋतुको ग्रीष्मऋतु कहते हैं। फिर अपनी किरणोंसे भगवान् सूर्य्य जल वर्षाते हुए सब प्रजाका पालन करते हैं। वर्षा, और धूपसे स्थावर, जङ्गम प्राणियोंको सुख पहुंचाते हुए सूर्य्य सदा गमन आगमन किया करते हैं। हे कुन्तीनन्दन! इस रीतिसे कालका विभाग करते और प्राणियोंको सुख देते सूर्य्य विचरते रहते हैं; सूर्य्यकी गति सदा ऐसीही रहती है। यह कभी स्थिर नहीं होती है। प्राणियोंका तेज लेकर फिर उन्होंको फेर देते हैं, सब प्राणियोंको आयु और रात दिन पल घडी आदिका विभाग सूर्य्यकी गति होसे होता है।

१६३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अर्जुनके दर्शनकी इच्छासे उस पर्व्वत पर रहते हुए उत्तम व्रत धारी महात्मा पाण्डवोंको बहुत प्रसन्नता और आनन्द हुआ। उन बलवान शुद्ध कर्म्म करनेवाले, सत्य बोलनेवाले, धारणाशील, पाण्डवोंके पास अनेक गन्धर्व्व और ऋषि लोग आये, जैसे स्वर्गमें जानेसे मरुतगण प्रसन्न होते हैं, तैसेही अनेक फले हुए वृक्षोंसे युक्त उस पर्व्वत पर रहनेसे महात्मा पाण्डवभी प्रसन्न हुए। पर्व्वतके शिखरोंको मयूर और हंसोंके शब्दसे तथा फूले हुए वृक्षोंसे विराजमान देखते हुए पाण्डव वहां रहने लगे। साक्षात कुवेरकी उस उत्तम पर्व्वत पर हंस और सारसादिक पक्षियोंसे युक्त कमलोंसे भरी हुई उत्तम तटवाली पोखर बनी थी। जैसे राजा कुवेरके विहार करनेके स्थान चाहिये तैसेही ऋद्धियोंसे भरे हुए अनेक मणियोंसे युक्त फूलोंकी मालासे विराजमान वह स्थान मनोहर बना था। पाण्डव लोग अनेक रंगवाले सुगन्धसे भरे हुए मेघोंके जलसे छाये हुए अनेक वृक्षोंको देखते हुए उस पर्व्वतके शिखर पर रह कर तप करने लगे। हे पुरुषप्रवीर! उस पर्व्वत पर रहते हुए पाण्डवोंको पर्व्वत और औषधियोंके तेजसे दिन और रातमें कुछ भेद नहीं जान पड़ा। पुरुषसिंह पाण्डव लोगोंने जिसमें

स्थावर और जंगम रहते हैं, जिस तेजस्वीको विभावसु कहते हैं, उस सूर्य्यके उदय और अस्तको देखा। वीर पाण्डवोंने सूर्य्यके उदय और आगमनको देखा, तथा उनके तेजसे सब दिशाओंको व्याप्त देखा, वेदपाठी सदा क्रिया करनेवाले धर्म्म और पवित्रतामें निरत सत्यवादी पाण्डव लोग वहीं रह कर महारथ अर्ज्जुनका मार्ग देखने लगे। पाण्डवोंने यह विचारा, कि हम लोग इसी स्थान पर शी्र अर्ज्जुनसे मिलके प्रसन्न होंगे, इस लिये वे लोग वहीं रह कर तप और योग करने लगे। अर्ज्जुनकी चिन्ता करते हुए और पर्व्वतोंके विचित्र बनोंको देखते हुए उनके दिन और रात वर्षके समान बीतने लगे। जब महात्मा अर्ज्जुन धौम्यकी आज्ञासे जटा बना कर वनको गये थे, उसी दिनसे पाण्डव लोगोंको प्रसन्नता नहीं हुई थी। इन लोगोंका चित्त जिस दिन मतवाले हाथीके समान चलनेवाले अर्ज्जुन अपने भाई युधिष्ठिरकी आज्ञानुसार काम्यक वनसे चले थे, उसी दिनसे पाण्डव लोग शोकसे व्याकुल हो गये थे। हे भारत। जब अर्ज्जुन इन्द्रके पास गये थे तब पाण्डवोंको एक एक दिन एक एक महीनेके समान बीतने लगा था। अर्ज्जुन पांच वर्ष इन्द्रके स्थानमें रहे थे और उनसे सब अस्त्रोंको सीखा। [illegible] अग्नि, वरुण, चन्द्रमा, वायु, विष्णु, शिव, [illegible] परमेष्ठी, प्रजापति, यम, धाता, सूर्य्य [illegible]कर्म्मा और कुवेरके शस्त्रोंको प्राप्त कर [illegible] तब इन्द्रको प्रणाम और उनकी प्रदक्षिणा [illegible] उनकी आज्ञा लेकर परम प्रीतिके [illegible] अर्ज्जुन प्रसन्न होकर गन्धमादन पर [illegible]।

१६४ अध्याय समाप्त।

[illegible] प्रकरण समाप्त।

अथ निवात-कवच युद्ध।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, एकदिन अर्ज्जुनकी चिन्ता करते समय पाण्डवोंने बिजलीके समान प्रकाशमान घोड़ोंके सहित आते हुए एक रथको देखा, उसको देखते ही वह लोग बहुत प्रसन्न हुए। वह रथ मातली सारथीके सहित आकाशको प्रकाश करता हुआ ऐसा शोभित होने लगा, जैसे बादलोंके बीचमें बिना धूंएकी मसाल शोभित होती है। हृदयमें माला और नवीन आभूषणोंको धारण किये उसमें इन्द्रके समान पराक्रमवाले अपने तेजसे प्रकाशमान अर्ज्जुन बैठे थे। इस प्रकार वह रथ पर्व्वतपर पहुंचा। तब माला और मुकुटधारी बुद्धिमान अर्ज्जुनने पहले धौम्य फिर युधिष्ठिर और पीछे भीमसेनके चरणोंको छूकर प्रणाम किया। उसी समय नकुल और सहदेवने अर्ज्जुनको प्रणाम किया। फिर अर्ज्जुन द्रौपदीसे मिलकर अनन्तर युधिष्ठिरके पास नम्र भावसे बैठे। अनन्तर पराक्रमवाले युधिष्ठिर अर्ज्जुनसे मिलकर प्रसन्न हुए और अर्ज्जुनने भी अपने भाईकी बहुत प्रशंसा कर उनको प्रसन्न किया, जिसपर चढकर नमुचिके मारनेवाले इन्द्रने दैत्योंके सात गणोंको नाश किया था, महा पराक्रमी पाण्डवोंने उस इन्द्रके रथकी प्रदक्षिणा की। प्रसन्नचित्त पाण्डवोंने मातलीका सत्कार इन्द्रके समान किया और सब देवतोंका यथा योग्य कुशल पूछा, मातलीने भी पाण्डवोंको पुत्रके समान शिक्षा दी। फिर गमसमान तेजवाले रथपर चढकर इन्द्रके पास चले गये। उनके जानेके पश्चात पुरुष और देवतोंमें श्रेष्ठ इन्द्रके पुत्र राक्षसोंके मारनेवाले अर्ज्जुनने युधिष्ठिरको [illegible] दिये हुए उत्तम रूपवाले धनदिने। अनन्तर सूर्य्यके समान प्रकाशवाले अनेक आभूषण अपनी प्यारी द्रौपदीको दिये अनन्तर सूर्य्य, चन्द्रमा और अग्निके समान [illegible]

ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ मुनियोंके बीचमें बैठकर सब पहिली कथाओंको कहने लगे, कि मैंने इस प्रकार इन्द्र, वायु और सच्चात शिवसे शस्त्र सीखे। मैंने अपने शील और समाधिके वल इन्द्रके सहित देवतोंको प्रसन्न किया, इस प्रकार शुद्धकर्म्मवाले अर्ज्जुनने अपने स्वर्गमें रहनेकी कथा संक्षेपसे कही, अनन्तर नकुल और सहदेवके सहित सो रहे।

१६५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब रात बीत गयी, तब अर्ज्जुनने अपने भाइयोंके सहित महाराज युधिष्ठिरको प्रणाम किया, उसी समय आकाशमें सब प्रकारके देवतोंके बाजेका शब्द सुना। हे भारत। उसी समय रथके पहियोंके शब्द आने लगे। इसी शब्दके संग सांप, हरिन और पक्षियों का शब्दभी आने लगा, पीछे सूर्य्यके समान प्रकाशमान विमानों पर बैठे हुए गन्धर्व्व और अप्सरा इन्द्रको घेरके जाने लगीं। उसी समय उत्तम घोड़ोंसे युक्त, सोनेके बने हुए, मेघके समान शब्दवाले रथ पर चढ़ कर अपने तेजसे प्रकाशमान इन्द्र पाण्डवोंके पास आये, सहस्र नेत्रवाले इन्द्र पाण्डवोंके पास आकर रथसे उतरे। महात्मा देवराज इन्द्रको देख धर्म्म राज युधिष्ठिर अपने भाइयोंके सहित उनके पास गये। बहुत दक्षिणा देनेवाले युधि ष्ठिरने विधिके अनुसार यथा योग्य इन्द्रकी पूजा की। महातेजस्वी धनञ्जय भी इन्द्रको प्रणाम करके उनके पास दासके समान खड़े हो गये, महातेजस्वी कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरने पास खड़े हुए अर्ज्जुनका माथा सूंघा। पापरहित जटाधारी इन्द्रकी तपस्या करनेवाले अर्ज्जुनको देख कर और इन्द्रको पूजाकरके बहुत प्रसन्न और दीन राजासे बुद्धिमान इन्द्र बोले, हे कुन्तीनन्दन। हे पाण्डव। हे राजन्! तुम इस सब पृथ्वीका ...ज्य करोगे। तुम्हारा कल्याण हो, तुम फिर काम्यक वनको चले जाओ। हे राजन्। पाण्डु-नन्दन अर्ज्जुनने बहुत यत्न करके हमसे सब शस्त्रोंको सीखा है, इस तीन लोकमें इन जीतनेवाला कोई नहीं है। सहस्र नेत्रवाले कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरसे ऐसा कहकर महात्मा योंसे स्तुति सुनते हुए प्रसन्नतासहित स्वर्ग चले गये। जो विद्वान् कुवेरके घरमें रहने पाण्डव और इन्द्रके इस समागमको ब्रह्मचा व्रतधारी होकर एकवर्ष तक पढता है, रोगरहित और सुखी होकर सौ वर्ष जीता

१६६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनिजी बोले, हे जनमेजय जब इन्द्र चले गये, तब अपने भाई और द्रौ दीके सहित अर्ज्जुनने महाराज युधिष्ठिरको प्रणाम किया। महाराज प्रसन्न होकर अर्ज्जुनका माथा सूंघ कर गदगद बाणीसे कहने लगे, अर्ज्जुन। तुमने इतना समय स्वर्गमें क्योंकर बिताया? तुमने इन्द्र और शिवको कैसे प्रसन्न किया, तुमने किस प्रकार शस्त्रोंको प्राप्त किया हे शत्रुनाशन। भगवान् इन्द्रने हमारे आगे कहा, कि हम अर्ज्जुनसे बहुत प्रसन्न हैं। तुमने कौनसा उनका प्रियकार्य्य किया? हे महा तेजस्वी। हे पापरहित। हम इन सब कथाओं की विस्तारपूर्व्वक सुना चाहते हैं। हे धन ञ्जय। हे शत्रुनाशन। तुमसे इन्द्र और शि कैसे प्रसन्न हुए थे? तुमने इन्द्रका कौनसा प्रियकार्य्य किया था, तुम इन सब कथाओंको हमसे कहो। अर्ज्जुन बोले, हे महाराज हम इन सब कथाओंको तुमसे कहते हैं, हमने जैसे भगवान शिव और इन्द्रको प्रसन्न किया था सो आप सुनिये। हे शत्रुनाशन! आपकी बताई हुई विद्याको पढकर आपकी आज्ञानुसार तपकरनेकी इच्छासे मैं वनको चला। काम्यक वनसे चल कर भृगुतुङ्ग पर्व्वत पर पहुंचा और वहां तप करने लगा, ...

वहां रहने पर दूसरे दिन एक ब्राह्मण मिले। हे कुन्तीनन्दन! उन्होंने मुझसे पूछा तुम कहां जानेकी चाहते हो, तब मैंने उससे सब सत्य सत्य कह दिया। हे राजन्! उनने मेरी सत्यवाणीको सुनकर प्रीतिके सहित मेरी पूजा की और मुझसे अत्यन्त प्रेम किया, अनन्तर प्रसन्न होकर मुझसे कहने लगे, हे भारत! तप करो, तपस्याके बलसे तुम शीघ्रही शिवको देखोगे, तब मैं उनके वचनसे हिमाचल पर चढ़ गया, वहां जाकर एक महीने तक फल और मूल खाकर तपस्या करने लगा। दूसरे महीनेकोभी मैंने केवल जल खाकर बिताया। हे पाण्डुनन्दन! मैं तीसरे महीनेमें निराहार होकर तप करने लगा, मैंने चौथे महीनेमें ऊर्द्ध-बाहु होकर बिता दिया, परन्तु मेरे प्राण उस महीनेमेंभी नहीं निकले, यह बड़ा आश्चर्य हुआ, पांचवें महीनेका एक दिन बीतनेपर एक प्राणी शूकरका रूप बनाकर मेरे पास आया। वह अपने हाथ और खुरोंसे पृथ्वीको खोदने और छातीसे रगड़ने लगा तथा बार बार घूमने लगा, उसके पीछेही एक किरात धनुष बाण और खड्गको धारण किये अनेक स्त्रियोंके सहित मेरे पास आया, उसी समय मैंने अक्षय तूणीर और धनुषको धारण करके भयानक शूकरको एक बाणसे मारा, उसी समय उस किरातने भी अपने धनुषको खींचकर मेरे हृदयको कंपाते हुए उस सूअरको एक कठोर बाण मारा। हे राजन्! तब उस किरातने मुझसे कहा कि सूअरको मैंने पहिले मारना चाहा था तुमने मृगयाधर्मके विरुद्ध उसको क्यों मारा? अब हम इन कठिन बाणोंसे [illegible] अभिमानको नाश करदेते हैं; [illegible], ऐसा कह कर उस बड़े शरीरवाले धनुषधारीने मुझे कठोर बाण मारे, मैंने भी उसको [illegible] छा लिया, अनन्तर मैंने [illegible] और [illegible] बाणोंसे उसको [illegible] छा लिया, जैसे वज्रसे इन्द्र पर्वतको। थोड़ी देरमें उसके एक शरीरके सैकड़ों और हजारों शरीर होगये, मैंने उन सबको अपने बाणोंसे मारना आरम्भ किया। हे महाराज! फिर सब शरीरें मिलकर एकही किरात होगया। मैं फिर उसको बाण मारने लगा, कभी वह बड़े शरीर और छोटे सिर वाला और कभी वह छोटे शरीर बड़े सिर वाला होकर मुझसे युद्ध करने लगा। हे भरतकुलसिंह! जब मैं उसको अपने बाणोंसे जीतनेमें असमर्थ हुआ तब मैंने वायुके अस्त्र चलानेकी इच्छा करी; परन्तु यह अस्त्र भी उसे न मार सका, यह देख मुझे महा आश्चर्य हुआ। हे महाराज! फिर मैंने विशेष रूपसे उस किरात पर अपने शस्त्र चलाये। कभी स्थूलाकर्षन और कभी घोर बाणोंके जाल-से उसको छा लिया, मैंने कभी पतंगे कभी पत्थरोंकी वर्षा की। हे महाराज! उसने मेरे सब शस्त्रोंको ग्रासकर लिया। अनन्तर मैंने ब्रह्मशिर अस्त्र चलाया। मेरे उस महा अस्त्रके चलतेही उससे अनेक बाण निकल कर बढ़ने लगे। अनन्तर उस अस्त्रके तेजसे सब आकाश और दिशा प्रकाशमान हो गयी, हे राजन्! महा-तेजस्वी किरातने वह ब्रह्मशिर अस्त्र भी शान्त कर दिया। उसके व्यर्थ होतेही मुझको बहुत भय लगा, पर मैंने अक्षय तूणीर और धनुष लेकर फिर उस किरात पर बाण चलाये, परन्तु वह उन बाणोंको भी खागया। जब मेरे सब अस्त्र और शस्त्र नाश होगये, तब मैंने उससे बाहुयुद्ध किया। कभी तमाचे और कभी मुक्कोंसे मैंने उस किरातको मारा, उस समयके पश्चात मैं मूर्छित होकर पृथ्वीमें गिर गया। हे महाराज! वह किरात इसके पश्चात [illegible] अन्तर्धान होगया। तब मुझे बहुत आश्चर्य हुआ। हे महाराज [illegible]

शिवने दूसरा रूप बनाया और अद्भुत वस्त्र धारण करके मेरे पास आये। देवतोंके स्वामी भगवान शिवने किरातका रूप छोड़कर अपना दिव्यरूप धारण किया और मेरे पास आकर खड़े हो गये, मैंने देखा कि भगवान शिव पार्व्वतीके सहित सर्प और पिनाक-धनुषको धारण किये खड़े हैं। शूलधारी भगवान शिवने मुझसे युद्धमें प्रसन्न होकर कहा कि हे शत्रुनाशन। मैं तुमसे प्रसन्न हूं। तब उन्होंने दो अक्षय तूणीर और धनुष मुझको दिया और कहा कि जो तुम्हारी इच्छा हो सो वरदान मांगो। श्रीशिवजी बोले, हे कुन्तीनन्दन। हम तुमसे बहुत प्रसन्न हैं: कहो हम तुम्हारा कौन काम करें। हे वीर। जो तुम्हारी इच्छा हो, सो मांगो। तब मैंने हाथ जोड़कर उनको शिर से प्रणाम करके शस्त्रोंका वरदान मांगा, तब मैंने हंसकर भगवान शिवजीसे कहा, कि हे भगवान्। मैं सब देवतोंके वाणोंको जानना चाहता हूं। तब भगवान शिवजीने मुझसे कहा कि हमने तुमको यह वरदान दिया; यह मेरा रुद्रास्त्र है, हे पाण्डव। सो हम तुमको देते है। तब शिवने हमको पाशुपत अस्त्र दिया। तब भगवान महादेवने मुझसे प्रसन्न होकर कहा कि इस शस्त्रको कभी भी किसी पुरुषके ऊपर न चलाना, इसके चलातेही सब जगत थोड़ा तेजवाला होनेसे भस्म हो जायगा। हे धनञ्जय। जब तुमको कोई बलवान शत्रु पीड़ा दे, तबही इसको चलाना, अत्यन्त वाणोंकी वर्षा हो, तभी इसको चलाना। इस शस्त्रको कोई नाश नही करता, इस शस्त्रके समान कोई दूसरा शस्त्र नही है। हे महाराज। जब मुझसे श्रीशिवजी प्रसन्न हुए, तब वह शस्त्र मूर्त्ति धारण करके मेरे आगे आखड़ा हुआ। वह शस्त्र शत्रुओंका नाश करनेवाला और सेनाओंका काटनेवाला है। वह शस्त्र घोर कठोर और राक्षसोंका नाश करने वाला है, तब मैं शिवजीकी आज्ञासे वहीं रहने लगा और मेरे देखतेही श्रीशिवजी वहीं अन्तर्द्धान होगये।

१६७ अध्याय समाप्त।

अर्ज्जुन बोले, हे महाराज। मैं उस रात्रि भर प्रसन्न होकर वहीं रहा। महात्मा शिवने मेरे उपर बड़ी कृपा की। जब प्रायः काल हुआ, तब मैंने प्रातःकालकी संध्या की, फिर उसी ब्राह्मणको देखा जिसको पहले देखा था, तब मैने उससे सब कथा कह सुनायी। मैंने उससे कहा, कि हमको साक्षात शिवके दर्शन हुए हैं। हे राजेन्द्र। तब उस ब्राह्मणश्रेष्ठने मुझसे प्रसन्न होकर कहा, कि तुमने शिवका ऐसा दर्शन किया, जैसे पहले और किसीने नहीं किया था, हे पापरहित। तुम इसी स्थानमें यम आदि लोकपालोंके सहित इन्द्रको देखोगे और वे तुमको अनेक शस्त्र देंगे। हे राजन्। वह ब्राह्मण ऐसा कहकर हमसे लपट गया। अनन्तर वह सूर्य्यके समान ब्राह्मण अपनी इच्छानुसार चला गया, उसी दिन दोपहरके पश्चात् पवित्र वायु बहने लगा, मुझे ऐसा जान पड़ा, कि यह लोक नवीन होगया। मेरे पास हिमाचल पर्व्वतके ऊपर दिव्य सुगन्धोंसे भरी हुई अनेक नवीन माला प्रगट होने लगीं, उसके पश्चात मेरे चारों ओर दिव्य और बहुत शब्दवाले बाजे बजने लगे। उसके पश्चात् मैंने इन्द्रकी मनोहर स्तुति सुनी, अनन्तर देवतोंके राजा इन्द्रके आगे अनेक गन्धर्व्व और अप्सरा गीतगाने लगीं। विमानपर चढ़े हुए मरुतगण इन्द्रके अनुचर और स्वर्गमें रहनेवाले देवता मेरे पास आये, इनके पीछे भूषणोंसे भूषित घोड़ोंसे युक्त रथपर चढ़े हुए शचीऔर सब देवतोंके सहित इन्द्र आये। हे महाराज। उसी समय अपने तेजसे प्रकाशमान मनुष्यवाहन कुबेरने भी मुझे दर्शन दिये,

मैंने दक्षिणकी दिशामें बैठे यमको देखा; वरुण और इन्द्रको भी अपने अपने स्थानों पर बैठे देखा। हे महाराज। हे पुरुषसिंह। तब उन सब देवतोंने मुझे प्रसन्न करके कहा, हे सव्यसाची। हम सब लोकपाल तुम्हारे पास आये हैं तुम हमारे दर्शन करो। तुमने देवतोंके कामके लिये शिवका दर्शन किया है, हम लोगोंसे भी शस्त्रोंको ग्रहण करो। हे महाराज। तब मैंने प्रसन्न होकर उन सब देवतोंको प्रणाम किया और उनसे अनेक प्रकारके शस्त्रोंको लिया। हे शत्रुनाशन। जब मैं सब अस्त्रोंको ग्रहण कर चुका। तब सब देवता लोग अपने स्थान पर चले गये, देवतोंके राजा इन्द्र भी अपने उत्तम प्रकाशवाले रथ पर चढकर मुझसे बोले, कि हे अर्ज्जुन। तुमको भी स्वर्गको चलना चाहिये। हे धनञ्जय। तुम्हारे आनेके पहिलेही हम सब बातोंको जान गये थे। हे भरतकुलसिंह। उसके पश्चात हम तुमको अपना दर्शन देंगे। हे पाण्डव। तुमने पहले बहुत तीर्थोंमें स्नान किया है, और तुमको चलना चाहिये, तुमको फिरभी उत्तम तप करना उचित है। हे शत्रुनाशन। तुमको अवश्यही स्वर्गमें चलना होगा। हमारी आज्ञासे मातली आवेंगे और तुमको ले जावेंगे, तुमको महात्मा मुनीश्वर और देवता लोग जानते हैं। तब मैंने इन्द्रसे कहा, हे भगवान् हे देवोंके स्वामी। आप हमसे प्रसन्न हूजिये [illegible] शस्त्रविद्याके लिये आपको अपना गुरु [illegible]। इन्द्र बोले, हे शत्रुनाशन। हे तात। [illegible] सब शस्त्रोंके जाननेवाले और [illegible] [illegible] होगे। हे पाण्डव। जिस [illegible] लिये तुम यहां आये हो वे सब शस्त्र [illegible]। तब मैंने कहा कि हे [illegible] शस्त्र प्रतिघातके लिये [illegible] [illegible] पर [illegible] [illegible] महास्त्रोंके चलाये विना इन अस्त्रोंको नहीं चलाऊंगा। हे देवनाथ। आप उन सब शस्त्रोंको हमें दीजिये, इसके पश्चात् मैं उन लोकोंको जाऊंगा, जिनको शस्त्र जाननेवाले जाते हैं। इन्द्र बोले हे धनञ्जय। मैंने जो यह सब कहा, सो तुम्हारी ही परीक्षाके लिये कहा, तुम हमारे पुत्र हो, इस लिये यह सब कहा। हे भारत। तुम हमारे घरमें चल कर सब शस्त्रोंको सीखो, वहां तुमको वायु, अग्नि, वसु, वरुण और मरुत गण अस्त्र सिखावेंगे। तुम साध्य, पितामह, गन्धर्व्व, नाग यक्ष, राक्षस, वैष्णव नैर्ऋत और हमारे सब शस्त्र सीखोगे। हे कुरुनन्दन। जितने शस्त्र मुझको आते हैं, उन सबको तुम सीख लो। ऐसा कह कर इन्द्र वहीं अन्तर्द्धान हो गये। एक दिन हमने उत्तम घोडोंसे युक्त इन्द्रके रथको देखा वह रथ दिव्य मायामय और मातलीसे युक्त था। हे महातेजस्वी महाराज। जब सब लोकपाल चले गये, तब मातलीने मुझसे कहा, कि तुमको देवराज इन्द्र देखना चाहते हैं। हे महाबाहु। अब तुम चलनेको उपस्थित हो। उसके पश्चात् सब काम करना, तुम इसी शरीरसे स्वर्गको चलो और दिव्य लोकोंको देखो। हे भारत। सहस्र नेत्रवाले इन्द्र तुमको देखना चाहते हैं। जब मातलीने ऐसा कहा, तब मैं वन और हिमाचलसे आज्ञा ली। अनन्तर मैं उस पर्व्वतकी प्रदक्षिणा करके रथपर चढ़ स्वर्गको चला और मातलीनेभी उन वायुके समान चलनेवाले घोड़ोंको हांका। घोड़ोंकी विद्याको जाननेवाले मातलीने रथमें बैठे हुए मेरे मुखको देखा। हे राजन्। मातली बोले, कि यह मुझको परम आश्चर्य दीख रहा है, कि तुम दिव्य रथमें स्थित होकर तुम्हारा [illegible] एक पदभी विचलित नहीं होता है, हे भरतर्षभ। [illegible] [illegible] [illegible] देवराजको भी विचलित [illegible] देखा [illegible]

है; किन्तु तुम ऐसे भ्रमणशील रथमें यथास्थानमें ही बैठे हो, इससे तुम्हारे ये सब कार्य्य इन्द्रको भी अतिक्रम किये है, ऐसाही मुझे बोध होता है। ऐसा कह कर मातलीने आकाशमें रथ हांका और स्वर्गमें पहुंचा। हे महाराज। मातलीने मार्गमें मुझे अनेक विमान दिखाये तब वह रथ घोड़ोंके सहित आकाशमें चलने लगा, तब ऋषि और देवता लोग उस रथकी पूजा करने लगे, तब मैंने इच्छानुसार चलनेवाले अनेक ऋषियोंको देखा मैंने महातेजस्वी गन्धर्व और अप्सरोंके प्रभावोंको देखा, देवतोंके नन्दन आदिक बागभी देखे। इन्द्रके सारथी-मातलीने मुझको अमरावती और इन्द्रके घरको दिखाया। वह अमरावतीपुरी दिव्य कामके देनेवाले वृक्षोंसे शोभित थी वहां न सूर्य्यका प्रकाश, न गर्मी, न सर्दी, न थकाई, न धूल, न बुढ़ापा, न शोक न दीनता, और न दुर्बलता थी। हे शत्रुनाशन! वहां देवतोंको ग्लानिभी नहीं थी, न क्रोध, न लोभ और न राक्षसोका प्रवेश। हे राजन्। उस अमरावती पुरीके सब प्राणी सदा सन्तुष्ट रहते है। वहांके वृक्ष सदा फलनेवाले और हरे पत्तोंसे युक्त रहते है वहांकी पोखर अनेक प्रकारके सुगन्धवाले कमलोंसे भरी हुई, पवित्र और सुगन्धवाले वायुसे युक्त रहते है। वहांकी भूमि अनेक रत्नोंसे खिंचे हुए फूलोंसे विराजमान थी। वहां अनेक हरिन और पक्षी मीठे मीठे स्वरोंसे शब्द कर कर रहे थे। अनेक देवता लोग विमानोंमें बैठे हुए आकाशमें घूम रहे थे; तब मैंने वसु, रुद्र साध्य और मरुत लोगोंको देखा। मैंने अश्विनीकुमार और सूर्य्य आदि सब देवतोंकी पूजा की। उन्होंने भी मुझे वीर्य्य, यश, तेज, बल, शस्त्र और विजय में निपुण जानकर मेरी पूजा करी और कहा कि, देव और गन्धर्व्व पूजित अमरावतीपुरीमें करो, तब मैं हाथ जोड़ कर देवतोंके

राजा हजार नेत्रवाले इन्द्रके पास गया उन्होंनेभी प्रसन्न होकर मुझे अपना आधा आसन दिया। इन्द्रने बहुत आदरके सहि हमारे शरीरको स्पर्श किया। मैं वहां देव और गन्धर्वोंके सहित निवास करने लगा और शस्त्रोंको सीखने लगा। वहां विश्वावसु पुत्र चित्रसेन मेरा मित्र हो गया। हे राज उसीने मुझे नाचने और गानेकी सब वि सिखा दी। मैं जब सब शस्त्रोंको सीख चुक तब आदर सहित स्वर्गमें रहने लगा। इन्द्रके घरमें रहता हुआ, अपनी इच्छानुस सब सुखोंको भोगने लगा। मैंने उत्तम गी और बाजोंके शब्द सुने तथा नाचती हुई उत्त उत्तम अप्सराओंकोभी देखा। हे भारत। उ सब बातोंको तुच्छ समझा और केवल शस सीखनेहीको उत्तम समझता रहा, तब इ कामसे इन्द्र अत्यन्त प्रसन्न हुए। हे राजन् इस प्रकारसे मैंने इस समयको स्वर्गमें बिताया जब इन्द्रको यह विश्वास हो गया, कि इनको सब शस्त्रोंकी विद्या आगई, तब उन्होंने अपने हाथसे मेरे शिरको स्पर्श करके कहा, कि हे वीर। तुम्हारे समान कोई अस्त्र जाननेवाला नहीं होगा, क्योंकि तुम सदा सावधान, निपुण सत्यवादी, जितेन्द्रिय, ब्राह्मणोंके-पूजनेवाले और शस्त्रोंको जाननेवाले हो। तुमको अब युद्धमें देवताभी नहीं जीत सकते है। और मनुष्योंकी तो बातही क्या हैं। तुम अप्रमेय और युद्धमें जीतनेके अयोग्य हो तुमने- पन्द्रह शस्त्रोंको प्राप्त किया है। हे कुन्तीनन्दन। पांचो विधियोंमें तुम्हारे समान कोई नहीं है। तुम शस्त्रों-को चलाना और लौटाना दोनों बातोंको जानते हो, तुम प्रायश्चितके विधानकोभी जानते हो। हे शत्रुनाशन! तुम दूसरेके बाणसे हारे हुए अपने बाणको तेज कर सकते हो। इस समयमें तुम कुछ गुरुका काज करो। हम जानते हैं, कि तुम इस कामको कर सकोगे इसीसे तुमसे कहते है

तब मैंने देवराज इन्द्रसे कहा, कि जो काम मुझे करने योग्य है, उसको आप कृपाही सम-झिये। तब बल और वृत्रासुरके मारनेवाले इन्द्रने हंस कर मुझसे कहा, कि कोई काम ऐसा नहीं है कि जिसको तुम न कर सको, आज कल मेरे शत्रु, निवातकवच बहुत बढ़ गये हैं। वे लोग समुद्रके बीचमें दुर्ग बना कर रहते हैं। इनकी संख्या तीन करोड़ है और उनका रूप, बल तथा तेज समानही है। हे कुन्तीनन्दन! तुम वहां जाकर उन सबको जीतो, इससे तुम्हारे गुरु प्रसन्न होंगे। तब मोरके समान रंगवाले घोड़ोंको मातलीने रथमें जोड़ा। उस महातेजवाले दिव्य रथको इन्द्रने मुझे दिया और इस दिव्य किरीटको अपने हाथसे मेरे सिर पर बांधा, इन्द्रने मुझे अपने समान आभूषण और उत्तम रूपवाले इस अभेद्य कवचको पहिराया। मेरी गाण्डीव धनुष पर इस न टूटनेवाले रोदेकोभी चढा दिया, तब मैं उस सुन्दर रथ पर बैठ कर वहांसे चला, इसी रथ पर बैठ कर पहले इन्द्रने विरोचनके पुत्र बलिको जीता था। उस रथके शब्दसे सब देवता सचेत होगये और उन्होंने मुझहीको इन्द्र मान लिया और मेरे सङ्ग चले। मुझको देखकर देवतोंने कहा, कि हे अर्ज्जुन! तुम कौन काम करनेको चले हो? तब मैंने सब युद्धका समाचार उनसे कह सुनाया। मैं कहने लगा, कि हे महाभाग आप रक्षित देवतो। मैं निवातकवच दैत्योंको मारने जाता हूं, तुमलोग हमे आशीर्व्वाद दो। [illegible] देवतोंने प्रसन्न होकर मेरी वैसी स्तुति [illegible] इन्द्रकी करते हैं। देवता बोले, कि [illegible] इसी रथपर चढ़कर शम्बर दैत्यको मारा [illegible] चढ़कर नमुचि, बल वृत्र, [illegible] और नरकासुरको मारा था। इन्द्रने [illegible] चढ़कर सहस्रों लाखों करोड़ों [illegible] दैत्योंको मारा है। हे कुन्तीनन्दन! तुमभी इस रथपर चढ़कर युद्धमें निवातकवच दैत्योंको अपने पराक्रमसे मारोगे; ऐसेही इन्द्रभी युद्धमें दैत्योंको मारा करते हैं। यह सब शङ्खोंमें श्रेष्ठ शङ्ख है, इसीसे तुम सब दैत्योंका जीतोगे। महात्मा इन्द्रने पहले समयमें इसी शङ्खसे सब लोकोंको जीत लिया था। तब मैंने देवतोंकी स्तुति सुनकर इस देवदत्त शङ्खको ग्रहण किया। मै कवच, शङ्ख बाण और धनुषको धारण करके युद्धकी इच्छासे घोर दानवोंके स्थानको चला।

१६८ अध्याय समाप्त।

अर्ज्जुन बोले, हे महाराज! मैं महाऋषि-योंसे स्तुति सुनता हुआ समुद्रपर पहुंचा; मैंने घोररूपवाले जलके स्वामी भयानक उदधि देखा। उसमें फेनके सहित बड़ी बड़ी तरङ्ग उठती ऐसी जान पड़ती थीं, मानो पर्व्वत बह रहे हैं। समुद्रमें सहस्रों नाव रत्नोंसे भरी हुई खड़ी थीं। उसमें बड़ी बड़ी मछरी, कच्छप मगर और पर्व्वतके समान बड़े बड़े ग्राह घूम रहे थे। जलमें डूबे हुए सहस्रों शङ्ख ऐसे दीख पड़ते थे, जैसे रात्रिमें पतले मेघसे ढके हुए तारे दीखते हैं, समुद्रमें सहस्रों रत्न दिखाई देते थे। उसमें बड़ा घोर वायु उठता था और सब उत्तम समुद्रका वेग दिखाई देता था। मैंने समुद्रके बीचमें दानवोंसे भरा हुआ एक नगर देखा, वहां जातेही रथयोगको जाननेवाले मातली पातालको चले; उस समय उनके रथके शब्दसे सब प्राणी कांपने लगे। उस मेघके समान रथके शब्दको सुनकर राक्षसोंने जाना कि इन्द्र आते हैं। तब वे सब उद्विग्न होगये। सब दानव सावधान होकर धनुष और बाणको धारण करके खड़े होगये। उनलोगोंने अत्यन्त डरकर खड्ग, शूल, फरसा, गदा और मूसल धारण करके अपने नगरके [illegible] [illegible] दिये, उन [illegible] इस [illegible]

को, कि कोईभी न दीखने लगा। तब मैंने प्रसन्न होकर महा शब्दवाले देवदत्त शंखको धीरे धीरे बजाया, उस शब्दके आकाशमें जानेसे घोर गुञ्जार उठी, उस शब्दसे बडे बड़े समुद्रके जन्तु डरके समुद्रमें छिपने लगे। तब निवात-कवच लोग अनेक विचित्र शस्त्रोंको धारण करके तथा उत्तम उत्तम भूषणोंको धारण करके मेरे आगे आये। वे लोग लोहेके भाले, गदा, मूशल, पट्टिश, खड्ग और चक्रको धारण करके लड़नेको आये। शतघ्नी, भुशुण्डी और खड्गको धारण करके सहस्रों राक्षस लोग बाहर निकले। हे भरतकुलसिंह। तब मातलीने मार्गको खूब विचार कर रथको समान भूमिमें स्थापन किया। उन शीघ्र चलनेवाले घोड़ोंके हांकनेसे और शीघ्र चलनेसे उनकी गतिको कोई नहीं जान सका, यह देख मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। तब उन दानवोंने सहस्रों प्रकारके बाजे बजाये और अपने घोर शब्दसे सब दिशाओंको पूरित करने लगे। उस शब्दको सुन कर समुद्रमेंसे पर्वतके समान सहस्रों मछरी उछलने लगीं, तब सैकड़ों हजारों दानव लोग तीक्ष्ण बाणोंको छोड़ते हुए मेरी ओर दौड़े। हे भारत। उस समय मेरा और उन दानवोंका घोर युद्ध हुआ, उस घोर युद्धमें अनेक निवात-कवच मरने लगे। तब देवर्षि दानवऋषि सिद्ध और ब्रह्मऋषियोंके झुण्ड आकाशसे उस घोर युद्धको देखने आये, वे लोग मेरी जीत चाह कर मीठी और अनुकूल वाणीसे मेरी स्तुति करने लगे, ऐसेही तारकासुरके युद्धमें मुनियोंने इन्द्रकी स्तुति की थी।

१६९ अध्याय समाप्त।

अर्जुन बोले, हे महाराज। तब वे सब निवातकवच लोग शस्त्रोंको धारण करके मेरी ओर दौड़े, महारथ निवातकवचोंने गर्ज कर रथके मार्गको रोक दिया और मेरे चारों ओर खड़े होकर मेरे ऊपर शस्त्र बरसाने लगे। अनेक महाबलवान दानव लोग मेरे ऊपर शूल पट्टिश और भुशुण्डी चलाने लगे। वह शूल गदा और शक्तियोंकी घोर वर्षा उनके हाथोंसे छूट कर मेरे रथ पर गिरने लगी। बहुत निवात-कवच राक्षस युद्धमें मेरी ओर दौड़े। वे काली कालके समान रूपवाले घोर शस्त्रोंको धारण किये मेरी ओर आये। मैंनेभी युद्धमें एक एक राक्षसोंके शरीरमें शीघ्र चलनेवाले तीक्ष्ण बाणोंको गाण्डीव धनुष पर चढा कर मारे मेरे तीक्ष्ण बाणोंने उन सब राक्षसोंको युद्धसे विमुख कर दिया। तब मातलीने उन शीघ्र चलनेवाले घोड़ोंको हांका, वे वायुके समान शीघ्र चलनेवाले घोड़े अनेक मार्गोंसे मातलीके हांकनेके अनुसार चलते हुए अनेक राक्षसोंको नाश करने लगे, मातलीने उस रथके पहियोंके नीचे दबाकर सैकड़ों राक्षसोंको मारा। हे राक्षस लोग छोटे जन्तुओंके समान उस पहियोंके नीचे दबने लगे। घोड़ोंके खुर, रथके पहिये और मेरे बाणोंका घोर शब्द होने लगा, उस शब्दसे सैकड़ा दानव मरने लगे। कोई धनुष धारण किये हो मर गया, किसीका सारथी मरा तो वह आपही घोड़ोंको हांकने लगा। उन शस्त्र चलानेवाले दानवोंने चारों ओरसे मुझे घेर कर शस्त्र चलाये। तब तो मेरा मन घबरा उठा, उस समय मैंने मातलीके विचित्र बलको देखा। उन्होंने बहुत यत्नसे शीघ्र चलनेवालों घोड़ोंको स्थिर किया, तब मैंने उन राक्षसोंको शस्त्रोंके सहित सहस्रों दलके और विचित्र शस्त्रोंसे काट डाला। हे शत्रु-नाशन। मेरे इस अद्भुत कर्मको देखकर इन्द्रके सारथी धीर मातली बहुत प्रसन्न हुए। कोई राक्षस घोड़ोंके खुर और रथके पहियोंके चोट खाकर भाग गये और कोई कोई भाग कर फिर लौट आये, निवातकवच दानव लोग हमारा डाह करते पहुए बाणोंसेभी तीन

ऊपर बाणोंकी वर्षा करने लगे। तब मैंने सहस्रों और सैकड़ों दानवोंको अपने हलके और विचित्र बाणोंसे मारा, मैंने उन बाणोंको ब्रह्मास्त्र मन्त्रसे मन्त्रित करके चलाया था, तब वे महारथ लोग मेरे बाणोंसे पीड़ित होकर क्रोधसे व्याकुल हो गये। वे लोग इकट्ठे होकर शक्ति और शूलोंसे मुझे मारने लगे। हे भारत! तब मैंने इन्द्रके प्यारे महातेजस्वी माधव नामक अस्त्रको चलाया, तब मैंने उस अस्त्रके बलसे उन राक्षसोंके छोड़े हुए सहस्रों खड्ग, त्रिशूल, और तोमरोंको काट दिया। उनके सब शस्त्रोंको काट कर मैंने क्रोधसे उन एक एक राक्षसोंके शरीरमें दस दस बाण मारे, उस समय गाण्डीव धनुषसे भौरोंके समान बाण छूट रहे थे, ऐसा देख मातली मेरी प्रशंसा करने लगा और उन दानवोंके बाणभी ऐसेही छूट रहे थे, मातली उनकी भी प्रशंसा करने लगे, तब मैंने अपने बाणोंसे उन सबको काटना आरम्भ किया। वे राक्षस मुझसे पीड़ित होकर फिर इकट्ठे हुए और भारी घोरसे मेरे ऊपर बड़े बड़े बाण बरसाने लगे। तब मैंने अपने बाणोंसे उनके सब बाणोंको काट दिया, फिर शीघ्र चलनेवाले प्रकाशमान बाण उनके शरीरोंमें मारे, बाण लगनेसे उनके शरीर कट गये और रुधिर बहने लगा, उस समय उनकी शोभा ऐसी दिखाई देती थी, जैसी वर्षाकालमें पर्व्वतोंके शिखरोंकी। [illegible] वज्रके समान कठोर और सीधे चलने- [illegible] बाणोंसे राक्षस लोग घबड़ा गये, और [illegible] उनके शरीरोंके सौ सौ टुकड़े हो गये [illegible] और तेज क्षीण हो गये। तब वे [illegible] मुझसे मायायुद्ध करने लगे।

[illegible] अध्याय समाप्त।

[illegible] हे महाराज! तब मैंने [illegible] समान [illegible]

लगीं, उनसे मुझको बहुत पीड़ा हुई। मैंने सबको वज्रके समान कठोर इन्द्रके मन्त्रसे युक्त वेगवाले घोर बाणोंसे काट दिया। जब शिलाओंकी वर्षा कट गयी, तब अग्नि बरसने लगी, उसके सङ्गही आगके पतङ्गोंके समान पत्थरका चूरा बरसने लगा। जब वह वर्षा बन्द हुई, तो बहुत पानी बरसने लगा, उस आकाशसे गिरती हुई सहस्रों जल धाराओंसे दिशा छा गयी। जल-धारा गिरने, घोर वायुके शब्द और मेघोंके गर्जनसे दैत्योंको कुछभी न दीख पड़ा। वे धारा आकाश और पृथ्वीमें छा गयी थीं। इससे मुझे बहुत भ्रम हुआ, वे निरन्तर बरसने लगीं; तब मैंने इन्द्रके बताये हुए दिव्य प्रकाशमान और घोर शोषण अस्त्रको चलाया। उसके चलतेही वह जल सूख गया। जब मैंने पत्थर, वायु अग्नि और जलको नष्ट कर दिया, तब दानवोंने फिर मायाको प्रकाश किया और अग्नि बरसाने लगे। तब मैंने जल बाणसे उस अग्निको बुझा दिया और पर्व्वत शस्त्रसे वायुके वेगको नाश कर दिया। हे महाराज! जब मैंने इस सब मायाको नष्ट कर दिया, तब युद्धमें मतवाले सब दानवोंने मिलकर अनेक माया प्रगट की; तब अग्नि, वायु और पर्व्वतोंके अनेक अस्त्र मेरे ऊपर बरसने लगे, वे सब शस्त्र महा-घोर रूपवाले और भयानक थे, यह मायामयी शस्त्रकी धारा मुझे युद्धमें बहुत पीड़ा देने लगी, अनन्तर सब ओर घोर अन्धकार फैल गया। उस घोर और कठोर अन्धकारसे सब जगत् छा गया। तब मेरे घोड़े युद्धमें विमुख हुए और मातलीभी घबड़ा गये उनके हाथसे सोनेका कोड़ा पृथ्वीमें गिर पड़ा और उन्होंने घबड़ाकर मुझसे कहा, कि हे अर्जुन! [illegible]

जो घोर युद्ध हुआ था, मैंने उसको देखा था, जिस समय सम्बरासुर मारा गया था; उस समयभी महायुद्ध हुआ था, तबभी मैंही इन्द्र का सारथी था, वृत्रासुरके युद्धमेंभी मैंनेही घोड़ोंको हांका था। इसी प्रकार मैंने बलि और इन्द्रके घोर युद्धकोभी देखा है। ये सब युद्ध महाघोर थे और मैं सबमें था; परन्तु ज्ञानरहित कभी नहीं हुआ था। हे पाण्डव! जान पड़ता है, कि ब्रह्माने प्रलय करनेकी इच्छा की है, क्योंकि यह युद्ध बिना जगत्के नाश किये समाप्त न होगा। मातलीके ऐसे वचनको सुनकर मैंने अपनेको आपही धीरज दिया और दानवोंकी मायाबलको भुलाता हुआ मातलीसे बोला, हे सूत! तुम कुछ मत डरो; खड़े रहो। हमारे बाहुबल शस्त्र और धनुषकी शक्तिको देखो, हम इसी समय इस सब राक्षसोंकी घोर माया और उग्र तपको नाश कर देंगे। हे महाराज। मैंने ऐसा कहकर देवतोंके हितके लिये सब प्राणियोंको मोहने वाली अस्त्र मायाको प्रगट किया। मेरी उस मायासे महातेजस्वी दानव लोग पीड़ित होकर अनेक प्रकारकी माया करने लगे। कभी जगत् गुप्त होता था और कभी जलमें डूब जाता था। प्रकाश होनेसे मातली घोड़ोंको ठीक करके उस घोर संग्राममें घूमने लगे। तब वे दानव मुझको देखकर जलने लगे। मैंने अन्तर पाकर कितनोंहोको मारडाला। इस प्रकार जब निवातकवचोंका युद्ध हो रहा था, तब एकबार सब दानव गुप्त होगये।

१७१ अध्याय समाप्त।

अर्जुन बोले, हे महाराज! वे दैत्य लोग मुझसे गुप्त होकर युद्ध करने लगे और अनेक प्रकारकी मायाभी करने लगे। मैंनेभी अदृश्य शस्त्रके बलसे युद्ध किया, मेरी गाण्डीव धनुषसे छूटे हुए बाण राक्षसोंको काट काट पृथ्वीपर गिराने लगे। मैंने अपने बाणोंको दिव्य मन्त्रित करके छोड़ा। निवातकवच लोग मुझसे पीड़ित होकर मायाको छोड़ अपने नगरको भाग गये। जब दानवलोग भागे और सबके शरीर दीखने लगे, तब मैंने देखा, कि सैकड़ों, सहस्रों राक्षस मरे पड़े हैं। उनके पासही सहस्रों भूषण, शस्त्र कवच और गात्रभी कटे पड़े हैं। मेरे घोड़े एकचरणभरभी नहीं चल सकते थे, तब वे आकाशमें उड़ कर खड़े होगये। तब निवात कवचलोगभी आकाशमें छा गये और वहींसे गुप्त होकर शिला वर्षाने लगे। उनमेंसे कोई दानव पृथ्वीमें खड़े होकर मेरे घोड़ोंके पैर और रथके पहियोंको खींचने लगे। वे मेरे घोड़े और पहियोंको पकड़कर मुझे चारों ओरसे पहाड़ोंसे मारने लगे। उन्होंने इतने पहाड़ बर्षाये, कि जिस स्थानमें मैं खड़ा था, वह छिप गया, मैं उन पर्व्वतोंसे छिपने और घोड़ोंके पकड़े जानेसे बहुत पीड़ित हुआ। इसको मातलीने जान लिया। तब मातलीने डरे हुए मुझसे कहा, कि हे अर्जुन! तुम डरो मत। इस समय तुम वज्रअस्त्रको छोड़ो। हे महाराज! मैंने उसके वचन सुन इन्द्रके प्यारे घोर वज्रको छोड़ा, मैं ऐसे स्थानपर खड़ा हुआ, जो चलने योग्य नहीं था। वहांसे मैंने अपनी धनुषको मन्त्रित करके वज्रके समान अत्यन्त तीक्ष्ण अनेक बाणोंको छोड़ा। उन वज्रके समान बाणोंने दानवोंकी माया और दानवोंको नाश कर दिया, वे बाण उनके शरीरोंमें वज्रके समान प्रवेश कर गये। वे सब दानव लोग उस वज्रके वेगसे मर कर आपसमें मिल मिल कर पृथ्वीमें गिरने लगे। जो दानव आकाशमें खड़े हुए मेरे घोड़ोंको पकड़े थे, मेरे बाण उनके हृदयमें घुस गये और उन्हें यमकेघर पहुंचा दिया, उस समय उन पर्व्वतोंके समान राक्षसोंके शरीरोंसे पृथ्वी ऐसी भर गई थी, मानो अनेक पर्व्वत पड़े हुए हैं। उस

युद्धमें मेरे घोड़े सारथी और मेरी कुछभी हानि न हुई, यह देख कर मुझे बहुत आश्चर्य हुआ। तब मातलीने हंसकर मुझे कहा, कि हे अर्ज्जुन। जो बल तुममें है, सो देवतोंमेंभी नहीं है। जब सब राक्षस मर गये, तब स्त्रिया इस प्रकार रोने लगीं जैसे शरद ऋतुमें सारस बोलते हैं। तब मैं मातलीके संग नगर के भीतर गया, मेरे रथके शब्दको सुन निवात कवचोंकी स्त्रिया डरने लगीं। उन मयूरके समान रङ्गवाले दश हजार घोड़े और सूर्य्यके समान रथको देख कर स्त्रियोंके सहस्रों झुण्ड इधर उधर भागने लगी। उन डरी हुई भागती स्त्रियोंके भूषणोंके शब्दसे ऐसा जान पड़ने लगा मानो पर्व्वतसे गिरती हुई शिलाओंका शब्द होता है, कोई डरी हुई स्त्री अपने रत्नजटित घरमें घुस गयीं। मैंने उस विचित्र और देव-[illegible] नगरसेभी श्रेष्ठ नगरको देख मातलीसे [illegible]ा, इस उत्तम नगरमें देवतालोग क्यों नहीं [illegible]स करते हैं? क्योंकि यह नगर अमरावती [illegible]भी अच्छा दीखता है। मातली बोले, हे [illegible]न्तीनन्दन! पहले यह नगर हमारा और [illegible]न्द्रका स्थान था, परन्तु निवातकवचोंने [illegible] हमलोगोंको निकाल दिया था। उन्होंने [illegible] अपने तपसे ब्रह्माको प्रसन्न किया। फिर [illegible] स्थानमें रहनेके लिये और देवतोंसे अजय [illegible] वरदान मांगा। तब भगवान् ब्रह्माने [illegible] कहा, कि तुम अपने रहनेको दूसरा [illegible] ठीक करो। इस स्थानमें सब देवताके [illegible] चाहिये और तुमही [illegible] धारण करके इन सबका नाश [illegible] इन्द्रने इन दानवोंका नाश [illegible] दिया। जिन दानवों[illegible] मारा है, उनको देवताभी नहीं [illegible] भारत! आजतक यानेसे [illegible] करनेको यहां आये [illegible] उत्साह किया। दानवोंके मारनेके लिये इन्द्रने तुमको सब शस्त्र सिखाये हैं। अर्ज्जुन बोले, तब मैं सब दानवों-को मार और उस नगरको शान्तकर फिर मातलीके सहित स्वर्गको चला।

१७२ अध्याय समाप्त।

हिरण्यपुरवासी दानववध प्रकरण।

अर्ज्जुन बोले, हे महाराज! जब मैं स्वर्गको लौटा आता था, उसी समय एक बड़ा आश्चर्य दिखाई दिया। मुझे सूर्य्य, चन्द्रमा और अग्नि-के समान प्रकाशवाला इच्छानुसार घूमता हुआ एक नगर दिखाई दिया उसमें अनेक रत्नोंके वृक्षोंपर बैठे हुए पक्षी मीठे स्वर सुना रहे थे। उसके भीतर सदा प्रसन्न रहनेवाले पुलोम और कालकञ्ज वंशी दानव निवास करते थे। उस नगरके चार द्वार थे, परन्तु चारोंही बड़े दुःखसे जाने योग्य थे। उसकी अटारी और महल बहुत सुन्दर थे। वह नगर रत्नोंसे जड़ा हुआ दिव्य और विचित्र दिखाई देता था, उसके चारों ओर फूलों और रत्नोंसे भरे वृक्ष विराज-मान थे। उन वृक्षोंपर मनोहर और दिव्य पक्षी बोल रहे थे। उस नगरके चारों ओर अनेक राक्षस लोग प्रसन्नतासहित शूल खड्ग और मूशल लिये माला धारण किये घूम रहे थे। मैंने उस विचित्र दिव्यनगरको देखकर मातलीसे पूछा, कि यह किसका नगर है। मातली बोले, पुलोम और कालकञ्ज नामक महा असुर हुए थे, उन्होंने देवतोंके सहस्र वर्षतक घोर तप किया। जब उनका तप समाप्त हुआ, तब ब्रह्मा [illegible] मांगे। उन्होंने यह वरदान मांगा कि हमारे पुत्रोंको दुःख नहीं, हमको देवता, राक्षस और सर्प न मार सकें और हमारे [illegible] रमणीय नगर आकाशमें घूमा करे। हमारे [illegible] नगरको देवता, [illegible] महर्षि, गन्धर्व्व, [illegible] और [illegible]

न जीत सकें। तब ब्रह्माने कालकेय दानवोंके निमित्त उस नगरको बनाया था। हे वीर! वही वह नगर आकाशमें देवतोंसे खाली घूमता था। इसमें पुलोम वंशी और कालकञ्ज वंशी दानव रहते थे। इस नगरकी रक्षा पुलोमवंशी और कालकञ्ज वंशी करते थे। इस नगरका नाम हिरण्यपुर जगत्में प्रसिद्ध था। यह दानव इस नगरमें निर्भय और मृत्युके डरसे रहित होकर रहते थे। ब्रह्माने प्रथम वर देते समय कह दिया था, कि इन दानवोंकी मनुष्योंसे मृत्यु होगी। हे अर्जुन! वज्र लेकर इन महादानवोंका नाश करो। अर्जुन बोले, हे राजन्! तब मैंने उन दानवोंको देवता और राक्षसोंसे मारनेके अयोग्य समझ, कर मातलीसे कहा, हे सूत शीघ्रही इस नगरमें चलो, जितने इन्द्रके शत्रु हैं, वह चाहे अवध्यभी हों तौभी मैं उनको शस्त्रसे मारूंगा। तब मातली मुझे दिव्य रथके सहित शीघ्रताके साथ हिरण्यपुरमें ले गये। वह दानव मुझको देख-कर विचित्र आभूषण और वस्त्र पहिनकर रथोंपर चढ़ मेरे सम्मुख आये तब सर्पके समान बाण, भाले बरछी, तोमर आदि शस्त्रोंसे दानव-लोग मुझे बड़े क्रोधके साथ मारने लगे। हे महाराज! तब मैंभी अस्त्रविद्याके बलसे उनके शस्त्रोंको निवारण करने लगा। मैंने रथकी चाल और बाणोंकी वर्षासे दानवोंको ऐसा मोहित किया, कि वे आपसमेंही लड़ने लगे। उन मोहित हुए दानवोंके सिर मेरे बाणोंसे कट कर गिरने लगे। जब दानव मरने लगे, तब सब दानवोमायासे अपने नगर सहित उड़ गये। तब मैंने बाणोंकी वर्षासे उनके मार्गको रोक दिया, वह आकाशमें उड़नेवाला नगर सूर्यके समान वरदानके प्रतापसे दानवोंकी इच्छानुसार पृथ्वीमें या आकाशमें सुखसे रहता था कभी आकाशको चला जाता था, कभी [illegible] जाता था, और कभी जलमें डूब जाता था। वह नगर अमरावतीके समान इच्छा-चारी था। उसे मैंने बाणोंकी वर्षासे रोक लिया। हे नरेश्वर! मैंने उस नगरको बाणोंके जालसे घेर लिया विशेष ध्यान करनेवाले मैं लोहेके बाणोंसे वह नगर छिन्न भिन्न होकर पृथ्वीपर गिर पड़ा। हे राजन्! मेरे बाणोंसे वे दानवभी व्याकुल होकर चक्कर खाने लगे। तब मातलीने रथको पृथ्वीपर उतारा, मैंने पृथ्वीपर आकर उन युद्ध करनेवाले दानवोंके साठ हजार रथ देखे, वह सब मुझसे लड़नेके वास्ते खड़े थे, मैंने ऐसे तीक्ष्ण बाणोंसे जिनमें पक्षियोंके पङ्ख लगे थे, दानवोंको आच्छादित कर लिया, वह लोग युद्धमें ऐसे उमड़े, जैसे समुद्रकी तरङ्ग उमड़ती है। मैंने यह समझा कि, यह लोग मनुष्यसे युद्धमें समर्थ नहीं है, तब दिव्य अस्त्रोंको क्रमसे चलाना आरम्भ किया। मेरे छोड़े हुए दिव्य अस्त्र चारों तरफ फैल गये और उनसे दानवोंका मार्ग रुक गया। परन्तु दानव लोगोंको उन अस्त्रोंसे कुछभी पीड़ा न हुई और मैं दानवोंके शस्त्रोंसे पीड़ित हो गया और मुझे बहुत भय मालूम होने लगा। तब मैं चित्तसे महादेवकी शरण गया, जगतका कल्याण हो, ऐसा कह कर मैंने शत्रुओंको नाश करनेवाला भयानक रुद्रास्त्र छोड़ा, उस बाणको गाण्डीव धनुष पर चढ़ाते समय मैंने देखा कि, तीन सिर, नौ नेत्र छः हाथ वाला पुरुष जिसके जलती हुई अग्निके समान केश है, और भयानक सर्पोंके वस्त्र बनाये था, मैं सम्मुख खड़ा है, मैं घोर-रूपी भयानक महा-देवको नमस्कार करके नाश करनेकी इच्छासे दानवेन्द्रोंके ऊपर शस्त्र छोड़ा। हे भारत! उस अस्त्रके छोड़ते ही सहस्रों रूप प्रकट हो गये। हे पृथ्वीनाथ! उस समय युद्धमें हाथी सिंह व्याघ्र, रीछ, भैंसे, सांप, गौ, शार्दूल, बाघ, भुण्डके भुण्ड बन्दर, ऋषभ, शूकर [illegible] उद्दविलाव, प्रेत, सूत, [illegible], गरुड़, नरसिंगा

देवता, ऋषि गन्धर्व्व, पिशाच, यक्ष, असुर, [illegible], हरिन हाथीके समान मुखवाली मकरी, [illegible], साधारण मकरी, घोड़ेके समान मुखवाली मकरी, अनेक शस्त्र धारण किये धनुष, गदा, मुद्गरधारी राक्षस तथा और भी अनेक रूप धारण किये जन्तु प्रकट हुए। उन सबसे नगर व्याप्त होगया। उसी समय तीन सिर, चार दांत, चार मुख और चार हाथवाले अनेक राक्षस मर मरकर गिरने लगे। वे राक्षस मांस, मद्य और अस्थियोंसे भर गये थे। उस समय वज्र, अग्नि और सूर्य्यके समान तेजवाले मेरे बाण चलने लगे। मैंने पर्व्वतके समान कठोर बाणोंसे क्षणभरमें सब दानवोंको मार डाला। हे भारत! तब मैंने गाण्डीव धनुषसे छूटे हुए बाणोंसे मरे हुए राक्षसोंको देख त्रिपुरासुरको मारनेवाले शिवजीको प्रणाम किया। मैं शिवजीके बाणोंसे मरे हुए दिव्य भूषणोंसे भूषित राक्षसोंको देखकर आनन्दित हुआ। इन्द्रके सारथी मातली इन बातोंको सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। देवतोंसेभी दुःसाध्य [illegible] करते देख इन्द्रके सारथी मातलीने मेरी [illegible] प्रशंसा की और बहुत प्रसन्न होकर [illegible] जोड़कर कहा, कि हे अर्ज्जुन! तुमने जो [illegible] किया उसको देवता और राक्षसभी [illegible] कर सकते थे, इस कर्म्मको साक्षात [illegible] राजा इन्द्रभी नहीं कर सकते थे, [illegible] आकाशमें चलनेवाला नगर देवता और [illegible] [illegible], हे वीर! तुमने इस [illegible] और वीर्य्यके बलसे [illegible] [illegible] मरने और नगर [illegible] [illegible] [illegible] दुःखसे भरी हुई [illegible] समान रोती हुई नगरके बाहर [illegible] [illegible] रोती [illegible] [illegible] [illegible] हुई [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] और दानवोंके बालक होकर शोक और कुरूपतासे भरगया, इसलिये उसकी शोभाभी नष्ट हो गयी। जिस प्रकार इन्द्रजालका बना हुआ नगर, जैसे हाथीके विना तालाब और जैसे सूखे वृक्षोंवाला वन शोभित नहीं होता है, तैसेही वह नगर दीखने लगा। अनन्तर मुझको प्रसन्नचित्त और सब कामको समाप्त देखकर मातलीने शीघ्रही इन्द्रके घर पहुंचा दिया। मैं हिरण्यपुरके सब राक्षसोंको मार निवात-कवचोंका नाशकर इन्द्रके पास गया। मेरे सब कर्म्मोंको मातलीने इन्द्रसे विस्तारपूर्व्वक कहा। हे महातेजस्विन! मैंने जैसे हिरण्यपुरका नाश किया था, जैसे मायाको निवारण किया था और जैसे महातेजस्वी निवात कवचोंको मारा था सो सब कथा मातलीने इन्द्रसे कही। इस कथाको सुन कर सहस्र नेत्रवाले इन्द्र बहुत प्रसन्न हुए और मरुत-गणोंके सहित श्रीमान् इन्द्र मेरी बहुत प्रशंसा करने लगे। अनन्तर देवराज इन्द्रने मुझे प्रसन्न करके ये मीठे वचन कहे, हे शत्रुनाशन! जो कर्म्म तुमने किया इसको देवता और असुरभीनहीं कर सकते थे, हे धनञ्जय! यह कर्म्म तुमने मेरे निमित्त किया है, अब युद्धमें स्थिर होकर सदा ऐसेही कर्म्म करना। तुम सावधान होकर युद्धमें सब शस्त्रोंको चलाना, क्योंकि तुमसे देवता, दानव, राक्षस, यक्ष, असुर पक्षी और सर्पादि कोईभी नहीं लड़ सकता है, हे कुन्तीनन्दन! तुम्हारे बलसे जीती हुई पृथ्वीको महाराज धर्म्मात्मा युधिष्ठिर पालन करेंगे।

इति [illegible] अध्याय समाप्त।

[illegible] बोले, जब [illegible] यह विश्वास हो गया कि [illegible] शत्रुओंको जीत सकेंगे, [illegible] [illegible] मुझे [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] मुझसे बोले, कि हे भारत [illegible] तुमसे [illegible] दिव्य [illegible] [illegible] [illegible]

पृथ्वी पर कोई मनुष्य ऐसा नहीं है जो तुमको किसी प्रकारसेभी जीत सके ; हे पुत्र। भीष्म, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, कर्ण और शकुनी सब राजोंको संग लेकरभी युद्ध करें तौभी तुम्हारे सोलहवें भागके समान नहीं होंगे। अनन्तर भगवान इन्द्रने मुझे यह अभेद्य कवच ; सोनेकी दिव्य माला और बहुत शब्दवाला देवदत्त शंख दिया, फिर इन्द्रने अपने हाथसे यह क्रीट मेरे सिर पर बाधा, फिर दिव्य वस्त्र और बड़े बड़े सुन्दर आभूषण दिये। हे महाराज! मैं इस प्रकार पूजित होकर इन्द्रके पवित्र घरमें गन्धर्व्व-पुत्रोंके सहित रहा। एक दिन देवतोंके सहित बैठे हुए इन्द्रने प्रसन्न होकर मुझसे कहा कि हे अर्ज्जुन! अब तुम्हारे जानेका समय होगया, अब तुम्हारे भाई तुमको स्मरण करते होंगे। हे महाराज। मैं इस प्रकार जूएके दुःखको स्मरण करता हुआ पाच वर्ष तक इन्द्रके घरमें रहा, फिर इस गन्धमादन पर्व्वतके शिखर पर भाइयोंके सहित बैठे हुए आपका दर्शन किया।

युधिष्ठिर बोले; हे धनञ्जय! तुमने प्रारब्धसे सब शस्त्रोंको प्राप्त किया प्रारब्धसे देवतोंके राजा भगवान इन्द्रको प्रसन्न किया, हे शत्रु-नाशन पापरहित अर्ज्जुन! तुमने प्रारब्धसे पार्व्वती सहित शिवको अपने युद्धमें प्रसन्न किया, तुमको प्रारब्धसे लोक-पालोंके दर्शन हुए, प्रारब्धसे हमारी उन्नति होती है और प्रारब्धहीसे तुम लौट कर आये हो। अब मैं सब नगरोंके सहित पृथ्वी और धृतराष्ट्रके पुत्रोंको अपने वशमें समझता हूं। हे भारत! अब हम उन शस्त्रोंको देखना चाहते हैं, जिनसे तुमने बलवान निवातकवच दानवोंको मारा था। अर्ज्जुन बोले हे महाराज! मै प्रातःकाल आपको उन सब शस्त्रोंको दिखाऊंगा जिनसे मैंने निवातकवच दानवोंको मारा था।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अर्ज्जुन इस प्रकार अपने आनेकी सब कथा कहकर भाइयोंके सहित सोगये।

हिरण्यपुरवासी प्रभृति निवातकवच युद्धप्रकरण और १७४ अध्याय समाप्त।

अथ अस्त्रप्रदर्शन प्रकरण।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! उस रातके बीतने पर महाराज युधिष्ठिर अपने भाइयोंके सहित उठे और नित्य कर्म करके अर्ज्जुनसे बोले, हे कुन्तीनन्दन! जिन अस्त्रोंसे तुमने दानवोंको मारा है, उन सबको हमें दिखाओ। हे भारत। हे राजन्! तब पाण्डुनन्दन अर्ज्जुनने देवतोंके दिये हुए सब अस्त्र महाराजको दिखानेके लिये यथा योग्य पवित्र होकर बहुत तेजवाले दिव्य कवचको पहिनकर सुन्दर तीन बांसवाले पर्व्वत शिखर रूपी रथ पर चढ़ कर विराजमान होने लगे। फिर उन्होंने देवदत्त शंखको बजाया। अनन्तर कुन्तीनन्दन महाबाहु अर्ज्जुन गाण्डीव धनुष धारण करके विराजमान हुए फिर दिव्य अस्त्रोंको दिखाने लगे। जिस समय अर्ज्जुनने उन अस्त्रोंका प्रयोग किया और पैरसे पैर पृथ्वीपर घुमने लगे, उस समय वहां वृक्षोंके सहित पृथ्वी कांप उठी, समुद्र और नदी उमड़ने लगी, पर्व्वत गिरने लगे, वायुका चलना, सूर्य्यका तेज और अग्निका जलना बन्द हो गया। हे जनमेजय! द्विजोंको वेदका पढ़ना भूलने लगा, भूमिवासी सब प्राणी व्याकुल होकर अर्ज्जुनको निवारण करने लगे, सब उन शस्त्रोंसे कांपने लगे और हाथ जोड़कर अर्ज्जुनसे जीवन प्रार्थना करने लगे। उन शस्त्रोंको चलते हुए देख अग्नि, ब्रह्मर्षि, सिद्ध और महर्षि लोग अर्ज्जुनको रोकने लगे। उसके पश्चात् सब लोकपालोंके सहित ब्रह्मा और सब गणोंके

सहित शिव वहां आये। अनन्तर दिव्य सुगन्धिसे भरा हुआ वायु अर्जुनके चारों ओर चलने लगा, गन्धर्व्व लोग देवतोंकी आज्ञासे अनेक गीत गाने लगे और अप्सरा नाचने लगीं। हे राजन्! उसी समय देवतोंके भेजे हुए नारदने जाकर अर्जुनसे कहा कि हे अर्जुन। इन दिव्य अस्त्रोंको मत चलाओ, हे भारत। इनको विना स्थानके कभी नहीं चलाना चाहिये और स्थान पाकरभी इन्हे विना महादुःख पड़े नहीं चलाना चाहिये; हे भारत! इनके चलानसे महादोष होता है, यदि तुम इनको रक्षासे रखोगे तो समय पर ये बहुत सुख देनेवाले और बलवान होंगे. यदि रक्षासे न रक्खोगे तो यह सब लोगोंका नाश कर देंगे, तुम फिर कभी ऐसा मत करना। हे युधिष्ठिर! अब अर्जुन शत्रुओंके मारनेके लिये युद्धमें इन अस्त्रोंको चलावेंगे, तब तुम देखलेना।

वैशम्पायन मुनि बोले, हे जनमेजय। अर्जुनको निवारण कर सब देवता अपने अपने घर चले गये। देवतोंके जानेके पश्चात् वीर पाण्डव लोग प्रसन्न चित्तसे द्रौपदीके सहित उसी वनमें रहने लगे।

अस्त्र प्रदर्शनप्रकरण और
१७५ अध्याय समाप्त।

[illegible] प्रकरण प्रकरण।

राजा जनमेजय बोले, हे वैशम्पायन जब [illegible] और अर्जुन इन्द्रके यहांसे [illegible] कर लौट आये तब पाण्डवोंने [illegible]

वैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन जनमेजय! [illegible] पराक्रमी अर्जुनके सहित नरनाथ [illegible] वनमें रहने लगे और उस [illegible] पर विहार करने [illegible] नरनाथ धनुषधारी [illegible] और [illegible] हुए विहार करने लगे। राजपुत्र पाण्डवोंको कुवेरकी कृपासे स्थान मिले, वे लोग किसी प्राणीके धनकी इच्छा नहीं करते थे। वह समय उनके आनन्द का था। अर्जुनसे मिल कर पाण्डव लोग चार वर्ष तक वहां रहे. यह चार वर्षका समय उनके एक रात्रिके समान बीता। इस रीतिसे वनमें सुखसे रहते हुए पहले ६ और अबके ४ सब मिलाके १० वर्ष व्यतीत हुए, तब तेजस्वी इन्द्रके समान भीम और अर्जुन तथा नकुल, सहदेवने [illegible] में राजाके पास बैठ कर प्यारे और [illegible] वचन कहे। हे कुरुराज! हम लोग आपकी प्रतिज्ञाको सत्य करने और आपके प्रिय करने होकी इच्छासे वनको छोड़ कर दुर्य्योधनको मारने नहीं गयेथे। हे महाराज! हम लोग अत्यन्त सुखके योग्य होने पर भी वनके अनेक दुःखको सह रहे हैं; हमको वनमें रहते हुए ग्यारहवां वर्ष आरम्भ होगया, अब हम लोग उस अधम बुद्धिरहित दुर्य्योधनको वञ्चना करके अज्ञातवासको विता कर सुख पावेंगे। हे महाराज! जब हमलोग आपकी आज्ञासे शंकारहित होकर पासके वनको छोड़ छिपकर दूर देशमें घूमेंगे, तब वे लोग नहीं जानेंगे कि पाण्डव लोग कहां हैं, इसलिये वे लोग हमको जान नहीं सकेंगे, हम एकवर्ष छिपे हुए रहकर उस मूर्ख दुर्य्योधनसे सर्व्वोको छीन लेंगे; हे नरदेव! हे धर्म्मराज! आप उस अधम पुरुष दुर्य्योधनसे अपने वैरका बदला लेकर फल और पुष्पोंके सहित इस पृथ्वीको प्राप्त कीजियेगा, और दुर्य्योधनको उसके संगियोंके सहित मार डालियेगा। हे [illegible]! यह देश स्वर्गके समान है, हम लोग यहां रह कर दुःखको नाश कर सकते हैं, हे भारत! यदि आप दुर्य्योधनको न [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

कर सकियेगा। हे नरेश्वर! हे भारत! आप इन सब कार्य्योंके करनेमें समर्थ है, आप कुवेर सेभी कौन सकते है, अब आप शत्रुओंको मारने और अपनी वृद्धिका उपाय कीजिये। हे धर्म्मराज! आपके घोर तेजको साक्षात इन्द्रभी नहीं सह सकते है, आपको सब देवतोंके सहित कुवेर और वरुणभी युद्धमें नहीं जीत सकते है, हे नरदेववर्य्य! आपके हित करनेके निमित्त साक्षात श्रीकृष्णजी और सात्यकी तैयार है, ये लोग बलसे असाधारण है और हम लोग भी युद्धमें सामान्य नहीं है, यादवोंके सहित श्रीकृष्ण और बलमें अनुपम अर्जुन तथा अप्रतिम बलो से युद्ध करने को उपस्थित हु. हे नरदेव! ये वीरोंमें श्रेष्ठ नकुल और सहदेव सब शस्त्रोंमें निपुण है। हम सब लोग युद्धको जाननेवाले है. हम सब यत्नसे आपके वैरियोंको मारेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन जनमेजय! धर्म्म और अर्थके जाननेवाले महातेजस्वी धर्म्मपुत्र महाराज महात्मा युधिष्ठिरने अपने भाइयोंकी सम्मति जान कुवेरके स्थानकी प्रदक्षिणा की; नदी, तालाब और स्थानोंसे आज्ञा मांगी। अनन्तर पर्व्वतको देखते हुए मार्गको भूलने लगे। अनन्तर शुद्ध बुद्धि महात्मा धर्म्मराजने पर्व्वतकी प्रार्थना की, कहा कि हे पर्व्वतराज! हम सब कर्मोंको समाप्त कर अपने भाइयोंके सहित शत्रुओंको जीतकर जब राज्य प्राप्त करेंगे तब तुम्हें देखनेको फिर आवेंगे। ऐसा कह कुरुवंशके स्वामी महाराज युधिष्ठिर अपने सब भाई और सब ब्राह्मणोंके सहित उसी मार्गसे चलने लगे जिस मार्गसे आये थे घटोत्कच इन सबको अपने ऊपर चढ़ा कर पर्व्वतों पर चलने लगे। महात्मा महा ऋषि लोमश इन सबको चलते देख पिताके समान शिक्षा देकर स्वर्गको [illegible] गये। महात्मा आर्ष्टिषेणकी शिक्षा सुन पुरुषश्रेष्ठ पाण्डव लोग स्मरणीय तपोवन तीर्थ और बड़े बड़े तालावोंको देखते हुए वहां चले।

१७६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! जिस समय भरतकुलसिंह पाण्डव लोग उस झरने, दिग्गज, किन्नर और पक्षियोंसे विराजमान पर्व्वतके सुखनिवासको छोड़कर चलने लगे तो उनका चित्त प्रसन्न न हुआ, परन्तु जब कुवेरके स्थान मेघके समान सफेद कैलाशको देखा तब बहुत प्रसन्न हुए। ऊंचे ऊंचे पर्व्वतोंके शिखर सिंहोंके स्थान अनेक भूले झरने और नीचे ऊंचे स्थानोंको देख बहुत प्रसन्न हुए और अनेक पक्षी और हाथियोंसे भरे हुए बनोंको देखकर प्रसन्न होते हुए खड्ग और धनुषधारी पाण्डवलोग चलने लगे भरतकुलसिंह पाण्डवलोग रम्य वन, नदी तालाव, पर्व्वतकीगुफा और झरनोंमें निवास करते हुए चलने लगे। वे लोग पर्व्वतोंमें वसते हुए अचिन्त्यरूप कैलाश पर्व्वतसे पार हो गये। अनन्तर आश्रमोंमें श्रेष्ठ वीर सत्तीहर वृषपर्व्वाके आश्रमसे पहुंचे। वहां उन सबको राजऋषि वृषपर्व्वाने पूजा और पाण्डव लोगभी शोकसे रहित हो गये और सब कथा विस्तारपूर्व्वक कही और अपने पर्व्वतमें रहनेका वर्णन किया। महात्मा पाण्डव लोग देवऋषियोंसे भरे हुए उस आश्रममें सानपूर्व्वक एक रात रहे, वहांसे चल कर वदरिकाश्रममें पहुचे। महानुभाव पाण्डव लोग वदरिकाश्रममें ठहरे। वहां उन्होंने शोकरहित होकर कुवेरकी पोखरको देखा, वहां अनेक देवता और सिद्ध निवास करते थे। महात्मा पाण्डुके पुत्र सब मनुष्योंमें श्रेष्ठ पाण्डव लोग सुखसे उसे देख कर इस प्रकार विहार करने लगे, जैसे निर्म्मल ब्रह्मर्षि लोग नन्दनवनमें

विहार करते हैं। अनन्तर पुरुष वीर पाण्डव लोग सुखसहित चलते चलते एक महीनेसे किरातराज सुबाहुके राज्यमें पहुंचे। अनन्तर वीर तुषाकुन्द और पुलिन्द देशके पृथ्वोसे उत्पन्न हुए राजा सुबाहुके नगरमें पहुंचे। जब राजा सुबाहुने सुना कि पाण्डुपुत्र हमारे राज्यमें पहुंच गये, तब वह अत्यन्त प्रसन्न होकर उनके पास आये। कुरुकुलसिंह पाण्डवोंने भी उनका आदर किया। पाण्डवलोग राजा सुबाहु, विशोक आदि सब पुत्र इन्द्रसेन आदि नगर निवासी तथा भोजन बनानेवालोसे मिलकर प्रसन्न हुए। हे राजन्! वेलोग राजा सुबाहुके यहां सुखसे एक रात रहे, वहीसे घटोत्कचको विदा किया। फिर सारथी सहित रथोंपर चढ़कर यामुन पर्व्वतपर जाकर सफेद धातुओं को देखा, वहां जो झरने बहते थे, उनकी शोभा ऐसी दीख पड़ती थी मानो ये झरने पर्व्वतके दुपट्टे हैं। वहांसे चलकर पुरुषवीर पाण्डवलोग विशाखरूप पर्व्वतपर पहुंचे और वहां जाकर निवास किया। उस वनमें अनेक प्रकार हरिन रहते थे, इस वनकी शोभा चैत्ररथके समान दीखती थी। पाण्डव-लोग सर्व्वत्र शिकार खेलते हुए एक वर्षतक वनमें रहे। एकदिन एक गुफामें भीम-सेनको महाउग्र रूप और महाबलवान एक अजगर मिला उसको देखतेही भीम डरसे आकुल होगये। उस समय धर्म्म-[illegible] महाराज युधिष्ठिरने भीमसेनको [illegible]। अनन्तर तेजस्वी महाराज उस [illegible] भीमकी रक्षा की। और [illegible] पाण्डवलोग [illegible] [illegible] दोनों, [illegible] मरुस्थलसे [illegible] [illegible] पाण्डवलोग [illegible]

पहुंचे। द्वैत वनके निवासी उनको अपने वनमें आया देखकर सब उनसे भेट करने आये। तप दम, आचार और समाधिसे युक्त काठके पात्रोंमें अर्घपाद्यके वास्ते जल लिये हुए ब्रह्म तपस्वी पाण्डवोंके पास आये। पाकर, खैर, बेत, बैर, सिरस, बेल, पञ्चनद, पीलू, शमी, करीलादि सरस्वतीके तटपरके सब वृक्ष पाण्डवोंके वहां जानेसे अति शोभायमान होगये। नरदेव पाण्डव लोग बड़ी प्रीतिके साथ देवतोंके स्थानके समान यक्ष गन्धर्व सेवित सरस्वती नदीपर सुखसे विहार करने लगे।

१७७ अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजय बोले, हे मुनि! दश हजार हाथीके समान बलवाले महापराक्रमी भीमसेनने किस प्रकारसे अजगरके भयसे तीव्रक्लेश पाया था। जो अभिमानमें आकर पुलस्त्यके पुत्र कुबेरको युद्धमें पुकारते थे, जिन्होंने राक्षसोंको [illegible] पोखरसे कमल लिये थे, वही [illegible] भयसे आक्रान्त हुए और बलवान भीमसेनको [illegible] कि वह डर गये। इसके [illegible] सुननेकी मेरी बड़ी अभिलाषा है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! [illegible] अनुपधारी पाण्डवलोग राजर्षि वृषपर्व्वाके आश्रमसे जब उस विचित्र वनमें रहने लगे, तब एक दिन [illegible] और [illegible] लेकर भीमसेन उस [illegible] वनमें घूमने गये। उन्होंने हिमालय पर्व्वतको [illegible] देखा, [illegible] [illegible] विचरते थे। [illegible] [illegible] आदि [illegible] पक्षियोंसे [illegible] [illegible] [illegible]

नदियोंके तटोंपर हंस और सारस विराजमान थे। जहां मेघोंके समान सघन देवदारु, हरि चन्दन, राल और अगरके वनको देखने लगे, वहां महाबलवान भीमसेन शुद्ध वाणोंसे हरिनोंको मारते हुए निर्जन स्थानोंमें घूमने लगे। महापराक्रमी महाबाहु भीमसेन अपने बलसे हरिन, शूकर और भैंसोंको मारने लगे। दशहजार हाथीके समान बलवाले अनेक मनुष्योंको युद्धमें रोकनेवाले सिंह और शार्दूलके समान पराक्रमी भीमसेन घूमने लगे। वे अपने बलसे वृक्षोंको तोड़ते और चीरते सब वनको अपने शब्दसे पूरित करने लगे; भीमसेन सुखी होकर पर्वतके शिखरको तोड़ते इधर उधर घूमने लगे। वे कभी वेगसे कूदते, कभी दौड़ते कभी उछलते और कभी अपने हाथोंके शब्दसे ताड़ वृक्षोंका कपाते विहार करने लगे। अभिमानी भीमसेनके वनमें घूमनेसे महाबलवान हाथी महापराक्रमी सिंह गुफाओंसे निकल निकल भागने लगे। भीम कहीं दौड़ते, कहीं बैठते और कहीं धीरे धीरे चलते थे। पुरुषसिंह भीम वनमें रहनेवालोंके समान निर्भय होकर उस घोर वनमें हरिनोंको ढूंढ़ने और अद्भुत नाद करने लगे। तब उनके शब्दसे गुहाशायी सर्प भी भयभीत हुए। वेगसे अतिक्रमकारी भीमसेन उनके पीछे पीछे चले। देवतोंके समान महा-बलवान भीमसेनने एक बड़े भारी शरीरवाले भयानक सर्पको देखा, वह सर्प एक पर्वतकी खोहमें गुफाको अपने शरीरसे रोके हुए बैठा था। उस सर्पका शरीर पर्वतके समान बड़ा था। उसका रङ्ग विचित्र हलदीके समान था, उसके नेत्र लाल और तांबेके समान थे। वह सब प्राणियोंको डरानेवाला काल और यमके समान भयानक सर्प जिह्वासे होठोंको चाट रहा था, उसके स्वासके संग निकले हुए विषसे सब जन्तु डर रहे थे, वह सर्प क्रोध करके भीमको निकट पाके वेगसे भीमके दोनो हाथोंसे लपट गया। उस सर्पके लपटतेही भीमका सब बल और उनकी संज्ञा नष्ट हो गई। भीमसेनका जो बल दश हजार हाथियोंके समान था, जो भीमकी भुजा और सब पुरुषोंसे अधिक थीं, वही तेजस्वी भुजा सर्पके वशमें हो गईं। भीम पराक्रम करने पर भी उससे छूट न सके। उसके वरदानके वशमें होकर दश हजार हाथीके बलको भीम भूल गये। उन्होंने अपने छूटनेके लिये बड़ा यत्न किया, परन्तु छूट न सके।

१७८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। जब तेजस्वी भीमसेन सर्पके वशमें होगये तब उसके विचित्र और अद्भुत बलको विचारने लगे और बोले, कि हे पन्नग। हे सर्पश्रेष्ठ तुम कौन हो? और हमसे कौनसा काम कराना चाहते हो? हम राजा पाण्डुके पुत्र महाराजा धर्मराज युधिष्ठिरके छोटेभाई भीम हैं, हममें दश सहस्र हाथीका बल था, परन्तु नजाने तुमने कैसे हमको वशमें कर लिया, मैंने युद्धमें सैकड़ों सिंह, केशरी, व्याघ्र, भैंसे और हाथियोंको मारडाला। मैंने युद्धमें अनेक महाबलवान राक्षस, पिशाच और सर्पोंको मारा है, मेरे पराक्रमको कोईभी नहीं सह सकता है, हे सर्पश्रेष्ठ। तुमको क्या कोई विद्याबल है? अथवा किसीने तुमको वर दान दिया है? क्योंकि मैं अत्यन्त पराक्रम करने पर भी तुमसे छूट नहीं सकता हूं, मेरी बुद्धिमें आता है, कि मनुष्योंका पराक्रम झूठा है, क्योंकि तुमने मेरे दश हजार हाथीके बलको छीन लिया।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब अक्लिष्ट कर्म करनेवाले भीमने ऐसा कहा, तो सर्पने उनको अपने शरीर द्वारा चारों ओरसे लपेट लिया और महाबाहु भीमसेनके दोनों भुज छोड़कर

कहने लगा, हे महाभुज ! आज तुमको हमारे खानेके लिये देवतोंने भेज दिया है. प्रारब्धहीसे तुम हमारे पास आये हो, पुरुषोंको अपने प्राण बहुत प्यारे हैं, हे भीम ! जैसे हम सर्पयोनिमें प्राप्त हुए हैं, सो कथा तुमसे कहते हैं, तुम सुनो। हम ऋषियोंके शापसे इस दशाको प्राप्त हुए हैं . हम अपने शापका अन्त विचारते हुए यहां रहते हैं , हम तुम्हारे पुरुखा आयुके पुत्र हैं. हमारा नाम राजऋषि नहुष है , तुमने भी हमारा नाम सुनाही होगा। हम ब्राह्मणोंके निरादर और अगस्त्य मुनिके शापसे इस दशाको पहुचे हैं, देखो प्रारब्ध बड़ा बलवान है , हम अपने वंशसे उत्पन्न हुए अत्यन्त सुन्दर रूपवाले तुमको खाना चाहते हैं। यह प्रारब्धहीका फल है। हे नरोत्तम ! दिनके छठे भागमें चाहे हाथी हो, चाहे भैंसा हो जो मेरे पास आता है, वह छूट नहीं सकता। हे भारतश्रेष्ठ ! तुम केवल तिर्य्यक योनिवाले सर्पोंसे नहीं पकड़े गये हो, वरन मुझको [illegible] वरदान भी है। जब मैं इन्द्रके लोकसे विमानसे नीचे गिरने लगा था, तब मैंने भगवान मुनिश्रेष्ठ अगस्त्यसे कहा था, कि हे भगवन् ! [illegible] शापका अन्त बताइये , तब महा तेजस्वी [illegible] कृपासे पूरित होकर कहा, कि हे [illegible] शापका अन्त कुछकालके [illegible], तब मैं स्वर्ग से पृथ्वी पर गिर [illegible] परन्तु मेरी स्मरण-शक्ति कम नहीं [illegible] पुरानी [illegible] सुननेमें मुझसे कहा [illegible] जाननेवाले पुरुष [illegible] उत्तर देंगे, तभी तुम इस शापसे [illegible] जिसको तुम पकड़ोगे [illegible] तोभी [illegible] [illegible] तब मैं [illegible] तुमको मैं

इस अपवित्र नरकमें पड़ा हूं। हे महा तेजस्वी मैं इस सर्पयोनिको धारण करके अपने समयको देख रहा हूं।

ऐसा सुन उस सर्पसे हसे भीम बोले, हे सर्प ! हम कुछ क्रोध नहीं करते हैं और न अपनी कुछ निन्दा करते हैं, क्योंकि होने और न होनेवाले सुख दुःखमें तथा पाप और पुण्यमें मेरे मनको ग्लानि नहीं होती है, क्यों कि प्रारब्धसे होने वाले कामको कोई पुरुष रोक नहीं सकता है। मैं प्रारब्धको बलवान और पुरुषार्थको व्यर्थ समझता हूं। देखो प्रारब्धके दश और बाहुबलके अभिमानसे मैं इस दुर्दशामें व्यर्थ ही पड़ गया। मैं अपने लिये उतना सोच नहीं करता हूं, जितना राज्यसे निकाले हुए वनवासी अपने भाइयोंके लिये। यह हिमाचल अत्यन्त दुःखसे जाने योग्य तथा यक्ष और राक्षसोंसे भरा हुआ है, मेरे भाई मुझे ढूंढने को घबराये होंगे ; जब वे मुझको मरा हुआ सुनेंगे, तो उद्यमको छोड़ देंगे क्योंकि वे सब लोग धर्म्मात्मा हैं और मैं राज्यका लोभी हूं . इस लिये उनका विरोध किया करता था। अथवा बुद्धिमान अर्जुन दुःख नहीं करेंगे, क्योंकि वे सब अस्त्रोंके जाननेवाले तथा यक्ष और राक्षसोंसे भी अजेय हैं। महाबाहु और महा पराक्रमी अर्जुन अकेले ही इन्द्रको भी स्वर्गसे [illegible] सकते हैं, उनके आगे [illegible] और मोहमें भरा हुआ [illegible] खेलने वाला दुर्य्योधन [illegible] माताका बहुत [illegible] [illegible] बहुत [illegible] अधिक मानती [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible]

आता है, कि मेरे मरनेसे वे दोनो किसी योग्य न रहेंगे। सांपके शरीरसे बंधे हुए भीमने इस प्रकार बहुत विलाप किया। परन्तु छूट न सके। उसी समय कुन्तीनन्दन युधिष्ठिरने अनेक अशगुन देखे, तब वे बहुत घबड़ाये। उनकी दाहिनी ओर खड़ी होकर सियारी घोर शब्दसे रोने लगी और उस आश्रमसे दक्षिण दिशाकी ओर खड़ी होकर अनेक सियारी भयानक शब्दसे रोने लगीं। एक पंख, एक चरण और एक आखवाले अनेक भयानक पक्षी अपने मुखसे रुधिरको गिराते हुए सूर्य्यकी ओर घूमने लगे। उस समय धूलसे भरा हुआ घोर वायु बहने लगा। सब हरिन और पक्षी वाईं ओरको बोलते हुए जाने लगे। पीछेसे काला कौआ जाओ जाओ कहने लगा और दहना हाथ पाव फरकने लगा। हृदय और बाया चरण जलने लगा और दहने नत्रमें अशुभ चिह्न होने लगे। हे जनमेजय। बुद्धिमान धर्म्मराज बहुत भयसे व्याकुल होकर द्रौपदीसे पूछने लगे, कि भीमसेन कहा है? तब द्रौपदीने कहा, कि भीमसेनको गये बहुत देर हुई है। यह सुन महाबाहु युधिष्ठिर धौम्यमुनिके सहित चले और अर्ज्जुनसे बोले, कि तुम द्रौपदीकी रक्षा करना तथा नकुल और सहदेवसे कहा कि तुमलोग ब्राह्मणोंकी रक्षा करना। महात्मा धर्म्मराज उन्होंके चरणोंके चिह्न पर चलते हुए भीमको ढूढ़ने लगे। वे वहासे पूर्व्वकी ओर चले, वहा उन्होंने मतवाले हाथियोंको मरे पड़े देखा और वहीं भीमसेनके चरणोंके चिह्नोंको देखा, फिर हजारों सहस्रों हरिन और सैकड़ों सिंहोंको मरा पड़ा हुआ देखा। वह महाराजभी उसी मार्गसे चले। महापराक्रमी भीमके वायुसमान चलनेमें उनकी जघासे उठे हुए वायुसे मार्गके वृक्ष टूटके गिर पड़े, महात्मा धर्म्मराज उन्होंके चरण चिह्न पर [illegible] हुए एक पर्व्वतको खोहमें पहुचे। वहा सूखी वायु चल रही थी और किसी वृक्षपर पत्ता नहीं था। वह स्थान जलसे रहित और कटीले वृक्षोंसे भरा हुआ था। वहाकी पृथ्वी तथा उस कठिन स्थानमें पत्थरोंके टुकड़े और छोटे छोटे वृक्ष भरे थे। वहीं उन्होंने उसी दुर्गम ऊषर स्थानमें सर्पसे पकड़े हुए अपने भाई भीमसेनको निश्चेष्ट हुए देखा।

१७९ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। युधिष्ठिरने सर्पसे पकड़े हुए अपने प्यारे भाईसे ऐसे वचन कहे। हे कुन्तीपुत्र। तुम इस आफतमें कैसे पड़ गये? और यह सर्पके समान शरीरवाला सर्प कौन है? भीमने बड़े भाईको देखकर सब कथा अपने पकड़े जानेको कह सुनाई।

भीमसेन बोले, हे आर्य्य। यह महाबलवान् नहुष नामक राजर्षि हैं, इन्होंने मुझे खानेको पकड़ा है। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे आयुष्मन्। तुम हमारे अत्यन्त पराक्रमी भाईको छोड़ दो, हम तुम्हारी क्षुधा निवारण करनेके लिये दूसरा भोजन देंगे। सर्प बोला, यह राजपुत्र हमारे मुखमें आचुके हैं, इसलिये हम इन्हीको खायंगे, तुम चले जाओ, यहा खड़ा होना योग्य नहीं है, यहा रहनेसे तुमभी कल हमारे भोजन बनोगे। हे महाबाहो। यह हमारा प्रण है, कि जो हमारे पास आता है, उसको हम खाजाते हैं। हे तात। तुमभी हमारे पास आये हो और तुम्हारा भाई प्रारब्धसे हमारे पास आगये हैं, अब हम दूसरे आहारकी इच्छा नहीं करते हैं। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे सर्प। तुम देव हो, वा दैत्य हो या सर्प हो जो हो, सत्य कहो, तुमसे मैं युधिष्ठिर पूछ रहा हूं, हे सर्प। तुमने भीमसेनको क्यों पकड़ा है? तुम कौनसे भोजनसे प्रसन्न हो सकते हो? हम तुम्हारे।

प्रसन्नता के लिये कौनसा भोजन ले ...हि।

सर्प बोले हे पापरहित। हम तुम्हारे ... नहुष नामक राजर्षि हैं। हे नरनाथ। ... चन्द्रमासे पांचवीं पीढ़ीमें आयुके पुत्र हैं ... अपने पराक्रम, तप, यज्ञ और वेद पाठसे तीनों लोकोंके ऐश्वर्यको प्राप्त किया था. उस ... प्राप्त करके मुझे बहुत अभिमान ...आ। मेरी पालकीमें सहस्र ब्राह्मण लगते ... इस ऐश्वर्यसे उन्मत्त होकर ब्राह्मणों-... अपमान किया। मैं उसी अपमानके ... अगस्त्य के शापसे इस दशाको प्राप्त हुआ हूं। हे पृथ्वीनाथ। हे पाण्डव। इस ... परभी मेरी बुद्धि नष्ट नहीं हुई। ...भी उन्हीं महात्मा अगस्त्यकी कृपा है। ...दिनके बीते सामने भोजनके लिये तुम्हारे ...आ पड़ा है, इस लिये मैं इसको नहीं ... और न दूसरा भोजन लूंगा। यदि तुम ... का उत्तर दो तो मैं तुम्हारे भाई भीम ...ड़ दूं।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे सर्प! तुम ... शक्तिके अनुसार तुम्हें ... उसका उत्तर देंगे, जिन ... सकते हैं उन्हींका। तुम ... सर्प ... तुम्हारे उत्तरको सुन

हे युधिष्ठिर! इस जगत्में ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शूद्र चार वर्ण हैं, वे चारों अपौरुषेय वेदका प्रमाण मानते हैं, यदि किसी शूद्रमें सत्य, दान, क्षमा, शीलता, अहिंसा और दया हो, तो क्या वह भी ब्राह्मणही हो जायगा? तुमने जो कहा, कि ब्रह्ममें सुख और दुख नहीं है और वही ब्रह्म जानने योग्य है, तो तुम एक ऐसे प्राप्त होने योग्य स्थानको कहो, कि जो सुख और दुःखसे रहित हो क्योंकि हमको ऐसा कोई पद नहीं दीख पड़ता। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे सर्प! जो ये लक्षण शूद्रमें हैं, और ब्राह्मणमें नहीं हैं तो वह शूद्र शूद्र नहीं है और वह ब्राह्मण ब्राह्मण नहीं है। हे सर्प जिसमें ये लक्षण हों वह शूद्र ब्राह्मण है और यदि ये लक्षण ब्राह्मणमें न हों तो वह ब्राह्मणभी शूद्रही है। हे सर्प! जो तुमने कहा, कि "कोई वस्तु सुख दुःखसे रहित जानने योग्य नहीं है और कोई पद ऐसा नहीं है जिसमें सुख और दुःख नहीं हो।" हे सर्प! ऐसा बोध होता है कि, सुख दुःखसे रहित कोई वस्तु नहीं हैं, सो जैसे गर्मीमें सदा नहीं और सदामें गर्मी नहीं है, वैसे कोई पद सुख और दुखसे रहित नहीं है। अर्थात् जिस प्रकार शीतता और उष्णताके बिना

जातिकी परीक्षा होनी बहुतही कठिन है। हम देखते हैं, कि दूसरे वर्णकी स्त्रीसे दूसरे वर्णका पुरुष सन्तान उत्पन्न करता है, वचन, मैथुन, जन्म और मरण सब पुरुषोंका समानही होता है। यह 'यजामहे' वेदवाक्य प्रमाण है और हमको माननेयोग्य है, इसीसे पण्डित सब चरित्रको प्रधान मानते हैं। जब लड़का उत्पन्न होता है, उसका नाल काटा जाता है उससे पहिलेही जातिकर्म्म किया जाता है, उस कर्म्ममें उस बालककी माता सावित्री और पिता आचार्य्य होता है। भगवान स्वायम्भु मनुनेभी अपनी स्मृतिमें ऐसाही कहा है, कि जब तक बालक वेद न पढे, तब तक वह शूद्रवत रहता है। हे नागेन्द्र! सब वर्णोंकी संस्कार आदि क्रिया को जाने परभी यदि उनमें सच्चरित्रता न रहे, तो सङ्करत्वको बलवान निश्चय करे। हे सर्प! इसलिये जिसमें सुसंस्कृत चरित्र दिखाई दे उसे ही पहिले मैंने ब्राह्मण कहके वर्णन किया है। सर्प बोले, हे युधिष्ठिर! हमने तुम्हारे सब वचन सुने अब हम तुम्हारे भाई भीमसेनको नहीं खायंगे।

१८० अध्याय समाप्त।

महाराज युधिष्ठिर बोले. आप इस लोकमें वेद और वेदाङ्गोंके जाननेवाले हैं सो हमसे कहिये. कि कौन कर्म्म करनेसे मनुष्यको उत्तम गति होती है? सर्प बोले, हे भारत! पात्रको दान देना, प्यारे वचन कहना सत्य बोलना और किसीको दुःख न देना इन्हीं कर्म्मोंसे पुरुष स्वर्ग जाते हैं।

युधिष्ठिर बोले. हे सर्प! दान अहिंसा और प्यारी वाणी इन चारोंमें कौन अधिक कौन कम है। सर्प बोले, हे युधिष्ठिर! दान, सत्य, अहिंसा और मीठीवाणी इन सबकी बड़ाई और छोटाई केवल कार्य्यके अनुसार होती है। कभी दानसे सत्य और सत्यसे दान अधिक होजाता है। हे पृथ्वीनाथ! हे महाधनुर्द्धर! कहीं अहिंसासे मीठी वाणी औ कहीं मीठी वाणीसे अहिंसा बढ जाती है। हे राजन्! हमने यह सब कहा अब और जो तुम्हारी इच्छा हो सो कहो, हम तुमसे कहेंगे। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे सर्प! शरीर नाश होनेके पीछे स्वर्ग किस प्रकार मिलता है और कर्म्मका फल अवश्य प्राप्त होता है। उसका क्या प्रमाण है, इन सब विषयोंको तुम हमसे कहो। सर्प बोले हे राजन्! मैंने अपने कर्म्मोंसे तीन दशा देखी। मैं पहिले मनुष्य था फिर देवता हुआ फिर सर्प होगया। निश्चय ही पुरुष मनुष्य लोकमें दान और अहिंसादिक कर्म्म करके स्वर्गके सुखको भोगता है। हे राजेन्द्र! हे तात! उसका उस कर्म्मके करनेसे मनुष्य वा किसी नीच योनिमें जन्म होता है। हम इसे विशेष वर्णन करते हैं। काम, क्रोध, लोभ और हिंसा करनेसे मनुष्य मनुष्यतासे नष्ट होकर तिर्य्यक योनियोंमें जन्म लेता है। नीच योनियोंके जो कर्म्म हैं, सो मनुष्यहोनेके लिये हैं। गाय और घोड़े आदिको भी देवभाव दीख पड़ता है। हे तात! जन्तु इस प्रकार तीन गतियोंको प्राप्त होता है, ब्राह्मण लोग केवल नित्य परमात्माका ध्यानही करते हैं। हे तात! जीवात्मा वार वार जन्म लेकर सुख और दुःखको भोगता है, जीवात्मा अपने कर्म्मानुसार प्रजाके लक्षणोंकी चिन्ता करते हैं।

राजा युधिष्ठिर बोले. हे सर्प! शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्धका आधार क्या है? हे महामते! इन पांचोंको बुद्धि एकहीवार क्यों नहीं ग्रहण कर सकती है, तुम यह सब हमसे कहो।

सर्प बोले, हे चिरञ्जीव! जो आत्मा सब इन्द्रिय तथा स्थूल और सूक्ष्म शरीरोंमें रहता है सोई कर्म्मके अनुसार सब फलोंको भोगता है। उसको भोग करनेके आधार ज्ञान, बुद्धि मन

और इन्द्रिय हैं। हे तात! केवल मनसे प्रेरित होकर इन सब विषयोंको क्रमसे भोगता, इस लिये वह विषयोंहीमें रहता है। हे पुरुषव्याघ्र! इन सबका कारण मनही है और मनमें एकहीवार दो ज्ञान नहीं आ सकते हैं। इससे इन सब विषयोंका एकवार ज्ञान नहीं होता। हे राजन्! वह परमात्मा दोनों भावोंके बीचमें रहता है और बुद्धिको कर्म्मोंमें प्रेरित करता है। हे युधिष्ठिर! बुद्धिके पीछे जो ज्ञान होता है, पण्डितलोग उसेही वहना शक्ति कहते हैं। हे राजशार्दूल! हमने यह विवरकी विधि कही।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे सर्प! तुम हमसे बुद्धि और मनका लक्षण कहो? क्योंकि अध्यात्म विद्याजाननेवालोंको उसका जानना बहुत आवश्यक है। सर्प बोले, हे युधिष्ठिर! आत्मा मायाके उपद्रवसे बुद्धिके बहुतही अनुगत है, इसो हेतुसे बुद्धि आत्माकी आश्रित होनेसे भी उसकी प्रेरक होती है। विषयोंमें इन्द्रियोंके संयोग हेतुसे बुद्धि उत्पन्न हुआ करती है, मन पहले होसे उत्पन्न है। बुद्धिको [illegible] उत्पादनसामर्थ्य नहीं है, किन्तु [illegible] सामर्थ है। हे तात! मन और बुद्धिमें इतनाही भेद है। हे युधिष्ठिर! [illegible] तुम कैसा मानते हो, सो कहो। युधिष्ठिर बोले, हे बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ! तुम्हारी बुद्धि बहुत श्रेष्ठ है, तुम सब जानने [illegible] जानते हो तब मुझसे क्यों [illegible] सर्प! मुझको एक बड़ा भारी [illegible] है, कि अद्भुत कर्मकारी [illegible] जो स्वर्गवासी हुए थे, ऐसे स्वर्गमें [illegible] हुआ।

[illegible] हे युधिष्ठिर! [illegible] और [illegible]

मानके वशमें हो गये, और उस अभिमानके कारणसे पृथ्वीमें गिराये गये। हे महाराज! हे शत्रुनाशन! तुमने हमारा बहुत उपकार किया, आज तुम महात्मासे बात करनेसे हमारा शाप नष्ट हो गया। मैं जब दिव्य विमान पर बैठ कर आकाशमें घूमता था, तब अभिमानके वशमें होकर कुछभी नहीं विचारता था, ब्रह्मर्षि, देवता, गन्धर्व्व, यक्ष, राक्षस और सर्पलोग तथा औरभी तीनलोकमें निवास करनेवाले प्राणीलोग मुझे हाथोंसे ले चलते थे। हे पृथ्वीनाथ! मैं जिसको अपने नेत्रोंसे देखताहू, उसीका तेज नाश हो जाता है, यह मेरी दृष्टिका फल है। हे राजेन्द्र! हजार ब्रह्मर्षि मेरी पालकीको लेकर चलते थे, उसी अनीतिके कारण मैं लक्ष्मीसे भ्रष्ट हुआ। एक दिन महामुनि अगस्त्य मेरी पालकीमें लगे थे, तो मैंने उनसे कहा, कि तुम शीघ्र चलो, तब उन्होंने क्रोधान्ध होकर मुझे शाप दिया, कि तू सर्प होकर स्वर्गसे गिरजा। तब मैंने अपनेको उस विमानसे गिरते हुए और सब लक्षणोंसे रहित होते देखा। उस समय मेरा मुख नीचेको हो गया। तब मैंने अगस्त्य मुनिसे कहा, कि मेरा शाप नष्ट हो। मैं सर्परूप धारण करके बोला कि, हे भगवन्! मैंने यह कर्म्म भ्रमसे किया, इस लिये आप क्षमा कीजिये। तब उन्होंने कृपा करके मुझसे कहा कि हे नरनाथ! इस शापसे तुमको धर्म्मराज युधिष्ठिर छुड़ावेंगे, तुम जब इस अभिमानरूपी घोर पापके फलको भोग चकोगे, तब पुण्य फल भोगोगे। मैंने उनके तपस्याके बलको देख बहुत आश्चर्य किया। इसीलिये ब्रह्म और आत्मज्ञान विषयक प्रश्न तुमसे मैंने किया [illegible] सत्य, दम, इन्द्रिय [illegible] और [illegible]

श्रीवैशम्पायन मुनिजी बोले, महाराज नहुष ऐसा कहकर उस सर्पके शरीरको छोड़ और दिव्य शरीर धारण कर स्वर्गको चले गये। श्रीमान् धर्म्मात्मा महाराज युधिष्ठिरभी भीमसेन और धौम्यमुनिके सहित अपने आश्रमको लौट आये। अनन्तर धर्म्मराज युधिष्ठिरने सब ब्राह्मणोंसे उस कथाको कह सुनाया। उसको सुन सब ब्राह्मण और अर्ज्जुन, नकुल, सहदेव और यशस्विनी द्रौपदीने बहुत लज्जा किया। ब्राह्मण लोग पाण्डवोंके कल्याणके निमित्त भीमसेनसे कहने लगे, कि ऐसा फिर कभी न करना। वे लोग भीमके दुःसाहसकी निन्दा करने लगे। पाण्डव लोगोंने महाबली भीमसेनको भयसे छूटा हुआ देख बहुत आनन्द किया।

अजगर प्रकरण और १८१ अध्याय समाप्त।

अथ मार्कण्डेय समस्या प्रकरण।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उसी स्थानपर निवास करते हुए पाण्डवोंके सब प्राणियोंको सुख देनेवाला, उष्णता नाशक वर्षा काल आगया। बड़े गर्जनेवाले मेघोंने आकाशको छा लिया वे काले काले मेघ रात और दिन बरसने लगे। वर्षाकालमें रहनेवाले सूर्य्यके तेजको रोकनेवाले निर्म्मल बिजलीके टुकड़े चमकने लगे। पृथ्वीमें धानके खेत हरे होगये। सर्प आदि जन्तु उन्मत्त होकर घूमने लगे, जलसे भरनेके कारण पृथ्वी सबको प्यारी लगने लगी पृथ्वीमें इतना जल भर गया, कि जिससे नीचा ऊंचा जल और थल कुछभी न जान पड़ने लगा। उस समय उमड़े जलमें भरी हुई बड़ी बड़ी नदियोंकी तरङ्ग बाणके समान शीघ्र चलने लगी और सब नदी तथा वन शोभासे भर गये। उस समय जलसे भीगनेके कारण वनोंमें सूअर, हरिन और पक्षियोंके अनेक शब्द सुनाई देने लगे। पपीहा मोर और कोकिल उन्मत्त होकर नाचने और गाने लगे। मनवाले मेंड़क आनन्दसे शब्द करने लगे। इस प्रकारके मेघोंके शब्दसे भरी हुई वर्षा ऋतु पाण्डवोंने उसी बनमें बिता दी। अनन्तर सारस और हंसोंको आनन्द देनेवाली शरत् ऋतु आगयी। उसके आतेही सब बन प्रसन्न दीखने लगा। नदियोंके पानी और आकाशके तारे निर्म्मल होगये। इस प्रकार महात्मा पाण्डवोंने हरिन और पक्षियोंसे भरी हुई कल्याणदायिनी शरत् ऋतुको देखा। उस ऋतुमें धूलसे रहित मेघोंसे शीतल चन्द्रमा और तारोंसे विराजमान, रात्रि दीखने लगी। सब पोखरोंमें कमल कुमुद खिल गये, सब नदी शीतल और निर्म्मल जलसे भरी हुई दीखने लगीं। आकाशके समान निर्म्मल तटवाली और वेंतके वृक्षोंसे विराजमान पवित्र सरस्वती अत्यन्त सुन्दरी होगयी। महाधनुषधारी वीर पाण्डव लोग निर्मल जलसे भरी हुई सुन्दर सरस्वती नदीको देखते हुए आनन्दसे विहार करने लगे। हे जनमेजय! उन महात्माओंको शरत् कालकी कार्त्तिकी पूर्णमासी उसी स्थानपर आगयी। पुण्य कर्म्म करनेवाले महातपस्वी ब्राह्मणोंके सहित भरत कुलश्रेष्ठ पाण्डवलोग उसी स्थानपर उत्तम योग करने लगे। जब अगहनका कृष्णपक्ष आरम्भ हुआ, उसी दिन पाण्डवलोग धौम्य मुनि, सारथी और नगर निवासियोंको सङ्गले काम्यक वनको चले गये।

१८२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। युधिष्ठिर आदि सब पाण्डवलोग द्रौपदीके सहित काम्यक वनमें पहुंचे। वहां मुनियोंसे बहुत सत्कार पाकर द्रौपदीके साथ रहने लगे। जब विश्वासयुक्त पाण्डव लोग उस वनमें रहने लगे, तो अनेक ब्राह्मणलोग उनके पास आने लगे। एक दिन एक अर्ज्जुनके प्यारे मित्र ब्राह्मणने कहा, कि हे अर्ज्जुन!

महाबुद्धिमान महाबाहु जितेन्द्रिय श्रीकृष्णजी तुम्हारे पास आवेंगे, क्योंकि उन्होंने आपलोगोका यहां आनेका समाचार सुन लिया है। कृष्ण सदा आपलोगोंके दर्शन और कल्याणको चाहते हैं। वेदपाठ और तपको करनेवाले महातपस्वी चिरजीवी मार्कण्डेयभी आपलोगोंके पास शीघ्रही आवेंगे। जिस समय वह ब्राह्मण ऐसा कह रहा था, उसी समय शैव्य और सुग्रीव घोड़ोंसे युक्त रथपर बैठे हुए, महारथ कृष्ण दिखायी दिये। जैसे शचीके सहित इन्द्र आते हैं, तैसेही सत्यभामाके सहित देवकीनन्दनभी पाण्डवोंको देखने आये। बुद्धिमान कृष्णने रथसे उतरकर प्रसन्न हो युधिष्ठिर और बलवान भीमसेनको प्रणाम किया। धौम्यकी पूजा की तथा नकुल और सहदेवने कृष्णको प्रणाम किया, तथा अर्जुनसे मिले और द्रौपदीको शान्त किया। दशार्हदेशके स्वामी कृष्णने अपने प्यारे अर्जुनको बहुत दिनपर आया हुआ देख बार बार कण्ठसे लगाया। इसी प्रकार कृष्णकी प्यारी पटरानी सत्यभामाभी पाण्डवोंकी प्यारी पटरानी द्रौपदीसे मिली। तब पाण्डवोंने पुरोहित और स्त्रीके सहित कृष्णकी पूजा की और उनसे कुशल प्रश्न पूछा। श्रीमान् विद्वान कृष्ण तथा अर्जुनसे मिलकर ऐसे शोभित हुए जैसे भगवान शिव साक्षात स्वामकार्त्तिकसे मिलकर शोभित होते हैं। श्रीकृष्णजीने पाण्डव [illegible] और धौम्य पुरोहितकी पूजा करके

प्रसङ्गमें नहीं होगी, आप कामके वशमें होकर कोई काम नहीं करते, आप कभी लोभके वशमें होकर धर्मको छोड़ते नहीं हैं। इसीसे सब मनुष्य आपको धर्मराज कहते हैं। हे पार्थ! हे राजन्! आपमें दान, सत्य, तप, श्रद्धा, बुद्धि और धारणा निवास करती है। आपने इसी सबके द्वारा भोगोंको प्राप्त किया है। आपकी इच्छा सदा धर्ममें रहती है। हे पाण्डव! जिस समय कुरुवंशियोंकी सभामें सब पुरुषोंने द्रौपदीके उस दुःखको देखा, उस अधर्मको आपके सिवाय और कौन क्षमा कर सकता था। आप निस्सन्देह सब समृद्धिको प्राप्त करके शीघ्रही प्रजाको पालन करेंगे। जिस समय आपकी प्रतिज्ञा समाप्त होगी, उसी समय हम सब लोग कौरवोंको जीतनेका यत्न करेंगे। दशार्हदेशके स्वामी श्रीकृष्णने धौम्य, भीम, युधिष्ठिर, नकुल, सहदेव और द्रौपदीसे कहा कि, आपलोगोंको प्रारब्धहीसे अर्जुन [illegible] सीख कर आये हैं। दशार्ह देशके स्वामी श्रीकृष्णने अर्जुनको [illegible] द्रौपदीसे कहा, कि तुम प्रारब्धहीसे अर्जुनसे मिली हो। हे याज्ञसेनि! [illegible] तुम्हारे सुशील [illegible] इच्छाभी धनुर्वेद सीखनेमें [illegible] तुम्हारे [illegible] अपने [illegible] पाण्डव-लोगोंकी [illegible] हैं। हे द्रौपदी! वे लोग [illegible] सम्मिलित होकर और तुम्हारे [illegible] [illegible]

तुम्हारे पुत्रोंकोभी शिक्षा देंगे। तुम्हारे पुत्र गदा खड्ग तथा ढाल धारण करनेमें निपुण हैं, उनको आलस्य रहित कुमार अभिमन्यु रथ और घोड़ा चलानेकी विद्या सिखावेंगे, प्रद्युम्नभी तुम्हारे पुत्र और अभिमन्युको अच्छी प्रकार शिक्षा देंगे और शस्त्रोंको सिखा कर उनके पराक्रमसे प्रसन्न होंगे। हे याज्ञसेनी! तुम्हारे पुत्र आनन्दसे सब देशोंको देखते हुए द्वारकाको जायं, इनके संग एक एक रथ, एक एक हाथी और एक एक घोड़ाभी जायगा। अनन्तर धर्म्मराज युधिष्ठिरसे कृष्णने कहा कि हे धर्म्म-राज! दशार्ह देशके कुमार और कुकुरान्धक बंशी सूरवीर क्षत्री लोग केवल आपकी आज्ञाका मार्ग देख रहे हैं, हे राजन्! जहां आपकी आज्ञा हो वहांही ये लोग रहें। हे राजन्! आपके शत्रुओंकी सेना बलरामके धनुषसे छूटे हुए वाणोंसे नष्ट हो। हे नरेन्द्र! मथुराकी सब सेना हाथी, घोड़े और रथके सहित जहां आपकी आज्ञा हो वहां रहें, हे धर्म्मराज! पापियोंमें श्रेष्ठ धृतराष्ट्रका पुत्र दुर्य्योधन उसी मार्गको जाय जिसको भूमिका पुत्र और शाल्व गया है। हे नरेन्द्र! आपने जो सभामें प्रतिज्ञा की थी, जब तक वह समाप्त न हो तब तक जहां आपकी इच्छा हो रहिये, फिर तो याद-वोंके वाणोंसे नष्ट हुए और अपने शत्रुओंसे रहित हस्तिनापुरको देखेंहींगे, हे महाराज! इस समयको क्रोध और पापसे रहित होकर कहीं इच्छानुसार बस कर बिता लीजिये, फिर तो शोक रहित होकर राज्यके सहित प्रसिद्ध हस्तिनापुरको जाइयेहीगा। महात्मा कृष्णके ऐसे वचन सुन युधिष्ठिरने उनकी बहुत प्रशंसा की और हाथ जोड़ कर कहने लगे, कि हे केशव! निस्सन्देह आपही पाण्डवोंकी गति हैं और पाण्डव लोग आपहीके शरण हैं, निस्सन्देह समय आने पर आप इन सब कर्म्मोंकी सिद्धि करेंगे। हम अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार वनमें बारह वर्ष बिता चुके। हे केशव! अब हम लोग तेरहवें वर्षको विधिपूर्व्वक छिप कर बितावेंगे, फिर पाण्डवोंको आपही शरण हैं, हे कृष्ण! आपकी सदा ऐसीही बुद्धि चाहिये पाण्डव लोग सत्यको पालते हैं। हे केशव! पाण्डव लोग स्त्री पुत्र और बान्धवोंके सहित दान और धर्म्मको पालते हैं और ये सब आपहीके शरण हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भारत! जिस समय धर्म्मराज युधिष्ठिर श्रीकृष्णसे ऐसा कह रहे थे, उसी समय कई सहस्र वर्षोंके हुए, महात्मा, धर्म्मात्मा, जरा और मरण रहित, रूप और उदारतासे भरे हुए, महात्मा मार्कण्डेय दिखाई दिये। उस समय उनका स्वरूप ऐसा था, जैसे पचीस वर्षके पुरुषका उन कई हजार वर्षके बूढे तपस्वीको आते हुए देख सब ब्राह्मण और श्रीकृष्णके सहित पाण्डवोंने उनकी पूजा की। अनन्तर जब मुनि पूजा पाकर सावधान होकर बैठ गये, तब ब्राह्मण और पाण्डवोंकी सम्मतिसे श्रीकृष्ण बोले, कि हे मुने! सब पाण्डव, ब्राह्मण, द्रौपदी, सत्यभामा और हम आपके उत्तम वचनोंके सुननेकी इच्छा रखते हैं, हे मार्कण्डेय! आप हमसे सदाचार राजा और स्त्रियोंकी तथा मुनियोंको पवित्र कथाओंको कहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जिस समय ये सब लोग एक स्थान पर बैठे थे, उसी समय पाण्ड-वोंको देखनेकी इच्छासे पवित्र देवर्षि नारदभी आपहुंचे। उन महात्माको आते देख पुरुष-सिंह बुद्धिमान पाण्डवोंने विधि पूर्व्वक पाद्य और अर्घसे पूजन की। देवर्षि नारदनेभी धर्म्मा-चरणसे मार्कण्डेयसे कहा, आप कुछ कथा कहिये। समयके जाननेवाले नारद प्रसन्न होकर बोले कि, हे ब्रह्मर्षि! पाण्डव लोग जो कथा सुनना चाहते हैं सो कथा आप कहिये। नारदके ऐसे वचन सुन महामुनि मार्कण्डेय

बोले, आप लोग क्षण भर चुप रहिये, इसके पीछे हम कुछ कहेंगे। महात्मा सनातन मार्कण्डेयके ऐसे वचन सुन पाण्डव लोग सब ब्राह्मणोंके सहित चुप होकर मार्कण्डेयका मुंह देखने लगे; उस समय उनका ऐसा तेज बढ़ा, जैसे मध्याह्न समयमें सूर्य्यका तेज बढ़ता है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! कुरुराज युधिष्ठिरने जब देखा कि अब महामुनि कुछ कहना चाहते हैं, तब हाथ जोड़ कर कथा पूछने लगे। हे मुने! आप पुराने देवता, दैत्य, महात्मा मुनि और सब राजऋषियोंके चरित्रोंको जानते हैं, हमारे पूजनीय सेवनीय और सदाके प्यारे देवकीनन्दन श्रीकृष्णभी हमलोगोंसे मिलनेको यहां आगये हैं। अपनेको सुखसे भ्रष्ट और धृतराष्ट्रके पुत्रोंको धनवान तथा प्रभुतावान देखकर मेरी बुद्धि भ्रमती है, हे मुने। अच्छे और बुरे कर्म्मोंका करनेवाला पुरुष है और वही फलको भोगता है तो ईश्वर कैसे उसका कर्त्ता हुआ? हे ब्रह्म जाननेवालोंमें श्रेष्ठ! सुख दुःखरूपी कर्म्मके फलको जीव इसी जन्ममें भोगता है, वा दूसरे जन्ममें? जीव शरीरको त्याग कर [illegible] कर्मोंको भोगता वा दूसरी शरीरसे भोगता है? हे भृगुवंशी। सुख और दुःखोंका फल लौकिक मरे हुए जीवके कर्म्म यहीं रहते हैं या परलोकमें सग जाते हैं?

मार्कण्डेय मुनि बोले, हे कहनेवालोंमें [illegible] तुम्हारा यह प्रश्न संसारकी [illegible], तुमतो सब प्रश्नको जाननेही [illegible] जीव इस लोक और पर- [illegible], [illegible] है, वह मैं तुमसे [illegible] [illegible] सुनो। [illegible] [illegible] और [illegible] निर्म्मल और [illegible] हे कुरुनन्दन! [illegible]

संकल्प कभी निष्फल न जाते थे। सत्य बोलनेवाले सत्यव्रत तथा ब्रह्माके समान पुण्यात्मा पुराने मनुष्य होते थे, सब मनुष्य देवतोंके समान स्वतंत्र आकाश से विचरते थे, वह लोग स्वतन्त्रतासे विचरते थे, उन लोगोका मरना अपने अधीन था, थोड़ी बाधावाले रोग रहित और उपद्रव रहित और सिद्ध मनोरथ वाले होते थे। देवता और महात्मा मुनियोंके दर्शन करने वाले सब धर्म्मोंको प्रत्यक्ष करनेवाले दानी मद मत्सरसे रहित सहस्र वर्षकी अवस्थावाले, सहस्र पुत्रवाले पुरुष होते थे। उसके अनन्तर मनुष्यलोग कालान्तरमें पृथ्वीतलमात्रमें विचरनेवाले, काम क्रोधसे अभिभूत और माया व्याजोपजीवी हुए। वे अशुभ और पाप कर्म्म करनेसे पापयोनियोंमें जन्म लेते हैं, वे लोग संसारमें बार बार दुःख पाते हैं वे लोग काम और क्रोधसे भरकर माया और छलसे जीते हैं, अन्तमें लोभ मोहसे पीड़ित होकर शरीरको छोड़ते हैं, उनकी बुद्धि संकल्प ज्ञान और शक्ति थोड़ी होती है, वे लोग सबको दुःख देनेवाले और सबसे शंका रखनेवाले होते हैं, वे लोग प्रायः पाप लक्षणयुक्त होते हैं, वही लोग [illegible] कुलमें उत्पन्न होते हैं, वही लोग [illegible] और दुःखदाई होते हैं और वेही लोग [illegible] अवस्था और दुष्टकर्म्म करनेवाले होते हैं, [illegible] पापी नास्तिक और दुष्टकर्मी [illegible] हे देवकीनन्दन! मरे हुए [illegible] सब कर्म्म, अनुसार होती है। जीव [illegible] [illegible] फलोंको भोगता है, [illegible] कर्म्म [illegible] [illegible] [illegible] हुए। [illegible]

जन्म लेते लेते अन्तर नहीं मिलता है, इसी प्रकार यह जीव निरन्तर जन्म लेता है, इसका किया हुआ कर्म्म छायाके समान सङ्ग ही रहता है, चाहे वह पापकर्म्म हो वा पुण्यकर्म्म उसका फल अवश्यही होता है। मरनेके समय जो कर्म्म शेष हो पुरुषको वैसेही फल होते हैं, ज्ञानीलोग पापी और धर्म्मीको जान लेते हैं। हे युधिष्ठिर। हमने यह मूर्खोंकी गति तुमसे कही, अब ज्ञानियोंकी उत्तम गतिको सुनो। सब वेदको पढ़नेवाले मनुष्य तथा व्रत और गुरुवोंको पूजा करके और सत्य बोलकर अपनी आत्माको जानते हैं। सुशील उत्तम गतिवाले क्षमा, दान और तेजसे भरे हुए मनुष्य दूसरी योनियोंमें जन्म लेनेसेभी उत्तम लक्षण युक्त होते हैं, वे मनुष्य इन्द्रियोंको अपने बशमे रखते हैं। इसलिये रोगरहित होते हैं, उनको रोग और भय कम होते हैं, इससे उनको कुछ उपद्रव नहीं होता है, वे लोग अपनी ज्ञान-दृष्टिके द्वारा मरते उत्पन्न होते और किसी योनिमें जन्म लेतेही अपनी आत्माको जान लेते हैं। वे दूसरी आत्माकोभी जान सकते हैं, वे महात्मा ऋषिलोग शास्त्र और बुद्धिसे सब कामको सिद्ध करते हैं, वे लोग इस कर्म्मभूमिमें जन्म लेकर फिर स्वर्गको जाते हैं। हे राजन्। तुमको इसमें कुछ सन्देह न होना चाहिये, यह बात ठीक है, कि कर्म्मका फल कुछ प्रारब्ध और कुछ अपने कर्म्मोंसे मिलता है। हे कहनेवालो में श्रेष्ठ। यहां हम तुमसे एक उपमा कहते हैं उसको सुनो, हे युधिष्ठिर। हम इस मनुष्यलोकहीमें कल्याणको श्रेष्ठ मानते हैं। हे युधिष्ठिर। कोई पुरुष ऐसे होते हैं जिन्हें इसलोकमें सुख होता है, कोई ऐसे होते हैं, जिन्हें परलोकमें सुख होता है, कोई ऐसे होते हैं, जिन्हें दोनोलोकमें सुख होता है और कोई मनुष्य ऐसेभी होते हैं, जिन्हें किसी लोकमे नहीं होता है। हे शत्रुनाशन। देखो जो लोग धनवान हैं, वे अनेक आभूषणोंको पहनकर इसलोकमें आनन्द करते हैं, परन्तु उनको परलोकमें सुख नहीं मिलता और जो लोग तप, योग तथा वेदपाठ करके अपने शरीरको निर्ब्बल कर देते हैं, उनको इसलोकमें कुछ सुख नहीं होता परन्तु परलोकमें सुख मिलता है। जो लोग इसलोकमें पहिले धर्म्म करते हैं, फिर उसी धर्म्मसे धन उपार्ज्जन करते हैं, पीछे उसी धनसे पुत्र और स्त्रीके सहित यज्ञादि उत्तम उत्तम कर्म्म करते हैं, उनको इस लोकमें और परलोकमें दोनो जगह सुख मिलता है। जो मूर्खलोग न विद्या पढ़ें न तप करें न दान करें और न सन्तान बढ़ानेका उपाय करें उन्हें कहीं कुछ सुख नहीं मिलता। आप सबलोग महाबलवान दिव्य वीर्य्ययुक्त और सब शत्रुओंके मारनेवाले हैं। आपलोगोंने देवतोंके कार्य्योंके निमित्त परलोकसे आकर इसलोकमें अवतार लिया है, और इसलोकमें आकर अनेक विद्याओंको पढा है। हे सूरवीरो। आपलोग इस लोकमें तप, आचार युक्त और विहारशील हो करके विधिपूर्व्वक देवऋषि, और पितरोंका तर्पण करते हैं। इसलिये अपने कर्म्मोंके अनुसार आप सब लोग पुण्यात्माओंके निवासस्थान स्वर्गको जायंगे। हे कौरवेन्द्र। आप अपने इस क्लेशको देखकर इस शङ्का मत कीजिये।

१८३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन जनमेजय महात्मा मार्कण्डेयके ऐसे वचन सुनकर पाण्डव लोग बोले, हमलोग ब्राह्मणोंके महात्म्य सुनना चाहते हैं, आप कहिये। पाण्डवोंके ऐसे वचन सुन महातपस्वी महातेजस्वी सब शास्त्रोंके जाननेवाले मार्कण्डेय मुनि कहने लगे।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे महाराज हैहयवंश चलानेवाले शत्रुनाशक तपस्वी

[illegible]समान राजकुमार शिकार खेलने गये; [illegible] वृक्ष और तिनकेसे भरे जङ्गलमें घूसते हुए राजाने एक कुटीमें बैठे हुए काले हरिनका चमड़ा ओढे एक मुनिको देखा. राजाने उसे हरिन जानकर मार डाला पीछे उसके शोकसे राजा बहुत व्याकुल हो गये और अपने कर्म्मसे बहुत पछताने लगे। कमलनेत्र राज-कुमार वहांसे चलकर विख्यात हैहयवंशी राजोंके पास जाकर पहुंचे और उनसे सब वृत्तान्त कह सुनाया। हे तात। उन्होंनेभी मूल फल खानेवाले मुनिका मरना सुन और कुमारको देख बहुत दुःख किया। वे सब लोग यह कहने लगे कि यह मुनिपुत्र किसका पुत्र है। ऐसा कह उसके वंशवालोंको चारों ओर ढूंढने लगे. ढूंढते ढूंढते शीघ्रही कश्यपगोत्र अरिष्टनेमी मुनिके आश्रममें पहुंचे। उन सबने महात्मा व्रतधारी अरिष्टनेमी मुनिको प्रणाम किया और उनके पास बैठे; और मुनिनेभी उनकी पूजा करना चाहा परन्तु उन सबने महात्मासे कहा, कि हे महात्मा। हम लोग पूजा आपसे लेने योग्य नहीं हैं, क्योंकि हम लोगोंने एक ब्राह्मणको मार डाला है यह कर्म्म हमने पूर्व [illegible] पापसे किया है। उन सबके ऐसे वचन [illegible] कहा कि आप लोगोंने कौनसे [illegible] मार डाला है [illegible]

आश्चर्य माना और कहने लगे यह क्या आश्चर्य-की बात है, यह मरा हुआ ब्राह्मण कैसे जी गया? क्या यह तपका बल है. कि जिससे यह फिर जी गया? हे ब्राह्मण! यदि यह कथा हमारे सुननेके योग्य हो तो कहिये. हम सुनना चाहते हैं। मुनि बोले. हे राजन्। हम लोगोंके ऊपर मृत्युकी सामर्थ्य कभी नहीं चल सकती। हम इसका कारण संक्षेपमें तुमसे कहते हैं. इसमें योगही कारण है. हम लोग सदा सत्यहीको अपने चित्तमें रखते हैं। झूठ कभी नहीं बोलते। हमलोग सदा अपनेही धर्म्मको करते हैं। इस लिये हमको मृत्युका भय नहीं है। जो ब्राह्म-णोंके लिये सुखदायक कर्म्म हैं, हमलोग उसीको करते हैं. पापकी बात कभी नहीं करते हैं, इसीसे हमको मृत्युका भय नहीं है। हमलोग अन्न और जलसे अतिथियोंकी पूजा करते हैं, तथा अपने परिवारवर्गको खूब भोजन कराकर बचे हुए अन्नको खाते हैं, इसीसे हमको मृत्युका भय नहीं है। हम लोग इन्द्रियोंको वशमें करके क्षमा, दान शील और तीर्थ सेवन करते हैं, तथा पवित्र और तेजस्वी स्थानोंमें योगसिद्ध महापुरुषोंके संसर्गमें निवास करते हैं, इसीसे हमको मृत्युका भय नहीं है। हे महात्मा क्षत्रियो। हमने यह सब विधान आपलोगोंसे संक्षेपसे कहा. अब

इच्छासे अत्रि मुनि चले। हमने सुना है, कि मार्गमें चलते चलते उनको यह इच्छा हुई, कि बहुत धन लेना अच्छा नहीं है, क्योंकि धर्म्म-हीसे सब कार्य्य सिद्ध होते हैं, द्रव्यसे नहीं। महा तेजस्वी अत्रिने ऐसा विचारकर बनको जानेकी इच्छा की। फिर अपनी स्त्री और पुत्रोंको बुलाकर कहा, कि तुम लोग बनको चलो, वहां चलने से सब उपद्रव रहित और बहुत सुख 'मोक्ष' मिलेगा। यह सुन उनकी स्त्री धर्म्मके सहित बोली, कि तुम महात्मा वैण्यके पास जाकर बहुतसा धन मांगो, वह राजर्षि यज्ञ कर रहे हैं, वे तुमको बहुत धन देंगे, धन लाकर नौकर और पुत्रोंको बांट कर फिर जहांको इच्छा हो तहा चले जाना, धर्म्म जाननेवाले मनु प्रभृति पुरुषोंने इसीको धर्म्म कहा है। अत्रि बोले, हे महाभागे। मुझसे महात्मा गौतमने कहा है, कि राजऋषि वैण्य धर्म्म और सत्यव्रतमें स्थिर हैं. परन्तु वहांके ब्राह्मण दूसरे ब्राह्मणका द्वेष करते है। मैंने जबसे गौतम मुनिके वचन सुने हैं, तभीसे वहां जानेकी इच्छा त्याग दीहै, मैं जब वहां जाऊंगा, तो वे सब कल्याण अर्थ और धर्म्मसे भरी हुई मेरी वाणीके उत्तरमें निरर्थक वाणी कहेंगे। हे महाप्राज्ञे। यदि तुमको यही प्रिय है, तो मै जाऊंगा। राजा वैण्य मुझको बहुत दान और गौ देंगे। महा तपस्वी अत्रि अपनी स्त्रीसे ऐसा कह कर राजा वैण्यकी यज्ञको चले, वहां यहा जाकर राजा वैण्यकी स्तुति करने लगे। अपने कुशल भरे वचनोंसे राजाकी पूजा करते अत्रि मुनि बोले, हे राजन्। तुम धन्य हो, तुम जगतके स्वामी हो। तुम आदि राजा हो, मैंनि लोग तुम्हारी स्तुति करते हैं, तुम्हारे सिवाय और कोई मनुष्य धर्म्मको नहीं जानता है। उनके वचन सुनकर महा तपस्वी गौतम क्रोध करके बोले. हे अत्रि। तुम ऐसे वचन कभी नहीं कहना, हमारे आदिराजा इन्द्र हैं.वेही प्रजापति हैं और वेही आदि राजा हैं। जान पड़ता है, कि तुमको बुद्धि नहीं है, इसीसे तुम ऐसा कहते हो। हे युधिष्ठिर। गौतम ऋषिके वचन सुन अत्रि कहने लगे, कि हमने जो कहा सो सत्य कहा, जैसे इन्द्र राजा हैं, तैसे येभी हैं, तुमही भ्रममें पड़कर भूलते हो। हम जानते हैं कि तुमको ज्ञान और बुद्धि कुछ नहीं है। गौतम बोले, हे अत्रि। हम सब जानते हैं, तुमही भूलते हो, तुम इस सभामें बैठकर राजाको प्रसन्न करनेको स्तुति करते हो, तुम परम धर्म्मको नहीं जानते हो, और प्रयोजन को नहीं समझते हो। तुम मूर्ख और बालक हो, तुमको कोई किस कारणसे बूढा कह सकता है?

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले,जिस समय सब मु[नि]योंके आगे ये दोनो इस प्रकार विवाद कर र[हे] थे, उसी समय यज्ञमें बैठे हुए सब मुनि[लो]ग कहने लगे, कि ये लोग किस लिये विवाद क[र] रहे हैं? इन दोनोंको किसने सभामें आ[ने] दिया? ये यज्ञके किस अधिकारमें नियुक्त हैं ये लोग ऊंचे शब्दसे क्यों बोल रहे हैं? त[ब] सब धर्म्मके जाननेवाले काश्यप कहने लगे [कि] तुम दोनो जिस प्रयोजनके लिये विवाद कर [रहे] हो, सो हमसे कहो। तब सभामें बैठे हुए स[ब] मुनियोंसे गौतम बोले,कि हे ब्राह्मणो। हम दोनों तुमसे प्रश्न करते हैं, तुम सुनो। अत्रि कह[ते] हैं, कि राजा वैण्य ब्रह्मा हैं, मुझको इसमें बहुत सन्देह है। उनके वचन सुन महात्मा मुनिलो[ग] शीघ्रही वहासे चले और धर्म्मके जाननेवा[ले] सनत्कुमार मुनिके पास पहुंचे और अपन[ी] सब कथा कह सुनाई। महात्मा सनत्कुमारने उनके वचन सुन धर्म्म और अर्थके सहित उत्त[र] दिया। सनत्कुमार बोले, जैसे अग्नि और वायु मिलकर बनको भस्म कर देते हैं, तैसे ब्राह्मण और क्षत्री मिलकर शत्रुओंका ना[श] करते हैं। राजाहीको धर्म्म और प्रजापति क[हा]

है, राजाओंको इन्द्र शुक्र, धाता और वृहस्पति कहते हैं। जो चक्री जगतका स्वामी है, उसको प्रजापति और सम्राट कहते हैं। जो इन सब नामोंसे राजाकी स्तुति करता है उसकी कोई निन्दा नहीं करता है। पहली समयमें राजा-लोग धर्म्मके उत्पत्ति-स्थान, युद्व जीतनेवाले, शीघ्र स्वर्ग देनेवाले, शीघ्र विजय करने वाले और विष्णुके नामसे प्रसिद्व थे। राजा ... उत्पत्ति स्थान पहली बातोंको जाननेवाले ... और धर्म्मके प्रवर्तक राजाको आश्रयसे डरे ... ऋषियोंने धर्म्मका रक्षक बनाया है, जैसे ... अपने तेजसे अन्धकारको नाश करता है, ... राजाभी अपने तेजसे अधर्म्मका नाश करता है। शास्त्र देखनेसे भी ऐसाही जान पड़ता है, कि राजा सबसे प्रधान है और राजा ... शब्द कहनेसेभी राजाही प्रधान जान पड़ता है। मार्कण्डेय मुनि बोले, हे युधिष्ठिर! ... सुनकर राजा वैण्य बहुत प्रसन्न ... अनन्तर उन्होंने अत्रिसे कहा, कि हे विप्र- ... मुझे सर्व्वदेवसम्मित और मनुष्यों! ... इसलिये हम तुमको बहुत धन ... तुमको उत्तम वस्त्र और आभू- ... लिये एक सहस्र श्यामा दासी ... सोनेकी मुद्रा भार दसभार ... हम सत्य कहते हैं, ... कहते हैं। मार्-

तार्क्ष्यने सरस्वतीसे प्रश्न किया था। उस प्रश्नका सरस्वतीने जो उत्तर दिया, सो हम आपसे कहते हैं।

तार्क्ष्य बोले, हे सर्वाङ्गसुन्दरी। ऐसा कौन कल्याणदायक कर्म्म है; जिसके करनेसे मनुष्य अपने धर्म्मसे नष्ट न हो, तुम हमारे इस प्रश्नका उत्तर दो, जिससे हमारा धर्म्म नष्ट न हो। हे सुभगे! कौनसे समयमें और किस प्रकारसे अग्नि-होत्र करना चाहिये, कौन कर्म्म करनेसे मेरा धर्म्म नष्ट न हो, तुम हमसे उस कर्म्मको कहो जिसके करनेसे हम रजो-गुणरहित होकर सुखसे लोकोंमें घूम सकें।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, जब तार्क्ष्य मुनिने प्रेम सहित सरस्वतीसे प्रश्न किया। तब उत्तम-बुद्धियुक्त धार्म्मिक तार्क्ष्य मुनिसे सरस्वती कहने लगीं। सरस्वती बोलीं, जो मनुष्य पवित्र और सावधान होकर वेद पढ़ता है तथा ब्रह्मको जानता है, वही दिव्य स्वर्गको जाता है और देवतोंके सहित आनन्द करता है। उस स्वर्गलोकमें रमणीय सुन्दर बड़ी बड़ी पवित्र जलसे भरी हुई पोखर हैं, जिनको देखतेही सब शोक नष्ट हो जाते हैं, जिनमें ... नहीं है, जहां सोनेके ... अनेक कमल विराज-मान हैं, जिन पोखरोंमें उत्तम मच्छ ... कर रहे हैं, उन्हीं पोखरोंके ... लोग उत्तम सुगन्ध और अनेक ...

इच्छासे अत्रि मुनि चले। हमने सुना है, कि मार्गमें चलते चलते उनको यह इच्छा हुई, कि बहुत धन लेना अच्छा नहीं है, क्योंकि धर्म्म-हीसे सब कार्य्य सिद्ध होते हैं; द्रव्यसे नहीं। महा तेजस्वी अत्रिने ऐसा विचारकर बनको जानेकी इच्छा की। फिर अपनी स्त्री और पत्रोंको बुलाकर कहा, कि तुम लोग वनको चलो, वहां चलने से सब उपद्रव रहित और बहुत सुख 'मोक्ष' मिलेगा। यह सुन उनकी स्त्री धर्म्मके सहित बोली, कि तुम महात्मा वैण्यके पास जाकर बहुतसा धन मांगो, वह राजर्षि यज्ञ कर रहे हैं, वे तुमको बहुत धन देंगे, धन लाकर नौकर और पत्रोंको बांट कर फिर जहांको इच्छा हो तहां चले जाना, धर्म्म जाननेवाले मनु प्रभृति पुरुषोंने इसीको धर्म्म कहा है। अत्रि बोले, हे महाभागे। मुझसे महात्मा गौतमने कहा है, कि राजऋषि वैण्य धर्म्म और सत्यव्रतमें स्थिर हैं. परन्तु वहांके ब्राह्मण दूसरे ब्राह्मणका द्वेष करते हैं। मैंने जबसे गौतम मुनिके वचन सुने हैं, तभीसे वहां जानेकी इच्छा त्याग दीहै, मैं जब वहां जाऊंगा, तो वे सब कल्याण अर्थ और धर्म्मसे भरी हुई मेरी वाणीके उत्तरमें निरर्थक वाणी कहेंगे। हे महाप्राज्ञे। यदि तुमको यही प्रिय है, तो मैं जाऊंगा। राजा वैण्य मुझको बहुत दान और गौ देंगे। महा तपस्वी अत्रि अपनी स्त्रीसे ऐसा कह कर राजा वैण्यकी यज्ञको चले, वहां यहां जाकर राजा वैण्यकी स्तुति करने लगे। अपने कुशल भरे वचनोंसे राजाकी पूजा करते अत्रि मुनि बोले, हे राजन्! तुम धन्य हो, तुम जगतके स्वामी हो। तुम आदि राजा हो, मुनि लोग तुम्हारी स्तुति करते हैं, तुम्हारे सिवाय और कोई मनुष्य धर्म्मको नहीं जानता है। उनके वचन सुनकर महा तपस्वी गौतम क्रोध करके बोले. हे अत्रि! तुम ऐसे वचन कभी नहीं कहना, हमारे आदिराजा इन्द्र हैं, वेही प्रजापति है और वेही आदि राजा हैं। जान पड़ता है, कि तुमको बुद्धि नहीं है, इसीसे तुम ऐसा कहते हो। हे युधिष्ठिर! गौतम ऋषिके वचन सुन अत्रि कहने लगे, कि हमने जो कहा सो सत्य कहा, जैसे इन्द्र राजा है, तैसे येभी हैं, तुमही भ्रममें पड़कर भूलते हो। हम जानते हैं. कि तुमको ज्ञान और बुद्धि कुछ नहीं है। गौतम बोले, हे अत्रि! हम सब जानते हैं, तुमही भूलते हो, तुम इस सभामें बैठकर राजाको प्रसन्न करनेको स्तुति करते हो, तु परम धर्म्मको नहीं जानते हो, और प्रयोज को नहीं समझते हो। तुम मूर्ख और बाल हो, तुमको कोई किस कारणसे बूढ़ा क सकता है?

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, जिस समय सब मुनि योंके आगे ये दोनो इस प्रकार विवाद कर र थे, उसी समय यज्ञमें बैठे हुए सब मुनिलो कहने लगे, कि ये लोग किस लिये विवाद क रहे हैं? इन दोनोंको किसने सभामें आं दिया? ये यज्ञके किस अधिकारमें नियुक्त हैं ये लोग ऊंचे शब्दसे क्यों बोल रहे हैं? त सब धर्म्मके जाननेवाले काश्यप कहने लगे कि तुम दोनो जिस प्रयोजनके लिये विवाद करते हो, सो हमसे कहो। तब सभामें बैठे हुएं मह मुनियोंसे गौतम बोले, कि हे ब्राह्मणो! हम दोनों तुमसे प्रश्न करते हैं, तुम सुनो। अत्रि कहते हैं, कि राजा वैण्य ब्रह्मा हैं, मुझको इसमें बहुत सन्देह है। उनके वचन सुन महात्मा मुनिलोग शीघ्रही वहांसे चले और धर्म्मके जाननेवाले सनत्कुमार मुनिके पास पहुंचे और अपनी सब कथा कह सुनाई। महात्मा सनत्कुमारने उनके वचन सुन धर्म्म और अर्थके सहित उत्तर दिया। सनत्कुमार बोले, जैसे अग्नि और वायु मिलकर वनको भस्म कर देते हैं, तैसेही ब्राह्मण और चत्री मिलकर शत्रुओंका नाश करते हैं। राजाहीको धर्म्म और प्रजापति कहते

. राजाहीको इन्द्र शुक्र, धाता और बृहस्पति ... हैं, जो सबी जगतका स्वामी है, उसको ... और सम्राट कहते हैं। जो इन सब ... राजाकी स्तुति करता है उसकी कोई ... नहीं करता है। पहले समयमें राजा- ... धर्मके उत्पत्ति-स्थान, युद्ध जीतनेवाले ... शीघ्र स्वर्ग देनेवाले, शीघ्र विजय करने ... और विष्णुके नामसे प्रसिद्ध थे। राजा ... उत्पत्ति स्थान पहली बातोंको जाननेवाले ... और धर्मके प्रवर्तक राजाको आश्रयसे डरे ... ऋषियोंने धर्मका रक्षक बनाया है, जैसे ... अपने तेजसे अन्धकारको नाश करता है, ... राजासी अपने तेजसे अधर्मका नाश ... है। शास्त्र देखनेसे भी ऐसाही जान ... है कि राजा सबसे प्रधान है और राजा ... कहनेसेभी राजाही प्रधान जान ... है। मार्कण्डेय मुनि बोले हे युधिष्ठिर। ... सुनकर राजा वैण्य बहुत प्रसन्न ... उन्होंने अत्रिसे कहा, कि हे विप्र- ... मुझे सर्व्वदेवसम्मित और सनर्थो।

... इसलिये हम तुमको बहुत धन ... तुमको उत्तम वस्त्र और आभू- ... लिये एक सहस्र श्यामा दासी ... सोनेको मुद्रा चार दसभार ... सुन। हम सत्य कहते है, ... सर्व्वज्ञ मानते हैं। महा- ... धनको न्याय पूर्व्वक

तार्क्ष्यने सरस्वतीसे प्रश्न किया था। उस प्रश्नका सरस्वतीने जो उत्तर दिया, सो हम आपसे कहते हैं।

तार्क्ष्य बोले, हे सर्व्वाङ्गसुन्दरी। ऐसा कौन कल्याणदायक कर्म्म है; जिसके करनेसे मनुष्य अपने धर्म्मसे नष्ट न हो, तुम हमारे इस प्रश्नका उत्तर दो, जिससे हमारा धर्म्म नष्ट न हो। हे सुभगे। कौनसे समयमें और किस प्रकारसे अग्नि-होत्र करना चाहिये, कौन कर्म्म करनेसे मेरा धर्म्म नष्ट न हो, तुम हमसे उस कर्म्मको कहो जिसके करनेसे हम रजो-गुणरहित होकर सुखसे लोकोंमें बस सकें।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, जब तार्क्ष्य मुनिने प्रेम सहित सरस्वतीसे प्रश्न किया। तब उत्तम-बुद्धियुक्त धार्म्मिक तार्क्ष्य मुनिसे सरस्वती कहने लगीं। सरस्वती बोलीं, जो मनुष्य पवित्र और सावधान होकर वेद पढ़ता है तथा ब्रह्मको जानता है, वही दिव्य स्वर्गको जाता है और देवतोंके सहित आनन्द करता है। उस स्वर्गलोकमें रमणीय सुन्दर बड़ी बड़ी पवित्र जलसे भरी हुई पोखर है, जिनको देखतेही सब शोक नष्ट हो जाते हैं, जिनमें कभी कीचड़ नहीं है, जहां सोनेके वन अनेक प्रकार विराज-मान हैं, जिन पोखरोंमें उत्तम रम्य विमान ... कर रहे हैं, उन्हीं पोखरोंके तटपर पुण्यात्मा लोग उत्तम सुगन्ध और ... किये, सोनेके समान ... और अप्सरा-

इच्छासे अत्रि मुनि चले। हमने सुना है, कि मार्गमें चलते चलते उनको यह इच्छा हुई, कि बहुत धन लेना अच्छा नहीं है, क्योंकि धर्म्म-हीसे सब कार्य्य सिद्ध होते हैं; द्रव्यसे नहीं। महा तेजस्वी अत्रिने ऐसा विचारकर बनको जानेकी इच्छा की। फिर अपनी स्त्री और पत्रोंको बुलाकर कहा, कि तुम लोग बनको चलो, वहां चलने से सब उपद्रव रहित और बहुत सुख 'मोक्ष' मिलेगा। यह सुन उनकी स्त्री धर्म्मके सहित बोली, कि तुम महात्मा वैण्यके पास जाकर बहुतसा धन मांगो, वह राजर्षि यज्ञ कर रहे हैं, वे तुमको बहुत धन देंगे, धन लाकर नौकर और पत्रोंको बांट कर फिर जहांको इच्छा हो तहा चले जाना, धर्म्म जाननेवाले मनु प्रभृति पुरुषोंने इसीको धर्म्म कहा है। अत्रि बोले, हे महाभागे। मुझसे महात्मा गौतमने कहा है, कि राजऋषि वैण्य धर्म्म और सत्यव्रतमें स्थिर हैं. परन्तु वहांके ब्राह्मण दूसरे ब्राह्मणका द्वेष करते हैं। मैंने जबसे गौतम मुनिके वचन सुने हैं, तभीसे वहां जानेकी इच्छा त्याग दी है, मैं जब वहां जाऊंगा, तो वे सब कल्याण अर्थ और धर्म्मसे भरी हुई मेरी वाणीके उत्तरमें निरर्थक वाणी कहेंगे। हे महाप्राज्ञे। यदि तुमको यही प्रिय है, तो मै जाऊंगा। राजा वैण्य मुझको बहुत दान और गौ देंगे। महा तपस्वी अत्रि अपनी स्त्रीसे ऐसा कह कर राजा वैण्यकी यज्ञको चले, वहां यहा जाकर राजा वैण्यकी स्तुति करने लगे। अपने कुशल भरे वचनोंसे राजाकी पूजा करते अत्रि मुनि बोले, हे राजन्। तुम धन्य हो, तुम जगतके स्वामी हो। तुम आदि राजा हो, मुनि लोग तुम्हारी स्तुति करते हैं, तुम्हारे सिवाय और कोई मनुष्य धर्म्मको नहीं जानता है। उनके वचन सुनकर महा तपस्वी गौतम क्रोध करके बोले हे अत्रि। तुम ऐसे वचन कभी नहीं कहना, हमारे आदिराजा इन्द्र हैं, वेही प्रजापति हैं और वेही आदि राजा हैं। जान पड़ता है, कि तुमको बुद्धि नहीं है, इसीसे तुम ऐसा कहते हो। हे युधिष्ठिर। गौतम ऋषिके बचन सुन अत्रि कहने लगे, कि हमने जो कहा सो सत्य कहा, जैसे इन्द्र राजा है, तैसे येभी हैं, तुमही भ्रममें पड़कर भूलते हो। हम जानते हैं कि तुमको ज्ञान और बुद्धि कुछ नहीं है। गौतम बोले, हे अत्रि। हम सब जानते हैं, तुमही भूलते हो, तुम इस सभामें बैठकर राजाको प्रसन्न करनेको स्तुति करते हो, तुम परम धर्म्मको नहीं जानते हो, और प्रयोजन को नहीं समझते हो। तुम मूर्ख और बालक हो, तुमको कोई किस कारणसे बूढा कह सकता है?

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, जिस समय सब मुनियोंके आगे ये दोनो इस प्रकार विवाद कर रहे थे, उसी समय यज्ञमें बैठे हुए सब मुनिलोग कहने लगे, कि ये लोग किस लिये विवाद कर रहे हैं? इन दोनोंको किसने सभामें आने दिया? ये यज्ञके किस अधिकारमें नियुक्त हैं? ये लोग ऊंचे शब्दसे क्यों बोल रहे हैं? तब सब धर्म्मके जाननेवाले काश्यप कहने लगे कि तुम दोनो जिस प्रयोजनके लिये बिवाद करते हो, सो हमसे कहो। तब सभामें बैठे हुए सब मुनियोंसे गौतम बोले, कि हे ब्राह्मणो। हम दोनो तुमसे प्रश्न करते हैं, तुम सुनो। अत्रि कहते हैं, कि राजा वैण्य ब्रह्मा हैं, मुझको इसमें बहुत सन्देह है। उनके बचन सुन महात्मा मुनिलोग शीघ्रही वहासे चले और धर्म्मके जाननेवाले सनत्कुमार मुनिके पास पहुंचे और अपनी सब कथा कह सुनाई। महात्मा सनतकुमारने उनके वचन सुन धर्म्म और अर्थके सहित उत्तर दिया। सनतकुमार बोले, जैसे अग्नि और वायु मिलकर बनको भस्म कर देते हैं, तैसेही ब्राह्मण और चत्री मिलकर शत्रुओंका नाश करते है। राजाहीको धर्म्म और प्रजापति कहते

, राजाहीको इन्द्र शुक्र धाता और वृहस्पति ...ति है, जो चली जगतका स्वामी है, उसको ...पति और सम्राट कहते हैं। जो इन सब ...से राजाकी स्तुति करता है उसकी कोई ...दा नहीं करता है। पहले समयमें राजा-...ग धर्म्मके उत्पत्ति-स्थान, युद्ध जीतनेवाले ...न, शीघ्र स्वर्ग देनेवाले, शीघ्र विजय करने ...े और विष्णुके नामसे प्रसिद्ध थे। राजा ...के उत्पत्ति स्थान पहली बातोंको जाननेवाले ...र और धर्म्मके प्रवर्तक राजाको आश्रयसे डरे ..., मुनियोंने धर्म्मका रक्षक बनाया है; जैसे ...र्य अपने तेजसे अन्धकारको नाश करता है, ...से ही राजाभी अपने तेजसे अधर्म्मका नाश ...रता है। शास्त्र देखनेसे भी ऐसाही जान ...ड़ता है, कि राजा सबसे प्रधान है और राजा ...का शब्द कहनेसेभी राजाही प्रधान जान ...ड़ता है। मार्कण्डेय मुनि बोले, हे युधिष्ठिर! ...नर निरूपण सुनकर राजा वैण्य बहुत प्रसन्न ...ए। अनन्तर उन्होंने अत्रिसे कहा, कि हे विप्र-...ष्ठ! तुमने मुझे सर्व्वदेवसम्मित और मनुष्यों ... ...हा, इसलिये हम तुमको बहुत धन ... । ...म तुमको उत्तम वस्त्र और आभू-...ण धारण किये एक सहस्र श्यामा दासी ... दश करोड़ सोनेकी मुद्रा और दसभार ... , हे मुने! हम सत्य कहते हैं, ... हम तुमको सर्व्वज्ञ कहते हैं। महा-...र्षिने भी उन सब धनको न्याय पूर्व्वक ...ा। फिर महातपस्वी तेजस्वी अत्रि ... चले गये। वहां जाकर महात्मा ... अपने घरपर जाकर वह सब धन पुत्रों-... दिया, फिर तप करनेकी इच्छासे ... चले गये।

...ध्याय समाप्त।

... मुनि बोले, हे शत्रु नाशन युधि-... ... विषयमें बुद्धिमान ताक्ष्यने सरस्वतीसे प्रश्न किया था। उस प्रश्नका सरस्वतीने जो उत्तर दिया, सो हम आपसे कहते हैं।

ताक्ष्य बोले, हे सर्वाङ्गसुन्दरी! ऐसा कौन कल्याणदायक कर्म्म है; जिसके करनेसे मनुष्य अपने धर्म्मसे नष्ट न हो, तुम हमारे इस प्रश्नका उत्तर दो, जिससे हमारा धर्म्म नष्ट न हो। हे सुभगे! कौनसे समयमें और किस प्रकारसे अग्नि-होत्र करना चाहिये, कौन कर्म्म करनेसे मेरा धर्म्म नष्ट न हो, तुम हमसे उस कर्म्मको कहो जिसके करनेसे हम रजो-गुणरहित होकर सुखसे लोकोंमें घूम सकें।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, जब ताक्ष्य मुनिने प्रेम सहित सरस्वतीसे प्रश्न किया। तब उत्तम-बुद्धियुक्त धार्म्मिक ताक्ष्य मुनिसे सरस्वती कहने लगीं। सरस्वती बोलीं, जो मनुष्य पवित्र और सावधान होकर वेद पढता है तथा ब्रह्मको जानता है, वही दिव्य स्वर्गको जाता है और देवतोंके सहित आनन्द करता है। उस स्वर्गलोकमें रमणीय सुन्दर बड़ी बड़ी पवित्र जलसे भरी हुई पोखर हैं, जिनको देखतेही सब शोक नष्ट हो जाते हैं, जिसमें कुछभी कीचड़ नहीं है, जहां सोनेके बने अनेक कमल विराज-मान हैं, जिन पोखरोंमें उत्तम मत्स्य विहार कर रहे हैं, उन्ही पोखरोंके तटपर धर्म्मात्मा-लोग उत्तम सुगन्ध और अनेक आभूषण धारण किये, सोनेके समान रङ्गवाली अनेक अप्सरा-ओंके सङ्ग विहार करते हैं। जो पुरुष गोदान करते हैं, सो उत्तम लोकको जाते हैं। गाड़ु-दान करनेसे सूर्य्यलोक, वस्त्रदानसे चन्द्रलोक और सोना देनेसे देवलोक प्राप्त होता है। जो पुरुष सुन्दर रङ्गवाले बछड़े और दूधके सहित उत्तम गौ दान देता है, उस गौके जितने रोम रहते हैं, उतने वर्ष देवलोकमें रहता है। जो पुरुष हलके चलने योग्य बहुत बलवान धुरमें जुड़ने योग्य नवीन बैलका दान करता है,

उसे दस गौ दानका फल मिलता है। जो पुरुष कांसेकी दोहनी द्रव्य और वस्त्रके सहित कपिला गौ दान करता है, उसको वही गौ उन्ही गुणोंके सहित कामना सिद्ध करनेवाली होकर मिलती है। जितने गौके रोवें हैं, गौ दान देनेवाले पुरुषको उतनेही फल मिलते हैं। जो पुरुष गौदान करता है, उसके पुत्र पौत्र और सब कुलका उद्धार हो जाता है। जो दक्षिणा कांसेकी दोहनी धन और वस्त्रके सहित सोनेके बनवा कर तिल गौदान करता है उसको सुखसे वसु लोक मिलता है। हे राजन्। जो पुरुष गौदान करता है, उसको वह गौ दानवोंसे घिरे हुए घोर अन्धकारसे भरे नरक रूपी महा समुद्रसे नौका बन कर उद्धार करती है। जो पुरुष ब्राह्मणको कन्या दान करता है वा पृथ्वी दान करता है अथवा और भी अनेक प्रकारके दान करता है, उसे सुखसे इन्द्रलोक प्राप्त होता है। जो शीलवान पुरुष नियमपूर्वक सात वर्ष अग्नि-होत्र करता है, वह सात अगले और सात पिछले पुरुषोंका उद्धार करता है। तार्क्ष्य मुनि बोले, हे सरस्वती। अग्नि-होत्रका सनातन नियम क्या है? तुम हमसे कहो, हम दस विद्याको तुमसे पढकर प्राचीन अग्निहोत्र व्रतको धारण करेंगे। सरस्वती बोलीं, अपवित्र अवेदचारी और मूर्खको अग्निहोत्र न करना चाहिये, क्योंकि देव पवित्रताको चाहते हैं, वे अपवित्र और अश्रद्धा-वालेसे दी हुई आहुतिको नहीं ग्रहण करते। अग्निहोत्र करानेवालेको उचित है कि मूर्खसे अग्निहोत्र कर्म न करावे, क्योंकि मूर्ख पूरा कर्म्म नहीं कर सकता है। हे कश्यपमुनि। जिस ब्राह्मणका कुल और शील कुछ नहीं जाना जाता है, उसे भी अश्रोत्रिय कहते हैं, इस लिये उससे यज्ञ न करावे, जो दर्परहित लोग श्रद्धा और सत्यव्रतके सहित अग्निहोत्र कर्म्म करते हैं, तथा उनोंसे बचे हुए अन्नको खाते हैं, उनको उत्तम सुगन्धयुक्त गोलोक और देवलोक प्राप्त होता है।

तार्क्ष्य बोले हे दिव्यरूपणी। हम अपनी बुद्धिको स्थिर करके तुमसे पूछते हैं कि तुम कौन हो? तुम हमको बुद्धिमें प्रविष्ट ब्रह्मरूपिणी और देवी जान पड़ती हो। सरस्वती बोलीं, हे कश्यप! मैं ब्राह्मणोंके अग्निहोत्र आदि सत्कर्मसे प्रकट परापर विद्यारूपा सरस्वती हूं, तुम्हारे सन्देह नाश करनेको आई हूं मैं यहां जो तुमसे कहती हूं सो सब सत्य है।

तार्क्ष्य बोले, हमने तुम्हारे समान कोई तेजस्वी स्त्री नहीं देखी। तुम साक्षात लक्ष्मीके समान हो। हे सुभगे। तुम्हारा रूप और शोभा दिव्य है और तुमको दैवी बुद्धि है।

सरस्वती बोली; हे मनुष्यश्रेष्ठ विद्वान विप्र। यज्ञमें जिन सब काष्ठमय लौहमय और पार्थिव वस्तुओंका उपयोग होता है और ऋत्विक लोग जो कुछ श्रेष्ठवस्तु उत्पादित करते हैं, मैं उसोसे सम्वर्द्धित अप्यायित तथा रूपवती होती हूं। तुमने जो मुझे प्रज्ञावती तथा मेरा दिव्यरूप दर्शन किया, उससे बोध होता है, कि तुम्हें अवश्य सिद्धि प्राप्त हुई है।

तार्क्ष्य बोले, धीर मुनि लोग [illegible] विश्वासी होकर जिसे परम श्रेय विवेचना कर इन्द्रियनिग्रहादि करके जिसमें प्रवेश करते हैं, आप उस शोकातीत परमश्रेष्ठ पदार्थ मोक्ष स्वरूपका मेरे निकट वर्णन करिये। ज्ञानी लोग जिस पुरातन परम पदार्थको श्रेष्ठ जानते हैं, मै उसे नहीं जानता।

सरस्वती बोलीं, स्वाध्यायशील वेद जानने-वाले लोग तपोधन सज्जय और व्रत पुण्य [illegible] जिसे प्राप्त होकर शोक रहित और निमुक्त होते हैं, वही परसे भी परतर प्रसिद्ध पुरातन परब्रह्म हैं। उस परब्रह्ममें भागमान [illegible] अनन्त शाखायुक्त, शब्दादि विषयरूप [illegible] गन्धमय अपरिच्छिन्न ब्रह्माण्डरूप [illegible]

प्रकाशित है। उसके अविद्यारूप मूलसे भोग-वासनारूपी निरन्तर प्रवाहवती नदियां उत्पन्न होती हैं। वे आपातरमणीय पुष्पगन्धा नदियां मधुकी भांति मधुर और जलकी तरह हमिवार भोगज सुखोंको प्रसवण करती हैं। भूने जोंकी तरह अङ्कुर-उत्पादन-शक्तिहीन, पिटककी भांति अनेक छिद्रयुक्त, मांसवत् शिलालस्य, शाककी भांति अल्पसार, पायसकी तरह सुखरोचक तथा पाकमें गुरुतर और कीचड़की भांति चित्तको मलिन करनेवाली जो बालूकी तरह परस्पर असंश्लिष्ट पुत्र वित्तादि वासनारूपी महानदियां हैं, वे विविध विषय भोगस्थान स्वरूप उक्त वेतस, वृक्षकी शाखा शाखामें प्रवाहित हुआ करती हैं। इन्द्र अग्नि और मरुतगण जिसकी प्राप्तिके लिये यज्ञसे यजन करते हैं, वह परब्रह्मही मेरा प्राप्यस्थान है, मैं विद्यारूपी सरस्वती हूं।

ब्राह्मण माहात्म्य प्रकरण और
१८६ अध्याय समाप्त।

वैवस्वतमनु और मत्स्यावतार उपाख्यान।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! [illegible]! तब महाराज युधिष्ठिरने मार्कण्डेय [illegible] कहा, कि आप हमसे वैवस्वतमनुका [illegible] कहिये, श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे [illegible]! हे नर शार्दूल! सूर्यके पुत्र महा-[illegible] महाप्रतापवान और प्रजापतिके समान [illegible] मनु हुए [illegible] वे तेज बल लक्ष्मी और [illegible] और [illegible] अधिक हो गये। [illegible]! उन्होंने बदरिकाश्रममें जाकर [illegible] एक चरणसे खड़े होकर घोर तप [illegible] दश सहस्र वर्ष तक अपना [illegible] और नेत्रोंको स्थिर करके घोर तप [illegible] दिन भीगे वस्त्र और जटाधारी [illegible] एक मत्स्य बोला, हे भगवन्! [illegible] इससे मुझे बड़े मत्स्यसे बहुत डर लगता है। हे सुव्रत! तुम उन सब मत्स्योंसे हमारी रक्षा करो, हमको उन मत्स्योंसे जीना बहुत दुर्लभ है और हमारी यह सदाकी वृत्ति है, कि एक मत्स्य दूसरेको खा जाता है, इस लिये तुम हमको इस घोर दुःखसे छुड़ाओ, ऐसी इस उपकारका बदला तुमको दूंगा। मनु उसके वचन सुन कृपासे-पूर्ण हो गये और उसको अपने हाथसे पकड़ लिया, तब मनुने उसको एक चन्द्रमाके समान निर्मल पानीसे भरे हुए पात्रमें छोड़ दिया। हे राजन्! वह मत्स्य मनुसे इसी सत्कृत होकर उसी पात्रमें बढ़ने लगा। मनुभी उसको अपने पुत्रके समान पालने लगे। कुछकालमें वह मत्स्य बहुत बड़ा हो गया और उस बरतनमें उसका शरीर न समाया। तब वह बोला, कि हे भगवन्! आप मेरे लिये कोई दूसरा स्थान बताइये। भगवान मनुने उस मत्स्यको उस बरतनसे उठा-कर एक बड़ी भारी बावड़ीमें डाल दिया। हे शत्रु नाशन! बहुत वर्ष बीतनेसे वह मत्स्य वहांभी बहुत बढ़ गया। हे कमलनेत्र! वह बावड़ी आठ कोस लम्बी चार कोस चौड़ी थी, परन्तु वह मत्स्य इतना बढ़ा कि उसमेंभी चल फिर न सका। हे प्रजानाथ! उसने एक दिन मनुसे फिर कहा, कि हे पिता! हे तात! हे भगवन्! [illegible] तुम मुझको समुद्रकी प्यारी स्त्री गङ्गामें डाल दो अथवा और आपकी जैसी इच्छा हो, वह कीजिये। हे पापरहित! मैं छल और कपटको छोड़ कर आपहीके पास रहना चाहता हूं, क्योंकि मैं आपहीके कारणसे इतना बड़ा हुआ हूं। भगवान इन्द्रियजित मनुने मत्स्यके वचन सुन मत्स्यको गङ्गामें डाल दिया। हे शत्रुनाशन! वह गङ्गामेंभी बढ़ने लगा तब उसने एक दिन फिर मनुसे कहा। हे नाथ! हे भगवन्! मैं गङ्गामें [illegible] फिर [illegible] सकता हूं इस लिये आप [illegible] मुझको समुद्रमें छोड़ दीजिये। तब मनुने उसको गङ्गासे उठाकर

समुद्रमें छोड़ दिया। हे कुन्तीनन्दन। जिस समय मनु उस मत्स्यको लेकर समुद्रको चले। तब वह सुगन्ध भरे वायुसे बहुत प्रसन्न हुआ, जब मनुने उसे समुद्रमें डाला, तब वह हंस कर बोला, कि हे भगवन्। आपने हमारी समयके अनुसार रक्षा की है इस लिये आपको जो काम करने हैं, सो हम कहते हैं सुनिये। हे भगवन। हे महाभाग। थोड़ेही दिनमें इस सब चर और अचर जगतकी प्रलय होगी, यह समय सब लोगोंके नष्ट होनेका आया है, इस लिये हम आपको हितकी बात सुनाते हैं। यह समय स्थावर और जङ्गमके नाश करनेका आया है, इसलिये आप एक नाव बनाइये और उसमें दृढ़ रस्सी बान्धिये। हे महामुने! जब प्रलयका समय आवेगा, तब आप सप्तऋषियोंके सहित उसी नावमें चढ़ियेगा और उसी नावमें सब जगतके वस्तुओंके बीजोंको रक्षा पूर्व्वक क्रमसे रख लीजियेगा! हे मुनिजनप्रिय। हे तापस। आप उस नावमें बैठ कर हमारा मार्ग देखना। तब हम आवेंगे आप हमारे सिर पर सींग देख कर हमको पहचान लेना। हे मुने। हमने आपसे सब कह दिया। अब हम जाते हैं, आप बिना मेरी सहायता उस घोर जलको तैर नहीं सकते हैं; हे विभो! आप मेरे बचनमें शङ्का मत कीजियेगा। मत्स्यके वचन सुन मनुने कहा, कि हम ऐसाही करेंगे। अनन्तर वे दोनो परस्पर आज्ञा लेकर इच्छानुसार चले गये। हे महाराज। उनके पश्चात् मनुने उसके कहनेके अनुसार सब जगतकी वस्तुओंके बीज इकट्ठा किया। फिर एक सुन्दर नावमें बैठ कर घोर तरङ्गवाले समुद्रमें तरने लगे। अनन्तर मनुने उस मत्स्यका ध्यान किया। मनुके ध्यान करतेही वह मत्स्य एक सींग धारण करके मनुके पास पहुंचा। हे भरतसत्तम। हे प्रजानाथ! हे शत्रुनाशन! हे पुरुषव्याघ्र! उस महासमुद्रमें उस सींगवाले मत्स्यको मनुने पर्व्वतके समान शरीर धारण किये हुए देखा। तब मनुने उस रस्सीको मत्स्यके सींगमें बांध दिया। हे पुरुषशार्दूल। जब मनुने उसके सींगमें वह रस्सी बांधी, तब वह वेगसे उस नावको समुद्रमें खींचने लगा। हे नरनाथ! मत्स्यके खींचनेसे वह समुद्रमें तैरने लगी। उस समय वह नाव समुद्रकी तरङ्गसे नाचने लगी और उसके शब्दसे शब्द करने लगी। वह वायुके वेगसे समुद्रमें चपला स्त्रीकी भांति घूमने लगी। हे शत्रुनाशन! उस समय नावकी ऐसी दशा हुई, जैसे मतवाली स्त्री नाचती है, उस समय दिशा और पृथ्वी कुछ नहीं दीखती थीं। हे नरश्रेष्ठ। उस समय आकाश और सब दिशा जलमय दीखती थीं। हे भरतकुलसिंह। जब जगत जलमें डूब गया था उस समय केवल सप्तऋषि मनु और वह मत्स्य दिखाई देते थे, इस प्रकार वे सब बहुत वर्षोंतक समुद्रमें घूमते रहे और वह मत्स्यभी उन सबको आलस्य रहित होकर समुद्रमें खींचता रहा। हे कुरुनन्दन! इस प्रकार नावको खींचते खींचते वह हिमाचलके सबसे ऊंचे शिखर पर पहुंचा, वहां पहुंच कर उसने कुछ हंसकर ऋषियोंसे कहा, आप लोग बहुत शीघ्र इस नावको हिमाचलके शिखरमें बांध दीजिये, विलम्ब करना उचित नहीं है। यह सुन उन मुनियोंने बहुत शीघ्र उस नावको हिमाचलके शिखरसे बांध दिया। जिस हिमाचलके शिखरसे उस मत्स्यके कहनेसे नाव बांधी गई थी उसका नाम अबतक नाव-बन्धन है। हे कुन्तीनन्दन। अनन्तर उस मत्स्यने ऋषियोंसे कहा, कि मुनि लोग हमहीको प्रजापति ब्रह्मा जानो हम हैं, हमारा ही नाम ब्रह्मा है, हमने मत्स्यरूप धारण करके आप लोगोंको इस भयसे छुड़ाया है, अब मनु सब जगतके देवता, असुर, मनुष्य तथा औरभी चराचर सृष्टिको बनावेंगे, तथा तप करनेसे इनको सृष्टि करनेकी [illegible]

और हमारी कृपासे ये सृष्टि करनेमें भूलेंगे नहीं। ऐसा कहकर मत्स्य अन्तर्द्धान होगया। तब वैवस्वत मनुने सृष्टि बनानेकी इच्छा की, परन्तु बना न सके। तब उन्होंने घोर तप किया, उसके पीछे उन्होंने सृष्टि बनाना आरम्भ किया। हे भरतकुलसिंह! वैवस्वत मनुने सृष्टिको बनाया। हे युधिष्ठिर! यह उपाख्यान मत्स्यपुराण नामसे वर्णित हुआ है। हमने यह पवित्र कथा तुमसे कही। जो इस मनुके चरित्रको आदिसे अन्ततक पढ़ता है, उसके सब पाप नष्ट हो जाते हैं और सुख तथा धनसे पूर्ण होकर परलोकमें सुखपाता है।

वैवस्वत मनु, मत्स्योपाख्यान और
१८७ अध्याय समाप्त।

मार्कण्डेय नारायण सम्वाद।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! इस कथाको सुन धर्म्मराज युधिष्ठिरने तपस्वी मार्कण्डेयसे फिर प्रश्न किया। हे महामुने! आपने अनेक सहस्र युग देखे हैं, आपके समान महात्मा ब्रह्माको छोड़कर और कोई दूसरा नहीं है। हे ब्राह्मण! इस देवता दानव रहित जगत्‌के प्रलय कालमें तुमही [illegible]के पास जाते हो, जब प्रलय बीत जाती है और ब्रह्मा जागते हैं, तब तुमही उनकी बनायी सृष्टिको देखते हो। हे विप्र! ब्रह्माने चार प्रकारकी सृष्टि बनायी है। [illegible] वायु और जलको सब दिशामें फैला दिया है। हे [illegible]! आपने समाधि लगा [illegible] पितामह साक्षात ब्रह्माकी [illegible] आपने अनेक वार अपने [illegible], आपने घोर तप करके [illegible] पदोंको जीत लिया है। आप [illegible] है। जब पुरुष शरीर- [illegible] तबभी आपकी स्तुति [illegible] ब्रह्माण्ड जगत् बनाने-वाले कामरूपी विष्णुके हृदयकमलको खोलकर अनेक वार देखा है। आपने पहली सृष्टिमें परम वैराग्य करके विष्णुके हृदयको देखा है। इसीसे आपको बुढ़ापा और शरीरको नाश करनेवाली मृत्यु दुःख नहीं देती है; हे विप्रश्रेष्ठ! आपको यह सब ब्रह्माके प्रसादसे प्राप्त हुआ है। जिस समय अग्नि, सूर्य्य, चन्द्रमा, आकाश और पृथ्वी कुछ विशेष नहीं थी, जब समस्त जगतमें जल छा गया था, जिस समय देवता और असुरोंके सहित सब चर और अचर नष्ट हो जाता है, जब अनेक महासर्प उत्पन्न होते हैं, जिस समय कमलगर्भमें रहनेवाले ब्रह्मा निद्राके वशमें होकर अपने शरीरको भूल जाते हैं, तब अकेले आपही उनके पास खड़े रहते हैं। हे द्विजोत्तम! आपने यह सब दशा अपने आखोंसे देखी है; इस लिये हम कारणोंके सहित सब कथा आपसे सुना चाहते हैं। हे द्विजोत्तम! जगत्‌में कोई ऐसी बात नहीं, जिसको आप न जानते हो; इस लिये हम आपसे कथा सुनना चाहते हैं।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हम आपसे यह सब कथा कहनेके पहले आपही उत्पन्न होने वाले पुराण अव्यय भेद-रहित सूक्ष्म निर्गुण और सगुण ब्रह्मको प्रणाम करते हैं। हे पुरुषव्याघ्र! वे वेही पीताम्बरधारी श्रीकृष्ण हैं, वेही जगतके कर्ता नाश करनेवाले और सब जगतकी आत्मा हैं; वेही सबसे बड़े आश्चर्य और विचित्र नामोंसे प्रसिद्ध हैं, वेही अनादि अनन्त सब प्राणियोंके कारण और जगत्‌के कर्त्ता हैं और वेही पराक्रमके मूल हैं, वे [illegible] जानते हैं और इनको वेद भी नहीं जानते हैं। हे राजसत्तम! वेही सब [illegible] स्थान हैं। हे पुरुषव्याघ्र! जब [illegible] आदि [illegible], उस समय देवके परिमाणसे चार [illegible] तक [illegible] रहता है, [illegible] कर्मकी है और [illegible] है। तीन

सहस्र वर्षका त्रेतायुग होता है और उसकी सन्ध्या और सन्ध्यांश भी तीन तीन सौ वर्षकी होती है। द्वापर युग दो सौ वर्षका तथा उसकी सन्ध्या और सन्ध्यांश भी दो दो सौ वर्षकी होती है। कलियुगका परिमाण एक सहस्र वर्ष है, उसके सन्ध्या और सन्ध्यांश सौ सौ वर्षके होते हैं; सन्ध्या और सन्ध्यांशका परिमाण समान ही है। कलियुग बीतनेसे सतयुग आता है। यह द्वादश सहस्र वर्षोंकी युग संख्या हमने आपसे कही, इसी द्वादश सहस्र वर्षको ब्रह्माका दिन भी कहते हैं; इसी समयमें ब्रह्मा सब जगतको बनाते हैं। हे पुरुषसिंह! इसके पीछे जो समय होता है उसमें ब्रह्मा तब जगत्को अपने स्थानमें विसर्जन करते हैं, इसी समयको प्रलय कहते हैं। हे कुन्तीनन्दन! जब इस प्रलयके होनेको थोड़े दिन रह जाते हैं अर्थात् एक सहस्र वर्ष शेष रह जाते हैं, तब सब पुरुष झूठ बोलने लगते हैं। हे कुन्तीनन्दन! उस समय यज्ञ, दान, ब्रतादि कर्मोके स्थानों पर उनके समान छोटे छोटे कर्म्म चलने लगते हैं, उस समय ब्राह्मण लोग शूद्रोंके कर्म्म करने लगते हैं। और शूद्र लोग धन उपार्जन करने लगते हैं, अथवा शूद्र लोग क्षत्रियोंका कर्म्म करके जीविका पालन करते हैं। हे तात! कलियुगमें ब्राह्मण लोग यज्ञ, वेद पाठ, दण्ड और मृगचर्म्मसे रहित हो जायगे, वे लोग सर्व्वभक्षी और जपसे रहित हो जायगे। शूद्र मन्त्रको जपने लगेंगे! हे पृथ्वीनाथ! जब ऐसा घोर समय आवेगा, तब जानना कि अब प्रलय होनेवाली है। उस समय जगत्के सब राजा म्लेच्छ हो जायेंगे, वे लोग झूठ बोल बोल अन्याय और पापसे राज्य करेंगे। हे पृथ्वीनाथ! अन्ध्र, शक, पुलिन्द, यवन, काम्बोज, वाह्लीक और आभीर लोग राजा होंगे। हे नरोत्तम! उस समय कोई ब्राह्मण अपने धर्म्मका पालन नहीं कर सकेगा, इसी प्रकार क्षत्री और वैश्य भी अपने अपने कर्म्मोंको छोड़ देंगे। कलियुगके पुरुष थोड़े बल, थोड़े पराक्रम, थोड़े वीर्य, थोड़ी अवस्था, थोड़ा उत्साह, थोड़ा शरीर और थोड़े साहसवाले होंगे। अनेक नगर मनुष्योंसे शून्य होजायंगे। सब ओर हरिन और सर्पही दिखाई देंगे। कलियुगमें सब लोग कहते फिरेंगे, कि हमने भी वेद पढा है, हमने भी वेद पढ़ा है। शूद्र लोग ब्राह्मणोको झूठे और ब्राह्मणलोग शूद्रोंको झूठे कहेंगे। हे पुरुषसिंह! युगके अन्तमें बहुत जन्तु उत्पन्न होंगे। हे पृथ्वीनाथ! उस समय नासिका सब सुगन्धियोंको नहीं सूंघ सकेगी। रसोंमें इतना स्वाद नहीं रहेगा। मनुष्योंको बहुत सन्तान होंगी, परन्तु सबके छोटे शरीर होंगे और कोई भी शील और आचारको नहीं करेगा। उस समयमें स्त्रीलोग मुखसे मैथुन करेंगी; उस समय सब नगरोंमें अकाल पड़ जायगा। उस पुरुष अन्न बेचनेवाले। ब्राह्मण लोग वेद बेचनेवाले और स्त्रीलोग योनि बेचनवाली हो जायगी। हे पृथ्वीनाथ! गाय बहुत कम दूध देने लगेंगी, वृक्षो पर फल बहुत कम आवेंगे, कौवे बहुत बढ़ जायेंगे, ब्राह्मण लोग ब्राह्मणको मारने वाले और मिथ्यावादी राजाओंसे प्रतिग्रह ग्रहण करने लगेंगे। लोभ और मोहसे भरे हुए धार्म्मिक चिह्नधारी होकर बार बार चोरी करनेमे प्रवृत होंगे; गृहस्थ लोग राजकरसे पीड़ित होकर वञ्चनापूर्वक अर्थसंग्रह करने लगेंगे। द्विज लोग कपटसे मुनियोंका वेष बनाकर घूमेंगे। कलियुगमें ब्राह्मण लोग डाढ़ी बाल और नाखूनोंको बढ़ावेंगे, धनके लोभसे अनेक लोग ब्रह्मचारी होंगे, कोई आश्रम ठीक नहीं रहेगा। सब लोग मदिरा पीने लगेंगे, सब लोग गुरुके आसन पर बैठने लगेंगे, उस समयके पुरुष केवल मांस और लावर बढ़ानेवाले अपना कर्म्म समझेंगे। हे

प्रसन्नता होगी। उस समयके पुरुष अनेक पाखण्डोंसे पूर्ण और पराये अन्नकी प्रशंसा करनेवाले होंगे। उस युगके आनेसे ठीक समय पर इन्द्र वर्षा नहीं करेंगे और बीज भी अच्छी प्रकारसे उत्पन्न नहीं होंगे, ब्राह्मणादिक सब वर्ण हिंसा करने लगेंगे, उस समय सब और पापहीका फल दिखाई देने लगेगा। हे पृथ्वीनाथ! उस समय जो धर्म्म करेगा, वही थोडे दिन जीयेगा। इस लिये सब जान जायंगे कि धर्म्म कुछ वस्तु नहीं है, उस समय राज लोग छल करके कपटके बाटोंको बनावेंगे। बनिये लोग अनेक प्रकारके छल करेंगे धर्म्मज्ञोंकी हानि और पापियोंकी वृद्धि होगी। धर्म्म हीन और अधर्म्म बलवान हो जायगा, धर्म्म करनेवाले पुरुष थोड़े दिन जीनेवाले और दरिद्री होंगे, अधर्म्मी लोग दीर्घायु और धनवान होंगे, उस युगके अन्तमें अधर्म्मी लोग नगरोंमें आनन्द करेंगे। वे लोग अनेक अधर्म्मोंसे प्रजाको ठगेंगे। थोड़ा धन इकट्ठा होनेसे भी उन लोगोंको बहुत अभिमान होगा। उस समयके पुरुष अपने धनको बहुत विश्वाससे व्यवहार करेंगे, वे पापी लोग दूसरेके धन हरनेका बहुत उपाय करेंगे, वे निर्लज्ज लोग [illegible] करेंगे, [illegible] यह [illegible] कहीं [illegible] पुरुषोंका खानेवाले जन्तु, पक्षी और [illegible] लोग नगरोंके बागोंमें और [illegible] विहार करने लगेंगे। दस अथवा [illegible] वर्षकी लड़की सात अथवा आठ [illegible] लड़कोंसे सन्तान उत्पन्न करेगा, [illegible] वर्ष [illegible] पुरुष बूढ़े हो जायगे [illegible] बहुत [illegible] होगी। हे महा- [illegible] बूढ़े तरुण और तरुण [illegible] होंगे। उस समयकी स्त्रियां [illegible] [illegible] और [illegible] करेगी। हे नर- [illegible]

लेंगी, वे लोग अपने जीते पतिको छोड़ दूसरोंसे व्यभिचार करेंगी। हे महाराज! जब ऐसा घोर युगका अन्त आवेगा, तब अनेक वर्षों तक जल नहीं वर्षेगा। हे पृथ्वीनाथ! उस समय वे थोड़े पराक्रमवाले जीव भूखसे व्याकुल होकर मर जायंगे। उस समय बहुत प्रकाशमान सूर्य्य उदय होंगे, वे सब समुद्र और नदियोंके जलको सुखा देंगे। हे भरतकुलसिंह! इस समय जो लाल और हरे तिनके और काठ दिखाई देते हैं, वे सब भस्म हो जायगी, उस समय सब जगतको जलाने वाली आग सूर्य्यसे सुखाये हुए जगत्में वर्षेगी, वह इस पृथ्वीको भस्म करके पातालको जायगी, वहां दानव और यक्षोंको भस्म करेगी, नाग लोग और पृथ्वीको जला कर इन सबके नीचे चली जायंगी और वहां भी क्षण भरमें सब वस्तुओंको भस्म कर देगी। तब अस्सी लाख और अस्सी हजार कोस तक एक अशुभ वायु चलेगी। वह सबको भस्म कर देगी। वही अग्नि देवता, असुर, गन्धर्व्व, यक्ष और राक्षसोंके सहित सब जगतको जलावेगी। उसके पश्चात् बिजलीके सहित हाथियोंके समान शरीर अद्भुतरूपी मेघ आकाशमें उठेंगे, उनमें कोई नील मेघके समान रूप वाले, कोई लाल कोई काले और कोई पीले होंगे, कोई हल्दिके समान सुन्दर कोई कौवेके [illegible] समान रूपवान कोई कमलके पत्तेसे सुन्दर और कोई सिगरिफके समान रंगवाले होंगे। कोई मेघ नगरके समान कोई हाथियोंके झुण्डके समान शरीरवाले, कोई [illegible] समान काले और कोई मगरके समान होंगे। हे महाराज! उस समय कोई बिजलियोंकी मालासे शोभायमान गर्जनेवाले घोर शब्द करते हुए मेघ निकलते हैं; तब वह मेघ [illegible] आकाश मण्डलमें छा जाते हैं, उनसे यह पृथ्वी सम्पूर्ण पर्वत और वनोंके सहित पूरित होकर [illegible] हैं। हे [illegible] [illegible]

घोर शब्द करनेवाले मेघ परमेश्वरकी आज्ञासे चारों ओरसे पृथ्वीको डुबा देते हैं, बहुत जल बर्षाते हुए सम्पूर्ण पृथ्वी को भरदेते हैं, वह घोर भयानक जल अग्निको भी नाश कर देता है। परमेश्वरके भेजे हुए वह मेघ बारह वर्ष तक जल वर्षाकर प्रलय करते हैं। हे भारत। तब समुद्र अपनी मर्य्यादा छोड़कर पर्व्वतोंको डुबाने लगता है। सब पर्व्वत पृथ्वी सहित जलमें डूब जाते हैं। वह श्रान्त मेघ वायुसे इधर उधरको नाश होते हैं। हे नरनाथ! तब उस भयानक पवनको ब्रह्मा पीकर कमल पर सो रहते हैं। उस महा प्रलयके घोर समयमें चर, अचर, देवता, असुर, यक्ष, राक्षस, मनुष्य, पशु, पक्षी और वृक्षादि नष्ट होजाते हैं। तब मैं अकेला केवल एकार्णवमें घूमा करता हूं। हे राजसत्तम! उस समुद्र पूरित घोर जलमें प्राणियोंको बिना देखे मैं बहुत विकल हुआ, तब बहुत दूर तक तैरता हुआ चला गया; दूर तक जाने परभी कहीं पर आश्रय न मिला; तब मैं थक कर बैठ गया; तब मैंने एक समय उस जलमें बड़ाभारी विशाल बड़ देखा। हे पृथ्वीनाथ! उस वृक्षकी एक बहुत लम्बी शाखामें दिव्य आभूषण पहिने हुए फूले कमलके समान नेत्रवाले और कमलके समान मुखवाले एक बालकको देखा, हे पृथ्वीपाल। उस बालक को देख कर हमको बड़ाही आश्चर्य्य हुआ, कि संसारके नाशके समय यह बालक कैसे बचा। हे प्रजानाथ! मैं यद्यपि योगदृष्टिसे भूत भविष्यत वर्त्तमानको देखता था तौभी उस बालकको न जान सका। तब अलसीके फूलके समान श्रीवत्समणि पहरे हुए साक्षात लक्ष्मी-पतिके समान वह मुझे मालूम हुआ। तब वह कमलनेत्र बालक मुझसे कहने लगा, हे भार्गव। मैं तुमको जानता हूं, कि तुम थके हुए मार्कण्डेय मुनि विश्राम चाहते हो। हे मार्कण्डेय! जब तक विश्राम करना चाहिये, तब तब हमारे यहां आकर विश्राम करो, पश्चात् मेरे शरीरमें प्रवेश करके आनन्दसे रहो, हम तुम पर प्रसन्न हैं। हे राजन्! तब उस बालकके ऐसे वचन सुनके मुझे अपने अधिक जीने और अपने मनुष्यपने पर ध्यान आया। तब उस बालकने अपने मुखको बहुत फैलाया, मैं बेवश होकर उसके मुहमें घुस गया। तब मैंने उसके पेटमें जाकर देखा, कि सम्पूर्ण पृथ्वी समेत नगर और बन विराजमान हैं, गङ्गा, जमुना, सतलज, सीता, कौशल्या, चम्बल, वेत्रवति, चन्द्रभागा, सरस्वति, सिन्धु, व्यासा गोदावरी, वस्वोक सारा, ताम्रा, वेणा, पवित्र जलवाली वेणा, कृष्णवेणा, महानदी, इरामा, वितस्ता, कावेरी, शोण भ विशल्या, पुनपुना, हे महाराज। जिन न यों को मैंने पृथ्वीमें देखा था, उन सब नदियों उस महात्मा बालकके पेटमें देखा। हे श नाशन। अनेक जल जन्तुओंसे भरे रत्नों खान समुद्र को भी मैंने वहां देखा, उ बालकके पेटमें आकाशमें प्रकाशमान सू चन्द्रमा और अग्निको देखा, हे राजन्! अने बनोंसे शोभायमान ऐसी पृथ्वीको देखा, जिस सहस्त्रों ब्राह्मण यज्ञ कर रहे थे, अनेक क्षत्रि लोग प्रजापालनमें ततपर, वैश्य खेतीमें लगे हु थे, शूद्र लोग द्विजातियोंकी सेवामें लगे थे उसकेपेटमें कुछ दूर आगे चलके हिमाच पर्व्वतको देखा। हेमकूट, निषध, चांदीसे भरे हुए श्वेतगिरी को देखा। हे राजन गन्धमादन पर्व्वत को, मन्दराचलको, नीलगिरी महापर्व्वत मेरुको भी देखा। महेन्द्र पर्व्वतको विन्ध्याचलको, मलयगिरको पारपात्र पर्व्वतको इनको आदि लेके और जितने पर्वत हैं सबको उस बालकके पेटमें देखा। यह सब पर्व्वत अनेक रत्नोंसे भरे हुए विराजमान हैं। हे राजन्! सिंह, व्याघ्र शूकर आदि अनेकप्रकार के जीव जन्तुओंको उसके पेटमें देखा। मैं उसके पेटमें इधर उधर विचरने लगा। हे

नरसिंह। उसको कोखमें घूमते मैंने इन्द्रादिक सम्पूर्ण देवताओंको देखा। साध्य, रुद्र, आदित्य गुह्यक, पितर, सर्प, नाग, सुपर्ण, वसु, अश्विनि-कुमार गन्धर्व्व, अप्सरा, ऋषि, यक्ष, दैत्यों और दानवोंके समूहोंको मैंने वहां देखा। हे नर-नाथ। मैंने वहां पर सिंहिकाके पुत्र देव-शत्रु, केतु आदिक तथा जङ्गलके सब चर अचरको जो इस लोकमें देखा था, उन सबोंको महात्मा बालकके पेटमें देखा। इस जगत्को देखते हुए मैं फलाहार करके जीने लगा। हे राजन्! उस बालकके पेटमें मैं इसी तरह कई सौ वर्ष तक घूमता रहा। परन्तु उसके शरीरका अन्त न मिला। हे पृथ्वीनाथ! मैं उसके शरीरमें घूमता और सोचता था, कि इस पुरुष-के शरीरका अन्त कहां है, परन्तु मुझे उसका अन्त न मिला। तब मैं उसी वरदेनेवाले देवताकी विधि पूर्व्वक मन और कर्म्मद्वारा शरणमें गया। हे नरनाथ! तब मैं उस महात्माके सांसके सङ्ग बाहर आपड़ा। हे पृथ्वीनाथ! उस वटकी शाखा पर सम्पूर्ण जगत्को लेकर वह बालक विराजमान था। [illegible] बाहर आकर श्रीवत्समणिसे आभूषित उस [illegible] बालकको देखा। तब उसने महा शोभायमान पीतवस्त्रधारी प्रसन्नमुखसे कहा, [illegible]मार्कण्डेय! तुम मेरे शरीरमें घूमनेसे बहुत [illegible] गये हो; हे राजन्! तब मेरी एक मुहू-[illegible] दृष्टि उत्पन्न हुई। तब मैंने [illegible] हुआ देखा। उसके तांबेके समान [illegible] कोमल उंगलियोंसे शोभायमान [illegible] चरणोंको सिर पर रख कर प्रणाम [illegible] और उस अतुल प्रतापी बालकके भावको [illegible] हाथ जोड़कर उनके [illegible] और प्रणाम करके प्र[illegible] [illegible] आपको और आपकी [illegible] चाहता हूं। मैं आपके [illegible] शरीरके भीतर चला गया था,

वहां मैंने आपके पेटमें सम्पूर्ण जगत्को देखा था। हे देव! आपके शरीरमें देवता, दानव, राक्षस, यक्ष, गन्धर्व्व, नाग आदि सब चराचर विराजमान हैं। हे देव! आपकी कृपासे मेरी स्मृति नष्ट नहीं होती है; मैं आपके शरीरसे निकलकर शीघ्रतासे बाहर आया हूं और आपको जानना चाहता हूं कि आप कौन हैं? हे कमल-नयन! आप बालक होकर और सब जगत्को पीकर इस जगह क्यों सोते हैं? आप यह सब वृत्तान्त मुझसे कहिये। हे शत्रुनाशन! किस-कारणसे सम्पूर्ण जगत आपके शरीरमें है; और कितने काल तक आप इस स्थान पर रहेंगे, मैं इन सबको जाननेके वास्ते पूछना चाहता हूं। आप विस्तारपूर्व्वक वर्णन कीजिये, जो मैंने आपके शरीरमें देखा यह बहुत विचित्र है। हे राजन् युधिष्ठिर! मेरे ऐसे वचन सुन कर वह प्रकाशमान देवोंके देव ऐसे वचन मुझे समझाते हुए बोले।

१८८ अध्याय समाप्त।

देव बोले, हे ब्राह्मण! मुझे यथार्थ रूपसे देवता लोग भी नहीं जानते हैं, किन्तु तुम्हारी प्रीतिसे मैं इस प्रलयके वृत्तान्तको सुनाता हूं, तुम पितृभक्त हो और मेरी शरण आये हो, विशेषत. तुमने ब्रह्म-चर्य्य भी बहुत किया है। हे विप्रर्षे! पुराने कर्म्म करनेवालोंने जलकी नार संज्ञा लिखी है। वह नार जिसका स्थान हो उसे नारायण कहते हैं। हे ब्राह्मण मैंही नारायण सम्पूर्ण जगतका उत्पन्न करनेवाला और नाश करनेवाला हूं, मैंही विष्णु, मैं ब्रह्मा, मैं देवताओंका स्वामी इन्द्र, मैं कुबेर और मैंही प्रेतोंका स्वामी राजा यम हूं। मैं शिव, चन्द्रमा काश्यप, और प्रजापति तथा धाता विधाता और यज्ञ हूं। मेरा मुख अग्नि, पैर पृथ्वी, सूर्य्य, चन्द्रमा नेत्र, [illegible] सिर, दिशा [illegible], [illegible] आकाश शरीर, [illegible]

है। हे ब्राह्मणोत्तम! मैंने भारी दक्षिणा वाली सैकड़ों यज्ञ की है, वेदके जाननेवाले मुझ यज्ञस्थितकी पूजा करते हैं, पृथ्वीमें क्षत्रिय राजा लोग स्वर्गकी इच्छासे मेरे लिये यज्ञ करते हैं, ऐसेही वैश्य लोग स्वर्ग जीतनेकी इच्छासे मुझे पूजते हैं। मैं चारो समुद्रों और मेरु पर्व्वतको धारण करता हूं। मैंने ही पहले वाराह रूप धारण करके जलमें डूबती हुई पृथ्वीको निकाल लाया था। हे द्विज-सत्तम! मैं ही बड़वानल होकर सम्पूर्ण जलको पी जाता हूं और फिर उगल देता हूं। ब्राह्मण मेरा मुख, क्षत्रिय भुजा, वैश्य जंघा, शूद्र चरण हैं। ऋग्वेद सामवेद, यजुर्वेद, और अथर्व्व-वेद मुझसे ही उत्पन्न होते हैं और फिर मुझ-हीमें लय हो जाते हैं। परमस्थानवाले अपने आत्माको आहुति करनेवाले और काम क्रोध, राग, द्वेषसे रहित, अहङ्कारशून्य, आध्यात्मविद्याको जाननेवाले यति ब्राह्मण मेरी ही उपासना करते हैं। मैं ही प्रलयको अग्नि प्रलयका वायु और प्रलय का सूर्य्य हूं। हे ब्राह्मणोत्तम! यह जितने प्रकाशमान तारा दीखते हैं, उन सबको मेरा रोवा समझो। रत्नखान समुद्र और चारों दिशाको मेरा ओढ़ना और बिछावन समझो। यह सब वस्तु मैंनेही देवतोंको कार्य्यसिद्धिके लिये अलग अलग रचो हैं। हे द्विजसत्तम! काम, क्रोध, लोभ, मोह, हर्ष, भय, यह सब मेरेही रोवें हैं। जिन उत्तम कर्म्मोंको करनेसे मनुष्योंको स्वर्ग मिलता है, वह सब तप, दान, सत्य और हिंसा मेरी बनाई और मेरे ही शरीरमें रहनेवाली है। मेरी इच्छासे जगत्‌के सब प्राणी चेष्टा करते है, अपने मनसे नहीं। भली भांति वेदको पढ़नेवाले शान्तआत्मा क्रोधको जीतनेवाले द्विजाति लोग जो अनेक प्रकारकी यज्ञ करते है, उन्होंको मैं प्राप्त होता हूं। बुरे कर्म्म करनेवाले, लोभी, कृपण, अपने आत्माको शत्रु मुझे नहीं पा सकते हैं। हे द्विज! जब जब धर्म्मकी हानि और अधर्म्मकी वृद्धि होती हैं, तब तब मैं अवतार लेता हूं। जब हिंसा करनेवाले देवताओंके मारनेके योग्य भयानक राक्षस उत्पन्न होते हैं, तब मैं पुण्यात्मा सुकर्म्म करनेवाले मनुष्योंके घरमें मनुष्य शरीर धारण करके उत्पन्न होता हूं। सुर असुर, गन्धर्व्व और राक्षसोंको बनाकर प्रलय-कालमें सबका नाश कर देता हूं, फिर सृष्टिके कालमें अचिन्त्यशरीर धारण करता हूं। इसमें केवल मनुष्योंके शरीरमर्य्यादा बाधनाही कारण है सतयुगमें मेरा स्वरूप श्वेत, त्रेतामें पीत द्वापरमें लाल और कलियुगमें काला रहता है उन कलिकालमें अधर्म्मके तीन भाग रहते हैं। जब अन्त काल प्राप्त होता है, तब मैं अकेला तीनों लोकोंके सम्पूर्ण चराचरको नाश कर देता हूं तीन मार्गवाला, संसारमें व्यापक, सब लोकोंको सुख देनेवाला प्रकट होता हूं। हे ब्राह्मण मैंही इस कालचक्रको चला रहा हूं, मैं सब भूतोंको शान्त करनेवालेको उद्योगमें लगानेवाला हूं। हे मुनियोंमें उत्तम! सब भूतोंमें मेरा आत्मा सम्यक प्रणिहित है, किन्तु मुझको कोई भी यथार्थ रूपसे नहीं जानता है। हे विप्रेन्द्र! मैंही सबमें व्यापक हूं, संसारमें सब भक्त मेरी पूजा करते हैं। हे द्विज! तुमने जो मेरे शरीरमें दुःख पाया, वह सब तुम्हारे वास्ते सुख और कल्याण देनेवाला होगा। जो तुम संसारमें स्थावर, जङ्गम देखते हो यह सब मेरी ही आत्मा है। मेरे शरीरका आधा भाग ब्रह्मा हैं और आधा शङ्ख चक्र, पद्म धारी मैं नारायण हूं। हे विप्रर्षि! जब तक चारो युग हजार बार बीतते हैं, तबतक मैं सब प्राणियोंको मोहित करके सोता हूं। हे मुनिसत्तम! उसी प्रलयकालमें मैं यहां सो रहा हूं। यद्यपि मैं बालक नहीं हूं, तौभी बालकरूप मैं तबतक रहूंगा ज

तक ब्रह्मा न जागें। हे ब्राह्मणोत्तम। मैं ब्रह्मरूपी हूं, मैंने तुम्हें वरदान दिया है। मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हुआ हूं। तुम जो स्थावर जङ्गमको जलमें डूबा हुआ देखकर घबराये थे, इसलिये मैंने शरीरके भीतर तुम्हें जगत् दिखलाया। जब तुम मेरे शरीरके भीतर गये थे, तब सम्पूर्ण जगतको देखकर घवड़ा गये थे और थक गये थे, इस लिये हमने शीघ्रतासे तुमको बाहर निकाल दिया। मैंने अपने उस स्वरूपको तुमसे वर्णन किया जिसे देवता और असुर नहीं जान सकते हैं। हे विप्रर्षे। जब तक ब्रह्मा न जागें, तब तक सुखपूर्व्वक तुम यहीं विश्राम करो। जब सब लोकोंके पितामह ब्रह्मा जागेंगे तब फिर मैं सृष्टिका आरम्भ करूंगा। आकाश पृथ्वी ज्योति, वायु और जल जो कुछ लोकमें चाहिये सबको मैं बनाऊंगा। मार्कण्डेय मुनि बोले, हे प्यारे। वह अद्भुत देव ऐसा कहकर अन्तर्द्धान होगये। मैंने वहां पर और अनेक प्रकारकी सृष्टि देखी। हे राजन्। उस प्रलयमें मैंने बहुत आश्चर्य देखा। हे सब धर्म्म कर्म्म करनेवालोंमें श्रेष्ठ। जिस कमलनेत्र देवताको उस समय देखा था, ये वही जनार्द्दन तुम्हारे सम्बन्धी हैं, इन्हींके वरदानसे मेरी स्मृति नष्ट नहीं होती है। हे कुन्तीनन्दन। इन्हींकी कृपासे मरना मेरे आधीन है और मेरी आयु बड़ी हुई। यह वही वृष्णिवंशी पुराण-पुरुष व्यापक [illegible] महाभुज क्रीड़ा करनेवाले [illegible]। यही धाता विधाता जगत्के धारण करनेवाले गोविन्द प्रजापति और प्रभु हैं। [illegible] देखकर मुझे स्मरण आगया, कि यही [illegible] व्यापक आदि देवपति वस्त्रधारी [illegible], यही सब प्राणियोंके माता पिता [illegible] हैं। हे कुरुश्रेष्ठ! तुम इन्हीं [illegible] शरणमें जाओ।

[illegible] मुनि बोले, हे राजन्! [illegible] मार्कण्डेयके ऐसे वचन सुनकर इनको नमस्कार करने लगे, कृष्णने भी पुरुषसिंह पाण्डवोंको शान्त किया

मार्कण्डेय नारायण सम्वाद और
१८९ अध्याय समाप्त।

कलियुग विवरण।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्। कुन्ती पुत्र युधिष्ठिरने महामुनि मार्कण्डेयसे जगत्की होनेवाली गति और अपने कर्त्तव्यको फिर पूछा। राजा युधिष्ठिर बोले, हे भार्गव! हे महामुने। तुम्हारा वृत्तान्त बहुत आश्चर्य्यका देनेवाला है, इस कलियुगमें धर्म्म नाश होने पर क्या होगा? मनुष्य कैसे पराक्रमी कैसे आहार विहारवाले, कितनी अवस्थावाले और कैसे वस्त्रवाले होंगे। युगके नाशमें मनुष्य कैसे होंगे तथा कौनसी अवधिको पाकर फिर सतयुग आवेगा? हे मुनि। विस्तारपूर्व्वक आप मुझसे कहिये. यह मुझे बहुत आश्चर्य मालूम देता है। इस प्रकारसे मुनिश्रेष्ठ मार्कण्डेय युधिष्ठिरके वचन सुन करके वृष्णिवंशी कृष्ण और पाण्डवोंसे कहने लगे।

मार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! प्रथम जो मैंने देखा, सुना तथा अनुभव किया है, और हे राजेन्द्र। देवादि देव विष्णुकी कृपासे संसारका भविष्यत वृत्तान्त जैसा मैं जानता हूं, उसके अनुसार कलियुगका वृत्तान्त कहता हूं सुनो। सतयुगके मनुष्योंमें कपटरहित धर्म्म वृषके चारों पैरोंसे वर्त्तमान था। हे भरतर्षभ। त्रेतायुगमें धर्म्मके तीन भाग थे और एक भाग अधर्म्मसे नष्ट हो गया था, द्वापरमें आधे धर्म्मको अधर्म्मने नष्ट कर दिया, हे भरतसत्तम। कलि युगकी सन्धिमें धर्म्मके तीन भाग नष्ट होगये और कलियुगमें चौथा भाग धर्म्मका मनुष्योंमें रहता है। [illegible]। आयु, पराक्रम, बुद्धि, बल [illegible] युग युगमें कम होता जाता है; हे युधिष्ठिर [illegible]

कपटसे धर्म्म करते हैं, सबही धर्म्मको बेचनेवाले होते हैं। पण्डित मानी वही सत्यको घटा देते हैं, और सत्यकी हानिसे मनुष्योंकी अवस्था थोड़ी होती है। आयुके क्षीण होनेसे आजीविका नहीं करसक्ते हैं। कलियुगके मनुष्य विद्या-हीन, विज्ञानरहित और लोभी होते हैं। काम और क्रोधसे पूरित वैरसे भरे हुए एक दूसरेको मारनेकी इच्छा करनेवाले ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्रोंके समान तप सत्यसे रहित हो जायंगे। नीच उत्तम और उत्तम नीच हो जायंगे। हे राजन्। युगके अन्तमें सब लोग ऐसे ही जायंगे। वस्त्र सनके बनने लगेंगे और धान्य कोरदूषक श्रेष्ठ होंगे; पुरुष केवल अपनी स्त्री हीको प्यार करेंगे। मछलीका व्यवहार करके जीयेंगे। बकरी तथा भेड़ीको दुहेंगे, गौ नष्ट हो जायंगी। जो व्रतको धारण करनेवाले है, वेभी लोभी हो जायंगे, आपसमें एक दूसरेको चोरी करेंगे। मारामारी करेंगे, जप नहीं करेंगे, नास्तिक हो जायंगे, चोर हो जायंगे नदियोंके किनारेपर औषधियोंको बोवेंगे और वेभी थोड़ी फलवाली होंगी। जो व्रतधारी ब्राह्मण हैं, वेभी लोभके वश होकर पितरोंके श्राद्धमें भोजन करेंगे। पितापुत्रका अन्न भोजन करनेवाले और पुत्र पिताका अन्नके भोजन करनेवाले होंगे। भोजनका व्यवहार बहुत उलट पुलट हो जायगा, ब्राह्मण लोग व्रत नही करेंगे वेदकी निन्दा करेंगे। कुतर्कोंसे मोहित होकर यज्ञ होम कुछ नहीं करेंगे, किसान लोग नीची भूमिमें खेती करेंगे। हलमें गौको जोड़ेंगे, एक वर्षके बछड़ेको जोतेंगे। हे राजन्! पिता पुत्रको और पुत्र पिताको मार कर निन्दित नहीं होंगे, सम्पूर्ण पृथ्वी म्लेच्छोंसे भर जायगी, सब क्रिया और यज्ञसे रहित हो जायंगे, सब लोग आनन्दसे और उत्सवसे रहित हो जायगे। प्राय. मनुष्य कृपण होंगे, भाई और विधवाओंसे धन हरेंगे; थोड़े वीर्य्य और बलवाले कर्कश, लोभ मोहसे भरे अपनी प्रशंसासे प्रसन्न होनेवाले मनुष्य होंगे, कपट व्यवहारसे पूरित, जूआ खेलनेवाले और पापी राजा होंगे। हे कुन्ती-पुत्र। परस्पर बैरवाले, पण्डित मानी और लोककण्टक क्षत्री कलियुगमें होते हैं; प्रजाकी रक्षासे हीन लोभी अहंकारी पाखण्डी केवल दण्ड देनेवाले क्षत्री होते हैं। हे भारत। साधु लोगोंको दबा कर उनके धन और स्त्रीको दुष्ट लोग हरते हैं। न कोई कन्यादान मांगता है और न कोई कन्या दान देता है। युगके अन्तमें आपही सब परस्पर विवाह करते हैं। राजा लोग असन्तोषी सब उपायोंसे पराये धनको छीननेवाले, युगके अन्तमें होते है। हे राजन्! युगके अन्तमें सब जगत् म्लेच्छ हो जायगा, एक हाथ दूसरे हाथकी वस्तुको चोरावेगा। सब लोग सत्यको छिपावेंगे, सब लोग अपनेको पण्डित मानेंगे, बालकोंकी बुद्धि बूढ़ोंकीसी और बूढ़ोंकी बालक कीसी होजायगी। जब युगका अन्त आवेगा, तब डरपोक लोग अपनेको वीर कहेंगे और वीर लोग डरपोक होकर बैठेंगे। एक दूसरेको विश्वास नहीं करेगा, सम्पूर्ण जगत् लोभ और मोहसे भर जायगा, अधर्म्मकी वृद्धि और धर्म्मका नाश हो जायगा। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य कोईभी श्रेष्ठ नहीं रहेगा, सब शूद्र हो जायंगे। युगके अन्तमें नामको केवल शूद्र वर्ण रह जायगा। पुत्र पिताको और पिता पुत्रको नाश करेंगे, स्त्री पतिकी सेवा नहीं करेंगी, जौ गेहूं, आदि अन्न उत्पन्न होंगे वह देशान्तरको चले जायंगे। हे राजन्! युगके अन्तमें स्त्री और पुरुष सब इच्छाचारी हो जायगे, कोई भी एक दूसरेकी बातको नहीं सुनेगा। हे युधिष्ठिर! सब जगत् म्लेच्छ हो जायगा। कोई मनुष्य देवतोंको पूजा श्रद्धासे नहीं करेगा, हे नरनाथ! कोई न किसीका गुरु होगा न किसीका चेला होगा, सब जगत् अन्धकारमय

हा जायगा। युगके अन्तमें मनुष्यकी परम आयु सोलह वर्षकी होजायगी। तब युगके अन्तमें सब प्राणी नष्ट हो जायंगे, पाचवें या छठें वर्षमें कन्याके पुत्र होगा। सातवें वर्षके मनुष्य पुत्र उपजावेंगे। हे राजन्! युगके अन्तमें पति स्त्रीसे और स्त्री पतिसे सन्तोष न पावेंगे। हे राजन्! युगके अन्तमें थोड़े धनवाले मनुष्य होंगे, वृथा दन्द्रियवाले और न कोई किसीका दानी होगा। देश दूकानोंसे भर जायगे। चौराहे शिवालयोंसे भर जायंगे और स्त्रियोंके शरीर पर रोम भर जायंगे, सब लोग स्वेच्छाचारी हो जायेंगे, सब भक्ष्य खायेंगे, सब कठोर कर्म्म करनेवाले हो जायेंगे। हे राजन्! इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। हे भरतश्रेष्ठ! वे देने और लेनेके समय सब सबको ठगेंगे, हे राजन्! युगका अन्त आनेपर ज्ञानकी विना जाने लोग आपही सब क्रिया करेंगे। अपनी रुचिके अनुसार वरतेंगे, स्वभावहीसे सब लोग क्रूरकर्म करेंगे, तौभी परस्पर सब आपसमें प्रणाम करेंगे। हे राजन्! कलियुगके मनुष्य बाग और वृक्षोंको वृथाही नष्ट करेंगे, हे राजन्! सबको अपने जीनेकी शंका रहेगी, सब लोग लोभसे भरे ब्राह्मणोंको मारेंगे और उनके धनसे भोग करेंगे। ब्राह्मण लोग शूद्रोंके डरसे हाहाकार मचावेंगे, कोई जगतमें उनको रक्षा [illegible] न होगा। वे इधर उधर मारे [illegible] हे राजन्! सब जीवोंके नाश करनेवाले भयानक प्राणियोंके हिंसक मनुष्य होंगे, तब [illegible] होगा। हे कुरुकुलनाथ! द्विज-[illegible] नदी और दुर्गम पहाड़ोंपर भयके मारे [illegible]। [illegible] हे! राजदण्डसे पीड़ित [illegible] देंगे दबड़ावेंगे जैसे दस्युयोंसे [illegible]। [illegible] राजोंकी प्रजा करभारसे [illegible] हे महीपाल! युगके [illegible] जर वेदको त्यागकर [illegible] धर्म्म उपदेश करेंगे और

ब्राह्मण उनके श्रोता तथा उपासक होंगे। यह सब लोक विपरीत हो जायंगे, हड्डियोंकी बनी हुई कुटियोंकी लोग पूजा करेंगे और देवतोंको त्याग देंगे, शूद्र लोग ब्राह्मणोंकी सेवा न करेंगे। ऋषियोंके आश्रममें, ब्राह्मण और देवतोंके स्थानमें, अटारियोंमें, नागोंके स्थानोंमें हड्डियें भर जायंगी, देवभाव जाता रहेगा, हे राजन्! युगके अन्तमें यह लक्षण होंगे। पृथ्वी भयानक मालूम होने लगेगी, सब लोग मांस खाने और मदिरा पीने लगेंगे। अकालमें मेघ वर्षेंगे, मनुष्योंकी क्रियाका समय न रहेगा, शूद्र ब्राह्मणोंसे वैर करेंगे, पृथ्वी म्लेच्छोंसे भर जायगी, ब्राह्मण लोग कर भारसे पीड़ित होकर इधर उधर भाग जायंगे, सब देश एकसे हो जायंगे। नशोंसे व्याकुल रहेंगे, आश्रमोंको कोई पावेगा नहीं, सब लोग फल मूल खाकर जीयेंगे। हे राजन्! जब ऐसे मर्य्यादा-रहित लोग हो जायंगे, तब युगका अन्त समझना। शिष्य गुरुका उपदेश नहीं सुनेंगे, गुरुका अप्रिय कार्य्य करेंगे, आचार्य्योंको दरिद्र लोग निन्दा करेंगे, सोभी धर्म्मके वास्ते नहीं धन लेनेके वास्ते। युगके अन्तमें सब प्राणियोंका अभाव हो जायगा, दिशा जलने लगेंगी, तारे छिप जायंगे, प्रकाशित चीज उलटी हो जायंगी, वायु भयानक उलटा चलने लगेगा, अनेक उल्कापात भयको बढ़ाने वाले हुआ करेंगे; ६ और सूर्य्योंके सहित यह सूर्य्य प्रकाशित होंगे. भयानक शब्द होंगे [illegible] जलने लगेंगी, राहुसे सूर्य्य छिपेगा। भगवान् इन्द्र अकाल वर्षा करेंगे, खेतमें [illegible] उत्पन्न नहीं होगा, स्त्री अपने पतियोंको कटु [illegible] कहेंगी गाली देंगी. पतियोंके [illegible] न मानेंगी. पुत्र माता पिताओंको मारेंगे, [illegible] पतिको मारेंगी, [illegible]
हे महाराज! [illegible]
[illegible] करना। [illegible]
मार्ग [illegible]

ठहरनेको स्थान मिलेगा. वह रात्रिको मार्गमें विश्राम करेंगे, कौव्वे। नाग, पक्षी, मृग भयानक और रूखे शब्द करेंगे। मित्र और सम्बन्धियोंको मनुष्य छोड़ देंगे, जन्मभूमि और देशको त्याग देंगे, और नगरोंमें जा बसेंगे। हा पुत्र हा प्यारे! ऐसे एक दूसरेके लिये रोते हुए मनुष्य पृथ्वी पर मरेंगे। युगनाशकी ऐसी भयानक अवस्थामें क्रमसे ब्राह्मण लोग नष्ट हो जायंगे,। कुछ कालके पश्चात् दैवकी कृपासे फिर संसारकी वृद्धि होगी। जब सूर्य्य, चन्द्रमा और वृहस्पति पुष्य नक्षत्रमें आवेंगे, तब फिर सतयुग होगा। उस समयमें प्रारम्भ मेघ समय पर वर्षेंगे, नक्षत्र प्रकाशित होंगे, सब ग्रह आकाशमें अपनी शुद्ध गतिसे चलेंगे, रोग जाता रहेगा सुकाल होगा। हे राजन्! उस समयमें कल्कि विष्णुयश नामक ब्राह्मण उत्पन्न होगा, वह महाबली, पराक्रमी, महा बुद्धिमान, होगा। सम्भल गावके एक ब्राह्मणके घरमें उत्पन्न होगा, उसे शस्त्र और वाहन आपसे आप प्राप्त होगा; उसके पास बडे बड़े योधा अस्त्र शस्त्र लिये आपही आजायंगे, वह धर्म्मसे जगत्को जीत कर एक चक्रवर्त्ती राजा होगा वह इस व्याकुल हुए जगत्को प्रसन्न करेगा, वह तेजस्वी उदारबुद्धि ब्राह्मण जगतकी रक्षा करेगा, वह कलियुगका अन्त करेगा और सब छोटे छोटे म्लेच्छोंको ब्राह्मणोंके सहित नाश करेगा।

कलियुग विवरण और

१६० अध्याय समाप्त।

मार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! इस तरहसे दस्युओंका नाश करके अश्वमेध यज्ञ करके वह सम्पूर्ण पृथ्वीको ब्राह्मणोंको दान कर देगा. पवित्र मर्य्यादाको स्थापित करके वह आप रमणीय वनको चला जायगा, संसारके मनुष्य उसीके उपदेशके अनुसार सुकर्म्म करेंगे ब्राह्मणोंके उपदेशानुसार सत्यमें फिर कल्याण होगा। काला मृगचर्म्म ब्रह्मचारी ओढ़ेंगे, त्रिशूल आदि शस्त्र क्षत्री लोग धारण करेंगे। वह ब्राह्मणश्रेष्ठ कल्कि अपने जीते हुए देशमें धर्म्मको स्थापन करके ब्राह्मणोंसे प्रशंसा पाकर ब्राह्मणोंको सम्मान करके पृथ्वी परसे शत्रुओंका नाश करके विचरेगा। डाकू लोग हाय मा, हाय बाप, हाय प्यारे ऐसा भयानक शब्द करके कल्किके हाथसे मारे जायंगे, तब हे भारत। अधर्म्मका नाश और धर्म्मकी बृद्धि होगी उस सतयुगमें सब मनुष्य क्रियावान होंगे। बाग, तलाव, पोखर, देवतोंके स्थान, यज्ञ और क्रिया आनन्द पूर्व्वक सतयुगमें सब लोग करेंगे। ब्राह्मण साधु, मुनि तपस्वी, सत्य बोलनेवाले, प्रजाके लोग होंगे। पृथ्वीमें बोये हुए बीज अच्छे फल देंगे, सब ऋतुओंमें खेती उत्तम होगी। सब मनुष्य दान, तपस्या, व्रतमें लगे रहेंगे, ब्राह्मण लोग जप, यज्ञ और धर्म्म कामोंमें चित्त लगाये रहेंगे, वैश्य लोग व्यापार करेंगे। हे राजन्! ब्राह्मण छः कर्म्मोंके करनेवाले, क्षत्रिय बलवान, शूद्र तीनो वर्णोंकी सेवा करनेवाले होते हैं। यह धर्म्म सतयुग त्रेता, द्वापरमें रहते हैं। कलियुगका धर्म्म पहिलेही कह चुका हूं। हे पाण्डव! सब युगोंकी संख्या तुमको मालूम होगयी। यह मैंने तुमसे इसके भूत और भविष्यत सब कहा, इस तरहसे मैंने संसारको गति दीर्घ आयु होनेके कारण आपही देखी और भोगी है, उसीके अनुसार तुमसे वर्णन की। हे अक्षय धार्म्मिक वर। धर्म्म सन्देह मिटानेके वास्ते भाइयोंके सहित मेरे वचनको सुनो। हे धर्म्म करनेवालोंमें श्रेष्ठ युधिष्ठिर! तुमको अपना चित्त धर्म्महीमें लगाना चाहिये; क्योंकि धर्म्मात्मा इस लोक और परलोकमें सुखी रहते हैं। हे पापरहित! मैं तुमसे कल्याणकारी वचन कहता हूं उनको, सभी ब्राह्मणका कभी अपमान तुम मत करना। ब्राह्मण क्रोध करने

पर प्रतिज्ञा पूर्व्वक संसारका नाश कर सकता है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, पुरुषश्रेष्ठ बुद्धिमान तेजस्वी महाराज युधिष्ठिर मार्कण्डेयका वचन सुनकर बोले, हे मुनि! इस प्रजाकी रक्षा करनेके लिये कौनसे धर्म्मको करें, वह कौनसा कर्म्म है, जिसमें मेरा धर्म्म नष्ट नहो? मार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! तुम कृपावान सब प्राणियोंके हिताभिलाषी निन्दा रहित, सत्यवादी, मीठे शिक्षायुक्त प्रजाकी रक्षामें तत्पर रहकर धर्म्म करो, अधर्म्मोंको त्यागो, देवता और पितरोंकी पूजा करो; जो कुछ कि तुमने प्रमादसे पाप किया हो उन्हें दानसे जीतो, अभिमान करना बृथा है, सदा शीलयुक्त रहो, सम्पूर्ण पृथ्वीको जीतकर आनन्दसे भोगो, यह मैंने तुमसे भूत और भविष्यत धर्म्म कहा। हे प्यारे! पृथ्वीमें तुमसे कोई भूत और भविष्यत छिपा नहीं है, इस लिये अपने हृदयमें क्लेशको धारण मत करो। हे तात! बुद्धिमान लोग दुःखी होकर भी मोहको प्राप्त नहीं होते। हे महाभुज! यह सब देवतोंका समय है, इसमें सब प्रजा कालकी प्रेरणासे मोहित होती है, तुम मेरे कहे धर्म्मोंमें शंका मत करना। मेरे वचन शंकारहित हैं, मेरे वचनोंमें शंका करनेसे तुम्हारा धर्म्म लोप होगा। हे भरतर्षभ! तुम उत्तम कालमें उत्पन्न हुए हो, इस लिये मनसे कर्म्म वचनसे मेरे कहे कार्मोंको करो।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! जो आपने कानोंको सुख देनेवाले उत्तम वचन कहे, आपकी इस आज्ञाको ऐसेही करूंगा, हे [illegible]! मुझे लोभ, भय और मत्सर नहीं है।

[illegible]म्पायन मुनि बोले, बुद्धिमान मार्क-[illegible] वचन सुनकर हर्षित और [illegible] बहुत प्रसन्न हुए [illegible]

समान शोभावाले जो लोग वहां आये थे, बुद्धिमान मार्कण्डेयकी उत्तम और पुरानी कथा सुनकर सब विस्मित हुए।

१९१ अध्याय समाप्त।

महाराज जन्मेजय बोले, हे ब्रह्मन्! आप फिर ब्राह्मणोंके माहात्म्य वर्णन करिये। जो कि महातपस्वी मार्कण्डेय मुनिने पाण्डवोंके निकट वर्णन किया था।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! मार्कण्डेय मुनिसे पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर फिर ऐसा बोले, कि आप और कुछ ब्राह्मणमाहात्म्य वर्णन कीजिये। मार्कण्डेय बोले, ब्राह्मणोंके चरित सुनो। इक्ष्वाकुकुलमें उत्पन्न हुए अयोध्याके राजा परीक्षित एक समय शिकार खेलने गये। वह अकेले घोड़े पर चढे हुए एक हरिणके पीछे दूरको चले गये। चलते चलते मार्गमें राजाको बहुत प्यास लगी और थकाई भी आगयी; राजाने बहुत सघन वनका टुकड़ा देखा। राजा उस वनके टुकड़ेके बीचसे चले गये, वहां पर उन्होंने एक बड़ा मनोहर तालाव देखा और घोड़ेके सहित उसमें नहाके तब राजा स्वस्थ होकर कमलोंकी डंटी (नाल) घोड़ेके आगे डालकर पोखरके किनारे बैठ गये। तब राजाने सोनेके समय मीठे स्वरके गीत सुन गीतोंको सुनकर राजा सोचने लगे कि यहां मनुष्य नहीं, पर गीत किसका है। इसके पश्चात् राजाने एक परम मनोहर रूपवाली कन्याको फूल बीनते हुए देखा, वह कन्या राजाके समीप आई. राजाने उस कन्यासे पूछा, कि तुम कौन और किसकी कन्या हो? वह बोली, मैं कन्या हूं। राजा बोले, मैं तुमको लेना चाहता हूं। तब कन्याने कहा, तुम इस समय एक प्रतिज्ञा करके मुझे ले सकते हो, मैं यह सच कहती हूं। राजाने पूछा, कौनसे समय तक प्रतिज्ञापूर्व्वक

ले सकता हूं? कन्याने कहा, जबतक मुझे जल न दीखे। राजाने कहा ठीक है। राजाने उससे विवाह करके परम आनन्दके साथ मौनी होकर उससे क्रीड़ा की। राजाके वहीं बैठे बैठे सेना आगई। कन्या राजा और सेनाको छोड़ अलग बैठ गई; तब राजाने उसे समझाकर और सम्मान करके पालकीमें चढ़ाया और अपने नगरमें लाके एकान्तमें क्रीड़ा करने लगे। राजा उसकी क्रीड़ामें ऐसे मग्न हुए, कि किसीको उनके दर्शनभी न होतेथे। एक दिन प्रधान-मन्त्रीने उनके समीपचारिणी स्त्रियोंसे पूछा कि क्या करना चाहिये? स्त्रियोंने कहा कि मैं अद्भुत लीला देखती हूं, कि राजाके क्रीड़ास्थानसें जल नहीं जाता। राजा एक अपूर्व्व स्त्री लाये हैं, उसने उनसे कहा है कि, मुझे जल न दिखाना। राजा उसकी बात स्वीकार करके उसके सङ्ग क्रीड़ा करते हैं। तब प्रधान-मन्त्रीने एक बाग ऐसा बनवाया जिसमें पुष्प और फूलोंसे भरे वृक्ष थे किन्तु जल नहीं था। माधवीलताकुञ्ज-जालके बीचमें एक अमृतके समान जलसे भरी हुई बावड़ी बनाई थी। तब एकान्तमें जाकर राजमन्त्रीने कहा महाराज। एक विचित्रबन जलरहित बना है, आप उसमें चलके विहार कीजिये। राजा मन्त्रीके वचनसे उस स्त्रीके सहित उस बनमें गये। एक दिन राजाको विहार करते करते प्यास लगी और बहुत थक गये, तब राजाने उस माधवीलताकुञ्जको देखा। तब राजा उस स्त्रीके सहित उस घरमें गये और स्वच्छ जलसे भरी उस बावड़ीको देखा और उसके किनारे पर रानीके सहित बैठ गये, रानीको कहने लगे देखो, यह क्या सुन्दर जल है, इसमें तुम स्नान करो। रानी राजाके वचन सुनके उस जलमें धसी और फिर न निकली। राजाने उस बावड़ीका सब जल निकलवा कर उसे बहुत ढूंढा पर वह कहीं न मिली, किन्तु उस बावड़ीके एक गढ़ेमें एक मेढ़कका शब्द सुना। मेढ़कको देखकर राजाने आज्ञा दी कि सब मेढ़कोंको मार डालो। जो कोई मेढ़कको मार लावेगा उस राज्यसे धन मिलेगा। जब मेढ़कोंका भयानक वध आरम्भ हुआ, तो मेढ़क भयके मारे दशों दिशाको भागने लगे और मेढ़कराजसे जाकरके अपने दुःखको कहा। मेढ़कराजने तपस्वीका रूप धारण करके राजाके पास जाकर कहा, हे राजन्। क्रोधके वशमें न हो, कृपा करो, निरपराधी मेढ़कोंको मत मारो। यहां पर पुराणकी दोश्लोक हैं। हे राजन्! तुम क्रोधको छोड़ो मेढ़कोंको न मारो, अविवेकीपुरुषका धन नष्ट हो जाता है, मेढ़कोंके मारनेसे तुम्हारी स्त्रीका शोक दूर नहीं होगा। इस अधर्म्म करनेसे तुम्हारा कोई हित नहीं होगा। ऐसे शोकसे भरे हुए वचन राजाने सुनकर कहा, हे विद्वन्! इन दुष्टोंने मेरी स्त्रीको खा लिया है, इस लिये मैं इनपर क्षमा नहीं कर सकता हूं, मेढ़क मेरे मारनेके योग्य हैं, आप न रोकिये। राजाके वचन सुनके मेढ़कराज बहुत व्याकुल हुआ और कहने लगा। महाराज। कृपा कीजिये, मैं आयु नामक मेढ़कोंका राजा हूं वह मेरी शोभना नामक कन्या थी, यह उसीकी दुष्टता है, इसी तरह उसने अनेक राजोंको ठगा है। राजाने मेढ़कराजसे कहा, कि उस कन्याको तुम मुझे देदो। मेढ़कराजने कन्यादान राजाको दे दिया और कन्यासे कहा, कि तुम इस राजाकी सेवा करो, ऐसा कहकर अपनी कन्याको मेढ़क-राजने शाप दिया, कि जिस कारणसे तैने बहुत राजाको ठगा है, इसलिये तेरे प्रसादसे तेरी सन्तान ब्राह्मणभक्त न हो। राजा परीक्षित उस स्त्रीको पाकर ऐसा आनन्दित हुआ, मानो तीनलोकका राज्य उसे मिला, आनन्दकी आंसू आंखोंमें भरकर मेढ़कराजसे बोला, कि आपने मुझे कृतार्थ किया। मेढ़कराजभी अपनी कन्याको

उपदेश देकर चले गये। कुछ कालके पीछे उस राजाको उसी कन्यासे तीन पुत्र उत्पन्न हुए, एकका नाम शल, दूसरेका दल, तीसरेका बल उनमेंसे बड़े शलको राजा राज्य देकर तपस्या करनेकी इच्छासे वनको चले गये। एक समय राजा शल रथमें बैठकर शिकार खेलनेको गया, दौड़ते हुए मृगको देखकर राजाने सारथीको कहा कि शीघ्र मेरे रथको इसके पीछे ले चलो। सारथी बोला, हे राजन्! तुम इस मृगको नहीं पकड़ सकते हो; यदि तुम्हारे रथमें वामी घोड़े जुते होतेतो आप पकड़ सकते तब राजाने सूतसे कहा, कि बतला वामी घोड़े कहां हैं? नहीं तो मैं तुम्हें और खच्चरोंको मारडालूगा, राजाके ऐसे वचन सुनके सूत डरा और वामदेव ऋषिके शापसे डर कर कुछ न बोला। तब राजाने खड्ग उठाकर सूतसे कहा, कि जल्दी बतला नहीं तो मैं तुझको मारता हूं। तब सूत बहुत डर कर बोले, हे महाराज! वामदेव ऋषि के घोड़े, मनके समान चलनेवाले हैं। ऐसा सुनकर राजाने सूतसे कहा. वामदेव मुनिके आश्रम पर चल, ऋषिके आश्रमपर जाकर राजा ऋषिसे बोले, हे भगवन्! मेरे बाणसे बिधा हुआ मृग भागा जाता है. आप मुझे घोड़े दीजिये. ऋषिने कहा अच्छा देता हूं, परन्तु अपना काम करके शीघ्र मुझे लौटा देना। राजा ऋषिसे घोड़े लेके ऋषिके आज्ञा-नुसार उनको रथमें जोड़ कर मृगको मारने [illegible], चलते चलते राजाने सूतसे कहा कि यह [illegible] रत्नके समान हैं इस लिये ब्राह्मणके [illegible] रखने योग्य नहीं हैं, वामदेवको यह [illegible] नहीं देना चाहिये, ऐसा कह कर [illegible] मृग [illegible] लिया और अपने नगरको [illegible] और घोड़े [illegible] रख लिया। तब [illegible] कि राजा [illegible] गया है। अपने [illegible] मेरे घोड़ोंको लेकर [illegible] है। [illegible] महीना पूरा होनेके

पश्चात् अपने शिष्यको वामदेवने राजाके पास भेजा, वामदेवने कहा, हे आत्रेय! राजासे जाकर कहना, कि तुम्हारा कार्य्य सिद्ध हो गया, अब घोड़े देद। आत्रेयने राजासे जाकर ऐसाही कहा। राजाने आत्रेयको उत्तर दिया, कि यह रत्नके समान घोड़े राजाके योग्य हैं, ब्राह्मणोंको घोड़ोंसे क्या काम, आप जाइये। आत्रेयने आकर वामदेवसे राजाके वचन कह दिये। राजाकी अप्रिय बातोंको सुनकर वाम-देवको बड़ा क्रोध हुआ और आपही राजाके पास जाकर घोड़े मांगे, पर राजाने न दिये। वामदेव बोले, हे राजन्! तुमने इन घोड़ोंसे अपना काम पूरा कर लिया, अब मुझे देदो, ब्राह्मण और क्षत्रियोंमें बहुत भेद है। वरुण तुमको अपने फांसीसे गलेमें न बांधे वैसा करो। राजा बोले, हे महर्षे वामदेव! ये बहुत सीधे और स्वरूपवान दोबैल ब्राह्मणोंकी सवारीके योग्य हैं, इन्हे तुम लेकर जहां इच्छा हो जाओ, ब्राह्मणको व्रत वेदाध्ययन है। वाम-देव बोले, हे राजन्! वेदही हमारे मुख्य हैं, तौभी इस लोकमें यह मेरी सवारी हैं. इस लिये मुझे देदो। राजा बोले, हे वामदेव! मैं तुम्हे चार गधे देता हूं, उन पर चढकर जहां चाहो वहा जाओ, अथवा यह वायुके समान चालवाली खच्चरी लेलो, परन्तु यह दोनों वामी घोड़े क्षत्रियोंके योग्य हैं, इस लिये मेरे समझो। वामदेव बोले हे राजन्! यह ब्राह्मणोंकी घोर प्रतिज्ञा है, कि अपराधी क्षत्रियोंको जीने नहीं देते। इस लिये चार भयानक राक्षसोंको मैं आज्ञा देता हूं, कि वे तुम्हें त्रिशूल धारण करके मारडालेंगे। राजा बोले, हे वामदेव! जो तुम्हें ब्राह्मण जानते हैं, [illegible] वचनसे कभी नहीं मारते, अब मेरी आज्ञासे [illegible] वीर शिष्य सहित तुम्हें मारडालेंगे। वामदेव बोले हे राजन्! यह घोड़े मेरे हैं, [illegible] फिर दे दूंगा' [illegible]

पर तुम जो जोना चाहते हो तो मेरे घोड़े मुझे देदो। राजा बोले हे द्विज। ब्राह्मणोंको शिखार खेलना नहीं होता, मैं असत्य वादीको दण्ड दूंगा और इससे मैं उत्तम लोक को प्राप्त होऊंगा। वामदेव बोले, हे राजन! ब्राह्मणोंको मन और वचन सेभी दण्ड नहीं दिया जाता। जो श्रेष्ठ विद्वान है, वही इस लोकमें जीते हैं।

श्री मार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन! वामदेवके ऐसे बोलतेही घोररूपी राक्षस हाथमे त्रिशूल लिये आकर राजाको मारने लगे। तब राजाने कहा, कि चाहे इक्ष्वाकु वंशका नाश हो जाय, चाहे दल मारा जाय, तौभी वामदेवके घोड़े नहीं दूंगा। ऐसे कहतेही कहते राक्षसोंने राजाको मार डाला। इक्ष्वाकुवंशियोंने राजा शलको मरा हुआ देख, उसके छोटे भाई दलको राज्यतिलक दिया, तब वामदेवने राज्यमें आकर कहा, कि ब्राह्मणोंका धन देदो, क्योंकि यह सब धर्म्मोंमे लिखा है, कि ब्राह्मणोंका धन कभी नहीं रखना चाहिये, हे राजेन्द्र। यदि तुम अधर्म्मसे डरते होत, मेरे घोड़े जलदी दे दो। वामदेवके वचन सुनके राजा दलन क्रोध करके सूतसे कहा, कि मेरा विषसे भरा हुआ बाण लेआ जिससे, विंधकर वामदेव दुःखी होकर पृथ्वीमें गिर जाय। वामदेव बोले, हे राजन्! मैं जानता हूं कि तुमका दश वर्षका पुत्र है, वह तेरी पटरानीसे उत्पन्न हुआ है, श्येनजित जिसका नाम है, मेरे घोर वचनसे प्रेरित [illegible] घोर बाणोंसे अपने प्यारे पुत्रको मार।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, वामदेवके ऐसे वचन सुनकर राजाने उस बाणको छोड़ा और उस बाणने रणवासमें जाकर उसके राजपुत्रको मारडाला। तब वह बहुत क्रोध करके बोला हे इक्ष्वाकुवंशिय राजगण! मै तुम्हारे कल्याणके लिये अभी इस ब्राह्मणको मार डालता हूं, मेरा महातेजस्वी दूसरा बाण लाओ और मेरे पराक्रमको देखो। वामदेव बोले जो इस विषसे बुझे बाणको मेरे ऊपर चलाना चाहता है, इस लिये तू इस बाणको मेरे ऊपर नहीं चला सकेगा। राजा बोले, हे इक्ष्वाकु वंशियो! तुम मुझे देखो कि मैं बाण नहीं चला सकता हूं, अब यह ब्राह्मण वामदेव दीर्घआयुहो और जीता रहे। वामदेव बोले, हे राजेन्द्र! तू इस बाणसे अपनी स्त्रीको स्पर्शकर, तब तेरा कल्याण होगा। राजाने वैसाही किया, तब राजाकी पटरानी मुनिसे बोली कि हे वामदेव! मै प्रतिदिन इस निर्लज्ज पतिको अच्छा उपदेश करती रहती थी। ब्राह्मणोंकी सेवाके बातें कहती रहती थी, इस कारणसे मुझे उत्तम लोक प्राप्त हो। वामदेव बोले, हे सुलोचने! तूने दोनो राजकुलको पवित्र किया, जो तेरी इच्छा हो सो वर मांग, मैं तुझे दूंगा। हे राजपुत्री! तू अपने कुलके मनुष्योंको और इक्ष्वाकुकुलके राज्यकी रक्षा कर। रानी बोली, हे भगवन! मैं यही वर मांगती हूं कि मेरा पति पापसे छूट जाय। राजाका पुत्र और भाइयोंके सहित कल्याण हो। हे ब्राह्मणोत्तम! मैं यही वर मागती हूं।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, रानीके ऐसे वचन सुनके वामदेवने कहा ऐसेही हो। राजा दलभी वामदेवका वचन सुनकर प्रसन्न हुआ और वामीघोड़े देकर वामदेवको प्रणाम किया।

ब्राह्मण माहात्म्य और
१९२ अध्याय समाप्त।

बक इन्द्र सम्वाद।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! युधिष्ठिर ब्राह्मण और ऋषि लोग, फिर मार्कण्डेय मुनिसे पूछने लगे कि हे महामुनि! बकको दीर्घ अवस्था क्यों हुई?

श्रीमार्कण्डेय मुनि उन लोगोंसे कहने लगे, कि राजर्षि वक दीर्घ आयु थे, इसमें कुछ सन्देह नहीं है। हे भारत! ऐसा सुनके धर्म्म-राज युधिष्ठिर भाइयोंके सहित मार्कण्डेय मुनिसे पूछने लगे; हे भगवन! वक और दालभ्य नामक महात्मा चिरजीवी सुने जाते हैं, वह दोनो राजऋषि इन्द्रके मित्र हैं। मैं यह सुनना चाहता हूं, कि राजा इन्द्रसे और इनसे कैसे समागम हुआ और उन्होंने कैसे सुख दुःख सहे, आप मुझसे सब कहिये। श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, कि भयानक देवासुरसंग्रामके समाप्त होनेपर इन्द्र महाराज तीनो लोकोंके स्वामी हुए, उस समयमें मेघ ठीक बरसते थे, प्रजा धर्म्मात्मा निरोग सुख और सम्पत्तिसे भरी थी। सब मनुष्य अपने धर्म्ममें स्थिर और प्रसन्न चित्तसे रहते थे। तब प्रजाको सुखी देखकर राजा इन्द्र प्रसन्न हुए, एक दिन ऐरावत हाथीपर चढकर प्रजाको देखनेके लिये चले। चित्र विचित्र आश्रम, नदी, नगर ऋद्धि सिद्धिसे भरे हुए देश प्रजापालनमें [illegible] राजा, बावड़ी, तलाव, पोखर और आश्रमोंसे सेवित तीर्थोंको देखते हुए पृथ्वीपर उतरे। हे राजन्! पूर्व-दिशामें मनोहर अनेक वृक्षोंसे पूरित समुद्रके [illegible] एक देश देखा, उसमें अनेक मृग और पक्षियोंसे पूर्ण एक मनोहर पवित्र आश्रममें वक [illegible] थे। वकने महाराज इन्द्रको देखकर [illegible] प्रीति करी। अर्घपाद्य और आसन [illegible] इन्द्रकी पूजा की। जब महाराज इन्द्र [illegible] गये, तब इन्द्रने वकसे प्रश्न किया है, [illegible] तुम्हारी अवस्थाके एक लाख [illegible], [illegible] कहो कि अधिक जीने- [illegible] दुःख होता है। वक [illegible] उनके सङ्ग वास करना [illegible] नहीं, इन्होंके मर [illegible] होता है, यही उनको दुःख है। [illegible] और मित्रोंका नाश और लोगोंके संग रहना इससे अधिक क्या दुःख होगा? हे देवराज! जगतमें धनहीन होकर रहना इससे अधिक दुःख नहीं है, दीर्घजीवी लोग कुलहीनोंके कुलकी वृद्धि और [illegible]के कुलका क्षय और अनेक प्रकारके संयोग वियोग देखते हैं। हे इन्द्र! तुम इसको जानते हो, कि कुलहीनोंके कुलकी वृद्धि और नाश कैसे होती है। देवता, दानव गन्धर्व्व, मनुष्य, यक्ष, राक्षस, और सर्पोंके नाशको देखना बहुत बड़ा भारी दुःख है; अपने कालमें उत्पन्न हुए अनेक मनुष्योंको दुःखी देखके छोटे कुलवालोंके वशमें हुआ देखकर धनाढ्योंको दरिद्र देखके किसे दुःख नहीं होता? लोकमें बहुत ही विपरीत धर्म्म देखते हैं। ज्ञान रहित मनुष्य सुखी और विद्वान दुःखी देख पड़ते हैं, हे देवेन्द्र! मनुष्य जन्ममें अनेक क्लेश और अनेक दुःख हैं। इन्द्र बोले, हे महाभाग! हे ऋषियोंसे सेवित! आप मुझसे यह भी कहिये कि दीर्घ-जीवियोंको क्या सुख मिलते हैं। वक मुनि बोले, हे देवेन्द्र! हे भगवन! कुमित्रके आश्रय न करके दिनके आठवें या द्वादसवें भागमें जो अपने घरमें साग पका खाते हैं अपने मित्रोंमें बैठते हैं इससे अधिक सुख क्या होगा? क्योंकि उनमें बैठनेसे दिनकी गिनती नहीं जान पड़ती है। जो अपने जन्मसे उत्पन्न हुए सागको अपने घरमें खाता है, उसके बराबर कोई सुखी नहीं है और जो [illegible] आश्रयसे रहता है [illegible] बराबर दुःखी कोई नहीं है [illegible] घरमें बैठ कर साग और फल खाना भी बहुत [illegible] घरमें उत्तम भोजन करना भी उत्तम नहीं है, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

उस पापी दुष्टको धिक्कार है, जो अतिथि और पितरोंको विना दिये खालेता है। जो मनुष्य अपने घरमें पितृ और अतिथिको देकर पवित्र अन्न खाते हैं, उनके बराबर कोई सुखी नहीं है। हे इन्द्र! अपने अन्नके समान स्वादु और पवित्र और कोई अन्न नहीं है। जो गृहस्थ अपने घरमें अतिथिको देके भोजन करता है, वह अतिथि जितना ग्रास खाता है, उस गृहस्थ को उतनेहो सहस्र गौदानका फल होता है और उसने जो पाप किया है, सो सब नष्ट हो जाता है। जो अतिथिको भोजन कराकर दक्षिणा देता है उसके सब पाप नष्ट हो जाते हैं, अतिथि जिस समय भोजन करके कुल्ला करते हैं, गृहस्थके सब पाप उसी समय नष्ट हो जाते हैं। हे युधिष्ठिर! इन्द्रने वक मुनिसे इस कथाको आदिसे लेकर अनेक उत्तम कथा कही सुनी, फिर उनको आज्ञा लेकर स्वर्गको चले गये।

वक इन्द्र सम्वाद और

१९३ अध्याय समाप्त।

राजन्य माहात्म्य।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! महात्मा मार्कण्डेयके ऐसे वचन सुन पाण्डवोंने फिर प्रश्न किया, कि हे भगवन! हमने महाभाग ब्राह्मणोंके चरित्र सुने, अब आप महात्मा राजाओंके चरित्र कहिये। महा- ऋषि मार्कण्डेय बोले, कि अब आप लोग महात्मा राजाओंके चरित्र सुनिये। कुरुवंशमें एक सुहोत्र नामक राजा हुए थे, वे एक दिन महर्षियोंके दर्शन करनेको गये उन्होंने मार्गमें बैठे हुए राजा उशीनरके पुत्र राजा शिविको अपने आगे खड़ा हुआ देखा। उन दोनोंने परस्पर अवस्था और गुणके अनुसार पूजा की। उन दोनोंने अपनेको दूसरेके समान माना, इस लिये एकने दूसरेको मार्ग न दिया; तब वहां भगवान नारद आये और कहने लगे, कि आप लोग एक दूसरेके मार्ग रोके क्यों खड़े हैं? तब वे दोनों नारदसे कहने लगे, कि हे भगवन्! पहले कर्म करनेवाले महात्माओंने कहा है, कि जो उत्तम हो अथवा समर्थ हो उसी को मार्ग देना चाहिये और हम लोग परस्पर समभावापन्न हो गये हैं; इस लिये विचारसे हमें जान नहीं पड़ता, कि कौन किसे मार्ग दे। उनके वचन सुन नारदने सुहोत्रको सम्बोधन करके यह तीन श्लोक पढ़े, हे कौरव! क्रूर कोमलसे क्रूरता, कोमल क्रूरसे कोमलता, साधु असाधुसे साधुता करते हैं और साधु साधुसे उत्तम कर्म क्यों नहीं कर सकते हैं? देवतोंमें क्या यह नियम नहीं है, कि किये हुए कामके बदले सौगुना उपकार करे, अवश्य है। तुम दोनोंमें उशीनरके पुत्र शिवि साधु शीलवान है। मनुष्यको उचित है कि कृपण को दानसे, झूंठेको सत्यसे, दुष्टको क्षमासे और कठोरको सीधे कर्मोंसे जोते। तुम दोनों उदार हो; अब तुम लोगोंमें जो श्रेष्ठ हो, वह पहले चला जाय। ऐसा कह नारद चुप होगये। तब राजा सुहोत्रने उशीनरके पुत्र राजा शिविको प्रदक्षिणा की और उनके बहुत सुकर्म्मोंकी प्रशंसा कर मार्ग देके चले गये। हमने यह नारदका कहा हुआ राजन्यमाहात्म्य कहा।

१९४ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! अब हम दूसरे राजाका चरित्र कहते हैं। महाराज नहुषके पुत्र महाराज ययाति हुए। वे अपने राज-सिंहासन पर अपने नगरनिवासियोंसे घिरके बैठे थे, उसी समय एक ब्राह्मण आया और कहने लगा, कि हे राजन्! हम गुरुके लिए आपसे एक प्रतिज्ञारूपी भीख मांगते हैं, राजा बोले, कहो क्या प्रतिज्ञा चाहते हो?

ब्राह्मण बोले, हे राजन्! इस लोकमें भिक्षा मागनेसे बहुत शत्रुता होती है, सो हम आपसे पूछते है, कि आप हमारी प्यारी वस्तुको कैसे दीजियेगा? राजा बोले, मै जो वस्तु देता हूं, और जो नहीं देना चाहता, उसको सुनता नहीं हूं, जो वस्तु प्राप्त होने योग्य हो उसे सुनकर और देकर बहुत प्रसन्न होता हूं, मैं तुम्हे एक हजार गौ दूंगा क्योकि मुझे मागनेवाला ब्राह्मण बहुत प्रिय लगता है, मुझे मागनेवाले पर क्रोध कभी नहीं होता, जिस वस्तुको देता हूं उसका सोच नहीं करता, ऐसा कह कर राजाने उस ब्राह्मणको गौवें दे दिया।

१६५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे जनमेजय! ऐसा सुन फिर युधिष्ठिर बोले कि हे मार्कण्डेय! आप हमसे फिर राजाओंके भाग्यका वर्णन कीजिये। श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे महाराज! वृषदर्भ और सेदुक नामक दो राजा हुए, वे दोनोही नीति और अस्त्र जाननेवाले थे, तिनमे राजा सेदुकको यह ज्ञान हुआ, कि राजा वृषदर्भ बाल्यावस्थासे यह जानता है कि ब्राह्मणको सोने और चादीके सिवाय कुछ नहीं देना चाहिये। एकदिन एक वेदपाठी ब्राह्मण राजा सेदुकके पास आया और आशीर्वाद देकर गुरुके निमित्त भिक्षा मागी। ब्राह्मण बोला, हे राजन्! आप हमको एक [illegible] घोड़े दीजिये। उनसे राजा सेदुक बोले, हमारी [illegible] हजार घोड़े देनेकी नहीं है, इस [illegible] आप राजा वृषदर्भके पास जाइये, वह राजा [illegible] धर्मके जाननेवाले और ब्राह्मणोके [illegible] आप उनसे भिक्षा मागिये, वह [illegible] [illegible]। अनन्तर वह ब्राह्मण [illegible] पास गया और उनसे हजार [illegible] कोड़ेसे पीटा। [illegible] कहा, कि तुम निरपराध

मुझको क्यों मारते हो, अनन्तर उस ब्राह्मणने राजाको शाप देना चाहा; तब राजाने कहा हे विप्र! जो अपना धन दूसरेको न दे उसको शाप देना क्या ब्राह्मणका कर्म्म है। ब्राह्मण बोले, हे राजाधिराज! मुझको आपके पास राजा सेदुकने भीख मागनेको भेजा था, उनकी आज्ञासे मैंने आपसे भीख मागी, राजा बोले, हे ब्राह्मण! हमको आज जो कुछ बारमें मिलेगा सो सब तुमको देदेंगे, जिसको हमने कोड़ेसे मारा है, उसको हम प्रसन्न क्यों न करेंगे? ऐसा कहकर राजाने उस ब्राह्मणको एक दिनमें जितना धन प्राप्त किया सब दे दिया। वह धन एक सहस्र घोड़ोंसे अधिक था।

महाराज और एक इतिहास सुनिये। एक समय देवताने विचारा कि हम लोग पृथ्वीपर चलकर राजा उशीनरके पुत्र शिविकी परीक्षा करें, ऐसे कहके अग्नि और इन्द्र वहां आये, अग्निने कबूतरका रूप धारण किया और मांस खानेकी इच्छा करके इन्द्र बाजका रूप धारण करके उसके पीछे दौड़े, कबूतर दिव्य सिंहासन पर बैठे हुए राजाकी गोदमें जा पड़े, तब पुरोहित राजासे बोले, कि हे राजन्! बाजके डरसे यह कबूतर रक्षाके लिये आपकी गोदमें आपड़ा है आप इसे प्राणदान दीजिये, आप धन दान कीजिये, क्योंकि कबूतरका गिरना बहुत बुरा है। तब कबूतर राजासे बोला, कि हे राजन्! मै बाजसे डरकर प्राण रक्षाके लिये आपके पास आया हूं, [illegible] ऋषि हूं, कबूतर [illegible] प्राण [illegible] हूं, आपको मेरे प्राण [illegible] चाहिये, तपस्वी, [illegible] आचार्य [illegible] हूं, वेदका [illegible] हूं, [illegible] वेदपाठीको दान देना [illegible]

बाजको मत दें, अपने अङ्गोंको त्यागकर कबूतरके अङ्गोंमें प्राप्त होकर तुम्हारे पास प्राण रक्षाके लिये आया हूं, तब बाज राजासे बोला, हे राजन्। संसारकी गति ऐसी है, कि कभी कोई किसीका पुत्र और वही उसका पिता हो जाता है, हो सकता है कि यह कबूतर पूर्व सृष्टिमें तुम्हारा पिता था, अब तुम इसे अपना पिता समझके मेरे भोजनमें विघ्न मत करो। राजा बोले, ऐसी बात कबूतर और बाजको बोलते हुए किसीने नहीं देखा था। यह दोनो कौन हैं, इनको जानकर कोई काम करना चाहिये, जो डरे हुए शरणागतको शत्रुको देता है, उसके राज्यमें वर्षा ऋतुमें जल नहीं बरसता, बोया हुआ अन्न उत्पन्न नहीं होता, समयके ऊपर यदि वह किसीसे रक्षा चाहे, तो रक्षा नहीं मिलती है, उसके बालक थोड़ी ही अवस्थामें मर जाते हैं,उसके माता पिता अधिक नहीं जीते। । जो डरे हुए शरणागतको शत्रुको देता है, उसकी पूजा देवता लोग ग्रहण नहीं करते हैं, वह उदारता-रहित हो जाता है, और उसका अन्न नष्ट हो जाता है, स्वर्गलोकसे शीघ्र पतित होता है, जो डरे हुए शरणागतको शत्रुको देता है, उसपर इन्द्रादिक देवता वज्र मारते है। हे बाज! मै तुम्हें मास और भात पकाकर खिलाऊंगा पर इस कबूतरको नहीं दूंगा। बाज बोला,हे राजन्! मै माससहित भात खाना नहीं चाहता और इस कबूतरसे अधिक मास भी नहीं चाहता, देवताने मेरे वास्ते आज यह भोजन भेजा है, इस लिये इसे तुम मुझे दे दो, क्योंकि और पक्षी नहीं मिलता है। राजा बोले, हे बाज! तुम बैल मुझसे लेजाओ परन्तु उस डरे हुए दुबले पतले कबूतरको मत मारो, हे बाज! यह कबूतर साममयुक्त क्रतुकी भांति प्रतिपालन योग्य है, यह मुझे निश्चय बोध होता है। मैं प्राणको दे सकता हूं, पर इस शुभ गुणयुक्त कबूतरको मत मारो, तुम जानते हो कि यह कबूतर बड़ा महात्मा है, तुम मुझे क्लेश मत दो, हम कबूतर नहीं देंगे, जिसरीतिसे मेरी शिविदेशके निवासी प्रशंसा करें वैसेही तुमको कहना चाहिये, कहो मैं तुम्हारा क्या प्रिय कार्य करूं? बाज बोला हे राजा। इस कबूतरके बराबर अपनी दहिनी जङ्घाका मास मुझे दो, तो यह कबूतर छूटे, शिविदेशी तुम्हारी प्रशंसा करें और मेराभी प्रिय कार्य हो। तब राजाने अपनी दहिनी जांघका मास काटकर तराजूपर रखा, पर कबूतर भारी हुआ। फिर और मांस काटकर चढाया, तौभी कबूतर भारी हुआ। ऐसेही राजाने अपने सब शरीरका मांस काटकर चढ़ाया, परन्तु कबूतर भारी हुआ, तब राजा आपही तराजूपर बैठ गया, राजाका यह चरित्र बुरा नहीं हुआ। राजाके इस वृत्तान्तको देखकर 'शिविराजसे कपोतकी रक्षा हुई' ऐसा कहके बाज अन्तर्द्धान हो गया। राजा कबूतरसे बोले,कि शिविदेशवासी जानें कि तुम कौन हो और बाज कौन था, क्योंकि ईश्वरके सिवाय कोई ऐसा काम नहीं कर सकता, हे भगवन! आप मेरे प्रश्नका उत्तर दीजिये। कबूतर बोला,हे राजन्। मैं धूमकेतु अग्नि हूं और वज्रधारी इन्द्र बाज है, हे सुरथाके पुत्र! हम तुम्हारे शीलको जाननेके लिये यहां आये थे, जो तुमने तलवारसे काटकर मेरे वास्ते मास दिया है, यह मैं तुम्हारे अंगका चिन्ह शुभ मनोहर बनाये देता हूं। यह सब सुवर्णका हो जायगा और सुगन्धियुक्त होगा, तुम यशके साथ इन प्रजाओंका पालन करो, देवता, ऋषि तुम्हारा आदर करेंगे, तुम्हारे कटे हुए स्थानसे कपोतरोम नामक पुत्र उत्पन्न होगा। कपोतरोम बहुत बड़ा तेजस्वी और तुम्हारे कुलका यश बढानेवाला होगा।

शिविचरित और १९६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! महाराज युधिष्ठिरने मार्कण्डेय मुनिसे फिर प्रश्न किया, कि आप हमसे फिर राजाओंका चरित्र कहिये। मार्कण्डेय मुनि बोले विश्वामित्रके पुत्र राजा अष्टकके अश्वमेध यज्ञमें उनके भाई प्रतर्द्दन वसुमना, और औशीनर आये थे। जब राजाका यज्ञ समाप्त हुआ, तब वे अपने भाइयोंके साथ रथ पर बैठ कर चले और मार्गमें आते हुए नारदको प्रणाम करके बोले, कि हे भगवन। आप इस रथ पर चढ़िये, नारद मुनि उनके वचन सुनकर रथपर चढ़े। तब राजाके एक भाईने नारदसे कहा कि हे भगवन्! मैं आपको प्रसन्न करके कुछ पूछना चाहता हूं, नारद बोले पूछो। राजाके भाईने कहा, कि हम सब लोग आयु और गुणसे पूर्ण हैं सो बहुत समय तक रहने योग्य स्वर्ग को जाते हैं; सो आप कहिये कि हम सबमेंसे पहले पृथ्वीपर कौन गिरेगा? नारद बोले पहले अष्टक गिरेगा। राजाके भाईने पूछा, इसका कारण क्या है? नारद बोले, एक समय हम अष्टकके घरमें रहते थे, उसी समय एक दिन मैं और अष्टक रथमें बैठ कर घूमनेको गये थे, वहां मैंने एक सहस्र गौ इक[illegible]ो देखकर अष्टकसे पूछा कि यह सहस्र गौ किनकी हैं, इन्होंने कहा, कि मेरी हैं और हमने इनको उत्सर्ग कर छोड़ दिया है। अष्टकने अपनी बहुत प्रशंसा की, इसीलिये यह पहले स्वर्गसे गिरेगा। राजाके भाई बोले, कि जो हम तीनों स्वर्गको जायं तो पहले कौन गिरेगा। नारद बोले कि [illegible] पहले प्रतर्द्दन गिरेगा, इसका यह कारण [illegible] पहले इनके घर पर रहा था, एक दिन [illegible] रथपर चढ़कर घूमने गया, तब एक [illegible] और उसने कहा, कि तुम अपने [illegible] इसने कहा कि मैं रथ पर [illegible] दूंगा तब [illegible] कि अभी दो। तब इन्होंने दाहना घोड़ा देदिया, इतने हीमें दूसरा ब्राह्मण घोड़ा मांगनेको आगया, तब इन्होंने बायां घोड़ा भी देदिया, उसी समय तीसरा घोड़ा मांगनेवाला एक और ब्राह्मण आया, उसी समय प्रतर्द्दनने तीसरा घोड़ा भी देदिया; उसी समय चौथा घोड़ा मांगनेवाला ब्राह्मणभी मिला, तब इसने कहा घर चल कर देंगे, उन्होंने कहा, कि अभी दो। तब इन्होंने वह घोड़ा भी उसको दे दिया और हाथसे रथको खींचने लगा और कहा, कि अब हमारे पास कुछ नहीं है जो ब्राह्मण मांगेंगे। जो देकर असूया करता है, वह स्वर्गसे गिराया जाता है। इसीसे यह पहले गिरेगा। राजाके भाईने प्रश्न किया, कि यदि हम दोनो स्वर्गको जाय तो पहले कौन गिरेगा। नारदने कहा, कि पहले वसुमना गिरेगा, उन्होंने कहा, कि क्यों? नारदने कहा, कि मैं पहले समयमें घूमता हुआ वसुमनाके घरमें गया था। वहां पुष्परथके वास्ते स्वस्तिवाचन हुआ। जब ब्राह्मण लोग स्वस्तिवाचन कर चुके, तब ब्राह्मणोंको पुष्परथ दिखाया गया। मैंने उस रथकी प्रशंसा की, राजाने कहा हे भगवन। [illegible] रथकी प्रशंसा की, यह आपका ही रथ है। फिर एक बार मैं रथके प्रयोजनसे राजाके घर गया, तब भी राजाने यही कहा कि आपका ही रथ है। तब मैंने तीसरी बार स्वस्तिवाचन किया तब राजाने ब्राह्मणोंके सन्मुख [illegible] कहा कि आपने पुष्परथकी प्रशंसा अच्छी प्रकारसे की। इसी हेतु रथ प्रदान न करके [illegible] प्रशंसा वचनके कारण यह पहले गिरेगा। राजाका भाई बोला, इस रथपर चढ़के आपके [illegible] जा सकता है, सो कौन जायगा? नारदने कहा कि शिवि जायगा और मैं उतरता हूं। राजाने कहा, इसमें क्या कारण [illegible] नारदने कहा, कि मैं शिविके समान [illegible] हूं। [illegible] कि किसी ब्राह्मणने इनसे कहा था कि मैं [illegible] हूं। [illegible] ब्राह्मणसे शिविने [illegible]

महाराज! कहिये मैं क्या करूं? तब इनसे उस ब्राह्मणने कहा, हे राजन्। तुम्हारा बृहद्गर्भ नामक पुत्र है, उसे काटकर पकाओ, मैं भूखे बैठा हूं, तब राजाने पुत्रको काटकर पकाया और थालीमें परसकर रखा तथा ब्राह्मणको खोजने लगे; जब राजा ब्राह्मणको खोजते थे तभी आकर किसीने राजासे कहा, कि वह ब्राह्मण तुम्हारे नगर, घर, धनके स्थान, शस्त्रके स्थान, घुड़शाल, और हाथीखानेको बड़े क्रोधसे जला रहा है, तब राजा शिविने नगरमें जाकर ब्राह्मणसे कहा, हे भगवन। अन्न तय्यार है; उस समय शिविके मुखका वर्ण वैसाही था; पर ब्राह्मणने लज्जासे शिर नीचे कर लिया और कुछ उत्तर न दिया। तब शिविने हाथ जोड़कर ब्राह्मणको प्रसन्न किया, कि महाराज। भोजन कीजिये, एक मूहूर्त्तके बाद ब्राह्मण राजा शिविसे बोला, हे राजन्! तुमही इसको खाओ; राजाने कहा, बहुत अच्छा। ऐसा कहकर ज्योंही मांस खानेको उठाया, तभी ब्राह्मणने राजाका हाथ पकड़ लिया और बोला, हे राजन। तुमने क्रोधको जीत लिया, ब्राह्मणके वास्ते तुम सब कुछ दे सकते हो। ऐसा कहकर ब्राह्मणने राजाकी पूजा की। राजाने आंख उठाकर देखा तो सम्मुख राजकुमार खड़ा है। उत्तम सुगन्धि लगाये हुए, उत्तम वस्त्र पहने लड़केको देखकर ब्राह्मण वहीं अन्तर्धान हो गया। नारद बोले, कि ब्रह्माने इस रीतिसे राजा शिविकी परीक्षा की थी, उस ब्राह्मणके अन्तर्द्धान होनेपर मन्त्रीने राजासे पूछा, आपने क्या जानकर ऐसा किया था? राजा शिवि बोले, कि हम इस कर्मको यश, अर्थ और भोगकी इच्छासे नहीं करते हैं। हम केवल यह जानते हैं, कि इस कर्मको पापी लोग नहीं कर सकते; इसी लिये करते हैं, पण्डितलोग सदा अच्छा कर्म करते हैं, और हमारी बुद्धिभी सदा अच्छेही कर्ममें लगती है, शिविके इस परम चरित्रको हमने तुमसे कहा।

राजन्य सौभाग्य वर्णन और
१९७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। समस्त ऋषियों और पाण्डवोंने मार्कण्डेय मुनिसे पूछा, कि आपसे अधिक जीनेवाला कोई है? उन्होंने कहा, कि राजा इन्द्रद्युम्न मुझसेभी अधिक जीनेवाले हैं। वे पुण्य नष्ट होनेसे जब स्वर्गसे गिराये गये, मेरे पास आये थे और कहा था, कि तुम हमको इन्द्रद्युम्न जानो, तब हमने उनसे कहा कि हम सब गावोंमें केवल एकरात निवास करते हैं, और बराबर तपसे अपने शरीरको सुखा देते हैं, इस लिये हम नहीं जानते हैं, कि यह कौन हैं। इन्द्रद्युम्नने मुझसे कहा कि आपसेभी पुराना कोई और है? मैंने कहा, मुझसेभी पुराना एक प्रावारकर्ण नामक उल्लू हिमाचलमें रहता है, वह मुझसेभी बूढा है, तुम उसके पास जाओ, परन्तु वह हमसे बहुत दूर रहता है। तब वह इन्द्रद्युम्न घोड़ा हो गया और मैं उसपर चढ़कर उसके पास गया। तब राजा इन्द्रद्युम्नने उस उल्लूसे पूछा, कि तुम हमको जानते हो, तब उसने थोड़ी देर विचार कर कहा, कि हम तुमको नहीं जानते हैं; फिर राजर्षि इन्द्रद्युम्नने उस उल्लूसे कहा, कि कहो तुम्हारे पास कोई तुमसेभी ज्यादे बूढा है? तब उसने कहा, कि हमसेभी बूढा नाड़ीजंघ नामक बकुला है, वह इन्द्रद्युम्न नामक तलावमें रहता है, सो हमसे बहुत बूढा है, तुम उसके पास जाओ और उससे पूछो। तब इन्द्रद्युम्न, मैं और वह उल्लू उस नाड़ीजंघ नामक बकुलेके पास गये, तब हमलोगोंने उससे पूछा कि तुम राजा इन्द्रद्युम्नको जानते हो? उसने थोड़ी देर विचारकर कहा कि

हम राजा इन्द्रद्युम्नको नहीं जानते हैं, तब हमने उससे पूछा कि कोई तुमसे अधिक बूढ़ाभी है? उसने कहा कि इसी तालावमें एक अकूपार नामक कछुआ रहता है, वह हमसेभी अधिक बूढ़ा है। तुम लोग उसके पास जाकर पूछो कदाचित वह तुमको जानता हो। तब उस बकुलेने हमलोगोंसे और उस कछुएसे परिचय करा दिया। हम लोगाने जाकर कहा, कि हम लोग तुमसे कुछ पूछनेको आये हैं, तुम बाहर आओ, ऐसा सुनकर कछुआ तलावसे बाहर निकला। जहा हम लोग खड़े थे, तलावके उसी किनारे आया। हम लोगोंने उसे आते देखकर पूछा, कि तुम राजा इन्द्रद्युम्नको जानते हो? उसने एक मुहूर्त्त ध्यान करके आखोंमें आंसू भर कर उद्विग्नचित्त होकर हाथ जोड़कर कापते हुए कहा, कि क्या मैं इन्हें नहीं जानता हूं? इन्होंने हजार यज्ञ की थी, जो इन्होने दक्षिणामें गौवें दी थीं, उस चक्रमणसेही यह तालाव बना है, जिसमें मैं रहता हूं। जब यह कछुवेने कहा, इसको सुनकर देवलोकसे रथ आया और शब्द हुआ, हे इन्द्रद्युम्न! तुम्हारे वास्ते स्वर्ग तैय्यार है, जहां चाहो वहां जाओ तुम कीर्त्तिवाले हो, जहां इच्छा हो वहा जाओ, पुण्य कर्म्मका शब्द जबतक स्वर्ग और पृथ्वीपर रहता है, तबतक कर्म्म करनेवाला जीता है, जिस किसी प्राणीका अपयश जगतमें जबतक रहता है, तबतक वह नरकलोकमें रहता है, इस कारणसे मनुष्योंको सदा उत्तम कर्म्म करना चाहिये और बुरे कर्म्मोंसे चित्तको हटाकर उत्तम कर्म्मोंमें लगाना चाहिये। इसको सुनकर राजा बोले, जबतक तुम नहीं रहो, जब तक हम इन दोनों बूढ़ोंको इनके स्थान पर न पहुंचा आवें। वह राजा मुझे और प्राकारकर्ण उलूकको स्थानों पर पहुंचा कर उसी रथ पर चढ़ कर अपने योग्य स्थानमें चले गये। हे पाण्डवो! ऐसे मैंने चिरजीवितामें वृत्तान्त देखे हैं। पाण्डव बोले, आपने बहुत अच्छा किया, जो स्वर्गसे गिरे राजा इन्द्रद्युम्नको फिर स्वर्गमें पहुंचाया। मार्कण्डेय ऋषि फिर पाण्डवोंसे कहने लगे, कि इसी रीतिसे देवकीनन्दन कृष्णने नरकमें पड़े हुए राजा नृगको कष्टसे छुड़ाकर स्वर्गमें पहुंचाया था।

राजन्य माहात्म्य वर्णन और
१६८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा युधिष्ठिर राजा इन्द्रद्युम्नका वृत्तान्त महात्मा मार्कण्डेय मुनिसे सुनकर फिर उनसे पूछने लगे, हे मुने! पुरुष कौनसी अवस्थामें दान देकर इन्द्रलोकको प्राप्त होता है। वालकपनमें वा युवा अवस्था वा गृहस्थाश्रममें जैसे फल होता हैं, वह सब आप मुझसे कहिये। मार्कण्डेय मुनि बोले, चार मनुष्योंके दान वृथा हैं, पुत्रहीनका जन्म वृथा है, जो धर्म्मसे हीन हैं, उनका जीवन वृथा है, पराये घरमें जो खाता है जो अपने वास्ते पकाते हैं उनका भी जन्म वृथा है। धर्म्मसे पतित ब्राह्मणोंको दान देना और चोरको दान देना वृथा है, झूठ बोलनेवाले गुरुको दान देना पापीको और कृतघ्नको दान देना ग्रामयाजक (जो नौग्रहादिकके पूजन कराते हैं), वेद वेचनेवालेको, शूद्रोंके परोहितको दान देना वृथा है। ब्राह्मणोंमें जो नीच हैं, उनको दान देना, जिन्होंने वेश्या रखी है उनको दान देना, स्त्रियोंको दान देना सपेरोंको दान देना, नौकरोंको दान देना, यह सोलह दान वृथा हैं। जो अज्ञानसे, भयसे वा क्रोधसे दान को देता है, वह उसका फल गर्भस्थित होकर प्राप्त होता है। अन्य कोई गर्हित दान [illegible] देनेसे उसका फल दाता [illegible] भोगता है। इसवास्ते सब अवस्थाओंमें ब्राह्मणोंको दान [illegible] इच्छासे देना चाहिये। राजा युधि-

ष्ठिर बोले, चारों वर्णके दान देनेमें कौन विशेषतासे मनुष्य तरते हैं? मार्कण्डेय मुनि बोले, जप, मन्त्र, होम और वेद-पाठसे मनुष्य तरता और तारता है, जो मनुष्य ब्राह्मणोंको प्रसन्न करते हैं, उनसे सब देवता प्रसन्न होते हैं, ब्राह्मणोंके वचनसे स्वर्ग प्राप्त होता है, पितर और देवतोंकी पूजासे और ब्राह्मणोंकी सेवासे तुमको अक्षय पुण्यलोक प्राप्त होगा, इसमें कुछ सन्देह नहीं है, जिसको स्वर्गमें जानेकी इच्छा हो, उसे चाहिये, कि जब कफसे कण्ठ घिर जाय और चेतनारहित हो जाय तब ब्राह्मणोंकी पूजा करे। श्राद्धके समयमें बुरे वर्णवाले, बुरे नाखूनवाले, कुष्ठरोगी, छली, कपटी, कुण्ड (जो स्त्रीके पति रहते हुए और से उत्पन्न हुआ है) और गोलक (जो विधवा जारसे पुत्र उत्पन्न करे) तथा जो ब्राह्मण करके जीविका करता हो, उनको श्राद्धमें भोजन न कराना चाहिये। जो श्राद्ध निन्दित होता है, वह करनेवालेको अग्निके समान भस्म करता है, श्राद्धमें गूंगे, अन्धे, आदिक वहां जो आते हैं, उन्हें वेदपाठी ब्राह्मणोंके संग भोजन न कराना, और दानभी न देना चाहिये, हे युधिष्ठिर! जो शक्तिमान वेद जाननेवाले ब्राह्मण हों; उनको दान देना चाहिये, वही दाताको तारते हैं, और अपनाभी निस्तार करते हैं, जैसे पुण्य अतिथिको भोजन करानेसे होता है, वैसा होम करनेसे, स्नान करनेसे, अग्निहोत्र करनेसेभी नहीं होता है। हे युधिष्ठिर! इस कारणसे अतिथिको भोजन करानेमें तुम सदा यत्न करो, अतिथिको जो स्नान, भोजन, जल और घी देते हैं, वह यमराजके यहां नहीं जाते हैं। देवताका स्थान स्वच्छ करने, ब्राह्मणोंके जूठ उठाने, शरीर दबाने और गन्धादि लगानेसे जो पुण्य होता है, वह गोदानसेभी अधिक होता है, कपिला गौके दान सब गो-दानोंसे अधिक है, इसवास्ते कपिलाको आभूषण पह-नाकर ब्राह्मणको देनी चाहिये। वेदपाठी दरिद्र, गृहस्थ, अग्निहोत्र करनेवाले, तथा उप-कारी ब्राह्मणोंको दान देना चाहिये, हे भारत! ऐसोंको दान देना चाहिये। धन-वानको धनदान न करे, धनवानको दान देनेसे कोई भी फल नहीं होता है। एक गौ एक हीको दान देनी चाहिये अनेकको नहीं यदि दान की हुई गौ पुनः दी जाती है, तो वह कुलके तीन पुरुषोंको नाश करता है दान देनेवालेका और ब्राह्मण दोनोंका निस्तार नहीं करती। जो अक्षीरत्ती प्रमाण शुद्ध सुवर्णका दान करता है, उसको सौ सुव-र्णके मुद्रा दान करनेका फल होता है। जो बलवान धूरमें लगाने योग्य बैलको दान करता है, वह दुःखोंको तरके स्वर्गलोकको जाता है जो पण्डित ब्राह्मणको पृथ्वी दान देता है उसके पीछे सब कामना पूरी होती हैं और जगतके मनुष्य उसका यश गाते हैं। मार्गमें चलते चलते जिनके शरीर थक गये हैं, पैरों पर धूल चढ़ गई हो उन थके हुओंको जो अन्न देनेको कहता है उसको भी अन्न देनेके समान फल होता है, इसमें कुछ सन्देह नहीं, इस-वास्ते तुम अन्न दानही करो। जो पका हुआ अन्न ब्राह्मणको देता है उसके समान फल जगतमें कोई नहीं पाता है। अन्नही सब जगतमें उत्तम है उससे अधिक कोई वस्तु नहीं। अन्नको प्रजापति और सम्वत्सर कहते हैं, सम्वतसर का अर्थ यज्ञ है और यज्ञहीसे सब जगत स्थिर है। इसवास्ते सब चराचरके जीव धारण करनेवाला अन्न है अन्नसे उत्तम कोई पदार्थ नहीं है। जो लोग बावडी, तलाव, कूवे और धर्मशाला बनवाते हैं अन्न दान करते हैं और मीठी वाणी बोलते हैं, वे शमनवाक्य नहीं सुनते। बड़े परिश्रमसे उत्पन्न किया अन्न और इकट्ठा किया धन जो सुशील ब्राह्मणोंको देता है, उसको सम्पूर्ण

पृथ्वी रत्नसे भरी रत्न देती है, प्रथम अन्न देनेवाले फिर सत्य बोलनेवाले उनके पीछे बिना मांगे देनेवाले स्वर्गको जाते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! बड़े आश्चर्यमें आकर राजा युधिष्ठिर भाइयोंके सहित मार्कण्डेय मुनिसे फिर पूछने लगे, कि हे महामुने! मनुष्य लोकसे यमलोक कितनी दूर है, उसका कैसा मार्ग है और उसको पुरुष किस उपायसे तर सकता है। मार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! हे धर्म्म करनेवालोंमें श्रेष्ठ! यह प्रश्न सबसे गुप्त और पवित्र है और ऋषि लोग इसका आदर करते हैं। मैं इसको तुमसे वर्णन करता हूं। हे नरनाथ! मनुष्य लोकसे छियासी हजार योजन यमलोक है। वहां आकाश शून्य है। वह मार्ग जलरहित है, घोर वनसे भरा है, उस मार्गमें न छाया है न वृक्ष हैं जहां बैठकर मनुष्य अपनी थकाई उतारे। यमको आज्ञानुसार दूत बलसे मनुष्योंको खींचते हैं। मनुष्य, स्त्री, और पशु आदि सब प्राणी वहां दुःखी होते हैं। जिन्होंने ब्राह्मणोंको घोड़े दान दिये हैं, वे सुखसे [illegible] हैं, जिन्होंने छाते दान किये हैं, उनको [illegible] छाता मिलता है जिन्होंने अन्न दान किये [illegible] भूखसे व्याकुल नहीं होते और जिन्होंने [illegible] दान नहीं किये वे भूखसे व्याकुल होते [illegible] वस्त्र देनेवाले वस्त्र पहन कर और [illegible] वस्त्र नहीं दान दिये, वे नंगे जाते हैं। [illegible] देनेवाले आभूषण पहरे हुए जाते हैं। [illegible] देनेवाले मन सुखसे पूरित होकर [illegible] देनेवाले [illegible] गर्रहित और घरके देन[illegible] [illegible] पर चढ़कर जाते हैं। जलके [illegible] और प्यासरहित [illegible] [illegible] दान करनेवाले मार्गको प्रकाश [illegible] [illegible] करते हैं। [illegible] देनेवाले [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible]

विमानमें बैठकर वह जाते हैं जो महीना भर व्रत करते हैं। जो छः दिन तक व्रत करते हैं वे मोरके विमानोंपर बैठकर जाते हैं, जो तीन रात्रि एकवार भोजन करके बिताते हैं, उनको यमलोकमें कोई पीड़ा नहीं होती। जो रात दिनमें एकवार भोजन करता है उसको यमलोकमें दिव्य जल प्राप्त होता है। हे राजन्! यमलोकमें पुष्पोदका नाम नदी है, उसका बहुत ठंढा और मीठा जल एक समय भोजन करनेवाले पीते हैं, वही उसी नदीका जल पापी लोगोंके वास्ते पीब हो जाता है। हे महाराज। वह नदी इच्छाको पूर्ण करनेवाली है, तुमभी यथाविधि ब्राह्मणोंकी पूजा करो। जो मनुष्य आशासे आये हुए अतिथिको सत्कार पूर्व्वक अन्न देता है और उसकी पूजा करता है उसके पीछे सब इन्द्रादिक देवता चलते हैं और जो अतिथिकी पूजा नहीं करता है उससे सब देवता निराश होजाते हैं, हे राजन्! तुमभी अतिथियोंकी और ब्राह्मणोंकी पूजा करो। यह मैंने तुम्हारे प्रश्नका उत्तर दिया और क्या पूछना चाहते हो।

युधिष्ठिर बोले, हे मुनि! मैं वारम्वार धर्म्म सम्बन्धी पवित्र कथा सुनना चाहता हूं। मार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! मैं और भी धर्म्म कथा कहता हूं, जो सब पापोंका नाश करती है तुम चित्त लगा कर उसे सुनो। जो पुष्करमें कपिला गौ दान करनेका फल होता है वही फल ब्राह्मणोंके पैर धोनेसे होता है। जबतक ब्राह्मणोंके चरणोंके जलसे पृथ्वी भीगी रहती है तब तक पितर लोग [illegible] जल पीते हैं। ब्राह्मणोंका आदर [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ब्राह्मणों- [illegible] [illegible] [illegible]

और उसी समय गौदान करनेसे महादान करनेका पुण्य होता है, हे युधिष्ठिर! उत्पन्न होनेवाले बछड़ा और गौके जितने रोम हैं उतने हजार वर्षतक देनेवाला स्वर्गमें निवास करता है। जो सुवर्णमें नाक और खुर मढ़कर गौको तिलसे लादकर तथा सुवर्णके आभूषण पहराकर दान करता है, वह स्वर्गको जाता है। जो ब्राह्मण दान लेकर किसी महात्माको दे देता है, उसको सम्पूर्ण पृथ्वी दान करनेका फल प्राप्त होता है। जो ब्राह्मण जांघोंके वीचमें हाथ रखकर चुपचाप भोजन करता है, वह यजमानको तारनेमें समर्थ है, जो अपेय वस्तुओंको नहीं पीते हैं; जो वेदका पाठ नित्य करते हैं, वही ब्राह्मण तारने योग्य हैं; हव्य कव्य सबको ब्राह्मण लेनेके योग्य हैं, जो दान महात्मा ब्राह्मणको दिया जाता है, वह ऐसा होता है, जैसा जलती हुई अग्निमें होम करना। क्रोधही ब्रह्मणका शस्त्र है; ब्राह्मण शस्त्रसे नहीं लड़ते हैं, जिसपर क्रोध करते हैं, उसको ऐसा नाशकर देते हैं, जैसा इन्द्र वज्रसे राक्षसोंको मारते हैं, हे पाप-रहित युधिष्ठिर। मैंने तुमसे यह धर्म्मकी कथा कही। इस कथाको सुन कर नैमिषारण्यके तपस्वी प्रसन्न हुए थे, हे राजन्। इस कथाको सुननेवाले मनुष्य शोक, भय, और पापसे रहित हो जाते हैं।

युधिष्ठिर वोले, हे धर्म्म जाननेवालोंमें श्रेष्ठ! कौनसे कर्म्मसे ब्राह्मण सदा पवित्र रह सकता है, मैं उसे सुननेकी इच्छा रखता हू। मार्कण्डेय मुनि बोले, पवित्रता तीन प्रकारकी है, वचनकी, कर्म्मकी और जलकी। जो इन तीनों पवित्रताओंसे युक्त रहता है, वही स्वर्गको जाता है, जो प्रातःकाल और सायंकालकी सन्ध्यामें गायत्रीको जपते हुए उपासना करते हैं, वे पापरहित और पवित्र हो जाते हैं, वह चाहे सम्पूर्ण पृथ्वीका दान लेलें तौभी उसे कुछ दोष नहीं है, यदि सूर्य्यादिक आकाशके ग्रह बुरी दृष्टि रखते हों, तो वहभी कल्याणकारी होजाते हैं, जितने मासभक्षी घोर जन्तु हैं, वह कोई भी उसे दुःख नहीं दे सकते हैं, वेद पढ़ाने या दान लेने और यज्ञ करानेसे ब्राह्मणोंको कुछभी दोष नहीं होता, क्योंकि ब्राह्मण जलती अग्निके समान हैं, चाहे अच्छी तरह वेद पढ़े हों वान पढ़े हों, चाहे प्राकृतही पढ़े होंवा संस्कृत पढ़े हों उनका अपमान न करना चाहिये, क्योंकि वे राखसे ढंपी हुई अग्निके समान हैं, जैसे मर्घटमें जलनेसे अग्निको दोष नहीं लगता ऐसेही ब्राह्मणको विद्या न पढ़नेसे दोष नहीं लगता है, नगर चाहे छाड़दिवारी, द्वार, अटारी आदिसे कैसाभी शोभायमान क्यों न हो, पर ब्राह्मणके बिना उसकी शोभा नहीं होती। वेदको जाननेवाले ज्ञानी, तपस्वी, ब्राह्मण जहां रहते हैं, उसीका नाम नगर है। हे राजन्! गावमें अथवा जङ्गलमे जहा ब्राह्मण रहते हैं उसीको नगर कहते हैं, और वही तीर्थभी माना जाता है, रक्षा करने वाला राजा और तपस्वी ब्राह्मणको नमस्कार करके मनुष्य पापोंसे छूट जाता है। पवित्र तीर्थोंमें स्नान करना पवित्र लोगोंका नाम लेना और सज्जनोंसे बातचीत करनाही उत्तम कर्म्म कहाता है, सज्जनोंके सङ्गसे और मीठी वाणीसे जिन्होंने अपने आत्माको पवित्र किया है, उन्होंको पवित्र कहते हैं; तीन दण्डका धारण करना, जटा बढ़ाना सिरमुड़वाना मौनी होना, छाल पहरना, मृगचर्म्म पहरना, व्रत करना, स्नान करना, अग्निहोत्र करना, वनमें रहना और शरीरको सुखाना, यदि भाव शुद्ध न हों तो सबही मिथ्या हैं। हे राजन्! विषय विशुद्धिके बिना इन नेत्र आदि छः इन्द्रियोंका रोकना कठिन नहीं है, किन्तु अनुपभोगरूप अमृतत्वको दुष्कर है, उनमें सबका विकार देनवाले मनको रोकना

बहुतही कठिन है। जो मन बुद्धि और कर्म्मसे पाप नहीं करते, वही तपस्वी हैं, शरीरको सुखानेवाले तपस्वी नहीं हैं। जिनको अपने जाति-वालों पर दया नहीं है; उसे कुटम्ब पालनेसे धर्म्म नहीं होता है वह केवल हिंसा करता है। संसारत्यागी होना तप नहीं कहलाता है, जो घरमें रहकर पवित्र रहता है, वही मुनि है, सम्पूर्ण जीवों पर दया करनेहीसे सब पापोंसे छूट जाता है, पापकर्म्म अन्न न खानेसे नहीं छूटते अन्नके न खानेसे केवल मांस और हड्डीका पिञ्जरा शरीरही दुःख पाता है। अज्ञानसे कर्म्म करनेका केवल क्लेशही फल होता है, किन्तु पापका नाश नहीं होता है; पुण्य करनेहीसे मनुष्य शुद्ध होता है। अन्नके त्यागनेसे फल मूल और वायुके खानेसे अथवा मौन धारणसे शुद्ध नहीं होता है। न शिर मुड़ानेसे न कुटीमें रहनेसे, न जटा बढ़ानेसे न काँटा पर सोनेसे, न अन्न त्याग करनेसे, न अग्निहोत्र करनेसे, न जलमें डूबनेसे और न पृथ्वी पर सोनेसे धर्म्म होता है, क्योंकि विना ज्ञानसे और उत्तम कर्म्म करनेसे मनुष्य जरा मरण और व्याधियोंसे छूटकर उत्तम गतिको प्राप्त नहीं होता है। जैसे अग्निमें जला बीज फिर उत्पन्न नहीं होता, ऐसाही ज्ञानसे जले हुए क्लेश फिर आत्मामें नहीं आते हैं, जीवसे [illegible] हुए क्लेश ऐसे नाश हो जाते हैं, जैसे समुद्रसे [illegible] होकर समुद्रफेन मिट जाता है। जिससे आत्मज्ञान हो उस एक श्लोक वा आधे श्लोकको उत्तम समझना चाहिये। कोई दो अक्षरसे कोई श्लोकके एक चरणसे कोई सौ [illegible] और कोई हजार श्लोकोंसे मोक्षका [illegible] समझते हैं। ज्ञानके जाननेवाले वृद्ध [illegible] कहते हैं, कि निश्चयही मोक्षका लक्षण [illegible] है इसके इस लोक और पर- [illegible] नाश हो जाता है। वेद पढ़नेका [illegible] है, ज्ञानी लोग वेदसे ऐसा डरते हैं, जैसे अग्निसे मनुष्य डरते हैं। हे राजन्! तुम सूखे तर्कोंको त्याग कर श्रुति और स्मृतिको धारण करो। एक अद्वय ब्रह्महीको तर्कोंसे सिद्ध करके धारण करो। जिसके साधन उलटे हैं, उसकी बुद्धि कभी ठीक नहीं होती। पहले यत्न पूर्व्वक वेदको पढ़ना, वेद ब्रह्मका स्वरूप है, वेदही तत्व है, उसके जाननेसे जीवको ब्रह्मज्ञान होता है। वेदमें लिखा है आशीर्व्वाद और कर्म्म तथा प्राणियोंका प्रभाव ये सब युगके अनुसार फल देते हैं। इन्द्रियोंकी निर्म्मलता और इन्द्रियोंका रोकना अनाहारदिव्यव्रत कहलाता है। अन्नका त्यागना नहीं; इस लिये इन्द्रियोंका रोकना चाहिये। तपसे स्वर्ग मिलता है, दानसे भोग मिलता है, ज्ञानसे मोक्ष मिलतो है, और तीर्थस्नानसे पाप छूटता है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! महा तेजस्वी राजा युधिष्ठिर मार्कण्डेय मुनिसे बोले, हे महाराज! आप मुझसे दानकी उत्तम विधि कहिये। मार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजेन्द्र युधिष्ठिर! जो तुम मुझसे दानधर्म्मकी विधि पूछते हो, सो मुझे भी प्यारी है। हे राजन्! श्रुति और स्मृतिमें लिखा दानका सार है, सो मैं कहता हूं सुनो। हे युधिष्ठिर! पीपलकी छायामें वा जहां पीपलकी हवा आती हो, वहां श्राद्ध करनेसे इस कल्पतक नष्ट नहीं होता, जो मनुष्य धर्म्मशाला बनवाकर और उसमें अन्न आदि भरवाकर दान करता है, उसको सब यज्ञोंका फल होता है; जो नदीमें तरने वा [illegible] जानेवाले घोड़े दान करता है, वह सब पापोंसे छूट जाता है। जो ग्रहण पूर्णमासी और अमावस्याको [illegible] दान करता है, उसे अक्षय फल प्राप्त होता है, [illegible] दान करनेसे दूना [illegible] दान करनेसे दस गुना फल पाता है [illegible] का

संक्रान्तिमें दान करनेसे छियासी गुणा और वप विशेषमें दान करनेसे सौगुणा अधिक फल होता है। जो सूर्य्य और चन्द्रमाके ग्रहणमें दान देता हैं, उसको अक्षय फल होता है; ऋतुमें दान करनेसे दस गुणा, अयनमें सौ गुणा, ग्रहणमें सहस्र गुणा, मेष और तुलाकी संक्रान्तिमें अनन्त फल होता है। भूमिके देनेवाले भूमिको नहीं पाते है, वाहनके देनेवाले वाहन पर चढ़कर नहीं जाते है, किन्तु जो जो वस्तु ब्राह्मणोंको देता है, वह दूसरे जन्ममें पाता है; अग्निकी सन्तान सुवर्ण है, विष्णुकी सन्तान पृथ्वी और सूर्य्यकी सन्तान गौ है, जो सुवर्ण, गौ और पृथ्वी दान करता है, उसको तीनो लोक दान करनेका फल प्राप्त होता है, तीनों लोकमे दानसे बढ़कर कल्याण करनेवाला कोई धर्म्म नहीं है, इसलिये विमल बुद्धिवाले दानहीको संसारमे प्रधान मानते है।

२९९ अध्याय समाप्त।

मार्कण्डेय समस्या प्रकरण।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन! महाराज युधिष्ठिर राजर्षि इन्द्रद्युम्नकी कथा महाभाग मार्कण्डेय मुनिसे सुनके तपोवृद्ध निष्पाप दीर्घायु मार्कण्डेयसे पूछने लगे, हे धर्म्मज्ञ। आप देवता, दानव, राक्षस, राजवंश, और ऋषिवंशको जानते हैं, हे द्विजोत्तम। इस संसारमें आपसे कुछ छिपा नहीं है। हे मुने। आप सर्प, मनुष्य, राक्षस गन्धर्व, अप्सरा, देव यक्ष और किन्नरोंको दिव्य कथाको जानते है, हे द्विजसत्तम। मै प्रसिद्ध इक्ष्वाकुवंशी राजा कुवलयाश्वकी इस कथाको ठीक ठीक सुनना चाहता हू, जिससे वह धुन्धुमार नामको प्राप्त हुए थे। हे भृगुवंशियोंमे उत्तम! कुवलयाश्वका यह उलटा नाम कैसे हुआ आप मुझसे कहिये।

श्रीवैशम्पायनमुनि बोले, हे राजन्! युधिष्ठिरके ऐसे वचन सुनके महामुनि मार्कण्डेयने धुन्धुमारकी कथाको आरम्भ किया। श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर। मै तुमसे धर्म्म भरी राजा धुन्धुमारकी कथा कहता हूं, तुम सुनो। जैसे इक्ष्वाकुकुलमें उत्पन्न हुए राजा कुवलयाश्व धुन्धुमार नामको प्राप्त हुआ था, वह कथा तुम सुनो। हे कौरव! हे भारत! महर्षि उत्तङ्क एक प्रसिद्ध ऋषि थे, उनका आश्रम किसी रमणीय मरुभूमि देशमें था। हे राजन्। उत्तङ्कने विष्णुको प्रसन्न करनेकी इच्छासे अनेक वर्षतक घोर तप किया। उत्तङ्कसे प्रसन्न होकर विष्णुने साक्षात दर्शन दिये। विष्णु भगवानको देखकर उत्तङ्कने अनेक प्रकारकी स्तुति करी। उतङ्क मुनि बोले, हे देव। तुमनेही देवता दैत्य मनुष्यो सहित सम्पूर्ण प्रजाको तथा अचर और चर जगतको बनाया है, तुमने ब्रह्मा और वेदको रचा, है, हे महा प्रकाशयुक्त देव। आकाश तुम्हारा सिर, सूर्य्य और चन्द्रमा तुम्हारे नेत्र, वायु श्वास और अग्नि तेज है, हे अच्युत। सम्पूर्ण दिशा तुम्हार हाथ और समुद्र कोख है, हे मधुसूदन! पर्व्वत तुम्हारी पिण्डरी और अन्तरीक्ष जङ्घा है; देवी पृथ्वी तुम्हारे चरण और औषधि तुम्हारे रोम है; हे देव। इन्द्र, चन्द्रमा, अग्नि, देवता, असुर और नाग लोग सम्पूर्ण तुम्हारी स्तुति करते है, हे जगत्पते! तुम सब प्राणियोंमें व्यापक हो। महापराक्रमी योगी तथा महर्षि लोग तुम्हारी स्तुति करते है, हे पुरुषोत्तम। तुम्हारे प्रसन्न रहनेसे जगतमे प्रसन्नता रहती है, और तुम्हारे क्रोध करनेसे जगतमे भय फैल जाता है, तुमही एक जगतके भयनाश करनेवाले हो। तुमही देवता और मनुष्योंके सुख देनेवाले हो, तुमहीने तीन पैरसे तीनो लोककी छीना था, बढ़े हुए दैत्योंका तुम्हींने नाश किया था, तुम्हारेही प्रतापसे देवतोंको परम पद मिला है, हे महाशोभायमान देव। तुम्हारेही क्रोधसे दैत्योंकी पराजय हुई, तुमही सब

प्राणियोंके कर्त्ता और हर्त्ता हो, तुम्हारी आराधनासे देवतोंके सुखकी वृद्धि होती है। हे राजन्! इस प्रकारसे महात्मा उत्तङ्कको स्तुतिको सुनकर विष्णु भगवान उत्तङ्कसे बोले, हे उत्तङ्क! मैं तुमसे प्रसन्न हूं, तुम वर मांगो। उत्तङ्क बोले, हे महाराज! मुझे आपके दर्शन हुए, इसीसे सब वर प्राप्त होगया। तुमही सनातन पुरुष और जगतके रचनेहारे हो। विष्णु बोले, हे द्विजसत्तम! मैं तेरे धीर स्वभावसे प्रसन्न हुआ। तुम मुझसे अवश्य वर मांगो। हे राजन्! विष्णुके ऐसे वचन सुनके उत्तङ्कने हाथ जोड़कर वर मांगा। उत्तङ्क बोले, हे भगवन! हे कमलनयन! यदि आप मुझपर प्रसन्न हैं, तो यही वर दीजिये, कि मेरी बुद्धि सदा धर्म्म, सत्य, और इन्द्रियोंके जीतनेमें लगी रहै और आपकी भक्तिमें सदा अभ्यास रहै। भगवान विष्णु बोले, हे ब्राह्मण! मेरी कृपासे ऐसाही होगा, वह योगभी तुम्हें प्राप्त होगा, जिसे देवतालोग जानते हैं, इस योगके प्रतापसे तुम संसारका महा कार्य्य करोगे, हे ब्राह्मण! धुन्धुमार नामक असुर संसारका नाश करनेको महा तप करेगा, इक्ष्वाकु कुलमें महा पराक्रमी बृहदश्व राजा होगा, उसका पुत्र शुद्ध और [illegible] कुवलयाश्व नामका होगा। कुवलयाश्व [illegible] योगका आराधन करेगा, फिर तुम्हारे [illegible] वह धुन्धुमार होगा। हे राजन युधिष्ठिर! इतना कहकर विष्णु वहीं अन्तर्द्धान होगये।

धुन्धुमारोपाख्यानमें
[illegible] अध्याय समाप्त।

मार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! [illegible] नामक राजा [illegible]

आव हुए। हे युधिष्ठिर! आवहीने आवस्ती नगरी बसायी है, राजा आवके पुत्र बृहदश्व और बृहदश्वके कुवलयाश्व पुत्र हुए; राजा कुवलयाश्वके इक्कीस हजार पुत्र उत्पन्न हुए। सब पुत्र विद्या पढ़े हुए और बलवान जीतनेमें अयोग्य थे, समय प्राप्त होनेपर राजा बृहदश्वने अपने पुत्र कुवलयाश्वको शूर और धार्म्मिक समझके राज्य देदिया। राजा बृहदश्व अपने पुत्रको राज्य देकर तप करनेकी इच्छासे वनको चलेगये। मार्कण्डेय मुनि बोले, हे नरनाथ युधिष्ठिर! राजा बृहदश्वको वनमें जाता हुआ सुनके ब्राह्मणोंसे उत्तम उत्तङ्कने निवारण किया। उत्तङ्कने कहा, हे शस्त्र जाननेवालोंमें श्रेष्ठ नरोत्तम! आप प्रजाकी रक्षा कीजिये; आपकी रक्षासे हमलोग निर्भय रहते हैं, हे राजन्! तुम्हारी रक्षासे पृथ्वी निर्भय रहती है, इसलिये तुम वनको जानेके योग्य नहीं हो, प्रजाकी रक्षा करनेमें जैसा महा धर्म्म है, वैसा वनके जानेमें नहीं है, तुम अपनी बुद्धिको विपरीत मत करो। हे राजन्! प्रजापालन धर्म्मको पहले राजालोग करते आये हैं, तुम उसीको करो राजाको प्रजाकी रक्षा करनी चाहिये, हमलोग उद्विग्न होकर तप नहीं कर सकते हैं। हे राजन्! मेरे आश्रमके समीप मारवाड़ देशमें समुद्रकी बालुकासे पूर्ण उज्जालक नाम तीर्थ है, जो बहुत योजनका लम्बा और चौड़ा है, वहाँ पर महा भयानक महा पराक्रमी मधु दैत्यका पुत्र धुन्धु नामक दैत्य भूमिके भीतर रहता है। हे राजन्! उसको मारकर तुम वनको जाना; वह राक्षस संसारको नाश करने और देवोंको [illegible] भयानक तप कर रहा है। हे राजन्! [illegible]

करो ; उसको मारनेसे तुम्हारी अक्षय कीर्त्ति होगी ; वह दुष्ट बालूके भीतर सोता है ; एक वर्षके पश्चात जब यह सांस लेता है, तब पृथ्वी वन और पर्व्वतोंके सहित हिल जाती है और उसके सांससे बहुत धूल उड़ती है, उसके श्वासका वायु सूर्य्यमण्डल तकको हिला देता है और सात दिनतक उस वायुसे धूआं और अग्नि निकलती रहती है तथा पृथ्वी हिलती रहती है। इस कारणसे मैंभी अपने आश्रम पर नहीं रह सकता हूं। हे राजेन्द्र ! संसारकी हित-कामनासे आप उसका नाश कीजिये, उस असुरके मरनेसे ससार सुखी रहैगा, मेरी बुद्धिमें तुम उसके नाश करनेमें समर्थ हो। हे राजन्। जब तुम उसको मारोगे, तब विष्णुका अंश तुममें आवेगा, मुझे विष्णुने पहिले वरदान दिया है, कि जो उस घोर राक्षसको मारेगा, उसके शरीरमें विष्णुका अंश आकर सहाय होगा। हे राजेन्द्र ! तुम विष्णुका तेज धारण करके उस महा पराक्रमी घोर राक्षसका नाश करो, हे पृथ्वीनाथ ! वह महा पराक्रमी और तेजस्वी राक्षस थोड़े बलवालेसे सौ वर्षमें भी नहीं मारा जायगा।

धुन्धुमारोपाख्यानमें
२०१ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, राजर्षि वृहदश्व उत्तङ्कके ऐसे वचन सुन हाथ जोड़कर बोले, हे ब्राह्मण। तुम्हारा वचन सत्य होगा, मेरा यह पुत्र कुवलयाश्व बुद्धिमान शीघ्र लड़नेवाला पराक्रमी तुम्हारे प्यारे कामको करेगा, इसमें कुछ सन्देह नहीं ; इसके सब पुत्र ऐसे पराक्रमी हैं, कि जिनके हाथही शस्त्र हैं। हे महाराज ! मैंने शस्त्र त्याग दिये हैं; इस कारणसे आप मुझे जाने दीजिये। उत्तङ्क मुनिने कहा, कि ऐसा ही हूंगा। राजा अपने पुत्रको मुनिके कार्य्य करनेकी आज्ञा देकर उत्तङ्कके पाससे चले गये।

राजा युधिष्ठिर बोले, हे तपोधन! वह महापराक्रमी दैत्य कौन, किसका पुत्र और किसका पोता था? ऐसा पराक्रमी दैत्य तो मैंने कभी नहीं सुना। हे महाबुद्धिमान ! मैं उसकी कथा विस्तारपूर्व्वक सुनना चाहता हूं।

मार्कण्डेय मुनि बोले, हे नरनाथ युधिष्ठिर। मैं ठीक ठीक विस्तारपूर्व्वक उसकी कथा कहता हूं, तुम सुनो। जब सम्पूर्ण जगत जलमें डूब गया, और सब चर अचर नष्ट हो गये, तब जगतके कर्त्ता अविनाशी विष्णु जिनको सिद्ध और मुनि संसारका महेश्वर कहते हैं, अपने योग-बलसे जलपर नागराज शेषके फणपर सो रहे। हे महाभाग। अच्युत लोक-कर्त्ता भगवान विष्णुकी वही नागका फण शय्या हो गयी। सोते हुए विष्णुकी नाभीसे सूर्य्यके समान प्रकाशवाला कमल उत्पन्न हुआ और उस कमलसे ब्रह्मा उत्पन्न हुए। सम्पूर्ण लोकोंके गुरु ब्रह्मा सूर्य्यके समान प्रकाशवाले चार मुखयुक्त चारों वेद लिये अपने प्रभावसे प्रगट हुए। ब्रह्मा किसीसेभी हारने योग्य नहीं थे, कुछकालके पश्चात् महापराक्रमी दो दैत्य वहां आये। उनका नाम मधु और कैटभ था, उन दैत्योंने महा शोभायमान विष्णुको दिव्य सांपके फणपर सोते हुए देखा। सर्पका फण बहुत योजनों तक लम्बा और चौड़ा था, उस पर किरीट और कौस्तुभ मणि तथा पीताम्बर धारण किये, विष्णु सोते थे। विष्णुका शरीर शोभा और तेजसे विचित्र और हजारों सूर्य्योंके समान शोभायमान था, विष्णु तथा कमलनयन ब्रह्माको कमल पर बैठे हुए देखकर मधु और कैटभको महा आश्चर्य्य हुआ। तब मधुकैटभने महा तेजस्वी ब्रह्माको डराया, महा यशस्वी ब्रह्माने उनके डरसे कमलकी डंडीको खूब हिलाया, उससे विष्णु जागे। विष्णुने जागकर महाबली दोनो दैत्योंको देखा, उनको देखकर विष्णुने कहा, हे महाबली दैत्यो! तुम्हारा

कल्याण हो, हम तुमसे प्रसन्न होकर तुमको वर देते हैं। महा अभिमानी वलवान दैत्योंने इसप्रकार कहा, हे महाराज। हम दाता हैं, जो तुम्हारी इच्छा हो, हमसे वर मागो, हम तुम्हें बिना विचारे देंगे। भगवान विष्णु बोले, हे पराक्रमी वीरो। मैं तुमसे वर मागता हूं, तुम दोनोंके समान कोई मनुष्य वलवान नहीं है, तुम सत्य पराक्रमी हो, इस लिये तुम मुझे यही वरदान दो, कि मैं तुम्हें मारडालूं, संसारके कल्याणके लिये मैं यही वर मागता हूं। मधुकैटभ बोले, हे पुरुषोत्तम। हम दोनों सत्य धर्म्मको करनेवाले हैं, हमने कभी हंसीमें भी झूठ नहीं बोला, हमारे समान जगतमें वल, रूप, शूरता, धर्म्म, तपस्या, दान, शील और इन्द्रियोंको रोकनेमें कोई नहीं है, हे केशव। हमको बड़ा दुःख प्राप्त हुआ, पर कालकी गतिको कोई नहीं रोक सकता है, सो अब तुम अपने कहे हुए वचनको पूरा करो। हे देव। हम दोनों जलरहित स्थानमें मरना चाहते हैं, और यहभी चाहते हैं, कि मरनेके पीछे हम दोनों तुम्हारे पुत्र हों। हे देवतोंमें उत्तम! ऐसा कार्य्य कीजिये जिससे हमारी इच्छा पूर्ण हो। श्रीविष्णु भगवानने कहा, कि मैं सब ऐसाही करूंगा। तब विष्णुने सब स्थानको जलसे भरा देखकर सोचा कि इनको कहां मारें, पीछे विचारा कि आकाश जलसे डूबा नहीं है, तब उसीपर मधु और कैटभके शिरको रखके तेज धारवाले चक्रसे काटडाला।

धुन्धुमारोपाख्यानमें
[illegible] अध्याय समाप्त।

[illegible] मुनि बोले, हे महाराज। उस [illegible] का महापराक्रमी एक पुत्र [illegible] बड़ा होकर बड़ा भयानक तप किया, जब तप करते करते उसके शरीरकी नसें दीखने लगीं, तब ब्रह्माने उसे वर दिया। धुन्धुने ब्रह्मासे यह वर मांगा, कि मैं दानव, गन्धर्व्व, यक्ष, राक्षस और सर्पोंसे न मारा जाऊं ब्रह्माने कहा, कि ऐसाही होगा। धुन्धु ब्रह्माके चरणोंको नमस्कार करके वहांसे चला गया और अपने पिताका वैर याद करके प्रथम विष्णुके मारनेको पहुंचा। वहां जाकर महा क्रोधी धुन्धुने अनेक देवता और गन्धर्वोंको मारा; विष्णुको महा व्याकुल करके वालूसे भरे हुए उज्जालक तीर्थमें चला गया; हे भरतर्षभ। उस दुष्ट पापात्माने आकर मारवाड़ देशको महा कष्ट दिया; हे नरनाथ। वह उत्तङ्कके आश्रममें आकर बहुत उपद्रव करने लगा, वह भूमिके नीचे वालूमें छिपा रहता था, यह मधु कैटभका पुत्र महा पराक्रमी जगतका नाश करनेके लियेही सोता था। उसे अपने तपका बड़ा वल था। उत्तङ्क ऋषिके आश्रमके पास जब सांस लेता था, तबही अग्नि निकलती थी। हे राजन् युधिष्ठिर। राजा कुवलयाश्व अपने इक्कीस हजार पुत्रोंके सहित दल वल लेकर उत्तङ्कके साथ राक्षसके मारनेको चले। जब राजा चले, तब विष्णुका तेज उनके शरीरमें आगया। उत्तङ्कके तपके प्रतापसे जगतकी रक्षा करनेको विष्णुका तेज राजामें आया। जब राजा कुवलयाश्व लड़नेको चले, तब आकाशमें देवता लोगोंने घोर शब्द किया, कि धुन्धुर आज मारा जायगा। देवता लोगोंने आकाशसे दिव्य फूलोंकी वर्षा करी और दुन्दुभी बजाया। जब श्रीमान राजा कुवलयाश्वने प्रस्थान किया तब [illegible] चलने लगी। इन्द्र [illegible] करने लगे, कि [illegible] न उड़े। हे राजन् युधिष्ठिर। [illegible] मेघ [illegible] देवतोंके [illegible] लगे। [illegible] देवतोंकी [illegible]

सहित वहां इकट्ठे होगये। विष्णुके तेजके प्रतापसे राजा कुवलयाश्व अपने पुत्रोंके सहित चारों ओर धुन्धुरको ढूढ़ने लगे। राजा कुवलयाश्व और उनके पुत्रोंने उस बालुकामें खोद खोदकर समुद्र बना दिया। सात दिनके पीछे खोदते खोदते महाबली धुधुरका शरीर उस बालुकामें मिला। उसका शरीर सूर्य्यके समान प्रकाशमान था। हे राजशार्दूल! उस समय धधुर प्रलयकालकी अग्निके समान पश्चिम दिशाको सोया हुआ था। राजा कुवलयाश्वके पुत्रोंने चारों ओरसे उसे घेर लिया और तीक्ष्ण बाण, गदा, मूषल, पट्टिश, परिघ, और खड्गसे मारने लगे। उनकी मारसे क्रोध करके महाबली धुन्धुर दैत्य उठा और सब अस्त्रोंको खागया। उसके मुखसे प्रलय कालके अग्निके समान अग्नि निकली और राजाके पुत्रोंको जलाने लगी मुखसे उत्पन्न हुई अग्निसे जगत ऐसे जलने लगा, जैसे कपिलके क्रोधकी अग्निसे सगरके पुत्र जले थे। हे राजन्। वह कर्म्म सब लोगोंको अद्भुत मालुम होने लगा। राजाके पुत्र जब अग्निसे जल गये। तब महात्मा कुवलयाश्व उस कुम्भकर्णके समान दैत्यपर दौड़े। जब उस राजाकी देहसे बहुत सा जल निकला, तब राजाने जलमय निज तेजसे दैत्यकी अग्निको शान्त किया। योगी कुवलयाश्वने अपने योग-बलसे दैत्यकी अग्निको शान्तकर उस महा पराक्रमी दैत्यको भस्म करनेके वास्ते ब्रह्मास्त्र छोड़ा। हे राजेन्द्र! हे भरतकुल श्रेष्ठ। ब्रह्मास्त्रने उस दैत्यको भस्म कर दिया। राजा कुवलयाश्व उस महासुरको भस्म करके इन्द्रके समान शोभायमान हो गये। हे राजन्! धन्धुमारके मारनेसे राजा कुवलयाश्व धुधुमार नामसे प्रसिद्ध हुए। देवता और महर्षियोंने प्रसन्न होकर राजा कुवलयाश्वसे कहा कि हम लोग तुमसे प्रसन्न हैं, जो इच्छा हो सो वर मागो। राजा कुवलयाश्वने हाथ जोड़ और प्रसन्न होकर कहा, महाराज। मैं यही वर मागता हूं, कि मैं ब्राह्मणोंको दान देऊं, शत्रुओंसे न जीता जाऊं विष्णुसे मेरी मित्रता रहे; प्राणियोंसे द्वेष न करूं और धर्म्ममें प्रीति रहे तथा स्वर्गमें मुझे अक्षय वास मिले। सब देवतोंने प्रसन्न होकर कहा कि ऐसाही होगा। ऋषि, गन्धर्व्व, और बुद्धिमान महात्मा उत्तङ्कने आदरके सहित राजाको आशीर्व्वाद दिया। देवता और ऋषि लोगभी अपने आश्रमपर चले गये। हे राजन् युधिष्ठिर। राजा कुवलयाश्वके उस युद्धमें तीन पुत्र बच गये—एक दृढ़ाश्व, दूसरा कपिलाश्व और तीसरा चन्द्राश्व। हे राजन्। उन्हीसे इक्ष्वाकुवंशकी परम्परा चली आती है। इस प्रकारसे राजा कुवलयाश्व धुधुरको मारनेके लिये धुधुमार नामसे प्रसिद्ध हुए। यह धुंधुमार का चरित्र पुण्यको बढ़ानेवाला और कीर्त्तिको विस्तार करनेवाला हैं, जो पढ़े वा सुने वह पुत्रवान, धर्म्मात्मा, दीर्घायु, और धनवान होता है, उसको रोगोंका भय नहीं होता है, और सुखी रहता है।

धुन्धुमारोपाख्यान और
२०३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। तब भरतश्रेष्ठ राजा युधिष्ठिरने महा तेजस्वी मार्कण्डेय मुनिसे धर्म्मका कठिन प्रश्न किया कि हे भगवन! मैं स्त्रियोंका उत्तम धर्म्म सुनना चाहता हू, क्योंकि यह धर्म्म बहुत सूक्ष्म है, आप कृपा करके मुझसे कहिये; हे विप्रर्षे। सूर्य्य, चन्द्रमा, वायु पृथ्वी और अग्नि ये प्रत्यक्ष देवता हैं, ऐसेही पिता, माता, भगवान और गुरुभी प्रत्यक्ष देवता हैं। जैसे वे सब गुरुलोग मान्य है, वैसेही पतिव्रता स्त्रीभी मानने योग्य हैं। पतिव्रताओंका धर्म्म बहुत कठिन जान पड़ता है, इस लिये आप पति

ताओंका माहात्म्य हम लोगोंसे वर्णन कीजिये। हे निष्पाप ! सब इन्द्रियोंको रोककर केवल पतिकोही देवता मानना और उसीका ध्यान करना मुझको बहुत कठिन जान पड़ता है। माता, पिताकी सेवा और पतिको सेवा करना और स्त्रीधर्म्म इससे कठिन और धर्म्म नहीं दीख पड़ता है। अच्छे आचारवाली स्त्रियां जो आदरके सहित व्रत करती हैं वह बहुतही कठिन काम करती है। जो स्त्री सत्य बोलती है, जो दश महीने तक गर्भ धारण करती है, जो पुत्र उत्पत्तिके समय प्राणसंकट और महा दुःखको पाकर भी पुत्र उत्पन्न करती है, फिर बड़े स्नेहके साथ पुत्रको पालती है और जो स्त्री कुकर्म्ममें डूबकर बुरे काम करती है, यह सब मुझे बहुत कठिन जान पड़ते हैं। हे ब्राह्मणोत्तम ! क्षत्रियोंके धर्म्मका सारभी मुझसे कहिये, महात्माओंकाभी धर्म्म करना कठिन है। हे कहनेवालोंमें श्रेष्ठ ! इस प्रश्नको आप यथावत कहिये, मुझे सुननेकी बड़ी इच्छा है।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् ! हे भरतश्रेष्ठ ! मैं इस कठिन प्रश्नके उत्तरको कहता हूं आप सुनें, कोई आचार्य्य माताको अधिक कोई आचार्य्य पिताको अधिक मानते हैं। यह माता बहुत कठिन काम करती है, [illegible] पालन करती है। तपस्या, देव[illegible] की पूजा और भिक्षा आदि उपायोंसे पिता [illegible] उत्पन्न करता है, इसरीतिसे बड़े कष्टके [illegible] पुत्रको पाकर पिता और माता [illegible] विचार करते हैं, कि यह पुत्र कैसा होगा, [illegible] पिता और माता पुत्रसे यश कीर्त्ति, [illegible] और धनकी आशा रखते हैं [illegible] उनकी आशाको पूरी करता है, [illegible] है। [illegible] माता [illegible]

हे राजन् ! स्त्रियोंके वास्ते श्राद्ध, व्रत और यज्ञ आदि कोई क्रिया नहीं लिखी है; स्त्री जो पतिकी सेवा करती है, उसीसे उसको स्वर्ग मिलता है। हे राजन् युधिष्ठिर ! इसी प्रकरणमें प्रतिव्रता स्त्रीका धर्म्म कहता हूं, तुम सुनो।

पतिव्रतोपाख्यानमें
२०४ अध्याय समाप्त ।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, किसी देशमें एक जातिश्रेष्ठ, वेद पढ़नेवाले, तपस्वी, धर्म्मात्मा कौशिक नामक ब्राह्मण रहते थे। वे अङ्गोंके सहित वेद पढ़ते थे। एक दिन वे किसी वृक्षकी नीचे बैठे वेद पढ रहे थे और उस वृक्ष पर एक बगुली छिपी हुई बैठी थी। उसने ब्राह्मणके ऊपर बीट कर दी, उसको देखकर ब्राह्मणने बहुत क्रोध किया और क्रोधसे बगुलीको देखा। ब्राह्मणके देखनेसे बगुली मरकर पृथ्वीपर गिर गई। बगुलीको पृथ्वीपर गिरी देख ब्राह्मणको बहुत दया आई और सोचने लगे कि मैने क्रोधके वशमें होकर यह बड़ा बुरा काम किया।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, ऐसे कहकर वह [illegible] ब्राह्मण गांवमें भीख मांगने चले गये; [illegible] जाकर उत्तम कुलोंसे भिक्षा मांगने लगे। मांगते मांगते एक उत्तम कुलके घर जाकर भिक्षा मांगी और कहा, कि कुछ दो। तब [illegible] बहुत [illegible] देती हूं। वह स्त्री बरतन मांज रही थी, इतनेहीमें उसका पति [illegible] व्याकुल होकर घरमें आया और स्त्री पतिको देखकर ब्राह्मणको भिक्षा देना भूल गई, और अपने पतिको पाद, आचमन और आसन देने लगी। [illegible]

चित्तके अनुसार चलती थी, मन वचन, व कर्म्मसे कभी दूसरे पुरुषकी इच्छा नहीं करती थी; वह सब प्रकारसे पतिहीकी सेवा करती थी; वह उत्तम कर्म्म करनेवाली घरके कामोंमें चतुर और कुटम्बका हित करनेवाली थी और पतिका सदा हित चाहती थी। देवता और अतिथिकी सेवा और सास ससुरका अच्छीतरहसे आदर करती थी। सदाही इन्द्रियजित रहती थी। जब उसका पति भोजन कर चुका, तब उसने देखा कि ब्राह्मण बाहर खड़ा है। हे भरतसत्तम! उसे पतिकी सेवा करते करते जब ब्राह्मणकी याद आई, तब वह पतिव्रता बहुत लज्जित हुई और भिक्षा लेकर ब्राह्मणके पास गई। ब्राह्मण बोले, हे उत्तम स्त्री। तुम मुझे "खड़ा रहो" ऐसा कहकर चली गई और फिर मुझको विदा न किया।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! ब्राह्मणको तेज और क्रोधसे जलते हुए देखकर वह पतिव्रता शान्तिपूर्व्वक बोली, हे विद्वन्! आप क्षमा कीजिये, मैं पतिको देवता मानती हूं, वह भूखे थे, उनकी सेवा करने लगी। ब्राह्मण बोले, हे पतिव्रते। तैंने ब्राह्मणको छोटा और पतिको बड़ा समझा? ब्रह्माभी ब्राह्मणोंको नमस्कार करते हैं, फिर मनुष्य किस गिन्तीमें है। हे अभिमानि। तैंने बूढ़ोंके वचन नहीं सुने, ब्राह्मण अग्निके समान होते हैं, पृथ्वीको जला सकते हैं। स्त्री बोली, हे विप्रर्षि। मैं बगुली नहीं हूं, हे तपोधन। आप क्रोधको छोड़िये, क्रोध करकेही मेरा क्या करेंगे? उसपर मैं ब्राह्मणका अपमान नहीं करती हूं और ब्राह्मणोंको देवताके समान मानती हूं; हे पापरहित ब्राह्मण। मेरे इस अपराधको आप क्षमा कीजिये, मैं ब्राह्मणोंके तेजको जानती हूं, जिन्होंने क्रोधसे समुद्रको खारी और पीनेके अयोग्य बना दिया, मैं ऐसे आत्मज्ञानी महा तपस्वी मुनियोंकोभी जानती [illegible] जिनके क्रोधकी दण्डकवनकी अग्नि अब[illegible] नहीं बुझती है, ब्राह्मणोंके अनादरसे दुष्टा[illegible] महा असुर बातापी अगस्त्य ऋषिके पेटमें [illegible] गया, हे ब्राह्मण! ब्राह्मणोंके अनेक प्रभ[illegible] सुननेमें आते हैं; ब्राह्मणका क्रोधभी भा[illegible] और कृपाभी भारी होती है, हे पापरहि[illegible] मेरी इस भूलको आप क्षमा कीजिये, [illegible] ब्राह्मण। पतिकी सेवा करना जो धर्म्म है, [illegible] मुझे बहुतही प्यारा है, मेरे पति देवतोंके देवता हैं, उसी सामान्य धर्म्मको मैं करती [illegible] हे ब्राह्मण। पतिसेवाका जैसे फल है उस[illegible] तुम देखलो। तुमने बगुलीको अपने क्रो[illegible] जला दिया था, उसको मैंने जान लिया, [illegible] ब्राह्मणश्रेष्ठ। क्रोधही शरीरमें रहनेवा[illegible] शत्रु है, जो क्रोध और मोहको त्याग देता [illegible] उसीको देवता लोग ब्राह्मण कहते हैं, [illegible] संसारमें सत्य बोले, गुरुको सन्तुष्ट करे [illegible] मार खाकर नहीं मारे, उसीको देवता ल[illegible] ब्राह्मण कहते हैं, जो इन्द्रियोंको जीतने वाल[illegible] वेदपाठी, पवित्र और कामदेवको जीतनेवा[illegible] है, उसीको देवता लोग ब्राह्मण कहते [illegible] जिस धर्म्मात्मा बुद्धिमानको अपने समान ज[illegible] दीखता हो, उस धर्म्म करनेवालेको देवता ल[illegible] ब्राह्मण कहते हैं। जो वेद पढ़े और पढ़ा[illegible] यज्ञ करे वा करावे, दान लेकर यथाश[illegible] दान दे उसको देवता लोग ब्राह्मण कह[illegible] हैं, जो ब्रह्मचारी सत्यवक्ता वेदपा[illegible] ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ अपने पढ़ने पढ़ानेमें सावधा[illegible] रहे, उसे देवता लोग ब्राह्मण कहते है[illegible] ब्राह्मणके इतने कर्म्म हैं, जो सत्य बोल[illegible] हो, जिसका मन झूठमें न जाता हो, व[illegible] ब्राह्मण है। ब्राह्मणोंका धर्म्म वेद पढ़न[illegible] मनको विषयसे रोकना, शुद्ध रहना इन्द्रियोंक[illegible] जीतनाही कहते हैं। हे ब्राह्मणोत्तम[illegible] धर्म्मको जाननेवाले महात्मा लोग सत्य औ[illegible]

गृहस्थोंकी धर्म्म कहते हैं : धर्म्म जानना बहुतही कठिन है, वह धर्म्म सत्यहीमें रहता है। वृद्धलोगोंकी आज्ञा है, कि धर्म्ममें वेदही प्रमाण है, हे ब्राह्मण! धर्म्म बहुत प्रकारका दीखता है। आपभी वेदपाठी पवित्र और धर्म्मको जाननेवाले हैं, परन्तु मेरी बुद्धिमें आप धर्म्मको यथावत नहीं जानते। हे ब्राह्मण! यदि आप धर्म्मको नहींजानते हैं, तो जनकपुरीमें जाकर धर्म्मव्याधसे पूछिये। जनकपुरीमें मातापिताकी सेवा करनेवाला, सत्यवादी, इन्द्रियजित एक व्याधा रहता है, वह तुमको धर्म्मका उपदेश करेगा। हे द्विजोत्तम! हे ब्राह्मण! तुम्हारा कल्याण हो, जो मैंने बहुत कहा, उसकोभी आप क्षमा करने योग्य हैं। हे अनिन्दित। हे ब्राह्मण! स्त्री किसीकेभी मारने योग्य नहीं हैं, और तुम तो धर्म्मको जानते हो। ब्राह्मण बोले, हे कल्याणि! मेरा क्रोध चला गया, मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूं, तुमने मेरे अभिमानको दूर किया. मेरा कल्याण हुआ, तुम्हारा कल्याण हो, मैं जनकपुरी जाऊंगा और अपना कार्य्य सिद्ध करूंगा।

मार्कण्डेय मुनि बोले, उस पतिव्रतासे विदा होकर कौशिक ब्राह्मण अपनी आत्माकी निन्दा करते हुए अपने घरको चले गये।

पतिव्रतोपाख्यान और
२०५ अध्याय समाप्त।

मार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर [illegible] हुए सम्पूर्ण वचनोंको [illegible] [illegible] अपनी आत्माकी निन्दा करने [illegible] अपराधीके समान [illegible] गये। सूक्ष्म धर्म्मको [illegible] करते हुए कौशिक ब्राह्मण बोले कि [illegible] दर्शनपर श्रद्धा करके जनकपुरीको [illegible] [illegible] धर्म्मको जानने- [illegible] जनकपुरीमें रहता है, मैं उन्हीं तपोधन व्याधके पास जाके धर्म्मको लक्षण पूछूंगा। ऐसे विचार कर और स्त्रीके वचनोंकी श्रद्धा करके तथा बगुलीको स्मरण करके जनक पुरीको बड़े आनन्दके साथ गये। वह बहुतसे गांव, वन, और नगरोंको लांघते हुए महाराज जनकसे रक्षित मिथिला पुरीको चले। उन्होंने धर्म्म, यज्ञ, और उत्सवोंसे भरी हुई मिथिला पुरीको देखा। उसमें महल, दुमहले, और अनेक अटारियां विराजती थीं। उस रमणीय नगरीमें कौशिक मुनिने प्रवेश किया। जहां अनेक विमान घूमते फिरते थे, जहां अनेक सुन्दर सुन्दर बजार और उत्तम उत्तम मार्ग विराजमान थे, जहां अनेक हाथी, घोड़े, रथ और योद्धा लोग घूम रहे थे, जहां पुष्ट और प्रसन्न लोग विहार कर रहे थे, जहां सदाही उत्सव हुआ करते थे, उस मिथिलापुरीको जाकर कौशिक मुनिने देखा। वहां जाकर उन्होंने धर्म्म-व्याधका घर पूछा और ब्राह्मणोंने बता दिया। वहां जाकर उन्होंने उत्तम नामधारी व्याधको देखा। उन्होंने देखा वह तपस्वी भैंसोंके मांसको बेच रहा है, उस समय वहांपर मांस लेनेवालोंकी महा भीड़ थी, इसलिये ब्राह्मण अलग जाकर एकान्तमें बैठ गये। उस व्याधने जाना कि एक ब्राह्मण आये हैं, तब बहुत घबराकर उठा और जहां एकान्तमें ब्राह्मण बैठा था, वहां आया और कहने लगा, हे द्विजोत्तम! हे भगवन्! हम आपको प्रणाम करते हैं; और आपका स्वागत करते हैं, आपका कल्याण हो। हम व्याध हैं, आज्ञा दीजिये आपका [illegible] काम करें। आपसे [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], कि तुम [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] आपका यहां आना [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

स्थान कुदेशमें है। हे पापरहित। यदि तुम्हारी इच्छा हो तो घरको चलो। ब्राह्मणने प्रसन्न होकर कहा कि बहुत अच्छा चलो। श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, तब वह व्याध ब्राह्मणको आगे करके घरको चला। उसने अपने घरमें जाकर उस ब्राह्मणको आसन दिया, तब पाद्य अर्घ और आचमनसे पूजा की। ब्राह्मणने उसकी पूजाको ग्रहण किया। तब सुखसे बैठकर उस व्याधसे पूछा कि जो कर्म तुम करते हो सो हमारी बुद्धिमें तुम्हारे योग्य नहीं है, हे तात! हम तुम्हारे इस घोर कर्मको देख कर बहुत दुःख करते हैं। व्याध बोला, हे विप्र! यह हमारे पिता प्रपितामहका कर्म है और हमारे कुलके योग्य है, हम अपने कर्मको करते हैं, इस लिये आपको क्रोध नहीं करना चाहिये। ब्रह्माने पहले सब जातियोंके अलग अलग कर्म बना दिये हैं,यत्न करके हम वृद्ध पिता माताकी सेवा करते हैं; हम सत्य कहते हैं, हम कभी किसीकी निन्दा नहीं करते हैं, देवता अतिथि और सेवकोंसे जो अन्न बचता है उसे खाते हैं, दुर्बल वा बलवान कोभी निन्दा नहीं करते; हे ब्राह्मणोत्तम। पूर्वकृत कर्मका फल कर्त्ताको प्राप्त होता है। खेती, गौ रक्षा और व्यापार यह जगतका जीवन है, राजनीति, दण्ड, और वेद विद्यासे ही जगतकी स्थिति है, शूद्र का कर्म सेवा वैश्यका कर्म खेतीकरना, क्षत्रीका युद्ध करना और ब्राह्मणका कर्म ब्रह्मचर्य्य तपस्या, वेदपाठ और सत्य बोलना है। राजा धर्मसे प्रजाकी रक्षा करता है, इसीसे प्रजा अपने कर्मोंको करती है, जो अपने कर्मोंको नहीं करते हैं उन्हें दण्ड देकर राजा उनके कर्ममें लगाता है, राजासे प्रजाको सदा डरना चाहिये; राजा प्रजाको कुकर्मोंसे ऐसा निवारण करता है। जैसे मृगको बाणोंसे मारते हैं। हे ब्राह्मण! इस राजा जनककी नगरीमें कोई भी कुकर्मी नहीं है, चारो वर्ण अपने अपने कर्मको करते हैं, यह राजा जनक ऐसा धर्मात्मा है. कि यदि इनका पुत्र भी दुर्वृत्त वा दण्डनीय हो, तो ये उसे भी दण्ड देते हैं और किसी धर्मात्मासे ग्लानि नहीं करते। जो राजा सब प्रजाको धर्ममें लगाता है उसकी लक्ष्मी, और राज्य बढ़ता है, क्षत्रियोंका परम धर्म दण्डही है। राजा अपने धर्महीसे लक्ष्मीको बढानेकी इच्छा रखते हैं, राजाही चारों वर्णोंका रक्षक होता है। हे ब्राह्मण! मैंने आपसे पशुओंको नहीं मारा, परन्तु दूसरेके मारे हुए पशुओंको बेचता हूं, मैं मांस भक्षण नहीं करता, हे ब्राह्मण! मैं ऋतु कालहीमें अपनी स्त्रीके पास जाता हूं और सदा व्रत करता हूं, केवल रात्रिमें एक समय भोजन करता हूं, हे ब्राह्मण। जो प्राणी शील रहित है, वह कभी शीलवान हो जाते हैं; हिंसा करनेवाला धर्मात्मा होजाता है। राजाके धर्मसे प्रजा धर्मात्मा और राजाके अधर्मसे अधर्मी होजाती है, भयानक लोग, बौने, कुबड़े बड़े सिरवाले, नपुंसक, बहरे और अन्धेलोग राजाके अधर्मसे होते हैं, इसी कारणसे यह राजा जनक प्रजाको पालते हैं; सब प्रजाके ऊपर कृपा रखते हैं, इसीसे सब प्रजा धर्ममें लगी रहती हैं। हे ब्राह्मण! जो लोग मेरी निन्दा करते हैं, और जो स्तुति करते हैं, उन दोनोंको अच्छे कर्मोंसे प्रसन्न करनेकी चेष्टा करता हूं। जो अपने धर्मके अनुसार सेना रखकर प्रजाके धर्मको रक्षा करते हैं, वही राजा कहलाते हैं, और लोग चोर हैं, जो कि कुछ आजीविका उपाय नहीं करते हैं। अपनी सामर्थके अनुसार अन्न दान करते हैं, वही धर्मात्मा है। मान्य लोगोंको पूजा करना, सब प्राणियोंमें दया रखना और त्याग इसके समान मनुष्योंका और कोई उत्तम गुण नहीं हैं। हे ब्राह्मण! झूटको त्याग, बिना कहे

पराया हित करे और काम वा भयसेभी धर्म्मको त्याग न करे। प्यारे कामके सिद्ध होनेसे प्रसन्न न हो। अप्रियसे दुःखी न हो, धनके नष्टमें घबड़ाय नहीं और धर्म्मको त्याग न करे। तथा करे कर्म्मके विपरीत जो अपने आत्माके कल्याणकी इच्छा करता है सो केवल मूर्खता है। जो अपने संगमें बुराई करे उसके संगमें बुराई न करके भलाई करे; भलाईकरने-वालोंके साथ जो बुराई करता है वह आप मारा जाता है, जो असाधु दुष्ट लोग पवित्र साधुओंके कर्म्मको कहते हैं कि यह धर्म्म नहीं है, वे धर्म्ममें श्रद्धा न रखनेवाले असाधु नष्ट हो जाते हैं। जिस प्रकार धौंकनीसे धातु गलती है, ऐसेही पापीभी गल जाता है, मूर्ख अभिमानी असार वस्तुकी चिन्ता करता रहता है, अपने आपको सूर्य्यके समान बड़ा प्रकाशमान दिखाता है; जगतमें मूर्ख अपने आत्माकी प्रशंसा करनेसे भी कीर्त्ति नहीं पाता है, विद्वान, मलिन रहनेसेभी कीर्त्तिमान होते हैं। किसी की निन्दा करनेसे और आपही अपनी स्तुति करनेसे कोईभी विद्वान नहीं होता है। कुकर्म्म-से पश्चात्ताप करनेसे पाप छूट जाता है; फिर [illegible] गा ऐसी प्रतिज्ञा करनेसे मनुष्य शुद्ध हो जाता है। हे ब्राह्मण। पाप छूटनेके यही [illegible] वेदोंमें देखे गये हैं। जो पहले किये [illegible] धर्म्मात्मा लोग नष्ट करदेते हैं [illegible] छिपे हुए पाप नहीं [illegible] पाप करके अपनेको पुरुष न समझे। [illegible] और निन्दा-रहित [illegible] समान [illegible] [illegible] पाप करके भी [illegible] [illegible] पापोंसे [illegible] नष्ट [illegible] [illegible]

लोभी और मूर्खही पाप करते हैं, अधर्म्म धर्म्मसे ऐसे छिप जाता है जैसे घाससे कुआ छिप जाता है। जिनको मनके रोकनेकी गति है, उनके सब वचन धर्म्मके आश्रयसे होते हैं, लोभी और मूर्खोंमें सब हो सकता है, परन्तु शिष्टाचार नहीं हो सकता है।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्। उस महा बुद्धिमान ब्राह्मणने धर्म्म व्याधसे पूछा कि हे महामते। शिष्टाचारको मैं कैसे जानूं? हे धर्म्म करनेवालोंमें श्रेष्ठ। आपसे यह सुन-नेकी इच्छा रखता हूं, आप मुझसे कहिये। धर्म्मव्याध बोला, हे ब्राह्मण! उत्तम शिष्टा-चारमें यह पांचही कर्म्म प्रधान हैं, यज्ञ, दान, तप, वेद पढ़ना और सत्य। जो काम और क्रोधको वशमें करके दम्भ, लोभ और कुटि-लता त्यागके धर्म्महीमें सन्तुष्ट रहते हैं, उन्हें शिष्ट लोग शिष्टरूप कहते हैं।

शिष्ट लोग स्वेच्छाचारी नहीं होते; यज्ञ, वेदपाठ और आचार पालनमें ही लगे रहते हैं, वेही शिष्ट कहाते हैं। उन यज्ञ और स्वाध्याय रहित लोगोंके स्वतन्त्र आचरित कुछ भी नहीं है केवल प्राचीन लोगोंका सदाचारही [illegible] [illegible] है, और आचार पालनभी शिष्टोंका दूसरा लक्षण है। गुरुकी सेवा [illegible] सत्य बोलना, क्रोध न करना, दान देना, यह शिष्टाचारके चार कर्म्म हैं [illegible] शिष्टाचारमें [illegible] [illegible] करता है, [illegible] [illegible]

जो औरोंको बुद्धि देते हैं, आचार्य्यके वचनोंमें स्थित रहते हैं, वेही धर्म्मके जाननेवाले हैं। जो नास्तिक मर्य्यादाको नष्ट करनेवाले दुष्ट पापियोंके सङ्गमें रहते हैं, उनका त्यागकर और धर्म्मात्माओंकी सेवा करके, जिसमें काम और मगर भरे हुए हैं ऐसी पञ्चइन्द्रियरूपी नदीको धारणाकी नाव बनाकर जन्मके दुःखोंसे तरना चाहिये। क्रमसे बुद्धि द्वारा धर्म्मको इकट्ठा करके शिष्टाचारमें तत्पर होनेसे महात्मा ऐसे होजाते हैं, जैसे श्वेतवस्त्र। अहिंसा, और सत्य बोलनाही जगत्का कल्याणकारी धर्म्म है, अहिंसाही परम धर्म्म है और वह सत्यमें रहता है। सत्यमें स्थित होनेसे मनुष्यकी सब वृत्ति ठीक हो जाती है, सत्यही शिष्टाचारमें सबसे प्रधान है। आचार ही सज्जनोंका धर्म्म है, और धर्म्महो सज्जनोंका लक्षण है। जैसा प्राणी होता है, उसका वैसाही स्वभाव होता है, पापी क्रोध, और कामको प्राप्त होता है, और आत्मघाती दोषको पाता है। जो काम न्यायसेयुक्त होता है, उसे धर्म्म कहते हैं, और जो अनाचारसेयुक्त होता है, उसे अधर्म्म कहते हैं, यही शिष्टोकी आज्ञा है। जो क्रोध नहीं करते, किसीकी निन्दा नहीं करते, अभिमान और चञ्चलताको त्यागते हैं, वे शुद्धस्वभाववाले सज्जन शिष्ट कहलाते हैं। वेद विद्यामें निपुण शुद्ध बुद्धिमान गुरुकी सेवा करनेवाले महात्मा शिष्टाचारी कहलाते हैं, उन कठोर कर्म्म करनेवाले महात्माओंके सुकर्म्महीसे भय नाश होता है, उस आश्चर्य्यकारी पुराने अचल सदाचारको करनेवाले बुद्धिमान महात्मा स्वर्गको जाते है। जो लोग आस्तिक अभिमान रहित ब्राह्मणोंको पूजनवाले, वेदको सुननेवाले होते हैं, वेही महात्मा लोग स्वर्गगामी होते हैं। धर्म्म तीन प्रकारका है, एक वेदमें लिखा, दूसरा धर्म्मशास्त्रमें लिखा, और तीसरा शिष्टाचार। विद्याओंका पढ़ना और तीर्थोंमें स्नान करना धर्म्म कहलाता है। सज्जन, क्षमावान, सत्य बोलनेवाले, शुद्ध रहनेवालोंके आचारको देखनेवाले, सब प्राणियोंपर दया करनेवाले सदा हिंसासे रहित, मीठा बोलनेवाले ब्राह्मणके प्यारे होते है। जो शुभ और अशुभ कर्मोंके फल और कर्म्मके विपाकको जानते हैं, वेही शिष्ट कहाते हैं। न्याय और गुणसे भरे, इस लोकके कल्याण करनेवाले सज्जन उत्तम मार्गमें तत्पर रहके स्वर्गको जीतते हैं। दानी, अच्छे बुरेको जाननेवाले, दीनोपर दया करनेवाले, पूजनीय वेदही जिनका धन है, वे तपस्वी शिष्ट कहाते हैं। शिष्ट लोग संसारका उपकार करते हैं, वे धनी नहीं होते, स्त्रियोंसे पीड़ित रहते हैं, किन्तु जो कोई सज्जन उनके यहां जाता है, उनको अपनी शक्तिके अनुसार दान देते हैं, केवल अपने शरीरके निरवाहहीको अपना सुख समझते हैं, इस प्रकारसे सज्जन संसारमें बहुत वर्षतक जीते हैं। अहिंसा, सत्य वचन, सरलता, किसीसे वैर न करना, अभिमानरहित होना, लज्जा, त्याग दम, शम, बुद्धि, धारणा, और संसारके ऊपर दया करना, काम क्रोधको त्यागना, यह जिनमें गुण हों, वेही साधु कहाते हैं। जो न किसीसे वैर करें, सत्य बोलें, सबपर दया रक्खे वही दयालु साधु लोग संसारमें धर्म्म मार्गपर चलते हैं, वेही शिष्टाचारका करते हैं, उन लोगोंकी धर्म्मका निश्चय होता है। निन्दा न करना, क्षमा, शान्ति, सन्तोष, मधुर वचन, काम क्रोधका त्याग, शिष्टाचार, और वेदमें लिखे कर्मोंका करना वेही साधुके कर्म्म हैं। सदाही धर्म्मके अनुसार शिष्टाचारको करते हैं, और बुद्धि तथा प्रसन्नताके आश्रयसे साधुओंके सब भय छूट जाते हैं। हे ब्राह्मणोत्तम! साधु लोग संसारके पुण्य पापके भरे चरित्रोंको देख कर विचार करते हैं। हे ब्राह्मणोंमें उत्तम! मैंने आ

शिष्टाचार देखा और सुना था सो सब तुमसे कहा।

द्विजव्याध सम्वादमें-
२०६ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! वह धर्म्मव्याध फिर बोला, हे ब्राह्मण! जो मैं कर्म्म करता हूं, वह निःसन्देह भयानक है, तौभी प्रारब्ध बलवान है। जो पहले किये कर्म्म हैं, उनका फल अवश्य होता है, यह मेरे किये पापोंका फल है; इस दोषको छोड़नेके वास्ते मैं यत्न करता हूं, तौभी यह नहीं छूटता, प्रारब्ध बलवान है। हे ब्राह्मणोत्तम! इस कर्म्मका निमित्तही मात्र मैं हूं। जिन मरे हुए पशुओंका मांस मैं बेचता हूं, उनको भी मनुष्योंके भोजन होनेके कारण पुण्यही होता है। देवता, अतिथि, पितर और सेवकोंकी पूजा जिन ओषधि, वृक्ष, पशु, मृग, और पक्षियोंके मांससे की जाती है, वे पुण्यात्माही [illegible]। हे ब्राह्मण! अपने शरीरके मांस [illegible]के कारणसे उशीनरके पुत्र राजा शिविको [illegible] स्वर्ग प्राप्त हुआ था। पहिले समयमें [illegible] रन्तिदेवकी रसोईमें दो हजार पशु मारे [illegible] थे, प्रतिदिन दो हजार गाओंका मांस [illegible] रन्तिदेवकी रसोईमें पकता था, उस [illegible] संसारमें बड़ी कीर्त्ति फैली थी। हे [illegible] अनुमान है कि चौमासेमें पशु[illegible] दोष्य। [illegible] मांसको [illegible] वेदमें लिखा है। [illegible] पशुओं मारते हैं, मांस [illegible] ब्राह्मणोंने आज्ञा दी है, कि [illegible] मांसका व्यवहार किया जाता है [illegible], यदि [illegible] लोग पहले [illegible] मांस [illegible] [illegible] देवता और पितरोंको [illegible] मांस खाता हैं, उसे कुछ दोष नहीं होता है। वेदोंमें यही लिखा है कि, मांस न खाना चाहिये है, इसका अर्थ यह है, जैसे जो ऋतुकालमें स्त्रीप्रसङ्ग करता है, वह ब्रह्मचारी कहलाता है, तैसेही योग्य और अयोग्य समझके मांसकी विधि और अविधि है। पूर्व्वकालमें शापके कारणसे राजा सौदासने मनुष्यको भक्षण किया था; हे ब्राह्मण! मैं इसे अपना कर्म्म समझकर नहीं त्यागता हूं। मेरे पुरुषा भी यही कर्म्म करते थे, इससे मैं भी इसी व्यापारसे जीता हूं। हे ब्राह्मण! अपने कर्म्मको त्यागनाही जगत्में अधर्म्म दीखता है, और जो अपने धर्म्मको करता है, वही धर्म्मात्मा है। कर्म्मके निर्णयमें यह अनेक ग्रन्थोंमें देखा गया है, कि ब्रह्माने जिसका जो कर्म्म बना दिया है, वह उसे नहीं छोड़ता। मनुष्यको चाहिये कि भयानक कर्म्म करनेके समय यह विचारता रहे, कि मैं इस कर्म्मसे कैसे छूटूं और सुकर्म्म कैसे करूं, तब उस कर्म्मका निर्णय अवश्य हो जायगा। मैं दान, सत्य बोलने और गुरुकी सदा सेवामें लगा रहता हूं हे ब्राह्मण! ब्राह्मणोंकी पूजा आदि धर्म्म सदा करता हूं। अभिमानसे विवाद नहीं करता हूं। हे ब्राह्मण कोई लोग खेतीको उत्तम समझते हैं पर यह भी हिंसासे भरा हुआ है। जब पृथ्वीमें हल चलाते हैं, उसमें बहुत भूमिमें रहनेवाले जीव मरते हैं, औरभी बहुतसे जीव जो [illegible] हैं वे मरजाते हैं [illegible] मैं जानता हूं, कि खेती करनेवाले [illegible] मारकर खाते हैं [illegible] और [illegible] काटते हैं, इससे मैं जानता हूं कि [illegible] और फलोंमें [illegible] जीव [illegible] हैं, [illegible] [illegible] नहीं हैं, इससे मैं जानता हूं [illegible] प्राणियोंसे भरा हुआ है। [illegible] [illegible] हैं, [illegible] जानता [illegible]

जीवही जीवका आधार है। एक प्राणी दूसरे प्राणिका भोजन है, जगतमें व्यवहार ऐसेही चलते हैं। मनुष्य चलनेके समय पैरोंसे अनेक जीवोंको मारते हैं, इससे मैं जानता हूं, कि बैठते चलते सोते अनेक जीवोंकी हिंसा मनुष्य करते हैं। ज्ञानी और विज्ञानी लोगभी बिना हिंसाके नहीं जी सकते हैं, यह जगत् जीवोंसे भरा हुआ है। जिन्होंने अज्ञानसे अहिंसाको धर्म कहा है, उन्होंने जगत्को हिंसामय देखकर आश्चर्य प्रकाशित किया, तब उन्होंने यह निश्चय किया कि जगत्में कोई अहिंसक नहीं है। हे ब्राह्मण। जो महात्मा लोग अहिंसामें तत्पर रहते हैं, वेभी हिंसा करते हैं; परन्तु वे हिंसाको कम करनेकी चेष्टा करते रहते हैं। बड़े कुलमें उत्पन्न हुए, पुरुष महा घोर कर्म्म करकेभी लज्जित नहीं होते। एक मित्र दूसरे मित्रको, एक शत्रु दूसरे शत्रुको कर्म्म करते हुए नहीं देखता। एक बन्धुकी उन्नतिको दूसरा बन्धु नहीं देख सकता; कितने ही पण्डितमानी मूर्ख गुरुकी निन्दा करते हैं। हे ब्राह्मण! इस प्रकारसे जगत्में बहुत उलट पलट दीखते हैं, इससे मैं भी जानता हूं, केवल वचनसे धर्म्माधर्म्मकर्म्मको कहनेमें बहुत लोग समर्थ हैं, परन्तु जो स्वधर्म्मकर्म्म करता है, जगतमें कीर्त्ति उसीकी होती है।

द्विज व्याध सम्वादमें २०७ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे धर्म्मके जाननेवालोंमें श्रेष्ठ युधिष्ठिर! उस चतुर ब्राह्मणसे धर्म्मव्याध ऐसा बोला। हे ब्राह्मण! वृद्धोंकी आज्ञा है, कि धर्म्ममें प्रमाण वेदही है, सूक्ष्म और अनिन्दित धर्मकी बहुतसी शाखा हैं. प्राणके नाश होनेमें और विवाहमें झूठ बोलना चाहिये; कहीं झूठसे सच और कहीं सचसे झूठ प्राप्त होता है। ऐसा निश्चय है, कि जो प्राणियोंका हितकारी हो वही सत्य है, कहीं धर्मका उलटाही फल हो जाता है, धर्मकी सूक्ष्मताको तुम देखो। जो बुरा काम करता है, और जो अच्छा काम करता है, उन दोनोंका फल मनुष्यको अवश्य प्राप्त होता है, जब मनुष्यकी बुरी दृष्टि होती है तब यह देवतोंकी निन्दा करता है; परन्तु अपने किये दोषको नहीं जानता; इसी मनुष्य मूर्ख चञ्चल और कृतघ्न सदाही सुख दुःखके द्वन्द्वमें पड़े रहते हैं, उनकी बुद्धि गुरुकी शिक्षा और पुरुषार्थभी रक्षा नहीं करते इस लिये यदि पुरुषका क्रिया फल पराधीन न होता तो जो व्यक्ति जिस कामनाकी इच्छा करता उसको वही प्राप्त होती। यदि पुरुषार्थ वा क्रियाका फल पराधीन न हो तो बुद्धिमान चतुर और शिक्षायुक्त मनुष्य निष्फल और कर्महीन न दिखलाई पड़ें। जगत्में जो मनुष्य सदा हिंसा करते हैं, वे संसारको ठगनेमें तत्पर रहते हैं, और वेही सुखी दीखते हैं कितनेही लोग पुरुषार्थको छोड़कर बैठे रहते हैं, परन्तु उनको लक्ष्मी प्राप्त हो जाती है कितनेही लोग अनेक कर्म करनेपर भी लक्ष्मी नहीं पाते। पुत्रके कामनावाले कितनेही देवतोंकी पूजा करते हैं, तप करते हैं, परन्तु उनके दस महीना गर्भमें रहकर कुलकलंक पुत्र उत्पन्न होता है। बहुतसे लोक पिताके सञ्चय किये हुए धनसे भोग विलास करते हैं। हे ब्राह्मण! मनुष्योंको रोग और व्याधिभी कर्मसे ही उत्पन्न होती है। चतुर वैद्य लोग व्याधियोंको ऐसा नाश करते हैं, जैसे वधिक मृगोंका नाश करते हैं, किन्तु जिनको व्याधि भोगनी है, उनके रोग औषधियोंसे भी नहीं छूटते हैं। हे ब्राह्मण! बहुतसे बलवान लोग भोजनकामी दुःख भोगते हैं, इस प्रकारसे संसार शोक और मोहसे मरकर चिल्लाता है। प्रारब्धकी नदीमें बलवान फलोंके द्वारा सब प्राणी बौहे

जाते हैं। हे ब्राह्मण! यदि स्वाधीनता रहती तो कोई न मरता, कोई जराजीर्ण न होता, कोई अप्रिय विषयकी कामना न करता, बल्कि सब अपनी सब प्रकारकी कामना चरितार्थ करते। सब मनुष्योंकी यही इच्छा रहती है, कि हम जगतसे ऊंचे रहें और ऐसेही यथा शक्ति उद्योगभी करते हैं, परन्तु फल सबको नहीं होता। कोई जिनके जन्मकालके मङ्गल नक्षत्र समान ऊंच दीखते हैं उनके कर्मोंके फल बहुत विषम दीख पड़ते हैं। हे ब्राह्मण! कोईभी आप नहीं बढता, इस जगतमें पहले कर्मोंकीही सिद्धि दीखती है, हे ब्राह्मण! वेदोंमें लिखा है कि जीव सनातन है, सब प्राणियोंके शरीर अचल नहीं हैं, शरीरके नाश होने पर कर्मानुसार जीव दूसरे शरीरमें चला जाता है।

ब्राह्मण बोले हे कर्म जाननेवालोंमें श्रेष्ठ! जीव सनातन किस रीतिसे है, सो मैं सुनना चाहता हूं आप कहिये। व्याध बोला कि देहके नाश होनेसे जीवका नाश कभी नहीं होता। मूर्ख लोग मिथ्याही कहते हैं, कि अमुक मनुष्य मर गया। जीव दूसरे शरीरसे चला जाता है, शरीरका भेदही केवल मरना कहलाता है। दूसरेके किये कर्मके फलको संसारमें दूसरा मनुष्य नहीं भोग सकता, जो जिस कर्मको करता है, उसे वह अवश्य भोगता है, और कर्मका नाश कभी नहीं होता है। पुण्यात्मा लोग अच्छे और पापी नीच होते हैं, मनुष्य अपने कर्मोंके अनुसार जन्म लेता है, और कर्मके अनुसार ही वह फल भोगता है। [illegible], कि हे नरश्रेष्ठ! पाप और पुण्य [illegible] इस मनुष्यको किस प्रकार नीच [illegible] प्राप्त होती है। व्याध बोला, [illegible] महात्मा लोग गर्भाधानके कर्मोंका [illegible] वह इन सब कर्मोंको करते [illegible] कर्मका [illegible]

उत्पन्न होता है. उसके अनुसारही जीवकोभी पाप और पुण्यके वशमें होकर शुभ अथवा अशुभ योनियोंसे जन्म लेना पड़ता है। उत्तम कर्म होनेसे देवता, मध्यम कर्म होनेसे मनुष्य, भ्रमवाले कर्म करनेसे नीच, और पाप कर्म करनेसे पशु आदि कुयोनियोंमें जन्म लेना होता है। इस प्रकार यह जीव अपने कर्मोंके वशमें होकर जन्म मरण और बुढ़ापा आदि महा दुःखोंमें सदा पड़ा करता है। पापोंके वशमें होकर सहस्रो नीच योनि और नरकोंको भोगकर पापोंको भोग करता है। इस प्रकार यह जीव अपने कर्मोंको भोगकर मरता है, तब उन पापोंको नाश करनेके लिये अच्छी योनि प्राप्त होती है। जब उस योनिमें जाकर यह नवीन कर्म किया करता है, तब फिर उन कर्मोंके भोगोंको भोगता है। जीवकी निरन्तर ऐसीही दशा रहती है, जैसी अपथ्य खानेसे रोगियोंकी। इस प्रकार यह जीव दुःखोंसे भरा रहता है, और दुःख भोगता रहता है, तौभी वह अपनेको सुखीही मानता है। जब इसके कर्मोंके अन्त हो जाते हैं, तब यह सब बन्धनोंसे छुट जाता है। इस प्रकार यह जीव दुःखोंसे पूर्ण होकर कुम्हारके चाकके समान घूमता है। यदि यह जीव उन सब बन्धनोंसे कर्मोंसे निवृत्त और शुद्ध हो जाय, तो वह जीव याग और तपको करता है, तो वही जीव उस याग और तपके वशमें होकर लोकोंको प्राप्त करता है। यदि उस समय उन सब कर्मोंसे निवृत्त और पवित्र होगया उत्तम [illegible] प्राप्त करता है। जीव पापको भोगके भी [illegible] पापका अन्त नहीं पाता है, इसवास्ते [illegible] करना चाहिये और पापको [illegible] [illegible]

प्राप्त होता है। इस वास्ते सज्जनोंको चाहिये कि सदा शिष्टोंके समान आचरण करें। ऐसी आजीविका करे, जिसमें संसारको दुःख न पहुंचे; अपने धर्म्मसे मनुष्यको वर्त्तना चाहिये, शास्त्रमें शिष्टोंके बहुतसे उपदेश लिखे हुए हैं, बुद्धिमान धर्म्महो श्रवण करते हैं, धर्म्महीसे जीते हैं, धर्म्महीसे तुमभी अपनी आजीविका करो। गुणवान लोग धर्म्महीके मूलको दृढ़ करते हैं, धर्मात्माका चित्त सदा प्रसन्न रहता है, धर्मात्मा इष्ट मित्रके सहित लोक परलोक दोनोंमें सुख भागते हैं। शब्द, स्पर्श, और गन्धके धर्मात्माही स्वामी होते हैं, यही धर्मका फल है। हे ब्राह्मण! धर्मके फलको पाकर जब मनुष्य सन्तुष्ट नहीं होता, तब उसको वैराग्य आता है, ज्ञानदृष्टि हानेसे संसारके दोषोंमें नहीं फंसता, अपनी इच्छानुसार विहार करता है, किन्तु धर्मको नहीं त्याग करता है, पर संसारको नाशवान समझकर सबको त्यागनेका यत्न करता है, तब मोक्षका उद्योग करता है, इस प्रकार धर्मात्मा सुखी होता है, और पापोंको त्यागता है, ऐसाही मनुष्य धार्मिक कहाता है, वही धर्म्म और मोक्षको प्राप्त करता है। तपही प्राणियोंके वास्ते परम कल्याणकारी है, उसके फल शम, और दम है। तपसे मनुष्य अपनी इच्छानुसार फलको पाता है, और इन्द्रियोंको जीतके सत्य और दमसे ब्रह्मपदको प्राप्त होता है। ब्राह्मण बोले, हे व्रतधारी! इन्द्रिय किन्हें कहते हैं? इन्द्रियोंको कैसे जीता जाता है? इन्द्रियोंके जीते जानेका क्या फल है? और वह फल कैसे प्राप्त होता है? इन सबको मैं ठीक जानना चाहता हूं।

द्विज व्याध सम्वादमें
१०८ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! ब्राह्मणके ऐसे वचन सुनकर धर्मव्याधने जो कुछ उनसे कहा सो मैं कहता हूं, सुनो। धर्मव्याध बोला, पहले मनुष्यका मन विज्ञानकी जानेमें प्रवृत्त होता है, तब विज्ञानलाभ होनेपर काम क्रोधको पाता है, पीछे उस काम क्रोधके चरितार्थ निमित्त महत् कर्मका आरम्भ करता है, फिर अपने प्यारे रूप वा गन्धादि विषयोंका अभ्यास करता है, तब मनुष्यको राग उत्पन्न होता है, रागसे द्वेष, द्वेषसे लोभ और लोभसे मोह होता है। तब लोभसे भरे और राग द्वेषसे युक्त मनुष्यकी बुद्धि धर्म्ममें नहीं जाती है। जो धर्म्म करता है, सो केवल कपटसे धन प्राप्तिके लिये है, जो धन कपटसे प्राप्त करता है उसको पापमें लगाता है, उसे जो बन्धु बान्धव लोग पण्डित महात्मा कुकर्म्मसे रोकते हैं उनको युक्तिके साथ उत्तर देता है। ऐसे पुरुषको तीन प्रकारका अधर्म्म प्राप्त होता है; एक मनसे पापकी चिन्ता करना, दूसरे वचनसे पाप करना, तीसरे कर्म्मसे पापको करना। उस अधर्मीके सब उत्तम गुण नष्ट होजाते हैं, पापियोंसे इसकी मित्रता होती है, इससे लोक और परलोकमें दुःख भोगता है। हे ब्राह्मण! पापियोंकी यह गति होती है, अब धर्मात्माओंका वृत्तान्त सुनो। धर्मात्मा पहलेही बुद्धिसे दोषोंको देखते हैं, सुखके तत्वको जान कर साधुओंकी सेवा करते हैं, तब उनकी बुद्धि धर्ममें लगती है। ब्राह्मण बोले, हे व्याध! तुम सत्य धर्म कहते हो, तुम्हारे समान धर्मका कहनेवाला कोई भी नहीं है, तुम्हारा प्रभाव दिव्य है, मेरी बुद्धिमें तुम ऋषि ही हो। व्याध बोला, ब्राह्मणही महाभाग्यवन्त और सब वर्णोंके पितृस्वरूप हैं, संसारियोंको चाहिये, कि उन्हींका प्रिय कार्य्य करे। हे ब्राह्मणोत्तम! जो उनका काम है, सो मैं तुमसे कहता हूं। ब्राह्मणोंको नमस्कार करना चाहिये; अब मैं तुमसे ब्राह्मी विद्या कहना हूं, सुनो। यह सब जगत जीतनेके अयोग्य है; इस महा भूतात्मक

[illegible]नसे परे कोई पदार्थ नहीं है, यही ब्रह्म है। [illegible] महाभूत आकाश, वायु, अग्नि, जल, और [illegible] हैं। इनके स्पर्श गन्ध आदि पाच गुण हैं। [illegible]के भी गुण परस्परमें संक्रामित होके हुए [illegible] हैं। इन्हीं पाचोंसे पाच इन्द्री उत्पन्न [illegible] हैं, छठां चैतन्य मन है, सातवीं बुद्धि और [illegible]ठवां अहंकार है, इन्द्रियोंमें रजोगुण तमो[illegible], और सतो गुण मिले रहते हैं, इस प्रकार [illegible] सत्रह पदार्थ अव्यक्त कहाते हैं, सब इन्द्रियोंके [illegible]हित उनके गुणोंसे गुण मिल करके चौवीस [illegible]कृति कहाती है। यह सब मैंने तुमसे कहा [illegible]और अब तुम क्या सुनना चाहते हो।

द्विज व्याध सम्वादमें २०८ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! धर्म्म-[illegible]धके ऐसे वचन सुनके ब्राह्मणने फिर मनको [illegible]तिको बढ़ानेवाला प्रश्न किया। ब्राह्मण बोले, हे व्याध! हे धर्म करनेवालोंमें श्रेष्ठ! जो पञ्चभूत कहाते हैं, उनमेंसे एक एकका गुण [illegible] अलग है, सो आप कहिये। व्याध बोला, हे ब्राह्मण! भूमि, जल, अग्नि, वायु, और आकाश इनमेंसे पूर्व पूर्वके अधिक गुणवाले और पिछले कम गुणवाले हैं, हे ब्राह्मण! पृथ्वीमें पाच गुण, जलमें चार गुण, तेजमें तीन गुण और आकाशमें एक वायुमें भी दो गुण हैं। शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध [illegible] गुण पृथ्वीमें हैं, इसीसे पृथ्वी अधिक [illegible] कहाती है। शब्द, स्पर्श, रूप, और [illegible] गुण हैं; शब्द, स्पर्श, रूप ये तीन [illegible] हैं, शब्द और स्पर्श वायुके गुण हैं [illegible] शब्द आकाशका गुण है। [illegible] [illegible] गुण सब तत्त्वोंमें हैं और [illegible] हैं, यह एक दूसरेसे नहीं [illegible] दूसरेके बिना नहीं रह [illegible] इतना वर्णन होता है, [illegible] है। हे ब्राह्मण

वे गुण समय परही मिलते हैं; और समय परही अलग भी हो जाते हैं। सब धातु पञ्चभूतोंसेही बनती हैं, इन्हींसे सम्पूर्ण चर और अचर व्याप्त है, इन्द्रियोंके द्वारा जितने पदार्थ बनते हैं, वे सब विनाशी और विकारी हैं; जो इन्द्रियोंसे अलग हैं, वही अविकारी है, जैसे अपने शब्दादि विषयोंको इन्द्री ग्रहण करती हैं। जीव इन्द्रियोंको धारण करनेवाला है, इससे उसको सन्ताप होता है। जो आत्माको सब जगतमें और जगतको आत्मामें देखता है, वही पूर्ण ज्ञानी सब प्राणियोंको देखता है। जो सब अवस्थामें सब प्राणियोंका देखनेवाला है, उस ब्रह्म समान महात्माको अशुभकर्म्म नहीं प्राप्त होते हैं। अविद्या भरे हुए क्लेशोंको जो लाघ गया है, वह महात्मा संसारमें प्रकाशमान ज्ञान मार्गसे मोक्षको प्राप्त होता है; जो तिनकेसे ब्रह्म तकमें अविकारी परमेश्वरको व्यापक देखता है, वह शरीररहित अनुपम बुद्धिमान परमेश्वरको जाननेवाला और योगी कहाता है। हे ब्राह्मण! जो तुमने पूछा, वह सब तपसे सिद्ध होता है, इन्द्रियोंको जीतनेसे ही तप होता है, और प्रकारसे नहीं। जो स्वर्ग नरकको प्राप्त होता है, वह इन्द्रियोंको जीतने और न जीतनेसेही होता है, सम्पूर्ण योगकी विधि इन्द्रियोंको जीतना ही है, येही तप और नरकके मूल हैं, इन्द्रियोंको न जीतनेसे ही जीवको दोष प्राप्त होते हैं। [illegible] इन्द्रियोंको अपने वशमें कर लिया है, तब [illegible] निःसन्देह सिद्धि प्राप्त होती है; [illegible] और छठे मनको जो रोकता है, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

कर अच्छे मार्गसें चलते है वेही अच्छे कहाने वाले हैं; जो इन्द्रिय इधर उधरको घोड़ेके समान मार्गमें भागती हैं, उनको जो रोकता है वही उत्तम सारथी मनसे इन्द्रियोंको जीतता है; और जो अनेक मार्गमें चलनेवाली इन्द्रियोंके पीछे मनको दौड़ाता है, उसकी बुद्धि ऐसी नष्ट होती हैं, जैसे वायु नावको जलमें डुबाता है। जो शब्दादिक विषयोंके मोहमें नहीं फंसता है, वही ध्यानके फलको प्राप्त होता है।

द्विजव्याध सम्वादमें
२१० अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! इस प्रकारसे धर्म्म व्याधके सूक्ष्म धर्म्म कहने पर उस सावधान ब्राह्मणने फिर सूक्ष्म प्रश्न किया। ब्राह्मण बोला, हे धर्म व्याध! सतोगुण रजोगुण और तमोगुणके गुणोंको आप यथावत कहिये। धर्मव्याध बोला, तुम जो हमसे पूंछते हो, सो हम उन तीनोंके गुणोंको भिन्न भिन्न कहते हैं, सुनो। तमोगुण मोहको बढ़ानेवाला, रजोगुण जगतके कार्य्योंमें लगानेवाला और सतोगुण प्रकाश करनेवाला है। इसीसे सतोगुण उन सबमें उत्तम गिना जाता है। तमोगुणसे अविद्या, मूर्खता, निद्रा, इन्द्रियोंकी चञ्चलता, क्रोध और आलस्य बढ़ता है। जो वचनचतुर, विचारशील मनुष्योंमें उत्तम, पराई निन्दा न करनेवाला, बहुत कामोंको करनेकी इच्छा रखनेवाला, कठोर और अभिमानी होता है, वह मनुष्य रजोगुणी है। जो ज्ञानयुक्त, धीर, निरालसी हो, जो पराई निन्दा नहीं करता हो, क्रोध रहित हो, बुद्धिमान और दानी हो, वह मनुष्य सतोगुणी होता है। सतोगुणी मनुष्य संसारी मनुष्योंके कर्म्मसे दुःखी होता है। जब उसे ज्ञान होता है, तब वह संसारी मनुष्योंकी निन्दा करता है, वैराग्यमें उसका चित्त पहले लगा रहता है, अहङ्कार उसे थोड़ा होता है और उसका स्वभाव सीधा होता है। सतोगुणी मनुष्योंको सब दुःख शान्त रहते हैं। सतोगुणी मनुष्योंको कभी किसी कर्म्मोंका सन्देह नहीं होता। शूद्र मनुष्य सतोगुणके प्रतापसे वैश्य होता है, और वैश्यत्वसे क्षत्रियत्व प्राप्त होता है, फिर सुकर्म्म करनेसे वह ब्राह्मणत्वको प्राप्त होता है। हे ब्राह्मण! हमने इन सब गुणोंके गुण कहे अब तुम और क्या सुनना चाहते हो?

द्विज व्याध सम्वादमें २११ अध्याय समाप्त।

ब्राह्मण बोला, विज्ञानाभिधेय तेजोमय धातु, पार्थिवधातुको प्राप्त होकर किस निमित्त देहाभिमानी होता है? और प्राणादि वायु नाड़ी मार्ग आश्रय करके किस प्रकार शरीरको विचेष्टित करता है?

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! ब्राह्मणने धर्म्मव्याधसे जो प्रश्न किया, धर्म्मव्याधने महात्मा ब्राह्मणको उत्तर दिया। व्याध बोला, हे ब्राह्मण! प्रकाशमय विज्ञानात्मा चिदात्माको आश्रय करके शरीरका चैतन्य सम्पादन करता है। प्राण उस चिदात्मा और विज्ञानात्मामें वर्तमान रहके विचेष्टमान होता है। प्राणही सब जगतको रक्षा करता है। वही प्राण सब शरीरका पालन करता है, भूत और भविष्यत जो कुछ हैं सब प्राणहीमें स्थित हैं, सब प्राणियोंमें प्राणही श्रेष्ठ है, और हम उसी प्राणयोनि ब्रह्मकी उपासना करते हैं; प्राणही सब जन्तुओंकी आत्मा, और सनातनपुरुष है। महत्तत्व बुद्धि, अहङ्कार और प्राणही शब्द आदिके विषय है; सब जीव स्थानोंमें प्राणहीसे पाले जाते हैं, पीछे प्राणहीसे सब अपनी अपनी गतिको प्राप्त होते हैं। मूत्राशय, लिङ्ग गुदा, और जठराग्निमें प्राणही रहता है, इनके

मल और विष्ठा निकलते हैं, इसीसे प्राणका नाम अपान है। जो यत्न करनेमें सहाय देता है, उसे अध्यात्मविद्या जाननेवाले उदान कहते हैं। जो शरीरके सब सन्धियोंमें घूमता है, उसे व्यान कहते है. जो धातु और अग्निमें फिरा करता है, उसे वायु कहते हैं, वायुसेही सब धातु और रस बढ़ते हैं, प्राण हीके योगसे सबका शरीर बढ़ता है, गरमी ही अग्नि है, उसीसे सब प्राणियोंका अन्न पचता है, समान और उदानके बीचमें प्राण और अपान रहते हैं; यही शरीरको समर्थ करते हैं, और अग्नि अन्नको पचाती है। इन्हीसे लिङ्ग और गुदाकी संज्ञा होती है. और वेही दोनोके द्वार हैं: प्राण अग्निके वेगको बढाता है, और वह वेग गुदा तक आता है, वह पूरा तथा ऊपर आकरके वायुको छोड़ता है। नाभीके नीचे पक्वाशय है, और आमाशय नाभीके ऊपर है, और नाभीके बीचमें प्राण रहता है, हृदयसे नीचे और ऊपरको अन्नके रसको ले जानेवाली नाड़ी चलती है, नाड़ियोंमें प्राणकी प्रेरणासे अन्न जाता है। हे ब्राह्मण! योगियोंका ब्रह्म सन्निधानमें जानेका मध्यकार मार्ग यही है, इससेही योगी [illegible] : इस मार्गसे चलनेसे योगियोंको [illegible] होता है धीरतासे शिरमें आत्माका [illegible]। सब प्राणियोंके शरीरमें [illegible] धारण करके आत्मा भ्रमण किया [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] [illegible] इस [illegible] जो [illegible] रहती है. [illegible] उसीको तुम जीव समझो. [illegible] [illegible] है। [illegible] [illegible] करता है, वह [illegible] रहता है, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

आत्मा चैतन्य और जीवके गुणोंसे युक्त हैं, उसकी चेष्टासे सब जगत चेष्टा करता है; क्षेत्रज्ञको जाननेवाले इसीको परम पुरुष कहते हैं. उसीने प्रथम सातलोकोंको बनाया है, इस प्रकारसे सब प्राणियोंमें परमात्मा प्रकाशमान हैं. जिसे सूक्ष्मदृष्टिसे वेदके जाननेवाले देखते हैं। चित्तकी प्रसन्नतासे शुभाशुभ कर्म्मोंका नाश होता है, प्रसन्न चित्तवाला आत्मामें स्थित होके अनेक सुखोंको भोगता है. प्रसन्न चित्तवालेका लक्षण यह है, कि वह सुखसे सोता है, जैसे वायुरहित स्थानमें दीपकका प्रकाश होता है; ऐसेही प्रसन्नचित्त वाला दुःखोंसे रहित होकर प्रकाशित होता और सुख भोगता है. रात्रिके पहले वा पिछले भागमें अपने मनको परमात्मामें लगाकर आत्मामें आत्माका दर्शन करता है, प्रसन्नचित्तवाला थोड़ा भोजन करता है, और सदा शुद्ध रहता है. जलते हुए दियेके समान मन रूपी दीपकसे आत्माको देखता है; उसे देखनेसे ही मुक्ति होती है। सब उपायोंसे लोभ और क्रोधको जीतनाही संसारी मनुष्योंका तप है; क्रोधसे तपको और चञ्चलतासे धर्मको आदर और अनादरसे विद्याको और प्रमादसे आत्माकी रक्षा करनी चाहिये। सत्य बोलनाही परम धर्म, क्षमा परम बल, आत्मज्ञान परम ज्ञान, और सत्यही परम व्रत है। सत्यही हित करनेवाला ज्ञान है, जो सब प्राणियोंको परम हितकारक है, वही सत्य है; [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

जैसे बुद्धि अन्य धर्ममें लगती है, और इस लोक तथा परलोकमें निश्चल तथा शाकरहित स्थान प्राप्त होता है; मुनिको चाहिये, कि नित्य तप और दान करें, आत्माको जीतें; किसीके सङ्ग न रहे; तपहीका अभ्यास करें; इससे अप्राप्य स्थानभी प्राप्त होता है; गुणो और अगुणी दोनोंसे निःसङ्ग होकर अकेलेही कार्य्य करना ये ब्रह्मज्ञानीका एक पद सुख करना है, जो मनुष्य सुख और दुःख दोनोको त्यागता है, वह सशयरहित होकर ब्रह्मको प्राप्त होता है। हे ब्राह्मणोत्तम। जैसा मैंने धर्म्म सुना था वैसा तुमसे कह सुनाया, आगे तुम्हारी सुननेकी क्या इच्छा है।

द्विज व्याध सम्वादमें
२१२ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! ऐसे सम्पूर्ण मोक्ष धर्म्मोंको सुन चुकनेके अनन्तर दृढ़ प्रीतिवाला ब्राह्मण फिर धर्म्मव्याधसे बोला, कि जो तुमने कहा सो सब न्यायसे युक्त है, धर्म विषयमें तुमसे कोई बात छिपी नहीं है। व्याध बाला, हे ब्राह्मणोत्तम! मुझे जिससे यह सिद्धि प्राप्त हुई, मेरे उस प्रत्यक्ष धर्म्मको देखो। हे भगवन्! तुम जल्दी खड़े होजाओ और घरमें चलके मेरे माता पिताको देखो।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! ब्राह्मणने घरके भीतर जाकर बहुत मनोहर अटारी और स्थानोंको देखा, वह घर देवतोंके घरके समान था और देवतोंसे पूजा जाता था। वह स्थान पलङ्ग आसन तथा गन्धोंसे पूरित था, उस घरमें श्वेत वस्त्र पहने हुए, भोजन किये, परम सन्तुष्ट व्याधके मातापिता आसन पर बैठे थे। धर्म्म व्याध उन्हें देखकर उनके पैरों पर जा गिरा। वृद्ध बोले; हे धर्मके जाननेवाले! उठ, उठ धर्म तेरी रक्षा करे, तेरी दीर्घआयु हो, तेरी सेवासे हम बहुत प्रसन्न हैं, तेरी गति तप और बुद्धि बहुत पवित्र है; हे पुत्र! देवतोंमें भी हमारे सिवा तुम्हें और देवता को नहीं है, ब्राह्मणकी पूजा करनेसे तुम्हें शम और दम सब प्राप्त हुए है; हे पुत्र। हमारी सेवा करनेसे तेरे ऊपर पितामह प्रपितामह सबही प्रसन्न हैं, मन कर्म और वचनसे जैसे हमारी सेवामें तेरी बुद्धि है ऐसी और कर्म्ममें नहीं है; हे पुत्र! जैसे जमदग्निके पुत्र परशुरामने वृद्ध माता पिताकी सेवा की थी ऐसेही तुमने भी हमारी सेवा की है। तब व्याधने उस ब्राह्मणके आनेका वृत्तान्त अपने माता पितासे कहा, तब उन्होंने ब्राह्मणसे कहा, तुम्हारा आगमन अच्छा हुआ। ब्राह्मणने सत्कार पूर्व्वक दोनो वृद्धोंसे कहा, कि अपने पुत्र और सेवकों सहित कुशलसे तो है? तुम दोनोका शरीर निरोग तो है? दोनो वृद्ध बोले, हे ब्राह्मण! हमारे सेवकोंमें और घरमें कुशल है, तुमतो निर्व्विघ्न यहां आये?

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्। तब उस ब्राह्मणने प्रसन्न होकर कहा कि मैं कुशलसे आया। तब धर्मव्याध ब्राह्मणकी ओर देखकर बोला हे ब्राह्मण! यह दोनो मेरे माता पिता है, यह मुझे देवतोंसेभी परम देवता है, ऐसेही मैं इनकी पूजा करता हूं। जैसे सब संसारके इन्द्रादिक पतिस देवता माननीय है, वैसेही मुझे ये दोनो वृद्ध माननीय हैं; जिस प्रकारसे ब्राह्मण लोग देवतोंकी भेंट चढ़ाते हैं ऐसेही मैं सावधान होकर इनकी भेंट देता हूं। हे ब्राह्मण। यह मेरे माता पिताही मेरे लिये परम देवता है। इन्हींको मैं फूल फल, और रत्नोंसे सदा पूजा करता हूं, विद्यावान लोग जितनी पूजाके योग्य अग्नि कहते हैं, मैं उन सबके योग्य इन्हींको जानता हूं। यज्ञ और चारों वेद यही माता पिता हैं इन्हींके वास्ते मेरे प्राण, स्त्री, मित्र और पुत्र हैं, मैं

पुत्र और स्त्रीके सहित इनकी सदा सेवा करता हूं, चरण धोता हूं, मैं आपही इनको स्नान कराता हूं, चरण धोता हूं, और भोजन कराता हूं, मैं सदा इनसे प्यारी वाणी बोलता हूं, कभी कठोर वचन नहीं बोलता. जो अधर्म काम भी इनको प्रिय हो, तो वह भी मैं करता हूं। ऐसेही इनकी सेवाको परम धर्म जानके मैं सेवा करता हूं, गृहस्थका यही धर्म्म है, अपने माता पिताकी सेवा करनी।

द्विज व्याध सम्वादमें २१३ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, इस प्रकारसे ब्राह्मणको माता पिताका दर्शन करा कर धर्म्म व्याध फिर ब्राह्मणसे बोला, कि जिससे मेरी ऐसी दिव्य दृष्टि है, यह माता पिताकी सेवाका ही फल है। पतिसेवा करनेवाली सत्यशीला पतिव्रताने तुमसे कहा था कि जनक पुरीको जाओ, धर्म्मव्याध तुमको धर्म्मका उपदेश करेगा। ब्राह्मण बोला उस सत्यशीला पतिव्रताके वचनको स्मरण करके मैं समझता हूं, कि तुम अवश्य गुणवान हो। व्याध बोला हे ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ! जब उस पतिव्रताने तुमसे मेरे विषयमें कहा था, तब उसने मुझे अवश्य [illegible] देख लिया होगा। हे ब्राह्मण! तुम्हारे ऊपर दयादृष्टि करके हमने यह सब दिखलाया, अब जो मैं तुम्हारे हितके वचन कहता हूं, सो सुनो। तुमने अपने माता पिताका अनादर किया, बिना उनकी आज्ञा [illegible] घरसे निकल गये, यह तुमने बहुत [illegible] किया, तुम्हारे शोकमें वृद्ध माता [illegible] तुम अब उनको प्रसन्न [illegible] घर जाओ; तुम तपस्वी महात्मा [illegible] इस प्रकारसे तुमको [illegible] करना चाहिये, इस [illegible] सेवा करो और इनसे [illegible] तुम्हारे [illegible]

कहता हूं, अभी चले जाओ। ब्राह्मण बोला हे धर्म्मव्याध! मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हुआ, तुम्हारा कल्याण हो, तुम बहुत गुणवान हो। व्याध बोला, हे ब्राह्मण! तुम देवतोंके समान धर्म्म करनेवाले हो, तुम माता पिताके पास जाकर और आलस्य रहित होकर माता पिताकी सेवा करो, मैं इससे बड़ा कोई धर्म्म नहीं देखता हूं। ब्राह्मण बोला, मैं प्रारब्धहीसे यहां आया और और प्रारब्धहीसे तुमसे भेंट होगई; तुम्हारे समान धर्म्मको जाननेवाले मनुष्य दुर्लभ हैं, सहस्रों मनुष्योंमें धर्म्मका जाननेवाला एकही होता है; हे पुरुषश्रेष्ठ! तुम्हारे सत्यसे मैं प्रसन्न हुआ, मैं नरकमें गिरा जाता था, तुमने उससे मेरा उद्धार किया, जैसे स्वर्गसे गिरते हुए राजा ययातिको उनके पुत्रोंके पुत्रोंने उद्धार किया था, हे पुरुषशार्दूल! वैसेही तुमने मेरा उद्धार किया। माता पिताकी सेवा मैं अवश्य करूंगा, अविवेकी मनुष्य धर्म्मको नहीं जानता है, शूद्रयोनिमें उत्पन्न हुए मनुष्योंको धर्म्म जानना बहुत कठिन है, मैं तुमको एक विशेष कारणसे शूद्र नहीं मानता हूं, हे महाबुद्धिमान! जिस विशेष कर्म्मसे तुम शूद्र हुए हो उसको मैं जाननेकी इच्छा रखता हूं, तुम इच्छापूर्वक कहो। व्याध बोला हे ब्राह्मणोत्तम! ब्राह्मणोंका मैं अनादर नहीं कर सकता हूं, हे पापरहित! पहले मेरे कर्म्मको सुनो, मैं पहले जन्ममें एक ब्राह्मण [illegible] वेद और वेदाङ्गोंका जाननेवाला ब्राह्मण था, मैं अपनेही दोषसे इस अवस्थाको प्राप्त हुआ हूं, एक धनुर्वेदका जाननेवाला राजा मेरा मित्र था, उसके संग रहनेसे मुझे भी धनुर्वेदका [illegible] एक दिन राजा [illegible] और [illegible] ब्राह्मण [illegible]

वहां जाके भी मैंने एक वाण चलाया, तो वह वाण उस ऋषिको लगा, बाण लगतेही ऋषि पृथ्वीमें गिर पड़े और दीन होकर कहने लगे कि मैंने किसीका अपराध नहीं किया और वह कौनसा पापी है, जिसने मेरे वाण मारा है, हे ब्राह्मण। मैं उसे मृग समझकर पास गया वहां जाके ऋषिको देखा और अपने कुकर्मको देखकर बहुत दुःखी हुआ। उस ऋषिको पृथ्वीमें शब्द करते हुए पड़ा देखकर मैंने कहा, हे ब्राह्मण! मैंने यह अज्ञानसे अपराध किया, उस तपस्वीने क्रोधसे भरके मुझसे कहा; कि तू शूद्रयोनिमें व्याध होगा।

द्विज व्याध सम्वादमें

२१४ अध्याय समाप्त।

व्याध बोला, हे ब्राह्मणोत्तम! इस प्रकारसे जब मुझे ऋषिने शाप दिया, तब मैंने ऋषिको दीन बाणीसे त्राहि त्राहि कहके प्रसन्न किया। मैंने हाथ जोड़कर कहा, महाराज! मैंने यह कर्म अज्ञानसे किया था, आप क्षमा कीजिये। तब ऋषि बोले, कि मेरा दिया शाप झूठा नहीं होगा, किन्तु तौभी तेरी प्रार्थनासे मैं कुछ कृपा करता हूं। शूद्र जन्ममेंभी तुझे धर्मका ज्ञान बना रहेगा, माता और पिताकी तू परम सेवा करेगा, उनकी सेवा करनेसे तुझे परमसिद्धि प्राप्त होगी, पहले जन्मका ज्ञान रहेगा और स्वर्गको प्राप्त होगा। मेरे शापके समाप्त होने पर फिर तू ब्राह्मण होगा। इस प्रकारसे महा तेजस्वी ऋषिने मुझे शाप दिया था। हे ब्राह्मण। फिर मेरे ऊपर उनने कृपा भी करी। मैंने उनके शरीरसे वाण निकाला और उन्हें आश्रममें पहुंचाया, उनके प्राण नष्ट नहीं हुए। यह मैंने अपने पूर्व्व कर्म्मोंका वृत्तान्त तुमसे कहा। इस जन्मके पीछे मैं स्वर्गको जाऊंगा। ब्राह्मण बोला, हे महाभाग! इसी प्रकारसे मनुष्योंको सुख और दुःख प्राप्त होता है, तुमने अज्ञानसे यह कर्म किया था, हे लोकके वृत्तान्तको जाननेवाले। हे धर्मपरायण! इन सब कर्म्मोंके दोषोंको भोगकर फिर सुख होगा, मेरी बुद्धिमें इस समयभी तुम ब्राह्मण हो। जो ब्राह्मण-कुलमें उत्पन्न होकर नीच कर्म्म करे वह अवश्यमेव शूद्र तुल्य है, और जो शूद्र सत्य धर्म्म करता हो तो उसे भी हम ब्राह्मण ही मानते हैं! मनुष्य कर्मके दोषसे ही अच्छी और बुरी गतिको प्राप्त होता है, हे नरोत्तम! मैं तुमको दोष-रहित जानता हूं। तुम घबड़ाओ मत, तुम्हारे समान बुद्धिमान शोक नहीं करते हैं, जो लोग संसारकी गतिको जानते हैं और धर्म्म करते हैं, वे लोग कदापि शोक नहीं करते हैं। वह व्याध बोला, हे ब्राह्मण! बुद्धिसे मनके दुःख और औषधीसे शरीरके दुःख दूर होते हैं। यह जो ज्ञानकी शक्ति है, सो मूर्खोंके समान नहीं हो सकती है, जिस कर्म्ममें हानि दीखती है, पुरुष उससे शीघ्रही विरक्त हो जाता है, यदि उसका कुछ उपाय दीख पड़ता है, तो उसका उपाय करने लगता है, सोचसे कुछ नहीं होता है, केवल पुरुषको दुःख ही होता है। जो ज्ञानीलोग दुःख और सुख दोनोंको छोड़ देते हैं, वेही ज्ञानसे तृप्त होकर सुखको भोगते हैं, वेही लोग पण्डित कहाते हैं। जो लोग सन्तोष नहीं करते हैं, वे लोग मूर्ख हैं और पण्डित लोग असन्तोषीहीको मूर्ख समझते हैं। असन्तोषका अन्त नहीं है, इस लिये सन्तोषही परम सुख है। जो लोग मार्गसे चलकर अपने स्थानको देखते हैं, उनको सोच नहीं होता है। पुरुषको कभी दुःख नहीं करना चाहिये, क्योंकि दुःखही बड़ा भारी विष है। दुःख मूर्ख पुरुषोंको इस प्रकार नष्ट कर देता है, जैसे क्रोधी सर्प बालकको काट खाता है, पर कृपाका समय आनेसे जिसको दुःख हुआ, वह तेजसे हीन होजाता है, तब पुरुषार्थ नहीं

कर सकता है। जो कर्म्म किया है, उसका फल अवश्य होता है, केवल सोच होनेसे किसी कर्ममें पुरुष छूटता नहीं है। यदि किसी दुःखका उपाय दिखाई भी दे, तो पुरुष विना सोचेही उसको करने लगता है। यदि वह सिद्ध न हो, तो कुछ उसमें दुःख नहीं करे। जो पण्डित लोग वुद्धिके पार हो गये हैं, वे वीते हुए कामको ऐसेही होनेवाला मानते हैं। फिर पण्डित लोग कुछ सोच नहीं करते है, क्योंकि वे लोग परम गतिको देखते हैं। हे पण्डित! हमभी कुछ सोच नहीं करते हैं, क्योंकि हम समयको देखते हुए यहा स्थित हैं। हे ब्राह्मण! हम इन्ही सव कारणोंको देखकर कुछ सोच नहीं करते हैं।

ब्राह्मण वोला, हे व्याध! हम तुम्हारा हेतु सोच नही करते हैं; क्योंकि तुम वुद्धिमान और पण्डित हो, तुम्हारी वुद्धि वहुत उत्तम है, तुम ज्ञानसे भरे और धर्म्मको जाननेवाले हो। हे धर्म्मधारियोंमेंश्रेष्ठ! तुम्हारा कल्याण हो तुम सावधान होकर धर्म्म करो. हम अव जानेकी आज्ञा मागते है, धर्म्म तुम्हारी रक्षा करे, हमको आज्ञा दो।

श्रीमार्कण्डेय मुनि वोले व्याधने हाथ जोड़कर ब्राह्मणसे कहा, कि वहुत अच्छा। अनन्तर ब्राह्मण व्याधकी प्रदक्षिणा करके चल दिये। वहांसे आकर उस ब्राह्मणने माता और पिताकी प्रदक्षिणा करी और माता पिताकी उसकी उचित प्रशंसा करी। हे [illegible] धर्म्म जाननेवालोंमें श्रेष्ठ! हे [illegible] तुमने जो हमसे पूछा था, सो सव धर्म्म [illegible] तुम्हें कहा, हमने पतिव्रताका [illegible] ब्राह्मणका धर्म और पिता, माता [illegible] तुम्हें कहा, यह सव धर्म व्याधने [illegible] कहा था।

[illegible] युधिष्ठिर वोले, हे सव धर्म्मोंमें [illegible] हे मुनिवर! आपने हमसे

परम अद्भुत वृत्तान्त कहा, यह वृत्तान्त वहुतही अच्छा था; इससे यह समय सुभको मुहूर्त्तके समान व्यतीत हो गया, और मैं धर्म सुनकर तृप्त नहीं हुआ।

पतिव्रता माहात्म्यमें द्विजव्याध सम्वाद और २१५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि वोले, हे राजन् जनमेजय! इस धर्मकी कथाको सुनकर धर्मराज युधिष्ठिरने फिर मार्कण्डेय मुनिसे पूछा। महाराज युधिष्ठिर वोले, हे महर्षे! पहले समयमें अग्नि देवता किस प्रकार वनमें गये थे? और महा तेजस्वी अङ्गिराने किस प्रकारसे अग्निके नष्ट होने पर अग्नि होकर यज्ञोकी अहुतिको भोग किया था? हे भगवन! अग्नि तो एकही हैं, फिर वह अनेक कर्म्मोंमें अनेक कैसे हो जाते हैं, हम इस कथाको सुनना चाहते हैं। हम कार्त्तिकेयकी उत्पत्ति सुनना चाहते हैं। वे शिवके पुत्र किस प्रकारसे हुए, और कैसे अग्निके पुत्र हुए? उनको गङ्गा और कृत्तिकाने किस प्रकार उत्पन्न किया? हे भृगुकुलश्रेष्ठ हे महामुनि! हमें इन सव कथाओंके सुननेकी वहुत इच्छा है आप यथार्थ रूपसे कहिये।

श्रीमार्कण्डेय मुनि वोले हे महाराज पण्डित लोग इसी स्थान पर इस [illegible] कथाका उदाहरण देते हैं। जिस प्रकार [illegible] क्रोधित होकर तप करनेके लिये [illegible] गये थे जिस प्रकार भगवान अङ्गिरा [illegible] अग्नि हो गये थे और जिस प्रकार [illegible] [illegible] [illegible] किया था, सो सव कथा हम आपसे कहते हैं।

हे महाराज! पहले समयमें [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

वहां जाके भी मैंने एक वाण चलाया, तो वह वाण उस ऋषिको लगा, वाण लगतेही ऋषि पृथ्वीमें गिर पड़े और दीन होकर कहने लगे कि मैंने किसीका अपराध नहीं किया और वह कौनसा पापी है, जिसने मेरे वाण मारा है; हे ब्राह्मण। मैं उसे मृग समझकर पास गया वहां जाके ऋषिको देखा और अपने कुकर्मको देखकर बहुत दुःखी हुआ। उस ऋषिको पृथ्वीमें शब्द करते हुए पड़ा देखकर मैंने कहा, हे ब्राह्मण! मैंने यह अज्ञानसे अपराध किया, उस तपस्वीने क्रोधसे भरके मुझसे कहा, कि तू शूद्रयोनिमें व्याध होगा।

द्विज व्याध सम्वादमें
२१४ अध्याय समाप्त।

व्याध बोला, हे ब्राह्मणोत्तम। इस प्रकारसे जब मुझे ऋषिने शाप दिया, तब मैंने ऋषिको दीन वाणीसे त्राहि त्राहि कहके प्रसन्न किया। मैंने हाथ जोड़कर कहा, महाराज! मैंने यह कर्म अज्ञानसे किया था, आप क्षमा कीजिये। तब ऋषि बोले, कि मेरा दिया शाप झूठा नहीं होगा; किन्तु तौभी तेरी प्रार्थनासे मैं कुछ कृपा करता हूं। शूद्र जन्ममेंभी तुझे धर्मका ज्ञान बना रहेगा, माता और पिताकी तू परम सेवा करेगा, उनकी सेवा करनेसे तुझे परमसिद्धि प्राप्त होगी, पहले जन्मका ज्ञान रहेगा और स्वर्गको प्राप्त होगा। मेरे शापके समाप्त होने पर फिर तू ब्राह्मण होगा। इस प्रकारसे महा तेजस्वी ऋषिने मुझे शाप दिया था। हे ब्राह्मण। फिर मेरे ऊपर उनने कृपा भी करी। मैंने उनके शरीरसे वाण निकाला और उन्हें आश्रममें पहुंचाया, उनके प्राण नष्ट नहीं हुए। यह मैंने अपने पूर्व कर्म्मोंका वृत्तान्त तुमसे कहा। इस जन्मके पीछे मैं स्वर्गको जाऊंगा। ब्राह्मण बोला, हे महाभाग! इसी प्रकारसे मनुष्योंको सुख और दुःख प्राप्त होता है, तुमने अज्ञानसे यह कर्म किया था; हे लोकके वृत्तान्तको जाननेवाले। हे धर्मपरायण। इन सब कर्म्मोंके दोषोंको भोगकर फिर सुख होगा, मेरी बुद्धिमें इस समयभी तुम ब्राह्मण हो। जो ब्राह्मण-कुलमें उत्पन्न होकर नीच कर्म्म करे वह अवश्यमेव शूद्र तुल्य है। और जो शूद्र सत्य धर्म्म करता हो तो उसे मैं हम ब्राह्मण ही मानते हैं! मनुष्य कर्मोंके दोषसे ही अच्छी और बुरी गतिको प्राप्त होता है; हे नरोत्तम! मैं तुमको दोष-रहित जानता हूं। तुम घबड़ाओ मत, तुम्हारे समान बुद्धिमान शोक नहीं करते है, जो लोग संसारकी गतिको जानते हैं और धर्म्म करते हैं, वे लोग कदापि शोक नहीं करते हैं। वह व्याध बोला, हे ब्राह्मण। बुद्धिसे मनके दुःख और औषधोंसे शरीरके दुःख दूर होते है। यह जो ज्ञानकी शक्ति है, सो मूर्खोंके समान नहीं हो सकती है, जिस कर्म्ममें हानि दीखती है, पुरुष उससे शीघ्रही विरक्त हो जाता है, यदि उसका कुछ उपाय दीख पड़ता है, तो उसका उपाय करने लगता है, सोचसे कुछ नहीं होता है, केवल पुरुषको दुःख ही होता है। जो ज्ञानीलोग दुःख और सुख दोनोको छोड़ देते हैं, वेही ज्ञानसे तृप्त होकर सुखको भोगते हैं; वेही लोग पण्डित कहाते हैं। जो लोग सन्तोष नहीं करते हैं, वे लोग मूर्ख हैं और पण्डित लोग असन्तोषीहीको मूर्ख समझते हैं। असन्तोषका अन्त नहीं है, इस लिये सन्तोषही परम सुख है। जो लोग मार्गसे चलकर अपने स्थानको देखते हैं, उनको सोच नहीं होता है। पुरुषको कभी दुःख नहीं करना चाहिये, क्योंकि दुःखही बड़ा भारी विष है। दुःख मूर्ख पुरुषोंको इस प्रकार नष्ट कर देता है, जैसे क्रोधी सर्प बालकको काट खाता है, पर कृपाका समय आनेसे जिसको दुःख हुआ, वह तेजसे हीन होजाता है, तब पुरुषार्थ नहीं

ार सकता है। जो कर्म्म किया है, उसका फल अवश्य होता है, केवल सोच होनेसे किसी कर्म्मसे पुरुष छूटता नहीं है। यदि किसी दुःखका उपाय दिखाई भी दे, तो पुरुष बिना सोचेही उसको करने लगता है। यदि वह सिद्ध न हो, तो कुछ उसमें दुःख नहीं करे। जो पण्डित लोग बुद्धिके पार हो गये हैं, वे बीते हुए कामको ऐसेही होनेवाला मानते हैं। फिर पण्डित लोग कुछ सोच नहीं करते हैं, क्योंकि वे लोग परम गतिको देखते हैं। हे पण्डित! हमभी कुछ सोच नहीं करते हैं, क्योंकि हम समयको देखते हुए यहां स्थित हैं। हे ब्राह्मण! हम इन्ही सब कारणोंको देखकर कुछ सोच नहीं करते हैं।

ब्राह्मण बोला, हे व्याध! हम तुम्हारा कुछ सोच नहीं करते हैं; क्योंकि तुम बुद्धिमान और पण्डित हो, तुम्हारी बुद्धि बहुत उत्तम है, तुम ज्ञानसे भरे और धर्म्मको जाननेवाले हो। हे धर्म्मधारियोंमेंश्रेष्ठ! तुम्हारा कल्याण हो, तुम सावधान होकर धर्म्म करो, हम अब जानेकी आज्ञा मांगते हैं, धर्म्म तुम्हारी रक्षा करे, हमको आज्ञा दो।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, व्याधने हाथ जोड़कर ब्राह्मणसे कहा, कि बहुत अच्छा। अनन्तर ब्राह्मण व्याधकी प्रदक्षिणा करके चल दिये। वहांसे जाकर उस ब्राह्मणने माता और पिताकी प्रदक्षिणा करी और माता पितानेभी उसकी उचित प्रशंसा करी। हे युधिष्ठिर। हे धर्म्म जाननेवालोंमें श्रेष्ठ। हे तात! तुमने जो हमसे पूछा था, सो सब धर्म्म हमने तुमसे कहा, हमने पतिव्रताका माहात्म्य ब्राह्मणका कर्म और पिता, माता-की सेवा तुमसे कही, यह सब धर्म व्याधने ब्राह्मणसे कहा था।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे सब धर्म्मोंके जाननेवालोंमें श्रेष्ठ! हे मुनिवर! आपने हमसे परम अद्भुत वृत्तान्त कहा, यह वृत्तान्त बहुतही अच्छा था, इससे यह समय मुझको मुहूर्त्तके समान व्यतीत हो गया, और मैं धर्म सुनकर तृप्त नहीं हुआ।

पतिव्रता माहात्म्यमें द्विजव्याध सम्वाद और २१५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! इस धर्मकी कथाको सुनकर धर्मराज युधिष्ठिरने फिर मार्कण्डेय मुनिसे पूछा। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे महर्षे! पहले समयमें अग्नि देवता किस प्रकार बनमें गये थे? और महा तेजस्वी अङ्गिराने किस प्रकारसे अग्निके नष्ट होने पर अग्नि होकर यज्ञोंकी आहुतिको भोग किया था? हे भगवन्! अग्नि तो एकही हैं, फिर वह अनेक कर्म्मोंमें अनेक कैसे हो जाते हैं, हम इस कथाको सुनना चाहते हैं। हम कार्त्तिकेयकी उत्पत्ति सुनना चाहते हैं। वे शिवके पुत्र किस प्रकारसे हुए, और कैसे अग्निके पुत्र हुए? उनको गङ्गा और कृत्तिकाने किस प्रकार उत्पन्न किया? हे भृगुकुलश्रेष्ठ। हे महामुनि! हमें इन सब कथाओंके सुननेकी बहुत इच्छा है, आप यथार्थ रूपसे कहिये।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे महाराज। पण्डित लोग इसी स्थान पर इस पुरानी कथाका उदाहरण देते हैं। जिस प्रकार अग्नि क्रोधित होकर तप करनेके लिये बनको चले गये थे, जिस प्रकार भगवान अङ्गिरा आपही अग्नि हो गये थे और जिस प्रकार उन्होने अग्नि होकर अपने तेजसे सब जगतके अन्धकारको नाश किया था, सो सब कथा हम आपसे कहते हैं।

हे महाबाहो! पहले समयमें महाभाग अङ्गिरा मुनिने अपने आश्रमपर बैठकर अग्निकी घोर तपस्या की थी। अनन्तर अङ्गिराभी अग्निके स्वरूप हो गये, उनके तेजसे सब जगतमें प्रकाश

हो गया। अङ्गिराकी तपस्याके तेजसे अग्निको बहुत दुःख होने लगा, इससे तेजस्वी अग्नि बहुत मलिन होगये और कोई काम न कर सके; तब भगवान अग्निने विचारा, कि ब्रह्माने सब लोकोंके निमित्त नवीन अग्नि बनाई है, और तपस्या करते करते हमसे तेज नष्ट हो गया; अब हम कैसे अग्नि हों। फिर अग्निने दूसरी अग्निके समान महामुनि अङ्गिराको देखा! अनन्तर भगवान अग्नि डरते डरते और धीरे धीरे अङ्गिरा मुनिके पास गये, तब अङ्गिराने अग्निसे कहा, कि तुम पुनः शीघ्रही अग्नि हो जाओ, क्योंकि तुम तीनो लोकमें विख्यात हो। हे अन्धकार नाश करनवाले! प्रथम कालमें ब्रह्माने तुमहीको अन्धकार नाशक अग्नि बनाया था, इससे तुमही पुनः अग्नि हो जाओ।

अग्नि बोले, हे महामुने! जगतमें मेरी कीर्त्ति नष्ट हो गई है और तुम अग्नि हो गये हो, इससे जगतके सब पुरुष तुमहीको अग्नि जानेंगे, मुझको नहीं। हम तुमको अग्निकी शक्ति देते हैं, तुम प्रथम अग्नि अर्थात सूत्रात्मा बनो। हम दूसरी अग्नि अर्थात विराट होंगे।

अङ्गिरा बोले, हे अग्नि! तुम पुण्य करो, और तिमिरापहारी हव्यकव्यवाही अग्नि हो जाओ और मुझको अपना प्रथम पुत्र बनाओ।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! अङ्गिराके ऐसे वचन सुन अग्निने वैसाही किया। अङ्गिराकेभी पुत्रका नाम बृहस्पति हुआ, उस अङ्गिराके पुत्रको सब देवतोंने माना वह अग्निका पहला पुत्र हुआ। सब देवतोंने वहां आके उससे ब्रह्मजिज्ञासा किया। अनअनन्तर उन्होंने देवतोंसे सब कारण कह सुनाया; फिर अङ्गिराने उसे देवताओंका पुरोहित बना दिया; देवतोंने अङ्गिराका वह सब वचन ग्रहण किया। तभी से ब्राह्मणोंने यहां तेजस्वी अग्निके अनेक नाम रक्खे, इसमें कर्मही प्रधान है।

आङ्गिरसोपाख्यानमें
२१६ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे कुरुकुल-नन्दन। ब्रह्माके जो दूसरे पुत्र अङ्गिरा हैं, उनकी शुभा नामी भार्य्या थी; उसकी सन्तानकी कथा सुनिये।

उनके पुत्रोंके नाम ये हैं—बृहत्कीर्त्ति बृहज्ज्योति, बृहन्मना, बृहन्मन्त्र, बृहद्ब्रह्मा, बृहद्भास और बृहस्पति। इन सब सन्तानोंमें एक भानुमति नामक कन्या बड़ी सुन्दरी हुई। वह अङ्गिराकी प्रथम पुत्री थी। और अङ्गिराकी दूसरी पुत्रीका नाम रागा हुआ। सब जगतके जन्तुओंने उससे बहुत अनुराग किया, इससे उसका नाम रागा हुआ। जगतके पुरुष जिसको शिवकी पुत्री कहते हैं, जो अत्यन्त सूक्ष्म होनेके कारण दृश्य और अदृश्य है, उसका नाम सिनीवाली है, वह अङ्गिराकी तीसरी पुत्री है। जो अपनी किरणोंसे सबको देखती है, उस चौथीका नाम अर्चिष्मति है। जिसमें यज्ञकी आहुति पाकर देवता लोक प्रसन्न होकर सन्तुष्ट होते हैं, उनकी उस पांचवीं कन्याका नाम हविष्मति है, अङ्गिराकी छठी कन्याका नाम माहिष्मति है, उसीका नाम यज्ञोंमें आङ्गिरसी भी है। हे महामते। अङ्गिराके सातवीं कन्याका नाम महामति है। जिसको देख कर जगतके मनुष्य विस्मित हो जाते हैं, जिसमें चन्द्रमाका कुछ अंश नहीं रहता, अङ्गिराके उस आठवीं पुत्रीका नाम कुहू है।

आङ्गिरसोपाख्यानमें
२१७ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे महाराज युधिष्ठिर! बृहस्पतिकी जो यशस्विनी स्त्री थी, उसी

अग्नि नामक छः पुत्र उत्पन्न हुए। यज्ञोंको आहुतिमें जिस अग्निका नाम पहले लिया जाता है, वह महाव्रत अग्नि बृहस्पतिका पुत्र है; उसका नाम शामयू है, चातुर्मास और अश्वमेध यज्ञोंमें जिसके निमित्त पशु दिया जाता है, जो अनेक जलती हुई ज्वालाओंसे प्रकाशमान होता है जो वही एक अग्नि बलवान है। शामयूकी असाधारण स्त्री थी, जो धर्म्मसे उत्पन्न हुई थी, उसका नाम सत्या था और दीप्त अग्नि उसका पुत्र हुआ और तीन उत्तम व्रत धारण करनेवाली कन्या हुई, जो अग्नि यज्ञोंमें पहिले शाकल्यसे पूजा जाता है, उसके पहिले पुत्रका नाम भरद्वाज है। जो सब पूर्णमास यज्ञोंमें स्रुवासे आहुति पाता है, उस अग्निका नाम भरत है; वह शामयूका दूसरा बेटा है। उसकी और भी तीन कन्या है उन तीनोंका नाम भरतस्वामी। उसकी भरती नामक एक कन्या है। हे भरतसत्तम! अग्निका भरत और प्रजापतिका अग्नि पुत्र है, वह सबसे बड़ा है। भरद्वाजको स्त्रीका नाम वीरा है, ब्राह्मण लोग उसकी पूजा चन्द्रमाके समान शाकल्यसे करते हैं। जो घीसे दूसरे चन्द्रमाके सग पूजा जाता है, वह रथोंका स्वामी है और उसका नाम कुम्भरेता है, उस कुम्भरेताकी स्त्रीका नाम सरयु है, उसके पुत्रका नाम सिद्ध है, उसने अपने तेजसे सूर्य्यको छिपा लिया, वह आग्नेय कर्म्मोंको प्राप्त करता है, महात्मा लोग इसका आह्वान करते हैं, जो कभी तेज, यश और लक्ष्मीसे नष्ट नहीं होता, जो सदा केवल पृथ्वीहीकी स्तुति करता है, उस अग्निका नाम च्यवन है, जो सब पापोंसे रहित पवित्र और समयके अनुसार धर्म्म करनेवाला है, जो अपनी पवित्र ज्वालाओंमें जलता रहता है, वह विपाक नामक अग्नि उसका पुत्र है; जो रोते हुए पुरुषोंको दुःखोंसे छुड़ाता है उस अग्निका नाम निष्कृति है, वह सदाही शोभायमान रहता है; जिससे रोगी लोग आपही शब्द करते रहते हैं, उस अग्निका नाम स्वन है और वह पूर्वोक्त अग्निका पुत्र है, उससे सब रोग उत्पन्न होते हैं; जो अग्नि सब जगतके पुरुषोंकी बुद्धिको अपने वशमें रखता है, विद्वान लोग उसका नाम विश्वजित बतलाते हैं; हे भारत। जो अग्नि सब प्राणियोंके अन्तरमें रहती है, जिससे सब भोजन पचता है, उसका नाम विश्वभुक् है, इस अग्निको ब्रह्मचारी, व्रतधारी ब्राह्मण लोग सदाही पाकयज्ञमें पूजते हैं; इसकी प्यारी स्त्रीका नाम गोमती है, उसीमें सब धर्म्म करनेवाले लोग कर्म्म करते हैं; जो परम दारुण अग्नि है, जो समुद्रको पीता है उसका नाम बाड़वाग्नि है; जो प्राण नामक अग्नि ऊपरको जाती है, कवियोंने उसका नाम ऊर्द्धगामी रक्खा है, जिसके निमित्त द्वारपर बलि दी जाती है, उसका नाम स्विष्टकृत है, जो अग्नि शान्त पुरुषोंमें क्रोध रूप होकर वसती है, जो क्रोधी पुरुषोंमें तेजरूप होकर बसती है, हम जानते है, कि वह पूर्वोक्त अग्निकी कन्या है, वह बड़ी दारुण है उसका नाम स्वाहा है। स्वर्गमें जिसके समान रूपवान कोई नहीं है, जिसकी तुलना नहीं हो सकती है, उस अग्निका नाम काम है। जो अग्नि रथपर चढ़कर माला पहनकर और धनुष धारण करके सब शत्रुओंको नाश करती है, जिसकी स्तुति तीन उच्च पदोंसे करी जाती है, उस महाभाग अग्निका नाम ग्रन्थ है, उसीसे महा काव्य उत्पन्न हुए हैं और उसीको समास्वास कहते हैं।

आंगिरसोपाख्यानमें
२१८ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर। काश्यपके पुत्र वशिष्ठ वशिष्ठके पुत्र प्राण, प्राणके पुत्र अग्नि उनके पुत्र अङ्गिरा। च्यवने और

सुवर्चक इन्होंने पुत्रके लिये कई सौ वर्षोंतक घोर तप किया; उन्होंने कहा, कि हमको ऐसा धार्म्मिक पुत्र हो, जो यशमें ब्रह्माके समान हो; जब उन्होंने पञ्च महा व्याहृतीकी ओर ध्यान किया उसी समय पांच वर्णवाला महा तेजस्वी एक तेज उत्पन्न हुआ। हे भारत! उसका सिर अग्निके समान; हाथ सूर्य्यके समान, त्वचा और नेत्र स्वर्णके समान और उसकी जङ्घा काली थी। उन पांचोंने अपने तपके बलसे उस बालककी पांच रंगका बनाया, इसलिये उस बालकका नाम पाञ्चजन्य रखना पड़ा। उससे पांच वंश चले। उसने १०००० (दश हजार) वर्ष घोर तप किया; उसके पुत्रका नाम अग्नि हुआ, और उस अग्निहीसे उनके पितरोंका वंश चला। अनन्तर शिरसे बृहद्रथ, मुखसे विष्णु, नाभिसे शिव, बलसे इन्द्र, प्राणसे वायु और अग्निको उत्पन्न किया। हाथोंसे उदात्त और अनुदात्त स्वर और मन आदि इन्द्रियोंका उत्पन्न किया, इन सबके पश्चात पितरोंके पांच पुत्रोंको उत्पन्न किया। उन पांचमेंसे बृहद्रथका प्रणधी, काश्यपका महत्तर, अङ्गिराका भानु और वर्चका सौभर पुत्र हुआ। प्राणके पचीश अनुदात्त पुत्र हुए, और उन्होंने पन्द्रह यज्ञोंके नाश करनेवाले पुत्र उत्पन्न किये। उनमेंसे पांचोंके ये नाम हैं, सुभीम, अतिभीम, भीमबल, भीम, अबल येही पांच यज्ञोंको नाश करनेवाले हैं, और तपसे बने हैं।

सुमित्र, अतिमित्र, मित्रज्ञ, मित्रवर्द्धन और मित्रधर्मा, इन पांच देवतोंको भी तपसे बनाया है, सुरप्रवीर, वीर, सुरेश, सुवर्चस और सुरहन्ता इन पांचोंकोभी तपसे बनाया। ये सब पांच पांच मिलकर तीन स्थानोंमें अलग अलग रहने लगे। ये सब लोग स्वर्गहीमें बैठे यज्ञोंका भोग करते हैं; वे लोग उनके दुष्ट कार्य्योंको नाश करते हैं और ये लोग यज्ञकी गन्धसे सब यज्ञोंके शाकल्यको नष्ट करते हैं और खा जाते हैं; तब चतुर लोग वेदीके बाहर दान देने लगे; इसी कारणसे ये लोग उस वेदीमें नहीं जाते हैं, चिताकी अग्निके घीको अपने पंखोंसे ले जाते हैं, जब मन्त्रोंसे इनकी शान्ति कर दी जाती है, तब ये लोग यज्ञोंको नाश नहीं करते हैं। तपका पुत्र बृहदुक्थ भूमिमें रहता है अग्निहोत्रके प्रारम्भमें ब्राह्मण लोग उसकी पूजा करते हैं, तपका पुत्र रथन्तर जिसे विराट अग्नि कहते हैं; उस मित्रविदको यज्ञकर्त्ता लोग हवि कहते हैं, इन पुत्रोंके सहित महा यशस्वी तप बहुत प्रसन्न हुए।

आङ्गिरसोपाख्यानमें-
२१९ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, बड़े भारी नियमोंसे भरत नामकी अग्नि उत्पन्न हुई। पुष्टीवाली अग्नि पुष्टिमति अग्नि सन्तोष और पुष्टिको देती है। सब प्रजाका भरण पोषण करती है, इसीसे इसका नाम भरत है। जो शिव नामकी अग्नि है, वह शिवकी पूजा करती है और सब दुखोंको दूर करतो है। इससे इसका नाम शिव है, तपके बड़े भारी फलको देखकर वह तप करने लगी, तब उससे पुरन्धर नामक पुत्र उत्पन्न हुए, बाफसे बाफ उत्पन्न होकर वह मनुष्योंकी अग्नि दीखने लगा। मनु नामक अग्निने प्रजापत्य किया। वेदको जाननेवाले ब्राह्मण लोग अग्निको प्रभु, कहते हैं। जलती हुई अग्निको ब्राह्मण लोक आवसत्थ्य कहते हैं, तपके पञ्चयज्ञ नामक पांच पुत्र उत्पन्न हुए; वे सब महातेजस्वी तपके स्वर्णके समान रूपवान थे; जब अग्नि बहुत चलते थक गई और सूर्य्यभी थक गये तब भयानक असुर और अनेक भांतिके मनुष्य उत्पन्न हुए; मनुके तपके पुत्र अङ्गिराने सूर्य्य बनाया। वेदपाठी ब्राह्मण उसको बृहद्भानु

हते हैं; सूर्य्यकी स्त्रियोंको छः पुत्र उत्पन्न ए। दुर्व्वल मनुष्योंको जो शक्ति देता है, उस र्य्यके पहिले पुत्र अग्निको बल देनेवाला हते हैं, सूर्य्यका दूसरा पुत्र वह है, जो न्त मनुष्योंके हृदयमें क्रोध उत्पन्न करता , पूर्णमासी और अमावसके दिन जिसमें यज्ञ या जाता है, उस अग्निका विष्णु, धृतिमान रैर अङ्गिरा नाम है। इन्द्रके सहित जिसकी ाग्रयण आहुति दी जाती है, उस अग्निको ाग्रायण कहते हैं, वह भी सूर्य्यके वंशमें है, र्षाऋतुमें जिसमें आहुति दी जाती है, वह अग्नि र्य्यके वंशमें हैं। अग्नि और चन्द्रमासे रात्रि ामक कन्या उत्पन्न हुई; वह कन्या मनुसे व्याही ाई और उससे पांच पुत्र उत्पन्न हुए, जो वर्षा ऋतुके चार महीनेमें पूजा जाता है, वह अग्नि मेघोंके साथ रहता है, उसका नाम वैश्वानर है वह मनुका प्रथम पुत्र है। मनुका दूसरा पुत्र विश्वपति नामक अग्नि है, वही इस जगतका स्वामी है, और जब जगत् अन्नपरिपाक करता है, तब स्विष्टकृत नामक अग्नि घीकी आहुतिको ग्रहण करनेवाला है। हिरण्यकश्यपोंकी रोहिणी नाम्नी कन्या थी, वह स्विष्टिकृत नामक अग्निकी स्त्री हुई। जो प्राणियोंके शरीरमें प्राणोंके आश्रयसे रक्षा करता है, उसका नाम प्रजापति है, उसका पुत्र सन्निहित नामक हुआ जो शब्द रूपका साधक है, इसकी दो गति है, एक कृष्ण एक शुक्ल। यह अग्नि निष्पापियोंको पापी बनाता है, यह क्रोधके आश्रयसे रहता है, लोग जिसे कपिल और परम ऋषि कहते हैं, वह कपिल नामक अग्नि सांख्य योगका प्रवर्त्तक है, जिसे सब विचित्र कर्मोंमें सब मनुष्य आगे रखते हैं उन अग्निका नाम अग्रणी है। इन ऊपर लिखी अग्नियोंके सिवा और भी दूसरी दूसरी अग्नि पृथ्वीमें बुरे अग्निहोत्रोंके प्रायश्चित करनेको बनाई गई हैं; जब अग्नि वायुके योगसे परस्पर मिल जाय, तब अष्टाकपाल यज्ञ करना चाहिये; इससे शुचि नामक अग्नि प्रसन्न होती है; दक्षिणाग्नि जब दूसरी अग्निसे मिलती है, तब अष्टाकपाल नामक यज्ञ करना चाहिये, इससे वीति नामक अग्नि उत्पन्न होती है। जब अग्नि कहीं बनमें लगे तब अष्टाकपाल यज्ञ करना चाहिये। यदि रजस्वला स्त्री अग्निहोत्रको स्पर्श करले तो अष्टाकपाल नामक यज्ञ करना चाहिये, इससे सुमति नामक अग्नि प्रसन्न होती है। जब किसीको मरा हुआ सुने वा पशुओंका नाश होते देखे तो अष्टाकपाल यज्ञ करे, इससे सरभीमान अग्नि प्रसन्न होती है। यदि किसी दुःखके कारण ब्राह्मण तीन रात्रि तक यज्ञ न करे, तो अष्टाकपाल यज्ञ करे उससे उत्तराग्नि प्रसन्न होती है; अमावस और पूर्णमासीके दिन अतिथिकृत अग्निके प्रसन्न करनेको अष्टाकपाल यज्ञ करे यदि सौरीकी अग्नि अग्निहोत्रमें छिप जाय तो अष्टाकपाल यज्ञ करे, तो अग्नि प्रसन्न होती है।

२२० अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्। युधिष्ठिर। जलमें जो सह नामक अग्नि रहती है, जिसका नाम भूपति और भूति है, उसकी प्यारी स्त्रीका नाम मुदिता था, उसने अग्निको उत्पन्न किया, उसी अग्निको सब जगतका जीवन कहते हैं, उसीका नाम आत्मा और भुवनमती है. वह ब्राह्मणोंके वंशमें उत्पन्न हुआ है, जो सब जगतके बड़े बड़े जीवोंके स्वामी हैं, वही भगवान अग्नि सब जगत्में घूमते हैं। जो गृहपति नामक अग्नि है वही सब यज्ञोंमें पूजी जाती है वही अग्नि इस सब जगतकी आहुतिको खाते हैं वही महाभाग अग्नि सबके खाने वाली और महा अद्भुत है वही अग्नि जलसे उत्पन्न हुई हैं; उन्हींका नाम भूपति भूमती और महत स्वामी है, उस अद्भुत अग्निका पुत्र

भरत हुआ; वह भरत सब मरे हुए शरीरोंको जलाता है और अग्निष्टोमादिक यज्ञमें स्थापित किया जाता है, वही अग्नि सबसे प्रथम है, देवता लोग उसीको ढूंढते हैं। जो अग्नि सबका प्रभु है, उसका नाम नियत है। जब नियतने अथर्वाको देखा, तब भयसे समुद्रमें घुस गये, तब देवता लोग सब ओर ढूंढते समुद्रमेंभी गये। जब अग्निने अथर्वाको देखा तो ऐसे वचन बोले—हे वीर हम बहुत दुर्ब्बल हैं तुम अबसे देवतोंकी आहुतियोंको भोजन करो; तुम पिंगाक्ष अग्निके पास जाओ, यह हमारा प्रिय कार्य्य है, इसको तुम करो। अग्नि अथर्वको भेज कर दूसरे देशको चले गये। उनके जानेका समाचार मछलियोंने कह दिया; तब अग्निने क्रोध करके मछलियोंको शाप दिया, कि तुमको शरीरधारी अनेक प्रकारसे खायेंगे। अनन्तर अग्निने अथर्वासे सब वृत्तान्त कह दिया, तब देवतोंने अग्निका हित चाहकर बहुत समझाया परन्तु अग्नि यज्ञकी आहुतियोंको ग्रहण न कर सके और अपने शरीरको छोड़ दिया। अग्नि अपने शरीरको छोड़ कर पृथ्वीमें घुस गये वहां जाकर उन्होंने सब धातुओंको अलग अलग उत्पन्न किया, अग्निके पोपसे गन्धक हड्डियोंसे देवदारु, कफसे स्फटिक और पित्तसे मरकत मणी उत्पन्न हुई। यकृत (तापातल्ला) से काला लोहा उत्पन्न हुआ। इन काठ पाषाण और लोहेसे प्रजा अनेक सुख पाने लगी। नाखूनसे अभ्रक और नसोंसे मूंगे उत्पन्न हुए। हे राजन्! अग्निके और शरीरोंमें अनेक धातु उत्पन्न हुई। इस प्रकार अग्निने शरीर छोड़ा और महा तपस्या करी। फिर भृगु और अङ्गिरा आदि ऋषियोंने बहुत तपसे अग्निको स्थिर किया। तब महा तेजस्वी अग्नि प्रज्वलित होकर उठे। जिस समय उन्होंने ऋषियोंको देखा, उसी समय समुद्रमें घुस गए; अग्निके नष्ट होतेही सब जगत भयसे व्याकुल हो गया और सब अथर्वाको पूजा करने लगे। उस समय देवता लोगोंने भी अथर्वाको पूजा की। अनन्तर अथर्वाने सब जगतके आगे समुद्रको मथा और अग्निको निकाला। इस प्रकारसे भगवान अथर्वाने गए अग्निको पुनः जगतमें प्रकाशित किया। उसी दिनसे अग्नि पुनः जगतके सब यज्ञोंको भोग करने लगे। इस प्रकार वेदोंमें कहे हुए अनेक प्रकारके अग्नि उत्पन्न हुए; वे लोग सब देशोंमें घूमते हैं, यही लोग विद्वान कहाते हैं; सिन्धु पंचनद, देविका सरस्वति, गङ्गा, शत कुम्भा, शरयू, गण्डक, चरमण्वती, मही, मे ा, मेधातिथि, ताम्रा, वेत्रवती, कौशिकी, तमसा, नर्म्मदा, गोदावरी, वेणा, उपवेणा, भीमा, बड़वा भारती, सुप्रयोगा, कावेरी, मुरमुरा, तुङ्गवेणा, कृष्णवेणा और कृष्णा, ये सब नदी उन देवतोंकी माता हैं। इस अद्भुत अग्निकी प्रियानामी स्त्री है, उनके जेठे पुत्रका नाम विभु है। हमने जितनी प्रकारकी अग्नि कही उतनेही सोमयज्ञ भी हैं। अत्रिके वंशमें ब्रह्माकी अग्निरूप मानस पुत्र उत्पन्न हुए हैं, जब अत्रिने पुत्र उत्पन्न करनेकी इच्छा करी, तब उन्होंने अग्नियोंको अपने शरीरमें धारण किया। तब उस महात्मा ब्राह्मणके शरीरसे अग्नि उत्पन्न होने लगे, हे महाराज! हमने इस प्रकारसे आपसे इन सब महात्मा अग्नियोंका वर्णन किया। ये सब अनन्त श्रीमान और अन्धकारके नाश करनेवाले हैं, बहुत अग्निका महात्म्य वेदमें लिखा है। ऐसाही सब अग्नियोंका माहात्म्य है। इन सबमें, एकही प्रथम अग्नि है, उसीका नाम भगवान अङ्गिरा भी है; उसीसे अग्निष्टोम यज्ञके समान अनेक ज्योति उत्पन्न हुई हैं। हमने अग्निका वंश तुमसे कहा, वही अग्नि अनेक मन्त्रोंसे पवित्र यज्ञमें आहुति भोग करती है।

२२१ अ ाय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय् मुनि बोले, हे पापरहित युधिष्ठिर। हमने तुमसे अग्निके अनेक वंशोका वर्णन किया। अब हम बुद्धिमान स्वामकार्त्तिकके जन्मका वर्णन करते हैं, आप सुनिये। हे कुरुकुलश्रेष्ठ। जो अग्निके विचित्र पुत्र महा तेजस्वी स्वामकार्त्तिक उत्पन्न हुए उनकी कथा हम कहते है। परम तेजस्वी कीर्त्तिको बढ़ाने वाले और ब्राह्मणोंके भक्त कार्त्तिकेय ऋषियोंकी स्त्रोके गर्भसे उत्पन्न हुए थे। पहले समयमें जब देवता और राक्षसोंका युद्ध हुआ था, तब घोर रूप दानवोंने देवतोंको जीत लिया। जब इन्द्रने अपनी समस्त सेनाको दानवोंसे मरता हुआ देखा तब सेनापतिके निमित्त बहुत चिन्ता करने लगे। इन्द्र विचारने लगे कि मुझको कोई ऐसा सेनापति मिलना चाहिये जो महापराक्रमी हो और जो देवतोंकी सेनाको भागते देख अपने बलसे उसकी रक्षा करसके। ऐसा विचार, इन्द्र मानस नामक पर्व्वतपर गए; वहां जाकर बहुत चिन्तासे इस प्रयोजनको विचारने लगे, उसी समय इन्द्रने एक रोती हुई स्त्रोका दीन शब्द सुना। वह कहती थी कि कोई पुरुष मेरी ओर आवे, मेरी रक्षा करे, मेरे निमित्त कोई पति बतावे या वह स्वयमही मेरा पति हो। इन्द्रने उससे कहा कि तू कुछ मत डर, तुझे कोई भय नहीं है। अनन्तर इन्द्रने किरीट धारण किये, गदा हाथमें लिये, एक कन्याके सहित आगे खड़े हुए केशीको देखा। तब इन्द्रने केशीसे कहा, हे दुष्ट। तू इस कन्याको क्यों दुःख दे रहा है, तू मुझे वज्रधारी इन्द्र जानकर इसे छोड़ दे।

केशी बोला, हे पाकशासन। हे इन्द्र। तुम इस कन्याको छोड़ दो, क्योंकि मैं इससे विवाह करना चाहता हूं, यदि तुम अपने जीवकी रक्षा करना चाहते हो तो इसको छोड़कर अपने नगरको भाग जाओ। ऐसा कह केशीने मारनेको गदा चलाई। इन्द्रने उस गदाको आते देख वज्रसे काट दिया। अनन्तर केशीने क्रोध करके इन्द्रके मारनेको एक पर्व्वतका शिखर चलाया। इन्द्रने उसे भी अपने वज्रसे काट दिया। हे राजन्। जब यह पर्व्वतका शिखर कटकर पृथ्वीपर गिरा तब वही केशीके सिरमें लगा। अनन्तर केशी बहुत पीड़ित होकर उस कन्याको छोड़ वहांसे भागा, जब केशी वहांसे भाग गया, तब इन्द्रने उस कन्यासे कहा कि हे सुन्दर रूपवाली। तू कौन है, और किसकी पुत्री है, और यहां क्या कर रही है।

२२२ अध्याय समाप्त।

कन्या बोली, मेरा नाम देवसेना है, और मैं प्रजापतिकी पुत्री हूं, मेरी एक बहिनका नाम दैत्यसेना है, उसको पहिलेही केशीने छीन लिया था, हम दोनो बहिन प्रजापतिकी आज्ञासे सदा सखियोंके सहित इस वनमें खेलनेको आती थीं, यह महा बलवान केशी सदासे हम दोनोकी इच्छा करता था; मेरी बहिन दैत्यसेनाभी इसकी इच्छा रखती थी, परन्तु मैं नहीं। सो यह दैत्यसेनाको ले गया और मुझको तुमने अपने बलसे बचा लिया। हे भगवन्! हे देवराज। अब मैं तुम्हारी आज्ञानुसार किसी महा बलवानको अपना पति बनाना चाहती हूं।

इन्द्र बोले, तुम मेरी माताकी बहिन हो, क्योंकि मेरी माताभी दक्षप्रजापतिकी पुत्री है; हम अपना बल तुमको सुनाना चाहते है। कन्या बोली, हे महाबाहो। मैं अबला हूं, और मेरे पिताके वरदानसे मेरा पति महा बलवान होगा; उसको सब देवता और राक्षस नमस्कार करेंगे। इन्द्र बोले, हे देवि! तुम्हारे पतिका बल कैसा होगा सो हमसे कहो। कन्या बोली, हे इन्द्र। जो देवता, दानव, यक्ष,

किन्नर, सर्प, राक्षस, और दुष्ट दैत्योंको जीतने वाला और महा बलवान महा वीर्यवान होगा और जो तुम्हारे सहित सब प्राणियोंको जीतेगा वही ब्राह्मणोंका भक्त और कीर्तिका बढ़ाने वाला मेरा पति होगा।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, उस कन्याके ऐसे वचन सुन, इन्द्र बहुत विचार करने लगे कि यह कन्या जैसे पतिका विचार कर रही है, वैसा कोई नहीं है। उसी समय सूर्य्यके समान तेजस्वी इन्द्रने उदय होते हुए सूर्य्यको और सूर्य्यमें प्रवेश होते हुए महाभाग चन्द्रमाको देखा उस समय अमावस्या और रौद्र मुहूर्त्त था; उसी समय इन्द्रने उदयाचल पर देवता और दानवोंको युद्ध करते देखा। इन्द्रने बड़े बड़े लाल मेघोंसे भरी हुई प्रातःकालकी संध्याको देखा। अनन्तर भगवान इन्द्रने समुद्रको भी लाल जलसे भरा हुआ देखा, इन्द्रने देखा कि भृगु और अङ्गिराओंसे अनेक प्रकारके मन्त्रों सहित दी हुई आहुति को ग्रहण करके अग्नि सूर्य्यमें प्रवेश कर रहे हैं। उसी समय २४ पर्व्व भी सूर्य्यको ग्रहण करने लगे; उसी समय रौद्र, धर्म्म, सूर्य्य और चन्द्रमा एक हो गये। चन्द्रमा और सूर्य्यको एक देख इन्द्र बहुत विचार करने लगे; कि इस रौद्र समयमें चन्द्रमा और सूर्य्य मिले हुए दीखते हैं; इससे जान पड़ता है कि इसी रात्रिके अन्तमें घोर युद्ध होगा। इन नदी और समुद्रोंमें लाल जल बह रहा है, ये सियारी अपने मुखसे अग्निको निकालती हुई और घोर शब्द करती हुई सूर्य्यकी ओर देख रही हैं। यह सूर्य्य, चन्द्रमा और अग्निका मिलना बहुत अद्भुत और भयानक है; जो चन्द्रमा अग्निका पुत्र होगा कोई इस कन्याका पति होगा। इन्द्र ऐसा विचारकर ब्रह्मलोकको गए और उस कन्याको अगाड़ी करके ब्रह्मासे कहने लगे, कि कोई बड़ा शूरवीर पुरुष इस कन्याका पति होने योग्य बताइये। ब्रह्मा बोले, हे दानवनाशन। मैं ने इस कार्य्यको पहलेही विचारा था, एक महा बलवान बालक उत्पन्न होनेवाला है, वही तुम्हारा सेनापति होगा। हे शतक्रतो वही बलवान बालक इस कन्याका पति होगा। ऐसा सुन इन्द्रने और उस कन्याने ब्रह्माको प्रणाम किया। अनन्तर इन्द्र देवऋषियोंके पास गये। वहां वशिष्ठ आदि ब्राह्मण सोम ब्रह्माकी तपस्या करके यज्ञमें सोम पीनेकी इच्छासे इन्द्रादि देवतोंके सहित यज्ञ करने लगे। जब अग्नि प्रज्वलित हुई तब वे लोक आहुति देने लगे। सब महात्मा ऋषि लोग विधिके अनुसार अग्निमें हवन करनेलगे। अनन्तर देवतोंने अद्भुत अग्निको सूर्य्यमण्डलसे बुलाया। भगवान अग्नि ब्राह्मणोंकी वाणीके वशमें होकर उस यज्ञ स्थानमें प्रकट हुए। तब सब ब्राह्मणोंने मन्त्रोंको पढ़कर आहुति दी, भगवान अग्निनेभी उस आहुतिको ग्रहण करके सब ऋषि और देवता लोगोंको भाग दिया। यज्ञ समाप्त होनेके समय अपने लोकको जाते हुए, अग्निने महात्मा ऋषियोंकी स्त्रियोंको अपने आसन पर बैठी और सुखसे सोती हुई देखा। सोनेके समान रंगवाली, चन्द्रमाकी कलाके समान निर्म्मल अग्निकी ज्वाला और तारोंके समान सुन्दर ऋषियोंकी उन स्त्रियोंको देख कर अग्नि कामके वशमें हो गए; उनकी इन्द्री वशमें न रहीं। फिर अग्निने विचारा कि यह कर्म्म हमारा अन्यायका है, ये ब्राह्मणोंकी स्त्रियां पतिव्रता और कामरहित हैं, मैं किस प्रकारसे इनसे कामचेष्टा करूं; बिना किसी कारणके मैं इनको देख और छू नहीं सकता हूं, इस लिये इनके घरकी अग्निमें प्रवेश करके इनको देखूंगा।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, ऐसा विचार अग्निने उनके घरकी अग्निमें प्रवेश किया और वहांसे अपनी ज्वालाओंसे उन स्वर्णके समान रंगवालो

स्त्रियोंको छूने लगी और उनके रूपको देखकर प्रसन्न होने लगी; इस प्रकार वहां बहुत दिन रहनेसे अग्नि उन स्त्रियोंके वशमें हो गये और उनमें अपने चित्तको लगा दिया; जब अग्निका हृदय कामसे जलने लगा, तब उन्होंने निश्चय कर लिया कि अब हम शरीर छोड़ देंगे, परन्तु जब ब्राह्मणोंकी स्त्रियां उनको न मिलीं, तब वे बनको चले गए।

स्वाहा नामक दक्षकी पुत्रीने पहले अग्निको अपना पति बनाना चाहा था। और वह बहुत दिनसे अग्निके दोषोंको ढूढ़ रही थी। परन्तु अग्निदेव सदा सावधान रहते थे, इससे निन्दा रहित स्वाहाको कोई दोष न मिला। जब उनने इन सब बातोंको जान लिया कि अब अग्निदेव कामके वशमें होकर बनको गए हैं, तब उसने विचारा कि अब अग्नि कामके वशमें हुए हैं; सो मैं सातों ऋषियोंकी स्त्रियोंका रूप बना कर उनके पास जाऊं, मुझे जब वे कामके वशमें देखेंगे तब अवश्यही रूप और कामसे मोहित होजायगे ऐसा करनेसे अग्निकी प्रीति और मेरा कार्य्य सिद्धि होगा।

२२३ अध्याय समाप्त।

———

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे नरनाथ युधिष्ठिर! अङ्गिरा ऋषिको स्त्रीका नाम शिवा था। वह रूप, शील और गुणोंसे भरी थी। स्वाहा पहले उसीका रूप बना कर बनमें अग्निके पास गई और जाकर कहने लगी कि हे अग्ने! मैं कामसे बहुत व्याकुल हूं, तुम मेरे सङ्ग मैथुन करो, यदि ऐसा नहीं करोगे तो मैं मर जाऊंगी, हे हुताशन! मैं अङ्गिरा ऋषिकी स्त्री हूं, मेरा नाम शिवा है, सब ऋषियोंकी स्त्रियोंने सम्मति करके मुझे तुम्हारे पास भेजा है।

अग्नि बोले, तुमने और सब सप्त ऋषियोंकी प्यारी स्त्रियोंने कैसे जाना कि मैं कामके वशमें हूं।

शिवा बोली, तुम सदासे हमारे प्यारे हो, हम सब तुमसे बहुत डरती हैं, तुम्हारे चिन्होंसे हम लोगोंने पहिचान लिया, तब सब ऋषिपत्नियोंने मुझे तुम्हारे पास भेजा है, हमको इस समय कामदेव बहुत पीड़ा दे रहा है; तुम शीघ्र हमारे सङ्ग मैथुन करो, क्योंकि और ऋषियोंकी स्त्री हमारा मार्ग देख रही होंगी।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, अनन्तर अग्निने प्रसन्न होकर स्वाहाके सङ्ग मैथुन किया। स्वाहा देवीने भी प्रसन्न होकर अग्निका सङ्ग किया। अनन्तर उनके वीर्य्यको अपने हाथमें ले लिया और विचारने लगीं कि वनमें जो कोई मुझे देखेगा वह ब्राह्मणी और अग्निको दोषी जानेगा, इस लिये गरुड़ीका रूप बनाना चाहिये, ऐसा करनेसे सुखपूर्व्वक बनसे चली जाऊंगी।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, ऐसे विचार, स्वाहादेवी गरुड़ीका रूप बनाकर उस महा बनसे चली। अनन्तर पर्व्वत पर शरोंके बनको देखा, जो विष भरे हुए सात सिर वाले अद्भुत सर्प, राक्षस, पिशाच, घोर भूत, राक्षसी, बनजन्तु और अनेक प्रकारके पक्षियोंसे भरा हुआ था। उस घोर पर्व्वतके ऊपर जाकर स्वाहा देवीने उस वीर्य्यको एक सोनेके कुण्डमें छोड़ दिया। इस प्रकार स्वाहा देवीने सातों ऋषियोंकी स्त्रियोंका रूप बनाकर अग्निसे मैथुन किया, परन्तु वशिष्ठकी स्त्री अरुन्धतीका दिव्य रूप न बना सकी, क्योंकि अरुन्धती बड़ी तपस्विनी और पतिव्रता थी। हे कुरुसत्तम। इस प्रकार स्वाहा देवीने छः बार प्रतिपदाके दिन अग्निके वीर्य्यको उसी सोनेके कुण्डमें डाला, उस कुण्डसे कुछ दिनके पश्चात एक पुत्र उत्पन्न हुआ उसी समय सब ऋषियोंने इसकी पूजा करी और उसका नाम स्कन्द रक्खा। उस बालकके छः मुख, १२ हाथ, १२ कान, १२ नेत्र थे; परन्तु गला और हृदय एकही था। वह

बालक द्वितीयाको पिण्ड रूप रहा तृतीयाको बालक रूप हो गया, और चौथको उसके सब अङ्ग अलग अलग हो गये। उस समय बिजलीके सहित लाल मेघ आकाशमें दीखने लगे। उन लाल मेघोंमें वह बालक ऐसा दीखने लगा जैसे प्रातःकालका लाल सूर्य्य उदय होता है। उसने उत्पन्न होतेही उस धनुषको ग्रहण किया जिसके देखनेसे प्रायः सब लोगोंके रोंवे खड़े हो जाते थे। यह वही धनुष था जिसको त्रिपुरासुरके नाश करनेके समय शिवने चढ़ाया था; उस धनुषको चढ़ाकर बलवान कार्त्तिकेय बहुत गरजने लगे उस शब्दसे समस्त चर और अचरके सहित तीनों लोक मूर्च्छित होने लगे। उस महा मेघके समान शब्दको सुनकर महानाग चित्र और ऐरावत दौड़; सूर्य्यके समान तेजस्वी बालकने उनको आते देख एक एक हाथसे पकड़ लिया एक हाथसे शक्ति और एक हाथसे बड़े शरीरवाले महा बलवान कुक्कुटको पकड़कर खेलने लगे, और घोर शब्द करने लगे। अनन्तर दो हाथमें उत्तम शङ्ख लेकर बजाने लगे। उस शब्दको सुनकर सब बलवान जन्तु डरने लगे, कार्त्तिकेय अपने दो हाथोंको बारबार आकाशकी ओर चलाने लगे। उस समय खेलते स्वामकार्त्तिककी ऐसी शोभा बढ़ी कि मानो तीनों लोकको वह खा जायगे। महा बलवान स्वामकार्त्तिक उस पर्व्वतपर ऐसे शोभायमान हुए जैसे उदयाचल पर सूर्य्य। विचित्र पराक्रमी स्वामकार्त्तिक उस पर्व्वत पर बैठकर सब दिशाओंको देखने लगे और अनेक प्रकारकी वस्तुओंको देखकर पुनः गर्जने लगे। उस शब्दको सुनकर समस्त प्राणी लोग डरकर भागने लगे। फिर घबराकर सब उन्हींकी शरण गए। जो बलवान जन्तु उनकी शरण गए उन्हीको ब्राह्मणोंने उनका पार्षद कहा है, महाबाहु स्वामकार्त्तिक उन सब जीवोंको शान्त करके वहांसे उठे और धनुष चढ़ाकर उस पर्व्वतकी ओर बाण चलाने लगे। उन्होंने अपने बाणोंसे हिमाचलके पुत्र क्रौंच पर्व्वतको विदीर्ण कर दिया। उसी समय वहांसे हंस और गिद्ध उड़कर मेरु पर्व्वतपर चले गये; उनके बाणोंसे वह पर्व्वत दीन शब्द करता हुआ पृथ्वीपर गिर पड़ा। उसके गिरनेसे, और पर्व्वतों परभी घोर शब्द होने लगा। बलवानोंमें श्रेष्ठ स्वामकार्त्तिक उस घोर शब्दको सुनकरभी कुछ न डरे, और शक्तिको लेकर गर्जने लगे। जब उन्होंने उस निर्म्मल शक्तिको उस श्वेत पर्व्वतकी ओर चलाया तो उसके लगनेसे उसका शिखर कटकर गिर पड़ा। महात्मा स्वामकार्त्तिकके बाण और शक्ति लगनेसे वह पर्व्वत डरकर पृथ्वी छोड़ आकाशको उड़ने लगा। अनन्तर पृथ्वीभी कटकर चारों ओर गिरने लगी। उसके पश्चात पृथ्वीभी बहुत दुःख पाने लगी; फिर दीन होकर स्वामकार्त्तिकके पास आई और शरण पाकर पुनः बलवान हो गई। अनन्तर सब पर्व्वतोंने उनको प्रणाम किया और पृथ्वीपर बैठ गए। अनन्तर शुक्ल पक्षको पञ्चमीको सब लोगोंने स्वामकार्त्तिकको देखा।

२२४ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! जब महाबलवान, स्वाहासे स्वामकार्त्तिक उत्पन्न हुए, तब पृथ्वीमें अनेक प्रकारके घोर उत्पात उठने लगे। स्त्री और पुरुषोंमें परस्पर बैर होने लगा। शीत और उष्णका कुछ प्रमाण न रहा। आकाश, दिशा और सब पृथ्वी प्रकाशित हो गई। महा ऋषि लोगोंने जब इन घोर उत्पातोंको देखा तो घबड़ाकर लोकोंकी शान्तिके निमित्त शान्ति शान्त करने लगे। जो ऋषि लोग उस चैत्ररथ वनमें रहते थे, वे सब कहने लगे, कि अग्निने यह हमारे बड़ा परम अनर्थ किया है। वे लोग कहने लगे

कि अग्निने छः ऋषियोंकी स्त्रियोंसे इस बालकको उत्पन्न किया है, कोई कहने लगे कि वह तो गरुड़ी थी। जिन पुरुषोंने उस स्वाहा देवीके रूपको देखा था, वे लोग कहने लगे कि यह कर्म स्वाहा देवीका ही है। जब उस गरुड़ीने ये सब वचन सुने तब स्वामकार्त्तिकके पास जाकर कहने लगी कि मैही तेरी माता हूं। जब सप्त ऋषियोंने सुना कि इस प्रकार हमारी स्त्रियोंके गर्भसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ तब अपनी अपनी स्त्रियोंको सबने छोड़ दिया परन्तु भगवान वशिष्ठने अरुन्धती देवीको नहीं छोड़ा। जब सब वनवासी कहने लगे कि सप्त ऋषियोंकी स्त्रियोंसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ है, तब स्वाहा देवीने जाकर कहा कि यह पुत्र हमारा है। परन्तु इस बात पर किसी ऋषिको विश्वास न हुआ। इन सब वृत्तान्तको विश्वामित्र मुनि भली भांति जानते थे, क्योंकि उन्होंने उस सप्त ऋषियोंको यज्ञमें अग्निको कामवश हुआ देखा और अग्निके पीछे गुप्त रूपसे बनकोभी गए और वही स्वाहादेवीका सब चरित्रभी देखा। तब उन्होंने सब वृत्तान्त सप्त ऋषियोंसे कह सुनाया, अनन्तर विश्वामित्रही पहले स्वामकार्त्तिककी शरण गए, और एक दिव्य स्तोत्रभी बनाया। विश्वामित्र महा मुनिने स्वामकार्त्तिकको १३ जात कर्म्म और मङ्गल कर्म्मभी किये। विश्वामित्र मुनिने स्वामकार्त्तिकका महात्म्य कुक्कुट और देवीका साधनभी वही किया, और पार्षदोंका पूजनभी किया। विश्वामित्र मुनिने यह सब कर्म्म लोकके हितके निमित्त किया। इस लिये विश्वामित्र मुनि स्वामकार्त्तिकके बड़े प्रिय हुए। अनन्तर विश्वामित्र मुनिने स्वाहाका सब रूप जानकर सप्त ऋषियोंसे कहा कि तुम्हारी कोई स्त्रियोंका दोष नहीं है, उन्होंने विश्वामित्रके वचन सुन अपनी अपनी स्त्रीको ले लिया।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, जब देवतोंने सुना कि स्वामार्त्तिक उत्पन्न हुए, तब सब इन्द्रके पास जाकर कहने लगे, कि हे शक्र। कार्त्तिकेय बहुत बलबान है, इस लिये इनको शीघ्रही जीत लीजिये, बिलम्ब न कोजिये, यदि आप इन्हें न मारेंगे तो यही इन्द्र हो जायगा। हे महाबल। यह हमारे सहित तीनों लोकोंको जीत लेगा। इन्द्र बोले, हे देवतो! यह बालक बहुत बलवान है, हम और लोकोंके कर्त्ता ब्रह्माभी इसको युद्धमें नहीं मार सकते है। हम इस बालकके बलकोभी नहीं सह सकते। देवता लोग कहने लगे, हे इन्द्र! क्या तुममें इतना बल नहीं है, जो इस लड़केको जीत सको? इस लिये अब जितनी लोक माता है, सब स्वामकार्तिकके पास जाय और उसके बलको नाश करें। सब लोक माता उनके वचनको ग्रहण करके कार्तिकेयके पास गई परन्तु उनका अनन्त बल देखकर सब दुःखित हो गई और उनका जीतनेमें असमर्थ समझकर, उन्हीके शरण गई और उनसे कहने लगीं कि हे महाबल! तुम हमारे पुत्रहो जाओ। तुम सब लोकोंको प्रसन्न करो, हम सब तुम्हारे प्रेमसे विकल है; तुम हमारा दूध पिओ। उनके वचन सुन भगवान स्वामकार्त्तिकने उनका दूध पीनेकी इच्छा करी। अनन्तर उनका दूध पीकर उनकी बहुत प्रशंसा करी। उसी समय अपने पिता अग्निको आते हुए देखा, तब अग्निने स्वामकार्त्तिककी बड़ी प्रशंसा करी और लोक माताओंके सहित उनके चारो ओर रक्षा करनेको बैठ गए। लोक माताओंके क्रोधसे जो स्त्री उत्पन्न हुई थीं वह हाथमें त्रिशूल लेकर स्वामकार्त्तिककी पुत्रके समान रक्षा करने लगीं। जो लाल समुद्रकी कन्या थी वहभी स्वामकार्त्तिककी पुत्रके समान रक्षा करने लगी! यह कन्या बड़ी कठिन स्वभाव वाली और रक्त पीनेवाली थी और नैगमेय नामक

अग्नि बकरेका मुह बनाकर उस बालकको खिलौनेके समान खिलाने लगी।

१२५ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर। ग्रह, उपग्रह, ऋषि लोकमाता और अग्नि आदिक देवता तथा पार्षद लोग बहुत प्रसन्न हुए। इनको आदि लेकर औरभी सब देवता लोग और लोकमाता कार्त्तिकेयके चारों ओर बैठ गए। जब देवराज इन्द्रने अपने विजयमें सन्देह देखा। तब ऐरावत पर चढ़ सब देवतोंको सङ्ग ले और वज्र धारण करके कार्त्तिकेयके मारनेको इच्छासे शीघ्र चलने लगे। जब कार्त्तिकेयने महाउग्र, महातेजस्वी, महानाद करनेवाली विचित्र ध्वजा, कवच, और धनुषधारिणी सेनाको देखा, तो उसको मारनेको चले। हे युधिष्ठिर। जब महाबलवान इन्द्रने कार्त्तिकेयको आते देखा, तब उनके मारनेकी इच्छासे, और देवतोंको प्रसन्न करनेको इच्छासे गर्जने लगे। इन्द्रका शब्द सुनकर सब ऋषि और देवता लोग उनकी पूजा करने लगे। इस प्रकार इन्द्र कार्त्तिकेयके पास पहुंचे, वहा पहुंचकर भी इन्द्रने देवतोंके सहित सिंहके समान शब्द किया। उस शब्दको सुनकर कार्त्तिकेयभी समुद्रके समान गर्जने लगे। उनके शब्दको सुनकर समुद्रके समान देवतोंकी सेना घबड़ा गई, और चेतनारहित होकर इधर उधर घूमने लगी। जब अग्निके पुत्र कार्त्तिकेयने देखा कि देवता लोग हमें मारनेको आए है, तब उन्होंने बड़ी कठिन घोर अग्निकी ज्वाला उनकी ओरको छोड़ी, उससे सब देवतोंकी सेना जलने लगी और काप काप कर पृथ्वी पर गिरने लगी किसीका सिर, किसोका शरीर; किसीका वाहन, किसीका शस्त्र जलने लगा। उस समय जलते हुए देवतोंकी ऐसी शोभा भई जैसे गिरते हुए तारोंकी शोभा होती है, अनन्तर जलते हुए देवता कार्त्तिकेयकी शरण गए। जब सब देवतोंने इन्द्रको छोड़ दिया तो युद्धकी शान्ति हो गई। इन्द्रने कार्त्तिकेयको वज्र मारा; वह वज्र कार्त्तिकेयके दहने कन्धेमें लगा, तब महात्मा कार्त्तिकेयके कन्धेसे एक नवीन पुरुष उत्पन्न हुआ। वह युवा सोनेका कवच पहने शक्ति और दिव्य कुण्डल धारण किये था। जो पुरुष वज्रके लगनेसे उत्पन्न हुआ था उसका नाम विशाख हुआ। जब इन्द्रने अग्निके समान दूसरे पुरुषको देखा, तो हाथ जोड़कर कार्त्तिकेयकी शरण गए। तब कार्त्तिकेयने सेनाके सहित उन्हें अभय दान दिया। तब सब देवतालोगोंने प्रसन्न होकर कार्त्तिकेयको प्रणाम किया।

२२६ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! अब कार्त्तिकेयके पार्षदोंके नाम सुनिये। ये सब बिचित्र रूपवाले है, इनका जन्म वज्र लगनेके समय कार्त्तिकेयके शरीरसे हुआ था, यही बड़े कठोर पार्षद लोग बालकोंको और गर्भोंको नष्ट कर देते है। उसी समय वज्र लगनसे कार्त्तिकेयके शरीरसे महा बलवान कन्याभी उत्पन्न हुई थीं। उन कुमारीने विशाखको अपना पिता माना। अनन्तर वे भगवान छागमुख होकर कार्त्तिकेयकी रक्षामें रक्षा करने लगे। पश्चात वह सब कन्या, अपने पुत्र, और मातृगणोंके सहित आनन्द करने लगीं। उसी दिनसे संसारके पुरुषोंने महाबलवान कार्त्तिकेयको सब बालकोंका पिता मान लिया है, उसी दिनसे पुत्रोंकी रक्षा रखनेवाले और पुत्रवाले पुरुष कार्त्तिकेयकी पूजा करने लगे। जो आगसे कन्या उत्पन्न हुई थी, वे सब कार्त्तिकेयके पास आकर कहने लगी कि हम लोग क्या करें। कुमारी बोलीं,

हे कार्त्तिकेय। हमलोग बहुत उत्तम हैं; इससे सब जगतकी माता होना चाहती हैं, तुम हमारे इस प्रियकार्य्यको सिद्ध करो। कार्त्तिकेय बोले, बहुत अच्छा, तुम लोग सब अलग अलग हो जाओ। उत्तम बुद्धिमान कार्त्तिकेय वार वार कहने लगे कि तुम लोग आधी शिवा और आधी अशिवाके नामसे प्रसिद्ध होओ। तब लोकमाता कार्त्तिकेयको अपना अपना पुत्र मानकर चली गई।

उनके नाम ये हैं,—काकी, हलिमा, मालिनी, वृहिलता, आर्य्या, पलाला, और वैमित्रा। यही सात लोक माता कहाती हैं। इनका जो शिशु नामक पुत्र हुआ वह बड़ा भयङ्कर लाल नेत्रवाला और दारुण स्वभाव था। यह पुत्र कार्त्तिकेयके प्रसादसे उत्पन्न हुआ था; यह कार्त्तिकेय और लोकमातासे उत्पन्न हुए आठ वीर हैं। छागमुख अग्निके सहित नौ होते हैं। हे राजन्। कार्त्तिकेयके छः मुखोंमेंसे जो बीचका मुख है, वह बकरेका है, लोकमाता सदाही उसकी पूजा करती रहती है; यह मुख छःहों मुखोंसे उत्तम है। विशाखने इसीसे दिव्य शक्तिको बनाया था। इस प्रकारसे यह सब वृत्तान्त शुक्ल पक्षकी पञ्चमीको हुआ और षष्ठीको महाघोर युद्ध हुआ।

२२७ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! अनन्तर महा तेजस्वी कार्त्तिकेय सोनेकी माला, कवच, और मुकुट धारण करके एक स्थानपर बैठे। उस समय महा तेजस्वी लाल नेत्रवाले; लाल वस्त्र धारी तीक्ष्णदातवाले, मनोहर, सब लक्षणोंसे युक्त, तीन लोकके प्यारे वरदान देने; वाले शूर, वीर, युवा, धनुषधारी कार्त्तिकेयकी सेवा करनेको साक्षात रूप धारण करके लक्ष्मी आई। उस समय महा यशस्वी कार्त्तिकेय शोभासे युक्त ऐसे शोभायमान हुए, जैसे पूर्णमासीके चन्द्रमा। उसी समय महात्मा ऋषियोंने, कार्त्तिकेयकी पूजा करी और ऐसा कहने लगे।

ऋषि लोग बोले, हे हिरण्यगर्भ। तुम्हारा कल्याण हो, तुम जगतका कल्याण करो, तुमने छःही दिन जन्म लेनेके पश्चात सब लोकोंको वशमें कर लिया, हे देवश्रेष्ठ! तुमने फिर उन सब देवतोंको अभय दान दिया है; इस लिये तुम इन्द्र हो जाओ; तब हम लोगोंको किसीका भी भय नहीं होगा। कार्त्तिकेय बोले, हे ऋषियो। इन्द्र तीन लोकका कौनसा हित करता है, और किस प्रकार देवतोंकी रक्षा करता है। ऋषि लोग बोले, इन्द्र सब प्रजामें तेज और बलको स्थापन करता है, जब प्रसन्न होता है, तब सब कामोंको सिद्ध करता है, दुष्टोंका नाश और साधुओंका पालन करता है, वही बलनाशक इन्द्र सब प्रजाका शासन करता है; सूर्य्यके अभावमें सूर्य्य, चन्द्रमाके अभावमें चन्द्रमा, अग्निके अभावमें अग्नि, वायु, पृथ्वी, जलके अभावमें उन्हीका रूप धारण कर लेता है, यही सब इन्द्रके कार्य्य हैं; इन्द्रही सबसे अधिक बलवान हैं, तुम सब बलवानोंमें श्रेष्ठ हो; इस लिये तुमही हमारे इन्द्र हो जाओ। इन्द्र बोले, हे महाबाहो। हे सत्तम। तुम हम लोगोंको सुख देनेवाले हो इस लिये तुमही इन्द्रासनपर अपना अभिषेक करो। कार्त्तिकेय बोले, हे शक्र। हमको इन्द्र होनेकी इच्छा नहीं है, तुमही तीनो लोकोंका राज्य करो हम तुम्हारे दास हैं, तुम सदा विजयकी इच्छा रखो। इन्द्र बोले, हे वीर! हे तात! हे महाबल। तुम्हारा बल विचित्र है, तुम देवतोंके शत्रुओंको जीतो क्योंकि तुम्हारा अधिक बल देखकर लोक हमारा निरादर करने लगे, जब हम निर्बल होकर इन्द्रासनपर बैठेंगे तो सब लोक सावधान होकर हमारे और तुम्हारे

भेदका यत्न करेंगे; जब हममें तुममें भेद हो जायगा तब सब लोक दो दल हो जायगा; उस समयमें हमारा तुम्हारा अवश्यही युद्ध होगा; उस युद्धमें तुम हमको अवश्य जीतोगे इस लिये तुम अभीसे इन्द्र हो जाओ; इसमें विलम्ब मत करो। कार्त्तिकेय बोले, हे इन्द्र! तुम्हारा कल्याण हो, तुमही हमारे और तीन लोकके राजा हो; हम तुम्हारे दास हैं; कहो कौन सी आज्ञा पालन करें, इन्द्र बोले हे महाबल! हे स्कन्द! यदि तुम सत्य सत्य यह बात निश्चय करके कहते हो, तो हम तुम्हारी आज्ञासे इन्द्र होंगे और यदि तुम हमारी आज्ञा पालन करना चाहते हो,तो सुनो; हमारी यही इच्छा है कि तुम देवतोंके सेनापति बनो। कार्त्तिकेय बोले, हे इन्द्र! दानवोंके नाश, देवतोंकी कार्य्यसिद्धि, तथा गौ और ब्राह्मणोंके हितार्थ हमको देवतोंका सेनापति बनाओ।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, उसी समय सब देवतोंके सहित इन्द्रने स्वामकार्त्तिकको सेनापति किया उस समय ऋषियोंसे पूजित कार्त्तिकेय अत्यन्त शोभायमान हुए, वह सोनेका छत्र उनके सिरपर लगा हुआ ऐसा विराजमान हुआ जैसे साक्षात अग्निका मण्डल। विश्वकर्म्माकी बनाई हुई सोनेकी माला साक्षात यशस्वी शिवने अपने हाथसे पहिराई। उस समय शिव पार्व्वतीके सहित आए थे उन्होंनेभी कार्त्तिकेय-की पूजा करी। ब्राह्मणोंने शिवका नाम अग्नि लिखा है, इस लिये कार्त्तिकेय शिवहीके पुत्र हुए। शिवने जो वीर्य्य त्याग किया था वही श्वेत पर्व्वत हो गया था, उस पर्व्वतपर कृतिकाने अग्निकी इन्द्रीको बनाया था। सब देवतोंने शिवसे कार्त्तिकेयको पूजित देखकर कहा कि अग्निमें प्रवेश करके शिवने इस पुत्रको उत्पन्न किया है; उसी दिनसे सब लोग कार्त्ति-केयको शिवका पुत्र कहने लगे। हे भारत! शिव, अग्नि, स्वाहा देवी, और छः माताओंसे कार्त्तिकेयका जन्म हुआ है। ये कार्त्तिकेय सब देवतोंमें श्रेष्ठ और शिवके पुत्र हुए। निर्म्मल लाल वस्त्र धारण किये अग्निनन्दन कार्त्तिकेय ऐसे शोभायमान हुए जैसे लाल मेघोंके बीचमें सूर्य्य। उसी समय अग्निने एक कुक्कुट दिया और एक लाल ध्वजा दी। वह ध्वजा रथपर लगकर ऐसी शोभायमान हुई, जैसी फैली हुई प्रलय कालकी अग्नि। जो सब प्राणियोंकी चेष्टा और शान्ति है, वही शक्ति अपना रूप धारण करके कार्त्तिकेयके आगे आई, वही शक्ति उनके संग उत्पन्न हुई कवचमें प्रवेशकर गई और वही शक्ति युद्धके समय सदा प्रगट हो जाती है। हे नरनाथ! शक्ति, धर्म्म, बल, तेज, शोभा, सत्य, बढ़ती, ब्राह्मणता, चेतनता, भक्तोंकी रक्षा, दुष्टोंका नाश करना और लोकोंका पालन करना, ये सब गुण कार्तिकेयके जन्महीसे उत्पन्न हुए, है, हे महाराज! इस प्रकार सब देवतोंने कार्त्तिकेयका अभिषेक किया। उस समय कार्त्तिकेय सब भूषणोंको धारण करके ऐसे शोभायमान हुए जैसे प्रसन्न चन्द्रमाका मण्डल। उस समय देवतोंके बाजे बजने लगे देवता तथा गन्धर्व्व गाने लगे और अप्सरा नाचने लगीं। इनको आदिले औरभी बहुत लोग प्रसन्न हुए। उस समय देवता और पिशाचोंके बीचमें बैठकर अग्निनन्दन कार्तिकेय बहुत शोभायमान हुए, और देवता उनको देखने लगे। उस समय कार्तिकेयकी ऐसी शोभा बढ़ी जैसी प्रातःकाल उदय होते हुए सूर्य्यकी। अनन्तर इनके पास सहस्रों देवतोंकी सेना आने लगी। वे सब लोग चारों ओरसे कहने लगे कि तुम हमारे स्वामी हो; तब कार्त्तिकेयने उन सबको शान्त किया। उन्होंनेभी कार्त्तिकेयकी शान्ति और पूजा करी। जब इन्द्र कार्त्तिकेयका अभिषेक कर चुके, तब उस देवसेना कन्याका वरण किया जिसको उन्होंने राक्षससे छुड़ाया था,

इन्द्रने विचारा कि ब्रह्माने इसीको इस कन्याके लिये पति बनाया था। ऐसा विचारकर इन्द्र उस कन्याको आभूषण पहिराकर कार्त्तिकेयके पास ले आये ; तब इन्द्र कार्त्तिकेयसे कहने लगे कि हे देवतोंमें श्रेष्ठ! यह कन्या है, जब तुम उत्पन्न नहीं हुए थे, तबही ब्रह्माने तुम्हारे लिये इसको बनाया था ; इस लिये तुम इसका दहना हाथ विधिके सहित अपने कमलके समान हाथसे ग्रहण करो। इन्द्रके ऐसे वचन सुन कार्त्तिकेयने देवसेनासे विधि पूर्व्वक विवाह किया। उस विवाहमें मन्त्रके जाननेवाले बृहस्पतिने मन्त्र गाये और होम करी, इस प्रकार देवसेना कार्त्तिकेयकी स्त्री भई। वह विवाह षष्ठी तिथिको हुआ था ; इस लिये इसी तिथिको पहले ब्राह्मण लोग सुख और लक्ष्मीको देनेवाली कहते हैं ; इसीके सिनिवाली, कुहू, सदवृत्ती और अपराजिता नाम हैं। जिस समय देवसेनाने कार्त्तिकेयको अपना पति बनाया, उसी समय लक्ष्मीभी अपना शरीर धारण करके कार्त्तिकेयके पास आई। पञ्चमी तिथिको कार्त्तिकेय लक्ष्मीवान हुए थे, इसीसे उस तिथिका नाम श्रीपञ्चमी है। षष्ठीको कार्त्तिकेयका विवाह हुआ था, इसीसे षष्ठीको महातिथि कहा है।

२२८ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! जिस समय कार्त्तिकेय देवतोंके सेनापति हो चुके और परम शोभासे विराजमान होने लगे उसी समय सप्त ऋषियोंकी स्त्री उनके पास आईं। वे सब धर्म्मकी और व्रतको धारण करनेवाली थीं, परन्तु ऋषियोंने उनको छोड़ दिया था। वे सब कहने लगीं, हे पुत्र! हम लोगोंको हमारे देव-समान पतियोंने विना कारणही क्रोधवश होकर छोड़ दिया है, इस लिये हम लोग धर्म्मसे नष्ट हो गई है, किसीने हमारे पतियोंसे कह दिया कि तुम हमारेही गर्भसे उत्पन्न हुए हो, इन सब सत्य-वातोंको सुनकर तुम हमारी रक्षा करो, हे प्रभो! तुम्हारी कृपासे हमको अक्षय स्वर्ग होगा, हम सब तुमको अपना पुत्र बनाना चाहती हैं ; यह कार्य्य करके तुम अऋण हो जाओ। कार्त्तिकेय बोले, हे निन्दारहित ब्राह्मणियों! तुम सब हमारी माता हो, हम तुम्हारे पुत्र हैं, और जो कुछ तुम्हारी इच्छा हो सब सिद्ध होगी।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, कार्त्तिकेयने इन्द्रसे कहा कि, हे इन्द्र! हम तुम्हारा कौन सा कार्य्य सिद्ध करें। इन्द्र बोले, हे कार्त्तिकेय! अभिजित रोहिणीसे छोटी है, परन्तु वह रोहिणीसे बड़ी होना चाहती है, इसी लिये वह तप करनेको बनमें गई है, इसी लिये मैं घबड़ा रहा हूं; क्योंकि अभिजित नक्षत्र आकाशसे नष्ट होगया है, रोहिणी उससे बड़ी होना चाहती है, इसी लिये वह तप करनेको वनमें गई है इसी लिये तुम ब्रह्माके यहां जाकर समयका विचार करो। ब्रह्माने पहले धनिष्ठाको आदि गिना है। सबसे पहली रोहिणी थी इस प्रकार यह संख्या स्थित है। इन्द्रके यह वचन सुनकर कृत्तिका आकाशको चली गई। वही कृत्तिका सात सिरके समान दिखाई देती है, उसका देवता अग्नि है। विनताने कार्त्तिकेयसे कहा कि तुम हमारे पिण्ड देनेवाले पुत्र हो, इस लिये मैं सदा तुम्हारे सङ्ग रहना चाहती हूं।

कार्त्तिकेय बोले, तुमने कहा सो ऐसाही होगा, हम तुम्हें प्रणाम करते हैं, तुम हमें पुत्रप्रेमसे पालन करो और पुत्रवधूसे पूजित होकर यहां सुखसे रहो।

मार्कण्डेय मुनि बोले, इसके पश्चात सब लोकमाता कार्त्तिकेयसे कहने लगीं कि हम सब लोकोंकी माता हैं, और सब पण्डित लोग

स्तुति करते हैं हम तुम्हारी माता होना चाहती हैं, तुम हमारी पूजा करो।

कार्त्तिकेय बोले, हे लोकमाता! तुम सब हमारी माता हो और हम तुम सबके पुत्र हैं, जो तुम्हारी इच्छा हो सो मुझसे कहो मैं उसको पूर्ण करूंगा। लोकमाता बोलीं, पहले जो लोकमाता थीं उनके जो स्थान थे सो हमको मिलें और उनको न मिलें; हमारी सब लोक पूजा करें और उनकी न करें। हे देवसिंह! उन्होंने तुम्हारे कारणसे हमारी सन्तानको छीन लिया है सो हमें फिर दो।

कार्त्तिकेय बोले, वह सब सन्तान नष्ट हो गई, अब तुम लोगोंको नहीं मिल सकती हैं, यदि तुम लोगोंकी इच्छा हो तो दूसरी प्रजा तुम्हें दें।

लोकमाता बोलीं, हे कार्त्तिकेय! हम उन लोकमाताओंकी प्रजा भोग करना चाहती हैं, तुमको छोड़कर और जो कुछ उनका हो हमको दे दो। कार्त्तिकेय बोले, हम बहुत कष्टसे यह प्रजा तुमको देते हैं, तुम लोग उनकी रक्षा करना, क्योंकि तुमको सब साधु लोग नमस्कार करते हैं।

लोकमाता बोलीं, हे कार्त्तिकेय! तुम्हारा कल्याण हो, हम प्रजाकी तुम्हारी इच्छानुसार रक्षा करेंगी, तुम्हारे संग बहुत दिन तक रहनेकी हमारी इच्छा है।

कार्त्तिकेय बोले, जब तक सन्तान १६ वर्षकी हों, तब तक तुम अलग अलग रूप बनाकर उनकी रक्षा करो, हम तुम लोगोंको शिवकी अव्यय आत्माको देंगे उसके सहित सुखसे पूजा-पाकर यहां वसो।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, उसी समय कार्त्तिकेयके शरीरसे प्रजाके भोग करनेके लिये एक पुरुष उत्पन्न हुआ, उसका सोनेके समान रंग था, वह होतेही भूखसे व्याकुल होकर पृथ्वी पर गिर गया। उसी समय कार्त्तिकेयकी आज्ञासे वह रुद्र रूपी ग्रह हो गया ब्राह्मणोंने उसीको स्कन्दापस्मार कहा है। जो बड़ी कठिन विनता है उसीको शकुनी ग्रह कहते हैं। जो पूतना नामक राक्षसी है वह बड़ा दुःख देने वाली और घोर रूपणी है, उसीको पूतना ग्रह भी कहते हैं, जो भयानक रूपवाली पिशाची है उसे शीत पूतना कहते हैं; वा, स्त्रियोंके गर्भसे वालकोंको निकाल लेती है। अदितिका नाम रेवती है, उसका ग्रह रैवत है, वह भी बड़ा घोर है और बालकोंको दुःख देता है, जो दिति नामक दैत्योंकी माता है उसका नाम मुखमण्डिका है वह सदा बालकोंकी मांस खाया करती है। हे कुरुनन्दन! जो हमने कार्त्तिकेयके उत्पन्न हुए लड़की और लड़के कहे सो सब भी बालकोंको दुःख देने वाले और महा ग्रह हैं वे सब इन स्त्रियोंके पति और बड़े दुष्ट कर्म्म करनेवाले हैं, यही बालकोंको नाश कर देते हैं। हे राजन्! जो सुरभी नामक गौओंकी माता है उसके ऊपर शकुनी चढ़कर पृथ्वीके बालकोंको खाजाता है। हे नरनाथ! सरमा नामक जो कुत्तोंकी माता है वह भी स्त्रियोंको निकाल लेती है। कुरंगनिलया जो वृक्षोंकी माता है वह बड़ी साधु वरदान देनेवाली और जन्तुओंके ऊपर कृपा करने वाली है। इसी लिये पुत्र चाहने वाले पुरुष कुरंजुवेके वृक्षमें उसे प्रणाम करते हैं। ये अन्य अठारह ग्रह हैं; ये सब मांस और मद्यको अत्यन्त प्रिय मानते हैं, और सात दिन तक सूतिका स्थानमें रहते हैं। कद्रु सूक्ष्म रूप धारण करके गर्भमें घुस जाती है, और स्त्रीके गर्भको खाजाती है तब उसके गर्भसे नाग उत्पन्न होता है। जो गन्धर्वोंकी माता है, सो गर्भको लेकर चली जाती है, इसीसे स्त्रियोंका गर्भ छिप जाता है। जो अप्सराओं-की माता है सो गर्भको ग्रहण करती है। इसीसे स्त्रीका गर्भ नष्ट हो जाता है। जो बाल

समुद्रकी कन्या है जिसने कार्त्तिकेयको दूध पिलाया था, उसका नाम लोहितायनी है; उसकी पूजा कदम्ब वृक्षमें होती है। जैसे पुरुषोंमें शिव हैं; तैसेही स्त्रियोंमें आर्य्या है; यह आर्य्या कार्त्तिकेयकी माता है; उसकी पूजा अलग अलग कार्य्योंमें की जाती है, मैंने यह सब ग्रह कहे। जब तक १६ वर्षका बालक होता है, तब तक ये सब दुःख देते हैं। जो हमने पुरुष और स्त्री ग्रह कहे इन सबको स्कन्द ग्रह जानना चाहिये; इन सबकी पूजा धूप, दीप और स्नानसे करनी चाहिये; इनकी शान्तिके निमित्त कार्त्तिकेयके नामसे बलिदान करना चाहिये। इस प्रकार पूजा पाकर ये सब अच्छा फल देते हैं। हे राजेन्द्र! ये सब लोग पूजा पाकर पुरुषोंका वीर्य्य और आयु बढ़ाते हैं। अब हम शिवको नमस्कार करते हैं और उन ग्रहोंका वर्णन करते हैं जो १६ वर्षके अवस्थाके पीछे बालकोंको दुःख देते हैं।

जो पुरुष सोते अथवा जागते हुए देवतोंको देखता है, और फिर शीघ्रही पागल होजाता है, उस ग्रहका नाम देवग्रह है। जो बैठे या सोये हुए पितरोंको देखता है, और फिर उत्पन्न हो जाता है, उसे पितृग्रहका दोष जानना चाहिये। जो सिद्धोंका अपमान करता है, और जिसे सिद्ध लोग क्रोधित होकर शाप देते हैं, फिर जो पागल हो जाता है, वह सिद्ध ग्रहका दोष है। जो पागल अनेक सुगन्धियोंको सूंघे और अनेक रसोंको खाय उसे राक्षस ग्रह जानना चाहिये। जिसके शरीरमें गन्धर्व्व प्रवेश करता है और वह शीघ्रही पागल हो जाता है, उसे गन्धर्व्व ग्रह जानना चाहिये। जिसके ऊपर प्रेत चढ़ता है, और वह पुरुष पागल हो जाता है, उसपर पिशाच ग्रह जानना चाहिये, जिस पुरुषपर समय बिगड़नेसे यक्ष लोग आते हैं; और वह पागल हो जाता है, उसको यक्ष ग्रहका दोष है। जो पुरुष वात, पित्त, और कफके दोषोंसे पागल हो जाता है, उसकी चिकित्सा शास्त्रानुसार करनी चाहिये। जो पुरुष बिकलतासे, भयसे, और कठोर वस्तुके देखनेसे पागल हो जाता है, उसके चित्तको शान्त करना चाहिये। कोई ग्रह खेलनेकी इच्छा करता है, कोई खानेकी इच्छा करता है, और कोई साधारण इच्छा रखता है; इस प्रकार ग्रहोंकी तीन इच्छा होती हैं। ७० वर्षकी अवस्था तक पुरुषोंको ये सब ग्रह दुःख देते हैं; इसके पीछे ज्वरही ग्रहके समान हो जाता है। जो पुरुष इन्द्रियजित, पवित्र, दाता, सदा आलसरहित, श्रद्धावान और आस्तिक होता है, उसे ग्रह लोग छोड़ देते हैं, हमने यह सब ग्रहोंका विधान कहा। जो पुरुष भगवान शिवके भक्त हैं, उनको ग्रह दुःख नहीं देते।

२२८ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर। जिस समय कार्त्तिकेयने लोकमाताओंका प्रिय कार्य्य किया, उसी समय स्वाहा देवीने कुमारसे कहा कि तुम हमारे गर्भसे उत्पन्न हुए पुत्र हो, इस लिये मैं तुम्हारे दुर्लभ प्रेमको चाहती हूं। तब कार्त्तिकेयने उनसे कहा कि तुम हमारे किस प्रकारके प्रेमको चाहती हो? स्वाहादेवी बोलीं, हे महाभुज। मैं दक्षकी प्यारी कन्या हूं मेरा नाम स्वाहा है, मै बाल्यावस्थाहीसे अग्निको अपना पति बनाना चाहती थी, हे पुत्र! वह मुझको नहीं जानते थे, कि यह मेरी इच्छा करती है, हे पुत्र! मैं सदाही अग्निके सङ्ग बसना चाहती हूं।

कार्त्तिकेय बोले, हे स्वाहे! ब्राह्मण लोग यज्ञोंमें मन्त्रोंके सहित जो हव्य और कव्य देंगे, उसमें स्वाहा शब्द उच्चारण करेंगे। इसी प्रकारसे तू आजसे अग्निके संग बसेगी। हे

सुन्दरी! अच्छे कर्म्म करनेवाले महात्मा लोग आजसे ऐसाही करेंगे।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! स्वामकार्त्तिकेयके ऐसे वचन सुनकर स्वाहा देवी बहुत सन्तुष्ट हुई और कार्त्तिकेयने उनकी बहुत पूजा करी। उसी दिनसे स्वाहा देवी अपने पति अग्निके सङ्ग रहती हैं। उन्होंनेभी कार्त्तिकेयकी पूजा करी। अनन्तर प्रजापति ब्रह्माने कार्त्तिकेयसे कहा कि तुम त्रिपुरासुरके नाश करनेवाले अपने पिता महादेवके पास जाओ; महादेवने अग्निका और पार्व्वतीने स्वाहादेवीका रूप धारण करके तुमको उत्पन्न किया है; तुमको युद्धमें कोई नहीं जीत सकता; जो शिवने अपने वीर्य्यको पार्व्वतीकी योनिमें स्थापन किया था, वह इसीसे इस पतिका नाम ईजिक है, जो वीर्य्य शेष रह गया, वह लाल समुद्रमें गिर गया था, इस प्रकार इस वीर्य्यके पाच टुकड़े हो गये थे; इसी लिये अनेक प्रकारके ग्रहभी उत्पन्न हुए हैं, ये जो मांस खानेवाले हैं; ये सब तुम्हारे पार्षद हो। पिताकेप्यारे कार्त्तिकेयने उनके वचनोंको स्वीकार करके अपने पिता महादेवकी पूजा करी।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! जो पुरुष धनकी इच्छा रखते हैं, उन्हें उन गणोंकी पूजा आकके फलोंसे करनी चाहिये; जो लोग किसी रोगको शान्त करना चाहते हैं, वे सामान्य पूजा करें। मिञ्जिक और अमिञ्जिक ये दोनो शिवसे उत्पन्न हुए हैं, इस लिये बालकोंके हित चाहनेवाले पुरुषोंको उचित है कि इन दोनोंको सदा प्रणाम करें। सन्तान चाहनेवाले पुरुषोंको उचित है, कि जो मासभक्षिणी वृक्षवासिनी, वृद्धि नामक देवी हैं, उनको वृक्षोंमें प्रणाम करें। हमने इस प्रकारसे असंख्य पिशाचोंके गण कहे; अब हम घण्टा और पताकाका जन्म कहते हैं; आप सुनिये।

ऐरावतको जो दो घण्टे हैं, उनका नाम वैजयन्त हैं। वे दोनो बुद्धिमान कार्त्तिकेयको दिये गए थे। उनमेंसे एक विशाखका है, और एक कार्त्तिकेयका है। कार्त्तिकेयके घण्टेका नाम पताका और विशाखके घण्टेका नाम लोहिता है। देवतोंने जो कार्त्तिकेयको खेल दिये थे, उन्हीसे सब देवता और पिशाचोंके सहित कार्त्तिकेय खेलने लगे। महा तेजस्वी वीर कार्त्तिकेयसे वह उत्तम वनवाला पर्व्वत शोभायमान हो गया। उस समय उस पर्व्वतकी ऐसी शोभा बढ़ी जैसी सूर्य्यके निकलनेसे उत्तम गुफावाले मन्दराचलकी। फले हुए, सन्तानक कनेर, पारिजात, गुड़हल, अशोक और कद म्बादि वृक्षोंके वनसे तथा अनेक प्रकारके दिव्य पशु और पक्षियोंसे वह श्वेत पर्व्वत बहुत शोभायमान हुआ, उस पर्व्वत पर मेघ, बाजे और उछलते हुए समुद्रके समान शब्दवाले सब देवता, देवऋषि, दिव्य गन्धर्व्व अप्सरा और लोग नाचने लगे, और प्रसन्न होकर गाने लगे। वह शब्द उस पर्व्वत पर पूरित हो गया। इस प्रकारसे इन्द्रके सहित सब जगत उस श्वेत पर्व्वतपर कार्त्तिकेयको देखने लगा, इससे कभी उन लोगोंका दुःख नहीं होता था।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, जिस समय भगवान कार्त्तिकेयका सेनापति पद पर अभिषेक हुआ उसी दिन भगवान शिवभी पार्व्वतीके सहित सूर्य्यके समान तेजस्वी रथपर चढ़ प्रसन्न होकर भद्र बटको चले गए। उनके उस उत्तम रथमें एक सहस्र सिंह जुड़े थे। वह रथ उत्तम समय पाकर स्वच्छ आकाशको उड़ने लगा। उसके चलनेसे ऐसा जान पड़ता था, मानो यह आकाशको खा जायगा। रथसे समस्त चर और अचर डरने लगे। वे सिंह अपने गलेके बालोंको फैलाकर आकाशमें उड़ने लगे। उस समय पार्व्वतीके सहित महादेव उस रथमें बैठे हुए ऐसे शोभित हुए जैसे इन्द्र-धनुषके

सहित मेघोंके बीचमें बिजलीके सहित सूर्य्य। उनके आगे, सब गुह्यकोंके सहित भगवान कुवेर पीछे चले। कुवेर देवता पुष्पक विमानके ऊपर चढ़कर चले। वरदान देनेवाले वृष-वाहन भगवान शिवके पीछे ऐरावतपर चढ़कर सब देवतोंके सहित इन्द्र चले, और उनकी दहनी ओर माला आदि सब आभूषणोंको पहिरकर जृम्भक नामक यक्ष और राक्षसोंको सङ्ग लेकर अमोघ नामक महायक्ष चले। इनके दहनी ओर विचित्र युद्ध करनेवाले अनेक देवता रुद्र और वसु लोग चले। महा घोर रूपधारी यमराज मृत्यु सब रोगोंके सहित शिवको चारों ओरसे घेरकर चले। शिवके पीछे महाघोर तीन धारवाला विजय नामक त्रिशूल चला। उसके पीछे उग्र फांसीको धारण करनेवाले जलके राजा भगवान वरुण जल जन्तुओंके सहित चले। विजय नामक त्रिशूलके पीछे शिवका पट्टिश चला। गदा मूषल और शक्ति आदिक उत्तम शस्त्रोंके सहित पट्टिशके पीछे उत्तम प्रकाशवाला शिवका छत्र चला। उसके पीछे महाऋषियोंसे सेवित कमण्डलु चला। उसके पीछे शोभासे भरा हुआ दण्ड चला, इन सबके पीछे भृगु और अङ्गिरादिक ऋषियोंके सहित विमल रथपर चढ़कर शिव चले। इसके चलतेही इनके तेजसे सब देवता लोग प्रसन्न होने लगे। उनके पीछे ऋषि, देवता गन्धर्व्व, सर्प, नदी, तलाव, समुद्र, अप्सरा, नक्षत्र, ग्रह, देवतोंके बालक और अनेक प्रकार की स्त्रियां चलीं। वे सब सुन्दरी स्त्रियां शिवके ऊपर फूल बर्षाने लगीं। शिवको नमस्कार करके मेघभी उनके पीछेही चले। शिवके सफेद छत्रको चन्द्रमाने धारण किया, चमरोंको वायु और अग्निने हाथमें लिया। हे राजन्! उनके पीछे राजऋषियोंके सहित स्तुति करते हुए बसुओंसे भरे इन्द्र चले। पार्व्वतीके पीछे गौरी, विद्या, केशिनी गान्धारी और मित्रसा चलीं। उनके पीछे कवियोंकी जितनी विद्या हैं वे सब चलीं। उनके पीछे सब लोकोंके सुख देनेवाले पिङ्गल नामक यक्षराज चले। इस प्रकारसे सुखपूर्व्वक भगवान शिव कैलाशसे चले। शिवके आगे और पीछे किसीकी गति नहीं हुई शिव-को जगतके लोग अच्छे कर्म्मोंसे प्राप्त करते हैं, शिव परम देवता है, उनहींका नाम शिव, रुद्र, ईश और पितामह है, जगतके लोग उन्हीं महादेवको अनेक प्रकारसे पूजते हैं। इस प्रकारसे, देवतोंके सेनापति कृत्तिकाके पुत्र ब्राह्मणोंके जाननेवाले भगवान कार्त्तिकेयभी देवतोंकी सेनाके सहित शिवके पीछे चले। इसके अनन्तर भगवान शिवने कार्त्तिकेयसे कहा कि तुम सदा आलस्य रहित होकर सातवें वायु स्कन्धकी रक्षा करो।

कार्त्तिकेय बोले, हे नाथ! हम सातवें वायु स्कन्धकी रक्षा करेंगे और जो कुछ हमारे योग्य काम हो सो हमें शीघ्र कहिये।

श्रीशिवजी बोले, हे पुत्र! तुम सदा हमारे कार्य्योंको देखते रहो, ऐसा करनेसे और हमारी भक्ति करनेसे तुम्हारा परम कल्याण होगा।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, कार्त्तिकेयसे ऐसा कहकर और उनको अपने हृदयसे लगाकर शिवने बिदा किया। जब कार्त्तिकेय चले गये तो वहां बहुत उत्पात होने लगे। हे महा-राज! उस उत्पातसे सब देवता मोहित हो गए। उसी समय आकाश और सब तारे जलने लगे, और तीनों लोक मूर्खके समान जड़ हो गये। पृथ्वी हिलने लगी और पृथ्वीमेंसे एक घोर शब्द होने लगा। समस्त जगतमें अन्ध-कार हो गया। इस घोर उत्पातको देखकर शिव और महा भाग्यवती पार्व्वती तथा और भी देवता आदिक सब घबड़ा गए। जब इस प्रकार सब लोग मूर्च्छित हो गए, उसी समय एक पर्व्वत और मेघके समान शरीरवाला राक्षस

दिखाई दिया। वह अनेक प्रकारके शस्त्रोंको धारण किये और गर्ज्जता हुआ शिव और देवतोंकी ओर दौड़ा। उसके सङ्ग औरभी अनेक राक्षस थे। यह एक राक्षसोंकी सेना थी। वह सब राक्षस लोग देवतोंकी सेनापर बाण बरसाने लगे। उसी समय देवतोंकी सेनापर पर्व्वत, शतघ्नी, प्रास, खड्ग और परिघ आदि अनेक शस्त्र वर्षने लगे, उन शस्त्रोंके लगनेसे क्षण भरमें युद्धसे देवतोंकी सेना विमुख हो गई, और भागने लगी। किसीका घोड़ा किसीका हाथी, किसीका रथ, और किसीका शस्त्र कट गया। उस समय दानवोंसे पीड़ित देवतोंकी सेनाकी ऐसी शोभा हुई जैसे आगसे जलते हुए बनकी। जैसे जलते हुए वनमें वृक्ष गिरते हैं, तैसेही सिर और हाथके हीन देवता लोग गिरने और भागने लगे। वे लोग युद्धसे पीड़ित होकर भागने लगे, परन्तु उन्हें कोई अपना स्वामी न दीख पड़ा। जब इन्द्रने देवतोंको भागते हुए देखा, तब बलिके मारनेवाले इन्द्र अपने दलको धीरज देकर कहने लगे, हे शूरवीरो! तुम्हारा कल्याण हो, भयको छोड़ दो और शस्त्रोंको धारण करो तुम लोग युद्ध करनेकी इच्छा करो और किसी दुःखको धारण मत करो; इन दुष्ट घोर राक्षसोंको जीत लो तुम लोगोंका कल्याण हो,तुम सब हमारे सहित इन राक्षसोंसे लड़नेको चलो। इन्द्रके वचन सुनकर देवतोंको विश्वास हुआ और इन्द्रको आगे करके दानवोंसे युद्ध करना आरम्भ किया। उस समय सब देवता महाबली मरुत, महाभाग साध्य और वसु लोग दानवोंसे युद्ध करने लगे। क्रोधित देवतोंने जो शस्त्र चलाए सो राक्षसोंके शरीरमें प्रवेश करके रुधिर पीने लगे। उनके शरीरोंको छेद करके तीक्ष्ण बाण पृथ्वीपर गिरने लगे। उस समय उनकी ऐसी शोभा दिखाई देती थी जैसे पर्व्वतोंसे सर्प गिरते हैं। उस समय उन मरे हुए राक्षसोंके शरीर बाणोंसे कट कट कर पृथ्वीमें इस प्रकारसे गिरने लगे, जैसे आकाशसे बादल गिरता है। उस समय समस्त दानवोंकी सेना देवतोंके बाणोंसे व्याकुल होकर भागने लगी। तब सब देवता लोग प्रसन्न होकर गर्जने लगे, और अनेक बाजोंको बजाने लगे। इस प्रकार देवता और दानवोंमें घोर युद्ध हुआ। उस समय उस युद्धभूमिमें मांसका कीचड़ हो गया था। देवतोंको दानव और दानवोंको देवता मारने लगे। उसी समय भेरो आदिक अनेक बाजे बजने लगे, और दानव लोग सिंहके समान घोर शब्द करने लगे। उसी समय उस घोर दानवोंकी सेनामेंसे महाबली महिष नामक दानव निकला। वह एक भारी पर्व्वत लेकर देवतोंकी ओर दौड़ा। उसको मेघोंके बीचमें सूर्य्यके समान आते हुए देखकर अनेक देवता लोग उसकी ओर दौड़े। महिषने भी देवतोंकी ओर दौड़ कर उस पर्व्वतको फेंका। हे राजन्! उस पर्व्वतके गिरनेसे दश सहस्र देवता मर गए। उस समय दानवोंके सहित महिषने सबको हराया था। वह फिर देवतोंकी ओर ऐसा दौड़ा जैसे छोटे हरिनकी ओर सिंह दौड़े। उसको आते देख इन्द्रादिक देवता डरसे शस्त्रोंको छोड़कर भागे। तब वह महिष क्रोध करके शिवके रथकी ओर दौड़ा और शिवके रथको पकड़ लिया। जिस समय महिषासुर शिवके रथकी ओर दौड़ा था उसी समय पृथ्वी और आकाशसे घोर शब्द होने लगा, ऋषि लोग डरने लगे, उस समय मेघके समान शरीरवाले राक्षस लोग गर्ज्जने लगे; उस समय सब जगत चेतनारहित होगया, उस समय भगवान शिवने महिषासुरको मारना आरम्भ किया; परन्तु उस दुष्टकी मृत्यु कार्त्तिकेयके हाथसे थी, इसलिये शिवने कार्त्तिकेयको स्मरण किया। महिषासुरने भी शिवके रथको देखकर घोर शब्द किया, उससे देव

लोग प्रसन्न हुए और देवता लोग डरे। जब देवतोंके लिये ऐसा भयानक समय उपस्थित हुआ, तब क्रोधसे सूर्य्यके समान प्रकाशमान कार्त्तिकेय आये। वे लाल कपड़े और लाल माला पहिरे थे; उनके घोड़े लाल थे। महाबाहु कार्त्तिकेय सोनेका कवच पहिन कर, सूर्य्यके समान प्रकाशमान सोनेके वर्णवाले रथ पर बैठकर यज्ञमें आए, उनको देखतेही दैत्योंकी सब सेना भागने लगी। उसी समय महा बलवान कार्त्तिकेयने महिषको मारनेवाली प्रकाशमान घोर शक्तिको छोड़ा। उसी समय उस शक्तिने महिषासुरको काटकर पृथ्वीपर गिरा दिया। सिरके कटतेही महिषासुर गिरकर मर गया। उस सिरके गिरनेसे उत्तर कुरुदेशका १६ योजनका द्वार वन्ध हो गया; इसीसे वह देश जाने योग्य नहीं रहा; अबतकभी मनुष्य उस कुरुदेशमें उसी द्वारसे सुखपूर्व्वक जाते हैं। वह शक्ति अनेक दानवोंको मारकर फिर कार्त्तिकेयके हाथमें आगई। फिर बुद्धिमान कार्त्तिकेयने अपने वाणोंसे अनेक दानवोंको मारा फिर कार्त्तिकेयके घोर पार्षदोंने सहस्रों डरे हुए दानवोंको मार खाया। उन्होंने क्षण भरमें सब दानवोंको नाश कर दिया। जैसे अन्धकारको सूर्य्य, वृक्षोंको अग्नि और मेघोंका वायु नष्ट कर देते हैं, तैसेही कार्त्तिकेयने अपने बलसे दानवोंको नाश कर दिया। कार्त्तिकेयने इन सबको मारकर शिवको प्रणाम किया, देवतोंने उनकी स्तुति करी। उस समय कार्त्तिकेयकी ऐसी शोभा बढ़ी जैसे प्रकाशमान सूर्य्यकी। जिस समय शत्रुओंको नाश करके कार्त्तिकेय शिवके पास गए, उसी समय इन्द्रने कार्त्तिकेयको अपने हृदयसे लगाकर कहा, हे कार्त्तिकेय! तुमने महिषासुरको मारा उसको ब्रह्माने वरदान दिया था। हे जीतनेवालोंमें श्रेष्ठ! इसने देवतोंको तिनकेके समान मान रखा था। हे महाबाहु! तुमने इस देवतोंके काटेको नाश किया, जिन्होंने हमको पहले दुःख दिया था उन सब दैत्योंको तुमने मारा। ये सब महिषके सन्तान थे और तुम्हारे गणोंनेभी सैकड़ों दैत्योंको खाया। तुमको युद्धमें कोई नहीं जीत सकता है तुम भगवान शिवके समान हो। हे देव! तुम्हारा जो यह प्रथम कर्म्म है सो प्रसिद्ध हो जायगा और तुम्हारी अक्षय कीर्त्तिभी तीनो लोकोंमें प्रसिद्ध होगी। हे महाबाहो! सब देवता लोग तुम्हारे वशमें रहेंगे। कार्त्तिकेयकी ऐसी स्तुतिकर और भगवान शिवकी आज्ञा लेकर इन्द्र देवतोंके सहित चले गए। भगवान शिवभी भद्रवटको गए। देवता लोगभी अपने अपने घरको चले गए। भगवान शिवने चलते समय देवतोंसे कहा कि तुम कार्त्तिकेयको हमारे समान देखना। कार्त्तिकेयने एकही दिनमें सब दानवोंको मारकर तीनो लोकोंको जीत लिया, तब सब ऋषि लोगोंकी पूजा करने लगे। जो ब्राह्मण कार्त्तिकेयके जन्मकी इस कथाको पढ़ते हैं, वे सब इस लोकमें सुख पाकर मरनेके पीछे कार्त्तिकेयके लोकको पाते हैं।

२३० अध्याय समाप्त।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे भगवन! हे द्विजोत्तम! हम महात्मा कार्त्तिकेयके उन नामोंको सुनना चाहते हैं जो तीनो लोकोंमें विख्यात हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन जनमेजय! महाराज युधिष्ठिरके ऐसे वचन सुन महातपस्वी मार्कण्डेय कहने लगे।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, आग्नेय, स्कन्द, दीप्तकीर्त्ति, अनामय, मयूरकेतु, धर्म्मात्मा, भूतेश, महिषनाशन, कामजित, कामद, कान्त, सत्यवादी, भुवनेश्वर, शिशु, शीघ्र, चण्ड, दीप्तवर्ण, शुभानन, अमोघ, अनघ, रौद्र, प्रिय, चन्द्रानन, दीप्तशक्ति, प्रशान्तात्मा, भद्रकृत, कूटमोहन,

षष्ठीप्रिय, पवित्र, मातृवत्स, कन्याभर्ता, स्वाहा-पुत्र, विभक्त, खेतीसुत, प्रभूनेता, विशाख, नगमेय, दुर्द्धर, सुव्रत, बाल, रणप्रिय, आकाशगामी, ब्रह्मचारी, शूर, शरवनोद्भव, विश्वा, देवसेनापति, वासुदेवप्रिय और प्रिय कर्त्ता। ये कार्त्तिकेयके दिव्य नाम हैं। इनको जो कोई पढ़ता है, उसको निःसन्देह स्वर्ग, कीर्त्ति और धन मिलता है।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हम उन कार्त्ति-केयकी इन नामोंसे स्तुति करते हैं जो ब्राह्मण और शक्तिके सहित निवास करते हैं। हे कुरुप्रवीर। जो कार्त्तिकेय छः सुखवाले शक्तिको धारण करते हैं, जो बड़े वीर हैं आप उनकी स्तुति सुनिये।

हे कार्त्तिकेय! तुम ब्राह्मणभक्त वेद-विधिसे उत्पन्न हुए, ब्रह्मके जाननेवाले, ब्रह्मा और शिवके भक्त, वेदपाठियोंमें श्रेष्ठ, ब्रह्माके प्यारे, ब्राह्मणोंके समान सत्यव्रत धारी, और ब्राह्मणोंको मोक्ष देनेवाले हो। तुम स्वाहा, स्वधा, पवित्र, मन्त्रोंसे पूजित, जगत्में विख्यात और छः जिह्वावाले हो। तुम वर्ष, अमृत, छः महीने, पक्ष, मास, अयन, और दिशा हो! तुम कमल-नेत्र, कमल मुख, सहस्र मुख, सहस्र बाहु, लोकपाल, यक्ष तथा राक्षस और देवतोंके स्वामी हो। तुम सेनाके स्वामी, महा तेजस्वी, जगतके स्वामी, जगतके उत्पन्न करने वाले, सहस्रसुख, सहस्र तुष्टि और सहस्र वस्तुओंको खानेवाले हो। हे देव! तुम्हारे सहस्र सिर हैं, तुम अनन्तरूप, सहस्र चरणवाले, और शस्त्रधारी हो। तुम गङ्गा, स्वाहा, पृथ्वी और कृत्तिकाके पुत्र हो। हे छः सुख! तुम कुक्कटके सङ्ग खेलते हो, तुम अपनी इच्छानुसार शरीर धारण करते हो, तुमही शिक्षा हो, तुमही चन्द्रमा, वायु, धर्म्म, पर्व्वत और इन्द्र हो। तुम सनातनोंसेभी सनातन हो, स्वामियोंकेभी स्वामी हो। तुम सत्यकर्त्ता, दैत्य नाशक शत्रुओंके जीतने वाले, और देवतोंमें श्रेष्ठ हो। तुम सूक्ष्म, तप, ब्रह्मके जाननेवाले और ब्रह्म हो। हे महात्मन्। तुम्हारे तेजसे अर्थ धर्म्म और काम पूरित होते हैं। हे लोकनाथ। तुमसे सब जगत व्याप्त है, हमने अपनी शक्तिके अनुसार तुम्हारी स्तुति करी। तुम्हारे बारह नेत्र और बारह हाथ हैं; हम तुमको प्रणाम करते हैं, इससे आगे हम तुम्हारी गतिको नहीं जानते हैं। जो ब्राह्मण सावधान होकर इस कार्त्तिकेयके स्तोत्रको पढ़े, सुने या सुनावे वह धन, आयु प्रकाशमानयश शत्रुजय, पुत्र, पुष्टि और सन्तोषको प्राप्त होकर अन्तमें कार्त्तिकेयके लोकको जाता है।

२३१ अध्याय समाप्त।

मार्कण्डेय समास्या पर्व्व समाप्त।

अब द्रौपदि सत्यभामा पर्व्व लिखते हैं

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! जहां महात्मा ब्राह्मण और पाण्डव लोग बैठे थे, वहां द्रौपदी अत्यभामा सङ्ग आई वे दोनो हंसती हुई सुखसे एक स्थान पर बैठ गईं। हे राजेन्द्र। वे दोनो बहुत दिनोंमें मिली थीं इस लिये परस्पर प्रिय बातें करने लगीं वे दोनो कुरुबंशी और यदुवंशियोंकी उत्तम उत्तम कथा कहने लगीं, अनन्तर कृष्णाकी प्यारी पटरानी सत्राजितकी पुत्री सत्यभामा द्रुपदकी पुत्री द्रौपदीसे बोली, हे द्रौपदि। तुम पाण्डवोंके सङ्ग कैसे रहती हो। हे सुन्दरि। ये पाचोंही लोकपालोंके समान हैं और परस्पर बहुतही प्रीति रखते हैं कहो ये पांचो तुम्हारे वशमें कैसे रहते हैं, तुम्हारे ऊपर क्रोध तो नहीं करते? हे सुन्दरी! ये पांचो तुम्हारे वशमें कैसे रहते हैं? ये पाचो सुन्दर हैं इन पांचोंको तुम अपने वशमें कैसे रखती हो ये सब हमसे कहो। हे पाञ्चालि! व्रत, तप, स्नान, मन्त्र, औषधि, विद्या, जप, होम, ये सब तुम हमसे

कहो, अथवा और कोई सौभाग्य बढ़नेको ऐसी युक्ति कहो जिससे कृष्ण सदा हमारे वशमें रहे, महा यशस्विनी सत्यभामा ऐसा कहकर चुप हो रही, तब पतिव्रता द्रौपदी बोली, हे सत्य भामे। तुम हमसे दुष्ट स्त्रियोंके समान कर्म्म पछती हो, जिस मार्गमें असत कर्म्म हैं उसमें कोई उत्तर किस प्रकार दे सकता है? तुमको ऐसे सन्देह और प्रश्न नहीं करने चाहिये, क्योंकि तुम कृष्णकी प्यारी स्त्री और बुद्धिमती हो। यदि पति इस बातको जान जाय कि हमारी स्त्री मन्त्र करती है तो वह उससे ऐसे घबड़ाने लगता है, जैसे घरमें बैठे हुए सर्पसे। घबड़ाए हुए पुरुषको शान्ति कहा? और शान्ति-रहितको सुख कहांसे होगा? इस लिये मन्त्रसे पति स्त्रीके वशमें नहीं हो सकता, शत्रुओंकी दी हुई औषधिभी शरीरको नाश करने वाली और अनेक रोगोंको उत्पन्न करती हैं नको यदि पुरुष जिह्वा अथवा त्वचासे सेवन रे तो उसमें जो चूर्ण हो उनसे वह पुरुष वश्य नष्ट हो जाता है, अनेक स्त्रियोंने अपने तियोंको जलोदरी, कुष्टी, बालवाले, नपुसक, ख बहरे और अन्धे कर दिया है, वे स्त्री हा पापिनी हैं पापियोंके सङ्ग ऐसे ऐसे कर्म्म रनेवाली हैं। स्त्रियोंको कदापि अपने तियोंके सङ्ग ऐसे कर्म्म नहीं करने चाहिये। सत्यभामे। हे यशस्विनि। मैं जिस सत्यवृत्ति- महात्मा पाण्डवोंके सङ्ग बर्त्ताव करती हूं, उस सबको तुम सुनो।

मैं सदा काम, क्रोध और अहङ्कारको छोड़कर स्त्रियोंके सहित पाण्डवोंकी सेवा करती हूं। मैं अपने पतियोंकी सदा विनय पूर्वक सेवती हूं और अपने आत्माको सदा अपने वशमें रखती हूं। मैं अभिमानरहित होकर पतियोंके चित्तकी रक्षा करती हूं, मैं अपने पतियोंकी बुरी बात, बुरे स्थान, बुरी दृष्टि बुरी चेष्टा, बुरी गति और बुरे चिन्होंसे डरती रहती हूं। मैं अग्नि, सूर्य्य और चन्द्रमाके समान महा-तेजस्वी दृष्टि मात्रसे शत्रुको नाश करनेवाले महा वीर्य्यवान प्रतापी पतियोंकी सेवा करती हूं। चाहे देवता हो, मनुष्य हो, चाहे सुन्दर हो या आभूषण धारण किये हो और कैसाही द्रव्यवान क्यों न हो परन्तु मैं दूसरे पुरुषसे प्रेम नहीं करती। मैं अपने पतियोंसे पहले स्नान और भोजन कभी नहीं करती, मैं उनको बिना बिठलाये कभी नहीं बैठती। जब मेरे पति किसीखेत, गांव अथवा बनसे घरमें आते हैं, तब मैं उठकर खड़ी हो जाती हूं, तथा उनको आसन वा जल देती हूं। मैं अपने घरके बरतनोंको धोती हूं, अन्नको निर्म्मल रखती हूं और उनको समयपर सब देती हूं। अपने शरीरको वशमें रखती हूं, अपने अन्नको छिपाकर रखती हूं और अपने घरको बुहारती रहती हूं; मैं वचनसे भी दुष्ट स्त्रियोंके समान अपने पतियोंका निरादर नहीं करती; मैं अपने पतियोंकी सेवामें तनक भी आलस नहीं करती हूं मैं कभी बिना हंसीको बातपर नहीं हंसती हूं, कभी द्वारपर खड़ी नहीं होती, मुझे बागमें रहना अच्छा नहीं लगता; मै कभी अधिक नहीं हंसती; मैं क्रोधके स्थानमें कभी नहीं जाती; मैं सदा सत्य बोलती हूं और पतियोंकी सेवा करती हूं, मुझे पतियोंसे अलग रहना अच्छा नहीं लगता; जब मेरे पति कभी कुटुम्बके निमित्त कहीं परदेशको जाते हैं, तब मैं अपने मनको स्थिर करके व्रत करती हूं; जिसको पति नहीं खाते और मेरे पति जिन वस्तुवोंको सेवा नहीं करते, मैं भी उन वस्तुओंको छोड़ देती हूं। हे सुन्दरि! मैं उपदेशके अनुसार सब काम करती हूं, मैं सदा आभूषण पहरकर पतिका प्रियकार्य्य करती हूं मेरी सासने जो कुछ कुछ कुटुम्बके- वास्ते धर्म्म कहे थे मैं वही सब करती हूं,

भिक्षा पूजा, श्राद्ध पर्वोंमें भोजन आदिका बनाना, सबकोंका मान्य और सबका आदर तथा सेवा दिन रात आलस्य रहित होकर करती हूं, मैं अपने चित्तको स्थिर करके सदा विनय और नियमोंको धारण करती हूं; मेरे पति भले, पण्डित, सत्य, और धर्म्मके पालनेवाले हैं, और वेही क्रोधसे सर्पके समान हैं, मैं सबको सेवा करती हूं। मेरी यह सम्मति है कि सदा पतिके आश्रयसे रहनाही स्त्रियोंका सनातन धर्म्म है, स्त्रियोंको पतिही देवता हैं, पतिका अप्रिय कार्य्य नहीं करना चाहिये; मैं कभी अपने पतियोंकी आज्ञाका उल्लङ्घन नहीं करती हूं; अत्यन्त दुःख होनेपर भी कभी उनको बुरे शब्द नहीं कहती हूं, अपनी सास और ससुर-को सेवा करती हूं, हे सुन्दरि! मैं सदा सावधान रहती हूं; नित्य उठकर पतियोंकी सेवा करती हूं, और बूढ़ोंकी भी सेवा करती हूं; इसीसे मेरे पति मेरे वशमें रहते हैं, वीर-माता और सत्यवादिनी अपनी सास कुन्तीकी सेवा मैं अपने हाथोंसे करती हूं मैं आपही उनको भोजन और वस्त्र देती हूं, मैं कभी अपनी सासका निरादर नहीं करती हूं, मैं कभी अपनी सासको भोजन और वस्त्र देनेमें विलम्ब नहीं करती हूं, मैं कभी अपनी पृथ्वीके समान साससे नहीं बोलती हूं; हमारे घरमें पहले आठ सहस्र ब्राह्मण नित्य सोनेके पात्रोंमें भोजन करते थे, अठासी हजार गृहस्थ वेदपाठी ब्राह्मण भोजन करते थे; और अस्सी तथा तीस ब्राह्मण और भोजन करते थे, दश सहस्र ब्रह्मचारी और ऊर्द्धरेता यति सोनेके पात्रोंमे पका हुआ अन्न पाते थे, उन सब वेदपाठी ब्राह्मणोंकी मैं खान पान और वस्त्रोंसे पूजती थी, महात्मा कुन्ती-नन्दन महाराज युधिष्ठिर-की एक लाख दासी थी वे सब शङ्खके समान कण्ठवाली, आभूषणधारिणी गलेमें सोनेके आभूषण पहिने और बहुत मूल्यकी माला धारण करनेवाली थीं। वे सब परम सुन्दरी, चन्दन लगानेवाली, मणिजटित स्वर्णके आभूषण पहिने नाचने गानेमें निपुण थीं। उन सबके नाम भोजन वस्त्र और कर्मोंको मैं जानती हूं, बुद्धिमान कुन्तीनन्दनकी और भी एक लाख दासी हैं, जो रात्रि दिन हाथमें पात्र लिये अतिथियोंको भोजन कराया करती हैं। जो एक लाख हाथी महाराज युधिष्ठिरके पीछे चलते थे और जो इन्द्रप्रस्थमें रहते थे, उन सबकी संख्या और नियमोंको मैं जानती हूं और उन सबको अपनी आज्ञामें रखती थी। महा-राज युधिष्ठिरके यह सब सामग्री संग रहती थी, मैं रणवासके दासोंके सहित और मन्त्रि योंसे लेकर अपने राज्यके ग्वालों पर्यन्त सब दासोंके कार्य्योंको भली भांति जानती हूं; मैं महाराजके राज्यके आय और व्ययको नित्यही देखती थी। हे कल्याणि! हे यशस्विनि! मैं पाण्डवोंके सब कर्म्मोंको जानती हूं। भरत कुलसिंह पाण्डव सब कुटुम्बका भार मेरेही ऊपर छोड़ कर आप केवल उपासना करते थे। हे सुन्दरि। मैं दुष्ट कर्म्मोंको और आयुके नाश करनेवाले कर्म्मोंको कभी नहीं करती हूं। मैं अपने सब सुखोंको छोड़कर रातदिन परि-श्रम करती हूं। जो वर्णोंके समान सदा भरा रहने वाला रत्न पूरित समुद्रके समान धर्म्म करनेवाले मेरे पतियोंका जो कोष है मैं उस सबको जानती हूं। चाहे रात्रि हो वा दिन हो। मैं सदा ही अपने पतियोंकी सेवा करती हूं। मैं कभी अपने पतियोंको भूखा और प्यासा नहीं रहने देती हूं। पाण्डवोंकी सेवा करनेमें मै रात्रि और दिनको समान ही समझती हूं; मैं प्रातःकाल उनसे पहले उठती और रात्रिको सबसे पीछे सोती हूं। हे सत्यभामे! मेरा प्रतिदिनका यही काम है मैं इन्हीं सब कार्य्योंसे अपने पतियोंको वशमें रखती हूं और दुष्ट स्त्रियोंके कार्य्योंको कभी नहीं करती हूं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, द्रौपदी के धर्म्म सहित वचन सुनकर धर्म्मचारिणी सत्यभामा बोलीं, हे पाञ्चालि ! हम तुम्हारी शरण हैं ; हमने हंसीसे ये सब तुमसे कहा था ।

२३२ अध्याय समाप्त ।

द्रौपदी बोली, हे सत्यभामे ! मैं जो तुमसे मार्ग कहती हूं, इसमें कुछ भ्रम नहीं है ; यही पतिके वश करनेका प्रधान कार्य्य है । हे सखि । यदि तुम अपने पतिको दूसरी स्त्रियोंसे छुड़ाना चाहती हो, तो इसी मार्गपर चलो । हे सखि ! तीनो लोकोंमें पतिके समान कोई देवता नहीं है , इनके प्रसन्न होनेसे सब काम सिद्ध होते हैं ; कुपित होनेसे सर्व्वनाश हो जाता है । उसीके प्रसन्न होनेसे अनेक प्रकारके भोग, शय्या उत्तम दर्शन, वस्त्र, माला, गन्ध, स्वर्ग, यह लोक और परम कीर्त्ति प्राप्त होती है । हे सत्यभामे ! सुख करनेसे सुख नहीं मिलता , इससे पतिव्रता स्त्री दुःख भोगकर सुखको प्राप्त होती हैं । सो तुम प्रेम, प्रीति और सेवासे कृष्णको प्रसन्न करो । तुम उनको उत्तम उत्तम माला पहनावो और धीरे धीरे उनको प्रसन्न करो ; उनके शरीरपर उत्तम उत्तम गन्ध लगावो और औरभी उत्तम उत्तम कर्म्म करो, जिसमें कृष्ण यह जानें कि ये हमारी प्रिया है, वेही सब कर्म्म तुमको करने चाहिये । जब तुम अपने पतिका शब्द द्वारपर सुनो उसी समय अपने द्वारपर खड़ी हो जावो , जब तुम्हारे पति आसनपर बैठ जाय, तब उनके पैर धोओ । जब तुम्हारे पति किसी कार्य्यको दासीको भेजें, तब तुम उठकर आपही उसे कर लिया करो, ऐसा करनेसे कृष्ण जानेंगे कि सत्यभामा हमारी मनसे सेवा करती है । यदि तुम्हारे पति तुमसे कोई साधारण बातभी कहे तौभी तुम उसको किसी से मत कहना । यदि कोई तुम्हारी सौत कृष्णसे कुछ कहे तो उससे तुम कुछ विरक्त मत होना ; तुम उन सबको अनेक प्रकारके भोजन बनाकर खिलाना । जो तुम्हारे पतिके भक्त, प्यारे और मित्र हों उन सबको अच्छा भोजन दिया करो और जो तुम्हारे पतिसे द्वेष करते हों, उनसे अलग रहनेको इच्छा करते हों, कपट करके अलग रहते हों, उन पुरुषोंके सङ्ग कभी थोड़ी भूलसे भी मत होना । बहुत बोलनेको त्याग कर दो । यद्यपि प्रद्युम्न और साम्ब तुम्हारे पुत्र है , परन्तु उनके सङ्गभी एकान्तमें मत बैठना , कुलीन, पापरहित और पतिव्रता स्त्रियोंको अपनी सखी बनावो , दुष्ट पराया निरादर करनेवाले, बहुत भोजन करनेवाले, चोरोंको पास मत आने दो ; ये जो धर्म्म हमने तुमसे कहा सो यश और सौभाग्यका बढ़ानेवाला है, इससे सब काम सिद्ध होते हैं और शत्रुवोंका नाश होता है । तुम बहुत मूल्यवाले आभूषण पहर कर तथा उत्तम गन्ध और माला धारण करके अपने पतिकी सेवा करो ।

२३३ अध्याय समाप्त ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय । मार्कण्डेय आदि ऋषि और महात्मा पाण्डवोंके सङ्ग अनेक उत्तम बातालाप करके श्रीकृष्ण उनसे विदा हुए । जब रथपर चढ़नेका समय हुआ, तब उन्होंने सत्यभामाको बुलाया । सत्यभामा द्रौपदीसे मिलकर प्रेमके सहित मीठे वचन कहने लगी, हे कृष्णे । तुम किसी बातसे घबड़ाना नहीं तुम कभी दुःख मत उठाना, कभी रातिमें नहीं जागना, थोड़ेही समयमें देव तुल्य पाण्डव लोग सब पृथ्वीको जीतेंगे और तुम महाराणी बनोगी ; हे द्रौपदि ! तुम्हारे समान शील और लक्षणवाली स्त्री बहुत दिन तक दुख नहीं भोगतीं ; मैंने सुना है कि तुम अवश्यही इस सब भूमिको वैरियोंसे रहित करके अपने पतियोंके सहित

भोग करोगी; हे द्रुपदनन्दिनि! धृतराष्ट्रके पुत्रोंको मारकर और सब बैरको पूरा करके महाराज युधिष्ठिर राजा होंगे; इस उत्सवको तुम आप देखोगी; जो कुरुवंशियोंकी स्त्री अभिमानसे मोहित होकर तुमको चलते देखकर हंसी थीं, उन सबके सङ्कल्प नष्ट हो जायंगी; हे कृष्णे! दुःखके समयमें जिन्होंने तुम्हारे अप्रिय कार्य्य किये हैं, वे सब यमलोकको जायंगे; तुम्हारे जो प्रतिविन्ध, श्रुतसोम, श्रुतकर्म्मा, शतानोक और श्रुतसेन पुत्र है वे सब कुशलपूर्व्वक शस्त्रविद्या सीख चुके हैं; अभिमन्युके समान प्रीतिपूर्व्वक द्वारिकामें रहते हैं; जैसे तुम उन्हें प्रेम करती हो वैसेही सुभद्राभी तुमसे परम प्रीति करती हैं, वह तुम्हारे दुःख और सुखसे दुःखी होती हैं; प्रद्युम्नकी माता भी तुम्हारे पुत्रोंको सब प्रकारसे मानती हैं और श्रीकृष्णभी उनपर बहुत ध्यान रखते हैं। हमारे ससुर बसुदेवजी तुम्हारे पुत्रोंके भोजन और वस्त्रोंका सदा ध्यान रखते हैं, बलराम आदि सब यदुबंशी तुम्हारे पुत्रोंको मानते हैं, हे भामिनि! हम तुम्हारे पुत्रोंको प्रद्युम्नके समान मानती हैं।

इस प्रकारसे अनेक सत्य और प्यारे बचन कहकर सत्यभामा कृष्णके रथको ओर चलीं। कृष्णकी प्यारी सत्यभामाने द्रौपदीको प्रदक्षिणा करी और प्रणाम किया। अनन्तर श्रीकृष्णके रथपर बैठ गई। श्रीकृष्णनेभी हंसकर द्रौपदीको प्रसन्न किया। फिर अपने रथपर चढ़कर द्वारकाको चले गये।

२३४ अध्याय समाप्त।

द्रौपदि सत्यभामा सम्वादपर्व्व समाप्त।

अब घोषयात्रा पर्व्व लिखते हैं।

महाराज जनमेजय बोले, हे द्विजोत्तम! पुरुषोंमें श्रेष्ठ! पाण्डवलोग जब इस प्रकार बनमें रहकर शीत, उष्ण, वायु और घामसे दुबले होकर उस पवित्र तालावके तटपर पहुंचे तब उसके पश्चात् उन्होंने क्या किया?

श्रीवैशम्पायन बोले, जब महात्मा पाण्डव लोग उस पवित्र तालाव पर पहुंचे, तब अपने सङ्गके सब पुरुषोंको विदा करदिया और वहां उन्होंने अपना घर बना लिया और आस पास वन तथा नदियोंको देखते हुए घूमने लगे। महात्मा वीर पाण्डवोंके पास उस वनमें वेदके जाननेवाले महात्मा ब्राह्मण लोग आये। उन्होंने उन सब ब्राह्मणोंकी पूजा करी। एकदिन एक कथा जाननेवाला ब्राह्मण पृथ्वीमें घुमता हुआ कौरवोंके पास गया। उसने वहा जाकर बिचित्रवीर्य्यके पुत्र महाराज धृतराष्ट्रको पंछा। अनन्तर कुरुकुलश्रेष्ठ बूढ़े महाराज धृतराष्ट्रने उस ब्राह्मणका बहुत सत्कार किया और बैठनेको आसन देकर पाण्डवोंका कुशल पूछा। तब उस ब्राह्मणने सब पाण्डवोंकी कथा सुनाई। जब महाराजने पाण्डवोंको सुना कि वायु और घामसे परम दुर्ब्बल हो गए हैं, और घोर दुःखमें पड़े हैं; वह वीरपत्नी द्रौपदी अनाथके समान क्लेशोंको भोग रही है, तब महाराज बिचित्रवीर्य्यके पुत्र धृतराष्ट्रको बहुत कृपा आई। राजबंशी पाण्डवोंको इस प्रकार वनमें दुःखको नदीमें बहते हुए सुनकर दुःखसे पीड़ित होकर लम्बा श्वास लेकर दीन बचनसे बोले। महाराजने इस सब कर्म्मको अपना कर्म्म जानकर बहुत दुःख पाया, परन्तु अपने वचनको स्थिर करके कुछ बोले। महाराज कहने लगे, हाय हमारे बड़े पुत्र सत्यवादी, पवित्र, उत्तम कर्म्म करनेवाले अजातशत्रु धर्म्मराज किस प्रकार पृथ्वीमें सोते होंगे, वे पहले हारिनके रोवांकी गद्दी पर सोते थे; जिन इन्द्रके समान महाराज युधिष्ठिरको स्तुति करनेवाले सूत और बन्दि-योंके समूह गाते थे; वे अब पृथ्वीमें कां

होंगे और सिंह आदि मारनेवाले पशुओंके शब्दसे जागते होंगे; महाक्रोधी भीमसेन वायु और घामसे दुबले हो गये होंगे; वे किस प्रकार द्रौपदीके आगे पृथ्वीपर सोते होंगे; निश्चय भीमसेन इस दुःखसे योग्य नहीं थे, इस प्रकार मनस्वी सुकुमार अर्ज्जुनभी धर्म्मराजके वशमें होकर अपने दुःखी शरीरसे दुःख सहते होंगे और पृथ्वीपर सोते होंगे, अर्ज्जुन, नकुल, सहदेव, द्रौपदी, और भीमको सुखसे भ्रष्ट देखकर महातेजस्वी युधिष्ठिर सांपके समान क्रोधके श्वास लेते होंगे, नकुल और सहदेवभी दुःख सहनेके योग्य नहीं है, परन्तु इस समय महा दुःख सह रहे हैं; वे लोग देवतोंके समान कोमल है; वे लोग निश्चय रात दिन जागते होंगे और शान्त नहीं होंगे, परन्तु सत्य और धर्म्मके वशमें हैं; वायुके पुत्र, वायुके समान वेगवाले, वायुके समान बलवान, भीमसेन धर्म्मराजके धर्म्मपाशमें बन्धे हुए हैं, तो भी क्रोधके वशमें होकर स्वास लेते होंगे; वे पृथ्वीमें सोते हुए हमारे पुत्रोंके नाशकी इच्छा करते होंगे, परन्तु सत्य और धर्म्मके वशमें होकर कुछ कर नहीं सके, वे अपने समयको विता रहे हैं और युद्धका समय देख रहे हैं, जिस समय महाराज युधिष्ठिरका छलसे जीता था और दुःशासनने कठोर वचनको कहा था वे सब भीमसेनको ऐसा जला रहे हैं जैसे अग्नि ईंधनको जलाती है, महाराज युधिष्ठिर कभी पापका ध्यान नहीं करेंगे; और अर्ज्जुनभी उनके सङ्ग रहेंगे, वनमें रहनेसे भीमका क्रोध ऐसा बढ़ेगा जैसे वायु लगनेसे अग्नि बढ़ती है, भीमसेन उस क्रोधसे जलकर हाथसे हाथको मल रहे होंगे, वे हमारे पुत्र और पोतोंके मारनेका विचार करते और घोर गरम गरम श्वास लेते होंगे, गाण्डीव धनुषधारी अर्ज्जुन और भीमसेन काल और यमराजके समान हैं, वे दोनो अपने शत्रुओंको स्मरण करके नहीं सोते होंगे, वे लोग युद्धमें शत्रुवोंकी सेनापर बज्रके समान वाणोंको छोड़ते हैं, दुर्योधन, शकुनी, कर्ण, और दुःशासन, ये सब महा मूर्ख हैं; ये लोग केवल अपने प्रयोजनको देखते हैं और हानिको नहीं देखते; इन्होंने जुवा खेलकर युधिष्ठिरका राज्य छीन लिया है; पुरुष शुभ और अशुभ कर्म्म करके उनके फलका मार्ग देखता है; फिर उनका फल पाकर मोहको प्राप्त होनेसे अपने वशमें नहीं रहता हे, फिर उस पुरुषकी मोक्ष कैसे हो सकती है? जब खेत अच्छी प्रकारसे सींचा जाय, फिर बीज बोया जाय, पश्चात् समयपर जलभी वर्षे, फिर उसमें अन्न क्यों नहीं उत्पन्न होगा? यदि प्रारब्धही उलट जाय तो अन्न नहीं उत्पन्न हो सकता; जो अच्छा कर्म्म नहीं था, सोई शकुनीने किया परन्तु उत्तम कर्म्म करने वाले युधिष्ठिरने उस समयभी अच्छा कर्म्म किया और मैंने अपने दुष्ट पुत्रके वशमें होकर ऐसा कुकर्म्म किया, जिससे कुरुबशका अन्त समय आगया। निश्चय वायु बहताही है, चाहे उसे कोई चलावे वा न चलावे; गर्भिणी सन्तान उत्पन्न करतीही है, निश्चय दिन होनेसे रात्रिका नाश और रात्रि होनेसे दिनका नाश होताही है, यदि पुरुषको ज्ञान हो तो किस प्रकारसे धन इकट्ठा हो सकता है, दूसरे राजा लोग किस प्रकारसे इकट्टा करेंगे और किस प्रकारसे कोई किसीको देगा; प्राप्तिका जो समय है, सो भी अनर्थका हो जायगा, तब सब कर्म्म किस प्रकारसे और कहां सिद्ध होंगे वह धन किस प्रकारसे बंट सकता है और किस प्रकारसे उसका खर्च हो सकता है, तथापि उसकी रक्षा करनी होती ही है, क्योंकि रक्षा न करनेसे वह सहस्रों मार्ग बनाकर निकल जाता है, इससे किये हुए कर्म्मका फल अवश्य होता है। देखो अर्ज्जुनका कैसा बल है, यह बलसे इन्द्र लोक हो आया; वहांसे चार प्रकारके दिव्य

शस्त्र सीखके पुन: इस लोकमें आगया ; ऐसा कौन पुरुष है,जो इसी शरीरसे स्वर्गमें जाय और फिर आनेकी इच्छा करे? दिव्यज्ञानवाले अर्ज्जुनने अनेक मूर्ख कौरवोंको कालके वशमें देखकर क्रोध नहीं किया ; धनुषधारी अर्ज्जुन, वह घोर वेगवाला गाण्डीव धनुष और वे अर्ज्जुनके दिव्य बाण इस लोकमें इन तीनोका तेज कौन सह सकता है। राजाके यह वचन सुन कर सुबलपुत्र शकुनीने कर्णसे सब कह सुनाये। वह मूर्ख सुनकर बहुत ही प्रसन्न हुआ।

२३५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! महाराज धृतराष्ट्रके ऐसे वचन सुन शकुनीने कर्ण और दुर्य्योधनसे ऐसा कहा। हे भारत! तुमने अपने बलसे वीर पाण्डवोंको बनवास दिया, अब इस समस्त पृथ्वीका इस प्रकार भोग करो जैसे इन्द्र स्वर्गका भोग करता है। हे नरनाथ! पूर्व्व, पश्चिम, उत्तर, और दक्षिणके रहनेवाले सब राजा तुमको कर देते हैं, जो प्रकाशमान लक्ष्मी पहिले पाण्डवोंके पास थी सो भाइयोंके सहित आपने प्राप्त करी है, हे राजन्! हम लोगोंने जो लक्ष्मी इन्द्रप्रस्थमें युधिष्ठिरके पास देखी थी सो सब तुम्हारे पास दीखती है, हे राजेन्द्र! तुम्हारे शत्रु लोग बहुत समय तक दु:ख भोगेंगे। हे महाबाहो! तुमने अपनी बुद्धि और बलसे राजा युधिष्ठिरकी लक्ष्मीको छीन लिया है। हे शत्रुनाशन। आज सब राजालोग तुम्हारे वशमें हैं, वे सब लोग कहते हैं कि "हे महाराज! हम आपके आज्ञापालक हैं, कहिये कौनसा काम करें"; हम लोग आपके आज्ञापालक हैं। आज समुद्र, पर्व्वत, वन, गाव, नगर, और खानोंके सहित सब पृथ्वी तुम्हारे वशमें है। जिस प्रकार ब्राह्मण और राजोंसे पूजित सूर्य्य प्रकाशित होता है, तैसेही आप अपने बलसे प्रकाशमान है। जैसे रुद्रोंके सहित जल, मरुतोंके सहित इन्द्र और तारोंके बीचमें चन्द्रमा प्रकाशित होता है, तैसेही कुरुवंशियोंके बीचमें आप विराजमान है। जो लोग तुम्हारी आज्ञा नहीं पालते और जो आपके वचन को नहीं मानते वे ही पाण्डव लोग लक्ष्मीसे रहित होकर बनमें बसते हैं। हे महाराज। हम लोगोंने सुना है कि पाण्डवलोग बनबासी ब्राह्मणोंके सहित द्वैत बनमें एक तलाबके तटपर बसते है। हे महाराज। आप अपनी लक्ष्मीसे सूर्य्यके समान तेजस्वी होकर पाण्डवोंको पीड़ा देनेके लिये द्वैत बनको चलिये। हे नरनाथ! आप राज्यमे स्थित हैं,पाण्डव लोग राज्यसे भ्रष्ट हैं; आप लक्ष्मीसे युक्त, वे लक्ष्मीसे हीन हैं, और आप परम बुद्धिसे भरे हैं, अब वहा चलकर बुद्धिहीन पाण्डवोंका देखिये, आपको नहुष पुत्र ययातिके समान लक्ष्मीसे भरे हुए और अपने पुरुषोंके सहित विराजमान होन पाण्डव लोग देखें, हे नरनाथ! जिसको प्रकाशमान लक्ष्मीको शत्रु और मित्र देखते हैं, वही कार्य्य करनेमें समर्थ होता है, जिस सुखी पुरुषको शत्रु लोग दु:खी होकर देखें, उससे अधिक सुखी कौन होगा? उनको ऐसीही दशा होती है, जैसे किसी पर्वत पर चढ़े पुरुषको पृथ्वीमें खड़ा हुआ मनुष्य देखे। हे राजसिंह! पुत्र धन और राज्यके प्राप्त होनेसे इतना सुख नहीं होता, जितना शत्रुओंका दु:ख देखनेसे होता है। ऐसा कौन पुरुष है, जो धनवान होकर आश्रमपर बैठे हुए और मुनियोंके वस्त्र पहने हुए अर्ज्जुनको दुखी देख कर प्रसन्न न हो? तुम्हारी सब स्त्रिया अच्छे अच्छे वस्त्र पहनकर वगुले और हरिनके चर्म्मधारिणी दु:खित द्रौपदीको देखें; इससे उनको बहुत दु:ख होगा और तुम्हारी स्त्रियोंको आभूषण पहिरे देखकर द्रौपदी

भूषण रहित अपने शरीरकी बहुत निन्दा करेंगो; हे राजन्। तुम्हारी स्त्रियोंको देखकर जैसा द्रौपदीको दुःख होगा, तैसा सभामें नहीं हुआ था।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। राजा दुर्य्योधनसे ऐसे वचन कहकर शकुनी और कर्ण चुप होगए।

२३६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कर्णके वचन सुनर राजा दुर्य्योधन बहुत प्रसन्न हुए और फिर न होकर ऐसा बोले। हे कर्ण। तुमने जो हा सो सब हमारे मनमें है, परन्तु पाण्डवोंके स जानेकी आज्ञा महाराज हमको नहीं गे, महाराज धृतराष्ट्र पाण्डवोंके निमित्त या करते हैं और उनको हम लोगोंसे अधिक नते हैं। यदि महाराज हमारी सम्मति जान जायंगे तो आनेवाले समयकी रक्षा रनेकी कदापि आज्ञा न देंगे; हे महातेजस्वी नवासी पाण्डवोंके दुःख देनेके सिवा द्वैत नमें हम लोगोंको और कोई काम नहीं है, म जानते हो कि जुएके समय विदुरने हमसे मसे और शकुनीसे कैसे कैसे वचन कहे थे, न सब वचनोंका और राजाके रोनेको चारकर, हम चलने और न चलनेकी कुछ हीं कह सकते हैं, हमभी बहुत प्रसन्न हों, द्रौपदीके सहित भीम और अर्जुनको वनमें ख पाते देखें। हम इस सब पृथ्वोको पाकर तने प्रसन्न नहीं होंगे, जितने बगुले वा हरिन चर्म्म ओढे पाण्डवोंको देखकर। इससे र अधिक सुख क्या होगा जा मैं द्रुपदकी वी द्रौपदीको गेरुवा वस्त्र पहिने हुए में बैठो देखू? हे कर्ण! मुझे इससे अधिक र क्या सुख होगा जो मुझे धर्म्मराज युधिर और भीमसेन परमलक्ष्मीके युक्त देखें? रन्तु मुझे कोई द्वैत वनमें चलनेका उपाय नहीं दीखता, जिससे राजा हमे बनमें जानेकी आज्ञा दें। इस लिये तुम दुःशासन और शकुनीके सहित कोई ऐसा उत्तम उपाय विचारो जिससे हम लोग बनको जा सकें, मैं भी वन जानेकी आज्ञा मांगनेके लिये प्रातःकालही महाराजके पास जाऊंगा यदि वहां कुरुकुल श्रेष्ठ भीष्म बैठे होंगे तो उनसे सब वृत्तान्त कहूंगा; इससे तुम और शकुनी कोई उत्तम उपाय विचारो, पश्चात् भीष्म और महाराजके वचन सुनकर और भीष्मकी आज्ञा लेकर चलनेका बिचार करेंगे। अनन्तर सबने राजाके वचनको स्वीकार किया और सब लोग अपने अपने घरको चले गए। प्रातःकाल होतेही कर्ण राजाके पास आए और हंसकर कहने लगे, हे पृथ्वीनाथ। हमने एक उपाय विचारा है, उसको आप सुनिये। द्वैत बनमें गौ और ग्वाले रहते हैं, वे सब आपका मार्ग देख रहे होंगे, इस लिये राजासे यही कहना चाहिये, तो वे हमको जानेकी आज्ञा देंगे; हे पृथ्वीनाथ! आप उनसे कहना कि, हे महाराज! "हमें गौ देखने जाना आवश्यक है," तब वे आपको जानेको आज्ञा देंगे। कर्ण और दुर्य्योधनका ऐसा निश्चय सुनकर शकुनी बोले, हमने इस उपायको बहुत उत्तम सोचा है, अब महाराज हम लोगोको अवश्य जानेको आज्ञा देंगे। ऐसा निश्चय करके वे सब लोग ताली बजाकर हंसने लगे। अनन्तर सब राजा धृतराष्ट्रके पास गए।

२३७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। महाराजके पास जाकर उन सबने कुशल पूछी और राजाने उनसे कुशल प्रश्न किया। तब उनमेंसे समंग नामक ग्वालेने कहा कि, हे महाराज। सब गौ समीपही हैं। इसके पश्चात राजोंमें श्रेष्ठ नरनाथ धृतराष्ट्रसे कर्ण

और शकुनी कहने लगे, हे कुरुकुलश्रेष्ठ! आज काल्ह गाय बैल रमणीय बनमें हैं, उनको देखने तथा नवीन बछड़ोंको संख्या चिह्न देनेका समय भी आगया है, और इस समय आपके पुत्रको आहेर करनाभी उचित है, आप दुर्य्योधनको जानेकी आज्ञा दीजिये। महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे तात। आहेर खेलना तो उचितही है, परन्तु ग्वालोंके विश्वासपर नहीं जाना चाहिये, क्योंकि हमने सुना है कि पुरुषसिंह पाण्डव लोग भी वहा ही है। इस लिये हमारी यह इच्छा नहीं है कि तुम लोग आपही बनको जाओ। हे राधा-पुत्र! उन सब लोगोंको तुमने छलसे जीता है और वे लोग वनमें रहते रहते बहुत दुर्ब्बल होगये है, वे लोग नित्यही तप करते हैं; पाण्डव महारथ हैं; मुझे विश्वास है कि धर्म्म-राज युधिष्ठिर कभी क्रोध नहीं करेंगे, परन्तु भीमसेन महाक्रोधी है और द्रुपदकी पुत्री साक्षात अग्निही है; और तुम लोग अभिमानसे मोहित हो; इससे उनका अपराध अवश्यही करोगे, तब वे तुम सब लोगोंको अपने तपसे भस्म कर देंगे, यदि वे पाचों भाई शस्त्र धारण करके और कबच पहर कर क्रोध करेंगे, तो तुम लोगोको वाणोंसे भस्म कर देंगे। यदि तुम सब लोग इकट्ठे होकर उनसे युद्ध करोगे तो बहुत अधर्म्म होगा, और जीत नहीं सकोगे; महाबाहु अर्ज्जुन इन्द्रलोकसे सब शस्त्राको सीखकर बनमें आये हैं; जब अर्ज्जुनने शस्त्र विद्या नहीं सीखी थी, तभी उसने सब पृथ्वीको जीत लिया था. फिर अबतो सब शस्त्रविद्या सीख ली है, वह महारथ अर्ज्जुन अब तुम लोगोंको क्यो न मारेगा? यदि तुम लोग हमारे वचन सुनकर वहां जाओगे तो महा दुःख उत्पन्न होगा; क्योंकि पाण्डव लोग वन-वाससे घवड़ा रहे हैं, अथवा कोई तुम्हारी सेनाका एरुष युधिष्ठिरको कुछ हानि करेगा तो वही मूर्खतारूपी दोष तुम्हारा नाश कर देगा। हे दुर्य्योधन! इस लिये हमारी यह इच्छा नहीं है, कि तुम आपही वहां जाओ, वरन् अन्य उत्तम पुरुष गौ और बैलोंकी संख्या करनेको जायं।

शकुनी बोले, हे महाराज! युधिष्ठिर बहुत धर्म्म जाननेवाले हैं, और उन्होंने सभामें प्रतिज्ञा करी है, इससे वे अवश्यही १२ वर्ष बनमें रहेंगे, सब पाण्डव लोग धर्म्मात्मा और उत्तम कार्य्य करनेवाले हैं; इससे कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर हम लोगों पर कभी क्रोध नहीं करेंगे; हम लोगोंकी इच्छा आखेट खेलनेकी नहीं है; हम केवल गौ और बछड़ोंको गिनने जाते हैं; हम लोग वहां जाकर कोई अनर्थ नहीं करेंगे और न पाण्डवोंके आश्रम पर जायंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, शकुनीके ऐसे वचन सुन महाराज धृतराष्ट्रने मन्त्रियोंके सहित दुर्य्योधनको बन जानेकी आज्ञा दी; परन्तु प्रसन्न होकर जानेको न कहा। गान्धारीपुत्र दुर्य्योधन पिताकी आज्ञा पाकर कर्ण दुःशासन बुद्धिमान शकुनी तथा अन्य सब भाइयोंके सहित बनको चले। भरतकुलश्रेष्ठ दुर्य्योधन के संग बहुत सेना और सहस्रों स्त्रियां भी चलीं। जब महाबाहु दुर्य्योधन द्वैत बनमें तालाव देखनेको चले, तब नगरनिवासी लोग भी स्त्रियोंके सहित उनके पीछे चले। दुर्य्योधनके सङ्ग आठ सहस्र रथ तीन सहस्र हाथी नौ सहस्र घोड़े और अनेक सहस्र पैदल चले। महाराज दुर्य्योधनके सङ्ग छकड़े, बाजार, बनिये, भाट, और सैकड़ों सहस्रों आखेट करनेवालेभी चले। दुर्य्योधनके चलनेके समय ऐसा घोर शब्द हुआ, जैसा वर्षा कालमें घोर वायुका शब्द होता है। उस समय दुर्य्योधनकी सेना दो कोसमें ठहरी।

२३८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! दुर्य्योधन इस प्रकारसे वनको देखते हुए अपनी गोशालाके पास पहुंचे और गौवोंके समीपही जल वृक्ष और सब गुणसे भरे हुए स्थानमें डेरा किया। महाराजके पासही कर्ण शकुनी और उनके सब भाइयोंके डेरे हुए। अनन्तर दुर्य्योधनने सहस्रों गौवोंको देखा और उनके अङ्ग तथा चिह्नभी देखे और नवीन बछड़ोंको संख्या चिन्ह दिये और पुराने बछड़ोंकोभी गिना और फिर उस गिनतीको नई गिनतीसे मिलाया। जिन गौओंके नीचे छोटे छोटे बछड़े थे, उनकी गिनती अलग अलग करी; उनमें जो तीन वर्षके बछड़े थे उनको अपने सङ्ग ले लिया और शेष बछड़ोंको गिनकर वहीं छोड़ दिया। अनन्तर कुरुकुल श्रेष्ठ दुर्य्योधन ग्वालोंसे मिलकर बहुत प्रसन्न हुए। पश्चात् दुर्य्योधनके सङ्गवाले नगरनिवासी और देवतोंके तुल्यसेनाके लोग उस वनमें इच्छानुसार खेलने लगे। अनन्तर गानेवाले और नाचनेवाले ग्वाले और उनकी कन्या आभूषण पहरकर दुर्य्योधनके पास आईं। तब राजाने स्त्रियोंके सहित प्रसन्न होकर उन सबको उचित धन, भोजन और अनेक प्रकारकी पीनेकी वस्तु दी। तब उन सब ग्वालोंने राजा दुर्य्योधनको भैंसे, रीछ, हरिन, नीलगाय और वराहोंकी गिनती बताई। तब उस रमणीय वनमें दुर्य्योधनने अपने वाणोंसे हाथी आदि अनेक जन्तुओंको मारा और हरिनोंको पकड़वाया। इस प्रकार दूध दहीको भोजन करते हुए और सुन्दर वनको देखते हुए वनके मतवाले भौंरे, और मतवारे मोरोंके शब्द सुनते हुए क्रमसे पवित्र द्वैतवनमें पहुंचे। वहां मतवाले भौंरे और मोर शब्द कर रहे थे। वह वन मौलसरी, नाग आदि रमणीय वृक्षोंसे भरा था। उसी वनमें परम ऋद्धिसे भरे हुए, साक्षात वज्रधारी इन्द्रके समान प्रतापी महाराज युधिष्ठिरभी निवास करते थे। उस दिन कुरुकुलश्रेष्ठ महाराज युधिष्ठिर बारह दिनका राजर्षियज्ञ कर रहे थे, उस यज्ञको उन्होंने दिव्य विधिसे आरम्भ किया था। बुद्धिमान पृथ्वीनाथ महाराज युधिष्ठिरने द्रौपदी और अपने भाइयोंके सहित उसी तड़ागपर यज्ञ आरम्भ किया था। हे भारत! उसी समय दुर्य्योधनने अपने सहस्रों सेवकोंको आज्ञा दी कि तुम लोग शीघ्र विहार करनेके लिये स्थान ढूंढ़ो। वे सब लोग उनके वचनको स्वीकार करके स्थान ढूंढ़नेके लिये उसी द्वैतवनके तलावकी ओर जाने लगे। जिस समय उन्होंने वनमें प्रवेश किया, उसी समय गन्धर्व्व लोग निवारण करने लगे। जिस समय दुर्य्योधनकी सेनाने उस वनमें प्रवेश किया था, उससे पहिलेही अलकापुरीसे चलकर गन्धर्व्वराज अपनी सेना सहित वहां आये थे। उनके सङ्ग अनेक अप्सरा और देवतोंके पुत्रभी थे; उन सबसे उस तलावका तट भरा हुआ था और वे लोग वहां विहार कर रहे थे। राजा दुर्य्योधनके सेवक यह सब देखकर वहांसे लौट गये और राजासे सब समाचार कह सुनाया। राजाने उनके वचन सुनकर महायुद्ध करनेवाले सैनिकोंको भेजा और आज्ञा दी कि गन्धर्व्वोंको वनसे निकाल दो, वे सब राजाके वचन सुनकर गन्धर्व्वोंके पास गये और ऐसा कहने लगे कि, महाराज धृतराष्ट्रके पुत्र महाबलवान राजा दुर्य्योधन यहां विहार करनेको आना चाहते हैं, इसलिये तुम लोग भागजाओ। उनके ऐसे वचन सुन गन्धर्व्व लोग हंसने लगे और कठोर वचन कहने लगे कि, तुम्हारा दुर्य्योधन नामक राजा महामूर्ख है, वह कुछभी नहीं जानता, जो स्वर्गमें रहनेवाले हम लोगोंपर बनियोंके समान आज्ञा करता है, और तुम लोगभी मूर्ख हो, निःसन्देह तुम लोगोंको कुछभी बुद्धि नहीं हैं, जो उस मूर्खके वचनोंको हम लोगोंसे कहने आये हो। इस

लिये तुम लोग उस कुरुवंशी राजाके पास लौट जाओ, नहीं तो हम अभी तुम सबको यमराजके पास भेजेंगे। वे सब गन्धर्व्वोंके वचन सुन राजा दुर्य्योधनके पास गये।

२३६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। तब उन सब सैनिकोंने गन्धर्व्वोंके सब वचन दुर्य्योधनसे कह सुनाए, और जब प्रतापवान धृतराष्ट्रपुत्र दुर्य्योधनने देखा कि मेरी सेनाको गन्धर्व्वोंने निवारण कर दिया, तब महा क्रोधसे भर गए और अपनी सेनाको आज्ञा दी कि हमारा अप्रिय कार्य्य करनेवाले इन अधर्म्मी गन्धर्व्वोंको मारो, यदि साक्षात इन्द्र भी देवतोंके साथ विहार करते हों तो उन्हें भी यहांसे निकाल दो। दुर्य्योधनकी आज्ञा सुनतेही धृतराष्ट्रके सब पुत्र और महा बलवान सहस्रों योद्धा लोग युद्धको उपस्थित हुए। तब उन सब लोगोंने गन्धर्व्वोंको अपने बलसे व्याकुल करके और अपने घोर शब्दसे दशों दिशाओंको पूर्ण करके, उस बनमें प्रवेश किया। तब उन गन्धर्व्वोंने इन सबको शान्तिपूर्व्वक निवारण किया, परन्तु ये उनका निरादर करके वनमें घुस गए। जब धृतराष्ट्रके पुत्रोंने उनके वचनोंको न सुना, तब उन गन्धर्व्वोंने जाकर चित्रसेनसे कह दिया। महा क्रोधी गन्धर्व्वराज चित्रसेनने सुनतेही सब गन्धर्व्वोंको आज्ञा दी कि, इन अधर्म्मी कौरवोंको मारो। हे भारत। गन्धर्व्वराजकी ऐसी आज्ञा सुन गन्धर्वलोग शस्त्र लेकर कौरवोंकी ओर दौड़े। जब कौरवोंने शीघ्रगामी गन्धर्व्वोंको शस्त्र लिये अपनी ओर आते देखा, तब सब लोग इधर उधर भागने लगे। परन्तु सूतपुत्र कर्ण युद्धको छोड़कर न भागा। जब कर्णने उस महासेनाको आते हुए देखा, तो घोर बाणोंकी वर्षा करके, उसे निवारण करने लगा। सूतपुत्र कर्णने क्षुरप्र, वत्सदन्त और लोहेके बाणोंसे क्षण भरमें गन्धर्व्वोंकी सेनाको व्याकुल कर दिया। महारथ कर्णके बाणोंसे अनेक गन्धर्व्वोंके सिर पृथ्वी पर गिर गये बुद्धिमान कर्णके बाणोंसे व्याकुल होकर सहस्रों गन्धर्व्व लोग फिर युद्ध करनेको लौटे, उस समय वह समस्त रणभूमि गन्धर्व्वोंसे भरी हुई दीखती थी। जिस समय चित्रसेनकी सेना फिर लौटी, तब राजा दुर्य्योधन, सुबल पुत्र शकुनी, दुःशासन और विकर्ण आदि धृतराष्ट्रके पुत्र गरुड़के समान रथोंपर बैठकर गन्धर्व्वोंको मारने लगे, दुर्य्योधनकी सेना कर्णको आगे करके महायुद्ध करने लगी। उस समय दुर्य्योधनकी सेनाने रथयुद्ध किया दुर्य्योधनकी सेनाने गन्धर्व्वोंकी सेनाको अपने बाणोंसे जीत लिया। तब गन्धर्व्व लोगभी उनसे घोर युद्ध करने लगे। यह युद्ध महाघोर और लोमहर्षण हुआ। तब दुर्य्योधनकी सेनाके बाणोंसे पीड़ित होकर गन्धर्व्व लोग ढीले पड़ गये दुर्य्योधनके सैनिक लोग गन्धर्व्वोंको व्याकुल देखकर गर्जने लगे, जब महाक्रोधी चित्रसेनने देखा कि गन्धर्व्व लोग युद्धमें व्याकुल होगए,, तब क्रोध करके और उन सबके मारनेकी इच्छा करके आपही उठा, चित्रसेनने उस समय गन्धर्व्वी मायाको प्रकाश किया। चित्रसेनकी उस मायासे सब कौरव लोग मोहित होगये। हे भारत! उस समय दुर्य्योधनके एक एक योधाके सङ्ग दश दश गन्धर्व्व युद्ध करने लगे। हे राजन्! उस समय गन्धर्व्वोंके बाणोंसे दुर्य्योधनकी सब सेना पीड़ित हो गई और योद्धा जीनेकी इच्छासे भागे। जब दुर्य्योधनकी सब सेना इधर उधर भागने लगी, तब अकेला कर्णही पर्व्वतके समान खड़ा रहा। उस समय दुर्य्योधन कर्ण और सुबलपुत्र शकुनी अत्यन्त घावोंसे पीड़ित होकर भी युद्ध करते रहे। तब सहस्रों गन्धर्व्व लोग इकट्ठे होकर कर्णके मारनेकी इच्छासे केवल कर्णहीसे युद्ध करने लगे। महाबलवान गन्धर्व्व

ोग चारों ओरसे कर्णके ऊपर खड्ग, परिघ, शूल, और गदा छोड़ने लगे। किसीने कर्णके रथके पहिये, किसीने ध्वजा, किसीने धुरी, किसीने घोड़े किसीने सारथी, किसीने छत्र, किसीने कलश, और किसीने रथके बन्धन काट डाले। उस समय सूतपुत्र कर्णका रथ कटकर तिलके समान हो गया। तब कर्ण खड्ग और ढाल लेकर रथसे नीचे उतरा और विकर्णके रथपर चढ़कर युद्धसे भागा।

२४० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! जिस समय महारथ कर्ण गन्धर्व्वोंसे हारकर और युद्धको छोड़कर भागा, उस समय दुर्य्योधनके देखते देखते उनकी सब सेना भाग गई। उस घोर युद्धसे केवल महाराज दुर्य्योधन-ही नहीं भागे, जब दुर्य्योधनने उस महासेनाको अपनी ओर आते देखा तब बाणोंकी घोर वर्षा करने लगे। गन्धर्व्वोंने उनकी बाण वर्षापर कुछभी ध्यान नहीं दिया और उनको चारों ओरसे घेरकर मारने लगे। उस समय दुर्य्योधनके रथके पहिये धुरी, ध्वजा, सारथी, घोड़े और जुआ तिल तिल होकर पृथ्वीपर गिर गये और दुर्य्योधनभी मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर गिरे तब महाबाहु चित्रसेनने उनको जीतेही पकड़ लिया। जिस समय महाराज दुर्य्योधन पकड़े गए, उस समय रथपर बैठे हुए दुःशासनको भी गन्धर्व्वोंने पकड़ लिया, विविंशती, चित्रसेन, विन्द, और अनुविन्द, तथा और सब राजस्त्रियोंको पकड़कर चित्रसेनने चल दिया। उस समय दुर्य्योधनकी सब सेना भाग गई। जिस समय राजा पकड़े गये उस समय दुर्य्योधनके बड़के छकड़े, बनिये सब वाहन और सेनाके सब लोग पाण्डवोंको शरण गये।

सेनाके लोग बोले, हे महाबाहो! हे युधिष्ठिर! महा बलवान धृतराष्ट्रपुत्र दुर्य्योधनको गन्धर्व्व लोग पकड़े लिये जाते हैं, आप लोग उनको छुड़ाइये। दुःशासन, दुर्विसह, दुर्जय, दुर्मुख, और सब राजस्त्रियोंको बांधकर गन्धर्व्व लोग लिये जाते हैं, आप लोग छुड़ाइये, इस प्रकारसे रोते हुए दुर्य्योधनके मन्त्री लोग महाराज युधिष्ठिरकी शरण गए। इस प्रकारसे दुर्य्योधनके बूढ़े मन्त्रियोंको दीन और युधिष्ठिर-से भीख मांगते देखकर भीमसेन बोले, बहुत यत्न करके हाथी और घोड़ोंको इकट्ठा करके जो कार्य्य हमको करना था, सो गन्धर्व्वोंहीने कर लिया, जहां कुछ और होना था तहांही कुछ और हो गया। यह जुआ खिलानेवाले राजा धृतराष्ट्रकी बुरी सम्मतिका फल हुआ; हम लोगोंने यह सुना था कि असमर्थोंके शत्रु-ओंको कोई दूसरा ही मार देता है, परन्तु गन्धर्व्वोंने यह अमानुष कर्म्म हमारे आगेही किया; हमारी प्रारब्धसे जगतमें हमारे बैठे बैठे हमारे सिरसे इस बोझको उतार दिया। हम लोग शीत, वात और घामको सहकर दुर्ब्बल हो गये हैं और यह दुर्बुद्धि सुखी होकर हम दुःखियोंको देखने आया था, महा अधर्मी दुरात्मा दुर्य्योधनके जो लोग सङ्गी हैं, वे ही इस समय उसका निरादर देख रहे हैं: जिन्होंने यह शिक्षा दी है, उन लोगोंने बड़ा अधर्म्म किया है। हम तुम लोगोंके आगे कहते हैं किन्तु पाण्डव लोग बड़े निठुर हैं। जिस समय कुन्तीनन्दन भीमसेन क्रोधमें भरकर ऐसा कह रहे थे, उसी समय राजा युधिष्ठिरने कहा कि, यह समय कठोरवचनका नहीं है।

२४१ अध्याय समाप्त।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे तात! कौरव लोग इस समय हमारी शरण आये हैं, ये लोग भयसे व्याकुल होकर शरणकी इच्छा करते हैं, तब तुम ऐसे वचन इनसे क्यों कहते हो?

हे वृकोदर! अपने वंशमें अनेक प्रकार कलह और भेद हो जाते हैं, परन्तु कुलके धर्म्म नष्ट नहीं होते हैं। यदि कोई अन्य पुरुष अपने कुलके पुरुषको किसी प्रकारका दुःख देना चाहे तो वंशमें अच्छे लोग उसको नहीं सह सकते हैं, मूर्ख दुर्य्योधन जानता था, कि हम लोग यहां बहुत दिनोंसे रहते हैं, तौभी उसने हमारा निरादर करके यह अप्रिय कार्य्य किया, दुर्य्योधनके पकड़े जानेसे और स्त्रियोंके अन्यत्र जानेसे हमारा वंश नष्ट हो जायगा। हे पुरुषसिंहो! शरणागतकी रक्षा करनेको और वंशका उद्धार करनेको तुम लोग शीघ्र उठो, देर मत करो; सब युद्धकी सामग्री ठीक कर लो। अर्ज्जुन, नकुल, सहदेव और तुम चारो वीर अपराजित हो, तुम लोग शीघ्रही पकड़े हुए दुर्य्योधनको छुड़ाओ; हे पुरुषसिंहो! ये धृतराष्ट्रके पुत्रोंके निर्म्मल रथ शस्त्रोंके सहित खड़े हैं; इन सबपर सोनेकी ध्वजा लगी हैं, शस्त्रविद्या जाननेवाले सूत बैठे हैं; तुम लोग आलस्य-रहित होकर इन रथोंपर बैठकर गन्धर्व्वोंसे युद्ध करनेका सङ्कल्प करो। हे वृकोदर! सामान्य क्षत्रीय लोगभी शरण आयेकी अपनी शक्तिके अनुसार रक्षा करते हैं, तब तुम क्यों नहीं रक्षा करते हो? ऐसा कौन उत्तम पुरुष होगा, जिसके आगे हाथ जोड़कर शत्रु शरण मांगे और वह उसकी रक्षा न करे? देवतासे वरदान पाना, राज्य पाना, पुत्रका उत्पन्न होना, और शत्रुको किसी दुःखसे छुड़ाना ये चारो आनन्द समान हैं। हे भीम! इससे अधिक आनन्द क्या होगा जो दुर्य्योधन तुम्हारी शरण आया है और तुम्हारे बाहुबलसे अपने जीनेकी इच्छा करता है? हे वीर यदि मैं यज्ञ न करता होता तो आपही युद्धको जाता; मुझे इसमें कुछ विचार नहीं है। हे भीम! तुम शान्तिहीसे दुर्य्योधनको छुड़ा लेना, यदि ऐसे न छुड़ा सको तो औरभी यत्न करना, यदि गन्धर्व्वराज शान्तिसे दुर्य्योधनको न छोड़े तो कोमल युद्ध करके छुड़ा लेना, यदि कोमल युद्धसेभी न छोड़े तो घोर युद्ध करके शत्रुओंको अपने वशमें कर लेना और दुर्य्योधनको छुड़ा लेना; हे वृकोदर! हमारो इतनाही उपदेश करनेकी शक्ति है, क्योंकि इस समय हमारा यज्ञका कर्म्म फैल रहा है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले महाराज युधिष्ठिरके ऐसे वचन सुन अर्ज्जुनने ऐसा उत्तर दिया और कौरवोंके छुड़ानेकी प्रतिज्ञा की।

अर्ज्जुन बोले, यदि गन्धर्व्व लोग दुर्य्योधनको शान्तिसे नहीं छोड़ेंगे तो आज भूमि गन्धर्व राजके रुधिरको पीयेगी। सत्यवादी अर्ज्जुनकी ऐसी प्रतिज्ञा सुनकर कौरव लोग बहुत प्रसन्न हुए।

२४२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! महाराज युधिष्ठिरके ऐसे बचन सुन भीमसेन आदि बहुत प्रसन्न होकर उठे! पुरुषसिंह महारथ पाण्डवोंने सोनेसे खिचे हुए विचित्र और अभेद्य कवचोंको पहना और दिव्य शस्त्रोंको धारण किया। अनन्तर वे सब लोग धनुष धारण करके ध्वजा सहित रथोंपर बैठे उस समय पाण्डवोंकी ऐसी शोभा बढ़ी जैसे जलती हुई अग्निकी। वे लोग उत्तम घोड़ावाले अच्छे सारथियोंसे युक्त रथोंपर बैठकर शीघ्र चले। उस समय महारथ पाण्डवोंको युद्ध करनेको चलते हुए देख कौरवोंकी सेना गर्ज्जने लगी और जीते हुए महारथ गन्धर्व्व लोगभी क्षण भरमें वेडरके समान उस बनमें आये। चारो पाण्डवोंको युद्धमें आते हुए देखते ही गन्धर्व्व लोग लौटे। चारो वीर पाण्डवोंको लोकपालोंके समान उद्यत देखकर गन्धर्व्वोंने अपनी सेनाको उद्यत किया। बुद्धिमान युधिष्ठिरके वचनके अनुसार पाण्डवोंने

पहले कोमल युद्ध किया, परन्तु मूर्ख गन्धर्व्वोंने दुर्य्योधनको छोड़ना स्वीकार न किया। तब शत्रुनाशन अर्ज्जुनने महावीर गन्धर्वोंसे शान्तिपूर्व्वक कहा कि मेरे भाई राजा दुर्य्योधनको छोड़ दो। यशस्वी अर्ज्जुनके ऐसे वचन सुन गन्धर्व्व लोग हंसकर अर्ज्जुनसे कहने लगे, हे तात। हम केवल इन्द्रहीकी आज्ञा मानते हैं और उन्हीकी आज्ञासे सुखपूर्व्वक पृथ्वीपर घूमते हैं; हे भारत! वे हमको जैसी आज्ञा देते हैं वैसाही हम हम करते हैं, उनके सिवा और हमको आज्ञा देनेवाला पृथ्वीमें कोई नहीं है। गन्धवोंके ऐसे वचन सुन कुन्तीपुत्र अर्ज्जुन फिर कहने लगे, गन्धर्व्व राजने जो नीच कर्म्म किया सो उनके योग्य नहीं था दूसरेकी स्त्रियांको पकड़ना, मनुष्योंके सङ्ग रहना यह उनको उचित नहीं, इस लिये तुम लोग महाराज युधिष्ठिरकी आज्ञासे महापराक्रमी धृतराष्ट्रकेपुत्रोंको, और उनकी स्त्रियोंको छोड़ दो। हे गन्धर्वों। यदि तुम शान्त भावसे धृतराष्ट्रके पुत्रोंको नहीं छोड़ोगे, तो हम दुर्य्योधनको अपने बलसे छुड़ा लेंगे। ऐसा कहकर अर्ज्जुन गन्धर्व्वों पर तीक्ष्ण बाण छोड़ने लगे, बलवान गन्धर्व्व लोगभी पाण्डवोंके ऊपर बाणोंकी वर्षा करने लगे और पाण्डव लोगभी गन्धर्वोंके ऊपर बाण छोड़ने लगे, उस समय बलवान पाण्डवों और गन्धर्वोंका घोर युद्ध होने लगा।

२४२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! तब सोनेकी माला पहिरे गन्धर्वोंने पाण्डवोंको चारो ओरसे घेरकर दिव्य बाण चलाना आरम्भ किया, उस युद्धमें एक ओर चार पाण्डव और एक ओर सहस्रों गन्धर्व्व थे, परन्तु जो बराबरी युद्ध करते रहे,यह बड़ी अद्भुत बात हुई। जब गन्धर्व्वोंने जैसे कर्ण और दुर्य्योधनके रथको घेरा था तैसेही बाणोंकी वर्षा करके पाण्डवोंको भी घेर लिया। जब पुरुषसिंह पाण्डवो सहस्रों गन्धर्व्वोंको अपनी ओर आते देखा, तब बाणोंकी वर्षा करनी आरम्भ करी। गन्धर्व्व लोग पाण्डवोंके बाणोंसे पीड़ित होकर उनके रथोंके पास न आसके क्रोधी अर्ज्जुनने क्रोधी गन्धर्व्वोंके ऊपर दिव्य अस्त्र चलाये। उन बाणोंके लगनेसे सहस्रों गन्धर्व्व लोग मर गये। अनन्तर बलवान अर्ज्जुनने अग्निबाण चलाया,उससे अनेक गन्धर्व्व लोग मर गये। इसी प्रकार महा धनुषधारी भीमनेभी अनेक गन्धर्वोंको तीक्ष्ण-बाणोंसे मारा। गन्धर्व्व लोग महारथ पाण्डवोंके दिव्य बाणोंसे पीड़ित होकर दुर्य्योधनको सङ्ग लेकर आकाशको उड़ गये। जब अर्ज्जुनने गन्धर्वोंको आकाशकी ओर उड़ते देखा, तो चारों ओरसे बाणोंके जालमे फास लिया। वे लोग बाणोंके जालमें ऐसे फँस गये जैसे पक्षी लोग पिंजरेमें फँसते हैं। तब उन लोगोंने अर्ज्जुनके ऊपर गदा शक्ति, और खड्गोंकी वर्षा करी। परम शस्त्रोंके जाननेवाले अर्ज्जुन उस शस्त्रवृष्टिको काटकर अपने बाणोंसे गन्धर्वोंको सेनाको काटने लगे। उस समय आकाशसे गिरते हुए शिर, पैर, और हाथोंकी ऐसी वृष्टि हुई जैसे कहीं पत्थर बर्षते हों। उस समय गन्धर्व्वोंको बहुत भय उत्पन्न हुआ। भूमिमें खड़े हुए महात्मा अर्ज्जुनके बाणोंसे गन्धर्व्व लोग पीड़ित हो गए। तब उन्होने आकाशसे अर्ज्जुनके ऊपर बाण बर्षाये। महा-तेजस्वी अर्ज्जुनने उनकी बाण वर्षाको काटकर अपने बाणोंसे उनका शरीर काटना आरम्भ किया। कुरुनन्दन अर्ज्जुनने स्थूणाकर्ण इन्द्र-जाल, सौर, आग्नेय, और सौम्य बाण चलाये। उस समय गन्धर्व्व लोग अर्ज्जुनके बाणोंसे ऐसे पीड़ित हुए जैसे इन्द्रके बाणोंसे दैत्य पीड़ित होते हैं। जो गन्धर्व्व आकाशको उड़ते थे उनको अर्ज्जुन अपने बाणोंसे रोकते थे, जो लोग

युद्ध करनेको आते थे, उनको भी अर्ज्जुन अपने वाणोंसे निवारण कर देते थे। गन्धर्वोंको अर्ज्जुनके वाणोंसे पीड़ित देखकर गन्धर्व्वराज चित्रसेन गदा लेकर अर्ज्जुनको ओर दौड़े। जब अर्ज्जुनने उनको अपनी ओर आते देखा, तब उनकी लोहेको गदाको अपने वाणसे काटकर सात टुकड़े कर दिये। जब चित्रसेन गन्धर्व्वने अपनी गदाको अर्ज्जुनके तेज वाणोंसे कटा हुआ देखा, तो मायासे अपने शरीरको छिपा लिया और अर्ज्जुनसे युद्ध करने लगे। तब वीर अर्ज्जुनने अपने दिव्य वाणोंसे गन्धर्व्वके दिव्य वाणोंको काट दिया। तब महात्मा अर्ज्जुनके वाणोंसे निवारण होकर गन्धर्व्वराज अपनी मायासे अन्तर्धान हो गया, तब अर्ज्जुनने अपने दिव्य आकाशगामी वाणोंसे वाण चलाते हुए गन्धर्व्वराजको मारा। उस समय अर्ज्जुनने क्रोध करके अन्तर्द्धान चित्रसेनके ऊपर शब्दभेदी वाण छोड़े। जब अर्ज्जुनका प्यारा मित्र चित्रसेन महात्मा अर्ज्जुनके वाणोंसे बहुत पीड़ित हुआ, तब अपने शरीरको प्रगट कर दिया और बोला, मैं तुम्हारा प्यारा सखा चित्रसेन हूं। कुरुकुलसिंह अर्ज्जुनने अपने प्यारे मित्र चित्रसेनको युद्धमें दुर्ब्बल देखा तो अपने वाणको लौटा लिया; जब पाण्डवोंने देखा, कि अर्ज्जुनने अपने शस्त्रको रोक लिया, तब सबने अपने धनुष, वाण और घोड़ोंको रोक दिया; चित्रसेन, भीम, अर्ज्जुन, नकुल और सहदेवने परस्पर प्रेम किया और रथोंहोमें बैठ रहे।

२४४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! तब महा तेजस्वी और धनुषधारी अर्ज्जुनने गन्धर्वोंके मध्यमें हसकर चित्रसेनसे कहा, हे वीर! तुमने यह क्या बुरा कर्म्म किया जो कौरवोंको पकड़ लिया; तुमने स्त्रियोंके सहित दुर्य्योधनको पकड़ा। चित्रसेन बोला, हे अर्ज्जुन! हमने इस दुष्ट दुर्य्योधन और कर्णका यह अभिप्राय जाना था, कि यह आप लोगोंको वनवाससे दुःखित देखकर क्लेश देनेको आया है; इसने यह विचारा था, कि पाण्डव लोग दुःखी हैं, इस लिये हम उनको देखने चले, और ये सब लोग यशस्विनी द्रौपदीको देखनेके लिये आये थे; इन सबके अभिप्रायको जानकर इन्द्रने मुझसे कहा, कि तुम द्वैत वनमें जाओ और मन्त्रियों सहित दर्य्योधनको पकड़ लाओ और युद्धमें भाइयोंके सहित अर्ज्जुनकी रक्षा करना, क्योंकि वह तुम्हारा प्यारा मित्र और शिष्य है; हे अर्ज्जुन! हम इन्द्रकी इस आज्ञाको मानकर यहीं आये हैं, हम इन्द्रकी आज्ञासे इस दुष्टको बांधकर इन्द्रके यहां ले जायंगे।

अर्ज्जुन बोले, हे चित्रसेन! यदि तुम हमारा प्रिय करना चाहते हो तो महाराज धर्म्मराजकी आज्ञासे हमारे भाई दुर्य्योधनको छोड़ दो।

चित्रसेन बोले, यह महापापी, सदा अस न्तोषी है; यह सदा धर्म्मराज और द्रौपदीकी निन्दा किया करता है, इस लिये यह छोड़नेके योग्य नहीं है; इसकी इच्छाओंको महाराज युधिष्ठिर नहीं जानते है, इस लिये हम सब धर्म्मराजके पास चलते हैं, वे जैसी आज्ञा देंगे वैसाही किया जायगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तब वे सब महाराज युधिष्ठिरके पास गए और उनसे सब वृत्तान्त कह सुनाया। महाराजने गन्धर्वोंका वचन सुन सब कौरवोंको छुड़ा दिया और गन्धर्वोंकी बहुत प्रशंसा करी।

महाराज बोले, तुम सब लोग बहुत बड़े बलवान और समर्थ हो, तुम लोगोंने हमारी प्रारब्धहोसे इस दुष्ट दुर्य्योधनको भाई और बान्धवोंके सहित नहीं मारा, तुम लोगोंने जो इस दुरात्माको छोड़ दिया, इससे हमारे कुलका निरादर नहीं हुआ, अब तुम लोगोंको

जो इच्छा हो सो मांग लो, हम तुम लोगोंको देखकर बहुत प्रसन्न हुए; अपनी इच्छानुसार हमसे सब वस्तु प्राप्त करके यहांसे शीघ्र चले जाओ। महाराज बुद्धिमान धर्म्मराजको आज्ञा पाकर गन्धर्व्व लोग बहुत प्रसन्न हुए और अप्सराओंको सङ्ग लेकर चले गये। युद्धमें कौरवोंने जिन गन्धर्वोंको मारा था, इन्द्रने उन सबपर अमृतकी वर्षा करी तबाबे सब जी गये। पाण्डवोंने अपने भाइयोंको और रानियोंको छुड़ाकर बहुत सुख पाया। उस समय कुरुकुलकी स्त्री और कुमारोंने महारथ पाण्डवोंकी बहुत प्रशंसा करी। पाण्डव लोग उस यज्ञमें ऐसे विराजमान हुए जैसे देहधारी अग्नि। अनन्तर गन्धर्वोंसे छुटे हुए दुर्य्योधनसे भाइयोंके सहित महाराजने शान्तिपूर्व्वक ऐसे वचन कहे, हे तात! ऐसा साहस फिर कभी मत करना, क्योंकि साहसी पुरुषको सुख नहीं होता, हे कुरुनन्दन! तुम्हारा कल्याण हो, अब तुम घरको जाओ, और मनमें किसी प्रकारका दुःख मत करना।

श्री वैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! धर्म्मराज युधिष्ठिरकी आज्ञा दुर्य्योधनने पाकर धर्म्मराजको प्रणाम किया और लज्जासे नीचा मुंह करके नगरको चला। उस समय दुर्य्योधनकी ऐसी दुर्द्दशा हो गई थी, मानो इसकी किसी इन्द्रीमें कुछ शक्ति नहीं है। जब दुर्य्योधन चला गया, तब वीर कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर भाई और तपोधन ब्राह्मणोंसे पूजित होकर प्रसन्नता पूर्व्वक उस वनमें ऐसे विहार करने लगे जैसे देवतोंके सहित इन्द्र।

२४५ अध्याय समाप्त।

— —

महाराज जनमेजय बोले, हे द्विजोत्तम! जान पड़ता है, कि जो दुरात्मा दुर्य्योधन सदा अभिमानके वशमें रहता था, जो सदा अपनी प्रशंसा किया करता था जो सदा अभिमानी रहता था, जो अपने बल और उदारतासे पाण्डवोंको नीच मानता था, जो पापी दुर्य्योधन सदा अहङ्कारकी बात करता था, उसको जब शत्रुओंने जीतकर बांध लिया और फिर पाण्डवोंने छुड़ाया तब उसको हस्तिनापुरमें जाना बड़ा कठिन हुआ होगा। हे वैशम्पायन! लज्जा और शोकसे व्याकुल दुर्य्योधनने किस प्रकार नगरमें प्रवेश किया? इस कथाको विस्तार पूर्व्वक कहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज! जब धृतराष्ट्र पुत्र दुर्य्योधन धर्म्मराजसे विदा हुए, तब लज्जासे नीचामुंह करके दुःखसे रोते हुए चले। उस समय राजा दुर्य्योधनकी बुद्धि शोकसे नष्ट हो गई थी, वे अपने निरादरको सोचते हुए, चतुरङ्गिणी सेनाके सहित नगरको चले। थोड़ी दूर जाकर घास और जल सहित स्थानमें डेरा किया। वहां हाथी घोड़े, रथ और पैदलोंको उचित स्थानमें ठहराकर, आप एक रमणीय सुन्दर स्थानमें अग्निके समान प्रकाशमान पलङ्गपर बैठ गये। उस समय दुर्य्योधनकी शोभा ऐसी हो रही थी, जैसे राहुसे ग्रहण किये हुए चन्द्रमाकी। उसी समय कर्ण आकर ऐसा बोले, हे गान्धारीपुत्र! तुम प्रारब्धहीसे जीते हो, प्रारब्धहीसे हम फेर तुमसे मिले हैं, प्रारब्धहीसे तुमने कामरूपी गन्धर्वोंको युद्धमें जीता। हे कुरुनन्दन! युद्धमें विजय करनेवाले तुम्हारे महारथ भाइयोंको हम प्रारब्धहीसे देखते हैं, हम तुम्हारे सामनेही गन्धर्वोंके युद्धमें भाग आये थे; हम भागती हुई सेनाको स्थिर नहीं कर सके, मेरे शरीरमें बाणोंके बहुत घाव हो गए थे, इस लिये हम युद्धसे भाग गए थे, हे भारत! यह बहुत आश्चर्य्यकी बात है, कि जो आप लोग स्त्री, सेना और वाहनोंके सहित उस अमानुष युद्धसे बच आए; आपके शरीरमें कहीं घावभी नहीं हुआ; हे महाराज! आपने अपने

भाइयोंके सहित इस युद्धमें जो कर्म किया, इसका करनेवाला इस लोकमें और कोई नहीं है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कर्णके ऐसे बचन सुन राजा दुर्य्योधन रोकर कहने लगे।

२४६ अध्याय समाप्त।

राजा दुर्य्योधन बोले, हे राधापुत्र! तुम इस वृत्तान्तको नहीं जानते हो; इस लिये हम तुम्हारे वचनका निरादर नहीं करते हैं, क्योंकि तुम यह जानते हो कि गन्धर्वोंको हमने अपने बलसे जीता है। हे महाबाहो! हमारे भाइयोंने बहुत समय तब गन्धर्वोंसे युद्ध किया, परन्तु जब गन्धर्वोंने मायायुद्ध किया और वे लोग आकाशको चले गये तब हम लोग उनके सङ्ग युद्ध नहीं कर सके; तब हमलोग हार गये और उन्होंने हमको बांध लिया, हमारे दास, पुत्र स्त्री, मन्त्री, सेना और वाहन सब पकड़े गए, उस समय हम लोग बहुत दुःखित हुए और गन्धर्व्व लोग हमको लेकर आकाशको उड़ गए; उसी समय हमारे महारथ मन्त्रियोंने युद्ध करनेवाले पाण्डवोंसे दीन होकर कहा कि हे पाण्डवो! ये धृतराष्ट्रके पुत्र महाराज दुर्य्योधनको भाई, मन्त्री, और स्त्रियोंके सहित पकड़कर गन्धर्व्व लोग आकाशको लिये जाते हैं, आप लोगोंका कल्याण हो, स्त्रियोंके सहित राजाको छुड़ाइये, देखो इन गन्धर्वोंने कौरवोंकी सब स्त्रियोंको पकड़ लिया है, इनके छुड़ानेमें आप लोग कुछ विचार मत कीजिये। मन्त्रियोंके ऐसे वचन सुन धर्म्मात्मा युधिष्ठिरने अपने भाइयोंको प्रसन्न करके हमारे छुड़ानेकी आज्ञा दी, अनन्तर पुरुषसिंह पाण्डव लोग उस स्थानपर आकर शान्तिपूर्व्वक ऐसा बोले, यद्यपि ये लोग महारथ और युद्धमें समर्थ थे, तो भी उन लोगोंने शान्तिपूर्व्वक गन्धर्वोंसे हम लोगोंको मांगा। जब गंधर्वोंने हम लोगोंको न छोड़ा तो अर्ज्जुन, भीम, नकुल, और बलवान सहदेवने गन्धर्वोंके ऊपर बाणोंकी वर्षा करनी आरम्भ करी; उस समय उन गन्धर्व्वोंने युद्धको छोड़ दिया और प्रसन्नता सहित हम लोगोंको लेकर स्वर्गको चले; तब हम लोग बहुत दूर नहीं गये, उस समय हम लोगोंने देखा कि गन्धर्व्व लोग पाण्डवोंके बाणोंमें फंस गये और अर्ज्जुन दिव्य बाण चला रहे हैं; जब गन्धर्वोंने सब दिशाओंको अर्ज्जुनके तीक्ष्ण बाणोंसे पूरित देखा तब प्रगट हो गया। अनन्तर चित्रसेन और अर्ज्जुन मिले और एक दूसरेसे कुशल पूंछने लगे; तब लोगोंने युद्धके वस्त्र उतार लिये और एक हो गए; अनन्तर अर्ज्जुनने चित्रसेनको और चित्रसेनने अर्ज्जुनको पूजा करी।

२४७ अध्याय समाप्त।

दुर्य्योधन बोले, चित्रसेनसे मिलकर शत्रुनाशन अर्ज्जुनने हंसकर वीरोंके समान ऐसे बचन कहे, हे वीर गन्धर्व्वश्रेष्ठ! आप हमारे भाइयोंको छोड़ दीजिये, क्योंकि पाण्डवोंके जीते हुए, इन लोगोंकी ऐसी दुर्दशा नहीं होनी चाहिये, हे कर्ण! महावीर अर्ज्जुनके ऐसे बचन सुन चित्रसेन गन्धर्व्वने वे सब बातें कह सुनाई जो हम लोगोंने चलते समय विचारी थी, चित्रसेन गन्धर्व्वने कहा कि ये तुम लोगोंको दुःखसे व्याकुल देखनेको आये थे, हे कर्ण! जिस समय गन्धर्व्वने यह सब समाचार कहा उस समय मेरी लज्जासे यह दशा हुई कि मैं पृथ्वीमें घुस जाऊं, अनन्तर पाण्डव और गन्धर्व्व युधिष्ठिरके पास आये और हमारी सब बातोंको उनसे निवेदन किया; मैं स्त्रियोंके आगे दीन भावमें शत्रुओंके वशमें हुआ, इससे बढ़के और अधिक दुःख मुझे क्या होगा, जो मैं युधिष्ठिरके आगे बांधकर खड़ा किया गया। जिनका मैंने सदा

निरादर किया था, जिनका मैं सदासे शत्रु हूं, उन्होंहीने मुझ दुर्बुद्धिको शत्रुओंके हाथसे छुड़ाया, उन्होंहीने मुझको जीवदान दिया; हे वीर। यदि मैं उस युद्धमें मर जाता तो बहुत अच्छा होता, परन्तु यह निरादर बहुत बुरा हुआ, यदि मुझको गन्धर्व्व लोग युद्धमें मार डालते, तो पृथ्वीमें मेरा यश बहुत फैलता और इन्द्र लोकमें अक्षय सुख प्राप्त होता, हे पुरुषसिंह! अब हमने जो निश्चय किया है सो तुम सुनो, अब हम इस स्थान पर रहकर व्रत करेंगे, तुम लोग घरको जाओ, हमारे सब भाई लोग भी हस्तिनापुरको जायं; कर्णादिक जो हमारे मित्र और बान्धव हैं, वे सब दुःशासनको अगाड़ी करके हस्तिनापुरको जायं, मैं शत्रुओंसे निरादर पाकर हस्तिनापुरको नहीं जाऊंगा, मैं अपने मित्रोंको प्रसन्न और शत्रुओंको दुःखी करता था सो अब शत्रुओंको सुख और मित्रोंको दुःख देनेवाला हो गया, मैं हस्तिनापुरमें जाकर राजासे क्या कहूंगा? भीष्म द्रोण, कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा, विदुर, सञ्जय, बाल्हीक, भूरिश्रवा तथा और जो वृद्ध ब्राह्मण हैं, एवम श्रेणी तथा मूर्ख और महात्मा लोग जो हैं वे सब हमको देखकर क्या कहेंगे? और मैं उन्हे क्या उत्तर दूंगा? जो हम पहले शत्रुओंके सिर पर रहे हैं और उनकी छातीपर अपना पराक्रम प्रगट किया है, और अब अपनेही दोषसे नष्ट हो गये, अब उन लोगोंसे जाकर हम क्या कहें? दुष्ट लोग। लक्ष्मी, विद्या और ऐश्वर्य्यको पाकर बहुत दिन तक सुख नहीं भोगते, इसीसे हम अभिमानमें भर गए थे, हमने यह बहुत बुरा कर्म्म किया, यह कर्म्म हमारे योग्य नहीं था इसीसे अब हमको महा संशय उत्पन्न हुआ है, इस कर्म्मको हमनेही अपनी मूर्खता और दुर्बुद्धिसे किया है; इस लिये अब यहीं पर अन्न छोड़कर प्राणत्याग कर देंगे, ऐसा कौन बुद्धिमान होगा जो शत्रुओंसे जीवदान पाकर जीता रहे? हम परम अभिमानी और शक्तिसे हीन हैं, इसी लिये शत्रु लोग हमको हंसते हैं, महाबलवान पाण्डव लोगोंने निरादरके सहित हमारी ओर देखा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, ऐसा कहकर महाराज दुर्य्योधनने दुःशासनसे कहा कि हे दुःशासन। हे भारत! तुम हमारे बचनोंको सुनो, अब हम तुम्हारा अभिषेक करते हैं; तुम आजसे राजा हो जाओ तुम कर्ण और शकुनीको अपना सहायक बनाकर समस्त पृथ्वीका पालन करो। हे दुःशासन! तुम अपने भाइयोंका इस प्रकार पालन करना जैसे इन्द्र मरुतोंको पालते हैं, तुम्हारे भाई लोगभी तुम्हारी ऐसीहो सेवा करेंगे जैसे देवता लोग इन्द्रकी, तुम सदा सावधान होकर ब्राह्मणोंकी सेवा करना, बन्धु और मित्रोंको सदा पालना अपनी जातिके ऊपर ऐसीही दृष्टि रखना जैसे विष्णु देवतोंके ऊपर रखते हैं, बूढ़ोंकी अच्छे प्रकार सेवा करना; अब तुम मित्रोंको प्रसन्न करो और शत्रुओंको दुःख देकर पृथ्वीका पालन करो। ऐसा कहकर दुःशासनको अपने हृदयसे लगाया और जानेकी आज्ञा दी, दुर्य्योधनके ऐसे बचन सुन दुःशासन बहुत दीन हुए और आंखोंमें आंसू भरकर रोते हुए हाथ जोड़कर दुर्य्योधनके चरणपर गिर पड़े और बड़े भाईसे बोले, कि आप प्रसन्न हूजिये। ऐसा कहकर पृथ्वीपर गिर गए फिर अपनी आंसुओंसे दुर्य्योधनके चरणोंको धोते हुए दुःशासन बोले, कि जो आप कहते हैं, सो आपके कहनेके अनुसार नहीं होगा; चाहे पृथ्वी फट जाय स्वर्गके टुकड़े हो जायं, सूर्य्य, शीतल और चन्द्रमा उष्ण हो जाय, चाहे वायु अपनी गतिको छोड़ दे, चाहे हिमाचल चलने लगे, चाहे समुद्रका पानी सूख जाय, चाहे अग्नि ठंढी हो जाय, परन्तु मैं

आपके विना राज्य नहीं करूंगा। फिर वार वार दुःशासन कहने लगे कि आप प्रसन्न हूजिये, आपही सौ वर्ष तक हमारे राजा रहिये। ऐसा कह कर दुःशासन ऊंचे स्वरसे रोने और अपने बड़े भाईके चरणोपर गिर पड़े इस प्रकार जहां दुर्य्योधन और दुःशासन रोते थे, तहा दुःखसे भरे कर्ण आए और ऐसा कहने लगे, हे कौरवो! तुम लोग सामान्य पुरुषके समान क्यों रो रहे हो? तुम लोगोंकी क्या मूर्खता प्रगट हुई है? सोच करनेवाले पुरुषका शोक नष्ट नहीं होता, जब सोचसे शोक नष्ट नहीं होता तब सोच करनेसे क्या लाभ है? आपलोग सोचसें क्या सामर्थ देखते है? आप लोग स्थिर हूजिये, शोक करके शत्रुओंको प्रसन्न मत कीजिये, हे राजन्! पाण्डवोंने जो आप लोगोंको शत्रवोंके हाथसे छुड़ाया सो ऐसा करना उनको उचितही था, क्योंकि राज्यमें रहनेवालोंको राजाकी सेवा करनी ही चाहिये, आप उनकी सदा रक्षा करते हैं, इसीसे वे लोग सुखपूर्व्वक वनमें वसते हैं, इस विषयमें आपको साधारण पुरुषोंके समान सोच नहीं करना चाहिये; तुम्हारा व्रत देखकर तुम्हारे भाई लोग दुःख सह रहे हैं। हे राजन्! आपका कल्याण हो उठकर अपने भाइयोंको प्रसन्न करो।

२४८ अध्याय समाप्त।

कर्ण वोले, हे राजन्! आपके साहस छोड़नेका कारण हमको नहीं जान पड़ता, इसमें क्या आश्चर्य हुआ, जो पाण्डवोंने आपको छुड़ा दिया? हे महाराज! राजा लोग तो शत्रुवोंके वशमें होही जाते हैं, तव सेना और प्रजाको उनको छुड़ानाही धर्म्म है, हे शत्रु-नाशन! प्रजाका परम धर्म्म है कि राजाके जानते अथवा विना जाने राजाका प्रियकार्य्य करे; प्रधान पुरुष लोग प्राय. शत्रवोंकी सेनाको घवड़ा देते हैं, फिर आप युद्धोंमें पकड़े जाते हैं, और सेनावाले लोग फिर उनको छुड़ा लेते हैं, जो लोग सेनाके हैं और जो लोग राज्यमें वसते हैं; उन सवको मिलकर राजाका कल्याण करना चाहिये; यदि आपके राज्यमें रहनेवाले पाण्डवोंने अपनी इच्छासे आपको छुडा दिया तो उससें दुःख माननेकी कौनसी बात है? हे राजन्! यह वहुत दुःखकी बात होतो जो राजोंमें श्रेष्ठ आप अपनी सेनाके सहित जाते होते और पाण्डव लोग आपके ऊपर चढाई करते। पाण्डव लोग वड़े शूर वीर वलवान और युद्धमें स्थिर रहनेवाले हैं, वे लोग आपके सहायक हैं. क्योंकि उनके सव रत्नोंका आप भोग करते हैं. देखिये पाण्डव लोग तो वनमें जन्तुवोंके [illegible] मूर्खसे रहते है। हे राजन्! आपका कल्याण हो, अब आप उठनेमें विलम्ब मत करो राज्यमें रहनेवाले पुरुषोंको अवश्यही राजाकी सेवा करनी चाहिये; हे शत्रुनाशन! हे राजेन्द्र! यदि आप हमारे वाक्योंको न मानेंगे तो हम आपके चरणोंकी सेवा करते हुए आपके सङ्गही रहेंगे, हे पुरुषसिंह! हे राजेन्द्र! हम आपके विना नहीं जी सकते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब राजा दुर्य्योधनसे कर्णने ऐसे वचन कहे. तब भी महाराजने उठनेकी इच्छा न करी और अपने मनमें विचारा कि अब हम स्वर्गहोको जायंगे।

२४९ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि वोले, हे राजन् जनमेजय! महाक्रोधी शत्रुनाशन महाराज दुर्य्योधनको इस प्रकार वृत्तिमें वैठे हुए देख सुवलपुत्र शकुनी शान्तिपूर्व्वक कहने लगे. हे कौरव! कर्णने जो कुछ आपसे कहा सो आपने अच्छी प्रकार सुना, आप हमारी उपार्ज्जन करी हुई लक्ष्मीको मूर्खतासे क्यो छोड़ते हैं? हे नरनाथ! [illegible]

जानते हैं कि आप मूर्खतासे अपना प्राण परित्याग करते हैं और हमको यहभी जान पड़ता है, कि आपने बूढ़ोंकी सेवा नहीं करी; जो उपस्थित सुख और दुःखको नहीं रोकता उसका उसी प्रकारसे नाश हो जाता है जैसे मिट्टीका कच्चा बर्त्तन पानीमें गल जाता है। हे राजेन्द्र! भीत, नपुंसक, आलसी, असावधान, व्यसनी, और दुष्ट राजाको प्रजा नहीं मानती आप तो पाण्डवोंका सत्कार करते हैं, इस लिये ऐसे समयमें शोक अनुचित है, क्योंकि पाण्डवोंने अपने धर्म्मके अनुसार हो काम किया है; जहां आपको प्रसन्न होना चाहिये तहां शोक करते हैं, यह बहुत बिपरीत बात है; हे महाराज! आप प्रसन्न हुजिये; शरीरको वृथा नष्ट न कीजिये, अपने पुण्यका स्मरण कीजिये पाण्डवोंका राज्य उनको देकर यश और धर्म्मको प्राप्त कीजिये; ऐसा करनेसे आपको सब कोई कृतज्ञ कहेंगे और पाण्डवोंसे सौभ्रात्र भी बना रहेगा, पाण्डवोंके पितामहका राज्य उनको लौटानेसे जगतमें आपकी कीर्त्ति स्थिर रहेगी।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, शकुनीके ऐसे वचन सुनकर और वीर दुःशासनको चरणोंमें पड़ा हुआ देखकर राजा दुर्योधनने शत्रुनाशन दुःशासनको अपने सुन्दर हाथोंसे उठाकर उनका माथा प्रेमसे संघा, कर्ण और शकुनीके वचन सुनकर राजा दुर्य्योधनको बहुत निराशा हुई और लज्जासे व्याकुल होगए, अनन्तर क्रोधमें भरके कहने लगे कि मुझे धर्म्म धन, सुख, ऐश्वर्य्य और राज्यसे तथा अनेक प्रकारके भोगोंसे कुछ प्रयोजन नहीं है, तुम लोग हमें दुःख मत दो, तुम लोग घरको चले जाओ। मैंने अपनी बुद्धिको स्थिर करके ये निश्चय किया है, कि अब प्राण छोड़ंगा, अब तुम सब लोग हस्तिनापुरको चले, जाओ और हमारे बड़ोंकी सेवा करना। राजाका ऐसा वचन सुन वे लोग शत्रुनाशन दुर्य्योधनसे कहने लगे कि हे राजेन्द्र! हे भारत! आपको छोड़कर हम लोग नगरमें कैसे प्रवेश करेंगे? इस लिये आपकी जो दशा होगी सोही हम सबकी भी होगी।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! महाराज दुर्य्योधन इस प्रकार मन्त्री, भाई, मित्र और बान्धवोंके अनेक प्रकारके बचन सुनकरभी अपने निश्चयसे चलायमान न हुए। धृतराष्ट्रपुत्र राजसिंह महाराज दुर्य्योधनने पृथ्वीमें कुशाका आसन बिछाया और जल आदिसे पवित्र होकर उसपर बैठे। उस समय महाराजने कुशके आसनपर बैठकर काले हरिणका चमड़ा ओढ़ लिया और अपने बचनको अपने वशमें किया, अर्थात् मौन हो गये। उस समय महाराजने केवल स्वर्ग जानेहीका ध्यान किया। अपने मनको वशमें करके बाहरकी सब क्रियाओंको त्याग दिया। महाराजका ऐसा निश्चय देख देवता, दानव, पातालमें रहनेवाले घोर राक्षस और जिनको देवतोंने पहिले जीता था उन सबने अपने पक्षका नाश बिचारकर अथर्ववेदकी रीतिसे यज्ञ करना आरम्भ किया। वेद जाननेवाले ब्राह्मणोंने बृहस्पति और शुक्रके कहे हुए, मन्त्रोंसे अथर्ववेद और उपनिषदोंके अनुसार मन्त्र जपना और यज्ञ करना आरम्भ किया। वेद और वेदाङ्गके जाननेवाले उत्तम ब्रतधारी ब्राह्मण लोग अग्निमें खीर और दूधकी आहुति देने लगे। हे राजन्! इस प्रकार आहुति देनेके समय यज्ञकुण्डसे एक स्त्री उत्पन्न हुई और कहने लगी कि हम क्या करें? तब सब दैत्य प्रसन्न होकर उससे बोले, कि ब्रतमें बैठे हुए धृतराष्ट्रपुत्र राजा दुर्य्योधनको हमारे पास ले आवो; वह स्त्री उनके वचनको स्वीकार करके वहांसे चली और क्षण भरमें राजा दुर्य्योधनके पास पहुंची और दुर्य्योधनको लेकर पुनः दानवोंके पास गई,

दुर्य्योधनको देख सब दानव लोग प्रसन्न हुए और अभिमान सहित कहने लगे।

२५० अध्याय समाप्त।

दानव लोग बोले, हे राजेन्द्र। भरतकुल-श्रेष्ठ दुर्य्योधन। आप शूर वीर और महात्मा पुरुषोंसे युक्त होकरभी अन्न जलका परित्याग क्यों करते हैं? जो पुरुष अपने शरीरका नाश करता है, वह नरकगामी होता है, और पृथ्वीमें उसकी कीर्त्तिभी नष्ट हो जातीहै, आपके समान बुद्धिमान लोग विरुद्ध, पापमय और सर्व्वनाशक कार्य्योंको नहीं करते हैं, हे राजन्। आप इस धर्म्म अर्थ और सुखको नाश करनेवाली बुद्धिको त्याग दीजिये, इससे आपका प्रताप और यश नाश होजायगा और शत्रुवोंको सुख होगा, हे प्रभो। अब आप यथार्थ वार्त्ताको सुनिये हम आपके शरीरको उत्पत्ति-का वर्णन करते हैं। हे राजन्! पहिले, समयमें हम लोगोंने शिवकी तपस्या करी थी, तब आपको प्राप्त किया था, हे राजेन्द्र। आपका जो नाभीके ऊपरका शरीर है, सो वज्र-से वना हुआ है, हे पापरहित। आपका जो नीचेका शरीर है, सो भी अस्त्र और शस्त्रोंसे नहीं कट सकता उसको देवोंने फूलोंसे बनाया है। इसीसे वह स्त्रियोंको बहुत प्यारा है, हे नृपोत्तम! इस प्रकार आपका शरीर ईश्वर और देवोंने बनाया है, हे राजशार्द्दूल। आप देवता हैं मनुष्य नहीं। महा बलवान भगदत्त आदि क्षत्री लोग दिव्य शस्त्रोंके जाननेवाले और महा शूरवीर हैं, वे सब आपके शत्रु-ओंका नाश करेंगे, आप कुछ सन्देह न कीजिये, आपको कुछ भय नहीं है, आपकी सहायताके लिये अनेक दानवोंने पृथ्वीमें अव-तार लिया है, भीष्म, द्रोणाचार्य्य और कृपा-चार्य्यके शरीरमें अनेक दानव लोग प्रवेश करेंगे: वे लोग उनके वशमें होकर लज्जा और मोहको छोड़कर आपके शत्रुओंसे युद्ध करेंगे, हे कुरुकुल श्रेष्ठ। उस युद्धमें कोई पुत्र भाई, पिता, बान्धव, शिष्य, जाति, बालक और बूढ़ोंको नहीं मानेंगे। सब लोग परस्पर घोर युद्ध करेंगे; वे पुरुषसिंह क्षत्री लोग किसीका मोह नहीं करेंगे, और परवश होकर दूरसे युद्ध करेंगे; उस घोर युद्धमें वीर लोग प्रसन्नभी होंगे, और दुःखी भी होंगे, सब लोग प्रारब्धके वशमें होकर विज्ञानसे रहित हो जायंगे, सब लोग परस्पर कहेंगे कि तुम हमसे जीते नहीं वचोगे, वे सब वीर शस्त्र, अस्त्र, धारण करके बलपूर्व्वक अपनी अपनी स्लाघा करेंगे और जगतका नाश करेंगे, महात्मा पाचो पाण्डवभी घोर युद्ध करेंगे, और उन सबका नाश करेंगे, आज कल्ह अनेक दैत्य और राक्षसोंने क्षत्री जातिमें अवतार लिया है, वे लोग अत्यन्त पराक्रम करके आपके शत्रुओंसे युद्ध करगे, हे पार्थिव। वे लोग गदा मूशल और बड़े बड़े शस्त्रोंसे लड़ेंगे। हे वीर। आपके अन्तःकरणमें जो अर्ज्जुनका भय है, हमने उस अर्ज्जुनके मारनेका भी उपाय किया है, जो नरकासुर नामक राक्षस मारा गया था, उसीने अब कर्णका अवतार लिया है, उसो बैरको स्मरण करके अर्ज्जुन और कृष्ण उससे युद्ध करेंगे, समर्थ कर्णभी अपने बलसे अर्ज्जुन-को युद्धमें जीतेगा, कर्ण महारथ और शस्त्र चलानेवालोंमें श्रेष्ठ है, इससे सब शत्रुवोंको जीतेगा, इसीको जानकर वज्रधारी इन्द्र अर्ज्जुनकी रक्षा करनेके लिये कर्णसे कुण्डल कवच लेलेंगे, इसी लिये हमलोगोंने भी संसप्तक नामक सहस्रो दैत्य और राक्षसोंको इस कार्य्यपर नियुक्त किया है, आप विचार न करें वे लोग अर्ज्जुनको युद्धमें मारेंगे, हे राजन्! आप शत्रुओंको मारकर इस पृथ्वीका राज्य करेंगे, हे राजन्! आप कुछ दुःख मत कीजिये, क्योंकि आप दुःखके योग्य नहीं हैं,

हे कौरव! आप यदि मर जायगे, तो हमारा दल नष्ट हो जायगा, हे वीर आप चले जाइये; ऐसी बुद्धि फिर कभी मत करना, आप सदा हमारी गति हैं। इसी प्रकार देवता लोग पाण्डवोंकी मानते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, ऐसा कहकर दानवोंने राजसिंह दुर्य्योधनको अपने हृदयसे लगा कर बहुत समझाया और पुत्रके समान उनका सम्मान किया। हे राजेन्द्र! उन्होंने मीठे वचन कहकर दुर्य्योधनकी बुद्धिको स्थिर कर दिया और जानेकी आज्ञा दई, तथा विजय होनेका आशीर्वाद दिया। फिर उस स्त्रीने महाराज दुर्य्योधनको उसी स्थानको पहुंचा दिया जहां वे अन्न और जलको छोड़ कर बैठे थे। राजाको वहां पर पहुंचाकर और उनकी आज्ञा लेकर वह चली गई। उस स्त्रीके चले जानेके पश्चात राजा दुर्य्योधनने इन सब वार्ताको स्वप्नके समान जाना और अपने मनमें निश्चय किया कि हम पाण्डवोंको युद्धमें जीतेंगे। महाराज दुर्य्योधनने कर्ण और संसप्तकगणोंको पाण्डवोंके मारनेमें समर्थ और अपना मित्र समझा। इस प्रकार धृतराष्ट्रपुत्र दुर्बुद्धि दुर्य्योधनने अपने मनमें दृढ़ आशा करली। दुर्य्योधनने जाना कि कर्ण नरकासुरका अवतार है, यह अवश्य पाण्डवोंको जीतेगा और यह अर्ज्जुनके मारनेके लिये दुष्ट बुद्धि करता रहता है। महावीर संसप्तक राक्षसभी रज और तमगुणका आश्रय करके भीष्म द्रोणाचार्य्य और कृपाचार्य्य आदिकी शरीरमें प्रवेश करेंगे, तब उन सबकी बुद्धि पलट जायगी और वे लोग अर्ज्जुनके मारनेका उपाय करेंगे, वे लोग जैसा हमसे प्रेम करते हैं वैसा पाण्डवोंसे नहीं करते। हे राजन्! दुर्य्योधनने इस सब वृत्तान्तको किसीसे नहीं कहा। प्रातःकाल होतेही विकर्त्तनके पुत्रने हाथ जोड़ कर महाराज दुर्य्योधनको प्रसन्न करके, उनसे हेतुके सहित ऐसे वचन कहे, कि कोई मरकर शत्रुवोंको नहीं जीतता और जीता हुआ पुरुष अनेक सुख देखता है; हे कौरव! मरे हुए पुरुषको सुख और जय कहांसे प्राप्त होंगे? महाबाहु कर्णने राजा दुर्य्योधनको अपने हाथसे पकड़कर कहा कि हे राजन्! यह समय शोक भय और मरनेका नहीं है, अब आप उठिये; क्यों सोते हैं? और क्यों शोच करते हैं? आप तो अपने बलसे शत्रुवोंको दुःख देनेवाले हैं, फिर मरनेकी इच्छा क्यों करते हैं? यदि आपको युद्धमें अर्ज्जुनका बल देखकर कुछ भय हुवा होतो हम आपसे सत्य कहते हैं कि हम युद्धमें अर्ज्जुनको मारेंगे, जब तेरह वर्ष बीत जायंगे, और हम धर्म्मपूर्व्वक शस्त्रोंको ग्रहण करेंगे, तब सब पाण्डवोंको आपके वशमें कर देंगे। कर्णके ऐसे वचन सुन तथा दैत्योंका स्मरणकर और सब लोगोंको प्रणाम करते देख, महाराज दुर्य्योधन उठे। उन्होंने दैत्योंके वचनसे अपने मनमें स्थिर किया कि अब हम पाण्डवोंको अवश्य जीत लेंगे। ऐसा विचार कर राजाने अपनी सेनाको चलनेकी आज्ञा दई। रथ सारथी, घोड़े और पैदलोंसे भरी हुई वह सेना शोभित हुई। श्वेत छत्र, चमर, पताका, रथ, हाथी, घोड़े और पैदलोंसे वह सेना शोभित होने लगी। उस समय सेनाकी ऐसी शोभा बढ़ी जैसे शरद ऋतुमें मेघ रहित आकाशकी। ब्राह्मण लोग उनको आशीर्व्वाद देने लगे। उस समय धृतराष्ट्रपुत्र राजा दुर्य्योधन चक्रवर्त्ती महाराज युधिष्ठिरके समान शोभित हुए। राजा दुर्य्योधन लक्ष्मीसे परम प्रकाशमान थे, स्तुति करनेवाले लोगोंसे माला और प्रणामको ग्रहण करते हुए चले। हे राजेन्द्र! राजा दुर्य्योधनके सङ्ग कर्ण और जुवारी शकुनी चले। राजसिंह दुर्य्योधनके पीछे कुरुकुलश्रेष्ठ दुःशासनादि सब भाई, भूरिश्रवा सोमदत्त, और

दुर्य्योधनको देख सब दानव लोग प्रसन्न हुए और अभिमान सहित करने लगे।

२५० अध्याय समाप्त ।

दानव लोग बोले, हे राजेन्द्र ! भरतकुल-श्रेष्ठ दुर्य्योधन ! आप शूर वीर और महात्मा पुरुषोंसे युक्त होकरभी अन्न जलका परित्याग क्यों करते हैं ? जो पुरुष अपने शरीरका नाश करता है, वह नरकगामी होता है, और पृथ्वीमें उसकी कीर्त्तिभी नष्ट हो जातीहै, आपके समान बुद्धिमान लोग विरुद्ध, पापमय और सर्व्वनाशक कार्य्योंको नहीं करते हैं, हे राजन् ! आप इस धर्म्म अर्थ और सुखको नाश करनेवाली बुद्धिको त्याग दीजिये, इससे आपका प्रताप और यश नाश होजायगा और शत्रुवाको सुख होगा, हे प्रभो ! अब आप यथार्थ वार्त्ताको सुनिये हम आपके शरीरकी उत्पत्ति-का वर्णन करते हैं। हे राजन् ! पहिले, समयमें हम लोगोने शिवकी तपस्या करी थी, तब आपको प्राप्त किया था, हे राजेन्द्र ! आपका जो नाभीके ऊपरका शरीर है, सो वज्र-से बना हुआ है, हे पापरहित ! आपका जो नीचेका शरीर है, सो भी अस्त्र और शस्त्रोंसे नहीं कट सकता उसको देवोंने फूलोंसे बनाया है। इसीसे वह स्त्रियोंको बहुत प्यारा है, हे नृपोत्तम ! इस प्रकार आपका शरीर ईश्वर और देवोंने बनाया है, हे राजशार्दूल ! आप देवता हैं मनुष्य नहीं। महा बलवान भगदत्त आदि क्षत्री लोग दिव्य शस्त्रोंके जाननेवाले और महा शूरवीर हैं, वे सब आपके शत्रु-ओंका नाश करेंगे, आप कुछ सन्देह न कीजिये, आपको कुछ भय नहीं है, आपकी सहायताके लिये अनेक दानवोंने पृथ्वीमें अव-तार लिया है, भीष्म, द्रोणाचार्य्य और कृपा-चार्य्यके शरीरमें अनेक दानव लोग प्रवेश करेंगे; वे लोग उनके वशमें होकर लज्जा और मोहको छोड़कर आपके शत्रुओंसे युद्ध करेंगे, हे कुरुकुल श्रेष्ठ ! उस युद्धमें कोई पुत्र भाई, पिता, बान्धव, शिष्य, जाति, बालक और बूढ़ोंको नहीं मानेंगे। सब लोग परस्पर घोर युद्ध करेंगे, वे पुरुषसिंह क्षत्री लोग किसीका मोह नहीं करेंगे, और परवश होकर दूरसे युद्ध करेंगे; उस घोर युद्धमें वीर लोग प्रसन्नभी होंगे, और दुःखी भी होंगे; सब लोग प्रारब्धके वशमें होकर विज्ञानसे रहित हो जायंगे, सब लोग परस्पर कहेंगे कि तुम हमसे जीते नहीं बचोगे, वे सब वीर शस्त्र अस्त्र, धारण करके बलपूर्व्वक अपनी अपनी स्लाघा करेंगे और जगतका नाश करेंगे, महात्मा पांचो पाण्डवभी घोर युद्ध करेंगे, और उन सबका नाश करेंगे, आज कल्ह अनेक दैत्य और राक्षसोंने क्षत्री जातिमें अवतार लिया है, वे लोग अत्यन्त पराक्रम करके आपके शत्रुओंसे युद्ध करेंगे, हे पार्थिव ! वे लोग गदा मूशल और बड़े बड़े शस्त्रोंसे लड़ेंगे। हे वीर ! आपके अन्तःकरणमें जो अर्ज्जुनका भय है, हमने उस अर्ज्जुनके मारनेका भी उपाय किया है, जो नरकासुर नामक राक्षस मारा गया था, उसीने अब कर्णका अवतार लिया है, उसी बैरको स्मरण करके अर्ज्जुन और कृष्ण उससे युद्ध करेंगे; समर्थ कर्णभी अपने बलसे अर्ज्जुन को युद्धमें जीतेगा, कर्ण महारथ और शस्त्र चलानेवालोंमें श्रेष्ठ है, इससे सब शत्रुवोंको जीतेगा, इसीको जानकर वज्रधारी इन्द्र अर्ज्जुनकी रक्षा करनेके लिये कर्णसे कुण्डल कवच लेलेंगे, इसी लिये हमलोगोंने भी संसप्तक नामक सहस्रो दैत्य और राक्षसोंको इस कार्य्यपर नियुक्त किया है; आप विचार न करें वे लोग अर्ज्जुनको युद्धमें मारेंगे, हे राजन् ! आप शत्रुओंको मारकर इस पृथ्वीका राज्य करेंगे, हे राजन् ! आप कुछ दुःख मत कीजिये, क्योंकि आप दुःखके योग्य नहीं

हे कौरव! आप यदि मर जायगे, तो हमारा बल नष्ट हो जायगा, हे वीर आप चले जाइये, ऐसी बुद्धि फिर कभी मत करना, आप सदा हमारी गति हैं। इसी प्रकार देवता लोग पाण्डवोंको मानते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले. ऐसा कहकर दानवोंने राजसिंह दुर्य्योधनको अपने हृदयसे लगा कर बहुत समझाया और पुत्रके समान उनका सम्मान किया। हे राजेन्द्र! उन्होंने मीठे वचन कहकर दुर्य्योधनकी बुद्धिको स्थिर कर दिया और जानेकी आज्ञा दई, तथा विजय होनेका आशीर्व्वाद दिया। फिर उस स्त्रीने महाराज दुर्य्योधदको उसी स्थानको पहुंचा दिया जहा वे अन्न और जलको छोड़ कर बैठे थे। राजाको वहा पर पहुंचाकर और उनकी आज्ञा लेकर वह चली गई। उस स्त्रीके चले जानेके पश्चात राजा दुर्य्योधनने इन सब वार्ताको स्वप्नके समान जाना और अपने मनमें निश्चय किया कि हम पाण्डवोको युद्धमें जीतेंगे। महाराज दुर्य्योधनने कर्ण और संसप्तकगणको पाण्डवोंके मारनेमें समर्थ और अपना मित्र समझा। इस प्रकार धृतराष्ट्रपुत्र दुर्बुद्धि दुर्य्योधनने अपने मनमें दृढ़ आशा करली। दुर्य्योधनने जाना कि कर्ण नरकासुरका अवतार है, यह अवश्य पाण्डवोंको जीतेगा और यह अर्ज्जुनके मारनेके लिये दुष्ट बुद्धि करता रहता है। महावीर संसप्तक राक्षसभी रज और तमगुणका आश्रय करके भीष्म द्रोणाचार्य्य और कृपाचार्य्य आदिके शरीरमें प्रवेश करेंगे, तब उन सबकी बुद्धि पलट जायगी और वे लोग अर्ज्जुनके मारनेका उपाय करेंगे, वे लोग जैसा हमसे प्रेम करते हैं वैसा पाण्डवोसे नहीं करते। हे राजन् दुर्य्योधनने इस सब वृत्तान्तको किसीसे नहीं कहा। प्रातःकाल होतेही विकर्त्तनके पुत्रने हाथ जोड़ कर महाराज दुर्य्योधनको प्रसन्न करके उनसे हेतुके सहित ऐसे वचन कहे, कि कोई मरकर शत्रुवोंको नहीं जीतता और जीता हुआ पुरुष अनेक सुख देखता है; हे कौरव! मरे हुए पुरुषको सुख और जय कहासे प्राप्त होंगे? महाबाहु कर्णने राजा दुर्य्योधनको अपने हाथसे पकड़कर कहा कि हे राजन्। यह समय शोक भय और मरनेका नहीं है, अब आप उठिये; क्या सोते हैं? और क्यों शोच करते हैं? आप तो अपने बलसे शत्रुवोंको दुःख देनेवाले हैं; फिर मरनेकी इच्छा क्यों करते हैं? यदि आपको युद्धमें अर्ज्जुनका बल देखकर कुछ भय हुवा होता हम आपसे सत्य कहते हैं कि हम युद्धमें अर्ज्जुनको मारेंगे, जब तरह वर्ष बीत जायगे, और हम धर्म्मपूर्व्वक शस्त्रोंको ग्रहण करेंगे, तब सब पाण्डवोंको आपके वशमें कर देंगे। कर्णके ऐसे वचन सुन तथा दैत्योंका स्मरणकर और सब लोगोंको प्रणाम करते देख, महाराज दुर्य्योधन उठे। उन्होंने दैत्योंके वचनसे अपने मनमें स्थिर किया कि अब हम पाण्डवोंको अवश्य जीत लेंगे। ऐसा विचार कर राजाने अपनी सेनाको चलनेकी आज्ञा दई। रथ सारथी, घोड़े और पैदलोंसे भरी हुई वह सेना शोभित हुई। श्वेत छत्र, चमर, पताका, रथ, हाथी, घोड़े और पैदलोंसे वह सेना शोभित होने लगी। उस समय सेनाकी ऐसी शोभा बढ़ी जैसे शरद ऋतुमे मेघ रहित आकाशकी। ब्राह्मण लोग उनको आशीर्व्वाद देने लगे। उस समय धृतराष्ट्रपुत्र राजा दुर्य्योधन चक्रवर्त्ती महाराज युधिष्ठिरके समान शोभित हुए। राजा दुर्य्योधन लक्ष्मीसे परम प्रकाशमान थे, स्तुति करनेवाले लोगोंसे माला और प्रणामको ग्रहण करते हुए चले। हे राजेन्द्र! राजा दुर्य्योधनके सङ्ग कर्ण और जुवारी शकुनी चले। राजासिंह दुर्य्योधनके पीछे कुरुकुलश्रेष्ठ दुःशासनादि सब भाई, भूरिश्रवा सोमदत्त, और

महावाहो! पाण्डवलोग तुम्हारी सोलहवीं कलाकोभी नहीं पा सकते हैं। पुरुषव्याघ्र और अत्यन्त बढ़े हुए राजा लोगभी तुम्हारे समान नहीं हैं। हे महाधनुषधारो। अब तुम धृतराष्ट्र और यशस्विनी गांधारीके दर्शन करो, वह तुम्हारे ऊपर ऐसी कृपा करेंगी जैसे अदिती इन्द्रके ऊपर। हे पृथ्वीनाथ। उस समय हस्तिनापुरमें महा हाहाकार शब्द होने लगा; कोई कर्णकी प्रशंसा और कोई उसकी निन्दा करने लगा, तथा कोई चुपचाप होकर बैठ गया, इस प्रकार शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ कर्णने थोड़ेही समयमें पर्व्वत, वन, आकाश, समुद्र, नीचे ऊंचे देश, गांव, नगर, द्वीप, और जलके सहित सब पृथ्वीके देशोंको जीत लिया, अनन्तर धन लेकर राजा दुर्य्योधनसे मिले। हे शत्रुनाशन जनमेजय! रनिवासमें जाकर वीर कर्णने गांधारीके सहित राजा धृतराष्ट्रके दर्शन किये,और उनको पिताके समान प्रणाम किया। राजानेभी प्रेमसे कर्णको अपने हृदयसे लगाकर विदा किया। उस दिनसे दुर्य्योधन और सुवलपुत्र शकुनीने जान लिया कि कर्ण पाण्डवोंको जीत लेगा।

२५३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! सूतपुत्र शत्रुनाशन कर्णने इस प्रकार पृथ्वीको जीतकर दुर्य्योधनसे कहा हे शत्रुनाशन। हे दुर्य्योधन! हे कौरव। तुम हमारे वचनोंको सुनो और जो हम कहते हैं सो करो। हे नृपोत्तम! इस समय पृथ्वीमें तुम्हारा शत्रु कोई नहीं है, इस लिये तुम इस पृथ्वीका इस प्रकार पालन करो जैसे शत्रुवोंको नाश करके महात्मा इन्द्र पालन करते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कर्णके ऐसे वचन सुन राजा दुर्य्योधनने कर्णसे कहा, हे पुरुषसिंह। जिसके तुम ऐसे सहायक और भक्त हो और जिसके लिये तुम सदा उद्यत रहते हो, उसकी कोई बात दुर्लभ नहीं है। मेरे मनमें जो इच्छा है, उसको तुम सुनो। जबसे मैंने राजा युधिष्ठिर का वृहत् राजसूय यज्ञ देखा है, तबसे मेरीभी इच्छा राजसूय यज्ञ करनेकी हुई है, इस लिये तुम राजसूय यज्ञका प्रवन्ध करो। कर्ण बोले हे नृपोत्तम! इस समय सब राजालोग तुम्हारे वशमें है, अब तुम ब्राह्मणोंको निमन्त्रण भेजो, हे भरत प्रभ! अब तुम विधिपूर्व्वक यज्ञकी सब सामग्री इकट्ठी करो और महायज्ञ राजसूयका आरम्भ करो। हे पृथ्वीनाथ। कर्णके ऐसे वचन सुन राजा दुर्य्योधनने पुरोहितको बुलाकर कहा कि तुम हमारे लिये दक्षिणा और विधिके सहित राजसूय यज्ञका आरम्भ करो। राजाके ऐसे वचन सुन ब्राह्मण श्रेष्ठ पुरोहित कहने लगे, हे कौरवश्रेष्ठ! हे नृपोत्तम! युधिष्ठिरके जीते हुए तुम राजसूय-यज्ञ नहीं कर सकते हो, क्योंकि एक कुलमें दो राजसूय नहीं हो सकती और अभी तुम्हारे पिता धृतराष्ट्रभी जीते हैं, इससेभी तुम राजसूय यज्ञ नहीं कर सकते हो। हे पृथ्वीनाथ! हे राजेन्द्र! आप हमारे वचन सुनिये। राजसूयके समान औरभी यज्ञ है, यदि सब राजालोग तुम्हारे वशमें है तो तुम उसी यज्ञको करो, सब राजा लोग तुमको धन दें। अब एक हल मंगवाइये और उससे यज्ञभूमिको ठीक कराइये और वहांपर उत्तम संस्कार किया हुआ अन्न रखवाइये, वहांपर सावधान होकर सत्पुरुषोंके करने योग्य विष्णुयज्ञका आरम्भ कीजिये; इस यज्ञको। सनातन विष्णुके सिवा और किसीने नहीं किया है, यह महायज्ञोंमें श्रेष्ठ राजसूयके समान है, हे राजेन्द्र! हम आपका कल्याण चाहते हैं, ईश्वर करे यह आपका यज्ञ निर्विघ्न समाप्त हो, ब्राह्मणोंके ऐसे वचन सुन राजा दुर्य्योधनने कर्ण शकुनी और अपने

भाइयोंसे कहा कि हमको ब्राह्मणोंके सब वचन प्रिय लगते हैं, यदि तुम लोगभी स्वीकार करो तो शीघ्र कहो। राजाके वचन सुन सब लोगोंने स्वीकार किया। तब राजाने हल चलानेवाले और चित्रकारोंको यज्ञशाला बनानेकी आज्ञा दी। उन्होंने वचन सुनते ही सब बना दिया।

२५४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। अनन्तर महा बुद्धिमान विदुरने सब चित्रकारोंके सहित राजा दुर्य्योधनसे निवेदन किया कि हे राजन्। हे भारत! यज्ञशाला बन गई और यज्ञ करनेका समयभी आगया; हमने बहुत धन लगाकर सोनेका हलभी बनवा लिया। विदुरके ऐसे वचन सुन, राजा दुर्य्योधनने यज्ञ आरम्भ होनेकी आज्ञा दी। तब बहुत धन और बहुत अन्नके सहित यज्ञ आरम्भ हुआ। उस यज्ञमें राजा दुर्य्योधनने विधिके अनुसार दीक्षा ली। तब राजा धृतराष्ट्र महा यशस्वी विदुर, भीष्म, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, कर्ण,और यशस्विनी गान्धारी बहुत प्रसन्न हुए। [अ]नन्तर उन्होंने शीघ्र जानेवाले दूतोंको राजा [औ]र ब्राह्मणोंके बुलानेको भेजा। वे लोग [शी]घ्र चलनेवाले वाहनोंपर चढकर चल दिये। [उ]नमेंसे एक दूतसे दुःशासनने कहा कि, तुम [शी]घ्र द्वैत वनको जावो और वहां विधिपूर्व्वक [पा]पी पाण्डवोंको न्योता देआवो, तथा वहां [र]हनेवाले ब्राह्मणोंकोभी न्यायके अनुसार निमन्त्रण दीजियो। वह दूत पाण्डवोंके पास गया [औ]र प्रणाम करके कहने लगा, हे महाराजोंमें [श्रे]ष्ठ। कुरुकुलोत्तम राजा दुर्य्योधन अपने [ब]लसे पृथ्वीको जीतकर और बहुत धन प्राप्त [क]रके यज्ञ करते हैं, इस लिये वहां अनेक राजा और ब्राह्मण जा रहे हैं हमको महात्मा दुर्य्योधनने आपके समीप भेजा है; महाराज दुर्य्योधन आपको यज्ञमें निमन्त्रण देते हैं और उनकी इच्छा आपको यज्ञमें बुलानेकी है, इस लिये आप चलकर उस यज्ञको देखिये। इनके वचन सुन राजसिंह राजा युधिष्ठिर बोले; प्रारब्धहीसे राजा दुर्य्योधनने इस उत्तम यज्ञका आरम्भ किया, वह पूर्व्व पुरुषोंकी कीर्त्तिको बढानेवाले हैं, हमलोगोंकी इच्छाभी उस यज्ञमें जानेकी है, परन्तु इस समय किसी प्रकार जा नहीं सकते, क्योंकि हमको तेरह वर्ष बनमें रहकर प्रतिज्ञा पूरी करनी है। महाराजके ऐसे वचन सुन भीम बोले, हे दूत। महाराज धर्म्मराज युधिष्ठिर उस समय हस्तिनापुर जायगे, जब अस्त्र और शस्त्रोंकी अग्निमें दुर्य्योधनकी आहुति दे चुकेंगे, तेरह वर्षके पश्चात् जब युद्ध होगा उसमें क्रोधी कर्णके सङ्ग धृतराष्ट्रके पुत्रोंकी आहुति दी जायगी, तभी हम सब लोग हस्तिनापुरको जायगे, इस यज्ञको महाराज धर्म्मराजही करेंगे, हमारे सब वचन तुम दुर्य्योधनसे कह देना। हे राजन्! और किसी पाण्डवोंने कठोर वचन नहीं कहा। वह दूत वहांसे राजा दुर्य्योधनके पास गया और सब कह सुनाया। अनन्तर अनेक राजा और महाभाग ब्राह्मण लोग हस्तिनापुरमें आये। राजा दुर्य्योधनने उन सबकी पूजा शास्त्रविधि और क्रमके अनुसार करी। राजा लोगभी पूजा पाकर बहुत प्रसन्न हुए। राजा धृतराष्ट्र सब कौरवोंके सहित बहुत प्रसन्न होकर विदुरसे बोले, हे विदुर। जिसमें सब लोगोंको सुख मिले और जिससे सब लोग सन्तुष्ट रहें, तुम वैसाही यत्न करो। धर्म्म जाननेवाले विदुरने उनकी आज्ञाको स्वीकार कर प्रमाणके अनुसार सब वर्णोंकी पूजा करी। विदुरने प्रसन्न होकर भोजन, पीनेकी वस्तु, माला, सुगन्धि, और वस्त्रोंका उचित प्रबन्ध कर दिया। राजा दुर्य्योधनने इस प्रकार कुछ दिन डेरोंमें निवास किया, फिर शास्त्र और क्रमके अनुसार सब राजोंको प्रसन्न करके विदा किया, फिर ब्राह्मणोंको धन देकर उनकोभी

बिदा किया। इस प्रकार यज्ञ समाप्त करके कर्ण, शकुनी और अपने भाइयोंके सहित राजा दुर्योधनने हस्तिनापुरमें प्रवेश किया।

२५५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। जब महाधनुषधारी राजा दुर्योधनने नगरमें प्रवेश किया, तो सूत और नगरवासी उनकी स्तुति करने लगे; उनके ऊपर धानके लावे और चन्दनका चूर्ण बरसने लगा। वहां कोई कहने लगा कि, हे राजन्। यह तुम्हारा यज्ञ प्रारम्भसे निर्विघ्न समाप्त हुआ। कोई कहने लगे, कि यह तुम्हारा यज्ञ युधिष्ठिरकी यज्ञके ऐसा नहीं हुआ, यह युधिष्ठिरके यज्ञके सोलवें भागको भी नहीं पाता है, उनके मित्र कहने लगे, कि यह यज्ञ सब यज्ञसे बढ़कर हुआ है, इसी यज्ञके करनेसे पवित्र होकर ययाति, नहुष, मान्धाता और भरत स्वर्गको गये हैं, इस प्रकारसे अपने मित्रोंके वचन सुनते हुए, राजा दुर्योधनने नगरमें प्रवेश किया। फिर अपने घरमें जाकर माता, पिता, भीष्म, द्रोणाचार्य्य, और बुद्धिमान विदुरको प्रणाम किया, तथा औरभी सब बूढ़ोंको प्रणाम किया। फिर उनके छोटे भाइयोंने राजा दुर्योधनको प्रणाम किया, अनन्तर राजा भाइयोंके सहित मुख्य आसनपर बैठे। उस समय सबके बीचमें खड़े होकर कर्ण राजासे कहने लगे, हे भरतश्रेष्ठ। यह तुम्हारा महायज्ञ प्रारम्भहीसे समाप्त हुआ; अब जिस समय मैं पाण्डवोंको युद्धमें मार चुकूंगा और आप राजसूय यज्ञ करेंगे, तब फिर मैं आपकी पूजा करूंगा। कर्णके वचन सुन महायशस्वी धृतराष्ट्रपुत्र दुर्योधन बोले, हे कर्ण। तुमने सत्य कहा, हे नरश्रेष्ठ। जब दुष्ट पाण्डव लोग युद्धमें मारे जायगे, तब तुम फिर हमारी ऐसी बुद्धि ~। ऐसा कहकर राजा दुर्योधनने कर्णको अपने हृदयसे लगाया, और राजसूय यज्ञका बिचार करने लगे। अनन्तर राजोंमें श्रेष्ठ राजा दुर्योधन कौरवोंसे बोले, हे कौरवो। वह कौनसा दिन होगा जब हम यज्ञमें श्रेष्ठ राजसूय यज्ञको करेंगे, यह कर्म्म पाण्डवोंको मारकर करना होगा। ऐसा सुन कर्ण बोले, हे राजन्। मैं जब तक अर्ज्जुनको युद्धमें नहीं मार लूगा, तब तक पैर नहीं धोऊंगा, मैं सत्य कहता हूं, कि बिना अर्ज्जुनके मारे मांस नहीं खाऊंगा, और मद्यभी नहीं पीऊंगा। मैं आजसे सुरा और मांसरहित व्रत करता हूं, कि मुझसे जो भिक्षुक जो कुछ मांगेंगे सोही दूंगा। जब इस प्रकारसे कर्णने युद्धमें अर्ज्जुनके मारनेकी प्रतिज्ञा करी, तो महारथ धृतराष्ट्रके पुत्र घोर शब्द करने लगे, उन सबने जाना कि हम पाण्डवोंको जीत लेंगे। अनन्तर महाराज दुर्योधनने सभाको विसर्जन किया, जैसे इन्द्र चैत्ररथमें प्रवेश करते हैं, तैसेही दुर्योधननेभी अपने घरमें प्रवेश किया। वे सब लोगभी अपने अपने घरको चले गये। महा धनुषधारी पाण्डवोंने जबसे दूतके वचन सुने थे, तबहीसे परम चिन्ता करने लगे, और उनको किसी समय सुख न प्राप्त हुआ, फिर पाण्डवोंके दूतोंने आकर महाराज युधिष्ठिरसे कर्णकी प्रतिज्ञा कह सुनाई। हे महाराज। कर्णको प्रतिज्ञा सुन उसका अद्भुत पराक्रम विचार तथा उसके अभेद्य कवचकी चिन्ता करके धर्म्मराज बहुत घबड़ाने लगे। अनन्तर सोचते सोचते और क्लेशोंको बिचार महाराजके चित्तको शान्ति न प्राप्त हुई, तब महात्मा धर्म्मराजने अनेक हाथी और मृगोंसे भरे हुए द्वैतवनको छोड़नेकी इच्छा करी। उधर धृतराष्ट्रपुत्र दुर्योधनभी अपने वीर भाइयोंके सहित पृथ्वीका राज करने लगे। भीष्म, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, और युद्ध जीतनेवाले सूतपुत्र कर्णके सङ्ग रहकर राज्यमें सब कार्य्य

करने लगे, महाराज, दुर्य्योधन सब राजोंका प्रिय कार्य्य करने लगे, और अनेक यज्ञ करके ब्राह्मणोंको बहुत दक्षिणा देने लगे। तब वीर दुर्य्योधनने अपने मनमें निश्चय किया कि, धनको देना और भोगनाही इसका फल है। ऐसा विचार अपने भाइयोंका प्रियकार्य्य करने लगे।

२५६ अध्याय समाप्त।

घोषयात्रा पर्व्व समाप्त।

अथ मृग स्वप्नोद्भव पर्व्व प्रारम्भ।

राजा जनमेजय बोले, हे महामुने! दुर्य्योधनको छुड़ाकर महाबलवान पाण्डवोंने उस वनमें बस कर कौन कार्य्य किया, सो आप हमसे कहिये। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, एक दिन कुन्तीपुत्र धर्म्मराज युधिष्ठिर वनमें सो रहे थे, उसी समय रोते हुए हरिन लोग उनके पास आए। उनको रोते हुए हाथ जोड़ खड़े देख राजाधिराज धर्म्मराजने पूछा कि तुम लोग कौन हो? और हमसे क्या कहना चाहते हो? सो कहो। महायशस्वी कुन्तीपुत्र पाण्डवश्रेष्ठ धर्म्मराजके वचन सुन हरिन बोले, हे महाराज। हे भारत। हम लोग हरिण हैं, आपने जबसे इस वनमें वास किया है, तबसे हमारी जाति नष्ट होगई, इसलिये आप दूसरे वनमें निवास कीजिये, आपके भाई लोग शूर, वीर और शस्त्र विद्याके जाननेवाले हैं, उन्होंने वनमें रहनेवाले जन्तुवोंको नाश कर दिया है, हे महामते॥ अब हम लोग बीजमात्र रह गये हैं, इस लिये आप कृपा कीजिये, हे राजेन्द्र युधिष्ठिर! आपकी कृपासे हम फिर भी बढ़ जायंगे। सब प्राणियोंका हित करनेवाले महाराज धर्म्मराजने जब उन हरिनोंको कांपते रते और थोड़ा देखा, तो बहुत दुःखसे भरकर हने लगे कि तुमलोग जैसा कहते हो हम वैसाही रेंगे। ऐसा स्वप्न देख कर राजोंमें श्रेष्ठ धिष्ठिर प्रातःकाल उठे, और अपने भाइयोंको बुलाकर हरिनोंके ऊपर कृपा करके कहने लगे कि हमसे स्वप्नमें हरिनोंने ऐसा ऐसा कहा है, कि हमारा वंश नष्ट होगया अब आप हमारे ऊपर कृपा कीजिये, उन्होंने सत्यही कहा है, हम लोगोंको वनमें रहनेवाले जन्तुवों पर कृपा करनी चाहिये, हम लोगोंको अब एक वर्ष और आठ महीने इस वनमें रहते होगए, तबसे हम इन्हीं हरिणोंको खा-रहे हैं, अब हम लोग फिर मरु देशमें उत्तम काम्यक वनको चलें, वह बन बहुत रमणीय तथा बहुत हरिन और घाससे भरा हुआ है; उसमें जो विन्दुसर नामक तलाव है, उसके तटपर विहार करके हम लोग शेष समयको बिता देंगे। धर्म्मराजकी आज्ञा सुन, धर्म्म जाननेवालोंमें श्रेष्ठ पाण्डव लोग, ब्राह्मण, सङ्ग रहनेवाले इन्द्रसेनादिक सारथी और दूतोंके सहित वहांसे चल दिये, वे लोग पवित्र, शुद्ध और जलसे भरे हुए मार्गोंसे चलते चलते पवित्र और तपस्वियोंके स्थान काम्यक वनमें पहुंचे। जैसे पुण्यात्मा लोग स्वर्गमें प्रवेश करते हैं, तैसे ही भरतकुलश्रेष्ठ पाण्डवोंने, ब्राह्मणोंके सहित काम्यक वनमें प्रवेश किया।

२५७ अध्याय समाप्त।

मृगस्वप्नोद्भव पर्व्व समाप्त।

अथ व्रीहिद्रौणिक पर्व्व आरम्भ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! महात्मा पाण्डवोंको वनमें बसते और दुःख सहते ग्यारह वर्ष बीत गये, सुख करने योग्य पाण्डवोंने फल और मूल खाकर तथा दुःख सहकर इन ग्यारह वर्षोंको व्यतीत किया। महात्मा पाण्डव लोग अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार अपने उचित समयको बिचारकर दुःख सहते रहे। महाबाहु राजऋषि युधिष्ठिर अपने कर्म्मका अपराध और अपने भाइयोंका दुःख देखकर कभी सुखसे नहीं सोते थे। उनको

जुएके समय और उससे उत्पन्न हुए दुःखोंके विचार करनेसे ऐसी पीड़ा होती थी, जैसे हृदयमें बाण लगनेसे। जिस समय महाराजको कर्णके कठोर बचन स्मरण होते थे, उस समय दीन होकर स्वास लेते थे, और क्रोधके विषसे व्याकुल हो जाते थे। अर्जुन, नकुल, सहदेव, यशस्विनी द्रौपदी और महातेजस्वी तथा सबसे अधिक बली भीम युधिष्ठिरके मुखको देखकर दुःख सहते थे। पुरुषसिंह पाण्डव लोग अपने अच्छे समयको आता हुआ देख, अपने समय-को उत्साह और क्रोधसे बिता रहे थे। उसी समय सत्यवतीके पुत्र महा योगी पाण्डवोंके देखनेकी इच्छावाले, व्यासदेव आए। महात्मा व्यासको आते देख कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर खड़े होगये, और उनको विधिपूर्व्वक आसन दिया। उनको बिठलाकर इन्द्रीजित धर्म्मराजभी उनसे कथा सुननेकी इच्छा करके उनके पास बैठ गये। कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरने हाथ जोड़कर व्यासकी स्तुति करी। पाण्डवोंको दुर्व्वल और फलमूल खाते हुए देखकर महार्षि व्यासको बहुत दया आई, और रोकर कहने लगे, हे युधिष्ठिर! हे महाबाहु। हे धर्म्मधारियोंमें श्रेष्ठ। तुम हमारे बचनोंको सुनो, विना तप किये कोई पुरुष लोकमें सुख नहीं पाता है; प्रायः सब लोग सुख और दुःखहोंमें पड़े रहते है। कैसा भी बुद्धिमान क्यो न हो, और कैसा भी विद्वान क्यो न हो कोईभी अनन्त सुखको प्राप्त नहीं होता, इस लिये उदय और अस्तका जाननेवाला पण्डित न सोचता है, और न प्रसन्न होता है; इस लिये पुरुषको उचित है कि, सुख और दुःखके समयको बिता दे। जैसे किसान समयके अनुसार सब काम करता है, तैसेही सबको करना चाहिये! तपसे अधिक और कोई वस्तु नहीं है। तपसे मोक्ष प्राप्त होती है, हे भारत! ऐसी कोई वस्तु नहीं है, जो तपसे न मिल सके। हे युधिष्ठिर! महात्माओंने धर्म्मके ये लक्षण कहे हैं—सत्य, कोमलता, क्रोध न करना, दान दम, शम, किसीके सुखको देखकर दुखी न होना, हिंसा न करना, पवित्रता और इन्द्रियोंको अपने वशमें रखना, हे महाराज। यही धर्म्मके दश लक्षण हैं, इन्हींसे महात्मा लोग पवित्र होते हैं; अधर्मी पापी और मूर्खलोग इन दशोंका आदर नहीं करते है; इसीसे वे लोग नीच योनियोंमें जन्म लेते है और सुखको प्राप्त नहीं होते। इस लोकमें जो कर्म्म करता है, वही परलोकमें प्राप्त होता है; इस लिये शरीरको तप और नियमोंसे युक्त रखना चाहिये, पुरुष को उचित है, कि अच्छा समय प्राप्त होनेपर प्रसन्न होकर, और दुष्टताको त्यागकर प्रणाम और पूजाकरे शक्तिके अनुसार दान करे, सत्य वादीको आयु अधिक होती है, वह अनायासही कोमलताको प्राप्त कर लेता है, क्रोध और दाह रहित पुरुष मोक्षही विरक्त हो जाता है, जितेन्द्रिय और शान्त पुरुषको कभी क्लेश नहीं होता। जिसने अपने मनको वशमें कर लिया है, वह दूसरेकी लक्ष्मीको देखकर दुःखी नहीं होता, जो अन्नका विभाग और दान करता है, वह सदा सुखी रहता है, हिंसा न करनेवाले पुरुषको कभी रोग नहीं होता, जो माननेयोग्य पुरुषको मान्य करता है, वह उत्तम कुलमें उत्पन्न होता है, जितेन्द्रियको कभी कोई दुःख नहीं होता। जो नियमके अनुसार अपनी बुद्धिको अच्छी करता है, वह उसही उत्तम बुद्धिके प्रभावसे अच्छे कुलमे जन्म लेता है, और उसकी बुद्धिभी अच्छी होती है। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे भगवान्। हे महामुने। दान धर्म्म और तपमें कौन अधिक गुणवाला है? और कौन अधिक कठिन है? श्री व्यासदेव बोले, हे तात! पृथ्वीमें दानसे कठिन और कोई धर्म्म नहीं है, क्योंकि पृथ्वीमें पुरुषोंको धनका बहुत लोभ रहता है, और वह धन बहुत कठिनाईसे प्राप्त होता

है। ऐसा पुरुष अपने प्यारे प्राणोंकी आशा छोड़कर समुद्र और जङ्गलोंमें घुस जाते हैं, हे महामते। कोई पुरुष धनको इकट्ठा करके खेती और गोरक्षा करते हैं, कोई धनके लोभमें मार्गोंमें दौड़ते हैं। और उस दान धर्म्ममें, उसी दुःखसे उत्पन्न हुए धनको त्यागना होता है, इससे हमारी बुद्धिमें दानके समान कोई कठिन धर्म्म नहीं है तथा उत्तम समयमें उत्तम देशमें सत्पात्रको दिया जाता है, वही उत्तम दान कहाता है। जो अन्यायसे उत्पन्न हुआ धन दान दिया जाता है, वह देनेवालेको दुःखसे नहीं छुड़ा सकता है। हे युधिष्ठिर! जो थोड़ा-भी दान उत्तम समयमें सुपात्रको दिया जाता है, और उस समय मन शुद्ध होता है, तो वह दान देनेके पश्चात् अनन्त फलको देता है। यहां हम एक पुराना इतिहास तुमसे कहते हैं, जो द्रोणी धान देनेसे मुद्गलको फल मिला था, सो तुम सुनो।

२५८ अध्याय समाप्त।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे भगवन्! महात्मा मुद्गलने किस विधिसे और कौनसे समयमें किसको एक द्रोणी धान दान किया था। जिस महात्माके दानधर्म्मसे साक्षात धर्म्मरूपी भगवान प्रसन्न हुए,हम उनके जन्मको धन्य मानते हैं।

श्रीव्यासदेव बोले, हे राजन्! कुरुक्षेत्रमें एक मुद्गल नामक ब्राह्मण थे। वह जितेन्द्रिय शीलोञ्छ वृत्तिवाले, सत्यवादी, डाह रहित, अतिथिसेवक और क्रियावान थे। उनकी वृत्ति कबूतरके समान थी, अर्थात् अधिक संग्रह नहीं करते थे। महा तपस्वी मुद्गल इष्टी नामक यज्ञ करते थे। वे स्त्री और पुत्रोंके सहित एक पक्षमें भोजन करते थे। वह कबूतरकी वृत्तिसे, एक द्रोणी धान इकट्ठा करते थे, उसीसे छलरहित होकर पूर्णमासी और अमावश्याको यज्ञ करते थे, शेष अतिथि और देवतोंको देते थे, उससे जो बचता था, उसे खाकर अपने शरीरका निर्व्वाह करते थे। महाभाग मुद्गलके आश्रमपर सब पर्वोमें तीन लोकोंके स्वामी साक्षात इन्द्र आते थे, महात्मा मुद्गल मुनि शीलोञ्छ वृत्ति करके सब पर्वोमें यज्ञ समाप्त करके अतिथियोंको अन्न दिया करते थे, और दान करते समय परम प्रसन्न रहते थे। महात्मा मुद्गलका एक द्रोणी धान, अतिथियोंको देखकर बढ़ जाता था, वे दुष्टतासे रहित थे, इसीसे उनके एक द्रोणी अन्नमें सौ पण्डित ब्राह्मण भोजन कर लेते थे। मुनिके त्याग बलसे वह अन्न बढ़ता जाता था। इस प्रकार दान करनेवाले उत्तम वृत्तिधारी महात्मा मुद्गलका नाम सुन कर दिग्वासा दुर्व्वासा उनके पास आए। हे पाण्डव दुर्व्वासाने अद्भुत पागलका वेष बनाया, और अनेक प्रकारकी कठोर वाणी बोलते हुए आए और कहने लगे, हे द्विजोत्तम! हम अन्नकी इच्छा करके तुम्हारे पास आए हैं। महामुनि मुद्गलने कहा, कि आपने बहुत अच्छा किया। ऐसा कहकर दुर्व्वासाको पाद्य, अर्घ, और आचमन दिया। उसके पश्चात भूखे दुर्व्वासाको, अतिथि मुद्गलने अन्न दिया, और व्रतधारी मुद्गलने, उस पागलसे परम श्रद्धा करी। फिर पागलरूपधारी दुर्व्वासाने, वह स्वाद भरा अन्न सब खालिया। भोजन करनेसे जो अन्न बच रहा उसको उस पागलने अपने शरीरमें लगा लिया, और फिर जिधरसे आया था उधरहीको चला गया। इस प्रकार जब बुद्धिमान शीलोञ्छवृति मुद्गलने दूसरे पक्षमें यज्ञ किया तो फिर उसी प्रकारसे दुर्व्वासा आए, और सब अन्न खागये। तब महात्मा मुद्गल भूखेही रहकर, शीलोञ्छवृत्ति करने लगे। इस प्रकार भूखा रहने पर भी कार्य्य करनेसे भी भूख उनको दुःख न दे सकी। महात्मा

मुद्गलको क्रोध, दुष्टता, अभिमान और बुद्धि भ्रम भी न हुआ; स्त्री पुत्र भी भूखे रहने लगे! इस प्रकार मुनिश्रेष्ठ दुर्व्वासाने छेवार मुद्गलका सब अन्न खा लिया; परन्तु शुद्ध मुद्गलके मनमें कुछ भी बिकार न देखा, वरन उनका मन सदा शुद्धही पाया। तब महात्मा दुर्व्वासा प्रसन्न होकर मुद्गलसे बोले, कि इस लोकमें तुम्हारे समान शुद्ध दानी कोई नहीं है, तुमने अपने धैर्य्यसे क्षुधाका धर्म्म और जिह्वाको शक्तिको जीत लिया, यह जिह्वा रसको चाहनेवाली है, इस लिये पुरुषको अवश्यही रसोंकी ओर खींचती है, प्राण भोजनसे स्थिर रहते हैं, मन बड़ा चञ्चल है, मनको एकाग्र करके, इन्द्रियोंको वशमें रखना यही तप कहाता है, परिश्रमसे उत्पन्न किये धनको शुद्ध मनसे देना बहुत कठिन है; तुमने यह सब कर्म्म उचित रीतिसे किया, हम तुमसे बहुत सुखी हुए, तुम्हारे शरीरमें इन्द्रियोंका जीतना, धैर्य्य, अन्नादिक बांटनेकी रीति शम, दम, दया, सत्य, और धर्म्म स्थित है; तुमने अपने कर्म्मोंसे स्वर्गलोकको जीत लिया है; तुम परम गतिको प्राप्त हुए हो, तुम्हारे दानको धन्य है, तुम्हारे दानको देवता प्रशंसा करते हैं, तुम इसी शरीरसे स्वर्गको जाओगे; हे उत्तम व्रतधारी! तुम धन्य हो। जिस समय दुर्वासामुनि, मुद्गलसे ऐसा कह रहे थे, उसी समय विमानपर बैठकर देवतोंका दूत आया। वह विमान दिव्य सुगन्ध घण्टे घुंघुरु हंस और सारससे युक्त था, तथा इच्छा अनुसार चलता था, वह देवदूत मुद्गलसे कहने लगा कि हे महामुने! तुमने अपने कर्म्मोंसे इस विमानको प्राप्त किया है, अब इसपर बैठो तुम परमसिद्धिको प्राप्त हुए हो। तब दूतके ऐसे वचन सुन मुद्गल मुनि बोले, हे देवदूत! हमारी इच्छा है, कि आपसे स्वर्गवासियोंके ।की सुनें, आप कहिये स्वर्गमें रहनेवालोंमें क्या गुण हैं? उनका क्या धर्म्म और क्या निश्चय है? स्वर्गमें क्या सुख और क्या दोष है? हे विप्रो। हम आपको अपना मित्र जानकर ये सब बातें पूछते हैं, क्योंकि कुलीन महात्मा ओंने मित्रको उद्धार करनेवाला कहा है हमारे किये हुए प्रश्नोंका जो सत्य और उचित उत्तर हो सो कहिये, उसको सुनकर जो उचित होगा सो करेंगे।

२५९ अध्याय समाप्त।

देवदूत बोले, हे महर्षे! तुम्हारी बुद्धि बहुत अच्छी है, क्योंकि आप मानने योग्य परम उत्तम स्वर्गके सुखको भी मूर्खके समान विचार रहे हैं, इस लोकसे ऊपर स्वर्गलोक है, उसीको स्वर्लोक भी कहते हैं। उसके ऊपर एक देवतोंका मार्ग है, उसमें सदा ही देवतोंके विमान घूमा करते हैं। हे मुद्गल। उस मार्गमें विना तप और यज्ञ किये कोई नहीं जा सकता है, वहां असत्यवादी और नास्तिकोंको गति नहीं है, उस स्थानपर धर्म्मात्मा मनको वशमें करनेवाले, शान्त, जितेन्द्रिय, साधु, दान, धर्म्म करनेवाले और युद्धमें मरे हुए वीरलोग जाते हैं, वहां शम और दमरूपी धर्म्म करनेवाले उत्तम कर्म्म करनेवाले महात्मा लोग जाते हैं। हे ब्रह्मन्! देवता सा ? विश्वेदेव, महर्षि, यम, धाम, गन्धर्व्व और अप्सरादि देवजातियोंके लोक भिन्न भिन्न हैं। वे सब लोक परम प्रकाशमान सब सुख और तेजोंसे भरे हुए परम सुन्दर हैं। वहां भयानक और अशुभ वस्तु कुछ नहीं है, वहां मेरु पर्व्वत और देवतोंकी अनेक वाटिका हैं, वह मेरु पर्व्वत सोनेका है। उसके ऊपर नन्दन आदि अनेक बाग लगे हैं, उनमें पुण्य कर्म्म करनेवाले महात्मा लोग विहार करते हैं, वहां भूख, प्यास, ग्लानि, शीत और गर्मी कुछ नहीं है, वहां बहुत अच्छी सुगन्धि फैली हैं; वहांका वायु बहुत शीतल है, वहांके शब्द

कानको बहुत प्यारे लगते हैं। स्वर्गमें शोक पश्चात्ताप और दुःख नहीं है। हे मुने ! स्वर्गलोक ऐसा है, उसको महात्मा अपने कर्म्मसे प्राप्त कर सकते हैं, वहांके रहनेवालोंके शरीर कर्म्मके अनुसार अग्निसे होते हैं। वहां कोई माता और पितासे उत्पन्न नहीं होता। वहां किसीको पसीना, दुर्गन्धि, विष्ठा, मूत्र और रज नहीं होते। वहां देवतोंकी दिव्य गन्धवाली और मनोहर माला कभी कुम्हलाती नहीं है. हे ब्राह्मण। स्वर्गवासी लोग दिव्य विमानोंपर बैठकर घूमते हैं। वहां डाह, शोक, थकाई, मोह और दुष्टता किसीको नहीं है। हे महामुने। उस स्वर्गमें महात्मा लोग निवास करते है, हे मुनिराज ! इस प्रकार एक लोकके ऊपर दूसरा लोक है. जो जिससे ऊपर है वह अपने नीचेवाले लोकको सुन्दर और अधिक गुणवान मानता है। हे ब्रह्मन् ! उन सबके आगे ब्राह्मणोंके लोक परम सुन्दर और तेजसे भरे हैं। उन्होंमें अपने शुभ कर्म्मोंसे पवित्र होकर ऋषि लोग जाते हैं। उस स्थानमें रिभ नामक देवता रहते हैं, वे देवतोंके भी देवता हैं, उनके लोकसे आगे लोक कोई नहीं है। देवता भी उनकी पूजा करते हैं. वे सब लोक अपनेही तेजसे प्रकाशमान रहते हैं, उनमें सब सिद्धि प्राप्त होती हैं, उनमें रहनेवालोंको स्त्री, और किसी वस्तुका दुःख नहीं है, वे लोग भी आहुति नहीं देते और न अमृत भोजन करते हैं, उनलोगोंका शरीर दिव्य है, उसको कोई नहीं देख सकता है, उन्हें सुखकी कुछ इच्छा नहीं है, वे लोग देवतोंके देवता और सनातन हैं, फलके अन्तमें महा प्रलय होनेपर उनका शरीर नष्ट नहीं होता उनको जरा, मृत्यु, सुख, प्रीति, दुःख, रोग और कुछ नहीं है। हे सुद्गल। देवता लोग भी उस गतिकी इच्छा करते हैं, वह गति परम दुर्लभ और अगोचर है, ये तेतीस प्रकारके देवता हैं, जिनके लोकोंमें बुद्धिमान ज्ञानी लोग विधिपूर्व्वक अच्छे कर्म्म नियम और दान करके जाते हैं, वही दानियोंकी उत्तम गति तुमको प्राप्त हुई है। अब तुम अपने तपके तेजसे प्रकाशमान होकर उस सुखको भोग करो। हे विप्र। यही स्वर्गादि उत्तम लोकोंके सुख हैं,इसने स्वर्गके गुण तुमसे कहे, आगे स्वर्गके दोषोंका वर्णन करते हैं। हे मुद्गल ! पुरुष स्वर्गमें जाकर कर्म्मोंका जो कुछ फल भोगता है उसके आगे और कुछ नहीं कर सकता, इससे कर्म्मका मूलछेद हो जाता है. कर्म्म नष्ट होनेसे वह मनुष्य पुनः पृथ्वीमें गिरा दिया जाता है; यही स्वर्गका बड़ा भारी दोष है, और असन्तोष, दूसरेकी परम लक्ष्मीको देखकर डाह होना, तथा नीचे स्थानमें जन्म होना ये ही परम दोष हैं। वहांसे जो गिराया जाताहै उसकी वृद्धि नष्ट हो जाती है, और वह रजोगुणसे भर जाता है। जिस समय किसीके स्वर्गसे गिरनेके दिन आते हैं, तब उसकी माला सूखने लगती है; उसी दिनसे उसको अपने गिरनेका भय होजाता है। हे मुद्गल। ये दारुण दुःख ब्रह्मादिक देवतोंको भी होते हैं और इनको छोड़कर स्वर्गमें एक और भी परमश्रेष्ठगुण है कि जो वहांसे गिराया जाता है, उसका जन्म मनुष्यके यहां होता है, मनुष्यमेंभी वह महाभागी और सुखी होता है; यदि वहां उसने अच्छा कर्म्म न किया तो परम नीचताको प्राप्त होता है। हे ब्राह्मण ! यह कर्म्म-भूमि इसीको फलभूमि भी कहते हैं।

मुद्गल बोले, हे देवदूत तुमने स्वर्ग लोकके बहुत दोष वर्णन किया, अब जो निर्दोषलोक हों, उसका वर्णन हमसे कीजिये। देवदूत बोले हे ब्राह्मण। ब्रह्मलोकसे ऊपर विष्णुपद है, वह शुद्ध सनातन और ज्योतिस्वरूप है उसको परब्रह्म कहतेहै वहां कोई विषयी, पाखण्डी, लोभी, क्रोधी, मोह और द्रोहसे भरा हुआ

पुरुष नहीं जाता है। परन्तु समता, अहंकार और वैररहित महात्मा जाते हैं। हमने तुमसे यह सब कहा। हे साधो। अब तुम हमसे जो पूछोगे सो हम कृपा करके कहेंगे; अब तुम चलनेमें विलम्ब मत करो।

श्रीव्यासदेव बोले, देवदूतके ऐसे वचन सुन मुद्गल मुनि अपनी बुद्धिसे विचार करने लगे, और विचार कर देवदूतसे बोले, हे देवदूत। हम तुमको प्रणाम करते हैं, तुम्हारी जहां इच्छा हो वहांको चले जाओ, हम ऐसे दोषोंसे भरे हुए स्वर्गमें जाना नहीं चाहते, हम ऐसे सुखसे सम्बन्ध नहीं रखते जहांसे गिरनेके समय महा दुःख और घोर पश्चात्ताप हो, ऐसे स्थानमें नहीं जाना चाहिये, हम अपने वनहीको स्वर्ग समझते हैं, यहां अनेक देवता घूमनेको आते हैं, जहां जाकर कोई सोच और व्यथा नहीं होती है, जहांसे कभी कोई नहीं गिरता हम उसी स्थानमें जाना चाहते हैं। ऐसा कहकर मुद्गलने देवदूतको बिदा किया और आप धर्म्मपूर्व्वक शीलोञ्छ वृत्ति करने लगे। फिर स्तुति, निन्दा ढेला काठ, पत्थर और सोनेको समान ही समझने लगे। इस प्रकार ज्ञान ध्यान और योगसे पवित्र होकर कुछ कालमें पवित्रबुद्धि प्राप्त करिके सनातन मोक्षको प्राप्त हुए। हे कौन्तेय। अब आपभी शोकको परित्याग कीजिये, आप राज्यसे भ्रष्ट हुए हैं, परन्तु फिर उसी राज्यको तपके बलसे पावेंगे। पुरुषको सुखके पश्चात् दुःख और दुःखके पश्चात् सुख हुआ ही करता है, ये दोनों इस प्रकार घूमते हैं जैसे रथके पहिये। हे महापराक्रमी! तेरह वर्षके पश्चात् तुम अपने वंशके राज्यको प्राप्त करोगे, अब तुम अपने मनके दुःखको दूर करो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भगवान बुद्धिमान व्यासदेव युधिष्ठिरसे ऐसा कहकर तप करनेकी इच्छासे फिर अपने आश्रमको चले गये।

२६० अध्याय समाप्त।

आगे द्रौपदी हरण पर्व्व लिखते हैं।

राजा जनमेजय बोले, हे द्विजोत्तम। जब महात्मा पाण्डव लोग इस प्रकार वनमें रहकर मुनियोंसे विचित्र कथा सुनते हुए विहार करते थे, और सूर्य्यकी दी हुई अक्षयटवीके बने हुए अन्नसे द्रौपदीके खानेतक ब्राह्मण और अतिथियोंको तृप्त करते थे, तथा वनमें उत्प हुए अनेक प्रकारके हरिनोंका मांस खाकर रहते थे। तब दुरात्मा दुर्य्योधन आदि धृत राष्ट्रके पुत्रोंने उनके सङ्ग कैसा वर्त्ताव किया हे वैशम्पायन। हे भगवान्। हे महामुने आप इन सब कथाओंको हमसे कहिये ह जानते हैं, कि धृतराष्ट्रके पुत्र, शकुनी, दुःशास और कर्णके वचनोंमें रहते थे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज। ज दुर्य्योधनने पाण्डवोंकी वृत्ति नगरवासियों समान सुनी, तो उनकी ओरसे अपने चित्त पाप धारण किया। उसी प्रकार कपटी दुरात्म कर्ण और दुःशासनादिकोंके सङ्ग अनेक प्रकार दुष्टसम्मती करने लगा। उसी समय महा तप महायशस्वी धर्म्मात्मा दुर्व्वासा मुनि अपने द सहस्र शिष्योंके सहित आए। महा क्रो दुर्व्वासाको देख दुर्य्योधन बहुत नम्र भा अपने भाइयोंके सहित खड़े हो गये, और उन अतिथिके समान सत्कार किया। राजा दुर्य्यो आपही सेवकके समान उनकी सेवा करने लगे दुर्य्योधन उनके शापसे डरकर दिन रात आल रहित होकर दुर्व्वासा मुनिका सत्कार क रहे। कभी दुर्व्वासा मुनि कहते थे, कि नराधिप। हमको भूख लगी है, खानेका दे ऐसा कहकर स्नान करनेको जाते थे, और बहुत विलम्ब करके लौटते थे, आकर रा कह देते थे कि हमको भूख नहीं है, हम न खायंगे। कभी अकस्मात कहते थे, कि हम शीघ्र भोजन कराओ। कभी आधी रातको उठ भोजन बनवाकर नहीं खाते थे, और इस

निन्दा करने लगते थे। इस प्रकार व्यवहार करनेवाले दुर्व्वासा मुनिकी सेवा करनेमें राजा दुर्य्योधनने कुछ छल और क्रोध न किया। तब दुर्व्वासा मुनि प्रसन्न होकर कहने लगे, हे भारत! तुम्हारा कल्याण हो, जगतमें कोई ऐसी धर्म्मकी वस्तु नहीं है, जो हमारे प्रसन्न होनेसे न मिल सके, अब जो तुम्हारी इच्छा हो सो हमसे मांगो हम तुम्हें देंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महाऋषि जितेन्द्रित दुर्व्वासा मुनिके ऐसे वचन सुन राजा दुर्य्योधनने जाना कि हमारा जन्म फिर हुआ। उन्होंने पहिलेही कर्ण और दुःशासनसे, यह सम्मति कर रखी थी, कि दुर्व्वासा मुनिसे यह वरदान मांगेंगे, अनन्तर राजा दुर्य्योधन बहुत सन्न होकर शिष्य सहित दुर्व्वासासे कहने ांगे, हे ब्रह्मन्! जिस प्रकार आप हमारे यहां ातिथि होकर आये हैं, तैसेही हमारे भाई हाराज युधिष्ठिरके यहां जाइये; वे हमारे ुलमें बड़े, श्रेष्ठ, धर्म्मात्मा, गुणवान और शील-ान हैं, आज कल भाइयोंके सहित वनमें ास करते हैं। उनके यहां आप उस समय ाइयेगा, जब यशस्विनी राजपत्नी सुन्दरी ्रौपदी ब्राह्मण और अपने पतियोंको भोजन करा चुकी हों, और आपभी खाकर सुखसे ैठी हों। दुर्व्वासा मुनिने दुर्य्योधनसे कहा, कि तुम्हारी प्रीतिसे हम ऐसाही करेंगे। ऐसा कहकर दुर्व्वासा अपने स्थानको चले गये, और राजा दुर्य्योधनने अपने शरीरको कृतार्थ माना। दुर्य्योधनने प्रसन्न होकर कर्णका हाथ पकड़ लिया, कर्णभी बहुत प्रसन्न होकर भाइयोंके सहित राजासे बोले, हे कौरव! प्रारब्धसे तुम्हारे सब कार्य्य सिद्धि होते हैं, प्रारब्धसे तुम्हारी वृद्धि होती है, प्रारब्धसे तुम्हारे शत्रु-लोग घोर दुःख सागरमें पड़े हैं, अब पाण्डव लोग दुर्व्वासाकी क्रोधरूपी अग्निमें जल जायगे, वे अपने किये हुए पापोंसे अपार अन्धकारमें पड़ेंगे, श्रीवैशम्पायन मुनि बोले हे राजन्! इस प्रकार वे दुर्य्योधनादिक छली लोग बहुत प्रसन्न हुए, और हंसते हंसते अपने घरको चले गये।

२६१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर कभी सुखसे बैठे हुए पाण्डवोंके पास दश सहस्र शिष्योंके सहित, दुर्व्वासा मुनि आए। उस समय द्रौपदीभी खा चुकी थी, दुर्व्वासाको आते देख श्रीमान् महाराज युधिष्ठिर भाइयों सहित खड़े होगए, और हाथ जोड़कर उत्तम आसन पर बिठलाया। फिर उनकी यथायोग्य पूजा करके भोजन करनेको कहा, महाराज बोले, हे भगवन्! आप नित्यकर्म्म करके शीघ्र लौट आइये। पापरहित दुर्व्वासा मुनिभी शिष्योंके सहित स्नान करनेको चले गये, और मनमें विचारने लगे, कि ये हमको शिष्योंके सहित कहांसे भोजन करावेंगे। जब मुनि लोग सावधान होकर स्नान करने लगे उसी समय स्त्रियोंमें श्रेष्ठ पतिव्रता द्रौपदी उनके लिये अन्नका सोच करने लगी परन्तु कहीं अन्नका ठीक न देखा। तब द्रौपदीने अपने मनसे कष्ट-विनाशक कृष्णका ध्यान किया। द्रौपदी बोली हे कृष्ण! हे देवकीनन्दन! हे अविनाशी! हे वासुदेव! हे जगन्नाथ! हे शरणागत दुःख विनाशन! हे जगतके आत्मा! हे जगतके कर्त्ता! हे जगतके नाशक! हे नाथ! हे शरणागत पालक! हे गोपाल! हे प्रजापाल! हे परब्रह्म! हे चित्तकी वृत्तियोंकी चलानेवाले! मैं तुमको प्रणाम करती हूं, हे श्रेष्ठ! हे वरदानदेनेवाले! हे अनन्त! तुम अशरणोंके शरण देनेवाले हो, हे पुराणपुरुष! तुमको प्राण, मन और इन्द्री नहीं जान सकते हैं, तुम जगतके स्वामी हो, तुमहीको परमस्वामी कहते हैं, तुम शरणागतको रक्षा करते हो,

इस लिये हम तुम्हारी शरण हैं; तुम हमारी रक्षा करो; तुम नीले कमलके समान वरणवाले, लाल कमलके समान नेत्रवाले, पीताम्बर और कौस्तुभ धारी हो, तुम्ही जगतके आदि और अन्त हो, तुम्हीको परायण कहते है; तुम्ही ज्योतिः स्वरूप परब्रह्म हो, आप जगतकी आत्मा हो, तुम्हारे सब ओर सुख हैं तुम्ही सब जगतके बीज हो, तुमही सब सम्पदाके स्थान हो, हे देवेश! जो पुरुष तुमको अपना स्वामी मानता है उसको किसी आपत्तिमें भय नहीं होता, जैसे पहिले तुमने मुझको सभामें दुःशासनसे छुड़ाया था, तैसेही इस कष्टसे भी उद्धार करो। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जगतके स्वामी भक्तवत्सल देवतोंके देवता कृष्णने द्रौपदीकी ऐसी स्तुति सुन उनके महाकष्टको जान लिया। अपने वास सेजपर बैठी हुई रुक्मिणीको छोड़ द्वारिकासे श्रीकृष्ण दौड़े और बहुत शीघ्र द्रौपदीके पास आगए। श्रीकृष्णको देखकर द्रौपदीने प्रसन्न होकर प्रणाम किया और दुर्व्वासा मुनिके आनेका सब समाचार कह सुनाया। तब कृष्णने कहा, कि हे द्रौपदी! मैं भूखसे अत्यन्त व्याकुल हो रहा हूं, हमको शीघ्र भोजन दो। तब द्रौपदीने लज्जित होकर कहा कि सूर्य्यकी दी हुई बटुईमें मेरे भोजन करने तक अन्न रहता है, हे देव! अब मैं भोजन कर चुकी हूं, इससे कुछ नहीं है। तब कमलनेत्र कृष्णने कहा, हे द्रौपदी! मुझे बहुत भूख लगी है, इससे विलम्ब करनेका समय नहीं है, शीघ्र बटुई लाकर हमें दिखा दो। तब द्रौपदीने बटुई लाकर दिखादी। कृष्णने उसमें एक चावल लगा हुआ देखकर खालिया और द्रौपदीसे कहा, कि इस चावलसे जगतके आत्मा यज्ञका भोग करने वाले परमेश्वर प्रसन्न हों। पश्चात क्लेश विनाशक महाबाहु कृष्णने सहदेवसे कहा, कि तुम शीघ्र जाओ और सब मुनियोंको भोजनके लिये शीघ्र बुलाओ। तब महायशस्वी सहदेव शीघ्र मुनियोंको बुलाने गये। दुर्व्वासा आदिक मुनिसी स्नान और सन्ध्या कर चुके थे, परन्तु सब मुनि अत्यन्त तृप्त होगये थे और डकार आने लगी थीं। तब दुर्व्वासा मुनिको देखकर सब शिष्य लोग कहने लगे, हे विप्रर्षे! आप राजाके यहां भोजन बनवाकर स्नान करनेको आये हैं और अब कण्ठ तक पेट भर गया। अब वहां जाकर हम कैसे खायेंगे? हम राजाके यहां जाकर उनसे क्या कहेंगे? और क्या करेंगे? दुर्व्वासा मुनि बोले, कि राजर्षि युधिष्ठिरके यहां हम लोगोंने वृथाही भोजन बनवाया, इससे हमने उनका महा अपराध किया है, ऐसा न हो कि वे लोग हमको अपने क्रोध भरे नेत्रोंसे भस्म कर दें, मैं बुद्धिमान राजऋषि अम्बरीषके प्रभावको स्मरण करके हरिभक्तोंसे बहुत डरता हूं, सब पाण्डव लोग महात्मा, धार्म्मिक, शूर, विद्वान, यती और तपस्वी है; वे लोग उत्तम आचार करनेवाले और कृष्णके भक्त हैं, इस लिये हम लोगोंको इस प्रकार भस्म कर सकते है जैसे रूईके ढेरको अग्नि। इस लिये उन लोगोंको विना पूछेही भाग जाना चाहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अपने गुरु दुर्व्वासा मुनिके ऐसे वचन सुन, पाण्डवोंसे डरकर सब मुनि लोग दशों दिशाओंको भाग गये, सहदेवभी उनको नदीपर न पाकर उस वनमें चारों ओर ढूंढ़ने लगे। तब वहांके रहनेवाले मुनियोंने सहदेवसे कह दिया, कि वे सब लोग भाग गये। अनन्तर सहदेवने यह सब वृत्तान्त महाराजयुधिष्ठिरसे निवेदन कर दिया, तब महात्मा पाण्डव लोग कुछ समय तक दुर्व्वासाके लौटनेका मार्ग देखते रहे, अकस्मात आधी रातको आकर दुर्व्वासा हम को छलेंगे, इस प्रारब्धके दुःखसे हम

कैसे पार होंगे। जहां इस प्रकारसे पाण्डव लोग विचार कर रहे थे, और बार बार ऊंचे खास ले रहे थे, तहां श्रीकृष्ण प्रत्यक्ष होकर आए और कहने लगे, कि हे पाण्डवो। महाक्रोधी दुर्व्वासा मुनि तुम लोगोंको दुःख देंगे, ऐसा विचार कर और द्रौपदीका ध्यान देखकर मै शीघ्र तुम्हारे पास आता हूं; दुर्व्वासा मुनिसे तुम लोगोंको किञ्चित भय नहीं है, वे तुम्हारे डरसे पहिलेही भाग गये हैं। जो लोग सदा धर्म्म करते हैं उनको कभी दुःख नहीं होता, तुम्हारा कल्याण हो। हम द्वारिकाको जाते है, इस लिये आज्ञा दो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, श्रीकृष्णके वचन सुन द्रौपदी सहित सब पाण्डव लोग प्रसन्न हुए और आनन्दपूर्व्वक कृष्णसे कहने लगे, हे गोविन्द। हम दुःखसागरमें डूबते थे, तुमने नावके समान हमारा उद्धार किया, तुम्हारा कल्याण हो द्वारिकाको जाओ। पाण्डवोंकी ऐसी आज्ञाको सुन श्रीकृष्ण द्वारिकाको चले गये। महाभाग पाण्डव लोग भी प्रसन्नता पूर्व्वक वनोंको देखते हुए विहार करने लगे। हे राजन्। तुमने जो पूछा था सो हमने कहा। इस प्रकारसे दुष्ट धृतराष्ट्रपुत्र वनवासी पाण्डवोंके सङ्ग दुर्व्यवहार किया करते थे।

२६२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इस प्रकार महारथ भरतकुल श्रेष्ठ पाण्डव लोग उस अनेक हरिनोंसे भरे हुए काम्यक वनमें देवतोंके समान विहार करने लगे। सब ऋतुओंमें उत्पन्न हुए अनेक फूलोंको देखते हुए और अनेक वनोंमें रहते हुए विहार करने लगे। इन्द्रके समान पाण्डव लोग सदाही वनमें आखेट करते थे। एक दिन वे सब पुरुषसिंह शत्रुनाशन पाण्डव लोग चारो दिशाको आखेट खेलने गये, और द्रौपदीको तृणविन्दुकी आज्ञासे आश्रमहीमें छोड़ गये थे, और महा तेजस्वी पुरोहित धौम्य मुनि भी वहीं रह गये थे। इसी समय महायशस्वी वृद्धक्षत्रके पुत्र सिन्धु देशके राजा विवाह करनेकी इच्छासे शाल्व-देशको जाते थे। उनके सङ्ग राजाओंके योग्य सेना सेवक और अनेक राजपुत्रभी थे, और मार्गमें काम्यक वनमें ठहर गये। उस निर्जन वनमें उन्होंने पाण्डवोंकी प्यारी स्त्री द्रौपदीको अपने द्वारपर खड़ी हुई देखा; द्रौपदी अपने तेजसे प्रकाशमान हो रही थी उसके तेजसे वह वन ऐसा प्रकाशमान हो रहा था, जैसे नीला मेघ विजुलीसे। उनकी सेनाके सब लोग हाथ जोड़कर द्रौपदीको देखने लगे और कहने लगे, क्या यह कोई अप्सरा है? या देवकन्या है? अथवा देवतोंकी बनाई हुई कोई माया है। द्रौपदीको देखकर सिन्धु देशके राजा वृद्धक्षत्रके पुत्र जयद्रथ विस्मित हो गये, और उनके चित्तमें दुष्टता आगई। अनन्तर जयद्रथने कामसे पीड़ित होकर राजा कोटिकास्यसे कहा, कि यह सुन्दरी किसकी स्त्री है? हमें जान पड़ता है, कि यह मानुषी है, यदि यह स्त्री हमको मिले तो विवाहसे कुछ प्रयोजन नहीं है, मैं इसीको लेकर अपने घरको चला जाऊंगा, हे सौम्य। तुम इसके पास जाकर पूछो कि तुम कौन हो? कहांकी हो? और इस कांटोंसे भरे हुए वनमें क्यों आई हो? यदि यह लोकसुन्दरी उत्तम मुख दांत और पतली कमरवाली मेरे वशमें हो जाय तो मैं कृतकृत्य हो जाऊंगा, हे कोटिकास्य। तुम इसके पास जाओ और पूछो कि तुम्हारा स्वामी कौन है। जयद्रथके ऐसे वचन सुन कुण्डलधारी कोटिकास्य अपने रथसे उतरा और द्रौपदीके पास जाकर इस प्रकार पूछने लगा, जैसे कोई सियार सिंहकी स्त्रीसे पूछता है।

२६३ अध्याय समाप्त।

कोटिकाख्य बोला, हे सुन्दर भौंह वाली। तू कौन है? और इस कदम्बकी शाखाको पकड़े यहां क्यों खड़ी है? तू इस वनमें ऐसी प्रकाशमान है, जैसे रात्रिमें पवनसे कम्पित होकर अग्निकी ज्वाला प्रकाशित होती है, तुम अपने रूपसे अत्यन्त प्रकाशमान हो. क्या इस बनमें तुम कुछभी नहीं डरती हो? तुम कोई देवी हो? कि यक्षी हो? कि दानवी हो? अथवा अप्सरा हो? वा किसी उत्तम दैत्यकी स्त्री हो? अथवा साक्षात सर्पराजकी पुत्री हो? या इस बनकी देवता हो? अथवा किसी निशाचरकी स्त्री हो? या राजा, वरुन, यम, कुवेर, चन्द्रमा, धाता, विधाता, सूर्य्य, इन्द्र, आदि किसीकी स्त्री हो? हम तुमको नहीं जानते, न तुम्हारे स्वामीको जानते है, इसीसे यह प्रश्न करते है, हे भद्रे! हम तुम्हारे मानको बढ़ाकर तुम्हारे नाथको और तुम्हारी जन्मभूमिको जानना चाहते है, तुम हमसे अपने पति बन्धु और कुलका वर्णन करो और यह भी कहो कि तुम इस वनमें क्या करती हो? मैं राजा सुरथका पुत्र हूं, मेरा नाम कोटिकाख्य है, ये जो सोनेके रथमें अग्निके समान तेजस्वी पुरुष बैठा है, जिसके नेत्र कमलके समान सुन्दर है, इस वीरका नाम क्षेमङ्कर है, और यह त्रिगर्त्त देशका राजा है, उसके आगे जो महा धनुषधारी राजपुत्र बैठा है, जिसके नेत्र बहुत बड़े हैं, जो तुम्हारी ओर देख रहा है, वह कुलिन्द देशके राजाका पुत्र है, यह सदाही पर्व्वतपर निवास करता है, यह जो तड़ागके समीप श्याम-सुन्दर युवा पुरुष खड़ा है, सो अयोध्याके राजा सुभवका पुत्र है, हे सुन्दरी! यह सब शत्रुओंका नाश करता है, हे सुभगे! जिसके रथके पीछे बारह सौवार देशके राजपुत्र जाते हैं, जो लाल घोड़ोंके रथोंपर जलती हुई अग्निके समान बैठे है, उनके नाम ये हैं, अङ्गारक, पुञ्जर, गुप्तक, शत्रुञ्जय, सञ्जय सुप्र वृद्द, भयङ्कर, भमर, रवि, सूर, प्रतप, और कुहन; जिसके पीछे छः सहस्र रथी अनेक हाथी घोड़े और पदाती जाते हैं, वही सौवीर देशका राजा जयद्रथ है, ये जो उनके पीछे महाबलवान युवा पुरुष जाते हैं, इनके नाम बलाहक और अनीकबिदारणादि हैं, ये सब राजा जयद्रथके भाई हैं, इनसे रक्षित होकर राजा जयद्रथ इस प्रकार विराजमान हो रहे हैं, कि जैसे मरुतगणसे इन्द्र, हे सुकेशी! हम तुमको नहीं जानते हैं, इससे कहो कि तुम किसको बेटी हो?

२६४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन सुनि बोले, शिवीवंश श्रेष्ठ कोटिकाख्यके ऐसे बचन सुन राजपुत्री द्रौपदीने कदम्बकी शाखा छोड़ दी, और अपने वस्त्रको समाल तथा उस मूर्खको ओर देखकर बोली, हे नरेन्द्रपुत्र! मैं तुमको जानती हूं, मेरे समान कोई स्त्री तुझसे बात नहीं कर सकती है, यहा कोई स्त्री वा पुरुष नहीं है जो तेरे वचनका उत्तर दे, मै इस समय यहा अकेली हूं, इस लिये तेरे बचनका उत्तर नहीं दूंगी, क्योंकि धर्म्म शास्त्रमें लिखा है, कि अकेली स्त्री किसीसे बात न करे, परन्तु मैं तुझको जानती हूं, तू राजा सुरथका पुत्र है, और तेरा नाम कोटिकाख्य है, इस लिये तुझसे अपने बन्धु और प्रसिद्ध बंशका वर्णन करती हूं, हे शैब्य! मैं राजा द्रुपदकी पुत्री हूं, मेरा नाम द्रौपदी है; प्रसिद्ध खाण्डवप्रस्थके राजा युधिष्ठिर भीमसेन अर्ज्जुन, नकुल और वीर सहदेव मेरे पति हैं; वे मुझको यहा बिठलाकर चारो दिशाओंको आखेट करने गये हैं, पूर्व्वको ओर महाराज, दक्षिणको भीमसेन, पश्चिमको अर्ज्जुन, और उत्तरको नकुल तथा सहदेव गये हैं, उन पाचों महारथके आनेका समय भी यही है, इस लिये

तुम लोग अपने रथोंसे उतरकर यहीं ठहरो ; महाराज धर्मराज अतिथियोंका वहुत सत्कार करते हैं, वे तुमको देखकर वहुत प्रसन्न होंगे। चन्द्रमुखी द्रौपदी ऐसा कहकर अपनी सुन्दर पर्णकुटीमें चली गई।

२६५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। द्रौपदीके ऐसे वचन सुन कोटिकाख्य जयद्रथके पास गया और सव क्षत्रियोंके बीचमें उसके वचन कह सुनाया। तव जयद्रथने कोटिकाख्यसे कहा कि जव यह स्त्री कुछ वात करती है, तो मेरा मन उसही पर चला जाता है, यह सव स्त्रियोंमें मुख्य है. तुम इसके पाससे कैसे चले आये,. हे महावाहो। हम तुमसे सत्य कहते हैं, कि इसको देखकर और सव स्त्रिया मुझको दासी सी दिखाई देती है, इसने मेरे मनको अपने वशमें कर लिया है; तुम हमसे कहो कि यह मानुषी है? कोटिकाख्य बोला, हे राजन्। यह यशस्विनी द्रौपदी है, यह पांचो पाण्डवोंकी पतिव्रता प्यारी स्त्री है, पांचो पाण्डव इसको मानते हैं, सो तुम इससे मैत्री करके अपने देशको चलो। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कोटिकाख्यके ऐसे वचन सुनकर जयद्रथ बोले, कि हम द्रौपदीको देखेंगे। ऐसा कहकर दुष्ट जयद्रथ पवित्र कुटीमें इस प्रकार गया, जैसे सिंहके घरमें सियार जाता है। पाच पुरुष जयद्रथके सङ्ग गये; वे पांच उसके भाई थे। जयद्रथ वहा जाकर द्रौपदीसे बोला, हे सुन्दरसुखवाली। तू कुशलसे हो? तेरे पाचो पति तो अच्छे हैं न? जिनकोतू कुशल चाहती है वे अच्छे हैं न? द्रौपदी बोली हे राजेन्द्र। तुम अच्छेहो? तुम्हारे राज्यमें कोषमें और सेनामें तो कुशल है? कहो तुम सौवीर सिंधु और शिविदेशका धर्म्मसे राज्य करते हो? हमने सुना है, कि तुमने औरभी वहुतसे देशोंकोअपने राज्यमें मिलया है, श्रीमान महाराज युधिष्ठिर अपने भाइयोंके सहित कुशलसे हैं, हे राजपुत्र! इस जलसे पैर धोकर, इस आसन पर बैठ जाइये। हम आपको खानेकेलिये पाच सौ हरिन देंगे, प्रशतुन्यङ्कू (ये सव हरिनोंकी जाती है) शरभ, खरहे, रोझ, रुरु, शम्बर, हरिन, सूवर, और भैंसे आदि अनेक जन्तु तुमको देंगे, स्वयम महाराज युधिष्ठिर ही आपका सत्कार करेंगे। जयद्रथ बोला, हे सुन्दरी। हमारे यहा सव कुशल है, तुमने जो कुछ कहा हमको सो सव प्राप्त होगया, अव तुम रथपर बैठकर-हमारे संग चलो और सुखसे समय विताओ, पाण्डव लोग मूर्ख हैं, उनकी लक्ष्मी और राज्य नष्ट होगये हैं, तुम वनवासियोंकी स्त्री होनके योग्य नहो हो, तुमको मूर्ख निर्धन युधिष्ठिरको सेवा करके संग नहो रहना चाहिये, पाण्डवलोग वहुत दिनके लिये लक्ष्मो और राज्यसे नष्ट होगये हैं, उनको सेवा करनेसे तुम्हें कुछ लाभ नहीं है; केवल क्लेशही भोगना है, हे सुन्दरी। तुम पाण्डवोंको छोड हमारी स्त्रो होजाओ, तव अनेक सुखोंको प्राप्त करोगो, तुम हमारे सङ्ग सिन्धु और सौवीर देशका राज्य करो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जयद्रथके ऐसे वचन सुनकर सुन्दर मुख और भ्रकुटिवाली द्रौपदी वहासे भागी और अपने पतियोंका मार्ग देखती हुई जयद्रथसे वात करने लगी,

२६६ अध्याय समाप्त।

सुन्दरी द्रौपदी कहने लगी, रे मूर्ख! तू यशस्वी, तीक्ष्ण विषवाले, महारथ इन्द्रके समान पराक्रमी, यक्ष और सर्पोंके जीतनेवाले धार्म्मिक पाण्डवोंको क्यों क्रोधित करता है? हे वीर। चाहे घरमें रहनेवाला हो चाहे वनवासी हो अथवा पूर्ण विद्वान तपस्वी भी क्यों न हो किसीको भी पाप करना

अच्छा नहीं है, जैसे तू बकता है वैसेही कुत्ते भी भोंका करते हैं; मैं जानती हूं कि तेरे संगके क्षत्रियोंमें कोई भी ऐसा वीर नहीं है, जो पातालमें गिरते हुए तुझको अपने हाथसे पकड़कर निकाले, तू बड़ा मूर्ख है जो धर्म्म-राजको जीतनेको कहता है यह बात वैसेही है जैसे कोई मूर्ख एक लठ्ठी हाथमें लेकर कहे कि मैं हिमाचलके नीचे घूमते हुए, पर्व्वतके समान शरीरवाले मतवारे हाथीको उसके यूथके बीचमेंसे पकड़ लूंगा, जिस समय क्रोधी भीम-सेनको युद्धमें देखकर भागेगा तब विचारेगा कि हाय मैंने मूर्खतासे सोते हुए, महाबलवान सिंहके बालोंको खींचा था, तू जिस समय बलवान अर्ज्जुनसे युद्ध करेगा उस समय कहेगा कि महाबलवान पर्व्वतकी गुफामें उत्पन्न हुए, सोते हुए, सिंहको वृथा जगाया, जिस समय वीर नकुल सहदेव तेरे आगे युद्ध करनेको आवेंगे उस समय तू कहेगा मैंने सोते हुए दो जीभ वाले विषसे भर हुए दो काले सांपोंको पूछ पर वृथा लात मारी, जिस प्रकार बांस केला और नलका वृक्ष फल लगनेसे नष्ट हो जाता है, जैसे कर्कटी गर्भको धारण करके अपना प्राण नाश कर देती है, तैसेही मुझको दुर्व्वाक्य कहकर तू भी नष्ट हो जायगा। जय-द्रथ बोले, हे द्रौपदी! पाण्डव लोग जैसे हैं उनको हम अच्छी प्रकार जानते हैं, तेरी इन डरावनी बातोंसे हम डर नहीं सकते, हे द्रौपदी! हम उस सनातन वंशमें उत्पन्न हुए हैं जिसमें राजोंके सतरह कर्म्म, छः गुण विराज-मान हैं और पाण्डव लोग इन सबसे रहित हैं, सो तू शीघ्र हाथी अथवा रथपर चढ़ले क्योंकि केवल वचन मात्रसे हम तुझको नहीं छोड़ेंगे, या दीन होकर सौवीर देशके राजाको प्रसन्न-कर। द्रौपदी बोली, मैं बहुत बलवती हूं परन्तु इस समय तुमसे दुर्व्वलके समान बात कर रही हूं, मैं अपने पकड़े जानेपर भी तुमसे दीन वचन नहीं कहूंगी, क्योंकि जिसके ढूंढनेको साक्षात कृष्ण और अर्ज्जुन एक रथपर बैठकर चलेंगे, उसे साक्षात इन्द्रभी नहीं छीन सकता है, और क्षुद्र मनुष्योंकी कथाही क्या है? जिस समय साक्षात अर्ज्जुन रथपर बैठकर अपने शत्रुओंके मनको निराश करते हुए तुम्हारी सेनामें घुसेंगे उस समय तुम्हारी सेना ऐसे नष्ट हो जायगी जैसे अग्नि लगनेसे सूखा काठ, जिस समय अन्धक और वृष्णीवंशियोंके समेत साक्षात श्रीकृष्ण तुमसे युद्ध करनेको आवेंगे, और काश्मीर देशके सब राजपुत्र प्रसन्न होकर युद्ध करनेको उपस्थित होंगे, तब तू कुछभी नहीं कर सकेगा, जिस समय गाण्डीव धनुषके रोदेंसे छूटकर घोर वेगवाले अर्ज्जुनके बाण तेरी सेनामें आकर घोर शब्द करेंगे, तब तू क्या करेगा? जिस समय महावेगवाले अग्निमें पड़े पतंगोंके समान अर्ज्जुनके बाणोंको और वीर अर्ज्जुनको देखेगा, उस समय तू अपनी इस बुद्धिकी निन्दा करेगा, जिस समय शंख, पञ्जे और गाण्डीव धनुषका शब्द करके अर्ज्जुनके बाण तेरे हृदयके रुधिरको पीवेंगे, उस समय न जानें तेरा मन कैसा होगा? रे अधम! जिस समय गदा हाथमें लेकर भीमसेन युद्धमें आवेंगे, और जब नकुल तथा सहदेव क्रोधके विषको छोड़ते हुए सब ओरसे तेरे ऊपर बाणोंकी वर्षा करेंगे, उस समय तू बहुत दिन तक दुःख भोगेगा; जिस प्रकारसे मैं अपने महात्मा पतियोंका मनसेभी निरादर नहीं करती हूं उसी सत्यसे मैं तुमको पाण्डवोंके वशमें पड़ा हुआ और भीमसेनके हाथसे बाल पकड़कर खिंचता हुआ देखूंगी, मैं घबड़ाकर तुझ दुष्टके हाथसे खिंच कर चलना अच्छा नहीं समझती, मुझे निश्चय है कि जब महात्मा पाण्डव लोग आवेंगे तब मैं काम्यक वनमें आऊंगी।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, विशालनैना द्रौपदी इस प्रकारसे उन सबको डराती हुई

भयसे कांपने लगी, और जयद्रथसे कहने लगी कि तू मुझे मत छुवे, और उसने धौम्य पुरोहितको पुकारने लगी। उसी समय जयद्रथने द्रौपदीका दुपट्टा पकड़ा और द्रौपदीने उसे एक झटका दिया, वह पापी झटका लगनेसे इस प्रकार पृथ्वीमें गिर पड़ा, जैसे जड़ काटनेसे वृक्ष गिर पडता है, परन्तु फिर उठकर उसने वेगसे द्रौपदी को पकड़ लिया। तब द्रौपदी लम्बे स्वांस लेने लगी और पुरोहित धौम्यको प्रणाम करने लगी। तब जयद्रथने खींचकर द्रौपदीको अपने रथपर बिठला लिया। श्रीधौम्यमुनि बोले हे जयद्रथ। पाण्डवों-को बिना जीते तुम द्रौपदीको नहीं ले सकते हो क्योंकि क्षत्रियोंका सनातन धर्म्म यही है, तू युधिष्ठिरादिक पाण्डवोंके संग पाप करके महा दुःखमें पड़ेगा। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, ऐसा कहकर महात्मा धौम्य राजपुत्री यशस्विनी द्रौपदीके रथके पीछे पैदलोंके संग दौड़ने लगी।

२६७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उसी समय जगत प्रसिद्ध धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ पाण्डव लोगभी चारा ओरसे हरिन, और भैसोंको मारकर एक स्थानपर इकट्ठे हुए। उस समय वनमें हरिन और हाथी घूम रहे थे, और पक्षी शब्द करते फिरते थे। इन सबके शब्दोंको सुनकर महाराज युधिष्ठिरने अपने भाइयोंसे कहा, देखो यह हरिन और पक्षी लोग सूर्य्यकी ओर मुख करके घोर शब्द कर रहे हैं; हमको जान पड़ता है कि कुछ घोर उपद्रव होगा, हमको निश्चय है कि किसी शत्रुने हमारे आश्रमको घेर लिया है, मेरा मन बहुत घबड़ाता है, बुद्धि क्रोधसे नष्ट हुई जाती है, इस लिये तुम शीघ्र लौटो, हमको और हरिन मारनेकी कुछ आवश्यकता नहीं है, हमें इस समय काम्यक वन ऐसा दीखता है कि जैसे किसी उत्तम तड़ागमेंसे गरुड़ने सर्पको निकाल लिया हो, जैसे किसी धन धान्य भरे राज्यमेंसे राजा निकल गया हो, जिस प्रकार किसी घड़ेका जल हस्ती पी गया हो और वे शोभा रहित होगये हों, ऐसेही इस वनकी शोभा मुझे दीखती है। तब पाण्डव लोग महाराजकी आज्ञा सुनते ही, सिन्धु देशके घोड़ोंसे युक्त रथोंपर बैठकर वायुके समान वेगसे चले। पुरुषवीर पाण्डव लोग अपने महारथोंपर बैठकर, आश्रमकी ओर आए। जिस समय वे लोग आश्रमकी ओर चले, उस समय अनेक सियार उनकी बांई ओर बोलने लगे, तब महाराजने भीमसेन और अर्जुनसे कहा, कि देखो, सियार हमारे बांई ओर बोल रहे हैं, इससे निश्चय होता है कि, दुष्ट धृतराष्ट्रपुत्रोंने हमारे आश्रमपर आकर कोई घोर उपद्रव किया है। इस प्रकार वे लोग बात करते चले आते थे। इतनेहीमें देखा कि द्रौपदीकी प्यारी धात्री और दूतकी स्त्री रो रही है। उसी समय इन्द्रसेन शीघ्र रथसे उतरा, और दौड़कर धात्रीके पास गया तथा कहने लगा कि हे धात्री। तू पृथ्वीमें पड़ी हुई क्यों रो रही है? तेरा मुख क्यों सूख गया है? तेरे मुखका वरण क्या दीन होगया है? कहो पाण्डवके समान रूपवाली विशालनैनी राजपुत्री द्रौपदीको कोई दुष्ट समुद्र, पृथ्वी और स्वर्गमेंसे ले गया होगा, तो वहांसे भी पाण्डव लोग द्रौपद को ले आवेंगे, क्योंकि धर्म्मराज उनके लिये बहुत दुःख कर रहे हैं। जगतमें ऐसा कौन वीर है जो शत्रुनाशन क्लेश सहनेवाले पाण्डवोंकी प्यारी स्त्रीको ले जाय? यह काम तो वैसाही हुआ जैसे कोई मूर्ख उत्तम रत्नको चुरा ले, मुझको यहां द्रौपदी नहीं दीखती है. वह द्रौपदी पाण्डवोंका हृदय है, आज पाण्डवोंके तीक्ष्ण बाण किसके हृदयको छेदकर पृथ्वीमें प्रवेश करेंगे, हे धात्री। तू कुछ सोच मत कर

शीघ्र बता दे, द्रौपदीको कौन लेगया ; क्योंकि तेरे कहनेसे पाण्डव सब शत्रुओंको मारकर द्रौपदीको छीन लावेंगे। इन्द्रसेनके वचन सुन अपने मुखको पोंछकर धात्री बोली, हे सारथे। इन्द्रके समान पांच पाण्डवोंका निरादर करके जयद्रथ द्रौपदीको खींचकर ले गया। देखो अभी रथोंके पहियेभी मार्गमें लगे हैं, अभी टूटे हुए वृक्षोंके पत्ते मलीन भी नहीं हुए, इससे जान पड़ता है कि अभी द्रौपदी दूर नहीं गई ; तुम शीघ्र दौड़ो और इन्द्रतुल्य पाण्डवोंको युद्धके वास्ते भेजो ; उनसे कहो कि धनुष और वाण लेकर शीघ्र द्रौपदीको ढूंढें ; जबतक कोई दुष्ट द्रौपदीके शरीरको न छूवे, सब तक कोई तुसको अग्निमें घीकी आहुती न दे, जब तक कोई स्मशानमें माला न चढावें, जब तक ब्राह्मणोंके बीचमें कोई कुत्ता सोम न पीये, जबतक महाबनमें आखेट खेलकर कोई सियार उत्तम तालावमें स्नान न करे, जबतक कोई कुत्ता यज्ञकी खीरको न खाय, जबतक द्रौपदीके उत्तम नेत्रवाले चन्द्रमाके समान मुख-को कोई दुष्ट न छुए, इतनेही समयमें इन मार्गोंसे तुम लोग शीघ्र दौडो ; महाराज युधि-ष्ठिर बोले, हे भद्रे। तुम हमसे ठीक कहो, हम लोगोंके सन्मुख कठोर वचन मत कहो ; हम अनेक राजा और राजपुत्रोंको अपने बलसे मार सकते हैं। ऐसा कहकर पाण्डव लोग शीघ्र उसी मार्गसे चले और अपने धनुष पर सर्पके समान रोदे चढ़ाने लगे। थोड़ी दूर जाकर पाण्डवोंने सेनाके घोड़ोंके खुरोंसे उड़ती हुई धूलीको देखा ; आगे चलके देखाकि पदाति-योंके बीचमें पाण्डवोंको पुकारते हुए धौम्य चले जाते हैं। तब दीन पाण्डवोंने धौम्यको शान्त किया, और कहा कि आप सुखसे धीरे धीरे आइये, ऐसा कह पाण्डव इस प्रकार वेगसे दौड़े कि, जैसे मांस खानेको बाज दौड़ता है। उसी समय पांचो पाण्डवोंने अपनी प्यारी स्त्रीको जयद्रथके रथमें बैठी हुई देखा। द्रौपदी को देखते ही, पाण्डवोंका क्रोध अग्निके समान तेज होगया, और बार बार ललकारने लगे।

२६८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भीमसेन और अर्जुनको देखकर जयद्रथकी सेनाके क्रोधी क्षत्री लोग, घोर शब्द करने और पाण्डव लोग भी गर्जने लगे। तब उस बनमें महा घोर शब्द होने लगा। कुरुकुल श्रेष्ठ पाण्डवोंकी ध्वजाओंको देखकर नीच राजा जयद्रथ रथमें बैठी द्रौपदीसे कहने लगा हे द्रौपदी। ये पांचों महारथ तेरे पति आते हैं, हे सुकेशी। तू हमसे इन पांचोंका अलग अलग वर्णन कर। द्रौपदी बोली रे, मूर्ख। इन पांचोका नाम सुनकर क्या करैगा, ये मेरे पांचो पति महा धनुषधारी और महावीर हैं, तैंने इनका घोर निरादर किया है ; इससे निश्चय कर ले कि तेरी सेनामें कोई जीता नहीं है, मैं भाइयोंके सहित धर्म-राजको देखकर अब तुझसे कुछ नहीं डरती; रे मूर्ख। तूने मुझसे प्रश्न किया है, इससे पाण्ड-वोंका वर्णन करना ही मेरा धर्म्म है। जिसकी रथकी ध्वजापर, सुन्दर रूपवाले नन्द और उपनन्द मृदङ्ग बज रहे हैं, जिस धर्म्म और अर्थ जाननेवालेके पीछे अनेक महात्मा लोग चलते हैं, जिसका रङ्ग शुद्ध सोनेके समान है, जिसकी नासिका ऊंची और नेत्र बड़े हैं, ये हो कुरुकुल प्रधान मेरे पति धर्म्मराज युधिष्ठिर हैं, ये ही महात्मा शरण आये शत्रुको भी प्राणदान देते हैं ; ये बहुत धर्म्मात्मा और महावीर हैं, अरे मूर्ख। तू शस्त्र और अस्त्रोंको छोड़ कर तथा हाथ जोड़कर इनकी शरण जा, तब तेरा कल्याण होगा ; ये जो शाल वृक्षके समान ऊंचे विशालबाहु टेढ़ी भौं, और भ्रकुटीवाले रथमें बैठे हैं जो अपने होठोंको दांतसे चबा रहे हैं, उन्हींका नाम भीमसेन है, जिनके कर्म्मोंको

देखकर महा बलवान वीरोंने इन्हें साधु पदवी दी है, जिसके अमानुष कर्म्मने भीम ऐसा नाम प्रसिद्ध किया है, ये वही हमारे स्वामी भीमसेन हैं, इनका अपराध करके कोई जीता नहीं बचता ; ये अपने वैरको कभी नहीं भूलते हैं, ये बिना वैरका अन्त किये शान्त नहीं होते। जो धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ बुद्धिमान तेजस्वी जितेन्द्रिय पुरुष वीर राजा युधिष्ठिरके शिष्य और भाई हैं वही अर्ज्जुन नामक हमारे पति हैं ये काम क्रोध लोभ और मोहसेभी कर्म्म और धर्म्मको नहीं छोड़ते और कभी अधर्म्मका काम नहीं करते ; येही शत्रु नाशक अग्निके समान तेजस्वी कुन्तीपुत्र अर्ज्जुन हैं। जो सब धर्म्म और अर्थके निश्चयोंको जानते हैं, यही सब डरनेहारे पुरुषोंका भय नाश करते हैं, जिनके समान पृथ्वीमें कोई सुन्दर नहीं है, पाण्डव लोग सदा जिनकी रक्षा करते हैं, जो पाण्डवोंको प्राणसे भी अधिक प्यारे हैं, उन्हीका नाम नकुल हैं। जो खड्गसे विचित्र युद्ध करते हैं जिनका हाथ बहुतशीघ्र चलता है वेही अद्वितीय वीर सहदेव हैं। अरे मूर्ख। तुम वीर सहदेवके कर्म्मको युद्धमें इस प्रकार देखोगे जैसे इन्द्रके कर्म्मको राक्षस लोग देखते हैं। ये महात्मा तेजस्वी शस्त्रविद्याके जाननेवाले और धर्म्मराजके प्रियकार्य्य कर्ता हैं, यही महात्मा सहदेव चन्द्रमा और सूर्य्यके समान तेजस्वी सब भाइयोंमें छोटे और पाण्डवोंके प्रिय हैं, इनके समान पृथ्वीमें कोई पण्डित, वक्ता बुद्धिमान और निश्चयकर्त्ता नहीं है, वे हो हमारे स्वामी सहदेव शूरवीर क्षमावान और महापण्डित हैं। ये प्राणोंको त्याग दें, अग्निमें प्रवेश कर जाय, परन्तु अधर्म्म कभी नहीं करेंगे। ये मनस्वी सदा क्षत्रियोंके पालनेवाले महावीर और कुन्तीको प्राणके समान प्यारे हैं। अब तुम्हारी सेनाकी यह दशा है, कि जैसे रत्नोंसे भरी हुई टूटी नाव समुद्रके बीचमें किसी मछलीकी पीठमें धरी हो। अब थोड़े समयमें तुम देखोगे कि पाण्डवोंने तुम्हारी सब सेनाका नाश कर दिया। जिन पांचों पाण्डवोंका मैंने वर्णन किया उन्हींका तुमने निरादर किया है ; यदि तुम इनसे जीते बच जाओ तो तुम्हारा दूसरा जन्म होगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उसी समय इन्द्रके समान पांचो पाण्डव लोग डरी हुई और हाथ जोड़ती पैदलसेनाको छोड़कर जयद्रथकी प्रधान सेनापर क्रोध करके बाणोंकी वर्षा करने लगे, और अन्धकार कर दिया

२३६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, पाण्डवोंका युद्ध करते देख सिन्धु देशका राजा जयद्रथ अपने साथी राजोंसे कहने लगा कि, तुम लोग शस्त्र चलाओ दौड़ो, स्थिर रहो, युधिष्ठिर भीमसेन अर्ज्जुन नकुल और सहदेवको युद्धमें देखकर सिन्धु और सौवीर देशके क्षत्री गर्जने लगे। उस समय रणभूमिमें घोर शब्द होने लगा, सिंहके समान बलवान पाण्डवोंको देख अनेक क्षत्री लोग युद्ध करनेको उपस्थित हो गये। उस समय सोनेसे खिची हुई लोहेकी गदाको लेकर भीमसेन जयद्रथकी ओर दौड़े। तब भीमसेनके आगे महारथ सेनाको लिये हुए कोटिकास्यआया। और उस सेनाने भीमके ऊपर शक्ति, तोमर तथा बाणोंकी वर्षा करनी आरम्भ करी; परन्तु उनसे भीम कुछभी न डरे और वीरोंके सहित चौदह हाथियोंको तथा अनेक पैदलोंको मारकर पृथ्वीमें गिरा दिया। उनके मरनेसे जयद्रथकी सेनाका मुख टूट गया। अर्ज्जुनभी सेनाके आगे लड़ते हुए महारथ पांच सौ वीरोंको मारा और जयद्रथको ढूंढ़ने लगे। उस समय धर्म्मराजने भी सुवीर देशोत्पन्न शस्त्र वाले सौ वीरोको क्षण भरमें, मार डाला। उस समय वीर नकुल खड्ग लेकर अपने रथसे उतरे और पैदल सेनामें प्रवेश किया और इस प्रकार

वीरोंके शिर काटकर पृथ्वीमें गिराने लगे, जैसे कोई किसान बीज बोता है। सहदेवने अपने रथको गजसेनाकी ओर चलाया और इस प्रकार वीरोंके सिर काटकर गिराने लगे जैसे वृक्षोंसे मरे हुए पक्षी गिरते हैं। उसी समय त्रिगर्त्त देशका राजा गदा लेकर अपने रथसे उतरा और महाराजके चारों घोड़ोंको मार दिया। जब कुन्तीनन्दन युधिष्ठिरने त्रिगर्त्त-राजको अपने पास खड़ा देखा तो अर्द्धचन्द्रसे उसके हृदयको बिदीर्ण कर दिया। उसी समय वह वीर अपने मुखसे रुधिर गिराता हुआ जड़ कटे हुए वृक्षके समान पृथ्वीमें गिर पड़ा। तब इन्द्रसेनके सहित महाराज पृथ्वीमें उतरे और सहदेवके रथपर चढ गये। उसी समय नकुलसे युद्ध करनेको क्षेमङ्कर और महामुख आए। वे दोनों ओरसे वर्षाकालके मेघके समान, बाण और तोमरोंकी वर्षा करने लगे। उसी समय नकुलने एक एक खड्गसे दोनोंको मार दिया। उसही समय त्रिगर्त्त देशके राजा सुरथ अपने हाथीको चलाकर नकुलसे युद्ध करनेके आये। सुरथके हाथीने नकुलके रथको धुरीको पकड़कर रथको उलट दिया। नकुल भी निडर होकर खड्ग और ढाल लेकर रथसे नीचे उतरे, और एक स्थानमें पर्व्वतके समान अचल होकर खड़े होगए। तब सुरथने क्रोध करके घण्टा भूषित और विशाल सुण्डवाले हाथीको नकुलके मारनेको चलाया। जब नकुलने उस हाथी को अपने पास आते हुए देखा, तो अपने खड्गसे दांतोंके समेत उसका शुण्ड काट दिया। वह हाथी सुण्ड कटनेसे महाशब्द करके पृथ्वीमें गिर गया और उसके चढ़े हुए वीर भी उसके नीचे दबकर मर गये। वीर माद्रीपुत्र नकुलने इस महा कर्मको सिद्ध करके भीमसेनसे युद्ध करते हुए कोटिकाख्यके सारथीको अपने बाणोंसे मार दिया। राजा कोटिकाख्यने यह न जाना कि बलवान भीमसेनने हमारे सारथीको मार डाला। तब उसके घोड़े इधर उधर घूम लगे। जब शस्त्र चलानेवालोंमें श्रेष्ठ भीमसेन देखा कि कोटिकाख्य युद्धसे भागा, तो ए प्राससे उसको मार डाला। वीर अर्ज्जुन अपने तीक्ष्ण बाणोंसे बारह सौवीर दे राज पुत्रोंके धनुष और सिर काट दिये शिवो, इक्ष्वाकु, त्रिगर्त्त, और सिन्धु देश जो वीर युद्ध करनेको आये उन सबको अर्ज्जुन मारडाला। अर्ज्जुनके मारे हुए ध्वजा औ पताकोंके सहित अनेक महारथ और हा पृथ्वीमें गिर गये। उस समय बिना सिर शरीर और बिना शरीरके सिर समस्त र भूमिमें भर गये। कुत्ते गिद्ध सियार औ कौवोंने तृप्त होकर रुधिर पिया और मा खाया। अपने सङ्गके सब वीरोंको मरा हुअ देख, सिन्धुराज जयद्रथ बहुत डरा, और द्रौप दीको छोड़कर भागनेकी इच्छा करने लगा जब इस प्रकार सेनामें हाहाकारका शब्द हुअ तो जयद्रथने कहा कि द्रौपदीको रथसे उतारो और फिर द्रौपदीको छोड़कर घोर बनकी ओर भाग गया। जब धर्म्मराजने देखाकी धौम्यके सहित द्रौपदी पृथ्वोमें खड़ी है, तो उसको सहदेवके रथपर चढ़ा लिया। जयद्रथके भागते ही उसकी सब सेना इधर उधर भाग गई। उस समय भीम-सेन प्रत्यक्ष और गुप्त बाणोंसे उन सबको मारने लगे। तब अर्ज्जुनने कहा कि, जिस दुष्टके अपराधसे हम लोगोंको महा कष्ट हुआ है वह जयद्रथ युद्धमें नहीं दीखता, अब ह जयद्रथको ढूढ़ना चाहिये, क्योंकि इन निरपर धिओंको मारना उत्तम नहीं है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, बुद्धिमान अर्ज्जु ऐसे बचन सुन युधिष्ठिरके पास जाय, प भीमसेन कहने लगे, हे राजन्! सब शत्रु मारे गये और बचे हुए इधर उध भाग गये, अब आप द्रौपदी, नकुल, सहदेव महात्मा धौम्यको सङ्ग लेकर आश्रमको

ाइये, और वहां जाकर द्रौपदीको शान्त- कीजिये । यदि मूर्ख जयद्रथ पातालमें भी घुस जायगा, और साक्षात इन्द्रभी उसका सारथी बनेगा, तो भी आज वह मुझसे जीता नहीं बचेगा। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे महा- बाहो! यद्यपि जयद्रथ बड़ा दुष्ट है, तो भी तुम उसको मारना मत, क्योंकि उसके मरनेसे दुःशला विधवा हो जायगी, और यशस्विनी गान्धारी कोभी बड़ा दुःख होगा; तुम इन दोनोंका स्मरण करके उचित कर्म करना ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महाराजके ऐसे वचन सुन क्रोधसे व्याकुल लज्जावती पण्डिता द्रौपदी भीम और अर्जुनसे बोली, यदि तुम मेरा प्रियकार्य्य करना चाहते हो, तो पापी दुर्बुद्धि पुरु- षाधम कुलकलङ्क जयद्रथको अवश्य मार- डालना, जो शत्रु स्त्रीको छीने, राज्यको छीने, उस दुष्टको भीख मांगने परभी जीता छोड़ना न चाहिये। राजा और द्रौपदीके ऐसे वचन सुन पुरुषसिंह भीम और अर्जुन जयद्रथके मारनेको चले, राजाभी द्रौपदी और पुरोहित को सङ्ग लेकर आश्रमको लौट आये। उन्होंने अपने आश्रमपर आकर मार्कण्डेय आदि मुनि- योंको देखा। वे सब ब्राह्मण लोग, सावधान होकर द्रौपदीका सोचकर रहे थे। उसी समय अपने भाई और द्रौपदीके सहित महा पण्डित युधिष्ठिरभी अपने आश्रमपर पहुंच गये। जब ब्राह्मणोंने देखा कि सिन्धु और सौवीर देशके वीरोंको जीतकर महाराज आये और द्रौपदीको भी देखा तो बहुत प्रसन्न हुए। महा- राज युधिष्ठिर ब्राह्मणोंके बीचमें बैठ गये। द्रौपदी नकुल और सहदेवके सहित आश्रमके भीतर चली गयी।

जब भीमसेन और अर्जुनने सुना कि जय- द्रथ एक कोस तक भाग गया, तो अपने हाथसे घोड़ोंको शीघ्र हांकने लगे। उसी समय अर्जुनने एक अद्भुत कर्म्म किया अर्थात एक कोससे जयद्रथके घोड़ोंको मार दिया, अत्यन्त कठिन समयमें भी अर्जुनको भ्रम नहीं होता था, और वे दिव्य अस्त्रोंके जाननेवाले थे, इसहीसे दिव्य मन्त्रोंके बलसे कठोर कार्मोंको भी सिद्ध कर लेते थे। अनन्तर भीमसेन और अर्जुन क्रोध करके जयद्रथके पीछे दौड़े, जब डर हुए, व्याकुल और अकेले जयद्रथने देखा कि मेरे घोड़े और सारथी सब मारे गये, और अर्जुन बहुत पराक्रम कर रहे हैं, तब रथको छोड़कर घोर वनमें भागा। जब अर्जुनने देखा कि सिन्धुराज भागे जाते हैं, तो पुकार कर कहने लगे कि हे वीर! तुमको भागना उचित नहीं है, क्या इसी बलसे दूसरेकी स्त्रीको छीनना चाहते थे? तुमको अपने सङ्गियोंको छोड़कर भागना उचित नहीं है, शत्रुओंके आगेसे भागना तुम्हारा धर्म्म नहीं है। अर्जुन- के ऐसे वचन सुनकरभी जयद्रथ न लौटे, तब भीमसेनने कहा रे मूर्ख! खड़ा रह, खड़ा रह, ऐसा कहके उसके मारनेको वेगसे दौड़े। तब दयावान अर्जुनने कहा कि इसको मत मारो।

२७० अध्याय समाप्त।

द्रौपदी हरण पर्व्व समाप्त।

अब जयद्रथ विमोचण पर्व्व लिखते हैं

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमे- जय। जब राजा जयद्रथने देखा कि भीम और अर्जुन हमारे पीछे शस्त्र लिये चले आते है, तो प्राणको बचानेकी इच्छासे सावधान होकर भागने लगा। तब बलवान भीमसेनने रथसे उतर कर दौड़ते हुए जयद्रथके बाल पकड़ लिये, और उठाकर पृथ्वीमें पटक दिया, और उसके सिरपर लात मारने लगे। तब दयावान अर्जुनने क्रोधी भीमसेनसे कहा, कि हे कौरव! महाराजने आज्ञा दी है कि दुःशलाको विधवा न करना। भीमसेन बोले, यह पापी

दुराचारी हमसे जीता बचनेके योग्य नहीं है, इस पुरुषाधमने दुःख न भोगनेके योग्य द्रौपदीको दुःख दिया है, परन्तु हम क्या करें राजा सभीके ऊपर कृपा कर देते हैं, और तुम भी मूर्खतामें हमारे सब कामोंमें बाधा देते रहते हो। ऐसा कहकर भीमसेनने अर्द्धचन्द्र बाणसे जयद्रथके सिरके बाल मूड़ दिये, और उसके सिरपर पांच चोटी रख दी, और उसको गाली देकर कहा रे मूर्ख! यदि तू अपने जीनेकी इच्छा करता है तो हम जो कहते हैं उसको सुन; तू सब पण्डितोंकी सभामें कह दे कि हम पाण्डवोंके दास हैं तब तेरा जीवदान दिया जायगा, युद्धमें जीते हुए शत्रुओंको ऐसाही करना चाहिये। ऐसा कहकर शत्रुनाशक पुरुषसिंह भीम उसको खींचने लगे। तब उसने कहा कि हम चलकर महाराजके आगे ऐसेही कह देंगे। तब भीमसेनने धूलमें लिपटे हुए, मूर्च्छित जयद्रथको बांध लिया और रथमें डाल दिया। तब भीमसेन और अर्ज्जुन राजाके पासको चले और जाकर बांधे हुए जयद्रथको आगे खड़ा कर दिया। तब महाराज जयद्रथको बंधा हुआ देख हंसे और अपने भाइयोंसे कहा कि इसे छोड़ दो और महाराज भीमसेनसे बोले, कि इस मूर्खको द्रौपदीके पास ले जाओ और जाकर द्रौपदीसे कहो कि यह पापी पाण्डवोंका दास होगया, अब यदि हमारी आज्ञा मानती हो तो जीता छोड़ दो। द्रौपदीने युधिष्ठिरको और देख भीमसेनसे कहा कि, यदि यह महाराजका दास होगया और तुमने इसके सिरपर पांच शिखा भी रख दी तो अब इसे छोड़ दो। तब भीमसेनने राजा जयद्रथको छोड़ दिया! जयद्रथने छूटकर महाराज युधिष्ठिर और सब मुनियोंको प्रणाम किया तथा बहुत व्याकुल होकर बैठ गया। तब दयावान धर्म्मराज युधिष्ठिरने जयद्रथसे कहा कि तुमको हम दास भावसे छुड़ा देते हैं, अब जहांको तुम्हारी इच्छा हो तहांको चले जाओ, परन्तु ऐसा कर्म फिर कभी न करना; तुम दूसरेकी स्त्रीकी इच्छा रखते हो, इस लिये तुम्हें धिक्कार है, तुम चुद्र हो और तुम्हारे सहायक भी चुद्र हैं, तुम्हारे सिवा कौन नीच पुरुष ऐसे कर्म्मोंको करेगा, जब महाराज युधिष्ठिरने उस पापी जयद्रथको निर्ब्बलके समान बैठे हुए देखा, तो उसके ऊपर कृपा करी और कहा कि हे जयद्रथ! तुम्हारा कल्याण हो, तुम अपने घोड़े रथ और पैदलोंके सहित चले जाओ, सदा धर्म्म करते रहना और अधर्म्ममें अपनी बुद्धिको कभी मत लगाना। राजाके ऐसे वचन सुन लज्जासे नीचे मुख करके जयद्रथ चला गया। हे राजन! जयद्रथ वहांसे गङ्गाद्वार तीर्थको गया और वहां जाकर पार्व्वतीपति शिवकी तपस्या करने लगा। शिव उसके घोर तपसे प्रसन्न हुए। अनन्तर त्रिनेत्र शिवने प्रगट होकर उसकी दी हुई बलिको ग्रहण किया, और उससे कहा कि जो तेरी इच्छा हो सो वरदान माग। तब उसने कहा कि मैं पांचों पाण्डवोंको रथके सहित युद्धमें जीतूं। तब शिवने कहा ऐसा नहीं हो सकता क्योंकि पाण्डव लोग, अजेय और अवध्य हैं, परन्तु तुम अर्ज्जुनको छोड़कर और सब पाण्डवोंको युद्धमें बारण कर दोगे क्योंकि अर्ज्जुन नर नामक देवताके अवतार हैं, इन्होंने नारायण के सहित वदरिकाश्रममें बहुत तपकिया है उनको लोकमें कोई भी नहीं जीत सकता, वह देवतोंसेभी अजेय हैं, हमने उनको दिव्य पाशुपत बाण दिया है और लोकपालोंने भी अपने अपने सब अस्त्र अर्ज्जुनको दिये हैं, जब समस्त युगके अन्तमें प्रलय होती है, तब अनन्त जगत की मूर्त्ति जगको आत्मा अव्यक्त भगवान विष्णु समय प्राप्त होनेसे अग्नि रूप धारण करके पर्व्वत, समुद्र द्वीप, वन नाग लोक पाताल और

तलातलके सहित सब जगतको भस्म कर देते हैं। उस समय आकाशमें घोर शब्दवाले विजुलीके सहित अनेक वर्णके मेघ प्रगट होते हैं, तब वे सब मेघ चारों ओरसे वर्षनेसे सब अग्नि नष्ट हो जाती है। उस समय इन मेघोंकी धारा बहुत भारी होती हैं इनके जलसे देश पूर्ण हो जाता है, उस जलमें सब चर और अचर डूब जाते हैं, चन्द्रमा, सूर्य्य, ग्रह और सब तारे नष्ट हो जाते हैं; यह प्रलय जब चारो युग सहस्र सहस्र बार बीत जाते हैं तब होता है। उस समय सहस्र चरण सहस्र नेत्र और सहस्र सिर वाले नारायण सोनेकी इच्छा करते हैं। तब महातेजस्वी सहस्र सूर्य्यके समान प्रकाशमान कुन्द, चन्द्रमा, हार, गौ दुग्ध, कमलकी दण्डी और कुमदके फूलके समान सुन्दर सहस्रफण धारी शेषनागका पलंग बनाकर भगवान विष्णु समुद्रके बीचमें सो रहते हैं। वह रात्रि तमोगुणसे व्याप्त हो जाती है। जब भगवान विष्णु सतो गुण अधिक होनेसे जागते हैं। उस जगतको शून्य देखते हैं। इस स्थान पर पण्डित लोग इस श्लोकका उदाहरण देते हैं। जलका नाम नारा है वही नारा है अयन अर्थात् निवासस्थान जिसका उसको नारायण कहते हैं। उस अवस्थानमें अर्थात् जागनेके समय भगवान सनातन विष्णु जगत उत्पन्न करनेके लिये ध्यान करते हैं, ध्यान करते ही उनकी नाभीसे एक कमल उत्पन्न होता है, उस कमलसे चार मुखवाले ब्रह्मा उत्पन्न होते हैं वे उसी कमलके ऊपर बैठकर शून्य जगतको देखते हैं। इसके पश्चात ब्रह्मा अपने मनसे मरीचि आदि नौ पुत्रोंको उत्पन्न करते हैं ये नवों ब्रह्माके समान ही होते है। उन्होंहीने स्थावर जङ्गम जगतको रचा है, उन्हींसे यक्ष, राक्षस, पिशाच, भूत, सर्प और मनुष्य उत्पन्न होते हैं, परमेश्वर ब्रह्माका रूप धारण करके जगतको रचते हैं, विष्णु बनके रक्षा करते हैं और शिव बनके नाश करते हैं, यह तीनो मूर्त्ति ईश्वरहीकी हैं, हे सिन्धुराज। तुमने कभी वेदपाठी ब्राह्मणोंसे कहे हुए विष्णुके अद्भुत कर्म्म नहीं सुने। जब समस्त पृथ्वी जलसे डूब गयी तब भगवान विष्णु शून्य-आकाशमें घूमने लगे। उस समय विष्णुकी ऐसी प्रभा हुई जैसे वर्षाकालकी रात्रीमें जुगनूकी। उसी समय भगवान विष्णु पृथ्वीको ढूंढने लगे, तब उन्होंमें डूबी हुई पृथ्वीको देखा, और विचारा कि हम कौनसा रूप धारण करके पृथ्वीको रचें। तब भगवानने दिव्यदृष्टिसे देखा और जलक्रीड़ा करनेकी इच्छा की। तब सूअरका रूप धारण किया। भगवानने वह वचनमय शूकररूप वेदके समान धारण किया था। वह स्वरूप सौ योजन लम्बा और दश योजन चौड़ा था, उसकी शोभा महा पर्व्वतके समान थी, एक दांत बहुत प्रकाशमान और विशाल था, उस नील मेघके समान सुअरका शब्द महा मेघके समान था। भगवान विष्णु यज्ञ वराहका रूप बनाकर जलके भीतर घुस गये। फिर एक दांतपर सब पृथ्वीको उठा ले आये, और उसको अच्छे स्थानपर रख दिया, उसके पश्चात भगवानने विचित्र रूप धारण किया। वह शरीर आधा सिंह आधा मनुष्यका था। तब दैत्यराजकी सभामें गये और हाथकी मलने लगे, देवशत्रु दितिपुत्र आदिदैत्य हिरण्यकशिपुने उस विचित्र मनुष्यको देखकर क्रोधसे लाल नेत्र कर लिये, और हाथमें त्रिशूल लेकर मारनेको उपस्थित हुए। काले मेघके समान शब्दकारी दितीपुत्र वीर हिरण्यकशिपु नरसिंहको मारने दौड़ा। उसी समय बलवान नरसिंहने अपने तीक्ष्ण नखूनोंसे, हिरण्यकशिपुका पेट चीर दिया। इस शत्रुनाशक दैत्यको मारकर फिर भगवान कमलनेत्र विष्णुने वामन रूप धारण किया, यह वामन अवतार कश्यपकी स्त्री अदितीके गर्भसे पूरे सहस्र वर्षमें हुआ था। भगवानके अवतार लोकके हितके लिये हैं। वामनका

स्वरूप वर्षाकालके मेघके समान और नेत्र बहुत प्रकाशमान थे। बामन दण्ड कमण्डल जटा और यज्ञोपवीत धारण करके, तथा श्रीवत्समणिको हृदयमें धारण करके बृहस्पतिकी सहायतासे बलिके यज्ञमें गये, इन बामनरूपी बामनको देखकर बलि प्रसन्न होकर कहने लगे, हे विप्र। हम तुम्हारे दर्शनसे बहुत बहुत प्रसन्न हुए है, कहो तुमको क्या दें, तब बामनने बलिको आशीर्व्वाद देकर कहा, हे दानवराज! हमको तीन चरण पृथ्वी दीजिये। तब बलिने प्रसन्न होकर अनन्त तेजस्वी बामनको तीन चरण पृथ्वी दी, उसी समय भगवान विष्णुने अपने पराक्रमसे अद्भुत रूप धारण किया। तब अपने तीन चरणोंसे मापकर समस्त पृथ्वीका राज्य इन्द्रको दे दिया। हमने तुमसे यह बामन अवतारको कथा कही, इसीसे सब देवता उत्पन्न हुए हैं और इसी कारके जगतका नाम वैष्णव है। भगवान विष्णु दुष्टोंका नाश और धर्म्मको रक्षाके लिये अवतार लेते हैं, वही विष्णु अब यदुवंशमें उत्पन्न हुए हैं, उन्हीका नाम श्रीकृष्ण रक्खागया है, वह अनादि और अजन्मा देवताके देवता है, उनको सब लोक नमस्कार करते हैं। विद्वान लोग उनके गुणोंको गाते हैं, उनको कोई नहीं जीत सकता। हे सिन्धु देशात्पन्न। वही कमलनेत्र अतुल पराक्रमी शङ्ख चक्र गदा श्रीवत्स और पीताम्वरधारी कृष्ण उन शस्त्र जाननेवाले पाण्डवोंके सहायक है। जिस समय शत्रुनाशक श्रीकृष्ण अर्ज्जुनको रथपर बैठाकर युद्ध करेंगे, उस समय देवता भी अर्ज्जुनको नही जीत सकते और पुरुषको तो क्या शक्ति है? अर्ज्जुनको छोड़कर और सब युधिष्ठिरकी सेना तथा चारो पाण्डवोंको तुम एक दिनमें जीत लोगे। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, त्रिपुरासुरके मारनेवाले दक्षयज्ञ बिनाशक पार्व्वतीनाथ सब पापोंके नाश करनेवाले भगवान शिव ऐसा कहकर अनेक शस्त्रधारी बामन, भयङ्कर, बड़े विशाल नेत्र, और कानवाले घोर पार्षदोंके सहित वहीं अन्तर्धान हो गये। हे राजशार्दूल! जब त्रिनेत्रधारी पार्व्वतीनाथ भगवान शिव अन्तर्धान हुए तब मूर्ख जयद्रथ भी अपने घरको चला गया, और पाण्डव लोग उसी काम्यक वनमें रहने लगे।

२७१ अध्याय समाप्त।

जयद्रथविमोक्षण पर्व्व समाप्त।

अथ राम उपाख्यान पर्व्व

राजा जनमेजय बोले, द्रौपदी हरणके पश्चात अत्यन्त क्लेश सहकर पुरुषसिंह पाण्डवोंने क्या किया?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। इस प्रकार द्रौपदीको छुड़ाकर और जयद्रथको युद्धमें जीत कर धर्म्मराज युधिष्ठिरने मुनियोंका सत्कार किया। उन महा ऋषियोंके बीचमें बिराजमान मार्कण्डेय महर्षिसे महाराज बोले, हे भगवन। आप सब देव ऋषियोंमें प्रधान है और भूत भविष्यतके जाननेवाले है, सो मेरे हृदयमें जो सन्देह है, आप इसको नाश कीजिये, हे भगवन्! यह द्रौपदी किसीके गर्भसे उत्पन्न नहीं हुई, इसका जन्म यज्ञ कुण्डसे हुआ है, यह धर्म्म करनेवाली और धर्म्मके जाननेवाली द्रौपदी हम लोगोंकी स्त्री और महात्मा पाण्डुकी बहू है, इसको भी ऐसे दुःख होते है जैसे किसी पापिष्ठ पुरुषको चोरी अथवा झूठ बोलनेका दोष लगे, इससे जान पड़ता है, कि काल और प्रारब्ध बड़ा बलवान है, जो बात होनेवाली होती है, उसको कोई नांघ नहीं सकता, द्रौपदीने कभी कोई पाप नहीं किया है, कभी उसने ब्राह्मणोंका निरादर नहीं किया है, यह सदा धर्म्मही करती रही है, उसको मूर्ख दुर्बुद्धि जयद्रथ बलसे उठा ले गया, द्रौपदीके चुरानेसे उस मूर्खके बाल मूण्डे गये, वह दुष्ट सहायोंके

सहित हार गया हमने उसकी सेनाको नाश करके द्रौपदीको छीन लिया, इस वनमें निवास करना, आखेट खेलकर जीविका चलानी, हरिनोंकी हत्या करनी, और अन्यायके द्वारा जातिसे अलग रहना, इससे अधिक और हमको दुःख क्या होगा? आपने हमारे समान मन्दभाग्य पुरुष कोई देखा या सुना है?

२७२ अध्याय समाप्त ।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन युधिष्ठिर। रामने आपसेभी अधिक दुःख पाया था, बलवान राक्षसराज दुर्बुद्धि रावणने उनके आश्रममें छल करके उनकी स्त्री सीताको चुरा लिया था, उसीने जटायु गिद्धको भी मार डाला था तब रामने सुग्रीवका आश्रय लिया. समुद्रका सेतु बांधा, लङ्काको जलाया और तीक्ष्ण बाणोंसे रावणको मारकर सीताको छीन लिया । महाराज युधिष्ठिर बोले, हे भगवन। राम कौन कुलमें उत्पन्न हुए थे? उनका बल और पराक्रम कैसा था? रावण किसका पुत्र था ? और उन दोनोंका वैर क्यों होगया था ? इन सब कथाओंको हम आपसे सुनना चाहते हैं, आप इस कथाको कहिये ।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले,हे पृथ्वीनाथ। इक्ष्वाकु वंशमें अज नामक महाराज उत्पन्न हुए थे, उनके पुत्रका नाम दशरथ था । दशरथ महाराज परम वेदपाठी और पवित्र थे। उनके चार पुत्र हुए, चारोंके नाम ये थे राम, भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न । ये चारो धर्म्म और अर्थके जाननेवाले तथा महा पराक्रमी थे। रामकी माताका नाम कौशल्या, भरतकी माताका नाम कैकेयी, तथा शत्रुनाशन लक्ष्मण और शत्रुघ्न सुमित्राके पुत्र थे। हे राजन्। मिथिला देशके राजा जनकको पुत्रीका नाम सीता था, उनको साक्षात ब्रह्माने बनाया था, यही सीता रामचन्द्रकी पटरानी थीं। हमने राम और सीताका जन्म तुमसे कहा, अब रावणका जन्म वर्णन करते है। रावणके दादाका नाम साक्षात ब्रह्मा है; वेही सब लोकोंके करनेवाले महा तपस्वी और स्वयम उत्पन्न होनेवाले हैं। उनके प्रिय मानसिक पुत्रका नाम पुलस्त है, उस पुलस्तकी गऊ नामक स्त्रीके गर्भसे वैश्रवण नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, वह वैश्रवण अपने पिताको छोड़कर ब्रह्माके पास चला गया, तब उनके पिताको बहुत क्रोध हुआ और उन्होंने अपने शरीरसे एक दूसरा पुत्र उत्पन्न किया, उस पुत्रका नाम विश्रवा रखा; उस पुत्रको वैश्रवणके नाश करनेका बनाया था, परन्तु ब्रह्माने पहिलेही प्रसन्न होकर वैश्रवणको अमर और कुबेरका पद दे दिया था और लोकपाल भी बना दिया था, तब शिव उनके मित्र होगये, और उनको नलकूबर नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। तब ब्रह्माने राक्षसोंके सहित लङ्काको कुबेरकी राजधानी बनाया और इच्छानुसार चलनेवाला पुष्पक नामक विमान दिया और यक्षोंका स्वामी बनाकर राजका पद दिया ।

२७३ अध्याय समाप्त ।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे महाराज युधिष्ठिर । क्रोधयुक्त पुलस्त मुनिके आधे शरीरसे जो विश्रवा नामक मुनि उत्पन्न हुए थे, उन्होने क्रोध करके कुबेरकी ओर देखा, तब कुबेरने जाना कि, ये महात्मा हमारे पिताके क्रोधसे उत्पन्न हुए हैं। फिर उनके प्रसन्न करनेका उपाय करने लगे। नरवाहन राक्षसनाथ कुबेर बहुत दिनतक लङ्कामें राज्य करते रहे, फिर उन्होंने विश्रवाको पुष्पोत्कटा, राका और मालिनी नामक तीन राक्षसी दयी। वे तीनों महात्मा विश्रवाको प्रसन्न करनेको उपाय करने लगीं। हे भरतशार्दूल। वे सुन्दरी परस्पर अपना अपना कल्याण चाहती थीं। तब भगवान विश्रवाने प्रसन्न

होकर तीनोंको वरदान दिया कि तुम्हारे तीनोंके एक एक पुत्र होगा, ये तीनों पुत्र तुम्हारी इच्छाके अनुसार लोकपालोंके समान होंगे। तब पुष्पोत्कटाके दो पुत्र हुए एकका नाम कुम्भकर्ण और दूसरेका नाम रावण था; ये दोनों महा बलवान और राक्षसोंके राजा हुए, मालिनीके विभीषण नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, राकाको खर और सूर्पनखा नामक दो सन्तति हुई; इन सबमें विभीषण बहुत सुन्दर क्रियावान और धार्म्मिक हुआ, इन सब भाइयोंमें रावण सबसे बड़ा था, इस लिये वही राजा हुआ। यह दश मुख रावण महा पराक्रमी महाबली और महा उत्साही था। कुम्भकर्ण सब भाइयोंमें अधिक बलवान और युद्धमें वीर था, खर छली, युद्धवीर दुष्टबुद्धि धनुष विद्याका जाननेवाला, ब्राह्मणोंका शत्रु और मांस खानेवाला था। सूर्पनखा सिद्धोंको विघ्न करनेवाली और दुष्टा थी। ये चारों भाई वेदके पण्डित व्रतधारी और वीर थे। ये सब अपने पिताके सङ्ग गन्धमादन पर्व्वतपर रहने लगे। एक दिन उन्होंने अपने पिताके सङ्ग बैठे हुए परम लक्ष्मीवान नरवाहन कुवेरको देखा और तब उन सबको महाक्रोध हुआ और तप करनेका निश्चय किया। अनन्तर इन चारोंने घोर तपसे ब्रह्माको प्रसन्न किया। रावण एक सहस्र वर्षतक एक चरणसे खड़ा रहा और सावधान होकर पांच अग्नि तापने लगा। कुम्भकर्ण पृथ्वीमें सोकर व्रत करने लगे, विभीषण एक सूखे पत्ते खाकर तप करने लगे, वे उदार बुद्धि तब भी कुछ दिनतक उपवास करके जप करते रहे। खर और सूर्पनखा प्रसन्न होकर तप करनेके समय उन सबकी सेवा और रक्षा करते रहे। एक सहस्र वर्षके पश्चात रावणने अपना सिर काटकर अग्निमें जला दिया, तब जगतके स्वामी ब्रह्मा प्रसन्न होगये और इन सबके पास आकर वरदान देनेको कहा, तथा तप करनेसे निवारण किया। ब्रह्मा बोले, हे पुत्रो! हम तुम लोगोंसे प्रसन्न हुए, अब जो चाहो सो वरदान मांगो, परन्तु अमर नहीं होगे, जितने सिर तुमने अग्निमें होम किये हैं उतने सब तुम्हारी इच्छानुसार उत्पन्न होजायंगे, तुम्हारा शरीर कुरूप नहीं होगा तुम इच्छानुसार रूप धारण कर लोगे और युद्धमें सब शत्रुओंको जीतोगे। रावण बोले, गन्धर्व्व, देवता, अमर, यक्ष, राक्षस, सर्प और गन्धर्वोंसे मेरी मृत्यु न हो। ब्रह्मा बोले, हे रावण! तुम्हारा कल्याण हो तुमने जिन सब लोगोंका नाम लिया उनसे मृत्यु नही है, तुमको मनुष्यके सिवा और कोई नहीं मार सकेंगे।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, ब्रह्माके वचन सुन रावण बहुत प्रसन्न हुआ और जाना कि मनुष्योंको हम खानेवाले हैं, मनुष्यसे हमको क्या भय है। तब कुम्भकर्णने ब्रह्माजीसे कहा हमको निद्रा अधिक मिले और सदा हमारे चित्तमें तमोगुण बर्त्तमान रहे। उसको यही वरदान देकर ब्रह्मा विभीषणसे बोले, हे पुत्र! हम तुमसे प्रसन्न हुए हैं, अब जो तुम्हारी इच्छा हो, सो वरदान मांगो। विभीषण बोले, हे भगवन्! मैं यह वरदान मांगता हूं कि अत्यन्त आपत्ति पड़ने पर भी मेरी बुद्धि अधर्ममें न जाय और मुझको बिना पढ़े ब्रह्मास्त्र आजाय। ब्रह्माजी बोले, हे शत्रुनाशन! तुमने राक्षस योनिमें उत्पन्न होकर भी अधर्मको ग्रहण न किया, इससे हम तुमको अमर बनाते हैं। श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे पृथ्वीनाथ! रावण राक्षसने इस प्रकार ब्रह्माजीसे वरदान पाकर युद्ध करके लङ्का छीन ली। भगवान कुवेर लङ्काको छोड़कर गन्धर्व्व यक्ष और राक्षसोंके सहित गन्धमादनको भाग गये। तब रावणने वहां जाकर उनसे पुष्पक विमान छीन लिया; तब कुवेरने रावणको शाप दिया कि यह विमान तुझको नहीं ले जा सकेगा और जो

तेरा मारनेवाला होगा वह इसपर चढ़ेगा, हम तुमसे बड़े हैं, तैने हमारा अपमान किया है, इसलिये तू बहुत दिन नहीं जीयेगा। महात्मा विभीषण धर्म्मात्माओंके भागको स्मरण करके परम लक्ष्मीके सहित कुवेरके सङ्ग घूमते रहे। तब भगवान कुवेरने प्रसन्न होकर विभीषणको यक्ष और राक्षसोंका सेनापति बनाया। उसी समय मनुष्यभक्षी राक्षस महा बलवान पिशाच और सबने मिलकर रावणको राजा बनाया। रावणने राजा होकर देवता और दानवोंसे युद्ध करके रत्नोंको छीन लिया। रावण काम-रूपी और आकाशचारी था। इसने सब लोकोंको रुलाया, इस लिये उसका नाम रावण हुआ। उसने राजा होकर देवतोंको बहुत दुःख दिया।

२७४ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे महाराज युधिष्ठिर। तब एकदिन ब्रह्मऋषि, सिद्ध और देवर्षि लोग अग्निको आगे करके ब्रह्माजीके पास गये अग्नि बोले, हे भगवन्! आपने जो महाबलवान रावणको वरदान देकर अवध्य कर दिया है; सो अब सबको बहुत दुःख देता है, वह महा बलवान रावण सब जगतको वाधा दे रहा है, इस लिये, आप हमारी रक्षा कीजिये, आपके सिवा और कोई रक्षा नहीं कर सकता है। ब्रह्मा बोले, हे अग्ने। उसको देवता और दानव कोई नहीं मार सकते है, इस लिये उसका जीतना बहुत कठिन है, इसी लिये भगवान विष्णुने हमारी प्रार्थनासे जगतमें अवतार लिया है, शस्त्र चलानेवालोंमें श्रेष्ठ विष्णुही इस कामको सिद्ध कर सकते है। श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, अनन्तर ब्रह्माजीने सब देवतोंके सहित इन्द्रसे कहा कि तुम लोग विष्णुकी सहायताके लिये रीछ और वानरोंकी स्त्रियोंके गर्भमें अवतार लो और अपने वीर्य्यसे बलवान पुत्रोंको उत्पन्न करो। ब्रह्माके ऐसे वचन सुन देवता दानव और गन्धर्वोंने अपने अपने अंशोंसे अवतार लेनेकी सम्मति करी। उसी समय भगवान ब्रह्माने दुन्दुभी नामक गन्धर्व्वीसे कहा कि तुम देवतोंके कार्य्यकी सिद्धिके लिये पृथ्वीमें अवतार लो। वरदान देनेवाले ब्रह्माजीकी आज्ञा सुन दुन्दुभी नामक गन्धर्वीने पृथ्वीमें अवतार लिया और उसका नाम मन्थरा हुआ। इन्द्रादिक देवतोंने उत्तम उत्तम वानरोंकी स्त्रियोंके गर्भमें पुत्र उत्पन्न किये। इसी प्रकार रीछोंकी स्त्रियोंके गर्भसेभी पुत्र उत्पन्न हुए। वे सब लोग बल और यशमें देवतोंके समान थे; पर्व्वतोंके शिखरोंको तोड़ सकते थे; शाल ताड़ आदि वृक्ष ही उनके शस्त्र थे; उन लोगोंका बल अत्यन्त था। वे लोग इच्छानुसार शरीर और बलको धारण कर सकते थे, सब लोग युद्ध विद्याके पण्डित सहस्र हाथियोंके समान बलवान वायुके समान तेज चलनेवाले और इच्छानुसार निवास करनेवाले थे। भगवान ब्रह्माने ये सब प्रबन्ध करके मन्थराको सब काम बता दिया। मन्थरा ब्रह्माके वचन स्वीकार करके इधर उधर घूमने लगी और वैर करानेके लिये समय देखने लगी।

२७५ अध्याय समाप्त।

महाराज युधिष्ठिर बोले,, हे भगवन! आपने राम आदिका जन्म हमसे वर्णन किया, अब आप उनके बन जानेका वर्णन कीजिये, दशरथके पुत्र वीर राम और लक्ष्मण यशस्विनी सीताको सङ्गमें लेकर बनको क्यों गये थे? श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे नरनाथ। जब महाराज दशरथके चार पुत्र उत्पन्न हो गये तब दशरथ परम प्रीतिसे क्रिया कर्म्म और बड़ोंकी सेवा करने लगे, महाराजके चार पुत्र महा तेजस्वी वेद और वेदाङ्गोंके जाननेवाले धनुर्वेदके पारगामी और ब्रह्मचारी

थे। अनन्तर महाराजने चारों पुत्रोंका विवाह कर दिया। उस समय महाराज दशरथ बहुत प्रसन्न हुए। उन चारों भाइयोंमें बड़ेका नाम राम था। उनसे प्रजा बहुत प्रसन्न रहती थी। बुद्धिमान राम बहुत साधु थे, इसीसे उनके पिता बहुत प्रसन्न रहते थे। हे भारत! जब बुद्धिमान दशरथने देखा कि मैं बृद्ध होगया तब धर्म्म जाननेवाले मन्त्री और पुरोहितोंको बुलाकर रामको युवराज करनेकी सम्मति पूछी। मन्त्रियोंने भी उचित समय जानकर स्वीकार किया। हे कुरुनन्दन! महाराज दशरथ लाल नेत्रवाले, महाबाहु, मतवाले हाथीके समान चालवाले, ऊंचे कन्धे और काले बालवाले, महातेजस्वी, इन्द्रके समान योद्धा बृहस्पतिके समान बुद्धिमान, सब धर्मोंके जाननेवाले, सब विद्याओंके पण्डित, सबके प्यारे, जितेन्द्री, शत्रुवोंको भी मनोहर, दुष्टोंको दण्ड देनेवाले, धर्म्मात्माओंके रक्षक बुद्धिमान और जीतनेवाले रामको देखकर बहुत प्रसन्न हुए। महा तेजस्वी दशरथ बलवान रामके गुणोंको विचारकर अपने पुरोहितसे बोले, हे ब्रह्मन्! आपका कल्याण हो, आज प्रातःकाल पुष्य नक्षत्र आवेगा, इससे सब सामग्री इकट्ठी करो और रामको निमन्त्रण दे आओ। महाराजकी ऐसी आज्ञाको सुन मन्थरा कैकेयीके पास गई, और अच्छा समय जानकर कहने लगी, हे कैकेयी। आज राजाने तुमको महा दुःख देनेका उपाय किया है, हे दुर्भागिनी। यदि तुझको घोर सर्प काट ले और तू मर जाय तो अच्छा हो, कौशल्या बड़ी भाग्यवती है, जिसका पुत्र प्रातःकाल राजा होगा, तुम बड़ी दुर्भागिनी हो जिसका पुत्र राजा न हुआ। मन्थराके ऐसे वचन सुन महा सुन्दरी कैकेयी सब आभूषण पहिनकर वेदीपर बैठी और राजाको एकान्तमें बुलाकर विनय करके हंसती हुई मीठे वचनसे बोली, हे सत्यप्रतिज्ञ महाराज। तुमने जो हमको दो वरदान दिये थे, उनको आज सत्य कीजिये। महाराज बोले, हे कल्याणि। जो तुम्हारी इच्छा हो सो वरदान मांगो, हम तुम्हे देंगे तुम्हारे कहनेसे न मारने योग्य भी पुरुष मारा जायगा और मारने योग्य छोड़ दिया जायगा, कहो कौनसे निर्धनको धनी कर दूं और कौनसे धनीको निर्धन कर द; ब्राह्मणोंके धनको छोड़कर और जो कुछ मेरे पास है, सो सब तुम्हारे कहनेसे दान कर सकता हूं, मैं पृथ्वीमें राजोंका महाराज हूं, चारो वर्णोंकी रक्षा करता हूं, इससे जो तुम्हारी इच्छा हो सो वरदान तुम शीघ्र मांगो। राजाके ऐसे बचन सुन और अपनेको प्रबल जान कैकेयी बोली, तुमने जो रामके अभिषेकके लिये सामग्री इकट्ठी की हैं, उससे भरतका अभिषेक हो और राम बनको जाय। राजाने ऐसे कठोर और अप्रिय कैकेयीके वचन सुनकर कुछ न कहा और व्याकुल होगये। जब बलवान रामने इस समाचारको सुना तो महाराजकी प्रतिज्ञा सत्यहो ऐसा कहकर वनको चले गये। उनके पीछे धनुष धारण करके श्रीमान् लक्ष्मण भी उनके सङ्ग चले, उनके पीछे विदेह राजनन्दिनी सीता भी चलीं। रामके जानेके पश्चात महाराज दशरथ स्वर्गको चले गये। जब कैकेयीने देखा कि राम वनको चले गये, तब भरतको बुलाकर कहा कि राजा दशरथ तो स्वर्गको चले गये और राम लक्ष्मण वनवासी होगये अब तुम इस बड़े भारी राज्यको ग्रहण करो। माताके ऐसे बचन सुन धर्म्मात्मा भरतने कहा, हे कुलकलङ्किनी मा। तैंने धनके लोभसे अपने पतिको मार डाला और अयशकी मोट मेरे सिर पर धर दी; अब तू प्रसन्न होकर अपनी इच्छानुसार काम कर। ये कहकर भरत रोने लगे। अनन्तर सब सभासदोंको बुलाकर सबके आगे कहा कि यह काम मेरी सम्मतिसे नहीं हुआ; कैकेयीने अपनी इच्छा

अनुसार किया है। अनन्तर भरत रामको लौटाने के लिये चले। सबसे पहिले कौशल्या, सुमित्रा और कैकेयी चलीं; उनके पीछे शत्रुघ्नके सहित भरत चले, फिर वशिष्ठ और वामदेव ब्रह्मर्षियोंके सहित सहस्रो ब्राह्मण, उनके पीछे नगर और सेनाके लोग चले। भरतने चित्रकूट पर्व्वत पर लक्ष्मणके सहित रामको देखा कि मुनियोंका वेष धारण किये धनुष हाथमें लिये बैठे हैं। रामने भरतको बहुत समझाया और कहा कि मेरे लौटनेसे पिताके वचन असत्य होजायगे। तब भरत अयोध्याको लौट आये और रामकी खड़ाऊं रखके नन्दिग्राममें राज्य करने लगे। रामने जाना कि यहां फिर भी नगर निवासी आवेंगे, तब वहांसे वहां,घोर वनको चले गये, वहांसे सरभङ्ग मुनिके आश्रमपर पहुंच वहां सरभङ्ग मुनिकी पूजा करके दण्डकारण्य वनको चले गये, वहां रमणीय गोदावरीके तटपर रहने लगे, उस वनमें सूर्पनखाके कार्य्यसे जनस्थान निवासी खर नामक राक्षससे घोर वैर होगया। धर्म्मप्रिय रामने मुनियोंकी रक्षाके निमित्त चौदह सहस्र राक्षसोंको मारा उसी युद्धमें महा बलवान खर और दूषणभी मारे गये। तब बुद्धिमान रामने उस वनको धर्म्मस्थान बना दिया। उन राक्षसोंके मरनेके पश्चात सूर्पणखा लङ्कामें रावणके घर गई और मूर्च्छित होकर रावणके चरणोंमें गिर पड़ी। सूर्पनखाके मुखका रक्त सूख गया था। सूर्पनखाकी यह दशा देख रावणको बड़ा क्रोध हुआ। वह अपने दांतोंसे दांतको चावने लगा और सिंहासनपर कूदने लगा। तब रावणने अपनी सभाको विसर्जन किया और सूर्पनखाको एकान्तमें बुलाकर पूछने लगा, हे भद्रे। मेरा निरादर करके तुम्हारी यह दशा किसने कर दी? कौन घोर त्रिशूलपर बैठकर अपने शरीरको काटना चाहता है? किसने जलती हुई अग्निको अपने सिरहाने रखकर सुखसे सोनेकी इच्छा करी है? कौन मूर्ख विष भरे सर्पको लातमें मारना चाहता है? कौन घोर बलवान सिंहके दांत उखाड़ना चाहता है। ऐसा कहते हुए रावणके कान नाकसे अग्निकी ज्वाला निकलने लगीं, उस समय रावणकी ऐसी शोभा हुई जैसे रातमें जलते हुए वृक्षकी। तब सूर्पनखाने रामका सब बल कह सुनाया और कहाकी चौदह सहस्र राक्षसोंके सहित खर दूषणभी मरे गये। तब रावणने सूर्पनखाको शान्त किया और रामके मारनेका विचार करने लगा। राजा रावणने अपने सब नगरका प्रबन्ध ठीक किया, उसके पश्चात रथपर बैठ त्रिकूटाचल और काल पर्व्वतको नांघकर रमणीय समुद्रको देखता हुआ, आकाश मार्गसे गोकर्णकी ओर चला। वह गोकर्ण शूलधारी महात्मा शिवका अत्यन्त प्रिय स्थान है; वहां रावणने जाकर मारीचको देखा; वह मारीच पहिलेहीसे रामके डरके मारे उस स्थानमें आपड़ा था।

२७६ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन युधिष्ठिर! रावणको देखकर मारीच घबड़ाकर उठा और फल तथा मूलसे उसकी पूजा करी। जब सुखपूर्व्वक राक्षसराज आसन पर बैठे, तब मारीच बोला, हे राक्षस नाथ! आप यहां किस लिये आये हैं? यदि वह काम बहुत कठिन हो तोभी सिद्ध हो जानिये। तब पण्डित रावणने अर्थ जाननेवाले मारीचसे तब वृत्तान्त अर्थपूर्व्वक कह सुनाया। तब मारीच बोला, हम तुमको सावधान नहीं देखते, कहा तुम्हारे नगर और घरमे कुशल तो है? कहो तुम्हारे आधीन राजा लोग तुम्हारी सेवा तो करते हैं? तब रावणने रामके सब पराक्रमको मारीचसे कह सुनाया और क्रोध करके सब यत्तिभी कह

सुनाई। रावणके वचन सुन मारीच कहने लगा कि रामसे वैर करना वृथा है, क्योंकि हम उनके पराक्रमको जानते हैं, उस महात्माके वाणवेगको इन्द्र भी नहीं सह सकते हैं, उसी पुरुषसिंहने मुझे यहां फेंक दिया है, किस मूर्खने तुमको यह नाशका द्वार बता दिया है। तब रावणने क्रोधसे डराकर मारीचसे कहा हे मारीच! जा तू मेरे वचनको नहीं मानेगा तो हम तुमको अभी मारडालेंगे। मारीचने विचारा कि श्रेष्ठ पुरुषके हाथसे मरना अच्छा है, अब मेरी मृत्यु प्राप्त हो गई। ऐसा विचार कर मारीच बोला, कहो हम तुम्हारी सहायताके लिये कौनसा कर्म्म करें? तब दशमुख रावणने कहा कि तुम अपने शरीरको रत्न और सोनेका बनाओ और हरिनका रूप धारण करके रत्नके सींग बनाओ, ऐसा विचित्र रूप बनाकर जब तुम सीताके आगे जाओगे तो वह अवश्य तुम्हारे मारनेके लिये रामको भेजेंगी; जब राम आश्रमसे निकलके चले जायंगे, तब सीता मेरे वशमें हो जायगी, तब मैं सीताको लेकर लङ्काको चला आऊंगा, तो राम आपही मर जायंगे, वह दुर्बुद्धि राम स्त्रीके वियोगमें कभी जीता नहीं रहेगा, इस लिये तुम हमारी यही सहायता करो। मारीचने उसके वचनको स्वीकार करके अपना श्राद्ध किया, फिर दुःखी होकर रावणके साथ चला। जब ये दोनों उत्तम कर्म्मकारी रामके आश्रम पर पहुंचे तब उन दोनोंने वही कर्म्म किया जिसकी सम्मति पहिले कर चुके थे। रावणने तीन दण्ड धारण किये और सिर मुड़ाकर कमण्डलु धारण किया और मारीचने हरिनका रूप धारणकर लिया। तब वे दोनों रामके आश्रमपर पहुंचे। मारीचने अपना रूप सीताको दिखाया, तब सीताने रामसे कहा कि इस हरिनको मारो। राम उनकी प्रसन्नताके लिये धनुष लेकर शीघ्र दौड़े और सीताकी रक्षाके लिये लक्ष्मणको वहीं छोड़ गये। राम तुणीर और खड्ग धारण करके उस हरिनके पीछे इस प्रकार दौड़े जैसे हरिण रूपधारी प्रजापतिके पीछे शिव दौड़े थे। उस समय मारीच कहीं प्रगट और कहीं गुप्त हो जाता था, इस प्रकार राम मारीच के पीछे बहुत दूरतक दौड़े गये। तब बुद्धिमान रामने जान लिया कि यह राक्षस है, तब धनुषपर महा बाणको चढ़ाकर मारा। उस बाणके लगनेसे मारीचने मरते समय रामका ऐसा शब्द बनाकर लक्ष्मण और सीताको पुकारा। उस रोनेके शब्दको सुनकर सीता उसी ओरको दौड़ी तब लक्ष्मणने सीतासे कहा, हे भीरु! जगतमें ऐसा कौन है जो रामको मारेगा? इस लिये शङ्का करना वृथा है, तुम एक क्षणके पश्चात अपने पति रामके दर्शन करोगी। लक्ष्मणके ऐसे वचन सुन सीताको बड़ा दुःख हुआ और रो कर कहने लगी, रे मूर्ख! मैं सती और पतिव्रता हूं, मेरा चरित्र ही मेरा आभूषण है, जो बात तू अपने हृदयमें विचारता है, वह कभी नहीं होगी, मैं किसी शस्त्रसे आत्महत्या करूंगी अथवा पर्व्वतसे गिरकर मर जाऊंगी या जलती हुई अग्निमें प्रवेश कर जाऊंगी परन्तु सिंहरूपी रामको छोड़ तुझ सियारकी इच्छा नहीं करूंगी। रामके प्यारे उत्तम चरित्र वाले लक्ष्मणने सीताके ऐसे कड़े वचनोंको सुनकर अपने कानोंको बन्द कर लिया और धनुष उठाकर जिधरको राम गये थे, उधरहीको चले गये, परन्तु पीछे फिर कर सीताको देखते ही रहे। लक्ष्मणके जानेके पश्चात रावण रामके आश्रममें आया, उस दुष्ट रावणने सन्यासीका वेष बनाया। उस समय रावणकी ऐसी दशा हुई जैसे राखसे छिपी हुई अग्निकी। उस दुष्टने पतिव्रता सीताको हरनेकी इच्छा करी। जब धर्म्म ... सीताने देखा कि हमारे आश्रमपर एक ... आया है, तब उन्होंने उसे खानेको फल

ल दिये, तब उसने उन सबका निरादर किया और अपना रूप धारणकर सीतासे बोला, हे सीते। मैं राक्षसराज रावण हूं, मेरी रम्य लङ्कापुरी समुद्रके पार है, अब तुम मेरे सब स्त्रियोंके सहित मेरे सङ्ग वहीं विहार करना। हे सुन्दरी। तुम रामको छोड़ दे और मेरी स्त्री हो जा। सुन्दरी सीताने रावणके ऐसे कठोर वचनोंको सुनकर अपने कानोंको बन्द कर लिया, और कहा कि ऐसा नहीं हो सकता, चाहे सब तारे पृथ्वीमें गिरें चाहे पृथ्वी फट जाय, चाहे अग्नि ठण्ढी होजाय, पर मैं रामको नहीं छोड़ूगी; भला मतवाले हाथीकी स्त्री सूअरको कब छू सकती है? भला ऐसी कौन सी स्त्री होगी, जो सहृए और दाखके मद्यको छोड़कर काजीकी इच्छा करे? रावणसे ऐसा कहकर सीता अपनी कुटीके भीतर चली गई उस समय क्रोधके मारे सीताके ओठ फरकने लगे, और हाथोंको चलाने लगी। तब रावणने दौड़कर सीताको पकड़ लिया, और कठोर वचन कहने लगा। अनन्तर सीताके बाल पकड़कर कुटीसे खींच लिया। उस समय सीता मूर्च्छित हो गई। तब रावण उसको उठाकर आकाशको उड़ गया, तब तपस्विनी सीता हा राम हा लक्ष्मण कहकर रोने लगी। तब पर्व्वत पर बैठे हुए जटायुने सीताको देखा।

२७७ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले हे राजन् युधिष्ठिर। सम्पातीका भाई गरुड़का पुत्र महावीर जटायु नामक गिद्धराज महाराज दशरथका मित्र था, जब उसने देखा कि मेरी पुत्रवधू सीताको रावण लिये जाता है, तो क्रोध करके राक्षसनाथ रावणके पीछे दौड़ा और कहने लगा, हे निशाचर। तू सीताको छोड़ दे, मेरे आगेसे तू इसको नहीं छोड़ेगा तो हमसे जीता नहीं बचेगा। ऐसा कहकर रावणको अपने पञ्जोंसे मारने लगा। गिद्धके पञ्जे और चोंचसे चोट लगनेके कारण रावणके शरीरमें अनेक घाव होगये और उनसे इस प्रकार रुधिर बहने लगा कि जैसे पहाड़के झरनोंसे जल बहता है। रामके प्रिय गिद्धसे पीड़ित होकर रावणने खड्गसे जटायुके पर काट दिये; उस वर्षते हुए मेघके समान गिद्धको मारकर रावण सीताके सहित आकाश मार्गसे चला, सीताने जहां ऋषियोंका आश्रम देखा और नदी तथा तलाव देखा वहीं अपना एक एक भूषण डाल दिया। मनस्विनी सीताने एक पर्व्वतके शिखर पर पांच बन्दरोंको बैठे देखा, वहां उन्होंने अपना दिव्य वस्त्र डाल दिया। वह पीला वस्त्र वायुसे उड़ता हुआ, उन पांच बन्दरोंके बीचमें इस प्रकार गिरा कि जैसे पांच बादलोंके बीच बिजुली गिरती है। आकाशमें चलनेवाला रावण भी पक्षीके समान उड़ता हुआ अनेक द्वार मन्दिर और अटारियोंसे शोभायमान विश्वकर्म्माकी बनाई हुई दिव्य रमणीय लङ्कापुरीमें पहुंचा और सीताके सहित अपने मन्दिरमें प्रवेश किया।

इस प्रकार जब रावण सीताको ले गया, तब बुद्धिमान राम भी हरिनको मारके लौटे। तब उन्होंने देखा कि लक्ष्मण चले आते हैं। तब रामने लक्ष्मणसे कहा, हे लक्ष्मण! तुम इस राक्षस भरे बनमें अकेली सीताको छोड़कर किस प्रकार चले आये। रामने मृग रूपधारी राक्षसके सङ्ग चले आने और लक्ष्मणके आगमनको विचारकर बहुत सोच किया। फिर लक्ष्मणकी निन्दा की और कहने लगे, हे हे लक्ष्मण। शीघ्र आश्रमको चलो, देखो सीता जीती है या नहीं, लक्ष्मणने सीताके सब कठोर वचनोंको कह सुनाया। सुनकर रामका हृदय जलने लगा। तब वे दोनों आश्रमको चले। मार्गमें पर्व्वतके समान पड़े हुए जटायुको देखा। राम और लक्ष्मणने उसको राक्षस जानकर धनुष खींचा और उसकी ओरको दौड़े। उसने

कहा तुम लोगोंका कल्याण हो; मैं महाराज दशरथका मित्र जटायु नामक गिद्ध हूं। उसकी बचन सुनकर उन दोनोंने धनुषको उतार लिया, और कहने लगे कि यह हमारे पिताका नाम लेनेवाला कौन है? तब दोनोंने उसके पास जाकर देखा कि एक पङ्ख कटा हुआ पक्षी ,पड़ा है। तब गिद्धने सीताके निमित्त रावणसे लड़नेका और अपने मृत्युका सब हाल रामसे कह सुनाया। अनन्तर रामने गिद्धसे पूंछा कि रावण किस ओर गया है। तब जटायुने अपने सिरको हिलाकर दक्षिणकी ओर बता दिया। उसी समय जटायु मर गया। तब रामने अपने पिताके मित्रकी क्रिया करी। फिर राम अपने आश्रमपर आये। आश्रमको नष्टभ्रष्ट और सहस्रों सियारोंसे भरा हुआ देख शोक और दुःखसे व्याकुल होगये। अनन्तर शत्रुनाशन राम और लक्ष्मण सीताके दुःखसे व्याकुल होकर दक्षिणकी ओरको चले, तो राम और लक्ष्मणने उस घोर वनमें राक्षस और फिरते हुए हिरनोंके अनेक झूंड देखे। उस समय उस वनमें जन्तुओंका ऐसा घोर शब्द हो रहा था जैसे आग लगनेसे होता है। थोड़े समयके पश्चात उन्होंने कवन्ध नामक राक्षसको देखा, वह मेघ और पर्व्वतके समान शरीर वाला शालके वृक्षके समान ऊंचा बड़ा मुख और बड़ा पेट-वाला था। उस राक्षसने लक्ष्मणको अपने हाथसे पकड़ लिया। उसके पकड़नेसे लक्ष्मण रोने लगे। जब उस राक्षसने लक्ष्मणको पकड़ कर अपने मुखमें डालना चाहा, तब लक्ष्मण रोकर रामसे कहने लगे कि हमारी इस दशा-को आप देखिये, हे आर्य्य। सीताका चुराया जाना, हमारी यह दशा, पिताका मरना और राज्यका नष्ट होना ये सब आपत्तिया एकही वार आपके ऊपर पड़ीं, हमारी प्रारब्धमें यह नहीं था कि सीताके सहित अयोध्याको जायं और वहां सनातन राजसिंहासन पर बैठा आपको देखें; जो पुरुष आपका कुश लावा और दूबसे अभिषेक होते देखेंगे उनको धन्य है, जब आप राजसिंहासन पर बैठेंगे तो आपके मुखकी ऐसी शोभा होगी कि जैसे बादलसे निकले हुए चन्द्रमाकी। इस प्रकार कहकर लक्ष्मण रोने लगे। अनन्तर आपत्ति कालमें भी धीर राम बोले, हे पुरुषसिंह! तुम किसी प्रकार घबड़ाओ मत हमारे आगे यह राक्षस क्या वस्तु है? तुम इसके दहिने हाथको काट दो मै बांएको काटता हू। ऐसा कहकर रामने तीक्ष्ण खड्गसे उसकी बाईं भुजा को इस प्रकार काटकर गिरा दिया कि जैसे कोई तिलकी शाखाको काटता है। उसी समय बलवान लक्ष्मणने अपने भाई रामको खड़ा हुआ देखकर अपने खड्गसे उस राक्षसका दहिना हाथ काट लिया। अनन्तर उसके हाथसे छूटकर एक खड्ग उसकी पशुलीमें मारा तब वह राक्षस मर कर पृथ्वीमें गिर गया, तब उसके शरीरसे एक दिव्य पुरुष निकला और वह आकाशमे जाकर सूर्य्यके समान प्रकाशमान होने लगा। तब पण्डित रामने उससे पूछा कि तू कौन है? हमको तुम्हे देख कर बहुत आश्चर्य होता है, तुमने अपनी इच्छाके अनुसार यह रूप क्यो धारण किया था? तब उस गन्धर्व्वने रामसे कहा कि मैं विश्वावसु नामक गन्धर्व्व हू, मैंने ब्राह्मणके शापसे राक्षस योनिमें जन्म लिया था, लङ्कावासी राक्षस रावण सीताको लेगया है सो तुम सुग्रीवके पास जाओ, वह तुम्हारी सहायता करेगा, वह ऋष्यमुख पर्व्वतके तटपर हंस और सारसोंसे भरा हुआ पम्पा नामक तड़ाग है, इसका जल बहुत सुन्दर है, उसी ऋष्यमूक पर्व्वतपर चार मन्त्रियोंके सहित सुग्रीव निवास करते हैं, वे सुवर्ण मालाधारी वानरराज बालिके भाई हैं, तुम उनसे जाकर अपना सब दुःख कह देना

वह भी तुम्हारे समान शीलवान है, अवश्य तुम्हारी सहायता करेंगे। हम इतना कह सकते हैं कि तुम अवश्य सीताको प्राप्त करोगे क्योंकि वानरराज सुग्रीव रावणके घरको जानते हैं। ऐसा कहकर वह महा तेजस्वी दिव्य पुरुष अन्तर्धान होगया। तब वीर राम और लक्ष्मणको बहुत आश्चर्य्य हुआ।

२७८ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! तब सीताके दुःखसे व्याकुल राम वहांसे चले और अनेक कमलोंसे भरे हुए पम्पासर पर पहुंचे। वहां अमृतके समान सुगन्धि वाले शीतल वायुके लगनेसे रामको सीताका स्मरण हुआ। महाराज राम कामसे व्याकुल होकर सीताको स्मरण करके रोने लगे। तब लक्ष्मणने उनसे कहा हे आर्य्य। तुम्हारे ऐसे पुरुषको दुःख न होना चाहिये, उत्तम आचारसे रहनेवाले पुरुषको रोना नहीं चाहिये, आपको उचित है कि सीता और रावणको ढूंढ़ें; फिर अपने बल बुद्धिसे रावणके मारनेका उपाय कीजिये, चलिये हम वानरराज सुग्रीवसे मिलें, मैं आपका दास, शिष्य और सहायक हूं, इससे घबड़ाइये मत। लक्ष्मणके अनेक वचनोंको सुनकर राम सावधान हुए और उपायका विचार करने लगे। रामने पम्पाके जलमें स्नान किया और पितरोंका तर्पण किया। फिर दोनो आगेको चले, वहांसे चलकर राम और लक्ष्मण अनेक फूल और मूलसे भरे हुए ऋष्यमूक पर्व्वत पर पहुंचे। उन्होंने पर्व्वत पर बैठे हुए पांच बन्दरोंको देखा। तब सुग्रीवने हिमाचलके समान शरीरवाले बुद्धिमान मन्त्रीको रामके पास भेजा। तब उससे वार्त्तालाप करके वे दोनो सुग्रीवके पास गये। हे महाराज! तब रामने सुग्रीवके साथ मैत्री करी और अपना सब प्रयोजन कह सुनाया, तब सुग्रीवने रामको सीताका वह वस्त्र दिखाया जो सीताने जाती बार गिरा दिया था। तब रामने सुग्रीवको बांदरोंका राजा बनाया और अपने हाथसे उसका अभिषेक किया। फिर रामने बालिके मारनेको प्रतिज्ञा करी और सुग्रीवने सीताके लानेकी प्रतिज्ञा करी। तब उन्होंने परस्पर विश्वास करके मित्रताको दृढ़ किया। फिर वे सब लोग युद्धकी इच्छा करके किष्किन्धाको गये। किष्किन्धाके द्वार पर जाकर सुग्रीव बड़े वेगसे गर्जा। सुग्रीवका शब्द सुनतेही बालिको महा क्रोध हुआ और उससे युद्ध करनेकी इच्छा करके चलना चाहा। तब उसकी स्त्री ताराने उसको निवारण किया और कहने लगी कि बलवान वानर सुग्रीव जिस प्रकार गर्ज रहा है इससे जान पड़ता है कि अवश्य इसका कोई सहायक है, इस लिये तुम युद्ध करने मत जाओ; वानरराज सुवर्ण मालाधारी पण्डित, चन्द्रमुखी ताराके वचन सुनकर बोला तुम सब जन्तुओंकी बोलीको जानती हो बुद्धिसे विचार करो कि सुग्रीवने किसका आश्रय लिया है। अनन्तर चन्द्रमुखी ताराने एक मुहूर्त्ततक विचार कर कहा कि हे बानरराज! आप सब बिचारको सुनिये। दशरथ पुत्र रामकी स्त्रीको रावण चुरा कर लेगया है, वही धनुषधारी राम सुग्रीवके मित्र हुए हैं, उनके भाईका नाम महाबाहु लक्ष्मण है, वे सुमित्राके पुत्र युद्धमें अपराजित और बुद्धिमान हैं, वेही सुग्रीवके कार्य्य सिद्धिके लिये उपस्थित हुए हैं; द्विविद मयन्द, बायुपुत्र हनुमान और ऋक्षराज जाम्बुवान ये चारों सुग्रीवके मन्त्रीभी सुग्रीवके समान हैं, ये सब लोग बुद्धिमान बलवान और महात्मा हैं, सुग्रीव रामके आश्रयसे तुमको मारनेमें समर्थ है, उससे युद्ध करनेको मत जाओ। बानरराज बालिने उसके वचनको स्वीकार न किया और जाना कि यह सुग्रीवसे मिली है। तब ताराको बालिने छोड़कर वहांसे चल दिया और माल्य-

वान पर्व्वतके नीचे खड़े हुए सुग्रीवसे कहने लगा कि मैंने तुझको युद्धमें जीत लिया था, तब तू अपने जीवको लेकर भाग गयाथा, मैंने भी जाति जानकर तुझको छोड़ दिया था; अब मरनेके लिये इतनी शीघ्रता करके क्यों आया? बालिके ऐसे बचन सुनकर शत्रुनाशन सुग्रीवने हेतुके सहित रामको सुनाकर बालिसे कहा, हे राजन्। आपने मेरा राज्य छीन लिया, मेरी स्त्रीको छीन लिया तब मैंने विचारा कि अब मैं जीकर क्या करूंगा, इस लिये अब युद्ध करनेको आया हूं। ऐसा कहकर बाली और सुग्रीव अनेक प्रकारसे युद्ध करने लगे; कभी शिला और कभी हाथोंसे मारते थे, कभी मुक्के और दांतोंहीको शस्त्र बनाते थे; कभी एक दूसरेको पृथ्वीमें रगड़ता था कभी दोनों खड़े होकर युद्ध करने लगते थे, दोनों नाखून और दांतोंके लगनेसे रुधिरसे भींग गये। उस समय उन दोनोंकी ऐसी शोभा हुई जैसे फूले हुए टेसूकी। उन दोनोंके रूपमें भेद कुछ न दिखाई दिया तब हनुमानने सुग्रीवको एक माला पहिनादी उस मालासे सुग्रीवकी ऐसी शोभा बढ़ी जैसी मेघोंसे महा पर्व्वत मलयाचलकी शोभा होती है। जब रामने सुग्रीवके गलेमें चिह्न देख लिया, तब महा धनुषपर बाण चढ़ाकर खींचा और बालिको लक्ष बनाया। उस समय रामके धनुषकी टङ्कार ऐसे वेगसे हुई जैसे किसी यन्त्र (कल) की होती है। जिस समय वह बाण बालिके हृदयमें लगा उस समय बालि घबड़ाकर पृथ्वीमें गिर पड़ा, उस बाणके लगनेसे बालिका हृदय फट गया, और मुखसे रुधिर गिरने लगा। जब बालि पृथ्वीमें गिर गया तब उसने लक्ष्मणके सहित रामको खड़ा देखा। तब उसने रामको अनेक गालियां दी और मूर्च्छित होकर पृथ्वीमें गिर गया। तब चन्द्रमाके समान तेजस्वी बालिके मरनेके पश्चात सु- किष्किन्धामें गया, और वहां चन्द्रमुखी ताराके सहित सब राज्यको प्राप्त किया। राम भी सुन्दर माल्यवान पर्व्वतके ऊपर वर्षा ऋतु भर रहे। सुग्रीव बुद्धिमान रामकी सेवा करते रहे।

जब रावण अपनी रमणीय लङ्कापुरीमें पहुंचा, तब सीताको नन्दनके समान एक बागमें रख दिया, परन्तु रावण कामसे व्याकुल हो गया। सीता भी उस मुनियोंके आश्रमके समान अशोक वनमें तपस्विनीका वेष धारण करके रामका स्मरण करने लगी। सुन्दरी सीता उपवास करके केवल रामका स्मरण करते लगी; कभी फलमूल खा लेती थीं। राक्षसराज रावणने सीताकी रक्षाके लिये अनेक राक्षसियोंको रख दिया। वे राक्षसियां प्रास खड्ग, त्रिशूल, फरसा और मुद्गर आदि अनेक शस्त्रोंको धारण करके सीताके पास रहने लगीं, कोई एक नेत्रवाली, किसीके दो नेत्र किसीके तीन नेत्र, किसीके माथेमें नेत्र, किसीके बड़ी जिह्वा और किसीके जिह्वाही नहीं, किसीके तीन स्तन, किसीके एक चरण, और किसीके तीन जटा थीं, इत्यादिक अनेक रूपवाली राक्षसियां सीताकी रक्षा करने लगीं। उनके नेत्र बड़े प्रकाशमान और बड़े बड़े तथा उनके बाल भी प्रकाशमान रूपवाले थे। वे राक्षसियां दिन रात आलस रहित होकर सीताके पास बैठी रहती थीं। वे दारुण पिशाचरूपधारणी राक्षसियां विशालनैनी सीताको डराया करती थीं। वे लोग कहती थीं, कि यह दुष्टा हमारे स्वामी रावणका निरादर करके जीती है इसलिये हम इसको खाजायं, चीरडालें, तिलके समान टुकड़े कर डालें। वे सब लोग सीताको डराकर बार बार ऐसे ही वचन कहती थीं। तब सीता रामके शोकसे व्याकुल होकर और सांस लेकर इस प्रकार उत्तर देती थी, हे स्त्रियो! तुम हमको शीघ्र खाजाओ, क्योंकि मैं अपने

पानेका लोभ नहीं करती हूं, क्योंकि उन वृष जाले बालवाले रामके विना जीकर मैं क्या करूंगी, इसी लिये मैं निराहार होकर अपने जीवनको त्यागना चाहती हूं; मैं अपने शरीरको इस प्रकार सुखा दूंगी, कि जैसे ताड़के वृक्षपर सर्पिनी। मैं रामको छोड़कर दूसरे पुरुषकी कभी इच्छा नहीं करूंगी। हमारी इस प्रतिज्ञाको सत्य जानकर जो उच्छा हो, सो करो। घोर शब्द-वाली राक्षसिया सीताके ऐसे वचन सुन ये सब समाचार कहनेको राक्षसराज रावणके पास गईं। जब वे सब राक्षसिया वहांसे चली गईं तब धर्म्म जानने वाली प्रियवादिनी त्रिजटा नामक राक्षसी सीताको प्रसन्न करके बोली, हे वैदेही! हे सखी। हम तुमसे एक बात कहती हैं, तुम उसका विश्वास करो, तुम भयको छोड़ दो और हमारे वचनोंको ग्रहण करो बुद्धिमान राक्षसश्रेष्ठ बूढ़ा अविन्ध रामका हित चाहता है; उसने हमसे कह दिया था, कि तुम सीतासे जाकर हमारे वचन कहना और प्रसन्न करके उसको धीरज देना, तुम्हारे पति श्रीमान राम लक्ष्मणके सहित सुखी हैं, उन्होंने इन्द्रके समान तेजस्वी वानरराज सुग्रीवसे मित्रता करी है, और तुम्हारे लिये बहुत उद्योग कर रहे हैं, तुम इस नीच रावणसे कुछ भय मत करो; जिस समय यह अजितेन्द्रिय दुष्ट रावण नलकूबरकी स्त्री रम्भाके पीछे दौड़ा था, तबही नलकूबरने इसको शाप दिया था, तबसे यह किसी स्त्रीके सङ्ग हठ नहीं कर सकता, तुम्हारे पति बुद्धिमान राम सुग्रीव और लक्ष्मणके सहित शीघ्र यहां आवेंगे, और तुमको इस दुःखसे छुड़ावेंगे, मैंने महा घोर अशुभ स्वप्न भी रातमें देखा है, उस स्वप्नका फल यह होगा, कि यह दुर्बुद्धि कुलनाशक रावण मारा जायगा, यह दुष्ट राक्षस महापापी क्षुद्रकर्म्मकर्त्ता, स्वभावहीसे सबको भयङ्कर है, यह कालके वशमें होकर सदा सब देवतोंका डाह करता है; इस दुष्टके लक्षण मैंने स्वप्नमें देखे हैं, मैंने यह देखा है, कि दशमुख रावण तेलमें स्नान करके और सिर मुड़वाके कीचमें स्नान करता है, और गन्धोंके रथपर बैठकर नाचता है, और ये कुम्भकर्ण आदि राक्षस लालमाला चन्दन लगाकर तथा वस्त्र और बालोंसे रहित होकर दक्षिण दिशाको जाते हैं, केवल विभीषण ही सफेद माला चन्दन छत्र और पगड़ी धारण करके सफेद पर्व्वतके ऊपर बैठे हैं। विभीषणके चारो मन्त्री सफेद मालाको धारण करके हम लोगोंको इस दुःखसे छुड़ावेंगे, मैंने उन लोगोंको भी सफेद पर्व्वतके ऊपर बैठे देखा है, और यह भी देखा है, कि ये समस्त पृथ्वी तुम्हारे पति रामके बाणोंसे व्याप्त हो रही है और उनका यश जगतमें फैल रहा है। लक्ष्मण हड्डियोंके पर्व्वत पर बैठे हुए, मधु और घी खा रहे हैं, तथा अपने तेजसे सब दिशाओंको जला रहे हैं; तुमको भी मैंने स्वप्नमें इस प्रकार देखा है, कि तुम रुधिरसे भींग रही हो और सिंहसे रक्षित होकर उत्तरकी ओर जाती हो। हे वैदेही। तुम लक्ष्मणके सहित अपने पतिसे मिलकर शीघ्र आनन्दको प्राप्त होगी, सन्देह मत करो। कमलनैनी सीता त्रिजटाके ऐसे वचन सुनकर प्रसन्न हुई और उसने अपने पतिसे मिलनेकी दृढ़ आशा करी। उसी समय वे घोर राक्षसिया वहां आगईं, उन्होंने सीताके सङ्ग त्रिजटाको बैठे हुए देखा।

२७६ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन युधिष्ठिर। अनन्तर पतिके शोकसे व्याकुल, दुःखिनी, मलिन वस्त्रधारिणी, रोती हुई मणिमात्र भूषण धारिणी, पतिव्रता राक्षसियोंके बीचमें शिलापर बैठी हुई सीताके पास कामपीड़ित रावण आया। जो रावण देव, दानव, गन्धर्व्व

यक्ष, राक्षस और किमपुरुषोंसे भी युद्धमें नहीं हारता था, वह कामके वाणसे पीड़ित होकर अशोक बाटिकामें सीताके पास आया। दिव्य वस्त्र; मनिमय कुण्डल और विचित्र माला तथा विचित्र मुकुटधारी रावणकी शोभा ऐसी जान पड़ती थी, जैसी मूर्त्तिधारी बसन्तकी। अनेक आभूषण धारण करनेपर भी उसकी शोभा कल्पवृक्षके समान नहीं थी, वरन ऐसा जान पड़ता था जैसा फूलने फलनेपर भी श्मशानका वृक्ष भयङ्कर होता है। रावण उस सुन्दरी सीताके पास जाकर इस प्रकार खड़ा हुआ जैसे रोहिणीके पास शनिश्चर। काम-पीड़ित रावणने सीतासे इस प्रकार वार्तालाप किया जैसे कोई डरी हुई हरिनीसे। रावण बोला, हे सीता। तैंने अपने पतिके ऊपर बहुत कृपा करी। हे सुन्दरी। अब हमारे ऊपर कृपा करो और वस्त्रादिको धारण करो, हे सुन्दर मुखवाली। बहुमूल्य वस्त्र और आभूषणोंको धारण करके हमारी सेवा करो, ऐसा करनेसे तुम हमारी स्त्रियोंमें श्रेष्ठ बनोगी; हे सुन्दर बरणवाली। मेरे यहां अनेक देव तथा गन्धर्व्वकी कन्या और स्त्रियां हैं, और दैत्य तथा दानवोंको स्त्रियां भी हैं चौदह कड़ोर पिशाच मेरे दास है, और अट्ठाइस कड़ोर राक्षस मेरे बचनमें रहते हैं, वे सब लोग मनुष्योंके खानेवाले, और घोर कर्म्म करनेवाले हैं उनसे तिगुने यक्ष लोग मेरे वशमें है, उनसे जो बचे वे सब मेरे भाई कुवेरके दास हैं, हे भद्रे। अप्सरा गन्धर्व्व और लोग मुझे देखकर इस प्रकार खड़े हो जाते हैं जैसे मेरे भाई कुवेरको, मैं साक्षात महामुनि विश्रवाका पुत्र हूं, जातिका ब्राह्मण हूं, मुझको सब लोग पञ्चम लोकपाल कहते है, मेरा यश सब जगतमे फैला है, मेरे घरमें चलनेसे तुम्हें दिव्य भोजन वस्त्र और पीनेकी वस्तु मिलेंगी, जो जो वस्तु इन्द्रके घरमें मिल सकती हैं, सो मेरे यहा भी प्राप्त होंगी, अब तुम वनवासके दुःखोंको छोड़ दो। हे सुन्दरी। तुम मेरी स्त्री हो जाओ, मैं तुमको मन्दोदरीके समान मानगा। रावणके ऐसे वचन सुन सुन्दर मुखवाली सीता एक तिनकेको अपनी आंखोंके आगे करके और नेत्रोंसे जल धारा बहाती हुई बोली पतिव्रता सीता क्षुद्र रावणसे कहने लगी, हे राक्षसेश्वर। तुमने जो मुझ अभागिनीसे कहा, सो मैंने अत्यन्त दुःखित होकर सुना, हे भद्र। तुम्हारा कल्याण हो, तुम अब इस इच्छाको छोड़ दो; मैं प्रतिव्रता और दूसरेको स्त्री हूं; इससे तुमको प्राप्त नहीं हो सकती, मैं मनुष्य जातिमें उत्पन्न हुई हूं, इससे तुम्हारा कुछ उपकार नहीं कर सकती, मुझको विवश करके स्त्री बनानेसे तुमको कुछ लाभ नहीं होगा; तुम्हारे पिता ब्रह्माके पौत्र और ब्रह्माके समान है, तुम धर्म्मका पालन नहीं करते हो, फिर लोकपाल कैसे हुए? तुम्हारे भाई शिवके मित्र धनेश्वर कुवेर हैं, क्या तुमको उनका नाम लेते कुछ भी लज्जा नहीं आती?

रावणसे ऐसा कहकर सीता रोने लगी, और कांपने लगी, सीताने अपने सिर और मुखको ढक लिया और पृथ्वीको देखने लगी। सीताकी रोते समय उनकी बड़ी वेणी इस प्रकार हिलने लगी, जैसे चिकने शरीरवाली काली नागिन सांस लेते समय हिलें। सीताके कठोर वचनों को सुनकर दुर्बुद्धि रावण बोला, हे सीते। कामदेव भले ही अपनी इच्छानुसार दुःख दे, परन्तु मैं उत्तम हंसनेवाली तुमसे बिना तुम्हारी इच्छा कुछ नहीं करूंगा, मैं तुम्हारे सङ्ग कुछ नहीं कर सकता। क्योंकि तुम अब तक हमारे भोजन मनुष्यका स्मरण करती हो। सुन्दरी सीतासे ऐसा कहकर राक्षसराज रावण वहीं अन्तर्धान हो गया, अर्थात अपने घरको चला गया, सीताभी शोकसे व्याकुल

होकर सब राचसियोंके समेत त्रिजटाके सङ्ग उसी बनमें रहने लगी ।

२८० अध्याय समाप्त ।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन युधिष्ठिर । सुग्रीवसे रचित होकर लक्ष्मणके सहित रामने वर्षाऋतु भर पर्व्वतपर निवास किया । वर्षाके पश्चात आकाश निर्मल होगया, चन्द्रमा शुद्ध होकर उदय होने लगा, नचत्र और तारा प्रकाशित होने लगे । उस समय कमल कुमु-दिनी और नीले कमलकी सुगन्धिसे सुगन्धित पर्व्वतके शीतल वायुने रामको जगाया, अर्थात रामने जाना कि शरद ऋतु आगई । तब परम धर्म्मात्मा रामने रावणके घरमें बंधी हुई, सीताका स्मरण करके और दुःखसे व्याकुल होकर वीर लच्मणसे कहा हे लच्मण ! तुम किष्किन्धाको जाओ और बानरराज सुग्रीवको देखो, वह स्त्रियोंके वशमें होगया है ; जान पड़ता है,कि वह कृतघ्नी केवल अपने प्रयोजनको पण्डित है , मैंन उस कुलाधमको राज्य दिया, मेरे प्रतापसे बन्दर, लंगूर और रीछ उसकी सेवा करते है, हे रघुकुलोत्तम। हे महाबाहो। जिस लिये मैने तुम्हारी सहायतासे किष्किन्धामें वालिको मारा है, उसी अवस्थाको वह नीच बन्दर सुग्रीव नहीं जानता । हे लच्मण । मुझे जान पड़ता है, कि वह मूर्ख मित्रताको पालन करना नहीं जानता, उस मूर्खकी बुद्धि बहुत कम है, इसीसे उसने उपकार करनेपर भी हमको नहीं माना , तुम जाकर देखो कि यदि वह सीताके लिये कुछ उद्योग न कर रहा हो और केवल कामके वशमें सोता हो, तो जिस मार्गसे वालि गया है, और जिस मार्गमें सब जगतके प्राणी जाते है, उसी मार्गमें तुम सुग्रीवको भेजना , यदि बानर-राज सुग्रीव हमारे लिये कुछ उद्योग करता हो, तो उसको लेकर शीघ्र हो हमारे पास चले आना । बड़ोंकी आज्ञा पालनेवाले लच्मण अपने भाईकी ऐसी आज्ञा सुन धनुष, रोदा, और वाणोंको लेकर किष्किन्धाको चले । उस किष्किन्धाके द्वारपर जाकर नगरके भीतर लच्मण चले गये । जब बानरराजसुग्रीवने सुना, कि लच्मण क्रोध करके किष्किन्धामें आये हैं, तब आपही उनके पास आए और उचित पूजा करी । निर्भय लच्मणने सुग्रीवसे रामके सब बचन कह सुनाये। रामकी आज्ञा सुन सुग्रीव हाथ जोड़कर स्त्री पुत्र और दासोंके सहित पुरुष-सिंह लच्मणसे कहने लगे, हे लच्मण ! मैं दुर्बुद्धि कृतघ्न और निर्लज्ज नहीं हूं, मैंने जो सीताके ढूढ़नेका उपाय किया है, सो सुनिये। मैंने सब दिशाओंको प्रधान बन्दरोंको भेजा है, और सबको एक महीनेका समय दिया है, वे सब लोग समुद्र पर्व्वत और नगरोंके सहित समस्त पृथ्वीमें सीताको ढूंढ़ते हैं , उनसे कोई गाव, नगर, वन और खान न बचेगी , अब उस महीनेमें पांच दिन शेष है अर्थात् पूरा होनेवाला है , तब तुम रामके सहित मीठे बचनको सुनोगे । बुद्धिमान बानरराज सुग्रीवके ऐसे बचन सुन तेजस्वी लच्मण शान्त हुए, और सुग्रीवकी प्रशंसा करने लगे, फिर सुग्रीव और लच्मणने माल्यवान पर्व्वतपर जाकर रामसे सब बृत्तान्त कह सुनाया । इस प्रकार सहस्रों बानर पूर्व्व पश्चिम और उत्तरको दिशाको देखकर लौट आये, परन्तु दचिणको कोई भी न गया । उन सबने आकर रामसे कहा, कि हम समुद्र पर्य्यन्त सब पृथ्वीका देख आये , परन्तु सोता और रावणको कहीं न पाया । जा बानर दचिणको ओर गये थे, राम उन्होंका मार्ग देखने लगे, और दुःखसे प्राणोको धारण करते रहे । दो महीने बीतनेके पश्चात वे लोग दचिणसे लौटे और सुग्रीवके बागमें जाकर फल खाने लगे । तब उनके रचकोंने जाकर सुग्रीवसे कहा, कि हे बानरराज । जिस मधु-वनकी रचा वालिने

और आपने की थी, उसको हनुमान खाते हैं, बालिपुत्र अङ्गद तथा और जो बानर लोग दक्षिणको ओर सीताको ढूंढ़ने गये थे, वे सब मधुबनको खा रहे हैं। उन सबके ऐसे वचन सुन सुग्रीवने बिचारा, कि जो सेवक कार्य्य सिद्धि कर लेते हैं, वे ही ऐसे ऐसे काम कर सकते हैं, हमें जान पड़ता है, कि वे लोग सीताको देख आये हैं। अनन्तर बुद्धिमान वानरराज सुग्रीवने ये सब समाचार रामसे कहा। रामने भी अनुमानसे जान लिया, कि ये लोग सीताको देख आये हैं। हनुमान आदि बानर सावधान होकर महाराज सुग्रीव तथा राम और लक्ष्मणके पास गये। रामने हनुमानका मुख और चेष्टा देखकर जान लिया, कि इसने सीताको देखा है। हनुमान आदि बन्दरोंने प्रसन्न होकर सुग्रीव लक्ष्मण और रामको प्रणाम किया। तब रामने बाणोंके सहित धनुष उठाके उन लोगोंसे कहा, क्या तुम लोग हमको जिलाओगे? क्या तुम लोग कार्य्यसिद्धि करके आये हो? क्या हम सब शत्रुओंको युद्धमें मारकर फिर सीताको पावेंगे? क्या हम अयोध्यामें फिर राज्य करेंगे? हम प्रण करते हैं कि बिना शत्रुओंको युद्धमें मारे, बिना स्त्रीके सन्यासीके समान नहीं जीयगे। रामके ऐसे वचन सुन हनुमान बोले, हे राम! हम आपसे प्रिय समाचार कहते है, हमने सीताको देखा है। जब हम पर्व्वत और गुफाओंके सहित सब दक्षिण दिशाको ढूढ़ चुके और समय बीतनेसे थक भी गये, तब एक गुफा दिखाई दी, वह बहुत योजनकी लम्बी और अन्धकारमय थी। उसके भीतर बहुत जन्तु रहते थे। तब हम लोग उस गुफाके भीतर घुस गये। बहुत दूर जाकर हमने सूर्य्यका प्रकाश देखा, और वहीं एक सुन्दर स्थान भी देखा। हे राघव! वह स्थान मय नामक दैत्यका था, वहां एक प्रभावती नामकी स्त्री तप करती थी। उसने हम लोगोंको अनेक प्रकारके भोजन और पीनेकी वस्तु दी। उसको खाकर हम लोग शान्त हुए और उसके बताये हुए मार्गसे चलने लगे। उस गुफासे निकलते ही हम लोगोंने समुद्रके तटपर सह्य मलय और दर्दुर नामक पर्व्वतोंको देखा। तब हम लोगोंने अपने जीनेकी आशा छोड़ दी—घबड़ाये और बहुत डरे। तब हम लोग मलय पर्व्वतपर चढ़े, और समुद्रको देखने लगे। समुद्र कई सौ योजनका चौड़ा, मछली, मगर आदि जलजन्तुओंका स्थान और परम भयानक था। उसको देखकर हम लोग बहुत डरे और दुःखित हुए। तब हम सब यह सङ्कल्प करके बैठ गये, कि हम सब लोग अब कुछ न खायंगे। उसके पश्चात हम लोग वार्त्तालाप करने लगे, तो गृध्रराज जटायुका वृत्तान्त आगया, उसको सुनते ही पर्व्वतके शिखरके समान शरीरधारी, भयानक, गरुड़के समान शरीरवाले एक पक्षीको देखा। वह हमारे पास आकर हमारे खानेका विचार करने लगा, कि भाई तुमलोग कौन हो जो हमारे भाई जटायुका वृत्तान्त कह रहे हो? मैं सम्पाति नामक पक्षीराज हूं, जटायु मेरा छोटा भाई है, हम लोग सूर्य्यको देखने चले थे; देखो मेरे यह पख जल गये, परन्तु जटायुके पङ्ख नहीं जले थे, मैंने अपने भाई प्यारे पक्षीराज जटायुको नहीं देखा, मैं पङ्ख जलनेसे इस पर्व्वतके ऊपर गिर गया। तब हमने आपका यह सब समाचार उससे संक्षेप रीतिसे कहा। सम्पाति हमारे अप्रिय वचनोंको सुनकर बहुत दुःखी हुआ और हमसे पूछने लगा, कि राम कौन है? सीता किस प्रकार चुराई गयी? और जटायु क्यों मारा गया? हम इस सब वृत्तान्तको तुम लोगोंसे सुनना चाहते हैं। तब हमने आपकी सब कथा कह सुनाई और अपने अन्न जल छोड़नेका कारण भी कह दिया। तब पक्षीराज सम्पातिने हमलोगोंसे कहा, कि हम

लङ्काको और रावणको जानते हैं, लङ्का समु- द्रके पार त्रिकूटाचल पर्व्वत पर बसती है वहीं सीता है। हम इसबातको निश्चय जानते हैं, कि सीता वहाके सिवाय और कहीं नहीं है। हम लोग उसके वचन सुनकर खड़े होगये। समुद्र नाघनेके लिये विचार करने लगे। हे शत्रुनाशन! जब हम लोगोंने समु- द्रसे पार होनेका उपाय कोई न देखा, तब वायुका आश्रय लेकर मैं समुद्रको नांघ गया, समुद्र चार सौ कोस-चौड़ा है, मैंने समुद्रके बीचमें एक राक्षसीको भी मारा; फिर लङ्कामें जाकर पतिव्रता सीताका दर्शन किया। वह तपस्विनी अत्यन्त दुःखिनी, जटाधारिणी, मलिन शरीरवाली, उपास और तप करती हुई आपके दर्शनकी इच्छा कर रही हैं। जब मैंने अनेक लक्षणोंसे जान लिया, कि यही सीता है, तो एकान्तमें जाकर कहने लगा, हे सीते! मैं जातिका वानर, पवनका पुत्र हनुमान, रामका दूत बनकर आया हूं मैं आकाशमें उड़कर आकाश मार्गसे लङ्कामें आया हूं, राजपुत्र राम और लक्ष्मण कुशलसे हैं, सब वानरोंके राजा सुग्रीव उनकी रक्षा करते हैं, राम और लक्ष्मण तुम्हारी कुशल पूछते हैं; उनके मित्र सुग्रीवनेभी तुमसे कुशल प्रश्न किया है, तुम्हारे पति राम सब वानरोंके सहित यहां आवेंगे, हे देवि! तुम निश्चय जानो कि हम राक्षस नहीं हैं, बन्दर हैं। मेरे वचन सुन सीताने क्षणमात्र ध्यान करके कहा, कि मुझसे अविन्ध नामक राक्षसने पहिले ही कहा था, हे महाबाहो! एक अविन्ध नामक बुद्धिमान बूढ़ा राक्षस है, उसने हमसे कहा था, कि तुम्हारे समान सुग्रीवके मन्त्री हैं, तब सीताने हमसे कहा, कि तुम जाओ और चलते समय यह मणि भी हमको दी। पतिव्रता सीता इसीसे जीती थी। उन्होंने निश्चयके लिये हमसे यह कथा भी कही है हे पुरुषसिंह! तुमने चित्रकूट नामक पर्व्वतपर कौएके मारनेको सींक चलाई थी। अनन्तर मैं पकड़ा गया, फिर मैंने लङ्काको जला दिया; तब आपके पास आया हूं। हनुमानके ऐसे वचन सुन रामने उनकी बहुत प्रशंसा करी।

२८१ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन युधि- ष्ठिर! उसी समय सुग्रीवकी आज्ञासे उत्तम वानर लोग रामके पास आये। सहस्र करोड़ वानरोंके सहित वालिके ससुर सुषेण नामक बन्दर रामके पास आये। महाबलवान वानर- राज गज और गवय सौ करोड़ वानरोंको लेकर आये। घोर रूपवाला गवाक्ष नामक लंगूर साठ सहस्र करोड़ वानरोंको लाया। गन्धमादन बन्दरके सङ्ग सौ हजार करोड़ वानर आये। पनस बन्दर दसकरोड़ बन्दर लाये, बूढ़े महा बलवान दधिमुखके सङ्ग माथे- पर त्रिपुण्ड धारण किये काले मुखवाले घोर कर्म्मचारी वानरोंकी महा सेना आई। जाम्ब- वानके सङ्ग सौ हजार करोड़ रीछ आये। इत्यादि लेकर औरभी असंख्य बानर आये। उनके शरीर पर्व्वताके समान, शब्द सिंहके समान, थे, व लोग इधर उधर घूमने लगे। तब उनका शब्द चारो ओर फैल गया। किसी का शरीर पर्व्वतसा, किसीका शरीर शरद ऋतुके मेघके समान था। वे लोग कूदने लगे, और धूल उड़ाते हुए, लङ्काकी ओरको चले। यह वानरोंकी महासेना भरे हुए समुद्रके समान शोभित हुई। उस दिन सेना सुग्रीव की आज्ञासे वहीं रही। अनन्तर उत्तम तिथि मुहूर्त्त और नक्षत्रको रामने उस सेनाका व्यूह बनाया और वहांसे चल दिये, उसके मुखको हनुमान और जङ्घाको रक्षा निर्भय लक्ष्मण करने लगे। कवच पहिने हुए रामचन्द्र और लक्ष्मण उन बन्दरोंके बीचमें ऐसे शोभायमान

हुए, जैसे तारोंके बीचमें सूर्य्य और चन्द्रमा वह वन्दरोंकी सेना शाल, ताड़ और शिलाके शस्त्र लिये हुए ऐसी शोभायमान थी, जैसे सूर्योदयके समय धानका खेत। नल, नील अङ्गद, क्राथ, मयन्द और द्विविदसे रक्षित वह महासेना रामके कार्य्य सिद्ध करनेको चली। अनेक भांतिके उत्तम उत्तम फल मूल, मद्य मांस और जलसे भरे हुए, सुखदाई पर्व्वतमें निवास करती हुई, वह बन्दरोंकी सेना खारी समुद्रके तटपर पहुंची। वह सेना अनेक पताकाओंसे शोभायमान दूसरे सागरके समान जान पड़ती थी। उस दिन उसने समुद्रके तटके बनमें निवास किया। तब दशरथ पुत्र रामने सब मुख्य बानरोंके अनुसार सुग्रीवसे यह वचन कहा, कि आपने समुद्र बांधनेका कौन सा उपाय सोचा है? यह सेना बड़ी भारी है, और समुद्र भी अति दुस्तर है। बहुतसे अभिमानी बन्दर कहते हैं, कि हम लोग समुद्रको लांघकर हो पार चले जायंगे, परन्तु यह उपाय सबके करने योग्य नहीं है। किसीने बेड़े बांधकर पार उतरनेका उपाय बतलाया, परन्तु रामने सबको शान्त करके कहा, कि पार जानेका यह कोई भी उपाय नहीं है। इससे सब बानर समुद्रको नांघ नहीं सकेंगे, क्योंकि सौ योजन विस्तारवाले, समुद्रको नांघनेमें सब बानर समर्थ नहीं हैं। इतनी अधिक नौका भी नहीं है, जिनसे सम्पूर्ण सेना पार जा सके और व्यापारकी नौकाओंको रोककर व्यापारको हमारे ऐसे पुरुष कैसे बन्द कर सकते हैं। हमारी सेना बहुत बड़ी है, छिद्र पानेसे शत्रु नाश कर सकता है, इस कारणसे नौका या बेड़ोंके द्वारा सेनाको पार करना अच्छा नहीं मालूम होता है, मैं इस समुद्रको उपायसे ही तर जाऊंगा, उस उपायसे समुद्र मुझे अवश्य मार्ग देगा। यदि समुद्र मुझे मार्ग न देगा तो मैं अग्निके समान प्रज्वलित और निवारण करनेके अयोग्य शस्त्रोंसे उसे भस्म कर दूंगा। इस प्रकारसे कहके लक्ष्मणके सहित राम समुद्रके तटपर कुशासन बिछाकर बैठ गये। इसके पश्चात स्वप्नमें समुद्र रामके पास आया, वह नद और नदियोंका स्वामी जलजन्तुओंसे पूर्ण समुद्र मीठे वचनसे बोला, हे नरश्रेष्ठ! कहिये मैं आपकी क्या सहायता करूं? मैं आपकी जाति और इक्ष्वाकुबंशमें उत्पन्न भया हूं। श्रीराम उससे बोले, हे नद और नदियोंके स्वामी। मैं सेनाके वास्ते मार्ग चाहता हूं, जिस मार्गसे जाकर मैं पुलस्त्यकुलकलङ्क रावणको मारूं। यदि तुम मांगनेसे मुझे न दोगे तो मैं मन्त्रोंसे पूरित दिव्य अस्त्र और बाणोंसे तुमको सुखा दूंगा! रामके ऐसे वचन सुनके समुद्र बहुत घबड़ा कर और हाथ जोड़ कर बोला, हे राम। मैं तुमको रोकना नहीं चाहता, मैं तुम्हारा विघ्नकारी नहीं, मेरे वचनको सुनके जो उचित हो सो करो, यदि मैं तुमको और तुम्हारी सेनाको मार्ग दे दूं तो और लोग भी धनुषके बलसे मुझपर आज्ञा चलावेंगे। तुम्हारी सेनामें नल नामक बानर शिल्पी (स्थान बनानेवाला) है, वह विश्वकर्माका पुत्र अपने पितासे भी अधिक बलवान है, वह जो काठ तृण वा पत्थर मुझमें डालेगा, उन सबको मैं अपने ऊपर ही रखलूंगा, और वही तुम्हारा सेतु (पुल) हो जायगा। जब समुद्र ऐसा कहकर अन्तर्धान होगया, तब रामने नलसे कहा कि तुम सेतु बांधो। तुम इस कार्य्यमें समर्थ हो। इस उपायसे रघुबंशी रामने समुद्रका सेतु बंधवाया। इस सेतुकी चौड़ाई चालीस कोस और लम्बाई चार सौ कोसकी थी। यह सेतु अबतक भी नलसेतुके नामसे जगतमें प्रसिद्ध है। वहीं राक्षसेन्द्र रावणका भाई धर्म्मात्मा विभीषण अपने चार मन्त्रियोंके सहित रामके पास आया। रामने बड़े आदर

से विभीषणको ग्रहण किया। सुग्रीव को यह शङ्का हुई कि यह दूत होगा, परन्तु जब राम और लक्ष्मण उसकी सत्य चेष्टा पाकर प्रसन्न हुए, तब उसका बहुत सम्मान किया। सम्पूर्ण राक्षसोंका राज्य उसे दिया और अपना मन्त्री तथा लक्ष्मणका मित्र बनाया। हे राजन् युधिष्ठिर। विभीषणकी सम्मतिसे एक महीनेमें सेनाके सहित राम समुद्र पार गये, इसके पश्चात लङ्कापुरीमें जाके वन्दरोंने बड़े बड़े बाग नष्ट कर दिये। इसके अनन्तर रावणके शुक और सारण नामक दो मन्त्री वानरका रूप करके सेनामें आए, उन्हें विभीषणने पकड़ लिया। जब उन्होंने फिर राक्षसका रूप धारण किया, तब रामकी आज्ञासे बन्दरोंने सम्पूर्ण सेना दिखलाके सेनासे बाहर निकाल दिया। सेनाको लङ्काके समीप उपवनमें ठहरा-कर बुद्धिमान अङ्गदको दूत बनाकर रावणके समीप भेजा।

२८२ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, अन्नजलसे पूर्ण, अनेक भांतिके पुष्पोंसे भरे उस वनमें सेनाको स्थापन करके विधि पूर्व्वक रक्षा करने लगे। रावणभी शास्त्रमें लिखी हुई विधिसे युद्ध सामग्री इकट्ठी करने लगा। लङ्का स्वाभाव-हीसे शत्रुओंके जीतनेके अयोग्य दृढ़ कार-दिवाली और खाईंमें अथाह जल भरा हुआ था, जिसमें मछली और नाके भरे हुए थे। लङ्काके सात द्वारोंमें खैरके किवाड़ लगे हुए थे। वे किवाड़ ऐसे यन्त्रोंसे युक्त थे, कि उनको कोई भी नष्ट नहीं कर सकता था, अनेक स्थानोंपर मूत्र और बिष्ठा त्यागनेके स्थान बने थे, तथा गोलाके ढेर लगे थे, कहीं सर्पोंके ढेर, कहीं राल और बारूदके ढेर लगे थे, कहींपर मूसल, आलातवान तोमर, खड्ग पर-शु और तापोंके ढेर लगे थे, कहीं पर मधु, कहीं मधु मुद्गर रक्खे थे, नगरके सब द्वारोंमें अनेक भांतिके चल और अचल बुर्ज बने थे जिनमें अनेक पैदल और हाथी घोड़े रहते थे। अङ्गद लङ्काके द्वार पर जाके "रावण" यह सूचना देके भीतर गये। राक्षसोंकी सभामें अङ्गदकी ऐसी शोभा हुई, जैसी मेघोंके बीचमें सूर्य्यकी। अङ्गद मन्त्रियोंके सहित बैठे हुए रावणके पास जाकर रामचन्द्रके सन्देश इस प्रकारसे कहने लगे, कि हे राजन्! सहायशाली कोशलापति रघुवंशी रामने समयानुसार तुमको यह वचन कहे हैं, उन्हें तुम मानो और वैसेही करो, अनीति करने वाले पापी राजाको पाकर देश और नगर नष्ट हो जाते हैं, अकेले तुमने बल पूर्व्वक सीताको हर कर मेरा अप-राध किया है, किन्तु और निरपराधी लोग मारे जायंगे, तुमने जो बलके अभिमानसे अनेक वनवासी ऋषियोंको मारा है, देवतोंसे अभि-मान किया है, राजऋषियोंका नाश किया है, रोती हुई स्त्रियोंको मारा है उन सब पापोंका फल अब उदय हुआ। हे निशाचर! तुम पुरुष बनके मुझसे लड़ो, मैं मन्त्रियोंके सहित तुमको मारूंगा मुझ मनुष्यके धनुषका प्रताप देखो, जानकीको शीघ्र छोड़ दो, यदि न छोड़ोगे तो मैं तीक्ष्ण जगतको वाणोंसे निशाचरोंसे रहित करूंगा। ऐसे कठोर वचनको सुनकेरावण क्रोधमें भरके क्षमा न कर सका। अपने स्वामीकी चेष्टाको जाननेवाले चार राक्षस अङ्गदके शरीरमें लिपट गये, जैसे शार्दूलके अङ्गमें पक्षी लिपटते हैं, अङ्गमें लिपटे हुए राक्षसोंके सहित अङ्गद राज भवनकी छत पर उड़ गया। वेगके साथ उड़नसे वे चारों निशाचर पृथ्वीमें गिर गये, उनका हृदय फट गया। अङ्गद राजभवनकी छतसे उड़ कर लङ्कापुरीको नांघकर सुवेल पर्व्वतके समीप आये। रामचन्द्रके समीप जाकर अङ्गदने सब कथा सुना दी और रामसे

आदर पाके अङ्गदने विश्राम किया। पश्चात रघुनन्दन रामने बन्दरोंकी सब सेनाको भेजकर लङ्काकी छार दिवालीको तुड़वा डाला। पश्चात विभीषण और जाम्बुवानको सङ्ग लेकर लच्मण लङ्काके द्वार पर पहुंचे। सोनेके समान रङ्गवाले सौ हजार बन्दरोंका यूथ युद्ध करनेको लङ्कामें पहुंचा, लम्बी जांघवाले, धुएंके समान रङ्गवाले तीन करोड़ रीछ युद्ध करनेको चले हे राजन्! उस समय बन्दरोंके उड़ने और गिरनेसे ऐसी। धूल उड़ी कि सूर्य्य छिप गये, धानोंकी बाल, सिरसके फल, प्रातः कालके सूर्य्य और सनक समान रङ्गवाले बन्दरोंसे नगरको छारदिवालोंको पूरित देखके बालक बूढ़े और स्त्रियोंके सहित सब राचस विस्मित हो गये। बन्दरोंने मणियोंके खम्भे और पत्थरोंके स्थानोंको तोड़के गिरा दिया, यन्त्रोंको तोड़के इधर उधर फेंक दिये, तोपोंको गोलोंके सहित उठाकर लङ्कामें घोर शब्द करके फेंकने लगे, छारदिवालीके समीप जितने राचस थे, वे बांनरोंके भयसे इधर उधरको भाग गये। उसके पश्चात राजाज्ञाको पाके कामरूपी भयङ्कर आकारवाले हजारों राचस शस्त्रोंकी बर्षासे बन्दरोंको डराते और छारदिवालीकी शोभाको बढ़ाते लङ्कासे निकले। उन भयानक शरीरवाले राचसोंने चण भरमें छारदिवालीको बन्दरोंसे खाली कर दिया। अनेक बानर त्रिशूलोंसे कटकर पृथ्वीमें गिर पड़े और खम्भे तथा वृचोंकी मारसे राचस भी बहुत पृथ्वी गिरे। बन्दर और राचस परस्पर केश पकड़के लड़ने लगे, दांत और नाखूनोंसे काटकर एक दूसरेको खाने लगे, बन्दर और राचस शब्द करके पृथ्वीपर गिरतेहुए भी नहीं छोड़ते थे, रामने भी बाणोंकी ऐसी वर्षा की जैसे मेघ जलको वर्षा करते हैं। रामके बाण लङ्कामें जाके राचसोंको मारने लगे, लच्मण बिना क्लेशके धनुष धारण करके बाणोंसे दुर्ग (किले) के राचसोंको मारने लगे। इसके अनन्तर रामकी आज्ञासे लङ्काकी ध्वंश करके बांनरोंकी सेना अपने डेरोंको फिर आई।

२८३ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन युधिष्ठिर। जब रामकी सेना अपने डेरोंमें आई तब रावणके सेवक पिशाच और छोटे छोटे राचसोंके झुण्ड उनके पीछे आये, उन झुण्डोंके साथ पर्व्वण पतन, जम्भ, खर, क्रोध वशहरी, प्ररुज, अरुज, प्रघस आदि थे। तब उन दुरात्माओंकी मायाको जाननेवाले विभीषणने उनकी अन्तर्द्धान मायाका नाश कर दिया। हे राजन् युधिष्ठिर! अन्तर्द्धान मायाके नाश होते ही वे राचस बन्दरोको दीखने लगे। बानरोंने उन सबको मारके पृथ्वीमें गिरा दिया। तब रावण क्रोध करके राचस और घोर पिशाचोंकी सेना सङ्ग लेकर चला। युद्धशास्त्रको जाननेवाले साचात इन्द्रके समान रावणने इन्द्रव्यूह बनाके बन्दरोंको घेर लिया। रघुवंशी रामने सेनाके सहित रावणको आया देखके वृहस्पति व्यूह बनाके रावणको घेर लिया। तब राम और रावणका, लच्मण और मेघनादका, सुग्रीव और विरूपाचका, तार और निघटका, कातुण्ड और नलका, पटुश और पनसका, बाहु युद्ध होने लगा। उस बाहु युद्धका वीरोंको डरानेवाला ऐसा भयानक शब्द हुआ जैसा देवासुर संग्राममें हुआ था। रावणने शक्ति शूल और खड्गकी वर्षासे रामको बहुत पीड़ित किया। ऐसे ही तीच्ण बाणोंसे रामने रावणको व्याकुल कर दिया, मेघनादने लच्मणको और लच्मणने मेघनादको तीच्णग बांणोंसे व्याकुल किया; ऐसेही विभीषणने प्रहस्तको और प्रहस्तने विभीषणको तेज बाणोंसे व्याकुल किया। इन शस्त्रधारियोंका

युद्ध बहुत भयानक हुआ, कि जिससे तीन लोकके चराचर व्याकुल होगये।

२८४ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, कि हे राजन्। तब घोर युद्ध करनेवाले प्रहस्तने शीघ्रताके साथ दौडकर और गर्जकर विभीषणके गदा मारी। उस भयानक गदासे पोड़ित होकर बुद्धिमान विभीषण हिमाचल पर्व्वतके समान खडे रहे, और कुछ भी कम्पायमान न हुए। इसके पश्चात जिस शक्तिमें सौ घण्टे लगे हुए थे, उसे यत्नसे युक्त करके विभिषणने प्रहस्तके सिरकी ओर छोड़ा। उस वज्रके समान शक्तिके लगनेसे प्रहस्तका सिर कट गया। उस समय वह ऐसा दीखने लगा, जैसे हवासे गिरा हुआ वृक्ष। प्रहस्तको मरा हुआ देखकर धूमराक्ष बड़े वेगसे बन्दरोंकी ओर दौड़ा, उसकी भयानक मेघोंके समान सेनाको आते हुए देखकर मुख्य मुख्य वानर भागे, मुख्य बन्दरोंको भागते हुए, देखकर पवनपुत्र बन्दरोंमें मुख्य हनुमान आए। पवनपुत्र हनुमानको युद्धमें खड़ा हुआ देखकर, चारों ओरसे बन्दर युद्ध करनेको फिरे। हे राजन्। उस समय राम और रावणकी सेनाके युद्धका भयानक शब्द होने लगा। उस भयानक युद्धमें रुधिरका कीचड़ होगया। धूमराक्षने बन्दरोंकी सेनाको घेर लिया। उसकी युद्धमें आती देखकर, शत्रुओंका नाश करनेवाले पवनपुत्र हनुमानने बड़े वेगसे ललकारा। उस मुख्य राक्षस और मुख्य बन्दरका जयकी इच्छासे ऐसा भयानक युद्ध हुआ, जैसा प्रह्लाद और इन्द्रका, राक्षसने गदा और परिघादि शस्त्रोंसे हनुमानको मारा, और हनुमानने शाखायुक्त वृक्षोंसे राक्षसको व्याकुल किया। इसके पश्चात पवनपुत्र हनुमानने बहुत क्रोध करके धूमराक्षको सारथी और घोड़ोंके सहित मारडाला। राक्षसोत्तम धूमराक्षको मरा हुआ देखकर बन्दरोंने सेनाके अन्य राक्षसोंको बहुत नाश किया। वानरोंके मुक्कोंसे पीड़ित होकर राक्षस अपनी आशाओंको त्यागकर लङ्काको चले गये। मरनेसे जो राक्षस बचे थे उन्होंने लङ्कामें आकर राजा रावणसे सब वृत्तान्त कहा। उन राक्षसोंसे रावणने युद्धमें प्रहस्तको और महावीर धूमराक्षको मरा हुआ सुनकर बहुत ऊंचा स्वास लिया, और आसनसे उठकर कहा कि यह समय कुम्भकर्णके योग्य कर्म्म प्राप्त हुआ है। ऐसा कहकर बहुत सोनेवाले कुम्भकर्णको अनेक भांतिके बाजोंसे जगाने लगा। बड़े यत्न और दुःखसे कुम्भकर्णको जगाकर राक्षसराज रावण सुस्त होकर बैठा और महा बलवान कुम्भकर्णसे बोला, हे कुम्भकर्ण! तुम धन्य हो, तुम्हारी ऐसी प्रबल निद्रा है, जो तुम इस घोर भयको भी नहीं जानते हो, कि राम बन्दरोंके सहित समुद्रको तरकर और हम सबका अपमान करके लङ्कामें घोर उपद्रव कर रहा है, मैं जनकनन्दिनी सीता नामकी उसकी स्त्रीको चुरा लाया हूं, उसके ले जानेको राम समुद्रपर सेतु बांधके लङ्कामें आये हैं, और हमारे प्यारे प्रहस्तादिकको उसने मार डाला है, हे शत्रुनाशन। तुम्हारे सिवाय उसको मारनेवाला और कोई नहीं है, हे बलवानोंमें श्रेष्ठ। तुम कवचादि पहनकर युद्धके लिये जाओ, हे शत्रुओंको दमन करनेवाले। तुम युद्धमें रामादिक शत्रुओंको नाश करो, दूषणके छोटे भाई वज्रवेग और प्रमाथी बहुतसी सेना लेकर तुम्हारे पीछे जायंगे। हे राजन् युधिष्ठिर! इस प्रकारसे बलवान कुम्भकर्णको आज्ञा देकर राक्षसपति रावण वज्रवेग और प्रमाथीको आज्ञा देने गया। दूषणके छोटे भाइयोंने रावणकी आज्ञा मानकर और कुम्भकर्णको आगे करके नगरसे प्रस्थान किया।

२८५ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्। कुम्भकर्णने अपने सेवकोंके सहित नगरसे बाहर निकलके दृढ़ मुष्टिवाली बन्दरोंकी सेनाको आगे खड़े देखा। उस सेनाको देखके कुम्भकर्णको रामके देखनेकी इच्छा बढ़ी। तब उसने धनुषबाण लिये लक्ष्मणको देखा। अनन्तर बन्दरोंने चारो ओरसे बड़े बड़े वृक्ष उसके ऊपर डालना आरम्भ किया, नाखूनोंसे अनेक बन्दर उसे काटने लगे, अनेक प्रकारसे बन्दर उससे युद्ध करने लगे। अनेक प्रकारके शस्त्र और वृक्षोंसे पिटकर कुम्भकर्ण हंसा और बन्दरोंको खाने लगा। बल, चण्डबल और वज्रबाहु नामक बन्दरोंको कुम्भकर्णने मारकर गिरा दिया। कुम्भकर्णके इस भयानक कर्मको देखकर बन्दरलोग इधर उधरको भागने लगे। तार आदिक सेनापति बन्दरोंको डरसे चिल्लाते और भागते हुए देखकर निडर सुग्रीव कुम्भकर्णकी ओरको दौड़ा और कुम्भकर्णके समीप आके शालका एक वृक्ष कुम्भकर्णके सिरमें मारा। उस शाल वृक्षके लगनेसे कुम्भकर्णको बोध हुआ और दोनो हाथोंसे पकड़के सुग्रीवको ले चला। इस दशाको देखके मित्रोंको आनन्द देनेवाले सुमित्रा-नन्दन लक्ष्मण कुम्भकर्णकी ओरको चले और पंख लगे हुए बाणोंको कुम्भकर्णके ऊपर छोड़ा। शत्रुओंको नाश करनेवाले लक्ष्मणके बाण कुम्भकर्णके शरीरको छेदकर पृथ्वीमें घुस गये। हृदयके भिद जानेसे कुम्भकर्णने वानरराज सुग्रीवको छोड़दिया। पश्चात शिला लेकर कुम्भककर्ण लक्ष्मणकी ओर आया। उसको हाथ उठाये आता देखके शीघ्रताके साथ तीक्ष्ण बाणोंसे लक्ष्मणने उसके हाथको काट दिया, तब कुम्भकर्ण चतुर्भुजी होगया। लक्ष्मणने शिला शस्त्रके सहित उन हाथोंकोभी काटके गिरा दिया, तब कुम्भकर्ण अनेक पैर और अनेक हाथवाला [illegible]ग, लक्ष्मणने ब्रह्मास्त्रसे उसेभी काट डाला। दिव्य अस्त्रके लगनेसे महा बलवान कुम्भकर्ण रणभूमिमें ऐसे गिर गया, जैसे बिजुलीके लगनेसे शाखा रहित वृक्ष गिर पड़ता है। वृत्रासुरके समान बलवान कुम्भकर्णको पृथ्वीमें मरा हुआ देखकर राक्षसलोग भयसे इधर उधरको भागने लगे। राक्षस योधाओंको इधर उधरको भागते देखकर दूषणके दोनों भाइयोंने उनको रोका और युद्ध करते हुए लक्ष्मणके सन्मुख आये। इन दोनों वज्रवेग और प्रमाथीको क्रोधसे भरे और सम्मुख आये देखकर सुमित्रापुत्र लक्ष्मणने गरजकर अपने धनुषपर बाण चढ़ाया, तब बुद्धिमान लक्ष्मणका और दूषणके भाइयोंका भयानक युद्ध हुआ। लक्ष्मणने बाणोंकी वर्षासे उन्हें छा लिया, और दोनों वीरोंने भी लक्ष्मणके ऊपर बहुत बाणोंकी वर्षा करी। इस रीतिसे एक मुहूर्त तक वज्रवेग और प्रमाथीके सङ्ग लक्ष्मणका भयानक युद्ध होता रहा। इसके पश्चात पर्व्वतके शिखरको लेके पवनपुत्र हनुमानने वज्रवेगके प्राणका नाश कर दिया और नीलने पहाड़ उठाकर महा बलवान प्रमाथीके प्राणको नाश किया। इसके अनन्तर राम और रावणकी सेनाका परस्पर भयानक युद्ध होने लगा। बन्दर सहस्रों राक्षसोंको और राक्षस सहस्रों बन्दरोंको मारने लगे, परन्तु अधिक राक्षसही मरे, बन्दर नहीं।

२८५ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर। कुम्भकर्ण प्रहस्त और महा शस्त्रधारी धूमराक्षको युद्धमें मरा हुआ सुनकर रावण अपने पुत्र मेघनादसे बोला कि, हे शत्रुनाशन, तुम लक्ष्मणके सहित राम और सुग्रीवको मारो, हे सुपुत्र! तुमने इन्द्राणीके स्वामी सहस्रनेत्रवाले वज्रधारी इन्द्रको युद्धमें जीतकर बड़ा यश प्राप्त किया है, हे शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ! हे शत्रुनाशन! गुप्त और प्रकट दिव्य शस्त्रोंसे

मेरे शत्रुओंको नाश करो, हे पापरहित राम लक्ष्मण और सुग्रीव भी तुम्हारे बाणोंको नहीं सह सकते हैं, तब उनके सेवक कैसे सह सकेंगे, जिस कार्य्यको कुम्भकर्ण और प्रहस्त नहीं कर सके उसे तुम करो। युद्धमें जाओ तुम खरका बदला लो, हे महाभुज। तुम आज तीक्ष्ण बाणोंसे सेनाके सहित शत्रुओंको मारके मुझे ऐसा आनन्द दो जैसे पहिले इन्द्रको जीत-कर दिया था, हे राजन् युधिष्ठिर। इन्द्रको जीतनेवाले मेघनादने कहा बहुत अच्छा ऐसा ही करूंगा, ऐसा कहके युद्ध करनेको चला। तब समरभूमिमें जाके अपने नामको स्पष्ट रीतिसे सुनाके शुभ लक्षणयुक्त लक्ष्मणको युद्धके स्थलपर ललकारा। लक्ष्मण भी बाण सहित धनुषको लेके धनुषकी टङ्कारसे लोगोंको डराते हुए ऐसे चले जैसे सिंह छोटे हरिना पर दौड़ता है। हे राजन्! जयकी इच्छा करनवाले और परस्पर डाह रखनवाले लक्ष्मण और मेघ-नादका भयानक युद्ध हुआ। जब रावणका पुत्र बाणोंसे पार न पासका, तब बलवानोंमें श्रेष्ठ मेघनादने लक्ष्मणके ऊपर तोमर छोड़े। सोमत्रापुत्र लक्ष्मणने तोमरोंको आते हुए देख कर तीक्ष्णबाणोंसे काटकर गिरा दिया। लक्ष्मणके तीक्ष्णबाणोंसे जब तोमर कटकर पृथ्वीमें गिर गये, तब बालिपुत्र श्रीमान अङ्गद एकवृक्ष लेकर मेघनादकी ओर दौड़ और बड़े वेगसे राक्षसके सिरमें उस वृक्षको मारा। बल-वान मेघनाद उससे कुछ भी व्याकुल न हुआ, और प्रास अङ्गदको मारनको उठाया। लक्ष्मणने उस प्रासको काटकर गिरा दिया। तब रावणके पुत्र मेघनादने अङ्गदकी बाई कांखमें एक गदा मारी। बलवान बालिके पुत्र अङ्गदने उस प्रहारको सहकर बड़े क्रोधके साथ एक वृक्ष मेघनादके मारनेको चलाया। हे राजन् युधि-ष्ठिर। उस वृक्षसे मेघनादके रथके घोड़े और सारथी मर गये। तब रथसे उतरकर रावणका पुत्र मेघनाद अन्तर्द्धान हो गया। बहुत माया जाननेवाले मेघनादको अन्तर्द्धान हुआ जानकर राम वहांपर आए और अपनी सेनाकी रक्षा करने लगे। तब वह राक्षस वर पाये हुए, बाणोंसे राम और लक्ष्मणको मारने लगा। राम और लक्ष्मण भी अन्तर्द्धान हुए मेघनाद-पर बाणोंकी वर्षा करने लगे। मेघनादने बड़ा क्रोध करके पुरुषसिंह राम और लक्ष्मणपर सैकड़ों सहस्रों बाण चलाये। तब शिला लेकर बन्दर लोग उस छिपे हुएको ढूंढ़-नेके वास्ते आकाशमें चढ़ गये। छिपे हुए मेघ-नादने उन बानरों और राम लक्ष्मणपर बाणों-की वर्षा करी। मेघनादके बाणोंसे व्याकुल होकर राम और लक्ष्मण दोनो भाई ऐसे गिरे, जैसे सूर्य्य और चन्द्रमा गिरते हैं।

२८६ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्। उन राम लक्ष्मण दोनो भाइयोंको गिरा हुआ देख-कर रावणके पुत्र मेघनादने वर पाये हुए शस्त्रोंसे उन्हें बांध लिया वह दोनो वीर मेघनादसे बंधकर युद्धमें ऐसे शोभायमान हुए, जैसे पिञ्जरेमें पक्षी। राम और लक्ष्मणको पृथ्वीमें गिरा, और बंधा हुआ देखकर बन्दरोंके सहित सुग्रीव वहांपर आये और उनको घेरकर बैठ गये। सुषेण, मयन्द, द्विविद, कुमुद, अङ्गद, हनुमान, नील, तार, नल और सुग्रीव सब वहीं आगये। तब उस स्थानमें कार्य्य सिद्ध करनेवाले, विभीषणने आके प्रज्ञास्त्रसे राम लक्ष्मणको सचेत किया, और सुग्रीवने मन्त्रयुक्त विशल्या नामक औषधीसे घाव रहित किया। राम लक्ष्मण सचेत घाव-रहित और सावधान होकर बैठ गये। हे राजन् युधिष्ठिर। तब विभीषण सावधान, हुए इक्ष्वाकुवंशी रामसे हाथ जोड़कर ऐसे वचन बोले, हे महाराज! कुबेरकी आज्ञासे यह

गुह्यक जल लेके आपके पास आया है। हे शत्रुको दुःख देनेवाले। यह जल छिपे हुएको दिखानेके वास्ते कुवेरने आपके लिये भेजा है, इस जलसे नेत्रोंको धोते हो छिपे हुए प्राणियोंको आप देखेंगे, और जिस मनुष्यको आप देंगे, वहभी देखेगा। रामने बहुत अच्छा कहकर उस संस्कार किये, जलको ले लिया, और उससे लक्ष्मण राम सुग्रीव जाम्बुवान, अङ्गद, मयन्द द्विविद और नीलने अपने नेत्रोंको धोआ और जैसा विभीषणने कहा था, वैसाही हुआ। जो वस्तु नेत्रोंसे नहीं दीख सकती है, वे सब लोग क्षण भरमें देखने लगे। हे राजन् युधिष्ठिर। मेघनाद अपने कार्य्यको समाप्त करके अपने कर्म्मको पिताके पास कहने गया। और कहकर फिर युद्धमें आया, उसको युद्धकी इच्छासे आता हुआ देखकर लक्ष्मण उसको ओर विभीषणकी सम्मतिसे दौड़े। सन्ध्या वन्दन करनेके पूर्व्वही उसको मारनेका इच्छासे बड़े क्रोधसे साथ लक्ष्मणने बाण छोड़े। हे राजन्। जीतनेकी इच्छा करनेवाले इन दोनोंका ऐसा भयानक युद्ध हुआ, कि जैसे इन्द्र और प्रह्लादका। रावणके पुत्र मेघनादने सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणको व्याकुल किया, और सुमित्राके पुत्र लक्ष्मणने अग्निके समान बाणके लगनसे क्रोधसे भरके मेघनादको आठ बाण मारे। मेघनादने सर्पके समान आठ बाण लक्ष्मणको मारे। लक्ष्मणने भी तीन बाण मेघनादको मारके उसको जो गति करी, सो तुम मुझसे सुनो। एक बाणसे धनुषके सहित उसके हाथ काट दिये, और दूसरे बाणसे बाणयुक्त दूसरा हाथभी काटकर गिरा दिया; तीक्ष्ण धारवाले तीसरे बाणसे चमकीले कुण्डलोंसे युक्त सिरको काट दिया। मेघनादके सिर और भुजाओंको काटकर बलवानोंमें श्रेष्ठ लक्ष्मणने सूतको भी तीक्ष्णशस्त्रोंसे मार डाला; तब उस रथको घोड़े लङ्कामें ले गये, रावणने उस रथको अपने पुत्रसे खाली देखा: पुत्रको मरा हुआ देखकर रावणका हृदय भयसे व्याकुल होगया। रावण शोक और मोहसे व्याकुल होकर सीताको मारनेको उद्यत हुआ। अशोक वाटिकामें रहनेवाली रामका दर्शन चाहनेवाली सीताको मारनेके लिये खड्ग उठाके रावण चला। उस दुर्बुद्धिको पाप कर्म्ममें निश्चय देखके अविन्ध्य शान्त करनेके लिये ऐसा बोला, हे राक्षसेन्द्र। तुम प्रकाशमान बड़े राज्यमें स्थित हो, इस लिये स्त्रीको मारने योग्य नहीं हो। जब स्त्री तुम्हारे बन्धन और वशमें है, तो मरी हुई है, देहके काटनेसे यह नहीं मरेगी किन्तु इसके पतिको मारडालो, तो यह आपही मर जायगी। हे राक्षसेन्द्र। तुम्हारे बलके समान साक्षात इन्द्र भी नहीं है, तुमने अनेक बार युद्धमें देवताको व्याकुल किया है। इस प्रकार अनेक प्रकारकी बातोंसे क्रोधी रावणको अविन्ध्यने समझाया और रावणने भी उसके बचनोंको ग्रहण किया तब रावणने युद्धमें चलनेका निश्चय किया, और खड्ग लेकर रथ सजानेकी आज्ञा दी।

२८७ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! प्यारे पुत्रके मारे जानेपर रावणको बड़ा क्रोध हुआ। तब रत्न जटित सोनेके रथपर बैठके युद्धको चला। अनेक प्रकारके शस्त्र लिये घोर राक्षसोंसे घिरा हुआ, रावण बन्दरोंके सेनापतियोंसे लड़ता हुआ रामकी ओर चला। उस क्रोध युक्त रावणको आते हुए देखकर मन्द, नील, नल, हनुमान और जाम्बुवानने सेनाके सहित, रोका इन मुख्य वानर और रीछोंने वृक्षोंसे रावणकी सेनाको रावणके सन्मुखही विनाश किया। शत्रुओंसे अपनी सेनाका विनाश होते देखकर राक्षसराज मायावी रावणने माया रची। रावणके शरीरसे शक्ति आदि शस्त्रधारी सैकड़ों सहस्रों राक्षस निकलते दीखने लगे।

रामने दिव्य अस्त्रोंसे उन राक्षसोंको मारा। राक्षसपति रावणने फिर माया रची। सहस्रों राम और लक्ष्मण उत्पन्न कर दिये, वह माया-के राम और लक्ष्मण धनुष बाण लेकर राम और लक्ष्मणको मारनेके वास्ते दौड़े। उन मायाके राक्षसोंको आते हुए देखकर और भ्रम रहित होके राम लक्ष्मणसे यह गूढ़ वचन बोले, हे लक्ष्मण! इन अपने रूपवाले पापी राक्षसोंको मारो। ऐसा कहके राम अपने समान रूपवाले राक्षसोंको मारने लगे। इसके अनन्तर इन्द्रका सारथी मातली सूर्य्यके समान प्रकाशमान हरे घोड़े जिसमें लगे थे, उस रथको लेके रामके पास आया।

मातली बोला, हे काकुत्स्थवंशी राम! यह हरे घोड़ोंसे युक्त रथ इन्द्रका उत्तम वैजयन्त है, इसीसे सैकड़ों और सहस्रों दैत्य दानवोंको इन्द्र युद्धमें नाश करते हैं, हे पुरुष-सिंह! इस रथपर चढ़कर रावणको मारिये, विलम्ब न कीजिये। मातलीके ऐसे वचन सुनके रामको रावणकृत मायाहीकी शङ्का हुई। तब बिभीषण बोले, हे पुरुषसिंह राम! यह दुरात्मा रावणकी माया नहीं है, इस कारणसे इन्द्रके प्रकाशयुक्त रथपर शीघ्र चढ़िये। तब राम बिभीषणसे बहुत अच्छा कहके रथपर चढ़े, और क्रोधमें भरके रावणकी ओर चले,। तब सब लोग हाहा-कार करने लगे, आकाशमें देवतालोग अनेक भांतिके बाजे बजाने लगे। हे राजन्! उस समय राम और रावणका ऐसा युद्ध हुआ कि जिसकी उपमा दूसरे युद्धकी नहीं हो सकती। तब रावणने इन्द्रके वज्रके समान एक महा घोर त्रिशूल ऐसा फेंका जैसे ब्रह्मदण्ड। रामने उस त्रिशूलको तीक्ष्ण बाणोंसे काटकर गिरा दिया। उस कठिन कर्म्मको देखकर रावणको बड़ा भय हुआ। तब रावणने सहस्रों तीक्ष्ण बाण और अनेक भांतिके शस्त्र रामके ऊपर चलाये। ऐसेही अनेक प्रकारकी शक्ति, तीक्ष्ण क्रूर रावण छोड़ने लगा। रावणकी उस मायाको देखकर बन्दर दशो दिशाको भागने लगे। तब रामने उत्तम पंखलगे हुए, सोनेसे आभूषित बाणको तरकससे निकालकर ब्रह्मास्त्रसे युक्त किया। उस बाणको देखकर इन्द्रादिक देव-तोंने समझा कि रावणकी थोड़ी आयु रह गई। तब रामने रावणके नाश करनेवाले ब्रह्म-दण्डके समान भयानक और अनुपम बाणको छोड़ा। हे राजन् युधिष्ठिर! उस बाणके छोड़तेही रावण घोड़े और रथके सहित जलने लगा। तब रावणको मरा हुआ देखके गन्धर्व्व और चारणोंके सहित देवता लोग बहुत प्रसन्न हुए। रावणको पञ्चतत्वोंने त्याग दिया, ब्रह्मा-स्त्रके तेजसे वह भस्म हो गया। रावणके शरीरकी धातु, मांस और रुधिर ऐसे जले कि कहीं भस्म भी न मिली।

२८८ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! श्रीरामचन्द्र देवोंके शत्रु क्षुद्र रावणको मारकर लक्ष्मण और अपने मित्रोंके सहित बहुत प्रसन्न हुए रावणके मारने पर देवता और ऋषियोंने जयकारयुक्त आशीर्वादोंसे महाबाहु रामकी स्तुति करी। कमलनयन राम पर सब देवता और गन्धर्व्व फूलोंकी वर्षा करने लगे, रामको यथायोग्य पूजा करके तब देवता अपने अपने स्थानको चले गये। हे युधिष्ठिर! उस समयके उत्सवसे आकाश परिपूर्ण होगया। शत्रुके नगरको जीतनेवाले महा यशस्वी रामने रावणको मारनेके पश्चात लङ्का बिभीषणको दे दी। इसके पश्चात बिभीषणसे पूजित सीताको आगे करके अविन्ध नामक बुद्धिमान बुढ़ा मन्त्री लङ्कासे बाहरको चला। रामके पास आके, दीन होके काकुत्स्थवंशी रामसे बोला, हे महात्मन्! इस सच्चरित्रवाली देवी जानकीको ग्रहण

कीजिये। इक्ष्वाकुनन्दन रामने उसके ऐसे वचन सुनके रथसे उतरकर आंसुओंसे भर नेत्रवाली जानकीको देखा। शोकसे व्याकुल हुई मलीन अङ्ग और वस्त्रवाली जटा बांधे हुए रथमें बैठी उस जानकीको देखके घबड़ाकर राम बोले, हे वैदेही। जो मेरे करने योग्य कार्य्य था उसे मैंने करके तुमको छुड़ा दिया, हे भद्रे! मुझे पति पाके तुम राक्षसके घरमें बूढ़ी न हो जाओ ऐसा विचारकर रावणको मैंने मारा है, मुझसा मनुष्य धर्म्मको जानकर पराये हाथमें गई स्त्रीको एक मुहूर्त्त भर भी क्योंकर रख सकता है। हे मिथिलेशपुत्री। चाहे तुम अच्छे चरित्रवाली हो, चाहे बुरे चरित्रवाली हो मैं तुम्हें अब ऐसे नहीं रख सकता जैसे कुत्ते की चाटी हुई खीरको। हे राजन्! इस प्रकार वचनको सुनके बहुत दुःखी होके सीता केलेके समान पृथ्वीपर गिर पड़ी। सीताके हृदयमे जो आनन्द उत्पन्न हुआ था, वह क्षण भरमें ऐसा नष्ट हो गया जैसे दर्पणसे कलई। तब सब बन्दर लक्ष्मणके सहित मरे हुएके समान होगये। तब शुद्धात्मा कमलसे उत्पन्न हुए, युगके कर्त्ता ब्रह्माजी रामको दीख पड़े। इन्द्र, अग्नि, वायु, यम, और कुबेर, निर्म्मल सप्त ऋषि तथा दिव्य प्रकाशयुक्त राजा दशरथ हंसयुक्त विमानपर बैठे हुए आकाशमे दीख पड़े। उस समय देवता और गन्धर्वोंसे भरा हुआ आकाश ऐसा जान पड़ता था, जैसा शरद ऋतुमें ताराओंसे भरा हुआ अन्तरीक्ष। तब यशस्विनी सीताने सबके बीचमे खड़े होकर चौड़ी छातीवाले रामसे कहा, हे राजपुत्र! मैं आपके सम्मुख कोई झूठ नहीं कहती हूं, सो आप सुनें स्त्री पुरुषोंको जो गति है जो सब प्राणियोंके हृदयमें विराजमान वायु हैं, यदि मैंने पाप किया हो तो वही प्राणका नाश कर दें; अग्नि, जल, आकाश, पृथ्वी और वायु मेरे प्राणोंको नाश करें, यदि मैंने पाप किया हो। हे वीर। यदि मैंने स्वप्नमें भी तुम्हारे सिव दूसरे पुरुषका चिन्तन न किया हो, तो परमेश तुमहीको मेरा पति बनावे। हे युधिष्ठिर। वानरोंको आनन्द देनेवाली पवित्र आकाशवा हुई। वायु बोले, हे रघुनन्दन। मैं स चलनेवाला वायु हूं, मैं सत्य सत्य कहता कि तुम सीताको अपनी स्त्री बनाओ, निष्पाप है। अग्नि बोले हे रघुनन्दन! सब प्राणियोंके भीतर रहता हूं, जनक नन्दिनीने कुछ भी अपराध नहीं किया है वरुण बोले हे राम। सब प्राणियोंके शरीर रस मेरा ही उत्पन्न किया है, आपसे कहता हूं कि जानकी को ग्रहण करो।

ब्रह्मा बोले, हे साधु। हे सच्चरित्र। तु राजऋषि धर्म्ममें वर्त्तमान हो; तुमने यह कु आश्चर्य्यकी बात नहीं कही, हे वीर। तुम देव, दानव, गन्धर्व्व, सर्प, यक्ष और महर्षियों शत्रुको मारा, रावण मेरे ही वरदानसे प्राणि सब प्राणियोंके मारनेके योग्य हुआ था, कुछ कालसे वह किसी कारणसे बचा रहा। फिर अपने नाशके वास्ते उस दुष्टने सीताको चुराया। नल कूबरके शापसे मैंने सीताकी रक्षा की। रावण को यह शाप था कि यदि किसी स्त्रीका बलसे स्पर्श करेगा तो तेरे सिरके सौ टुकड़े हो जायंगे; हे देवतुल्य राम! तुमको इसमें कुछ भी शङ्का न करनी चाहिये, तुमने बड़ा भारी कार्य्य किया है, अब सीताको भी ग्रहण करो।

दशरथ बोले, हे पुत्र! मैं तुम्हारा पिता दशरथ हूं, तुम्हारा कल्याण हो, हे पुरुषोत्तम! मैं तुम्हें राज्य देता हूं, ग्रहण करो।

राम बोले, हे राजेन्द्र! यदि आप मेरे पिता हैं तो, मैं आपको प्रणाम करता हूं, आपकी आज्ञासे मैं मनोहर अयोध्या नगरीको जाऊंगा।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! राजा दशरथ फिर प्रसन्न होकर बोले

नेत्रवाले रामसे बोले; कि तुम अयोध्याको जाओ, हे महा सुन्दर! वनमें तुमको चौदह वर्ष व्यतीत हो गये हैं। तब देवतोंको नमस्कार करके मित्रोंसे आनन्दित होके रामने सीताको ऐसे ग्रहण किया, जैसे इन्द्र शचीको ग्रहण करते हैं। तब शत्रुके जीतनेवाले रामने अविन्धको बरदान दिया, और त्रिजटा राक्षसीको भी प्रसन्न किया। तब ब्रह्मा रामसे बोले, कि इन्द्रादिक देवतोंसे वर मागो। रामने धर्म्ममें स्थिति और शत्रुओंसे जय मागी तथा राक्षसोंसे मरे हुए, बन्दरोंका जीना भी मागा। ब्रह्माने कहा ऐसेही हो। ब्रह्माके ऐसे वचन कहते ही सब बन्दर चैतन्य होकर खड़े होगये। तब महा भाग्यवती सीताने हनुमानको यह वरदान दिया। हे पुत्र जबतक रामका यश जगतमें रहे तबतक तुम जीते रहो, मेरी कृपासे तुमको दिव्य भोग प्राप्त हो। इसके पश्चात कठोर कर्म्म करनेवाले बन्दरोंके सम्मुख इन्द्रादिक देवता अन्तर्द्धान हो गये। इन्द्रका सारथी मातली रामको जानकीके साथ देखर बहुत प्रसन्न हुआ, और मित्रोंके बीचसे यह वचन बोला, हे सत्य पराक्रम। देव गन्धर्व्व, यक्ष, मनुष्य और सर्पोके दुःखको तुमने दूर किया, जबतक पृथ्वी रहेगी तबतक देव, दानव, यक्ष, गन्धर्व्व और राक्षसोंके सहित सब लोग तुम्हारा यश गावेंगे, ऐसा कहकर और रामकी आज्ञा लेके सूर्य्यके समान प्रकाशयुक्त रथपर चढ़कर मातली चला गया। उसके पश्चात सीता और लक्ष्मणको सङ्ग लेके सुग्रीवादिक बन्दरोंके सहित राम चले। लङ्कामें रक्षाका प्रबन्ध करके विभीषणभी रामके सङ्ग चला। आकाशगामी पुष्पक बिमानमें बैठके फिर उसी सेतुके मार्गसे समुद्रको तरे। इच्छानुसार चलनेवाले पुष्पक बिमानके द्वारा मन्त्रियोंके सहित जितेन्द्रिय राम वहां समुद्रके तटपर पहुंचे जहां पहिले रहे थे। वहां कुछ काल राम ठहरे और बन्दर रीछ और लंगूरोंकी यथायोग्य पूजा करके उन लोगोंको बिदा किया। इसके पश्चात सुग्रीव और बिभीषणके सहित किष्किन्धा पुरीको चले। पुष्पक बिमानमें बैठे हुए सीताको अनेक बन दिखाते शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ राम किष्किन्धापुरीमें पहुचे, कार्य्य सिद्ध करनेवाले अङ्गदको युवराजका तिलक दिया। तब सुग्रीवादि लक्ष्मणके सहित जिस मार्गसे आये थे उसी मार्गसे अपनी अयोध्या नगरीमें प्राप्त हुए। वहां पहुंचके हनुमानको भरतके पास दूत भेजा। भरतकी इच्छाओंको जानकर जब वायुपुत्र हनुमान फिर रामके समीप लौट आये, तब रामने नन्दीग्रामसे भरतको देखा कि मलिन वस्त्र, मलिन अङ्ग, आगे खड़ाऊं धरे हुए आसनपर बैठे हैं। हे पुरुषश्रेष्ठ यूधिष्ठिर। भरत और शत्रुघ्नसे मिलकर राम और लक्ष्मण बहुत प्रसन्न हुये, भरत और शत्रुघ्न भी राम लक्ष्मण और सीताका दर्शनकर बहुत आनन्दित हुए। भरतने सत्कार करके रामको राज्य सौंप दिया। इसके पश्चात वशिष्ठ और बामदेवने पवित्र दिनमें रामका राज्याभिषेक किया। राज्य पाकर रामने अपने प्रियमित्र सुग्रीव और पुलस्त्यनन्दन विभीषणको अनेक प्रकारके भोगोंसे सत्कार करके तथा राजनीतिका उपदेश करके घर जानेको दुःखके साथ बिदा किया। रघुनन्दन रामने पुष्पक बिमानकी पूजा करके कुबेरको दे दिया। इसके पश्चात गामतीके तटपर देवऋषियोंके सहित दश अश्वमेध यज्ञ किया।

२८६ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर। पहिले समयमें महा तेजस्वी रामने इस प्रकार बनमें वास करके घोर दुःख भोग किया था, हे

पुरुषसिंह। हे शत्रुनाशन। तुम क्षत्री हो, और अपने बाहुबलके आश्रयसे चलते हो, इस लिये कुछ सोच मत करो; तुम्हारे कर्म्म सन्देहसे रहित हैं, तुम्हारे कर्मोंको किञ्चित दूसरा नहीं कर सकता, जिस मार्गमें तुम चलते हो, उसमें चलनेसे इन्द्रादिक देवता और राक्षसोंको भी दुःख होता है; वज्रधारी इन्द्रने मरुत गणोंकी सहायतासे वृत्र नमुची, और दीर्घजिह्वा राक्षसोंको मारा था; आप भी सब प्रकार सहायवान है, जिसके भाई साक्षात अर्ज्जुन है, वे कौनसी वस्तुको नहीं जीत सकते, यह बलवानोंमें श्रेष्ठ महा पराक्रमी भीम, युवा महा धनुषधारी नकुल और सहदेव आपके सहायक है, तब आप क्यों सोच करते है? हे शत्रुनाशन। आपके भाई मरुत्गणके सहित इन्द्रकी सेनाको भी जीत सकते हैं, हे भरतकुल-श्रेष्ठ। आप महा धनुषधारी देवरूपी अपने भाइयोंकी सहायतासे सब शत्रुओंको जीतेंगे। देखिये इसी समय दुष्ट बलवान उन्मत्त सिन्धुराज जयद्रथने द्रौपदीको चुरा लिया था, उसको जीतकर तुम्हारे महात्मा भाइयोंने द्रौपदीको छीन लिया, और रामने तो विना किसीकी सहायताही महा पराक्रमी राक्षसराज रावणको युद्धमें मारा और सीताको छीन लिया। हे राजन्। आप अपनी बुद्धिसे विचारिये कि रामके बन्दर रीछ और लङ्गूर मित्र थे, उनमें कोई भी मनुष्य नहीं था। हे भरतर्षभ। हे पुरुषश्रेष्ठ! हे शत्रुओंको तपानेवाले। इस लिये अब आप उत्तम साहस कीजिये, क्योंकि आप ऐसे महात्माओंको सोच करना नहीं चाहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, बुद्धिमान मार्कण्डेयके ऐसे वचन सुन महाबलवान महाराजने दुःखको त्याग दिया, और फिर ऐसा कहने लगे।

२९० अध्याय समाप्त।

रामोपाख्यान पर्व्व समाप्त।

आगे पतिव्रता-महात्म्य पर्व्व लिखेंगे।

महाराज युधिष्ठिर बोले, मैं न अपना, न अपने भाइयोंका, और न राज्य नष्ट होनेका इतना सोच करता हूं, जितना इस बातका कि राजपुत्री द्रौपदीका, इसने जुएके समयमें दुष्टोंके हाथसे बहुत दुःख पाया और हम लोगोंका उद्धार भी किया, फिर वनमें जयद्रथने अपने बलसे इसको चुरा लिया। आपने पहिले कभी द्रौपदीके समान पतिव्रता और महाभाग्यवती कोई स्त्री देखी वा सुनी है?

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर। आप कुलीन स्त्रियोंके चारित्रोंको सुनिये। हम राजपुत्री सावित्रीका वर्णन करते है, उन्होंने भी बहुत दुःख उठाये थे। मद्रदेशमें धर्म्मात्मा धर्म्म जाननेवाले ब्राह्मणोंके भक्त सत्यवादी जितेन्द्रिय यज्ञकर्त्ता दानी प्रजाके प्यारे सब जगतका कल्याण करनेवाले क्षमावान अश्वपति नामक राजा थे। उनकी बहुत अवस्था बीतने परभी कोई पुत्र उत्पन्न न हुआ। तब उनको बहुत दुःख हुआ। पुत्र उत्पन्न करनेवाले परम नियम और ब्रतोंको वह राजा करने लगा। समयपर थोड़ा भोजन करके जितेन्द्रिय और ब्रह्मचारी रहता था। हे राजसत्तम। गायत्रीसे सैकड़ों सहस्रों बार हवन करके दिनके आठवें भागमें थोड़ा भोजन करता था, ऐसे नियमसे जब वह अठारह वर्ष पूरा कर चुका, तो गायत्रीने उठके बड़ी प्रसन्नताके साथ राजाको दर्शन दिया। वर देनेवाली गायत्रीने राजासे यह कहा—

गायत्री बोली, हे राजन्। मैं तुम्हारे शुद्ध ब्रह्मचर्य्य जितेन्द्रियता और भक्तिसे प्रसन्न हुई हूं, हे अश्वपते मद्रराज। जो तुम्हारी इच्छा हो सो वर मांगो, तुम कभी धर्म्मको न छोड़ना।

राजा अश्वपति बोले, हे देवि। मैंने पुत्र और धर्म्मके लिये यह नियम किया था, मेरे इसके

बढ़ानेवाले बहुतसे पुत्र हों मुझसे ब्राह्मणोंने कहा था कि पुत्र हो परम धर्म्म है; यदि आप प्रसन्न हुई है तो पुत्र दीजिये।

गायत्री बोलीं, हे राजन्! मैंने पहिले ही तुम्हारे इस अभिप्रायको समझकर ब्रह्मासे कहा था, मेरे प्रतापसे और ब्रह्माकी आज्ञासे तुम्हारे एक बड़ी तेजस्वी कन्या होगी, हे राजन। तुम इसका उत्तर कुछ मत दो, मैं ब्रह्माकी आज्ञासे प्रसन्न होकर तुमको वर देती हूं।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! गायित्रीके वचनोंको अङ्गीकार करके राजाने फिर गायत्रीकी स्तुति करी। तब गायत्री अन्तर्द्धान हो गई, तो राजा अपने नगरको चले आये, और अपने राज्यमें रहकर धर्म्मसे प्रजाका पालन करने लगे। कुछ काल बीतने पर राजाकी बड़ी स्त्रीको गर्भ रहा; उस मानिनी राजपुत्रीका गर्भ ऐसे बढ़ने लगा, जैसे आकाशमें शुक्लपक्षका चन्द्रमा बढता है। पूर्ण समयपर कमलनयनी कन्याका जन्म हुआ। राजाने प्रसन्न होकर जन्मकालकी सब क्रिया करी। सावित्रीने प्रसन्न होकर यह कन्या दी थी। इस कारणसे ब्राह्मणोंने और पिताने उस कन्याका नाम सावित्री ही रक्खा। वह राजकन्या साक्षात लक्ष्मीके समान क्रमसे बढ़ने लगी, और कुछ कालमें यौवनवती होगई। उस क्षीण कटि और उत्तम अङ्गवाली सोनेकी मूर्त्तिके समान कन्याको देखकर सबलोग देवकन्या समझते थे। उस कमलनैनीको तेजसे भरी हुई देखके उसके तेजसे घवड़ा कर कोई भी ब्याहनेकी इच्छा नहीं करता था। एक दिन सावित्री ब्रत करके और सिरसे स्नानकर देवता और अग्निको पूजा कर पिताके पास गई। लक्ष्मीके समान रूपवाली सावित्री पिताके चरणोंमें प्रणाम करके हाथ जोड़के पिताके पास बैठ गई। अपनी कन्याको यौवनवती तथा देवतोंके समान रूपवाली देख और उसके योग्य कोई वर न पाके राजा दुःखित हुआ। राजा बोले; हे पुत्री! तेरे बिवाहका समय प्राप्त हुआ, किन्तु मुझसे कोई बिवाहको नहीं कहता है, इस कारणसे तुम आपही अपने गुणोंके समान अपने पतिको ढूंढ लो, जो तुमसे बिवाहकी इच्छा करे तुम मुझे उसको दिखाना, मैं विचार कर उसके सङ्ग तुम्हारा बिवाह कर दूंगा। मैंने पढ़ते हुए, ब्राह्मणोंसे धर्म्मशास्त्रमें सुना है, हे कल्याणी। मैं तुमसे जो कहता हूं उस बचनको तुम सुनो। जो पिता कन्याका बिवाह न करे वह निन्दाके योग्य है, जो पति स्त्रीको ऋतुकालमें इच्छाको पूरी न करे, वह निन्दाके योग्य है, पतिके मर जानेपर जो पुत्र माताकी रक्षा न करे वह भी निन्दाके योग्य है। हे पुत्री। मेरे इस वचनको सुनके तू शीघ्रतासे पतिको खोज कर मुझसे कह, जिससे मैं देवतोंकी निन्दाके योग्य न रहूं, ऐसा ही काम तुमको करना चाहिये।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! राजाने अपनी पुत्रीसे ऐसा कहके बृद्ध मन्त्रियोंको यात्राकी सामग्री इकट्ठी करनेकी आज्ञा दी। तप करनेवाली सावित्री पिताके चरणोंको प्रणाम करके और लज्जायुक्त होके पिताके बचनोंको मानकर बहुत शीघ्र चली। सावित्री सोनेके रथमें बैठके बृद्ध मन्त्रियोंके साथ राजर्षियोंके मनोहर तपोबनको चली। वनमें जाके बृद्ध और माननेयोग्य लोगोंके चरणोंको प्रणाम करती हुई सब वनमें घूमने लगी। हे तात! सब तीर्थोंमें धन देती हुई, और मुख्य ब्राह्मणोंकी सेवा करती हुई, राजकन्या सावित्री अनेक देशोंमें फिरने लगी।

२९२ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले हे राजन्! एक समय मद्रराज अपनी सभामें नारदके सहित बैठे हुए, कुछ वार्त्तालाप कर रहे थे। उसी

समय सब तीर्थोंमें घूमकर मन्त्रियोंके सहित सावित्री अपने पिताके घर आई। नारदके सहित अपने पिताको बैठा हुआ देखकर दोनोंके चरणोंको प्रणाम किया।

नारद बोले, यह तुम्हारी पुत्री कहां गई थी? और कहांसे आई है? किस कारणसे तुम युवती कन्याका विवाह नहीं करते हो?

राजा अश्वपति बोले, हे नारद! इसी कार्य्यके लिये मैंने इसे भेजा था। अभी यह आई है, इससे सुनना चाहिये कि किसको इसने स्वामी बनाया।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, पिताके वचन सुनकर सावित्री ऐसे बोली।

सावित्री कहने लगी शाल्व देशमें एक धर्म्मात्मा क्षत्री द्युमत्सेन नामसे प्रसिद्ध थे, वह पश्चात अन्धे होगये. उनके जब नेत्र नष्ट होगये और उनका पुत्र बालक था, तब उनके पहिले शत्रुओंने उनके राज्यको छीन लिया, द्युमत्सेन बालक पुत्र और स्त्रीके सहित बनमें जाके तप करने लगे। उनका पुत्र जो नगरमें उत्पन्न हुआ और तपोवनमें बढ़ा वही सत्यवान मेरा पति होने योग्य है, यही मैंने मनसे सङ्कल्प किया है।

श्रीनारद मुनि बोले, हे राजन्! तुम्हारी सावित्री कन्याने बड़ा पाप किया, जो बिना जाने गुणवान सत्यवानको अपना पति बनाया। उसके पिता माता सत्य बोलते थे, इसी कारणसे ब्राह्मणोंने उसका नाम सत्यवान रक्खा। यह बालक अवस्थासे घोड़ोंको बहुत प्यार करता था, इसलिये मट्टीके घोड़े बनाया करता है घोड़ोंके चित्र भी खींचा करता है इस कारणसे उसको चित्राश्व भी कहते हैं।

राजा बोले, हे नारद! इस समय वह राजाका बालक तेजस्वी, बुद्धिमान, रूपवान, वीर और माता पिताका भक्त है वा नहीं?

नारद बोले, हे राजन् वह बालक सूर्य्यके समान तेजस्वी, बृहस्पतिके समान बुद्धिमान इन्द्रके तुल्य वीर और पृथ्वीके सदृश क्षमाशील है।

राजा अश्वपति बोले, वह राजाका पु[त्र] सत्यवान दाता, ब्राह्मण-भक्त, रूपवान उदा[र] तथा मनोहर है वा नहीं?

नारद बोले, वह राजा सङ्कृतिके पुत्र रन्तिदेव[के] तुल्य अपनी शक्तिके अनुसार दान देनेवाल[ा] ब्राह्मण भक्त, सत्यवादी; तथा उशीनरके [पुत्र] शिबीके समान वीर है। ययातिके सम[ान] उदार, चन्द्रमाके तुल्य मनोहर अश्विन[ी] कुमारोंके समान रूपवान द्युमत्सेनका [पुत्र] है। वह दान देनेवाला, नम्र, वीर, सत्यवा[दी] जितेन्द्रिय, मित्रतायुक्त ईर्षारहित, ल[ज्जा] और शोभासे युक्त है; उसमें सदा सीधा[पन] रहता है, संक्षेपसे, प्रयोजन यह है कि त[प] वृद्ध और शीलवृद्ध उसकी प्रशंसा करते हैं।

राजा अश्वपति बोले, हे भगवन्! आ[पने] सब गुणोंसे भरा उस बालकको कहा, [अब] उसमें जो कुछ दोष हो सो भी कहिये।

नारद बोले, हे राजन्! उसमें एक ही दो[ष] है जो सब गुणोंको छिपालेता है। वह दो[ष] किसी यत्नसे दूर होने योग्य नहीं है। व[ह] एक दोष यही है कि वह अबसे एक व[र्ष]में मर जायगा।

राजा बोले, हे सावित्री! तुम जाओ औ[र] दूसरा पति करो, उसके एक ही दोषने स[ब] गुणोंको छिपा लिया। जैसा सुभसे देवपूजि[त] भगवान नारदने कहा कि एकही वर्षमें व[ह] अपने शरीरको त्याग देगा।

सावित्री बोली, हे पिता! अंश अर्थात् पित[ा]की सम्पत्तिको विभाग निर्णायक गुटिक एकही बा[र] गिरती है, कन्या एकही बार दीजाती है दान एकहीबार दिया जाता है, ये ती[नों] एकही बार होते हैं। वह बड़ी अवस्था वाला हो, वा थोड़ी आयु वाला हो

गुणवान हो, वा गुण रहित हो, मैंने एक बार पति बना लिया अब मैं दूसरा पति नहीं करूंगी, मनसे निश्चय करके वचनसे कहा जाता है, फिर वही कर्म्मसे किया जाता है, इसमें मेरा मन ही साची है।

नारद बोले, हे नरोत्तम। तुम्हारी पुत्रीकी बुद्धि स्थिर है; वह इस धर्म्मसे कदापि नहीं हट सकती है, जो सत्यवानमें गुण हैं, वे दूसर पुरुषमें नहीं हैं, इस कारणसे मैं उसीको कन्या देना उत्तम समझता हूं।

राजा बोले, हे भगवन्। जो आपने कहा सो अटल है, ऐसाही मैं करूंगा, क्योंकि आप मेरे गुरु हैं।

नारद बोले, तुम्हारी सावित्री कन्याका विवाह निर्बिघ्न हो। जो कुछ मुझसे उपकार होसकेगा, मैं करूंगा। तुम्हारा कल्याण हो।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन। ऐसा कहकर नारद स्वर्गको चले गये, और राजा अपनी कन्याके विवाहकी सामग्री इकट्ठी करने लगे।

२९३ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्। कन्यादानके लिये, नारदके वचनको स्थिर रखके, राजा अश्वपति विवाहके योग्य सब सामग्री जोड़ने लगे। उसके पश्चात वृद्ध ब्राह्मण, ऋत्विक् और पुरोहितको सङ्ग लेकर कन्याके सहित उत्तम दिन विचारके मेधारण्य वनको चले। हे राजन्। वे ब्राह्मणोंके सहित पैदलही द्युमत्सेनके आश्रमपर पहुंचे। वहां जाकर महाभाग राजा द्युमत्सेनको शाल वृक्षके नीचे कुशके आसनपर बैठे हुए देखा। राजा अश्वपतिने राजर्षि द्युमत्सेनकी यथा योग्य पूजा करके अपना वर्णन किया। द्युमत्सेनने भी अर्घ, आसन और गोदानसे पूजा करके आनेका प्रयोजन पूछा। राजा अश्वपतिने अपने आनेका सब प्रयोजन कह सुनाया। राजा अश्वपति बोले, हे राजर्षि। यह सुन्दर सावित्री नामकी मेरी कन्या है, इसे आप धर्म्मानुसार अपनी पुत्रबधू बनानेके वास्ते ग्रहण कीजिये?

द्युमत्सेन बोले, हे राजन्। हम लोग राज्यसे भ्रष्ट हैं, सदा तपस्वियोंका धर्म्म करते हैं, वनबासके अयोग्य तुम्हारी कन्या आश्रममें किस प्रकार रहेगी?

राजा अश्वपति बोले, हे राजन्! सुख और दुःख सदा नहीं रहते हैं; इस बातको मैं जानता हूं और मेरी कन्या भी जानती है, तब आपको मुझसे ऐसे वचन कहना उचित नहीं। मैं निश्चय करके आपके पास आया हूं, मेरी आशाको आप नाश न कीजिये, मैं आपका मित्र और दास हूं, तथा दूसरे प्रेम पूर्व्वक आया हूं, आप मुझसे ऐसे बचन न कहें, आप मेरे योग्य हैं, मैं आपके योग्य हूं मेरी कन्याको अपनी पुत्रबधू और सत्यवानकी स्त्री बनाइये।

द्युमत्सेन बोले, हे राजन्। मेरा विचार पहिले ही तुमसे सम्बन्ध करनेका था, परन्तु इस समय राज्य भ्रष्ट होनेके कारण मैं ऐसे कहता हूं। जो मेरा पहिला अभिप्राय था सो अब पूर्ण होगया, तुम मेरे अतिथि हो। जो अच्छा हो सो करो। इसके पश्चात आश्रमके सब ब्राह्मणोंको बुलाकर दोनों राजोंने सावित्री सत्यवानका विधि पूर्व्वक विवाह किया। राजा अश्वपति कन्या तथा और अनेक प्रकारके दान करके परम आनन्दके साथ अपने घरको चले गये। सत्यवान भी सब गुण भरी स्त्रीको पाकर प्रसन्न हुए, और सावित्री इच्छानुसार बर पाके प्रसन्न हुई। जब सावित्रीके पिता चले गये, तब सावित्रीने अपने वस्त्र और आभूषण उतारकर बकले और गेरूके रंग वस्त्र पहिन लिये। सेवासे

और अपने उत्तम गुणोंसे साबित्री सबको प्रसन्न करने लगी। सासको शारीरक सेवा और बस्त्र भोजनादिसे एवम ससुरकी मीठे बचनोंसे सेवा करने लगी, पतिकी मीठे बचनोंसे, चतुरतासे एकान्त क्रीड़ासे प्रसन्नता पूर्व्वक सेवा करने लगी। हे राजा युधिष्ठिर। इस प्रकारसे उस आश्रमपर रहते हुए उन तपस्वियोंका काल व्यतीत हुआ। नारदके बचनको स्मरण करके साबित्रीका मन सदा मलीन रहता था।

२६४ अध्याय समाप्त।

———

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! कुछ काल व्यतीत होनेके पश्चात सत्यवानके मरनेका समय आगया। साबित्री नारदके बचनानुसार रोज दिन गिना करती थी। जब साबित्रीने जाना कि अबके चौथे दिन सत्यवान मर जायगा, तभी तीन दिनके उपवासका ब्रत धारण कर लिया। राजा द्युमत्सेनने साबित्रीके नियमको सुन बहुत दुःख किया, और साबित्रीको समझाते हुए, उठके ऐसा बचन कहा।

राजा द्युमत्सेन बोले, हे राजपुत्री। यह तुम्हारा ब्रत कठिन है, तीन रात बिना अन्न रहना बहुत दुस्तर है। साबित्री बोली, हे तात! तुम कुछ दुःख मत करो, मैं इस ब्रतको पूरा करूंगी, उद्योगसे मैंने इस ब्रतको किया है, और उद्योगही सब कार्य्यका मूल है। राजा द्युमत्सेन बोले, मैं यह कहनेमें समर्थ नहीं हूं, कि ब्रतको तोड़ दो, किन्तु हमारे समान मनुष्योंको यह कहना उचित ही है, कि ब्रतको पूरा करो।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! ऐसा कहके राजा द्युमत्सेन चुप रहगये, और साबित्री काष्ठके समान दृढ़ होके ब्रत करने लगी। हे पुरुषश्रेष्ठ युधिष्ठिर! जब प्रातःकाकाल होते सत्यवानके मरनेका दिन आया, तब साबित्रीने ऐसा विचार करके कि आजही मरनेका दिन है, अग्निको जलाके हवण किया। सूर्य्यके उदय होतेही सन्ध्या बन्दन करके आश्रमके सम्पूर्ण वृद्ध ब्राह्मण और सास ससुरको प्रणाम कर हाथ जोड़के साबित्री खड़ी हुई, सब लोगोंने उसे आशीर्व्वाद दिया कि तू कभी विधवा न हो। तपोवनके निवासी तपस्वियोंकी वाणीको साबित्रीने बड़े ध्यानसे सुनी, और मनसे उन वाणियोंको ग्रहण किया। जैसा नारदने कहा था, उसी मुहूर्त्त और समयको विचारती हुई साबित्री दुःखसे बैठी रही। एकान्तमें बैठी हुई, राजकन्या साबित्रीसे सास और ससुर प्रीति पूर्व्वक बोले, जैसा तुमने ब्रत किया था, सो पूरा हुआ, भोजन करो।

साबित्री बोली, सूर्य्यके अस्त होनेपर जब मेरी कामना पूर्ण होगी, तब मैं भोजन करूंगी, यही मेरी प्रतिज्ञा है।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर। जिस समय साबित्री ऐसा कह रही थी, उसी समय सत्यवान कन्धेपर फरसा रखके बनको चले। अपने पतिसे साबित्री बोली, हे स्वामी। आप अकेले बनको जाने योग्य नहीं हो, मैंभी आपके सङ्ग चलगी, आपको छोड़ नहीं सकती हूं।

सत्यवान बोले, हे भामिनि! पहिले तुम कभी बनको नहीं गई हो, इस समय तुम ब्रतसे थकी हो। पैदल कैसे चलोगी?

साबित्री बोली, ब्रतसे मुझे ग्लानि वा परिश्रम नहीं है, आप मुझे न रोकिये।

सत्यवान बोले, यदि तुमको चलनेमें उत्साह है, तो मैं तुम्हारा प्रिय काम करूंगा, मेरे माता पितासे आज्ञा ले लो जिससे मुझे दोष न लगे।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! सास और ससुरको प्रणाम करके साबित्री

कहने लगी, यह मेरे स्वामी फल लानेके लिये वनको जाते हैं, आप दोनोंकी आज्ञासे मैं भी वन जानेकी इच्छा करती हूं, मुझसे इस समय विरह सहा नहीं जाता, गुरु और अग्निहोत्रके वास्ते तुम्हारा पुत्र वनको जाता है; इस लिये रोकने योग्य नहीं है, कुछ कम एक वर्ष मुझे यहां आये होगया, मैं आश्रमसे बाहर कहीं नहीं निकली, किन्तु मेरे फलोंसे भरे हुए वनको देखनेकी इच्छा है।

द्युमत्सेन बोले, जबसे सावित्रीके पिताने कन्यादान किया है, तबसे मेरी पुत्रवधूने कोई बात मुझसे नहीं मांगी, इस लिये जो इसकी इच्छा है, सो पूर्ण हो, हे पुत्री! सत्यवानको मार्गमें कोई विघ्न मत करना।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! सास और ससुरसे आज्ञा लेके यशस्विनी सावित्री मुखसे हंसती हुई, और हृदयसे दुःख करती हुई चली। वह फूले हुए कमलके समान नयनवाली सारोंके झुण्डसे भरे हुए, विचित्र और मनोहर वनोंको देखने लगी। पवित्र जलसे भरी नदी और फले वृक्षोंसे भरे पर्व्वतोंको मीठे वचन बोलनेवाली सावित्रीको सत्यवान दिखलाने लगे। निन्द्रा रहित सावित्री नारदके वचनको स्मरण करके और अपने पतिको देखकर पतिको मरा हुआ देख कर बहुत दुःखित होती थी। धीरे धीरे अपने पतिके पीछे चलती हुई उसी कालको सोचती थी, उस दुःखसे उसका हृदय दो टुकड़ा हुआ जाता था।

२९५ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! सत्यवानने फल तोड़कर टोकरी भर ली, पश्चात लकड़ी तोड़ने लगे लकड़ी उखाड़ते हुए सत्यवानके शरीरमें पसीना आगया। उस परिश्रमसे सत्यवानके सिरमें पीड़ा होने लगी। तब वह अपनी प्यारी स्त्रीके पास आया और थककर ऐसे बचन बोला, इस परिश्रमसे मेरे सिरमें पीड़ा होने लगी है, हे सावित्री! मेरे अङ्ग टूटते हैं, हे थोड़ा बोलनेवाली। मैं अपनेको स्वस्थ नहीं देखता हूं, मेरे सिरमें शूल वेधनेके समान पीड़ा होती है, हे कल्याणी। इस कारणसे मैं सोनेकी इच्छा करता हूं, बैठनेकी शक्ति मुझमें नहीं है। सावित्री अपने पतिके निकट जाके उसके सिरको अपनी जङ्घापर धरके पृथ्वीमें बैठ गई। तब वह तपस्विनी नारदके बचनको स्मरण करती हुई उस मुहूर्त्त और दिनको मिलाने लगी। एक क्षणके पीछे उसने लालवस्त्रवाले सूर्य्यके समान प्रकाशयुक्त एक पुरुषको देखा, काले दांत और लाल नेत्रवाले, हाथमें फांसी लिये सत्यवानके पास बैठे उस पुरुषको देखकर सावित्री धीरे धीरे अपने पतिके सिरको पृथ्वीमें रखके खड़ी हुई और हाथ जोड़के हृदयमें कांपती हुई ऐसा बचन बोली।

सावित्री बोली मैं जानती हूं कि आप देवता हैं क्योंकि ऐसा शरीर मनुष्योंका नहीं होता, विस्तारपूर्व्वक कहिये कि आप कौन हैं? और क्या करना चाहते हैं?

यमराज बोले, हे सावित्री। तुम पतिव्रता और तपसे भरी हुई हो, इससे मैं तुमसे बोलता हूं, हे कल्याणि! तुम मुझे यमराज समझो, इस तुम्हारे पति सत्यवानकी अवस्था पूर्ण होगई, इससे मैं बान्धकर इसे लेजानेको आया हूं।

सावित्री बोली, हे भगवान। मैंने सुना है कि मनुष्योंके लेनेको आपके दूत आया करते हैं, तो आप स्वयम् किस कारणसे आये?

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्। ऐसा सुनकर भगवान पितृराज सावित्रीके प्रसन्नार्थ विस्तारसे अपनी इच्छासे कहने लगे। यह

धर्म्मवान गुणसागर सत्यवान मेरे दूतोंके लेजाने योग्य नहीं था, इस कारण मैं स्वयम आया हूं। हे राजन्! इसके पश्चात सत्यवानके शरीरसे अंगुष्ठमात्र पुरुषको यमराजने बाधके निकाला। तब सत्यवानका शरीर सास प्राण और चेष्टा-रहित तथा देखनेमें अप्रिय होगया। यम उसको बांधकर दक्षिणकी ओरको चले। नियम और ब्रतोंसे सिद्ध, महाभाग पतिव्रता दुःखसे व्याकुल सावित्रीभी यमके पीछे पीछे चली।

यमराज बोले, हे सावित्री! तुमको जहां तक पतिके सङ्ग जाना चाहिये था, वहांतक तुम आई अपने पतिसे तुम ऋणमुक्त होगई अब तुम लौट जाओ इसको क्रिया करो।

सावित्री बोली जहां मेरे पतिको कोई लेजाय वा आपही मेरा पति जाय, वहीं मुझे भी जाना चाहिये यह सनातन धर्म्म है। तप, गुरुभक्ति पतिस्नेह, व्रत और आपकी कृपासे मेरी गति कहीं नही रुक सकती। हे यम! तत्वको जाननेवाले पण्डित सात पग सङ्ग चलनेकी मित्रता मानते हैं, मैं मित्रताको समझके जो कहती हूं, उसे सुनो। अज्ञानी लोग बनमें नहीं रहते, न धर्म्म करते, न गुरु-कुलमें निवास, न परिश्रम कर सकते हैं, विज्ञा-नहीसे उन कर्मोंको मनुष्य करता है। इस लिये धर्म्महो प्रधान है। सज्जन जिसे मानते हों, वह एकही धर्म्म सबके मानने योग्य है दूसरे वा तीसरे धर्म्मकी इच्छा न करे। इस लिये महात्मा लोग धर्म्महीको प्रधान कहते हैं।

यम बोले, हे सावित्री! मैं तुम्हारे स्पष्ट स्वर व्यञ्जनयुक्त वाणीसे प्रसन्न हुआ। इसके जीवनके सिवाय जो तुम्हारी इच्छा हो सो वर मागो, मैं तुम्हें दूंगा।

सावित्री बोली, हमारे आश्रममें राज्यसे नष्ट अन्धा मेरा ससुर है, वह पुत्रयुक्त बल-वान और राजा हो, यही वर दीजिये।

यम बोले, हे निन्दारहित सावित्री! जो तुमने कहा मैं वही वर देता हूं, जान पड़ता है, कि मार्गकी थकाई तुम्हें आगई इस लिये अधिक श्रम मत करो, लौट जावो।

सावित्री बोली, हे देवराज! मुझे पतिके सङ्ग थकाई नहीं आती, क्योंकि पतिही मेरा आश्रय है, इस कारणसे जहां मेरे पतिको लिये जाते हो, मैंभी वहीं चलूंगी और मेरे बचन सुनिये। सज्जनोंसे एक बारभी मिलना उत्तम उससे भी सज्जनोंसे मित्रता करना उत्तम है, सज्जनोंका सङ्ग निष्फल नहीं होता, इससे सज्जनोंके समागमहीमें रहना चाहिये।

यमराज बोले, हे भामिनी! तुमने जो बचन कहा, वह मनके अनुसार पण्डितोंकी बुद्धि बढ़ानेवाला और हितकारी है, इस कारणसे सत्यवानको जिलानेके सिवाय जो इच्छा हो सो वर मागो।

सावित्री बोली, मेरे बुद्धिमान ससुरका पहिले जो राज्य नष्ट हो गया है, उस राज्यको वह फिर प्राप्त हों, और मेरे ससुर धर्म्मका परित्याग न करें, यही दूसरा बर मागती हूं।

यमराज बोले, हे सावित्री! तुम्हारे ससुर फिर अपने राज्यको पावेंगे, और धर्म्मको कभी नही छोड़ेंगे, हे राजपुत्री! अब तुम्हारा कार्य्यको मैंने सिद्ध किया, तुम लौट जाओ।

सावित्री बोली, हे यमराज! आपने प्रजाको नियममें रखा है, आप सबके नियन्ता हैं, सबको कर्म्मका फल देते हैं; इसीसे आपका नाम यम है। आप मेरी वाणीको सुनिये, मन बचन और कायासे किसी प्राणीका द्रोह न करना, सबपर दया करना, दान देना, यह सज्जनोंका सनातन धर्म्म है। इस जगतके मनुष्य शक्तिहीन है, महात्मा लोग शत्रुपरभी दया करते हैं।

यमराज बोले, प्यासेको जैसे जल मिले, इस प्रकारसे तुमने यह वाणी कही, दुर्लभ

सत्यवानको जिलानेके भिन्न जो तुम्हारी इच्छा हो सो वर मागो।

सावित्री बोली, मेरा पिता राजा होकर भी पुत्रहीन है, उसके सौ पुत्र हों जिससे मेरे पिताका कुल चले यह तीसरा वर मागती हूं।

यमराज बोले, हे राजपुत्री। तुम्हारे पिताके कुलको बढ़ानेवाले बड़े तेजस्वी सौ पुत्र होंगे, हे कल्याणि। तुम्हारा मनोरथ पूर्ण हुआ, तुम बहुत दूर आगई हो, लौट जाओ।

सावित्री बोली, तुम सूर्य्यके पुत्र बड़े प्रतापी हो, इससे तुम्हें पण्डित लोग वैवस्वत कहते हैं, प्रजा तुम्हारी आज्ञासे शम दममें रहती हैं, इससे तुम्हारा नाम धर्म्मराज है, मनुष्योंको जैसा विश्वास सज्जनोंमें होता है, वैसा अपनी आत्मामेंभी नहीं होता, इससे महात्मासे सब प्रार्थना करते हैं। महात्मा सब प्राणियोंके मित्र होते हैं, इसीसे विशेष करके सब प्राणी महात्माओंका विश्वास करते हैं।

यमराज बोले, हे कल्याणि। जैसा तुमने वचन कहे ऐसे तुम्हारे सिवाय और किसीसे मैने नहीं सुने। इससे मैं प्रसन्न हुआ हूं, इसके जिवनेके सिवाय और जो चाहो, सो वर मागो।

सावित्री बोली, हे देव। मेरे गर्भसे और सत्यवानके वीर्य्यसे हमारे कुलको बढ़ानेवाले बलवान सौपुत्र उत्पन्न हों, यह मैं मांगती हूं।

यमराज बोले, हे स्त्री। तुम्हारे बलवान सौ पुत्र होंगे, तुमको बहुत परिश्रम न हो। इस लिये लौट जाओ, अब बहुत दूर आगई हो।

सावित्री बोली, सज्जनोंकी धर्म्ममें प्रवृत्ति रहती है, सज्जन कभी दुःखी नहीं होते, न पछताते हैं, सज्जनोंका सङ्ग निष्फल नहीं होता, सज्जन अभयदान देके फिर नहीं लौटाते, वे भूत और भविष्यतके आश्रय हैं, साधुजन सत्यसे सूर्य्यको और तपसे पृथ्वीको धारण करते हैं, सज्जन कभी दुःखी नहीं होते। हे यमराज। यह व्रत आर्य्योंसे करने योग्य है, इस सनातन धर्म्मको जानके साधुजन पराया उपकार करते हैं, और दूसरोंसे अपने उपकारकी इच्छा नहीं रखते, सज्जनोंपर जो दया की जाती है, वह नाश नहीं होती, अर्थ और मान भी नष्ट नहीं होता, इस कारणसे महात्माओंमें धर्म्म रहता है, और वह धर्म्मकी रक्षा करते हैं।

यमराज बोले, हे भामिनी। तुम जो जो धर्म्मके अनुसार और मनको प्यारी बातोंको कहती हो, सो सब गम्भीर अर्थोंसे भरी हुई हैं। हे पतिव्रते। तुम्हारी बातोंको सुनकर हमारी भक्ति बढ़ती जाती है, इस लिये तुम विशेष वर मांगो।

सावित्री बोली, हे बरदान देनेवाले। तुमने जो हमको सौ पुत्र होनेका बरदान दिया है, मैं उसीकी सिद्धि चाहती हूं, इस लिये मैं ये बरदान मागती हूं कि मेरे पति जी जायं क्योंकि मैंभी बिना पतिके मरे हुएके समान हूं, मैं बिना पतिके कोई सुख नहीं भोगना चाहती, मैं बिना पतिके घरमें नहीं जाना चाहती, मैं बिना पतिके धनकी इच्छा नहीं करती, और न बिना पतिके जी सकती हूं। तुमहीने पहले मुझको बरदान दिया है कि तुम्हारे गर्भसे और सत्यवानके वीर्य्यसे सौ पुत्र उत्पन्न होंगे। सो तुमही हमारे पतिको लिये जाते हो, तब उस बरकी सिद्धि कैसे होगी? इस लिये मैं यह बरदान मागती हूं कि मेरे पति जी जायं, क्योंकि उनके जीनेहीसे आपके बचन सिद्ध होंगे।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! सूर्य्यपुत्र यमराज सावित्रीके वचन सुनकर प्रसन्न हुए, और सत्यवानको फांसीसे छोड़कर कहने लगे, हे भद्रे। हे कुलनन्दिनी। हमने तुम्हारे पतिको छोड़ दिया, ये रोगरहित स्तुति करनेके योग्य और अर्थोंको सिद्ध करनेवाला होगा, इसकी अवस्था चार सौ वर्षकी होगी, ये तुम्हारे

सहित धर्म्मपूर्व्वक अनेक यज्ञोंको करके लोकमें कीर्त्तिको प्राप्त करेंगे, जो इसके वीर्य्यसे और तुम्हारे गर्भसे सौ पुत्र उत्पन्न होंगे वे सब राजा बलवान पुत्र पौत्रोंसे युक्त जगतमें विख्यात और बहुत समय तक तुम्हारे नामसे प्रसिद्ध रहेंगे। तुम्हारे पिताके वीर्य्यसे तुम्हारी माताके सौ पुत्र उत्पन्न होंगे,वे सब लोग मालवीसे उत्पन्न होनेसे कारण मालव नामसे प्रसिद्ध होंगे। तुम्हारे सौ भाई देवतोंके समान बलवान तथा पुत्र और पौत्रोंके सहित बहुत दिनतक आनन्द करेंगे। महा प्रतापी यमराज सावित्रीको ऐसा वर देकर और उसको पीछेको लौटाकर अपने घरको चले गये। जब यमराज चले गये और सावित्रीने अपने पतिको प्राप्त कर लिया, तब सावित्री पुन: उसी स्थानपर आई जहां उसके मरे हुए पतिका शरीर पड़ा था। वह अपने पतिको मरा हुआ देख, उसके पास गई और उसके सिरको अपनी गोदमें रखकर भूमि पर बैठ गई, उसी समय सत्यवान जागे और सावित्रीसे कहने लगे। उस समय सत्यवान प्रेमसे अपनी स्त्रीको बार बार इस प्रकार देखने लगे, जैसे कोई परदेशसे आकर अपनी स्त्रीको देखता है।

सत्यवान बोले मैं बहुत समय तक सोता रहा, तुमने क्यों नहीं जगाया? वह जो काला पुरुष मुझको खींचता था, सो अब कहां गया?

सावित्री बोली, हे पुरुषसिंह। तुम मेरी गोदमें बहुत देर तक सोते रहे, पुरुषोंको नियममें रखनेवाले भगवान यमराज अपने घरको चले गये। हे राजपुत्र। तुम बहुत थक गये हो। और तुम्हारी निद्राभी खुल गई है, यदि तुमको उठनेकी शक्ति हो ता उठो; देखो यह समय आधी रातका है।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्। उसी समय सत्यवान चैतन्य होकर इस प्रकार उठे, जैसे कोई सुखसे सोकर उठता है। तब सब दिशाओंको और वनको देखकर सावित्रीसे बोले, हे पतली कमरवाली। मैं सदा फल खाकर रहता हूं आज तुम्हारे सहित फल लेने वनको आया था परन्तु काठ उखाड़ते समय मेरे सिरमें पीड़ा हुई, उस दु:खसे अत्यन्त पीड़ित होकर खड़ा न हो सका, तब तुम्हारी गोदमें सो रहा मुझको यहां तक सब स्मरण है। हे सुन्दरी। जब मैं तुम्हारी गोदमें सोया, तब मेरा मन निद्राके वशमें होगया, इसके पश्चात् मुझको घोर अन्धकार दिखाई दिया, फिर मैंने एक महातेजस्वी पुरुषको देखा, हे सुन्दरी। यदि तुम इस वृत्तान्तको जानती हो तो मुझसे कहो। क्या मैंने स्वप्न देखा था अथवा ये सब सत्य हैं?

सावित्री बोली, अधिक बात करनेसे रात बीत जायगी, इस लिये मैं तुमसे यह सब वृत्तान्त प्रात:काल कहूंगी। हे उत्तम व्रतधारी। तुम्हरा कल्याण हो उठो और चलकर अपने माता पिताको देखो। यह अंधियारी रात है, सूर्य्य अस्त होगया है, वे घोर शब्द करनेवाले राक्षस प्रसन्न होकर घूम रहे हैं, बनमें घूमते हुए हरिनोंके पैरोंसे लगकर पत्तोंका शब्द हो रहा है, ये सियारी दक्षिणको मुह करके घोर शब्द कर रही हैं, ये कभी कभी पश्चिमको मुह करके भी घोर शब्द करने लगती हैं, इससे मेरा हृदय कांपा जाता है। सत्यवान बोले, इस बनमें घोर अन्धकार छा गया है; इससे मार्ग नहीं दिखाई देता और तुम चल भी नहीं सकोगी।

सावित्री बोली, हे राजपुत्र। इस बनमें आग लग रही है और एक वृक्ष जल रहा है, उससे वायुसे उड़कर कहीं कहीं अग्नि दिखाई देती है। मैं वहांसे अग्नि ले आती हूं और इन लकड़ियोंमें लगाती हूं, तब चांदना होनेसे मार्ग दीखने लगेगा। आप अपने दु:खको दूर कीजिये, यदि आप पीड़ाके

कारण इस समय न चल सकें, और इस अन्धकारसे भरे हुए वनमें मार्गको न देख सकें तो आपकी आज्ञानुसार हम इसरात भर इसही वनमें रहै, प्रातःकाल जब सूर्य्य उदय होगा तब यहांसे चलेंगे।

सत्यवान बोले, मेरे सिरकी पीड़ा दूर होगई और सब शरीर सावधान है; इस लिये मेरी इच्छा है, कि तुम्हारी प्रसन्नतासे अपने माता पिताका दर्शन करूं। मै पहिले कभी इतने समय तक आश्रमसे बाहर नहीं रहा। सन्ध्या होतेही मेरी माता मुझे बाहर नहीं निकलने देती है, दिनको यदि मैं कहीं चला जाता हूं, तो मेरे माता पिता घबड़ाने लगते हैं; निश्चय मेरे पिता आश्रमवासियोंके सहित ढूढ़ते फिरते होंगे, मेरे मातापिताने बहुत दुःखसे मुझको प्राप्त किया है, उन्होने उसी समय कहा था, कि तुम शीघ्र आना, मुझे बहुत चिन्ता है, कि आज मेरे लिये उन दोनोंकी क्या दशा हुई होगी। उनको बिना देखे मुझको भी बहुत दुःख होता है। इन दोनों बूढ़ोंने बहुत प्रीतिके सहित चलते समय रोकर मुझसे कहा था, हे पुत्र! हम दोनों तुम्हारे विना क्षण भरभी नहीं जो सकते है, जबतक तुम नहीं आओगे तब-तक हमारा जीना कठिन हैं, तुम हमारी दृष्टि, वशके कर्त्ति, पिण्डदाता और कीर्त्तिके बढ़ानेवाले पुत्र हो, मेरे माता और पिता दोनों बूढ़े हैं; मै उनकी लाठी हूं; इस रात्रिमें मुझको न देखकर उनकी क्या दशा हुई होगी; मैं इस निद्राकी बहुत निन्दा करता हूं; उस अनुपकारिणीके कारणसे मेरे माता पिताको और मुझे इतना दुःख हुआ, मैं इस समय घोर आपत्तिमें पड़ा हूं, क्योंकि विना माता पिताके देखे, जी नहीं सकता, निश्चय मेरे अन्धे पिता घबड़ा-कर एक एक आश्रमवासीसे मेरा समाचार बूझ रहे होंगे। हे सुन्दरी! मुझे अपना इतना सोच नहीं है, जितना पिता और पतिव्रता माताका है: क्योंकि वे दोनो मेरेही कारणसे घोर दुःखमें पड़े है; उनके जीनेसे मैं भी जी सकता हूं, क्योंकि उनको पालन करना और उनका प्रिय काम करनाही मेरा धर्म्म है।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! पिताके प्यारे पिताके भक्त धर्म्मात्मा सत्यवान ऐसा कहकर दुःखसे व्याकुल होकर और अपने हाथोंको फैलाकर ऊंचे स्वरसे रोने लगे, धर्म्म करनेवाली सावित्री अपने पतिको शोकसे व्याकुल देखकर और उनकी आसुओंको अपने हाथसे पोंछकर कहने लगी, कि यदि मैंने कुछ तप किया हो, यदि मैने अग्निमें कुछ आहुति दी हो, तो उस पुण्यसे मेरे ससुर और सासको यह रात्रि सुखसे बीते, मुझे स्मरण नहीं है कि मैंने कभी खेलनेमेंभी झूठ बोला हो। वही शक्ति मेरे सास और ससुरकी रक्षा करे।

सत्यवान बोले, हे सावित्री! मैं अपने माता पिताके दर्शन करना चाहता हूं, इस लिये तुम शीघ्र चलो विलम्ब मत करो। हे सुन्दरमुखी! मैं अपने आत्माकी शपथ करके सत्य कहता हूं, कि यदि मेरे मातापिताको कुछ भी अनिष्ट हुआ होगा, तो मै नहीं जीऊंगा, यदि तेरी बुद्धि धर्म्ममें हो, यदि तुम मुझे जिलाना चाहती हो, और मेरा प्रिय कार्य्य करनेकी तुम्हारी इच्छा है, तो शीघ्र आश्रमको चलो।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्? अपने पतिके ऐसे बचन सुन सुन्दरी सावित्रीने उठकर अपने बालोंको बांधा, तब हाथ पकड़कर अपने पतिको उठाया, सत्यवानने उठकर अपने शरीरको हाथसे पोंछा, फिर सब दिशाओंको देखकर फलकी टोकरीको देखने लगे, तब सावित्री बोली, कि इन

फलोंको आप प्रातःकाल ले जाइयेगा, आपके कल्याणके निमित्त मैं कुल्हाड़ी ले चलती हूं, फिर सावित्रीने उस फलके टोकरेको एक वृक्षमें बांध दिया, और कुल्हाड़ी उठाकर अपने पतिके पास आई। गजगामिनी सुन्दरी सावित्री दाहिने कन्धेपर अपने पतिका हाथ रखकर और वाये कन्धेपर कुल्हाडी रखकर चली।

सत्यवान बोले, हे सुन्दरी। आश्रमके समीप आनेसे मैं सब मार्गोंको जान गया, और वृक्षोंके बीचमें विजली चमकनेसे भी सब मार्ग दीखने लगे। हे सुन्दरी। अब हम उसी स्थानमें आगये जहांसे फल तोड़े थे, अब मार्गका कुछ विचार न करो, सुखसे चली चलो। आगे ढांकके बनमें दो मार्ग आवेंगे, उसमेंसे उत्तरकी ओर-वाला जो मार्ग है, उसीसे तुम शीघ्र चलना; मैं बहुत सावधान और बलवान होगया हूं। अब मेरी इच्छा माता पिताके देखनेकी है, सावित्री और सत्यवान इस प्रकार बात करते हुए आश्रमकी ओरको चले।

२९६ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन् युधिष्ठिर। उसही समय महाबलवान राजा द्युमत्सेनकी दृष्टि ठीक होगई, और वे प्रसन्न होकर जगतकी सब वस्तुवोंको देखने लगे। तब वे अपनी शैव्या स्त्रीके सहित सब आश्रममें अपने पुत्रको ढूंढ़ने लगे, परन्तु उसे न पाकर बहुत दुःखी हुए। तब वे दोनों स्त्री पुरुष रात्रिहीमें आश्रम, वन नदी और तलावोंमें अपने पुत्रको ढूंढ़ने लगे, किसीका शब्द सुनकर अपने पुत्रकी शङ्काकर उधरहीको देखने लगते थे, और कहने लगते थे कि वह सावित्रीके सहित सत्यवान चला आता है, इस प्रकार घूमनेसे उन दोनोंके पैरोंमें घाव हो गये, और रुधिर बहने लगा, उनके शरीर कुशके कांटोंके लगनेसे छिद गये, तब वे उन्मत्तके समान इधर उधर घूमने लगे, अनन्तर आश्रमके रहनेवाले ब्राह्मण उनके पास गये और उनको समझाकर आश्रममें ले आये, तपोधन वृद्ध ब्राह्मणोंने स्त्री सहित राजा द्युमत्सेनसे पुराने राजोंकी कथा कहीं उनको सुनकर वे दोनो बूढ़े स्थिर हुए, और अपने पुत्रके बाल चरित्रोंको स्मरण करके बहुत दुखसे उसका मार्ग देखने लगे; फिर वे दोनों बूढ़े बहुत दुःखसे व्याकुल होकर हा पुत्र। हा पतिव्रता बहू। तुम दोनों कहां हो। ऐसा कहकर रोने लगे, तब सत्यवादी सुवर्चा नामक ब्राह्मण कहने लगे।

सुवर्चा बोले, सावित्री तप सत्य और आचारसे भरी है, इससे हम जानते हैं, कि सत्यवान जीता है।

गौतम मुनि बोले, मैंने अङ्गोंके सहित वेदोंको पढ़ा है, मैंने बहुत तप और बाल्यावस्थासे ब्रह्मचर्य्य साधन किया है, मैंने सावधान होकर समस्त व्रतोंको किया है, और विधिके सहित वायु भक्षण तथा उपवासभी किये हैं, उसही तपके बलसे सबके कर्मोंको जानता हूं, मैं सत्य कहता हूं, कि सत्यवान बहुत सुखी है।

शिष्य बोला, हमारे गुरुजीके मुखसे जो कुछ वचन निकला है, सो कभी मिथ्या नहीं होगा, इससे हम जानते है, कि सत्यवान जीता है।

ऋषिलोग बोले, हमें खूब निश्चय है कि सावित्रीके शरीरमें विधवा होनेका कोई लक्षण नहीं है, इससे हम जानते हैं, कि सत्यवान जीता है।

श्रीभरद्वाज मुनि बोले, सत्यवानकी स्त्री सावित्री तप, सत्य और शुद्धाचारसे भरी है, इससे हम जानते हैं कि सत्यवान जीता है।

श्रीदालभ्य मुनि बोले, हमने अपनी दृष्टि

सावित्रीके व्रतोंको देखा है, उसने निरन्तर कई उपवास किये हैं; इससे हम जानते हैं कि सत्यवान जीता है।

श्रीआपस्तम्ब मुनि बोले, देखो यह शान्ति दिशामें पक्षी और हरिण बोल रहे हैं, इससे हम जानते है, कि सत्यवान जीता है।

श्रीधौम्य मुनि बोले, तुम्हारा पुत्र सुलक्षणों से युक्त सब जगतका प्रिय और दीर्घआयु है; इससे हम जानते हैं कि सत्यवान जीता है।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्। जब सत्यवादी तपस्वी महात्माओंके ऐसे वचन सुने और उन सबका विचार करके राजा द्युमत्सेन कुछ शान्त हुए उसही समय सावित्री भी प्रसन्न होती हुई अपने पति सत्यवानके सहित आश्रममें आ पहुंची।

ब्राह्मण लोग बोले, हे पृथ्वीनाथ। हम-लोग पुत्र और दृष्टि सहित आपको देखकर बहुत प्रसन्न हुए हम लोग आपकी वृद्धि चाहते हैं। प्रारब्धहीसे सावित्री और सत्यवान मिले हैं और आपके नेत्र ठीक हुए हैं, तीनोंको पाकर आप प्रारब्धहीसे हृद्धि लाभ करेंगे। हम सब लोगोंने जो पहिले कहा था, उसमें कुछ भी सन्देह नहीं है अब शीघ्रही आपकी उन्नति होगी उसी समय फिर ब्राह्मणोंने अग्नि जलाई और राजाके समीप बैठ कर अग्निहोत्र करने लगे। उसी समय एक ओर सावित्री बैठ गई। तब उन सबने ब्राह्मणोंकी आज्ञासे शोकको दूर किया, तब ऋषियोंने राजाकेसमीप बैठकर कौतूहलके सहित राज- पुत्र सत्यवानसे पूछा। ऋषि लोग बोले, हे राजपुत्र! तुम अपनी स्त्रीके सहित पहिलेसे क्यों नहीं आये? तुमने इतनी अधिकरात्रि क्यों कर दी? वहां ऐसा विशेष कार्य्य क्या होगया था? तुम्हारे न आनेसे तुम्हारे माता पिताको बहुत दुःख हुआ, हमलोग इसके कारणको नहीं जानते, तुम हमसे कहो।

सत्यवान बोले, मैं अपने पिताकी आज्ञा लेकर सावित्रीके सहित बनको गया। वहां काठ उखाड़ते समय मेरे शिरमें पीड़ा हुई। मैं वहां सो गया और बहुत समय तक न जागा, जैसा मैं आज सोया वैसे पहिले कभी नहीं सोया था, इसलिये आप कुछ दुःख न कीजिये, इसी लिये मुझे इतनी रात्रि होगई इसके सिवाय और कोई कारण नहीं है।

गौतम मुनि बोले, अकस्मात तुम्हारे पिताके नेत्र खुल गये, इसका कारण तुम नहीं जानते सावित्री कहेगी। हे सावित्री। तुम आदि अन्तको जानती हो हम तुमको तेजमें गायत्रीके समान जानते हैं यदि इसमें कोई गुप्त बात न हो तो तुम हमसे वर्णन करो, क्योंकि तुम इसके सब कारणोंको जानती हो।

सावित्री बोली, हे ब्रह्मन्। आपने जो कहा सो सब सत्य है। आप लोगोंका सङ्कल्प झूंठा नहीं है और इसमें कोई गुप्त बात भी नहीं है, मैं सब सत्य सत्य कह देती हूं। मुझसे महात्मा नारदने मेरे पिताके घरमें कहा था, कि तुम्हारे पतिकी मृत्यु होजायगी, सो दिन आजही था, इस लिये मैंने इनका सङ्ग नहीं छोड़ा। जब यह वनमें सो गये, तब साक्षात यमराज अपने दूतोंके सहित इनके पास आये, और इनको फांसीमें बांधके दक्षिणकी ओर ले चले, उसी समय मैंने सत्य वचनसे जगतके स्वामी भगवान यमराजकी स्तुति करी, तब उन्होंने मुझको पांच वरदान दिये मेरे ससुरको राज्य और नेत्र प्राप्त हों मैंने ये दो वर दान ससुरके लिये मांगे। अपने पिताके सौ पुत्र, अपने सौ पुत्र, ये दो वर—प्राप्त किये। पांचवां वर मैंने अपने पतिके लिये मांगा, जिससे सत्यवानकी चार सौ वर्षकी अवस्था हुई। मैंने अपने पतिके जिलानेके लियेही यह व्रत किया था मैंने सब कारण विस्तार पूर्व्वक आप

कहा। आज मैं बहुत प्रसन्न हुई, मेरा सब दुःख नष्ट होगया।

ऋषिलोग बोले, हे सुन्दरी! तुमने राजा द्युमत्सेनके कुलको घोर दुःखके तलावमें डूबनेसे बचा लिया; वह तलाव घोर अन्धकार और दुःखोंसे भरा था। हे सुशीले! तुम बहुत कुलीन पतिव्रता और साध्वी हो।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे राजन्! इस प्रकार सब मुनियोंने पतिव्रता सावित्रीकी प्रशंसा करी फिर वे सब लोग राजा द्युमत्सेन और सत्यवानकी सम्मतिसे प्रसन्न होकर अपने अपने घरको चले गये।

२९७ अध्याय समाप्त।

श्रीमार्कण्डेय मुनि बोले, हे महाराज युधिष्ठिर! जब वह रात्रि व्यतीत होगई और सूर्य्य उदय हुए तब सब मुनि लोग राजा द्युमत्सेनके पास आये, वे सब महर्षि लोग सावित्रीकी कथा कहते कहते तृप्त नहीं होते थे; इस लिये बार बार कहते जाते थे। हे राजन्! उसी समय शाल्व देशसे राजा द्युमत्सेनके मन्त्री आये, और उनमेंसे प्रधान मन्त्री राजा द्युमत्सेनसे कहने लगा, कि हमने आपके शत्रुवोंको मार डाला। राजा द्युमत्सेनने जब सुना, कि हमारा शत्रु बन्धुवान्धव और सेनाके सहित नाश होगया, और हमारे सब मन्त्री लोग एक मत होकर हमको राज्य देना चाहते हैं, वे लोग कहते हैं कि राजा द्युमत्सेन चाहे अन्धे हों चाहे नेत्रवान हों, हम उनहीको राजा बनावेंगे ऐसाही निश्चय करके ये लोग यहां आये है, तब राजा द्युमत्सेन बहुत प्रसन्न हुए। तब एक मन्त्री कहने लगा, हे महाराज! यह आपकी चतुरङ्गिणी सेना उपस्थित हैं, आपका कल्याण हो। नगरमें आपकी विजय हुई है, अब चलकर बहुत दिनतक अपने पिता पितामहका राज्य कीजिये। जब मन्त्रियोंने राजाको नेत्रवान और तेजवान देखा, तब सब लोगोंने प्रसन्न होकर उनके चरणोंमें प्रणाम किया। तब राजा द्युमत्सेनने बहुत प्रसन्न होकर आश्रममें रहनेवाले बूढ़े ब्राह्मणोंको प्रणाम किया। अनन्तर अपने मन्त्रियोंके सहित नगरको चले गये, अनन्तर शैव्या महा तेजस्विनी सावित्रीके सहित एक पालकीमें बैठकर सेनाके सहित चलीं, नगरमें पहुंचकर पश्चात पुरोहितोंने राजा द्युमत्सेनका अभिषेक किया और महात्मा सत्यवानको युवराज बनाया, बहुत समय बीतनेके पश्चात सावित्रीके सौ पुत्र उत्पन्न हुए। वे सब महा बलवान और युद्ध करनेवाले थे, इसी प्रकार सावित्रीके पिताके भी सौ पुत्र उत्पन्न हुए। इस प्रकार सावित्रीने पिता, माता, सास, ससुर, पति और कुलको दुःखसे उद्धार किया। इसी प्रकार शीलवती कल्याणी द्रौपदी भी सावित्रीके समान आप लोगोंके कुलका उद्धार करेंगी।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! मार्कण्डेय मुनिके ऐसे बचन सुन पाण्डुपुत्र महात्मा युधिष्ठिर शोक और दुःख रहित होकर काम्यक बनमें रहने लगे, जो पुरुष इस सावित्रीकी कथाको सुनता है, वह सदा सुखी रहता है और उसके सब प्रयोजनभी सिद्ध होजाते हैं।

२९८ अध्याय समाप्त।

पतिव्रता महात्म्यपर्व्व समाप्त।

अथ कुण्डलाहरण पर्व्व।

राजा जनमेजय बोले, हे ब्रह्मन! इन्द्रकी आज्ञानुसार लोमश मुनिने जो राजा युधिष्ठिरसे आकर कहा था, कि जिस घोर भयको तुम किसीसे नहीं कहते हो, अर्जुनके यहां आनेपर हम उसका नाश करेंगे, हे महा तपस्विन् क्या वह घोर भय कर्णहीसे था? क्या धर्मात्मा

युधिष्ठिरने यह समाचार किसीसे नहीं कहा था ?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजशार्दूल। हम तुमसे इस कथाको कहते हैं, तुम हमारे वचनका विश्वास करो। जब पाण्डवोंको वनमें रहते रहते बारह वर्ष बीत गये, और तेरहवां वर्ष आरम्भ हुआ तब पाण्डवोंके हित करनेवाले इन्द्रने कर्णसे भिक्षा मांगनेका विचार किया, हे महाराज। जब सूर्य्यने जाना कि इन्द्र कर्णके पास कुण्डल लेनेको आवेंगे, तब वे कर्णके पास गये, उस समय कर्ण महामूल्य पलङ्गपर उत्तम बिछौना बिछाये सो रहे थे, जब महात्मा, सत्यवादी, ब्राह्मण-भक्त कर्ण सोते थे, उसी समय सूर्य्यने अपना पुत्र जानकर कर्णपर बड़ी कृपा करी, सूर्य्यने परम सुन्दर वेदपाठी ब्राह्मणका रूप बनाया, और कर्णका कल्याण करनेके लिये ऐसा कहा, हे कर्ण! हे तात। हे सत्यवादियोंमें श्रेष्ठ। हे महाबाहो। तुम हमारे हितके बचनोंको सुनो, हम तुम्हारे प्रेमसे कहते हैं, तुम्हारे पास पाण्डवोंका कल्याण करनेके लिये इन्द्र आवेंगे, वे ब्राह्मणका रूप बनाकर तुमसे कुण्डल मांगेंगे, उन्होंने तुम्हारे और जगतके स्वभावको जान लिया है, वे अच्छी प्रकारसे जानते हैं, कि तुम मांगनेवालेको सब कुछ देते हो, और किसीसे कुछ मांगते नहीं हो, हे तात। तुम्हारा यह स्वभाव है, कि जो ब्राह्मण धनादि कुछ वस्तुको मांगता है, तुम उसे मना नहीं करते, तुम्हारा यह स्वभाव जानकर इन्द्र आपही कुण्डल और कवच मांगनेको तुम्हारे पास आवेंगे, तुम उनको कुण्डल मत देना और शक्तिके अनुसार उनको प्रसन्न कर लेना, इसीमें तुम्हारा परम कल्याण होगा, हे तात! जब वह तुमसे कुण्डल मांगें तब तुम और धन देकर उसको निवारण करना, स्त्री, गऊ, अनेक प्रकारके रत्न और अनेक प्रकारके धन देना; परन्तु इन्द्र तुमसे कुण्डलको मांगेंगे। हे कर्ण! यदि तुम सङ्ग उत्पन्न हुए सुन्दर कुण्डलोंको दे दोगे, तब तुम्हारी आयु नष्ट हो जायगी और तुम मर जाओगे, तुम हमारे वचनोंको निश्चय मानो, कि जबतक तुम्हारे शरीरमें कवच और कुण्डल हैं, तबहीतक तुमको कोई शत्रु युद्धमें नहीं मार सकता है। हे कर्ण! ये रत्नरूपी कवच और कुण्डल अमृतसे उत्पन्न हुए हैं। तुमको अपना जीवन प्रिय है, तो इनकी रक्षा करो।

कर्ण बोले, हे भगवन्। आपके समान हमारा कल्याण करनेवाला कौन होगा? आपने हमारे हितके वचन कहे, अब आप हमसे कहिये, कि ब्राह्मण वेषधारी आप कौन हैं।

ब्राह्मण बोले, हे तात! मैं सूर्य्य हूं, और प्रेमके वशमें होकर तुम्हारे पास आया हूं, और तुमसे यह सब कह दिया है, तुम हमारे बचनोंको करोगे, तो तुम्हारा कल्याण होगा।

कर्ण बोले, जिसके साक्षात सूर्य्य स्वामी हैं, ऐसे कर्णका सदा कल्याण ही है, आप हमारे बचनोंको सुनिये। आपने हमारे हितके लिये यह सब कहा, परन्तु हम आपकी स्तुति करते हैं, और हम आपको प्रणाम करके विनय करते हैं, कि यदि आप हमसे प्रेम करते हैं, तो हमको इस व्रतसे निवारण न कीजिये, हे सूर्य्य। हमारे इस व्रतको सब जानता है, मेरा यह प्रण है, कि मैं ब्राह्मणोंको अपने प्राणभी दे दूंगा, हे आकाशगामियोंमें श्रेष्ठ! यदि पाण्डवोंका कल्याण करनेके लिये ब्राह्मणका वेष बनाकर इन्द्र मेरे पास भिक्षा मांगनेभी आवेंगे, तो मैं कुण्डल और उत्तम कवचको देदूंगा, हे देवश्रेष्ठ! मेरी यह इच्छा है, कि मेरे यशका नाश न हो। मेरे समान पुरुषको उचित है कि प्राणोंकी रक्षा न करके यशकी रक्षा करे, क्योंकि यशके सहित मरण

उत्तम है, यदि बलि और वृत्रासुरके मारनेवाले इन्द्र मेरे पास भिक्षा मांगनेको आवेंगे, तो मैं कवच और कुण्डल दे दूंगा, यदि पाण्डवोंके कल्याणके निमित्त इन्द्र मुझसे कवच और कुण्डल मांगनेको आवें तो मेरी बहुत कीर्त्ति बढ़ेगी। हे सूर्य्य! मैं अपना शरीर देकरभी कीर्त्तिकी रक्षा चाहता हूं, क्योंकि कीर्त्तिवानको स्वर्ग मिलता है और कीर्त्तिहीनका नाश हो जाता है। कीर्त्ति माताके समान पुरुषकी रक्षा करती है, अपकीर्त्ति जीते हुए पुरुषका भी नाश कर देती है, हे सूर्य्य! इस पुराने श्लोकमें साक्षात ब्रह्माने कीर्त्तिको पुरुषकी आयु बताया है, इस लोकमेंभी कीर्त्ति आयुको बढ़ाती है, सो अब मै अपने सङ्ग उत्पन्न हुए कवच और कुण्डलको देकर अनन्त कीर्त्तिको प्राप्त करूंगा, ब्राह्मणोंको विधिपूर्व्वक दान देकर घोर कर्म्म करके युद्धमें अपने शरीरको छोड़ूंगा, मैं सब शत्रुवोंको जीतकर अपने यशको रक्षा करूंगा, जो लोग युद्धमें जीवदान मांगेंगे उन्हें अभय दूंगा, बूढ़े बालक और ब्राह्मणोंको महा भयसे छुड़ाकर इस लोकमें यश और परलोकमें सुख प्राप्त करूंगा, मैं अपना जीव देकर भी यशको रक्षा करूंगा, यही मेरा प्रण है, अब मैं ब्राह्मण वेषधारी इन्द्रको कवच और कुण्डल देकर यशको प्राप्त करूंगा!

२९९ अध्याय समाप्त।

सूर्य्य बोले, हे कर्ण! तुम अपना, मित्रोंका, पुत्रोंका, माताका, स्त्री और पिताका अहित कर्म्म मत करो, हे शरीरधारियोंमें श्रेष्ठ! पुरुषको उचित है कि जो कर्म्म शरीरके अनुकूल हो उसीको करे, क्योंकि शरीर रहनेसे इस लोक और परलोकमें यश स्थिर होता है, तुम अपना शरीर देकर जो कीर्त्तिकी इच्छा करते हो, इससे निःसन्देह तुम्हारा शरीर नाश हो जायगा, जीवतेके लिये, पिता, माता, पुत्र आदि सब बान्धव लो कार्य्यको करते हैं, हे पुरुषसिंह। हे मह तेजस्वी। राजा लोग भी पौरुष करके कीर्त्ति का लाभ करते हैं, परन्तु कीर्त्ति जीतेही कार्य्य सिद्ध कर सकती है, और मरनेके पश्चा शरीर जल गया, तब कीर्त्ति किस का आवेगी मरा हुआ, मनुष्य कीर्त्तिको देख नहीं आता, जीता कीर्त्तिको भोगता है, म हुए की कीर्त्ति ऐसेही है कि जैसे मरे हुएके माला पहिनानी, हम तुमको भक्त जानक ये सब हितकी बात कहते हैं, क्योंकि भक्तोंक रक्षा करना हमारा काम है, हे महाभुज हम तुमको अपना परम भक्त मानते हैं तुमको भक्त देखकर हमकोभी भक्ति उत्पन्न हुई है, इससे तुम हमारे वचनोंको ग्रहण करो, इसमें कुछ देवतोंकी बनाई हुई गु बातभी है, इसी लिये हम तुमसे कहते हैं कि हमारे वचनोंमे शङ्का मत करो, तुम देवतोंको नहीं जान सकते हो। इससे यह पूरी बात हम तुमको नहीं सुनाते हैं, तुम समयपर आप जान लोगे, हे राधापुत्र! हम तुमसे बार बार वही बात कहते हैं कि, तुम इन्द्रको अपने कुण्डल मत देना, हे महा तेजस्वी! इन दोनो कुण्डलोंसे तुम्हारी ऐसी शोभा होती है, जैसे विशाखाके बीचमें आकाशमें उदय हुए चन्द्रमाकी, तुम इस बातका निश्चय जानो कि जीते हुए पुरुषको कीर्त्ति सहायक है, इस लिये इन्द्र जब तुमसे कुण्डल लेनेको आवे, तब मना कर देना, हे पापरहित! जब देवराज इन्द्र तुम्हारे पास कुण्डल मांगनेको आवे तब तुम अनेक प्रकारकी बात करके, उनको कुण्डल न देना तुम देवराजको, इच्छाको बार बार निवारण करना, तुम मीठे हेतुके सहित मनोहर वचनोंसे इन्द्रकी बुद्धिको अपने वशमें कर लेना, हे पुरुषसिंह!

…म सदाहो अर्ज्जुनसे युद्ध करनेकी इच्छा …खते हो। वही वीर अर्ज्जुन तुमसे युद्ध कर-…नेको आवेंगे, यदि साचात इन्द्रभी अर्ज्जुनके मित्र …हों तो भी कुण्डलोंके सहित तुमको नहीं मार सकते है, हे कर्ण। यदि तुम अर्ज्जुनके जीत-…नेकी इच्छा करते हो, तो ये सुन्दर कुण्डल इन्द्रको मत देना।

३०० अध्याय समाप्त।

कर्ण बोले, हे सूर्य्य। मैं आपका भक्त हूं, …रन्तु आप मुझको जानते हैं कि जगतमें कोई ऐसी वस्तु नहीं है, जिसको मैं न दान करूं, हे सूर्य्य मुझको जैसा आप प्रिय हैं, तैसे स्त्री पुत्र मित्र और अपना शरीरभी नहीं है, जगतकी यह रीति है कि महात्मा लोग अपने भक्तोंके ऊपर कृपा और उनका कार्य्य सिद्ध करतेही हैं, हे सूर्य्य। आप निःसन्देह इन सब बातोंको जानतेही है कि कर्ण मेरा प्यारा भक्त है. वह कभी किसी दूसरे देवताकी उपासना नहीं करता, इस लिये तुमने यह सब हमसे कहा है, अब हम आपके चरणोंमें सिरसे प्रणाम करते हैं, और बार बार यही बरदान मांगते हैं कि आप हमारे इन सब अपराधोंको चमा कीजिये, हम इतना मृत्यु से नहीं डरते, जितना झूठसे विशेषकर हम पण्डित ब्राह्मणोंसे अधिक …रते है, मे अपना जीव देनेमें भी कुछ विचार …हीं करता, तुमने जो हमसे अर्ज्जुनको बात …कही, सो उसके लिये कुछ आप अपने मनमें दुःख न कीजिये, मैं अर्ज्जुनको युद्धमें जीत लूंगा। हे देव। तुम हमारे अशस्त्र बलको जानते हो। हमने परशुराम और महात्मा द्रोणाचार्य्य जीसे अशस्त्र विद्या सीखी है, हे देव श्रेष्ठ! आप हमारे इस ब्रतको जानतेही है, इस लिये यदि इन्द्र हमारा शरीरभी मागेंगे तो हम दे देंगे।

सूर्य्य बोले, हे तात। यदि तुम इन्द्रको अपने सुन्दर कुण्डल दो, तो उनसे अपने विजयके लिये बरदान मांग लेना, तुम उनसे कहना कि हे इन्द्र। तुम हमसे नियम कर लो तो हम कुण्डल दें हे कर्ण! तुम इन कुण्डलोंके सहित सब प्राणियोंसे अबध्य हो, परन्तु दानवनाशन इन्द्र तुमसे कहेंगे कि, अर्ज्जुन तुमको मारेंगे, ऐसा कहकर वे तुमसे कुण्डल ले लेंगे, तब तुम बार बार अच्छी बातें कहकर, प्रसन्न करना, इस प्रकार तुम देवराज इन्द्रकी आराधना करना तब तुम्हारा कल्याण होगा, जब इन्द्र प्रसन्न हों, तब उनसे कहना कि आप हमको शत्रुओंके नाश करनेवाली अमोघशक्ति दीजिये, हे सहस्राच। तब हम आपको अपने उत्तम कुण्डल और कवच देंगे, हे कर्ण। जब इन्द्र इस विषमको मान लें तब तुम अपने कवच और कुण्डल देना, हे कर्ण। उस शक्तिसे युद्धमें तुम अपने शत्रुओंका नाश करोगे, हे महाबाहो! वह, इन्द्रकी शक्ति सैकड़ों सहस्रों शत्रुओंको मारे विना पुनः हाथमें नहीं आती है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, सूर्य्य कर्णसे ऐसा कहकर वहीं अन्तर्द्धान हो गये, तब कर्णने सन्ध्या करनेके पश्चात अपने देखे हुए, स्वप्नको और रातकी बातोंको सूर्य्यसे कह दिया, इस सब समाचारको सुनकर राहुके जीतनेवाले भगवान सूर्य्यने हंसकर कहा कि यह सब सत्य है, शत्रुनाशन राधापुत्र कर्ण इस सबको सत्य जानकर शक्तिकी इच्छा कर इन्द्रका मार्ग देखने लगे।

३०१ अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजय बोले, हे तपोधन! वह कौनसी गुप्त बात थी जो सूर्य्यने कर्णसे नहीं कही? कर्णके कवच और कुण्डल कैसे थे, और कहांसे उत्पन्न हुए थे; हम सब कथाको सुनना चाहते है, आप कहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय

हम आपसे सूर्यकी गुप्त बात तथा कर्णके कवच और कुण्डलोंका वर्णन करते हैं, हे राजन्! पहिले समयमें राजा कुन्तिभोजके पास एक ब्राह्मण गया, वह महा तेजस्वी सुन्दर लम्बा जटामूछ और दण्डको धारण किये, सुन्दर नवीन शरीरवाला तेजसे प्रकाशित होता हुआ, आगौर वर्ण और मीठे वचनवाला वेद-पाठी था, वह महा तपस्वी ब्राह्मण राजा कुन्तिभोजसे कहने लगा, हे छलरहित! यदि तुम्हारी इच्छा हो तो हम तुमसे एक भिक्षा-मांगें, तुम अपने दासोंके सहित हमारे वच-नोंको स्वीकार करो, हेपापरहित। यदि तुम हमारे वचनोंको स्वीकार करो तो हम तुम्हारे घरमें रहैं, हम अपनी इच्छानुसार बाहर जायंगे और इच्छानुसार आवेंगे हे राजन्। मेरी शय्या और आसनपर कोई बैठने न पावे, तब राजा कुन्तिभोजने प्रसन्न होकर ब्राह्मणसे कहा आप जैसा कहते हैं वैसाही होगा, मेरी पृथा नामक यशस्विनी कन्या है, वह बड़ी शीलवती धर्मचारिणी सती और साध्वी है, वह आपकी पूजा और सत्कार करेगी, आप उसके शीलको देखकर प्रसन्न हूजियेगा, ऐसा कहकर राजाने उस ब्राह्मणकी पूजा करी, तब विशालनैनी कुन्तीको बुलाकर कहने लगे, हे पुत्री। यह महाभाग ब्राह्मण हमारे घरमें रहनेकी इच्छा करते हैं मैंनेभी इनको यहां रखनेकी प्रतिज्ञा किया है, हे पुत्री तुम इस ब्राह्मणकी सेवा करो, तुम हमारे वचनको सदाही सत्य करना, यह तपस्वी ब्राह्मण सदा वेद पठन करता है, यह तेजस्वी ब्राह्मण जो तुमसे मागे सो देना कभी छल मत करना, ब्राह्मणही परम तेज है ब्राह्मणही परम तप है ब्राह्मणोंके नमस्कार करनेहीसे आकाशमें सूर्य तपता है, वातापी नामक दानवने ब्राह्म-णका सन्मान नहीं किया था इसीसे उसका नाश होगया और तालजङ्घका भी इसीसे नाश

हुआ है हे पुत्री! हम इस महा भार
तुम्हारे सिर देते हैं; तुम सावधान होकर
ब्राह्मणकी सदा सेवा करना हे नन्दिनी। ह
तुम्हारे स्वभावको बालकपनसे जान्ते हैं
ब्राह्मण गुरु और बन्धुओंको समानही जान
हो तथा सेवक सम्बन्धी और मित्रमें भी सद
तुम्हारी समान प्रीति है, तुम मुझे अ
अपनी माताको जैसा मानती हो वैसाही सब
मानना होगा, रनवासमें और नगरमें तु
असन्तुष्ट कोई नहीं है, हे सुन्दरी। तुम्हा
सेवकोंमें भी समान प्रीति है, मैं तुमको आ
देकर कहता हूं कि, हे बाले हे पृथे। तुम उत्त
वृष्णि वंशमें उत्पन्न हुई हो, और वीरपुत्री
मैं तुमसे बहुत प्रेम भी करता हूं तुम्ह
पिताने प्रसन्न होकर तुम्हे मुझे दे
तुम वसुदेवकी बहिन हो, और मेरी सब पु
योंमें श्रेष्ठ हो, मैंने तुम्हारे पितासे प
ऐसीही प्रतिज्ञा की थी, इससे तुम मेरी पु
हो, तुम उत्तम कुलमें उत्पन्न औरपालि
हुई हो, निरन्तर सुखहीमें रही हो,
सुन्दरी। प्रायः स्त्रीलोग बाला भावसे दुष्ट
कर बैठती हैं, परन्तु वे दुष्ट कुलमें उत्पन्न हु
और बन्धन रहित होती हैं, हे पृथे! तु
राजकुलमें उत्पन्न हुई हो और रूपभ
तुम्हारा अद्भुत है, इससे तुम्हारे समान औ
कोई स्त्री चतुर नही है, इसलिये तुम अभि
मान नहीं करो और छलको छोड़कर वरदा
देनेवाले ब्राह्मणकी सेवा करो, हे कल्याणी
ऐसा करनेसे निश्चय तुम्हारा कल्याण होगा,
यदि ब्राह्मण क्रुद्ध होगा तो वह तेरे सब
वंशको भस्म कर देगा।

३०२ अध्याय समाप्त।

कुन्ती बोली हे राजन्। मैं सावधान होकर
ब्राह्मणकी सेवा करूंगी आपकी प्रतिज्ञाको
कभी झूठी नहीं करूंगी, हे राजेन्द्र। मैं सदा

कहती हूं कि ब्राह्मणोंकी पूजा करना मेरा स्वभावही है तिसमें भी आपका प्रिय कार्य्य करनेसेही मेरा कल्याण होगा। चाहे औ ब्राह्मण दिनमें आवे चाहे रात्रिमें आवे चाहे सध्यामें आवे अथवा औ आधी रात्रिहीको क्यों न आवें परन्तु मैं ऐसी सेवा करूंगी कि उन्हें कभी क्रोध न होगा, हे राजेन्द्र! मुझको ब्राह्मणकी सेवा करनेसे बहुत लाभ होगा, हे नरोत्तम! आपकी आज्ञामें रहनेसे मेरा बहुत हित होगा। हे राजेन्द्र! आप सावधान हूजिये, मैं बिना अपराधके ब्राह्मणकी सेवा करूंगी, मैं सत्य कहती हूं कि हमारे घरमें रहनेसे ब्राह्मणको कुछ दुःख नहीं होगा। हे पापरहित! जिससे ब्राह्मण प्रसन्न हो और जिसमें आपका लाभ हो, मै वैसाही यत्न करूंगी आप अपने मनके दुःखको दूर कीजिये, हे पृथ्वीनाथ! महाभाग ब्राह्मण लोग पूजा करनेसे तार सकते हैं और क्रोध करके नाश कर सकते हैं, मैं इन सब बातोंको विचार कर ब्राह्मण श्रेष्ठ तपस्वीकी सेवा करूंगी, आपको मेरे कारणसे कुछ दुःख नहीं होगा, हे राजेन्द्र! दूसरोंके अपराधसे भी ब्राह्मण लोग राजका नाश कर देते हैं, जैसे च्यवन मुनिने सुकन्याके अपराधसे राजा शर्य्यातीको शाप दिया था, मैं परम यत्न करके नियम पूर्व्वक ब्राह्मणकी सेवा करूंगी, हे नरेन्द्र। जैसे तुमने कहा यह सब काम वैसाही होगा। कुन्तीके इस प्रकारके वचन सुन, राजाने उसको अपने हृदयमें लगाया, और उसको सब कार्य्य समझा दिया।

राजा बोले, हे भद्रे! तुम इन सब कार्य्योंको शङ्का रहित होकर करना, हे अनिन्दिते! इसमें तुम्हारा मेरा और कुलका कल्याण होगा, महा यशस्वी राजा कुन्तिभोजने यह कह कन्या ब्राह्मणको दे दी, फिर ब्राह्मणभक्त राजाने ब्राह्मणसे कहा, हे ब्राह्मण। यह मेरी कन्या जन्मसे सुखमें रही है, और अभी इसको अवस्था बहुत कम है, यदि आपका कोई अपराध करे तो क्षमा कीजियेगा, महाभाग ब्राह्मण लोग बूढ़े बालक और तपस्वियोंपर अपराध करनेसे भी क्रोध नहीं किया करते। हे द्विजोत्तम। ब्राह्मणोंको चाहिये कि चाहे कोई कैसाही अपराध करे उस पर शान्ति रक्खे और उत्साह तथा शक्तिके अनुसार पूजा ग्रहण करें, जब ब्राह्मणने कहा बहुत अच्छा, तब राजाने प्रसन्न होकर चन्द्रमाकी किरणोंके समान युक्त घर ब्राह्मणको दिया, उस स्थानमें शयन करनेका आसन और आहारादिकी सब वस्तु रक्खी हुई थी, राजपुत्रीने उस आलसयुक्त ब्राह्मणकी बड़े यत्नके साथ सेवा करनी आरम्भकी, कुन्तीने बहुत शुद्ध होकर देवताके समान बिधि पूर्व्वक ब्राह्मणकी सेवा करी।

२०३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्। उस व्रत करनेवाले ब्राह्मणको उस कन्याने शुद्ध मनसे सेवा करके प्रसन्न किया, वह ब्राह्मण कभी यह कहके कि मैं प्रातःकालही आऊंगा, सन्ध्याको कहके रात्रीको आता था, परन्तु सब समयमें खाने वा पीने योग्य भोजन वह कन्या तयार रखती थी, अन्नादिक तथा शय्या और आसन आदिसे सेवा करनेमें उस कन्याकी श्रद्धा प्रतिदिन बढ़ती जाती थी, कम नहीं होती थी, ब्राह्मणके अप्रिय वचन तथा घुड़की सहकरभी कुन्तीने कभी ब्राह्मणका अनादर न किया, कभी वह ब्राह्मण बिना समयके आता था और कभी समय पर भी नहीं आता था, और बहुत दुर्लभ भोजन मांगता था, जो वह मांगता था, वह सब बना हुआ, पाता था, कुन्तीने उसकी शिष्यके समान पुत्रके तुल्य अथवा पुत्रवधूके समान सेवा करी, हे राजेन्द्र। मनकी इच्छाके अनुसार ब्राह्मणका निन्द्रारहित कुन्तीने प्रसन्न किया, वह ब्राह्मण उत्तम कुन्तीके शील और

व्रतसे प्रसन्न हुआ, और बड़े यत्नसे उसके कल्याणकी चिन्ता करने लगा, कुन्तीका पिता सन्ध्यासमय प्रातःकाल बूझता था कि हे पुत्री! तुम्हारी सेवासे ब्राह्मण प्रसन्न है या नहीं? यशोवती कुन्ती अपने पिता राजा कुन्तिभोजसे यही कह देती थी कि ब्राह्मण बहुत प्रसन्न है, तब राजा कुन्तीभोजभी बहुत प्रसन्न होते थे, इस प्रकारसे जब एक वर्ष पूरा होगया, और उस ब्राह्मणने कुन्तीका कोई दोष न देखा तब कुन्तीके कल्याण चाहनेवाले ब्राह्मणने कहा, हे कल्याणी! मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूं, जो तुम्हारी इच्छा हो सो वर मागो वह बहुत कठिनभी होगा, तौभी मैं दूंगा, जिससे तुम्हारा जगतमें यश हो। कुन्ती बोली, हे वेदके जाननेवालोंमें श्रेष्ठ! जो तुम और मेरे पिता प्रसन्न हुए, तो मेरे सब कार्य्य सिद्ध हुए, ब्राह्मण बोला कि हे अच्छे हंसनेवाली! जो तुम मुझसे वर नहीं मागती हो तो देवतोंके बुलानेके वास्ते यह मन्त्र देता हूं, इसे ग्रहण करो इस मन्त्रसे तुम जिस जिस देवताको बुलाओगी वही तुम्हारे वशमें हो जायगा, कामना सहित या कामना रहित जिस देवताको बुलाओगी वही इस मन्त्रके प्रतापसे तुम्हारा सेवक हो जायगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, ब्राह्मणके शापके भयसे दूसरी बार कुन्ती उनके बचनका उत्तर न दे सकी, तब उस ब्राह्मणने उत्तम अङ्गवाली कुन्तीको अथर्ववेदमें लिखा हुआ मन्त्र उपदेश किया, कुन्तीको मन्त्र उपदेश करके राजा कुन्तिभोजसे ब्राह्मणने कहा मैं तुम्हारी कन्याकी सेवासे बहुत सुखी रहा, तुम्हारे घरमें सुखी रहा, इसी कारणसे तुम्हारे घरमें कल्याण होगा, ऐसा कहकर वह ब्राह्मण वहीं अन्तर्द्धान होगया। राजा कुन्तीभोज उसको अन्तर्द्धान हुआ देखके बहुत आश्चर्य्य करने लगे, और कुन्तीकी पूजा करी।

२०४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब वह ब्राह्मण चला गया, तब कुन्तीने उस मन्त्रके दिये हुए बलाबलका विचार किया, उस महात्माने मुझे यह मन्त्र कैसा दिया है, इसके बलको शीघ्रही विचारना चाहिये, इस प्रकारसे जब कुन्ती चिन्ता कर रही थी, उसी समय उसको अचानक रजस्वलापन जान पड़ा, उसे देखके कुन्ती बहुत लज्जित हुई, तब महलपर उत्तम शय्याके ऊपर बैठी हुई कुन्तीने पूर्ब्ब दिशामें निकलते हुए, सूर्य्यको देखा, कुन्तीने मन और दृष्टि सूर्य्यमण्डलमें लगा दी सूर्य्यके रूपसे कुन्तीको कुछभी क्लेश न हुआ, कुन्तीकी दृष्टि दिव्य होगई तब उसने कुण्डल और कवचके सहित सूर्य्य देवको प्रत्यक्ष रूपसे देखा, उसका पहिले होसे उस मन्त्रके बलको देखनेका विचार था, तब उसने सूर्य्यकाही आह्वान किया, कुन्तीने प्रणाम करके सूर्य्यके नामकी आहुती दीं, तब बहुत शीघ्रताके साथ सूर्य्य वहां आगये, पिङ्गल वर्ण कबूतरके समान कण्ठ वाले महाबाहु आभूषण पहिने अपने तेजसे दिशाओंका प्रकाश करते हुए, योगसे अपने दो स्वरूप बनाके सूर्य्यदेव कुन्तीके पास आये, और कुन्तीसे शान्तिपूर्ब्बक ऐसे वचन बोले।

सूर्य्य बोले, हे रानी! मैं मन्त्रके प्रतापसे तुम्हारे वशमें होगया हूं, कहो मैं तुम्हारा क्या काम करूं, कुन्ती बोली, हे भगवान! आप जहांसे आए है आप वहींको चले जाइये मैंने क्रीड़ा खेलसे तुमको बुला लिया था।

सूर्य्य बोले, हे सुन्दर अङ्गवाली! जैसा तुम कहती हो, मैं वैसेही चला जाऊंगा, किन्तु देवताको बुलाके वृथा भेजना अच्छा नहीं, हे कल्याणि सूर्य्यके वीर्य्यसे कवच कुण्डल धारण किये, अनुपम तुम्हारे पुत्र हो, हे हाथीके समान चालवाली! तुम मुझे

यह वरदान दी कि तुम्हारी इच्छाके अनुसार पुत्र उत्पन्न हो। हे कल्याणी। मैं फिर चला जाऊंगा, यदि तुम मेरे बचनको न करोगी तो मैं ब्राह्मणको तुम्हारे पिताको ाप दूंगा, और तुम्हारे वास्ते उन सबको भस्म ार दूंगा! तेरे मूर्ख पिता कोभी भस्म कर गा, मैं तेरे अन्यायको नहीं जानता था, रे स्वभावको बिना जाने मैं यहां आगया, इन्द्रादिक देवता सब मुझे लज्जित करेंगे, मुझसे ठगा हुआ मुझे देखेंगे। हे भामिनी! ुम इन्द्रादिक देवतोंको अन्तरीक्षमें देखो, ने दिव्यदृष्टि तमको प्रथम दी थी जिससे ुमने मुझे देखा था।

श्रीवैशम्पायन मुनि वोले, तब कुन्तीने विमानोंमें बैठे हुए, सूर्य्यके समान प्रकाशयुक्त देवतोंको देखा उनको देखके कुन्ती लज्जित हुई और सूर्य्यसे ऐसे वचन बोली, हे गोपते। आप अपने विमानमें चले जाइये मैने बालकभावसे आपका यह अपराध किया है माता पिता तथा और बड़े लोग इस शरीरको दान करनेमें समर्थ होते हैं मैं धर्म्मको नाश नहीं कर सकती हूं, स्त्रियोंका परम धर्म्म अपनी देहको रक्षा करना है, हे सूर्य्य! मैंने मन्त्रका वल जाननेके लिये आपको वुलाया था, सोभी बालक भावसे आप मुझे वालिका जान कर क्षमा कोजिये।

सूर्य्य वोले, कि जा मैं बालिका समझके तुम्हारे अपराधको क्षमा कर द तो और लागभी ऐसाही अपराध करेंग, तुम आपका मुझे दान करो इससे तुमको शान्ति प्राप्त हागो, मुझका वृथा जाना उचित नही है, मैं अपने लाकमे जाके सब देवतासे हसने याग्य हूगा, इस लिये तुम मुझसे सङ्गम करा, ऐसा करनेसे तुम्हारे मेरेही समान पुत्र उत्पन्न हागा और सब लाकमें तुम्हारो कीर्त्ति होगी।

२०५ अध्याय समाप्त।

वैशम्पायन मुनि बोले, कि वह कन्या अनेक भातिके मीठे बचन कह करके भी सूर्य्यको निवारण न कर सकी, जब अन्धकारको निवारण करनेवाले सूर्य्यको निवारण न कर सकी तब सूर्य्यके शापसे डरी कुन्तीने विचारा कि ये विना अपराध किये मेरे पिताको तथा दुर्व्वासा ब्राह्मणको क्रोध करके शाप देंगे, बालकपनमेभी जो मोहसे पाप किया जाता है, वहभी यशस्वियोंके द्वारा फलको देता है, मैं अब भयसे व्याकुल हुई सूर्य्यको किस प्रकारसे आत्मदान करूं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्। वह कन्या भयसे व्याकुल मोहसे भरी लज्जित होके बारम्बार विचारने लगी, हे पृथ्वीपाल! कुन्ती सूर्य्यके भयसे व्याकुल सखियोंसे लज्जित शापसे डरकर सूर्य्यसे ऐसा बचन बोली।

कुन्ती बाली, हे देव! मेरे पिता माता और वन्धु बान्धव लोग जीते हैं, उनके जीते हुए मैं धर्म्मको नाश नहीं कर सकती, यदि वेद विधिका छोड़कर मैं तुमसे सङ्गम करू तो मेरे पिताकी कीर्त्ति नाश हो जायगी, और जो तुम सबको धर्म्म मानते हा तो विना बन्धवोंये दिये मैं तुमसे सङ्गम नहीं करूंगी, हे देव। आत्मदान बहुत कठिन है, मैं सती हू किस प्रकारसे आत्म दान करू, प्राणियोंका यश और आयु तुमसेही स्थिर है।

सूर्य्य बाले, हे मन्द हंसनेवाली। तुम्हारे माता पिता और गुरु लोग तुम्हारे स्वामी रहेंगे, कन्या सब कामोंमें स्वतन्त्र रहती है, इसीसे वह कन्या कहलाती है, हे उत्तम वर्णवाली। जो तुम काम करागी वह अधर्म्म नहा होगा, जिसे मैं कहता हूं वह अधर्म्म क्योंकर हो सकता है? हे उत्तमवर्णवाली। स्त्री और पुरुष वन्धन रहित है, इच्छाको रोकनाही विकार कहाता है, इस

वास्ते तुम मुझसे सङ्गम करके फिर कन्या हो जाओगी, तुम्हारा पुत्र बड़ा बलवान और कीर्त्तिवान होगा।

कुन्ती बोली, हे अन्धकारके दूर करनेवाले! यदि तुमसे कुण्डल कवच धारण किये पुत्र हो तो मैं प्रसन्न हूं,

सूर्य्य बोले, हे कल्याणी! तुम्हारा पुत्र बड़ा बलवान और कुण्डल कवच धारण किये होगा।

कुन्ती बोली, यदि मेरा पुत्र गर्भसे कुण्डल कवच पहिने हो तो जैसा आप कहते हैं, वैसेही मेरे साथ सङ्गम कीजिये, परन्तु मेरा पुत्र रूप तेजमें आपके समान तथा धर्म्मात्मा हो।

सूर्य्य बोले, अदितीने मुझे प्रकाश युक्त कुण्डल दिये थे, वे मै तुम्हारे पुत्रको दूंगा, और यह उत्तम कवच भी दूंगा।

कुन्ती बोली, हे भगवन्! यदि आपके कहनेके अनुसार मेरे पुत्र हो, तो मैं तुमसे सङ्गम करूं।

वैशम्पायन मुनि बोले, ऐसा कहके राहुके शत्रु आकाशचारी सूर्य्य कुन्तीके पास गये, और उसकी नाभीको स्पर्श किया, तब वह कन्या सूर्य्यके तेजसे विकल होगई और मूर्च्छित होकर शय्यापर गिर पड़ी।

सूर्य्य बोले, हे सुन्दरी। हम तुमको प्रसन्न करेंगे, तुम्हारे गर्भमें सब शस्त्रधारियोमें श्रेष्ठ पुत्र होगा, और तुम फिर कन्या होजाओगी।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजेन्द्र! जब कुन्तोने देखा कि महातेजस्वी सूर्य्य मुझसे सङ्गम करनेको उपस्थित है, तब लज्जासे उनके वचनको स्वीकार किया, फिर लज्जासे व्याकुल होकर टूटी हुई, लताके समान मूर्च्छित होकर शय्यापर गिर गई तब सूर्य्यने अपने तेजसे उसको पूरित कर दिया, और अपनी आत्माको उसके शरीरमें प्रवेश किया, परन्तु उसका कन्या भाव नष्ट नहीं किया, तब कुन्तीको फिर संज्ञा प्राप्त हुई।

३०६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्। जनमेजय! उसी दिन कुन्तीको गर्भ रह गया, तब वह गर्भ शुक्लपक्षके चन्द्रमा समान बढने लगा, कुन्ती अपने बान्धवोंके भयसे गर्भको छिपाने लगी, इससे किसीने नहीं जाना कि सुन्दरी कुन्तीको गर्भ है, धात्रीके सिवाय और कोई स्त्री उसके गर्भको नहीं जान सकी

वह अपने घरमें रहकर गर्भकी रक्षा करती रही, अनन्तर उत्तम वर्णवाली कुन्तीके गर्भसे देवताके समान पुत्र उत्पन्न हुआ और कुन्ती सूर्य्यकी कृपासे फिर कन्या होगई वह बालक कवच और सोनेके समान प्रकाशमान सुन्दर कुण्डल धारण किये उत्पन्न हुआ उसके नेत्र सिंहके समान और कन्धे बैलके कन्धेके समान ऊंचे थे, उस बालकके उत्पन्न होतेही कुन्तीने अपनी धात्रीके सङ्ग सम्मति करके उस लड़केको एक मोमसे लिपी हुई सुन्दर विस्तृत कोमल सोनेके योग्य कंडीमें लिटाकर नदीमें बहा दिया, कुन्ती जानती थी कि कन्या गर्भको धारण नहीं कर सकती है, तौ भी पुत्रके प्रेमसे रोने लगी पुत्रको नदीमें बहाते समय कुन्तीने रोकर जो कुछ वचन कहे सो सुनिये, हे पुत्र! आकाश पृथ्वी स्वर्ग और जलमें रहने वाले प्राणी तुम्हारी रक्षा करें, तुम्हारा मार्ग्ग कल्याण हो तुम्हे कोई शत्रु दुःख न दे, हे पुत्र! जो तुम्हारा शत्रु तुम्हारे समीप आवे, वो भी तुम्हारा मित्र हो जाय, जलमें जलके स्वामी वरुण और आकाश गामी पवन तुम्हारी रक्षा करें, जिन्होने दिव्य विधिसे तुमको मुझे दिया था, वह सब तेजधारियोमें श्रेष्ठ तुम्हारे पिता सूर्य्य तुम्हारी रक्षा करें, वसु, रुद्र, साध्य, विश्वदेव, मरुत, इन्द्र, दिशा, और दिक्पाल

आदि सब देवता सुख और दुःखसे तुम्हारी रक्षा करें; मैं जब तुम्हें विदेशमें भी देखूंगी, तब इसही कवचसे पहिचान लूंगी, हे पुत्र! तुम्हारे पिता सूर्य्यको धन्य है जो अपनी दिव्य दृष्टिसे, तुम्हें नदीमें बहता हुआ देखेंगे, हे देव पुत्र! उस स्त्रीको धन्य है जो तुमको अपना पुत्र बनावेगी और प्यासमें जिसका तुम दूध पीयोगे, उस स्त्रीने कौन स्वप्न देखा होगा, जो सूर्य्यके समान तेजस्वी दिव्य कवच कुण्डलधारी पद्मके समान लाल वर्णवाले, सुन्दर केशवाले तुमको अपना पुत्र बनावेगी? उन स्त्रियोंको धन्य है जो तुमको पृथ्वीमें चलते हुए, तोतली-बानी बोलते हुए और धूलमें लिपटे हुए देखेंगी हे पुत्र! उन पुरुषोंको धन्य है जो तुमको यौवन अवस्थामें हिमाचलके वनमें उत्पन्न हुए सिंहके समान बलवान देखेंगे इस प्रकारसे बहुत रोकर कुन्तीने उसबालकको अश्व नदीके जलमें बहा दिया, फिर कमलनयनी कुन्ती उसही आधीरातके समय पुत्रके शोकसे व्याकुल रोती हुई, अपनी धात्रीके सङ्ग पिता पुत्रके भयसे नगरको चली आई और शोकसे व्याकुल होकर राजभवनमें चली गई। वह काण्डी अश्व नदीमें बहती बहती चरमरावतीमें पहुंची, वहांसे जमुनामें और जमुनासे गङ्गामें बहतो सूतको राजधानी चम्पापुरीमें पहुंची, वह बालक गङ्गाकी तरंगोंसे कभी ऊंचा और कभी नीचा हो जाता था। इस अमृतसे उत्पन्न हुए कवच और कुण्डलको धारण किये, वह बालक प्रारब्धसे जीता हुआ चम्पापुरीमें पहुंचा।

२०७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! उसही समय राजा धृतराष्ट्रका मित्र अधिरथ नामक सूत अपनीस्त्रीके सहित गङ्गास्नान करने गया था अधिरथकी सुन्दरी स्त्रीका नाम राधा था, उसके समान सुन्दरी पृथ्वीमें कोई नहीं थी परन्तु उसके पुत्र नहीं था, वह सदा पुत्रके लिये अनेक यत्न किया करती थी, उसने नदीमें बहती हुई काडीको देखा, इतनेहीमें वह घाससे ढकी हुई हाथसे पकड़ने योग्यसुन्दर काण्डी गङ्गाकी तरङ्गोंसे बहती हुई राधाके पास आगई, तब सुन्दरी राधाने उसे खेल जानकर पकड़ लिया, फिर अपने पति अधिरथसे कह दिया, अधिरथने अनेक यत्नोंसे उसके पासके जलको हटाकर उसे निकाल लिया, और उससे दो पहरके सूर्य्यके समान तेजस्वी कवच और कुण्डलधारी सुन्दर मुखवाले एक बालकको देखा, तब अधिरथ अपनी स्त्रीके सहित बहुत आश्चर्य्य करने लगा, और उस बालकको गोदमें लेकर अपनी स्त्रीसे बोला, हे सुन्दरी! यह बड़े आश्चर्य्यकी बात है कि यह देवपुत्र हमको प्राप्त हुआ, इसमें कुछ सन्देह नहीं कि देवतोंने मुझे पुत्र-रहित जानकर यह पुत्र दिया है, ऐसा कहकर उस पुत्रको अपनी स्त्रीको दे दिया, राधाने उस दिव्यरूपी कमलके समान सुन्दर लक्ष्मीवान देवपुत्रका ग्रहण किया, और विधिपूर्व्वक पालने लगी, बलवान कर्णभी बढ़ने लगे। इसके पश्चात् राधाके गर्भसे अनेक पुत्र उत्पन्न हुए, ब्राह्मणोंने कर्णको सोनेका कवच और कुण्डल धारण किये हुए देखकर वसुषेण नाम रक्खा और फिर अधिरथके वृष पुत्र हुए, कुन्तीनभी दूतोंके मुखसे सुना कि वह दिव्य कवचधारी बलवान बालक सूतके घरमें पलता है। अधिरथ सूतने जब देखा कि मेरा पुत्र बड़ा होगया, तब उसे पढ़नेके लिये हस्तिनापुर भेज दिया, कर्ण वहां आकर द्रोणाचार्य्यके यहां रहने लगे, और उनसे धनुर्वेद पढ़ने लगे। कुछ दिनके पश्चात महा बलवान कर्ण और दुर्य्योधनसे मित्रता होगई, कर्णने द्रोणाचार्य्य कृपाचार्य्य और परशुरामसे चार प्रकारको बाण

विद्या सीखी, अनन्तर लोकमें महा धनुषधारियोंमें गिने जाने लगे, फिर इन्होंने दुर्य्योधनसे मित्रता करके पाण्डवोंसे शत्रुता कर ली, वे सदा महात्मा अर्ज्जुनसे युद्ध करनेकी इच्छा रखते थे, और अर्ज्जुनका डाह किया करते थे, हे पृथ्वीनाथ! इसही प्रकार अर्ज्जुनभी इनसे सदा युद्ध करनेको उपस्थित रहते थे, क्योंकि उन्होंने उनका बल देख लिया था। हे महाराज! यही गुप्त बात थी जो कर्णसे सूर्य्यने कही थी। इस प्रकार कर्ण कुन्तीके गर्भमें सूर्य्यके वीर्य्यसे उत्पन्न हुए थे कर्णको दिव्य कवच कुण्डल धारण किये हुए देखकर राजा युधिष्ठिर सदा दुःखित होते थे, वे जानते थे कि कर्णको युद्धमें कोई नहीं मार सकता है, हे राजेन्द्र! जिस समय दिनके मध्यमें कर्ण स्नान करनेके पश्चात हाथ जोड़कर सूर्य्यको प्रणाम करते थे, उसही समय धन मागनेके लिये अनेक ब्राह्मण उनके समीप आते थे, जगतमें कोई ऐसी बस्तु नहीं थी जो उस समय कर्ण ब्राह्मणोंको न दें, एक दिन इन्द्र ब्राह्मणका वेष बनाकर कर्णके पास भिक्षा मागनेको आये, कर्णने उनका बहुत सत्कार किया।

३०८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! उस कपटवेषी ब्राह्मणको आया देखकर कर्णने उसका आदर किया, पर उसके मनकी न समझा। अधिरथपुत्र कर्णने ब्राह्मणसे कहा कि मैं तुमको क्या दूं? सुवर्णके अलङ्कार कण्ठमें भूषण पहिरे स्त्री, गांव अथवा बहुतसी गो?

ब्राह्मण बोला, मैं सोनेके आभूषणवाली अथवा प्रीतिको बढ़ानेवाली और वस्तुवोंको लेना नहीं चाहता हूं, यह किसी भिखारीको देना। यह जो तुम्हारे सङ्ग उत्पन्न हुआ, कवच और कुण्डल हैं, उनको अपने शरीरसे उतार कर मुझे दो, हे पापरहित! यही मैं मांगता हूं। हे शत्रुनाशन! यही मेरा सब लाभों उत्तम लाभ है, यही आप मुझे दीजिये।

कर्ण बोले, हे ब्राह्मण! मैं तुमको पृथ्वी, गौ और अनेक वर्षोंका भोजन दे सक्ता हूं, किन्तु कवच और कुण्डल नहीं दूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! इस प्रकारसे उस ब्राह्मणसे कर्णने अनेक वाक्य कहे पर उसने कोई दूसरा वर न मांगा। कर्णने यथा शक्तिके अनुसार उस ब्राह्मणको मान्य किया और उनकी पूजा करी परन्तु उस ब्राह्मणने कोई दूसरा वर न मांगा। तब हंसकर राधापुत्र कर्णने ब्राह्मणसे कहा हे ब्राह्मण! यह कवच और कुण्डल माताके गर्भसे ही मेरे सङ्ग उत्पन्न हुआ है, इससे मैं शत्रुवोंसे मारनेके अयोग्य हूं, इसही कारणसे मैं इसे नहीं उतार सकता हूं। हे ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ! तुम मुझसे बहुतसा निष्कण्टक, कुशलतासे पूर्ण पृथ्वीका राज्य लो। हे ब्राह्मणोंमे श्रेष्ठ! जब मैं अपने सङ्गमें उत्पन्न हुए कुण्डल और कवचसे हीन हो जाऊंगा तब शत्रु लोग मुझे मार डालेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! जब भगवान इन्द्रने दूसरा वर न मागा, तब कर्ण फिर हंसके ऐसे वचन कहे। हे देवताओंके स्वामी? मै आपको पहिलेही जान गया था, परन्तु यह उचित नहीं है कि मैं आपको वृथा वर दू। आप साक्षात देवपति इन्द्र हैं, आपको चाहिये कि मुझे वर दें, आप सब प्राणियोंके स्वामी हैं। हे देव! यदि मैं आपको कुण्डल और कवच दे दूं तो मै शत्रुवोंसे मारनेयोग्य होजाऊंगा, और आपकी जगतमें हंसी होगी। हे इन्द्र! इस कारणसे आप एक प्रण करके मुझसे कवच और कुण्डल लीजिये।

इन्द्र बोले, जब मैं तुम्हारे पासको आता था, तबही सूर्य्यने मुझे जान लिया था, इसीसे

तुमको मेरा हाल मालुम होगया। हे कर्ण! जैसा तुम कहते, हो वैसाही हो, मेरे वज्रको छोड़के जो तुम्हारी इच्छा हो सो वर मांगो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तब कर्णने प्रसन्न चित्त होके इन्द्रसे कहा, और शत्रुओंको नाश करनेवाली तथा युद्धमें निबारण होनेके अयोग्य शक्ति मागी।

कर्ण बोले, हे इन्द्र! कुण्डल और कवचके बदलेमें सेनाके मध्यमें शत्रुवोंको नाश करनेवाली अव्यर्थ शक्ति दीजिये। इन्द्र थोड़े समय तक विचार करके कर्णसे बोले, हे कर्ण! तुम मुझे कुण्डल और कवच देकर मुझसे शक्ति ग्रहण करो, यही हमारा तुमसे प्रण है। यह शक्ति मेरे हाथसे छूटकर सैकड़ों दैत्योंको नाश करके फिर मेरे हाथमें चली आती है। हे सूतगत्र! वही अमोघशक्ति तुम्हारे हाथसे छूटकर एक शत्रुको मारकर फिर मेरे पास चली आवेगी।

कर्ण बोले, मैं युद्धमें गर्जते और दौड़ते एकही शत्रुको मारना चाहता हूं, एकही शत्रुसे मुझे भय है।

इन्द्र बोले, हे कर्ण! बलवान युद्धमें गर्जते हुए जिस एक शत्रुको मारना चाहते हो, उसको महात्मा कृष्ण रक्षा करते हैं। वेदके जाननेवाले पण्डित लोग जिसे जीतनेके अयोग्य वराह और नारायण कहते हैं, वही कृष्ण तुम्हारे शत्रुकी रक्षा करते हैं।

कर्ण बोले, हे भगवन्! जैसा आप कहते हैं, वैसाही हो, एक प्रतापी बीरको मारनेके वास्ते आप अमोघ शक्ति दीजिये। इन्द्र बोले, हे कर्ण! तुमको कभी युद्धमें भय न होगा, और न तुम्हारे शरीरमें कभी घाव होगा क्योंकि तुम झूंठको इच्छा नहीं करते हो। हे कर्ण! जैसा तुम्हारे पिताका वर्ण और तेज है, वैसाही सबसे तुम्हाराभी तेज और वर्ण होगा। तुम्हारे पास और शस्त्र हों यदि उस समय तुम इस अमोघ शक्तिको सावधानतासे रहित होकर चलाओगे तो यह शक्ति तुम्हारेही आकर लगेगी।

कर्ण बोले, हे इन्द्र! जब मुझे अपने प्राणोंका सङ्कट जान पड़ेगा तब मैं इस इन्द्रकी शक्तिको चलाऊंगा, जैसा आपने कहा है, वैसाही करूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महीपाल! तब कर्णने जलती हुई, शक्तिको लेकर तीक्ष्ण शस्त्रोंसे अपने सब अङ्गोंको काट डाला, अपने अङ्गोंको काटते समय कर्णके मुखपर कुछभी विकार न आया, इस प्रकारसे कर्णको अपने अङ्गोंको काटते हुए, देखके देवता दानव और मनुष्योंने भयानक शब्द किया, उस समय आकाशमें दुन्दभी बजने लगी, और फूलोंकी वर्षा होने लगी, कर्णको अपने अङ्ग काटकर हंसते हुए देखकर देवतोंने फूलोंकी वर्षा की! कर्णने अपने अङ्गोंसे निकालकर गीलाही कवच इन्द्रको दे दिया, ऐसेही कानोंको काटकर कुण्डलभी दे दिये, इसही कर्मसे सूतपुत्रका नाम कर्ण हुआ था। इन्द्र कर्णको छलकर तथा लोकमें कर्णको यशस्वी बनाके और पाण्डवोंके कार्य्यको पूरा हुआ समझके हंसते हुए स्वर्गको चले गये। धृतराष्ट्रपुत्र कर्णकी छला हुआ सुनके बहुत दीन और मान रहित होगये, बननिवासी पाण्डव लोग कर्णकी उस दशाको सुनके बहुत प्रसन्न हुए।

राजा जनमेजय बोले, हे भगवन्! उस समय पाण्डव लोग कहां रहते थे? उन्होंने इस प्यारी बातको किससे सुना था? बारह वर्षके पश्चात उन्होंने क्या किया? यह सब आप मुझसे कहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, द्रौपदीको प्राप्त करके और सिन्धुदेशके राजा जयद्रथको भगाकर, काम्यक वनमें मार्कण्डेय ऋषिसे ब्राह्मणोंके

सहित देवता और ऋषियोंके पुराने चरित्र सुनते हुए पाण्डव वहीं रहने लगे।

३०९ अध्याय समाप्त।

कुण्डलाहरण पर्व्व समाप्त।

राजा जनमेजय बोले, हे महामुने? जब द्रौपदी हरी गई, तब पाण्डवोंने बहुत क्लेश उठाया, पश्चात द्रौपदीको पाकर पाण्डवोंने क्या किया?

श्रीवैशम्पायनमुनि बोले, हे राजन्! इस प्रकारसे द्रौपदीके हरे जानेपर कठिन क्लेशको पाकर महाराज युधिष्ठिर अपने भाइयोंके सहित काम्यक बनको त्यागकर मनोहर स्वादयुक्त फल मूलसे भरे, अनेक भांतिके वृक्षोंसे पूर्ण द्वैतबनको चले गये। व्रत करनेवाले थोड़ा भोजन करनेवाले पाण्डव द्रौपदीके सहित द्वैत बनमें रहने लगे। राजा युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्ज्जुन, नकुल और सहदेवने द्रौपदीके सहित उस बनमें रहकर ब्राह्मणोंके हितके वास्ते बहुत दुःख पाया। उन कुरुकुलश्रेष्ठोंने जो उस बनमें रहकर सुख और दुःख भोगे उनका वर्णन करता हूं सुनो। द्वैत बनमें एक तपस्वी ब्राह्मणकी अरणी और मंथानीसे एक हरिन आके अपने सिरको रगड़ने लगा; उस हरिनके सींगमें उस ब्राह्मणकी अरणी और मथानी फंस गई, हे राजन् जनमेजय! उस अरणी और मथानीको लेके वह बड़े वेगसे चलनेवाला महामृग ब्राह्मणके आश्रमसे शीघ्रही भाग गया। हे कुरुसत्तम! वह ब्राह्मण अपनी अरणी और मथानीको ले जाते देखकर बड़ी शीघ्रतासे अग्निहोत्रको देखनेके वास्ते अपने आश्रम पर गया। उस ब्राह्मणने द्वैत बनमें महाराज युधिष्ठिरको भाइयोंके सहित बैठे हुए देखा, ब्राह्मणने उनके पास जाकर बड़े दुःखके साथ यह कहा, हे महाराज! मेरी अरणी और मथानी एक वृक्षमें लटकी हुई थी, एक हरिन आके उस वृक्षसे अपने शरीरको रगड़ने लगा, रगड़ते हुए हरिनके सींगमें मेरी अरणी और मथानी उलझ गई। वह बड़े वेगवाला महामृग शीघ्रताके साथ उन्हें लेकर चला गया। हे पाण्डव लोगो! उस हरिनके पैरोंके चिह्नसे उस हरिनको पकड़ कर मेरी अरणी और मथानीको आप ला ला दीजिये जिससे अग्निहोत्रका नाश न हो।

३१० अध्याय समाप्त।

महाराज युधिष्ठिर ब्राह्मणके वचनोंको सुनके बहुत दुःखी हुए, और धनुष लेके भाइयोंके सहित उठे। सब पाण्डव कवच पहनकर और धनुष धारण करके उस मृगके पैरोंके चिह्नपर चल दिये, कुछ दूर जाके उन्हें वह मृग मिल गया। महारथी पाण्डव लोग कानतक खींचकर बाण मारते थे, तौभी समीप खड़ा हरिन उन बाणोंसे न वेधा गया। तब यत्न करनेवालोंकी दृष्टिसे वह मृग अदृश्य होगया, हरिनके गुप्त होनेसे पाण्डवोंको बड़ा दुःख हुआ, उस घोर बनमें पाण्डव लोग भूख और प्याससे व्याकुल होकर एक बड़की ठंढी छायामें जा बैठे। जब पाण्डव लोग छायामें जा बैठे, तब दुःखके साथ क्रोध करके नकुल बड़े भाई युधिष्ठिरसे बोले, हे राजन! हमारे कुलमें कभी धर्म्मका लोप नहीं हुआ, और न कभी आलस्यसे अर्थका नाश हुआ है, परन्तु हम किस कारणसे संकटमें ग्रस्त हुए हैं।

माहाराज युधिष्ठिर बोले, आपत्तिके कालमें कोई मर्य्यादा नहीं होती, आपदाओंका कोई निमित्त और कारणभी नहीं होता, पुण्य और पापका विभाग धर्म्महो करता है।

भीमसेन बोले, जब प्रतिकामी द्रौपदीको दासके समान सभामें लाया था, तब मैंने उसको नहीं मारा, इसही कारणसे हम लोगोंको यह कष्ट प्राप्त हुआ है।

अर्ज्जुन बोले, सूतपुत्र कर्णने बहुत कठोर वचन कहे थे, और मैंने उन्हें क्षमा कर दिया, इसही कारणसे हम लोगोंको यह कष्ट मिला है।

सहदेव बोले, जब शकुनिने आपको जुएमें जीता था, तब हमने उसे नहीं मारा इसही कारणसे हम लोगोंको कष्ट मिला है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इसके अनन्तर महाराज युधिष्ठिर नकुलसे ऐसा वाक्य बोले, हे माद्रीनन्दन। तुम वृक्षपर चढके दशों दिशाओंको देखो, कहीं समीपमें जलके किनारे वाले वृक्ष और पानी है या नहीं, देखो यह तुम्हारे भाई प्यासे हो रहे हैं। नकुलभी बहुत अच्छा कहके शीघ्रताके साथ वृक्षपर चढ गये, और चारों ओरको देखके अपने बडे भाईसे बोले, हे राजन्। मैं जलके तटपर होनेवाले अनेक वृक्षोंको देखता हूं, सारसोंका शब्दभी सुनाई देता है, वहा अवश्यही जल होगा। तब सत्यवादी कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर बोले, हे सौम्य। तुम शीघ्रतासे तरकससें जल भरकर लाओ। नकुल "बहुत अच्छा" कहके बड़े भाईकी आज्ञासे वहांको चले जहां पानी था और बहुत शीघ्र वहां पहुंच गये। नकुलने विमल जलको सारसोंसे घिरा हुआ देखके पीनेकी इच्छा करी, इतनेहीमें नकुलने आकाशवाणी सुनी।

यक्ष बोला, हे प्यारे। साहस मत करो, मेरे प्रश्नोंका उत्तर देके जल पीना और लेभी जाना। नकुलने यक्षके वाक्यका अनादर करके जल पीया किन्तु जल पीतेही नकुल पृथ्वीमें गिर पड़े। जब नकुलको देर हुई, तब राजा युधिष्ठिरने शत्रुओंको नाश करनेवाले सहदेवसे कहा, हे पापरहित। हमारे भाईको गये बहुत देर हुई इससे तुम जाकर भाईके सहित पानीको ले आओ। सहदेवभी "बहुत अच्छा" कहके उसही ओरको गये और जलके समीप जाके अपने भाई नकुलको पृथ्वीमें मरा हुआ पड़ा देखा। सहदेव भाईके शोकसे और प्याससे बहुतही व्याकुल होकर पानी पीनेको चले। तब आकाशवाणी हुई, हे प्यारे! हठ मत करो, पहिले मेरे प्रश्नोंका उत्तर दो फिर जल पीयो और लेभी जाओ। प्यासे सहदेवने उस वचनका अनादर करके ठण्डा जल पिया, और पीकर गिर पड़े। इसके पश्चात युधिष्ठिरने अर्ज्जुनसे कहा, हे शत्रुओंको दुःख देनेवाले अर्ज्जुन! तुम्हारे दो भाई जल लेनेको गये हैं, तुम जाके दोनो भाइयोंको और जलको ले आओ। हे तात! हम दुःखियोंका तुमही आश्रय हो। ऐसे वचन सुनके धनुष बाण और नङ्गा खड्ग लेकर अर्ज्जुन उस तलावपर पहुंचे। वहां श्वेत घोड़ेवाले अर्ज्जुनने जो जल लानेको पहिले दोनो भाइ गये थे, उन दोनो पुरुषसिंहोंको पृथ्वीमें पड़ा हुआ देखा। सोए हुएके समान उन दोनो भाइओंको देखके अर्ज्जुनको बड़ा दुःख हुआ तब धनुष चढ़ाके अर्ज्जुन उस सब बनको देखने लगे, अर्ज्जुनने उस बनमें किसी प्राणीको न देखा, तब थककर पानी पीनेको चले। जब अर्ज्जुन जल पीनेको चले तब बिना शरीरकी वाणी सुन पड़ी। हे अर्ज्जुन। क्या तुम पानी पीना चाहते हो? सो तुम बलसे नहीं पी सकते हो, हे भारत। यदि मेरे प्रश्नोंका उत्तर दोगे तो जल पियोगे, और लेभी जाओगे। अर्ज्जुनको जल पीनेसे जब रोका, तब अर्ज्जुनने कहा कि प्रत्यक्ष होके मुझे रोको; मेरे बाणोंसे छिदकर फिर ऐसे न बोलोगे। अर्ज्जुनने ऐसे कहके बाणोंको दिव्य अस्त्रोंसे युक्त करके शब्दवेधी रीतिसे चारों ओर बाणवर्षा करनी आरम्भ की। हे भरतवंशी जनमेजय! कानों तक खींचकर निवारण होनेके अयोग्य बाणोंको वर्षा करके अर्ज्जुनको बहुत प्यास लगी। अर्ज्जुनके बाणोंसे आकाश भर गया।

यक्ष बोला, हे कुन्तीपुत्र। इस उपायसे

कुछ फल नहीं होगा, मेरे प्रश्नोंका उत्तर देके जल पियो बिना प्रश्नोंका उत्तर दिये, जल पीतेही मर जायोगे। सव्यसाची अर्ज्जुन इस बातको सुनके उस यक्षकी वाणीका अनादर करके जल पीने लगे, और जल पीके मर गये। इसके पश्चात कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरने भीमसेनसे कहा। हे शत्रुओंको तपानेवाले। नकुल सह-देव और अर्ज्जुन बहुत देरसे जल लेनेको गये हैं, परन्तु कोईभी अबतक नहीं आये तुम जाकर सब भाइओंको और जलको ले आओ भीमसेनभी "बहुत अच्छा" कहके वहीं पहुंचे। जहां उनके भाई मरे पड़े थे, उनको देखकर भीमसेन बहुत दुःखी और प्याससे व्याकुल हो गये। महाबली भीमने समझा कि यह कर्म्म किसी यक्ष वा राक्षसका है, भीमसेनने विचार किया यहां पर युद्ध अवश्य करना चाहिये, ऐसा विचार कर भीमसेन जल पीनेको चले।

यक्ष बोला, हे प्यारे। हठ मत करो; पहिले मेरे प्रश्नोंका उत्तर देके जल पीयो। और ले जाओ। भीमसेन यक्षकी बातको सुनके और तेजस्वी यक्षके प्रश्नोंका उत्तर बिनाही दिये जल पीकर पृथ्वीमें गिर पड़े। तब नरश्रेष्ठ कुन्तीनन्दन राजा युधिष्ठिर बारम्बार चिन्ता करके उठे, उस समय युधिष्ठिरका मन जलने लगा। युधिष्ठिरने उस बनमें प्रवेश किया जिसमें किसी मनुष्यका शब्द नहीं सुन पड़ता था, रुरु बनैले सुख और अनेक प्रकार पक्षी जिस बनकी सेवा करते थे, जो नीले और धौले वृक्षोंमे शोभायमान था, जिसमें भौरे और पक्षी शब्द कर रहे थे। यशस्वी युधिष्ठिरने उस बनमें जाके कमलोंसे भरे उस तालावको ऐसा देखा मानो इसे विश्वकर्म्माहीने बनाया है। वह तलाव कमलिनियोंसे भरा सब्बु भरे उत्तम जातिके कमलोंसे पूर्ण, केतकी, कनेर और पीपलके वृक्षोंसे घिरा हुआ था, थके हुए राजा युधिष्ठिर उस तलावको देखकर सुखको प्राप्त हुए।

२११ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमे जय! महाराज युधिष्ठिर गिरे हुए लोक पालोंके समान अथवा प्रलयकालमें इन्द्रके समान अपने भाइयोंको मरा हुआ देखा। अर्ज्जुनको धनुष बाण फेंके मरा हुआ पड़ा देखके ऐसाही भीमसेन और नकुल तथा सह देवको पड़ा हुआ देख ऊंचे सास लेकर शोकसे आंसू बहाने लगे। अपने सब भाइयोंको मरा हुआ देखकर महा बलवान युधिष्ठिर चिन्तासे व्याकुल होके विलाप करने लगे। हे भीमसेन! हे महाभुज। तुमने प्रतिज्ञा करी थी कि मैं युद्धमें दुर्योधनकी जङ्घा गदासे तोडूंगा, हे वीर। आज तुम्हारे मरनेसे वह प्रतिज्ञा व्यर्थ होगई। हे महाभुज। हे कुरुकुलकी कीर्तिको बढानेवाले। तुम्हारी बाणी आज झूठी होगई। हे अर्ज्जुन। देवतोंकी बाणी झूंठ कैसे होगई! देवता लोगोंने तुम्हारी उत्पत्तिके समयही कहा था कि कुन्तिपुत्र अर्ज्जुन इन्द्रके समान होगा, तुमको सब प्राणी कहते थे कि, नष्ट हुई राज्यलक्ष्मीको अर्ज्जुन फिर लौटावेगा युद्धमें इसको जीतनेवाला कोई न होगा और और जिसको युद्धमें यह न जीत सके ऐसा भी कोई नहीं होगा, वही अर्ज्जुन मेरी आशाओंका नाश करके पृथ्वीमें कैसे पड़ा है, वही महाबली अर्ज्जुन किस प्रकारसे मृत्युके वशमें होगये जिस अर्ज्जुनको हम लोग अपना नाथ जानते थे वही अर्ज्जुन आज क्योंकर मर गये? सदा शत्रुको मारनेवाले रणमें मत्त नकुल और सहदेव किस प्रकारसे शत्रुके वशमें होगये। जो अर्ज्जुन और भीम सब अस्त्रोंको जाननेवाले थे उनको तथा नकुल और सहदेवको पृथ्वीमें पड़ा देखकरभी जो मेरा हृदय नहीं फटता है, इससे मैं जानता हूं, कि मेरा

हृदय लोहेसे भी कठोर है। हे पुरुषोमें श्रेष्ठ लोगो। तुम सब देश, काल तथा शास्त्रके जाननेवाले, तप करनेवाले और क्रियायुक्त होकरभी अपने योग्य बिना कर्म्म कियेही क्यों सोते हो? हे जीतनेके अयोग्य भाइयो। बिना घाव खाये, बिना धनुष वाणको चलाए चेतनारहित होके पृथ्वीमें क्यों पड़े हो। बुद्धिमान राजा युधिष्ठिर पर्व्वतकी तलहटीके समान अपने भाइयोंको सुखसे सोया देखकर शोकसे बहुतही व्याकुल हुए। ऐसेही शोक करते करते राजा युधिष्ठिर अपने भाइयोंकी मृत्युके कारणको विचारने लगे। और यहभी विचारने लगे कि मुझे इस समय क्या करना उचित है, महाबुद्धिमान महाभुज देश और कालके बिभागको जाननेवाले राजा युधिष्ठिरको कुछभी निश्चय न जान पड़ा। तब धर्म्मपुत्र राजा युधिष्ठिर अपने मनको स्थिर करके और अनेक विलाप करके बुद्धिसे विचारने लगे कि इन वीरोंको किसने मारा है, इनके शरीरोंमें कोई शस्त्रभी नहीं लगा है, न यहांपर किसीके पैर लगे दीखते हैं, मैं जानता हूं कि वह कोई अद्भुत जीव है, जिसने मेरे भाइयोंको मारा है। मैं चित्तको एकाग्र करके विचारूंगा वा जल पीके निश्चय करूंगा, हो सक्ता है कि दुर्य्योधनने गुप्त रीतिसे कोई उपाय किया हो अथवा कुटिल बुद्धिवाले गान्धार देशके राजा शकुनिने कोई छल किया हो, उसका करने योग्य और न करने योग्य सब कार्य्य एकसे ही दीखते हैं। इस पापीका कौन विश्वास कर सकता है? अथवा किसी दुरात्मा गुप्त दूतका यह काम है, इस प्रकारसे बुद्धिमान युधिष्ठिर अनेक भांतिके विचार करने लगे, परन्तु उनका मन ऐसे शुद्ध न हुआ जैसे दूषित जल। महाराज युधिष्ठिरने विचारा कि मरे हुए भाइयोंका वर्ण नहीं बिगड़ा है, उनके मुख अभीतक प्रसन्न हैं। इन एक एक महा बलियोंसे मृत्युके सिवाय और कोईभी नहीं लड़ सकता है। ऐसा विचार करके महाराज युधिष्ठिर जलमें धसे जलमें धसतेही युधिष्ठिरने आकाशवाणी सुनी।

यक्ष बोला, हे राजपुत्र! मैं शिवार और मछरियोंका खानेवाला बगुला हूं, मैंनेही तुम्हारे चार भाइयोंको मारा है, यदि मेरे प्रश्नका उत्तर न दोगे तो तुमभी इनके साथ पांचवें बनोगे। हे प्यारे! हठ मत करो, पहिले मेरे प्रश्नका उत्तर देके जल पियो और लेभी जावो।

युधिष्ठिर बोले, मैं पूछता हूं कि तुम कौन हो? रुद्र, वसु वा मरुद्गणके प्रधान देवता हो, ऐसा प्रश्न पक्षी नहीं कर सकता है। हिमाचल पारिपात्र, विन्ध्याचल और मलय पर्व्वतके समान मेरे चार भाइयोंको किसने मारके गिराया है। हे बलवानोमें श्रेष्ठ। जिस कर्म्मको देवता गन्धर्व्व यक्ष और राक्षस युद्ध करके नहीं कर सकते, उस महा कार्य्यको तुमने किया है। मैं नहीं जानता हूं कि दैवकी क्या इच्छा है, मुझे बड़ा आश्चर्य्य दुःख और शोक है, इस ही कारणसे मेरा चित्त घवड़ा रहा है, हे भगवन्! इसही कारणसे मै पूछता हू कि तुम कौन हो? जो यहां निवास करते हो।

यक्ष बोला, हे राजन्। तुम्हारा कल्याण हो, मैं यक्ष हू, मैंनेही तुम्हारे तेजस्वी भाइयोंको मारा है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तब उस कल्याण रहित कठोर अक्षरोंसे भरी वाणीको सुनके राजा युधिष्ठिर सावधान होके खड़े होगये। राजा युधिष्ठिरने वृक्षके ऊपर बैठे हुए भयानक नेत्र और बड़ी देहवाले ताड़के समान लम्बे सूर्य्यके समान प्रकाशयुक्त पर्व्वतके तुल्य मेघके समान गर्जते हुए, यक्षको देखा।

यक्ष बोला हे राजन्! तुम्हारे भाइयोंको एक बार मैंने जल पीनेसे रोका, जब यह बलसे जल लेनें लगे, तब मैंने मारडाला तुमकोभी

यदि प्राणकी रचा करनी हो तो जल मत पियो। हे कुन्ती पुत्र। हठ मत करो पहिले मेरे प्रश्नका उत्तर देके जल पियो और लेभी जाओ।

युधिष्ठिर बोले, हे यच्च। मैं तुम्हारी वाथा सुनता हूं क्योंकि साधुजन दूसकी सदा प्रशंसा नहीं करते हैं। हे पुरुषोंमें श्रेष्ठ! तुम अपना आपही वर्णन करते हो दूससे तुम प्रश्न करो मैं अपनी बुद्धिके अनुसार उत्तर दूंगा।

यच्च बोला, सूर्य्यको कौन उदय करता है? सूर्य्यके पास कौनसे सेवक रहते हैं? कौन सूर्य्यको अस्त करता है, और सूर्य्य किस आरमें स्थित है?

युधिष्ठिर बोले, ब्रह्म सूर्य्यके सङ्ग चलते हैं, धर्म्म सूर्य्यको उदय करता है, और सत्यमें सूर्य्य-स्थित है।

यच्च बोला, हे राजन्! किससे मनुष्य श्रोत्रिय होता है। किससे महत्वको प्राप्त होता है? किससे दूसरेसे युक्त होता है? और किससे बुद्धिमान होता है?

युधिष्ठिर बोले मनुष्य वेदसे श्रोत्रिय होता है, तपसे महत्वको पाता है, धारणासे दूसरेसे युक्त होता है, और बृद्धोंसे बुद्धिमान होता है।

यच्च बोला, ब्राह्मणोंमें देवतापनक्या है? सज्जनोंका सद्धर्म्म क्या है? मनुष्यमें मनुष्य भाव क्या है? और दुष्टोंका धर्म्म क्या है?

युधिष्ठिर बोले, नित्यही वेदको पढ़ना ब्राह्मणमे देवतापन है, तपही सज्जनोंका सद्धर्म्म है, मरना मनुष्योंमें मनुष्यता और दूसरोंकी निन्दा करनाही दुष्टोंका साकर्म्म है।

यच्च बोला, चत्रियोंमें देवतापन क्या है चत्रियोंमें सद्धर्म्म क्या है? चत्रियोंमें मनुष्य भाव क्या है? और चत्रियोंमें दुष्टभाव क्या है?

युधिष्ठिर बोले, वाण और अस्त्रोंको धारण करना, यज्ञ करना चत्रियोंका सद्धर्म्म और देवतापन है, भय करना चत्रियोंका मनुष्यभाव है, शरणागतको वा युद्धको त्यागना चत्रियोंका दुष्ट कर्म्म है।

यच्च बोला, सामवेदका एक यज्ञ कौ है? यजुर्वेदका एक वह मन्त्र कौनसा है जिससे यज्ञ हो सकता हो? यज्ञकी आच्छा दन करनेवालो कौन है? किसको य नहीं नांघ सकता है?

युधिष्ठर बोले, प्राणही सामवेदकी यज्ञ मन्त्र है, मन यजुर्वेदकी यज्ञका मन्त्र है ऋचा यज्ञको आच्छादन करती हैं, ऋचाको यज्ञ नहीं नांघ सकता हैं।

यच्च बोला, रचा करनेवालोंमें की श्रेष्ठ है? पितरोंको कौनसी वस्तु दे चाहिये? प्रतिष्ठा चाहनेवालोंकी क्या उत्त है? और कुलकी वृद्धि चाहनेवालोंको क उत्तम है?

युधिष्ठिर बोले, रचा करनेवालोंमें जल वर्षा उत्तम है? बोवनेवालोंको वा पितरोंको बीजही श्रेष्ठ है, प्रतिष्ठा चाहनेवालोंको गौ उत्तम है, कुलकी वृद्धि चाहनेवालोंको पु उत्तम है।

यच्च बोला, इन्द्रियोंके बिषयोंको भोगत हुआ, बुद्धियुक्त संसारमें आदरयुक्त स प्राणियोंका भास्यसास लेते हुएभी कौन नहीं जोना है?

महाराज युधिष्ठिर बोले, देवता, अतिथि पितर और सेवकोंको और अपनी आत्माको जो नहीं देता है, वह सास लेता हुआ भी मरा है।

यच्च बोला, पृथ्वीसे भारी कौन है? आका शसे ऊंचा कौन है? वायुसे जलदी चलने वाला कौन है? फूससे अधिक क्या है?

राजा युधिष्ठिर बोले, माता भूमिसे भारी है, पिता आकाशसे ऊंचा है, मन वायुसे जलदी चलनेवाला है, चिन्ता तृणसे अधिक है।

यच्च बोला, कौन सोता हुआ, पलक

नहीं मारता है? उत्पन्न होकर कौन नहीं चलता है? हृदय किसको नहीं है? शीघ्रतासे कौन बढता है।

युधिष्ठिर बोले, मछरी सोते हुए, पलक नहीं मारती, अण्डा उत्पन्न होकर नहीं चलता है, पत्थर के हृदय नहीं होता है, नदी शीघ्रतासे बढ़ती है।

यक्ष बोला, परदेशमें कौन मित्र है? घरमें कौन मित्र होता है? रोगीका कौन मित्र है? मरनेके समय कौन मित्र होता है?

महाराज युधिष्ठिर बोले, विदेशमें सङ्गी मित्र है, घरमें स्त्री मित्र है, वैद्य रोगीका मित्र है। और दान मरनेके समयका मित्र होता है।

यक्ष बोला, सब प्राणियोंका अतिथि कौन है? सनातन धर्म्म क्या है? हे राजेन्द्र! अमृत क्या वस्तु है? और यह जगत क्या है?

राजा युधिष्ठिर बोले, सब प्राणियोंका अतिथि अग्नि है, गौओंका दूध अमृत है उसहीको सोम कहते हैं उसकी आहुति देना सनातना धर्म्म है, मोक्ष अमृत है, वायुही सब जगत है।

यक्ष बोला, एकला कौन फिरता है? उत्पन्न होकर फिर कौन उत्पन्न होता है? शीतकी औषध क्या है? बोवनेका बड़ा स्थान क्या है?

युधिष्ठिर बोले, सूर्य्य एकला घूमता है, चन्द्रमा फिर उत्पन्न होता है, अग्नि शीतकी औषध है, बोवनका बड़ा स्थान भूमि है।

यक्ष बोला, धर्म्मका एक स्थान क्या है? यशका एक स्थान क्या है? और सुख पानेका एक उपाय क्या है?

युधिष्ठिर बोले, उद्योगही धर्म्मका स्थान है, दानही यशका और शीलही सुखका एक उपाय है।

यक्ष बोला, मनुष्यकी आत्मा क्या है? दैवका दिया हुआ मित्र कौन है? मनुष्यका जीवन क्या है? मनुष्यका उद्योग क्या है?

महाराज युधिष्ठिर बोले, पुत्र मनुष्यकी आत्मा है,स्त्री दैवकी दी हुई मित्र है,मेघ जीवन है, और दान मनुष्यका उद्योग है।

यक्ष बोला, धन्य लोगोंमें उत्तम क्या है? धनमें उत्तम धन क्या है? लाभोंमें उत्तम लाभ क्या है? और सुखोंमें उत्तम सुख क्या है?

राजा युधिष्ठिर बोले, धन्य लोगोंमें चतुरता उत्तम है, धनोंमें विद्या उत्तम है, लाभोंमें नीरोगता उत्तम है, और सुखोंमें सन्तोष उत्तम है।

यक्ष बोला, कौन धर्म्म सबसे उत्तम है? कौनसा धर्म्म सदा फल देनेवाला है? किसको संयत करनेसे सोच नहीं करना होता? और किनकी सन्धि नहीं टूटती?

युधिष्ठिर बोले, सत्य बोलना सबसे उत्तम धर्म्म है, वेदोक्त धर्म्म सदा फल देनेवाला है, मनको रोक कर सोचना नहीं होता है, सज्जनोंकी सन्धि कभी नहीं टूटती है।

यक्ष बोला किसको त्यागनेसे मनुष्य प्यारा होता है? किसको त्यागनेसे सोच नहीं करना पड़ता? किसको त्यागनेसे धनी होता है? किसको त्यागनेसे सुखी होता है?

महाराज युधिष्ठिर बोले,अभिमानके त्यागनेसे सबका प्यारा होता है, क्रोधको त्यागनेसे सोच नहीं करता, कामको त्यागनेसे धनी होता है और लोभको त्यागनेसे सुखी होता है।

यक्ष बोला,ब्राह्मणको क्यों दान दिया जाता है? नट और नाचनेवालाको क्यो धन दिया जाता है? सेवकको क्यो द्रव्य दिया जाता है और राजाको कर क्यो दिया जाता है?

राजा युधिष्ठिर बोले,धर्म्मके लिये ब्राह्मणको दान दिया जाता है, यशके लिये नट और

नाचनेवालोंको धन देते हैं, पालनके वास्ते सेवकोंको द्रव्य दिया जाता है, और डरसे राजाको कर देते है।

यच बोला, जगतको क्या आच्छादित करता है? प्रकाशको कौन रोकता है? मित्र किससे त्याग किये जाते हैं? मूर्ख स्वर्गमें किस कारणसे नहीं जाता?

महाराज युधिष्ठिर बोले, अज्ञानसे संसार आच्छादित होता है, अन्धकारसे प्रकाश रुकता है, लोभसे मित्र छूटते हैं, और सङ्गसे मूर्खको स्वर्ग नहीं मिलता।

यच बोला, पुरुष काहेसे मरता है? देश काहेसे मरता है? श्राद्ध काहेसे मरते हैं? और यज्ञ काहेसे मरता है?

राजा युधिष्ठिर बोले, दरिद्रसे पुरुष मरता है, राजाके बिना देश मरता है, विद्याहीन पुरोहितसे श्राद्ध मरता है और दक्षिणाके बिना यज्ञ मरता है।

यच बोला, दिशा कौनसी है? जल क्या है? अन्न क्या है? विष क्या है? हे राजन श्राद्धका काल कहो, तब जल पिवो वा लेजावो,

महाराज युधिष्ठिर बोले, सज्जन दिशा है, आकाश जल है वायु अन्न है, मांगना बिष है, और श्राद्धका समय ब्राह्मण है।

यच बोला, तपका क्या लक्षण है? दम किसे कहते है? कड़ी चमा क्या है? और लज्जा किसका नाम है?

महाराज युधिष्ठिर बोले, अपने धर्मका करना तप, मनको बिषयोंसे रोकना दम, सुख दुःखको सहन करना चमा, और बुरे कार्य्योंसे बचना लज्जा कहाती है।

यच बोला, हे राजन्! ज्ञान किसे कहते है? शम किसका नाम है? परम दया क्या है? और आर्जव किसका नाम है?

महाराज युधिष्ठिर बोले, तत्वार्थके बोधको ज्ञान, चित्तकी शान्तिको शम, सब प्राणियोंके सुखकी इच्छा करनेको दया, और चित्तं सावधान रखनेको आर्जव कहते हैं।

यच बोला, मनुष्योंका दुःखसे जीतं योग्य शत्रु कौन है? जिसका अन्त नहो ऐस रोग कौन है? साधु किसे कहते हैं? औ दुष्ट किसे कहते है?

महाराज युधिष्ठिर बोले, क्रोध दुःखं जीतने योग्य शत्रु है, जिसका अन्त नहीं होता ऐसा रोग लोभ है, सब प्राणियोंव हित करनेवाला साधु और दया रहित दुः कहाता है।

यच बोला, हे राजन्! मोह किसे कहते है? अभिमान क्या वस्तु है? आलस्य किसे कहते है? और शोक किसका नाम है?

महाराज युधिष्ठिर बोले, धर्मको न जानना मोह, अपनेको सबसे बड़ा समझना अभिमान, धर्मको न करना आलस्य, और अज्ञानही शोक कहाता है।

यच बोला, ऋषिलोग स्थिरता किसे कहते है? धैर्य्य क्या है? स्नान क्या है? और दान क्या वस्तु है?

महाराज युधिष्ठिर बोले, अपने धर्ममें स्थिर रहना स्थिरता, इन्द्रियोंको रोकना धैर्य्य, मनके मलको त्यागना स्नान और प्राणियोंकी रचा करना दान कहाता है।

यच बोला, हे राजन्। कान पुरुष पण्डित कौन नास्तिक? कौन मूर्ख। और कौन मत्सरी कहाता है?

महाराज युधिष्ठिर बोले, धर्मज्ञको पण्डित, मूर्खको नास्तिक, ससारके हेतुको काम, और हृदयके सन्तापवालेको मत्सरी कहते है।

यच बोला, हे राजन्! अहकार किसको कहते है? प्रारब्ध क्या है? पिशुनता (चुगलखोरी) और पाखण्ड किसका कहते है,

महाराज युयिष्ठिर बोले, बड़े अज्ञानको अहंकार, दानके फलको प्रारब्ध, दूसरोंके

दोष दिखानेको पिशुनता, और धर्म्मध्वजोपन अर्थात यशके वास्ते धर्म्म करनेको पाखण्ड कहते हैं?

यक्ष बोला, हे राजन्! धर्म्म, अर्थ, और काम परस्पर विरोधी हैं, इनका एक स्थानमें रहना कैसे हो सक्ता है?

महाराज युधिष्ठिर बोले, जब धर्म्म और पत्नी, परस्पर वशमें हों तब धर्म्म, अर्थ, और काम एकमें रह सकते हैं।

यक्ष बोला, हे पुरुषोंमें श्रेष्ठ। आप यह कहियेकी अक्षय नरक किसको मिलता है?

महाराज युधिष्ठिर बोले, जो मनुष्य मांगनेवाले दरिद्र ब्राह्मणको आपही बुलाकर पीछे आपही कहे कि मेरे पास कुछ नहीं है, उसे अक्षय नरक मिलता है, वेदमें, धर्म्म शास्त्रमें, ब्राह्मणमें, देवतोंमें, पितरोंमें, धर्म्ममें और मोक्षमें जो मिथ्या दृष्टि करता है, उसे अक्षय नरक मिलता है। जो धन होते भी दान और भोग नहीं करता है, तथा जो कहता है कि मरनेके पीछे कुछ नहीं होता, उसे अक्षय नरक होता है।

यक्ष बोला, हे राजन्! कुलसे चरित्रसे, वेदपाठसे या विद्यासे ब्राह्मण होता है, यह आप मुझसे निश्चय पूर्व्वक कहिये।

युधिष्ठिर बोले, हे यक्ष। सुनो, न कुलसे और न वेदपाठसे ब्राह्मण होता है, किन्तु आचरणहीं ब्राह्मणतामें कारण है, इस लिये मनुष्यको विशेषत ब्राह्मणको चाहिये कि यत्नसे अपने आचरणकी रक्षा करे जिसके आचरण हीन हैं, वही हीन है, पढ़ने और पढ़ानेवाले तथा जो और शास्त्रके बिचारनेवाले हैं, वे सब मूर्ख और व्यसनी हैं, किन्तु जो क्रियावान् है वही पण्डित है, चारों वेदोंके जाननेवाला यदि दुरचारी हो तो वह ब्राह्मण शूद्रसे भी नीच है, जो अग्निहोत्रका करनेवाला शान्त है वही ब्राह्मण है।

यक्ष बोला, प्रिय वचन कहनेवालेको क्या मिलता है? बिचारकर कार्य्य करनेवालेको क्या मिलता है? बहुत मित्र करनेवालोंको क्या मिलता है? और धर्म्म करनेवालोंको क्या मिलता है!

महाराज युधिष्ठिर बोले, प्रिय वचनवाला सबका प्यारा होता है, बिचारकर कार्य्य करनेवालोंको जय मिलती है, बहुत मित्रवालेको सुखसे बास मिलता है और धर्म्म करनेवालेको मोक्ष मिलता है।

यक्ष बोला हे राजन्! जगतमें सुखी कौन है? आश्चर्य्य क्या है? मार्ग कौनसा है? और वात क्या है? इन मेरे चारों प्रश्नोंका उत्तर दो तो तुम्हारे भाई जीवें।

महाराज युधिष्ठिर बोले, दिनके आठवें भागमें जो अपने घरमें शाक खाकर रहता है, और किसीका ऋणी तथा विदेशी नहीं है, वही सुखी है। प्रति दिन प्राणी यमपुरीको चले जाते हैं, और शेष जीना चाहते हैं, इससे अधिक और आश्चर्य्य क्या होगा? तर्क वे जड़ है, शक्ति भिन्न हैं, और एक ऋषि नहीं जिसके मतका प्रमाण हो, इससे धर्म्मका तत्व कन्दरामें छिपा है, इस लिये महाजन जिसमें चलते हों, वही मार्ग है। इस महा मोहमय कड़ाहमें सूर्य्यरूपी अग्नि इंधन, मास और ऋतु करछी, इन सबसे काल प्राणियोंका हलुआ पका रहा है, यही बात है।

यक्ष बोला, हे शत्रुनाशन! तुमने मेरे प्रश्नोंका ठीक ठीक उत्तर दिया अब पुरुषकी व्याख्या करो और यह कहो कि सब धनवाला पुरुष कौन है?

महाराज युधिष्ठिर बोले, पुण्यकर्म्मसे शब्द आकाश और भूमिमें फैलता है, जबतक वह शब्द रहता है, तबतक वह पुरुष कहाता है, जिसको प्यारा और अप्यारा सुख और

दुःख भूत और भविष्यत समान हों वही सब धनवाला है।

यक्ष बोला, हे राजन्। तुमने सबसे धनी पुरुषको कहा इस कारणसे चारो भाइयों-मेंसे जिस एकको कहो वही जीजाय।

महाराज युधिष्ठिर बोले; यह जो श्याम वर्ण लाला नेत्रवाला शालके समान ऊंचा महाबली नकुल है, यही जी जाय।

यक्ष बोला, यह तुम्हारा प्यारा भीम तथा तुम्हारी रक्षा करनेवाला अर्ज्जुन है, इनको त्यागकर अपनी सौतेली माके पुत्र नकुलको जिलानेकी क्यों इच्छा करते हो? जिस भीमसेनमें दश सहस्र हाथीका बल है, उसे छोड़कर नकुलको जिलानेकी इच्छा क्यों करते हो? सब लोग कहते हैं कि भीमसेन युधिष्ठिरका प्यारा है, उसे त्यागकर सौतेली माके पुत्र नकुलको क्यों जिलाना चाहते हो? जिस अर्ज्जुनके बाहुबलके आश्रयसे पाण्डव जगतमें रहते हैं, उस अर्ज्जुनको त्याग कर नकुलको जिलानेकी क्यों इच्छा करते हो?

महाराज युधिष्ठिर बोले, धर्म्मका नाश करनेसे धर्म्मभी पुरुषका नाश कर देता है, और धर्म्मको रक्षा करनेसे धर्म्मभी पुरुषको रक्षा करता है, इससे मैं धर्म्मको नहीं छोड़ता हूं, कि धर्म्म नष्ट होके हमारा नाश न करे, सत्य परम धर्म्म है, मैं यथार्थ रीतिसे जानता हूं, इस कारणसे हे यक्ष! नकुलही जीवे। हे यक्ष जगतमें मनुष्य कहते हैं कि राजा युधिष्ठिर धर्म्मशील है, इस कारणसे मैं धर्म्मको त्यागना नहीं चाहता, नकुलही जीवे।

यक्ष बोला, तुम्हारी बुद्धि अर्थ और कामसे भी धर्म्मको नहीं त्यागती इससे तुम्हारे सब भाई जी जाय।

३१२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तब यक्षके वच नसे सब पाण्डव लोग खड़े होगये, क्षण भरमें भूख और प्यास उनमें व्याप्त हो गई।

महाराज युधिष्ठिर बोले, तलावमें एक पैरसे खड़े हुए, पराजय रहित तुम कौन हो? तुम यथार्थमें यक्षही हो? या तुम वसुवोंमेंसे कोई एक हो? अथवा रुद्र हो या मरुद्गणमेंसे कोई हो? यहा तुम वज्रधारी इन्द्र हो? मेरे यह भाई जो सैकड़ों और सहस्रोंसे लड़नेवाले हैं, मैं ऐसा कोई नहीं देखता हूं जो इन सबको मार डा अब मैं इन सबको सुखसे जिया हुआ विकार रहित इन्द्रिय युक्त देखता हूं, आप हमारे बान्धव वा पिता हैं?

यक्ष बोला, हे प्यारे। मैं तुम्हारा धर्म्म हूं, हे पुरुषोंमें उत्तम। तुम्हारे नेको यहां आया था। यश, सत्य, दम, कोमलता, लज्जा, धीरता दान, तप, ब्रह्मचर्य्य यह सब मेरे पुत्र हैं। अहिं समता, शान्ति, तप शौच, प्रमाद रहित यह मेरी प्राप्तिके द्वार हैं। तुम मेरे हो इसही कारणसे मैंने तुमसे प्रकाशित दिया है। प्रारब्धसे तुम नित्यकी पांच यज्ञ तत्पर हो, प्रारब्धसेही तुमने काम आदि शत्रुओंको जीता है, इन शत्रुओंसे दो प्रथ अवस्थामें दो मध्य अवस्थामें और दो अन्त अवस्थामें दुःख देते हैं। हे राजन्। मैं धर्म हूं, तुम्हारा कल्याण हो मैं तुमको जाननेके वास्ते यहां आया था, हे पाप रहित! मैं तुम्हारे सत्यसे बहुत प्रसन्न हुआ अब वर मांगो।

हे राजेन्द्र? मैं तुमको वर देता हूं क्योंकि जो मेरे भक्त हैं,उनकी दुर्गति कभी नहीं होती।

महाराज युधिष्ठिर बोले, जिस ब्राह्मणकी अरणीको लेके हरिन भाग गया है उसका अग्निहोत्र नष्ट नहो, यह मुझको पहिला वर दीजिये।

यक्ष बोला; कि ब्राह्मणकी अरणीको तुम्हारी परीक्षाके वास्ते मैं हरिन बनकर उठा लाया हूं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। धर्म्मने कहा कि हे देवतुल्य राजपुत्र युधिष्ठिर। तुम्हारा कल्याण हो, यह वर मैंने तुमको दिया अब दूसरा वर मांगो।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हम लोगोंने बारह वर्ष वनमें बिताये; अब तेरहवां वर्ष आगया है, इसमें हमको कोई मनुष्य न जाने यह दूसरा वर दीजिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भगवान धर्म्मने उत्तर दिया कि वह वर भी मैंने तुम्हें दिया; धर्म्मने फिर सत्य पराक्रमी कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरको समझाया, हे भारत। यद्यपि तुम लोग इस पृथ्वीमें अपने रूपसेही फिरोगे, तौभी तुम्हें तीनो लोकमें कोई नहीं जानैगा, हे कुरुकुल श्रेष्ठ पाण्डवो। यह तेरहवां वर्ष है, इसमें तुम बिराट नगरमें छिपकर रहो, तुम लोगोंके मनमें जैसा रूप धारण करनेकी इच्छा हो वैसाही रूप धारण करके बिचरो, यह अरणी सहित मथानी जिसे तुम्हारे जाननेकी इच्छासे मैं हरिन बनके उठा लाया था सो ब्राह्मणको देदेना। हे सौम्य मैं तुमको वर देते देते तृप्त नहीं होता हूं, तुम तीसरा वर मांगो, हे राजन्। तीसरा वर ऐसा मांगो कि जिसकी उपमा नहो, तुम मेरे पुत्र हो और विदुर भी मेरेही अंशसे उत्पन्न हैं।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे देवदेव! हे सनातन। आप जो प्रसन्न होके वर देंगे, सो मैं ग्रहण करूंगा, हे पित। मैं लोभ, मोह, और क्रोधको जीतूं दान, तप और सत्यमें मेरा मन सदा लगा रहै।

धर्म्म बोले, हे पाण्डव! इन गुणोंसे तुम आपही भरे हो, तौभी जो तुमने कहा वैसाही होगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, ऐसा कहके लोकपूजित भगवान धर्म्म वहीं अन्तर्द्धान होगये, बुद्धिमान बीर पाण्डव भी श्रम रहित होके आश्रमको आये और तपस्वी ब्राह्मणको अरणी दे दी यह पाण्डवोंका मरके जीना पिता पुत्रकी कीर्त्तिका बढ़ानेवाला है जो मनुष्य जितेन्द्री होके इसे पढ़े वह पुत्र पौत्रके सहित सौ वर्ष जीवे; अधर्म्ममें मित्रोंके प्रेम छुड़ानेमें, पराया धन लेनेमें, व्यभिचार और कादरतामें उस मनुष्यका चित नहीं लगता है, जो इस कथाको जानता है।

३१३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महाराज। धर्म्मसे आज्ञा पाकर सत्य पराक्रमी पाण्डव तेरहवें वर्षमें गुप्त होकर अज्ञात बासमें रहे थे, जो पाण्डवोंके भक्त विद्वान ब्रतधारी तपस्वी बनमें संग थे उनसे महात्मा पाण्डव हाथ जोड़के अपना निवास बतलानेके लिये बोले, आप लोग सब जानते हैं कि जिस प्रकारसे धृतराष्ट्रके पुत्रोंने छलसे हमारा राज्य छीना और हमको दुःख दिया है। हम लोगोंने बड़े कष्टके साथ बारह बर्ष बनमें निवास किया, अब यह तेरहवा बर्ष अज्ञातबासका आया है, इस कारणसे हम लोग गुप्त होकर रहैंगे, आप लोग आज्ञा दीजिये दुर्य्योधन और दुरात्मा शकुनी हम लोगोंके अत्यन्त बैरी हैं, वे हमारे सेवक पुरबासो और साथियोंका बहुत अपकार कर सकते हैं, इस कारणसे हम लोग अपने राज्यमे बैठकर आप लोग तथा ब्राह्मणोंसे मिलेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, ऐसा कहके धर्म्मपुत्र युधिष्ठिर दुःख और शोकसे व्याकुल होके मूर्च्छित होगये और उनके नेत्रोंसे आंसू बहने लगे, तब ब्राह्मण और भाई उनको समझाने लगे, धौम्य राजा युधिष्ठिरसे बोले, हे राजन्! तुम विद्वान, दानी, सत्यवादी और जितेन्द्री हो, आपके समान मनुष्य किसी विपतमें भी सोच

नहीं करते देवतोंको भी शत्रुओंके लिये छिपना और विपद भोगनी पड़ी थी, इन्द्रने पहाड़के ऊपर और निषध देशमें गुप्त रह कर शत्रुओंके पकड़नेका उपाय किया था, बिष्णुने घोड़ेका सिर पाके सूर्य्य लोकमें दैत्योंके मारनेके लिये बहुत दिन तक निवास किया था, फिर वामन रूप धारण करके अपने आत्माको छिपाके जैसे बलिके राज्यको छीना वह सब आपने सुनाही है, जैसे अग्निने जलमें छिपकर देवतोंका कार्य्य किया, वह आपने सुनाही है। हे धर्म्मको जाननेवाले! इन्द्रके वज्रमें घुसकर जैसे विष्णुने शत्रुओंका नाश किया वह आपने सुनाही है, ब्रह्मऋषि औवंने जो छिपकर देवतोंका कार्य्य किया था, वहभी आपने सुनाहो है, उत्तम तेजवाले सूर्य्यने पृथ्वीमें रहकर जैसे छिपकर शत्रुओंका नाश किया, उसेभी आप जानते हैं, ऐसेही विष्णुने दशरथके घरमें छिपके युद्धमें रावणको मारा था। जैसे महात्माओंने जिधर तिधर छिपकर शत्रुओंको जीता था; वैसेही तुमभी जीतोगे। धौम्यने ऐसे वाक्योंसे राजाको समझाया, तब राजा शास्त्रकी बुद्धिसे और अपनी बुद्धिसे सावधान हुए, पश्चात् बलवानोंमें श्रेष्ठ महाभुज भीमसेन अपनी वानीसे राजाको प्रसन्न करते हुए, ऐसे बोले, हे राजन्! तुम्हारी धर्म्मबुद्धिको देखकरही गाण्डीवधारी अर्ज्जुनने कुछ साहस नहीं किया था, हे महाराज! सहदेव और नकुल महा बलवान और शत्रुओंको नाश करनेमें समर्थ हैं, मैंही उनको सदा रोके रहता हूं, जिस शत्रुके मारनेको आप हमें छोड़ेंगे, हम लोग वहांपर हसी नहीं करावेंगे। आप आज्ञा दीजिये हम बहुत शीघ्र शत्रुओंको जीतेंगे। भीमसेनके ऐसे बचन सुनकर ब्राह्मणोंने परम आशीर्व्वाद दिया और पाण्डवोंसे आज्ञा लेकर अपने अपने घरको चले गये, वेदोंके जाननेवालोंमें मुख्य यति और मुनि लोग यथा योग्य आदर पाके फिर दर्शन की इच्छासे अपने घरको चले गये। धौम्यके सहित विद्वान पांचो पाण्डव द्रौपदीके सहित उठके चले, उस स्थानसे एक कोस चलके प्रातःकाल होते हुए, गुप्त वस्त्र पहिरनेको उद्यत हुए, शास्त्र और मन्त्रको जाननेवाले सन्धि और विग्रहके समयको जाननेवाले पाण्डव लोग विचार करनेके लिये, सबसे अलग बैठ गये।

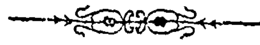
३१४ अध्याय समाप्त ।

हिन्दीभाषा महाभारतमें वनपर्व्व समाप्त ।

इस वनपर्व्वको सुनकर मनुष्य महा पापोंसे छूटता है, निर्धन धन पाता है, पुत्र पौत्रसे युक्त होता है, जो जो इच्छा करता सोसो प्राप्त होता है, स्त्री वा पुरुष शुद्ध होके जो पाठ करता है उसकी सब कामना पूर्ण होती है, वन पर्व्वको सुनके वा पढ़के ब्राह्मणोंको वस्त्र सुवर्ण गऊ और रत्न दान दे, ब्राह्मणके प्रसन्न होनेसे पाण्डव ब्रह्मा बिष्णु रुद्र इन्द्र तथा और देवता लोग भूत मुनि देवी तथा और लोग प्रसन्न होते हैं, बाचनेवालेको अन्न वस्त्र सोनेके आभरण विशेषतः कपिला गऊ देना चाहिये, दूहनेका कांसेका पात्र, गऊके खुर च और सींग सोनेसे मढ़कर ब्राह्मणको [illegible] सहित दान दे, इससे पाण्डव लोग प्रसन्न हैं, इस वनपर्व्वकी कथाको जो सुनता है उ[illegible] सब इच्छा पूर्ण होती है, और अन्तको [illegible] जाता है, इति महात्म्य समाप्त।

वनपर्व्व सम्पूर्ण ।

महाभारत।



विराटपर्व्व।

पाण्डव प्रवेश प्रकरण।

नारायण नरोत्तम नर और सरस्वती देवीको प्रणाम करके जयकीर्त्तन करना उचित है।

महाराज जनमेजय बोले, हे ब्राह्मणश्रेष्ठ वैशम्पायन महामुनि! हमारे पितामहके पिता पाण्डव लोग दुर्य्योधनके भयसे पीड़ित होकर विराट नगरसे छिपकर कैसे रहे थे, और सदा ब्रह्मवादिनी महा भाग्यवती पतिव्रता द्रौपदीने कौन दुःख सहकर अज्ञातवास किया?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे पृथ्वीनाथ! तुम्हारे पुरुषा पाण्डव लोग, जिस प्रकार छिपकर विराट नगरमें रहे थे, सो कथा हम तुमसे कहते हैं। धर्म्मधारियोंमें श्रेष्ठ धर्म्मराज युधिष्ठिर बरदानोंको पाकर आश्रममें आये, और ब्राह्मणोंसे सब कथा सुनाई। कथा कहकर महाराजने वह अरणी ब्राह्मणको दे दी। फिर महा मनस्वी धर्म्मराजने सब भाइयोंको बुलाकर कहा हम लोगोंको राज्यसे निकले हुए, बारह वर्ष बीत गये, अब यह तेरहवां वर्ष आया है, इस बारह वर्षके समयमें हम लोगोंने अनेक दुःख भोगे, इस तेरहवें वर्षमें जिस स्थानमें हमको कोई शत्रु न जान सकें, तहां निवास करना चाहिये। हे कुन्तीपुत्र अर्ज्जुन! तुम उस स्थानको हमको बतलाओ।

अर्ज्जुन बोले, हे पृथ्वीनाथ! धर्म्मके बरदानसे जब हम लोग जिस किसी स्थानमें रहेंगे, तबभी हमको कोई पुरुष नहीं जान सकेगा, तथापि हम आपके रहने योग्य राज्योंका वर्णन करते हैं। ये सब स्थान रमणीय और गुप्त हैं, इनमेंसे जहां आपकी इच्छा हो तहां रहिये। कुरु राज्योंको छोड़कर और भी ऐसे राज्य हैं, जिनमें अन्न और जल मिल सकते हैं। पाञ्चाल, चेदी, मत्स्य, सूरसेन, पटच्चर, दशार्ण, अनवर, मल्ल, शाल्व, युगन्धर, कुन्ती और सुराष्ट्र इन राज्यमेंसे जिसमें आपकी इच्छा हो आप रहिये। वहीं हम लोगभी एक वर्ष रहेंगे।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे महाबाहो! तुमने जो कहा हमने सुना, जो कुछ भगवान धर्म्मने हमको बरदान दिये है, वे सब कभी मिथ्या नहीं हो सकते, हम सब लोगोंको उचित है, कि परस्पर सम्मति करके और निर्भय होकर किसी एक स्थानमें निवास करें। मत्स्य देशका राजा विराट धार्म्मिक, पण्डित, प्यारा, बूढ़ा और सदासे पाण्डवोंका भक्त है, इस लिये हम लोग सुखसे एक वर्ष उसीके घर निवास करेंगे, और उसको सेवाके कर्म्मभी करते रहेंगे, हे पाण्डवो! तुम लोग राजसेवाका जो जो कार्म्म कर सकते हो सो हमसे कहो, क्योंकि वही सब कर्म्म विराटसे कहने होंगे।

अर्ज्जुन बोले, हे देव! हे महाराज! हे साधो! आप पण्डित कोमल लज्जावान और सत्य पराक्रमी है, इस लिये आप कहिये कौन कर्म्म करके विराट नगरमें निवास कीजियेगा। यह नियम है कि जिस प्रकार साधारण मनुष्य आपत्तियोंको सह सकता है, वैसे आप लोग

महाराज युधिष्ठिर बोले, यह हमारी प्राणोंसेभी प्यारी स्त्री जो माताके समान पालनेके योग्य और बड़ी बहनके तुल्य मानने योग्य है, सो किस कामको करती हुई वहां रहेंगी? वह स्त्रियोंके कर्म्मको कुछ भी नहीं जानती है। यह बाला बहुत सुकुमारी, पति-व्रता, यशोवती और राजपत्नी है, इसने जबसे जन्म लिया है, तबसे पुष्पहार, गन्ध, चन्दन और उत्तम वस्त्रोंका पहरनाही सीखा है।

द्रौपदी बोली, हे भारत। लोकमें सैरन्ध्री अर्थात दासी रानियोंके पास जाती हैं, और कोई स्त्री नहीं जाने पाती हैं, यही जगतका निश्चय है, हे महाराज। मैं सिर गूंथनेमें बहुत निपुण हूं, यदि राजा मुझसे पूछेंगे तो मैं यही कहूंगी कि मैं महाराज युधिष्ठिरके घरमें द्रौपदीकी दासी थी, हे महाराज। मैं इस प्रकारसे अपने आपको छिपाऊंगी और सुखसे रहूंगी। राजा विराटकी स्त्री यशस्विनी सुदेष्णाके पास मैं जाऊंगी, वह मुझे अपने पास रक्खेंगी, आप दुःख न कीजिये।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे द्रौपदी। तुम अच्छा कहती हो, हे भामिनी। तुम उत्तम कुलमें उत्पन्न हुई हो, मैं तुमको पापकर्म्म करनेवाली नहीं जानता हूं, क्योंकि साधु और उत्तम व्रत करनेवाली हो। जिससे हमारे पापी शत्रु लोग सुखी न हों, तुमको शत्रु लोग जान न सकें, ऐसाही कर्म्म तुम करना।

३ अध्याय समाप्त।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे पाण्डवो! तुम लोगोंने अपने जो अपने कर्म्म कहे, उन्होंको करोगे, मुझकोभी अपनी बुद्धिके अनुसार निश्चय हो गया है कि तुम लोग इन सब कर्म्मोंको कर सकोगे। हमारे पुरोहित धौम्य मुनि, सारथी और नगर निवासियोंके सहित राजा द्रुपदके यहां जाकर हमारे अग्निहोत्रकी रक्षा करें, हमारे इन्द्रसेन आदि सारथी लोग खाली रथोंको लेकर शीघ्र द्वारिकाको चले जायं, हमारी बुद्धिमें यही निश्चय हुआ है कि वे जो द्रौपदीकी दासी हैं, सो सब नगरनिवासी और रसोइयोंके सङ्ग पञ्चाल देशको चले जायं और ये सब लोग जाकर कहें कि हम लोग पाण्डवोंको नहीं जानते कि कहां चले गये, वे लोग हमको द्वैत वनमें छोड़कर न जाने कहां चले गये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, पाण्डव लोग इस प्रकार परस्पर सम्मति करके और अपने अपने कर्म्मोंका निश्चय करके धौम्यको बुलाकर पूछने लगे, तब धौम्य उनसे ऐसा बोले, हे महाराज युधिष्ठिर। तुम्हारे सब भाई ब्राह्मण और मित्रोंमे उचित व्यवहार करना जानते हैं, और ये लोग शस्त्र विद्या, अग्निविद्या और वाहनविद्याको भली भांति जानते हैं पर तोभी आप और अर्ज्जुन द्रौपदीकी रक्षा करना, आप इस जगतके सब व्यवहारको जानते हैं, आप अपने मित्रोंसे प्रेम पूर्व्वक व्यवहार करना, यही सनातन धर्म्म है, यही सनातन अर्थ है, और यही सनातन व्यवहार है। इस लिये हम आपसे कुछ राजनीति कहते हैं, आप सुनें, हे राजपुत्र। आप लोग हमारी कही हुई, रीतिसे चलके सब दोषोंको तर जावेंगे। हे कुन्तीपुत्र राजाके घरमें रहना बहुत कठिन है, आप लोग आदर और निरादरको सहकर छिप प्रकारसे एक वर्ष बिताना, फिर चौदहवें वर्ष प्राप्त होनेसे सुख प्राप्त करेंगे, पहले राजपालसे समाचार भेजकर तब राजाका दर्शन करना चाहिये, और कभी राजाका विश्वास नहीं करना चाहिये, राजाकी सभामें ऐसे स्थानपर बैठना चाहिये जहां दूसरा न बैठ सके। जो वाहन, पलङ्ग, आसन हाथी और घोड़ेकी इच्छा नहीं करता और राजाके

आज्ञामें सम्मत रहता है, वही राजसभामें रहने योग्य है। जहां जहां बैठनेसे दुष्ट लोग शङ्का करें, जो पुरुष उन स्थानों पर बैठना छोड़ दे, वही राजाके यहां रह सकता है। राजाको किसी प्रकारको शिचा नहीं देनी चाहिये, और बिना पूछे कुछ बोलनाभी नहीं चाहिये, तथा सब समयोंपर राजाकी प्रशंसाही करनी योग्य है। राजा लोग झूंठेकी प्रशंसा नहीं करते, वे झूठे मन्त्रोकाभी निरादर करदेते है। बुद्धिमानको उचित है कि राजाकी स्त्रियोंसे कभी प्रेम न करे और निवासमें रहनेवालोंसे द्वेषभी न करे। छोटे कामकोभी राजाकी आज्ञासे करना उचित है, ऐसा करनेसे कोई दोष नहीं होता है। राजाके यहां उत्तम आसनको पाकर भी राजाको आज्ञाके बिना अन्धेके समान खड़ा रहे, अर्थात बिना आज्ञा आसनपर न बैठे, राजासे बिना अधिकार पाये कोई कामभी न करे, यह सनातन मर्य्यादा है। व भाई और अपने परम बन्धुकोभी मर्य्यादाहीन—देखकर शत्रुनाशक राजा लोग आदर नहीं देते। सेवा करनेवालोंको उचित है कि राजाकी अग्नि और देवताके समान सेवा करें, यदि किसी विषयमें राजाको यह बात हो जाय कि अमुक पुरुष हमसे झूंठ बोलता है, तब निःसन्देह राजा उसको मार डालता है। राजा जिस कर्म्मको करे सेवकको भी वैसाही करना चाहिये। राजाकी सेवा करनेमें भूल, अभिमान और क्रोध करना उचित नहीं है। करने और न करने, प्रिय और अप्रियमें सेवकको वही कर्म्म करना चाहिये जो राजाको प्रिय हो। सब कथा और व्यवहारोंमें राजाका प्यारा बना रहे, जो बात राजाको प्रिय न हो वह उससे न कहे। मैं राजाका प्यारा हूं, यह विचारकर बुद्धिमान राजाकी सेवा न करे, वरन सदा भ्रम रहित होकर राजाके प्रिय कामोंको करता रहे। जो राजाके अप्रिय कामोंको नहीं करता, राजाके शत्रुवोंसे बात नहीं करता और अपने स्थानको नहीं छोड़ता वही राजाके यहा रह सकता है। बुद्धिमानको उचित है कि राजाके दहनी या बाईं ओर बैठे, और शस्त्रधारी पीछे बैठते हैं; वे लोग राजाकी रचा करते हैं, राजाके आगे आसन लगाकर बैठना सदा अनुचित है। राजाके आगे जो कुछ मिले उसको अस्वीकार करना उचित नहीं है। आगे बैठना दरिद्रोंकोभी अप्रिय होता है और राजोंको तो कथाही क्या है? यदि राजा कोई मिथ्या बात कहे तो उसे सर्व्व साधारणके आगे कहना उचित नहीं है, झूंठे और मिथ्या पण्डित मानोका राजा लोग निरादर कर देते हैं। सेवकको उचित है कि कभी अपनी बुद्धि और बलका अभिमान न करे, सदा राजाका प्रिय काम करनेसे मनुष्य राजाका प्यारा होता है, और राजाका प्यारा होनेसे अनेक सुख मिलते है। कठिनतासे प्राप्त होने योग्य सुख पाकर भी सावधान होकर राजाहीके प्यारे काम करने चाहिये तथा सदा राजाके कल्याणकी इच्छा रखनी उचित है। जिसके क्रोधसे महा आपत्ति और प्रसन्नतासे महा सुख प्राप्त होते है, ऐसा कौन बुद्धिमान है, जो उसका अहित चाहे? राजसभामें बैठकर होंठ, हाथ, जङ्घा और जीभको नहीं चलाना चाहिये, राजाके आगे धीरेसे बोलना उचित है, वायु और मूत्रकोभी धीरेसे निकालना चाहिये। यदि राजाके हंसाने योग्य कोई वस्तु सभामें आजाय तो हंसीको रोकना उचित नहीं है, और न पागलके समान वेगसे हंसनाही उचित है, अत्यन्त धैर्य्य करनाभी उचित नही है, क्योंकि सदा चुप रहनेसे सभावाले लोग उसे मूर्ख जान लेते हैं। राजाको कृपाको थोड़ा हंसकर प्रकाश करना उचित है। जो लाभमें प्रसन्न

नहीं होता और अनादरसे दुःख नहीं मानता और जो सदा सावधान रहता है, वही राजाके यहां रहने योग्य होता है। जो पण्डित पुरुष मन्त्री होकर राजा और राजपुत्रकी सेवा करता है, वह बहुत दिनतक सुख भोगता है। जो मन्त्री कृपा और बिना कारण राजाके क्रोधकी निन्दा नहीं करता वही बहुत दिन-सुख भोगता है, और नष्ट सम्पत्तिको लाभ करता है, जो राज्यमें रहनेवाला अथवा नौकर राजाके आगे अथवा पीछे प्रशंसा करता है, वही बहुत दिनतक सुखी होता है। जो मन्त्री अपने बलसे राज्यका भोग करना चाहता है वह बहुत दिन सुख नहीं भोगता और अन्तमें अपने प्राणोंको भी नाश कर देता है। मन्त्रीको उचित है कि सदा अपने और राजाके कल्याण-को देखता रहे, तथा शत्रुओंसे अपने राजाकी उन्नति चाहता रहे। मन्त्री तेजस्वी, बलवान, सूरवीर, सत्यवादी, कोमल कठोर और छायाके समान राजाके सङ्ग चलनेवाला हो। जो दूत दूसरे दूतको भेजने समय राजासे कहे कि महा-राज मैंही काम करूं वही दूत राजाका प्यारा और राज्यमें रहनेवाला होता है। जो भीतर और बाहरसे राजाकी आज्ञाको सुनके कभी न डरे, वही राज्यमें रहने योग्य है। जो घरसे निकलकर अपने प्यारे कुटम्बियोंका स्मरण करे और दुःख सहनेके पीछे सुख चाहे. वही दूत राजाके राज्यमें रहने योग्य है। जो कभी राजाके समान वस्त्र और आभूषण नहीं पह-नता अपनेसे ऊंचोंके सङ्ग नहीं बैठता और राजाकी सम्मतिको प्रकाशित नहीं करता, वही राजाका प्यारा दूत होता है। जो कर्म्म करनेमें धनकी इच्छा नहीं करता, जो धन लेनेके समय प्राण नाश अथवा बन्धनको प्राप्त होता है, वही राजाका प्यारा दूत होता है। जो राजाके दिये हुए वाहन. वस्त्र और आभू-षणको धारण करता है, वह पुरुष राजाका अत्यन्त प्यारा होता है। हे प्यारे पाण्डवो! आप लोग अपने मनको स्थिर करके एक वर्ष जैसे हो तैसे बिता दो, पश्चात अपने राज्यको प्राप्त करके इच्छानुसार सुख भोगना।

महाराज युधिष्ठिर बोले, आप सदाही हमको उपदेश करते हैं, आपके समान कुन्ती और महा बुद्धिमान विदुरके सिवा हमें और कौन उपदेश करेगा? आपका कल्याण हो इसके पश्चात हमारे करने योग्य जो कर्म्म हो सो कहिये, क्योंकि आपके उपदेशसे हम इस दुःखसे पार होंगे, और सुख तथा जयको प्राप्त करेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महाराज युधिष्ठिरके ऐसे बचन सुन ब्राह्मणश्रेष्ठ धौम्य मुनि उन कर्म्मोंको करने लगे जो चलते समय करने उचित थे, धौम्यने हवि, लाभ और विजयके लिये पाण्डवोंके अग्निहोत्रमें मन्त्रोंसे होम किया और अग्निकी प्रदक्षिणा करी; फिर सब तपस्वियोंसे अग्निकी प्रदक्षिणा कराई, अनन्तर पांचो पाण्डव द्रौपदीको अगाड़ी करके एक ओरको चले गये।

जब वीर पाण्डव लोग इस प्रकार चले गये, तब जप करनेवालोंमें श्रेष्ठ धौम्य मुनि अग्निहोत्रको लेकर पाञ्चाल देशको गये, और इन्द्रसेन आदि सारथी लोग राजाकी आज्ञा-नुसार रथोंको लेकर द्वारिकामें जाकर घोड़े और रथोंकी रक्षा करने लगे और पाण्डवोंके विजयकी इच्छा करके वहां रहने लगे।

४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज! जनमेजय वीर पाण्डव लोग कवच, खड्ग तूणीर और अंगुलित्राण धारण करके यमुनाके दक्षिण तटपर पैरों चलने लगे और उन्होंने जाना कि हम वनवाससे छूट गये, अब राज्यको प्राप्त करेंगे। अनन्तर पर्व्वत गुफा और वनोंमें निवास करते हुए चलने लगे। महा बलवान

महा धनुषधारी पाण्डवलोग हरिनोंको मारकर खाते हुए दशार्ण देशको उत्तर और पञ्चाव देशको दक्षिण सीमासे होकर निकले। अनन्तर शूरसेन और यकृल्लोम देशकी सीमाको नाघकर राजा विराटके राज्यमें पहुंचे। पाण्डवलोग निरन्तर बनहीमें चलते थे, धनुष कवच और मूछधारी पाण्डवलोग जब राजा विराटके नगरमें पहुंचे, तब द्रौपदीने महाराजसे कहा, हे महाराज! देखो यह सब बोये हुए खेत दिखाई देते हैं, इससे जान पड़ता है, कि राजा बिराटका नगर पास आगया, और मैं थकभी बहुत गई हूं, इस लिये आजकी रात यहीं रह जाइये।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे अर्ज्जुन! तुम द्रौपदीको अपने कन्धेपर बिठलाकर ले चलो, हमलोग इस बनसे निकलकर राजा बिराटके नगरमें रहेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजाकी आज्ञा सुन अर्ज्जुनने द्रौपदीको अपने कन्धेपर बिठला लिया, और मतवारे हाथीके समान चलने लगे। नगरके पास जाकर अर्ज्जुनने द्रौपदीको उतार दिया। विराटकी राजधानीमें पहुंचकर महाराजने अर्ज्जुनसे कहा कि हम लोग शस्त्रोंको कहां रखकर नगरमें प्रवेश करें? यदि हम लोग शस्त्रोंको लिये हुए नगरमें जायंगे तो निःसन्देह सब नगर निवासी हमको देखकर घबड़ा जायंगे, हमारे शस्त्रोंमें यह गाण्डीव धनुष लोकप्रसिद्ध है, उसको यदि लेकर हम लोग नगरमें जायंगे तो निःसन्देह हमको सब नगरनिवासी पहचान जायंगे, तब हम लोगोंको फिर बारह वर्षतक बनमें रहना होगा यदि हम लोगोंमेंसे किसी एककोभी कोई जान जायगा, तौभी सबको यह आपत्ति भोगनी पड़ेगी।

अर्ज्जुन बोले, हे पृथ्वीनाथ! यह इस शिखर-पर बड़ा भारी शमीका वृक्ष है, और इस पर कोई नहीं चढ़ सकता, क्योंकि यह श्मशानके समीप है, और इस समय हम लोगोंको देखने वाला यहां कोई मनुष्यभी नहीं है, जो नगरमें जाकर कहे कि हमने पाण्डवोंको देखा है। हमारी बुद्धिमें आता है कि इस मार्गसे दूर श्मशान और बनके पासवाले शमी वृक्षपर शस्त्रोंको रखकर नगरमें चलें। हे भारत! हम लोग इस प्रकार विचार करके विराटके यहां रहेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भरतर्षभ! धर्म्मराज युधिष्ठिरसे ऐसा कहकर अर्ज्जुन शस्त्र रखनेको उस शमी वृक्षपर चढ़े। जिस महा शब्दवाले घोर धनुषसे अर्ज्जुनने एक रथपर बैठकर समस्त देवता और मनुष्य तथा नगरोंको जीता था, उसही भयङ्कर शत्रुसेना नाशक गाण्डीव धनुषसे अर्ज्जुनने रोदेको उतारा। महा प्रतापी शत्रुनाशक युधिष्ठिरने जिस धनुषसे कुरुक्षेत्रकी रक्षाकी थी उससे रोदेको उतारा। जिस धनुषसे द्रौपदीके स्वयंम्बरमें अनेक शत्रुवोंको नाश किया था, जिससे दिग्विजयमें अनेक शत्रुवोंको रोका था, जिसका शब्द सुनकर शत्रु लोगोंके इस प्रकार हृदय फटते थे जैसे बज्रका शब्द सुननेसे पर्व्वत फटते हैं, जिससे सिन्धु देशके राजाको जीता था, उस धनुषसे भीमसेनने रोदा उतारा। जिसके समान जगतमें कोई सुन्दर नहीं था, उस नकुलने अपनी उस धनुषसे रोदेको उतारा जिससे पश्चिम दिशाको जीता था और जिससे महाबाहु महाशूर सहदेवने अनेक शत्रुओंको मारा था, जिस धनुषके आश्रयसे दक्षिण और दक्षिणके सब राजोंको जीता था, सहदेवनेभी उस धनुषसे रोदेको उतारा। पाण्डवोंने धनुषोंके सङ्ग दो बड़े बड़े प्रकाशमान खड्ग और अन्य शस्त्रोंकोभी धनुषके सङ्गही रख दिया।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, पश्चात कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरने नकुलको आज्ञा दी कि हे वीर!

तुम इस शमी वृक्षपर चढ़कर इन सब धनुषोंको रख आओ, उसी समय नकुल उस वृक्षपर चढ़ गये और उन दिव्यरूपी प्रकाशमान धनुषोंको रख दिया। नकुलने ऐसे स्थनपर धनुषोंको रक्खा, जहां वरसते हुए पानीसे न भींग सकें और उनको दृढ़ वन्धनोंसे बांध दिया। फिर पाण्डवोंने उस शमी वृक्षपर एक मरे हुए पुरुषका शरीर बांध दिया, इसका प्रयोजन यह था कि कोई पुरुष उस वृक्षके पास न आसके। पाण्डवोंने विचारा कि जो पुरुष इस शवको वन्धा देखेगा और इसको दुर्गन्धि सूंघेगा वह कहेगा कि यह वृक्ष पास जानेके योग्य नहीं है, और यह शमी हमारे शस्त्रोंकी रक्षा करेगी, इस लिये हमारी माताके समान है, यह हमारा कुल धर्म्म है, हमारे पुरुषावोंने इसीको ग्रहण किया है, इस लिये इस वृक्षमें शस्त्रोंको रखकर हम लोग, विराट नगरको चलेंगे। ऐसा कहकर शत्रुनाशन वीर पाण्डव लोग गोपालोंसे तथा गड़रियोंसे बोले, कि इस वृक्षमें हमारी बूढ़ी माताको मृतदेह रक्खी गई है। ऐसा कहते हुए विराट नगरके समीप पहुंचे। जय, जयन्त, विजय जयत्सेन और जयद्दल येही पाण्डवोंने अपने गुप्त नाम रक्खे, अनन्तर पांचो पाण्डवोंने यह निश्चय करके कि हम लोग छिपकर एक वर्ष रहेंगे, विराट नगरमें प्रवेश किया।

५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! जनमेजय। महाराज युधिष्ठिरने जिस समय विराट नगरमें प्रवेश किया, उसी समय मनसे तीनों लोकोंकी स्वामिनी दुर्गा देवीकी इस प्रकारसे स्तुति की। हे देवि। तुम यशोदाके गर्भसे नन्द गोपके घरमें उत्पन्न हुई हो, तुम नारायणकी प्यारी, मङ्गलकारिणी, कुलवर्द्धिनी, सङ्कटनाशिनी, और दैत्य विनाशिनी हो। तुमको जिस समय कंसने शिलापर फेंका था, तब तुम आकाशको चली गई थीं। तुम श्रीकृष्णकी बहिन, दिव्य माला, आभूषण, खड्ग और खेटकधारिणी हो। तुमको महा घोर दुःख उतारनेके समयमें जो मनुष्य स्मरण करता है, तुम उसकी इस प्रकार रक्षा करती हो जैसे कोई दुर्व्वलकी रक्षा करता है।

ऐसा कहकर राजा युधिष्ठिर देवीका आवाहन करके और उनके दर्शनकी इच्छा करके नीचे लिखा स्तोत्र पाठ करने लगे,—

हे देवि! तुम वरदान देनेवाली, कृष्णा, कुमारी और ब्रह्मचारिणी हो, हम तुम्हें प्रणाम करते हैं, तुम्हारा तेज प्रातःकालके सूर्य्यके समान और मुख चन्द्रमाके तुल्य है। तुम्हारे स्तन और नितम्ब कठोर हैं, तुम मोरके पंखोंके समान वाजू, केयूर और भूषण धारण करके साक्षात लक्ष्मीके समान शोभित होती हो, नारायण तुम्हाराही रूप हैं! हे आकाशगामिनि! तुम्हारा रूप और ब्रह्मचर्य्य वहुत प्रकाशित है, तुम्हारी सुन्दरता कृष्णके समान और मुख वलदेवके तुल्य है। तुम्हारी भुजा साक्षात इन्द्रधनुषके समान विशाल हैं, तुम्हारे हाथमें कमल और घण्टा है। तुम सब जगतकी स्त्रियोंसे पवित्र और शुद्ध हो, तुम्हारे हाथमें फांसी धनुष और महा चक्रादि अनेक प्रकारके शस्त्र हैं, तुम्हारे कानमें पूर्ण कुण्डल शोभित हैं। हे देवि। तुम्हारे विचित्र मुकुट और उत्तम वन्धे हुए वालोंसे युक्त मुखको देखकर चन्द्रमाभी लज्जित हो जाता है, तुम्हारे सर्पके समान काटसूत्रको देखकर सर्पयुक्त मन्दराचलभी चकित हो जाता है। तुम मोरोंके पंखको बनी हुई ऊंची ध्वजासे विराजित हो, तुम्हारे ब्रह्मचर्य्य व्रतसे स्वर्गभी पवित्र होगया है, इस लिये देवता लोगभी तुम्हारी स्तुति और पूजा

रते है, तुमने तीनो लोकोंकी रक्षाके लिये हिषासुरको मारा है। हे देवि! तुम हमसे सन्न हो, तुम जया, विजया और युद्धमें जय देनेवाली हो, इस लिये हमकोभी रदान दो, जिसमें हमारी विजय हो। हे वि। विंध्य नामक पर्व्वत तुम्हारा सनातन थान है, तुम काली, महाकाली हो; मद्य, ांस और पशुवोंको भक्षण करनेवाली हो, व पुरुष सदा तुम्हारी सेवा करते हैं, तुम पनी इच्छासे सदा चलनेवाली हो। जो ुरुष भार उतारनेके समय तुम्हारा स्मरण रते है, और प्रातःकाल तुम्हें प्रणाम करते हैं, उनको जगतमें कोई वस्तु दुर्लभ नहीं है, पुत्र और धनकी तो कथाही क्या है? तुम जगतके मनुष्योंको दुःखसे उवारती हो, इस लिये तुम्हारा नाम दुर्गा है। बनमें भूले हुए, समुद्रमें डूबते हुए और चोरोंके वशमें पड़े हुएको तुमही बचाती हो, तुमही उनकी रक्षा करती हो, हे देवि! बनमें घूमते हुए जो तुम्हारा। स्मरण करते है, वे कभी दुःखमें नहीं पड़ते। तुम कीर्त्ति, लक्ष्मी, धारणा, सिद्धि, लज्जा विद्या, सन्तान, बुद्धि, संध्या, रात्रि, शोभा, निद्रा, चादनी, तेज, क्षमा और दया हो! जो तुम्हारी पूजा करते हैं उनको वन्धन मोह, पुत्रनाश, धननाश, रोग, भय और मृत्यु नही होती। सो मैं राज्यसे नष्ठ होकर तुम्हारी शरणमें आया हूं, हे देवि। शरणागतरक्षिणि। हे भक्तपालिनि! हे सुरेश्वरि। हे कमल नयनि। हे दुर्गा! मैं तुम्हें शिरसे प्रणाम करता हूं, तुम हमारी रक्षा करो।

महाराज युधिष्ठिरकी ऐसी स्तुति सुन दुर्गादेवी प्रत्यक्ष हुई और राजासे कहने लगी,—

श्रीदेवीजो बोली, हे राजन्! हे महावाहो। हे पृथ्वीनाथ! तुम हमारे वचनोको सुनो, मेरी कृपासे थोड़े दिन पश्चात युद्धमें तुम्हारी बिजय होगी, तुम कौरवोंकी सेनाको जीतकर समस्त पृथ्वीका निष्कण्टक राज्य पावोगे और अपने भाइयोंके सहित अत्यन्त प्रसन्नताको प्राप्त होगी, मेरी कृपासे तुम्हें कोई रोग और दुःख नहीं होगा। इस स्तोत्रको जो धर्म्मात्मा पढ़ेगा, मैं प्रसन्न होकर उसको शरीर सुख, पुत्र, राज्य और आयु दूगी। परदेशमें, नगरमें, युद्धमें, शत्रुशङ्कटमें, बनमें, घोरस्थाननें, समुद्रमें और पर्व्वतमें जो मेरा स्मरण करेंगे, उनको इस लोकमें कोई वस्तु दुर्लभ नहीं होगी, हे पाण्डवो। इस स्तोत्रको जो भक्तिसे पढ़ें या सुनेंगे उनके सब कार्य्य सिद्ध होजायंगे। मेरी कृपासे तुमको विराट नगरमें रहते हुए कोई कौरव या नगर निवासी नहीं जान सकेगा, शत्रु-नाशन युधिष्ठिरसे ऐसा कह-कर और पाण्डवोंकी रक्षा करके देवी वहीं अन्तर्द्धान होगई।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर, महाराज युधिष्ठिर सोनेके मणि जटित पासोंको कपड़ेमें लपेटकर अपनी वगलमें दबाय राजा विराटकी सभामें गये।

महायशस्वी कौरववंश वर्द्धन महानुभाव महाराज युधिष्ठिर यशस्वी राजा बिराटकी सभामें इस प्रकार गये, जैसे घोर विषोला सर्प कहीं जाता है। महाराज युधिष्ठिर बलसे रूपसे और तेजसे साक्षात देवताके समान दीखते थे, उनका तेज ऐसा जान पड़ता था जैसे मेघोंमें छिपे हुए सूर्य्य और भस्मसे छिपी हुई महा अग्निका। उन महा तेजस्वी पाण्डुपुत्र युधिष्ठिरको आते देख विराट विचार करने कि यह क्या वादरसे निकलकर चन्द्रमा आया है? अथवा यह पूर्ण चन्द्रमाके समान महा तेजस्वी महानुभाव पुरुष है? राजाने मन्त्री, सूत, ब्राह्मण, वैश्य और सब सभासदोंसे पंछा कि, यह कौन पुरुष चला आता है? मैं आज इसे पहलेही देखता हूं, यह राजोंकी दृष्टिसे

मेरी सभाको देख रहा है। मुझे पूर्ण निश्चय होता है कि यह ब्राह्मण नहीं है, बरन समस्त पृथ्वीका स्वामी क्षत्रिय है। देखो इसके पास हाथी, घोड़ा और रथ कुछभी नहीं है, तौभी यह इन्द्रके समान प्रकाशित हो रहा है। इसके शरीरके चिन्होंसे हमको पूर्ण निश्चय होता है कि यह साक्षात चक्रवर्त्ती राजा है, यह मेरे पास निर्भय रूपसे इस प्रकार चला आता है, जैसे मतवारा हाथी तालावकी ओर जाता है। पुरुष-सिंह विराट इस प्रकार विचार करही रहे थे कि इतनेमें महाराज युधिष्ठिर उनके पास आकर कहने लगे, महाराजको विदित हो कि मैं ब्राह्मण हूं, मेरा सर्व्वस्व नाश होगया है, सो जीविकाके लिये मैं यहां आया हूं। मैं आपके यहां आपकी आज्ञानुसार रहना चाहता हूं।

महाराज विराटने कृपा करके कहा कि हम आपका स्वागत करते हैं, महाराज युधिष्ठिरका इस प्रकार सत्कार करके राजा विराट प्रसन्नता पूर्व्वक बोले, हे मित्र! हम केवल जाननेके लिये आपसे पूछते हैं कि आप कौनसे राजाके राज्यसे यहां आये हैं? आप अपना गोत्र और नाम हमसे कहिये और यहभी कहिये कि आप कौन कौन विद्या जानते हैं?

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे महाराज! पहले समयमें मैं राजा युधिष्ठिरका प्यारा मित्र था, मेरा नाम कङ्क, वैयाघ्रपद गोत्र और और जाति ब्राह्मण है। मैं जुआ खेलने और खिलानेमें परम प्रवीण हूं, इसी विद्यासे मेरा नाम प्रसिद्ध है।

महाराज विराट बोले, हम आपको इच्छा-नुसार वर देते हैं, आप आजसे विराट देशका राज्य कीजिये, मैं आपके वशमें होकर रहूंगा जुआ खिलानेवाले धूर्त्त भी हमारे प्रिय हैं और आप देवतुल्य तथा राज्य करने योग्य हैं।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे महाराज! आप प्रसन्न होकर हमको एक वरदान और दीजिये, जिसको हम जीतेंगे वह हमारे धनको नहीं छीन सकेगा। हे पृथ्वीनाथ! इसका विवाद पहले भी हो चुका है, इसलिये आप हमको यह वर दीजिये।

महाराज विराट बोले, मैं तुमको यह वर-दान देता हूं कि जो तुम्हारा दोष करेगा वह मेरे राज्यमें जीवित नहीं बचैगा। तुम्हारे दोष करनेवाले ब्राह्मणको भी मैं राज्यसे निकाल दूंगा। हे सभासदो! आजसे तुम लोग कङ्कको भी हमारे ही समान जानो। इस राज्यके जैसे हम स्वामी हैं वैसेही कङ्क भी है। हे कङ्क! आजसे तुमको हमारे समान भोजन, वस्त्र, पीनेकी वस्तु और वाहन मिलेंगे। तुम सदा भीतर और बाहर जाया आया करो, तुम्हें कोई द्वारपाल रोक नहीं सकेगा, जो दरिद्र लोग तुम्हारे पास आवेंगे उनके वचन तुम हमसे सदा आकर कहा करना, हम निःसन्देह उनको सब वस्तु देंगे। हमारे यहां रहनेसे तुम्हें कुछ भय नहीं होगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा विराटसे सत्कार पाकर पुरुषसिंह वीर युधिष्ठिर सुख पूर्व्वक उस स्थानमें रहने लगे और किसीने भी उनके चरित्रको न जाना।

६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायनमुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! इसके पश्चात् भीमसेन रसोइयाका वेशबनाकर राजा विराटकी सभामें पहुंचे। वह मतवारे सिंहसमान पराक्रमी एक हाथमें खोचा और दूसरेमें चमचा लेकर पहुंचे। भीम सूर्य्यके समान तेजस्वी रसोइयाके वेशमें काले कपड़े पहन करके ऐसे शोभित हुए जैसे अनेक धातु पर्व्वत शोभायमान होता है। उस महा-पराक्रमीको आते देख राजाने मन्त्रियोंसे विस्मित हो पूछा, यह सिंह समान परा-क्रमी युवा पुरुष कौन आता है? मन इस

पुरुषको पहले कभी नहीं देखा। मुझे जान पड़ता है कि यह साक्षात् सूर्य्य है? मैं अनेक तर्क वितर्क करने पर भी इसका निश्चय नहीं कर सकता। इसकी चेष्टा देख कर मुझे जान पड़ता है कि यह कोई विचित्र चित्तवाला पुरुषसिंह है। इसको देखते ही मुझे निश्चय होता है कि यह साक्षात् गन्धर्व्वराज या साक्षात इन्द्र है। तुम लोग शीघ्र निश्चय करो कि यह कौन है और यहां क्यों आया है? जो इसकी इच्छा हो वह पूर्ण करनेमें देर मत करो। राजाकी आज्ञा सुन अनेक पुरुष कुन्तीपुत्र भीमके पास गये और राजाके वचन कह सुनाये, भीमने उन लोगोंके वचनोंका कुछ उत्तर न दिया और राजाके पास आकर गम्भीर स्वर अभिमान और अदीनतासे कहने लगे, हे पृथ्वीनाथ। मेरा नाम बल्लव है, मैं बहुत उत्तम रसोई बनाना जानता हूं। आप हमको नौकर रखिये।

विराट बोले, हे बल्लव। तुम रसोइयां हो, मुझे इस बातका निश्चय नहीं होता क्योंकि तुम्हारा तेज, बल और रूप साक्षात इन्द्रके समान दीखता है। हमें पूर्ण निश्चय है कि तुम कोई राजा हो?

भीम बोले, हे पृथ्वीनाथ! हम कोई हों परन्तु आपके रसोइया और नौकर हैं, हम उन उत्तम भोजनोंको बनाना जानते हैं, जिनको पहले समयमें साक्षात युधिष्ठिर खाते थे। हमारे समान पृथ्वीमें कोई बलवान नहीं है, हम अपने समान युद्धविद्यामें किसीको नहीं समझते। हे पृथ्वीनाथ। हम मतवारे सिंह और हाथियोंको केवल हाथसे पकड़ सकते हैं, औरभी आपके प्रसन्न करनेको अनेक कर्म्म हम कर सकते हैं।

महाराज विराट बोले, यद्यपि तुम उस कर्म्मके योग्य नहीं हो, जिसकी तुम इच्छा करते हो, तुम समुद्र पर्य्यन्त पृथ्वीके महाराज होनेके योग्य हो, तथापि तुम्हारी इच्छानुसार तुम्हें वही वरदान दिया जाता है जिसमें तुम निपुण हो, आजसे तुम हमारे चौकेके पूर्ण अधिकारी हुए। जितने पुराने रसोइया थे तुम उन सबके स्वामी हुए। जैसा तुम्हारी इच्छा हो वैसाही भोजन हमको करना होगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा विराटने भीमको केवल रसोईहीका काम नहीं दिया किन्तु अपना प्यारा मित्रभी समझ लिया। विराटने भीमको अपने राजभवनमें रहनेकी आज्ञा दे दी, परन्तु उसके चरित्रको न जाना।

७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजा जनमेजय! इसके पश्चात् अपने बहुत लम्बे सुन्दर और कालेबालोंको यत्नसे बांधकर निन्दारहित उत्तम हंसनेवाली द्रौपदीने अपने दहनी कोखके तिलको छिपाया, फिर एक महा मैली धोतीको पहन ली और दासीका वेष बनाकर गलियोंमें रुदन करती हुई फिरने लगी। उसको देखकर अनेक स्त्री और पुरुष उसके पीछे फिरने लगे और कहने लगे कि तू कौन है? और क्या चाहती है? द्रौपदी उन सबसे कह देती थी कि मैं दासी हूं, और नौकरी चाहती हूं। मुझे जो खानेको देगा उसीके यहां नौकरीभी करूंगी, परन्तु द्रौपदीका रूप, तेज और मीठी वाणीको देखकर किसीको निश्चय नहीं होता था कि यह दासी है, और केवल अन्नके लिये घूम रही है? राजा विराटकी बड़ी स्त्रीका नाम कैकेयी था, उसने अपने झरोखेसे द्रौपदीको देखा, उसने ऐसी रूपवती स्त्रीको एक वस्त्र धारण किये देखकर बहुत आश्चर्य्य किया, और दासियोंसे बुला लिया।

रानी द्रौपदीसे बोली, हे कल्याणि! तुम कौन हो? और क्या चाहती हो? द्रौपदीने कहा मैं दासी हूं, और जो नौकर रक्खे उसीके

यहां रहना चाहती हूं। रानी बोली, हे भामिनि। तुम्हारे समान सुन्दरी स्त्री दासी क्यों होगी? दासी तो चलने घूमनेके योग्य और काम करनेके योग्य स्त्रिया होती हैं। दासी ऊंची एड़ीवाली, गम्भीर बुद्धि वचन, और नाभीवाली, ऊंचे आंख, नाक, हृदय, कान, स्तन और हृदयवाली, लाल तलवे, हथेली, नखून नेत्र और जिह्वावाली, हंसके समान शब्दवाली, उत्तमकेश, उत्तम स्तन, थोड़ी अवस्था, कठोर-स्तन और नितम्बयुक्त दासी नहीं होती हैं। तुम उन उत्तम लक्षणोंसे भरी हो जो कश्मीर देशकी स्त्रियोंमें होति हैं! तुम्हारे नेत्र टेढ़े हैं और कटाक्ष विचित्र हैं, तुम्हारे ओठ कन्दूरीके समान लाल और कमर अत्यन्त पतली है, तुम्हारा गला शङ्खके समान स्वर ऊंचा, मुख चन्द्रमाके तुल्य और नेत्र शरत् ऋतुके कमलके समान है। तुम्हारे शरीरसे पद्मकी सुगन्धि आती है, हमें निश्चय होता है कि तुम साक्षात लक्ष्मी हो। अब तुम हमसे सत्य कहो कि तुम कौन हो? क्योंकि तुम्हारा दासी होना हमको निश्चय नहीं होता। क्या तुम यक्षी, गन्धर्व्वी, देवी, अप्सरा, देवकन्या, नागकन्या, नगरकी देवता, विद्याधरी, किन्नरी, या साक्षात् रोहिणीही हो? क्या तुम अलम्बुषा, मिश्रकेशी, पुण्ड-रीकी, मालिनी, या साक्षात इन्द्राणीही हो? क्या ब्रह्माने अपनी चतुरता तुम्हारे बनानेमें समाप्त कर दी है? हे सुन्दरी! क्या तुम साक्षात देवियोंमेंसे कोई हो? क्योंकि रूपमें देवीही प्रशंसाके योग्य हैं।

द्रौपदी बोली, मैं तुमसे सत्य कहती हूं कि मैं कोई देवी राक्षसी या असुरी नहीं हूं, मैं दासी हूं और बाल बांधनेकी बहुत अच्छी रीति जानती हूं। हे सुन्दरी। मैं उबटन लगाना भी अच्छा जानती हूं, मैं कमल और चमेली आदिकी विचित्र माला भी बनाना जानती हूं, मैंने बहुत दिन तक कृष्णकी प्यारी पटरानी सत्यभामाकी सेवा करी है। पाण्डवोंकी प्यारी स्त्री जगतमें एक सुन्दरी द्रौपदीके सङ्ग मैं बहुत दिनतक रही हूं। वह मुझको भोजन और वस्त्र देती थीं, वैसेही मैं उनके सङ्ग विहार भी करती थी, साक्षात सुन्दरी द्रौपदीने मेरा नाम मालिनी रक्खा था। हे देवि। सोई अब मैं तुम्हारे घरमें आई हूं।

रानी बोली, मैं तुमको अपने शिरपर रखूंगी, यदि साक्षात राजा भी अनेक कारणोंसे तुमको न रखना चाहेंगे तो तुमको मैं रक्खूंगी। यह जितनी राजकुलकी स्त्रियां हैं, सब तुम्हारे रूपको देखकर मोहित हो रही है। तब ऐसा पुरुष कौन होगा जो तुमको देखकर मोहित न होगा? हे सुन्दरी देखो हमारे घरके जितने वृक्ष हैं, ये सबभी तुमको देखकर नीचे हुए जाते हैं, तब तुम कौनसे पुरुषको मोहित नहीं कर सकती हो? हे सुन्दर हंसनेवाली। हे सुन्दर कमर वाली। हे सुन्दर मुखवाली! राजा विराट जब तुम्हारे विचित्र शरीरको देखेंगे तब मुझको छोड़कर तुम्हारे वशमें होजायंगे। हे चञ्चलनैनी। तुम्हारे सुन्दर अङ्गको देख कर राजा विराट कामके अत्यन्त वशमें होजा यंगे, यह हो नहीं सकता कि जो पुरुष प्रति दिन देखे और तुम्हारे वशमें न हो। मुझे पूर्ण निश्चय है कि राजा तुमको देख-तेही तुम्हारे वशमें होजायंगे। जैसे कोई वृक्षपर चढ़कर वृक्षको काटता है, और वह गिरकर मर जाता है, वैसेही मैं तुमको राजभवनमें रहनेकी आज्ञा देती हूं। जैसे केंकड़ेकी स्त्री अपना सर्व्वनाश करनेके लिये गर्भ धारण करती है, तैसेही मैं तुमको राजभवनमें रहनेकी आज्ञा देती हूं।

द्रौपदी बोली, हे सुन्दरि! मुझे विराटराज अथवा और कोई पुरुष प्राप्त नहीं कर

सकता है, क्योंकि किसो महा बलवान गन्धर्व्वराजके पाच पुत्र मेरे पति हैं, वे सदा दुःख और दुराचारोंसे मेरो रक्षा करते हैं, जो मुझसे पैर नहीं धुलावे और जूठा भोजन नहीं दे उसीसे मेरे पति प्रसन्न रहते हैं। जो पुरुष मुझे साधारण स्त्रीके समान प्राप्त करना चाहता है, वह उसी रात्रिको इस जगतसे विदा होजाता है। हे सुन्दरि। मेरे चित्तको कोई नहीं चला सकता है, क्योंकि वे बलवान गन्धर्व्व मेरे अत्यन्त प्यारे पति हैं, वे लोग गुप्त रूपसे मेरी सदा रक्षा करतेहैं।

रानो बोलो, हे सुन्दरि। तुम जैसे चाहती हो वैसेही मेरे घरमे रहो, मैं तुमसे कभो पैर और जूठे बर्त्तन नहीं धुलाऊंगी।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्। जनमेजय। इस प्रकार धर्म्मचारिणी द्रौपदी राजा विराटकी स्त्रीके यहा रहने लगी, परन्तु किसोने उसको जाना नहीं।

८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! जनमेजय। सहदेवभी ग्वालेका वेष बनाके और ग्वालोंकी ऐसी भाषा बोलते हुए राजा विराटके पास पहुंचे। राजाने उस विचित्र पुरुषको गउवोंके पास खड़ा देखकर विस्मित होकर अपने मन्त्रियोंके द्वारा उसे बुलाया, इतनेमें सहदेव सभामें पहुंच गये। राजा उस विचित्र पुरुषको देखतेही उठ खड़े हुए और कहने लगे, हे पुरुषसिंह। तुम कौन हो? किसके पुत्र हो? और क्या करना चाहते हो? हमने तुमको पहले कभी नहीं देखा था, तुम सत्य कहो कि कौन हो? राजाके वचन सुन शत्रुनाशन सहदेव मेघके समान गम्भीर वाणीसे बोले, मैं जातिका वैश्यहूं, मेरा नाम अरिष्टनेमी है, मैं पहले समयमें कुरुश्रेष्ठ महाराज युधिष्ठिरके यहा गउओंकी संख्या करता था। अब मैं नहीं जानता कि राजसिंह पाण्डव लोग कहां और कैसे हैं? हे राजन्। आप जानते है कि, बिना जीविकाके कोई नहीं जी सकता और मुझे आपके सिवा दूसरे राजामें भक्तिभी नहीं है।

महाराज विराट बोले, हे शत्रुनाशन। तुम ब्राह्मण या कोई क्षत्रिय हो, क्योंकि वैश्योंका कर्म्म तुममें अनुचित जान पड़ता है। जो हो, तुम समुद्र पर्य्यन्त पृथ्वीके राजा हो, अब तुम हमसे सत्य कहो कि तुम कौन हो? तुम कौन से राजाके राज्यसे हमारे यहा आये हो? और कौन कौनसी विद्या जानते हो? हमारे यहां किस प्रकारसे रहोगे और क्या वेतन लोगे?

सहदेव बोले, पाचो पाण्डवोंमें बड़े महाराज युधिष्ठिर थे, उनके यहा आठलाख गउओंके वर्ग थे, और सौ हजार एव दो सौ हजार गउओंके वर्ग थे। मैं उन सबका स्वामी और संख्या करनेवाला था, इसी लिये राजाने मुझको तन्तिपालका पद दिया था। भूत भविष्यत और वर्त्तमान सब संख्याको मैं जानता हूं, चारो ओर दस दस योजन तक जितनी गऊ रहती हैं उन सबको मैं जान सकता हूं। महात्मा युधिष्ठिरही मेरे गुणको जानते थे और मैंभी कुरुराज युधिष्ठिरके सब गुणोंको जानता हूं। मैं उन सब उपायोंको भी जानता हूं जिनसे गउवोंकी वृद्धि शोघ्र हो और गउओंके सब रोगोंकी चिकित्सा भी मैं जानता हूं हममें यहा सब गुण है, हम उन बछड़ोंकोभी पहचान सकते हैं जिनके मूत्रको सूंघने मात्रसे बन्ध्याके पुत्र होते हैं, और भो बछड़ोके सब उत्तम लक्षणोंको मैं जानता हूं।

राजा विराट बोले, हमारे यहां एक वर्णवाले एक लक्ष पशु हैं, हम उन सबको तुम्हें देते हैं, आजसे हमारे सब पशु तुम्हारे आधीन रहैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, पुरुषश्रेष्ठ सहदेव राजा विराटसे ऐसा वार्त्तालाप करके सुखपूर्व्वक उनके यहां रहने लगे। राजाने उनकी इच्छानुसार जीविका कर दी, परन्तु किसीने उनको पहचाना नहीं।

९ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजा जनमेजय! उसी समय एक दूसरा मनुष्य दिखाई दिया जो स्त्रियोंके ऐसे वस्त्र और आभूषण धारण किये हुए था, जो सुन्दर कुन्दन और कर्णफूल पहने था। पुरुषोंने उसे एक स्थानके नीचे खड़े हुए देखा, वह बड़े हाथोंवाला पुरुष अपने बालोंको ठीक करके अपने पराक्रमसे मतवार हाथीके समान पृथ्वीको कंपाता हुआ राजा विराटकी सभाके पास आया। उस शत्रुनाशक इन्द्रपुत्र मतवारे हाथीके समान पराक्रमी महातेजस्वीको छिपे हुए वेशमें देखकर सब लोग आश्चर्य करने लगे। तब राजाने अपने सब सभासदोंसे पूंछा, यह कौन है? मैंने इसको कभी नहीं देखा और न सुना है? राजाके प्रश्नका किसीने कुछ उत्तर नहीं दिया। तव राजाने आश्चर्य करके उससे पूछा, तुम महा पराक्रमी देवतोंके समान रूपवाले, हस्तिराजके समान वली कौन हो? तुम शङ्खके और सोनेके आभूषण क्यों पहने हो? और यह चोटी इस प्रकार क्यों गुही है? ऐसे कुण्डल पहननेका क्या प्रयोजन हैं? तुम इस मालासे ऐसे दीख पड़ते हो जैसे कोई वीर धनुषवाण और कवच धारण करके शोभित होता है। आजसे तुम वाहनों पर चढ़के घूमो, तुम मेरे पुत्र वा मेरे तुल्य होकर यहां निवास करो। मैं बहुत वूढा होगया हूं, इस लिये अपने राज्यका भार सव मन्त्रियोंको देना चाहता हूं आजसे तुम्हीं इस देशका राज्य करो। मेरे मनमें आता है कि तुम्हारे ऐसे पुरुष नपुंसक नहीं होते।

अर्ज्जुन बोले, हे नरदेव। मैं नाचना गाना और वजाना जानाता हूं, इस लिये आप मुझे उत्तराके घरमें रहनेकी आज्ञा दीजिये। मैं राजपुत्रीको नाचना गाना सिखलाऊंगा। जो आपने हमसे हमारे रूपका वर्णन किया सो केवल शोक वढ़ाने वाला है। मेरा नाम वृहन्नला है। मेरा कोई पुत्र, पुत्री, माता पिता नहीं है।

विराट वोले, हे वृहन्नले! जो तुमने वर दान मांगा तुम्हें हम सोई देते हैं, तुम हमारी पुत्री और उनकी सखियोंको नचाओ, परन्तु मेरी वुद्धिमें आता है कि तुम समस्त पृथ्वीके राजा होनेके योग्य हो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इस प्रकारसे राजा विराटने वृहन्नलासे वार्त्तालाप करके नाचने और गानेके काममें नियुक्त कर दिया। इसके पहले राजाने अपने मन्त्रियोंसे सम्मति करके उसकी परीक्षा कराई और स्त्रियोंसे भी उसकी परीक्षा करा ली। राजाने सुना कि वृहन्नला निश्चय नपुंसक है, तव उसको राजपुत्रीके घरमें जानेकी आज्ञा दी। अर्ज्जुन भी उसी दिनसे राजा विराटकी पुत्रीको नाचना गाना और वजाना सिखलाने लगे। राजपुत्री, सखी और उसकी दासी लोग अर्ज्जुनसे वहुत प्रेम करने लगीं। इस प्रकार इन्द्रीजीत अर्ज्जुन छल वेष बनाकर राजपुत्रीकी सेवा करने लगे, परन्तु किसी वाहर वा भीतरके पुरुषने उन्हें पहचाना नहीं।

१०अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि वोले, हे राजन् जनमेजय! उसी समय नकुल राजा विराटकी सभामें पहुंचे, इनको आते हुए देखकर लोग शङ्का करने लगे कि यह क्या मेघोंसे निकल कर सूर्य

उदय हुआ है? राजा विराटने उसे देखाकि यह घोड़ोंको देखता हुआ चला आता है। तब उन्होंने अपने मन्त्रियोंसे पूछा कि यह देवतुल्य पुरुष कहा चला आता है? यह हमारे घोड़ोंको देख रहा है, इससे जान पड़ता है कि यह बुद्धिमान् पुरुष निश्चय घोड़ोंकी विद्या जाननेवाला है, इसको शीघ्र हमारे पास ले आवो, हमको जान पड़ता है कि यह देव तुल्य पुरुष महावीर है, इतनेहीमें शत्रुनाशक नकुल राजाके पास पहुंच गये और कहने लगे, हे महाराज! आपकी जय हो और आपके समाजका कल्याण हो। मैं घोड़ोंकी सब विद्याका जानता हूं और रथ हाकनेमें परम निपुण हूं। आपके यहां सारथीकी नौकरी करना चाहता हूं।

विराट बोले, मैं तुम्हें वाहन, भोजन और स्थान देता हूं; तुम मेरे सारथी होनेके योग्य हो। तुम कौन हो? कहासे आये और किससे पुत्र हो? तुममें क्या विद्या है?

नकुल बोले, पाचों पाण्डवोमें बड़े भाईका नाम महाराज युधिष्ठिर था, उन्होंने मुझे घोड़ोंका स्वामी बनाया था। हे शत्रुनाशन! मैं घोड़ोंके स्वभाव, प्रसन्न करनेकी रीति, दुष्ट घोड़ोंके ठीक करनेका यत्न और उनके सब रोगोंकी चिकित्साको जानता हूं, मेरा घोड़ा कभी कायर नहीं हो सकता, मुझसे शिक्षित घोड़ी कभी दुष्ट नहो होगी, मुझको राजा युधिष्ठिर और सब लोग ग्रन्थिक नामसे पुकारते थे।

विराट बोले, यह कर्म्म तुम्हारे योग्य नहो है, तुम जगतके राजा होनेके योग्य हो, परन्तु यदि तुम्हारी ऐसीही इच्छा है तो हमारे घोड़े आदि सब वाहनोंके स्वामी होकर रहो। मेरे सब सारथी और अश्वयोजक तुम्हारे आधीन होकर रहेंगे। अब तुम कहो तुम्हें कितना धन चाहिये? तुम्हारी चेष्टा महाराज युधिष्ठिरसे मिलती है। कहो महाराज युधिष्ठिर किस प्रकारसे सेवकोंके बिना बनमें रहते हैं?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इस प्रकार गन्धर्व्वराज तुल्य नकुलको राजा विराटने प्रसन्न होकर अपने घरमें रक्खा, परन्तु किसीने उनको पहचाना नहीं। इस प्रकार समस्त पृथ्वीके स्वामी महा पराक्रमी पाण्डव लोग अपने अपने रूपोंको छिपाकर दुःखित होकर राजा विराटके यहां रहने लगे।

११ अध्याय समाप्त।

प्रवेश पर्व्व समाप्त।

अथ समय पालन पर्व्व।

महाराज जनमेजय बोले, इस प्रकार महा पराक्रमी पाण्डव लोग छिपकर विराट नगरमें क्या करते थे सो हमसे कहिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, पाण्डव लोग छिपकर विराट नगरमें राजाको प्रसन्न करते हुए जो जो कर्म्म करते थे सो तुम श्रवण करो।

महात्मा तृणविन्दु और धर्म्मके वरदानसे पाण्डव लोग छिपकर विराट नगरमें रहने लगे। राजा युधिष्ठिर राजा विराट और उनके पुत्रोंके प्यारे सभासद हुए, जुवेके जाननेवाले राजा युधिष्ठिर विराट और उनके पुत्रोंको इस प्रकार खिलाने लगे कि जैसे कोई सूतमें बन्धे हुए पक्षियोंको खिलाता है। महाराज युधिष्ठिर राजासे जीतकर राजासे छिपाकर अपने भाइयोंको उचित धन देने लगे। भीमसेन उत्तम उत्तम भोजन चौकेमें जो राजासे बचते थे वह युधिष्ठिरको दे जाते थे। अर्ज्जुनको रनिवासमें जो पुराने वस्त्र मिलते थे, वे सब अपने भाइयोंको बाट देते थे। सहदेव अहिरका वेष बनाकर पाण्डवोंको दूध दही और घृत दे जाते थे। नकुल भी राजा विराटको प्रसन्न करके जो धन पाते थे सो सब अपने भाइयोंको दे जाते थे। तपस्विनी द्रौपदी

पतियोंको देखकर प्रसन्न होती थी और जिसमें कोई न पहचाने ऐसे यत्न करती थी। इस प्रकार महारथ पाण्डव लोग छिपकर विराट नगरमें रहने लगे, जैसे गर्भमें रहते थे। उनको वहांभी धृतराष्ट्रके पुत्रोंकी शङ्का और भय बना रहता था। इस प्रकार उनको वहां रहते रहते तीन महीने बीत गये, चौथे महीने उस देशमें ब्राह्मणोंका एक भारी मेला हुआ, उस मेलेमें सब देशोंके अनेक लोग उपस्थित हुए और सब देशोंसे सहस्रों मल्ल लोगभी आये। वह समाज शिवके समाज तुल्य होगया। उसमें कालखञ्ज दैत्योंके समान महाशरीरवाले, बल और वीर्य्यसे भरे, सिंहके समान कन्धे और विशाल कमरवाले अनेक मल्ल आये। वे सब लोग राजासे पूजित होकर राजाके पास अखाड़ेमें बैठे। उनमें एक बड़ा बलवान मल्ल था, वह सबसे लड़नेको कहने लगा, उस गर्जते हुए मल्लसे लड़नेको कोई खड़ा न हुआ। जब अखाड़ेका कोई मल्ल उससे न लड़ सका, तब राजाने भीमसेनको बुलाया, परन्तु भीम दुःखसे लड़नेको उद्यत न हुए। फिर भीमने विचारा कि हम राजाकी आज्ञाको टालभी नहीं सकते हैं। तब पुरुषसिंह भीम मतवारे शार्दूलके समान अखाड़ेमें पहुंचे और राजाकी प्रशंसा करके काछा बाधके खड़े होगये। भीमको देख सब लोग प्रसन्न हुए। अनन्तर भीमने महा बलवान वृत्रासुरके समान शरीरवाले मल्लको पुकारा। भीम और जीमूत नामक महा उत्साही, महा पराक्रमी, महाबली साठ वर्षके मतवारे हाथियोंके समान युद्ध करने लगे। अनन्तर उन दोनों पुरुषसिंहोंने बाहु युद्ध करना आरम्भ किया। उन दोनों प्रसन्न महावीरोंका अपनी अपनी जयकी इच्छासे ऐसा युद्ध हुआ जैसे वज्र और पर्व्वतका होता है। वे दोनों महाबलवान वीर प्रसन्न होकर जयकी इच्छासे एक दूसरेके छिद्रको देखने लगे। दोनों प्रसन्न होकर महा मतवारे हाथियोंके समान युद्ध करने लगे। वे लोग एक दूसरेके कर्मके निवारण करने लगे। फिर विचित्र बाहुयुद्ध करने लगे, वह एक दूसरेको मारने लगा, कोई एकको उठाकर फेंकने लगा, एक दूसरेको मुक्के मारने लगा। एक दूसरेको घुमाकर फेंकने लगा। कोई दूसरेको वज्रके समान तमाचे मारने लगा, कोई शलाका और नखूनोंसे मारने लगा, कोई पत्थरके समान शस्त्रवाले जांघ और शिरसे युद्ध करने लगे। उस समाजमें यह घोर युद्ध विना शस्त्रके हुआ। दोनों वीरोंने अपने प्राणतक छोडनेकी इच्छा करी। तब सब लोग उस समाजमें होहो शब्द करने लगे, तब वे इन्द्र और बलिके समान वीर फिर युद्ध करने लगे। कभी वे सन्मुख हो जाते थे, कभी एक दूसरेको फेंक देता था, कभी एक दूसरेको खींचता था, कभी एक दूसरेको पैरसे मलता था, इस प्रकार उन्होंने बहुत देर तक युद्ध किया। विशालबाहु, युद्धनिपुन ऊंचे हृदय वाले दोनो वीर गर्जन लगे और मुद्गर तुल्य हाथोंसे एक दूसरेको मारने लगे। अनन्तर शत्रुनाशन भीमने गर्जकर उस गर्जते हुए मल्लको अपने हाथोंमें इस प्रकार उठा लिया, जैसे कोई शार्दूल हाथीको उठा लेता है। महाबाहु महाबलवान भीमने जब उस मल्लको हाथोंमें उठा लिया, तब सब योद्धा और राजा विराट आश्चर्य्य करने लगे। तब भीमने उस मल्लको सौवार घुमाया और चेतनारहित देखकर पृथ्वीमें पटककर पीस दिया। उस प्रसिद्ध जीमूत नामक मल्लके मरनेसे राजा विराट अपने बान्धवोंके सहित भीमसेनसे बहुत प्रसन्न हुए। अनन्तर कुवेर तुल्य महामनस्वी राजा विराटने प्रसन्न होकर भीमसेनको बहुत धन दिया। इस प्रकार भीमने अनेक महा बलवान मल्लोंको मारकर राजा विराटको बहुत प्रसन्न कर लिया। जब उनके समान वहां कोई

रूप न रहा तो राजा विराटने भीमको सिंह व्याघ्र और मतवारे हाथियोंसे लड़ाना आरम्भ किया। इसके पश्चात् राजा विराटने भीमसेनको अपने सङ्ग रनिवासमें ले जाकर महा मतवाले बली सिंहोंसे लड़ाया। अर्जुननेभी अपने नाचने और गानेसे राजा विराट और रनिवासको सब स्त्रियोंको अपने वशमें कर लिया। नकुलनेभी शीघ्र चलनेवाले घोड़ोंको उत्तम शिक्षा देकर राजा विराटको प्रसन्न किया। राजाने प्रसन्न होकर नकुलको बहुत धन दिया। पुरुषसिंह विराटने अपने बैलोंकी रक्षा देखकर सहदेवको बहुत धन दिया। द्रौपदी अपने महारथ पतियोंको इस क्लेशमें पड़े हुए देख प्रसन्न नहीं होती और सदा लम्बे श्वास लिया करती थी। पुरुषसिंह पाण्डव लोग राजा बिराटके कर्म्म करते हुए इस प्रकार छिपकर विराट नगरमें रहने लगे।

१२ अध्याय समाप्त।

विराट पर्व्वमें समय पालन पर्व्व समाप्त।

(अथ कीचकवधपर्व्व।)

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। इस प्रकार महारथ पाण्डवोंने छिपकर राजा बिराटके घरमें दस महीने बिता दिये। द्रौपदी सुदेष्णा राणीकी सेवा करती हुई दुःखसे दिन काटने लगी। द्रौपदीने अपनी सेवासे रनिवासकी सब स्त्रियोंको प्रसन्नकर लिया, वर्ष समाप्त होनेसे थोड़े दिन पहले राजा विराटके सेनापति महा बलवान कीचकने द्रुपदराजपुत्रीको देखा। देवताकी स्त्रियोंके समान उसे रूपवती देख कीचक कामसे आकुल होगया और उसके प्रसन्न करनेको यत्न करने लगा। कीचक कामरूपी अग्निसे जलता हुआ सुदेष्णाके पास जा हसकर कहने लगा, मैंने इस सुन्दरीको पहले कभी राजा विराटको रनिवासमें नहीं देखा था। इसने अपने रूपसे मुझे उन्मत्त कर दिया है, इस सुन्दरीके शरीरसे पद्मकी सुगन्धि आती है। हे सुन्दरी! तुम कहो कि यह मेरे हृदयमें निवास करनेवाली सुन्दरी कौन है? यह मेरे चित्तको मथकर अपने वशमें कर रही है, मुझे इस रोगकी कोई औषधी नहीं मिलती है, तुमको धन्य है कि जिसको ऐसी सुन्दरी महारूपवती दासी है। मेरी बुद्धिमें यह तुम्हारी दासी होनेके योग्य नहीं है,इससे यह मेरी और मेरे सर्व्वस्वकी स्वामिनी बने। मैं चाहता हूं कि, यह अनेक हाथी, घोड़े, धन, दास दासी, अन्न, पान और सोनेके मनोहर भूषणोंसे भरे हुए मेरे घरको शोभित करे? तब सुदेष्णाने कीचककी प्रार्थनाको स्वीकार कर लिया, अनन्तर कीचक द्रुपदराज पुत्रीके पास जाकर शान्ति पूर्व्वक इस प्रकारसे कहने लगा,जैसे कोई महा सिंहकी पुत्रीसे वनमें सियार कुछ कहै। हे सुन्दरी! हे कल्याणि! हे सुमुखि! तुम कौन और किसकी स्त्री हो? तथा विराट नगरमें कहांसे आई हो सो सब हमसे कहो? हे सुन्दरि! हे उत्तम भौंहवाली! तुम्हारा रूप कोमलता और तेज सब स्त्रियोंसे अधिक है। तुम्हारा शोभा-भरा मुख निर्म्मल चन्द्रमासे भी अधिक है, तुम्हारे विशाल नेत्रकमलको भी लज्जित करते हैं। हे सर्व्वाङ्ग-सुन्दरी! तुम्हारी बोली कोकिलेकी बोली समान है। मैंने तुम्हारे समान रूपवती स्त्री पृथ्वीमें कभी न देखी और न सुनी है। हे सुश्रोणि! हे अनिन्दिते! हे उत्तम नयनवाली हे सुमुखि! तुम क्या साक्षात् कमल-निवासिनी लक्ष्मी हो? अथवा भूति, लज्जा, कीर्त्ति, या शोभा हो? क्या तुम महारूपवती साक्षात् रति हो? हे उत्तम भौंहवाली! तुम्हारी शोभा साक्षात् चन्द्रमाके समान विराजमान है। तुम्हारे नेत्र बहुत उत्तम हैं। तुम्हारे हसते समय चांदनी भी लज्जित हो जाती है। दिव्य वस्त्रसे छिपे हुए, तेजसे भरे हुए,

तुम्हारे महासुन्दर चन्द्र-मुखको देखकर कौन काम-पीड़ित नहीं हो सकता? तुम्हारे हार आदि आभूषणोंके योग्य सुन्दर, ऊंचे अन्तर-रहित, कठोर, कमलकी कलीके समान सुन्दर स्तन मुझे कामके फाड़ेके समान पीड़ा देते हैं। हे उत्तम हंसनेवाली। हे उत्तम भौंहवाली। तुम्हारी त्रिवलीसे शोभित स्तनके बोझसे नीचा हुआ मुट्ठीमें आने योग्य मध्यका शरीर मुझे वेवश किये देता है। तुम्हारी नदीके तटके समान सुन्दर जङ्घाओंको देखकर मेरे शरीरमें असाधारण काम रोग उत्पन्न हुआ है। हे भामिनि! यह निर्दय कामदेव मेरे शरीरको अग्निके समान जला रहा है। इस कामदेवने सङ्कल्प किया है कि जबतक तुम्हारा सङ्ग न होगा, तबतक जलायेही जाऊंगा। हे सुन्दर रूपवाली! अपने मिलापरूपी वर्षाकाल और सम्भोगरूपी मेघसे इस जलती हुई काम अग्निको बुझाओ। हे चन्द्रमुखी। तुम्हारे सङ्गमकी इच्छासे मेरे चित्तको उन्मत्त करनेवाले कामके प्रचण्ड बाण दयारहित होकर मेरे हृदयको वेध रहे हैं। ये घोर कामदेवके बाण मेरे चित्तको पागलके समान बना रहे हैं, इनसे तुम मेरी रक्षा करो। हे सुनयनी। हे विलासिनी। तुम उत्तम माला और विचित्र भूषणोंको धारण करके हमारे सङ्ग अपनी इच्छाके अनुसार विहार करो। हे मन्दगामिनि। तुम सुख करनेके योग्य हो, और यहा सुख नहीं मिलता है। इस लिये यहा दुःख सहकर मत रहो और मेरे घरमें रहकर अनेक सुख भोगो। मेरे घरमें रहनेसे तुम्हें अमृतके समान मीठी अनेक प्रकारकी पीनेकी वस्तु मिलेंगी उन उत्तम वस्तुओंको पीकर तुम सुखपूर्व्वक विहार करना। हे महाभागे! हमारे सङ्गसे तुम्हें उत्तम सौभाग्य प्राप्त होगा, और अनेक प्रकारके भोग तथा पीनेकी वस्तु मिलेंगी। हे भामिनि। इस समय तुम्हारा यह सब रूप निरर्थक जा पड़ता है, क्योंकि बिना उत्तम मालाके तु अच्छी नहीं लगती हो। हे सुन्दरि। जै दुष्ट स्त्री शोभित नहीं होती, तैसेही तुम दीखती हो। मैं तुम्हारे लिये अपनी पुरा सब स्त्रियोंको छोड़ दूंगा अथवा वे सब तुम्हा दासी होकर रहेंगी। हे सुन्दर हसनेवाल हे पाप-रहिते! मै आजसे तुम्हारे दास समान होकर रहूंगा. और सदा तुम्ह वशमें रहूंगा।

द्रौपदी बोली, हे सूतपुत्र! तुम्हा कल्याण हो। मैं तुम्हारे योग्य नहीं ह क्योंकि मैं नीचवर्णमें उत्पन्न हुई हूं, त तुम मेरी इच्छा क्यों करते हो? तुम जान हो कि स्त्री अपने पतिओंको बहुत प्या होती है। और मै दूसरेकी स्त्री हूं, । इ लिये तुम्हारे योग्य नहीं हूं। तुम स्त्रीधर्मक विचार करो! तुमको उचित है कि दूस स्त्रियोंके ऊपर कभी मन न चलाओ, क्यों बुरे कर्म्मको छोड़नाही पुरुषोंका धर्म्म है जो पापी भूलसे कर्म्म करता है, वह म अयश और भयको प्राप्त होता है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, द्रौपदीके ऐ बचन सुन, दुष्ट कामहोहित कीचक परस्त्रि योंके पास जानेके अनेक प्राणनाशक लो निन्दित दोषोंको जानकर भी इन्द्रियों जीत न सका, और द्रौपदीसे कहने लग हे सुमुखि! हे उत्तम हंसनेवाली। मैं तुम्हा लिये कामसे अत्यन्त पीड़ित होगया हूं, इ लिये तुम मुझसे ऐसे वचन मत कहो, हे सुन्दरि। हे भीरु। मुझे यह निश्चय है कि तु मुझ प्यारे वचन कहनेवाले पुरुषको छोड़ कर अवश्य पछताओगी, हे उत्तम कमरवाली मै इस सब राज्यका स्वामी, बसानेवाला औ पृथ्वी भरमें एकही बलवान हूं। हम

ष्वीमें रूप, यौवन, सुन्दरता और उत्तम भोगोंमें मेरे समान दूसरा कोई पुरुष नहीं है। हे कल्याणि। उपमा रहित, भोगने योग्य उत्तम भोगोंको तुम क्यों नहीं भोगना चाहती हो? हे सुसुखि। तुम इस समस्त राज्यकी स्वामिनी हो, अब मुझसे दिये हुए राज और भोगोंको भोगो, मेरी सेवा करो।

पतिव्रता द्रौपदी कीचकके ऐसे बुरे बचन सुनकर उसकी निन्दा करती हुई कहने लगी।

द्रौपदी बोली, हे सूतपुत्र। तू भूलमें मत पड़े, अपने प्राणको नाश मत करे। मेरे पति बड़े बलवान पांच गन्धर्व्व हैं, वे सदा मेरी रक्षा करते हैं, इस लिये मैं तुमको प्राप्त नहीं हो सकती हूं, वे क्रोध करके तुझे मार डालेंगे। इससे साधु बन कर रह, अधर्म्म मत कर। तू उस मार्गको चलना चाहता है, जिसपर मनुष्य नहीं चल सकते। तेरी वैसी दशा है, जैसे नदीके एक तटपर बैठा हुआ मूर्ख बालक तैरकर दूसरे तटपर जानेकी इच्छा करता है। तू चाहे पृथ्वीके भीतर या आकाशमें, या समुद्रके पारही भाग जायगा तौभी आकाशगामी महाबली मेरे पति देवपुत्र तुझे जीता नहीं छोड़ेंगे। रे कीचक! तू मुझे कालरात्रिके समान मत चाहे। क्या तैंने मुझको वैसाही सुलभ समझा है, जैसे माकी गोदमें सोया हुआ लड़का आकाशके चन्द्रमाको सुलभ समझता है? मैं गन्धर्वोंकी प्यारी स्त्री हूं, वे तुझको आकाश और पातालमें भी जीता नहीं छोड़ेंगे। मुझे जान पड़ता है कि यह तेरी वरीदृष्टि तेरा नाश कर देगी।

१३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजा जनमेजय। द्रौपदीके ऐसे बचन सुन मर्य्यादा-रहित और काम पीड़ित कीचक सुदेष्णाके पास जाकर कहने लगा, हे कैकेयी। जिस प्रकारसे सैरिन्ध्री मेरे वशमें हो तुम वैसाही यत्न करो। हे सुदेष्णे। यदि वह गजगामिनी सैरिन्ध्री मेरे वशमें न होगी तो मैं अपने प्राणोंको छोड़ दूगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महामनस्विनी विराटकी रानीने बहुत रोते हुए कीचकके बचन सुनकर उसके ऊपर कृपा करी। रानी अपने मनमें निश्चय करके द्रौपदी और सूतपुत्रके मिलानेका यत्न विचारने लगी। सुदेष्णा कीचकसे बोली, तुम किसी पर्व्वमें मद्य और अन्न बनाकर अपने घरमें रखना मैं सैरिन्ध्रीको मद्य लेने तुम्हारे घरमें भेजूगी, तब तुम बाधा-रहित एकान्त स्थानमें इसको ले जाना, वहां इसे शान्त करके अपनी इच्छानुसार विहार करना।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अपनी बहिनके बचन सुन कीचक वहांसे चला गया, और अपने घरमें राजोंके योग्य उत्तम मद्य तथा अनेक प्रकारके उत्तम भोजन बनवाये। उन सब भोजनोंको उसने उत्तम रसोइयोंसे बनवाया। भोजन बनानेके पश्चात सुदेष्णाको बुला भेजा। तब सुदेष्णाने द्रौपदीसे कहा, हे सैरिन्ध्री! तुम उठकर कीचकके घरमें जाओ मुझे बहुत प्यास लगी है, उसके घरसे पानी ले आओ।

द्रौपदी बोली, हे रानी! तुम स्वयं जानती हो कि वह कैसा निलर्ज्ज पुरुष है? इस लिये मै उसके घरमें नहीं जाऊंगी। हे सुन्दरि! मैं तुम्हारे यहां रहकर अपने पतियोंके विरुद्ध व्यभिचार नहीं करूंगी। मैं कभी कामक्रीड़ा नहीं करूंगी। हे देवि। तुमको स्मरण होगा कि मैंने तुम्हारे यहां आनेके समय क्या प्रतिज्ञा कर ली थी? हे सुन्दरि। मूर्ख कीचक कामके वशमें होगया है, वह मुझे देखकर अधर्म्म करेगा। हे देवि! औरभी अनेक दासी तुम्हारे यहां हैं, तुम दूसरी किसीको भेज दो।

सुदेष्णा बोली, हे सैरिन्ध्रि! मैं तुमको

वहां भेजती हूं, वह तुमको मार नहीं डालेगा, सुदेष्णाने यह कहकर ढक-नेके सहित सोनेका पात्र द्रौपदीके हाथमें दिया। तब द्रौपदी शङ्का करती और रोती हुई प्रारब्धको स्मरण करने लगी, और मद्यका पात्र लेकर कीचकके घरको चली। मार्गमें द्रौपदी बोली, मैंने अपने पतियोंके सिवा आज-तक दूसरे पुरुषके दर्शन नहीं किये; वही सत्य मेरी रक्षा करे, जिससे कीचक मेरे संग कुछ अत्याचार न करने पावे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उस समय द्रौप-दीने थोड़े समय तक सूर्य्यका ध्यान किया। तब सूर्य्यने सुन्दरी द्रौपदीकी सब अभिलाषाको जान लिया, और एक गुप्त राक्षसको उसकी रक्षाके लिये भेज दिया। उस राक्षसने निन्दा-रहित द्रौपदीकी रक्षा करी। डरी हुई हरिनके समान द्रौपदीको अपने पास आते हुए देख कीचक प्रसन्न होकर इस प्रकार उठा, जैसे कोई बटोही नावको देखकर उठता है।

१४ अध्याय समाप्त।

कीचक बोला, हे सुन्दरि! मैं तुम्हारा स्वागत करता हूं, यह रात्रि मेरी सुखसे बीती। अब तुम मेरे स्थानकी स्वामिनी होकर आई हो। हमारे प्रिय कामोंको सिद्ध करो। तुम्हारे लिये मैंने अनेक सोनेकी माला, शङ्ख, कुण्डल, अनेक नगरोंके बने हुए सुवर्णके आभू-षण, और उत्तम उत्तम रेशमके वस्त्र और उत्तम शय्या ठीक करी है। तुम यहां आओ। और मेरे सहित मद्धुवीका मद्य पीओ।

द्रौपदी बोली, मुझसे सुदेष्णा रानीने कहा था कि मुझे बहुत प्यास लगी है, तुम कीच-कके घरसे जल ले आओ, सो तुम मुझे जल दो।

कीचक बोला, हे भद्रे! रानीके काम करनेके लिये औरभी अनेक दासी हैं, ऐसा कहके कीचकने द्रौपदीका दहिना हाथ पकड़ लिया।

द्रौपदी बोली, हे दुष्ट! मैंने मद्य दुःख-मेंभी अपने पतियोंके विरुद्ध आचरण नहीं किया और कभी व्यभिचारभी नहीं किया उसी सत्यसे मैं तुझे पृथ्वीमें खिचता हुआ देखूंगी।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उसीसमय राजपु[illegible] विशाल नयनी द्रौपदीके वस्त्रको पापी कीचक पकड़ लिया। द्रौपदी उसकी निन्दा कर[illegible] लगी और वस्त्रको छुड़ाने लगी। जब राजपु[illegible] द्रौपदीको कीचकने बलसे पकड़ा तब द्रौपदी[illegible] लम्बा सांस लेकर वस्त्र छुड़ा लिया। [illegible] झटकेसे पापी कीचक इस प्रकार पृथ्वीमें गि[illegible] जैसे जड़ कट जानेसे वृक्ष गिर जाता [illegible] कीचकको गिराकर द्रौपदी कांपती [illegible] सभाकी शरण गई। उस समय [illegible] युधिष्ठिरभी वहीं बैठे थे। कीचकने आ[illegible] हुई द्रौपदीके बाल पकड़ लिये, [illegible] पृथ्वीमें गिराके राजाके आगे लातसे मा[illegible] हे भारत! सूर्य्यने जो द्रौपदीकी रक्षाके [illegible] राक्षस भेजा था, उसने बड़े वेगसे कीच[illegible] उठाकर दूर फेंक दिया। राक्षसके [illegible] पीड़ित होकर कीचक इस प्रकार पृथ्वीमें [illegible] जैसे जड़ कटनेसे वृक्ष। महाराज युधिष्ठिर [illegible] भीमसेनने कीचकको और द्रौपदीके [illegible] देखा। भीमने दुष्ट कीचकके मा[illegible] इच्छा करी। बलवान भीमसेन क्रोधसे [illegible] दांत पीसने लगे। भीमके नेत्र अग्निके [illegible] लाल होगये। पलकें बार बार [illegible] और बन्द होने लगीं। भौंह और [illegible] माथेपर पसीना आगया। शत्रुनाशन [illegible] क्रोधसे माथेको मलने लगे, फिर क्रोधसे [illegible] कीचकको मारनेको उद्यत हुए। इसी [illegible] महाराज युधिष्ठिरने प्रत्यक्ष होनेके भय[illegible] अपने पैरके अंगूठेको हाथके अंगूठेसे दबा[illegible]

महाराजके इस चिह्नको देख मतवारे हाथीके समान बलवान् वृक्ष उखाड़नेकी इच्छावाले भीमसेन शान्त हुए। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे रसोइया बल्लव! सूखे काठकी इच्छासे इस वृक्षको क्यों देखते हो? यदि तुम्हें लकड़ियोंकी आवश्यकता होय तो बाहरसे वृक्ष काट लाओ। द्रौपदी सभाके द्वारपर आकर रोने और अपने दुःखी पतियोंको देखने लगी। अपने धर्मकी रक्षा करती हुई द्रौपदीने घोर नेत्रसे सभाको इस प्रकार देखा मानो सबको भस्म कर देगी।

द्रौपदी बोली, जिनका बैरी कभी पाच देशोंको छोड़कर भागनेपर भी सुखसे नहीं सो सकता है, मैं उन्हींकी प्यारी स्त्री हूं, उस मुझको सूत-पुत्रने लातसे मारा। जो सदा दान करते हैं, और कभी मागते नहीं, मैं उन्हींकी स्त्री हूं, उसी मुझको सूतपुत्रने लातसे मारा। जिनके नगारे और धनुषके शब्द सदा सुनाई देते हैं, मैं उन्हींकी स्त्री हूं, उसी मुझको सूत-पुत्रने लातसे मारा। जो महातेजस्वी, बलवान, अभिमानी और महात्मा है, मैं उन्हींकी प्यारी स्त्री हूं, उसी मुझको सूतपुत्रने लातसे मारा। जो मर्त्यलोकका नाश कर सकते हैं, वे मेरे पति इस समय धर्म्मपाशमें बन्धे है, इसी लिये सूत-पुत्रने मुझे लातसे मारा, जो सब दीनोंको शरण देनेमें समर्थ है, वे महारथ आज कहा चुप-होकर बैठे हैं? किस प्रकार वेलोग अपनी प्यारी पतिव्रता स्त्रीको सूतपुत्रके हाथसे पिटती देख रहे है? वे महा बलवान महा-तेजस्वी नपूसकोंके समान क्यो क्षमा कर रहे है। उनका तेज, बल और पराक्रम कहा गया? वे लोग अपनी स्त्रीको दुष्टके हाथसे पिटती क्यो देख रहे हैं? जहा विराट ऐसा अधर्मी राजा वर्त्तमान है, तहा मैं क्या कर सकती हूं। यह राजा स्वय देखता है, तौभी कुछ नहीं कह सकता। राजा कीचकके मङ्ग राजाके समान कुछ व्यवहार नहीं करता, यह चोरोंके ऐसा अधर्म्म करनेवाला राजा सभामें शोभित नहीं होता। हे मत्स्यराज! मैं तुम्हारे घरमें रहकर इस दुष्टसे मार खानेके योग्य नहीं हूं। सब सभासद लोग कीचककी दुष्टताको देख रहे हैं, राजा विराट और कीचक कुछ धर्म्मको नहीं जानते। तथा जो सभासद राजाकी सेवा करते है, वे भी धर्म्मात्मा नहीं है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, रोती हुई द्रौपदी इस प्रकारके अनेक वचन कहकर राजा विराटकी निन्दा करने लगी,—

राजा विराट बोले, कीचककी और तेरी लड़ाई, हमारे आगे नहीं हुई। हम विना सब जाने कोई न्याय नहीं कर सकते।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, सभासद लोग सब अभिप्रायको जानकर द्रौपदीको प्रशंसा और कीचककी बहुत निन्दा करने लगे।

सभासद बोले, कि यह विशालनयनी सर्व्वाङ्ग सुन्दरी जिसकी स्त्री है, उसको सब सुख है, उसे कभी शोक नहीं हो सकता, क्योंकि ऐसी उत्तम स्त्री मनुष्योंको दुर्लभ है। हम इसको परम देवी मानते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इस प्रकार द्रौपदीकी ओर देखकर सभासद लोग उसकी प्रशंशा करने लगे। उसी समय क्रोधसे महाराज युधिष्ठिरके मुखपर पसीना आगया। महाराज अपनी प्यारी पटरानी द्रुपदराजपुत्रीसे बोले, हे सैरिन्ध्री! तुम भी सुदेष्णा रानीके घरमे चली जाओ, यहा खडी होनेका कुछ प्रयोजन नहो है। वीरोंकी स्त्री अपने पतियोंके सुखके लिये अनेक दुःख सहती है। पतियोंकी सेवा करनेसे स्त्रियोंको पति लोक मिलता है। मुझे जान पड़ता है कि तुम्हारे पति इस समयका क्रोध करनेका नहीं समझते, इसी लिये सूर्य्यके समान गन्धर्व्व लोग तुम्हारो रक्षा नहो करते। हमें जान पड़ता है कि

तुम्हें अपने समयका कुछ ध्यान नहीं है इसी लिये नटनीके समान लज्जारहित होकर सभामें रोरही हो। तुम्हारे यहां रहनेसे राजा विराटके जुवेमें विघ्न होता है। हे सैरिन्ध्री। स यहांसे चली जाओ, तुम्हारे पति तुम्हारा हित साधन करेंगे। जिसने तुमको दुःख दिया है उसको मारेंगे।

द्रौपदी बोली, मे अपने दयावान पतियोंके लिये धर्मके अनुसार अनेक दुःख सह रही हूं। मेरे पतियोंमें जो बड़े हैं, वे जुवेके जाननेवाले हैं, मुझे आशा है कि वही सब शत्रुओंका नाश करेंगे। विशालनयनी उत्तम कमरवाली द्रौपदी ऐसा कहके और अपने बालोंको खोलकर रोती हुई सुदेष्णा रानीके घरको चली गई। रोती हुई द्रौपदीका मुख ऐसा शोभित हुआ, जैसे आकाशमें मेघसे निकला हुआ चन्द्रमा।

सुदेष्णा बोली, हे सुन्दरी हे सुमुखि। हे कल्याणि। तुमको किसने मारा? तुम क्यों रो रही हो? आज किसका, सुख नाश होनेका समय आगया?

द्रौपदी बोली, तुमने मुझे जल लेनेको कीचकके घर भेजा था, वहां उसने मुझको मारा और राजाके आगेभी मुझको इस प्रकार मारा, जैसे कोई निर्जन बनमें किसीको मारता है।

सुदेष्णा बोली, जिस दुष्ट कीचकने कामके वशमें होकर तुम्हारा निरादर किया है, तुम कहो तो मैं उसे अभी मरवा दूं?

द्रौपदी बोली, कीचक जिनका दोष करता है, वे उसे आपही मार डालेंगे। मुझे निश्चय है कि वह शीघ्रही यमलोकको जायगा।

१५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! जब यशस्विनी राजपत्नी द्रौपदीको सेनापति सूतपुत्रने मारा, उसी समयसे वह उसके नाश होनेकी इच्छा करने लगी। अनन्तर द्रुपदराजपुत्रीने वस्त्रसे अपने सब शरीरोंको पोंछा और शुद्ध जलसे स्नान किया। फिर उत्तम कमरवाली द्रौपदी उचित रीतिसे पवित्र होकर अपने घरमें जाकर एक स्थानमें बैठी, और रोती हुई अपने दुःखका विचार करने लगी द्रौपदी शोचने लगी कि मैं इस समय कहां जाऊं? कौनसा कार्य्य करूं जिससे मेरा दुःख दूर हो? ऐसा विचार द्रौपदीने अपने मनमें निश्चय किया कि इस समय भीमसेनको छोड़कर और मेरा दुःख कोई दूर नहीं कर सकता। ऐसा विचार आधी रातके समय विशालनयनी सुन्दरी पतिव्रता, नाथवती द्रौपदी अपने पलङ्गसे उठी और नाथकी इच्छा करके भीमसेनके घरमें गई। उस समय मनस्विनी द्रौपदीके मनमें बहुत दुःख था। द्रौपदी विचारने लगी कि मेरे शत्रु पापी कीचकके जीते हुए और उसका दुराचार देखकरभी देखूं भीमसेन कैसे सो रहे हैं?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, द्रौपदी ऐसा विचारती हुई भीमसेनके सोनेके घरमें गई। जहां सिंहके समान श्वांस लेते हुए भीमसेन सो रहे थे, वह स्थान भीमके और द्रौपदीके तेजसे अधिक प्रकाशमान होगया। जैसे बनमें उत्पन्न हुई बगुली कामसे व्याकुल होकर बगुलेके पास जाती है, अथवा जैसे तीन वर्षकी गौ कामसे उन्मत्त होकर साड़के पास जाती है, तैसेही द्रौपदीभी अपने प्यारे पति भीमसेनके पास गई। जैसे गोमतीके तटपर उत्पन्न हुए फूलयुक्त महाशाल वृक्षसे लता लपट जाती है, तैसेही द्रौपदीभी भीमसेनसे लपट गई। सुन्दरी द्रौपदीने भीमको अपने दोनो हाथोंमें भरकर हृदयसे लगा लिया, फिर इस प्रकार जगाने लगी, जैसे सूना बनमें सोते हुए सिंहको सिंहिनी जगाती है। द्रौपदी भीमसेनके कुरकर

ऐसी लपट गई जैसे हथिनी हाथियोंके राजसे। लपटती है। अनन्तर मीठे स्वरवाली निन्द्रा-रहित द्रौपदी अपने स्वरसे गान्धारराजको लज्जित करती हुई भीमसेनको जगाने लगी।

द्रौपदी बोली, हे भीम! उठो उठो! मरे हुएके समान क्यों सो रहे हो? क्योंकि जीते हुए पतियोंकी स्त्रियोका निरादर करके कोई जीवित नहीं रहता। जब राजपुत्रीने जगाया। तब महामेघके तुल्य भीम अपने गद्दीयुक्त पलङ्ग पर उठकर बैठे। कुरुनन्दन भीमने अपनी प्यारी स्त्री राजपुत्री द्रौपदीको देखकर कहा, तुम इस समय घबड़ाई हुई मेरे घरमें क्यों आई हो? तुम्हारा रङ्ग पहलेके ऐसा नहीं है। तुम बहुत दुर्ब्बल और पीली क्यों हो गई हो? तुम सब समाचार हमसे कह सुनाओ। सुख, दुःख, अच्छा या बुरा जो कुछ होगा मैं सुनकर वैसाही उपाय करूंगा। हे द्रौपदी! तुम्हें मेरा सब कामोंमें विश्वास है, मैं तुम्हें बार बार आपत्तियोंसे छुड़ाता हूं। मुझसे सब कहकर यहांसे शीघ्र अपने सोनेके घरमें चली जाओ, जिसमें कोई पहचान न सके।

१६ अध्याय समाप्त।

द्रौपदी बोली, जिस स्त्रीके पति युधिष्ठिर है? वह सोचरहित होकर कैसे रह सकती है, तुम सब दुःखोंको जानकर भी मुझसे क्यों अजानेके समान पूछते हो? हे भारत! प्रातकामी सूत जो मुझे दासी कहकर सभामें ले आया था, वही दुःख मेरे हृदयको जला रहा है। ऐसी कौनसी राजपुत्री होगी जो मेरे समान दुःख सहकर भी जीती रहेगी? हे नाथ! द्रौपदीके सिवा ऐसा दुःख कौन राजपुत्री सह सकती है? वनमें दुष्ट जयद्रथने मेरा निरादर किया, मेरे सिवा इस दूसरे दुःखको कौन राजपुत्री सह सकती है? धूर्त्त राजा विराटके देखते हुए नीचे कीचकने मुझे कैसा दुःख दिया, इस तीसरे दुःखको मेरे सिवा और कौनसी राजपुत्री सह सकती है? हे भरत-कुलश्रेष्ठ कुन्तिनन्दन! इनको आदि लेकर और भी मैंने अनेक दुःख सहे, अब मेरे जीनेसे क्या फल होगा? हे भारत! हे पुरुषव्याघ्र! यह जो दुर्बुद्धि कीचक नामक राजा विराटका साला और सेनापति है, सो मुझे राजाके घरमें सैरिन्ध्रिके वेषमें रहते हुए देख सदा कहा करता है कि तू मेरी स्त्री बन जा। यह दुष्ट मारनेके योग्य है, अब मेरा हृदय उसकी बात सुनते सुनते इस प्रकार फटने लगा है, जैसे समय आनेपर पका हुआ फल फटने लगता है। हे शत्रुनाशन! तुम अपने बड़े भाईको निन्दा करो, जो सदा जुवेहीको अपना कर्म्म समझते हैं, उन्हींके कर्म्मसे मैं इस अपार दुःखमें पड़ी हूं। जगतमें ऐसा कौन पुरुष होगा, जो अपने सुख और राज्यको छोड़कर जुवेमें बनबासको प्रतिज्ञा करे? यदि महाराज प्रति दिन अपने उस दिव्य धनसे दोनों समय हजार हजार निष्कसे जूवा खेलते तो भी सहस्रोंवर्ष तक कोष खाली न होता। और सोना, वस्त्र, वाहन, बकरी भेड़ घोड़े और खच्चर भी बने रहते। महाराजने उस सब लक्ष्मीको जुवेमें हार दिया। अब वेही महाराज अपने कर्म्मोंको विचारते हुए मूर्खके समान चुप बैठे हैं। जिन महाराजके पीछे दस सहस्र हाथी और सोनेके रूपमा पहने हुए घोड़े चलते थे, सो आज जुवा खिलाकर जीते हैं। जिन महाराजके सङ्ग एक लाख रथ चलते थे, जिनकी महापराक्रमी सहस्रों राजा सेवा करते थे, जिन युधिष्ठिरके चौकेमें एक लाख दासी रात दिन सोनेके पात्र लिये अतिथियोंको भोजन कराया करती थी, जो दानियोंमें श्रेष्ठ युधिष्ठिर सहस्रों निष्क दान करते थे, सो जुवेके महा अनर्थसे पड़ कर दुःख सह रहे हैं।

जिनकी प्रातःकाल और सन्ध्याके समय स्वर जाननेवाले, मणिजटित सोनेके कुण्डल धारण करनेवाले, सूत, मागध और बन्दी लोग स्तुति करते थे, जिनकी सभामें सहस्रों तपस्वी और वेद जाननेवाले ब्राह्मण बैठते थे, जो उन सबको इच्छानुसार दान देते थे, जिनके घरमें नित्यही अट्टासी सहस्र वेदपाठी ब्राह्मण भोजन करते थे, जिन महाराजके घरमें दस सहस्र ऊर्द्धरेता (ब्रह्मचारी) नित्य भोजन पाते थे, सो महाराज युधिष्ठिर आज इस आपत्तिमें पड़े हैं। इनके यहां जो यति भोजन पाते थे, सो दूसरे राजासे कुछ मांगनेकी इच्छा नहीं करते थे। जिनमें कोमलता, दया और न्याय पूर्ण रूपसे निवास करते हैं, वेही महाराज युधिष्ठिर आज इस दुर्दशामें पड़े हैं। जो अन्धे, बूढ़े, और अनाथ बालकोंको सदा पालते थे, जो बुद्धिमान सत्य-पराक्रमी महाराज युधिष्ठिर अपने चित्तको कभी अन्यायमें नहीं जाने देते हैं, वेही आज इस दुर्दशामें पड़े हैं। जिनके इन्द्रप्रस्थमें रहनेके समय अनेक राजा सभासद थे, वेही महाराज आज राजा विराटके सभासद बने हैं। उन्हींको राजा विराट कङ्क कहकर पुकारता है। जिनके द्वारपर आकर अनेक राजा लोग जीविका मांगनेको खड़े रहते थे, वेही महाराज आजा राजा विराटसे जीविका मांगते हैं। जिन महाराजके वशमें सब राजा लोग रहते थे, वेही आज विवश होकर राजा विराटके वशमें हुए हैं। जिनने अपने सूर्य्यके समान तेजसे समस्त पृथ्वीको तपा दिया था, वेही आज विराटके सभासद बने हैं। हे पाण्डव! जिसको सभामें बैठकर राजा और ऋषि लोग सेवा करते थे, वेही युधिष्ठिर आज विराटकी सेवा करते हैं। महाराज युधिष्ठिरको राजा विराटकी प्यारी बात कहते हुए देखकर मुझे महा क्रोध होता है। धर्म्मात्मा युधिष्ठिरको अन्य राजाके वशमें देखकर किसको दुःख नहीं होगा? हे भारत। जिसकी सभामें बैठतेही पृथ्वीके समस्त राजा आते थे, वेही आज विराटकी सेवा कर रहे हैं। हे भारत। इन सब दुःखोंसे पीड़ित होकर मैं शोक सागरमें डूबी जाती हूं। क्या तुम मेरी इस दशाको नहीं देखते हो?

१७ अध्याय समाप्त।

द्रौपदी बोली, हे भारत! मैं जो तुमसे अपना दुःख कहती हूं, सो कुछ साधारण नहीं है। तुम मेरा निरादर मत करना, मै दुःखसे पीड़ित होकर यह सब वृत्तान्त तुमसे कह रही हूं। हे भरतकुलसिंह! तुम जो रसोइयाका काम करते हो, यह क्या तुम्हारे योग्य है? तुमको इस दीनदशामें पडे हुए देख किसको दुःख नहीं होगा? जब तुम अपनी बल्लव जाति बताते हो, तब मुझको महा शोक होता है। जब तुम सरीखे राजाके यहां रसोइया होकर रहे, तब इससे अधिक मुझे क्या दुःख होगा? जब साधारण लोग तुम्हें राजा विराटका दास और रसोइया कहते है, तब इससे ज्यादे मुझे और क्या दुःख होगा? भोजन सिद्ध होनेपर जब तुम विराटके समोप बैठते हो, तब मेरा मन बड़ा छोटा होजाता है। जब राजा प्रसन्न होकर तुम्हारे सङ्ग हाथियोंको लड़ाते हैं, तब रनिवासकी स्त्री तुम्हें देखकर हंसती हैं, उस समय मेरा मन बड़ा छोटा होजाता है। जिस समय तुम भैंसे शार्दूल और सिंहोंसे लड़ते हो तब सुदेष्णा रानीको हंसते देख मेरा चित्त घवड़ा उठता है, मुझे दुःखित देखकर रानी अपनी दासियोंसे कहती है और दासी रानीसे कहती हैं कि, जब यह रसोइया किसीसे युद्ध करता है, तब न जाने सुन्दरी सैरिन्ध्रीको दुःख क्यों होने लगता है? जान पड़ता है कि एक

स्थानमें रहनेसे सैरिन्ध्री और बल्लवसे कुछ प्रेम होगया है, इसीसे सुन्दरी सैरिन्ध्री महा बलवान बल्लवको लड़ते देख दुःख पाती है। सैरिन्ध्री महा बलवान बल्लवको लड़ते देख दुःख पाती है सैरिन्ध्री बहुत सुन्दरी है, और यह रसोइयाभी वैसाही सुन्दर है, स्त्रियोंके चित्तकी बातको कोई नहीं जान सकता। ये दोनों समान रूपवाले है, इससे इनमें अवश्य कुछ प्रेम है। इस राजभवनमें ये दोनों एकही दिन आये हैं, इससेभी इनमें कुछ प्रेम जान पड़ता है। ऐसेही रानी सदा मुझे डाटा करती है; मुझे क्रोध आनेसे उसे औरभी अधिक शङ्का होती है। उसके ऐसे बचन सुनकर मुझे महा दुःख होता है। महापराक्रमी तम्हें और महाराज युधिष्ठिरको इस दुःखमें पड़ा देख मैं शोकसे अत्यन्त व्याकुल होगई हूं। इस लिये मुझे अब जीनेकी इच्छा नहीं है।

अकेले रथपर बैठकर समस्त मनुष्य और देवतोंको जिसने जीता था, वही अर्ज्जुन आज राजा विराटकी कन्याको नचाते हैं। जिस महा पराक्रमीने खाण्डव बनमें अग्निको सन्तुष्ट किया था, वही आज रनिवासमें रहकर कन्याको नचाते है। अर्ज्जुन इस प्रकार छिपकर रहते है, जैसे कूएमें अग्नि। जिस पुरुषसिंहसे सदा शत्रु कांपते रहते थे, वेही अर्ज्जुन आज महानिन्दित वेष धारण करके रनिवासमें रहते हैं। जिसके मुद्गरके समान हाथ धनुषके खींचनेसे महा कठोर होगये थे, आज वेही उनही हाथोंमें शङ्खकी चूड़ी पहनकर दिन काटते है। जिसकी धनुषकी घोर टङ्कारको सुनकर शत्रुओंका हृदय कांप उठता था, आज उन्हींके मीठे गीत सुनकर स्त्रियां प्रसन्न होती हैं। जिसके शिरपर सूर्य्यके समान प्रकाशमान मुकुट विराजता था, आज वही अर्ज्जुन स्त्रियोंके समान बालोंको गूंथकर रनिवासमें रहते है। हे भीम! उस महा पराक्रमी अर्ज्जुनको वेनी धारण किये हुए देख मेरा मन कांप उठता है। जो महात्मा समस्त दिव्य शस्त्रोंको जानते है, जो सब विद्याओंके आधार है, उन्ही अर्ज्जुनने आज स्त्रियोंके कुण्डल पहने है। जो अपने तेज, बल और विद्यासे समुद्रके समान अगाध है, युद्धमें जिनके समीप सहस्रों राजाभी नहीं आसकते वही अर्ज्जुन आज अपने रूपको छिपाकर राजा विराटकी कन्याको नचाते है। हे भीम! जिस महा धनुषधारीके रथका शब्द सुनकर पर्व्वत, वन, स्थावर और जङ्गमोंके सहित समस्त पृथ्वी कांप उठती थी, जिसके उत्पन्न होनेसे कुन्तीका शोक नष्ट होगया था, उन्ही अर्ज्जुनकी दुर्दशा देखकर मुझे शोक बढ़ता है। मैं अर्ज्जुनको स्त्रियोंके कुण्डलादि भूषण और शङ्खकी चूड़ी पहने हुए देख बहुत दुःखी होती हूं। जिसके समान इस पृथ्वीमें कोई बलवान और धनुषधारी नहीं है, वेही अर्ज्जुन आज राजा विराटकी कन्याको नचाते है। धर्म्म, पवित्रता और सत्यसे भरे हुए अर्ज्जुनको इस लोकमें स्त्री वेषसे छिपे हुए देखकर मेरा मन बहुत दुःखी होता है। जब मैं देवरूपी अर्ज्जुनको कन्याओंके बीचमें मतवारे हाथीके समान घूमते हुए देखती हूं, तब मेरा मन अत्यन्त व्याकुल होजाता है।

हे भारत! छोटे पाण्डव सहदेवको ग्वालका वेष बनाये हुए आते देखकर मेरा शरीर पीला होजाता है। हे भीमसेन! सहदेवके चरित्रोंको स्मरणकरके मुझे निद्रा नहीं आती है, और सुखकीतो कथाही क्या है? हे महाबाहो! सत्य पराक्रमी सहदेवके इस घोर दुःखको देखकर मुझे सुख प्राप्त नहीं होता। हे भरतकुल श्रेष्ठ! तुम्हारे भाई सहदेवको मतवारे बैलके समान गौवोंसे घूमते हुए देख और राजा विराटको आज्ञानुसार चलते देखकर मेरा हृदय कांपने लगता है। जब वे सब ग्वालोंके अगाड़ी आकर राजा

विराटकी प्रशंसा करते हैं, तब मुझे ज्वर चढ़ आता है। हमारी सासू कुन्ती सदाही सहदेवकी प्रशंसा किया करती हैं और इस प्रकार कहा करती हैं कि मेरे सब पुत्रोंमें सहदेव बड़ा वीर, शीलवान, पराक्रमी, उत्तम चरित्रयुक्त, लज्जावान, प्रियवादी और मेरा प्यारा है। उन्होंने हमसे चलते समय कहा था कि मेरा पुत्र सहदेव सुकुमार, वीर, धर्म्मराजका भक्त और धर्म्मात्मा है; तुम सदा वनमें इसकी रक्षा करना, हे द्रौपदी! तुम सहदेवको अपने हाथसे परसकर भोजन करना, ऐसा कहकर कुन्ती बनको चलते समय सहदेवको अपने हृदयसे लगाकर बहुत रोई थीं। हे पाण्डव! उन महा योद्धा सहदेवको गौवोंके बीचमें रहते और रातको बैलोंके चमड़ेपर सोते हुए देख अब मुझे जीनेकी इच्छा नहीं रही।

जो नकुल शस्त्रविद्या, रूप और बुद्धिसे भरे हैं, वेही आज राजा विराटके अश्वरक्षक बने हैं। देखो समयकी गति कैसी कठोर है कि वेही नकुल आज विराटके आगे खड़े होकर लगाम हाथमें लिये घोड़ोंको शिक्षा देते हैं। जिसके भयसे शत्रुओंके समूह कांपते थे, वेही महातेजस्वी श्रीमान् नकुल आज राजा विराटको घोड़े दिखला रहे हैं। हे शत्रुनाशन कुन्तीनन्दन! इन सब दुःखोंको मैं सह रही हूं, क्या तुम मुझको अभी जीती समझते हो? ये सहस्रों दुःख केवल युधिष्ठिरके कारण हमारे ऊपर पड़े हैं। इन दुःखोंको छोड़ कर और भी अनेक दुःख मैं सह रही हूं सुनो,—मुझे इससे अधिक और दुःख क्या होगा कि, जो तुम लोगोंके जीवित रहते मेरे शरीर अनेक दुःखोंसे सूखे जाते हैं।

१८ अध्याय समाप्त।

द्रौपदी बोली, महाराज युधिष्ठिरके कारणसे मुझेभी दासीका वेष बनाकर और राजाके घरमें रहकर सुदेष्णा रानीकी सेवा करनी पड़ी। हे वीर! मैं राजपुत्री होकर ऐसे ऐसे कर्म्म करती हूं, इससे अधिक और आपत्ति क्या होगी? मैंने विचारा है कि सब दुःख नाश हो जाते हैं, पुरुषोंकी हार जीत, सिद्धि और असिद्धि सब अनित्य हैं, यही विचारकर मैं अपने पतियोंकी उन्नतिका समय देख रही हूं। मुझे यह निश्चय है कि सुख और दुःख चाकके समान घूमते हैं, इसीसे मैं अपने पतियोंकी उन्नतिका समय देख रही हूं। मुझे यह निश्चय है कि जिन कारणोंसे मनुष्यको विजय होता है वेही कारण किसी समय मनुष्यके हानिकारक भी हो जाते हैं। हे भीमसेन! मैं मरे हुएके तुल्य हो गई हूं, क्या तुम मेरी दशाको नहीं देखते हो। मैंने बुद्धिमानोंसे सुना है कि जो पुरुष पहले समयमें महादानी होता है, वही दूसरे समयमें भिक्षा मांगने लगता है। जो एक समय अपने बलसे शत्रुओंको मारता है, वही दूसरे समयमें निर्बल होकर शत्रुओंके हाथसे मारा जाता है। ऐसेही जो एक समयमें शत्रुओंको गिराता है, वही दूसरे समयमें दुर्बल होकर शत्रुओंसे गिरता है। कोई कर्म्म ऐसा नहीं है जिसको प्रारब्ध न कर सके, और प्रारब्धका कोई चलाभी नहीं सकता। यही विचारकर मैं अच्छे समय आनेका मार्ग देख रही हूं। मैं यह जानती हूं कि जो जल पहले जहां होता है, फिर वह उसी स्थानमें वापस आ जाता है। यही विचारकर मैं अपने पतियोंकी उन्नतिका समय देख रही हूं। जिस प्रारब्धसे मनुष्यका धन नष्ट होता है, बुद्धिमानको उचित है कि उसीका यत्न करे, तुमने जो मेरे वचनोंका प्रयोजन समझा हो, सो मुझ दुःखिनीसे पूछो, मैं तुम्हारे पूछनेपर उत्तर दूंगी। पाण्डवोंकी पटरानी और राजा द्रुपदकी प्यारी

पत्नी द्रौपदीके सिवा इन सब दुःखोंको सहकर और कौन राजपुत्री जी सकती है? हे शत्रुनाशन। इस मेरे दुःखसे समस्त कुरुकुल, समस्त पाण्डव-कुल और समस्त पाञ्चाल कुलका निरादर हुआ है। मेरे समान दूसरी कौनसी स्त्री होगी जो भाई, ससुर और बहुत पुत्रोंके जीते भी बन-वासके दुःखोंको सहे? हे भरतकुलसिंह। मैंने निश्चय बालकपनमें ब्रह्माका कोई दोष किया था, जिसके कारणसे अब यह सब दुःख सह रही हूं। हे भीमसेन। तुम हमारे रूपकी विपरीतताभी देख लो। उस महावीर बनमें अनेक दुःख सहनेपर भी मेरी यह दुर्दशा नहीं हुई थी। हे भीम। हे कुन्तिनन्दन। तुम भली भांति जानते हो कि पहले मैं कैसे सुख करती थी, सोई मैं आज दासी भावको प्राप्त हुई हूं, तब मुझे सुख कैसे हो। जहां साचात् महा-धनुषधारी महाबाहु कुन्तीपुत्र अर्ज्जुन छिपी हुई अग्निके समान स्त्री वेष बनाकर रहते हैं, वहां प्रारब्धके सिवा और किसका दोष है? हे कुन्तीनन्दन। प्रारब्धकी गतिको कोई मनुष्य नहीं जान सकता है। तुम लोगोंकी जो यह दुर्दशा हो गई, क्या किसीको इसकी सम्भावना थी? जिस मेरे मुखको इन्द्रके समान पाण्डव लोग देखते रहते थे, सोई पतिव्रता मैं श्रेष्ठ स्त्रियोंमें श्रेष्ठ होनेपरभी दूसरोंका मुख देखती हूं। हे पाण्डव। आज मेरी अयोग्य दशाको तुम देखो। तुम लोगोंके जीते क्या मै इस दुर्दशामें पड़ने योग्य थी? यह केवल समयहीका दोष है। जिसके भयसे समुद्र पर्य्यन्त पृथ्वी कांपती थी, वही मैं आज सुदेष्णाके भयसे कांपती हूं; और उसके वशमें रहती हूं। जिसके आगे और पीछे सहस्रो दासिया फिरती थी, सोई मैं आज सुदेष्णाके आगे पीछे फिरती हूं। हे कौन्तेय! मैं जो तुमसे अपने दुःखोंका वर्णन करती हूं, सो तुम सुनो। जो मेरे हाथ किसीके शरीरमें चन्दन लगानेके सिवा और किसीके शरीरमें कभी उबटन नहीं लगाते थे, उन्ही मेरे हाथोंको तुम देखो, क्या इनमें ऐसी ठेठ कभी पहलेभी पड़ी थी? ऐसा कहकर द्रौपदीने अपने हाथ भीमको दिखाये, और कहने लगी कि जो मैं कभी कुन्ती और तुम लोगोंसे भी नही डरती थी, सो आज विराटसे डर रही हूं, और उसकी दासी बनकर सेवा करती हूं। मैं सदा यही विचा-रती रहती हूं कि न जाने आज महाराज मुझे क्या कहेंगे? यह चन्दन उनके योग्य घिसा गया है या नहीं? क्योंकि राजा विराटको मेरे सिवा और किसीका घिसा हुआ चन्दन अच्छा नहीं लगता।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कि, भीमसेनसे अपने सब दुःख सुनाकर सुन्दरी द्रौपदी भीम-सेनकी ओर देखकर धीरे धीरे रोने लगी। फिर आंसू पोंछ और भीमसेनके हृदयसे लपटकर धीरे धीरे बोली, हे भीमसेन। मैंने अपनी जानमें कभी देवतोंका थोड़ा अपराध भी नहीं किया, न जाने कौनसे अपराधसे मैं अब तक जीती हूं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भीमसेनने अपनी प्यारी द्रौपदीके ठेठयुक्त कोमल हाथोंको चूमे और रोने लगे। महा बलवान शत्रुना-शन कुन्तीनन्दन भीम उस समय दुःखसे व्याकुल होगये, और आंसू पोंछकर द्रौपदीसे कहने लगे।

१८ अध्याय समाप्त।

भीमसेन बोले, मेरे बाहुबल और अर्ज्जु-नके गाण्डीव धनुषको धिक्कार है। जिनके होतेभी तुम्हारे लाल हाथोंमें ठेट पड़ गई। मैं राजा विराटकी सब सभाको नाश कर दूंगा, परन्तु सन्देह इतनाही है कि महा-राजकी आज्ञा नहीं है। अथवा धनके अभि-मानसे पागल हुए कीचकके शिरको अपने

रसे इस प्रकार पीसंगा, जैसे मतवारा हाथी
रसी फलको चूर कर देता है। हे द्रौपदी।
जिस समय कीचकने तुम्हारे लात मारी थी,
उसी समय मैंने विचारा था कि विराटको
सब सभाका नाश कर दूंगा। परन्तु उसी समय
धर्म्मराजने मुझे आंखोंसे रोक दिया। हे
सुन्दरि। उनका अभिप्राय जान मैं भी चुप
होकर बैठ गया। जो हम लोगोंका राज्य
नाश हो गया है, कौरवोंने जो हमारे सङ्ग
अन्याय किया है, उससे दुर्योधन, कर्ण, सुवल-
पुत्र शकुनि और पापी दुःशासनका मैंने शिर
नहीं काटा इसी दुःखसे मेरे शरीर जले
जाते हैं। यह दुःख मेरे हृदयमें शल्यके
समान लगा है। हे सुन्दर कमरवाली। हे
महाबुद्धिमती। तुम धर्म्मका नाश मत करो
और क्रोधका नाश करो, यदि महाराज
युधिष्ठिर सुनेंगे कि भीमसेनके कारणसे हम
प्रत्यक्ष होगये, तब वे निस्सन्देह आत्महत्या
करेंगे। हे पतलीकमरवाली। महाराजके
मरनेसे अर्जुन, नकुल और सहदेवभी जीते
न रहेंगे, इन सबके मरनेसे मैं कैसे जाऊंगा?
तुमने सुना होगा कि पहले समयमें राजपुत्री
सुकन्याके पति च्यवन मुनि बनमें मिट्टीके
तुल्य होगये थे, तौभी वह उनकी सेवा कर-
नेसे निवृत्त नहीं हुई थी। तुमने महारूप-
वती, नारायणी इन्द्रसेनाकी कथा सुनी
होगी, वह सहस्र वर्षके बूढ़े अपने पतिकी
सेवा करती थी। तुमने जनकराज दुलारी
सीताका इतिहास सुना होगा, वह अपने
वनवासी पतिके सङ्गही वनको चली गई
थी। वनसे उसे रावण चुराकर लेगया,
रामकी प्यारी सीताने अनेक क्लेश सहकर
भी रामहीकी सेवा करी। तुमने थोड़ी
अवस्थावाली महा रूपवती लोपामुद्राका
वृत्तान्त सुना होगा, वह अपने भोग भोगने
योग्य सुखोंको छोड़कर अगस्त्य मुनिके
सङ्ग जङ्गलको चली गई थी। तुमने यश-
स्विनी सावित्रीका इतिहास सुना है, वह
द्युमत्सेनके पुत्र अपने पति सत्यवानके सङ्ग
अकेली यमलोकतक चली गई थी। जैसे वे
सब स्त्रियां रूपवती और पतिव्रता थीं,
तमभी वैसीही हो। हे कल्याणि। तुममेंभी
उन्हीं सबके पूरे लक्षण पाये जाते हैं। तुम
अब बहुत दिन तक इन दुःखोंको नहीं
सहोगी, अब समय पूरा होनेमें केवल पन्द्र-
रह दिन शेष हैं, यह तेरहवां वर्ष पूरा
होनेसे तुम महारानी बन जाओगी।

द्रौपदी बोली, मैंने तुमसे रोकर जो कुछ
कहा है, उसका कारण दुःखही है। मैं सदा
दुःख सहने पर भी महाराजकी निन्दा नहीं
करूंगी। हे महाबल भीमसेन। समय बीतने
पर क्या होगा, जो कार्य्य इस समय उपस्थित
है, उसके करनेको उद्यत हो। हे भीम।
सुदेष्णा रानी मेरे रूपको देखकर सदा यही
शङ्का किया करती है कि राजा इसके वशमें
होजायंगे। उसके इस भावको देखकर मिथ्या
वादी पापी कीचक सदा मेरी इच्छा किया
करता है। मैं पहले क्रोध करके फिर अपने
क्रोधको शान्त करती हूं, और कामसोहित
कीचकसे कहती हूं कि तू अपनी रक्षा कर, मैं
महा पराक्रमी पांच गन्धर्व्वोंकी प्यारी स्त्री हूं,
वे साहसी और महाशूर हैं, तुझे क्रोध करके
अवश्य मार डालेंगे। मेरे ऐसे वचन सुन कर
पापी कीचक कहता है कि, हे सुन्दर हंसने-
वाली सैरिन्ध्री। मैं गन्धर्व्वोंसे कुछ नहीं डरता,
मैं युद्धमें सहस्रों और लाखों गन्धर्वोंको नाशकर
सकता हूं, मैं कीचक हूं, मुझे कोई नहीं
मार सकता है। उसके ऐसे वचन सुनके मैंने
पुनः काम पीड़ित कीचकसे कहा, तू महा-
बलवान गन्धर्वोंके समान पराक्रमी नहीं है, मैं
कुल और शीलके अनुसार अपने धर्म्ममें स्थित
हूं, और पाप करनेकी कभी इच्छा नहीं

करती। मेरे ऐसे बचन सुनकर वह दुष्टात्मा फिर कहने लगा कि तुम मेरी स्त्री हो। एक दिन सुदेष्णा रानीने मुझे उसके घरमें भेजा, उसने पहले हो अपने भाई कीचकसे यह सब सम्मति कर ली थी। उसने मुझे मद्यका पात्र देकर कहा कि हे कल्याणि! तू कीचकके घरसे मेरे लिये मद्य लेआ। जब मैं उसके घर गई, तब सूतपुत्र कीचकने मुझसे शान्ति पूर्व्वक कहा कि तू मेरी सेवाकर। जब मैंने उसके वचनको न माना, तब उसने महाक्रोध किया। मैं दुष्ट कीचककी इच्छा जानकर उसी समय वेगसे राजाकी शरण गई; हे पाण्डव! सूतपुत्र कीचकने राजाके आगेही मुझको मारा, उस दुष्टात्माने मुझको पृथ्वीमें गिराकर लातसे मारा। राजा विराट और कङ्क आदि सब पुरुष देखते रहे, उस समय सभामें राजाके प्यारे मित्र शूरवीर और अनेक बनिये भी बैठे थे, मैंने उस समय महाराज विराटसे और कङ्कसे अनेक प्रार्थना करी, परन्तु किसीने कुछ न सुना और कीचकको किसीने निवारण भी न किया, यह जो राजा विराटका कीचक नामक सारथी है, सो अधर्मी और महा निर्लज्ज है, तथापि इस नगरके सब स्त्री पुरुष उससे प्रेम करते हैं, वह शूर, अभिमानी, पापी, सब वस्तुओं और स्त्रियों पर अत्याचार करनेवाला है, राजा उसको सब देते हैं, वह दुष्ट रीति हुए पुरुषोंका भी धन छीन लेता है, कभी साधुओंके मार्गसे नहीं चलता, और धर्म्मको धारण नहीं करता, वह दुष्ट, पापी, पाप करनेवाला काम-पीड़ित, भ्रष्ट और दुष्ट है। यदि तुम उसको न मारोगे तो वह बार-बार निरादर पाकरभी मेरा निरादर करेगा। तब मैं अवश्यही अपने शरीरको छोड़ दूंगी, ऐसा करनेसे सब धर्म्म करनेवालोंका धर्म्म नष्ट जायगा, आप लोग जो अपनी प्रतिज्ञाके [illegible]सार समयको रक्षा करते हैं, उसका भी नाश हो जायगा, क्योंकि स्त्रीका नाश होनेसे सन्तानकी रक्षा नहीं हो सकती, और यह नियम है कि सन्तानकी रक्षा होनेसे अपनी रक्षा होती है। आत्माही स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न होता है, इसी लिये पण्डितोंने स्त्रीका नाम जाया कहा है। स्त्री पतिकी रक्षा करती है, फिर वही स्त्रीके गर्भमेंसे उत्पन्न होता है, हमने वर्णोंके धर्म्म करनेवाले ब्राह्मणोंके मुहसे ऐसाही सुना है शत्रुओंके मारनेके समान क्षत्रियोंका दूसरा धर्म्म नहीं है। धर्म्मराजके देखते कीचकने मुझे लातसे मारा। हे महा-बल भीमसेन! तुम भी उस समय वहीं देख रहे थे, तुमने महाघोर जटासुरके हाथसे मुझे छुड़ाया था, तुम्हीने अपने भाइयोंके सहित जयद्रथको जीता था, तुम्हीं मेरा निरादर करनेवाले दुष्ट कीचकको भी जीतो। हे भारत! कीचक राजाका बहुत प्यारा है, इस लिये उसे देखकर मुझे बहुत शोक होता है, तुम उसके शिरको इस प्रकार तोड़ दो, जैसे कोई पत्थर मारके घड़ा तोड़ता है। जो दुष्ट कीचक मेरे अनेक दुःखोंका मूल है, यदि वह कल सूर्य्य निकलनेके समयतक जीता रहा तो मैं विष घोलकर पीलंगी। हे भीमसेन! कीचकका सङ्ग करनेसे तुम्हारे आगे मेरा मरना श्रेष्ठ है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, ऐसा कहकर द्रौपदी भीमसेनके हृदयसे लिपट गई, और बहुत रोने लगी। भीमसेनने उसे अपने हृदयसे लगाकर शान्त किया। सुन्दरी पतली कमर-वाली, दुःखसे व्याकुल द्रुपदराज दुलारीसे भीम-सेनने हेतु सहित अनेक वचन कहे। भीमसेनने अपने हाथसे द्रौपदीकी आंसू पोंछकर कीचक-के मारनेकी इच्छासे क्रोधमें भरकर दांत चबाये, और दुःखपीड़ित द्रौपदीसे बोले।

२० अध्याय समाप्त।

भीमसेन बोले, हे कल्याणि! हे भीरु! तुम जैसे कहती हो हम वैसेही करेंगे। हम आज उस कीचककी भाइयोंके सहित नाश कर देंगे। तुम आज सन्ध्या समय अपने सब शोक और दुःखको दूर करके कीचकसे बात करना। हे सुन्दर हसनेवाली याज्ञसेनी! राजा विराटने जो यह नाचनेका स्थान बनाया है, उसमें दिन भर कन्या नाचती हैं, और रात्रिको अपने अपने घरको चली जाती हैं। वहां एक सुन्दर दृढ़ सोनेका स्थान बना है, उसी स्थानपर मैं उस दुष्टको मार उसके बाप दादेके पास भेज दूंगा। जिस प्रकार तुम्हें कोई बात करते न देखे, तुम उसी यत्नसे उसे उस स्थानमें भेज दो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इस प्रकार द्रौपदी और भीमने दुःखित होकर उस रात्रिको बिताया। रात्रि बीततेही द्रौपदी रानीके घरको चली गई। उधर प्रातःकाल होतेही कीचक भी राजाके भवनमें पहुंचा और द्रौपदीसे बोला, राजा विराटके आगे मैंने तुझे पृथ्वीमें गिराके लातसे मारा, मुझ बलवानका विरोध करनेसे कोई तेरी रक्षा कर सकता है? कोई मुझे दोष न दे, इस लिये मैंने राजा विराटको नाम मात्रका राजा बना रक्खा है। वास्तवमें मैंही मत्स्यदेशका राजा और सेनापति हूं। हे सुश्रोणि! हे भीरु! तू सुखसे मेरी सेवाकर. मैं प्रति दिन तुझे सौ निष्क दूंगा। तेरी सेवाके लिये सौ दासी और सौ दास हर समय उपस्थित रहेंगे। तथा मैंभी तेरा दास होकर रहूंगा। हे भीरु! तेरे लिये खच्चरयुक्त रथ उपस्थित रहेंगे, इस लिये तू मुझसे सङ्गम कर।

द्रौपदी बोली हे कीचक! मैं यशस्वी गन्धर्व्वोंसे बहुत डरती हूं। यदि तुम मुझसे यह प्रतिज्ञा करो कि तुम्हारे और मेरे सङ्गमको भाई और मित्रभी न जान सकेंगे। तब मैं तुमसे सङ्गम करूंगी।

कीचक बोला, हे कदलीके समान जङ्घावाली! हे सुश्रोणि! हे कल्याणि! तुम जैसे कहती हो, मैं वैसेही करूंगा, मैं तुमसे सङ्गम करनेके लिये शून्य घरमें अकेलाही जाऊंगा ऐसा करनेसे महा तेजस्वी गन्धर्व्व तुम्हें नहीं देख सकेंगे।

द्रौपदी बोली, यह जो राजा विराटने नाचनेके लिये स्थान बनाया है, जहां दिनभर कन्या नाचती है, और रातको अपने अपने घरको चली जाती हैं, उसे गन्धर्व्व लोग नहीं जानते हैं। तुम अन्धेरेमें आधी रातको वहां जाना। मैं निःसन्देह तुमसे वहीं मिलूगी।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इस प्रकार द्रौपदी और कीचकसे बात होते होते दो पहर दिन बीत गया। द्रौपदीको यह आधा दिन महीनेके समान बीता। हे राजन् जनमेजय! तब कीचक बहुत प्रसन्न होकर अपने घरको गया, परन्तु उस मूर्खने यह न जाना कि सैरिन्ध्री मेरे लिये मृत्युरूप होगई है। काम मोहित कीचक उसी समयसे अपने शरीरको संवारने लगा। कीचक विशालनयनी द्रौपदीको स्मरण करते हुए, अपने शरीरमें चन्दन और माला धारण करने लगा, उसको वह समय अनेक वर्षोंके समान जान पड़ा, कीचकके आभूषण धारण करनेसे उसके मरनेके समय ऐसी शोभा बढ़ी, जैसे बुतनेके समय दियेकी बत्तीका प्रकाश बढता है। काम मोहित कीचकने द्रौपदीके वचनमें विश्वास कर लिया, परन्तु यह न जाना कि मेरी मृत्यु भी आजहीकी रात्रिमें है। उसी समय द्रौपदी भीमसेनके पास चौकेमें गई और कहने लगी कि मैंने तुम्हारी आज्ञानुसार आधीरातके समय कीचकको उसही नाच घरमें बुलाया है, वह आधीरातको अकेला उस शून्य नाचघरमें आवेगा, तुम वहीं उसको मार डालना। हे कुन्तीनन्दन! तुम वहां

जाकर उस काममोहित सूतपुत्र कीचकका नाश करो। वह मूर्ख अभिमानके वशमें होकर गन्धर्वोंका निरादर करता है। हे मारनेवालोंमें श्रेष्ठ। तुम उसको मारो और कीचमें फँसी हुई हथिनीके समान मेरा उद्धार करो। हे भारत! मुझ दुःखिनीको आसू पोछो तथा अपना और अपने कुलका कल्याण करो।

भीमसेन बोले, हे सुन्दर मुखवाली। तुमने हमको बहुत प्यारी बात सुनाई। हम तुम्हारा आदर करते हैं, और युद्धके लिये कुछ सहायको इच्छा नहीं करते। हे उत्तम रङ्गवाली! कीचकसे युद्ध होनेकी वार्त्ता सुन मुझे वैसाही आनन्द हुआ, जैसा हिड़म्बासुरके मारनेसे हुआ था। मैं अपने धर्म्म और भाइयोंको शपथ करके तुमसे सत्य कहता कि कीचकको इस प्रकार मारूंगा, जैसे इन्द्रने वृत्रासुरको मारा था। मैं निश्चय कीचकको अन्धेरे अथवा चांदनेमें पीस दूगा, यदि उसको ओर होकर राजा विराट लड़ेगा तो उसका भी नाश कर दूंगा। फिर दुर्य्योधनको मारकर राज्य छीन लूगा, राजा युधिष्ठिर इच्छानुसार विराटकी सेवा करें।

द्रौपदी बोली, हे प्राणनाथ। आप मेरे लिये अपन सत्यको मत छोड़िये, जैसे उसे छिपकर मार सकें ऐसाही यत्न कीजिये।

भीमसेन बोले, हे भीरु। जैसे तुम कहती हो मैं वैसेही करूंगा, आज अवश्य कीचकको बान्धवोंके सहित मारूंगा। हे अनिन्दिते। मैं उस स्थानमें छिपकर कीचकके शिरको इस प्रकार तोड़ूगा जैसे मतवारा हाथी बेलको तोड़ता है, वही दुष्ट न प्राप्त होने योग्य द्रौपदीकी इच्छा करता है?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तब भीमसेन आधी रातको छिपकर उस नाचघरमें जाकर और इस प्रकार कीचकका मार्ग देखने लगे, जैसे छिपकर सिंह हरिनका मार्ग देखता है। उसी समय कीचक भी द्रौपदीसे सङ्गम करनेकी इच्छासे अपने शरीरको सुधारकर उस नाचघरमें पहुंचा। कीचक द्रौपदीके बतलाये हुए स्थानमें गया, उस समय वह स्थान अन्धेरेसे भरा था, इससे कीचक द्रौपदीको ढूढ़ने लगा। अनन्तर दुरात्मा कीचकने पहलेसे आये हुए, महा बलवान भीमसेनको एकान्त पलगपर सोते हुए पाया। द्रौपदीके निरादरसे क्रोधमें भरे हुए भीमसेनका हाथ सूतपुत्रने पकड़ लिया। पश्चात् कामसे व्याकुल कीचक आनन्दके वशमें होकर भीमसेनके पास सो गया, और प्रसन्न होकर कहने लगा, हे सुन्दरि। मैं तेरे लिये बहुत धन लाया हूं, और सुन्दर सुन्दर आभूषण लाया हूं। हे सुन्दर भौंहवाली! मैंने तुम्हारे लिये रत्न भूषण धारिणी, उत्तम वस्त्रवाली, रूप और लावण्यसे भरी, क्रीड़ा करनेवाली अपनी युवती स्त्रियोंको छोड़ दिया, आज मेरे घरकी सब स्त्रिया अकस्मात् कहने लगीं कि तुम्हारे समान सुन्दर और उत्तम वस्त्रधारी जगत्में कोई पुरुष नहीं है।

भीमसेन बोले, ईश्वरने तुमको मेरेही प्रारब्धसे सुन्दर बनाया है। तुम प्रारब्धहीसे अपनी प्रशंसा करते हो, जैसा मुझे तुम्हारे शरीरका स्पर्श जान पड़ता है, ऐसा और दूसरे पुरुषका नहो, तुम्हारे छूनेसे मुझे जान पड़ता है कि तुम स्त्रियासे प्रसंग करनेमें बहुत चतुर हो, और यह भी निश्चय होता है कि जगतमें तुम्हारे समान कोई पुरुष ऐसा नहीं है जो स्त्रियोंको प्रसन्न कर सके।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महा बलवान महाबाहु कुन्तीपुत्र भीमसेन ऐसा कहकर वेगसे उठे और हसकर कहने लगे। रे पापी! अब तेरी बहन थोड़े समयमें तुझे भूमिमें पड़ा हुआ वैसेही देखेगी जैसे सिंहसे मारे हुए बड़े

शरीरवाले हाथीको जन्तु देखते है। तेरे मरनेसे सैरिन्ध्री सुख पूर्व्वक बिहार करेगी और उसके पतिभी आनन्दसे रहेंगे। ऐसा कहकर महाबलवान भीमसेनने बलवान कीचकके बाल पकड़ लिये कीचकने भी वेगसे छुड़ाकर भीमसेनके हाथ पकड़ लिये। तब बलवान कीचक और भीमसेनका घोर बाहुयुद्ध होने लगा, कीचकोंमें श्रेष्ठ कीचक और पुरुषोंमें श्रेष्ठ भीमका द्रौपदीके लिये इस प्रकार घोर युद्ध हुआ, जैसे बसन्त ऋतुमें एक हथिनीके लिये दो हाथी लड़ते हों। वे दोनों अपनी अपनी जयकी इच्छासे इस प्रकार लड़ने लगे जैसे पहले वानरकुल सिंह सुग्रीव और बालिसे युद्ध हुआ था, वे दोनो पांच शिरके सर्पके समान अपने हाथोंको उठाकर युद्ध करने लगे। तब बलवान कीचकने भीमको वेगसे मारा, परन्तु स्थिर प्रतिज्ञावाले भीम युद्धमें एक चरण भी पीछेको न हटे। वे दोनों परस्पर लपटकर एक दूसरेको बड़े बैलके समान खींचने लगे। उन दोनोंका यह घोर युद्ध इस प्रकार हुआ, जैसे नाखून और दांत रूपी शस्त्रधारी मतवारे सिंहोंका युद्ध होता है। अनन्तर कीचकने क्रोध करके भीमसेनको इस प्रकार पकड़ा जैसे मतवारा हाथी मतवारे हाथीको पकड़ता है। बलवान भीमसेननेभी उसको वैसेही पकड़ा, तब कीचकने बलसे उठाकर भीमको फेंक दिया। उन दोनों बलवानोंके हाथ घिसनेसे युद्धमें ऐसा शब्द होने लगा, जैसा बास फटनेसे बनमें होता है। अनन्तर भीमने उसका पैर पकड़कर इस प्रकार घुमाया जैसे महावायु वृक्षको घुमाता है। बलवान भीमके घुमानेसे कीचकका बल नष्ट होगया। और श्वास लेता लेता भीमको खींचने लगा। यद्यपि उस समय कीचकको बहुत थोड़ा बल रह गया था, तौभी उसने क्रोधकर अपनी शक्तिके बलसे भीमसेनको पृथ्वीमें गिरा दिया, बलवान कीचकके हाथसे पृथ्वीमें गिरकर भीमसेन पुनः दण्डधारी यमराजके समान उठे और फिर वे दोनों प[रस्पर] स्पर स्पर्द्धा करके युद्ध करने लगे। उस आ[धी] रातके समय यह युद्ध निर्ज्जन स्थानमें हुआ तब वह उत्तम स्थान उन दोनों क्रोधी वीरो[के] गर्जनेसे कांपने लगा। तब भीमने बलव[ान] कीचकके हृदयमें एक थप्पड़ मारा, पर कीचक क्रोधमें भरकर एक चरणभी पीछे न हटा, उस थप्पड़के लगनेसे सूतपुत्र कीच[क] पृथ्वीमें बैठ गया और उसका बल नष्ट हो[ने] लगा, भीमने उसको बलहीन देखकर पृथ्[वीमें] गिरा दिया। फिर बलवान भीमने क्रोध[में] भरकर और लम्बा श्वास लेकर कीचकके बा[ल] पकड़ लिये। विजय करनेवालोंमें श्रेष्ठ मह[ा] बलवान भीमसेनने कीचकको इस प्रका[र] पकड़ा जैसे मांस खानेकी इच्छावाला शार्दू[ल] हरिनको पकड़ता है। जब भीमसेनने देखा कि कीचकका बल नष्ट होगया तब उसे अप[ने] हाथोंसे ऐसे दबाया जैसे रस्सीसे पशुको बांधते है। उस समय कीचकके कण्ठसे फटे हु[ए] भेरके समान शब्द निकलने लगा। तब भीम[ने] मूर्च्छित कीचकको बहुत समयतक घुमाया फिर पृथ्वीमें गिराकर द्रौपदीका क्रोध शान्त करनेके लिये उसका कण्ठ तोड़ने लगे, त[ब] उसके शरीर टूट गये और आंख बाहर निक[ल] आई, तब भीमने उसको कमरको पैरसे तोड़ दिया, भीमने कीचकको इस प्रकार मारा जैसे कोई पशुको मारता है। जब पाण्डुनन्दन भीमने देखा कि कीचक मर गया, तब उसे पृथ्वीमें रगड़कर ऐसा कहने लगे, मैं इस द्रौप[दी]के शत्रुको मारकर आज भाईके ऋणसे छुटा, और परम शान्तिको प्राप्त हुआ पुरुषसिंह महा क्रोधी भीमसेनने इस प्रकार कीचकको मारकर उसके शरीरको फेंक दिया। मरते समय कीचकके वस्त्र और आभू[षण] प्रायः सब गिर गये थे। बलवानोंमें श्रेष्ठ भीम

क्रोधसे दांत चवाने लगी और हाथसे हाथको मलने लगी। फिर उसके हाथ पैर और शिरको तोड़कर उसके पेटमें प्रवेश कर दिये। भीमने कीचकको इस प्रकार मारा, जैसे शिव पशुको मारते है। महापराक्रमी भीमने कीचकको मांसपिण्डकी भांति बनाकर द्रौपदीको दिखाया। भीम महा सुन्दरी द्रौपदीसे बोले, हे पाञ्चालि! तुम यहां आकर इस कामी कीचककी दशा देखो। हे महाराज! ऐसा कहकर भीमने अग्नि जलाई और अपने पैरसे दवाकर दुरात्मा कीचकका शरीर द्रौपदीको दिखाया और कहने लगे, हे भीरु! हे सुन्दरी! जो रूप गुण और शीलसे भरी हुई द्रौपदीकी इच्छा करते हैं, उनको हम ऐसेही मारते हैं, जैसे कीचक विराजमान है। इस प्रकार द्रौपदीके प्यारे घोर कर्म्मको करके भीमने क्रोधको शान्त किया, और द्रौपदीसे पूछकर शीघ्रही चौकेमें आकर सो गये। स्त्रियोंमें श्रेष्ठ द्रौपदीभी कीचकका नाश करके अत्यन्त प्रसन्न हुई, फिर पहरेवालोंसे बोली कि मेरे गन्धर्व्व पतियोंने उस कीचकको मार डाला, पराई स्त्रियोंके चाहनेवाले ऐसेही मारे जाते हैं, तुमलोग इसको आकर देखो। उसके ऐसे बचन सुन सहस्रो पहरेवाले मशाल जलाकर उस स्थानमें आये। उन सबने रुधिरसे भीगे हुए प्राण रहित कीचकको पृथ्वीमें पड़ा हुआ देखा। वे हाथ पैरसे रहित कीचकको देखकर बहुत डरे और आश्चर्य करने लगे। इस अद्भुत कर्म्मको देखकर वे लोग कहने लगे कि इसके हाथ पैर और शिर कहां गये? इसको अवश्य गन्धर्वोंने मारा है।

२१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजा जनमेजय! इस समाचारको सुनकर कीचकके सब बान्धव लोग वहां आये और कीचककी हाथ पैर रहित कछुवेकी खोपरीके समान पड़ा हुआ देखकर रोने लगे, और अत्यन्त आश्चर्य करने लगे। उन्होंने भीमसेनसे मारे हुए कीचकको इस प्रकार देखा, जैसे इन्द्रसे मरे हुए राक्षसको उसके बन्धु लोग देखते हैं। अनन्तर उन्होंने संस्कार करनेके लिये कीचकको बाहर निकाला। फिर थोड़ी दूरपर खम्भेसे लगी हुई सुन्दरी द्रौपदीको खड़ी देखा। फिर वे सब लोग सम्मति करके बोले, इसी दुष्टाके लिये कीचक मारा गया है, इस लिये इसे भी शीघ्रही मारडालना चाहिये अथवा इसको मारो मत कीचकके सङ्ग जीतीही जला दो। क्योंकि मरे हुए कामी कीचकका भी हम लोगोंको हित करना चाहिये। अनन्तर वे सब लोग राजा विराटके पास जाकर बोले कि इसीके लिये कीचक मारा गया है, यदि आप आज्ञा दीजिये तो कीचकके सङ्ग इसकोभी जला दें? राजाने सूतपुत्रोंके बलसे डरकर द्रौपदीके जलानेकी आज्ञा दे दी। अनन्तर वे सब लोग कमल नयनी भयसे व्याकुल मूर्च्छित द्रौपदीके पास आये, और द्रौपदीको पकड़ने लगे। वे सुन्दरी द्रौपदीको अरथीमें कीचकके सङ्ग बांधकर श्मशानमें ले चले। निन्दा रहित पतिव्रता द्रौपदी सूतपुत्रोंके बशमें होकर अपने पतियोंको पुकार-कार रोने लगी।

द्रौपदी बोली, जय, जयन्त, विजय, जयत्सेन और जयद्वल मेरे इस वचनको सुनें। ये कीचक मुझे पकड़े लिये जाते हैं, युद्धमें जिनके धनुषोंका शब्द वज्रके समान होता है, जिन वेगवान गन्धर्व्वोंके रथोंका शब्द महाघोर होता है, वे मेरे पति मेरे वचनको सुनें। ये सूतपुत्र मुझे पकड़कर लिये जाते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, रोती हुई द्रौपदीकी दीनवाणी सुनकर भीमसेन उठे और दौड़कर कहने लगे।

भीमसेन बोले, हे सुन्दरि सैरिन्ध्रि! हम तेरे बचनको सुनते हैं, इस लिये तुझे सूतपुत्रोंसे कुछ भय नहीं है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, ऐसा कहकर महाबाहु भीमसेनने जमुहाई ली और सूतपुत्रोंके मारनेके लिये अपने वेषको बदलकर दूसरे मार्गसे बाहर निकले। फिर नगरकी झाड़दिवालीके वृक्षपर चढ़कर देखने लगे, फिर वहांसे उतरकर झाड़दिवालीको नांघ कर वेगसे श्मशानकी ओर दौड़ कीचकोंके पहलेही श्मशानमें पहुंच गये और चिताके पास जाकर वृक्षोंको देखने लगे, फिर एक ताड़के समान ऊंचे ऊपरसे सूखे हुए भारी वृक्षको देखा, यह वृक्ष दस पुरुसा लम्बा था। भीमने उसको हाथीके समान उखाड़ लिया और कन्धेपर रखकर महाबलवान दण्डधारी यमराजके समान रूप धारण करके सूतोंकी ओर दौड़े उनके दौड़नेसे अनेक बड़गद पीपल और कचनारके वृक्ष टूटकर पृथ्वीमें गिर गये। उस सिंहके समान गन्धर्व्वको आते हुए देख सब सूतपुत्र डरसे कांपने लगे। तब वे लोग कहने लगे कि यह क्रोधसे भरा वृक्ष लिये गन्धर्व्व चला आता है इस लिये सैरिन्ध्रीको छोड़ दो। यही हमारे डरका कारण है। जब उन्होंने देखा कि यह गन्धर्व्व हम लोगोंको इस वृक्षसे मार डालेगा, तब वे लोग अर्थीको छोड़ कर कर, नगरकी ओर भागे। भीमने आगत हुए एक सौ पांच सूतोंको इस प्रकार मारा, जैसे वज्रधारी इन्द्र दानवोंको मारते हैं। बलवान भीमने उसी वृक्षसे शत्रुओंका नाश करके द्रौपदीको खोल दिया और दुःखसे भरी रोती हुई द्रौपदीसे बोले, हे सुन्दरी! तुम्हें जो क्लेश देते हैं, हम उनका इसी प्रकार नाश करते हैं, अब तुम नगरको जाओ तुम्हें कुछ भय नहीं है। मैं दूसरे मार्गसे विराटकी रसोईको जाता हूं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महा बलवान भीमसेनसे कीचकोंका कुल ऐसे नाश हुआ, जैसे अग्नि लगनेसे वन। एक सेनापति कीचकको भीमने मारा था और एकसौ पांचको फिर मारा इस प्रकार एक सौ छः कीचक मारे गये, इस महा आश्चर्यको देखकर सब नगरके स्त्री पुरुष चुप हो रहे।

२३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! नगरके लोगोंने महाबलवान कीचकोंको गन्धर्व्वोंके हाथसे मरा हुआ देख राजासे जाकर कहा, हे महाराज! जिस प्रकार वज्रसे इन्द्रने पर्व्वतोंको नाश किया था, ऐसेही गन्धर्वोंने कीचकोंको मारडाला, सब कीचक पृथ्वीमें पड़े हैं। सैरिन्ध्री छूटकर पुनः आपके नगरको आती है। हे राजेन्द्र! पुरुषोंको मैथुन सदाही प्यारा है और सैरन्ध्री बहुत रूपवती है, एवम् गन्धर्व्व भी बहुत बलवान हैं, जिस प्रकार उसके दोषसे आपके नगरका नाश न हो, ऐसा उपाय कीजिये। उनके वचन सुन कर महाराज विराट बोले, कि इन सब सूतपुत्रोंको एकही चितामें रत्न और सुगन्धोंके सहित जला दो। फिर राजाने अपनी पटरानी सुदेष्णासे दुःखित होकर कहा कि जब सैरन्ध्री यहां आवे तब तुम हमारे वचनसे उसको ऐसा कहना कि हे सैरन्ध्री! तुम्हारा कल्याण हो, हे सुश्रोणि! राजा विराट गन्धर्व्वोंके भयसे बहुत डरते हैं, इस लिये जहां तुम्हारी इच्छा हो वहांको चली जाओ; यद्यपि हमारी शक्ति तुम्हें छोड़नेकी नहीं है, क्योंकि साक्षात गन्धर्व्व तुम्हारी रक्षा करते हैं, परन्तु क्या करें। यद्यपि मैं ही सैरिन्ध्रीसे कहता परन्तु दोषसे डरकर नहीं कहता हूं, तुम्हारे कहनेसे कुछ दोष नहीं होगा, इस लिये तुमही कह देना।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, द्रौपदी भयसे छूटकर और सूतपुत्रोंको मारकर नगरको आर

चली। उस समय द्रौपदीकी ऐसी दशा हुई जैसी सिंहसे डरी हुई हरिनीकी। नगरमें आकर द्रौपदीने अपने शरीरको जलसे धोया और वस्त्रोंसे पोंछा। उसको नगरमें आती हुई देख नगरके लोग गन्धर्व्वोंके डरसे इधर उधर भागने लगे, और कोई डरसे आंख बन्द करके बैठने लगा। अनन्तर द्रौपदी भीमको रसोईके द्वारपर मतवारे हाथीके समान बैठे हुए देखकर धीरे धीरे कहने लगी, जिस गन्धर्व्वराजने मुझे महा भयसे छुड़ाया है उसे प्रणाम करती हूं। भीमसेन बोले, जो पहले इस विराट नगरमें दूसरोंके वशमें होकर रहते थे, वे आज ऋणहीन होकर सुखसे विहार करें।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर द्रौपदीने विराटके नर्त्तनागारमें कन्याओंको नचाते हुए महाबाहु अर्ज्जुनको देखा, तब वे सब कन्या नृत्यशालासे अर्ज्जुनके सहित बाहर निकल कर दुःखिनी द्रौपदीको देखने लगीं।

कन्या बोलीं, हे सैरिन्ध्री। तू आज प्रारब्धहीसे छूटकर आई है, और प्रारब्धहीसे तुम्हें दुःख देनेवाले कीचकोंका नाश हुआ।

वृहन्नला बोली, हे सैरिन्ध्री। तुम कैसे छूटी? और किस प्रकार पापी कीचकोंका नाश हुआ? मैं सबको सुनना चाहती हूं, तुम कहो।

सैरिन्ध्री बोली, हे वृहन्नले! हे कल्याणि! तुम तो सुखसेसे कन्याओंके सहित रहती हो, अब तुम्हे सैरिन्ध्रीसे क्या प्रयोजन है? तुम्हे कुछ दुःख नहीं होता और सैरिन्ध्री महा दुःखमें पड़ी है, इसी लिये तुम हंसकर मुझसे पूछती हो।

वृहन्नला बोली, हे कल्याणि! वृहन्नला भी घोर आपत्तिमें पड़ी है, हे बाले! क्या तुम नहीं जानती हो कि वह नीच-योनिको प्राप्त होगई है। मैं तुम्हारे सङ्गही रहती हूं और तुम सबके सङ्ग रहती हो, हे सुन्दरी। तुम्हें दुःख होनेसे किसको दुःख नहीं होता? कोई मनुष्य किसीके हृदयको नहीं देखता इससे तुम हमारे अन्तःकरणको नहीं जानती हो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर सब कन्याओंके सहित द्रौपदी सुदेष्णा रानीके घरमें गई। तब रानी सुदेष्णाने राजाकी आज्ञाके अनुसार द्रौपदीसे कहा, हे सैरन्ध्री। हे भद्रे। राजा गन्धर्वोंसे बहुत डरते हैं इस लिये तुम्हारी जहां इच्छा हो वहां शीघ्र चली जाओ। तुम यह भी जानती हो कि पुरुषोंको मैथुन अत्यन्त प्रिय है, और तुम अत्यन्त सुन्दरी युवती और असाधारण स्त्री हो. तथा तुम्हारे पति गन्धर्व्व अत्यन्त क्रोधी हैं, इस लिये तुम्हारा यहां रहना उचित नहीं।

सैरिन्ध्री बोली, महाराज केवल तेरह दिन हमारे ऊपर और कृपा करें, इसके पश्चात मेरे पति कृतकृत्य होजायंगे, तब वे मुझको यहांसे ले जायंगे; तुम्हारा और बान्धवोंके सहित राजाका भी कल्याण होगा।

विराटपर्व्वमें कीचक वध पर्व्व समाप्त।

२३ अध्याय समाप्त।

अथ गोहरण पर्व्व।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजा जनमेजय! जब भाइयोंके सहित कीचक मारा गया, तब तब लोग आश्चर्य सहित इस कथाको कहने लगे। उस समय सब नगरोंमें कीचक मारा गया, यही कोलाहल होने लगा। सब लोग कहने लगे कि यह कीचक महादुर्बुद्धि, कामी, बलवान, माहसी, राजाका प्यारा और शत्रुओंसे युद्ध करनेवाला था, उस दुष्ट पापीको गन्धर्वोंने मारा। हे महाराज। सब देशोंमें यह समाचार फैल गया कि पापी कीचक मारा गया।

दुर्य्योधनने जो पाण्डवोंको ढूढ़नेके लिये दूत भेजे थे, वे सब अनेक नगर, गांव और देशोंमें अच्छी प्रकार पाण्डवोंको ढूंढ़कर हस्तिनापुरमें लौट आये। उन्होंने राजसभामें जाकर महारथ त्रिगर्त्त, महात्मा भीष्म, कृपाचार्य्य, द्रोणाचार्य्य और अपने भाइयोंके सङ्ग धृतराष्ट्रपुत्र राजा दुर्य्योधनको बैठे देखा। फिर दूत लोग प्रणाम करके कहने लगे, हे पृथ्वीनाथ! हम लोगोंने उस मनुष्य रहित हरिनोंसे भरे अनेक वृक्ष लता और वृक्षोंके गुल्मोंसे भरे हुए घोर बनमें पाण्डवोंको बहुत ढूंढा परन्तु हमारा परिश्रम सफल न हुआ। हम लोग नहीं जानते हैं कि महा पराक्रमी पाण्डव लोग कहां चले गये। हम लोगोंको बनमें उनके चरणोंके चिह्न भी नहीं मिले, हमने पर्व्वत पर्व्वतोंके ऊंचे शिखर, नगर, मनुष्योंसे भरे देश, और शून्य स्थानोंमें पाण्डवोंको बहुत ढूंढ़ा परन्तु उन लोगोंका कहीं भी पता नहीं लगा। हे पृथ्वीनाथ! हे पुरुषसिंह! हम लोगोंको निश्चय होता है कि पाण्डव लोग मर गये। हे महावीर! हम लोगोंने पाण्डवोंको रथोंके मार्गमें भी ढूढ़ा परन्तु वहां भी उनका पता नहीं लगा। हे शत्रुनाशन! हम लोग थोड़े दिन पाण्डवोंके सारथियोंके पास रहे, वे सब लोग पाण्डवोंके बिनाही द्वारिकामें आबसे हैं। हे राजेन्द्र! द्वारिकामें न द्रौपदी हैं और न महाव्रतधारी पाण्डव हैं। हे भरतकुलसिंह! हम आपको प्रणाम करते हैं। पाण्डव लोग निश्चय मर गये। हम लोगोंको कुछ निश्चय नहीं होता है कि वे लोग कहा हैं? क्या काम करते हैं? और किस वेषमें है? हे पृथ्वीनाथ! अब आप हम लोगोंको कोई दूसरी आज्ञा दीजिये। हे नरनाथ! अब आप जहा कहैं तहां हम पाण्डवोंको ढूढ़नेको जायं। हे वीर! अब हम एक प्यारी बात आपको सुनाते हैं, जिस महाबलवान मत्स्यदेश निवासी कीचक नामक सूतने त्रिगर्त्तोंका नाश किया था, उसको रातमें गन्धर्व्वोंने मारडाला, परन्तु उन गन्धर्वोंके दर्शन किसीने नहीं किये। कीचकके सङ्ग उसके सब भाई भी मारे गये। हे कौरव इस शत्रुओंकी पराजयको सुनकर उचित कार्य्य कीजिये।

२४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! राजा दुर्य्योधनने उनके वचन सुनकर बहुत समयतक विचार किया, फिर सभासदोंसे बोले, कार्य्योंकी पूर्णगति जानना बहुतही कठिन है, इस लिये तुम सब विचार करो कि पाण्डव लोग कहा चले गये? देखो इस तेरहवें वर्षका बहुत थोड़ा समय शेष है, महापराक्रमी सत्यव्रतधारी पाण्डव लोग इस तेरहवें वर्षके पूरा होते ही प्रत्यक्ष हो जायंगे। वे लोग मतवारे हाथीके समान बलवान और विषैले सांपके तुल्य क्रोधी हैं, अब उन्होंने तेरह वर्षतक महादुःख भोगा है, इस लिये अवश्यही हम लोगोंसे युद्ध करेंगे, वे सब समयके जाननेवाले घोररूपधारी पाण्डव लोग यदि इस समय प्रत्यक्ष हो जायं तो फिर भी क्रोधको जीतकर बनको चले जायंगे। इस लिये तुम लोग शीघ्रही उन लोगोंको ढूढ़ लो। उनके मिलनेसे हम बहुत दिन पर्य्यन्त निष्कण्टक राज्य करेंगे। उसी समय कर्ण बोले,—

हे भारत! इसी समय दूसरे धूर्त्त, बुद्धिमान उत्तम कार्य्य करनेवाले दूत पाण्डवोंको ढूढने जायं, वे सब उत्तम देश, मनुष्योंसे भरे नगर, रमणीय सभा, सिद्धोंके स्थान, राजधानी, तीर्थ और अनेक प्रकारके स्थानमें पाण्डवोंको ढूंढें, और बुद्धिसे विचारें कि पाण्डव कहां है? और जाननेवाले बुद्धिमान निपुण तथा पाण्डवोंके भक्त लोग भी छिपे हुए पाण्डवोंको ढूंढें। नदी, कुञ्ज, तीर्थ, गाव, नगर, रमणीय आश्रम,

पर्व्वत और गुफाओंमें भी पाण्डवेंको ढूंढ़ना चाहिये।

अनन्तर महापापी दुर्य्योधनका छोटा भाई दुःशासन राजा दुर्य्योधनसे बोला, हे महाराज! हे पृथ्वीनाथ! जिन दूतोंपर हमारा विश्वास है, वेही लोग पुनः पारितोषिक पाकर पाण्डवोंको ढूंढ़ने जायं। कर्णने जिस प्रकार कहा वैसेही दूत पाण्डवोंको ढूढ़ें। ये सब लोग क्रमके अनुसार एक देशसे दूसरे देशको जायं और पाण्डवोंको ढूढ़ें। यदि उनका पता न लगे तो जान लीजिये कि वीर पाण्डवोंको महा वनमें सर्पोंने खा लिया, या वे लोग समुद्रके पार चले गये। अथवा बहुत दिनतक दुःख भोगते भोगते कहीं मर गये होंगे। हे कुरुनन्दन! हे पृथ्वीनाथ! इसलिये आप अपने मनको स्थिर करके उत्साह सहित अपने कार्य्योंको कीजिये।

२५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! जनमेजय! इसके पश्चात महा बलवान सब शास्त्रोंको जाननेवाले द्रोणाचार्य्य बोले,—

पाण्डवोंके समान पुरुष नष्ट नहीं होते और न कोई उनका निरादर कर सकता है! वे चारो शूर, विद्वान, बुद्धिमान, जितेन्द्रिय, धर्म्मज्ञ और धर्म्मराज युधिष्ठिरके भक्त हैं। चारो पाण्डव नीति और धर्म्मके जाननेवाले हैं, सब धर्म्मोंके करनेवाले, बुद्धिमान, युधिष्ठिरको समानही मानते हैं। हे महाराज! महात्मा श्रीमान भाइयोंको माननेवाले अजातशत्रु युधिष्ठिरके चारों भाई उनके भक्त हैं! अपने भक्त महात्मा, बलवान, भाइयोंके लिये महाराज युधिष्ठिर क्यों नहीं यत्न करेंगे? इस लिये मुझे अपनी बुद्धिसे निश्चय होता है कि उनका नाश नहीं हुआ, वे लोग कहीं छिपकर अपना समय बिता रहे हैं, इस लिये इस समय जो कुछ करनेके योग्य कार्य्य हो, सो तुमको अत्यन्त विचारके सहित करना चाहिये। क्योंकि अब बिलम्ब करनेका समय नहीं है। पाण्डव लोग शूरवीर और तपस्वी हैं; इस लिये उनका जानना बहुत कठिन है। तुम महात्मा सब शास्त्रोंके जाननेवाले पाण्डवोंको शीघ्र ढूंढ़ो। महाराज युधिष्ठिर पवित्रात्मा, गुणवान, पवित्र, सत्यवादी, नीति जाननेवाले, अनन्त पराक्रमी और धर्म्मात्मा हैं, इस लिये प्रत्यक्ष रहनेपर भी उनको कोई नहीं देख सकता। इस लिये तुम उनको यत्नसे ढूंढ़ो, फिर हम ब्राह्मण; सिद्ध, और उनके जाननेवाले मनुष्योंसे ढुढ़वावेंगे।

२६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! जनमेजय! द्रोणाचार्य्यके बचनके पश्चात उनके बचनकी प्रशंसा करके सब धर्म्मोंके तत्व तथा देश और कालको जाननेवाले सब कौरवोंके पितामह शान्तनुपुत्र भीष्म सबके कल्याणके लिये ऐसा बचन बोले। भीष्मके बचन पक्षपात रहित, साधुओंके मानने योग्य दुष्टोंको दुर्लभ और धर्म्म जाननेवाले युधिष्ठिरके अनुकूल थे।

भीष्म बोले, सब अर्थके जाननेवाले ब्राह्मण द्रोणाचार्य्यने जो कुछ कहा सो सब सत्य है, पाण्डव लोग सब लक्षणोंसे भरे, उत्तम कार्य्य करनेवाले, वेदपाठी, व्रतधारी, अनेक श्रुतियोंके जाननेवाले सत्यवादी, बड़ोंकी आज्ञा माननेवाले, समयवेत्ता और पवित्र हैं। वे लोग कहीं अपना समय बिता रहे हैं। पाण्डव क्षत्रियोंका धर्म्म करनेवाले कृष्णके भक्त, महावीर, महाबली, महात्मा और साधुओंके मार्गपर चलनेवाले हैं। इस लिये उनको कदापि दुःख नहीं होगा। उनका बल और धर्म्मही उनकी रक्षा करता है, मुझे निश्चय है कि उनका नाश नहीं होगा।

हे भारत। मैं उनके ढूंढ़नेकी एक नीति बतलाता हूं, महात्मा पाण्डवोंको दुष्टलोग नहीं ढढ़ सकते हैं, इस लिये हमलोगोंको जो करना चाहिये सो तुमसे कहते हैं, हम यह सम्मति तुम्हारे द्रोहसे नहीं देते हैं। ऐसा नियम है कि कदापि दुष्ट या साधुसे अधर्म्मके बचन नहीं कहने चाहिये और तुमसे कदापि अधर्म्मके बचन नहीं कह सकते। हे तात! वृद्धोंकी आज्ञा माननेवाले, धीर मन्त्रीको धर्म्मको सत्य मानके सत्यही कहना उचित है। तुम्हारे मन्त्री लोग इस तेरहवें वर्षमें धर्म्मराजके जो जो स्थान बतलाते हैं, हम उन सबको नहीं मान सकते। जिस नगरमें महाराज युधिष्ठिर होंगे, वहां राजा और प्रजा सब सुखी होंगे। जहां राजा युधिष्ठिर होंगे, तहांके मनुष्य दान, सत्य और लज्जासे भरे होंगे। जहां राजा युधिष्ठिर होंगे, तहांके पुरुष मीठीवाणी बोलनेवाले, सत्यवादी, कल्याणयुक्त, दानी, प्रसन्न; पुष्ट, पवित्र और सब कर्म्मोंमें निपुण होंगे। जहां राजा युधिष्ठिर होंगे, तहां कोई भी निन्दक, दुष्ट अभिमानी, और परद्रोही नहीं होगा। जहां राजा युधिष्ठिर होंगे उस देशमें चारों वेदके शब्द पूर्णाहुती और महादच्छिणावाली अनेक यज्ञ होती होंगी। वहां सदाही मेघ उचित समयपर वर्षा करता होगा, पृथ्वी अन्नसे भरी होगी, और देश दुःखसे रहित होगा। उस देशके अन्न गुणसे, फल रसोंसे, फूल सुगन्धियोंसे वाणी कोमलतासे, वायु शीतलतासे और दर्शन साधुतासे भरे होंगे। जहां राजा युधिष्ठिर होंगे, वहां कोई भय नहीं होगा, उस देशमें अनेक बल और पुष्टिसे भरी गऊ होंगी, दूध दही और घी रसोंसे भरा होगा, वहांको खाने और पीनेको वस्तु गुणयुक्त होंगी; वहांके रस, स्पर्श, गन्ध, शब्द और रूप गुणोंसे भरे होंगे। जहां राजा युधिष्ठिर होंगे वहां सब लोग अपने अपने कर्म्मको करते होंगे। हे तात। इस तेरहवें वर्षमें पाण्डवोंके सहित जहां राजा युधिष्ठिर होंगे, उस देशके सब लोग पवित्र और प्रसन्न होकर परस्पर प्रीति करते होंगे। जहां राजा युधिष्ठिर होंगे, तहांके सब लोग उत्साह सहित अपने अपने धर्म्मोंके अनुसार इष्ट देवता और अतिथियोंकी पूजा करते होंगे, और अनेक उत्तम उत्तम कार्य्योंमें तत्पर होंगे। जहां राजा युधिष्ठिर होंगे, तहांके लोग पापको छोड़कर धर्म्मही करते होंगे और यज्ञ तथा व्रत करते होंगे। उस देशके सब लोग धार्म्मिक हो गये होंगे। हे तात। कुन्तीनन्दन युधिष्ठिरके जाननेमें धर्म्मात्मा ब्राह्मण भी समर्थ नहीं हैं, और सामान्य पुरुषोंकी तो बात ही क्या है? युधिष्ठिरमें सत्य, धारणा, दान, दम, शान्ति, क्षमा, लज्जा, तेज, कीर्त्ति, शील, और साधुता निवास करते हैं। मैं इससे अधिक और कुछ नहीं कह सकता, मैं जानता हूं कि बुद्धिमान युधिष्ठिर ऐसे ही स्थानमें होंगे। यदि तुमको मेरे वचनपर विश्वास हो तो विचार पूर्व्वक अपने कल्याणके कार्य्य करो।

२७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। इसके पश्चात् शारद्वतके पुत्र कृपाचार्य्य बोले।

वृद्ध भीष्मने पाण्डवोंके विषयमें जो दर कहा सो सब सत्य है। भीष्मकी वाणी हेतु और धर्म्मसे भरी अनुकूल मीठी और अत्यन्त कोमल थी, मैं भी इस विषयमें कुछ कहना चाहता हूं; सुनिये। पाण्डवोंके रहनेका स्थान दूतोंके द्वारा जानना चाहिये, और जो कल्याणदायक नीति हो सो भी इस समय करनी चाहिये। हे तात! साधारण वैरीको भी छोड़ना उचित नहीं है, फिर सब शस्त्रोंमें

जाननेवाले पाण्डवोंकी तो कथाही क्या है? इस लिये हमें निश्चय होता है कि महात्मा पाण्डव लोग कहीं छिपकर यत्न करते होंगे और अपने समयको विताते होंगे। इसमें सन्देह नहीं है कि अब पाण्डवोंके उदय होनेका समय आगया, इस लिये तुम अपने और मित्रोंके राज्यमें सेनाका प्रबन्ध करो, क्योंकि इस वर्षके बीततेही अपार तेजस्वी महा बलवान पाण्डवोंका उत्साह बहुत बढ़ जायगा, इस लिये तुम सेना, कोश और राजनीतिका विचार करो, फिर समय आनेपर हम लोग उचित कार्य्य करेंगे। हे तात! तुम अपनी बुद्धिसे भी अपने बलका बिचार करो, तथा निर्व्वल और बलवान मित्रोंका भी विचार कर लो; इसके पश्चात हम लोग अपने उचित और अनुचित बलको देखकर शत्रुओंके सङ्ग कोई व्यवहार करेंगे। चाहे शान्तिसे हो, चाहे भेदसे हो, चाहै दानसे हो, चाहे दण्डसे हो, चाहे कुछ देनेसे हो, तुम सब राजोंसे मेलकर लो। बलवानोंको न्यायसे, दुर्व्बलोंको डरसे, और मित्रोंको शान्तिसे अपने वशमें कर लो; इसके पश्चात् सेना और कोषको बढ़ावो, क्योंकि तुम्हारा युद्ध बलवान पाण्डवोंसे होनेवाला है। पाण्डवोंके पास सेना और वाहन कुछ भी नहीं हैं, इस लिये तुम धर्म्मानुसार विचार कर सब कार्य्योंको करो, तब बहुत कालतक सुख भोगोगे।

२८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजा जनमेजय! उसी समय त्रिगर्त्त देशका राजा दुर्य्योधनका रथ-सेनापति महा बलवान सुशर्म्मा बोला, हे प्रभो! मत्स्यदेशके राजा विराटके बल सेनापति सूतने कई वार शाल्व देशके क्षत्रियोंको जीता था, उसको बन्धुओं सहित किसीने मारडाला। राजा सुशर्म्माके ऐसे वचन सुन राजा दुर्य्योधनने कर्णकी ओर देखकर ऐसे वचन कहे, पहिले समयमें मत्स्यराज विराटने हमारे राज्यमें बहुत उपद्रव किया था, उसका कीचक नामक सेनापति बड़ा बलवान था, उस महाक्रोधी, क्रूर, दुष्ट, महा बलवान, पापी, निर्लज्ज कीचकको गन्धर्व्वोंने मारडाला। मेरी बुद्धिमें आता है कि उसके मरनेसे राजा विराट निरुत्साह और निराश्रय होगया होगा। हे पापरहित! यदि तुम्हारी सम्मति हो तो सब कौरव और तुम्हारे सहित हम वहांकी यात्रा करें, मेरी बुद्धिमें यह काम इस समय करनेके योग्य है। उस राज्यमें बहुत अन्न उत्पन्न होता है, इस लिये लेनेके योग्य है, उसके मिलनेसे अनेक प्रकारके रत्न और धन मिलेंगे। फिर हम सब लोग उसके गांव और राज्य बांट लेंगे, अथवा अनेक प्रकारको उत्तम गऊ छीन लावेंगे, और अपने बलसे उसके राज्यको पीड़ा भी देंगे। हे कर्ण! हम लोग त्रिगर्त्त और कौरवोंके सङ्ग जाकर उनकी गौओंको छीन लावेंगे। फिर सेनाका विभाग करके उसका बांध लावेंगे; अथवा उसको सब सेनाको मारकर राजाको वशमें कर लेंगे, फिर हम लोग उसके सङ्ग न्याय करके सुखसे रहेंगे। ऐसा करनेसे निःसन्देह तुम लोगोंकी वृद्धि होगी।

राजाके ऐसे वचन सुन कर्ण बोले, हे राजन्! सुशर्म्माने बहुत उत्तम बात कही, यह कार्य्य हम लोगोंको इसी समय करने योग्य है, इससे अवश्यही हमारा कल्याण होगा, इस लिये हम लोग सेनाका विभाग करके शीघ्रही विराट नगरको चलें, अथवा हमारे सबके पितामह महा पण्डित कुरुकुल वृद्ध भीष्म, गुरु द्रोणाचार्य्य और कृपाचार्य्यकी जैसी सम्मति हो, तैसाही कार्य्य करना चाहिये; हम सब लोगोंकी सम्मतिके अनुसार राजा विराटको जीतनेके लिये जायंगे। अब हम

लोगोंको हीनबल पाण्डवोंसे क्या प्रयोजन है? वे लोग कहीं पड़े होंगे या मर गये होंगे। हे राजन्! अब हम लोग विराट नगरको सुखपूर्व्वक जायंगे, और वहां जाकर उसकी सब गऊ और सब धनोंको छीन लावेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा दुर्य्योधनने विकर्त्तनपुत्र कर्णके बचनको ग्रहण किया और सब बूढ़ोंसे सम्मति करके अपने आज्ञा पालक दुःशासन भाईको शीघ्र सेना ठीक करनेकी आज्ञा दी। दुर्य्योधन बोले, राजा सुशर्म्मा सेना और वाहनोंके सहित पहलेही बिराट नगरको जायं, पीछेसे हम लोग भी युद्धके समय दूसरे दिन विराट नगरमें पहुंचेंगे। सब ऋद्धियोंसे भरे हुए मत्स्य देशमें शीघ्रही हमारी सेना पहुंचे, और सङ्गही अहीर लोग भी जायं! सेनाके लोग अनेक प्रकारके धनको लूटें, अहीर लोग उत्तम लक्षणयुक्त लाख गौओंको प्राप्त करें। हमारी सेनाके दो विभाग किये जायं, एकके सङ्ग त्रिगर्त्तराज सुशर्म्मा जायं और दूसरेके सङ्ग हम स्वयम जायंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजाकी आज्ञाके अनुसार वह महासेना हस्तिनापुरसे निकलकर अग्निकोणको चली, उस दिन कृष्णपक्षकी सप्तमी थी। अनेक बलवान वीर सन्नद्ध होकर रथोंपर चढ़े; अनेक पदाति लोग पैरों चलने लगे। यह महा बलवती सेना पहले बैरको स्मरण करके गौओंके लोभसे शीघ्र चलने लगी। इस सेनाके सेनापति राजा सुशर्म्मा हुए।

दूसरे दिन अर्थात् कृष्णपक्षकी अष्टमीको सेनाका दूसरा भाग गौओंको लेनेके लिये सब कौरवोंके सहित हस्तिनापुरसे चला।

२६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! जनमेजय! उसी दिन कपट वेषधारी महातेजस्वी महात्मा पाण्डवोंका तेरहवां वर्ष पूर्ण हुआ। पाण्डवोंने विराटकी सेवा करते करते इस एक वर्षको उसी नगरमें बिताया। कीचकके मरनेके पश्चात् शत्रुनाशन विराटने कुन्तीनन्दन युधिष्ठिरमें बहुत श्रद्धा बढ़ाई। इस तेरहवें वर्षके अन्तके दिन कौरवोंकी सेनाका प्रथम भाग विराटनगरमें पहुंचा। राजा सुशर्म्माने बिराटके अहीरोंसे सब गऊ छीन लीं। उसी समय गोपरूपधारी सहदेव बहुत वेगसे दौड़कर नगरमें आये और रथसे उतरकर राजसभामें पहुंचे। उस समय राजा कुण्डल और बाजूबन्दधारी महा पराक्रमी योद्धा महात्मा पाण्डव और मन्त्रियोंके सहित बैठे थे। राजाको देख गोपने प्रणाम करके कहा, हे राजन्! त्रिगर्त्त देशके राजा सुशर्म्मा बान्धवों सहित हम लोगोंको युद्धमें जीत कर आपकी एकलाख गऊ छीन ली। हे राजेन्द्र! आप शीघ्र प्रबन्ध कीजिये, वह आपके पशुओंको लेकर चला जाता है। गोपके ऐसे बचन सुन राजाने शीघ्र सेनाके सन्नद्ध होनेकी आज्ञा दी। राजाकी आज्ञा सुनतेही रथ, हाथी घोड़े और पदातियोंसे भरी हुई सेना युद्धको उपस्थित होगई, रथोंपर ध्वजा उड़ने लगीं, राजा और राजपुत्र कवच पहनने लगे, शूरवीर लोग घोर सेवित तेजस्वी शस्त्रों धारण करने लगे। उसी समय राजा विराटके प्यारे भाई शतानीकने लोहेका बना सैकड़ों तारोंसे खिचा वज्रके समान दृढ़, शत्रुओंको भय देनेवाला कवच पहना। उसके पश्चात् शतानीकसे छोटे भाई मदिराक्षने भी सूर्य्यके समान प्रकाशमान सैकड़ों बिन्दुओंसे शोभित अभेद्य कवच धारण किया। इसके पश्चात राजा विराटने अनेक सुगन्धित कमलोंसे शोभित सोनेके कवचको पहना,

पीठमें सोनेका और सर्व्वत्र लोहेका बना सफेद सोनेवाला कवच राजाके छोटे भाई सूर्य्यदत्तने धारण किया। इनके पश्चात् राजाके बड़े पुत्र वीर शंखने कवच पहिना, उसके पश्चात् अनेक महारथोंने कवच धारण किया। वे सब वीर लोग कवचोंको धारण करके ऐसे शोभित हुए, मानो साक्षात् देवता रूप धारण करके आये हैं। उसी समय सारथियोंने सुन्दर प्रकाशमान महारथ वीरोंके रथोंमें चांदीके जालसे शोभित घोड़ोंको जोड़ा, उसी समय महानुभाव विराटके सोनेके बने हुए सूर्य्य और चन्द्रमाके समान प्रकाशित रथमें ध्वजा चढ़ाई गई। उसके पश्चात् और सब वीरोंके रथोंमें सोनेके दण्डवाली ध्वजा लगाई गईं। फिर राजाकी आज्ञासे शूरवीर क्षत्री लोग क्रमके अनुसार रथोंमें बैठने लगे, उसी समय राजा विराटने अपने छोटे भाई शतानीकको आज्ञा दी। विराट बोले मेरी बुद्धिमें आता है कि कङ्क, वल्लव, गोपाल, और दामग्रान्थि अवश्य युद्ध करेंगे। ये चारों बहुत बलवान दीखते हैं, इस लिये तुम इन चारोंकोभी ध्वजायुक्त रथ, और विचित्र तथा दृढ़, कोमल कवच दो। ये लोग कवचोंको पहनें और शस्त्रोंको धारण करें। इनके रूपसे मुझे निश्चय होता है कि, ये सब महावीर हैं, इनके हाथ हाथीके सूंड़के समान हैं, मुझे निश्चय है कि ये लोग कदापि युद्धसे नहीं हटेंगे। राजाकी आज्ञा सुनतेही शतानीकने युधिष्ठिर, भीम, नकुल और सहदेवको रथ, कवच और शस्त्र दिये। उसी समय राजभक्त सारथियोंने पाण्डवोंके निमित्त उत्तम रथोंमें घोड़े जोड़े। राजाकी आज्ञानुसार शत्रुनाशन पुरुषसिंह पाण्डवोंने प्रसन्न होकर कोमल और दृढ़ कवचोंको धारण किया। शत्रुसेना नाशक, युद्धविद्याके पण्डित, महा बलवान पाण्डव कवच और शस्त्रोंको धारण करतेही ऐसे शोभित हुए जैसे मतवारे हाथी। महाबलवान कुरुकुल श्रेष्ठ सत्यपराक्रमी चारों पाण्डव प्रसन्न होकर सोनेके रथोंमें बैठकर राजाके सङ्ग चले। उस सेनामें साठ वर्षके बड़े दांतवाले मतवारे हाथी शिक्षित वीरोंके सहित इस प्रकार चले जैसे रूपधारी पर्व्वत। उत्तम जीविका पानेवाले युद्धविद्याके जाननेवाले मुख्य योद्धाओंके आठ हजार रथ, एक हजार हाथी और साठ हजार घोड़े विराटके सङ्ग नगरसे निकले। हे भरतकुलसिंह! यह विराटकी महासेना नगरके बाहर आकर खड़ी हुई। सेनाके अगाड़ीके रथ और घोड़ोंपर चढ़े हुए शस्त्रधारी वीरोंने देखा कि राजा सुशर्मा गाओंको लिये चले जाते हैं।

३० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कि हे राजा जनमेजय! जब वह सेना नगरके बाहर पहुंची, उस समय सूर्य्यका तेज कम होगया अर्थात दोपहर दिन बीत गया। उसी समय राजा विराटने अपनी सेनाका व्यूह बनाया। तब वह सेना सुशर्म्माकी सेनासे युद्ध करनेको उपस्थित हुई। त्रिगर्त्त देश और मत्स्य देशकी सेना युद्धमें उन्मत्त होकर लड़ने लगी। दोनों सेनाके महा बलवान वीर इस प्रकारसे गर्ज गर्ज युद्ध करने लगे, जैसे एक गऊके लिये दो बैल लड़ते हों। बड़े शरीरवाले मतवारे हाथी निपुण वीरोंके सहित युद्ध करने लगे। यह युद्ध ऐसा घोर हुआ कि वीरोंके रोवें खड़े होने लगे, एक दूसरेको मारने लगा, इस लिये यह युद्ध देवासुर सग्रामके तुल्य होगया। उस समय दिन बहुत थोड़ा शेष रह गया था, तब हाथी घोड़े और पदातियोंसे परस्पर युद्ध होनेसे आकाशमें धूल छागई, मांस खानेवाले पक्षी सेनामें गिरने लगे। बाणोंसे सूर्य्य छिप गये, आकाशमें शस्त्र जुगनूके समान चमकने लगे।

उसी समय धनुषधारी बीर लोग सोनेसे चित्रित लोहेके बाणोंको छोड़ने लगे; अनेक बीर लोग इधर उधर गिरने लगे. रथी रथीसे, पदाति पदातिसे, घोड़ेवाले घोड़ेवालोंसे और हाथी-वाले हाथीवालोंसे युद्ध करने लगे। युद्धमें खड्ग, पट्टिस, प्राश, शक्ति और तोमर चलने लगे। परिघके समान हाथवाले बीर लोग एक दूसरेको मारने लगे, परन्तु यह किसीकी शक्ति न हुई कि दूसरेकी सेनाको हटा दे। किसीका होठ, किसीको नाक, और किसीके गाल कट गये। वह पृथ्वी कटे हुए कुण्डलधारी शिरोंसे भर गई। पृथ्वीमें बाणोंसे कटे हुए शरीर दीखने लगे। वह महायुद्धभूमि शालके समान ऊंचे क्षत्रियोंके शरीर, हाथीके शुण्डके समान चन्दन लगे हाथ और कुण्डलधारी शिरोंसे भर गई। उस समय रथीसे रथी, और पदातसे पदाति युद्ध करने लगे। रुधिर बहनेसे सब धूल शान्त हो गई, तब बीरोंको मूर्च्छा होने लगी, तब मर्य्यादा रहित युद्ध होने लगा, आकाशके उड़नेवाले पक्षी भी बाणोंसे व्याकुल हो गये। परिघके समान हाथवाले बीरोंने महायुद्ध किया, तौभी दूसरी सेनाको न हटा सके। उस समय शतानीकने एक सौ और विशालाक्षने चार सौ बीरोंको मारकर सुशर्म्मा की महा सेनामें प्रवेश किया। उन दोनों महारथ महा बलवान तेजस्वी बीरोंने सुशर्म्माकी सेनामें घुसके अपने बाहुबलसे घोर युद्ध किया, अनन्तर आगे सूर्य्यदत्त और पीछेसे मादिराक्षन भी सुशर्म्माको सेनामें प्रवेश किया। राजा विराटने पाच सौ रथोंको आठ सौ घोड़ोंको और पाच महारथोंको मारकर घोर युद्ध किया, फिर राजा सुशर्म्माके सोनेके रथको अपने बाणोंसे छा लिया। ये दोनो महात्मा महा बलवान दोनों राजा इस प्रकार गर्जकर युद्ध करने लगे, जैसे दो बैल लड़ते हैं। उस समय त्रिगर्त्त देशके राजा युद्ध-मत्त सुशर्म्मा मत्स्यराज विराटके आगे युद्ध करनेको आये। तब उन दोनोंका दो रथसे युद्ध होने लगा। ये दोनों क्रोधी राजा इस प्रकार बाण बरसाने लगे, जैसे मेघ जल बरसाते हैं। वे दोनों क्रोधी शस्त्रोंके जाननेवाले तीक्ष्णबाण, खड्ग, शक्ति और गदाओंसे युद्ध करने लगे। अनन्तर राजा विराटने सुशर्म्माके शरीरमें दस बाण मारे और पाच पांच बाणोंसे चारों घोड़ोंको मार डाला, इसी प्रकार शस्त्रोंके जाननेवाले महा योद्धा सुशर्म्माने भी राजा विराटके शरीरमें पचास तीक्ष्ण बाण मारे। उस समय कोई सैनिक अपने पक्षके पुरुषको नहीं जान सकता था, क्योंकि आकाश धूल और अन्धकारसे भर गया था।

३१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! जनमेजय! जब सब लोग अन्धकार और धूलसे भर गये, तब दोनों सेना व्यूह बनाकर एक क्षण युद्धसे विमुख हो गई। तब निर्म्मल रात्रिको प्रकाश करता हुआ और युद्धमें क्षत्रियोंका आनन्द बढ़ाता हुआ चन्द्रमा उदय हुआ। तब चादनी होनेसे फिर घोर युद्ध होने लगा। उस समयके युद्धमें एक दूसरेको नहीं देखता था। उस समय राजा सुशर्म्मा अपने छोटे भाई और रथ समूहके साहत राजा विराटको ओर दौड़ा और उन्हें चारों ओरसे घेर लिया, अनन्तर वे दोनों भाई रथसे उतर कर और गदा धारण करके विराटकी ओर दौड़े। राजा सुशर्म्माकी सेनाभी तीक्ष्ण धारवाले खड्ग, गदा परिघ और प्राश धारण करके विराटकी ओर दौड़ी। उस समय विराटकी सेना सुशर्म्माकी सेनासे हार गई। तब वे दोनो भाई विराटकी ओर इस प्रकार दौड़े जैसे कामी स्त्रीको ओर दौड़े। उन दोनोंने राजा विराटके रथकी धुरीको तोड़ दिया और उनके रक्षकोंको मारडाला। फिर

उनके रथपर चढ़कर विराटको जीते ही बांध लिया, और अपने रथमें डालकर शीघ्र चल दिया। जब बलवान विराट रथहीन होकर पकड़े गये, तब उनकी सब सेना भयसे व्याकुल होकर भागने लगी। तब कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरने शत्रुनाशक महाबाहु भीमसेनसे कहा, हे महाबाहो! इस त्रिगर्त्तराज सुशर्म्माने विराटको पकड़ लिया! इस लिये तुम ऐसा उपाय करो जिससे राजा शत्रुओंके वशमें न हों, हे भीम! हम इसके घरमें सुखसे एक वर्ष रहे हैं, तुम उसके कर्म्मका प्रतिफल दो।

भीमसेन बोले, हे महाराज! मैं आपकी आज्ञासे अभी विराटको छुड़ा लेता हूं, आप इस युद्धमें मेरे महा पराक्रमको देखिये। मैं अभी सब शत्रुओंका नाश कर दूंगा। हे राजन्! आप भाइयोंके सहित एकान्तमें खड़े होकर मेरे बाहुबलको देखिये। यह बडी शाखावाला जो वृक्ष खड़ा है, मैं अभी उसको उखाड़कर सब शत्रुओंको नाश कर दूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब भीमसेन मतवारे हाथीके समान उस वृक्षको देखने लगे, तब धर्म्मराज युधिष्ठिरने वीर भीमसे कहा, हे भीम! तुम साहस मत करो क्योंकि इस वृक्षके उखाड़नेसे सब लोग जान जायंगे कि यही भीम है। तुम कोई दूसरा शस्त्र धारण करो, चाहे धनुष, चाहे खड्ग या शक्तिही धारण करके राजाको छुड़ा लो। तुम युद्धमें कोई अमानुष कर्म्म मत करना, महा बलवान नकुल और सहदेव तुम्हारे रथकी रक्षा करेंगे, तुम तीनों मिलकर विराटको छुड़ा लो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजाकी आज्ञा सुन भीमसेनने घोर धनुष धारण करी और वेगसे सुशर्म्माकी ओर दौड़े। भीमसेनने ऐसे बाण बरसाये जैसे मेघ जल बरसाता है। अनन्तर घोर कर्म्म करनेवाले सुशर्म्मासे भीमने पुकार कर कहा कि खड़ारह! खड़ारह! उसी समय भीमने राजा विराटकी ओर देखा, तब राजा सुशर्म्माने विचारा कि यह साक्षात् मृत्यु और यमराजके समान रूपधारी कौन वीर चला आता है? मुझे निश्चय है कि अब घोर युद्ध होगा। तब सुशर्म्मा भी अपने भाइयोंके सहित धनुष धारण करके युद्ध करनेको लौटा। भीमसेनने क्षण भरमें सहस्रों रथ, हाथी, घोड़े और पदातियोंको मारके पृथ्वीमें गिरा दिया। भीमसेनके बाणोंसे सहस्रों धनुषधारी शूरवीर पृथ्वीमें सो गये। राजा विराटके समीपही भीमने सहस्रों वीरोंको गदासे मारके गिरा दिया। भीमसेनके इस घोर कर्म्मको देखकर राजा सुशर्म्मा विचारने लगे कि अब मेरी सेनामें क्या शेष है? मेरा दूसरा भाई महायुद्ध कर रहा है, अब मुझे क्या करना चाहिये? उस समय राजा सुशर्म्मा अपने कानतक धनुष खींचकर बाण छोड़ने लगे। तब सब वीरोंने अपने अपने रथोंको युद्धकी ओर चलाया। तब पाण्डव लोग दिव्यास्त्र चलाने लगे। पाण्डवोंको युद्ध करते देख विराटकी सब सेना लौटी। तब उस समय विराटका बड़ा पुत्र क्रोध करके महा युद्ध करने लगा। उस युद्धमें राजा युधिष्ठिरने हजार वीरोंको मारा। भीमने सात सहस्र वीरोंको मारा। नकुलने सात सौको मारा, और प्रतापवान सहदेवने भी तीन सौ वीरोंको मारा। उस समय युधिष्ठिरकी आज्ञासे भीमसेन गदा लेकर सुशर्म्माकी ओर दौड़े। महाराज युधिष्ठिर उस महासेनाका नाश करके आपही राजा सुशर्म्माकी ओर चले। उसके रथके समीप जाकर महाराजने बाण वर्षा करनी आरम्भ करी। सुशर्म्माने भी क्रोध करके राजा युधिष्ठिरके शरीरमें नवबाण मारे और चारबाण चारों घोड़ोंको मारे, उसी समय महातेजस्वी भीमने राजा सुशर्म्माके चारों घोड़ोंको मार

डाला और उसके रक्षकोंको मारकर उसके सारथीको भी पृथ्वीमें गिरा दिया; उसी समय जगत् विख्यात मदिराक्ष नामक रथरक्षक रथ सहित राजा सुशर्म्माके पास आकर युद्ध करने लगा, उसी समय राजा विराट सुशर्म्माके रथसे उतरे और सुशर्म्माकी गदा छीनकर घोर युद्ध करने लगे। बूढ़े विराट तरुण पुरुषके समान युद्ध करने लगे। उस समय सुशर्म्मा युद्धको छोड़कर भागा। तब भीमसेन बोले, हे राज-पुत्र तुमका भागना उचित नहीं है। क्या इसी बलपर गउओंको छीनने आये थे? क्या इसी बलसे युद्ध करना चाहते थे? अपने संगियोंको शत्रुओंके बीचमें छोड़ कर क्यों भागे जाते हो? भीमसेनके ऐसे बचन सुन सुशर्म्माने भीमसेनसे कहा कि खड़ा रह। खड़ारह। फिर सुशर्म्मा भीमसेनकी ओर वेगसे दौड़ा। महापराक्रमी भीमभी अपने रथसे उतरकर सुशर्म्माको जीतेही पकड़नेके लिये उसकी ओर दौड़े। भीमसेन दौड़ते हुए सुशर्म्माकी ओर ऐसे दौड़े जैसे सिंह छोटे हरिनकी ओर दौड़ता है। भीमसेनने दौड़कर सुशर्म्माके बाल पकड़ लिये और क्रोधसे उठाकर पृथ्वीमें पटक दिया, फिर रोते हुए सुशर्म्माके शिरमें लात मारी और जङ्घासे दबाकर उसको घसे मारने लगे। बहुत चोट लगनेसे राजा सुशर्म्माको मूर्च्छा हो गई। महारथ सुशर्म्माके पकड़े जानेसे उसकी सब सेना भाग गई। महाराज पाण्डवोंने अपनी सब गौओंको छीन लिया और उनका सब धन लूट लिया तथा सुशर्म्माको पकड़ लिया। तब महाव्रतधारी महात्मा लज्जावान महाबली पाण्डव लोग राजा विराटके चारों ओर खड़े हो गये। तब भीमसेन बोले यह पापी मुझसे जीता नहीं बच सकता परन्तु महाराज अत्यन्त दयावान हैं, इस लिये मैं कुछ नहीं कर सकता। अनन्तर भीमसेनने विवश सुशर्म्माका गला पकड़ बाध लिया और धूलमें लिपटे हुए मूर्च्छित सुशर्म्माको रथमें डालकर युद्धसे बाहर निकाला। फिर महाराज युधिष्ठिरसे बोले कि यही पापी सुशर्म्मा नामक राजा है। महाराज युधिष्ठिर राजा सुशर्म्माको देखकर बहुत हंसे और भीमसेनसे बोले, हे भीम! इस पापी सुशर्म्माको छोड़ दो।

भीम बोले, हे मूर्ख! यदि तू अपना जीवन चाहता है तो हमारे वचनको सुन, यदि तू जीना चाहता है तो सब पण्डितोंकी सभामें जाकर कह कि मैं राजा विराटका दास हूं। ऐसा करनेसे मैं, तुम्हें जीवदान दगा, युद्धमें जीते हुएके सङ्ग ऐसाही किया जाता है।

भीमसेनके ऐसे वचन सुन राजा युधिष्ठिर बोले, हे भीम। यदि तुम हमारे वचनको मानते हो तो इस पापीको शीघ्र छोड़ दो। हे सुशर्म्मन्! हम तुम्हें अदास पदवी देते हैं, जा हमने, तुम्हें छोड़ दिया, फिर ऐसा कभी मत करना।

३२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! ऐसा सुनकर सुशर्म्माने लज्जासे अपना मुख नीचा कर लिया, फिर राजा विराटको प्रणाम किया। पाण्डवोंने सुशर्म्माको इस प्रकारसे जीता। शत्रुओंके नाश करनेवाले बाहुबल, लज्जा और व्रतसे भरे पाण्डवोंको राजा विराटने बहुत धन दिया और उन महारथोंका असाधारण पराक्रम देखकर उनका बहुत सम्मान किया।

विराट बोले, जो कुछ हमारे रत्न हैं सो सब आपही लोगोंके हैं। इस लिये आप लोग अपनी अपनी इच्छानुसार राज्यके काम कीजिये, और सुख भोगिये। हम आप लोगोंको भूषणोंके सहित अनेक कन्या देंगे और अनेक प्रकारके धन भी देंगे। आप लोग सब शत्रुओंको नाश करनेवाले और महा बलवान

हैं; हम आप लोगोंके पराक्रमसे शत्रुके हाथसे छुटे और सुखी हुए। इस लिये आपही लोग इस देशके राजा हुए।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा विराटके ऐसे वचन सुन युधिष्ठिरादि पाण्डव हाथ जोड़कर बोले, हे महाराज। आप जो कुछ कहते हो, सो सब सत्य है, हम लोग आपके वचनकी प्रशंसा करते हैं। हे पृथ्वीनाथ! आप शत्रुओंके हाथसे छूट गये, इसीसे हमको सब कुछ प्राप्त होगया। पाण्डवोंके ऐसे वचन सुनकर मत्स्यराज विराट प्रसन्न होकर युधिष्ठिरसे बोले, आप हमारे पास आइये, हम आपको इस देशका राजा बनाते हैं, यह पद जगतमें दुर्लभ है, सब लोग मनसे भी इस पदकी इच्छा करते हैं, आप हमारे सर्व्वस्वके अधिकारी होनेके योग्य हैं। रत्न, गौ, सुवर्ण, मणि, मुक्ता और भी अनेक वस्तु हमारे जो हैं सो आपहीको हैं। हे व्यैयाघ्र पद गोत्रोत्पन्न! हे ब्राह्मण श्रेष्ठ! हम आपको प्रणाम करते हैं। आपहीके बलसे मेरे राज्य और पुत्रादि बचे हैं! मैं आज युद्धमें शत्रुओंके वशमें होगया था, आपहीके बलसे छूटा हूं। ऐसे वचन सुन महाराज युधिष्ठिरने राजा विराटसे पुनः कहा, हे राजन्! हम आपके उत्तम वचनोंको ग्रहण करते हैं, आप निर्भय होकर सुख भोगिये। अब दूत लोग शीघ्रही नगरमें जाय, आपके मित्र और सब पुरुषोंसे भी आपके विजयका वर्णन करें। तब राजा विराटने युधिष्ठिरके वचनानुसार दूतोंको आज्ञा दी कि तुम लोग नगरमें जाकर हमारे विजयका समाचार कह दो, कुमारी आभूषण पहन कर नगरसे हमारे पास आवें, सब प्रकारके बाजे बजें और वेश्या आभूषण धारण करके नाचें। राजा विराटकी ऐसी आज्ञा सुन दूत प्रसन्न होकर नगरको गये और प्रातःकाल होतेही नगरमें उस समाचारको प्रकाशित कर दिया।

३३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। जब राजा सुशर्म्मा हारकर मत्स्यदेशसे चला गया और राजा विराटने अपने पशुओंको पा लिया, उसी दिन कौरवोंकी सेनाके दूसरे भाग मन्त्री भीष्म, द्रोणाचार्य्य; कर्ण, शस्त्रविद्याके जाननेवाले कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा, शकुनि, दुःशासन, विविंशति, विकर्ण, बलवान चित्रसेन, दुर्मुख और दुःसह आदि महारथोंको सङ्गमें ले राजा दुर्य्योधन विराट नगरमें पहुंचे। उन्होंने दूसरे द्वारपर जाकर साठ हजार गौओंको छीन लिया। उस समय उस गोशालामें चारो ओर यही शब्द होने लगा कि कौरव लोग बहुत सेनाके सहित राजा विराटकी गऊ लिये जाते हैं। ग्वालोंने थोड़ा युद्ध भी किया, परन्तु अन्तको ग्वालोंका स्वामी भयसे व्याकुल हो, और रथपर चढ़ रोता हुआ नगरकी ओर भाग गया। नगरमें आकर राजभवनमें गया और रथसे उतरकर राजा विराटके पुत्र महा अभिमानी उत्तरसे मिलकर कहने लगा, हे वीर! कौरव लोग आपकी साठ हजार गऊ लिये जाते हैं, इस लिये आप शीघ्रही उठिये और शीघ्रही उनसे गउओंको छीन लीजिये। राजा विराटने आपको इस ओरकी रक्षाका भार दे रक्खा है, और वे प्रायः सभामें कहा करते हैं कि हमारा पुत्र हमारे समान बलवान, शूर और कुलदीपक है। राजा विराट यह भी कहा करते हैं कि हमारा पुत्र सब शस्त्रविद्याका जाननेवाला योद्धाओंमें श्रेष्ठ और महावीर है। सो आप राजा विराटके वचनको सत्य कीजिये, और कौरवोंको जीतकर अपनी गौओंको छुड़ा लीजिये। भीष्म आदि सब वीरोंको अपने

धनुषसे छूटे सोनेके पङ्खवाले बाणोंसे भस्म कर दीजिये। उनकी सेनाको छिन्नभिन्न कर दीजिये, जैसे हाथियोंका राजा वीर युद्ध करता है, तैसेही आप भी युद्ध कीजिये। आप युद्धमें जाकर अपनी धनुषकी रोदे, दण्ड और उसके शब्दसे शत्रुओंको कंपा दीजिये। आपके रथमें इसी समय चांदीके समान स्वच्छ वर्णवाले घोड़े जोड़े जायं, रथपर ऊंची सोनेके दण्डवाली ध्वजा लगाई जाय, आपके हाथसे छूटे हुए बाण राजोंका नाश करनेवाले और सोनेके पङ्खवाले तीक्ष्ण बाण सूर्य्यको छा लें। आप कौरवोंको इस प्रकार युद्धमें जीतिये जैसे वज्रधारी इन्द्र दानवोंको जीतते हैं। जब आप उनको जीतकर नगरमें आइयेगा, तब बहुत यश प्राप्त होगा। जैसे पाण्डवोंमें विजयी अर्ज्जुन श्रेष्ठ है, तैसेही आप भी विराटके पुत्रोंमें श्रेष्ठ हैं। आपको स्वामी पाकर हम सब लोग सनाथ हुए हैं, आपही हम सबकी गति हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इस उत्साहसे भरे हुए वचनको सुनकर स्त्रियोंके बीचमें बैठे हुए विराटपुत्र ऐसा बोले,—

३४ अध्याय समाप्त।

उत्तर बोले, मैं इसी समय दृढ़ धनुषको लेकर कौरवोंसे युद्ध करनेको जाता परन्तु कोई घोड़ोंकी विद्या जाननेवाला सारथी नहीं है, यदि सारथी मिले तो मैं अभी चला जाऊं; तुम लोग शीघ्र योग्य सारथीको ढूंढो, जो युद्धमें मेरे घोड़ोंको हांक सके। जिस युद्धको एक महीना या अट्ठाइस दिन बीते हैं, उसमें मेरा सारथी मारा गया। यदि मैं घोड़ोंकी विद्या जाननेवाले अन्य सारथीको पाऊं तो इसी समय जाकर ऊंची पताका; हाथी और घोड़ोंसे भरी हुई कौरवोंकी सेनाकोभी अपने बाणोंके प्रतापसे जीतकर पशुओंको छीन लाऊं। मैं अपने बलसे दुर्य्योधन, भीष्म, कर्ण, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य और अश्वत्थामा आदि महावीरोंको इस प्रकार कंपा दूं जैसे इ[न्द्र] दानवोंको कंपाते हैं। क्या करें कौरवों द्वारको शून्य देखकर हमारे पशुओंको छी लिया। हम क्या करें उस समय वहां नहीं थे? इसीसे वे लोग पशुओंको लेगये हैं। अ तुम सब हमारे पराक्रमको देखो। क्या साक्षात अर्ज्जुन युद्ध करनेको आया है, जो हमको जीत लेगा?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजपुत्र उत्तर ऐसे वचन सुन और अपने समयको बीत हुआ जान, अपनी प्यारी निन्दारहित द्रुपद पुत्री, अग्निकुण्डसे उत्पन्न हुई सत्य, शील औ गुणोंसे भरी पतिका प्रिय कर्म्म करनेवाल द्रौपदीसे अर्ज्जुन एकान्तमें बोले, हे कल्याणि तुम शीघ्र जाकर उत्तरसे कहो कि यह बृ न्नला पाण्डवोंका सारथी था, यह बहुत युद्धों पाण्डवोंके सङ्ग रहा है, सो यही तुम्हार सारथी होगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब अर्ज्जुनने बा बार द्रौपदीसे यह कहा तब तपस्विनि द्रौपदी स्त्रियोंके बीचसे उठी और उत्तर पास जाकर लज्जा सहित धीरे धीरे कह लगी, यह जो हाथीके समान शरीरवाल सुन्दर युवा बृहन्नला नपुंसक है, सो अर्ज्जुनक सारथी था, और धनुर्वेदमें महात्मा अर्ज्जुनक शिष्यभी है, मैं जब पाण्डवोंके घरमें रहती थी, तबही इसको देखा था। जब अर्ज्जुनने खाण्डव वनको जलाया था, तब इसीने उनके घोड़े हांके थे, इसीकी सहायतासे अर्ज्जुनने खाण्डव वनमें सब प्राणियोंको जीता था, जगत् इसके समान दूसरा सारथी कोई नहीं है।

उत्तर बोले, हे सैरिन्ध्री! तुम इस नपुंस युवा पुरुष को जानती हो, इस लिये मैं बृहन्न लाके पास जाकर नहीं कह सकता कि तु

मेरे घोड़े हांको, सो तुम्हीं जाकर उससे कहो।

द्रौपदी बोली, हे वीर! तुम्हारी जो यह सुन्दरी छोटी बहिन है, इसीको उसके पास भेजो, वह इसके वचनको अवश्य मानेगा। यदि वृहन्नला तुम्हारा सारथी बने तो निस्सन्देह तब कौरवोंको जीतकर गऊ छीन लोगे। द्रौपदीके ऐसे वचन सुन उत्तर अपनी बहनसे बोले, तुम शीघ्र वृहन्नलाके पास जाकर उसे बुला लाओ। अपने भाईके वचन सुन उत्तरा शीघ्र उस नर्त्तनागारमें गई जहां महाबाहु अर्ज्जुन छिपकर रहते थे।

३५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। अपने भाईकी आज्ञा सुनते ही सुवर्णमालाधारिणी, यशस्विनी पतली कमरवाली, कमल नयनी, मोर पंखके आभूषणवाली कोमलाङ्गी, विचित्र-मणि-जटित आभूषणवाली, शोभासे भरी, उत्तम बालवाली विराटराजपुत्री उस नर्त्तनागरको इस प्रकार चली जैसे बिजली तलावकी ओर जाती है। हाथीके सुण्डके समान जङ्घावाली पतली कमर और उत्तम दातवाली, और उत्तम रूपधारिणी राजपुत्री अर्ज्जुनके पास इस प्रकार चली जैसे हथिनी हाथीके पास जाती है। विशाल नयनी सुन्दरी यशस्विनी इन्द्रकी लक्ष्मीके समान तेजस्विनी रत्नभूषणधारिणी विराट राजपुत्री अर्ज्जुनके पास गई।

उस उत्तम जङ्घावाली, सोनेके समान वर्णवाली राजपुत्रीको देख अर्ज्जुन बोले, हे सुवर्णमालाधारिणी! हे मृगनैनी। तुम इस समय हमारे पास क्यों आई हो? हे सुन्दरी! तुम घबड़ा क्यों रही हो? तुम्हारा मुख प्रसन्न क्यों नहीं है?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले. विशालनयनी राजपुत्रीको देख अर्ज्जुन हंसकर बोले. हे सखी! तुम इस समय यहां क्यों आई हो? पुरुषसिंह अर्ज्जुनके ऐसे वचन सुनकर राजपुत्री सखियोंके मध्यमें विनयपूर्व्वक बोली, हे वृहन्नले। कौरव लोग हमारे पशुओंको लिये जाते हैं, और सैरिन्ध्रीने तुम्हारे रथ हाकनेकी बहुत प्रशंसा की है, तुम पहले अर्ज्जुनके प्यारे सारथी थे, उन्होंने तुम्हारी सहायतासे पृथ्वीको जीता था, सो तुम अब हमारे भाईका रथ हांको; क्योंकि कौरव लोग हमारी गौओंको लेकर बहुत दूर चले गये। यदि तुम हमारी विनयको नहीं मानोगी, तो मैं अपने जीवनको त्याग दूंगी।

सुन्दरी राजपुत्रीके ऐसे वचन सुन महा तेजस्वी शत्रुनाशन अर्ज्जुन राजपुत्रीके पास आये, उनके पीछे विशालनयनी राजपुत्री भी इस प्रकार चलने लगी, जैसे मतवारे हाथीके पीछे हथिनी। उनको देखकर राजपुत्र उत्तर बोले, हे वृहन्नले! तुमहीको सारथी बनाकर अर्ज्जुनने खाण्डव बनको जलाया था? तुम्हारी सहायतासे अर्ज्जुनने सब पृथ्वीको जीता था? हमसे वह सब समाचार सैरिन्ध्रीने कहा है, क्योंकि वह पाण्डवोंको जानती है, सो तुम हमारे घोड़ोंको हाको, हम गौओंके लिये कौरवोंसे युद्ध करेंगे। तुम पहले समयमें अर्ज्जुनके प्यारे सारथी थे, तुम्हारीही सहायतासे उन्होने सब पृथ्वीको जीता था। उनके ऐसे वचन सुन अर्ज्जुन बोले, हे राजपुत्र। मै नाचने गानेवाला नपुंसक युद्धमें घोड़े हाकने क्या जानूं? तुमको नाचना, गाना या बजाना सीखना हो तो हमसे सीखो, और सारथीका काम हम कैसे कर सकते हैं?

उत्तर बोले, हे वृहन्नले! चाहे तुम नाचने वाले हो, चाहे गानवाले हो, परन्तु मेरे घोड़ोंको तुम्हें शीघ्र हाकनाही होगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, यद्यपि अर्ज्जुन सब विद्याओंको जानते थे, तोभी उत्तरके आगे बहुत प्रकारकी बातें करने लगे, और उत्तरके दिये कवचको उलटा पहनने लगे। तब विशाल

नयनी कन्या उन्हें देखकर हंसने लगीं। उस समय उत्तरने अपने हाथसे अर्ज्जुनको बहुमूल्य कवच पहनाया और आपनेभी उत्तम प्रकाशमान कवच पहना और सिंहचिन्हित ध्वजाको रथपर चढ़ाकर अर्ज्जुनको सारथी बनाया। अनन्तर रथमें उत्तम धनुष और सुन्दर वाणोंको रखकर बृहन्नलाको सारथी बनाकर चलनेकी इच्छा करी। चलते समय उत्तरा आदि राजकन्या कहने लगीं, हे वृहन्नले! तुम हमारी गुड़ियोंके लिये सुन्दर सुन्दर और कोमल कोमल वस्त्र लेती आइयो, युद्धमें भीष्म और द्रोण आदि महारथोंको जीतकर शीघ्र लौटना। कन्याओंके ऐसे बचन सुन अर्ज्जुन मेघ और नगारेके समान गम्भीर वाणोसे बोले, यदि राजपुत्र उत्तर युद्धमें महारथ कौरवोंको जीतेंगे, तो मैं उनके दिव्य वस्त्रोंको अवश्य लेता आऊंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महावीर अर्ज्जुनने ऐसा कहकर रथको उस ओर हांका जिधर पताकाओंसे भरी हुई कौरवोंकी सेना खड़ी थी; जिस समय बृहन्नला रथपर बैठी और महाबाहु उत्तर रथमें बैठे, तब स्त्री कन्या और व्रतधारी ब्राह्मण उनको प्रदक्षिणा करके कहने लगे, खाण्डव बन जलाने समय अर्ज्जुनको जो मङ्गल हुआ था, सोई आज तुमको और उत्तरको भी हो।

३६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजा जनमेजय! निर्भय राजपुत्र उत्तर राजधानीसे निकलकर अर्ज्जुनसे बोले, हे सूत! जिधर कौरवोंकी सेना है उधरहीको हमारा रथ ले चलो। इन सब कौरवोंको जीतकर और गौओंको छीनकर मैं शीघ्रही नगरको लौटूंगा। तब अर्ज्जुनने घोड़ोंको वेगसे हांका। पुरुषसिंह अर्ज्जुनके हांकनेसे वायुके समान वेगधारी और सोनेकी मालधारी घोड़े इस प्रकार वेगसे चले मानो आकाशको उड़ जायंगे। थोड़े समयमें शत्रुनाशन अर्ज्जुन और उत्तर बलवान कौरवोंकी सेनाके समीप पहुंच गये। श्मशानके समीप होकर अर्ज्जुन निकले। उन्होंने उस शमी वृक्षको देखा, जहां उनके शस्त्र रक्खे थे। उस समय समुद्र समान कौरवोंकी सेनाकी ऐसी शोभा बढ़ी जैसे अनेक वृक्षवाले वनकी अर्ज्जुनने उस सेनासे उठी हुई आकाशमें उड़ती धूलको देखा। वह धूल आकाशतक छाग थी, इससे किसीको कुछ नहीं दीखता था। व समुद्रसमान सेना कर्ण, दुर्य्योधन, कृपाचार्य और भीष्मसे रक्षित थी, उसमें पुत्रके सहि महाशस्त्रधारी, महाबुद्धिमान द्रोणाचार्य्य भ थे। इस सेनाको देखतेही भयके मारे उत्तरके रोवें खड़े हो गये, और कहने लगा कि हे सारथे! मेरी शक्ति कौरवोंसे युद्ध करनेकी नहीं है। देखो मेरे शरीरके सब रोवें खड़े हो गये इस सेनामें बड़े बड़े वीर हैं, जिनको देवता भी नहीं जीत सकते। मैं कौरवोंकी इस मह सेनासे युद्ध नहीं कर सकता हूं। मैं इस घोर धनुषधारियोंकी सेनामें प्रवेश भी नहीं कर सकता हूं, यह सेना रथ, हाथी, घोड़े पदाति और ध्वजाओंसे पूरित है, इस लिं इसे देखतेही हमारा मन कांपा जाता है जहां साक्षात् द्रोणाचार्य्य, कुरुवृद्ध भीष्म, कृपाचार्य्य, कर्ण, विवंशति, अश्वत्थामा, विकर्ण सोमदत्त, वाल्हिक, और महारथ राजा दुर्य्योधन आदि महातेजस्वी बुद्धिमान् और शस्त्रविद्याके जाननेवाले उपस्थित हैं, तहां युद्ध करनेकी मेरी क्या शक्ति है? इन सब योद्धा कौरवोंको देखतेही मेरा मन कांपा जाता है, रोवें खड़े हुए जाते हैं और मुझे मूर्च्छा आई जाती है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जिस समय महाबुद्धिमान् अर्ज्जुनके आगे मूर्ख विराटपुत्र इस प्रकार कह चुका, तब फिर रोकर ऐसा बोला

शून्य नगरमें अकेला छोड़ मेरे पिता राजा सुशर्म्मासे युद्ध करनेको चले गये, मेरे सङ्ग कोई सैनिक भी नहीं है, सो मैं अकेला बालक इन सब शस्त्रधारियोंसे कैसे युद्ध करूंगा? इसके अतिरिक्त मैं शस्त्रविद्या भी नहीं जानता हूं।

बृहन्नला बोले, हे राजपुत्र! तुम भयसे इतने क्यों घबड़ाये जाते हो? तुम्हारे घबड़ानेसे शत्रु लोग प्रसन्न होते हैं, शत्रुओंने अभी तक कोई ऐसा भारी कर्म्म भी नहीं किया है कि जिससे तुम घबड़ा गये। तुम कुछ सन्देह मत करो। मैं इस सब सेनाके बीचमें तुमको ले चलूंगा। हे महाबाहो! यदि समस्त पृथ्वीके वीर एक ओर होंगे, तौ भी मैं तुमको युद्धके बीचमें ले चलूंगा। जहां मांसके खानेवाले अनेक गिद्ध उड़ रहे हैं, उसी युद्ध-भूमिमें तुमको चलना होगा। क्या तुम स्त्री और पुरुषोंके बीचमें वृथा बकनेहीको थे? अब यहां आकर युद्ध क्यों नहीं करते हो? यदि तुम पशुओंको विना जीते नगरको चले जावोगे तो सब स्त्री और पुरुष तुमको हंसेंगे, मैं भी सैरन्ध्रीके कहनेसे तुम्हारा सारथी बनकर आया हूं, अब विना पशुओंके जीते नगरको लौट नहीं सकता, सैरन्ध्रीके कहने और तुम्हारे वचनसे क्या मैं भी सब कौरवोंसे युद्ध नहीं कर सकता?

उत्तर बोले, हे बृहन्नले! कौरव अपनी इच्छानुसार भले ही हमारा सब धन ले जाय, चाहे हमको स्त्री और पुरुष हंसें, हमारी सब गाय चली जाय, परन्तु हम युद्ध नहीं करेंगे।

बृहन्नला बोलो, हे राजपुत्र! युद्धसे भागना चत्रियोंका धर्म्म नहीं है, युद्धमें मरना उत्तम है, परन्तु भागना अच्छा नहीं!

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! अर्ज्जुनके ऐसे वचन सुन राजपुत्र उत्तर रथसे उतरकर भागा, तब अर्ज्जुन भी रथसे उतरकर उसके पीछे वेगसे दौड़े। दौड़नेसे अर्ज्जुनकी वेणी हिलने लगी और लालवस्त्र उड़ने लगे, अर्ज्जुनको भागते देख और उसकी वेणीको हिलते देख सब सेनाके लोग हंसने लगे, अर्ज्जुनको देखतेही सब कौरव लोग कहने लगे, कि यह छिपे हुए रूपसे कौन है? इसका रूप ऐसा जान पड़ता है जैसे भस्ममें छिपी हुई अग्नि हो, इसके थोड़े शरीर स्त्री और थोड़े पुरुषके समान हैं। इस नपुंसकका रूप अर्ज्जुनके ऐसा दीखता है; वैसाही शिर वैसाही गला, वैसेही परिघके समान हाथ और वैसाही इसका तेज है। यह निश्चय अर्ज्जुनही है। देवतोंमें इन्द्र और पुरुषोंमें अर्ज्जुनको छोड़कर और जगतमें ऐसा कौन है जो अकेला कौरवोंसे युद्ध करनेको आवै? विराटने अकेले अपने पुत्रको सूने नगरमें छोड़ दिया था, सो यह खाली बालपनसे अकेला युद्ध करनेको आया था, न कि बल से। हमें निश्चय है कि यह कुन्तीपुत्र अर्ज्जुनही छिपा हुआ है। इसी अर्ज्जुनको सारथी बनाकर उत्तर युद्ध करनेको आया है। सो देखो हम लोगोंको देखतेही भयके मारे भागा जाता है, सो उसीके लौटानेके वास्ते अर्ज्जुन भी उसके पीछे जाता है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब कौरव लोग इस प्रकार परस्पर वार्त्तालाप करने लगे, तब निश्चय उत्तर देनेको किसीको शक्ति न हुई। यह लोग ऐसेही वार्त्तालाप करते रहे। उधर अर्ज्जुन उत्तरके पीछे दौड़े, सौ चरण दौड़कर अर्ज्जुनने उत्तरके बाल पकड़ लिये। अर्ज्जुनके पकड़नेसे उत्तर दीनके समान रोने लगा, और बहुत दीन बनकर कहने लगा।

उत्तर बोला, हे कल्याणि! हे बृहन्नले! हे पतली कमरवाली! तुम हमारे वचनोंको सुनो, हमारे रथको शीघ्र लौटाओ, क्योंकि जीनेसे अनेक सुख प्राप्त होते हैं। नगरमें आतेही मैं

तुमको सोनेके बने सौ निष्क दूंगा और सोनेमें जड़े हुए बहुत सुन्दर आठ हीरे दूंगा। सोनेके जड़े हुए दांतवाले दस हाथी और एक उत्तम घोड़ेयुक्त रथ दूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इत्यादि बचन कहते हुए उत्तरको पुरुषसिंह अर्जुनने उठाकर रथमें डाल दिया। अनन्तर भयसे व्याकुल मूर्च्छित उत्तरसे अर्जुन बोले, हे शत्रुनाशन। यदि तुम शत्रुओंसे युद्ध नहीं कर सकते हो, तो घोड़ोंको हांको मैं युद्ध करूंगा, तुम हमारे बलसे रक्षित होकर इस सेनामें प्रवेश करो, यह न जीतने योग्य महावीरोंसे रक्षित सेना युद्ध करनेको उपस्थित है। हे राजपुत्र। हे शत्रुनाशन! तुम क्षत्रिय हो, इस लिये युद्धसे मत डरो। हे पुरुषसिंह! तुम शत्रुओंके बीचमें इस प्रकार क्यों रोते हो? हम कौरवोंसे युद्ध करके तुम्हारे पशुओंको जीत लेंगे। हम इस घोर सेनामें प्रवेश करके सबको जीत लेंगे। हे पुरुषश्रेष्ठ! तुम हमारे सारथी बनो, हम कौरवोंसे युद्ध करेंगे। हे जनमेजय! इस प्रकार अर्जुनने थोड़े समयतक विराटपुत्र उत्तरको धैर्य्य दिया। अनन्तर योद्धाओंमें श्रेष्ठ अर्जुनने विराटपुत्रको रथमें बिठला दिया।

३७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! उनको नपुंसकके वेषमें देख और उत्तरको रथमें बिठलाकर शमी वृक्षकी ओर जाते देख भीष्म और द्रोण आदि महारथ अर्जुनके भयसे डरने लगे। उन सबको उत्साहरहित और उत्पातोंको देखकर कौरवोंके गुरु भरद्वाज पुत्र द्रोणाचार्य्य बोले, यह घोर सूखे और धूलसे भरे वायु चल रहा है, आकाश धूलरूपी अन्धकारसे भर गया है; अद्भुतरूपवाले रूखे मेघ आकाशमें छा गये हैं; शस्त्र हाथोंसे गिरे जाते हैं। रोती हुई सियारी जलती हुई दिशाकी ओर भागती है, घोड़ोंकी आंखोंसे आंसू बह रहे हैं, ध्वजा कांपी जाती हैं। इन अशगुनोंको देखकर हमको बहुत हानिकी सम्भावना होती है, आप लोग सावधान होकर सेनाकी रक्षा कीजिये अपनी अपनी रक्षा कीजिये और सेनाका व्यूह बनाइये। अब घोर युद्ध होनेवाला है। इस लिये गौओंकी रक्षा कीजिये, इसमें कुछ सन्देह नहीं है कि यह सब धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ सब शस्त्रोंके जाननेवाले सचात अर्जुन युद्ध करनेको आये हैं। हे गङ्गासुत भीष्म! ये वेही अर्जुन हैं, जिनकी ध्वजापर लङ्कानाथ रावणकी वाटिकाके नाश करनेवाले हनुमान विराजते हैं। येही स्त्रीका वेष धारण करके हम सब लोगोंको जीत लेंगे और गौओंको छीन लेंगे। इस लिये आप दुर्य्योधनकी रक्षा कीजिये, ये सब शत्रुओंके नाश करनेवाले कुन्तीपुत्र अर्जुन देवता और राक्षसोंसे भी बिना युद्ध किये नहीं लौट सकते, इन्होंने बहुत दिन पर्य्यन्त बनमें क्लेश भोगे हैं, और इन्द्रसे शिक्षाभी पाई है, ये क्रोध होनेसे इन्द्रके समान युद्ध करते हैं, मुझे इस सेनामें इनसे युद्ध करनेवाला कोई नहीं दीखता। हमने सुना है कि हिमाचल पर्व्वतपर किरातरूपधारी भगवान शिवको भी अर्जुनने युद्धमें प्रसन्न कर लिया है।

कर्ण बोले, आप सदा अर्जुनके गुणोंकी प्रशंसा किया करते हैं, अर्जुन हमारी और दुर्य्योधनकी सोलवीं कलाके भी समान नहीं है।

दुर्य्योधन बोले, हे कर्ण! यदि यह अर्जुनही है, तो हमारे सब काम सिद्ध होगये, क्योंकि पहचाननेसे पाण्डवोंको फिर बारह बरस बनमें रहना होगा और यदि यह कोई दूसरा पुरुष नपुंसकका वेष धारण करके आया है तो अभी

तीक्ष्ण बाणोंसे मारकर हम उसे पृथ्वीमें गिरा देंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे शत्रुनाशन जनमेजय। धृतराष्ट्रपुत्रके ऐसे बचनको सुन भीष्म, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य और अश्वत्थामा उनको प्रशंसा करने लगे।

३८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। शमी वृक्षके पास जाकर विराट-पुत्रको युद्धमें अनिपुण और सुकुमार जानकर अर्ज्जुन बोले, हे उत्तर! तुम इस वृक्षपर चढ़कर धनुष उतार ले आवो। ये तुम्हारे धनुष हमारे बलको नहीं सह सकते हैं, न भारी बोझ उठा सकते हैं, न हाथियोंको मार सकते हैं, और न मेरे बाहुबलको सहने में समर्थ हैं। इस लिये तुम इस बहुत पत्तेवाले शमी वृक्षपर चढ़ो। हे भूमिञ्जय। इस वृक्षपर महा पराक्रमी पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्ज्जुन, नकुल और सहदेवके धनुष सूर्य्यके समान प्रकाशमान कवच और ध्वजा रक्खे है। उन्हींमें बहुत दृढ़ अर्ज्जुनका गाण्डीव धनुष भी है। वह धनुष अकेलाही सैकड़ों और सहस्रों धनुषोंके तुल्य और एक ताड़ लम्बा है, वह अकेलाही सब शस्त्रोंके तुल्य शत्रुओंका नाश करनेवाला, सोनेसे चित्रित सुन्दर और घावरहित है। वह अकेलाही सब शत्रुओंको नाश कर सकता है, वैसेही और भी युधिष्ठिर भीम नकुल और सहदेवके धनुष रक्खे हैं।

३९ अध्याय समाप्त।

उत्तर बोले, मैंने सुना है कि इस वृक्षमें एक मनुष्यका शरीर बन्धा है, सो मैं राजपुत्र होकर उसे किस प्रकार छूऊंगा? क्षत्रिय-कुलमें उत्पन्न हुआ, मन्त्र और यज्ञोंको जाननेवाला पण्डित मेरे समान राजपुत्र ऐसा कर्म्म कैसे कर सकता है? हे वृहन्नले। मैं इसको छूकर अपवित्र हो जाऊंगा, तब तुम हमारे सङ्ग कैसे व्यवहार करोगे?

वृहन्नला बोला, हे राजपुत्र। तुम पवित्रही रहोगे, इस वृक्षपर केवल धनुष रक्खे हुए हैं, मरे हुए मनुष्यका शरीर नहीं है। हे राजपुत्र। उत्तम मत्स्यराजके कुलमें उत्पन्न हुए तुमसे मैं नीच कर्म्म कैसे करा सकता हूं?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अर्ज्जुनके ऐसे वचन सुन उत्तर विवश होकर रथसे उतरा और शमीवृक्षपर चढ़ गया। उसी समय शत्रु-नाशन अर्ज्जुनने उससे कहा कि तुम धनुषोंको शीघ्र उतारो, देर मत करो। इनके बन्धन शीघ्र तोड़ दो।

अर्ज्जुनके वचन सुन उत्तरने बलवान पाण्डवोंके धनुष उतारे और उनके बन्धन तोड डाले। फिर चार धनुषोंके सहित गाण्डीव धनुषको देखा। जब सूर्य्यके समान प्रकाशित उन धनुषोंके बन्धन टूटे तब वे सब ऐसे चमकने लगे जैसे उदय होनेके समय तारे। उनके फुफुकारते हुए सर्पके समान रूपको देखकर विराटपुत्र भयसे कांपने लगा, और उसके सब रोवें खडे होगये। उन प्रकाशमान बड़े बड़े धनुषोंको छूकर उत्तर अर्ज्जुनसे बोले।

४० अध्याय समाप्त।

उत्तर बोले, जिसपर सोनेके सहस्रों बिन्दु लगे हैं, जिसके दोनों प्रान्त बहुत उत्तम बने हैं, यह किसका धनुष है? जिसकी पीठपर प्रकाशमान हाथी बने हैं, जिसके मध्य और प्रान्त बहुत दृढ़ हैं, यह किसका धनुष है? जो शुद्ध सोनेका बना है, जिसकी पीठमें बीर-बहूटी बनी हैं, सो उत्तम धनुष किसका है? जिसपर तेजसे भरे हुए तीन सर्प्प बने हैं, यह उत्तम धनुष किसका है? जिसपर सुवर्णके

उत्तम कोट बने हैं, सो मणिजटित उत्तम धनुष किसका है? ये रोवां काटनेवाले, सोनेके पंखयुक्त मोटे दण्डवाले गरुड़के पंखोंसे शोभित शिलीपर लगी तेज करनेवाले जलमें बुझे हलदोके समान पोले तेज मुखवाले सहस्रों वाण किसके हैं? बराहके कानके समान दस वाण और पांच शार्दूलोंसे चिह्नित धनुष किसका है? ये रुधिर पीनेवाले मोटे और लम्बे साक्षात् चन्द्रमाके समान प्रकाशित सात सौ वाण किसके हैं? ये ऊपरसे तोतेके पंखके समान सुन्दर तीक्ष्ण लोहेसे बने हुए, तेजपानीमें बुझे सोनेके पंखयुक्त शिलीपर घिसे वाण किसके हैं? यह शत्रुओंको नाश करनेवाला शिलीपर घिसा मेढ़कीके मुखके समान सुन्दर विशाल खड्ग किसका है? यह सिंहके चमड़ेके कोशमें रक्खा हुआ बहुत प्रकाशित मूठवाला अत्यन्त तेज घुघुरु बन्धा खड्ग किसका है? यह गऊके चमड़ेके कोषमें रक्खा निर्म्मल सोनेकी मूठवाला खड्ग किसका है? यह निषध देशमें बना हुआ सोनेकी मूठवाला अत्यन्त दृढ़ शत्रुओंका नाशक बकरेके चमड़ेमें रक्खा हुआ खड्ग किसका है? यह बड़ा रूपसे भरा हुआ तेज जलमें बुझा तपे हुए प्रकाशित सोनेके कोषमें रक्खा आकाशके समान प्रकाशित और काला तीस अंगुलसे भी अधिक लम्बा व्रणरहित तीक्ष्ण खड्ग किसका है? हे वृहन्नले! ये सब शस्त्र सर्पके समान तेज, शत्रुओंके शरीरमें प्रवेश करनेवाले महा भयङ्कर और दिव्य हैं, इन सबका वर्णन तुम हमसे करो, क्योंकि इन सबको देखकर मुझे बहुत आश्चर्य हुआ है।

४१ अध्याय समाप्त ?

वृहन्नला बोला, तुम जो हमसे पूछते हो, सो हम कहते हैं, तुमने जिसको पहले पूछा था, सो सुवर्ण खचित दिव्य धनुष साक्षात अर्ज्जुनका है। यह गाण्डीव नामसे जगतमें प्रसिद्ध है, इसीको धारण करके अर्ज्जुन देवता और दैत्योंको जीतते हैं, यह धनुष नीचे ऊप[र] चित्रित घावरहित सब शस्त्रोंको काटनेवा[ला] तथा बहुत वर्षोंसे देव दानव और गन्धर्व पूजित है। इसको एक सहस्र वर्षतक ब्रह्मा धारण किया, फिर प्रजापतिने पांच सौ वर्ष धारण किया, इन्द्रने तीन सौ वर्ष, चन्द्रमाने [...] वर्ष, राजा वरुनने-सौ वर्ष और श्वेतवाह पैंसट वर्ष धारण किया है। यह धनुष प[रम] श्रेष्ठ, दिव्य और दृढ़ है; इसे अर्ज्जुनने वरु[ण]से प्राप्त किया था। दूसरा सुन्दर और विश[ाल] धनुष भीमसेनका है, देवता और मनुष्य इस[की] पूजा करते हैं, इसही सुवर्ण चित्रित धनु[षसे] कुन्तीपुत्र शत्रुनाशन भीमने समस्त पूर्ब्ब दिशा जीता था। जिस सुन्दर धनुषपर वीरबहू[टी] बनी हैं, वह साक्षात महाराज युधिष्ठिर[का] धनुष है। जिसमें सोनेके बने महा प्रकाशमा[न] सूर्य्य विराजमान हैं, सो नकुलका धनुष[है]। जिसमें सोनेके कोट बने हैं, सो माद्रीपुत्र स[ह]देवका धनुष है। ये रोवें काटनेवाले सांप[के] समान विष भरे सहस्रों वाण अर्ज्जुनके हैं। [ये] युद्धमें जाकर अपने तेजसे प्रकाश कर देते [हैं] और शीघ्र चलकर शत्रुओंके व्यूहको काट दे[ते] हैं। ये जो लम्बे, चन्द्रमाके समान प्रकाशमा[न] शत्रुनाशन वाण हैं, सो भीमसेनके हैं। [...] हलदोके समान वर्ण और सोनेके पंखवा[ले] सिल्लीपर घिसे तीक्ष्णवाण हैं, सो महा बुद्धिमा[न] माद्रीपुत्र नकुलके हैं। यह जो पांच शार्दूलों[से] चिह्नित तूरीण है सो भी नकुलहीका है। इसीकी सहायतासे उन्होंने युद्धमें समस्त पश्चि[म] दिशाको जीता था। ये जो सूर्य्यके समान प्रकाशित सब शत्रुओंको नाश करनेवाले वाण हैं, सो विचित्र योद्धा सहदेवके हैं। ये जो तीक्ष्ण, तेज पानीमें बुझाये, सोनेके पंखवाले तीन धारवाले वाण हैं। सो साक्षात धर्मराज

[म]हाराजके हैं। यह जो सोनेकी मूठवाला [शि]लापर घिसा हुआ विशाल खड्ग है, सो [ह]में शत्रुओंको नाश करनेवाले अर्ज्जुनका है। [य]ह जो वाघके चमड़ेमें रक्खा है, सो दिव्य, [श]त्रुओंको नाश करनेवाला भीमसेनका खड्ग [है]। जिसकी सोनेकी मूठ है, और जो बहुत [तेज] है, सो खड्ग बुद्धिमान धर्म्मराजका है। जो [ब]करेके चमड़ेमें रक्खा है, जो सदा विचित्र [यु]द्धमें चलता है, सो सब शत्रुओंके नाश [क]रनेवाला दृढ़ खड्ग नकुलका है। यह जो [वि]चित्र, दृढ़ शत्रुओंका भार सहनेवाला [ख]ड्ग गायके चमड़ेमें रक्खा है सो साक्षात [स]हदेवका है।

४२ अध्याय समाप्त।

उत्तर बोले, ये सुवर्णखचित तेजसे भरे जिन शत्रुनाशन महात्मा पाण्डवोंके शस्त्र हैं, वे महात्मा युधिष्ठिर, भीम, अर्ज्जुन, नकुल, और सहदेव कहां हैं? वे सब लोग शत्रुओंके नाश करनेवाले राज्यको जुवेमें हारकर न जाने किधर चले गये? जगत विख्यात रत्नके समान स्त्री, द्रुपदराजपुत्री द्रौपदी भी न जाने किधर चली गई? हमने सुना है कि युधिष्ठिर उसी भी जुवेमें हार गये थे।

अर्ज्जुन बोले, मैंही अर्ज्जुन हूं, राजा विराटके कङ्क नामक सभासद कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर हैं। तुम्हारे पिताके वल्लव नामक रसोइया भीमसेन हैं। नकुल अश्वरक्षक हैं, और सहदेव गौओंको रक्षा करते हैं। जिसके निमित्त कीचकोंका नाश हुआ, वही सैरिन्ध्री द्रौपदी है।

उत्तर बोले, हमने जो अर्ज्जुनके दश नाम सुने हैं, यदि तुम हमसे उनको कहो तो हम तुमको अर्ज्जुन जानें।

अर्ज्जुन बोले हे विराटपुत्र! हम अपने दश नाम तुमसे कहते हैं, तुम सावधान होकर सुनो। अर्ज्जुन, फाल्गुन, जिष्णु, किरीटी, श्वेतवाहन, विभत्सु, विजय, कृष्ण, शव्यशाची और धनञ्जय येही मेरे दश नाम हैं।

उत्तर बोले, तुम्हारे नाम विजय, श्वेतवाहन, किरीटी, शव्यशाची, अर्ज्जुन, फाल्गुन जिष्णु, कृष्ण, विभत्सु और धनञ्जय क्यों हुए?, इसका कारण कहिये, मैंने आजतक वीर अर्ज्जुनके नामही सुने हैं, यदि तुम इनका कारण कहो तो हम तुम्हीको अर्ज्जुन जानें।

अर्ज्जुन बोले, मैंने सब नगर नगरके शत्रुओंको जीतकर धन लीना है, और सदा धनके मध्यमें रहता हूं, इसीसे मेरा नाम धनञ्जय है। मैं बड़े बड़े बलवान योद्धाओंसे युद्ध करनेको चला जाता हूं, और उनको विना जीते नहीं लौटता, इसीसे मेरा नाम विजय है। मेरे रथमें युद्धके समय सोनेके जालयुक्त सफेद घोड़े जोड़े जाते हैं, इसीसे मुझे सब लोग श्वेतवाहन कहते हैं। मैं उत्तरा फाल्गुनी और पूर्व्वफाल्गुनी नक्षत्रके सन्धिमें हिमाचलमें जन्मा था, इसीसे मेरा नाम फाल्गुन हुआ। पहले जब मैं घोर दानवोंसे युद्ध करनेको गया था, इन्द्रने अपने हाथसे मेरे शिरपर किरीट बांधा था, इसीसे मैं किरीटी नामसे प्रसिद्ध हुआ हूं। मैं कभी युद्धमें डरकर काम नहीं करता, इस लिये मेरा नाम विभत्सु है। मेरे दोनों हाथ धनुष खींचनेमें समान हैं, अर्थात जैसे दहने हाथसे धनुष खींचता हूं, ऐसेही बायेंसे भी खींच सकता हूं, इससे सब देवता और मनुष्य मुझे शव्यशाची कहते हैं। मेरे समान वर्णवाला जगतमें कोई पुरुष नहीं है, और मैं निर्म्मल कर्म्म करता हूं, इस लिये मेरानाम अर्ज्जुन है। मैं अत्यन्त दुर्लभ, दुर्धर्ष शत्रुओंको जीतनेवाला और इन्द्रका पुत्र हूं, इसीसे लोग मुझे जिष्णु कहते हैं। मेरे पिताने मेरा [नाम] [illegible] कृष्ण नाम रक्खा था।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अर्जुनके ऐसे वचन सुन, विराटपुत्र उत्तर बोला, हे महाबाहो हे लालनेत्रवाले। हे कुन्तीपुत्र! मैं भूमिञ्जय नामक विराटपुत्र आपको प्रणाम करता हूं। हे धनञ्जय। मैंने प्रारब्धहीसे आज आपके दर्शन किये हैं और मैं आपका स्वागत करता हूं। हे हाथीके सूंड़के समान हाथवाले! मैंने जो अज्ञानसे आपको कहा हो, सो आप क्षमा कीजिये। आपने जो पहले बड़े बड़े घोर और विचित्र कर्म्म किये हैं, उनको स्मरण करनेसे मेरा सब भय दूर होगया और आपमें बहुत श्रद्धा बढ़ गई।

४३ अध्याय समाप्त।

— ———

उत्तर बोले, हे वीर। आप मुझ सारथीके सहित इस उत्तम रथमें बैठकर कौनसी सेनासे युद्ध करना चाहते हैं? सो कहिये मैं उसी सेनाकी ओर चलूंगा।

अर्जुन बोले, हे पुरुषसिंह! हे युद्धविद्या जाननेवाले। हम तुमसे बहुत प्रसन्न हैं, इस लिये तुम कुछ भय मत करो। हम तुम्हारे सब शत्रुओंको जीत लेंगे। हे महाबाहो! तुम स्वस्थ हो, हमको इस युद्धमें शत्रुवोंसे युद्ध करते देखो। तुम शीघ्र हमारे रथमें इन तूणीरोंको बाधो, और एक सोनेकी मूठवाला खड्ग ले आओ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अर्जुनके ऐसे वचन सुन उत्तर अर्जुनके शस्त्रोंको लेके वृक्षसे शीघ्र उतारा। तब अर्जुन बोले, हे वीर! हम कौरवोंसे युद्ध करके तुम्हारे पशुवोंको छीन लेंगे, तुम हमारे रथके जुवे पर बैठके इस प्रकार रक्षित रहोगे जैसे कोई नगरके बीचमें। इस रथरूपी नगरमें दोनों पहिये मार्गके दोनों ओरके स्थान हैं, दो तूणीर और एक धनुष तीनों दण्ड हैं, हाथही नगरके स्थान और तोरण हैं। इसकी ध्वजाही नगरकी पताका हैं। शत्रुओंको मारनेकी इच्छासे जो धनुष और पहियोंका शब्द है, सोही नगारा है। तुम इसमें रहकर हमसे रक्षा पावोगे। हे विराट-पुत्र! तुम अपने भयको परित्याग कर ; क्योंकि हम तुम्हारे शत्रुवोंसे गाण्डीव ध लेकर युद्ध करेंगे, और पशुओंको जीत ले तुमको भी कोई शत्रु जगत्‌में नहीं ज सकता है।

उत्तर बोले, हम कौरवोंसे भी नहीं ड हैं, क्योंकि आपको युद्धमें साक्षात् इन्द्र व विष्णुके समान जानते हैं। परन्तु ! दुर्बुद्धिको एक ऐसा सन्देह है कि उस निश्चय नहीं होता है, आप अनेक लक्षण युक्त और महावीर होकर भी इस नपुं रूप धारण करके शिव, गन्धर्व्वराज और इन्द्र समान छिप करके कैसे रहे?

अर्जुन बोले, हे महाबाहो! हे राजपु हम अपने बड़े भाईकी आज्ञाहीसे एक इस व्रतको करते रहे, परन्तु वास्तवमें नपुं नहीं हैं, अब हमारा व्रत समाप्त होगया, हमें कुछ आपत्ति शेष नहीं है।

उत्तर बोले, हे पुरुषोत्तम! हम बातसे बहुत प्रसन्न हुए कि हमारा सन्दे वृथा नहीं था क्योंकि ऐसे महापुरुष नपुं नहीं होते हैं। अब मेरा सब भय दूर होगा अब मैं आपकी सहायतासे सब शत्रुओंके स युद्ध कर सकता हूं, कहिये अब मैं कौन काम करूं? हे पुरुषसिंह! मैं शत्रुओं रथ तोड़नेवाले आपके घोड़ोंको हाकूंगा, मैं यह विद्या गुरुसे सीखी है। हे पुरुषोत्तम जैसे इन्द्रके मातलि और कृष्णके दारुक सारथी हैं, तैसेही हमें भी जानिये। जिसके चलते चरण नहीं दीखते हैं, जो पीछे दहिनी ओ लगा है, वह घोड़ा साक्षात सुग्रीवके समा बलवान है, जो सुन्दर घोड़ा बांई ओरकी धुरी जुड़ा है, वह पुष्पके समान बलवान है।

सोनेका जालओढ़े बाईं ओर जुड़ा है, सो वेग और बलमें शैव्यके तुल्य है, और जो दहिनी ओर जुड़ा है सो वेग और बलमें कृष्णके घोड़े बलाहकके तुल्य है। मेरी बुद्धिसे यह रथ आपके बैठने योग्य है, और आप इसमें बैठकर युद्ध करने योग्य हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर महा बलवान अर्ज्जुनने अपने बाजूबन्द और सोनेके छल्ले उतारे, फिर घूघुरवारेकाले बालोंको सफेद कपड़ेसे बांधकर पवित्र सावधान और पूर्व्वमुख होकर सब शस्त्रोंका ध्यान किया और शस्त्रोंका रथमें रक्खा, फिर सब शस्त्र हाथ जोड़कर अर्ज्जुनसे बोले, हे पाण्डुपुत्र! हम सब तुम्हारे दास हैं। अनन्तर अर्ज्जुनने उन सब शस्त्रोंको प्रणाम करके कहा कि तुम सब हमारे मनमें स्थित रहो। फिर अर्ज्जुन सब शस्त्रोंको अपने हाथमें लेकर बहुत प्रसन्न हुए और गाण्डीव धनुषपर रोदा चढ़ाया और टङ्कार दिया। वह शब्द ऐसा घोर हुआ जैसे पर्व्वत गिरनेसे पर्व्वतके फटजानेसे होता है; पृथ्वी कांपने लगी घोर वायु चलने लगा, कोई दिशा न दीखने लगी, आकाश भ्रमित होगया, और वृक्ष कांपने लगे। अर्ज्जुनके वज्रके समान धनुष शब्दको कौरवोंने भी सुन लिया।

उत्तर बोले, हे पाण्डव! आप अकेले अनेक शस्त्र अस्त्र जाननेवाले महारथोंको कैसे जीतियेगा? हे कुन्तीपुत्र! आपसहायरहित और कौरव लोग सहाय सहित हैं, इससे हमको बहुत भय होता है।

उत्तरके ऐसे वचन सुन अर्ज्जुन हंसके ऐसे वचन बोले, हे वीर! तुम कुछ भय मत करो। जब मैंने घोषयात्रामें गन्धर्वोंसे युद्ध किया था, तब मेरा सहायक कौन था? जब देवता और दानवोंसे भरे हुए महा भयङ्कर खाण्डव वनमें मैंने युद्ध किया था, तब मेरा सहायक कौन था? जब मैंने इन्द्रके लिये निवातकवच और महा बलवान पौलोम दैत्योंसे युद्ध किया था, तब मेरा सहायक कौन था? हे तात! जब द्रौपदीके स्वयम्वरमें सब राजोंसे मैंने युद्ध किया था, तब मेरा सहायक कौन था? मैं गुरु द्रोणाचार्य्य इन्द्र, कुवेर, यम वरुण, अग्नि, कृपाचार्य्य, लक्ष्मीपति कृष्ण और साक्षात शिवकी सहायतासे इन सबके सङ्ग क्यों नहीं युद्ध कर सकूंगा? तुम अपने भयको दूर करके घोड़ोंको शीघ्र हांको।

४४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! पश्चात अर्ज्जुने उत्तरको सारथी बनाया, शमीवृक्षकी प्रदक्षिणा करी और शस्त्रोंको रथमें रखकर वेगसे चले। उत्तरकी सिंहयुक्त ध्वजाको उतारकर शमीवृक्षके नीचे रख दिया, और उत्तरको सारथी बनाकर चल दिये। अर्ज्जुनने विश्वकर्म्माकी दैवी मायाको रथमें स्थापन किया और हनुमानयुक्त सोनेकी ध्वजाको रथमें लगाया। फिर अग्निके वरदानका ध्यान किया। अर्ज्जुनके ध्यान करते ही अनेक प्राणियोंको अग्निने उनके रथकी रक्षाके लिये भेजा। पश्चात् सोनेके दण्डवाली सुन्दर विचित्र ध्वजा अर्ज्जुनके रथपर आकाशसे आकर लग गई, और दिव्य रथ आकाशसे आया। अर्ज्जुनने उस रथको देखकर प्रणाम किया, फिर धनुष हाथमें लेकर अंगुलित्राण पहर और उस रथमें बैठकर उत्तरकी ओर चल दिये। कुछ दूर जाकर अर्ज्जुनने शत्रुओंको कंपानेवाले देवदत्त शङ्खको बलसे बजाया। उस शब्दको सुनतेही अर्ज्जुनके बलवान घोड़े पृथ्वीमें बैठ गये और उत्तरको भी भयसे मूर्च्छा आगई। अर्ज्जुनने रथसे उतरकर घोड़ोंको ठीक किया और उत्तरको भी शान्त करने लगे।

अर्ज्जुन बोले, हे शत्रुनाशन राजकुमार! तुम हाथमें लेकर [illegible]

तुम शत्रुओंके बीचमें क्यों रोते हो? तुमने अनेक युद्धोंमें शंख, भेर और व्यूहोंमें खड़े हुए हाथियोंके शब्द सुना है, सो तुम केवल शङ्खके शब्दसे क्यों डर गये? तुम्हारे मुखका रङ्ग सामान्य पुरुषके ऐसा क्यों हो गया?

उत्तर बोले, मैंने अनेकवार शंख भेर और युद्धमें उपस्थित हाथियोंके शब्द सुने हैं, परन्तु ऐसा शब्द कभी भी नहीं सुना। यह ध्वजा भी मैंने पहले कभी नहीं देखी थी, और ऐसा धनुषका शब्द भी मैंने पहले कभी नहीं सुना था। धनुष शङ्ख और ध्वजामें बैठे हुए राक्षसोंके घोर शब्दसे मेरा मन कांपा जाता है, सब दिशाओंको व्याकुल देखकर मेरा मन कांपा जाता है। ध्वजासे सब दिशा भर गई है इससे मुझे कुछ नहीं दीखता है। ऐसा कहकर उत्तर चुप रहे, एक मुहूर्त्तके पश्चात अर्जुन बोले, हे उत्तर! तुम हमारे रथको एकान्तमें ले चलो, पैरोंसे रथको पकड़ लो और सावधान होकर घोड़ोंकी लगाम पकड़ो, हम पुनः शंख बजाते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अर्ज्जुनने पुनः शंख बजाया। उससे पर्व्वत फटने लगे, तथा गुफा और दश दिशा पूरित होगई। उत्तर भी रथसे लपट गया। उस शंखके, रथके और गाण्डीव धनुषके शब्दसे पृथ्वी कांपने लगी। अर्ज्जुनने उत्तरको फिर सावधान किया।

द्रोणाचार्य्य बोले, इस मेघ समान रथके शब्दसे हमें निश्चय होता है, कि यह क्षत्री अर्ज्जुनके सिवाय दूसरा कोई नहीं है। हमारे शस्त्र प्रकाशित नहीं होते, घोड़े नहीं हींचते, आहुति देनेसे अग्नि नहीं जलती, हरिन घोर शब्द करते हुए सूर्य्यकी ओर जाते हैं, ध्वजाओंपर कौवे गिरते हैं, ये सब शकुन अच्छे नहीं हैं। मांस खानेवाले पक्षी दहनी ओरको उड़ते हैं, यह रोता हुआ सियार हमारी सेनाकी ओर चला आता है; इसका रूप बहुत कराल है, इससे हमें बहुत भयकी सम्भावना है। तुम सब लोगोंके रोवें खड़े होगये हैं, इससे हमको जान पड़ता है कि इस यु[ddha में] बहुत क्षत्रियोंका नाश होगा। किसी ते[ज]का प्रकाश नहीं रहा, हरिन और पक्षि[यों]ने घोररूप धारण किया है और भी क्षत्रि[यों]के नाशके अनेक लक्षण दीखते हैं; विशेष क[र] हमारीही सेनाका नाश दीखता है! आ[का]शसे हमारी सेनामें उल्का गिरती है, ह[ाथी] और घोड़े रो रहे हैं, सेनाके चारों ओर [गीदड़] गिरते हैं, तुम भी अर्ज्जुनके बाणसे पी[ड़ित] सेनाको देखकर दुःख पाते हो, किसी योद्धा[में] युद्ध करनेकी इच्छा नहीं देखते, सब यो[द्धा]ओंके मुख पीले होगये हैं, कोई वीर चै[तन्य] नहीं है इससे हम लोग व्यूह बनाकर गौओं[की] रक्षा करें।

४५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेज[य!] द्रोणाचार्य्यके ऐसे बचन सुन राजा दुर्य्योध[न] भीष्म, महावीर द्रोणाचार्य्य और महा[त्मा] कृपाचार्य्यसे कहा कि, हे मान्यपुरुषो! ह[मने] और कर्णने आप लोगोंसे पहले भी कहा और फिर भी कहते हैं क्योंकि इसके क[हने]से मेरी तृप्ति नहीं होती है। हमारी [और] पाण्डवोंकी यही प्रतिज्ञा थी कि यदि अ[ज्ञात]वाससे तुम लोग प्रत्यक्ष हो जाओगे तो बारह वर्ष वनमें रहना होगा, अभी तर[ह]वां वर्ष पूरा नहीं हुआ और हमने अर्ज्जु[नको] जान लिया, इस लिये पुनः पाण्डवोंको बा[रह] वर्ष वनमें रहना होगा, परन्तु हम [वा] लोभ और मोहके वशमें होकर समय न जान सकते हैं, इसका ठीक निश्चय भी[ष्म] कर सकते हैं। विषयोंके निश्चय करनेमें प्र[ायः] सन्देह हो जाता है, कोई विषय दूसरे प्रक[ार] विचारा जाता है और वह दूसरेही प्रक[ार]

हो जाता है, हम लोग इस युद्धमें युद्ध करनेके लिये उत्तरका मार्ग देख रहे थे, परन्तु अर्ज्जुन अनायास आमिला, इससे हमारा क्या दोष है? हम लोग राजा सुशर्म्माकी सहायता करनेके लिये राजा विराटसे लड़नेको आये थे, और आपके आगे विराटहीके अनेक दोष भी हमने कहे थे; ऐसी सम्मति हुई थी कि जब राजा विराट त्रिगर्त्त देशीय क्षत्रियोंके भयसे डरकर सप्तमीके दिन राजा त्रिगर्त्तसे युद्ध करनेको चला जायगा तब अष्टमी तिथिको सूर्य्यके उदय होते इस सब गौओंको छीन लेंगे। और ऐसा भी निश्चय था त्रिगर्त्त देशके क्षत्री उनकी गौओंका छीन ले आवेंगे अथवा उनसे हारकर सन्धि करेंगे, या हम लोगोंसे मिलकर युद्ध करेंगे। इसे जान पड़ता है कि राजा विराट त्रिगर्त्त देशके क्षत्रियोंका युद्ध छोड़के और अपने नगरको छोड़के हम लोगोंसे युद्ध करनेको आया है, इसका कारण भी यह जान पड़ता है कि राजा विराटने उधर अधिक परिश्रम जानकर इधर यात्रा करी है, अथवा उन्हींमेंसे अर्थात् राजा विराटके पुरुषोंमेंसे यह कोई महा बलवान वीर है जो हम लोगोंसे युद्ध करनेको चला आता है। हमारी बुद्धिमें यह निश्चय होता है कि चाहे यह विराट हो, चाहे अर्ज्जुन हो, हम लोगोंको मिलके युद्ध करना चाहिये। न जाने भीष्म, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, विकर्ण और अश्वत्थामा आदि महारथ क्या घबराये रथोंमें बैठे हैं? हे वीरो! इस समय सिवा युद्धके और किसी बातमें कल्याण नहीं है। यदि हमसे इन्द्र, यम, या और कोई महाबली भी गौओंको छीन लेगा, तब हस्तिनापुरमें कौन जा सकेगा? इस घोर वनमें हमारे बाणोंसे बचकर कोई घोड़े पर चढ़ा वीर भी नहीं भाग सकता है, और पदातियोंकी तो कथाही क्या है।

महाराज दुर्य्योधनके वचन सुन कर्ण बोले कि,—द्रोणाचार्य्यके वचनोंका निरादर करके आप युद्धका विधान कीजिये। ये पाण्डवोंकी सम्मति जानते हैं और अर्ज्जुनसे प्रेम अधिक करते हैं, इस लिये हम लोगोंको डरा रहे हैं। अर्ज्जुनको आता देख उनकी प्रशंसा कर रहे हैं। जिससे हमारी सेना भाग न जाय ऐसा विधान कीजिये, पाण्डव लोग अत्यन्त स्वार्थी हैं, उन्होंने द्रोणाचार्य्यको आपके पास बसा दिया है, अर्थात् ये आपके पक्षपाती नहीं बरन पाण्डवोंके पक्षमें हैं, इसमें प्रमाण यही है कि द्रोणाचार्य्य सदा पाण्डवोंकी प्रशंसा किया करते हैं। भला घोड़ोंका शब्द सुनकर वीरोंकी कौन प्रशंसा कर सकता है? घोड़ोंका स्वभावही है कि नये स्थानपर जाकर बोलने लगते हैं। वायु सदा चला करता है, जल सदा बरसा करता है, बिजली सदाही तड़का करती है, इस सबमें अर्ज्जुनकी प्रशंसा करनेकी कौनसी बात है? हो ऐसा जान पड़ता है, कि आचार्य्यके चित्तमें हम लोगोंसे कुछ द्वेष, काम, या क्रोध भरा हुआ है। इसके अतिरिक्त एक यह भी बात है कि आचार्य्य लोग दयावान पण्डित और धर्मदर्शी होते हैं, इस लिये इनसे युद्धमें कुछ सम्मति नहीं पूछनी चाहिये। उत्तम अटारी, सभा और वनोंमें बैठकर उत्तम कथा कहनेके समय पण्डितोंको बुलाना चाहिये। जब अनेक आश्चर्य दिखलाने हों, या यज्ञमें कोई विचित्र वस्तु उत्पन्न करनी हो तब पण्डितोंसे सम्मति पूछनी चाहिये। जहां शत्रुका छिद्र देखना हो, किसी मनुष्यका चरित्र देखना हो, हाथी, घोड़े, रथ, गधे, ऊंट, बकरी और भेड़ोंके लक्षण देखने हों, गौओंकी रक्षा करनी हो, नगर बाहर और द्वारपर देवताकी मूर्ति देनेमें और अन्नके संस्कार तथा दोषोंमें पण्डितोंकी सम्मति लेनी

चाहिये। इस समय शत्रुओंके गुण जाननेवाले पण्डितोंको पीछे करके ऐसी नीति करनी चाहिये जिसमें शत्रुओंका नाश हो। गौओंको बीचमें करके रक्षा सहित सेनाका ऐसा व्यूह बनना चाहिये जहां खड़े होकर हम लोग शत्रुओंसे युद्ध करें।

४६ अध्याय समाप्त।

कर्ण बोले, हम सब क्षत्रियोंको भयसे व्याकुल, चञ्चल और युद्धसे विरक्त देखते हैं। यदि राजा विराट या स्वयं अर्ज्जुनही युद्ध करने को आया होगा, तोभी मैं इस प्रकार निवारण करूंगा जैसे तट समुद्रको रोकता है। मेरे चलाये हुए धनुषसे छूटे सर्पोंके समान महाबाण बिना शत्रुओंका नाश किये कभी नहीं लौटेंगे। आज मुझ वीरके हाथसे छूटे हुए सोनेके पंख और तेज धारवाले बाण अर्ज्जुनको इस प्रकार ढा लेवेंगे, जैसे छोटे कीट वृक्षको ढा लेते हैं। अब लोग बाण छूटती हुई मेरी दृढ़ धनुषके शब्दको इस प्रकार सुनें जैसे पुरुष बजती हुई भेरीके शब्दको सुनते हैं। अर्ज्जुन तेरह वर्षसे बनमें रहता है, इस लिये आज प्रेम सहित मेरे ऊपर बाण छोड़ेगा। आज अर्ज्जुन गुणवान ब्राह्मणके समान दानपात्र बनकर मेरे दिये हुए सहस्रों बाणोंका ग्रहण करे। यद्यपि अर्ज्जुन वीर तीनों लोकके धनुष धारियोंमें प्रसिद्ध है, तो मैंभी इस पुरुषसे कम नहीं हूं। अब सानसे खिंचे गिद्धके पंखयुक्त मेरे धनुषसे छूटे हुए बाणोंसे आकाश इस प्रकार व्याप्त होजाय, जैसे बरसातमें जुगुनुओंसे व्याप्त होता है। आज मैं और किसीसे न मारने योग्य अर्ज्जुनको मारकर धृतराष्ट्रपुत्र दुर्योधनके भारी और विख्यात ऋणसे छूटूंगा, मेरे हाथसे छूटे हुए, पंखवाले बाण आकाशमें इस प्रकार घूमें जैसे आकाशमें पतङ्ग घूमते हैं, आज मैं इन्द्रके वज्रके समान धनुषवाले और इन्द्रके समान तेजस्वी अर्ज्जुनको युद्धसे इस प्रकार भगाऊंगा जैसे पुरुष मसालसे हाथीको भगाता है। आज मैं सब शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ महारथ वीर अर्ज्जुनको इस प्रकार अपने वशमें कर लूं जैसे गरुड़ सर्पको अपने वशमें कर लेता है। मैं खड्ग और बाणरूपी इन्धनसे जलते हुए महाघोर अर्ज्जुन रूपी अग्निको घोड़ेरूपी वायु प्रेरित होकर रथ शब्दसे गर्जता हुआ मेघके समान बाणरूपी जलकी धारासे बुझा दूंगा मेरे धनुषसे छूटे हुए बाण अर्ज्जुनकी ओर इस प्रकार जाय जैसे सांप बिलकी ओर जाता है। हे राजन्! आज आप तेजपानीमें बुझे तीक्ष्ण धारावाले सानके पंखयुक्त महा तेजस्वी मेरे बाणोंसे अर्ज्जुनको इस प्रकार व्याप्त देखेंगे जैसे वृक्षोंसे पर्वत। मैंने जो ऋषि श्रेष्ठ परशुरामसे शस्त्र सीखा है, उसके बलसे साक्षात इन्द्रके सङ्ग भी युद्ध कर सकता हूं। अर्ज्जुनके ध्वजा पर बैठा हुआ बन्दर मेरे बाणोंसे गिरकर पृथ्वीमें घोर शब्द करे, अर्ज्जुनको ध्वजापर बैठे हुए अनेक राक्षस मेरे बाणोंसे पीड़ित होकर आकाशमें घोर शब्द करें। आज मैं दुर्योधनके हृदयमें स्थित कांटेका मूल सहित निकाल दूंगा, अर्थात युद्धभूमिमें अर्ज्जुनको, रथसे नीचे गिरा दूंगा। आज कौरव लोग रथ और घोड़ोंसे रहित वीर अर्ज्जुनको इस प्रकार श्वास लेते देखें जैसे सरते हुए हाथीको मनुष्य देखते हैं। सब कौरवोंकी जहां इच्छा हो तहां धन लेकर चले जाय, अथवा रथोंमें बैठकर हमारे युद्धको देखें।

४७ अध्याय समाप्त।

कृपाचार्य्य बोले, हे राधापुत्र! तू बड़ा दुर्बुद्धि है, जो सदा युद्धकी इच्छा करता है। तुझे राज्यकी प्रकृतिका ज्ञान है, और न युद्धके फलका ज्ञान है। ये जो शकुनि आदि छली हैं इनको केवल छलही करना आता है, परि

लोग इनके युद्धकी सदा निन्दा करते हैं, और
दा उनके युद्धको नाशकारक बताते हैं। जो
द्ध देश और कालके अनुसार होता है, उसीसे
जय होती है और इसके उलटे युद्धमें हानि
ोती है। देश और कालके अनुसारही
त्याग होता है, अनुकूल कार्य्य करनेसे सुख
ाप्त होता है। पण्डित लोग रथ बनानेवालेके
चन पर विश्वास करके रथमें बैठकर युद्धको
हीं चले जाते हैं। अर्ज्जुनके बलको देखकर
में निश्चय होता है कि हम लोगोंमें अर्ज्जुनसे
द्ध करने योग्य कोई नहीं है, अकेला कौरवोंसे
द्ध करन योग्य कोई नहीं है, यह अकेला
ौरवोंसे युद्ध करनेको चला आया, अकेलेने
ाण्डव बनमें अग्निको तृप्त किया, अकेलेन पाच
र्षतक ब्रह्मचर्य्य धारण किया, अकेले सुभद्राको
पने रथपर बैठाकर कृष्णको युद्ध करनेके
लिये बुलाया। अकेलेने किरातरूपी शिवसे
युद्ध किया, अकेलेने इसी बनमे जतद्रथसे द्रौप-
दीको छुड़ाया, अकेलेने पांचबर्षतक इन्द्रसे
विद्या सीखा, एकलेन चित्रसेन गन्धर्व्वराजको
दुर्जय सेनाके सहित जीता और एकलेही
अर्ज्जुनने देवतोंसे भी अजय निवातकवच और
कालखञ्ज राक्षसोंका नाश किया। वही
अकेला शत्रुनाशन अर्ज्जुन सब कौरवोंको
जीतकर यश प्राप्त करेगा। हे कर्ण! अकेले
अर्ज्जुनने इतने काम किये हैं। और तैंने
अकेले कौनसा युद्ध जीता है? एक पाण्डवने
एक एक दिशाके राजाको अपने वशमें कर
लिया था। उन लोगोंसे युद्ध करनेकी कौन
इच्छाकर सकता है? जो पागल अर्ज्जुनसे
युद्ध करनेको कहे, उसकी औषधी करनी
चाहिये। क्या तू क्रोधमें भरे विषैले सर्पके
दन्त हाथसे पकड़कर अङ्गुलीसे उसके दांत
गिनना चाहता है? क्या तू वनमें अकेले
भी तड़ मदस्राविन मतवारे हाथीपर चढ़-
कर नगरको जाना चाहता है? क्या घी और

मज्जा सहित जलती हुई अग्निमें घीमें भीगे
हुए बस्त्रोंको पहरकर घुसना चाहता है?
ऐसा कौन मूर्ख होगा जो गलेमें शिला बांध-
कर समुद्रमें कूदे और हाथोंसे पैरकर समुद्रमें
पार होनेकी इच्छा करे? हे कर्ण। जो
अर्ज्जुनसे युद्ध करनेकी इच्छा करता है, वह
वैसाही मूर्ख है, जैसे कोई शस्त्र विद्या न
जाननेवाला दुर्ब्बल, शस्त्र विद्या जाननेवाले
बलवानसे युद्ध करनेकी इच्छा करे। हम
लोगोंने अर्ज्जुनको तेरहबर्ष पर्य्यन्त महा दुःख
दिया है, सो अब यह पिञ्जरेसे छूटे हुए
सिंहके समान हमारा नाश कर देगा। हम
लोग एकान्त बैठे अर्ज्जुनके वशमें इस प्रकार
हो गये, जैसे कोई अग्निसरे कुएंमें गिर पड़ता
है। अब हम लोगोंको उचित है कि सेनाका
व्यूह बना लें और महावीर अर्ज्जुनसे द्रोणा-
चार्य्य, दुर्य्योधन, भीष्म, तुम और हम मिलकर
युद्ध करें। यदि हम छओ महारथी इकट्ठे
होकर युद्ध करेंगे तब अर्ज्जुनके सङ्ग लड़
सकेंगे अन्यथा तुम्हारा साहस वृथा है। हम
लोग सेनाका व्यूह बनाकर और धनुष धारण
करके अर्ज्जुनसे इस प्रकार युद्ध करेंगे जैसे
इन्द्रसे राक्षस लोग।

४८ अध्याय समाप्त।

अश्वत्थामा बोले, हे कर्ण अभी न
गौओंको जीता, न राज्यकी सीमापर पहुंचे
हैं, तुम पहिलेही अपनी प्रशंसा करने लगे?
अनेक युद्धोंको जीतकर और अनन्त लक्ष्मीको
प्राप्त करके भी महात्मा लोग अपनी प्रशंसा
नहीं करते। देखो अग्नि मौन होकर सबको
भस्म करता है, सूर्य मौन होकर प्रकाश करते
हैं और पृथ्वी मौन होकर सब जगतको धारण
करती है। ब्रह्माने चारों वर्णोंके पृथक पृथक
कर्म बना दिये हैं, उन्हींसे धर्मसे मनुष्यको
धन मिल सकता है, और उन्हींके करनेमें

मनुष्यको दोष भी नहीं होता। ब्राह्मण चारों वेदोंको पढ़कर यज्ञ करे और करावे। क्षत्री धनुषके आश्रयसे यज्ञ करें, परन्तु करावें नहीं। वैश्य द्रव्य उपार्ज्जन करके वेदोक्त कर्म्म करें और शूद्रको नम्र होकर सामान्य वृत्तिसे चारो वर्णोंकी सेवा करनी चाहिये। महात्मा लोग शास्त्रके अनुसार कर्म्म करके और समस्त पृथ्वीके स्वामी होकर भी गुरुओंकी सेवा करते हैं, भला ऐसा कौन क्षत्रिय होगा जो जुवेमें राज्यको जीतकर अपनी प्रशंसा करेगा? यह मूर्ख धृतराष्ट्र पुत्रही ऐसा निर्लज्ज है, जो ऐसे ऐसे अधर्म्म करता है। दुर्य्योधनके समान दुष्ट जगतमें व्याधके सिवा और कोई न होगा, जो छलसे धन जीतकर अपनी प्रशंसा करता है। और साधुओंके सङ्ग छलकर अपनेको बुद्धिमान कहता है, रे दुष्ट! तैंने कौनसे रथ-युद्धमें अर्ज्जुनको जीता है? तैंने कौनसे युद्धमें सह-देवको पकड़ा था? तैंने कब रथयुद्धमें नकुल-को मारा था? तुझसे कौन से युद्धमें युधिष्ठिर हार गये? तैंने कौनसे घोर युद्धमें महा बल-वान भीमसेनको जीता था? तैंने कब इन्द्र-प्रस्थके ऊपर चढ़ाई करी थी? और वह कौनसा युद्ध हुआ था जिसमें तने द्रौपदीको जीता था? कौनसे न्यायसे रजस्वला द्रौपदीको एक वस्त्र पहनाके सभामें बुलाया था? हे सूत। तुम लोगोंने पाण्डवोंका मूल इस प्रकार नाश किया है,जैसे कोई लोभी चन्दनके वृक्षको का ता है। तुमको स्मरण होगा कि जुवेके समय विदुरने क्या कहा था? तुम सूत हो अपना कर्म्म करो युद्धको क्या जानो। हमलोग देखते हैं कि मनुष्यसे चींटी पर्य्यन्त अपने वैरका शक्तिके अनुसार बदला लेतेही है। पाण्डव लोग द्रौपदीके दुःखको क्षमा नहीं करेंगे। अर्ज्जुनने धृतराष्ट्रका वंश नाश करनेको अवतार लिया है। तहां तुम पण्डित होकर वचन कहना चाहते हो? अर्ज्जुन पूर्व्व वैरको स्मरण करके अवश्य अवश्य हमारा नाश करेगा। कुन्तीपुत्र अर्ज्जुन गन्धर्व्व, देवता, राक्षस और सर्पोंसे भी युद्ध करनेको समर्थ है; अर्ज्जुन युद्धमें क्रोध करके जिसकी ओर जायगा, उसका इस प्रकार नाश कर देगा, जैसे गरुड़ वृक्षका, और अर्ज्जुन तुमसे अधिक बलवान इन्द्रके समान धनुषधारी कृष्णके समान योद्धा है। उसकी पूजा कौन नहीं करेगा? जो अर्ज्जुन देवतोंके सङ्ग देव विधिसे, मनुष्यके सङ्ग मनुष्य विधिसे लड़ता है, जो अस्त्रोंको अस्त्रसे काटता है, उसके समान कौन मनुष्य होगा? पुत्रसे भी शिष्य अधिक होता है, इसी कारण अर्ज्जुन द्रोणाचार्य्यको अधिकतर प्रिय हैं, तुमने जैसे जुवा खेला था, जैसे इन्द्रप्रस्थको जीता था, जिस बलके भरोसे द्रौपदीको सभामें बुलाया था, उसी बलसे अब अर्ज्जुनके सङ्ग युद्ध करो। हे दुर्य्योधन। यह तुम्हारा पण्डित मामा क्षत्रिय धर्म्मको जाननेवाला जुवारी शकुनि युद्ध करे, अर्ज्जुन शययुग, त्रेता, द्वापर और कलियुगके समान फांसे नहीं फेंकता, यह जलते हुए तीक्ष्ण वाणोंको छोड़ता है। गाण्डीवसे छूटे हुए गिद्ध पंखयुक्त तेज वाण पहाड़ोंको काटकर भी पार चले जाते हैं। मृत्यु, यम, पवन, और अग्नि ये सब क्रोध करके शत्रुओंका कुछ शेष छोड़ सकते हैं, परन्तु अर्ज्जुन नहीं। तुमने जैसे अपने मामाकी सहायतासे जुवा खेला था, वैसेही अपने मामासे रक्षित होकर युद्ध करो। जिसकी इच्छा हो, सो युद्ध करे, हम अर्ज्जुनसे नहीं लड़ेंगे, क्योंकि हम विराटसे युद्ध करनेको आये हैं। यदि वह गौओंको छीनने आवे हो तो हम लड़ेंगे।

४९ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे राजन् दुर्य्योधन। द्रोणपुत्र अश्वत्थामा उचित कहते हैं, और कृपाचार्य्यने

उचित कहा, परन्तु कर्ण केवल हठसे युद्ध करनेकी इच्छा करता है। ज्ञानी पुरुषको उचित है कि गुरुको कुछ न कहे, और युद्ध भी देश और कालके अनुसार करे। जिसके सूर्य्यके समान तेजस्वी पांच शत्रु हैं, उस पण्डितको भी भ्रम क्यों न होगा? धर्म्मज्ञ पण्डित लोग भी अपने प्रयोजनके लिये भूल जाते हैं, इस लिये हम कुछ वचन कहते हैं। कर्णने जो कुछ तुमसे कहा था, सो सब तेज बढ़ानेके लिये इसहेतु अश्वत्थामाको क्षमा करनी चाहिये, क्योंकि महायुद्ध होनेवाला है। जिस समय अर्ज्जुन युद्धकरनेको उपस्थित हो, वह समय विरोधका नहीं है, तुम द्रोणाचार्य्य और अश्वत्थामा सब क्षमा करो। आप लोगोंकी शस्त्र-विद्या ऐसी उत्तम और अक्षय है, जैसा सूर्य्य और चन्द्रमाका तेज। आप लोगोंकी वेद विद्या और ब्रह्मास्त्र भी वैसेही उत्तम है। हमें द्रोणाचार्य्य और अश्वत्थामामें शस्त्र-विद्या और वेद विद्या भरी दीखती हैं। हमारी बुद्धिमें द्रोणाचार्य्य और अश्वत्थामाके सिवा दोनों विद्या एक पुरुषमें नहीं हैं। हे राजन्! वेदान्त पुराण और इतिहासोंको परशुरामके सिवा द्रोणाचार्य्यसे अधिक कौन जानता है? ब्रह्मास्त्र और वेद विद्या द्रोणाचार्य्यके सिवा किस पुरुषमें है? इस लिये आचार्य्यपुत्र अश्वत्थामा हमारे ऊपर कृपा करें, यह समय विरोधका नहीं है। महात्मा पण्डितोंने जो दोष कहे हैं, इनमें भेदही मुख्य है, इससे सर्व्वनाश हो सकता है।

अश्वत्थामा बोले, हे पुरुषसिंह भीष्म! आप हमारे न्याययुक्त वचनोंकी निन्दा करने योग्य नहीं हैं, क्योंकि आचार्य्यने क्रोधसे अर्ज्जुनके गुण कहे थे, इसमें यही हेतु है कि शत्रुके गुण और गुरुके भी दोष कहने चाहिये। विशेष कर पुत्र और शिष्यको तो कल्याणहीका उपदेश करना चाहिये।

दुर्य्योधन बोले, आचार्य्यको क्षमा करना उचित है, क्योंकि यह समय शान्तिका है। उन्होंने जो कुछ कहा था, क्रोधसे कहा था, परन्तु भेदकी इच्छासे नहीं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे जनमेजय! अनन्तर दुर्य्योधनने द्रोण, भीष्म महात्मा कृपाचार्य्यके सहित द्रोणाचार्य्यसे कहकर कर्णका अपराध क्षमा कराया।

द्रोणाचार्य्य बोले, शान्तनुपुत्र भीष्मने जो पहले वचन कहा था, हम उसीसे प्रसन्न होगये थे, अब जो कर्त्तव्य है सो कीजिये, ऐसा यत्न करना चाहिये जिसमें साहस और भूलसे भी दुर्य्योधन युद्धमें अर्ज्जुनके आगे न जायं। अर्ज्जुन समय पूरा होनेके पहले कदापि प्रत्यक्ष नहीं हो सकता, इससे जान पड़ता है कि वर्ष पूरा होगया। अब अर्ज्जुन बिना गौओंको लिये नहीं लौटेगा। ऐसा उपाय करना चाहिये, जिसमें अर्ज्जुन हमारी सेना और धृतराष्ट्रके पुत्रोंका नाश न करे। हे गङ्गापुत्र! राजा दुर्य्योधनने जो पहले वचन कहे थे, उसको विचारकर जो उचित हो, सो आप कहिये।

५० अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, समयकी गिनतीमें कला, काष्ठा, मुहूर्त्त, दिन, पक्ष, महीने, नक्षत्र, ग्रह, ऋतु और वर्ष गिने जाते हैं, इन सबको मिलाकर जगतमें कालचक्र घूमता है। नक्षत्रके अतिचारसे और समयकी ठीक गिनतीसे प्रति पांच वर्षमें दो महीने बढ़ जाते हैं, ऐसी गणना करनेसे पाण्डवोंके तेरह वर्षमें पांच महीने और तेरह दिन अधिक हो गये। तथा इसी गिनतीसे पांच महीने दो दिन सत्ताइस नाड़ी पैंतालिस पल और पन्द्रह निमेषसे भी अधिक समय हो गया। पाण्डवोंने जो यह प्रतिज्ञा की थी, उसको उचित रीतिसे

निर्वाह किया! यह सब निश्चय विचारकर अर्ज्जुन युद्ध करनेको आया है, जहां साक्षात युधिष्ठिर हों तहां अधर्म्म क्यों होगा! पांचो पाण्डव महात्मा, धर्म्म जाननेवाले और लोभ रहित हैं। इसीसे उन्होंने इस घोर व्रतको पालन किया, वे लोग कदापि अधर्म्मसे राज्यकी इच्छा नहीं करेंगे क्योंकि कुरुकुल श्रेष्ठ पाण्डव लोग महापराक्रमी हैं, उन्होंने धर्म्मपाशमें बंधकर इस क्षत्रिय व्रतको समाप्त किया। यदि यह अर्ज्जुन न होगा और मिथ्या बोलेगा, तो हमसे अवश्य हार जायगा। पाण्डव लोग मर जायंगे परन्तु झूठ नहीं बोलेंगे। पुरुषसिंह पाण्डवोंको जो वस्तु प्राप्त होने योग्य है, उसे वे छोड़ेंगे नहीं क्योंकि वे साक्षात बज्रधारी इन्द्रके समान बलवान हैं। इस लिये हम सब लोग मिलकर अर्ज्जुनसे युद्ध करेंगे। इस लिये पण्डितोंने जो कल्याणकारी बातें कही है, सो तुमको शीघ्रही करनी चाहियें। हे कौरव! हे राजेन्द्र! अब अर्ज्जुन युद्ध करनेको आया है, इस लिये हमें परम सिद्धिका निश्चय नहीं होता। युद्धमें लाभ, हानि, जय और पराजय इनमेंसे एक वस्तु अवश्य ही प्राप्त होती है, इस लिये धर्म्म सहित युद्धका कार्य्य शीघ्र करना चाहिये।

दुर्य्योधन बोले, हे पितामह! मैं पाण्डवोंको राज्य नहीं दूंगा, इस लिये शीघ्र युद्धका विधान कीजिये।

भीष्म बोले, हे कुरुनन्दन! हमको सदा तुम्हारे कल्याणका उपदेश करना चाहिये, इस लिये इस विषयमें हमारी जो सम्मति है, सो तुमसे कहते हैं, यदि तुमको प्रिय लगे तो सुनो। इसी समय सेनाके चार भाग कर देने चाहिये। एक भागको लेकर इसी समय तुम हस्तिनापुरको चले जाओ, दूसरा भाग गौओंको लेकर हस्तिनापुरको जाय, और आधी सेनासे हम लोग अर्ज्जुनके सङ्ग युद्ध करेंगे। हम, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, कर्ण और अश्वत्थामा मिलकर अर्ज्जुनसे युद्ध करेंगे। यदि उनकी सहायताको राजा विराट भी आजायगा, और साक्षात इन्द्र भी अर्ज्जुनको रक्षा करनेको आवेगा तौभी मैं इस प्रकार से निवारण करूंगा, जैसे तट समुद्रको निवारण कर देता है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भीष्मके यह वचन सबको प्रिय लगे, और राजा दुर्य्योधनने उसी प्रकार सेनाके चार भाग किये। एकके सङ्ग राजा दुर्य्योधनको भेज दिया, और दूसरेको गौओंके सङ्ग भेजकर मुख्य सेनापतियोंकी सम्मतिसे व्यूह बनाना आरम्भ किया।

भीष्म बोले, हे आचार्य्य! आप सेनाके बीचमें रहिये, अश्वत्थामा बाईं ओर बुद्धिमान शारद्वत पुत्र कृपाचार्य्य दहनी ओरसे सेनाकी रक्षा करें। सूतपुत्र कर्ण सब युद्ध सामग्रीके सहित सन्नद्ध होकर सेनाके मुखमें खड़े हों और मैं पीछे रहकर सबकी रक्षा करूंगा।

५१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजा जनमेजय! जिस समय कौरवोंकी सेनाका इस प्रकार व्यूह बन चुका तब अपने रथके शब्दसे दिशाओंको पूर्ण करते हुए, अर्ज्जुन सेनाकी ओर आये। कौरवोंने अर्ज्जुनकी ध्वजा देखी और गाण्डीव धनुषका महा शब्द सुना। गाण्डीव धनुषधारी महारथ अर्ज्जुनको देख द्रोणाचार्य्य बोले, यह अर्ज्जुनकी ध्वजा दूरहीसे दीखने लगी, यह रथ और बाणके शब्द आने लगे। यह देखो महारथ अर्ज्जुन रथमें बैठे हुए बज्रके समान धनुषको खींच रहे हैं। यह देखो अर्ज्जुनके दो बाण मेरे पैरोंमें गिरे, और दूसरे दो कानोंको छूकर चले गये। इनका प्रयोजन यह है कि अर्ज्जुन वनवाससे निवृत्त होकर और अमानुष कर्म्म करके हमको प्रणाम करता है, और

युद्ध करनेकी आज्ञा मांगता है। आज हमने अपने प्यारे बुद्धिमान शिष्यको बहुत दिनमें देखा। इस समय पाण्डुपुत्र अर्ज्जुन तेजसे प्रकाशित हो रहा है। रथ, बाण, तूणीर, तलत्राणो, ध्वज, पताका, कवच, किरीट, खड्ग और धनुषके सहित अर्ज्जुनकी ऐसी शोभा बढ़ रही है, जैसे ज्वालाओंके सहित जलती हुई अग्निकी।

अर्ज्जुन बोले, हे सारथी! तुम हमारे रथको एकबार रणभूमितक हांको, वहां जाकर हम देखेंगे कि कुरुकुलकलङ्क दुर्य्योधन कहां है? इन सब कौरवोंको छोड़कर करके मैं महा अभिमानी दुर्य्योधनहीसे युद्ध करूंगा। क्योंकि उसके हारनेसे सब हार जायंगे। यह देखो! गुरु द्रोणाचार्य्य खड़े हैं, इधर उनके पुत्र अश्वत्थामा हैं। एक ओर भीष्म खड़े हैं। दहनी ओर कृपाचार्य्य है और आगे कर्ण खड़े हैं। क्या सबही वीर हस्तिनापुरसे युद्ध करनेको चले आये? परन्तु आश्चर्य्य यही है कि हम राजा दुर्य्योधनको नहीं देखते हैं। आहा। वह देखो जोनेके भयसे राजा दुर्य्योधन दक्षिण मार्गसे गौओंके सहित भागा जाता है। हे विराटपुत्र! तुम इस सब सेनाओ छोड़कर हमारे रथको शीघ्र दुर्य्योधनके आगे ले चलो हम वहीं चलकर युद्ध करेंगे। क्योंकि निष्प्रयोजन महारथियोंसे युद्ध करनेसे क्या लाभ है? दुर्य्योधनको जीतकर गौ छीन कर अपने नगरको लौट जायंगे, और युद्ध करना वृथा है।

वैशम्पायन मुनि बोले, अर्ज्जुनके ऐसे वचन सुन विराटपुत्र उत्तरने अत्यन्त यत्न करके कौरवोंकी सेनासे बचाकर वेगसे घोड़ोंको हांका, जिधरसे दुर्य्योधनकी सेना जा रही थी दौड़ी दूर जाकर उत्तरने घोड़ोंको और भी वेगसे चलाया। अर्ज्जुनको सेना छोड़कर जाते हुए देख कौरव लोग इनके अभिप्रायको जान गये। तब कृपाचार्य्य बोले, हमें निश्चय होता है, कि अर्ज्जुन राजासे युद्ध करनेको जा रहे हैं, इस लिये आप सब लोग रथोंको शीघ्र हांककर इसके आगे होजाइये। क्योंकि युद्धमें क्रोधी अर्ज्जुनके आगे इन्द्र और देवकीपुत्र कृष्णके सिवा कोई नहीं ठहर सकता। पृथ्वीमें भरद्वाजपुत्र द्रोणाचार्य्य और महारथ अश्वत्थामा भी अर्ज्जुनसे युद्ध कर सकते हैं, हम गौओंको और धनको लेकर क्या करेंगे? अर्ज्जुन समुद्रमें दुर्य्योधन रूपी नाव डूबजायगी; ये लोग इधर सम्मति करतेही रहे उतनेमें अर्ज्जुन दुर्य्योधनके आगे जा पहुंचे। वहां जाकर अर्ज्जुनने अपनी धनुषपर टङ्कार दी और अपना नाम सुनाकर शङ्ख बजाया। शङ्खके शब्द सुनतेही सब शत्रुओंके रोवे खड़े हो गये और सब लोग आश्चर्य्य करने लगे। उतनेही समयमें अर्ज्जुनने अपने तीक्ष्ण बाणोंसे दुर्य्योधनकी सेनाको इस प्रकार छा लिया, जैसे वृक्षोंको छोटे कीड़े छा लेते हैं। उस समय दुर्य्योधनकी सेनामें जरासी भी भूमि ऐसी न बची जहां अर्ज्जुनके बाण न पहुंचे हों, परन्तु किसी योद्धाने युद्धमें भागनेकी इच्छा न करी और सब अर्ज्जुनकी प्रशंसा करने लगे। तब अर्ज्जुनने धनुषपर टङ्कार देकर शङ्ख बजाया और रथपर बैठे हुए राक्षसोंको गर्ज्जनेकी आज्ञा दी। उन सबके शब्दसे वीर लोग घबड़ा गये, गौएं अपनी पंछ ऊंची करके और हम्मा बोलती हुई दक्षिणकी ओरसे नगरकी ओर आपसे आप भाग गईं।

५२ अध्याय समाप्त।

वैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ अर्ज्जुन जब गौओंको जीत चुके तब युद्धकी इच्छासे शत्रुओंकी सेनापर बाण बरसाते हुए दुर्य्योधनके आगे पहुंचे। जब कौरवोंने जाना कि अर्ज्जुनने गौओंको

छुड़ाकर कार्य्य सिद्ध कर लिया और दुर्य्योधनसे युद्ध करनेको चले जाते हैं, तब सब लोग वेगसे उनकी ओर दौड़े। ध्वजायुक्त कौरवोंकी अनेक सेनाके व्यूहको देखकर शत्रुनाशन अर्ज्जुनने विराटपुत्र उत्तरसे कहा, हे सारथे! तुम हमारे सोनेके लगामवाले घोड़ोंको शीघ्र हांको, क्योंकि हम इन कौरवोंसे शीघ्र युद्ध करना चाहते है। हे राजपुत्र! यह दुरात्मा सूतपुत्र कर्ण दूर्य्योधनके आश्रयसे अभिमानमें भर गया है, और हमसे इस प्रकार युद्ध करना करना चाहत है, जैसे हाथी हाथीसे; इस लिये तुम हमारे रथको इसीके आगे ले चलो। उसी समय राजा विराटके पुत्रने अपनी चतुरतासे सोनेके साजवाले बड़े घोड़ोंको इस प्रकार हांका कि वे कौरवोंकी सेनाके बीचसे निकलकर कर्णके रथके आगे पहुंचे। उसी समय अर्ज्जुनको क्रोधसे आते हुए देख कर्णकी रक्षाके निमित्त महारथ चित्रसेन, संग्रामजित, शत्रुसह और जय आदि वीरोंने अर्ज्जुनके ऊपर तीक्ष्ण वाण चलाये। उसी समय पुरुषवीर अर्ज्जुनने क्रोधमें भरकर अपने वाणोंसे उस रथ समूहको इस प्रकार नाश किया जैसे अग्नि ज्वालासे बनको भस्म करती है। उसी समय उस घोर युद्धमें महारथ अर्ज्जुनसे युद्ध करनेके लिये बिकर्ण आया। विकर्ण महारथ भीमसेनके छोटे भाई अर्ज्जुन पर तीक्ष्ण वाण वर्षाने लगा। उसी समय अर्ज्जुनने अपने वाणोंसे विकर्णकी सोनेसे चित्रित विचित्र दृढ़ रोदेवाली धनुषको काटकर उसकी ध्वजाको गिरा दिया। ध्वजा और धनुषके कटनेसे विकर्ण बहुत घबड़ाये और युद्धको छोड़कर भागे। विकर्णको भागते तथा अपनी सेनाको नाश होते देख राजा शत्रन्तपको महाक्रोध हुआ और उनके ऊपर तीक्ष्णवाण बरसाने लगा। जब अर्ज्जुनने देखा कि राजा शत्रन्तप हमसे युद्ध करनेको आये, तब उनके शरीरमें पांच वाण और सारथीको दश वाण मारे। राजा शत्रुन्तप उन शरीरवेधी वाणोंके लगनेसे मरकर इस प्रकार पृथ्वीमें गिरे, जैसे पर्व्वत लगनेसे वृक्ष टूटकर गिरता है। जब महावीर कुरुकुल सिंह अर्ज्जुनने राजा शत्रुन्तपको मारा, तब कौरव सेनाके योद्धा इस प्रकार कांपने लगे जैसे अधिक वायु चलनेसे बनके वृक्ष कांपने लगते हैं। उसी समय अर्ज्जुनने सुन्दर वेषवाले इन्द्र तुल्य पराक्रमी अनेक वीरोंको मार कर पृथ्वीमें गिरा दिया उस समय मरे हुए वीर ऐसे दीखने लगे जैसे हिमाचलमें उत्पन्न हुए बड़े बड़े हाथी गाण्डीवधनुषधारी महावीर अर्ज्जुन योद्धाओंको मारते हुए उस युद्धमें सब ओर इस प्रकार घूमने लगे जैसे जेठ मासकी अग्नि उस समय युद्धमें घूमते महारथ अर्ज्जुनकी ऐसी शोभा बढी जैसे बसन्त ऋतुमें पत्ते उड़ाते हुए वायुकी। उसी समय अर्ज्जुनने वेगसे जाकर कर्णके छोटे भाईके घोड़ोंको मार डाला और एक वाणसे संग्रामजितका शिर काट कर पृथ्वीमें गिरा दिया। भाईके मरनेसे विकर्त्तन पुत्र कर्णको महा क्रोध हुआ और विषैले सर्पके समान दांत पीस कर अर्ज्जुनकी ओर ऐसे दौड़ा, जैसे सिंह सिंहकी ओर दौड़ता है। कर्णने क्रोध करके अर्ज्जुनके शरीरमें बारह वाण मारे और विराट पुत्रके हाथमें एक तथा अपने वाणोंसे अर्ज्जुनके घोड़ोंको व्याकुल कर दिया अर्ज्जुन कर्णको क्रोध किये आते हुए देख उसकी ओर इस प्रकार वेगसे दौड़े जैसे विचित्र पंखवाले गरुड़ सर्पकी ओर दौड़ते हों। सब धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ महाबलवान और सब शस्त्रोंको सहनेवाले अर्ज्जुन और कर्ण परस्पर घोर युद्ध करने लगे और सब कौरव लोग उनका युद्ध देखने लगे। क्रोध भरे अर्ज्जुनने कर्णको युद्धमें खड़े देख क्षण भर

हंसते हंसते घोड़े रथ और सारथीके सहित वाणोंसे छा लिया, तब अर्ज्जनके वाणोंसे रथ और हाथियोंपर चढ़े हुए वीर गिरने लगे और भीष्म आदि सब कौरव वाणोंसे छिप गये। महावीर कर्ण भी अपने वाणोंसे अर्ज्जनके सब वाणोंको काटकर धनुष और वाण लेकर जलती हुई अग्निके समान प्रकाशित होने लगे। तब सब कौरव लोग कर्णको धन्यवाद देकर, तथा ताली और शङ्ख, भेर बजाकर कूदने लगे और धनुषोंपर टङ्कार देने लगे। विशाल पञ्चवाले वानरयुक्त घोर ध्वजाको देखकर और गाण्डीव धनुषके शब्दको सुनकर तथा अर्ज्जुनको प्रसन्नता पूर्व्वक युद्धमें खड़े देख कर्ण गर्ज्जने लगे। अर्ज्जुनने उतनेही समयमें अपने वाणोंसे रथ, घोड़े और सारथीके सहित कर्णको व्याकुल कर दिया। फिर भीष्म, द्रोणाचार्य्य और कृपाचार्य्यको देखकर सिंहके समान गर्ज्जने लगे। वीर कर्णने भी अर्ज्जुनके ऊपर इस प्रकार वाणोंकी वर्षा करी जैसे मेघ जल वर्षाता है। उन दोनों वीरोंका घोर युद्धमें तीक्ष्ण वाण चलाते और रथोंमें बैठे लोगोंने इस प्रकार देखा जैसे मेघसे छिपे चन्द्रमा और सूर्य्यको। उसी समय शीघ्र वाण चलानेवाले कर्णने अर्ज्जनके चारो घोड़ोंपर चार चार वाण, तीन वाण विराटपुत्र उत्तरको और तीन वाण अर्ज्जुनकी ध्वजामें मारे। इन वाणोंके लगनेसे कुरुकुल सिंह शत्रुनाशन अर्ज्जनको इस प्रकार क्रोध हुआ, जैसे निद्रासे जगे सिंहको। तब महात्मा अर्ज्जुनने शस्त्रोंसे व्याकुल होकर दिव्य वाणोंका प्रयोग किया और अपने वाणोंसे कर्णके रथको ऐसे छा लिया, जैसे सूर्य्य अपनी किरणोंसे लोकको छा लेता है। अर्ज्जनने अपने तेज वाणोंको तूणीरसे निकाल और कान तक खींचकर सूतपुत्र कर्णको ओर चलाना आरम्भ किया। उन दोनोंका इस प्रकार युद्ध हुआ जैसे दो मतवारे हाथी लड़ते हैं। उस समय अर्ज्जुनके धनुषसे छूटे हुए तीक्ष्ण और वज्रके समान वाणोंसे कर्णके हाथ, जङ्घा, शिर, माथा, गला, मुख, और सब अङ्ग पूर्ण होगये विकर्त्तनपुत्र कर्ण अर्ज्जुनके तीक्ष्ण वाणोंसे व्याकुल होकर युद्धको छोड़ इस प्रकार भागे जैसे मतवारे हाथीसे हरकर हाथी भागता है।

५२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! जब राधापुत्र कर्ण युद्धको छोड़के भागे, तब दुर्य्योधनादि वीर अपनी अपनी सेनामें खड़े होकर धीरे धीरे अर्ज्जुनके ऊपर वाण चलाने लगे, तब अर्ज्जुन उन सब वीरोंके वाणोंको इस प्रकार सहने लगे, जैसे समुद्रके वेगको तटका पर्व्वत। तब सफेद घोड़ेवाले महारथ अर्ज्जुन हंसकर दिव्य वाण चलाने लगे। उस समय अर्ज्जनके वाणोंसे दशोंदिशा इस प्रकार पूरित हो गईं जैसे जगत सूर्य्यकी किरणोंसे। उस सेनामें कोई रथ, घोड़ा, हाथी और पदाति ऐसा न बचा जिसके शरीरमें अर्ज्जनके वाण न लगे हों। सब सेनावाले उत्तरके घोड़ा हांकने तथा अर्ज्जुनके दिव्य वाण, पराक्रम और शीघ्रताकी प्रशंसा करने लगे। उस युद्धमें शत्रुओंका नाश करते हुए अर्ज्जुनका ऐसा तेज बढ़ा जैसा प्रलय कालमें यमराजका। जलती हुई अग्निके समान तेजस्वी अर्ज्जनको शत्रु युद्धमें देख भी न सके। उस सेनाकी उस समय ऐसी शोभा बढ़ी जैसे पर्व्वतके समीपवाले मेघोंकी सूर्य्यकी किरण लगनेसे। हे जनमेजय! उस सेनाके वीर अर्ज्जुनके वाण लगनेसे ऐसे शोभित हुए जैसे फूलोंसे अशोकवृक्ष। अर्ज्जुनके वाणोंसे अनेक फूलोंकी माला, सोनेकी माला, छत्र और ध्वजा कटकर आकाशमें उड़ने लगीं।

कुड़ाकर कार्य्य सिद्ध कर लिया और दुर्य्योधनसे युद्ध करनेको चले जाते हैं, तब सब लोग वेगसे उनकी ओर दौड़े। ध्वजायुक्त कौरवोंकी अनेक सेनाके व्यूहको देखकर शत्रुनाशन अर्ज्जुनने विराटपुत्र उत्तरसे कहा, हे सारथे! तुम हमारे सोनेके लगामवाले घोड़ोंको शीघ्र हांको, क्योंकि हम इन कौरवोंसे शीघ्र युद्ध करना चाहते हैं। हे राजपुत्र! यह दुरात्मा सूतपुत्र कर्ण दुर्य्योधनके आश्रयसे अभिमानमें भर गया है, और हमसे इस प्रकार युद्ध करना करना चाहत है, जैसे हाथी हाथीसे; इस लिये तुम हमारे रथको इसीके आगे ले चलो। उसी समय राजा विराटके पुत्रने अपनी चतुरतासे सोनेके साजवाले बड़े घोड़ोंको इस प्रकार हांका कि वे कौरवोंकी सेनाके बीचसे निकलकर कर्णके रथके आगे पहुंचे। उसी समय अर्ज्जुनको क्रोधसे आते हुए देख कर्णकी रक्षाके निमित्त महारथ चित्रसेन, संग्रामजित, शत्रुसह और जय आदि वीरोंने अर्ज्जुनके ऊपर तीक्ष्ण वाण चलाये। उसी समय पुरुषवीर अर्ज्जुनने क्रोधमें भरकर अपने वाणोंसे उस रथ समूहको इस प्रकार नाश किया जैसे अग्नि ज्वालासे वनको भस्म करती है। उसी समय उस घोर युद्धमें महारथ अर्ज्जुनसे युद्ध करनेके लिये विकर्ण आया। विकर्ण महारथ भीमसेनके छोटे भाई अर्ज्जुन पर तीक्ष्ण वाण वर्षाने लगा। उसी समय अर्ज्जुनने अपने वाणोंसे विकर्णकी सोनेसे चित्रित विचित्र दृढ़ रोदेवाली धनुषको काटकर उसकी ध्वजाको गिरा दिया। ध्वजा और धनुषके कटनेसे विकर्ण बहुत घबड़ाये और युद्धको छोड़कर भागे। विकर्णको भागते तथा अपनी सेनाको नाश होते देख राजा शत्रुन्तपको महाक्रोध हुआ और उनके ऊपर तीक्ष्णवाण वरसाने लगा। जब अर्ज्जुनने देखा कि राजा शत्रुन्तप हमसे युद्ध करनेको आये, तब उनके शरीरमें पाच वाण और सारथीको दश वाण मारे। राजा शत्रुन्तप उन शरीरवेधी वाणोंके लगनेसे मरकर इस प्रकार पृथ्वीमें गिरे, जैसे पर्व्वत लगनेसे वृक्ष टूटकर गिरता है। जब महावीर कुरुकुल सिंह अर्ज्जुनने राजा शत्रु- न्तपको मारा, तब कौरव सेनाके योद्धा इस प्रकार कांपने लगे जैसे अधिक वायु चलने वनके वृक्ष कांपने लगते हैं। उसी सम अर्ज्जुनने सुन्दर वेषवाले इन्द्र तुल्य पराक्र अनेक वीरोंको मार कर पृथ्वीमें गिरा दिया। उस समय मरे हुए वीर ऐसे दीखने लगे जैसे हिमाचलमें उत्पन्न हुए बड़े बड़े हाथी। गाण्डीवधनुषधारी महावीर अर्ज्जुन योद्धा- ओंको मारते हुए उस युद्धमें सब ओर इस प्रकार घूमने लगे जैसे जेठ मासकी अग्नि। उस समय युद्धमें घूमते महारथ अर्ज्जुनकी ऐसी शोभा बढी जैसे बसन्त ऋतुमें पत्ते उड़ाते हुए वायुकी। उसी समय अर्ज्जुनने कर्णके जाकर कर्णके छोटे भाईके घोड़ोंको मार डाला और एक वाणसे संग्रामजितका सिर काट कर पृथ्वीमें गिरा दिया। भाईके मरने विकर्त्तन पुत्र कर्णको महा क्रोध हुआ और विषैले सर्पके समान दांत पीस कर अर्ज्जुनकी ओर ऐसे दौड़ा, जैसे सिंह सिंहकी ओर दौड़ता है। कर्णने क्रोध करके अर्ज्जुनके शरीरमें बारह वाण मारे और विराट पुत्रके हाथमें एक तथा अपने वाणोंसे अर्ज्जुनके घोड़ोंको व्याकुल कर दिया। अर्ज्जुन कर्णको क्रोध किये आते हुए देख उसकी ओर इस प्रकार वेगसे दौड़े जैसे विचित्र पंखवाले गरुड़ सर्पकी ओर दौड़ते हो। सब धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ महाबलवान और सब शस्त्रोंको सहनेवाले अर्ज्जुन और कर्ण परस्पर घोर युद्ध करने लगे और सब कौरव लोग उनका युद्ध देखने लगे। क्रोधमें भरे अर्ज्जुनने कर्णको रथमें खड़े देख हुए महा

हंसते हंसते घोड़े रथ और सारथीके सहित बाणोंसे छा लिया, तब अर्जुनके बाणोंसे रथ और हाथियोंपर चढ़े हुए वीर गिरने लगे और भीष्म आदि सब कौरव बाणोंसे छिप गये। महावीर कर्ण भी अपने बाणोंसे अर्जुनके सब बाणोंको काटकर धनुष और बाण लेकर जलती हुई अग्निके समान प्रकाशित होने लगे। तब सब कौरव लोग कर्णको धन्यवाद देकर तथा ताली और शङ्ख, भेर बजाकर कूदने लगे और धनुषोंपर टङ्कार देने लगे। विशाल पंछवाले बानरयुक्त घोर ध्वजाको देखकर और गाण्डीव धनुषके शब्दको सुनकर तथा अर्जुनको प्रसन्नता पूर्व्वक युद्धमें खड़े देख कर्ण गर्ज्जने लगे। अर्जुनने उतनेही समयमें अपने बाणोंसे रथ, घोड़े और सारथीके सहित कर्णको व्याकुल कर दिया। फिर भीष्म, द्रोणाचार्य्य और कृपाचार्य्यको देखकर सिंहके समान गर्ज्जने लगे। वीर कर्णने भी अर्जुनके ऊपर इस प्रकार बाणोंकी वर्षा करी जैसे मेघ जल वर्षाता है। उन दोनों वीरोंको घोर युद्धमें तीक्ष्ण बाण चलाते और रथोंमें बैठे लोगोंने इस प्रकार देखा जैसे मेघसे छिपे चन्द्रमा और सूर्य्यको। उसी समय शीघ्र बाण चलानेवाले कर्णने अर्जुनके चारो घोड़ोंपर चार चार बाण, तीन बाण विराटपुत्र उत्तरको और तीन बाण अर्जुनकी ध्वजामें मारे। इन बाणोंके लगनेसे कुरुकुल सिंह शत्रुनाशन अर्जुनको इस प्रकार क्रोध हुआ, जैसे निद्रासे जगे सिंहको। तब महात्मा अर्जुनने शस्त्रोंसे व्याकुल होकर दिव्य बाणोंका प्रयोग किया और अपने बाणोंसे कर्णके रथको ऐसे छा लिया, जैसे सूर्य्य अपनी किरणोंसे लोकको छा लेता है। अर्जुनने अपने तीक्ष्ण बाणोंको तूणीरसे निकाल और कान पर्य्यन्त खींचकर सूतपुत्र कर्णकी ओर चलाना प्रारम्भ किया। उन दोनोंका इस प्रकार युद्ध हुआ जैसे दो मतवारे हाथी लड़ते हैं। उस समय अर्जुनके धनुषसे छूटे हुए तीक्ष्ण और वज्रके समान बाणोंसे कर्णके हाथ, जङ्घा, शिर, माथा, गला, मुख, और सब अङ्ग पूर्ण होगये विकर्त्तनपुत्र कर्ण अर्जुनके तीक्ष्ण बाणोंसे व्याकुल होकर युद्धको छोड़ इस प्रकार भागे जैसे मतवारे हाथीसे डरकर हाथी भागता है।

५३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! जब राधापुत्र कर्ण युद्धको छोड़के भागे, तब दुर्य्योधनादि वीर अपनी अपनी सेनामें खड़े होकर धीरे धीरे अर्जुनके ऊपर बाण चलाने लगे, तब अर्जुन उन सब वीरोंके बाणोंको इस प्रकार सहने लगे, जैसे समुद्रके वेगको तटका पर्व्वत। तब सफेद घोड़ेवाले महारथ अर्जुन हंसकर दिव्य बाण चलाने लगे। उस समय अर्जुनके बाणोंसे दशोंदिशा इस प्रकार पूरित हो गईं जैसे जगत सूर्य्यकी किरणोंसे। उस सेनामें कोई रथ, घोड़ा, हाथी और पदाति ऐसा न बचा जिसके शरीरमें अर्जुनके बाण न लगे हों। सब सेनावाले उत्तरके घोड़ा हांकने तथा अर्जुनके दिव्य बाण, पराक्रम और शीघ्रताकी प्रशंसा करने लगे। उस युद्धमें शत्रुओंको नाश करते हुए अर्जुनका ऐसा तेज बढ़ा जैसा प्रलय कालमें यमराजका। जलती हुई अग्निके समान तेजस्वी अर्जुनको शत्रु युद्धमें देख भी न सके। उस सेनाकी उस समय ऐसी शोभा बढ़ी जैसे पर्व्वतके समीपवाले मेघोंकी सूर्य्यकी किरण लगनेसे। हे जनमेजय! उस सेनाके वीर अर्जुनसे बाण लगनेसे ऐसे शोभित हुए जैसे पुष्पोंसे अशोकवृक्ष। अर्जुनके बाणोंसे अनेक फूलोंकी माला, सोनेकी माला, छत्र और ध्वजा कटकर आकाशमें उड़ने लगीं।

छुड़ाकर कार्य्य सिद्ध कर लिया और दुर्य्योधनसे युद्ध करनेको चले जाते हैं, तब सब लोग वेगसे उनकी ओर दौड़े। ध्वजायुक्त कौरवोंकी अनेक सेनाके व्यूहको देखकर शत्रुनाशन अर्ज्जुनने विराटपुत्र उत्तरसे कहा, हे सारथे! तुम हमारे सोनेके लगामवाले घोड़ोंको शीघ्र हांको, क्योंकि हम इन कौरवोंसे शीघ्र युद्ध करना चाहते है। हे राजपुत्र! यह दुरात्मा सूतपुत्र कर्ण दूर्य्योधनके आश्रयसे अभिमानमें भर गया है, और हमसे इस प्रकार युद्ध करना करना चाहत है, जैसे हाथी हाथीसे; इस लिये तुम हमारे रथको इसीके आगे ले चलो। उसी समय राजा विराटके पुत्रने अपनी चतुरतासे सोनेके साजवाले बड़े घोड़ोंको इस प्रकार हांका कि वे कौरवोंकी सेनाके बीचसे निकलकर कर्णके रथके आगे पहुंचे। उसी समय अर्ज्जुनको क्रोधसे आते हुए देख कर्णकी रक्षाके निमित्त महारथ चित्रसेन, संग्रामजित, शत्रुसह और जय आदि वीरोंने अर्ज्जुनके ऊपर तीक्ष्ण वाण चलाये। उसी समय पुरुषवीर अर्ज्जुनने क्रोधमें भरकर अपने वाणोंसे उस रथ समूहको इस प्रकार नाश किया जैसे अग्नि ज्वालासे बनको भस्म करती है। उसी समय उस घोर युद्धमें महारथ अर्ज्जुनसे युद्ध करनेके लिये विकर्ण आया। विकर्ण महारथ भीमसेनके छोटे भाई अर्ज्जुन पर तीक्ष्ण वाण वर्षाने लगा। उसी समय अर्ज्जुनने अपने वाणोंसे विकर्णकी सोनेसे चित्रित विचित्र दृढ रोढ़ेवाली धनुषको काटकर उसकी ध्वजाको गिरा दिया। ध्वजा और धनुषके कटनेसे विकर्ण बहुत घबड़ाये और युद्धको छोड़कर भागे। विकर्णको भागते तथा अपनी सेनाको नाश होते देख राजा शत्रन्तपको महाक्रोध हुआ और उनके ऊपर तीक्ष्णवाण वरसाने लगा। जब अर्ज्जुनने देखा कि राजा शत्रन्तप हमसे युद्ध करनेको आये, तब उनके

शरीरमे पांच वाण और सारथीको दश वाण मारे। राजा शत्रुन्तप उन शरीरवेधी वाणोंके लगनेसे मरकर इस प्रकार पृथ्वीमें गिरे, जैसे पर्व्वत लगनेसे वृक्ष टूटकर गिरता है। ज... महावीर कुरुकुल सिंह अर्ज्जुनने राजा श... न्तपको मारा, तब कौरव सेनाके योद्धा इ... प्रकार कांपने लगे जैसे अधिक वायु चलने... वनके वृक्ष कांपने लगते हैं। उसी सम... अर्ज्जुनने सुन्दर वेषवाले इन्द्र तुल्य पराक्रम... अनेक वीरोंको मार कर पृथ्वीमें गिरा दिया। उस समय मरे हुए वीर ऐसे दीखने ल... जैसे हिमाचलमें उत्पन्न हुए बड़े बड़े हाथी... गाण्डीवधनुषधारी महावीर अर्ज्जुन योद्धाओंको मारते हुए उस युद्धमें सब ओर इ... प्रकार घूमने लगे जैसे जेठ मासकी अग्नि... उस समय युद्धमें घूमते महारथ अर्ज्जुनकी ऐसी शोभा बढ़ी जैसे बसन्त ऋतुमें पत्ते उड़... हुए वायुकी। उसी समय अर्ज्जुनने क्रो... जाकर कर्णके छोटे भाईके घोड़ोंको मा... डाला और एक वाणसे संग्रामजितका शि... काट कर पृथ्वीमें गिरा दिया। भाईके मरने... विकर्त्तन पत्र कर्णको महा क्रोध हुआ और विषैले सर्पके समान दांत पीस कर अर्ज्जुनकी ओर ऐसे दौड़ा, जैसे सिंह सिंहकी ओ... दौड़ता है। कर्णने क्रोध करके अर्ज्जुनके शरीरमें बारह वाण मारे और विरा... पुत्रके हाथमें एक तथा अपने वाणों... अर्ज्जुनके घोड़ोंको व्याकुल कर दिया। अर्ज्जुन कर्णको क्रोध किये आते हुए दे... उसकी ओर इस प्रकार वेगसे दौड़े जैसे मिले पंखवाले गरुड़ सर्पकी ओर दौड़ते हों। सब धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ महाबलवान दो... सब शस्त्रोंको सहनेवाले अर्ज्जुन और क... परस्पर घोर युद्ध करने लगे और सब कौ... लोग उनका युद्ध देखने लगे। क्रोध... अर्ज्जुनने कर्णको युद्धमें खड़े देख ज... म...

हंसते हंसते घोड़े रथ और सारथीके सहित बाणोंसे छा लिया, तब अर्ज्जुनके बाणोंसे रथ और हाथियोंपर चढ़े हुए वीर गिरने लगे और भीष्म आदि सब कौरव बाणोंसे छिप गये। महावीर कर्ण भी अपने बाणोंसे अर्ज्जुनके सब बाणोंको काटकर धनुष और बाण लेकर जलती हुई अग्निके समान प्रकाशित होने लगे। तब सब कौरव लोग कर्णको धन्यबाद देकर तथा ताली और शङ्ख, भेर बजाकर कूदने लगे और धनुषोंपर टङ्कार देने लगे। विशाल पंछवाले बानरयुक्त घोर ध्वजाको देखकर और गाण्डीव धनुषके शब्दको सुनकर तथा अर्ज्जुनको प्रसन्नता पूर्व्वक युद्धमें खड़े देख कर्ण गर्ज्जने लगे। अर्ज्जुनने उतनेही समयमें अपने बाणोंसे रथ, घोड़े और सारथीके सहित कर्णको व्याकुल कर दिया। फिर भीष्म, द्रोणाचार्य्य और कृपाचार्य्यको देखकर सिंहके समान गर्ज्जने लगे। वीर कर्णने भी अर्ज्जुनके ऊपर इस प्रकार बाणोंकी वर्षा करी जैसे मेघ जल वर्षाता है। उन दोनों वीरोंको घोर युद्धमें तीक्ष्ण बाण चलाते और रथोंमें बैठे लोगोंने इस प्रकार देखा जैसे मेघसे छिपे चन्द्रमा और सूर्य्यको। उसी समय शीघ्र बाण चलानेवाले कर्णने अर्ज्जुनके चारो घोड़ोंपर चार चार बाण, तीन बाण विराटपुत्र उत्तरको और तीन बाण अर्ज्जुनको ध्वजामें मारे। इन बाणोंके लगनेसे कुरुकुल सिंह शत्रुनाशन अर्ज्जुनको इस प्रकार क्रोध हुआ, जैसे निद्रासे जगे सिंहको। तब महात्मा अर्ज्जुनने शस्त्रोंसे व्याकुल होकर दिव्य बाणोंका प्रयोग किया और अपने बाणोंसे कर्णके रथको ऐसे छा लिया, जैसे सूर्य्य अपनी किरणोंसे लोकको छा लेता है। अर्ज्जुनने अपने तीक्ष्ण बाणोंको तूणीरसे निकाल और कान पर्य्यन्त खींचकर सूतपुत्र कर्णकी ओर चलाना प्रारम्भ किया। उन दोनोंका इस प्रकार युद्ध हुआ जैसे दो मतवारे हाथी लड़ते हैं। उस समय अर्ज्जुनके धनुषसे छूटे हुए तीक्ष्ण और वज्रके समान बाणोंसे कर्णके हाथ, जङ्घा, शिर, माथा, गला, मुख, और सब अङ्ग पूर्ण होगये विकर्त्तनपुत्र कर्ण अर्ज्जुनके तीक्ष्ण बाणोंसे व्याकुल होकर युद्धको छोड़ इस प्रकार भागे जैसे मतवारे हाथोसे डरकर हाथी भागता है।

५३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। जब राधापुत्र कर्ण युद्धको छोड़के भागे, तब दुर्य्योधनादि वीर अपनी अपनी सेनामें खड़े होकर धीरे धीरे अर्ज्जुनके ऊपर बाण चलाने लगे, तब अर्ज्जुन उन सब वीरोंके बाणोंको इस प्रकार सहने लगे, जैसे समुद्रके वेगको तटका पर्व्वत। तब सफेद घोड़ेवाले महारथ अर्ज्जुन हंसकर दिव्य बाण चलाने लगे। उस समय अर्ज्जुनके बाणोंसे दशोंदिशा इस प्रकार पूरित हो गईं जैसे जगत सूर्य्यकी किरणोंसे। उस सेनामें कोई रथ, घोड़ा, हाथी और पदाति ऐसा न बचा जिसके शरीरमें अर्ज्जुनके बाण न लगे हों। सब सेनावाले उत्तरके घोड़ा हांकने तथा अर्ज्जुनके दिव्य बाण, पराक्रम और शीघ्रताकी प्रशंसा करने लगे। उस युद्धमें शत्रुओंको नाश करते हुए अर्ज्जुनका ऐसा तेज बढ़ा जैसा प्रलय कालमें यमराजका। जलती हुई अग्निके समान तेजस्वी अर्ज्जुनको शत्रु युद्धमें देख भी न सके। उस सेनाकी उस समय ऐसी शोभा बढ़ी जैसे पर्व्वतके समीपवाले मेघोंकी सूर्य्यकी किरण लगनेसे। हे जनमेजय। उस सेनाके वीर अर्ज्जुनसे बाण लगनेसे ऐसे शोभित हुए जैसे पुष्पोंसे अशोकवृक्ष। अर्ज्जुनके बाणोंसे अनेक फूलोंकी माला, सोनेकी माला, छत्र और ध्वजा कटकर आकाशमें उड़ने लगीं।

अनेक वीर अपना पक्ष निर्ब्बल देखकर इधर उधर भागने लगे, अनेक घोड़े रथ रहित पक्षियोंको लेकर भागने लगे। अर्ज्जुनने कान, कोख, मुख, मर्म्म और सब शरीरोंमें बाण मारकर अनेक हाथियोंको पृथ्वीमें गिरा दिया। सेनाके अगाड़ी चलनेवाले मरे हुए हाथियोंसे वह भूमि इस प्रकार भर गई जैसे मेघोंसे आकाश। हे महाराज! जिस प्रकार प्रलयकालमें अग्नि सब स्थावर और जङ्गम जगतको भस्म करता है, तैसेही अर्ज्जुनभी सब कौरवोंकी सेनाको नाश करने लगे, उस समय अर्ज्जुनके तेज, धनुषके टङ्कार, ध्वजावासी राक्षसोंके शब्द और हनुमानके गर्ज्जनेसे दशोंदिशा पूर्ण हो गई। अनन्तर वह दुर्य्योधनकी सेना अर्ज्जुनके शङ्ख शब्दको सुनकर भयसे व्याकुल हो गई। जिस समय अर्ज्जुन युद्ध करनेको आये थे, उसी समय शत्रुओंकी शरीर शक्ति नाश हो चुकी थी, परन्तु वे लोग साहस मात्रसे युद्धकर रहे थे। अर्ज्जुनने अपने तीक्ष्ण बाणोंसे अकाशको इस प्रकार पूर्ण कर दिया, जैसे मांस खानेवाले पक्षियोंसे। उस समय अर्ज्जुनके महातेजस्वी बाणोंसे सब दिशा इस प्रकार पूर्ण हो गई, जैसे सूर्य्यके तेजसे। किसी शत्रुकी यह शक्ति न पड़ी कि अर्ज्जुनसे युद्ध करे, क्योंकि सब लोग शङ्का करते थे कि इनके पास जातेही हम मारे जायंगे। जैसे अर्ज्जुनके बाण युद्धमें कुण्ठित नहीं होते थे, तैसेही रथकी गति भी चलनेसे नहीं थकती थी। अर्ज्जुनने उस सेनाको इस प्रकार घबड़ा दिया, जैसे शेषनाग खेलते खेलते समुद्रके जीवोंको व्याकुल कर देते हैं। उस समय शत्रुओंको नाश करनेवाले महा पराक्रमी अर्ज्जुनके धनुषका शब्द सब ओर व्याप्त हो गया; थोड़ी दूरपर अर्ज्जुनके बाणोंसे मरे हुए हाथी इस प्रकार दीखने लगे। जैसे सूर्य्यकी किरणोंसे भरे मेघ। सब दिशाओंमें घूमते हुए अर्ज्जुनके बाणोंके मण्डल दीखने लगे, जैसे शरीर रहित वस्तु पर किसीको दृष्टि नहीं पड़ती है, तैसेही अर्ज्जुनके बाण बिना दीखे वीरोंपर नहीं चले। जैसे सहस्रों हाथियोंके चलनेसे बनके वृक्ष टूट जाते हैं और मार्ग बन जाता है, तैसेही अर्ज्जुनका रथ चलनेसे सेनामें मार्ग बन गया, अर्ज्जुनको देखकर सब शत्रु कहने लगे कि अर्ज्जुनका रूप धारण करके हम लोगोंको मारनेके लिये, इन्द्रही आये हैं। अपना नाश होते हुए देख शत्रुलोग कहने लगे कि इस युद्धमे अवश्य अर्ज्जुनकी विजय होगी, क्योंकि ये इस प्रकार शत्रुओंका नाश करते हैं, जैसे काल प्रजाका नाश करता है। अर्ज्जुनके बाणोंसे अर्ज्जुनके मारे हुए वीर अर्ज्जुनके मारे हुए वीरोंके समान पृथ्वीमें गिर गये, शत्रुओंके शिर अर्ज्जुनके बाणोंसे कटकर इस प्रकार पृथ्वीमें गिरने लगे, जैसे वृक्षोंके फल। अर्ज्जुनके भयसे सब शत्रुओंका वीर्य्यबल नष्ट होगया। अर्ज्जुन रूपी वायुसे प्रचालित होकर सेना रूपी मेघने रुधिरकी जलधारासे पृथ्वीकोभी दिया। रुधिर भरी धूलको लेकर वायुने सूर्य्यकी किरणोंको लालकर दिया। सूर्य्य आकाशके सहित ऐसा लाल हो गया, जैसा सन्ध्याके समय हो जाता है, सूर्य्य अन्त होनेको प्राप्त हुए, परन्तु अर्ज्जुनने लौटनेकी इच्छा न करी। महा पराक्रमी अर्ज्जुनने युद्ध करनेको खड़े सब धनुषधारी वीरोंके शरीरमें बाण मारे। द्रोणाचार्य्यके सत्तर, दुःसहके दश, अश्वत्थामाके आठ, दुःशासनके बारह, कृपाचार्य्यके तीन शान्तनुपुत्र भीष्मके साठ, राजा दुर्य्योधनको सौ और शत्रुनाशन कर्णके कानमें एक बाण मारा। सब धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ सब शस्त्रविद्याके जाननेवाले कर्णके शरीरमें बाण लगते ही और उनके रथ घोड़े तथा सारथी नाश होनेसे सब सेना भागने लगी। सेनाको भागते और

युद्ध में खड़े अर्ज्जुनका अभिप्राय जानकर उत्तर बोले, हे अर्ज्जुन! मुझे सारथीके सहित कौनसी सेनासे युद्ध करना चाहते हो, सो कहो, मैं उधर ही रथको ले चलूं।

अर्ज्जुन बोले, हे उत्तर। यह उत्तम व्याघ्रके चमड़ेकी लाल ध्वजा जहां बन्धी है और जहां एक नीली पताका लगी है, सो कृपाचार्य्यकी सेना है, तुम मुझे वहीं ले चलो आज मैं महा धनुषधारी कृपाचार्य्यको अपनी धनुष विद्या दिखाऊंगा। जिनकी ध्वजापर सोनेका बना सुन्दर कमण्डल लगा है, येही सब धनुषधारियोंमें श्रेष्ठ हमारे गुरु द्रोणाचार्य्य है, हमहीका नहीं, वरन ये सब शस्त्रधारियोंके मान्य हैं, इस लिये तुम महावीर प्रसन्न द्रोणाचार्य्यकी प्रदक्षिणा करो। हम उनसे युद्ध करनेको भी उपस्थित हैं परन्तु जब पहले ये वाण मारेंगे तब हम भी मारेंगे, क्योंकि यही सनातन धर्म्म है, ऐसा करनेसे गुरुकी क्रोध नहीं होगा। इनके समीपही जिनकी ध्वजापर धनुष बना है यही हमारे गुरुपुत्र महारथ अश्वत्थामा है, ये हमारेही नहीं बरन सब शस्त्रधारियोंके पूज्य हैं, तुम, इनके रथके पास जाकर प्रदक्षिणा करो। ये जो सजी हुई तीलरी रथ सेनाके मुखमें खड़े है, जो उत्तम कवच पहने है जिनकी ध्वजापर सर्प बना है, यही राजा धृतराष्ट्रके पुत्र श्रीमान् महाराज दुर्य्योधन है। हे वीर तुम हमारे रथको शीघ्र इनके रथके आगे ले चलो, क्योंकि ये महाराक्रमी और महा योद्धा हैं। द्रोणाचार्य्यके सब शिष्योंमें इनके समान शीघ्र शस्त्र चलाने वाला कोई नही है। मै भी आज युद्धमें इनको शस्त्रविद्या दिखाऊंगा। जिनकी ध्वजापर हाथीका चिन्ह बना है, यही विकर्त्तनपुत्र कर्ण्ण हैं, इनको तुम पहलेसे भी जानते हो, इस दुरात्मा राधापुत्रसे जब युद्ध हो, तब तुम अत्यन्त सावधान रहना, क्योंकि यह सदा अपनेको मेरे समान समझता है। जिनकी नीली धुजा पर पांचतारे बने है, जो कवच पहन कर महाबल सहित रथमें बैठे हैं, जिनके रथमें सूर्य्य और चन्द्रमाके सहित धुजा लगी है, जिनके शिर पर यह निर्म्मल सफेद छत्र लगा है, जो महारथ हाथी और पताकासे पूरित सेनाके मुखमें मेघोंके बीचमें सूर्य्यके समान खड़े हैं, जिनका सोनेका कवच चन्द्रमा और सूर्य्यके समान जगमगा रहा है, जिनके सोनेका शिरस्त्राण देखकर मेरा हृदय कांपा जाता है, यही लक्ष्मीसे भरे हुए दुर्य्योधनके वशवर्त्ती हम सबके पितामह शान्तनुपुत्र भीष्म हैं, तुम पीछे इनके पास चलना, क्योंकि ये हमारे युद्धमें विघ्न नहीं करेंगे, परन्तु इनसे युद्ध करते समय तुम सावधान होकर घोड़े हांकना।

५४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। उस समय महा धनुषधारी कौरवोंकी सेनाकी ऐसी शोभा बढ़ी, जैसे वर्षाकालमें मन्द वायुसे चले हुए मेघोंकी। सेनाकी दोनों ओर घोड़ोंपर चढ़े महावीर, मतवाले हाथी अंकुशयुक्त महावतोंके सहित और विचित्र कवचधारी वीरोंके सहित खड़े थे। उसी समय विमानपर चढ़कर इन्द्र युद्ध देखनेको गये। उनके सङ्ग अश्विनीकुमार, मरुत, देवता, यक्ष, गन्धर्व्व और नाग अपने अपने विमानोंपर बैठके आये। उन सबके विमानोंसे आकाशको ऐसी शोभा बढ़ी, जैसे नक्षत्रोंके उदय होनेसे आकाशको शोभा बढ़ती है। उस समय कृपाचार्य्य और अर्ज्जुनका घोर युद्ध होने लगा। वे लोग दिव्य अस्त्रोंका प्रयोग करने लगे और देवता देखने लगे। इन्द्रके विमानमें एक करोड़ सोनेके खम्भे लगे थे, और बीचमें एक मणिका खम्भा लगा था। उन्हीपर उस विमानका वस्त्र तना था। वह

इच्छानुसार चलनेवाला दिव्य मणियोंसे भूषित विमान आकाशमें तैंतीस देवता, इन्द्र, गन्धर्व्व, राचस, सर्प, पितर, महाऋषि, राजा वसुमना, बलाच, प्रतर्दन, अष्टक, शिवि, ययाति, नहुष, गय, मनु, पुरु, रघु, भानु, कृषाश्व, सगर और राजा नल भी थे। इसी प्रकार, अग्नि, शिव, चन्द्रमा, वरुण, प्रजापति, धाता, विधाता कुवेर, यम, अलम्बुश, उग्रसेन और तुम्वुरु आदिके विमान भी आये थे। ये सब विमान अपने अपने क्रमके अनुसार आकाशमें खड़े हो गये। समस्त देवता, सिद्ध और महाऋषि इस युद्धको देखनेको आये। उस समय देवतोंकी दिव्य मालाकी सुगन्धि सब दिशाओंमें पूरित हो गई। हे जनमेजय! वह युद्ध-भूमि उस समय ऐसी शोभित हुई जैसा वसन्तमें बन। उस समय देवतोंके दिव्य चत्र, वस्त्र, माला, और पंखे अत्यन्त शोभित होने लगी। सब दिशाओंसे धूल शान्त हो गई और दिव्य गन्धभरी वायु वीरोंको सेवा करने लगी। उस समय देवतोंकी मणियोंके प्रकाशसे आकाश निर्म्मल हो गया और देवतोंके विमानोंके सहित इन्द्रका विमान शोभित होने लगा। पद्ममालाधारी महातेजस्वी इन्द्र युद्धको देखकर तृप्त नहीं होते थे।

५५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजा जनमेजय! कौरवोंकी सेनाके व्यूहको देखकर कुरुकुल श्रेष्ठ अर्ज्जुनने उत्तरसे कहा, हे उत्तर! जिसकी ध्वजापर सोनेकी वेदी बनी है, उससे दक्षिणको ओर होकर चलो, वहीं कृपाचार्य्य है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अर्ज्जुनके ऐसे वचन सुन विराटपुत्र उत्तरने चांदीके समान रङ्गवाले घोड़ोंको हांका और अत्यन्त वेगसे चलकर शीघ्रही कौरवोंकी सेनाके समीप पहुंच गये, वे चन्द्रमाके समान निर्म्मल घोड़े अत्यन्त वेगसे चलकर शीघ्रही कौरवोंकी सेनाके समीप पहुंच गये, वे चन्द्रमाके समान निर्म्मल घोड़े अत्यन्त वेगसे चलते हुए ऐसे दीखने लगे मानो क्रोध करके कहींको जाते हों। उत्तरने कुरुसेनाके आगे पहुंचकर फिर वायुके समान अपने घोड़ोंको लौटाया घोड़ोंकी विद्याके तत्वको जाननेवाले उत्तरने इस प्रकार रथ हांका कि उसको देखकर कौरवोंके सब सारथी मोहित होगये। उत्तरने रथको कभी सेनासे बायें, कभी दहिने इतनी शीघ्रतासे घुमाया कि जिससे सबको आश्चर्य होने लगा। निर्भय बलवान विराटपुत्रने थोड़ेही समयमें अपने रथको कृपाचार्य्यके दहिनी ओर पहुंचा दिया और वहा जाकर रथको रोक दिया। तब अर्ज्जुनने अपना नाम सुनाकर महा शब्द करनेवाला देवदत्त शंख बजाया उस शङ्खका ऐसा घोर शब्द हुआ जैसा पर्व्वत फटनेसे होता है। तब सब कौरवोंने सेनाके सहित उस शब्दको बहुत प्रशंसा करी। वह शब्द इस प्रकार आकाशमें व्याप्त हो गया जैसे वज्रका शब्द। उसी समय महा पराक्रमी महावीर कृपाचार्य्यने क्रोध करके अर्ज्जुनसे युद्ध करनेकी इच्छा करी। महारथ कृपाचार्य्यने भी अपने शङ्खको बजाया, उस शब्दसे तीनों लोक पूरित हो गये। तब द्रोणाचार्य्यने अपने धनुषपर टङ्कार दिया। वे दोनों रथ युद्धमें शरजालके मेघके समान शोभित होने लगे। उसी समय कृपाचार्य्यने शत्रु नाशन अर्ज्जुनके शरीरमें अत्यन्त तीच्ण मर्म्मभेदी दस वाण मारे। अर्ज्जुनने भी जगत विख्यात गाण्डीव धनुषपर चढ़ाकर अनेक मर्म्मभेदी वाण चलाये। कृपाचार्य्यने उन मांस खानेवाले वाणोंको अपने तीच्ण वाणोंसे मार्गहीमें काट दिया। तब महारथ अर्ज्जुनने महाक्रोध करके अपने वाणोंसे सब दिशाओंको छा लिया, उनके वाणोंसे ऐसा दीखने लगा, जैसे नवीन आकाश बन जाता है। अर्ज्जुनने जब अपनी इस विचित्र

बाणविद्याको प्रकाशित किया और कृपाचार्य्य उन वाणोंसे ढक गयेतब कृपाचार्य्य को महाक्रोध हुआ और अग्निकी ज्वालाके समान सहस्रोंवाणोंसे अर्ज्जुनके वाणोंको काटकर महा तेजस्वी अर्ज्जुनकी ओर दस सहस्र बाण चलाने और गर्ज्जनने लगे। महापराक्रमी अर्ज्जुनने भी गाण्डीवपर बाणोंको चढाकर इतनी शीघ्रतासे वाण चालाये कि कृपाचार्य्यके सब वाण कट गये। फिर अर्ज्जुनने कृपाचार्य्यके घोड़ोंके चार वाण मारे उन सर्पोंके समान वाणोंके लगनेसे घोड़े कृपाचार्य्यको लेकर युद्धसे भाग गये। कृपाचार्य्यको युद्धसे भागते देख और अपना गुरु जान अर्ज्जुनने उन्हें छोड़ दिया। थोडी दूर जाकर कृपाचार्य्य फिर अपने रथको लौटाकर अर्ज्जुनके शरीरमें दस मर्म्मभेदी वाण मारे। तब अर्ज्जुनने एक तीच्ण वाणसे कृपाचार्य्यका धनुष काट दिया और दश वाणोंसे उनका कवच काट दिया। फिर उनके शरीरमें वाण मारना आरम्भ किया; कवच कटकर गिरते समय कृपाचार्य्य की ऐसी शोभा बढ़ी जैसे केंचुलीसे निकलते हुए सर्पकी। उसी समय कृपाचार्य्यने दूसरे धनुषको लेकर इतनी जल्दी रोदा चढाया कि सबको आश्चर्य्य होने लगा, अर्ज्जुनने अपने तीच्ण बाणसे उस धनुषकोभी काट दिया। इस प्रकार कृपाचार्य्यने अनेक धनुष लिये और शत्रुनाशन अर्ज्जुनने सब काट दिये। जब प्रतापी कृपाचार्य्यके पास धनुष न रहे, तब बज्रके समान बरछी लेकर अर्ज्जुनकी ओर चलाई। अर्ज्जुनने उस बिजलीके समान सुवर्ण भूषित शक्तिको आते देख दस वाणोंसे उसे काटकर पृथ्वीमें गिरा दिया। वह शक्ति दस टुकडे होकर पृथ्वीमें गिर पड़ी। इतनेही समयमें कृपाचार्य्यने अपने दूसरे धनुषपर रोदा चढा लिया था। तब कृपाचार्य्यने अर्ज्जुनके शरीरमें तीच्ण दश वाण मारे। तब अर्ज्जुनने भी क्रोध करके अग्निकी ज्वालाके समान प्रकाशित तेरह वाण कृपाचार्य्यके शरीरमें मारे। अर्ज्जुन एक वाणसे कृपाचार्य्यके रथके पहिये, चारसे चारों घोड़े और एकसे कृपाचार्य्यके सारथीको काट डाला। फिर कई वाणोंसे रथको काट दिया, एकसे उनको धनुष काटके गिरा दी। फिर इन्द्रतुल्य अर्ज्जुनने हंसकर एक बज्रतुल्य वाण कृपाचार्य्यके हृदयमें मारा। जब कृपाचार्य्यके रथ, सारथी, घोड़े और धनुष काटे गये, तब उन्होंने एक भारी गदा अर्ज्जुनको ओर फेंकी, अर्ज्जुनने उस सुवर्णखचित गदाको मार्गहीमें वाणोंसे काट दिया। जब इस प्रकार कृपाचार्य्य और अर्ज्जुनका युद्ध होने लगा। तब अनेक योद्धा कृपाचार्य्यकी रचाके लिये आये और अर्ज्जुनके ऊपर वाण चलाने लगे। उसी समय विराटपुत्र उत्तरने अपने रथको वांयीं ओर घुमाकर सब योद्धाओंका मार्ग रोक दिया तब उन सब योद्धाओंने रथरहित कृपाचार्य्यको एक रथपर बिठलाकर कुन्तीपुत्र अर्ज्जुनके आगेसे हटा दिया।

५५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। जब कृपाचार्य्य युद्धसे चले गये, तब अपराजित महापराक्रमी द्रोणाचार्य्य धनुषवाण लेकर अर्ज्जुनसे युद्ध करनेको आये। जब अर्ज्जुनने सोनेके रथमें बैठे हुए गुरु द्रोणाचार्य्यको युद्ध करनेके लिये आते देखा तब उत्तरसे यों कहने लगे।

अर्ज्जुन बोले, जिनको धजापर पताकाओंके सहित ऊंचे दण्डपर सोनेकी वेदी वनी है, उन्होंके आगे तुम हमको ले चलो, वही द्रोणाचार्य्यको सेना है, हम उन्होंसे युद्ध करेंगे। जिनके रथमें परम शिचित, सुन्दर, चिकने लम्बे और मूंगेके समान रंगवाले बड़े बडे घोड़े लगे हैं, वेही महाबाहु, महातेजस्वी, रूप और बलसे भरे सर्व्वलोक विख्यात प्रतापी

द्रोणाचार्य्य हैं। यह बुद्धिमें शुक्रके तुल्य, तथा नीति, बुद्धि, वेद-विद्या और ब्रह्मचर्य्यमें बृहस्पतिके तुल्य हैं। हे शत्रुनाशन! यह समस्त धनुर्वेद और बाणविद्याको विधिपूर्व्वक जानते हैं। इनमें क्षमा, दम (इन्द्रियोंको वशमें करना) सत्य, अनृशंस (सबसे यथा योग्य विद्यापूर्व्वक व्यवहार करना) और कोमलता आदि धर्म्मके दसो लक्षण बसते हैं। इन्हीं महाभाग द्रोणाचार्य्यके सङ्ग हम युद्ध करना चाहते हैं, इस लिये हमारे रथको शीघ्र उनके आगे ले चलो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अर्ज्जुनके ऐसे वचन सुन उत्तरने सुवर्ण भूषित घोड़ोंको द्रोणाचार्य्यके रथकी ओर हांका। जब द्रोणाचार्य्यने महारथ अर्ज्जुनको अपनी ओर आते देखा, तब वे भी उनकी ओर इस प्रकार दौड़े जैसे मतवाला हाथी मतवाले हाथीकी ओर जाता है। तब द्रोणाचार्य्य ने अपने अनेक भेरीके समान शङ्खको बजाया उस समुद्रके समान शब्दको सुनकर सब लोग कांपने लगे। जब सब सेनावालोंने अर्ज्जुन और द्रोणाचार्य्यको भिड़ते देखा, तब आश्चर्य्य करने लगे। दोनो महापराक्रमी, शस्त्रविद्याके जाननेवाले, मनस्वी अजेय गुरु चेलोंको युद्धमें भिड़ते देख कौरवोंकी सेना कांपने लगी। जब महारथ अर्ज्जुनका रथ द्रोणाचार्य्यके रथके समीप पहुंचा, तब महाबलवान और महाबाहु अर्ज्जुनने शान्ति पूर्व्वक गुरुको प्रणाम किया और मीठे वचनसे कहने लगे, हे आचार्य्य! हम लोगोंने बहुत दिनतक शत्रुओंका नाश करनेके लिये वनमें वास किया है, इस लिये आपको हमारे ऊपर क्रोध करना उचित नहीं है. हे पापरहित! आपको युद्धमें कोई नहीं जीत सकता और हमारा यह भी निश्चय है कि हम पहले आपपर शस्त्र नहीं चलावेंगे। इस लिये आपही हमारे ऊपर पहले बाण छोड़िये।

अर्ज्जुनके ऐसे वचन सुन, द्रोणाचार्य्यने अर्ज्जुनके बीसबाण मारे। अर्ज्जुनने उनको मार्गहीमें काट दिया। तब द्रोणाचार्य्यने शीघ्रतासे अर्ज्जुनके रथको सहस्रों बाणोंसे छा लिया और उनके सफेद घोड़ोंको भी शिला पर घिसे हुए तीक्ष्णबाणोंसे व्याकुल कर दिया। द्रोणाचार्य्य इस प्रकार बाण छोड़ते थे, मानो अर्ज्जुनको क्रोध करानेके लिये छोड़ते हैं। तब द्रोणाचार्य्य और अर्ज्जुनका युद्ध होने लगा। तब दोनो समान बाण छोड़ते लगे; वे दोनों दिव्य बाणोंके जाननेवाले वायुके समान वेगवान महातेजस्वी जगत् विख्यात वीर अपने बाणोंके जालसे राजोंको मोहित करने लगे। वहां जो योद्धा खड़े थे, वे सब विस्मित होकर साधु साधु कहने लगे, और कहने लगे कि अर्ज्जुनको छोड़कर द्रोणाचार्य्यसे और कौन युद्ध कर सकता है? क्षत्रिय धर्म्म बड़ा कठिन है, जहां गुरु और शिष्यका भी युद्ध होने लगा। वे दोनों वीर महाबाहु अपराजित द्रोणाचार्य्य और अर्ज्जुन परस्पर बाण छोड़ने लगे, तब महा पराक्रमी द्रोणाचार्य्यने क्रोध करके सोनेसे चित्रित घोर धनुषको खींचकर अर्ज्जुनके शरीरमें बाण मारे। द्रोणाचार्य्यने शिलापर घिसे हुए महा तेजस्वी शीघ्र चलनेवाले बाण अर्ज्जुनके शरीरमें मारे। इसी प्रकार अर्ज्जुनने भी दिव्य गाण्डीव धनुषपर चढाकर शत्रुनाशन युद्ध करनेके योग्य विचित्र बाण छोड़कर द्रोणाचार्य्यके सब बाणोंको काट दिया। अर्ज्जुनको इतने शीघ्र बाणोंको चलाते देख सबको आश्चर्य्य होने लगा। उस समय अर्ज्जुन सब दिशाओंमें बाणोंकी वर्षा करते हुए घूमने लगे। उनके बाण सब आकाशमें छा गये और द्रोणाचार्य्य इस प्रकार छिप गये, जैसे कुहासेमें सूर्य्य छिप जाते हैं। उस समय द्रोणाचार्य्यकी ऐसी शोभा बढ़ी, जैसे सब ओरसे जलते हुए पर्व्वतकी। महा पराक्रमी द्रोणाचार्य्यने अपने

वज्रके समान धनुषपर टङ्कार देकर अग्निके समान बाणोंसे अर्जुनके सब बाण काट दिये। तब उस युद्धमें ऐसा घोर शब्द हुआ, जैसा बांसोंके जलनेसे होता है। द्रोणाचार्य्यके धनुषसे छूटे हुए बाणोंसे सब दिशा और सूर्य्यका तेज छिप गया। उस समय सोनेके पंखवाले विचित्र बाणोंके अनेक समूह आकाशमें दीखने लगे, द्रोणाचार्य्यने एक बाणमें दूसरा बाण बेध दिया, इससे आकाशमें एक बड़े दण्डके समान बाण दीखने लगा, इस प्रकार वे दोनो शूर वीर सुवर्ण चित्रित बाणोंको छोड़ने लगे, उनके बाणोंसे आकाश इस प्रकार छा गया। जैसे आकाश बिजलियोंसे छा जाता है। उन दोनोंके विचित्र बाण आकाशमें इस प्रकार घूमने लगे, जैसे शीत कालमें हंस घूमते है। इन दोनों महात्माओंका ऐसा घोर युद्ध हुआ, जैसे पहले समयमें वृत्रासुर और इन्द्रका हुआ था। ये दोनों मतवाले हाथियोंके समान बाणरूपी युद्ध करने लगे। तब दोनों वीरोंने युद्धमें दिव्य अस्त्रोंका प्रयोग करना आरम्भ किया। जब द्रोणाचार्य्यने दिव्य अस्त्र चलाने आरम्भ किये तब विजय करनेवालोंमे श्रेष्ठ अर्जुनने उन सबको काट दिया। महा पराक्रमी अर्जुनने अपने पराक्रमको दिखलाकर आकाशको बाणोंसे छा लिया, जब द्रोणाचार्य्यने देखा कि पुरुषसिंह महा तेजस्वी अर्जुन हमारे ऊपर बाण छोड़ रहा है, तब वे भी विचित्र शस्त्रोंसे अर्जुनके सङ्ग खेलने लगे। तब अर्जुनने दिव्य अस्त्र चलाये, तब शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ द्रोणाचार्य्यने भी उनको दिव्य अस्त्रोंसे काट दिया। उन दोनोंका ऐसा घोर युद्ध हुआ जैसा देवता और दानवोंका होता है। इन्द्र वायु और अग्निके अस्त्रभी अर्जुनने चलाये, द्रोणाचार्य्यने उनको भी काट दिया। इन दोनोंके वीरोंके तीक्ष्ण बाणोंसे आकाश पूरित हो गया, अर्जुनके धनुषसे छूटे हुए बाणोंका वज्रके समान शब्द होने लगा, उस समय हाथी, घोड़े और मनुष्य रुधिरसे भींगकर ऐसे दीखन लगे, जैसे फूले टेसू। अनेक विचित्र बाजूबन्दयुक्त महारथोंके हाथ कटकर पृथ्वीमें गिर गये। अनेक सोनेको कवच और ध्वजा पृथ्वीमें गिर गईं। अर्जुनके बाणोंसे अनेक योड्डा पीड़ित होकर पृथ्वीमें गिर गये। द्रोणाचार्य्य और अर्जुन दृढ़ धनुषोंपर टङ्कार देते हुए परस्पर बाण चलाने लगे, और एक दूसरेके बाणोंको काटनेको इच्छासे क्रोध करने लगे। उन दोनोंका घोर युद्ध बलि और इन्द्रके युद्धके समान हुआ। उन दोनोंने इस घोर युद्धमें अपने प्राणोंको छोड़नेकी इच्छासे तीक्ष्ण बाण चलाना आरम्भ किया। उसी समय आकाशवाणी हुई कि द्रोणाचार्य्य को धन्य है, जो अर्जुनसे युद्ध कर रहे है। शत्रुनाशन महा पराक्रमी, दृढ़हस्त, दैत्यादिक शत्रुओंको जीतनेवाले महारथ अर्जुनके घोर, तीक्ष्ण शीघ्र और दूर बाण चलानेको देखकर द्रोणाचार्य्य आश्चर्य्यित हो गये। अनन्तर अर्जुनने दिव्य गाण्डीव धनुषको खींचकर पुनः बाण चलाना आरम्भ किया। अर्जुनने इस प्रकार बाण बर्षाये जैसे हलोंपर छोटे कोड़े गिरते हैं। उनकी शीघ्रताको देख सब लोग साधु साधु कहने लगे। अर्जुनके बाणोंके बीचमें जानेकी वायुकी भी शक्ति न हुई। अर्जुन कब बाण निकालते है, कब चढ़ाते है, और कब छोड़ते है, इसको कोई न जान सका। उस घोर युद्धमें अर्जुनने अत्यन्त शीघ्रबाण चलाये। उसी समय अर्जुनके एक सहस्र बाण एक बार द्रोणाचार्य्यके रथपर गिरे। जिस समय अर्जुनके बाणोंसे द्रोणाचार्य्य व्याकुल हुए, तब कौरवोंकी सेनामें हाहाकार होने लगा। अर्जुनकी इस शीघ्रताको देख अप्सरा, गन्धर्व्व और इन्द्र भी उनकी प्रशंसा करने लगे। उसी समय द्रोणाचार्य्यके पुत्र अश्वत्थामा

रथ और सेनाके सहित द्रोणाचार्य्यकी रक्षा करनेको और अर्ज्जुनको निवारण करनेको आये। अश्वत्थामा भी अपने हृदयसे महात्मा अर्ज्जुनके वाणोंकी प्रशंसा करने लगे, पर महाक्रोध करके अर्ज्जुनके ऊपर इस प्रकार वाण वर्षाने लगे जैसे मेघ जल बर्षाता है। उसी समय अर्ज्जुनने द्रोणाचार्य्यको जानेका समय देकर अपने रथको अश्वत्थामाकी ओर चलाया। तब द्रोणाचार्य्य इस समयको पाकर युद्धसे हट गये परन्तु उनको धुजा और कवच कट गये थे, तथा शरीरमें भी बहुत घाव लगे थे।

५६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। जब अश्वत्थामा अर्ज्जुनसे युद्ध करनेको उपस्थित हुए तब अर्ज्जुनने भी उनसे युद्ध करनेकी इच्छा करी। अर्ज्जुनने इस प्रकार अश्वत्थामाको रोका, जैसे बर्षते हुए मेघको वायु। इन दोनोंका युद्ध देवता और राक्षसोंके समान हुआ। इस युद्धमें ऐसे वाण चले, जैसे इन्द्र और वृत्रासुरके युद्धमें चले थे। उस समय सूर्य्य छिप गये और वायु चलनेसे रुक गया, सब आकाश वाणोंसे पूरित हो गया। वाणोंके परस्पर भिड़नेसे ऐसा चट चट शब्द होने लगा जैसे जलते हुए वासोंका होता है। अर्ज्जुनने अपने वाणोंसे अश्वत्थामाके घोड़ोंको नाशकर दिया, उनको कोई दिशा न दीखने लगी। तब महाक्रमी अश्वत्थामाने अर्ज्जुनके सूक्ष्म छिद्रको पाकर अपने वाणोंसे उनकी धनुषका रोदा काट दिया। अश्वत्थामाका यह अमानुष कर्म्म देखकर सब देवता उनकी प्रशंसा करने लगे। द्रोणाचार्य्य, महारथ कृपाचार्य्य, भीष्म और कर्णादि सब वीर उनको साधु साधु कहने लगे। तब अश्वत्थामाने अपने श्रेष्ठ धनुषको खींचकर अर्ज्जुनके हृदयमें अनेक वाण मारे। तब अर्ज्जुनने हंसकर अपने धनुषपर शीघ्र दूसरा रोदा चढ़ाया, तब अर्ज्जुनने अपने माथेके पसीनेसे उस रोदेको भिगोकर इस प्रकार युद्ध करना आरम्भ किया, जैसे मत वाला हाथी मतवाले हाथीसे लड़ता है इन दोनो जगत विख्यात महावीरोंका ऐसा घोर युद्ध हुआ, कि उसको देखनेसे वीरोंके रोंवे खड़े होने लगे। इन दोनों वीरोंका युद्ध देखकर कौरव लोग आश्चर्य्य करने लगे। ये दोनों परस्पर जलती हुई अग्नि और बिढौले सर्पके समान वाण चलाने लगे। अर्ज्जुनके दोनों तूणीर अक्षय थे, अर्थात उनके वाण कभी नहीं घटते थे, इसीसे अर्ज्जुन पर्व्वतके समान अचल होकर युद्ध करने लगे। शीघ्र चलानेके कारण अश्वत्थामाके सब वाण समाप्त होगये, इसीसे अर्ज्जुन युद्धमें अधिक रहे। उसी समय कर्ण धनुष खींचकर अर्ज्जुनके आगे युद्ध करनेको आये। अश्वत्थामाको हटते देख कौरवोंकी सेनामें हाहाकार शब्द होने लगा। जब अर्ज्जुनने उस धनुषकी ठङ्कारकी ओर देखा, तो कर्णको देख महाक्रोधसे पूरित हो गये। अर्ज्जुनने अपने नेत्रोंको फैलाकर कर्णकी ओर इस प्रकार देखा मानो ये उसको भस्म कर देंगे। जब अर्ज्जुन युद्धसे विमुख हुए अर्थात अश्वत्थामाको छोड़ कर्णसे युद्ध करनेको चले, तब सब लोग प्रसन्न हुए। शत्रुनाशन महाबाहु अर्ज्जुन द्रोणपुत्र अश्वत्थामाको छोड़ कर्णकी ओर वेगसे दौड़े, उस समय क्रोधके मारे अर्ज्जुनके नेत्र लाल हो गये थे। तब अर्ज्जुनने कर्णसे युद्ध करनेकी इच्छासे ऐसा कहा।

५७ अध्याय समाप्त।

अर्ज्जुन बोले, हे कर्ण! तुमने जो सभामें अपनी बहुत प्रशंसा करी थी कि युद्धमें

हमारे समान कोई नहीं है, सो दिन आज आगया। आज तुम हमसे युद्ध करके जानोगे, कि हम बहुत निर्व्वल हैं, और फिर किसीका निरादर नहीं करोगे। तुमने जो केवल वचनसे अपनी प्रशंसा करी थी, और धर्म्मको छोड़ दिया था, सो कर्म्म करना आज बहुत कठिन होगा। हे राधापुत्र। तुमने जो मेरे पीछे कहा था, सो कर्म्म आज कौरवोंके बीचमें करके दिखाओ। सभामें दुष्ट लोगोंने द्रौपदीको जो दुःख दिया था, आज उसका फल तुमको प्राप्त होगा। मैंने जो धर्म्मके वशमें होकर पहले तुम्हारे ऊपर क्षमा करी थी, उस क्रोधका फल आज प्रगट करूंगा। हमने जो बारहवर्ष बनमें बिताये हैं, उन सबका फल आज तुम पाओगे। हे दुर्बुद्धे। हे कर्ण। आओ, आज तुम हमारे सङ्ग युद्ध करो और ये सब कौरव लोग देखैं।

कर्ण बोले, हे कुन्तीपुत्र। तुम जो कुछ वचनसे कहते हो, सो कर्म्मसे करके दिखाओ। हमें जान पड़ता है, कि तुम खाली बचनहीसे कहते हो, कर्म्मसे नहीं कर सकते। तुमने जो पहले क्षमा करी थी, सो असमर्थोंको ऐसाही करना चाहिये; आज हम तुम्हारे पराक्रमको युद्धमें देखेंगे। तुम जैसे क्षमा करनेके समय धर्म्ममें बन्धे थे, वैसेही अबभी बन्धे हो। परन्तु तुम अपनेको छूटा हुआ मानते हो। यदि तुमने अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार वनवास किया, तो तुम निश्चय धर्म्म और अर्थके जाननेवाले हो, तथा उसी क्लेशको स्मरण करके हमसे युद्ध करना चाहते हो। हे अर्ज्जुन। यदि साक्षात इन्द्र भी तुम्हारी ओर होकर हमसे युद्ध करें तौभी हम कुछ भय नहीं करते। हे कान्तीपुत्र। तुम्हारी बहुत दिनसे इच्छा थी कि हम कर्णसे युद्ध करें, सो आज हमारा पराक्रम देखो।

अर्ज्जुन बोले, हे राधापुत्र। तुम अभी हमारे आगेसे युद्ध छोड़कर भाग गये थे, इसीसे अभी तक जीते बचे हो। तुम्हारे भाईको हमने युद्धमें मार डाला, जगतमें अपने निमित्त भाईको नाश कराकर तुम्हारे सिवा और कौन गर्ज्ज सकता है?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! अपराजित अर्ज्जुनने कर्णसे ऐसा कहकर अपने धनुषपर बाण चढ़ाकर कर्णके शरीरमें मारने आरम्भ किये। महारथ कर्ण भी प्रसन्न होकर उनको ग्रहण करने लगे, और अर्ज्जुनके ऊपर इस प्रकार बाण बर्षाने लगे जैसे महामेघ जल बर्षाता है। कर्णके बाणोंके जाल सब ओर छा गये और अर्ज्जुनके घोड़े बाणोंसे व्याकुल हो गये। तब अर्ज्जुनने क्रोध करके कर्णके तूणीरके सूतको तीक्ष्ण बाणसे काट दिया। तब कर्णने दूसरा बाण निकालकर अर्ज्जुनके हाथमें मारा, उस बाणके लगनेसे अर्ज्जुनकी मुट्ठी शिथिल हो गई। अनन्तर अर्ज्जुनने कर्णके धनुषको काट दिया। तब कर्णने अर्ज्जुनके मारनेको शक्ति चलाई। अर्ज्जुनने उसको भी बाणोंसे काटडाला। अनन्तर अर्ज्जुनने अपने तीक्ष्ण और दृढ़ बाणोंसे कर्णके घोड़ोंको मारकर पृथ्वीमें गिरा दिया और एक महातेजस्वी तीक्ष्ण बाण कर्णके हृदयमें मारा, वह बाण कर्णके कवचको काटकर उनके हृदयमें लगा। उसके लगनेसे कर्णको ऐसी मूर्च्छा हुई कि उन्हें कुछ ज्ञान न रहा। वह बाण फिर कर्णके हृदयमेंसे निकल कर अर्ज्जुनके पास आ गया। कर्णको मूर्च्छित देख अर्ज्जुन और महारथ उत्तर गर्ज्जने लगे।

५८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! जब अर्ज्जुनने विकर्तनपुत्र कर्णको जीत लिया, तब उत्तरसे बोले, हे उत्तर! तुम हमारे

रथको उस सेनाके आगे ले चलो जिसमें सोनेका ताड़ दीखता है उसी सेनामें हमारे पितामह शान्तनुपुत्र भीष्म हैं; वे हमसे युद्ध करनेकी इच्छा करते है। उस रथ हाथी, घोड़े और रथोंसे भरी हुई, भीष्मकी सेनाको देख उत्तरने हंसकर अर्ज्जुनसे कहा, हे वीर। मैं वाणोंके घावसे व्याकुल हो रहा हूं, मेरा शरीर कांपता है, मन डरता है, इस लिये अब घोड़ोंको नहीं हांक सकता हूं; तुम्हारे और कौरवोंके दिव्य अस्त्रोंके प्रभावसे मुझे सब दिशा चलायमानही दीखती है, मैं मांस, रुधिर और चर्वीकी गन्धसे मूर्च्छित हुआ जाता हूं, युद्ध देखते देखते मेरा मन घबड़ा गया है, मैंने कभी पहले ऐसा घोर युद्ध नहीं देखा था, गदा, शङ्ख, वीर, हाथी और वज्रके समान तुम्हारे धनुषका शब्द सुनकर मेरे मन और कायाकी शक्ति नष्ट हो गयी है, मेरा मन मूर्खोंके समान हुआ जाता है, हे वीर। चक्रकी समान खिंचते हुए, तुम्हारे धनुषको देखकर दृष्टि नष्ट हुई जाती है, और हृदय फटा जाता है, युद्धमें क्रोधी सिंहके समान शरीर देखकर मुझे भय लगता है, हमको यह नहीं जान पड़ता है कि तुम कब धनुषपर वाण चढ़ाते हो, कब छोड़ते हो, मेरे प्राण कांप जाते हैं, पृथ्वी घूमतीसी दीखती है, मैं कोड़ा और लगाम कोभी नहीं सम्हाल सकता हूं।

अर्ज्जुन बोले, हे पुरुषश्रेष्ठ। तुम कुछ मत डरो और मनको वशमें रक्खो, क्षत्रीलोग अनेक आश्चर्य्य-युक्त कर्म्म करते हैं, हे राजपुत्र। तुम जगतविख्यात शत्रुनाशक विराट-वंशमें उत्पन्न हुए हो, इस लिये डरो मत। हे राजपुत्र! तुम अपनी बुद्धिको थिर करके युद्धमें हमारे घोड़ोंको हांको तो हम युद्ध करेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, पुरुषश्रेष्ठ महारथ अर्ज्जुन विराटपुत्रसे ऐसा कह, फिर बोले, तुम शीघ्र हमारे रथको भीष्मके आगे ले चलो, हम उनके धनुष और रथको काटेंगे, मैं जब दिव्य वाणोंसे इनके वाणोंको काटूंगा तब मेरे वाणोंकी ऐसी शोभा होगी, जैसे आकाशमें बिजलीकी होती है, सुवर्णसे खिंचे हुए मेरे गाण्डीव धनुषको कौरव लोग कभी दहने कभी बाये हाथोंमें देख और मुझे अकेला देखके अनेक प्रकारसे विचार कर रहे हैं, मैं अभी मरे हुए हाथी रूपी जलजन्तुओंसे भरी परलोकको आर रहनेवाली रुधिरकी नदी बहा दूंगा, मैं अपने तीक्ष्णवाणोंसे हाथ पैर शिर और कण्ठरूप शाखा युक्त कौरव रूपी वृक्षको काटूंगा, जिस समय मैं धनुष धारण करके कौरवोंकी सेना नाश करूंगा उस समय मुझे सैकड़ों मार्ग इस प्रकार मिलने लगेंगे, जैसे वनमें अग्निको मिलता है। सब सेनाको तुम मेरे वाणोंसे पीड़ित हुई देखोगे, मैं अपनी शस्त्रविद्याको तुम्हें दिखाना चाहता हूं। तुम कठिन और साधारण स्थानोंमें सावधान होकर रथको हांको, मैं आकाशमें उड़ते हुए, पर्वतोंको भी अपने वाणोंसे काट सकता हूं, मैंने इन्द्रकी आज्ञासे एक लाख पौलोम और कालखञ्ज नामा राक्षसोंको मारा था, मैंने इन्द्रसे दृढमुष्टि और ब्रह्मासे शीघ्र वाण चलानेकी विद्या शीघ्र प्राप्त करी है; मैं घोर सङ्कटमें भी युद्ध कर सकता हूं, मैंने समुद्रके पार जाकर हिरण्यपुरवासी महा धनुषधारी साठ हजार दैत्योंको जीता था, तुम मेरे वाणोंसे व्याकुल होकर गिरते हुए, कौरवोंके समूह देखो, जैसे घोर वायु लगनेसे नदीके किनारे कटते हैं, वैसे ध्वजारूपी वृक्ष पदाति रूपी तिनके और रथरूपी सिंहसे भरे हुए, कौरवरूपी वनको अपनी अस्त्र अग्निसे जलाऊंगा, मैं अकेलाही रथमें बैठे हुए महा बलवान कौरवोंके वीरोंको इस प्रकार गिराऊंगा जैसे वज्रधारी इन्द्र राक्षसोंको गिराते हैं; मैंने शिवसे रुद्रास्त्र, वरुणसे वारुणास्त्र, अग्निसे आग्नेयास्त्र और वज्र आदि सब शस्त्र

इन्द्रसे सीखे हैं, मैं मनुष्यरूपी सिंहोंसे रक्षित धृतराष्ट्रपुत्ररूपी नावको काट दूंगा, तुम अपने भयको दूर करो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब अर्ज्जुनने विराट-पुत्र उत्तरको इस प्रकार धैर्य्य दिया तब उसने भीष्मकी सेनाकी ओर रथ चलाया। जब गङ्गापुत्र भीष्मने देखा कि कौरवाको जीतता हुआ, अर्ज्जुन मेरी ओर चला आता है, तब उन्होंने अपने वाणोंसे अर्ज्जुनको रोका। उसी समयमें अर्ज्जुनने अपने वाणोंसे उनके वाण काटकर भीष्मकी ध्वजाको पृथ्वीमें गिरा दिया। उसी समय महावाहु अर्ज्जुनसे युद्ध करनेको महारथ महाधनुषधारी दुःशासन, विकर्ण, दुःशह और विविंशति आये। उन्होंने महा धनुषधारी अर्ज्जुनको अपने वाणोंसे रोका। अर्ज्जुनने भी अपने वाणोंसे चारोंको निवारण कर दिया। उसी समय दुःशासनने विराट-पुत्र उत्तरके शरीरमें एक वाण मारा और दूसरा वाण अर्ज्जुनके हृदयमें मारा; तब अर्ज्जुनने भी शीघ्रतासे दुःशासनका सोनेसे खिंचा हुआ धनुष काट दिया; फिर पांच वाण दुःशासनके हृदयमें मारे। तब दुःशासन अर्ज्जुनके वाणसे पीड़ित होकर युद्धको छोड़कर भाग गया। तब धृतराष्ट्र-पुत्र विकर्ण शत्रुनाशन अर्ज्जुनके ऊपर तीक्ष्ण वाण चलाने लगे, तब कुन्तीपुत्र अर्ज्जुनने भी अपना एक वाण विकर्णके शरीरमें मारा। विकर्ण उस वाणके लगतेही पृथ्वीमें गिर पड़ा, उसी समय दुःसह और विविंशति अर्ज्जुनकी ओर दौड़े। उसी समय वे दोनों अर्ज्जुनके ऊपर तीक्ष्ण वाण वर्षाने लगे। उसी समय अर्ज्जुनने एकही वार दोनोको व्याकुल कर दिया। जब दोनों राजपुत्रोंके घोड़े मर गये, तब वे दोनों दूसरे रथोंपर चढ़कर युद्धसे भाग गये। उसी समय अपराजित अर्ज्जुन घूमकर सब ओर युद्ध करने लगे।

५६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्। जनमेजय! अनन्तर कुरुसेनाके सब महारथ इकट्ठे होकर अर्ज्जुनसे युद्ध करनेको आये। उस समय अर्ज्जुनने अपने वाणोंसे सब वीरोंको इस प्रकार छा लिया जैसे कुहासेसे पर्व्वत छा जाते हैं। हाथी, घोड़े, भेर, और रथोंका शब्द युद्धमें होने लगा। अर्ज्जुनके वाणोंके सङ्ग वीरोंके शरीरसे लोहेके कवच गिरने लगे। उसी समय तीक्ष्ण वाण चलाते हुवे अर्ज्जुनकी ऐसी शोभा बढ़ी जैसे शरदऋतुमें दोपहरके सूर्य्यकी बढ़ती है। तब अनेक वीर रथ और घोड़ोंपर चढ़े और वीर तथा पदाती इधर उधर घूमने लगे। उस युद्धमें अर्ज्जुनके वाणोंसे काटते हुवे वीरोंके चांदी सोने लोहेके, कवचोंके घोर शब्द होने लगे। समस्त युद्धभूमि, घोड़े हाथी और मरे हुए पुरुषोंसे भर गई; अनेक वीर रथोंसे पृथ्वीपर गिरने लगे। उस समय धनुषधारी अर्ज्जुनकी ऐसी शोभा दीखती थी, जैसे नाचते हुए नटकी दीखती है; वज्रके समान अर्ज्जुनके धनुषका शब्द सुनकर सब सेना इधर उधर भागने लगी, युद्धभूमि कुण्डल पगड़ी और सुवर्णमाला धारी शिरोंसे भर गई। वाणोंसे कटे शरीर, धनुष और आभूषण सहित हाथ चारों ओर दीखने लगे। वीरोंके शिर इस प्रकार पृथ्वीपर गिरने लगे जैसे आकाशसे ओले वरसते हैं। महापराक्रमी अर्ज्जुनने जो वारह वरसतक वनमें रहकर क्रोधको रोका था सो उसी क्रोधको इस युद्धमें प्रकाशित किया। इस प्रकार अपनी सेनाको जलते हुए, और अर्ज्जुनके पराक्रमको देख सब योद्धा दुर्य्योधनके आगेही शान्त हो गये। उस सेनाको घवड़ाकर और महारथोंको जीतकर महा-पराक्रमी अर्ज्जुन युद्ध-भूमिमें घूमने लगे। उस समय रुधिरकी महा नदी वहने लगी। उसमें हड्डी सिवार हो गई। वह नदी इस प्रकारसे वही, जैसे प्रलयकालमें वहती है।

उससें वाण धनुष जलजन्तु हो गये; कवच और पगड़ी जल-हाथीके समान घूमने लगे, चर्बीमेदा फेन उठने लगी। उसको देखकर बड़े बड़े वीरोंको डर लगने लगा। वह नदी महा भयानक घोर वेगसे बहने लगी; उसके तटोंपर अनेक मांस खानेवाले सियार और पक्षी बोलने लगे, खड्ग आदि अनेक शस्त्र मकरीके समान दीखने लगे, मोतियोंके हार तरङ्गके समान बहने लगे, विचित्र आभूषण बुलबुलोंके समान उठने लगे, वाण भौरके समान घूमने लगे, हाथी नाकेके समान घूमने लगे; रथ दीपके समान दीखने लगे, अनेक नगारे बड़े घोर शब्दसे बजने लगे। उस नदीको अर्ज्जुनने बहा दिया। उस समय कोई नहीं जान सका कि अर्ज्जुन कब वाण चढ़ाते हैं, कब निकालते हैं, और छोड़ देते हैं।

६० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पाय मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! जब अर्ज्जुनने अपने पराक्रमसे सब सेनाको जीत लिया तब राजा दुर्य्योधनको आगेकर दुःशासन, विविंशति महारथ कृपाचार्य्य, द्रोणाचार्य्य और अश्वत्थामा मिलकर अर्ज्जुनको मारने आये। ये सब लोग अपने अपने धनुषोंपर टङ्कार देने लगे। तब अर्ज्जुन ऊंचीपताका वाले, सूर्य्यके समान रथपर बैठकर उन सबसे युद्ध करनेको चले। उस समय महाबल अर्ज्जुनको चारों ओरसे घेरकर कृपाचार्य्य, कर्ण और महारथ द्रोणाचार्य्य इस प्रकार वाण-वर्षाने लगे जैसे वर्षाकालमें मेघ जल वर्षाते हैं। वे सब अर्ज्जुनके पास आकर तीक्ष्णवाण मारने लगे उस समय उनके दिव्य अस्त्रोंसे अर्ज्जुनका रथ एक अंगुल भी खाली न रहा। तब महारथ अर्ज्जुनने हंसकर सूर्य्यके समान प्रकाशित इन्द्रवाणको धनुषपर चढ़ाया। उस समय कुन्तीपुत्र किरीटधारी अर्ज्जुनका तेज ऐसा बढ़ा जैसे महातेज सूर्य्यका होता है। अर्ज्जुनने अपने वाणोंसे सब कौरवोंको छा लिया और अपने धनुषपर इन्द्र वाण चढ़ाया। उस वाणके चढतेही धनुषकी ऐसी शोभा भई जैसे बिजलीयुक्त आकाशकी और अग्नियुक्त शिलाकी, होती है। जैसे बरसता हुआ मेघ आकाशमें शोभा देता है, ऐसेही अर्ज्जुन युद्धमें शोभित होने लगे। उनके तेजसे सब दिशा प्रकाशित होने लगीं, उस वाणके छूटतेही हाथी और रथोंपर चढ़े वीर मोहित होगये और सब सेना निराश होकर भागने लगी, कोई वीर सावधान न रहा, सबके चित्त युद्धसे हट गये। जब इस प्रकार सब सेना युद्धसे भाग गई तब अर्ज्जुन सावधान हुए।

६१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! उनके पश्चात सब कौरवोंके पितामह शान्तनुपुत्र भीष्म अपनी विचित्र धनुषपर टङ्कार देते हुए और तीक्ष्ण वाणोंको चलाते हुए अर्ज्जुनसे युद्ध करनेको आये। सफेद छत्रको धारण करके भीष्म ऐसे शोभित हुए जैसे सूर्य्यके उदय होनेसे पर्व्वत शोभित होता है। गङ्गापुत्र भीष्मने धृतराष्ट्रपुत्रोंको प्रसन्न करनेके लिये अपना शङ्ख बजाया और अर्ज्जुनके दाहनी ओर होकर युद्ध करने लगे तब शत्रुनाशन अर्ज्जुनने देखा कि भीष्म हमसे युद्ध करनेको आये तब उनके वाणोंको ऐसे ग्रहण करने लगे जैसे मेघकी वर्षाको पर्व्वत ग्रहण करता है। भीष्मने आठ वाण अर्ज्जुनकी ध्वजामें मारे; वे महावेग बलवान वाण इस प्रकार चले, जैसे रासलेते हुए सर्प ... हैं। वे वाण ध्वजामें लगकर ध्वजामें ... हनुमानको और सब ध्वजावासी भूतोंको ...

ने लगे। तब अर्ज्जुनने अपने एक तीक्ष्ण बाणसे भीष्मके छत्रको काटकर पृथ्वीपर गिरा दिया और धुजाको भी काटके गिरा दिया और शीघ्रतासे भीष्मके घोड़े सारथी तथा दोनो रक्षा करनेवालोंको मारडाला। यद्यपि भीष्म अर्ज्जुनके पराक्रमको जानते थे; तौभी अर्ज्जुनके ऊपर दिव्य अस्त्र चलाने लगे। अर्ज्जुन भी दिव्य बाण चलाने लगे। भीष्म अर्ज्जुनके ऐसे बाणोंको ग्रहण करने लगे जैसे मेघको वर्षाको पर्व्वत ग्रहण करता है। उन दोनोका ऐसा घोर युद्ध हुआ जैसे इन्द्र और बलीका हुआ था। उस युद्धको देखनेसे बड़े बड़े वीरोंके रोवें खड़े होते थे? उस युद्धको और अर्ज्जुन तथा भीष्मकी बाण वर्षाको सब कौरव और सेनाके लोग दूरसे देखने लगे। उनके बाण इस प्रकार आकाशमें चमकने लगे जैसे वर्षा ऋतुमें जूगनू चमकते हैं। उस समय दाहनी और बाईं ओरको बाण छोड़नेसे अर्ज्जुनका धनुष अग्निचक्रके समान दीखने लगा। फिर अर्ज्जुनने अपने सहस्रो बाणोंसे भीष्मको इस प्रकार छा लिया जैसे बड़ा मेघ अपनी धारा-ओंसे पर्व्वतको छा लेता है। उस महाबाण वर्षाको देख भीष्मने अपने बाणोंसे काट दिया और अर्ज्जुनके ऊपर बाण चलाने लगे। फिर अर्ज्जुनने सोनेके पंखवाले बाणोंको भीष्मके ऊपर चलाना आरम्भ किया। तब भीष्मने अर्ज्जुनके बाणोंकोभी काट दिया। तब सब कौरव लोग भीष्मकी प्रशंसा करके कहने लगे कि भीष्मने अर्ज्जुनसे घोर युद्ध किया, इससे भीष्मको धन्य है, अर्ज्जुन बलवान तरुण और बाण-विद्या जाननेवाला है, युद्धमें उसके आगे भीष्मको छोड़कर और कौन ठहर सकता है? अर्ज्जुनसे शान्तनुपुत्र भीष्म, देवकी पुत्र कृष्ण, और भरद्वाज पुत्र महा बलवान द्रोणाचार्य्यही युद्ध सकते हैं। वे दोनो महाबलवान कुरुकुल सिंह भीष्म और अर्ज्जुन शस्त्र और अस्त्रोंसे युद्ध करतेहुए, सब वीरोंको मोहित करने लगे, वे कभी प्रजापति, कभी इन्द्र, कभी अग्नि, कभी शिव, कभी वरुण, कभी कुबेर, कभी वायु और कभी यमके बाण चलाने लगे, ऐसा देख सब वीर कहने लगे कि जैसा भीष्म और अर्ज्जुनका युद्ध हो रहा है ऐसा मनुष्योंका नहीं होता है। देवता लोग प्रसन्न होकर कभी भीष्म और कभी अर्ज्जुनको धन्यवाद देने लगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। जब शस्त्र विद्याके जाननेवाले भीष्म और अर्ज्जुन शस्त्रयुद्ध कर चुके, तब उन दोनोंका बाणयुद्ध होने लगा, उसी समय अर्ज्जुनने अपने धनुषको खींचकर तीक्ष्ण बाणसे भीष्मका सुवर्ण- चित्रित धनुष काट दिया, उसी समय महाबाहु महारथ भीष्मने शीघ्रतासे दूसरे धनुषपर रोदा चढ़ा लिया और क्रोध करके अर्ज्जुनके ऊपर बाण चलाने लगे, उसी प्रकार महा तेजस्वी अर्ज्जुन भी भीष्मकी ओर अनेक बाण छोड़ने लगे और भीष्म भी अर्ज्जुनके ऊपर तीक्ष्ण बाण चलाने लगे; इस प्रकार दोनो शस्त्रविद्याके पण्डित परस्पर युद्ध करने लगे। उस समय इन दोनोंमेंसे कोई बढ़ न सका अर्थात दोनो समानही रहे; तब महारथ अर्ज्जुनने और महा बलवान शान्तनुपुत्र भीष्मने अपने बाणासे दसों दिशाओंको पूरित कर दिया, भीष्म अर्ज्जुन पर और अर्ज्जुन भीष्मपर घोर बाण वर्षाने लगे, इससे सब वीर आश्चर्य्य करने लगे। उसी समय अर्ज्जुनने अपने बाणोसे भीष्मके रथकी रक्षा करनेवाले वीरोंको मार-डाला। वे मरकर अर्ज्जुनके रथके चारो ओर गिर गये। उसी समय अर्ज्जुनके धनुषसे छूट-कर अनेक बाण शत्रुओंको नाश करने लगे और युद्धमें घूमने लगे, वे सोनेके पङ्खवाले बाण अर्ज्जुनके रथसे निकलकर आकाशमें हंसके समान घूमने लगे। अर्ज्जुनके तेज बाणोंको

आकाशमें खड़े हुए इन्द्रादिक देवता देखने लगे; उनको देखकर गन्धर्व्वराज चित्रसेन बहुत प्रसन्न होकर इन्द्रसे कहने लगे; हे इन्द्र! आप अर्जुनके अद्भुत कर्म्मको देखिये; ये कैसी शीघ्रतासे दिव्य अस्त्र चलाते हैं; जैसे अर्ज्जुन वाण चलाते हैं, ऐसे कोई मनुष्य नहीं चला सकता है और इस वाण विद्याको भी कोई मनुष्य नहीं जानता, अर्ज्जुन दिव्य वाणोंको चलाते हैं; अर्ज्जुन किस समय वाण चढाते हैं, किस समय खींचते है, और किस समय छोड़ते हैं, सो नहीं जान पड़ता है। अर्ज्जुनको और कोई वीर दोपहरके सूर्य्यको तरह नहीं देख सकता और इसी प्रकार गङ्गापुत्र भीष्मके भी और नहीं देख सकता, दोनो जगत-विख्यात, महापराक्रमी, दोनो समान योद्धा और दोनोही महा बलवान हैं। चित्रसेनके ऐसे वचन सुन देवराज इन्द्र बहुत प्रसन्न होकर भीष्म और अर्ज्जुनके ऊपर फूल वर्षाने लगे। उसी समय शान्तनुपुत्र भीष्मने सब वीरोंके बीचमें वाण चलाते अर्ज्जुनकी वाईं ओर वाण चलाने आरम्भ किये। तब अर्ज्जुनने हंसकर एक तेज वाणसे सूर्य्यके समान तेजस्वी भीष्मका धनुष काट दिया और बहुत शीघ्रतासे भीष्मकी छातीमें दस वाण मारे, तब महा बलवान महा तेजस्वी भीष्मने घबड़ाकर रथका डण्डा पकड़ लिया और मूर्च्छित होकर बैठ गये। भीष्मको मूर्च्छित देख भीष्मके सारथीने अपना धर्म्म स्मरण करके भीष्मकी रक्षाके निमित्त रथको युद्धसे हटा दिया।

६२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि वोले, हे राजन् जनमेजय! जिस समय महा वलवान शान्तनुपुत्र भीष्म युद्ध छोड़ कर चले गये, तब महा बलवान युद्ध जीतनेवाले महा पराक्रमी धृतराष्ट्र-पुत्र दुर्योधन अपने रथकी ध्वजा उड़ा कर गर्ज्जते हुए धनुष धारण करके अर्ज्जुनसे युद्ध करनेको आये। दुर्य्योधन महापराक्रमी शत्रु-नाशन अर्ज्जुनको अपनी सेनामें घूमते हुए देख कानतक खींचके वाण मारने लगे; उन वाणोंमेसे अर्ज्जुनके माथेमें आकर एक लगा उस वाणसे अर्ज्जुन ऐसे शोभित हुए जैसे एक वृक्षवाले शिखरसे पर्व्वत, महा पराक्रमी उत्तम कर्म्म करनेवाले अर्ज्जुनको उस समयमें बहुत शोभा बढ़ी। उस वाणके लगनेसे अर्ज्जुनके माथेसे गरम रुधिर निकलने लगा सोनेके पङ्खवाला वाण अर्ज्जुनके माथेमें शोभित होने लगा; महा धनुषधारी दुर्य्योधन और महा पराक्रमी अर्ज्जुन परस्पर घोर युद्ध करने लगे। ये दोनो महावीर परस्पर समान युद्ध करने लगे, उसी समय पर्व्वतके समान मतवाले हाथी पर चढ़कर चार वीरोंके सहित विकर्ण पुत्र कुन्तीपुत्र अर्ज्जुनसे युद्ध करनेको आया, उसी समय अर्ज्जुनने उस मतवाले हाथीके कुम्भके वीचमें महातेज वाण मारा, वह तेज वाण हाथीके शिरमें घुस गया। उस समय वाणसे वह हाथी ऐसे गिरा जैसे बज्र लगनेसे पर्व्वत गिरता है। उस वाणके लगनेसे हाथीका शरीर कांपने लगा और जीव डरने लगा वह हाथी इस प्रकार चिल्लाकर पृथ्वीपर गिरा जैसे वज्रके लगनेसे पर्व्वत गिरता है। जब विकर्णका हाथी पृथ्वीपर गिरा तब वह विविंशतिके रथपर चढ़कर अर्ज्जुनसे युद्ध करने आये। जब विकर्ण विविंशतिके रथपर चढ़कर अर्ज्जुनसे युद्ध करनेको आये, तब अर्ज्जुन अपने तीक्ष्ण वाणोंसे दुर्य्योधनसे युद्ध करने लगे। जिस समय विकर्ण युद्धको छोड़के भागे और हाथी मारा गया तथा राजा दुर्य्योधन हार गये, तब अर्ज्जुनके वाणोंसे पीड़ित होकर सब वीर भाग गये। जब राजा दुर्य्योधनने सुना कि हाथी मारा गया; और विकर्ण युद्धको छोड़कर भाग गये, तब राजा दुर्य्योधन ऐसे स्थानमें भाग गये जहां

अर्ज्जुन न देखसके । जब राजा दुर्य्योधन युद्धसे भाग गये और अर्ज्जुन ने पराक्रमी दुर्य्योधनको युद्धसे भागते हुए तथा उनके मुखसे रुधिर निकलते हुए देखा । तब युद्धकी इच्छा करनेवाले अर्ज्जुन ताली बजाकर दुर्य्योधनकी ओर आये । अर्ज्जुन बोले, हे दुर्य्योधन ! तुम कातरसे युद्ध छोड़कर क्यों भागे जाते हो, तुम अपने युद्धके बाजोंको क्यों नहीं बजाते हो ? अभी तुम्हें राज्यपर बैठे बहुत दिन भी नहीं हुए, अभी से युद्ध छोड़ने लगे ? मैं राजा युधिष्ठिरका आज्ञाकारी तीसरा पाण्डव युद्ध करनेको खड़ा हूं । हे धृतराष्ट्रपुत्र ! तुम क्षत्रियोंके धर्म्मको मान करके हमारे आगे युद्ध करनेको आओ ; इस जगतमें तुम्हारा दुर्य्योधन नाम प्रसिद्ध है, दुर्य्योधनका अर्थ महायोद्धा है, जब तुम युद्ध छोड़कर भागे, तो दुर्य्योधन कैसे बने ? हे दुर्य्योधन ! मैं तेरे आगे पीछे कोई रक्षा करनेवाला नहीं देखता हूं, आज क्या तू पाण्डवोंसे अपना प्राण बचाकर भागना चहता है ?

६२ अध्याय समाप्त ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेय । जब राजा दुर्य्योधनने अर्ज्जुनकी कठोर [वा]णी सुनी, तब इस प्रकार युद्ध करनेको लौटे [जै]से मतवाला हाथी अंकुश लगनेसे लौटता है । [म]हावेगवान महारथ दुर्य्योधन अर्ज्जुनसे इस [प्र]कार युद्ध करनेको आया, जैसे लात लगने[से] विषैला सांप दौड़ता है । दुर्य्योधनको [ल]ौटता हुआ देख महावीर कर्ण अर्ज्जुनसे युद्ध [क]रनेको आये, उस समय दुर्य्योधनके शरीरमें [इ]तने घाव लग थे कि वे युद्ध नहीं कर सकते [थे], उनको लौटते देख शान्तनुपुत्र भीष्म भी [ध]नुष लेकर दुर्य्योधनकी दहनी ओर आगये [औ]र अर्ज्जुनके बाणोंसे उनकी रक्षा करने [ल]गे । उसी समय कृपाचार्य्य, द्रोणाचार्य्य, विविंशति और दुःशासनादि वीरोंने राजा दुर्य्योधनको चारों ओरसे घेर लिया । जब अर्ज्जुनने उस भरे हुए, समुद्रके समान सेनाको लौटते देखा तब उसकी ओर इस प्रकार दौड़े जैसे मेघकी ओर हंस दौड़ता है । उन सबने चारों ओरसे अर्ज्जुनको घेरकर बाण चलाने आरम्भ किये । वे लोग इस प्रकार अर्ज्जुनके ऊपर बाण छोड़ने लगे जैसे मेघ पर्व्वतके ऊपर जल बर्षाता है । अर्ज्जुनने उन सब कौरवोंके बाणोंको काटकर सम्मोहन नामक बाण चलाया । अर्ज्जुनने अपने बाणोंसे दिशा और कोनोंको पूराकर दिया तथा अपने धनुषके टङ्कारसे वीरोंका बहरा कर दिया । उस समय सब कौरव कांपने लगे । तब अर्ज्जुनने अपने हाथमें लेकर घोर शब्दवाला शङ्ख बजाया । उसके शब्दसे सब दिशा आकाश और पृथ्वी पूरित हो गई । उस शब्दको सुनकर सब कौरव लोग बाणके बलसे मोहित हो गये, सब अपने अपने धनुषोंको रखकर बैठ गये । जब सब कौरव शान्त हो गये, तब वन आनेके समय उत्तराकी कही हुई बातको अर्ज्जुनने स्मरण करके उत्तरसे कहा, हे उत्तर ! जबतक कौरव लोग मूर्च्छित हैं, तबतक तुम द्रोणाचार्य्य और कृपाचार्य्यके सफेद, कर्णके सुन्दर, अश्वत्थामा और दुर्य्योधनके नीलेवस्त्र उतारकर शीघ्र ले आओ, मैं जानता हूं कि भीष्म मूर्च्छित नहीं भये क्योंकि ये इस बाणको काटना जानते हैं, तुम उनके रथके आगे मत जाना। महात्मा। उत्तर घोड़ोंकी लगाम छोड़कर रथसे नीचे उतरे और सब वीरोंके वस्त्र उतारकर फिर अपने रथपर आय बैठे । चतुर विराटपुत्र उत्तर अपने रथपर आकर अपने घोड़ोंको हांकने लगे । उसी समय वे घोड़े क्षणमात्रमें सेनासे बाहर आगये ; जब पुरुषसिंह अर्ज्जुन युद्धको जीतकर चलने लगे, तब तेजस्वी वीर भीष्मके घोड़ोंको दस बाणसे

मारडाला। उसी समय अर्ज्जुनने भीष्मको छोड़कर सारथीके शरीरमें बाण मारा और सेनासे निकल कर ऐसे खड़े हो गये जैसे मेघोंसे निकलकर सूर्य्य दीखते हैं। उसी समय सब कौरवोंकी मूर्च्छा खुली और सबने इन्द्रके समान अर्ज्जुनको खड़े हुए देखा। उसी समय राजा दुर्य्योधनने क्रोध करके कहा तुम लोगोंने अर्ज्जुनको क्यों छोड़ दिया? शीघ्र इसको पकड़नेका उपाय करो। उसी समय शान्तनुपुत्र भीष्म हंसकर बोले, अभी तेरी बुद्धि और बल कहां चले गये थे? अभी तुम धनुषबाण रखकर क्यों शान्त हो गये थे? अर्ज्जुन पापी नहीं है, इस लिये उसे कोई नहीं जीत सकता है। वह तीनों लोकके राज्यके लोभसे भी धर्म्मको नहीं छोड़ेगा; इस लिये तुम शीघ्र हस्तिनापुरको लौट जाओ और अर्ज्जुन भी गौवोंको जीतकर विराट नगरको लौट जाय, तुम अपनी भूलसे धर्म्मको मत छोड़ो ईश्वर तुम्हारा कल्याण करे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भीष्म पितामहके ऐसे बचन सुन राजा दुर्य्योधन अपना कल्याण जानकर चुप हो रहे, सब वीरोंने भीष्मके वचनको अपना हित समझा और अर्ज्जुन रूपी अग्निसे दुर्य्योधनको रक्षा करनेके निमित्त लौटनेकी इच्छा करी, जब अर्ज्जुनने देखा कि ये सब लौटे जाते है, तब नम्र होकर सबको प्रणाम करने लगे। शान्तनुपुत्र पितामह भीष्म, बूढ़े द्रोणाचार्य्य, द्रोणपुत्र अश्वत्थामा, कृपाचार्य्य और सब बूढ़ोंको शिरसे प्रणाम किया, फिर सबके एक एक बाण मारा और दुर्य्योधनका रत्नजटित मुकुट काटकर पृथ्वीमें गिरा दिया; और सब वीरोंको निमन्त्रण देकर सब बूढ़ोंको प्रणाम किया; फिर धनुषपर टङ्कार दिया। फिर देवदत्त शंखको वजाकर सब शत्रुओंको कपा दिया, सब शत्रुओंको जीतकर तथा, कौरवोंको प्रसन्न करके उत्तरसे बोले, हे उत्तर। तुम अब रथको लौटाओ, तुमने गौवोंको जीत लिया, अब प्रसन्न होकर अपने नगरको लौटो। अर्ज्जुन और कौरवोंका अद्भुत युद्ध देखकर देवता बहुत प्रसन्न हुए, और अर्ज्जुनके कर्म्म वर्णन करते हुए, अपने अपने लोकोंको गये।

६४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! जब विशालनेत्र अर्ज्जुन इस प्रकारसे सब कौरवोंको जीत चुके और विराटका धन छीन चुके तब अपने नगरको लौटे। जब धृतराष्ट्रपुत्र हारकर लौट गए, तब छिपे हुए, कौरवोंकी सेनाके लोग अनेक बनसे निकले। ये सब डरसे कांपते हुए, इधर उधरको भागने लगे। कोई बाल खोलकर हाथ जोड़कर अर्ज्जुनके पास आये, वे सब परदेशी भूख प्याससे व्याकुल, चेतना रहित हाथ जोड़कर अर्ज्जुनसे बोले, हे अर्ज्जुन। हम तुम्हारे दास हैं, कहो क्या करें?

अर्ज्जुन बोले, तुम लोगोंका कल्याण हो, सुखसे अपने अपने घरको चले जाओ, हम निश्चय कहते हैं, कि हम डरे हुए, मनुष्योंको नहीं मारते। अर्ज्जुनके ऐसे बचन सुन सब योद्धा उन्हें आशीर्व्वाद देने लगे। तब मतवाले हाथीके समान बलवान अर्ज्जुनको विराट नगरको ओर लौटते देख कोई कौरव उनके मुखको न देख सके। जब शत्रुनाशन अर्ज्जुन सब कौरवोंकी सेनाको जीतकर लौटे, तब उन्होंने विराटपुत्र उत्तरसे कहा, हे तात! तुम्हारे पिताके यहां पांचो पाण्डव रहते हैं, इस बातको तुम्हीने जाना है, तुम नगरमें जाकर यह समाचार किसीसे मत कहना, क्योंकि इसको सुनतेही राजा विराट डरकर छिप जायंगे, तुम जाकर कहना कि हमने सब कौरवोंको जीतकर गौ छीन ली।

उत्तर बोले, हे अर्ज्जुन! तुमने जो महाकर्म्म

किया है उसके करनेकी मेरी शक्ति नहीं है। परन्तु जबतक तुम कहोगे, तब तक मैं अपने पितासे इस समाचारको नहीं कहूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उस प्रकार सब कौरवोंको जीतकर और उनका धन छीनकर अर्ज्जुन पुनः उसी शमी वृक्षके नीचे आकर खड़े हुए। उस समय अर्ज्जुनके शरीरमें अनेक घाव लगे थे। उसी समय अग्निके समान तेजस्वी हनुमान आकाशको चले गये। ध्वजा भी उड़ गई। और रथपर उत्तरकी ध्वजा आलगी; उत्तरने महात्मा पाण्डवोंके शस्त्र फिर वैसेही शमी वृक्षपर रख दिये, फिर महात्मा अर्ज्जुनको सारथी बनाकर नगरको चले। शत्रुनाशन अर्ज्जुनने इस महा कर्म्मको करके और शत्रुओंको मार कर फिर अपने बालोंको वैसेही बाधा और उत्तरके घोड़े हाकने लगे, और प्रसन्न हो नपुसकका वेष बना नगरको चले।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कौरव लोग भी अर्ज्जुनसे हारकर दीन मन हो हस्तिनापुरको चले गये। अर्ज्जुनने मार्गमें उत्तरसे कहा, हे राजपुत्र। हे महाबाहो। देखो ये सब गौ और ग्वालियोंको हमने जीत लिया, अब हम दूसरे पहरमें बिराट नगरको चलेंगे। अभी घोड़ाको नहलाकर पानी पिलाना चाहिये। इतनेमें तुम अहीरोंको नगरमें भेजो, ये जाकर नगरमें तुम्हारी विजयका समाचार कहेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उत्तरने अर्ज्जुनके वचन सुन, अहीरोंसे कहा तुम लोग शीघ्र नगरमें जाकर महाराजके विजयका समाचार कहो और यह भी कहो कि हमने सब गौओंको जीत लिया। इस प्रकार उत्तर और अर्ज्जुन सम्मति करके शमी वृक्षके पास गये, और विजयसे प्रसन्न होकर दोनोंने अपने अपने धारण किये। महावीर विराटपुत्र सब शत्रुओंको जीत उनका धन छीन और अर्ज्जुनको सारथी बना अपने नगरमें आया।

६५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। इस प्रकार राजा विराट राजा सुशर्म्माको जीत युधिष्ठिर, भीम, नकुल और सहदेवके सहित अपने नगरमें आये। सुशर्म्माको जीत गौओंको जीत राजा बिराट पाण्डवोंके सहित अपनी सभामें बैठे। सुख देनेवाले महातेजस्वी राजा विराट जब अपनी सभामें बैठे तब पाण्डव आदि सब सभासद उनकी प्रशंसा करने लगे। उसी समय उनका पुरोहित ब्राह्मणोंके सहित आकर आशीर्व्वाद देने लगा, सेनाके वीर गर्ज्जने लगे। राजा बिराटने अपनी सभाको विसर्जन किया, और पूछा कि उत्तर कहा गया? उसी समय कन्या, स्त्री और अन्तःपुरके रहनेवालोने कहा कि कौरवोंने गौ छीन लीथी उनसे लड़नेको उत्तर अकेला गया है, केवल बृहन्नलाही उसका सहायक है; कौरवोंके सङ्ग महारथ भीष्म, कृपाचार्य्य, द्रोणाचार्य्य, दुर्य्योधन, कर्ण और अश्वत्थामा ये छै महारथ हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब राजा बिराटने सुना कि हमारा पुत्र बृहन्नलाको सङ्ग लेकर अकेलाही युद्ध करनेको चला गया है, तब घबड़ाकर मन्त्रियोंसे कहने लगे कि हमको निश्चय होता है कि राजा सुशर्म्माको भागा हुआ सुनकर सब राजा और कौरव लोग शान्त नहीं बैठेंगे। इस लिये जो हमारी सेना सुशर्म्माके सङ्ग युद्ध करनेसे मारी नहीं गई सो उत्तरकी रक्षाके लिये जाय! राजाकी आज्ञा सुनतेही हाथी, घोड़े, रथ और पदातियोंके झुण्ड अनेक शस्त्र धारण करके उत्तरकी रक्षाको चले; इस प्रकार राजा बिराटने अपनी सेनाको आज्ञा देकर

कि देखो हमारा पुत्र जीता है कि मर गया, नपुंसक जिसका सारथी बनकर गया है, वह उत्तर अवश्य मर गया होगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा विराटके ऐसे वचन सुन, धर्म्मराज युधिष्ठिर बोले, हे नरनाथ! जिसका बृहन्नला सारथी हो वह राजपुत्र अवश्य सब कौरवोंको जीतेगा। आपके पुत्र बृहन्नला सारथीकी सहायतासे सब राजा कौरव, देवता, यक्ष, और राक्षसोंको जीत सकते है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उसी समय उत्तरके भेजे हुए, दूत राजा विराटकी सभामें पहुंचे और कहने लगे कि उत्तरको विजय है। उसी समय मन्त्रीने आकर राजासे निवेदन किया कि सब कौरव लोग उत्तरसे हारकर भाग गये, शत्रुनाशन उत्तर कौरवोंको जीतकर और गौओंको छीनकर अपने सारथीके सहित कुशलसे है।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे राजन् विराट! प्रारब्धसे आपके पुत्रने कौरवोंको जीतकर गौ छीन ली, जिसका बृहन्नला सारथी हो उसकी विजय निश्चय होय।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब राजा विराटने प्रसन्न होकर महा पराक्रमी उत्तरको विजय सुनी, तब दूतोंको वस्त्र और आभूषण देकर विदा किया और आज्ञा दी कि हमारे राजमार्गमें पताका लगाई जाय, पुष्पादिकोंसे सब देवतोंकी पूजा होय, राजकुमार, सेनापति और वेश्या अपने अपने आभूषण पहिरकर उत्तरके पास जाय, नगरमें चारों ओर बाजे बजाये जाय, एक दूत मतवाले हाथीपर बैठकर सब चौराहोंमें घण्टा बजाकर हमारी विजयको समाचार कह आवे; उत्तरा कन्याओंके सहित नाचनेवालियोंका रूप बनाकर उत्तरके पास जाय।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजाकी आज्ञा सुनतेही सब नगरसें शांति कर्म्म होने लगे। भेर, शंख और नगारे बजने लगी, वेश्या शृंगार करके नाचने लगीं और महाबलवान उत्तरके पास अनेक सूत मागध और बंदी — स्तुति गाने लगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, सेना और व...ओंको अपने पुत्रके पास भेजकर राजा वि... प्रसन्न होकर बोले, हे सैरिन्ध्री! पासे ले... हे कङ्क! जुआ खेलो। राजाके ऐसे वच... सुन महाराज युधिष्ठिर बोले, हे पृथ्वीनाथ! हमने सुना है कि प्रसन्न पुरुषको जुआ नहीं खेलना चाहिये, इस लिये हम आज आपसे जुआ नहीं खेल सकते है, परन्तु आपकी आज्ञा भी नही टाल सकते, आपकी आज्ञा होय तो जुआ खेले। राजा विराट बोले, हम जुवाके आगे गौ, स्त्री, धन और सुखको नहीं समझते है। कङ्क बोले, हे पृथ्वीना... जूवेसे अनेक दोष है इस लिये आपको जु... नहीं खेलना चाहिये, आपने कभी राजा युधिष्ठिरको देखा होगा या सुना होगा, ... अपने सब राजको हार कर भाइयोंको भी हार गये, इस लिये हमको जुवा अच्छा नहीं लगता, परन्तु आपकी आज्ञा होय तो खेले।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब जुवा हो... लगा, तब राजा विराटने महाराज युधिष्ठिरसे कहा है कङ्क! देखो मेरे पुत्रने कैसे वीर कौरवोंको जीत लिया? राजाके वचन सुनकर राजा युधिष्ठिर बोले, हे महाराज! जिसका सारथी साक्षात बृहन्नला हो वह युद्धमें क्यों न जीते? युधिष्ठिरके वचन सुनके राजा वि... क्रोध करके बोले, रे ब्राह्मणाधम! मेरे पु... समान नपुंसक बृहन्नलाको बताता है? कहने न कहने योग्य बातको नहीं जानता है, बार बार हमारा निरादर किये जाता है, क्या हमारा पुत्र भीष्म और द्रोणादिकोंको नहीं जीत सकता? मैं ब्राह्मण जानकर तेरा

अपराध क्षमा करता हूं; यदि जीनेकी इच्छा रखता है तो फिर कभी ऐसा वचन मत कहना। महाराज युधिष्ठिर बोले, जारब्धसे कौरवलोग भाग गये, प्रारब्धसे तुम्हें गौ मिलगईं, जिसका सारथी बृहन्नला हो उसकी विजय क्यों नहीं होय? जहां महापराक्रमी द्रोणाचार्य्य, भीष्म, अश्वत्थामा सूतपुत्र कर्ण, कृपाचार्य्य और साक्षात दुर्य्योधनसे महारथ होयं, जहां साक्षात इन्द्र देवतोंके-सहित युद्ध करतेहों तहां बृहन्नलाको छोड़ और कौन युद्ध कर सक्ता है? जिसके समान न कोई बलवान हुआ न होगा, जो युद्धको देख कर बहुत प्रसन्न होता है, जिसने अकेले देवता राक्षस और मनुष्योंको जीत लिया ऐसे सारथीकी सहायतासे उत्तरकी विजय क्यों नही हो?

विराट बोले, हमने तुम्हे कई वार मना किया, परन्तु तू अपने वचनोंको बशमें नहीं रखता, यदि आज्ञा करनेवाला नहो तो जगतमें कोई मनुष्य धर्म्म करे?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर राजाने क्रोध करके युधिष्ठिरके मुखमें पासा मारा और डपटके कहा कि अबसे ऐसा न कहना। पासा लगनेसे राजा युधिष्ठिरको नाकसे रुधिर बहने लगा। पर महाराजने पृथ्वीपर न गिरने दिया, रुधिरको अपने हाथमें ले लिया। फिर धर्म्मात्मा युधिष्ठिरने पासखड़ी द्रौपदीकी ओर देखा। पतिव्रता द्रौपदी उनका अभिप्राय जानकर सोनेके बरतनमें पानी ले आई और उसीमें रुधिरको लेलिया। उसी समय उत्तर अनेक माला और फूलोंको ग्रहण करते हुए प्रसन्नता पूर्व्वक सभाके द्वार पर पहुंचे उहां आकर उत्तरने अपने आनेका समाचार अपने पितासे कहला भेजा। द्वारपालने जाकर राजासे कहा कि बृहन्नलाके सहित उत्तर द्वारपर खड़े हैं, राजान प्रसन्न होकर आज्ञादी कि उन दोनोको शीघ्र लेआओ; हम देखना चाहते हैं। उसी समय-महाराज युधिष्ठिरने धीरेसे जानेवाले पुरुषसे कह दिया कि केवल उत्तरको भेज दो, बृहन्नला आने न पावे। महाराजने सोचा कि अर्ज्जुनकी यह प्रतिज्ञा है कि जो महाराजके शरीरमें घाव करेगा या रुधिर निकालेगा उसको हम उसी समय मार डालेंगे, परन्तु यह प्रतिज्ञा युद्धसे भिन्न है अर्थात युद्धमें जो ऐसा करेगा उसके लिये प्रतिज्ञा नहीं है; जब वे मेरे शरीरसे रुधिर निकलता देखेंगे तब क्षमा नहीं करेंगे, उसी समय बल और वाहनोंके सहित राजा विराटका नाश हो जायगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उसी समय राजा विराटका बड़ा पुत्र उत्तर सभामें आया और अपने पिताको प्रणाम करके कंकको पास गया, महाराज युधिष्ठिरको रुधिरमें भीगे घबराये हुए और द्रौपदीके सहित एकान्तमें बैठे देख कहने कि लगे इन महा पण्डित ब्राह्मणको किसने मारा है? यह महापाप किसने किया है? विराट बोले, इस पापीको हमने मारा है, ये ब्राह्मण पूजा करने योग्य नहीं है, मैं तुम्हारी प्रशंसा करता था तब ये तुम्हारी निन्दा करने लगा और नपुंसक बृहन्नलाकी प्रशंसा करने लगा, तब मैंने इसको मारा है। उत्तर बोला हे राजन्! आपने बहुत बुरा काम किया, आप शीघ्र इनको प्रसन्न करें, आपको पुत्र और वाहनोंके सहित घोर ब्राह्मण विनाश न कर दे—ऐसाही उपाय करें।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! राजा अपने पुत्रके ऐसे वचन सुन राखमें छिपी हुई अग्निके समान युधिष्ठिरसे क्षमा मांगने लगे। तब राजा युधिष्ठिरने राजा विराटसे कहा हे राजन्! मैं पहिलेही क्षमा कर चुका हूं, मुझे अब कुछ क्रोध शेष नही है, यदि मेरा रुधिर पृथ्वीमे गिर जाता तो आपका

राज्यके सहित नाश होजाता, इसमें कुछ सन्देह नहीं है। हम आपके बचनकी निन्दा नहीं करते हैं, क्योंकि आपने हमारा कोई अपराध नहीं किया। बलवान राजाकी निन्दा करनेसे अवश्य दण्ड मिलता है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब महाराज युधिष्ठिरका रुधिर सूख गया तब बृहन्नला राज सभामें आया। उसने राजा विराटको प्रणाम करके पीछे राजा युधिष्ठिरको प्रणाम किया। उसी समय राजा विराटने बृहन्नलाकी बहुत प्रशंसा करी और उत्तरकी प्रशंसा करने लगे। राजा बोले, हे कैकेयीपुत्र। तुम्हारे जन्म लेनेसे मैं पुत्रवान हुआ तुम्हारे समान मेरा पुत्र कोई नहीं है, और न कोई होगा। जो एक चरणभी पिताका अपराध नहीं करता उसके समान अच्छा पुत्र कौन होगा? जो कभी अपने पिताका अपराध नहीं करता उस कर्णसे तुमने कैसे युद्ध किया? जो समस्त मनुष्य लोकमें अपने तुल्य वीर नहीं रखते उन भीष्मसे तुमने कैसे युद्ध किया? जो द्रोणाचार्य्य सब कौरव और सब क्षत्रियोंके गुरु हैं, उनसे तुमने किस प्रकार युद्ध किया? जो सब शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ महा पराक्रमी अश्वत्थामा हैं, उनसे तुम्हारा युद्ध कैसे हुआ? हे तात। जिनको देखकर चलीलोग धनलुटे बनियोंके समान युद्ध छोड़ भागते हैं, उन कृपाचार्य्यसे तुम्हारा युद्ध कैसे हुआ? जो राजपुत्र क्रोध करके अपने बाणोंसे पर्व्वतोंको तोड़ सकते हैं, उन दुर्य्योधनके सङ्ग तुम्हारा युद्ध कैसे हुआ? तुमने सब शत्रुओंको जीत लिया और गौ कौरवोंसे छीन लिया, इसीसे हमको वायु अच्छा लगता है, महापराक्रमी कौरवोंको तुमने डराकर भगा दिया, और उनसे इस प्रकार गौ छीन लिया जैसे पक्षी पक्षीसे मास छीन लेता है।

६६ अध्याय समाप्त।

उत्तर बोले, मैंने गौओंको नहीं जीता, मैंने कौरवोंसे युद्ध नहीं किया; ये सब कर्म्म किसी देवपुत्रने किया है। जब मैं युद्धसे डरकर भागने लगा, तब उस तरुण देवपुत्रने रथपर बैठ कर मुझे लौटाया, उसीने कौरवोंको जीतकर गौ छीन ली, उसीने युद्ध किया, उसी वीरने अपने बाणोंसे कृपाचार्य्य, द्रोणाचार्य्य, अश्वत्थामा, कर्ण और भीष्मको हरा दिया। जिस समय उसके आगेसे मतवाले हाथीके समान दुर्य्योधन और महाबलवान विकर्ण डर कर भागे, तब उसने कहा कि तुम हस्तिनापुरमें रहकर भी हमसे जीते नहीं बचोगे, इस लिये सब देशोंमें घूमकर अपने प्राणोंकी रक्षा करो, हे राजन्। तुम भागकर जीते नहीं बचोगे, इस लिये युद्ध करो; यदि हमको जीत लोगे तो पृथ्वीका राज्य करोगे और जो मर जाओगे तो स्वर्ग पाओगे। परन्तु राजा दुर्य्योधन उनके बचन सुनकर विषैले सांपके समान सांस लेते हुए और बज्रके समान बाण छोड़ते हुए मन्त्रियोंके सहित युद्धसे भाग गये। हे शत्रुनाशन। उस देवपुत्रके देखनेसे मेरे रोवें खड़े हो गये। फिर उस देवपुत्रने अपने बाणोंसे उस महा सेनाको व्याकुल कर दिया। सिंहके समान बलवान देवपुत्रने सेनाको जीतकर हंसते हसते कौरवोंके वस्त्र उतार लिये। उस एक वीरने छः महारथोंको इस प्रकार जीत लिया, जैसे मतवाला शार्दूल बनवासी हरिणोंको जीत लेता है।

महाराज विराट बोले, हे पुत्र। जिस महात्माने कौरवोंसे हमारा धन छुड़ाया है वह महा यशस्वी महाबाहु देवपुत्र कहा है? मैं उस महापराक्रमी देवपुत्रको देखना चाहता हूं, क्योंकि उसीने तुम्हारी और गौओंकी रक्षा करी है!

उत्तर बोले, युद्धके पश्चात वह महाबली देवपुत्र अन्तर्द्धान हो गया, परन्तु

निश्चय है कि कल या परसों वह प्रत्यक्ष होगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उत्तरके ऐसे वचन सुनकर भी राजा विराटने छिपे हुए पाण्डवोंको न जाना। तब अर्ज्जुनने राजाकी आज्ञा पाकर वे सब वस्त्र उत्तराको दे दिये। उत्तरा नवीन और महामूल्य वस्त्रोंको पाकर बहुत प्रसन्न हुई। अनन्तर अर्ज्जुनने उत्तरसे सम्मति करके राजा युधिष्ठिरके निमित्त सब प्रबन्ध कर लिया।

६७ अध्याय गो हरण पर्व्व समाप्त।

अथ वैवाहिक पर्व्व।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तीसरे दिन पाचो पाण्डवोंने अपने समयको समाप्त जानकर स्नान किया और सफेद वस्त्र पहनकर मतवारे हाथीके समान तेजस्वी प्रकाशित होते हुए, राजा विराटकी सभाको चले। सभामें आकर महाराज युधिष्ठिर राजाके सिंहासनपर बैठ गये; और चारों पाण्डव यथा योग्य आसनों-पर बैठे। उस समय पाण्डववोंकी ऐसी शोभा बढ़ी, जैसी जलती हुई अग्निकी होती है। उसी समय राजा विराट भी अपने कार्य्य करनेको सभामें आये। वहां जलती हुई अग्निके समान पाण्डवोंको बैठे देख कुछ समयतक चुप हो रहे। उस समय अपने भाइयोंके सहित बैठे हुए महाराज युधिष्ठिरकी ऐसी शोभा हो रही थी, जैसे देवतोंके सहित इन्द्र की। फिर क्रोध करके राजा विराट युधिष्ठिरसे बोले।

विराट बोले, हे कङ्क! हमने तुमको जुवा खिलानेके लिये अपना सभासद बनाया था, आज तुम राजाके वस्त्र पहनकर हमारे सिंहा-सनपर क्यों बैठे हो?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा विराटके ऐसे वचन सुन अर्ज्जुन हंसके बोले, हे राजन्! ये इन्द्रके भी आधे आसनपर बैठ सकते हैं, ये ब्राह्मणोंके भक्त, पण्डित, त्यागी, योग्य तप करनेवाले, महाव्रतधारी, साक्षात धर्म्मके स्वरूप, सब वीरोंमें श्रेष्ठ, बुद्धिसे भरे और महा तपस्वी हैं। ये तीनो लोकमें सबसे अधिक बाण विद्याके जाननेवाले हैं, जैसी बाणविद्या ये जानते हैं; ऐसी कोई नहीं जानता और न जानेगा, कोई इनके समान बलवान देवता, राक्षस, किन्नर, मनुष्य, गन्धर्व्व, यक्ष, और सर्प भी नहीं है। ये दूरदर्शी, महा तेजस्वी, इन्द्रीजित, पाण्डवोंमें श्रेष्ठ और यज्ञ धर्म्मके करनेवाले हैं। ये राजोंमें महाऋषियोंके तुल्य हैं, इनका बल सब लोकोंमें विख्यात है। इनके समान कोई बलवान, बुद्धिमान और जितेन्द्रिय नहीं है। ये धन और पराक्रममें इन्द्र और कुबेरके तुल्य हैं, जैसे महा तेजस्वी इन्द्र लोकोंकी रक्षा करते हैं, ऐसे ये भी प्रजाकी रक्षा करते हैं। येही कुरुकुल-सिंह साक्षात राजा युधिष्ठिर हैं। इनका यश लोकमें सूर्य्यके तेजके समान फैला है, इनके यशकी किरण जगतमें इस प्रकार फैल रही है, जैसे उदय होते हुए सूर्य्यकी किरण फैलती है। इनके पीछे इन्द्रप्रस्थमें दश सहस्र मतवाले हाथी, दश सहस्र सुवर्ण मालाधारी घोड़ेसे युक्त रथ चलते थे, इनको स्तुति मणि कुण्डलधारी आठ सौ सूत और मागध इस प्रकार करते थे, जैसे ऋषि इन्द्रको स्तुति करते हैं, सब कौरव इनके दासके समान रहते थे, सब राजा इनकी इस प्रकार सेवा करते थे, जैसे देवता इन्द्रकी सेवा करते हैं। इन्होंने स्वतन्त्र राजोंसे कर लेकर उनको बनियोंके समान बना दिया है। इन महा व्रतधारीके घरमें प्रति दिन अठासी सहस्र महात्मा वेदपाठी ब्राह्मण भोजन करते थे, ये महाराज बूढ़े, अनाथ और अन्धे मनुष्योंको पुत्रके समान पालते थे, ये धर्म्मात्मा, इन्द्रीजित हैं, क्रोधसे भी अपने धर्म्मको नहीं छोड़ते, ये शीघ्र प्रसन्न होते हैं; ये ब्राह्मणोंके सक्त और

सत्यवादी हैं, इन्हीके भयसे राजा दुर्य्योधन, कर्ण शकुनी और मन्त्रियोंके सहित कांपता रहता है, इनके गुण वर्णन करनेकी हमारी शक्ति नहीं है येही साक्षात पाण्डपुत्र महाराज युधिष्ठिर हैं; ये राजसिंह युधिष्ठिर राजाके आसनपर क्यों नहीं बैठ सकते हैं?

६८ अध्याय समाप्त।

राजा विराट बोले, यदि येही कुरुकुलश्रेष्ठ कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर हैं, तो इनके भाई अर्जुन, बलवान भीम, नकुल, सहदेव और यशस्विनी द्रौपदी कहां है? जब से पाण्डव जुवेमें हार गये हैं, तबसे न जाने किधर गये। अर्जुन बोले, हे राजन्! तुम्हारे यहां ये जो वल्लव नामक रसोइया है, वही महापराक्रमी भीमसेन हैं, इन्होंने क्रोधके बशमें होकर अनेक राक्षसोंको मारकार द्रौपदीके लिये गन्धमादन पर्व्वतपर कमलके फूल छीन लिये थे। इन्होंने गन्धर्व्व रूप धारण करके दुरात्मा कीचकोंका नाश किया है। इन्होंने तुम्हारी स्त्रीके आगे अनेक सिंह, असुर और राक्षसोंको मारा था। ये जो तुम्हारे यहां घोड़ोंकी रक्षा करते हैं, येही शत्रुनाशन नकुल है। जो तुम्हारी गौओंको गिनते हैं येही माद्रीपुत्र सहदेव हैं। ये दोनों महा यशस्वी, महा सुन्दर, शृङ्गारधारी, वीर एक सहस्र महारथोंसे युद्ध कर सकते हैं। हे राजन्! ये कमलनयनी पतली कमरवाली सुन्दरी सैरन्ध्रीही द्रौपदी है। हे महाराज! आप जिसका नाम सुनते थे, सो अर्जुन मैंही हूं, मैं भीमसेनसे छोटा तथा नकुल और सहदेवसे बड़ा पाण्डुपुत्र हूं। हे महाराज! हम लोग आपके घरमें इस प्रकार छिपकर रहे हैं, जैसे पुत्र गर्भमें रहता है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, जब अर्जुन कहकर चुप हो गये, तब उत्तर कहने लगे।

उत्तर बोले, ये जो शुद्ध सोनेके समान गोरे शरीरवाले, सुन्दर बड़े और लाल नेत्रवाले हैं, सोही कुरुराज महाराज युधिष्ठिर हैं। उनके पास जो शुद्ध सोनेके समान गोरे, मतवाले, हाथीके समान चलनेवाले, ऊंची छातीवाले और लम्बे हाथवाले श्रेष्ठ पुरुष हैं, सोही भीमसेन हैं। इनके पासमें जो श्याम रङ्गवाले, महा धनुषधारी, ऊंचे कन्धे और कमलके समान नेत्रवाले पुरुष खड़े हैं, वही वीर अर्जुन हैं। राजाके दूसरी ओर जो इन्द्र और विष्णुके समान दो मनुष्य खड़े हैं सो नकुल और सहदेव हैं, इनके समान इस लोकमें कोई बलवान, रूपवान और शीलवान नहीं है। इन दोनोंके पास जो सोनेके समान अङ्गवाली, साक्षात मूर्त्तिधारिणी पार्व्वतीके समान सुन्दरी, नील कमलके समान रूपवाली लक्ष्मीके समान खड़ी है, वही द्रौपदी है। इस प्रकार पांचो पाण्डवोंका वर्णन करके उत्तरने राजासे अर्जुनका पराक्रम कहना आरम्भ किया।

उत्तर बोले, इन्होंने उस कौरवोंकी सेनाको इस प्रकार नाश किया था, जैसे सिंह हरिणोंका नाश करता है। येही शत्रुनाशन अर्जुन उस सेनामें रथपर चढ़कर घूमते थे इनके एकही वाण लगनेसे मतवाला हाथी मरकर पृथ्वीमें गिर गया था, इन्होंने कौरवोंको जीतकर गौओंको छीना है। इनके शंखके शब्दको सुनकर कान बहरे हो गये थे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उत्तरके ऐसे वचन सुन प्रतापवान राजा विराट उत्तरसे बोले, हमने राजा युधिष्ठिरका बहुत अपराध किया है, इस लिये पाण्डवोंको प्रसन्न करना चाहिये। यदि तुम्हारी इच्छा हो तो मैं अर्जुनके सङ्ग उत्तराका विवाह कर दूं। उत्तर बोले, मेरी बुद्धिमें पाण्डव लोग महात्मा, पूजा करनेके योग्य और माननीय हैं। आप इनको जैसे चाहें तैसेही प्रसन्न कर लीजिये।

राजा विराट बोले, मुझे भी युद्धमें शत्रुओंने

पकड़ लिया था, परन्तु भीमसेनने छुड़ा लिया और उनसे गौओंको भी छीन लिया। इन्हींके बाहुबलसे युद्धमें हमारी विजय भई है। इस प्रकार सब मन्त्रियोंके सहित राजा विराट युधिष्ठिरको भाइयोंके सहित प्रसन्न करके उनसे कहने लगे, हमने जो कुछ बिना जाने आपका अपराध किया हो सो आप क्षमा कीजिये, क्योंकि आप धर्म्मात्मा हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महात्मा बिराटने ऐसा कह कर धन और नीतिके सहित अपना सब राज्य महाराज युधिष्ठिरको दे दिया। अनन्तर महात्मा विराटने अर्ज्जुनके सहित सब पाण्डवोंको धन्यवाद दिया, फिर राजा विराटने युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्ज्जुन, नकुल और सहदेवसे मिलकर उनका माथा सूंघा और उनके दर्शनसे तृप्त न हुए। अनन्तर राजा विराट प्रसन्न होकर महाराज युधिष्ठिरसे बोले, आप सब लोग प्रारब्धसे बनवाससे छुटे, प्रारब्धहीसे उन दुष्टोंसे छिपकर आपने यहा निवास किया, मेरा राज्य और धन सब आपहीका है। आप निःसन्देह होकर निवास कीजिये और अर्ज्जुनके सङ्ग उत्तराका बिवाह कीजिये, क्योंकि ये उत्तराको समान पति होंगे। विराटके ऐसे वचन सुन महाराजने अर्ज्जुनकी ओर देखा। महाराजके देखते ही, अर्ज्जुन विराटसे बोले, हे राजन्! आपका और महाराजका सम्बन्ध होनाही उचित है, क्योंकि आप मत्स्य और महाराज भरतवंशी हैं, हम आपकी पुत्रीका विवाह अपने पुत्र अभिमन्युके सङ्ग करेंगे।

६८ अध्याय समाप्त।

विराट बोले, हे अर्ज्जुन! हम अपनी कन्या देते हैं, तुम उसे क्यों नहीं ग्रहण करते? अर्ज्जुन बोले, हे राजन्! हम तुम्हारी रनवासमें एक वर्षतक रहे हैं, तुम्हारी पुत्रीके सब प्रगट और गुप्त भावोंको जानते हैं, और वहभी हमारा पिताके समान विश्वास करती है; हमने गुरु होकर उसको नाचना और गाना सिखाया है, वह हमको बहुत मानती है, हम उसके सग एक वर्षतक रहे हैं, इस लिये उससे दूसरा व्यवहार करनेमें हमको बहुत शंका होती है। आपकोभी इस स्थानमें शङ्का करनी चाहिये। ऐसा करनेसे हमारा ब्रह्मचर्य्य पूरा होगा, आप अपनी पुत्रीका विवाह हमारे पुत्रके सङ्ग कर दीजिये ऐसा करनेसे हम और आप पवित्र होंगे, इसमें आप कुछ शंका मत कीजिये, पुत्र और पितामें कुछ भेद नहीं होता। हे शत्रुनाशन! दुर्नामसे बहुत डरता हूं, इस लिये आप अपनी पुत्रीका विवाह हमारे पुत्रके सङ्ग कर दीजिये, मेरा पुत्र साक्षात कृष्णका भानजा है, और कृष्णका बहुत प्यारा तथा सब शस्त्रोंको जाननेवाला है, हमारा अभिमन्यु नामक पुत्र तुम्हारा दामाद और उत्तराका पति होने योग्य है। विराट बोले, आप सब धर्म्म जानने वाले, ज्ञानी, कुरुश्रेष्ठ, आपकी आज्ञाको सब मानते हैं, जैसे आपकी इच्छाहो वैसेही कोजिये, अर्ज्जुनके समधी होनेसे मेरे सब कार्य्य ठीक होंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अर्ज्जुन और राजा विराटके ऐसे वचन सुन महाराज युधिष्ठिरनेभी इस बिवाहको स्वीकार कर लिया। उसी समय विराट और धर्म्मराज युधिष्ठिरने श्रीकृष्ण और अपने सम्बन्धियोंके पास दूत भेजे, और पाण्डवलोग द्रौपदीके सहित विराट नगरके समीप ही उपप्लव नाम नगरमें रहने लगे। अनन्तर पाण्डवोंने अभिमन्यु और श्रीकृष्णके सहित सब यादवोंको द्वारिकासे बुला भेजा। वे लोग सुनतेही विराट नगरमें पहुंच गये। इस समाचारके सुनतेही काशीके राजा और राजा शैब्य एक एक अक्षौहिणी सेना लेकर महाराज युधिष्ठिरको प्रसन्न करनेको आये। उसी समय महावीर द्रौपदीके पाचो पुत्र और म

पराक्रमी शिखण्डीको लेकर एक अक्षौहिणी सेनाके सङ्ग महा पराक्रमी धृष्टद्युम्न विराट नगरमें पहुंचे। सब शस्त्र जानने वालोंमें श्रेष्ठ महावीर धृष्टद्युम्नके सङ्ग अनेक बेदपाठी महा सूरवीर युद्धमें मरनेकी इच्छा वाले दानी अनेक सेनापति चत्रीयभी आये, उनको देखकर धनुष-धारियोमें श्रेष्ठ राजा विराटने वाहन और सेनाके सहित सबकी पूजा करी। विवाहसे राजा विराट बहुत प्रसन्न हुए। जब सब राजा लोग अपने अपने डेरामें चले गये। तब महाराज युधिष्ठिरसे मिलनेको अभिमन्यु और सुभद्राके सहित बसुदेवपुत्र बलदेव, श्रीकृष्ण, कृतवर्म्मा, हार्दिक्य युयुधान, सात्यकी अनाधृष्टि अक्रूर, साम्ब और निष्ठ आदि यादव आये। उसी समय इन्द्रसेन आदि पाण्डवोंके पाचों सारथी रथ लेकर विराट नगरमें पहुंचे। श्रीकृष्णके सङ्ग दश सहस्र हाथी एकलाख घोड़े दस सहस्र रथ और एकाखर्व्व पैदल थे। महा-तेजस्वी श्रीकृष्णके सङ्ग अनेक वृष्णि, अन्धक और भाजबंशी चत्रीभी आये थे श्रीकृष्णने पाण्डवाको हस्ती रत्न और उत्तम उत्तम वस्त्र दिये। तब राजा विराटने अपनी पुत्रीके विवाहका आरम्भ किया। उसी समय महाराज युधिष्ठिर और राजा विराट-के घरमें शंख, भेर, नगारे बजने लगे। भोजन बनानेवाले अनेक प्रकारके हरिन आदि खाने योग्य पशुओंका मास पकाने लगे। राजा विराटने सब राजोंके डेरोंमें, अनेक प्रकारकी मदिरा भेज दी। इस विवाहका समाचार सुनकर अनेक देशोंसे नाचन और गानेवाले आये। राजा विराटकी सब स्त्रिया कुण्डल आदि आभूषण पहरके सुदेष्णाके सहित उस स्थानोंमें बैठीं, जहा विवाह हो रहा था। उन सब रूप और यौवनमती स्त्रियोंको द्रौपदीने रूप, यश और तेजसे जीत लिया। वे सब स्त्रिया इन्द्रकी पुत्रीके समान उत्तराको आभूषण पहनाके ले आईं। कुन्तीपुत्र अर्जुनने अपने पुत्रसे विराटपुत्रीका विवाह किया। उन सब राजोंके बीचमें महाराज युधिष्ठिरने इन्द्रके समान बैठकर उत्तरा और अभिमन्युका विवाह किया। महाराज युधिष्ठिरने श्रीकृष्णकी सम्मतिसे सुभद्रापुत्र महात्मा अभिमन्युका विवाह किया। इस विवाहमें राजा विराटने महाराज युधिष्ठिरको वायुके समान शीघ्र चलनेवाले सात सहस्र घोड़े, दो सै मतवारे हाथी और बहुत धन दिया। फिर अग्निमें होम करके ब्राह्मणोंकी पूजा करी। अनन्तर महाराज युधिष्ठरको अपना सब राज, सेना, धन और शरीर भी दे दिया। जो धन श्रीकृष्ण लाये थे, विवाह होनेके पश्चात महाराज युधिष्ठिरने वह सब ब्राह्मणोंको दे दिया; महाराजने सहस्र गौ, अनेक प्रकारके वस्त्र, रत्न, भूषण, स्वादु भोजन और अनेक प्रकारकी पीनेकी वस्तु दान करी। इस विवाहके होनेसे उन सबसे वहा नगरनिवासी प्रसन्न हुए और नगरकी भी शोभा बहुत बढी।

७० अध्याय विराटपर्व्व समाप्त।

जो मनुष्य इस विराट पर्व्वको सुनकर अपनी शक्तिके अनुसार ब्राह्मणको वस्त्र, अन्न और सुवर्ण देता है, उससे सब देवता प्रसन्न होते हैं, महाभारत बाचनेवाला ब्राह्मण जिससे प्रसन्न होता है, उस मनुष्यपर सब देवता कृपा करते हैं, विराटपर्व्व सुननेके पश्चात अपनी शक्तिके अनुसार दूध, घी, और चीनीसे ब्राह्मण भोजन कराना चाहिये, ऐसा करनेसे प्रफल होता है।

इति श्रीभाषा महाभारत में विराटपर्व्वमें माहात्म्य समाप्त।

विराटपर्व्व सम्पूर्ण।

महाभारत ।



उद्योगपर्व्व ।

श्रीगणेशाय नमः ।

"दोहा"

नर, नारायण, व्यास अरु
बन्दि सरस्वति पाय ।
भारतको भाषा करों,
सुजननको सुखदाय ॥

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन जनमेजय। इस प्रकार कुरुकुल श्रेष्ठ पाण्डवोंने अपने सङ्गियोंके संहित प्रसन्न होकर अभिमन्युका विवाह किया, फिर रात्रिभर सुखसे अपने घरमें रहे और प्रातःकाल होतेही राजा विराटकी सभामें आये। वह राजा विराटकी सभा मणियोंसे खिची हुई, फूलोंकी मालाओंसे सुशोभित और सुगन्धित जलसे छिड़को थी। उसीमें सब राजोंमें श्रेष्ठ पाण्डव लोग आकर बैठे। उनके बैठतेही सब राजोंसे पूजित बूढ़े महाराज विराट और द्रुपद आसनोंपर बैठे। उनके पश्चात श्रीकृष्ण बैठे। महाराज द्रुपदके पास कृतवर्म्मा और बलदेव बैठे, राजा विराटके पास महाराज युधिष्ठिर और श्रीकृष्ण बैठे। राजा द्रुपदके सब पुत्र, भीमसेन, अर्ज्जुन, नकुल, सहदेव, प्रद्युम्न, साम्ब, अभिमन्यु और राजा विराटके महावीर पुत्र ये सब एकस्थान पर बैठे। पाण्डवोंके तुल्य रूपवान और पराक्रमी द्रौपदीके पाच महावीर पुत्र मणिजटित सोनेके सिंहासनों पर बैठे। जब उत्तम वस्त्र और आभूषणधारी राजा लोग अपने अपने योग्य आसनों पर बैठे चुके, तब वह राजोंसे भरी सभा ऐसे शोभित हुई जैसे निर्म्मल तारोंसे भरा आकाश शोभित होता है। सब पुरुषसिंह राजोंने परस्पर कुशल प्रश्न किया, फिर आनन्दकी बात करके सब चुप होगये, और श्रीकृष्णको ओर देखने लगे। सबकी यह इच्छा हुई, कि हम सबको श्रीकृष्णने पाण्डवोंके निमित्त यहा बुलाया है, इस लिये सबसे पहले यही कुछ कहें। पुरुषसिंह राजोंकी इच्छाको जानकर कृष्ण कहने लगे।

श्रीकृष्ण बोले, हे राजसिंह। आप सब लोगोंको विदित है, कि सुबलपुत्र छली शकुनीने महाराज युधिष्ठिरको किस प्रकार जुवेमें जीता था? किस प्रकार राज्य इनका छीना है? और किस प्रकार वनमें रहनेकी प्रतिज्ञा करायी थी? यद्यपि पाण्डवलोग अपने बलसे समस्त पृथ्वीको जीत सकते हैं, तथापि उन्होंने सत्यको ग्रहण करके मुनियोंका वेष धारण किया और तेरह वर्ष वनमें विताये। आप लोग जानते हैं, कि इस तेरहवे वर्षसे राजा विराटके यहा छिप कर रहनेसे महात्मा पाण्डवोंने कैसे कैसे न सहने योग्य दुःखोंको सहा है? परन्तु किसी प्रकार इस दुस्तर व्रतसेभी ये लोग पार हुए हैं। यहभी निश्चय है कि, महाराज युधिष्ठिर अपने कुलके राज्यकी इच्छा करते हैं। परन्तु इसके लिये किसी दूसरेको दूत बनाना चाहते हैं, सो हमारी इच्छा यह है कि इस राज्य-प्राप्तिमें राजा

दुर्य्योधनकी भी हानि न हो, संगही पुरुषसिंह पाण्डवोंका धर्म्म और यशभी बढ़े, क्योंकि धर्म्मराज अधर्म्मसे इन्द्रकी राज्य कीभी इच्छा नहीं करते, और धर्म्मसे एक गांवका स्वामी होनाभी अच्छा समझते हैं। और यहभी आप लोगों पर विदित है, कि यह राज्य पाण्डवोंके पुरुषोंका है, उसको छलसे कौरवोंने छीन लिया है। आप लोग जानते हैं, कि धृतराष्ट्रके पुत्रने कभी किसी युद्धमें महाराज युधिष्ठिरको नहीं जीता, और यहभी प्रत्यक्षही है कि इन्होंने छलके वशमें होकर कैसे न सहने योग्य दुःख सहे हैं, तथापि महाराज युधिष्ठिर अपने मित्रोंके सहित धृतराष्ट्र पुत्रोंका कल्याणही चाहते हैं। महावीर पाण्डव लोग अपने उस धन और राज्यकी इच्छा करते हैं, जो उन्होंने स्वयम राजोंका जीतकर उत्पन्न किया है। यह भी आप लोगोंको विदित है कि धृतराष्ट्रके पुत्रोंने इनके मारनेके लिये बालकपनमें कितने यत्न किये थे? वे लोग राज्य लेनेके लिये कितनी मूर्खता और दुष्टता करते हैं सो भी आप लोगोंसे छिपा नहीं है। महाराज युधिष्ठिरका धर्म्म और दुर्य्योधनके लोभके कहनेकी भी कुछ आवश्यकता नहीं है। महाराज युधिष्ठिर और दुर्य्योधनके सम्बन्धको भी आप लोग जानतेही हैं। इन सब बातोंको विचार कर जो कुछ करने योग्य काम हो, उसकी सम्मति कीजिये। ये पाचो अपनी प्रतिज्ञा पालन करके सत्यका पालन कर रहे हैं। नहीं तो आज तक धृतराष्ट्र पुत्रोंका नाश कर देते। यही विचारकर इनके सब मित्र इनकी सहायताको आये हैं। यद्यपि ये पाचोंही अपने शत्रुओंके मारनेमें समर्थ हैं, क्योंकि राज्यप्राप्तिमें सब यत्न करते हैं, तथापि आप लोग इनको निर्ब्बल जानकर इनके पास आये हैं। इस लिये हमारी सम्मतिमें एक पवित्र धर्म्मात्मा, कुलीन, पण्डित पुरुष दूत होकर दुर्य्योधनके पास जाय। वहां ज वह शान्ति पूर्ब्बक युधिष्ठिरका राज्य ।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! ष्णाके धर्म्म और अर्थसे भरे मोठे वचन कृष्णके बचनोंकी प्रशंसा करके श्रीबल बोले।

१ अध्याय समाप्त।

श्रीबलदेवजी बोले, आप लोगोंने बचन सुने, ये बचन धर्म्म और अर्थ तथा महाराज युधिष्ठिर और राजा दु दोनोंहीको सुख देनेवाले हैं। महाराज ष्ठिरने पहले ही दुर्य्योधनको आधा बाट दिया था, उसीको अब फिर चाह आधा राज्य देकर राजा दुर्य्योधन इन लो सङ्ग सुखसे रहें, और पुरुषवीर पाण्डव भी आधा राज्य पाकर शान्ति पूर्ब्बक प्र सुख दें। राजा दुर्य्योधनकी सम्मतिको नेके लिये और महाराज युधिष्ठिरके कहनेके लिये एक दूत शान्ति कर हस्तिनापुर जाय! वह दूत कुरुकुल महानुभाव भीष्म, धृतराष्ट्र, द्रोणाचार्य्य, अ त्थामा, विदुर, कृपाचार्य्य, शकुनि और आदि प्रधान, सेनापति, और धृतराष्ट्रके आदि वीर धर्म्मात्मा, बुद्धिमान, बूढ़े, निवासियोंके बीचमें महाराज युधिष्ठिरके बचन सुनावे, परन्तु वे वचन ऐसे दीन चाहिये जिसमें युधिष्ठिरका कल्याण हो। इन कहे कि, "आप लोग किसी अवस्थामें भी पाण्डवोंको क्रोधित मत कीजिये, क्योंकि वे बनवास रूपी प्रतिज्ञासे पार हो गये और अब बहुत बलवान भी हो गये हैं, आप लोगोंने राजा युधिष्ठिरका राज्य जुवेमें छीना है, सो भी छलसे, क्योंकि कुरुकुल वीर युधि ष्ठिरको सब मित्रोंने जुवा खेलनेसे रोका था, तथापि उन्होंने जुवा खेला, वे जुवेके

विद्याको भी नहीं जानते थे और शकुनि जुवेका पण्डित था, उसने छलसे इनको जीत लिया। राजा धृतराष्ट्रने कर्ण और दुर्य्योधनको नहीं छोड़कर युधिष्ठिरको जुवा खेलनेको बुलाया था, परन्तु सभामें सहस्रों अधर्म्मी इकट्ठे कर लिये थे। उन सबको महाराज युधिष्ठिर अपने बलसे जीत सकते थे, परन्तु उन सबको छोड़कर इन्होंने शकुनिहीसे जुवा खेला। उसने इनको जीत लिया। वह सदा जुवा खेलता रहता है, और ये सदा जुवेसे विमुख रहते हैं। यह जुवा हठसे हुआ था, इस लिये शकुनिका कुछ अपराध नहीं है।

दूत राजा धृतराष्ट्रको प्रणाम करके ऐसेही ऐसे शान्ति भरे बचन कहे। ऐसा करनेहीसे दुर्य्योधन दूतके बचनोंको मानेगा। आप लोग पाण्डव और कौरवोंमें युद्ध करानेका यत्न मत कीजिये, शान्तिहीसे दुर्य्योधनको प्रसन्न कर लीजिये। शान्तिसे जो काम होता है, सो उत्तम है, युद्धमें अन्याय हो जाता है, इस लिये युद्ध अच्छा नहीं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, यदुकुलवीर श्रीबलदेवजीके ऐसे बचन सुन सात्यकी क्रोधमें भरके खड़े हुए, और श्रीबलदेवजीके बचनोंका खण्डन करके इस प्रकार कहने लगे।

२ अध्याय समाप्त।

सात्यकी बोले, हे बलदेव! पुरुष अपने आत्माके अनुसारही बचन कहता है, अर्थात पुरुषकी जैसी आत्मा है, वैसेही वचन उसके मुखसे निकलते हैं। आपकी जैसी आत्मा है, वैसेही आपने वचनभी कहे। जगतमें वीर धीर कादर दोनों ही होते हैं, और पहभी दोनोंहीका प्रबल दीखता है। एकही कुलमें वीर और कादर दोनों उत्पन्न होते हैं, जैसे एकही वृक्षकी दो डालियां होती हैं, एक पर फल लगता है, दूसरी पर नहीं लगता। हे बलभद्र! "इस कर्म्ममें शकुनिका कुछ अपराध नहीं" आपके इस बचनकी मैं निन्दा नहीं करता, परन्तु जिन्होंने इन बचनोंको सुनकर क्षमा करी उन्होंकी निन्दा करता हूं। धर्म्मराजको थोड़ा दोष लगा करभी आप किस प्रकार निर्भय होकर सभामें प्रतिष्ठा चाहते हैं? जुवेकी विद्या न जानने वाले महात्मा धर्म्मराजको बुलाकर जुवेके जानने वाले शकुनिने अधर्म्मसे जीत लिया, क्या आप इसीको धर्म्म समझते हैं? यदि भाइयोंके सहित घरमें बैठे महाराज युधिष्ठिरको कोई जीत लेता तबतो धर्म्म होता। क्षत्रियोंके धर्म्मको माननेवाले युधिष्ठिरको घरमें बुलाकर अधर्म्मसे जीत लिया, इसे धर्म्म कौन कह सकता है? इतने परभी धर्म्मराज युधिष्ठिर क्यों विनयसे राज्य मांगेगे। वनबाससे छूटकर युधिष्ठिर अपने पिताके राज्यके अधिकारी होचुके, तथापि ये पापके धनको लेनेकी इच्छा नहीं करते, ये कदापि दुर्य्योधनसे राज्य नहीं मांग सकेंगे। वे लोग कैसे धर्म्मात्मा हैं? उनका धर्म्मतो इसीसे प्रकट है, कि वनबासका समय बीतने परभी युधिष्ठिरको राज्य नहीं देते और कहते हैं, कि हम द्रोणाचार्य्य, भीष्म और विदुरकी आज्ञामें चलते हैं। भला वे अबभी पाण्डवोंका धन क्यों नहीं देते? हम प्रतिज्ञा करते हैं, कि उनको अपने तेज बाणोंसे जीतकर महात्मा युधिष्ठिरके पैरों पर गिरा देंगे। यदि वे लोग महात्मा युधिष्ठिरको प्रणाम न करेंगे तो अवश्यही मन्त्रियोंके सहित यमराजका दर्शन करेंगे। क्या उनकी यह शक्ति है, कि युद्ध करते हुए सात्यकीके बाणोंको सह सकें? हमें निश्चय है कि हमारे बाणोंसे वे लोग नष्ट हो जायगे जैसे वज्रसे पर्व्वत नष्ट होता है। कौन ऐसा वीर है, जो अर्ज्जुन, कृष्ण, सात्यकी, बलवान भीम, महा धनुषधारी यमराज और

कालके समान क्रोधी नकुल सहदेव, विराट और महाराज द्रुपदको युद्धमें देख सकै? कौन ऐसा बलवान है, जो युद्धमें पराक्रमी धृष्टद्युम्नसे जीता बच जाय? कौन वीर पाण्डवोंके तुल्य पराक्रमी द्रौपदीपुत्र, देवतोंको भी जीतनेवाले सुभद्रापुत्र अभिमन्यु, काल सूर्य और अग्निके समान तेजस्वी साम्ब, गद और प्रद्युम्नसे युद्ध कर सकता है? सो हम सब लोग धृतराष्ट्रपुत्रोंके सहित शकुनि और कर्णको मारकर युधिष्ठिरको राज्य देंगे। दुष्ट शत्रुओंके मारनेमें कुछ अधर्म्म नहीं है, परन्तु शत्रुसे भीख मागना अधर्म्म और अयशको बढ़ाता है। अब आप लोग आलस्यको छोड़कर युधिष्ठिरके कल्याणका यत्न कीजिये। हम प्रतिज्ञा करते हैं कि धृतराष्ट्रको युधिष्ठिरको राजा बनानाही होगा। यातो युधिष्ठिर राजा होंगे, या सब दुर्य्योधनादिक मरके पृथ्वीमें गिरेंगे।

३ अध्याय समाप्त।

महाराज द्रुपद बोले, हे महाबाहो! तुमने जो कुछ कहा सो सब ऐसेही होगा; क्योंकि दुर्य्योधन शान्तिसे राज्य नहीं देगा। राजा धृतराष्ट्र पुत्रके प्रेमसे, भीष्म और द्रोणाचार्य्य उनका अन्न खानेसे, तथा शकुनि और कर्ण मूर्खतासे दुर्य्योधनके सङ्गी होंगे। यद्यपि पहले शान्ति चाहनेवाले; पुरुषको श्रीबलदेवजीके कहनेके अनुसार ही चलना चाहिये, तथापि उनके बचन मुझे अच्छे नहीं लगते, क्योंकि दुर्य्योधन मीठे बचन कहनेके योग्य नहीं है वह महापापी और दुष्टबुद्धि है। जो पापी दुर्य्योधनसे मीठे बचन कहे, उसका वैसीही भूल है, जैसे गधेको रक्षा और गजकी हत्या करनेवालेकी। वह दुष्ट मीठे वचन सुनकर हमारे पक्षको दुर्ब्बल समझेगा। मूर्ख लोग कोमलतासे शत्रुको अपने वशमें समझ लेते हैं। हम तुम्हारे कहनेके अनुसारही करेंगे; अब हम अपने मित्रोंको बुलानेके लिये दूत भेजते हैं, और सेनाका उद्योग करते हैं। शीघ्र चलनेवाले दूत इसी समय हमारी आज्ञासे शल्य, धृष्टकेतु, जयत्सेन और केकय देशके राजोंके पास जायं, क्योंकि निःसन्देह दुर्योधनभी सब राजोंके पास अपने दूत भेजेगा, और लोग पहली बातको मानेंगे, इस लिये शीघ्रही राजोंके पास दूत भेजने चाहियें, क्योंकि बड़ा भारी काम करना है। राजा शल्यके पास पहले दूत जायं। वे अपने सङ्गी राजोंके सहित युद्ध करनेको आवैं। पूर्ब्ब समुद्र निवासी भगदत्त, अमितौजा, हार्द्दिक्य, उग्र, अन्धक, दीर्घप्रज्ञ, सूर, रोचमान, बृहन्त, सेनाबिन्दु, सेनजित, प्रतिविन्ध्य चित्रवर्म्मा, सुवास्तुक, वाल्हीक, मुञ्जकेश, चैद्याधिपति, सुपार्श्व, सुबाहु, महारथ कौरव, शाक, पल्हव, दरद, सुरारि, नदीज, कर्णवेष्ट, नील, वीरधर्म्मा, महाबलवान महायोद्धा दन्तवक्र, रुक्मी, जनमेजय, आषाढ़, बायु वेग, पर्व्वपाली, भूरितेजा, देवक, पुत्रोंके सहित एकलव्य, कारुषक देशके राजा, बलवान क्षेमधूर्त्ति, काम्बोज, ऋषीक, और द्वीपोंके राजा, जयत्सेन, काशिराज, पञ्चावके सब राजा, क्राथपुत्र, दुर्धर्ष, सब पर्व्वती राजा, जानकी, सुशर्म्मा, मणिमान्य, अतिमत्सरक, पांड्यदेशके राजा, बलवान धृतकेतु, तुण्ड, दण्डधार, बलवान बृहत्सेन, अपराजित, निषाद, श्रेणिमान, वसुमान बृहद्दल, बाहु, महौजा, परम्परञ्जय, बलवान पुत्रोंके सहित राजा समुद्रसेन, उद्धव, क्षेमक, राजा वाटधान, श्रुतायु, दृढ़ायु, बलवान शाल्वपुत्र और महायोद्धा कलिङ्ग देशके राजाके पास हमारे दूत जायं और हमारा बुद्धिमान पुरोहित दुर्य्योधनके पास जाय। जो कुछ दुर्योधन, भीष्म, धृतराष्ट्रपुत्र और महारथ द्रोणाचार्य्यसे कहना हो, सो उनसे कह दिया जाय। ये बहुत बुद्धिमान और पण्डित हैं।

४ अध्याय समाप्त।

श्रीकृष्ण बोले, महाराज द्रुपदने जो कुछ कहा वह सब बहुत उचित है, ऐसाही करनेसे महातेजस्वी युधिष्ठिरके कार्य्य सिद्ध होंगे। शान्तिकी इच्छा करनेवाले हम लोगोंको पहले ऐसाही करना चाहिये, नहीं तो हम लोग मूर्खके समान बैठेही रह जायंगे। परन्तु हम लोगोंका दुर्य्योधन और पाण्डवोंसे समानही सम्बन्ध है, इस लिये हम लोग किसीकी ओर होकर कोई काम नहीं कर सकते। इसके अतिरिक्त एक बात और भी है कि हम सब लोग अभिमन्युके विवाहके नेवतेमें यहां आये हैं, तब विवाह बीत गया अब यहां रहनेका क्या काम है? अब प्रसन्न होकर हम लोग बिदा होते हैं, परन्तु आप हम सब लोगोंमें बूढे हैं, और पण्डितभी हैं, इस लिये हम सब लोग आपके शिष्योंके समान हैं; और महाराज धृतराष्ट्र आपको बहुत मानते हैं। इसके अतिरिक्त आप कृपाचार्य्य और द्रोणाचार्य्यके मित्रभी हैं। इस लिये आपही अपनी ओरसे पाण्डवोंकी सन्धिके लिये एक दूत भेजिये। आप जो कुछ कह देंगे, सोई हम लोग सब मान लेंगे। यदि महाराज धृतराष्ट्र न्यायसे शान्त हो जायं तो कौरव और पाण्डवोंका युद्ध नहीं होगा, इससे सब भाइयोंमें प्रेम बना रहेगा। यदि महामानी धृतराष्ट्रपुत्र लोभ और भूलके वशमें होकर सन्धि न करे तो सब राजोंको बुलानेके पीछे हम लोगोंको बुलाइयेगा। उस समय मूर्ख दुर्य्योधन भाई, बन्धु और मन्त्रियोंके सहित क्रोधी अर्जुनके बाणोंसे मरकर पृथ्वीमें गिर जायगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उसी समय महाराज विराटने श्रीकृष्णको भाई और बान्धवोंके सहित प्रसन्न करके बिदा किया। जब श्रीकृष्ण द्वारिकाको चले गये, तब महाराज युधिष्ठिरने राजा विराटकी सहायतासे युद्धकी सामग्री इकट्ठी करनी आरम्भ करी। फिर महाराज द्रुपदने और राजा विराटने सब राजोंके यहां बान्धवोंके सहित बुलानेको निमन्त्रण भेजे। कुरु कुलश्रेष्ठ पाण्डव, विराट और महाराज द्रुपदकी आज्ञासे अनेक महा बलवान राजालोग प्रसन्न होकर विराट नगरमें आये। राजा युधिष्ठिरकी महासेना इकट्ठी करते सुन धृतराष्ट्रपुत्रनेभी माननीय राजोंको बुलाना आरम्भ किया। हे राजन्! उस समय राजोंसे सब पृथ्वी भरगई। समस्त पृथ्वीमें राजोंकी सेनाही दीखने लगी। हाथी घोड़े, रथ और, पैदलही चारो ओर दीखते थे। उस समय, समस्त पृथ्वी, पर्व्वत और नदियोंके समेत हिलने लगी। उस समय महाराज द्रुपदने बुद्धि और अवस्थामें बूढ़े अपने पुरोहितको कौरवोंके पास भेजा।

५ अध्याय समाप्त।

महाराज द्रुपद बोले, सब जगतकी वस्तुओंमें प्राणी श्रेष्ठ है, और प्राणियोंमें बुद्धिसे जीनेवाले श्रेष्ठ हैं, बुद्धिसे जीने वालोंसे मनुष्य श्रेष्ठ हैं, मनुष्योंमें ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं, ब्राह्मणोंमें वैद्य श्रेष्ठ हैं, वैद्योंमें बुद्धिमान श्रेष्ठ हैं, बुद्धिमानोंमें चिकित्सा करनेवाले और चिकित्सकोंमें वेद जानने वाले श्रेष्ठ हैं। हमारी बुद्धिमें आता है कि आप सब बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ हैं, हमारी सम्मतिमें आप कुल, अवस्था और विद्यामें सबसे श्रेष्ठ हैं, आप बुद्धिमें अङ्गिरापुत्र शुक्रके समान हैं, ऐसी कोई विद्या नहीं जिसको आप नहीं जानते; आप महाराज धृतराष्ट्रके स्वभावकोभी अच्छी तरह जानते हैं, और कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरके स्वभावकोभी आप जानते हैं। धृतराष्ट्रके पुत्रोंने छलसे युधिष्ठिरको जीता है, यहभी आप जानतेही हैं; यद्यपि विदुर उनको बहुत समझाते हैं, तौभी वे अपने पुत्रहीकी सम्मति मानते हैं; शकुनिने युधिष्ठिरको बुलाकर जुवेमें जीता था; महाराज युधिष्ठिर जुवा नहीं

जानते और शकुनि जुवामें निपुण है, महाराज युधिष्ठिर बहुत पवित्र और सच्चे हैं, इसीसे शकुनिसे हार गये। उन्होंने छलसे युधिष्ठिरको जीता है, इससे हमें निश्चय होता है कि इनको वे लोग कदापि अपनी इच्छासे राज्य नहीं देंगे। आप धृतराष्ट्रके पास जाकर धर्म्मके सहित बचन सुनाइये जिससे उनके योद्धाओंके चित्त फिर जायं, आपके वचनमें विदुरभी सहायता देंगे। वे भीष्म, द्रोणाचार्य्य और कृपाचार्य्य आदि वीरोंमें भेद करा देंगे। जब मन्त्रियोंमें भेद और योद्धाओंमें द्वेष हो जायगा, तब वे लोग उनको एकमें मिलानेकी चेष्टा करेंगे। इतनेही समयमें पाण्डव लोग सुख पूर्व्वक धन और सेनाका प्रबन्ध कर सकेंगे। जिस समय उनके सब वीरोंमें मेल रहेगा, और आपके जानेमें विलम्ब होगा तब वेलोग अपना सब प्रबन्ध ठीक कर लेंगे और सेना भी बहुतसी इकट्ठी कर लेंगे। इसी लिये विशेषकर आप भेजे जाते हैं; आपके जानेसे राजा धृतराष्ट्र आपके धर्म्मयुक्त बचनोंको मानेंगे। आप बहुत धर्म्मात्मा हैं, जब उनसे धर्म्म सहित बचन कहियेगा, तब सब कार्य्य सिद्ध हो जायंगे। महाराज धृतराष्ट्रसे आप कहियेगा कि, पाण्डव लोग बहुत दुःख सह चुके हैं, और वे लोग आपकी कृपा चाहते हैं, आप वंशमें बूढ़े हैं, इस लिये आप धर्म्म सहित रहिये। ऐसे ऐसे बचन कहकर आप उनके मनको निःसन्देह अपने वशमें कर लेंगे। आपको उन लोगोंसे कुछ भय भी नहीं है, क्योंकि आप वेद जानने वालेब्राह्मण हैं और दूत कर्म्मको जानते हैं,विशेषकर बूढ़े हैं। इस लिये आप पुष्य नक्षत्र और जय मूहूर्त्तमें हस्तिनापुरको यात्रा कीजिये। आपके जानेसे युधिष्ठिरको कार्य्य सिद्धि होगी।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महात्मा द्रुपदकी आज्ञा सुन बूढ़े पुरोहित हस्तिनापुरको चले। ये नीतिशास्त्रके जाननेवाले महात्मा अपने शिष्योंके सहित हस्तिनापुरको चले।

६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! पाण्डवोंने पुरोहितको दूत भेजकर औ[र] राजोंके पास दूत भेजा। पश्चात स्वयम पुरुष सिंह अर्ज्जुन श्रीकृष्णको बुलानेको द्वारिका गये

जिस दिन बलदेव और श्रीकृष्ण वृष्णि और अन्धक तथा भोज वंशियोंके सहित द्वारिकाको चले गये थे, उसी दिन धृतराष्ट्रपु[त्र] दुर्य्योधनने इन सब समाचारोंको गुप्त दूतों[के] द्वारा जान लिया था। जब उन्होंने सुना [कि] श्रीकृष्ण तेज घोड़ोंके रथपर बैठकर द्वारकाको चले गये, तभी राजा दुर्य्योधन तेज घोड़ोंके रथपर बैठकर बहुत सेनाके सहित द्वारिकाको चले। जिस दिन दुर्य्योधन द्वारिकाको चले, उसी दिन अर्ज्जुन भी द्वारिकाको चले। ये दोनों पुरुषसिंह कुरुकुल श्रेष्ठ वीर एकही दिन रमणीय द्वारिकापुरीमें पहुंचे, परन्तु पहले दुर्य्योधन पहुंचे, और एक अच्छे आसन पर कृष्णके शिरकी ओर बैठ गये। उनके पीछे अर्ज्जुन पहुंचे, वे हाथ जोड़कर कृष्णके पैताने खड़े हो गये। उसी समय कृष्णकी निद्रा खुली; उन्होंने मुह खोलतेही आगे खड़े अर्ज्जुनको पहले देखा और पीछे फिर हाने बैठे, दुर्य्योधनको देखा। कृष्णने दोनोंकी उचित पूजा करी और दोनोंका सत्कार किया, फिर दोनोंसे आनेका कारण पूछा। उसी समय दुर्य्योधनने हंसकर कृष्णसे कहा, आप इस युद्धमें हमारी सहायता कीजिये, आप हमसे और अर्ज्जुनसे समानही प्रीति रखते हैं, और हमसे और अर्ज्जुनसे आपका सम्बन्ध भी समानही है, इसके अतिरिक्त हम आपके यहां पहले आये हैं, और यह नियम है कि महात्मा लोग पहले आये मनुष्यका मानते

हैं। हे कृष्ण! आप इस समय सब जगतके विद्वानोंमें श्रेष्ठ हैं, आपका सब कोई सम्मान करते हैं, इस लिये आप सज्जनोंके अनुसार हमारी सहायता कीजिये।

श्रीकृष्ण बोले, हे राजन्! इसमें कुछ सन्देह नहीं कि आपही हमारे यहां पहले आये हैं, परन्तु हमने पहले कुन्तीपुत्र अर्ज्जुनहीको देखा है। हे दुर्य्योधन! आप पहले आये और अर्ज्जुनको पहले देखा इस लिये हम दोनोंकी सहायता करेंगे। हमने ऐसा सुना है कि लड़कोंका कार्य्य सिद्ध करना चाहिये, इस लिये अर्ज्जुनहीको सहायता देना उचित है। हमारे समान युद्ध करनेवाले एक अर्वुद ग्वालिये हमारे यहां रहते हैं, वे नारायणके नामसे प्रसिद्ध हैं और महायोद्धा हैं, हम एक ओर उनको रखते हैं, और एक ओर आप होते हैं वे लोग युद्ध करेंगे और हम युद्धमें शस्त्रभी नहीं छुवेंगे। हम दोनोंमेंसे जिसको जिसे लेनेकी इच्छा हो उसे ले; परन्तु पहले अर्ज्जुनको मागना चाहिये क्योंकि धर्म्मसे यही प्रथम मागनेके अधिकारी हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तब अर्ज्जुनने कृष्णहीको मागा; क्योंकि कृष्ण शत्रुओंके नाश करनेवाले, मायाविशधारी तथा देव, दानव और मनुष्योंके जीतनेवाले थे। हे जनमेजय! राजा दुर्य्योधनने पहले कही एक अर्वुद नारायणी सेनाको मागा। क्योंकि उसने जान लिया कि कृष्ण हमारी ओर नहीं जायंगे। उस सब सेनाको लेकर राजा दुर्य्योधन महापराक्रमी वलदेवके पास गए और उनसे अपने आनेका प्रयोजन कह सुनाया। तब श्रीवलदेवजीने दुर्य्योधनसे कहा।

श्रीवलदेवजी बोले, हे पुरुषसिंह! हे कुरुनन्दन! हम इन सब विषयोंको पहलेहीसे जानते थे, और अभिमन्युके विवाहके समय राजा विराटकी सभामें हमने तुम्हारे लिये कृष्णसे बहुत कहा भी था। हे राजा! हमने यह भी दिखलाया था कि दुर्य्योधन और युधिष्ठिरसे सम्बन्ध भी तुल्यही है, परन्तु कृष्णने हमारे वचनोंको नहीं माना और हम कृष्णको बिना क्षणमात्र भी कहीं नहीं रह सकते, इस लिये हम दोनोंमेंसे किसीकी भी सहायता नहीं करेंगे। तुम सब राजोंमें श्रेष्ठ भरत वंशमें उत्पन्न हुए हो, सो जाकर क्षत्रियोंके धर्म्मके अनुसार युद्ध करो, हम किसी ओर भी नहीं जायंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, वलदेवजीकी निश्चय बुद्धि जान उनको प्रणामकर और कृष्णको दूसरीओर समझ राजा दुर्य्योधनने अपनी विजयका निश्चय किया, और कृतवर्म्माके पास गए। कृतवर्म्माने एक अक्षौहिणी सेना महाराज दुर्य्योधनको दी। इन सब सेनाओंको लेकर महाराज दुर्य्योधन बहुत प्रसन्नता पूर्व्वक हस्तिनापुरको लौटे।

दुर्य्योधनके जानेके पश्चात पीताम्वरधारी जगतकर्त्ता श्रीकृष्णजीने अर्ज्जुनसे कहा, तुमने सब सेनाको छोड़ कर अकेले हमको क्यों मागा?

अर्ज्जुन बोले, हे कृष्ण! आप अकेलेही उन सबको मार सकते हैं और मैं भी अकेलाही उन सबको मार सकता हूं; जगतमें आपकी कीर्त्ति बहुत है, आपके हमारी ओर चलनेसे हमारा यश होगा और हम यशहीकी इच्छा करते हैं। इसके अतिरिक्त बहुत दिनसे हमारी यह इच्छा है कि आप हमारा रथ हांकें, सो अब आपको रथ हांकना होगा।

श्रीकृष्णजी बोले, हे अर्ज्जुन! तुमने जो कहा सो सब सत्यही है, हम अवश्य तुम्हारा सारथी वनेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इस प्रकार कृष्णके सहित प्रसन्न हो अनेक उत्तम यदुवंशियोंको

सङ्ग लेकर अर्जुन फिर महाराज युधिष्ठिरके पास आये।

७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा शल्य दूतोंके आतेही बहुत सेना और महारथ पुत्रोंके सहित पाण्डवोंको सहायताको चले। यह सेना मार्गमें दो कोसतक ठहरती थी। महा पराक्रमी शल्यके सङ्ग एक अक्षौहिणी सेना थी। उसमें विचित्र आभूषण, विचित्र रथ, घोड़े, माला, वस्त्र, कवच, ध्वजा और धनुषधारी अनेक वीर थे, वे सब लोग अपने देशके अनुसार आभूषण धारण किये थे। उसके सेनापति भी महा पराक्रमी और महाशूर वीर थे। वे लोग अपनी सेनाको धीरे धीरे चलाते पृथ्वीको कपाते और सब प्राणियोंको डराते महाराज युधिष्ठिरके पास चले। जब राजा दुर्य्योधनने सुना कि महारथ शल्य बहुत सेनाके सहित महाराज युधिष्ठिरको सहायताको जाते हैं, तब उन्होंने आपही मार्गमें आकर राजा शल्यसे भेंट करी। राजा दुर्य्योधनने उनके मार्गमें अनेक रत्नोंसे चित्रित विचित्र सभा बनवाई, रमणीय देशोंमें अनेक शिल्पकारोंको भेजकर अनेक उत्तम स्थान बनवाये, उनमें माला, खानेके योग्य मास और अनेक पोनेकी वस्तु रखवा दीं। मार्गमें अनेक सुन्दर कूए, अनेक प्रकारकी बावड़िया और जलके स्थान भी बनवाये। उन सब सभाओंमें ठहरते हुए और दुर्य्योधनके मान्त्रियोंसे देवतोंके समान पूजा पाते हुए राजा शल्य चलने लगे। एक दिन राजा शल्य देवतोंके स्थानके समान बनी हुई उत्तम सभामें पहुंचे। उसको देखकर उन्होंने जाना कि यह मनुष्योंका बनाया हुआ स्थान नही है, और उन्हान अपनेको इन्द्रके समान माना, परन्तु वे अभीतक यही जानते थे कि हमारा यह सब सत्कार युधिष्ठिरहीकी ओरसे होरहा है। उस दिन उन्होंने प्रसन्न होकर सेवकोंसे पूछा, युधिष्ठिरके कौनसे सेवकोंने इस सभाको बनाया है; उनको शीघ्र हमारे पास बुला लावो, हम प्रसन्न होकर उन्हें पारितोषिक देना चाहते हैं, राजा युधिष्ठिर हमारे इस परितोषिक देनेसे प्रसन्न होंगे। राजा दुर्य्योधनके दूतोंने उसी समय जाकर दुर्य्योधनसे कह दिया। जब राजा दुर्य्योधनने जाना कि अब राजा शल्य अपना प्राणतकभी देनेको उपस्थित हैं, तब छिपकर उनके पास गये, राजा शल्यने उनको देखतेही जान लिया कि इसीका यह सब यत्न है। तब प्रसन्न होकर कहा कि जो तुम्हारी इच्छा हो सो मागो।

दुर्य्योधन, बोले, आप अपने वचनको सत्य कीजिये, और हमारे सेनापति हूजिये। श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, दुर्य्योधनके वचन सुन शल्य बोले, जो तुमने कहा सो वैसेही होगा और जो कहनाहो सो कहो?

दुर्य्योधनने कहा आपने सब कुछ किया!

शल्य बोले, हे पुरुषसिंह दुर्य्योधन! तुम हस्तिनापुरको चले, जावो, मैं शत्रुनाशन युधिष्ठिरको देखने जाता हू, क्योंकि पुरुषसिंह युधिष्ठिरको देखनेकी मेरी बहुत इच्छा है। दुर्य्योधन बोले कि आप वहांसे शीघ्र लौटें, क्योंकि हम आपहीके आधीन है, और अपने वरदानकाभी ध्यान रखना।

शल्य बोले, हे राजन्! हम बहुत शीघ्र लौटेंगे। परस्पर ऐसे बातकर दोनो चल दिये। राजा दुर्य्योधन हस्तिनापुरको गये और महाराज शल्य यह सब समाचार कहनेको पाण्डवोंके यहां गये। उनके नगरमें जाकर राजा युधिष्ठिरको छावनीमें गये। वहा जाकर राजा शल्यने सब पाण्डवोंको बैठे देखा। राजा शल्यको देखतेही पाण्डव लोग खड़े हो गये और पाद्य, अर्घ तथा गऊसे पूजा करी। फिर शत्रुनाशन महाराज शल्यने प्रेमसे भरके राजा

युधिष्ठिरको अपनी छातीसे लगाया। इसी प्रकार भीम, अर्ज्जुन, नकुल, सहदेव और कृष्णासेभी मिले। फिर आसनपर बैठकर युधिष्ठिरसे बोले, हे राजशार्दूल। हे जीतने वालोंमें श्रेष्ठ! हे कुरुनन्दन! कहो तुम कुशलसे तो हो! हे राजेन्द्र! हे कुरुनन्दन! तुम अपने भाई और द्रौपदीके सहित प्रारब्धहीसे छूटे। हे राजन्! तुमने बहुत भारी काम किया, जो बारह वर्ष निर्जन बनमें रहे और एक वर्ष छिप कर रहे। राज्यभ्रष्टको सुख कहां है। इसी लिये तुमने ये सब दुःख भोगे। इस दुर्य्योधनके दिये हुए दुःखसे तुम शीघ्रही पार होगे और सब शत्रुओंको मारकर शीघ्रही राज पाओगे। हे महाराज! तुम जगतकी सब बातोंको जानतेहो! हे प्यारे युधिष्ठिर! तुम पुराने राजोंके समान धर्म्म करतेहो। तुम दान, तप, क्षमा, इन्द्रियजीतना, सत्य और अहिंसामें तत्पर हो। यह सब जगत तुम्हारीही शान्तिसे स्थिर है। हे राजेन्द्र! तुम कोमल वाणीवाले ब्राह्मणोंके भक्त दाता और धार्म्मिक हो। तुम्हारे गुण जगतमें विदित है। हे प्यारे युधिष्ठिर। तुम इस सब जगतको जानते हो, तुम प्रारब्धसे इस व्रतके पार होगये। हे पृथ्वीनाथ! हम प्रारब्धहीसे आपको भाइयोंके सहित सब दुःखसे पार हुए देखते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तब राजा शल्यने दुर्य्योधनके मिलनेका सब समाचार युधिष्ठिरसे कह दिया।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे राजन्। हम प्रसन्न होकर कहते हैं कि आपने जो दुर्य्योधनको वरदान दिया सो बहुत अच्छा किया, हे वीर। हमभी एक वरदान आपसे मांगना चाहते हैं, सो न करनेके योग्य काम भी आपको हमारे लिये करना होगा। आप कृष्णके समान योद्धा हैं, इस लिये यह वरदान आपसे मांगता हूं। हे राजसिंह! जिस समय कर्ण और अर्ज्जुनमें युद्ध होगा, उस समय आप अवश्य कर्णके सारथी बनेंगे; तब आपको अर्ज्जुनकी रक्षा करनी होगी, यदि आप हमारे प्यारे मामा हैं, तो यह वरदान देनाही होगा। इसके अतिरिक्त उस युद्धमें आप कर्णके बलको घटाइयेगा, इससे हमारी विजय होगी। हे मामा! यद्यपि यह कर्म्म आपके योग्य नहीं है, तथापि आपको हमारे प्रेमसे करना होगा।

शल्य बोले, हे पाण्डव। तुम्हारा कल्याण हो, तुम जो हमसे कर्ण और अर्ज्जुनके युद्धका बरदान मांगते हो, सो हम निश्चय कर्णके सारथी बनेंगे। तुम जो हमको कृष्णके समान योद्धा कहते हो, इसका उत्तर हम युद्धमें देंगे; क्योंकि ऐसा कहनेको यहां कोई आवश्यकता नहीं थी। हम प्रतिज्ञा करते हैं कि, हम ऐसा यत्न करेंगे कि जिसमें कर्णका बल घटे। हे प्यारे। तुमने जो कुछ कहा हम सब वैसेही करेंगे, और भी जहां तक हमारी शक्ति होगी तुम्हारा कल्याण हम करेंगे। तुमने जो द्रौपदीके सहित जूयेमें दुःख पाया है, कर्णने जो कठोर बचन तुमसे कहे हैं, जटासुर और कीचकने जो कुछ द्रौपदीको दुःख दिये हैं, उन सबका नाश होकर तुम्हें सुख मिलेगा। हे वीर! हे महातेजस्वी! इन सबमें तुम्हें कुछ शोक नहीं करना चाहिये! प्रारब्ध बड़ा बलवान है, महात्माओंको दुःख होतेही हैं, देवता लोगोंको भी दुःख सहने होते हैं। हमने सुना है कि अपनी स्त्रीके सहित देवराज इन्द्रने भी बहुत दुःख सहे थे।

८ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे राजेन्द्र! महात्मा इन्द्रने इन्द्राणीके सहित कब घोर दुःख सहा था?

इसको हम सुननेको इच्छा करते हैं, आप कहिये।

शल्य बोले, हे राजेन्द्र! जिस प्रकार इन्द्रने इन्द्राणीके सहित घोर दुःख सहा था, सो पुराना इतिहास हम तुमसे कहते हैं, सुनो।

पहले समयमें महातपस्वी देवश्रेष्ठ त्वष्टा प्रजापति थे। उन्होंने इन्द्रको शत्रुतासे त्रिशिरा नामक पुत्रको उत्पन्न किया। उस महातेजस्वी तीन शिरवाले विश्वरूपने इन्द्रासन छीननेकी इच्छा करी। उसके तीनों शिर चन्द्रमा, सूर्य्य और अग्निके समान थे, वह एक मुखसे वेद पढ़ता था, एकसे मद्य पीता था, और एकसे सब ओर इस प्रकार देखता था, मानो सबको खा जायगा। हे शत्रुनाशन! वह तपस्वी शान्त इन्द्रियजित तथा धर्म्म और तपको करनेवाले थे, उन्होंने घोर तप किया। उस महातेजस्वीके तप और सत्यको देखकर इन्द्रको शङ्का हुई कि यह इन्द्र न हो जाय। इन्द्रने विचारा कि इसका तप किस प्रकार नष्ट होय, और यह किस प्रकार भोगोंकी इच्छा करे, क्योंकि इसकी वृद्धि होनेसे सब लोकका नाश हो जायगा। बुद्धिमान इन्द्रने बहुत विचारकर उसके तप नाश करनेके लिये अप्सराओंको आज्ञा दई। इन्द्रने अप्सराओंसे कहा तुम लोग शीघ्र त्रिशिराके पास जाकर ऐसा उपाय करो जिससे वह कामदेवके वशमें होय, तुम लोग शृङ्गार करके बाल गूथकर मनोहर हार पहनकर अपना रूप सुन्दर बनाकर हाव भावसे विश्वरूपको अपने वशमें करो, क्योंकि उसका तप देखकर मैं बहुत असावधान हो रहा हूं, मुझको उससे बहुत भय है, तुम लोग इस भयको दूर करो।

अप्सरा बोलीं, हे इन्द्र! आपने जो कुछ कहा सो हम वैसाही यत्न करेंगी, आप विश्वरूपसे कुछ भय मत कीजिये; यह जो अपने तेज भरे नेत्रों से जगतको जलाये देता है, उस विश्वरूपको हमलोग अपने वशमें करनेको जाती हैं। राजा शल्य बोले, इन्द्रकी आज्ञा सुन वे सब अप्सरा स्वर्गसे चलीं और जाकर विश्वरूपको अनेक भावोंसे मोहित करने लगीं। वे सब अपने सुन्दर शरीरोंको दिखाने लगीं; परन्तु उनके देखनेसे महा तपस्वी विश्वरूपको कुछभी विकार न हुआ। वे अपनी इन्द्रियोंको वशमें करके पूर्ण समुद्रके समान खड़े रहे। अप्सरा अनेक यत्न करके इन्द्रके पास लौट गईं। और जाकर हाथ जोड़ इन्द्रसे बोलीं, हे देवराज! वह महातपस्वी हमारे वशमें होने योग्य नहीं हैं, अब जो आपकी आज्ञाहो सो हम करें। बुद्धिमान इन्द्रने उनकी प्रशंसा करके सबको बिदा किया। फिर उसके मारनेका विचार करने लगे। महा प्रतापी देवराज एकान्तमें बैठकर विश्वरूपके मारनेका उपाय सोचने लगे। बुद्धिमान इन्द्रने विश्वरूपके मारनेका उपाय निश्चय कर लिया, और विचारा कि मैं उसके शिरमें वज्र मारूंगा, उससे वह मर जायगा। इन्द्रने शास्त्रके निश्चयसे विचारा कि बलवानकोभी यह उचित नहीं कि अपने दुर्बल शत्रुको जीता छोड़े। अनन्तर इन्द्रने क्रोध करके अग्निके समान घोररूपी वज्रको त्रिशिराके शिरमें मारा। उसके लगनेसे त्रिशिरा ऐसे मरकर पृथ्वीमें गिरा जैसे पर्व्वतका शिखर टूटकर गिरता है। उसे मरा हुआ और पर्व्वतके समान पृथ्वीमें गिरा हुआ देख करभी इन्द्र उसके तेजसे शान्त न हुए, अर्थात तब भी डरतेही रहे। वह मरा हुआ भी अपने तेजसे जीतेके समान प्रकाशित हो रहा था। उस मरे हुएके शिरभी जीते हुएके समान दीखते थे। तब इन्द्र भयसे व्याकुल और खड़े होकर सोचने लगे। इतनेहीमें फरसा लिये तक्ष आगये। जहां डरे हुए इन्द्र खड़े थे वहां

तब पहुंचे। तब इन्द्रने तक्षसे कहा, कि तुम हमारी आज्ञासे शीघ्र इसके शिर काट दो। तब बोले, इसके शिर बहुत भारी हैं, मेरे काटनेसे नहीं कट सकते और मैं इस नीच कर्म्मको करना भी नहीं चाहता।

इन्द्र बोले, तुम कुछ भय मत करो और हमारी आज्ञाको पालन करो, हमारी कृपासे तुम्हारा फरसा वज्रके तुल्य हो जायगा।

तक्ष बोले, हम नहीं जानते कि घोर कर्म्म करनेवाले तुम कौन हो? तुम हमसे अपना समाचार कहो।

इन्द्र बोले, तुम हमको देवराज इन्द्र जानो, और बिना विचारे हमारी आज्ञाको पालन करो।

तक्ष बोले, हे इन्द्र! इस नीच कर्म्मको करके तुम्हें लज्जा क्यों नहीं होती? क्या इस ऋषि-पुत्रके मारनेसे तुम्हें ब्रह्महत्याका भय नहीं है? इन्द्र बोले, हमने इस महा पराक्रमी शत्रुको वज्रसे मारा है, इसके पीछे प्रायश्चित्त कर लेंगे। हे तक्ष! मैं अब भी इसके भयसे घबडा रहा हूं, तुम शीघ्र इसके शिर काटो, मैं तुम्हारे ऊपर बहुत कृपा करूंगा। आजसे मनुष्य जो यज्ञ किया करेंगे उसमें पशुओंका शिर तुम्हें मिला करेगा, यही कृपा हम तुम्हारे ऊपर करते हैं, तुम शीघ्र इसके शिर काटो।

शल्य बोले, हे राजन्! इन्द्रके ऐसे वचन सुन तक्षने उसी समय फरसेसे त्रिशिराके शिर काट लिये। जब उसके शिर कट चुके तब उसके शरीरसे अनेक पक्षी निकलने लगे, तीतर, सफेद तीतर और कलविङ्क आदि अनेक पक्षी निकले। विश्वरूप जिस मुखसे सोम पीते थे, उससे सफेद तीतर निकले. जिससे सब ओर देखते थे, उस मुखसे तीतर निकले। हे पाण्डव! हे पृथ्वीनाथ! विश्वरूप जिस मुखसे मद्य पीते थे, उस मुखसे सफेद तीतर निकले, और उसी मुखसे बाज भी निकले। हे पुरुषसिंह! विश्वरूपका शिर काटनेसे इन्द्र बहुत प्रसन्न हुए और प्रसन्न होकर स्वर्गको चले गए। उसी समय तक्ष भी अपने घरको चले गये। दैत्यनाशक इन्द्र विश्वरूपको मारकर अपनेको कृतकृत्य जानते लगे। जब विश्वरूपके पिता त्वष्टा प्रजापतिने सुना कि मेरे पुत्र विश्वरूपको इन्द्रने मार डाला, तब क्रोधमें भरकर ऐसा कहने लगे।

त्वष्टा बोले, इन्द्रने क्षमावान, दयावान जितेन्द्रिय मेरे पुत्रको तप करते हुए बिना अपराध मार डाला, इस लिये मैं वृत्रासुरको उत्पन्न करता हूं। आज हमारे तपोबलको सब लोक देखें; दुरात्मा पापी इन्द्र भी आज हमारी तपस्याके बलको देखै। ऐसा कहकर महायशस्वी और महातपस्वी त्वष्टाने शु[द्ध] जलको स्पर्श किया। उसके पश्चात अग्नि[में] हवन करके घोररूपी वृत्रासुरको उत्पन्न किया। फिर उससे बोले, हे इन्द्रके शत्रु! तुम हमारे तपके बलसे बढ़ो त्वष्टाके वचन निकलतेही वृत्रासुर चन्द्रमा अग्नि और सूर्य्यके समान तेजस्वी होकर आकाशतक बढ गया। फिर त्वष्टासे बोला कि हम आपके दास हैं, कहिये क्या करें?

त्वष्टा बोले, तुम इन्द्रको जीतो। उनके वचन सुनतेही वृत्रासुर स्वर्गको चला गया। तब वृत्रासुर और इन्द्रका घोर युद्ध हुआ। हे कौरव! उस घोर युद्धमें वीर वृत्रासुरने वज्रधारी इन्द्रको पकड़ लिया। फिर वृत्रासुरने इन्द्रको अपने मुखमें डाल लिया। फिर अपने मुखको बन्द कर लिया। जब इन्द्रको वृत्रासुर खा गया! तब सब देवता घबड़ाये। उसी समय उन्होंने जमुहाईको उत्पन्न किया उस जमुहाईसेही वृत्रासुरका नाश हुआ, क्योंकि जमुहाई लेनेमें वृत्रासुरका मुख फैल गया। उसी समय अपने शरीरको छोटा बना

कर बल नाशक इन्द्र निकल गये। उसी दिनसे जमुहाई सब जगतमें फैल गई। इन्द्रको निकलते हुए देख सब देवता प्रसन्न हुए। फिर वृत्रासुर और इन्द्रका घोर युद्ध होने लगा। हे भरतकुल सिंह! यह युद्ध बहुत दिन तक होता रहा, जब त्वष्टाके तपोबलसे वृत्रासुरकी बहुत वृद्धि हुई। तब इन्द्र युद्ध छोड़कर भाग गये। तब देवता बहुत घबड़ाये। त्वष्टाके तपोबलसे सब देवताओंकी बुद्धि नाश हो गई। तब देवतोंने मुनियोंके सङ्ग सम्मति करी। हे राजन्! देवता लोग कहने लगे कि अब क्या करना चाहिये? अनन्तर सब देवता भयसे व्याकुल होकर मन्दराचलके शिखरपर बैठे और अविनाशी विष्णुका ध्यान करके वृत्रासुरके नाशको इच्छासे लोग महात्मा विष्णु के पास चले, कि उन महात्माके पास चलनेसे वृत्रासुरके मारनेका उपाय जाना जायगा।

९ अध्याय समाप्त।

शल्य बोले, इन्द्रके, ऐसे बचन सुन सब देवता और ऋषि शरणागतपर कृपा करनेवाले विष्णुके पास गये। महा बलवान महात्मा विष्णुके पास जाकर देवता बोले, हे विष्णु! हम लोग वृत्रासुरके भयसे व्याकुल हो गये हैं, आपके तीनों गुणोंसे पहले तीनों लोक व्याप्त थे; आपने अपने बलसे दैत्योंसे अमृत छीना था और उनको युद्धमें माराभी था, आपने महा पराक्रमी बलिको बांधकर इन्द्रको देवराज बनाया था, आप सब देवतोंके स्वामी है, आपसे तीनों लोक व्याप्त हैं; आप देवतोंके महादेव हैं, आपको सब लोक नमस्कार करते हैं, हे देव-श्रेष्ठ! आप इन्द्रके सहित देवतोंको शरण दें, आप जगतके स्वामी हैं, हे दैत्यनाशक! इस समय तीनो लोकमें वृत्रासुर व्याप्त हो रहा है।

विष्णु बोले, हमको अवश्य आप लोगोंका कल्याण करना चाहिये, इस लिये हम वृत्रासुरके नाशका उपाय बताते है, आप सब देवता और ऋषि लोग उस विश्वरूपधारी राक्षसके पास जायं और सन्धि करलें, इसके पश्चात हमारे तेजसे इन्द्रकी विजय होगी, हम इन्द्रके उत्तम शस्त्र वज्रमें प्रवेश कर जायंगे, परन्तु हमें कोई नहीं देखेगा, हे देवतो! आप लोग ऋषि और गन्धर्वोंके सहित वृत्रासुरके पास जाकर इन्द्रकी सन्धि करा दें। इसमें विलम्ब मत करें।

शल्य बोले, विष्णुकी ऐसी आज्ञा सुन देवता और ऋषि इन्द्रको आगे कर वहांसे चल दिये। फिर वृत्रासुरके पास जाकर महा तेजसी देवतोंने अपने तेजसे दशोंदिशाओंको प्रकाशित करते हुए वृत्रासुरको देखा। उस समय वृत्रासुरका ऐसा तेज बढ़ा था, मानो वह तीनों लोकोंको खा जायगा। उसके दोनों नेत्र चन्द्रमा और सूर्य्यके समान प्रकाशित हो रहे थे। पहले वृत्रासुरके पास जाकर ऋषि लोग मीठे वचनसे बोले, हे दुःखसे जीतनेयोग्य! इस समय तीनों लोक तुम्हारे तेजसे भर गये है, हे बलियोंमें श्रेष्ठ! तुम बहुत दिनसे इन्द्रके सङ्ग युद्ध कर रहे हो, परन्तु उनको जीत नहीं सकते हो, तुम दोनोंके युद्धसे देवता, मनुष्य और राक्षसोंके सहित सब प्रजाको दुःख होता है, इस लिये तुम इन्द्रके सङ्ग मित्रता कर लो। महा पराक्रमी वृत्रासुर ऋषियोंके बचन सुन उनको प्रणाम कर कहने लगा, तुम सब लोग ऋषि और गन्धर्व्व हमसे जो कहते हो, सो हमने सुना। हे पाप-रहितो! हमकोभी जो कुछ कहना है, सो आप सुनें, हमारे और इन्द्रके सङ्ग मित्रता कैसे हो सकती है? क्योंकि हम दोनोंहो महा पराक्रमी हैं?

ऋषि लोग बोले, मनुष्यको उचित है कि सदा महात्माओंको सङ्गति करे, फिर कल्याण-ही प्राप्त होता है। इस लिये महात्माओंको

प्रकृतिको नहीं छोड़ना चाहिये। महात्माओंकी मित्रता अचल होती है और आपत्तिके समयमें महात्मा लोग धर्म्मका उपदेश करते हैं, इस लिये सत्पुरुष पण्डितोंके सङ्गको न छोड़े। इन्द्र सब महात्माओंमें श्रेष्ठ है, और महात्माओंके सङ्गही रहना अच्छा है, और इन्द्र सत्यवादी, महात्मा, धर्म्मको जानने वाले और धर्म्मात्मा है, इस लिये इन्द्रके सङ्ग तुम्हारी सन्धि होनी चाहिये, यह सन्धि सदाके लिये रहेगी। इस प्रकार उसका विश्वास बढ़ाकर देवतोंने उसकी बुद्धिको अपने वशमें कर लिया।

शल्य बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! महातेजस्वी वृत्रासुरने ऋषियोंके बचन सुन कहा कि हमको आप लोगोंके वचन अवश्य मानने चाहिये, परन्तु यदि आप लोग हमारे बचनको करें तो मैं आप लोगोंके सब वचनोंको मानूंगा। हे ब्राह्मण-ऋषियो! मैं सब देवतोंके सहित इन्द्रके हाथसे सूखे, गीले पत्थर, काठ, शस्त्र और अस्त्र सेभी न दिनमें और रातमें मारा जाऊंगा। ऐसा करनेसे मैं इन्द्रके सङ्ग सन्धि करूंगा। हे भरत-कुल-श्रेष्ठ युधिष्ठिर! वृत्रासुरके ऐसे बचन सुन ऋषियोंने कहा कि बहुत अच्छा ऐसेही होगा। फिर इन्द्र और वृत्रासुरकी सन्धि हो गई। इस सन्धिसे वृत्रासुर और इन्द्र दोनों प्रसन्न हुए, और सुखसे सङ्ग रहने लगे, परन्तु इन्द्र वृत्रासुरके मारनेका छिद्र देखने लगे और घबड़ाते हुए दिन काटने लगे। एक दिन सन्ध्या समय दारुण मुहूर्त्तमें इन्द्रने वृत्रासुरको समुद्रके ऊपर घूमते देखा, उसी समय इन्द्रने महात्मा ऋषियोंके वरदानको स्मरण करके सोचा कि यह घोर सन्ध्याका समय है, अब न रात्रि है, अब न दिन है और यह वृत्रासुर हमारा सर्व्वनाश करनेवाला शत्रु है। इस लिये इसको अवश्य मारना चाहिये. यदि मैं इस समय छलकर वृत्रासुरको न मारूंगा तो मेरा कल्याण नहीं होगा, क्योंकि यह बड़ा बलवान और बड़े शरीरवाला है। ऐसा विचारकर इन्द्रने विष्णुका ध्यान किया। उसी समय समुद्रमें एक पर्व्वतके समान फेन दिखाई दिया! उसको देखकर इन्द्रने विचारा कि यह न सूखा, न गीला, न शस्त्र और न अस्त्र है। इस लिये इसीसे वृत्रासुरको मारना चाहिये, इसके लगतेही यह मर जायगा। उसी समय इन्द्रने वज्रमें फेन लगाकर वृत्रासुरके शिरमें मारा। उस वज्रमें विष्णुने भी प्रवेश किया था, उसके लगतेही वृत्रासुर मरकर पृथ्वीमें गिर गया। वृत्रासुरके मरतेही दिशा निर्म्मल हो गई। शीतल वायु चलने लगा और प्रजा भी सुखी हो गई। उसी समय देवता, गन्धर्व्व, यक्ष, राक्षस, सर्प और ऋषि लोग अनेक प्रकारसे इन्द्रकी स्तुति करने लगे। अपने शत्रुको मारकर इन्द्र देवतोंके सहित प्रसन्न हुए और सबकी स्तुति सुनकर सबको शान्त करने लगे। फिर धर्म्म जाननेवाले इन्द्रने सब जगत श्रेष्ठ विष्णुकी पूजा करी। जब देवतोंको भय देनेवाला महा पराक्रमी वृत्रासुर मारा गया, तब इन्द्र इस विश्वासघात और पहले करी विश्वरूपकी ब्रह्महत्यासे बहुत घबड़ाये। अनन्तर एकान्तमें जाकर संज्ञाशून्य होकर बैठ रहे। उस समय पापोंके वशमें होनेसे इन्द्रको कुछ ज्ञान नहीं रहा; वे जलमें छिपकर सांपके समान रहने लगे। जिस समय ब्रह्महत्यासे डरकर इन्द्र भाग गये उस समय वनोंके वृक्ष सूख गये, भूमि नष्ट हो गई, नदियोंके जल सूख गये, तलाव जल रहित हो गये, जल नहीं बरसा इससे सब प्रजा घबड़ा गई। देवता और ऋषि भी कांपने लगे, सब जगत उपद्रवोंसे भर गया। तब देवतोंने घबड़ाकर विचारा कि हम किसे राजा बनावें। देव ऋषि भी घबड़ाये और नवीन इन्द्र बनानेकी सम्मति करने लगे।

१० अध्याय समाप्त।

शल्य बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! जिस समय इन्द्र चले गये, तब सब देवता और ऋषि लोग सम्मति करके कहने लगे कि श्रीमान् महाराज नहुषको इन्द्र बनाना चाहिये, क्योंकि ये तेजस्वी, यशस्वी और धार्म्मिक हैं। ऐसा विचार कर सब देवता और ऋषि नहुषके पास जाकर कहने लगे, हे पृथ्वीनाथ! आप हम लोगोंके राजा हूजिये। ऐसा सुन राजा नहुष पितर ऋषि और देवतोंसे बोले, हम बहुत दुर्ब्बल हैं, इस लिये आप लोगोंके राजा नहीं हो सकते; बलवानही राजा हो सकता है, और बल सदासे इन्द्रहीमें है। उनके बचन सुन ऋषि और देवता बोले, आप हम लोगोंके तपसे रक्षित होकर स्वर्गका राज्य कीजिये, क्योंकि बिना राजाके परस्पर द्वेष होनेका बहुत भय है, इस लिये आप स्वर्गके राजा हूजिये। इन्द्र होतेही आपमें देवता, दानव यक्ष, राक्षस, ऋषि, पितर और गन्धर्व्व आदि सब प्राणियोंका तेज आ जायगा, इस लिये आप धर्म्म रहित स्वर्गका राज्य कीजिये। आप इन्द्र होकर देवता ऋषि और ब्राह्मणोंकी रक्षा कीजिये। हे युधिष्ठिर। ऐसा कहकर सबने राजा नहुषको इन्द्र बनाया। वे भी धर्म्मसे तीनों लोकोंका राज्य करने लगे। इस दुर्लभ पदको पाकर धर्म्मात्मा नहुष इन्द्रका राज्य करने लगे। फिर अनेक देव कन्याओंको प्राप्त करके उनके सङ्ग अनेक प्रकारकी काम क्रीडा करने लगे। उत्तम कथा, मनोहर बाजे और मीठे स्वरवाली गीतोंको सुनते हुए आनन्द करने लगे। विश्वावसु, नारद, गन्धर्व्व अप्सरा और छहो ऋतु रूप धारण करके राजा नहुषके पास आने लगे। उनके सम्मुख उत्तम स्पर्शवाली सुगन्धयुक्त वायु चलने लगा। इस प्रकार राजा नहुष बहुत दिन तक आनन्द करते रहे। एक दिन उनने इन्द्रकी प्यारी स्त्री शचीको देखा; उसको देख नहुष सभासदोंसे बोले, इन्द्राणी हम पास क्यों नहीं आती? यह इन्द्रकी प्या स्त्री हमसे क्यों प्रेम नहीं करती? हम इ है, और तीनों लोकोंके स्वामी हैं, इस लि शीघ्रही शची हमारे घरमें आवे। ऐसा सु कर शची बहुत घबड़ाई, और बृहस्पति शरण जाकर कहने लगी, हे ब्रह्मण। आपकी शरणागत हूं, आप हमको नहु बचाइये; मैं सब लक्षणोंसे भरी और इन्द्र स्त्री हूं, सदासे सुख किया है; आपने पह मुझको आशीर्व्वाद दिया था, कि तू विध नहीं होगी; एककी स्त्री और पतिव्र रहेगी, सो हे ब्रह्मन! हे ईश्वर! आप अप वचनोंको! सत्य कीजिये। आप कभी झू नहीं बोलते है, इस लिये आपके ये वचन सत्य होने चाहिये। भयसे व्याकुल इन्द्राणी बृहस्पति बोले, हे देवि। तुमने हमसे जो कुछ कहा सो सब सत्यही होगा, तुम शीघ्रही स्वर्गमें आये इन्द्रको देखोगी, इस लि नहुषसे कुछ मत डरो। मैं तुमसे सत्य कहता हूं कि मैं शीघ्रही इन्द्रको बुलाऊंगा। इस समाचारको राजा नहुषने भी सुन लिया सुनकर बृहस्पतिके ऊपर बहुत क्रोध किया

११ अध्याय समाप्त।

शल्य बोले, जब देवता और ऋषियों नहुषको क्रोध किये देखा तब उनसे सब बोले, हे देवराज। हे जगतके स्वामी। आप क्रोध मत कीजिये, आपको क्रोध होनेसे देवता राक्षस, गन्धर्व्व, किन्नर और साप आदि सब प्रजा डर रही है, हे महात्मन! आप इस क्रोधको छोड़ दीजिये क्योंकि आपके तुल्य मनुष्य क्रोध नहीं करते, हे देवराज! आप प्रसन्न हूजिये, शची दूसरेकी स्त्री है; आप इस पापसे अपने चित्तको फेरिये; दूसरेकी स्त्री

ऊपर दृष्टि करना महात्माओंका काम नहो है, आप देवराज हैं, धर्म्मसे प्रजाका पालन कीजिये। ऋषियोंने अनेक बचन कहे, परन्तु काम मोहित नहुषने कुछ न सुना और कहने लगा कि इन्द्रने गौतमके जीतेहो उसकी स्त्री अहिल्याको भ्रष्ठ किया था, तुम लोगोंने उनको क्यों नहो मना किया? शची हमारे पास आवे इसीमें उसका कल्याण होगा। देवता बोले, हे स्वगनाथ! आप क्रोधको दूर कीजिये, हम लोग यह सब समाचार, कहनेको इन्द्राणीके पास जाते हैं।

शल्य बोले, इसके पश्चात् यह सब समाचार कहनेको देवता और ऋषि ब्रहस्पति और इन्द्राणीके पास गये और ब्रहस्पतिसे कहने लगे। हे देवर्षियोंमे श्रेष्ठ! हे ब्राह्मणोत्तम! हम लोग जानते हैं कि उस इन्द्राणीको अभय देकर आपने अपने स्थानमें रक्खा है। हे महा-तेजस्विन्! आपसे देवता और ऋषि इन्द्राणीको नहुषके लिये मागते हैं, आप दीजिये। नहुष महातेजस्वी और देवराज है, इस लिये सुन्दरी शची उनको अपना पति बनावे।

देवताओंके बचन सुन शची रोकर ब्रह-स्पतिसे कहन लगी, हे देव ऋषियोंमें श्रेष्ठ! मैं नहुषको अपना पति बनाना नहीं चाहती, आप इस भयसे मेरी रक्षा कीजिये।

बृहस्पति बोले, हे इन्द्राणी! मेरी यह प्रतिज्ञा है कि, हम शरणागतको नहीं छोड़ते, हे निन्दा रहित शची! तुम धर्म्म और सत्यसे भरी हो, इस लिये हम तुमको नहीं छोड़ेंगे, मैं ब्राह्मण हूं, इस लिये अधर्म्म नहो करूंगा। मैं धर्म्म जानता हूं, शीलसे भरा हूं, इस लिये अधर्म्म नहो करूंगा। हे देवतो! तुम लोग चले जाओ मैं इन्द्राणीको नहीं दूंगा; इस विष-यमें ब्रह्मान जो कहा है सो सुनो,—"जो शरणा-गतको शत्रुको दे देता है, उसके बोये हुए खेतमें अन्न नहीं उत्पन्न होते, हुए होनेपर भी समयपर जल नहीं बरसता और उसको रक्षा करनेका फल भी नहीं मिलता; उसको अन्न बहुत नहीं मिलता, और वह मूर्ख स्वर्ग-लोकसे भी गिरा दिया जाता है। जो डरे हुए शरणागतको छोड़ देता है, उसकी आहुतिको देवता नहीं ग्रहण करते; उस राजाकी प्रजा नष्ट हो जाती है, उसके पितर नरकमें चले जाते हैं और इन्द्र सहित देवता उसके ऊपर बज्र गिराते हैं। हम इन सबको जानकर शचीको नहीं देंगे, क्योंकि यह जगतमें इन्द्रकी प्यारी स्त्री विख्यात है, जिसमें हमारा और इसका कल्याण हो, सोई काम आप लोगोंको करना चाहिये। हम शचीको नहीं देंगे।

शल्य बोले, बृहस्पतिके ऐसे बचन सुन सब देवता ऋषि और गन्धर्व्व कहने लगे, हे बृह-स्पति! अब किस प्रकारसे कल्याण होगा सो कहो।

ब्रहस्पति बोले, कुछ समयके लिये नहुषसे इन्द्राणीको मागना चाहिये, इसमें हमारा तुम्हारा और इन्द्राणीका कल्याण है। हे देवता! फिर कुछ और विघ्न पड़ जायगा, इस समय बलसे नहुष बहुत अभिमानी और बलवान हो गया है।

शल्य बोले, बृहस्पतिके वचन सुन सब देवता प्रसन्न हुए और कहने लगे कि, हे ब्रह्मन्! आपने बहुत ठीक कहा, ऐसा करनेसे सब देवताका कल्याण होगा, हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! ऐसाही करनेसे इन्द्राणीको प्रसन्न करना चाहिये। अनन्तर अग्नि आदिक देवता लोकके कल्याणके लिये इन्द्राणीसे कहने लगे। देवता बोले, हे देवि! तुम्हारे सत्यसे यह सब जगत स्थिर है, तुम पतिव्रता धर्म्मसे भरी हो, तुम नहुषके पास जाओ, वह इस समय देवराज इन्द्र है, तुमको प्राप्त करतेहो उसका नाश हो जायगा। ऐसा निश्चय करके इन्द्राणी पापी नहुषके पास गई। नहुष भी उस सुन्दरी रूप-

वतीको देख कामसे मोहित होकर प्रसन्न हुए।

१२ अध्याय समाप्त।

शल्य बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! शचीको देख देवराज नहुषने कहा, मैं तीनो लोकोंका इन्द्र हूं, हे सुन्दर हंसनेवाली। हे सुन्दरमुखी! हे उत्तम वर्णवाली! तुम हमारी स्त्री होवो।

पतिव्रता शची नहुषके ऐसे बचन सुन इस प्रकार कांपने लगी, जैसे केलेका वृक्ष कांपता है। फिर हाथ जोड़कर देवराज नहुषसे बोली, हे देवराज! आप थोड़ा समय हमको दीजिये, क्योंकि मैं यह नहीं जानती कि इन्द्र कहां गये और किस दशामें है? इस लिये मैं इस सबको जानकर आपकी स्त्री हूंगी।

इन्द्राणीके ऐसे बचन सुन नहुष प्रसन्न होकर कहने लगे। नहुष बोले, हे सुश्रोणि! तुम जो कहती हो सो ऐसही होगा, तुम इन्द्रको सब बात जानकर हमारे पास आना, हमकोभी ऐसाही सत्य जान पड़ता है। ऐसा कह नहुषने इन्द्राणीको विदा किया! सुन्दरी यशस्विनी इन्द्राणी वहांसे चलकर बृहस्पतिके घर गई और सब देवतोंको नहुषके बचन कह सुनाये। अग्नि आदिक देवतोंने शचीके बचन सुन एकान्तमें बैठकर इन्द्रके बुलानेका विचार किया। फिर सब पण्डित देवता घबड़ाकर जगतके स्वामी देव देव विष्णुके पास गये और कहने लगे कि इन्द्र ब्रह्महत्यासे घबड़ाकर न जाने कहां भाग गये, अब आपही हम सबके स्वामी है, और हम लोग आपकी शरण हैं, आप जगतकी रक्षाके लिये विष्णु हुए हैं, आपके बलसे वृत्रासुरको मारकर ब्रह्महत्यासे घबड़ा कर इन्द्र भाग गये। अब आप उनके पवित्र होनेकी कथा बताइये।

देवतोंके बचन सुन विष्णु बोले, तुम लोग हमारी पूजा करो तो हम वज्रधारी इन्द्रको पवित्र कर देंगे। निर्भय इन्द्र फिर देवतोंके राजा होंगे और पापी नहुषका अपने कर्मोंसे नाश हो जायगा। हे देवतो! तुम लोग थोड़े दिन आलस रहित होकर समय बिताओ। विष्णुके ऐसे उत्तम बचन सुन देवतोंने इस वाणीको सत्य और अमृतके समान जाना। इसके पश्चात् सब देवता और ऋषि उस स्थान पर गये, जहां भयसे छिपे हुए इन्द्र बैठे थे। हे युधिष्ठिर! महात्मा इन्द्रने अपने पवित्र होनेके लिये उसी स्थानपर अश्वमेध यज्ञ किया। अनन्तर इन्द्रने उस ब्रह्महत्याको वृक्ष, नदी और स्त्रियोंको बाट दिया। देवराज इन्द्र इस प्रकार ब्रह्महत्या करनेसे पवित्र हुए और सुखी होकर सावधान होगये। अनन्तर बलनाशक इन्द्रने देखा कि नहुष वरदानके बलसे इन्द्रासनको नहीं छोड़ता और सब प्राणियोंके तेजका नाश करता है। तब इन्द्र फिर गुप्त होकर अपना अच्छा समय आनेकी आशासे जगतमें घूमने लगे। जब इन्द्र फिर गुप्त होगये तब पतिव्रता शची हाय इन्द्र! हाय इन्द्र! कहके रोने लगी।

शची बोली, यदि मैंने कुछ तप किया हो, यदि मैंने कुछ दान किया हो, यदि मैंने गुरुओंको प्रसन्न किया हो और यदि मुझमें कुछ भी सत्य हो, तो इन्द्रही मेरे पति हों। मैं उत्तरायण सूर्यकी पवित्र रात्रिको नमस्कार करती हूं। वे हमारे मनोरथको सिद्ध करें। ऐसा कहकर पतिव्रता शची अपना सन्देह नाश होनेके लिये तप करने लगी और सन्देह नाशिनी देवीसे बोली कि जहां इन्द्र है, उस स्थानको मुझे दिखाओ।

१३ अध्याय समाप्त।

शल्य बोले, इन्द्राणीके ध्यान करतेही सन्देहोंको निर्णय करनेवाली उपश्रुति नामक देवी उनके पास आई। सुन्दरी युवती देवी

ऋतो देवीको देख इन्द्राणीने प्रसन्न होकर पूजा करी, और कहा कि हे सुन्दरमुखवाली! तुम कौन हो। हम तुम्हें जानना चाहती हैं।

उपश्रुति बोली, हे देवि। हे आसिनो मैं उपश्रुति नामक देवी हूं, मै तुम्हे पतिव्रता और नियम युक्त जानकर तुम्हारे पास आई हूं, मैं वृत्रासुरनाशक इन्द्रको तुम्हें दिखाऊंगी, तुम हमारे सङ्ग चलो, देवश्रेष्ठ इन्द्रके दर्शन करोगो।

ऐसा सुनकर इन्द्राणी उनके सङ्ग चली। अनेक पर्व्वत, वन और हिमाचलके पार होकर उत्तरकोनेपर पहुंची। वहा जाकर अनेक योजन चौड़े समुद्रको देखा। उनके बीचमें अनेक वृक्ष और लतासे भरे हुए द्वीपमें पहुची। उस द्वीपके बीचमें सौ योजन लम्बा अनेक देवस्थान युक्त, पक्षियोंसे भरे एक सुन्दर तालावको देखा। उसमें पाच वर्ण वाले सुन्दर कमलोंको देखा। उनपर अनेक भौरे गूज रहे थे। उस तालावके बीचमें सफेद और ऊंचो डण्डोसे युक्त अनेक कमलिनो और कमल खिल रहे थे। अनन्तर उपश्रुति देवी शचोके सहित छोटारूप बनाकर कमलकी डण्डोमें घुस गई वहा जाकर सूतके समान सूक्ष्मरूप धारी इन्द्रको देख उपश्रुतिभी सूक्ष्म होगई। तब इन्द्राणीने इन्द्रको अपना कर्म्म सुनाकर प्रसन्न किया।

इन्द्र बोले, तुम हमारे पास क्यों आईहो। और तुमने हमको कैसे जाना।

तब इन्द्रसे शचोने नहुषका सब समाचार इस प्रकार कहा। हे इन्द्र! नहुष मुझसे कहता है कि मैं तीनों लोकोंका इन्द्र हूं, तुम हमारी स्त्री बनो। वह दुष्ट अभिमान और बलसे भरा है, मैंने उससे थोड़ा समय मांग लिया है, यदि तुम इस समयके बीचमें मेरी रक्षा नहीं करोगे तो वह अवश्य मुझे अपने वशमें कर लेगा; इसी लिये मैं तुम्हारे पास शोघता सहित आई हूं। हे महाबाहो। पापी दुष्ट नहुषको जीतो। तुम अपने तेजको प्रकाश करो, हे दैत्य और दानवोंके मारने वाले। अब तुम इन्द्र बनकर प्रजाकी रक्षा करो।

१४ अध्याय समाप्त।

शल्य बोले, हे राजन् युधिष्ठिर। भगवान् इन्द्र शचीके ऐसे बचन सुन बोले, हे भामिनि। यह समय युद्ध करनेका नहीं है, क्योंकि नहुष बहुत बलवान है, उसे ऋषियोंने आहुति देकर बहुत बढ़ा दिया है, हे देवि! मैं एक नीति कहता हूं, तुम उसको करो, तुम इस गुप्त नीतिका किसीसे वर्णन मत करना, हे पतली-कमर वाली! तुम नहुषके पास जाकर एकान्तमें कहो कि तुम देवऋषियोंकी पालकी पर चढ़-कर हमारे पास आवो, तब मैं तुमसे प्रसन्न हूंगी। इन्द्रके ऐसे बचन सुन कमल नयनी सुन्दर हँसन वाली शची बहुत अच्छा कहकर नहुषके पास गई। नहुष उसको देखकर बहुत प्रसन्न हुए और हंसकर कहने लगे, हे सुन्दर हँसन वाली! हे सुमुखि! हम तुम्हारा स्वागत करते हैं, कहो हम तुम्हारा कौनसा काम करें, हे कल्याणी! हे मनस्विनि! हम तुम्हारे दास हैं, तुम हमारी स्त्री बनो। हे कल्याणी! हे पतलीकमरवाली। तुम्हारी जो कुछ सेवा होगी सो हम करेंगे, तुम हमसे लज्जा मत करो और हमारा विश्वास करो, हम सत्य प्रतिज्ञा करते हैं, कि तुम्हारी आज्ञा पालन करेंगे, इन्द्राणी बोली, हे देवराज! मैंने जो तुम्हारे सङ्ग समयकी प्रतिज्ञा करी थी, सो अब पूरा होगया, यदि तुम मेरे पति होना चाहते हो तो हमारे मनमें जो कार्य्य है, सो सिद्ध करो। हे राजन्! हे देवराज! यदि तुम इसके करनेकी प्रतिज्ञा करो तो मैं तुमसे कहूं, हे देवराज! मैं तुमसे विनय पूर्व्वक प्रार्थना करती हूं, यदि तुम उसको पूरण करो

तो मैं तुम्हारी स्त्री हो जाऊंगी। इन्द्रके यहां हाथी और घोड़े आदि सब वाहन हैं, परन्तु आप मेरे यहां अपूर्व्व वाहनपर चढ़कर आइये, हे देवराज! आपका ऐसा वाहन होना चाहिये जो न इन्द्र न विष्णु और न शिवके यहां हो। हे पृथ्वीनाथ! आपकी पालकीमें महाभाग सप्त ऋषि लगें, यही हमारे मनकी इच्छा है, आप इसको पूर्ण कीजिये। क्योंकि आप देवता, असुर और राक्षसोंके समान होने योग्य नहीं है। तुम अपने दर्शनसे सबके तेजको छीन लेते हो, तुम्हारे आगे इन्द्र भी नहीं ठहर सकते हैं; और सबको तो कथाही क्या है।

शल्य बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! इन्द्राणीके ऐसे वचन सुन नहुष बहुत प्रसन्न हुए और इन्द्राणीसे बोले, हे अनिन्दिते! तुमने यह बड़ा अपूर्व्व वाहन बताया, मैं इस वाहनको बहुत अच्छा समझता हूं। हे वरानने! मैं जैसे तुमने कहा वैसेही करूंगा, क्या मैं निर्बल मुनियोंको वाहन नहीं बना सकता? मैं इस समय तीनों लोकका स्वामी हूं, इसीसे मुनियोंको वाहन बनाऊंगा, मुझे क्रोध आनेसे सब जगतको नाश कर सकता हूं। सब जगत मेरी शक्तिसे स्थिर है, हे सुन्दर हसनेवाली! मुझे क्रोध आनेसे देवता, दानव, गन्धर्व्व, किन्नर सर्प और राक्षस भी नहीं बच सकते और न मेरे क्रोधको वे लोग सह सकते हैं। मैं जिसको अपने नेत्रसे देखता हूं उसका तेज नाश हो जाता है, इस लिये मैं तुम्हारे वचनको अवश्य करूंगा। साती ऋषि और ब्रह्मऋषि हमसे कहते हैं कि तुम इन्द्र और हमारे राजा हो, हे सुन्दरवर्णवाली! तुम मेरी शक्तिको देखो।

शल्य बोले, सुन्दरी शचीसे ऐसा कह नहुषने उसे विदा किया, फिर साती ऋषियोंको अपनी पालकीमें जोड़कर चले, उस समय राजा नहुषने ब्राह्मणोंकी भक्ति छोड़ दी और बल तथा अभिमानसे भरकर नियममें रहनेवाले उन सप्त- ऋषियोंको पालकीमें लगा कर इन्द्राणीके यहां गये, उस समय दुष्टात्मा पापी नहुष कामके वशमें होकर सब भूल गये और ऋषियोंको पालकीमें लगा लिया, जिस समय शचीको विदा किया था, उसी समय इन्द्राणी बृहस्पतिके पास गई और कहने लगी, मैंने जो नहुषके सङ्ग समयकी प्रतिज्ञा करी थी, सो उसमें अब बहुत थोड़ा समय शेष रह गया है, इस लिये अब आप कुछ उपाय कीजिये। और शीघ्र इन्द्रको ढूंढिये, क्योंकि मैं आपकी शरणागत और भक्त हूं, आप हमारी रक्षा किजिये। बृहस्पतिने कहा कि बहुत अच्छा, तुम कुछ भय मतकरो, नहुष महापापी और दुष्टात्मा है, वह इस स्थानपर नहीं रह सकता, वह महा अधर्म्मी है। इस लिये अवश्य सप्तऋषियोंके विमानपर चढ़कर आवेगा, तब हो उसके मारनेका मैं उपाय करूंगा और इन्द्रके ढूढ़नेका भी उपाय करूंगा तुम कुछ भय मत करो, मैं अवश्य इन्द्रको लाऊंगा तुम घबड़ाओ मत, तुम्हारा कल्याण हो, ऐसा कहकर महातेजस्वी बृहस्पतिने अग्नि जलाकर आहुति दी, फिर महातेजस्वी बृहस्पतिने राजा इन्द्रको प्राप्तिके लिये कहा कि इन्द्रको ढूढ़ो क्योंकि विना राजाके यह देश अच्छा नहीं लगता। बृहस्पतिके सामने अग्नि स्त्रीका वेष बनाके प्रत्यक्ष हुए और फिर उसी अग्नि कुण्डमें अन्तर्द्धान हो गये, महा बुद्धिमान अग्निने कुछ कालके पश्चात समस्त पृथ्वी, वन, उपवन, नदी और सब दिशाओंमें इन्द्रको ढूढ़ा परन्तु कहीं पता नहीं लगा, फिर वह स्त्री थोड़ेही समयमें बृहस्पतिके पास आगई और कहने लगी कि, हे देवदेव! हम सब दिशाओंमें घूम आई परन्तु इन्द्रको कहीं नहीं पाया, जलमें निश्चय है और हम जलमें प्रवेश नहीं कर सकती, इसीसे जलमें मेरी गति नहीं है। सो आप जो चाहें सो विचार कीजिये। बृहस्पतिने

कहा कि हे महातेजस्वी! तुम जलमें प्रवेश करो उसीमें इन्द्र मिलेंगे, जलसे अग्नि, ब्राह्मणसे क्षत्री और पत्थरसे लोहा उत्पन्न हुआ है, इन सबका तेज सर्व्वव्यापक है, परन्तु अपने स्थानमें जाकर शान्त हो जाते हैं।

१५ अध्याय समाप्त।

वृहस्पति बोले, हे अग्ने! तुम सब देवतोंके मुख हो हव्यको भक्षण करते हो, तुम सब प्राणियोंके अन्तःकरणमें साक्षी होकर घूमते हो, हे अग्ने महात्मा लोग तुम एकको तीन भेद कहते हैं, तुम्हारे छोड़नेसे सब जगत् नष्ट हो सकता है, तुमको नमस्कार करके ब्राह्मण लोग अपना कर्म्म करते हैं। उस कर्म्मके प्रभावसे स्त्री और पुत्रोंके सहित मोक्षको प्राप्त करते हैं, तुम अग्नि यज्ञमें आहुति भोजन करनेवाले और आहुति रूप हो, महात्मा लोग यज्ञमें तुम्हारीही पूजा करते है। हे अग्ने! तुम इस जगतको उत्पन्न करके प्रलयकालमें नाश कर देते हो, तुम इस जगतके उत्पन्न करनेवाले और पालन करनेवाले हो, तुमहीसे जगतकी प्रतिष्ठा होती है, तुम मेघ और बिजलीरूप हो, तुम्हीसे शस्त्र बनाकर मनुष्य चलाते है। तुम्हारी शक्तिसे जल और जगत स्थिर हैं, तीन लोकमें ऐसी कोई वस्तु नहीं है; जिसको तुम नहीं जानते, अपने उत्पत्ति स्थानमें सब जाते हैं। इस लिये तुम शङ्का रहित होकर जलमें प्रवेश करो, मैं सनातन वेदमन्त्रोंसे तुम्हारी वृद्धि करूंगा।

भगवान् अग्नि वृहस्पतिके वचन सुन प्रसन्न हुए और कहने लगे कि हम तुमसे सत्य कहते हैं कि, हम इन्द्रको तुम्हें दिखावेंगे।

शल्य बोले, इसके पश्चात अग्निने समुद्र और तलावोंके जलमें प्रवेश किया; पश्चात उस तलावमें भी पहुंचे, जहां छिपकर इन्द्र रहते है, हे युधिष्ठिर! उस तालावमें जाकर अग्निने कमलोंके भीतर इन्द्रको ढूंढ़ा फिर एक कमलकी डण्डीमें उनको पाया फिर अग्निने उसी समय वृहस्पतिसे आकर सब समाचार कह दिया, कि देवराज इन्द्र सूक्ष्म रूप बनाकर अमुक तलावके कमलकी डण्डीमें रहते हैं। उसी समय वृहस्पति देवता, ऋषि और गन्धर्व्वोंके सहित इन्द्रके पास जाकर उनकी स्तुति करने लगे।

वृहस्पति बोले, तुमने महावीर नमुची नामक दैत्यको मारा था, तुमने महाबलवान सम्बर और बलको भी मारा था, हे सौ यज्ञ करनेवाले इन्द्र! तुम उठो और शत्रुओंका नाश करो। हे इन्द्र! तुम उठकर देखो ये देवता और ऋषि तुम्हारे दर्शनोंको खड़े हैं। हे जगतके स्वामी देवराज! तुमने अनेक दैत्योंको मारकर तीनों लोकोंकी रक्षा करी है, तुमने पहले समयमें विष्णुके तेजकी सहायता और जलके फेनसे वृत्रासुरको मारा था, तुम सब जगतके पालनेवाले हो तुमको जगत प्रणाम करता है तुम्हारे समान कोई प्राणी नहीं हुआ और न है, तुम्हारी शक्तिसे सब जगत स्थिर हैं, और तुम्ही देवतोंकी महिमाको बढ़ाते हो। वृहस्पतिके ऐसे वचन सुन इन्द्रका धीरे धीरे बल बढ़ा और अपने रूपको धारण करके गुरु वृहस्पतिसे बोले, आप लोगोंका कौनसा कार्य्य शेष है, जिसको मैं करूं? मैंने महा शरीरवाले तीनो लोकोंके दुःख देनेवाले वृत्रासुरको भी मारा।

वृहस्पति बोले, मनुष्य नहुषको देवऋषियोंने अपने तेजसे बढ़ाकर इन्द्र बनाया है, वह अब हम लोगोंको बहुत दुःख देता है।

इन्द्र बोले, हे वृहस्पते! नहुषने ऐसा कौन तप किया था, जिसके प्रभावसे वह दुर्लभ इन्द्र पदको प्राप्त हुआ? उसमें कितनी शक्ति है, सो आप हमसे कहिये।

वृहस्पति बोले, जिस समय तुमने इन्द्रासनको

छोड़ दिया, उस समय देवता लोग बहुत घबड़ाये, फिर देवता; पितर; ऋषि और मुख्यगन्धर्व्व मिलकर नहुषके पास गये और कहने लगे तुम हमारे राजा और जगत्की रक्षा करने वाले बनो।

नहुषने उनसे कहा कि हमारी शक्ति इन्द्र होनेकी नहीं है, तुम हमको तेज और तपसे बढ़ाओ। ऋषियोंने नहुषके वचन सुन सबने अपना तेज उसे दिया उससे वह बहुत बलवान होगया, तब सबने उसे इन्द्र बनाया, अब वह दुष्टात्मा ऋषियोंकी पालकीमें लगा कर लोकोंमें घूमता है, उसके आगे जो जाता है, उसीका तेज नष्ट होजाताहै, इस लिये तुमभी नहुषको मत देखना, कोई देवता कभी नहुषको नहीं देखता और छिपकर रहते हैं।

शल्य बोले, जहां अंगिरा वंशश्रेष्ठ वृहस्पति इन्द्रसे ऐसा कह रहे थे, तहां कुवेर सूर्य्यपुत्र यमराज, सनातन देवता चन्द्रमा और वरुण आये, वे आकर इन्द्रसे कहने लगे तुमने प्रारब्धहीसे त्वष्टापुत्र वृत्रासुरको मारा। हे इन्द्र! हम लोग प्रारब्धहीसे तुमको कुशलयुक्त और घाव रहित देखते हैं, इन्द्रभी लोकपालोंकी यथायोग्य पूजा करके प्रसन्न हुए और कहने लगे कि इस समय घोर रूपी नहुष देवतोंका राजा बना है, आप लोग उसके मारनेके लिये हमारी सहायता कीजिये।

लोकपाल बोले, हे देवराज! घोररूपी नहुषकी दृष्टिमें विष है, इस लिये हमलोग उसके आगे जाते डरते हैं, तुम इन्द्रहो और सब बात जानतेहो इस लिये उसको जीतो, तब हम लोग यज्ञोंमें भाग पावेंगे।

इन्द्र बोले, हम कुवेर, यमराज और वरुणका अभिषेक करते हैं, आप लोग अपने अपने स्थानोंपर देवतोंके सहित जाइये, हम इस घोर दृष्टि वाले नहुष शत्रुको जीतेंगे। तब अग्निने इन्द्रसे कहा कि यदि तुम हमको यज्ञमें भाग दो, तो हमभी तुम्हारी सहायता करेंगे।

इन्द्रने कहा, आजसे बड़े बड़े यज्ञ अग्निका एक एक भाग निकला करेगा।

शल्य बोले, बरदान देने वाले पाक नाम राक्षसके नाशक भगवान इन्द्रने यह विचार कर कुवेरको सब यक्ष और धन स्वामी यमराजको पितरोंका स्वामी और वरुणको जलका राजा बनाया।

१६ अध्याय समाप्त।

शल्य बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! जब बुद्धिमान भगवान इन्द्र देवता और लोकपालोंके सहित नहुषके मारनेका उपाय सोच रहे थे, वहां तपस्वी भगवान अगस्त्य आये, उन्होंने इन्द्रकी प्रशंसा करके ऐसा कहा, हे देवराज! प्रारब्धहीसे आपकी उन्नति हुई है, प्रारब्धहीसे आपने वृत्रासुर और विश्वरूपका मारा और प्रारब्धसे नहुष भी इन्द्रासनसे गिराये गये। हे बलनाशक! हम आपको प्रारब्धहीसे शत्रु रहित देखते हैं।

इन्द्र बोले, हे महार्षि अगस्त्य! हम आपका स्वागत करते हैं, हम आपके दर्शनसे बहुत प्रसन्न हुए, आप पाद्य, अर्घ, आचमनीय और गौ ग्रहण कीजिये। जिस समय मुनियों अगस्त्य सावधान होकर आसनपर बैठे, तब इन्द्रने प्रसन्न होकर उनसे पूछा, हे ब्राह्मण श्रेष्ठ! हे भगवन्! पापी नहुष किस प्रकार स्वर्गसे गिराया गया, सो कथा सुननेको हमारी इच्छा है, आप हमसे कहिये। अगस्त्य मुनि बोले, हे इन्द्र! जिस प्रकार दुरात्मा नहुष स्वर्गसे गिराया गया सो उत्तम कथा हम आपसे कहते हैं, सुनिये।

पापी अभिमानी नहुष इस प्रकार स्वर्गमें नष्ट हुआ कि वह दुष्ट थके हुए महाभाग देवऋषि और ब्रह्मऋषियोंकी पालकीमें

चला जाता था, उसी समय ऋषियोंने उससे पूछा, हे जीतनेवालोंमें श्रेष्ठ। ब्रह्माने जो वेदमें गौकी स्नान करानेके मन्त्र लिखे हैं, उनका प्रमाण है वा नहीं?

ऋषियोंके वचन सुन मूर्ख नहुष बोला कि नहीं।

ऋषियोंने कहा कि तुम महा अधर्म्मी हो, धर्म्मकी नहीं जानते हमारे पहले ऋषियोंने उनकी प्रमाण माना है।

अगस्त्य बोले, हे इन्द्र। अनन्तर वह अधर्म्मी ऋषियोंसे फिर बिवाद करने लगा। मेरे शिरमें लात मारी, इससे उसका सब तेज नष्ट हो गया, फिर मैंने दुःखित होकर उसको ऐसा शाप दिया, हे राजन्! तुम पहले ऋषियोंके कहे-मन्त्रोंको नहीं मानते हो, बिना देखी वस्तुकी निन्दा करते हो, तुमने मेरे शिरमें लात मारी और ब्रह्माके तुल्य तेजस्वी ऋषियोंको पालकीमें लगाया, इससे तुम्हारा तेज नाश हो गया, इस लिये अब तुम स्वर्गसे पृथ्वीको चले जाओ, तुम दस सहस्र वर्षतक सांपका रूप धारण करके पृथ्वीमें रहोगे। हे शत्रुनाशन इन्द्र! इस प्रकार वह दुरात्मा नहुष स्वर्गसे भ्रष्ट हुआ और प्रारब्धसे तुम्हारी उन्नति हुई। अब आप स्वर्गमें चलके तीनों लोकोंकी रक्षा कीजिये, आप जितेन्द्रिय शत्रुओंको मारनेवाले हैं? महाऋषि भी आपकी स्तुति करते हैं।

शल्य बोले, अनन्तर महाऋषि, देवता, पितर, यक्ष, राक्षस सर्प, गन्धर्व्व, देवकन्या, सब अप्सरा, तलाव, नदी, पर्व्वत और समुद्र प्रसन्न होकर कहने लगे। हे शत्रुनाशन इन्द्र! प्रारब्धहीसे तुम्हारी उन्नति हुई है। प्रारब्धहीसे बुद्धिमान् अगस्तने पापी नहुषका नाश किया, प्रारब्धहीसे पापी नहुष सांप बनकर पृथ्वीमें गिरा।

१७ अध्याय समाप्त।

शल्य बोले, अनन्तर गन्धर्व्व और अप्सराओंसे स्तुति सुनते हुए, इन्द्र सब लक्षणोंसे भरे उत्तम ऐरावत हाथीपर चढ़कर स्वर्गको चले, वृत्र नाशक इन्द्रके सङ्ग महा तेजस्वी अग्नि महाऋषि बृहस्पति, यमराज, वरुण, धनके स्वामी कुबेर, सब देवता और सब अप्सरा भी चलीं। सौ यज्ञ करनेवाले देवराज इन्द्र, स्वर्गमें जाकर प्रसन्नता सहित इन्द्राणीसे मिले फिर अपने राज्यका पालन करने लगे। उसी समय भगवान अङ्गिरा इन्द्रके पास आकर अथर्व्व वेदके मन्त्रोंसे स्तुति करने लगे। उसी समय भगवान इन्द्रने प्रसन्न होकर अङ्गिराको बरदान दिया। इन्द्र बोले, तुमने जिन मन्त्रोंसे हमारी स्तुति की है, उनका नाम अथर्वाङ्गिरस वेद होगा, तुमको आजसे यज्ञमें भाग मिलेगा।

हे महाराज! इस प्रकार अथर्वाङ्गिरा मुनिकी पूजा करके सौ यज्ञ करनेवाले इन्द्रने उनको विदा किया, फिर सब ऋषिओंकी पूजा करके इन्द्र प्रसन्नता सहित प्रजाको पालने लगे। इन्द्रने अपनी स्त्रीके सहित इस प्रकार दुःख भोगा था, और इस प्रकार शत्रुओंको मारनेके लिये छिपकर रहे थे, तुमने जो द्रौपदी और अपने भाइयोंके सहित बनमें दुःख भोगे। उसका कुछ दुःख मत कीजिये; हे राजन्! हे भारत! हे कौरवनन्दन! जिस प्रकार इन्द्र वृत्रासुरको मारकर पुनः राजा हुए थ, ऐसेही तुम भी राजा होगे, जैसे पापी ब्राह्मण-द्रोही नहुष अगस्त्यके शापसे नष्ट हुआ था, ऐसेही तुम्हारे पापी शत्रु कर्ण और दुर्योधनादिका नाश होगा। हे शत्रुनाशन। हे वीर! उसके पश्चात तुम अपने भाई और द्रौपदीके सहित समुद्र पर्य्यन्त पृथ्वीका राज्य करोगे। हे जीतनेवालोंमें श्रेष्ठ! यह इन्द्रकी विजयकी कथा वेदमें लिखी है, युद्धके समय विजय करनेकी इच्छावाले

राजाको अवश्य सुननी चाहिये, इसीसे मैंने तुमको सुनाई ; इसके सुननेसे महात्माओंकी उन्नति होती है। हे युधिष्ठिर। यह घोर समय आगया है, अब दुर्य्योधनके अपराधसे तथा भीमसेन और अर्ज्जुनके बलसे महात्मा चत्रियोंका नाश होगा, हमारी कही इस इन्द्र विजयकी कथाको जो नियम करके प्रतिदिन पढ़े वह सब पापोंसे छूटकर इस लोक और परलोकमें सुख पाता है। इसके पढ़नेवाला अपुत्र और निर्द्धन नहीं रहता, इसके पढ़नेवालेको कुछ आपत्ति नहीं होती, और उसकी आयु भी बहुत होजाती है, इसको सुननेवाला सदा जीतता है कभी हारता नहीं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भरतकुल सिंह जनमेजय। शल्यके ऐसे बचन सुन धर्म्मधारियोंमें श्रेष्ठ राजा युधिष्ठिर बहुत प्रसन्न हुए, और उन्होंने राजा शलाकी पूजा करी, अनन्तर महा बलवान कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरने मद्रराज शलसे कहा, आप अवश्य कर्णके सारथी बनियेगा। उस समय कर्णका बल नाश कीजियेगा, और अर्ज्जुनके बलको बढ़ाइयेगा। शल्य बोले, तुम जैसा कहते हो, मैं अवश्य ऐसाही करूंगा, इसके अतिरिक्त और भी शक्तिके अनुसार तुम्हारा कल्याण करूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे शत्रुनाशन जनमेजय। अनन्तर श्रीमान् शल्य पाण्डवोंसे आज्ञा लेकर अपनी सेनाके सहित हस्तिनापुरको चले गये।

१८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। उसके पश्चात् यदुवंशियोंमें श्रेष्ठ महारथ महावीर सात्यकी हाथी घोड़े रथ और पदातियोंसे भरी महासेनाके सहित महाराज युधिष्ठिरके पास आये। महावीर सात्यकीके सङ्ग अनेक देशके आये हुए महावीर महा योद्धा थे, वे सब अनेक शस्त्रोंको चलानेवाले परस्पर भिन्दिपाल, शूल, तोमर, मुद्गर, परिघ, लाठी, फांसी, निर्म्मल खड्ग, विषमें बुझे प्रकाशमान बाण और धनुषको धारण करके शोभित होने लगे, उस महासेनामें सुवर्ण खचित धनुष इस प्रकार चमक रहे थे, जैसे मेघमें बिजली, वह अक्षौहिणी सेना युधिष्ठिरकी सेनामें आकर इस प्रकार मिल गई जैसे समुद्रमें नदी मिल जाती है। अनन्तर एक अक्षौहिणी सेना लेकर चेदि देशके राजा महा पराक्रमी धृष्टकेतु महाराज युधिष्ठिरके पास आये। महापराक्रमी जरासन्धपुत्र मगध देशके राजा जयत्सेन भी एक अक्षौहिणी सेना लेकर धर्म्मराजके पास पहुंचे। इसी प्रकार पांड्य देशका राजा अनेक द्वीपोंके राजोंके सहित युधिष्ठिरके पास आया, उस समय, वह युधिष्ठिरकी सेना देखने योग्य हुई थी, एक ओर राजा द्रुपदकी महा सेना अनेक देशके वीरोंके सहित महारथ और महावीर द्रुपद पुत्रोंसे रक्षित पड़ी थी। एक ओर पर्व्वतीय राजोंसे भरी महाराज विराटकी महा सेना ठहरी थी। इस प्रकार महात्मा युधिष्ठिरकी सात अक्षौहिणी सेना इकट्ठी होगई। इस सेनामें अनेक प्रकारकी ध्वजा लग गई। इसी प्रकार राजा दुर्य्योधनको प्रसन्न करनेके लिये एक अक्षौहिनी सेना लेकर राजा भगदत्त आये, उनके सङ्गही चीन और किरात देशकी सेना भी आई एक एक अक्षौहिणी सेना लेकर हार्दिक्य और कृतवर्म्मा आये, उनके सङ्गही भोज, अन्धक और कुकुरवंशी चत्री आये; इन तीनो चत्रियोंकी एक अक्षौहिणी सेना थी। उस सेनाके आनेसे दुर्य्योधनकी सेना ऐसी शोभित हुई जैसा अगाध समुद्र। क्रीड़ा करते मतवारे हाथियोंके सहित पृथ्वीको कपाते हुए जयद्रथ आदि सिन्धु और सौवीर देशके राजा आये, उनके सङ्ग एक अक्षौहिनी सेना थी, फिर वाहुमें

घूमते हुए, मेघके समान एक अक्षौहिणी सेना शक और यवनोंके सहित काम्बोज देशका सुदक्षिण राजा लाया, उसकी सेना टीडीदलके समान शोभित होने लगी, वह सेना भी दुर्य्योधनकी सेनामें मिल गयी। इसके पश्चात् माहिसतीका नील नामक राजा दुर्य्योधनके पास आया। अनन्तर अनेक दक्षिणी राजोंके सहित उज्जैनके बिन्द और अनुबिन्द राजा आये इनके सङ्ग दो अक्षौहिणी सेना थी। फिर पांचो कैकय देशके राजा एक अक्षौहिणी सेना लेकर हस्तिनापुरको चले। इस प्रकार सब महात्मा राजा दुर्य्योधनके पास आये और दुर्य्योधनकी अपनी सेना भी तीन अक्षौहिणी थी, इस प्रकार ग्यारह अक्षौहिणी सेना दुर्य्योधनकी हुई। वह सेना युधिष्ठिरसे युद्ध करनेकी इच्छा करने लगी। हे राजन्! उस समय हस्तिनापुरमें कोई स्थान सेनासे खाली न रह गया। दुर्य्योधनके मुख्य सेनापतियोंने अपनी अपनी सेनाको समस्त पञ्जाब, कुरुदेश, रोहितकारण्य, मारवाड़ अहिच्छत्र, कालकूट, गङ्गातट, वारणावत, वाटधान और यामुन पर्व्वपर ठहराई उस सेनामें धन और अन्न पूर्ण था, उन सब देशोंमें ठहरी हुई सेनाको द्रुपदके उस पुरोहितने देखा जो कौरवोंके यहां जा रहा था।

उद्योग पर्व्वमें सेनाउद्योगपर्व्व और
१६ अध्याय समाप्त।

अथ सञ्जययान पर्व्व।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। इस प्रकार द्रुपदका पुरोहित सेनाको देखता हुआ हस्तिनापुर पहुंचा, वहां राजा धृतराष्ट्र, विदुर और भीष्मने उनका बहुत सम्मान किया। अनन्तर वह पुरोहित सबसे कुशल प्रश्न करके और अपना कुल कहकर सब सेनापतियोंके बीचमें कहने लगे, यद्यपि आप सब लोग सनातन राजधर्म्मको जानते हैं, तथापि वचनकी भूमिकाके लिये मैं कुछ कहना चाहता हूं।

आप सब लोग जानते हैं, कि धृतराष्ट्र, और पाण्डु एकही पिताके पुत्र हैं, इस लिये पिताका धन दोनोंको समान बंटना चाहिये; परन्तु धृतराष्ट्रके पुत्रोंने पुरुषोंके धनको पाया तब पाण्डव क्यों नहीं पावेंगे? आप लोग जानते हैं, कि पाण्डव लोग किस प्रकार वनको गये थे? अब समय बीतने पर धृतराष्ट्र क्यों नहीं उनका धन देते? धृतराष्ट्रके पुत्रोंने पाण्डवोंके मारनेके अनेक यत्न किये, परन्तु मार नहीं सके, उन महात्माओंने फिर भी अपने बलसे अपने राज्यको बढ़ा लिया। परन्तु फिर भी धृतराष्ट्रके नीच पुत्रोंने शकुनिके सङ्ग उनको छल लिया, महात्मा युधिष्ठिरने उसको भी मान लिया उन्होंने तेरहवर्ष वनमें रहकर घोर दुःख उठाये। आप लोग यह भी जानते हैं कि धृतराष्ट्रके पुत्रोंने द्रौपदीके सहित पाण्डवोंको सभामें कैसा दुःख दिया था? फिर उन्होंने बारहवर्ष वनमें कैसे दुःख उठाये? फिर विराट नगरमें ऐसा वेष धारण किया मानो इनका जन्मही दूसरा हो गया, उन महात्माओंने साधारण पापियोंके समान दुःख उठाये। परन्तु महात्मा युधिष्ठिर उन सब दुःखोंको पीछे करके अपनाही राज्य मागते हैं, उनकी इच्छा यह नहीं है कि क्षत्रियोंका नाश हो। महात्मा पाण्डव लोग युद्ध करना नहीं चाहते, आप सब लोग दुर्य्योधन और पाण्डवोंके दोष और गुणोंको देखकर दुर्य्योधनको समझाइये, क्योंकि आप लोग उनके मित्र कहाते हैं; महात्मा पाण्डव लोग कदापि युद्ध करनेकी इच्छा नहीं करते, वे लोग केवल अपने राज्यको मागते हैं। राजा दुर्य्योधन जो युद्धके हेतु बतलाते हैं, सो माननेके योग्य नहीं है, क्योंकि राजा युधिष्ठि-

उनसे निर्ब्बल नहीं है, क्योंकि उनके पास सात अक्षौहिणी सेना है, वह सब सेना उनकी आज्ञाका मार्ग देख रही है, इसके अतिरिक्त उनकी ओर एक एक बलवान अकेला सहस्र सहस्र अक्षौहिणीको जीत सकता है। वे वीर ये है, सात्यकी, भीमसेन, महा बलवान नकुल और सहदेव। तुम्हारी ग्यारह अक्षौहिणी सेना एक ओर और अकेला महा पराक्रमी अर्ज्जुन एक ओर लड़ सकते है, जैसे बलवान अर्ज्जुन है, वैसेही कृष्ण भी पराक्रमी हैं। जिसके लिये युद्ध करने वाले अर्ज्जुन, सम्मति देनेवाले कृष्ण है, उस युधिष्ठिरकी सेनासे कौन युद्ध कर सकता है? सो आप सब लोग धर्म्मके अनुसार पाण्डवोंका राज्य लौटा दीजिये, और इस समयको अपने हाथसे न जाने दीजिये।

२० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! पुरोहितके ऐसे बचन सुन उनके बचनोंकी प्रशंसा कर, महा तेजस्वी और महा बुद्धिमान भीष्मजी बोले,—

हमारी प्रारब्धहीसे पाण्डव लोग कृष्णके सहित कुशलसे है, प्रारब्धहीसे उन लोगोंको सहायता मिली है, प्रारब्धहीसे पांचो पाण्डव धर्म्म करते है, प्रारब्धहीसे पाण्डव लोग सन्धि चाहते है, प्रारब्धहीसे उनको भाइयोंके सहित युद्ध करनेकी इच्छा नहीं है, आपने भी जो कुछ कहा सो सत्यही है, परन्तु इतना कठोर कहना उचित नही था। हमारी बुद्धिमें ब्राह्मणत्वके अभिमानसे आप इतना कह गये। इसमें कुछ सन्देह नहीं, कि धृतराष्ट्रके पुत्रोंने पाण्डवोंको बनमें और यहा बहुत दुःख दिया; इसमें भी सन्देह नहीं, कि पाण्डवोको पिताका धन मिलना चाहिये, और इसमें भी सन्देह नहीं, कि अर्ज्जुन महा बलवान अस्त्र जाननेवाला और महारथ है, पाण्डुपुत्र अर्ज्जुनसे साक्षात वज्रधारी इन्द्र भी युद्ध नहीं कर सकते, और धनुषधारियोंकी ता कथाही क्या है; अकेला अर्ज्जुन तीनो लोकसे युद्ध कर सकता है।

भीष्मके ऐसे वचन कहते समय कर्णने क्रोध करके दुर्योधनकी ओर देखा और भीष्मको कसरसे कमर झुकाकर बोले, हे ब्राह्मण। तुमने जो कहा, सो सब कोई जानता है, एकही बातको कई बार कहनेसे क्या होता है? दुर्योधनके लिये युधिष्ठिरको शकुनिने जुवेमें जीता था, और वे अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार बनको चले गये। अब समय पूरा होने पर वह अपने आधे राज्यकी इच्छा करते हुए मूर्खके समान द्रुपद और विराटकी सहायतासे दुर्योधनके सङ्ग युद्ध करना चाहते है? आप निश्चय रखिये, कि दुर्योधन भयसे घबड़ाकर एक चरणभर भी पीठ नहीं देंगे; परन्तु धर्म्मसे सब राज्यभी शत्रुको दे सकते हैं। यदि राजा युधिष्ठिर अपने पिताका राज्य लेना चाहते है, तो फिर तेरह वर्ष बनसे रहें और फिर दुर्योधनके वशमे होकर राज्य करें। पाण्डव लोग मूर्खतासे अधर्म्म न करें, यदि पाण्डव लोग अधर्म्महीसे युद्ध करना चाहते है, तो कौरवोसे युद्ध करते समय हमारे वचनको याद करेंगे।

भीष्म बोले, हे राधापुत्र! तुम्हारे वचनसे क्या होगा? उस समयको याद करो, जब अकेले अर्ज्जुनने छः महारथोंको जीता था। हमने तुम्हारा बल उसी समय देख लिया था, यदि हम लोग इस ब्राह्मणके वचनोंको न मानेंगे, तो मरकर पृथ्वीमें सो जायंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर राजा धृतराष्ट्रने भीष्मको प्रसन्न करके कर्णको फटकार दिया, और कहने लगे कि शान्तनुपुत्र भीष्मने हमारे कल्याणकी बात कही है, ऐसा करनेसे हमारा पाण्डवोंका और सब

जगतका कल्याण होगा। हम शीघ्रही पाण्डवोंके पास सञ्जयको भेजेंगे, आप विलम्ब मत कीजिये, पाण्डवोंके पास चले जाइये। ऐसा कहकर धृतराष्ट्रने ब्राह्मणकी पूजा करी, और विदा कर दिया।

अनन्तर सञ्जयको सभामें बुलाकर ऐसा वचन बोले।

२१ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! हमने सुना है कि पाण्डव विराट नगरके समीप रहते हैं, तुम उनके पास जाकर उनके सब समाचारको जान लो। तुम जाकर युधिष्ठिरसे कहना, आप प्रारब्धहीसे इस स्थानपर पहुंचे हैं। हे सञ्जय! तुम जाकर युधिष्ठिरसे कहना कि सब कौरव कुशलसे हैं, और यह भी कहना कि आप प्रारब्धहीसे बनवासके दुःखसे छूटे हैं। हे सञ्जय! मैं यह जानता हूं कि पाण्डव लोग हमारे सङ्ग सन्धि करना चाहते हैं, वे लोग महात्मा हैं, और सबका कल्याण चाहते हैं। हे सञ्जय! मैंने आज तक पाण्डवोंका कोई भी अन्याय नहीं देखा। पाण्डवोंने अपने बलसे बहुत धन प्राप्त करके मेरे आगे रख दिया था। मैं सदा उनके दोष देखनेकी इच्छा करता रहा, तौभी कोई दोष नहीं देख सका जिससे मैं उनको बुरा कहूं। वे सदा धर्म्म और अर्थसे काम करते हैं, परन्तु अपनी प्रसन्नताके लिये कोई काम नहीं करते। वे काम, शीत, भूख, प्यास, निद्रा, जसुहाइ, क्रोध प्रसन्नता और भूलको धर्म्मके वशमें होकर त्याग देते हैं। वे लोग धर्म्म, अर्थ, बुद्धि और दयासे भरे हैं, समयपर अपने मित्रोंको धन देते हैं। उनकी मित्रता दूर रहनेसे भी नहीं छुटती, पाण्डव सबके सङ्ग उचित व्यवहार करते हैं, उनसे द्वेष करनेसे हमारा कल्याण नहीं होगा। पापी मूर्ख दुर्योधन और महा नीच कर्णको छोड़के पाण्डवोंसे कौन द्वेष कर सकता है? यही दोनों महात्मा और दुःख सहनेवाले पाण्डवोंके क्रोधको बढ़ाते हैं। दुर्योधन नवीन बलवान और सुखी है, इस लिये यह युद्ध होनाही अच्छा समझता है। यह मूर्ख जीते हुए पाण्डवोंके भागको छीनना चाहता है। उस युधिष्ठिरके अर्ज्जुन, श्रीकृष्ण, भीमसेन, सात्यकी, नकुल, सहदेव और सृञ्जय बंशी क्षत्री सहायक हैं, इस लिये युद्धके पहलेहीं उनका राज्य लौटा देना चाहिये। केवल अर्ज्जुनही रथमें बैठकर और गाण्डीव धनुष धारण करके तीनों लोकोंको जीत सकता है। इसी प्रकार विजय करनेवाले श्रीकृष्णको भी तीनों लोकोंमें जीतनेवाला कोई नहीं है। जिसके धनुषसे मेघके समान शब्द होता है, जिसके बाण पतङ्गके समान शीघ्र चलते हैं, जिस अर्ज्जुनने अकेलेही समस्त उत्तर दिशाको जीत लिया था, उसके आगे कौन युद्धमें ठहर सकता है? जिसने अपने बलसे समस्त राजासे धन छीना था, उस अर्ज्जुनके सङ्ग कौन युद्ध कर सकता है। जिस अर्ज्जुनने खाण्डव बनमें अपने बाणोंसे देवतोंको तृप्त किया था, उससे कौन युद्ध कर सकता है? जिस अर्ज्जुनने खाण्डव वनमें इन्द्रादिक देवताओंको हराकर पाण्डवोंका यश बढ़ाया था, उससे कौन युद्ध कर सकता है? भीमके समान कोई गदा-युद्ध नहीं जानता उसके समान हाथीपर चढ़के लड़नेवाला भी कोई दूसरा नहीं है; रथमें बैठकर लड़नेमें भी यह अर्ज्जुनसे कम नहीं है; इसमें दस हजार हाथियोंका बल है; ऐसा बलवानसे मेरे नीच पुत्रोंने बैर किया है। वह अवश्य मेरे सब पुत्रोंको भक्षण कर देगा। भीमसेन सदाही महाक्रोधी है; उसको युद्धमें इन्द्र भी नहीं जीत सकते। महा बलवान और शीघ्र अस्त्र चलानेवाले नकुल और सहदेव भी अर्ज्जुनके

समान योद्धा हैं। ये दोनों वाजपक्षीके समान विपक्षियोंका नाश करेंगे; ये सब महा पराक्रमी भी वीर हैं। हमें निश्चय होता है कि वे हमारी सब सेनाका नाश कर देंगे। उन सबके बीचमें धृष्टद्युम्न एकही बलवान है। हमने सुना है कि राजा द्रुपद अपने मन्त्रियोंके सहित युधिष्ठिरकी ओर हो गये हैं। जिनके साक्षात कृष्ण सहाय हैं, उन युधिष्ठिरसे कौन युद्ध कर सकता है? मत्स्य देशके राजा विराटने एकवर्ष तक पाण्डवोंको अपने घरमें रक्खा है, हमने सुना है कि अब वेही राजा बिराट अपने पुत्रोंके सहित महाराज युधिष्ठिरके भक्त होगये हैं, जो पाच वीर केकय देशके राजोंसे राज्य मांगनेके कारण देशसे निकाल दिये गये थे, वे भी अब युधिष्ठिरके सङ्गी हो गये हैं, वे पाचो भाई महा धनुर्द्धारी हैं। हमने सुना है, कि पृथ्वीके सब राजा भक्ति और प्रेमके सहित धर्म्मराज युधिष्ठिरसे मिल गये हैं। पर्व्वत और कठिन स्थानोंके राजा तथा अनेक कुलीन शुद्ध वीर युधिष्ठिरके लिये प्राण देनेको उपस्थित हैं। अनेक शस्त्रधारी म्लेच्छभी युधिष्ठिरकी ओर होगये हैं। इन्द्रके समान पाण्ड्य देशके राजा अनेक वीरोंके सहित युधिष्ठिरसे मिल गये हैं, यह महात्मा, लोकप्रसिद्ध वीर और महा तेजस्वी हैं। जिसने अर्ज्जुन, कृष्ण, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य और भीष्मसे शस्त्र विद्या सीखी है, जो प्रद्युम्नके समान महा योद्धा है, हमने सुना है कि वही सात्यकी पाण्डवोंकी ओरसे युद्ध करेगा। जिसके आश्रयसे चेदी और कारूपक देशके सब राजा निवास करते थे, जो इन सबके बीचमें अपने तेजसे सूर्य्यके समान तपता था, जिसको कोई धनुषधारी युद्धमें नहीं रोक सकता था, जिसने उस चेदिपति शिशुपालको मारा था, जिसने शिशुपालको मार पाण्डवोंके यश और मानको बढ़ाया था, जिसके मानको कारूपक देशके राजा आदि सब राजा मानते हैं, उस अजेय कृष्णसे कौन युद्ध कर सकता है? जब कृष्ण शैव्य और सुग्रीवयुक्त रथपर चढ़ युद्ध करनेको आये थे, उस समय शिशुपालके छोड़ और कौनसा वीर उनसे युद्ध करनेको उपस्थित हुआ था? उस समय सब राजा दबकर ऐसे रह गये थे, जैसे सिंहसे छोटे हरिण दब जाते हैं, उस समय शिशुपाल कृष्णके सङ्ग दो रथसे युद्ध करनेको गये थे जिस कृष्णने उस शिशुपालको इस प्रकार मारकर गिरा दिया, जैसे कोई कचनार वृक्षको काटकर गिरा देता है, हमने सुना है कि वही कृष्ण युधिष्ठिरकी ओर होकर आये हैं। जिस कृष्णके चरित्रोंको स्मरण करके चित्त शान्त नहीं होता, वेही कृष्ण युधिष्ठिरकी ओर हो गये हैं। जिसकी ओर साक्षात कृष्ण हैं, उस युधिष्ठिरसे कौन युद्ध कर सकता है? जब हम इस बातको सुनते हैं कि अर्ज्जुन और कृष्ण एक रथपर चढ़के लड़नेको आवेंगे, तब हमारा हृदय भयसे कांपने लगता है। यदि मेरा मूर्ख पुत्र युद्ध करनेको न जाय, तो कुरु और अर्ज्जुनसे जीता बच जायगा। नहीं तो अर्ज्जुन और कृष्ण हमारे वंशको इस प्रकार भस्म कर देंगे जैसे इन्द्र दैत्योंका नाश करते हैं। हम अर्ज्जुनको इन्द्रके समान वीर जानते हैं और कृष्ण तो सनातन विष्णुही हैं। इस मूर्ख दुर्य्योधनने महात्मा लज्जावान, महा पराक्रमी शत्रुरहित युधिष्ठिरको बहुत दुःख दिया है अब वे क्रोध करके अवश्य इसका नाश कर देंगे मैं इतना अर्ज्जुन, कृष्ण, भीम, नकुल और सहदेवसे नहीं डरता, जितना धर्म्मराज युधिष्ठिरके क्रोधसे डरता हूं, क्योंकि उनका क्रोध महा कठोर है, वे ब्रह्मचारी और सत्यवादी हैं उनकी प्रतिज्ञा अवश्य सत्य होती है। हे सञ्जय! उनके क्रोधको याद करके मैं रात दिन भयसे व्याकुल रहता हूं। तुम इसी समय

शीघ्र चलानेवाले रथपर चढकर द्रुपदकी सेनामें जाओ, वहां जाकर महाराज युधिष्ठिरसे प्रीतिके सहित हमारी ओरसे वार वार कुशल पूछना। महापराक्रमी पाण्डवोंके मुख्य मन्त्री कृष्णसे भी कुशल पूछना और कहना कि महाराज धृतराष्ट्र कुशलसे हैं, वे आपके सङ्ग सन्धि करना चाहते हैं। हे सूत। तुम यह सब वचन कृष्णहीसे कहना, कृष्णके वचनको युधिष्ठिर अवश्य मानते हैं। कृष्ण उनके प्यारे मन्त्री विद्वान् और पाण्डवोंके सब कर्मोंके करनेवाले हैं। इसके पश्चात् पाण्डवोंने जिन राजोंको बुलाया है, उन सबसे, सृञ्जयोंसे, कृष्णसे और राजा विराटसे हमारी ओरसे कुशल पूछना, इसके पश्चात द्रौपदीके पुत्रोंसे कुशल पूछना, इसके पश्चात् जिनसे योग्य समझो उनसे भी हमारी ओरसे कुशल पूछना। इसके पश्चात् सब राजोंके बीचमें हमारे कल्याणके वचन कहना, परन्तु हमारे वचन ऐसे न हों, जिनसे युद्धकी सिद्धि होती हो।

२२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। राजा धृतराष्ट्रके ऐसे वचन सुन सञ्जय रथमें बैठकर महा तेजस्वी पाण्डवोंको देखनेके वास्ते विराट नगरको चले, वहा जाकर सूतपुत्र सञ्जयने राजोंके बीचमें सिंहासनपर बैठे महाराज युधिष्ठिरको देखा, अनन्तर महाराजको प्रणाम कर और हाथ जोड़कर कहा, हे महाराज। हम आज प्रारब्धहीसे आपको रोगरहित, सहायोंके सहित इन्द्रके समान बैठे देखते हैं। हे महाराज। अम्बिकापुत्र बूढ़े धृतराष्ट्र आपसे कुशल पूछते हैं; वह कहते हैं. कि पाण्डवश्रेष्ठ भीम, अर्ज्जुन, नकुल और सहदेव कुशलसे तो हैं? हे भारत! उन्होंने पूछा है कि जिससे तुम सब कल्याणोंकी इच्छा करते हो, वह वीरोंकी स्त्री पुत्री यशस्विनी सचीके समान पतिव्रता द्रौपदी पुत्रोंके सहित कुशलसे तो है?

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे गालवगणपुत्र सूत सञ्जय। हम तुम्हारा स्वागत करते हैं. तुम्हें देखकर आज हम बहुत प्रसन्न हुए। हम अपने भाइयोंके सहित कुशलसे हैं; तुम अपनी कुशल कहो। आज हमने बहुत दिनपर अपने बूढ़े महाराज धृतराष्ट्रकी कुशल सुनी। कुशल सुननेहीसे हमको ऐसा आनन्द हुआ जैसा उनके दर्शनसे होता है। उनका दर्शनही हमको कल्याणदायक है। हे प्यारे सञ्जय। कहो हमारे दादा महाबुद्धिमान सब धर्म्मके जाननेवाले बूढ़े भीष्म कुशलसे तो हैं? पहलेके समान धर्म्म करते हैं न? कहो विचित्रवीर्य्यपुत्र महाराज धृतराष्ट्र अपने पुत्रोंके सहित अच्छे तो हैं? हे सूतपुत्र। महाविद्वान प्रतिपियपुत्र महाराज वाह्लिक तो अच्छे हैं न? महा धर्म्मात्मा सोमदत्त, भूरिश्रवा, शल, द्रोणाचार्य्य और कृपाचार्य्य आदि महा धनुषधारी वीर लोग कुशलसे हैं न? जो सब कौरवोंके समान धनुषधारी महा बुद्धिमान सब शास्त्रोंके जाननेवाले राज और सेनाके जो प्रधान वीर हैं, वे सब कुशलसे हैं न? कहो वे सब राजासे उत्तम सम्मान पाते हैं न? जिनके राज्यमें महा धनुषधारी शीलवान सुन्दर अश्वत्थामा रहते हैं, उन कौरवोंकी सभामें सब प्रधान आदरसे रहते हैं न? कहो महा बुद्धिमान वैश्यापुत्र युयुत्सु अच्छे हैं न? कहो जिसने राजा दुर्य्योधनको मूर्ख बनाया है, वह मन्त्री कर्ण तो अच्छे हैं? हम लोगोंकी माता कौरवकुलकी बूढ़ी स्त्री रसोई बनानेवाली, दास, दासी, बहू, बेटे, भान्जे, बहिन, पुत्री और पुत्रोंके पुत्र ये सब अच्छे हैं न? कहो राजा दुर्य्योधन ब्राह्मणोंकी पूजापूर्वक समान मानते हैं न कहो दुर्य्योधनने हमारे दिये हुए गाव आदि ब्राह्मण और वीरोंसे छीन तो नहीं

लिये? कहो राजा धृतराष्ट्र पुत्रोंके सहित ब्राह्मणोंकी सेवा तो करते हैं? वे अपने परलोक सुधारनेके उपाय करते तो हैं? ब्रह्माने कहा है, कि ब्राह्मणोंकी वृत्ति देनाही स्वर्गसाधनका उपाय है, क्योंकि ब्राह्मण लोग क्रोध करके सब कौरवोंका नाश कर सकते हैं। कहो राजा धृतराष्ट्र पुत्रोंके सहित अपने सेवकोंको भोजन देते हैं न? कहो उनके यहां कोई शत्रु मित्र होकर तो नहीं है? कहो, वे लोग पाण्डवोंके दोष तो नहीं वर्णन करते? द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य और बीर अश्वत्थामा हम लोगोंको पापी तो नहीं बनाते? कहो सब कौरव, राजा धृतराष्ट्रको पुत्रोंके सहित मानते हैं न? कहो डाकुओंको देखकर वे लोग कभी पाण्डवोंका स्मरण करते हैं? कभी वे लोग गाण्डीव धनुषसे छूटे हुए बिजलीके समान शब्दवाले अर्ज्जुनके वाणोंको स्मरण करते हैं? मैंने आज पर्य्यन्त अर्ज्जुनके समान योद्धा किसीको नहीं देखा, इनके तीक्ष्णवाण इकसठ हाथ तक जासकते हैं। ऐसेही हमारे भाई भीमसेन इस प्रकार गदा लेकर युद्ध करते हैं, जैसे मतवाला हाथी युद्ध करता है, इनसे कोई शत्रु जीता हुआ नहीं बच सकता। कहो कभी कौरव लोग भीमसेनका भी स्मरण करते हैं? जिस हमारे छोटे भाई माद्रीपुत्र सहदेवने क्रोधसे भरकर बांये और दहने हाथसे खड्ग धारण करके कलिङ्ग देशके वीरोंका नाश किया था, कहो कौरव लोग कभी उस वीर सहदेवका भी स्मरण करते हैं? हे सञ्जय! जिसको हमने शिवि और त्रिगर्त्त देशको जीतनेको भेजा था, जिसने तुम्हारे देखते देखते सब पश्चिम दिशाको जीत कर हमारे वशमें कर दिया था, उस वीर नकुलका भी कभी कौरवोंको स्मरण होता है? जब घोषयात्रामें मूर्ख दुर्य्योधन शत्रुओंके वशमें होगया था, जहां उसका महानिरादर हुआ था, जहां मैंने पीछेसे अर्ज्जुनकी रक्षा की थी, और जहां भीमने नकुल सहदेवकी रक्षा की थी, जिस युद्धमें अर्ज्जुनने दुर्य्योधनके शत्रुओंको नाश करके उसे छुड़ाया था, कहो उस युद्धका भी कभी दुर्य्योधनको स्मरण आता है? हे सूत! हमने दण्डके सिवा और किसी उपायसे दुर्य्योधनको अपने वशमें होते नहीं देखा, तब युद्धको उद्यत हुए हैं।

२३ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, हे राजन् युधिष्ठिर! आपने जो कुछ कौरवोंके प्रति पूछा वे सब यशस्वी कौरव कुशलसे हैं। हे पाण्डव! सब वृद्ध धृतराष्ट्र पुत्रसे अच्छा बर्त्ताव करते हैं, परन्तु धृतराष्ट्र पुत्रका चित्त बहुत पापी है, हां यह बात है कि उसने शत्रुओंकी भी जीविका देदी है फिर ब्राह्मणोंकी जीविका कैसे छीन सकता है? तुम धृतराष्ट्रपुत्रसे मौन होकर द्वेष करते हो, सो अच्छा नहीं। पापी धृतराष्ट्र पुत्रोंके सहित तुम साधुओंके सङ्ग द्वेष करते है। हे युधिष्ठिर! बहुत बूढ़ा कुछ धर्म्म नहीं जानता और सदा तुम लोगोंसे जलना रहता है। सदा ब्राह्मणोंसे विश्वासघातकी कथा सुना करता है। यह विश्वासघात महापातक है, हे युधिष्ठिर! सब कौरव युद्धोंमें तुम्हारा स्मरण किया करते हैं, वाण चलानेके समय अर्ज्जुनका स्मरण किया करते हैं, भीमसेनकी शंख, भेरी और नगारोंके शब्दके सङ्ग स्मरण करते हैं। और महायुद्धोंमें चारो ओर युद्ध करते हुए नकुल और सहदेवका स्मरण किया करते हैं, कौरव लोग कहा करते हैं कि माद्रीपुत्र नकुल और सहदेव महायोद्धा हैं और युद्धसे कभी नहीं हटते। हे राजन्! हे पाण्डव! जगतमें ऐसा कोई मनुष्य नहीं जो प्रारब्धको जान सके। क्योंकि सब धर्म्म जाननेवाले आप भी दुःख भोगते हैं, इससे जानते हैं कि प्रारब्ध बड़ी

बलवान है। हे पाण्डव! आप इतने दुःख सह कर भी शान्ति चाहते हैं, इससे हम जानते हैं कि पाण्डुपुत्र किसी काम और धनके लिये भी धर्म्मको नहीं छोड़ेंगे, क्योंकि आप पाचो भाई इन्द्रके तुल्य हैं। हे अजातशत्रो! आप अपनी बुद्धिसे सन्धि कीजिये, जिससे सब कुरुकुलका कल्याण हो। धृतराष्ट्रके पुत्र पाण्डव और सञ्जय आदि राजा सुनें, हमसे जो कुछ तुम्हारे पिता धृतराष्ट्रने कहा है सो सुनो। हे राजन्। महाराज धृतराष्ट्रने पुत्र, मन्त्री और बान्धवोंके सहित जो कहा है सो सुनो।

२४ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिर बोले, हे गालवगणपुत्र सञ्जय। पाचो पाण्डव, सञ्जय, श्रीकृष्ण, सात्यकी और विराट आदि सब महात्मा सभामें आगये है, अब जो कुछ राजा धृतराष्ट्रने तुमसे कहा है, सो तुम कहो।

सञ्जय बोले, महाराज युधिष्ठिर, भीमसेन, नकुल, सहदेव, श्रीकृष्ण, सात्यकी, चेकितान, पञ्चाव देशके स्वामी बूढ़े महाराज द्रुपद और महावीर धृष्टद्युम्न आदि महात्मा मेरे उन वचनोंको सुनें जो मैं कौरवोंके कल्याणके लिये कहता हूं। महाराज धृतराष्ट्रने मुझसे चलते समय जो कुछ अपने भतीजोंको कहा है, सो मैं कहता हूं। उन्होंने कहा है कि पाण्डव लोग सब प्रकारसे सब धर्म्मोसे भरे है, उनमें बुद्धि, लज्जा और कोमलता निवास करती है, वे लोग उत्तम कुलमें उत्पन्न हुए [illegible]त और जगतके नियमको जाननेवाले हैं। महाराजने कहा है कि तुम लोगोमें दीनता नहीं है, तुम लोग महा पराक्रमी हो, और तुम्हारे पास सेना भी बहुत है, यदि कोई पाप तुम्हारी ओरसे हो जाय तो वह ऐसाही [illegible] लगेगा जैसे सफेद वस्त्रपर स्याही। [illegible] इससे सब जगतके क्षत्रियोंका नाश होगा और इस पापसे सबको नर्क होगा। इस युद्धके करनेकी किस बुद्धिमानको इच्छा होगी, जिसमें हार और जीत समानही है, उनको धन्य है, जो जातिके लिये कल्याण करते हैं। वेही हमारे पुत्र, मित्र और बन्धु हैं, जो इस समय युद्धको रोकें, क्योंकि युद्ध न होनेहीसे कुरुकुलका कल्याण है। यदि वे लोग शत्रुओंको अपने वशमें करके पाण्डवोंको शिक्षा देकर राज्यका निर्णय कर दें तो बहुत अच्छा होगा, नहीं तो वंश नाश करके मरना और जीना समानही है। महाराजने कहा है, कि हमको निश्चय है कि धृष्टद्युम्नसे रक्षित, कृष्ण, सात्यकी और चेकितानके सहित पांचो पाण्डवोंसे कोई युद्ध नहीं कर सकता, वे सब देवतोंके सहित साक्षात इन्द्रको भी जीत सकते है, और यह भी निश्चय है कि द्रोणाचार्य्य, भीष्म, कृपाचार्य्य, शल्य और अश्वत्थामासे रक्षित राधापुत्र कर्ण आदि राजोंके सहित दुर्य्योधनकी महा सेनाको भी कोई नहीं जीत सकता। परन्तु हमको हार और जीत किसीसे कल्याण नहीं दीखता। हम जानते है कि पाण्डव नीच कुलमें उत्पन्न हुए अधर्म्मियोंके समान इस कुकर्म्मको नहीं करेंगे, इस लिये हम हाथ जोड़कर सोमकवंश श्रेष्ठ बूढ़े महाराज द्रुपद और कृष्णकी शरण हैं; उन दोनोंको ऐसा काम करना चाहिये, जिससे सञ्जय और कुरुकुलका कल्याण हो। यदि कृष्ण और अर्जुन मेरे इस वचनको नहीं मानेंगे तब वे लोग यह भी निश्चय रखें कि युद्धमें किसीका भी प्राण नहीं बचेगा। हमने जो कुछ कहा है, सो सब शान्तिके लिये कहा है, डरसे नहीं।

यह सब वचन महाराजने भीष्मकी सम्मतिसे कहे हैं। अन्तमें फिर महाराजने कहा कि शान्ति होनी अच्छी है

२५ अध्याय समाप्त।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे सूत। हे सञ्जय। तुमने हमारी कौनसी ऐसी वाणी सुनी जिससे तुमको यह निश्चय होगया कि युधिष्ठिर युद्ध करना चाहते हैं? तुम मेरे कौनसे बचन सुनकर युद्धसे डरे? मेरा सदासे सिद्धान्त है कि युद्धसे शान्ति अच्छी है। ऐसा कौन मूर्ख है जो सन्धि छोड़कर युद्ध करेगा? हे सूत! यदि बिना सङ्कल्पहीके कोई कार्य्य सिद्ध हो, तो सङ्कल्प न करना चाहिये। यदि सङ्कल्पहीसे कार्य्य सिद्ध हो, तो कर्म्महो नहीं करना चाहिये। यदि थोड़े कर्म्मसे कार्य्य सिद्ध होता हो तो बड़ा कर्म्म करना उचित नहीं, इस लिये मेरी बुद्धिमें युद्ध होना अच्छा नहीं है। ऐसा कौन प्रारब्धका मारा है, जो शान्ति छोड़कर युद्धकी इच्छा करे? जगतमें ऐसा कौन है जो वृथा युद्ध करना चाहे? हां पाण्डव लोग सुखकी इच्छा करते हैं, परन्तु उस सुखको ऐसे कर्म्मसे प्राप्त करना चाहते हैं, जिसमें सब लोकका कल्याण हो। पाण्डव धर्म्मसे सब काम करते हैं, और धर्म्महीसे अपना राज्य तथा सुख प्राप्त करना चाहते हैं। वे लोग बड़े मूर्ख हैं जो इन्द्रियोंके सुखके लिये दुःखोंको दूर करके सुख प्राप्त करना चाहते हैं. जिन कर्म्मोंका उपाय कठिन है वे सब दुःखदायकही हैं। जिस प्रकार दबी हुई थोड़ी अग्नि बढ़कर सबको जला देती है, ऐसेही विषयोंकी चिन्ता शरीरको भस्म कर देती है, उससे पुरुषकी सब शक्ति घट जाती है, और अनेक दुःख प्राप्त होते हैं। जैसे अग्निमें जितना घी डालो उतनाही अग्नि बढ़ती जाती है, ऐसेही मनुष्यको जितना सुख मिले उतनीहीं इच्छा बढ़ती जाती है। देखो राजा धृतराष्ट्रने अपने धनसे तृप्त न होकर हमारे धनको भी छीन लिया तब भी उनकी तृप्ति नहीं होती। हा हमें यह निश्चय है कि महाराज धृतराष्ट्र बड़े धर्म्मात्मा हैं, क्योंकि पापीको ऐसे सुख कहां होते हैं? पापी युद्ध और सन्धि करानेका स्वामी नहीं होता। पापी अच्छे गीत नहीं सुनता, पापीको उत्तम सुगन्धि माला और चन्दनादिक नहीं मिलते, पापीको उत्तम वस्त्र नहीं मिलते। इससे एक प्रमाण यही है कि यदि महाराज पापी होते तो हम लोगोंका राज्य क्यों छीन लेते, क्योंकि धर्म्मात्माही शत्रुओंको राज्यसे निकालते हैं। परन्तु यह सब धर्म्म उनहो मूर्ख दुर्य्योधनादिकोंके करने योग्य है, हम लोगोंके नहीं। यही बिचार कर हमारा हृदय दुःखसे जला करता है। बड़े शोककी बात है कि राजा आपही सङ्कटमें पड़कर कर्णादिकोंकी शक्ति बढा रहे हैं, सो अच्छा नहीं है, वे जैसे अपनेको समझते हैं, क्या ऐसेही कर्णादिकोंको समझते हैं? महाराजका ऐसाही विचार है जैसे कोई मनुष्य बहुत लकड़ीके ढेरमें गरमीके समय आग लगावे और कहे कि जाड़ोंमें बता दंगा। हे सञ्जय! राजा धृतराष्ट्र सब प्रकारके सुखोंको पाकर अब किस लिये रोते हैं? अपने मूर्ख पुत्र दुष्ट कर्म्म करनेवाले दुर्य्योधनको लिये बैठे रहें, मूर्ख दुर्य्योधनने महा बुद्धिमान विदुरके बचनको मूर्खके बचनके समान भी नहीं सुना। राजा धृतराष्ट्र अपने पुत्रको सुख देना चाहते हैं, इस लिये यह सब अधर्म्म उन्हींको होगा। महाबुद्धिमान, महा पण्डित, महाशीलवान, महावक्ता कौरवोंका सुख चाहनेवाले विदुरके बचनोंको भी महाराजने अपने पुत्रोंके लिये छोड़ दिया। हे सञ्जय। राजा धृतराष्ट्रने अपने पुत्रके सुखके लिये अर्थ और धर्म्मको छोड़ दिया है, उनका पुत्र दुर्य्योधन सबके सम्मानका नाशक मूर्ख, दूसरेकी उन्नतिको न सहनेवाला क्रोधी, अधर्म्मी, कठोरवादी, कामी, क्रोधके वशमें रहनेवाला, दुष्ट किसीकी बातको न माननेवाला और दुष्टबुद्धि है। हे सञ्जय। जवा खेलनेके समय

जब राजा धृतराष्ट्रने विदुरके वचन नहीं माने थे, तबही हमको निश्चय होगया था कि कुरु-वंशके नाशका समय आगया है। हे सूत। जिस समय राजा धृतराष्ट्र विदुरकी बुद्धिसे नहीं चले, तभी हमने जान लिया था कि कौरवोंके नाशका समय आगया। जबतक राजा धृतराष्ट्र विदुरकी बुद्धिसे चले तबतक उनका राज्य बढ़ा। हे गावल्गण-पुत्र। अब मूर्ख दुर्य्योधनकी बुद्धि देखो, उसने शकुनि दुःशासन और सूतपुत्र कर्णको अपना मन्त्री बनाया है, हमें कोई उपाय अब ऐसा नहीं दीखता जिसमें सृञ्जय और कौरवोंका कल्याण हो। जिस समय हम लोग बनको चले गये थे और राजा धृतराष्ट्रने महा बुद्धिमान विदुरको निकाल दिया था। उसी समय राजा धृतराष्ट्रने पुत्रोंके सहित समस्त पृथ्वीमें अपना निष्कण्टक राज्य समझ लिया था, ऐसे लोभी राजासे सन्धि किस प्रकार होसकती है, जो सब धनको अपनाही समझता है। कर्ण जो जानता है कि मैं न जीतने योग्य अर्ज्जुनको युद्धमें जीत लूंगा, सो केवल उसकी मूर्खताही है। क्या पहले कोई घोर युद्ध नहीं हुआ? उन युद्धोंमें कर्णने कौरवोंकी रक्षा क्यों न करी? कर्ण, दुर्य्योधन, द्रोणाचार्य्य और भीष्म आदि सब कौरव जानते हैं कि अर्ज्जुनके समान कोई धनुषधारी नहीं है। सब कौरव और राजा लोग यह भी जानते हैं कि शत्रु-नाशन अर्ज्जुनके न रहते दुर्य्योधन राजा होगया है। इसी लिये धृतराष्ट्रपुत्र दुर्य्योधनने यह जान लिया है कि हम पाण्डवोंको जीत लेंगे, दुर्योधन उस समय जानेगा जब ताड़के समान धनुष लेकर अर्ज्जुन युद्ध करेंगे। जबतक गाण्डीव धनुषके शब्दको नहीं सुनते, तबहीतक धृत-राष्ट्रके पुत्र अभिमान करते हैं। जबतक भीम-सेन क्रोध करके युद्धमें नहीं जाते तबहीतक दुर्योधन अपनी सिद्धि देखता है। हे तात! भीमसेनके जीते इन्द्र भी हमसे राज्य नहीं छीन सकता? महावीर अर्ज्जुन और सहदेवके जीते क्या कोई हमसे राज्य छीन सकता है? हे सूत! यदि राजा धृतराष्ट्र हमसे युद्ध करनेकी इच्छा करेंगे तो उनके सब पुत्र पाण्डवोंके क्रोधकी अग्निमें भस्म हो जायगे। हे सञ्जय! तुम जानते हो कि उन्होंने हमको कैसे कैसे दुःख दिये हैं। हम तुम्हारे ऊपर कृपा करके क्षमा करते हैं, तुम्हे यह भी विदित है, कि हम दुर्य्योधनके सङ्ग कैसा वर्त्ताव करते थे? यदि तुम्हारे कहनेके अनुसार राजा धृतराष्ट्र वास्तवमें सन्धि करना चाहते हैं, तो जाओ हमारी भी सन्धि करनेहीकी इच्छा है, और हम सब व्यवहार पहलेके समान करेंगे। इन्द्रप्रस्थमें हमारा राज्य और कुरुश्रेष्ठ दुर्य्योधन हास्तनापुरमें रहैं।

२६ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, हे पाण्डव! हे कुन्तीनन्दन युधिष्ठिर! आप धर्म्मको नित्य जानते हैं, आपकी कीर्त्ति जगतमें प्रसिद्ध है। आप जीनेको अनित्य जानते हैं, इस लिये धृतराष्ट्रके पुत्रोंका नाश मत कीजिये। हे युधिष्ठिर! यदि कौरव-लोग विना युद्धके आपका राज्य न दें तो आप भिक्षा मांगकर अन्धक और वृष्णि देशमें रहिये, अथवा कोई और जीविकाका उपाय कर लीजिये, क्योंकि जीना अनित्य है, कीर्त्ति और सुख दुःख भी सदा नहीं रहते, और युद्ध करना आप ऐसे धर्म्मात्माओंका काम भी नहीं है, इस लिये आप इस पाप कर्म्मको न कीजिये। हे राजेन्द्र! सब मनुष्य अपनी इच्छानुसार जो चाहें सो कहें, क्योंकि ये पापके मूल हैं, परन्तु बुद्धिमान मनुष्य इन मूर्खोंकी सङ्गतिको छोड़कर महा कीर्त्तिको प्राप्त होते हैं। हे कुन्ती-पुत्र! धनकी तृष्णा धर्म्मका नाश करती है, और महात्माओंका धर्म्मही करना चाहिये;

धनकी इच्छा करनेवालेका धर्म्म नाश होता है इस लिये आप इस पाप कर्म्मको मत कीजिये। हे प्यारे युधिष्ठिर। उत्तम कर्म्म और धर्म्म करनेसे आपका प्रताप सूर्य्यके समान दीखता है, और पापी दुर्य्योधन सब पृथ्वीका राजा होनेपर भी अधर्म्मके कारण दुःख पा रहा है। आपने वेद पढ़ा, ब्रह्मचर्य्य किया, अनेक यज्ञ किये, ब्राह्मणोंको दान दिये और केवल धर्म्मके लियेही तेरह बर्ष बनमें रहकर अनेक दुःख भोगे। आपने परलोकको सत्य जानकर अपना शरीरतक भी दे दिया। जो मूर्ख बहुत दिनतक सुख करके योगाभ्यास नहीं करता, वह धन नाश होनेके पश्चात अनेक चिन्ताओंसे व्याकुल होकर दुःख भोगता है। जो मूर्ख ब्रह्मचर्य्यको छोड़ धर्म्मका नाश कर अधर्म्म करता है, और परलोकको सत्य नहीं मानता, वह मरकर महा दुःख भोगता है। पाप या पुण्यका कोई कर्म्म परलोकमें भी नष्ट नहीं होता, परलोकमें पहले कर्म्म और पीछे करनेवाला जाता है, आपने जो ब्राह्मणोंको न्याय और श्रद्धाके समेत पवित्र रस और सुगन्धसे भरे उत्तम अन्न दिये हैं, उससे और उत्तम दक्षिणा देनेसे आपकी कीर्त्ति जगतमें फैल रही है। हे युधिष्ठिर! इसी लोकमें सब कार्य्य किये जाते हैं, मरनेके पीछे कोई काम नहीं होता। आपने परलोकके लिये महात्माओंके करने योग्य अनेक धर्म्म किये हैं। जो धर्म्म करता है, वह मृत्यु, भूख, प्यास, मनके विरुद्ध कर्म्म सबको जीत लेता है। आपको जगतमें अब कुछ करना शेष नहीं है, अब आपको अपनी इन्द्रियोंको प्रसन्न करनेहीसे शेष है। हे पाण्डव! ऐसे उत्तम कर्म्म करके अब आप केवल लाभके वशमें होकर क्रोध या प्रसन्नतासे बहुत दिनके लिये दोनों लोकोंका नाश मत कीजिये। आप सब धर्म्मके पार होकर अब सत्य, धर्म्म कोमलता और लज्जाको मत छोड़िये। राजसूय और अश्वमेध आदि य[ज्ञ] करके अब पापके मार्गमें मत चलिये। कुन्तीनन्दन! यदि आप इस बैर रूपी पाप करना चाहते हैं तो इससे सदा बनमें रह[कर] दुःख सहनाही अच्छा है, आपके वशमें जि[तनी] सेना है, सबका विना नाश करायेही [आप] बनको चले जाइये, क्योंकि वन जानेके प[हले] भी आपके मन्त्री, कृष्ण, महावीर सा[त्यकी] राजा विराट पुत्रोंके सहित राजा द्रु[पद] और ये सब राजा तथा सब सहायक आ[पके] वशहीमें थे, परन्तु इन सबको छोड़[कर] आप बनको चले गये थे, वैसेही [अब] भी चले जाइये। आप बहुत सहायक[ोंके] सहित कृष्ण और अर्ज्जुनको मन्त्री करके [इन] बलवान शत्रुओंको मारकर दुर्य्योधनके [अभि]मानका नाश करेंगे, भला यह क्या बुद्धिमान[ोंका] काम है? किन्तु दूसरोंके बलको बढ़ा [कर] अपने बलको घटाकर अनेक बर्ष बनवास [करके] अब युद्ध करनेकी इच्छा करते हैं? [आपने] उसी समय युद्ध क्यों नहीं किया? हे पा[ण्डव!] उस समय क्या आप बुद्धिमान् नहीं थे जो [युद्ध] न किया? मूर्ख युद्ध करके, और [बुद्धि]मान् बिना युद्ध कियेही धैर्य्यसे धन धर्म्म [और] कल्याणको प्राप्त करता है। हे कुन्तीपुत्र! आ[पकी] बुद्धि कभी अधर्म्ममें नहीं जाती, इस लिय[े] पाप कर्म्म युद्धको मत कीजिये। युद्धमें क[भी] कल्याण नहीं होता, आपने पहले [इसी] कारणसे युद्ध नहीं किया था, फिर अब बुद्धिविरोधी कर्म्मको क्यों करते हैं? हे [महा]राज! बिना रोगके रोग शिरमें पीड़ा [देने]वाले, क्रोधको जीतिये और शान्त हो[इये,] महात्मा लोग इस क्रोधरूपी विषको पीते हैं। ऐसा कौन बुद्धिमान होगा जो [पाप] कर्म्म युद्धको करेगा? आपको भोगोंसे क्ष[मा] अच्छी लगती है, हे युधिष्ठिर! वह क्ष[मा] उत्तम भोग है जिसे आप शान्तिपूर्व्वक भ[ोगिये।]

द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा, शलय, भूरिश्रवा, विकर्ण, विविंशति, कर्ण और दुर्य्योधनको मारकर भोगियेगा? आप इस समुद्र पर्य्यन्त पृथ्वीको पाकरभी क्या बुढ़ापे और मृत्युको जीत सकियेगा? आप अप्रिय सुख और दुःखको जानते हैं, इस लिये आप सरीखे विद्वानको युद्ध करना योग्य नहीं। यदि आप कहैं कि हम अपने मन्त्रियोंको राज्य देनेके लिये युद्ध करना चाहते हैं, तो यह भी आपके समान महात्माओंको करने योग्य नहीं है।

२३ अध्याय समाप्त।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे सञ्जय। तुमने जो कहा कि युद्धसे धर्म्म करना अच्छा है सो इसमें कुछ सन्देह नहीं है, हम भी ऐसाही मानते हैं। परन्तु तुमको हमारा धर्म्म और अधर्म्म विचार कर तब हमारी निन्दाकरनी उचित थी। जहां धर्म्म अधर्म्मरूप और अधर्म्म धर्म्मरूपसे माना जाता है, वहां बुद्धिमान पण्डितलोग धर्म्मके रूपको बुद्धिसे पहचान लेते हैं। हे सञ्जय। हमने जो धर्म्म और अधर्म्म कहे, यह धर्म्मके लक्षण जानो, धर्म्म और अधर्म्म सदाही जगतमें घूमा करते हैं। परन्तु जो जिसका पहला धर्म्म है, वही उसके लिये प्रमाण है, अर्थात ब्राह्मण, क्षत्री वैश्य और शूद्रोंके जो धर्म्म कहे हैं वेही उनके लिये कल्याणदायक हैं, दूसरेकी वृत्ति करना अधर्म्म कहाता है। जिस समय मनुष्यकी अपनी वृत्ति नष्ट हो जाय, उस समय अत्यन्त दीन होकर दूसरे वर्णकी वृत्ति करनी चाहिये। हे सञ्जय! जो निज वृत्तिमें रहते दूसरे वर्णका काम करता है, और जो आपत्तिमें पड़कर हटके अपना कर्म्म करना चाहता है, वह दोनोंही नीच कहाते हैं। ब्राह्मणोंके कल्याणके लिये प्रायश्चित्त कहे हैं, उस शास्त्रको देखकर तुम अच्छे कर्म्म करनेवालेकी प्रशंसा और बुरे कर्म्म करनेवालेकी निन्दा करो। महात्माओंकी बुद्धिको अलग करनेके लिये भिक्षावृत्ति बनाई है, वह भिक्षा वृत्ति ब्राह्मणोंको और अन्य वर्णवाले मनुष्योंको है, इस लिये सबको अच्छी अवस्थामें अपने अपना धर्म्म करनाही उचित है। जो कर्म्म हमारे पिता पितामह और उनसे पहले पुरुषोंने किया है, वही यज्ञादिक कर्म्म हमको भी करने चाहिये, क्योंकि उनके न करनेसे हम नास्तिक कहावेंगे। हे सञ्जय। हम अधर्म्मसे पृथ्वीका और सब देवतोंका भी धन प्रजापतिका स्थान और ब्रह्माका लोक लेना नहीं चाहते। श्रीकृष्ण, धर्म्मके स्वामी, नीतिके जाननेवाले, महा पण्डित और अनेक प्रकार राजके भोगोंको भोगते हैं, यदि मैं सन्धि तोड़कर युद्ध करनेकी इच्छा करता हूं, या युद्धसे भी अपने धर्म्मको छोड़ता हूं तो महा यशस्वी वसुदेवपुत्र कृष्णही कहैं, क्योंकि ये हम दोनोंका कल्याण चाहते हैं। यह सात्यकी, चेदि देशके राजा, अन्धक, वृष्णिवंशी, भोजवंशी, कुक्कुरवंशी और सृञ्जयवंशी क्षत्री सभामें बैठे हैं, ये सब कृष्णकी बुद्धिसे शत्रुओंका नाश करते हैं और मित्रोंको सुख देते हैं। यदुवंशी और अन्धकवंशी उग्रसेनादिक राजा कृष्णके आश्रयसे इन्द्रके तुल्य होगये हैं, यह सब महात्मा, सत्यवादी और अनेक भोग भोगते हैं, काशीके बभ्रु नामक राजा कृष्णको भाई और स्वामी बनाकर परम लक्ष्मीको प्राप्त हुए हैं, हे सञ्जय! श्रीकृष्ण इस प्रकार धन देते हैं, जैसे वर्षा कालमें मेघ प्रजाको जल देते हैं। हे सञ्जय! श्रीकृष्ण महाविद्वान और कर्म्मोंके निश्चयको जाननेवाले हैं, कृष्ण हमारे बहुत प्यारे और महात्मा हैं। इस लिये जो ये कहेंगे सोई हम करेंगे।

२८ अध्याय समाप्त।

श्रीकृष्ण बोले, हे सञ्जय! हम पाण्डवोंका कल्याण और बृद्धिही चाहते हैं, उनके नाशकी कदापि इच्छा नहीं करते। ऐसेही महाराज धृतराष्ट्रके पुत्रोंकी भी उन्नतिही चाहते हैं। हे सञ्जय! मेरे अन्तःकरणका यही अभिप्राय है कि कौरव और पाण्डवोंमें शान्ति हो। मैं सदा पाण्डवोंसे यही कहता रहता हूं कि तुम लोग सन्धि कर लो, मेरी बुद्धिमें पाण्डव और राजा धृतराष्ट्रकी सन्धिसे कल्याण होगा। परन्तु यहभी निश्चय है, कि महाराज युधिष्ठिरके सङ्ग दुर्य्योधनकी सन्धि होनी बहुत कठिन है, क्योंकि जहां राजा धृतराष्ट्र ऐसे लोभी पुत्रोंके रहित जीते हैं, तहां युद्ध क्यों न होगा? हे सञ्जय! तुम हमारे और युधिष्ठिरके चित्तसे धर्म्मको नहीं उठा सकोगे, इस लिये हम लोगोंको अधर्म्मी भी नहीं सिद्ध कर सकते हो? तब धर्म्मपालक उत्साह भरे युधिष्ठिरको उनके कर्म्मसे क्यों रोकते हो? तुमने कुटुम्बमें शान्ति चाहनेवाले युधिष्ठिरको पापी कैसे कहा? जब महाराज युधिष्ठिर अपना धर्म्म करते है, तब ब्राह्मण लोग उनको अनेक प्रकारकी वाणी सुनाते है; कोई महात्मा कहते है कि इस लोकके कर्म्मसे परलोकमें सिद्धि होती है, कोई कर्म्मके विनाही विद्यासे सिद्धि बतलाते है, परन्तु चाहे कोई कैसाही विद्वान हो, वह भी विना भोजन किये तृप्त नहीं होता, इस लिये कर्म्म करनाही प्रधान है। जो विद्या कर्म्मका सिद्ध करती है उसीका फल भी दीखता है, और जिससे कुछ कर्म्म सिद्ध नहीं होता उस विद्याका फल भी नहीं दीखता। कर्म्मही करनेसे सिद्धि होती है। प्यासा पानी पीनेहीसे शान्त होता है, हे सञ्जय! यह सब कर्म्महीका फल है, इससे जो कोई विरुद्ध कहेगा उसका कहना वृथा है, और कहनेवाला भी दुर्ब्बल समझा जायगा। कर्म्महीसे देवता स्वर्गमें रहते हैं, कर्म्महीसे वायु बहता है; कर्म्महीसे सूर्य्य आलस्य रहित होकर दिन और रातका विभाग करता है, कर्म्महीसे चन्द्रमा महीने पक्ष नक्षत्र और योगोंको अलग अलग करते हैं; कर्म्महीसे भगवान अग्नि सब वस्तुओंको जलाते हैं, कर्म्महीसे आलस्यरहित होकर पृथ्वी सब जगतको धारण करती है आलसरहित जल शीघ्र बहता है; नदी सबको तृप्त करती है, आलसरहित होकर महा तेजस्वी मेघ सब दिशा और आकाशको अपने शब्दसे पूरित करके जल वर्षाते हैं, आलस रहित इन्द्रने देवलोकसे उत्तम होनेके लिये ब्रह्मचर्य्य किया था, इन्द्र अपने मनके प्यारे कर्म्म और सुखको छोड़कर तथा सावधान होकर सत्य, धर्म्म, त्याग और सबकी तुल्यताको धारण करके देवतोंमें श्रेष्ठ हुए हैं। इन सब कर्म्मोंके करनेसे देवराज इन्द्र सब देवतोंमें मुख्य और देवतोंके राजा बने हैं। बृहस्पतिने अपने प्यारे कर्म्मोंको छोड़ इन्द्रियोंको अपने वशमें कर ब्रह्मचर्य्य व्रत किया था, इसहीसे वे महात्मा सब देवतोंके गुरु हुए। आकाशमें तारे, विश्वे देवता, सूर्य्य, रुद्र, यमराज, कुवेर, गन्धर्व्व और अप्सरा, ये सब कर्म्महीसे सिद्धिको प्राप्त करते हैं। ऋषि लोग वेदविद्या पढ़कर तथा ब्रह्मचर्य्य और उत्तम कर्म्म करके तेजस्वी बनते हैं। हे सञ्जय। तुम विद्वान होकर तीनों लोकोंके ब्राह्मण, क्षत्री और वैश्योंके धर्म्मको जानकर भी कौरवोंका पक्ष लेकर क्यों हठ करते हो? महाराज युधिष्ठिरने समस्त वेदका पढ़ा है उन्होंने अश्वमेध और राजसूय आदि अनेक यज्ञ किये हैं, ऐसे मनुष्यको शिक्षा देनी भूल नहीं तो क्या है? यदि मनुष्य, कवच हाथी, घोड़े, रथ और शस्त्रोंसे अपनी बृद्धि करना चाहते हैं, और यदि महाराज युधिष्ठिर भीमसेनके क्रोधको रोककर विना कौरवोंके नाश किये कोई राज्य-प्राप्तिका उपाय निकालें, तो बड़ेही धर्म्मात्मा गिने जाय

परन्तु हमारी बुद्धिमें यदि ये लोग अपने कुल-धर्म्मसे अर्थात युद्धमें प्रारब्ध वशसे मारे भी जायं तो वह सत्य, सो प्रशंसा करनेके योग्य होगी। और यदि तुमने कोई सन्धिका उपाय सोचा हो तो हमको सुनाओ, क्योंकि तुम जानते हो कि युद्ध करनेसे धर्म्म होता है या सन्धि करनेसे धर्म्म होता है? जैसा तुम कहोगे तैसाही हम करेंगे। परन्तु इस कहनेके पहले चारों वर्णोंके विभाग और अपने कर्म्मको विचार लो; इसके पश्चात पाण्डवोंके बचन भी सुन लो; तब अपनी बुद्धिके अनुसार चाहे इनको निन्दा करो, चाहे प्रशंसा करो। वेदमें लिखा है कि ब्राह्मण पढे, पढावे, महात्माओंको दान दे, यजमानोंको यज्ञ करावे और उचित दानको ग्रहण करे, यही ब्राह्मणके छः कर्म्म हैं। क्षत्री अपने धर्म्मके अनुसार सावधान होके प्रजाका पालन करे, दान दे, वेद पढे, यज्ञ करे और घरमें रहकर दान करे, यही क्षत्रीके धर्म्म हैं। जो इन कर्म्मोंको करता है, वही युद्ध करनेवाला धर्म्मात्मा क्षत्री स्वर्गको जाता है। वैश्य वेद पढकर खेती करे, गौओंकी रक्षा करे और सावधान होकर धनसे व्यापार करे। पुण्यात्मा वैश्यको उचित है कि ब्राह्मण और क्षत्रियोंका प्यारा कर्म्म करके घरमें वसे। शूद्र तीनों वर्णोंकी सेवा करे, और सदा आलसरहित होकर तीनो वर्णोंका कल्याण चाहे। शूद्रको वेद पढने और यज्ञ करनेका अधिकार नहीं है। महाराज युधिष्ठिर सावधान होकर अपने धर्म्मका पालन करते हैं और सब वर्णोंको उचित धर्म्मोंमें चलाते हैं, वे कामी नहीं हैं, प्रजाको समान मानते हैं और कभी अधर्म्ममें नहीं जाते। जो मनुष्य इनसे अधिक ज्ञानी और धर्म्मात्मा हो, वही इनको शिक्षा दे, वह शिक्षा ऐसी होनी चाहिये जिससे महाराजको राज्य भी मिले, और युद्ध भी न हो, ऐसे उपायको महाराज अवश्य मानेंगे। हे सञ्जय! तुम जानते हो, जब कोई अपने बलके अभिमानसे आकर दूसरे राजाके धनको छीनना चाहता है, तबही युद्ध होता है, उसी युद्धके लिये ब्रह्माने शस्त्र और धनुष बनाये हैं। इन्द्रने डाकुओंको मारनेके लिये युद्ध बनाया है और इसी लिये शस्त्र, कवच और धनुष उत्पन्न हुए हैं। दुष्टोंके मारनेहीसे धर्म्म होता है, और यह दुष्टता दोष कौरवोंमें निवासही करता है। हे सञ्जय! यह छलरूपी दोष अधर्म्मी कौरवोंहीसे उत्पन्न हुआ है, सो अच्छा नहीं है। हमें निश्चय है कि राजा धृतराष्ट्र पुत्रोंके सहित पाण्डवोंका धर्म्म नाश करना चाहते हैं, उनके पास बैठनेवाले और उनके वंशके क्षत्री भी सनातन धर्म्मको नहीं जानते। हे सञ्जय! जहां चोर बिना देखे धन चुराले वा कोई दुष्ट देखते हुए छलसे धन छीन ले यह दोनोंही चोर कहाते हैं और दोनोंहीकी निन्दा होती है। तब कहो क्या राजा दुर्योधन इन दोषोंसे बचे हैं? वह लोभके वशमें होकर पाण्डवोंके धन लेनेहीको धर्म्म समझते हैं, परन्तु पाण्डव उस क्रोधीको अपना भाग क्यों देंगे? हे सञ्जय! इस विषयको तुम सब राजोंके आगे राजा धृतराष्ट्रसे कहना कि चाहे युद्ध करो वा मत करो, पाण्डवोंको राज्य देनाही उत्तम है, क्योंकि दूसरेका राज्य लेनेसे मरना अच्छा है। हे सञ्जय! जो मूर्ख राजा लोग मृत्युके वशमें होकर दुर्योधनकी सहायताको आये हैं, उनसे पूछना कि यह धर्म्म है वा अधर्म्म? भीष्मादिक धर्म्मात्मा कौरवोंसे पूछना कि कौरवोंकी सभाके बीचमें रजस्वला, धर्म्म करनेवाली यशस्विनी पतिव्रता द्रौपदीको लानाही धर्म्म है? यदि राजा धृतराष्ट्र उस सभाके बीचमें दुष्ट दुःशासनको इस बुरे कर्म्मसे रोकते तो मैं उनसे प्रसन्न होता और उनको धर्म्मात्मा कहता और उनके पुत्रोंका भी कल्याण होता; दुःशासनने अधर्म्मसे द्रौपदीको ससुरोंके सामने

सभामें खींचा, क्या यही धर्म्मका काम है? द्रौपदीके सभामें रोनेको इस क्षमा नहीं कर सकते हैं और मन क्षमा होसकता है, उस सभामें अनेक राजाभी बैठे थे, परन्तु भयसे कोई धर्म्मका बचन न कह सका, केवल विदुरही धर्म्मके अनुसार दुर्य्योधनसे विवाद करते रहे। हे सञ्जय! तुम बिना धर्म्म जानेही इस सभामें युधिष्ठिरको उपदेश करना चाहते हो? द्रौपदीने जो सभामें आकर कहा था, सो बहुत उचित और पवित्र था, द्रौपदीने उस समय पाण्डवोंका और अपना इस प्रकार उद्धार किया था, जैसे समुद्रमें डूबते हुए मनुष्यको नाव बचाती है। उसी समय बूढ़ोंके आगे सूतपुत्र कर्णने कहा था, हे द्रौपदी! हे भामिनी! अब तुझे कहीं गति नहीं है, तू दुर्य्योधनकी दासी बनके रह, तेरे पति हार गये। अब तू किसी दूसरेको पति बना। तुम जानते हो, कि कर्णके ये वचन अर्ज्जुनके हृदयमें तेज वाणके समान लगे हैं, उस घोर वाणसे अर्ज्जुनके मर्म्मस्थान कटे जाते हैं, जिस समय पाण्डवोंने वनको चलनेके लिये काले हरिणके चमड़े ओढ़े थे, उसी समय दुःशासनने यह कठोर वचन कहे थे कि नपुंसक पापी पाण्डव बहुत कालके लिये घोर नरकमें पड़े। गान्धार देशके राजा शकुनिने छलसे जुआ खेलनेके समय युधिष्ठिरसे यह कठोर वचन कहे थे, कि तेरे छोटे भाइयोंको हमने जीत लिया अब द्रौपदीको दाव पर लगाओ। हे सञ्जय! तुम तो इन सब बातोंको जानतेही हो, कि जुएके समय पाण्डवोंको कौरवोंने कैसे कैसे कठोर वचन कहे थे. इन सब प्रश्नोंके समाधान करनेको स्वयम् हमारीहो इच्छा हस्तिनापुर जानेकी है। यदि तुम किसी उपायसे कौरव और पाण्डवोंमें सन्धि करा दो तो हमारे मनकी इच्छा पूरी हो, और हमारे पुण्यका फल मिले, तथा कौरव भी मरनेसे बच जायं। यदि मेरी धर्म्म भरी और नीति-भरी वाणीको कौरव लो मानेंगे और वहां आनेसे मेरा आदर करें तो उनका कल्याण होगा और जो मेरी हि रहित वाणीको नहीं मानेंगे तो तुम धृतराष्ट्रके पुत्रोंको युद्ध करते हुए अर्जुन भीमके वाणोंसे मरा हुआ जानो। धृतराष्ट्र दुर्य्योधनने जो जुएमें हारे हुए पाण्डवों कठोर वचन कहे थे, उनको सावधान भीम हाथमें गदा लेकर स्मरण करावेंगे। बुद्धिमान् राजा धृतराष्ट्र जड़, क्रोधी दुर्य्योधन कर्ण बड़ी शाखा, शकुनि छोटी शाखा, तथा दुःशासन फल और फूल हैं। मैं ब्राह्मण और वेद जड़, धर्म्मात्मा युधिष्ठिर वृक्ष, अर्ज्जुन गुद्दा, भीमसेन डाली, तथा नकुल सहदेव फल और फूल हैं। राजा धृतराष्ट्र पुत्रोंके सहित वन और पाण्डव सिंह हैं। हे सञ्जय! तुम वनको मत काटो और न सिंहको वनसे निकालो! बिना सिंहके बन काटा जाता है, और बिना बनका सिंह मारा जाता है, इस लिये सिंह बनकी और बन सिंहकी रक्षा करे। धर्म्म लता, धृतराष्ट्रके पुत्र और पाण्डव शाखा हैं। बिना वृक्षके शाखा नहीं बढती इस लिये सन्धि करनी चाहिये। पाण्डव लो युद्ध करनेको भी उपस्थित हैं, और सन्धि करनेको भी तयार हैं, राजा दुर्य्योधनको जो इच्छा हो सो करें, विशेष इतनाही है कि महा धार्म्मिक पाण्डव सन्धिही करना चाहते और युद्ध करनेको भी समर्थ हुए हैं। यह सब जाकर राजा धृतराष्ट्रसे यथार्थ कहना, उनकी जो इच्छा हो सो करें।

२९ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, हे महाराज युधिष्ठिर! राजराजा युधिष्ठिर। आपका कल्याण है हस्तिनापुर जानेकी आज्ञा मांगता हमने जो कुछ अनुचित कहा हो, सो

क्षमा कीजियेगा, मैंने जो कुछ कहा है, सो अपने मनको दृढ़कारी कहा है। हे कृष्ण! हे भीमसेन। हे अर्जुन। हे नकुल। हे सहदेव। हे सात्यकी। हे चेकितान। आप सब लोगोंका कल्याण हो, मैं आप सब लोगोंसे विदा मांगता हूं, आप सब प्रेमकी दृष्टिसे मुझे देखिये। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे पण्डित सञ्जय। हम तुम्हें जानेकी आज्ञा देते हैं, तुम कल्याण सहित हस्तिनापुरको जाओ, वहां जाकर हमारे कल्याणका बिचार करना, हम तुम्हें पवित्रात्मा और अपना मित्र समझते हैं, तुम आर्य्य उत्तम दूत, मीठो वाणीवाले, शील-वान, मनुष्योंके प्यारे और सन्तुष्ट हो, तुम बात कहनेमें सकते नहीं हो और कठोर बात सुन कर क्रोध नही करते, तुम कठोर रूपी और कड़वी बात नहीं कहते; तुम्हारी वाणी धर्म्म और अर्थसे भरी हिंसारहित और मीठी है। हे सूत! तुमही हमारे प्यारे दूत हो, तुम्हारे और विदुरके सिवा हमारे कल्या-णकी वाणी और कौन कहेगा? हमने तुम्हें बहुत दिनपर देखा है, तुम अर्जुनके प्यारे मित्र हो। हे सञ्जय! तुम हस्तिनापुरमें जाकर प्रणाम करने योग्य ब्राह्मण, महा परा-क्रमी धर्म्मात्मा युद्ध करनेवाले क्षत्री और वनमें रहनेवाले वेद जाननेवाले महात्मा ब्राह्मणोंको हमारी ओरसे प्रणाम कहना, तथा और [illegible]दोंको भी हमारी ओरसे प्रणाम कहना। हे सूत! राजा धृतराष्ट्रके पुरोहित, आचार्य्य, [illegible] करानेवाले तथा और भी सब महात्मा-ओंको हमारा प्रणाम कहके कुशल पूछना। जो महा बलवान बूढ़े यशस्वी क्षत्री हस्तिना-पुरमें हमारा स्मरण करते हैं, और जो शक्तिके अनुसार धर्म्म करते हैं, उनसे हमारा प्रणाम कहना। तुम कहना कि महाराज युधिष्ठिर कुशलसे हैं, और आप लोगोंसे कुशल पूछते हैं, जो इस राज्यमें व्यवहार करके जीते हैं, सबसे कुशल पूछना और जो राजा राज्यमें राज्यकी रक्षा करते हैं, उनको भी कुशल पूछना। सब वेदोंके जाननेवाले हमारे गुरु द्रोणाचार्य्यसे हमारा बार बार प्रणाम कहना। जिन द्रोणाचार्य्यने ब्रह्मचर्य्य करके चारों चर-णोंके सहित अस्त्र विद्या सीखी है, जिन्होंने प्रसन्न होकर हमको भी शस्त्रविद्या सिखाई है, उन द्रोणाचार्य्यको हमारी ओरसे प्रणाम कहना। जिसने समस्त विद्याओंको पढ़कर चार चरणोंके सहित शस्त्र विद्याको पढ़ा है, उन गन्धर्व्वपुत्रके समान पराक्रमी अश्वत्थामासे हमारी ओरसे कुशल पूछना। वेद विद्याओंके जाननेवालोंमें श्रेष्ठ महारथ शरद्वतपुत्र कृपा-चार्य्यके स्थानमें जाकर हमारी ओरसे उनके चरण पकड़ लेना और कहना कि महाराज युधिष्ठिर अपने भाइयोंके सहित बहुत कुश-लसे हैं। इसके पश्चात तेज, लज्जा, तप, बुद्धि, शील, विद्या, पराक्रम और बुद्धिसे भरे हुए भीष्मके पास जाना और हमारी ओरसे उनके चरणोंमें प्रणाम करके हमारा कुशल निवेदन करना। हे सञ्जय! इसके पश्चात हमारे पिता सब वारवरोंको आज्ञामें रखनेवाले, महाबुद्धि-मान अनेक बूढ़ोंके सेवक महात्मा धृतराष्ट्रके पास जाकर हमारी ओरसे प्रणाम कहना और कहना कि महाराज युधिष्ठिर अपने भाइयोंके सहित रोगरहित हैं। इसके पश्चात राजा धृतराष्ट्रके बड़े बेटे मूर्ख मन्दबुद्धि दुष्ट, पापी दुर्य्योधनसे हमारी ओरसे कुशल पूछना, उसने सब पृथ्वीको अपने वशमें कर रक्खा है। इसके पश्चात कौरवोंमें महावीर दुष्ट पापी दुःशासनसे कहना कि पाण्डव लोग बहुत आनन्दसे हैं, इसके पश्चात कौरवोंकी शान्तिके सिवा जिसको और कुछ इच्छा नहीं है उस साधु शीलवान, बाह्लीकके पास जाकर हमारी ओरसे प्रणाम कहना। इसके पश्चात अनेक गुणोंसे भरे, न बहुत कठोर न बहुत कोमल,

सभामें खींचा, क्या यही धर्म्मका काम है? द्रौपदीके सभामें रोनेको हम क्षमा नहीं कर सकते हैं और मन क्षमा छोलवाता है, उस सभामें अनेक राजाभी बैठे थे, परन्तु भयसे कोई धर्मका वचन न कह सका, केवल विदुरही धर्म्मके अनुसार दुर्य्योधनसे विवाद करते रहे। हे सञ्जय! तुम बिना धर्म्म जानेही इस सभामें युधिष्ठिरको उपदेश करना चाहते हो? द्रौपदीने जो सभामें आकर कहा था, सो बहुत उचित और पवित्र था, द्रौपदीने उस समय पाण्डवोंका और अपना इस प्रकार उद्धार किया था, जैसे समुद्रमें डूबते हुए मनुष्यको नाव बचाती है। उसी समय बूढ़ोंके आगे सूतपुत्र कर्णने कहा था, हे द्रौपदी! हे भामिनी! अब तुझे कहीं गति नहीं है, तू दुर्य्योधनकी दासी बनके रह, तेरे पति हार गये। अब तू किसी दूसरेको पति बना। तुम जानते हो, कि कर्णके ये वचन अर्ज्जुनके हृदयमें तेज बाणके समान लगे हैं, उस घोर बाणसे अर्ज्जुनके मर्म्मस्थान कटे जाते हैं, जिस समय पाण्डवोंने वनको चलनेके लिये काले हरिणके चमड़े ओढ़े थे, उसी समय दुःशासनने यह कठोर वचन कहे थे कि नपुंसक पापी पाण्डव बहुत कालके लिये घोर नरकमें पड़े। गान्धार देशके राजा शकुनिने छलसे जुआ खेलनेके समय युधिष्ठिरसे यह कठोर वचन कहे थे, कि तेरे छोटे भाइयोंको हमने जीत लिया अब द्रौपदीको दाव पर लगाओ। हे सञ्जय! तुम तो इन सब बातोंको जानतेही हो, कि जुएके समय पाण्डवोंको कौरवोंने कैसे कैसे कठोर वचन कहे थे, इन सब प्रश्नोंके समाधान करनेको स्वयम् हमारीही इच्छा हस्तिनापुर जानेकी है। यदि तुम किसी उपायसे कौरव और पाण्डवोंमें सन्धि करा दो तो हमारे मनकी इच्छा पूरी हो, और हमारे पुण्यका फल मिले, तथा कौरव भी मरनेसे बच जायं। यदि मेरी धर्म्म भरी और नीति-भरी वाणीको कौरव लोग मानेंगे और वहां आनेसे मेरा आदर करेंगे तो उनका कल्याण होगा और जो मेरी [illegible] रहित वाणीको नहीं मानेंगे तो तुम पापी धृतराष्ट्रके पुत्रोंको युद्ध करते हुए अर्ज्जुन भीमके बाणोंसे मरा हुआ जानो। धृतरा[illegible] दुर्य्योधनने जो जुएमें हारे हुए पाण्ड[illegible] कठोर वचन कहे थे, उनको सावधान भी[illegible] हाथमें गदा लेकर स्मरण करावेंगे। [illegible] बुद्धिमान् राजा धृतराष्ट्र जड़, क्रोधी दुर्य्योधन[illegible] कर्ण बड़ी शाखा, शकुनि छोटी शाखा, दुःशासन फल और फूल हैं। मैं ब्राह्मण वेद जड़, धर्म्मात्मा युधिष्ठिर वृक्ष, अर्ज्जुन भीमसेन डाली, तथा नकुल सहदेव फल फूल हैं। राजा धृतराष्ट्र पुत्रोंके सहित और पाण्डव सिंह हैं। हे सञ्जय! वनको मत काटो और न सिंहको [illegible] निकालो। बिना सिंहके वन काटा जाता और बिना वनका सिंह मारा जाता है, [illegible] लिये सिंह वनकी और वन सिंहकी रक्षा [illegible] धर्म्म लता, धृतराष्ट्रके पुत्र और पा[illegible] शाखा है। बिना वृक्षके शाखा नहीं ब[illegible] इस लिये सन्धि करनी चाहिये। पाण्डव [illegible] युद्ध करनेको भी उपस्थित हैं, और सन्धि क[illegible]नेको भी तयार है, राजा दुर्य्योधनको जो इ[illegible] हो सो करें, विशेष इतनाही है कि महा[illegible] धार्म्मिक पाण्डव सन्धिही करना चाहते और युद्ध करनेको भी समर्थ हुए हैं। [illegible] यह सब जाकर राजा धृतराष्ट्रसे यथार्थ कहना, उनकी जो इच्छा हो सो करें।

२९ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, हे महाराज युधिष्ठिर! राजराजा युधिष्ठिर! आपका कल्याण हो मैं हस्तिनापुर जानेकी आज्ञा मांगता हूं हमने जो कुछ अनुचित कहा हो, सो आप

ा कीजियेगा, मैंने जो कुछ कहा है, सो
ने मनको इच्छारी कहा है। हे कृष्ण। हे
मसेन। हे अर्ज्जुन। हे नकुल। हे सहदेव।
ात्यकि। हे चेकितान। आप सब लोगोंका
प्राण हो, मैं आप सब लोगोंसे बिदा
ाता हूं, आप सब प्रेमकी दृष्टिसे मुझे
खये। महाराज युधिष्ठिर बोले, हे पण्डित
ञ्जय। हम तुम्हें जानेकी आज्ञा देते हैं, तुम
प्राण सहित हस्तिनापुरको जाओ, वहां
कर हमारे कल्याणका विचार करना, हम
ई पवित्रात्मा और अपना मित्र समझते हैं,
आर्य्य उत्तम दूत, मीठी वाणीवाले, शील-
ा, मनुष्योंके प्यारे और सन्तुष्ट हो, तुम
ा कहनेमें रुकते नहीं हो और कठोर
ा सुन कर क्रोध नहीं करते, तुम कठोर
ो और कड़वी बात नहीं कहते, तुम्हारी
णी धर्म्म और अर्थसे भरी हिंसारहित और
ठी है। हे सूत! तुमही हमारे प्यारे दूत
, तुम्हारे और विदुरके सिवा हमारे कल्या-
की वाणी और कौन कहेगा? हमने तुम्हें
ुत दिनपर देखा है, तुम अर्ज्जुनके प्यारे
त्र हो। हे सञ्जय। तुम हस्तिनापुरमें
ार प्रणाम करने योग्य ब्राह्मण, महा परा-
मी धर्म्मात्मा युद्ध करनेवाले क्षत्री और वनमें
हनेवाले वेद जाननेवाले महात्मा ब्राह्मणोंको
मारी ओरसे प्रणाम कहना, तथा और
ोंको भी हमारी ओरसे प्रणाम कहना।
सूत। राजा धृतराष्ट्रके पुरोहित, आचार्य्य,
ज्ञ करानेवाले तथा और भी सब महात्मा-
ओंको हमारा प्रणाम कहके कुशल पूछना।
। महा बलवान बूढ़े यशस्वी क्षत्री हस्तिना-
रमें हमारा स्मरण करते हैं, और जो शक्तिके
नुसार धर्म्म करते हैं, उनसे हमारा प्रणाम
हना। तुम कहना कि महाराज युधिष्ठिर
ुशलसे हैं, और आप लोगोंसे कुशल पूछते
, जो उस राज्यमें व्यवहार करके जीते हैं,

सबसे कुशल पूछना और जो राजा राज्यमें राज्यकी रक्षा करते हैं, उनकी भी कुशल पूछना। सब वेदोंके जाननेवाले हमारे गुरु द्रोणाचार्य्यसे हमारा बार बार प्रणाम कहना। जिन द्रोणाचार्य्यने ब्रह्मचर्य्य करके चारों चरणोंके सहित अस्त्र विद्या सीखी है, जिन्होंने प्रसन्न होकर हमको भी शस्त्रविद्या सिखाई है, उन द्रोणाचार्य्यको हमारी ओरसे प्रणाम कहना। जिसने समस्त विद्याओंको पढ़कर चार चरणोंके सहित शस्त्र विद्याको पढ़ा है, उन गन्धर्व्वपुत्रके समान पराक्रमी अश्वत्थामासे हमारी ओरसे कुशल पूछना। वेद विद्याओंके जाननेवालोंमें श्रेष्ठ महारथ शरद्वतपुत्र कृपाचार्य्यके स्थानमें जाकर हमारी ओरसे उनके चरण पकड़ लेना और कहना कि महाराज युधिष्ठिर अपने भाइयोंके सहित बहुत कुशलसे हैं। इसके पश्चात तेज, लज्जा, तप, बुद्धि, शील, विद्या, पराक्रम और बुद्धिसे भरे हुए भीष्मके पास जाना और हमारी ओरसे उनके चरणोंमें प्रणाम करके हमारा कुशल निवेदन करना। हे सञ्जय। इसके पश्चात हमारे पिता सब वीरवरोंको आज्ञामें रखनेवाले, महाबुद्धिमान अनेक वृद्धोंके सेवक महात्मा धृतराष्ट्रके पास जाकर हमारी ओरसे प्रणाम कहना और कहना कि महाराज युधिष्ठिर अपने भाइयोंके सहित रोगरहित हैं। इसके पश्चात राजा धृतराष्ट्रके बड़े बेटे मूर्ख मान्दबुद्धि दुष्ट, पापी दुर्य्योधनसे हमारी ओरसे कुशल पूछना, उसने सब पृथ्वीको अपने वशमें कर रक्खा है। इसके पश्चात कौरवोंमें महावीर दुष्ट पापी दुःशासनसे कहना कि पाण्डव लोग बहुत आनन्दसे हैं, इसके पश्चात कौरवोंको शान्तिके सिवा जिसको और कुछ इच्छा नहीं है, उस साधु, शीलवान, बाह्लिकके पास जाकर हमारी ओरसे प्रणाम कहना। इसके पश्चात अनेक गुणोंसे भरे, न बहुत कठोर न बहुत कोमल,

प्रेमसे क्रोध सहनेवाले सोमदत्तको हमारी ओरसे प्रणाम करना। इसके पश्चात पूजा पानेके योग्य महा धनुषधारी, महारथ भूरिश्रवासे हमारी ओरसे कुशल पूछना, क्योंकि वे हमारे भाई और मित्र हैं। इसके पश्चात कौरवोंमें मुख्य हमारे भाई, बेटे पोते और जो आदर पानेके योग्य हों, उन सबसे यथायोग्य कुशल पूछना। हे सूत! इसके पश्चात जो राजा दक्षिण पश्चिम और उत्तरसे पाण्डवोंके सङ्ग युद्ध करनेको आये हैं, उनसे हमारी ओरसे कुशल पूछना। इसके पश्चात शीलवान लज्जावान उत्तम कुलमें उत्पन्न हुए वसाती, शाल्वक, केकय, अम्बष्ठ, पर्व्वत और त्रिगर्त्त देशके मुख्य राजोंसे हमारी ओरसे कुशल पूछना। इसके पश्चात हाथी घोड़े और रथोंमें चढ़नेवाले तथा पैदल सेनाके सामान्य लोगोंसे हमारी ओरसे कुशल पूछना, और सबसे कहना कि पाण्डव लोग बहुत सुखी हैं। इसके पश्चात राजाके धन विभागके मन्त्री, द्वारपाल, सेनाके प्रधान; लाभ और खर्चको गिननेवाले, सदा धनकी चिन्ता करनेवाले, सबसे कुशल पूछना। इसके पश्चात जो कभी युद्ध नहीं चाहते, जो सब कौरवोंमें श्रेष्ठ और महा बुद्धिमान हैं, उन बैश्यापुत्र युयुत्सुसे हमारी ओरसे कुशल पूछना। इसके पश्चात जो सदा युद्धकी इच्छा करता है जो देवतोंसे भी दुःखसे जीतने योग्य है, जो सदा जुवेको अच्छा समझता है, जो छिपकर छल करता है, उस कर्णसे हमारी ओरसे कुशल पूछना।

इसके पश्चात पर्व्वत देशके गान्धार देशके युवा, छली, दूसरेका धन छीननेवाला, धूर्त्त, पाखण्डी शकुनीसे आदरके सहित कुशल पूछना। जो महावीर एक रथपर चढ़ करके जीतने योग्य पाण्डवोंको जीतनेका साहस है, जो भूलमें पड़े धृतराष्ट्रके पुत्रोंको अधिक भुलाना चाहता है, उस कर्णसे भी हमारी ओरसे कुशल पूछना। जो हमारे मन्त्री, भक्त, गुरु, स्वामी, माता, पिता और मित्र हैं, उन महाबुद्धिमान विदुरसे भी हमारी ओरसे कुशल पूछना। हे सञ्जय! जो गुण भरी हमारी माताके समान बूढ़ी स्त्री हैं उनको हमारी ओरसे प्रणाम करना और पूछना कि तुम लोग अपने पत्र पाण्डवोंसे प्रेम करती हो? इसके पश्चात उनसे कहना कि युधिष्ठिर अपने भाई और पुत्रोंके सहित कुशल हैं, जो धृतराष्ट्रके पुत्रोंकी स्त्री हैं, उनसे भी हमारी ओरसे कुशल पूछना, वे सब गुण होकर अपने धर्म्मसे घरोंमें रहती हैं; फिर उनसे हमारी ओरसे कहना कि तुम सब अपने ससुरोंकी सुखसे सेवा करो, और जिसमें तुम्हारे पति तुम्हारे वशमें रहें ऐसी उपाय करो। हे सञ्जय! वहां जो हमारे बेटोंकी बहू उत्तम गुणोंसे भरी और उत्तम कुलोंमें उत्पन्न हुई हैं, उन सबसे कहना कि महाराज युधिष्ठिरने तुम्हारी कुशल पूछी है। उसके पश्चात जो हमारी कन्या मिलें उन सबसे कुशल पूछकर कहना कि तुम्हारे पति तुम्हारे वशमें रहें, और तुम अपने पतियोंके वशमें रहो। इसके पश्चात उत्तम आभूषण वस्त्र और सुगन्ध धारण किये, सुन्दरी, सुख और भोगको भोगनेवाली शरीरकी छोटी और वचनोंमें बड़ी, वैश्याओंसे हमारी ओरसे कुशल पूछना। इसके पश्चात कौरवोंके दास और दासियोंसे हमारी ओरसे कुशल पूछना। इसके पश्चात अन्धे लँगड़े लूले और उन अनाथोंसे कुशल पूछना जिनका पालन दयावान धृतराष्ट्र करते है। इसके पश्चात जो हाथियोंसे अपनी अपनी आजिविका करते हैं, उनसे भी कुशल पूछना। इसके पश्चात उनसे कहना कि महाराज युधिष्ठिर पूछते हैं कि महाराज धृतराष्ट्र तुम लोगोंको अच्छी प्रकार भोजन

देते है वा नहीं? इसके पश्चात अङ्गहीन, दरिद्री और बौने आदि मनुष्योंसे कुशल पूछना और उनसे यह भी कहना कि महाराज युधिष्ठिर अपने भाइयोंके सहित कुशलसे है, और उनसे यह भी कहना कि तुम लोग थोड़ी जीविका पानेके कारण भय मत करो, यह पूर्व जन्मके पापोंका फल है, हम अपन शत्रुओंको मार कर और मित्रोंका प्रसन्नकरके शीघ्रही तुम लोगोंका पालन करेंगे। राजा दुर्य्योधनसे यह कहना कि जैसे तुम्हारे अधिकारियोंने हमारी दी हुई ब्राह्मणोंको वृत्ति नहीं छीनी ऐसेही तुम्हारे मरनेके पश्चात् तुम्हारी दी हुई वृत्ति हम भी नहीं छीनेंगे। हे तात! हे सञ्जय! इसके पश्चात् तुम अनाथ, दुर्व्वल असमर्थ मूर्ख और दरिद्रियोंसे हमारी ओरसे कुशल पूछना। इसके पश्चात् राजा दुर्य्योधनके यहा उन सबसे भी हमारी ओरसे कुशल पूछना जो अनेक देशोंसे आये है। इस प्रकार जो आता, जाता, पाहुना, वा दूत तुम्हें मिलते जायं, उन सबसे हमारी ओरसे कुशल पूछना, पीछे सबसे हमारी कुशल भी कह देना। हे सूतपुत्र! हमें यह खूब निश्चय है कि जैसे वीर दुर्य्योधनसे मिले है, वैसे वीर और पृथ्वीमें नहीं है, परन्तु सङ्गही यह भी निश्चय रक्खो कि धर्म्म नित्य है और मै शत्रुओंका मारनेके लिये धर्म्महीको अपना बल समझता हू। हे सञ्जय! इसके पश्चात तुम राजा दुर्य्योधनसे हमारी ओरसे कहना कि हम तुम्हारे शत्रु नहीं है, और मित्र होकर तुमको शिक्षा देते है, परन्तु तुम अपने हृदयमें हमको शत्रु जानते हो। हम लोग कभी वह काम नहीं करेंगे जिसमें तुम्हारी हानि हो, इसलिये इन्द्रप्रस्थका राज्य हमें देदो, अथवा घोर युद्ध करो।

३० अध्याय समाप्त।

महाराज युधिष्ठिर बोले, हे सञ्जय! बालक बूढ़े, साधु, दुष्ट, बलवान सबको ईश्वर अपने वशमें रखता है, ईश्वर प्रारब्धके अनुसार पण्डितको मूर्ख और मूर्खको पण्डित बना देता है, यही सब वचन तुम महाराज धृतराष्ट्रके कहना। हे गालवगणपुत्र! सेना इकट्ठी करते हुए और सम्मति करते हुए प्रसन्न राजा धृतराष्ट्रसे कहना कि ईश्वर जो चाहेगा, सो करेगा। तुम जिस समय कौरवोंकी सभामें पहुंचो, उस समय कौरवोंके बीचमें बैठे महा बलवान धृतराष्ट्रके चरण पकड़कर हमारी ओरसे प्रणाम करना और कहना कि हे महाराज! आपहीके पराक्रमसे पाण्डव लोग सुखसे आजतक जीते है, हे शत्रुनाशन! आपहीकी कृपासे बालक पाण्डवोंको राज्य मिला था, आप उनको राज्यपर बिठला कर अब उनके नाशका समय न देखिये। इसके पश्चात हमारे पितामहसे प्रणाम करके कहना कि हे पितामह! आपने नाश होते कुरुवंशका उद्धार किया था, अब प्रायः ऐसा उपाय फिर कीजिये, जिससे आपके पोते प्रेमके सहित जीते रहे। इसके पश्चात कौरवोंके मन्त्री विदुरसे कहना, कि हे साधो! आप युधिष्ठिरका कल्याण चाहते है, ऐसा उपाय कीजिये जिससे युद्ध न हो। इसके पश्चात महा क्रोधी राजपुत्र दुर्य्योधनसे कहना कि तुमने जो कौरवोंके बीचमें बैठकर पापरहित द्रौपदीको ओर बारबार बुरीदृष्टिसे देखा था, सो सब तुम्हारा अपराध मैं क्षमा करे देता हू, तुम कौरवोंका नाश मत करो, तुमने जो काले हरिनका चमड़ा पहनाकर पाण्डवोंको बनको भेजा था, और जो तुमने पहले पाण्डवोंको अनेक दुःख दिये थे, जिनको सब कुरुवंशी जानते है, पाण्डव लोग बलवान और समर्थ होकर भी उन सब अपराधोंको क्षमाकर देते हैं, तुम कुरुवंशका नाश मत

करो। तुम्हारी आज्ञासे जो दुःशासनने द्रौपदीके बाल खींचे थे सो पाण्डवोंने क्षमा किया। हे शत्रुनाशन पुरुषसिंह! तुम अबभी हमारा राज्य हमको दे दो, तुम अपनी बुद्धिको दूसरेके धनसे हटा लो और लोभ मत करो। हे राजेन्द्र! ऐसा करनेसे शान्ति होगी और हमारा तुम्हारा प्रेम बना रहेगा। अथवा शान्ति चाहनेवाले हमको राज्यका एकही भाग दे दो, अथवा पांचही गांव देदो, परन्तु ये पांच गांव अविस्थल, वृकस्थल, माकन्दी, और वारणावत और पांचवां जो तुम्हारी इच्छा हो सोही दे दो। हे दुर्य्योधन! हम पांच भाइयोंको पांच गांव दो, ऐसा करनेसे शान्ति होगी और कुरुकुलका कल्याण होगा। भाई भाईसे मिल जाय, पिता पुत्रसे मिल जाय, सृञ्जय और पाञ्चाल प्रसन्न होकर अपने अपने देशोंको चले जाय। हमारी यही इच्छा है, कि कौरव और पाञ्चालोंका नाश न हो। हे सञ्जय! हमारी इच्छा यह है कि सृञ्जय और पाण्डवोंका नाश न हो। हे तात! ये सब प्रसन्नता पूर्व्वक अपना अपना राज्य करें, हम कदापि युद्ध करना नहीं चाहते, इस लिये यह चाहे आपत्ति शान्ति हो क्योंकि इससे धर्म्म और अर्थका नाश होता है।

२१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! महाराज युधिष्ठिरकी आज्ञा ले और महाराज धृतराष्ट्रके वचन पूरे कर सञ्जय हस्तिनापुरको चले। नगरमें जाकर सञ्जय रनवासके द्वारपर पहुंचे और द्वारपालसे बोले, हे द्वारपाल! तुम जाकर महाराजसे कहो कि विराटनगरसे सञ्जय लौट आये। हे द्वारपाल! यदि महाराज जागते हो तो तुम हमारे आनेका समचार कहना, हमको उनसे बहुत आवश्यक बात कहनी है, इस लिये तुम जलदी कहकर लौटो। सञ्जयके वचन सुन द्वारपाल महाराजके पास जाकर कहने लगा, हे महाराज! हे पृथ्वीनाथ! द्वारपर खड़े सञ्जय आपको प्रणाम करते है, वे अभी पाण्डवोंके पाससे लौटे है और महाराजका दर्शन करना चाहते है, मुझे जो आज्ञा हो सो करूं। महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे द्वारपाल! तुम सञ्जयसे हमारी कुशल कहो और सत्कार सहित उनको भीतर लाओ, मैं उनको कभी भी भीतर आनेसे रोकता नहीं, तब द्वारपर क्यों खड़े है?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! इसके पश्चात सञ्जय महावीर क्षत्रियोंसे रक्षित महाराजके स्थानमें गये। उन्होंने सिंहासनपर बैठे विचित्रवीर्य्यपुत्र महाराज धृतराष्ट्रको देखा पश्चात उन्होंने हाथ जोड़कर प्रणाम किया और कहने लगे, सञ्जय बोले, हे महाराज! हे पृथ्वीनाथ! मैं सञ्जय हूं, आपके चरणोंमें प्रणाम करता हूं। मैं पाण्डवोंके पाससे लौट आया, हे पृथ्वीनाथ! पाण्डवपुत्र युधिष्ठिरने आपको प्रणाम करके कुशल पूछी है। महाराज युधिष्ठिरने आपके पुत्र, पौत्र, मित्र, मन्त्री और नौकरोंकी कुशल पूछी है। महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! हम तुमको प्रसन्न करके पूछते है, कहो कुन्तीपुत्र महाराज युधिष्ठिर पुत्र, मन्त्री और भाइयोंके सहित कुशलसे है? सञ्जय बोले, महाराज युधिष्ठिर निर्णय जाननेवाले, महात्मा, शीलवान, महा पण्डित और बुद्धिमान है। हे भारत! युधिष्ठिर धर्म्मसे दयाको और धन इकट्ठा करनेसे धर्म्मको अधिक समझते है। वे अपने प्यारे सुख अधर्म्म और प्रयोजन रहित कामोंको नहीं करते। वह जानते है कि जैसे सूतमें बंधी काठपुतली नचानेवालेके वशमें रहती है, ऐसे मनुष्य भी किसी दूसरेके वशमें रहते है। हमने युधिष्ठिरको ऐसा निश्चय देख जाना

लिया कि प्रारब्ध बड़ा बलवान है। आपके कर्म्मके दोष और न सहने योग्य पापके उदयको देखकर हमें यह भी निश्चय हो गया है, कि जब तक वैर करनेवाले मनुष्यको शत्रु छोड़ता है, तभीतक उसकी प्रशंसा होती है। वीर युधिष्ठिर अधर्म्मको सांपकी असमर्थ केंचुलीके समान छोड़कर, आपसे सन्धि करना चाहते हैं, उनका आपसे कुछ वैरभी नहीं है। हे महाराज! आप अपने कर्म्मोंको सुनिये। आपका कर्म्म धर्म्म और प्रर्थसे बाहर है, इसको कोई साधु नहीं कह सकता है, आपने जो कर्म्म किया है, वह इस लोक और परलोकमें दुःख देनेवाला है, आप अपने पुत्रोंके वशमें होकर पाण्डवोंके सङ्ग जो अन्याय करते हैं, सो महा अधर्म्म है; आप भरतकुलमें श्रेष्ठ हैं, इस लिये आपको यह कर्म्म नहीं करना चाहिये। यह कर्म्म, मूर्ख, नीच कुलमें उत्पन्न हुए, दयारहित, वैरी, क्षत्रियोंके धर्म्मको न जाननेवाले, मूर्ख और दुर्व्वलको करना चाहिये। क्योंकि ऐसेही मनुष्य आपत्तिमें पड़ने योग्य होते हैं। उत्तम कुलमें उत्पन्न हुए, बलवान, यशस्वी पण्डित, सुखसे जीनेवाले, जितेन्द्रिय धर्म्म और अधर्म्मको जाननेवाले महात्मा ऐसे कर्म्मको नहीं करते, प्रारब्धहीसे ईश्वरने यह सब गुण आपको दिये हैं, परन्तु न जाने आप ऐसा अधर्म्म क्यों करते हैं? आपके समान सब धर्म्मोंको जाननेवाले बुद्धिमान भीष्मादिक मन्त्रियोंसे युक्त आप अपने मन्त्रियोंको सम्मतिके विरुद्ध अधर्म्म कैसे करते हैं? आपके सब मन्त्री सब विषयोंके जाननेवाले हैं, वे आपको सदा सब कामोंमें उत्तम सम्मति देते हैं, उन्होंने यह निश्चयकर लिया है, कि पाण्डवोंको राज्य न देनेसे अवश्य कुरुकुलका नाश हो जायगा। यदि बिना समयमें युधिष्ठिर कौरवोंके नाशकी इच्छा करते तो यह पाप उन्हींके शिर रहता, परन्तु उन्होंने यह सब दोष आपहीके शिर रख दिया है, इससे जगतमें आपकी बहुत निन्दा होगी। हे महाराज! अर्ज्जुन इसी शरीरसे स्वर्गसे गया और फिर जगतमें लौट आया, इसमें प्रारब्धको छोड़कर और किसे बलवान कहेंगे। स्वर्गमें जानेहीसे सब लोग अर्ज्जुनको मानते हैं, इससे जान पड़ता है कि प्रारब्ध बड़ा बलवान है; यही पाण्डवोंके तेज और प्रारब्धके कर्म्मको देखके निश्चय होता है कि हानि और लाभ अनित्य है, राजा बलि अपनी प्रारब्धको किसी प्रकार नाश नहीं सके, अर्थात सौ यज्ञ करनेपर भी उन्हें पातालमें जाना पड़ा, इससे हमको निश्चय होता है कि समय बड़ा बलवान है। जन्तुओंके आंख, कान, जीभ, नाक और खालही ज्ञानके स्थान हैं, इस लिये सुखी बुद्धिमानको उचित है कि इन पांचों इन्द्रियोंको इनके विषयोंसे रोके, अर्थात इनको किसी बुरे विषयोंमें न जाने दे। ऐसा जान पड़ता है कि केवल अपनाही कर्म्म अपनेको फलदायक नहीं होता, क्योंकि लड़काईमें माता और पिताके दिये हुए अन्नसे लड़का बढ़ता है, वहां अपना कर्म्म जन्मका हेतु है। हे राजन्! प्रिय, अप्रिय, सुख, दुःख, निन्दा और प्रशंसा मनुष्यको अपने कर्म्मसे प्राप्त होते हैं, जो इन्हें मानता है, उस उत्तम वृत्तिवालेको प्रशंसा महात्मा करते हैं। यदि उससे कोई अपराध हो जाय तो उसीको निन्दा होने लगती है, इस लिये हम आपकी निन्दा करते हैं, क्योंकि आपका किया हुआ विरोध कुरुवंशका नाश करेगा। यह विरोध आपहीके कर्म्मसे हुआ है, इस लिये कौरवोंको इस प्रकार भङ्ग करेगा। हे राजन्! आप अकेले होने अपने लोभी पुत्रके वशमें होकर जुएके समयमें शान्ति न करी। अब उसके फलको भोगिये। हे कुरुनन्दन! हे कौरवेन्द्र!

आपने महात्माओंसे बैर और मूर्खोंसे प्रीति करी है, इस लिये और दुर्ब्बल होनेके कारण इस समस्त पृथ्वीका राज्य आप नहीं कर सकते है। हे पुरुषसिंह। मैं रथमें बैठके चलनेमें बहुत थक गया हूं, इस लिये मुझे घरमें जाकर सोनेकी आज्ञा दीजिये, प्रातःकाल जब सब कौरव सभामें बैठेंगे, तब महाराज युधिष्ठिरके बचन सुनाऊंगा।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे पुत्र! हम तुम्हें घर जानेकी आज्ञा देते हैं, तुम घरमें जाकर सोओ; प्रातःकाल हम सब कौरवोंके सहित सभामें बैठकर युधिष्ठिरके बचन सुनेंगे।

३२ अध्याय और सञ्जययान पर्व्वसमाप्त।

अथ प्रजागर पर्व्व।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। सञ्जयके जानेके पश्चात महाबुद्धिमान महाराज धृतराष्ट्रने द्वारपालसे कहा, हम विदुरको देखना चाहते हैं, तुम शीघ्र उनको बुला लाओ, देर मत करो। राजाके बचन सुनतेही द्वारपाल विदुरके पास गया और कहने लगा, हे महा पण्डित! महाराजाधिराज आपको देखना चाहते हैं। द्वारपालके बचन सुन विदुर शीघ्रतासे राजाके द्वारपर पहुंचे और द्वारपालसे कहा कि महाराजसे हमारे आनेका निवेदन करो। द्वारपाल उनकी आज्ञा सुन महाराजके पास गया और कहने लगा, हे राजेन्द्र! आपकी आज्ञानुसार विदुर आये हैं, वह आपके चरणोंका दर्शन करना चाहते है, जैसी आज्ञा हो वैसा किया जाय।

महाराज बोले, तुम महा बुद्धिमान दूरदर्शी विदुरको शीघ्र हमारे पास ले आओ, क्योंकि हम उनके देखनेमें कुछ बिलम्ब करना नहीं चाहते।

द्वारपाल विदुरके पास आकर बोला, आप बुद्धिमान महाराजकी रनिवासमें जाइये। महाराजने कहा है कि हम आपके दर्शनके लिये कुछ विलम्ब नहीं चाहते।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, द्वारपालके बचन सुन विदुर भीतर चले गये और चिन्ता सहित राजाको बैठे देख हाथ जोड़कर बोले, हे महाराज। मैं विदुर आपकी आज्ञासे आपके पास आया हूं, जो मेरे योग्य काम हो, उसकी मुझे आज्ञा कीजिये।

धृतराष्ट्र बोले, हे विदुर! सञ्जय पाण्डवोंके पाससे लौट आया, वह मेरी निन्दा करके अभी अपने घरको गया है, प्रातःकाल सभामें युधिष्ठिरके बचन सुनावेगा। मैंने अभी तक कुरुकुल श्रेष्ठ युधिष्ठिरके बचन नहीं सु[ने] हैं; यही चिन्ता मेरे शरीरको जलाये दे[ती] है, इसीसे मुझे निद्रा भी नहीं आई, जा[ग]नेसे भी हृदय जला जाता है, तुम धर्म औ[र] अर्थके जाननेवाले हो, इससे जो हमा[रे] कल्याणकी बात हो सो कहो। जिस समय सञ्जय पाण्डवोंके पाससे आया, उसी समय मेरा मन शान्त नहीं होता। मेरी सब इन्[द्रियां] नष्ट होगई है, और मुझे यह चिन्ता हो ग[ई] है कि न जाने प्रातःकाल सञ्जय क्या कहेगा।

विदुर बोले, बलवान शत्रुसे अभियु[क्त] दुर्ब्बल, सामग्री रहित, लुटे हुए, काम[ी] और चोरको निद्रा नहीं आती। [हे] महाराज! कहिये आपने इन मह[ा] दोषोंमेंसे कोई दोष तो नहीं किया? कहिं[ये] आप किसी दूसरेका धन छीननेका लाभ कर दुःख तो नहीं करते?

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे विदुर! तु[म] राजऋषिकुलमें बड़े बुद्धिमान और महाप्रा[ज्ञ] उत्पन्न हुए हो, इस लिये हम तुम्हारे ध[र्म] और कल्याणसे भरे बचन सुनना चाहते हैं।

विदुर बोले, हे धृतराष्ट्र। जो प्रशंसनी[य] कर्म्म करते है, निन्दित कर्म्म नहीं करते तथ[ा] अनास्तिक, और श्रद्धालु है ऐसे महाराज मुधि

ष्ठिर सब राजलक्षणोंसे भरे और तीन लोकके स्वामी होनेके योग्य है; आपको उचित था कि सदा उनकी प्रार्थना करते रहें, परन्तु आपने उन्हेंही वनको निकाल दिया। आपने परम धर्म्मात्मा और सब शास्त्रोंके पण्डित होकर भी अन्धे होनेके कारण राज्य नहीं पाया, तथापि पाण्डवोंका राज्य छीन लिया, इस लिये आप सत्यही अन्धे हैं। हे राजेन्द्र! महाराज युधिष्ठिर दयावान, साधु, धर्म्मात्मा, सत्यवादी और महाबली होनेके कारण तथा आपको अपना पिता समझकर आपके सब अपराधोंको क्षमा कर रहे हैं। आप दुर्य्योधन, शकुनि, कर्ण और दुःशासनको समर्थ बनाकर किस लिये अपने कल्याणकी इच्छा करते हैं? जिसको शास्त्र शक्ति, वैराग्य और धर्म्म यथार्थ भावसे न चलने दे, उसे पण्डित मूर्ख कहते हैं, अर्थात जो पण्डित, वैराग्यवान, धर्म्मात्मा और शक्तिमान होकर धर्म्मको छोड़ दे वही मूर्ख है। जो उत्तम कर्म्मोंको करे, नीच कर्म्मोंको त्यागे, ईश्वरको सत्य माने और सबमें श्रद्धा करे वही पण्डित कहाता है। जो क्रोध, आनन्द, अभिमान और लज्जासे धर्म्मको न छोड़े तथा आदरयोग्य मनुष्यका आदर करे, वही पण्डित कहाता हैं। जिसके उपाय और सम्मतिको कोई न जान सके, सब कोई किये हुए कार्य्यहीको देखें वही पण्डित कहाता है। जिसके कार्य्यको जाडा, गर्मी, डर, काम, धन और निर्धनता नाश न कर सके वही पण्डित कहाता है। जिसकी सारी बुद्धि धर्म्म और अर्थसे भरी हो, जो कामको छोड़कर अर्थको उत्पन्न करे वही पण्डित कहाता है। पण्डित लोग शक्तिके अनुसार करनेकी इच्छा करते है, और करनेकी इच्छाके समान कार्य्य करके दिखा देते है, और किसीका निरादर नहीं करते। पण्डितोंकी यही पहचान है कि अर्थको शीघ्र समझ लें, विषयोंको बडी देरतक सुनते रहैं, खूब समझकर कार्य्य करते रहें; वे कदापि काम और क्रोधसे कोई कार्य्य नहीं करते और बिना पूछे बोलते नहीं। पण्डित लोग प्राप्त न होने योग्य वस्तुकी इच्छा नहीं करते, नष्ट हुएका सोच नहीं करते और आपत्तिमेंभी नहीं घबड़ाते। जो निश्चय करके कार्य्यको करता है, बिना समाप्त किये कामको नहीं छोड़ता, जो किसी समय अपने कार्य्यसे नहीं सकता; जो अपनी इन्द्रियोंको अपने वशमें रखता है, वही पण्डित कहाता है। हे भरत-कुलसिंह! पण्डित लोग अच्छे कर्म्म करते हैं, सदा धन प्राप्तिका उपाय करते हैं, और अपने हितको नहीं छोड़ते। जो आदरसे प्रसन्न हो और निरादरसे क्रोध न करे, जो गङ्गाके समान गम्भीर हो वही पण्डित कहाता है। जिसकी बुद्धि विद्याके अनुसार और विद्या बुद्धिके अनुसार हो और जो किसी मर्य्यादाको न तोड़े, वही पण्डित पदवीको प्राप्त कर सकता है। जो कहनेमें न रुके, उत्तम कथा जानता हो, तर्क वितर्क कर सकता हो, जिसकी बुद्धि उसी समय अर्थोंको समझ ले, जो पथ देखतेही कह सके उसे पण्डित कहते है। जो विना पढ़ा, अभिमानी, और दरिद्र होकर ऊंची इच्छावाला हो, जो नीच कर्म्मोंसे धन उत्पन्न करे, वही मूर्ख कहाता है। जो अपने प्रयोजनको छोड़ दूसरेके प्रयोजनको सिद्ध करता है, जो समर्थ होकर भी मित्रकी सहायता नहीं करता, और असमर्थ होकर सहायता करना चाहता है, वही मूर्ख कहाता है। जो अयोग्य वस्तुओंकी इच्छा करे, योग्य वस्तुओंको छोड़े, और जो बलवानसे शत्रुता करे, वही मूर्ख कहाता है। जो शत्रुको मित्र बनावे, मित्रको शत्रु बनावै, मित्रकी हानि करे, और बुरे कर्म्म करे वही मूर्ख

कहाता है। हे भरतकुलसिंह। जो सेवकोंके द्वारा कार्य्य करे, आप काम करनेमें सन्देह करे और शीघ्र करने योग्य काममें देर करे, वही मूर्ख कहाता है। जो पितरोंका श्राद्ध न करे, देवतोंकी पूजा न करे, और अच्छे मित्रसे प्रेम न करे, वही मूर्ख कहाता है। जो बिना बुलाये जाय, बिना बूझे बके और विश्वास न करने योग्य मनुष्यका विश्वास करे, वही मूर्ख कहाता है। जो दूसरेको दोष दे और आप वैसेही बुरे कर्म्म करे, और जो बिना प्रयोजन क्रोध करे, वह महामूर्ख कहाता है। जो धर्म्म और अर्थके बिना अपनेको बलवान समझके बुरे कर्म्मोंसे न प्राप्त होने योग्य वस्तुकी इच्छा करे वह महामूर्ख कहाता है। जो न आज्ञा करने योग्य मनुष्यपर आज्ञा करे, जो राजाके बिना रनिवासमें जाय और जो उसकी सेवा करे, वह महामूर्ख कहाता है। जो धन या बहुत बिद्याको प्राप्त करके अभिमानरहित होकर घूमता है, वही पण्डित कहाता है।

हे राजन्! एकेलाही धनको भोगनेवाला, अकेलाही सुन्दर घरमें रहनेवाला जो सेवकोंको बिना दिये भोजन कर ले, उसके समान दयारहित और कौन होगा? अकेलाही पाप करता है, अकेलाही फल भोगता है, उसके सङ्गी सब छूट जाते हैं और कर्त्ताही दोषमें फंसता है। धनुषधारीका बाण एकहीको मारता है, कभी नहीं भी मारता है, परन्तु बुद्धिमानकी बुद्धि राजाके सहित राज्यका नाश कर देती है। हे राजन्! आप अपनी एक बुद्धिसे मित्र और शत्रुओंका निश्चय कीजिये, साम, दान, दण्ड और भेद इन चार यत्नोंसे मित्र उदासीन और शत्रुओंको जीतकर सन्धि और विग्रह आदि राज्यके छः अङ्गको जानकर स्त्री, जुआ, आखेट, मद्यपान, कठोर वचन, महादण्ड, और प्रयोजन दूषण इन सात बुरे कामोंको छोड़कर सुखी होइये। घोर विष एकहीका नाश करता है, शस्त्रसे एकही मनुष्य मरता है, परन्तु राजाकी बुरी बुद्धि राज्यके समेत राजाका नाश करती है। एकला स्वादिष्ट भोजन न करे, एकला विषयोंको न विचारे, एकला मार्गमें न चले, और सबके सोने पर एकला न जागता रहे। हे राजेन्द्र! ईश्वर एक है, उसको तुम नहीं जानते हो, वह दुःखों से इस प्रकार उद्धार करता है, जैसे समुद्रसे नाव। क्षमावान मनुष्यको सब कोई असमर्थ जान लेते हैं, यही क्षमावानमें एक दोष है, दूसरा नहीं। इस दोषसे क्षमावानका निरादर नहीं करना चाहिये क्योंकि क्षमाही परम बल है, क्षमा समर्थोंका गुण और असमर्थ मनुष्योंका भूषण है। क्षमासे सबको व[illegible] कर सकता है, ऐसा कर्म्म कोई नहीं जो क्षम[illegible] न सिद्ध हो सके, जिसके हाथमें शान्ति रू[illegible] खड्ग है, उसका दुष्ट मनुष्य क्या कर सक[illegible] है? जहां तिनका नहीं है, वहां गिरी आ[illegible] आपही शान्त हो जाती है। क्रोधी मनु[illegible] अपने दोषोंसे आपही दुःखोंमें पड़ता है। अके[illegible] धर्म्मही कल्याणदायक है, अकेली क्षमाही पर[illegible] शान्ति है, अकेली विद्याही परम सन्तोष और किसीकी हिंसा न करनाही परम सुख है विरोध न करनेवाले राजाको और परदेश जानेवाले ब्राह्मणको पृथ्वी इस प्रका[illegible] खा जाती है, जैसे बिलमें आये पदार्थो[illegible] सर्प! मनुष्य मीठी वाणी और महात्म[illegible] ओसे प्रेम इनही दो कर्म्मोंके करनेसे इ[illegible] लोकमें प्रतिष्ठाको प्राप्त करता है। हे पुरु[illegible] व्याघ्र! चाहे हुए मनुष्यको चाहनेवाली स्त्री और पूजा किये हुएकी पूजा करनेवाल[illegible] मनुष्य यह दोनों बिना विचारे करनेवाले मू[illegible] है। जो दरिद्र होकर प्राप्त न होने योग्य वस्तुकी इच्छा करे, और जो असमर्थ होकर क्रो[illegible] करे, ये दोनो शरीरनाशक तेज कांटे हैं। जो गृहस्थ होकर कुछ कर्म्म न करे और जो

संन्यासी होकर काम करे, इन दोनों विरुद्ध कर्म्मोंको करनेवालोंकी प्रतिष्ठा नहीं होती। हे राजेन्द्र! जो समर्थ होकर क्षमा करे और दरिद्र होकर दान करे, ये दोनों स्वर्गके ऊपर रहते हैं। न्यायसे आये हुए धनका दोही प्रकारसे नाश होता है, अर्थात अयोग्यको देने और योग्यको न देनेसे। जो धनी होकर दान न करे और दरिद्र होकर तप न करे, इन दोनोंके गलेमें भारी शिला बंधवाकर पानीमें डुबा देना चाहिये। हे पुरुषव्याघ्र! जो संन्यासी योग करे, और जो क्षत्री युद्धमें मरे, ये दोनो सूर्य्यमण्डलको भेदकर स्वर्गको जाते हैं।

हे राजन्! उत्तम मध्यम और हीन येही वेद जाननेवाले पण्डितोंने तीन प्रकार न्याय कहे हैं। उत्तम मध्यम और अधम यही तीन प्रकारके मनुष्य होते हैं, इनको इनके अनुसार उत्तम मध्यम और अधम काम देने चाहिये। हे राजन्! स्त्री, दास और पुत्र ये तीनों निर्धन कहाते हैं, ये जो वस्तु प्राप्त करें वह सब उनके स्वामीकी है। दूसरेका धन छीन लेना, दूसरोंकी स्त्रियोंसे अधर्म करना, अपने मित्रोंको छोड़ देना, इनही तीन दोषोंसे मनुष्योंका नाश होता है। काम क्रोध और लोभ येही तीनों नरकके द्वार हैं और इन्हीं तीनोंसे मनुष्यका सर्व्वनाश होता है, इस लिये इन तीनोंको छोड़ देना चाहिये। हे भारत! वरदान पाना, राज्य पाना, पुत्रका जन्म होना और शत्रुको दुःखसे छुड़ाना, यह चारो सुख बराबरही हैं। भक्त, सेवक और मैं आपहीका हूं ऐसा कहते हुए मनुष्यको महादुःखके समय मेंभी नहीं छोड़ना चाहिये। पण्डित और बलवान राजा मूर्ख, आलसी, शीघ्र प्रसन्न होनेवाले और स्तुति करनेवालोंसे कभी सम्मति न करे। हे राजन्! ये चारो आपके घरमें सदा बसें। धनवृद्ध और बूढ़े जातिवाले, अभिमान-रहित अवसन्न कुलीन, निःसन्तान बहिन और दरिद्र मित्र, इन चारोंके रहनेसे धर्म्म होता है। हे राजेन्द्र! देवतोंके यहां जानेकी इच्छा, बुद्धिमानोंकी शक्ति, पण्डितोंकी विनय करनी और पापियोंका नाश करना इन चार कर्म्मोंको वृहस्पतिने इन्द्रसे कहा था, इनके करनेसे उसी समय फल मिलता है। अग्निहोत्र, मौन, पढना और यज्ञ करना ये चारों कर्म्म सुखदायक हैं, परन्तु अच्छी प्रकार न करनेसे इन चारोंहीसे दुःख होता है। हे भरतकुलसिंह! पिता, माता, अग्नि, अपना शरीर और गुरु ये पांच अग्नि प्रसिद्ध हैं, इन पांचो अग्नियोंकी सदाही मनुष्यको सेवा करनी उचित है। देवता, पितर, मनुष्य, भिखारी और अतिथि इन पांचोंकी पूजा करनेसे मनुष्यको लोकमें यश मिलता है। मित्र, शत्रु मध्यस्थ, गुरु और सेवक, ये पांचों जहां तुम जाओगे तहां तुम्हारे सङ्गही जायंगे। मनुष्यकी पांचो इन्द्रियोंमें एकही छेद है, उस छेदसे मनुष्यकी बुद्धि इस प्रकार नष्ट होती है, जैसे फटी हुई मसकसे जल। नींद, जमुहाई, डर, क्रोध, आलस्य, और दीर्घसूत्रता अर्थात ढीलापन ये छः दोष हैं, इन्हें सदाही मनुष्यको छोड़ना चाहिये। न कहनेवाले गुरु, मूर्ख पुरोहित, न रक्षा करनेवाले राजा, कड़वी बात कहनेवाली स्त्री, गावकी इच्छावाले अहीर और बनकी इच्छा करनेवाले नाईको मनुष्य इस प्रकार छोड़ दे, जैसे समुद्रमें चलनेवाले टूटीनावको छोड़ देते हैं। सत्य, दान, निरालस्य, किसीका द्वेष न करना, क्षमा और धारणा इन छओं गुणोंको मनुष्य कभी न छोड़े। धन प्राप्ति, सदा रोगरहित रहना, प्यारी स्त्री, वशमें रहनेवाला पुत्र और धन देनवाली विद्या येही इस लोकके छः सुख हैं, जो इन छहोंको सदा करता है, उस जितेन्द्रियको

सदा सुख होते हैं और वह कभी पापोंको नहीं करता। हे राजेन्द्र! चोर असावधानोंसे वैद्य रोगियोंसे, स्त्री कामियोंसे, पुरोहित यजमानोंसे और पण्डित मूर्खसे जीविका पाते है। गौ, सेवा, खेती, स्त्री, विद्या, और मूर्खोंको सङ्गति ये छहों थोड़ी देर भी ध्यान नहीं देनेसे नष्ट हो जाते हैं। पढ़े हुए शिष्य गुरुको, विवाह किये हुए पुत्र माताको, कामसे रहित मनुष्य स्त्रीको, काम सिद्ध हुए मनुष्य नावको और निरोगी वैद्यको, ये छहो मनुष्य उपकारियोंको छोड देते हैं। हे राजन्! रोगरहित रहना किसोका ऋणी न होना, परदेशमें जाना पण्डितोंका सङ्ग करना, अपनी वृत्तिसे जीविका करनी और निर्भय होकर रहना, इस लोकके येही छः सुख है। दूसरेके सुखको डाह करनेवाला, सदा दयावान, असन्तोषी, क्रोधी, सदा शङ्का करनेवाला और जो पराये भाग्यसे जीते हैं, ये छओं सदा दुःखी रहते हैं। स्त्री, जुआ, आखेट, मद्यपान, कठोर वचन, बहुत दण्ड देना और प्रयोजनोंका नाश करना इन आठ दोषोंको राजाको सदा छोड़ना चाहिये, इनसे बहुत दुःख होते हैं, और वश सहित राजाका नाशभी हो जाता है। ब्राह्मणोंका वैर, ब्राह्मणोंका धन लेना, ब्राह्मणोंकी निन्दा करनी, ब्राह्मणोंकी प्रशंसा न करनी, यज्ञादिकोंमें ब्राह्मणोंको न बुलाना और भिक्षाभाजन ब्राह्मणोंका निरादर करना, नाश होनेवाले मनुष्यको पहले येही दोष होते हैं, बुद्धिमानको उचित है, कि इन आठोंको छोड़ दे। समयपर मीठे वचन कहना, जिस वस्तुको इच्छा हो उसको प्राप्त करना और स्थानमें पूजा पाना, ये आठ गुण मनुष्यको प्रकाशित करते है। बुद्धि, उत्तम कुलमें जन्म, इन्द्री जीतना, पराक्रम, विद्या, थोड़ा वचन कहना, शक्तिके अनुसार दान और उपकार करनेवालेको मानना, येही आठ गुण हैं। इस

शरीर-घरमें नाक, कान, आंख, जीभ, चम, अहङ्कार, बुद्धि, मन और स्थूल शरीर येही नवद्वार है। अविद्या, काम, और कर्म करना येही तीन खम्भे है। शब्द, स्पर्श, रस, ग और रूप येही पाचो साची हैं, जीव इ रहनेवाला है, जो विद्वान इसको जानता वही पण्डित है। हे धृतराष्ट्र! म मद्य आदि पोनेवाला, उन्मत्त, अनेक का करनेसे असावधान, पागल, थका हु क्रोधी, शीघ्रता करनेवाला, लोभी, डरपो और कामी, ये दस मनुष्य धर्मको न जानते, इस लिये बुद्धिमान पण्डित इन सङ्गति नहो करते है। इसी स्थानपर राज राज सुधन्वाने जा कुछ पुत्रके निमित्त क सो कहने याग्य है। जो राजा काम औ क्रोधको छोड़कर याग्य मनुष्यको धन दे है, जो सब विषयोंके विशेष अर्थको जान है, और जा अपने कामको शीघ्र करता उसको सब जगत प्रमाण मानता है। विश्वास योग्य मनुष्यको जानता है, दोषीव दण्ड देता है, जो कामके प्रमाण और क्षमाव जानता है, उसो राजाको समस्त लक्ष्मी मिल है। जो किसीको दुर्ब्बल नहीं जानता, बुद्धि और युक्तिके सहित शत्रुकोभी सं करता है; जो बलवानसे वैर नहीं करत और जो समय पर अपना बल दिखाता वहो पुरुष वीर कहाता है, जो बुरे स्थान प जाकर नहीं डरता, जो सावधान होक उद्योग करता है, जो महात्मा समयपर दु सहता है, वहो महात्मा कठिन कार्य्योंको भ सिद्ध कर सकता है और वहो शत्रुओंको जी सकता है। जो निरर्थक काम नहीं करत है, मनुष्योंको घरसे नहीं निकालता, न पापि योंसे सन्धि करता, दूसरेको स्त्रियोंसे अधर्म नहीं करता, छल, चोरी, चुगली और मद आदिको सेवा नहो करता, वह सदा सुख

रहता है। जो क्रोधसे धर्म्म, अर्थ और कामको नहीं करता और केवल सराशको ओर देखता है, जो मित्रोंके सङ्ग विवाद नहीं करता और जो निरादर पाकर दुःखित नहीं होता, वही पण्डित कहाता है। जो किसीको उन्नतिसे डाह नहीं करता, जो किसीके ऊपर कृपा नहीं करता, जो दुर्व्बल होकर अपने विरुद्ध विषयको सोचता है, जो बहुत नहीं बोलता और जो विवाद क्षमा करता है, जगतमें उसी मनुष्यको प्रशंसा होती है। जो कभी दुष्ट मनुष्यके वेषको न धारण करे जो अपने पराक्रमके भरोसे शत्रुओंसे युद्ध न करे, किञ्चित क्रोधसे कड़वे वचन न कहे,ऐसा मनुष्य सदा सबका प्यारा बना रहता है। जो कभी शान्त मनुष्योंसे बैर न बढ़ावे, कभी अभिमान न करे, कभी नीचा न हो, हम कुछ नहीं है, ऐसा समझकर बुरा काम न करे, ऐसे मनुष्यको आर्य्य लोगभी आर्य्य कहते हैं। जो अपने सुखसे प्रसन्न नहीं होता, दूसरेके दुःखसे भी प्रसन्न नहीं होता, जो देकर पछताय नहीं उसी महात्माको आर्य्य लोग आर्य्य कहते हैं। जो देश, समय और जातिके धर्म्मोंको जानता है, वही पण्डित सभाकी शोभाको बढ़ाता है, वह जहां जाकर बैठता है, वहीं महाजनोंका स्वामी बनता है। बल, भ्रम, मत्सर (चुगली) पापका कर्म्म, राजाका द्वेष, बैर, मतवाले और पागलसे विवाद, इन सब कर्म्मोंको पण्डितको छोड़ देना चाहिये। दान, होम, देवताओंकी पूजा, मङ्गलके कार्य्य, प्रायश्चित्त, अनेक प्रकार लोक विवाद, इन सब कर्म्मोंको जो मनुष्य करता है, उसको देवता भी प्रशंसा करते हैं। जो अपने तुल्य मनुष्यसे विवाह प्रीति और वार्त्तालाप करता है, वही बुद्धिमान कहाता है, जो अपनेसे अधिक गुणवाले पण्डितको सब कामोंमें अगाड़ी रखता है, उसकी बुद्धि प्रशंसा करने योग्य है। जो अपने आश्रयमें रहने वालोंको बांटकर प्रमाणसे भोजन करता है बहुत काम करने परभी थोड़ा सोता है, और मांगनेपर शत्रुओंकोभी देता है, उसका सदा कल्याण होता है। जिसके इच्छावाले कर्म्मको मनुष्य जानते हैं, और जिसके गुप्त मन्त्रको भी कोई नहीं जानता वह मनुष्य कभी अनर्थमें नहीं पड़ता। जो सदा सबका कल्याण चाहता है, सत्य बोलता है, कोमलतासे रहता है, जिसके सब भाव शुद्ध हैं, वह अपनी जातिमें बैठकर ऐसा प्रकाशित होता है, जैसे रत्नोंमें महामणि। जो अपने कर्म्मोंको देखकर आपही लज्जित होता है, वही मनुष्य सब लोकोंका गुरु होने योग्य है। वही मनुष्य महा तेजस्वी, सावधान होकर सूर्य्यके समान प्रकाशित होता है। हे राजन्! आपसे जले हुए राजा पाण्डुने इन्द्रके समान पांच पुत्रोंको उत्पन्न किया, उनको आपहीने पाला और पढ़ाया है, इस लिये वे भी आपको अपने पिताके समान मानते हैं। हे नरेश! आप पाण्डवोंका राज्य उनको देकर पुत्रोंके सहित आनन्दसे सुख भोगिये। पाण्डवोंका राज्य देनेसे देवता और मनुष्यभी आपको अधर्मी नहीं कह सकेंगे।

२३ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे प्यारे विदुर! तुम धर्म्म और अर्थको जाननेवाले हो, इस लिये समय योग्य जो काम हो सो मुझसे कहो, मेरा शरीर इस चिन्तासे भस्म हुआ जाता है। हे महा पराक्रमी विदुर! तुम युधिष्ठिरको बुद्धिको जानते हो, इस लिये तुम जो कौरवोंके कल्याणका कार्य्य समझो, सो हमसे कहो। हे विदुर! मैं महापापी और सदा पापकी शङ्का रखता हूं, इस समय व्याकुल होकर तुमसे पूछता हूं, तुम युधिष्ठिरकी बुद्धिको विचार कर जो उचित हो सो कहो।

विदुर बोले, मनुष्य तो उचित है कि जिनका कल्याण चाहे, उनसे शुभ, अशुभ, प्रिय और अप्रिय सब प्रकारके वचन कहे, इस लिये मैं धर्म और यशसे भरे कौरवोंके कल्याण करनेवाले बचन आपसे कहता हूं, आप सुनिये। हे भारत। जो उलटा उपाय करनेसे अथवा बिनाही उपायके सिद्ध हो जाय उसके करनेकी इच्छा मनुष्यको कभी न करनी चाहिये। इसी प्रकार जो कर्म्म अनेक उपाय और यत्न करनेपर भी सिद्ध न हो उनमें भी मनको नहीं लगाना चाहिये। जिन कामोंको करनेसे प्रयोजन सिद्ध होते हैं, उनको पहले निश्चय करके सोच ले, काम करनेमें शीघ्रता नहीं करनी चाहिये। कामका प्रयोजन, फल और अपनी शक्तिको देखकर काम करना चाहिये। जो मूर्ख वृद्धि और नाशके प्रमाणको नहीं जानता, जो धन, देश और दण्डको नहीं सोचता वह राजा होने योग्य नहीं है। जो कहे हुए विषयोंको भली भांति समझता है, वही बुद्धिमान राजा होने योग्य है। इस समय आपको राज्य पाकर अनुचित व्यवहार नहीं करना चाहिये, क्योंकि अनीति राज्यको इस प्रकार नाश कर देती है, जैसे सुन्दर रूपको बुढ़ापा। निश्चय न करके उत्तम खाने योग्य वस्तुमें लिपटे हुए कांटेको खाकर मछली अपना प्राण दे देती है, इसी प्रकार जो बिना विचारे कार्य्य करता है, उसका नाश हो जाता है। जो खाने योग्य वस्तु है, बुद्धिमान उसेही खाय, वह खाने योग्य वस्तु अन्तमें सुख-दायक हो तभी खानी चाहिये। जो मूर्ख वृक्षसे बिना पके फल तोड़ लेता है, उसे रस नहीं मिलता, और बीजभी नाश होजाता है। जो समयपर पके हुए फलको तोड़ता है, उसे फलका रस प्राप्त होता है और बीज भी मिलता है। उस बीजसे पुनः वृक्ष होता है और वृक्षमें पुनः फल होता है। जैसे भौंरा फूलकी रक्षा करता है, पीछे उसका रस पीता है, उसी प्रकार मनुष्यकोभी काम करना चाहिये। जैसे भौंरा फूलफलका रस लेता है, और किसी वृक्षको जड़ नहीं काटता, ऐसाही मनुष्यको भी करना चाहिये। जैसे माली वृक्षसे फूल ले लेता है और वृक्षको काटता नहीं, ऐसेही मनुष्यको काम करना चाहिये। इस कामके करनेसे हमें क्या होगा, और न करनेसे क्या होगा, यह सब विचारकर मनुष्यको काम करना चाहिये, अथवा न करना चाहिये। बहुतसे काम न करनेसे भी सिद्ध हो जाते हैं। अनेक कार्य्य करनेपर भी सिद्ध नहीं होते, जिस मनुष्यकी प्रसन्नतासे कुछ लाभ नहीं और जिसके क्रोधसे कुछ हानि नहीं ऐसे मनुष्यकी सेवा ऐसीही है जैसे नपुंसककी स्त्रीका सिङ्गार। बुद्धिमान मनुष्य ऐसे कामको शीघ्र आरम्भ करता है, जिसमें परिश्रम कम और फल अधिक होते हैं, क्योंकि ऐसे कामोंमें विघ्न नहीं होता है। जो कोमल नेत्रसे सब किसीको देखता है, जो बैठकर भी चुप रहता है, उससे सब प्रजा प्रेम करती है। राजाको उचित है कि नेत्र और वचनसे कोमल होनेपर भी शीघ्र फल न दे। फल देनेवाला होनेपर भी आप सबसे कठोर बना रहे, बिना सिद्ध हुई बातको भी सिद्ध हुईके समान प्रकाशित करे, अर्थात दुर्ब्बल होने परभी बलवानके समान बना रहे। जो नेत्र, मन वचन और कर्मसे जगतको प्रसन्न करता है, उसको भी सब जगत प्रसन्न करता है। जिससे प्रजा इस प्रकार डरती है, जैसे व्याधसे हरिन, वह समस्त पृथ्वीका राजा होकर भी दरिद्र हो जाता है। अधर्मी राजा बाप दादाका राज्य पाकर भी इस प्रकार नष्ट हो जाता है, जैसे वायु चलनेसे मेघ। जो राजा महात्माओंके करने योग्य धर्मको करता है, वह धन सहित समस्त पृथ्वीका राज्य करता है। जो राजा

धर्म्मको छोड़ अधर्म करता है, वह समस्त राज्यका इस प्रकार नाश करता है, जैसे अग्निमें डालनेसे चमड़ा जलता है। जैसा शत्रुको जीतनेको यत्न किया जाता है, वैसाही यत्न अपने राज्यके पालन करनेके लिये भी करना चाहिये। धर्म्मसे राज्य प्राप्त करना चाहिये, और धर्म्मसे प्रतापकी रक्षा करनी, क्योंकि धर्मसे प्राप्त किया धन नष्ट नहीं होता। जैसे पत्थरसे सोना निकाल दिया जाता है, ऐसेही मूर्ख और बालकके वचनसे भी साराश ले लेना चाहिये। बुद्धिमानको उचित है कि, जैसे कोई मनुष्य पत्थरोंके बीचमेंसे अग्नि निकाल लेता है, ऐसेही मूर्खोंसेभी उत्तम वचन, उत्तम कर्म्म और उत्तम वृत्तिको सीख ले। गौ सुगन्धिसे, ब्राह्मण वेदोंसे और राजा दूतोंके द्वारा देखता है, और सब आखोंसे देखते हैं। जो गौ बहुत कष्टसे दूध देती है, वह बहुत दुःख उठाती है, और जो सहजसे दूध देती है, उसे कोई मारता नहीं। जो धातु वा काष्ठ तपानेसे मुड़ जाय उसे तपानेका क्या काम ? इन्ही दोनोंके समान बुद्धिमानकोभी उचित है कि अपनेसे अधिक बलवानसे नीचा हो जाय। जो बलवानको प्रणाम करता है, वह प्रणाम इन्द्रको पहुंचता है। पशु मेघोंसे जीते है, राजा मन्त्रियोंका मित्र है, पति स्त्रीका मित्र है, और ब्राह्मणोंका वेद मित्र है। सत्यसे धर्म्मको, योगसे विद्याको, उपटनसे रूपकी और चरित्रोंसे कुलकी रक्षा होती है। आदरसे धनको, घुमानेसे घोड़ोंको, उपटनसे गौओंकी और अच्छे चरित्रसे स्त्रियोंको रक्षा होती है। हमारा यह सिद्धान्त है, कि बुरे चरित्रवालेके वंशका कुछ प्रमाण नहीं, जो नीच होकर भी अच्छा कर्म्म करे, वह प्रशंसाके योग्य है। जो दूसरेके धन, रूप, बल, सुख, सुन्दरता और आदरको देखकर जलता है, उसके रोगकी कुछ औषध नहीं। जो कार्य्यके पहलेही डरकर अपने कामको छोड़ दे, वह महामूर्ख है। जिससे कुछ हानि हो मनुष्यको वह काम नहीं करना चाहिये, और कभी अपनी सम्मतिको प्रकाश नहीं करनी चाहिये। मूर्खोंके लिये विद्या, धन और सहाय यही तीन बड़े मद है। यही तीनों महात्माओंके लिये सुखदायक है। जिस समय कोई महात्मा किसी दुष्टके पास अपना कार्य्य करनेको जाय, और वह दुष्ट उसके कार्य्यको कर दे यही उसकी साधुता है। महात्मा लोग इतनाही काम होनेसे दुष्टको साधु मानने लगते हैं। महात्मा ज्ञानियोंके लिये गति देनेवाले है, और महात्मा पण्डितोंको गति देनेवाले है, और महात्माही दुष्टोंको गति देते है, परन्तु दुष्ट साधुओंको गति नहीं देते। वस्त्रधारी सभाको जीतता है, वाहनवाला मार्गको जीतता है और शीलवान सबको जीत लेता है। पुरुषमें शीलही प्रधान गुण है, इसके नाश होनेसे जीवन, धन और बन्धु बान्धव सबका नाश हो जाता है। हे राजन्। धनवालेको मास, दरिद्रीको तेल और मध्यमको घोके सहित भोजन कराना चाहिये। दरिद्री सदा मीठा भोजन करता है, क्योंकि भूखमें सबही मीठा लगता है, और धनवानको भूख दुर्लभ है, हे पृथ्वीनाथ। जगतमें दीखता है कि धनवान भोजन पचानेमें प्रायःसमर्थ नहीं होते और दरिद्र काठको भी पचा जाता है। नीचको वृत्ति न मिलना मध्यमको मरना और उत्तमको निरासही महा भय है। ऐश्वर्य्यका मद मद्यसे भी अधिक है, क्योंकि धनका मतवाला स्वामी और सेवकको कुछ नहीं समझता। जैसे सूर्य्य और चन्द्रमा ग्रहणसे व्याकुल होते है, ऐसेही अपने अपने कामोंको करती हुई बिना जीती हुई इन्द्रियोंसे लोक दुःख पाते है। जैसे शुक्ल पक्षमें चन्द्रमा बढ़ता है, तैसेही मनको वशमें करनेवाली, सङ्ग उत्पन्न हुई पञ्चो इन्द्रिय

न जीतनेवाले मनुष्योंके दुःख बढ़ते हैं। जो मूर्ख अपने मनको बिना वशमें किये अपने कुटम्बको वशमें करना चाहे, और जो बिना कुटम्बको वशमें किये शत्रुओंको जीतना चाहे, वह सब प्रयोजनोंसे नष्ट हो जाता है। जो पहले अपने मनको शत्रुके समान जीतता है, फिर कुटम्बको वशमें करता है, वही शत्रु-ओंको जीत सकता है। इन्द्रियजित, मनको वशमें रखनेवाले, दुष्टोंको दण्ड देनेवाले, परीक्षा करके कामको करनेवाले और परम धीर मनुष्यको लक्ष्मी प्राप्त होती है। हे राजन्! शरीर रथ, इन्द्रिय पराक्रमी घोड़े और मन सारथी है, इस रथमें सावधान बैठकर सावधान मनुष्य सुखसे चलता है। जैसे दुष्ट घोड़े कार्यमें सारथीको मार डालते हैं, तैसेही बिना जीती हुई इन्द्री मनरूपी सारथीका नाश कर देती है। बिना इन्द्रियोंको वशमें किये मूर्ख दुःखको सुख, अर्थको अनर्थ और अनर्थको अर्थ समझता है। जो धर्म्म और अर्थको छोड़कर इन्द्रियोंके वशमें होजाता है, उसके धन, प्राण और स्त्री सब नष्ट हो जाते हैं। जो इन्द्रियोंको बिना जीते धनका स्वामी बनता है, उसके सब ऐश्वर्य्य नष्ट हो जाते हैं। बुद्धिमान इन्द्रियोंको जीतकर बुद्धिसे मनको अपने वशमें करे, बुद्धिही मनका मित्र और बुद्धिही मनको शत्रु है। जिसने अपनी बुद्धिसे मनको नहीं जीता, उसके मनको बुद्धि शत्रु है। जैसे छेदवाले छोटे जालमें बड़ी मछली नहीं पकड़ी जाती ऐसेही काम और क्रोध मनुष्यको बुद्धिसे नहीं पकड़े जाते, ये दोनों बुद्धिका नाश कर देते हैं। जो धर्म्म और अर्थको देखकर सामग्री इकट्ठी करता है, सो सामग्रीकी सहायतासे अपनेके लिये सुख भोगता है। जो मनसे उत्पन्न हुए पांच शत्रु-ओंको जीतता है, वही अन्य शत्रुओंको भी जीत सकता है, जैसे राजा राज्यके कार्य्योंमें फंसा रहता है, वैसेही अनेक महात्मा भी कर्म्मोंमें बंधे हुए रहते हैं। दुष्टोंको न त्यागनेसे महात्माओंकोभी दण्ड मिलता है। देखो जगतमें सूखेके सङ्ग गीलाभी चला जाता है, इस लिये दुष्टोंकी सङ्गतिही नहीं करनी चाहिये। जो मनुष्य पांच दुःख देने वाले पांच शत्रुओंको वशमें नहीं करता, वह पीछे महा आपत्तिमें पड़ता है। दुष्टको शान्ति, सीधापन, पवित्रता सन्तोष, मीठे बचन, इन्द्रियोंको जीतना, सत्य वाणी और स्थिरता नहीं होती। हे भारत! दुष्टको आत्मज्ञान, स्थिरता, त्याग, धर्म्म वचन की रक्षा और दान नहीं होते। मूर्ख अपने बुरे बचनोंसे महात्माओंको दुःख देते हैं, कहनेवाला पापी होता है, और क्षमावान पापसे छुट जाता है। दुष्ट लोग हिंसाहीको अपना बल समझते हैं, उस हिंसासे राजोको दण्ड बढ़ता है। पतिकी सेवा स्त्रियोंका बल है, और क्षमा पण्डितोंका बल है। हे पृथ्वीनाथ! बचनको वशमें रखना बहुत कठिन है मनुष्य अर्थसे भरे विचित्र बचन बहुत समय तक नहीं कहसकते! हे राजन्! मीठी वाणी कल्याणको बढ़ाती है, वही वाणी कड़वी होने पर अनर्थको बढ़ाती है। कुल्हाड़ीसे कटा वृक्ष फिर बढ़ जाता है, वाणके घाव फिर घट जाते हैं, परन्तु बचनसे हुआ घाव कभी नहीं भरता। वाणकी फांसको बैद्य निकाल सकता है, परन्तु बचनकी फांसको कोई नहीं निकाल सकता, क्योंकि वह हृदयमें लगी रहती है। मुखसे निकले हुए बचन रूपी वाण मर्म्म स्थानमें लगते हैं, उनके लगनेसे मनुष्य रात्रि दिन सोच करता है, इस लिये मनुष्य उन वाणोंको न चलावे। प्रारब्ध जिसको दुख देना चाहता है, पहले उसकी बुद्धि नाशकर देता है। बुद्धि नाश होनेसे वह मनुष्य नीच कर्म्म करने लगता है, जब नाशका समय आता है, और बुद्धि नाश हो जाती है, तब हृदयसे अन्याय नहीं हटता। हे भरतकुलसिंह! पाण्डवोंका विरोध करनेसे

और पुत्रोंके वशमें होनेसे आपकी बुद्धि नाश होगई है। क्या आप उसको नहीं देखते? हे धृतराष्ट्र! राजलक्षणोंसे भरे तीन लोकके स्वामी होने योग्य आपके आज्ञापालक महाराज युधिष्ठिर पृथ्वीके राजा हों। वे धर्म्म और अर्थके तत्वको जाननेवाले आपके सब पुत्रोंसे तेज और बुद्धिमें अधिक हैं, इस लिये वेही राजा होनेके योग्य हैं। हे राजन्! धर्म्म जाननेवालोंमें श्रेष्ठ महाराज युधिष्ठिर कृपा और साधुताके कारण तथा आपको बड़ा मान करके अनेक क्लेश सह रहे हैं।

३४ अध्याय समाप्त।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे विदुर! तुम धर्म्म और अर्थके जाननेवालोंमें श्रेष्ठ हो, इस लिये ये तुम्हारे वचन सुननेसे मुझे सन्तोष होता है। हे महाबुद्धिमान! तुम विचित्र वचन कहते हो, इस लिये धर्म्म और अर्थसे भरे वचन फिर कहो।

विदुर बोले, हे पृथ्वीनाथ! सब तीर्थोंमें स्नान करना एक ओर और सबको समान देखना एक ओर, इन दोनोंमें समान देखना अधिक है, इस लिये आप सब पुत्रोंको समान दृष्टिसे देखिये, ऐसा करनेसे इस लोक और परलोकमें आपकी कीर्त्ति बढ़ेगी, हे पुरुषसिंह! जबतक मनुष्यको कीर्त्ति जगतमें रहती है, तब तक वह मनुष्य स्वर्गमें रहता है। इस स्थान पर केशिनीके लिये जो सुधन्वा और विरोचनका सम्वाद हुआ था, सो हम आपसे कहते हैं। यह इतिहास बहुत पुराना है। हे राजा! अत्यन्त रूपवती केशिनी नामकी कन्या जब उत्तम पतिसे विवाह करनेके लिये स्वयम्बरमें आई, तब उससे विवाह करनेके लिये विरोचन नामक दैत्य स्वयम्बरमें आया। उससे केशिनी कहने लगी, हे विरोचन! तुम कहो कि ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं, या दैत्य श्रेष्ठ हैं? यदि ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं, तो मैं सुधन्वासे विवाह क्यों न करूं।

विरोचन बोले, हे केशिनी! हम प्रजापतिसे उत्पन्न हुए हैं, इस लिये हमही श्रेष्ठ तथा तीनों लोकोंके स्वामी हैं, ब्राह्मण और देवता हमारे आगे क्या वस्तु हैं?

केशिनी बोली, हे विरोचन! इसकी परीक्षा हो जायगी। प्रातःकाल सुधन्वा मुझे लेने आवेगा, तब मैं ब्राह्मण और दैत्यकी परीक्षा करूंगी।

विरोचन बोले, हे कल्याणि! हे भीरु! तुम जो कहती हो, सो मैं करूंगा। प्रातःकाल जब सुधन्वा आवेगा, तब तुम हम दोनोंको देखना।

विदुर बोले, जब रात्रि बीत गई और आकाशमें सूर्य्य उदय हुए, तब सुधन्वा स्वयम्बरमें आये। अनन्तर सुधन्वा वहां गये, जहां केशिनी और विरोचन बैठे थे। सुधन्वाने प्रह्लादपुत्र विरोचन और केशिनीको देखा। हे भरतकुलसिंह! जिस समय केशिनीने सुधन्वा ब्राह्मणको आते देखा, उसी समय उठकर आसन, अर्घ और पैर धोनेको जल दिया। तब विरोचनने कहा, हे सुधन्वा! तुम हमारे सङ्ग बैठो।

सुधन्वा बोले, हे प्रह्लादपुत्र! मैं तुम्हारे सोनेके एक आसनपर नहीं बैठ सकता क्योंकि तुम मेरे समान नहीं हो।

विरोचन बोले, हे सुधन्वा! तुमने जो कहा सो ठीक है, तुम हमारे सङ्ग सोनेके आसनपर नहीं बैठ सकते, क्योंकि तुम काठके पीढ़े वा कुशाको चटाईपर बैठने योग्य हो।

सुधन्वा बोले, यह कारण नहीं है; यह नियम है कि पिता पुत्र, दो ब्राह्मण, दो क्षत्री, दो बूढ़े और दो शूद्र एक आसनपर सङ्ग बैठ सकते हैं। मैं जब तुम्हारे पिताको सभामें जाता था, तब वह नीचे बैठकर मेरी सेवा करते थे, तुम उस समय बहुत बालक थे, और सुखसे

घरमें रहते थे, इस लिये इन बातोंको नहीं जानते हो।

बिरोचन बोले, हे सुधन्वा! हम गाय, घोड़े और जो कुछ हमारा धन है, उस सबको लगाकर तुमसे बाद करते हैं, इस प्रश्नको किसी पण्डितसे पूछना चाहिये।

सुधन्वा बोले, हे बिरोचन। तुम्हारे गाय और घोड़े तुम्हारेही रहैं, हम और तुम अपने अपने प्राणोंको पण (बाजो) लगाकर यह प्रश्न किसी पण्डितसे बूझेंगे।

बिरोचन बोले, हम तुम्हारे वचनको स्वीकार करते हैं, परन्तु यह प्रश्न पूछनेको किसके पास चलोगे, क्योंकि मैं देवता और मनुष्यके पास कदापि नहीं जाऊंगा।

सुधन्वा बोले, इस प्रश्नके पूछनेको हम तुम्हारे बापहीके पास चलेंगे, क्योंकि प्रह्लाद पुत्रके प्रेमसे कभी झूठ नहीं बोलेंगे।

विदुर बोले, हे राजन्! ऐसी प्रतिज्ञा करके क्रोध में भरे बिरोचन और सुधन्वा राजा प्रह्लादके पास गये। इनको देखकर प्रह्लाद बोले, ये दोनों विषैले सांपके समान क्रोधमें भरे एक मार्गसे चले आते हैं, ये कभी पहले सङ्ग नहीं रहे, अब क्यों सङ्ग रहेंगे?

इतनेमें बिरोचन और सुधन्वा सभामें पहुंच गये। तब प्रह्लाद अपने पुत्रसे बोले, हे बिरोचन। क्या सुधन्वा तुम्हारे मित्र है?

बिरोचन बोले, हे राजन्। सुधन्वा मेरे मित्र नहीं है, हम दोनोंने प्राण देनेकी प्रतिज्ञा करके विवाद किया है, आप हमारे प्रश्नका उत्तर दीजिये, कदापि झूठ मत कहिये।

प्रह्लाद बोले, हे सुधन्वन्। आप पूजा करने योग्य ब्राह्मण हैं, इस लिये मधुपर्क, पैर धोने योग्य जल और सफेद गौको ग्रहण कीजिये।

सुधन्वा बोले, मैंने मार्गहीमें आपका मधुपर्क, और जल ग्रहण कर लिया था, अब हम आपसे प्रश्न करते हैं, सत्य सत्य उत्तर दीजिये। हमारा प्रश्न यही है कि ब्राह्मण श्रेष्ठ है या बिरोचन?

प्रह्लाद बोले, हमको एकही पुत्र है और आप साक्षात हमारे साथ प्रश्न करनेको आये हैं, ऐसी अवस्थामें हमारे समान मनुष्य क्या कह सकता है?

सुधन्वा बोले, हे बुद्धिमान। आप इस सफेद गौको अथवा और सब धनको लीजिये, परन्तु हमारे प्रश्नका ठीक उत्तर दीजिये।

प्रह्लाद बोले, हे सुधन्वन्। जो सत्य वा झूठ कुछ न कहे, वह निश्चय करने वाला कहां बसता है?

सुधन्वा बोले, जहां पतसे हारा जुयेमें हारा और दिन भर भार लेकर चलनेवाला मनुष्य बसता है, वहीं वह मनुष्य भी व[illegible] है, जो सत्य और झूठको जानकर भी कु[illegible] कहै। जो साक्षी होकर झूठ कहता है, नगरके द्वारपर रुककर भूखा पड़ा रहत[illegible] और अनेक शत्रुओंको देखता है। पशु[illegible] लिये झूठ बोलनेसे पांच, गौओंके लिये[illegible] बोलनेसे दश घोड़ेके लिये सौ और म[illegible] लिये झूठ बोलनेसे सहस्र हत्याओंका होता है। सोनेके लिये झूठ बोलनेसे उ[illegible] हुए और न उत्पन्न हुए लोगोंके मार[illegible] पाप होता है। भूमि और स्त्रीके लिये[illegible] बोलनेसे समस्त पृथ्वीके मनुष्योंके मार[illegible] पाप होता है इस लिये तुम इस स्थान[illegible] झूठ मत कहो।

प्रह्लाद बोले, हे बिरोचन। अङ्गिरा मु[illegible] श्रेष्ठ हैं, सुधन्वाकी माता तेरी मातासे य[illegible] और तुझसे सुधन्वा अच्छे हैं, इस लिये[illegible] सुधन्वाने जीत लिया। हे बिरोचन। तब[illegible] तुम्हारे प्राणोंका स्वामी है, चाहै मारे[illegible] छोड़ै, हे सुधन्वन्। मैं तुमसे बिरोचन मांगता हूं।

सुधन्वा बोले, हे प्रह्लाद! तुमने पुत्रके लिये भी झूठ न कहा, इस लिये इस दुर्लभ वैरोचनको तुम्हें देते हैं, परन्तु यह उसी स्त्रीके आगे हमारे पैर धोवे।

विदुर बोले, हे राजन् धृतराष्ट्र! देखो राजा प्रह्लादने अपने पुत्रके प्राणोंको बचानेको भी झूठ नही बोले, वैसेही आपभी राज्यके लिये झूठ मत बोलिये। मैं यह चाहता हूं कि झूठ बोलनेसे पुत्र और मन्त्रियोंके सहित आपका नाश न हो, देवता लाठी लेकर पशु-ओंके समान मनुष्योंकी रक्षा नहीं करते। वे जिसकी रक्षा करना चाहते हैं, उसको उत्तम बुद्धि देते हैं, जैसे मनुष्यकी बुद्धि अच्छे कामोंमें जाती है, तैसे तैसे मनुष्यके कार्य्य सिद्ध होते है। छलो मनुष्यको छलसे नहीं बचाते, वरन वे इस प्रकार मनुष्यसे मरनेके समय छूट जाते हैं जैसे पंखवाले पक्षीसे घोसला अर्थात् कर्म्महो मनुष्योंको दुःखसे बचाता है। महात्मा लोग मद्य पीना, लड़ाई, वैर, स्त्री, पुत्र, और जातिसे द्वेष, राजाको शत्रुता, स्त्री और पुरुषोंसे बिवाद तथा और भी बुरेकाम करनेको मना करते हैं। बुद्धि मानको उचित है कि हाथकी रेखा देखनेवाले, चोर बनिये, धूर्त्तज्योतिषी, धूर्त्तवैद्य, शत्रु, मित्र और रण्डोके भड़वेको साक्षी न बनावे। हे राजन्! जो आदरके लिये अग्निहोत्र करता है, आदरके लिये विद्या पढ़ता है, आदरके लिये यज्ञ करता है, उसका कल्याण नहीं होता। परन्तु जो बिना इच्छाके इन सब कामोंको करता है उसको सुख होता है! घर जलानवाला, जहर देनेवाला, कुण्डाशी (पतिके जीते हुए जो दूसरे मनुष्यके वीर्य्यसे पुत्र उत्पन्न होता है, उसे कुण्ड कहते हैं, जो उस कुण्डके यहा भोजन कर उसे कुण्डाशी कहते है), सोमबेचनवाला, शस्त्र बनानेवाला, नक्षत्रसूची अर्थात् थोड़ा पढ़ा ज्योतिषी, मित्रद्रोही, दूसरेकी स्त्रियोंसे अधर्म्म करनेवाला, गर्भ गिरानेवाला, गुरुको शय्या-पर पैर रखनेवाला, मद्य पोने वाला ब्राह्मण, बहुत क्रोधी कौवेके समान वृत्ति करनेवाला, नास्तिक, वेदनिन्दक, डाकू, व्रात्य अर्थात जिसका जनेऊ समय बीतनेपर हुआ हो, दूसरेको बस्तुको छीननेवाला, और जो शरणागतकी रक्षा नहीं करे, ये सब ब्राह्मणको मारनेवाले पापीके तुल्य हैं। चादनेसे रूप, चालसे धर्म्म, व्यवहारसे साधुता, युद्धसे शूरवोरता, कठिन कार्य्योंमें बुद्धिमानी और आपत्तिके समय मित्र जाने जाते हैं। बुढ़ापा रूपको, आशा धैर्य्यको, मृत्यु प्राणोंको दुष्टता धर्म्मको, क्रोध लक्ष्मीको, दुष्टोंकी सेवा शीलको, काम लज्जाको और अभिमान सबको नाश कर देता है। लक्ष्मी अच्छे कामोंसे प्राप्त होती है, गम्भीरतासे बढ़ती है, अच्छे कामोंमें निपुण होनेसे उसकी जड़ जमती है, और इन्द्रियोंको जीतनेसे स्थिर हो जाती है। हे राजन्! बुद्धि, उत्तम कुलमें जन्म, इन्द्रियोंको जीतना, विद्या, पराक्रम बोलनेकी शक्तिके अनुसार दान और उपकार करनेवाले-को मानना, ये आठों गुण मनुष्यको प्रसिद्ध करते हैं। हे राजन्! इन सब गुणोंमें एकहो गुण श्रेष्ठ है कि राजा मनुष्योंका सत्कार करे, यह गुण सब गुणोंसे श्रेष्ठ है। हे राजन्! इन आठ गुणोंमेंसे चार गुण मनुष्यको स्वर्गमें पहुं-चाते हैं, और चार महात्माओंके सङ्ग रहते हैं, इन आठों गुणोंका आगे वर्णन करते हैं। यज्ञ, दान, विद्या और तप ये चारो गुण मनु-ष्यसे नित्य सम्बन्ध रखते हैं। इन्द्रियोंको जीतना सत्य, कोमलता और दयालुता, ये चारो गुण महात्माओंके सङ्ग रहते हैं। यज्ञ करना, विद्या पढ़ना, दान, तप, सत्य, क्षमा, दया और लोभ न करना, येही आठ धर्म्मके मार्ग हैं। उनमेंसे पहले चार जो हैं, उनका पाखण्डी पाखण्डके लिये भी कर सकते हैं, परन्तु अन्तके

चार जो धर्म्म हैं, उनको महात्माओंके सिवा कोई नहीं कर सकता। वह सभा नहीं है, जहां बूढ़े नहों; जो धर्म्मका वर्णन नहीं करते वह बूढ़े नहो है, जिसमें सत्य नहीं वह धर्म्म नहीं है; और जिसमें कुछ छल है वह सत्य नहीं है। सत्य, रूप, गुण, विद्या, उत्तम कुलमें जन्म, शील, बल, धन, तेज, विचित्र कहना, येही स्वर्ग ले जानेके कारण हैं। जो पापी पाप करता है, उसको फल भी वैसाही मिलता है, धर्म्मात्माको धर्म्म करनेसे अच्छा फल मिलता है। इस वास्ते धर्म्मात्मा मनुष्यको उचित है कि पाप न करे, क्योंकि बार बार पाप करनेसे बुद्धिका नाश होजाता है। बुद्धि नाश होनेसे मनुष्य पापही करता है। पुण्य करनेसे बुद्धि बढती है, बुद्धि बढ़नेसे मनुष्य सदा पुण्यही करता है; पुण्य करनेसे कीर्त्ति बढती है, कीर्त्तिमानको स्वर्ग मिलता है; इस लिये उत्तम मनुष्यको उचित है कि सदा धर्म्मही करे। डाही, दन्तसूक अर्थात दूसरेके कार्य्यको नाश करनेवाला, कठोर बचन कहनेवाला, सबसे वैर करनेवाला और दुष्ट मनुष्य पाप करनेके कारण शीघ्रही नष्ट होजाता है। जो किसीकी वृद्धि देखकर दुःख नहीं मानता और अपनी बुद्धिको ठीक रखता है, वह उत्तम काम करनेके कारण कदापि दुःखमें नहीं पड़ता और सदा सुख पाता है। जो अपनी बुद्धिसे बुद्धिको बढाता है, वही पण्डित कहाता है बुद्धिमान धर्म्म और अर्थको विना प्राप्त किये भी सुख भोगता है। दिनमें ऐसा काम करना चाहिये, जिससे रात्रिको सुखसे सोवे, आठ महीनेमें ऐसा काम करना चाहिये जिससे एक वर्ष सुखसे रहे। पहली अवस्थामें ऐसा काम करें, जिससे वृढ़ापेमें सुख मिले। जीवन भरमें ऐसा काम करे जिससे मरनेके पश्चात सुख हो, जब अन्न पच जाय, तब उसकी प्रशंसा करनी चाहिये, शीलसे यौवन वितानेके पश्चात स्त्रीकी प्रशंसा करनी चाहिये, युद्ध जीतनेके पश्चात बीरकी प्रशंसा करनी चाहिये और तपस्या पूरा होनेपर तपस्वीकी प्रशंसा करनी चाहिये। जो धन अधर्म्मसे प्राप्त होता है, वह पहले कुछ हानि करता है, वह हानि सह नहीं सकती, तब और भी हानि बढतीही जाती है। गुरु महात्माओंको शासन करते हैं, राजा दुष्टोंको दण्ड देता है, और छिपकर पाप करनेवालेको यम राज दण्ड देते हैं। ऋषि, नदी, महात्माओं वंश और स्त्रियोंके चरित्रोंको कोई पार नहीं जा सकता। हे राजन्! जो क्षत्री ब्राह्मणोंकी पूजा करता है, दान करता है और जातिके शीलसे रहता है, वह बहुत दिनतक सुखसे राज्य करता है। शूरवीर, विद्वान् और सेवा जाननेवाला सेवक, ये तीनों मनुष्य सुवर्णसे फूली हुई पृथ्वीका आनन्द भोगते हैं। हे भारत। जो कर्म्म प्रत्यक्ष करके बुद्धिसे किये जाते हैं, वे श्रेष्ठ हैं, जो हाथसे किये जाते हैं, सो मध्यम है और जो छिपकर जङ्घासे किये जाते हैं, वे नीच हैं। तुम क्या दुर्य्योधन, शकुनि मूर्ख दुःशासन और कर्णको राजा बनाकर कल्याणकी इच्छा करते हो? हे भरतकुल सिंह सब गुणोंसे भरे पाण्डव आपको पितातुल्य मानते हैं, आप भी उन्हें पुत्र समान मानिये।

३५ अध्याय समाप्त।

विदुर बोले, हे राजन् धृतराष्ट्र! इसी स्थानपर यह पुराना इतिहास कहने योग्य है इसमें आत्रेय और साध्यका इतिहास है, एक समय परमहंसका रूप बनाकर महा तपस्वी महा बुद्धिमान आत्रेय जगतमें घूम रहे थे, उसी समय साध्योंने आकर कहा।

साध्य बोले हे महामुनि! हम साध्य नामक देवता हैं, आपको देख कर आपके तपका अनुमान नहीं कर सकते, हमें जान पड़ता है कि आप विद्या, धीरता और बुद्धसे भरे हैं, इस

लिये आप हमसे कुछ कल्याणकी बात कहिये। परमहंस बोले, हे देवता! हम केवल इतनाही जानते हैं, कि हृदयकी गांठका दूर धारण करके इन्द्रियोंका जीतना, सत्य बोलना और अपने समान सबके सुख और दुःखको जानना यही धर्म्म है। जो अपनेको बुरी बात कहै, उसका उत्तर नहीं देना, ऐसा करनेसे रुका हुआ क्रोध बुरो बात कहनेवालेका नाश कर देता है और क्षमा करनेवालेका कल्याण होता है। मनुष्य बुरी बात न कहै, किसीका निरादर न करे, अभिमान न करे नीचकी सेवा न करे, मित्रोंसे वैर न करे, छोटा काम न करे और रूखी वाणी न बोले। क्योंकि बुरी बात मनुष्यके मर्म्म, हृदय, हड्डी और प्राणोंका भङ्ग कर देती है। मनुष्यको उचित है, कि रूखी वाणी कभी न कहे, क्योंकि उससे धर्म्मका नाश होता है। दुःख देनेवाली रूखी वाणी मनुष्यके हृदयमें काटेके समान लगती हैं, रूखी वाणी मनुष्यके मुखमें दारिद्र और मृत्युरूप होकर बसती है। आग और सूर्य्यके समान जलती और विषम बुझी तीक्ष्ण बाणोंके समान वचन हो दुष्ट महात्माओंको कहते हैं, उनसे, ...लन कहते हैं और अत्यन्त पीड़ित होन परभी ...हाला दुःख नहीं मानते। चाहे साधूकी ...वा करो, चाहे दुष्टकी सेवा करो, चाहे तप...ीकी सेवा करो और चाहे चोरको सेवा करो, ...रन्तु मनुष्य स्वामीके वशमें इस प्रकार हो ...ाता है, जैसे वस्त्र रङ्गके वशमें। बहुत विवाद ...हीं करना चाहिय, न वाद करना चाहिये। ...। दूसरेसे मार खाकर उसे नहीं मारता, जो ...पोको मारनेकी इच्छा नहीं करता, उससे ...वता बहुत प्रसन्न रहते हैं, बहुत बोलनेसे ...बोलना अच्छा है, बोलनेसे सत्य बोलना ...च्छा है, सत्यमें प्यारा बोलना अच्छा है, ...ौर प्यारेमेंभी धर्म्मके सहित बोलना बहुत ...च्छा है, ये चार वचनके भेद हैं। जो मनुष्य जैसे मनुष्यके सङ्गमें रहता है, जैसे मनुष्योंके सङ्ग बैठता है और जैसा बनना चाहता है, वैसाही होता है। जहांसे मनुष्य अपने चित्तको लौटाना चाहता है, वहांसे लौट जाता है, सब स्थानोंसे लौटनेसे मनुष्यको कुछ भी दुःख नहीं शेष रहेगा। जो सब दुःखोंसे रहित हो जाता है, वह किसीको जीतनेकी इच्छा नहीं करता न किसीसे वैर करता है, न किसको मारनेकी इच्छा करता है, वह दुःखरहित मनुष्य निन्दा और प्रशंसासे, प्रसन्न और अप्रसन्न नहीं होता, उसका स्वभाव समान हो जाता है, वह मनुष्य सबका कल्याण चाहता है, कभी भी किसीकी हानिमें उसका चित्त नहीं जाता, वह सत्यवादी, कोमल, दानी और सबसे श्रेष्ठ है, उसीको उत्तम पुरुष कहते हैं। जो विना प्रयोजन बचन न कहे, जिस वस्तुको देनेकी प्रतिज्ञा करे, उसे दे दे, शत्रुके समयको देखता रहै, वह मध्यम पुरुष कहाता है, जो बुरे वचन कहे, सदा क्रोधके वशमें रहै जिसको लड़ाईही प्यारी लगै, किये हुए उपकारको न माने, किसीका मित्र न हो और सदा दुष्टता करता रहै, वह नीच पुरुष है। जो किसीमें श्रद्धा न करे, अपने किये हुए काममें भी शङ्का करे और मित्रोंका निरादर करे, वह अधम पुरुष कहाता है।

मनुष्यको उचित है कि सदा उत्तमही मनुष्योंका सङ्गति करे और काम निकालनेके वास्ते मध्यम पुरुषके पास भी चला जाय, परन्तु कल्याण चाहनेवाला मनुष्य नीचके पास कदापि न जाय। मनुष्य दुष्टोंकी सङ्गतिसे दुष्ट हो जाता है, फिर उसकी बुद्धि और मन सब नष्ट हो जाते हैं, इससे उसकी उन्नति भी नहीं होती, तब उसकी प्रशंसा भी नहीं नहीं होती, प्रशंसा नष्ट होनेसे कुलका गौरव भी नाश हो जाता है।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे विदुर! हमने सुना है कि सदा धर्म्म और अर्थकी करनेवाले

महा पण्डित और देवता बड़े बड़े कुलोंको प्रशंसा करते हैं, सो हम आपसे पूछते हैं, कि बड़े कुल कौनसे हैं?

विदुर बोले, हे महाराज! जिन कुलोंसे तप, इन्द्रिय जीतना, वेद विद्या, यज्ञ, उत्तम विवाह, और सदा होम दान होता है, वेही बड़े कुल कहाते हैं, यही सात गुण बड़े कुलके लक्षण हैं। जिन कुलोंमें बुरे नहीं होते, जिनके पितर दुःख नहीं पाते, जहां प्रसन्न होकर धर्म्म किया जाता है, जिस कुलमें उत्पन्न हुए मनुष्य झूठ नहीं बोलते और अपने कुलकी कीर्त्ति बढ़ना चाहते हैं, वेही बड़े कुल कहाते हैं, जिन बड़े कुलोंमें भी यज्ञ नहीं होता, उत्तम रीतसे विवाह नहीं होता और वेद नहीं पढ़ाये जाते, वे नीच हो जाते हैं, जिन कुलोंमें उत्पन्न हुए मनुष्य देवता और ब्राह्मणोंका धन छीनते हैं, तथा ब्राह्मणोंका निरादर करते हैं, वे उत्तम कुलभी नीच हो जाते हैं। हे भरतकुल श्रेष्ठ! ब्राह्मणोंका निरादर, ब्राह्मणोंकी निन्दा और अधर्म्म करके धन छीननेसे उत्तम कुल नीचताको प्राप्त हो जाता है। जिन कुलोंमें गऊ, धन, और मनुष्य भरे हैं, परन्तु वंशमें उत्पन्न हुओंके चरित्र अच्छे नहीं हैं, उनकी गिनती कुलोंमें नहीं। जिन कुलोंमें धन थोड़ा है, परन्तु मनुष्योंके चरित्र अच्छे हैं, वेही महा यशस्वी उत्तम कुल हैं। धन आता है और जाता है इस लिये यत्न करके चरित्रहीकी रक्षा करनी चाहिये। बहुत धन होनेपरभी बुरे चरित्रवाला मनुष्य हीन, और कम धन होनेपर भी उत्तम चरित्रवाला मनुष्य उत्तम कहाता है। हे धृतराष्ट्र! गौ, पशु, घोड़े, बढ़ी हुई खेती इन सबसे कुल उत्तम नहीं होते, परन्तु चाल चलन अच्छे होनेसे उत्तम होते हैं। हमारे कुलसे कोई बैर करनेवाला न हो, राजा वा मन्त्री कोई किसीको धन लेनेकी इच्छा न करे। हमारे कुलमें कोई ऐसा न हो जो पितर और देवतोंसे पहले भोजन करे। जो हमारे ब्राह्मणोंसे द्वेष करे, हमारे ब्राह्मणोंको मारे, ऐसा मनुष्य हमारे वंश और सभामें न हो, और जो खेतोंको न बुझावे ऐसा भी मनुष्य हमारे कुटुम्बमें कोई न हो। पण्डितोंके घरमें घास, भूमि, जल और सच्चे वचन कभी नष्ट नहीं होते, अर्थात सज्जन लोग अतिथिको विछानेके वास्ते तृण पीनेको जल और प्रेमसे मीठा वचन देते हैं। यदि सज्जनोंके पास और कुछभी नहो तो वह अतिथिका इनसे ही सत्कार करते हैं। येही चार लक्षण अच्छे कुटुम्बके हैं। हे राजन्! हे महाबुद्धिमान! धर्म्म करनेवाले महात्मा परम श्रद्धासे इन चारो वस्तुओंको आदर सहित अपने घरमें रखते हैं। हे राजेन्द्र! जैसे भारी रथको घोड़ोंके सिवाय और कोई नही ले चलता अर्थात् घोड़ेही ले चल सकते हैं,—ऐसेही उत्तम कुलमें उत्पन्न हुए मनुष्य चरित्ररूपी भारको जितना उठा सकते हैं, उतना सामान्य पुरुष नहीं। जिसके भयसे मनुष्य डरे, अथवा जिसके कर्म्मोंसे मित्रको शङ्का हो, वह मित्र नहीं है। जिस मित्रको मित्र पिताके समान विश्वास करे, वही मित्र है, शेष सम्बन्ध मात्र है। जो कोई बिना सम्बन्धके मित्रता करे वही मित्र है, वही बन्धु है, और वही सेवा करने योग्य है। जिस मनुष्यका चित्त चञ्चल है, जो बूढ़ोंकी सेवा नहीं करता, जिसकी बुद्धि स्थिर नहीं है, उसकी मित्रता भी स्थिर नहीं है। जिसके मन, चित्त और शरीर चञ्चल हैं, जो इन्द्रियोंके वशमें रहता है, उस मनुष्यको धर्म्म और अर्थ इस प्रकार छोड़ देते हैं, जैसे सूखे तलावको हंस। जिसका चित्त मेघ और जलमें स्थित नावके समान चञ्चल है, जो विना कारणही क्रोध करे और बिना कारण प्रसन्न हो जाय, वह मूर्ख है। जो अत्यन्त सत्कार पाकर भी मित्रका काम न करे, मरनेपर

पश्चात् मांस खानेवाले पक्षी भी उसका मांस नहीं खाते। बुद्धिमानको उचित है कि चाहे दरिद्री हो चाहे धनवान हो अपने मित्रोंकी सेवा करता रहे, क्योंकि निर्धन मित्रोंके सारा-शको नहीं जानता है। मित्र छूटनेसे रूप नष्ट होजाता है, मित्रके वियोगसे बल नष्ट होता है, मित्रके वियोगसे ज्ञान नष्ट होता है, और मित्रके वियोगसे अनेक रोग हो जाते हैं। हे राजन्! मित्रके शोकसे शरीर जलता है और शत्रु प्रसन्न होते हैं, इस लिये आप अपने मनको शोककी ओर मत जाने दीजिये। मनुष्य बार बार उत्पन्न होता है, बार बार मरता है, बार बार मनुष्यकी उन्नति होती है, बार बार धन नाश होता है, बार बार भिक्षा मांगता है, बार बार दान करता है, कभी सोचता है, और कभी शत्रुओंका शोक बढ़ाता है। सुख, दुःख, लाभ, हानि, मरना और जीना ये सब प्रायः हुआही करते हैं, इस लिये मनुष्यको उचित है कि उन सबसे सुख और दुःख न माने। पांचों इन्द्री और छठा मन ये चञ्चल हैं, जहां जहां इनकी अयथा वृद्धि होती है, तहां तहां मनुष्यकी बुद्धि इस प्रकार नष्ट होती है जैसे छिद्र युक्त घड़ेसे जल गिरता है।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, राजा युधिष्ठिर मेरे अन्यायसे इस प्रकार गये हैं, जैसे किसी कारणसे शरीरमें अग्नि रुक जाती है। अब वे युद्धमें हमारे मूर्ख पुत्रोंका अवश्य नाश करेंगे। हे महाबुद्धिमान! मेरा मन सदा घबड़ाता रहता है, इस लिये आप ऐसा उपाय बतलाइये जिससे मेरा मन स्थिर हो।

विदुर बोले, हे पापरहित महाराज! विद्या, तप, इन्द्रिय जीतना, और लोभ न करना, इनके सिवा आपको शान्तिका उपाय मुझे और कुछ नहीं दीखता। बुद्धिसे भय नाश होता है, तपसे परम पद मिलता है, गुरुओंकी सेवासे ज्ञान होता है, और योगसे शान्ति प्राप्त होती है। जगतमें दान और पुण्यके फलको छोड़कर और वेद पढ़नेके फलको छोड़कर, राग और द्वेषसे छूटे महात्मा जगतमें घूमते हैं। उत्तम पढ़ने, उत्तम युद्ध, उत्तम कर्म्म और उत्तम तप इन चारोंका फल करनेके अन्तमें मिलता है। हे राजन्! अनेक बन्दी और भाटोंकी स्तुति सुननेपर भी और उत्तम शय्यापर सोनेसे भी दुःखी मनुष्यको सुख नहीं होता, और न दुःखी मनुष्य स्त्रियोंसे भी प्रसन्न होता है। जातिसे भेद करने-वाले मनुष्य धर्म्म नहीं करते, सुख नहीं भोगते, जातिमें भेद करनेवालोंका आदर नहीं होता और न उनको शान्ति अच्छी लगती है। गौओंमें दूधही धन है, ब्राह्मणोंमें तपही धन है, स्त्रियोंकी चञ्चलताही धन है और मनुष्योंका जातिसे भय करनाही धन है। आपने बालक-पनमें पाण्डवोंको पाला था, अब वे अनेक कष्ट सहकर महात्माओंके दृष्टान्तरूप हो गये हैं, अर्थात् जगतमें सब मनुष्य कहते हैं कि अमुक महात्मा पाण्डवोंके तुल्य हैं। ऐसे महात्मा पाण्डवोंके सङ्ग आप छल न कीजिये। हे भरत-कुल सिंह धृतराष्ट्र! अलग अलग रक्खे हुए काष्ठोंमें आग लगानेसे केवल धुवां निकलता है और सङ्ग रखनेसे सब जल उठते हैं, ऐसेही जातिका भी प्रभाव है। जो दुरात्मा ब्राह्मण, स्त्री और गौओंसे अपना पराक्रम दिखलाता है वह इस प्रकार गिरता है, जैसे पका हुआ बैंगनका फल। जैसे अनेक शाखाओंसे युक्त फल और फूलोंसे भरा अकेला वृक्ष वायु लगनेसे गिर जाता है, ऐसेही अकेला मनुष्यभी शत्रुके हाथसे मारा जाता है। जिस वनमें पास पास अनेक वृक्ष लगे हों तहां अत्यन्त वायु चलनेसे भी वृक्ष नहीं टूटते, क्योंकि वहां एक वृक्षको दूसरेका आश्रय होता है, ऐसेही अनेक गुण होने-पर भी अकेलेको शत्रु मार डालते हैं। जैसे पास पास होनेके कारण तलावमें कमल बढ़ते हैं,

ऐसेही परस्पर प्रेम करनेसे एक दूसरेके आश्रयसे जाति बढ़ती है। ब्राह्मण, जाति, बालक, स्त्री जिसका अन्न खाया हो सो, और शरणागत आदि मनुष्यको मारना नहीं चाहिये। हे राजन्! आपका कल्याण हो, मनुष्यके समर्थ होनेके सिवा और कोई गुण नहीं है; यह गुणभी रोग-रहित मनुष्यमें रहता है, क्योंकि रोगी मनुष्य मरे हुएके तुल्य है। हे महाराज! आप रोग-रहित और समर्थ हैं, इस लिये पाप बढ़ाने-वाले तेज, गर्म्म, कड़वे, रोगरहित और पण्डि-तोंके पीने योग्य क्रोधको पीकर शान्त होइये। रोगी फलको नहीं प्राप्त होता उसका कहीं आदर नहीं होता। रोगी सदा दुःखसे भरा रहता है, इस लिये वह कुछ नहीं समझता और न सुखोंको भोग सकता है। हे महा-राज! मैंने जिस समय द्रौपदीको जुवेमें हारा हुई देखा था, उसी समय आपसे कहा था, कि पण्डित लोग जुवेकी प्रशंसा नहीं करते, इस लिये दुर्य्योधनको जुवेसे रोकिये। परन्तु आपने मेरा वचन नहीं सुना था, इसीसे यह दुःख प्राप्त हुआ है। हे राजेन्द्र! जो क्षमावान मनुष्यसे वैर करावे, वह बली नहीं है। मनु-ष्यको उचित है कि सदा सूक्ष्म धर्म्म करे। अन्यायसे उत्पन्न हुई लक्ष्मी वंशका नाश कर देती है, और न्यायसे उत्पन्न हुई लक्ष्मी पुत्र तथा पौत्रोंतक रहती है। हे राजन्! हमारी सम्मतिमें यह आता है कि आपके पुत्र पाण्डवोंकी रक्षा करें, और पाण्डुके पुत्र आपके पुत्रोंका पालन करें, जो कौरवोंके शत्रु हों, सो पाण्ड-वोंके भी शत्रु हों; और जो पाण्डवोंके शत्रु हों सो कौरवोंकेभी शत्रु हों, ऐसेही कौरव और पाण्डवोंके मित्रभी एकही हों। ऐसा करनेसे दोनोंकी उन्नति होगी और बहुत दिन तक जीयेंगे। हे अजमीढ़वंशोत्पन्न प्यारे धृतराष्ट्र! आप इस समय सब कुरुकुलके स्वामी हैं, यह समस्त वंश आपके अधीन है; आपने बालकपनमें पाण्डवोंको पाला था, अब वे वन-वाससे दुःखी होगये हैं, इस लिये उनकी रक्षा करके अपने यशको बढ़ाइये। हे नरराज! पाण्डव धर्म्म करते हैं, इस लिये आप उनसे सन्धि कीजिये; इससे आपके शत्रुभी आपकी सेवा करेंगे। आप दुर्य्योधनको युद्ध मत करने दीजिये।

३६ अध्याय समाप्त।

विदुर बोले, हे राजन् धृतराष्ट्र! स्वयम्भू-पुत्र मनुने इन सत्रह मनुष्योंको ऐसा कहा है जो कोई मुट्ठीसे आकाशको पीटे, जो आकाशमें उगी इन्द्र धनुषको नवाना चाहे, जो न पकड़ने योग्य सूर्य्य और चन्द्रमाकी किरणको पकड़ना चाहे, जो दुष्टको शिक्षा दे, जो थोड़े लाभसे प्रसन्न हो, जो बहुत दिनतक शत्रुकी सेवा करे, जो स्त्रीकी रक्षा करके कल्याण चाहे, जो न कहने योग्य वचनको कहे, जो कुछ काम करके अपनी प्रशंसा करे, जो कुलीन होकर बुरा काम करे, जो निर्व्वल होकर बलवानसे वैर करे, जो श्रद्धाहीनसे बात कहे, जो न करने योग्य कामको करे, जो अपने बेटेकी बहूसे हंसी करे, जो अपने बेटेकी बहूसे न डरे, जो दूसरेके खेतमें अपना बीज बोवे, जो बहुत समयतक स्त्रियोंसे विवाद करे, जो बहुत धन लेकरभी देनेवाले मनुष्यसे कहे कि हमें स्मरण नहीं है; जो घरमें आये हुए भीख मांगनेवालेसे अपनी प्रशंसा करे और जो दुष्टको साधु बनानेका हठ करे,—इन सत्तरह मनुष्योंको मरनेके समय फांसी लेकर यमदूत आते हैं। जो जैसा मनुष्य हो, उसके सङ्ग वैसाही बर्त्ताव करना चाहिये, दुष्टके सङ्ग दुष्टता और साधुके सङ्ग साधुता करनी चाहिये। बुढ़ापा रूपको, आशा धैर्य्यको, मृत्यु प्राणोंको, डाह धर्म्मको, काम लज्जाको, दुष्टकी सेवा अच्छे चरित्रको, क्रोध लक्ष्मीको और अभिमान सबको नाश कर देता है।

धृतराष्ट्र बोले, हे विदुर! सब वेदोंमें मनुष्यकी अवस्था सौ वर्षकी लिखी है। परन्तु सब सौ वर्ष नहीं जीते, वह कौन सा कारण है जिससे आयु घट जाती है?

विदुर बोले, हे राजेन्द्र! अत्यन्त अभिमान, बहुत विवाद करना, किसीको वस्तुको न देना, क्रोध, अपनाही पालन करना और मित्रोंसे वैर करना, येही छः तेज खड्ग मनुष्योंकी आयुको काटते हैं। मनुष्यको मृत्यु नहीं मारती, येही छः वस्तु मारते हैं। हे भारत! जो विश्वास किये हुए मनुष्यकी स्त्रीसे कुकर्म्म करे, जो ब्राह्मण होकर वेश्यासे सङ्ग करे वा मद्य पीवे, जो दुष्टोंकी आज्ञा पाले, जो ब्राह्मणोंकी वृत्ति नाश करे, जो ब्राह्मणोंको नौकर रक्खे, ये सब ब्राह्मणको मारनेवाले मनुष्यके समान पापी हैं; वेदमें यह भी लिखा है कि इनको क्रूकर प्रायश्चित करना चाहिये। जो विद्वानोंके वचनोंको ग्रहण करे, नीतिको जानता हो, विषयोंको कह सकता हो, कुटुम्बसे बचे हुए अन्नको खाता हो; किसीका द्वेष न करता हो, बिना अनर्थ किये न घबड़ाय; उपकारको माने; सत्य बोले और सबके सङ्ग कोमलता करे, ऐसा विद्वान स्वर्गको जाता है। हे राजन्! सदा प्यारी बात कहनेवाले मनुष्य बहुत मिलते हैं, परन्तु अप्रिय और हितकारी वचन कहने और सुननेवाले बहुत कम हैं। जो राजाके प्रेम और क्रोधको छोड़कर हितकारी कड़वा वचन कहता है, वही राजाका सहायक है। कुटुम्बके लिये मनुष्यको छोड़ दे, गांवके लिये कुटुम्बको छोड़ दे, नगरके वास्ते गांवको छोड़ दे और अपने हितके लिये सब जगतको छोड़ दे। हे राजन्! हे विचीत्रवीर्य्यपुत्र! मैंने जुवेके समय आपसे कहा था कि हे राजन्! यह जुवा खेलना अच्छा नहीं है, परन्तु आपको मेरे वे वचन ऐसे कड़वे लगे जैसे रोगीको पथ्य। आप क्या कौवेरूपी अपने पुत्रोंसे हंसरूपी पाण्डवोंको हराना चाहते हैं? हे पृथ्वीनाथ! आप सिंहको छोड़कर सियारोंकी रक्षा करके समय आनेपर सोचेंगे। हे प्यारे धृतराष्ट्र! जो अपने भक्त दासपर कभी क्रोध नहीं करता, सेवक उसी स्वामीसे प्रसन्न रहता है। आपदाके लिये धनकी रक्षा करे, धनसे कुटुम्बकी रक्षा करे, अपनी रक्षा स्त्री और धनसे करे। हमने पहले समयमें भी यह देखा है कि, जुवा बैरका मूल है, इस लिये बुद्धिमानको उचित है कि हंसीके लिये भी जुवा न खेले। बुद्धिमानको उचित है कि नौकरोंको वृत्ति न देकर राज्यकी आशा न करे; क्योंकि अच्छे भोग न पानेसे राजाको बिना भोग पाये मन्त्री राज्यका नाश कर देते हैं। राजाको उचित है कि सब कामोंको देखकर नौकरोंकी वृत्तिका निश्चय करे, पश्चात सहाय करने योग्य मनुष्योंकी सहायता ले; क्योंकि कठिन काम बिना सहायकोंके सिद्ध नहीं होते। जो आलस रहित सेवक स्वामीके अभिप्रायको जानकर काम करता है, स्वामीके कल्याणकी बात कहता है, अच्छे काम करता है, राजाकी शक्तिको जानता है, उस सेवकके ऊपर राजाको अपने कुटुम्बके समान कृपा करनी चाहिये। जो अपने स्वामीके वचनोंका निरादर करे, कड़वी बात कहे बताये हुए कामको न करे, और जो अपनी बुद्धिका अभिमान करे, वह मूर्ख सेवक उसी समय निकाल देनेके योग्य है। जो कठोर न हो, नपुंसक न हो, जिसको अभिमान न हो, जो शीघ्र काम करता हो, जिसको शत्रु न जीत सकता हो, जिसको कुछ रोग न हो, जिसका वचन कठोर न हो, ऐसे मनुष्यको दूत बनाना चाहिये. शास्त्रोंमें दूतके येही आठ लक्षण लिखे हैं। बुद्धिमान दूतको उचित है कि सन्ध्या समय शत्रुके घरमें न जाय, रात्रिको

चौराहेमें छिप कर न खड़ा हो, और जिस स्त्रीपर राजाका चित्त हो, उसपर अपना चित्त न चलावे। कभी राजाकी सम्मतिके विरुद्ध न कहे, दुष्ट सङ्गति करनेवाले वा बुरे सम्मतिवाले राजाके पास न जाय; राजासे यह न कहे कि हम आपका विश्वास नहीं करते हैं और कुछ वहाना करके उसके कामको न टाल दे। लज्जावान राजा, कुलटा स्त्री, राजाका नौकर, भाई, बेटा, पुत्र, बालक, बेटेवाली विधवा, सेनाका नौकर और जिसका अधिकार छीना गया हो, इतने मनुष्योंसे कुछ व्यवहार नहीं करना चाहिये। बुद्धि, उत्तम कुलमें जन्म, विद्या, इन्द्रिय जीतना, पराक्रम, थोड़ा बोलना और शक्तिके अनुसार दान देना, इन्हीं आठ गुणोंसे मनुष्यका प्रकाश होता है। हे प्यारे धृतराष्ट्र! जो राजा मनुष्यका आदर करे, वह इन सब गुणोंसे बढ़ जाता है, इस गुणसे आठो गुण छिप जाते हैं। हे राजेन्द्र! बल, रूप, स्वर और वर्णकी शुद्धता, पवित्र बस्तुको छूना, पवित्र सुगन्धिको संघना, धन, कोमलता और अच्छी स्त्री, ये आठों गुण महात्माको मिलते हैं। थोड़ा खानेवाले मनुष्यको रोग नहीं होता, उसके आयु, बल और सुख बढ़ते हैं, उसका पुत्र बहुत बलवान होता है; इसी लिये महात्मा लोग बहुत खानेवालेकी निन्दा करते हैं। जो बुरा कर्म करे, बहुत खाय, लोकका बैर करे, बहुत छल करे, जो देश और कालको न समझे तथा बुरा वेष धारण करे, इन मनुष्योंका राज्यसे निकाल देना चाहिये। जो दान न करे, गाली दे, विद्या न पढ़े, सदा वनमें रहे, धूर्त हो, जो मानने योग्य मनुष्यका आदर न करे, जिसको दया न हो, जो सबसे बैर करे और जो उपकारको न माने, इन मनुष्योंसे अत्यन्त दुःख पड़नेपर भी भिक्षा न मांगनी चाहिये। जो सदा बुरे काम करे, जो सदा भूल करे, जो सदा झूठ बोले, जिसका प्रेम स्थिर न हो, जिसको कुछ प्रेम ही न हो, और जो अपने आपको बहुत चतुर माने, इन छः मनुष्योंसे प्रेम नहीं करना चाहिये। धनसे सहायक मिलते हैं, और सहायकोंसे धन मिलता है; ये दोनों परस्पर ऐसा सम्बन्ध रखते हैं कि एकके विना दूसरेकी सिद्धि नहीं होती। मनुष्यको उचित है कि पुत्रोंको उत्पन्न करके विद्या पढ़ावे, फिर उनको सब ऋणोंसे छुड़ा दे, पश्चात किसी वृत्तिमें लगा दे और लड़कियोंका अच्छे स्थानपर विवाह कर दे। इसके पश्चात वनमें जाकर तपस्या करे। मनुष्यको उचित है कि जिसमें अपना और सब जगतका कल्याण हो, ऐसा काम करे। इससे सब प्रयोजन सिद्ध हो जाते हैं। जिस मनुष्यमें अपनी उन्नति करनेकी इच्छा, तेज शक्ति, साहस, धर्म्म, उद्योग और काम करनेका निश्चय, ये गुण हों उसे दरिद्रसे क्या भय है? हे राजेन्द्र! जिन पाण्डवोंसे देवतोंके सहित इन्द्र कांपते हैं, उनके सङ्ग बैर करनेसे क्या क्या हानिया है, सो हम आपको दिखाते हैं, जबसे पाण्डव और आपके पुत्रोंसे बैर हुआ है, तभीसे आपका चित्त घबड़ा रहा है, यशका नाश हो रहा है और शत्रु प्रसन्न होरहे हैं, जैसे धूमकेतु तारा आकाशमें उदय होकर जगतका नाश करता है, तैसेही भीष्म, द्रोणाचार्य्य महाराज युधिष्ठिर और आपका क्रोध जगतका नाश कर सकता है। हे इन्द्रतुल्य! आपके सौ पुत्र, कर्ण, और पाचों पाण्डव मिलकर समस्त पृथ्वीका राज्य करें, यही हमारी सम्मति है। हे राजेन्द्र! आपके पुत्र वन हैं, और पाचो पाण्डव सिंह हैं; आप वनको मत काटिये और सिंहोंको भी मत मारिये। हे राजेन्द्र! वन सिंहकी और सिंह वनकी रक्षा करता है, विना सिंहके वनका नाश हो जाता है और विना वनके सिंहका नाश हो

जाता है। इस लिये आप बन और सिंह दोनोंहीकी रक्षा कीजिये। आपके पापी पुत्र पाण्डवोंका कल्याण नहीं चाहते और न उनके गुणोंकी ओर ध्यान देते हैं, ये केवल पाण्डवोंके दोषोंहीको ढूढते हैं। मनुष्यको उचित है कि जब अपने कल्याणकी इच्छा करे, तब पहले धर्म्म करे, जैसे स्वर्गसे अमृतका नाश नहीं होता, ऐसेही धर्म्मात्माका प्रयोजन नाश नहीं होता। जो सदा पाप भोगता है, और अपने मनको धर्म्ममें लगाता है, वही जगत और आत्मज्ञानको जानता है। जो मनुष्य समयके अनुसार धर्म्म, अर्थ और काम करता है, वह इन तीनोंके प्रभावसे मोक्षको प्राप्त होता है। हे राजन्। जो आपत्ति पड़नेपरभी नहीं डरता, और जो क्रोध और आनन्दको रोकता है, वही सुखका पात्र है। हे राजन्। मनुष्योंके जो पांच प्रकारके बल है, उनका वर्णन हम आपसे करते है, उन पाचोंमें जो बाहुबल है, सो सबसे छोटा है। अच्छा मन्त्री मिलना, धन मिलना, अपने पुरुषोंका अधिकार मिलना, जातिका बल, तथा बाहुबल येही पाच बल हैं। हे भारत। जो इन पाचों बलोंका संग्रह करता है, उसको सब बलोंमें श्रेष्ठ बुद्धिबल प्राप्त होता है। जो सदा बड़े आदमोसे बैर करे, उससे बैर करनेसे मनुष्य यह न समझे कि मैं अपने बैरोसे बहुत दूर हूं, ऐसा कौन पण्डित है जो स्त्री, राजा, सांप, पढानेवाले, स्वामी, शत्रु, भाग और आयुका विश्वास करे। हे राजन्। जो अपनी बुद्धिरूपी बाणसे शत्रुका नाश करता है, उसका कोई वैद्य चिकित्सा नहीं कर सकता, उसके लिये कोई औषधी, होम, मन्त्र, मङ्गल, अथर्व्ववेदके मन्त्र और विष नाशक अच्छी बनाई हुई औषधि लाभदायक नहीं है। हे राजेन्द्र। साप, अग्नि, सिंह और उत्तम कुलमे उत्पन्न हुए मनुष्यका निरादर नही करना चाहिये, क्योंकि ये सब महा तेजस्वी हैं। जगतमें अग्निका तेज बहुत माना जाता है, वह सब लकड़ोंमें गुप्त रूपसे रहता है, परन्तु जबतक कोई मनुष्य उसे न जलावे, तबतक काष्ठको भी नहीं जला सकता है, परन्तु जब वही अग्नि लकड़ी घिसनेसे प्रकट हो जाती है, तब उस काठ और सब बनको भस्म करदेती है। इसी प्रकार महातेजस्वी पाण्डव लोग इस वंशमें अग्निके समान उत्पन्न हुए है, वे काठमें छिपी हुई अग्निके समान क्षमा कर रहे हैं, हे राजन्। आप और आपके पुत्र बेलिके समान और पाण्डव बड़े शालवृक्षके समान हैं, बिना वृक्षके आश्रय बेलि नहीं बढ़ती, इस लिये आप पाण्डवोंका आश्रय लीजिये। हे अम्बिकापुत्र धृतराष्ट्र। आप बन और पाण्डव सिंह है, बिना बनके सिंह और बिना सिंहके बन नहीं रहता। इस लिये आप दोनोंहीकी रक्षा कीजिये।

३७ अध्याय समाप्त।

विदुर बोले, हे महाराज धृतराष्ट्र! मनुष्यका प्राणवायु ऊपरको जाता है, फिर घूमकर भीतर चला जाता है। जब कोई गृहस्थके घरमें आवे, तब उसे आसन दे, जल लाकर उसके पैर धोवे पश्चात् उसका कुशल पूछ कर अपना कुशल कहे, फिर उत्तम अन्न खानेको दे। वेद जाननेवाला ब्राह्मण जिससे मधुपर्क, गौ और भोजन न पावे, महात्माओंने उसका जीवन वृथाही कहा हैं। लोभसे, भयसे या दुष्टतासे जिसके घरसे बिना खाये अतिथि लौट जाय, उसका जीवन वृथा है। वैद्य, घाव करनेवाला, भ्रष्ट ब्रह्मचारो, दुष्ट, मद्यपीनेवाला, गर्भ गिरानेवाला, सेनाका नौकर, वेद बेचनेवाला, अर्थात् जो धन लेकर वेद पढ़ावे, और जिसको पाप प्यारा हो, इन मनुष्योंके पैर नहीं धोने चाहिये। जो नमक, कच्चे अन्न,

दही, दूध, सहद, तेल, घी, तिल; मांस, फल, मूल, साग, लाल कपड़ा, फूल और गुड़ बेचे उस ब्राह्मणको पैर नहीं धोने चाहिये। हे राजन्। जिसको क्रोध न हो, जो अन्य द्रव्य और लोहेको समान समझे, जिसको कुछ शोक न हो, जो लड़ाई और मेलको कुछ न समझे, जिसको निन्दा और प्रशंसा समान हो, जो प्रिय और अप्रियको कुछ न जाने; जो साधारण रूपसे भूमि उसीको भिक्षुक कहते हैं। जो मूल और साक खाता है, जो अपने मनको वशमें रखता है, और अपने कामोंमें सावधान हो, और जो नये घरमें आकर भी सन्देह नहीं करता वही महात्मा तपस्वी कहाता है। बुद्धिमानसे बैर करके मैं दूर हूं, ऐसा विश्वास नहीं रखना चाहिये, क्योंकि बुद्धिमानके बड़े लम्बे हाथ होते हैं, वह दूरहीसे अपने शत्रुओंका नाशकर देता है। विश्वास करने योग्य मनुष्यका विश्वास करना चाहिये और न विश्वास करने योग्य मनुष्यका विश्वास नहीं करना चाहिये, क्योंकि इसका विश्वास करनेसे सर्व्वनाश होजाता है। मनुष्यको उचित है कि किसीका प्रहसन न करे, खाने- स्त्रियोंको वशमें रक्खे, किसीका [illegible]ता, [illegible] अपनी [illegible] भाग न क्षो. मीठा वचन कहे, कोमलता[illegible]; [illegible] रक्खे औ[illegible] स्त्रियोंसे प्यारी बाणी कहे, परन्तु स्त्रियोंके वशमें न होजाय, महा भाग्यवती पुण्य करने वाली, स्त्री पूजा करनेके योग्य है। स्त्री घरका धन और घरकी शोभा है, इस लिये उसकी रक्षा सदा करनी चाहिये। मनुष्यको उचित है कि पिताको घरका स्वामी, माताको [illegible] ईकी स्वामिनी, और अपने तुल्य मित्रको गौओंका अधिकार देकर आप खेतीका काम करे, नौकरोंके द्वारा व्यापार, पुत्रोंके द्वारा ब्राह्मणोंकी सेवा, जलसे अग्निकी सेवा, और सत्यसे राजाकी सेवा करे, तथा पत्थरसे लोहेके करे। जो ऐसा करता है, उसका तेज

मलीन जा सकता है। पाण्डव लोग महा तेजस्वी, क्षमावान और कुलीन हैं, वे इस समय इस प्रकार छिप रहे हैं जैसे काठके भीतर अग्नि। जिस राजाकी सम्मतिको भीतर और बाहरका कोई मनुष्य न जान सके, वही राजा सब वस्तुओंको देख सकता है, और बहुत दिनतक राज्य करता है। राजाको उचित है कि कार्य्यसिद्धि होनेके पहिले किसीसे न कहे, जब सिद्ध हो जाय, तब सबमें प्रगट कर दे। राजाको उचित है कि धर्म्म और राज्यके कार्य्योंको ऐसे स्थानपर बैठ कर विचारे, जहां कोई न जा सके। सम्मति करनेके ये स्थान हैं, पर्व्वतका शिखर, एकान्त अटारी और बिना तिनकेका जङ्गल। हे भारत! अपनी सम्मति शत्रु, मूर्ख मित्र और रोगीसे नहीं कहनी चाहिये और न बिना परीक्षा किये किसीको मन्त्री बनाना चाहिये। जिस राजाके धन, प्रजाके लक्षण और राज्य सम्बन्धी कार्य्योंको केवल मन्त्रीही जानते हैं वही राजा राजोंमें श्रेष्ठ कहाता है। जिस राजाके सिद्ध हुए कामको सभासद जानें, जिसका मन्त्र गुप्त हो, उस राजाका प्रयोजन निःसन्देह सिद्ध होता है। जो मूर्ख भूलसे भी बुरा काम करता है, वह उन कार्य्योंके नष्ट होतेही नष्ट होजाता है। अच्छे कामोंके करनेसे सुख होता है और उन्हींके न करनेसे पछताना पड़ता है। जैसे बिना वेद पढ़ा ब्राह्मण श्राद्ध नहीं कर सकता; ऐसेही राज्यके छः गुण बिना जाने राजा मन्त्रियोंके वचन सुनने योग्य नहीं होता। हे पृथ्वीनाथ! जो हानि लाभको समझता है। राज्यके छः गुणोंको जानता है और उत्तम मनुष्योंका आदर करता है, सब पृथ्वी उसीके वशमें रहती है। जो वृथा क्रोध नहीं करता और न वृथा प्रसन्न होता है; जो कामोंको करके आप देखता है; जो अपने धनको आप

देखता रहता है; वही राजा पृथ्वीका राज्य करता रहता है। जो नाम और चत्र मात्रसे सन्तोष करता है अर्थात् भोगादिकोंसे सम्बन्ध नहीं रखता, जो सब सेवकोंको सुख देता है, और किसीका कुछ नहीं छीनता, वही राजा होने योग्य है। ब्राह्मण ब्राह्मणको, पति स्त्रीको, राजा मन्त्रीको तथा दूसरे राजाको जान सकता है। शत्रुको पकड़कर कभी नहीं छोड़ना चाहिये, बल रहनेपर अवश्य उसको मारही डालना चाहिये और जीते हुएसे दूर बैठना चाहिये। जीते हुए शत्रुको छोड़नेसे पुनः हानि होनेका भय रहता है। देवता, राजा, ब्राह्मण, वृद्ध, रोगी और बालकोंपर कभी क्रोध नहीं करना चाहिये। बुद्धिमानको उचित है कि मूर्खोंके करने योग्य विना प्रयोजनकी लड़ाईको न करे, क्योंकि वैर न करनेसे अपकीर्त्ति नहीं होती और न कुछ आपत्ति आती हैं। जिसकी प्रसन्नतासे कुछ लाभ न हो और क्रोधसे कुछ हानि न हो, सेवक ऐसे स्वामीको इस प्रकार छोड़ देते हैं, जैसे नपुंसक पतिको स्त्री छोड़ती है। बुद्धिका फल धन लाभ नहीं है, और न मूर्खताका फल दरिद्रता है। इस लोक और परलोकके व्यवहारोंको पण्डितही जान सकता है, मूर्ख नहीं। विद्यावृद्ध, शीलवृद्ध, बुद्धिवृद्ध, जातिवृद्ध और धनवृद्धोंका मूर्ख लोग निरादर करते हैं। बुरे चरित्रवाले, मूर्ख, निन्दक, क्रोधी और अधर्म्मी पर आपत्ति पड़ती है। किसीसे छल न करना, दान करना, समयकी मर्य्यादाको न तोड़ना और सबके कल्याणकी बात कहना ये गुण शत्रुको भी मित्र बना लेते हैं! किसीसे छल नहीं करनेवाला सब कर्म्म करनेमें समर्थ, उपकारको माननेवाला और सीधा मनुष्य धन रहित होनेपर भी सबका मित्र बना रहता है। धारणा, मनको और इन्द्रियोंको वशमें रखना, पवित्रता, दया करना, कोमल वाणी और मित्रोंसे प्रेम करना, ये सात गुण लक्ष्मीको बढ़ानेवाले हैं। जो पालन करने योग्य मनुष्योंको अन्न न दे, दुष्ट हो, उपकारको न माने और निर्लज्ज हो, ऐसे राजाको दूरहीसे छोड़ देना चाहिये। जो दोषरहित मनुष्यको क्रोध दिलाता है, और आपही दोषी होता है, वह सांपके समान रात्रिको सुखसे नहीं सोता। हे भारत! जिनके बिगड़नेसे कुछ दोष हो, अर्थात राज्य या धनमें हानि हो, ऐसे मनुष्यकी सदा देवताके समान पूजा करनी चाहिये। जो स्त्रियोंमें लीन हो, जो पागल और नीचोंसे संसर्ग रखता हो, और जो दुष्टोंके सङ्गमें बैठता हो, उन सबसे सदा सन्देह रखना चाहिये। जिस घरमें स्त्री, छली अथवा बालक स्वामी हो, वह घर इस प्रकार डूब जाता है, जैसे नदीमें पत्थर। हे भारत! जो केवल अपने प्रयोजनहीको देखता है, और अधिकताकी इच्छा नहीं करता हम उसीको पण्डित मानते हैं, क्योंकि अधिकताही उपद्रवकी मूल है। जिस मनुष्यकी छली, भाट, और वेश्या प्रशंसा करे, उसका जीनाही क्या? हे राजेन्द्र! आपने परम धनुषधारी, महा तेजस्वी पाण्डवोंसे धन छीनकर दुर्य्योधनको दिया है, सो आप थोड़ेही दिनमें मूर्ख दुर्य्योधनको इस प्रकार राज्यसे नष्ट देखेंगे, जैसे धनका अभिमानी बलि राज्यसे नष्ट होगया था।

३८ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे विदुर! जैसे सूतमें बंधी काठपुतली नचानेवालेके वशमें रहती है, तैसेही मनुष्यभी प्रारब्धके वशमें रहता है, उसीसे मनुष्य अच्छा और बुरा काम करता है, इससे हमको निश्चय होता है कि मनुष्य

पराधीन है! तुम और कुछ कहो हम सुनना चाहते हैं।

विदुर बोले, हे राजेन्द्र। बिना समयकी बात कहनेसे बृहस्पतिकी भी निन्दा होती है। हे भारत। कोई मनुष्य दान देनेसे, कोई मीठी बात कहनेसे और कोई अच्छी सम्मति देनेसे जगतका प्यारा होता है। साधु, बुद्धिमान और पण्डितका बैर नहीं करना चाहिये, अपने मित्रके लिये अच्छा काम करना चाहिये और शत्रुके लिये शत्रुताका काम करना चाहिये। हे राजेन्द्र। जिस समय दुर्य्योधन उत्पन्न हुआ था, उसी समय मैंने आपसे कहा था, कि आप इस एक पुत्रको फेंक दीजिये, क्योंकि इस एकके फेंकनेसे सौ पुत्र जीवेंगे, और इसके रखनेसे सौ पुत्रका नाश होजायगा। जिस बढ़तीसे नाश होनेका भय हो, उस उन्नतिको छोड़ देना चाहिये और जिस हानिसे बढ़तीको आशा हो, उस हानिको भी स्वीकार करनी उचित है। हे राजेन्द्र! जिस हानिसे पीछे बढ़ती हो, वह हानि नहीं कहाती, हानि वही कहाती है जिससे कुछ उन्नति न हो। हे धृतराष्ट्र। कोई मनुष्य गुणका धनी होता है! आप गुणरहित धनवान लोगोंको छोड़ दीजिये।

धृतराष्ट्र बोले, हे विदुर। तुम जो कहते हो सो सब ठीक है, पण्डितोंको ऐसाही कहना चाहिये, इसीसे उन्नति होती है, परन्तु हम क्या करें अपने पुत्रोंको नहीं छोड़ सकते, किन्तु यह जानते हैं कि जहां धर्म्म है, तहां विजय होगी।

विदुर बोले, हे राजेन्द्र! अत्यन्त गुणवान होनेपर भी जिसको शील नहीं है, वही मनुष्योंके नाशकी इच्छा करता है, अर्थात् आपको कुलका नाश नहीं करना चाहिये। दुष्ट लोग दूसरेकी निन्दा करते हैं, दूसरेके दुःखको अपना कल्याण समझते हैं, और रोज प्रातःकाल उठकर विरोधका उपा[य] सोचते हैं। जिनके दर्शनसे दोष लगता है, उनके सङ्ग रहनेसे बहुत भय होता है, उन[से] धन लेने और देने दोनोंहीमें भय है। [जो] परस्पर विरोध कराते हैं, उन पापी, अप[ने] प्रयोजन सिद्ध करनेवाले, दुष्ट और निर्लज्ज[के] सङ्ग नहीं रहना चाहिये, तथा और [भी] अनेक दोषयुक्त मनुष्योंको छोड़ना उचित है, क्योंकि जब प्रेम नष्ट हो जाता है, तब स[ब] सुखोंका नाश हो जाता है, इस लिये नीच[के] सङ्ग पहलेहीसे प्रेम नहीं करना चाहिये। जो मित्रताका सुख है, सो दुष्टके प्रेमसे नहीं होता है। दुष्ट मित्रको अपकीर्त्तिका [उपाय] करता है, और उसकी हानिका उपाय करता है, थोड़ा दोष होनेपर भी दुष्ट मित्र शान्त नहीं होता। ऐसे मूर्ख, छली, निर्लज्ज, दुष्ट मित्रको विद्वान बुद्धिसे बिचार कर दूरसे छोड़ दें। जो जाति, दरिद्र, दीन और रोगियोंके उपर कृपा करता है, वह पशु और पुत्रोंके सहित कल्याणको प्राप्त होता है, जो अपने कल्याणकी इच्छा करे, उसको उचित है कि पहले अपने जातिवालोंकी वृद्धि करे। हे राजेन्द्र। इस लिये आप भी अपने कुलकी वृद्धि कीजिये, ऐसा करनेसे आपका बहुत कल्याण होगा। हे भरतकुलसिंह। अपने वंशमें उत्पन्न हुए मूर्खकी भी रक्षा करनी चाहिये, फिर पाण्डव तो सब गुणोंसे भरे और आपकी कृपा चाहनेवाले हैं। हे पृथ्वीनाथ! आप वीर पाण्डवोंके ऊपर कृपा कीजिये और उनके निर्वाहके लिये कुछ ग्राम दे दीजिये। हे नरनाथ। ऐसा करनेसे लोकमें आपकी कीर्त्ति बढ़ेगी। आप कुलमें बूढे हैं, इस लिये आपहीको सब पुत्रोंका स्वामी होना चाहिये। हे राजेन्द्र। मुझकोभी आपके कल्याणके वचन कहने चाहिये, क्योंकि मैं आपका कल्याण चाहता हूं, हे तात! यदि आप अपना कल्या[ण]

चाहते हैं, तो पाण्डवोंसे लड़ाई मत कीजिये। हे भरतकुलसिंह! जातिके सङ्गमें बैठ कर खाना चाहिये और उनसे विरोध न रखना चाहिये, जातिके सङ्ग भोजन करना चाहिये, प्रीति करनी चाहिये और अच्छी बात करनी चाहिये, उनसे विरोध कदापि नहीं करना चाहिये, क्योंकि जाति डुबा देती है और जातिही पार करती है। दुष्ट डुबा देते हैं और अच्छे उद्धार करते हैं। हे राजेन्द्र! आप पाण्डवोंके सङ्ग मित्रता कीजिये, ऐसा करनेसे आपको कोई शत्रु नहीं जीत सकेगा। जैसे विषमें बुझे बाणवाले व्याधेको देखकर हरिण घबड़ाते हैं, वैसेही जिस लक्ष्मीवान मनुष्यको देखकर जातिवाले घबड़ाय, उसके समान पापी और कौन होगा? हे पुरुषश्रेष्ठ! युद्धमें अपने पुत्र अथवा पाण्डवोंको मरा हुआ सुन पोकेभी आपका दुःख होगा, इस लिये इसी समय उसका विचार कर लीजिये। आप जानते हैं कि जीवन अनित्य है, इस लिये पहिलेहीसे ऐसा कर्म्म नहीं करना चाहिये जिससे बुढ़ापेमें चारपाईपर पड़कर सोचना हो। शुक्रको छोड़कर और कोई मनुष्य ऐसा नहीं है जो अनीति न करे, परन्तु बुद्धिमानको यह विचारना चाहिये कि जो बीत गया सो बीत गया अब आगेको अच्छाही कर्म्म करेंगे। हे राजन्! दुर्य्योधनने जो कुछ दोष किया है, उस सबको आप पाण्डवोंसे क्षमा कराइये, क्योंकि आप कुलमें बूढ़े हैं। हे पुरुषश्रेष्ठ! जब आप पाण्डवोंको राज्य दे दीजियेगा, तब जगतके सब महात्मा आपकी प्रशंसा करने लगेंगे और आपके सब दुःख नाश होजायंगे। जो पण्डितोंके उत्तम वचनोंको स्मरण करके काम करता है, वह बहुत दिनतक सुख और यशको भोगता है। जो ज्ञानी होकरभी मनुष्यके बुरे वचनोंको ग्रहण करता है, और फिर बिना विचारेही उसके अनुसार काम भी करता है, उसकी वृद्धि नहीं होती। जो पहले पापको बिना विचारेही काम करने लगता है, उस मूर्खकी हानि अवश्य होती है। हे राजेन्द्र! धनकी इच्छा, थोड़ा सोना, अज्ञानता, अपना कर्म्म, दुष्ट मन्त्रीका विश्वास और मूर्ख दूतका विश्वास यही छः राज्यसुखके द्वार हैं, जो राजा इन छः द्वारोंको बन्द करके राज्य करता है, वही बुद्धिमान कहाता है। जो राजा अर्थ धर्म्म और कामका विचार करके शत्रुओंसे युद्ध करता है, उसकी विजय होती है। मनुष्यको बिना विद्या पढ़े और बिना बूढ़ोंकी सेवा किये कोई काम नहीं करना चाहिये। धर्म्म और अर्थको वृहस्पतिके समान बुद्धिवाले मन्त्रीही समझ सकते हैं। हे राजन्! जो वस्तु समुद्रमें गिर गई, वह नष्ट हो गई और जिस मन्त्रीका वचन राजाने न सुना वह भी नष्ट होगया, मूर्खको कही बात नष्ट होगई और राखमेंको हुई होम नष्ट होगई। बुद्धिमानको उचित है कि बुद्धिसे निश्चय करके, देखकर बुद्धिमानोंसे सुनकर अच्छे मनुष्यको अपना मन्त्री बनावे। हे राजेन्द्र! विनय अपकीर्त्तिका, पराक्रम अनर्थका, क्षमा क्रोधका और उत्तम आचरण बुरे लक्षणोंका नाश करते हैं। हे राजन्! भोजन, निवास, घर, कर्म्म और वस्त्रादिकोंसे मनुष्यके कुलको परीक्षा होती है। जैसे मरे हुए मनुष्यको प्रसन्न करनेसे कुछ लाभ नहीं होता ऐसेही काम होनेके पश्चात उपाय करनेसे कुछ सिद्धि नहीं होती। पण्डितको सेवा करनेवाले वैद्य, धार्म्मिक, सुन्दर मित्र, उत्तम वचन कहनेवाले और अपने प्रेमीकी रक्षा सदा करनी चाहिये। चाहे उत्तम कुलमें उत्पन्न हुआ हो चाहे बुरे कुलमें उत्पन्न हुआ हो, जो धर्म्मकी मर्य्यादाको नही छोड़ तथा जितेन्द्रिय और बुद्धिमान हो सो कुलीनोंसे अच्छा है। जिनके चित्तसे चित्त मिले हों, जो दोनोंके सुखसे सुख

मानते हों, जिन दोनोंकी बुद्धि समान हो, उनका प्रेम कभी नष्ट नहीं होता। जो मूर्ख तिनकोंसे छिपे हुए कुएंके समान छलसे प्रेम करते हैं, वह मित्र दूरसे छोड़ने योग्य है, क्योंकि उनकी प्रीति बुद्धिमानसे नहीं निबहती। मूर्ख, अभिमानी, क्रोधी, साहसी और अधर्म्मीसे प्रेम नहीं करना चाहिये। बुद्धिमान, धर्म्मात्मा, सत्यवादी, गम्भीर, प्रेमी, जितेन्द्रिय, मर्य्यादाको न छोड़नेवाले और महात्मा मनुष्यसे प्रेम करना चाहिये। अपनी इन्द्रियोंको बिषयोंसे रोकना सब धर्म्मोंमें श्रेष्ठ है, क्योंकि इन्द्रियोंको बहुत बिषयोंमें जाने देनेसे अत्यन्त बुद्धिमानकाभी नाश हो जाता है। पण्डितोंने मित्रको मानना, कोमलता, किसी प्राणीकी हानि न चाहना, क्षमा और धारणा की आयु बढ़ानवाले कर्म्म कहे हैं। जो उत्तम बुद्धिमानसे छीने हुए धनको पुनः देनेकी इच्छा करता है, वह अत्यन्त बुद्धिमान होनेपर भी नपुंसक कहाता है। जो यह बिचारे कि मैं काम होनेके पश्चात् उपाय कर लूंगा, वह भी मूर्खही है। जो अपने कार्य्यके आरम्भ और समाप्तिको जानता है, उसकी हानि कभी नहीं होती। जो मनुष्य, मन, बचन और कर्म्मसे बुरा काम करता है, उसका अवश्य नाश होता है इस लिये अच्छेही काम करने चाहिये। अच्छे काम करने, विद्या लाभ, और कोमलता तथा पण्डितोंके दर्शन, यही कर्म्म लाभदायक हैं। सदा उद्योग करनाही लाभ, धन और सुखका मूल है, उद्योगी सुखी रहता है, और बहुत धन प्राप्त करता है। हे राजन्! उद्योगके समान उत्तम कर्म्म कोई नहीं है, उन्नति चाहनेवाला मनुष्य सदा क्षमा करे, असमर्थ सभोंके ऊपर क्षमा करता है, परन्तु जो समर्थ होकर क्षमा करे, वही धर्म्मात्मा कहाता है। जो लाभ और हानिको समान समझता है, वही सदा क्षमा कर सकता है। जिस सुखके

भोगनेसे धर्म्म और यशका नाश न हो, वे काम मनुष्यको करना चाहिये। कभी मूल: भी अधर्म्मका काम करना उचित नहीं। राजेन्द्र! मूर्ख, रोगी, मद्य पीनेवाले अ आलसियोंको धन नहीं मिलता। तथा मनुष्य इन्द्रियोंको अपने वशसे नहीं रखते अ जिनको उत्साह नहीं है, वे भी कभी धन नहीं होते। जो कोमलतासे रहता है, ल करता है और सत्य बोलता है, मूर्ख त उसको असमर्थ कहा करते हैं, परन्तु उसी उन्नति होती है। जो बहुत उद्योग करता दान करता है, युद्धसे हटता नहीं, अ प्रतिज्ञाको नहीं छोड़ता और सब कामों बुद्धिसे विचारकर करता है, उस मनुष्यका र कभी नष्ट नहीं होता। अत्यन्त गुणवान अ अत्यन्त निर्गुण इन दोनोंमें किसीके प लक्ष्मी नहीं रहती है, क्योंकि ल अत्यन्त गुणोंकोभी इच्छा नहीं कर और निर्गुणसे तो, प्रसन्नही नहीं होत जैसे पागल गौ नियमसे नहीं चलती, ऐसे मूर्खोंका धनभी अच्छे मार्गोंमें न जाता। वेदोंका फल यज्ञ है, विद्याका श स्त्रीका पुत्र और धनका फल धर्म्म है। अधर्म्मसे पैदा किये हुए धनसे पितरो श्राद्ध करता है, उस श्राद्धका फल पितरो नहीं पहुंचता, क्योंकि सुख धर्म्मसे ह है। बन, जल, दुःखके स्थान, आपत्ति, भू और युद्धोंमें धर्म्मात्माको भय नहीं होत अपनी उन्नति करना, इन्द्रियोंको जीत सब कर्म्मोंको करना, भूल न करना, धार स्मरण रखना और कामोंको विचार करना, येही उन्नतिके मूल हैं। तपस्वियो तप, वेद जाननेवालोंका वेद, दुष्टोंका ि और महात्माओंका क्षमाही बल है। ज मूल, फल, दूध, घी और दवाका भक्ष सब वस्तुओंसे व्रतका नाश नहीं होता।

अपने विरुद्ध कर्म्मको उसे कभी नहीं करना चाहिये। धर्म्म धनसे होता है, धन कामको छोड़नेसे बढ़ता है। क्षमासे क्रोधको, साधुतासे दुष्टको, दानसे मूर्खताको, झूठसे सत्यको जीतना चाहिये। स्त्री, धूर्त्त, आलसी डरपोक, दुष्ट, अभिमानी, चोर, कृतघ्न और नास्तिकका कभी विश्वास नहीं करना चाहिये। जो सदा देवता और बूढ़ोंकी सेवा करता है, उसकी कीर्त्ति, आयु, यश और बल बढ़ते हैं। जो धन बहुत क्लेश अधर्म्म और शत्रुकी प्रार्थना करनेसे मिले, उसकी कदापि इच्छा नहीं करनी चाहिये। मूर्ख मनुष्य, बिना सन्तानका मैथुन, निर्धन प्रजा और राजाके रहित राज्यका सोच करना चाहिये। मार्ग मनुष्योंके लिये, जल पर्व्वतोंके लिये, भोजन करना स्त्रियोंके लिये और बुरा वचन मनुष्योंके लिये बुढ़ापा है। बिना पढ़े वेद, बिना व्रतका ब्राह्मण, झूठ बोलनेवाला मनुष्य, आश्चर्य कर्म्म करनेवाली पतिव्रता और वियोगिनी स्त्री, ये सब दुःखी कहाते हैं। सुवर्णका चांदी, चांदीका तांबा, तांबेका सीसा, और सीसेका लोहा मल है। सोनेसे निद्राको, कामसे स्त्रीको, इन्धनसे अग्निको और जलानेसे मद्यको नहीं जीतना चाहिये। जो दानसे मित्रोंको युद्धसे शत्रुओंको और भोजन वस्त्रसे कुटुम्बको जीतते हैं, उनका जीना सफल है। जिनके पास सहस्र रुपये हैं वे भी जीते हैं और जिनके पास सौ हैं वेभी जीते हैं, इसलिये आप अपने राज्य बढ़ानेकी इच्छाको छोड़ दें, तब सुखसे जीवेंगे। जगतमें जितना धन पशु और स्त्री है, उन सबको एक मनुष्य नहीं भोग सकता; यही विचारकर आप अपनी इच्छाको रोक दें। हे राजन्। हम फिरभी आपसे यही कहते हैं कि यदि आप अपने और पाण्डुके पुत्रोंको समान समझते हों, तो सबको समान दृष्टिसे देखें।

३८ अध्याय समाप्त।

विदुर बोले, जो आदर पाकर और अभिमानको छोड़कर अपनी शक्तिके अनुसार अच्छा काम करता है, वह शीघ्र सुखी होता है। एक महात्मा प्रसन्न होकर सब जगतका उपकार कर सकते हैं। जो धर्म्मको छोड़कर पापका आश्रय लेकर बड़े कामोंको भी नहीं करता, वह दुखोंसे निकलकर इस प्रकार सुख भोगता है, जैसे सांप पुरानी केंचुलीको छोड़कर सुखी होता है। झूठसे लाभ करना, राजासे किसीकी चुगली करनी और गुरुकी निन्दा करनी, ये ब्रह्महत्याके समान पाप हैं। निन्दा मृत्युका, बहुत बोलना लक्ष्मीका, किसीका आदर करना अभिमानका, और कामोंमें शीघ्रता करनी विद्याका शत्रु है। आलस्य, मद्यादिक पीना, भूल, चञ्चलता, बुरी सम्मति, कठोरता अभिमान और न देना, ये सात विद्यार्थियोंमें दोष कहे जाते हैं। विद्यार्थीको सुख कहां और सुख चाहनेवाले को विद्या कहां? इस लिये सुख चाहनेवाला विद्याको और विद्या चाहनेवाला सुखको छोड़ दे। अग्नि काठसे, स्त्री पुरुषोंसे, समुद्र नदियोंसे, और काल प्राणियोंसे तृप्त नहीं होता। हे राजन्। आशा धारणाको, काल उन्नतिको, क्रोध लक्ष्मीको, यश दुष्टताको, न पालना पशुओंको, और क्रोधी ब्राह्मण राज्यको नाश कर देते हैं। बकरी, कांसा, चांदी, शहद, ज्योतिषी, वेद जाननेवाले, बूढ़े जातिके मनुष्य और कुलीन मनुष्य आपके घरमें सदा बने रहें। स्वयम्भू मनुने कहा है बरे, तैल, चन्दन, बीन, शीशा, शहद, घी, लोहा; तांबेका पात्र, शंख, शालिग्राम और गोरोचन ये सब घरमें रखने चाहिये, हे भारत। इन सबको रखनेका प्रयोजन ब्राह्मण और अतिथियोंकी पूजाही है। हे तात। अब हम सबसे उत्तम बात तुमसे कहते हैं, यह बात बहुत श्रेष्ठ और सबसे उत्तम है। मनुष्यको उचित है कि काम भय, लोभ और जीनेके लोभसे भी

धर्मको न छोड़े, क्योंकि धर्म नित्य और सुख दुःख अनित्य है, जीव नित्य है, परन्तु जगतका कारण अर्थात अविद्या अनित्य हैं; आप अनित्यको छोड़कर नित्यको ग्रहण कीजिये क्योंकि सन्तोषही परम लाभ है। हे राजेन्द्र। आप बिचारिये कि कैसे कैसे बलवान महात्मा गुणवान धन और धान्यसे भरे हुए महाराज समस्त पृथ्वीका राज्य करके और फिर सब सुखोंको छोड़कर मर गये। हे राजेन्द्र! मनुष्य अपने प्यारे मरे हुए पुत्रको जङ्गलमें छोड़कर चला आता है, फिर मनुष्य उसे चितामें जला कर बाल खोलकर रोता है, परन्तु उसके सङ्ग कोई नहीं जाता। मरे हुए मनुष्यके धनको कोई दूसरा भोगता है, मनुष्यकी हड्डी रुधिर और मासको अग्नि भस्म कर देती है, मनुष्यके सङ्ग केवल पुण्य और पाप दोही वस्तु जाती है। मरे हुए मनुष्यको जातिवाले मित्र और पुत्र ऐसे छोड़कर चले आते हैं, जैसे फूल फलरहित वृक्षको पक्षी छोड़ते हैं। अग्निमें जलते हुए मनुष्यके सङ्ग केवल अपना किया हुआ कर्म्मही जाता है, इस लिये सबको उचित है कि यत्न करके धर्म्म करे। इस लोकके नीचे और ऊपर महा अन्धकार भरा है, परन्तु उस अन्धकारमें अधर्म्मी लोग जाते हैं, इस लिये आप अभीसे उसका विचार कीजिये तो वहां नहीं जाइयेगा, नहीं तो उसी अन्धकारमें पड़ियेगा। हे राजेन्द्र! हमने जो बचन आपसे कहे, यदि उनके अनुसारही आप काम कीजियेगा, तो सुख, यश और आनन्द पाइयेगा। हे भारत। आत्मा नदी है, उसमें सत्य रूपी जल भरा है, सत्य और धारणाही उसके दोनों तट है, दया तरङ्ग हैं, पाचो इन्द्री जल भरा है, काम और क्रोध बड़े बड़े ग्राह घूम रहे हैं, इस नदीमें स्नान करनेवाले महात्माही सुख पाते है। हे राजेन्द्र। आप धारणाकी नावपर बैठकर इस पार होइये। जो बुद्धि, बिद्या, धर्म्म, और अवस्थामें बूढ़े मनुष्य तथा अपने मित्रोंसे बूझकर करने और न करने योग्य कामोंको विचारता है, वह कभी भ्रममें नहीं पड़ता, जो धारणासे लिङ्ग और पेटको, नेत्रसे हाथ और पैरको, मनसे नेत्र और कानको तथा कर्म्मसे मन और वचनको रक्षा करता है, वह कभी दुःख नहीं पाता। जो ब्राह्मण रोज स्नान करे, रोज जनेऊ बदले, रोज वेद पढ़े, पतितका भोजन न करे, सत्य बोले और गुरुकी सेवा करे, सो ब्राह्मण कभी अपने धर्म्मसे नष्ट नहीं होता। जो क्षत्री वेदोंको पढ़े, यज्ञ करे, प्रजाका पालन करे; गौ और ब्राह्मणके लिये सम्मुख युद्धमें शस्त्रसे मरे, वह स्वर्गमें जाता है। जो वैश्य वेदोंको पढ़े, समय पर ब्राह्मण, क्षत्री और अपने सेवकोंको धन दे और यज्ञके धूवेंको सूंघके पवित्र हो, सो सुख भोगता है। जो शूद्र ब्राह्मण क्षत्री और वैश्य इन तीनो वर्णोंकी सेवा करे और उनको प्रसन्न करे वह मरकर स्वर्गमें जाता है। मैंने यह चारो वर्णोंका धर्म्म आपसे कहा। हे राजन्! इस समय पाण्डुके पुत्र क्षत्रधर्म्मसे नष्ट होते है, आप उनकी रक्षा कीजिये।

धृतराष्ट्र बोले, हे बिदुर! जो तुम हमसे कहते हो, हमारो बुद्धिभो वैसोही है, मैं सदा पाण्डवोंके सङ्ग ऐसाहो करना चाहता हूं, परन्तु दुर्य्योधनको देखतेही मेरी बुद्धि नष्ट हो जाती है इससे हमें निश्चय होता है कि प्रारब्धको कोई नहीं नाघ सकता। प्रारब्धही बड़ा बलवान है पुरुषार्थको धिक्कार है।

४० अध्याय समाप्त।

उद्योग पर्व्वमें प्रजागर पर्व्व समाप्त।

अथ सनत्सुजातपर्व्व।

धृतराष्ट्र बोले, हे बिदुर। तुम्हारे बचन बहुत बिचित्र हैं, इस लिये यदि तुम्हें और

कुछ कहना हो तो कह दो, हम बहुत श्रद्धासे सुनते है।

विदुर बोले, हे धृतराष्ट्र। सनतसुजान नामक कुमारने कहा है कि जगतमें मृत्यु कुछ वस्तु नहीं है, हे महाराज! वेही सनत्सुजात आपसे गुप्त और प्रगट विषयोंका वर्णन करेंगे। क्योंकि वे सब बुद्धिमानोंमें श्रेष्ठ हैं।

धृतराष्ट्र बोले, हे विदुर। तुम उन विषयोंको नहीं जानते हो, जो हमसे सनत्सुजात कहेंगे? यदि तुम जानते हो तो तुमही कहो।

विदुर, बोले, मैं शूद्रा स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न हुआ हूं, इस लिये उन बिषयोंको नहीं कह सकता, परन्तु महा बुद्धिमान सनत्सुजात मुनिको मैं जानता हूं। जो ब्राह्मणकुलमें उत्पन्न हुआ है, वही सब गुप्त बातोंको कह सकता है। आप उनका निरादर मत कीजियेगा, क्योंकि देवता भी उनका सत्कार करते हैं।

धृतराष्ट्र बोले, हे विदुर। तुम हमसे उस उपायका वर्णन करो जिसके करनेसे हम इसी शरीरसे सनत्सुजात मुनिको देखें।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। उसी समय विदुरने व्रतधारी सनत्सुजात मुनिका ध्यान किया। उनके ध्यान करतेही सनत्सुजात मुनि पहुंच गये, बिदुरने उनको देखतेही शास्त्रविधिके अनुसार उनको पूजा करी। जब मुनि शान्त होकर आसनपर बैठे तब बिदुरने हाथ जोड़कर कहा, हे भगवन्। राजा धृतराष्ट्रके मनने कुछ सन्देह हुआ है, मैं उत्तर नहीं दे सकता, आप कहिये, उसके सुननेसे राजा धृतराष्ट्रके सब दुःख नष्ट हो जायंगे, तब इनके लाभ, हानि, प्रिय, अप्रिय, राग, द्वेष, मृत्यु और बुढ़ापा सब नष्ट होजायंगे; क्योंकि इस समय इनको भय, क्रोध, भूख, प्यास अभिमान, अनिच्छा, आलस, काम, क्रोध, हानि और लाभ बहुत दुःख दे रहे हैं।

४१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। तब बुद्धिमान राजा धृतराष्ट्रने विदुरके वचनोंकी प्रशंसा करके और अपनी बुद्धिको स्थिर करके एकान्तमें सनत्सुजात मुनिसे पूछा।

धृतराष्ट्र बोले, हे सनत्सुजात! हमने सुना है कि आप कहते हैं कि मृत्यु कुछ वस्तु नहीं है, और यहभी सुना है कि इन्द्रादिक देवतोंने बहुत तपस्या करी तौभी वे अमर न हुए, इन दोनोंमें कौनसी बात सत्य है?

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, हे राजन्! आपने जो दो प्रश्न हमसे किये हम उन दोनोंहीका उत्तर आपको देते हैं, शङ्का मत कीजिये। हे क्षत्रिय। ये दोनोंही पक्ष सत्य हैं। पण्डित लोगोंने कहा है कि भूल है, क्योंकि हम भूलको मृत्यु और न भूलनेको अमृत कहते हैं; भूलहीसे राक्षसोंका निरादर होता है, भूल न करनेसे महात्माओंका नाश नहीं होता। मृत्यु सिंहके समान आकर किसीको नहीं खा जाती, क्योंकि मृत्युका रूप आजतक किसीने नहीं देखा, अनेक मूर्ख यमको मृत्यु कहते है, परन्तु यह सबही ठीक नहीं है, क्योंकि अपने मनमें यमराजकी कल्पना इस प्रकार कर ली जाती है, जैसे रसरीमें सांपकी। ब्रह्मचर्य्यही अमृत है। यमराज पितर लोकमें रहकर पाप और पुण्यका फल देते है; यमहीकी आज्ञासे क्रोध, लोभ और भूलरूपी मृत्यु मनुष्यका नाश करती है; जो अहङ्कारके वशमें होकर बुरा काम करता है, उसकी आत्मासे योग कभी नहीं होता; मोहमें पड़ा हुआ मनुष्य उस लोभ और भूलरूपी मृत्युके वशमें होकर इस लोकसे मरकर नरकोंमें पड़ता है, फिर वहांसेभी इन्द्रियोंके वशमें होकर दूसरे जन्ममें जाता है; इसी कारणसे मृत्यु मरनेके नामसे प्रसिद्ध हुआ है। कुछ कर्म्म शेष रहनेसे मनुष्यको फल भोगनेकी इच्छा होती है, उस फल भोगनेकी इच्छाके

वशमें होकर मनुष्य पुनः जन्म लेता है; इसी प्रकारसे जन्म लेता है और मरता है, जन्म लेता है और मरता है। परन्तु अष्टाङ्ग योग करने और अच्छे काम करनेसे जीवका फिर जन्म नहीं होता। यही पहले कहा कर्म सब इन्द्रियोंसे अपने वशमें कर लेता है, इससे जीव मिथ्या कर्मोंको करने लगता है; ऐसा होनेसे यह कर्मगति नित्य हुई। उलटे कर्म करनेसे आत्मशक्तिका नाश होता है, तब जीव विषयोंका ध्यान करता है, वह ध्यान बुद्धिका नाश करता है, नष्ट हुई बुद्धि काम और क्रोधमें जाती है, काम और क्रोधही मूर्खोंके लिये मृत्युस्वरूप होजाते हैं। जो बुद्धिमान् मनुष्य है, वह इस मृत्युको जीत लेता है, क्योंकि वह उस ध्यानहीके समय होनेवाले काम और क्रोधका बुद्धिसे निरादर करते हैं, इसीसे विद्वानको काम, क्रोधरूपी मृत्यु दुःख नहीं देते। विषयोंका ध्यान करनेवाला मनुष्य विषयोंमें पड़कर नष्ट हो जाता है। मनुष्य विषयोंको छोड़कर दुःखोंका नाश करे, क्योंकि विषयही अन्धकार रूप है, और अन्धकारही नरक है। मनुष्य इस नरकमें इस प्रकार गिरता है, जैसे कोई मतवाला गढ़ेमें गिर पड़ता है। जो बुद्धिमान मनुष्य विषयोंको छोड़कर विषयोंकी जड़को काटता है, उसका मृत्यु क्या कर सकती है? हे क्षत्रिय! जैसे काठका बना सिंह मनुष्यका नहीं मार सकता, तैसेही बुद्धिमानको मृत्यु, नाश नहीं कर सकती। हे धृतराष्ट्र! वही क्रोध, लोभ और मोहरूपी मृत्यु तुम्हारे शरीरमें घुस रही है; तुम ज्ञानी होकर भी इस मृत्युका नाश नहीं करते हो? मनुष्य ज्ञानहीसे इस मृत्युका नाश कर सकता है, कर्मसे नहीं। इस लिये तुम ज्ञानहीका आश्रय लो।

धृतराष्ट्र बोले, हे सनत्सुजात! हमने विद्वानोंके मुखसे सुना है, कि वेदोंमें लिखा है यज्ञ करनेसे मनुष्यको सनातन पवित्र और ब्राह्मणोंके लोक मिलते हैं, तब आप कैसे कहते हैं कि कर्मसे मृत्युका नाश नहीं होता?

सनत्सुजात बोले, हे धृतराष्ट्र। जो तुम कहते हो, इसमें तुम्हारा दोष नहीं है, क्योंकि सबही मूर्खतासे ऐसा कहा करते हैं, और मूर्खही लोग इस मार्गसे स्वर्गादिकोंको जाते हैं, और उसी स्वर्गादिके लिये कर्मोका करना लिखा है, मोक्षके लिये नहीं। कामना रहित ब्रह्म अविद्याके वशमें होकर शरीरको धारण करता है और उसे अपना समझता है, फिर सब मार्गोंको छोड़कर एक ज्ञानरूपी मार्गसे जीव मोक्षको प्राप्त करता है।

धृतराष्ट्र बोले, हे महापण्डित। तुमने जो कहा कि परमात्माही शरीरको धारण करते हैं, सो हमारी बुद्धिमें नहीं आता, सो तुम कहो कि परमात्मापर आज्ञा करनेवाला कौन है, जिसके आज्ञाके वशमें होकर ब्रह्मभी सुख और दुःखको भोगता है? उसका क्या काम है, और क्या सुख है?

सनत्सुजात बोले, हे राजन् धृतराष्ट्र! जीव और ब्रह्मको अलग माननेसे बड़ा भारी दोष होता है, जीव और ईश्वरका सम्बन्ध अनादि है, इस लिये जीवभी नित्य है; जीवको दुःख और सुख होनेसे ब्रह्मको कुछ विकार नहीं होता क्योंकि अज्ञानके वशमें होकर जीव बनते हैं। वेदोंमें लिखा है कि जो यह सब जगत दीखता है, उस सबको मायाके वशमें होकर परमेश्वरही अपनी शक्तिसे बनाते हैं, इस लिये जगत भी परमेश्वरसे भिन्न नहीं है, क्योंकि शक्ति और शक्तिमानमें कुछ भेद नहीं होता, परन्तु जगत अनित्य है।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे सनत्सुजात! इस जगतमें जो पाप और पुण्य करता है, हो

हमने सुना है कि पापसे पुण्य और पुण्यसे पाप नष्ट हो जाता है, इसमें क्या सत्य है।

सनत्सुजात बोले, हे राजन् धृतराष्ट्र! मनुष्यको पाप और पुण्य दोनोंहीका फल मिलता है, परन्तु मोक्ष होनेसे विद्वानको नित्य ज्ञान प्राप्त होनेके कारण दोनोंमेंसे एकका भी फल प्राप्त नहीं होता, परन्तु बिना मोक्षके पापके समय पापका और पुण्यके समय पुण्यका फल होता है। विद्वान धर्म्मसे पापका नाश करता है, क्योंकि पापसे धर्म्म बलवान है। साधारण मनुष्य इस शरीरको छोड़कर पाप और पुण्य दोनोंका फल भोगता है।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे पण्डित! श्रेष्ठ धर्म्म करनेवाले ब्राह्मण मनुष्य इस शरीरको छोड़कर पाप और पुण्य दोनोंका फल भोगते हैं।

हे पण्डितश्रेष्ठ! जो धर्म्म करनेवाले ब्राह्मणोंके सनातन लोक हैं, उनका वर्णन आप हमसे कीजिये, हम उनको सुनना चाहते हैं और दूसरे कर्म्मके सुननेकी इच्छा नहीं करते।

श्रीसनत्सुजात बोले, हे राजन् धृतराष्ट्र! जैसे बलवान बलवानको देखकर युद्ध करनेकी इच्छा करता है, ऐसेही जो ब्राह्मण व्रतको देखकर उसको पूरा करनेकी इच्छा करते हैं, वे ब्रह्म लोकको जाते हैं, जो ब्राह्मण सदा धर्म्महो करते हैं, सो ज्ञान प्राप्त करके स्वर्गको जाते हैं। वेद जाननेवाले पण्डितोंने धर्म्मका प्रयोजन इस प्रकार लिखा है कि धर्म्मसे स्वर्ग वा इस लोकमें सुखको इच्छा न करनी चाहिये। धर्म्म बाह्य और आभ्यन्तरके भेदसे दो प्रकारका है, जो मनुष्यको यह दोनोंही करना उचित है, वह धर्म्म करनेवाला ब्राह्मण वा सन्यासी उन घरोंमें भोजन करे, जहां, वर्षाकालके तिनकोंके समान अन्न और जल भरे हों, अर्थात दरिद्रीके घरमें भोजन करने न जाय। जहां अपने गुण प्रकाश किये बिना अत्यन्त भय हो अर्थात् जहां हम विद्वान हैं, हम महात्मा हैं, ऐसा बिना कहे सुख न मिलता हो, जो महात्मा उन्हीं स्थानोंपर बिना अपने गुण प्रकाश किये रहता है, वही महात्मा मुक्त कहलाता है, वही महात्मा है, अन्य पुरुष नहीं। जो दूसरेकी प्रशंसा और अपनी निन्दा सुनकर अपने चित्तको दुःख नहीं देता और महात्माओंके खाने योग्य श्रद्धावान ब्राह्मणके यहां भोजन करता है, वही महात्मा कहाता है, दूसरा नहीं। जो सन्यासी अपनी विद्या प्रकाश करके भिक्षा मांगकर खाता है, वह कुत्तेके समान वमन भोजन करता है। जो महात्मा ब्राह्मण अपनी जातिके बीचमें रहकर भी अपनी जातिवालोंको ऐसा समझता है कि हम इन सबसे अलग हैं, और ये हमसे अलग हैं, उसी ब्राह्मणको पण्डितोंने ब्राह्मण कहा है। ऐसा कौन ब्राह्मण है, जो बिना ज्ञानके उपाधिरहित, निराकार, निर्विकार एक ब्रह्मको जान सके? इसी प्रकार क्षत्रियादिक भी ज्ञानको प्राप्त करके आत्माको जान सकते हैं। जो अपने आत्माको उलटी आकारसे प्रकाशित करता है अर्थात् मूर्ख वा पापी होकर अपनेको पण्डित वा धर्म्मात्मा प्रकाशित करता है उस आत्माको चुरानेवालेने क्या पाप नहीं किया अर्थात उसने सब पाप किया। जो कभी नहीं थकता, दान नहीं लेता, सबको मानता है, जिसको कुछ उपद्रव नहीं रहते; जो अच्छा होनेपर भी अच्छे मनुष्योंके समान आचरण नहीं करता, वही ब्रह्मको जाननेवाला पण्डित ब्राह्मण है। जो मनुष्योंके धनको कुछ नहीं समझता, देवताकी पूजा और यज्ञको अच्छा समझता है, जो कभी नहीं डरता और कभी नहीं कांपता, वही ब्रह्मको जाननेवाला

ब्राह्मण है। जो सब यज्ञोंको करता है; वह सब वेद जाननेवाला ब्राह्मणभी ब्रह्म जाननेवाले ब्राह्मणके समान नहीं होता, क्योंकि वह ब्रह्मको प्राप्तिका यत्न करता है; जिस शुद्ध कर्म्म करनेवाले मनुष्यको पण्डित लोग मानें, वही ब्रह्म जाननेवाला ब्राह्मण है। जो माननेवालोंका आदर नहीं करता और न माननेवालोंसे दुःख नहीं मानता, वही ब्राह्मण पण्डित और ब्रह्मको जानने वाला है। जो विद्वान ऐसा जानता है कि आखको पलकके समान मानना और न मानना भी जगतका स्वभाव है, वही ब्रह्म जाननेवाला ब्राह्मण कहाता है। जो यह जाने कि अधर्मी, मूर्ख, छली लोग अपने स्वभावहीसे मानने योग्य मनुष्योंको नहीं मानते, वही महात्मा है, क्योंकि अभिमान और योग दोनो एक स्थानपर नहीं रहते; इस लिये विद्वानको उचित है कि मौन और आदरके स्थानको बिचारे। हे चत्रिय! धन सुखका स्थान है, और सुखही ब्रह्मज्ञानका शत्रु है, इसीसे मूर्खोंको ब्रह्मज्ञान दुर्लभ है। सत्य बोलना, सबसे सीधे रहना, लज्जा करनी, बिद्या और कभी भूल न करनी, यही ब्रह्मज्ञानके द्वार है, परन्तु ये सब द्वार बहुत कठिन है।

४२ अध्याय समाप्त।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे पण्डित श्रेष्ठ! मौन क्या है? क्यों किया जाता है? क्या विद्वान मौनहीसे मौनको प्राप्त करता है? महात्मा किस प्रकार मौनको प्राप्त करते हैं, सो हमसे आप कहिये।

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, हे राजन् धृतराष्ट्र! जहांसे मनके सहित वाणी लौट आती है, अर्थात् जहां मन और बचन नहीं जा सकता, उसकी प्राप्तिके लिये जो कर्म्म किया जाय, वही मौन कहाता है। हे राजन्! जहांसे वेद, शब्द और यह जगत उत्पन्न हुआ है और जो इस सब जगतमें व्याप्त होरहा है, उसको प्राप्तिके यत्नको मौन कहते हैं, अर्थात् ओंकारके जपहीको मौन कहते हैं।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे पण्डितश्रेष्ठ! जो ब्राह्मण ऋक, यजु, और साम वेदको पढ़कर पाप करते हैं, कहिये उनको पापका फल होता है, वा नहीं।

श्रीसनत्सुजत मुनि बोले, हम तुमसे सत्य कहते है कि ऋक, यजु और सामवेद कदापि पापोंसे मनुष्यको नहीं बचा सकते, यह सब पापी और छली मनुष्यको इस प्रकार छोड़ कर चले जाते है, जैसे पंखवाले पक्षी घोसलेको छोड़कर उड़ जाते है।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे पण्डितश्रेष्ठ! यदि तुम्हारा यह कहना सत्य है कि वेद बिना धर्मके मनुष्योंको पापसे नहीं बचा सकते, तो क्या सनातन ब्राह्मणोंकी वाणी पागलोंके बचनके समान झूठी है।

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, हे महानुभाव! ब्राह्मणोंकी वाणी झूठी नहीं है, उसका प्रयोजन यह है कि ईश्वरहीके नाम और रूपसे सब जगत प्रकाशित होता है, इसीसे ईश्वरका नाम विश्वरूप अर्थात जगतरूप है। वेद उसी ईश्वरका उपदेश करते है, उसीकी प्राप्तिके लिये तप और यज्ञ रूपी कर्म्म बताते है। विद्वान मनुष्य तप और यज्ञसे पवित्र होकर पापका नाश करता है; पाप नाश होनेसे ज्ञान होता है, ज्ञान होनेसे ब्रह्म प्राप्ति होती है; ऐसा न करनेसे अर्थात ज्ञान न होनेसे जब मनुष्यको यज्ञादि कर्म्म करनेपर अर्थ धर्म्म और कामकी इच्छा बनी रहती है, तब इस लोकसे मरकर स्वर्गमे जाता है और वहां अनेक सुख भोग कर फिर इस लोकमें आता है, तपस्वी ब्राह्मणोंके लोक हमने आपसे कहे।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे सनत्सुजात मुने! एकही तप विद्वान और अविद्वानोंके करनेसे दो प्रकारका कैसे होजाता है? सो आप हमसे कहिये।

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, हे क्षत्रिय! जो सब कामनाओंको छोड़ कर दिया जाय वह तपके बल और समृद्धके नामसे प्रसिद्ध होता है, और जो केवल पाखण्डके लिये किया जाता है, वह असमृद्ध और पापमय कहाता है। हे क्षत्रिय! तुमने जो हमसे पूछा उस सबका तपही मूल है, तप करनेसे अनेक वेद जाननेवाले ब्राह्मणोंकी मोक्ष हुई है।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे सनत्सुजात! आपने जो हमसे कहा कि "कामना-रहित तप उत्तम है" सो कामना क्या वस्तु है? सो आप हमसे कहिये जिससे हम इस गुप्त विषयको जानें।

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, क्रोध आदिक बारह, निर्दयता आदिक तेरह और धर्म्मादिक बारह गुण पण्डित ब्राह्मणोंने शास्त्रोंमें लिखे हैं; सो हम तुमसे कहते हैं, क्रोध, काम, लोभ, मोह, असन्तोष, किसीपर कृपा न करनी, डाह, अभिमान, अधिक सुखकी इच्छा करनी, किसीकी उन्नतिको न सहना और दूसरेकी निन्दा करनी, ये मनुष्यके बारह दोष हैं, इनको सदा छोड़ना चाहिये। हे पुरुष-श्रेष्ठ! जो मनुष्य इन बारहमेंसे एकको भी सेवा करता है, वह दूसरे दूसरेसें इस प्रकार फँस जाता है, जैसे एक हिरनके मारनेसे व्याध दूसरे हरिणके लोभमें पड़ता है। जो पाप करनेवाले पापी मनुष्य सङ्कटमें पड़ते हैं, वे इन छः पापोंको करते हैं। अपनी प्रशंसा, बहुत यत्न करके दूसरेकी हानि करना, अत्यन्त अभिमान, क्रोध, चञ्चलता और किसीको रक्षा न करना, यही छः दोष हैं। सुखोंको न जानना, अत्यन्त मान, देकर पछताना, न देना, पापकी प्रशंसा करनी, और स्त्रियोंका वैर करना, ये सात और दोष हैं, सात ये और छः पहले कहे तेरह निर्दयतादि दोष हुए। धर्म्म अर्थात अपनी वाणी और आश्रमके अनुसार कर्म्म करना, जिससे किसीकी हानि न हो ऐसे सत्य बचन बोलना, इन्द्रियोंको वशमें रखना, तप करना, दूसरेकी उन्नतिको देख कर दुःख न मानना, क्रोध होनेपर भी उसको रोकना, दूसरेकी निन्दा नहीं करनी, यज्ञ, दान, अत्यन्त आपत्ति पड़नेपर भी सत्यको नहीं छोड़ना, और अर्थ सहित वेद पढ़ना, यही ब्राह्मणोंके बारह व्रत हैं। जो इन बारह व्रतोंको धारण करता है, वह समस्त पृथ्वीको अपने वशमें रख सकता है, जो इनमेंसे एक, तीन वा दोको धारण करता है, वह भी सब जगतके सुखोंको भोगता है। इन्द्रियोंको जीतना, त्याग और भ्रम न करना, यही तीन धर्म्मके लक्षण हैं, बुद्धिमान ब्राह्मणोंने इन्हीं तीनोंको धर्म्मका मूल कहा है। इन्द्री जीतनेके ये अठारह लक्षण हैं,—सत्य बोलना, किसीसे डाह न करनी, काम और धनमें चित्तका न जाना, क्रोध, शोक, अलोभ, निन्दा न करनी, चञ्चलता न करनी, बहुत दुःख न करना, बुरे कामोंमें चित्तको न जाने देना, धन प्राप्तिसे प्रसन्न होना, दूसरेसे प्रसन्न रहना, बहुत बुद्धि होना, यह अठारह गुण जिसमें हों, उसीको पण्डित लोग इन्द्रीजित कहते हैं। इसी प्रकार अभिमानीमें कहे हुए गुणोंसे उलटे अठारह दोष रहते हैं तथा औरभी आगे कहेंगे। छः गुणोंसे युक्त त्याग, बहुत श्रेष्ठ वस्तु है, परन्तु उसका करना बहुत कठिन है। त्याग करनेसे मनुष्य दुःखोंके पार हो जाता है। हे राजेन्द्र! वे छः प्रकारके त्याग ये हैं,—धन पाकर प्रसन्न न होना, यह पहला लक्षण है, यज्ञ करना परन्तु वैराग्यके सहित त्यागका दूसरा लक्षण

है। हे राजेन्द्र! कामको छोड़ना यह त्यागका तीसरा लक्षण हैं, इस तीसरे लक्षणसे जगतमें त्यागीको बहुत निन्दा होने लगती हैं, यह त्याग जैसे बिना भोगे छूटता है; वैसे भोगनेके पश्चात् नहीं छूटता, क्योंकि कर्म्म उत्पत्तिके पहलेही उसको छाड़नेसे कुछ दुःख नहीं होता, अन्यथा छाड़नमें अनेक दुःख होते हैं। दुःख होने पर दुःख न मानना यह त्यागका चौथा लक्षण है, अपनी प्यारी वस्तुको अर्थात् स्त्री पुत्रादिकोंको ईश्वरसे न मांगना यह त्यागका पांचवा लक्षण है, उचित मनुष्यके मांगनेपर दान देना यह त्यागका छठा लक्षण है, इस छहोंको करनेसे मनुष्य कभी भ्रममें नहीं पड़ता। दानके आठ लक्षण और हैं,— सत्य बोलना, सम्प्रज्ञात और असम्प्रज्ञात नामक दो प्रकारकी समाधि करना, तर्क करना, सबका छोड़नेको इच्छा करना। चोरी न करना, ब्रह्मचारी होकर रहना और कुछ वस्तु इकट्ठी न करनी, इन सबसे उलटे जो सब दोष हैं, वे अभिमानीके शरीरमें बास करते हैं, इस लिये उनको छोड़ना चाहिये। इसी प्रकार त्याग और अभिमान न करना, इनमें ये सब गुण उपजते हैं। प्रमादमें ये आठों दोष रहते हैं, इस लिये उसको छोड़ देना चाहिये। पाचो इन्द्री और छठे मनसे सब दोषोंको छोड़कर बीते हुए और आनेवाले दुःखोंसे छुटकर मोक्षको प्राप्त करे और सुखी हो। हे राजेन्द्र! तुम अपने मनको सत्यमें लगाओ, क्योंकि सत्यहीसे लोक स्थिर है, ऊपर कहे सब गुणोंमें सत्य प्रधान है, और सत्यहीमें अमृत बसता है, ब्रह्माने यह सत्य प्रतिज्ञा की है, कि बिना दोष छोड़े तप और ब्रत नहीं हो सकते और ब्रतोंमें सत्यही श्रेष्ठ है। इन सब दोषोंसे अलग जो तप है, उसीका नाम केवल समृद्ध तप है। हे राजेन्द्र! तुमने जो पूछा सो हमने संक्षेपसे कहा, यह हमारा बचन परम-पवित्र तथा जन्म, मरण और रोगोंका नाश करनेवाला है।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे पण्डितश्रेष्ठ! सनत्सुजात! कोई कहता है कि ईश्वर इस समस्त जगतमें स्थावर और जङ्गमरूप होकर व्याप्त है; कोई कहता है कि वाह्यशरीर पुरुष, छन्द पुरुष, वेद पुरुष और महापुरुष ये ईश्वरके चार भेद हैं। कोई कहता है,—क्षर, अक्षर, और उत्तम पुरुष इन भेदोंसे ईश्वर तीन प्रकारके हैं। कोई कहता है, कि शब्द-ब्रह्म और परब्रह्मके भेदसे ईश्वर दो प्रकारके हैं। कोई कहता है, ईश्वर एकही है, और कोई कहता है, कि ईश्वर और जगत अलग नहीं है। इन सबमें कौन सच्चा है सो आप हमसे कहिये।

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, हे राजेन्द्र! तीनो कालमें रहनेवाले एक ईश्वरको न जाननेसे अज्ञानियोंने ये सब अनेक भेद बना लिये हैं। हे राजेन्द्र! ईश्वर एकही है, और उसीको महात्मा लोग मानते हैं। इस प्रकार मूर्ख लोग वेदोंको बिना जाने यज्ञादिक अनेक कर्म्मोंको करने लगते हैं, परन्तु ये सब कर्म लाभके मूल है। जब सत्य नाश होता है तब उस मनुष्यका सङ्कल्प भी छोटे सुखोंकी ओर जाने लगता है, तब वेदोंके प्रमाणसे मनुष्य यज्ञादिक करने लगता है। मनुष्य मनसे दूसरे बचनसे दूसरे और कर्म्मसे दूसरे यज्ञोंको करता है। तब सङ्कल्पोंहीमे पड़ा रहता है। सङ्कल्प दृढ़ नहीं है, इस लिये बचन आदिकको अपने बशमें करके ब्रत करे। इस ब्रतको छोड़ना नहीं चाहिये; क्योंकि सत्यब्रतही पण्डितोंका परम धर्म्म है। ज्ञान प्रत्यक्ष है, क्योंकि उससे शोक और मोह आदिका नाश हो जाते हैं, जैसे पण्डितका कर्म्म उसी समय फल देता है, वैसे ज्ञानभी उसी समय फल देता है। जैसे विद्यार्थीको

विद्याको बहुत दिनमें फल देती है, वैसेही तपभी बहुत दिनमें फल देता है, अर्थात् ज्ञानका फल प्रत्यक्ष और तपका फल अप्रत्यक्ष है। हे क्षत्रिय! इस लिये तुम बहुत बकनेवालेको ब्राह्मण मत समझो। जो कभी सत्यको न छोड़े उसीको ब्राह्मण जानो। हे क्षत्रिय। पहले समयमें मुनिने अथवा अनेक मुनियोंने जो कहा था, उन्हींका नाम अब उपनिषत होगया है, परन्तु वे पापसे मनुष्यकी रक्षा नहीं कर सकते। जो अर्थके समेत सब वेदोंको पढ़ते हैं, हम उनको भी वेदविद्याका जाननेवाला नहीं कह सकते। हे मनुष्यश्रेष्ठ। वेद स्वतन्त्र हैं, इसी लिये उनका नाम छन्द है, छन्दोंके पढ़नेवाले भी यदि ईश्वरको न जानें तो उनको आर्य्य और पण्डित नहीं कहना चाहिये। हे राजन्। वेदोंका जाननेवाला कोई पण्डित नहीं है और जो कोई है भी, तो वह ईश्वरको नहीं जानता; और जो ईश्वरको जानता है, वही वेदका जाननेवाला है। अहङ्कारादिक जड़ वस्तुओंमें कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो वेदोंको जान सकता है। जो वेदको जानता है, वही ईश्वरको जानता है और जो ईश्वरको जानता है, वही सत्यको जान सकता है। जो वेदोंको जानता है, वही जानने योग्य ईश्वरको जान सकता है, अन्यथा वेद और वेदके जाननेवालेभी ईश्वरको नहीं जानते, तथापि वेद जाननेवाले ब्राह्मण वेदोंके प्रमाणसे ईश्वरको जानते हैं। जैसे वृक्षकी शाखा आदिक होती हैं, ऐसेही वेदभी ईश्वरका शरीर है, जैसे शाखाओंके देखनेसे वृक्षका बोध होता है वैसे वेदके जाननेसे परमेश्वरका बोध होता है। हम उसीको ब्राह्मण कहते हैं, जो वेदोंके अर्थोंका कहे; और सन्देहोंको नाश करे। ईश्वरके ढूंढ़नेके लिये पूर्व्व, पश्चिम, उत्तर दक्षिण किसी दिशाकी आवश्यकता नहीं है; ईश्वरके ढूंढ़नेके लिये केवल अपनी आत्माहीको पूछना चाहिये। वेद पढ़ने और तप करनेसे स्वयं ईश्वर मिल जाता है। मनुष्यको उचित है कि चुप होकर एकान्तमें बैठे और मनसेभी कुछ कर्म्म करनेकी इच्छा न करे; ऐसा करनेसे आत्माहीमें ईश्वर मिलता है। बनमें रहने और मौनी होनेसे कोई मुनि नहीं होता, और जो घरमेंही रहकर उत्तम कर्म्म करता है वह मुनियोंसे श्रेष्ठ है। सब विषयोंको प्रकट करनेके कारण ज्ञानी वैयाकरण कहाता है, आत्म ज्ञानहीसे सब ज्ञान प्रगट होते हैं, इससे आत्म ज्ञानही जगतका व्याकरण है। जो सत्यमें रहकर प्रत्यक्ष भावोंको देखता है, सब विषयोंको जानता है, उसी विद्वानको ब्राह्मण कहना चाहिये। हे क्षत्रिय। हमने जो तुमसे कहा इसी प्रकार जो वेदोंको पढ़कर धर्म्म करे, वही ईश्वरको जान सकता है, और कोई नहीं।

४२ अध्याय समाप्त।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे सनत्सुजात! आप जो हमसे यह सनातन ब्रह्मज्ञानका वर्णन करते हैं, सो ज्ञान अत्यन्त दुर्लभ और सबसे श्रेष्ठ है आप हमसे ऐसा उपाय बतलाइये, जिससे हम उस ब्रह्मज्ञानको प्राप्त कर सकें!

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, हे क्षत्रिय। यह ब्रह्म ऐसी छोटी वस्तु नहीं है, जिसको शीघ्र प्राप्त कर लोगे। जब बुद्धि मनमें लीन होजाती है, तब विद्या प्राप्त होती है, परन्तु यह ब्रह्म-विद्या बिना ब्रह्मचर्य्यके नहीं प्राप्त होती।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे महामुने। आप जिस सदा सिद्ध सनातन ब्रह्मविद्याका वर्णन करते हैं और यह भी कहते हैं कि यह ब्रह्मविद्या अन्य कर्म्मोंके समान सुलभ नहीं है, और यहभी कहते हैं, कि यह ब्रह्म-विद्या आत्माहीमें रहती है, तब उस ब्राह्मणोंके

पाने योग्य ज्ञानरूपी अमृतको प्राप्त करनेकी क्या आवश्यकता है। क्योंकि जो वस्तु अपने आत्माहीमें हैं, उसको प्राप्त करना और न प्राप्त करना क्या ?

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, हम तुमसे उस ब्रह्मविद्याका वर्णन करते हैं; इसको बूढ़े और गुरु लोगही जानते हैं, इसको प्राप्त करके मनुष्य इस लोकमें नहीं आता।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे ब्रह्मन्! जिस ब्रह्मचर्य्यके करनेसे ब्रह्मविद्या शीघ्र जानी जाती है, आप पहले उस ब्रह्मचर्य्यहीका हमसे वर्णन कीजिये।

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, जब मनुष्य गुरुके घरमें जाकर निष्कपट होकर उनकी सेवा करता है, उसी समयके कर्म्मको ब्रह्मचर्य्य कहते हैं। जो उस व्रतको पूरा पालन करता है, वह इस लोकमें शास्त्रकार होता है और अन्तको मोक्ष प्राप्त करता है। जो ब्रह्मज्ञानको छोड़कर इस लोकमें कामनाओंकी इच्छा करता है, वह अपने शरीरसे आत्माको दूर भगाता है। और जो सतोगुणको प्रधान मानकर आत्मज्ञानको प्राप्त करता है, वही ईश्वरको जान सकता है। हे भारत। माता और पिता सबके शरीरको बनाते हैं; परन्तु जिस जातिको अच्छे गुरु उपदेश करते हैं, वही पवित्र, अजर और अमर है; जो क्रमके अनुसार अपने पुत्रोंको ब्रह्मविद्या पढ़ाते हैं, वेही माता और पिता हैं, वेही उत्पन्न हुए पुत्रके कर्म्मोंको जानते हैं। गुरु सदा शिष्यको पढावे और शिष्य पवित्र तथा सावधान होकर सदा गुरुकी सेवा करे; गुरुसे अभिमान न करे, किसीपर क्रोध न करे, यह ब्रह्मचर्य्यका पहला लक्षण है। जो पवित्र विद्यार्थी गुरुकी सेवा करके विद्या पढ़ता है, वही विद्वान् होता है। विद्या प्राप्त करनाही ब्रह्मचर्य्यका प्रथम चरण है। उसके पश्चात मन, वचन, बुद्धि और प्राणोंसे गुरुकी सेवा करना ब्रह्मचर्य्यका द्वितीय चरण कहाता है। गुरुके समान गुरुकी स्त्री और गुरुपुत्रकी सेवा करना ब्रह्मचर्य्यका यह भी दूसरा चरण है। विद्या पढनेके पश्चात जो कुछ आनन्द वा सुख प्राप्त हो, उस सबकी यही जाने कि यह सब सुख गुरुकी कृपासे हुआ है, यह ब्रह्मचर्य्यका तृतीय चरण है; इस तृतीय चरणको प्रसन्न होकर करना चाहिये। गुरुको बिना गुरुदक्षिणा दिये कहीं न जाना और गुरुको दिये हुए धनको अपना दिया हुआ न जानना, यह ब्रह्मचर्य्यका चतुर्थ चरण है। पहिला चरण गुरुके घरमें रहनेसे मिलता है, दूसरा गुरुकी सेवासे, तीसरा उत्साहसे और चौथा शास्त्रसे प्राप्त होता है। पहले कहे धर्म्मादिक बारह गुण ब्रह्मचर्य्यके रूप हैं, और भी अच्छे कर्म्म तथा बल उसके अङ्ग है। यह ब्रह्मचर्य्य रूपी वृक्ष गुरुके यहां रहने और वेद पढ़नेसे फलता है। जो ऐसे अच्छे कर्म्म करनेसे धन मिले वह सब गुरुको दे देना पण्डितोंकी वृत्ति है। जो व्यवहार गुरुके सङ्ग करे, सोई गुरुके पुत्रके सङ्गभी करना चाहिये। इस प्रकार ब्रह्मचर्य्य धारण करके जो गुरुके घरमें रहता है, उसकी प्रतिष्ठा और अनेक पुत्र प्राप्त होते हैं; वह जिधर जाता है उधरही सुख पाता है और सब मनुष्य उसके व्रतकी प्रशंसा करते हैं। इस ब्रह्मचर्य्यके प्रतापसे मनुष्य देवता होता है, और बुद्धिमान मुनि ब्रह्मलोकमें जाता है। इसी ब्रह्मचर्य्यके प्रतापसे अप्सरा और गन्धर्व्वोंने सुन्दररूप पाया है, इसीके प्रतापसे सूर्य्य उदय होते हैं। जैसे पारस लोहेको सुवर्ण बना देता है, ऐसेही इस ब्रह्मचर्य्यके प्रतापसे अनेक महात्मा परम पदको प्राप्त होगये। हे राजन्! जो इस ब्रह्मचर्य्यको करता है और शरीरसे तप करता है, सो पवित्र होता है, और अकालमृत्युको जीतता है। हे

क्षत्रिय ! जो ब्रह्मज्ञानको प्राप्त करते हैं ; वे अत्यन्त उत्तम कर्म्म करनेसे मिलने योग्य लोकोंको जीत लेते हैं। इस ज्ञानसे ब्रह्मकी प्राप्ति होती है, मोक्षके लिये और दूसरा कोई मार्ग नहीं है।

महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे पण्डितश्रेष्ठ। इस जगतमें सफेद, लाल और काले रङ्ग दिखाई देते हैं, सो आप कहिये कि ब्रह्म लाल है, काला है वा सफेद है ?

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, हे क्षत्रिय। ब्रह्म लाल, सफेद, काला और सूर्य्यके समान वर्णवाला है, अर्थात सब वर्ण उसीके है। वह पृथ्वी आकाश, समुद्र, जल, तारे, विजली, मेघ, वायु, देवता, चन्द्रमा, सूर्य्य, ऋक्, यजु, साम और अथर्व्व वेदमें नहीं रहता। हे राजन्। वह परमेश्वर और बड़ी बड़ी यज्ञोंमेंभी निवास नहीं करता ; वह अपार अन्धकारसे दूर है, कालभी उसीमें मिल जाता है अर्थात वह कालके आधीन नहीं वरन कालही उसके आधीन है। वह परम-छोटा रूपवाला और पर्व्वतोंसेभी बड़ा है। वही प्रतिष्ठा, अमृत, लोक, ब्रह्म यशरूप है, वही सब प्राणियोंको उत्पन्न करता है और वही नाश करता है, पण्डित उसे रोगरहित, प्रकाशमान और अविकारी कहते हैं : उसीमें यह सब जगत स्थित है, उसीको जाननेसे मोक्ष प्राप्त होती है।

४४ अध्याय समाप्त।

श्रीसनत्सुजात मुनि बोले, शोक, क्रोध, लोभ, काम, मान, मोह, डाह, बहुत सोना, करनेकी इच्छा, प्रेम, किसीकी उन्नतिको न सहना और नीच कर्म्म करना, ये बारह महा दोष कहाते हैं, इनके करनेसे मनुष्यका नाश होजाता है, इन एक एकके करनेसेभी मनुष्य मूर्ख होकर अनेक पाप करने लगता है। लोभी, तेज स्वभाववाला, कठोर, अधिक बोलनेवाला, क्रोधी, तर्क बितर्क करनेवाला और निर्लज्ज, ये छः मनुष्य उत्तम धनको प्राप्त करके भी उसका भोग नहीं कर सकते। भोग चाहनेवाला, चञ्चलबुद्धि, महा अभिमानी, देकर पछतानेवाला, कृपण, दुर्व्वल, अपनी प्रशंसा करनेवाला और स्त्रियोंका शत्रु ; ये सात मनुष्य पापी और निर्लज्ज कहाते हैं। धर्म्म, सत्य, तप, इन्द्रियोंको जीतना, किसीका बुरा न चाहना, लज्जा, त्याग, डाह न करना, दान, अच्छी बात सुनना, और क्षमा येही बारह ब्राह्मणके लिये महा व्रत है। जो इन बारह धर्म्मोंको करता है, वह इस समस्त पृथ्वीको अपने वशमें रख सकता है, जिसको इन बारहोंमेंसे एक वा दो वस्तु भी प्राप्त हुई हों, वह भी जगतके सुख भोगता है। इन्द्रिय जीतना, त्याग और भ्रम न करना, इन तीनोंमें सत्य बसता है ; वेद पढ़े ब्राह्मणश्रेष्ठ इनही कर्म्मोंको करते है। चाहे अच्छा हो चाहे बुरा हो ब्राह्मणको दूसरेका दोष वर्णन करना अच्छा नहीं है, जो किसी दूसरेका दोष वर्णन करता है ; वह मनुष्य अवश्य नरकमें जाता है। मदमें ये आठ दोष हैं, सो पहले कह चुके हैं, अब जो दोष नहीं कहे उनका बर्णन करते है,—बैर, बिरोध, डाह, झूट, काम, क्रोध, दूसरेके वशमें रहना, दूसरेका दोष कहना, राजाके यहां दूसरेकी निन्दा करनी, प्रयोजन नाश इत्यादि यह अठारह दोष हैं ; इससे बुद्धिमान पुरुष कदापि उसमें उन्मत्त न होवे, क्योंकि मतवाला होना बहुतही निन्दनीय है। मित्रतामें छः गुण जानना चाहिये। मित्रोंके प्यारे कार्य्योंसे सुहृद लोगोंमें प्रसन्नता होती है, और अप्रिय घटना अथवा मित्रोंके दुःखसे वह दुःखी होते हैं, तीसरे वे अपनी अत्यन्त हितकारी वस्तुकोभी याचकोंको दान करते है, और मांगनेके अयोग्य चीजोंको भी मित्रोंके निमित्त निःसन्देह देते हैं

हृदयके भाव अत्यन्त शुद्ध हैं, वह प्रार्थना करने और मांगनेपर अत्यन्त प्रिय ऐश्वर्य्य और प्रेमपात्र पुत्र कलत्रोंको भी दान कर सकते हैं। चौथे सुहृद पुरुष किसीको अपना सर्व्वस्व दान करके भी, मैंने इसका उपकार किया है यह विचारके उसके घरमें निवास नहीं करते। पांचवें वे मित्र आदिके ऊपर भार न देकर अपने उपार्जित धनकाही भोग करते हैं। छठवें मित्रके हितके निमित्त वे अपनी हानि सहनेमें भी विमुख नहीं होते। जो धनशाली गृहस्थ उक्त रीतिके अनुसार गुणवान, दानशील और सतोगुणी होते हैं, वे शब्द आदि पांच विषयोंसे पाचों इन्द्रियोंको रोक लेते हैं। अपने अपने विषयोंसे इन्द्रियोंको रोकते हैं, इस तपस्याके बढ़नेसे, ज्ञान योगके बिनाही केवल उर्द्ध्वगति होती है, परन्तु ज्ञानकी भांति इसी लोकमें कृतकार्य्य नहीं हो सकते। जो लोग तीव्र रूपके वैराग्यके न होनेपर धैर्य्यसे भ्रष्ट होते हैं, उन लोगोंका "ब्रह्मलोकमें सब दिव्य सुखोंको भोगेंगा" इस प्रकारके सङ्कल्पहीसे वह तपस्या सञ्चित होती है। जिससे सब यज्ञोंकी बढ़ती होती है, उसी सत्य सङ्कल्पके अनुरोधहीसे किसीको मनसे, किसीको बचनसे, और किसीको कर्म्मसे यज्ञ सिद्ध होता है, अर्थात कोई ध्यान आदि यज्ञोंको करते हैं, कोई स्वाध्याय और जप आदि यज्ञ करते हैं, और कोई कोई ज्योतिष्ठोमादि यज्ञोंका अनुष्ठान करते है। राजा जिस प्रकारसे नौकरोंपर प्रभुता करता है, उसी भांतिसे सङ्कल्प-रहित चिदात्मा सगुण ब्रह्मको जाननेवाला सत्य सङ्कल्प करनेवाला पुरुषका स्वामी होता है। तुम और भी थोड़ा सा हमारे मतको सुनो। सङ्कल्प रहित ईश्वर निर्गुण ब्रह्मके जाननेवाले ब्राह्मणके सङ्कल्पमें विशेष रूपसे अधिष्ठान (निवास) करता है। अर्थात सगुण उपासकोंसे निर्गुण-उपासक ब्राह्मणोंमें सत्य सङ्कल्प आदि अधिक उत्पन्न होते हैं। ब्रह्मप्राप्तिका निदान स्वरूप इस योगशास्त्रको शिष्यवर्गको अवश्य पढ़ाना उचित है। पण्डित लोग कहते हैं, इसके अतिरिक्त, और सब शास्त्र केवल वचनके विकार मात्र है। इस योग-शास्त्रमें सम्पूर्ण जगतके प्रपञ्च कहे गये हैं, अर्थात सब योगीके नाघ(?) हैं; जो इसको जानते हैं, वे अमृत अर्थात मु(?) होते हैं। हे राजन्। कर्म्मको पूर्ण रीति अनुष्ठान करने पर भी उससे सत्यकी न(?) अर्थात ब्रह्म-प्राप्ति नहीं हो सकेगी। क्षत्रिय। अज्ञानी मनुष्य होम करे, चा(?) यज्ञ करे, उससे कभी मुक्ति न पावेगा, औ(?) न अन्त समयहीमें उसको मोक्ष हो सकत(?) है। राग आदि बाह्य इन्द्रियोंके विषय रहि(?) होकर अकेलाही उपासना करे, और मनमें भी किसी विषयके ध्यान न करे, तथा प्रशंसा और निन्दामें भी प्रीति और क्रोध न करे। हे क्षत्रिय! योगी पुरुष नौका पर चढ़े हुएकी भांति आरोपित, और मिश्रित अपवादके क्रमसे पहिले कहे हुए सब बातोंको जानकर दृष्टि भेदसे सब स्थानमें निवास करते हुए इसी लोकमें ब्रह्मका दर्शन करते हैं और उसीमें लीन होजाते हैं। हे विद्वन्। कर्म्मसे जो ब्रह्मविद्या श्रेष्ठ है, उसे मैंने तुम्हारे समीप वर्णन किया।

४५ अध्याय समाप्त।

सनत्सुजात मुनि बोले, संसारकी उत्पत्ति स्थिति और संहारका बीजस्वरूप, सब चेष्टाओंको करानेवाला, आनन्दस्वरूप, वृत्तिरूप उपाधिरहित, विज्ञानमय, सूर्य्यआदि रूपसे प्रकाशमान, महद्यश नाम ब्रह्म है। उसीको इन्द्रिया उपासना करती हैं, और उसी मूल कारणसे सूर्य्य विराजमान है। योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्श(?)

करते हैं, अर्थात चित्तकी वृत्तिके निरोधरूपी योगसिद्धी सर्व्व ऐश्वर्य्ययुक्त अखण्ड एकरस परमेश्वरका दर्शन मिलता है। ब्रह्म अव्याकृत नित्य वस्तु होकर भी शुक्र अर्थात आनन्द रूप चैतन्य प्रतिबिम्बको पाकर जगतके जन्म आदि कार्य्योंको करनेमें समर्थ होते हैं, और उसीसे वृद्धिको पाते हैं। भयङ्कर वस्तुओंको भी भय देनेवाले, वह स्वयं ज्योति स्वरूप हैं। सूर्य्यआदि तेजसे पदार्थोंमें रहकर सबको प्रकाशित करते हैं, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते हैं।

पृथ्वी आदि पाच तत्त्व जलकी भांति एक रस ब्रह्ममें स्थित है। चैतन्य रूपसे प्रकाशमान जीव और ईश्वर पञ्चतत्वसे उत्पन्न हुआ पञ्चभौतिक शरीरके हृदयाकाशमें विराजमान है। सुषुप्ति कालमें जीव और प्रलयकालमें ईश्वरभी तन्द्रायुक्त हो जाते हैं, परन्तु परमात्मा तन्द्रारहित है। वह मायाके आवरणसे रहित सूर्य्यकाभी सूर्य्य अर्थात अपरिछिन्न, निर्म्मल, निर्व्विकार स्वरूप है, नित्य, प्रकाशमान और सबके ठहरनेका स्थान, उस परमात्माने इस जीव, ईश्वर, पृथ्वी और स्वर्गको धारण किया है। योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते हैं। परमात्माने जीव, ईश्वर, स्वर्ग आदि समस्त लोक तथा सारे ब्रह्माण्डको धारण कर रक्खा है। उसीसे सब दिशा और नदी प्रवाहित हो रही हैं, और उसीसे यह महा समुद्र बना है, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते हैं। स्वयं अनिश्चित अर्थात विनाशशील होनेपर भी जिसके कर्म्मका कभी विनाश नहीं होता है, उसी शरीर रूपी रथमें इन्द्रिय रूपी घोडोंके सहित पूर्व्व कर्म्मोंके चक्रमें निवास करता हुआ, बुद्धिमान जीव हृदयाकाशमें उस दिव्य और अजर, अमर परमात्माके समीप जाता है. अर्थात इन्द्रियोंके वशीभूत होनेसे जीव उन्हींके द्वारा परमात्माको पाता है, नहीं तो शरीरके नष्ट हो जानेपर उसके किये कर्म्मोंका नाश न होनेसे दूसरे शरीरको ग्रहण करना पड़ता है, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते हैं। इस (परमात्मा) के रूपकी समता नहीं रहती, अर्थात वह अनुपम स्वरूप है, कोई पुरुषभी उसे नेत्रोंसे नहीं देख सकता। जो लोग मनीषी (मनके निग्रहसे) सूक्ष्म मन और हृदयमें उसको जानते हैं, वे अमृत अर्थात मुक्त होजाते हैं, योगी लोग उसी भगवान परमात्माका दर्शन करते हैं, शुक्र नामक स्थानमें बहती हुई अविद्या नामकी नदी महाभय उत्पन्न करनेवाली है, वह चित्त, स्मरण, भ्रमण, दर्शन; वचन, शब्द, विषय, प्राण, अपान, संस्कार और सुकृत आदि बारह मार्गोंसे नित्यही बहती रहती है; मनुष्य लोग उसी अविद्या नदीके जल पान अर्थात उसीसे उत्पन्न हुए पुत्र और पशु आदिकोंसे तृप्त होते हैं, अर्थात उक्त पुत्र, पशु रूपी आदि मधुर फलोंकी इच्छासे इसमें बारम्बार घूमा करते हैं। जीव लोग जिस निवासके स्थानोंपर बार बार भ्रमण करते हैं, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमेश्वरका दर्शन करते हैं। इधर उधर घूमनेवाला जीवरूप भ्रमर पूरी तरहसे चिन्ता करता हुआ, अर्द्धमास अर्थात चन्द्रमा जिसमें भोग करते है, उसी प्रकार कर्म्मफलरूपी मधुपान करता है, अर्थात पारलौकिक फलोंको भोग करके फिर इस लोकके फलोंको भोगनेकी इच्छासे परलोकमें चन्द्रमाकी भांति आधे फलको भोगकर फिर आधे कर्म्म फलोंके सहित पुनर्व्वार इस लोकमें जन्म लेता है। जीवही अन्तर्य्यामी रूपसे सब प्राणियोंमें विराजमान है, और उसीने यज्ञोंकी कल्पना की है, अर्थात परमात्मासे जीवात्माही वैदिक मार्गका प्रव-

त्तेश है, जिसने यज्ञोंकी कल्पना की है, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते हैं। पक्षहीन चिदात्मास्वरूप, पक्षियोंकी भांति एक स्थानसे दूसरे स्थानमेंवास करनेवाला, संसार अविद्यारूपी विनश्वर वृक्ष और स्त्री पुत्र-रूपी पत्रोंसे युक्त होकर उन्हींके आश्रयमें पक्ष-युक्त होकर तथा वासनाके अनुरूप नाना दिशा-ओंमें अर्थात अनेक योनियोंमें घूमता रहता है। जो प्राण आदि उपाधिके सम्बन्धसे जीवत्वको प्राप्त होते हैं, योगी लोक उसी सनातन भग-वान परमेश्वरका दर्शन करते हैं। प्राण आदि उपाधि रूप दर्पणोंको, चित्त प्रति-बिम्ब भूत जीवको चिदाकाशसे पृथक कर देता है, उक्त प्राण आदि ब्रह्मसेही उत्पन्न हुए हैं। ब्रह्ममें उन सबके लीन होनेसे जब बिचार पूर्व्वक ब्रह्मसे वे पृथक किये जाते हैं, तब जीवईश्वर भेदके हेतु उपाधिसे जो असद्भाव हैं, वह दूर होकर एक मात्र ब्रह्मही शेष रह जाता है; योगी लोग उसी सनातन भगवान परमेश्वरका दर्शन करते हैं। उसीसे वायु आदि पञ्चभूत उत्पन्न हुए हैं, और उसीमें लीन हो जायंगे। उसीसे अग्नि, प्राण, और सोम अर्थात भोक्ता भोग्य और इन्द्रिय आदि शरीर उत्पन्न होकर उसीमें ठहरे हुए हैं। यह दृश्यमान सब भूत-प्रपञ्च उसीसे उत्पन्न हुआ है, मैं उसके स्वरूपको वर्णन करनेमें समर्थ नहीं हूं, योगी लोग उसी भगवान परमेश्वर परमात्माका दर्शन करते हैं। प्राण-वायुमें अपान वायु, मनमें अपान वायु, बुद्धिमें मन, और परमात्मामें बुद्धिकाभी शेष हो जाता है, जिसमें बुद्धि लीन होजाती है, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमा-त्माका दर्शन करते हैं। जिस प्रकारसे हंस किसी किसी समयमें एक चरणको नहीं प्रदर्शित करता, उसी भांतिसे जाग्रत सुषुप्ति और स्वप्न और अनुपस्थित चारों पादसे युक्त हंसी (परमात्मा) अगाध संसार सागरपर तीन चरणसे घूमते हैं, और शेष एक चैतन्य भूतोंके अधार चरणको प्रकाशित नहीं करते। संसारमें तैजस और प्राज्ञ नाम उप-रके लोकोंमें, तीसरा चरण आने जानेमें व्याप्त है, उस शेषके अनुपस्थित सब भूतोंके आधार चौथे चरणको जो देखते हैं, उनका फिर मृत्यु वा जन्म नहीं होता, अर्थात ज्ञान होनेसे, अज्ञानसे उत्पन्न हुए जन्म, मरणका नाश होजाता है, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते हैं।

अङ्गुष्ठमात्र पूर्ण अन्तरात्मा प्राण, मन, बुद्धि, और दश इन्द्रियात्मक लिङ्ग शरीरके संयोगसे नितरही इस लोक, परलोक, जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति अवस्थाओंको प्राप्त होते हैं। उस सर्व्वानियन्ता, स्तुति करने योग्य उपाधिसे युक्त, सर्व्वकार्योंके करनेमें समर्थ, मूल कारण परमात्माको प्रत्येक स्थानोंमें चैतन्य रूपसे प्रकाशित रहनेपर भी मूढ़ पुरुष उसको देख नहीं सकते। मनुष्योंकी मण्डलीमें कोई शम, दम आदि साधनाओंसे युक्त हैं; परन्तु ब्रह्मती सबके पक्षमें समान अर्थात निर्व्विकार देखे जाते हैं। मुक्त और बधे हुए सबके लिये ब्रह्म एकही भांति हैं, परन्तु जो मुक्त हो गये हैं, वह ब्रह्मकी परा काष्ठाको पहुंचे हैं, अर्थात एक अवस्थामें जो दुःख रहता है, उस अवस्थाके पलट जाने-पर वह देखा नहीं जाता। यह अवश्यही स्वीकार करना पड़ेगा, कि दुःखको उपाधिही धर्म्म है, इससे जैसे लाल रङ्गके फूलको स्फटिकके पास ले जाते हैं, तो उस पुष्पकी छायासे स्फटिक भी लाल रङ्गसे युक्त दीख पड़ता है, उसी प्रकार अज्ञान तथा उपाधिकी विशेषतासे दुःखका अनुमान होता है; परन्तु सब प्रकारसे वासनाका त्याग होनेसे जिसकी मुक्ति हुई है, उसको फिर दुःखका सम्बन्ध

नहीं रहता, इस निमित्त वह अत्यन्तही आनन्दका पात्र है। जो सब प्राणियोंमें इसी प्रकारसे एक रस और समान है, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते है। विद्वान पुरुष विद्यासे दोनों लोकोंको प्रकाशित करते घूमते है, उस समय उनका बिना किया हुआ अग्निहोत्रभी पूरा होजाता है, अर्थात ज्ञानसे सब कर्म्मके फल अलग होजाते है। इससे ब्रह्म-विषयक वचन जिसमें तुम्हारी नीचताको न सिद्ध करे, अर्थात तुम ज्ञानी होकर "मैं बड़ा हूं„ इसी बचनके कहनेके योग्य बने रहो, "मैं दास हूं" यह वचन जिसमें सब दिन न कहना पड़े। ब्रह्मका नामही "बुद्धि ज्ञान" है, जो लोग धीर अर्थात ध्यानसे युक्त है, वेही इसको प्राते हैं। जिसका नाम प्रज्ञान है, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते हैं।

वह वचन और मनसे जानने योग्य, जगतकी उत्पत्ति आदिका मूल-कारण, निर्व्वि-कार योगसे जाननेके योग्य परमात्मा इसी प्रकारका है। वह भोक्ता जीवको अपनेहीमें लीन करता है। जो पुरुष उस परम पूज्य पूर्ण परमात्माको जानते है, इसी लोकमें उनको मोक्ष मिलती है। जिसके जाननेसे पुरुषार्थको हानि नहीं होती, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते है। जो सहस्रो पक्षके विस्तार पूर्व्वक दूर जाता है, वह मनके समान वेगवान होने पर भी शरीरमें स्थित परमात्माके निकट है, अर्थात योगियोंके हृदयाकाशमें बहुत दूरकी वस्तु भी निकटही देख पड़ती है। जिसमें दूरकी वस्तुभी समीपही रहती है, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमात्माका दर्शन करते है। इसका स्वरूप नेत्र आदि इन्द्रियोंसे नहीं दीख पड़ता, शुद्धचित्तवाले पुरुषही चित्तशुद्धिसे इसका दर्शन कर सकते हैं। जब मनुष्य जगतकी मित्रता और मनको रोकनेमें समर्थ होता है और पुत्र आदिके नाश होने पर शोक नहीं करता, तबही उसको चित्त शुद्धि हुई समझना चाहिये, जो लोग इस प्रकारसे चित्तकी शुद्धिको जान कर संन्यास अवलम्बन करते है, वेही अमृत अर्थात मुक्त होते हैं; योगी लोग उसी सनातन भगवान परमा-त्माका दर्शन करते है। सर्प जिस प्रकारसे बिलमें घुसकर अपने शरीरको छिपाता है, वैसेही कुलाचारी मनुष्य लोग गुरु परम्पराके उपदेशसे मद्य, मांस परस्त्री-गमन आदि पापोंसे भागते तथा छिपते फिरते है। उन सत्पुरुषोंके प्रति नीच बुद्धिसे युक्त बिमूढ़ पुरुष उन्हें भ्रष्ट करनेकी चेष्टा करते है अर्थात वे वञ्चक लोग मद्य, मांस आदिके सेवनका उपदेश देकर उन सत्पुरुषोंको निन्दित करते है, इससे अच्छी प्रकारसे परीक्षा किये हुए मनुष्यके सङ्ग सहवास करना चाहिये, जिसको पानेके निमित्त साधुओंके सङ्ग रहनेका विधान किया गया है, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमा-त्माका दर्शन करते है।

जीवनमुक्त पुरुषोंको इस प्रकार अनुभव होता रहता है कि देह आदि इन्द्रिया सब असत् है, इससे वे मुझे कभीभी असत-कृत अर्थात सुख, दुःख, बुढ़ापा, मृत्यु आदि धर्म्मसे युक्त नहीं कर सकती, जब हमारा जन्म, मरण, प्रवाहरूप मृत्युही नही है, तब देह वियोग भी नहीं है, और न जन्मही होता है। इससे जो सत्य और सब स्थानमें समान भावसे स्थित है, जिसे किसी स्थानमें भी कोई बाधा नहीं है, जो हर समय सब स्थानोंमें एक रूपसे निवास करता है, जिसके आधीन सब जगत है, जो अकेलाही कार्य्य कारण दोनोंकी उत्पत्ति और प्रलयका स्थान

है; योगी लोग उसी सनातन भगवान परमेश्वरका दर्शन करते हैं।

वह ब्रह्मस्वरूप पुरुष उत्तम कर्म्मोंसे सुखी और अधम कर्म्मोंसे दुःखीभी नहीं होते, अभिमानी पुरुषोंमेंही कर्म्मोंका फल दीख पड़ता है; ब्रह्मज्ञानी पुरुषको कर्म्मके फलोंमें नहीं बधना पड़ता। क्योंकि ब्रह्मज्ञानी पुरुषके कैवल्य-अवस्थामें जिस प्रकारसे पाप पुण्यका अभाव होजाता है, वैसेही ब्रह्मज्ञ पुरुषमें भी मानना चाहिये। इसी प्रकारके योगसे युक्त होकर सब भांतिसे उसी ब्रह्मको प्राप्तिकी इच्छा करनी उचित है, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमेश्वरका दर्शन करते हैं। निन्दायुक्त वचन भी उस ब्रह्मज्ञानीके हृदयको नहीं तपा सकती और "मैंने अध्ययन नहीं किया" "मैंने अग्निहोत्र नहीं किया है" ऐसी चिन्तासे भी उनके मनमें दुःख नहीं होता। ब्रह्म-विद्या उसको वही बुद्धि देती है, जिसको ध्यान-धारणा आदि कर्म्मोंके करनेवालेही पाते हैं। ब्रह्मविद्याके प्रभावसे शोक मोह और सर्व्वज्ञता मिलनेपर जिसकी प्राप्ति होती है, योगी लोग उसी सनातन भगवान परमेश्वरका दर्शन करते हैं।

इसी प्रकारसे जो गुरुके उपदेशके अनन्तर ध्यानयोगसे आत्माको सब भूतोंमें देखते हैं; अलग अलग विषयोंमें फँसे हुए दूसरे मनुष्योंको देखकर उन्हें शोक नहीं करना पड़ता। सब और बड़े और गहरे जलके स्थानमें थोड़े जलसेही प्याससे मनुष्यकी जिस प्रकारसे प्यास बुझ जाती है, उसी प्रकारसे सब वेदोंमेंसे आत्मज्ञानके उपयोगी सारभाग मात्रहीको, गुरुके उपदेशोंके द्वारा ग्रहण करनेसे, ध्यानसे युक्त आत्मजिज्ञासु पुरुषको इष्टसिद्धि मिलती है, हृदयमें विराजमान अङ्गुष्ठमात्र महात्मा पुरुष नेत्र आदिसे नहीं देखा जा सकता है। वह जन्म मरणसे रहित होनेपर भी रात दिन सब स्थानोंमें विराजमान हैं। आत्मजिज्ञासु पुरुष उसीको आत्मा जानकर कृतकृत्य और सब कर्म्मोंसे छूट जाता है, इससे उपाधिसे उत्पन्न हुए अज्ञानको त्यागकर निर्म्मल, शुद्ध पवित्र होजाता है। मैंही माता, और पिता, पुत्र और भूत भविष्य तथा वर्त्तमानमें जो सब प्राणी दीख रहे हैं, सबकी आत्मा हूं। हे भारत! मैं वृद्ध पितामह हूं, पिता और पुत्र तुम मेरेही आत्मा निवास करते हो, पर तुम मेरे नहीं और मैं तुम्हारा नहीं हूं। आत्माही हमारे निवासका स्थान और आत्माही मेरे जन्म आदिका कारण है। मैं इस कार्य्यरूपी जगतमें कपड़ेमें सूतकी भांति विद्यमान हूं; अजर हूं अर्थात मेरा विनाश नहीं है। मैं जन्म आदिसे रहित होनेपर भी रात दिन सब स्थानोंमें आलससे रहित होकर घूमता रहता हूं। मुझको अच्छी प्रकारसे जानके अर्थात सब प्राणियोंका अन्तरात्मा, सबका ईश्वर और सबका कर्त्ता समझकर परिणामदर्शी आत्म-जिज्ञासु पुरुष प्रसन्न होते हैं। सूक्ष्मसेभी सूक्ष्म परमात्मा सब प्राणियोंमें अन्तर्यामी रूपसे स्थित है। ब्रह्मज्ञानी पुरुष स्थावर, जङ्गम और सब भूतोंमें उस परम पिताको सब शरीर तथा हृदय-पुण्डरीकमें स्थित जानते हैं।

४६ अध्याय और सनत्सुजात-पर्व्व समाप्त।

अथ सञ्जययान-सन्धि-पर्व्व।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय। विदुर और सनत्सुजातके सहित इसी प्रकारसे बात चीत करते हुए, राजा धृतराष्ट्रकी वह रात्रि व्यतीत हुई। रातके बीतनेपर सवेरे उठके सब राजा लोग सञ्जयको देखनेकी इच्छासे हर्षित होकर सभामें गये। पाण्डवोंके धर्म्म और अर्थसे भरी हुई वचनोंके

सुननेके निमित्त उत्सुक होकर धृतराष्ट्र आदि सम्पूर्ण राजा सभाकी ओर चले। अत्यन्त उत्तम, सोनेसे खचित, चन्दन आदि सुगन्धित जलोंसे छिड़की हुई, बड़ी भारी, विशाल और रमणीय-सभा रत्न, सुवर्ण, हाथी-दांत और लकड़ीके आसनोंसे पूरित, चन्द्रमाके समान निर्म्मल, प्रकाशमान, रुचिको आकर्षित करने वाली अत्यन्त-विशाल राजसभामें सब राजा लोगोंने गमन किया। हे भरतर्षभ। वहांपर भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, शल्य, कृतवर्म्मा, जयद्रथ, अश्वत्थामा, विकर्ण, सोमदत्त, वाह्लिक, महा-बुद्धिमान विदुर, महारथ-युयुत्सु और अन्य सब शूरवीर महाराज धृतराष्ट्रको सबके आगे सिंहासन पर बैठाकर उनके पीछे बैठ गये; और दुःशासन, चित्रसेन, सुवल-पुत्र-शकुनि, दुर्म्मुख, दुःसह, कर्ण, उलूक, और विविंशति ये सब दुर्य्योधनको आगे करके इन्द्रके पारिषदों तथा देवतोंको भांति उस सभामें जाकर बैठ गये। हे महाराज। परिघके समान भुजावाले उन सब शूरवीरोंके इकट्ठे होनेसे वह मनको हरनेवाली राजसभा सिंहोंसे भरी हुई पर्व्वतकी विशाल-कन्दराके समान शोभायमान होने लगी। ये सब सूर्य्यके समान तेजस्वी राजा लोग उस सभामें जाकर यथा योग्य आसनों पर बैठ गये।

हे भारत। उन सब राजाओंके आसनों पर बैठनेके अनन्तर द्वारपालने "सूत-पुत्र सञ्जय आये हैं" कहके निवेदन किया। अनन्तर सञ्जय शीघ्रही रथसे उतरकर, महावली राजाओंसे भरी हुई उस राजसभाके बीचमें गये।

सञ्जय बोले, हे कौरव लोगो। तुम सुनो, मैं पाण्डवोंके समीप गया था, और वहांसे अभी आया हूं। पाण्डवोंने यथायोग्य वृद्धोंको प्रणाम, समान-अवस्थावालोंको कुशल-क्षेम, प्रीति प्रेम और आदरके सहित पूजा कही है। हे राजो लोगो। पहिले मैं महाराज धृतराष्ट्रकी आज्ञासे पाण्डवोंके समीप जाकर उनसे जो कुछ बचन कहा था, उसे आप लोग सुनें।

४७ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय। मैं तुमसे राजाओंके बीचमें यह पूछता हूं, कि दुष्टोंके जीवनको नाश करनेवाले अत्यन्त-बल और विक्रमसे भरे हुए वीर-प्रधान महात्मा-अर्ज्जुनने क्या कहा है?

सञ्जय बोले, भावी-युद्धकी इच्छा करने वाले महात्मा धनञ्जय अर्ज्जुनने कृष्णके सामने युधिष्ठिरकी आज्ञा तथा अनुमतिसे जो कुछ कहा है, उसे दुर्य्योधन सुनें। भुज-बल और पराक्रमसे युक्त, भयरहित वीरोंके अग्रगामी अर्ज्जुनने श्रीकृष्णके निकट मुझसे यह बचन कहा है, कि "हे सूत। तुम सब कौरवोंके बीचमें, और हमारे सङ्ग जो सदाही युद्ध करनेकी इच्छा करता है, उस मूढ़बुद्धि, कालसे घिरे हुए दुष्टात्मा कठोरबचन कहनेवाले सूत-पुत्र कर्णके सामने, और पाण्डव लोगोंसे युद्ध करनेके निमित्त जो सब राजा बुलाये गये हैं, उनके सम्मुखही धृतराष्ट्रपुत्रोंसे हमारे इस बचनको कहना, जिसमें वे मित्रोंके सहित मेरे कहे हुए सब बचनोंको सुन सकें, वही करना।" हे महाराज। जिस प्रकारसे देवता लोग वज्रधारी इन्द्रके बचनोंके सुननेको इच्छा करते हैं, मुझे मालूम होता है, कि पाण्डव और सृञ्जयोंनेभी उसी भांतिसे अर्ज्जुनके बचनोंको श्रवण किया। गाण्डीवधारी अर्ज्जुन भावी-युद्धके निमित्त उत्सुक होकर क्रोध पूरित लाल नेत्र करके यह बचन बोले, "दुर्य्योधन यदि अजमीढवंशमें उत्पन्न हुए राजा युधिष्ठिरके राज्यको नहीं लौटावेंगे; तो निश्चयही धृतराष्ट्र पुत्रोंका विना भोग

किया हुआ, पूर्व्व जन्मका कोई पापकर्म्म उदय हुआ है। शस्त्रधारी भीमसेन, अर्ज्जुन, नकुल, सहदेव, वासुदेव, सात्यकी, धृष्टद्युम्न और शिखण्डी जिसके वीर तथा जो दूसरी प्रकारसेभी योद्धा हैं, पृथ्वी और स्वर्गको जलानेमें समर्थ हैं, उस इन्द्रके समान युधिष्ठिरके सङ्ग जिनकी युद्ध करनेकी इच्छा है, उनका पाप-कर्म्मके अतिरिक्त और क्या दोष कहा जा सकता है? दुर्य्योधन यदि इन्हीं सब कर्म्मोंके सहित युद्धकी इच्छा करते हैं, तो पाण्डवोंका सब प्रयोजनही सिद्ध हुआ है। युधिष्ठिरके अर्थसिद्धिके निमित्त तुम अब सन्धिका प्रस्ताव मत करो, यदि इच्छा हो, तो युद्धही करो। धर्म्मात्मा-युधिष्ठिर जो इतने दिनतक बनबासी होकर निरन्तर दुःखकी शय्यापर सोते थे, इस समय दुर्य्योधन मरकर अत्यन्त-दुःखदायिनी, अनर्थकारी अन्तिम शय्याको पावेगा, अन्याय-व्यवहारोंसे दुष्टात्मा धृतराष्ट्रपुत्रने जो सबके ऊपर प्रभुता की थी, उसकी मृत्यु इस समय समीप है। तुम लज्जा, ज्ञान, तपस्या दम, वीरता, धर्म्मको रक्षा और बलसे भरे हुए युधिष्ठिरमें उन सबको अनुरक्त करो। हमारे विनययुक्त, सरल स्वभाव, बल, और तपस्या, दम, धर्म्म और सतासे भरे हुए महाराज युधिष्ठिर अनेक भांतिके कपटवाद और बहुत दुःखोंको पाकरभी सब क्लेशोंको सह रहे हैं। शुद्धात्मा जेठ-भ्राता धर्म्मराज-युधिष्ठिर जिस समय अनमने होकर, अनेक वर्षोंसे रोके हुए अपने महाघोर रोषको छोड़ेंगे, उसी समय दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पछताना पड़ेगा। सन्ध्याके समय जिस भांति जलती हुई यज्ञकी अग्नि सूखे काठोंको जला देती है, उसी भांतिसे धर्म्मराज युधिष्ठिर क्रोधसे प्रज्ज्वलित होकर, दुर्य्योधनकी सेनाको भस्म कर देंगे, जिसको देखकर अवश्यही उसको पछताना पड़ेगा। जब रथमें गदा लिये हुए क्रोधी और अत्यन्त वेगशाली भीमसेनको क्रोधसे विष उगलते हुए देखेगा, तभी दुर्य्योधन युद्धके निमित्त पश्चाताप करेगा। जिस समय सेनाके अग्रगामी, शस्त्रधारी गदा लिये हुए भीमसेनको दुर्य्योधन साक्षात कालके समान, सब वीरोंका संहार करता हुआ देखेगा, तभी हमारी बातोंको स्मरण करेगा। जब भीमसेनसे मारे गये हाथियोंको पहाड़ोंके शिखरके समान लहू उगलते दुर्य्योधन देखेगा, तभी युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा। जैसे सिंह गौओंके बीचमें जाता है, वैसेही कुरु सेनामें गदा लेकर भीमसेन प्रवेश करके, जब धृतराष्ट्र-पुत्रोंका बध करेंगे, तभी दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पछताना पड़ेगा। जब भीमसेन युद्धमें शत्रुओंके दलको मर्दन करते हुए, अकेलेही रथों और पदातियोंको गदासे मारेंगे और हाथियोंको प्रास तथा फरसेसे वन काटनेकी भांति काटकर, दुर्य्योधनकी सब सेनाको विच्छिन्न करेंगे; उसी समय वह युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा, जब अग्निके समान तृणके घरोंसे युक्त गांवकी भांति धृतराष्ट्र-पुत्रोंको दुर्य्योधन भीमके बलसे भस्म होता देखेगा तभी उसको युद्धके निमित्त पछताना पड़ेगा। रथियोंमें श्रेष्ठ विचित्र शब्दोंको करनेवाले नकुल, दहिनी ओरके तूणीरसे सैकड़ों बाणोंकी बर्षा करते हुए, रथियोंको एकबारगी मारके गिरावेंगे, तभी दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पछताना पड़ेगा। सब दिन सुखोंको भोगनेवाले नकुलने वनमें बहुत दिनोंतक जिस दुःख-शय्यामें शयन किया था, उसको स्मरण करके जब सर्पके समान अपने क्रोधरूपी विषको उगलेंगे, तभी दुर्य्योधनको युद्धसे निमित्त पश्चात्ताप करना पड़ेगा। हे सञ्जय! जिस समय प्राणोंको त्यागनेवाले राजा लोग, युधिष्ठिरकी आज्ञासे शत्रुओंको

सेनाकी ओर रथोंपर चढ़के दौड़ेंगे; तब उन्हें देखकर दुर्य्योधन अवश्यही पश्चात्ताप करेगा। बालक होकरभी जिस समय तरुणोंकी भांति सब शस्त्रके जाननेवाले, वीरतासे भरे हुए, प्रतिबिन्ध्य आदि द्रौपदीके पांचो पुत्र अपने प्राणोंकी आशाको छोड़कर दुर्य्योधनकी सेनापर चढ धावेंगे, तभी उसको युद्धके निमित्त पछताना पड़ेगा। जब बधके निमित्त उद्यत सहदेव धीर-गति और निःसन्देह-चक्र, सुवर्णके तारोंके पुञ्जसे खचित, वायुके समान शीघ्र चलनेवाले घोड़ोंके रथपर चढ़कर, अपने वाणसे राजाओंके शिरको काटके पृथ्वीमें गिरावेंगे, महा भयङ्कर युद्ध-कौतुकके आरम्भ होनेपर, सब शस्त्रोंके जाननेवाले उस नकुलको दहिने, वायें तथा चारों ओर उपस्थित होते जब दुर्य्योधन देखेगा, तभी युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा। लज्जा शील, दक्ष, सत्यवादी, महा-बलशाली, सब धर्म्मोंको जाननेवाले, क्षिप्रकारी, वेगवान सहदेव जिस समय युद्धमें गान्धारराज शकुनिपर आक्रमण करके शत्रु-सेनाको विक्षिप्त करेंगे, तभी दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पछताना पड़ेगा। सब शस्त्रोंसे पूरित रथके युद्धको जाननेवाले द्रौपदी-पुत्रोंको महा-विषधर विषैले सर्पकी भांति युद्धके निमित्त आते हुए देखकर, दुर्य्योधनको अवश्य युद्धके लिये पश्चात्ताप करना पड़ेगा। कृष्णके समान सब शस्त्रोंको जाननेवाला अभिमन्यु जिस समय अपने वाणोंको मेघकी भांति वरसावेगा, और सब शत्रुकी सेनाका वल मर्द्दन करेगा, तभी दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पछताना पड़ेगा। बालक होकर भी जुवाकी भांति जिस समय सुभद्रा-पुत्र अभिमन्युको, कालरूपके समान शत्रुसेनाके ऊपर गिरता हुआ दुर्य्योधन देखेगा, तभी युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा। सिंहके समान बलवान शीघ्रहस्त, युद्धके सब कर्म्मोंको जाननेवाले, प्रभद्रक, नामक वीर लोग जिस समय सेनाके सहित धृतराष्ट्र पुत्रोंको विक्षिप्त करेंगे, तभी दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पछताना पड़ेगा। जिस समय सेनाके सहित धृतराष्ट्र-पुत्र, महारथ बूढ़े विराट और द्रुपदको पृथक पृथक सेनाको लिये हुए युद्धकी ओर आते देखेंगे, तभी दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पछताना होगा शस्त्रधारी द्रुपदराज जब रथपर चढ़कर क्रोधपूर्व्वक सहजहीमें वीरोंके मस्तकको फूलके समान पृथ्वीमें गिराने लगेंगे, तभी दुर्य्योधन युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा। शत्रुपक्षके वीरोंको मारनेवाले विराटराज जब मेरे आनेके समय मत्स्य-देशीय सेनाको लेकर शत्रुसेनामें प्रवेश करेंगे; तभी दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पश्चाताप करना होगा। मत्स्यराज विराटके जेठे पुत्र उत्तरको जिस समय पाण्डवोंके निमित्त संग्राम-भूमिमें शस्त्र धारण किये हुए दुर्य्योधन देखेगा, तभी युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा। मैं यही संशयरहित सत्य बचन कहता हूं, कि कौरवोंमें मुख्य शान्तनुपुत्र भीष्मके शिखण्डीके हाथसे मारे जानेपर, फिर हमारे शत्रु लोग कदापि जीते न बचेंगे। सेनापति शिखण्डी जिस समय अच्छी प्रकारसे रक्षित-रथपर चढ़के रथी लोगोंको मारेंगे, और दिव्य रथपर आरूढ़ सब सेनाको मर्द्दन करते हुए जब भीष्मको ओर दौड़ेंगे, तभी दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करना होगा। बुद्धिमान द्रोणाचार्य्यने जिसे सब गुप्त-अस्त्रोंका भेद बतलाया है, उस धृष्टद्युम्नको जब दुर्य्योधन सृञ्जयोंकी सेनाके सम्मुख खड़ा देखेगा, तभी युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा। शत्रुओंके वाणोंको सहनेमें समर्थ जिस समय पराक्रमी सेनापति-धृष्टद्युम्न, अपने वाणोंसे धार्त्तराष्ट्रोंको मर्द्दन करके द्रोणाचार्य्यके समीप

पहुंचेंगे ; तभी दुर्य्योधन युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा। तेजस्वी, बुद्धिमान, बलवान और लक्ष्मीवान यदुवंशियोंमें श्रेष्ठ वृष्णि सिंह सात्यकी जिस सेनाके अग्रणी हैं, उसको कौन शत्रु रोक सकेगा? यदि तुम लोग यह कहो, कि लोकमेंसे दूसरे किसी रथारूढ पुरुषको सहायरूपसे मत वरण करो, तो हम शिनि-पौत्र सब शस्त्रोंके जाननेवाले महाबलसे युक्त अकेले सात्यकीहीको वरण करेंगे। यह सब शस्त्रोंको जाननेवाला महारथ सात्यकी युद्धमें अद्वितीय, कालके समान और भयसे रहित है। इसकी छाती बड़ी, भुजा लम्बी और धनुषका परिमाण चार हाथ है। शिनि-वंशाधिपति सात्यकी जिस समय हमारी आज्ञासे शत्रु-सेनामें प्रवृष्ट होकर मुख्य मुख्य वीरोंको अपने वाणोंमें व्याकुल करेंगे, तभी दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पश्चताप करना पड़ेगा। वह दृढ़ शरासनको धारण करनेवाला दीर्घवाहु महा-वीर सात्यकी, जब युद्धके निमित्त यत्न अवलम्बन करते हैं, तो शत्रु लोग इस प्रकारसे उनके आगेके भाग जाते हैं, जैसे सिंहको देखके गऊ भागती हैं। दीर्घ-वाहु, दृढधन्वा सब शस्त्रोंके जाननेवाले, शीघ्रहस्त वह महात्मा सात्यकी पर्व्वतोंको भी तोड़ सकते हैं, और सब लोकोंके संहार करनेमें भी समर्थ हैं, रणभूमिमें वह आकाशमें स्थित सूर्य्यकी भांति विराजमान होते हैं। अस्त्रोंके चलानेके विषयमें सात्यकीको विहित और दूसरी बहुत प्रकारकी आश्चर्य्य-प्रद शिक्षा मिली हुई है। अस्त्रोंके चलानेकी क्रियाको पण्डितोंने जिस भांतिसे कहा है, सात्यकी इन सब गुणोंसे पूर्ण है। युद्ध-भूमिमें जब यदुवंशियोंमें श्रेष्ठ सात्यकीके सफेद-घोड़ोंसे युक्त सुवर्ण खचित रथको दुर्य्योधन देखेगा, तभी उसको युद्धके निमित्त पश्चात्ताप पड़ेगा। जिस समय सुवर्ण और मणियोंसे प्रकाशित सफेद घोड़ोंके सहित भयङ्कर कपि-ध्वजासे युक्त हमारे रथको रणभूमिमें चलता हुआ दुर्य्योधन देखेगा, तभी वह युद्धके निमित्त सन्तापित होगा। उस महा-युद्धमें जब मैं गाण्डीव धनुषको चढ़ाऊंगा, उस समय मेरे धनुषका वज्र-समान महा-शब्दको सुनकर और अपनी सेनाको मेरे वाणोंकी वर्षाके आगे गौओंके समान भागती हुई देखकर, वह दुष्ट सहायक रहित नीच-बुद्धि मूढ दुर्य्योधन युद्धके निमित्त पछतावेगा। शत्रुओंके छोड़े हुए वाणोंको, जब मेरे वाणोंसे काटकर पृथ्वीमें गिरता देखेगा तभी दुर्य्योधन युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा। पक्षी लोग जैसे वृक्षकी चोटीसे फलको तोड़के खाते हैं, उसी प्रकारसे हमारे वाण वीरोंके मस्तकोंको काटके ढेर लगा देंगे; उसको देखकर दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पछताना होगा। युद्धमें जब मुख्य मुख्य रथी, गजपति, और घुड़सवारोंको हमारे वाणोंसे मरकर पृथ्वीमें गिरते देखेगा, तभी दुर्य्योधनको युद्धके निमित्त पछताना पड़ेगा। जब अपने भाइयोंको शत्रुओंके अस्त्रोंके मार्गमें न पहुंचतेही भागता हुआ देखेगा, तभी दुर्य्योधन युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा। मुख बाये हुए कालके समान जिस समय मैं अपने गाण्डीव धनुषको लेकर मूसल-धार मेघकी वर्षाकी भांति सब अग्निके समान जलते हुए वाणोंको बरसाके पैदल तथा रथी आदि सेनाका संहार करूंगा, तब वह मन्दबुद्धि दुर्य्योधन युद्धके निमित्त पश्चात्ताप करेगा। दुर्य्योधन जब अपनी सब सेनाको मेरे वाणोंसे चारों ओर भागती, घायल चेत रहित, प्यासी, थके हुए वाहन और भयसे व्याकुल देखेगा; तभी वह युद्धके निमित्त पछतावेगा। जब देखेगा कि पराक्रमशील मुख्य मुख्य राजा, वीर, हाथी, घोड़े, सब मारे गये हैं, बाकी सब आर्त्तनाद कर रहे हैं,

कितनेही मर गये, और कितनेही मर रहे हैं, उनके केश, हड्डी और शिर इधर उधर पड़े हैं, उसी समय वह मन्दबुद्धि दुर्य्योधन सन्तापित होगा। जब शैन्य-सुग्रीव आदि घोड़ोंके रथपर बैठे हुए कृष्णको, मुझको, गाण्डीव-धनुष, दिव्य-शंख पाञ्चजन्य, दोनों अक्षय तूणीर और देवदत्त शंखको देखेगा, तभी धृतराष्ट्रपुत्र दुर्य्योधन युद्धके विषयमें पश्चात्ताप करेगा। जैसे युगोंके अनन्तर अन्य युग उत्पन्न होता है, उसी भांतिसे मैं कालरूपके समान उपस्थित होकर, दुष्टोंके समूहको भगाते हुए जब अपने अग्निके समान बाणोंसे कौरवोंको जलाने लगूंगा, तभी दुर्य्योधन पुत्र सहित सन्तापित होगा। क्रोधके वशवर्त्ती मन्द-बुद्धि धृतराष्ट्रपुत्र बन्धु बान्धव और सेनाके सहित ऐश्वर्य्य-भ्रष्ट होनेसे अभिमान रहित, हतबुद्धि और शरीरसे कांपता हुआ अवश्यही पश्चात्ताप करेगा।

किसी दिन सबेरेही हमारी सन्ध्या, बन्दना, स्नान आदि क्रियाओंके समाप्त होने-पर एक बूढ़े ब्राह्मणने आकर हमको यह प्यारा बचन कहा, "सव्यसाचिन्। तुमको अत्यन्तही कठिन कर्म्म करना होगा। उस समय या तो कारवाहन इन्द्र वज्र लेकर तुम्हारे आगे आगे चलेंगे, अथवा बसुदेवनन्दन कृष्ण शैव सुग्रीवयुक्त रथपर चढ़के तुम्हारी पृष्ठ-रक्षा करेंगे। ब्राह्मणके उस वचनको सुनकर मैंने वज्रधारी इन्द्रका तिरस्कार करके इस युद्धमें कृष्णहीको सहायक रूपसे बरन किया है। उन्ही कृष्णको मैंने दस्युओंके (डाकुओंके) बधके निमित्त प्राप्त किया है। मालूम होता है, देवता लोगोंने हमारे ऊपर प्रसन्न और अनुकूल होकरही ऐसे विधान किये हैं। कृष्ण युद्धमें प्रवृत्त न होकरभी अन्तःकरणसे जिसके जयकी अभिलाषा करेंगे, वरुण इन्द्र आदि भी शत्रु हो तोभी वह सबको जीत सकता है, मनुष्योंकी तो बातही क्या है? जो पुरुष अत्यन्त वीरतासे युक्त महातेजस्वी बासु-देव कृष्णको युद्धसे जीतनेकी इच्छा करता है, वह बाहुसे अगाध समुद्रको तरनेके अभिला-षीके समान है। जो मूर्ख अपने हाथको हथेलीसे कैलास पर्व्वतको तोड़नेकी इच्छा करता है, वह पर्व्वतका कुछभी नहीं कर सकता, बल्कि उसकी हथेलीही नखोंके सहित फट जाती है। जिसके गर्भसे प्रद्युम्नका जन्म हुआ है उस यशस्विनी रुक्मिणीको जिन्होंने एकही रथपर युद्धमें भोजबंशीय राजाओंको जीतकर बलपूर्व्वक भार्य्या रूपसे ग्रहण किया था, उन कृष्णको जो युद्धमें जीतनेकी इच्छा करे, वह जलती हुई अग्निको भी हाथसे बुझा सकता है, चन्द्रमा और सूर्य्यके तेजको छीन सकेगा, और बलपूर्व्वक देवताका अमृतभी हर लानेमें समर्थ होगा। देवताओंके भूषण स्वरूप कृष्णने अपने बलसे गान्धार लोगोंके तेजका पूर्ण रीतिसे मथकर नग्नजीत नृपतिके सब पुत्रोंको पराजित करके सुदर्शन राजाको छुड़ाया था। इन्होंने वक्षस्थलकी चोटसे पाण्डु-राजाको मारा और दन्तकूट युद्धमें कलिङ्ग लोगोंका मर्दन किया था। इन्हींसे भस्म होकर वाराणसी (काशी) नगरी अनेक वर्षोंतक बिना राजाके सूनीही पड़ी रही। एकलव्य नामक प्रसिद्ध निषादराज जिसको ये युद्धमें दूसरेसे न जीतने योग्य समझते थे, वह पर्व्वतके ऊपर जम्भासुरकी भांति कृष्णके हाथहीसे मरकर मृत्युको पहुंचा। और भी इन्होंने बलदेवके सङ्ग मिलकर वृष्णि और अन्धक लोगोंकी सभाके बीचमें जाकर महा-दुष्ट उग्रसेनपुत्र कंसको मारा था, और उसको मारकर उग्रसेनको राज्य दिया था,। इन्होंने मायावी, भयरहित, आकाशमें स्थित शाल्व-राजसे सौभके सहित युद्ध किया था, और सौभसे शतघ्नी शक्ति ले ली थी, तब कौनभी

मरगा-धर्मशील पुरुष इनके पराक्रमको सह सकता है? असुरोंका प्राग्ज्योतिपपुर नामक एक नगर था, वहांपर भूमिपुत्र नरकासुरने अदितिके अत्यन्त सुन्दर दोनों मणिजटित कुण्डलोंको हरकर उसी स्थानमें रक्खा था। मृत्युके भयसे रहित इन्द्र समेत सब देवता लोगभी इकट्ठे होकर उसे युद्धमें नहीं हरा सके, अनन्तर कृष्णके प्रसिद्ध बल, विक्रम और अक्षय शस्त्रोंको देख, और दस्यु (डाकुओं) के संहार करनेका उनका मुख्य धर्म्म समझ, इन्हीको देवतोंने उसके बधके निमित्त नियुक्त किया था। देवतोंके समूहमें पूजित श्रीकृष्णने इस कठिन कर्म्मको अङ्गीकार किया था। इन्हीं महावीर कृष्णने उन्मोचन नगरमें छः हजार वीरोंको मारके और मुरासुर तथा अन्यान्य दूसरे राक्षसोंके भुण्डको संहार करके, मुरके बनाये हुए तीक्ष्णधार और भयङ्कर पाशको तोड़ते हुए वहांसे आगे निकले। यहीं पर महाबल नरकासुरके साथ अति बलशील महात्मा कृष्णका युद्ध हुआ था। उससे वह वायुसे उड़ाये हुए तिनकेकी भांति मरकर पञ्चत्वको पहुंचा था। अमित प्रभावयुक्त विद्यावान कृष्णने इस प्रकारसे मुर और नरकासुरको मारा था, और मणि जटित कुण्डलको लेकर लक्ष्मी और यशके पुञ्जसे पूरित होकर लौट आये थे। तब देवता-ओंने इनके इस कठिन कर्म्मको देखकर कहा, कि युद्धमें प्रवृत्त होनेसे तुम्हें कुछभी परिश्रम न होगा, आकाश और जलआदि सब स्थानोंमें तुम्हारी गति होगी, और शस्त्र सब तुम्हारे शरीरमें नहीं प्रवेश कर सकेंगे, इस प्रकार देवताओंने वर दिया था, उससे कृष्णभी कृतार्थ हुए थे। इस प्रकारके अमित-गुणसे भरे हुए अनन्त पराक्रमी महाबली वासुदेव कृष्णको दुर्य्योधन जीतनेकी इच्छा करता है, क्योंकि वह दुष्टात्मा सदा उनको बांधने (कैद करने) का यत्न करता है; परन्तु ये हम लोगोंके शील और प्रेमसे सब सह रहे हैं। दुर्य्योधन हमारे और कृष्णके बीचमें झगड़ा उत्पन्न करानेकी युक्ति और प्रार्थना करता है, परन्तु पाण्डवोंसे कृष्णकी आत्मीयता और मित्रता तथा स्नेहको घटाना कैसा कठिन और असाध्य कार्य्य है, वह कुरुक्षेत्रके युद्धमें जाकर समझ सकेगा। मैं राज्यके पाने उत्सुक होकर शान्तनुपुत्र भीष्म, पुत्र सहित द्रोणाचार्य्य और कृपाचार्य्यको नमस्कार करके युद्धमें प्रवृत्त होऊंगा जो पापबुद्धि पुरुष पाण्डवोंसे युद्ध करनेके निमित्त उत्साही होगा, हमारे विचारसे धर्म्मसे उसकी मृत्यु खड़ी है, अर्थात यदि धर्म्म है तो अवश्यही उसकी मृत्यु होगी। उन पापियोंने केवल कपटजुएके खेलमें हम लोगोंको बारह वर्षके निमित्त जीता था। हम लोग राजपुत्र होकरभी इतने दिनोंतक महा दुःखको सहकर बनवास किया था, और एक वर्ष छिपकरभी निवास किया, इससे पाण्डवोंके जीते हुए उन लोगोंकी राज्यपद पर बैठकर धार्त्तराष्ट्र लोग अब कैसे आनन्दित रह सकते हैं? हम लोगोंके युद्धमें प्रवृत्त होनेपर यदि वह इन्द्र आदि देवतोंकी सहायता सेभी हम लोगोंको जीतनेसे समर्थ होजाय तब यह बात अवश्य माननी होगी कि धर्म्मसे अधर्म्म-आचरणही श्रेष्ठ है, और संसारमें कोईभी सत्कर्म्म विद्यमान नहीं है। दुर्य्योधन यदि इस जीवात्माको कर्म्मबद्ध और हम लोगोंको अपनेसे अधिक न समझेगा, तो कृष्णकी सहायतासे मैं निश्चयही उसको इष्ट मित्रोंके सहित मारनेकी इच्छा करता हूं। हे नरेन्द्र! यदि दुर्य्योधनका हम लोगोंका राज्यको हर लेनेका पाप निष्फल न होगा, और हम लोगोंका पुण्य-कर्म्म जो हमने उसको गन्धर्व्वोंके हाथसे छुड़ानेमें किया था,

वह भी यदि वृथा न होगा, तब इन दोनों पक्षोंको विचारकर देखनेसे दुर्य्योधनको पराजयही होनी उचित है। हे कौरवो! मैं जो वचन कह रहा हूं, वह तुम लोग देखोगे, युद्धमें प्रवृत्त होकर धृतराष्ट्रपुत्र जीते न बचेंगे। युद्धके अतिरिक्त कुछ अन्य उपाय करनेसे कौरव लोग जीते बच सकते हैं, परन्तु युद्ध करनेसे वे लोग कभी भी न बचेंगे। मैं कर्णके सहित धार्त्तराष्ट्रोंको मारकर सब राज्यको ले लूंगा, इससे तुम लोगोंको जो कुछ करना हो, उसे इसी समय करो, अपनी अभिलषित वस्तुओंका भोग लो। वर्त्तमान और भविष्यको बहुतसी दैवी घटनाओंसे कौरवोंका नाश और पाण्डवोंके विजयसूचक वृत्तान्त विदित होंगे। इसी प्रकार उत्तमरूपसे ज्योतिष, जाननेवाले, शीलवन्त, कुलीन संवत्सरके फलोंके जाननेवाले, सूर्य्य चन्द्रमाके ग्रहण आदि विज्ञानमें निपुण और नक्षत्रोंके संयोगको निश्चय करनेवाले, दिव्यप्रश्नोंके लगानेवाले (भविष्य घटनाओंके बतानेवाले,) मृगालोके आगमनके फलोंको कहनेवाले, कौन नक्षत्र किस ग्रहसे वेधा गया है इत्यादि विषयोंके विचार करनेवाले, शुभ और अशुभ मुहूर्त्तको बतानेवाले वृद्ध ब्राह्मणभी यदि उपस्थित न हों, तौभी प्रत्यक्ष देखनेवाले लोगोंसे इस कृष्णाभी ऐसे बहुतसे लक्षणोंको निःसन्देह देख रहे हैं, जिससे हम लोगोंके अजातशत्रु युधिष्ठिर शत्रुओंका पराजयके निमित्त अपनको कृतकार्य्य समझ सकते हैं। और मैं भी शान्त होकर उन सब होनेवाले वृत्तान्तोंको ज्ञानकी दृष्टि देख रहा हूं।" मेरे योग प्रभाववाली प्राचीन दृष्टिमें कुछभी व्याघात (रद बदल) नहीं हुआ है। मैं निश्चयही जानता हूं, कि 'युद्धमें प्रवृत्त होनेसे धृतराष्ट्रके पुत्र जीते न बचेंगे। मेरे गाण्डीव धनुषको रोदे बिना चढ़ायेही चढ़ जाते हैं, बिना चोटकेही धनुष चढ़ानेका स्थान कम्पित हो रहा है, बाण सब तूणीरमेंसे निकलकर चलनेको उद्यत होते हैं। अपनी पुरानी केंचलीको छोड़कर जैसे सांप बाहर होता है, वैसेही मेरी यह तरवारभी प्रसन्न होकर मियानमेंसे निकल रही है, और ध्वजाके ऊपरसे भी "हे किरीटिन! कब तुम्हारा रथ रथ जुतेगा" इस प्रकारके भयङ्कर बहुतसे वचन सुन पड़ते हैं। रातको सियार बड़ेजोरसे बोलते हैं, और आकाशसे राक्षसोंका समूह गिरता हुआ दीखता है। मेरे सफेद घोड़ोंसेयुक्त रथको देखकर हरिण, सियार, मोर, कौए, गिद्ध, बगुले और सोनेके पंखके समान पंखवाले पक्षी सब पिछाड़ी गिरते हुए दीखते हैं, क्योंकि मैं अकेलाही बाणोंकी वर्षा करता हुआ योद्धाओंको यमपुरीमें पहुंचा सकता हूं। सन्ध्याके समय बहुत घने बनको जलानेवाली अग्निके समान मैं योद्धाओंके मारनेका दृढ़ निश्चय करके अलग अलग अस्त्र शस्त्रोंको लेकर महा शस्त्र स्थूणाकर्ण, पाशुपतास्त्र और ब्रह्मास्त्र तथा इन्द्रने मुझको जो कुछ अस्त्र दिये हैं सबको चलाकर शत्रुकी ओरके राजपुरुषों और राजाओंमेंसे किसीको भी बाकी न छोड़ूंगा। हे सञ्जय! तुम उन लोगोंसे कहना कि, ऐसाही करके मैं शान्त होऊंगा, क्योंकि यही मेरा मुख्य और स्थिर अभिप्राय है। हे सूत! देखो! दुर्य्योधनको कहांतक मोह उत्पन्न हुआ है, कि जिसको इन्द्र आदि देवताओंको सहायता पाकर भी कोई युद्धमें नहीं जीत सकता, उनके संङ्गमें बलपूर्वक विरोध करना वह उत्तम समझता है। जो हो, सम्प्रति शान्तनुनन्दन बूढ़े भीष्म, द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा और विदुर जो वचन कहते हैं, वही होवे; सब कौरव लोग आयुष्मान होवें।

४८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय ! अनन्तर शान्तनुपुत्र भीष्म उन इकट्ठे हुए सब राजाओंके बीचमें दुर्य्योधनसे यह वचन कहने लगे। पहिले समयमें एक बार बृहस्पति और शुक्राचार्य्य ब्रह्माके समीप गये थे, और इन्द्रके सहित सहित बसु आदित्य साध्य, आकाशमें रहनेवाले सप्तऋषि, गन्धर्व्व और अप्सरा आदि सब स्वर्गवासी भी वहां जाकर लोकवृद्ध विश्वेश्वर पितामहको नमस्कार करके अपने अपने समूहके सहित यथा योग्य स्थानमें बैठ गये। उसी समय प्राचीन देव नर और नारायण ऋषि अपने असीम तेज प्रभावसे उन सबके मन और तेजको ग्रहण करते हुए सबहीको नांघकर वहांसे चले। इससे बृहस्पतिने ब्रह्मासे पूछा, कि हे पितामह! आपकी उपासना न करनेवाले ये दोनों कौन है? इनका वृत्तान्त हम लोगांसे कहिये। ब्रह्मा बोले, पृथ्वी और स्वर्गको प्रकाशित करनेवाले, तेजसे प्रज्ज्वलित, महासत्त्व, महापराक्रमी और महाबलसे युक्त जो ये दोनो ऋषि सबको व्यापके तथा अतिक्रम करके चले गये हैं, येही नरनारायण है। अपनी तपस्यासे तेजस्वी होकर ये मनुष्यलोकसे ब्रह्मालोकमें पहुंचे है। हे ब्रह्मन्! इन्होंने कर्म्मसे सब लोकोंके आनन्दको बढ़ाया है; महाबुद्धिमान इन दोनो परम तेजस्वी महात्माओंमें परस्पर अभेद होनेपरभी देवता और गन्धर्व्वोंसे पूरित होकर राक्षसोंके विनाश करनके निमित्त दो शरीरको धारण किय है। ब्रह्माके उस बचनको सुनकर इन्द्र बृहस्पति आदि देवतोंके सहित वहा गये, जहा नर-नारायण तपस्या करते थे। वहा जाकर उस समय जो देवता और असुरोमें महायुद्ध होरहा था, उस महाभयसे छूटनेके निमित्त वर मागनेकी प्रार्थना करी हे भरतसत्तम! तब उन्होंने कहा, कि 'क्या प्रार्थना है, कहो। ऐसा वचन सुनकर इन्द्र बोले, आपलोग मेरी सहायता कीजिये। अनन्तर उन्होंने इन्द्रसे कहा, कि "तुम जो इच्छा करते हो, वह पूरी होगी।" इन्द्रने उनके प्रतापसे शत्रुओंको जीता था। महातेजस्वी नरदेवने युद्धमें पौलोम और कालखञ्ज आदिक इन्द्रके सौ सौ हजार शत्रुओंका संहार किया था। लड़ाईके समय जम्भासुर नरदेवको ग्रास करनेके निमित्त उद्यत हुआ था, तब इन्होंने घूमते हुए रथपर बैठकर भालेके सहारेसे उसका शिर काटा था। इन्होंने समुद्रके पारमें जाकर साठ हजार निवातकवच नामक राक्षसोंको जीतके हिरण्यपुर नगरको पीड़ित किया था। पराये देशोंके जीतनेवाले महाबाहु अर्ज्जुनने इन्द्रके सहित सब देवतोंकोभी पराजित करके अग्निको तृप्त किया था। इसी प्रकारसे दैत्य दानवोंका बध किया था। ऐसे महाबली और बड़े पराक्रमी इन दोनोपुरुषोंका एकत्र समागम देखा। सुनते है, कि वेही प्रथम देव नर और नारायणने वीरोंमें श्रेष्ठ वासुदेव और अर्ज्जुन रूपसे अवतार लिया है मनुष्य लोकमें इन्द्रके सहित सब देवता लोगभी इनको नहीं जीत सकते। कृष्णही नारायण और अर्ज्जुन नरदेव जाने गये है। एकही आत्माने दो होकर नर नारायण रूपका धारण किया है। ये वीरताके कर्म्मोंसे अक्षय ध्रुव लोकोंमें व्याप्त हो रहे है, और जहांपर युद्ध करनेका समय पहुंचता है, वहांही बार बार अवतार लेते हैं। इसी निमित्त वेदके जाननेवाले नारदने यदुवंशियोंसे यह सब वृत्तान्त वर्णन करते हुए कहा था, कि युद्धही इनका कर्त्तव्य कर्म्म है। हे तात दुर्य्योधन! जब सनातन महात्मा कृष्ण अर्ज्जुनको तुम एकही रथ पर बैठे देखोगे; जब शङ्ख, चक्र, गदा हाथमें लिये हुए कृष्णको और गाण्डीव धनुषके सहित अर्ज्जुनको अस्त्र शस्त्रोंसे युक्त देखोगे, तभी हमारी इन बातोंको स्मरण करोगे। यदि यदि हमारी बातोंके

न मानोगे, तो समझोगे कि निश्चयही कौरवोंके नाशका समय उपस्थित हुआ है। हे तात। धर्म्म और अर्थसे तुम्हारी बुद्धि भ्रष्ट होगई है; तुम यदि मेरी बातोंको ग्रहण न करोगे, तो अनेक ज्ञाति-बन्धुओंको मरे हुए सुनोगे, सब कौरव लोग तुम्हारे ही मतके अनुवर्त्ती हैं, परन्तु तुम परशुरामजीके शापसे ग्रस्त होन सूत पुत्र कर्ण, सुबल-पुत्र शकुनि और अपने सहोदर भाई दुःशासनके मत और बचनोंको कल्याणकारी समझते हो।

कर्ण बोले, हे पितामह। तुमने मुझे जो कुछ वचन कहे, यह तुम्हारे कहने योग्य न थे, क्योंकि मैं निज धर्म्मसे पतित न होकर चात्रधर्म्ममें स्थित हूं। विशेषतः मुझमें ऐसा कोई दुश्चरित्र भी नहीं है, कि जिससे तुम मेरी निन्दा करोगे। धृतराष्ट्रके पुत्र लोग किसी समयमें भी मेरे किञ्चित मात्र पापको नहीं जानते, मैंने दुर्य्योधनके सङ्गमें रहकर कभी बुरा आचरण नहीं किया, बल्कि यही कल्याण साधनका कार्य्य करूंगा, कि युद्धमें सब पाण्डवोंको मार डालूंगा। पहिले जिनके साथ विरोध हो चुका है, सज्जन लोग उनके सङ्ग फिर किस प्रकारसे सन्धि कर सकते हैं? राजा धृतराष्ट्रके प्रिय-कार्य्योंको करना मेरा अत्यन्त कर्त्तव्य कर्म्म है और दुर्य्योधनकेभी प्यारे कामोंको करना उचित है, क्योंकि येही राज्यपद पर प्रतिष्ठित हुए हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कर्णकी ऐसी बातोंको सुनकर शान्तनुपुत्र भीष्म महाराज धृतराष्ट्रसे बात करते हुए फिर यह बचन बोले, कि कर्ण "पाण्डवोंको मारूंगा" यह कहकर सदा अपनी बड़ाई किया करता है; परन्तु यह महात्मा पाण्डवोंके सोरहवें अंशका एक अंशभी नहीं है। तुम्हारे दुराचारी पुत्रोंको जो भारी अनर्थसे पड़ना होगा, वह इसी सूतपुत्रका कर्म्म जानना चाहिये। तुम्हारा पुत्र मन्दबुद्धि दुर्य्योधन इसीका सहारा लेकर महाबली, शत्रुओंके जीतनेवाले देवपत पाण्डवोंको अपमानित किया करता है। पाण्डवोंने अकेलेही जिन कठिन कर्म्मोंको किया है, क्या कर्ण कभी भी वैसे कर्म्मोंको करनेमें समर्थ हुआ है? विराट नगरमें जब अर्ज्जुनने अपने बल विक्रमको प्रकाश करके इसके प्यारे भाईको मारा था, उसे देखकर उस समय इसने क्या किया था? अर्ज्जुनने सब कौरवोंको जिस समय अकेलेही जीतकर अच्छी प्रकारसे सबको मोहित और मूर्च्छित करके सबके वस्त्रोंको बलपूर्व्वक हरण किया था, तब क्या यह विदेशमें गया था? वहां पर क्या यह उपस्थित नहीं था, घोषयात्रामें जब गन्धर्वोंने तुम्हारे पुत्रोंको हरण किया था, तब यह सूतपुत्र कहां था, जो इस समय बैलकी भांति आस्फालन कर रहा है। वहांपर भी महात्मा भीम अर्ज्जुन, नकुल और सहदेवनेही आकर उन गन्धर्वोंको जीतकर दुर्य्योधनको छुड़ाया था। हे भरतर्षभ! इस व्यर्थ बड़ाई करनेवाले धर्म्म और अर्थके लोपक कर्णकी ऐसीही बहुत मिथ्या बातें सुनी जाती हैं; इससे तुम इन सब बातोंका विचार करके अपने मङ्गल कामनाके निमित्त कार्य्य करो।

भीष्मकी बात सुन महात्मा भरद्वाजपुत्र सब राजाओंके बीचमें उनके वचनोंकी प्रशंसा करते हुए महाराज धृतराष्ट्रसे यह बचन बोले, कि अर्थ-लिप्सुओंके वचन अनुसार कार्य्य करना आपको उचित नहीं है। युद्धके पहिले पाण्डवोंसे मेल करनाही मैं कल्याणकारी समझता हूं। सञ्जयने अर्ज्जुनकी कही हुई जिन सब वचनोंको सभामें सुनाया है, उन सबकोही मैं स्वीकार करता हूं, अर्ज्जुन अवश्य उन वचनोंके अनुसार कार्य्यको पूराकरेगा, क्योंकि त्रिलोकमें उसके समान धनुर्द्धारी दूसरा कोईभी विद्यमान नहीं है।

महाराज धृतराष्ट्र द्रोण और भीष्मके अर्थसे भरे हुए वचनोंका अनादर करके सञ्जयसे पाण्डवोंकी बातोंको पूछने लगे। उन्होंने जब भीष्म और द्रोणाचार्य्यको बातोंका पूरा उत्तर न दिया उसी समय कौरव लोग अपने जीवनसे निराश होगये।

४६ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय। हमारी प्रीतिके निमित्त जो सब सेना आकर इकट्ठी हुई है, उसको सुनकर धर्म्मपुत्र राजा युधिष्ठिरने क्या कहा? भावी युद्धके लिये वे कैसा बन्दोबस्त कर रहे हैं? भाई और पुत्रोंमें कौन कौन उनकी आज्ञा पानेके निमित्त मुह जोह रहे हैं। मेरे चुद्रबुद्धिवाले पुत्रोंके ठगने और अपमान करने पर कुपित हुए धर्म्मपुत्र धर्म्मचारी राजा युधिष्ठिरको "शान्ति अवलम्बन कीजिये" ऐसा बचन कहके युद्धसे कौन निवारण कर रहा हैं?

सञ्जय बोले, हे महाराज! पाण्डवोंके सहित पाञ्चाल लोग राजा युधिष्ठिरका मुह जोहते हुए ठहरे हैं और वे भी सब पर अनुशासन कर रहे हैं। पाण्डव और पाञ्चालोंका रथसमूह अलग अलग आकर राजा युधिष्ठिरको प्रसन्न कर रहा है। उदय होते हुए प्रभात कालके सूर्य्यके समान पाण्डव और पाञ्चाल योद्धा कुन्तीनन्दन महाराज युधिष्ठिरकी स्तुति और प्रशंसा करते हैं, ब्राह्मण चत्रिय और वैश्योंकी कुमारी कन्याये युद्धके निमित्त उद्यत हुए युधिष्ठिरको देखनेके निमित्त आके इकट्ठी होती हैं।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! पाण्डव लोग पाञ्चाल तथा दूसरे सोमक वंशियोंकी, जिन जिन सेनाओंके सहारे हम लोगोंसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं, उसको तुम मुझसे वर्णन करो।

वैशम्पायन मुनि बोले, कि सञ्जय कौरवोंकी सभामें धृतराष्ट्रके प्रश्नोंको सुनकर, कुछ सोचकर बारम्बार कठिनतासे लम्बी सांस लेते हुए दैवात् मूर्च्छित हो गये! तब सभाके बीच कौरवोंके समीप बैठे हुए महाराज धृतराष्ट्रसे विदुरने कहा, कि हे महाराज। सञ्जय मूर्च्छित होकर पृथ्वीमें गिरके बुद्धिहीन और चेतरहित होनेसे कुछ बात नहीं कह सकते हैं।

धृतराष्ट्र बोले, सञ्जयने महारथ कुन्तीपुत्रोंसे भेंट की थी। मालूम होता है, कि उन पुरुषव्याघ्रोंने इनके चित्तको बहुत उत्तेजित कर दिया है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, सञ्जय कौरवोंसे आश्वासित होकर सावधान हुए और उठकर सभामें कौरवोंके समीप महाराज धृतराष्ट्रसे कहने लगे, हे राजेन्द्र! मैंने महारथ पाण्डवोंको मत्स्यराजके मन्दिरमें ठहरे हुए प्रवासके कारण शरीरसे कृश अवलोकन किया है। हे महाराज! पाण्डवोंने जिन लोगोंके सहित आपसे युद्ध करनेका निश्चय किया है, उनका नाम सुनिये। वह बुद्धिमान धृष्टद्युम्नके सहित आपसे युद्ध करनेकानिश्चय करते हैं। जो धर्म्मात्मा काम, क्रोध, लोभ, मोह, भयाओर अर्थसे भी कभी सत्यको नहीं छोड़ते, धर्म्मात्माओंमें श्रेष्ठ महात्मा जो धर्म्म विषयमें प्रमाण स्वरूप हैं, उन अजातशत्रु युधिष्ठिरके वशमें पाण्डव लोगोंने आपसे युद्ध करनेका किया है। जिसके बाहुबलके समान पृथ्वीमें कोई भी वीर विद्यमान नहीं है, जिस धनुर्द्धारीने सब राजाओंको अपने वशमें किया था, जिन्होंने काशी मगध, अङ्ग और कलिङ्ग देशवासियोंको युद्धमें जीता था, उसी भीमसेनके सहित पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं। जिसके बलवीर्य्यके प्रभावसे युधिष्ठिरादि चार मुख्य मनुष्य-श्रेष्ठ वीर जतुगृहसे सहसाभूमिके गर्भ

निकाले गये थे, जिन्होंने मनुष्य-भक्षी हिड़म्ब राक्षससे उन लोगोंको बचाया था, उसी भीमसेनके सहित पाण्डव तुमसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं। सिन्धुराज जयद्रथने जब द्रौपदीको हरण किया था, उस समय जिस कुन्तीपुत्र वृकोदरने उसे छुड़ाया था, और जिन्होंने वारणावत नगरमेंसे प्रायः जलते हुए सब पाण्डवोंको मुक्त किया था, पाण्डव लोग उसी भीमसेनके सहारे तुमसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं। द्रौपदीको प्रीतिको पूरी करनेके निमित्त जिन्होंने महा भयङ्कर गन्धमादन पर्व्वतके शिखर पर जाकर क्रोधवश नामक राक्षसोंको मारा था, जिसकी दोनों भुजाओंमें दश-हजार हाथियोंका बल है, उसी भीमसेनके सङ्ग पाण्डवोंने तुमसे युद्ध करनेका निश्चय किया है। जिस वीरने पहिले अग्निको तृप्त करनेके निमित्त कृष्णकी सहायतासे इन्द्रको जीत लिया था; जिसने साक्षात शूलधारी उमापति महादेवको युद्धसे प्रसन्न किया था, जिस धनुषधारीने सब राजाओंको वशीभूत किया था, उसी अर्जुनको सङ्ग लेकर पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं। जिन्होंने म्लेच्छोंसे भरे हुए पश्चिम दिशाको जीत कर उन्हें अपने वशवर्त्ती किया था, वेही विचित्र-वीर नकुल वहांपर योद्धारूपसे निश्चित किये गये हैं। हे कुरुश्रेष्ठ! पाण्डवोंने उसी धनुर्द्धारी वीरवर सुकुमार और सुन्दर माद्रीपुत्र नकुलके सहित तुमसे युद्ध करनेका निश्चय किया है। जिन्होंने काशी, मगध, अङ्ग और कलिङ्ग देशोंको पहिले युद्धमें जीता था, उसी सहदेवके सहित पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं। हे राजन्! पृथ्वीमें अश्वत्थामा, धृष्टकेतु, रुक्म और प्रद्युम्न जिसके बलके समान है, माद्रीके आनन्दवर्द्धन उसी पाण्डवोंके छोटे-भ्राता सहदेवके सङ्ग तुम्हें महा भयङ्कर युद्ध करना होगा। हे भरतर्षभ! जिनने पहिले काशीराजकी कन्या होकर मरण पर्य्यन्त भीष्मके वधकी इच्छा करके कठिन तपस्या की थी, अनन्तर पाञ्चाल राजाके मन्दिरमें कन्या रूपसे जन्म लेकर दैवात् पुरुषत्वको पाया है, जो स्त्री और पुरुषोंके सब गुण और अवगुणोंको भली भांति जानते हैं, युद्धदुर्म्मद जो पाञ्चालपुत्र कलिङ्गराजको युद्धके निमित्त मिले थे, उसी महाधनुषधारी उग्रमूर्त्ति शिखण्डीके सहित पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं। भीष्मके मारनेके निमित्त बनके यक्षने जिसको स्त्रीसे पुरुष बनाया है, उसी कालके समान शिखण्डीके सङ्ग पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं। केकय-देशीय महाधनुर्द्धारी और वर्म्मसे युक्त शूरवीर जो पांच भाई हैं, उनके सङ्ग भी पाण्डवलोग तुमसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं। जो लम्बी भुजावाले, शीघ्र अस्त्र चलानेमें निपुण, धैर्य्यवन्त और सत्य विक्रमी हैं, उस वृष्णिवीर युयुधानके सहित पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं। जो बल, वीर्य्यमें कृष्णके समान और इन्द्रिय निग्रहमें युधिष्ठिरके तुल्य है, उसी अभिमन्युके सहित पाण्डवोंने तुमसे युद्ध करनेका निश्चय किया है। अज्ञात-वासमें जिन्होंने पाण्डवोंकी रक्षा की थी, उसी महात्मा विराटके सङ्ग तुमको युद्ध करना होगा। काशीपति महारथ राजा वाराणसी धाममें प्रतिष्ठित हैं, वे भी पाण्डवोंके योद्धा हुए हैं, पाण्डवोंने उन्हीं काशीराजके सङ्ग आपसे युद्ध करनेका निश्चय किया है। महायशस्वी, महावीर्य्यवान, महारथ शिशुपालपुत्र धृष्टकेतु क्रुद्ध होनेसे संग्राममें कालस्वरूप होजाते हैं, जिन्होंने एक अक्षौहिणी सेनाके सहित युधिष्ठिरको सहारा दिया है, उन्हीं चेदीराजके सङ्ग पाण्डव लोग तुमसे युद्धमें मिलनेका निश्चय करते हैं। बालक होकर भी युद्धमें दुर्जय, विषैले सर्पकी तरह भयङ्कर

मूर्त्तिको धारण करनेवाले, द्रौपदी-पुत्रोंके सहित पाण्डव लोग तुमसे युद्ध करनेका निश्चय करते हैं। देवताओंमें इन्द्रके समान जिन्होंने पाण्डवोंको सहारा दिया है, पाण्डवलोग उन्हीं कृष्णके सङ्ग आपसे युद्धमें मिलना निश्चय करते हैं। हे भरतर्षभ! उन्होंने चेदिपतिके भ्राता शरभ और करवर्षके सहित भी आपसे युद्ध करनेका निश्चय किया है। जरासन्धके पुत्र सहदेव और जयत्सेन पाण्डवोंके युद्धकार्य्यके निमित्त निश्चित हुए हैं। अत्यन्त बलसमूहसे घिरे हुए महा तेजस्वी द्रुपदराज भी पाण्डवोंके निमित्त अपने प्राणको समर्पण करके युद्धके निमित्त तैयार हैं। इनको छोड़कर और भी पूरब तथा उत्तर देशके दूसरे बहुतसे राजाओंका सहारा लेकर धर्म्मराज युधिष्ठिर सग्रामके निमित्त तैयार हैं।

५० अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय। तुमने जिन लोगोंका नास बतलाया है, वे सबही महा-उत्साहसे भरे हैं, परन्तु वे सब लोग मिलके एक तरफ रहैं, और भीम उन सब लोगोंके समान अकेलाही एक ओर रह सकता है। हे तात। जैसे व्याघ्रसे, महा-रुरुको भय लगता है, वैसेही भीमसेनसे मुझे अत्यन्त भय लगता है। सिंहसे जैसे पशुओंको डर लगता है, उसी भांति वृकोदरसे भयभीत होकर लम्बी और गर्म्म सांस लेते हुए मुझे सारी रात नींद नहीं आती। उस इन्द्रके समान तेजस्वी महाबाहु भीमके सङ्ग युद्धमें उसके बलको सह सके, ऐसा वीर मैं इस सेनाके बीचमें किसीको नहीं देखता। वह अमर्षण, दृढ बैर, टेढ़ा स्वभाव, बहुदर्शी, महारव, महावेग, महा-उत्साह, महाबाहु और महाबलसे युक्त कुन्तीपुत्र कुरु-श्रेष्ठ भीमसेन, युद्धमें दण्डधारी यमराजके समान गदा धारण करके अत्यन्त मोहग्रस्त मेरे पुत्रोंको नाश कर देगा। मैं अपने अन्तःकरणसे ब्रह्म-दण्डके समान उसकी लोहमयी अष्ठकोनसे युक्त सोनेके तारोंसे खिची हुई भयङ्कर गदाको देख रहा हूं। युवा अवस्थाका बल पाकर जैसे सिंह मृगोंके झुण्डमें घूमता है, वैसेही भीमसेनभी मेरी सेनामें घूमेगा। वह बहुत भोजन करनेवाला भीमसेन, अकेलाही बाल्य-अवस्थामें भी मेरे पुत्रोंके ऊपर कठिन पराक्रम प्रकाश करता था। बाल-अवस्थामें भी वह युद्धमें प्रवृत्त होकर मतवाले हाथीके समान दुर्य्योधन आदि मेरे पुत्रोंको मर्द्दन करता था, उसको स्मरण करनेसे अबभी मेरा हृदय कांपता है। हमारे पुत्र सदाही उसके बलको देखकर दुःखी रहते थे, इससे वही महापराक्रमी भीमसेन गृहविच्छेदका कारण हुआ है। मुझे ऐसा दीखता है कि भीम क्रोधसे मूर्च्छित होकर युद्धमें मनुष्य, हाथी, घोड़े और सम्पूर्ण सेनाको ग्रास कर रहा है। हे सञ्जय! अस्त्रोंके चलानेमें द्रोणाचार्य्य और अर्ज्जुनके समान, शी चलनेमें वायुके समान, और क्रोधमें रुद्रके समान युद्ध दुर्म्मद शूरवीर भीमसेनको कौन मनुष्य संग्राममें मार सकता है? उस शत्रु संहारकारी भीमने उसी समयमें मेरे पुत्रोंको नहीं मार डाला, इसीको मैं अपना परम लाभ समझता हूं। जिस भीमने पहिले महा पराक्रमी यक्ष और राक्षसोंका बध किया है, उसके बल और वेगको मनुष्य कैसे सह सकेंगे? हे सञ्जय। वह बालक अवस्थामेंभी कभी मेरे वशमें नहीं हुआ था, तब इस समय मेरे कुमार्गी पुत्रोंसे क्लेश पाकर अब कैसे मेरे वशमें होगा। वह अत्यन्त निठुर और महाक्रोधी है। यदि हारभी जायगा, तौभी कभी न नवेगा, और भीम क्रोधसे भरा हुआ सर्व्वदा टेढ़ी चालसे देखता रहता है, और जिसकी दोनों भौंहोंका मध्यभाग सिकुड़ा रहता है, वह किस प्रकारसे शान्ति अवलम्बन कर सकता है? भीमका जैसा

बल, वीर्य्य और रूप है, उसे मैंने पहिलेही उसको बालक अवस्थामें व्यासजीके सुखसे यथार्थ और दृढ़निश्चय पूर्व्वक सुना था, कि "भीम अत्यन्त पराक्रमी, महाबली, गौरवर्ण, शाल-वृक्षके समान ऊंचा, कदमें घोड़े और हाथि-योंसेभी अधिक है। बहुत धीमे स्वरसे बोलन-वाला और मधुवर्णके समान उसके नेत्र है। वह प्रचण्ड-मूर्त्ति महा पराक्रमी भीमसेन युद्धमें क्रोधित होकर लोहमयी गदा लेकर रथ, हाथी, घोड़े और मनुष्योंको मारेगा, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। हे तात! पहिले मैंने उसके प्रतिकूल आचरण करके उस महाक्रोधी प्रहार करनेवालोंमें श्रेष्ठ भीमका अपमान किया है, इस समय मेरे पुत्र लोग उसकी सोनेसे खिची हुई लोहमयी अठकोनी महाभयङ्करी गदाके प्रहारको कैसे सह सकेंगे? हे तात! मेरे पुत्र लोग महाभयङ्कर असह्य बाणोंसे वेगवान भीमसेन रूपी महा-समुद्रसे कैसे पार होंगे? मैं बार बार अपने पुत्रोंको निवारण करता हूं, परन्तु वे अभिमानी महामूढ़ निर्बुद्धि लोग कुछभी नहीं मानते। वे लोग केवल मधुहीको देखते हैं, किन्तु उसके निकटहीमें जो महा भयकी सम्भावना है उसको कुछभी नहीं विचारते हैं। जो लोग उस नर-रूपी यमराजसे युद्ध करनेको जायगे, वे लोग भीमसे ऐसे मारे जायगे जैसे सिंहसे हरिणोंका समूह मारा जाता है। हे तात! सोनेके तारोंसे खिची हुई, चार हाथ लम्बी, छः कोनेसे युक्त, बहुत तेजसे भरी हुई, दुःखको उत्पन्न करने-वाली गदाके चलनेपर मेरे पुत्र उसके वेगको कैसे सह सकेंगे? जिस समय भीम गदा लेकर हाथियोंके मस्तकको तोड़ेगा, और भयङ्कर शब्द करता हुआ हाथियोंकी ओर दौड़ेगा, तथा रथके मार्गको रोकके मुख्य मुख्य वीरोंको मारेगा, उस समय जलती हुई अग्निके समान उसके समीपसे क्या कोई मनुष्य छुटकारा पावेगा? महाबाहु भीम मेरी सेनाको भगाकर मार्ग बनावेगा और गदा हाथमें लेकर नाचता हुआ प्रलयकालका सामान दिखलावेगा। हे सञ्जय! फूले हुए वृक्षोंके तोड़नेवाले मतवारे हाथीकी भांति भीमसेन संग्राममें मेरे पुत्रोंकी सेनामें प्रवेश करेगा, रथोंको रथी और सार-थीसे सूना कर देगा; घोड़े, हाथी और रथकी ध्वजाओंको काटेगा, तथा रथी और गजारोहियोंको पूरी तरहसे पीड़ित करेगा; वह हमारी सेनाको इस प्रकारसे भगा देगा, जैसे गङ्गाके बढ़े हुए प्रवाहमें किनारेके सब वृक्ष टूट टूटके बह जाते हैं। जिस वीर भीम-सेनने कृष्णकी सहायतासे जरासन्धके अन्तःपुरमें जाकर उसको मारा था; उस भीमके डरसे भयभीत होकर हमारे पुत्र, नौकर और दूसरे राजा लोग अवश्यही इधर उधर भाग जायगे। हे सञ्जय! मगधराज बलवानोंमें श्रेष्ठ बुद्धि-मान् जरासन्धने सब पृथ्वीके राजाओंको अपने वशमें करके उन्हें पीड़ित किया था। भीष्मके प्रतापसे कौरव, नीतिज्ञ अन्धक और वृष्णी लोग जो उसके वशवर्त्ती नहीं हुए, यह केवल दैवकी कृपाही समझनी चाहिये। महाबाहु भीमसेनने इस प्रकारके महावीरके स्थानमें जाकर, विना कुछ शस्त्र ग्रहण कियेही केवल बाहुबलके सहारेसे उसे मारा था, इससे बढ़के दूसरी और कौनसी बात होगी? भीमसे कौन अधिक बलवान हो सकता है? हे सञ्जय! युद्धके समयमें वह महाविषैले सर्पकी भांति विष उगलता हुआ, बहुत दिनसे रुके हुए अपने बल और तेजपुञ्जको मेरे पुत्रोंके ऊपर अवश्य त्याग करेगा। जैसे देवताओंके राजा इन्द्र वज्र लेकर दानवोंकी सेनाका नाश करते हैं, वैसेही भीमसेनभी गदा लेकर मेरे पुत्रोंको नाश कर देगा; न सहने योग्य, रोकनेसे न रुकने-वाला, टेढ़ा-स्वभाव, वेगवान, महापराक्रमी, लाललोचनवाले भीमसेनको, जैसे मैं अपने सम्मुख

आया हुआ देखता हूं' वह वृकोदर गदा, धनुष, रथ, कवचसे रहित होनेपरभी, यदि अपनी दोनों भुजाओंके बलसेही युद्धमें प्रवृत्त हो, तौभी कोई बलवान पुरुष उसके अगाड़ी नहीं ठहर सकेगा। भीष्म, द्रोण और ब्राह्मण-श्रेष्ठ कृपाचार्य्यभी मेरी भांति बुद्धिसेयुक्त भीमके बलको जानते है। ये मनुष्योंमें श्रेष्ठ महावीर पुरुष युद्धमें मरनेसे श्रेष्ठ व्रत समझते हैं, इस निमित्त युद्धकी तैयारी करके मेरी सेनाके अगाड़ी खड़े होंगे। हे सञ्जय! प्रारब्ध सब ठौर सबकोही कम, समान अथवा अधिक बल-वान है, विशेष करके पुरुषोंके लिये तो सुख्यही है। क्योंकि मैं पाण्डवोंकी युद्धमें निश्चय जय होगी, इस बातको जानता हूं, तौभी अपने पुत्रोंको नहीं रोक सकता हूं। भीष्म आदि ये सब महाधनुर्धारी वीर लोग इन्द्रसे प्रगट हुए पुराने मार्ग अर्थात युद्धकर्म्मको करके राजाओंके योग्य यश और कीर्त्तिकी रक्षा करते हुए, महासंग्राममें अपने प्राणोंको छोड़ेंगे। हे तात! इन लोगोंके समीप जैसे मेरे पुत्र हैं, वैसेही पाण्डव लोगभी हैं, ये सब लोग भीष्मके पौत्र (नाती) और द्रोणाचार्य्य तथा कृपाचार्य्य-के शिष्य हैं, तब ये तीनों बूढ़े महात्मा पुरुष मेरे यहांसे जो कुछ अपनी अभिलषित वस्तु पाते वा पाचुके है, उसके निमित्त अपनी स्वाभाविक उदारतासे युद्धमें अवश्यही प्रत्युप-कार करनेके निमित्त पुरुषार्थ करेंगे। क्योंकि पण्डित लोग कहतेहै, कि क्षत्रियधर्म्मको ग्रहण करनेवाले शस्त्रधारी क्षत्रियोंको युद्धमें मरनाही सबसे उत्तम है। इससे हे सञ्जय! जो सब लोग पाण्डवोंसे युद्ध करनेकी इच्छा करते है, उनकेही निमित्त मै शोक करता हूं। अहो! विदुरने मुक्तकण्ठसे कहकर जिस भयकी सूचना दी थी, वही भय अब आकर उपस्थित हुआ है। हे तात! ज्ञान दुःखको नाश करनेवाला है, यह मेरे विचारसे सिद्ध नहीं होता है, क्योंकि यह आनेवाला भावी दुःख ज्ञानकोभी मात करता है। लौकिक वृत्तान्तों-को जाननेवाले जीवन्मुक्त ऋषि लोग भी जब सुखमें सुखी और दुःखमें दुःखी होते हैं, तब पुत्र, कलत्र, पौत्र, राज्य और बन्धुबान्धवोंसे युक्त और नाना विषयोंमें सहस्रों भांतिसे आसक्त रहकर मैं जो दुःखोंमें दुःखी होऊंगा इसमें कौनसी विचित्रता है? यह जो बड़ा भारी सन्देह उत्पन्न हो रहा है, उसमें क्या मेरा कल्याण होगा? मैं पूरी रीतिसे अनुसन्धान करकेभी केवल अन्तमें कौरवोंका विनाशही देखता हूं। जुवेका खेलनाही कौरवोंके लिये महाविपदमें पड़नेका कारण मालूम होता है। ऐश्वर्य्य चाहनेवाला, मन्दबुद्धि दुर्य्योधनने केवल लोभहीके वशमें होकर इस पाप कर्म्मको कराया था। मुझे मालूम होता है, यह शीघ्र अदल बदल होनेवाले कालचक्रका घूमनाही धर्म्म है। इस कालचक्रमें मैं ऐसा फंस रहा हूं कि उससे छुटकारा नहीं पा सकता। हे सञ्जय! इस समय मैं कहां जाऊं क्या करूं? किस प्रकारके कार्य्योंको करूं? ये मन्दबुद्धि कौरव लोग शीघ्रही कालके वशमें होकर नष्ट होजायंगे। हे तात! जब मेरे सौ पुत्र मारे जायगे, तब मैं परवश होकर कैसे स्त्रियोंके रोदनको सुनूंगा। हा! किस प्रकारसे मेरी मृत्यु होगी? सन्ध्या कालमें वायुकी सहायतासे बढ़ी हुई अग्नि जिस प्रकारसे सूखी हुई तृण और लकड़ियोंको भस्म कर देती है, वैसेही भीमसेन अर्ज्जुनके साथ मिलकर मेरे पुत्रोंको मार डालेगा।

५१ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, जिसकी झूठी बात कभीभी सुननेमें नहीं आती, और अर्ज्जुन ऐसे जिसके वीर योद्धा हैं, उस युधिष्ठिरको तीनों भुवनके राज्यकी भी प्राप्ति हो सकती है।

मैं ऐसे किसी मनुष्यकोभी नहीं देखता जो गाण्डीवधारी अर्ज्जुनके विरुद्ध अस्त्र धारण करके उसका सामना करनेमें समर्थ हो। जिस समय अर्ज्जुन गाण्डीव धनुषको लेकर प्रकाशमान हृदयको छेदनेवाले सब बाणोंको छोड़ने लगेगा, उस समय कोईभी उसके समान बलवान होकर उसे नहीं रोक सकेगा। सब शस्त्रोंके जाननेवाले बलवानोंमें श्रेष्ठ, युद्धमें कभी पीछे न हटनेवाले, बल और वीर्य्यसे भरे हुए, पुरुषोंमें श्रेष्ठ द्रोणाचार्य्य और कर्ण यदि उसके सन्मुख संग्राममें गमन करें, तो जगतमें हमारी सेनाके जीतनेकी सबको आशा होगी, पर यथार्थमें हमारी विजय न होगी, क्योंकि कर्ण बहुतही दयालु शापग्रस्त और असावधान है, और द्रोणाचार्य्य बूढ़े तथा दोनो ओरके गुरु है। इधर अर्ज्जुन महाबलवान, दृढ़ धनुषधारी और सावधान चित्त हैं। ये सब लोग शूरवीर और सब, शस्त्रोंके जाननेवाले, तथा बहुतही यश और बड़ाईको पाये हुए है। इससे इन लोगोंका बहुतही कठिन युद्ध होगा, और ये कभी भी पीछे न हट सकेंगे। ये लोग देवताओंके ऐश्वर्य्यकोभी त्याग सकते हैं, पर विजयका नहीं छोड़ सकते। इससे द्रोण, कर्ण, अथवा अर्ज्जुनके मारे जानेसे युद्धमें शान्ति होनी सम्भव है, पर अर्ज्जुनको मारनेवाला तथा जीतनेवाला कोईभी विद्यमान नहीं है। जो मनुष्य मेरे मन्दबुद्धि पुत्रोंके निमित्त अपने सब उद्योग और सेनाको सहायतासे युद्ध करनेके निमित्त तैयार है, उसके क्रोधको शान्ति इस समय कैसे हो सकती है? और दूसरे बहुतसे मनुष्य अस्त्र विद्याको जानते है, सबको जीतते हैं, और विजयी कहलाते हैं; पर अर्ज्जुनहीकी अकेली (एकसर) विजय सुननेमें आती है। हे सूत! तैंतीस वर्ष बीता होगा, कि अर्ज्जुनने खाण्डव वनमें अग्निको तृप्त किया था, और उसी समयमें सब देवतोंकोभी जीता था, अधिक क्या कहूं, मैंने कहीं भी उसकी हार नहीं सुनी। हे तात! समान शील और उत्तम चरित्रसे भरे हुए कृष्ण जिसके युद्धमें सारथी बनेंगे, इन्द्रके विजयकी तरह उसकी अवश्यही जय होगी। सुनता हूं कि अर्ज्जुन रथी, कृष्ण उसके रथपर सारथी और रोदेसे चढ़ा हुआ गाण्डीव धनुष यह तीनों तेजसे भरे हुए पदार्थ एकही स्थानपर मिले है। हम लोगोंमें वैसा धनुषभी नहीं है; और योद्धाभी नहीं है। परन्तु दुर्य्योधनके वशवर्त्ती मन्दबुद्धि, भाग्यहीन लोग इन बातोंको नहीं जानते हैं। हे सञ्जय! शिरपर गिरनेसे जलती हुई बिजलीभी बाकी छोड़ती है, पर अर्ज्जुनके धनुषसे छूटे हुए बाण कुछभी शेष नहीं रहने देते। मुझको प्रत्यक्षही ऐसा दीखता है, कि अर्ज्जुन अपने बाणोंको छोड़ता हुआ हमारी सेनाका वध कर रहा है, और बाणोंकी अत्यन्त वर्षा करके देहसे शिरको काट काट गिरा रहा है, गाण्डीव धनुषसे छुटे हुए अग्निके समान सब बाण तेजसे भरे हुए मेरी सेनाको जला रहे हैं, और अर्ज्जुनके रथके शब्दको सुनकर हमारी सेना मारे डरके व्याकुल होकर सब दिशाओंमें इधर उधर भाग रही है। जिस प्रकारसे प्रचण्ड अग्नि जलती हुई बड़े वेगसे तृण आदिको जला देती है, वैसेही अर्ज्जुनके अस्त्रोंकी अग्निभी मेरे पुत्रोंको जला देगी। हे तात। आततायी अर्ज्जुन जब अनेक चोखे और उत्तम पानीसे बुझे हुए बाणोंको छोड़ता हुआ विधाताके भेजे हुए सबके नाश करनेवाले कालके समान न सहने योग्य होजायगा, जब सुननेमें आवेगा कि कौरवोंके घर, युद्धके आगे और उनके चारो ओर अशुभ फल देनेवाली घटनाये हो रही हैं, तभी कौरवोंके विध्वंसका समय आवेगा।

५२ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, बलवान पाण्डव लोग जैसे सब कार्य्योंमें निपुण हैं, वैसेही उनके सहायक लोगभी अपने प्राणोंको अर्पण करके युद्ध करनेको तैयार हैं। हे तात! शत्रुओंकी ओरके पाञ्चाल केकय, मत्स्य, मगध आदि देशोंके बलवान राजाओंका वृत्तान्त जो तुमने अभी वर्णन किया है, वे इच्छा करनेसे इन्द्र समेत इस पृथ्वीको अपने वशमें कर सकते हैं; जितेन्द्रिय पुरुषोंमें श्रेष्ठ श्रीकृष्ण उनके विजयके निमित्त निश्चय करते हुए वहांपर विराजमान हैं। जिन्होंने थोड़ेही समयमें अर्ज्जुनके समीपमें सब शस्त्र विद्याओंको पढ़ा था, वही शिनिवंशी सात्यकी बाणोंको बीजकी भांति युद्धमें बोवेंगे। पाञ्चालराज-पुत्र, कठिन कर्म्मोंको करनेवाला धृष्टद्युम्नभी मेरी सेनासे युद्ध करेगा। युधिष्ठिरके क्रोध और अर्ज्जुनके पराक्रम तथा नकुल और सहदेवसेभी मुझे बहुतही डर लगता है। हे सञ्जय! वे मनुष्येन्द्र जिस समय अमानुषी कर्म्मोंको करते हुए सरजालका विस्तार करेंगे, उस समय मेरी सेना किसी प्रकारसे भी उससे नहीं निस्तार पा सकेगी। इसी निमित्त मैं इतना आक्षेप कर रहा हूं। पुरुषश्रेष्ठ पाण्डुनन्दन युधिष्ठिर देखनेके योग्य, मनस्वी लक्ष्मीवान, ब्रह्मतेजसे युक्त, मेधावी, सुकृतबुद्धि, धर्म्मात्मा मित्र, नौकर, युद्ध करने योग्य वीरोंसे युक्त, महारथ, महावीर सहोदर भाइयों ससुर वर्गसे उत्पन्न धृष्टद्युम्न आदिके समेत धैर्य्यशाली, सरल स्वभाव, विनय सम्पन्न, लज्जावान, सत्यपराक्रमी बहुत शास्त्रोंको जाननेवाले, कृतात्मा, हृद्धसेवी और जितेन्द्रिय हैं। उस सब गुणोंसे पूर्ण जलते हुए प्रचण्ड अग्निके समान पाण्डवरूपी अग्निमें कौन बुद्धिहीन और चेतरहित पुरुष पतङ्गकी भांति गिर सकता है? जलनेवाली वस्तुओंके मिलनेसे जैसे थोड़ी अग्निसी प्रबल होजाती है, वैसेही तपस्यासे कृश होनेपर भी ऊंचे स्वभाववाले राजा युधिष्ठिरको मैंने कपट व्यवहारोंसे ठगा है; इस लिये वे युद्धसे मेरे बुद्धिहीन पुत्रोंका नाश कर देंगे। हे कौरवगण! उन लोगोंके सङ्ग युद्ध न करनाही मैं कल्याणदायक समझता हूं, इस समय तुम लोगभी अच्छी प्रकारसे मालूम कर लो। युद्धमें सम्पूर्ण कुलका नाश हो जायगा, इससे यदि युद्ध न करना तुम लोगोंको उत्तम ऊँचता हो, तो मैं शान्तिके निमित्त यत्न करूं। यही मेरी बुद्धिकी सीमा और अन्त है, और इसीसे मेरे मनमें शान्ति हो सकती है। मुझको दुःख पाता हुआ देखकर युधिष्ठिर कभी भी उपेक्षा न करेंगे क्योंकि वह जब अधर्म्मसे कलह उत्पन्न होनेके विषयमें मुझे ही कारण कहके निन्दा करते हैं, तब प्रार्थना करनेसे कभी झगड़ेमें प्रवृत्त न होंगे।

५३ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, हे महाराज! आपने जो कुछ कहा वह सबही सत्य है। युद्ध होनेसे गाण्डीव धनुषसे जो क्षत्रियोंका नाश होगा, वह प्रत्यक्षही दीख पड़ता है, परन्तु सब दिन धीर स्वभावसे रहकर और अर्ज्जुनके सब तत्वोंको जानकरभी जो आप पुत्रोंके वशमें होकर चलते हैं, इसको मैं नहीं समझ सकता हूं। हे भरतर्षभ! आप पहिलेहीसे पाण्डवोंका ठगते चले आते हैं, इससे सब दिन अपराध करके अब यह समय आपके विलाप करनेका नहीं है। हे महाराज! जो ज्येष्ठतात, श्रेष्ठ सुहृद और पृथ रीतिसे सावधान चित्त हैं, उनका हित-साधन करनाही सब भांतिसे कर्त्तव्य कर्म्म है। बुरा करनेवाला मनुष्य कभीभी गुरु नहीं कहा जाता। जुएके समयमें आपके पाण्डवोंकी हार हुआ सुनकर "यह जीता गया, यह मिला", कहकर बालककी भांति हंसी की थी, और उन लोगोंका बहुतसी कड़वी बातोंसे तिरस्कार

होते सुनकरभी आपने उपेक्षा की थी, आपने समझा था, कि मेरे पुत्रोंने सम्पूर्ण राज्यको जीत लिया, परन्तु थोड़ेही दिनोंमें कुलका नाश होगा, इसे आपने न विचारा। हे महाराज। जङ्गलोंसे युक्त कुरुराज्य आपका पैतृक राज्य है, उसके अतिरिक्त आपने वीरोंसे उपार्जित समस्त पृथ्वीका राज्य पाया है. पाण्डवोंने अपने बाहुबलसे पृथ्वी उपार्ज्जन करके आपको समर्पण किया था, परन्तु आप अपने मनसे समझते हैं कि मैंने स्वयं यह सब राज्य प्राप्त किया है। हे राजेन्द्र। पाण्डव लोग जब जुवेमें हारकर वनको जानेके निमित्त तैयार हुए, तब आपने बालककी भांति बारबार हंसी की थी, इसीसे अर्ज्जुनने आपके पुत्रको गन्धर्व्वराजके हाथमें पड़ा हुआ महा विपतसमुद्रमें डूबता देखकर गन्धर्वोंसे युद्ध करके दुर्य्योधनको छुड़ाया था। हे राजन्। अर्ज्जुनके बाणोंकी वर्षासे समुद्रभी सूख सकता है, और मनुष्योंकी तो बातही क्या है? हे महाराज। बाण चलानेवालोंमें अर्ज्जुन, धनुषोंमें गाण्डीव, सम्पूर्ण लोकोंमें कृष्ण, चक्रोंमें सुदर्शन और ध्वजाओंमें अर्ज्जुनके रथमें बन्दरवाली ध्वजा श्रेष्ठ है। वह ध्वजाधारियोंमें मुख्य, सफेद घोड़ोंसे युक्त, कपिध्वजासेयुक्त, रथके सहित, काई एक राजोंके सङ्ग उद्यत होके कालचक्रके समान हम लोगोंको निःसन्देह मारेगा। हे भरतर्षभ। भीम अर्ज्जुन जिसके मुख्य वीर योद्धा हैं, वही इस सम्पूर्ण पृथ्वीका सबसे मुख्य राजा है, और उसीकी यह समस्त पृथ्वी है। हे राजन्! तुम्हारी सेनाको भीमसेनके हाथसे घायल होकर भागती हुई देखके दुर्य्योधन आदि कौरव अवश्यही नाशको प्राप्त होंगे। हे राजेन्द्र! तुम्हारे पुत्र और उनके अनुयायी सब राजा लोग भीम अर्ज्जुनके भयसे डरकर कभी उनसे विजय न कर सकेंगे। मत्स्य, पाञ्चाल, केकय, शाल्व सूरसेन आदि आपके अनुयायी इस समय नहीं हैं। अब वे आपके विरुद्ध हैं, क्योंकि वे लोग युधिष्ठिरकी ओर हैं, और उनकी उपासना करते हैं। उनके ऊपर उन लोगोंकी भक्ति है, इसी कारणसे वे लोग सदाही आपके पुत्रोंके विरुद्ध आचरण करते हैं। हे महाराज। सब प्रकारसे धर्म्मात्मा, मारनेके अयोग्य पाण्डवोंको जिस पुरुषने बुरे कर्म्मोंसे दुःख और क्लेश दिया है, और इस समय भी उनके सङ्ग शत्रुता कर रहा है, उसी आपके पुत्र पापबुद्धि दुर्य्योधनको अनुचरोंके सहित सब भांतिसे वशीभूत करनाही मुख्य कर्त्तव्य कार्य्य है; और उनके निमित्त शोक करना आपको उचित नहीं है। पासा खेलनेके समय भी बुद्धिमान् विदुर और मैंने आपसे यही वचन कहा था। हे राजेन्द्र! आप जो असमर्थकी भांति पाण्डवोंके प्रति इस प्रकारका विलाप करते हैं, यह सबही व्यर्थ है।

५४ अध्याय समाप्त।

दुर्य्योधन बोले, हे महाराज! आप कुछभी भय न कीजिये, और हम लोगोंके निमित्त शोकभी मत कीजिये। हे प्रजानाथ! हम लोग शत्रुओंके जीतनेमें खूबही समर्थ हैं। हे भरतर्षभ। जिस समय पराये राज्यको जीतनेवाले मधुसूदन कृष्ण महाबल चक्रसे युक्त होकर वनवासी पाण्डवोंके निकट गये थे; और उनके पीछे केकय, धृष्टकेतु, द्रुपद, धृष्टद्युम्न तथा अन्य राजा लोग भी जाकर इकट्ठे हुए थे;—जब कृष्णके सङ्ग सब राजालोगोंने इन्द्रप्रस्थके समीप इकट्ठे होकर सब कौरवोंके सहित आपकी निन्दा करी थी, और काले हरिणके चमड़ेको पहरनेवाले युधिष्ठिरकी उपासना करते हुए इष्ट मित्रोंके सहित आपके मूलच्छेदके अभिलाषी हुए थे; और उनको "फिरभी राज्यको लेना उचित है" ऐसी राय दी थी,—तब उस वृत्तान्तको सुनकर मैंने

कौरवोंके नाशसे भय-भीत होकर भीष्म, द्रोण और कृपाचार्य्यसे यह सब वृत्तान्त कहा था, कि हे महात्मन्! मुझे मालूम होता है, कि पाण्डव लोग हम लोगोंके किये नियममें नहीं स्थित रहेंगे, क्योंकि श्रीकृष्ण हम लोगोंको जड़ सहित नाश करनेकी इच्छा करते हैं; मेरे विचारमें विदुरको छोड़कर और आप लोगोंके सहित सब कौरव मारे जायंगे; कुरुसत्तम धर्म्मात्मा धृतराष्ट्र भी बोध होता है, कि न मारे जायंगे। श्रीकृष्ण हमलोगोंका मूल सहित नाश करके यह सम्पूर्ण कुरुराज्य युधिष्ठिरको देनेकी अभिलाषा करते हैं। इस विषयमें हम लोगोंको क्या करना उचित है? क्या हम अधीनताई स्वीकार करें, अथवा पलायन करें, या प्राणकी आशाको छोड़के शत्रुके सङ्ग युद्ध करेंगे? शत्रुओंसे युद्ध करनेसे निश्चयही मेरी हार होगी, क्योंकि सब राजा लोग युधिष्ठिरके वशमें हैं, विशेष करके राष्ट्रके सब पुरुष हम-लोगोंपर विरक्त हुए है; मित्रलोग भी कुपित होगये है, राजालोग तथा अपने मनुष्य भी सब तरहसे मुझे धिक्कार दे रहे हैं। ऐसी अवस्थामें अवनति स्वीकार कर लेनेमें भी कुछ दोष नहीं है, क्योंकि सन्धि करना, सब दिनसे हमलोगोंमें प्रचलित है; परन्तु युद्धही करनेकी मेरी इच्छा है; तब जो प्रज्ञाचक्षु महाराज धृतराष्ट्र मेरे निमित्त महाक्लेश पावेंगे। उसी निमित्त मैं शोक कर रहा हूं; हे प्रजानाथ! आपके और सब पुत्र भी मेरे सङ्ग शत्रुओंके अवरोध करनेमे तत्पर हुए थे, सो बातभी आपको पहिलेहीसे मालूम है,—इसीसे वे महारथ पाण्डवलोग इष्ट मित्र और बन्धुबान्धवोंके सहित धृतराष्ट्रके कुलका नाश करके अपने वैरको समाप्त करेंगे।

हे तात! अनन्तर भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य और अश्वत्थामा मुझे बड़ी भारी चिन्तामें मग्न हुए देखकर बोले, हे परन्तप! यदि शत्रु लोग हम लोगोंसे विरोध करें, तो उसके निमित्त तुम कुछभी भय और शङ्का मत करो। युद्धमें खड़े होनेसे शत्रु लोग कभी भी हम लोगोंको पराजित नहीं कर सकेंगे। हम लोग अकेलेही सब राजाओंको जीतनेमें समर्थ हैं। सब लोग आवें, हम अपने तीक्ष्ण बाणोंसे उसके घमण्ड तोड़ देंगे। हे भारत! पहिले कुलश्रेष्ठ भीष्मने पिताके मरनेपर अत्यन्त क्रोध करके एकरथसे अकेलेही समस्त पृथ्वीके राजाओंको जीत लिया था, और महा क्रोधसे भरकर कितनेही भूपालोंका संहार किया था; इससे सब लोग डरकर भीष्मकी शरणमें आये थे। वह यही भीष्म हैं, यह हम लोगोंके सङ्ग मिलकर शत्रुओंको अवश्यही जीतनेमें समर्थ होंगे; इससे तुम अपने भयको दूर करो। इन महातेजस्वी महारथ पुरुषोंके बलका उस समय मुझको निश्चय हुआ था। हे राजेन्द्र! समस्त पृथ्वी उस समय शत्रुओंके वशमें थी, यह ठीक है; परन्तु अब वे लोग हमको जीत न सकेंगे। हे भरतर्षभ! शत्रुरूप पाण्डव इस समय सहायता रहित और बलहीन हुए हैं, और पृथ्वी इस समय मुझसे प्रतिष्ठित है। हे परन्तप! मैंने सब राजाओंको सम्मान और आदरसे अपनी ओर कर लिया है, वे लोग सुख, दुःख तथा सब कार्य्योंमें मेरे अनुगामी हैं। यह आप निश्चय जानिये कि मेरे निमित्त ये सब राजा लोग अग्निमें भी प्रवेश कर सकते हैं; और समुद्रमेंभी डूब सकते हैं, आपको भयसे दुःखी और दूसरेकी बड़ाई करते देखकर ये सब आपको पागल समझके हंसी करते हैं। हे कुरुसत्तम! इन भूपालोंमें हर एक और पाण्डवोंकी गतिको रोकनेमें समर्थ हैं। विचार पूर्व्वक देखिये; आपको सब कोई बड़ा समझते हैं, इससे आप अपने भावी भयको दूर कीजिये। मेरी समस्त सेनाको इन्द्रभी नहीं जीत सकते, वरन ब्रह्माभी यदि मेरी

सेनाका नाश किया चाहें, तौभो हमारी सेनाको नाश न सकेंगे। हे प्रजानाथ! युधिष्ठिरने हमारी सेना और हमारे प्रतापसे भयभीत होकरही नगरको आशा छोड़कर केवल पाच गांव मागे है। हे भारत! आप जो भीमको बड़ा सामर्थी समझ रहे हैं, वह भी वृथा है, मेरे सम्पूर्ण प्रभावको आप नहीं जानते है, इसीसे ऐसा समझते है। गदायुद्धमें इस सारी पृथ्वी पर कोई भी मनुष्य मेरी समान नहीं है। गदायुद्धमें मुझे कोईभी आजतक नहीं हरा सका, और भविष्यमें भी नहीं जीत सकेगा। मैंने स्थिरचित्तसे गुरुके घरमें रहकर, अत्यन्त क्लेशोंको सहके सब युद्धविद्या सीखी है, इससे क्या भीम, क्या दूसरे मनुष्य, मुझे किसीसे भी भय नहीं है। मैं जब शिष्य होकर बलदेवजीकी उपासना करता था, उस समय उनको यह निश्चय हुआ था, कि "गदायुद्धमें दुर्योधनके समान दूसरा कोईभी नहीं है।" सम्प्रति मैं युद्ध करनेमें हलधारी बलदेवके समान हूं, और बलमें मुझसे अधिक कोईभी नहीं है। भीम युद्धमें मेरी गदाकी चोटको कभीभी नहीं सह सकता। हे पृथ्वीनाथ! यदि मैं क्रोधित होकर एकवारभी भीमके ऊपर अपनी गदाका प्रहार करूं, तो उसी प्रहारसे उसे यमपुरीमें पहुंचा सकता हूं। हे राजेन्द्र! भीमसे भयकी बात तो दूर है, मैं सदाहीसे उसको गदा लिये हुए, देखनेकी इच्छा करता रहता हूं। क्योंकि यही मेरी सब दिनकी मनोकामना और मनोरथ है। युद्धमें मेरी गदाकी चोटसे भीम अवश्यही मरकर पृथ्वीमें गिर पडेगा। मेरी गदाकी चोट एकवार पूरी रीतिसे बैठनेपर, पर्व्वतोंके सहित हिमाचलभी सहस्र टुकड़े हो सकता है। "गदा युद्धमें दुर्योधनके समान कोई नहीं है" इस बातको भीमभी अच्छी प्रकारसे जानता है, और कृष्ण अर्ज्जुनभी सब समझते हैं। इससे हे राजन्! आप भीमसे उत्पन्न हुए भयको दूर कीजिये, महायुद्ध जब उपस्थित होगा, तब उसी मैं अवश्य मारूंगा; आप कुछभी दुःखी न होइये। हे भरतर्षभ! भीमके मेरे हाथसे मरनेपर, समान-धनुर्धारी अथवा कुछ उससेभी बाण और शस्त्रविद्यामें श्रेष्ठ पुरुष, अपने बाणोंकी वर्षासे अर्ज्जुनको विच्छिन्न कर देंगे। हे महाराज! भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा, कर्ण, भूरिश्रवा, प्राग्ज्योतिषपुरके महाराज, शल्य और सिन्धुराज जयद्रथ, इनमेसे एक एक पुरुषभी सब पाण्डवोंको मारनेमें समर्थ है, और ये सब मिलके उन लोगोंको क्षणभरमें यमपुरीको पहुंचावेंगे। सब राजाओंकी सेना अकेले अर्ज्जुनको क्यों न जीत सकेगी, इसमें कोईभी कारण नहीं दीख पड़ता। भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य और अश्वत्थामाके बाणोंसे सैकड़ों बार विकल होकर अर्ज्जुन छिप जायगा और परवश होकर अवश्यही यमपुरीमें गमन करेगा। हे भारत! गङ्गानन्दन पितामह भीष्म शान्तनुसेभी अधिक, ब्रह्मर्षिके समान और देवताओंसेभी अजेय होकर उत्पन्न हुए है। कोई मनुष्यभी भीष्मको मारनेवाला नहीं है, क्योंकि इनके पिताने प्रसन्न होकर इन्हें बरदान दिया है, कि "जबतक तुम मरनेकी इच्छा न करोगे, तबतक तुम्हारी मृत्यु न होगी।" हे महाराज! द्रोणाचार्य्यभी महर्षिभरद्वाजके वीर्य्यसे द्रोणी (दोनी) से पैदा हुए हैं, परम अस्त्रको जाननेवाले अश्वत्थामा उन्हीं द्रोणाचार्य्यके वीर्य्यसे उत्पन्न हुए हैं, और आचार्य्यश्रेष्ठ श्रीमान कृपाचार्य्य महर्षि गौतमके वीर्य्यसे सरस्तम्बसे उत्पन्न हुए हैं। मुझे यह ठीक निश्चय है, कि कोईभी इनको नहीं मार सकता। हे महाराज! अश्वत्थामाके पिता माता और मामा तीनों अयोनिसे उत्पन्न हुए है; वह महापराक्रमी अश्वत्थामाभी हमारे पक्षमें हैं। ये सब महारथ वीर देवताओंके समान

है; युद्धमें ये इन्द्रकोभी भयसे पीड़ितकर सकते हैं। हे भरतर्षभ। अर्ज्जुन इन महारथोंमेंसे एक एककी ओरभी नहीं देख सकता; ये सब मिलकर तो अवश्य अर्ज्जुनका वध करेंगे, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। हे राजेन्द्र! मेरी समझमें कर्णभी भीष्म, द्रोण और कृपाचार्य्यके समान हैं! परशुराम जीने स्वयं इनको कहा था, कि तुम मेरी समान हुए! औरभी इनका स्वाभाविक गर्भसे उत्पन्न हुआ कवच और कुण्डल था, उसको इन्द्रने अपनी प्यारी स्त्री शचीके निमित्त इनसे ब्राह्मणका वेष बनाकर मांगा और उसे पाकर कर्णको अपनी महा भयङ्कर अमोघ-शक्ति दी है। तब इस प्रकारकी शक्तिसे रक्षित होकर इस शत्रुओंके जलानेवाले महावीर कर्णसे अर्ज्जुन कैसे जीता बचेगा? हे राजन्! हाथमें पड़े हुए फलकी भांति, अवश्यही हम लोगोंकी विजय होगी, और शत्रुओंकी इस भूमण्डल पृथ्वी भरमें निःसन्देह पराजय होगी। हे भारत। यह पराक्रमी भीष्म एक दिनमें दश हजार शत्रुओंकी सेनाके योद्धाओंको मार सकते हैं, और द्रोण, कृपाचार्य्य तथा अश्वत्थामाभी उन्हीके समान नाश कर सकते है। संशप्तक क्षत्रिय लोग कहते हैं, कि यातो हमही अर्ज्जुनको मारेंगे, अथवा अर्ज्जुनही हम लोगोंको मारेगा।" इस प्रकारसे उन्होंने स्थिर और दृढ़ प्रतिज्ञा की है। दूसरेभी अर्ज्जुनको मारनेके निमित्त बहुतसे, राजालोग निश्चय करके बैठे हैं, और उसको असमर्थ समझते हैं। इतने परभी आप पाण्डवोंसे ऐसे भयभीत क्यों हो रहे हैं? हे परन्तप! भीष्मके मारे जाने पर शत्रुओंमेंसे कौन हम लोगोंके सङ्ग युद्ध कर सकेगा? यदि आप जानते हैं, तो मुझसे कहिये। हे राजन्! वे लोग पांचो भाई, धृष्टद्युम्न और सात्यकी; यही जो सात योद्धा हैं, वेही शत्रुओंके श्रेष्ठ-बल हैं, परन्तु हम लोगोंकी ओरका उत्तम बल भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा, कर्ण, सोमदत्त, बाह्लिक प्राग्ज्योतिषाधिपति, शल्य, अवन्तीपति विन्द और अनुविन्द, जयद्रथ और आपके पुत्र दुःशासन, दुःसह, दुर्म्मुख, श्रुतायु, चित्रसेन, पुरुमित्र विविंशति, शल्य, भूरिश्रवा और विकर्ण, ये सब मुख्य सेनापति हैं। हे महाराज! मैंने ग्यारह अक्षौहिणी सेना संग्रह करी है, और शत्रुओंके यहां केवल सात अक्षौहिणी सेना इकट्ठी हुई है; इससे हमारी सेनासे भी शत्रुओंकी कम सेना है, तब आप किस प्रकारसे निश्चय करते हैं, कि मेरी पराजय होगी? हे राजेन्द्र! बृहस्पति कहते हैं, कि शत्रुओंकी सेना, अपनी सेनासे तृतीयांश कम होने पर उसके सङ्ग युद्ध करना उचित है। हमारी यह सेनाभी शत्रुओंसे तृतीयांश अधिक है। फिर मैं शत्रुओंकी सेनाको अनेक गुणोंसे हीन देखता हूं, और अपनी सेनाको अनेक गुणोंसे गुणी देखता हूं, हे भारत! इससे हमारे बलकी अधिकता और पाण्डवोंकी अल्पता आदि सब वृत्तान्तोंको जानकर भी आपको मोहमें पड़ कर शोक करना उचित नहीं है। पराये देशको जीतनेवाले दुर्य्योधनने धृतराष्ट्रसे यह सब बचन कहकर, शत्रुओंके ओरकी सब बातोंके जाननेके अनन्तर इन कार्य्योंको करना उचित है, ऐसी इच्छा करते हुए सञ्जयसे फिर पूछने लगे।

५५ अध्याय समाप्त।

दुर्य्योधन बोले, हे सञ्जय! कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर सात-अक्षौहिणी सेनाको पाकर युद्धकी कामनासे राजाओंके सङ्ग कैसी इच्छा करते हैं?

सञ्जय बोले, हे राजन्! युधिष्ठिर युद्ध होनेके निमित्त अत्यन्तही प्रसन्न हैं, भीम और अर्ज्जुन ये दोनों भी आनन्दित हो रहे हैं और नकुल सहदेव भी किञ्चित मात्र भय नहीं

करते हैं। कुन्तीपुत्र अर्ज्जुनने अस्त्रप्रयोजन, मन्त्र परीक्षा करनेके निमित्त अभिलाषी होकर सब दिशाओंको प्रकाशित करते हुए, अपने दिव्य रथको जुतवाया था। हे महाराज! मैंने अर्ज्जुनको बिजलीसे युक्त बादलकी भांति देखा था। उन्होंने सब तरहसे सोच विचारकर मुझसे यह बचन कहा है, कि "हे सञ्जय! मै जो कौरवोंका जीतूंगा, उसका यह पहिला लक्षण देखो।" यथार्थमें अर्ज्जुनने मुझसे जो कुछ कहा, मैंभी वही समझता हूं।

दुर्य्योधन बोले, कि तुम जुएमें हारे हुए पाण्डवोंका पक्ष करके उनकी प्रशंसा करते हो, जो हो, सम्प्रति अर्ज्जुनके रथके घोड़े और ध्वजा किस प्रकारके हैं; उसका वर्णन करो।

सञ्जय बोले, हे पृथ्वीनाथ! त्वष्टा-विश्व-कर्म्माने इन्द्र और ब्रह्माके सङ्ग मिलकर अर्ज्जुनके रथमें अति विचित्र रूपके चित्रोंको बनाया है। देव-मायाकी सहायतासे विश्वकर्म्माने उसकी ध्वजापर छोटी और बड़ी बड़ी बहुत मूल्यवान मूर्त्तियोंको बनाया है। और भी भीमसेनकी प्रार्थनासे पवनपुत्र हनुमान अपनी निज मूर्त्तिको उस ध्वजापर रक्खेंगे। विश्व-कर्म्माने उस रथमें ऐसी माया रची है, कि वह सब ओरसे तिरछा और एक योजन ऊपर तक व्याप्त रहता है, तौभी वृक्ष आदिसे उसकी गति नहीं रुक सकती।

आकाश-मण्डलमें जैसे इन्द्र-धनुष नाना-वर्णोंसे युक्त होकर शोभायमान तथा प्रकाशित होता है, और यह नहीं मालूम पड़ता, कि यह क्या वस्तु है, तैसे ही विश्वकर्म्माने भी उस ध्वजाको बनाया है, उसमें अनेक प्रकारके रूप दीख पड़ते हैं। अग्निसे उत्पन्न हुआ धुआं जैसे अनेक प्रकारका रूप धारण करता हुआ आकाशकी ओर जाता है वैसे ही विश्वकर्म्माकी बनाई वह ध्वजा भी ऊपरको उठी है, उसकी गति और रुकावट कुछभी नहीं होती। हे राजेन्द्र! उस कपिध्वजासे युक्त रथमें, गन्धर्व्व-राज चित्ररथके दिये हुए वायुके समान चलनेवाले सौ घोड़े जुते हैं। पहिले इनको ऐसा वर मिला हुआ है, कि बार बार मारे जानेपर भी उन घोड़ोंकी संख्या कभी कम न होगी। राजा युधिष्ठिरके रथमें भी अर्ज्जुनके घोड़ोंके समान बलवान और हाथीदांतके समान सफेद और बड़े बड़े घोड़े जुते हैं। भीमसेनके रथमें वायुके समान शीघ्र चलनेवाले और सप्त ऋषिके समान तेजस्वी घोड़े जुते हुए हैं। काले शरीर वाले तीतरपक्षीके समान चित्रित हृष्टपुष्ट घोड़े सहदेवके रथमें जुते हैं, उनके भ्राता अर्ज्जुनने प्रसन्न होकर उन्हें प्रदान किया था, वीरवर अर्ज्जुनके घोड़ोंसे भी ये घोड़े उत्तम हैं। वायुके समान बली और वेगवान् इन्द्रके दिये हुए पीले रङ्गके घोड़े, नकुलके रथमें लगे हैं, और उन्हींके समान अवस्था, बल, पराक्रम तथा वायुके तुल्य वेगवान् घोड़े अभिमन्यु आदि कुमारोंके रथमें लगे हैं।

५६ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! पाण्डवोंको प्रीतिके निमित्त, दुर्य्योधनकी सेनासे युद्ध करनेके वास्ते, किन लोगोंको तुमने आया हुआ देखा है?

सञ्जय बोले, हे महाराज! अन्धक और वृष्णिवंशमें श्रेष्ठ कृष्णको, और चेकितान, युयुधान सात्यकीको मैंने वहांपर उपस्थित देखा। ये लोग एक एक अक्षौहिनी सेना लेकर पाण्डवोंकी सहायताके निमित्त वहांपर आये हैं। पाञ्चाल-राज द्रुपद वीर्य्यवान धृष्टद्युम्न आदि पुत्रोंसे युक्त और शिखण्डीसे रक्षित होकर एक अक्षौहिनी सेनाके सहित आये हैं। राजा विराट बलवान सूर्य्यदत्त और मदिराक्ष आदि भाइयों तथा पुत्रोंके सहित अक्षौहिनी सेनाको लेकर, शङ्ख और उत्तर नामक पुत्रोंसे रक्षित

होकर पाण्डवोंकी सहायनाको आये हैं। जरासन्धके पुत्र मगधराज सहदेव और चेदिराज धृष्टकेतु, ये दोनों भी एक अक्षौहिनी सेना लेकर वहांपर आये हैं। लाल-ध्वजाओंसे युक्त केकय राजपुत्र पांचों भाई एक अक्षौहिनी सेनाके सहित दुर्य्योधनसे युद्ध करनेके निमित्त वहांपर उपस्थित हुए हैं। जो लोग पाण्डवोंके निमित्त दुर्य्योधनकी सेनासे युद्ध करनेके लिये वहांपर आये हैं,—उन सबको मैंने यहाही तक देखा है। जो मनुष्य, देवता, गन्धर्व्व और आसुरी व्यूहकी रचनाको जानते हैं, वही महावीर धृष्टद्युम्न वहांपर सेनापति बनाये जायंगे। हे राजन्! शान्तनु-पुत्र भीष्म शिखण्डीके हिस्से में कल्पित हुए हैं, विराट-राज मत्स्यदेशीय वीरोंके सहित शिखण्डीके पृष्ठ-रक्षक बनेंगे। मद्रराज बलवान शल्य युधिष्ठिरके हिस्से मे चुने गये हैं; उससे कोई कोई कहते हैं, कि हम लोगोंके मतसे ये दोनो वीर समान नहीं हैं। सौ भाई और पुत्रोंके सहित दुर्य्योधन तथा पूर्व्व, पश्चिमके ओरसी बहुतसे राजा लोग भीमसेनके हिस्से में चुने गये हैं। और अर्ज्जुनके हिस्से में सूर्य्यपुत्र कर्ण, अश्वत्थामा, विकर्ण और सिन्धुराज जयद्रथ आदि कई वीर चुने गये हैं। इनके अतिरिक्त जो लोग पृथ्वी भरमें असाधारण और महावीर हैं उन्हें भी अर्ज्जुनने अपनेही हिस्से में रक्खा है। महा धनुर्धारी केकय-राजपुत्र पाचो भाइयोंने केकय देशीय वीरोंकोही अपने भागमें निश्चित किया है, और केवल केकय देशियोंहीको नही, बरन मालव, शाल्व, तथा त्रिगर्त्तोंके मुख्य और प्रसिद्ध दोनो संशप्तक वीरभी इन्हींके हिस्से में निश्चित किये गये हैं। सुभद्रानन्दन अभिमन्युने दुर्य्योधन और दुःशासनके पुत्रोंको तथा बृहद्बल राजाको अपने हिस्से मे निश्चित किया है। हे भारत! सेनाकी ध्वजाओंसे युक्त राजा द्रुपदकेपुत्र धृष्टद्युम्न आदि द्रोणाचार्य्यसे युद्ध करेंगे। चेकितान सोमदत्तके सङ्ग द्वन्द्वयुद्ध करनेकी इच्छा करते हैं, और सात्यकी भोजराज कृतवर्म्माके सङ्ग द्वन्द्वयुद्ध करनेकी अभिलाषा करते हैं। युद्धमें महाघोर शब्दको करनेवाले माद्रीपुत्र सहदेवने तुम्हारे साले सुबलपुत्र शकुनिको अपने हिस्से में निश्चित किया है, और इस धूर्त्तके पुत्र उलूक और सारस्वतोंको नकुलने अपने हिस्से में चुना है। हे राजन्! इससे अतिरिक्त और दूसरे राजा लोग जो युद्ध करनेको आये हैं, पाण्डवोंने उन सबकोभी अपने अपने नामके अनुसार सबका विभाग करके अलग अलग हिस्से में चुन लिया है। इसी प्रकारसे उनकी सब सेना यथायोग्य अलग अलग हिस्सोंमें बाटी गई है। इस समय पुत्रोंके सहित आपको जो कुछ करना हो, उसको शीघ्रही कीजिये।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! काल प्रेरित मेरे पुत्र लोग जीवित रहना नही चाहते हैं, युद्धमें महा बलवान भीमसेनके साथ जिसका युद्ध होगा, उसके जीनेकी आशा कैसे की जा सकती है? पृथ्वीके सब राजा मृत्युके वशमें होकर यज्ञके पशु तथा अग्निकी ज्योतिमें फतिङ्गोंकी भांति गाण्डीव धनुषकी अग्निमें प्रवेश करेंगे। शत्रुता करनेवाले महात्मा पाण्डव लोग, युद्धमें मेरी सेनाको अवश्य तितर बितर करके भगा देंगे, इसे मै अपने मनसे खूबही जानता हूं। कौन मनुष्य पाण्डवोंके युद्धसे भागती हुई मेरी सेनाको आसरा देनेवाला होगा? पाण्डव लोग सबही अत्यन्त शूरवीर कीर्त्तिमान, प्रतापी सूर्य्य और अग्निके समान तेजस्वी तथा युद्धको जीतनेवाले हैं। हे सञ्जय! जिस सेनाके युधिष्ठिर नायक, कृष्ण रक्षक, और अर्ज्जुन, भीम, नकुल, सहदेव, सात्यकी, द्रुपद, धृष्टद्युम्न, उत्तमौजा, युधामन्यु, शिखण्डी, क्षत्रदेव, उत्तर, काशी, चेदी, मत्स्य और पाञ्चालदेशीय सम्पूर्ण सृञ्जय और प्रभद्रक आदि वीर योद्धा हैं, जिनकी इच्छाके विना इन्द्रभी बलसे यह पृथ्वी

नहीं ले सकते हैं; जो लोग पर्व्वतोंकोभी तोड़नेमें समर्थ है, उन्ही अलौकिक प्रताप-शाली सब गुणोंसे भरे हुए रणधीर वीरोंके सङ्ग हमारा यह दुष्टपुत्र युद्ध करनेकी इच्छा करता है। मेरे बहुत विलाप करनेपरभी वह कुछ नहीं सुनता है।

दुर्य्योधन बोले, हे राजेन्द्र! हम दोनों एकही जाति और सब पृथ्वीके राजा हैं; तब आप किस निमित्त केवल पाण्डवोंके जयकी सम्भावना करते हैं। हे नरनाथ! पाण्डवोंकी तो बातही क्या है, साक्षात शचीपति इन्द्र देवताओंके सहित भी इन अत्यन्त तेजस्वी महा धनुर्द्धारी भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, कर्ण, जयद्रथ और अश्वत्थामाको युद्धमें नहीं जीत सकते हैं। शस्त्रधारी वीर योद्धा और अत्यन्त पराक्रमी राजा मेरी सहायताको आये हैं, वे सबही मेरे निमित्त प्राणोंको त्याग करके भी पाण्डवोंसे युद्ध करेंगे, ये सब लोग पाण्डवोंकी सेनाको जीतनेमें समर्थ हैं। पाण्डव लोग मेरी सेनाको ओर देखभी न सकेंगे। पुत्रोंके सहित पाण्डवोंसे युद्ध करनेमें मैं सब प्रकारसे समर्थ हूं, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। हे पिता! जो सब राजा हमारी प्रीतिके निमित्त यहां आये हैं, वे पाण्डवोंको अपने बाणोंके जालसे ऐसे बांध लेंगे, जैसे व्याधा तांतके फांससे हरिनको पकड़ता है। पाण्डव और पाञ्चाल लोग हमारे बहुतसे महावीर रथियोंके बाणोंसे पीड़ित होकर अवश्यही भागनेमें तत्पर होंगे।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! मेरा यह पुत्र उन्मत्तकी भांति व्यर्थ प्रलाप कर रहा है, धर्म्मराज युधिष्ठिरको यह कभीभी पराजय करनेमें समर्थ न होगा। उन यशस्वी धर्म्मके जाननेवाले महात्मा पाण्डवों और मेरे पुत्रोंमें जितना बल है, उसको भीष्मही जानते हैं: क्योंकि वे उन महात्माओंसे युद्ध करनेके निमित्त इच्छा नहीं करते हैं। परन्तु तुम फिरभी मेरे निकट पाण्डवोंकी चेष्टाका वर्णन करो। कौन मनुष्य उन तेजसे जलते हुए, महा तेजस्वी महाधनुर्द्धारी पाण्डवोंको घृतसे अग्निकी भांति अधिक उत्तेजित कर रहा है?

सञ्जय बोले, हे भारत! धृष्टद्युम्न सदाही उन लोगोंको यह कहके उत्तेजित कर रहे हैं, कि "हे भरत सत्तमगण! युद्धमें प्रवृत्त होइये, युद्धसे कभीभी न डरिये। युद्धमें दुर्य्योधनकी ओरसे जो कोई राजा क्रोधके वश होकर युद्ध करनेको आवेंगे उनको अकेलाही मैं इस प्रकारसे पकड़ लूंगा, जैसे व्याधा जलसे मछलियोंको पकड़ता है। और जैसे तट समुद्रके वेगको रोकता है, वैसेही मैं भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, कर्ण, अश्वत्थामा, शल्य और दुर्य्योधनको रोकूंगा।" धृष्टद्युम्नके ऐसा कहनेपर धर्म्मात्मा राजा युधिष्ठिर उनसे बोले, हे महाबाहो! पाण्डवोंके सहित पाञ्चाल लोग तुम्हारेही धैर्य्य और बलके आसरे ठहरे हैं, इससे तुम हम लोगोंका युद्धसे उद्धार करो। मैं तुम्हें क्षत्रियधर्म्ममें विशेष रूपसे स्थित और अकेलेही कौरवोंसे युद्ध करनेमें विलक्षण समर्थ समझता हूं। हे परन्तप! जब कौरव लोग युद्धकी कामनासे रणभूमिमें सम्मुख आवेंगे, तब आप जिस रीतिसे युद्धकी तैयारी करेंगे, वह सबही हम लोगोंकी कल्याणकारी होगी। बुद्धिमानोंका यह मत है, कि शूरवीर तथा बलवान पुरुष अपने पुरुषार्थको दिखलाता हुआ युद्धके कार्य्योंको भली भांति न जाननेवाले, भागनेवाले और शरणागतोंके अगाड़ी खड़ा होकर उन्हें बिना दामही मोल लेवे। हे परन्तप! आप शूर, वीर और महा पराक्रमी हो, इससे युद्धमें भयसे दुःखी लोगोंको अवश्यही उबारियेगा, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है।

कुन्तीनन्दन धर्म्मात्मा युधिष्ठिरके ऐसा कहनेपर, धृष्टद्युम्न मुझसे भयरहित होकर यह वचन बोले, कि 'हे सूत! तुम शीघ्रही

जाकर दुर्य्योधनको आरके वाह्लिक और उत्तम वंशधर तथा अल्पायु, कौरव और भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, कर्ण, अश्वत्थामा, जयद्रथ, दुःशासन विकर्ण और दुर्य्योधनसे यह वचन कहा, कि जिसमें देवतोंसे रक्षित अर्ज्जुन तुम लोगोंका बध न करें, इस निमित्त इस समय उपायसेही युधिष्ठिरको वशमें कर लेना तुम लोगोंका कर्त्तव्य कर्म्म है। इससे तुम लोग धर्म्मराजके राज्यका शीघ्र देकर, लोकमें विख्यात, वीर पाण्डवोंसे प्रार्थना करो। सत्य-पराक्रमी अर्ज्जुन और भीम जैसे वोर योद्धा हैं, पृथ्वी भरमें वैसा कोईभी वीर नहीं है। क्योंकि देवता लोग उस अर्ज्जुनके गाण्डीव धनुष और दिव्य रथकी रक्षा करते हैं, इस लिये मनुष्योंसे वह कभी भी पराजित नहीं हो सकते। इससे तुम युद्धमें कभीभी उन लोगोंके चित्तको आकर्षित मत करना।"

५७ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, मैं बिलाप कर रहा हूं, तौभी मेरी बातोंको न मानकर यह मन्दबुद्धि मेरा पुत्र, कुमार अवस्थाहीसे ब्रह्मचारी, चालय तेजस्वियुक्त, युधिष्ठिरके सङ्ग युद्ध करेगा? हे भरतसत्तम दुर्य्योधन! तुम युद्धसे निवृत्त होजाओ। हे शत्रुनाशन! पण्डित लोग किसी अवस्थामेंभी युद्धकी प्रशंसा नहीं करते। दुष्ट मित्रोंके सहित आधी पृथ्वीका राज्यही तुम्हारी जिविकाके निमित्त बहुत है। हे परन्तप! इससे पाण्डवोंका यथा उचित आधा हिस्सा दे दो। तुम महात्मा पाण्डवोंके संग सन्धि कर लो, इसको सब कौरव लोग धर्म्म और उत्तम समझते हैं। हे पुत्र! तुम अपनी सेनाकी ओर पूरी रीतिसे ध्यान देकर देखो, यह तुम्हारे विनाशको कारण हुई है, पर तुम मोहमें पड़कर इस बातको नहीं समझ सकते हो। ध्यानसे देखो—कि भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा, वाह्लिक, सञ्जय, सोमदत्त, शल्य, पुरुमित्र, जय भूरिश्रवा और हम कोई भी युद्धकी इच्छा नहीं करते हैं। हे तात! शत्रुओंसे पीड़ित होकर कौरव लोग जिसके बलसे ठहरेंगे वे लोग युद्ध करनेके निमित्त उत्साही नहीं हैं, परन्तु तुमही केवल हठ करते हो। और तुम जो केवल अपनीही इच्छासे ऐसा करते हो, वह बात भी नहीं है, कर्ण, पापी-दुःशासन और सुबल पुत्र शकुनि येही सब मिलके तुमको युद्धमें प्रवृत्त कर रहे हैं।

दुर्य्योधन बोले, आप, भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा, सञ्जय, काम्बोज, वाह्लिक सत्यव्रत, पुरुमित्र, भूरिश्रवा और किसी सम्बन्धीय लोगोंके आसरेपर मैं युद्ध करनेकी इच्छा नहीं करता हूं। हे तात! केवल मैं और कर्ण येही दो पुरुष युधिष्ठिरको पशुकी भांति मारकर युद्धरूपी यज्ञको पूर्ण करेंगे। उसमें मेरा रथही वेदी होगा, कवच सभा होगी, तरवार और गदाही स्रुवा और स्रुक होंगे चारो घोड़ही चातुर्होत्र होंगे, वाण सब कुशका कार्य्य करेंगे और यशही घृतस्वरूप होगा। हे महाराज! इस प्रकारसे आत्मरूपी यज्ञ करके, युद्धमें यमराजकी उपासना करते हुए, शत्रुओंको मारके, लक्ष्मीसे युक्त होकर, लौटूंगा। हे तात! मैं, कर्ण और मेरा भाई दुःशासन, येही तीन पुरुष युद्धमें सब पाण्डवोंका बध करेंगे। या तो पाण्डवोंको मारकर हमही पृथ्वीका राज्य करेंगे, अथवा हमको मारके पाण्डवही सम्पूर्ण पृथ्वीका राज्य लेंगे। हे महापराक्रमी तेजस्वी पृथ्वीनाथ! हमारा राज्य, धन और जीव सब चला जाय, पर मैं पाण्डवोंके सङ्ग एकत्र वास नहीं कर सकूंगा। हे महाराज! तीक्ष्ण सूईकी नोकसे जितनी भूमि विद्ध हो सकती है, उतनी भूमिभी पाण्डवोंको मैं नहीं दूंगा।

दुर्य्योधनकी-ऐसी बातोंको सुनकर महाराज धृतराष्ट्र बोले, हे भूपालवृन्द ! मैंने दुर्य्योधनको तो परित्याग किया, पर अब तुम लोगोंके निमित्त शोक करता हूं, क्योंकि तुम लोग यमपुरीमें जानेकी इच्छासे मन्दबुद्धि दुर्य्योधनके अनुगामी बनोगे। जैसे हरिणोंके झुण्डमें सिंह प्रवेश करता है, वैसेही शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ पाण्डवलोग सिंहकी भांति तुम्हारी सेनामें आकर मुख्य मुख्य वीरोंको मारेंगे मुझे बोध होता है, कि लम्बी भुजावाला सात्यकी हाथमें आई हुई कामिनीकी भांति कौरवी सेनाको अपने वशमें करके उसे विध्वस्त कर रहा है। यथार्थमें मधुवंशधर सात्यकी, युधिष्ठिरके सम्पूर्ण बलको और भी परिपूर्ण करता हुआ, जैसे किसान खेतोंमें बीज बोते हैं, वैसेही अपने बाणोंको चलाकर कौरवी सेनाको विकल कर देगा। भीमसेन युद्धमें प्रवृत्त हुई सेनाके आगे खड़ा रहेगा, और सैनिक पुरुष उसको दुर्गकी भांति सहारा समझके निर्भय होके युद्ध करेंगे। जब तुम लोग भीमको हाथियोंके मस्तक, सूंड़, हृदय, और योधोंको पर्व्वतके समूहकी भांति गदासे तोड़ते हुए देखोगे, तभी मेरे बचनोंको स्मरण करोगे। जब रथ, हाथी घोड़े और सेनाके वीरोंको अग्निकी भांति भीमसेनसे जलते हुए देखोगे, तबही तुम लोग मेरी इन बातोंको स्मरण करोगे। तुम लोग यदि पाण्डवोंसे सन्धि न करोगे, तो तुम लोगोंके निमित्त महा भय उपस्थित होगा ! भीमसेनकी गदाकी चोटसे मरकरही तुम लोग शान्ति लाभ करोगे। जब कौरवोंके इस महाबलसे युक्त सेनाको भीमसेनके बलसे मरती हुई देखोगे, तब तुम लोग मेरे बचनोंको स्मरण करोगे। वैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय ! राजा धृतराष्ट्र ऐसा कह फिर सञ्जयसे पूछने लगे।

५८ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय ! महात्मा कृष्ण और अर्ज्जुनने जो कुछ बचन कहे हैं, वह मुझसे कहो तुम्हारे बचनोंको सुननेकी मुझे बहुतही इच्छा है।

सञ्जय बोले, हे राजन् ! मैंने कृष्ण अर्ज्जुनको जिस प्रकारसे देखा, उसे आप सुनिये। उन दोनोंने जो कुछ कहा है, वह भी आपसे कहूंगा। उन दोनों पुरुषोंसे बातचीत करनेके निमित्त मैंने सावधान होकर और हाथ जोड़कर विनीत भावसे अपने चरणकी ओर देखता हुआ अन्तःपुरमें प्रवेश किया। हे राजेन्द्र ! जहांपर कृष्ण अर्ज्जुन और भामिनी द्रौपदी तथा सत्यभामा रहती हैं, उस स्थानपर अभिमन्यु और नकुल सहदेवभी नहीं जाने पाते। उसी स्थानपर वे दोनों शत्रुनाशन माध्वी सुरापान करके चन्दनचर्च्चित और उत्तम वस्त्र तथा आभूषणोंसे भूषित होकर रत्नजटित सोनेके महामूल्य आसनोंपर बैठे थे। मैंने देखा कि अर्ज्जुनकी गोदमें कृष्ण और द्रौपदी तथा सत्यभामाकी गोदमें अर्ज्जुनके दोनों दोनों पाव हैं ! अनन्तर अर्ज्जुनने अपने पांवके नीचेका पीढ़ा मेरे बैठनेके निमित्त प्रदान किया, परन्तु मैं उसे हाथसे छूकर पृथ्वीहीपर बैठ गया। अर्ज्जुनने जब पैरके नीचे रहनेवाले सोनेसे भूषित पीढ़ेसे अपने दोनो पैरको ऊपर उठाया, तब मैंने देखा, कि उनका पाव बहुतही शुभ लक्षणोंसे युक्त है और उनके पांवके तलवेमें ऊर्द्धरेखा है। हे महाराज ! श्यामवर्ण, विशालमूर्त्ति, युवा अवस्था, शालके वृक्षकी भांति ऊंचे कृष्ण अर्ज्जुनको एकही आसनपर बैठे हुए देखकर मैं महाभयसे पूरित होगया। वे दोनो इन्द्र और साक्षात विष्णुके समान हैं; इस बातको मन्दबुद्धि दुर्य्योधन भीष्म, द्रोणके बल और कर्णकी बड़ाईसे कुछभी नहीं समझ सकता है। ऐसे नरदेव पुरुषसिंह—जिस युधिष्ठिरके आज्ञाकारी हैं, उस धर्म्मराज

महात्मा युधिष्ठिरका मानसिक सङ्कल्प जो पूरा होगा, इसको मैंने उसी समय निश्चय कर लिया। मैं अन्न, जल, वस्त्र और आभूषणोंसे सत्कार पाके मीठी बात चीतसे सम्मानित होकर अपने दोनों हाथोंको जोड़के आपका कहा हुआ वचन और सन्देसेको निवेदन किया। तब अर्जुनने अपने धनुष शोभित हाथसे कृष्णके शुभ लक्षणयुक्त चरणको पलोटते हुए मेरे वचनोंके उत्तर देनेके निमित्त उन्हें उपस्थित किया। सब भूषणोंसे भूषित, इन्द्रके समान तेजस्वी, बोलनेवालोंमें श्रेष्ठ; श्रीकृष्ण इन्द्रकेतुकी भांति उनके आसनपर बैठे और मुझसे कहने योग्य, आनन्द देनेवाली, धार्त्तराष्ट्रोंको भय उत्पन्न करनेवाली, पहिले मीठी अन्तमें कठोर वाणीसे बातचीत करने लगे। पीछे मैंने बोलनेवाले कृष्णके उपदेशके अक्षरोंसे भरे हुए, अर्थयुक्त हृदयको सुखानेवाले वचनको सुना।

श्रीकृष्ण बोले, "हे सञ्जय! तुम मेरे वचनके अनुसार श्रेष्ठ पुरुषोंको प्रणाम और छोटोंको कुशल क्षेम पूछनेके अनन्तर कुरु-श्रेष्ठ भीष्म और द्रोणाचार्य्यके समीप मनीषी धृतराष्ट्रसे यह वचन कहना, कि तुम लोगोंके निमित्त महाभय आकर उपस्थित हुआ है। तुम लोग इसी समय ब्राह्मणोंको दान दक्षिणा देकर और विविध यज्ञोंको करके अपने कर्त्तव्य कर्मोंको पूरा कर लो। पुत्र कलत्रोंके सङ्ग भोग विलास कर लो, सत्पात्रोंको दान देलो; उत्तम पुत्रोंको उत्पन्न कर लो और अपने प्रिय लोगोंको प्रीतिके निमित्त प्रिय आचरण करलो, क्योंकि राजा युधिष्ठिर विजयके निमित्त शीघ्रता कर रहे हैं। मेरे दूर रहनेपर द्रौपदीने "गोविन्द! गोविन्द!" कहके मुझे पुकारा था, वह बहुत दिनका ऋण अभीतक मेरे हृदयसे बाहर नहीं हुआ है। तेजसे भरा प्रचण्ड गाण्डीव जिसका धनुष है, मेरे सहित उस अर्जुनसे तुम्हारी शत्रुता हुई है। बिना कालके वशमें हुए कौन पुरुष मेरे समान अद्वितीय अर्जुनसे युद्ध करनेकी इच्छा करेगा? और पुरुषोंकी बात तो दूर रहे साक्षात इन्द्रभी अर्जुनको नहीं जीत सकते। जो मनुष्य अर्जुनको युद्धमें जीतनेमें समर्थ होगा, वह अपनी दोनों भुजाओंसे पृथ्वीकोभी उठा सकेगा, क्रोधित होनेसे समस्त प्राणियोंको भस्म कर सकेगा, और स्वर्गसे देवताओंकोभी भगा देनेमें समर्थ होगा। मैं देवता, गन्धर्व्व, असुर, यक्ष और मनुष्य तथा नागोंमेंभी ऐसा कोई पुरुष नहीं देखता हूं, जो युद्धमें अर्जुनके सम्मुख हो सके। विराट नगरमें इकट्ठे हुए असंख्य योद्धाओंके बीचमें जो अर्जुनकी वीरताकी अद्भुत बात सुनी जाती है, वही इसमें पूरा प्रमाण है। विराट नगरमें तुम लोग अकेले धनञ्जयसे हारके भागे थे, यही इसमें यथेष्ट प्रमाण है। बल, वीर्य्य, शीघ्रता, लघुहस्तता, निर्भयता और धैर्य्य ये सब गुण अर्जुनके अतिरिक्त और किसी दूसरे पुरुषमें एकत्र विद्यमान नहीं हैं।" हे महाराज! श्रीकृष्णचन्द्रने अपने वचनोंसे अर्जुनको आनन्दित करते हुए, यथा समयमें वर्षनेवाले आषाढ़के बादलकी भांति गर्जते हुए इन सब वचनोंको कहा। श्वेतवाहन अर्जुनने भी उन्हीं रोंवा-खड़ा-करनेवाले वचनोंका उल्लेख किया था।

५९ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर प्रज्ञाचक्षु धृतराष्ट्र सञ्जयकी बातोंको सुनकर उसके गुण दोषके विचारमें प्रवृत्त हुए। पुत्रोंके विजयकी आकांक्षा करनेवाले, विचक्षण, बुद्धिमान महाराज धृतराष्ट्रने अपनी बुद्धिके अनुसार अत्यन्त सूक्ष्मतासे गुण और दोषोंको विचार कर तथा दोनो ओरके बलको निश्चय करके प्रभाव, उत्साह और मन्त्रशक्तिको यथार्थ

रूपसे विचारना आरम्भ किया। अनन्तर पाण्डवोंकी देव और मनुष्य सम्बन्धी तेजोंसे युक्त और शक्तिसम्पन्न तथा कौरवोंकी थोड़ी शक्तिसे युक्त निश्चय करके दुर्य्योधनसे कहने लगे, हे दुर्य्योधन! मुझे हर घड़ी यही चिन्ता लगी रहती है, किसी बातसेभी इसकी निवृत्ति नहीं होती है। केवल अनुमानसेही नहीं, मैं इसे प्रत्यक्षही मालूम करता हूं। पुत्रोंके ऊपर सबही प्रेम करते हैं, और अपनी शक्तिके अनुसार उनके प्रिय कार्य्य और हितका अनुष्ठान करते हैं। जो लोग उपकार करते हैं, उनके विषयमेंभी इसी प्रकारकी बात जानी जाती है। उत्तम पुरुष उपकारी लोगोंके निमित्त बहुतसे उत्तम और प्रिय कार्य्यको करके उनका प्रत्युपकार करनेकी इच्छा करते हैं, इसलिये अग्निभी खाण्डव बनमें अर्ज्जुनके किये हुए उपकारको स्मरण करके, इस भयङ्कर कुरुपाण्डवोंके संग्राममें अर्ज्जुनकी सहायता करेंगे, और पूरी रीतिपर बुलानेसे धर्म्म आदि देवताभी एक प्रेमसे पाण्डवोंपर अनुकूल होकर उनकी सहायताको आवेंगे। मुझे निश्चय बोध होता है, कि भीष्म, द्रोण और कृपाचार्य्यके क्रोधसे उनकी रक्षा करनेके निमित्त वे अवश्यही अभिलाषी होंगे। इससे देवतावोंकी सहायतासे युक्त पाण्डवोंकी ओरको कोई पुरुष युद्धमें देखभी न सकेगा। जिसके देव-लोकके बने प्रसिद्ध गाण्डीव धनुष और वरुण तथा अग्निके दिये हुए अक्षय तूणीर हैं, जिसके रथके ध्वजाकी गति अग्निके धूएकी भांति कहींभी नहीं रुक सकती, जिसकी दिव्य कपिध्वजा और चतुरता पृथ्वीमें अतुल्यरूप है, जिसका शत्रुओंको महाभय देनेवाला वज्रके समान महाघोर नाद सब लोगोंको सुन पड़ता है; सब कोई जिसको महावीर्य्य और महापराक्रमी जानते है, तथा भूपालवृन्द जिसको देवताओंसेभी युद्धमें अजेय समझते हैं, जो एकही बार पांच सौ बाणोंको लेकर क्षण मात्रमें बहुत दूरतक चला सकता है, और कोईभी उस शीघ्रताको नहीं देख सकता है, जो बाहुबलमें स्वामकार्त्तिकके समान होकर युद्धमें स्थिर रहता है, रथिश्रेष्ठ जिस अर्ज्जुनको भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा और मद्रराज शल्य तथा औरभी महावीर पुरुष लोग अलौकिकवीर्य्य और बलसे युक्त, तथा भूपालोंसेभी न जीतने योग्य कहके प्रशंसा किया करते हैं। जो एक सङ्ग पांच सौ बाणोंको चलाते हैं, उसी महापराक्रमी, इन्द्रके समान बलवान अर्ज्जुनको मैं अपने अन्तःकरणसे ऐसा देखता हूं, कि जैसे वह महा भयङ्कर युद्धमें कौरवी सेनाका संहार कर रहा है। हे भारत! मैं रात दिन इसी प्रकारकी चिन्ता करता रहता हू, कि किस प्रकारसे कौरवोंमें शान्ति होगी! इसी सोच चिन्तामें डूबकर मैं निद्रा और सुखसे रहित होगया हू। हे तात! कौरवोंकी क्षय होनेका यह महा-भयङ्कर समय उपस्थित हुआ है। शान्तिके निमित्त यदि इस झगड़ेको शेष करनेका कोई उपाय न हो, तो पाण्डवोंके सङ्ग सन्धि करनेकी मेरी इच्छा है, किन्तु विग्रह नहो क्योंकि मैं पाण्डवोंको कौरवोंसे अधिक शक्तिसम्पन्न और बलवान समझता हूं।

६० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अत्यन्त हठी, (अर्थात किसीके वचनको न सुननेवाले) धृतराष्ट्र-पुत्र दुर्य्योधन पिताकी बातको सुनके बहुतही क्रोधसे पूरित होकर यह वचन बोले, हे राजसत्तम। आप जो देवतोंसे रक्षित पाण्डवोंको अपराजित समझते हैं, सो भय त्याग दीजिये। हे भारत! पहिले, द्वैपायन व्यासदेव और महा तपस्वी नारद तथा जमदग्निके

पत्र परशुराम जीने मुझसे यह वचन कहा था, कि काम, द्वेषके संयोगसे रहित, लोभ, क्रोध-शून्य और विषयोंको तथा समझ करही देवता लोग देवल पदको प्राप्त हुए हैं। हे भरतर्षभ! देवता लोग मनुष्यकी भांति काम, क्रोध, लोभ, दया और द्वेषसे कदापि किसी कार्य्यमें प्रवृत्त नहीं होते। हे भारत। आप कभी ऐसी चिन्ता न किया कीजिये; क्योंकि ये देवता लोग शम दम आदि देव-भावोंपर सब समय आरूढ़ रहते हैं। तब यदि कामके संयोगसे इन लोगोंमें द्वेष और लोभ मालूम हो, तो देवतोंके प्रमाणके अनुसार वे कभी पराक्रमको नहीं प्रकाशित कर सकेंगे। अग्नि यदि सब ओर व्याप्त होके सब लोगोंको जलानेकी इच्छा करेगी, तो मेरे मन्त्रके प्रभावसे उसी समय बुझ सकती है। हे भारत! देवता लोग परम तेजस्वी हैं, यह बात ठीक है, पर उन देवतोंसेभी मेरे तेजको आप अधिक समझिये। हे राजेन्द्र! पृथ्वी तथा पर्व्वतभी टुकड़े टुकड़े हो जायं, तौभी मैं सब लोगोंके सम्मुख मन्त्रसे उन्हें फिर ज्योंका त्यों करके जिस स्थानमें थे, उसी स्थानमें स्थापित कर सकता हूं। इस जड़ और चेतन जगतके नाशके निमित्त, यदि शिला बरसे और प्रचण्ड वायु चले, तौभी मैं सबके सम्मुखही उसे बारम्बार निवारण कर सकता हूं। मै जलको स्तम्भित कर दूं, तो उस परसे रथ, हाथी, घोड़े और पदाति सेनाभी जा सकती है, इससे मैं अकेलाही सब सुर और असुरोंके प्रभावको उत्पन्न करके जगतका चलानेवाला हूं। किसी किसी कार्य्यके निमित्त मै अक्षौहिणी सेनासे युक्त होकर जब यात्रा करता हूं, तब जिस जिस स्थानमें इच्छा करता हूं, वहाही मेरे रथ और घोड़ोंकी गति होती है। हे राजेन्द्र! मेरे अधिकारमें सर्पआदि भयानक हिंसक जन्तुभी प्राणियोंके मन्त्रबलसे रक्षित होनेपर हिंसक लोग उनको नहीं मार सकते। हे राजेन्द्र! जलको वर्षानेवाले बादल भी मेरी इच्छाके अनुसार यथेष्ट वर्षा कर सकते हैं। मेरी सब प्रजा धर्म्मिष्ट हैं, इससे मेरे राज्यमें अतिवृष्टि और अनावृष्टि होनेकीभी सम्भावना नहीं है। इससे मेरे द्वेषी शत्रुकी रक्षा करनेके निमित्त अश्विनीकुमार, अग्नि, देवतोंके सहित इन्द्र और धर्म्म कोईभी उत्साहित न होंगे। ये लोग यथार्थमें यदि पाण्डवोंको रक्षा कर सकते, तो वह लोग कभी तेरह वर्ष तक वनमें इतना दुःख न पाते। मैं आपसे सत्य कहता हूं, कि मेरे द्वेषी शत्रुकी रक्षा करनेके निमित्त देवता, गन्धर्व्व, असुर राक्षस कोईभी समर्थ नहीं है। हे परन्तप! मित्र वा शत्रु दोनोंके विषयमें मैंने पहिले जो कुछ शुभ अथवा अशुभ विचार किया था, वह कभीभी निष्फल नहीं हुआ। अथवा किसी विषयमें "यहहोगा" यदि मैंने पहिले कभी ऐसी बात कही थी, तो वह अन्यथा नहीं हुई। इसीसे सब लोग मेरे वचनोंको सत्य समझते हैं। हे राजेन्द्र! सब संसार मात्र मेरे इस जगत-विख्यात महात्म्यके साक्षी हैं। आपको धैर्य्य देनेहीके निमित्त मैंने इन वचनोंको कहा है, अपनी बड़ाई नहीं करी है। हे राजेन्द्र! मैंने पहिले कभी अपनी बड़ाई नहीं करी थी, क्योंकि आपके निकट अपनी प्रशंसा करना असत् आचरण कहलाता है। आप पाण्डव, मत्स्य, पाञ्चाल और केकय, सात्यकी तथा कृष्णकोभी मुझसे हारे हुए सुनेंगे। जैसे नदी समुद्रमें जाकर लुप्त हो जाती है, वैसेही मेरे समीप आनेसे वे सब लोग अपने अनुचरों समेत मारे जायंगे। उन लोगोंमेंसे मेरी बुद्धि तेज, वीर्य्य, विद्या और उपाय सबही अधिक श्रेष्ठ तथा उत्तम हैं। शस्त्रके विषयमें भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, शल्य और शल जो कुछ जानते हैं, वह सब मुझमेंभी विद्यमान है।

हे भारत! शत्रुनाशन दुर्योधन ऐसे वचन कहके, शत्रुपक्षके सब कार्य्योंके वृत्तान्तको जानकर, युद्ध करनेको इच्छा करते हुए, समयके अनुसार जाननेके योग्य विषयोंको सञ्जयसे फिर पूछने लगे।

६१ अध्याय समाप्त।

———

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, दुर्योधन सञ्जयसे इसी प्रकार सब विषयोंको पूछ रहे थे, उसी समयमें कर्ण अत्यन्त पराक्रमी और महावली अर्जुनकी कुछभी चिन्ता न करके, कौरवोंकी सभामें धृतराष्ट्र-पुत्रोंको हर्षित और आनन्दित करते हुए बोले, कि पहिले मैंने झूठ कहके अर्थात् "मैं ब्राह्मणका पुत्र हूं" यह कहकर जब परशुराम जीसे ब्रह्मास्त्र ग्रहण किया था, उस समय गुरुदेव परशुरामजीने मेरे इस महा अपराधको जान कर मुझे यह शाप दिया था, कि तुम्हारी मृत्युके समय इस ब्रह्मअस्त्रकी प्रतिभा न रहेगी, इसे तुम भूल जाओगे। वह महातेजस्वी महर्षि क्रोधित होनेसे इस समस्त पृथ्वीको भस्म कर सकते थे, परन्तु मैंने अपनी सेवा और पुरुषार्थसे उनके चित्तको प्रसन्न कर लिया था। वह अस्त्रभी अभीतक विद्यमान है और मेरी आयुभी शेष नहीं हुई है, इससे अर्जुनको जीतनेका मैंही भार लेता हूं, मैं इस विषयमें पूर्ण समर्थ हूं। ऋषिके उस परम अस्त्रको पाकर अब मैं पाञ्चाल, करुष मत्स्य और पुत्र पौत्रके सहित पाण्डवोंको क्षण मात्रमें जीत सकता हूं, और उनको मारकर अपने शस्त्रके प्रतापसे सब राज्यको ले लूंगा। भीष्म, द्रोण तथा औरभी मुख्यमुख्य राजा लोग आपके समीप बैठे रहें, मैं अकेलेही अपने बलके प्रभावसे युद्धमें जाकर पाण्डवोंको मारूंगा, यह भार मेरेही ऊपर है।

कर्ण ऐसेही वचनोंको कह रहे थे, उसी समयमें भीष्म उनसे बोले, हे कर्ण! कालके वशमें होकर तुम्हारी बुद्धि नाश होगई है। तुम व्यर्थ अपनी बड़ाई क्यों करते हो? यह क्या तुम नहीं जानते हो, कि प्रधान लोगोंके मरनेहीसे धृतराष्ट्रके पुत्रोंकी मृत्यु होगी? अर्जुनने कृष्णके सङ्ग मिलकर खाण्डव वनको भस्म किया था, उस बातको समझ कर तुमको बन्धु-बान्धवोंके सहित चुप रहनाही उचित था। देवलोकके स्वामी महात्मा इन्द्रने तुमको जो शक्ति दी है, उसे तुम कृष्णके चक्रके प्रहारसे टुकड़े टुकड़े होकर जलती हुई देखोगे। हे कर्ण! सर्पमुखी बाण जो तुम्हारे पास शोभित है, और जिसकी तुम फूलोंकी मालासे सदा पूजा किया करते हो; वहभी अर्जुनके बाणोंसे खण्डित होकर तुम्हारे सहित मृत्युको प्राप्त होगा। हे कर्ण! जिन्होंने महायुद्धमें तुम्हारे समान वरन तुमसेभी श्रेष्ठ शत्रुओंको मारा है, वही बाणासुर तथा नरकासुरको पराजित करनेवाले कृष्ण अर्जुनकी रक्षा करते हैं।

कर्ण बोले, महात्मा कृष्ण जिस प्रकारसे वर्णन किये गये, वैसेही हैं, वरन उससेभी कुछ श्रेष्ठ हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं है, परन्तु पितामहने जो मुझको थोड़ेसे कठोर वचन कहे, उसका फल सुनिये। मैंने इन सम्पूर्ण शस्त्रोंको त्याग दिया: पितामह अब मुझे कभी युद्धमें न देखेंगे; केवल सभाहीमें देखेंगे। हे पितामह! तुम्हारे मरनेके अनन्तर सब राजा लोग मेरे प्रभाव और पराक्रमको देखेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन् जनमेजय! वह महा धनुर्धारी कर्ण ऐसा कहके सभासे उठकर अपने घरको चले गये। तब भीष्म हंसते हंसते दुर्योधनसे बोले, कि सूतपुत्र कर्ण सत्यप्रतिज्ञ कहके प्रसिद्ध है। परन्तु उसने जो यह कहा, "कि कलिङ्गराज, चेदीपति, बाह्लीक, जयद्रथ आदिके बैठे रहनेपर भी मैं अकेलाही सौ सौ हजार वीरोंको नित्य

मारूंगा" सो वह इस भारको कैसे पूरा कर सकेगा? यह देखो, भीमसेन व्यूहके विरुद्ध व्यूह बनाकर सबके शिरको तोड़कर प्राणियोंके संहार करनेमें प्रवृत्त होता है। पुरुषोंमें अधम वैकर्तनने जब निन्दारहित परशुरामजीके यहां "मैं ब्राह्मणका पुत्र हूं" कहके अस्त्र ग्रहण किया, तभी उसका धर्म्म और तप नष्ट होगया।

हे राजेन्द्र! भीष्मके ऐसे कहने और कर्णके शस्त्रोंको परित्याग करके चले जानेपर धृतराष्ट्रपुत्र नीचबुद्धि दुर्य्योधन शान्तनुनन्दन भीष्मसे कहने लगे।

६२ अध्याय समाप्त।

दुर्य्योधन बोले, हे पितामह पाण्डवोंका मनुष्योंकी भांति रूप है और मनुष्योंहीकी भांति उत्पन्न भये हैं, तब उन लोगोंहीकी बिजय होगी, इस बातको आप कैसे स्थिर करते हैं? देखिये वीर्य्य पराक्रम, बुद्धि अवस्था, शास्त्रज्ञान, अस्त्रोंकी शिक्षा, युद्धका अभ्यास, शीघ्रता और कौशलमें वह और हम लोग सबही समान हैं, सब कोई एक जाति हैं और सबही मनुष्ययोनिसे उत्पन्न हुए हैं, तब उन्हीं लोगोंकी जीत होगी, इस बातको आप किस प्रकारसे जानते हैं? हे राजन्! मैं आपके ऊपर वा द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, वाह्लीक तथा अन्य भूपालोंके ऊपरभी युद्धके कार्य्यका निर्भर नहीं करता हूं मैं अपने पराक्रमहीसे युद्धकी तैयारी करता हूं। मैं कर्ण और मेरा भाई दुःशासन, येही तीन मनुष्य अपने चोखे बाणोंसे पांचों पाण्डवोंको मारेंगे, फिर उसके अनन्तर बहुत दक्षिणासे युक्त बहुतसे महायज्ञ करके और गौ, घोड़े तथा धन दानसे मैं ब्राह्मणोंको तृप्त करूंगा। मेरे सेनापति लोग जब फांसेसे पकड़े हुए हरिणोंकी भांति शत्रुओंको रथ, हाथी और घोड़ोंके सहित व्याकुल देखकर उन्हें घेर लेंगे, उसी समय पाण्डव और कृष्णका गर्व्व छूट जायगा।

विदुर बोले, यथार्थ बातोंके जाननेवाले पण्डित लोग इस संसारमें दमहीको उत्तम साधन कहते हैं, विशेष करके ब्राह्मणोंके निमित्त दम सनातन धर्म्म है। दमशाली मनुष्यकी दान, क्षमा और सिद्धि स्वाभाविकही उत्पन्न होती है। दम, दान, तप, ज्ञान, विद्या और तेजको बढ़ाता है; दमही उत्तम और पवित्र वस्तु है। दमके प्रभावसे मनुष्य सब पापोंसे छूटकर तथा रूप तेजसे युक्त होके परम पदको पाते है। राक्षसोंसे जैसे सबको भय उत्पन्न होता है, वैसेही दुष्ट पुरुषोंसेभी लोगोंको सदा भय हुआ करता है। दुष्ट अधर्मियोंके मारनेहीके निमित्त ब्रह्माने क्षत्रियोंको उत्पन्न किया है। पण्डितोंने चारो आश्रमोंमें दमको उत्तम कहा है। दम सब गुणोंकी उत्पत्तिका स्थान है, उन सब गुणोंको दमका लक्षण कहना चाहिये। हे राजेन्द्र! जिनमें क्षमा, धृति, अहिंसा समता, सत्य, सरलता, इन्द्रियनिग्रह, धीरज, प्यारा वचन, बुरे कर्मोंमें चित्तका रोकना- स्थिरता, कृपणता न करनी, क्रोधका न होना, सन्तोष और श्रद्धा आदिक गुण रहते हैं, उन्हें सत्पुरुष कहते हैं। सत्पुरुषोंमें काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्षा, अभिमान, क्रोध, निद्रा, अपनी बड़ाई और शोक आदिकी विशेषता नहीं रहती। दया सत्य और पवित्रता यही सत्पुरुषोंके लक्षण हैं। जो पुरुष लोभसे रहित, थोड़ी प्राप्तिसे सन्तोषी, काम चिन्तामें न पड़नेवाले और समुद्रकी भांति गम्भीर होते हैं, वेही सत्पुरुष कहाते है। उत्तम चरित्रवाले, शीलसे युक्त, सदा प्रसन्न रहनेवाले आत्मतत्त्वको जाननेवाले, ज्ञानी पुरुष इस लोकमें मान और प्रतिष्ठाको पाकर अन्तमें उत्तम गतिको पाते हैं। प्राणी मात्रको जिसे कुछ भय उत्पन्न नहीं होता, और निर्दई

सब जीवोंकोभी किञ्चित डर नहीं रहता, तथा जो सब जीवोंके हितकारी वस्तु हैं, ऐसेही पुरुष पुरुषोत्तम कहाते हैं, जिनसे किसी मनुष्यको कुछभी दुःख नहीं होता; बुद्धि और ज्ञानसे तृप्त होकर वह समुद्रकी भांति एकही रूपसे निरन्तर शान्त रहते हैं। पहिले श्रेष्ठ पुरुषोंने यज्ञ आदि जिन कार्य्यों के अनुष्ठान किये हैं, तथा वर्त्तमानमें साधु पुरुष जिन कार्य्योंका आचरण करते हैं, उन्हीं कर्म्मोंको करके सत्पुरुष लोग आनन्दित होते हैं। अथवा ज्ञानसे तृप्त होकर जो मनुष्य वासना-रहित कर्म्मोंको करते हुए संसारमें निवास करते हैं, वह परम पद पानेके योग्य हैं। आकाशमें उड़ने हुए पक्षियोंके मार्गको जैसे कोई नहीं प्राप्त कर सकता, उसी भांतिसे मुनियोंका निवास स्थानभी साधारण पुरुषोंकी दृष्टिमें नहीं आता। अथवा जो गृहको त्यागके सन्यास आश्रमहीमें निवास करते हैं, उनके रहनेके निमित्त स्वर्गमें प्रकाशमान लोक तैयार रहता है।

६३ अध्याय समाप्त।

विदुर बोले, हे तात! पुराने लोगोंमें यह कथा प्रसिद्ध है कि किसी व्याधने पक्षी पकड़नेके निमित्त पृथ्वीमें अपनी जालको बिछाया था, उसमें एक सङ्ग रहनेवाले दो बूढ़े पक्षी गिरे, और दोनो मिलकर जाल समेत आकाश मार्गमें उड़ गये। तब व्याधा उन दोनोंको जाल सहित आकाशमें उड़ता हुआ देखकरभी दुःखी नहीं हुआ, और उनके पीछे पीछे वहभी दौड़ने लगा। पक्षियोंके पीछा करनेवाला व्याधा इसी भांतिसे दौड़ा हुआ जाता था। उसी अवसरमें सन्ध्या आदि कर्म्मको पूरा करके आश्रममें रहनेवाले किसी मुनिने उसे देखा। हे भारत! तब उन मुनिने इस पृथ्वीपर चलनेवाले व्याधको आकाशमें रहनेवाले पक्षियोंके पीछे शीघ्रतासे दौड़ते हुए देखकर उसको एक श्लोकसे यह पूछा, कि "हे व्याध! तुम पैरोंसे चलनेवाले होकर जो पक्षियोंका पीछा करते हो, यह देखकर मुझे बहुतही आश्चर्य होता है।" व्याध बोला, "ये दोनों पक्षी मिलकर मेरे जालको लिये हुए उड़ जाते हैं, परन्तु जब ये आपसमें झगड़ा करेंगे, तबही मेरे वशमें आ जायंगे।"

विदुर बोले, अनन्तर वे कालग्रस्त बुद्धिहीन दोनो पक्षी आपसमें झगड़ने लगे, और दोनो लड़कर पृथ्वीमें गिरे। तब व्याधने उन दोनों पक्षियोंको जालमें फसे हुए, क्रोधसे भरे और लड़ते हुए देख, धीरे धीरे उनके निकट जाकर दोनोंको पकड़ लिया। इसी प्रकारसे जो मनुष्य अपनी जातिके सङ्ग झगड़ा तथा लड़ाई करते हैं, वे ऊपर कहे हुए दोनो पक्षियोंकी भांति शत्रुके वशमें होजाते हैं। एकत्र होकर खाना, पीना, बात चीत, काम काजका पूछना और आपसमें मेल रखना, यही सब जातिके कार्य्य हैं। अपनी जातिसे विरोध करना कभी उचित नहीं है। जो सब जाति एक मत और अच्छी बुद्धिसे युक्त होकर बूढ़ोंकी उपासना करती है, वे सिंहसे रक्षित बनकी भांति विद्यमान रहती हैं। हे भरतर्षभ! जो मनुष्य बहुतसा धन उपार्ज्जन करकेभी महा दरिद्रोंकी भांति निवास करते हैं, वे शत्रुओंके हाथमें लक्ष्मीको देते हैं। हे धृतराष्ट्र! ज्ञातिके मनुष्य अलग अलग रहनेसे जलती हुई लकड़ीकी तरह बुझ जाते हैं, इकट्ठे रहनेसेही प्रज्वलित तथा प्रकाशित होते रहते हैं। हे कुरुनन्दन! मैंने पर्व्वतके ऊपर एक विषयको अवलोकन किया था, उसकोभी सुन लीजिये, तब जैसा उचित हो, वैसा कीजिये। किसी समयमें मैंने किरात और सम्पूर्ण ज्योति, धनुर्वेदी तथा और भी बहुतसे विद्याधरोंके .... देवकन्या नागगणोंके सहित लिङ्ग तथा गन्धर्वोंसे प्रणाम

लताओंसे युक्त, कुञ्जकी भांति शोभायमान गन्धमादन पर्व्वतपर गमन किया था। वहांपर जाकर देखा कि पर्व्वतके ऊपर बालुकामय स्थानमें घड़ेके बराबर गहरा पीतवर्ण मधु-मक्खियोंसे रहित उस स्थान पर मधु अर्थात अमृत रहता है। यह मधु कुवेरको अत्यन्तही प्रिय है, इस निमित्त महा विषधर सर्प उसकी रक्षा करते हैं। हमारे सङ्गमें रहनेवाले पदार्थ-विद्याके जाननेवाले ब्राह्मणोंने कहा, कि इस मधुको खानेसे मनुष्य अमर होते हैं, अन्ध लोचन पाते हैं और बूढ़े युवा हो जाते हैं। अनन्तर किरातोंने उस मधुको देखके उसको ग्रहण करनेको इच्छा करी। इससे वे लोग वहां पर सर्पोंसे भरी हुई उस भयानक पर्व्वत-की कन्दरामें सांपोंके विषसे मरकर मृत्युको पहुंचे। हे महाराज तुम्हारे पुत्रभी उसी भांतिसे अकेलेही सब पृथ्वीको लेनेको इच्छा करते है। ये लोग मोहसे पड़कर केवल मधुही देखते हैं, परन्तु पीछे जो मृत्युकी शंका है, उसे नहीं देखते है। दुर्य्योधन अर्ज्जुन सङ्ग युद्ध करनेकी इच्छा करता है, पर मैं इसका अर्ज्जुनके समान तेज वा पराक्रम कुछभी नहीं देखता हूं। अर्ज्जुनने अकेलेही एक रथसे पृथ्वीको जीता था, और विराट नगरमें बहुतसी सेना आदिके सहित युद्धके निमित्त यात्रा करनेवाले भीष्म, द्रोण, आदि महावीरोंको अकेलेही भय-भीत और पराजित किया था। उस स्थानपर दुर्य्यो-धनकी बीरता कहा गयी थी? देखिये, वह महावीर पुरुष केवल आपहीका मुंह देखकर क्षमा कर रहे है, परन्तु पूर्णरीतिसे क्रोधित होने पर, जब महाबलवान अर्ज्जुन, पाञ्चाल द्रुपद, मत्स्यराज विराट, युद्धमें वायुकी सहा-यतासे अग्निकी भांति प्रज्वलित होंगे, तब आपका कुछभी बाकी न छोड़ेंगे। इससे हे धृतराष्ट्र। युधिष्ठिरको अपनी गोदके भीतर करलो, क्योंकि युद्धमें प्रवृत्त होनेसे दोनो ओर वालोंको सम्पूर्णरूपसे जीत नहीं होती।

६४ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे पुत्र दुर्य्योधन! मैं तुमसे जो बचन कहता हूं, उसे उत्तम प्रकारसे अपने हृदयमें धारण करो। अजान बटोहीकी भांति तुम कुपथहीको उत्तम मार्ग समझते हो, क्योंकि सब लोकोंके धारण करनेवाले पञ्च महाभूतोंकी तरह पाचों पाण्डवोंके तेजको हरनेकी अभिलाष करते हो। तुम परम गति और मृत्युको बिना प्रतीक्षा किये, इस लोकमें परम धर्म्मात्मा कुन्तीपुत्र युधिष्ठिरको कभी भी नहीं जीत सकते। जैसे वृक्ष प्रचण्ड वायुको परास्त करनेकी इच्छा करता है, वैसेही तुम भी महाबलवान युद्धमें सब शत्रुओंको नाश करनेवाले भीमसेनको जीतनेकी इच्छा करते हो। पर्व्वतोंमें सुमेरु पर्व्वतकी भांति सब शस्त्र धारियोंमें श्रेष्ठ अर्ज्जुनके सङ्ग कौन बुद्धि मान मनुष्य युद्ध करनेके निमित्त प्रवृत्त होगा? पाञ्चालराज-पुत्र धृष्टद्युम्नही आज वज्र चलाने वाले इन्द्रके समान अपने चोखे बाणोंकी वर्षा करके किस पुरुषको न मार सकेंगे? अन्धक और वृष्णिवंशमें सम्मानित महाधनुर्द्धर सात्य कीभी तुम्हारी सेनाका नाश करेंगे। गौरव और तेज तथा पराक्रममें जो तीनों लोकको जीतनेमें समर्थ है, उन पुण्डरीकाक्ष कृष्णके सङ्ग कौन बुद्धिमान मनुष्य युद्ध करनेका उत्साह करेगा? उसके स्त्री, पुत्र, बन्धुवान्धव, तथा उसकी आत्मा और पृथ्वीका राज्य एक ओर रहे तौभी अकेला अर्ज्जुन एक ओर रह सकता है। अर्ज्जुनने जिसके साथ मित्रता करी है, वह कृष्णभी अजेय हैं, और जिस सेनामें कृष्ण निवास करते है, वह सेनाभी पृथ्वी भरमें महाबलवान है। इससे हे तात! हित करने वाले सुहृद तथा साधु पुरुषोंके बचनमें

विश्वास करो। शान्तनुपुत्र बूढ़े पितामह भीष्मके वचनोंको ग्रहण करो। मैं जो कहता हूं, तथा कौरवोंके हितको चाहनेवाले द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य, विकर्ण और महाराज वाह्लिक जो वचन कहते हैं, उसेभी ध्यान देकर सुनो। हे भारत। ये भी मेरेही समान हैं। तुम जैसे मुझे मानते हो, वैसेही इन्हेंभी समझो, क्योंकि ये सबही धर्म्मात्मा और मेरे समान तुमसे स्नेह करते हैं। विराट नगरसे जब तुम्हारे भाइयोंके सहित सब सेना अर्ज्जुनके डरसे व्याकुल होकर गौओंको छोड़के तुम्हारे सम्मुखही भाग गई थी; और वहांपर जो अनेक वीरोंके सङ्ग अकेले अर्ज्जुनका आश्चर्य्य युद्ध सुना जाता है, वही इसमें यथेष्ट प्रमाण है। अर्ज्जुनने जब अकेलेही तुम्हारी सब सेनाको पराजित किया था, तब इस समय सब पाण्डव और अन्य वीरोंके सङ्ग मिलकर जो कौरवोंका नाश करेगा, इसमें क्या सन्देह है? इससे तुम पाण्डवोंके सङ्ग यथार्थ भ्रातृभावको ग्रहण करो और प्रेमपूर्व्वक उनकी आज्ञाका पालन करो।

६५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महाबुद्धिमान् महात्मा धृतराष्ट्र दुर्य्योधनसे ऐसा वचन कहकर फिर सञ्जयसे पूछने लगे, हे सञ्जय! कृष्णके अनन्तर अर्ज्जुनने जो कुछ वचन कहे हैं, वह तुम मुझसे कहो, क्योंकि उन वचनोंके सुननेकी मुझे बहुतही इच्छा है।

सञ्जय बोले, कुन्तिपुत्र महात्मा अर्ज्जुन श्रीकृष्णकी बातोंको सुनकर उनके सम्मुखही मुझसे कहने लगे, हे सञ्जय! तुम पितामह शान्तनुपुत्र भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, धृतराष्ट्र, कर्ण महाराज वाह्लिक, अश्वत्थामा, सोमदत्त, सुबलपुत्र शकुनि, दुःशासन, शल्य, पुरुमित्र, विविंशति, विकर्ण, चित्रसेन, जयत्सेन, अवन्तिपति विन्द और अनुविन्द, कौरववंशीय जयद्रथ, दुर्म्मुख, भूरिश्रवा, दुःसह, भगदत्त, जलसन्ध और पाण्डवरूपी अग्निमें होमके निमित्त जो सब महात्मा राजा लोग दुर्य्योधनके आमन्त्रणसे कौरवोंके प्रियकार्य्यको करनेके निमित्त युद्धके वास्ते आकर इकट्ठे हुए हैं, उन सबसे मेरे वचनके अनुसार कुशल क्षेम पूछना; इसके अनन्तर पापियोंके अग्रगामी दुर्य्योधनसे राजाओंके बीचमें यह वचन कहना। हे सञ्जय। वह क्रोधी, नीचबुद्धि, पापी, महालोभी राजपुत्र दुर्य्योधन जिस प्रकारसे दुष्ट मित्रों तथा अनुयायियोंके सहित मेरे वचनोंको सुन सके, तुम वैसाही उपाय करना। रक्तवर्ण बड़ी आंख और विशाल-भुज अर्ज्जुनने मुझे इस प्रकारसे वचन-बद्ध करके, अन्तमें कृष्णके मुहकी ओर देखके धर्म्म और अर्थसे भरे वचनोंको कहना आरम्भ किया कि "तुमने यदुकुलश्रेष्ठ, बोलनेवालोंमें उत्तम महात्मा श्रीकृष्णचन्द्रके समाधानयुक्त वचनोंको जैसे सुना है, कौरवोंकी सभामें सब राजाओंके बीच मेरे वचनकोभी उसी भांतिसे कहना। उसमेंसे यही एक बात विशेषरूपसे कहना कि हे राजा लोग! जिससे संग्राम-भूमिमें शस्त्ररूपी घृत, धनुषरूपी स्रुवा, रथरूपी वायुसे युक्त महा-बाणरूपी अग्निमें होमका कार्य्य समाप्त न करना पड़े, तुम सब लोग इकट्ठे होकर उस विषयमें विशेष यत्नवान होना। यदि तुम लोग शत्रुनाशन युधिष्ठिरको उनके मांगनेके अनुसार राज्यका अंश न प्रदान करोगे, तो मैं अपने तेज बाणोंकी सहायतासे रथ, घोड़े, हाथी और पैदल समेत तुम लोगोंको यमपुरीमें पहुंचा दूंगा। हे महाराज! अनन्तर मैं यथा उचित बातचीत तथा कृष्ण और अर्ज्जुनको नमस्कार करके आपके निकट उन उदार

वचनोंको कहनेके निमित्त शीघ्रता सहित यहां पर आके उपस्थित हुआ हूं।

६६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, धृतराष्ट्रपुत्र दुर्य्योधनने सञ्जयके वचनोंका अनादर किया, और सबने मौनव्रत धारण किया। अनन्तर सभासे सब राजालोग उठके अपने अपने स्थानपर गये। हे महाराज! पृथ्वीके सब राजाओंके सभासे चले जानेपर पुत्रके वशवर्त्ती राजा धृतराष्ट्र पुत्रोंके विजयकी इच्छा करते हुए अपना पाण्डवोंका और दूसरे लोगोंका इस विषयमें किस प्रकारका निश्चय है; इस विषयको सञ्जयसे एकान्तमें पूछने लगे।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय। मेरी अपनी सेनामें जो कुछ सार विषय है, उसे तुम वर्णन करो। और तुम पाण्डवोंके समस्त वृत्तान्तोंको भी जानते हो, इससे उन लोगोंमें जो कुछ उत्तम वा निकृष्ट विषय हो, उसे भी ज्योंका त्यों वर्णन करो। तुम दोनों पक्षके सार विषयका जाननेवाले, सर्व्वदर्शी, धर्म्म और अर्थके विषयमें भी निपुण तथा सब कार्य्योंके निश्चय करनेवाले हो, मै इसी निमित्त तुमसे पूछता हूं, तुम सब बातोंको प्रकाशित करके मुझसे कहो, युद्धमें प्रवृत्त होनेसे कौन पक्ष नष्ट होगा?

सञ्जय बोले, हे राजन्! मैं निर्जन स्थानमें आपसे कभी कुछ वचन न कहूंगा, क्योंकि इससे आप पापग्रस्त होंगे, इस निमित्त महाव्रत करनेवाले पिता व्यासदेव और माता गान्धारीको बुलाइये वे लोग धर्म्मके जाननेवाले, सब कार्य्योंमें निपुण और निश्चय करनेवाले हैं, वे आपको इस वचनरूपी चोरीके पापसे मुक्त कर सकेंगे। हे राजेन्द्र! उन्हींके सम्मुखसे मैं कृष्ण और अर्ज्जुनके सम्पूर्ण अभिप्रायको प्रकाशित करके कहूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, ऐसे वचनको सुनकर राजा धृतराष्ट्रने विदुरके द्वारा गान्धारी और व्यासदेवको वहांपर बुलवाया और उन लोगोंने भी शीघ्रही आकर सभामें प्रवेश किया। अनन्तर महाबुद्धिमान कृष्णद्वैपायन सञ्जय और अपने पुत्र धृतराष्ट्रके मनके अभिप्रायको जानकर, उसे अनुमोदन करके सञ्जयसे कहा, ये तुमसे जो वचन पूछते हैं,—तुम कृष्ण और अर्ज्जुनके विषयमें जो कुछ बात जानते हो, उसे इन जिज्ञासु धृतराष्ट्रके निकट ज्योंका त्यों वर्णन करो।

६७ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, परम-पूजित धनुर्द्धारी कृष्ण और अर्ज्जुन सबके संहार करनेके निमित्त सम्मत होकर बदरिकाश्रमसे भारतवर्षमें उत्पन्न हुए हैं। हे महाराज। महात्मा श्रीकृष्णका काल रूपी चक्र पांच हाथके परिमाण स्थानमें व्याप्त हो रहा है। तेज पुञ्जसे प्रकाशित वह चक्र अज्ञातरूपसे कौरवोंके निमित्त विराजमान है; पाण्डवोंके सार और असार बलको जाननेके निमित्त वही एक उत्तम प्रमाण है। महाबलवान श्रीकृष्णचन्द्रने क्रीड़ा करते करते नरकासुर, कंस और चेदीपति शिशुपालका नाश किया था। ऐश्वर्य्यवान् महात्मा कृष्ण इच्छा मात्रसे पृथ्वी, आकाश तथा स्वर्गको अपने वशमें कर सकते हैं। हे राजन्! आप जो सार और असार विषयोंको जाननेके निमित्त बार बार पाण्डवोंकी बातको पूछते हैं, उसे संक्षेपसे सुनिये। यदि सब संसार एक ओर और जनार्द्दन कृष्ण एक तरफ रहें, तौभी कृष्णही सम्पूर्ण जगतसे अधिक हो सकते हैं। वे अपनी इच्छा मात्रसे सब संसारको भस्म कर सकते हैं, परन्तु उन्हें भस्म करनेके निमित्त यह सारा संसार भी समर्थ नहीं है। जहांपर सत्य, धर्म्म, लज्जा और कोमलता रहती है, उसी स्थानपर गोविन्द कृष्ण निवास करते हैं।

जिसकी ओर कृष्ण रहते हैं, उसकीही जय होती है। प्राणियोंकी आत्मामें जनार्दन श्रीकृष्ण लीला करते विराजते हैं और पृथ्वी, अन्तरिक्ष और स्वर्गको नियत सीमापर चलाते हैं। मुझे मालूम होता है, कि वे सब लोगोंको मोह उत्पन्न करनेकी अभिलाषासे पाण्डवोंको नाम मात्रका अगुवा बनाके आपके अधर्म्ममें रत पुत्रोंको नाश करनेकी इच्छा करते हैं। भगवान कृष्ण चैतन्यता तथा अपनी योग-मायासे कालचक्र, जगतचक्र और कर्म्मचक्रोंको सदाही परिवर्त्तित (उलट पलट) किया करते हैं। मैं आपसे यह सत्य कहता हूं, कि वही एक मात्र भगवान् कृष्ण काल, मृत्यु, स्थावर और जङ्गम सम्पूर्ण जगतके ऊपर अपनी प्रभुता कर रहे हैं। महायोगी हरि जगतके स्वामी होकरभी दुर्ब्बल दरिद्रकी भांति कर्म्म करना आरम्भ करते हैं, और उस माया योगसे सब लोकोंको वञ्चित करते हैं। जो मनुष्य उनके यथार्थ रूपको ग्रहण करते हैं, वे कभी मोहमें नहीं पड़ते।

६८ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! तुमने कृष्णको किस प्रकारसे सब लोकोंका ईश्वर जाना? और मैं क्यों नहीं उनको जान सकता हूं, यह तुम मुझसे कहो।

सञ्जय बोले, हे राजन्! इसका कारण सुनिये। आपको विद्या नहीं है, परन्तु मेरी विद्या नष्ट नहीं हुई है। जो मनुष्य विद्याहीन और तमोगुणसे युक्त रहता है, वह ब्रह्म-प्रतिपादक वाक्योंके तात्पर्य्यको ग्रहण नहीं कर सकता; निर्विषयानन्द मात्र अपने आत्मस्वरूपसे भ्रष्ट हो जाता है, इसी कारणसे वह श्रीकृष्ण भगवानको नहीं जान सकता है। हे तात! मैं विद्याके प्रभावसे उन महात्मा कृष्णको त्रियुग (स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरसे युक्त) कर्त्ता और कुछभी न करनेवाला लीला करनेवाला, सब प्राणियोंकी उत्पत्ति और नाशका हेतु समझता हूं।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! जनार्द्दन कृष्णमें जो तुम्हारी सब दिनसे इस प्रकारकी भक्ति है, वह कैसे हुई, जिससे तुम उनको त्रियुग (स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरसे युक्त) जानते हो?

सञ्जय बोले, हे राजन्! आपका कल्याण हो, मैं स्त्री पुत्र आदिके मोहसे पड़कर अविद्याका सेवन नहीं करता हूं, और ईश्वरको विना समर्पण किये वृथा धर्म्मके आचरणमें भी मेरी प्रवृत्ति नहीं होती। केवल भक्ति-योग और शुद्धभावसे जनार्द्दन कृष्णको जानता हूं।

धृतराष्ट्र बोले, हे दुर्य्योधन! तुम हृषीकेश कृष्णकी उपासना करो। हे तात! सञ्जय हम लोगोंके अत्यन्तही विश्वासपात्र हैं, इससे इनके वचनोंको मानकर तुम श्रीकृष्णकी शरणमें चले जाओ।

दुर्य्योधन बोले, हे राजन्! देवकीपुत्र कृष्ण यदि अर्ज्जुनके सङ्ग मिलकर सब लोकोंके संहार करनेपर उद्यत होंगे, तौभी मैं इस समय उनकी शरणमें न जाऊंगा।

धृतराष्ट्र बोले, हे गान्धारी! यह ईर्षक, दुरात्मा, अभिमानी, हित चाहनेवालोंकी बातोंको न माननेवाला, नीचबुद्धि, तुम्हारा पुत्र केवल कालके वशमें होकर पतित हुआ चाहता है।

गान्धारी बोली, रे ऐश्वर्य्यकामी! दुरात्मा! अरे मूर्ख! तू वृद्धोंके वचनोंको न मानकर, पिताको तथा मुझेभी त्यागके और ऐश्वर्य्य जीवन और सुखकी आशाको छोड़कर, शत्रुओंके आनन्द और हम लोगोंके शोकको बढ़ाता हुआ, जब भीमसेनके हाथसे मारा जायगा, तभी पिताके वचनोंको स्मरण करेगा।

श्रीव्यासदेवजी बोले, हे राजन धृतराष्ट्र! मैं तुमसे जो वचन कहता हूं, उसे तुम सुनो। तुम

कृष्णके प्रियपात्र हो; सञ्जय जब तुम्हारे दूत हुए हैं, तब ये तुम्हारे कल्याणके निमित्त अवश्य यत्न करेंगे। ये सनातन भगवान हृषीकेशको पूर्ण रूपसे जानते हैं, इससे यदि तुम एकाग्र चित्तसे सुननेकी इच्छा करोगे, तो ये तुमको महाभयसे मुक्त कर देंगे। हे धृतराष्ट्र! मनुष्य लोग क्रोध और हर्षसे युक्त होकर अनेक बन्धनोंसे बंधे हुए हैं, जो अपने उपार्जित धन आदिसे सन्तुष्ट नहीं होता, वह अन्धेके पीछे चलनेवाले अन्धेकी भांति अपने कर्म्मोंसे बार बार मृत्युके वशमें पड़ता है। जिस मार्गसे बुद्धिमान महात्मा साधु पुरुष चलते हैं, वही ब्रह्मके प्राप्त करनेका एक मात्र सुगम मार्ग है। बुद्धिमान पुरुष उसी मार्गको जानकर जन्ममरणके क्लेशोंसे छूट जाते हैं।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! जिस मार्गमें कुछभी भयकी सम्भावना नहीं है, जिसके द्वारा मैं जनार्द्दन कृष्णको जानकर उत्तम सिद्धिको प्राप्त करूं, उसी मार्गका तुम मुझसे वर्णन करो।

सञ्जय बोले, हे महाराज! आत्मतत्वको न जाननेवाला पुरुष जैसे कृतात्मा जनार्द्दनको नहीं जान सकता है, वैसेही आत्मक्रियाका उपायभी बिना इन्द्रिय निग्रहके नहीं हो सकता। विषयोंमें लगी हुई इन्द्रियोंकी विषयकार्य्योंसे निवृत्ति केवल अप्रमादहीसे होती है। अप्रमाद और हिंसाका त्याग येही दोनों ज्ञानकी उत्पत्तिके स्थान हैं, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। हे राजन्! इससे आप आलसको छोड़कर इन्द्रिय-निग्रहके निमित्त यत्नवान होइये। आपकी बुद्धि जिसमें तत्वमार्गसे भ्रष्ट न हो जाय, इस निमित्त आप उसे सब विषयोंसे खींचके निवृत्त करें। ब्राह्मण लोग इन्द्रिय-संयमकोही निश्चल ज्ञान कहते हैं। वही ज्ञान है: और बुद्धिमान् महात्मा उत्तम पुरुष जिस पथसे गमन करते हैं, वही मार्ग है, हे राजन्! इन्द्रियोंको न जीतनेवाले पुरुष, भगवन् केशवको नहीं जान सकते; इन्द्रियोंके जीतनेवाले पुरुषही प्राप्त हुए योगप्रभावसे उनके तत्वज्ञानको पाते हैं।

६६ अध्याय समाप्त।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! मैं तुमसे पूछता हूं, इससे तुम मुझसे पुनर्बार पु[illegible] कात्मका वर्णन करो। हे तात! मैं उनके [illegible] और कर्म्मके अर्थोंको जाननेसेही उन्हें [illegible] कर सकूंगा।

सञ्जय बोले, मैं जितना स्मरण कर सक[illegible] हूं, उतनेही परिमाणसे श्रीकृष्णचन्द्रके [illegible] नामोंको सुना है, क्योंकि केशवके नाम [illegible] कर्म्मोंकी गिनती नहीं हो सकती। सब प्रा[illegible] योंके वसन अर्थात मायासे आवरण करने[illegible] कारण वसुत्व अर्थात तेजमय तथा देवतोंके [illegible] कारण होनेसे उनका नाम वासुदेव है; औ[illegible] व्यापक होनेसे विष्णु शब्दसे पुकारे जाते हैं [illegible] हे भारत! वह मुनियोंके कर्म्मतत्वकी आलो[illegible] चना, निश्चित तत्वोंमें चित्तको लगाने औ[illegible] निरोध करनेसे माधव कहाते हैं। मधु नामक [illegible] दैत्य और मधु शब्दसे कहे पृथ्वी आदि [illegible] चौबीस तत्वोंके संहार करनेसे उनका मधु[illegible] सूदन नाम है। कृषि शब्द सत्वका बोधक है [illegible] और ण शब्द सुखवाचक है इन दोनों शब्दोंके [illegible] भावार्थके अनुसार यदुकुलमें उत्पन्न होनेसे [illegible] कृष्ण नाम हुआ है। पुण्डरीक शब्दसे उनका [illegible] परम धाम तथा स्वरूपका बोध होता है; वह [illegible] धाम नित्य, अक्षय और अव्यय है, अतएव [illegible] पुण्डरीकके कारणसे वह पुण्डरीकाक्ष कहे [illegible] जाते हैं। दुष्टोंको भय देने तथा संहार करनेसे उनका नाम जनार्द्दन हुआ है। उनमें कभी सतोगुण पृथक नहीं होता, और वहभी सतोगुणसे भ्रष्ट नहीं होते, इसी निमित्त उनका नाम सात्वत है। वृष शब्दसे ज्योतिका

अर्थ होता है, धर्मकी ज्योति अर्थात वेद जिससे उत्पन्न होते हैं, वेही वेद जिसके जाननेके निमित्त दृश्य अर्थात चक्षुस्वरूप हैं; कृष्ण वेदके जाननेवाले पुरुष हैं, इसीसे उनका नाम वृषभेक्षण है। युद्धको जीतनेवाले केशवका कोई उत्पन्न करनेवाला तथा जन्मदाता नहीं है, इसीसे उनका अज नाम हुआ है। दाम शब्दसे दमशाली और उदर उत्तम रूपसे प्रकाशितका बोध होता है। सर्व्वव्यापक मधुसूदन दमशाली और इन्द्रियोंके बीच स्वयं प्रकाशित होकर दामोदर नामको धारण किये हैं, जिससे हर्ष प्राप्त होता है, उसी अर्थसे हृषीकेष शब्द बना है, इसका अर्थ स्वरूपानन्द और ईष शब्दका ऐश्वर्य्यवान अर्थ है, कृष्णको हर्ष, सुख और ऐश्वर्य्य है, इसीसे उनका नाम हृषीकेष हुआ है। उन्होंने अपने भुजाओंसे पृथ्वी और स्वर्गको धारण किया है, इसीसे उनका नाम महाबाहु विख्यात हुआ है। अधः प्रदेशमें उनका कभी क्षय नहीं होता अर्थात वे संसार धर्म्ममें कभी लिप्त नहीं होते, इससे उनका नाम अधोक्षज है। और मनुष्योंके अयन अर्थात आश्रयके स्थानके कारणसे उनका नाम नारायण विख्यात हुआ है। जो पूरण करते हैं, उन्हें "पुरु" और जिसमें समाप्त होता है उसे "ष" कहते हैं, इन दोनों शब्दोंके योगसे पुरुष शब्द बनता है, कृष्ण संसारको सृष्टि करके संहार करते हैं, इसीसे वे पुरुषोंमें उत्तम पुरुष भये हैं, इसी कारणसे उनका नाम पुरुषोत्तम हुआ है। वह समस्त कार्य्य और कारणकी उत्पत्ति और विनाशके मूल हैं, और सदा ही सब विषयोंको जानते रहते हैं; इसीसे पण्डित लोग उन्हें सर्व्वज्ञ कहते हैं। कृष्ण सत्यमें प्रतिष्ठित हैं और सत्य इनमें प्रतिष्ठित है; गोविन्द सत्यसेभी सत्य नाम हैं, इससे सत्यभी उनका नाम है। वह विक्रमके कारणसे विष्णु और जयसे जिष्णु, नित्यतासे अनन्त और गो अर्थात गद्य-पद्य वाक्योंके जाननेसे गोविन्द कहे जाते हैं। वह मिथ्याभूत जगतको प्रपञ्चको अपने तेजसे प्रकाशित करके सत्यकी भांति प्रतीयमान (शोभित) करके उससे सब प्राणियोंको मोहित करते रहते रहते हैं। इसी प्रकारसे धर्म्मनित्य महाबाहु भगवान मधुसूदन अच्युत कौरवोंके कल्याणके निमित्त यहां आगमन करेंगे।

७० अध्याय समाप्त ।

धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय! परम देहसे प्रकाशमान और सब दिशाओंमें प्रकाशित वासुदेवको जो अपने समीपहीमें देखेंगे, उन नेत्रसे युक्त सब मनुष्योंके भाग्यको मैं धन्य समझता हूं। सब कौरवलोग भरतवंशियोंमें पूजनीय, सृञ्जयोंके कल्याणको चाहनेवाले, ऐश्वर्य्यकामी मनुष्योंको ग्रहण करनेवाले, निन्दा रहित, वचनान्तकी प्रभावसे सबको मोहित करनेवाले, उद्यमशाली, यदुवंशियोंमें श्रेष्ठ, अद्वितीय हरिणवीर श्रीकृष्णभी अपने उदार वचनोंसे मेरी सभाके सब लोगोंको मोहित करेंगे, उन सनातन आत्मतत्त्वज्ञ महर्षि, वचनके समुद्र, योगियोंके कलस अर्थात अनायासही प्राप्त होनेवाले, शामायमान पक्षयुक्त अरिष्टनेम नामक गरुड़, प्राणियोंके संहार करनेवाले, जगतके दीपक, विश्वयोनि, अज, नित्य श्रेष्ठ, आदि मध्य, आदि सीमासे रहित, अनन्तकीर्त्तिमान और वहन-पोषक पुरुषको मैं अपना रक्षक रूपसे मानूंगा तथा उनकी आशा करूंगा। वह तीनों लोकोंके बनानेवाले देवता, असुर नाग, राक्षस आदि प्राणियोंके उत्पन्न करनेवाले, विद्यासे युक्त, राजाश्रेष्ठ, परात्पर हैं, मैं उनका शरणागत होऊंगा।

७१ अध्याय और सञ्जयान पर्व्व समाप्त ।

अथ भगवत्‌यान पर्व्व।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले हे राजन् जनमेजय! सञ्जयके हस्तिनापुर जानेके अनन्तर धर्म्मराज युधिष्ठिरने यदुकुलश्रेष्ठ कृष्णसे कहा, हे मित्रवत्सल! मित्रगणोंको मित्रता दिखानेके निमित्त यही एक यथार्थ समय उपस्थित हुआ है; तुम्हारे अतिरिक्त मैं और किसी पुरुषकोभी ऐसा नहीं देखता हूं कि जो हम लोगोंको इस उपस्थित विपदसे मुक्त कर सके। तुम्हारेही भरोसे हम निर्भयता पूर्व्वक वृथा अभिमानी दुर्य्योधनके समीप अपने राज्यप्राप्तिके अंशके निमित्त अभियोग कर सकेंगे। हे शत्रुनाशन! सब प्रकारकी आपदोंसे जैसे तुम यदुवंशियोंका उद्धार करते रहते हो, इस समय पाण्डव लोगभी उसी प्रकारसे तुम्हारी रक्षा करनेके योग्य हैं, तुम इस महा भयसे हम लोगोंकी रक्षा करो।

श्रीभगवान बोले, हे महाबाहो! यही मैं उपस्थित हूं, जो कुछ कहना हो, उसे कहिये। हे भारत! आप मुझे जो कुछ आज्ञा करेंगे, मैं निःसन्देह उसको पूर्ण करूंगा।

युधिष्ठिर बोले, धृतराष्ट्र और उनके पुत्रकी जो कुछ अभिलाषा है, वह सब तुमने सुना है। सञ्जयने आकर जो कुछ बचन कहे, वे धृतराष्ट्रकी सम्मतिसे अतिरिक्त कुछभी नहीं है। सञ्जयको धृतराष्ट्रकी आत्माही कहनी चाहिये, उसमें केवल मूर्त्तिभेद मात्र है। विशेषतः दूत लोग अपने स्वामीके कहे हुए वचनोंको ज्योंका त्यों कथन करते हैं। ऐसा न करनेसे वे अन्यथा बचनोंके कहनेवाले होकर बध किये जानेके योग्य होते हैं। राजा धृतराष्ट्र मेरी समझमें पाप और लोभसे युक्त होकर हम लोगोंको राज्य बिना दियेही शान्ति स्थापन करनेकी इच्छा करते हैं। हे प्रभाव सम्पन्न कृष्ण! "धृतराष्ट्र हम लोगोंकी उसी प्रतिज्ञामें दृढ़ रहे ऐसाही समझकर मैंने उनकी आज्ञाके अनुसार बारह वर्ष बन वास और एक वर्ष छिपकरभी निवास किया, हम लोगोंने किसी प्रकारसे उस प्रतिज्ञाको न तोड़ा उसको हमारे सङ्ग रहने वाले ब्राह्मण लोगही जानते हैं। इस समय बूढ़े राजा दुष्टोंके शासनके वशवर्त्ती होकर पुत्रके स्नेहमें पड़कर, अपने धर्म्मकी ओर दृष्टि नहीं करते हैं। हे जनार्द्दन! वह दुर्य्योधनके वशमें होकर; लोभमें पड़के, हम लोगोंके सङ्ग वहतही मिथ्या आचरण कर रहे हैं। मैं जो अपनी जननी और मित्रोंके निमित्त कोई मङ्गल कार्य्य करनेमें असमर्थ होता हूं, इससे बढ़के और दूसरा दुःख मुझे क्या होगा? हे मधुसूदन! काशीराज, चेदीपति, पाञ्चालराज और मत्स्यराज तथा तुम मेरी सहायता करनेके निमित्त उपस्थित हो, तौभी मैंने केवल पांच गावहीके निमित्त अन्धे राजा धृतराष्ट्रके समीप इस प्रकारसे निवेदन किया था, कि हे तात! आवस्थल, वृकस्थल, माकन्दी, वारणावत और दूसरा कोई एक गांव, येही पांच गांव वा नगर मुझे दे दीजिये, हम पांचो भाई मिलकर उन्हीं स्थानोंमें निवास करेंगे, भरत वंशका नाश हो, यह किसी प्रकारसे मेरे मतसे युक्त नहीं है।" परन्तु दुष्टात्मा धृतराष्ट्रपुत्र दुर्य्योधन स्वयं प्रभु बनकर पांच गांवभी देनेमें सम्मत नहीं होता है; इससे अधिक दुःखका विषय और क्या हो सकता है? हे कृष्ण! जो मनुष्य उत्तम कुलमें उत्पन्न और विद्या, ज्ञान तथा उत्तम शिक्षासे बढ़कर, पराये धनको लेनेकेवास्ते लोभ करते हैं, उनका वह लोभही उनकी बुद्धिका नाश करनेका कारण होता है, बुद्धिके नाश होनेसे लज्जा छूट जाती है, लज्जा छूटनेसे धर्म्मका नाश होजाता है, धर्म्म नाश होनेसे श्रीको तजहान करता है; श्रीसे भ्रष्ट होनेसेही पुरुषका नाश होजाता है, क्योंकि दरिद्रताही पुरुषकी मृत्यु है। जैसे पक्षी लोग सब ओर पुरुषसे हीन वृक्षको

छोड़ कर चले जाते हैं, वैसेही निर्द्धन मनुष्यको दृष्ट-मित्र, जातिके लोग तथा ब्राह्मण लोगभी त्याग देते हैं। हे तात? प्राणवायु जैसे मृतक पुरुषको छोड़कर चल देती है, वैसेही जातिके लोग निर्द्धन समझके पतितकी भांति मुझे परित्याग करेंगे वही मेरी मृत्यु होगी। सम्बरने कहा था कि "जिस अवस्थामें आज घरमें अन्न नहीं है, कल क्या होगा, सदा ऐसीही चिन्ता लगी रहती है, उससे बढ़के पापोंकी और क्या दशा हो सकती है? संसारके तत्वको जाननेवाले पण्डितोंने धनको परम धर्म्म कहा है, क्योंकि धनही सबका मूलाधार है। इस संसारमें धनवान मनुष्यही यथार्थमें जीवित रहते हैं, जो लोग निर्द्धन हैं, हैं, वे जीते रहनेपरभी मरे हुएके समान हैं। जो लोग अपने बलसे दूसरेके धनको हर लेते हैं, वे लोग केवल उसकाही नाश करते हैं, सो नहीं, वरन वे लोग धर्म्म, अर्थ, काम सबहीका नाश कर देते हैं। दरिद्रताको पानेसे कितनेही मनुष्य मरनेकी इच्छा करते हैं; कितनेही नगरको छोड़के गावोंमें जाकर बास करते हैं, कितनेही परिव्राजक धर्म्म तथा संन्यासका अवलम्बन करके बनवासी होजाते हैं, कितनेही मनुष्य।की लोलाको शेष करके मृत्युको शरणमें चले जाते हैं। धनके निमित्त कितनेही पागल होजाते हैं, बहुतसे लोग शत्रुओंके वशमें होजाते हैं; और कितनेही मनुष्य दूसरेकी दासवृत्ति तथा सेवाकोही स्वीकार कर लेते हैं। पुरुषको धन नाशरूपी जो विपद होती है, वह मृत्युसे भी बढ़के है, क्योंकि धनही उसके धर्म्म और कामका एकमात्र साधन है। उसको धर्म्मके अनुसार जो मृत्यु है, वह तो सब कालही लाकाम उपस्थित रहती है, उसको कोई भी प्रातक्रम नहीं कर सकता। और जो मनुष्य बहुत धन तथा सम्पत्तिको पाकर सदा सुख आदिको भोगता रहता है, अन्तमें धनहीन होजाता है, उसको जैसा दुःख और क्लेश होता है, वैसा स्वाभाविक दरिद्र पुरुषको नहीं होता। धनसे हीन होनेपर उस समय मनुष्य इन्द्र आदि देवताओंके ऊपर दोषारोप करने लगता है, अपनी निन्दा किसी प्रकारसे नहीं करता। उस समय सम्पूर्ण शास्त्रकी शिक्षा भी उसके दुःखको नाश करनेमें समर्थ नहीं होती। वह कभी भृत्य-वर्गों (नौकरों) पर अपने क्रोधको प्रकाशित करता है, कभी ईर्षाके वशमें होकर सुहृद लोगोंको दोषी कहा करता है। इसी प्रकारसे क्रोधके वशमें होके मोहसे कठोर और क्रूरकर्म्मोंका अनुष्ठान करता है; और पापमें आसक्त होकर जातिको नाश करनेका कारण होता है। जातिको नाश करनेवाले, जो पापियोंके अग्रगामी और नरक प्राप्तिके कारण होते हैं, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। पाप करनेवाला मनुष्य यदि किसी प्रकारसे शान्त न हो सके, तो उसे अवश्य नरकमें जाना पड़ता है। एकमात्र लज्जाके अतिरिक्त उसकी शान्तिका और दूसरा कुछ भी उपाय नहीं है। ज्ञानके तत्वको प्राप्त करनेसे, वह पाप-कर्म्मसे किञ्चित पार हो सकता है। ज्ञानके पानेसेही मनुष्य सब शास्त्रकी बातोंको जान सकता है, और शास्त्रमें निष्ठावान् होके धर्म्मका अनुष्ठान करनेमें प्रवृत्त होता है। उस समय लज्जा उसकी मुख्य अङ्ग होजाती है; जिसको लज्जा रहती है, उसीको श्री और सम्पद बढ़ती है। जबतक पुरुष लज्जावान् रहता है, तभीतक उसको यथार्थ पुरुष मानते हैं! जो सदाही धर्म्मकार्य्योंके करनेवाले और शान्त-स्वभावके पुरुष होते हैं, वे सदा विचार-पूर्व्वक कार्य्य करते हैं। उनकी बुद्धि कभी अधर्म्म कर्म्मोंके करनेमें नहीं जाती और न वह पापमें प्रवृत्त होते हैं। लज्जा रहित व्यक्ति

चाहे स्त्री हो चाहे पुरुष उसका धर्म्मसें यदि प्यार नहीं रहता, वह शूद्रकी भांति निकृष्ट मनुष्योंमें गिना जाता है। तेजस्वी पुरुष देवता, पितर और माताकी प्रीतिके निमित्त उत्तम कार्य्योंको करते हैं, और उससे मुक्तिको पाते हैं। मुक्तिही पुरुषकर्म्म करनेवाले मनुष्योंकी अन्तिम सीमा है। हे मधुसूदन! मैंने जो वचन कहे उन्हें मुझोंमें तुम प्रत्यक्ष देख रहे हो; हम लोग राज्यसे भ्रष्ट होकर जिस प्रकारसे कई वर्षोंको बिताते हुए निवास कर रहे हैं, वह भी तुमसे छिपा नहीं है, इससे अब वर्त्तमान समयमें हम किसी न्यायके अनुसारभी लक्ष्मीका परित्याग नहीं कर सकते। अपने राज्यको लेनेके निमित्त यत्न करनेमें यदि हम लोगोंकी मृत्यु हो जाय तो वह भी उत्तम है। हे माधव! इस विषयमें हम लोगोंका पहिला विचार यही है, कि हम सब आपसमें सन्धि करके सम्पूर्ण राज्यको बराबर हिस्सोंमें बांटके शान्तिपूर्वक राज्यका भोग करें। यदि किसी प्रकारसेभी यह कार्य्य पूरा न हो, तो मेरी इच्छा न रहनेपरभी कौरवोंको वध करके अपने राज्यको जिसको कि उन लोगोंने हर लिया है, उसको फिर भी लेना पड़ेगा। परन्तु युद्धमें प्रवृत्त होकर ऐसा भयङ्कर संहार कर्म्मको करना बहुतही निकृष्ट और निन्दनीय है। हे कृष्ण! जो सब शत्रु अत्यन्तही नीच-वृत्ति और अपनी प्रतिकूलताको करते रहते हैं, जिनके सङ्ग कुछभी सम्बन्ध नहीं रहता, उनकोभी वध करना अनुचित कार्य्य है। परन्तु जिनके साथ इस प्रकारका अत्यन्त निकट सम्बन्ध है, उन कौरवोंकी बातको मैं क्या कहूंगा? अनगिनत जातिके लोगों तथा गुरुजनोंके वध करनेसे जो महापापका कर्म्म होगा, उससे और क्या सन्देह है? इससे युद्ध करनेसे किसी भांतिसे मङ्गल तथा कल्याणकी सम्भावना नहीं दीख पड़ती है। परन्तु यह पापमय कर्म्मही क्षत्रियोंका धर्म्म होरहा है। और हम लोगोंनेभी इसी अधम क्षत्रियकुलमें जन्म ग्रहण किया है, इससे धर्म्म हो अथवा अधर्म्म हो, युद्धके अतिरिक्त अन्य कर्म्म हम लोगोंके पक्षमें निन्दनीय है। शूद्र लोग सेवा करते हैं, वैश्य लोग वाणिज्य करते हैं; हम लोग हिंसा कर्म्मको करते हैं, और ब्राह्मण लोग भिक्षावृत्तिसे अपना निर्व्वाह करते हैं, यही सनातन धर्म्म है। हे कृष्ण! जिसका जैसा धर्म्म है, उसीके अनुकूल कार्य्य करनेमें वह प्रवृत्त होता है। देखिये जैसे मछली मछलियोंसे अपने जीवनकी धारणा करती है, और कुत्ते कुत्तोंकी हिंसा करते हैं, उसी भांतिसे क्षत्रिय लोगभी क्षत्रियोंका वध किया करते हैं। हे कृष्ण! युद्धस्थानमें कलियुग सदाही समीप रहता है, क्योंकि युद्धमें बड़े बड़े महात्मा अनायासही मारे जाते हैं। बल नीतिके ऊपर निर्भर करता है, यह ठीक है, परन्तु जीतना और हारना यह दैवहीके आधीन है। हे यदुकुलश्रेष्ठ! प्राणियोंका जीना मरना इच्छानुसार नहीं होता, और बिना समय पहुंचे कोई सुख तथा दुःखका अधिकारीभी नहीं होता। एक पुरुष भी अनगिनत मनुष्योंके प्राणका संहार कर सकता है, और बहुतसे मनुष्य मिलकरभी एक पुरुषको नहीं मार सकते हैं, पुरुषार्थसे रहित निर्बल मनुष्यभी शूरवीर पुरुषका वध कर सकता है, और यशहीनसे यशस्वी पुरुषके नाशको करनेमें समय हो जाता है। यह ठीक है, कि दोनों पक्षको पराजय नहीं होने पड़ती, परन्तु प्रायः समानही क्षति दोनों पक्षोंकी देखी जाती है; जो हार जाते हैं, उनकी सेनाका नाश और धनका व्यय दोनोंही होता है, इस निमित्त युद्ध कर्म्म सदाही पाप-कर्म्म है। एक मनुष्यको घायल करके कौन पुरुष आप घायल नहीं होता? घायल पुरुषोंकी हार और जीत दोनोंही समान है। मेरे

विचारमें मरने और हार जानेमें कुछ विशेष अन्तर नहीं है? जिसकी जीत होती है, उसेभी बहुतसी क्षति उठानी पड़ती है। चाहे शत्रु लोग उसे न मार सकें, परन्तु उसके प्यारे तथा प्रेमपात्र किसी न किसी पुरुषको तो मारतेही हैं; इससे एक तो वह पहिलेसेही बलसे हीन हो रहता है, दूसरे पुत्र, सहोदर तथा अन्य प्रियजनोंको न देखनेसे अवश्यही उसको जीवनके निमित्त वैराग्य उत्पन्न होजाता है। जो लोग धीर, लज्जाशील और कारुणिक तथा दयावान होते हैं, वेही संग्राममें मरते हैं, और निकृष्ट मनुष्य प्रायः बच जाते हैं। हे केशव! उत्तम शत्रुओंको मारकरभी उसे सब दिनके लिये पश्चाताप करना पड़ता है, विशेषतः यदि मारनेवालोंमेंसे बचा हुआ कोई शत्रु भी बाकी रहता है, तो शत्रुताके विषयमें उसकी पापमयी आसक्तिभी बनी रहती है, वही पुरुष उससे बलवान होकर विजयी पुरुषोंके मरनेसे बचे हुए मनुष्योंका सर्वनाश कर देता है, अर्थात उनका कुछभी बाकी नहीं छोड़ता, शत्रुताको शेष करनेकी अभिलाषासे वह सबका संहार करनेमें यत्नवान होता है। इस प्रकारसे जीत शत्रुताकी वृद्धि करती है, और जिस मनुष्यकी हार होती है, वह दुःखसे अपने दिनोंको बिताता है। जिसको किसीके सङ्ग शत्रुता नहीं है, उसे हार जीतका भय नहीं होता, इससे वह शान्तचित्त होकर सुखसे नींद सोता है; परन्तु शत्रुता करनेवाले मनुष्योंको बड़ाही दुःख है, सर्पसे युक्त स्थानमें वास करनेसे मनमें जैसे चिन्ता तथा घबराहट लगी रहती है, उनकोभी वैसेही चिन्तामें दुःखी रहना होता है। जो मनुष्य सबका नाश करनेवाला होता है, उसे कभी यशका पात्र नहीं हो रहता; [illegible] और [illegible] वह उससे पतित हो जाता है, और सब लोगोंके बीचमें सदा रहने-वाली अकीर्त्तिको सञ्चय करता है। बहुत कालतक प्रज्वलित रहनेपरभी शत्रुरूपी अग्नि नहीं बुझती। शत्रुके कुलमें यदि कोई पुरुष विद्यमान रहता है, तो उससे पहिले पुरुषोंके किये हुए वैर वृत्तान्तको कहनेके निमित्त बहुतसे मनुष्यभी उपस्थित रहते हैं। हे केशव! वैरसे कभी शत्रुताका शेष नहीं होता, बल्कि अग्निमें घी पड़नेकी भांतिसे औरभी बढ़ता रहता है। इससे जब छिद्र सदाही बना रहता है किसी भांतिसे उसका शेष नहीं होता, तब एक पक्षके पूर्ण रूपसे नष्ट किये बिना शान्ति नहीं हो सकती। जो लोग छिद्रकी खोजनेकी इच्छा करते हैं, उनमें यही एक दोष सदा लगा रहता है। पुरुषार्थका कार्य्य जो सदाही एक प्रबल मानसिक ताप उत्पन्न करके अन्तर्दाह किया करता है, या तो उसका शेष होजाय अथवा अपनी मृत्युही होवे—इन्हीं दोनोंमेंसे एकके होनेसे शान्ति हो सकती है। हे मधुसूदन! शत्रुओंको मूल सहित नाश करनेसेभी बहुत कुछ फल मिल सकता है, परन्तु शत्रुओंको मूल समेत नाश कर देना अत्यन्तही निठुर मनुष्यका कार्य्य है। राज्यके त्यागनेसे जो शान्ति हो सकती है, राज्यके निमित्त प्राणियोंका वध करनेके लक्षित इसमें कुछभी विशेषता नहीं रहती। क्योंकि उसमें शत्रुके पक्षकी शङ्का और अपने पक्षके नाशकी सम्भावना बनी रहती है। इससे राज्यको छोड़नेकीभी मेरी इच्छा नहीं है और कुलके नाश करनेकेभी मेरी अभिलाषा नहीं है। इस विषयमें जिससे किसी भांतिसे युद्ध न करना पड़े वैसाही प्रयत्न सब प्रकारसे करना चाहिये। यदि अवनति स्वीकार करनेसे शान्तिकी रक्षा हो सके, तो सबसे उत्तम है; क्योंकि इसी प्रकारकी शान्ति श्रेष्ठ मानी गई है। यदि साम-दानसे कोईभी काम न होने पावे तब युद्ध तो प्रसिद्धही है, उस समय पराक्रमभी प्रदर्शित करना उचित

नहीं है। परन्तु सामवादके निष्फल होनेपर अवश्यही महा घोर कर्म्म अर्थात युद्ध करना पड़ता है. कुत्तोंकी लड़ाईके समयमें पण्डित लोग उसको पूरी उपमाको दृष्टिगोचर करते हैं। कुत्ते पहिले पंक हिलाते और चिल्लाते, और प्रत्युत्तर देते तथा चक्रकी भांति चारोंओर घूमते. और दांत दिखाते हैं; फिर बड़े जोरसे चिल्लाते रहते हुए युद्धमें प्रवृत्त होते हैं। हे कृष्ण! उनमें जो बलवान होता है, वह दूसरेको हराके उसका मांस खाता है। विचार करके देखनेसे मनुष्योंमें भी यही दशा है, विशेषता कुछ भी नहीं है। परन्तु निर्बल मनुष्योंपर अपने बलको दिखलाना, और उनसे विरोध करना बलवानको कभीभी उचित नहीं है; क्योंकि निर्बल मनुष्य सहजहीमें अवनति तथा अधीनताको स्वीकार कर लेता है। हे जनार्द्दन! धृतराष्ट्र हम लोगोंके जेठे पिता, राजा वृद्ध और माननीय है, इससे उनके सम्मुख अनुराग, पूजा और अवनति दिखलाना हम लोगोंका जो कर्त्तव्य कर्म्म है, उसमें कौन सन्देह कर सकता है? परन्तु हे कृष्ण! धृतराष्ट्रको पुत्रस्नेह बहुत-प्रबल है, पुत्रोंके वशमें होकर वह हम लोगोंकी बिनतीको अस्वीकार करेंगे। उसके अनन्तर तुम किस कर्त्तव्य-कर्म्मको उत्तम समझते हो? किस प्रकारसे मैं धर्म्म और अर्थसे विमुख न होऊंगा? हे मधुसूदन! हे पुरुषोत्तम कृष्ण! ऐसे महाघोर अर्थ-सङ्कटमें मैं तुम्हारे अतिरिक्त और किस मनुष्यके निकट परामर्श करूंगा? तुम्हारे समान हितैषी, प्यारा, सब विषयोंके यथार्थ सिद्धान्तको निश्चय करनेवाला और सुहृद मेरा दूसरा कौन है?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, धर्म्मराजकी इन सब बातोंको सुनकर जनार्द्दन कृष्णने कहा, महाराज! मैं आपके दोनो प्रयोजनोंको सिद्ध करनेके निमित्त कौरवोंकी सभामें जाऊंगा, वहांपर आपके अभिलषित विषयको स्थिर रखके यदि शान्ति स्थापित कर सकूंगा, तो मेरा महा फलसे युक्त, बहुत बड़ा पुण्य-कर्म्मका अनुष्ठान सिद्ध होगा। सन्धि करनेसे कौरव सृञ्जय, पाण्डवों तथा धृतराष्ट्रके पुत्र और समस्त पृथ्वीके राजा तथा मनुष्योंको मृत्युके मुहसे मुक्त करूंगा।

युधिष्ठिर बोले, हे कृष्ण कौरवोंकी सभामें जाओगे, यह मुझे किसी अवस्थामेंभी ठीक नहीं जंचता है। तुम उत्तम युक्ति तथा परामर्श दोगे, तौभी तुम्हारी बातोंको दुर्य्योधन न मानेगा। हे कृष्ण! दुर्य्योधनके वशवर्त्ती अनेक बीचमें तुम्हारा प्रवेश करना किसी प्रकारसे भी मेरे मतमें उत्तम तथा कल्याणकारी नहीं मालूम होता है। हे माधव! यदि तुम्हारे ऊपर कोई बुरा आचरण करेगा, तो हमारे राज्य धन, और सुखकी बात तो दूर रही, स्वर्गकाभी सम्पूर्ण ऐश्वर्य्य और साक्षात देवत्व पदार्थभी मुझे प्यारा न होगा।

श्रीभगवान बोले, हे महाराज! दुर्य्योधन जैसा पाप बुद्धिवाला पुरुष है, वह मुझसे छिपा नहीं है; तौ भी उसके निकट जानेसे हम लोग पृथ्वीके सब राजाओंके समीप सब भांतिसे निन्दा-रहित रहेंगे। मेरे क्रुद्ध होनेपर कौरवोंकी सभामें सब राजा लोग वैसेही न ठहर सकेंगे जैसे सिंहके सम्मुख साधारण पशु लोग नहीं खड़े रह सकते। यदि वे लोग मेरे सङ्ग किसी अयुक्त व्यवहारके करनेमें प्रवृत्त होंगे तो मैं सम्पूर्ण कुरुकुलको भस्म कर दूगा, मुझे ऐसाही निश्चय है। हे पार्थ! उस स्थानपर मेरा जाना कभी व्यर्थ न होगा, यदि प्रयोजन सिद्ध न होगा तो अन्तमें हम लोगोंका अपवादसे ग्रस्त नहीं होना पड़ेगा।

युधिष्ठिर बोले, हे कृष्ण! जैसी तुम्हारी इच्छा हो, वैसाही करो। सब प्रकारसे कुशल पूर्वक कौरवोंके समीप जाकर, उन लोगोंको इस प्रकारसे शान्त करो जिससे हम लोग

सन्धिकी सूचनेंसे बद्ध होकर प्रीति पूर्व्वक अपने समयको बिता सकें। इस समय यही प्रार्थना है, कि लौटनेके समय जिसमें तुम्हें कृतकार्य्य और कल्याणयुक्त देख सकूं। हे जनार्द्दन। तुम हम लोगोंके भाई और मित्र हो, तुम मेरे और अर्ज्जुनके समान रूपसे प्यारे हो तुम्हारे सङ्ग हम लोगोंकी ऐसी सुहृदता उत्पन्न हुई है, कि किसी विषयमें भी तुमसे शङ्काकी सम्भावना नहीं है, इससे हम लोगोंके मङ्गल-कार्य्यके साधन करनेके निमित्त तुम अपनी शुभयात्राको करो। हे कृष्ण। तुम हम लोगोंको भी जानते हो और शत्रुओंको भी खूब जानते हो, जो कुछ प्रयोजन है, वह भी तुमसे छिपा नहीं है, जिस प्रकारका प्रस्ताव करना उचित है, वहभी तुमको अविदित नहीं है। हे केशव। इससे सन्धि हो, अथवा युद्धहीका प्रसङ्ग हो, जो हम लोगोंके हितकारी और धर्म्मके अनुयायी विषय हों, तुम वह दुर्योधनके निकट कहना।

७२ अध्याय समाप्त।

युधिष्ठिरकी बात समाप्त होनेपर कृष्ण बोले, मैंने सञ्जयकी बात सुनी है और आपकाभी वचन सुना है। शत्रु लोगोंके और आपके जो कुछ अभिप्राय है, वह भी मुझसे छिपे नहीं है। आपकी बुद्धि धर्म्मके अनुसार कार्य्य करना चाहती है, और उन लोगोंकी बुद्धि केवल शत्रुताके आचरणहीमें रत है। युद्धके बिना कियेही जो कुछ मिले वही आपके मतमें उत्तम बोध होता है। परन्तु हे महाराज! सब आश्रमवाले कहते हैं, कि क्षत्रिय जो भिक्षाजीवी होते हैं, ऐसा ब्रह्मचर्य्य सब दिनके लिये क्षत्रियोंके पक्षमें कल्याणकारी नहीं है। विधाताने युद्धमें जीत और हारका ही इन्होंने विधान किया है, वही क्षत्रियोंका सनातन धर्म्म है; दुर्बलताको प्रकाशित करना क्षत्रियोंके पक्षमें कभी भी प्रशंसाका विषय नहीं हो सकता। हे महाबाहो युधिष्ठिर। दीनभावको ग्रहण करनेसे क्षत्रियोंकी जीविका निर्व्वाह करना बहुतही कठिन हो जाता है। हे परन्तप। इससे पूर्ण बलको प्रकाश करके शत्रुओंका नाश कीजिये। धृतराष्ट्रके पुत्र लोग अत्यन्त लोभके वशमें होगये हैं, उन लोगोंने बहुत दिनोंतक अनेक वीरोंके सङ्ग स्नेह और मित्रता करके पूर्ण बल सञ्चय किया है, इससे वे लोग किसी प्रकारसेभी आपके सङ्ग सन्धि न करेंगे। हे नरनाथ। भीष्म द्रोण, कृपाचार्य्य आदिकी सहायता पाकर वे लोग अपनेको अत्यन्त बलवान समझ रहे हैं, इससे जबतक आप कोमलभावको ग्रहण करके उन लोगोंके समीप नम्रता प्रकाश किया करेंगे, तबतक वे आपको अवश्यही राज्यभोगसे बञ्चित रक्खेंगे, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। हे शत्रुनाशन। धृतराष्ट्रके पुत्र लोग न करुणा, न दीनता और न अर्थ तथा धर्म्मके ज्ञान आदि किसी विषयसेभी आपके मनोरथको पूरा करनेमें समर्थ होंगे। हे पाण्डव। जब वे लोग उस भांतिके सदा खड़े करनेवाले कौपीनको आपको पहरा करके तनिकभी दुःखी और सन्तापित नहीं हुए थे, तबहीसे सन्धि न करनेका निमित्त अर्थात कारण समझ लीजिये। हे राजन्। आप ऐसे धर्म्म परायण, मृदुस्वभाव युक्त दानशील और व्रतके करनेवाले होनेपर भी, जिस एकपने भीष्म, द्रोण, बुद्धिमान् विदुर, महात्मा ब्राह्मणों, तथा राजा धृतराष्ट्र और मुख्य मुख्य कौरव और नगर निवासियोंके सन्मुखही आपको कपटके जुवेका खेलके जीतकर, ... उस किये हुए बुरे कर्म्मके निमित्त तनिकभी लज्जा नहीं करी, उस शील रहित, दुराचारी, और क्रूरबुद्धि दुर्योधनके ऊपर आप कदापि ... न कीजिये। हे भारत। आपको जान ... है, वह सब लोगोंके मारे जानेके योग्य है, ... बार ध्यान देकर देखिये तो सही, दुर्योधनने

भाइयोंके संग मिलकर, अत्यन्त आनन्दित होके, अपनी बड़ाई करता हुआ, बहुतसे न कहने योग्य वचनोंसे आपको तथा आपके भाइयोंको किस भांतिसे मर्म-पीड़ा पहुंचायी थी? उसने मुक्त-कण्ठसे कहा था, कि इस पृथ्वीके बीचमें पाण्डवोंकी कोई भी वस्तु ऐसी नहीं है, जिसे वह अपनी कहे, ऐसा क्या इन लोगोंका नाम और गोत्र पर्य्यन्तभी लुप्त हुआ, महाकालके सङ्ग इन लोगोंको अवश्यही पराभव होगी। इनका राज्य इस समय मेरे अधिकारमें हुआ है; इससे ये लोग अपनी जीविकाके निमित्त प्रजाकी सहायताको अवलम्बन करेंगे।" और भी देखिये जूएका खेल समाप्त होनेपर पाप-बुद्धि दुरात्मा दुःशासनने रोती हुई द्रौपदी देवीको सभामें लाकर भीष्म, द्रोण,आदिके सम्मुख बारम्बार दासी दासी कहके हंसी करी थी। उस समय आपने महा बलवान अपने भाइयोंको निवारण कर दिया, वे लोग धर्म्मपाशमें बंध कर कुछभी प्रतिकार न कर सके। आपके बनमें चले जाने परभी दुर्य्योधनने जातियोंके बीच पहिलेकी भांति तथा दूसरी भांतिसेभी अनेक कठोर वाक्योंको कहकर अपनी बड़ाई करी थी। जो सब उस स्थानपर उत्तम स्वभाव-से युक्त पुरुष उपस्थित थे, वे सब आपको निर-पराधी समझकर आंसू बहाते हुए सभामें बैठे थे। ब्राह्मण तथा राजा लोग कोई भी उसकी बातोंसे आनन्दित नहीं हुए थे, बल्कि सब सभासदोंने उसकी निन्दा करी थी। हे शत्रुतापन महाराज! कुलीन पुरुषोंके निमित्त निन्दाही वध है; बल्कि निन्दायुक्त जीनेसे एक बार मर जानाही सौ-गुणा उत्तम है। पृथ्वी भरके राजाओंमें निन्दित होकरभी जब उसने कुछभी लज्जा नहीं करी, तब उसके मरनेमें अब बाकीही क्या है? जिसके कर्म्म ऐसे बुरे और निन्दनीय हैं, उसको मारना एक साधारण कार्य्य है। जैसे वृक्षकी सब जड़ कट जाती है, केवल बीचकी जड़ही शेष रहती है, इसी प्रकारके वृक्षकी भांति तथा भय देनेवाले, सर्पकी भांति; वह क्षुद्राशय नीचबुद्धि दुर्य्योधन सब लोगोंसे मारे जाने योग्य है। हे शत्रुनाशन! इससे आप उसका वध कीजिये, इसमें किञ्चित मात्रभी सन्देह और शङ्का न कीजिये। हे पाप रहित! धृतराष्ट्र तथा भीष्मके निकट आप जो सदा विनीतभाव स्वीकार करते हैं, यह सब प्रकार आपके योग्य है और मुझेभी स्वीकार है हे राजन्! इससे मैं वहांपर जाकर दुर्य्योधनके ऊपर जिन लोगोंका द्विधाभाव है, उन सबके संशयको दूर करूंगा। इकट्ठी हुई राजाओंकी मण्डलीके बीच सब लोग आपके गुण और दुर्य्योधनके दोषोंको गावेंगे। नाना देशोंसे आये हुए राजा लोग, मेरे धर्म्म और अर्थसे भरे हुए बचनोंको सुनकर, अवश्यही आपको धर्म्मात्मा और सत्यवादी कहके विश्वास करेंगे और दुर्य्योधन लोभके वशमें होकर जिस प्रकारके नीच कर्म्मोंको कर रहा है, उसेभी सब लोग खूब समझ लेंगे। केवल राजमण्डलीही क्यों सुनेगी, वहांपर आये हुए ब्राह्मण आदि चारों वर्ण, बनवासी, नगरके रहनेवाले बालक, बूढ़े सबके सम्मुखही मैं दुर्य्योधनकी निन्दा करना आरम्भ करूंगा। आप जब शान्तिके निमित्त प्रार्थना करते हैं, तब आपको कौन अधार्म्मिक कहेगा? परन्तु मनुष्य मात्रही कौरवोंको, विशेष करके धृतराष्ट्रको अनेक प्रकारसे निन्दा करेंगे; इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। हे राजन्! वह जब सब लोगोंसे रहित पापी दुर्य्योधन निन्दासे मृततुल्य होजायगा तब आपके कर्त्तव्य कर्म्ममें बाकीही क्या रहेगा! इससे मैं कौरवोंकी सभामें जाकर आपको अर्थको हानि न करके, सब प्रकारसे सन्धिही करनेके निमित्त यत्नवान होऊंगा, और उन लोगोंकी युद्ध-निश्चयकी प्रवृत्ति और क्या

चेष्टाओंको देखकर श्रीकृष्ण आपके जयकी निमित्त लौट आऊंगा ! हे भारत ! बुरे सगुनोंको जिस प्रकारसे मैं देखा रहा हूं, उससे शत्रुओंके सङ्ग युद्ध करना होगा, यह सब प्रकारसे मालूम हो रहा है। देखिये सन्ध्या-समय हरिण और पक्षी भयङ्कर शब्द करते हैं, और हाथियोंका भयङ्कर रूप दीख पड़ता है, और अग्नि बहुत प्रकारके विकट वर्णोंको धारण कर रहो है। हे नरेन्द्र! मनुष्योंको नाश करनेवाले महा बिकराल समयके विना आये कभीभी ऐसी घटना नहीं होती। इसमे इसी समयसे आपके योद्धा लोग अस्त्र, कवच यन्त्र, रथ, घोड़े और हाथी आदि सब युद्धकी सामग्रियोंको सज्जित करके रथ, घोड़े और हाथियोंको फेरनेमें नियुक्त होजावें। हे राजेन्द्र! युद्धके निमित्त जिन वस्तुओंका संग्रह करना होता है, आप सब चीजोंको इकट्ठो कर रखिये। हे पाण्डवराज! दुर्य्योधनने पहिले जुएसे आपकी समस्त राजलक्ष्मी तथा राज्यको हर लिया था, इस समयमें जीते जी वह कभी आपको उस धन और राज्यको लौटानेमें समर्थ न होगा।

७३ अध्याय समाप्त।

भीम बोले, हे मधुसूदन! जिस प्रकारसे कौरवोंके बीच शान्ति स्थापित होवे, तुम उसी प्रकारसे प्रस्ताव करना। युद्धके प्रसङ्गसे तुम कभी उन लोगोंको भय न दिखाना। महाक्रोधी, उत्साहयुक्त, कल्याणका विरोधी, और महा अभिमानी दुर्य्योधनको किसी प्रकारका कठोर वचन कहना उत्तम न होगा, इस निमित्त साम वादसेही उसको शान्त कीजियेगा। हे कृष्ण! जो मनुष्य स्वाभाविक पापी, दस्युके समान चित्त-वाला, ऐश्वर्यसे मतवाला, पाण्डवोंके सङ्ग सदा बैर करनेवाला, अदूरदर्शी, निठुर, साधुओंका अपमान करनेवाला, क्रूर पराक्रमी, सदा क्रोधमें रहनेवाला, विनय-रहित, पाप-बुद्धि और वञ्चना-प्रिय है, जो मूढ़बुद्धि वरन प्राण देना स्वीकार करता है, परन्तु अपने मतको त्यागकर अपनी इच्छाको भङ्ग करनेमें कभी सम्मत नहीं होता, ऐसे पामरके सङ्ग सन्धि करनी बहुतही कठिन कार्य्य है। वह स्वयं भी धर्म्मके मर्म्मको नहीं समझ सकता और सुहृद लोगोंकी बातोंके भी वशमें नहीं होता, इसीसे धर्म्मत्यागी और मिथ्याप्रिय होकर सुहृद लोगोंकी बात और अपने मनकी बातों पर केवल आघात मात्र करता है। तृण आदिसे छिपा हुआ सर्प जिस प्रकारसे अपनी स्वाभाविक खलता-प्रकाशित करता है; वहभी उसी प्रकारसे अपने स्वाभाविक दुष्टता अनुसार क्रोधके वशमें होकर पाप कर्म्मोंको किया करता है।

हे केशव! दुर्य्योधनकी जितनी सेना, जैसा शील, बल, और पराक्रम है, वह सबही आपको विदित है। देखिये पहिले कौरव लोग पुत्रोंके सहित सदा प्रसन्न चित्तसे रहते थे, और हम लोगभी इन्द्रके समान भाइयों समेत आनन्द और सुखसे काल यापन करते थे, परन्तु हे मधुसूदन! बाससे बांस रगड़ खानेसे जैसे अग्नि प्रगट होकर समस्त वनको भस्म कर देती है, वैसेही दुर्य्योधनके क्रोध रूपी अग्निसे इस समय भरतवंश भी भस्मीभूत होजायगा। हे कृष्ण! जिन्होंने ज्ञाति, कुटुम्ब और बन्धु बान्धवोंका नाश किया था, नीचे कहे हुए वह अठारह राजा लोग विख्यात हैं। धर्म्मके परिवर्त्तन कालके अन्त पर जैसे तेज-पुञ्जसे प्रज्वलित असुरोंके कुलमें कलियुगकी उत्पत्ति हुई थी, वैसेही हैहयवंशमें उदावर्त्त, नीपवंशमें जनमेजय, तालजङ्घ वंशमें बहुल, कृमिवंशमें वसु, सुवीरवंशमें अज-बिन्द, सुराष्ट्र वंशमें रुषर्द्धिक, बलीह वंशमें

अ...ज, चीनवंशमें धौतमूलक, विदेहवंशमें हय-ग्रीव, महौजस वंशमें वरयु, सुन्दरवेग वंशमें बाहु दीप्ताक्ष वंशमें पुरुरवा, चेदि-मत्स्य वंशमें सहज, प्रवीर वंशमें वृषध्वज, चन्द्रवत्सवंशमें धारण, मुकुट वंशमें विगाहन और वन्हिवेग वंशमें सम राजा उत्पन्न हुए थे। युगके अन्तमें जैसे ये सब कुलके नाश करनेवाले पुरुषोंमें अधम राजालोग उक्त कुलोंमें जन्मे थे, वैसेही इस वर्त्तमान युगके अन्तमें काल-प्रेरित कुलको नाश करनेवाला दुर्य्योधनने भी साक्षात पापकी मूर्त्ति होकर कुरुकुलमें जन्म लिया है, हे उग्र पराक्रम! इससे आप उग्रताको त्यागहोके उसके समीप मीठे बचनोंसे, जिसमें उसका चित्त आकर्षित हो, उसी भांतिसे उसके अभिलषित विषयोंसे युक्त, धर्म्म और अर्थसे भरे हुए हितकारी वचनोंको कहियेगा। हे कृष्ण! हम लोग नम्रभावको ग्रहण करके वरन दुर्य्योधनके अनुगामी होकर चलेंगे, तौभी ऐसा नहीं चाहते जिससे हम लोगोंका भरतवंश नष्ट होने पावे। हे कृष्ण! जिसमें कौरवोंके सङ्ग किसी विषयका संसर्ग न रहनेसे हम लोगोंका आपसमें उदासीन (विरक्त) की भांति व्यवहार न हो, आपको उसहीको चेष्टा करनी होगी। उसकी नीच बुद्धिके कारण जिसमें किसी भांति कुरुकुलके नाश होनेसे, हम लोगोंको किसी प्रकारके दोषोंका स्पर्श न होने पावे। हे कृष्ण! बुद्धिमान पितामह और दूसरे सब सभासदोंसे कहना, कि वे लोग यत्नवान होकर दुर्य्योधनको शान्त करें, भाइयोंके बीच सुहृदता स्थापित होवे। शान्तिके विषयमें मैं ऐसाही कहता हूं, और राजा युधिष्ठिरभी इसी बचनको प्रशंसा करते हैं, अर्ज्जुनभी युद्धकी इच्छा नहीं करते हैं, क्योंकि उनके शरीरमें बहुतही दया है।

७४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, पर्व्वतकी निच और अग्निको शीतलताई जिस प्रकार असम है, वैसेही यह कृपासे युक्त, पहिले कभी ...नी गई, क्षमा-सहित बचनोंको सुनकर, मु नन्दन, शारङ्ग धनुषको ग्रहण करनेवाले, व देवके भाई, महाबाहु कृष्ण उनकी हंसी क नेके उद्देश्य और वायुकी सहायतासे अग्नि भांति, अपने वचनोंसे भीमको उत्तेजित कर की इच्छासे कहने लगे, हे वृकोदर! दूसरे स योंमें तो तुम हिंसा-प्रिय, क्रूर-स्वभावसे यु धृतराष्ट्रपुत्रोंको मारनेकी अभिलाषासे युद्ध की प्रशंसा करते हो। हे परन्तप! इसी चिन्ता तुम्हें रात्रिको नींदभी नहीं आती, तुम नी मुह करके शयन करते हुए सारी रात जाग तेही विताते हो, सब समय शान्तिका विरोध रूखा बचनहीका प्रयोग किया करते हो, और अपने क्रोधरूपी अग्निसे रात दिन सन्तप्त होकर धूम सहित अग्निकी भांति आकुल चित्तसे लम्बी-सास लेते हुए, दुर्व्वल पुरुषकी भांति निर्ज्जन स्थानमें अकेले शयन करते हो। जो तुम्हारे यथार्थ भावोंको नहीं जानते वह इन सब अद्भुत आचरणको देख तुमको उन्मत्त कहके स्थिर करेंगे। जैसे कोई कोई हाथी वृक्षोंका तोड़कर अपने पावोंको पटकते मतवाला हुए सब वृक्षों नाश करनेमें प्रवृत्त होकर शब्द करता है, तुमभी उसी भांतिसे कभी कभी घोर शब्द करते हुए वैसेहि दौड़ते हो। हे पाण्डव! मनुष्योंके सङ्ग संसर्ग और बातचीत करनेकी तुम्हारी इच्छा नहीं होती; केवल निर्ज्जन स्थानमें निवास करनाही तुम्हें उत्तम मालूम होता है। क्या रात्रि क्या दिन, सब समय निर्ज्जन वास करनेके अतिरिक्त और कुछभी तुमको प्यारा नहीं लगता। हे भीम! तुम एकान्त स्थानमें बैठकर अकस्मात कभी कभी रो तथा हंसते हुए दोनों केहुनीके ऊपर शिर

टेककर तथा आंख मूंदके बहुत समयतक चुप चाप बैठे रहते हो, फिर सहसा भृकुटीको टेढ़ी करके होठोंको काटते हुए टेढ़े भावसे वारम्वार इधर उधर दृष्टि करते हो। यह सब कर्म्म केवल क्रोधको सूचित करनेवाले है।

हे परन्तप! पहिले भाइयोंके बीचमें तुमने गदाको ग्रहण करके यह प्रतिज्ञा करी थी, कि "सूर्य्य जैसे अपने तेजपुञ्जसे पूर्व्व दिशामें उदय होते हैं, और सुमेरु पर्व्वतको प्रदक्षिणा करते हुए पश्चिम दिशामें अस्त होते है, किसी कालमेंभी उनके नियममें रद बदल नहीं होता, मैं उसी प्रकारसे सत्यप्रतिज्ञा करके कहता हूं, कि क्रोधी दुर्य्योधनके समीप जाकर युद्धमें अपनी गदासे उसे अवश्य मारूंगा, कभी मेरी यह प्रतिज्ञा व्यर्थ न होगी।" परन्तु क्याही आश्चर्य्यका विषय है, कि तुम्हारी बुद्धि आज शान्तिके निमित्त दौड़ रही है, तो यह मुझे निश्चय बोध होता है, कि युद्धका समय आ पड़नेसे युद्धकी अभिलाषा करनेवाले पुरुषोंके मनका भाव सम्पूर्ण बदल जाता है। हे पार्थ! तुम सोते जागते सब अवस्थाओंमें विपरीत निमित्त सब देखते रहते हो; इसीसे बोध होता हैं, कि तुमको शान्तिकी इच्छा हुई है। अहो! तुम क्लीवकी भांति अपने शरीरसे कुछभी पुरुषार्थकी आशा नहीं करते हो? तुम साहसे पड़ गये हो, इसीसे तुम्हारा मन ऐसे विपरीत भावको ग्रहण कर रहा है इसमें किञ्चित मात्रभी सन्देह नही है, तुम्हारा चित्त विषाद-युक्त हो रहा है, तुम हृदयसे दुःखी हो रहे हो, इसीसे शान्तिकी इच्छा करते हो। हे पार्थ। मनुष्यके चित्तको कुछभी स्थिरता नहीं रहती हवाके झकोरसे शाल्मली वृक्षकी भांति कभी वह चञ्चलचित्त हो जाता हैं और कभी स्थिर होता है। गौओंके मनुष्योंके वचन बोलनेकी भांति तुम्हारी यह असम्भव निन्दा-योग्य बुद्धिको देखकर पाण्डुपुत्र सब व्याकुल हो रहे हैं, उनका चित्त विषादरूपी समुद्रमें डूब रहा है। हे भीमसेन! तुम्हारे इस न कहने योग्य वचनोंको सुनकर मुझको अत्यन्तही आश्चर्य्य होता है। जैसे पर्व्वतोंका चलना असम्भव है, वैसेही तुम्हारे मुंहसे ऐसे वचनका निकलना भी आश्चर्य्यजनक है। हे भारत। इससे तुम जिस कुलमें उत्पन्न हुए हो और जिन सब अलौकिक कर्म्मोंका अनुष्ठान तुमने किया है, उन सबको विचारके उत्साहसे युक्त होओ। हे वीर! विषादको त्यागके चित्तको स्थिर करो।" हे शत्रुनाशन! तुम्हारे समान महावीर पुरुषको ग्लानियुक्त होना कभी उचित नहीं है। क्षत्रिय लोग अपने बाहुबलसे जिस विषयको नहीं उपार्ज्जन कर सकते, वह उनके भोग करनेका विषय नहीं होता।

७५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, सदा क्रोधी, किसीकी बातकोभी न सहनेवाले भीमसेन, श्रीकृष्णकी बातोंको सुनकर उत्तम घोड़ेकी भांति उसी समय उत्तेजित हुए और उत्तर देनेके निमित्त शीघ्रता करके बोले, हे अच्युत! मैं और प्रकारसे कार्य्योंका अनुष्ठान कर रहा हूं, और तुम उसे दूसरे प्रकारसे समझते हो। युद्धमें जो मेरी सदाहीसे प्रीति है, और मेरा पराक्रमभी किसी समय निष्फल नहीं होता बहुत दिनोंसे सङ्गमे रहनेसे तुम हमारे उस पराक्रमको जानते भी होगे; परन्तु क्याही आश्चर्य्यका विषय है, कि सब कुछ जान बूझकर भी तुम अजानकी भांति बातें कर रहे हो— जैसे तैरना न जानकर कोई जल भरे तालाबमें डूब रहा हो। इसी निमित्त ऐसी अनुचित और अयोग्य बातें कहकर मेरी निन्दा करते हो। हे माधव! भीमसेनके यथार्थ बल और पराक्रमको जानकरभी कौन मनुष्य तुम्हारी

भांति इस प्रकारके अयोग्य वचनोंका प्रयोग कर सकता है? तुम जो हमारे यथार्थ रूपको नहीं जानते हो, इसी निमित्त मुझको अपने पौरुष और पराक्रमकी बात सुनानी पड़ी। अपने मुंहसे अपनी प्रशंसा करनी अत्यन्तही निन्दनीय है, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। परन्तु क्या करें तुम्हारी निन्दायुक्त बचनोंको सुनके हमसे रहा नहीं जाता, इसीसे मैंने अपने आत्म-बलको तुमसे वर्णन किया। हे कृष्ण! अखिल प्रजापुञ्जका आधार और उत्पत्तिका स्थान यह जो अचल और असीम भूलोक और उर्द्ध-लोक दीख पड़ते हैं; यदि दोनों क्रुद्ध होकर दो शिलाकी भांति आपसमें सहसा मिल जावें, तौभी मैं अपनी दोनों भुजाओंसे सब प्राणियोंके सहित, दोनों लोकोंको रोक सकता हूं। प्रचण्ड परिघकी समान मेरी इन दोनों भुजाओंके बीचके स्थानको एक बार अच्छी प्रकारसे दृष्टिपूर्व्वक देखो, इसमें गिरके फिर निकल जावे, ऐसा मनुष्य मैं इस सम्पूर्ण भूमण्डलमें नहीं देखता हूं। यदि मैं किसी पुरुषको बलपूर्व्वक आक्रमण करूं, तो साक्षात गिरिराज हिमालय, अपार जलनिधि तथा वज्र-धारी इन्द्रभी अपने बलको प्रकाश करके, मेरे हाथसे उसे नहीं छुड़ा सकते। हे अच्युत! पाण्डवोंके प्रति जो आततायी और युद्ध करनेके योग्य क्षत्रिय हैं, उन्हें मैं पृथ्वीमें गिराके सहज-हीमें अपने पांवसे पीसता रहूंगा। हे जनार्द्दन! पहिले मैंने सब राजाओंको पराजित करके जिस प्रकारसे उन्हें वशीभूत किया था, वह कुछभी तुमसे छिपा नहीं है। उसीसे तुम मेरे पराक्रमका बहुत कुछ परिचय पा चुके हो। अथवा यदि प्रातःकालके समान प्रकाशित होनेवाले सूर्य्यकी भांति, मेरे प्रचण्ड प्रभावको तुम नहीं जानते हो, तो उस महा घोर भयङ्कर युद्धमें अच्छी प्रकारसे समझ लोगे। दुर्गन्धसे भरे हुए घावके स्थानको खोलनेकी भांति तुम मुझसे ऐसा कर्कश वचन कहते हो। परन्तु मैंने जो कुछ अपना वर्णन किया है, तुम उससेभी मुझे श्रेष्ठ समझना। जिस दिन वह सब लोकोंके नाश करनेवाला सङ्कट-युक्त संग्राम उपस्थित होगा, उसी दिन तुम मेरे पुरुषार्थको पूर्ण रीतिसे देख सकोगे। केवल तुमही नहीं, सब लोग देखेंगे। मैं कभी रथी, घुड़सवार और गजपतियोंको दूर फेंकता रहूंगा, कभी क्रोधमें भरकर बड़े बड़े वीर क्षत्रिय योद्धाओंके संहार करनेमें उद्यत होऊंगा, और कभी कभी मुख्य मुख्य सेनापतियोंको व्याकुल करता रहूंगा। हे मधुसूदन! मेरे शरीरसे मज्जा आदि सार पदार्थकाभी कभी नाश नहीं हुआ है, और न मेरा चित्तही कभी युद्धसे विचलित हुआ है, यदि सम्पूर्ण लोक क्रुद्ध होकर मेरे विरुद्ध आगमन करें, तौभी मुझको कुछभी भय न होगा। तब कृपासे युक्त होनेका तात्पर्य्य और कुछ नहीं है, केवल सुहृदताको प्रकाश करना मात्र है। जिससे हम लोगोंके भरतवंशका नाश न होवे, इसी निमित्त कृपा करके मैं इन सब क्लेशोंको सह रहा हूं।

७६ अध्याय समाप्त।

श्रीभगवान बोले, तुम्हारे अभिप्रायको जाननेके निमित्तही मैंने प्रीति पूर्व्वक इन वचनोंको कहा था, नहीं तो निन्दा, पाण्डित्य, क्रोध तथा दूसरे कारणसे कुछ नहीं कहा है। तुम्हारा जैसा महात्मा, पराक्रम और कर्म्म है, वह सबही मुझे मालूम हैं, इससे उसके लिये तुम्हारा तिरस्कार नहीं करता हूं। हे पाण्डव! तुम अपने शरीरसे जिस प्रकारके कल्याणकी सम्भावना करते हो, मैं उससेभी सहस्र-गुण अधिक मंङ्गलकी आशा करता हूं। हे भीम! सब राजाओंसे पूजित जिस ऊंचे

वंशमें तुम्हारा जन्म हुआ है; तुम बन्धुबान्धव और सुहृदवर्गके सहित सब प्रकारसे उस वंशके योग्य हो : इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। परन्तु हे वृकोदर। दैव और मनुष्य सम्बन्धी धर्म्मोंकी निरूपण करनेकी अभिलाषा करके पुरुष एकही भांतिके निश्चय करनेमें समर्थ नहीं होता, क्योंकि जो विषय पुरुषकी अर्थसिद्धि-का कारण रहता है, वही दूसरे समयमें उसके विनाशका हेतु हो जाता है। इससे पुरुषके कार्य्य सब प्रकारके सन्देहसे भरे हुए हैं। दोषोंको जाननेवाले बुद्धिमान पण्डित कर्म्मकी गतिको एक तरहसे स्थिर करते हैं, परन्तु वायुकी गतिके अनुसार वह दूसरे प्रकारकी होजाती है। मनुष्योंका किया हुआ कर्म्म सब भांतिसे न्याययुक्त, अच्छी प्रकारसे विचारा हुआ और सुन्दर नीतिसे पूरित रहने परभी दैवके द्वारा नष्ट हो जाता है, तथा सर्दी गर्म्मी, वर्षा, भूख, प्यास आदि अनुष्ठित दैवकर्म्म भी पुरुषार्थके सहित निष्फल हो जाते हैं। जो कर्म्मफल भोग करनेके निमित्त निश्चित हुआ है, उस प्रारब्ध कर्म्मसे भिन्न पुरुष स्वयं जिन कर्म्मोंका अनुष्ठान करता है, उसमें भी उसको बंधना नही पड़ता क्योंकि उससे ज्ञान वा प्रायश्चित होनेसे संचित-पापोंका नाश होता है, ऐसा श्रुति और स्मृतिसे सिद्ध है। इससे हे पाण्डव! विना कर्म्म किये इस संसारमें निर्वाह करनेकी और दूसरी गति नही है। परन्तु दैव-कर्म्म और पुरुषार्थ दोनोंके मिलनेसेही फल सिद्ध होता है, ऐसाही विचार कर कर्म्मके अनुष्ठानमें प्रवृत्त होते हैं उनके कार्य्यके न सिद्ध होनेसे भी कोई बाधा नही और सिद्ध होनेमें भी कोई हर्षकी बात नही है। हे भीम-सेन! इस विषयमें मेरा ऐसाही निश्चय था, कि शत्रुओंके संग युद्ध करनेहीसे अर्थसिद्धि होगी ऐसा मेरे कहनेका प्रयोजन नही था। और भी आत्मिक भाइयोंके उलट-पुलट होनेसे एकबारगी दुःखी और ग्लानियुक्त होना उचित नहीं है; इसी निमित्त मैंने तुम्हें यह सब वचन कहे हैं। हे पाण्डव! कल मैं राजा धृतराष्ट्रके समीप जाकर आप लोगोंकी अर्थ हानि न करके सन्धिस्थापनके निमित्त ही सब प्रकारसे यत्नवान होऊंगा। यदि वे लोग सन्धि करेंगे, तो मेरी भी अनन्तकीर्त्ति और आपलोगोंका भी अभीष्ट सिद्ध होगा; तथा उन लोगोंका भी बहुतही मङ्गल और कल्याण होगा। परन्तु यदि कौरव लोग मेरी बातोंको न मानकर अपने मतके अनुसारही कार्य्य करनेमें प्रवृत्त होंगे, तब अवश्यही महाघोर युद्धके कार्य्यका अनुष्ठान होगा, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। हे भीमसेन। इस युद्धका सम्पूर्ण भार तुम्हारेही ऊपर है। तुम और अर्ज्जुन दोनोंही इस भार-को ग्रहण करके दूसरे वीर योद्धाओंको युद्ध-कार्य्यमें नियुक्त करोगे, और सबके अवलम्ब होगे; क्योंकि युद्धके होनेपर मुझको अर्ज्जुनका सारथी बनना होगा, यही अर्ज्जुनकी अभिलाषा है। नहीं तो मेरी युद्ध करनेकी इच्छा नहीं है, यह वचन कौन कह सकेगा? हे वृकोदर। इससे तुमको क्लीवके समान वचन कहते हुए देख तुम्हारी बुद्धिके ऊपर शङ्का करके, मैंने प्रभाहीन तुम्हारे तेजको फिर प्रकाशित कर दिया।

७७ अध्याय समाप्त।

अर्ज्जुन बोले, हे जनार्द्दन! मेरा जो कुछ वक्तव्य था, उसे धर्म्मराजहीने कह दिया है, परन्तु तुम्हारी बातोंसे बोध होता है कि तुम धृतराष्ट्रके लोभवशके कारण अथवा हम लोगोंके उपस्थित दीनताहीके कारणसे शान्तिका होना कदापि सुन्दर रूपसे ठीक बोध नहीं समझते हो। तुम यह भी मानते हो, कि बिना पराक्रमके प्रकाशित किये [illegible]

निष्फल होती हैं; पुरुषार्थके बिना कोई कर्म्म नहीं हो सकता; और बिना कर्म्म किये कोई फल भी नहीं प्राप्त हो सकता। यही समझके तुमने जो इन सब वचनोंको कहा है, वह यथार्थही होंगे उसमें कौनसी शङ्का है? परन्तु सब निश्चय ज्योंके त्योंही हुआ करते हैं, यह किसी प्रकारसे भी स्वीकार नहीं किया जा सकता। किसी वस्तुको भी सब समयमें असाध्य न समझना चाहिये। हे केशव! तुम हम लोगोंके इस घोर क्लेशको देखके सन्धि-बन्धन होना कठिन कार्य्य समझते हो, यह तुम्हारा समझना ठीक है; परन्तु हमलोगोंके कष्टसे जिन लोगोंको कोई भी फल नहीं हो सकता, उन्हीं शकुनि, दुःशासन और कर्ण आदि नीच-बुद्धि पुरुषोंहीके कर्म्मसे हम लोगोंको यह कष्ट सहना पड़ता है; इससे उत्तम प्रकारसे सन्धिका प्रस्ताव होनेसे कार्य्य सफल हो सकता है। हे कृष्ण! इससे जैसे शत्रुओंके सङ्ग सन्धि बन्धन हो सके, सब भांतिसे उसीका यत्न करना। हे जनार्द्दन! प्रजापति ब्रह्मा जैसे सुर और असुरोंके शुभचिन्तक हैं, वैसेही तुमभी पाण्डव और कौरवोंके बीचमें हम लोगोंके मुख्य सुहृद हो। हे मधुसूदन! इससे कुरु, पाण्डवोंके मनके मैलको दूर करके उनमें शान्ति और सुखको स्थापन करो। मुझे मालूम होता है, कि हम लोगोंके हितका अनुष्ठान करनेमें तुम्हें कुछभी कठिनता न जान पड़ेगी; यदि तुम चेष्टा करोगे, तो अवश्यही कार्य्य सिद्ध होगा उसमें कोशिशही क्या करनी है? एक बार जाकरही तुम अपने कर्त्तव्य कार्य्यको पूरा कर सकोगे। हे वीर! दुर्य्योधनके विषयमें यदि अन्य प्रकारके आचरणको करनाही तुम्हारा अभिप्राय होगा, तो तुम्हारी इच्छाके अनुसारही वह सिद्ध होगा। उससे उसके सङ्गमें हम लोगोंकी सन्धिही होवे अथवा [illegible] अभिप्रायके अनुसार युद्धही करना पड़े, अच्छी प्रकारसे विचारकर तुम जैसा अभिप्राय प्रकाश करोगे, वही हम लोगोंके लिये उत्तम और माननीय होगा। हे मधुसूदन! जब वह दुष्टात्मा धर्म्मपुत्र युधिष्ठिरका सुख और ऐश्वर्य्य न सह सका, तब किसी धर्म्मके अनुयायी उपायके मिथ्या-भाव अर्थात कपट-पाशेके खेलमें निठुर उपायोंको अवलम्बन करके उनके सम्पूर्ण राज्य, धन आदि सब वस्तुओंको हर लिया है, तब उसे पुत्र और बन्धु बान्धवोंके सहित भी मारनेमें दोष नहीं हो सकता। क्षत्रिय कुलमें क्या कोई धनुर्द्धारी पुरुषभी ऐसा उत्पन्न हुआ है, जो शत्रुओंसे युद्धके निमित्त उपस्थित होके अपने प्राणोंके भयसे भी पीठ दिखावेगा? हे कृष्ण! दुर्य्योधनने जब हम लोगोंको अधर्म्मसे पराजित किया और वनमें भेजा तबही वह हम लोगोंके हाथसे मारे जानेके योग्य हो चुका। हे कृष्ण! इससे तुम मित्रोंके निमित्त जो कुछ विधान करते हो, वह अनुचित [illegible] है। बहुतही विनीतभाव तथा अत्यन्त [illegible]रता प्रकाश करनेसेभी उत्तम कार्य्य नहीं [illegible] सकता। अथवा यदि तुम्हारे मतसे [illegible] लोगोंका इसी समयमेंही बध करना कल्या[illegible]कारी होवे, तो तुम शीघ्रही उसको पूरा क[illegible] उसमें कुछभी विचार करनेकी आवश्य[illegible] नहीं है। हे माधव! पापी दुर्य्योधनने [illegible] दीको राजसभामें बुलवाके जिस प्रकारसे [illegible] दिया था, वहभी तुम्हे पूरी रीतिसे वि[illegible] है, और उसका वह अत्याचारभी [illegible] प्रकारसे सहा गया था, वहभी तुम्हें मा[illegible] है। हे माधव! वह जो पूर्ण रीतिसे [illegible] समय पाण्डवोंके सङ्ग न्यायके अनुर[illegible] बर्त्ताव करेगा; यह मेरी बुद्धिमें कि[illegible] प्रकारसेभी ठीक नहीं जंचता है; [illegible] यही बोध होता है, कि ऊसर भूमिमें [illegible] बोनेकी भांति, यह शान्तिके निमित्त सन्धि[illegible]का कार्य्य समस्त निष्फल होगा। इस[illegible]

हे वृष्णिनन्दन। सम्प्रति पाण्डवोंके हित साधन और इसके अनन्तर कर्त्तव्यके विषयमें जो कुछ तुम्हें युक्तियुक्त कार्य्य जान पड़े, शीघ्रही उसका अनुष्ठान करना उचित है।

७८ अध्याय समाप्त।

श्रीकृष्ण बोले, हे महाबाहो! हे पाण्डव। तुम जो कहते हो, वही होगा, मैं कौरव और पाण्डव दोनोंहीके कल्याण करनेके निमित्त यत्नवान होऊंगा। परन्तु हे अर्ज्जुन। दैवी और मनुष्योंके कर्म्ममें सब काल प्रभाव नहीं रहता, यह मुझे निश्चय है। देखिये, अपने कर्म्मकी सहायतासे खेतको शोधते और बोते हैं, परन्तु बिना दैवके पानी बरसाये उन सबमें कभी कोई फल नहीं उत्पन्न होता। इस विषयमें कोई कोई यत्नवान पुरुष यत्न और पुरुषार्थसे जल सींचनेकी बातभी कह सकते हैं, परन्तु जलके सींचने परभी बहुतसे स्थानोंसे दैवकी इच्छासे खेती सूखती हुई दीख पड़ती है। इससे इन्हींको विचारकर महात्मा पण्डित लोग 'दैवकर्म्म और मनुष्यकर्म्म दोनोंसेही लोकोंके हितका कार्य्य संयुक्त है' ऐसा वर्णन करते हैं। मैं भी पुरुषार्थसे जहां तक हो सकेगा वहांतक उद्योग करूंगा परन्तु दैवकृत कर्म्मका खण्डन किसी प्रकारसे भी न कर सकूंगा। हे पार्थ। वह पापी दुर्य्योधन पहिले तो धर्म्म और लोकके भयको त्यागके इच्छाके अनुसार उस प्रकारके पाप कर्म्मोंमें प्रवृत्त होकरभी किञ्चित मात्र दुःखी और लज्जित नहीं होता, उस पर भी शकुनि, कर्ण और दुःशासन आदि दुष्टमन्त्री लोग नित्यही उसकी पापमयी बुद्धिको औरभी बढ़ाते रहते हैं, इससे बिना बन्धु-बान्धव और इष्ट-मित्रोंके सहित मरनेसे वह राज्यको छोड़के शान्तिके निमित्त सन्धि करनेके निदानमें सहमत न होगा; मुझे इसका किसी प्रकार बोध नहीं होता है। धर्म्मराज युधिष्ठिरभी अवनति स्वीकार करके राज्य त्याग करनेकी इच्छा नहीं करते हैं, और नीचबुद्धि दुर्य्योधनभी याचना करनेसे उस राज्यको कभी नहीं लौटावेगा। इससे उसके निकट धर्म्मराजके कहे हुए वचनोंका कहना मुझे अनुचित मालूम होता है। हे भारत। धर्म्मराजने जिन प्रयोजन-सिद्ध वचनोंको कहा है पापी दुर्य्योधन उन वचनोंको कभी पूर्ण न करेगा। परन्तु उसे पूर्ण न करनेहीसे वह सब लोगोंके हाथसे मारे जानेके योग्य होगा, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। हे भारत! उस दुष्टात्माने जब बालक अवस्थाहीमें सब दिनसे अनिष्ट चेष्टा करी है, और उसके अनन्तरभी युधिष्ठिरके ऐश्वर्य्यको देखके उससे सहा न गया, इससे उसने निठुरता और कपट उपायसे उनके राज्यको हर लिया; तब हम लोगोंके हाथसे तो निश्चय मारनेके योग्य हो रहा है, परन्तु वर्त्तमानमें औरभी पापोंके आचरण करनेसे वह पृथ्वीके सब मनुष्योंके हाथसे मारे जानेके योग्य हो जायगा।

हे कुन्तीनन्दन। जिसमें तुम लोगोंसे मेरी जुदाई हो जावे, इस निमित्त दुर्य्योधनने बहुत कुछ यत्न किये थे, किन्तु उसके उस दुष्ट अभिप्रायको मैंने कभी ग्रहण नहीं किया। हे महाबाहो। उसका जैसा मन है, उसेभी तुम जानते हो, और मैं जो धर्म्मराजके प्रिय कार्य्योंके साधन न करनेहीके निमित्त यत्नवान होरहा हूं, वह भी तुमको विदित ही है। इससे उसकी नीचबुद्धि, और अपने अभिप्रायको भली भांतिसे जान सुन करभी, तुम क्यों इस समय अज्ञानकी तरह हमारे ऊपर [illegible] करते हो? [illegible] विशेष करके पृथ्वीके भारको उतारनेके निमित्त स्वर्गसे देवताओंके अवतार लेनेका जो दिव्य विधान है, वह भी तुमसे छिपा नहीं है। [illegible] पार्थ! [illegible] किस प्रकारसे [illegible]

और कार्य्य जो तुमसे हो सकेगा, उसको मैं अवश्यही पूर्ण करूंगा। परन्तु उसके साथ जो सन्धि करनेमें समर्थ होऊंगा, ऐसी आशा नहीं कर सकता हूं। गये वर्षमें जब वह अत्यन्त पीड़ित हुआ था, तब मार्गमें भीष्मने क्या उसे इस शान्तिके विषयमें वचन नहीं कहे थे? उन्होंने कहा भी था, तौभी वह नीचबुद्धि उनके वचनमें सम्मत न हुआ। जो हो, तुमने उसको जब शान्तिके योग्य निश्चय कर लिया है तभीसे वह पराजित हो चुका है। चाहे दुर्य्योधन एक क्षण भरके निमित्तभी सन्तुष्ट न होवे, तौभी धर्म्मराजकी आज्ञा मुझे सब प्रकारसे ही माननी पड़ेगी। उस दुष्टात्माके पापकर्म्मोंकीभी फिरसे आलोचना करी जावेगी!

७९ अध्याय समाप्त।

नकुल बोले, हे माधव। धर्म्मात्मा धर्म्मराज युधिष्ठिरने अपने स्वाभाविक दया आदि गुणोंके अनुसार जो सब अनेक प्रकारके बचनोंको कहा है, उसेभी आपने सुना है, और भीमसेन तथा अर्ज्जुननेभी महाराजके मतके अनुकूल जिस प्रकारसे शान्ति और बाहुबल दोनों प्रसङ्गोंका उल्लेख किया, वहभी आपने सुना, अनन्तर अपने मतकोभी आपने बार बार प्रकाशित किया है। हे मधुसूदन! मेरे मतके अनुसार पहिले तुम शत्रुओंकी बातोंको सुनकर पीछे इन सब बातोंको छोड़के, समयके अनुसार जो कहना उचित बोध होगा, वही कहियेगा। हे शत्रुनाशन केशव! विशेष विशेष कार्य्योंके निमित्त मत स्थिर करना पड़ता है; और उसके करनेहीसे मनुष्य उचित कार्य्योंका निर्व्वाह कर सकता है, परन्तु एक समयमें कोई विषयको एक प्रकारसे निश्चित करते हैं, और दूसरी अवस्थामें वह औरका और ही है। इससे पृथ्वीके सम्पूर्ण मनुष्योंहीकी बुद्धि अनित्य है, सब दिन निश्चित बुद्धिके अनुसार कार्य्यको कर सकें ऐसे मनुष्य इस पृथ्वीपर प्रसिद्ध नहीं हैं। हे कृष्ण! देखिये जबतक हम लोग बनवासमें छिपकर रहते थे, तबतक एक प्रकारकी बुद्धि थी, परन्तु इस समय प्रगट होनेपर उस बुद्धिके विपरीत भाव उदय हुआ है। राज्यके निमित्त अब हमलोगोंका जैसा आदर हो रहा है, बनवासके समय कभी वैसा नहीं हुआ था। हे जनार्द्दन! हमलोग वनसे लौट आये हैं, यह सुनकर सात अक्षौहिणी सेना आपके प्रसादसे आकर इकट्ठी होगई है। अत्यन्त बल और पराक्रमसे भरे इन पुरुषसिंहोंको संग्रामभूमिमें देखकर कौन मनुष्य भयसे पीड़ित न होगा? हे पुरुषसत्तम! इससे आप पहले कौरवोंकी सभामें जाकर शान्तिपूर्व्वक प्रस्ताव कीजियेगा; पीछे भय दिखाते हुए इस प्रकारके बचनोंका प्रयोग कीजियेगा, जिसमें वह नीच बुद्धि दुर्य्योधन भयसे विचलित होजावे। हे कृष्ण! देखिये युधिष्ठिर, भीमसेन, अपराजित अर्ज्जुन, नकुल, सहदेव, मैं, आप, बलदेव, सात्यकी, मत्स्यराज विराट, सम्पूर्ण सेनाके सहित पाञ्चालराज द्रुपद, धृष्टद्युम्न, काशिराज, चेदीपति धृष्टकेतु आदि महापराक्रमशाली वीरोंके युद्धमें प्रवृत्त होनेपर कौन मांस और रक्तके शरीरको धारण करनेवाला पुरुष हम लोगोंके विरुद्ध युद्ध कर सकेगा? हे महाबाहो! इससे आप वहां जाकर धर्म्मराजके अभिलषित विषयोंको पूरी रीतिसे सिद्ध कीजियेगा, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। हे पापरहित! आपको उन हितसे भरे हुए वचनोंको सुनकर और मनुष्य चाहे समझें वा न समझें, परन्तु विदुर, भीष्म, द्रोण और वाह्लिक ये लोग हृदयङ्गम करनेमें समर्थ होंगे, और आपके वचनोंके अनुसारही अत्यन्त प्रार्थना और विनयसे राजा धृतराष्ट्रको तथा दुष्ट मित्रोंके सहित दुराचारी दुर्य्योधनकोभी समझा सकेंगे।

हे जनार्द्दन। आप वक्ता और विदुर श्रोता होनेपर किस कठिन विषयको आप लोग सरल नहीं कर सकेंगे?

८० अध्याय समाप्त।

सहदेव बोले, हे शत्रुनाशन कृष्ण! धर्म्मराजने जो कुछ वचन कहे हैं, यद्यपि यह धर्म्मके अनुकूलही है, तौभी जिसमें युद्ध हो, वही उद्योग आपको करना होगा। हे दाशार्ह! यदि कौरव लोग स्वयंही पाण्डवोंके सङ्ग शान्ति स्थापनके निमित्त सन्धि करनेकी इच्छा करेंगे, तौभी उन लोगोंको आपको हमारे सङ्ग युद्धके निमित्त खड़ा करना होगा। हे कृष्ण! द्रुपदपुत्री द्रौपदीको उस प्रकारसे राज सभामें लाञ्छित हुई देखकर अब बिना दुर्य्योधनके संहार किये किस प्रकारसे उसके विषयमें हम लोगोंको शान्ति मिल सकती है? भीम, अर्ज्जुन और धर्म्मराज धर्म्मके अनुसार चलना चाहते हैं; परन्तु मैं उस धर्म्मको परित्याग करके संग्रामभूमिमें उसके सङ्ग केवल युद्धही करनेका आग्रह करता हूं।

सात्यकी बोले, हे महाबाहो! बुद्धिमान् सहदेवने यथार्थही कहा है, दुर्य्योधनके ऊपर मेरा भी जो पहिलेसे क्रोध बना हुआ है, वह बिना उसके वध किये कदापि शान्त नहीं हो सकता। वनमें पाण्डवोंको मृगचर्म्म धारण किये हुए देखके आपके शरीरमें भी जिस प्रकारसे महाक्रोधका उदय हुआ था, वह क्या आपको स्मरण नहीं है? हे पुरुषोत्तम! दूसरे युद्धमें पराक्रमको दिखानेवाले माद्रीपुत्र वीर सहदेवने जो बातें कहीं, उनमें सब वीर योद्धाओंको भी सम्मति है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महा बुद्धिमान सात्यकी ऐसे वचन कहकर चुप होगये। उसके अनन्तर सब ओरसे सैनिक वीर योद्धाओंके महाघोर सिंहनाद होने लगे, सबने उनको "धन्य धन्य" कहकर हर तरहसे सात्यकीको प्रशंसा करी और सबहीने युद्धके निमित्त अपने उत्साह और इच्छाको प्रकाशित करके उनको आनन्दित किया।

८१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अत्यन्त कृष्णवर्णा, बड़े बड़े लम्बे और घने तथा सुन्दर केशोंको धारण करनेवाली द्रुपदपुत्री यशस्विनी द्रौपदीने महारथ सहदेव और सात्यकीके वचनोंकी अत्यन्तही प्रशंसा करी, परन्तु धर्म्मराजका प्रस्ताव किया हुआ धर्म्मयुक्त और हितकर वचनको सुनकर, विशेष करके भीमसेनको शान्तिके निमित्त उत्सुक देखके अत्यन्तही दुःखित और शोकित होकर आंसू भरे हुए नेत्रोंसे रोती हुई कहने लगी, हे महाबाहो! हे धर्म्मके जाननेवाले मधुसूदन जनार्द्दन! धृतराष्ट्रके पुत्रोंने ठगपना करके पाण्डवोंके सुखको जिस प्रकारसे लोप किया है, वहभी तुम्हें मालूम है, और सञ्जयके यहांपर आनेके अनन्तर महाराज युधिष्ठिरने उन्हें एकान्त स्थानमें ले जाकर पहिले जिस भांतिसे अपने विचारको प्रकाशित किया था, तथा उनके विदा करनेके समयमें जो कुछ वचन कहे थे, वहभी तुम्हें भली भांति मालूम है। हे महातेजस्वी केशव! उन्होंने दुर्य्योधन और उसके दुष्ट-मित्रोंसे कहनेके निमित्त इन्हीं वचनोंको कहा था, कि उस लोगोंको अविस्थल, वृकस्थल, माकन्दी वारणावत और एक दूसरा कोई गांव अर्थात् पांचही गांव दे दीजिये। परन्तु हे कृष्ण! दुर्य्योधनने प्रार्थना करनेवाले लज्जाशील महाराज युधिष्ठिरके उन वचनोंको [illegible] हे जनार्द्दन [illegible] दिखते दुर्य्योधन [illegible] [illegible]

बचनोंको स्वीकार करना उचित नहीं है। हे महाबाहो! पाण्डव लोग सृञ्जयोंके सङ्ग मिलकर उस क्रोधसे भरी हुई कौरवी सेनाके विरुद्ध अवश्य खड़े होंगे। जब साम अथवा दानसे उसके निकटमें कोईभी अर्थ सिद्ध होनेकी सम्भावना नहीं है, तब फिर उसके ऊपर कृपा करनी तुम्हें उचित नहीं है। जो लोग साम और दानसेभी शान्त नहीं होते, उन सब शत्रुओंके निमित्त जीविका चाहनेवाले पुरुषो को दण्डहीका प्रयोग करना चाहिये। हे महाबाहो अच्युत! इसी सेनाके सहित पाण्डवोंके सङ्ग मिलकर शीघ्रही कौरवोंके ऊपर महादण्डका प्रयोग करना तुम्हारा भी कर्त्तव्य कार्य्य है। हे कृष्ण! यह कर्म्म पाण्डुपुत्रोंके योग्य है. और तुम्हेंभी यशदायक होगा, विशेष करके इसे पूरा करनेपर क्षत्रियोंके पक्षमें यह कर्म्म बहुतही सुखका देनेवाला होगा। क्योंकि क्षत्रिय होवे, अथवा ब्राह्मणको छोड़कर दूसरीही जाति होवे, लोभी होनेसे उसका वध करना निज धर्म्मके अनुष्ठानको करनेवाले क्षत्रियोंका कर्त्तव्य कर्म्मही है। परन्तु ब्राह्मण सब पापोंके करने परभी किसी प्रकार मारने योग्य नहीं है, क्योंकि वह सब वर्णोंके गुरु और दान दी हुई वस्तुओंका सबसे पहिले ग्रहण करनेवाले है। हे जनार्द्दन कृष्ण! अबध्यके वध करनेसे जिस प्रकारसे पापोंकी सम्भावना होती है, वैसेही बध्यको भी न मारनेसे दोषका भागी होना पड़ता है, इस बातको धर्म्मके जाननेवाले पण्डितोंने स्पष्ट रूपसे वर्णन किया है। इस निमित्त जिसमें वह दोष तुम्हें स्पर्श न कर सके, पाण्डव और सृञ्जयोंकी सेनाके सङ्गमें मिलकर तुम उसके बधहीका विधान करो। हे कृष्ण! तुम्हारे समीपसे कोई विषयभी छिपाने योग्य नहीं है, जब जो कुछ कहनेकी इच्छा हुई है, उसे मैंने उसी समय कहा है। इस समय पुनरुक्ति दोष होनेपर भी मैं कई एक बातें कहती हूं, उसे तुम सुनो। विचारकर देखो तो सही, इस पृथ्वीमें मेरे समान भाग्यहीन राजपुत्री और कौन है? हे कृष्ण। मैं द्रुपदराजाकी पुत्री वेदीसे उत्पन्न हुई हूं, मैं धृष्टद्युम्नकी प्यारी बहिन और तुम्हारी प्रिय सखी हूं। आजमी वंशमें व्याह होनेसे मैं पाण्डुराजकी पुत्रः और इन्द्रकी समान तेजस्वी पाचों पाण्डुपुत्रो भार्य्या हुई हूं। इन पाचो वीरोंके वीर्य्यसे मैं पाच महारथ पुत्र उत्पन्न हुए हैं। हे कृष्ण अभिमन्यु जिस प्रकारसे तुम्हें प्यारे हैं, मेरे पुत्रभी धर्म्मके अनुसार वैसेही तुम्हारे प्रीतिके पात्र हैं। हे केशव! इस भांतिके सौभाग्ययुक्त लक्षण रहते हुए तुम्हारे जीतेही और पाण्डुपुत्रोंके सम्मुखही मैं राजसभामें बुलाई गई थी, और न सहने योग्य क्लेश मुझे मिले थे। पाण्डव, पाञ्चाल और वृष्णिवंशियोंके जीवित रहतेही, मैं सभाके बीचमें रहकर दुष्टबुद्धि पापियोंकी दासी कही गई थी। उसे देखकर भी जब पाण्डुपुत्र लोग क्रोध शून्य और चेष्टा-रहित होगये, तब मैंने 'हे गोविन्द। मेरी रक्षा करो' यही कहके मनमें केवल तुम्हारा ध्यान किया। हे केशव! अनन्तर उसी समय मेरे ससुर अन्धराज धृतराष्ट्र मुझसे बोले, 'हे द्रौपदी! तू मेरी पुत्रबधू और बरदान पाने योग्य है, इससे तू बर माग" तब मैंने "पाण्डव का दासपना छूट जावे, और वे लोग अपने शोभायमान रथ तथा शस्त्रोंको फिर पावे यही मेरी प्रार्थना है' इस बचनके कहनेसे, वे सब लोग दासपनेसे छूटकर वनवासको चले गये थे। हे पुण्डरीकाक्ष जनार्द्दन! इसी तुम इस प्रकारकी मेरे अनेक दुःख और क्लेशोंको अच्छे प्रकारसे जानते हो, इस समय पति, जाति और बन्धु बान्धवोंके सहित मेरा परित्राण करो। हे कृष्ण! मैं धर्म्मपूर्व्वक भीष्म और धृतराष्ट्र दोनों पुरुषोंकी पुत्रबधू हूं, उन लोगों

सभा खड़ीमें दुष्टात्मा दुर्योधनने मुझे बलपूर्व्वक दासी कहा था। इससे जब वह पुरुषाधम, इस कठिन तथा लवोंको खड़े करनेवाले निन्दित कार्य्य करके क्षण मात्र भी जीवित है, तब अर्ज्जुनके धनुषबाण और भीमसेनके पराक्रमको भी धिक्कार है। हे कृष्ण! यदि मैं तुम्हारे अनुग्रहको पाने योग्य और मेरे ऊपर तुम्हारी कृपा हो, तो तुम धृतराष्ट्रपुत्रोंके विषयमें सम्पूर्णरूपसे युद्धका विधान करना।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उत्तम शरीरवाली कमलनयनी, गजगामिनी यशस्विनी द्रौपदी दुःख पूर्व्वक ऐसे वचनोंको कहकर बहुत सुन्दर, अग्रभागमें टेढ़े, काले, नेत्रोंको आनन्द देनेवाले, सब सुगन्धियोंसे वासित, सब लक्षणोंसे युक्त, महा काले सर्पके समान अपने केशोंको बायें हाथके प्रकाड़के, कमलनेत्र श्रीकृष्णके समीपमें आकर, आंखोंमें आंसू भरके फिर यह वचन कहने लगी। हे पुण्डरीकाक्ष! तुम शत्रुओंके सङ्ग सन्धि करनेकी इच्छा करते हो, वह ठीक है, परन्तु सब कार्य्योंके समय दुःशासनके हाथोंसे खींचे हुए मेरे इन खुले केशोंकी बात जिसमें तुम्हें स्मरण रहे। हे कृष्ण! भीमसेन और अर्ज्जुन दुर्बलताही सन्धिके निमित्त अभिलाषा करेंगे, तोभी मेरे वृद्धपिता महाराज द्रुपद अपने महारथ पुत्रोंके सहित शत्रुओंके सङ्ग युद्ध करेंगे। मेरे महा बलवान पांचों पुत्र भी अभिमन्युको अगाड़ी करके शत्रुओंसे अवश्य युद्ध करेंगे। हे कृष्ण! यदि मैं दुःशासनकी उस काली बांहको टूटा और धूलमें लिपटा हुआ न देखूंगी, तो मुझे इस शोकसे शान्ति न होगी। मैं जलती हुई अग्निके समान इस प्रकार क्रोधरूपी आगको हृदयमें रखकर किसी भांतिसे [illegible] समयकी बाट जोहती हुई तेरह बर्ष बिताया है, परन्तु इस समय भीमसेनके वचन-बाणसे पीड़ित होकर मेरा वह हृदय टुकड़े टुकड़े हुआ चाहता है। हा! इतने दिनके अनन्तर आज इन महाबाहु भीमसेनकी धर्म्मको ओर दृष्टि गई है।

सुन्दर नितम्ब और विशाल लोचनवाली द्रौपदी इस प्रकारसे अनेक वचन कहती हुई, लम्बी सांस लेती हुई, गद्गद होकर कांपती हुई, मुक्तकण्ठसे रोने लगी। उस समय ऐसा बोध होने लगा जैसे दुःखरूपी अग्निके तेजसे शरीरके सब धातु जलकर, जलरूपसे दोनों कुचोंके ऊपर बरसती हुई, उसकी वक्षस्थल (छाती) को बहाया चाहती है।

अनन्तर श्रीकृष्ण उसको शान्त करनेकी इच्छासे कहने लगे, हे द्रौपदी! तुम जिस प्रकारसे इस समय रो रही हो, शीघ्रही भरतवंशकी सब स्त्रियोंकोभी इसी भांतिसे रोती हुई देखोगी। हे भीरु! जाति और बान्धवोंके नाश होनेपर इन लोगोंकोभी तुम्हारीही भांति रोना होगा। हे भामिनी! तुम जिसके ऊपर कुपित हुई हो, वह मित्रोंके सहित अवश्यही मारा जायगा, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। मैं; भीम, अर्ज्जुन, नकुल, सहदेव आदिके सङ्ग मिलकर युधिष्ठिरकी आज्ञा और विधाताके बनाये हुए प्रारब्धके संयोगसे अवश्यही इस कार्य्यको पूर्ण करूंगा। कालके वशमें हुए धृतराष्ट्र-पुत्र यदि मेरा वचन न मानेंगे, तो निःसन्देह मरकर पृथ्वीमें सोवेंगे और कुत्ते तथा सियारोंके भक्ष्य होंगे। हे द्रौपदी! यदि हिमालय पर्व्वत भी अपने स्थानसे टल जावें, पृथ्वी भी टुकड़े हो जाय और नक्षत्रोंके सहित आकाश भी गिर पड़े; तोभी मेरा यह वचन वृथा न होगा। मैं यह तुम्हारे समीप सत्य प्रतिज्ञा करके कहता हूं, कि तुम शीघ्रही अपने पतियोंको शत्रुओंको मारकर लक्ष्मीसे युक्त देखोगी, इससे रोना छोड़कर धीरज धरो।

८२ अध्याय समाप्त।

अर्ज्जुन बोले, हे केशव! तुमही इस समय कुरुवंशियोंके अत्यन्त हितकारी सुहृद मित्र हो। तुम दोनो ओरके समान सम्बन्धि और प्रीति पात्र हो; और दोनों पक्षके निमित्त सन्धि करनेमें समर्थ हो। इससे जब कौरव और पाण्डवोंके कुशलके निमित्त यत्न करनाही तुम्हारा कार्य्य है, तब दूसरी बुद्धि न करके पहिले उसीके अनुष्ठानका यत्न करो। हे शत्रु-नाशन पुण्डरीकाक्ष! तुम किसीकी बात न सहनेवाले भाई दुर्य्योधनके निकट जाकर, शान्तिके निमित्त जो कुछ कहना उचित हो उसे कहना, उससे भी यदि वह मूर्ख तुम्हारे धर्म्म और अर्थसे भरे हुए हितकारी बचनोंको न मानेगा, तो वह अत्यन्तही कालके वशमें होजायगा।

श्री कृष्ण बोले, हां जो धर्म्मके अनुसार हम लोगोंका हितकर और कौरवोंकाभी कल्याण करनेवाला कार्य्य होगा, उसीको पूरा करनेकी इच्छासे मैं महाराज धृतराष्ट्रके समीप जाऊंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, शरद ऋतुके बीततेही और हेमन्त ऋतुके आरम्भ होतेही सब शस्यसम्पत्ति उत्पन्न होती है; उसी कातिकके महीनेमें रेवती नक्षत्रसे युक्त एक दिन रात्रिके बीतनेपर, निर्म्मल और कोमल किरणोंके सहित सूर्य्यके उदय होतेही, मित्रदैवत मुहूर्त्तके आनेपर, स्वास्थ्य और सुखसे युक्त वीरोंमें श्रेष्ठ श्रीकृष्णचन्द्र जी, ऋषियोंकी स्तुतिपाठ सुनकर जैसे इन्द्र निद्रासे उठते हैं वैसेही अनेक मङ्गलपाठोंसे ब्राह्मणोंके युक्त बचनोंको सुनते हुए निद्रासे उठकर शौच आदिसे पवित्र हुए। प्रातःकालके कार्य्योंको समाप्त करके सब अलङ्कारोंसे भूषित होकर सूर्य्य और अग्निको उपासना करी, पीछे बृषभकी पीठको स्पर्श और ब्राह्मणोंको नमस्कार किया, फिर अग्निकी प्रदक्षिणा करी और सम्मुखमें माङ्गलिक वस्तुओंका दर्शन किया। अनन्तर युधिष्ठिरके कहे हुए बचनोंको स्मरण करके शिनिपुत्र सात्यकीसे बोले, कि शंख, चक्र, गदा, तूणीर, शक्ति और दूसरे सब उत्तम शस्त्रोंको रथमें स्थापित करो, क्योंकि दुर्य्योधन शकुनि और कर्ण आदि सबही दुष्टात्मा हैं; शत्रुको निर्बल देखकर बलवान मनुष्यको कभी असावधानीसे रहना उचित नहीं है। अनन्तर गदा, चक्रके धारण करनेवाले, श्रीकृष्णके वचनोंको सुनकर सेवक लोग उनके रथको सज्जित करानेके निमित्त आगे बढ़े, और वह जलती हुई प्रज्वलित अग्निके समान पृथ्वी पर चलने वाला होकर भी आकाशमें चलनेवालोंकी भांति शीघ्र चलनेवाला, सूर्य्य और चन्द्रमाके समान दोनों चक्रोंसे विचित्ररूपसे भूषित, अर्द्धचन्द्र पूर्णचन्द्र मछली, मृग और विविध भांतिके पक्षियोंकी आकृतियोंसे शोभित नानाप्रकारके पुष्प, मणि, और रत्नोंसे शोभायमान, निर्म्मल सूर्य्यके समान प्रकाशमान, बहुत बड़ा और देखनेमें मनोहर, सब स्थानोंमें मणि और सुवर्ण खचित शोभायमान ध्वजा-पताकासे युक्त, सब सामग्रीओंसे सजा हुआ, बाघके चमड़ेसे चारों ओर घिरा हुआ, शत्रुओंको भय देनेवाला तथा उनके यशको लोप करनेवाला, यदुवंशियोंके आनन्दको बढ़ानेवाला, उत्तम रथको सबप्रकारसे भूषित करके उसके अनन्तर सैव्य, सुग्रीव, मेघपुष्प और बलाहक नामके सब गुणोंसे पूरे सुन्दर और प्रसिद्ध घोड़ोंको स्नान और सब भूषणोंसे भूषित करके उस रथमें जुतवाया। अनन्तर पक्षियोंके राजा गरुड़ आकर कृष्णकी असीम महिमाको बढ़ाते हुए उस रथकी ध्वजापर बैठ गये।

तब पुरुषोत्तम कृष्ण सात्यकीके सहित आकाशगामी विमानकी भांति, उस मनोहर और परम रमणीय रथपर चढके, उसके शुभ शब्दसे पृथ्वी और आकाशको पूरित करते हुए अपनी शुभयात्रा करी। उस समय

आकाश बादलोंसे रहित होगया। शुभ सूचना देनेवाली सुन्दर वायु चलने लगी। धूलि उड़नेसे शान्त हो गई, मङ्गल सगुन होने लगी, हरिण और शुभ सगुनके जनानेवाले सुन्दर पक्षी श्रीकृष्णके दहिनी ओर चलने लगे। हंस सारस आदि पक्षी चारों ओर दीखने लोगे! मन्त्रपूर्व्वक होममें आहुति देनेके समय अग्निकी दहिनी शिखा प्रज्वलित होने लगी और धुएंसे रहित होगई। वशिष्ठ, वामदेव, भूरिद्युम्न, जय, शुक्र, नारद वाल्मीक, कौशिक और भृगु आदि ब्रह्मर्षि लोग देवर्षियोंके सहित श्रीकृष्णको आनन्दित करते हुए उनकी दहिनी ओर खड़े होगये। इन सम्पूर्ण महात्मा साधु महर्षियोंसे पूजित होकर श्रीकृष्णचन्द्रने कौरवोंकी सभा हस्तिनापुरके निमित्त प्रस्थान किया। कुन्तीपुत्र राजा युधिष्ठिर, भीम, अर्ज्जुन, माद्रीपुत्र नकुल, सहदेव और पराक्रमी चेकितान, चेदीपति धृष्टद्युम्न, केकय और पुत्रोंके सहित राजा विराट आदि क्षत्रिय राजाओंने कुछ दूर तक श्रीकृष्णचन्द्रके पीछे गमन किया। अनन्तर तेजस्वी धर्म्मराज थोड़ी देरतक श्रीकृष्णके सङ्ग चलके, राजाओंके अनुसार यह वचन वाले जो काम, क्रोध, भय, लोभ अथवा किसी प्रकारके प्रयोजनकी सिद्धिके निमित्त भी कभी अन्याय कार्य्य नहीं करते; जो स्थिर बुद्धि, लोभ रहित, धर्म्मके जाननेवाले, बुद्धिमान, सब जीवोंके अन्तर्य्यामी और सब प्राणियोंके ईश्वर हैं; उन्हीं सब गुणोंसे पूरे श्रीभक्त-हितकारी प्रतापवान् देवोंके देव श्रीकृष्णचन्द्रको आलिङ्गन करके कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर इस प्रकारके कहने लगे;—

युधिष्ठिर बोले, हे जनार्द्दन! जिस यशस्विनी कुन्ती माताने हम लोगोंको बालक अवस्थासे पालन पोषण करके बड़ा किया है; जो उपवास, तपस्या, स्वस्त्ययन, देवतोंकी पूजा अतिथियोंका सत्कार और गुरुजनोंकी सेवामें नित्यही यत्नवान रहती हैं; जिसकी पुत्रोंके ऊपर प्रीति और वत्सलताकी सीमा नहीं है; जिसके सङ्ग विना प्रीति और प्रेमके किये हम लोगोंकी कोईभी गति नहीं है; नौका जैसे मगर, मच्छ, घड़ियाल आदि भयङ्कर जल-जन्तुओंसे पूरित साक्षात कालस्वरूप महासमुद्रसे उद्धार करती है, वैसेही जिसने दुर्य्योधनके दिये हुए महाभयोंसे हम लोगोंकी बार बार रक्षा करी है, और हम लोगोंके निमित्त अत्यन्तही दुःख और क्लेश उठाया है; दुखोंके न सहने योग्य उन कुन्तीदेवीकी कुशल वार्त्ता पूछना। हे शत्रुनाशन माधव! पुत्रोंके कष्टको देखके वह महा दुःखी होरही है, इससे बार बार धीरज देकर हम लोगोंके नामको सुनाकर उनको प्रणाम और आलिङ्गन करना। हे शत्रुनाशन! किसी प्रकारसे भी क्लेश और दुःख पानेके योग्य न होकर भी विवाहके समयसेही वह दुःख और क्लेशोंका अनुभव करती हुई केवल दुःखही भोग रही हैं। हे कृष्ण! हमारे सुखका समय क्या कभी ऐसा भी अवेगा, कि जिस समय हम लोग अपनी जननीको तृप्त कर सकेंगे? अहो! वनमें गमन करनेके समय वह पुत्रोंकी सङ्गति छूटनेपर हम लोगोंके सङ्ग चलनेकी इच्छासे कातर होके रोती हुई पीछे दौड़ी थीं, परन्तु हम लोग उन्हें वहांही छोड़कर वनको चले गये थे। हे केशव! दुःखमें पड़नेहीसे जो मनुष्योंकी मृत्यु होती है, इसका भी ठीक निश्चय नहीं हैं। हम लोगोंकी माता कुन्तीदेवी पुत्रोंके क्लेशको देखकर अत्यन्त पीड़ित हैं, विशेष करके यदुवंशीय उनका यथा योग्य आदर और सत्कार करते हैं; इससे इतने दिनों तक जीवित भी रह सकती हैं; यदि जीती हों, तो मेरे वचनसे तुम उन्हें प्रणाम कहना। अनन्तर कौरवोंमें श्रेष्ठ धृतराष्ट्र, अवस्थामें बड़े राजा लोग, और भीष्म द्रोण, कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा, बाह्लिक, सोमदत्त

और भरतवंशीय राज्यलाभ पानेवाले पाण्डवोंको तथा कुरुवंशियोंके मन्त्री, अपार बुद्धि और शक्तिसे पूरित सब धर्मोंको जाननेवाले महाबुद्धिमान विदुरसे हमारा प्रणाम और भेंट कहना।

राजा युधिष्ठिर सब राजाओंके सम्मुख मधुसूदन कृष्णसे ऐसे वचन कहकर उनकी आज्ञासे अनुगमन करके उनकी प्रदक्षिणा करके वहांसे लौट आये, परन्तु अर्जुन उस समय नहीं लौटे और उनकी सङ्ग चलते हुए निज सखा, शत्रुनाशन अपराजित कृष्णसे बोले, कि हे विभो गोविन्द! पहिले जब सन्तणा स्थिर हुई थी, तब हम लोगोंको आधा राज्य देनाही निश्चय हुआ था; वह सब राजाओंको विदित है। हे महाबाहो जनार्द्दन! यदि दुर्य्योधन किसी प्रकारसे अवमानना न करके कपटको त्यागके प्रीतिपूर्व्वक उसे देगा, तो हम लोगोंकी भी उसके ऊपर प्रीति होगी और वह महाभयसे छूट जायगा। यदि वह इस प्रकारसे सन्धि करनेसे सम्मत होगा, तो उत्तमही है; और इसे न करके कोई दूसरे दुष्ट-उपायमें प्रवृत्त होगा, तो निश्चयही इष्ट मित्रोंके सहित मैं उस पुरुषाधमके नाश करनेका विधान करूंगा। अर्जुनके ऐसे वचनके कहने-पर भीमसेनके आनन्दकी सीमा न रही, वह हर्ष और क्रोधसे युक्त होकर बार बार ऐसे भयङ्कर शब्दको कहने लगे, कि वहांपर उप-स्थित सब धनुर्धारी उनके उस विकट शब्दको सुनकर बहुतही कांपने लगे, और हाथी, घोड़े आदि सब वाहन मलमूत्र त्याग करने लगे। अनन्तर धनञ्जय अर्जुनने श्रीकृष्ण-चन्द्रसे यह वचन कहकर उनकी आज्ञा ले और उन्हें आलिङ्गन करके वहांसे लौट गये।

सब राजाओंके लौट जाने पर श्रीकृष्ण-चन्द्रजी शैव्य, सुग्रीव आदि चारों घोड़ोंसे युक्त रथपर चढ़के शीघ्रतासे हस्तिनापुरकी ओर चलने लगे। दारुक सारथीने उन घोड़ोंको इतनी शीघ्रतासे चलाया, कि वे घोड़े वायुकी भांति आकाशसे बातें करने लगे। थोड़ी दूर जानेके अनन्तर महाबाहु कृष्णने मार्गमें एक महा ऋषियोंका दर्शन किया। वे ब्रह्मतेजसे प्रकाशित होकर मार्गके किनारेपर खड़े थे। जनार्द्दन श्रीकृष्णने शीघ्रही उतरकर उन महा तेजस्वी देवर्षियोंको प्रणाम किया; और विधिके अनुसार उनकी पूजा करके बोले, कि हे देवर्षि लोग! समस्त लोकोंमें सब प्राणी कुशलसे तो हैं? धर्मका अनुष्ठान उत्तम प्रकारसे होता तो है? क्षत्रिय आदि तीनों वर्ण ब्राह्मणोंके शासनके अनुसार कार्य्य करते तो हैं? देवऋषियोंकी इस प्रकार पूजा करके श्रीकृष्णचन्द्रने उनसे फिर पूछा, आप लोग कहांसे आते हैं? किस मार्गसे कहांको जायंगे? आप लोगोंके यहां आनेका क्या प्रयोजन है? क्या कार्य्य उपस्थित हुआ है? आप लोगोंका कौन सा कार्य्य मुझे पूरा करना होगा, सो सब कहिये।

देवता और असुरोंके स्वामी पितामह ब्रह्माके सखा परशुराम ऋषि, मधुसूदन कृष्णकी इन बातोंको सुन कर उनकी समीप जा उन्हें आलिङ्गन करके बोले, कि हे महातेजस्वी दाशार्ह केशव! प्राचीन देव और असुरोंके सब वृत्तान्तों जाननेवाले, सम्पूर्ण पुण्यकर्मोंको करनेवाले देवर्षि लोग, बहुत बातोंके जानने-वाले ब्राह्मण लोग, महा तपस्वी आदरके पात्र राजऋषि और सब दिशाओंसे आये इकट्ठे हुए ब्राह्मण लोग, यतियोंके दर्शन करनेके निमित्त हस्तिनापुरको जा रहे हैं। हे कृष्ण! जिस सभामें अनेक बुद्धिमान सभासद बहुत राजा लोग और सत्य स्वरूप तुम विद्यमान रहोगे। वह जो उस समयमें अत्यन्तही मनोहर, तथा देखनेके योग्य होगी, इसमें कुछभी सन्देह नहीं है। इससे हम सब लोग उसी देखने योग्य सभाके निमित्त वहां

जाते हैं। हे परन्तप! हे माधव! इकट्ठी हुई कौरवोंकी सभामें तुम धर्म्म और अर्थसे भरे हुए जिन वचनोंको कहोगे, उसीको सुननेकी इच्छासे हम लोग वहां जाते हैं। भीष्म,द्रोण आदि साधु पुरुष, महाबुद्धिमान् विदुर और यदुवंशियोंके शिरोमणि तुम, तथा सब लोक तुम्हारे सहित उस सभामें उपस्थित रहेंगे। हे गोविन्द! इससे तुम्हारी और उन लोगोंकी कही हुई सत्य, हितकारी और सुन्दर वचनोंको सुननेकी हम लोगोंकी इच्छा है। हे महाबाहो! जब तुम इस कार्य्यके निमित्त सभामें बुलाये जाओगे, तब हम लोग तुमसे फिर मिलेंगे। हे कृष्ण! इस समय तुम विघ्नोंसे रहित होकर प्रस्थान करो, पीछे हम लोग भी जाकर तुम्हें सभामें असीम बल और प्रतापके सहित सुन्दर और दिव्य आसनके ऊपर बैठे हुए देखेंगे।

८३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे महाराज जनमेजय! महाबाहु देवकी पुत्र श्रीकृष्णचन्द्रके जानेके समयमें दश महारथ, एक हजार सवार और बहुतसे पैदल तथा बहुतेरी खाने पीनेकी वस्तुओंको लेकर सैकड़ों सेवक उनके पीछे चले थे।

महाराज जनमेजय बोले, यदुकुल शिरोमणि महात्मा श्रीकृष्ण किस प्रकारसे गये? किस प्रकारसे और कैसे सगुन तथा असगुनोंकी उस समयमें उत्पत्ति हुई थी?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! मैं इन सब वृत्तान्तोंको वर्णन करता हूं, आप सुनें। हे राजन्! श्रीकृष्णचन्द्र जिस मार्गसे गये थे, उसे छोड़कर और सब स्थानोंमें आकाश बादलोंसे रहित होने पर भी बिजलीका चमकना और बादलोंका गरजना सुनाई पड़ा था। मेघसे रहित आकाशमेंसे बिना बादलके ही अनन्त वर्षा होने लगी। सिन्धु आदि पांचों महा नदियां पूर्व्वसे पश्चिमको ओर बहने लगीं। सब दिशाओंमें उलटे विषय दीखने लगे। उस समय कुछ भी मालूम न होता था। सब दिशाएं अग्निके तेजसे भरा होने लगीं और सब स्थानोंमें भूकम्प होने लगा। कुआं और बावली अकस्मात् मह मह भरकर कितने स्थानोंको डुबाने लगी। हे राजन्! यह सब पृथ्वी उस समय धूलिसे पूरित होकर अन्धकारमें छिप गई थी, इससे किसी ओरको मार्गका भी बोध नहीं होता था। सबही देशोंमें एक न एक आश्चर्य्यका विषय दीख पड़ा था, कुछ न दीख पड़ने पर भी आकाशसे एक न एक भयङ्कर शब्द सुनाई देने लगा था। हस्तिनापुरके दक्षिण और पश्चिम ओर वायुने बड़े प्रचण्ड रूपसे चलकर सैकड़ों वृक्षोंको जड़से उखाड़ उखाड़ फेंक दिया और कितने स्थानोंको कपा दिया। हे भारत! श्रीकृष्णचन्द्रने जिन जिन स्थानोंमें मार्गमें निवास किया था, उन उन स्थानोंपर सब वस्तु उनके अनुकूल हो गई थीं। शीतल, मन्द और सुगन्धसे भरी वायु चलने लगी, और आकाशसे कमल आदि फूलोंकी वर्षा हुई थी। जिन मार्गोंसे श्रीकृष्णचन्द्रने प्रस्थान किया था, वे सुन्दर पवित्र और सुखसे भरे थे। उस मार्गमें कुश, कांटे और कोई विघ्नकारी पदार्थ नहीं थे। सब स्थानोंमें हजारों ब्राह्मण इकट्ठे होकर धन देनेवाले कृष्णको अनेक प्रकारके आशीर्वाद देकर उन्हें आनन्दित करते थे, और क्षत्रिय तथा वैश्य लोग धन आदिकी भेंट देकर उनकी यथा उचित पूजा और सम्मान करते थे। किसी किसी स्थानपर स्त्रियां [illegible] इकट्ठी होकर उन प्राणियोंके हित करनेवाले भगवान् कृष्णके ऊपर फूलोंकी वर्षा करती थीं। हे भरतर्षभ! श्रीकृष्णचन्द्र मार्गमें हृदयको आनन्द देनेवाले अनेक हृष्टपुष्ट पशुओं और गांवोंको देखते हुए अनेक नगर और [illegible] लांघकर, [illegible]

नाम स्थानमें आकर उपस्थित हुए। उनको देखनेकी इच्छासे उपप्लव्य नगरसे अनेक पुरवासी आकर इकट्ठे हुए थे। इस अवसरपर महा तेजस्वी कृष्णको जलती हुई अग्निके समान आया हुआ देखकर, उन लोगोंने विधिपूर्वक श्रीकृष्णचन्द्रका अतिथि सत्कार तथा पूजा की। अनन्तर सूर्य्यके अस्त होनेके समय आकाशमें अरुणाई आनेपर श्रीकृष्णचन्द्र वृकस्थलमें पहुंचकर रथसे उतरे. और सारथीको रथसे घोड़ोंको खोलनेकी आज्ञा देकर शौच आदि कार्य्योंका समाप्त करके सन्ध्या वन्दन किया। दारुक सारथीने भी रथसे घोड़ोंको खोलकर शास्त्रविधिके अनुसार उनकी परिचर्य्या की, और उसके अनन्तर घोड़ोंको पीठ परसे सब साजोंको उतार दिया। सब कर्त्तव्य कर्म्मोंके समाप्त होनेपर मधुसूदन कृष्ण बोले. कि युधिष्ठिरके कार्य्यके निमित्त आज इसी स्थानपर हम लोगोंका रात्रि बितानी होगी। सेवकोंने उनकी आज्ञाके अनुसार वहींपर उनके बैठने योग्य सब वस्त्रोंको बिछाकर क्षण भरमें सब गुणोंसे युक्त अन्न और पान सम्पूर्ण रूपसे बनाकर तैयार कर दिया। हे राजन्! इस गांवमें जो सब ब्राह्मण श्रेष्ठ, कुलीन, श्रीसे युक्त और यथार्थ ब्राह्मण वर्णके धर्म्मोंको करनेवाले थे, उन सबोंने, आकर श्रीकृष्णचन्द्रको आशीर्व्वाद दिये. तथा मङ्गल सूचक वचन कहते हुए उनकी पूजा की। वे लोग सम्पूर्ण लोकोंमें पूजित यदुकुलभूषण श्रीकृष्णचन्द्रकी पूजा ही करके शान्त नहीं हुए, किन्तु अनेक रत्न और सुखोंसे भरे हुए अपने स्थानोंपर पधारनेके निमित्त श्रीकृष्णचन्द्रसे अत्यन्त प्रार्थना की। भक्तवत्सल श्रीकृष्णचन्द्रजी उनकी रुचि देख उन लोगोंके वचनमें प्रीतिपूर्व्वक सहमत हो उनके स्थानोंको गये, और उन लोगोंका सम्मान रखके, उनके सहित फिर अपने निवासके स्थानपर लौट आये। अनन्तर श्रीकृष्णचन्द्रने सुन्दर और उत्तम स्वादसे पूरित भोजन उन ब्राह्मणोंको अच्छी प्रकारसे जिमाया और उनके सङ्ग आप भी भोजन किया; और सबके सहित परम सुखसे सारी रात्रि बितायी।

८४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इधर राजा धृतराष्ट्र दूतोंके मुंहसे श्रीकृष्णचन्द्रके आगमनकी बात सुन गद्गद होकर महाभुज भीष्म, द्रोण सञ्जय और महा बुद्धिमान् विदुरसे आदरके सहित बात चीत करते हुए इष्ट मित्रोंके सहित दुर्य्योधनसे बोले, हे कुलनन्दन! सब ओर एक महा आश्चर्य्यका विषय सुनाई पड़ता है। हर एक घरमें स्त्री, बूढ़े और बालक यह कहते हैं "महा पराक्रमी यदुपति श्रीकृष्ण पाण्डवोंके कार्य्य-साधनके निमित्त इस स्थानपर आवेंगे।" निज नगरवासी और आये हुए विदेशी पुरुष सबही अत्यन्त आदरके सहित इस वचनका अनुमोदन करते हैं. हाट, बाट, चौराहे और सभाओंमें उनके विषयमें वादानुवाद हो रहा है। मधुसूदन कृष्ण जो हम लोगोंके सब प्रकारसे माननीय और पूजा करनेके योग्य हैं इसमें किञ्चित मात्र भी सन्देह नहीं है। वह सब जीवोंके ईश्वर धृति, क्षमा, वीर्य्य और बुद्धिके आधार स्थान हैं। उनसे यह सारा संसार और लोक यात्रा प्रतिष्ठित है। इसके उन्हीं पुरुषोत्तम श्रीकृष्णके निमित्त सम्मान दिखाओ क्योंकि उन्हींमें सनातन धर्म्म विराजमान है। वह पूजित होनेपर जैसे सुखके देनेवाले होते हैं, वैसे ही पूजा न पानेपर भी दुःखके कारण ही जाते हैं। हे शत्रुनाशन! यादवेन्द्र कृष्ण यदि विधिपूर्व्वक सेवासे हम लोगोंके ऊपर प्रसन्न होंगे, तो सब राजाओंके बीचमें सम्पूर्ण रूपसे मेरे सब कार्य्योंकी सिद्धि होगी। हे परन्तप! इससे तुम आजही उनकी पूजाके योग्य सब वस्तु इकट्ठी करो। मार्गोंमें

ओंमें सब प्रकारसे उत्तम सामग्रियोंसे युक्त सभाएं बनवा दीं। हे महाबाहो दुर्य्योधन! जिससे तुम्हारे ऊपर उनकी प्रीति उत्पन्न हो, तुम वैसेही कार्य्योंका अनुष्ठान करो। हे भीष्म! इसमें आप लोगोंकी क्या सम्मति है?

अनन्तर भीष्म आदि सब राजाओंने धृतराष्ट्रके इस वचनकी प्रशंसा करके कहा, "यह अत्यन्त कर्त्तव्य कर्म्म है"। तब दुर्य्योधनने उन सब लोगोंका अभिप्राय अच्छी प्रकारसे जानकर यथा उचित मार्गके स्थानोंमें रमणीक और सुन्दर सभा बनानेकी आज्ञा दे दी। आज्ञा पातेही नौकरोंने सब मार्गके मनोहर स्थानोंमें विभागके क्रमसे सब रत्नोंसे युक्त अनेक सभाएं बना कर तैयार कर दीं। राजा दुर्य्योधनने उन सबकी शोभा बढानेके निमित्त हर एक प्रकारके उत्तम और मनोहर आसन, नेत्रोंको आनन्द देनेवाली बहुतसी प्रमदा स्त्रियां, अच्छी अच्छी सुगन्धित वस्तु, उत्तम प्रकारके गहने, महीन और सुन्दर वस्तुएं, सुगन्धसे युक्त उत्तम फूलोंकी माला, रससे युक्त अन्न पान और दूसरा अनेक प्रकारकी भोजनकी उत्तम वस्तुएं प्रदान कीं। यद्यपि कौरवराज दुर्य्योधनने जगह जगह इसी प्रकारकी अनेक सभाएं तैयार करवाई थीं, तौभी कृष्णके निवासके निमित्त अच्छी प्रकारसे विशेष यत्नपूर्व्वक वृकस्थल गावमें अनेक रत्नोंसे युक्त एक बहुत ही सुन्दर और रमणीय सभा तैयार करवाई था। राजा दुर्य्योधनने यह सब मनोरूप और देव-भोग्य सभाएं और समस्त सामग्रीका पूर्ण करके महाराज धृतराष्ट्रको सम्वाद दिया। दाशार्ह श्रीकृष्णचन्द्र भी उन सब सभाओं और विविध रत्नखचित वस्तुओंको ओर आंख भी न देखकर कौरवोंके स्थान हस्तिनापुरके समीप जा पहुंचे।

पचासी अध्याय समाप्त।

इधर राजा धृतराष्ट्र विदुरको सम्बोधन करके कहने लगे इस समय वासुदेव कृष्ण विराट नगरसे इस स्थानको आ रहे हैं, आज वृक-स्थलमें निवास कर रहे हैं, और कल यहांपर आकर उपस्थित होंगे। वह आहुकवंशीय सम्पूर्ण यदुवंशियोंके स्वामी, महा बुद्धिमान् महावीर्य्य, और तेज तथा पराक्रमसे पूरित हैं। इतने बड़े यदुवंशियोंके राज्यके वही एक मात्र स्वामी और उन लोगोंकी रक्षा करनेवाले हैं। केवल यदुवंशियोंके राज्यका ही क्यों? वह भगवान् कृष्ण इस समस्त पृथ्वी तथा तीनों लोकके ही प्रतिपालक हैं। आदित्य, वसु और रुद्र लोग जिस प्रकारसे बृहस्पतिकी बुद्धि अवलम्बन करते हैं, वैसेही यदुवंशी और अन्धक-वंशी सब लोग कृष्णकी बुद्धिकी उपासना करते हुए सब कार्य्य करते हैं। हे धर्म्मके जाननेवाले! इसलिए जिस भांति उनकी पूजा करनी होगी, वह मैं तुमसे कहता हूं, उसे सुनो। मैं उनको वाह्लिक देशके उत्पन्न हुए अच्छी प्रकारके साजोंसे सजाये हुए एकही वर्णके चार चार घोड़ोंसे युक्त सुवर्णमय सोलह रथ, सुन्दर सफेद दांतोंसे युक्त मतवाले और प्रहार करनेमें बलवान आठ हाथी, उन एक एक हाथियोंके सङ्ग आठ आठ सेवक, सुवर्णके समान वर्ण, सुन्दर नेत्र और गर्भसे न उत्पन्न हुई एक सौ दासी और अनेक दास दूंगा, इसके अतिरिक्त पहाड़ी लोगोंके बनाये हुए अठारह हजार अच्छे कोमल और चित्रित कम्बलोंको दूंगा, और चीन देशकी उत्पन्न हुई एक हजार मृगछाला तथा दूसरी वस्तुएं जो उन्हें प्रिय होंगी, प्रदान करूंगा। मेरे भण्डारमें जो उत्तम प्रभासे पूर्ण एक बहुत सुन्दर और स्वच्छ मणि है, वह भी उन्होंको उपहार स्वरूप प्रदान करूंगा। क्योंकि वे भी इसके निमित्त उपयुक्त पात्र हैं। और भी [illegible] वह एक दिनमें [illegible]

मै उसे भी उन्हींको समर्पण करूंगा, उनके सङ्गमें जितने वाहन और सेवक हैं, उनके अठगुणी परिमाणसे खाने पीनेकी वस्तु तैयार करा दूंगा। केवल दुर्य्योधनको छोड़कर मेरे सब पुत्र पौत्र लोग उत्तम वस्त्र तथा भूषणोंसे भूषित होकर सुन्दर और मनोहर रथोंपर बैठके यदुपति कृष्णको अगवानीके निमित्त जायंगे। सब प्रकारके अलङ्कारोंसे शोभित हजारों वाराङ्गनाएं पैदल ही जाकर श्रीकृष्णकी अगवानी करेंगी। नगरसे भी जो सब कल्याणकी देनेवाली कन्याएं कृष्णको देखनेके निमित्त जायगी, वे सब विना आवरणके ही गमन करेंगी। अधिक और क्या कहूं, प्रजा लोग जैसे प्रातःकाल के उगे हुए सूर्य्यको आनन्दित होके देखते हैं; वैसेही यदुपति कृष्णको भी स्त्री, पुरुष, बालक, बालिका और सम्पूर्ण लोग आनन्दित तथा हर्षसे युक्त होकर अच्छी प्रकारसे देखें। सैनिक पुरुष हमारी आज्ञाके अनुसार मार्गों को ध्वजा और पताकाओंसे पूरित करें, और जिस मार्गसे श्रीकृष्णचन्द्र आवेंगे, उसे जल छिड़कके धूलिसे रहित करें। दुर्य्योधनके घरसे दुःशासनका भवन बहुतही प्रशंसाके योग्य है, इससे शीघ्रही वह साफ करके उत्तम भूषणोंसे भूषित कराया जावे। यह बहुत बड़ा स्थान अत्यन्त रुचिकर और सुन्दर, शोभायमान सब समयमें ही शुभ लक्षणोंसे युक्त और रमणीय है। इसी घरसे मेरे और दुर्य्योधनके सब रत्न हैं; उनमेंसे जो जो श्रीकृष्णचन्द्रके देने योग्य होगी, उन सबको निःसन्देह उन्हें प्रदान करना होगा।

८६ अध्याय समाप्त।

विदुर बोले हे राजन्! हमारी बात दूर रहे, आप तीनों लोकमेंभी बुद्धिमान् प्रसिद्ध हैं। बहुत ही सत्कार्य्योंके करनेसे आप सब लोकोंके सम्मान करनेवाले तथा प्रीतिके पात्र हैं। ऐसी अवस्थामें आप बढ़ी हुई दशामें स्थित रहकर जो कुछ वचन कहते हैं, वह शास्त्र और राय विचारसे युक्त होगा, यही सम्भव होता है, क्योंकि आप स्थिरबुद्धि और बूढ़े हैं। हे राजन्! प्रजाओंके बीचमें सब लोगोंने इस बातको निश्चय कर रक्खा है, कि पत्थरकी लीक, सूर्य्यकी रोशनी, समुद्रकी तरङ्ग जैसे सदाही विद्यमान रहती है, धर्म भी वैसेही सदा विद्यमान रहता है। हे राजेन्द्र! आपके गुणोंसे मनुष्य लोग बढ़ते चले आते हैं, इससे बन्धुबान्धवोंसे सहित आप इन गुणोंकी रक्षा करनेमें यत्नवान रहिये। हे महाराज! आप सरलताको अवलम्बन कीजिये, और अज्ञानमें फंसकर पुत्र तथा पौत्रोंको नष्ट न कराइये। हे राजेन्द्र! आप अभ्यागत कृष्णको जो यह सब बहुतसे धनोंको प्रदान करनेकी अभिलाषा करते हैं, वह बात तो दूर रहे, उसके अतिरिक्त इस सम्पूर्ण पृथ्वीको भी देनेके वह पात्र हैं। मैं शरीरको स्पर्श करके यह सत्य वचन कहता हूं, कि केवल धर्मके उद्देश्य अथवा श्रीकृष्णकी प्रीतिको साधन करनेके निमित्त आपको ऐसी इच्छा नहीं हुई है। हे बहुतसी वस्तुओंके देनेवाले! इस प्रकारसे बहुतसी वस्तुओंके दान करनेके सङ्कल्पमें केवल छल, असत्य और कपटका ही प्रकाश होता है। इन बाहरी कर्म्मोंको देखकर हीमैं आपके भीतरके गूढ़ अभिप्रायको मालूम कर रहा हूं। हे राजन्! पाण्डव लोग पांचों भाई केवल पांच गांव पानेहीकी अभिलाषा करते हैं, परन्तु उन लोगोंको आप वह पांच गांव भी देनेकी इच्छा नहीं करते हैं, तब फिर कौन शान्तिको स्थापित कर सकता है? आप धनसे श्रीकृष्णको अपनी ओर किया चाहते हैं; और इसी उपायसे उनको आप पाण्डवोंसे पृथक किया चाहते हैं, यही आपकी इच्छा है, परन्तु मैं आपसे यही एक सार वचन कहता

हैं, कि वह धन, रत्न और पूजा आदि किसी उपायसे भी अर्ज्जुनसे पृथक् नहीं हो सकते हैं। कृष्णकी कृपा-परायणता और अर्ज्जुनकी उन पर दृढ़-भक्ति मुझे अच्छी प्रकारसे मालूम है, इस निमित्त प्राणके समान प्रिय अर्ज्जुनको जो कृष्ण कभी भी परित्याग नहीं कर सकते, यह मुझे विशेष रूपसे मालूम है। हे राजेन्द्र! आपके सहस्र प्रकारसे उद्योग करने पर भी जनार्द्दन कृष्ण केवल जलसे भरे हुए पात्र, पैर धोने और कुशल क्षेम पूछनेके अतिरिक्त किसी वस्तुके लिये न प्रार्थना करेंगे और न स्वीकार ही करेंगे। हे राजन्! इससे उस मानके पात्र महात्मा श्रीकृष्णको जिस प्रकारका अतिथि-सत्कार प्यारा है, वही तुम पूरा करो, वह सम्मान करनेके योग्य पात्र हैं। हे राजसत्तम! श्रीकृष्णचन्द्र कौरवोंके कल्याणकी इच्छासे जिस कार्य्यके निमित्त कौरवोंके समीप आवेंगे, वही उनको प्रदान कीजिये। कृष्णकी यही इच्छा है, कि आपके दुर्य्योधन और पाण्डवोंके बीचमें सन्धि स्थापित हो। हे राजन्! इससे आप उनकी उसी प्रार्थनाको पूर्ण कीजिये। हे महाराज! आप पाण्डवोंके पिता हैं, वे लोग तुम्हारे पुत्र हैं, आप बूढ़े और वे लोग बालक हैं, इससे जब वे लोग आपके सङ्ग पुत्रोंके समान सम्पूर्ण आचरणोंको करनेमें प्रवृत्त हैं, तब आपभी उन लोगोंके सङ्ग पिताके समान ही व्यवहार कीजिये।

८९ अध्याय समाप्त।

दुर्य्योधन बोले, विदुरने कृष्णके विषयमें जो यह वचन कहे, वे सब ही सत्य हैं। जनार्दन इस पाण्डवों पर अति अनुरक्त हैं, उनके [illegible] सङ्ग उनको भेद करना [illegible] [illegible] है। [illegible] इससे आप [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] प्रकारके धनको देनेका सङ्कल्प कर रहे हैं, वह कभी देनेके योग्य नहीं है। श्रीकृष्ण नवश्य ही इन सब वस्तुओंके देनेके पात्र हैं, यह ठीक है, परन्तु वह कार्य्य इस समय देश और कालके अनुसार अयोग्य है। हे राजन्! कृष्ण समझेंगे, कि "वे लोग भयभीत होकर यह सब वस्तु मुझे प्रदान कर रहे हैं"। हे पृथ्वीनाथ! मेरा इस प्रकार निश्चय है, कि जिस कार्य्यमें अवमानकी सम्भावना हो, वह बुद्धिमान् क्षत्रियोंको कभी करना उचित नहीं है। सब लोकोंमें श्रेष्ठ वह विशालनयन श्रीकृष्ण तीनों लोकसे पूजा पानेके योग्य हैं, यह मुझे सदासे ही मालूम है। परन्तु हे नरनाथ! कार्य्यकी गतिके अनुसार उनको इस समय कोई भी उपहार नहीं दिया जा सकता। जब युद्धका सामान किया जा रहा है, तब विना युद्धके वह कैसे निवारण हो सकता है?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कौरवोंके पितामह भीष्म दुर्य्योधनके इस वचनको सुनकर विचित्रवीर्य्यके पुत्र धृतराष्ट्रसे यह वचन बोले, कि तुम लोग जनार्द्दन कृष्णका सत्कार करो, चाहे सत्कार न करो, इससे वह तनिक भी क्रुद्ध न होंगे, परन्तु किसी प्रकारसे भी तुम लोग उनकी विरुद्धता नहीं कर सकोगे, क्योंकि [illegible] अवमानके सहनेके पात्र नहीं हैं। हे महाबाहो! उन्होंने अपने मनमें जिस कार्य्यके करनेका निश्चय किया है, सब भांतिसे उपाय करने पर भी कोई पुरुष उनको उसका निवारण नहीं कर सकता। इससे वह [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] होकर पूरा करो, [illegible] [illegible] मिलकर [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

कोई मिलकर उनके निकट उनके प्रिय वचन ही कहना।

दुर्योधन बोले, हे पितामह! मैं यह सम्पूर्ण राजलक्ष्मी पाण्डवोंके सङ्ग बांटकर जन्म भर सम्भोग करूं, यह किसी प्रकारसे भी युक्त नहीं हो सकता। इस निमित्त युक्तिसे अपने मनमें एक बहुत भारी कार्य्यका मैंने निश्चय किया है, उसे सुनिये। मैंने अपने मनमें यह निश्चय किया है, कि पाण्डवोंकी परम गति कृष्णको यहांपर कैद कर रखूंगा। कृष्णके कैद होनेपर सम्पूर्ण यदुवंशी, पाण्डव लोग तथा समस्त पृथ्वीके मनुष्य और राजा लोग भी मेरे वशमें हो जायंगे। इससे आप मुझे कोई ऐसी युक्ति बतलाइये जिससे जनार्द्दन कृष्ण सवेरे यहां पर आकर निश्चित किये हुए इस मेरे कैद करनेके उपायको किसी प्रकारसे जान न सके; और उस कार्य्यके करनेमें हम लोगोंका कोई नुकसान भी न होने पावे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कृष्णको बांधनेके विषयमें दुर्योधनके ऐसे महा घोर और कठोर वचनको सुनकर राजा धृतराष्ट्र इष्ट-मित्रोंके सहित अत्यन्त ही पीड़ित और दुःखित हुए। अनन्तर उन्होंने उससे यह वचन कहा, हे प्रजा-पालक! तुम कभी ऐसे वचनोंको मत कहना, यह सनातन धर्म्मके अनुकूल नहीं है। श्रीकृष्ण-चन्द्र एक तो दूत होकर आरहे हैं, दूसरे हम लोगोंके सम्बन्धी और सदासे प्रीतिके पात्र हैं, विशेष करके उन्होंने कभी कौरवोंके सङ्ग कोई बुरा आचरण नहीं किया है। इसलिए किस प्रकार वह बन्धनके योग्य हो सकते हैं?

भीष्म बोले, हे धृतराष्ट्र! तुम्हारा यह मन्दबुद्धि पुत्र अत्यन्त ही कालके वशमें हुआ है। सुहृदलोग इसके हितकी इच्छा करते हैं, परन्तु यह केवल अहितकी ही इच्छा करता रहता है। आश्चर्य्यका विषय तो यह है, कि तुम भी उसके सुहृद लोगोंको टालकर केवल कुमार्गी, पापोंका करनेवाले इस दुष्टात्माका अनुसरण करते हो। तुम्हें और अधिक क्या कहूं परन्तु यह नीच बुद्धि दुर्योधन, यदि सब कठिन कर्म्म सहजहीमें करनेवाले, महात्मा कृष्णके प्रति इस प्रकार बुरा आचरण करनेमें प्रवृत्त होगा, तो क्षण भरमें बन्धु, बान्धव सेना और इष्ट मित्रोंके सहित मरकर पृथ्वीमें सोवेगा, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। इस धर्म्मके छोड़नेवाले, मूढ, पापीके अनर्थ युक्त और अयोग्य वचनोंके सुननेमें मुझे किसी प्रकारसे भी उत्साह नहीं होता। ऐसा कह कर सत्य पराक्रमी भरतश्रेष्ठ भीष्म अत्यन्त ही क्रोधसे भरकर, सभासे उठकर शीघ्र ही घर चले गये।

८८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इधर श्रीकृष्णचन्द्र प्रातःकाल उठकर शौच आदिसे निवृत्त होकर सन्ध्या आदि करनेके अनन्तर ब्राह्मणोंसे बिदा होके हस्तिनापुरको चले। उस समय वृकस्थलवासी मुख्य मुख्य पुरुष महाबलशाली युक्त महाबाहु हृषीकेश कृष्णकी आज्ञासे विदा होकर अपने अपने घरको गये। उधर दुर्योधनको छोड़कर धृतराष्ट्रके और सब पुत्र तथा भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य आदि सब सज्जन पुरुष आये हुए श्रीकृष्णचन्द्रको अगवानी करके आगेसे लिवा लानेके निमित्त गये। इसके अतिरिक्त और भी अगणित पुरवासी लोग श्रीकृष्णको देखनेकी अभिलाषासे कोई सवारी पर और कोई पैदलही उठ धाये। श्रीकृष्णचन्द्र मार्गमें महा पराक्रमी भीष्म, द्रोण तथा धृत-राष्ट्रके पुत्रोंसे मिलकर उन लोगोंके सहित नगरमें आपहुंचे। हे राजन्! श्रीकृष्णके सम्मानके निमित्त नगर और राजमार्ग उत्तम प्रकारसे अनेक रत्न और पुष्पोंसे सजाया था। हे भरतर्षभ! श्रीकृष्णचन्द्रने जिस समय नगरमें प्रवेश किया, उस समय स्त्री, पुरुष, बूढ़े और बालक कोईभी

घरमें न रहे, सबही उनके दर्शनकी लालसा से राजमार्गपर आके खड़े हुए थे, उन्हें देखते ही शिर झुकाकर स्तुति और प्रशंसा करने लगे। हे महाराज! उत्तम अट्टालिकाओं (अटारी) के ऊपर वरवर्णिनी इतनी कामिनीएँ झुण्डकी झुण्ड आकर इकट्ठी हुई थीं, कि उससे यह बोध होता था, कि उनके-भारसे उन सब घरोंकी अटारियां पृथ्वीमें मिला चाहती हैं। श्रीकृष्णके चार घोड़े स्वभावहीसे अत्यन्त जलदी चलनेवाले थे, परन्तु अत्यन्त भीड़से राजमार्गके भर जानेके कारण वे बहुत धीरे धीरे चलने लगे। शत्रुनाशन श्रीकृष्णचन्द्र इसी प्रकारसे थोड़ी दूर तक राजपथको लांघकर अन्तमें धृतराष्ट्रके राजमन्दिरमें शोभित हुए। उन्होंने राजमन्दिरके तीन खण्डको लांघकर चौथे खण्डमें विचित्रवीर्य्यके पुत्र महाराज धृतराष्ट्रको देखा। श्रीकृष्णचन्द्रके समीप आतेही प्रज्ञाचक्षु महा यशस्वी राजा धृतराष्ट्र भीष्म और द्रोणाचार्य्यके सहित उठ खड़े हुए। उनके उठतेही कृपाचार्य्य, सोमदत्त, महाराज बाह्लिक आदि सब राजा लोग श्रीकृष्णकी सम्मानरक्षाके निमित्त उठके खड़े होगये। अनन्तर वृष्णिनन्दन मधुसूदन राजा धृतराष्ट्रके समीप जाकर यथा उचित वचनोंसे उनकी और भीष्मकी पूजा की। उनके सङ्ग इस प्रकारकी पूजा और सम्मान दिखाके श्रीकृष्णचन्द्र यथा योग्य अवस्थाके अनुसार सबहीसे मिले। इसके अनन्तर द्रोण, कृपाचार्य्य, अश्वत्थामा, यशस्वी बाह्लिक और सोमदत्तकी भी विशेष रूपसे पूजा की। वहांपर अत्यन्त स्वच्छ महामूल्य [illegible] सोनेका आसन बिछा हुआ था जनार्दन [illegible] उसीपर राजा धृतराष्ट्रकी आज्ञासे जा बैठे। अनन्तर पुरोहितोंने गऊ मधुपर्क [illegible] लाकर उन्हें प्रदान किया। [illegible] [illegible] राजा [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] लोगोंके सङ्ग सम्बन्धके अनुसार [illegible] बातचीत और हंसी ठट्ठे करते हुए वहांपर बहुत समयतक बैठे रहे। शत्रुनाशन महा यशस्वी श्रीकृष्णचन्द्र कौरवोंकी सभामें राजा धृतराष्ट्र आदि सब कौरवोंसे यथायोग्य मिलकर, और राजा धृतराष्ट्रसे सत्कार और पूजा पाकर, अन्तमें उनकी आज्ञाको लेकर वहांसे उठकर विदुरके रमणीय निवास-स्थानमें आकर उपस्थित हुए।

विदुरने सुन्दर और पवित्र वस्तुओंसे श्रीकृष्णकी भक्तिपूर्व्वक पूजा करके कहा, हे पुण्डरीकाक्ष! आपके दर्शनसे मेरे हृदयमें जैसी प्रीति उत्पन्न हुई है, उसे मैं किस प्रकारसे वर्णन करूं? आप सब प्राणियोंकी आत्मा, सबके अन्तर्यामी हैं। सब धर्मोंके जाननेवाले महाबुद्धिमान् विदुरने इस प्रकारसे बातचीत करके उनका अतिथि-सत्कार किया। इसके अनन्तर पाण्डवोंका कुशल क्षेम पूछने लगे, सब बातोंको जाननेवाले भगवान् कृष्णने पाण्डवोंके सम्पूर्ण वृत्तान्तको उनसे विस्तार पूर्व्वक कह सुनाया। वह अच्छी प्रकारसे जानते थे, कि विदुर पाण्डवोंके अत्यन्त मित्र हैं, उन लोगोंके ऊपर उनके क्रोधकी बात तो दूर रहे, वरन प्रीतिही उत्तम भांति और बहुत प्रकारसे है। विशेष करके वह उत्तम बुद्धिसे युक्त ज्ञानवान्, और धर्म्म अर्थके जाननेवाले हैं, इससे उनके निकट पाण्डवोंकी सब चेष्टाओंके वर्णन करनेमें कुछभी सङ्कोच नहीं है।

८९ अध्याय समाप्त।

वैशम्पायन मुनि बोले, शत्रुनाशन जनार्दन विदुरके सङ्ग मिलकर दिनके [illegible] भागमें पिताकी बहिन अपनी बुआ [illegible] कुन्तीदेवीसे मिलने गये, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

वीर पुरुषोंके सहाके मित्र श्रीकृष्णचन्द्रको बहुत दिनोंके अनन्तर देखकर उनके आंसुका बहना बन्द नहीं हुआ। वीरोंमें मुख्य श्रीकृष्णचन्द्रके अतिथि-सत्कार करनेके अनन्तर, जब वह आसन पर शोभित हुए, तब कुन्ती देवी दुःख तथा प्रेमसे गद्गद होकर कहने लगीं, हे तात। हे कृष्ण! जो लोग बालक अवस्थाहीसे गुरुकी सेवामें लगे रहते थे, जिनमें आपसमें अत्यन्त सुहृदता है, जो प्रीतिके पात्र, शान्त-अन्तःकरण, क्रोधके जाननेवाले और ब्राह्मणोंमें निष्ठावान्, सत्यवादी और धर्म्मात्मा हैं, जो सदा ही बहुत लोगोंसे युक्त राज्य करनेके योग्य हैं; वही लोग अधर्म्मी तथा ठगोंके फन्देमें पड़कर राज्यसे भ्रष्ट होके वनमें निवास करते थे; मैं अत्यन्त दुःख और कातरतासे रो रही थी, उस समय मुझको और सम्पूर्ण सुखकी वस्तुओंको परित्याग करके भी वनको चले गये थे; वे मेरे अत्यन्त प्यारे पांचों पुत्र वनवासके अयोग्य होकर भी किस प्रकारसे सिंह, व्याघ्र और मतवाले हाथियोंसे भरे बनमें निवास करते थे? बालक अवस्थामें जब उन लोगोंके पिताकी मृत्यु हो गई थी, तब मैंने ही उनका पालन पोषण किया था; अब इस वनवासके समयमें उन लोगोंने पिता और माता दोनोको विना देखे कैसे निवास किया? हे केशव। पाण्डव लोग शंख, भेरी, मृदङ्ग और बांसुरीके शब्दोंसे प्रति दिन पूजित होते थे। राजमन्दिरमें सुन्दर तथा कोमल मृगचर्म्मसे युक्त शय्यापर सोते थे, भोरके समयमें घोड़े हाथी रथ, शंख, भेरी, मृदङ्ग और बांसुरीके शब्दको सुनके निद्रासे जागते थे; तथा ब्राह्मणोंके पुण्याह-वचन और स्वस्तिवाचनसे जागकर अनेक प्रकारके वस्त्र, रत्न, और भूषण ब्राह्मणोंकी पूजा करके उन्हें दान देते थे, और ब्राह्मण लोग भी पूजित होकर स्वस्तिवाचनसे उन्हें आनन्दित और प्रसन्न करते थे। वे महाविपदके स्थान निर्ज्जन वनमें सिंह व्याघ्र, हाथी आदि वनके पशुओंके शब्दको सुनकर किस प्रकारसे सोते रहे होंगे, यह किसी प्रकारसे भी मेरी समझमें नहीं आता है। हे मधुसूदन। जिन लोगोंको शङ्ख, भेरी, मृदङ्ग, बांसुरी तथा कामिनीयोंके कोमल कण्ठसे गाए गीतों और सूत मागध वन्दियोंकी स्तुतिको सुनकर नींदसे उठनेका अभ्यास था; वे लोग वनके बीचमें हिंसक जन्तुओंके चीत्कार शब्दको सुनकर कैसे सोते रहे होंगे? हे कृष्ण! जो बालकपनमें निष्ठावान, तेजस्वी, धर्म्मात्मा, सब प्राणियोंके ऊपर दया करनेवाले थे, जिन्होंने काम, क्रोध आदिको वशमें किया था; जो सदाही उत्तम मार्गसे चलते हुए अम्बरीष, मान्धाता, ययाति, नहुष, भरत, दिलीप, शिवि, उशीनर आदि पुराने राजऋषियोंके उत्तम गुणोंको धारण करते थे, जो सब गुणोंसे विभूषित होनेसे तीनों लोकके राज्यके स्वामी होनेके योग्य थे, धर्म्मशास्त्र तथा व्यवहार सब विषयोंमें जो और वेदोंमें श्रेष्ठ थे, वही सुन्दर स्वच्छ सुवर्णके समान तेजस्वी, देखनेमें सुन्दर, शीलवान् सदाचारी, धर्म्मके जाननेवाले, सत्य प्रतिज्ञा करनेवाले, अजात-शत्रु धर्म्मात्मा महाबाहु युधिष्ठिर कैसे हैं?

हे मधुसूदन! जो भीमसेन सदा क्रोधमें वायुके समान वेगवान् महा बलसे युक्त, दस हजार हाथियोंके बलको धारण करनेवाला है, जो सदाही प्रिय कार्य्य करके भाइयोंकी प्रीति तथा प्रेमका पात्र हुए हैं, जिसके प्रचण्ड और ताप रूपी अग्निमें कीचक, क्रोधवश, हिड़म्ब और वकासुर भस्म होगये थे, जो शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ, शत्रुनाशन महावीर पराक्रममें इन्द्र बलमें वायु और क्रोधमें महाकालके समान होकर भी क्रोध, बल और असहन शीलताको रोककर अपने सहोदर भाईकी आज्ञामें रत है, उस तेजस्वी महा पराक्रमी, महात्मा भीम

सेनकी कुशलवार्त्ता मुझसे कहो। हे कृष्ण! वह परिघके समान भुजावाले महात्मा भीमसेन इस समय कैसे हैं?

हे कृष्ण! जो अर्ज्जुन दोही भुजाओंके सहारे सहस्र भुजावाले मृत अर्ज्जुनके सङ्ग युद्ध करनेकी इच्छा करते हैं; जो महावीर पुरुष इकबारगी पाच सौ बाणोंको चला सकते हैं; जिसकी शस्त्रविद्याकी शिक्षासे कार्त्तवीर्य्य, प्रतापमें सूर्य्य, इन्द्रिय निग्रहमें महा ऋषि, क्षमामें पृथ्वी और वीरतामें इन्द्रके सङ्ग उपमा दी जासकती है, जिसके महाबल और पराक्रमसे इस समस्त पृथ्वीके राजाओंके बीच कौरवोंका तेज प्रताप, और प्रभुता प्रकाशित हुई है और पाण्डव लोग आज तक जिसके बाहुबलकी सदा उपासना करते हैं, युद्धमें जिनके सन्मुख होकर कोई पुरुष भी निस्तार नहीं पाता, जो वीर पुरुष सब प्राणियोंको जीतनेवाला, किसी समयमें किसीके सम्मुखसे पराजित नहीं होता है, देवताओंके राजा इन्द्र जैसे देवताओंको आशा देनेवाले हैं, वैसे ही रथियोंमें श्रेष्ठ सत्य-पराक्रमी अर्ज्जुन भी एक मात्र पाण्डवोंको अवलम्ब है, वह अर्ज्जुन तुम्हारा भाई और मित्र इस समय किस प्रकारसे है?

हे मधुसूदन! सब प्राणियोंके ऊपर दया करनेवाला लज्जावान, सुकुमार, धर्म्मात्मा सब शस्त्रोंको जाननेवाला, महा धनुर्धारी, महा बलवान, युद्धके कार्य्योंको जाननेवाला सहदेव मुझे बहुत ही प्यारा है। हे कृष्ण! धर्म्म और अर्थको जाननेवाला महात्मा सहदेव सदा ही भाइयोंकी सेवा टहलमें लगा रहता है और भाई लोग भी उसके उत्तम चरित्रकी सदा प्रशंसा किया करते हैं। हे यदुनन्दन! वह भाइयोंकी प्रीतिको बढ़ानेवाला और मेरी सेवामें सदा लगा रहनेवाला वीरोंमें श्रेष्ठ माद्री-पुत्र सहदेव कैसे है?

हे कृष्ण! जो वीरतासे युक्त, देखनेमें सुन्दर सुकुमार तथा भाइयोंका अत्यन्त प्यारा है; जो युधिष्ठिर आदिका प्राण स्वरूप कहा जा सकता है, दुःखको न सहने योग्य सुकुमार पुत्रको मैंने सदा सुखमें रक्खा था, वह महा पराक्रमी बलवान नकुल कुशलसे तो है? हे महाबाहो! सदा सुखोंको भोगने योग्य महारथ नकुलको क्या मैं फिर देख सकूंगी? देखो, जिसको न देखनेसे मैं क्षण भर भी नहीं रह सकती थी, उस नकुलके ऐसे कठिन वियोग होने पर भी अब तक जीती हूं।

हे जनार्द्दन! सब गुणोंसे युक्त, उत्तम कुलसे उत्पन्न हुई महास्वरूपवती द्रौपदी मुझे पुत्रोंसे भी अधिक प्यारी है। जिस पतिव्रता सत्यवादिनी द्रौपदीने पतियोंके सङ्ग जानेकी इच्छासे सङ्गमें रहनेवाले पुत्रोंको भी अनादरपूर्व्वक त्याग दिया, और पतियोंके सङ्ग वनको चली गयी, सब गुण, लक्षण, मङ्गल और रूपसे भरी हुई वह द्रौपदी किस प्रकारसे है? हाय! साक्षात् अग्निके समान तेजस्वी महा धनुर्द्धर शूर वीर पाच पतियोंकी अनुगामिनी होकर भी द्रौपदी इस प्रकारके दुःख और क्लेश पा रही है। हे शत्रुनाशन! आज चौदह वर्षका समय हुआ, कि मैंने अभीतक उसका चन्द्रमुख नहीं देखा। हा! बालकोंके बिना देखे वह अपने मनमें कितना दुःख पाती होगी, उसे मैं नहीं कह सकती हूं। द्रुपदनन्दिनी द्रौपदी जब ऐसे शुद्ध और पवित्र चरित्रसे युक्त होनेपर भी सुखका भोगनेवाली अधिकारिणी नहीं हुई, तब मुझे यही जान पड़ता है कि इस लोकमें केवल पुण्य-कर्म्मोंहीसे सुख नहीं मिल सकता। सभामें बुलाई गई द्रौपदीको मैंने जो हाल दुर्दशा देखी थी, उसको स्मरण करनेसे अर्ज्जुन, युधिष्ठिर भीम, नकुल और सहदेव [illegible] भी मेरा प्रिय नहीं है [illegible]। इसके पहिले [illegible]

धनने उस द्रौपदीको स्त्रीधर्म्मसे युक्त, और एक वस्त्रको पहने हुए रहनेपर भी राजसभामें बुलवाकर ससुर आदि सब कौरवोंके सम्मुख सभामें जो खड़ी कर दी थी और उन लोगोंने उसे ऐसी अवस्थामें देखा था, उससे बढकर और दूसरा दुःख मैंने कभी नहीं सहा था। उस समय राजा धृतराष्ट्र, महाराज वाह्लिक, कृपाचार्य्य और भी कई एक सज्जन पुरुष दुःखित और शोकित हुए थे, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है, परन्तु सब सभासदोंमेंसे मैं विदुरहीकी अधिक प्रशंसा करती हूं। उत्तम चरित्र होनेहीसे मनुष्य लोकमें पूजनीय और मान पानेका पात्र हो सकता है; केवल विद्या तथा धनसे कोई भी बड़ाई पानेका अधिकारी नहीं होता। हे कृष्ण! उन महा बुद्धिमान्, गम्भीर प्रकृति, महात्मा विदुरका उत्तम शील रूपी प्रकाशमान भूषण सब लोकोंमें अपने तेजसे प्रकाशित हो रहा है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, श्रीकृष्णचन्द्रको देखकर कुन्ती हर्ष और शोकसे कातर होकर नाना भांतिके दुःखोंको सुनाकर फिर कहने लगी, हे शत्रुनाशन! पहिले समयके बुरे राजाओंके चलाये हुए जुए, शिकार आदि व्यसन क्या कभी पाण्डवोंको सुखदायक हो सकते है? इस पापरूपी अशुभ जुएको खेलनेहीसे नीचबुद्धि धृतराष्ट्रके पुत्रोंने द्रौपदीको बहुत ही कठिन मृत्युके समान दुःख देकर मेरे हृदयको नित्य ही जलाया है। हे परन्तप जनार्द्दन! मैंने नगरसे बनको गये हुए पुत्रोंके अनेक प्रकारके दुःखकी बात सुनी है। हे माधव! दूसरेके घरमें छिपकर जो मेरे पुत्रोंको अज्ञातवास करना पड़ा था, इससे बढकर दुःख तथा क्लेश मुझे और मेरे पुत्रोंको कभी नहीं मिला। आज चौदह वर्ष हो गये, अभी तक दुर्य्योधन मेरे पुत्रोंको प्रवासी ही बनाये हुए है, यदि पुण्यके फलका नाश न हुआ होगा तो इतने दिनके बीतनेपर अब मुझको सुख भी मिलेगा। हे कृष्ण! मैंने धृतराष्ट्रके पुत्रोंको कभी पाण्डवोंसे कम नहीं समझा—पुत्रहीके समान उन्हें भी देखा है, इस सत्यके ऊपर मैं यह निश्चय करके कह सकती हूं, कि अवश्यही पाण्डवोंके सहित तुमको इस उपस्थित संग्रामसे विजयी और मुक्त, शत्रुओंको मरे हुए और पाण्डवोंको फिर राज्य पाये हुए देखूंगी। पाण्डवोंने धर्म्मके बलसे जिस प्रकारसे सत्यव्रतका पालन किया है, उससे उनके शत्रुलोग कभी उन्हें युद्धमें नहीं जीत सकेंगे। जो हो, इस उपस्थित दुःखको भोग करनेसे अपना तिरस्कार भी नहीं कर सकती हूं, और न दुर्य्योधनहीको दोष दे सकती हूं, केवल पिताको ही इस विषयमें दोषी कहना होगा। जुवेके खेलनेवाले धूर्त्त लोग जैसे विजयी धूर्त्तको बाजीमें लगे हुए धनको देते है, वैसेही मुझको उन्होंने कुन्तिभोज राजाके हाथमें समर्पण किया था। मैं जब हाथमें लेकर बालक अवस्थामें खेल रही थी, उसी समय तुम्हारे पिता मह (दादा) ने मुझे अपने पुत्रहीन कुन्तीभोज राजाके हाथमें समर्पित किया था। इससे मैं पिता और ससुर लोग सबकेही वञ्चनाकी पाली हूं।

अर्ज्जुनके जन्मके समयमें यह आकाशवाणी हुई थी, कि तुम्हारा यह पुत्र जगत विजयी होगा, इसका यश स्वर्ग तक फैलेगा, यह महा संग्राममें कौरवोंको मारकर तीन सहायक भाइयोंके सहित पूर्ण करेगा। मैं इस देववाणीके ऊपर भी किसी प्रकारका दोषारोप नहीं कर सकती हूं। सर्व्वव्यापक धर्म्मरूपी नारायण विधाताको सब प्रकारसे नमस्कार है। धर्म्मही सब प्रजाओंको सदासे धारण करता चला आता है। हे यदुनन्दन कृष्ण! यदि धर्म्म पृथ्वीपर रहेगा, तो जैसी देववाणी हुई है, उसे तुम अवश्यही पूरी

करोगे। हे माधव! पुत्रोंके विरहसे जीती हुई मैं जिस प्रकारके शोकरूपी अग्निसे जली जाती हूं; वैसा दुःख मुझे न विधवा होनेसे न अर्थनाशसे, न शत्रुतासे न और किसी प्रकारसे कभी अनुभव हुआ है। मैं जब तक उस सब शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ गाण्डीव धनुर्द्धारी अर्जुनको नहीं देख सकती हूं, तबतक मेरे हृदयमें शान्ति कहां है? हे कृष्ण! आज चौदह वर्षतक मैं युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेवको न देखकर जीवन्मृत होगई हूं। हे जनार्द्दन! जो लोग सब दिनके निमित्त विदा हो जाते हैं; उनके निमित्त उनके पुत्र और जातिके लोग मरना निश्चय करके श्राद्ध आदि कर्म्म करके शान्ति प्राप्त करते हैं, परन्तु मेरे पक्षमें पुत्रलोग जीवित दशामें रहकर भी मरे हुएके समान गिने जाते हैं, और मैं भी उन लोगोंके निकट मरी हुई बोध होती हूं! हे कृष्ण! तुम मेरे वचनके अनुसार धर्म्मात्मा राजा युधिष्ठिरसे यह कहना, कि "हे पुत्र! तुम्हारे धर्म्मकी अत्यन्त हानि हुई है, इससे जिससे धर्म्म नष्ट न होवे वही कार्य्य तुम करो।"

हे जनार्द्दन! जो स्त्री दूसरेके सहारे अपने जीवनको बिताती है, उसके जीवनको धिक्कार है, मांगकर जीविका प्राप्त करनेकी अपेक्षा मर जाना सौगुना उत्तम है। हे वासुदेव! तुम अर्जुन और उद्यमशाली भीमसेनसे भी हमारे इस वचनको कहना, कि "क्षत्रियोंकी माता जिस निमित्त पुत्रको उत्पन्न करती है, उसके [illegible] वही समय आकर उपस्थित हुआ है, इससे इस उपस्थित समयमें यदि काल तुम लोगोंको पातकग्रस्त करे, तो भी तुम मेरा [illegible] [illegible] भी मारके सब लोगोंके सामने [illegible] [illegible]। [illegible] लोगोंको निन्दित और [illegible] [illegible] हुए [illegible] भी तुम [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] और जीवनको भी

परित्याग किया जा सकता है। हे पुरुषोत्तम! तुम सदा क्षत्रियोंके धर्म्मसे स्थित दोनों माद्री-पुत्रोंसे कहना, कि "हे पुत्रो! तुम लोग प्राण-पण करके भी अपने पराक्रमसे उपार्ज्जित भोगोंकी प्रार्थना करो। क्योंकि अपने पराक्रम-से प्राप्त हुआ धन ही क्षत्रियोंके लिये प्रिय होता है।" हे महाबाहो! वहांपर जाकर हर एकसे इसी प्रकारके वचन कहकर मेरे पुत्र अर्जुनसे विशेष करके यह वचन कहना, कि जिसमें वह द्रौपदीके बताये हुए मार्गहीसे सब प्रकारसे चले, उसकी प्रीतिकी पूरी करनेसे किसी प्रकारसे शिथिलता न करे। हे कृष्ण! इन बातोंको तुम खूब जानते हो, कि भीम और अर्जुन क्रुद्ध होनेपर साक्षात काल मूर्त्तिको धारण करके देवताओंको भी विनष्ट कर सकते हैं, परन्तु ऐसे बलवान होनेपर भी जो उनकी प्यारी स्त्री सभामें बुलाई गई थी, और दुःशासन तथा कर्णने उसके ऊपर जिन रूखे और कठोर वचनोंका प्रयोग किया था, इससे बढ़कर और अपमानका विषय दूसरा क्या हो सकता है? नीचबुद्धि दुर्योधनने मुख्य मुख्य कौरवोंके सन्मुख महात्मा भीमसेनका जो अप-मान किया था, अवश्यही उसका पूरा फल वह पावेगा, क्योंकि शत्रुताका [illegible] पानेसे भीमसेन बिना उसको समाप्त किये शान्त होने-वाले नहीं हैं। विशेष करके वीर [illegible] समयमें उनकी शत्रुताकी शान्ति नहीं होती। वह जब-तक शत्रुओंका संहार नहीं करते हैं, तबतक सुखी भी नहीं होते। हे कृष्ण! मैं जुएमें हारने, राज्यके छूट जाने तथा उन लोगोंके वनवासमें भी उतनी दुःखी नहीं हूं, जितनी उस [illegible] पतिव्रता द्रौपदी [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

स्त्रीधर्म्मसे युक्त, यशस्विनी द्रौपदी ऐसे ऐसे असामान्य वीर पुरुषोंकी भार्य्या होकर भी, उस समय अनाथिनी हुई थी। हे पुरुषोत्तम मधुसूदन! बलवानोंमें श्रेष्ठ बलराम, तुम और प्रद्युम्न मेरे तथा मेरे पुत्रोंके सहायक रहनेपर भी तथा पराक्रमी भीमसेन और अजेय अर्जुनके जीते ही मुझे इस प्रकारका कठिन दुःख सहना पड़ा, यही एक बड़ा भारी आश्चर्य्य है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर अर्जुनके मित्र श्रीकृष्णचन्द्र पुत्रोंके दुःखसे अत्यन्त दुःखित और कातर तथा शोकित कुन्तीदेवीको धीरज देने लगे।

श्रीकृष्ण बोले, हे महाबुद्धिमती! इस पृथ्वीके बीचमें तुम्हारे समान सौभाग्यवती यशस्विनी रानी दूसरी कौन है? तुम शूरसेन भूपतिकी दुहिता और आजमीढ़ वंशमें व्याही गयी हो। तुम्हारा उत्तम कुलमें जन्म हुआ और उत्तम कुलमें बिवाह होनेसे एक तालाबसे दूसरे तालाबमें आई हुईके समान हो। तुम अत्यन्त ऐश्वर्य्यशालिनी सबका कल्याण करनेवाली, और स्वामीको अत्यन्तही सेवा करनेवाली पतिके आदरकी पात्री थी। वीरपत्नी होकर तुम महावीरपुरुषोंकी जननी हुई हो, इससे स्त्रियोंमें जो सब गुण होने उचित है, उनमें एक भी तुममें बाकी नहीं है, तुम सबही गुणोंसे भूषित हुई हो। इससे तुम्हारे समान महाभाग्यवती स्त्रीको सुख और दुःख दोनोंही अनुभव करना योग्य है। हे देवी! तुम्हारे पुत्र लोग निद्रा, आलस्य, क्रोध, हर्ष, भूख, प्यास, सर्दी, गर्मी, आदि सब दुखदायी विषयोंको जीतकर, उन्हें अपने वशमें करके, वीरोंके योग्य सुखहीमें सदा लगे रहते है। अत्यन्त उत्साही और महाबलसे युक्त पाण्डवलोगोंको साधारण मनुष्योंके प्रार्थनीय ग्रामविहार आदि किसी विषयमें भी रुचि नहीं है; वीरसुख ही उन लोगोंको प्यारा है, थोड़से अर्थात् स्वल्प विषयसे वे कभी सन्तुष्ट होने वाले नहीं हैं। धीरज धारण करने वाले पण्डित लोग किसी वस्तुकी अन्तिम सीमाकोही भोग करते है। वे लोग या तो मनुष्योंके योग्य महा क्लेशोंको सहते है, और नहीं तो उत्तम भोग और सुखोंके एक शेष फलको अनुभव करते है, परन्तु ग्रामप्रिय मनुष्य लोग केवल मध्यम अवस्थाकी प्रार्थना करते हैं, बहुत दुःख अथवा अत्यन्त सुखके निमित्त वह इच्छा नहीं करते। इसीसे धीर पाण्डव लोग एक शेषकी अवस्थाहीमें रत है, मध्यम अवस्थामें जानेके निमित्त कभी उन लोगोंकी प्रवृत्ति नही है। विषयोंकी दोनों सीमाकी प्राप्ति ही सुखको देनेवाली है और इन दोनोंका मध्यभाग दुःखका हेतु है, इसे बुद्धिमान पण्डितोंने भी स्पष्ट रूपसे कहा है।

हे माता! पाण्डव लोगोंने तथा द्रौपदीने तुम्हे प्रणाम करके अपने आत्म कुशलको निवेदन करनेके अनन्तर तुम्हारा कुशल बृतान्त पूछा है। तुम पुत्रोंको शीघ्र ही कृतकार्य्य, नीरोग, सब लोकोंके स्वामी, शत्रु रहित और लक्ष्मीसे युक्त देखोगी, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

पुत्रोंके दुःखसे दुःखित कुन्ती देवी इस प्रकारसे धीरज पाकर, अज्ञानसे उत्पन्न हुए मोहको रोककर जनार्द्दन कृष्णसे बोलीं, हे महाबाहु मधुसूदन कृष्ण! तुम्हारे विचारमें जो कुछ कार्य्य पाण्डवोंके निमित्त सत्य और हितकारी हो, धर्म्मके अनुसार निष्कपट रूपसे तुम उसीका अनुष्ठान करो। हे परन्तप! तुम्हारी सत्यनिष्ठता और वंश मर्य्यादाका जैसा प्रभाव है, उसे मैं विशेष रूपसे जानती हूं। मित्र लोगोंके कार्य्यके विषयमें तुम जैसी बुद्धि और पराक्रम प्रकाशित करते हो, वह भी मुझे विदित है।

अधिक और क्या कहूंगो मेरे कुलमें तुम ही धर्म्म, सत्य और बड़ी कठिन तपस्या हो, इस पाण्डवोंके भ्राता और तुम ही परमेश्वर हो, यह सारा ब्रह्माण्ड तुमसे ही विराजमान है। तुमने जो कुछ वचन कहे, वे अवश्यही सत्य होंगे, कभी वे अन्यथा न होंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महाबाहु श्रीकृष्णचन्द्र कुन्तीदेवीके सङ्ग इस प्रकारसे बातचीत करके उनकी अनुमति ग्रहण करके तथा उनकी प्रदक्षिणा करके दुर्य्योधनके राज मन्दिरकी ओर चले।

९० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महा यशस्वी जनार्द्दन कृष्णने, कुन्ती देवीकी अनुमति पाने पर, उन्हें प्रदक्षिणा करके वहांसे चलकर, अनेक प्रकारके आसनोंसे युक्त, परम शोभासे पूरित साक्षात इन्द्र भवनके समान दुर्य्योधनके राजमन्दिरमें आकर प्रवेश किया। राजमन्दिरके दर्वाजेपर अनेक द्वारपाल खड़े थे, परन्तु कोई भी उन्हें भीतर जानेसे रोक न सका। वह बिना बाधाके तीन खण्डको लांघ करके जलसे युक्त बादलके समान विशाल, पर्व्वतके शिखरके समान ऊंचे, अत्यन्त शोभासे शोभित, प्रकाशमान मन्दिरके ऊपर जा पहुंचे वहां पहुंचके देखा, कि महाबाहु दुर्य्योधन अनेक राजा और कौरवोंके सहित राजासिंहासनपर बैठे हैं। उसके समीपही दुःशासन, कर्ण और सुबलपुत्र शकुनि अपने अपने आसनोंपर बैठे थे। यदुनन्दन कृष्णको अभ्यागत रूपसे आया हुआ देखकर महा यशस्वी धृतराष्ट्र-पुत्र दुर्य्योधन उनके सम्मानके निमित्त मन्त्रियोंके सहित आसनपरसे उठ खड़े हुए। [illegible] [illegible] उनके [illegible], [illegible] [illegible] अनुसार [illegible]। [illegible]

अनेक प्रकारकी वस्त्रोंसे युक्त, सुन्दर और स्वच्छ सुवर्णमय पलङ्ग पर बैठ गये। तब कुरुराजने उनके सत्कारके निमित्त गऊ, मधुपर्क जल, घर, राज्य सबही निवेदन किया। कौरव लोग तथा दूसरे सब राजा लोग प्रसन्न, सूर्य्यके समान तेजस्वी और उत्तम पलङ्गके ऊपर बैठे हुए श्रीकृष्णचन्द्रकी उपासना करने लगे।

अनन्तर राजा दुर्य्योधनने विजयी श्रेष्ठ श्रीकृष्णचन्द्रको भोजनके निमित्त निमन्त्रण दिया, परन्तु उन्होंने उसे स्वीकार नहीं किया। इससे कुरुराज दुर्य्योधनने कर्णको सम्बोधन करके उनके द्वारा यदुपति कृष्णको विनीत भावसे कहा, हे जनार्द्दन। आपके निमित्त अन्न, पान, वसन, शयन आदिके योग्य सब वस्तुएं तैयार हुई हैं, परन्तु आपने उनमेंसे कुछ भी ग्रहण नहीं किया, इसका कारण क्या है? हे माधव। आपने कुरु पाण्डव दोनों पक्षको सहायता दी है, तथा दोनोंहीके हितके अनुष्ठानमें लगे हुए हैं, आप धृतराष्ट्रके सुख सम्बन्धी और प्रीतिके पात्र हैं; धर्म्म और अर्थके सम्पूर्ण तत्त्व आपको विदित हैं; इससे हे चक्र और गदाके धारण करने वाले गोविन्द। सब प्रकारसे योग्य पात्र होकर भी आपने जो मेरा समर्पण की हुई वस्तुओंको नहीं ग्रहण किया, इसका कारण क्या है? हम लोग इसको सुननेकी इच्छा करते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, दुर्य्योधनका यह वचन सुननेमें मोटा बोध हुआ यह ठीक है, परन्तु उसके कामका विचार करनेमें वह [illegible] पूर्ण मालूम होता था। [illegible] राजीवलोचन [illegible] [illegible]

निकट जाते हैं उनको पूजा ग्रहण करते तथा उनके अन्न आदि वस्तुओंको भी भोजन करते हैं। इनसे जब मैं कृतकार्य्य होऊंगा, तब आप मेरे तथा मेरे साथियोंका इच्छानुसार सत्कार कीजियेगा।

श्रीकृष्णके इस बचनको सुनकर, दुर्योधन फिर उनसे बोले, कि हम लोगोंके सङ्ग आपको इस प्रकारका व्यवहार करना युक्तिसे पूरित नहीं है, आप चाहे कृतकार्य्य हो, अथवा न हों; उसको हम लोग नहीं मानते हैं, केवल यदुकुलके सम्बन्धसे ही मैं पूजा करनेका यत्न कर रहा हूं, परन्तु यत्न करनेपर भी कुछ नहीं कर सकता हूं। हे मधुसूदन! हम लोग प्रीतिके सहित आपको पूजा करनेके निमित्त उत्सुक हैं, परन्तु आप न जाने किस कारणसे उसे स्वीकार नहीं करते हैं, इसे हम लोग कुछ भी नहीं समझ सकते हैं। हे गोविन्द! आपके सङ्ग हम लोगोंको कुछ शत्रुता भी नहीं है, और कभी युद्धका विवाद भी नहीं हुआ है, इससे विचार कर देखनेसे आपका यह वचन किसी प्रकारसे युक्ति-सङ्गत नहीं मालूम होता है।

यह सुनकर श्रीकृष्णचन्द्रजी दुर्योधनके प्रति बहुत हंसकर बोले,—मैं काम, क्रोध भय, लोभ, द्वेष और हेतुवाद आदि किसी प्रकारसे भी धर्म्मको नहीं छोड़ सकता हूं। हे राजन्! जिसके ऊपर किसीकी प्रीति रहती है, वह उसीका अन्न भोजन करता है, अथवा जो विपदग्रस्त होता है, वह भी दूसरेका दिया हुआ अन्न भोजन करता है, परन्तु आपने भी मेरी प्रीतिका कोई कार्य्य नहीं किया है, और मैं भी आपद-ग्रस्त नहीं हुआ हूं, तब मैं कैसे आपका अन्न ग्रहण कर सकता हूं? हे राजन! आप विना कारणही अपने प्रिय कार्य्योंको करनेवाले, सब गुणोंसे ... निज भ्राता पाण्डवोंके सङ्ग जन्मसे वैर करते चले आते हैं। विना कारण उनके सङ्ग शत्रुता करना किसी प्रकारसे उचित नहीं है। पाण्डव लोग सब दिनोंसे आपके अनुकूल है, उन्हें कोई क्या कुछ कह सकता है? जो पुरुष उन लोगोंसे वैर करता है, वह हमारा भी शत्रु है, जो उन लोगोंके अनुकूल है, वह मेरे भी अनुकूलही है, धर्म्म करनेवाले पाण्डवोंसे मैं पृथक नहीं हूं। काम, क्रोध, आदि विषयोंके वशमें होकर जो मूढ़-बुद्धि पुरुष अत्यन्त मोहमें फसकर गुणवान मनुष्योंके सङ्ग विरोध करता है, उसको पण्डितोंने पुरुषोंमें अधम पुरुष कहा है। इन्द्रियोंके वशमें रहनेवाला जो अधम पुरुष क्रोध और लोभमें फसकर उत्तम गुणोंसे युक्त जाति-वालोंको सदा ही लोभकी दृष्टिसे देखता है, वह कभी बहुत दिन तक सुख सम्पत्तिके पद पर प्रतिष्ठित नहीं रह सकता। परन्तु जो बुद्धिमान मनुष्य अपने हृदयके अप्रिय होनेपर भी गुणवान मनुष्योंका प्रिय कार्य्योंसे अपने वशमें कर सकता है, वह सब दिन यशके उत्तम मार्गसे गमन करता है। इससे इन सब बातोंका विचार करके देखनेसे आपका यह दुष्ट-भावोंसे पूरित अशुभ-अन्न कभी ग्रहण तथा भोजन करनेके योग्य नहीं है, मैं एक मात्र बिदुरके घर भोजन करूंगा, यही मेरा निश्चय है।

महा बुद्धिमान महाबाहु श्रीकृष्णचन्द्र, किसीके वचनको न सहनेवाले दुर्य्योधनसे ऐसा कह कर, सभिरतोंसे प्रकाशित उनके राजभवनसे निकलकर बिदुरके घर चले गये। कृष्णके वहांपर पहुंच जानेपर भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, वाह्लिक आदि कौरवोंने उनके निकट गमन किया। उन कौरवोंने बल और पराक्रमसे युक्त कृष्णसे कहा,—हे मधुसूदन! हम लोग अनेक सत्कारोंसे पूरित घर सब आपको समर्पण करते हैं। परन्तु महा

तेजस्वी कृष्ण उन लोगोंसे यही वचन बोले' कि आप लोगोंके यहांपर आगमन करनेहीसे मेरी पूरी पूजा हो चुकी; अब आप लोग अपने अपने स्थानको जाइये। कौरवोंकेलौट जानेपर विदुरने परम यत्नवान होकर भक्ति-पूर्व्वक मधुसूदन कृष्ण भगवानकी पूजा की। अनन्तर उन्होंने महात्मा कृष्णको अनेक गुणोंसे युक्त भोजन योग्य बहुतसा पवित्र अन्न जल निवेदन किया। मधुसूदन कृष्ण पहिले उन सब भोजनोंके सङ्ग बहुत सा धन दान देकर वेदके जानने वाले ब्राह्मणोंको उत्तम प्रकारसे तृप्त किया, अनन्तर देवताओंमें बैठे हुए इन्द्रकी भांति अपने साथियोंके सङ्ग मिलकर बचे हुए अन्न आदिको भोजन किया।

९१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, श्रीकृष्णके भोजन-कर चुकनेपर, विश्रामके अनन्तर रातके समय विदुर उनसे कहने लगे, हे जनार्द्दन कृष्ण! आपका यहांपर आना पूरी बुद्धिमानीका कार्य नहीं हुआ है, क्योंकि दुर्य्योधन बड़ा नीचबुद्धि, धर्म्म-अर्थका विरोधी और महा क्रोधी है। अपने मानकी इच्छारो वह अनायास ही माननीय लोगोंके मानको नष्ट करता है. बुद्धिमानोंके शासनमें नहीं चलता, धर्म्मशास्त्रकी आज्ञाको लांघ करके कार्य्य करता है। हे कृष्ण! उसकी मूढ़ता और नीच-ताकी बात क्या कहूं। वह ऐसा मूर्ख और [illegible] है, कि हित चाहनेवाले लोगोंकी भी बातको नहीं मानता है। कोई [illegible] उपकार [illegible] उसका बदला देना तो [illegible] उसके अपकारकीही चेष्टा किया करता है। [illegible] कामप्रिय मित्रद्रोही [illegible] [illegible]

और सब आर्य्योंमें बहुत विरतका गुरुत्व है। मैंने जो इनसब दोषोंका वर्णन किया है, इसके अतिरिक्त और भी बहुतसे दोष दुर्य्योधनमें विद्यमान हैं। इससे यदि आप मङ्गलदायक तथा हितकारी वचन कहेंगे तो भी वह क्रोधके वशमें होकर कदापि उसको स्वीकार न करेगा। भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, कर्ण, अश्वत्थामा, जयद्रथ आदि वीरोंसे उसे विजयकी बहुत ही आशा है, इससे वह शान्ति स्थापनकी निमित्त इच्छा नहीं करता। हे जनार्द्दन! धृतराष्ट्रके पुत्रों तथा कर्ण आदिक दुष्ट पुरुषोंका इस प्रकार निश्चय है, कि भीष्म द्रोण और कृपाचार्य्य आदि वीरों के विरुद्ध युद्ध करना तो दूर रहे पाण्डव लोग उनकी ओर भी न देख सकेंगे। हे मधुसूदन! अविचारी मूर्ख दुर्य्योधन राजाओंकी सेनाओंको बटोरकर अपनेको कृतार्थ समझ रहा है। उसकी नीचबुद्धि और दुराशाकी बात मैं कहां तक कहूं, उसे यह निश्चय है, कि अकेला कर्ण ही पाण्डवोंको जीत लेगा; इससे शान्ति स्थापनके निमित्त उसकी कभी प्रवृत्ति न होगी।

हे कृष्ण! आप कौरव और पाण्डवोंके बीच सन्धि स्थापन करनेकी इच्छा करते हैं, सो उचित है, परन्तु धृतराष्ट्रके सब पुत्रोंकी यह प्रतिज्ञा है, कि पाण्डवोंको हम लोग कोई वस्तु भी उचित रीतिसे प्रदान न करेंगे। इससे जो लोग ऐसा निश्चय किये हुए हैं, उनके निमित्त कोई हितकारी वचनका प्रयोग कर-नेसे भी [illegible] [illegible] हे मधुसूदन! [illegible] [illegible]

घमण्डमें चूर है, इससे वह आपका वचन कभी स्वीकार न करेगा, आप उसके समीप जो कुछ वचन कहेंगे, वे सब ही निरर्थक होंगे। हे कृष्ण! वे सब नीचबुद्धि, दुष्ट और पापी लोग जब एक स्थानपर बैठे रहेंगे, उस समय उनके बीचमें आपका जाना तथा उन लोगोंके विरुद्ध बातोंका कहना मेरे मतमें उत्तम नहीं है। कभी बुद्धिमान् पुरुषोंकी उपासना न करनी, अत्यन्त बड़े ऐश्वर्य्यकी प्रभुता पाना, अहंकारसे भरे रहना, युवा अवस्था और क्रूर-स्वभाव तथा किसीकी बातोंको न सहना इत्यादि कारणोंसे दुर्य्योधन आपकी हित-कारी बातोंको न मानेगा। हे कृष्ण! उसकी सेना भी अत्यन्त बलवान है, और तुम्हारे ऊपर वह बहुत शङ्कित रहता है; इसीसे आपकी बातोंको कभी न ग्रहण करेगा। हे जनार्दन! धृतराष्ट्रके पुत्रोंका ऐसा निश्चय है, कि सब देवताओंके सहित साक्षात इन्द्र भी आवें तौ भी मेरी सेनाके बलको नाश नहीं कर सकेंगे। इस लिये ऐसी आशा करनेवाले, काम क्रोधके वशवर्त्ती दुर्य्योधनके निकट तुम जिन बातोंका प्रसङ्ग करोगे, वे यथार्थमें अर्थयुक्त होने पर भी निरर्थक हो जावेंगी। नीच बुद्धि, मूढ़, दुर्य्योधन हाथी, घोड़े, रथ और पैदलोंसे युक्त महा-सेनामें निवास करनेपर भयसे रहित होकर अब यह समझता है, कि सम्पूर्ण पृथ्वी मेरी मुट्ठीके भीतर है; और यही समझकर वह इस अखिल भूमण्डलपर निष्कण्टक राज्य करनेकी आकांक्षा करता है, इससे बिना युद्धके उसके समीप शान्ति स्थापित करना किसी प्रकारसे सम्भव नहीं होता। जो धन उसे एकवार मिल गया है, वह सदा ही उसके निकट उपस्थित रहेगा, कभी उसके हाथसे बाहर न होगा, ऐसा ही उसे ध्रुव-निश्चय है। हा! इस मूर्ख दुर्य्योधनके निमित्त बोध होता है, कि समस्त पृथ्वीके वीरोंका नाश होगा, क्योंकि उसकी सहायताके वास्ते सम्पूर्ण दुष्ट-क्षत्रिय और राजा लोग कालसे प्रेरित होकर पाण्डवोंसे युद्ध करनेकी इच्छासे सब ओरसे आकर इकट्ठे हुए हैं। ये राजा लोग पहिले आपके सङ्ग शत्रुता करके श्रीभ्रष्ट हुए थे, वे ही सब आपके भयसे दुःखी होकर अब इस समय कर्णके सङ्ग मिल कर दुर्य्योधनके भरोसे हैं और उसका कार्य्य सिद्ध करनेके निमित्त अपना प्राण पर्य्यन्त देकर पाण्डवोंसे युद्ध करनेके निमित्त बहुत ही आनन्दित हैं। हे यदुकुलभूषण कृष्ण! इससे उन लोगोंके बीचमें आपका प्रवेश करना मेरे मतसे किसी प्रकार भी सिद्ध नहीं होता है। हे शत्रुओंके जीतनेवाले! उन दुष्ट बुद्धि अनगिनत शत्रुओंके बीच आप कैसे गमन करेंगे? हे शत्रुनाशन महाबाहो! आप देवताओंसे भी अजेय हैं, इससे आपको सब कुछ सम्भव हो सकता है, आपका प्रभाव बल, कुछ भी मुझसे छिपा नहीं है। हे कृष्ण! पाण्डवोंके ऊपर मेरी जैसी प्रीति है मैं तुमसे प्रेम, और सुहृदताके कारणसे ही ये सब बचन कहता हूं। हे पुण्डरीकाक्ष! तुम्हें देखनेसे मेरे अन्तःकरणमें जैसी प्रीति उत्पन्न हुई है, उसे मैं क्या वर्णन करूं, तुम सब प्राणियोंके अन्तर्य्यामी हो, इससे सबकी मनकी बात जानते हो।

श्रीकृष्ण भगवान् बोले, हे विदुर! महा बुद्धिमान पण्डित लोग जैसा कहते हैं, और मेरे समान सुहृद मित्रके लिये तुम्हारे समान सुहृद पुरुषको जैसा कहना योग्य है, और तुमको जैसे धर्म्म तथा अर्थसे युक्त बचनोंके कहनेका अभ्यास है, तुमने पिता माताकी भांति मुझसे वैसे ही वचन कहे। तुम्हारे ये सब बचन सब प्रकारसे युक्ति-सङ्गत, सत्य और उत्तम पुरुषोंके अनुकूल हैं, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है, तौभी एकवार चित्त लगाकर मेरे यहांपर

आनेका कारण सुनो। हे विदुर! मैं दुर्य्योधनकी नीचता और सब क्षत्रियोंकी शत्रुताको सब ही जानता हूं, इन सब बातोंको जानकर भी आज मैं कौरवोंकी मण्डलीके बीच उपस्थित हुआ हूं। जो पुरुष हाथी, घोड़े, रथ आदिसे युक्त इस सम्पूर्ण पृथ्वीको मृत्युके सहसे छुड़ानेमें समर्थ है, अवश्य ही सबसे उत्तम धर्म्मका लाभ कर सकता है। मैं इस बातको निःसन्देह कह सकता हूं, कि मनुष्य अपनी शक्तिके अनुसार कोई धर्म्मके कार्य्यका अनुष्ठान करके यदि उसे पूरा न कर सके, तो भी उसके पुण्यका फल पाता है। और मनके भीतर कोई पाप कर्म्मका विचार करके यदि उसका अनुष्ठान न करे, तो उसके फलके भोगनेका अधिकारी भी नहीं होता। मैंने तुमसे जो कुछ वचन कहे, धर्म्मको जाननेवाले पण्डितोंने भी उसीको माना है। हे पापरहित विदुर! संग्रामके निमित्त उपस्थित हुए कौरव और सृञ्जयोंमें शान्ति स्थापनके वास्ते छल और कपटसे रहित ही होकर मैं यत्न करूंगा यह उपस्थित महा घोर आपद कौरवोंसे उत्पन्न हुई है, क्योंकि कर्ण और दुर्य्योधन इसके चलानेवाले और ये सब इकट्ठे हुए क्षत्रिय तथा राजा लोग इनके अनुयायी हैं। विपदमें फंसे हुए और [illegible] मित्रको जो पुरुष अपनी शक्तिके अनुसार विनयपूर्व्वक उस विपदसे छुड़ानेकी चेष्टा नहीं करता, पण्डितलोग उसे नीच पुरुष कहते हैं। मित्र अपनी शक्तिके अनुसार यत्न करके चाहे जिस उपायसे हो सके, मित्रको बुरे कार्य्यसे रोके इसमें वह निन्दनीय नहीं हो सकता। हे विदुर! इससे दुर्य्योधन तथा उसके सहायकोंको [illegible]

किन्तु मैं पाण्डव, सृञ्जय और सम्पूर्ण पृथ्वीके क्षत्रिय वीरोंके हित साधनके निमित्त निष्कपट चित्तसे यत्न करूंगा। मेरे हितके अनुष्ठानमें तत्पर होनेपर, यदि दुर्य्योधन मेरे ऊपर कोई शङ्का करेगा, तो भी मैं मित्रके कर्त्तव्य कार्य्योंको पूरा कर लूंगा। इससे मेरा चित्त अत्यन्त प्रसन्न होगा। जातिके बीचमें जब आपसमें फूट होती है, उस समय जो मित्र सब प्रकारसे यत्न करके उनकी मध्यस्थता स्वीकार नहीं करता, पण्डित लोग उसे मित्र ही नहीं कहते। सन्धिके निमित्त यत्न करनेका और भी एक कारण यह है कि जिसमें अमित्र और शठ लोग यह न कह सकें, कि कृष्ण समर्थ होनेपर भी क्रोधके वशवर्त्ती कौरव और पाण्डवोंको युद्धसे न रोक सके। मैं कौरव और पाण्डव दोनोंका कार्य्य सिद्ध करनेके निमित्त यहांपर आया हूं, इससे उस विषयमें यत्न करनेसे किसीकी निन्दाका पात्र न होऊंगा। मूर्ख दुर्य्योधन यदि मेरे धर्म्म और अर्थसे भरे वचनोंको सुनकर उन्हें न ग्रहण करेगा तो वह सम्पूर्ण रूपसे कालके वशमें समझा जायगा और जो पाण्डवोंकी अर्थहानि न करके मैं कौरवोंके बीच शान्ति स्थापन करनेमें समर्थ होऊंगा, तो भी मेरा महाफल देनेवाला एक पुण्य कर्म्म सिद्ध होगा, और कौरव लोग भी मृत्युके फांससे छूट जायेंगे। इससे मैं बुद्धिमानोंसे शोभित, धर्म्म और अर्थसे युक्त हिंसा रहित, [illegible]

ठहर सकते हैं, वैसे ही सब कौरवोंके सहित ये सम्पूर्ण पृथ्वीके राजा लोग मेरे सम्मुख न खड़े हो सकेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, यदुकुलको सुख देनेवाले वृष्णिवंशियोंके स्वामी श्रीकृष्णचन्द्रने विदुरके सङ्ग इस प्रकारसे बातचीत करके अन्तमें परम सुख देनेवाली उत्तम और अत्यन्त कोमल शय्याके ऊपर शयन किया।

९३ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, बुद्धिमान् विदुर और श्रीकृष्णचन्द्रकी ऊपर कही हुई रीतिके अनुसार बातचीत करते हुए वह, उत्तम नक्षत्रोंसे युक्त शुभ रात्रि अत्यन्त सुखसे बीती। महा प्रतापी कृष्णके धर्म्म और अर्थसे युक्त, पद और पदार्थके सहित मनोहर वचनोंको सुनकर विदुर तथा कृष्ण भी उचित वचनोंके प्रसङ्ग करनेवाले विदुरके वचनोंसे तृप्त नहीं होते थे, उन दोनों महात्माओंकी अनिच्छाहीसे रात्रि बीत गयी। दूसरे दिन भोरके समय बहुतसे सूत, मागध और बन्दियोंने उत्तम और मोटेस्वर और शंख तथा नगाड़ोंके शब्दसे श्रीकृष्णको जगाना आरम्भ किया। यदुवंशियोंमें श्रेष्ठ श्रीकृष्णचन्द्रने उठकर प्रातःकालके सब आवश्यक कार्य्योंको समाप्त किया, अनन्तर स्नान करके जप और होमको पूरी रीतिसे समाप्त करके सब प्रकारके आभूषणोंसे अलङ्कृत होकर सूर्य्यकी उपासना करने लगे। श्रीकृष्णचन्द्र इसी प्रकारसे सन्ध्या बन्दन कर रहेथे, उसी अवसरमें दुर्य्योधन और सुबलपुत्र शकुनि उनके समीप आकर कहने लगे, हे गोविन्द! महाराज धृतराष्ट्र और भीष्म आदि कौरव तथा पृथ्वीके सम्पूर्ण राजा लोग सभा मण्डपमें आकर, तुम्हारे आगमनकी बाट देख रहे हैं जैसे देवता लोग इन्द्रकी प्रार्थना करते हैं। इस वचनको सुनकर शत्रुनाशन जनार्द्दन कृष्णने उन लोगोंका यथ रीतिसे सम्मान किया, अनन्तर यह शुभ समय जानकर ब्राह्मणोंको सुवर्ण, वस्त्र, गऊ औ घोड़े आदि वस्तुओंका दान देने लगे। इस प्रकारसे जब वह बहुत सा धन दान करके आसनपर बैठे, तब उनके दारुक सारथीने उन्हें प्रणाम किया, और अत्यन्त शीघ्रतासे उत्तम घोड़ोंसे युक्त, सब प्रकारके रत्नोंसे भूषित, किङ्किणियुक्त महामेघके समान गम्भीर शब्द करनेवाले, शुभ्रवर्ण, बहुत बड़े दिव्य रथको लेकर वहांपर उपस्थित हुआ। तब यदुवंशियोंके नेत्रको आनन्द देनेवाले महायशस्वी श्रीकृष्णचन्द्र अपने गलेमें कौस्तुभ मणि पहर, परम शोभासे प्रकाशमान होकर, अग्नि और ब्राह्मणोंकी प्रदक्षिणा करके उस रथपर चढ़े। यद्यपि उस समय वह बहुतसे कौरव पक्षीय अनुचरोंसे युक्त थे, तो भी वृष्णिवंशके बहुतसे लोग उनकी शरीर रक्षाके निमित्त वहांपर उपस्थित थे। सब लोगोंमें श्रेष्ठ, बुद्धिमान कृष्णके रथपर चढ़नेके अनन्तर सब धर्मके तत्वको जाननेवाले बुद्धिमान विदुर उनके पीछे रथपर चढ़े। दुर्य्योधन और शकुनि उनके पश्चात् दूसरे रथपर चढ़के शत्रुनाशन श्रीकृष्णके अनुगामी हुए। सात्यकी, कृतवर्म्मा आदि वृष्णिवंशीय महारथ लोग भी कोई रथ और कोई घोड़ेपर चढ़के उनके पीछे पीछे चलने लगे। हे महाराज! वहांसे प्रस्थान करनेपर उन सब वीरोंके सुवर्णसे भूषित रथ और घोड़ोंका शब्द अत्यन्त मनोहर होता था, और वे सब रथ परम शोभासे शोभित होरहे थे। महा तेजस्वी बुद्धिमान कृष्ण यथा समयमें राजर्षियोंके गमन करने योग्य मार्गपर पहुंचे। दुर्य्योधनने पहिले ही उस मार्गको साफ सुथरा और जल छिड़कवाकर ठीक कर रक्खा था। अनन्तर श्रीकृष्णचन्द्रके प्रस्थान करनेपर शङ्ख भेरी आदि अनेक भांतिके बाजे बजने लगे। स

लोगोंमें विख्यात शत्रुओंको जीतनेवाले, सिंहके समान विक्रमी अनगणित वीर योद्धा श्रीकृष्णके रथको आगे-पीछे तथा चारों ओरसे घेरके चले। उत्तम वेषसे भूषित कई सहस्र सैनिक पुरुष तलवार, प्रास तथा सब शस्त्रोंको हाथमें लेकर उनके आगे आगे दौड़े। इसके अतिरिक्त पांच सौ गजपति और सहस्र सहस्र रथी श्रीकृष्णचन्द्रके पीछे पीछे चलने लगे। हस्तिनापुरके रहनेवाले स्त्री बालक, बूढ़े और युवा लोग शत्रुनाशन श्रीकृष्णके दर्शनकी इच्छासे मार्गके किनारेपर आकर खड़े हो गये। अटारियोंके ऊपर स्त्रियां इतनी आकर इकट्ठी हुई थीं, कि बोध होता था, उनके बोझसे मन्दिर सहित वह अटारी पृथ्वीसे मिला चाहती है।

मधुसूदन कृष्ण कौरवोंकी पूजा ग्रहण और उनके सङ्ग मधुर शब्दोंसे बातचीत करते और सबकी ओर देखते तथा परस्पर सत्कार करते हुए धीरे धीरे चलने लगे। अनन्तर कौरवोंकी सभाके समीप जानेपर उनके अनुयायियोंने शङ्ख, भेरी और मृदङ्ग आदिके शब्दोंसे सब दिशाओंको पूरित कर दिया। तब सभाके सब उत्तम स्वभावसे युक्त राजा लोग श्रीकृष्णका आगमन जानकर हर्ष और आनन्दसे भर गये, विजय करके जल सहित बादलकी समान उनके रथके शब्दको सुनकर उन सब लोगोंके रोएं खड़े हो गये। यदुवंशियोंमें श्रेष्ठ श्रीकृष्णचन्द्र सभाके द्वारपर पहुंचकर, कैलासपर्व्वतके शिखरके समान सुन्दर रथसे उतरे और सात्यकी तथा विदुरका हाथ धरके सब ओर अपनी [illegible] प्रकाशसे [illegible] समान प्रकाशित होते हुए, इन्द्रकी सभाके समान कौरवोंकी सभामें प्रविष्ट भये। और [illegible] तथा [illegible] दिया [illegible] पीछे [illegible] दिये [illegible]

धन कृष्णके सम्मुख और कृतवर्मा सात्यकी तथा वृष्णिवंशीय लोग उनके पीछे खड़े हुए। भीष्म, द्रोण आदि सज्जन पुरुष महाराज धृतराष्ट्रको आगे करके, श्रीकृष्णचन्द्रके सम्मानके निमित्त अपने अपने आसनोंसे उठ खड़े हुए। उनकी सभामें अतिही प्रज्ञाचक्षु, महा यशस्वी राजा धृतराष्ट्र, भीष्म, द्रोण आदि सब कौरवोंके सहित उसी समय अपने आसनोंसे उठ खड़े हुए। नरनाथ महाराज धृतराष्ट्रके खड़े होनेपर वहांपर बैठे हुए सहस्रों राजा उसी समय उठके खड़े हुए। अनन्तर राजा धृतराष्ट्रकी आज्ञाके अनुसार श्रीकृष्णके वास्ते सुवर्णयुक्त रत्नोंसे जटित सर्व्वतोभद्र नामक आसन रखा गया। इसी प्रकारसे श्रीकृष्णचन्द्र हंसते हंसते धृतराष्ट्र भीष्म, द्रोण और दूसरे राजाओंसे सम्बन्ध और अवस्थाके अनुसार यथा योग्य वन्दना और बात चीत करने लगे, पृथ्वीके सब राजा तथा कौरव लोगभी उनकी यथा विधिसे पूजा और सम्मान करने लगे। पराये देशको जीतनेवाले श्रीकृष्णचन्द्रने सभामें राजाओंके बीचमें बैठकर देखा कि पहिले मार्गमें जिन सब महर्षियोंके सङ्ग भेंट हुई थी, वे सब अभ्यागत रूपसे आकाशमें हैं। नारद आदि उन सब देवर्षियोंको देखके उन्होंने शान्तनुनन्दन भीष्मको धीरे वचनोंसे यह कहा, हे राजेन्द्र! यह देखिये पवित्र [illegible] मुनि [illegible] सब [illegible] सभामें देखनेकी इच्छासे यहांपर आये हैं, इन लोगोंके निमित्त आसन [illegible]

शीघ्र आसन ले आओ। सेवकोंने उसी समय मणि और सुवर्णसे युक्त सुन्दर स्वच्छ और पवित्र बड़े बड़े महामूल्य आसनोंको लाकर उपस्थित किया। हे महाराज! मुनियोंके अर्घ पाद्य ग्रहण करने तथा आसनपर बैठनेपर श्रीकृष्ण और सब राजा लोग अपने अपने आसनोंपर बैठ गये। दुःशासनने सात्यकीको एक उत्तम आसन और विविंशतिने कृतवर्म्माको एक उत्तम सोनेका पीढ़ा प्रदान किया। सदा ही किसीकी बातोंको न सहनेवाले ऊंची वासनासे युक्त कर्ण और दुर्योधन श्रीकृष्णसे थोड़ीही दूरपर एक ही आसनपर बैठ गये। गान्धारराज शकुनि गान्धार वीरोंसे युक्त होकर पुत्र सहित आसनपर बैठे। महाबुद्धिमान विदुर कृष्णके निकट ही सफेद हरिणके मृगछालसे युक्त मणि गठित पीढ़ेपर बैठ गये। हे महाराज! जैसे अमृतके चखनेसे चित्तको तृप्त नहीं होती, वैसे ही उस सभामें बैठे सम्पूर्ण राजा लोग बहुत दिनके अनन्तर कृष्णको देख तृप्त नहीं होते थे। पीले पुष्पके समान शोभायमान पीताम्बर पहरे हुए श्रीकृष्णचन्द्र ऐसे दीख पड़ते थे, जैसे सुवर्णके बीचमें नीलमणि (नीलम) की शोभा होती है। कृष्णके सभामें बैठनेके अनन्तर सब लोगोंमें सन्नाटा छा गया। किसीने कहीं पर कोई विषयका प्रसङ्ग तथा उल्लेख न किया।

९४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उस सभामण्डपमें सब राजाओंके आसनपर बैठनेके अनन्तर, जब सन्नाटा छागया, उस समय मतवाले हाथीके और दुन्दुभीको भांति गम्भीर शब्दसे श्रीकृष्णचन्द्रने कथाका प्रसङ्ग चलाया। धृतराष्ट्रकी ओर दृष्टि करके जिसमें सब कोई सुन सके, ऐसे ही वह वर्षाकालके नवीन मेघकी भांति गम्भीर स्वरसे धर्म्म अर्थसे भरेहुए वचन कहने लगे,—

श्रीभगवान बोले, हे भारत! वीर योद्धाओंके बिना प्राणनाश हुए जिसमें कौरव और पाण्डवोंके बीच शान्ति स्थापित होवे, उसी निमित्त यहांपर मेरा आगमन हुआ है, इसके अतिरिक्त और कोई भी हितका वचन कहनेकी मेरी इच्छा नहीं है। हे शत्रुनाशन महाराज! इस लोकमें जो कुछ जानना उचित है, सब विषय आप लोगोंने जान लिया है, इससे आप लोगोंके निमित्त और कुछ मङ्गल वचन क्या सुनाऊं? हे राजन्! आप लोगोंका यह कुल शास्त्रके ज्ञान और सदाचारसे युक्त है, और सब गुणोंसे भूषित होनेसे इस समय सब राजाओंके बीच श्रेष्ठ कहके गिना जाता है। हे भारत! सब लोगोंमें अनेक गुण है, यह वचन ठीक है, परन्तु कौरवोंमें कृपा, विनय, क्षमा, करुणा, उत्तम स्वभाव और सरलता आदि कई गुण सबसे बढ़के है, इन्हीं गुणोंने आपको सबसे श्रेष्ठ बनाया है। हे राजेन्द्र! इस प्रकारके उत्तम प्रतिष्ठाके पात्र महाकुलमें कोई निन्दनीय तथा अयुक्त आचरणका होना बहुत ही अनुचित है, विशेष करके यदि वह आपहीके कारणसे सङ्गठित होवे तो और भी महा अनुचित कहा जावेगा। क्योंकि बाहरी और भीतरी कपट आचार और नीच मार्गमें गमन करनेवाले कौरवोंके आपही एक मात्र अवलम्ब स्वरूप हैं। हे कुलसत्तम! दुर्योधन आदि आपके मूर्ख पुत्र लोग धर्म्म और अर्थसे अलग होकर लोभसे खींचे हुए चित्तसे मर्य्यादा रहित होकर सबसे श्रेष्ठ आत्मीय और भाई बन्धुओंके सङ्ग अत्यन्त ही अनुचित और दुष्ट व्यवहार कर रहे है, तौ भी आप इन सब बातोंको जानकर अज्ञान हुए जाते है, हे पुरुषर्षभ! यह महा घोर आपद कौरवोंके बीचमें प्रकट हुई है; परन्तु आपके ध्यान न

होनेसे समस्त संसारके विनाशका मूल अर्थात् कारण हो जावेगी। हे भारत! तुम्हारी इच्छा होनेसे इस समय भी शान्ति हो सकती है। मेरी समझमें शान्तिका स्थापित होना कुछ भी कठिन नहीं है, यह आपके और मेरे दोनोंहीके अधिकारमें है। हे राजन्! आप अपने पुत्रको शान्त कीजिये और मैं पाण्डवोंको शान्त करूंगा। हे भरतर्षभ! सेनाके सहित आपके पुत्र लोग अवश्य ही आपकी आज्ञा पालन करेंगे, आपके शासनमें निवास करनेकी अपेक्षा उन लोगोंके निमित्त और अधिक हितकारी विषय क्या होगा। हे कौरवराज। आप यदि शासन प्रचारके अभिलाषी होकर शान्ति स्थापनके निमित्त यत्न करेंगे, तो ऐसा होनेसे आपके और पाण्डवोंके दोनोंके पक्षसे मङ्गल होगा। हे राजेन्द्र! इससे आप कपट रहित होकर विचारपूर्व्वक इस कार्य्यका पूर्ण विधान कीजिये पाण्डव लोग आपके सहायक बनें, और उन लोगोंकी सहायतासे रक्षित हो आप स्थिर और शान्त होकर धर्म्म और अर्थका अनुष्ठान कीजिये। हे प्रजानाथ! अनेक प्रकारसे यत्न करनेपर भी वैसी असाधारण सहायता पाना बहुतही कठिन कार्य्य है। यदि महात्मा पाण्डव लोग आपकी रक्षा करें, तो और राजाओंकी बात तो दूर रहे, साक्षात् इन्द्र सब देवताओंको सङ्ग लेकर भी आपको पराजित करनेमें समर्थ न होंगे। हे भरतर्षभ! जिस स्थानपर भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य, कर्ण, विविंशति, अश्वत्थामा, विकर्ण, सोमदत्त, बाह्लीक, सिन्धुराज, कलिङ्गपति, काम्बोजराज सुदक्षिण, युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव, सात्यकी और युयुत्सु आदि महारथ वीर [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

बढ़ेगा? हे शत्रुनाशन! कौरव और पाण्डवोंके मिलनेसे सम्पूर्ण लोकमें आप अत्यन्त प्रभुता पावेंगे, कोई शत्रु आपको पराजित करनेमें समर्थ न होगा। तो सब राजा आपके समान हैं, और जो आपसे श्रेष्ठ हैं, सब ही आपके सङ्ग सन्धि करेंगे। इससे आप सब भांतिसे रक्षित होकर पुत्र, पौत्र, पिता, भ्राता तथा इष्ट मित्रोंके सङ्ग परम सुखसे जीवनका समय व्यतीत कर सकेंगे। हे महाराज! दूसरेके निकट आपको सहायता लेनेहीका क्या प्रयोजन है! केवल पाण्डवोंको पहिलेकी भांति सत्कार दिखाके, उन्हें आगे करके आप इस सम्पूर्ण पृथ्वीमण्डलके चक्रवर्त्ती राज्यका सुख भोगेंगे। हे भारत! किसी प्रकारसे स्वार्थसिद्ध होना चाहिये यही आपकी इच्छा है, पाण्डव और कौरवोंके परस्पर मिलनेपर आप सम्पूर्ण शत्रुओंको जीतकर उनकी भुजासे उपार्जित सम्पूर्ण पृथ्वीके राज्यका सुख भोग करेंगे, इससे बढ़के आपके निमित्त बड़ा स्वार्थ दूसरा और कौन सा है। हे महाराज! यदि आप ऐसे स्वार्थको त्याग कर युद्धकार्य्यमें प्रवृत्त होइयेगा, तो केवल महा अनर्थकी सम्भावना ही होगी। हे राजेन्द्र! संग्राममें महासमरके आतताई और क्षयका नया दारुण पड़ता। तब दोनों पक्षोंके नाश [illegible] आपका कौन धर्म प्रयोजन होगा? हे राजन्! भला आप ही तो [illegible] पाण्डव लोग अथवा आपके [illegible] सब [illegible] इन दोनों पक्षोंमें [illegible] [illegible] [illegible] हे भरतर्षभ! [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

शीघ्र आसन ले आओ। सेवकोंने उसी समय मणि और सुवर्णोंसे युक्त सुन्दर स्वच्छ और पवित्र बड़े बड़े महामूल्य आसनोंको लाकर उपस्थित किया। हे महाराज! मुनियोंके अर्घ पाद्य ग्रहण करने तथा आसनपर बैठनेपर श्रीकृष्ण और सब राजा लोग अपने अपने आसनोंपर बैठ गये। दुःशासनने सात्यकीको एक उत्तम आसन और विविंशतिने कृतवर्म्माको एक उत्तम सोनेका पीढ़ा प्रदान किया। सदा ही किसीकी बातोंको न सहनेवाले ऊंची वासनासे युक्त कर्ण और दुर्योधन श्रीकृष्णसे थोड़ीही दूरपर एक ही आसनपर बैठ गये। गान्धारराज शकुनि गान्धार वीरोंसे युक्त होकर पुत्र सहित आसनपर बैठे। महाबुद्धिमान विदुर कृष्णके निकट ही सफेद हरिणके मृगछालसे युक्त मणि गठित पीढ़ेपर बैठ गये। हे महाराज! जैसे अमृतके चखनेसे चित्तको तृप्ति नहीं होती, वैसे ही उस सभामें बैठे सम्पूर्ण राजा लोग बहुत दिनके अनन्तर कृष्णको देख तृप्त नहीं होते थे। पीले पुष्पके समान श्यामवर्ण पीताम्बर पहरे हुए श्रीकृष्णचन्द्र ऐसे दीख पड़ते थे, जैसे सुवर्णके बीचमें नीलमणि (नीलम) की शोभा होती है। कृष्णके सभामें बैठनेके अनन्तर सब लोगोंमें सन्नाटा छा गया। किसीने कहीं पर कोई विषयका प्रसङ्ग तथा उल्लेख न किया।

९४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उस सभामण्डपमें सब राजाओंके आसनपर बैठनेके अनन्तर, जब सन्नाटा छागया, उस समय मतवाले हाथीके और दुन्दुभीकी भांति गम्भीर शब्दसे श्रीकृष्णचन्द्रने कथाका प्रसङ्ग चलाया। धृतराष्ट्रकी ओर दृष्टि करके जिसमें सब कोई सुन सके, वैसे ही वह वर्षाकालके नवीन मेघकी भांति गम्भीर स्वरसे धर्म्म अर्थसे भरेहुए वचन कहने लगे,—

श्रीभगवान बोले, हे भारत! वीर योद्धाओंके विना प्राणनाश हुए जिसमें कौरव और पाण्डवोंके बीच शान्ति स्थापित होवे, उसी निमित्त यहांपर मेरा आगमन हुआ है, इसके अतिरिक्त और कोई भी हितका वचन कहनेकी मेरी इच्छा नहीं है। हे शत्रुनाशन महाराज! इस लोकमें जो कुछ जानना उचित है, सब विषय आप लोगोंने जान लिया है, इससे आप लोगोंके निमित्त और कुछ मङ्गल वचन क्या सुनाऊं? हे राजन्! आप लोगोंका यह कुल शास्त्रके ज्ञान और सदाचारसे युक्त है, और सब गुणोंसे भूषित होनेसे इस समय सब राजाओंके बीच श्रेष्ठ कहके गिना जाता है। हे भारत! सब लोगोंमें अनेक गुण हैं, यह वचन ठीक है; परन्तु कौरवोंमें कृपा, विनय, क्षमा, करुणा, उत्तम स्वभाव और सरलता आदि कई गुण सबसे बढ़के हैं; इन्हीं गुणोंने आपको सबसे श्रेष्ठ बनाया है। हे राजेन्द्र! इस प्रकारके उत्तम प्रतिष्ठाके पात्र महाकुलमें कोई निन्दनीय तथा अयुक्त आचरणका होना बहुत ही अनुचित है; विशेष करके यदि वह आपहीके कारणसे सङ्गठित होवे तो और भी महा अनुचित कहा जावेगा। क्योंकि बाहरी और भीतरी कपट आचार और नीच मार्गमें गमन करनेवाले कौरवोंके आपही एक मात्र अवलम्ब स्वरूप हैं। हे कुरुसत्तम! दुर्योधन आदि आपके मूर्ख पुत्र लोग धर्म्म और अर्थसे अलग होकर लोभसे खींचे हुए चित्तसे मर्य्यादा रहित होकर सबसे श्रेष्ठ आत्मीय और भाई बन्धुओंके सङ्ग अत्यन्त ही अनुचित और दुष्ट व्यवहार कर रहे हैं, तौ भी आप इन सब बातोंको जानकर अज्ञान हुए जाते हैं; हे पुरुषर्षभ! यह महा घोर आपद कौरवोंके बीचसे प्रकट हुई है; परन्तु आपके ध्यान

देनेसे समस्त संसारके विनाशका मूल अर्थात् कारण हो जावेगी। हे भारत! तुम्हारी इच्छा होनेसे इस समय भी शान्ति हो सकती है। मेरी समझमें शान्तिका स्थापित होना कुछ भी कठिन नहीं है; यह आपके और मेरे दोनोंहीके अधिकारमें है। हे राजन्! आप अपने पुत्रोंको शान्त कीजिये और मैं पाण्डवोंको शान्त करूंगा। हे भरतर्षभ! सेनाके सहित आपके पुत्र लोग अवश्य ही आपकी आज्ञा पालन करेंगे, आपके शासनमें निवास करनेकी अपेक्षा उन लोगोंके निमित्त और अधिक हितकारी विषय क्या होगा। हे कौरवराज। आप यदि शासन प्रचारके अभिलाषी होकर शान्ति स्थापनके निमित्त यत्न करेंगे, तो ऐसा होनेसे आपके और पाण्डवोंके दोनोंके पक्षमें मङ्गल होगा। हे राजेन्द्र! इससे आप कपट रहित होकर विचारपूर्व्वक इस कार्य्यका पूर्ण विधान कीजिये पाण्डव लोग आपके सहायक बनें, और उन लोगोंकी सहायतासे रक्षित हो आप स्थिर और शान्त होकर धर्म्म और अर्थका अनुष्ठान कीजिये। हे प्रजानाथ! अनेक प्रकारसे यत्न करनेपर भी वैसी असाधारण सहायता पाना बहुतही कठिन कार्य्य है। यदि महात्मा पाण्डव लोग आपकी रक्षा करें, तो और राजाओंकी बात तो दूर रहे, साक्षात इन्द्र सब देवताओंको सङ्ग लेकर भी आपको पराजित करनेमें समर्थ न होंगे। हे भरतर्षभ! जिस स्थानपर भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, कर्ण, विविंशति, अश्वत्थामा, विकर्ण, सोमदत्त, वाह्लिक, जयद्रथ, कलिङ्गपति, काम्बोजराज सुदक्षिण, युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्ज्जुन, नकुल, सहदेव, सात्यकी और युयुत्सु आदि महावीर योद्धा लोग मिलकर होकर एक ही स्थानपर इकट्ठे होंगे, वहां पर कौन विपरीत बुद्धिवाला पुरुष इन लोगोंके विरुद्ध युद्ध करनेके निमित्त आगे बढ़ेगा? हे शत्रुनाशन। कौरव और पाण्डवोंके मिलनेसे सम्पूर्ण लोकमें आप अत्यन्त प्रभुता पावेंगे, कोई शत्रु आपको पराजित करनेमें समर्थ न होगा। जो सब राजा आपके समान हैं, और जो आपसे श्रेष्ठ हैं, सब ही आपके सङ्ग सन्धि करेंगे। इससे आप सब भांतिसे रक्षित होकर पुत्र, पौत्र, पिता, भ्राता तथा इष्ट मित्रोंके सङ्ग परम सुखसे जीवनका समय व्यतीत कर सकेंगे। हे महाराज! दूसरेके निकट आपको सहायता लेनेहीका क्या प्रयोजन है! केवल पाण्डवोंकी पहिलेकी भांति सत्कार दिखाके, उन्हें आगे करके आप इस सम्पूर्ण पृथ्वीमण्डलके चक्रवर्त्ती राज्यका सुख भोगेंगे। हे भारत! किसी प्रकारसे स्वार्थसिद्ध होना चाहिये यही आपकी इच्छा है, पाण्डव और कौरवोंके परस्पर मिलनेपर आप सम्पूर्ण शत्रुओंको जीतकर उनकी भुजासे उपार्ज्जित सम्पूर्ण पृथ्वीके राज्यका सुख भोग करेंगे, इससे बढ़के आपके निमित्त बड़ा स्वार्थ दूसरा और कौन सा है? हे महाराज। यदि आप ऐसे स्वार्थको त्याग कर युद्धकार्य्यमें प्रवृत्त होइयेगा, तो केवल महा अनर्थकी सम्भावना हो होगी। हे राजेन्द्र! संग्राममें महामारीके अतिरिक्त और कुछभी नहीं दीख पड़ता, तब दोनो पक्षोंके नाश होनेसे ही आपका कौन धर्म्म प्रकाशित होगा? हे राजन्! भला कहिये तो सही पाण्डव लोग अथवा आपके पुत्र ही युद्धमें मरे, तब इन दोनों पक्षोंमेंसे एक पक्षके नाश होनेसे आपको कौनसा सुख मिल जायगा? हे भरतर्षभ! ये दोनों ओरके लोग अत्यन्त वीरतासे युक्त, सब शस्त्रोंको जाननेवाले हैं, और दोनोंही युद्धके निमित्त उपस्थित हो रहे हैं, इससे आप इस वर्त्तमान महाभयसे उन लोगोंकी रक्षा कीजिये। जिससे महारथ शूर वीर कौरव और पाण्डवोंको युद्धमें परस्पर घायल होना और मरना न पड़े, आप

वैसे ही उपायका विधान कीजिये। हे नृपसत्तम! पृथ्वीके सब राजा लोग एक ही स्थानपर मिल गये हैं, ये लोग क्रोधके वशमें होकर इन सम्पूर्ण प्रजा समूहका भी संहार कर सकते हैं। हे राजेन्द्र! इससे आप दया करके सम्पूर्ण लोकोंकी रक्षा कीजिये। आपके विद्यमान रहते जिसमें सम्पूर्ण पृथ्वीके प्रजाओंका समूह नष्ट न होजाय। हे कुरुनन्दन! जब आप सत्त्वगुणको धारण करेंगे, तभी प्रजाओंका शेष रह सकता है; नहीं तो सब ही प्रजा नष्ट होजायगी। हे राजेन्द्र! पवित्र वंशोंमें उत्पन्न भये, माननीय, पूजाके योग्य, महातेजस्वी, श्रीमान् और आपसमें एक दूसरेकी सहायता करनेवाले, इन सब राजाओंको आप महा भयसे छुड़ानेका यत्न कीजिये। हे शत्रुनाशन भरतर्षभ! ये सब लोग क्रोध और वैरको त्यागके कुशल पूर्व्वक आपसमें मिलें और एकत्र भोजन पान करनेके अनन्तर सब भूषणोंसे भूषित होकर, शोभायमान उत्तम माला और सुगन्धको धारण करके तथा उत्तम प्रकारसे सत्कार पाकर अपने अपने स्थानोंपर चले जावें। हे भरतर्षभ! पाण्डवोंके ऊपर आपका जैसे पहिले समयमें प्रीति थी, इस समयमें इस युद्धके समागममें आप वैसी ही प्रीतिको प्रकाश करके उन लोगोंके सङ्ग सन्धि कर लीजिये। हे नरनाथ! बालकपनमें जब वे पिता रहित हुए थे, उस समयसे आपने ही उन लोगोंको पुत्रकी भांति समझकर पालन पोषण करके बड़ा किया था, इससे इस समयमें भी पुत्रकी भांति न्यायपूर्व्वक उन लोगोंका पालन कीजिये। विचार करके देखनेसे सब समयमें विशेष करके इस व्यसनके समयमें आपको उन लोगोंकी रक्षा करना योग्य है ऐसा करनेसे आपके धर्म्म और अर्थ दोनोंहीकी रक्षा हो सकती है। हे भरतर्षभ! इस लिये जिसमें धर्म्म और अर्थ दोनों बने रहें, आप वही उपाय कीजिये। हे राजन्! पाण्डवोंने आपको नमस्कार करके प्रेम पूर्व्वक यह वचन कहा है, कि "हे तात! आपकी आज्ञाके अनुसार हम लोगोंने बहुत दुःख और क्लेश सहा हैं। निर्जन वनमें बारह वर्ष और मनुष्योंके बीच छिपकर एक वर्ष वास किया है। हे तात! "हम लोगोंके बीच जिस प्रकारका नियम हुआ है, उसको अवश्य ही ज्येष्ठ पिता पालन करेंगे" ऐसा ही निश्चय करके हम लोगोंने किसी प्रकारसे उस नियमका उलङ्घन नहीं किया है, हम लोगोंके सङ्ग रहनेवाले ब्राह्मण लोग उस बातको खूब ही जानते हैं। हे भरतर्षभ! हम लोगोंने नियमके अनुसार कार्य्य किया है; इससे आप भी उसी नियमके अनुसार चलिये। हे राजेन्द्र! हम लोगोंने बहुत दिनतक दुःख भोग कर जिससे अब अपना आधा राज्य पावें, उसीका आप पूर्ण विधान कीजिये। आप धर्म्म और अर्थके मर्म्मको जानकर हम लोगोंका सब भांतिसे परित्राण कीजिये। आप पिता हैं, आप जो कुछ आज्ञा करेंगे, वही हम लोगोंको स्वीकार करना पड़ेगा। यही विचारकर हम लोगोंने अनेक प्रकारके दुःख तथा सहे हैं; इससे आप भी इस समय पिता माताकी भांति प्रेम प्रकाशित कीजिये। हे भारत! गुरुके समीप शिष्यका जैसा व्यवहार करना उचित है, हम लोगोंने भी आपके सङ्ग वैसा ही व्यवहार किया है। इससे आप भी हम लोगोंके ऊपर गुरुकी भांति वात्सल्य भाव दिखाइये। पुत्रके नीच मार्ग अवलम्बन करनेपर पिताका कर्त्तव्य कार्य्य यही है, कि उसे फिर भी अच्छे मार्गपर चलावे; इस समय हम लोग भी राज्यके नाश होनेके कारण मार्गसे भ्रष्ट हुए हैं, आप इस समयमें स्वयं धर्म्मके मार्गमें चलकर हम लोगोंको उत्तम मार्गमें स्थित रखिये।" हे महाराज! आपके उन तेजस्वी पुत्रोंने यहांपर रहनेवाले सभासद

लोगोंके निमित्त भी यह वचन कहा है, "सभाके बीच धर्म्मके जाननेवाले सभासदोंके विद्यमान रहनेपर भी न्यायके विरुद्ध कार्य्यका होना बहुत ही अनुचित है। बुद्धिमान सभासद और दर्शकबृन्दके उपस्थित रहनेपर, जिस स्थानसे अधर्म्म और मिथ्यासे सत्य छिप जाता है, वहांपरके सब सभासद ही मरे हुएके समान है। जिस समय धर्म्म अधर्म्मसे पीडित होकर सभाकी शरणमें आता है, उस समय यदि उस धर्म्मकी पीडा न्यायपूर्व्वक सभासद लोग न दूर करें, तो वे लोग आप ही उस पापसे पीड़ित होजाते है। जैसे नदी अपने तटपर रहनेवाले वृक्षोंको उखाड़के गिरा देती है, वैसे ही अधर्म्म भी उन लोगोंको पीड़ित करता है।" हे भरतर्षभ! इस समय विचारकर देखिये कि पाण्डव लोग धर्म्महीका मुंह देख कर तथा धर्म्महीकी आशा करके अभी तक चुप चाप बैठे हुए है, उन लोगोंने सत्य, धर्म्म और न्यायके अनुसार ही बचन कहे है। इससे आप उन लोगोंको राज्य प्रदान करनेके अतिरिक्त क्या और कोई विषयका प्रसङ्ग कर सकते है? इस सभामें जो सब राजा लोग बैठे हुए है, ये लोग भी क्या कुछ दूसरी बात कह सकते है! हे पुरुषर्षभ। मैं धर्म्म और अर्थको निश्चय करके जो कुछ बचन कह रहा हूं, यदि आप इसे सत्य समझेंगे, तो निःसन्देह इन सब क्षत्रिय और राजाओंको मृत्युके मुंहसे बचा लेगे। हे भरतश्रेष्ठ! आप शान्त होइये, क्रोधके वशीभूत दुर्योधनके अनुगामी न बनिये। हे परन्तप। पाण्डवोंको यथा उचित पैतृक-राज्य देकर आप पुत्रोंके सहित आनन्दित होकर उत्तम प्रकारसे सब सुखोंको भोग कीजिये। हे प्रजानाथ! आप सब दिनसे अजात-शत्रु, युधिष्ठिरको साधु पुरुषोंके धर्म्ममें स्थित जानते है, और वह आपके तथा आपके पुत्रोंके सङ्ग जिस प्रकासे धर्म्मपूर्व्वक व्यवहार करते है; वह भी आपको विदित है। देखिये आपने उन्हें जतुगृहमें जलाया और देशसे निकाल भी दिया, तौभी फिर उन लोगोंने आपका शरण ग्रहण किया था। उसके अनन्तर अपने पुत्रोंके सङ्ग विचार करके; जब उन लोगोंको इन्द्रप्रस्थमें बसाया था, उस समय भी उन लोगोंने वहांपर निवास करते हुए अपने बाहुबल तथा पराक्रमसे सब राजाओंको जीतकर आपहीके निकट उपस्थित किया था, किसी प्रकारसे भी आपके शासनका उन्होंने उल्लङ्घन नहीं किया। हे महाराज! इस भांतिसे नम्रतापूर्व्वक वे निवास करते थे, तौ भी सुबलपुत्र शकुनिने उनके राज्य और धन आदिको हरनेकी इच्छा करके, पासेके खेलमें अत्यन्त कपटका प्रयोग किया था। धर्म्मात्मा युधिष्ठिर वैसी बुरी अवस्थामें पड़के प्राणके समान प्यारी द्रौपदीको सभामें बुलाई हुई देख कर भी क्षत्रिय धर्म्मसे तनिक भी विचलित न हुए थे। हे भारत। मैं आप और पाण्डव दोनोंहीकी मङ्गल कामना करता हूं, इससे आप धर्म्म अर्थ और सुखके निमित्त शान्ति स्थापित कीजिये, प्रजाओंका व्यर्थ नाश न कीजिये। हे नरनाथ! जिसको आप अनर्थ समझ रहे है, उसीको अर्थ और जिसे अर्थ समझ रहे है, उसको अनर्थ जानकर लोभके मार्गमें गमन करनेवाले पुत्रोंको कुपथसे रोकिये। हे पृथ्वीनाथ। शत्रुनाशन पाण्डव लोग आपकी सेवा तथा युद्ध दोनों ही करनेके निमित्त तैयार है, उसमेंसे जो आपको उत्तम और हितकारी बोध हो आप उसीका अनुष्ठान कीजिये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले उस सभामें जितने राजा लोग उपस्थित थे, वे सब श्रीकृष्णके कहे हुए वचनोंकी अपने मनही मन अत्यन्त प्रशंसा करते थे, परन्तु दुर्य्योधनके सम्मुख किसीने कुछ कहनेका साहस न किया।

९५ अध्याय समाप्त।

———

श्री वैशम्पायन मुनि बोले, महात्मा कृष्णके ऊपर कहे हुए वचनोंको सुनकर सब सभासदोंके रोंए खडे हो गये, सब लोगोंने मौनव्रत धारण कर लिया। सब राजा लोग, अपने मनमें यह सोचने लगे, कि कोई पुरुष इन बचनोंका उतर देनेका साहस नहीं कर सकता जव सब राजाओंने सन्नाटा खींच लिया, तब महातेजस्वी महर्षि परशुरामजीने कौरवोंकी सभामें कहना आरम्भ किया, कि हे राजन्! मैं उपमाके सङ्ग एक कथाका प्रसङ्ग करता हूं. इस यथार्थ विषयपर कोई शङ्का न करके इसको सुनो और यदि यह उत्तम मालूम हो, तो सुनकर अपने कल्याणके निमित्त यत्न करो। मैंने सुना है, पहिले समयमें दम्भोद्भव नाम सार्व्वभौम राजा हुए थे; उन्होंने इस सम्पूर्ण पृथ्वीपर चक्रवर्त्ती होकर राज्य किया था। वह महारथ और पराक्रमी राजा नित्य ही रात्रिके बीतनेपर सवेरे उठकर ब्राह्मण और क्षत्रियोंसे यह कहा करते थे, कि "इस पृथ्वीमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्रोंके बीच क्या कोई ऐसा पुरुष भी विद्यमान है, जो युद्धमें मुझसे श्रेष्ठ अथवा मेरे समान हो सके? सारी पृथ्वीमें मेरे समान और कोई नहीं है" ऐसा विचार करते हुए वह राजा अभिमानसे उन्मत्त होकर सब स्थानोंमें ऐसा ही बचन कहते हुए घूमा करते थे। एकबार कई एक महातेजस्वी वेदके जाननेवाले ब्राह्मणोंने उन्हे बार बार अपनी बड़ाई करते हुए देखकर निषेध किया, परन्तु धन और बलके मदसे भरे हुए अभिमानी मूढ़ राजा बार बार निषेध किये जानेपर भी उन वेदज्ञ ब्राह्मणोंसे नित्य ही इसी प्रकारका प्रश्न करते थे। तब वह वेदके जाननेवाले तपस्वी महात्मा ब्राह्मण लोग उस राजाके ऐसे दुष्ट भावको देखकर क्रोधित होके बोले, हे राजन्! इस पृथ्वीपर अनेक युद्धोंको जीतनेवाले दो श्रेष्ठ पुरुष विद्यमान हैं, तुम कभी उनके समान नहीं हो सकते। इस वचनको सुनते ही राजा दम्भोद्भवने फिर उन ब्राह्मणोंसे पूछा, कि आप लोग कौनसे वीरोंकी कथा कहते हैं? वे दोनों कहांपर उत्पन्न हुए हैं, किस स्थानमें रहते हैं और कौन कार्य्य करते हैं? हे भारत। राजाके ऐसे पूछनेपर ब्राह्मणोंने कहा, हम लोगोंने सुना है, कि महात्मा नर और नारायण तपस्या करनेके निमित्त इस मनुष्य लोकमें आकर गन्धमादन पर्व्वतके किसी स्थानमें घोर तपस्या कर रहे हैं, तुम उन्हीं दोनों वीरोंके सङ्ग युद्ध करो।

राजा दम्भोद्भव इस वचनको सुनते ही आतुर होके अपनी चतुरङ्गिनी महासेना सजाकर, युद्धमें न पराजित होनेवाले महात्मा नर और नारायणसे युद्ध करनेके निमित्त चले, और महा भयङ्कर गन्धमादन पर्व्वतके शिखरपर जा पहुंचे वहां पहुंचके उन वनवासी दोनों तपस्वियोंको खोजने लगे, अन्तमें उन दोनो महात्माओंका पता पाकर देखा, कि वे दोनो तपस्वी भूख, प्यास, सर्दी, गर्मी सहकर अत्यन्त ही कृमित और तनुक्षीण हो रहे हैं, और उनके शरीरमें खाक लिपटी हुई है। इस प्रकारसे उन महात्माओंको देखकर राजाने उनके निकट जाकर प्रणाम करके कुशल क्षेमकी वात पूछी; उन्होंने भी आसन, जल और फल मूल आदिसे उनका अतिथि सत्कार करके कहा, "तुम्हारा कौनसा कार्य्य पूरा करना होगा?" इस बचनको सुनकर राजा दम्भोद्भव जैसा ब्राह्मणोंके समीप कहा करते थे, उसीको विस्तारपूर्व्वक कहने लगे कि मैंने अपने बाहु बलसे सम्पूर्ण पृथ्वीके राजाओंको मारा है, इस समय आपसे युद्ध करनेकी इच्छासे इस पर्व्वतके ऊपर आया हूं; इससे आप कृपा करके हमारी इस बहु दिनकी अभिलाषाको पूर्ण कीजिये।

नरनारायण बोले, हे राजसत्तम! यह

तप करनेका आश्रम है, इस स्थानमें क्रोध, लोभ लेशमात्र भी नहीं है। युद्ध तथा अस्त्र शस्त्रकी बात तो दूर रहे, यहांपर कुटिल स्वभावके मनुष्य भी नहीं रह सकते इससे तुम इस स्थानको छोड़कर दूसरी जगहमें युद्ध करनेकी इच्छा करो; पृथ्वीके बीच बहुतसे क्षत्रिय लोग विद्यमान हैं।

परशुराम बोले, हे भारत। उन दोनो तपस्वियोंके बराबर क्षमा प्रर्थना और शान्त करनेपर भी, राजा दम्भोद्भवने अपना हठ न छोड़ा और युद्ध करनेकी अभिलाषासे बारम्बार उन दोनों तपस्वियोंको आवाहन करने लगे। तब नर ऋषिने एक मुट्ठी काश तृणको हाथमें लेकर क्रोधसे भरकर कहा, कि रे युद्धको अभिलाषा करनेवाले क्षत्रिय! आके युद्ध कर ले, सेनाको साजकर तेरा जो कुछ अस्त्र शस्त्र है सब ग्रहण करके चला आ, तब मैं तेरी युद्धकी अभिलाषा पूरी करूंगा।

राजा दम्भोद्भव बोले, हे तपस्वी। यदि इस अस्त्रको मेरे ऊपर चलाना ही तुमको ठीक मालूम होता है, तो मैं इसीके सङ्ग तुमसे युद्ध करूंगा, क्योंकि युद्ध करनेहीके निमित्त मेरा यहांपर आगमन हुआ है।

श्रीपरशुरामजी बोले, ऐसा कहकर राजा दम्भोद्भवने सेनाके सहित तपस्वीके सङ्ग युद्ध करनेके निमित्त खड़े होकर अपने बाणोंकी वर्षासे दशो दिशाओंको पूर्ण कर दिया। तब लक्ष्यका बेधनेवाले नर ऋषिने काशके सींकके अस्त्रसे राजा दम्भोद्भवके सब अस्त्रोंका निष्फल कर दिया और उसके ऊपर इस प्रकारसे काशके सींकोंको चलाया, कि उससे राजा दम्भोद्भव मृतप्राय हो गये। उन्होंने मायाके बलसे केवल काशके सींकके अस्त्रसे सब सेनाके नाक, कान आदिको काटना आरम्भ किया। सब दिशाओंसे काश पुञ्जके पूर्ण होनेसे आकाश श्वेतवर्ण होगया; इस अद्भुत कर्म्मको देखकर राजा दम्भोद्भव उनके दोनों चरणोंपर गिरे और अपने कल्याणके निमित्त "मेरा मङ्गल हो" ऐसी प्रार्थना करने लगे। जब राजा दम्भोद्भव बार बार ऐसा कहने लगे, तब शरणागतकी रक्षा करनेवाले दयालु नर ऋषिने उनसे कहा, हे राजन्! तुम आजसे धर्म्मात्मा और ब्राह्मणोंमें निष्ठावान् बनो, फिर कभी ऐसा अहंकार न करना। हे नरेन्द्र! पराये देशको जीतनेवाले क्षत्रिय पुरुष अपने धर्म्ममे निवास करते हुए कभी ऐसी नीच अभिलाषा नहीं करते। हे राजन्! इससे चाहे कोई पुरुष तुमसे बुरा हो अथवा भला हो, तुम अभिमानके वशमें होकर कभी उसका अपमान न करना, किसी पुरुषको अवमानित तथा दुःखित न करना ही तुम्हारा कर्त्तव्य कार्य्य है। हे राजेन्द्र! तुम निश्चित बुद्धि, लोभ रहित, अहङ्कार-शून्य, जितेन्द्रिय, शान्त, कोमल और धीरताको अवलम्बन करके प्रजाका पालन करो। बलाबलको बिना जाने फिर कभी किसीका अपमान न करना; इस समय मैं तुम्हें आज्ञा देता हूं, कि कुशलपूर्व्वक अपने स्थानपर जाओ, परन्तु फिर कभी ऐसे बुरे आचरण न करना। हमारे बचनके अनुसार तुम सदा ब्राह्मणोंसे अपना आत्म-कुशल पूछते रहना।

श्रीपरशुरामजी बोले, इस प्रकारके उपदेश सुनकर राजा दम्भोद्भव उन दोनो महा तपस्वियोंके चरणोंपर गिरकर उन्हे प्रणाम किया। अनन्तर वहांसे लौटके जब अपने नगरमें आये, तबसे अत्यन्त धर्म्मके आचरण करने लगे। इस समय विचार करके देखो, पहिले समयमे नर ऋषिने जो ऐसे कर्म्म किये थे. उसे बहुत बड़ा तथा कठिन कार्य्य कहना चाहिये। नारायण उनसे भी कई एक गुणोंसे श्रेष्ठ थे। हे राजन्! इसोसे जबतक धनुषोंमें श्रेष्ठ गाण्डीव धनुषपर काकुदीक, (प्रस्वापन अस्त्र) शुक, (मोहन अस्त्र)

नाना, (उन्मादन अस्त्र) अभिमन्तर्जन (त्रासन शस्त्र) सन्तान (इन्द्रादि-दिव्य अस्त्र) नर्तक, (नाचनेवाला पैशाच अस्त्र) घोर, (महामारीको उत्पन्न करनेवाला अर्थात् राक्षस अस्त्र) और आस्यमोदक (जिसको लगनेसे मनुष्य मुहपर पत्थर रखके मरनेका उद्यत होते हैं, अर्थात् याम्य अस्त्र) नहीं चलाये जाते हैं, तबतक तुम अभिमानको छोड़कर अर्जुनके अनुगामी बनो। इन ऊपर कहे हुए अस्त्रोंके लगनेसे सब मनुष्य मृत्युको प्राप्त होते हैं, सब मनुष्य उन्मत्त और विह्वलचित्त होकर कार्य्य करने लगते हैं, कितने ही वमन, और मूत्रत्याग करते, मूर्च्छा खाते, रोते और हंसते रहते हैं। हे भारत! सब लोगोंके सृष्टिकर्त्ता सकल कर्म्म और धर्म्मको जाननेवाले जगतके गुरु नारायण जिसके मित्र हैं, उस अर्जुनका प्रतापरूपी अग्नि जो युद्धमें महाभयङ्कर होजावेगा इसमें क्या सन्देह है? संग्राममें जिसके समान और कोई भी नहीं है, उस कपिध्वज महावीर अर्जुनको जीतनेके निमित्त इस तीनो भुवनमें कौन पुरुष साहस कर सकता है? इसके अतिरिक्त अर्जुनमें कितने प्रकारके गुण हैं, उनकी संख्या करना बहुत ही कठिन है। जनार्द्दन कृष्ण उनसे भी कई एक अंश तथा गुणोंमें श्रेष्ठ हैं। हे महाराज! तुम अर्जुनको केवल कुन्तीका पुत्र ही समझते हो, परन्तु महातेज तथा वीर्य्यसे युक्त वह जो पुरुषोंमें श्रेष्ठ नर और नारायण ऋषि हैं, उन्होंने ही अर्जुन और कृष्ण रूपसे इस पृथ्वीपर अवतार लिया है, तुम इस बातको अच्छी प्रकारसे अपने हृदयमें समझ लो। हे भारत! यदि इसमें तुम्हे निश्चय हो, और मेरे वचनमें कोई शङ्का न हो, तो तुम शुद्ध-बुद्धि अवलम्बन करके पाण्डवोंके साथ सन्धि कर लो। और यदि आपससे फूटका न होना तुम उत्तम समझते हो, तो भी तुम्हें शान्ति स्थापनके निमित्त यत्न करना चाहिये; युद्धकी निमित्त इच्छा करनी कभी उचित नहीं है। हे भरतश्रेष्ठ! तुम्हारा यह कुल पृथ्वी भरमें श्रेष्ठ और शास्त्रके ज्ञानसे प्रतिष्ठित है; इस समय अपने कल्याणके निमित्त तुम इस कुलको इसी प्रकारसे स्थित रहने दो, जो यथार्थ स्वार्थ है, उसीमें अपने चित्तको लगाओ।

९६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, परशुरामके वचन सुनकर भगवान् कण्व ऋषि भी कौरवोंकी सभामें दुर्योधनको सम्बोधन करके यह वचन कहने लगे।

कण्व बोले, सब लोकोंके पितामह ब्रह्मा जैसे अक्षय और नाश-रहित हैं नर-नारायण ऋषि भी वैसे ही हैं। सब देवताओंके बीच विष्णु ही एक मात्र सनातन, न जीतने योग्य, नाश रहित नित्य-स्वरूप और सबके ईश्वर है, इसके अतिरिक्त सूर्य्य, चन्द्र, पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, आकाश, ग्रह और ताराओंके पुञ्ज सब प्रलय कालमें विनष्ट होजाते हैं। संसारके नाश होनेके साथ ही सब वस्तुएं तीनों लोकसे गिरकर नष्ट हो जाती हैं; और फिर भी उनकी सृष्टि होती है, मनुष्य, मृग, पक्षी और तिर्यक योनिसे उत्पन्न हुए सब जीव क्षण मात्रमें [illegible] जाते हैं। महा प्रतापी राजा लोग राजलक्ष्मी भोगकर आयुके शेष होनेपर अपने पाप पुण्य अनुसार नया शरीर पाते हैं। इससे इन [illegible] बातोंको विचार करके, तुम धर्म्मपुत्र युधिष्ठिर के सङ्गमें सन्धि कर लो। कौरव और पाण्डव लोग आपसमें मिलकर पृथ्वी भरकी प्रजाका पालन करें। हे भरतर्षभ दुर्य्योधन! मैं बलवान् हूं, ऐसा अभिमान करना कभी उचित नहीं है, क्योंकि बलवानोंसे भी अधिक बल वाले पुरुष दीख पड़ते हैं। हे कुरुनन्दन देवताओंके समान पराक्रमी पांचो पाण्डव और

किक बलसे युक्त है, प्रकृत बलशाली पुरुषोंके निकट सेनाका बल, बल नहीं गिना जाता। कन्या प्रदान करनेवाले मातलिके वर खोजनेका वह पुराना इतिहास पण्डित लोगोंने इसके उदाहरण देनेके योग्य वर्णन किया है।

तीनों लोक तथा देवताओंके स्वामी इन्द्रके जो मातलि नामक सारथी हैं, उनके एक गुणकेशी नामकी कन्या थी। सुन्दरता और शरीरकी सुघराईमें वह सब लोकोंकी स्त्रियोंसे बढ़ गई थी। उसके व्याह करनेका समय आया हुआ जानकर मातलि अपनी भार्य्याके सहित अत्यन्त शोक और चिन्तासे दुःखित होकर कहने लगे। अहो। उदारचरित,यशस्वी, ऊंचे और नम्रतासे युक्त स्वभाववाले पुरुषोंके कुलमें कन्याका जन्म होना क्या ही दुःखका विषय है। सज्जन पुरुषोंके पक्षमें कन्या मातृकुल, पिताका कुल और जिस कुलमें प्रदान की जाती है, इन तीनों कुलोंको संशयमें डालती है। मैंने बुद्धिके अनुसार देव और मनुष्य लोकोंका भली भांति खोज लिया तो भी किसी स्थानपर मेरे योग्य उत्तम पात्र नहीं मिला।

कण्व मुनि बोले, देवता, गन्धर्व्व, दैत्य, दानव, मनुष्य और ऋषियोंके समूहमें भी कोई मातलिके कन्याके समान योग्य पात्र नहीं मिला तब उन्होंने सुधर्म्मा नामकी अपनी स्त्रीके सङ्ग रातके समय परामर्श करके नाग लोकमें जानेका सङ्कल्प किया, और दूसरे दिन सवेरे ही 'यद्यपि देव और मनुष्य लोकमें गुणकेशीके रूप और गुणके समान कोई पात्र नहीं मिल सका, तो भी नागलोकमें अवश्य कोई न कोई मिल जायगा" सुधर्म्मासे ऐसा कहके मातलिने उसकी प्रदक्षिणा की, और कन्याका मस्तक सूंघके पृथ्वीतलमें प्रवेश किया।

९७ अध्याय समाप्त।

कण्वमुनि बोले, मातलि मार्गसे चले जाते थे, उसी समय महर्षि नारदके सङ्ग उनकी भेंट होगई। नारद वरुणसे मिलनेको जाते थे, दैव संयोगसे मातलिको देखकर बोले, हे इन्द्रके सारथि श्रेष्ठ मातलि! कहां जानेके निमित्त उद्यत हुए हो? अपने कार्य्यके निमित्त अथवा इन्द्रके कार्य्य साधनके लिये जारहे हो? नारद मुनिसे ऐसा पूछे जानेपर मातलिने वरुणके स्थानपर अपने कार्य्यका सम्पूर्ण वृत्तान्त विस्तार पूर्व्वक कह सुनाया। अनन्तर देवर्षि नारद बोले, तब चलो हम लोग दोनों एक ही सङ्ग चलेंगे, मैं भी जलके स्वामी वरुणके दर्शन करनेके निमित्त स्वर्गसे चला आता हूं। हे मातलि! पृथ्वीतलको देखकर मैं उसका सम्पूर्ण विवरण तुमको सुनाऊंगा; और अच्छी प्रकारसे देख सुनकर वहींपर तुम्हारी कन्याके योग्य कोई सुन्दर वर ठहरा दूंगा।

अनन्तर महात्मा मातलि और नारदने पातालपुरीमें पहुंचकर, जलके स्वामी लोकपाल वरुणका दर्शन किया। वहांपर देवर्षि नारद मुनिने और मातलिने इन्द्रके समान पूजा तथा सत्कार पाया। इस प्रकारसे मान और आदर पाकर नारद और मातलिने अत्यन्त प्रीतियुक्त होकर अपने अपने आनेका कारण कह सुनाया, अनन्तर वरुणको आज्ञा लेकर वे दोनों नाग लोकमें घूमने लगे। नारद रसातलके निवासी सब जीवोंका वृत्तान्त अच्छे प्रकारसे जानते थे, इससे वह मातलिसे सबके वृत्तान्त विशेष रूपसे कहने लगे।

श्रीनारद मुनि बोले, हे सूत! तुमने पुत्र तथा पौत्रसे युक्त जलके स्वामी वरुणका दर्शन किया, अब तुम उनका सब प्रकार शुभदायक बहुतसी सम्पत्तिसे युक्त अधिकार अच्छी प्रकारसे देखो। पुष्कर नामक उनके अत्यन्त रूपवान् और देखने योग्य पुत्रको जो तुमने

देखा है, वह सुशील, उत्तम चरित्रवालोंमें शुद्ध आचार, सबसे श्रेष्ठ, महा बुद्धिमान् और पिताके अत्यन्त ही प्रिय हैं। रूप और सुघराईमें दूसरी लक्ष्मी के समान ज्योत्स्नाकाली नामी सोमकन्याने उन्हें अपना पति बनाया है। अदितिके बडे पुत्र सूर्य्यंभी इस ज्योत्स्नाकालीसे श्रेष्ठ पति रूपसे चुने गये थे; यह बात प्रसिद्ध है। हे इन्द्रके मित्र! जिसको पान करनेसे देवताओंने मृत्युको जीता है, जो सब स्थानोंमें सुवर्णसे भूषित है वही वारुणी सुरा भवन है, उसको देखो। हे मातलि! यह देखो राज्यसे दूर किये गये दैत्य लोगोंके प्रज्वलित अस्त्र शस्त्र सब दीख पड़ते हैं। कहा जाता है, कि किसी समयमें इन अस्त्रोंका नाश नहीं होता। बार बार बिद्ध होनेपर भी ये अस्त्र अपने अधिकारियोंके हाथमें लौट आते हैं। इन अस्त्रोंको चलानेके निमित्त भी महा अनुभव अर्थात् अत्यन्त ही मानसिक बलको आवश्यकता होती है इन सम्पूर्ण अस्त्रोंको इस समय देवताओंने दैत्योंको जीतकर अपने अधिकारमें कर लिया है। इस स्थानमें देवताओंके अधिकारसे पृथक पहले दिव्य शस्त्रोंके चलानेवाले राक्षस और दैत्योंका निवास था। इसी वारुणह्रदमें बड़ी भारी शिखासे युक्त वाड़वानल है, धूंवेंसे रहित अग्निसे युक्त अर्थात् प्रचण्ड ज्वालाके सहित सुदर्शन चक्र और लोक संहारके निमित्त भली भांतिसे रक्षित यह गाण्डीमय धनुषको देवता लोग नित्य ही रक्षा करते हैं। इसीसे उस प्रसिद्ध गाण्डीवधनुषका नाम करण हुआ है। लाख धनुषके समान इसमें बल है, और अचल रूपसे रहनेपर भी युद्धकार्य्यके समयमें यह कितने बल और तेजको धारण करता है, उसका वर्णन करना बहुत ही कठिन है। यह राक्षस और राजाओंसे शासन न कियेजाने योग्य पुरुषोंको भी शासित करता है। ब्रह्माने पहिले ही यह प्रचण्ड धनुष बनाया था। शुक्राचार्य्यने कहा था, कि राजाओंके निमित्त यह धनुष परम शस्त्र है। जलके स्वामी वरुणके पुत्र इस महाधनुषको धारण किया करते हैं। और भी देखो, छत्रगृहके बीच जलराजका जो आतपत्र रहता है, वह बादलोंकी भांति सब और शीतल जलकी वर्षा किया करता है। छत्रसे निकला हुआ वह विचित्र जल चन्द्रमाके समान निर्म्मल होनेपर भी महा घोर अन्धकार से इस भांति छिपा रहता है, कि किसीको दीख नहीं पड़ता। हे मातलि! इस स्थानमें इसी भांतिके बहुतसे पदार्थ दीख पड़ते हैं, परन्तु सबको देखनेसे तुम्हारे कार्य्यकी हानि होगी; इससे अब बहुत विलम्ब न करके चलो शीघ्रतासे हम लोग गमन करें।

९८ अध्याय समाप्त।

श्रीनारदमुनि बोले, नाग लोकके बीचमें जो यह पुरी दीख पड़ती है, इसका नाम पाताल है! स्थावर तथा जङ्गम जीवोंमेंसे कोई इस पातालपुरीमें जलके वेगके सङ्ग आजाता है, वह इस पुरीमें प्रवेश करनेके समय भयसे पीड़ित होकर महा घोर शब्द किया करता है। जलको भक्षण करनेवाला वाड़वानल इस स्थानमें नित्य ही प्रज्वलित रहता है। वह देवताओंकी इच्छाके अनुसार अपना यह कार्य्य कार्य्य जानता है, इसीसे मर्य्यादाको न लांघकर यत्नके साथ स्थिर भावसे रहता है। देवता लोग शत्रुओंका संहार करनेके अनन्तर अमृत पीके इसी स्थानपर सञ्चित करके रख छोड़ते हैं, इसी कारण यहांपर चन्द्रमाकी कलाका नाश नहीं होता। इसी स्थानपर अदितिके पुत्र हयग्रीवरूपी विष्णु, वेद पढनेवाले ब्राह्मणोंकी वेदध्वनिको वर्द्धित करनेके निमित्त वेदवाक्यसे सुवर्ण नामक जगतको परिपूर्ण करते

हुए प्रति पर्व्वके दिवस उपस्थित करते हैं। चन्द्रमा आदि सम्पूर्ण जलकी मूर्त्तियां इसी स्थानपर पतित होती है अर्थात जलको पातन करती है। इसी कारण यह उत्तम लोक "पतज्जल,, के संक्षेपसे पाताल कहके विख्यात हुआ है। जगतके हित करनेवाले हाथियोंके राजा ऐरावत इसी स्थानसे सुन्दर तथा शीतल जल ग्रहण करके सब मेघोंके बीच चलाया करते हैं;जिसको देवताओंके राजा इन्द्र पृथ्वीके ऊपर वर्षाया करते हैं। इस स्थानमे नाना प्रकारके जलजन्तु जलके बीच चन्द्रमाके प्रकाशका पान करके निवास करते हैं।

सूत! इस पातालतलके आसरेसे ऐसे बहुतसे जीव हैं, जो दिनमे सूर्य्यके तेजसे मृत प्राय हो जाते हैं, और रात्रिके समय फिर जीवित होते हैं। उसका कारण यह है, कि यहांपर चन्द्रमा प्रति रात्रिको उदित होकर अपने किरणरूपी हाथोंसे अमृत स्पर्श कराके उनको फिर जिला देते हैं। इन्द्रके हाथसे सर्व्वस्व हरे जानेपर कालसे पीड़ित होकर अपने धर्म्ममें सदा स्थित रहनेवाले प्रसिद्ध दैत्य लोग यहीपर इच्छाके अनुसार निवास करते हैं। सब प्राणियोंके महेश्वर उमापति महादेवने इसी स्थानपर सब लोकोंके कल्याणकी इच्छासे उत्तम तपका अनुष्ठान किया था। सदा वेदको पढ़ने और स्वर्गको जीतनेवाले गोव्रतधारी महा ऋषि लोग प्राणवायुका सयम करके इसी स्थानमें बसते है। जहा तहा कोई स्थानमें सो रहना, जो कुछ भोजन मिले उसीसे तृप्त होना, और जो कुछ वस्त्र मिले उसीको धारण करना, इसीको गोव्रत कहते हैं। इसी पुरमें सुप्रतीक नाम नागके वंशमें नागराज ऐरावण वामन, कुमुद, अञ्जन आदि मुख्य मुख्य नागोंका जन्म हुआ है। हे मातलि! इससे तुम यहा-पर अच्छी भांतिसे खोजकर देखो यदि कोई वर तुम्हारी इच्छाके अनुसार ठीक जचे, तो उसके समीप चलकर यत्नपूर्व्वक तुम्हारी कन्याके पाणिग्रहणके निमित्त उससे प्रार्थना की जाय। जलके बीच यह जो अण्डा अपने तेजसे प्रकाशित हो रहा है, यह सम्पूर्ण प्राणियोंको सृष्टिके समयसे कभी न फटा, न यहासे हटा। मैं कभी किसी पुरुषको इसका जन्म तथा स्वभाव वर्णन करते नहीं सुना है। इसके पिता माता कौन हैं? इस बातको कोई नहीं जानता। हे मातलि! यह वचन प्रसिद्ध है, कि संसारके नाश होनेके समय इसमेंहीसे प्रलयकी अग्नि निकलकर सब प्राणियोंके सहित तीनों लोकको भस्म कर देती है।

नारदमुनिकी इन सब बातोंको सुनकर मातलिने कुछ भी उत्तर न दिया, और कहा कि इस स्थानपर मेरी इच्छाके अनुसार कोई पात्र नहीं जचता, इससे अब आप दूसरे स्थान-पर शीघ्र ही चलिए।

९९ अध्याय समाप्त।

श्रीनारद मुनि बोले,—अत्यन्त मायावी दैत्य दानवोंका पातालके तलपर यह उत्तम महानगर हिरण्यपुर नामसे विख्यात है। इस नगरको मय-दानवने अपने मनसे कल्पना की थी और विश्वकर्म्माने इसको महा परिश्रम और यत्नके साथ बनाया है। सहस्रा मायाओंके रचनेवाले महा तेजस्वी शूर वीर दानव लोग पहिलेसे वरदान पाकर इसी स्थानमें निवास करते हैं। उन लोगोंको इन्द्र, यम, वरुण, कुबेर तथा दूसरा कोई भी पुरुष अपने वशमें नहीं कर सकता। हे मातलि! विष्णुके चरणसे उत्पन्न हुए कालखञ्ज नामक असुर और ब्रह्माके चरणसे उत्पन्न भये नैऋत,और यातुधान नामक राक्षस लोग भी इसी स्थानमें निवास करते है। वे सब बड़े बड़े दांतोंसे युक्त, भयङ्कर-वेगशाली और वायुके समान पराक्रमी तथा मायाबलसे

पूर्ण है। इसके अतिरिक्त इस स्थानमें और भी निवातकवच नामक कितने ही दानवोंका निवास है। इन्द्र भी उन लोगोंके बल और पराक्रमको जाननेमें समर्थ नहीं होते, सो बात तुमसे छिपी नहीं है। एकबार ध्यान देकर देखो, तुम और तुम्हारा पुत्र गोमुख और पुत्रोंके सहित देवताओंके राजा इन्द्र कई बार उन लोगोंके सम्मुखसे युद्धमें भाग गये हैं। हे मातलि! दैत्य लोगोंके सोने, चांदी, पद्मराग मणि तथा विविध शिल्पोंसे युक्त यथायोग्य रूप और मनोहर घरोंको देखो, यह सब वैदूर्य और दूसरी मणियोंसे भली भांति चित्रित, अग्निके समान हीरेसे जगमगा रहे हैं, तथा स्फटिकके समान श्वेत, सुन्दर और बहुत ऊंचे हैं। ये सब मन्दिर मट्टी, शिला और काठसे बने हुए, सूर्य्यके तेजके समान प्रकाशित हो रहे हैं। इन मन्दिरोंके बहुत प्रकारके द्रव्य और शिल्पोंकी संख्या करनी बहुतही कठिन है, गुणसे ही इन सब मन्दिरोंकी सिद्धि होती है। और भी इस मनोहर क्रीड़ाकानन, रत्नोंसे युक्त पात्र, महामूल्यवान् आसन, सुन्दर शय्या, बादलके समान पर्व्वत, सुन्दर फुहारे और अभिलाषाके अनुसार फूल फलसे युक्त सब वृक्षोंको देखो। हे मातलि! यदि इस स्थानमें तुम्हारे मनके अनुसार कोई पात्र ठीक हो, तो उसे तुम देखो, और नहीं तो चलो हम दोनों दूसरे स्थानपर चलें।

मातलि ऐसे वचन कहनेवाले नारदसे बोले हे देवर्षि! देवताओंके अप्रिय कार्य्य करना मुझे किसी प्रकारसे भी उचित नहीं है, देवता और दानव दोनोंमें सदासे बैर चला आता है, इससे शत्रुपक्षके सङ्गमें कैसे अपना सम्बन्ध कर सकता हूं? सम्बन्ध करनेकी बात तो दूर रही, दानवोंके सङ्ग भेंट भी करना मेरे निमित्त बहुत ही अनुचित है। इससे चलिये हम लोग शीघ्र ही दूसरे स्थानपर गमन करें आपकी आत्मा जो अत्यन्त ही हिंसात्मक है, वह मुझे भली भांतिसे विदित है।

१०० अध्याय समाप्त।

श्रीनारदमुनि बोले, यह लोक सांपोंको भक्षण करनेवाले गरुड़ वंशीय पक्षियोंके अधिकारमें है। पराक्रमका प्रकाश करने, शीघ्र चलने और बोझा उठानेमें इन पक्षियोंको कुछ भी परिश्रम नहीं जान पड़ता। विनतापुत्र गरुड़, सुमुख, सुनाम, सुनेत्र, सुवर्चा सुरूप और सुबल इन्हीं छः पुत्रोंसे इस कुलका विस्तार हुआ है। काश्यपके वंशमें उत्पन्न हुए विनताके कुलको बढ़ानेवाले मुख्य मुख्य पक्षियोंने अपनी सन्तान परम्पराके अनुसार सात हजार कुल परिवर्द्धित और अच्छी प्रकारसे वर्द्धित किया है। इस सब कुलोंमें उत्पन्न हुए पक्षी लक्ष्मीसे युक्त बहुतसी सम्पत्तिके स्वामी और महा बलवान् हैं। कर्म्मसे ये क्षत्रिय कहे जा सकते हैं, परन्तु सांपोंका भक्षण करके ये सब बहुत ही निठुर होगये हैं। जातिके नाश करनेसे ब्राह्मणत्व नहीं पा सकते। हे मातलि! मैं उनमेंसे मुख्य मुख्य पक्षियोंके नाम कहता हूं, तुम सुनो। विष्णुका वाहन होनेसे यह कुल अत्यन्त ही प्रशंसाका पात्र हुआ है, विष्णु ही इन सबके पूजनीय देवता हैं, ये सब उनकी पूजा किया करते हैं। इनके हृदयमें विष्णु सदा विराजमान रहते हैं, और इन सबके सदा ही गति स्वरूप हैं। उनके नाम ये हैं, सुवर्णचूड़, नागाशी, दारुण, चण्डतुण्डक, अनिल, अनल, विशालाक्ष, कुण्डली, पङ्कजित, वज्रविष्कम्भ, वैनतेय, वामन, वातवेग, दिशाचक्षु, निमिष, त्रिवार, सप्तवार, वाल्मीकि, द्वीपक, दैत्यद्वीप, सरिद्द्वीप, सारस, पद्मकेतन, सुमुख, चित्रकेतु, चित्रबर्ह, अनघ, मेषहृत, कुमुद, दक्ष, सर्पान्त, सोमभोजन, गुरुभार, कपोत, सूर्य्यनेत्र, चिरान्तक, विष्णुधर्म्मा, कुमार, परिबर्ह, हरि, सुस्वर, मधुपर्क, हेमवर्ण, मलय, मातरिश्वा,

निशाकर और दिवाकर। गरुड़वंशी अनगिनत पक्षियोंके बीचसे मैंने केवल कोई एक मुख्य मुख्य पक्षियोंके नाम मात्र कहे है। जो सब यश, कीर्त्ति और प्रधानता पाये हुए हैं इस स्थानमें उन्हींका नाम वर्णन किया गया है। हे मातलि। यदि इस स्थान में तुम्हारी रुचि न होवे, तो चलो दूसरी ओर चलें, जहांपर तुम अपने मनके अनुसार योग्य पात्र पाओगे, मैं उसी स्थानपर तुमको ले चलूंगा।

१०१ अध्याय समाप्त

श्रीनारद मुनि बोले, अब हम लोग जिस नगरमें आकर उपस्थित हुए हैं, इसका नाम रसातल है। यह पृथ्वीके सातवें तलेपर विराजमान है। इसी स्थानपर अमृतसे उत्पन्न भई गोमाता सुरभी सदा विद्यमान रहती है, यह नित्यही पृथ्वीके साराम्सं उत्पन्न छ. रसोंके सारभाग उत्तम और पवित्र अद्वितीय रसके आकर स्वरूप दूधकी वर्षा किया करती है। यह अनिन्दिता गोमाता पहिले समयमें अमृतके पीनेसे तृप्त हुए, सारवस्तुको वमन करनेवाले, सब लोकोंके पितामह ब्रह्माके मुहसे उत्पन्न हुई थीं। इनके दूधकी धारा पृथ्वीपर गिरनेसे महाह्रदस्वरूप क्षीरके समुद्रकी उत्पत्ति हुई है। इस क्षीर सागरके सम्पूर्ण स्थान फेनके पुञ्जसे युक्त रहनेसे ऐसा बोध होता है, जैसे फूल फूला हुआ है। उस सब फेनको पान करनेके निमित्त फेनप नामक मुनि इस स्थानमें वास करते हैं। केवल फेनके पान करनेहीसे उनका फेनप नाम हुआ है। हे मातलि। वह इस प्रकारकी कठोर तपस्यामें लगे हैं, कि देवता लोग भी उनसे डरते रहते हैं। सुरभीके गर्भसे उत्पन्न हुई और चार गज पूरब आदि चारों निवास करती है। दिशाओंके धारण करनेसे उनका नाम दिक्‌पाली प्रसिद्ध है जो पूर्व दिशाकी रक्षा करती है उनका नाम सुरूपा है, जो दक्षिण दिशाको धारण कर रही है, उनका नाम हंसिका है, जो विश्वरूपिणी गज वरुण देवकी पश्चिम दिशाको धारण करती है, उनका नाम सुभद्रा है, और जो उत्तर दिशाको धारण करती है. उनका नाम सर्व्वकामदुधा है। देव और असुरोंने मन्दरगिरिको मथानी बनाकर इसीके दूधसे मिले हुए समुद्रको मथकर वारुणी सुरा लक्ष्मी. उच्चैश्रवा नामक घोड़ा और रत्नोंमें श्रेष्ठ कौस्तुभ मणि आदि निकाला था। हे मातलि! सुरभीके अनन्त गुणोंकी कथा मैं क्या कहूं, वह जो महा पवित्र उत्तम दूध देती है वह नागोंको सुधा. पितरोंको स्वधा और देवोंके पक्षमें अमृतरूप होता है। "रसातलमें वास करनेसे जैसा सुख मिलता है, वैसा सुख नागलोक, देव लोक, स्वर्ग और विमानमें भी नहीं मिल सकता है।" रसातलके निवासी लोगोंने पहिले समयमें यह पुरानी कथा कही थी, वही आज पर्य्यन्त लोकोंके बीच पण्डितोंके मुंहसे सुनी जाती हैं।

१०२ अध्याय समाप्त।

श्रीनारद मुनि बोले, इन्द्रकी अमरावती पुरीकी भांति वह जो उत्तम नगरी दीख पड़ती है, इसका नाम भोगवती है। यह नागोंके राजा बासुकी नागके अधिकारमें है। अपने प्रभावसे वह सम्पूर्ण पृथ्वीको सदासे धारण किये हुए है. तपके बलसे वह सबके अग्रगामी पर्व्वतके समान उज्वल शरीर, दिव्य आभरणोंसे भूषित प्रज्वलित जिह्वाओंसे युक्त महाबली तेजस्वी शेषनाग इसी स्थानमें विराजमान हैं। इसी स्थानमें नागोंकी माता सुरसाके सहस्रों पुत्र पीडा रहित होकर स्वच्छन्दतापूर्व्वक वास करते है। वे सब नाना भांतिके आकारसे युक्त अनेक भूषणोंसे भूषित. मणि, स्वस्तिक. चक्र और कमण्डलुके चिन्हसे युक्त महाबली और स्वभावसे ही भयङ्कर हैं। उनमेंसे कोई कोई सहस्र,

कोई पांच सौ, कोई सौ, तथा कोई दश शिर-वाले और कोई तीन तथा दो शिरके सर्प हैं; इन सबोंका बड़ा विशाल शरीर है, और इनके निवास स्थान भी बहुत बड़े हैं। हे मातलि! इस स्थानमें एक ही वंशमें कितने सहस्र, लाख तथा कितने अर्बुद नागोंका बास है; उसको कौन कह सकता है। उनमें मुख्य मुख्य कई एक श्रेष्ठ नागोंका मैं तुमसे नाम बतलाता हूं इसे तुम सुनो; वासुकि, तक्षक, कर्कोटक, धनञ्जय, कालिय, नहुष, कम्बल, अश्वतर, वाह्यकुण्ड, मणि, आपूरण, खग, वामन, ऐलपत्र, कुकुर, कुकुण, आर्य्यक, नन्दक, कलशपोतक, कैलाशक, पिञ्जरक, ऐरावत, सुमनोमुख, दधिमुख, शङ्ख, नन्दक, उपनन्दक, आप्त, कोटरक शिखी, निष्ठुरक, तित्तिरि, हस्तिभद्र, कुमुद, माल्यपिण्डक, पद्म द्वय, पुण्डरीक, पुष्प, मुद्गरपर्णक, पिठरक, संवृत, वृत्त, पिण्डार, विल्वपत्र मूषिकाद, शिरीषक लिप, शङ्खशीर्ष, ज्योतिष्क अपराजित, कौरव्य, धृतराष्ट्र, कुहर, कृशक, विरजा, धारण, सुवाहु, मुखर, जय, बधिर, अन्ध, विशुण्डि, विरस और सुरस कश्यपके ये सब और कई सौ पुत्र जो सब पुरोमें विद्यमान है, उनकी संख्या करनी बहुत ही कठिन है। इससे यदि इस स्थानमें कोई तुम्हारे मनके अनुसार पात्र मिले तो देखो।

श्रीकण्व मुनि बोले, मातली स्थिर चित्त होके एक सुन्दरयुवको देखके हर्षित हुए और नारदसे उसका वृत्तान्त पूछने लगे। मातलि बोले, हे देवर्षि! कौरव्य आर्य्यकके सन्मुखमें यह जो तेजस्वी देखने योग्य युवा पुरुष बैठा है; यह किस कुलमें उत्पन्न हुआ है? इसके पिता माता कौन हैं? किस भाग्यवान्के वंशकी यह ध्वजा होकर जन्मा है? विद्या, विनय, रूप और गुण तथा अवस्थाके क्रमके अनुसार यह गुण केशरी पुरुष श्रेष्ठ वर मेरे मनमें जंचता है।

कण्व मुनि बोले, जब सुमुख नामक नागराजको देखके मातलि प्रसन्न हुए, तब नारद मुनि उसके जन्म, कर्म और महात्म्यका वर्णन करने लगे। नारद बोले, यह नागराज ऐरावत वंशमें उत्पन्न हुआ है; इसका नाम सुमुख है; यह आर्य्यकका प्यारा पौत्र और वामनका दौहित्र है। हे मातलि! चिकुर नामक नागराज इसके पिता थे, थोड़ा ही समय बीता होगा, कि वह गरुड़के हाथसे पञ्चत्वको प्राप्त होगये। यह सब बातें सुनकर मातलि अत्यन्त प्रसन्न होके नारदसे बोले, हे तात! यह नागोंमें श्रेष्ठ सुमुख ही मेरे मानसिक जामाता (दामाद) हुए, इनके ऊपर मेरा बहुत ही प्रेम उत्पन्न हुआ हैं हे मुनिश्रेष्ठ! इससे अब इसी नागराजके हाथमें मेरी प्यारी पुत्रीको प्रदान करानेके निमित्त यत्न कीजिये।

१०३ अध्याय समाप्त।

मातलिकी प्रार्थनासे नारद मुनि आर्य्यकके समीप जाकर बोले, हे भुजगसत्तम! यह हमारे साथी महात्मा पुरुष इन्द्रके सारथी और प्रिय मित्र हैं, इनका नाम मातलि है। ये पवित्रता, आचार, शील गुणोंसे भरे हुए, तेजस्वी पराक्रमी तथा महाबलवान् हैं। ये केवल इन्द्रके सारथी ही नहीं हैं, यह उनके प्राणके समान प्यारे मित्र और मन्त्री भी हैं। हर एक युद्धके स्थानमें इन्द्रके सहित इनका पराक्रम थोड़ा कम वेशी दीख पडता है। देव और असुरोंके युद्धके समयमें इन्होंने इन्द्रका सहस्र घोड़ोंसे युक्त जयशील रथ लेकर ऐसी शीघ्रतासे रण भूमिमें उपस्थित किया, कि बोध होता था, जैसे मन ही मनसे रथको चला रहे हैं। इनके प्रभावकी बात मैं कहातक वर्णन करूं यह घोड़ोंके, चलानेके कौशलहीसे शत्रुओंको पराजित किया करते हैं, पीछे इन्द्र अपनी दोनों भुजाओंकी सहायतासे विजय पाते हैं। इनके

बिना पहिले प्रहार किये, इन्द्र कभी अपना-दिव्य अस्त्रोंको नहीं चलाते। इनके घरमें गुणकेशी नामकी अनेक गुणोंसे भरी एक सत्य-शीला सुन्दरी कन्या है। पृथ्वी भरमें वैसो रूपवती स्त्री और कहीं नहीं है। उसके योग्य वर ढूंढ़नेके निमित्त ये तीनों लोकमें घूम रहे सम्प्रति सुमुख नामक तुम्हारे पौत्रको इन्होंने ग्य पात्र स्थिर किया है। इससे हे देवाके ल्य आर्य्यक। यह बात तुम्हे उत्तम जंचे तो न्या-रत्नका पाणिग्रहण करानेके निमित्त यत्न रो। जैसे विष्णुके सङ्ग लक्ष्मी और अग्निके ङ्ग स्वाहा है, वैसे हो सुन्दरो गुणकेशी भो म्हारे कुलकी लक्ष्मी होवे। इन्द्रकी शचोकी ाति गुणकेशी सुमुखके योग्य उत्तम पात्री है और सुमुख भी गुणकेशीके योग्य है। इससे तुम पौत्रके सङ्ग उस महासुन्दरी कन्याका व्याह करो। सुमुख पितासे होन है, तौ भी हम लोग उसके गुण मात्रको देख करके उसके सङ्ग गुण-केशीका व्याह किया चाहते हैं। तुम्हारे ऐरा-वत कुलका मान, प्रतिष्ठा, सुमुखकी पवित्रता, शील, दम आदि अनेक गुणोंको देख करके मातलि आप हो इस स्थानपर आकर सुमुखके सग अपनी कन्याका व्याह करनेके निमित्त तैयार है, अब इस समयमें तुमको भो इनका पूर्ण रीतिसे सम्मान करना उचित है।

कण्व मुनि बोले, आर्य्यक पुत्रके मरने और पौत्र (नाती) को किसी प्रकारसे जीवित देख-नेके कारण नारद मुनिके वचनसे हर्ष और विषादसे युक्त होकर बोले, हे देवर्षि। आपके वचनका मुझे किसी भांतिसे अस्वीकार नहीं हो सकता. जो इन्द्रके मित्र है, उनके सङ्ग सम्बन्ध करनेकी किसे इच्छा न होगी? परन्तु हे महामुनि! जिस प्रकारसे यह सम्बन्ध हो सकेगा उसीके निमित्त मुझे चिन्ता हो रही है। हे तात! पहिले तो सुमुखका पिता जो मेरा पुत्र था, वह विनतापुत्र गरुड़के कराल हाथोंसे मारा गया, इसी शोकसे हम लोग दुःखित है, उसपर भी वह निठुर पक्षी जानेके समयमें यह कह गया है, कि "अगले महीनेमें सुमुखको भी भक्षण करूंगा।" तब किस प्रका-रसे मुझे हर्ष हो सकता है? मैं यह निश्चय जानता हूं, कि गरुड़ जो कुछ कह गया है, उसे वह अवश्य पूरा करेगा। इससे इन सब बातोंको स्मरण करके हमारे सम्पूर्ण हर्षका नाश हो गया है। आर्य्यककी इन सब बातोंको सुनकर मातलि उनसे बोले, मैंने इस विषयमें एक युक्ति स्थिर की है, आपके पौत्र सुमुखको मैंने अपनी कन्याका मानसिक पति ठहरा लिया है, इससे अब यह नागराज मेरे संग चलके तीनों लोकके राजा इन्द्रके संग साक्षात् (मुलाकात) करें। गरुड़से इन्हें बचानेके निमित्त मैं सब भांतिसे यत्न करूंगा, अनन्तर शेष कार्य्यसे इनके परमायुका विषय जान सकूंगा। हे भुजगत्तम! आपका कल्याण हो, आप आज्ञा दीजिये, सुमुख हम लोगोंके संग इन्द्रके समीप गमन करें।

कण्व मुनि बोले, अनन्तर उस महा तेजस्वी मातलिने नारद और आर्य्यकके सहित सुमुख-को संग लेकर इन्द्रपुरीमें आकर देखा, कि देवताओंके राजा महा तेजस्वी इन्द्र अपने सिंहा-सनपर बैठे हुए हैं और सब देवता तथा चार भुजको धारण करनेवाले भगवान् विष्णु भी वहांपर उपस्थित हैं। तब नारद मुनिने उन सबके बीचमें मातलिके विषयका सम्पूर्ण वृत्तान्त आदिसे अन्ततक वर्णन कर दिया।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर विष्णु तीनों लोकके स्वामी इन्द्रसे बोले, हे इन्द्र! तुम इस नागराजको अमृत दान करके देवताओंकी समान कर दो, तुम्हारी इच्छासे मातलि, नारद और सुमुख सब कोई अपनी इच्छा पूर्ण करें। विष्णुके इस वचनको सुनकर इन्द्र बहुत समयतक

अपने मन ही मन गरुड़के पराक्रमको विचार-कर अन्तमें बोले कि आप मुझे जो आज्ञा देते हैं, उसे आप ही सिद्ध कीजिये, सुमुखको आप स्वयं अमृत दान करिये। विष्णु बोले, हे इन्द्र! तुम इस सम्पूर्ण लोकके स्वामी हो, इससे तुम जिसे जो कुछ प्रदान करोगे, उसे कौन अन्यथा कर सकेगा? यह वचन सुनकर वृत्रासुरके मारनेवाले इन्द्रने उस नागराजको उत्तम आयु प्रदान की, परन्तु अमृत पान नहीं कराया। सुमुख वर पाकर यथार्थमें सुमुख होगये; अर्थात् उनके मुखमण्डलपर उस समयमें प्रसन्नताका चिह्न स्पष्ट प्रकाशित होने लगा। यथा समयमें अभिलाषाके अनुसार गुणकेशीके सङ्ग ब्याह करके वह अपने स्थानको गये, और नारद तथा आर्य्यक भी कृतकार्य्य होकर इन्द्रकी पूजा करके अपने अपने स्थानोंपर चले गये।

१०४ अध्याय समाप्त।

कण्व मुनि बोले, इधर महाबली गरुड़ने जब इन्द्रपुरीका यह सब वृत्तान्त सुना, कि देवताओंके राजा इन्द्रने सर्पको आयु प्रदान किया है, तब उनके क्रोधकी सीमा न रही। वह उसी समय अपने महाविकराल बड़े बड़े दोनों पंखोंको पसार कर, तीनों लोकको अपने पवनोंसे रुद्ध करते हुए, अत्यन्त वेगसे दौड़े, और इन्द्रके समीप पहुंचकर बोले, हे भगवन्! तुम अवज्ञा करके मेरी वृत्ति लोप करनेमें क्यों प्रवृत्त हुए हो? पहिले तुमने अपनी इच्छासे मुझे वर दिया था, अब उससे क्यों हटते हो? सब सृष्टिके रचनेवाले ब्रह्माने मेरा जो कुछ आहार बना दिया है, तुम उसको क्यों रोकते हो? हे देवराज! सुमुखके मांससे हमारी बहुतसी सन्तानोंका भोजन होगा, यही मनमें स्थिर करके मैंने इस महानागको मारनेका समय ठीककर रक्खा था। इस समय वह वर पानेसे अवध्य होगया; तो अब मैं दूसरे किसीकी हिंसा करनेमें कैसे उत्साही हो सकूंगा? तुमने इसको जैसे वरदान दिया है, दूसरेपर भी वैसे ही अनुग्रह करनेमें कौन कठिनाई है? हे इन्द्र! तुम्हारे इस प्रकारके खेल करनेसे मुझको कुटुम्ब तथा सेवकोंके सहित अवश्य ही प्राण त्याग करना पड़ेगा, ऐसा होनेसे तुम भले भांति सन्तुष्ट होओगे। हे इन्द्र! तीनों लोकके ईश्वर होकर भी मैंने जब दूसरेकी सेवा स्वीकार की है, तब हमारे पक्षमें ऐसी घटना होनी ही उचित है, केवल ऐसा ही क्यों मैं इससे भी अधिक क्लेश पानेका पात्र हूं। हे तीनों लोकोंके राजा इन्द्र! तुममें मुझसे कोई अधिकता न होनेपर भी जब तुमको तीनों लोकोंका राज्य मिला है, तब विष्णु ही अकेले हमारी महिमाको नष्ट करनेके कार नहीं है। देखो दक्षकी पुत्री मेरी मात और कश्यप ही मेरे पिता हैं, मैं भी लीला क्रमसे सब लोकोंके भारको उठा सकता हूं मेरा भी यह प्रचण्ड बल सब प्राणियोंसे सहने योग्य है, दैत्योंकी लड़ाईमें मैंने भी बड़े बड़े कर्म पूर्ण किये हैं, श्रुतश्री, श्रुतसेन विवस्वान्, रोचनामुख, प्रस्तुत, और कालकाक्ष आदि दैत्योंको मैंने भी मारा है। तब जो मैं तुम्हारे भाईका सेवक होकर यत्नपूर्वक रथकी ध्वजाकी रक्षा करता हूं; और अनेक समयमें उन्हें पीठपर चढ़ाके ले चलता हूं; इसीसे तुम मेरी अवज्ञा करते हो। हे इन्द्र! सम्पूर्ण जगतमें मेरे समान भार उठानेवाला तथा मुझसे अधिक बलवान् और दूसरा कौन है? मैं सब प्रकारसे श्रेष्ठ होकर भी बन्धुबान्धवों सहित इनका भार उठाता हूं सम्प्रति तुमने अ मेरी अवज्ञा की और मुझको भोजनसे वञ्चित किया, इसमें तुमसे और इनसे दोनोंहीसे मेरा गौरव नष्ट होगया। हे विष्णु! अदितिके गर्भमें ये सब इन्द्र आदि जितने बल और पराक्रमसे युक्त शूरवीरोंका जन्म हुआ है, उन सबमें

तुम ही सबसे अधिक बलवान् हो, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। परन्तु मैं तुमको अपने पङ्खके थोड़ेसे स्थानपर उठाकर विना श्रमके फिरा करता हूं, इससे हे भ्राता। तुम स्थिर चित्तसे विचार करके देखो, कि हम लोगोंमें अधिक बलवान् कौन है?

कण्व मुनि बोले, चक्रधारी भगवान् विष्णु गरुड़के अभिमानसे भरे दारुण वचनोंको सुनकर उन्हें भयभीत करते हुए गम्भीर भावसे बोले। हे गरुड़। तुम अत्यन्त निर्ब्बल होकर भी अपनेको बलवान् समझते हो, मेरे सम्मुख तुम्हें इस प्रकारसे अपनी बड़ाई करनी उचित नहीं है। हे अण्डज। तुम्हारी तो बात ही क्या है, यह सम्पूर्ण तीनों लोक भी मेरे भारको उठानेमें असमर्थ है, मैं खुद अपने शरीरको आप ढोता रहता हूं, और तुमको भी धारण किये हुए चलता हूं। तुम इस बातको सचाईके निमित्त यही मेरी एक भुजा उठा करके देखो, यदि तुम मेरे इस एक हाथके भारको धारण कर सको, तो भी तुम्हारा यह सम्पूर्ण गर्व्व सार्थक हो सकता है।

विष्णुने ऐसा कहके गरुड़के कन्धे पर ज्योंही अपने उस हाथको रखा, त्योंही वह महाभारसे विकल चेतनारहित हो गये। स्वर्गके सहित सम्पूर्ण पृथ्वीका जितना भार होता है, उतना ही भार विष्णुके एक हाथ मात्रका बोध हुआ। महा बलवान् दयालु भगवान् विष्णुने बलसे पीड़ित करते हुए यद्यपि गरुड़का प्राण नाश नहीं किया, तो भी उस महा भारसे पीड़ित होकर गरुड़ वमन करने और अपने दोनों पङ्खोंको फटकारने लगे, और मस्तकसे उन्हें प्रणाम कर कातर होके बोले हे भगवन्। हे विश्वमूर्त्ते! तुम्हारे इस शरीरके बीच जब सब लोकोंसे उत्पन्न हुई सम्पूर्ण वस्तु उपस्थित है, तब इच्छाके अनुसार अपने भुजाको पसारकर मुझको विकल करना कौनसी विचित्र बात है, हे देवोंके देव। अब इस समय कृपा करके निज ध्वजापर वास करनेवाले बलके घमण्डमें मतवाले अल्पबुद्धि विह्वल पक्षीके ऊपर क्षमा करो। हे सर्व्व शक्तिमान्। मैं पहिले कभी तुम्हारे बलके माहात्म्यको नहीं जान सका था, इसीसे मैंने अपने मनमें समझ लिया था, कि मेरे समान बलवान् और कोई नहीं है। हे राजेन्द्र! गरुडके इस प्रकारके कातर वचन सुनकर भगवान् विष्णु प्रसन्न होके प्रीतिपूर्व्वक बोले, कि "फिर कभी ऐसा अभिमान न करना।" ऐसा कहके अपने पैरके अङ्गूठेसे सुमुख सर्पको उनकी छातीके ऊपर फेंक दिया। तभीसे पक्षिराज गरुड़ उस नागराज सुमुखके सङ्ग प्रीतिपूर्व्वक एकत्र वास करने लगे। हे गान्धारीनन्दन। विष्णुके बलसे विकल होनेसे अत्यन्त बलशाली महायशस्वी विनतानन्दन गरुड़का गर्व्व इसी प्रकारसे दूर हुआ था। हे तात। उसी प्रकारसे तुम भी जबतक सङ्ग्रामभूमिमें पाण्डवोंके सम्मुख नहीं होते हो, तभी तक जीवित रह सकते हो। प्रहार करनेमें श्रेष्ठ पवननन्दन भीमसेन और लोकोंमें महा प्रतापसे युक्त इन्द्रतनय अर्ज्जुन रणभूमिमें किस पुरुषको नहीं मार सकते हैं? हे दुर्योधन। स्वयं विष्णु, वायु, इन्द्र, धर्म्म और दोनों अश्विनीकुमारोंके सङ्ग युद्ध करनेकी बात तो दूर रहे तुम उनकी ओर देखनेसे भी समर्थ न होओगे। हे नृपनन्दन! इससे विरोध करनेका कुछ भी प्रयोजन नहीं है, गुरु स्वरूप कृष्णके द्वारा शान्ति स्थापन करके कुलकी रक्षा करो। इन्हीं महा तपस्वी नारद मुनिने विष्णुके ऊपर कहे हुए सब माहात्म्यको अपनी आंखोंसे उस समय देखा था। वही चक्र और गदाको धारण करनेवाले भगवान् तुम्हारी सभामें उपस्थित हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कण्व मुनिने ऐसा उपदेश दिया, यह ठीक है, परन्तु नीचबुद्धि

दुर्य्योधन भौंहे टेढ़ी करके लम्बी सांस लेता हुआ कर्णके मुखकी ओर देखकर, ऊंचे स्वरसे ठठाकर हंसने लगा, और कण्व ऋषिके ऐसे हितकारी वचनोंका अनादर करते हुए, हस्तीके समान अपने उरु देश (जङ्घ) को ठोक कर, यह उत्तर दिया। हे महर्षि! मेरी जैसी अवस्था है, तथा मेरी जैसी गति होगी, ईश्वरने मुझको उसी निमित्त उत्पन्न किया है, और मैं भी उसीके अनुसार चलता हूं, इससे प्रलाप करनेसे अधिक आप लोगोंको क्या फल हो सकता है?

१०५ अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजयने पूछा, अनर्थकी सृष्टि करनेवाले, पराये धनके लोभमें मोहित, नीचोंकी सङ्गतिमें रत। मरनेके निमित्त उद्यत, ज्ञातिको दुःख देनेवाले, मित्रोंको क्लेश देनेवाले, शत्रुओंका हर्ष बढ़ानेवाले और बुरे मार्गमें चलनेवाले दुर्य्योधनको उसके बन्धुबान्धवोंने क्यों नहीं निवारण किया? प्रीति करनेवाले परम मित्र भगवान् कृष्ण और पितामह भीष्म आदि अपने अच्छे उपदेशोंसे उसे उत्तम मार्गमें क्यों नहीं चला सके?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भगवान् कृष्ण और पितामह भीष्मको जैसा हितके निमित्त उपदेश वचन कहना उचित था, उन लोगोंने वैसा ही कहा था, उसके अतिरिक्त महर्षि नारदने भी जो विस्तारपूर्वक अनेक प्रकारके वचन कहे थे, आप उन्हें सुनिये।

नारद मुनि बोले. मित्रोंकी बातोंका सुने ऐसा पुरुष दुर्लभ है, और हितकी बातोंका उपदेश करे ऐसे मित्रका मिलना भी बहुत कठिन है। क्योंकि हितका वचन कहनेवाला वक्ता जिस कार्य्यको करना निश्चित करता है, श्रोता उस बातमें स्थित नहीं रहता। परन्तु हे कुरुनन्दन! मेरे विचारमें हितकारी मित्रोंकी बातें सुनना अत्यन्त ही कर्त्तव्य कार्य्य है। हठके वशमें होना किसी प्रकारसे उचि[त] नहीं है, क्योंकि हठ क्लेशका मूल है, हठ[के] वशमें पड़कर गालव मुनिका जिस प्रकार[से] पराभव हुआ था, वही पुराना इतिहा[स] इसमें उदाहरण है। हे भारत! पहि[ले] समयमें तपस्यामें लगे हुए विश्वामित्र[को] धर्म्मको जाननेके निमित्त भगवान् धर्म्म स्व[यं] वशिष्ठकी मूर्त्ति धारण करके उनके समी[प] गये थे। हे राजन् धर्म्मने वशिष्ठ मुनि[का] वेष धारणकर क्षुधासे पीड़ित और भोज[न] करनेकी इच्छासे विश्वामित्र मुनिके आश्र[म] आकर उपस्थित हुए। विश्वामित्र उसी सम[य] आतुर होके उत्तम अन्नका पाक करने लगे, परन्तु कपटवेशी धर्म्मने उनकी प्रतीक्षा न करके दूसरे तपस्वियोंके दिये हुए अन्न भोजन करके अपने भूखकी शान्ति की। उनके भोजनके शेष होनेपर विश्वामित्रने भी वह गर्म्म अन्न ला करके उपस्थित किया। तब भगवान् धर्म्मने कहा "हमने भोजन कर लिया है, तुम यहांपर निवास करो।" ऐसा कहकर वहांसे चले गये। प्रशंसनीय व्रतके अनुष्ठान करनेवाले महातेजस्वी विश्वामित्र भी उनके वचनके अनुसार उसी स्थानपर खड़े रहे। अपने दोनो हाथोंसे उस पात्रको शिरपर रखके वह वायु भक्षण करते हुए अचल रूपसे आश्रमके समीप खड़े रहे। उनके प्यारे शिष्य गालव मुनि गौरव और मान पानेके निमित्त प्रीतिके वशमें होकर यत्न पूर्व्वक उनकी सेवा टहल करने लगे। इसी प्रकारसे सौ वर्ष बीत गये, धर्म्मराज फिर वशिष्ठका वेष धारण करके भोजन करनेकी इच्छासे विश्वामित्रके समीप आये। उन्होंने देखा, कि वह बुद्धिमान् महर्षि शिरपर अन्नके पात्रको धारण करके उसी प्रकारसे वायु भक्षण करते हुए खड़े हैं, और अन्न भी वैसा ही गर्म्म तथा ताजा है। यह देखकर उन्होंने वह अन्न लेकर भोजन किया और बोले, "हे विप्रर्षि! मैं पूर्ण रीतिसे स[न्तुष्ट]

हुआ हूं।' ऐसा कहकर चले गये। विश्वामित्र धर्म्मके वचनसे क्षत्रिय भावसे छूटकर ब्राह्मणत्वको पाकर अत्यन्त ही प्रसन्न हुए। अनन्तर उन्होंने उस तपस्वी गालव नामक शिष्यकी सेवा टहलसे प्रसन्न होकर उससे बोले, हे पुत्र गालव! मैं अब तुम्हें आज्ञा देता हूं, कि जहां तुम्हारी इच्छा हो, वहां जाओ। मुनिसत्तम महातेजस्वी विश्वामित्रकी इस बातको सुनकर गालव मुनि अत्यन्त प्रसन्न होके मीठे वचनसे उनसे बोले, हे गुरो! गुरुदक्षिणामें आपको क्या दान दूं? दक्षिणा-युक्त होनेहीसे मनुष्यका कर्म्म सिद्ध होता है। विना दक्षिणा दिये कोई कर्म्मका फल नहीं प्राप्त कर सकता। उत्तम यज्ञके करनेवाले पुरुष दक्षिणासे ही स्वर्ग लोकमें यज्ञका फल पाते है। इससे गुरुदक्षिणाके योग्य कौन वस्तु आपको दान करनी होगी, उसके निमित्त आप आज्ञा दीजिये। भगवान् विश्वामित्र गालवको सेवाहीसे यथेष्ट दक्षिणा पा चुके थे, यही समझकर उन्होंने और दक्षिणा ग्रहण करनेकी अभिलाषा नहीं की। इसीसे उसको "तुम गमन करो" बार बार ऐसे ही वचन कहने लगे, परन्तु गालव मुनि बारम्बार ऐसे वचन सुनकर भी हठपूर्व्वक 'क्या दक्षिणा दूं, क्या दूं?" ऐसी बात बारबार कहने लगे। तब विश्वामित्र उसके इस प्रकार महाहठको देखकर कुछ रोषसे भरकर यह वचन बोले। हे गालव! चन्द्रमाके समान सफेद और एक ओर श्याम कर्णसे युक्त ऐसे आठ सौ घोड़े लाकर मुझे दान करो; जाओ अब देरी मत करो।

१०६ अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले, बुद्धिमान् विश्वामित्रके ऐसी आज्ञा देनेपर गालव मुनि दुःखसागरो चिन्तारूपी समुद्रमें डूब गये। उनका सोना, बैठना, खाना, पीना सब छूट गया। अत्यन्त ही सोच और चिन्तासे सदा जलते हुए वह पाण्डुवर्ण और सूखकर हड्डी मात्र रह गये। अत्यन्त दुःखसे पीड़ित होकर मन ही मन ऐसा विलाप करने लगे, कि "हाय! मैं दीन हीन तपस्वी होकर चन्द्रमाके समान सफेद श्यामकर्णके आठ सौ घोड़े कहां पाऊंगा? मेरा ऐसा धनवान् कौन मित्र है, जिससे मैं मांग लूंगा। मुझे धन कहां है, सञ्चय ही मैंने कब किया है? हा! अब मुझे खाने पीने आदि विषयोंसे किस प्रकारसे श्रद्धा हो सकती है? दूसरी बात तो दूर है, मेरे जीनेकी भी अब आशा नहीं है। मेरे जीनेहीसे अब क्या प्रयोजन है? व्यर्थ जीवनके भारको ढोनेकी अपेक्षा मैं समुद्रके पार अथवा पृथ्वीकी अन्तिम सीमापर जाकर अपने प्राणको त्याग दूंगा। निर्धन मनुष्य बहुतसे उत्तम फलके लाभ करनेसे वञ्चित रहते है, ऋणी पुरुषको यत्न और चेष्टाके अतिरिक्त सुख पानेका और कौन उपाय है? जो मनुष्य प्रीतिके बन्धनमें बंधके मित्रोंके धनको भोग करते है और अन्तमें उनके अभीष्ट कर्म्मोंके सिद्ध तथा प्रत्युपकार करनेमें असमर्थ हो जाते है, उनके जीनेसे मरना ही उत्तम है। मैं इस कार्य्यको करूंगा ऐसा कहकर जो अधम पुरुष उस कर्म्मको नहीं करता, उसके समान मिथ्यावादी और कौन हो सकता है? उसके जप, यज्ञ आदि सम्पूर्ण कर्म्म नष्ट हो जाते हैं। मिथ्याप्रिय अधम पुरुषोंकी सन्तति, शरीर शोभा, प्रभुता कुछ भी नहीं रह सकती। उसको उत्तम गति मिलनेकी सम्भावना कैसे हो सकती है? कृतघ्न पुरुषको यश, स्थान और सुख कहां है? कृतघ्न किसी समयमें श्रद्धा करनेके योग्य नहीं हो सकता, और न किसी कालमें उसका निस्तार होता है। धनहीन पापी पुरुषका जीना मरना दोनों ही समान है। पापी मनुष्य अपनी प्रतिज्ञाका पालन करनेमें

कैसे समर्थ हो सकता है? वह कृतघ्न होकर अवश्य ही मृत्युको प्राप्त होता है। इससे मैं भी वही पापी, कृतघ्न, कृपण और मिथ्यावादि हुआ हूं। गुरुके निकट कृतकार्य्य होकर, जब उनकी आज्ञाका पालन करनेमें असमर्थ हुआ हूं, तब सब बातही मुझमें सम्भव हो सकती हैं। इससे अब मेरे जीनेसे क्या फल होगा? मैं गुरुके वचनका पालन करनेमें अपनी सामर्थ्य भर यत्न करके अन्तमें अपने प्राणको त्याग दूंगा। यज्ञके स्थानमें सब देवता लोग मेरा सम्मान किया करते हैं, परन्तु पहिले कभी मैंने उन लोगोंसे कुछ नहीं मागा है। इससे सब देवोंमें श्रेष्ठ, अगतिके गति स्वरूप, विश्वव्यापक विष्णुका शरणागत होऊंगा। जिससे सुर, असुर, नर और किन्नर सम्पूर्ण प्राणियोंका भाग और सब प्रकारका सुख प्रतिष्ठित है, उन्ही योगियोंमें श्रेष्ठ अविनाशी विष्णुके दर्शन करनेका मैं इच्छा करता हूं।

गालव मुनिके यह वचन कहते ही अकस्मात् उनके मित्र विनतापुत्र गरुड़ने आकर उन्हें दर्शन दिया, और अत्यन्त प्रसन्नतासे उनकी प्रिय कामना सिद्ध करनेके निमित्त यह वचन बोले। हे प्रिय सखा! तुम्हारे सङ्ग मेरी पूर्ण मित्रता है, मित्रोंका कर्त्तव्य कर्म्म यही है, कि बल तथा पराक्रमसे अपने प्यारे मित्रोंके कार्य्य सिद्ध करनेके निमित्त यत्न करें। हे ब्राह्मण! इससे मेरे परम सम्पत्ति स्वरूप भगवान् विष्णुसे मैंने पहिले ही तुम्हारा प्रयोजन सिद्ध करनेके निमित्त आवेदन किया था, और उन्होंने भी मेरी यह इच्छा पूर्ण की है, इससे चलो तुम्हें सुख पूर्वक हम ले चलेंगे, समुद्रके पार अथवा पृथ्वीकी अन्तिम सीमापर जहां तुम्हारी इच्छा हो वहां चलो, विलम्ब करनेका कुछ भी प्रयोजन नहीं है।

१०७ अध्याय समाप्त।

— — —

गरुड़ बोले, हे ब्राह्मण-श्रेष्ठ गालव! अज और अविनाशी चक्रधारी भगवान् विष्णुकी आज्ञाके अनुसार मैं तुमसे यह पूछता हूं, कि पहिले कौन दिशाके दर्शनके निमित्त तुम्हें ले चलूं, सो तुम कहो। पूर्व्व, पश्चिम उत्तर और दक्षिण इनमेंसे पहिले किस दिशामें जानेकी तुम्हें अभिलाषा है? जिस स्थानसे सब लोकोंके प्रकाशक सूर्य्यका उदय होता है, और सन्ध्याके समयमें जहांपर साध्य नामक गणदेवता लोग तपस्या करते हैं; जिस जगह जगत् व्यापिनी बुद्धिको लोग प्रथम प्राप्त कर सकते हैं, धर्म्मके दोनों नेत्र स्वरूप सूर्य्य और चन्द्रमा और स्वयं धर्म्म जिस दिशामें प्रतिष्ठित है, जिस दिशामें यज्ञकी सम्पूर्ण हव्य पदार्थ होम होकर सब दिशाओंको शुद्ध करते हैं, जो दिशा दिवस और कालसे द्वार स्वरूप है, पहिले दक्ष-प्रजापतिकी कन्याओंने जहां पर सब प्रजाओंको उत्पन्न किया था, कश्यप ऋषिके पुत्र लोग जिस दिशामें बढ़े थे, वही पूर्व्वदिशा देवताओंके सम्पूर्ण ऐश्वर्य्यकी जड़ है, क्योंकि इसी दिशामें शचीपति देवताओंके स्वामी इन्द्रका अभिषेक हुआ था, और सब देवताओंने इसी स्थानमें पहिले तपस्या कीथी। हे ब्राह्मण श्रेष्ठ! इसी कारण उसका नाम पूर्व्व दिशा हुआ है। इन्द्रको स्वर्गके राज्यपर अभिषिक्त होनेके बहुत दिन पहिलेसे भी देवता लोग इस स्थानमें निवास करतेथे, इसी कारण पुराने लोगोंने उसका "पूर्व्व" नाम रक्खा है। सुखकी अभिलाषा करनेवाले देवताओंका सम्पूर्ण कार्य्य इसी दिशामें सिद्ध हुआ था। लोक भावन भगवान् पितामहने पहिले इसी स्थानपर वेद गान किया था। सूर्य्यदेवने भी इसी स्थानमें पहिले ब्राह्मणोंको गायत्रीका उपदेश और याज्ञवल्क ऋषिको यजुर्वेद अध्ययन कराया था। हे द्विजसत्तम! इसी स्थानपर वर पाकर सोम यज्ञमें इस स्थानमें देवताओंसे इन्द्र प्रसन्न हुए थे। इस

वस्तुओंकी भक्षण करनेवाले अग्नि सदा तृप्त होकर दूध आदि भक्षण किया करते हैं। जलके स्वामी वरुणने इसी ओरसे पातालके तल भागपर जा करके राज्य लक्ष्मीको प्राप्त किया है। पहिले मित्रवरुणके यज्ञके समयमें पुराने वशिष्ठ ऋषिकी इसी स्थानमें उत्पत्ति, निवास और विनाश प्रकाशित हुआ था। प्रणवका जो सहस्र प्रकारका मार्ग है, वह इसी दिशामें कहा जाता है। धुवां पीनेवाले मुनि लोग इसी स्थानमें होमका धुवा पीते थे और देवताओंके यज्ञभाग निमित्त शचीपति इन्द्र वराह, मृग आदि सब वस्तु उनको दान देते थे। तेज और किरण धारण करने वाले भगवान् सूर्य्य इसी दिशामें उदय होकर, क्रोधके वशमें अहित कर्म्म करनेवाले कृतघ्न मनुष्य और असुरोंके प्राणका नाश करते हैं। मैं अधिक कहांतक वर्णन करूं यह दिशा तीनों लोककी द्वार स्वरूप है, स्वर्ग और सुख लाभके निमित्त यही उत्तम मार्ग है। इससे यदि तुम्हारी इच्छा हो, तो इसी पूर्व्व दिशाकी ओर प्रवेश करें। हे गालव। मैं जिसका आज्ञाकारी हूं, उसका प्रिय कार्य्य पूर्ण करना मेरा अत्यन्तही कर्त्तव्य-कर्म्म है। इससे अब किस दिशाकी ओर चलें सो तुम कहो, यदि पूर्व्व दिशा देखनेकी इच्छा न हो, तो और एक दिशाका वृत्तान्त कहता हूं, सो सुनो।

१०८ अध्याय समाप्त।

गरुड़ बोले, यह दक्षिण दिशा है। पहिले सूर्य्यने देवयज्ञके अनुष्ठानमें यह दिशा दगुरु-दक्षिणामें दान किया था, इसीसे यह दक्षिण दिशाके नामसे प्रसिद्ध हुई है। हे विप्र। इसी दिशामें तीनो लोकका पितृ-पक्ष प्रतिष्ठित है। सुना जाता है धुवा पीनेवाले देवता लोगभी इसी दिशामें निवास करते हैं। विश्वेदेव नामक जो बारह गणदेवता हैं वे लोगके बीच पितरोंके समान पूज्य और समान भाग पाकर उन लोगोंके सङ्ग सदा एकत्र होकर इसी दिशामें वास करते हैं। हे द्विजसत्तम! पण्डित लोग इस दिशाको धर्म्मका दूसरा द्वार स्वरूप कहके वर्णित करते हैं; क्योंकि इसी स्थानमें सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म सब लोकोंकी परम आयुका निर्णय होता है, विशेष करके इसी दिशामें देवर्षि पितर लोग ऋषि और राजर्षि लोग सदा परम सुखसे निवास करते हैं। हे ब्राह्मण! सत्य, धर्म्म और कर्म्म सब इस दिशामें विद्यमान हैं, जो पुरुष कर्म्मसे आत्माको स्थिर करता है, इसी दिशामें उसकी गति होती है। एक बार सबको इस दिशामें आना पड़ता है, परन्तु यह अज्ञानरूपी अन्धकारसे ढकी रहती है, इससे सहजहीमें नहीं प्राप्त हो सकती। हे द्विजश्रेष्ठ! पुण्यकर्म्म न करनेवाले अधम मनुष्योंकी विरुद्धता करनेके निमित्त इस दिशामें कई सहस्र महा विकट आकारके राक्षसोंकी सृष्टि हुई है। हे ब्राह्मण! मीठे स्वरसे युक्त गन्धर्व्व लोग मन्दर पर्व्वत और विप्रर्षि लोकोंके आश्रमोंपर अच्छे मधुर गीत गाकर सब लोगोंके चित्त और बुद्धि हर लेते हैं। रैवत नामक दैत्यराज इसी स्थानपर पुत्र, पौत्र स्त्री, राज्य और सेवक आदि सम्पूर्ण वस्तुओंको त्याग कर वनवासी होगये थे। हे ब्राह्मण! मनु और यवक्रीत-तनयने इस दिशामें जो नियम स्थापित किया है, सूर्य्यदेव किसी समयमें उसका उल्लङ्घन नहीं कर सकते। पुलस्त्यवंशमें उत्पन्न हुए राक्षसोंके राजा महात्मा रावणने इसी दिशामें तपस्या करके देवताओंके समीप अमर होनेका वरदान मांगा था। वृत्रासुरने भी असत् कर्म्मसे इसी स्थानमें इन्द्रके साथ शत्रुता की थी। हे गालव! इसी दक्षिण दिशामें सबका प्राण मिलित होके फिर प्राण और अपान भेदसे पृथक् पृथक् होजाता है। बुरे कर्म्म करनेवाले

अधम पुरुष इसी दिशामें बुरे कर्म्मोके फलरूपी नरकमें पड़कर सड़ते रहते है। इसी दिशामें नरकसमुद्रमें मिलनेवाली पापी पुरुषोंसे भरी हुई महाभयङ्कर वैतरणी नदी वह रही है। यहांपर आनेसे लोगोंको स्वर्ग और नरक दोनोंके सुख मिलते है। किरणधारी सूर्य्य इस दिशामें घिरकर उत्तम प्रकारसे जल बरसाते रहते है, और फिर वशिष्ठ सम्बन्धिनी उदीची दिशामें जानेसे हिमसे मुक्त होते हैं। हे गालव ! पहिले मैं एक दिन क्षुधासे पीड़ित होके आहारके निमित्त चिन्ता कर रहा था, तब युद्धमें प्रवृत्त हुए इस दिशामें बड़े शरीरवाले दो हाथी और कच्छपको पाया था। जो लोकके बीच कपिल देव कहके विख्यात हैं, जिनके प्रभावसे सगरके वंशका नाश हुआ था, वही चक्रधनु नामक महर्षि इस दिशामें सूर्य्य-देवसे उत्पन्न हुए थे। इसी दिशामें वेदको जाननेवाली शिरा नामकी सिद्ध ब्राह्मणीने सब वेदोंको पढ़कर अपना अविनाशी शरीर पाया था। इसी स्थानमें नागराज वासुकी, तक्षक और ऐरावत आदि नागकुलोंसे सहित भोग-वती नामक नगरी विराजमान है। मरनेके समय लोगोंको इसी दिशामें महाघोर अन्धकार मिलता है। सूर्य्य और अग्नि भी इस अन्धकार-को दूर नहीं कर सकते। हे गालव ! तुम चलनेकी इच्छा करो, तो इस दिशामें गमन करें, इससे यदि तुम्हें इस दिशामें चलना हो तो मुझे कहो, नहीं दूसरी—पश्चिम—दिशाकी कथा मुझसे सुनो।

१०९ अध्याय समाप्त।

गरुड़ बोले, हे द्विजसत्तम ! यह दिशा जलके स्वामी वरुणदेवकी अत्यन्त ही प्यारी है, क्योंकि इसी स्थानमें उनकी उत्पत्ति और प्रतिष्ठा हुई है। भगवान् सूर्य्य दिनके अन्त भागमें अपनी किरण और प्रकाशका विसर्ज्जन करते हैं, इसी कारणसे वह पश्चिम दिशाके नामसे प्रसिद्ध हुई है। इस दिशामें जलजन्तु-ओंके ऊपर प्रभुता और जलकी रक्षा करनेके निमित्त भगवान् कश्यपने वरुणदेवको सब अधिकार दे रक्खा है। अन्धकारका नाश करनेवाले चन्द्रमा इसी स्थानमें जलदेवके सम्पूर्ण छः रस पीके पूर्णमासीको फिर पूर्णरूपसे उदित होते है। हे ब्राह्मण ! पहिले समयमें दैत्य लोगोंने इसी स्थानमें वायुके वेगसे दुःखित और पराजित होकर लम्बी सांस लेते हु मृत्युकी शय्यापर शयन किया था। जिस पश्चिम सन्ध्याकी उत्पत्ति होती है, वही अस्ता चल गिरि इस स्थानमें प्रदक्षिणा करनेवा सूर्य्यको प्रतिदिन सम्मानित करते है। दिन बीत जानेपर इसी स्थानसे निद्रा निकलक जीवन कालका आधा भाग हरनेके निमित्त मानों सब जीव मात्रको आक्रमण करती है। देवताओंके राजा इन्द्रने अपनी सौतेली माता तेजस्विनी दिति-देवीको इसी स्थानमें सोई हुई देखकर, ईर्षायुक्त होकर उसका गर्भ काटके उनचास टुकड़े कर दिये थे, और उसीसे मरुत् गणोंकी उत्पत्ति हुई थी। पर्व्वतोंके राजा हिमालयकी बहुतसी जड़ मन्दर-पर्व्वतसे लगी हुई है, हजार वर्षतक भ्रमण करनेपर भी उसकी सीमा नहीं मिल सकती। गोमाता सुरभी इसी स्थानपर सुवर्णके शैल और सुवर्णके कमलसे युक्त सरोवरके तटपर खड़ी होके दूधकी धारा बहाती है। चन्द्रमा और सूर्य्यकी हिंसा करनेकी अभिलाषा करनेवाला शिरसे रहित राहु नामक दैत्यका शरीर यहां-पर समुद्रके बीच सदा दीख पड़ता हैं। अदृश्य और महातेजसे युक्त हरित लोमा अर्थात् सदा यौवन अवस्थाको प्राप्त हुए सुवर्णशिर नाम मुनि जो इस स्थानमें वेदका पाठ करते हैं, उनका बहुतसा शब्द यहांपर भी सुनाई पड़ता है। हरिमेधा मुनिकी कन्या ध्वजवती सूर्य्यदेव

"खड़ा रह! खड़ा रह!" इस प्रकारसे शासन करती हुई आकाश मार्गमें खड़ी थी, हे गालव! इस दिशामें क्या दिन क्या रात्रि सब समयमें वायु, अग्नि, जल और आकाश दुःख देनेवाले स्पर्शको त्याग देते हैं। सूर्य्यकी गति इसी स्थानमें टेढ़ी चालसे लौटती है, और इसी दिशामें सब ज्योतिके पदार्थ सूर्य्यमण्डलमें प्रवेश करते हैं। बारह राशि, सत्ताइस नक्षत्र और अभिजित् ये सब एक एक करके अठाइस रात्रि पर्य्यन्त सूर्य्यके सङ्ग भ्रमण करके चन्द्रमाके सङ्ग संयोग होनेपर, फिर क्रमसे निकल आते हैं। जिससे सब समुद्रोंकी उत्पत्ति हुई है, वही सब नदियोंका उत्पत्ति स्थान इस पश्चिम दिशामें सदासे विराजमान है। तीनों भुवनका जितना जल है सो यहांपर वरुणदेवके स्थानपर उपस्थित है। यहींपर नागोंके राजा शेषनागका निवास है। अनादि और अविनाशी भगवान् विष्णुदेवका यही उत्तम शय्यारूपी निवास स्थान है। अग्निके मित्र वायु, और मरीचिपुत्र कश्यपकी भी यही निवास-भूमि है। हे गालव! संक्षेपसे यह पश्चिम दिशाका वृत्तान्त तुमसे कहा गया। हे द्विजसत्तम! इस समय तुम्हारी क्या इच्छा है? कहो किस दिशाकी ओर चलें?

११० अध्याय समाप्त।

गरुड़ बोले, हे द्विजसत्तम गालव! यह उत्तर दिशा है। इस दिशामें सब लोग उत्तीर्ण होके पापोंसे छूटकर मुक्तिपद पाते हैं। इसी उत्तारण शक्ति होनेहीके कारण इसका नाम उत्तर दिशा हुआ है। इस उत्तर दिशाके सेवनीय जल समुद्रके मार्ग पूर्व्व और पश्चिम दिशा पर्य्यन्त व्याप्त होनेसे वह मध्यम बोध होता है। इस श्रेष्ठ दिशामें विनय रहित, इन्द्रियोंको न जीतनेवाले, और अधर्मी लोग कभी नहीं निवास कर सकते। यहांपर बदरिकाश्रममें नारायण कृष्ण, पुरुषोंमें श्रेष्ठ विष्णु और पितामह ब्रह्मा विराजमान हैं। यहींपर प्रलयकालकी अग्निके समान, भगवान् महादेव हिमालय पर्व्वतके ऊपर प्रकृति पार्व्वतीके सङ्ग सदा विहार करते रहते हैं। वह मायासे युक्त होनेसे भी केवल नरनारायणके अतिरिक्त और किसीको नहीं दीख पड़ते हैं, मुनि, इन्द्रआदि देवता, गन्धर्व्व, यक्ष और सिद्ध आदि कोई भी उनका दर्शन नहीं कर सकते। इसी स्थानपर सहस्र शिर, नेत्र, और चरणसे युक्त श्रीमान् विष्णुदेव मायासे युक्त महादेवके दर्शन करते हैं। हे ब्राह्मणश्रेष्ठ! द्विजोंके राजा चन्द्रमाका अभिषेक इसी स्थानपर हुआ था और महादेवने स्वर्गसे गिरे हुए चन्द्रमाको मस्तकपर धारण करके मनुष्य लोकमें उपस्थित किया था। गिरिराजकुमारी पर्व्वतीने जो महादेवको वर बनानेके निमित्त कठिन तपस्या की थी, वह अनुष्ठान भी इसी स्थानमें हुआ था। एक समय यहां पर गिरिराज, उमा, कामदेव और महादेवकी क्रोधरूपी अग्नि अत्यन्त शोभित हुई थी। हे द्विजसत्तम! धनके स्वामी कुवेर यहीं कैलास पर्व्वतपर राक्षस, यक्ष और गन्धर्व्वोंके राजा बनाये गये थे। चैत्ररथ नामक उनका मनोहर बगीचा, वैखानस मुनियोंका आश्रम, मन्दाकिनी और मन्दर यहांपर सदासे शोभित हैं। राक्षसोंसे भली भांति रक्षित सौगन्धिक वन, श्यामल शाद्वल, नक्षत्र-भूयिष्ठ-देश, कदली कानन, कल्पतरु-वीथिका, और सदा संयमशाली इच्छानुसार विहार करने वाले सिद्ध लोगोंकी अभिलाषाके योग्य सम्पूर्ण विमान यहांपर बहुत ही शोभा और सुघराई प्रकाशित कर रहे हैं। अच्छी प्रकारसे प्रसिद्ध सप्त-ऋषियोंका मण्डल और देवी अरुन्धती इसी स्थानपर विराजमान हैं। स्वाती नक्षत्रका भी यहींपर उदय और निवास होता है। सब लोगोंके

गुरु पितामह ब्रह्मा यज्ञके निमित्त इस स्थानमें सदा वास करते है। सूर्य्य चन्द्रमा और नक्षत्र इसी दिशासे सदा भ्रमण किया करते हैं। हे द्विजसत्तम। सत्यवादी महात्मा मुनि लोग इसी स्थानमें इधर उधर भ्रमण करते हुए गायन्तिका द्वार नाम लोककी अन्तिम सीमाकी रक्षा करते है, उन लोगोंकी उत्पत्ति, वृद्धि और तपस्या कुछ भी नहीं मालूम होती है। वे लोग अपनी इच्छाके अनुसार सहस्रों प्रकारका परिवर्त्तन भोग करते है। जो मनुष्य उन लोगोंकी रक्षित इस गायन्तिकाका द्वार लांघकर किसी मार्गसे प्रवेश करता है, वह वहींपर मर जाता है। अविनाशी नारायणदेव और विष्णुके अतिरिक्त और कोई किसी समयमें वहांपर जानेमें समर्थ नहीं होता। हे गालव। इसी दिशामें धनके स्वामी कुवेरके अधिकारमें ऊंचा कैलासपर्व्वतका शिखर विराजमान है। इसी स्थानमें विद्युत्प्रभा नाम दश अप्सराओंका जन्म हुआ था। वामन अवतारमें जब भगवान् विष्णु ने अपने तीन चरणसे तीनों लोकोंको नाप लिया था उस समय इस उत्तर दिशामें एक पद रखनेसे वहांपर विष्णुपदके नामसे एक महा उत्तम तीर्थकी उत्पत्ति हुई है। मरुत् नाम किसी राजाने इस उत्तर दिशामें, जिस स्थानपर जाम्बूनद सुवर्ण सरोवर है वहांपर उशीरबीजाख्य नाम स्थानमें एक महायज्ञ किया था। यहींपर जीमूत नामक महात्मा विप्रर्षिके सम्मुख हिमालय पर्व्वतका निर्म्मल और शुद्ध सुवर्णका स्थान प्रकाशित हुआ था। उस महर्षिने यह सम्पूर्ण धन ब्राह्मणोंको दान करके उनसे अपना नाम विख्यात करानेके निमित्त प्रार्थना की थी, इससे वह धन जैमूत धन कहके प्रसिद्ध हुआ है। हे गालव। दिक्पाल लोग इसी स्थानपर दोनो सन्ध्याके समय 'किसका क्या कार्य्य है' कहो" ऐसा कहके ऊंचे स्वरसे पुकारा करते हैं। हे द्विजश्रेष्ठ? यह उत्तर दिशा उक्त रूप तथा दूसरे बहुतसे गुणोंमें सब दिशाओंसे श्रेष्ठ है। सब विषयोंमें मुख्य होनेसे इसका नाम उत्तर प्रसिद्ध हुआ है। हे भ्राता। चारों दिशाओंके सम्पूर्ण वृत्तान्तोंका मैंने तुम्हारे समीप क्रमसे वर्णन किया. इस समय तुम कौन दिशामें गमन करनेकी इच्छा करते हो? तुमको सब दिशा और समस्त पृथ्वीके दर्शन करानेके निमित्त मैं अत्यन्त ही आतुर हो रहा हूं; इससे तुम हमारी पीठपर शीघ्र ही चढ़ो।

१११ अध्याय समाप्त।

गालव मुनि बोले, हे गरुड़। हे विनताके आनन्द बढ़ानेवाले। हे सर्पोंके शत्रु, पक्षीराज। जहांपर धर्म्मके दोनों नेत्र खुले है, उसी पूर्व्व दिशामें मुझे ले चलो। तुमने सबसे पहिले जिसका वर्णन किया, और "देवता लोग इसी स्थानपर विराजमान हैं" कहकर जिसका गुण कहा है, उसी दिशामें चलो। "जहांपर सत्य और धर्म्मका पूर्ण निवास है," यह तुमने स्पष्टरूपसे कहा है और सब देवताओंके सङ्ग मिलनेकी भी मेरी इच्छा है। हे गरुड़! इससे देवताओंके दर्शन करनेकी मेरी अभिलाषा तुम पूर्ण करो।

नारद मुनि बोले, विनतापुत्र गरुड़ उस ब्राह्मणसे बोले, "मेरी पीठपर चढ़ो" ऐसा कहनेपर गालव मुनि उसी समय उनके ऊपर चढ़े और चलते चलते कहने लगे। हे सर्पोंके शत्रु! प्रातःकाल सहस्र किरणको धारण करनेवाले सूर्य्यका जैसा रूप दीख पड़ता है, प्रस्थान करनेके समय तुम्हारा भी उसी प्रकार रूप दीखता है। हे पक्षियोंके राजा। तुम्हारा चलनेका वेग ऐसा मालूम होता है, कि मानो प्रवल पङ्खोंके वायुसे प्रेरित होकर ये सब वृक्ष हमारे अनुगामी होके साथ ही साथ दौड़े

जाते है। केवल वृक्ष ही क्यों, समुद्रके सम्पूर्ण जल, पर्व्वत, वन और बगीचोंसे युक्त जैसे समस्त पृथ्वीहीको तुम अपने पङ्खोंके वायुसे आकर्षित किये चलते हो। तुम्हारे पङ्खोंकी वायुके झकोरेसे मगरमच्छसे युक्त समुद्रका जल जैसे आकाशतक चला जाता हो। बहुतसे मच्छ, मगर और मनुष्यके मुखके आकारके समान नाग आदि सब जलजन्तु मानो मथित हो रहे है। हे पक्षिराज! समुद्रके तरङ्गोंका भयङ्कर शब्द सुनकर मेरे कान बधिर हुए जाते है, न मैं सुनता, न देखता और न अपने प्रयोजनको निश्चित कर सकता हूं। मेरी इन्द्रिया शिथिल हुई जाती है। इससे हे भ्राता! ब्रह्महत्या न होवे, ऐसा विचार कर धीरे धीरे गमन करो। इससे अधिक क्या कहूंगा, सूर्य तथा आकाशमण्डलको और भी मुझसे नही देखा जाता है, मुझको सब दिशाओंमें केवल अन्धकार ही दीख पड़ता है। ऐसा क्या? तुम्हारा यह शरीर भी मुझे नहीं दीख पड़ता है, केवल उत्तम मणिकी भांति यह दोनों नेत्र दीख पड़ते है। तुम्हारे शरीरकी बात तो दूर है, मैं अपना शरीर भी नहीं देख सकता हूं। मेरे शरीरसे अग्नि निकल रही है पदपद पर यही देख रहा हूं। इससे हे विनतानन्दन! शीघ्र ही अपनी दोनो आखें मूदकर मेरे शरीरकी अग्नि बुझाओ। तुम अपना यह वेग रोकके मेरा निस्तार करो। हे पन्नगनाशन! मुझे चलनेकी अब कुछ भी इच्छा नही है, तुम शीघ्र ही निवृत्त होजाओ; तुम्हारा यह वेग अब किसी प्रकारसे नही सहा जाता है। मैंने चन्द्रमाके समान सफेद और एक ओर श्याम कर्णसे युक्त ऐसे आठ सौ घोड़ोंके प्रदान करनेकी प्रतिज्ञा की थी; उससे निस्तार पानेका अब कोई मार्ग नही देखता हूं। केवल प्राणको त्याग करना ही एक मात्र उसका उपाय दीख पड़ता है; क्योंकि मेरे कुछ धन भी नही और कोई धनवान् पुरुष मेरा मित्र भी नहीं है, बहुतसा धन होनेपर भी उस प्रतिज्ञासे निस्तार पाना बहुत कठिन है।

नारद मुनि बोले, विनतानन्दन गरुड़ गालवके ऐसे कातर वचनोंको सुनकर भी चलनेसे न रुके, और हंस कर उनसे कहने लगे, हे विप्रर्षि! तुम जब अपने प्राणोंके त्यागनेकी अभिलाषा करते हो, तब तुम अच्छे बुद्धिमान नहीं मालूम होते हो, क्योंकि मृत्यु कभी इच्छाके अनुसार नहीं होती; मृत्यु साक्षात् परमेश्वरका रूप है। तुम यदि ऐसे ही कातर होनेवाले थे, तो पहिले मुझको क्यों न निषेध किया? जो हो, तुम्हारे प्रयोजनके सिद्ध होनेका एक बहुत बड़ा उपाय यह है कि समुद्रके निकटहीमें ऋषभ नामक यह जो पर्व्वत है, यहांपर विश्राम और भोजन करके निवृत्त होजाओ।

११२ अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले, इसके अनन्तर गालव मुनि और पक्षिराज गरुड़ दोनोंने ऋषभ पर्व्वतपर पहुंचकर देखा, कि वहांपर शाण्डिली नाम्नी ब्राह्मणी तपस्या कर रही है। देखते ही गरुड़ने उसे प्रणाम किया और गालवने यथा उचित पूजा की। उनने भी इन लोगोंकी कुशल वार्त्ता पूछकर अतिथि-सत्कारके अनुसार आसन आदि प्रदान किया। इस प्रकारसे सत्कार पाकर दोनों अतिथियोंके आसनपर बैठनेके अनन्तर शाण्डिलीने उन लोगोंके निमित्त उत्तम भोजनको तैयार कर दिया उसे भोजन करते ही दोनोंने तृप्त होके, जैसे पृथ्वीके ऊपर शयन किया, वैसे ही अत्यन्त ही निद्राके वशमें होगये। बहुत शीघ्रतासे गमन करनेवाले गरुड़ मुहूर्त्त भरमें निद्रा-रहित होगये, परन्तु देखा कि मेरे दोनों पङ्ख गिर पड़े है; और

पांव सुखके सह लग जानेसे वह मांसके पिण्ड-की भांति दीखने लगे। गालव मुनि उन्हें उस अवस्थामें देखकर अत्यन्त दुःखित हो बोले, तुम्हें इस स्थानपर आनेसे क्या यही फल मिला है? इस तरहसे रहनेपर मुझको कितने दिनोंतक यहां निवास करना होगा, उसे मैं नहीं कह सकता, तुमने क्या अपने मनमें कुछ अधर्म्म तथा अशुभ विषयकी चिन्ता की थी? तुम्हारा अवश्य ही कोई बड़ा पाप हुआ होगा, इसमें कुछ सन्देह नहीं है।

गालव मुनिके इस वचनको सुनकर गरुड़ बोले, हे ब्राह्मण! मेरा मानसिक पाप कर्म्म यही है, कि जिस स्थानपर प्रजापति ब्रह्मा, देवोंके देव महादेव और सनातन विष्णु विराजमान हैं जहांपर धर्म्म और यज्ञ सदा उपस्थित रहते हैं; उसी पवित्र आश्रममें वास करें, यह विचार कर मैंने इस सिद्धा ब्राह्मणीको वहांपर ले जानेका सङ्कल्प किया था। जो हो, प्रियकामनाके निमित्त विनीत भावसे भगवतीके समीप प्रार्थना करता हूं। हे महाभागे! मैंने अज्ञानके कारणसे तुम्हारे यहांपर निवास कर-नेको अनुचित समझा था; और शोकित होकर तुम्हारे अत्यन्त मानके निमित्त ही जो मैंने इस विषयका विचार किया था, वह पुण्य हो, वा पाप, तुम उसे अपने माहात्म्यके गुणोंके अनुसार क्षमा करो।

इस प्रकारकी विनतीको सुनकर ब्राह्मणी पक्षिराज गरुड़ और द्विजवर गालवके ऊपर बहुत प्रसन्न होकर उनसे यह वचन बोली, हे गरुड़! तुम मत डरो, तुम शोभायमान पङ्क्ष युक्त हुए. इससे सब शोक और चिन्ताको त्याग दो। हे पुत्र! तुमने मेरी निन्दा की थी, इससे मैं किञ्चित् तुम पर रुष्ट हुई थी, क्योंकि मैं निन्दा सहनेको पात्री नहीं हूं। जो पापी मेरी निन्दा करता है, वह सब लोकोंसे भ्रष्ट हो जाता है। मैंने सब लक्षणोंसे रहित और निन्दिता होनेपर भी, केवल शुद्ध और पवित्र आचारको करनेहीसे इस प्रकारकी उत्तम सिद्धिको प्राप्त की है। सदाचाररूपी वृक्षमें धर्म्म और धन दोनों ही फल लगते हैं। शुद्ध आचारके करनेसे मनुष्य अवश्य ही लक्ष्मीका लाभ उठा सकते हैं। मैं अधिक बात क्या कहूंगी, सदाचार सब बुरे लक्षणोंको नष्ट कर देता है। हे पक्षिराज गरुड़! अब तुम्हारी जहां इच्छा होवे, वहां जाओ, परन्तु सावधान रहना; कभी निन्दा करने योग्य स्त्रियोंकी भी निन्दा न करना। मेरी कृपासे तुम पहिलेसे अधिक बल और पराक्रमसे युक्त होओगे। शाण्डिलीके ऐसा कहनेपर गरुड़के पहिले समयसे भी अधिक बलसे युक्त दोनो पङ्ख निकल आये। अनन्तर उसकी आज्ञासे गरुड़ने वहांसे प्रस्थान किया, परन्तु गालव मुनिकी प्रार्थनाके अनुसार घोड़ोंको न पाया। बोलने वालोंमें श्रेष्ठ विश्वामित्र मुनिने मार्गमें गालवको देखकर, गरुड़के सम्मुख ही उनसे यह पूछा, हे ब्रह्मन्! तुमने मुझको अर्थ प्रदान करनेको जो स्वयं प्रतिज्ञाकी थी, मेरे विचारसे उसके पूर्ण करनेका तो यही समय उपस्थित हुआ है; इस समय तुम्हारे विचारमें क्या है, मैं नहीं कह सकता हूं। मैं इतने दिनोंसे तुम्हारी आशा देख रहा हूं; और भी कुछ समयतक देखूंगा इससे जिस प्रकारसे वह सिद्ध हो, तुम उसका मार्ग ढूंढो। इस वचनको सुनकर गालव मुनि अत्यन्त ही दुःखित और कातर हुए, उन्हें इस प्रकारसे देखकर गरुड़ बोले, हे द्विजसत्तम गालव! विश्वामित्रने तुम्हें पहिले जो वचन कहा था, वह इस समयमें मुझको प्रत्यक्ष दीख पड़ा इससे आओ इस विषयमें एक उत्तम विचार करें, गुरुको विना दक्षिणा दिये तुम्हारा बैठनेको भी शक्ति नहीं है।

११३ अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले, पच्छिराज गरुड़ दुःखित गालव मुनिसे कहने लगे। हे द्विजश्रेष्ठ! धन हिरण्यरेता अग्निसे पृथ्वीमें उत्पन्न होकर वायुसे बढ़ता रहता है, इसीसे सम्पूर्ण जगत् हिरण्य प्रधान धनको "हिरण्य" शब्दसे पुकारता है। धनसे सब जगत्का पालन, पोषण और जीवन-धारण होताहै; इसी कारणसे उसे "धन" कहते हैं। इससे संसारके सब कार्य्योंको निवाहनके वास्ते वह धन सदा तीनों लोकके बीच विद्यमान है। पूर्व्व भाद्रपद और उत्तर-भाद्रपद नक्षत्रोंसे युक्त शुक्रवारके दिन अग्नि देवता इच्छाके अनुसार अपने उपार्जित धन मनुष्योंको दान करते हैं, परन्तु उस धनको कुबेर आदि देवता रक्षा करते हैं, इसलिये दुःखसे प्राप्त होनवाले धनको पाना बहुत ही कठिन है। परन्तु विना धनके घोड़ोंका पाना भी किसी प्रकारसे सम्भव नहीं होता है। हे ब्रह्मन्! जो तुम्हारे कार्य्यको सिद्ध कर सके, ऐसे किसी धर्म्मात्मा राजाके पास जाकर तुम गुरुको देनेके निमित्त धन मांगो। चन्द्रवंशमें उत्पन्न हुए एक धर्म्मात्मा राजा मेरे मित्र हैं, चलो उन्हींके पास अधिक धन है। वह राजर्षि नहुषके पुत्र हैं, और उनका नाम ययाति है. साक्षात् धनके स्वामी कुवेरके समान उनके ऐश्वर्य्यकी सीमा नहीं है। मेरे अनुरोध और तुम्हारी प्रार्थनासे वह अवश्य ही तुम्हारी इच्छाके अनुसार धन देंगे। हे विद्वन्! उसे देकर ही तुम गुरुके ऋणसे मुक्त हो सकोगे। गरुड़ और गालव मुनि आपसमें ऐसा विचार करके प्रतिष्ठानपुरमें राजा ययातिके समीप आके उपस्थित हुए। राजा ययातिने उन लोगोंको देखकर पाद्य, अर्घ और आसन प्रदान करके उनके आनेका कारण पूछा। गरुड़ने उनसे सत्कार पाकर यह वचन कहा हे नृप ययाति! यह तपस्वी ब्राह्मण मेरे प्राणके समान मित्र हैं, इनका नाम गालव मुनि है। दस हजार वर्षतक यह विश्वामित्रके शिष्य थे। उस महा तपस्वी महर्षिने जब इन्हें घर जानेके निमित्त आज्ञा दी, तब गुरुके उपकार करनेकी इच्छासे इन्होंने उनसे यह वचन कहा, "हे भगवन्! यदि आपकी आज्ञा हो, तो कुछ गुरुदक्षिणा प्रदान करूं।" इसके बहुत थोड़ा धन है, इस बातको विश्वामित्र जानते थे। इससे जब इन्होंने बार बार गुरुदक्षिणा देनेको कहा, तब कुछ क्रोधमें भरकर बोले, कि "मुझको चन्द्रमाके समान सफेद और श्यामकर्ण आठ सौ घोड़े दो। हे गालव! यदि गुरु दक्षिणा देनेकी इच्छा है, तो यही धन दान करो।"

तपस्वी विश्वामित्रने जब क्रोधमें भरकर ऐसी आज्ञा की, तब गालव मुनि बहुत ही शङ्कित और दुःखित होकर चिन्ता करने लगे, उसको पूर्ण करनेमें सब प्रकारसे शक्तिहीन होकर इस समय तुम्हारी शरणमें आये हैं। हे नरव्याघ्र! इनकी यही अभिलाषा है, कि तुम्हारे निकटसे भिक्षा मांगकर, गुरुदक्षिणा देके, शोकसे रहित होकर स्थिर चित्तसे तपका अनुष्ठान करें। हे प्रजानाथ! तुम राजर्षि हो, निज तपस्यासे पूर्ण होनेपर भी गालव मुनि अपनी तपस्याका अंश देकर तुम्हें और भी अधिक पूर्ण करेंगे। सुना जाता है, कि घोड़ेके शरीर पर जितने रोएं रहते हैं, घोड़ेको दान करनेवाले मनुष्य उतने ही संख्याके लोकोंको पाते हैं। हे पृथ्वीनाथ! यह भी दान लेनेके योग्य पात्र है और तुम भी दान करनेके योग्य हो। इससे तुम्हारे इस दानकी संख्या क्षीरसागरकी उपमाके समान होगी।

११४ अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले, हजार यज्ञको करनेवाले, महादानी, सब प्रकारके तेजसे युक्त, राजाओंमें अग्रगामी, महापराक्रमी राजा ययातिने, गरुड़की

इस उत्तम वचनको सुनकर बहुत समयतक अपने मनमें विचार और निश्चय किया, विशेष करके अपने प्यारे मित्र गरुड़ और द्विजश्रेष्ठ गालव मुनिको देख और उनके तपस्याके वृत्तान्त तथा सराहने योग्य भिक्षाका समाचार सुनकर यह निश्चय किया, "सूर्य्यवंशीय दूसरे राजाओंको त्याग कर ये लोग जो मेरे ही निकटमें आये हैं, यह कुछ मेरे कम भाग्यका विषय नहीं है।" ऐसा विचारकर राजा ययाति बोले, हे पक्षिराज! आज मेरा जन्म सफल हुआ, हे पापरहित! तुमने आज मेरे कुल और देशको पवित्र किया है। हे मित्र। इस समय मैं तुमसें अपना वृत्तान्त कहनेकी इच्छा करता हूं, पहिले तुम मुझे जैसा धनवान् समझते थे, अब वह बात नहीं है। मेरा खजाना इस समय खाली होगया है; तौ भी मैं तुम्हारे आगमनको व्यर्थ नहीं कर सकता हूं, विशेष करके इस तपस्वी ब्राह्मणकी आशाको निष्फल करनेमें मुझे किसी प्रकारसे भी उत्साह नहीं होता है, इससे जिसमें इनका कार्य्य सिद्ध होगा, उसे मैं अवश्य ही करूंगा। विचार कर देखो, यदि अतिथि ब्राह्मण याचना करने पर आशाहीन होकर लौट जाता है, तो निश्चय ही कुल भरको भस्म कर देता है। हे गरुड़! कोई पुरुष "दीजिये" ऐसा कहकर जब भीख मांगता है, तब उसकी आशाको नाश करनेके निमित्त "नहीं है" इस वचनको कहनेकी अपेक्षा दूसरा बड़ा पाप कर्म्म और नहीं है। वह उपायसे रहित याचक अपनी प्रार्थनाके नाश होनेपर आशा रहित होकर, प्रार्थना पूरी न करनेवाले पुरुषके पुत्र, पौत्र आदि सबको नष्ट कर देता है। हे गालव मुनि! इससे आप चार वंशको स्थापन करनेवाली, सब धर्म्मोंको जाननेवाली, देवकन्याके समान मेरी इस कुमारी कन्याको ग्रहण कीजिये। इसकी असाधारण रूपको देखकर देवता, मनुष्य और असुर आदि सदा ही इसकी पानेकी इच्छा करते हैं। आठ सौ श्यामकर्ण घोड़ोंकी क्या बात है, इसके सङ्ग विवाह करनेके निमित्त राजा लोग अपने राज्य पर्य्यन्तको दे सकते हैं, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। हे द्विजसत्तम! इससे तुम मेरी इस माधवी नाम्नी कन्याको ग्रहण करो। मैं भी दौहित्रवान् होऊं, यही मेरी इच्छा है।

राजा ययातिके वचनको सुनकर गालव मुनिने उनकी कन्याको ग्रहण करके कहा, कि "मैं फिर आपसे मिलूंगा" ऐसा कहकर पक्षिराज गरुड़ और गालव कन्याके सहित वहांसे चले। गरुड़ भी "अब तो तुम्हारे घोड़ोंको पानेका उपाय प्राप्त हुआ है।" ऐसा कहकर अपने स्थानपर चले गए। अनन्तर गालव मुनि कन्याके सहित दान देने योग्य राज्योंमें भ्रमण करने लगे। पहिले उन्होंने इक्ष्वाकुवंशमें उत्पन्न हुए राजसत्तम हर्य्यश्वके समीपमें जानेका निश्चय किया। महाबल, पराक्रम, चतुरङ्गिणी सेना, और धन धान्यसे युक्त प्रजावत्सल महाराज हर्य्यश्व अयोध्याके राजा थे। ब्राह्मणोंकी इच्छाको पूरी करनेवाले राजा हर्य्यश्व शान्ति अवलम्बन करके पुत्रकी कामनासे सदा उत्तम तपस्यामें लगे हुए थे। ब्राह्मणश्रेष्ठ गालव मुनिने उनके समीपमें जाकर कहा, हे राजेन्द्र! अनेक पुत्रोंको प्रसव करने तथा कुलको बढ़ाने-वाली हमारी इस उत्तम लक्षणोंसे युक्त कन्याको धनके पलटेमें लेकर अपनी भार्य्या कीजिए हे हर्य्यश्व! जिस प्रकारका धन देना होगा, वह मैं तुमसे कहता हूं; उसे सुनकर जैसा करना तुम्हें उचित हो, उसका निश्चय करो।

११५ अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले, राजाओंमें श्रेष्ठ हर्य्यश्व गालव मुनिके उपर कहे हुए वचनको सुनकर

पुत्रके निमित्त लम्बी और गर्म्म सांस लेते हुए अनेक प्रकार सोच विचारकर यह वचन बोले, तुम्हारी यह कन्या सब लक्षणोंसे युक्त है; अङ्गुठे, हथेली, पांवके तलवे, नितम्ब, स्तन और पावके नख इन जो छः स्थानोंके ऊंचे होनेका शास्त्रमें विधान है; इसके यह सब स्थान ठीक वैसे ही हैं, दोनों हाथ, पांव, नख, केश, और त्वचा यह सात सूक्ष्म होनेके स्थान सूक्ष्म भी हैं। नाभि, बुद्धि और वचन यह तीनों गम्भीर होनेवाले पदार्थ गम्भीर भी हैं। दोनों पावोंके तलवे, दोनों हथेलियां और शरीर इसके ये पाचों स्थान लालवर्णके भी हैं। अनेक लक्षणोंसे युक्त होनेसे ऐसा बोध होता है, कि यह अनेक देव तथा असुरोंके भी दर्शन करनेके योग्य है, सङ्गीत आदि गन्धर्व्व विद्यामें निपुण और अनेक पुत्रोंको प्रसव करनेवाली होगी, ऐसा क्या चक्रवर्त्ती पुत्र भी इच्छा करनेसे उत्पन्न कर सकेगी, इससे हे द्विजवर! मेरी शक्ति तथा धनका विचार करके कहिये क्या धन लीजियेगा?

गालव मुनि बोले, प्रसिद्ध देश और उत्तम जातिके उत्पन्न हुए, चन्द्रमाके समान सफेद आठ सौ श्यामकर्ण घोड़ोंको देकर इस कन्याको ग्रहण कीजिये। ऐसा होनेहीसे यह उत्तम नेत्र और सुन्दर अङ्गवाली कन्या अग्निको उत्पन्न करनेवाली आरणीकी भांति तुम्हारे पुत्रोंको प्रसव करनेवाली होगी।

नारद मुनि बोले, काम-मोहित राजर्षि हर्य्यश्व इस वचनको सुनकर दीन भावसे गालव मुनिसे बोले, हमारे यहा दूसरी भांतिके सैकड़ों घोड़े हैं, यह ठीक है; परन्तु जैसे घोड़े तुम चाहते हो, वैसे घोड़ केवल दो सौ माल मेरे घुड़शालमें उपस्थित है। हे गालव! इससे मैं तुम्हारी कन्यासे केवल एक ही पुत्र उत्पन्न करूंगा, तुम कृपा करके मेरी इस कामनाको पूरी करो। हर्य्यश्वका यह वचन सुनकर वह कन्या गालव मुनिसे बोली, किसी ब्रह्मवादी ऋषिने मुझे यह वरदान दिया है, कि तुम प्रसव करनेके अनन्तर कन्या ही बनी रहोगी। हे विप्र! इससे तुम उत्तम घोड़ोंको लेकर निःसन्देह मुझे राजाके हाथमें समर्पण करो। इसी प्रकारसे चार राजाओंके यहांसे तुमको आठ सौ घोड़े मिल जायंगे और मेरे भी चार पुत्र उत्पन्न होंगे। हे द्विजसत्तम! मेरे विचारमें इसी प्रकारसे तुम गुरुदक्षिणासे उत्तीर्ण हो सकोगे, इस लिए अब तुम्हारी जैसी इच्छा हो वैसा ही करो।

कन्याकी ऐसी बात सुनकर गालव मुनि राजा हर्य्यश्वसे बोले, हे राजसत्तम हर्य्यश्व! मेरे मांगे हुए धनका चौथा भाग देकर तुम इस कन्याके सङ्ग व्याह करके एक पुत्र उत्पन्न कर लो। ऐसी आज्ञा पाकर राजा हर्य्यश्वने प्रीतियुक्त प्रसन्न चित्तसे गालव मुनिको आनन्दित करके कन्याको ग्रहण किया और देश, काल तथा समयके अनुकूल इच्छाके अनुसार पुत्र प्राप्त किया। सूर्य्यके समान तेजस्वी राजकुमार पीछे धनवान् राजाओंसे भी अधिक धनशाली और महादानी होकर वसुमना नामके एक प्रसिद्ध राजा हुए थे। बुद्धिमान् गालव प्रसन्न चित्तसे राजा हर्य्यश्वके पास फिर उपस्थित होकर यह वचन बोले हे राजेन्द्र! तुम्हारे तो यह प्रातःकालके सूर्य्यके समान मनोहर पुत्र उत्पन्न हुआ है। इससे अब कोई दूसरे राजाके समीपमें भिक्षाके निमित्त मुझे जाना पड़ेगा। राजा हर्य्यश्व अपनी सत्य प्रतिज्ञामें दृढ़ थे, इससे उन्होंने इस समयमें भी शेष छः सौ घोड़ोंके देनेसे अशक्त होकर उस माधवी नाम्नी कन्याको फिर गालव मुनिके हाथमें समर्पण किया। माधवी भी उस लक्ष्मीसे प्रकाशित राजभवनको त्याग कर अपनी इच्छाके अनुसार फिर कन्या होकर गालव मुनिके पीछे पीछे चली। तब गालव मुनिने

मुझे चन्द्रमाके समान श्वेतवर्णके हजार श्याम-कर्ण घोड़े दीजिये। ऋचीकने कहा "वही होगा" ऐसा कहकर वरुणके स्थानमें जाकर अश्वतीर्थमें घोड़े पाकर राजाको दिया, गाधि-राजने पुण्डरीक नामका एक यज्ञ करके ब्राह्म-णोंको दक्षिणामें इन्हीं घोड़ोंको दिया था। उन्हीं लोगोंसे राजा हर्य्यश्व दिवोदास और उशीनरने दो दो सौ घोड़े मोल लिये थे। बाकी चार सौ घोड़े भी बेचनेके वास्ते मार्गमें चले जाते थे दैवी-संयोगसे मार्गहीमें हरण किये गये। इससे हे ब्रह्मन्! प्राप्त न होने योग्य वस्तु किसी कालमें भी नहीं मिल सकती। इससे तुम बाकी दो सौ घोड़ोंके पलटेमें इस कन्याको ही छः सौ घोड़ोंके सहित गुरुके स्थान-पर जाकर उन्हें समर्पण करो। हे द्विजसत्तम गालव! ऐसा करनेहीसे तुम सोच रहित होकर अपना कार्य्य पूर्ण कर सकोगे। गरुड़की यह उत्तम युक्ति सुनकर गालव मुनि बोले, "ऐसा ही होगा"। यह कहके कन्या और घोड़ों-को लेकर विश्वामित्रके समीप आकर उनसे बोले, हे गुरुदेव! आपने जिस प्रकारके घोड़े मांगे थे, वैसे छः सौ घोड़े उपस्थित हैं, शेष दो सौ घोड़ोंके पलटेमें इस कन्याका पाणिग्रहण कीजिये। इसके गर्भसे तीन राजऋषियोंके धर्म्मसे युक्त तीन पुत्र उत्पन्न हुए हैं, इससे आप भी मनुष्योंमें श्रेष्ठ एक पुत्र उत्पन्न करें इसी प्रकारसे आपके आठ सौ घोड़े पूर्ण होवें और मैं भी जाकर तपस्या करूं।

विश्वामित्र मुनि पक्षिराज गरुड़ और उस सुन्दरी कन्याके सङ्ग गालव मुनिको देखकर बोले, हे गालव! तुमने पहिले ही इस कन्या रूपी अमूल्य रत्नको मुझे क्यों न प्रदान किया? ऐसा होनेसे मैं ही कुल पवित्र करनेवाले चार-पुत्रोंको उत्पन्न करता। जो हो, इस समय एक ही पुत्र उत्पन्न करनेके निमित्त तुम्हारी कन्याके सङ्ग विवाह करता हूं, घोड़े भी हमारे आश्रममें रहकर सब स्थानोंमें भ्रमण करेंगे। इसके अनन्तर विश्वामित्रने माधवीके सङ्ग सुखपूर्व्वक विहार करके यथा समयमें उसके गर्भसे अष्टक नाम एक पुत्र उत्पन्न किया, और उत्पन्न होते ही उसको धर्म्म और अर्थसे युक्त करके वे सम्पूर्ण घोड़े उसी पुत्रको समर्पण किये। अष्टकने धर्म्म और अर्थसे युक्त होके प्रसन्न चित्तसे चन्द्रलोकके समान प्रकाशमान किसी नगरमें जाकर प्रवेश किया, और विश्वा-मित्र भी शिष्यको कन्या लौटा कर तप करनेके निमित्त वनको चले गये। गालव मुनि गरुड़के सङ्ग मिलकर इस प्रकारसे गुरु-दक्षिणा देके प्रीतिसे प्रफुल्लित होकर माधवीसे बोले, हे वरा-रोहे" तुमने जो वसुमना आदि चार पुत्र प्रसव किये हैं, उनमेंसे एक अद्वितीय दानी, दूसरा अत्यन्त पराक्रमी महावीर है. तीसरा सत्य धर्म्ममें सदा ही रत रहता है, और चौथा पर असाधारण यज्ञ कर्म्मोंका करनेवाला है। इस प्रकारके गुणोंसे युक्त चार पुत्रोंको उत्पन्न कर तुमने केवल अपने पिताहीको नहीं वरन चार राजर्षि और मुझको भी तार दिया है। हे भद्रे! इससे तुम अब चलो, द्विजश्रेष्ठ गालव कन्यासे ऐसा कहकर उस कन्याको पिताके समीप पहुंचाकर सांपोंके भोजन करनेवाले गरुड़की अनुमतिसे वनको चले गये।

११६ अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले राजा ययातिके फिर कन्या माधवीके वास्ते फिरसे स्वयम्वर करनेके निमित्त अभिलाषी होनेपर उनके दो पुत्र पुरु और यदु अपनी बहिनको रथपर बैठाकर प्रयागमें जाकर आश्रमोंमें भ्रमण करने लगे। वहांपर नाग, मनुष्य, देवता, गन्धर्व्व, मृग पक्षी, पर्व्वत और वृक्ष आदि तथा वनके रहनेवाले सब जीव जन्तुओंका समागम हुआ। महाराज वह बहुत बड़ा वन नाना देशोंके राजा

ब्रह्म ऋषियोंसे पूर्ण होगया। इस प्रकारसे जब अनेक लोग इकट्ठे हुए तब वरकी खोज होने लगी। उस समय यशस्विनी ययाति-नन्दिनीने दूसरे सब वरोंको त्यागकर अरण्यको ही अपना वर निश्चित करके उसे वरण किया। अर्थात् रथसे उतरकर बन्धु बान्धवोंको प्रणाम करके पुण्य-भूमि वनमें अपना आश्रम बनाके तपस्या करने लगी। इसी प्रकारसे वनको वरनेवाली माधवी विविध भांतिसे उपवास, उपदेश, नियम, प्राणायाम आदिसे आत्माकी सूक्ष्मता प्राप्त करके क्रोध, मोह, लोभ आदिसे रहित हो हरिणकी भांति वनवृत्ति अवलम्बन कर स्वच्छन्दतासे वनमें निवास करने लगी। ब्रह्मचर्य्यसे युक्त होकर कोमल, तीते और मधुर शाकोंका भोजन करके पवित्र झरने और नदियोंका शीतल जल पीती हुई, व्याघ्र आदि हिंसक जीवोंसे रहित निर्ज्जन वनमें हरिणोंके समूहके सङ्ग मृगीकी भांति घूमती हुई शुद्ध तथा पवित्र धर्म्म उपार्ज्जन किया। इधर राजा ययातिने कई हजार वर्षतक अपनी आयुका भोगकर अन्तमें पूर्व्व राजाओंकी भांति वनमें जाकर शरीरका त्याग दिया। पुरु और यदु नामक उनके दोनों पुत्रोंका वंश बढ़ने लगा। इन्हीं दोनों वंशोंसे नहुष-पुत्रने इस लोक और परलोकमें अत्यन्त मान और प्रतिष्ठा पाई थी। सब सुखसे युक्त राजर्षि ययाति कई सहस्र वर्षों तक स्वर्गलोकमें स्थित और पूजित होकर उत्तम स्वर्गके सुखका भोग किया, परन्तु अन्तको साहस पड़कर अभिमानसे मतवारे होके अपने सङ्गमें रहनेवाले पुण्यात्मा राजर्षि, और महाऋषियोंके स्थानमें सब मनुष्य, ऋषि और देवताओंको मन ही मन अवमानना करने लगे। शत्रुनाशन इन्द्रने उनके हृदयके उस भावको उसी समय जान लिया और सब राजर्षि लोग भी उन्हें धिक्कार देने लगे। अनन्तर उनको ओर देखकर सब लोग यह तर्क करने लगे, कि यह पुरुष कौन है? किस राजाका पुत्र है? किस प्रकारसे इस स्थानपर स्वयं उपस्थित हुआ है? किस कर्म्मसे सिद्ध हुआ है? इसने कहांपर तपस्या की है? कैसे इसने स्वर्गलोक पाया है? कौन पुरुष इसको जानता है? स्वर्गवासी राजर्षि लोग राजा ययातिके विषयमें इसी प्रकारसे तर्क वितर्क करके एक दूसरेसे पूछने लगे। इन्द्रके मन्दिरके सैकड़ों द्वार-रक्षक, विमान-रक्षक, और आसनोंकी रक्षा करनेवालोंसे भी यही बात पूछी गई, परन्तु पूछनेसे सबने यही उत्तर दिया, कि नहीं हम लोग कोई भी इसको नहीं जानते। इसी प्रकारसे सबका ज्ञान छिप जानेसे कोई भी उन्हें न जान सका, इससे वह क्षण मात्रमें तेज रहित होगये।

१२० अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले, अनन्तर राजा ययातिका चित्त घूमने लगा, वह आसनसे भ्रष्ट होकर अपने स्थानसे च्युत होकर स्वर्गसे गिरे। अत्यन्त शोक और दुःखसे पीड़ित होनेसे उनका ज्ञान नष्ट हुआ और उज्वल माला मलिन होगई। शिरके मुकुट, भूषण और विचित्र वस्त्र सम्पूर्ण गिर गये, शरीरके समस्त अङ्ग शिथिल होके घूमने लगे। उनको उस समय कोई भी नहीं जानता था, परन्तु वह सबको ही बार बार देखने लगे, कभी कभी उन सबको भी नहीं देख सकते थे। इसी भांति सब विषयोंसे रहित होकर वह पृथ्वीमें गिरनेके पहिले ही अपने मनमें यह चिन्ता करने लगे, कि हाय! मैंने ऐसा कौनसा अधर्म्म तथा अशुभ कार्य्य किया है, जिससे निज स्थानसे भ्रष्ट हुआ हूं? इसी-प्रकारसे चिन्ता करते हुए आसन और अवलम्ब रहित राजा ययातिको वहांपर रहनेवाले राजा, सिद्ध, और अप्सरा, गन्धर्व आदि सब कौतुककी भांति देखने लगे। है

राजन्! अनन्तर पुण्यसे हीन मनुष्योंको स्वर्गसे गिरानेवाले एक पुरुषने इन्द्रकी आज्ञासे राजा ययातिके समीप आकर कहा, कि हे राजपुत्र! तुमने अभिमानसे मतवारे होकर सबको अवमानना की है, तुम अभिमानके कारण ही स्वर्गलोकसे गिराये गये हो, तुम्हें कोई नहीं जान सकता है, इससे जाओ जल्दी गिरो। यह वचन सुनकर उत्तम गतिको पाने वाले पुरुषोंके अग्रगामी नहुषपुत्र ययातिने कहा "साधुओंके बीच गिरूंगा" तीन बार ऐसा ही कहकर कहा गिरेंगे इस बातको सोचने लगे। उसी समयमें प्रतर्द्दन, वसुमना, शिवि और अष्टक नामक चारो राजा नैमिषारण्यमें वाजपेय यज्ञसे इन्द्रको तृप्त कर रहे थे, उसे देखकर वह उन्हीं लोगोंके बीचमें पतित हुए। उन लोगोंके यज्ञका धुआं स्वर्गद्वार पर्य्यन्त ऐसा दीख पड़ता था, जैसे स्वर्गतक कोई उत्तम नदी दीख रही हो। पृथ्वीपति ययाति उसी धूएंसे युक्त नदीको अवलम्बन करके पृथ्वीपर आगये। पुण्यके नाश होनेपर वह अपने दौहित्र, सब शोभासे युक्त, यज्ञमें निष्ठा करनेवाले, लोकपाल और अग्निके समान तेजस्वी चार राजसिंहोंके बीचमें पतित हुए। उनको शोभासे प्रकाशित देखके उन राजपुत्रोंने पूछा, कि आप कौन? कौनसे देश तथा किस नगरके वस्तु है? आप देवता, गन्धर्व्व, यक्ष अथवा राक्षस है? किस कारणसे आप यहांपर आये है और क्या चाहते हैं? आपका आकार देखनेसे मालूम होता है, कि आप मनुष्य नहीं हैं।

राजा ययाति बोले, मैं राजर्षि ययाति हूं, पुण्यके नाश होजानेसे स्वर्गलोकसे पृथ्वीमें पतित हुआ हूं, साधु पुरुषोंके बीच गिरूंगा, ऐसी मैंने इच्छा की थी, इससे आप लोगोंके बीचमें गिरा हूं।

राजा लोग बोले, हे पुरुषर्षभ! आपकी यह अभिलाषा सार्थक होवे, आप हम लोगोंके यज्ञ और धर्म्मका फल ग्रहण करें। राजा ययाति बोले, मैं क्षत्रिय हूं, दान लेनेवाला ब्राह्मण नहीं हूं; विशेष करके दूसरेके पुण्यक्षय करनेके निमित्त मेरी प्रवृत्ति नहीं होती है।

नारद मुनि बोले, राजा ययाति यह वचन कह रहे थे, उसी समयमें ब्रह्मचर्य्य परायण वनवासिनी माधवी उसी स्थानपर आकर उपस्थित हुई। उसको देखते ही उन चारो पुत्रोंने प्रणाम करके यह विनती की, कि हे तपोधने! तुम इस स्थानपर क्यों आई हो और तुम्हारा क्या प्रयोजन है? हम लोग सब तुम्हारे पुत्र हैं, इससे कहो तुम्हारी कौनसी आज्ञा पालन करें? उन लोगोंकी बात सुनकर तपस्विनी माधवीने हर्षसे अत्यन्त ही गद्गद होकर पिताके समीप जाकर उनके चरणोंको वन्दना की और पुत्रोंके मस्तकको स्पर्श करके बोली, हे राजेन्द्र! ये पुत्र तुमसे पृथक् नहीं है, ये सब तुम्हारे दौहित्र है, इससे ये ही लोग तुम्हारा उद्धार करेंगे। यह बात कुछ नई नहीं है, पहिले समयमें सैकड़ों घटनाएं ऐसी देखी गई है। हे राजन्! मैं तुम्हारी पुत्री वनवासिनी माधवी हूं, इससे मेरा भी जो कुछ धर्म्म सञ्चय हुआ है, उसका आधा भाग तुम ग्रहण करो। विचारकर देखा, संसारमें लोग पुत्र और पौत्रके किये हुए कर्म्मोंके फलका भाग पाते है, इसी निमित्त दौहित्रकी इच्छा करते है, मुझको गालव मुनिके हाथमें समर्पण करते समय तुमने जो दौहित्रकी इच्छा की थी, उसका भी यही प्रयोजन है। अनन्तर प्रतर्द्दन आदि चारो पुत्रोंने माताके चरणमें सिर झुकाके प्रणाम किया और स्वर्गसे पतित हुए मातामह (नाना)के परित्राण करनेके निमित्त जो वचन पहिले बोले थे, इस समय नमस्कार करके गम्भीर भावसे वही फिर कहने लगे। उन लोगोंकी बातके शेष होनेपर गालव मुनि भी

वनसे आकर राजा ययातिसे बोले, हे राजन्! मेरी तपस्याके आठवें भागसे तुम फिर स्वर्गको चले जाओ।

१२१ अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले, राजाओंमें श्रेष्ठ महाराज ययाति प्रतर्द्दन आदि समस्त साधु पुरुषोंको जानकर उनकी बातोंको सुनते ही मोह, शोकसे रहित होके दिव्य शरीर, दिव्य माला, और दिव्य भूषणोंको धारण करके पृथ्वीपर पाव न रखके फिर स्वर्गकी ओर चले। इसी अवसरमें संसारमें उदार और महादानी करके प्रसिद्ध वसुमनाने सबसे पहिले ऊंचे स्वरसे कहा, हे राजन्! मैंने पृथ्वीमें रहनेवाले किसी प्राणीके द्वेष, निन्दा और अपमान न करनेसे जो फल प्राप्त किया है, वह मैंने तुमको समर्पण किया आप उसके अधिकारी होइये। और भी मैंने दान, क्षमा और यज्ञसे जो फल प्राप्त किया है, वह भी आपको देता हूं। अनन्तर क्षत्रियोंमें श्रेष्ठ प्रतर्द्दन मातामहसे बोले, हे महाराज! सदा धर्म्ममें रत और युद्ध-कर्म्ममें युक्त रहनेसे क्षत्रियवंशके योग्य वीर शब्दके अनुसार मैंने जो कुछ पुण्य उपार्ज्जन किया है, इस समय तुम उसको ग्रहण करो।

इसके अनन्तर उशीनरपुत्र शिवि मधुर वचनोंमें बोले, हे राजन्! मैंने बालक और स्त्रियोंके समीपमें भी कभी मिथ्या वचन नहीं कहा है, इसी, युद्ध, जीत, हार, आपदकाल, जुएका खेल और व्यसनके समयमें भी कभी मैंने झूठ वचन नहीं कहा है, उसी सत्यके प्रतापसे तुम स्वर्गको जाओ। जिस सत्यके निमित्त मैं राज्य, कर्म्म, सुख और प्राण भी त्याग सकता हूं, उसी सत्यके प्रभावसे तुम स्वर्ग लोकमें जाओ। जिस सत्यके प्रभावसे धर्म्म, अग्नि और इन्द्र मेरे ऊपर प्रसन्न हुए हैं, उसी सत्यके सहित तुम स्वर्गको जाओ। अनन्तर कौशिकवंशमें उत्पन्न हुए बहुत यज्ञ करनेवाले माधवीपुत्र अष्टक, राजा ययातिसे बोले,—हे राजेन्द्र! मैंने पुण्डरीक, गोमेध और वाजपेय आदि अनेक यज्ञोंका अनुष्ठान किया है, तुम उन सबके फल भागी बनो। यज्ञके कार्य्य पूर्ण करनेके निमित्त मैंने जो धन, रत्न तथा दूसरी वस्तुओंको भी शेष नहीं रहने दिया, उसी सत्य निष्ठाके प्रभावसे आप स्वर्गको जाइये। इसी प्रकारसे दौहित्ररूपी उन चारो राजाओंने अपने अपने पुण्य और धर्म्मको सहायतासे स्वर्गसे भ्रष्ट हुए राजा ययातिका उसी समय उद्धार कर दिया। वे लोग ऊपर कही हुई रीतिसे जैसे जैसे कहने लगे, राजा ययाति भी उसी प्रकारसे पृथ्वीकी सीमाको त्यागकर स्वर्गकी ओर जाने लगे, इससे यह अवश्य ही स्वीकार करना पड़ेगा, कि शुद्ध राजवंशमें उत्पन्न हुए कुलको पवित्र करनेवाले उन चारो राजसिंहोंने ही महा बुद्धिमान् मातामहको फिर भी स्वर्ग लोकमें भेज दिया। वे सब अपने अपने पुण्यके फलको प्रदान करके अन्तमें बोले, हे राजेन्द्र! हम सब लोग तुम्हारे दौहित्र और सब गुणोंसे युक्त हैं। इससे हम लोगोंके धर्म्मकी सहायतासे तुम सब विघ्नोंसे रहित होकर स्वर्गको जाओ।

१२२ अध्याय समाप्त।

नारद मुनि बोले, राजा ययाति अनेक दक्षिणाओंके देनेवाले साधुचरित्रसे युक्त अपने दौहित्रोंके ऐसे कहनेपर उन लोगोंसे विदा होके फिर भी स्वर्गको गये और वहींपर निवास करने लगे। अपने सुकृत कर्म्मोंसे वर्जित होनेपर भी वह दौहित्रोंके पुण्य फलसे निश्चल स्थानको पाकर अनेक गन्धित पुष्पोंसे युक्त शीतल, मन्द, सुगन्धित वायु सेवन करते हुए परम शोभासे प्रकाशित होने लगे। अप्सरा और गन्धर्व्व लोग अत्यन्त ही प्रीतिके साथ उनके सम्मुख नृत्य करने और गीत गाने लगे। देव-

ताओंके सेवक लोग नगाड़ेकी शब्दसे उन्हें आनन्दित करने लगे। अनेक देवर्षि, राजर्षि, सिद्ध चारण उनकी स्तुति करने लगे और देवताओंने उत्तम अर्घ प्रदान करके उनकी पूजा की; तथा यथा उचित उनका सम्मान किया।

महा बुद्धिमान् राजा ययातिके इस प्रकारसे स्वर्गलोक पानेसे पितामह ब्रह्माने अपने मीठे वचनोंसे उन्हें तृप्त करते हुए यह कहा, कि हे राजर्षि। तुमने लोक हितकर सब पुण्यके कर्म्मोंको कर चतुष्पाद धर्म्म सञ्चय करके अक्षय स्वर्ग लोक पाया था, और इस स्थानमें तुम्हारी कीर्त्तिका स्तम्भभी अक्षय था परन्तु तुमने अपने अविचारके दोषसे सम्पूर्ण स्वर्ग वासियोंके अन्तःकरणको अज्ञानसे ऐसा ढाप दिया था, कि उस समय कोई भी तुमको जान न सका, इससे सबने जब तुम्हें नहीं चीन्हा, तभी तुम स्वर्गसे गिराये गये। अनन्तर अपने दौहित्रोंके प्रतापसे फिर परित्राण पाकर स्वर्गमें आये हो और तुमने निज-कर्म्मसे उपार्ज्जित एराने सब लोकोंको फिर प्राप्त करके अक्षयपदको पाया है।

राजा ययाति बोले, हे पितामह! मुझे एक बड़ी भारी शङ्का उपस्थित हुई है, आप कृपा करके उसको मिटा दीजिए, आपके विद्यमान रहते दूसरेसे पूछना मुझे उचित नहीं है। वह शङ्का यही है, कि कई सहस्र वर्षतक मैंने प्रजापालन, दान और यज्ञ करके जो अनेक प्रकारसे पुण्य सञ्चय किया था, वह थोड़े ही समयमें क्यों क्षीण होगया? किस अपराधसे मैं स्वर्गसे गिराया गया? हे महातेजस्विन्! मेरे निमित्त जो सब शाश्वत लोक तयार हुए थे, वह कुछ भी आपसे नहीं छिपे हैं, तब किस कारणसे वह सब नष्ट होगये?

ब्रह्मा बोले, हे राजेन्द्र! तुमने दान, यज्ञ आदि कर्म्मोंको करके जो बहुतसे पुण्य सञ्चित किये थे, उन सब पुण्योंके फलोंका केवल एक मात्र अभिमानके दोषसे ही क्षय हुआ था, और इसी निमित्त तुम स्वर्गवासी लोगोंसे धिक्कार पाकर स्वर्गसे गिराये गये थे। हे राजर्षि! यह स्वर्ग लोक है, बल, अभिमान, हिंसा और शठतासे कभी कोई पुरुष यहां निवास नहीं कर सकता। इसलिए अबसे तुम उत्तम मध्यम और अधम पुरुषोंमें किसीकी भी अवमानना मत करना। तुम्हें अधिक क्या कहूं, जो लोग अभिमानकी अग्निसे जलते हैं, उनके समान पापी यहां कहीं भी नहीं दीख पड़ते। हे राजन्! जो मनुष्य तुम्हारे इस स्वर्गसे गिरने और फिर स्वर्गपर चढनेके विषयको कहेंगे और सुनेंगे, वह महा घोर आपदसे भी अनायास ही पार हो सकेंगे। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

नारद मुनि बोले, हे नरनाथ। पहिले समयमें राजा ययाति अभिमानसे और गालव मुनिने हठसे इतने दुःख और क्लेश पाये थे। हितकी इच्छा करनेवाले पुरुषोंको सुहृद लोगोंकी ते अवश्य ही सुनना उचित है, हठके वशमें होना किसी प्रकारसे भी उचित नहीं है, क्योंकि हठ करनेसे केवल नाश होने, हीकी सम्भावना होती है। इससे हे गान्धारी नन्दन! तुम भी अभिमान और और क्रोध त्याग दो। हे वीर! युद्धका आडम्बर छोड़कर पाण्डवोंके सङ्ग सन्धि करो। हे राजन्! मनुष्य जो कुछ दान और तपस्या आदि कर्म्म करते हैं, कभी उसका अनायास ही नाश नहीं होता और कर्म्मके करनेवालेके अतिरिक्त दूसरा कोई भी उस कर्म्मफलका भागी नहीं हो सकता। इस लोकमें जो मनुष्य राग, द्वेष छोड़कर अनेक शास्त्रके ज्ञान तथा युक्तिसे निश्चय किये हुए इस उपाख्यानको अपने हृदयमें धारण करता है, वह धर्म्म, अर्थ और कामको प्राप्त करके पृथ्वीके राज्यको भोग कर सकता है।

१२३ अध्याय समाप्त।

नारद मुनिकी बात समाप्त होनेपर राजा धृतराष्ट्र बोले, हे भगवन्। आपने जो कुछ वचन कहे, वह सब ही यथार्थ है। मेरी भी ऐसी ही इच्छा है, परन्तु क्या करूं, इच्छा रहनेपर भी मेरी कुछ भी प्रभुता नहीं है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कुरुश्रेष्ठ राजा धृतराष्ट्र, नारदसे ऐसे वचन कहकर श्रीकृष्णचन्द्रको सम्बोधन करके बोले, हे कृष्ण! तुमने हम लोगोंके निमित्त हितकारी, स्वर्गको साधन करनेवाले, धर्म्म और न्यायसे युक्त वचन कहे है। परन्तु हे तात! मैं स्वयं उसके वशमें होरहा हूं, नीचबुद्धि दुर्य्योधन मेरे प्यारे कार्य्य करनेमें प्रवृत्त नहीं होता है। हे महाबाहो पुरुषोत्तम! इससे मेरी आज्ञा न माननेवाले इस मूर्ख दुष्टात्माको तुम ही सन्मार्गपर लानेके निमित्त यत्न करो। यह पापी, बुद्धिमान् विदुर, गान्धारी, भीष्म आदि सुहृद पुरुषोंकी बात नहीं सुनता। हे कृष्ण! इससे तुम ही इस पापी और मूर्ख दुर्य्योधनको शासित करो, ऐसा करनेहीसे तुम्हारा मित्रोंके निमित्त बहुत ही उचित और बड़ा भारी कार्य्य सिद्ध होगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर सब धर्म्म जाननेवाले श्रीकृष्ण क्रोधी दुर्य्योधनके समीप जाकर इस प्रकारसे मधुर वचन कहने लगे। हे कुरुसत्तम दुर्य्योधन! तुम युद्ध करनेके वास्ते अत्यन्त ही हठ करते हो, इससे तुम्हारी शान्तिके निमित्त मैं जो कहता हूं, वह अच्छी भांतिसे चित्त लगाकर सुनो। हे भारत! तुम उत्तम कुलमें उत्पन्न हुए हो, तुम शास्त्र-ज्ञान, सदाचार और ऐश्वर्य्य आदि सब गुणोंसे युक्त हो, इससे मेरे वचनके अनुसार तुमको उत्तम व्यवहार अवश्य ही करना उचित है। तात! तुम्हारे विचारसे जो धर्म्म करनेके योग्य निश्चित हो रहा है, वह नीच कुलमें उत्पन्न हुए दुष्टात्मा, अधर्मी, और लज्जाहीन पुरुष लोग ही किया करते है। हे भरतर्षभ! इस सम्पूर्ण पृथ्वीके बीच साधु स्वभावसे युक्त पुरुषोंकी ही प्रवृत्ति धर्म्म, अर्थसे युक्त देखी जाती है। नीच पुरुषोंके विषयमें यह सब बातें उलटी होती है; अर्थात् वह लोग जिस कार्य्यमें प्रवृत्त होते है, वह प्रायः अधर्म्म और अनर्थसे पूर्ण होता है। सम्प्रति तुम्हारे भी कार्य्यमें वही उलटी प्रवृत्ति बार बार होती देखते है। इस प्रकारकी प्रवृत्ति रखके जो तुम बहुत ही हठ करते हो, वह हठ अधर्म्मका मूल, भयका उत्पन्न करनेवाला और महा अनर्थका कारण है, ऐसा क्या वह प्राण अर्थान्त नाश कर सकता है। इस प्रकारका निरर्थक हठ करनेका कोई कारण भी नहीं दीख पड़ता है, विशेष करके उसकी रक्षा भी तुम नहीं कर सकोगे। हे परन्तप! इससे यदि तुम्हें वह अनर्थ त्याग कर अपने कल्याणके साधन करनेकी इच्छा होवे, यदि भाई सेवक और मित्रोंको इस अधर्म्मसे युक्त यशरहित कर्म्मसे निस्तार करनेकी अभिलाषा होवे, तो अत्यन्त पराक्रमी, महा बुद्धिमान्, महा उत्साहसे युक्त, शास्त्रोंके जाननेवाले पाण्डवोंके सङ्ग सन्धि करो, ऐसा ही करनेसे उक्त अभिलाषा पूर्ण हो सकती है। सन्धिके करनेसे केवल तुम्हारा ही उपकार होगा, यह बात नहीं है, उससे राजा धृतराष्ट्र, भीष्म, द्रोण, विदुर, कृपाचार्य्य, सोमदत्त, बाह्लिक, अश्वत्थामा, विकर्ण, सञ्जय, विविंशति आदि सब साधु पुरुष, मित्र और ज्ञातिके लोगोंका भी बहुत ही हित साधन और प्रीतिकी वृद्धि होगी। हे तात! तुम्हारी शान्तिसे सम्पूर्ण जगतके ही मङ्गलकी सम्भावना है। हे भरतर्षभ! तुम उत्तम कुलमें उत्पन्न हुए हो, शास्त्रज्ञ तेजस्वी और दयालु हो; इससे माता पिताकी आज्ञा पालन करना तुम्हें बहुत ही उचित है। हे भरतर्षभ! पिता जिस प्रकारसे शासन करें, अच्छे पुत्र लोग उसीको उत्तम समझते हैं। भारी विपदमें पड़नेपर भी मनुष्य पिताके शासनमें स्थित रहते हैं। जब तुम्हारे

पिताकी यही इच्छा है, कि पाण्डवोंके सङ्ग मेल होवे, तब तुमको भी सेवकोंके सहित उसी कार्य्यकी इच्छा करनी योग्य है। जो पुरुष सुहृद लोगोंका वचन सुनकर उसको नहीं ग्रहण करता, उसके कर्म्मोंके फलके शीघ्र होनेपर अवश्य वह महा कालके मुखमें पड़के जलता रहता है। मोहमें फंसकर जो पुरुष हितका बचन नहीं कहता, वह अवश्य ही आलसी और असमर्थ होकर पश्चात्ताप करता रहता है। परन्तु जो बुद्धिमान् पुरुष अपना मत त्याग कर हित चाहनेवाले मित्रोंकी बात पहिले ही मान लेते हैं, वे इस लोकमें परम सुखसे आनन्दित रहते हैं। जो पुरुष हितैषी मित्रोंकी बात अपने प्रतिकूल जानकर उसे ग्रहण नहीं करता; और नीच पुरुषोंके यथार्थ प्रतिकूल वचन सुनता है; वह अवश्य ही शत्रुओंके वशमें होजाता है। जो नीचबुद्धि उत्तम चरित्रवाले साधु पुरुषोंकी बातको न मानकर दुष्ट पुरुषोंके मतके अनुसार चलता है, उसके मित्र लोग थोड़े ही समयमें उसे विपदमें पड़े हुए देखकर शोक करते हैं। जो मूर्ख राजा गुणवान् तथा मुख्य सेवकोंको त्याग करके अधम तथा दुष्ट मन्त्रियोंका आदर करता है, वह महा घोर विपदरूपी समुद्रमें गिरकर कभी उसके पार नहीं जा सकता।

हे भारत! जो अनर्थ करनेवाला मूढ़ राजा उत्तम स्वभावसे युक्त मित्रोंके कल्याणकारी वचन न सुनके यथार्थ मित्रोंसे द्वेष और दूसरे पुरुषोंका गौरव करता है, उनको उत्तम पुरुषके वशमें रहनेवाली पृथ्वी अवश्य ही परित्याग करती है। हे भरतर्षभ! तुम भी महावीर पाण्डवोंके सङ्ग विरोध करके दुष्ट, असमर्थ और मूढ़ लोगोंसे परित्राण पानेकी आशा कर रहे हो। इस पृथ्वीमें तुम्हें छोड़कर और कौनसा मनुष्य इन्द्रके समान महारथ ज्ञातिके लोगोंको त्यागकर दूसरे पुरुषोंसे परित्राण पानेकी इच्छा करेगा? तुम जन्मसे कुन्तीपुत्रोंको दुःख देते चले आते हो; परन्तु धर्म्मात्मा पाण्डव लोग तब भी तुम्हारे ऊपर क्रोध नहीं करते हैं। हे महाबाहो! तुम्हारे सदा कपट व्यवहार करनेपर भी वे महा यशस्वी परम स्नेह रखनेवाले मुख्य बन्धु लोग जैसे तुम्हारे सङ्ग सदासे उत्तम आचार करते आये हैं, वैसा ही व्यवहार तुमको भी करना उचित है; कि क्रोधके वशमें न होकर इस समयमें भी उन लोगोंके सङ्ग तुम उत्तम व्यवहार करो।

हे भरतर्षभ! बुद्धिमान् पुरुष जिस कार्य्यको आरम्भ करते हैं, वह धर्म्म, अर्थ और कामसे युक्त होता है। एक ही समयमें त्रिवर्ग कामोंका होना असम्भव मालूम होनेसे वे धर्म्म और अर्थसे युक्त कार्य्य करते हैं। यदि धर्म्म, अर्थ और काम एक एक करके प्राप्त करनेकी इच्छा होती है, तो उत्तम प्रकृतिके पण्डित लोग पहिले धर्म्महीके कार्य्यमें प्रवृत्त होते हैं, मध्यम प्रकृतिके लोग अर्थ सिद्ध करके स्व लाभ कर सकते हैं। नीच प्रकृतिसे युक्त अधम पुरुष केवल कामहीमें प्रवृत्त होते हैं। इन्द्रियोंके वशमें रहनेवाला जो मूढ़ पुरुष धर्म्म और अर्थका त्याग करके नीच उपायसे केवल कामको सिद्ध करनेकी इच्छा करता है, उसका शीघ्र ही नाश होता है। जो पुरुष काम और अर्थके सिद्ध करनेकी अभिलाषा करेगा, वह पहिले अधर्म्म आचरण अवश्य करेगा, क्योंकि अर्थ और काम कभी धर्म्मसे पृथक नहीं रहते, अर्थात् धर्म्मके अनुसार सिद्ध न होनेपर अर्थ और काम सार्थक नहीं होते। हे राजेन्द्र! पण्डितोंने धर्म्महीको त्रिवर्ग प्राप्त करनेका उपाय कहा है। क्योंकि जो बुद्धिमान पुरुष धर्म्मको अवलम्बन करके त्रिवर्गको प्राप्त करनेकी इच्छा करते हैं, वे सूखी लकड़ीकी अग्निकी भांति सदा ही उठते रहते हैं।

हे भरतर्षभ! तुम केवल दुष्ट उपायसे ही सब राजाओंके बीच विख्यात होने तथा सम्पूर्ण पृथ्वीके राज्यको लेनेकी अभिलाषा करते हो। हे राजन्! जो पुरुष सम्पूर्ण प्रकारसे सत्यव्यवहारमें लगे हुए उत्तम स्वभावसे युक्त मनुष्योंके सङ्ग कपट व्यहार करता है, वह कुठारसे वनको काटनेकी भांति अवश्य ही अपना नाश करता है। जो किसीके पराभव की इच्छा नहीं करता, उसकी बुद्धि कभी नष्ट न होनेसे उस पुरुषका चित्त कल्याणकारी विषयोंमें प्रवृत्त रहता है, हे भारत! अपनी आत्माके कल्याणकी इच्छा करनेवाले जितेन्द्रिय पुरुष-पाण्डवोंकी बात तो दूर रहे, इस पृथ्वीके बीच साधारण मनुष्योंका भी अपमान नहीं करते। जो पुरुष क्रोधके वशमें होता है, उसको भले बुरेका कुछ भी ज्ञान नहीं रहता, देखो लोक और वेदमें प्रसिद्ध बड़े बड़े प्रमाण उसके सम्मुख तुच्छ होते हैं।

हे भारत! दुष्ट पुरुषोंके सङ्गका त्यागकर पाण्डवोंके सङ्ग सन्धि करनी तुम्हारे निमित्त बहुत ही उत्तम है, क्योंकि यदि वे लोग तुम्हारी प्रीति पूर्ण करनेके निमित्त इच्छा करेंगे, तो तुम्हारी सब अभिलाषा पूर्ण हो सकती है। एक वार विचार करके देखो तो सही, तुम पाण्डवोंके पराक्रमसे जीती हुई इस समस्त पृथ्वीके राज्यका भोग कर रहे हो, पाण्डवोंको छोड़कर अब दूसरोंसे परित्राण पानेकी इच्छा करते हो; दुर्व्विसह दुःशासन, कर्ण और शकुनि आदि कुमन्त्रियोंसे ऐश्वर्य्य लाभ करनेके निमित्त उन्मादी हो रहे हो। परन्तु पाण्डवोंके सङ्ग ये लोग ज्ञान, धर्म्म और पराक्रम किसीमें भी समान नहीं हैं। केवल येही लोग क्यों, उपस्थित सब राजा लोग ही युद्धके समयमें क्रोधसे पूर्ण तेजस्वी भीमसेनके मुखको और न देख सकेंगे। हे महाबाहो! भीष्म, द्रोण, कर्ण, कृपाचार्य्य, भूरिश्रवा, सोमदत्त, अश्वत्थामा और जयद्रथ आदि महावीर पुरुष तुम्हारे सहाय हैं, परन्तु अर्ज्जुनके सङ्ग युद्ध करनेमें ये सब ही असमर्थ हैं। इन लोगोंकी तो बात ही क्या है? देवता, असुर, गन्धर्व्व और मनुष्योंके सहित सब लोकके पुरुष भी इकट्ठे होकर युद्धमें अर्ज्जुनको नहीं जीत सकते।

हे तात! इससे तुम युद्ध करनेमें कभी चित्त मत लगाओ; और तुम अपनी सेनाके बीचसे ऐसा कोई पुरुष बाहर तो करो, जो युद्धभूमिमें अर्ज्जुनके हाथमें पड़कर शरीरसे कुशलपूर्व्वक बचके घर लौट सके? जिसके जीतनेसे तुम्हारा विजय होवे, पहिले ऐसे किसी पुरुषको खड़ा करो, नहीं तो व्यर्थ मनुष्योंके नाश करनेसे क्या प्रयोजन है? जिन्होंने खाण्डव वनमें अग्निको तृप्त करते समय यक्ष, गन्धर्व्व, असुर और नागोंके सहित सम्पूर्ण देवताओंको जीता था, उस अलौकिक वीरतासे युक्त अर्ज्जुनके सङ्ग कौन पुरुष युद्ध कर सकता है? विराट देशकी जो बड़ी अद्भुत बात सुनी जाती है, अकेले अर्ज्जुनके साथ बहुतसी संख्यासे युक्त मनुष्योंके संग्राममें यही एक अन्तिम प्रमाण है। दूसरेकी तो बात ही क्या है, त्रिपुरासुरको विजय करनेवाले साक्षात् महादेव उसके युद्धसे प्रसन्न हुए है। उस असाधारण बल और पराक्रमसे युक्त देवताओंमें अग्रगामी प्रतापशाली जिष्णुको तुम जीतनेकी अभिलाषा करते हो, इससे तुम्हारी कितनी मूर्खता और दुराशा प्रकाशित हो रही है, उनको मैं क्या कहूंगा? संग्रामभूमिमें विरुद्ध खड़े होनेवाले मेरे सहित अर्ज्जुनको युद्धके निमित्त आवाहन करनेमें कौन पुरुष साहस कर सकता है? मनुष्योंकी तो बात ही क्या है, साक्षात् इन्द्र भी युद्ध करनेमें समर्थ नहीं हो सकते। जो पुरुष युद्धमें अर्ज्जुनको जीत सकेगा, वह अपनी दोनों भुजाओंके बलसे पृथ्वीको भी उठा सकेगा, क्रोध करनेसे सम्पूर्ण प्राणियोंको

भस्म कर सकोगे और देवताओंको भी खर्गसे भगानेमें समर्थ होगा।

हे भरतर्षभ। इससे तुम एक बार पुत्र, पौत्र भाई, जाति तथा दूसरे सम्बन्धी लोगोंकी ओर अच्छी प्रकारसे आंख खोलकर देखो, भरत-वंशमें उत्पन्न हुए ये सब उत्तम उत्तम महावीर नरप जिसमें तुम्हारे निमित्त नाश न हो जावें, कौरवोंका यह प्रतिष्ठित कुल इकबारगी शेष न हो जावे, और लोकमें "कीर्त्ति और कुलको नाश करनेवाले," कहके सब लोग जिसमें तुम्हारी निन्दा न करें, तुम वही कार्य्य करो। सन्धि करनेसे महारथ पाण्डव लोग तुमको ही युवराज और राजा धृतराष्ट्रको महाराज बनावेंगे। हे तात। इससे सन्धिके निमित्त उद्यत हुई राजलक्ष्मीकी अवमानना न करो। पाण्डवोंको आधा राज्य देकर तुम इस पृथ्वीकी लक्ष्मीका लाभ उठाओगे। तुम मित्रोंके वचन मानकर यदि पाण्डवोंके सङ्ग मेल करोगे, तो मित्रोंकी प्रीतिके पात्र होकर स्थिरतासे अपना कल्याण सिद्ध करनेमें समर्थ होओगे।

१२४ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, श्रीकृष्णचन्द्रकी बातोंको सुनकर शान्तनुपुत्र भीष्म क्रोधी दुर्य्योधनसे कहने लगे। हे तात। मित्रोंकी शान्तिकी इच्छासे महात्मा कृष्णने तुमसे जो कुछ वचन कहे हैं, तुम क्रोध छोड़कर सब प्रकारसे उसी मार्गके अनुगामी होओ। महाबुद्धिमान् कृष्णके इन उत्तम उपदेशोंसे भरे वचन न माननेसे किसी भांतिसे तुम्हारा कल्याण न होगा, तुम किसी कालमें भी यथार्थ सुख और कल्याणका दर्शन न कर सकोगे. हे राजन्। महाबाहु कृष्णने धर्म्म, अर्थसे भरे हुए इष्टसाधक उत्तम ही वचन तुम्हारे निमित्त कहे हैं. इससे तुम एकाग्र चित्तसे उन बातोंको स्वीकार कर लो; निरर्थक सब प्रजाका नाश मत करो। हे भरतश्रेष्ठ! महा बुद्धिमान् कृष्ण, बूढ़े प्रज्ञाचक्षु धृतराष्ट्र और विदुर, इन लोगोंके अर्थसे युक्त यथार्थ वचन न माननेसे तुम अन्धे राजा धृतराष्ट्रके जीवित रहते ही अपनी दुष्टता और नीचताके कारण सब राजाओंके बीच बहुत बढ़ी और प्रज्वलित इस राजलक्ष्मीके नाश करनेका विधान करोगे और अभिमानसे मतवाले हो कर पुत्र, पौत्र, भाई, सेवक, और सम्बन्धियोंके सहित अपने प्राण और धनका भी निःसन्देह नाश करोगे। हे तात। इससे मैं तुम्हें फिर भी बार बार निषेध करता हूं, कि तुम कुलघाती, कापुरुष, दुष्टबुद्धि और कुमार्गगामी होकर माता पिताको शोकरूपी महा समुद्रमें मत डुबाओ।

भीष्मके ऐसा कहके चुप होनेके अनन्तर, द्रोणाचार्य्य लम्बी सांस लेते हुए क्रोधी दुर्य्योधनसे यह वचन बोले, हे तात। श्रीकृष्ण और शान्तनुपुत्र भीष्मने तुमसे जो कुछ धर्म्म और अर्थसे युक्त वचन कहे हैं, तुम सब शङ्का त्यागकर उन्हीं वचनोंके अनुसार चलो। हे राजेन्द्र! ये लोग महाबुद्धिमान्, तेजस्वी, धर्म्मात्मा और शास्त्रोंको जाननेवाले हैं; विशेष करके दोनो ही तुम्हारे परम हितैषी हैं, इससे इन लोगोंने तुम्हारे हितहीके वचन कहे हैं; अब तुम भी सब संशय और शङ्का छोड़कर इनका वचन मान लो। हे महाबुद्धिमन्। हे परन्तप। कृष्ण और भीष्मने जो बातें कही हैं, तुम उन्हीका अनुष्ठान करो, बुद्धिके मोहमें पड़कर किसी प्रकारसे भी कृष्णकी अवज्ञा मत करो। यह कर्ण आदि कमअक्ल लोग जो सदा ही बुरे परामर्शसे तुम्हें उत्तेजित कर रहे हैं, ये लोग कभी तुम्हारा विजय साधन करनेमें समर्थ न हो सकेंगे। युद्धके समयमें ये लोग दूसरेके ऊपर वैरको अर्पण करके निश्चिन्त हो जायगे। हे राजेन्द्र! इससे तुम समस्त प्रजा और पुत्र, भाई तथा

मित्रोंका व्यर्थ नाश मत करो। तुम इस बातको निश्चय पूर्व्वक जान रक्खो, कि जिस सेनामें कृष्ण और अर्ज्जुन निवास करते है, वह बहुत ही अजेय है। हे तात! हे भारत! मित्रोंमें श्रेष्ठ कृष्ण और भीष्मने जो कुछ वचन कहे है, यदि तुम उन सत्य वचनोंको न मानोगे, तो अवश्यही तुम्हें पश्चात्ताप करना पड़ेगा। अर्ज्जुनके विषयमें ऋषिश्रेष्ठ परशुरामजीने जो कुछ कहा है, वह उससे भी सहस्र गुण श्रेष्ठ है। देवकीपुत्र श्रीकृष्णको बात मैं क्या कहूंगा, देवता लोग भी इनका प्रताप नहीं सह सकते। हे भरतर्षभ। तुम्हारे समीप प्यारे और सुख उत्पन्न करनेवाले वचन कहनेहीसे क्या फल होगा? सुहृद लोगोंका जैसा कहना उचित है, वह सब कहा गया, इस समय जैसी तुम्हारी इच्छा होवे, वैसे ही कार्य्य तुम करो। तुमको अब अधिक बात कहनेकी मेरी इच्छा नहीं होती है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, द्रोणाचार्य्यके वचनके शेष होनेपर महा बुद्धिमान् विदुर भी क्रोधी दुर्य्योधनके मुंहकी ओर देखकर यह वचन बोले। हे भरतसत्तम। मैं तुम्हारे निमित्त कुछ भी शोक नहीं करता हूं; परन्तु ये जो बूढ़े तुम्हारे माता और पिता है, जो तुम्हे शत्रु स्वरूपसे सहाय पाकर सहाय रहित होंगे, मै उन्हींके निमित्त शोकसे व्याकुल हो रहा हूं। अहो! ऐसे कुलघाती पापी कुपुत्रको उत्पन्न करके वह मित्र सेवक और सम्बन्धियोंके मारे जानेपर भिक्षुक और पङ्खरहित पक्षीकी भांति इस पृथ्वी पर शोक करते हुए चारों ओर घूमेंगे यही मुझे असह्य दुःख है।

अनन्तर राजा धृतराष्ट्र भाइयोंके सहित राजाओंके बीचमें बैठे हुए दुर्य्योधनसे यह वचन कहने लगे।

हे पुत्र दुर्य्योधन! महात्मा कृष्णने धर्म्म और अर्थसे युक्त जो कुछ शुभ वचन कहे है, वह तुम अवश्य अपने हृदयमें धारण करो। यह महा तेजस्वी कृष्ण जब हम लोगोंके सहाय बनेंगे, तो निःसन्देह हम लोग सब राजाओंके बीच सब प्रकारसे अपना अभीष्ट प्राप्त करेंगे, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। हे तात! इससे तुम कृष्णके कहनेके अनुसार पाण्डवोंके सङ्ग सम्बन्ध करके युधिष्ठिरसे मेल करो; भरत कुलकी रक्षाका अनुष्ठान करो। आचार्य्यरूपी कृष्णका उपदेश मानकर शान्ति स्थापनके निमित्त प्रवृत्त हो जाओ। मेरी समझमें सन्धि करनेका यही उत्तम समय उपस्थित हुआ है, इससे किसी प्रकारसे भी यह समय मत टालो। दयावान् कृष्णने तुम्हारे हित और शान्तिके निमित्त ये सब बातें कही है। यदि इन वचनोंपर ध्यान न दोगे, तो निःसन्देह तुम्हारा पराजय होगा।

१२५ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा धृतराष्ट्रके वचन सुन भीष्म और द्रोणाचार्य्य उसी युक्तियुक्त समरकार, शासनको न माननेवाले दुर्य्योधनसे, यह वचन बोले। हे भारत! जबतक कृष्ण अर्ज्जुन युद्धके निमित्त नहीं खड़े होते है, जबतक गाण्डीवधनुष स्थिर भावसे है, जबतक पुरोहित धौम्य यज्ञकी अग्निमें शत्रुओंका बल नहीं हवन करते है, लज्जाशील महारथ युधिष्ठिर जबतक क्रुद्ध होकर तुम्हारी सेनाके ऊपर दृष्टि नहीं करते है, जबतक वह भयङ्कर युद्ध आरम्भ नहीं होता है, तब ही तक इस विरोधकी शान्ति होनी उचित है। जबतक प्रचण्ड धनुष ग्रहण करके भीमसेन सम्मुख नहीं आता है और यमराजके समान गदा हाथमें लेकर जबतक इस सेनाका संहार नहीं करता है, तभीतक तुम पाण्डवोंके सङ्ग विरोध त्यागकर सन्धि कर लो। जबतक भीमकी गदासे पके हुए तालके फलके समान वीरोंके सिर पृथ्वीमें नहीं गिरते है, तभीतक

तुम सन्धिके निमित्त यत्न करो। जबतक नकुल सहदेव, द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, विराट, शिशुपालके पुत्र आदि सब शस्त्रोंके जाननेवाले वीर लोग वर्म्म धारण करके महामारीकी सृष्टि नहीं करते हैं, तभी तक विरोध त्याग करके सन्धिके निमित्त यत्न करो। जबतक राजाओंके कोमल शरीरमें चोखे बाण नहीं घुसते हैं, तभीतक सन्धि होनी उचित है। पाण्डवोंको उत्तेजित करनेवाले, महा धनुर्धारी बहुत दूरके लक्ष्य (निशाने) को बेधनेवाले, सब शस्त्रोंको जाननेवाले सैनिक योद्धा लोग जबतक चन्दनचर्चित शरीरपर प्रकाशित मणि और हार पहरकर सब लौहमय शस्त्रोंको नहीं धारण करते हैं, तभीतक शान्ति होनी उचित है। हे राजन्! राजाओंमें श्रेष्ठ धर्म्मराज युधिष्ठिर तुमको शिर झुका कर प्रणाम करते हुए देखकर अपनी दोनों भुजाओंसे ग्रहण करें, शान्तिके निमित्त ध्वजा, अंकुश आदि चिन्हसे युक्त अपना दहिना हाथ तुम्हारे कन्धेपर रक्खें और तुम्हारे बैठनेपर रत्न औषधिसे युक्त उज्वल अंगूठियोंसे शोभित अपनी हथेलीसे तुम्हारी पीठ ठोंकें। हे भरतर्षभ! महाबाहु भीमसेन तुम्हारे सङ्ग मिलकर शान्तिके निमित्त तुमसे बात चीत करें। अर्ज्जुन और नकुल, सहदेव भी जब तुम्हें प्रणाम करें तब तुम उनका मस्तक सूंघकर उन लोगोंके सङ्ग प्रीतपूर्व्वक बातचीत करो। हे राजेन्द्र! तुमको वीरोंमें अग्रगामी पाण्डव भाइयोंके सङ्ग मिलते हुए देखकर सम्पूर्ण राजा लोग आनन्दसे आंसू गिरावेंगे। समस्त राजाओंकी राजधानियोंमें तुम लोगोंके आपसमें भ्रातृभावसे मिलनेकी घोषणा होगी। अधिक क्या कहें, तुम लोग भ्रातृभावसे आपसमें मिलकर सम्पूर्ण पृथ्वीकी राजलक्ष्मी भोगते हुए सब शोक और चिन्तासे रहित होओगे।

१२६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा दुर्योधन कौरवोंकी सभाके बीचमें अप्रिय वचन सुनकर महाबाहु यशस्वी श्रीकृष्णचन्द्रसे बोले, आपने जो कुछ वचन कहे, वह अच्छे प्रकारसे विचारकर कहना उचित था। हे मधुसूदन! पाण्डवोंकी भक्तिके वशमें होकर उक्त प्रकारके वचनोंसे तुमने मेरी बहुत ही निन्दा की है। परन्तु मैं पूछता हूं, कि तुम कौनसे बलाबलको विचारकर इस प्रकारसे मेरी सदा निन्दा करते हो? केवल तुम ही नहीं, विदुर, राजा, आचार्य और पितामह भी दूसरे सब राजाओंको छोड़कर केवल मेरी ही निन्दा करते रहते हैं। मैंने अपने शरीरसे कोई दोष नहीं किया है, तो भी तुम तथा दूसरे राजा लोग मुझसे द्वेष करते हैं। हे शत्रुनाशन कृष्ण! मैं एकाग्र-चित्तसे विचार कर देखता हूं, तो भी तुम्हारा कोई भारी अपराध मुझसे नहीं हुआ है, भारी अपराध क्यों? मेरा तनिक भी दोष नहीं दीख पड़ता है। हे मधुसूदन! पाण्डवोंके प्रिय और इच्छानुसार जुएके खेलमें शकुनिने जो उन लोगोंका राज्य जीत लिया था, उसमें मेरा क्या अपराध था? किन्तु उस समयमें जो कुछ धन जीता गया था, वह उन्हीं लोगोंका लौटा देनेके लिये मैंने आज्ञा की थी। हे शत्रुनाशन! पासेके खेलमें फिर भी हारकर जो अजेय पाण्डव वनको गये, उसमें भी मेरा कौनसा अपराध है? हे कृष्ण! वे लोग किस अपराधसे हम लोगोंको शत्रु स्थिर करते हैं और असमर्थ होकर भी महाहर्षके साथ हम लोगोंके सङ्ग विरोध करनेमें क्यों प्रवृत्त हो रहे हैं? मैंने उन लोगोंकी कौनसी हानि की है? कौनसे अपराधके कारणसे वे सृञ्जयोंके सहित धृतराष्ट्रके पुत्रोंकी हिंसा करनेकी अभिलाष करते हैं? हम लोग क्या किसी कठोर कर्म्म अथवा वचनसे भयभीत होकर उनके सम्मुख शिर झुकावेंगे? कभी नहीं; साक्षात् इन्द्र भी

आवें तो भी मैं किसी प्रकारसे न डरूंगा। हे शत्रुनाशन कृष्ण। मैं क्षत्रियधर्म्मके अनुष्ठान करनेवाले ऐसे किसी पुरुषको नहीं देखता हूं, जो हम लोगोंको जीतनेमें उत्साही हो सके। हे कृष्ण। पाण्डवोंकी बात तो दूर है, साक्षात् देवता लोग भी भीष्म, द्रोण, कर्ण और कृपाचार्य्य आदि मेरे महावीर योद्धाओंको पराजित करनेमें समर्थ नहीं है। हे कृष्ण। अपने धर्म्मको पालन करते हुए, यदि दैव-संयोगसे हम लोग संग्राममें मारे जावेंगे, तो भी हम लोगोंको स्वर्ग लोक मिलेगा। हे जनार्द्दन। हम लोग युद्धमें शरशय्यापर शयन करें, यही हम लोगोंके क्षत्रियकुलका परम धर्म्म है। हे कृष्ण। इससे हम लोग शत्रुओंके सम्मुख शिर न झुकाकर वीर-शय्यापर शयन करेंगे, वह शय्या किसी प्रकारसे भी हम लोगोंको सन्तापित न करेगी। वीरकुलमें उत्पन्न होकर धर्म्मका अनुष्ठान करनेवाला कौन पुरुष केवल अपने प्राणकी रक्षाके निमित्त शत्रुओंके सम्मुख शिर झुकावेगा? आत्म-हितके चाहनेवाले बुद्धिमान् क्षत्रिय लोग सदा ही उद्यमशील होवें, किसी प्रकारसे भी मस्तक न झुकावें, क्योंकि उद्यम ही पुरुषार्थ है, यद्यपि और स्थानमें अवनत होवें, पर किसी कालमें भी शत्रुके सम्मुख शिर न झुकावें' मातङ्ग मुनिके इस वचनको सदा आदरके साथ ग्रहण करते रहते हैं। मेरे समान क्षत्रिय लोग और किसीको भी चिन्ता न करके धर्म्मके निमित्त केवल ब्राह्मणको ही प्रणाम करेंगे, परन्तु दूसरे लोगोंके साथमें जीवन पर्य्यन्त मातङ्ग मुनिके ऊपर कहे हुए वचनके अनुसार व्यवहार करेंगे। यही उनका धर्म्म और यही मेरा निश्चित मत है। हे कृष्ण! पहिले पाण्डवोंको जो मेरे पिताने राज्यका अंश दे दिया था; इस समय मेरे जीवित रहते वे लोग किसी प्रकारसे भी नहीं पा सकेंगे। राजा धृतराष्ट्र जबतक जीवित हैं तबतक क्या हम लोग और क्या वे लोग सबहीको शस्त्र त्यागकर उनका उपजीवी बनना पड़ेगा। हे कृष्ण! जबतक मैं बालक और दूसरेके आधीनमें था, उस समय मेरे पिताने अज्ञानसे अथवा भयसे ही मेरा राज्य पाण्डवोंको दिया था। परन्तु अब वह राज्य किसी प्रकारसे भी नहीं दिया जा सकता। हे वृष्णिनन्दन! हे महाबाहो केशव! अब इस समयमें दुर्य्योधनके जीवित रहते वे लोग किसी कालमें भी वह राज्य फिर नहीं पा सकते। अधिक क्या कहूं, तीक्ष्ण सुईकी नोकसे जितनी भूमि बिद्ध हो सकती है, मेरे राज्यमें उतनी भूमि भी पाण्डवोंको नहीं दी जावेगी।

१२७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर श्रीकृष्ण क्रोध-पूरित नेत्रोंसे दुर्य्योधनकी ओर देखकर हंसते हुए यह वचन बोले। हे दुर्य्योधन! तुम धीरज धरो, तुम सेवकोंके सहित अवश्य ही वीरशय्या प्राप्त करोगे, शीघ्र ही तुम्हारी यह अभिलाषा सिद्ध होगी, क्योंकि महा भयङ्कर युद्ध व्यापार अवश्य ही उपस्थित होगा। रे मूर्ख! तू कहता है, कि "पाण्डवोंके विषयमें मैंने कोई अपराध नहीं किया है," इस बातको सब ही राजा लोग अच्छी प्रकारसे मालूम करें। हे भारत। तुमने पाण्डवोंका महा ऐश्वर्य्य देखके जलकर शकुनिके सङ्ग दुष्ट विचार करके जुएका खेलरूपी कपट व्यवहार किया था, वह किसको विदित नहीं है? हे तात! सरल स्वभावसे युक्त श्रेष्ठ पाण्डव लोग जो इस कपटी शकुनिके साथ इस अन्याय कर्म्मको उपासना करनेके निमित्त पूर्ण रीतिसे उद्यत हुए थे, यह बात भी किस प्रकारसे सम्भव हो सकती है? हे महाबुद्धिमन्! जुएके खेलमें साधु पुरुषोंकी बुद्धिका नाश होता है, और दुष्ट

लोगोंमें सुहृद्भेद तथा नानाप्रकारके विपदकी उत्पत्ति होती है। तुमने साधु पुरुषोंके सङ्ग विना परामर्श किये ही केवल पापबुद्धि और दुराचारी लोगोंकी कुमन्त्रणासे उस दुष्ट जुआ-रूपी घोर-व्यसनका सूत्रपात किया था। पाण्डवोंको प्राणसे बढ़कर प्रिय, उत्तम कुलसे उत्पन्न हुई, शीलसे युक्त द्रौपदीको तुमने महा सभामें बुलाके अनेक भांतिसे कटूक्ति और हंसी करके जैसा असह्य दुःख दिया था, इस पृथ्वीके बीचमें कौन पुरुष भाईकी स्त्रीकी वैसी दुर्दशा करनेमें समर्थ होसकता है? और जब तेजस्वी कुन्तीपुत्र वनको चले थे, उस समय दुष्ट दुःशासनने उन लोगोंको जो कुछ वचन कहे थे, वे सब कौरवोंके बीचमें किसको विदित नहीं है? साधु पुरुष, उत्तम चरित्रवाले, धर्म्मात्मा, लोभ-रहित अपने आत्मीय बन्धु बान्धवोंके सङ्ग ऐसा अयोग्य और अनुचित व्यवहार कौन करता है? निटुर अनाचारी और नीच पुरुषोंको जैसा वचन कहना उचित है, वैसे ही वचन कर्ण दुःशासन और तुमने बार बार कहे थे। पाण्डव लोग जिस समय बालक थे, उसी समय वारणावत नगरमें तुमने उनको जलानेके निमित्त परम यत्न किया था, परन्तु प्रारब्धसे तुम्हारा वह यत्न सिद्ध नहीं हुआ। उस महा घोर कष्टसे बचकर उन लोगोंने एकचक्रा नगरीमें किसी ब्राह्मणके घरमें वेष बदलकर बहुत दिनों तक माताके सङ्ग वास किया था। और भी देखो,—तुमने विष और सर्प आदि सब प्रकारके उपायसे उन लोगोंके नाश करनेकी चेष्टा की थी, परन्तु किसी उपायसे भी कृतकार्य्य न होसके। इससे जब तुमने इस प्रकारसे नीच बुद्धिके वशमें होकर उन महात्माओंको पद पद पर बुराई की है, तब कैसे कहा जावे कि तुमने उन लोगोंके विषयमें कुछ भी अपराध नहीं किया है। अरे पापी! उन लोगोंके प्रार्थना करनेपर भी तू उनके पैतृक राज्यका अंश इस समयमें नहीं देता है, यह ठीक है, परन्तु जिस समयमें ऐश्वर्य भ्रष्ट होगा तथा तू मारा जायगा, उसी समयमें वह सब प्रदान करना पड़ेगा। आहा। क्या आश्चर्यका विषय है, कि तुम सदासे महा नीचता और मिथ्या व्यवहार तथा अत्यन्त निठुरताके सहित पाण्डवोंके सङ्ग अनेक बुरे कर्मोंका अनुष्ठान करके भी इस समयमें उसको उलटा सिद्ध करके निर्दोषी बना चाहते हो? हे राजन्! तुम्हारे माता पिता, भीष्म, द्रोणाचार्य्य और विदुर आदि सज्जन पुरुष लोग तुमको "शान्त होइए" यह वचन बार बार कहते हैं, तौ भी तुम शान्तिके स्थापित होनेमें सहमत नहीं होते हो। हे राजन्! सन्धि होनेसे तुम्हें और युधिष्ठिर दोनोंका परम कल्याण हो सकता है, परन्तु उसमें तुम्हारी रुचि नहीं होती है, इसमें तुम्हारी बुद्धिकी लघुताके अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है? हे नरनाथ! तुम सुहृद लोगोंके वचन उल्लङ्घन करके किसी समयमें भी अपना कल्याण लाभ करनेमें समर्थ न हो सकोगे; इससे जिस कर्म्मके अनुष्ठान करनेके निमित्त तुम हठ करते हो, वह महा अधर्म्म और अयश देनेवाला है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इस प्रकारसे कहते हुए जब श्रीकृष्णचन्द्रने अपना वक्तव्य समाप्त किया, तब क्रूरबुद्धि दुःशासन कौरवोंकी सभाके बीचमें क्रोधी दुर्य्योधनसे बोला, हे महाराज। यदि तुम अपनी इच्छासे पाण्डवोंके सङ्गमें सन्धि न करोगे; तो कौरव लोग निश्चय ही तुम्हें बांधकर पाण्डवोंको समर्पण करेंगे। दूसरेकी क्या बात है? भीष्म, द्रोणाचार्य्य और तुम्हारे पिता महाराज धृतराष्ट्र—ये ही लोग कर्णको, तुम्हें और मुझको बांधके पाण्डवोंके हाथमें समर्पण करेंगे। भाईकी बात सुनकर माननीय लोगोंका अवमान करनेवाला, मर्य्यादासे रहित, लज्जाहीन, दुष्ट-बुद्धि दुर्य्योधन

क्रोधसे भरकर प्रचण्ड सर्पकी भांति लम्बी सांस लेते हुए अपने आसनपरसे उठकर राजा धृतराष्ट्र, श्रीकृष्ण, भीष्म, द्रोणाचार्य्य, विदुर, महाराज बाह्लिक, कृपाचार्य्य और सोमदत्त आदि सब लोगोंका अनादर करके नीच पुरुषकी भांति सभासे प्रस्थान किया। राजा दुर्य्योधनको सभासे उठके चलते हुए देखकर सेवकोंके सहित उनके सब भाई और जितने राजा वहांपर बैठे थे, सब उनके पीछे पीछे चले। तब शान्तनुपुत्र भीष्म दुर्य्योधनको इस प्रकारसे क्रोधसे भरकर सहसा उठते और भाइयोंके सहित चलते देखकर श्रीकृष्णचन्द्रसे बोले, हे जनार्द्दन। जो पुरुष धर्म्म और अर्थको त्याग कर निज हठका ही अनुमोदन करता है, उसके शत्रुलोग शीघ्र ही उसे व्यसनमें फंसे हुए देखकर हंसी करते हैं। यह नीचबुद्धि वृथा राज्यका अभिमान करनेवाला दुरात्मा राजपुत्र दुर्य्योधन केवल क्रोध और लोभके वशमें होकर चलता है। इसके अनुगामी यह सम्पूर्ण क्षत्रिय वीर कालसे पके हुए फलके समान शीघ्र पतित होनेके योग्य बोध हो रहे हैं; क्योंकि ये लोग मोहमें पड़ कर मन्त्रियोंके सहित सब ही दुर्य्योधनके पीछे पीछे जा रहे हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महा पराक्रमी, कमल-नेत्र, यदुकुलभूषण श्रीकृष्ण भीष्मके वचन सुनकर उनसे और द्रोणाचार्य्य आदि बूढे कौरवोंसे बोले, कि आप लोग जो ऐश्वर्य्यमें दूषित और मर्य्यादारहित दुर्य्योधनको शासन करके अच्छे मार्गमें नहीं लाते हैं, इससे आप लोगोंमें बहुत भारी दोष लग रहा है। हे शत्रुनाशन! हे पापरहित! उस विषयमें मैं यह कार्य्य उपयुक्त समझता हूं, इसका अनुष्ठान करनेसे मङ्गल हो सकता है, इससे आप लोग यह पूर्णरूपसे सुनिये। हे भरतसत्तम! मैं जिस बातका प्रस्ताव करूंगा, यदि वह आपके अनुकूल और मानने योग्य होवे, तो प्रत्यक्षमें कल्याण और हितकारक होगा। देखिये उग्रसेनका पुत्र दुराचारी कंस इन्द्रियोंके वशमें होकर पिताके जीवित रहते ही उस वृद्ध भोजराजका ऐश्वर्य्य हरण करके मृत्युके वशमें होगया था, उसकी उस नीचताको देखकर बन्धुबान्धवोंने उसे त्याग दिया और मैंने भी जातिके लोगोंके हितकी कामनासे महा युद्धमें उसका संहार किया था। फिर मैं और जातिके लोगोंने भोजराजके कुलको बढानेवाले आहुकपुत्र उग्रसेनका अच्छी प्रकारसे सत्कार करके फिर उनको राज्यका स्वामी बनाया। हे भरतनन्दन महाराज धृतराष्ट्र! इसी प्रकारसे कुलकी रक्षा करनेके निमित्त एकमात्र कंसको त्यागनेसे यदुवंशी अन्धक और वृष्णि लोग सहमत होके परम सुखसे बढ रहे हैं। और भी देखिये, जब देवासुरके महा युद्धमें कालस्वरूप सब शस्त्र उठे, तब सम्पूर्ण लोकोंके नाश होनेकी सम्भावना थी, उस समय सब लोकोंके पितामह प्रजापति भगवान् ब्रह्माने कहा था; कि इस युद्धमें असुर, दैत्य और दानव सब हार जावेंगे, और आदित्य, वसु, रुद्र आदि देवता लोग विजयी होंगे, परन्तु देवता, असुर, गन्धर्व्व यक्ष, राक्षस, सर्प और मनुष्य आदि सब ही आपसमें लड़के नष्ट-प्राय हो जावेंगे। प्रजापति ब्रह्माने अपने मनमें ऐसा निश्चय करके धर्म्मको आज्ञा दी, कि इन सम्पूर्ण दैत्य दानवोंको बांधके वरुणके हाथमें समर्पण करो। ब्रह्माकी आज्ञा सुनके धर्म्मने समस्त दैत्य दानवोंको बांधके वरुणके हाथमें समर्पण किया, तब जलके स्वामी वरुणने उन लोगोंको धर्म्मके और अपने फांसेसे बांधकर यत्नपूर्व्वक समुद्रके बीचमें रोक रक्खा। उसी प्रकारसे आप लोग भी दुष्ट दुर्य्योधन, कर्ण, शकुनि और दुःशासनको बांधके पाण्डवोंके हाथमें समर्पण कीजिये। पण्डितोंने कहा है, यदि एक पुरुषके त्यागनेसे कुल भरकी रक्षा

होती हो, तो अवश्य ही उसको त्याग देना चाहिये ; सम्पूर्ण गांव भरकी रक्षाके निमित्त कुलको, जन-पदके वास्ते गांवको और अपनी आत्माकी रक्षाके निमित्त इस सम्पूर्ण पृथ्वीको भी त्याग देना चाहिये। हे क्षत्रियश्रेष्ठ महाराज धृतराष्ट्र! आप दुर्य्योधनको शान्त करके पाण्डवोंके सङ्ग सन्धि स्थापित करें; आपके निमित्त जिसमें सब क्षत्रियोंका नाश न होने पावे।

१२८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, राजा धृतराष्ट्र श्रीकृष्णचन्द्रकी बातोंको सुनकर शीघ्रतापूर्व्वक सब धर्म्मोंके जाननेवाले विदुरसे बोले, हे वत्स! तुम जल्दी जाकर दीर्घ-दर्शिनी महा बुद्धिमती गान्धारीको इस स्थान पर बुला लाओ ; उसके सङ्ग मिलकर मैं नीचबुद्धि दुर्य्योधनसे कुछ विनती करूंगा, वह भी यदि इस दुष्टको शान्त कर सके, तो भी हम लोग परम सुहृद श्रीकृष्णचन्द्रके वचनोंकी रक्षा कर सकेंगे, शान्तिके प्रसङ्गसे गान्धारीको नीच बुद्धि, दुष्टोंकी सहायतासे युक्त, लोभसे भरे हुए, दुष्ट पुत्रोंको अच्छे मार्गमें ले आना कुछ भी असम्भव नहीं है। प्रारब्धसे वह यदि दुर्य्योधनके किये हुए इस महा घोर व्यसनसे हम लोगोंको मुक्त कर सके, तो यह महा अनुष्ठान हम लोगोंके निमित्त सदाके लिये मङ्गलदायक होगा, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। विदुर महाराज धृतराष्ट्रकी इन बातोंको सुनते ही शीघ्र दीर्घ-दर्शिनी गान्धारीको वहांपर बुला लाये।

अनन्तर राजा धृतराष्ट्रने उन्हें सम्बोधन करके कहा, हे गान्धारी! देखो यह शासनको लांघनेवाला तुम्हारा पापी पुत्र ऐश्वर्य्यके लोभसें पड़कर सब ऐश्वर्य्य तथा जीवनका भी विसर्ज्जन करनेपर उपस्थित हुआ है। वह मर्य्यादासे रहित, मूढबुद्धि, पापी सुहृद लोगोंकी बातोंको न मानकर महा मूर्खकी भांति पाप कर्म्म करनेवाले पामरोंके सङ्ग सभासे उठके चला गया है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, वह यशस्विनी राजपुत्री गान्धारी स्वामीका वचन सुनकर यथार्थ कल्याणकी इच्छासे कहने लगी। हे महाराज! उस राज्यमदसे मतवारे आतुर पुत्र को शीघ्र यहांपर बुलाइये। धर्म्म अर्थके नाश करनेवाले मूर्ख लोग कभी राज्य नहीं पा सकते हैं, तो भी उस विनय-रहित दुर्य्योधनने सब प्रकारसे राज्य प्राप्त किया है। हे महाराज धृतराष्ट्र! इस विषयमें आप ही अत्यन्त निन्दाके योग्य हैं, क्योंकि उसकी पापबुद्धि जानकर भी केवल पुत्रके प्रेमके वशमें होकर आप उसकी बुद्धिको उलटना चाहते हैं। हे राजन्! वह पाप बुद्धि दुर्य्योधन काम, क्रोध और मोहमें स्थित है; इससे अब उसको बलपूर्व्वक शान्त करनेकी आपकी शक्ति नहीं है। नीच बुद्धि, दुष्ट मन्त्रियोंके कहेमें चलनेवाला अज्ञानी, पापी और लोभसे खिंचे हुए पुत्रको आपने जो राज्य प्रदान किया था, उसीका फल इस समय भोग रहे हो। हे राजेन्द्र! आत्मीय लोगोंके संग भेद होनेसे आप न जाने क्यों उपेक्षा कर रहे हैं, इसे मैं कुछ भी नहीं समझ सकती हूं। शत्रु लोग तुमको दुष्ट मित्रों तथा बन्धु-बान्धवोंसे हीन देखकर अवश्य ही हंसी करेंगे, इसमें किञ्चित् मात्र भी सन्देह नहीं है। हे महाराज! आत्मीय पुरुषोंके निकट साम तथा दानसे जब पार हो सकते हैं, तब कौन बुद्धिमान् पुरुष उस स्थानमें दण्डका प्रयोग करता है?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, गान्धारीके वचन और धृतराष्ट्रकी आज्ञासे विदुर दुर्य्योधनको फिर सभामण्डपमें बुला लाये। दुर्य्योधन माताके वचन सुननेकी इच्छासे क्रोधमें भरे लाल नेत्रसे युक्त, महा प्रचण्ड सर्पके समान

लम्बो सास लेते जब फिर वहांपर उपस्थित हुए, तब गान्धारी इस कुमार्गगामी दुष्ट पुत्रकी यथा उचित निन्दा करती हुई यह कहने लगी। हे पुत्र दुर्य्योधन! एक बार ध्यान देकर मेरे इन हितकर वचनोंको सुनो। इसके मानने से बन्धुबान्धवोंके सहित तुम परम सुखसे रहोगे। तुम्हारे पिता भरतसत्तम धृतराष्ट्र, भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, विदुर आदि सुहृद लोगोंने तुम्हारे वास्ते जो कुछ वचन कहे हैं, उनका तुम निःसन्देह पालन करो। तुम्हारे शान्त होनेहीसे भीष्म, धृतराष्ट्र, मेरी तथा द्रोण आदि सुहृद पुरुषोंकी पूरी पूजा तथा सम्मान होगा। हे महा बुद्धिमान् भरतर्षभ! केवल अपनी इच्छाके अनुसार ही कभी कोई पुरुष राज्यकी प्राप्ति और भोग नहीं कर सकता, इन्द्रियोंके वशमें रहनेवाला मूढ़बुद्धि पुरुष बहुत दिनतक राज भोग करनेमें कभी समर्थ नहीं होता। इन्द्रियोंको वशमें करनेवाला, तेजस्वी बुद्धिमान् पुरुष राज्य करनेका यथार्थ पात्र होता है। काम और क्रोध ये दोनों ही पुरुषको सब अर्थोंसे सदा आकर्षित करते रहते हैं, इससे जो बुद्धिमान् राजा इन दोनों प्रबल शत्रुओंको जीत सकता है, वही इस सम्पूर्ण पृथ्वीको जीतनेका अधिकारी होता है। लोकका स्वामी होकर प्रभुता करना बहुत बड़ा कार्य्य है। दुष्टबुद्धि पामर लोग सहजहीमें राज्य पदके पानेकी अभिलाषा करते है, वह ठीक है परन्तु उसकी रक्षा करनी उनके सामर्थ्यसे बाहर है। जो पुरुष इस ऊंचे पदको पानेकी इच्छा करता है, उसे प्रथम सम्पूर्ण इन्द्रियोंको अपने वशमें करना उचित है। काठके मिलनेसे जैसे अग्नि बढ़ती है, वैसे ही इन्द्रियोंको विषयोंसे रोकनेसे पुरुषकी बुद्धि बढ़ती रहती है। चञ्चल और दुष्ट घोड़े जैसे मार्गमें मूर्ख सारथीको नष्ट करते हैं वैसे ही बिना वशमें की हुई इन्द्रियां भी पुरुषका नाश कर देती हैं। जो पुरुष पहिले आत्माको न जीतकर सेवकोंके जीतनेकी इच्छा करता है, और सेवकोंको बिना वशमें किये ही शत्रुओंके जीतनेकी अभिलाषा करता है, वह अवश्य ही दूसरेके वशमें पड़कर धनसम्पत्तिसे भ्रष्ट होता है। आत्माका हित करनेवाला पुरुष जो कुछ आत्मामें स्वाभाविक दुष्ट भाव दीख पड़े उसके विरुद्ध आचरण करे, उसके अनन्तर सेवक और शत्रुओंके जीतनेकी इच्छा करे, ऐसा करनेमें उसका उद्योग किसी प्रकारसे भी निष्फल न होगा। राजलक्ष्मी— इन्द्रियोंके जीतनेवाले, सेवकोंको वशमें रखनेवाले, दुष्टोंको दण्ड देनेवाले, सत्य असत्यका विचार करनेवाले वीर पुरुषको अत्यन्त ही दृढ़ताके साथ सेवा करती है। छोटे छिद्रोंसे युक्त जालमें बंधी हुई दो मछलियोंकी भांति पुरुषकी बुद्धिको काम और क्रोध नष्ट कर देते हैं। इन्हीं दोनोंसे भयभीत होकर देवता लोग राग द्वेषसे रहित स्वर्ग धाममें जानेकी इच्छा करनेवाले मनुष्योंके निमित्त स्वर्गका द्वार रोके रहते हैं। काम क्रोधके त्यागनेहीसे देवताओंकी वृद्धि हुई है। जो बुद्धिमान् राजा काम, क्रोध, लोभ, मोह और अभिमान आदि शत्रुओंको पूरी रीतिसे जीतता है, वही इस पृथ्वीका राज्य कर सकता है। धर्म्म अर्थकी अभिलाषा और शत्रुओंके जीतनेकी इच्छा करनेवाला राजा पहिले अपनी इन्द्रियोंको वशमें करनेका यत्न करे। जो पुरुष काम क्रोधके वशमें होकर अपने आत्मीय पुरुषोंके सङ्ग कपट आचरण करता है, उसको बहुतसी सहायता नहीं मिल सकती। हे पुत्र! अत्यन्त बलवान् धर्म्मात्मा पाण्डवोंके सङ्ग मिलकर तुम सम्पूर्ण पृथ्वीका भोग करोगे। हे पुत्र! शान्तनुपुत्र भीष्म और महात्मा द्रोणाचार्य्यने तुमसे जो कुछ वचन कहे हैं [illegible] हैं, कृपा और [illegible]

नहीं जीत सकता। इससे तुम अत्यन्त कठिन तथा कठोर कर्मोंके करनेवाले महात्मा कृष्णके शरणागत होओ, श्रीकृष्णके प्रसन्न होनेसे दोनों ओरका कल्याण होगा, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। जो पुरुष बुद्धिमान्, सब कार्य्योंको जाननेवाले, हित चाहनेवाले सुहृद पुरुषोंके शासनमें नहीं निवास करता, वह अवश्य ही शत्रुओंका आनन्द बढ़ाता है। हे तात! युद्ध करना किसी प्रकारसे भी उत्तम नहीं है, क्योंकि उसमें धर्म्म अर्थ कुछ भी नहीं सिद्ध हो सकता, तब उससे सुख मिलनेकी किस प्रकारसे सम्भावना हो सकती है? युद्धमें जो सदा जय हुआ करती है, यह भी कुछ निश्चय नहीं है इससे तुम ऐसे निन्दनीय कार्य्यमें कभी अपने चित्तको मत लगाओ। हे शत्रुनाशन! जिसमें पाण्डवोंके संग भेद न हो जावे इसी भयसे भीत होकर तुम्हारे पिता महाराज धृतराष्ट्र, भीष्म और वाह्लिकने न्यायपूर्व्वक पाण्डवोंको राज्यका आधा भाग बांट दिया था, इस समय तुम उन वीरोंके प्रतापसे निष्कण्टक सम्पूर्ण पृथ्वीका राज्य भोग कर रहे हो, यह उसी राज्यके अंशके देनेका फल है। हे महा बुद्धिमन्! इससे यदि तुम राज्यका आधा अंश भोग करने-की इच्छा करते हो, तो इस समय भी पाण्डवोंको आधा राज्य प्रदान करो। हे भारत! पृथ्वीके आधे ही राज्यसे सेवकोंके सहित तुम्हारा आनन्दसे जीवन बीतेगा, विशेष करके सुहृद पुरुषोंकी बात माननेसे तुम अत्यन्त यशके पात्र बनोगे। हे पुत्र! उन लक्ष्मी-वान्, धृतिसे युक्त, बुद्धिमान् और इन्द्रियोंके जीतनेवाले पाण्डवोंके संगमें युद्ध करनेसे वे लोग तुमको इस बड़े भारी सुखसे भ्रष्ट कर सकेंगे। हे भरतर्षभ! इससे तुम पाण्डवोंको आधा राज्य देकर सुहृद पुरुषोंकी इच्छाके अनुसार यथा उचित राज्यका शासन करो। हे पुत्र! तुमने पाण्डवोंको तेरह वर्षतक राज्यसे पृथक् करके उन लोगोंको जो कुछ दुःख तथा क्लेश दिया है, वही बहुत हुआ है। हे महा बुद्धिमन्! अब इस समय तुम काम क्रोध त्याग करके उन लोगोंके दुःख और क्लेशकी शान्ति करो। तुम कुन्तीपुत्रोंका धन हरलेनेकी अभिलाषा करते हो, यह ठीक है, परन्तु किसी समयमें भी तुम्हारी यह अभिलाषा पूरी न हो सकेगी, केवल तुम ही नहीं, महा क्रोधी सूर्य्यपुत्र कर्ण और तुम्हारा भाई दुःशासन, कोई भी उस अभिलाषाको पूर्ण करनेमें समर्थ न होगा, तब यह हो सकता है, कि भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, कर्ण और भीम, अर्ज्जुन, धृष्टद्युम्न आदि वीरोंके अत्यन्त क्रोध करनेपर इस सम्पूर्ण पृथ्वीके प्रजा मात्रके जीवित रहनेकी सम्भावना न रहेगी। हे तात! इससे तुम क्रोधके वशमें होकर इस बड़े हुए प्रतिष्ठित कुरुवंशका व्यर्थ नाश मत करो, जिसमें यह सम्पूर्ण पृथ्वीकी प्रजा तुम्हारे निमित्त नाश न होजावे, तुम वही उपाय करो। अरे मूढ़! तू जो यह समझता है, कि भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य आदि सब वीर अपनी पूरी शक्तिके अनुसार युद्ध करेंगे, सो वह तेरी आशा कभी पूर्ण न हो सकेगी, क्योंकि क्या तुम लोग और क्या पाण्डव लोग दोनों और इन लोगोंके समान ही सम्बन्ध है, विशेष करके धर्म्म ही सबसे प्रबल है। इससे यदि राज्यकी जीविका पानेसे ये लोग अपने प्राणको भी त्यागनेको सम्मत होंगे, तौ भी युधिष्ठिरके ऊपर कभी इन लोगोंकी क्रोधदृष्टि न हो सकेगी। हे तात! लोभसे पुरुषको अर्थ तथा सम्पत्ति मिलती है, यह कहीं भी नहीं दीख पड़ता। हे भरतर्षभ! इससे लोभ करनेका कुछ भी प्रयोजन नहीं है, तुम शान्ति अवलम्बन करो।

१२९ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, दुर्योधन धर्म्म अर्थसे युक्त अपनी माताके उत्तम वचनोंको न मानकर फिर भी उस सभासे निकलकर नीच-बुद्धिसे युक्त दुष्ट पुरुषोंकी मण्डलीमें चले गये, वहांपर जाकर वह सुवलपुत्र शकुनिके सङ्ग सलाह करने लगे। अन्तमें दुर्योधन कर्ण, शकुनि, और दुःशासन इन चार पुरुषोंका यह सङ्कल्प स्थिर हुआ, कि "यह कृष्ण राजा धृतराष्ट्र और भीष्मके सङ्ग परामर्श करके हम लोगोंको बांधनेकी इच्छा करता है, परन्तु इन्द्रने जैसे वलिको बांध लिया था, उसी प्रकार-से हम लोग पहिले ही बलपूर्व्वक इस पुरुष-सिंह कृष्णको शीघ्र ही बांध लेंगे। कृष्णको बांधा हुआ सुनकर पाण्डवलोग दांत टूटे हुए सर्पकी भांति होजावेंगे, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है, क्योंकि यह महाबाहु कृष्ण ही उन लोगोंके सब प्रकारसे सहाय और सकल कल्याणके मूल हैं। सम्पूर्ण यदुवंशियोंमें श्रेष्ठ इस कृष्णके पकड़े जानेपर पाण्डव तथा उनके सहाय सोमकवंशियोंका सब उद्योग नष्ट हो जावेगा। इससे राजा धृतराष्ट्र चाहे कितना ही मना करें, परन्तु हम लोग इसी अवसरमें कृष्णको यहांपर बांध रक्खेंगे, और फिर संशय रहित होकर शत्रुओंके सङ्ग युद्ध करेंगे।

इङ्गितज्ञ महा बुद्धिमान् बलवान् सात्यकीने उन नीचबुद्धि पापियोंके इस पापमय विचारको शीघ्र ही जान लिया, और उसके निमित्त सभासे निकलकर हार्दिकनन्दन कृतवर्म्माके सङ्ग परामर्श करके उनसे कहा, कि मैं जबतक कठिन कर्म्म करनेवाले श्रीकृष्णको यह सब वृत्तान्त सुनाऊं, तबतक आप सेनाका व्यूह बनाकर दृढ़ सावधानताके सहित सभाके द्वारपर उपस्थित रहें। ऐसा कहकर वह पर्व्वतकी कन्दरामें सिंहके समान कौरवोंकी सभामें प्रविष्ट हुए, सभामें जा करके पहिले महात्मा कृष्ण और उसके अनन्तर राजा धृतराष्ट्र तथा विदुरसे इन दुष्टबुद्धियोंका नीच विचार कह सुनाया। उन लोगोंके उस दुष्ट अभिप्रायको कहकर हंसता हुआ कहने लगा, कि नीच बुद्धि दुष्ट और पापी लोग धर्म्म अर्थ और कामसे भी साधु पुरुषोंसे निन्दनीय छलके बन्धनस्वरूपी जो महा नीच अनुष्ठान करनेकी अभिलाषा कर रहे हैं, वह किसी प्रकारसे भी सिद्ध न हो सकेगी। क्रोध और लोभके वशमें होकर ये सब इकट्ठे हुए मूढ़ पुरुष तथा पापी लोग काम, क्रोधसे फसकर कलहस्वरूपी महा भयङ्कर कार्य्य करनेमें तत्पर होंगे। उन लोगोंकी मूर्खताकी बात क्या कहूं, बालक जड़ बुद्धि तथा मतवारे लोग जैसे कपड़ेसे प्रचण्ड अग्निको ग्रहण करनेकी इच्छा करते हैं वैसे ही ये लोग पुण्डरीकाक्ष श्रीकृष्णचन्द्रको बलपूर्व्वक पकड़नेकी अभिलाषा करते हैं। कौरवोंकी सभामें सात्यकीके यह वचन सुनकर दीर्घदर्शी महा बुद्धिमान् विदुर राजा धृतराष्ट्रको सम्बोधन करके बोले, हे शत्रुनाशन महाराज। तुम्हारे पुत्र लोग अत्यन्त ही कालके वश होगये हैं। जब वे सब लोग मिलकर महाघोर अयश मिलानेवाले असाध्य कर्म्म करनेके निमित्त उद्यत हो रहे हैं, और महाबाहु कृष्णको बलपूर्व्वक ग्रहण करनेके निमित्त अभिलाषा करते हैं, तब फिर उन लोगोंके कालके वश होनेमें अब क्या सन्देह है? जलती हुई अग्निके निकट पतङ्गकी भांति वे लोग महाबाहु अत्यन्त कठिन कार्य्य करनेवाले महा बलवान् कृष्णके सम्मुख होकर कबतक जीवित रह सकते हैं? यदि वे सब लोग मिलकर भी इनसे युद्ध करेंगे, तोभी महात्मा कृष्ण हाथियोंको फाड़नेवाले क्रोधी सिंहके समान अकेले ही उन सबको यमपुरीमें पहुंचा सकते हैं परन्तु पुरुषोत्तम कृष्ण धर्म्मको त्यागकर उस निन्दनीय कर्म्ममें कभी प्रवृत्त न होंगे।

विदुरका वचन समाप्त होनेपर महात्मा

श्रीकृष्ण राजा धृतराष्ट्रकी ओर देखकर सुहृद लोगोंके बीचमें बोले, हे राजन्! यदि वे लोग क्रुद्ध होकर बलपूर्वक मुझे पकड़ सकें तो पकड़ें, अथवा मैं ही इन लोगोंको बांध लूंगा, इन दोनों बातोंके लिये आप आज्ञा दीजिये। वे लोग चाहे कितने ही क्रुद्ध क्यों न होवें, मैं अकेला ही उन सबको शासन करनेके निमित्त उत्साही हो सकता हूं, परन्तु कभी मैं ऐसे निन्दित कर्म्मका अनुष्ठान न करूंगा। तुम्हारे पुत्र लोग पाण्डवोंके अर्थके लोभमें पड़कर अपने अर्थसे भी विमुख हो जावेंगे; इसमें मेरी कौनसी हानि है? ये लोग यदि ऐसी इच्छा करते हैं, तब तो राजा युधिष्ठिर अनायास ही कृतकार्य्य हो सकते हैं। मैं आज ही इन लोगोंको और इनके अनुकूल सहाय लोगोंको पकड़के पाण्डवोंको समर्पण कर सकता हूं, ऐसा करना मेरे वास्ते कौनसा कठिन कार्य्य है। हे भरतनन्दन महाराज! तुम्हारे सम्मुख क्रोध और पापबुद्धिसे उत्पन्न हुए ऐसे निन्दित कर्म्ममें मैं कभी प्रवृत्त न होऊंगा। हे राजन्! यह दुर्य्योधन जैसा करनेकी इच्छा करता है, वैसा ही होवे, उसमें मेरी कुछ भी आपत्ति नहीं है, बल्कि तुम्हारे सब पुत्रोंको उस विषयमें मैं आज्ञा देता हूं।

श्रीकृष्णके यह वचन सुनते ही राजा धृतराष्ट्रने विदुरसे कहा, तुम उस राज्यके लोभी पापी दुर्य्योधनको भाई, मित्र, और सेवकोंके सहित यहांपर ले आओ। यदि फिर भी उपदेशसे उसको अच्छे मार्गमें ला सकता उसका कोशिश करनी चाहिये। धृतराष्ट्रकी आज्ञा सुन विदुरने राजाओंसे घिरे हुए दुर्य्योधनको, सभामें न जानेकी इच्छा करनेपर भी फिर सभा मण्डपमें ले आये। तब राजा धृतराष्ट्र कर्ण, दुःशासन और अनेक दुष्ट बुद्धि राजाओंके बीचमें घिरे हुए मूढ़ बुद्धि दुर्य्योधनकी निन्दा करते हुए कहने लगे। अरे पापी क्रूर बुद्धि! तू छोटे कर्म्मोंके करनेवाले सहायकोंके सङ्गमें मिलकर महा भयङ्कर पाप कर्म्मके करनेकी इच्छा करता है। मैंने सुना है, तू इन पाप बुद्धि पामरोंकी सहायतासे अत्यन्त तेजस्वी महाप्रतापी पुण्डरीकाक्ष श्रीकृष्णको पकड़नेकी अभिलाषा करता है, तेरे समान मूढ़ और कुलमें कलङ्क लगानेवाले नीच पुरुषके अतिरिक्त और कौन पुरुष ऐसे उपदेश देनेवाले निन्दित और असाध्य कर्म्मके करनेके निमित्त इच्छा कर सकता है? अरे मूर्ख! इन्द्रके सहित सब देवता लोग भी कृष्णको बलसे नहीं पकड़ सकते, चन्द्रमाको ग्रहण करनेकी इच्छा करनेवाले बालककी भांति तू उस कृष्णको पकड़नेकी अभिलाषा करता है? युद्धके समयमें देवता, गन्धर्व्व, दैत्य, राक्षस आदि जिसका प्रताप सहनेमें असमर्थ हैं; यह वही कृष्ण हैं, यह क्या तू नहीं जानता है? तुम यह निश्चय जान रक्खो, कि हाथसे जैसे वायु तथा अग्निको ग्रहण करना कठिन है, तथा शिरपर पृथ्वीको उठा लेना जैसा असम्भव है, वैसे ही बलसे श्रीकृष्णचन्द्रको भी पकड़ना असम्भव और महा कठिन कार्य्य है।

राजा धृतराष्ट्रका वचन समाप्त होनेपर यहां बुद्धिमान् विदुर भी क्रोधी दुर्य्योधनकी ओर देखकर बोले, हे भरतर्षभ! सौभ नगरके पुर-द्वारमें द्विविद नाम वानर अपने सब प्रकारके प्रयत्न और पराक्रमको प्रकाश करके भी जिस कृष्णको पकड़नेकी इच्छासे बहुतसी शिलाकी वर्षासे सब दिशाओंको पूरित करके पर भी कृतकार्य्य न हो सका; उसी कृष्णको तुम बलपूर्वक पकड़नेकी इच्छा करते हो! निर्मोचन पुरीमें छः हजार असुर लोग जिसको पकड़नेके अभिलाषी होकर फांसीमें बांधनेके निमित्त सब प्रकारसे यत्न और पराक्रम करके भी नहीं पकड़ सके, उसी कृष्णको तुम बलपूर्वक बांधनेकी इच्छा करते हो? कामरूप

देशमें जानेपर जिसको पकड़नेकी इच्छासे महाबली नरकासुर बहुतसे दानवोंके सङ्ग अनेक यत्न और चेष्टा करके भी कृतकार्य्य न हुआ, उसी महा तेजस्वी कृष्णको तुम बलसे बांधनेकी इच्छा करते हो? अलौकिक बल और प्रभावसे युक्त जिस पुरुषोत्तम कृष्णने बालक अवस्थाहीमें पूतना राक्षसी और पक्षी-रूपधारी दोनों असुरोंका नाश किया था, जिन्होंने गोकुलकी रक्षा करनेके निमित्त बांये हाथसे गोवर्द्धन पर्व्वत उठाया था, बुरे कार्य्य करनेवाले अरिष्ट, धेनुक, चाणूर, अश्वराज आदि महा बली असुरों और कंस, दन्तवक्र आदि प्रबल प्रतापी राजाओंकी समररूपी यज्ञमें आहुति दी थी; जिस महा तेजस्वीने बाणासुर, वरुणदेव, जरासन्ध और अग्निदेवताको पराजित किया और कल्पवृक्षको हरकर साक्षात् देवताओंके स्वामी शचीपति इन्द्रको भी परास्त किया है, जो सबके पैदा करनेवाले और स्वयं किसीसे भी नहीं उत्पन्न हुए हैं, सब पौरुष तथा शक्तिके कारण होनेसे जो इच्छा मात्रसे सब कठिन कर्म्म अनायास ही पूर्ण कर सकते हैं, शेष शय्यापर सोते हुए जिन्होंने मधु कैटभ नाम दोनों असुरों और शरीर धारण करके वेदोंको चुराने वाले हयग्रीव असुरको मारा था, उस महा प्रतापी अमित तेजस्वी भगवान् कृष्णको तुम अभीतक भी नहीं जान सके? क्रुद्ध विषधारी सर्पके समान प्रचण्ड तेजसे भरे हुए, अग्निके तुल्य, निन्दा रहित कठिन कर्म्म करने वाले, महाबाहु कृष्णको यदि तुम लोग पकड़नेकी इच्छा करके उनके सम्मुखमें जाओगे, तो जलती हुई अग्निमें गिरनेवाले पतङ्गकी भांति दुष्ट मित्र और सेवकोंके सहित क्षण भर भी जीते न बच सकोगे।

१३० अध्याय समाप्त।

वैशम्पायन मुनि बोले, विदुरके ऐसा कहनेके अनन्तर शत्रुओंको नाश करनेवाले महा प्रतापी अमित तेजस्वी श्रीकृष्णचन्द्र दुर्य्योधनके ऊपर कटाक्ष करते हुए बोले, हे दुर्य्योधन! तुम मुझको अकेला समझ अपनी मूर्खतासे मुझे पकड़नेकी अभिलाषा करते हो, परन्तु तुम यह निश्चय जान रक्खो, कि मैं अकेला नहीं हूं, आदित्य, रुद्र, वसु और ऋषि लोग सब ही मेरे सङ्ग हैं। ऐसा कहके शत्रुओंके नाश करनेवाले श्रीकृष्णचन्द्र ऊंचे स्वरसे हंसने लगे। उस अट्टहासके साथ ही अग्निके समान तेज धारण करनेवाले महात्मा कृष्णके शरीरसे विद्युत्के आकारके समान अंगुष्ठके प्रमाण सब देवता लोग बाहर होने लगे। मस्तक पर ब्रह्मा, छातीमें रुद्र, हृदयमें अग्नि, आदित्य, साध्य, वसु, अश्विनीकुमार, इन्द्रके सहित सब देवता, मरुत्गण, विश्वेदेव तथा अनगिनत यक्ष, राक्षस और गन्धर्व्व उत्पन्न हुए, दोनो हाथोंसे बलदेव और अर्जुन उत्पन्न हुए, दहिने हाथसे धनुर्द्धारी अर्जुन और बांये हाथसे हल-धारी बलराम प्रकट भये। पीछे राजा युधिष्ठिर, भीम, माद्रीपुत्र, नकुल सहदेव और सम्मुखमें सब अन्धकवंशीय और प्रद्युम्न आदिक सम्पूर्ण यदुवंशीय लोग प्रचण्ड अस्त्र-शस्त्रको लेकर खड़े हुए। कृष्णके अपने दोनों हाथोंमें भी शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म, लाङ्गल और नन्दक आदि सब प्रज्वलित अस्त्र प्रकट भये, उनके दोनों नेत्र, नासिकाके छिद्र और दोनों कान ध्यान तथा रोम-कूपमें सूर्य्यकी किरणके समान महा प्रचण्ड धूएं के सहित अग्निके कण निकलने लगे। विराटमूर्त्ति महात्मा कृष्णका वह महा घोर और भयङ्कर रूपको देखकर केवल भीष्म, द्रोण, बुद्धिमान् विदुर, सञ्जय और तप करनेवाले ऋषियोंके अतिरिक्त और वहांपर जितने राजा खड़े थे, सबने अपनी आंखें मूंद लीं। भगवान् कृष्णने उस समयमें द्रोणाचार्य्य आदि महात्मा पुरुषोंको दिव्य दृष्टि प्रदान किया था, इसलिये उन लोगोंने उनका महा

हुई। हे भरतर्षभ! देवता लोग कौरवोंकी सभामें श्रीकृष्णका यह अद्भुत और आश्चर्य्य कार्य्य देखकर आकाशसे दुन्दुभी बजाकर उनके ऊपर फूलोंकी वर्षा करने लगे। सम्पूर्ण पृथ्वी और समुद्र उस समय डग मगाने लगा और समस्त राजा अत्यन्त ही भयभीत होगये। अनन्तर पुरुषसिंह शत्रुनाशन कृष्णने अपने उस अद्भुत और विचित्र विराट् रूपको समेटकर अपना पहिलेका रूप धारण कर लिया और ऋषियोंकी आज्ञा लेकर सात्यकी और कृतवर्म्माका हाथ धरके सभासे निकले। उस समय जब महा कोलाहल होने लगा, तब नारद आदि ऋषि लोग भी अन्तर्ध्यान होकर अपने अपने स्थानपर चले गये। उन लोगोंका अकस्मात् अन्तर्ध्यान होना भी एक आश्चर्य्यका विषय हुआ। पुरुषसिंह कृष्णको सभासे जाते हुए देखकर जैसे देवता लोग इन्द्रके पीछे चलते हैं, उसी प्रकारसे कौरव लोग भी कृष्णके पीछे चले, परन्तु महा तेजस्वी श्रीकृष्णचन्द्र उन अनुगामी राजाओंको और आंखसे भी न देखकर धूएंके सहित अग्निके समान सभासे निकलके चले। सभाके द्वारपर पहुंचके देखा, कि सुवर्णसे भूषित, किङ्किणी लगी हुई श्वेतवर्ण व्याघ्रके चमड़ेसे घिरा हुआ, सब सामग्रियोंसे शोभित, शैव्य सुग्रीव आदि चारो घोड़ोंसे युक्त, बादलके समान गम्भीर शब्द करनेवाले, श्वेतवर्ण, शीघ्रतासे गमन करनेवाले महारथको लेकर दारुक सारथी उपस्थित है। रथको वहां पर सजा हुआ देखकर श्रीकृष्ण उसी समय उस पर चढ़े और यदुवंशियोंमें माननीय हृदिकनन्दन कृतवर्म्मा भी रथपर चढ़े। हे महाराज! शत्रुनाशन कृष्णको चलते हुए देखकर महाराज धृतराष्ट्र फिर उनसे बोले, हे शत्रुनाशन जनार्दन! पुत्रोंके ऊपर मेरी जितनी प्रभुता है, उसको तुमने प्रत्यक्ष ही देखा, कुछ भी तुमसे छिपा नहीं है, मेरी ऐसी अवस्था देखकर विशेष करके मैं कौरवोंकी हित-कामनासे जैसा यत्नवान हुआ हूं, उसे भी जानकर तुम किसी प्रकारसे मेरे ऊपर शङ्का न कर सकोगे। हे कृष्ण! पाण्डवोंके निमित्त मैं कुछभी दुष्ट अभिलाषा नहीं करता हूं; मैंने सब प्रकारके यत्नसे शान्तिके निमित्त उत्सुक होकर दुर्योधनसे जो कुछ वचन कहा था, वह भी सब तुमको विदित है, और सम्पूर्ण कौरव तथा दूसरे राजा लोग भी इस बातको विशेष रूपसे जानते हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर महाबाहु श्रीकृष्ण राजा धृतराष्ट्र, भीष्म, द्रोण कृपाचार्य्य, वाह्लिक और विदुरको सम्बोधन करके बोले, कि कौरवोंकी सभामें जो कुछ हुआ, नीचबुद्धि दुर्योधन अत्यन्त ही क्रोधित होकर महामूर्खकी भांति जिस प्रकारसे घोर कर्म्मके अनुष्ठान करनेमें उद्यत हुआ, और राजा धृतराष्ट्रने जिस प्रकारसे अपनेको प्रभुतासे रहित कहा है, वह सब आप लोगोंने प्रत्यक्ष देखा है, इस समय युधिष्ठिरके समीप जानेके निमित्त मैं सबसे बिदा होता हूं। इसी भांतिसे सबकी अनुमति लेकर पुरुषश्रेष्ठ श्रीकृष्णके रथपर चढ़के चलनेपर भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, वाह्लिक और राजा धृतराष्ट्र अश्वत्थामा, विकर्ण और युयुत्सु आदि महाधनुर्धारी महारथ लोग उनके पीछे पीछे चलने लगे। भगवान् देवकीनन्दन कृष्णने उन सब लोगोंके सम्मुख ही उस रथपर चढ़के पिताकी बहिन अपनी फूफी कुन्ती देवीके दर्शनके निमित्त उसके मन्दिरमें गमन किया।

१३१ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, महात्मा कृष्ण अपनी फफीके घरमें जाकर उसके दोनो चरणोंकी वन्दनकरके कौरवोंकी सभाका जो कुछ वृत्तान्त था, सो संक्षेप रूपसे वर्णन करके कहा;—मैंने और ऋषियोंने तथा भीष्म आदि

पुरुषोंने अनेक युक्तियोंसे युक्त ग्रहण करने योग्य उत्तम तथा हितकर अनेक वचन कहे, परन्तु मूढ़बुद्धि दुर्य्योधनने किसी प्रकारसे उन वचनोंको ग्रहण नहीं किया। इसीसे जाना जाता है, वह पापबुद्धि दुर्य्योधन तथा उसके वशमें रहनेवाले सब राजा लोग कालसे पके हुए फलकी भांति शीघ्र ही पतित होंगे। इससे मैं तुम्हारे समीपसे बिदा होकर शीघ्र ही पाण्डवोंके समीप जाऊंगा। हे महाबुद्धिमती तुम्हारे वचनके अनुसार उन लोगोंसे क्या क्या कहना होगा? सो तुम मुझसे कहो, तुम्हारे सन्देसेके वचनोंको सुननेकी मुझे बहुत ही इच्छा है।

कुन्ती बोली, हे पुत्र कृष्ण! तुम मेरे वचनके अनुसार धर्म्मात्मा राजा युधिष्ठिरसे यह कहना "हे पुत्र! तुम्हारे धर्म्मकी बहुत ही हानि होरही है, शान्ति चाहनेवाले ब्राह्मणोंकी भांति तुम्हारी यह वेद-अध्यायन करनेवाली मन्दबुद्धि केवल धर्म्महीकी ओर झुकी रहती है, इससे इस समय भी सावधान होजाओ। अपने धर्म्मका व्यर्थ ही नाश मत करो प्रजापति स्वयम्भू भगवान्‌ने धर्म्मको जिस जिस प्रकारके स्वरूपसे उत्पन्न किया है, तुम उसी स्वरूपसे उसको मानो। देखो उनकी भुजासे जीविका उपार्जन करनेवाले क्षत्रियोंकी उत्पत्ति भई है, क्षत्रियोंका धर्म्म यही है कि क्रूर कर्म्म अर्थात्‌ युद्ध आदिसे सदा प्रजाका पालन करनेमें तत्पर होवे। मैंने पण्डितोंके मुखसे जिस प्रकार सुना है, उसीके अनुसार इस विषयकी एक उपमा भी कहती हूं, उसे तुम सुनो। पहिले समयमें धनके स्वामी कुबेर राजर्षि मुचुकुन्दके ऊपर प्रसन्न होकर उनको समस्त पृथ्वीके राज्य देनेके निमित्त उद्यत हुए थे, परन्तु उस बलवान्‌ राजाने उसको नहीं ग्रहण किया। उन्होंने यह कहा था, कि "मेरी यह प्रतिज्ञा है, कि अपने बाहुबलसे उपार्जन किये हुए राज्यका भोग करूंगा" यह सुनकर कुबेर बहुत ही विस्मित और प्रसन्न हुए थे। क्षत्रधर्म्ममें निष्ठावान्‌ राजा मुचकुन्दने भी अपने बाहुबलसे समस्त पृथ्वीका राज्य उपार्ज्जन करके भोग किया था। हे तात! प्रजा अच्छी प्रकारसे रक्षित होकर जिस किसी धर्म्मका अनुष्ठान करती है; राजा उसके चौथे अंशका भागी होता है। राजा स्वयं धर्म्मका आचरण करने पर देवताका पद पानेके योग्य होता है, परन्तु यदि वह अधर्म्मका आचरण करे, तो अवश्य ही नरकमें जाता है। राजा पूर्ण रीतिसे यदि दण्ड करे तो वह ब्राह्मण आदि चारो वर्णोंको वर्णोंके अनुसार अपने अपने धर्म्ममें लगाकर, बहुत ही धर्म्म सञ्चय करनेमें समर्थ होसकता है। यहांतक कि जबतक दण्डदेनेवाला राजा सब प्रकारसे अपने धर्म्मके अनुसार नीतिशास्त्रके अनुकूल कार्य्य करता है, तबतक युगों तथा समयोंमें श्रेष्ठ सत्ययुग कहाता है। हे धर्म्मज्ञ! "काल राजाका कारण है, अथवा राजा कालका कारण है?" ऐसी शङ्का जिसमें तुम्हारे मनमें उत्पन्न न होवे, इस निमित्त तुम यह निश्चय जान रक्खो कि राजा ही कालका कारण है। धर्म्म और अधर्म्मके तारतम्यके अनुसार राजा ही सत्ययुग त्रेता, द्वापर, कलियुग, इन चारो युगोंके कारण हुआ करते हैं। जो राजा ऊपर कहे हुए सत्य कालके प्रवर्त्तक होते हैं, वे स्वर्ग भोग करते हैं। जो त्रेतायुगका प्रवर्त्तन करते हैं, उन्हे भी स्वर्गभोग मिलता है, परन्तु बहुत नहीं। द्वापर युगके प्रवर्त्तन करनेवाले राजा भी यथा उचितसे पुण्यफलका अंश पाते हैं, परन्तु जो राजा कलियुगको उत्पन्न करता है उसको बहुत ही पाप भोगना पड़ता है। वह नीच कर्म्म करनेवाला राजा बहुत दिनतक नरकमें वास करता है। राजाके जो दोष रहते हैं, वे समस्त संसारमें फैल जाते हैं और राजाको भी दोष लगाते हैं। हे पुत्र! तुम्हें

तुम पिता और पितामहके आचरणके अनुसार राजधर्म्मकी आलोचना करो। तुम जिस धर्म्ममें स्थित होनेकी अभिलाषा करते हो, वह कभी राजऋषियोंका धर्म्म नहीं कहा जा सकता है, क्योंकि करुणा रसकी पोषकता, दीन-भाव और शान्त-स्वभावसे स्थित रहनेपर प्रजा पालन रूपी फलके मिलनेकी सम्भावना नहीं रहती। तुम अपनी बुद्धिके अनुसार जैसा आचरण करते हो, उसके निमित्त पहिले राजा पाण्डु, मैं और पितामह आदि सब लोगोंने कभी तुम्हें आशीर्वाद नहीं दिया है। मैं सदा तुम्हारे यज्ञ, दान, तपस्या, वीरता, बुद्धि, सन्तान, माहात्म्य, बल और आयुकी प्रार्थना करती थी। शुभ आकांक्षा करनेवाले ब्राह्मण लोग भी पूर्ण रीतिसे सत्कार पानेपर तुम्हारी दीर्घ-आयु; धन और पुत्र आदिके निमित्त अभिलाषा करते हुए पितर-लोक और देव-लोकके उद्देश्यसे सदा स्वाहा और स्वधा प्रदान करते थे। पितर और देवता लोग भी सदासे क्षत्रिय पुत्रोंके निमित्त दान, अध्ययन, यज्ञ और प्रजापालनकी अभिलाषा करते हैं। हे तात! इससे यह दान आदि कर्म्म,—धर्म्म हों, चाहे अधर्म्म हों, क्षत्रिय-धर्म्मके अनुसार तुमने इन्हों सब धर्म्मोंके अनुष्ठान करनेके निमित्त जन्म ग्रहण किया है, परन्तु दान आदिका करना तो दूर रहा, तुम उत्तम कुलमें उत्पन्न होके तथा सब विद्या जानकर भी इस समय जीविकाके दुःखसे पीड़ित होरहे हो। क्षुधासे आर्त्त हुए मनुष्य लोग जो बलवान् तथा दान देने योग्य राजाका आसरा करके सन्तुष्ट और प्रतिष्ठित होते हैं, इससे बढ़के दूसरा धर्म्म और कौनसा हो सकता है,—पृथ्वीमें राज्य प्राप्त करके धर्म्मात्मा पुरुषका यही कर्त्तव्य कर्म्म है, किसीको दान, किसीको बल, किसीको मीठे वचनोंसे अपने वशमें कर लेते हैं। ब्राह्मण भिक्षा वृत्तिका अवलम्बन करे, क्षत्रिय प्रजा-पालनमें तत्पर होवे, वैश्य धन उपार्जन करे और शूद्र इन ब्राह्मण आदि तीनों वर्णोंकी सेवा करे; यही सनातन धर्म्म है। इससे भीख मांगना भी तुम्हारे वास्ते उत्तम नहीं है और कृषि आदि व्यवसायका करना भी तुम्हारे पक्षमें युक्त नहीं है। क्षत अर्थात दीन दुःखियोंके उद्धार करनेसे बाहुबल ही क्षत्रियोंके एक मात्र जीविकाका स्थान है। हे महाबाहु! इससे तुम साम, दान, भेद, दण्ड अथवा विनय आदि जिस किसी उपायसे हो सके,—अपने पिता पितामहके राज्यका अंश फिर ग्रहण करो। देखो, मित्रोंके आनन्द बढ़ानेवाले तुमको उत्पन्न करके भी मैं इस समय बन्धु बान्धवोंसे रहित होकर पराये अन्नसे अपना जीवन धारण करती हूं, इससे बढ़के तुमको और अधिक दुःख क्या होगा? हे पुत्र! इससे तुम राजधर्म्मके अनुसार युद्ध करो। व्यर्थ कापुरुषताको प्रकाश करके पूर्व्व पितृ-पितामहका नाम लोप मत करो। और तुम सब भी भाइयोंके सहित पुण्यहीन होकर पापमय नरककी गति पानेके अधिकारी मत बनो।"

१३२ अध्याय समाप्त।

कुन्ती बोली, हे परन्तप! मैंने युधिष्ठिरसे कहनेके निमित्त तुमसे जो वचन कहे हैं, पण्डित लोग विदुला और उसके पुत्रके सम्वाद हुए इस नीचे कहे हुए पुराने इतिहासको इसके लिए उदाहरणमें कहते हैं। इसमेंसे जो कुछ मङ्गल दायक वचन हो, अथवा इसकी अपेक्षा यदि कुछ अधिक श्रेष्ठ वचन सम्भव हो, तो तुम उसीको युधिष्ठिरके समीप कहना।

पहिले समयमें विदुला नामक एक दीर्घ दर्शिनी यशस्विनी राजकन्या थी। वह क्षत्र धर्म्ममें रत, विदुषी, कुछ क्रोधी और क्षत्रिय स्वभावसे युक्त तथा बहुतसी राजसभाओंमें प्रसिद्ध थी। उसने अनेक लोगोंके बहुतसे वचन

सुने थे; और अनेक शास्त्र पढ़ चुकी थी। यह कर्कश राजकन्या अपने पुत्रको सिन्धुराजके द्वारा पराजित होकर उद्योग-रहित और उत्साह शून्य तथा मनमलिन, चित्तसे दुःखित देखकर यह कहके निन्दा किया करती थी; —"अरे शत्रुनन्दन! तू मेरा पुत्र नहीं है, मेरे गर्भसे तुम्हारा जन्म नहीं हुआ और तुम्हारे पिताने भी तुम्हें उत्पन्न नहीं किया, तू न जाने कुलसे काटकरूप होकर कहांसे आगया है? इसको मैं कुछ भी नहीं समझ सकती हूं। तुम्हारा मान, सक्षम और पुरुषार्थ कुछ भी नहीं है, तुम्हारा रूप नपुंसककी भांति बोध होता है, तुम्हारी गिनती पुरुषोंमें नहीं हो सकती, तू सदाके वास्ते इकबारगी आशा रहित होगया है। अरे मूर्ख! यदि तू अपने कल्याणकी इच्छा करता है, तो अबसे भी पुरुषोंके योग्य पुरुषार्थका अवलम्बन कर। थोड़ेहीमें तृप्त होकर इस अपरिमेय आत्माका अपमान मत कर। निर्भय रह, उत्साह और उद्योगसे अपने चित्तकी शङ्काओंको दूर कर। अरे नपुंसक! पराजित, मान-रहित, बन्धु-बान्धवोंको शोक और शत्रुओंका आनन्द बढ़ानेवाला होकर इस प्रकारसे क्यों पड़ा है? शीघ्र उठ। हा! छोटे छोटे पात्र जैसे अल्प ही जलसे भर जाते हैं तथा चूहेकी अञ्जली थोड़े ही अन्नसे भर जाती है, वैसे ही कापुरुष लोग भी थोड़े ही वित्तसे सन्तुष्ट हो जाते हैं। अरे कुलको कलङ्क लगानेवाले! तू अगर महा विषधारी सर्पके दांतको उखाड़कर मर जावे तो उत्तम है। कुत्तेकी भांति इस नीच वृत्तिका अवलम्बन करके मरना उत्तम नहीं है। तू अपने जीनेकी आशा त्याग करके भी पराक्रमका प्रकाशित क्यों नहीं करता? आकाशमें उड़नेवाले बाज पक्षीकी भांति शत्रुओंके ऊपर क्यों नहीं गिरता अथवा इधर उधर घूमकर मौनव्रत धारणकर शत्रुओंका छिद्र क्यों नहीं खोजता? अरे क्लीव प्रकृति वाले! तू वज्रसे मारे गये मृतककी भांति जड़रूपसे इस समय क्यों सो रहा है? शीघ्र उठ। शत्रुओंसे हारकर अब यह सोनेका समय नहीं है। दीनताका अवलम्बन करके लोकमें निन्दित न बन, अपने पुरुषार्थसे तू सब लोकोंमें विख्यात हो जा। साम दान आदि चारों उपायोंके अनुसार पण्डितोंने जो उत्तम और अधम व्यवस्था कही है, उसमेंसे तुम तेजस्वियोंके योग्य दण्डरूपी श्रेष्ठ उपायका अवलम्बन करके उत्तम श्रेणीमें उपयुक्त बनो। अरे डरपोक-स्वभाववाले! अग्निसे युक्त रूखे काठके समान एक घड़ी भरके वास्ते भी क्यों नहीं जल उठता? व्यर्थ ही जीवनकी इच्छा करता हुआ, ज्वालासे रहित भूसकी अग्निके समान क्यों छिपा हुआ है? बहुत दिनतक ऐसी दशामें पड़े रहनेसे थोड़े समयतक भी उठके अपने तेजका दिखाना सौगुना उत्तम है। मेरा मत यही है, कि किसी राजाके घर अत्यन्त कठोर तथा बहुत कोमल स्वभाववाला पुत्र कभी उत्पन्न न होवे। युद्धविद्याके जाननेवाले वीर-पुरुष संग्राम-भूमिमें शत्रुओंके सम्मुख जाकर वीर मनुष्योंके योग्य सम्पूर्ण उत्तम कर्म्म करके धर्म्मके समीप ऋणरहित होते हैं, किसी प्रकारसे अपनी आत्माका तुच्छ नहीं होने देते, इससे वह अपनी मनोवाञ्छित वस्तु पावे, अथवा न पावे, इसकी कभी शोक नहीं करते, बल्कि प्राणकी आशा त्याग करके अन्तिम कर्त्तव्य कार्य्यका आचरण करते हैं। हे पुत्र! इससे तू चाहे अपना पुरुषार्थ प्रकाशित कर, अथवा वीरोंके योग्य संग्राममें मरके स्वर्गको जा, धर्म्मको छोड़के तुझे जीनेसे क्या प्रयोजन है? अरे क्लीव! तेरे अग्निहोत्र, तपस्या, सत्य, वेदका पढ़ना [illegible] बलि-वैश्वदेव, आदि सब [illegible] और भोग तथा सुखका मूल [illegible] होगया। इससे [illegible]

से क्या प्रयोजन है? यदि इकवारगी अपनी पराजय होती हुई देखे, तो वीर-पुरुषका यही कर्त्तव्य कार्य्य है, कि शत्रुकी जङ्घा ग्रहण करके अपने साथ ही उसे भी लेकर मृत्युको प्राप्त होवे; इकवारगी जड़ सहित उखड़ जाना बड़े दुःखका स्थान है, और उत्साह तथा उद्यमसे रहित होना तो किसी प्रकारसे भी उचित नहीं है। रे मूर्ख पुत्र! इससे जैसे उत्तम कुलमें उत्पन्न हुए अच्छे योद्धे अपने पराक्रमको प्रकाशित करते हैं वैसे ही तुम भी अपने तेज तथा पराक्रमको प्रकट करो, तुम्हारे निमित्त जो कुल इस समय डूबा चाहता है, तुम अपने पुरुषार्थसे उसके उद्धारके निमित्त तत्पर होकर यत्न करो। लोकमें जिसके किये हुए किसी अद्भुत और बड़े कार्य्यकी कोई बड़ाई नहीं करता वह केवल लोककी सङ्ख्या ही बढ़ानेवाला कहाता है, वह स्त्री तथा पुरुष कुछ भी नहीं कहा जा सकता, उसकी गिनती केवल नपुंसकोंमें होती है। दान, तपस्या, सत्य, विद्या और धनके उपार्जन करनेमें जिसका यश इस पृथ्वीमें नहीं विख्यात होता है, वह माताका मल मात्र ही कहा जाता है, उसको कभी पुत्र नहीं कह सकते। जो तेजस्वी पुरुष शास्त्रके ज्ञान, तपस्या, धन, पराक्रम तथा दूसरे पुरुषार्थोंसे सब लोगोंको जीतता है, वही यथार्थमें पुरुष कहा जाता है। अरे मूर्ख! कापालिक पुरुषोंकी भांति नपुंसकोंके योग्य, घृणित, निन्दित, अयश देनेवाली, तथा दुःख उत्पन्न करनेवाली भिक्षा वृत्तिको ग्रहण करनेकी इच्छा कभी नहीं करनी चाहिये। आहा! लोकमें निन्दाके पात्र, वस्त्रआभूषणोंसे रहित जिस पुरुषको देखकर शत्रुओंके आनन्दकी वृद्धि होती है, ऐसे लोभी, दीन, हीन, थोड़ी शक्तिवाले, क्षुद्र पुरुषके बन्धुबान्धव कभी सुखी नहीं रह सकते। हा! अपने स्थानसे भ्रष्ट और राज्यसे अलग हुए तथा सब प्रकारके सुख और भोगोंसे रहित होकर हम लोगोंको क्या जीविकाके भारसे ही प्राणत्याग करना पड़ेगा? अरे सञ्जय! साधु पुरुषोंके समूहमें है ऐसे अयुक्त व्यवहार करनेवाले, वंशको नाश करनेवाले तथा कुलको कलङ्कित करनेवाले तुमको अपने गर्भमें पुत्ररूपसे धारण करके साक्षात कलियुगकी माता हुई हूं। मेरे समान और कोई तेजस्विनी रानी ऐसे क्रोध तथा उत्साह-रहित, बलहीन, शत्रु नन्दन पुत्रको कभी गर्भमें धारण न करे। अरे भाग्य रहित! उद्यम रहित धूएंमें न छिपकर उत्साह रूपी अग्निसे प्रकाशित होकर पूर्ण रीतिसे शत्रुओं पर आक्रमण करके उनका संहार क्यों नहीं करता? घड़ी भर अथवा क्षण भरके वास्ते भी शत्रुओंके मस्तकके ऊपर क्यों नहीं गिरा जमाव होता है? क्रोध और क्षमा रहित होना ही यथार्थमें पुरुषका कर्म है। जो पुरुष सदा क्षमासे युक्त और क्रोध शून्य रहता है, वह न स्त्री है और न पुरुष ही है; वह एक प्रकारका नपुंसक कहा जाता है। सन्तोष, दया, उद्योग न करना और भय ये सब लक्ष्मीके विनाश करनेके कारण हैं, सन्तोषी पुरुष राज्य आदि बड़े फल कभी नहीं पा सकता। रे पुत्र! इससे तू इन सब ऊपर कहे हुए दोषोंको त्यागकर अपना हृदय लोहेकी भांति कठोर करके अपना निज राज्य तथा सम्पत्तिके ग्रहण करनेमें प्रवृत्त होजा। विचार करके देख तो सही, राज्य कार्य्य तथा प्रजाका पालन करना आदि बड़े भारी कार्य्योंके करनेमें समर्थ होनेहीसे महापुरुष कहा जाता है। इससे जो पुरुष सियारके समान घरमें बैठकर इस लोकमें जीता रहता है, उसका जीना व्यर्थ ही कहा जाता है। सिंहके समान प्रबल प्रतापका विस्तार करनेवाले ऊंचे चित्तवाले, शूरवीर राजाके मर जानेपर भी उसके शासन तथा अधिकारमें रहनेवाले

प्रजा सुख भोगती हुई हृष्ट-पुष्ट बनी रहती है। जो बुद्धिमान् राजा अपने प्रिय सुखको भी त्यागकर राजलक्ष्मीकी खोजमें प्रवृत्त होता है, वह शीघ्र ही सेवक तथा बन्धु-बान्धवोंका हर्ष और आनन्द बढ़ाता है।

पुत्र बोला, यदि तुम मुझे ही न देखोगी तो फिर तुम्हारे इस सम्पूर्ण पृथ्वीके राज्य, भूषण, भोग, सुख और जीनेहीसे क्या प्रयोजन है?

माता बोली, मैं राज्य तथा भूषणके लोभसे ही जो तुमको उत्तेजित कर रही हूं, ऐसी बात नहीं है, परन्तु मेरी यही अभिलाषा है, कि आदर रहित नीच लोग जो लोक पाते हैं, हमारे शत्रु लोग वही लोक पावें, और आदरसे युक्त तेजस्वी पुरुष जिस लोकमें जाते हैं, हम लोगोंके बन्धु बान्धव तथा सुहृद लोग उसी लोकमें गमन करें। हे तात! सेवकोंसे रहित, पराये अन्नसे जीवन धारण कर, दीन, हीन और मलिनचित्त होकर कभी नपुंसकोंकी वृत्तिका अवलम्बन करना उचित नहीं है। सम्पूर्ण प्राणी जैसे वर्षा करनेवाले मेघको अनुजीवी हैं, तथा देवता लोग जैसे इन्द्रकी उपासना करते हैं, वैसे ही ब्राह्मण लोग तथा सुहृद-पुरुष तुम्हारे द्वारा अपनी जीविका पावें। हे सञ्जय! अच्छे प्रकारसे पके हुए फलोंसे युक्त वृक्षका जैसे पक्षी लोग आसरा करके जीवन धारण करते हैं उसी भांति सब प्राणी लोग भाग्यवान् पुरुषका आसरा करके अपनी जीविका निर्वाह किया करते हैं, ऐसे ही भाग्यवान् पुरुषका जीवन सार्थक है। इन्द्रके बाहुबलसे बढ़े हुए देवताओंके समान जिस महावीर पुरुषके प्रचण्ड प्रतापके सहारेसे बन्धुबान्धवोंका सुख और ऐश्वर्य्य बढ़ता है, उसीका जीवन सार्थक है, जो भाग्यवान् पुरुष अपने बाहुबलके सहारे जीवनके समयको बिताता है वह इस लोकमें कीर्त्तिमान् होकर अन्तमें कल्याणमयी परम गति पाता है।

१३३ अध्याय समाप्त।

विदुला बोली, हे पुत्र! यदि तुम ऐसी हीन अवस्थाके समयमें पुरुषार्थ छोड़ दोगे, तो शीघ्र ही अधम पुरुषोंसे सेवित नीच मार्गसे गमन करोगे, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। क्षत्रियकुलमें जन्म ग्रहण करके जो पुरुष इस असार जीवनकी इच्छासे अपनी शक्तिके अनुसार पराक्रम तथा अपना बल प्रकट करके निज तेजको नहीं प्रकाशित करता, पण्डित लोग उसको चोरके समान समझते हैं। हा! रोगीके समीप औषधिकी भांति यथार्थ स्वार्थसे युक्त, युक्ति सम्मत गुणोंसे भरे हुए, उत्तम वचन सब तुम्हारे ऊपर बल प्रकाश करनेमें असमर्थ होरहे हैं। देखो सिन्धुराजकी सहायता करनेके निमित्त बहुतसे पुरुष हैं, यह ठीक है, परन्तु कोई भी उससे सन्तुष्ट नहीं है, सब ही उससे विरक्त हैं। अपनी निर्बलताके कारणसे विशेष करके निज जीविकाके उपार्जन करनेके दुःखसे असमर्थ होकर वह लोग केवल स्वामीके व्यसनमें फंसनेकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त जो पुरुष स्पष्ट रूपसे उसके सङ्ग शत्रुता करते हैं, वह लोग तुम्हारे पुरुषार्थको देखकर तुम्हारे साथ हो उसके विरुद्ध युद्ध करनेमें प्रवृत्त होंगे। इससे तुम उन्हीं सब लोगोंके सङ्गमें मिलकर समयके अनुसार शत्रुके व्यसनमें फंसनेकी प्रतीक्षा करते हुए दुर्ग-रूपी पर्व्वतका आसरा ग्रहण करो। सिन्धुराज अजर अथवा अमर है, ऐसा तुम कभी भी अपने मनमें निश्चय न करना। हे पुत्र! तुम्हारा नाम सञ्जय है परन्तु सञ्जयका कार्य्य मैं तुम्हारेमें कुछ भी नहीं देख सकती हूं इसी कारणसे कहती हूं, कि अपने नामको व्यर्थ न करके इसकी

सोई बातोंको पूर्ण करो, ऐसा करनेहीसे तुम मेरे पुत्र कहे जानेके योग्य बनोगे। तुम्हारी बालक अवस्थामें एक महा बुद्धिमान् ज्योतिषी ब्राह्मणने कहा था, कि "यह बालक पहिले अत्यन्त कष्टमें पड़कर अन्तमें बहुतसी राज-लक्ष्मीको भोगेगा।" उस ब्राह्मणका वचन स्मरण करके मैं तुम्हारे विजयकी आशा करती हूं, और इसी कारणसे इतना हठ करके भी तुमको उत्तेजित कर रही हूं तथा बार बार इसी भांतिसे उत्तेजित करूंगी। क्योंकि तुम इस बातको खूब ही जानते हो, कि जो पुरुष स्वयं यथार्थ नीतिके अनुसार कार्य्य करता है, और दूसरे लोग भी जिसके कार्य्यके सिद्ध होनेके निमित्त सहायता करते हैं, उसका मनोरथ अवश्य पूरा होजाता है। हे सञ्जय! "इस कार्य्यके करनेसे मेरे पूर्व सञ्चित विषयका चाहे नाश होवे, अथवा वृद्धि होवे, मैं कभी भी निवृत्त न होऊंगा।" इसी प्रकारसे दृढ़-सङ्कल्प करके तुम युद्धके निमित्त उद्योग करो, एक ही समयमें उसको समाप्त न करना। सम्बर मुनिने कहा है, जिस अवस्थामें "आज घरमें अन्न नहीं है, कल्ह क्या होगा, सदा ऐसी ही चिन्ता लगी रहती है, उससे बढ़के पापी पुरुषको और दूसरी कौनसी दशा हो सकती है?" यहां तक कि, पति और पुत्रके वधसे जैसा दुःख होना सम्भव है, उससे भी बढ़के यह ऊपर कहे हुए दुःखको सम्बर मुनिने वर्णन किया है। इससे दरिद्रताको 'दुःख मृत्यु' का एक नामान्तर मात्र ही है। देखो मैं उत्तम कुलमें उत्पन्न तथा स्वामीके आदरकी पात्री और सबके कल्याणकी करनेवाली थी। पहिले सुहृद लोग मुझको महामूल्यवान् माला और सब भूषणोंसे भूषित तथा नाना सुगन्ध और सुन्दर वस्त्रोंसे युक्त देखकर इस समय अत्यन्त दुःखमें पड़ी हुई देखेंगे। हे सञ्जय! तुम जिस समय मुझे और अपनी स्त्रीको दीन, हीन तथा अत्यन्त दुःखित देखोगे, उस समय तुमको जीवित रहनेकी इच्छा न रहेगी। दास-दासी, सेवक गुरु ऋत्विक्, पुरोहित आदि सब कोई जीविकाके दुःखसे हम लोगोंको छोड़कर चले जावेंगे। इसको देखकर तुम्हारे जीनेसे क्या प्रयोजन रहेगा? तुम पहिले प्रशंसाके योग्य यशके प्रकट करनेवाले जिन सब कर्मोंका अनुष्ठान करते थे, यदि उसको अब मैं न देखूंगी, तो मेरे हृदयमें शान्ति किस प्रकारसे हो सकेगी? कोई ब्राह्मण जब मुझसे कुछ वस्तु मांगेगा, तब उससे मैं "नहीं है" यदि ऐसा वचन कहूंगी तो मेरा हृदय एकबारगी टुकड़े टुकड़े होजावेगा क्योंकि पहिले मैं तथा मेरे स्वामीने ब्राह्मणोंके मांगनेपर कभी 'नहीं है' यह वचन नहीं कहा है। सब लोग हमारी ही आशा करते थे और हम लोगोंने कभी किसीकी आशा नहीं की है, इससे यदि दूसरेके वशमें होके जीविका निर्वाह करना पड़ेगा, तो मैं अवश्य ही शरीरका त्याग दूंगी। हे पुत्र! इससे अपार दुःख-सागरमें पड़े हुए हम लोगोंको पार करनेके वास्ते तुम ही एक मात्र अवलम्ब हो। नौका-रहित विपदरूपी समुद्रसे उबारनेके निमित्त तुम ही नौका स्वरूप हो। इससे यदि तुमको स्थान त्यागकर दूसरी जगह निवास करना पड़े, महा घोर क्लेश सहना पड़े, तो उसको भी तुम स्वीकार कर लो। अधिक क्या कहूंगी, हम लोगोंके मृतक समान शरीरको तुम जीवित करो। यदि तुम अपने जीनेकी इच्छा त्याग दो, तो सब शत्रुओंसे युद्ध कर सकते हो, और यदि ऐसे ही क्लीव-वृत्तिका अवलम्बन किये हुए, दुःखयुक्त और उत्साह रहित होकर रहना पड़े, तो भी तुम शीघ्र ही इस पापमयी जीविकाको त्याग दो। जो पुरुष पराक्रमी होता है, वह एक ही शत्रुको मारकर पृथ्वीमें यश पाता है। देखो इन्द्र एक ही वृत्रा-सुरको मारकर कीर्त्तिमान् हुए और सब दे

नाओंकी प्रभुता पाकर सदाके वास्ते सबके राजा हुए हैं। उत्साहसे युक्त वीर पुरुष लोग जब रणभूमिमें अपना नाम प्रकाशित करके हर्षके सहित शत्रुओंकी सेनाको छिन्न भिन्न करके अपने पराक्रमसे मुख्य मुख्य सेनापतियोंको मारते हैं, तब ही उनके दूसरे शत्रुलोग भी भयभीत होकर स्वयं उनके निकटमें अवनति स्वीकार कर लेते हैं। परन्तु जो पुरुष नपुंसकताका अवलम्बन करता है, वह शत्रुओंके वशमें होकर युद्धविद्याके जाननेवाले पराक्रमी शत्रुके सब मनोरथ पूर्ण करता है। उत्साह और साहससे युक्त उत्तम पुरुष चाहे राज्यका नाश होजावे अथवा प्राणोंका सङ्कट उपस्थित होवे, परन्तु शत्रुको मारे विना उसे नाश किये कभी नहीं छोड़ते। हे सञ्जय! केवल पराक्रमको प्रकाश करनेहारे स्वर्गका द्वार अथवा अमृतके समान राज्यपद मिलता है। इस बातको हृदयमें रखके जलते हुए आगके समान शत्रुओंके बीचमें प्रवेश करो। हे क्षत्रिय! रणभूमिमें शत्रुओंका नाश करके अपने धर्मकी रक्षा करो। मैं जिसमें तुमको शत्रुओंके आनन्दको बढ़ानेवाला और अत्यन्त कातर न देखूं। हमारी ओरके पुरुष लोग शोक प्रकाश करते हुए तथा शत्रुओंकी ओरके लोग हर्षित होकर तुमको चारों ओरसे घेर रहे हैं, तुम अत्यन्त हीनता अवलम्बन करके उनके बीचमें पड़े हो, यह देखकर मुझको रोना न पड़े। हे पुत्र! तुम पहिलेकी भांति हर्षयुक्त चित्तसे वीरोंके योग्य कार्य्य करके सौवीर-कन्याओंके बीचमें बड़ाई और आनन्दके पात्र बनो। उत्साह रहित और पराक्रमसे हीन होकर कभी सिन्धु देशकी कन्याओंके वशमें मत पड़ो। ऐसे रूप गुणसे युक्त, उत्तम विद्याओंसे भूषित, उत्तम कुलमें उत्पन्न हुआ, ... युवा पुरुष ... दूसरेकी आज्ञामें चलने और मरनेके सिवा-य इसमें कुछ भी भेद नहीं है। यदि मैं तुम्हें दूसरेके वशमें पड़े उसके पीछे गमन करते हुए देखूंगी, तो मेरे हृदयमें कैसे शान्ति हो सकेगी। दूसरेके आज्ञाकारी बने ऐसे पुरुष तुम्हारे इस वंशमें कभी नहीं उत्पन्न हुए हैं, हे पुत्र! इससे दूसरेका सेवक होकर तुमको कभी जीना उचित नहीं है। क्षत्रियोंका जो सदासे प्रसिद्ध सनातन धर्म है, वह मुझको भली भांति मालूम है। पहिले तथा पीछे पण्डितोंने उस विषयमें जो कुछ वचन कहे हैं, तथा प्रजापति ब्रह्माने क्षत्रियोंको जिस कार्य्यके निमित्त उत्पन्न किया है, उसको मैं खूब ही जानती हूं। पृथ्वीके बीच किसी प्रसिद्ध क्षत्रिय-वंशमें उत्पन्न होकर जो पुरुष सब धर्मोंकी यथार्थ बातोंको जानकर भी केवल अपनी प्राणरक्षाके निमित्त भयसे शत्रुओंके निकट अवनति स्वीकार करता है, वह पुरुष किसी प्रकारसे उत्तम नहीं कहा जा सकता। उद्यम ही पुरुषका पुरुषार्थ है, इससे सदा उद्योगी हो बनना चाहिये किसी समयमें अवनति स्वीकार करना उचित नहीं है। बल्कि रणभूमिमें पराक्रम प्रकाशित करता हुआ मरकर स्वर्गको जावे, परन्तु किसीके समीपमें अपनी अवनति स्वीकार न करे। मनस्वी वीरपुरुष निर्भय होकर सब स्थानोंमें भ्रमण करे, केवल धर्मके अनुसार ब्राह्मणोंके निकट अपनी अवनति स्वीकार करे, इसके अतिरिक्त और सब वर्णोंको बलपूर्वक अपने वशमें करके उनके बुरे कर्मोंके छुड़ानेका यत्न करे, इसमें यदि उसे बहुतसी सहायतासे युक्त अथवा एकदारगी सहायतासे रहित होना पड़े, तौ भी वह अपने जीवनके समयतक इसी प्रकारके कर्म तथा अनुष्ठान करता रहे।

१३४ अध्याय समाप्त।

पुत्र बोले, हे क्रोधयुक्त, करुणारहित, वीरताका अभिमान करनेवाली माता। मालूम होता है, कि अत्यन्त कठोर लोहेसे ब्रह्माने तुम्हारे इस कठिन-हृदयको बनाया है। हाय। क्षत्रिय-धर्म क्या ही विचित्र है, कि जिसके कारण तुम मुझको सामान्य पुरुषकी भांति समझकर युद्धके कराल-मुखमे फेंक रही हो। गर्भधारिणी माता होकर भी तुम सौतेली माताके समान ऐसे वचनरूपी वाणोंसे मेरे हृदयको छेद रही हो। तुमसे मैं यही एक बात पूछता हूं, कि यदि तुम मुझे ही न देखोगी, तो तुम्हारे इस समस्त पृथ्वीके राज्य भूषण, भोग, सुख, और जीनेसे क्या प्रयोजन सिद्ध होगा? ऐसे उत्तम प्यारे पुत्रके नाश होनेपर तुम जीके क्या करोगी?

माता बोली बुद्धिमान मनुष्योंके सम्पूर्ण कर्म ही धर्म और अर्थसे युक्त रहते हैं, मैं उसी धर्म और अर्थकी ओर लक्ष्य करके तुमको युद्ध करनेको कहती हूं। देखो तुम्हें पराक्रम प्रकाशित करनेका यह मुख्य समय उपस्थित हुआ है, इससे यदि तुम इस उपस्थित समयमे अपने कर्त्तव्य कार्य्यका अनुष्ठान न करोगे, तो तुम लोकके बीचमे मान-रहित होकर मेरा अत्यन्त ही अहित कार्य्य करोगे। तुम्हारे धन सम्पत्ति, राज्य, यश और बड़ाईकी कुछ भी सम्भावना नहीं रहेगी। तुमको अपयशसे ग्रस्त होता हुआ देखकर भी यदि मैं प्रीति पूर्व्वक उसके निवारण करनेके निमित्त कुछ वचन न कहूं, तो वह किसी प्रकारसे भी युक्ति युक्त तथा यथार्थ प्रीतिका कार्य्य नहीं हो सकता, ऐसे पुत्रस्नेहको पण्डित लोग सामर्थ्य रहित बिना कारणकी प्रीति और निरर्थक स्नेह कहते हैं। हे सञ्जय! इससे तुम मूर्ख लोगोंके मानने योग्य और बुद्धिमानोंमें निन्दित इस बुरे मार्गको त्याग दो। देखो इस पृथ्वीमे बहुत ही अविद्या प्रायः सब स्थानोंमें विराज रही है, यदि तुम इस अविद्याके हाथसे छूटकर सदाचारी बनोगे, तभी मेरा प्रिय कार्य्य सिद्ध होगा। धर्म अर्थ आदि गुणोंसे युक्त, देवता और मनुष्योंके कर्मोंके जाननेवाले साधु पुरुषोंके मानने योग्य बिना उत्तम कार्य्य किये तुम कभी मेरी प्रीतिके पात्र नहीं हो सकते। जो भली प्रकारसे उत्तम कर्म और विद्या विनयसे युक्त पुत्र पौत्र आदिके ऊपर प्रीति करते हैं, उनको प्रीतिको ही यथार्थ प्रीति कहते हैं। नहीं तो जो पुरुष उद्यम और विनय-रहित नीचबुद्धि पुत्रके ऊपर प्रीति करते हैं, उनके वचनका फल ही एकाबारगी नष्ट हो जाता है। मनुष्योंके योग्य कर्त्तव्य कर्मका अनुष्ठान न करनेवाले और निन्दित तथा बुरे कर्मके करनेमें बहुत ही हठ करनेवाले अधम पुरुषोंको इस लोक तथा परलोकमें कहीं भी सुख नहीं मिल सकता। हे सञ्जय! तुम यह निश्चय जान रक्खो, कि केवल युद्ध और जय करनेहीके निमित्त इस पृथ्वीमे क्षत्रियोंकी उत्पत्ति हुई है। क्षत्रिय पुरुष चाहे शत्रुओंको जीते अथवा रणभूमिमें मारा ही जावे, दोनो भांतिसे उसे इन्द्र लोक मिलता है। मित्रोंको वशमें करके क्षत्रिय पुरुष जैसे सुख और सम्पत्तिके अधिकारी होते हैं, वैसा सुख उनको इन्द्रभवनमें भी नहीं मिल सकता है। मनस्वी पुरुष शत्रुओंसे अनेक बार पराजित होकर क्रोधकी आगमें जलता हुआ अपने शत्रुओंको इकबारगी नाशकर देवे अथवा उनसे मरकर स्वर्ग लोकहीको जावे, इसके अतिरिक्त और किसी प्रकारसे उसके हृदयमें शान्ति नहीं हो सकती। इस संसारमें बुद्धिमान पुरुष बहुत थोड़ी वस्तुमें प्रीति नहीं करते हैं, थोड़ी वस्तु जिसे प्यारी होती है वह अवश्य ही एक दिन उसके अनिष्टकी जड़ होजाती है। क्योंकि प्यारी वस्तुओंके अत्यन्त ही अभाव होजाने पर फिर पुरुषके कल्याणकी सम्भावना नहीं

रहती, बल्कि समुद्रमें लीन हुई गङ्गाकी भांति एकबारगी सब पदार्थोंका अभाव हो जाता है।

पुत्र बोला, हे माता! इस प्रकारका अभिप्राय प्रगट करना तुमको उचित नहीं है। विशेष करके पुत्रके सामने ऐसी प्रवृत्ति करनी तुम्हें योग्य नहीं है। इस समय जड़ अथवा गूंगीकी भांति शान्तभावसे रहकर केवल करुणा दिखाना ही तुम्हारा कर्त्तव्य-कार्य्य है।

माता बोली, हे पुत्र! तुम जैसा विचार करते हो, उससे तुम्हारे ऊपर मेरी अधिक प्रीति उत्पन्न होरही है। मेरे विषयमें जैसा वचन कहना उचित है, तुम वैसा ही कहते हो, और मैं भी उसके अनुसार तुमको करुणासे युक्त ही वचन कहती हूं। तुम्हारे हाथसे पहिले सम्पूर्ण सैन्धव-वीरोंको मारकर पीछे तुम्हारी अत्यन्त प्रशंसा करती रहूंगी। अधिक क्या कहूं, तुम्हारी जो सब प्रकारसे विजय होगी, उसको मैं प्रत्यक्ष रूपसे देख रही हूं।

पुत्र बोला, हमारे धन, बल, सहाय आदि कुछ भी वस्तु नहीं है; तब फिर कैसे हमारी जीत हो सकती है? तुम्हारी ऐसी दारुण अवस्थाको जानकर मैं खुद ही उन आशाको छोड़कर चुप बैठा हूं, अत्यन्त कठिनतासे प्राप्त होने योग्य स्वर्गलोकके समान राज्यकी आशा भी मैंने छोड़ दी है। हे महा बुद्धिमती! जिससे मैं कृतकार्य्य होसकूं, तुम यदि वैसा कुछ उपाय जानती हो, तो विशेष रूपसे कहो, तुम्हारे सब वचनको मैं सम्पूर्ण रूपसे पालन करूंगा।

माता बोली, हे पुत्र! मेरी जीत नहीं होगी पहिले ही ऐसी चिन्ता करके अपनी आत्माको तुम मत सताओ। क्योंकि घटनाके अनुसार बहुत समयका नष्ट हुआ अर्थ भी मिलता है और प्राप्त धन भी नाश हो जाता है। मूर्ख लोगोंने उपाय करनेपर अवश्य ही फलको प्राप्त होते हैं, सब होनाहि केवल लोभके वशमें ही होकर किसी कार्य्यका आरम्भ करना उचित नहीं है। हे तात! सब प्रकारके कर्मों हीसे फलकी सिद्धिके विषयमें उपस्थित अनित्यता देख पड़ती है। जो पुरुष फलकी अनित्यताको स्थिर करके भी कर्मके अनुष्ठानमें प्रवृत्त होता है उसकी अभिलाषाकी सिद्धि भी होती है, और नहीं भी हो सकती। परन्तु बिना निश्चय किये ही जो एकबारगी कार्य्यके अनुष्ठानमें प्रवृत्त नहीं होते, वह किसी समयमें कृतकार्य्य नहीं हो सकते। कार्य्यके करनेका उद्योग न करनेसे एकबारगी कार्य्यके फलका अभाव होता है और कार्य्यमें प्रवृत्त रहनेसे कार्य्यके फल-सिद्धि होने और न होने दोनोंहीकी सम्भावना होती है। हे राजपुत्र! आरम्भ करनेके पहिले ही जो पुरुष सब कार्य्योंकी अनित्यताको स्थिर करके उद्योग नहीं करता, उसकी वृद्धि और समृद्धि नहीं हो सकती। इससे "निश्चय ही कार्य्य सिद्ध होगा" ऐसा विचारकर उत्साहके सहित कार्य्यमें तय्यार होना और माङ्गलिक कार्य्योंके अनुष्ठानको करना ही उचित है। हे पुत्र! बुद्धिमान राजा लोग देवता और ब्राह्मणोंकी पूजा तथा स्वस्त्ययन आदि माङ्गलिक कर्मोंका अनुष्ठान करके अपने अभीष्टको सिद्ध करनेवाले कर्मको आरम्भ करते हैं, उससे अवश्य ही उनकी वृद्धि होती है। पूर्व दिशा जैसे भगवान सूर्य्यको आलिङ्गन करती है, वैसेही लक्ष्मी देवी खुद ही उस पुरुषसिंहके वशमें हो जाती है। हे सञ्जय! मैंने जो यह सब प्रमाण, उपाय और उदाहरणयुक्त वचन तुमसे कहे हैं, मैं तुमको उसीके योग्य देख रही हूं; इससे तुम सब शत्रुओंको त्यागके अपने पराक्रमको प्रकाशित करो। सब प्रकारसे यत्नपूर्वक अपने कार्य्यको सिद्ध करनेके निमित्त उत्साहपूर्वक युद्ध करो। तुम्हारे दानके ऊपर जो लोग रहते हैं वे तुम्हारे वशमें हैं, जो लोग तुमसे दुःखित हैं, जिनका तुमने अपमान किया है, जो लोग तुमसे स्पर्द्धा और

हुए हैं, और जो उसके सङ्गमें युद्धकी इच्छा करते हैं,—तुम पूर्ण रीतिसे यत्नपूर्वक उन लोगोंको अपनी ओर मिला लो, उन लोगोंको पहिले वेतन देकर सन्तुष्ट करो और अपने कार्य्यको साधन करनेके निमित्त शीघ्र ही उद्योग करो। इस प्रकारके कार्य्यको करनेसे हो, जैसे वायु प्रबल बादलोंके समूहको छिन्न भिन्न कर देता है उसी प्रकारसे इन बहुतेरे मनुष्योंको अपने वशमें करनेसे तुम अवश्य ही समर्थ हो जाओगी और वह लोग भी तुमको आदरके सहित प्रीतिपूर्वक अपना स्वामी तथा अग्रणी बनावेंगे, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। जब शत्रु जानता है, कि मेरा वैरी अपने प्राणकी आशा त्याग करके युद्धके निमित्त उपस्थित हुआ है, तब ही वह घरमें वास करने वाले सर्पकी भांति उससे डरता है। उसको अत्यन्त प्रबल जानकर यदि वह वशमें करनेकी कोशिश करेगा, तो अवश्य सामदानके प्रयोगसे अपने, अनुकूल करनेकी इच्छा करेगा, ऐसा होने-पर एक प्रकारसे उसको वशमें करना सिद्ध हो जावेगा। क्योंकि सन्धिको स्थापित करके स्थान तथा राज्यको पानेसे कभी धनकी भी वृद्धि होगी, पुरुषके धनवान् होनेसे मित्र लोग उसे मानते तथा उसका आसरा ग्रहण करते हैं, परन्तु यदि वह दैव-संयोगसे धन तथा सम्पत्तिसे भ्रष्ट हो जावे, तो वह मित्र लोग और भाई बन्धु उसको छोड़कर चले जाते हैं, केवल छोड़के ही नहीं जाते, वल्कि उससे घृणा करते तथा उसकी निन्दा भी करनेमें सङ्कोच नहीं करते। जो पुरुष शत्रुको सहायक बना-कर उसका विश्वास करता है, उसको जो किसी समयमें राज्य मिल सकेगा, यह केवल सम्भावना मात्र ही होती है? परन्तु यथार्थमें उसकी वह आशा कभी सफल नहीं हो सकती।

१३५ अध्याय समाप्त।

माता बोलीं, हे सञ्जय! राजाके विषयमें चाहे कैसी ही आपद क्यों न उपस्थित होवे, उससे डरके व्याकुल होना कभी उचित नहीं है, यदि मनमें कोई शङ्का भी उत्पन्न होजाय तो बाहर उस विषयको कभी भी प्रकाशित करना चाहिये। क्योंकि राजाको शङ्कित देख कर राज्य, बल, सेवक आदि सब ही भयसे व्याकुल होकर उत्साह-रहित हो जाते हैं ऐसी अवस्थाके आने पर कोई कोई स्वामीको छोड़ देते हैं, कोई शत्रुके आसरेको अवलम्बन करते हैं, और जो सब पुरुष पहिले मानरहित हो गये थे, वह अवसर पाकर अपने स्वामीके विरुद्धता करने पर उपस्थित हो जाते हैं इसके अतिरिक्त जो लोग अत्यन्त ही सुहृद हैं वही लोग स्वामीकी शक्तिके अनुसार उसकी परतन्त्रताको स्वीकार करके उस समयमें भी सेवा करते हैं। स्वामीके कल्याणकी सिद्ध कर-नेकी अभिलाषा रहते भी गऊके पैरमें हो बंधे हुए बछड़ेकी भांति उन लोगोंको उत्साह और चेष्टासे रहित होना पड़ता है। भाई बन्धुको पतित देखकर जैसे बन्धु बान्धव लोग दुःख और शोक प्रकट करते हैं, वैसे ही विश्वास पात्र सुहृद इष्टमित्र भी स्वामीको बुरी अवस्थामें पड़ा हुआ देखकर शोक प्रकाशित करते हैं। इससे स्वामीको व्यसनमें पड़ा हुए देखकर जो लोग तनमनसे उसके राज्यकी रक्षा चाहते हैं, वही लोग यथार्थमें मित्र हैं, सबके पहिले उन्हीं लोगोंको पूजा करनी उचित है। हे पुत्र! ऐसे सुहृद पुरुषोंको तुम कभी भी भयसे व्याकुल मत करना। तुमको शङ्कित देख कर वह लोग तुम्हें त्याग न देवें। तुम्हारे प्रभाव पराक्रम और बुद्धिके जाननेकी अभिलाषासे मैंने जो यह सब वचन कहे हैं, वह तुम्हारी आशा, उत्साह और तेजको बढ़ानेके निमित्त ही कहा गया है। यदि वह यथार्थ रूपसे तुम्हें उत्तम जंचे और मेरी बातोंमें प्रीति तथा

विश्वास होवे, तो धीरताको अवलम्बन करके तुम अपने विजयके निमित्त उद्योग करो। हे सञ्जय! इस लोगोंका एक बहुत बड़ा धनका स्थान है वह तुमको नहीं मालूम है, मुझे छोड़के और कोई भी उस खजानेके स्थानको नहीं जानता है, उस स्थानमें जो बहुतसा धन है, वह सम्पूर्ण तुमको देती हूं। हे वीर! इसके अतिरिक्त तुम्हारे कई सौ दुष्ट मित्र तथा सुहृद लोग भी विद्यमान हैं, वह सब ही तुम्हारे सुख दुःखके साथी और युद्धमें कभी भी पीछे न हटनेवाले हैं। हे शत्रुनाशन! कोई कल्याणको चाहनेवाला पुरुष बल पूर्व्वक यदि किसी कार्य्यको करनेका अनुष्ठान करे तो ऐसे सहाय लोग ही उसके यथार्थ मन्त्री बन कर सब कार्य्य करते हैं।

सञ्जय स्वभावसे ही थोड़ी बुद्धिसे युक्त था, परन्तु अपनी माताके ऐसे उत्तम पद पदार्थसे युक्त, सुन्दर और मनोहर वचनोंको सुनते ही उसी समयमें उसका भय और शङ्का दूर होगई तब वह साहसके ऊपर भरोसा करके बोला हे माता! भावी कल्याणको देखनेवाली तुम जब मुझे उत्तम शिक्षा दे रही हो, तब मुझको कोई कार्य्य भी कठिन नहीं है। मैं जलमें डूबे हुएके समान या तो पैतृक राज्यका उद्धार करूंगा अथवा रणभूमिमें प्राणोंको त्यागकर स्वर्ग लोकमें जाऊंगा। तुम्हारे उपदेशके वचनोंको सुननेके समय मैं प्रायः मौन रूपसे सुन रहा था, केवल बीच बीचमें कुछ थोड़ा सा जवाब दिया था, उसका कारण यही था कि तुम्हारे दूसरे उपदेशके वचनोंको भी सुनूंगा। अमृत दुर्लभ बहुतसे पानसे जैसे तृप्त नहीं होता, वैसे ही तुम्हारे अमृत रूपी वचनोंके सुननेसे मेरी इच्छा पूर्ण नहीं होती थी। इसीसे मैं चुपचाप तुम्हारे वचनोंको सुनता था, इस समयसे शत्रुओंके नाश और अपनी विजयके निमित्त उद्योग करता हूं।

कुन्ती बोली, विदुलाके ऐसे कठोर वचन रूपी बाणोंसे विद्ध और प्रसिद्ध उत्तम घोड़ेकी भांति उत्तेजित होकर माताकी आज्ञाके अनुसार सञ्जयने सब कार्य्योंको शीघ्र ही पूर्ण किया था। कोई राजा यदि शत्रुओंसे पीड़ित और उत्साह शून्य होवे तो शत्रुओंके नाश करनेवाले, तेजको बढानेवाले इस उत्तम वृत्तान्तको उसे अवश्य सुनाना उचित है। विजय चाहनेवाले पुरुषको जय रूपी इस कथाको अवश्य सुनना चाहिये। जो पुरुष एक बार भी इस कथाको चित्त लगाके सुनता है, वह शीघ्र ही सम्पूर्ण पृथ्वीको जीतने और शत्रुओंके नाश करनेमें समर्थ होता है। गर्भिणी स्त्री वीर-पुत्रको उत्पन्न करनेकी इच्छासे इस कथाको बार बार सुननेसे अवश्य ही शूरवीर पुत्र उत्पन्न करती है। जो कोई क्षत्रिय-नारी यह कथा चित्त लगाके सुनती है, वह अवश्य ही विद्यावीर, दानवीर, तपस्या वीर, दिव्य शोभासे प्रकाशित, साधु पुरुषोंमें गिनने योग्य, महातेजस्वी, महाबली, भाग्यवान्, महारथ, सबको जीतनेवाले, अपराजित, दुष्टोंको शासन करनेवाले, धर्म्मात्माओंकी रक्षा करनेवाले, सत्य-पराक्रमी वीर, पुत्रकी माता हो सकती है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

१३६ अध्याय समाप्त।

कुन्ती बोली हे कृष्ण! तुम मेरी ओरसे अर्जुनको कहना कि हे पुत्र! तुमको उत्पन्न करके जिस समय मैं स्त्रियोंके बीचमें घिरी आश्रमके निकट बैठी थी उसी समय आकाशमें यह मनोहर देववाणी हुई थी, हे कुन्ती! तुम्हारा यह पुत्र साक्षात् इन्द्रके समान होगा; इसका यश जगतमें फैलेगा; भीमसेनकी सहायतासे यह सम्पूर्ण पृथ्वीको [illegible] होगा। वासुदेवकी सहायतासे संग्राम [illegible] उत्पन्न हुए [illegible]

फिर हुए अपने पैतृक राज्यका अंश फिर प्राप्त करेगा, और भाइयोंके सङ्ग मिलकर तीन महायज्ञ पूर्ण करेगा"। हे कृष्ण! वह सव्य-साची अर्जुन जैसा बल पराक्रमी और तेजसे युक्त है, उसे तुम विशेष रूपसे जानते हो, इस-से देववाणी जो हुई है, वह जिससे सिद्ध होवे, वही करना। हे कृष्ण! यदि धर्म्म रहेगा, तो अवश्य ये सब वचन सत्य होंगे तुम ही सब प्रकारके यत्नसे उसको पूर्ण करोगे। इससे उस आकाशवाणीमें जो वचन हुए गये हैं, किसी प्रकारसे भी उसके ऊपर सन्देह नहीं कर सकती हूं। भगवान् धर्म्मको सब प्रकार नमस्कार है, धर्म्म ही सम्पूर्ण प्रजाओंको धारण करता है। हे कृष्ण! अर्जुनसे ऐसा कहकर सदा उद्यम करनेवाले उद्योगी भीमसेनसे भी यह वचन कहना, "क्षत्रियोंकी नारी जिस दिन-के वास्ते पुत्रको उत्पन्न करती है उसके योग्य समय यही अब उपस्थित हुआ है। पुरुषश्रेष्ठ वीर लोग कभी वैरीको पाकर चुपचाप बैठे नहीं रहते हैं।" हे कृष्ण! भीमकी बुद्धि तुम्हें सदासे विदित है, वह शत्रुनाश भीम-सेन जबतक शत्रुओंका नाश नहीं कर लेते, तबतक शान्त भी नहीं होते। हे कृष्ण! महात्मा पाण्डुराजकी पुत्रवधू (पतोहू), सब कार्य्योंको विशेष रूपसे जाननेवाली यश-स्विनी, कल्याणी द्रौपदीसे भी तुम मेरी ओरसे यह वचन कहना कि हे महाभागे! हे यश-स्विनि! हे उत्तमकुलमें उत्पन्न हुई सर्वाङ्गिनि! हमारे सब पुत्रोंके ऊपर तुमने जो साध्वी स्त्रीके अनुसार यथार्थ आचरण किये हैं, वह तुम्हारे योग्य ही है।

हे पुरुषोत्तम कृष्ण! इसके अनन्तर क्षत्रि-योंके धर्म्ममें सदा रत रहनेवाले दोनों माद्री-पुत्रोंसे कहना 'हे पुत्र! तुम लोग प्राणोंकी आशा त्यागकर भी अपने पराक्रमसे उपा-र्जित किये हुए भोग और सुखकी अभिलाषा करो, क्योंकि अपने पुरुषार्थसे उत्पन्न हुआ धन ही क्षत्रिय पुरुषोंको प्यारा होता है। देखो तुम लोग सब धर्म्मोंके चलाने तथा जाननेवाले हो, तब भी तुम्हारे सम्मुख ही द्रौपदीको कठोर वचन सुनना पड़ा था उसको कौन क्षत्रिय सहन कर सकता है? हे कृष्ण! पुत्रोंके राज्य जाने जूएमें हारने और वनवास करनेसे भी मुझे उतना दुःख नहीं है जितना कि सभामें रोती हुई उस पतियोंकी प्यारी सुन्दरी द्रौपदीके केश पकड़ने और दुष्टोंके कुटिल तथा व्यङ्ग वचन सुननेसे, मुझको बड़ा एवं हृदयको विदीर्ण करनेवाला बड़ा कठिन दुःख है। बड़ा क्षत्रिय धर्म्ममें सदा रत रहने वाली, स्त्री धर्मसे युक्त, सुन्दरी द्रौपदी अत्यन्त श्रेष्ठ नाथवती होकर भी उस समयमें अनाथा हुई थी। हे कृष्ण! उस धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ पुरुषसिंह अर्जुनसे यह वचन कहना, कि वह द्रौपदीके बताये हुए मार्गसे चले। भीम अर्जुन अत्यन्त क्रुद्ध होनेपर काल, दो यमकी मूर्ति धारण करके देवताओंको भी नष्ट कर सकते हैं, यह तुमको भला भांति मालूम है। उन लोगोंके ऐसे पराक्रमी होनेपर भी जो उनकी प्यारी स्त्री द्रौपदी सभामें बुलाई गई थी, इससे बढ़के और अपमानका विषय दूसरा क्या होगा? हे जनार्दन! आप वीरोंके बीचमें भीमसेनको भी जो दुःशासनने कठोर वचन कहा था, उसका भी तुम फिर स्मरण करा देना। मेरी ओरसे एक बालककी भांति पाण्डवोंकी कुशल वार्ता पूछना। इस समय तुम सब विघ्नसे रहित होकर शुभ मार्गसे प्रस्थान करो और मेरे पुत्रोंका प्रतिपालन करो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर महाबाहु श्रीकृष्णचन्द्र कुन्तीदेवीको प्रणाम और प्रदक्षिणा करके उनके मन्दिरसे बाहर हुए और भीष्म आदि कौरवश्रेष्ठ सब पुरुषोंको वहीं पर विदा करके केवल कर्णको अपने रथपर चढ़ाकर

सात्यकीके सहित वहांसे चले। श्रीकृष्णके चले जानेपर सब कौरव लोग विस्मित स्थानसे दूसरे होकर उनके परम अद्भुत महा आश्चर्यसे युक्त वृत्तान्तकी आलोचना करने लगे, और सबने मिलकर यह अभिप्राय प्रकट किया 'यह सम्पूर्ण पृथ्वीमण्डल मोहसे युक्त होकर मृत्युके वशमें हुआ है। दुर्य्योधनकी मूर्खतारूपी दोषसे अवश्य ही यह सम्पूर्ण राष्ट्र तथा प्रजा संहार दशामें उपस्थित होगा।'

इधर सम्पूर्ण यदुवंशियोंके श्रेष्ठ बढ़ानेवाले पुरुषोत्तम कृष्ण नगरसे निकलनेके अनन्तर मनमें बहुत देर तक विचार करके अनन्तर अत्यन्त शीघ्रताके सहित अपने रथके घोड़ोंको चलाया। मन और वायुके समान शीघ्र चलनेवाले वे घोड़े दारुक सारथीके हांकने पर ऐसे चले, कि जैसे आकाश मार्गमें गमन कर रहे हैं, और अत्यन्त शीघ्रतासे गमन करनेवाले बाज पक्षीकी भांति उसके मार्ग और नगरोंको लांघकर विराट (उपप्लव) नगरमें जाकर उपस्थित हुए।

१२७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, कुन्ती देवीने कृष्णसे ...कर्ण वचन ... कहा... ... ... वह धर्मका भय नहीं है, इस समय सब शस्त्रोंके जाननेवाले अर्जुन-दृढ़सङ्कल्पको करनेवाले श्रीसम्पन्न गाण्डीव धनुष, दोनों अक्षय तूणीर, कपिध्वजासे युक्त रथ, महा पराक्रमी नकुल सहदेव और महा पराक्रमी श्रीकृष्णकी सहायता पाकर राजा युधिष्ठिर अब किसी प्रकारसे भी बिना राज्य लिये शान्त न रह सकेंगे। हे महाबाहो! इसके पहिले वीरोंमें श्रेष्ठ बुद्धिमान् अर्जुनने जो अकेले ही हम लोगोंको युद्धमें जीता था, उन सब वृत्तान्तोंको तुम जानते ही हो। इसके अतिरिक्त निवातकवच नामक महा पराक्रमी दानव लोग उस रुद्रास्त्रको धारण करनेवाले कपिध्वजासे युक्त अर्जुनकी प्रतापरूपी अग्निसे भस्म होगये हैं। और श्री घोषयात्राके समय कर्ण आदि सब महारथ योद्धा और कवचको धारण करके रथमें बैठे हुए तुम सब लोग अर्जुनके बाहुबलसे गन्धर्वोंके हाथमें छूटे थे। यह सब कर्म ही उन पाण्डवोंके पराक्रमके पूर्ण प्रमाण हैं। हे पुरुषश्रेष्ठ! इससे तुम भाइयोंके सङ्ग मिलकर पाण्डवोंके सङ्ग सन्धि स्थापित करलो। मृत्युके मुखमें पड़े हुए इस सम्पूर्ण पृथ्वीके वीरोंका उद्धार करो। विचार करके देखो तो सही, युधिष्ठिर तुम्हारे ज्येष्ठ भ्राता, धर्मात्मा

करेंगे। लम्बी भुजा, और सिंहके समान कान्धे-वाले प्रहार करनेवालोंमें श्रेष्ठ भीमसेन तुमको दोनों भुजाओंसे आलिङ्गन करेंगे। उसके अनन्तर कबूतरके समान सुन्दर ग्रीवावाले कमलनयन अर्ज्जुन तुम्हें प्रणाम करेंगे और पृथ्वीके बीच अत्यन्त रूपवान् नकुल और सहदेव प्रीतिपूर्व्वक गुरुकी भांति तुम्हारी आराधना करेंगे। कृष्णा आदि सब राजा लोग तुम लोगोंका मिलना देखकर पुलकित होकर आनन्दपूर्व्वक आंसुओंकी धारा बहावेंगे। तुम अभिमान छोड़के भाइयोंके सङ्ग मिलो और सब कोई एकत्र होकर इस सम्पूर्ण पृथ्वीके राज्यका शासन करो। इकट्ठे हुए सम्पूर्ण राजा लोग आपसमें मिलकर हर्षपूर्व्वक अपने अपने स्थान पर जावें। हे पृथ्वीनाथ! युद्ध करनेका कुछ भी प्रयोजन नहीं है। सुहृद लोगोंकी बात मानकर तुम युद्धमें प्रवृत्त मत होओ। युद्धसे क्षत्रियोंके कुलका अवश्य ही भावी विनाश स्पष्ट रूपसे दीख पड़ता है हे वीर। देखो प्रकाशमान ज्योति सब प्रतिकूल होरहा है, हाथी और पक्षी आदि सब जीवजन्तु भयङ्कर भाव धारण किये हुए हैं। क्षत्रियोंके नाश होनेके विषयमें और भी बहुतसे भयङ्कर उत्पात दिखाई पड़ रहे हैं। विशेष करके हम लोगोंके बीचहीमें सब अशकुनोंकी अधिक उत्पत्ति होरही है। तुम्हारी सेनाके ऊपर उल्कापात हो रहा है। सवारीके वाहन मानो हर्षसे रहित होकर रुदन कर रहे हैं। अशुभ फल देनेवाले गिद्ध आदि पक्षी सेनाके चारो ओर घूम रहे हैं, नगर और राजभवनकी शोभा पहिलेके समान अब नहीं है। सियार आदि पशु भयङ्कर शब्द करते हुए सब दिशाओंमें घूम रहे हैं। हे महाबाहो। इससे तुम पिता माता और हित चाहनेवाले हम लोगोंके वचनोंका पालन करो। देखो, शान्ति और युद्ध दोनो ही तुम्हारे अधिकारमें है। हे शत्रुनाशन। यदि इसवार भी तुम सुहृद पुरुषोंकी बातोंको न मानोगे, तो अपनी सेनाको अर्ज्जुनके बाणोंसे पीड़ित देखकर अवश्य ही तुमको पश्चात्ताप करना पड़ेगा। संग्रामभूमिमें अग्निके समान तेजस्वी भयङ्कर शब्द करनेवाले भीमसेनके सिंहनाद और गाण्डीव धनुषके प्रचण्ड शब्दको सुनकर हम लोगोंके यह वचन तुमको स्मरण हावेंगे। यदि इन वचनोंमें तुम्हें उलटी समझ होरही है, तो ये वचन अवश्य ही कार्य्यमें परिणत होवेंगे इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

१२८ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भीष्म और द्रोणाचार्य्यके ऐसे वचन सुनके दुर्योधन नीची गर्दन करके दोनो भौओंके म[ध्य] स्थानको सिकोड़कर तिरछी दृष्टिसे पृथ्वीकी ओर देखने लगे, और कुछ भी उत्तर न दिया। उनको इस प्रकार मनमलिन हुए देखकर वे दोनो वीर पुरुष एक दूसरेका मुख देखकर फिर भी दुर्योधनसे वचन बोले। भीष्म बोले, मैं सेवा करनेवाले पापरहित, ब्रह्मनिष्ठ, सत्यवादी अर्ज्जुनके विरुद्ध युद्ध करूंगा, इससे बढ़के और दुःखका विषय क्या होगा? द्रोणाचार्य्य बोले, हे राजन्! अपने पुत्र अश्वत्थामाके ऊपर मेरी जैसी प्रीति है अर्ज्जुनके ऊपर उससे भी अधिक है। अश्वत्थामा जिस प्रकारसे मेरा मान और प्रतिष्ठा करता है, अर्ज्जुन उससे भी अधिक मान, प्रतिष्ठा तथा नम्रता प्रकाश करता है। क्षत्रिय धर्मका अनुष्ठान करनेसे मुझको पुत्रसे भी प्यारे उस अर्ज्जुनके सङ्ग युद्ध करना पड़ेगा। अहा! क्षत्रियोंकी जीविका कैसी बुरी है! इस पृथ्वीके बीच जिससे समान धनुर्द्धारी और कोई भी नहीं है, वह अर्ज्जुन मेरे ही प्रसादसे सबमें श्रेष्ठ हुआ है। जो पुरुष मित्रद्रोही, दुष्ट स्वभाव नास्तिक, विनय रहित और शठतासे युक्त होता है, वह यज्ञके स्थानमें आये हुए मूर्खके समान

कभी पूजित नहीं हो सकता है । पापी मनुष्य बार बार निवारण करने पर भी जैसे पापकर्म्महीका अनुष्ठान करनेका अभिलाषी होता है, उसी प्रकारसे पुण्यात्मा पुरुष पापकर्म्मसे सदा उत्तेजित किये जानेपर भी केवल पुण्यकर्म्मोंके करनेहीकी वासना करते हैं। हे भरतसत्तम ! तुमने शठता द्वारा पाण्डवोंको अलग किया है, तौभी वे लोग तुम्हारे प्रिय ही कार्य्यके करनेमें रत हैं, परन्तु तुम सदा उनके अहित ही कर्म्म करनेमें तत्पर रहते हो। देखो, कौरवोंमें बूढ़े और बुद्धिमान् विदुर, मैं, द्रोणाचार्य्य और श्रीकृष्ण आदि सब लोग तुम्हारे हितके निमित्त उपदेश करते हैं, परन्तु तुम किसीकी बात भी उत्तम नहीं समझते हो। "मुझमें अत्यन्त बल है" यही समझ कर तुम मगरमच्छ घड़ियाल आदिसे युक्त महासमुद्रको तरनेकी इच्छासे गङ्गाके वेगकी भांति सहसा पाण्डवोंकी सेनाके पार जानेकी अभिलाषा करते हो। दूसरेके पहिरे हुए वस्त्रको पहिरनेके अथवा त्याग की हुई मालाको धारण करनेके समान तुम युधिष्ठिरकी राजलक्ष्मी पाकर उसकी अभिलाषा करते हो, परन्तु मैं तुमसे यही वचन पूछता हूं, कि युधिष्ठिरको द्रौपदीके सहित शस्त्रधारी भाइयोंसे घिरे हुए वनमें निवास करनेपर भी कौन वीर पुरुष राज्यमें स्थित रहकर उन्हें जीत सकता है? सम्पूर्ण यक्ष जिनके आज्ञाकारी तथा सेवक बने हैं, उस धनके स्वामी कुबेरके समीपमें भी गये। युधिष्ठिर उनके समीप तथा [illegible] और भ्राताओंके सहित निराद-मान हुए थे पाण्डव लोग कुबेरके राजभवनमें जाकर धनका [illegible] रत्नोंको पाकर [illegible] इस समय तुम्हारे [illegible] राज-को [illegible] [illegible] अभिलाषा करते हैं

हे राजन्! [illegible]

हुई है, इन लोगोंने अपनी शक्तिके अनुसार दान, अध्ययन, होम और धनसे ब्राह्मणोंको तृप्त किया है, इससे इन लोगोंको तो एक प्रकारसे कृतकृत्य ही समझना चाहिये। इस समय पाण्डवोंके सङ्ग युद्ध करके तुमको राज्य, सुख, मित्र, धन आदि सब वस्तुओंको त्यागकर सदा घोर व्यसनमें पड़ना होगा, सदा घोर तपस्या और व्रत करनेवाली द्रौपदी देवी जिसके विजयकी अभिलाषा करती हैं, उन पाण्डवोंको तुम कैसे जीत सकोगे? श्रीकृष्ण जिसके मन्त्री और सब धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ अर्जुन जिनके भाई हैं, ऐसे प्रतापी पाण्डवोंको तुम किस प्रकारसे जीत सकोगे। इन्द्रियोंको जीतनेवाले तपस्वी और बुद्धिमान् ब्राह्मण लोग जिस युधिष्ठिरकी सहायता कर रहे हैं, उस महा पराक्रमी सत्यवादी वीर-पुरुषको तुम किस प्रकारसे पराजित कर सकोगे? मित्रोंको विपद रूपी समुद्रमें डूबनेके समयमें कल्याण चाहनेवाले सुहृद पुरुषोंको जैसा वचन कहना उचित है, उसीके अनुसार मैं फिर कहता हूं कि युद्ध करनेकी कुछ भी आवश्यकता नहीं है। कुरुकुलकी वृद्धिके निमित्त उन पुरुषसिंह पाण्डवोंके सङ्गमें सन्धि करो। ५७, सेवक और सेनाके सहित निरर्थक मृत्युके मुखमें मत पड़ो।

१३९ अध्याय समाप्त।

अथ कर्णविवाद पर्व्व प्रारम्भ।

राजा धृतराष्ट्र बोले, हे सञ्जय ! श्रीकृष्णचन्द्र [illegible] और राजपुत्रोंके सहित फिर कर्णको रथपर चढ़ाकर नगरसे बाहर हुए थे। उस महा तेजस्वी मधुनाशन [illegible] रथपर [illegible] दिन [illegible] प्रश्न किया था और कौन-[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हे [illegible] [illegible]

कठोर थे, तुम मेरे निकट विस्तारपूर्व्वक कहो।

सञ्जय बोले, हे भारत! श्रीकृष्णचन्द्रने यथा उचित कर्णसे कोमल और कठोर दोनों प्रकारके वचनोंका प्रसङ्ग किया था। उन महा तेजस्वी कृष्णने जो सब वचन कर्णसे कहे थे, वह सब ही धर्म्म अर्थसे युक्त, प्रिय, सत्य, हितकारी और हृदयसे ग्रहण करने योग्य वचन थे, मैं तुम्हारे समीप विस्तारपूर्व्वक उन वचनोंको कहता हूं, तुम चित्त लगाकर सुनो।

श्रीकृष्णचन्द्रने कर्णसे यह वचन कहा था, कि हे कर्ण! तुमने बहुतेरे वेदके जाननेवाले ब्राह्मणोंकी उपासना की है, और पाप-रहित होकर निष्ठा और श्रद्धाके सहित अनेक तत्वोंके अर्थको भी जान लिया है, इससे तुम सनातन वेदवादको यथार्थ रूपसे जानते हो, और सूक्ष्मसे सब धर्म्मशास्त्रके मर्म्मको भी तुम जानते हो। देखो स्त्रीकी अवस्थामें जो कानीन और सहोढ़ दो प्रकारके पुत्र उत्पन्न होते हैं, शास्त्रके जाननेवाले पण्डित लोग कन्याके पाणिग्रहण करनेवाले पुरुषको ही उन पुत्रोंका पिता कहते हैं, इससे कुन्ती देवीके कन्या अवस्थामें तुम्हारा जन्म होनेसे धर्म्मशास्त्रकी आज्ञाके अनुसार तुम भी धर्म्मपूर्व्वक पाण्डु-राजहीके पुत्र हो। इससे चलो, युधिष्ठिरके पहिले तुम ही राजा बनोगे। तुम्हारे पितृपक्षमें पाण्डव और मातृपक्षमें वृष्णिवंश है, हे पुरुष-र्षभ! इन दोनों पक्षोंको तुम सदा अपना सहायक समझो। आज ही मेरे सङ्ग तुम इस स्थानसे प्रस्थान करो। हे तात! तुम युधिष्ठिरसे पहिले ही कुन्तीके गर्भसे उत्पन्न हुए हो, वह पाण्डवोंको आज विदित होजावे। पाण्डव लोग पाचों भाई द्रौपदीके पाचों पुत्र, सुभद्रा-नन्दन अभिमन्यु और पाण्डवोंके कार्य्यके निमित्त इकट्ठे हुए अन्धक और वृष्णि आदि सम्पूर्ण राजा तथा राजपुत्र लोग तुम्हारी चरणवन्दना करेंगे। पाञ्चालोंकी प्यारी स्त्री द्रुपदनन्दिनी द्रौपदी भी समयके छठवें भागमें तुम्हारे समीप उपस्थित होगी। तुम्हारे राज्याभिषेकके निमित्त राजा और राजकन्या लोग सुवर्ण, चांदी आदिके कलशोंमें गन्ध औषधी, सब धान्य, सम्पूर्ण रत्न और लता आदि समस्त सामग्रियोंको लाकर उपस्थित करेंगे, पवित्र अन्तःकरणवाले ब्राह्मणश्रेष्ठ धौम्य मुनि अग्निहोत्रका कार्य्य पूर्ण करेंगे और पाण्डवोंके वैदिक कर्म्मका अनुष्ठान करनेवाले चारों वेदोंके जाननेवाले ब्राह्मण लोग आज ही तुमको पृथ्वीके राज्यके ऊपर अभिषेक करके सिंहासनपर बैठावें, पुरुषश्रेष्ठ पाचों भाई पाण्डव लोग, मैं, तथा द्रौपदीके पाचों पुत्र, पाञ्चाल, और चेदिवंशीय क्षत्रिय लोग तथा सब कोई मिलकर इस सम्पूर्ण पृथ्वीके राजपर तुम्हारे आधिपत्यका प्रचार करेंगे। सत्यवादी धर्म्मात्मा धर्म्मपुत्र युधिष्ठिर तुम्हारे युवराज बनेंगे। वह श्वेतछत्र धारण करके तुम्हारे पीछे पीछे रथपर चढ़के चलेंगे। हे राजन्! राज्यपर तुम्हारा अभिषेक होनेसे महा बल-वान् कुन्तीपुत्र भीमसेन तुम्हारे शिरके ऊपर श्वेतछत्र धारण करके खड़े होंगे। अर्ज्जुन किङ्किणियोंके शब्दोंसे पूरित बाघके चमड़ेसे घिरा हुआ श्वेतवर्णके घोड़ोंसे युक्त तुम्हारे उत्तम रथको चलावेंगे। उनका पुत्र अभिमन्यु सदा तुम्हारी सेवामें उपस्थित रहेगा, नकुल सहदेव, द्रौपदीके पाचों पुत्र, शिखण्डी और पाञ्चाल देशीय दूसरे सम्बन्धी लोग भी तुम्हारे अनुगामी बनेंगे। अन्धक, वृष्णि, दाशार्ह, और दशार्ण वंशीय राजा और हम लोग सत्यके अनुसार तुम्हारे अनुयायी बनेंगे। हे महा बाहो! इससे तुम हम और अनेक मङ्गल कर्म्मोंसे युक्त होकर सहोदर पाण्डवोंके सहित परम सुखसे राज्य भोग करो। द्रविड़, कुन्तल, अन्ध्र, तालचर, चुचुप और वेणुप देशीय

राजा लोग तुम्हारे अनुयायी होवेंगे और सूत, मागध, वन्दी लोग अनेक प्रकारसे तुम्हारी स्तुति करते रहें। पाण्डव लोग "वसुषेणकी जय" ऐसा कहकर सब और तुम्हारी विजयकी घोषणा करेंगे। हे कौन्तेय! नक्षत्रोंके बीचमें विराजमान बृहस्पतिकी भांति तुम भाइयोंके साथ मिलकर राज्य शासनमें प्रवृत्त होकर कुन्तीका आनन्द भी बढ़ाओगे तुम्हारे इष्ट मित्र प्रसन्न और शत्रु लोग दुःखित होवेंगे, माता रूपसे आज ही पाण्डवोंके सङ्ग तुम्हारा मिलाप होजावेगा।

१४० अध्याय समाप्त।

कर्ण बोले हे वृष्णिनन्दन कृष्ण! तुम जो मित्रता, प्रीति, हितैषितासे युक्त मेरे निमित्त इन सब वचनोंको कहते हो, उसमें कुछ भी सन्देह नहीं है, मैं इन सब वचनोंको स्वीकार करता हूं। हे कृष्ण! तुम जैसा विचार करते हो, वह सब सत्य है धर्म्मशास्त्रके अनुसार धर्म्मपूर्व्वक मैं पाण्डुराजका ही पुत्र हूं। माताने कन्या अवस्थामें सूर्य्यदेवके अंशसे मुझे गर्भमें धारण किया था, और उत्पन्न होते ही सूर्य्यदेवके वचनके अनुसार मुझे छोड़ दिया था, उस समयमें सूतजातीय अधिरथ नाम [illegible] मुझे देखते ही प्रीतिके [illegible] घर लाकर अपनी प्यारी स्त्री राधाके हाथमें समर्पण किया था। हे शत्रुनाशन कृष्ण! इसमें इस प्रकारसे उत्पन्न होनेसे धर्म्मशास्त्रके अनुसार मैं पाण्डुराजहीका पुत्र हो सकता हूं, परन्तु कुन्तीदेवीने मेरे [illegible] करके अपने पाससे त्याग दिया। हे कृष्ण! तब मुझे पाकर [illegible] अपनी स्त्री राधाके हाथमें समर्पण किया था, तब पुत्रके स्नेहसे युक्त होकर [illegible] मेरा मल-मूत्र साफ किया था। इससे धर्म्मको जाननेवाला और सदा धर्म्मशास्त्रको सुनकर मेरे समान पुरुष किस प्रकारसे उनके पिण्डको लोप करनेमें समर्थ हो सकता है? विशेष करके राधाकी भांति अधिरथ भी प्रीति पूर्व्वक मुझे अपना पुत्र ही समझते हैं, और मैं सदासे उनको पिता ही समझता हूं। पुत्रवशमें होकर उन्होंने शास्त्रमें कही हुई विधिके अनुसार ब्राह्मणोंसे मेरा जातिकर्म्म आदि सब संस्कार कराके "वसुषेण" नाम रक्खा, और युवा अवस्थाके प्राप्त होनेपर अपनी स्वजातीय कन्याके सङ्ग मेरा व्याह किया। हे मधुसूदन जनार्द्दन! उनके गर्भसे मेरे पुत्र और पौत्र आदि उत्पन्न हुए हैं और उन ही लोगोंके संग मेरा हृदय तथा वासनाबन्धन लगा हुआ है। इससे बहुतसा सुवर्णका ढेर और सम्पूर्ण पृथ्वीमण्डलके मिलने तथा अत्यन्त हर्ष और भयको पानेपर भी मैं उस प्रीतिके बन्धनको कभी नहीं तोड़ सकता हूं। हे कृष्ण! राजा धृतराष्ट्रके कुलमें मैं दुर्योधनके आसरेमें रहकर तेरह वर्षसे निष्कण्टक राज्यको भोग कर रहा हूं, इतने दिनोंमें मैंने बहुतसे यज्ञ आदिक शुभ कर्म्मोंका भी अनुष्ठान किया है। परन्तु सूतजातिसे पृथक् आगे कोई कर्म्म नहीं किया है। मेरा विवाह आदि सब कार्य्य सूतजातिमें हुआ है, हे कृष्ण! मेरा ही आसरा करके राजा दुर्योधन पाण्डवोंसे सग विरोध करके युद्ध करनेमें प्रवृत्त हुए हैं। इसी कारणसे द्वैरथ-युद्धमें सबसे अग्रगामी और अर्जुनसे युद्ध करनेके निमित्त मुझको ही निश्चित किया है। हे जनार्द्दन कृष्ण! इससे इस समयमें वध, बन्धन, भय अथवा लोभसे विचलित होकर उस बुद्धिमान् धृतराष्ट्र-पुत्रके संग, [illegible] किसी प्रकारसे भी मिथ्या व्यवहार करना उचित नहीं है। [illegible]

तथा अर्जुन दोनोंकी भी बहुत अकीर्त्ति होवेगी। हे मधुसूदन कृष्ण! तुम निःसन्देह यह सब वचन हमारे हितके निमित्त कहते हो, और तुम्हारे वशमें चलनेवाले पाण्डव लोग भी तुम्हारे कहे हुए सब कार्य्योंको पूर्ण करेंगे, इसमें भी मुझको कुछ सन्देह नहीं है। हे शत्रुनाशन! इस समय तुम पाण्डवोंके निकट हम लोगोंका यह विचार गुप्त रखना, यही मुझे सब प्रकारसे उत्तम बोध होता है। हे शत्रुनाशन! यदि इन्द्रियोंको जीतनेवाला धर्मात्मा युधिष्ठिर मुझे कुन्तीके गर्भसे उत्पन्न हुआ प्रथम पुत्र जानेगा तो वह स्वयं राज्य न ग्रहण करके मुझको ही समर्पण करेगा, और मैं भी उस प्रसिद्ध विशाल राज्यको ग्रहण करके अपनी पहिली प्रतिज्ञाके अनुसार दुर्य्योधनको दे दूंगा। हे मधुसूदन कृष्ण! इससे वह धर्मात्मा युधिष्ठिर ही सदाके लिये राजा बना रहे। तुम जिसके मन्त्री हो और महारथ भीम तथा अर्जुन जिसके मुख्य वीर योद्धा हैं, और नकुल सहदेव तथा द्रौपदीके पुत्र जिनके पृष्ठरक्षक हैं, उसके निमित्त इस सम्पूर्ण पृथ्वीके राज्यको बहुत दिनतक भोग करनेहोमें कौन कठिनाई है? हे कृष्ण! युधिष्ठिरने जिस प्रकारसे क्षत्रियोंकी बड़ी सेना इकट्ठी की है, उसमें हमलोगोंसे सहायता लेनेका कुछ भी प्रयोजन नहीं है। देखो, पाञ्चालपति धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, उत्तमौजा और युधामन्यु महारथ सात्यकी, सत्यधर्मा सौमिकि, चेद्य, चेकितान, वीरबहुटी कीड़ेकी भांति पांच भाई लाल वर्णके केकय लोग, भीमसेनका मामा महात्मा कुन्तिभोज, महाबली श्येनजित्, विराटपुत्र शङ्ख और समुद्रकी भांति सब कार्य्योंका पूर्ण करनेवाले तुम तथा और भी बहुतसे मुख्य मुख्य राजा लोग इकट्ठे हुए हैं। हे कृष्ण! दुर्य्योधन सब पृथ्वीके राज्यको पाकर लोकमें विख्यात हुए हैं, यह ठीक है, परन्तु इस समय उनको बड़े भारी शस्त्ररूपी यज्ञका अनुष्ठान करना पड़ेगा। तुम उस यज्ञके करानेवाले नायक होगे और तुमको ही यजुर्वेदी ऋत्विकका कार्य्य करना होगा। गाण्डीव धनुषधारी कपिध्वजासे युक्त अर्जुन होताका कार्य्य करेंगे। गाण्डीव धनुष स्रुव और शत्रुपक्षके लोगोंका पराक्रम ही उसमें घृतरूपी होगा। हे कृष्ण! शस्त्रोंके चलानेके समयमें पराक्रमी अर्जुन पाशुपत, ब्रह्मास्त्र, ऐन्द्र और स्थूणाकर्ण आदि जो सब मन्त्र शस्त्र चलावेंगे, वह सब यज्ञीय मन्त्रोंके समान होंगे। पराक्रममें पिताके समान अथवा उससे भी अधिक बलवान् सुभद्रापुत्र अभिमन्यु गीत-स्तोत्र अर्थात् उद्गाता बनेंगे, रणभूमिमें महा घोर शब्द करनेवाले हाथियोंकी सेनाके निमित्त कालस्वरूप महाबली पराक्रमी पुरुषसिंह भीमसेन सामवेदी मन्त्रोंको जाननेवाले होताका कार्य्य करेंगे। जप होमसे युक्त स्वयं राजा युधिष्ठिर होमके कार्य्यको समाप्त करेंगे। शङ्ख, भेरी, मृदङ्ग, नगाड़ेके बाजे और वीरोंके सिंहनाद ब्राह्मणोंके वचन अर्थात् कालके भोजनके निमित्त आवाहन मन्त्रस्वरूप होंगे। यशस्वी बलवान माद्रीनन्दन नकुल और सहदेव इस यज्ञके निमित्त क्षत्रियरूपी पशुओंको मारेंगे। हे जनार्दन कृष्ण! विचित्र वर्णके दण्ड सब उत्तम रथोंका समूह यज्ञके यूपरूप होंगे। कर्णि, नालिक, नाराच आदि शस्त्र वत्सदन्त और सोम आहुति साधनके निमित्त चर्म्म आदिके स्थापनमें गिने जावेंगे। हे कृष्ण! उस यज्ञमें तुम्हारे समीप सोमकलश शरासन आदि खड्ग अभिपतन मस्तक आदि पुरोडाश, शक्ति अग्निको उद्दीपन करनेवाली समिधा, गदा-परिघ आहुतिकी रक्षाके निमित्त दोनों किनारेकी लकड़ी और रुधिर होमका कार्य्य करेगा। द्रोणाचार्य्य तथा शरद्वतपुत्र कृपाचार्य्यके शिष्य लोग इस यज्ञके कार्य्यको पूर्ण करेंगे, गाण्डीवधारी अर्जुन और

द्रोणाचार्य्य आदि महारथ वीर जिन अस्त्र-शस्त्रोंको छोड़ेंगे. वह सब परिस्तोम, और सात्यकी प्रतिज्ञाके सहित पूर्ण रीतिसे सन्न सम्भारण कर्म्मको करेगा। हे महाबाहो! इस प्रकारसे यज्ञके कर्म्मका विस्तार होनेपर भीमसेनका पुत्र घटोत्कच उसमें क्षत्रियरूपी पशुओंको मारेगा। हे कृष्ण! प्रतापी धृष्टद्युम्न जो द्रुपदकी सभामें यज्ञके कर्म्म आरम्भ करनेपर अग्निसे उत्पन्न हुआ है, वही इस यज्ञमें दक्षिणा स्वरूप होगा। हे कृष्ण! दुर्य्योधनकी प्रीतिके निमित्त मैंने पाण्डवोंको जो कुछ कटोर वचन कहा था, उस नीच कर्म्मके निमित्त इस समयमें शङ्कित हो रहा हूं। जब तुम मुझको अर्ज्जुनके वाणोंसे मरा हुआ देखोगे, तब मेरे कहे हुए उस शस्त्रयज्ञका फिर आरम्भ किया जायगा। भीमसेन जब महाघोर शब्द करके दुःशासनके रुधिरको पीवेगा, तब ही सोमरसका पान समझा जायगा। हे कृष्ण! जब पाञ्चाल-पुत्र धृष्टद्युम्न और शिखण्डी द्रोणाचार्य्य और भीष्मको मारेंगे, तब ही इस यज्ञकी समाप्ति अर्थात् कुछ कालके निमित्त ठहराव होगा और महाबली भीमसेन जब धृतराष्ट्रपुत्र दुर्य्योधनको मारेगा तभी यज्ञ शेष होजावेगा। हे कृष्ण! धृतराष्ट्रकी पुत्रवधू जब स्वामी और पुत्रसे हीन होकर गान्धारीके सहित रोदन करेगी, तब ही कुत्ते, गिद्ध और सियारोंसे युक्त इस शस्त्र यज्ञकी समाप्ति होवेगी। हे शत्रुनाशन कृष्ण! तब अन्तिम प्रार्थना यही है, कि विद्या और अवस्थासे बूढ़े हुए क्षत्रिय लोग जिनमें तुम्हारे निमित्त व्यर्थ मृत्युको न स्वीकार करें। तीनों लोकोंमें पवित्र पुण्यभूमि इस कुरुक्षेत्रमें इकट्ठे होकर पराक्रमी क्षत्रिय लोग जिसमें शस्त्रसे मरकर स्वर्ग [illegible] जावें। हे पुण्डरीकाक्ष! इस [illegible] तुम्हारी ऐसी इच्छा होवे, जैसा ही [illegible], यह सब [illegible] और जिसमें स्वर्ग लोकमें [illegible] [illegible] हस्तीका [illegible] [illegible]। हे जनार्द्दन कृष्ण! इस पृथ्वीपर जबतक पर्व्वत और नदी विद्यमान है, तबतक यह कीर्त्ति सदा प्रकाशित रहेगी। ब्राह्मण लोग महाभारत युद्धकी कथा सदा कहते रहेंगे। हे कृष्ण! युद्धमें यश अर्थात् जय अथवा शक्तिके अनुसार पराक्रमको प्रकाश करके जो मृत्यु होती है वही क्षत्रियोंका धन है। हे परन्तप कृष्ण! हमारे इस विचारको सदा गोपन रखके तुम अर्ज्जुनको युद्धके निमित्त मेरे सम्मुख उपस्थित करना।

१४१ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, शत्रुओंको नाश करनेवाले भगवान् कृष्ण कर्णकी यह बात सुनकर हंसते हुए उनसे फिर कहने लगे, हे कर्ण! राज्य प्राप्त करनेका उपाय क्या तुम्हें उत्तम नहीं जचता है? मैं तुमको समस्त पृथ्वीके राज्यको देनेमें सहमत हूं, तौभी उसके शासन करनेके निमित्त तुम इच्छा नहीं करते हो, इससे मुझको निश्चय बोध होता है, कि पाण्डवोंकी अवश्य ही भावी-विजय होवेगा। अर्ज्जुनके कपिध्वजासे युक्त रथपर प्रचण्ड जय शब्द सुनाई देगा, यह मुझे प्रत्यक्ष ही दीख पड़ता है। विश्वकर्म्माने उस कपिध्वजाको दिव्य मायासे ऐसा विस्तार किया है, कि बोध होता है, इन्द्र धनुषके समान प्रकाशित और अनेक पताकाओंसे युक्त है, और विजय चाहनेवाले भूत प्रेत राक्षस आदि भी उसपर दीख पड़ते हैं। हे कर्ण! अर्ज्जुनके ऊपर एक योजन और सम्मुख एक योजनके घेरेमें वह ध्वजा जलती हुई अग्निके समान ऐसी बनाई गई है कि उसकी गति पर्व्वत वृक्ष आदिसे भी नहीं रुक सकती। [illegible] भूमिमें हम सारथीसे [illegible] [illegible] तुम आग्नेय, वायव्य, [illegible] आदि अस्त्रोंको चलाते हुए देखोगे, और [illegible] वज्रके समान [illegible] [illegible]

सुनोगे, उस समय मूर्त्तिमान् कलिदेवकी उत्पत्ति होगी। सत्ययुग, त्रेता और द्वापरका उस समयमें चिन्ह भी न दीख पड़ेगा। जब देखोगे, जप होममें युक्त धर्मात्मा राजा युधिष्ठिर खुद ही रणभूमिमें आकर अपनी महासेनाकी रक्षा कर रहे हैं और सूर्य्यके समान प्रज्वलित होकर शत्रु सेनाको पीड़ित कर रहे हैं, उस समयमें सत्ययुग, त्रेता और द्वापरका कोई लक्षण न दीख पड़ेगा। जब देखोगे, कि महाबली भीमसेन —शत्रुओंको नाश करनेवाले महाबाहु भीमसेन दुःशासनके रुधिरको पीकर रणभूमिमें नृत्य कर रहे हैं, उस समय सत्ययुग, त्रेता और द्वापरका धर्म नहीं रहेगा। जब तुम देखोगे, भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य्य, महाराज सुयोधन, सिन्धुनन्दन जयद्रथ आदि महारथ योद्धाओंके रणभूमिमें आनेपर धनुर्द्धारियोंमें श्रेष्ठ अर्जुन शीघ्र ही उन लोगोंको अपने बाणोंसे पीछे हटाते हैं, उस समय सत्ययुग त्रेता और द्वापरका कुछ भी कर्म न दीख पड़ेगा। जब देखोगे, शत्रुओंको नाश करनेवाले पराक्रमी नकुल और सहदेव रणभूमिमें अपने महाघोर शस्त्रोंको चलाकर मतवारे हाथीके समान धृतराष्ट्रपुत्रोंकी सेनाको विकल कर रहे हैं, उस समयमें सत्ययुग, त्रेता और द्वापरका कोई भी कर्म न दीख पड़ेगा।

हे कर्ण! तुम यहांसे जाकर भीष्म, द्रोण और कृपाचार्य्यसे यह वचन कहना कि वर्त्तमान महीना सब प्रकारसे उत्तम है, इस महीनेमें भक्ष्य-भोज्य और काठ बहुत मिलेंगे वनमें सब औषधी और फलोंकी बहुत हो उत्पत्ति होती है, मक्खियोंका उपद्रव बहुत थोड़ा रहता है, मार्गमें कीचड़ नाम मात्रको भी नहीं है, जल उत्तम रससे युक्त है, वायु थोड़ा उष्ण और ठण्ढा है; इससे यह महीना सदा ही सुखका देनेवाला है। आजके सात दिनके बाद अमावस्या होगी, पण्डित लोग इन्द्रको इस तिथिका देवता वर्णन करते हैं, इससे उसी दिन युद्ध आरम्भ करो। इसके अतिरिक्त जो सब राजा लोग युद्धके निमित्त उपस्थित हैं, उनसे भी कहना, कि तुम लोगोंकी जो अभिलाषा है, मैं उसको सब प्रकारसे पूर्ण करूंगा, दुर्य्योधनके वशमें रहनेवाले सब राजा और राजपुत्र शस्त्रसे मर कर उत्तम गतिको पावेंगे।

१४२ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, श्रीकृष्णचन्द्रके यह हितकारी वचन सुन कर्ण उनकी यथा उचित पूजा करके यह वचन बोले, हे महाबाहो! तुम जान बूझ कर क्यों मुझको मोहित करनेकी इच्छा करते हो? पृथ्वी मण्डलका जो यह पूर्णरूपसे विनाश होनेका समय उपस्थित होरहा है, उसका कारण केवल शकुनि मैं, दुःशासन और राजा दुर्य्योधन है। हे कृष्ण! कौरव पाण्डवोंसे जो महा संग्राम उपस्थित होगा, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। पृथ्वी अवश्य इस युद्धमें रुधिरके कीचड़से भर जावेगी, दुर्य्योधनके अनुयायी सब राजा और राजपुत लोग अवश्य ही युद्धक्षेत्रमें मरकर यमपुरीमें पहुंचेंगे। हे कृष्ण! रोयेंको खड़े करनेवाले अनेक प्रकारके बुरे स्वप्न, भयङ्कर अशकुन और सब प्रकारके दारुण उत्पात सदा ही दीख पड़ते हैं, उससे युधिष्ठिरका विजय और दुर्य्योधनका पराजय स्पष्ट रूपसे सूचित होता है। हे कृष्ण! देखो, तीक्ष्ण ग्रह तेजस्वी शनैश्चर प्राणियोंको अधिक पीड़ा देनेके निमित्त प्रजापति-देवत रोहिणी नक्षत्रको पीड़ित कर रहा है। मङ्गल टेढ़ी चालसे जेष्ठानक्षत्र पर आकर मित्रदलके संहार करनेके निमित्त मित्रदेवत नक्षत्र अनुराधासे सङ्ग करनेकी अभिलाषा करता है। हे कृष्ण! राहुग्रह चित्राको विशेष रूपसे पीड़ित कर रहा है। इससे निश्चय कौरवोंको महाभय उपस्थित होगा। चन्द्रमाके भीतर

जो छाया रहती है, वह अपने स्थानसे पृथक् मालूम होरही है। राहु सर्व्वदा सूर्य्यके समीपमें हुआ चाहता है। आकाशसे उल्कापात होरहा है, हाथी आदि समस्त वाहन बुरे शब्द करते हैं घोड़े अन्न और पानीकी इच्छाको त्याग करके अकारण ही रोदन कर रहे हैं। हे कृष्ण! इन सब विषयोंके जाननेवाले पण्डितोंने कहा है, कि इन सब बुरे असगुनोंके उत्पन्न होनेपर अनेक प्राणियोंका संहार करनेवाला महाघोर भय उपस्थित होता है। हे महाबाहो कृष्ण! दुर्य्योधनकी सेनामें हाथी, घोड़े, मनुष्य आदि सबके थोड़े भोजन करने पर भी अधिक मल दीख पड़ता है। बुद्धिमान् पण्डितोंने इसको केवल पराजय तथा नाशहीका लक्षण लिखित किया है। हे कृष्ण! इधर पाण्डवोंके सब वाहन हृष्टपुष्ट और हरिण आदि शुभ शकुनको जाननेवाले पशु उनकी दहिनी ओरसे गमन करते हैं, यह केवल उन लोगोंके विजयका ही लक्षण दीख पड़ता है। परन्तु दुर्य्योधनकी बायीं ओरसे हरिण आदि पशु चलते हैं, और अमानुषी वाणी सदा सुन पड़ती है, यह सब पराजयके ही लक्षण हैं। उत्तम पक्षी, मोर, हंस, सारस, चातक और चकोर आदि पाण्डवोंके अनुगामी होते हैं, परन्तु कौरवोंके पीछे गिद्ध, कौए, सियार राक्षस तथा मक्खियोंका झुण्ड चलता है। दुर्य्योधनकी सेनामें भेरी आदि बाजोंका भी शब्द नहीं होता है, परन्तु पाण्डवोंके युद्धके बाजे बिना बजाये ही बजने लगते हैं। हे माधव! दुर्य्योधनके [illegible] करनेवाले स्थानमें कूर, कौवे, गीदड़ वृषभके समान शब्द बोलते हैं। देवता लोग मांस और लोहूकी वर्षा करते [illegible] सुन्दर नगर और प्राकार आदि [illegible] युक्त आकाशमें गन्धर्व नगर दीख पड़े हैं। उदयाचलपर उदयकालमें प्रचण्ड परिघ सूर्य्यको आच्छादित करता है। प्रथम और अन्त दोनों सन्ध्याके समयमें महाभय उत्पन्न होता है, एक पङ्ख, एक ही नेत्र, और एकही चरणवाले बहुतसे विकटरूपके पक्षी दीख पड़ते हैं, और महा घोर शब्द करते हैं। सियार रात दिन अशुभ शब्दसे चिल्लाते हैं काली गर्दन और लाल चरणवाले भयानक पक्षी सन्ध्याके समय इधर उधर घूमते हुए दीख पड़ते हैं। सेनाके पहले ब्राह्मणोंको पीछे गुरु और भक्तिसे युक्त सेवकोंसे भी द्वेष करते हैं। हे मधुसूदन कृष्ण! यह सब ही पराजयके लक्षण हैं। दुर्य्योधनकी सेनाका स्थान पूर्व दिशामें रक्तवर्ण दीखता है, शस्त्रके रूपके समान दक्षिण दिशाका वर्ण हो गया है और पश्चिम दिशाका रूप बिना पके हुए मट्टीके पात्रके समान है। सब दिशाएं प्रज्वलित होकर दुर्य्योधनको बड़े भारी भयका बोध कराती हैं। हे कृष्ण! मैंने स्वप्नमें देखा है, कि राजा युधिष्ठिर सहस्र खम्भोंसे युक्त एक ऊंचे मन्दिरके ऊपर चढ़ रहे हैं, वह सब लोग अत्यन्त उत्तम वस्त्रोंको धारण करके श्वेतवर्ण [illegible] युक्त हैं। उन लोगोंके आसन भी श्वेत ही वर्णके दीख पड़े। हे जनार्दन कृष्ण! उस समय मैंने यह भी देखा था कि सारी लोहूसे भरी हुई पृथ्वीको तुम अपने शस्त्रोंसे व्याकुल कर रहे हो। और महा तेजस्वी राजा युधिष्ठिर हड्डियोंके ऊपर बैठकर घृत और दूधका पान कर रहे हैं, और यह भी देखा कि युधिष्ठिर सब पृथ्वीको ग्रास कर रहे हैं, इससे अवश्य ही बोध होता है, कि वह तुम्हारे दिये हुए इस सम्पूर्ण पृथ्वीमण्डलके राज्यको भोगेंगे। युधिष्ठिरकी भांति पुरुषश्रेष्ठ भीमसेन भी हाथ [illegible] पर्वतके शिखर-पर चढ़कर [illegible] पृथ्वी [illegible] नको [illegible] इससे [illegible] जाता है [illegible] इस [illegible] हे कृष्ण! [illegible]

स्थानपर धर्म्म रहता है, वहां पर ही जय होती है, इसे मैं खूब जानता हूं। हे कृष्ण! गाण्डीव धनुषको ग्रहण करनेवाले अर्जुन तुम्हारे सहित पाण्डुरवर्ण हाथीके ऊपर चढ़के परम शोभासे शोभित हुए थे। हे कृष्ण! इन सब बातोंके मर्म्मको भली भांति विचार करके देखनेसे यही बोध होता है, कि तुम लोग सब कोई मिलकर रणभूमिमें दुर्य्योधनका नाश करदोगे, उसमें मुझको क्या कुछ भी सन्देह हो सकता है? हे कृष्ण! फिर भी मैंने यह देखा, नकुल सहदेव और सात्यकी यह तीन पुरुषसिंह महारथ वीर सफेद रङ्गके कवच माला और वस्त्रोंसे भूषित होकर उत्तम मनुष्योंकी सवारीमें विराजमान है, इनके सिरके ऊपर पाण्डुरवर्ण छत्र शोभित है। हे महाबाहो कृष्ण! दुर्य्योधनकी सेनामें भी अश्वत्थामा, कृपाचार्य्य, यदुवंशश्रेष्ठ कृतवर्म्मा, इन तीनों पुरुषोंको श्वेत वस्त्र धारण किये हुए मैंने देखा था। इसके अतिरिक्त और सब राजा लोगोंके लालरङ्गके वस्त्रोंसे सिर बंधे हुए दीख पड़े। हे शत्रुनाशन कृष्ण! महारथ भीष्म और द्रोणाचार्य्य मुझे और दुर्य्योधनको सङ्ग लेकर ऊंटसे जुते हुए विमानमें बैठकर दक्षिण दिशाकी ओर चले। इससे यह निश्चय बोध होरहा है कि हम लोग शीघ्र ही यमपुरीमें पहुंचकर आतिथ्य रूपसे ग्रहण किये जावेंगे। हे जनार्द्दन कृष्ण! हम लोग सब राजाओंके सहित गाण्डीव-धनुषके प्रतापरूपी अग्निमें भस्म होजावेंगे, इसमें मुझे कुछ भी सन्देह नहीं है।

श्रीकृष्णचन्द्र बोले, हे कर्ण! जब मेरी बात तुम्हारे हृदयमें नहीं उत्तम बोध होती है, तब इस सम्पूर्ण पृथ्वीकी प्रजाओंका निश्चय ही नाशका समय उपस्थित हुआ है। हे भ्राता! जब सबके नाश होनेका समय उपस्थित होता है, तब उत्तम नीतिके समान बोध होनेवाली यथार्थसे दुष्ट नीति कभी भी हृदयसे नहीं दूर होती है।

कर्ण बोले, हे कृष्ण! यदि मैं इस वीरवंश नाश करनेवाले महायुद्धसे पार होकर जी रहूंगा, तब तुमसे फिर भेंट कर सकूंगा, नहीं तो स्वर्ग लोकमें अवश्य ही फिर हम लोगोंका मिलाप होगा। हे पाप रहित! इससे अब उस ही स्थानपर तुम्हारे सङ्ग मेरा मिलना सम्भव होता है।

सञ्जय बोले, राधापुत्र कर्ण कृष्णसे ऐसे वचन कहकर उन्हें अच्छी प्रकारसे आलिङ्गन करके वहांसे विदा हो कृष्णके रथसे उतर सुवर्ण भूषित अपने रथपर चढ़के दीनतायुक्त चित्तसे हम लोगोंके सङ्ग हस्तिनापुरको लौटे। अनन्तर सात्यकीके सहित कृष्णने सारथीसे रथ हांकनेको कहा, और शीघ्र ही वहांसे प्रस्थान किया।

१४२ अध्याय समाप्त।

———

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले,—श्रीकृष्णने कर्णको निरर्थक इन विचारोंको करके कौरवोंकी मण्डलीसे निकलकर पाण्डवोंके समीप गमन किया। विदुर कुन्तीदेवीके समीप जाकर धीमे स्वरसे शोक प्रकाश करते हुए कहने लगे, हे यशस्विनी! युद्ध न होना ही मुझे उत्तम जंचता है, वह तुमको भली भांतिसे विदित है, परन्तु मेरे सहस्रों वार कहनेपर भी दुर्य्योधन किसी प्रकारसे मेरा वचन ग्रहण नहीं करता। राजा युधिष्ठिर चेदी, पाञ्चाल, केकय, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव, कृष्ण और सात्यकी आदि वीरोंकी सहायतासे अत्यन्त बलवान् होकर भी अपने राज्यको छोड़कर विराटनगरमें निवास कर रहे हैं, तौभी जातिको शुभ कामना विचारकर निर्बल पुरुषोंकी भांति केवल धर्म्महीकी अभिलाषा करते परन्तु यह अन्धराज धृतराष्ट्र बूढ़े होकर किसी प्रकारसे शान्त नहीं होते हैं, वह पुत्रोंके मदसे मत्त होकर केवल अधर्म्महीके मा

से चल रहे हैं। इसमें शकुनि, जयद्रथ, कर्ण, दुःशासनकी दुष्टबुद्धिसे कुरुकुलका नाश होगा, यथार्थ धर्म-निष्ठ पुरुषके रूद्ध जिन्होंने ऐसा अधर्म्मका कार्य्य किया है उन लोगोंका वही अधर्म्म अवश्य ही उनके नाश करनेका कारण होगा। अहा! कौरवोंने बलपूर्व्वक धर्म्मका कर्म्म छेदन किया है, उससे कौन पुरुषके हृदयमें दुःख नहीं उत्पन्न होगा? हे देवि! कृष्ण जब सान्धि स्थापन नहीं कर सके, तब पाण्डवोंके समीप चले गये। अब पाण्डव लोग युद्धका अवश्य ही उद्योग करेंगे, और कौरवोंका अवश्य ही नाश होगा। इन्हीं सब बातोंका विचार करके मुझे रातको नींद नहीं आती है।

परम हितैषी विदुरके यह वचन सुनकर कुन्ती अत्यन्त ही दुःखित होकर लम्बी सांस लेती हुई अपने मनमें यह चिन्ता करने लगी, कि हाय! धन क्या ही अनर्थका मूल है, कि इसीके निमित्त यह महा भयङ्कर जातिके लोगोंका वध उपस्थित हुआ है। इससे इस अर्थको धिक्कार है। इस युद्धमें सुहृद पुरुषोंहीका वध होगा। पाण्डव लोग चेदि, पाञ्चाल और यदुवंशियोंके सङ्ग मिलकर कौरवोंसे युद्ध करेंगे, इससे अधिक दुःखका और कौनसा विषय होगा? सच्चाईमें मुझे अवश्य ही दोष दीख पड़ता है, और युद्ध न करनेसे अपने पक्षका पराभव दीखता है, क्योंकि धनहीन पुरुषका मरना ही उत्तम है। और अनगिनत जातिके लोगोंका वध करना भी उत्तम नहीं है। यही सब विचारकर मेरा अन्तःकरण अत्यन्त दुःखसे पीड़ित होरहा है। योद्धाओंमें मुख्य शान्तनु-पुत्र पितामह भीष्म, द्रोणाचार्य्य और कर्ण ये लोग दुर्योधनके सहाय हैं, इनसे मुझे बहुत भय लगता है, परन्तु मुझे बोध होता है कि आचार्य [illegible] शिष्योंके [illegible] [illegible] पितामह भीष्म [illegible] [illegible]

मिथ्या मोहमें पड़ा हुआ एक मात्र कर्ण ही सब अनिष्ट कर्म्मोंका मूल है। यह दुष्टात्मा नीचबुद्धि दुर्योधनके मोहमें पड़कर सदा ही पाण्डवोंके सङ्ग द्वेष किया करता है, जिससे उन लोगोंको दुःख मिले, उसके निमित्त यह सदा दुष्टबुद्धिका प्रयोग किया करता है, विशेषतः वह स्वयं महाबली है। उसके दुष्ट चरित्र ही मेरे अन्तःकरणको भस्म कर रहे हैं। इससे आज मैं उसके समीप जाकर सम्पूर्ण गूढ़ विषयोंका वर्णन करके जिससे पाण्डवोंके ऊपर उसका चित्त प्रसन्न होवे, उसकी चेष्टा करूंगी। जिस प्रकारसे उसका जन्म हुआ है, उस वृत्तान्तको मैं विशेषरूपसे वर्णन करूंगी। जब मैं पिता कुन्तिभोज राजाके भवनमें वास करती थी तब भगवान् दुर्वासा मुनिने मेरी सेवासे प्रसन्न होकर मुझे एक मन्त्र बताके यह वर दिया था कि "तुम पुत्रकी इच्छासे जिस देवताका आवाहन करोगी, वही तुम्हारे समीप चला आवेगा" उस प्रकारका विचित्र वर पाकर मैं स्त्रीस्वभाव, चञ्चलता तथा बाल स्वभावके कारणसे अनेक प्रकारकी चिन्ता करने लगी मन्त्रका बल और ब्राह्मणके वचनकी परीक्षा करनेके निमित्त मुझे अत्यन्त ही अभिलाषा उत्पन्न हुई। परन्तु उस समय विश्वास-पात्र दासियोंसे रक्षित और सखियोंसे युक्त थी। किसप्रकार किस प्रकारसे मुझे दोष न होवे, तथा पिताको भी कोई कलङ्क न लगे, किस प्रकारसे मेरा सुकृत नष्ट न होगा, और किस भांति मैं अपराधिनी न हो सकूंगी, इसी प्रकारकी चिन्तासे व्याकुल होकर इकबारगी [illegible] पास देखने लगी। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

था, वह अपने भाइयोंके हितके निमित्त मेरे कहे हुए उत्तम बचनोंको क्यों नहीं स्वीकार करेगा? कुन्तीदेवी ऐसा विचार कर अपने प्रयोजनको निश्चय करके कर्णसे भेंट करनेसे निमित्त भागीरथीके तीरपर गई। वहांपर वह परम दयालु सत्यव्रत करनेवाला महाबाहु कर्ण अपनी भुजाको ऊपर उठाकर पूर्व्व ओर मुंह करके वेद मन्त्रोंका उच्चारण करता हुआ जप कररहा था। उसे इस प्रकारसे देखकर उसकी दुःखिता माता जपके शेष होनेपर अपना प्रयोजन सिद्ध करनेकी इच्छासे उनके पीछे खड़ी हुई। वृष्णिवंशमें उत्पन्न हुई पाण्डुराजकी भार्य्या सुकुमारी कुन्तीदेवी बहुत समयतक कर्णके पीछे खड़ी रहकर सूर्य्यके प्रचण्ड तेजसे कमलकी मालाके समान मुरझा गई, अन्तमें कर्णके ऊपरके वस्त्रकी छायाका सहारा करके वहांपर खड़ी हुई। धर्म्मात्मा सत्यव्रत करनेवाले अत्यन्त तेजस्वी महात्मा सूर्य्यपुत्र कर्णने जबतक अच्छी प्रकारसे पीठपर सूर्य्यका तेज नहीं पहुंचा, तबतक जप करके अन्तमें पीठ घुमाकर देखा तो वहांपर कुन्ती-देवी खड़ी थी। अकस्मात् उनको देखकर वह विस्मित होकर दोनों हाथ जोड़के उन्हें प्रणाम करके यथा उचित नीचे कहे हुए वचन बोले।

१४४ अध्याय समाप्त।

———

कर्ण बोले, मैं राधा और अधिरथका पुत्र कर्ण हूं, मैं तुमको प्रणाम करताहूं, तुम किस निमित्त मेरे समीप आई हो, तुम्हारा कौनसा कार्य्य मुझको करना होगा, वह सब तुम मुझसे कहो।

कुन्ती बोली, हे कर्ण! तुम कुन्तीपुत्र हो, तुम राधापुत्र नहीं हो, अधिरथ भी तुम्हारा पिता नहीं है, तुम सूतकुलमें उत्पन्न नहीं हुए हो। मैं तुम्हारे जन्मका गूढ़ वृत्तान्त कहती हूं, उसे तुम निश्चय करके सत्य समझो। हे पुत्र! मैंने कन्या अवस्थामें पहिले ही तुमको गर्भमें धारण किया था, इससे तुम मेरे ही कानीन पुत्र हो, तुम कुन्तिराजके भवनमें उत्पन्न हुए थे। हे शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ कर्ण! यह जो सब लोगोंको प्रकाश करनेवाले भगवान् सूर्य्य सदा आकाशमण्डलमें विराजमान हैं, इन्होंने तुमको मेरे गर्भसे उत्पन्न किया था। हे महा तेजस्वी पुत्र! मेरे पिताके मन्दिरमें तुम देव कुमारकी भांति सुन्दर कवच और कुण्डलके सहित अत्यन्त शोभासे युक्त होकर मेरे गर्भसे उत्पन्न हुए थे। इस समयमें भाइयोंके सङ्ग जान पहचान न रहनेके कारण तुम मोहमें पड़कर दुर्य्योधनकी सेवा कर रहे हो। तुम्हारे समान तेजस्वी और बुद्धिमान् पुरुषके लिये यह कार्य्य किसी प्रकारसे उचित नहीं है। हे पुत्र! मनुष्य धर्म्मका निरूपण करनेवाले पण्डितोंने पितृवर्ग और एक मात्र स्नेहमयी माताके सन्तोषको पूर्ण करनेहीको धर्म्मका फल निश्चय किया है। इससे गर्भ धारण करनेवाली माताको प्रसन्न करना ही तुम्हारा कर्त्तव्य कार्य्य है। पहिले अर्जुनकी भुजासे उपार्ज्जन की हुई राजलक्ष्मी जो दुष्टोंके द्वारा हरण की गई है, तुम युधिष्ठिरकी वह राजलक्ष्मी धृत-राष्ट्रपुत्रोंसे बलपूर्व्वक छीनकर स्वयं भोग करो, ऐसा करनेहीसे मुझे पूर्ण आनन्द तथा सुख मिलेगा। कौरव लोग आज कर्ण अर्जुनका समागम देखें। ये दुष्ट तथा पामर लोग तुम लोगोंको भ्रातृ रूपसे मिलते हुए देखकर अब नति स्वीकार करें। लोकमें जैसे रामकृष्णका नाम एकत्र उच्चारण किया जाता है, वैसे ही कर्ण अर्जुनका नाम भी आजसे पृथ्वीमें विख्यात हो। अहा! तुम लोगोंके एकत्र होनेपर इस लोकमें ऐसा कौनसा कार्य्य है, जो पूर्ण न हो सकेगा? हे कर्ण! तुम पांच सहोदर भाइयोंसे युक्त होकर देवतोंसे घिरे हुए साक्षात्

इन्द्रके समान राजसिंहासनपर शोभित होओगे. इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। तुम सब गुणोंसे पूर्ण और मेरे सब पुत्रोंसे जेठे हो; इससे "सूतपुत्र" यह शब्द जिसमें फिर कभी तुम्हारे ऊपर न प्रयोग किया जावे. तुम महा तेजस्वी पार्थ हो।

१४५ अध्याय समाप्त।

वैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर कर्णने सूर्य्यमण्डलसे निकली हुई एक स्नेहमयी आकाशवाणी सुनी. भगवान् सूर्य्यने खुद ही पुत्र-प्रेमके वशमें होकर कल्याण करनेवाले शुभ वचन कहे थे। वह वचन यही है, "हे कर्ण! कुन्तीने सत्य वचन कहा है तुम सब शङ्काओंको छोड़कर माताके इस वचनका पालन करो। हे पुरुषोंमें श्रेष्ठ! सब प्रकारसे कुन्तीके वचनके अनुसार कार्य्य करनेसे तुम्हारा अत्यन्त ही मङ्गल होगा।"

वैशम्पायन मुनि बोले, माता कुन्तीदेवी और पिता सूर्य्यदेवके वचन सुनकर सत्य-प्रतिज्ञा करने वाले वीर कर्णकी बुद्धि तनिक भी विचलित न हुई। उन्होंने माताको सम्बोधन करके कहा, कि "हे क्षत्रियनन्दिनी! तुमने जो कहा, कि मेरी आज्ञाका पालन करना ही तुम्हारे धर्मका द्वारस्वरूप है'. इस वचनपर मैं श्रद्धा नहीं कर सकता हूं। हे माता! पहिले ही जो तुमने मुझे त्यागकर आपको नाश करने योग्य महा घोर बुरा और अधर्मका कार्य्य किया था, इसीसे मेरा यश तथा कीर्त्ति आदि नष्ट होगये हैं, यदि मैं क्षत्रिय कुलमें उत्पन्न हुआ होऊं तौ भी तुम्हारे कारणसे क्षत्रियोंके योग्य मेरा कोई भी संस्कार नहीं होने पाया। [illegible]

साथ कर सकता है? कैसे आश्चर्य्यका विषय है कि तुम दया करनेके समयमें कुछ भी मेरे हितका कार्य्य न करके इस समयमें अपनी आज्ञा पालन करनेके निमित्त मुझे उपदेश करती हो। पहिले जब तुमने माताके समान मेरा कोई भी हितका कार्य्य नहीं किया था, तो इस समयमें निश्चय यही बोध होता है, कि तुम केवल अपने कल्याणकी इच्छासे ही इस अवसरमें मुझको पुत्र कहके सम्बोधन कर रही हो। कृष्णके मित्र अर्जुनसे कौन पुरुष भयभीत नहीं हो सकता? इससे पाण्डवोंकी सभा तथा संग्राममें गमन करनेसे कौन पुरुष मुझको भयभीत नहीं समझेगा? पहिले मैं उन लोगोंका भ्राता कहके प्रसिद्ध नहीं था. इस समयमें युद्धका अवसर आनेपर यदि पाण्डवोंका पक्ष अवलम्बन करूंगा, तो यह सम्पूर्ण क्षत्रियोंकी मण्डली मुझको क्या कहेगी? विशेष करके जिससे मुझे सुख मिले, ऐसा सब प्रकारका भोग और भोजनकी वस्तुओंसे धृतराष्ट्र-पुत्रोंने आजतक मेरा अत्यन्त ही सत्कार किया है; उसको मैं इस समय कैसे निष्फल कर सकता हूं? शत्रुओंके सङ्ग वैर करके जो लोग सदा ही मेरी उपासना किया करते हैं, और बन्धु बान्धव लोग जैसे इन्द्रको प्रणाम करते हैं, वैसे ही वे लोग मेरे समान विनीतभाव अवलम्बन किये रहते हैं जो लोग मेरे पराक्रम और बलके सहारेसे शत्रुओंके जीतनेकी अभिलाषा करते हैं, उन लोगोंका वह मनोरथ मैं किस प्रकारसे विफल कर सकता हूं? सभा और युद्धरूपी समुद्रमें जो लोग मुझे नौका स्वरूप समझकर उसके पार होनेकी इच्छा करते हैं, इस समयमें क्या मैं उन लोगोंको त्याग सकता हूं? जो लोग दुर्योधनके आश्रित हैं, उनके [illegible] यही उपयुक्त समय उपस्थित हुआ है। इससे इस अवसरमें मैं अपने [illegible]

करके अवश्य उसकी उपकारके पलटेमें युद्ध करूंगा। जो सब अधम पुरुष सदा स्वामीके समीपमें अन्न वस्त्र पाकर कार्य्यके समयमें अनायास ही उसको छोड़कर चले जाते हैं,उन स्वामीके पिण्डको हरण करनेवाले, कृतघ्न महा पापियोंके निमित्त यह लोक और परलोक कुछ भी नहीं रह सकता।

हे मातः। तुमसे मिथ्या बोलनेको क्या आवश्यकता है मैं धृतराष्ट्रपुत्रोंके निमित्त सम्पूर्ण बल और शक्तिको प्रकाशित करके अवश्य तुम्हारे पुत्रोंके सङ्ग युद्ध करूंगा। दया, धर्म्म और सत्पुरुषोंके पवित्र चरित्रको अवश्य-ही मुभाको रक्षा करनी पड़ेगो। इससे यथार्थ हितकारी होनेपर भी इस समयमे मैं तुम्हारी बातोंका किसी प्रकारसे भी पालन नहीं कर सकता हूं। तब मुझसे जो तुमने इतना अनु-रोध किया है, वह भी निष्फल न होगा, मैं युद्धमें प्रवृत्त होकर केवल अर्ज्जुनके अतिरिक्त तुम्हारे युधिष्ठिर, भीम, नकुल, सहदेव चार पुत्रोंके नाश करनेके निमित्त कभी यत्न न करूंगा। मैं तुम्हारे निकटमें यह प्रतिज्ञा करके सत्य कहता हूं, कि संग्राममें युधिष्ठिर आदि युद्ध करने योग्य तथा वध्य होनेपर भी मैं कभी उनके नाश करनेका उपाय न करूंगा। युधिष्ठिरकी सेनामें केवल अर्ज्जुनके सङ्ग मेरा युद्ध होगा; क्योंकि युद्धमें अर्ज्जुनको मारनेहीसे यथेष्ट फल लाभ करूंगा अथवा उसके हाथसे मरकर यशसे युक्त होके स्वर्ग लोकमें जाऊंगा। हे यशस्विनि। तुम्हारे पाच पुत्रोंका कभी नाश न होगा, क्योंकि अर्ज्जुनके मरनेसे कर्णको लेकर तुम्हारे पाच पुत्र रहेंगे, और मेरे मरनेसे अर्ज्जुनके सहित वही पाच पुत्र रहेंगे।

कर्णके इस वचनको सुनकर कुन्ती दुःख और शोकसे कांपती हुई उस अत्यन्त धैर्य्य-शाली महावीर पुरुषको आलिङ्गन करके यह वचन बोली,—"हे पुत्र। तुम जो बोलते हो, वही सम्भव तथा सत्य बोध होता है, इस उप-स्थित युद्धमें कौरव लोगोंका नाश होजावेगा, क्या किया जावे? दैवका बल सबसे प्रबल है। हे शत्रु नाशन। तुमने जो युधिष्ठिर आदि चारो भाइयोंको अभय दान किया है, तुम्हारो यह प्रतिज्ञा जिसमें पूर्ण रीतिसे सत्य होवे। अन-न्तर कुन्ती कर्णसे यह वचन बोली, हे पुत्र। तुम्हारा कल्याण होवे, तुम रोग रहित होकर कुशलसे रहो। कर्णने भी शिर भुकाकर उनको प्रणाम किया और कहा "जो तुम्हारी आज्ञा वही होगा"। इसके अनन्तर दोनो आपने अपने स्थानपर चले गये।

१४६ अध्याय समाप्त।

अब सैना निर्य्याण पर्व्व लिखेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले,इधर शत्रुनाशन कृष्णने हस्तिनापुरसे विराट नगरमें पहुंच पाण्डवोंके समीप कौरवोंका सम्पूर्ण वृत्तान्त आदिसे अन्त तक वर्णन किया। बहुत समयतक बात चीत और विचार करके अन्तमें विश्राम करनेके निमित्त अपने निवास भवनमें गमन किया। अनन्तर भगवान् सूर्य्यके अस्ताचल पर्व्वतके शिखर पर जानेके अनन्तर पाण्डव लोग पांचो भाई विराट आदि राजाओंको विदा करके कृष्णके वचन सुननेकी अभिलाषासे शीघ्र ही उन्हें अपने समीपमें बुलाकर फिर विचार करने लगे। युधिष्ठिर बोले, हे पुण्डरीकाक्ष। तुमने हस्ति-नापुरमें जाकर क्या क्या वचन कहे थे, वह विशेष रूपसे मेरे निकट वर्णन करो।

श्रीकृष्णचन्द्र बोले, मैं हस्तिनापुरमें जाकर जो उत्तम, पथ्य और हितकारी वचन थे, उसे ही कहा था, परन्तु नीचबुद्धि दुर्य्योधनने किसी प्रकारसे भी मेरे वचनोंको ग्रहण नहीं किया।

राजा युधिष्ठिरने पूछा, हे हृषीकेश जनार्द्दन! दुर्य्योधनके नीच मार्ग अवलम्बन करनेपर कौरवोंमें बूढ़े पितामह भीष्मने क्या कहा था? भरद्वाजनन्दन महात्मा द्रोणाचार्य्य, पिता धृतराष्ट्र तथा माता गान्धारीने क्या कहा था? धर्म्मात्मा विदुर जो सदा ही हम लोगोंके शोक और दुःखसे व्याकुल रहते हैं, उन्होंने दुर्य्योधनके निमित्त क्या वचन कहा था? और सभामें बैठे हुए सब राजाओंने कैसे वचन कहे थे? हे कृष्ण! कौरवोंमें श्रेष्ठ भीष्म, धृतराष्ट्र तथा दूसरे सभासदोंने-जो नीचबुद्धि लोभी दुर्य्योधनसे उसके हितके निमित्त अप्रिय वचनोंको कहा था, वह सब तुमने मुझसे कहा परन्तु वह सब यथार्थ रूपसे मेरे हृदयङ्गम नहीं हुए हैं, इससे फिर उनलोगोंके वचनोंके सुननेकी मुझे अभिलाषा है। हे गोविन्द! जिससे योग्य समय बीत न जावे, तुम उसका विधान करो। हे तात! हे कृष्ण! तुम एक मात्र हम लोगोंकी गति, प्रभु और गुरु-स्वरूप हो।

श्रीकृष्णचन्द्र बोले, हे राजेन्द्र! कौरवोंकी सभामें राजा दुर्य्योधनसे जैसा वचन कहा गया था, उसे मैं वर्णन करता हूं, तुम चित्त लगाकर सुनो। मेरा जो कुछ वक्तव्य था, उसके सुनानेपर धृतराष्ट्रपुत्र दुर्य्योधन हंसने लगा, इससे भीष्म अत्यन्त ही क्रुद्ध होकर उससे कहने लगे। हे दुर्य्योधन! कुलकी रक्षाके निमित्त मैं जो तुमसे यह वचन कहता हूं, उसको अच्छी प्रकारसे हृदयमें धारण करो। हे राजशार्दूल! इसे सुनकर अपने कुलके हित साधनके निमित्त यत्न करो। हे तात! मेरे पिता शान्तनु लोकमें विख्यात थे, पहिले मैं ही उनके एक मात्र पुत्र था। पण्डित लोग एक पुत्रको पुत्र नहीं गिनते, इससे और एक पुत्र उत्पन्न करनेके निमित्त पिताको बहुत ही अभिलाषा हुई। अब मेरा कुल नष्ट होगा, किस प्रकारसे वह स्थिर रहेगा, इसी प्रकारकी उन्हें चिन्ता हुई। पिताके मनोरथको जानकर मैंने व्यासदेवकी माता योजनगन्धाके सङ्ग पिताका विवाह कराया। कुल-रक्षा और पिताके मनोरथको पूर्ण करनेके निमित्त मैंने कठिन प्रतिज्ञा करके इस कार्य्यको सिद्ध किया था। उसी प्रतिज्ञाके कारणसे मैं राजा नहीं हो सका और सदासे ब्रह्मचर्य्य व्रत अवलम्बन किये हुए रहता हूं, वह तुम लोगोंको भली भांतिसे विदित है। मैंने राज्यपदको नहीं पाया, इसके निमित्त कभी भी मुझे विषाद तथा दुःख नहीं हुआ। अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेसे मैं हृष्ट-पुष्ट और सन्तुष्ट चित्तसे जीवन धारण करता हूं।

हे राजन्! समयके अनुसार इस सत्यवती माताके गर्भसे कुरुकुल-धुरन्धर धर्म्मात्मा महाबाहु विचित्रवीर्य्यका जन्म हुआ। पिताके स्वर्ग लोकमें जानेके अनन्तर मैंने अपने छोटे भाईको लक्ष्मीसे युक्त अपने राज्यपर अभिषेक किया। विचित्रवीर्य्य राजा हुए और मैं उनका अनुजीवी होकर राज्यकी रक्षा करता था। हे राजन्! विवाहका समय उपस्थित होनेपर मैंने योग्य कन्याके सङ्ग उनका विवाह किया। उस विवाहके विषयमें मैंने जो अनेक राजाओंको पराजित किया था, उसे तुमने कई बार सुना है। अनन्तर जब मैं परशुरामके साथ द्वन्द्व युद्ध करनेमें प्रवृत्त हुआ था तब सब प्रजा भयसे विकल होकर विचित्रवीर्य्यको दूसरे स्थानमें ले गई। वह बुद्धिहीन भ्राता स्त्रियोंके सङ्गमें अत्यन्त ही आसक्त होकर यक्ष्मा रोगसे मर गया। इस प्रकारसे कुरुराज्य राजासे रहित होने पर इन्द्र जल वर्षा करनेसे विरत हुए, तब सम्पूर्ण प्रजा भय और क्षुधासे पीड़ित होकर मेरे निकट आई। सब प्रजा इकट्ठी होकर मुझसे यह वचन कहने लगी, हे शान्तनु-नन्दन भीष्म! राज्यके राजा न रहनेसे [illegible]

नष्ट-प्राय हो रही है, इससे हमलोगोंके कल्याणके निमित्त इस समय तुम राज्यके भारको ग्रहण करो। तुम्हारे राज्यभारको ग्रहण करनेसे हम लोगोंका मङ्गल होगा और इन्द्र जलकी वर्षा करेंगे। हे गङ्गानन्दन! महाघोर विपदमें पड़कर सम्पूर्ण प्रजा नष्ट हो रही है; जो सब पुरुष अबतक जीवित हैं उन्हीं के उबारनेके निमित्त आप राज्यके भारको ग्रहण कीजिये। हे पुरुषसिंह! इस समय विना तुम्हारी कृपाके हम लोगोंकी रक्षा नहीं हो सकती। इससे सब प्रजाके ऊपर कृपा कर तुम राज्य ग्रहण करके प्रजाका पालन करो, तुम्हारे जीवित रहते ही जिसमें सम्पूर्ण पृथ्वीकी प्रजाका नाश न हो जावे।" प्रजा लोगोंसे इस प्रकारके अनेक दीन वचनको सुनने पर भी मेरा स्थिर चित्त तनिक भी विचलित नहीं हुआ, साधुपुरुषोंके चरित और सदाचारको स्मरण करके मैं अपनी पहिली प्रतिज्ञाकी रक्षा करनेहीमें तत्पर रहा। तब सम्पूर्ण पुरवासी और मेरी सौतेली माता सत्यवती, सेवक, पुरोहित और सब शास्त्रोंके जाननेवाले ब्राह्मण लोग भी अत्यन्त दुःखित होके मुझको राज्यपद ग्रहण करनेके निमित्त बहुत ही अनुरोध करने लगे। हे महाबुद्धिमान्! हम लोगोंके हितके निमित्त तुम राजसिंहासन पर बैठो। तुम्हारे विद्यमान रहने पर भी तुम्हारे पितामह प्रतीप महाराजके रक्षित इस सम्पूर्ण पृथ्वीके राज्यका विनाश हो रहा है, यह बहुत ही दुःखका विषय है।

उन लोगोंके इस वचनको सुनकर मैंने अत्यन्त दुःखित और शङ्कित होके हाथ जोड़कर उनसे निवेदन किया, मैंने पिताके गौरव और कुलकी रक्षाके निमित्त राज्य-रहित होकर ब्रह्मचर्य्यव्रत करनेकी प्रतिज्ञा की है; इससे अब इस समयमें राज्यके भारको कैसे ग्रहण कर सकता हूं? साधारणरूपसे स ऐसा वचन कहके माताको भी यह वचन क के शान्त किया :—"हे माता! मैं तुम्हारे कारणसे इस प्रतिज्ञा पाशमें बंधा हुआ इससे तुम मुझे अब राज्य भारको ग्रह करनेकी आज्ञा मत करो। हे माता! कु वंशमें विशेष करके शान्तनुके वीर्य्यसे उत होकर मैं किस प्रकारसे अपनी प्रतिज्ञाका कर सकता हूं? केवल तुम्हारे ही निमि जब मैंने ऐसी प्रतिज्ञा की है, तब तुम अब किस प्रकारसे उस प्रतिज्ञाको तोड़नेकी आज्ञा दे रही हो? हे माता! इससे तुम्हारा उपजीवी तथा सेवक होकर भी मैं इस आज्ञाको किसी भांतिसे नहीं पालन कर सकूंगा। हे राजन्! मैं माता और पुरवासियोंसे ऐसी विनती करके अन्तमें भ्रातृ-जायाके गर्भसे पुत्र उत्पन्न करनेके निमित्त महामुनि व्यासदेवसे प्रार्थना की, उसके निमित्त माताने भी उनसे बहुत अनुरोध किया था। हे भरत सत्तम! व्यासदेवने हमलोगोंकी प्रार्थनासे प्रसन्न होकर तीन पुत्र उत्पन्न किये। उनमेंसे तुम्हारे पिता धृतराष्ट्र अन्धे उत्पन्न हुए थे, इससे जेठे पुत्र होकर भी इन्द्रिय-विकारके कारण राजा न होसके। सब लोकोंमें विख्यात महात्मा पाण्डु राजा हुए थे। वह जब राजा हुए थे, तब उनके पुत्र अवश्य ही उस राज्यके पानेके अधिकारी हैं। हे पुत्र! इससे तुम निरर्थक झगड़ा मत बढ़ाओ, राज्यका आधा भाग पाण्डवोंको अवश्य प्रदान करो। विचारकर देखो तो सही, मेरे जीवित रहते कौन पुरुष राज्यपदके ग्रहण करनेमें समर्थ हो सकता है? इससे तुम मेरे वचन मत टालो। मैं सदा तुम लोगोंमें केवल शान्तिकी इच्छा करता हूं। तुममें और पाण्डवोंमें मेरी समान ही प्रीति है। मैंने तुमसे जैसा वचन कहा है तुम्हारे माता पिता और विदुरका

भी यही मत है। हे तात! बूढ़ोंके वचनको अवश्य सुनना और मानना चाहिये, इससे तुम मेरे इन वचनोंमें कुछ भी शङ्का न करके अपने और इस सम्पूर्ण पृथ्वीके कल्याण-साधनके निमित्त यत्न करो, निरर्थक सबके नाश करनेमें प्रवृत्त होना किसी प्रकारसे उचित नहीं है।

१४७ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, भीष्मके ऊपर कहे हुए वचनोंके समाप्त होनेपर बुद्धिमान् द्रोणाचार्य्य भी दुर्य्योधनको सम्बोधन करके सब राजाओंके सम्मुख हो उससे यह वचन बोले। हे तात! प्रतीपनन्दन शान्तनु जैसे कुलकी रक्षामें लगे हुए थे और उनके पुत्र देवव्रती भीष्मने कुल-रक्षाके निमित्त जैसे प्रतिज्ञा करके उसका निर्व्वाह किया है, वैसे ही सत्यवादी धर्म्मात्मा पाण्डु राजा भी कुरुकुलमें धर्म्म-धुरन्धर थे, वह समाधिनिष्ठ सत्यव्रतसे युक्त धर्म्मात्मा पाण्डुस्वय राजा होनेपर भी अपने जेठे भाई धृतराष्ट्र और छोटे भाई विदुरको अपना राज्याधिकार समर्पण किया था। कुरुश्रेष्ठ राजा पाण्डु धृतराष्ट्रको सिंहासन पर बैठाकर अपनी दोनों रानियोंके सङ्ग वनको चले गये थे। तब पुरुषसिंह विदुर अपनी स्वाभाविक सरलतासे धृतराष्ट्रके समीप खड़े होकर सेवककी भांति हाथमें चंवर लेकर उनकी उपासना करने लगे, और सम्पूर्ण प्रजा राजा पाण्डुकी भांति नियमके अनुसार उनका सम्मान करने लगी। पराये देशको जीतनेवाले पाण्डुराज धृतराष्ट्र और विदुरके हाथमें राज्यका भार समर्पण करके सम्पूर्ण पृथ्वीमें घूमने लगे, उसके अनन्तर सत्य प्रतिज्ञा करनेवाले विदुर खजानेकी रक्षा करने, दान देने और सेवकोंको प्रतिपालन करनेमें नियुक्त हुए। और शत्रुनाशन महा तेजस्वी भीष्म सन्धि-विग्रह आदि कार्य्योंको देखने और विचारने लगे। महाबलसे युक्त राजा धृतराष्ट्रके सिंहासनपर बैठनेपर महात्मा विदुर सदा उनके समीप उपस्थित रहते थे। हे प्रजानाथ! इससे तुम उसी धृतराष्ट्रके कुलमें उत्पन्न होकर क्यों कुलके नाश करनेमें प्रवृत्त होरहे हो? ऐसी नीच प्रवृत्ति त्यागकर तुम भाइयोंके सङ्ग मिलके उत्तम राज्यके भोगोंका भोग करो। हे राजसत्तम! मुझसे डरके, अथवा धनके लोभमें पड़के मैं तुमसे यह वचन नहीं कहता हूं। मैं भीष्मके दिये हुए अन्नका भोगकर रहा हूं, तुम्हारे दिये हुए अन्नका नहीं। हे राजन्! तुम्हारे समीप जीवनके निमित्त अन्न ग्रहण करनेकी मेरी कभी भी अभिलाषा न होगी। हे शत्रुनाशन! तुम यह निश्चय समझ रक्खो भीष्म जिस ओर रहेंगे, मैं भी उसी ओर रहूंगा। इससे यदि मेरा मत ग्रहण करनेकी तुम्हें इच्छा होवे, तो भीष्म जैसा कहते हैं, तुम वैसा ही कार्य्य करो,—पाण्डु-पुत्रोंको राज्यका आधा भाग दे डालो। हे तात! मैंने तुम्हारे और उन लोगोंके आचार्य्यका कार्य्य समान ही किया है, इससे दोनों ओर मेरी समान ही प्रीति है। मुझे अश्वत्थामा जैसा प्रिय है, अर्ज्जुन भी वैसा ही प्यारा है। इससे अधिक बातोंके कहनेकी क्या आवश्यकता है, जहांपर धर्म्म रहता है, वहींपर जय होता है।

श्रीकृष्ण बोले, महा तेजस्वी द्रोणाचार्य्यके वचन समाप्त होनेपर सत्यवादी और धर्म्मके जाननेवाले बुद्धिमान् विदुर शान्तनुनन्दन भीष्मका मुंह देखकर यह वचन कहने लगे। हे देवव्रत भीष्म! मैं जो कुछ कहता हूं, उसे एक बार तुम एकाग्र चित्तसे सुनो। तुमने ही इस नष्टप्राय कौरवकुलका फिरसे उद्धार किया है, इसी निमित्त क्या तुम मेरे बारबार विलाप और प्रार्थनापर उपेक्षा कर रहे हो?

निष्कलङ्क कुरुकुलमें यह दोष लगानेवाला दुर्य्योधन कौन है? ऐसा विनय-रहित पापी पुरुष कभी इस कुलके योग्य नहीं हो सकता। परन्तु क्या ही आश्चर्य्यका विषय है, कि तुम इस लोभी, मूर्ख, दुष्ट पुरुषकी बुद्धि फेर रहे हो। जो अधम पुरुष धर्म्म अर्थ जाननेवाले पिताका आसन ग्रहण कर रहा है, उसके निमित्त जो यह सम्पूर्ण कौरवोंके कुलका नाश होवेगा, इसमें क्या सन्देह है? हे महाराज! जिसमें कुलका नाश न होवे, उसके निमित्त तुम अब भी सब भांतिसे उपाय करो। तुमने मुझे, धृतराष्ट्र तथा और दूसरे पुरुषोंको चित्रमें लिखे पुतलोंकी भांति कर रक्खा है। हे महाबाहो! प्रजापति ब्रह्मा जैसे सृष्टिको रचकर फिर समयके अनुसार उसका संहार करते हैं, वैसा करना तुमको उचित नहीं है। तुमने स्वयं जिस कुलकी रक्षा की है, अकस्मात् उसका नाश होता देखकर भी चुपचाप न बैठे रहो। अवश्य ही भावी-संहारका समय उपस्थित हुआ जानकर यदि तुम्हारी बुद्धिमें भ्रम उपस्थित होता हो, तो तुम मुझे और धृतराष्ट्रको संग लेकर वनवासके निमित्त प्रस्थान करो और नहीं तो आज ही इस नीचबुद्धि दुष्ट दुर्य्योधनको बांधकर पाण्डवोंसे रक्षित इस सम्पूर्ण पृथ्वीके राज्यका शासन करो। हे राजशार्दूल! देखो, कुरु-पाण्डव तथा दूसरे सब राजाओंके नाश होनेका समय उपस्थित हुआ है, इससे अब भी प्रसन्न होकर कार्य्यका विधान करो।

विदुरके दीन वचनोंके समाप्त होनेपर कुल-नाशके भयसे डरी हुई, सुबलराजपुत्री गान्धारी राजाओंके सम्मुख ही दुष्ट पापबुद्धि दुर्य्योधनको सम्बोधन करके क्रोधसे भरे हुए धर्म्म अर्थसे युक्त यह वचन बोली। अरे नीचबुद्धि! इस सभामें जो सब राजा, ब्रह्मर्षि तथा दूसरे सभासद लोग बैठे हैं, सब वे कोई सुनें, मैं तेरे अपराधकी बात वर्णन करती हूं, सेवकोंके सहित तूने कितने पापकर्म्मका अनुष्ठान किया है, उसकी सीमा नहीं हो सकती। अरे नीचबुद्धि दुर्य्योधन! कौरवोंका राज्य सदासे कुल परम्पराके क्रमसे चला आता है, यही हम लोगोंके कुलका क्रमगत धर्म्म है। अरे नीचकर्म्म करनेवाले पापी! तू दुष्टनीतिके वशमें होकर उस धर्म्मको त्यागकर सदासे कुरु राज्यका नाश करनेमें प्रवृत्त हो रहा है। रे दुर्य्योधन! बुद्धिमान् धृतराष्ट्र और उनके भाई दीर्घदर्शी विदुर ये ही राज्यपदपर प्रतिष्ठित थे। इस समय तू मोहमें पड़कर कुलकी मर्य्यादाको लांघकर क्यों राज्यको ग्रहण करनेकी अभिलाषा करता है? भीष्मके जीवित रहते राजा धृतराष्ट्र और महाबुद्धिमान् विदुर भी स्वाधीन नहीं हो सकते, परन्तु इन पुरुषोंमें महात्मा गङ्गानन्दन भीष्म ने धर्म्मको पालन करनेके निमित्त राज्यकी इच्छा छोड़ दी है; इसी कारण इस सम्पूर्ण पृथ्वीका राज्य पाण्डुराजके हाथमें समर्पण किया गया था। इससे अब उनके पुत्रोंके सिवाय कौन सब राज्यके स्वामी हो सकते हैं? केवल पाण्डव लोग ही पुत्र पौत्र आदिके क्रमसे इस सम्पूर्ण राज्यका भोग करनेके अधिकारी हैं, और किसीका इसमें अधिकार नहीं है। अत्यन्त बुद्धि और पराक्रमसे युक्त सत्य प्रतिज्ञा करनेवाले, कौरवोंमें मुख्य, देवव्रती, महात्मा, पितामह भीष्म जो वचन कहते हैं, उसे स्वीकार करके सब भांतिसे उसीके अनुसार कार्य्य करना हम लोगोंका परम धर्म्म है। अपने धर्म्मको पालन करते हुए पाण्डवोंको राज्य प्रदान करना उचित है। अन्धराज और विदुर भी महाव्रत करनेवाले भीष्मकी आज्ञाके अनुसार मेरे कहे हुए वचनको पुष्ट करें, ऐसा करनेहीसे यथार्थ सुहृद और धर्म्मका कार्य्य सिद्ध होगा। महाराज धृतराष्ट्र और भीष्मसे सम्मानित होकर धर्म्मपुत्र युधिष्ठिर न्यायसे इस

कुरुराज्यको धर्म्मके अनुसार बहुत दिनतक शासन करे।

१४८ अध्याय समाप्त।

श्रीकृष्णचन्द्र बोले, हे महाराज! गान्धारीकी बात समाप्त होनेपर, राजा धृतराष्ट्र सब राजाओंके बीचमें दुर्य्योधनसे यह वचन कहने लगे। हे पुत्र! यदि पिताके ऊपर तुम्हारी भक्ति होवे, तो मैं जो वचन कहता हूं, तुम उसीका अनुष्ठान करो। हे भरतश्रेष्ठ! देखो पहिले प्रजानाथ सोम कौरवोंके वंश बढानेवाले हुए थे, नहुषपुत्र राजा ययाति सोमसे छठी पीढ़ीमें उत्पन्न हुए थे। उनके राजऋषियोंमें मुख्य पांच पुत्र थे, उनमें महातेजस्वी यदु सबमें बड़े थे, इससे वही सबके स्वामी हुए थे। हे तात! उनके छोटे पुत्रका नाम पुरु था, वही हम लोगोंके वंशके बढानेवाले हुए थे। वृषपर्व्वराजाकी पुत्री शर्म्मिष्ठाके गर्भसे उनका जन्म हुआ था। यदु देवयानीके पुत्र और महा तेजस्वी शुक्राचार्य्यके दौहित्र हैं, उसी महावीर पुरुषसे यदुवंशियोंके कुलकी उत्पत्ति हुई है। दुष्ट बुद्धिके वशमें होकर उन्होंने अपने बल और अभिमानसे सम्पूर्ण क्षत्रियोंको अपमानित किया और बलके घमण्डसे मोहित होकर पिताकी आज्ञा उल्लङ्घन की थी। उस महा पराक्रमी अत्यन्त तेजस्वी यदुने पिता और भाइयोंका अनादर करते हुए सम्पूर्ण पृथ्वीको वशमें करके हस्तिनापुरमें निवास किया था। हे पुत्र! नहुषनन्दन ययातिने अत्यन्त ही क्रुद्ध होकर उस गर्वित पुत्रको शाप दिया और राज्यसे भी पृथक् कर दिया। पुरुषसिंह ययातिके जो और तीन पुत्र थे उन्हें अभिमानमें भरे हुए यदुके अनुयायी देखके उन्हें भी राजा ययातिने क्रुद्ध होकर शाप दिया था। अनन्तर उन्होंने [illegible] पुरुको राज्य दिया। [illegible]

विनीत स्वभावसे युक्त और पिताके आज्ञाकारी थे। इससे छोटे होकर भी अपने स्वाभाविक गुणोंसे सबके स्वामी हुए। इससे विचार करके देखो, ज्येष्ठ होनेपर भी दुष्टता तथा नीचबुद्धिताके कारण ज्येष्ठ पुत्र पिताके राज्यसे पृथक् किया जाता है, और कनिष्ठ पुत्र भी विद्या विनय आदि गुणोंसे युक्त होने पर राज्यपद पाता है।

ऐसा ही और एक प्रमाण है। हमारे प्रपितामह पृथ्वीनाथ प्रतीप सब धर्म्मोंके जाननेवाले और तीनों लोकोंमें विख्यात होकर धर्म्मके अनुसार राज्य-शासन करते थे। हे तात! उन राजसिंहके वीर्य्यसे महा यशस्वी तीन पुत्र उत्पन्न हुए। उनमें देवापि बड़े, बाह्लिक दूसरे और हमारे पितामह शान्तनु तीसरे पुत्र थे। महा तेजस्वी देवापि कोढ़नाम कुष्ट रोगसे अत्यन्त ही पीड़ित थे। क्या बालक, क्या बूढ़े सब ही देवापीके संग अन्तःकरणसे प्रीति करते थे। वह परम धर्म्मात्मा, सत्यवादी, पिताकी सेवासे युक्त पुरवासी और सेनाके प्यारे, साधु पुरुषोंके सत्कार करनेवाले, विनीत स्वभावसे युक्त, सत्यप्रतिज्ञा करनेवाले, सब प्राणियोंके हित-कार्य्यमें रत, पिता और ब्राह्मणोंकी आज्ञामें चलनेवाले पुरुष थे। और महात्मा बाह्लिक भी शान्तनुके प्रिय भ्राता थे। उन महातेजस्वी तीनों भाइयोंमें अत्यन्त ही प्रीति थी। समयके अनुसार राज-ऋषिसत्तम महाराज प्रतीपने ज्येष्ठ पुत्रके राज्याभिषेकके निमित्त सब सामग्री इकट्ठी की। राज्याभिषेकके योग्य सब उनमें वस्तुएं इकट्ठी हुईं, परन्तु ब्राह्मण पुरवासियोंने मिलकर बाधा डाली और उन्होंने इस कार्य्यमें निवारण किया। राजाने पुत्रके राज्याभिषेकमें [illegible]

होकर भी केवल चर्म्म-दोषके कारणसे राज्य नहीं प्राप्त कर सके। राजाका शरीर विकल होनेसे देवताओंकी प्रसन्नता नहीं होती, इसी कारण ब्राह्मणोंने उन्हें राज्यके ग्रहण करनेसे निषेध किया था। शरीरसे पीड़ित देवापि-पुत्रके राज्यपद न मिलनेपर महाराज प्रतीप दुःखित होकर वनको चले गये। हे राजन्! महाराज वाह्लिक अपने मातामहका राज्य पाकर भाइयोंको त्यागके पहिलेहीसे मातामह (नाना) के यहां रहते थे। इससे पिताके स्वर्ग-लोक गमन करनेपर शान्तनुने ही वाह्लिकको आज्ञाके अनुसार राज्यका भार ग्रहण किया। हे भारत! वाह्लिकने जैसे शान्तनुको अपना राज्य प्रदान किया था, वैसे ही बुद्धिमान् पाण्डुने भी मुझको अपना राज्य समर्पण किया था। मैंने जेठे पुत्र होकर भी नेत्र न रहनेके कारण राज्यपदको नहीं पाया था, इससे छोटे पुत्र होकर भी पाण्डुराज ही कुरु-राज्यके अधिकारी हुए थे। हे शत्रुनाशन! इससे अब राजा पाण्डुके न रहनेपर उनके पुत्रोंके अतिरिक्त और दूसरा कौन राज्यका अधिकारी हो सकता है? मैं जिस राज्यका भागी नहीं होसका, उस राज्यकी तुम क्या अभिलाषा करते हो? तुम राजाके पुत्र भी नहीं हो और न राज्यके अधिकारी ही हो। केवल मोह और लोभमें पड़ कर दूसरेका राज्य हरण करनेकी अभिलाषा करते हो। महात्मा युधिष्ठिर राजाके पुत्र हैं, इससे यह राज्य भी उन्हींको न्यायके अनुसार मिलना उचित है, वही धर्म्मात्मा इस कुरुकुलका पालन-पोषण और शासन करनेवाले हैं। राजाके विषयमें क्षमा, सहन-शीलता, दम, दया, विनय, सत्य-निष्ठा, शास्त्रज्ञान, अप्रमाद, सब प्राणियोंके ऊपर कृपा, और नियमके अनुसार सबका शासन करना आदि जो सब गुण होने उचित हैं, सब ही युधिष्ठिरमें विद्यमान हैं। वह सत्यवादी सदा सावधान, भाइयोंका मान करनेवाले, प्रजाओंकी प्रीतिके पात्र, मित्रोंके ऊपर दया करनेवाले, जितेन्द्रिय और साधु पुरुषोंका पालन करनेवाले हैं। अरे विनय रहित दुर्य्योधन! तू राजाका पुत्र न होकर विशेष करके नीच पुरुषोंके चरित्रसे युक्त, महालोभी, और बन्धु-बान्धवोंकी बुराई करनेमें सदा तत्पर होकर क्रमसे आते हुए इस पाण्डवोंके राज्यको कैसे छीन सकेगा? यदि भाइयोंके सहित कुछ दिनतक तुम्हारा जीनेकी इच्छा होवे, तो इस समय भी मोह और लोभ छोड़ कर पाण्डवोंको वाहन और सब वस्तुओंके सहित राज्यका आधा भाग प्रदान कर।

१४९ अध्याय समाप्त।

श्रीकृष्णचन्द्र बोले, इसी प्रकारसे भीष्म, द्रोण, विदुर, गान्धारी और राजा धृतराष्ट्रने अपने अपने उपदेश-वचनोंको दुर्य्योधनसे कहा, परन्तु उसने किसीकी बात ग्रहण न की। उसने सबकी बातोंका अनादर करके क्रोध पूर्व्वक सभासे प्रस्थान किया। जो सब राजा लोग उसके निमित्त अपने प्राणतक देनेमें भी उद्यत थे, वे भी उठकर उसके पीछे पीछे चले। दुर्य्योधनने इन मन्द-बुद्धि राजाओंको बारम्बार यही आज्ञा दी, आज पुष्य नक्षत्र है, इससे आज ही तुम लोग कुरुक्षेत्रमें गमन करो। अनन्तर उन सब राजाओंने कालके वशमें होकर भीष्मको सेनापति बनाकर अत्यन्त हर्षके सहित अपनी सेनाके सहित युद्धके निमित्त यात्रा की। हे महाराज! कौरवोंकी ग्यारह अक्षौहिणी सेना युद्धके निमित्त इकट्ठी होकर तालचिन्हकी ध्वजासे युक्त महावीर भीष्मको सबके आगे करके विराजमान है। इससे अब इस समयमें जैसा योग्य और कर्त्तव्य कार्य्य करना स्थिर हो, आप उसका ही विधान कीजिये। हे भारत! मेरे जानेपर कौरवोंकी

सभामें जो कुछ हुआ था,—भीष्म, द्रोण, विदुर, गान्धारी और राजा धृतराष्ट्रने मेरे सम्मुख दुर्य्योधनसे जो कुछ वचन कहे थे, वे सब मैंने आपसे कह दिये। हे राजन्! जिससे आप लोगोंमें भ्रातृभाव स्थापित होवे,—ऐसे प्रसिद्ध-वंशका नाश न होवे वही समझकर मैंने पहिले सामवादका प्रयोग किया था; परन्तु मैंने देखा, कि सामवादका ग्रहण नहीं होता है, तब भेदके प्रयोग करनेमें बाध्य हुआ और आपके दैवी तथा मानुषी सब बड़े बड़े कर्मोंको कह सुनाया। हे भारत! दुर्य्योधनने जब मेरे शान्तिके निमित्त कहे हुए वचनोंका अनादर किया, तब मैंने सब राजाओंमें भेद उत्पन्न करनेके निमित्त तनिक भी सङ्कोच नहीं किया और महा-घोर अमानुषी कर्म्म दिखानेमें भी मैंने कुछ त्रुटि न की। इकट्ठे हुए राजाओंकी बारम्बार वचन और युक्तिसे भेदित और निन्दा करके दुर्य्योधनको तृणके समान अनादर करके, कर्णको बार बार भय दिखाके, धृतराष्ट्र-पुत्रोंके जुएके खेलकी जड़ पापी शकुनिकी अत्यन्त ही निन्दा करके अन्तमें मैंने फिर शान्तिके निमित्त प्रस्ताव किया। कुरुवंशके मङ्गल और कार्य्यकी सिद्धिके निमित्त मैंने दुर्य्योधनको राज्य देनेकी बात भी कही। मैंने कहा "वह शूरवीर तेजस्वी पाण्डव मान और प्रभुताका त्यागकर तुम्हीको राज्य समर्पण करके धृतराष्ट्र, भीष्म और विदुरकी आज्ञाके अनुसार चलेंगे। तुम्हारे हितके निमित्त धृतराष्ट्र, भीष्म और विदुर जो कुछ कहें, वही होवे, तुम्ही राज्यके अधि-कारी बनो, केवल पांच गांव पाण्डवोंको प्रदान करो। हे राजसत्तम! वे लोग चाहे कैसे ही होवें, परन्तु तुम्हारे पिताको उनका पालन करना योग्य है। ऐसी विनतीकी बात कहनेपर भी वह दुरात्मा किसी प्रकारसे राज्यका अंश देनेमें सम्मत नहीं हुआ। हे राजन्! इनसे [illegible] और पापीके निग्रहके होनेके [illegible] अतिरिक्त और कुछ भी मैं नहीं देखता हूं। उसकी सहायताके निमित्त बुद्धिहीन राजा लोग भी कुरुक्षेत्रमें गये हैं। हे पाण्डव! कौरवोंकी सभामें जो कुछ हुआ था, वे सब बातें मैंने तुम्हारे निकट वर्णन की। बिना युद्धके दुर्य्योधन कभी तुमको राज्यका भाग न देगा। वह सब लोगोंके सहित जो मृत्युके वशमें होकर सबके नाश करनेका कारण हुआ है इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

१५० अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, श्रीकृष्णचन्द्रके वचन सुनकर धर्म्मात्मा धर्म्मराज युधिष्ठिर उनके सम्मुख हो अपने भाइयोंसे बोले, हे पुरुषसिंहो! कौरवोंकी सभामें जो कुछ हुआ था, वह सब तुम लोगोंने सुना, और श्रीकृष्ण-के वचन भी निश्चित कर लिये। इससे अब इस समय मेरी सेनाका विभाग होना उचित है। यह सात अक्षौहिणी सेना विजयके निमित्त इकट्ठी हुई है, जो लोकमें विख्यात सात महारथी इसके नायक होंगे, उनका नाम सुनो। द्रुपद, विराट, धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, सात्यकी, चेकितान और भीमसेन,—यही सात वीर पुरुष इस सेनाके नायक होंगे। ये सब लोग प्राणकी आशा त्याग करके युद्धके निमित्त उत्साह करते हैं, ये सब ही वेदको जाननेवाले शूरवीर, उत्तम—चरित्र और व्रतसे युक्त, लज्जा-शील, नीतिसे युक्त, युद्धविद्याको जाननेवाले बाण आदि अस्त्र शस्त्रोंके चलानेमें निपुण, और सब ही सब प्रकारके अस्त्रोंको धारण करनेवाले वीर योद्धा हैं। परन्तु हे कुरुनन्दन सहदेव! जो पुरुष इन सात वीरोंका नायक होसके, और संग्राममें बाणरूपी शिखासे युक्त अग्निके समान [illegible] भीष्मका सामना कर सके, सेनाके विभागको जाननेवाले ऐसे किसी [illegible] पुरुषका [illegible] करो।

सहदेव बोले, जिस धर्मात्मा पुरुषका आसरा करके हम लोग अपने पैतृक राज्यके अंशको पानेकी अभिलाषा करते हैं, वही सब लक्षणोंसे युक्त, सुख-दुःखको समान जाननेवाले सब शास्त्र और युद्धविद्यामें निपुण बलवान् मत्स्यराज विराट युद्धमें भीष्म तथा दूसरे महारथ वीरोंका सामना कर सकेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले सहदेवके ऐसा कहनेपर पुरुषसिंह नकुल यह वचन बोले, जो अवस्था शास्त्र, धीरज, कुल, और विनयसे युक्त लज्जाशील, बलसे युक्त, लक्ष्मीवान्, सब शास्त्रोंके जाननेवाले, पराक्रमी सत्य प्रतिज्ञा करनेवाले हैं; जिन्होंने भरद्वाजनन्दन महात्मा द्रोणाचार्य्यसे शस्त्रशिक्षा सीखी है, जो महाबली पुरुष सदा भीष्म और द्रोणाचार्य्यसे युद्ध करनेकी अभिलाषा करते हैं, राजाओंमें अग्रणी और प्रशंसाके योग्य जो सेनापति पुत्र पौत्रके सहित हो शाखाओंसे युक्त वृक्षकी भांति मालूम पड़ते हैं, जिस शत्रुनाशन पृथ्वीनाथने क्रोधमें भरकर द्रोणाचार्य्यके वध करनेके निमित्त स्त्रीके सहित महाघोर तपस्या की थी और जो महाराज ससुर होकर भी पिताके समान हम लोगोंका पालन करते हैं, वही द्रुपदराज हम लोगोंके सेना नायक बनें। मेरी समझमें वह भीष्म और द्रोणाचार्य्यके सम्मुख युद्ध कर सकेंगे, क्योंकि वह सब दिव्य शस्त्रोंके जाननेवाले, प्रतापी और द्रोणाचार्य्यके सखा हैं।

माद्रीपुत्रोंके अपने अपने अभिप्राय प्रकट करनेपर कुरुनन्दन इन्द्रपुत्र अर्जुन बोले, अग्निकी शिखाके समान वर्णसे युक्त यह जो महाबाहु पुरुष तपस्याके प्रभाव और ऋषियोंके सन्तोषसे उत्पन्न हुआ है, धनुष, कवच, खड्ग, और दिव्य घोड़ोंके रथसे युक्त तथा सावधान होकर रथके शब्दके सहित बादलके समान गर्जते हुए अग्निकुण्डसे उत्पन्न हुआ है, जिसकी मूर्त्ति, भुजा कन्धा और गर्जनेका शब्द सिंहके समान है, जिसकी दोनों भौं, दांत मुख और कपोलके ऊपरका हिस्सा भुजा कन्धोंके मोटे, बड़ी आंख और पांव अत्यन्त सुन्दर हैं, जो महाबली, महा तेजस्वी, प्रतिष्ठित, रोगरहित सब शस्त्रोंके जाननेवाले मतवारे हाथीके समान अत्यन्त बलसे युक्त सत्यवादी, जितेन्द्रिय पुरुष द्रोणाचार्य्यके वधके निमित्त उत्पन्न हुआ है, मेरे विचारमें वही धृष्टद्युम्न भीष्मके वज्र समान खन करनेवाले, महा विषधर सर्पके समान मुखवाले, वेगमें यम दूतके समान, युद्धमें परशुरामको भी विकल करनेवाले और वज्रके समान महा कठोर उनके सब बाणोंको सह सकेंगे। हे महाराज। मुझे यह निश्चय बोध होता है कि मैं एक मात्र धृष्टद्युम्नके अतिरिक्त और ऐसे किसी पुरुषको भी नहीं देखता हूं, जो युद्धमें महाव्रती भीष्मके बाणोंको सहनेमें समर्थ हो सके। इससे यही अभेद कवच धारण करनेवाला पुरुषसिंह यूथपति मतवारे हाथीके समान हम लोगोंका सेनापति बनाया जावे, यही मेरा मत है।

भीमसेन बोले, हे राजेन्द्र! सिद्ध और ऋषियोंने जिसको भीष्मके वधके निमित्त उत्पन्न हुआ वर्णन किया है। मनुष्य लोग संग्राम भूमिमें दिव्य अस्त्रोंके चलानेवाले जिस पुरुषसिंहके महात्मरूपको रामके समान देखेंगे, युद्धमें सावधान, रथमें स्थित उस द्रुपदपुत्र शिखण्डीको शस्त्रसे मार सके, ऐसा और पुरुष मैं नहीं देखता हूं। हे महाराज! बल और पराक्रमसे युक्त शिखण्डीके अतिरिक्त और कोई पुरुष भी द्वैरथ युद्धमें महाव्रत करनेवाले भीष्मको नहीं मार सकता। इससे मेरे विचारमें वही शिखण्डी हम लोगोंका सेनापति बनाया जावे।

युधिष्ठिर बोले हे तात। धर्मात्मा कृष्ण इस सम्पूर्ण जगत्के सार असार बलाबल और

अभिप्रायको जानते हैं। इससे दाशार्ह कृष्ण जिसको कहेंगे, सब शास्त्रोंका जाननेवाला हो वे अथवा न होवे, बालक हो, चाहे बूढ़ा हो; वह निश्चय हमारा सेनापति बनाया जावेगा। हे तात! कृष्ण ही हम लोगोंके जय और पराजयके मूल हैं, हम लोगोंका प्राण, राज्य, भले-बुरे कर्म्म, सुख-दुःख इनहीमें प्रतिष्ठित हैं; हम लोगोंके यही धाता और विधाता हैं, इससे हमलोगोंकी सिद्धि भी इनहीसे प्रतिष्ठित है, दाशार्ह कृष्ण जिसका कहेंगे, वही हमारा सेनापति बनेगा। अब रात्रिका समय उपस्थित हुआ चाहता है, इसी समय बोलनेवालोंमें श्रेष्ठ कृष्ण उस पुरुषका नाम वर्णन करें, उसके अनन्तर हम लोग उस पुरुषके वशवर्त्ती होकर सेनापति, शस्त्र तथा सेनाके सब मङ्गल कर्म्मोंको सिद्ध करके युद्धके निमित्त यात्रा करेंगे।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, बुद्धिमान् धर्म्मराजके वचन सुनकर पुण्डरीकाक्ष जनार्द्दन कृष्ण अर्ज्जुनके मुखको देखकर उनके मतको अनुमोदन करके युधिष्ठिरसे बोले, महाराज! तुमने जिन सब पराक्रमी महारथ योद्धाओंको अपनी सेनाका नायक बनाया है; उसमें मैं भी सह मत हूं, क्यों कि ये सब लोग तुम्हारे शत्रुओंके संहार करनेमें समर्थ हैं। लोभसे युक्त पापी धृतराष्ट्र-पुत्रोंकी बात ही क्या है, ये लोग युद्धमें इन्द्रको भी भयभीत कर सकते हैं। हे महाबाहो! तुम्हारे प्रियकार्य्यका साधन करनेके निमित्त मैंने वहांपर भी बहुत यत्न किया है; इससे धर्म्मके समीपमें भी मैं ऋणसे रहित होगया हूं, दोष देनेवाला कोई पुरुष भी हम लोगोंकी निन्दा न कर सकेगा। नीच-बुद्धि मूर्ख दुर्य्योधन अपनेको सब शस्त्रोंसे युक्त समझता है और आतुर होकर भी अपनेको बलवान् समझ रहा है; इससे शीघ्र ही सेना सजाकर युद्धके निमित्त यात्रा कीजिये, क्योंकि बिना मरे वह किसी प्रकारसे भी तुम्हारे हाथसे न होगा। अर्ज्जुन, क्रोधी भीमसेन, युयुधान, शत्रुनाशन धृष्टद्युम्न, अभिमन्यु, द्रौपदीके पांचो पुत्र, विराट, द्रुपद और सेनाके स्वामी दूसरे सब राजाओंको देखकर धृतराष्ट्रके पुत्र लोग कभी सम्मुखमें न खड़े हो सकेंगे, हम लोगोंकी यह तेजस्विनी बलवती सेना युद्धमें अवश्य ही दुर्य्योधनकी सेनाका नाश करेगी।

कृष्णके ऐसा कहने पर सम्पूर्ण राजा लोग अत्यन्त ही आनन्दित हुए। सबके हर्षयुक्त होनेपर उन लोगोंके बीच बड़ी भारी हर्षसे भरी हुई ध्वनि सुनाई पड़ी। आतुर होकर इधर उधर दौड़नेवाले कहने लगे :—"रथ चलाओ, सेना सजाओ" पुरुषोंका सिंहनाद और हाथी घोड़ोंका शब्द होने लगा, शङ्ख, भेरी, नगाड़े आदि जुझाऊ बाजोंके बजनेसे बड़ा भारी शब्द उत्पन्न हुआ। युद्धके निमित्त प्रस्थान करनेवाली वह पाण्डवोंकी सेना जलसे भरी हुई गङ्गाकी भांति दिखाई देने लगी। सेनाके अगाड़ी भीमसेन, कवचधारी नकुल, सहदेव, अभिमन्यु, द्रौपदीके पांचो पुत्र और धृष्टद्युम्न हुए और प्रभद्रक तथा पाञ्चाल योद्धा लोग भीमसेनको आगे करके चले। अनन्तर जैसे अमावस और पूर्णमासीको समुद्रकी तरङ्ग उठता है, वैसे ही उस प्रस्थान करनेवाली सेनाके महा कोलाहलसे युक्त शब्द आकाशमण्डलको स्पर्श करने लगा। शत्रुओंके बलको नाश करनेवाले सब वीर योद्धा लोग अत्यन्त ही प्रसन्न थे। उन लोगोंके बीचमें राजा युधिष्ठिरने शकट, बाजार, सवारी, खजाना, गज, यन्त्र, आयुर्वेदको जाननेवाले शल्याचिकित्सक, परिचारक लोग और अमात्य, निर्बल और कृश सेनाका संग्रह करके गमन किया। द्रुपदनन्दिनी महारानी द्रौपदी दास दासियोंसे युक्त होकर स्त्रियोंके संग विराट नगरमें लौट आई। हे राजन्! पाण्डवगण सुवर्णादिक दान करके ब्राह्मणों और बन्दी

स्थानोंमें गमन करनेवाली तथा रक्षा करनेवाली सेनासे धन और स्त्रियोंकी रक्षाका विधान किया तथा ब्राह्मणोंको गऊ, सुवर्ण, रत्न आदि दान करते और स्तुति सुनते हुए सुवर्ण और मणियोंसे भूषित रथपर चढ़के सेनाके सङ्ग चले। केकय-देशीय पांचो राजपुत्र, धृष्टकेतु, काशिराजपुत्र, श्रेणिमान्, वसुदान, अपराजित, शिखण्डी आदि वीर लोग राजा युधिष्ठिरको चारो ओरसे घेरकर उनका अनुगमन करते हुए चले। विराट, धृष्टद्युम्न, सुधर्म्मा, कुन्तिभोज, और धृष्टद्युम्नके पुत्र लोग चालीस हजार रथ, दो लाख घोड़े साठ हजार हाथी और दो लाख पैदल लेकर पीछे पीछे चले। अनाधृष्टि, चेकितान, चेदिराज और सात्यकी ये लोग अर्ज्जुनके सहित कृष्णको घेरकर चले। इस प्रकारसे व्यूह बनाकर शत्रुनाशन पाण्डव लोग कुरुक्षेत्रमें पहुंचकर गर्ज्जनेवाले वृषभोंके समूहकी भांति दिखाई देने लगे। वह शत्रुनाशन पुरुषसिंह कुरुक्षेत्रमें जाकर अपने अपने शङ्ख बजाने लगे और कृष्ण तथा अर्ज्जुनने भी अपने अपने शङ्ख बजाये। वज्रके समान पाञ्चजन्य शङ्खका शब्द सुनकर सब सैनिक-पुरुषोंके रोवें खड़े होगये। इसके अनन्तर सम्पूर्ण तेजस्वियोंके सिंहनादका शब्द शङ्ख नगाड़े आदि जुझाऊ बाजोंका शब्द समुद्रमें गूंजने लगा। अनन्तर राजा युधिष्ठिरने तृण और काठसे युक्त समतल और सुन्दर भूमिमें अपनी सेना ठहरायी, महा बुद्धिमान् राजा युधिष्ठिरने श्मशान, देवालय, महर्षियोंके आश्रम, तीर्थ और मन्दिरोंको छोड़कर मनको हरनेवाली सुन्दर उपजाऊ और पवित्रभूमिमें अपनी सेनाका निवास स्थान ठहराया। इसके अनन्तर वाहन आदिको सुखसे विश्राम कराकर फिर उनके सैकड़ो, सहस्रो, राजाओंके सहित प्रस्थान किया। इधर अर्ज्जुनके सहित कृष्ण दुर्य्योधनके सैकड़ो सैनिक पुरुषोंको हटाते हुए चारों ओर घूमने लगे। द्रुपदनन्दन धृष्टद्युम्न, सात्यकी, महा पराक्रमी युयुधान इन लोगोंने शिविरका स्थान निश्चित किया है भारत! श्रीकृष्णचन्द्रने कुरुक्षेत्रमें हिरण्वती-नाम्नी सुन्दर जलसे भरी हुई कङ्कड़ और कीचड़से रहित पवित्र तीर्थको देखकर व[?] पर जलके निमित्त परिखा स्थापित की। और उसकी रक्षाके निमित्त अदृश्य रूपसे प्रबन्ध कर दिया। महात्मा पाण्डवोंके शिविर बननेके विषयमें जैसा नियम था, श्रीकृष्ण राजाओंके निमित्त वैसा ही शिविर तैयार करवाया। हे राजेन्द्र! वहांपर राजाओं[?] लकड़ी और अन्न पानसे युक्त सैकड़ों सहस्रों महामूल्यवान् सब शिविर विमानकी भांति पृथ्वीपर दिखाई देने लगे। वहांपर नियमित वेतनको पानेवाले सैकड़ों शिल्पी और शास्त्रको जाननेवाले वैद्य उपस्थित थे। राजा युधिष्ठिर सब शिविरोंमें महा यत्नसे ढेरके ढेर धनुष, धनुषके रोदे, वर्म्म, शस्त्र, तूणीर, बाण, नाराच, तोमर, परशु, और मधु, घृत, जल, भक्षण करनेके योग्य पशु, उत्तम तृण, अग्नि आदि सब आवश्यकीय वस्तुओंको स्थापित किया। वहांपर लोहेके वर्म्मसे युक्त घण्टे और धौंसेके सहित सैकड़ों, सहस्रों हाथी पर्व्वतके समान दिखाई देने लगे। हे भारत! पाण्डवोंको कुरुक्षेत्रमें पहुंचा हुआ जानकर मित्र राजा लोग बल और सेनासे युक्त होकर उसी स्थान पर गये। ब्रह्मचर्य्यके अनुष्ठान और सोमपान करनेवाले तथा ब्राह्मणोंको बहुत दक्षिणा देनेवाले राजा लोग पाण्डवोंके विजयके निमित्त वहांपर जा पहुंचे।

१५१ अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजय बोले, हे महामुनि! श्रीकृष्ण, पुत्रके सहित विराट, द्रुपद, केकय, और यदुवंशी आदि सैकड़ों राजाओंसे युक्त,

देवताओंमें इन्द्रके समान महारथ वीरोंसे
रक्षित,राजा युधिष्ठिरका कुरुक्षेत्रमें पहुंचा हुआ
सुनकर राजा दुर्य्योधनने क्या कार्य्य किया था?
उस महा सेनाके कुरुक्षेत्रमें उपस्थित होनेपर
जो जो वृत्तान्त हुआ था, वह विस्तारपूर्व्वक
मुझसे कहिये। पाण्डवलोग श्रीकृष्ण, विराट,
द्रुपद, धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, सात्यकी और
अत्यन्त ही पराक्रमी महारथ वीरोंसे युक्त
होकर देवताओंके सहित इन्द्रको भी भयभीत
कर सकते थे। हे महामुनि! इससे कौरव
पाण्डवोंमें जो जो वृत्तान्त हुआ था, वह तुम
विस्तारपूर्व्वक वर्णन करो।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, श्रीकृष्णके कुरु-
सभासे चले जानेपर राजा दुर्य्योधन कर्ण,
दुःशासन और शकुनिसे यह वचन बोले, "हे
राजेन्द्र! कृष्ण जब यहांसे निराश होकर पाण्ड-
वोंके समीपमें गये हैं, तब वह अवश्य ही क्रोधमें
भरके पाण्डवोंको उत्तेजित करेंगे, इसमें कुछ
भी सन्देह नहीं है। पाण्डवोंके सहित हम
लोगोंका युद्ध होवे,यह कृष्णका अत्यन्त ही अभि-
लाषा है। भीम-अर्जुन भी कृष्णके मतमें
सम्मत हैं, और युधिष्ठिर,भीम अर्जुनके अत्यन्त
ही वशमें हैं। पहिले वह भाइयोंके सहित
मुझसे अपमानित किये गये थे, मैंने जिनके
संग शत्रुता की थी, वह विराट और द्रुपद भी
उन्हींके वशमें होकर युधिष्ठिरकी सेनाके नायक
हुए हैं; इससे अब रोम खड़े करनेवाला
घोर संग्राम उपस्थित होगा, इससे तुम
लोग आलस्यको छोड़कर युद्धके योग्य सब वस्तु-
ओंका इकट्ठा करो। कुरुक्षेत्रमें बहुत दूरतक
पृथक पृथक, अन्न जल, काठ, बहुतसी भोजन
करनेकी वस्तु,बहुतसे शस्त्र और ध्वजा पताका
युक्त सैकड़ों सहस्रों शिविर तयार करावो।
...के ... सेनाके गमन करने योग्य
मार्गको समान तथा साफ करा दो।
... ...

निमित्त यात्रा की जायगी।" वह सब राजा
लोग प्रसन्न होकर बोले, "ऐसा ही होगा।
ऐसी प्रतिज्ञा करके दूसरे दिन राजाओंके
निवासके निमित्त सब कार्य्यको समाप्त किया।
अनन्तर इकट्ठे हुए सब राजा लोग राज-
शासनको सुनकर उठे, मणि सुवर्णसे भूषित
चन्दन-चर्चित परिघके समान अपनी भुजाको
धीरे धीरे स्पर्श करने लगे और अपने कर-कम-
लोंसे वस्त्र आभूषण पहिरने लगे। मुख्य मुख्य
रथी लोग रथ, घुड़सवार घोड़े और हाथियों-
की शिक्षामें निपुण पुरुष हाथियोंको सजाने
लगे। उसके अनन्तर वीरोंने सुवर्ण-भूषित
वर्म्म और सब शस्त्रोंको धारण किया। पैदल
चलनेवाले वीरोंने भी अपने शरीरपर कई
प्रकारके शस्त्र और कवचोंको धारण किया।
हे भारत! अत्यन्त ही प्रसन्न चित्तसे वीर पुरु-
षोंके इकट्ठे होनेपर वह नगर उत्सवके
समयकी भांति मालूम होने लगा। हे
राजन्! उस समय वीर योद्धारूपी चन्द्रमाके
उदय होनेपर कुरुराजरूपी समुद्र यथार्थमें
समुद्रकी भांति दिखाई देने लगा। उस महा
समुद्रमें सब सेना जल और तरङ्ग रूप हुई,
रथ,घोड़े और हाथी—मगर,मच्छ और घड़ि-
याल रूपसे दीख पड़ते थे। शङ्ख, भेरी और
नगाड़े तथा धौंसोंका शब्द समुद्रकी लहरके
समान बोध होने लगा; खजाना रत्नके स्थानमें
बोध होता था; विचित्र भूषण वर्म्म तथा सब
शस्त्र समुद्रके फेनके समान दिखाई देने लगे,
ऊंचे मन्दिरोंका समूह समुद्रके तीर पर रहने-
वाले पर्व्वत और उस सेनाके चलनेका मार्ग
ह्रदरूपी दीखता था।

१५८ अध्याय समाप्त।

वैशम्पायन मुनि बोले, राजा दुर्य्योधनने
... [illegible] ...
... [illegible] ..., हे ... [illegible]

धनने किस प्रकारसे इस वचनको कहा था? और इस उपस्थित समयमें कैसे कार्य्यका अनुष्ठान करनेसे मैं धर्म्म और अर्थसे पतित न होऊंगा। हे महाबाहो! तुम दुर्य्योधन, कर्ण, शकुनि और भाइयोंके सहित मेरे अभिप्रायको भी जानते हो। हे महाबुद्धिमन्! तुमने विदुर, भीष्म और माता कुन्ती-देवीके अभिप्रायको अच्छे प्रकारसे सुना है। इससे तुम उन सब बातोंको भली भांतिसे विचार करके जिस कार्य्यके करनेसे मेरा मङ्गल होवे, वैसी ही युक्ति मुझसे वर्णन करो।

श्रीकृष्णचन्द्र राजा युधिष्ठिरके धर्म्म और अर्थसे भरे हुए ऐसे वचन सुनकर बादल और नगाड़ेके समान गम्भीर शब्दसे यह वचन बोले, तुमने जो धर्म्म अर्थसे युक्त हित वचनोंको कहा था, नीच बुद्धि दुर्य्योधनने उनको नहीं ग्रहण किया उस दुष्टात्माने भीष्म, विदुर मेरे तथा किसीके वचनोंको भी नहीं स्वीकार किया। वह सबकी बातोंको उल्लङ्घन करके इच्छाके अनुसार कार्य्य करता है। वह दुष्टबुद्धि न धर्म्मकी इच्छा करता है और न यशकी अभिलाषा करता है, वह कर्म्मका आसरा करके मैंने 'सबको जीत लिया" अपने मनमें ऐसा ही समझता है। उस पापबुद्धि दुर्य्योधनने मुझको भी कैद करनेकी आज्ञा दी थी; परन्तु उसकी वह अभिलाषा सफल नहीं हुई। उस विषयमें भीष्म, द्रोण आदि किसीने भी युक्तिसे पूरित वचनोंको नहीं कहा था। एक मात्र विदुरके अतिरिक्त और सब लोग उसके अनुगामी हुए थे। नीच बुद्धि शकुनि, कर्ण और दुःशासनने तुम्हारे विषयमें अनेक प्रकारके बुरे वचनोंको कहा था। दुर्य्योधनने जिन सब वचनोंको कहा है, उनके वर्णन करनेकी कुछ भी आवश्यकता नहीं है, उसका संक्षेप मर्म्म यही है, कि वह तुमको उचित रीतिसे राज्य न देगा और न तुम्हारे संग उत्तम व्यवहार करेगा। इससे तुम्हारी सेनामें इकट्ठे इन सब राजाओंमें जो कुछ पाप तथा बुरे कर्म्म नहीं हुए हैं; वह सब उस नीच बुद्धि दुर्य्योधनमें विद्यमान हैं। हम लोग भी लक्ष्मीको त्याग कर किसी प्रकार भी कौरवोंके संग शान्ति नहीं स्थापित कर सकते; इससे अब ऐसी अवस्थामें युद्ध ही करना उचित है।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भारत! श्रीकृष्णचन्द्रके इस वचनको सुनकर सम्पूर्ण राजा लोग कुछ भी न कहके महाराज युधिष्ठिरके मुंहकी ओर देखने लगे। तब राजा युधिष्ठिरने सब राजाओंके अभिप्रायको जान कर भीम, अर्ज्जुन और नकुल, सहदेवके संग विचार करके युद्धकी तैयारी करनेकी आज्ञा दी। अनन्तर पाण्डवोंकी सेनामें महा घोर कोलाहल होने लगा। युद्धके तैयारीकी आज्ञाको सुनकर सेनाके पुरुष अत्यन्त ही आनन्दित और प्रसन्न हुए। परन्तु धर्म्मात्मा राजा युधिष्ठिर अवध्य पुरुषोंके वधको देखनेके निमित्त लम्बी सांस लेकर भीम अर्ज्जुनसे यह वचन बोले, जिसको त्यागनेके निमित्त मैंने वन वास स्वीकार करके अत्यन्त क्लेश सहन किया था, वही महा अनर्थ प्रयत्नके क्रमसे हम लोगोंमें उपस्थित होरहा है। इस विषयमें हम लोगोंने जो यत्न किया, वह निष्फल हुआ और कुछ भी यत्न न करनेपर भी यह महा भयङ्कर संग्राम उपस्थित हुआ है, वन्दना करने योग्य माननीय पुरुषोंके संग कैसे युद्ध हो सकता है? वृद्ध गुरु आदि पुरुषोंके वध करनेसे हा मेरे किस प्रकारसे विजय होगा?

धर्म्मराज युधिष्ठिरके वचनको सुनकर परन्तप अर्ज्जुन श्रीकृष्णके कहे हुए सब वचनोंका स्मरण कराके यह वचन बोले, हे राजन्! देवकीनन्दन कृष्णने कुन्ती और विदुरके कहे हुए जिन सब वचनोंको सुनाया, वह सम्पूर्ण रूपसे तुमने निश्चय किया है, मुझे वह निश्चय

बोध होता है, कि वह लोग किसी प्रकारसे भी अधर्म्मसे युक्त वचन न कहेंगे. विशेष करके विना युद्ध किये हम लोगोंको निवृत्त होना उचित नहीं है। अनन्तर राजा युधिष्ठिरने श्रीकृष्ण और अर्ज्जुनके वचनको सुनकर हंसके कहा "यही ठीक है" ऐसा कहनेसे उन लोगोंके वचनको पुष्टता होगई। हे महाराज! इसके अनन्तर पाण्डवोंने युद्ध करनेके निमित्त सङ्कल्प करके सेनाके पुरुषोंके सहित परम सुखसे निवास करके रात बिताई।

१५२ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भारत! अनन्तर रातके बीतनेपर राजा दुर्य्योधनने अपनी ग्यारह अक्षौहिणी सेनाको नियमके अनुसार विभाग किया और मनुष्य, हाथी घोड़े रथ आदिका उत्तम, मध्यम विचार करके आगे पीछे और सेनाके बीचमें रहनेके निमित्त आज्ञा दे दी। अनुकर्ष, तूणीर, वरूथ (रथको ढकनेके निमित्त व्याघ्र आदिके चमड़े) तोमर, उपासंग, शक्ति, निषंग, ध्वजा, पताका, ऋष्टि, धनुष, तोमर, कई प्रकारके रस्से, फांसे, तेल, गुड़, बालू, सर्पसे युक्त घड़े, धूपके चूर्ण, घण्टफलक (घण्टासे युक्त चोखे शस्त्र) लोहेकी गोली, जलसे युक्त पत्थर, शूलसे युक्त भिन्दिपाल, मोम, मुद्गर, काटेसे युक्त दण्ड, लांगल, विषादिग्ध तोमर, शूप, पिटक, परशु, अङ्कुशके तोमर, दण्डसे युक्त करपत्र, वासी, इपादन, (लोहेके काट) बाघ आदिके चमड़ेसे घिरे हुए रथ, भाला कुठार आदि बहुतसे शस्त्र, तेलसे युक्त वस्त्र (जिसकी भस्म घावपर लगाई जाती है) घावको शोधनेके वास्ते पुराना घृत आदि अनेक प्रकारकी युद्धके योग्य सब सामग्री और अनेक सोनेके जरीके वस्त्र तथा रत्नोंसे भूषित होनेपर वह सेना चमकती हुई आगके समान दीपने लगी।

कवच धारण करनेवाले, उत्तम शिक्षा तथा घोड़ोंके तत्वोंको जाननेवाले वीर लोग सारथीके कार्य्यपर नियुक्त हुए। रथमें उत्तम जातिके चार चार घोड़े जोते गये; अशुभ लक्षणोंके निवारणके वास्ते यन्त्र, औषधि; घोड़ोंके भूषित करनेके निमित्त घण्टा, माला, मोतियोंकी लड़ी, ध्वज, पताका, मुकुट, भूषण, तरवार, पट्टिश, प्रास और एक एक सौ धनुष रथोंमें रक्खे गये। रथके अगाड़ीके दोनों घोड़ोंके निमित्त एक सारथी और रथके चक्रके पीछे दोनों घोड़ोंके निमित्त दो सारथी नियुक्त किये गये। ऐसे ही रथके ऊपर दो उत्तम सारथी, रथी और घोड़ोंके तत्वोंको जाननेवाले वीर पुरुषोंसे रक्षित सुवर्णकी मालासे युक्त सहस्रों रथ चारों ओर दीखने लगे। रथहीके अनुसार सुवर्णके भूषणोंसे भूषित किये गये, हाथियोंके हौदेमें सात सात वीर पुरुषोंके चढ़ने पर ऐसी शोभा हुई जैसे रत्नोंके सहित पर्व्वत शोभायमान होता है। इन सात वीरोंमें दो अङ्कुश ग्रहण करनेवाले, दो धनुषधारी, दो तरवार चलाने वाले और एक एक शक्ति तथा त्रिशूल चलाने वाले वीर योद्धा रक्खे गये। हे महाराज! राजा दुर्य्योधनकी वह सेना अनेक प्रकारके वर्म्म और तूणीरसे युक्त तथा विचित्र रूपके कवच, पताका, और उत्तम भूषणोंसे भूषित होकर मतवारे हाथियोंके झुण्डसे घिर गई। विचित्र रूपके कवच, पताका, उत्तम भूषणसे युक्त असवारोंके सहित, मद दोषोंसे रहित, उत्तम शिक्षासे युक्त, दश दश हजार तथा लाख लाख घोड़ोंका समूह असवारोंके वशमें चलने लगा, नाना प्रकारके भूषण, सुवर्णकी माला और कवचोंसे युक्त होकर अगणित पैदल चलनेवाले और योधा सज्ज खड़े हुए। एक एक रथ पर दश दश हाथी, एक एक हाथी पर दश दश घोड़े और एक एक घोड़ेके निमित्त दश दश पैदल रक्षकोंसे

वीर योद्धा पादरक्षक बनाये गए। रथसे पचास गुने हाथी, हाथीसे सौगुणे घोड़े, और घोड़ोंसे सौगुणे मनुष्य रक्खे गये। इसके अतिरिक्त छिन्न-भिन्न सेना फिरसे सजाई जाने लगी, पांचसौ रथ और पांच सौ हाथियों पर एक सेना, दश सेनाओं पर एक पूतना, दश पूतनाओं पर एक वाहिनी रक्खी गई, और सेना वाहिनी, पूतना, ध्वजिनी, चमू, वरूथिनी आदिके क्रमसे एक अक्षौहिणी कही गई। बुद्धिमान् राजा दुर्य्योधनने इसी प्रकारसे सेनाके व्यूहकी रचना की। दोनों ओरकी सम्पूर्ण सेना अठारह हुई, उसमेंसे पाण्डवोंकी सात अक्षौहिणी और कौरवोंकी ग्यारह अक्षौहिणी सेना थी। प्रचपन मनुष्योंकी एक पत्ति, तीन पत्तियोंका एक सेनामुख वा गुल्म होता है और तीन गुल्मोंसे एक गण कहा जाता है, दुर्य्योधनकी सेनाके बीच ऐसे लाखों गण युद्धके निमित्त हर्षित और उत्साहित होकर उपस्थित हुए। महाबाहु राजा दुर्य्योधनने अच्छे प्रकारसे विचार पूर्व्वक पराक्रमी बुद्धिमान् मनुष्योंको अपनी सेनाका सेनापति बनाया। कृपाचार्य्य, द्रोणाचार्य्य, शल्य, जयद्रथ, काम्बोजराज, सुदक्षिण, कृतवर्म्मा, अश्वत्थामा, कर्ण, भूरिश्रवा, शकुनि और वाह्लिक,—इन सब राजाओंको नियमके अनुसार पृथक् पृथक् अक्षौहिणीका नायक बनाकर सबका यथा उचित सम्मान किया और प्रतिदिन तथा हर घड़ी अपने सम्मुख इन लोगोंकी अनेक प्रकारसे पूजा करने लगे। हे राजन्! इसी प्रकारके नियममें बद्ध होकर वह सब पराक्रमी राजा और उनके पृष्ठरक्षक वीर योद्धा लोग, राजा दुर्य्योधनके प्रिय कार्य्यके साधन करनेके निमित्त उत्साही हुए।

१५४ अध्याय समाप्त।

वैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर राजा दुर्योधन सब राजाओंके सङ्ग मिलकर शान्तनुनन्दन भीष्मसे यह वचन बोले, हे पितामह! सेनापतिके बिना अत्यन्त बड़ी सेना भी युद्धमें पहुंच कर चींटियोंके पृथक् रूपसे गमन करनेके अनुसार शत्रुओंसे पीड़ित होकर तितर बितर हो जाती है, क्योंकि दो पुरुषोंकी बुद्धि कभी समान नहीं होती। हे महाबुद्धिमन्! सुना जाता है, कि ब्राह्मणोंने कुश उखाड़ कर महातेजस्वी हैहयवंशियोंके विरुद्ध युद्धके निमित्त यात्रा की थी; उस समयमें वैश्य और शूद्र लोग भी उनके अनुगामी हुए थे। इसी प्रकारसे एक ओर क्षत्रिय और दूसरी ओर तीनों वर्ण थे, अनन्तर युद्धके आरम्भ होनेपर ब्राह्मण आदि तीनों वर्णोंका बार बार पराजय होने लगा और क्षत्रियोंने एक पक्ष होकर भी इस तीनों वर्णोंको जीत लिया। तब उन ब्राह्मणोंने क्षत्रियोंसे इसका कारण पूछा और धर्म्मात्मा क्षत्रियोंने भी उन लोगोंसे यही यथार्थ उत्तर दिया, कि हम लोग युद्धमें एक महाबुद्धिमान् मनुष्यके वचनके अनुसार चलते हैं और आप लोग सब कोई अपनी अपनी बुद्धिके वशमें होकर कार्य्य करते हैं। हे पितामह! इसके अनन्तर उन ब्राह्मणोंने नीति जाननेवाले एक महा पराक्रमी और बुद्धिमान् ब्राह्मणको अपना सेनापति बनाया और इससे क्षत्रियोंको युद्धमें जीता था। ऐसे ही जो पुरुष नीतिमें युक्त, पराक्रमी, हितैषी, पाप रहित किसी पुरुषको अपना सेनापति बनाते हैं; वह शत्रुओंको जीत लेते हैं। आप शुक्राचार्य्यके समान नीतिज्ञ, सब शास्त्रोंके जाननेवाले और धर्म्मात्मा हैं, विशेष करके हमारे हितकी अभिलाषा करनेवाले हैं। इससे जैसे तेजस्वी पदार्थोंमें आदित्य और ओषधियोंमें चन्द्रमा, यक्षोंमें कुवेर, देवताओंमें इन्द्र, पर्व्वतोंमें सुमेरु, वसुओंमें अग्नि मुख्य नायक हैं, उसी प्रकारसे तुम

लोगोंके प्रधान सेनापति बनो। क्योंकि इन्द्रसे रक्षित देवताओंकी भांति हम लोग तुम्हारे बाहुबलसे रक्षित होकर देवताओंसे भी न जीतने योग्य होवेंगे; इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। तुम देवताओंमें अग्रगामी स्वामि-कार्त्तिककी भांति हम लोगोंके आगे आगे चलो हम लोग महावृषभके पीछे बछड़ोंकी भांति तुम्हारे पीछे गमन करेंगे।

भीष्म बोले, हे महाबाहो! तुम जो कुछ वचन कहते हो, वह सब ठीक है, परन्तु मेरे पक्षमें जैसे तुम लोग हो, वैसे ही पाण्डव भी हैं। हे राजेन्द्र! इससे मुझे उन लोगोंके निमित्त भी कल्याणके वचन कहने पड़ेंगे और अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार तुम्हारे निमित्त युद्ध भी करना पड़ेगा। उस एक मात्र अर्ज्जुनके अतिरिक्त मैं इस पृथ्वीमें ऐसा कोई वीर योद्धा भी नहीं देखता हूं, जो मेरे समान हो सके। महा बुद्धिमान् पाण्डुपुत्र अर्जुन अनेक दिव्य अस्त्रोंको जानता है, इससे वह युद्धमें मेरे समान हो सकता है; परन्तु वह रणभूमिमें प्रकाशित होकर कभी मेरे सङ्ग युद्ध न कर सकेगा। मैं अपने शस्त्रोंके बलकी सहायतासे क्षण भरमें देवता, असुर और राक्षसोंके सहित इस सम्पूर्ण जगत्को मनुष्यहीन कर सकता हूं। परन्तु हे प्रजानाथ! पाण्डुपुत्रोंको मैं किसी प्रकारसे नष्ट करनेमें उद्यमी न होऊंगा। इससे मैं अपने शस्त्रोंको चलाकर प्रतिदिन दस हजार वीर योद्धाओंको मारूंगा। रणभूमिमें यदि पहिले ही वह लोग मुझे न मारेंगे, तो इसी प्रकारसे उन लोगोंके सम्पूर्ण वीर योद्धाओंका नाश कर दूंगा। हे राजन्! मैं दूसरे एक नियमसे इच्छाके अनुसार तुम्हारा सेनापति होऊंगा; वह नियम यह है,—चाहे पहिले कर्ण ही युद्ध करे अथवा मैं प्रथम युद्ध करूं, क्योंकि यह सूतपुत्र सदा युद्धमें मेरे संग स्पर्द्धा किया करता है।

कर्ण बोले, हे राजन्! गङ्गानन्दन भीष्मके जीते रहते, मैं किसी प्रकारसे भी युद्ध न करूंगा, भीष्मके मारे जानेपर गाण्डीवधारी अर्ज्जुनके सङ्ग युद्ध करूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर राजा दुर्य्योधनने ब्राह्मणोंको बहुतसी दक्षिणा देकर भीष्मको विधिपूर्व्वक सेनापति बनाया। अनन्तर राजाको आज्ञा पाकर बाजे बजानेवाले पुरुष अनेक प्रकारके बाजे शङ्ख भेरी आदि बजाने लगे, वीरोंके सिंहनाद और हाथी घोड़ोंके शब्द सुनाई देने लगे। बिना बादलके रुधिरकी वर्षा होकर पृथ्वी कीचड़से युक्त होगई। अकस्मात् भूकम्प और हाथियोंकी भयङ्कर चिङ्घाड़ सम्पूर्ण वीर योद्धाओंके अन्तःकरणको पीड़ित करने लगी। आकाशसे देववाणी और उल्कापात होने लगा। सियारोंके झुण्ड भी बारम्बार महा घोर शब्द करने लगे। हे राजन्! राजा दुर्य्योधनने जब भीष्मको सेनापति बनाया, तब इसी प्रकारसे सैकड़ों भयङ्कर उत्पात दीख पड़े थे।

शत्रुनाशन शान्तनुपुत्र भीष्मको सेनापति बनानेके अनन्तर राजा दुर्य्योधनने अनेक गौ और धन देकर ब्राह्मणोंसे स्वस्तिवाचन कराया और उनके आशीर्व्वादसे वर्द्धित होकर सैनिक-पुरुषोंके सङ्ग यात्रा की और भाइयोंके सहित इस महासेनाको लेकर कुरुक्षेत्रमें आपहुंचे। अनन्तर कर्णके सङ्ग उन्होंने सम्पूर्ण कुरुक्षेत्रमें घूमकर समान भूमिमें शिविर स्थापित कराया। अनेक तृण काठसे युक्त उर्वरा भूमिमें स्थापित हुए वे सब शिविर हस्तिनापुरकी भांति प्रकाशित होने लगे।

१५४ अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजय बोले,—ब्राह्मण वैशम्पायन, हमारे पूर्व्व, गङ्गानन्दन भीष्म, [illegible]

सूर्य, बाणोंकी वर्षासे इन्द्रकी भांति शत्रुओंके संहार करनेवाले, सब राजाओंमें अग्रणी, शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ, महात्मा,गंगानन्दन,पितामह भीष्मको महाभयङ्कर रोवेंको खड़े करनेवाले यज्ञमें सदासे दीक्षित सुनकर सम्पूर्ण शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ महाबाहु युधिष्ठिर इस विषयमें क्या बोले, भीम तथा अर्जुनहोने क्या कहा और कृष्णाहोने क्या उत्तर दिया था?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, धर्म्म अर्थको जाननेवाले, बोलनेवालोंमें श्रेष्ठ, महा बुद्धिमान राजा युधिष्ठिर भाइयोंके सहित कृष्णको बुलाकर मोठे वचनसे ऐसा कहने लगे, तुम लोग तैयार तथा सज्जित होकर सावधानोसे सब सेनामें भ्रमण करो। पहिले ही पितामह भोष्मके सङ्ग तुम लोगोका युद्ध होगा, इससे मेरो सात अक्षौहिणी सेनामें सात सेनापति नियत करो।

श्रीकृष्ण बोले, हे भरतर्षभ! इस उपस्थित समयमें आपके समान पुरुषको जैसा कहना उचित है, आपने वैसे ही अर्थसे भरे हुए वचन् कहे हैं। हे महाबाहो! यह सम्पूर्ण रूपसे हम लोगोंको उत्तम बोध होता है, इससे शीघ्र इस कर्त्तव्य-कर्म्मका अनुष्ठान होना उचित है, अपनी सेनामें सात पुरुषोंको सेनाका नायक बनाइये।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर राजा युधिष्ठिरने द्रुपद, विराट, सात्यकि, धृष्टद्युम्न, धृष्टकेतु, और मगधराज सहदेव,—युद्धको अभिलाषा करनेवाले इन सात महात्मा वीरोंको बुलाकर बिधि पूर्व्वक अपनी सेनाका नायक बनाया। जो यज्ञको अग्निसे द्रोणाचार्य्यके वधके निमित्त उत्पन्न हुए थे, उस धृष्टद्युम्नको सम्पूर्ण सेनाका सेनापति बनाया और इन सबके ऊपर अर्जुनको नियुक्त किया। बलदेवके भाई महाबाहु श्रीमान् कृष्ण अर्जुनके भो नायक तथा उनके सारथी बने। हे महाराज! नीलाम्बरधारी, कैलास पर्व्वतके शिखरके समान, मतवारे लाल नेत्रसे युक्त, सिंहके समान चलनेवाले महाबाहु श्रीमान् हलधारी बलदेव जीने इस सब प्राणियोंका नाश करने वाले उपस्थित युद्धको शीघ्र ही होता हुआ जान के देवतोंसे रक्षित इन्द्रके समान अक्रूर, उद्धव, गद, शाम्ब, प्रद्युम्न और चारुदेष्ण आदि बलसे युक्त मुख्य मुख्य यदुवंशियोंसे रक्षित होकर पाण्डवोंके समीपमें आकर उपस्थित हुए। अनन्तर राजा युधिष्ठिरने अपने हाथोंसे उनके करतलको स्पर्श किया और कृष्ण आदि सब पुरुषोंने उन्हे प्रणाम किया। शत्रुनाशन बलराम अवस्थामें बूढ़े द्रुपद और विराटको प्रणाम करके युधिष्ठिरके सहित आसनपर बैठे। अनन्तर सब राजाओंके चारों ओर बैठ जानेपर रोहिणीनन्दन बलदेवजी श्रीकृष्णके मुखकी ओर देखकर यह वचन बोले,—इस महा भयङ्कर युद्धमें प्राणियोंका नाश होगा; मैं बोध करता हूं, दैवकी ऐसी हो इच्छा है, कोई इसको किसो प्रकारसे नहीं रोक सकेगा। इस समयमें मैं यही चाहता हूं, कि तुमको सुहृद पुरुषोंके सहित इस युद्धसे उत्तीर्ण, अरोग तथा घावसे रहित देखूं। पृथ्वोके सम्पूर्ण क्षत्रिय लोग कालके वशमें होके इस युद्धमें इकट्ठे हुए हैं, इससे कुछ भी सन्देह नहीं है। मास और रुधिरसे पृथ्वी अवश्य ही पूरित होवेगी। हे भरतनन्दन युधिष्ठिर! मैंने एकान्तमें कृष्णसे बार बार कहा था, कि हे मधुसूदन! पाण्डव लोग हमारे जैसे सम्बन्धी हैं, राजा दुर्य्योधन भी वैसे ही है,इससे समान सम्बन्धियोंको समान ही सहायता देनो उचित है, दुर्य्योधनको भी सहायता दो, क्योंकि उस ही निमित्तसे वह बार बार यहांपर आरहे हैं। परन्तु तुम्हारे निमित्त कृष्णने मेरी बात नहीं ग्रहण की। अर्जुनके स्नेहसे ये तुम्हारी ही ओर सब प्रकारसे रत हैं। पाण्डवोंका जो निश्चय जय होगा,

यह मुझे खूब ही विदित है क्योंकि कृष्णकी ऐसी ही इच्छा है। मैं भी कृष्णके विना इस संसारमें नहीं रह सकता: इसी कारणसे कृष्णके अभिप्रायके अनुसार ही चलता हूं। गदायुद्धके जाननेवाले भीम और दुर्य्योधन दोनों ही मेरे शिष्य हैं, इससे दोनोंके ऊपर मेरी समान प्रीति है। इससे अब मैं सरस्वती तीर्थ करनेके निमित्त गमन करता हूं, कौरवोंको अपने सम्मुख नष्ट हुआ देखकर उपेक्षा न कर सकूंगा। महाबाहु बलराम ऐसा कहके पाण्डवोंसे विदा हुए और कृष्णको लौटा कर तीर्थ यात्राके निमित्त प्रस्थान किया।

१५६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, इसी अवसरमें साक्षात् इन्द्रके मित्र अत्यन्त यशस्वी हिरण्यरोमा भोजराज महात्मा भीष्मकके पुत्र, पृथ्वीमें रुक्मी नामसे विख्यात था, उस सत्य-सङ्कल्प करनेवाला महाबाहु रुक्मी विजय धनुषको पाकर मानो सम्पूर्ण पृथ्वीको भयभीत करता हुआ पाण्डवोंके समीपमें गमन किया। उसने गन्धमादनवासी किम्पुरुषसिंह द्रुमके शिष्य होकर उनके समीपसे चारों पादसे युक्त धनुर्वेदको सम्पूर्ण रूपसे पढा था, और तेजस्वी वरुणका गाण्डीव, इन्द्रका विजय और विष्णुका शार्ङ्ग ये तीनों धनुष ही दिव्य और अत्यन्त तेजस्वी कहके विख्यात हैं। उनमेंसे शत्रुओंका नाश करनेवाला भयङ्कर शार्ङ्ग धनुष कृष्ण धारण करते हैं, इन्द्रतनय अर्जुनने खाण्डव वनमें अग्निके समीपसे गाण्डीव-धनुष पाया था और महा तेजस्वी रुक्मीने द्रुमके निकट जाकर विजय-धनुष प्राप्त किया था। [illegible] मुर दैत्यके [illegible] सब पाशोंको काटके और [illegible] नरकासुरको असुरोंके सहित मारकर अदितिके [illegible] सोलह हजार [illegible]

अपनी भुजाओंके बलसे गर्व्वित रुक्मीने कृष्णके रुक्मिणी हरणको न सहकर यह प्रतिज्ञा की थी कि "मैं कृष्णको विना मारे शान्त न होऊंगा" ऐसी प्रतिज्ञाकर बढ़ी हुई गंगाकी भांति अपनी चतुरंगिणी महा सेनाके सहित कृष्णसे लड़नेको चढ गया था। अनन्तर वृष्णिनन्दन योगेश्वर कृष्णके समीप पहुंचकर उनसे लड़कर पराजित हुआ और लज्जित होकर कुन्तीराजके निकटमें गमन किया था। शत्रुनाशन रुक्मी जिस स्थानपर कृष्णसे लड़कर हार गये थे, वहांपर उन्होंने भोजकट नामक एक नगर बसाया था। हे महाराज! अनेक हाथी घोड़े और सेनासे युक्त वह नगर भोजकट नामसे विख्यात है। वही महा तेजस्वी भोजराज बहुतसी सेनामेंसे एक अक्षौहिणी सेना लेकर अकस्मात् पाण्डवोंके समीपमें उपस्थित हुए। अनन्तर वह कवच, बाण, तलवार और शरासनको धारण करनेवाले रुक्मीने पाण्डवोंमें विदित होकर कृष्णके प्रियकार्य्य करनेकी इच्छासे सूर्य्यके वर्णवाली ध्वजाके सहित उस महासेनामें प्रवेश किया। तब राजा युधिष्ठिरने दूरहीसे उठकर उनकी यथा उचित पूजा की। रुक्मीने पाण्डवोंसे यथा उचित पूजित और सम्मानित होकर उन लोगोंमें भी अवस्थाके अनुसार सबकी यथायोग्य पूजा करके सेनाके सहित विश्राम किया। अनन्तर [illegible] अर्जुनसे यह वचन बोले, हे पाण्डव! इस युद्धमें यदि तुम शत्रुओंसे डरते हो तो मैं तुम्हारा सहायक होऊंगा। इस संसारमें ऐसा पराक्रमी कोई भी पुरुष नहीं है, जो मेरे समान हो सके। हे पाण्डव! [illegible] प्रदान करके [illegible] मारूंगा। द्रोण, कृपाचार्य, भीष्म, कर्ण [illegible]

को मारकर यह सम्पूर्ण पृथ्वी तुम्हें प्रदान करूंगा। बुद्धिमान् अर्जुन धर्मराज युधिष्ठिर, कृष्ण तथा दूसरे राजाओंके बीचमें रुक्मीके यह वचन सुन कृष्ण और युधिष्ठिरके मुखकी ओर देख कर हंसते हुए धीरभावसे उससे यह वचन बोले,—"हे वीर! मैं कौरवकुलमें उत्पन्न विशेष करके राजा पाण्डुका पुत्र होके और कृष्णकी सहायता पाकर तथा गाण्डीव धनुषको धारण करके "डर गया हूं" ऐसी बात किस प्रकारसे कह सकता हूं? घोषयात्राके समयमें जब महाबली गन्धर्वोंके सङ्ग मैंने युद्ध किया था, तब किसने मेरी सहायता की थी? खाण्डव वनमें देवता और दानवोंसे जब मैंने घोर युद्ध किया था, उस समय किसने मेरी सहायता की थी? जब निवातकवच और कालकेय दानवोंके सङ्ग मैंने युद्ध किया था, तब कौन मेरा सहाय हुआ था? और भी जिस समय विराट नगरमें मैंने अनेक कौरवोंसे युद्ध किया था, उस समय-होमें किसने मेरी सहायता की थी? युद्धके निमित्त रुद्र, कुवेर, यम, वरुण, अग्नि, कृपाचार्य्य, द्रोणाचार्य्य और कृष्णकी आराधना करके दिव्य तेजसे युक्त दृढ़ गाण्डीव धनुषको धारण करके तथा अक्षय तूणीर और दिव्य-शस्त्रोंसे युक्त होकर भी "डर गया हूं" यह यशको लोप करनेवाला वचन साक्षात् इन्द्रसे भी मेरे समान पुरुष कैसे कह सकता है? हे पुरुषसिंह! न मुझे कुछ डर है, और न मुझे सहायताकी अवश्यकता है, हे महाबाहो! इससे यदि तुम्हारी इच्छा हो तो यहासे दूसरे स्थान पर गमन करो अथवा इस ही स्थान पर निवास करो।

हे भरतर्षभ! अनन्तर रुक्मी उस समुद्रके समान अपनी सेनाको लौटाकर राजा दुर्योधनके समीप भी उसी प्रकारसे गये, उनसे भी वैसे ही वचन बोले, और उस शूरमानी दुर्योधनने भी उनसे कहा, कि मुझको सहायतकी कुछ भी आवश्यकता नहीं है। इससे वृष्णिकुलमें उत्पन्न हुए रोहिणी-पुत्र बलराम और राजा रुक्मी;—ये दो पुरुष इस युद्धसे पृथक् हुए थे। बलरामको तीर्थ-यात्राके निमित्त गमन करने और रुक्मीके लौट जाने पर पाण्डव लोग फिर विचार करनेके निमित्त इकट्ठे हुए। हे महाराज! राजाओंसे भरी हुई वह सभा तारोंसे चित्रित आकाश मण्डल की भांति शोभित होने लगी।

१५७ अध्याय समाप्त।

राजा जनमेजय बोले, हे द्विजसत्तम! कुरुक्षेत्रमें इस प्रकारसे सम्पूर्ण सेनाके व्यूह-बद्ध होने पर काल प्रेरित कौरवोंने क्या किया?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे राजन्! सब सेनाके इस प्रकारसे व्यूह बद्ध होके खड़ी होने पर राजा धृतराष्ट्रने सञ्जयसे यह वचन कहा; हे सञ्जय! कुरु पाण्डवोंको सेनाके कुरुक्षेत्रमें इकटठी होने पर वहा जो कुछ वृत्तान्त हुआ, वह सम्पूर्ण तुम मुझसे वर्णन करो। मैं पुरुषार्थको व्यर्थ जान कर दैवको ही श्रेष्ठ समझता हूं, क्योंकि विनाशका परिणाम और युद्धके दोषको भली भांतिसे जान कर भी नीचबुद्धि दुष्ट पुत्रोंको नियममें नहीं स्थिर कर सकता हूं। हे सूत! मेरी बुद्धिसे दोषोंका भी बोध हो रहा है परन्तु दुर्य्योधनके मिलनेपर फिर मेरी बुद्धि पलट जाती है। हे सञ्जय!- इससे ऐसी अवस्थामें जो होना है, वही होगा; युद्धमें शोक करना भी क्षत्रियोंका प्रशसनीय धर्म्म नहीं है।

सञ्जय बोले, हे महाराज! तुम जो इच्छा करते हो वह तुम्हार योग्य ही प्रश्न है, यह ठीक है, परन्तु इस दोषको दुर्य्योधनके ऊपर आरोपित करना तुमको उचित नहीं है। हे राजन्! मैं जो वचन कहता हूं, उनको सुनो, जो मनुष्य अपने किये हुए बुरे कर्म्मका अशुभ-फल पाता है,

उसे काल तथा ईश्वरके ऊपर दोष लगाना उचित नहीं है। हे महाराज! मनुष्योंमें जो पुरुष निन्दनीय कर्म्मका अनुष्ठानकरते हैं, वह बुरे कर्म्मके आचरण करनेसे सब लोगोंसे ही वध करनेके योग्य होजाते हैं। हे राजेन्द्र! पाण्डवोंने जुएमें हारकर केवल तुम्हारे शासन और प्रतिज्ञाहीसे दुष्ट मित्रोंके सहित सब प्रकारसे अपमान और तिरस्कार सहन किया था। युद्धमें घोड़े, हाथी और महातेजस्वी राजाओंके नाश होनेका जो सूत्रपात हुआ, उसे तुम पूर्ण रीतिसे सुनो। हे महाबुद्धिमन्! प्राणियोंके नाश करनेवाले इस महायुद्धके वृत्तान्तको सुनकर ऐसा निश्चय कीजिये, कि पुरुष कभी शुभ तथा अशुभ कर्म्मोंका स्वयं कर्त्ता नहीं हो सकता कठपुतलीकी भांति दूसरेके वशमें होकर कर्म्म करता है। शुभ और अशुभ कर्म्मके विषयमें तीन प्रकारके मतभेद हैं। कोई कोई कहते हैं, कि मनुष्य ईश्वरके वशमें होकर सब कर्म्म करता है, कोई कहते हैं, पुरुष अपनी इच्छाके अनुसार कर्म्म करता है और कोई कोई कहते हैं, कि वर्त्तमान कर्म्मोंके अनुष्ठानके विषयमें पूर्व्व जन्मके कर्म्म ही उन कर्म्मोंके कारण होते हैं।

१५८ अध्याय समाप्त।

अब उलूक दूत-गमन पर्व्व लिख्यते।

सञ्जय बोले, हे राजन्! महात्मा पाण्डवोंके हिरण्वती नदीके किनारे शिविर स्थापित करने पर कौरवोंने भी उचित स्थानमें अपनी सेनाको एकत्रित किया। प्रतापी राजा दुर्य्योधनने वहां पर अपने शिविरको स्थापित करके सब राजाओंको सम्मानित किया और रक्षक सेना खड़ी करके योद्धाओंकी रक्षा करनेयोग्य वस्तुओंकी रक्षाका विधान कर दिया। अनन्तर कर्ण, दुःशासन और शकुनिको बुलाकर विचार करने लगे। हे भारत! दुर्य्योधनने कर्णके संग बातचीत करके अन्तमें कर्ण, दुःशासन और शकुनिकी सम्मतिसे एकान्त स्थानमें उलूकको बुलाकर यह वचन कहा "हे कितव-नन्दन उलूक! तुम सोमकवंशियोंसे युक्त पाण्डवोंके समीपमें जाओ और वहां पर पहुंच कर कृष्णके सम्मुख अर्ज्जुनसे मेरे इस वचनको कहना, कि कई वर्षोंसे जो विचार हो रहा था, वह महाभयङ्कर कुरु-पाण्डवोंका युद्ध इस समयमें उपस्थित हुआ है। हे अर्ज्जुन! तुमने कृष्णके संग मिलकर भाइयोंके सहित गर्ज्जन करते हुए जो अपनी अत्यन्त बड़ाई की थी, जिसको सञ्जयने आकर कौरवोंमें प्रकाशित किया था, उसका समय यही उपस्थित हुआ है; इससे तुम लोगोंने जिस प्रकारसे प्रतिज्ञा की थी, इस अवसरमें उसका प्रतिपालन करो। हे उलूक! भाइयों तथा सम्पूर्ण सोमक और केकयवंशियोंमें बैठे हुए राजा युधिष्ठिरसे भी यह वचन कहना, "प्रसिद्ध धर्म्मात्मा होकर तुम क्यों अधर्म्ममें चित्त लगाते हो? धूर्त्त और दुष्ट पुरुषकी भांति क्यों जगत्का नाश करनेका विचार करते हो? मैं समझता हूं, कि तुम सब प्राणियोंके अभय-दाता ही होगे। हे भरत-र्षभ! सुना जाता है, कि पहिले समयमें देवता लोगोंने जब दानवोंसे राज्यको हरण किया था, उस समयमें प्रह्लादने यह एक श्लोक पढ़ा था, "हे देवगण! जिसके धर्म्मके चिह्न ऊंची ध्वजाकी भांति सदा प्रकाशित रहते हैं; परन्तु पापकर्म्म सब गुप्त रीतिसे उसके भीतर [illegible] निवास करते हैं; उसके उस व्रतको बिड़ालव्रत कहते हैं।" हे प्रजानाथ! इस विषयमें नारद मुनिने मेरे पिताके समीप जो उत्तम उपाख्यान वर्णन किया था, इस समय मैं तुम्हारे समीपमें उस विषयको कहता हूं। चित्त लगाकर सुनो। "हे राजन्! किसी समयमें एक पुरुष बिड़ाल [illegible] गङ्गाके तीरपर ऊर्द्धबाहु होकर निवास करता

था, वह सब जीवजन्तुओंमें विश्वास उत्पन्न करनेके निमित्त सबसे यही वचन कहा करता था, कि "मैं धर्म्मका आचरण कर रहा हूं" हे राजन्। इसी प्रकारसे कुछ दिनोंके अनन्तर सब पक्षी उसका विश्वास करने लगे और सबोंने मिलकर उसकी बहुत ही प्रशंसा करनी आरम्भ की पक्षियोंकी भोजन करनेवाले धूर्त विड़ालने पक्षियोंमें पूजित होके यह सोचा, कि कि इतने दिनके अनन्तर अब मेरी तपस्याका फल उदय हुआ है, अब मेरा कार्य्य सफल हुआ। हे भारत! अनन्तर कुछ दिनोंमें चूहे भी वहांपर उपस्थित हुए और उस व्रत करनेवाले धार्म्मिक दम्भसे युक्त धूर्त्त विड़ालको महाव्रतमें रत देखा। हे राजन्! ऐसा निश्चय होनेपर उन चूहोंकी ऐसी बुद्धि हुई, कि हम लोगोंके बहुतसे शत्रु हैं, इससे ये हम लोगोंके मामा बनकर हमारी सदा रक्षा किया करें। ऐसा विचार कर वे सब चूहे विड़ालके समीप जाकर यह वचन बोले, कि तुम्हारे आसरेमें हम लोग सुखपूर्व्वक सब स्थानोंमें भ्रमण करनेकी इच्छा करते हैं,तुम ही हम लोगोंकी परम गति और तुम ही हमारे परम-बन्धु हो, इसी कारणसे हम सब लोग मिलकर तुम्हारे शरणागत हुए हैं, तुम धर्म्मात्मा हो और सदा धर्म्महीके कार्य्यमें लगे रहते हो, इससे हे महाबुद्धिमन्! जैसे इन्द्र देवताओंकी रक्षा करते हैं वैसे ही तुम भी हम लोगोंकी रक्षा करो। हे राजन्। वह चूहोंका भक्षण करनेवाला विड़ाल उन सबके वचनोंको सुनकर बोला, कि तपस्या और रक्षा ये दोनों कार्य्य एक ही समयमें नहीं हो सकते। परन्तु हित साधन करनेके निमित्त तुम्हारे इस वचनकी रक्षा मुझको अवश्य ही करनी पड़ेगी, और मेरी बात भी तुम लोगोंको नित्य ही प्रतिपालन करनी उचित है, मैं इस दृढ़ व्रतमें स्थित होके तपस्यासे क्षीण होगया हूं, विशेष रूपसे विचारने पर भी मुझमें चलनेकी कुछ भी शक्ति नहीं दीख पड़ती, संप्रति दिनके समय तुम लोग मुझे नदी-किनारे पर ले चलना। हे भरतर्षभ! चूहोंने कहा, "ऐसा ही होगा" ऐसी प्रतिज्ञा करके सब चूहोंने उस विड़ालके समीपमें बूढ़े और बच्चोंको समर्पण किया। अनन्तर वह पापबुद्धि दुष्टात्मा विड़ाल चूहोंको धीरे धीरे भक्षण करके मोटे शरीर,उत्तम वर्ण और खूब ही पुष्ट होने लगा। इसी प्रकार से सब चूहोंका नाश होने लगा और वह विड़ाल तेजस्वी और बलवान् होता जाता था। अनन्तर एक दिन सब चूहे इकट्ठे होकर आपसमें यह वचन कहने लगे, कि मामा नित्य ही मोटे ताजे और बलवान् हुए जाते हैं, और हम लोगोंके कुलका अत्यन्त ही नाश हो रहा है। हे राजन्! अनन्तर डिण्डिक नामके किसी बुद्धिमान् चूहेने उन सबोंसे यह वचन कहा, कि तुम लोग विशेष रूपसे इकट्ठे होकर नदीके तीरपर जाना और मैं मामाके सङ्ग ही तुम लोगोंके पीछे पीछे चलूंगा। तब सब चूहे धन्य धन्य कहके उसकी प्रशंसा करने लगे। और डिण्डिकके इस अर्थयुक्त वचनको न्यायके अनुसार रक्षा करने लगे। अनन्तर विड़ालने यह सब बात न जानकर डिण्डिकको भक्षण किया, तब सब चूहे इकट्ठे होके एकान्त स्थानमें विचार करने लगे। हे राजन्! कोकिल नामका एक बूढ़ा चूहा सब चूहोंके बीचमें यह यथार्थ वचन कहने लगा, कि मामा धर्म्मात्मा नहीं है, हम लोगोंके शत्रु होकर भी केवल छल करनेके निमित्त मित्र भावका अवलम्बन किये हुये हैं. जो पुरुष फल मूल भोजन करता है, उसकी विष्ठा कभी रोंवोंसे युक्त नहीं होती, इसका शरीर नित्य ही बढ़ रहा है, और चूहोंके कुलका धीरे धीरे नाश हुआ चला जा रहा है, विशेष करके आज सात आठ दिन हुआ डिण्डिकका दर्शन नहीं मिलता है। कोकिलका वचन सुनकर सब चूहे इधर उधर

भाग गए और वह दुष्टात्मा धूर्त्त विड़ाल भी वहांसे चला गया। अरे दुष्टात्मा! इससे तुमने भी उस ही विड़ाल व्रतका अवलम्बन किया है; चूहोंके बीचमें विड़ालने जैसा आचरण किया था, तू भी जातियोंके बीच वैसा ही आचरण कर रहा है. तुम्हारे वचन और भांति सुन पड़ते हैं, और कर्म्म दूसरी प्रकारके दीख पड़ते हैं; तुम्हारे वेद-विहित कर्म्म और धर्म्म-का दम्भ लोक दिखानेके निमित्त है। हे राजन्! तुम धर्म्मात्मा कहके विख्यात हो; इससे अब तुम इस कपट-व्यवहारको त्यागकर क्षत्रिय धर्म्मके अनुसार सब कार्य्य करो। हे भरतसत्तम! अपने बाहुबलसे पृथ्वीका राज्य ग्रहण करके ब्राह्मण और पितरोंको यथा उचित दान करो। तुम्हारी माता कई वर्षसे क्लेश तथा दुःख सह रही है, इससे उसके हित-साधनके निमित्त यत्न करके युद्धमें शत्रुओंको जीत करके उसके आंसुओंको बन्द करो। तुमने युक्तिसे पांच गांव मांगे थे, परन्तु हम लोग "पाण्डवोंको किस प्रकारसे क्रोधित करेंगे, कैसे उनसे रणभूमिमें युद्ध करेंगे," यही विचार-कर नहीं प्रदान किया। तुम्हारे निमित्त दुष्ट अभिप्राय, विदुरका त्याग, और जतुगृहमें तुम लोगोंको जलाना आदि विषयोंको स्मरण करके अब इस समयमें तुम पुरुषार्थ अवलम्बन करो। हे भारत! तुमने कौरवोंकी सभामें आनेके समय कृष्णसे कहा था, कि हे राजन्! मैं शान्ति और युद्ध दोनोंके निमित्त तैयार हूं" ऐसी बात कहला भेजा था. वही युद्धका समय अब उपस्थित हुआ है। हे युधिष्ठिर! इसही निमित्त मैंने सब सामान ठीक कर रक्खा है। क्षत्रिय पुरुष युद्धके अतिरिक्त और किस विषयको उत्तम समझेंगे? हे भरतर्षभ! तुम [illegible]

और तेजको धारण करके तुमने वसुदेव पुत्र कृष्णका आसरा क्यों ग्रहण किया है?

हे उलूक! तुम पाण्डवोंके समीपमें कृष्णसे भी यह वचन कहना, कि तुम अपनी और पाण्डवोंकी रक्षामें यत्नवान् होकर हम लोगोंके सङ्ग युद्ध करो। पहिले तुमने सभासे मायासे जो रूप धारण किया था, अब फिर उस रूपको प्रकट करके अर्जुनके सहित मेरे सम्मुखमें आकर युद्ध करो। इन्द्रजाल, माया और बाजीगरी सब देखनेमें भयङ्कर होती है, यह ठीक है. परन्तु रणभूमिमें शस्त्रधारी पुरुषके सम्मुख भयङ्कर होनी तो दूर रहे, वह उलटे क्रोधको उत्पन्न करती है। मैं भी निज शरीरसे अनेक रूप प्रकट करके स्वर्ग और आकाशमें गमन करने-का उत्साह कर सकता हूं और पाताल तथा इन्द्र लोकमें भी जानेमें समर्थ हो सकता हूं। परन्तु माया और भय दिखाना तथा वशीकरण आदि सब मायाके कार्य्योंसे जो सिद्धि होवेगी, वह पुरुषार्थको प्रकाशित करनेवाले पुरुषोंके सम्मुख नहीं चलती। क्योंकि विधाता ही अपनी इच्छाके अनुसार सब प्राणियोंको अपने वशमें कर सकता है, दूसरा नहीं कर सकता। हे कृष्ण! तुम जो कहा करते हो, कि मैं युद्धमें धृतराष्ट्रपुत्रोंको मारकर यह सम्पूर्ण पृथ्वीका राज्य पाण्डवोंको समर्पण करूंगा और सञ्जयने मेरे समीप तुम्हारे इस वचनको कहा था, कि "मेरे सहित इस अर्जुनसे तुम्हारी शत्रुता हुई है" अब पाण्डवोंके निमित्त उस वचनको पालन करके सत्य-प्रतिज्ञ बनो और रणभूमिमें यत्नपूर्वक युद्ध करो। हम लोग देखें, तुम [illegible] पुरुष बनो! [illegible]

इस समय सबको विदित होजावेगी। हे कंसके दास! मेरे समान किसी राजाने कभी तुमसे युद्ध नहीं किया है।

हे उलूक! उस सींगसे रहित, बैलके समान बहुत भोजन करनेवाले, विद्याशून्य, और मूर्ख भीमसेनसे भी बार बार मेरे इस बचनको कहना, कि हे पार्थ! पहिले विराटनगरमें जो वल्लव नामक प्रसिद्ध रसोई बनानेवाले सूपकार हुए थे, वह सब मेरा ही पराक्रम था। सभाके बीचमें तुमने जो प्रतिज्ञा की थी, वह जिसमें मिथ्या न होजावे; यदि शक्ति हो, तो दुःशासनका रुधिर पान करो। हे कौन्तेय! तुम जो कहा करते हो, कि युद्धमें मै धृतराष्ट्रके पुत्रोंको शीघ्र ही मारूंगा, उसका समय अब उपस्थित हुआ है। हे भारत! तुम खाने पीने और भोजन करनेहीमें पुरुष हो, भोजनको बात अलग है और भोजनसे युद्धका बहुत अन्तर है। आओ पुरुष होकर युद्ध करो। हे भारत! तुम प्राणरहित होकर निश्चय ही पृथ्वीमें शयन करोगे। हे भीम! तुमने सभामें बहुत ही अपनी बड़ाई को थी, वह अत्यन्त ही तुच्छ है।

हे उलूक! तुम नकुलसे भी मेरा यह वचन कहना, "हे भारत! युधिष्ठिरकेऊपर अनुराग मुझसे द्वेष और द्रौपदीका क्लेश स्मरण करके इस समय युद्ध करो। राजाओंके बीचमें सहदेवसे भी मेरा यह वचन कहना, कि हे पाण्डव! अब इस समय सब क्लेशोंको स्मरणकर यत्नवान् होके युद्ध करो।

हे उलूक! विराट और द्रुपदको भी मेरी ओरसे यह वचन कहना, कि जबसे प्रजाकी सृष्टि हुई है, तबसे महागुणवान् सेवकोंने स्वामीको कभी विशेष रूपसे नहीं देखा है और राजाने भी कभी सेवकोंको नही जाना है, यह राजा अपनी बड़ाई नही करता, ऐसा समझकर तुम लोग मेरे वध करनेके निमित्त आये हो, इस समय सब कोई मिलकर पाण्डव और अपने हितके निमित्त मेरे सङ्गमें युद्ध करो।

पाञ्चालनन्दन धृष्टद्युम्नको भी मेरी ओरसे यह वचन कहना, यही अब तुम्हारा समय आगया है और तुम भी युद्धमें प्रवृत्त होजाओ, युद्धमें द्रोणाचार्य्यके सम्मुख होकर अपने उत्तम हितको सिद्ध करनेके निमित्त यत्न करो। आओ दुष्ट मित्रोंके सङ्ग मिलकर युद्ध करके अपने निमित्त कठिन-कर्म्म करो।

हे उलूक! अनन्तर शिखण्डीको मेरी ओरसे यह कहना, कि सम्पूर्ण शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ महाबाहु कुरुनन्दन गङ्गापुत्र भीष्म तुम्हें स्त्री समझके तुम्हारा वध नहीं करेंगे। इससे आओ अब तुम निर्भय होके युद्ध करो। रणभूमिमें यत्नपूर्वक युद्धके कर्म्मको करो और हम लोग तुम्हारे पराक्रमको देखें।

ऐसा कहकर राजा दुर्य्योधन हंसते हुए फिर उलूकसे बोले, कि तुम कृष्णके सम्मुख अर्ज्जुनसे फिर हमारे इस वचनको कहना, "हे वीर! या तो तुम हम लोगोंको मारकर इस पृथ्वीको शासन करोगे, अथवा हम लोगोंके हाथसे मरकर पृथ्वीमें शयन करोगे। हे पाण्डव! राज्यसे निकाले जाने पर वनवासका दुःख और द्रौपदीका क्लेश स्मरण करके इस समयमें तुम अपने पराक्रमको प्रकाशित करो। क्षत्रियोंकी माता जिस कार्य्यके वास्ते पुत्रको उत्पन्न करती है, उसका समय अब उपस्थित हुआ है। इससे युद्धमें बल, वीर्य्य, पराक्रम और अत्यन्त शीघ्रतासे अस्त्र चलाकर अपने पराक्रमको प्रकाशित करो। ऐश्वर्य्यसे भ्रष्ट, बहुत दिन तक वनवासमें अत्यन्त ही क्लेश पाकर किसका हृदय दुःखित न होगा? कौन पुरुष मेरे कुलमें उत्पन्न हुए शूरवीर पराये धनको लेनेवाले किसी पुरुषको सम्पूर्ण पृथ्वीके राज्यको आक्रमण करके उसे क्रोधित न करेगा?

तुमने जो अपनी बहुत बड़ाई की थी, इस समयमें कर्म्मसे उसको पूरा करो। बिना कर्म्म किये मिथ्या अपनी बड़ाई करनेपर पण्डित लोग उसे अधम-पुरुष कहते हैं। शत्रुओंके वशमेंसे छुटकारा पाना और राज्यका फिरसे उद्धार करना; इन दोनों विषयोंके निमित्त युद्ध करनेवाले पुरुषका प्रयोजन होता है, इससे बल और पराक्रमको प्रकाशित करके उसे पूर्ण करो। तुम भी जुएमें हारे थे और द्रौपदी भी सभामें बुलाई गई थी; इससे बलवान् पुरुषको अवश्य ही क्रोध उत्पन्न हो सकता है। हे पाण्डव! तुमने राज्यसे भ्रष्ट होकर बारह-वर्ष वनमें और एक वर्षतक विराटनगरमें दासवृत्तिको अवलम्बन करके वास किया था, इससे राज्यसे भ्रष्ट होना, वनवास और द्रौपदीके दुःखको स्मरण करके पुरुष बनो। और भी शत्रुओंके तुल्य कठोर वचनोंको बार बार कहनेवाले दुःशासन आदि पुरुषोंके वचनको स्मरण करके भी तुमको क्रोध करना उचित है। हे पार्थ! युद्धमें तुम्हारा क्रोध बल, वीर्य्य ज्ञान और शीघ्र शस्त्रका चलाना प्रकाशित होवे, तुम युद्ध करो, पुरुष बनो। तुम्हारे शस्त्रोंका संस्कार आदि भी हुआ है, और कुरुक्षेत्रकी भूमि भी बिना कीचड़के समतल और सुन्दर है, घोड़े पुष्ट हैं और सेनाके पुरुषोंको भी वेतन मिला हुआ है, इससे अब केशवके सङ्ग मिलकर कलही युद्ध करनेके निमित्त प्रवृत्त होजाओ। हे कौन्तेय! तुम युद्धमें भीष्मके सम्मुख बिना संग्राम किये ही क्यों अपनी बड़ाई क्यों करते हो? जैसे कोई मनुष्य गन्धमादन पर्व्वतपर चढ़नेकी इच्छा करता है, तुम भी वैसा ही व्यर्थ गर्व कर रहे हो। इससे अपने मनसे अपनी बड़ाई त्यागकर [illegible] इस समयमें [illegible] करो। [illegible]

किये ही तुम क्यों राज्य ग्रहण करनेकी इच्छा करते हो? हे पार्थ! तुम जो वेदमन्त्र और धनुर्वेद दोनों विद्याओंके आचार्य्य वो शिरोमणि महा पराक्रमी अत्यन्त तेजस्वी सेनापति द्रोणाचार्य्यको जीतनेकी अभिलाषा करते हो, वह तुम्हारा उद्योग अत्यन्त ही व्यर्थ है, क्योंकि वायुसे सुमेरु पर्व्वत उड़ जावे; ऐसा कभी नहीं सुना गया है। यदि वायु कभी सुमेरु पर्व्वतको भी उड़ा सके, स्वर्ग पृथ्वीसे मिल जावे अथवा कालचक्रका परिवर्तन होजाय-तब ही तुम मुझको जो कहो वह सम्भव हो सकता है, क्योंकि भीष्म और द्रोणाचार्य्यके शस्त्रकी चोटसे कौन मनुष्य जीते बचनेकी अभिलाषा करेगा? अर्ज्जुन ही होवे, अथवा दूसरा ही कोई क्यों न होवे, कौन पुरुष युद्धमें इनके सम्मुखसे कुशलपूर्व्वक लौटकर अपने घरको जा सकेगा? युद्धमें ये लोग जिसको मारनेकी इच्छा अर्थात् अपने महा भयङ्कर अस्त्रोंसे उसके शरीरपर प्रहार करते हैं, पांवसे पृथ्वीपर गमन करनेवाला ऐसा कौन मरण धर्म्मशील मनुष्य जीवित रह सकता है? हे मन्दबुद्धि! तू कुएमें रहनेवाले मेढककी भांति मूढ़ होकर देवताओंसे रक्षित स्वर्गपुरीकी साक्षात् देवताओंकी राजाओंसे रक्षित प्राच्य सेनाके समान बलवान् इकट्ठी हुई प्रतीच्य दाक्षिणात्य, पौदीच्य, काम्बोजक, शक, खश, शाल्व, मत्स्य, म्लेच्छ, द्राविड़, अन्ध्र, और काञ्चि देशीय आदि इन सबकी [illegible] सेनाका [illegible] करनेमें क्यों नहीं समर्थ होता है? [illegible] [illegible]

इस समय सबको विदित होजावेगी। हे कंसके दास। मेरे समान किसी राजाने कभी तुमसे युद्ध नहीं किया है।

हे उलूक! उस सींगसे रहित, बैलके समान बहुत भोजन करनेवाले, विद्याशून्य, और मूर्ख भीमसेनसे भी बार बार मेरे इस बचनको कहना, कि हे पार्थ! पहिले विराटनगरमें जो वल्लव नामक प्रसिद्ध रसोई बनानेवाले सूपकार हुए थे, वह सब मेरा ही पराक्रम था। सभाके बीचमें तुमने जो प्रतिज्ञा की थी, वह जिसमें मिथ्या न होजावे, यदि शक्ति हो, तो दुःशासनका रुधिर पान करो। हे कौन्तेय! तुम जो कहा करते हो, कि युद्धमें मैं धृतराष्ट्रके पुत्रोंको शीघ्र ही मारूंगा; उसका समय अब उपस्थित हुआ है। हे भारत! तुम खाने पीने और भोजन करनेहीमें पुरुष हो, भोजनकी बात अलग है और भोजनसे युद्धका बहुत अन्तर है। आओ पुरुष होकर युद्ध करो। हे भारत! तुम प्राणरहित होकर निश्चय ही पृथ्वीमें शयन करोगे। हे भीम! तुमने सभामें बहुत ही अपनी बड़ाई की थी, वह अत्यन्त ही तुच्छ है।

हे उलूक! तुम नकुलसे भी मेरा यह वचन कहना, "हे भारत! युधिष्ठिरकेऊपर अनुराग मुझसे द्वेष और द्रौपदीका क्लेश स्मरण करके इस समय युद्ध करो। राजाओंके बीचमें सहदेवसे भी मेरा यह वचन कहना, कि हे पाण्डव! अब इस समय सब क्लेशोंको स्मरणकर यत्नवान् होके युद्ध करो।

हे उलूक! विराट और द्रुपदको भी मेरी ओरसे यह वचन कहना, कि जबसे प्रजाकी सृष्टि हुई है, तबसे महागुणवान् सेवकोंने स्वामीको कभी विशेष रूपसे नहीं देखा है और राजाने भी कभी सेवकोंको नहीं जाना है, यह राजा अपनी बड़ाई नहीं करता, ऐसा समझकर तुम लोग मेरे बध करनेके निमित्त आये हो, इस समय सब कोई मिलकर पाण्डव और अपने हितके निमित्त मेरे सङ्गमें युद्ध करो।

पाञ्चालनन्दन धृष्टद्युम्नको भी मेरी ओरसे यह वचन कहना, यही अब तुम्हारा समय आगया है और तुम भी युद्धमें प्रवृत्त होजाओ, युद्धमें द्रोणाचार्य्यके सम्मुख होकर अपने उत्तम हितको सिद्ध करनेके निमित्त यत्न करो। आओ दुष्ट मित्रोंके संङ्ग मिलकर युद्ध करके अपने निमित्त कठिन-कर्म्म करो।

हे उलूक! अनन्तर शिखण्डीको मेरी ओरसे यह कहना, कि सम्पूर्ण शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ महाबाहु कुरुनन्दन गङ्गापुत्र भीष्म तुम्हें स्त्री समझके तुम्हारा वध नहीं करेंगे। इससे आओ अब तुम निर्भय होके युद्ध करो। रणभूमिमें यत्नपूर्व्वक युद्धके कर्म्मको करो और हम लोग तुम्हारे पराक्रमको देखें।

ऐसा कहकर राजा दुर्य्योधन हंसते हुए फिर उलूकसे बोले, कि तुम कृष्णके सम्मुख अर्ज्जुनसे फिर हमारे इस वचनको कहना, "हे वीर! या तो तुम हम लोगोंको मारकर इस पृथ्वीको शासन करोगे, अथवा हम लोगोंके हाथसे मरकर पृथ्वीमें शयन करोगे। हे पाण्डव! राज्यसे निकाले जाने पर वनवासका दुःख और द्रौपदीका क्लेश स्मरण करके इस समयमें तुम अपने पराक्रमको प्रकाशित करो। क्षत्रियोंकी माता जिस कार्य्यके वास्ते पुत्रको उत्पन्न करती है, उसका समय अब उपस्थित हुआ है। इससे युद्धमें बल, वीर्य्य, पराक्रम और अत्यन्त शीघ्रतासे अस्त्र चलाकर अपने पराक्रमको प्रकाशित करो। ऐश्वर्य्यसे भ्रष्ट बहुत दिन तक बनवासमें अत्यन्त ही क्लेश पाकर किसका हृदय दुःखित न होगा? कौन पुरुष मेरे कुलमें उत्पन्न हुए शूरवीर पराये धनको लेनेवाले किसी पुरुषको सम्पूर्ण पृथ्वीके राज्यको आक्रमण करके उसे क्रोधित न करेगा

तुमने जो अपनी बहुत बड़ाई की थी, इस समयमें कर्म्मसे उसको पूरा करो। बिना कर्म्म किये मिथ्या अपनी बड़ाई करनेपर पण्डित लोग उसे अधम-पुरुष कहते हैं। शत्रुओंके वशमेंसे छुटकारा पाना और राज्यका फिरसे उद्धार करना; इन दोनों विषयोंके निमित्त युद्ध करनेवाले पुरुषका प्रयोजन होता है, इससे बल और पराक्रमको प्रकाशित करके उसे पूर्ण करो। तुम भी जूएमें हारे थे और द्रौपदी भी सभामें बुलाई गई थी; इससे बलवान् पुरुषको अवश्य ही क्रोध उत्पन्न हो सकता है। हे पाण्डव। तुमने राज्यसे भ्रष्ट होकर बारह-वर्ष वनमें और एक वर्षतक विराटनगरमें दासवृत्तिको अवलम्बन करके वास किया था. इससे राज्यसे भ्रष्ट होना, वनवास और द्रौपदीके दुःखको स्मरण करके पुरुष बनो। और भी शत्रुओंके तुल्य कठोर वचनोंको बार बार कहनेवाले दुःशासन आदि पुरुषोंके वचनको स्मरण करके भी तुमको क्रोध करना उचित है। हे पार्थ। युद्धमें तुम्हारा क्रोध बल, वीर्य्य ज्ञान और शीघ्र शस्त्रका चलाना प्रकाशित होवे, तुम युद्ध करो, पुरुष बनो। तुम्हारे शस्त्रोंका संस्कार आदि भी हुआ है, और कुरुक्षेत्रकी भूमि भी बिना कीचड़के स्वच्छ और सुन्दर है, घोड़े पुष्ट हैं और सेनाके पुरुषोंको भी वेतन मिला हुआ है, इससे अब कृष्णके सङ्ग मिलकर कलही युद्ध करनेके निमित्त प्रवृत्त होजाओ। हे कौन्तेय! तुम युद्धमें भीष्मके सम्मुख बिना संग्राम किये ही व्यर्थ अपनी बड़ाई क्यों करते हो? जैसे कोई मनुष्य गन्धमादन पर्व्वतपर चढ़नेकी इच्छा करता है, तुम भी वैसा ही व्यर्थ गर्व्व कर रहे हो। इससे अपने मुखसे अपनी बड़ाई त्यागकर अब इस समयमें पुरुष बनो। संग्राममें वीरधरीण सूतपुत्र कर्ण, बलवानोंमें श्रेष्ठ शल्य, इन्द्रके समान द्रोणाचार्य्यको बिना पराजित किये ही तुम क्यों राज्य ग्रहण करनेकी इच्छा करते हो? हे पार्थ। तुम जो वेदमन्त्र और धनुर्वेद दोनों विद्याओंके आचार्य्य वो शिरोमणि महा पराक्रमी अत्यन्त तेजस्वी सेनापति द्रोणाचार्य्यको जीतनेकी अभिलाषा करते हो, वह तुम्हारा उद्योग अत्यन्त ही व्यर्थ है; क्योंकि वायुसे सुमेरु पर्व्वत उड़ जावे: ऐसा कभी नहीं सुना गया है। यदि वायु कभी सुमेरु पर्व्वतको भी उड़ा सके, स्वर्ग पृथ्वीसे मिल जावे अथवा कालचक्रका परिवर्त्तन होजाय-तब हो तुम मुझको जो कहो वह सम्भव हो सकता है; क्योंकि भीष्म और द्रोणाचार्य्यके शस्त्रको चोटमें कौन मनुष्य जीते बचनेकी अभिलाषा करेगा? अर्ज्जुन ही होवे अथवा दूसरा ही कोई क्यों न होवे, कौन पुरुष युद्धमें इनके सम्मुखसे कुशलपूर्व्वक लौटकर अपने घरको जा सकेगा? युद्धमें ये लोग जिसको मारनेकी इच्छा अर्थात् अपने महा भयङ्कर अस्त्रोंसे उसके शरीरपर प्रहार करते हैं, पांवसे पृथ्वीपर गमन करनेवाला ऐसा कौन मरण धर्म्मशील मनुष्य जीवित रह सकता है? हे मन्दबुद्धि! तू कूएमें रहनेवाले मेढककी भांति मूढ होकर देवताओंसे रक्षित स्वर्गपुरीकी साक्षात् देवताओंकी राजाओंसे रक्षित प्राच्य सेनाके समान बलवान् इकट्ठी हुई प्रतीच्य, दाक्षिणात्य, औदीच्य, काम्बोजक शक, खश शाल्व, मत्स्य, म्लेच्छ, द्राविड़, अन्ध्र, और काञ्चि देशीय आदि इस सम्पूर्ण राज सेनाका बोध करनेमें क्यों नहीं समर्थ होता है? अरे अल्पबुद्धि मूढ! तू इस अपार गङ्गाके वेगके समान पूर्ण रूपसे बढ़े हुए नाना भांतिके अनेक वीर योद्धाओंके सहित और नावलके समान बीचमें स्थित मेरे सङ्ग युद्ध करनेको किस प्रकारसे अभिलाषा करता है? रे पार्थ। तेरे जो अक्षय दोनो तूणीर, अग्निका दिया हुआ दिव्य रथ और पताका है, वह रणभूमिमेंही जानी जावेगी। रे अर्ज्जुन! तू झूठी बड़ाईको

त्यागके अब युद्ध करके पराक्रम दिखा; निरर्थक बहुत ही वृथा गर्व्व क्यों करता है? केवल बातोंहीसे युद्ध सिद्ध न होता, पूर्ण रीतिसे पराक्रमको प्रकाशित करनेहीसे इसकी सिद्धि होती है। हे अर्ज्जुन! इस संसारमें यदि अपनी बड़ाई करनेहीसे यह कर्म्म सिद्ध होजावे ऐसा होनेसे सब ही कृतकार्य्य हो सकते हैं। क्योंकि व्यर्थ गर्व्वको प्रकाशित करनेमें कौन दरिद्र है? मैं तुम्हारे सहायक कृष्णको भी जानता हूं और ताल प्रमाण गाण्डीव धनुषको भी जानता हूं तथा तुम्हारे समान कोई वीर योद्धा नहीं है, उसे भी जानता हूं और जानकार हो तुम्हारे राज्यको ग्रहण कर रहा हूं। रे अर्ज्जुन! मनुष्य छल कपटसे कभी भी, सिद्धि नहीं प्राप्त कर सकता, एक मात्र विधाता ही अनुकूल होकर सबको उसके वशमें कर लेता है। मैंने तेरह वर्षतक तुम्हारे राज्यको भोग किया और तुम लोग विलाप करते हुए देखते ही रहे, अब इसके अनन्तर तुमको भाइयोंके सहित मारकर बहुत दिनतक इस राज्यका शासन करूंगा। रे अर्ज्जुन! जब तू दासभावसे परासे पराजित हुआ था, उस समयमें तेरा गाण्डीव धनुष कहां था और भीमसेनका बल भी क्या होगया था? उस समयमें एक मात्र निन्दारहित द्रौपदीके अतिरिक्त गदाधारी भीम और गाण्डीवधारी अर्ज्जुनसे तुम लोगोंकी मुक्ति नहीं हुई थी। तुम लोग अमानुषी दासभावको प्राप्त होकर हम लोगोंके दास कर्म्ममें स्थित हुए थे, पाञ्चालनन्दिनी द्रौपदीहीने तुम लोगोंको मुक्त किया था। मैंने जो तुमको षण्ढ कहा था, वह ठीक ही है, क्योंकि उस समयमें तुमने विराटनगरमें वेणी धारण की थी। और भी विराटकी पाकशालामें जो भीम भोजन बनाया करता था, वह मेरा ही पराक्रम था। रे अर्ज्जुन। क्षत्रियोंकी निमित्त क्षत्रिय लोग इसी प्रकारसे दण्ड दिया करते हैं, देखो तुम नपुंसकके वेशमें वेणी धारण करके कन्याओंको नाचना और गाना सिखाते थे। रे अर्ज्जुन। मैं कृष्णके भयसे अथवा तेरे भयसे कभी राज्य प्रदान न करूंगा, इससे कृष्णके सङ्ग मिलकर तुम युद्ध करो। क्योंकि संग्राममें शस्त्रधारी पुरुषके सम्मुख माया, इन्द्रजाल और बाजीगरी कभी भयङ्कर नहीं हो सकती बल्कि क्रोधको ही उत्पन्न करती है। शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ मेरे सम्मुखमें आकर सहस्रों कृष्ण और सैकड़ों अर्ज्जुन दशों दिशामें भाग जावेंगे। रे नीचबुद्धि! तुम भीष्मके सङ्ग युद्ध करो, वा मस्तकके धक्केसे पर्व्वत तोड़ो, अथवा बाहुसे नीचे कहे हुए इस अगाध पुरुष-सागरको तर जाओ अर्थात् मस्तकसे पर्व्वत तोड़नेकी भांति ये तीनों कार्य्य असम्भव हैं। इस अगाध पुरुष सागरमें कृपाचार्य्य महामीन, विविंशति महा सर्प, भीष्म वेग, द्रोणाचार्य्य भयङ्कर ग्राह, कर्ण, शल और शल्य मछरी, काम्बोज बाड़वानल, वृहद्वल महा तरङ्ग, भूरिश्रवा तिमिंगल, युयुत्सु और दुर्म्मर्षण जल, भगदत्त वायु, श्रुतायु और कृतवर्म्मा आरपार, दुःशासन प्रवाह, सुषेण और चित्रायुध नाग, जयद्रथ दूसरे किनारे पर रहनेवाले पर्व्वत, पुरुमित्र गम्भीरता, और शकुनि दूसरा किनारास्वरूप है। हे पार्थ! इस अक्षय अस्त्र प्रवाहसे युक्त अगम्य पुरुषसागरको तरते हुए जब तुम परिश्रमसे चेतरहित होजाओगे और तुम्हारे सब बन्धुबान्धव मारे जावेंगे, तभी तुम्हारे मनमें शोक उत्पन्न होगा और पापी मनुष्यका मन जैसे स्वर्गकी अभिलाषासे निवृत्त होजाता है, उसी भांतिसे पृथ्वीकी शासन करने की तुम्हारी अभिलाषा जाती रहेगी, क्योंकि तपसे हीन पुरुषको स्वर्गलोक पानेकी इच्छाके समान इस प्रशंसनीय पृथ्वीके राज्यको पाना तुम्हारे निमित्त बहुत ही कठिन कार्य्य है।

१५६ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले कितवनन्दन उलूक पाण्डवोंकी सेनामें पहुंचकर पाण्डवोंके समीप जाके राजा युधिष्ठिरसे यह वचन बोले, कि तुम दूतके कर्म्मको जानते हो, इससे दुर्य्योधनने मुझसे जो कुछ कहा है, वह कहूंगा, सुनकर मेरे ऊपर क्रोध न कीजियेगा।

युधिष्ठिर बोले, हे उलूक! तुम्हें कुछ भय नहीं है, अदीर्घदर्शी लोभी दुर्य्योधनका जो कुछ अभिप्राय है,तुम स्थिरचित्तसे उसे वर्णन करो।

अनन्तर उलूक महातेजस्वी महात्मा पाण्डव सृञ्जय, मत्स्य, यशस्वी कृष्ण, पुत्रोंके सहित द्रुपद और विराटके समीप तथा सब राजाओंके बीचमें ये वचन कहने लगा,—हे युधिष्ठिर! महात्मा राजा दुर्य्योधनने सब कौरवोंके सम्मुख तुमको यह वचन कहा है, तुम सुनो। "हे पाण्डव! तुम स्वयं जूएमें पराजित हुए थे और द्रौपदी भी सभामें बुलाई गई थी, इससे पराक्रमी पुरुष अवश्य क्रोधित हो सकता है। तुमने राज्यसे भ्रष्ट होकर बारह वर्ष वनमें और एक वर्षतक दासवृत्ति अवलम्बन करके विराटके घरमें वास किया था। इससे राज्यका हरण, वनवास और द्रौपदीके दुःखका स्मरण करके पुरुष बनो। हे पाण्डव! निर्बल होके भी भीमने जो प्रतिज्ञा की थी, उसके अनुसार उसे यदि शक्ति हो, तो दुःशासनके रुधिरको पान करे। तुम्हारे सब शस्त्रोंके संस्कार हो चुके हैं, कुरुक्षेत्र भी इस समय कीचड़से रहित है, मार्ग भी समतल है, घोड़े भी हृष्ट-पुष्ट हैं, इससे कल्ह ही कृष्णके सङ्ग मिलकर युद्ध करो। हे कौन्तेय! तुम युद्धमें बिना भीष्मके सम्मुख हुए ही अपनी व्यर्थ बड़ाई क्यों करते हो? कोई बुद्धिहीन मनुष्य जैसे गन्धमादन पर्व्वतके शिखरपर चढ़नेकी इच्छा करता है, तुम भी वैसे ही व्यर्थ अपनी बड़ाई करते हो, इससे अपने मुखसे अपनी बड़ाईका करना छोड़कर अब पुरुष बनो। संग्राममें महावीर कर्ण, बलवानोंमें श्रेष्ठ शल्य, इन्द्रके समान द्रोणाचार्य्यको बिना पराजित किये ही तुम क्यों राज्य ग्रहण करनेकी इच्छा करते हो। हे पार्थ! तुम जो मन्त्रवेद और धनुर्वेदको जाननेवाले वीरधरीण अपराजित महा पराक्रमी, महा तेजस्वी सेनापति द्रोणाचार्य्यको जीतनेकी अभिलाषा करते हो, वह सब तुम्हारा उद्योग अत्यन्त ही व्यर्थ है। क्योंकि वायुके झकोरसे सुमेरु पर्व्वत उड़ जावे, ऐसा कभी नहीं सुना गया है। यदि वायु कभी सुमेरु पर्व्वतको उड़ा सके,स्वर्ग पृथ्वीसे मिल जावे अथवा कालचक्र परिवर्त्तित हो जावे, तब ही तुम मुझसे जो कुछ कहो, सब सम्भव हो सकता है। क्योंकि युद्धमें इस शत्रुनाशन द्रोणके सम्मुख होकर कौन पुरुष जीवित रह सकता है? घुड़सवार, गजपति, रथी अथवा कोई पुरुष क्यों न होवे,कौन युद्धमें उनके सम्मुखसे जीवित रहकर कुशलपूर्व्वक घरको लौट सकता है? युद्धमें भीष्म द्रोणके अस्त्रकी चोटसे विद्ध होकर पांवसे पृथ्वीको स्पर्श करनेवाला कौन मरण-धर्म्मशील मनुष्य जीतेजी निस्तार पा सकता है? रे मन्द बुद्धि! तू कूएमें रहनेवाले मेढककी भांति मूढ होकर देवताओंसे रक्षित स्वर्गपुरीकी भांति, प्रतीच्य दाक्षिणात्य, औदीच्य, काम्बोज, शक, शाल्व, म्लेच्छ, द्राविड़, आन्ध्र, और काञ्ची देशीय पुलिन्दगण आदि असंख्य राजाओंसे रक्षित साक्षात् देवताओंकी सेनाके समान महाबलवान् इस इकट्ठी हुई राजसेनाको बोध करनेमें क्यों नहीं समर्थ होता है? रे अल्पबुद्धिवाले! तू संग्राममें इस अपार गङ्गावेगके समान पूर्णरूपसे बढ़े हुए नाना भांतिके असंख्य वीर योद्धाओं और हाथियोंकी सेनाके बीच स्थित मेरे सङ्ग युद्ध करनेकी किस प्रकारसे अभिलाष करता है?

उलूक धर्म्मनन्दन युधिष्ठिरसे ऐसे वचन कहकर फिर अर्जुनकी ओर मुख फेरकर कहने लगे, "रे अर्ज्जुन! तू झूठा बड़ाई त्यागकर

युद्ध क्यों नहीं करता ? निरर्थक वज्रतका वृथा गर्व्व क्यों करता है ? केवल बातोंहीसे युद्ध नहीं सिद्ध होता, पूरी रीतिसे पराक्रमको प्रकाशित करनेपर उसकी सिद्धि होती है। रे अर्ज्जुन। लोकमें यदि अपनी बड़ाई करनेहीसे सब कार्य्य सिद्ध होजावें, तो ऐसा होनेसे सब ही कृतकार्य्य हो सकता है; क्योंकि वृथा गर्व्व प्रकाशित करनेमें कौन दरिद्र है ? मैं तेरे सहाय कृष्णको भी जानता हूं, तालके प्रमाण गाण्डीव धनुषको भी जानता हूं और तेरे समान कोई वीर योद्धा नहीं है, इसे भी जानता हूं, और जान कर ही तेरे राज्यको धारण करताहूं। रे पार्थ! मनुष्य कुल आदि कर्म्मसे कभी सिद्धि नहीं प्राप्त कर सकता, विधाता ही एक मात्र अपने सङ्कल्पसे सबको उसके वशमें करता है। मैंने इस तेरह-वर्ष-तक तेरे राज्यको भोग किया; तुम लोग केवल विलाप करते हुए देखते ही रहे, अब तुमको बन्धुबान्धवोंके सहित मारकर बहुत दिनतक इस सम्पूर्ण राज्यका शासन करूंगा। रे अर्ज्जुन। जब तू दासभावसे पराजित हुआ था, उस समय तेरा गाण्डीव धनुष कहां था, और भीमसेनका बल कहां चला गया था ? उस समयमें निन्दा-वर्ज्जित द्रौपदीके अतिरिक्त गदाधारी भीम और गाण्डीवधारी अर्ज्जुनसे तुम लोगोंकी मुक्ति नहीं हुई थी, तुम लोग अमानुषी दासभावको प्राप्त कर हम लोगोंके दासकर्म्ममें स्थित थे, उस समयमें पाञ्चालनन्दिनी द्रौपदीने ही तुम लोगोंको मुक्त किया था। मैंने जो तुमको षण्ड कहा था, वह यथार्थ ही है, क्योंकि उस समय तुमने विराटनगरमें वेणी धारण की थी और विराटकी पाकशालामें भीम जो रसोई बनाता था, वह मेरा ही पराक्रम था। इसमें क्षत्रिय लोग सदा क्षत्रियोंको इसी प्रकारसे दण्ड दिया करते हैं, देखो तुम नपुंसकके वेशमें वेणी धारण करके कन्याओंको नाचना और गाना सिखाते थे।

रे अर्ज्जुन। मैं कृष्ण अथवा तेरे भयसे कभी राज्य न दूंगा इससे कृष्णके सङ्ग मिलकर मुझसे युद्ध कर, क्योंकि संग्राममें शस्त्रधारी पुरुषोंके सम्मुख माया, इन्द्रजाल और बाजीगरी कभी भयङ्कर नहीं हो सकती, बल्कि वह क्रोधहीको उत्पन्न करती है। शस्त्र-धारियोंमें श्रेष्ठ मेरे सम्मुख आकर सहस्रों कृष्ण और सैकड़ों अर्ज्जुन दशों दिशामें पलायन करेंगे। रे नीचबुद्धि अर्ज्जुन। तू भीष्मके सङ्गमें संग्राम कर वा मस्तकसे पर्व्वतको तोड़ अथवा बाहुसे नीचे कहे हुए पुरुष सागरको तर जा। इस अगम पुरुषसागरमें कृपाचार्य्य महामीन, विविंशति महासर्प, बृहद्बल महातरङ्ग, भूरिश्रवा तिमिङ्गिल, भीष्म वेग, द्रोणाचार्य्य भयङ्कर ग्राह, कर्ण, शल और शल्य मछरी, काम्बोज बाड़वानल, युयुत्सु और दुर्म्मर्षण जल, भगदत्त, श्रुतायु और कृतवर्म्मा आर-पार, दुःशासन प्रवाह, सुषेण और चित्रायुध नाग, जयद्रथ दुसरे किनारे पर रहने वाले पर्व्वत, पुरुमित्र गम्भीरता और शकुनि दुसरा किनारा-स्वरूप है। रे पार्थ! इस अक्षय शस्त्रप्रवाहसे युक्त पूर्ण रीतिसे बढे हुए पुरुष सागरको तरता हुआ जब तू परिश्रमसे थक कर चेतनारहित होजावेगा और तेरे बन्धु-बान्धव मारे जावेंगे तब ही तेरे मनमें बोध उत्पन्न होगा और पापी मनुष्यका चित्त जैसे स्वर्गकी अभिलाषसे निवृत्त होजाता है, वैसे ही पृथ्वीको शासन करनेकी अभिलाषसे तेरा अन्तःकरण भी निवृत्त होजावेगा, क्योंकि तपसे हीन पुरुषके स्वर्ग पानेकी आशाके समान इस प्रशंसनीय राज्यको प्राप्त करना तेरे निमित्त बहुत ही कठिन कार्य्य है।

१६० अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, हे महाराज! उलूकने क्रोधसे पूरित विषधारी सर्पके समान वचनरूपी शलाकासे पाण्डवोंको पूर्ण रीतिसे पीड़ित करते हुए

दुर्य्योधनके कहे हुए सब वचनोंको फिर कहना आरम्भ किया। पाण्डव लोग पहिलेहीसे क्रुद्ध हो रहे थे, इस समय उसके उन वचनोंको सुनकर विशेष करके कितवपुत्रके समीप भी तिरस्कृत होकर एकबारगी अत्यन्त ही क्रोधमें भर गये। सब लोग अपने आसनोंपरसे उठके खड़े होगये और भुजाओंको फटकारने लगे तथा एक दूसरेके मुखको और देखने लगे। भीमसेन नीची गर्दन करके महाविषधारी सर्पकी भांति श्वास लेते हुए लाल नेत्र करके कृष्णको ओर देखने लगे। तब कृष्णने भीमसेनको अत्यन्त क्रुद्ध और व्याकुल देखकर हंसकर कितवपुत्रसे कहा, कि हे उलूक! तुम शीघ्र यहांसे जाकर दुर्य्योधनसे कहो, कि तुम्हारा वचन भी सुना गया और अर्थ भी ग्रहण किया गया। तुम्हारा जैसा अभिप्राय है, वैसा ही होगा। हे राजसत्तम! महाबाहु कृष्ण उलूकसे ऐसा कहकर फिर महाबुद्धिमान् राजा युधिष्ठिरकी ओर देखने लगे। उलूकने भी सम्पूर्ण सृञ्जय, यशस्वी कृष्ण, पुत्रोंके सहित द्रुपद, और विराटके समीप तथा सब राजाओंके बीच अपने वचनरूपी शलाकासे क्रोधसे युक्त विषैले सर्पके समान अर्जुनको पीड़ित करते हुए दुर्य्योधनके कहे हुए सब वचनोंको फिर वर्णन किया और कृष्ण आदि सब राजाओंसे भी दुर्य्योधनके कहे हुए यथार्थ वचनोंको कह दिया। अर्जुन उलूकके कहे हुए महाकठोर तथा दारुण वचनोंको सुनकर अत्यन्त ही क्रुद्ध हुए और मस्तकसे पसीना पोछने लगे। हे महाराज! उस समयमें वह राजसभा अर्जुनकी ऐसी अवस्थासे देखकर अत्यन्त ही अधीर हो गई, पाण्डवोंके महारथ वीर लोग महात्मा कृष्ण और अर्जुनके अपमानको सुनकर किसी प्रकारसे भी धीरज न धर सके। स्वाभाविक स्थिरचित्त होकर भी ये पुरुषसिंह वीर लोग उलूकके वचनको सुनकर क्रोधसे प्रज्वलित होगये। धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, सात्यकी, केकयराजके पांचों पुत्र, राक्षस घटोत्कच, द्रौपदीके पांचों पुत्र, अभिमन्यु, धृष्टकेतु, भीमसेन और नकुल, सहदेव आदि सब ही वीर लोग चन्दनचर्चित सब भूषणोंसे भूषित भुजाओंको उठाकर आसनोंसे कूदकर खड़े होगये। भीमसेन उन सबके आकार और इशारेको जानकर क्रोधसे जलते हुए दांतसे दांत पीसते और ओठोंको काटते हुए वेगसे उठ खड़े हुए। वह अकस्मात् दोनों नेत्र लाल करके हाथमें हाथ रगड़ते और दांतोंको कटकटाते हुए उलूकसे यह वचन बोले, रे मूर्ख! दुर्य्योधनने तुझसे जो सब वचन कहे थे, 'असमर्थकी भांति हमलोगोंकी उत्तेजनाके निमित्त तेरे वह वचन सुने गये। इस समय तू जाकर सूतपुत्र कर्ण और दुष्टात्मा शकुनिके सम्मुख दुर्य्योधनसे जो वचन कहेगा, उसे सुन मैं कहता हूं। "रे दुराचारी! मैंने जेठे भाईकी प्रीतिके वशमें होकर तेरी दुष्टताको सहा था, परन्तु तू उस बातको नहीं समझता है, धर्म्मराज युधिष्ठिरने कुलको हितकामनासे ही शान्तिकी इच्छा करके कौरवोंके बीच कृष्णको भेजा था, परन्तु तू अत्यन्त ही कालके वशमें होकर यमपुरीमें जानेकी अभिलाषा करता है, इससे अब भी हम लोगोंसे युद्ध कर, युद्ध भी कल्ह ही होगा। रे पापी! मैंने जो भाइयोंके सहित तेरे मारनेकी प्रतिज्ञा की है, वह अवश्य उसी भांतिसे सिद्ध होगी, उस विषयमें तू कुछ भी सन्देह मत कर। समुद्र यदि अपनी मर्य्यादाको लांघकर शीघ्र पृथ्वीको डुबा दे, पर्व्वत सब टुकड़े टुकड़े होजावे, तौभी मेरे वचन कभी मिथ्या न होंगे। रे नीचबुद्धि दुर्य्योधन! जो यम, कुवेर और साक्षात् रुद्र आकर तेरी सहायता करें, तौभी पाण्डव लोग अपनी प्रतिज्ञाका अवश्य पालन करेंगे। मैं अपनी इच्छाके अनुसार अवश्य दुःशासनका रुधिर पीऊंगा और

उस समय जो कोई क्षत्रिय क्रुद्ध होकर मेरे सम्मुख आवेगा, वह चाहे भीष्मको भी आगे करके आवे, तौभी उसको यमपुरीमें भेज दूंगा। मैंने क्षत्रियोंके बीचमें जो कुछ वचन कहा है, उस विषयमें मैं अपने आत्माकी शपथ करके कहता हूं, कि वह वचन अवश्य ही सत्य होगे। भीमसेनकी बातको सुनकर शत्रुनाशन सहदेव भी क्रोधसे लाल नेत्र करके अहंकारी शूरवीर-की भांति सेनाके पुरुषोंके बीच उलूकसे यह बोले;—रे पापी! तू अपने पितासे जो वचन कहेगा, वह मुझसे सुन। "यदि तुम्हारे सङ्ग धृतराष्ट्रका सम्बन्ध न होता, तो हम लोगोंकी कौरवोंसे कभी जुदाई न होती। रे पापी! तू धृतराष्ट्रके कुल, अपने कुल और सब लोगोंके विनाशके निमित्त साक्षात् वैरकी मूर्त्तिवाले पुरुषरूपसे उत्पन्न हुआ है। रे उलूक! तेरा पापी पिता जन्मसे ही हम लोगोंके सङ्ग बुराई कर रहा है, इससे मैं उसी शत्रुताके सम्बन्धसे इस कठिन कर्मको करूंगा, कि शकुनिके सम्मुख पहिले तुझे मारकर पीछे इच्छाके अनुसार सब धनुर्द्धारिओंके सम्मुख ही शकुनिको मारूंगा। भीम और सहदेवकी बात सुनकर अर्जुन हंसते हुए भीमसेनसे यह वचन बोले, हे भीम! तुम्हारे संग जिसकी शत्रुता होती है, वह जीता नहीं बचता, घरमें सुखसे सोता हुआ वह पापी मृत्युके वशमें ही हो रहता है, परन्तु हे पुरुषसिंह! उलूकको कठोर वचन कहना तुम्हें उचित नहीं है, क्योंकि दूत लोग क्या अपराध करते हैं? वह यथार्थ कहे हुए वचनको ही कहते हैं। महा-बाहु अर्जुन पराक्रमी भीमसे ऐसा कहकर सुहृद वीरपुरुषोंसे बात चीत करते हुए धृष्ट-द्युम्न आदिसे बोले, आप लोगोंने उस पापी दुर्योधनकी कटूक्ति विशेष करके कृष्णकी और मेरी निन्दा सुनी है और सुनकर हम लोगोंके हितकी इच्छासे सब कोई क्रुद्ध होगये हैं। मैं कृष्णके प्रभाव और आप लोगोंकी सहायतासे पृथ्वी मात्रके क्षत्रियोंको कुछ नहीं गिनता हूं। इस समय इस वचनका जो उत्तर होगा,—उलूक दुर्योधनसे जो कहेगा, आप लोगोंकी अनुमतिसे मैं वह सब उलूकसे कह दूंगा। इस वचनका जो उत्तर है, वह कल्ह सेनाके सम्मुख गाण्डीव धनुषसे वर्णन करूंगा। क्योंकि नपुंसक और असमर्थ लोग ही वचनसे उत्तर दिया करते हैं।

अनन्तर वह सब राजसत्तम राजा लोग अर्जुनकी बात सुनकर विस्मित होके उनकी प्रशंसा करने लगे। तब धर्म्मराज युधिष्ठिर अवस्थाके अनुसार सबको विनीत भावसे शान्त करके अपनी ओरसे दुर्योधनसे कहनेके निमित्त उलूकसे यह वचन बोले;—कोई राजा अपनेको अपमानित समझ कर शान्त नहीं रह सकते; इससे मैं तुम्हारे वचनोंको सुननेमें रत था; अब उसका प्रत्युत्तर करूंगा। हे भरत-र्षभ! धर्म्मात्मा युधिष्ठिर दुर्य्योधनके उस वचनको सुनकर क्रोधमें भर कर गर्व्वित-पुरुषकी भांति लाल नेत्र करके विषधारी सर्पके समान लम्बी सांस छोड़ते और दांतोंको पीसकर कृष्ण और भाइयोंके मुखकी ओर देख अपनी प्रचण्ड भुजाको उठाकर कितवनन्दनसे बोले, हे तात उलूक! तुम कुलघाती, कृतघ्न, वैरकी मूर्त्ति, लोभबुद्धि दुर्य्योधनके समीप जाकर उससे यह वचन कहो, कि रे पापी! तू पाण्डवोंके निमित्त सदा ही कुटिल आचरण करता रहता है। रे मूर्ख! जो पुरुष अपने बल और पराक्रमसे शत्रुओंको आवाहन करता है और निर्भय होकर अपना वचन पूरा करता है, उसको ही क्षत्रिय पुरुष कहते हैं। रे कुलघाती! इससे तू क्षत्रिय होकर युद्धमें हम लोगोंको आवाहन क्यों नहीं करता? भीष्मके पौत्र द्रोणाचार्य्यको आगे करके क्यों युद्धकी अभिलाषा करता है? रे कौरव! तू अपने बल और सेवकोंके परा-

इनके आसरेसे पाण्डवोंको युद्धमें आवाहन करके इस संसारमें क्षत्रिय पुरुष क्यों नहीं बनता? रे अधम पुरुष! जो पराये बलके अवलम्बसे शत्रुओंको आवाहन करता है और स्वयं उसके सम्मुख होनेसे असमर्थ रहता है; उसे बुद्धिमान् लोग नपुंसकोंमें गिनते हैं; इससे जब तू स्वयं असमर्थ होकर दूसरेके पराक्रमसे अपनेको बलवान् समझता है, तो फिर किस प्रकारसे हम लोगोंके सङ्ग इतना तर्जन गर्जन कर रहा है?

कृष्ण बोले, हे उलूक! तुम मेरे इस वचनको भी दुर्य्योधनसे कहना, कि रे नीचबुद्धि दुर्य्योधन! तूने कहा है, कल युद्ध होगा; तो इस समय उस कर्म्मको करके अब पुरुषार्थ अवलम्बन कर। रे मूढ़! तू जो ऐसा समझता है, कि पाण्डवोंने कृष्णको केवल सारथी-कर्म्मके वास्ते वरण किया है,—इससे वह युद्ध न करेंगे; ऐसा समझ कर ही जो तू निर्भय हो रहा है, वैसा किसी कालमें भी न होगा, क्योंकि क्रुद्ध होनेपर मैं तृणसमूहको भस्म करनेवाले आगकी भांति सब राजाओंको भस्म कर सकता हूं। किन्तु युधिष्ठिरकी आज्ञासे युद्धमें प्रवृत्त हुए विजयी अर्ज्जुनके रथका सारथी ही बनूंगा। तू यदि तीनों लोकोंको लांघकर भाग जावे अथवा पृथ्वीके बीच प्रवेश करे, तोभी कल उसी उसी स्थानपर अर्ज्जुनके रथको देखेगा। तुम भीमसेनके वचन व्यर्थ समझते हो, परन्तु इस समय यह निश्चय कर रक्खो, कि दुःशासनका रुधिर पान हो चुका है और यह भी जान रक्खो, कि विरुद्ध वचन बोलने पर अर्ज्जुन, युधिष्ठिर, भीम, नकुल, सहदेव कोई भी तुम्हें कुछ भी समर्थ नहीं समझते हैं।

१६१ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, हे भरतर्षभ महायशस्वी अर्ज्जुन दुर्य्योधनके वचनोंको सुनकर कृष्णके मुखकी ओर देखकर उलूककी ओर लाल नेत्र करके यह वचन बोले, जो पुरुष अपने पराक्रमके आसरेसे शत्रुओंको आवाहन करके निर्भय होकर युद्ध करता है, उसको ही पुरुष कहा जाता है; परन्तु जो पराये बलके आसरे शत्रुओंको आवाहन करता है, उसे पुरुषोंमें असमर्थ अधम क्षत्रिय-पुरुष कहते हैं। रे मूर्ख! तू भी पराये बलसे अपनेको बलवान् समझ रहा है और स्वयं कापुरुष होकर भी शत्रुओंके जीतनेकी अभिलाष करता है। रे नीचबुद्धि मूर्ख! तू जो सब राजाओंमें बूढ़े, हित करनेवाले, इन्द्रियोंको जीतनेवाले, महाबुद्धिमान् भीष्मको मरनेके निमित्त तैयार करके वृथा बड़ाई कर रहा है; उसका अभिप्राय हम लोगोंको विदित है। रे दुष्ट! तेरा यह अभिप्राय है, कि अर्ज्जुन दया करके गंगानन्दन भीष्मको नहीं मारेगा। रे दुर्य्योधन! तू जिसके बलके आसरेसे वृथा गर्व्व कर रहा है; उस भीष्मको मैं इच्छापूर्व्वक सब धनुर्द्धारियोंके सम्मुख पहिले ही मारूंगा।

हे उलूक! तुम कौरवोंके बीचमें जाकर दुर्य्योधनसे यह वचन कहो, कि सव्यसाची अर्ज्जुनने भी यही वचन कहा है,—रात बीतनेपर सवेरे ही युद्ध आरम्भ होगा। महापराक्रमी सत्यप्रतिज्ञा करनेवाले भीष्म कुरुगणोंके बीच सबके आनन्दको बढ़ाते हुए "मैं सृञ्जयोंकी सेना और शाल्वके लोगोंको युद्धमें मारूंगा, इसका भार मेरे ही ऊपर है। मैं द्रोणाचार्य्यको छोड़कर अकेला ही सब लोगोंका संहार कर सकता हूं; इससे पाण्डवोंसे तुम्हें कुछ भय नहीं है।" यह जो वचन कहा है, उससे तुम्हें ऐसा ज्ञान हुआ है, कि सब राज्य मेरा हुआ और ९८
लोग सदाके लिये आपद्ग्रस्त हुए।

अभिमान द्वारा मतवारे होकर अपनेमें जो सब अनर्थ विद्यमान हैं, उन्हें नहीं देख सकते हो। इससे तुम्हारे सम्मुख ही मैं भीष्मको युद्धमें सबसे पहिले मारूंगा। सूर्यके उदय होते ही तुम रथी और ध्वजधारी होकर सत्यप्रतिज्ञा करनेवाले भीष्मको रक्षा करो, क्योंकि तुम लोगोंके सम्मुख ही मैं द्वीप अर्थात् रक्षकस्वरूप महावीर भीष्मको अपने तेज बाणोंकी सहायतासे रथमेंसे पृथ्वीपर गिरा दूंगा। दुर्य्योधन कल पितामह भीष्मको मेरे बाणोंसे छिपा हुआ देखकर बड़ाईका वचन कैसा है, विशेष रूपसे जान जावैगा। रे दुर्य्योधन! भीमसेनने क्रोधसे भर कर सभाके बीचमें तुम्हारे भाई नीच, अधर्मी, सदा बैरी, पापी, दुष्ट, अधम पुरुष दुःशासनका जो कुछ वचन कहा था, उस सत्य प्रतिज्ञाको तू शीघ्र ही पूरी होते देखेगा। और अभिमान गर्व्व, क्रोध, कड़ा वचन, निठुरता, अपनी बड़ाई, निर्दयता, टेढ़ापन, धर्म्मसे द्वेष, अधर्म्म, निन्दा, बूढ़ोंके वचनोंका अनादर आदि सब बुरे कर्म्मोंका फल भी भली भांति देखेगा। रे अधम पुरुष! रे मूढ़! कृष्णका सहाय बनाकर मेरे क्रुद्ध होनेपर तेरे प्राण और राज्यकी कैसे आशा की जा सकती है? मैं जिस समय भीष्म और द्रोणाचार्य्यको शान्त करूंगा और सूतपुत्र कर्णको मारूंगा तब ही तू जीते जी राज्य और पुत्रसे निरास हो जावेगा। रे दुर्य्योधन! तू भाई और पुत्रोंका मरना सुनकर और स्वयं भीमसेनकी गदाकी दारुण चोटसे विकल होकर अपने किये हुए सब पापोंको स्मरण करेगा। रे धूर्त्त! मैं दोबार कभी प्रतिज्ञा नहीं करता, तुझसे सत्य ही कहता हूं, कि मैंने जो कुछ वचन कहे हैं, सब ही सत्य होंगे।

युधिष्ठिर भी उलूकसे यह वचन बोले, हे तात उलूक! तुम दुर्य्योधनके समीप जाकर मेरे इस वचनको कहना, कि अपने चरित्रके दृष्टान्तसे मेरे चरित्रको बोध करना तुमको उचित नहीं है। दोनोंका अन्तर और सत्य तथा मिथ्याका प्रभेद मुझे विदित है। हे तात। मैं किस भांतिसे जातीय लोगोंके वधकी अभिलाषा करूंगा? मैं कभी कोट और चींटी आदिका भी अनिष्ट करनेकी इच्छा नहीं करता हूं। रे नीच बुद्धि मूर्ख! किसी प्रकारसे तेरी महाविपद देखनी न पड़े, इसी निमित्त मैंने पहिले केवल पांच ही गांव मांगे थे, परन्तु तू मूढ़ता युक्त लोभमें पड़ कर वृथा गर्व्व कर रहा है, और कृष्णके भी उत्तम वचन तूने नहीं ग्रहण किये। इस समय अब बहुत बातोंके व्यय करनेका क्या प्रयोजन है? बन्धुबान्धवोंके सहित मिल कर युद्ध कर। हे उलूक! मेरी बुराई करनेवाले दुष्ट दुर्य्योधनसे कहना, कि तुम्हारे वचन भी सुने गये और अर्थ भी ग्रहण किया गया, तुम्हारा जैसा अभिप्राय है, वैसा ही होगा।

अनन्तर भीमसेन फिर बोले, हे उलूक! उस नीच-बुद्धि, पापी बुरे कर्म्म करनेवाले, शठ दुष्ट राजपुत्र दुर्य्योधनसे मेरा यह वचन कहना, कि या तो तुम गिद्धके पेटमें जाओगे अथवा हास्तनापुरमें निवास करोगे। रे पुरुषाधम! मैं तेरे निकट यह शपथ करके कहता हूं, मैंने सभाके बीच जो कुछ प्रतिज्ञा की है, उसे अवश्य पूरी करूंगा, युद्धमें दुःशासनका लोहू पान करूंगा और तुम्हारी भी दोनों जङ्घाओंको तोड़के तुम्हारे सब भाइयोंको मारूंगा। रे दुर्य्योधन! मैं सब धृतराष्ट्रके पुत्रों और अभिमन्यु सब राजपुत्रोंका साक्षात् मृत्युस्वरूप हूं। रे दुर्य्योधन! मैं अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार तुम सबको सन्तुष्ट करूंगा ही, परन्तु उसके अतिरिक्त और भी मेरी एक बात सुनो, मैं तुमको भाइयोंके सहित मारकर धर्म्मराजके सम्मुख ही अपने पांवसे तुम्हारे सिरपर आघात करूंगा।

हे राजन्! अनन्तर नकुल यह वचन बोले,

हे उलूक! तुम कौरवोंमें नीच दुर्य्योधनसे कहना, कि तुम्हारी सब बातें सुनी गई। हे कौरव! मुझे जैसी आज्ञा दी है, मैं उसको पूर्ण करूंगा। हे राजन्! सहदेवने भी ऐसे ही वचन कहे, कि दुर्य्योधन? तुम्हारी जैसी बुद्धि है, वैसे ही हम लोगोंके इस क्लेशको देखकर तुम आनन्दित होकर अपनी बड़ाई कर रहे हो, परन्तु पुत्र, भाई और जातिके लोगोंके सहित शोकित तथा दुःखित होओगे।

बूढ़े राजा विराट और द्रुपदने भी उलूकसे यह वचन कहा, कि धर्म्मात्मा पुरुषके सेवक बनें, यह हम लोगोंके निमित्त बहुत ही उत्तम है; परन्तु हम लोग दास हैं, वा प्रभु और जिसका जैसा पराक्रम है, वह कल्ह ही प्रकाशित होजावेगा।

अनन्तर शिखण्डीने उलूकसे यह वचन कहा, कि पापी राजा दुर्य्योधनसे तुम यह वचन कहा, कि "हे राजन्! मैं युद्धमें कैसा भयङ्कर कर्म्म करता हूं, उसे तुम प्रत्यक्ष देखोगे जिसके बलकी आशासे तुम अपनी विजयका निश्चय करते हो, तुम्हारे उसी पितामहको मैं रथसे पृथ्वीपर गिराऊंगा; विधाताने मुझे भीष्मका वध करनेहीके निमित्त उत्पन्न किया है, इससे मैं सब धनुर्धारियोंके सम्मुख भीष्मको अवश्य ही मारूंगा, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

धृष्टद्युम्न भी कितव पुत्र उलूकसे यह वचन बोले, कि तुम मेरी ओरसे जाकर दुर्य्योधनसे यह वचन कहना, कि मैं बन्धु बान्धवोंके सहित द्रोणाचार्य्यको मारूंगा और ऐसा कर्म्म करूंगा, कि जैसा कोई भी कभी नहीं कर सकेगा।

अनन्तर धर्म्मराज युधिष्ठिर करुणा प्रकाशित करके उलूकसे बोले, हे राजन्! मैं किसी प्रकारसे भी जातिके लोगोंके वधकी इच्छा नहीं करता हूं; परन्तु तुम्हारी नीचबुद्धिके दोषसे यह सब भांतिसे करना ही पड़ेगा, धृष्टद्युम्न आदि वीरोंके प्रतिज्ञा पालन करनेके विषयमें मुझे अवश्य आज्ञा देनी पड़ेगी। हे उलूक! इससे इच्छा हो शीघ्र जाओ, अथवा यहांपर ही निवास करो, क्योंकि हम लोग भी तुम्हारे बन्धु हैं।

हे राजन्! अनन्तर उलूक, धर्म्म-पुत्र युधिष्ठिरकी आज्ञा लेकर दुर्य्योधनके समीप गये। वहांपर क्रोधी दुर्य्योधनके निकट पहुंचकर उन्होंने अर्जुनके कहे हुए यथार्थ वचनोंको वर्णन किया। श्रीकृष्ण, भीम, युधिष्ठिर, नकुल, सहदेव, विराट, द्रुपद, धृष्टद्युम्न और शिखण्डीके वचन तथा कृष्ण अर्जुनके यथार्थ सन्देसेको सुनकर दुःशासन, कर्ण और शकुनिसे बोले, कि तुम लोग राजाओं और अपनी सेनाओंमें यह आज्ञा प्रचार करो, कि सूर्य्यके उदय होनेके पहिले ही सम्पूर्ण सेना युद्धके निमित्त सजके खड़ी रहे। अनन्तर कर्णकी आज्ञा पाते ही दूत लोग रथ, ऊंट, और कोई घोड़ोंपर चढ़के कर्णकी आज्ञाके अनुसार सब सेनामें घूमकर सूर्य्यके उदय होनेके पहिले सेनाको युद्धके निमित्त सजाकर तयार रखनेके निमित्त गये।

१६२ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, उलूककी बात सुनकर कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर धृष्टद्युम्नको आगे करके चलनेवाली सेनाको युद्धके निमित्त यात्रा करनेकी आज्ञा दी। धृष्टद्युम्नके वशमें चलनेवाली, पृथ्वीके समान स्थिर, घोड़े, हाथी और पैदलोंसे युक्त वह चतुरङ्गिनी सेना अर्जुन भीम आदि महारथ वीरोंसे रक्षित होकर अगम समुद्रकी भांति दीखने लगी। महाधनुर्द्धारी द्रोणाचार्य्यके वधकी इच्छा करनेवाले शत्रुनाशन धृष्टद्युम्न उस सेनाके आगे होकर सैनिक पुरुषोंका निर्व्वाचन करके सबको आकर्षण करते हुए चलने लगे। इस अग्निवर्णवाले महाधनुर्द्धारी धृष्टद्युम्नने बल और उत्साहके अनुसार रथियोंका युद्ध करनेके निमित्त निश्चित किया, कर्णसे

अर्ज्जुन, दुर्य्योधनसे भीम, शल्यसे धृष्टकेतु, कृपाचार्य्यसे उत्तमौजा, अश्वत्थामासे नकुल, कृतवर्म्मासे शैव्य और जयद्रथके निमित्त वृष्णिवंशीय युयुधानको नियुक्त किया। भीष्मके सम्मुख शिखण्डीको स्थापित किया। शकुनिसे सहदेव, शलसे चेकितान और त्रिगर्त्तसे युद्ध करनेके निमित्त द्रौपदीके पांचों पुत्रोंको नियत किया। वृषसेन और शेषराजाओंके निमित्त अभिमन्युको नियुक्त किया, क्योंकि उसको वह अर्ज्जुनसे भी युद्ध करनेमें अधिक सामर्थ्यवान् समझते थे। तेजस्वी सेनापति धृष्टद्युम्न सब योद्धाओंको पृथक् पृथक् और इकट्ठे विभाग करके द्रोणाचार्य्यको अपने अंशमें निश्चित किया और उसी प्रकारसे व्यूह बनाकर युद्धके निमित्त तैयार होकर सम्पूर्ण सेनाको सजाके पाण्डवोंके जयके निमित्त रणभूमिमें आकर खड़े हुए।

१३४ अध्याय समाप्त।

अब रथी-अतिरथी संख्या निरूपण करेंगे।

राजा धृतराष्ट्र बोले, अर्ज्जुनने युद्धमें भीष्मके वध करनेकी प्रतिज्ञा की, इसको सुनकर मेरे नीचबुद्धि पुत्रोंने क्या किया? मुझे बोध होता है, कि कृष्णकी सहायतासे युक्त दृढ़ धनुर्धारी अर्ज्जुन युद्धमें जेठे पिता गङ्गानन्दन भीष्मको अवश्य ही बध करेगा। हे सञ्जय! अर्ज्जुनकी प्रतिज्ञा सुनकर वह महाबुद्धिमान्, महाधनुर्द्धारी शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ कौरव धुरन्धर महातेजस्वी और पराक्रमसे युक्त भीष्मने ही क्या कहा और सेनापति बनकर किस प्रकारसे उद्योग किया?

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर सञ्जयने अत्यन्त तेजस्वी कौरवोंमें बूढ़े भीष्मने जैसा वचन कहा था, वह सम्पूर्ण वृत्तान्त धृतराष्ट्रसे वर्णन किया।

सञ्जय बोले, हे राजन्! भीष्म सेनापति होकर दुर्य्योधनको आनन्दित करते हुए यह वचन बोले, मैं शक्तिको ग्रहण करनेवाले सेनापति स्वामिकार्त्तिकको नमस्कार करके आज तुम्हारा सेनापति बनूंगा, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। मैं सेनाका कर्म्म और अनेक भांति व्यूह रचनेमें अभिज्ञ हूं और वेतन पानेवाले तथा मित्रतासे इकट्ठे हुए सैनिक पुरुषोंसे जैसा कर्म्म कराना उचित है, वह भी जानता हूं। हे महाराज! युद्धयात्रा, और दूसरेके शस्त्रोंका निवारण तथा प्रतीकार करनेमें मैं बृहस्पतिके समान बुद्धिमान् हूं। मैं जो देवता, गन्धर्व्व और मनुष्य सम्बन्धीय सब व्यूहकी रचना करना जानता हूं, उसहीसे पाण्डवोंको मोहित करूंगा, इससे तुम अपनी सब चिन्ता दूर करो। हे राजन्! तुम्हारी सेनाकी सब प्रकारसे रक्षा करते हुए मैं शास्त्रके अनुसार निष्कपट चित्तसे युद्ध करूंगा, इससे तुम अपनी सब चिन्ता और शोक दूर करो।

दुर्य्योधन बोले, हे महाबाहो गङ्गानन्दन भीष्म! मैं तुमसे यह सत्य वचन कहता हूं कि सम्पूर्ण देवता और असुरोंसे भी मुझे कुछ भय नहीं है; तुम्हारे समान महावीर पुरुषके सेनापति होने और पुरुषसिंह द्रोणाचार्य्यके प्रसन्नतापूर्व्वक युद्धमें स्थित रहनेपर जो भय नहीं रहेगा, इसमें कौनसा सन्देह है? हे भरतश्रेष्ठ! पुरुषोंमें मुख्य आप दोनों महावीर पुरुषोंके स्थित रहनेपर मेरा निश्चय ही विजय होगा, विजयको तो बात ही क्या है, देवताओंका राज्य भी मुझे दुर्लभ नहीं है। हे कौरव! अब इस समयमें शत्रुओं और तुम्हारी सेनामें कितने रथी और अतिरथी हैं, उनको मैं जाननेकी इच्छा करता हूं। हे पितामह! तुम अपने और शत्रुपक्षके वीरोंको खूब ही जानते हो, इससे मैं इन सम्पूर्ण राजाओंके सहित इस वृत्तान्तको सुननेकी अभिलाषा करता हूं।

भीष्म बोले, हे गान्धारीनन्दन राजेन्द्र! अपनी सेनाके बीच रथियोंकी संख्या सुनो, जा।

लोग रथी और अतिरथी हैं, वह मैं सब वर्णन करता हूं। हे राजन्! तुम्हारी सेनाके बीच कई सहस्र, कई लाख और अनेक अर्बुद रथी हैं, उनमें जो मुख्य हैं, उनका नाम कहता हूं, तुम सुनो। पहिले दुःशासन आदि सौ भाइयोंके सहित तुम ही एक प्रधान रथी हो, तुम लोग सब ही शस्त्र चलानेके विषयमें कृतकार्य्य और छेदन, भेदन आदि सब विषयोंको जाननेवाले हो। तुम लोग रथ और हाथियों पर चढ़के जैसे लड़नेवाले हो, वैसे ही गदा, प्रास, तलवार आदि शस्त्रोंके भी चलानेवाले हो; तुम लोग शस्त्रके चलाने और भार उठानेमें समर्थ और अस्त्र शस्त्र तथा मन्त्रमें द्रोणाचार्य्य और कृपाचार्य्यके शिष्य हो। यह मनस्वी धार्त्तराष्ट्रगण पाण्डवोंके ऊपर क्रुद्ध होकर युद्धमें मतवारे पाञ्चाल-वीरोंको मारेंगे। हे भरतश्रेष्ठ! तुम सबका सेनापति मैं भी तुम्हारे शत्रु पाण्डवोंका पराजय साधन करता हुआ सबका नाश करूंगा। हे राजन्! अपना गुण सम्पूर्ण रूपसे वर्णन करना मुझे उचित नहीं है, मैं जैसा हूं, उसे तुम जानते ही हो। शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ अतिरथी भोजराज कृतवर्म्मा भी युद्धमें तुम्हारी अर्थसिद्धि करेंगे, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है, यह शस्त्र धारियोंमें श्रेष्ठ दृढ़शस्त्र और दूरतक अस्त्रोंके चलानेमें समर्थ हैं, इससे इन्द्र जैसे दानवोंका संहार करते हैं, वैसे ही यह शत्रुओंकी सेनाको नष्ट करेंगे। मेरी समझमें महाधनुर्द्धारी मद्रराज शल्य भी एक मुख्य अतिरथी हैं, यह राजसत्तम युद्धमें कृष्णके सङ्ग सदा लड़नेकी इच्छा करते हैं, विशेष करके अपने भागिनेयोंको त्याग करके तुम्हारा पक्ष अवलम्बन किये हुए हैं, इससे यह समुद्रकी तरङ्गके समान अपने बाणोंसे शत्रुओंको दूर करते हुए महारथ पाण्डवोंके सङ्ग युद्ध करेंगे। महाधनुर्द्धारी रथयूथपतियोंका भी यूथपति सोमदत्तके पुत्र भूरिश्रवा कृतास्त्र भी हैं और तुम्हारे हितकारी मित्र भी हैं, इससे यह शत्रुओंकी सेनाका खूब ही विध्वंस करेंगे। हे महाराज सिंधुराज जयद्रथको मैं द्विगुणरथ समझता हूं; यह राजसत्तम! सम्पूर्ण रूपसे पराक्रम प्रकाशित करके शत्रुओंसे युद्ध करेंगे, हे राजन्! द्रौपदीहरणके समयमें पाण्डवोंने जो इन्हे अत्यन्त क्लेश दिया था, उसे पूर्ण रीतिसे स्मरण करके यह शत्रुनाशी वीर युद्धमें प्रवृत्त होंगे। हे राजन्! उस समयमें इन्होंने बहुत कठिन तपस्या करके महादेवसे अत्यन्त दुर्लभ वर पाया था, इससे हे तात! यह राज-शार्दूल जयद्रथ युद्धमें उस वैरको स्मरण करके अपने प्रिय प्राणको त्याग करके भी पाण्डवोंके संग युद्ध करेंगे।

१६४ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे राजसत्तम! काम्बोज-राज सुदक्षिण एकगुणे रथी हैं, तुम्हारी अर्थसिद्धिकी इच्छा करके यह शत्रुओंसे युद्ध करेंगे। कौरव लोग युद्धमें तुम्हारे निमित्त शस्त्र चलानेवाले इस रथसिंहका इन्द्रके समान पराक्रम देखेंगे, क्योंकि इनके रथके समूह शलभपुञ्जकी भांति तीव्र वेगसे युक्त काम्बोज वीरोंका विस्तार दीख पड़ेगा। हे महाराज! माहिष्मतीवासी नीलवर्म्मा नीलराज भी रथी हैं, ये अपने रथके समूहसे तुम्हारे शत्रुओंका नाश करेंगे, हे कुरुनन्दन! पहिले सहदेवने इनके संग शत्रुताकी थी, इससे तुम्हारे निमित्त ये स्थिर होके युद्ध करेंगे। हे तात! महा बलवान् पराक्रमी, युद्ध-कर्म्मको जाननेवाले अवन्तिदेशीय विन्द और अनुविन्द उत्तम रथी कहके विख्यात हैं। हे महाराज! युद्धमें क्रीड़ा करनेवाले दो मतवारे हाथियोंकी

भांति युद्धकी इच्छासे ये पुरुषसिंह रणभूमिमें कालकी समान घूमते हुए अपने हाथसे गदा, प्रास,तलवार और तोमर आदि शस्त्रोंको चलाकर शत्रुओंकी सेनाको भस्म करते रहेंगे। हे राजेन्द्र। त्रिगर्त्त लोग पांचों भाई मेरे मतमें रथश्रेष्ठ हैं। विराट-नगरमें पाण्डवोंने इनके सङ्ग शत्रुता की थी इससे घड़ियार मगर जैसे तरङ्गसे युक्त भरी हुई गङ्गाको मथते हैं. युद्धमें ध्वजाधारी पाण्डवोंकी सेनाको भी ये लोग वैसे ही तितर बितर करेंगे। इन पांच रथियोंके बीच सत्यरथ मुख्य है। हे भारत, पहिले अर्ज्जुनने दिग्विजयमें प्रवृत्त होकर इन लोगोंका अनिष्ट किया था, उसको पूरी रीतिसे स्मरण करके. ये लोग युद्ध करेंगे, पाण्डवोंके सम्मुख होकर ये लोग बड़ा धनुर्द्धारी महारथ मुख्य मुख्य क्षत्रियोंका बध करेंगे। हे राजन्! तुम्हारा पुत्र लक्ष्मण और दुःशासनका पुत्र. ये दोनों मेरे मतसे उत्तम रथी हैं.तरुण और सुकुमार राजकुमार होकर भी ये पुरुषसिंह युद्धमें पीछे नहीं हटते, महातेजस्वी युद्धके कार्य्य जाननेवाले और शस्त्र चलानेमें निपुण हैं। ये दोनों वीर क्षत्रिय धर्म्ममें स्थित होकर बहुत कठिन युद्धके कर्म्म करेंगे। हे पुरुषश्रेष्ठ महाराज। दण्डधार एक गुणी रथी है, यह अपनी सेनासे रक्षित होकर तुम्हारे निमित्त युद्ध करेंगे। हे तात! महावेगवान्, पराक्रमी रथसत्तम शाल्वराज वृहद्बल भी मेरे मतमें रथी है। धृतराष्ट्रपुत्रोंके हितकार्य्यमें रत होकर ये अस्त्र शस्त्रको धारण करनेवाले महाधनुर्द्धारी रणभूमिमें अपने बन्धु बान्धवोंको आनन्दित करते हुए युद्ध करेंगे। हे राजन्! रथयूथपति कृपाचार्य्य अपना प्रिय-प्राण त्याग करके भी तुम्हारे शत्रुओंका नाश करेंगे. तात! अजेय स्वामि कार्त्तिकके समान जो शरस्तम्बसे महर्षि गौतमके वीर्य्य द्वारा उत्पन्न हुए थे. ये बड़ा वीरवर पुरुष हैं, युद्धमें धनुष और शस्त्रोंको धारण करके शत्रुओंकी सेनाको भस्म करते हुए साक्षात् अग्निके समान वे रणभूमिमें घूमेंगे।

१६५ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे नरनाथ। तुम्हारा मामा शकुनि भी एकरथी है, पाण्डवोंके सङ्ग शत्रुता करके यह अवश्य युद्ध करेगा, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। युद्धमें शत्रुओंके विरुद्ध गमन करनेवाले इस वीरकी सेना अनेक शस्त्रोंको धारण करनेवाली और अत्यन्त बलवान् है। महाधनुर्द्धारी महारथ द्रोणाचार्य्यके पुत्र अश्वत्थामा सब धनुर्धारियोंमें श्रेष्ठ, युद्धमें महावीर योद्धा और दृढ़ शस्त्रधारी हैं। हे राजन्। गाण्डीव धनुषको धारण करनेवाले अर्ज्जुनकी भांति इसके शरासनसे छूटे हुए सब बाण शत्रुओंका नाश करते हैं। मैं इस रथसत्तम महावीर पुरुषके गुणोंकी संख्या करनेमें असमर्थ हूं, यह महारथ इच्छा करनेसे तीनों लोकोंको भस्म कर सकता है। इसने आश्रमवासी होकर तपस्यासे क्रोध और तेज दोनोंको बढ़ाया है और उदारबुद्धिसे युक्त होनेसे द्रोणाचार्य्यकी कृपासे सब दिव्य-अस्त्र शस्त्रोंको प्राप्त किया है, परन्तु इसमें एक ही दोष ऐसा है, कि जिसमें मैं इसे रथी वा अतिरथी कुछ भी नहीं कह सकता हूं। हे राजन्! यह ब्राह्मण सदा आयुकी इच्छा करता है, इससे जीवन इसे अत्यन्त ही प्यारा है, जो हो. दोनों सेनाओंके बीच कोई योद्धा भी इसके समान विद्यमान नहीं है,—यह महा पराक्रमी अश्वत्थामा एक रथसे देवताओंकी सेनाको भी बध कर सकता है और पर्व्वतोंको भी तोड़नेमें समर्थ है, इससे यह अत्यन्त गुणशाली, महातेजस्वी, शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ वीरवर दण्डधारी कालके समान असह्य होकर शत्रुओंकी सेनामें भ्रमण करेगा. क्रोधमें प्रलयकालकी अग्निके समान यह महा तेजस्वी पुरुषसिंह अश्वत्थामा पाण्डवोंकी सेना-

को भस्म करेगा। इसके पिता द्रोणाचार्य्य बूढ़े होकर भी तरुण पुरुषोंसे श्रेष्ठ हैं संग्राममें जो ये अत्यन्त ही बड़े कार्य्य करेंगे, उसमें मुझे कुछ भी सन्देह नहीं है। सेनारूपी तृण-काठ अस्त्रशस्त्रोंके वेगरूपी पवनसे बढ़े हुए द्रोणरूपी अग्निमें निःसन्देह युधिष्ठिरकी सेना भस्म होजावेगी, इससे रथयूथप यूथ समूहोंके भी यूथपति यह पुरुषश्रेष्ठ भरद्वाज-नन्दन तुम्हारा अत्यन्त ही हितकार्य्य सिद्ध करेंगे सब धनुर्द्धारियोंके मुकुटमणि यह बूढ़े आचार्य्य, सम्पूर्ण सृञ्जयोंके काल-स्वरूप होसकते हैं; परन्तु अर्जुन इनको बहुत ही प्यारा है। यह महाधनुर्द्धारी द्रोणाचार्य्य अपने आचार्य्य कर्म्मको स्मरण करके युद्धमें कभी अर्जुनको नहीं मार सकेंगे। हे वीर! अर्जुनके गुणोंसे मोहित होकर आचार्य्य द्रोण सदा उसकी प्रशंसा किया करते हैं और पुत्रसे भी उसके ऊपर इनकी अधिक प्रीति है। यह अत्यन्त प्रतापी महावीर द्रोणाचार्य्य एक रथसे ही अपने दिव्य अस्त्रोंकी सहायतासे देवता, गन्धर्व्व और सम्पूर्ण मनुष्योंका वध कर सकते हैं। हे राजन्! तुम्हारे शत्रुओंको नाश करनेवाले यह पुरुषसिंह मेरे मतसे रथश्रेष्ठ हैं। यह अपनी सेनाको कपाते हुए अग्नि जैसे सूखे तृण और लकड़ियोंको जला देती है; वैसे ही वे पाञ्चाल वीरोंको भस्म कर देंगे। हे भारत! सत्यकीर्त्ति, एक-रथ राजपुत्र बृहद्बल साक्षात् कालके समान शत्रुओंकी सेनामें भ्रमण करेंगे इसके विचित्र कवच और शस्त्रोंको धारण करनेवाले वीर योद्धा लोग तुम्हारे शत्रुओंको मारते हुए रणभूमिमें भ्रमण करेंगे।

हे राजन्! कर्णका पुत्र वृषसेन तुम्हारा एक मुख्य रथी है। वह बलवानोंमें श्रेष्ठ पुरुष तुम्हारे शत्रुओंकी सेनाको अच्छी प्रकारसे नष्ट करेगा। हे राजन्! तुम्हारे रथश्रेष्ठ शत्रु-नाशन महातेजस्वी मधुवंशीय जलसन्ध प्राण देकर भी युद्ध करेंगे, हाथी और रथ दोनों वाहनोंपर चढ़के ये युद्ध कर सकते हैं; यह महाबाहु संग्राममें शत्रुओंकी सेनाको विक्षिप्त करते हुए युद्ध करेंगे; हे महाराज! यह राज-सत्तम मेरे मतमें उत्तम रथी हैं, तुम्हारे निमित्त संग्राममें यह अपनी सेनाके सहित प्राणत्याग करेंगे; यह संग्राममें महापराक्रमी योद्धा हैं, इससे निर्भय होकर शत्रुओंसे युद्ध करनेमें प्रवृत्त होंगे। हे राजन्! युद्धमें अपराजित साक्षात् कालके समान अत्यन्त बली और महा पराक्रमी बाह्लिक मेरे मतमें अतिरथी हैं, क्योंकि रणभूमिमें जाकर यह किसी प्रकारसे भी निवृत्त नहीं होते. वायुकी गतिके समान गमन करके यह सब शत्रुओंका अवश्य ही वध करेंगे। हे महाराज! तुम्हारे सेनापति महारथ सत्यवान् युद्धमें अद्भुत कर्म्म करनेवाले रथी और शत्रुओंको पीड़ित करनेवाले हैं. युद्ध देखकर इनको किसी प्रकारसे भी भय नहीं होता, वह रथोंके मार्गमें स्थित शत्रुओंको विस्मित करते हुए सहसा उनके ऊपर पतित होते हैं, शत्रुओंको नाश करनेवाले यह पुरुषसिंह तुम्हारे निमित्त सत्पुरुषोंके योग्य अत्यन्त बड़े कार्य्य करेंगे। हे राजन्। क्रूर कर्म्म करनेवाला महारथ राक्षसेन्द्र अलम्बुष पहिला वैर स्मरण करके शत्रुओंको मारेगा। यह सम्पूर्ण राक्षसोंकी सेनाके बीच रथसत्तम, मायावी और दृढ़ शत्रुता करनेवाला है, इससे रणभूमिमें घोर रूप धारण करके शत्रुओंकी सेनामें भ्रमण करेगा। हे राजेन्द्र! प्राग्ज्योतिषपुरके राजा भगदत्त हाथियोंपर अङ्कुश धारण करके चढ़ने और रथविद्यामें भी निपुण है, पहिले गाण्डीव धनुष-धारी अर्जुनके सङ्ग इनका युद्ध हुआ था, दोनोंने अपने अपने जयकी अभिलाषासे बहुत दिनतक युद्ध किया था, पीछे पाकशासन इन्द्रको मध्यस्थ मानके इन्होंने महात्मा पाण्डवोंके संग सन्धि

किया था ; हाथीपर चढ़के युद्ध करनेवाले यह राजा भगदत्त देवताओंके बीच ऐरावत हाथीपर चढ़े हुए इन्द्रकी भांति शत्रुओंसे युद्ध करेंगे।

१६६ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे राजन्! गान्धारासे प्रधान, तरुण, देखने योग्य, महाबली, पराक्रमी, दृढ़-क्रोधी, पुरुषसिंह अचल और वृषभ दोनों भाई रथी हैं; ये दोनों मिलकर तुम्हारे शत्रुओंको नष्ट करेंगे। हे भारत! तुम्हारा प्यारा मित्र, मन्त्री, नायक, अभिमानी, बन्धु, अत्यन्त ऊंचो अभिलाषा करनेवाला, अपनी प्रशंसा करनेवाला, सदा युद्धको चाहनेवाला, नीच-पुरुष, सूर्य्यपुत्र कर्ण जो सदा ही तुमको पाण्डवोंके संग युद्ध करनेके निमित्त उत्साहित करता रहता है, इसको संग्राममें रथी वा अतिरथी कुछ भी नहीं कह सकते। यह अन-भिज्ञ और अत्यन्त दयालु होनेके कारण अपने संग गर्भसे उत्पन्न हुए कवच और कुण्डलसे रहित हो गया है, इससे परशुरामके शाप, ब्राह्मणके वचन और कवच कुण्डल आदि साध-नोंसे रहित होनेसे मेरे मतमें यह अर्द्ध रथी है। युद्धमें अर्जुनके सम्मुख होकर यह कभी जोता न बचेगा।

अनन्तर सब शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ द्रोणाचार्य्य बोले, हे गंगानन्दन भीष्म! तुमने जो कुछ कहा, सब सत्य है, इसमें कुछ भी मिथ्या नहीं है, कर्ण प्रति बार युद्धमें अभिमानी होता है; परन्तु युद्धसे विमुख होते भी दीख पड़ता है, इससे यह घृणित और प्रमादी पुरुष मेरे मत-में भी अर्द्धरथी ही है।

अनन्तर इस वचनको सुनकर कर्ण क्रोधसे दोनो नेत्र लाल करके अङ्कुशके समान वचनोंसे भीष्मको पीड़ित करते हुए यह वचन बोले, हे पितामह! मैं निरपराधी हूं इसपर भी तुम केवल द्वेषके कारण ऐसे वचनरूपी बाणोंको सहायतासे मुझको पद पदमें छेदन करते रहते हो, तो भी दुर्य्योधनके निमित्त मैं तुम्हारी सब बातोंको सहता रहता हूं। "मेरे समीप तुम अर्द्धरथकी गिनतीमें हो" ऐसा कहकर जो तुम मुझे कापुरुषकी भांति तुच्छ समझते हो इसमें क्या सन्देह है? हे गंगानन्दन! मैं मिथ्या नहीं कहता हूं, तुम सम्पूर्ण जगत विशेष करके कौरवोंके सदा अहितकारी कर्म्म कर रहे हो, परन्तु राजा दुर्य्योधन उसको नहीं जानते हैं। गुणके ऊपर द्वेष करके तुम जैसी मेरी बुराई करनेकी इच्छा करते हो, युद्धमें समान गुणोंसे युक्त उदार राजाओंके बीच भेद करनेकी इच्छासे कौन पुरुष इस प्रकार दूसरोंको तेज हीन करता है? हे कौरव! अवस्था, पके हुए केश, धन अथवा बन्धुबान्धवोंसे क्षत्रियोंकी महारथत्वकी संख्या कोई नहीं कर सकता है। क्षत्रिय बल, ब्राह्मण मन्त्र, वैश्य धन और शूद्र अवस्थाके क्रमसे बड़े तथा श्रेष्ठ कहके विख्यात होते हैं। परन्तु तुम केवल मोहसे युक्त और काम क्रोधमें आसक्त होकर अपनी इच्छाके अनुसार रथी और अतिरथी-संख्याकी व्याख्या करके सबमें भेद उत्पन्न कर रहे हो, हे महाबाहो दुर्य्योधन! तुम पूर्ण रीतिसे विचार करके देखो, इस दुष्ट अभिप्रायवाले भीष्मको शीघ्र ही परित्याग करो; क्योंकि एकबार पृथक् होनेसे सेनाको फिरसे जोड़ना बहुत ही कठिन हो जावेगा। हे राजेन्द्र! जो अनेक देशोंसे पृथक् पृथक् होकर सब राजा एक ही कार्य्यके निमित्त यहांपर आके उप-स्थित हुए हैं, उनकी बात तो दूर है, भेद होनेसे मूल सेना भी, उत्साहरहित हो जावेगी। हे भारत! भीष्म इन सम्पूर्ण योद्धाओंके सम्मुख ही हमें तेज-हीन कर रहे हैं, इससे युद्ध विषयमें इन सैनिक पुरुषोंके हृदयमें अत्यन्त संशय उत्पन्न हुआ है। हा! कहां रथियोंका ज्ञान और कहां अल्पबुद्धि भीष्म! मैं

ही अकेले पाण्डवोंकी सम्पूर्ण सेनाका नाश करूंगा। शार्दूलके समीप आये हुए वृषभ आदि पशुओंकी भांति पाण्डव और पाञ्चाल योद्धा लोग अव्यर्थ-बाणोंको चलानेवाले मेरे सम्मुख आके दशों दिशामें भाग जावेंगे। कहां युद्ध, शस्त्र, मन्त्र, और उत्तम वचन, और कहां बूढ़ा मन्दात्मा कालप्रेरित भीष्म। यह अकेले ही सब जगतके सङ्ग युद्ध करनेकी अभिलाषा करता है और ऐसा असत्यदर्शी होता है, कि किसीको भी पुरुष नहीं समझता। शास्त्रमें ऐसी आज्ञा है, कि बूढ़ोंके वचन सुनना उचित है, सो सब ठीक है, परन्तु अति वृद्ध पुरुषोंके वचन नहीं सुनने चाहिये, क्योंकि पण्डितोंके विचारमें वह फिर बाल-भावको प्राप्त होजाते हैं। हे राजशार्दूल! मैं अकेले ही इस युद्धमें पाण्डवोंकी सम्पूर्ण सेनाको मारूंगा, परन्तु यश भीष्महीको मिलेगा। हे राजेन्द्र! तुमने इस भीष्मको सेनापति किया है, इससे यश सेनापतिहीमें गमन करता है, योद्धाओंको यश नहीं होता। इससे हे राजन्! गङ्गानन्दन भीष्मके जीवित रहते, मैं किसी प्रकारसे भी युद्ध न करूंगा, भीष्मके मारे जानेपर सब महारथ वीरोंके सहित युद्धमें प्रवृत्त होऊंगा।

भीष्म बोले, रे सूतपुत्र! दुर्य्योधनने संग्रामके निमित्त इस समुद्रके समान बड़ी सेनाका सम्पूर्ण भार मेरे ऊपर समर्पण किया है, मैं कई वर्षसे इसकी चिन्ता कर रहा था, इससे उस रोंएंको खड़े करनेवाले भयङ्कर युद्धका समय उपस्थित होनेपर आपसमें भेद करना मेरा कर्त्तव्य कर्म्म नहीं है, इसी निमित्त तू जीता बचा है, मैं बूढ़ा होकर भी बालकरूपी तुम्हारे ऊपर अपना पराक्रम प्रकाशित करके तुम्हारी युद्धकी लालसा और जीनेकी आशा मेट सकता हूं, परन्तु इसी कारणसे मैंने पराक्रम प्रकाशित नहीं किया। रे सूतपुत्र! तू मेरा क्या करेगा, तेरे गुरु परशुरामजी अपने सब महा अस्त्र-शस्त्रोंको चला कर मुझे पराजित नहीं कर सके। रे दुष्ट पुरुषाधम! सत्पुरुष लोग कभी अपने मुंहसे अपनी प्रशंसा नहीं करते, परन्तु मैं क्रुद्ध होकर तुझसे कहता हूं, काशिराजके स्वयम्बरमें इकट्ठे हुए सम्पूर्ण क्षत्रिय राजाओंको मैंने एक रथसे ही जीतकर कन्याओंको बलपूर्व्वक हरण किया था और भी रणभूमिमें ऐसे सहस्रों तथा इनसे भी श्रेष्ठ सेनाओंके सहित अनेक क्षत्रिय राजाओंको अकेले ही पराजित किया था। इससे साक्षात् वैररूपी तुझे पाकर कौरवोंमें बहुत बड़ा अनर्थ उपस्थित हुआ है, इस समय शत्रुओंके नाशके निमित्त यत्न कर, पुरुष बन। रे नीचबुद्धि कर्ण! जिसके सङ्ग तू सदा युद्धकी अभिलाषा किया करता है, उस अर्जुनके सङ्ग रण-भूमिमें युद्ध कर। मैं इस युद्धमें तुझे इकबारगी मारा हुआ देखूंगा।

अनन्तर प्रतापी राजा दुर्य्योधनने गङ्गापुत्र भीष्मसे कहा, कि हे पितामह! मेरी ओर दृष्टि कीजिये, देखिये यह बहुत बड़ा कार्य्य उपस्थित हुआ है, इससे जिसमें मेरा मङ्गल होवे, आप एकाग्रचित्त होकर उसीका अनुष्ठान करें। आप लोग दोनो ही हमारे बहुत बड़े कार्य्य करेंगे। अब मैं शत्रुओंके रथसत्तम पुरुषोंके नाम सुननेकी इच्छा करता हूं; वहांपर जो सब अतिरथी और यूथपति हैं, उनका वृत्तान्त वर्णन कीजिये। हे कौरव! मैं शत्रुओंके बलाबलको जाननेकी अभिलाषा करता हूं, क्योंकि रात्रिके बीतनेपर सबेरे ही यह युद्ध आरम्भ होगा।

१६७ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे राजेन्द्र! तुम्हारे इन सब रथी अतिरथी और अर्द्धरथियोंका वर्णन किया

गया. अब पाण्डवोंके रथी आदिका वर्णन सुनो। हे राजन्! पाण्डवोंके बलके जानने-की तुम्हे इच्छा है, तो सब राजाओंके सहित उन लोगोंको रथ संख्या सुनो। हे तात! स्वयं रथश्रेष्ठ कुन्तीपुत्र राजा युधिष्ठिर युद्धमें अग्निके समान भ्रमण करेंगे, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। हे राजन् युद्धमें भीम-सेन अठगुणा रथी है; गदा अथवा बाण चलानेमें कोई भी उसके समान नहीं, वह दस हजार हाथीके समान बलवान् अभिमानी और तेजमें भी मनुष्योंसे बढ़कर है। पुरुष श्रेष्ठ दोनों माद्री-पुत्र रथी और रूप तथा तेजमें साक्षात् अश्विनी कुमारके समान है,—ये सेनाके सम्मुख आकर सम्पूर्ण अपने दुःख तथा क्लेशोंको स्मरण करके रुद्रके समान निस्सन्देह शत्रुसेनामें भ्रमण करेंगे। पाण्डु-पुत्र सब ही महाबली, महात्मा, सिंहके समान शरीरवाले, हाथके समान ऊंचे और दूसरे पुरुषोंसे ऊंचाईमें अधिक हैं,—हे तात! ये पुरुषसिंह सब ही ब्रह्मचर्य्यव्रतके अनुष्ठान करने-वाले, तपस्वी, लज्जाशील सिंहके समान बल-वान्, वेग और शस्त्रोंके प्रहारमें असाधारण पुरुष हैं,—हे तात! इन लोगोंने दिग्विजयमें सब राजाओंको पराजित किया था। युद्धमें इनके शस्त्र, गदा और बाणोंको सह सके ऐसे पुरुष ही नहीं दीख पाते हैं, बाणोंका सह-ना तो दूर है, इनके धनुषपर रोदा चढ़ाना, भारी गदा आदि उठाने अथवा शस्त्रोंके चला-नेमें भी कोई समर्थ नहीं है। बालक अवस्था में भी वे लोग वेग, लक्ष्य, हरण, भोजन तथा धूलि-फेंकने और खेल करनेमें तुम सब लोगोंसे अधिक थे। वे सब ही बलवान् हैं, युद्धमें तुम्हारी सेनाको अवश्य नाश करेंगे, इससे उनके सङ्ग युद्ध न करना ही उत्तम है। हे राजेन्द्र! वे लोग जो अकेले ही सब राजाओंको मार सकते हैं, सो राजसूय यज्ञमें तुमने देखा ही था। वे लोग द्रौपदीके क्लेश और जुएके समय के कठोर वचनोंको स्मरण करके साक्षात् रुद्रके समान तुम्हारी सेनामें भ्रमण करेंगे। कृष्णकी सहायतासे युक्त लालनेत्र वाला जो अर्जुन है उसके समान दोनों सेनाके बीच कोई भी वीर विद्यमान नहीं है, मनुष्यकी बात ही क्या है, पहिले देवता, यक्ष, राक्षस और नागोंके बीचमें भी कोई उसके समान महारथी हुआ था, अथवा भविष्यकालमें होगा, मैंने ऐसी बात कहीं नहीं सुनी है। हे राजेन्द्र! बुद्धिमान, अर्जुनका कपिध्वजासे युक्त रथ, कृष्ण सारथी, अर्जुन योद्धा, दिव्य धनुष गाण्डीव, वायुके समान चलनेवाले रथके घोड़े, अभेद्य कवच, अक्षय दोनों तूणीर, इन्द्र, रुद्र, कुवेर, वरुण और यम सम्बन्धीय सम्पूर्ण अस्त्र और भयङ्कर गदा तथा वज्र आदि अनेक प्रकारके शस्त्र एकत्रित हुए हैं। इससे जिस पुरुषने एक ही रथसे हिरण्यपुरवासी सहस्रों दानवोंको मारा था, उसके समान रथी और दूसरा कौन हो सकता है? यह अत्यन्त बलशाली, सत्य पराक्रमी, अपनी सेनाकी रक्षा करता हुआ तुम्हारी सेनाका नाश करेगा। हे राजेन्द्र! द्रोणाचार्य्य अथवा मैं,—ये ही दो पुरुष अर्जुनसे युद्ध करने-में समर्थ हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त दोनों सेनाके बीच ऐसा कोई तीसरा रथी नहीं है, जो बाणोंकी वर्षा करनेवाले इस महावीर अर्जुनके सम्मुख खड़ा हो सके। ग्रीष्मकाल-के अन्तमें महा वायुसे प्रेरित हुए अग्निकी भांति कृष्णकी सहायतासे युक्त सव्यसाची अर्जुन युद्धके निमित्त सज्जित होरहा है, वह तरुण और कृतास्त्र है और हम लोग दोनों ही बूढ़े हैं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, उस समयमें भीष्मके ऐसे वचन सुनकर सन्देहयुक्त चित्त-से पाण्डवोंके पुराने सामर्थ्यको फिर प्रत्यक्ष देखनेकी भांति पूर्ण रीतिसे स्मरण करके

राजाओंकी सुवर्णके भूषणोंसे भूषित और चन्दन चर्चित भुजाएं शिथिल होगई।

१६८ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे राजन्! द्रौपदीके पांचो पुत्र महारथ हैं, विराटपुत्र उत्तर भी मेरी समझमें रथश्रेष्ठ है। महाबाहु अभिमन्यु रथयूथपतियोंका भी यूथपति है;—युद्धमें अर्ज्जुन और कृष्णके समान, शत्रुओंका नाश करनेवाला, शीघ्र शस्त्र चलानेवाला मनस्वी और दृढ़व्रती यह महावीर पुरुष पिताके दुःख और क्लेशोंको स्मरण करके अपना पराक्रम प्रकाशित करेगा। हे राजन्! वृष्णिवंशियोंमें श्रेष्ठ भयरहित सात्यकी रथयूथपतियोंका भी यूथपति है और उत्तमौजा तथा बलवान् युधामन्यु भी मेरे विचारमें रथश्रेष्ठ हैं। हे भारत! इन लोगोंके कई हजार रथ, हाथी और घोड़ोंकी सेना है, कुन्तीपुत्रोंके हितकी इच्छासे ये लोग अपना प्राण त्याग करके भी युद्ध करेंगे। पाण्डवोंके सङ्ग मिलकर परस्पर आवाहन करते हुए अग्नि और वायुकी भांति ये लोग तुम्हारी सेनामें भ्रमण करेंगे। हे राजेन्द्र! युद्धमें अपराजित महा पराक्रमी बूढ़े राजा विराट और द्रुपद भी मेरे मतमें महारथ हैं, क्योंकि क्षत्रियधर्म्मसे युक्त वे दोनो राजा बूढ़े होनेपर भी अपनी शक्तिके अनुसार वीरोंके गमन करने योग्य मार्गमें स्थित होके यत्नपूर्व्वक युद्ध करेंगे। हे राजन्! वे दोनों उत्तम व्रत करनेवाले महा धनुर्द्धारी दोनों ही विवाह और पाण्डवके सम्बन्धके कारण स्नेह और पराक्रमसे बद्ध है। हे राजन्! कारण पानेसे सम्पूर्ण महाबाहु पुरुष ही शूर और कातर होजाते हैं, परन्तु अपने प्राणोंकी आशाको छोड़ कर ये दोनों राजा परम शक्तिके सहित युद्धमें प्रवृत्त होंगे। हे परन्तप! महा धनुर्द्धारी लोकमें विख्यात दारुण कर्म्म करनेवाले ये दोनों राजा अपने जीनेकी इच्छा त्याग कर सम्बन्धिभाव और विश्वासकी रक्षा करते हुए पृथक् पृथक् अक्षौहिणी सेनाके सहित बहुत बड़े युद्धके कर्म्म करेंगे।

१६९ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे भारत! मेरे विचारमें पाञ्चालराजपुत्र पराये देशको जीतनेवाला शिखण्डी युधिष्ठिरकी सेनामें एक मुख्य रथी है। यह पुरुष पूर्व्व जन्मके स्त्री स्वभावको त्याग करके युद्धमें तुम्हारी सेनाके बीच परम यशका विस्तार करता हुआ युद्ध करेगा। इसके सङ्ग पाञ्चाल और प्रभद्रक प्रभृति बहुत सेना हैं, उन रथसमूहोंके सहित यह वीरवर युद्धमें बहुत बड़े कार्य्य करेगा। हे राजन्! पाण्डवोंकी सब सेनाके बीच सेनापति द्रोणाचार्य्यका शिष्य धृष्टद्युम्न मेरी समझमें अतिरथी है, यह घोर सृष्टिके अन्तमें अत्यन्त क्रोधमें भरे हुए साक्षात् पिनाकधारी रुद्रकी भांति संग्राममें शत्रुओंको पीड़ित करता हुआ युद्ध करेगा। युद्धके जाननेवाले योद्धा लोग संग्राममें देवताओंके समान तथा इसकी रथसे युक्त सेनाकी समुद्रकी भांति वर्णन करते हैं। हे राजेन्द्र! धृष्टद्युम्नका पुत्र क्षत्रधर्म्मा बाल स्वभावसे युक्त होनेके कारण अधिक परिश्रम नहीं कर सकता, इस निमित्त उसे मैं अर्द्धरथोंकी संख्यामें गिनता हूं। हे भारत! महाधनुर्द्धारी, महारथ शिशुपालपुत्र चेदिराज धृष्टकेतु युधिष्ठिरका सम्बन्धी है। यह पराक्रमी चेदिराज पुत्रके सहित युद्धके कठिन कार्य्य करेगा। हे राजेन्द्र पाण्डवोंके बीच क्षत्रियधर्म्ममें रत, पराये देशको जीतनेवाले क्षत्रदेव मेरे मतमें रथश्रेष्ठ हैं। पाञ्चाल-सत्तम जयन्त अमितौजा, और महारथ सत्यजित् ये सब ही महात्मा

और महारथ है, हे तात! रणभूमिमें ये लोग क्रुद्ध हुए मतवारे हाथियोंकी भांति युद्ध करेंगे। शीघ्र शस्त्र चलानेवाले महाबली अत्यन्त पराक्रमी अज और भोज ये दोनों महारथ पाण्डवोंके निमित्त अपनी परम शक्तिके सहित युद्ध करके शत्रुओंका नाश करेंगे।

हे राजन्! युद्धमें भय रहित केकयराजके पांचो पुत्र रथश्रेष्ठ और लालध्वजाओंसे युक्त हैं। हे राजन्! काशिक, सुकुमार, नील, सूर्य्यदत्त, शङ्ख और मदिराश्व ये लोग भी मुख्य रथी हैं, ये युद्ध तथा सब शस्त्रोंको जाननेवाले और महात्मा हैं। हे महाराज! वार्द्धक्षेमिको भी मैं महारथ समझता हूं और चित्रायुधको रथश्रेष्ठ मानता हूं, क्योंकि वे लोग युद्धमें शोभित अर्जुनके भक्त हैं। चेकितान और सत्यधृति ये भी पाण्डवोंके महारथ हैं, ये दोनों पुरुषसिंह मेरे मतमें रथश्रेष्ठ हैं। हे राजेन्द्र! व्याघ्रदत्त चन्द्रसेन और सेनाविन्दु ये भी पाण्डवोंके उत्तम रथियोंमें हैं, इसमें कुछ संदेह नहीं है क्रोधहन्ता नाम वीर जो भीमसेन और कृष्णके समान हैं, वे भी अपना पराक्रम प्रकाशित करके तुम्हारी सेनासे युद्ध करेंगे। हे राजन्! तुम द्रोणाचार्य्य, कृपाचार्य्य और मुझको जैसा समझते हो, रथसत्तम उस वीरवरको भी वैसा ही समझो। पराये देशको जीतनेवाले, शीघ्र शस्त्र चलानेवाले प्रशंसाके योग्य पुरुषोंमें श्रेष्ठ काशिराज मेरे मतमें अर्द्धरथी हैं और द्रुपदपुत्र पराक्रमी युवा पुरुष सत्यजित् आठ गुणा रथी है, क्योंकि धृष्टद्युम्नके समान होनेसे वह अतिरथिके पदके योग्य हुए हैं और यश पानेकी इच्छासे पाण्डवोंके बहुत बड़े युद्धका कार्य्य करेंगे। महाबलवान् पाण्ड्यराज पाण्डवोंके एक बहुत बड़े रथी हैं, ये उन लोगोंके अनुरक्त हैं और पराक्रमी भी हैं, इससे ये भी युद्धमें अपना पराक्रम प्रकाशित करेंगे। महा धनुर्द्धारी दृढ़धन्वा पाण्डवोंकी सेनामें एक महारथ योद्धा है। हे राजेन्द्र! कौरवश्रेष्ठ श्रेणिमान् और राजा बसुदान दोनों ही अतिरथीकी गिनतीमें हैं।

१७० अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे महाराज! पाण्डवोंके महारथ रोचमान युद्धमें शत्रु सेनाके बीच इन्द्रके समान सग्राम करेंगे। भीमसेनके मामा धनुर्द्धारी महाबल कुन्तिभोज और पुरुजित् मेरे विचारमें अतिरथी हैं। इस रथ-सत्तम वीर पुरुषको मैं अत्यन्त कृतास्त्र युद्धमें निपुण और समर्थ समझता हूं। हे भारत! इन्द्रने जैसे दानवोंसे युद्ध किया था, वह वैसे ही बल और पराक्रम प्रकाशित करके युद्ध करेंगे। उनके जो सब विख्यात सैनिक वीर योद्धा हैं, वे भी सब युद्धके कार्य्यमें निपुण हैं; इससे पाण्डवोंके प्रिय और हित कार्य्यको करनेके निमित्त स्थित होकर यह वीरवर युद्धमें अत्यन्त बड़े कार्य्य करेंगे। हे महाराज! भीमसेनका पुत्र हिड़िम्बाके गर्भसे उत्पन्न हुआ राक्षसेन्द्र घटोत्कच बहुत ही मायावी और रथयूथपतियोंका भी यूथपति है; वह युद्धको चाहनेवाला, मायावी और उसके वशमें रहनेवाले जो सब बलवान् राक्षस उसके सहायक हैं, वे सब संग्राममें महाघोर युद्ध करेंगे। ये सब लोग और दूसरे बहुत से राजा श्रीकृष्णको आगे करके पाण्डवोंके कार्य्यके निमित्त इकट्ठे हुए हैं। हे राजन्! महात्मा युधिष्ठिरकी सेनामें रथी, अतिरथी और अर्द्ध रथी जो सब पुरुष हैं, उन सबमें कृष्ण ही मुख्य हैं; यह इन्द्रके समान पराक्रमी अर्जुनसे रक्षित युधिष्ठिरकी महासेनाको युद्धके निमित्त आगे बढ़ावेंगे। हे वीर! माया जाननेवाले और जयकी इच्छा करनेवाले योद्धाओंके सहित मैं विजय अथवा मरनेकी अभिलाषा करके युद्ध करूंगा। चक्र और गाण्डीवधारी रथश्रेष्ठ कृष्ण और अर्जुन का सन्ध्या कालके सूर्य्य और चन्द्रमाके समान

एक ही स्थानपर एकत्र होनेपर भी मैं तुम्हारे निमित्त उन लोगोंके सम्मुख युद्धके वास्ते गमन करूंगा और युधिष्ठिरके दूसरे जो सब रथश्रेष्ठ सेनापति हैं, अपनी सेनाके सहित उनके सङ्ग भी मैं युद्ध करूंगा।

हे राजन्! प्रधानताके अनुसार पाण्डवोंके येही सब रथी, अतिरथी और अर्द्धरथी हैं; सो मैंने तुमसे वर्णन किया। हे भारत! मैं जहांतक देख सकूंगा, वहांतक अर्ज्जुन, कृष्ण तथा दूसरे सब राजाओंको निवारण करूंगा, परन्तु हे महाबाहो! युद्धमें मेरी सेनाके विरुद्ध संग्राम करनेवाला शस्त्रधारी द्रुपदपुत्र शिखण्डीको देखकर मैं उसका बध नहीं करूंगा। पिताके प्रियकार्य्य करनेकी इच्छासे मैंने प्राप्त हुआ राज्य भी त्याग दिया और ब्रह्मचर्य्य व्रतमें स्थित होके चित्राङ्गदको कौरवों महाराजके और विचित्रवीर्य्यको युवराजके पदमें नियुक्त किया था, यह सब लोगोंको विदित है। पृथ्वीके सब राजाओंके बीचमें देवव्रत अर्थात् ब्रह्मचारी कहके मैं विख्यात हूं, इससे स्त्री अथवा पहिले स्त्री हुए पुरुषको मैं कभी नहीं मार सकता हूं। हे राजन्! शिखण्डी जो पहिले स्त्रीरूपमें था, सो तुमने सुना ही है, हे भारत! इससे मैं उसके सङ्ग युद्ध नहीं करूंगा। इसके अतिरिक्त संग्राममें जिन सब राजाओंके सम्मुख होऊंगा, उन सबको अवश्य मारूंगा, परन्तु कुन्तीपुत्रोंको नहीं मार सकूंगा।

१७१ अध्याय समाप्त।

अब अम्बा-उपाख्यान पर्व्व लिखेंगे।

दुर्योधन बोले, हे गङ्गानन्दन भरतर्षभ पितामह! हे महाबाहो! "मैं सोमकवंशियोंके सहित सब पाञ्चालवीरोंको मारूंगा" पहिले ऐसा कहकर इस समय अब युद्धमें आततायी शस्त्र लिये हुए शिखण्डीको देखकर आप किस कारणसे उसका बध न करेंगे, उसे वर्णन कीजिये।

भीष्म बोले, हे दुर्योधन! मैं शिखण्डीको रणभूमिमें देखकर जिस कारणसे उसका वध नहीं करूंगा; वह सम्पूर्ण वृत्तान्त तुम मुझसे सब राजाओंके सहित सुनो। हे भरतर्षभ! मेरे पिता लोकमें विख्यात धर्म्मात्मा महाराज शान्तनु यथा समयमें शरीरको छोड़कर स्वर्गको गये। अनन्तर मैंने अपनी प्रतिज्ञाका पालन करता हुआ भाई चित्राङ्गदको इस सम्पूर्ण राज्यका स्वामी बनाया। हे राजन्! चित्राङ्गदके मरनेपर सत्यवतीकी सम्मतिसे विचित्रवीर्य्यको विधिपूर्व्वक राज्य-पदपर प्रतिष्ठित किया। हे राजेन्द्र! छोटे होकर भी धर्म्मके अनुसार मेरे द्वारा राज्यपद पानेपर धर्म्मात्मा विचित्रवीर्य्य केवल मेरी ही प्रतीक्षा करते थे। हे तात! मैंने भी समान कुलमेंसे कन्या लाकर उसके विवाह करनेकी इच्छा की। उस समयमें मैंने सुना, कि काशिराजके यहां महासुन्दरी उनकी अम्बा, अम्बिका और अम्बालिका तीन कन्याओंका स्वयम्वर होरहा है और उसके निमित्त पृथ्वीके सम्पूर्ण राजा इकट्ठे हुए हैं। हे राजेन्द्र! इन कुमारियोंके बीच अम्बा जेठी, अम्बिका मध्यमा और अम्बालिका छोटी थी। हे महाबाहो! मैं एक ही रथ पर काशिराजके नगरमें गमन करके सब भूषणोंसे भूषित उन कन्याओंको देखा। अनन्तर बल तथा पराक्रम ही उनका पण था, ऐसा बोध होनेपर मैंने युद्ध करनेके निमित्त इकट्ठे हुए सम्पूर्ण राजाओंको आवाहन करके उन तीनों कन्याओंको रथमें बैठा लिया। कुमारियोंको रथमें रखकर मैंने इकट्ठे हुए सब राजाओंसे यह बारबार यह वचन कहा "हे राजा लोग! शान्तनुनन्दन भीष्म कन्याओंका हरण करता है, इससे तुम लोग परम शक्तिके सहित उनको छुड़ानेका यत्न करो। हे नरर्षभगण! तुम

लोगोंकी अभिलाषा रहनेपर भी मैं सबके सम्मुख ही इन कन्याओंको बलपूर्व्वक हरण किये जाता हूं।" अनन्तर वे सब राजा लोग अपने सम्पूर्ण अस्त्र शस्त्रों लेकर उठ खड़े हुए और सारथीको रथ सजानेके निमित्त आज्ञा करने लगे। हे राजेन्द्र। उन राजाओंमे रथी लोग मेघके समान रथसे, गजपतिलोग हाथियों और घोड़ोंके असवार लोग अपने हृष्ट पुष्ट घोड़ोपर चढ़के सब शस्त्रोंके सहित मेरे सम्मुख आ पहुंचे और सब ओरसे मुझे घेर लिया। मैंने भी अपने बाणोंकी वर्षासे उन सबको निवारित किया और इन्द्र जैसे दानवोंको पराजित करते हैं, उसी प्रकारसे अकेले ही सब राजाओंको जीत लिया। हे भरतर्षभ! वे लोग जब मुझ पर आक्रमण करनेके निमित्त उद्यत हुए, तब मैंने हसते हसते अपने जलते हुए चोखे बाणोंसे उनकी सुवर्णभूषित विचित्र ध्वजाओंको काटकर गिरा दिया और एक ही एक बाणसे घोडे, हाथी और सारथियोंको मारकर पृथ्वीमें गिरा दिया। मेरी ऐसी शस्त्र-शीघ्रता देखकर सब राजा पराजित होकर भाग गये। हे महाबाहो। अनन्तर मैंने भ्राताके निमित्त उन कन्याओंको लाकर सत्यवतीको समर्पण किया और युद्धका वृत्तान्त भी सम्पूर्ण रूपसे वर्णन किया।

१७२ अध्याय समाप्त।

———

भीष्म बोले, हे भरतश्रेष्ठ! अनन्तर मैंने केवटकी कन्या वीर-जननी सत्यवतीके समीप जाकर प्रणाम करके यह वचन कहा, "हे माता! मैं सब राजाओंके जीतकर विचित्रवीर्य्यके निमित्त काशिराजकी इन कई एक कन्यओंको लाया हूं, पराक्रम ही इनका पण था, इसीसे मैं अपने बाहुबलसे सब राजाओंको जीतकर इनको लाया हूं" हे राजन्। अनन्तर सत्यवतीने आनन्दित होके मेरा मस्तक सूघा और आखोंमें आंसू भरकर यह वचन बोली, "हे पुत्र! प्रारब्धहीसे तुमने विजय लाभ किया है।' इसके अनन्तर सत्यवतीकी अनुमतिसे जब विवाहका समय उपस्थित हुआ, तब काशिराजकी जेठी कन्या लज्जापूर्व्वक मुझसे यह वचन बोली, हे भीष्म तुम सब शास्त्रोंको जाननेवाले और धर्म्मात्मा हो, इससे मेरे धर्म्म युक्त वचनोंका सुनकर उनकी रक्षा करनी तुमको उचित है। पहिले मैंने शाल्वपतिको मन ही मन अपना वर निश्चय किया था और उन्होंने भी एकान्त स्थानपर मुझे पानेकी अभिलाषा की थी, हे राजन् भीष्म। इससे तुम कौरवोंके कुलमें उत्पन्न होकर किस प्रकारसे धर्म्मका अतिक्रम कर सकते हो? दूसरेकी अभिलाषा करनेवाली कामिनीको तुम कैसे अपने घरमे रख सकते हो? हे महाबाहो! बुद्धिसे इस विषयको अच्छी प्रकारसे विचार कर जैसा उचित हो, वैसा ही कीजिये, हे राजेन्द्र। वह शाल्वराज अवश्य मेरी बाट जोहते होंगे। हे कुरुश्रेष्ठ। इससे मुझे उनके समीप जानेकी आज्ञा दीजिये। हे महाबाहो। हे धार्म्मिक। मेरे ऊपर कृपा कीजिये, मैंने सुना है, आप पृथ्वीमें सत्यव्रत (ब्रह्मचारी) कहके विख्यात हैं।"

१७३ अध्याय समाप्त।

———

भीष्म बोले, हे प्रजानाथ। अनन्तर मैंने योजनगन्धा, मन्त्री और पुरोहितोंको सब बात सुनाकर उन लोगोंकी सम्मतिसे बड़ी कन्या अम्बाको शाल्वराजके यहा जानेकी आज्ञा दी और उसने भी बूढ़े ब्राह्मणोंसे रक्षित और दासियोंसे युक्त होकर शाल्वराजके नगरको गमन किया। कन्या सब मार्गोंको लांघ कर शाल्वराजके समीप पहुंच कर यह वचन बोली हे महाबाहो। हे महाबुद्धिमन्। मैं तुम्हारे निमित्त यहांपर आई हूं। हे राजेन्द्र। तब

शाल्वराज हंसकर उससे यह वचन बोले, हे सुन्दरी। तुम अन्यपूर्व्वा हो, इस कारण मैं तुमको अपनी भार्य्या बनानेकी अभिलाषा नहीं कर सकता हूं। हे भद्रे। तुम फिर भीष्मके समीप जाओ, भीष्मने तुमको बलपूर्व्वक ग्रहण किया था. इससे अब मैं तुमसे विवाह करनेकी इच्छा नहीं करता हूं। भीष्मने जब सब राजाओंको जीत कर हाथपकड़के तुम्हें हरण किया था, उस समय तुमने उसके सङ्ग विलक्षण प्रीति की थी, हे सुन्दरि। इससे अन्यपूर्व्वा स्त्रीको मैं अपनी भार्य्या नहीं बना सकता हूं। शास्त्र और धर्म्मको जाननवाले मेरे समान राजा दूसरेकी ग्रहण की हुई स्त्रीको किस प्रकारसे अपने घरमें रख सकता है? इससे हे भद्रे। शीघ्र हो अब जहां तुम्हारी इच्छा होवे, गमन करो।

हे राजन्। तब अम्बा कामशरसे पीड़ित होकर उनसे यह वचन बोली, हे राजेन्द्र! ऐसा न कहिये. आप जो कुछ कहते हैं, वह किसी प्रकारसे भी सत्य नहीं है। भीष्मके हाथसे हरण किये जानेपर मैंने कभी उनसे प्रीति नहीं की थी, भीष्मने जिस समय सब राजाओंको जीतकर बलपूर्व्वक मुझको ग्रहण किया उस समयमें मैं रोदन करती थी, हे शाल्वराज! इससे आप इस दासी निरपराधिनी बालाको ग्रहण करें। हम भक्त लोगोंको त्यागना धर्म्मविरुद्ध है। मैं युद्धमें अपराजित गङ्गानन्दन भीष्मसे बार बार अपने मनोरथोंको निवेदन करके उनकी आज्ञाके अनुसार ही यहांपर आई हूं। हे राजेन्द्र। मैंने सुना है, कि वह महाबाहु भीष्म स्वयं मेरी इच्छा नहीं करते, भाईके निमित्त ही उन्होंने ऐसा यत्न किया था। हे राजन्! गङ्गातनय भीष्म जो मेरी और दो बहिन अम्बिका और अम्बालिकाको लेगये थे, उन्होंके सङ्ग अपने छोटे भाई विचित्रवीर्य्यका विवाह किया है। हे पुरुषसिंह शाल्वराज। तुम्हारे अतिरिक्त जो मैं और दूसरे किसी वरकी इच्छा नहीं करती हूं उस विषयमें मैं मस्तक छूकर शपथ करती हूं। हे राजन्। मैं पहिले दूसरेकी होकर तुम्हारे समीपमें नहीं आई हूं, हे शाल्वराज। मैं अपनी आत्माकी शपथ करके यह सत्य ही कहती हूं। हे प्रजानाथ। इससे दूसरेकी इच्छा न करनेवाली, स्वयं उपस्थित हुई,—मुझ कुमारीको आप ग्रहण करें।

हे भरतर्षभ। काशिराजकी कन्याके ऐसा कहने पर भी शाल्वराजने पुरानी केंचुलीको छोड़नेवाले सर्पके समान उसे त्याग दिया। कन्याने इसी प्रकारसे अनेक वचन कहे, परन्तु शाल्वराजने उसे ग्रहण नहीं किया। अनन्तर अम्बा रोती हुई आंखोंमें आंसू भरकर यह वचन बोली, हे राजन्। तुमने मेरा परित्याग किया। परन्तु मैं जहां जहां जाऊंगी, वहां पर ही साधु पुरुष मेरी रक्षा करेंगे, क्योंकि सत्यका कभी नाश नहीं होता।

हे कुरुनन्दन। उस समय ऐसा वचन कहकर करुणस्वरसे रोदन करनेवाली उस काशिराजकी कन्याको शाल्वराजने अनायास ही त्याग किया और 'जाओ, जाओ' बार बार ऐसे ही वचन कहने लगे, हे सुन्दरि। मैं भीष्मसे डरता हूं, और तुम भीष्मकी प्रथम ग्रहण की हुई हो, इससे जल्दी यहांसे चली जाओ। अम्बा अदीर्घदर्शी शाल्वराजका ऐसा वचन सुनकर, कातर होके कुररीकी भांति रोदन करती हुई नगरसे बाहर हुई।

१७४ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, अत्यन्त दुःखिनी काशिराजकी कन्या नगरसे निकल कर ऐसी चिन्ता करने लगी, कि पृथ्वीमें मेरे समान भाग्यहीन राजपुत्री और कोई भी नहीं है, मैं अपने बन्धु-बान्धवोंसे पृथक् हुई हूं और शाल्वने भी मेरा

त्याग किया। फिर भी हस्तिनापुरको जानेका अब मुझे साहस नहीं है, क्योंकि शाल्वराजके निमित्त भीष्मसे बिदा होकर उनकी आज्ञा लेकर यहां आई हूं। इससे अपनी निन्दा करूं, वा उस दुष्ट भीष्मका ही तिरस्कार करूं वा जिन्होंने मेरा स्वयम्बर किया था, उस मूढ़ पिताकी ही निन्दा करूं? अथवा यह मेरा अपना ही दोष है, क्योंकि उस दारुण संग्रामके उपस्थित होनेपर मैं भीष्मके रथसे उतरकर शाल्वराजके रथपर क्यों न चली गई? हा इस समय मूढ़ाकी भांति मैं उसी बुद्धिहीनताका फल पारही हूं। जिसकी दुष्ट नीतिसे मैं इस भारी विपदमें पड़ी हूं, उसे धिक्कार है, भीष्मको भी धिक्कार है, जिसने पराक्रमका पण करके मुझे वेश्याकी भांति हरण किया। उस मन्दबुद्धि मूढ़ पिताको और मुझको भी धिक्कार है। शाल्वराज और विधाताको भी धिक्कार है। मनुष्य अपने प्रारब्धके अनुसार फल पाता है, यह ठीक है, परन्तु शान्तनुपुत्र भीष्म ही मेरी इस विपदका मूल कारण है। इससे चाहे तपस्यासे हो अथवा युद्धसे हो सके, उसके सङ्ग शत्रुता करना मेरा कर्त्तव्य कार्य्य बोध होता है, परन्तु कौन राजा युद्धमें भीष्मको पराजित करनेका उत्साह कर सकता है? हे भारत। इसी प्रकारसे चिन्ता करती हुई अम्बा नगरके बाहर पुण्यशील महात्मा तपस्वियोंके आश्रमों पर जा पहुंची। वहांपर तपस्वियोंसे युक्त होकर रात्रि बिताई और अपने हरण करने, छूटने तथा शाल्वराजसे परित्याग किये जानेका सम्पूर्ण वृत्तान्त उन तपस्वियोंके निकट वर्णन किया।

हे महाबाहो! वहांपर तपमें वृद्ध, शास्त्र और आरण्यक उपनिषदोंके आचार्य्य, दृढ़व्रती, अग्निहोत्र करनेवाले, वेद और स्मार्त्त कर्म्ममें निपुण शैखावत्य नाम एक महा विद्वान् ब्राह्मण थे। वह महातपस्वी शैखावत्य मुनि अत्यन्त कातरा, शोक और दुःखसे युक्त लम्बी सांस छोड़नेवाली साध्वी कन्या अम्बासे बोले, हे भद्रे! हे महाभागे! ऐसी अवस्थामें आश्रमवासी तपस्वी लोग क्या कर सकते हैं? परन्तु अम्बा दृढ़ताके सहित उससे यह वचन बोली, हे महाभाग! मेरे ऊपर कृपा करो। मैं प्रव्रज्या धर्म्मको ग्रहण करनेकी इच्छा करतीहूं कठिन होनेपर भी मैं तपस्या करूंगी। मैंने मोहमें पड़कर पूर्व्वजन्ममें जो कुछ पाप किया था, उसका यह सब फल भोग कररही हूं, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है, हे पापरहित तापसवृन्द! फिर बन्धुबान्धवोंके बीच गमन करनेके निमित्त मुझे उत्साह नहीं होता है। शाल्वने भी जब मुझको परित्याग कर दिया, तो अब मैं सब प्रकारसे आनन्द रहित होकर तपस्या कर्म्मके उपदेशको सुननेकी इच्छा करती हूं, आप लोग देवताओंके समान हैं, इससे मेरे ऊपर कृपा कीजिये। तब उन मुनि लोगोंने लौकिक-दृष्टान्त, वेद और युक्तिसे शान्त करके उस कन्याको धीरज कराया और ब्राह्मणोंके सङ्ग मिलकर उसके कार्य्यको पूर्ण करनेके निमित्त विचार करने लगे।

१७५ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, अनन्तर वे धर्म्मात्मा तपस्वी लोग, उस समय इस कन्याके विषयमें क्या करना उचित है,—ऐसी चिन्ता करके सब कोई विचार करने लगे। कोई बोले, इसको पिताके घर लेजाना चाहिये, कोई कोई मेरी निन्दा करने लगे और कोई शाल्वराजके निकट जाकर उसीको कन्या समर्पण करनेको कहने लगे, परन्तु कोई कोई तपस्वी यह कहने लगे कि उसके समीप ले जाकर इसका समर्पण करना उचित नहीं है क्योंकि उसने इसका परित्याग किया है। दृढ़व्रत करनेवाले तपस्वियोंने आपसमें ऐसा वादानुवाद करके फिर उस

कन्यासे कहा हे भद्रे । ऐसो अवस्थामें धर्म्मात्मा लोग क्या कर सकते हैं ? इससे तापस धर्म्मको ग्रहण करनेको तुम्हें कुछ भी प्रयोजन नहीं है ; हम लोगोंके हितके वचन सुनो , इस स्थानसे लौट कर तुम पिताके घर जाओ तुम्हारे पिता काशिराजको जैसा कर्त्तव्य होगा वैसा करेंगे । वहांपर कल्याणयुक्त और सब गुणोंसे भूषित होकर तुम परम सुखसे वास करोगी। हे भद्रे । तुम नारी हो,इससे अब ऐसी अवस्थामें पिताको भांति तुम्हारा दूसरा कोई भी रक्षक नहीं है। हे सुन्दरि। स्त्रीको पति अथवा पिता हो गतिस्वरूप है। हे भाविनि ! तुम स्वभावहीसे राजपुत्री उसपर भी सुकुमारी कन्या हो, इससे तपस्या तुमको अत्यन्त ही दुःखदायी होगी, विशेष करके आश्रममें वास करनेमें अनेक दोष हैं, पर पिताके घरमें उन सब दोषोंको सम्भावना नहीं है ।

अनन्तर दूसरे कोई तपस्वी लोग उस तपस्विनीसे यह वचन बोले, हे भद्रे । इस निर्जन भयङ्कर वनमें तुमको अकेली देख कर राजा लोग तुम्हारे ग्रहण करनेकी अभिलाषा करेंगे, इससे तुम कभी यहांपर रहनेकी इच्छा मत करो ।

अम्बा बोली, हे तपस्वी लोग ! आपका कल्याण हो, मैं फिर काशी नगरीमें अपने पिताके स्थान पर नहीं जासकती , ऐसा करनेसे बन्धु बान्धवोंके बीचमें अवश्य ही अवज्ञाको पाती हूंगी । बालक अवस्थामें बहुत दिन तक पिताके घरमें वास किया था , इस समय अब वहांपर न जाऊंगी । अब मैं तपस्वियोंसे रक्षित होकर तपस्या करनेकी अभिलाषा करती हूं । हे तपस्वी श्रेष्ठ महात्मागण ! परलोकमें भी मेरे प्रारब्धमें ऐसी ही विपद न उपस्थित होवे , इसी आशयसे मैं तपस्या करूंगी ।

भीष्म बोले, वे ब्राह्मण लोग इसी प्रकारसे कर्त्तव्य कार्य्यकी चिन्ता कर रहे थे , उस ही अवसरमें तपस्वी राजर्षि होत्रवाहन उस तपोवनमें आकर उपस्थित हुए। अनन्तर तपस्वियोंने स्वागत प्रश्न करके विधिपूर्व्वक आसन अर्घ प्रदान करके उनकी पूजा को । उनके विश्राम करके बैठनेपर वनवासी तपस्वी लोग उनके सम्मुख ही फिर उस कन्यासे बात चीत करने लगे । हे भारत ! अम्बा और काशिराजका वह वृत्तान्त सुनकर वह महा तेजस्वी ऋषि व्याकुल होगये महातपस्वी महात्मा राजऋषि होत्रवाहन अम्बाके मातामह थे, इससे उसे इस प्रकारसे बात चीत करते हुए सुनकर अत्यन्त ही कृपायुक्त और शरीरसे कांपते हुए उठकर कन्याको गोदमें धारण करके उसे धीरज देने लगे । उन्होंने अम्बासे उसको उत्पत्तिका सम्पूर्ण वृत्तान्त आदिसे ही पूछना आरम्भ किया और उसने भी जो कुछ हुआ था, उसे विस्तार पूर्व्वक वर्णन किया । अनन्तर वह महातपस्वी राजर्षि दुःख शोकसे युक्त होकर अपने मन ही मन कार्य्यका निश्चय करने लगे , और कांपते हुए शरीरसे उस दुःखसे कातरा कन्यासे बोले, हे भद्रे ! पिताके घर मत जाओ , मैं तुम्हारा मातामह (नाना) हूं , इससे मैं ही तुम्हारे दुःख को दूर करूंगा । हे पुत्री ! तुम मेरे सङ्ग रहो । तुम जिस प्रकारसे तनक्षीण होरही हो, उससे बोध होता है, कि तुम्हारा अन्तःकरण दुःखके भारसे पूर्ण हो रहा है, इससे मेरे वचनके अनुसार तुम तपस्वियोंसे श्रेष्ठ परशुरामके समीप गमन करो । वह तुम्हारे इस बहुत बड़े दुःख और शोकको दूर करेंगे, भीष्म यदि उनको बात न मानेगा, तो वह युद्धमें अवश्य ही उसको बध करेंगे । इससे तुम उसी प्रलयकालके अग्निके समान तेजस्वी परमशुरामके समीप गमन करो । वह महातपस्वी महात्मा भार्गव तुमको सन्मार्गमें प्रतिष्ठित करेंगे ।

अनन्तर अम्बा बार बार लम्बी सांस लेती हुई मातामहको प्रणाम करके मधुर स्वरसे यह वचन बोली, आपको आज्ञाके अनुसार मैं गमन करूंगी; परन्तु उन लोकविख्यात महात्मा भार्गवको मैं कहांपर दर्शन करूंगी ? वह किस प्रकारसे मेरे तीव्र दुःखको नाश करेंगे और कैसे मै उनके समीप जाऊंगी ? उसे जाननेकी इच्छा करती हूं ।

होत्रवाहन बोले, हे भद्रे ! तुम सत्यव्रती महाबल जामदग्न्य परशुरामको महावनमें अत्यन्त कठिन तपस्या करते हुए वर्त्तमान देखोगी । परशुराम पर्व्वत श्रेष्ठ महेन्द्र-गिरिके शिखरपर नित्य ही निवास करते हैं, और वेदको जाननेवाले ऋषि, गन्धर्व्व तथा अप्सरा भी वहांपर विद्यमान रहती हैं। तुम उसी स्थानमें गमन करके उन दृढव्रती तपमें लगे हुए महात्मा भार्गवको प्रणाम करके मेरा वचन कहना और अपना अभिप्राय भी वहांपर वर्णन करना । हे पुत्री ! वह सब शस्त्रधारियोंमें श्रेष्ठ वीरवर जमदग्निपुत्र परशुराम मेरे सखा और प्रीतिपात्र सुहृद हैं, इससे मेरा नाम लेनेहीसे वह तुम्हारा सम्पूर्ण कार्य्य सिद्ध करेंगे ।

राजा होत्रवाहन कन्यासे ऐसे वचन कह रहे थे, उसी समय में परशुरामके प्यारे सेवक अकृतव्रण वहांपर आकर उपस्थित हुए । तब वहांपर वे सब सहस्रों मुनि और अवस्थामें बूढे राजा होत्रवाहन सब ही तपस्वी उठके खड़े हुए । हे भरतर्षभ ! अनन्तर वे सब तपस्वी लोग उनका यथा उचित अतिथि-सत्कार करके सब कोई उनको चारो ओरसे घेरकर बैठ गये । फिर प्रीतिपूर्व्वक प्रसन्न चित्तसे बहुतसी दिव्य उत्तम और मनोहर कथाका प्रसङ्ग करने लगे । अनन्तर कथाके समाप्त होने पर महात्मा-राजऋषि होत्रवाहनने अकृतव्रणसे महर्षि श्रेष्ठ परशुरामको बात पूछी,—हे महाबाहो अकृत-व्रण ! वेद जाननेवालोंमें श्रेष्ठ प्रतापवान् परशुराम जो इस समयमें कहांपर मिल सकते हैं,

अकृतव्रण बोले, हे प्रभावसे युक्त राजेन्द्र ! परशुराम "राजऋषि होत्रवाहन मेरे प्यारे मित्र हैं" ऐसा कहकर सदा तुम्हारा स्मरण किया करते हैं, मुझे बोध होता है, कि तुम्हारे दर्शनकी इच्छासे वह कल यहीपर आवेंगे, इससे यहांपर आनेहीसे तुम उन्हें देख सकोगे । हे राजर्षि ! यह कन्या किस कारणसे वनमें आई है ? यह किसकी कन्या है और तुम्हारी कौन होती है ? इस विषयको सुननेकी मुझे बहुत ही इच्छा है ।

होत्रवाहन बोले, हे विभो ! यह मेरी दौहित्री, काशिराजकी पुत्री और इसका नाम अम्बा है । हे तपोधन ! काशि-राजकी यह जेठी कन्या है, अम्बिका और अम्बालिका नाम्नी दो छोटी बहिनोंके सहित इसका स्वयम्वर हुआ था उसमें पृथ्वीके सम्पूर्ण क्षत्रिय राजा कन्याको प्राप्त करनेके निमित्त काशीपुरीमें इकट्ठे हुए थे । हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! उस समय वहांपर अत्यन्त ही उत्सव हुआ था । अनन्तर महाबली अत्यन्त तेजस्वी शान्तनुपुत्र भीष्मने सब राजाओंको पराजित करके तीनों कन्याओंको हरण किया था । वह प्रतापी भीष्म सब राजाओंको परास्तकर तीनों कन्या-ओंके सहित हस्तिनापुरमें आकर सत्यवतीको निवेदन करके निज भ्राता विचित्रवीर्य्यके विवाहके निमित्त आज्ञा दी । हे द्विजश्रेष्ठ ! उस समय इस कन्या विचित्रवीर्य्यको विवाहके निमित्त उपस्थित और माङ्गलिक सूत्रबन्धन आदिसे युक्त होते देखकर मन्त्रियोंके बीच भीष्मसे यह वचन बोली, हे वीर ! मैंने मन ही मन शाल्वराजको पतिरूपसे बरण किया है, इससे हे धर्म्मके जाननेवाले ! दूसरे पुरुषमें आसक्त कामिनीको भाईके हाथमें समर्पण करना तुमको उचित नहीं है । भीष्मने इस

वचनको सुनकर मन्त्रियोंके सङ्ग विचार कर सत्यवतीकी सम्मतिसे इसे विसर्ज्जन किया। तब यह कन्या भीष्मकी आज्ञा पाकर प्रसन्न चित्तसे सोभपति शाल्वके निकट जाकर यह वचन बोली, हे राजन्। मैंने मन ही मन तुमको पतिरूपसे वरण किया है. इस समय भीष्मने मुझको त्याग दिया, इससे अब तुम मेरे धर्म्मकी रच्चा करो। परन्तु शाल्वराजने इसके चरित्रके विषयमें शंकित होकर इसको ग्रहण करनेमें अस्वीकार किया। इसी कारणसे यह तपके निमित्त अत्यन्त अभिलाष करके इस तपोवनमें आई है और मैंने भी वंशका नाम लेनेसे इसको जाना है। हे तपोधन। दुःखकी उत्पत्तिके विषयमें यह भीष्महीको कारण समझती है।

अम्बा बोली, हे द्विजसत्तम। यह राजर्षि सृञ्जय होत्रवाहन जो कुछ कहते हैं. वह सब ठीक है। हे महामुनि। लज्जा और अपमानके भयसे फिर अपने पिताके घर जानेका मुझे उत्साह नहीं होता है। हे भगवन्। इससे अब मेरी यह इच्छा है, कि भगवान् परशुराम मुझको जो कुछ कहेंगे, वही कार्य्य मैं सब प्रकारसे करूंगी।

१७६ अध्याय समाप्त।

अकृतव्रण बोले, भद्रे। तुमको यह दो दुःख उपस्थित है, इनमेंसे तुम किसके प्रतीकारकी इच्छा करती हो, वह मुझसे यथार्थ रूपसे वर्णन करो। हे भद्रे। यदि शाल्वसे विवाहके निमित्त तुम्हारी इच्छा होवे, तो महात्मा परशुराम अवश्य ही तुम्हारे हितके हितके निमित्त उसके हाथमें तुम्हें समर्पण करेंगे; और जो तुम गंगानन्दन भीष्मको बुद्धिमान् परशुरामके संग युद्धमें पराजित हुए देखनेकी इच्छा करो तो भार्गव उसकार्य्यको भी कर सकते हैं। हे सुन्दरि। इससे यह राजर्षि सृञ्जय और तुम मेरी बात सुनकर, अब इस विषयमें तुम्हें जो कुछ करना होवे, उसको आज ही विशेष रूपसे विचार कर रक्खो।

अम्बा बोली, हे भगवन्। भीष्मने विना जाने ही मुझको हरण किया था, मेरा मन जो शाल्वराजके सङ्ग लगा था, इस बातको भीष्म नहीं जानते थे। हे ब्राह्मण। इससे आप अच्छी प्रकारसे विचार पूर्व्वक न्यायके अनुसार जैसा निश्चय कीजिये, उसहीको करनेका विधान कीजिये। कुरुशार्दूल भीष्म अथवा शाल्वराज वा दोनोंके विषयमें जैसा आचरण करना उचित होवे, वैसा ही कार्य्य तुम करो। हे भगवन्। मैंने अपना दुःखका मूल कारण पूर्ण रीतिसे कह सुनाया है, इस समय युक्तिके अनुसार जैसा करना उचित होवे वैसा ही आप लोग उपाय कीजिये।

अकृतव्रण बोले, हे भद्रे। तुमने धर्म्मकी ओर लच्य करके जो यह वचन कहा है. वह ठीक है, इस विषयमें मेरा यह वचन सुनो। हे भीरु। यदि भीष्म तुमको हस्तिनापुर न लेजाते, तो शाल्व परशुरामकी आज्ञासे तुम्हें मस्तकके ऊपर धारण करते, हे भाविनि। भीष्मने सब राजाओंको जीत कर तुम्हें हरण किया है, इस ही निमित्त तुम्हारे ऊपर शाल्वराजको सन्देह हुआ है, हे कल्याणि! भीष्म पुरुषमानी और जयसे युक्त है, इससे उसके संग ही शत्रुता समाप्त करना तुमको उचित है।

अम्बा बोली, हे ब्रह्मन्। मेरे भी मनमें यही इच्छा है, कि जिस प्रकारसे हो सके भीष्मका युद्धमें बध कराऊं। हे महाऋषि। जिस कारणसे मैं अत्यन्त दुःखिता हुई हूं, वह भीष्म ही हो अथवा शाल्व ही हो, जिसको आपलोग दोषी स्थिर कीजिये उसहीका शासन करिये।

भीष्म बोले, हे भरतश्रेष्ठ। इसी प्रकारसे

बातचीत करते हुए उन लोगोंका बहुत दिन बीत गया और सुख देनेवाली शीतल और उष्ण वायुसे युक्त रात्रि भी बीत गई। अनन्तर जटा चीर धारण किये तेजसे जलते हुए परशुरामजी शिष्यमण्डलोके सहित आकर उपस्थित हुए। हे राजशार्दूल! काधे पर फरसा लिये तलवार तथा धनुष बाण धारण किये हुए पापरहित भार्गव महात्मा राजा होत्रवाहनसे मिलनेको वहां पर आये। उनको देखकर सम्पूर्ण तपस्वी, और महातपस्वी राजा होत्रवाहन और तपस्विनी कन्या सब लोग हाथ जोड़कर खड़े होगये और स्थिरचित्तसे मधुपर्कसे परशुरामकी पूजा को। वह भी यथा न्यायसे पूजित होकर उन लोगोंके सहित आसनपर बैठे। हे भारत! अनन्तर परशुराम और होत्रवाहन दोनों महात्मा एकत्र बैठकर पहिले अत्यन्त उत्तम कथाओंको कहने लगे, अनन्तर उस कथाके समाप्त होनेपर राजर्षि होत्रवाहन अवसर देखकर महाबली भृगुनन्दन परशुरामजीसे यह अर्थयुक्त मधुर वचन कहने लगे हे परशुराम। यह कन्या काशिराजकी पुत्री और मेरी दौहित्री है. हे कार्य्यविशारद! इसका एक कार्य्य है, उसको सुनो। यह वचन सुन परशुराम अम्बासे बोले, तुम्हारा कौनसा कार्य्य है? मुझसे कहो। तब अम्बा जलती हुई अग्निके समान परशुरामके समीप जाकर अपने कमलके समान हाथोंसे उनके दोनों चरणको स्पर्श कर शिर झुकाकर प्रणाम करके सम्मुख खड़ी हुई और शोकित तथा दुःखित होकर आखोंमें आसू भरके रोदन करती हुई शरणागतकी रक्षा करनेवाले परशुरामजीकी शरणापन्न हुई।

परशुराम बोले, हे राजपुत्री! तुम इस राजसत्तमको जैसी प्रिय हो, मुझे भी वैसी ही हो. इससे तुम्हारे मनमें जो कुछ दुःख है, उसको कहो. मैं तुम्हारे वचनकी रक्षा करूंगा।

अम्बा बोली, हे भगवन्! हे महाव्रत आज मै तुम्हारी शरणागत हुई हूं, इससे महाघोर शोकरूपी कीचड़में फसी हुई मुझको नौकाकी भाति तुम उद्धार करो।

भीष्म बोले, भृगुश्रेष्ठ परशुरामजी उसके रूप, तरुणाई, देह और परम सुकुमारताको देखकर चिन्ता करने लगे, कि यह क्या कहेगी? ऐसा मनमें विचारते हुए कृपायुक्त होकर बहुत समय तक ध्यान करने लगे, अनन्तर बोले, तुम्हारा क्या कार्य्य है, उसे कहो। तब उस कन्याने भार्गवका वचन सुनकर उनके समीपमें विस्तारपूर्व्वक अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त वर्णन किया। परशुरामजी राजपुत्रीके सब वचनोंको सुनकर कार्य्यका निश्चय करके उस कुमारीसे बोले, हे भाविनि! मैं कुरुश्रेष्ठ भीष्मके निकट अपना सन्देश भेजूंगा, वह अवश्य ही मेरे वचनको सुनकर उसे स्वीकार करेगा। गङ्गानन्दन भीष्म यदि इकबारगी मेरी बातोंको न मानेगा, तो मैं अपने शस्त्रोंके प्रतापसे युद्धमें उसको बन्धु बान्धव और अनुयायियोंके सहित भस्म कर दूंगा। अथवा उससे यदि तुम्हारा मन निवृत्त होवे, तो मैं शाल्वराजको तुम्हारे विवाहके निमित्त उपस्थित करूं।

अम्बा बोली, हे भृगुनन्दन! शाल्वराजके विषयमें मेरे पहिले सङ्कल्पको सुनकर ही भीष्मने मेरा परित्याग किया था मैंने सौभराजके समीप आकर उन सब वचनोंको निवेदन किया, परन्तु उन्होंने मेरे चरित्र पर शङ्कित होकर मुझे ग्रहण नहीं किया। हे भृगुनन्दन! इससे सम्पूर्ण विषयको आप अपनी बुद्धिसे निश्चय करके जैसा करना उचित होवे, वैसा कीजिये। महाव्रत भीष्म ही मेरे इस विपदका कारण है, क्योंकि बलपूर्व्वक मुझे ग्रहण करके उन्होंने अपने वशमें किया था, इससे हे महाबाहो! जिसके निमित्त मैंने ऐसा

दुःख पाया है; उस भीष्महीको आप युद्धमें विनष्ट कीजिये। हे भृगु शार्दूल! इससे ही मैं अपने वैरका पलटा लूंगी। हे भार्गव! भीष्म अत्यन्त लोभी नीच और जयके अभिमानमें भरा है; इससे उसका बध करना ही तुमको उचित है। हे विभो! जिस समय भीष्मने मुझको हरण किया था उस समय मेरे मनमें 'किसी प्रकारसे इसका वध कराऊगी; ऐसा ही सङ्कल्प उपस्थित हुआ था। हे राम! इससे अब आप मेरी उसी अभिलाषाको पूर्ण कीजिये। हे महाबाहो! इन्द्रने जैसे वृत्रासुरका संहार किया था, तुम भी भीष्मका उसी भांतिसे वध करो।

१७७ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, तब परशुरामजी "भीष्मका वध करो" बारबार ऐसा ही कहकर रोदन करनेवाली कुमारी अम्बासे बोले, हे सुन्दरी! हे काशिराजपुत्रि! ब्रह्मवादियोंके प्रयोजनके विना अब मैं शस्त्रोंको नहीं ग्रहण करता हूं, इससे तुम्हारा और कौनसा कार्य्य करना होगा उसे कहो। हे राजनन्दिनि! भीष्म और शाल्व दोनो ही मेरे वशवर्त्ती होवेंगे, हे अनिन्दिते! तुम शोक मत करो, मैं तुम्हारे कार्य्यको सिद्ध करूंगा। परन्तु हे भाविनि! विना ब्राह्मणोंकी आज्ञाके मैं कभी शस्त्र ग्रहण नहीं करूंगा, क्योंकि मैंने पहिले ऐसा ही नियम कर लिया है।

अम्बा बोली, हे प्रभो! जिस प्रकारसे होवे, मेरे दुःखको छुड़ाना तुम्हारा कर्त्तव्य कार्य्य है, वह दुःख भीष्महीसे उत्पन्न हुआ है, इससे भीष्मको ही शीघ्र नष्ट कीजिये।

परशुराम बोले, हे राजपुत्रि! तुम यदि कहो, तो भीष्म तुमसे वन्दना करने योग्य होकर भी मेरे वचनसे तुम्हारे दोनो पावों पर अपना शिर रक्खेगा।

अम्बा बोली, हे राम! यदि मेरे प्रिय कार्य्यको तुम करनेकी इच्छा करते हो, तो युद्धमें आये गर्ज्जते हुए असुरकी भांति भीष्मका बध करो। तुमने जो प्रतिज्ञा की है, उसे सत्य करना ही उचित है।

भीष्म बोले, हे राजन्! परशुराम और अम्बाका इस ही प्रकारसे वादानुवाद हो रहा था, उसी समयमें परम धर्म्मात्मा अकृतव्रण ऋषि यह वचन बोले, हे महाबाहो भृगुनन्दन? शरणागता कन्याका परित्याग न कीजिये। आपके सम्मुख युद्धमें आकर भीष्म यदि कहे, कि "मैं परास्त हुआ" अथवा यदि तुम्हारे वचनोंकी रक्षा करे; तौभी इसका कार्य्य पूर्ण होगा और तुम्हारा वचन भी सत्य होगा। हे महाबाहो! पहिले सब क्षत्रियोंको जीतकर तुमने ब्राह्मणोंके समीपमें यह प्रतिज्ञा की थी, कि ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा जो कोई पुरुष ब्राह्मणोंका द्रोही होगा, उससे मैं विनष्ट करूंगा और भयभीत शरणमें आये हुए लोगोंका जीते जी कभी परित्याग न कर सकूंगा, और जो पुरुष सम्पूर्ण क्षत्रिय-कुलको युद्धमें परास्त करेगा, उस तेजस्वी पुरुषका भी मैं बध करूंगा। हे भृगुनन्दन! वह कुरुकुल-धुरधर भीष्म भी इसी प्रकारसे विजयी हुआ है; इससे रणभूमिमें आये हुए उसके सङ्ग युद्ध कीजिये।

परशुराम बोले, हे ऋषिसत्तम! मैं पहिलेकी हुई प्रतिज्ञाका स्मरण करता हूं, तौभी सामपूर्व्वक यदि कार्य्य सिद्ध होगा, तो उसहीका विधान करूंगा। हे ब्रह्मन्! काशिराजकी कन्याके मनका कार्य्य बहुत ही बड़ा है, इससे इसको सङ्गमें लिवाकर मैं स्वयं भीष्मके समीप गमन करूंगा। युद्धमें प्रशंसित भीष्म यदि मेरे वचनोंको न मानेगा तो मेरा यह निश्चय संकल्प है, कि मैं उस अभिमानी क्षत्रियको युद्धमें विनष्ट करूंगा। मेरे हाथसे छूटे हुए सम्पूर्ण बाण मनुष्योंके शरीरमें लगकर

कर उसे जीता नहीं छोडते,वह तुमको पहिले क्षत्रियोंके युद्धमें विदित हो होगया है। महा-तपस्वी परशुराम ऐसा वचन कह-कर उन ब्रह्मवदियोंके सहित प्रस्थान करनेके निमित्त संकल्प करके उठ खड़े हुए। अनन्तर उन तपस्वियोंने वहांपर उस रात्रिको बिताकर सबेरा होते ही होम जप और समस्त नित्यकर्म्म समाप्त करके मेरे बधके निमित्त प्रस्थान किया। हे भारत! अनन्तर परशुरामने उन तपस्वी और कन्याके सहित कुरुक्षेत्रमें आकर सरस्वती नदीके तीर पर विश्राम किया।

१७८ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे राजन्! अनन्तर वह महा-व्रती अत्यन्त तेजस्वी परशुरामने वहांपर स्थित-होके तीसरे दिन मेरे समीप यह सन्देशा प्रेरण किया, कि मैं आया हूं,मेरे प्रिय कार्य्यको पूर्ण करो। वह महातेजस्वी बलवान् तपोनिधि मेरे निमित्त आये हैं, यह सुनकर मैं प्रसन्न चित्तसे ब्रह्मचारी ऋत्विक्, पुरोहित और ब्राह्मणोंके सहित एक गऊ लेकर आतुर-तासे शीघ्र ही उनके समीपमें गमन किया। प्रतापवान् परशुरामजीने मुझको वहांपर उपस्थित देखकर वह पूजा ग्रहण की और मुझसे यह वचन बोले, हे भीष्म! तुमने काम रहित होकर भी कैसी बुद्धि ग्रहण की है, इस काशिराजकी कन्याके स्वयम्बरके समयमें तुमने इसे हरण किया, और फिर किस निमि-त्तसे इसका परित्याग किया? तुम्हारे परित्याग करनेहीसे यह तपस्विनी निज धर्म्मसे भ्रष्ट हो रही है, क्योंकि जब तुमने स्पर्श किया है, तब कौन पुरुष इसको ग्रहण कर सकता है? हे भारत! तुमने इसे हरण किया था, इसी निमित्त शाल्वने इसको अपने घरमें नहीं रक्खा। इससे अब मेरी आज्ञासे तुम इसका पाणिग्रहण करो, हे पुरुषसिंह! यह राज पुत्री निज-धर्म्मका लाभ उठावे। हे पापरहित! इसका ऐसा अवमान करना तुमको उचित नहीं है।

अनन्तर मैंने उनसे यह वचन कहा, हे ब्राह्मण! मैं किसी प्रकारसे भाईके हाथमें अब इसे नहीं समर्पण कर सकता हूं। हे भार्गव! पहिले, इसने मुझसे ही यह वचन कहा था, कि "मैं शाल्वकी हुई हूं" और मैंने भी इसको शाल्वके निकट जानेके निमित्त आज्ञा दी थी। मेरी अनुमतिसे इसने सौभनगरमें गमन किया था; इससे अब भय, दया, अर्थ, लोभ अथवा कामनासे भी मैं क्षत्रिय-धर्म्म "नहीं परित्याग कर सकता हूं, क्योंकि येही मेरा सदाका व्रत है।

हे राजेन्द्र! अनन्तर परशुराम क्रोधसे लाल नेत्र करके मुझसे बोले, तुम यदि मेरे वचनको न मानोगे तो तुमको सेवकोंके सहित आज ही मारूंगा।" हे शत्रुनाशन! परशुराम क्रोध से नेत्र लाल करके गम्भीर स्वरसे बार बार मुझे ऐसा ही कहने लगे। मैंने विनय पूर्व्वक उनसे बार बार प्रार्थना की, तौभी वह शान्त न हुए। तब मैंने उन ब्राह्मण-सत्तम भृगुनन्दनको शिर झुकाकर प्रणाम किया और यह वचन कहा,हे महाबाहो! जो मेरे सङ्ग तुम युद्ध करनेकी इच्छा करते हो,उसका कारण क्या है? हे भार्गव! बालक अवस्थामें तुमने ही मुझे चारो प्रकारकी धनुर्व्विद्या सिखाई थी, मैं तुम्हारा शिष्य हूं।

अनन्तर परशुराम क्रोधपूरित नेत्रसे युक्त यह वचन फिर बोले, हे भीष्म! तुम मुझको अपना गुरु भी समझते हो, और मेरी प्रीतिके निमित्त इस काशिराजकी कन्याको ग्रहण नहीं करते हो, हे कुरुनन्दन! इसके अतिरिक्त और किसी प्रकारसे भी मुझे शान्ति न होवेगी। हे महाबाहो! इससे इस कन्याको ग्रहण करके अपने कुलकी रक्षा करो, तुम्हारे हाथमें

हरण किये जानेहीसे अब इसको खामी नहीं मिलता है। पराये देशके जीतनेवाले परशुरामजीके इस वचनको सुनकर मैंने उनसे फिर कहा, हे ब्रह्मर्षि! तुम निरर्थक श्रम क्यों करते हो? यह किसी प्रकारसे भी नहीं हो सकता। हे जामदग्न्य परशुराम! तुम मेरे गुरु हो, इसहीसे मै तुमसे विनय कर रहा हूं। हे भगवन्! इसको मैंने पहिले ही त्याग किया है, स्त्रियोंमें जो सब दोष अनर्थके मूल होते हैं, उसको जानकर भी कौन पुरुष सापिनको भांति दूसरे पुरुषमें आसक्त हुई स्त्रीको अपने घरमें रख सकता है? हे महाव्रत करनेवाले! मै इन्द्रके भयसे भी धर्म्मका नहीं परित्याग कर सकता हूं, इससे आप मेरे ऊपर प्रसन्न होइये, अथवा तुमको जैसा करना उचित होवे उसे शीघ्र ही पूर्ण करो। हे विभो! हे पापरहित! पुराणमें महात्मा मरुत्तका कहा हुआ यह एक श्लोक सुन लीजिये,"कार्य्याकार्य्य-कौन जाननेवाले, बुरे मार्गसे गमन करनेवाले अभिमानसे युक्त गुरुको भी परित्याग करना उचित है"। तुम मेरे गुरु हो, इस ही निमित्त प्रेमके वशमें होकर मैं बार बार तुम्हारा सम्मान करता हूं, परन्तु तुम गुरुके धर्म्मको नहीं जानते हो, इस कारणसे मैं तुम्हारे सङ्ग युद्ध करूंगा। गुरु और विशेष करके तपोवृद्ध ब्राह्मणको युद्धमें नहीं मार सकता हूं, यही विचारकर मै क्षमा प्रार्थना करता हूं, परन्तु धर्म्मशास्त्रमें लिखा हुआ है, कि जो पुरुष ब्राह्मणको दुष्ट क्षत्रियकी भांति शस्त्र लिये हुए उद्यत और अपराजित तथा युद्धमें प्रवृत्त हुए देखकर मारता है, उसे ब्रह्महत्याका पाप नहीं लगता। हे तपोधन! मै क्षत्रियधर्म्ममें निवास करनेवाला क्षत्रिय हूं। जो पुरुष जिसके सग जैसा आचरण करता है, उसके सग वैसा आचरण करनेसे पाप नहीं होता और अपना अमंगल भी नहीं होता है। धर्म्म अर्थके विचार करनेमें समर्थ, देशकालको जाननेवाले पुरुष यदि अर्थ वा धर्म्म विषयमें कुछ संशय-युक्त होते है, तो अर्थको छोड़कर धर्म्महीका अनुष्ठान करके कल्याणको प्राप्त करते हैं। हे परशुराम! इससे संशय करने योग्य अर्थमें भी जब तुम निरर्थक अन्यायपूर्व्वक प्रवृत्त होते हो, तब तुम्हारे सङ्ग मे अवश्य ही महा संग्राम करूंगा, हे भृगुनन्दन! मेरे बाहुबल और अलौकिक पराक्रमको देखो, ऐसी अवस्थामें मै जो कर सकता हूं, वह अवश्य ही करूंगा। कुरुक्षेत्रमें तुम्हारे सङ्ग युद्धमे प्रवृत्त होऊंगा। हे महातेजस्वी! द्वन्द्वयुद्धके निमित्त इच्छानुसार सज्जित होइये। हे राम! जिस स्थलमें सैकड़ों बाणोंसे पीड़ित होकर तुम मरकर पृथ्वीमें और महा युद्धमें शस्त्रोंसे जलकर सब निर्जित लोकोंको प्राप्त करोगे, उस ही कुरुक्षेत्रमें गमन करो। हे महाबाहो! हे तपोधन! वहांपर युद्धप्रिय तुम्हारे सङ्ग मै अवश्य युद्ध करूंगा। हे राम! पहिले जिस स्थलपर तुमने पिताकी शुद्धि की थी, मैं भी उस स्थानपर तुमको मारकर क्षत्रियकुलके वैरकी पूर्ण करूंगा। हे अभिमानी विप्र! तुम शीघ्र वहांपर गमन करो, मै तुम्हारे इस पुराने घमण्डको दूरकर दूंगा। हे भार्गव! मैंने अकेले ही इस सम्पूर्ण पृथ्वीके क्षत्रियोंको जीता है" बहुत दिनोंसे तुम जो ऐसा गर्व्व किया करते हो, उसका कारण सुनो, उस समयमे भीष्म अथवा भीष्मके समान कोई क्षत्रिय पुरुष नहीं उत्पन्न हुए थे। हे तपोधन! तुम उस समय केवल तृण-समूहमें ही प्रज्वलित हुए थे, परन्तु तेजस्वी क्षत्रिय अब उत्पन्न हुए हैं। हे महाबाहो! जो पुरुष तुम्हारे युद्धमय अभिमान और अभिलाषाको छुड़ा सकता है, वह पराये देशको जीतनेवाला भीष्म अब उत्पन्न हुआ है। हे राम! युद्धमें अवश्य ही मै तुम्हारे इस

अभिमानको छुड़ा दूंगा, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

१७६ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे भारत! अनन्तर परशुराम हंसते हुए मुझसे यह वचन बोले, "हे भीष्म! प्रारब्धहीसे तुम मेरे सङ्ग युद्ध करनेकी इच्छा करते हो। हे कौरव! अब मैं तुम्हारे निमित्त कुरुक्षेत्रमें जाता हूं, हे परन्तप! तुम वहांपर गमन करो, मैं तुम्हारे वचनको प्रतिपालन करूंगा। हे भीष्म! तुम्हारी माता जान्हवी वहांपर तुमको सैकड़ों बाणोंसे युक्त मरा हुआ और गिद्ध कौए सियार आदिका भक्ष्य होते देखेगी। हे राजन्! जिसने तुम्हारे समान मन्दबुद्धि युद्धकामी आतुर पुत्रको उत्पन्न किया है, वह सिद्ध चारणोंसे सेविता भगीरथ-सुता महा यशस्विनी जान्हवी देवी रोदन करनेके अयोग्य होकर भी आज तुम्हें दीन भावसे युक्त मेरे हाथसे मरा हुआ देख कर रोदन करेगी। रे युद्धकी इच्छा करनेवाले! आके मेरे सहित चल, तेरा जो कुछ रथ आदि सामग्री है, सब ग्रहण करके चल।" ऐसे वचनको सुन कर मैंने पराये देशको जीतनेवाले परशुरामको शिर झुका कर प्रणाम करके यह वचन कहा बहुत अच्छा वही होगा। हे राजेन्द्र! परशुराम मुझसे ऐसे वचन कहके युद्धकी इच्छासे कुरुक्षेत्रको गये और मैंने भी नगरमें आके सत्यवतीसे यह सम्पूर्ण वृत्तान्त निवेदन किया। हे भरतसत्तम! अनन्तर मैंने जननीसे आशीर्वाद पाकर ब्राह्मणोंसे पुण्याह वाचन स्वस्तिवाचन कराकर पाण्डुर-वर्ण धनुष कवच धारण करके श्रेष्ठ सूतकुलमें उत्पन्न हुए वीर और घोड़ोंकी विद्याको जाननेवाले, अनेक युद्धोंके देखनेवाले सारथीसे युक्त उत्तम शोभायमान चक्र और बाघके चमड़ेसे घिरा हुआ, शस्त्रोंसे पूर्ण, सब युद्धकी सामग्रीसे युक्त, पाण्डुरवर्णके चार घोड़ोंके सहित सुवर्ण निर्म्मित मनोहर रथपर चढ़के प्रस्थान किया। हे भरतर्षभ! शिरपर पाण्डुर वर्ण मुकुट श्वेत रङ्गके भूषणोंसे भूषित होकर जय आशीर्वाद सुनते हुए हस्तिनापुरसे निकल कर मैंने रण-भूमि कुरुक्षेत्रके निमित्त यात्रा की। हे राजन्! मन और वायुके समान शीघ्र गमन करनेवाले उत्तम घोड़े उस बुद्धिमान् सारथीके चलानेपर अति शीघ्र ही मुझे रथ समेत लेकर महायुद्धके स्थान पर आके प्रस्थित हुए। हे राजन्! मैं और प्रतापवान् परशुरामजी दोनों युद्धके निमित्त वहांपर सहसा आकर खड़े हुए, अनन्तर अत्यन्त तपस्वी परशुरामजी और मैंने अपने अपने उत्तम शङ्खोंको ग्रहण करके जोरसे बजाया; तब उस समय वनवासी तपस्वी और इन्द्रके सहित सब देवता लोग वहां पर दिव्य-युद्धको देखनेमें प्रवृत्त हुए। बहुतसी दिव्य माला, दिव्य-बाजे, और बादलोंके समूह इधर उधर दीखने लगे। अनन्तर परशुरामके अनुयायी सब तपस्वी लोग रणभूमिको घेरकर दर्शक हुए। इसके अनन्तर सब प्राणियोंकी हितैषिणी मेरी माता गङ्गादेवी मूर्त्तिमयी होकर मेरे निकटमें आकर यह वचन बोली,—हे पुत्र! तुम यह क्या करनेकी इच्छा करते हो? हे कुरुश्रेष्ठ! मैं परशुरामजीके निकट जाकर बार बार यह मांगूंगी, कि तुम निज शिष्य भीष्मके सङ्ग युद्ध मत करो। हे पुत्र! तुम क्षत्रिय होकर तपस्वी परशुरामके सङ्ग युद्ध करनेकी इच्छा न करना। अत्यन्त पराक्रमी जो परशुराम क्षत्रियकुलके संहार करनेवाले हैं, वह क्या तुमको विदित नहीं है, जो तुम इस समयमें उनके संग युद्ध करनेकी इच्छा करते हो?

हे भारत! माता इसी प्रकारसे मेरी निन्दा करने लगी। तब मैंने निजमाता गङ्गा-

देवीको दोनो हाथ जोड़के प्रणाम करके धीरे धीरे जो कुछ वृत्तान्त हुआ था, उसे पूर्ण रीतिसे कह सुनाया, और पहिले परशुरामजीके जैसा वचन कहा था और काशीराजकी कन्याका जो कुछ कर्म्म था वह भी सम्पूर्ण वर्णन किया। अनन्तर मेरी माता गङ्गादेवी परशुरामके निकट जाकर "तुम निज शिष्य भीष्मके संग युद्ध मत करो" ऐसा कह कर मेरे निमित्त उनसे विनती करने लगी, परन्तु उन्होंने उस प्रार्थना करनेवाली मेरी माता जाह्नवीसे कहा, कि तुम भीष्महीको रोको; वह मेरी अभिलाषका पूर्ण नहीं करता है, इस ही कारणसे युद्ध करनेके निमित्त उसके निकट आया हूं।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर गङ्गा पुत्रप्रेमके वशमें होकर फिर भीष्मके समीप गई, परन्तु उन्होंने क्रोधसे नेत्र लाल करके उनके वचनोंको नहीं माना। इसके अनन्तर द्विजसत्तम महा तपस्वी परशुराम दीख पड़े और युद्धके निमित्त आवाहन किया।

१८० अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, तब मैंने मुसकुरके रणभूममें स्थित परशुरामसे यह वचन कहा, हे, वीर! मैं रथमें बैठकर पृथ्वीपर पैदल चलनेवाले तुम्हारे संग युद्ध करनेकी इच्छा नहीं करता हूं। हे महाबाहो! यदि युद्ध करनेकी इच्छा हो, तो रथपर चढ़के कवच धारण कीजिये। तब परशुराम हंसते हंसते मुझसे यह वचन बोले, हे भीष्म! पृथ्वी ही मेरा रथ है, वेद सब उत्तम वाहन, वायु सारथी, और वेदमाता गायत्री, सावित्री और सरस्वती मेरे कवच हैं। हे कुरुनन्दन! मैं इन ही सब सामाग्रियोंसे युक्त होकर तुमसे युद्ध करूंगा।

हे गान्धारीनन्दन! सत्य पराक्रमी परशुरामजीने ऐसे वचनोंको कहते कहते बाणोंसे सब दिशाओंको आच्छादित कर लिया। हे महाबाहो! अनन्तर मैंने परशुरामको सहसा प्रकट हुए, अद्भुत रूप, मानस निर्म्मित बड़े नगरके समान, दिव्य घोड़ोंसे युक्त, सावधान, सुवर्णके कवचसे भूषित, चन्द्र-सूर्य्यके चिह्नसे चित्रित, सब प्रकारके उत्तम शस्त्रोंसे सहित, पवित्र अश्वोंसे युक्त रथके बीच स्थित देखा। इस रथमें परशुरामके प्यारे सखा वेदके जाननेवाले अकृतव्रण गोधा, अङ्गुलि त्राण, तूणीर और शरासनधारी होकर परशुरामके सारथीका कार्य्य करते थे। भार्गव "आओ! आओ!" युद्धके निमित्त बार बार ऐसा ही कहकर मुझको प्रसन्नचित्तसे आवाहन करने लगे। मैं उस महातेजस्वी सूर्य्यके समान प्रकाशित महाबली क्षत्रियोंके नाश करनेवाले अकेले परशुरामके सम्मुख अकेला हो गया। अनन्तर उनके तीन् बार बाणके छोड़नेपर मैंने घोड़ोंको रोकके और धनुषको उतारकर पैदल ही उन ऋषिसत्तम गुरुकी पूजा करनेके निमित्त उनके समीप गमन किया, और उनको विधिपूर्व्वक प्रणाम करके यह उत्तम वचन कहा, कि हे परशुराम! आप समान होवें, अथवा मुझसे अधिक होवें; परन्तु मैं आपके सङ्ग युद्ध करूंगा। हे विभो! आप गुरु और धर्म्मात्मा हैं, इससे मुझे जयके निमित्त आशीर्व्वाद करो।

राम बोले, हे कुरुश्रेष्ठ! कल्याणकी इच्छा करनेवाले पुरुषको इसी प्रकारका कर्त्तव्य-कर्म्म करना उचित है, क्योंकि जो बड़ोंके सङ्ग युद्ध करता है, उसे ऐसा ही व्यवहार करना धर्म्मके अनुसार उत्तम है। हे महाबाहो! तुम यदि इस प्रकारसे मेरे पास न आते, तो मैं तुमको शाप देता। हे कौरव! अब तुम धीरज धरके सावधान् होकर युद्ध करो। हे राजन्! मैं स्वयं तुमको जीतनेको उद्यत हुआ हूं, इससे तुम्हारे जयकी अभिलाषा नहीं कर सकता

हूं; अब तुम जाओ, धर्म्म पूर्व्वक युद्ध करो, मैं तुम्हारे चरित्रसे प्रसन्न हुआ हूं।

अनन्तर मैंने उन्हें नमस्कार करके शीघ्र रथपर चढ़कर सुवर्ण-भूषित अपने शङ्खको फिर बजाया। हे राजन्! इसके अनन्तर उनका और मेरा परस्पर जयकी अभिलाषासे बहुत दिनतक युद्ध हुआ। पहिले परशुरामने नव सौ साठ चोखे कङ्कपत्रसे युक्त बाणोंसे मेरे रथपर प्रहार किया और मेरे रथके चारों घोड़े और सारथीको बाणोंकी वर्षासे विकल कर दिया। तौभी मैं इस प्रकारसे दंशित होकर संग्राममें निर्भय खड़ा ही था। अनन्तर देवता और ब्राह्मणोंको विशेषरूपसे नमस्कार करके रणभूमिमें स्थित उन ऋषिराज परशुरामसे यह वचन कहा हे ब्रह्मन्! तुम्हारे मर्य्यादा रहित होनेपर भी मैं तुम्हारे गुरुपनेका सम्मान करता हूं और धर्म्म संग्रह विषयमें और भी कुछ कर्तव्य-कर्म्मको कहता हूं, उसे सुनिये। तुम्हारे शरीरमें जो सब वेद और अत्यन्त ही ब्राह्मणत्व है और उससे जो तुमने बहुत ही तपस्या सञ्चित की है; उन सबके ऊपर मैं प्रहार नहीं करताहूं, तुमने जो क्षत्रिय धर्म्मका आसरा ग्रहण किया है, मैं उसहीके ऊपर प्रहार करता हूं, क्योंकि शस्त्र धारण करनेहीसे ब्राह्मण क्षत्रियत्वको प्राप्त करता है। हे वीर! तुम मेरे धनुषके पराक्रम और बाहुबलको देखो। मैं इस उत्तम पानीमें बुझाये हुए बाणसे तुम्हारा कार्मुक काटता हूं। हे भरतर्षभ! ऐसा कहकर मैंने उनके ऊपर एक तेज भल्ल चलाया और उसीसे उनके धनुषका अग्रभाग (शिरा) काटके पृथ्वीमें गिरा दिया। उनके रथपर भी सैकड़ों नतपर्व्व बाणोंको चलाया, हे राजन्! पीछे शरीरमें पृथक् पृथक् विद्ध होकर पीके सर्पकी भांति वे सब बाण शरीरसे रक्त बहाने लगे। उस समयमें परशुराम रक्तपूरित देहसे ऐसे शोभित हुए, जैसे धातुओंके बहनेसे सुमेरु पर्व्वत तथा हेमन्त ऋतुके अन्तमें अशोक और वसन्त ऋतुमें किंशुक (पलाश) का फूल शोभायमान लगता है। अनन्तर वह क्रोधसे युक्त होकर दूसरा धनुष लेकर सुवर्ण पंखसे युक्त उत्तम पानीमें बुझे हुए बाणोंकी वर्षा करने लगे। वह महा वेगशाली सर्पके विष वा अग्निके समान भयङ्कर अनेक बाण मेरे शरीरमें लगकर मुझे कंपाने लगे। तब मैंने किसी प्रकार युद्धमें फिर स्थिर होके क्रोधमें भरके सौ बाण परशुरामके ऊपर चलाया, वे सब बाण सूर्य्यके तेज और विषैले सर्पके समान परशुरामके शरीरमें लगनेसे वह चेतना रहितके समान होगये। हे भारत! उस समय मैं कृपासे युक्त होकर अपने मन ही मन कहने लगा, कि हाय! मैंने क्षत्रियधर्म्मके ग्रहण करनेहीसे यह पाप किया है, यह धर्म्मात्मा ब्राह्मण और विशेष करके मेरे गुरु हैं, सो उनको मैंने अपने बाणोंसे पीड़ित किया। हे राजन्! मैं शोकसे पूरित होकर बार बार ऐसा ही विलाप करने लगा, उसके अनन्तर फिर मैंने परशुरामके ऊपर प्रहार नहीं किया। अनन्तर भगवान् सूर्य्य अपनी किरणोंसे पृथ्वीको तपाकर सन्ध्याके समय अस्त होगये और युद्ध भी निवृत्त हुआ।

१८१ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे प्रजानाथ! अनन्तर मेरे निपुण सारथीने अपने, घोड़ोंके और मेरे शरीरके सब शल्य निकाले। दूसरे दिन सवेरे सूर्य्यके उदय होनेपर स्नान कराके अत्यन्त तेजस्वी घोड़ोंको रथमें जुटाकर मुझे रणभूमिमें ले आया, उसके अनन्तर युद्ध आरम्भ हुआ। प्रतापवान परशुरामने मुझे रथमें बैठे हुए, कवचसे युक्त शीघ्र आया हुआ देखकर

अत्यन्तही अपनी रथसज्जा की। अनन्तर मैं युद्धको अभिलाषा करनेवाले परशुरामकी आगमन करते हुए देखकर अपने उत्तम धनुषको त्याग, शीघ्र ही रथसे उतरकर, पहिलेकी भाति उन्हें प्रणाम करके फिर रथपर चढ़के युद्ध करनेके निमित्त उनकेसम्मुख निर्भय खड़ा हुआ। इसके अनन्तर बहुतसे बाणोंकी वर्षा करके एक दूसरेको पीड़ित करने लगे। परशुराम जोने फिर मेरे ऊपर उत्तम पानोमें बुझे जलते हुए सर्प-मुख बाणोंको चलाया। उस समय मैंने सहस्रों और सैकड़ों बाणोंसे उन सबको मार्गहीमें काटना आरम्भ किया। तब महाप्रतापी परशुरामने मेरे ऊपर दिव्य अस्त्रोंको चलाना आरम्भ किया। मैने उसमे भी अपनी अधिक श्रेष्ठता दिखानेके निमित्त उत्तम शस्त्रोंसे उन अस्त्रोंको भी काट डाला। इसके अनन्तर आकाश-मण्डलसे महा गम्भीरनाद उत्पन्न होने लगा। हे भारत। अनन्तर मैंने परशुरामके ऊपर वायव्य-अस्त्र चलाया और उन्होने भी गुह्यक अस्त्रसे उसे काट गिराया। तब मैंने मन्त्र पढ़के आग्नेय अस्त्र चलाया, परशुरामने वारुणास्त्रसे उसका संहार किया। इसी प्रकारसे मैं भी रामके सब दिव्य अस्त्रोंको निवारण करने लगा, और उन्हाने मेरे सब दिव्य शस्त्र निवारण किये। हे राजन्। अनन्तर महातेजस्वी और प्रतापी परशुरामने अत्यन्त क्रुद्ध होकर मुझे बायो ओर करके मेरे छातोमें शस्त्र प्रहार किया, उससे मैं चेतरहितकी भाति रथपर गिर गया। तब सारथीने मुझे इस प्रकारसे मूर्च्छित देख कर शीघ्र ही रथको लौटाया। हे राजन्। अकृतव्रण आदि रामके अनुयायी लोग और काशिराजको कन्या भार्गवके बाणसे मुझे अत्यन्त पोड़ित, विद्ध, ग्लानिसे युक्त, अचेत और रणसे पराजित होते देख कर आनन्दित होने लगे। अनन्तर जब मुझे चेत हुआ और मेरी बुद्धि ठीक हुई, तब मैंने सारथीसे कहा, हे सूत! मैं पीड़ा रहित और सावधान हुआ हूं, इससे तुम मुझको परशुरामके समीप ले चलो। हे कौरव मेरा सारथी मुझे उत्तम घोड़ोंसे युक्त शोभायमान रथपर लेकर चला और वायुके समान घोड़े भी अत्यन्त शीघ्रतासे नाचते हुए चले। अनन्तर मैंने परशुरामके समीप जाकर क्रोधपूर्व्वक उनके ऊपर बाणोंकी वर्षा करनी आरम्भ की। उन्होंने तीन तीन बाणोंसे मेरे सब बाण सरलभावसे मार्गहीमें काट डाले, इस प्रकारसे मेरे सैकड़ों तथा सहस्रों बाण परशुरामके बाणोंसे दो दो टुकड़े होकर पृथ्वीपर गिर पड़े। तब मैंने परशुरामके बध करनेकी इच्छासे साक्षात् काल दण्डके समान अत्यन्त प्रकाशित जलता हुआ अस्त्र चलाया, उसके लगनेसे वह मूर्च्छित होके पृथ्वोमें गिर पड़े। हे भारत! सूर्य्यके पतित होनेसे जगत् जिस प्रकारसे व्याकुल हो सकता है, परशुरामके पृथ्वीपर गिरनेसे सबने उसी भातिसे हाहाकार किया। वह सब तपस्वी और काशिराजको कन्या आदि अत्यन्त व्याकुल होके उनके निकट गये और धोरे धोरे उन्हें आलिङ्गन करके जलसे युक्त शीतल हाथोंसे स्पर्श करके और जय आशीर्व्वादसे उनको स्तुति करने लगे। अनन्तर परशुराम उठ कर धनुषपर बाण चढ़ाके विह्वल-वचनसे मुझे कहने लगे, "भीष्म। खड़ा रह। खड़ा रह। यही मारा गया।" संग्राममें वह बाण धनुषसे छूट कर अत्यन्त बेगसे मेरी बायीं ओर हृदयमें लगा उसके लगनेसे मैं वायुसे उखड़ते हुए वृक्षको भांति व्याकुल होगया। परशुरामने शीघ्रता से अपना शस्त्र चलाकर मेरे सब घाड़ोंका मार डाला और क्रोधपूर्व्वक लोम युक्त बाणोके जालसे मुझे छिपा दिया। मैंने भी उनके शस्त्रोंके निवारण करनेके निमित्त शीघ्र शस्त्र चलाया। हे भारत। परशुरामके और मेरे वे सब बाण आकाशमे व्याप्त होकर ऊपर हो

रह गये ; इससे बाणोंके जालसे आकाश ऐसा छा गया, कि सूर्य्यकी किरण प्रकाशित नहीं होती थी, और वायुका शीघ्र चलना भी रुक गया। इससे वायुकी सनसनाहट, बाणोंकी चोट, और सूर्य्यकी किरणोंसे अग्निकी उत्पत्ति हुई। तब सम्पूर्ण बाण अग्निसे भस्म होकर पृथ्वीमें गिर पड़े। हे कौरव! अनन्तर परशुराम खूबही क्रोधसे पूरित होकर सौ, हजार दश-हजार, लाख, अर्ब्बुद, खर्ब्ब, निखर्ब्ब आदि अनगिनत बाणोंको अत्यन्त शीघ्रतासे वर्षाने लगे। मैं भी विषधारी सर्पके समान अपने बाणोंसे उनके सब बाणोंको काट काट पृथ्वीमें गिरा दिया। हे भरत सत्तम! उस समय इसी प्रकारसे घोर संग्राम होने लगा।

१८२ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे भरतर्षभ! दूसरे दिन मेरा और परशुरामका समागम होने पर फिर अत्यन्त घोर युद्ध हुआ, वह दिव्य शस्त्रोंके जाननेवाले धर्म्मात्मा प्रतापी परशुराम प्रतिदिन अनेक दिव्य-अस्त्रोंको चलाने लगे, और मैं भी अपने अस्त्रोंसे उन सब शस्त्रोंको निवारण करने लगा। हे भारत! मैं अपने प्राणकी आशा छोड़कर युद्ध करने लगा। इसी प्रकारसे अनेक शस्त्रोंके चलने और उनका निवारण होनेपर महातेजस्वी परशुराम भी प्राणपण करके युद्ध करने लगे। अस्त्रोंके विफल होनेपर महात्मा परशुरामने प्रकाशमान उल्काके समान जलती हुई सब लोकोंमें तेजसे व्याप्त होनेवाली महाघोर शक्ति चलायी। मैंने भी अपने तेज बाणोंसे उस सम्मुख आनेवाली प्रलयकालके सूर्य्यके समान प्रकाशित शक्तिका तीन खण्ड करके पृथ्वीमें गिरा दिया, तब शीतल-वायु चलने लगा। हे भारत! उस शक्तिको कटकर गिरती हुई देखकर परशुरामने क्रोधमें भरकर और भी बारह महा भयङ्कर शक्तियां चलायी। तेजस्विता और शीघ्रतासे युक्त होनेसे उन शक्तियोंके रूपका वर्णन करना बहुत कठिन है रूपका मैं क्या वर्णन करूं। सब दिशाओंसे अग्निके लुक्काके समान नाना रूपसे युक्त, प्रलय कालके बारह आदित्यके समान तेजसे जलती हुई उन शक्तियोंको देख कर हो मैं विह्वल होगया। अनन्तर उनको सम्मुख आई हुई जानकर मैंने अत्यन्त उत्तम बारह बाण चलाई और उनहीसे उन महा घोर शक्तियोंको भी भस्म कर दिया, हे राजन्! तब महात्मा परशुरामने फिर सुवर्णके दण्डसे युक्त अत्यन्त विचित्र जलती हुई उल्काके समान महाभयङ्कर बहुतसी शक्तिया चलायी, मैंने उन्हें चर्म्म (ढाल) से रोककर तरवारसे काटा और दिव्य बाणोंको चलाकर सारथीके सहित उनके दिव्य घोड़ोंको बाणोंसे छा लिया। तब हैहयवंशीय कार्त्तवीर्य्य अर्ज्जुनके नाश करनेवाले महात्मा परशुरामने केंचुलीसे छूटे हुए सर्पकी भांति सुवर्णभूषित उन शक्तियोंको कटती हुई देखकर अत्यन्त ही क्रोधके वशमें होकर दिव्य अस्त्रोंको चलाना आरम्भ किया। अनन्तर प्रचण्ड तेजसे युक्त प्रकाशित शलभ-समूहकी भांति उन सब शस्त्रोंने आकर मेरे रथके घोड़े और रथसमेत सारथीको सब ओरसे आच्छादित करते हुए रथकी दोनों धुरी तथा रथके पहिये आदिको तोड़कर गिरा दिया। अनन्तर उनके बाणोंकी वर्षा शेष होनेपर मैंने भी अपने तेज बाणोंकी बर्षा करनी आरम्भ की। उस समय वह महात्मा परशुराम बाणोंके लगनेसे रक्त मोचन करने लगे। मेरे बाणोंसे परशुराम व्याकुल होगये, और मैं भी उनके बाणोंसे अत्यन्त ही विद्ध हुआ। अन्तमें सन्ध्या-समय सूर्य्यके अस्त होनेपर युद्धका होना बन्द हुआ।

१८३ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे राजेन्द्र ! अनन्तर प्रातःकाल सूर्य्यके उदय होने पर मेरे सङ्ग फिर परशुरामका युद्ध आरम्भ हुआ। प्रहार करनेवालोंमें श्रेष्ठ परशुरामजी अपने भ्रमणशील रथपर स्थित होके पर्व्वतके ऊपर जल वर्षानेवाले बादलकी भांति मेरे ऊपर बाणोंकी वर्षा करने लगे; उससे मेरा सुहृद सारथी परशुरामके बाणोंसे पीड़ित होकर मेरे अन्तःकरणको दुःखित करता हुआ रथसे पृथ्वीपर गिर पड़ा। अत्यन्त ही मूर्च्छाके वशमें होके परशुरामके बाणोंसे पीड़ित होकर वह मेरा सारथी मुहूर्त्त भरमें मर गया और मैं भी उस समयमें भयभीत होगया। सारथीके मारे जानेपर मैं डोलायमान चित्तसे उसके निमित्त शोक कर रहा था, उस ही समयमें महात्मा भार्गवने मेरे ऊपर कालके समान बाण चलाया। मैं सूतके अभावसे विपदग्रस्त होकर विलाप कर रहा था, तौभी परशुरामने बलपूर्व्वक धनुषपर बाण चढ़ाकर मुझे पीड़ित किया। हे राजन्! वह रक्तको पीनेवाला भयङ्कर बाण मेरी छातीमें लगकर मेरे सहित पृथ्वीमें आपड़ा तब परशुराम मुझे पृथ्वीमें गिरा हुआ देखकर प्रसन्न हो ऊंचे स्वरसे बादलके समान बार बार गर्ज्जने लगे। हे राजेन्द्र! मुझे इस प्रकारसे चेतरहित देखकर परशुराम अनुचरवृन्दके सहित हर्षित होकर सिंहनाद करने लगे। वहांपर मेरे निकट जो कौरव थे, तथा जो लोग युद्ध देखनेके निमित्त आये थे, वे लोग मुझे इस प्रकारसे पड़ा हुआ देखकर बहुत ही दुःखित हुए। हे राजसिंह! अनन्तर मैंने रथसे गिरकर देखा कि रणभूमिमें सूर्य्य और अग्निके समान तेजस्वी आठ ब्राह्मण मुझे चारों ओरसे घेरकर अपनी भुजाओंसे धारण किये हुए हैं। उन ब्राह्मणोंसे रक्षित होकर मैंने पृथ्वीको स्पर्श नहीं किया, उन लोगोंने बन्धुकी भांति मुझे अन्तरिक्षहीमें थाम रक्खा था, मैं लम्बी सांस छोड़ रहा था और वह लोग जलसे मुझे सावधान कर रहे थे। हे राजन्! उस समयमें वे ब्राह्मण मुझे धारण करके बार बार यह कहने लगे "तुम भय मत करो, तुम्हारा कल्याण होगा।" उन लोगोंके वचनसे मैं तर्पित और सावधान होके उठ खड़ा हुआ और देखा, कि नदियोंमें श्रेष्ठ मेरी माता गंगा-देवी रथमें बैठी है। हे राजेन्द्र! मेरी माता गंगाने युद्धमें मेरे घोड़ोंको भी सावधान किया था। अनन्तर मैं जननी और पितरोंकी चरण-वन्दना करके रथपर चढ़ा। तब मेरी माता रथ, घोड़े और सब सामग्रियोंके सहित मेरी रक्षा करने लगी। परन्तु मैंने हाथ जोड़के विनय पूर्व्वक उन्हें बिदा किया और स्वयं ही वायुके समान शीघ्र चलनेवाले घोड़ोंको चलाकर सन्ध्या पर्य्यन्त परशुरामके सङ्ग युद्ध किया हे भरतश्रेष्ठ। उनके ऊपर मैंने एक हृदयको छेदनेवाला महाबलशाली बाण चलाया। मेरे उस बाणसे पीड़ित हो, परशुराम मोहके वशवर्त्ती होकर धनुषको छोड़के दोनों घुटनोंसे पृथ्वीको अवलम्बन करके खड़े रहे। उन महातेजस्वी परशुरामके पृथ्वी टेकके खड़े होने पर आकाशसे रुधिरकी वर्षा होने लगी, बादल-रहित बिजली और सैकड़ों उल्कापात होने लगे सूर्य्य छिप गया, वायु बड़े जोरसे बहने लगी, पृथ्वी जलने लगी गिद्ध कौए तथा बगुला आदि मांस भक्षण करनेवाले पक्षी हर्षित होकर इधर उधर घूमने लगे, सब दिशाएं जलने लगीं शियार महाघोर शब्द करने लगे और बिना बजाये ही नगाड़े अत्यन्त कर्कश-शब्दसे बजने लगे। हे भारत! महात्मा परशुरामके चेत-रहित होकर पृथ्वीपर गिरनेसे महाघोर भयङ्कर ये सब उत्पातके चिन्ह उत्पन्न हुए। अनन्तर भगवान् सूर्य्य धूलसे छिपकर अस्त होगये और सुख देनेवाली शीतल वायुसे युक्त रात्रिका समय हुआ, तब

मैंने भी युद्ध करना बन्द किया। हे राजन्। इसी प्रकारसे सन्ध्याको निवृत्त और प्रातःकाल फिर युद्धका आरम्भ होने लगा। इसी भांतिसे तेईस दिन महा घोर संग्राम हुआ।

१८४ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे राजेन्द्र! अनन्तर रात्रिके समयमें मै ब्राह्मण, पितर, देवता, रात्रिको भ्रमण करनेवाले भूतवृन्द और राजगणको शिर झुका कर प्रणाम करके एकान्त स्थान-पर शय्याके उपर मन ही मन यह चिन्ता करने लगा, कि आज बहुत दिन हुआ परशुरामके सङ्ग मेरा महा-भयङ्कर दारुण-संग्राम हो रहा है; तो भी मै महाबलसे युक्त महावीर विप्रको पराजित नहीं कर सकता हूं। प्रतापी परशु-रामको युद्धमें पराजित करनेकी यदि मुझे सामर्थ हो, तो देवता लोग प्रसन्न होके आज रात्रिके समयमें मुझे दर्शन देवें। हे राजन्। मैं बाणोंके लगनेसे घायल होके इसी प्रकारसे दाहिनी ओर शय्यापर सोया था, उसी समयमें प्रातःकालके पहिले ही जिन ब्राह्मणोंने मुझे रथसे गिरनेपर उठाया और मुझे ग्रहण करके कहा था, तुम्हें भय नहीं है उन्हीं लोगोंने स्वप्नमें मुझे दर्शन दिया। और उन सबोंने मुझे घेरकर जो वचन कहा, वह तुम सुनो। वह लोग बोले, भीष्म उठो, तुमको कुछ भी भय नहीं है; हम लोग तुम्हारी रक्षा करेंगे. क्योंकि तुम हम लोगोंके ही शरीर हो, हे भरतर्षभ! परशुराम किसी प्रकारसे भी तुम्हें युद्धमें पराजित न कर सकेंगे, बल्कि तुम ही उन्हें परास्त करोगे। हे भरतश्रेष्ठ। विश्वकर्म्माका बनाया यह जो प्रस्वाप नाम उत्तम प्राजापत्य अस्त्र है। वह तुमको युद्धके समयमें विदित हो जायेगा, क्योंकि पूर्व्वजन्ममें भी यह तुमको विदित था। हे भारत। परशु-राम तथा पृथ्वीके दूसरे पृथ्वीके किसी पुरुषने आजतक इसके तत्वको नहीं जाना है। हे भारत! इससे तुम इस अस्त्रको स्मरण करो, और दृढताके सहित चलाओ। हे भारत। इस शस्त्रसे परशुरामकी मृत्यु नहीं होवेगी, और तुमको भी ब्राह्महत्याका पाप नहीं लगेगा। हे भीष्म। तुम्हारे बाणके बलसे पीड़ित होकर परशुराम केवल शयन मात्र करेंगे। अनन्तर उनको जीतकर तुम ही अपने उत्तम सम्बोधन अस्त्रसे उठाना, हे राजेन्द्र। इससे प्रातःकाल उठकर तुम ऐसा ही करो, सोना और मरना दोनोंको हम लोग समान ही समझते हैं। हे कौरव। परशुरामकी कभी मृत्यु न हो सकेगी, इससे तुम अब इस प्रस्वाप अस्त्रको धनुषपर चढाओ। वह मूर्त्तिमान् समान रूपवाले आठों ब्राह्मण ऐसा वचन कह कर वहीं अन्तर्द्धान होगये।

१८५ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे राजेन्द्र! अनन्तर रात्रिके बीतनेपर मैं निद्राके उठ उस स्वप्नके वृत्तान्तको मनमें विचार कर हर्षित हुआ। इसके बाद परशुरामका और मेरा सब लोकोंको विस्मित करनेवाला परम अद्भुत संग्राम आरम्भ हुआ। हे भारत। उस समय परशुरामने मेरे ऊपर बाणोंकी वर्षा की और मैंने भी उसे निवारण किया। अनन्तर महातपस्वी भार्गवने पहिले दिनके कोपसे क्रुद्ध होकर मेरे ऊपर इन्द्रके वज्र समान कठोर साक्षात् यमदण्डके समान शक्ति चलायी, हे भरतर्षभ। वह महाघोर शक्ति जलती हुई अग्निसे समान प्रकाशित होकर सब दिशाओंको प्रज्वलित करती हुई अन्तमें बिजली अग्निके समान शीघ्र ही आकर मेरे कन्धेमें लगी। हे महाबाहो। तब परशु-रामके शस्त्रसे घायल होकर गेरूकी धार बर्षनेवाले पर्व्वतकी भांति मेरे शरीरसे रक्त

बरसने लगा। तब मैं अत्यन्त क्रोधित होकर परशुरामकी ओर सर्प विषके-समान मृत्युरूपो बाण चलाया। हे महाराज! वह बाण वीरवर द्विजसत्तम परशुरामके मस्तकमें लगा, उससे शृङ्गयुक्त पर्व्वतको भांति उन्होंने क्रोधपूर्व्वक धनुषको खींचकर शत्रुओंका नाश करनेवाला कालके समान बाण चलाया। शह फुफुकार करता हुआ सर्पके समान गर्जता हुआ बाण मेरी छातीमें लगा उसके लगनेसे मैं रक्तसे भीगकर पृथ्वीमें गिर पड़ा, परन्तु फिर सावधान होकर बुद्धिमान् परशुरामको ओर वज्रके समान जलती हुई प्रकाशित शक्ति चलायो। हे राजन्! वह शक्ति द्विजसत्तम परशुरामकी छातोमें लगो, उससे वह विह्वल हाके कांपने लगे। तब उनके प्यारे मित्र महातपस्वो अकृतव्रण उनको आलिङ्गन करके अनेक प्रकारके उत्तम और शुभ वचनोंसे हर्षित करने लगे। अनन्तर महाव्रत करनेवाले परशुराममने क्रोधपूर्व्वक ब्रह्मास्त्र चलाया। तब मैंने उसके निवारण करनेको परम-ब्रह्मास्त्रका प्रयोग किया। हे भारत! वह महा अस्त्र प्रलयकालके समान प्रज्वलित होने लगे। हे भारत सत्तम! परशुराम तथा मेरे पास न पहुंच कर दोनों ब्रह्मास्त्रोंका आकाशके बीचमें ही समागम हुआ। उस समय सम्पूर्ण पृथ्वी और आकाश तेजसे युक्त होगया और सम्पूर्ण प्राणी अत्यन्त ही पीड़ित होने लगे। दोनां अस्त्रोंके तेजसे पोड़ित होकर ऋषि, गन्धर्व्व, देवता आदि सब हो अत्यन्त दुःखित हुए। पर्व्वत, वन और वृक्षोंके सहित पृथ्वो कांपने लगी और प्राणी मात्र अत्यन्त पीड़ित होकर विषाद करने लगे आकाश मण्डल प्रज्वलित होने लगा, सब दिशाओंमें धूआ भर गया, इससे आकाशचारी भी आकाशमें निवास न कर सके। अनन्तर देव, असुर और राक्षसोंसे युक्त सब लोकोंमें हाहाकार होने लगा। "यही उत्तम समय है" विचार करके मैंने शीघ्र ही उन ब्राह्मणोंके वचनके अनुसार प्रस्वापास्त्र चलानेकी इच्छा की, उस समय वह विचित्र अस्त्र भी मेरे मनके बीच प्रकाशित होगया।

१८६ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे राजन्! अनन्तर आकाशसे "हे कौरव नन्दन भीष्म! प्रस्वापास्त्र मत चलाओ" इसी प्रकारसे महाघोर शब्द हुआ, तौभी परशुरामकी ओर मैंने उस अस्त्रको चलाया। तब नारद मुझसे बोले, हे कौरव! देखो वह आकाशमें सब देवता स्थित है, ये सब लोग तुमको निवारण करते हैं, इससे तुम प्रस्वापास्त्र मत चलाओ। हे भारत! परशुराम तपस्वी और ब्रह्मनिष्ठ ब्राह्मण हैं, विशेष करके तुम्हारे गुरु हैं, इसके किसी प्रकारसे उनका अपमान मत करो। हे राजेन्द्र! फिर मैंने उन आठ ब्रह्मवादी ब्राह्मणोंको आकाशमें स्थित देखा, वह लोग हंसके मुझसे यह वचन बोले, "हे भारत श्रेष्ठ! नारद जो कहते हैं, वही करो, क्योंकि यह लोकका परम कल्याण करने वाला वचन है।"

अनन्तर मैंने उस महाघोर प्रस्वापास्त्रका संहार करके विधिपूर्व्वक ब्रह्मास्त्र ही दीपित किया। हे राजसिंह! तब क्रोधमें भरे हुए परशुराम उस प्रस्वापनास्त्रको रुकता हुआ देखकर सहसा यह वचन बोले, भीष्मने मुझे पराजित किया मैं अत्यन्त ही मन्द-बुद्धि हूं। इसके अनन्तर परशुरामने माननीय अपने पिता और पितामह आदि पितरोंको देखा। वह लोग उसी स्थान पर उनको घेर कर खड़े हुए और उस समय उन्हें शान्त करनेके निमित्त यह वचन बोले, "हे तात! तुम फिर कभी किसी प्रकारसे भी ऐसा कर्म्म मत करना,— भीष्म तथा क्षत्रियोंके सङ्ग अब कभी युद्ध कर-

नका उत्साह मत करो। हे भृगुनन्दन! युद्ध क्षत्रियोंका ही धर्म्म है। ब्राह्मणोंका वेद पढ़ना और व्रत करना ही परम धर्म्म है। पहिले किसी कारणके उपलक्षमें हमलोगोंने तुमको इन शस्त्रोंको धारण करनेके निमित्त कहा था, और तुमने भी महाघोर कठिन कार्य्यका अनुष्ठान किया था। हे महाबाहो! संग्राममें भीष्मके संग तुम्हारा यह युद्ध यहां ही तक हुआ। हे पुत्र! इससे अब तुम इस रणभूमिसे बाहर चलो। हे भार्गव! तुम्हारा धनुष धारण करना भी आज ही तक रहा, इससे हे पुत्र! अब तुम इसे विसर्ज्जन करके तपस्या करो। सम्पूर्ण देवता लोग इस शान्तनुनन्दन भीष्मको 'हे कुरुश्रेष्ठ! इस संग्रामसे निवृत्त होजाओ, गुरु परशुरामके संग युद्ध मत करो, इनका युद्धमें पराजित करना तुमको उचित नहीं है। हे गंगानन्दन! रणभूमिमें इनका यथा उचित सम्मान करो, बारबार ऐसे वचनोंको कहके निवारण करके तुम्हारे ऊपर कृपा की है। हे पुत्र! इससे हम लोग भी तुम्हारे गुरु हैं, इस ही कारणसे तुम्हें निवारण करते हैं। हे भार्गव! शान्तनुके वीर्य्य और गंगाके गर्भसे उत्पन्न हुए महायशस्वी वसुको तुम कैसे पराजित कर सकते हो? हे पुत्र! भीष्म वसुओंमेंसे एक प्रधान पुरुष है, इससे प्रारब्धसे जो तुम जीते बचे हो, यही बहुत है। इससे अब तुम युद्धसे निवृत्त होजाओ, स्वयम्भू विधाताने इन्द्रपुत्र बलवान् पाण्डवश्रेष्ठ अर्जुनको समयके अनुसार भीष्मके वधके निमित्त उत्पन्न किया है।'

भीष्म बोले, परशुरामने अपने पिता, पितामह आदि पितरोंके वचनको सुनकर यह कहा, कि "मैं युद्धसे कभी भी निवृत्त न होऊंगा' ऐसा व्रत धारण किया है, और पहिले भी युद्धसे कभी निवृत्त नहीं हुआ हूं। पितामहगण! इससे आप लोग गंगातनय भीष्मजीको युद्धसे निवृत्त कीजिये, मैं इस युद्धसे किसी प्रकारसे भी निवृत्त न होऊंगा। हे राजन्! अनन्तर वह ऋचिक आदि मुनि लोग नारदके सहित मिलकर मेरे निकट आकर बोले, "हे तात! युद्धमें निवृत्त हो जाओ, इस द्विजोत्तमका सम्मान करो तब मैंने भी क्षत्रिय-धर्म्मको प्रतीक्षासे उन सबसे कहा, लोकमें मेरा यह व्रत है, कि मैं युद्धसे कभी पीठ दिखाकर निवृत्त न होऊंगा। मैं लोभ, कृपणता, भय और अर्थ आदि किसी प्रकारसे भी अपने सनातन धर्म्मको नहीं छोड़ सकता हूं, यही मेरा स्थिर निश्चय है, हे राजेन्द्र! अनन्तर नारद आदि सब मुनि और मेरी माता भागीरथी तथा ऋषि लोग रणभूमिमें आये, तौभी मैं उसी प्रकारसे धनुष बाण धारण करके युद्धके निमित्त दृढ़ निश्चयसे खड़ा था। तब वह सब कोई मिलकर भृगुनन्दन परशुरामके निकट जाकर यह वचन बोले, हे भार्गव! ब्राह्मणोंका हृदय अत्यन्त ही कोमल होता है, इससे तुम हो शान्त हो जाओ। हे राम! हे द्विजोत्तम! इस युद्धसे निवृत्त होजाओ। हे भृगुनन्दन! भीष्म तुम्हारा अवध्य और तुम भी भीष्मके अवध्य हो। वह पितर लोग रणभूमिको रोककर सब कोई ऐसे ही वचन कहते कहते परशुरामसे शस्त्र त्याग करवाया। अनन्तर मैंने उन प्रकाशित ग्रहसमूहकी भांति ब्रह्मवादी आठ ऋषियोंको फिर देखा, वह लोग युद्धमें स्थित मुझको प्रीतिपूर्वक यह वचन बोले, हे महाबाहो! लोकके हितका कार्य्य करो, विनयपूर्वक अपने गुरु परशुरामके निकट जाओ, तब मैंने परशुरामको सुहृद लोगोंके वचनसे निवृत्त होता हुआ देखकर लोगोंके हितके निमित्त अपने सुहृद पुरुषोंके वचनको ग्रहण किया। अनन्तर शस्त्रोंसे अत्यन्त पीड़ित होकर भी मैंने परशुरामके समीपमें

जाकर उन्हें प्रणाम किया, महातपस्वी परशुराम भी प्रेमपूर्व्वक हंसते हुए मुझसे यह वचन बोले हे भीष्म। इस पृथ्वीके बीच सम्पूर्ण क्षत्रियोंमें भी तुम्हारे समान कोई क्षत्रिय पुरुष विद्यमान नहीं है, इस युद्धमें तुमने मुझको अत्यन्त ही सन्तुष्ट किया है, इससे अब गमन करो। मुझसे ऐसा वचन कहकर परशुराम-जीने सब महात्माओंके बीच मेरे सम्मुख ही उस कन्याको आवाहन करके दीन वचनसे नीचे कही हुई बातोंका कहने लगे।

१८७ अध्याय समाप्त।

परशुराम बोले, हे भामिनि! मैंने अपने पुरुषार्थके अनुसार पराक्रमको प्रकाशित करके जो युद्ध किया, उसे सब लोगोंने ही देखा है। मैंने अनेक उत्तम अस्त्र शस्त्र चलाए, तोभी शस्त्रधारिओंमें श्रेष्ठ भीष्मको परास्त न कर सका। मेरी जितनी शक्ति और बल है, उसे प्रकाशित किया, इससे हे भद्रे! अब जहां इच्छा हो वहां जाओ। तुम्हारा दूसरा कार्य्य हो मैं क्या करूंगा? इससे अब तुम भीष्महीकी शरणमें जाओ, इसके अतिरिक्त और कहीं भी तुम्हारी गति नहीं है, देखो मैं अपने परम दिव्य अस्त्रोंको चला कर भी भीष्मको नहीं जीत सका। महातेजस्वी परशुराम ऐसे वचन कह कर लम्बी सांस लेते हुए चुप होगये। अनन्तर अम्बाने उनसे कहा, भगवान्! तुम जो कहते हो, वह सब ठीक है, यह उदार बुद्धि भीष्म युद्धमें देवताओंसे भी अजेय है। तुम्हारी जितनी शक्ति और जैसा उत्साह था, तुमने उसके अनुसार ही मेरा कार्य्य किया है, रणभूमिमें अत्यन्त बल, पराक्रम और दिव्य अस्त्रोंको प्रकाशित किया, तौभी भीष्मसे अधिक न होसके; परन्तु हे तपोधन! मैं इस भीष्मके निकटमें अब किसी प्रकारसे भी न जाऊंगी, उसी स्थान पर जाऊंगी जहां आप ही उसे परास्त कर सकूंगी। ऐसा वचन कह कर वह कन्या क्रोधसे व्याकुल होके वहांसे चली गई और मेरे बध करनेका सङ्कल्प करके तपस्या करनेका सङ्कल्प किया। अनन्तर भृगुसत्तम परशुरामने उन मुनियोंके सहित बिदा होनेके समय उनसे यथा उचित बातचीत करके महेन्द्र पर्व्वत पर चले गये। हे भारत। मैं रथ पर चढ़के ब्राह्मणोंसे स्वस्तिवाचन सुनता हुआ हस्तिना-पुरमें प्रवेश करके माता सत्यवतीसे सम्पूर्ण वृत्तान्त कहा, और उन्होंने भी मुझे आन-न्दित किया। हे महाराज! तब मैंने अम्बाके वृत्तान्तको जाननेके वास्ते अत्यन्त निपुण बुद्धिमान् पुरुषोंको नियुक्त किया। वह सब दूत मेरे प्रिय कार्य्यमें रत होकर उस कन्याके प्रतिदिनकी गति, बाणी और चेष्टा सुनाने लगे। हे तात! अम्बा जब तपस्याके निमित्त सङ्कल्प करके बनको गई तब ही मैं व्याकुल स्वभावसे युक्त और चेत-रहित हो गया; क्योंकि ब्रह्मज्ञ लोगोंसे ही मुझे भय हुआ करता है, तपस्या करनेवाले ब्रह्मज्ञ लोगोंके अतिरिक्त और कोई क्षत्रिय मुझे युद्धमें नहीं जीत सकता। हे राजन्! मैंने नारद और व्यासदेवसे भी उस कार्य्यको निवेदन किया। उससे वह लोग मुझसे बोले, हे भीष्म! तुम काशिराजकी कन्याके विषयमें कुछ भी शोक मत करो, पुरुषार्थसे कोई पुरुष क्या दैवको अतिक्रम कर सकता है? हे राजन्! वह कन्या आश्रममण्डलोंमें प्रवेश करके यमुनाके तीर पर अपना आश्रम बना कर अलौ-किक तपस्या करने लगी, उसने आहारको त्याग दिया कृशित, जटाधारिणी धूल और कीचड़के सङ्ग बहनेवाली सूखी लकड़ीकी भांति स्थिर होकर छः महीने वायु भक्षण करके तपस्या करती रही, फिर एक वर्ष तक

यमुना जलके आसरे निराहार व्रत धारण किया, फिर केवल वृक्षसे गिरे हुए एक एक सूखे पत्तोंको खाकर एक वर्ष बिताया। वह महाकोप करनेवाली तपस्विनी अपने पावके अंगूठेके अग्रभागके बलसे खड़ी होकर इसी प्रकारसे बारह वर्ष तपस्या करके स्वर्ग और पृथ्वीको तपाने लगी। जातिके लोगोंने बहुत ही चेष्टाकी, परन्तु किसी प्रकारसे भी उसे निवृत्त न कर सके। अनन्तर अम्बा पुण्यशील महात्मा ब्रह्मवादी तपस्वियोंके आश्रम, भूत सिद्ध और चारणोंसे सेवित वत्स भूमिमें गमन किया, वहांपर पुण्य तीर्थोंमें रात दिन गमन करती हुई, इच्छापूर्व्वक सब स्थानोंमें भ्रमण करने लगी। हे महाराज। वह क्रमसे नन्दाश्रम, उलूक-आश्रम, च्यवनके आश्रम, ब्रह्मस्थान, प्रयाग, देवयजन, देव अरण्य, भोग-वती, विश्वामित्रके आश्रम, माण्डव्य-आश्रम, दिलीप-आश्रम, रामहृद, और पैल गार्गके आश्रममें भ्रमण करने लगी। हे राजेन्द्र! उस काशिराजकी कन्याने अत्यन्त कठिन व्रत अवलम्बन करके उस समय सम्पूर्ण तीर्थोंमें जाकर स्नान किया था। हे कौरव! किसी दिन जलमें खड़ी हुई देखकर मेरी माता गङ्गा-देवीने उससे कहा, हे भद्रे! तुम किस कारणसे इतना क्लेश सह रही हो, वह मुझसे सत्य सत्य कहो। तब वह अनिन्दिता काशी-राजकी कन्या हाथ जोड़कर बोली, हे देवी। हे सुन्दर-नेत्रवाली। परशुरामने भीष्मको युद्धमें नहीं जीता, तब और कौन बलवान राजा उस शस्त्रधारी महावीरको जीत सकता है? इससे मैं भीष्मके वधके निमित्त यह महा घोर तपस्या कर रही हूं, ऐसा ही मनमें निश्चय करके पृथ्वीमें भ्रमण कर रही हूं। हे देवी! किसी प्रकारसे उस भीष्मका बध कर सकूं, यही मेरे व्रतका परम फल है। अनन्तर समुद्रमें गमन करनेवाली मेरी माता भागीरथीने उससे कहा, हे भाविनि। तुम कुटिल आचरण कर रही हो, हे सुन्दरी। तुम्हारी यह अभिलाष पूर्ण न होवेगी। हे काशिराजकी कन्या! यदि भीष्मके वधके निमित्त तुम इस प्रकारसे व्रत करोगी, और व्रत करती हुई शरीरको छोड़ोगी, तब टेढ़ी चालसे बहनेवाली नदीरूप होजाओगी। केवल वर्षाकालहीमें तुम्हारा जल रहेगा और दूसरे आठ महीनेतक तुम जल-रहित होओगी। और तुम्हारा तीर्थ निन्दनीय होगा, कोई भी तुमको न जान सकेगा। तुम विकराल ग्राहवती और घोररूपा होकर सब प्राणियोंको भयङ्करी बोध होओगी। हे राजन्! मेरी माता यशस्विनी भागीरथीने हंसते हंसते ऐसे वचन कहकर काशिराजकी कन्याको बिदा किया। अनन्तर वह कन्या फिर व्रत अवलम्बन करके कभी आठ महीने और कभी दश मास तक जल भी नहीं पीती थी। हे कौरव! और सब तीर्थोंमें इधर उधर भ्रमण करके फिर वह वत्स-भूमिमें आई और वहांपर वर्षाकालमें बहनेवाली अनेक ग्राह आदि जल-जन्तुओंसे युक्त टेढी और भय उत्पन्न करनेवाली नदीरूपसे विख्यात हुई। हे राजन्! अम्बा उस तपस्याके बलसे शरीरके आधे भागसे नदी हुई और शेष आधे-भागसे कन्याही बनीरही।

१८८ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, अनन्तर वह सब तपस्वी लोगोंने काशिराज कन्याकी तपस्यामें कृतसङ्कल्प देख-कर उसे निवारण किया और उसको कौनसा कार्य्य है, इस बातको भी पूछा। तब अम्बा उन तपोवृद्ध ऋषियोंसे बोली, हे तपोधनवृन्द! मैं भीष्मकेहाथसे ग्रहण की जानेसे पति-धर्म्मसे रहित हुई हूं, इससे उसीके वधके निमित्त मेरी यह तपस्या है, स्वर्ग आदि लोकोंके प्राप्त करनेके निमित्त मैं तप नहीं करती हूं। भीष्मको मारकर शान्त

होऊंगी, यही निश्चय है। हे तापसवृन्द! जिसके कारणसे इतना दुःख सह रही हूं, और पति-लोकसे रहित होगई हूं, न मैं स्त्री और नपुरुष हूँ, उस गङ्गापुत्र भीष्मको विना युद्धमें मारे अब निवृत्त न होऊंगी। आप लोगोंसे मैंने जो यह वचन कहा है, यही मेरे हृदयका सङ्कल्प है। मैं स्त्रीभावसे दुःख पाकर अब पुरुषत्व प्राप्त करनेका निश्चय करके भीष्मके वध करनेकी इच्छा करती हूं। इससे आप लोग अब मुझको निवारण न कीजिएगा हे भारत! अनन्तर देवोंके देव शूलधारी महादेव उन महर्षियोंके बीच इस तपस्विनीको दर्शन देकर बोले, "तेरी क्या अभिलाष है? वर मांग"। तब उस मनस्विनी काशिराजकी कन्याने मेरे बध करनेके निमित्त बरदान मांगा उसका वचन सुनकर महादेव बोले, "अवश्य वध करोगी" यह वचन सुन कर अम्बाने महादेवसे पूछा, कि हे देवोंके देव मैं स्त्री होकर भीष्को युद्धमें मारूंगी, यह कैसे सम्भव और उत्तम हो सकता है? हे भूतोंके स्वामी उमानाथ! स्त्री-भाव विशेष करके तपस्यासे मेरा मन अत्यन्त ही शान्त होगया है, तुमने भी भीष्मको बध करनेका मुझे वर दिया, इससे हे वृषभध्वज! शान्तनुनन्दन भीष्म जिस प्रकारसे मेरा बध्य होवे, वही कीजिये। मै उसके सङ्ग युद्धमें जाकर जिस प्रकारसे उसे मार सकूं तुम उस ही उपायका विधान करो।

तब वृषभध्वज महादेव उस कन्यासे बोले, हे भद्रे? मेरी बात कभी मिथ्या न होगी, यह अवश्य हो सत्य होगी। तुम भीष्मको युद्धमे मारोगी, और पुरुषत्वभी प्राप्त करोगी तथा दूसरे शरीरमें गमन करके पूर्व्व जन्मके सम्पूर्ण वृत्तान्तको भी स्मरण करोगी। द्रुपदके कुलमें जन्म लेकर तुम महारथ, शीघ्र शस्त्र चलानेवाले महाबलवान् योड़ा बनोगी। हे कल्याणि! मैंने जो कुछ कहा, वह सब सत्य होगा, तुम कुछ कालके बाद पुरुष हो जाओगी। वृषभध्वज कपाली महादेव ऐसा वचन कह कर तपस्वी ब्राह्मणोके सम्मुख ही अन्तर्द्धान होगये। अनन्तर अनिन्दिता काशिराजकी कन्या अम्बाने उन महर्षियोंके सम्मुख ही बनसे काठ लाकर यमुनाके समीप एक बड़ी चिता बनाकर उसमें अग्नि लगा दी। हे महाराज! उस अग्निके प्रज्वलित होने पर वह काशिराजकी बड़ी कन्या क्रोधपूर्व्वक "मैं भीष्मके बधके निमित्त इस अग्निमें प्रवेश करती हूं" ऐसा वचन कहकर अग्निमें प्रवेश करके जल गई।

१८९ अध्याय समाप्त।

दुर्य्योधन बोले, हे योड़ाओंमें श्रेष्ठ गंगानन्दन पितामह! शिखण्डी पहिले कन्या होकर पीछे किस प्रकारसे पुरुष होगया; उसे वर्णन कीजिये।

भीष्म बोले, हे राजेन्द्र! लोकमें विख्यात राजा द्रुपदकी प्यारी रानी पुत्रहीन थी। हे राजेन्द्र उसी समय राजा द्रुपदने मेरे बधके निमित्त निश्चय करके महा घोर तप करके पिनाकधारी महादेवको सन्तुष्ट किया और उनसे यह वचन बोले, "हे भगवन्! मैं भीष्मके वधके निमित्त एक पुत्रकी इच्छा करता हूं, हे शङ्कर! इससे कन्याके अतिरिक्त मेरे एक पुत्र होवे, उनकी यह प्रार्थना सुनकर देवोंके देव महादेव बोले, तुमको स्त्री और पुरुष ऐसा एक पुत्र उत्पन्न होगा, हे राजन्! तुम निवृत्त होजाओ; मैंने जो वचना कहा है, कभी वह झूठ न होगा। राजा द्रुपद महादेवका ऐसा वचन सुनकर नगरमे आकर अपनी भार्य्यासे बोले, हे देवी! मैंने अत्यन्त यत्न तपस्यासे महादेवको प्रसन्न किया है, उन्होंने कहा है, कि तुमको कन्या और पुत्र ऐसा एक सन्तान उत्पन्न होगी, उस वचनको सुनकर मैंने बार बार प्रार्थना

की, परन्तु शङ्करने कहा, यह मेरी बात कभी नहीं पलट सकती। इससे हे भाविनि। उस वचनमें अब कुछ भी रद बदल न होगा, क्योंकि इसी प्रकारकी होतव्यताथो। अनन्तर यशस्विनी द्रुपदराजकी पत्नीने ऋतुमती होकर नियम पूर्व्वक उनके सङ्ग सहवास किया और शास्त्रमें कहे हुए कर्म्मसे यथा समयमें गर्भ धारण किया। महाराज। नारदने मुझसे शिखण्डीका जिस प्रकारसे जन्म-वृत्तान्त कहा था, मैं उसहीको वर्णन करता हूं। हे कुरुनन्दन। उस सुन्दर नेत्रवाली महादेवीके गर्भ धारण करनेपर राजा द्रुपदने पुत्र स्नेहके कारण सब प्रकारसे भार्य्याके सुखके निमित्त यत्न किया। हे राजन्! द्रुपद पुत्रहीन थे, इससे उनकी भार्य्याने जो कुछ अभिलाष की, वह सब वस्तु देकर उन्होंने उसके मनोरथको पूर्ण किया। अन्तमें उस द्रुपदराजकी प्यारी रानीने एक उत्तम रूपवाली कन्या प्रसव किया, हे राजेन्द्र। द्रुपदराजके पुत्र न रहनेपर उनकी प्यारी स्त्रीने कहा, "मुझे यह पुत्र हुआ है" ऐसीही बात सर्व्वत्र प्रचार कर दी। हे राजन्! अनन्तर राजा द्रुपदने उस छिपी हुई कन्याको पुत्रके समान जानकर, उसका सम्पूर्ण पुत्र-कार्य्य कराया और उनकी रानीने भी पुत्र पुत्र कहकर सब प्रकारसे यत्न पूर्व्वक उसकी रक्षा की। नगरके बीच एकमात्र राजा द्रुपदको छोड़कर और कोई पुरुष भी उस कन्याको कन्या नहीं जानता था। हे राजन्! राजा द्रुपदने अविनाशी महादेवके वचनपर श्रद्धा करके उस कन्याको छिपाकर पुत्र कहके प्रचार किया और पुत्रहीके समान सब जाति-कर्म्म संस्कार कराया। लोकमें इस कन्याको सब शिखण्डी कहके जानते हैं, परन्तु मैं ही अकेला दूतों तथा नारदके वचन, देव-वाक्य, और अम्बाकी तपस्यासे उसके स्वरूपको जानता हूं।

१६० अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे राजेन्द्र! राजा द्रुपद कन्याको लिखना और शिल्प आदि सब कर्म्मो की सिखानेका यत्न किया। शिखण्डी अ और अस्त्रशिक्षामें द्रोणाचार्य्यका शिष्य हुआ उसकी प्यारी माताने पुत्रकी भांति उसके विवाहके निमित्त अनुरोध किया। हे महाराज! उस समय द्रुपदराज कन्याको यौवनवती देखकर भार्य्याके सहित चिन्ता करने लगे। द्रुपद बोले, देखो मेरा शोक बढानेवाली इस कन्याके यौवनका समय प्राप्त हुआ है, मैंने शूलधारी महादेवके वचनसे इसे छिपाकर रक्खा है। भार्य्या बोली, महाराज। वह वचन कभी मिथ्या न होगी, तीनों लोकके कर्त्ता होकर महादेव किस प्रकारसे झूठ बोलेंगे? हे राजन्। यदि मेरे वचनमें आपकी रुचि होवे, तो मैं जो वचन कहती हूं, उसको सुनिये और सुनकर अपने मतके अनुसार कार्य्य कीजिये। यत्नके सहित विधिपूर्व्वक किसी कन्यासे इसका विवाह कर्म्म कीजिये, शिवका वचन अवश्य ही सत्य होगा।

अनन्तर वह दोनो स्त्री-पुरुष उस कार्य्यका निश्चय करके दशार्णाधिपतिकी कन्याको अपनी कन्याके निमित्त प्रार्थना की। राजसिंह राजा द्रुपदने कुलके अनुसार सब राजाओंके वृत्तान्तको सुनकर दशार्णराजकी कन्याको ही शिखण्डीके निमित्त वरण किया। हिरण्यवर्म्मा नामसे विख्यात दशार्णराजने भी अपनी कन्या शिखण्डीके निमित्त प्रदान की। वह महातेजस्वी हिरण्यवर्म्मा दशार्ण देशके बड़े पराक्रमी अनेक सेनाओंसे युक्त बलवान् राजा थे। हे राजसत्तम! विवाह कर्म्मके समाप्त होनेपर वह कन्या और शिखण्डिनी दोनो ही धीरे धीरे सम्पूर्ण रूपसे यौवनवती हुईं। शिखण्डीने दार-परिग्रह करके काम्पिल्य नगरमें फिर आगमन किया। कुछ दिनोंके अनन्तर उस कन्याने शिखण्डीको स्त्री जान लिया। हिरण्यवर्म्माको

कन्याने शिखण्डीको शिखण्डिनी जानकर लज्जापूर्व्वक दुःखित चित्तसे दासी और सखियोंके निकटमें पाञ्चालराजकी कन्या शिखण्डिनीके स्वरूपका वृत्तान्त कह दिया। हे राज शार्दूल! तब दशार्णराजकी दासियोंने अत्यन्त दुःखित होकर अपने स्वामीके निकटमें दूतियोंको भेजा। उन दूतियोंने भी दशार्णराजके समीपमें इस प्रवञ्चना (ठगपना) का वृत्तान्त ठीक ठीक वर्णन किया और राजा भी सुनकर क्रुद्ध हुए इधर शिखण्डिनी भी नारी भावको छिपाती हुई प्रसन्नता पूर्व्वक राजकुलमें भ्रमण करने लगी।

हे राजेन्द्र! राजा हिरण्यवर्म्मा कुछ दिनो के अनन्तर इस वृत्तान्तको सुन कर क्रोधसे पीड़ित हुए, अनन्तर अत्यन्त कुपित हो उन्होंने राजा द्रुपदके समीप दूत भेजा। हिरण्यवर्म्माका दूत द्रुपदके समीपमें जाकर निर्ज्जन स्थानमें यह वचन बोला, हे राजन्! तुम्हारी प्रवञ्चना से दशार्ण-राजने कुपित होकर यह कहा है, हे राजेन्द्र! तुमने जो मोहमें पड़कर अपनी कन्याके निमित्त मेरी कन्या मागी, वह निश्चय ही तुम्हारी दुष्ट मन्त्रणाका कार्य्य है। तुम मेरा अपमान करते हो, यह ठीक है, परन्तु रे नीचबुद्धिवाले। इससे अब तू प्रतारणाके फलको भोग करेगा। मैं तुमको अब इष्ट मित्र और बन्धुवान्धवोंके सहित मारूंगा; खड़े रहो।

१९१ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे राजन्! दूतके मुखसे ऐसा वचन सुन कर पकड़े हुए चोरको भांत राजा द्रुपदके मुखसे कुछ भी वचन न निकला वह मधुर स्वरसे बोलनेवाले दूतासे यह वचन बोले, "यह ठीक नहीं है" इस प्रकारसे सन्देश भेज कर वह सम्बन्धीको प्रसन्न करनेके निमित्त अत्यन्त यत्न करने लगे, परन्तु राजा हिरण्यवर्म्माने फिर अनुसन्धान करके यह जान लिया, कि शिखण्डी द्रुपदराजकी कन्या ही है, इससे शीघ्र ही उन्होंने युद्धके निमित्त यात्रा की। अनन्तर उन्होंने दासियोंके वचनके अनुसार अपनी कन्याके इस प्रकारसे ठगे जानेका वृत्तान्त महातेजस्वी मित्रोंके निकट वर्णन किया। हे भारत! उस राजसत्तम हिरण्यवर्म्माने बहुत बड़ा बल संग्रह करके द्रुपदके विरुद्ध युद्ध करनेके निमित्त इच्छा की, और मन्त्रियोंसे मिल कर इस विषयमें विचार करने लगे। उसमें उन महात्मा राजाओंका यह निश्चय हुआ, कि शिखण्डी कन्या है,—यदि यह वचन सत्य होवे, तो हम लोग पाञ्चाल-राजको बांधकर इस स्थान पर ले आवेंगे और दूसरे किसी भूपालको पाञ्चाल देशका राजा बनाके शिखण्डी के सहित द्रुपदका बध करेंगे। तब हिरण्यवर्म्मा राजाने ऐसा ही निश्चय करके "तुम्हारा बध करूंगा, खड़े रहो। ऐसा कहके फिर राजा द्रुपदके समीप दूत भेजा।

भीष्म बोले, राजा द्रुपद स्वभावसे ही डरपोक थे, तिस पर भी उस पापकर्म्मके कारण अत्यन्त ही भयभीत हुए। वह शोकित होकर हिरण्यवर्म्माके निकट दूत भेज कर भार्य्याके सहित निर्ज्जन स्थानमें बैठ कर शोक और भय-पूरित चित्तसे शिखण्डिनीकी माता प्यारी रानीसे यह वचन बोले, हे सुश्रोणि। हम लोगोंके वैवाहिक सम्बन्धी महाबली हिरण्यवर्म्मा राजा सेना संग्रह करके कुपित होकर मुझसे लड़नेको चले आते है। इस समय इस कन्याके विषयमें मैं क्या करूंगा, कुछ समझ नहीं सकता हूं। मैंने सुना हैं, कि तुम्हारे पुत्र शिखण्डीको लोग कन्या कहके सन्देह करते है; इसी कारणसे हिरण्यवर्म्मा "मैं ठगा गया हूं" यह विचारकर यत्नपूर्व्वक मित्र, बल और अनुचरोंके सङ्ग मिलकर मेरे

नाश करनेकी इच्छा करता है। हे भद्रे ? इससे अब इस विषयमें सत्य वा मिथ्या जो कुछ हो, वह तुम मुझसे वर्णन करो। तुम्हारा वचन सुनकर मैं उसके अनुसार ही कार्य्यका विधान करूंगा। हे वरवर्णिनि। देखो मुझे भी समय प्राप्त हुआ है और बाला शिखण्डिनी और तुम भी महाक्लेशसे ग्रस्त हुई हो, इससे तुमसे पूछता हूं, कि तुम सबको इस विपदसे छुड़ानेके निमित्त यथार्थ तत्व वर्णन करो। हे सुन्दरि। मैं तुम्हारे वचनको सुनकर वैसे ही कार्य्यका अनुष्ठान करूंगा। हे वरारोहे। यद्यपि तुमने मुझे पुत्रधर्म्मसे वञ्चित किया है, तौभी शिखण्डी तथा अपने विषयमें कुछ भय मत करो, मैं कृपा करके तुम लोगोंके विषय पूर्णरीतिसे उपायका विधान करूंगा। परन्तु हे सुन्दरि। राजा दशार्णराजके सङ्ग मैंने प्रवञ्चना की है, उस विषयमें किस प्रकारसे हित साधनके निमित्त कार्य्यका विधान करूं, उसे तुम वर्णन करो।

पाञ्चालराज द्रुपदने जान बूझकर भी केवल दूसरेके निकट अपनी निर्दोषिता प्रकट करनेके निमित्त प्रकाशित भावसे अपनी भार्य्यासे पूछा। और उसने भी नीचे कहे हुए वचनोंसे उत्तर दिया।

१९२ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे प्रजानाथ। अनन्तर शिखण्डिनीकी माताने अपने पति राजा द्रुपदसे कन्या शिखण्डिनीका यथार्थ वृत्तान्त वर्णन किया, उसने कहा, महाराज। मेरे पुत्र न रहनेसे सौत लोगोंके भयसे युक्त होकर मैंने इस कन्याके उत्पन्न होनेपर पुत्र कहके तुम्हारे समीप वर्णन किया था, तुमने भी मेरी प्रीतिके निमित्त उस वचनकी पोषकता की थी, और कन्याका पुत्रके समान जातिकर्म्म संस्कार कराया। फिर तुमने दशार्णराजकी कन्याके सङ्ग इसका विवाह भी किया,—और मैंने भी वचनसे उसके निमित्त परिपोषकता की थी। हे राजन्। "कन्या उत्पन्न होकर पुरुष हो जावेगी" महादेवके वचनोंका ऐसा अर्थ जानकर ही मैंने इस विषयमें उपेक्षा की थी।

हे भारत। यह वचन सुनकर यज्ञसेन द्रुपदराज मन्त्रियोंसे सम्पूर्ण विषय वर्णन करके प्रजाके रक्षाके निमित्त यथा उचित विचार करने लगे। उन्होंने पूरी रीतिसे प्रतारणा करके भी "मैंने यथार्थ सम्बन्ध ही किया है" ऐसा ही निश्चय करके कार्य्यके विषयमें विचार करने लगे। हे राजेन्द्र। उनका नगर स्वभाविक ही रक्षित था, उस पर भी आपदकालके उपस्थित होनेपर उन्होंने सब भांतिसे नगरको अलङ्कृत करके उसकी दृढ़ रक्षाका विधान किया। हे भरतर्षभ। दशार्णपतिके सङ्ग विरोध होनेके निमित्त पाञ्चालराज भार्य्याके सहित अत्यन्त ही पीड़ित हुए। वैवाहिक सम्बन्धीके सङ्ग जिस प्रकारसे मेरा यह महाविग्रह उपस्थित न होवे, उसहीकी चिन्ता करके उस समयमें वह देवताओंकी पूजा करने लगे। तब राजा द्रुपदकी प्यारी रानी उनको इस प्रकारसे देव-परायण और पूजामें तत्पर देखकर यह वचन बोली, हे महाराज। देवताओंकी आराधना सदा ही कल्याण करनेवाली है, ऐसा साधु-पुरुषोंका मत है। जो पुरुष दुःखरूपी समुद्रमें डूब रहा है, उसके निमित्त क्या कहना है ? इससे तुम दशार्णराजके शान्त होनेके निमित्त देवताओंकी आराधना करो, ब्राह्मणोंका सम्मान तथा बहुतसी दक्षिणा प्रदान करके देवताओंकी पूजा और अग्निमें होम करो। हे स्वामी। जिससे बिना युद्धके किये ही शान्ति होवे, तुम मन ही मन उसहीका विचार करो। देवताओंको सन्तुष्ट करनेसे सब कुछ हो सकता है।

हे प्रजानाथ। नगरकी रक्षाके निमित्त तुमने मन्त्रियोंके सङ्ग जैसा विचार किया है, उसका भी पूर्ण रीतिसे अनुष्ठान करो। क्योंकि पुरुषार्थ युक्त होनेहीसे दैवो प्रारब्ध पूर्णरूपसे सिद्ध होता है, दोनोंके परस्पर विरोध होनेसे कार्य्य सिद्ध नहीं होता। इससे हे राजेन्द्र। मन्त्रियोंके सङ्ग मिलकर नगरकी रक्षाका उपाय करके इच्छानुसार देवताओंकी आराधना कीजिये। उस समयमें वह लोग शोकसे युक्त होकर ऐसी ही बातचीत करते थे ; यह देखकर तपस्विनी कन्या शिखण्डिनी अत्यन्त लज्जित हुई। अनन्तर उसने जब जाना कि ये लोग "मेरे ही निमित्त दुःखित हुए हैं," तब चिन्ता करके अपना प्राण नाश करनेका सङ्कल्प किया। हे राजन्! शिखण्डिनी ऐसा निश्चय करके अत्यन्त दुःखित होकर घर त्याग-कर निर्जन घने वनमें चली गई। यह वन स्थूणाकर्ण नामके एक महाबलवान् यक्षसे रक्षित था, उसके भयसे मनुष्य मात्र वहां नहीं जाते थे। वहांपर स्थूणाकर्णका एक ऊंचा मन्दिर था और तोरणयुक्त चूना और स्वच्छ मृत्तिकासे पोता हुआ शीतल मन्द सुगन्ध वायुसे युक्त उसका अत्यन्त सुन्दर निवास-स्थान था। द्रुपदपुत्री शिखण्डिनी उसी स्थानमें प्रवेश करके आहार त्यागकर अपना शरीर सुखाने लगी, तब स्थूणाकर्ण दया करके उसे दर्शन देकर बोला, कि किस कार-णसे तुम ऐसा व्रत करती हो? मुझसे कहो, मैं शीघ्र ही उसे पूर्ण करूंगा। तब शिखण्डिनी बार बार उससे कहने लगी "वह असाध्य कार्य्य है, तुम उसे पूर्ण न कर सकोगे।" उसकी बात सुनकर यक्ष बोला,—मैं अवश्य पूर्ण करूंगा। हे राजपुत्री! मैं कुवेरका सेवक हूं, इससे वर दान करनेमें भी समर्थ हूं, तुम्हारी जैसी इच्छा होवे, वह मुझसे कहो, मैं न देने योग्य वस्तु होने पर भी तुमको अवश्य दूंगा। हे भारत! तब शिखण्डीने उस यक्षोंमें प्रधान स्थूणाकर्णके समीप आदिसे अन्ततक सम्पूर्ण वृत्तान्त वर्णन किया। शिख-ण्डीने कहा, हे यक्ष। मेरे पुत्रहीन पिता शीघ्र ही मारे जावेंगे, क्योंकि दशार्णराजने क्रोधमें पूर्ण होकर उनके ऊपर युद्धके निमित्त चढ़ाई करनेका उद्योग किया है, वह हिरण्यवर्म्मा महाबल और उत्साहसे युक्त है, हे यक्ष! इससे तुम मेरी और मेरे माता पिताकी रक्षा करो। हे पापरहित! तुमने मेरे दुःखको दूर करनेकी प्रतिज्ञा की है, इससे तुम्हारी कृपासे जिस प्रकारसे मैं पुरुष होसकूं,—उसी उपायको करो। हे महायक्ष! जब तक राजा हिरण्यवर्म्मा मेरे नगरमें नहीं आता है, उतने ही समयके भीतर मुझको ऐसा वर प्रदान करो।

१९३ अध्याय समाप्त।

भीष्म बोले, हे भरतर्षभ! अनन्तर वह यक्ष शिखण्डीके वचन सुनकर दैवी संयोगके वशमें होकर मन ही मन चिन्ता करके बोला हे भद्रे! मैं अवश्य ही तुम्हारी अभिलाषा पूर्ण करूंगा, परन्तु जिस प्रकारका नियम करता हूं, उसको तुम सुनो। कुछ समयके निमित्त मैं अपना यह पुरुषचिह्न तुमको देता हूं; फिर निश्चित समयपर तुम्हें मेरे निकटमें आना पड़ेगा, तुम मुझसे सत्य वचन कहो, मैं सङ्कल्प सिद्ध कामचारी खेचर हूं, जो इच्छा करूं, वही कर सकता हूं, इससे तुम मेरे प्रसादसे नगरको और बन्धुबान्धवोंको सम्पूर्ण रूपसे परित्राण करो। हे राजपुत्री! मैं तुम्हारा यह स्त्री चिह्न धारण करूंगा, तुम मेरे निकट आनेके निमित्त सत्य प्रतिज्ञा करो, मैं अवश्य ही तुम्हारा प्रिय-कार्य्य साधन करूंगा। हे कौरव! यक्षने जो

यह वचन कहा, बस मेरे दुःखके निमित्त यही होनहार था, जो हो, शिखण्डीने यह वचन सुनकर कहा, हे भगवन्! मैं तुम्हारा पुरुष-चिह्न फिर प्रदान करूंगी। हे यक्ष! तुम थोड़े समयके निमित्त स्त्रीभाव धारण करो। दशार्णराज हिरण्यवर्म्माके लौट जानेपर मैं कन्या हो जाऊंगी और तुम भी पुरुष बन जाओगे।

भीष्म बोले, हे राजन्! ऐसा कह कर उन दोनोंने शपथ पूर्व्वक प्रतिज्ञा की और आपससे लिङ्गको अदल बदल कर लिया। स्थूणाकर्णने स्त्रीलिङ्ग धारण किया और शिखण्डीने उस प्रकाशमान यक्षरूपको प्राप्त होकर प्रसन्न चित्तसे नगरमें प्रवेश करके पिताके निकट जाकर जो कुछ वृत्तान्त हुआ था, सब वर्णन किया तब राजा द्रुपद उसका वह वृत्तान्त सुनकर अत्यन्त हर्षित हुए और भार्य्याके सहित महादेवजीका वचन स्मरण किया। अनन्तर उन्होंने दशार्णराजके निकट यह सम्वाद भेज दिया, कि मेरा यह पुत्र यथार्थमें पुरुष ही है तुम मेरे वचनका विश्वास करो। उस समय राजा हिरण्यवर्म्माने भी दुःख और शोकसे युक्त होकर सहसा पाञ्चाल राजके विरुद्ध गमन किया। अनन्तर दशार्णराज हिरण्य-वर्म्माने काम्पिल्य नगरके निकट जाकर शास्त्र जाननेवाले एक ब्राह्मणको अपना दूत बनाकर द्रुपदके समीपमें भेजा; हिरण्यवर्म्माने उस दूतसे कहा हे दूत। तुम मेरे वचनसे उस अधम राजा द्रुपदसे यह कहना कि रे नीचबुद्धि! तूने जो अपनी कन्याके सङ्ग मेरी कन्याका विवाह किया है, उस गर्व्वका फल शीघ्र भोग करेगा, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

हे राजसत्तम! उनका यह वचन सुनकर वह पुरोहित-ब्राह्मण दशार्णराजका दूत होकर द्रुपद राजके नगरकी ओर गमन किया और शीघ्र ही राजा द्रुपदकी नगरीमें पहुंचे, तब पाञ्चाल-राज द्रुपदने शिखण्डीके सहित गौ और अर्घ आदि यथा उचित सत्कार प्रदान किया; परन्तु उसकी ग्रहण न करके वीरवर राजा हिरण्य-वर्म्माके कहे हुए वचनोंका अनुवाद करके कहने लगे, रे नृपाधम। तूने जो कन्याके सङ्ग मेरी कन्याका विवाह करके मुझे ठगा है, उस पाप-कर्म्मका फल शीघ्र पावेगा। नीच-बुद्धिवाले! रणभूमिमें आकर मेरे सङ्ग युद्ध कर। मैं तुझे सेवक, पुत्र और बन्धु-बान्धवोंके सहित शीघ्र ही नाशकर दूंगा। हे भरतश्रेष्ठ! राजा द्रुपद मन्त्रियोंके बीचमें दशार्ण-राजके ऐसे तिरस्कार-युक्त वचन सुनकर प्रीति और विनय पूर्व्वक यह वचन बोले, हे ब्राह्मण! वैवाहिक सम्बन्धी हिरण्यवर्म्माके वचनके अनुसार तुमने मुझसे जो कुछ कहा है, मेरा दूत राजाके समीप जाकर उसका यथार्थ उत्तर देगा। अनन्तर द्रुपदने भी हिरण्यवर्म्माके निकट एक वेद जाननेवाले ब्राह्मणको दूत बनाकर भेजा। वह ब्राह्मण दशार्ण-राज हिरण्य-वर्म्माके निकट जाकर राजा द्रुपदने जो कुछ कहा था, उन्हीं वचनोंको राजा हिरण्यवर्म्मासे कहने लगा, आप साक्षी आदिसे परीक्षा कीजिये, मेरा यह पुत्र यथार्थमें कुमार ही है, तुमसे न जाने किसने मिथ्या वचन कहा था, उन वचनों पर विश्वास करना उचित नहीं है। अनन्तर राजा हिरण्यवर्म्माने द्रुपदके उस वचनको सुनकर हर्ष-विषादसे युक्त हो, शिखण्डी स्त्री है, वा पुरुष, इस बातको जाननेके निमित्त अत्यन्त सुन्दरी उत्तम वाराङ्गना-ओंको भेजा। उन्होंने भी यथार्थ वृत्तान्त जानकर शिखण्डी अत्यन्त उत्तम पुरुष है, यह सम्पूर्ण समाचार दशार्णराज हिरण्यवर्म्माके समीप जाकर वर्णन किया। तब वह राजा साक्षियोंके वचन सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ और अपने सम्बन्धी द्रुपदके सङ्ग मिल कर आनन्द पूर्व्वक एकत्र सहवास किया, हे राजन्!

हिरण्यवर्म्माने अत्यन्त आनन्दित होके रीको बहुतसा धन, हाथी, घोड़े, गजआदि दान किया और अन्तमें पूजित होकर कन्याकी निन्दा करके निज नगरको हे राजन्। हिरण्यवर्म्माको क्रोध रहित सन्तुष्ट होकर निज देशको ओर लौटता देखकर शिखण्डिनी अत्यन्त ही प्रसन्न कुछ समयके अनन्तर धनके स्वामी यक्षोंके कुबेर-लोकमें भ्रमण करते हुए स्थूणाकर्ण के समीप आये, उन्होंने स्थूणाकर्णके पर खड़े होकर देखा, कि वह बहुत निवास स्थान है। विचित्र माला और के समान प्रकाशित है, अनेक सुगन्धित और ध्वजा पताकासे युक्त, सासआदि ने की सामग्रियोंसे पूरित था। यक्षराज-ने सुन्दर मणि रत्न और सुवर्णसे पूर्ण पुष्प और सुगन्धित वस्तुओंसे युक्त उस भवनको देखकर अपन सेवक यक्षोंसे हे अत्यन्त पराक्रमी यक्ष लागा। स्थूणा-के इस मन्दिरको मैं खूब ही अलङ्कृत देखता परन्तु वह मन्दबुद्धि अभीतक मेरे समीप नहीं आया? वह दुष्ट जब जान बूझके भी निकट नहीं आता है, तब उसके ऊपर दण्डका विधान करना ही उत्तम बोध है। यक्ष लोग बोले, हे राजन्! द्रुपद-के शिखण्डिनी नामकी एक कन्या उत्पन्न थी, स्थूणाकर्णने किसी कारणसे उप-में अपना पुरुष-लक्षण उसे अर्पण किया और स्वयं स्त्री-चिह्न ग्रहण करके स्त्री होकर बैठा है। इससे स्त्री-भावसे युक्त के कारन लज्जासे आपके समीप नहीं है। अब आपको इस विषयमें जो करना वह कीजिये; विमान यहां ही रहे। यचन सुनकर यक्षोंके स्वामी कुबेर बार कहने लगे, स्थूणाकर्णको शीघ्र यहां लाओ। मैं यथा उचितसे दण्ड दूंगा। हे राजन्! वह स्त्रीरूपधारी स्थूणाकर्ण स्वामीकी आज्ञा सुनकर उनके समीप आकर लज्जापूर्व्वक खड़ा हुआ। तब धनके स्वामी यक्षराज कुबेर अत्यन्त क्रुद्ध होकर बोले, "हे यक्षवृन्द! यह पापी इसी प्रकारसे स्त्री ही बना रहे", ऐसा कहके उसे शाप दिया। फिर बोले, रे पापी! तूने यक्षोंकी अवमानना करके शिखण्डीको अपना पुरुष लक्षण अर्पण किया और उसका स्त्रीचिह्न तूने धारण किया है, इससे रे पापी। जो तूने ऐसा अयुक्त कर्म्मका अनुष्ठान किया है, इसी निमित्त आजसे तू स्त्री ही रहेगा। हे तात! अनन्तर यक्ष लोग "शापसे मुक्त कीजिये" बार बार ऐसा वचन कहकर स्थूणाकर्णके निमित्त कुबेरसे प्रार्थना करने लगे। तब महा-त्मा यक्षराज कुबेर शापसे मुक्त करनेके निमित्त अभिलाषी होकर सेवकोंसे यह वचन बोले, हे यक्षवृन्द! शिखण्डीके मरने पर स्थूणाकर्ण फिर अपने स्वरूपको पावेगा, इससे यह महा-त्मा यक्ष धीरज धारण करे। ऐसा वचन कह कर भगवान् कुबेर पूजित होकर सेवकोंके सहित अपने स्थान पर गये और स्थूणाकर्ण शाप ग्रस्त होकर वहांपर निवास करने लगा।

अनन्तर शिखण्डीने यथा समयमें उस यक्षके निकट गमन किया और उसके सम्मुख जाकर यह वचन कहा हे भगवन्! मैं आया हूं, तब स्थूणाकर्ण "मैं प्रसन्न हुआ" बार बार यही वचन कहने लगा। हे भारत! वह यक्ष राज-पुत्र शिखण्डीको सरलभावसे आया हुआ देख-कर जो कुछ वृत्तान्त हुआ था, सब वर्णन किया। वह बोला, हे राजपुत्र! मैं तुम्हारे निमित्त कुबेरसे शाप पाचुका हूं, अब तुम जाओ इच्छानुसार सुखपूर्व्वक लोकमें आनन्द करो; तुम्हारा यहांपर आना और यक्षराज कुबेरका दर्शन दोनों होनेसे मैं पूर्व्व जन्मकी दैवी घटना समझता हूं, किसी प्रकारसे भी

इसे अतिक्रम करनेको किसीको भी सामर्थ्य नहीं है।

भीष्म बोले, हे भारत। शिखण्डीने स्थूणा कर्णका वचन सुनकर अत्यन्त हर्षित हो, नगरमें लौटकर महामूल्य अनेक सुगन्धित माला तथा धनसे ब्राह्मण, देवता गज वृक्ष आदिकी पूजा की। हे भारत! राजा द्रुपद निज पुत्र शिखण्डी और बन्धु-बान्धवोंके सहित बहुत ही आनन्दित हुए। अनन्तर उन्होंने स्त्रीसे पुरुष हुए पुत्रको धनुषविद्या सिखानेके निमित्त द्रोणाचार्य्यके हाथमें समर्पण किया। हे महाराज! धृष्टद्युम्न और शिखण्डीने तुम लोगोंके सङ्ग चारों पादसे युक्त धनुषविद्या सीखी है। हे तात! मैंने द्रुपदके यहां जो जड़ अन्धे और वधिर आकारके सब गुप्त चरोंको नियुक्त किया था उन्हीं लोगोंने मुझे यह यथार्थ वृत्तान्त सुनाया था। हे पुरुष श्रेष्ठ! द्रुपदपुत्र रथ सत्तम शिखण्डी इसी प्रकारसे स्त्री होकर फिर पुरुष हुआ है। अम्बा नामकी काशिराजकी बड़ी कन्या राजा द्रुपदके कुलमें जन्म लेकर शिखण्डी हुई है। हे भरतर्षभ! हाथमें धनुष लेकर युद्धके निमित्त शिखण्डीके सम्मुख उपस्थित होने पर भी मैं उसकी ओर क्षणमात्र न देखूंगा और न उसके ऊपर प्रहार ही करूंगा। पृथ्वीके बीच मेरा यह सदासे व्रत प्रसिद्ध है, कि मैं स्त्री, अथवा स्त्री-पूर्व्वक स्त्री स्वरूप वा स्त्रीनामधारी पुरुषके ऊपर शस्त्र नहीं चलाता हूं। हे कौरवनन्दन! इससे मैं इस ही कारणसे शिखण्डीका बध नहीं करूंगा। हे तात! मैंने इस शिखण्डीके जन्म-वृत्तान्तको जान लिया है, इससे युद्धमें आततायी होनेपर भी उसका बध न करूंगा। भीष्म यदि स्त्री हत्या करे, तो अवश्य ही साधु पुरुषोंमें निन्दनीय होगा, इससे मैं उसे युद्धमें सम्मुख खड़ा हुआ देख करके भी न मारूंगा।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, तब राजा दुर्य्योधन यह वचन सुनकर एक मुहूर्त्त भर [illegible] करके भीष्मके पक्षमें इसे उत्तम बोध किया।

१६४ अध्याय समाप्त।

सञ्जय बोले, हे राजन्! रातके बीतने [illegible] तुम्हारे पुत्रोंने फिर सेनाके बीचमें भीष्म पितामहसे पूछा, हे गङ्गानन्दन। युधिष्ठि[illegible] यह अनेक पैदल सेना, हाथी घोड़ोंसे युक्त महारथ योद्धा धृष्टद्युम्न, भीम, अर्जुन आ[illegible] धनुधारी महाबलसे युक्त लोकपालके समान महारथ वीरोंसे रक्षित, अत्यन्त बल[illegible] निवारण न होने योग्य, महासमुद्रके [illegible] देवताओंसे भी शो[illegible] न जीतने योग्य,—यह [illegible] अपार सेनासागर युद्धके निमित्त तैयार है तुम कितने समयमें उसका नाश कर[illegible] हो? महा धनुर्द्धारी आचार्य्य महाबलवान कृपाचार्य्य, युद्धमें प्रसंशित कर्ण और द्विजसत्तम अश्वत्थामा;—ये लोग ही कितने दिनोंमें शत्रु[illegible] सेनाका नाश कर सकते हैं? क्योंकि मेरी सेनामें आप लोग सब ही दिव्य अस्त्रोंके जानने वाले हैं। हे महाबाहो! मैं इसे जाननेकी इच्छा करता हूं, यह परम कुतूहल मेरे हृदयमें उत्पन्न हुआ है, इससे आप लोग इस विषयको वर्णन कीजिये!

भीष्म बोले, हे कुरुश्रेष्ठ! तुम जो इस समय शत्रुओंके बलाबलको जाननेकी इच्छा करते हो, यह तुम्हारे योग्य ही प्रश्न है। हे महाबाहो! युद्धमें मेरी जितनी शक्ति, शस्त्रका पराक्रम, बाहुबल हो सकता है, उसे तुम सुनो। हे राजन्! युद्धधर्म्मका यही सिद्धान्त है, कि सधारण लोगोंके सङ्ग सरल युद्ध और मायावीरके सङ्ग माया-युद्ध ही करना उचित है। हे महाभाग! मैं प्रतिदिन दश हजार योद्धा और एक हजार रथी इस प्रकारसे पाण्डवोंकी सेनाका भाग कल्पित करके नाश कर सकता हूं। हे भारत! मैं सावधान [illegible]

उद्यमशील होकर इसी प्रकारसे अश्र समयके अनुसार उस महा सेनाके नाश । समर्थ हूं। अथवा युद्धमें स्थित होकर तो तथा सहस्र पुरुषोंके मारनेवाले को यदि चलाऊं तो एक महीनेमें पाण्ड- सम्पूर्ण सेनाका नाश कर सकता हूं।

ञ्जय बोले, हे राजेन्द्र! राजा दुर्य्योधनने का वचन सुनकर फिर भारद्वाज-श्रेष्ठ ार्य्यसे भी यह प्रश्न किया, कि हे गुरुदेव। ितने दिनोंमें युधिष्ठिरकी सेनाका नाश कते हो? तब द्रोणाचार्य्य हंसकर उनसे चन बोले, हे महाबाहो! मैं अब वृद्ध । हूं इससे मेरी चेष्टा और तेज भी कम है, तौभी मुझे बोध होता है, कि पत्र भीष्मकी भांति मैंभी एक महीनेमें शस्त्रोंकी अग्निसे पाण्डवोंकी सेना भस्म कता हूं, यही मेरी परम शक्ति तथा ल है। अनन्तर कृपाचार्य्यने दो मही- श्वत्थामा दश रात और महाअस्त्रोंके ले कर्णने पाच दिनमें पाण्डवोंके नाश करनेकी प्रतिज्ञा की। सूतपत्र । वचन सुनकर गङ्गानन्दन भीष्म ऊंचे- हंसने लगे और यह वचन बोले, हे तुम जबतक संग्राममें शङ्ख और शरा- ो कृष्णके सहित रथपर चढ़े हुए युद्धमें । सम्मुख नहीं पहुंचते हो तभीतक सभांति हो, ऐसा क्या तुम अपनी इच्छाकी इससे भी अधिक कह सकते हो।

१६५ अध्याय समाप्त।

शम्पायन मुनि बोले, हे भरतश्रेष्ठ! ः यह वृत्तान्त सुनकर सब भाइयोंको स्थानमें बुलाकर उनसे यह वचन भ्रातगण! मैंने जो दुर्य्योधनकी सेनामें ने चारोंको नियुक्त किया था उन लोगोंने आज प्रातःकाल मुझे यह सम्वाद दिया है, कि दुर्य्योधनने महाव्रत गङ्गानन्दन भीष्मसे पूछा था, "आप लोग कितने समयसे पाण्डवोंकी सेनाका नाश कर सकेंगे?" उस बातको सुनकर भीष्मने उस नीचबुद्धिसे कहा है "एक महीनेमें" और द्रोणाचार्य्यने भी उतने ही समयमें मेरी सेनाके नाश करनेकी प्रतिज्ञा की है। मैंने सुना है, कृपाचार्य्य दो-मास और महाअस्त्रोंके जाननेवाले अश्वत्थामाने दश रात्रिमें मेरी सेनाको नष्ट करनेकी प्रतिज्ञा की है दिव्यअस्त्रोंके जाननेवाले कर्णने कौरवों- के बीच पूछे जानेपर पांच दिनके बीच मेरी सेनाके नाश करनेकी प्रतिज्ञा की है। हे अर्जुन! इससे मैं भी तुम्हारा वचन सुननेकी इच्छा करता हूं, हे फाल्गुन! तुम कितने समयमें शत्रुओंकी सेनाका संहार कर सकते हो? अर्जुन युधिष्ठिरका यह वचन सुन कृष्णके मुंहकी ओर देखकर यह वचन बोले, हे महाराज? ये लोग सब ही महात्मा कृतास्त्र और महावीर योद्धा है, इससे अवश्य ही तुम्हारी सेनाका नाश कर सकते हैं; इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। परन्तु आप अपने मनसे यह दुख दूर कीजिये, मैं सत्य कहता हूं श्रीकृष्णकी सहायतासे एक-रथसे निमेष मात्रमें मैं भूत, वर्त्तमान, भविष्य स्थावर जङ्गमात्मक सम्पूर्ण प्राणियों, यहांतक कि देवताओंके सहित तीनों लोकका भी संहार कर सकता हूं। किरातीय द्वन्द्व-युद्धमें भगवान् महादेवने मुझे जो यह अत्यन्त घोर महाअस्त्र प्रदान किया था, वही मेरे निकट विद्यमान है। हे पुरुषसिंह! प्रलयकालके समय सब प्राणि- योंके संहारके निमित्त भगवान् रुद्र इस महा- अस्त्रको चलाते हैं। वही यह महाअस्त्र मेरे समीपमें वर्त्तमान है, सूतपुत्र उसे क्या जानेगा। भीष्म, द्रोण कृपाचार्य्य और अश्व- त्थामा भी उस महा अस्त्रको नही जानते हैं।

परन्तु दिव्य-अस्त्रोंसे साधारण लोगोंको युद्धमें मारना उचित नहीं है : इस कारणसे मैं सरल-युद्धहीसे शत्रुओंको पराजित करूंगा ; और यह जो सब पुरुषसिंह तुम्हारे सहाय हैं, ये सब ही दिव्य अस्त्रोंके जाननेवाले तथा सब ही युद्धको चाहनेवाले हैं। दारपरिग्रहके साथही साथ सब यज्ञस्नात हुए हैं, हे राजन्! ये अपराजित महारथ लोग युद्धमें देवताओंकी सेनाको भी नष्ट कर सकते हैं। शिखण्डी, युयुधान, धृष्टद्युम्न, भीमसेन, नकुल, सहदेव, युधामन्यु, उत्तमौजा, भीष्म-द्रोणके समान बूढ़े बिराट और द्रुपद, महाबाहु शङ्ख, महाबल घटोत्कच, इसका पुत्र महाबली पराक्रमी अञ्जनपर्वा, युद्धके कार्य्यको जाननेवाला महाबाहु सात्यकी, बलवान् अभिमन्यु, द्रौपदीके पाचो पुत्र,—ये सम्पूर्ण महारथ वीर तुम्हारे सहाय हैं। हे पाण्डव! तुम भी तीनो लोकोंके नाश करनेमें समर्थ हो। हे वासवकल्प! मैं इस बातको निश्चय जानता हूं, कि तुम क्रोधपूर्व्वक जिस पुरुषकी ओर देखोगे वह क्षणभर भी जीवित नहीं रह सकता है।

१६६ अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, अनन्तर भली भातिसे सवेरा होनेपर दुर्य्योधनके सब राजा लोगोंने स्नान करके पवित्र हो, सफेद-वस्त्र और माला पहर कर अस्त्र-शस्त्र ध्वजा आदि ग्रहण करके होम और स्वस्तिवाचनके अनन्तर पाण्डवोंसे युद्ध करनेके निमित्त यात्रा की। वह सब लोग ब्रह्मज्ञ, उत्तम-चरित और व्रत करनेवाले, पराक्रमी, अभीष्टके सिद्ध करनेवाले और युद्ध-विद्याके जाननेवाले थे। वह महाबलवान् क्षत्रिय लोग सब ही आपसमें श्रद्धापूर्व्वक एकाग्रचित्त होकर युद्धमें परम लोकोंके जीतनेकी अभिलाषसे प्रस्थित हुए। पहिले अवन्ती-देशीय विन्द ... बाह्लिकके सहित केकय देशके वीर योद्धा द्रोणाचार्य्यको आगे करके चले ; उसके अनन्तर अश्वत्थामा, भीष्म, जयद्रथ, गान्धारराज शकुनि, दाक्षिणात्य, प्रतीच्य, प्राच्य, औदीच्य, पर्व्वतीय राजा लोग और शक, किरात, यवन, शिवि और वशात आदि सब महारथ राजाओंने अपनी अपनी सेनासे युक्त होकर दूसरी सेनाकी श्रेणीसे युद्धके निमित्त चले। उसके अनन्तर सेनाके सहित कृतवर्म्मा महाराज त्रिगर्त्त, भा... योंके सहित राजा दुर्य्योधन, शल, भूरिश्र... शल्य, और कोशलराज वृहद्वल ;—ये ल... धार्त्तराष्ट्रको आगे करके सब पीछे चले हे भारत। वह महाभाग धार्त्तराष्ट्र लो... यथा न्यायसे मिलकर कुरुक्षेत्रके पी... अर्द्धभागमें स्थित होकर युद्धके निमित्त सज... खड़े हुए। दुर्य्योधनने अपने शिविरको इस हस्तिनापुरके समान अलंकृत कराया। ... राजन्। नगरवासी निपुण मनुष्य लोग नगर और शिविरमे कुछ भी प्रभेद न कर सके प्रजानाथ कौरवराजने दूसरे राजाओंके भी वैसे ही सैकड़ों सहस्रो दुर्गम-शिविर निर्म्माण कराये। हे राजन्! उस रणभूमिके पाच-योजनके परिमाण परिधियुक्त स्थानको व्याप्त करके वह सब सहस्र सहस्र राजाओंकी सेना इकट्ठी हुई, वहांपर उन सब राजा लोगोंने उत्साह और बलके अनुसार बहुतसी सामग्रियोंसे युक्त अनेक शिविर तयार कराया। राजा दुर्य्योधनने उन सब हाथी, घोड़े, पैदल और वाहनोंसेयुक्त महात्मा राजाओंके भक्ष्य, भ... के निमित्त उत्तम प्रकारसे व्यवस्था कर दी। इसके अतिरिक्त वहांपर जो सब शिल्पी, सूत, मागध, स्तुतिपाठ करनेवाले, वणिक, वेश्या, दूत और युद्धके देखनेवाले पुरुष आये थे, कौरवराज दुर्य्योधनने उन लोगोंके निमित्त भी विधिपूर्व्वक प्रबन्ध किया।

... अध्याय समाप्त।

श्रीवैशम्पायन मुनि बोले, हे भारत। धर्म्म-पुत्र राजा युधिष्ठिरने भी उसी प्रकारसे धृष्ट-द्युम्न आदि वीरोंको तैयार होनेके निमित्त आज्ञा दी। चेदि काशि और करूषगणोंके नाश करनेवाले, सेनापति धृष्टकेतु विराट, द्रुपद युयुधान, शिखण्डी, महाधनुर्द्धारी पाञ्चालनन्दन युधामन्यु, और उत्तमौजा आदि सबने उनकी आज्ञाका पालन किया। वह सब महारथ शूरवीर विचित्र कवच और सुवर्ण कुण्डलधारी अग्निके स्थानपर रहनेवाले, घृतसे युक्त प्रज्वलित अग्नि अथवा प्रकाशमान ग्रहपुञ्जोंकी भांति शोभित होने लगे। अनन्तर पुरुषश्रेष्ठ राजा युधिष्ठिर सम्पूर्ण सेनाके वीरोंकी था उचितसे पूजा करके युद्धके निमित्त मन करनेकी आज्ञा दी; उन घोड़े हाथी, दल और वाहनोंसे युक्त महात्मा राजाओं तथा शल्पी लोगोंके उत्तम भक्षण और भोजनकी व्यवस्था की। पाण्डुपुत्र युधिष्ठिरने पहिले धृष्टद्युम्नको आगे करके अभिमन्यु बृहन्त और द्रौपदीके पुत्रोंको उनके सङ्ग भेजा। फिर भीम, युयुधान, और अर्ज्जुनको दूसरी सेनाके विभागमें नियुक्त किया। वहांपर घोड़ोंको भूषणोंसे भूषित करनेमें तत्पर इधर उधर घूमनेवाले, दौड़नेवाले, प्रसन्न चित्तसे सब योद्धाओंके कोलाहलका शब्द मानो आकाशको स्पर्श करने लगा। महाराज युधिष्ठिरने अन्तमें विराट, द्रुपद और दूसरे राजाओंके सङ्ग स्वय प्रस्थान किया। आगे निश्चल रहकर पीछेसे चलती हुई अथात् जलसे युक्त गङ्गाकी तरङ्गका वेग जिस प्रकारसे दीख पड़ता है, धृष्टद्युम्नसे रक्षित पाण्डवोंकी सेना भी उसी भांतिसे दीखने लगी। अनन्तर बुद्धिमान् युधिष्ठिर धृत-राष्ट्रपुत्रोंकी बुद्धिमें भ्रम उत्पन्न करनेके निमित्त फिर दूसरी भांतिसे सेनाको सजाके चलने लगे। धनुर्द्धारी द्रौपदीपुत्र, अभिमन्यु, नकुल, सह-देव और सम्पूर्ण प्रभद्रक वीर-योद्धा, दश हजार घोड़े दो हजार हाथी, अयुत पैदल और पांच सौ रथ, बलवान् सेना भीमसेनसे रक्षित होकर चले, इस प्रकारसे आदेश किया। बीचकी सेनामें विराट, जयत्सेन, और गदा धनुष धारण करनेवाले, पराक्रमी महारथ महात्मा पाञ्चालनन्दन युधामन्यु और उत्त-मौजाको नियुक्त किया। उस समयमें कृष्ण-अर्ज्जुन भी मध्यभागमें होकर चले। वहांपर अत्यन्त ही उत्साहसे युक्त कृतयुद्ध सैनिक पुरुष थे; उन लोगोंके सङ्ग बीस हजार घोड़े, पांच हजार हाथी, और रथोंका समूह था और आगे तथा पीछे धनुष, तरवार गदा ग्रहण करनेवाले पैदल वीर योद्धा थे, जिस सेनाके समूहमें महाराज युधिष्ठिर स्वयं विराजमान थे, उसमें अनेक राजा लोग विद्यमान थे। हे भारत! उसमे कई हजार हाथी, कई अयुत घोड़े, कई हजार रथ और पैदल योद्धा थे। अपनी बहुतसी सेनाके सहित चेकितान और चेदिगणके स्वामी राजा धृष्टकेतु चले। वृष्णि वंशियोंमें श्रेष्ठ महाधनुर्द्धारी प्रधान रथी बल-शाली सात्यकी सौ हजार रथोंसे युक्त होकर सेनाको चलाया, और रथमें स्थित पुरुषश्रेष्ठ क्षत्रदेव और ब्रह्मदेव पृष्ठ-रक्षा करते हुए सबके पीछे चलने लगे। इसके अतिरिक्त गाड़ी, छकड़े, युद्धके उपयुक्त सवारी और साधारण वाहन सब पीछे चलने लगे। राजा युधिष्ठिर सहस्रों हाथी, लाखों घोड़े, सम्पूर्ण बालक, स्त्री, कृशित, और दुर्व्बल सेना, धनके ढोनेवाले घोड़े, अन्नका कोष, हाथियोंकी सेना और सब सामग्री संग्रह करके धीरे धीरे चलने लगे। सत्य सङ्कल्प करनेवाले, युद्धदुर्म्मद सौचित्ति, श्रेणिमान्, वसुदान, काशिराजपुत्र विभु और उन लोगोंके अनुयायी बीस हजार रथ, किङ्कि-णियुक्त दश करोड़ घोड़े और सुन्दर श्वेत दांतोंसे युक्त, युद्ध करनेवाले, उत्तम कुलमें उत्पन्न हुए, मतवारे काले बादलोंके समान

बीस हजार हाथी उनके पीछे चलने लगे। इसके अतिरिक्त युधिष्ठिरके संग्रामके निमित्त स्थित सात अक्षौहिणी सेनाके बीच घनघटाके समान तथा जीमूतकदम्बके समान मदस्रावी सत्तर हजार हाथी थे, वह भी सब उनके पीछे चले। हे भारत! वह बुद्धिमान् युधिष्ठिरकी महा भयङ्कर सेना इस प्रकारसे सज्जित होकर चली, उसीके आसरेसे उन्होंने दुर्य्योधनके सङ्ग युद्ध किया था। ऊपर लिखे हुए हाथियोंके अतिरिक्त सैकड़ों सहस्रों तथा लाखों मनुष्य और सहस्रों सेनाके पुरुष गर्जते हुए पीछे चलने लगे। हे महाराज! वह सब सहस्र सहस्र तथा दश दश हजार सैनिक-पुरुष पूर्ण रीतिसे आनन्दित और प्रसन्नचित्त होकर वहांपर सहस्रों भेरी और शंख आदि बाजोंको बजाने लगे।

१९८ अध्याय समाप्त।

उद्योगपर्व सम्पूर्ण।